ABDULKERİM
EL-KUŞEYRÎ

# KUR'AN-I KERİM TEFSİRİ

لطائف الإشارات

# LETÂİFU'L İŞÂRAT

تفسير صوفي كامل للقرآن الكريم

ilkharf

بسم الله الرحمن الرحيم

Abdulkerîm el-Kuşeyrî • Letâifu'l-İşârât **KUŞEYRÎ TEFSİRİ**

©İlk Harf Yayınevi, 2012
Kitabın tüm yayın hakları "İlk Harf Yayınevi"ne aittir.

İlk Harf Yayınevi, 18
Tefsir Serisi, 1/1

ISBN
978-605-5457-56-3 (cilt: 1)
978-605-5457-55-6 (takım)

Editör
Ersan Güngör

Tercüme
Prof. Dr. Mehmet Yalar

Sayfa Düzeni
İrfan Güngörür

Kapak Tasarımı
Sercan Arslan

Basım Tarihi
1. Baskı, İstanbul, Kasım 2012

Baskı / Cilt
Şenyıldız Yay. Matbaacılık Ltd. Şti.
Gümüşsuyu Cad. No: 3, K: 2 Topkapı/İstanbul
Tel: 0212 483 47 92 (Sertifika No: 11964)

**İLK HARF YAYINEVİ**
www.ilkharf.com.tr • info@ilkharf.com.tr

**Genel Dağıtım**
Çelik Yayınevi
(Sertifika No, 14710)
Ticarethane Sokak No: 19/A Cağaloğlu - Fatih / İstanbul
Tel: +90 212 511 28 11 - 513 73 19 • Fax: +90 212 511 28 12
www.celikyayinevi.com • info@celikyayinevi.com

Abdulkerîm el-Kuşeyrî

Letâifu'l-İşârât

# Kuşeyrî Tefsiri

# -1-

Tercüme
Prof. Dr. Mehmet Yalar

İlkharf Yayınları

# ÂYETLER FİHRİSTİ


| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| **FATİHA SÛRESİ** (s. 19-32) | |
| 1 | 21 |
| 2 | 22 |
| 3 | 25 |
| 4 | 26 |
| 5 | 28 |
| 6 | 29 |
| 7 | 30 |
| **BAKARA SÛRESİ** (s. 33-256) | |
| 1 | 34 |
| 2 | 36 |
| 3 | 37 |
| 4 | 40 |
| 5 | 40 |
| 6 | 41 |
| 7 | 42 |
| 8 | 43 |
| 9 | 44 |
| 10 | 45 |
| 11 | 46 |
| 12 | 46 |
| 13 | 47 |
| 14 | 48 |
| 15 | 48 |
| 16 | 49 |
| 17 | 50 |
| 18 | 51 |
| 19 | 52 |
| 20 | 53 |
| 21 | 53 |
| 22 | 54 |
| 23 | 55 |
| 24 | 55 |
| 25 | 57 |
| 26 | 58 |
| 27 | 60 |
| 28 | 61 |
| 29 | 62 |
| 30 | 63 |
| 31 | 66 |
| 32 | 68 |
| 33 | 68 |
| 34 | 70 |
| 35 | 71 |
| 36 | 73 |
| 37 | 75 |
| 38 | 76 |
| 39 | 77 |
| 40 | 77 |
| 41 | 79 |
| 42 | 80 |
| 43 | 80 |
| 44 | 81 |
| 45 | 82 |
| 46 | 83 |
| 47 | 83 |
| 48 | 84 |
| 49 | 85 |
| 50 | 85 |
| 51 | 86 |
| 52 | 87 |
| 53 | 87 |
| 54 | 88 |
| 55 | 89 |
| 56 | 90 |
| 57 | 90 |
| 58 | 91 |
| 59 | 91 |
| 60 | 91 |
| 61 | 93 |
| 62 | 94 |
| 63 | 94 |
| 64 | 95 |
| 65 | 95 |
| 66 | 96 |
| 67 | 96 |
| 68 | 97 |
| 69 | 97 |
| 70 | 97 |
| 71 | 98 |
| 72 | 99 |
| 73 | 99 |
| 74 | 100 |
| 75 | 100 |
| 76 | 101 |
| 77 | 101 |
| 78 | 101 |
| 79 | 102 |
| 80 | 103 |
| 81 | 103 |
| 82 | 104 |
| 83 | 104 |
| 84 | 104 |
| 85 | 105 |
| 86 | 107 |
| 87 | 107 |
| 88 | 108 |
| 89 | 108 |
| 90 | 109 |
| 91 | 109 |
| 92 | 109 |
| 93 | 110 |
| 94 | 110 |
| 95 | 111 |
| 96 | 111 |
| 97 | 112 |
| 98 | 112 |
| 99 | 112 |
| 100 | 113 |
| 101 | 113 |
| 102 | 114 |
| 103 | 115 |
| 104 | 116 |
| 105 | 116 |
| 106 | 116 |
| 107 | 117 |
| 108 | 117 |
| 109 | 118 |
| 110 | 119 |
| 111 | 119 |
| 112 | 119 |
| 113 | 120 |
| 114 | 121 |
| 115 | 121 |
| 116 | 122 |
| 117 | 123 |
| 118 | 123 |
| 119 | 124 |
| 120 | 124 |
| 121 | 125 |
| 122 | 125 |
| 123 | 126 |
| 124 | 126 |
| 125 | 128 |
| 126 | 131 |
| 127 | 131 |
| 128 | 132 |
| 129 | 132 |
| 130 | 133 |
| 131 | 133 |
| 132 | 135 |
| 133 | 135 |
| 134 | 136 |
| 135 | 136 |
| 136 | 137 |
| 137 | 137 |
| 138 | 138 |
| 139 | 139 |
| 140 | 139 |
| 141 | 140 |
| 142 | 140 |
| 143 | 141 |
| 144 | 143 |
| 145 | 144 |
| 146 | 144 |
| 147 | 144 |
| 148 | 145 |
| 149 | 145 |
| 150 | 146 |
| 151 | 147 |
| 152 | 147 |
| 153 | 149 |
| 154 | 150 |
| 155 | 150 |
| 156 | 150 |
| 157 | 152 |
| 158 | 152 |
| 159 | 153 |
| 160 | 154 |
| 161 | 154 |
| 162 | 154 |
| 163 | 155 |
| 164 | 156 |
| 165 | 156 |
| 166 | 158 |
| 167 | 159 |
| 168 | 159 |
| 169 | 159 |
| 170 | 160 |
| 171 | 160 |
| 172 | 161 |
| 173 | 161 |
| 174 | 162 |
| 175 | 162 |
| 176 | 162 |
| 177 | 163 |
| 178 | 164 |
| 179 | 165 |
| 180 | 165 |
| 181 | 166 |
| 182 | 166 |
| 183 | 167 |
| 184 | 168 |
| 185 | 170 |
| 186 | 171 |
| 187 | 174 |
| 188 | 175 |
| 189 | 176 |
| 190 | 177 |
| 191 | 177 |
| 192 | 178 |
| 193 | 179 |
| 194 | 179 |
| 195 | 180 |
| 196 | 182 |
| 197 | 185 |
| 198 | 186 |
| 199 | 187 |
| 200 | 187 |
| 201 | 189 |
| 202 | 190 |
| 203 | 190 |
| 204 | 191 |
| 205 | 191 |
| 206 | 192 |
| 207 | 193 |
| 208 | 193 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 209 | 194 |
| 210 | 194 |
| 211 | 195 |
| 212 | 196 |
| 213 | 196 |
| 214 | 197 |
| 215 | 198 |
| 216 | 198 |
| 217 | 199 |
| 218 | 200 |
| 219 | 201 |
| 220 | 201 |
| 221 | 202 |
| 222 | 203 |
| 223 | 204 |
| 224 | 205 |
| 225 | 205 |
| 226 | 205 |
| 227 | 206 |
| 228 | 206 |
| 229 | 208 |
| 230 | 209 |
| 231 | 211 |
| 232 | 211 |
| 233 | 212 |
| 234 | 214 |
| 235 | 214 |
| 236 | 215 |
| 237 | 216 |
| 238 | 217 |
| 239 | 217 |
| 240 | 217 |
| 241 | 218 |
| 242 | 218 |
| 243 | 219 |
| 244 | 219 |
| 245 | 219 |
| 246 | 221 |
| 247 | 222 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 248 | 223 |
| 249 | 224 |
| 250 | 226 |
| 251 | 226 |
| 252 | 227 |
| 253 | 228 |
| 254 | 228 |
| 255 | 229 |
| 256 | 231 |
| 257 | 232 |
| 258 | 234 |
| 259 | 235 |
| 260 | 236 |
| 261 | 238 |
| 262 | 239 |
| 263 | 239 |
| 264 | 240 |
| 265 | 241 |
| 266 | 241 |
| 267 | 242 |
| 268 | 242 |
| 269 | 244 |
| 270 | 244 |
| 271 | 245 |
| 272 | 245 |
| 273 | 246 |
| 274 | 247 |
| 275 | 248 |
| 276 | 248 |
| 277 | 249 |
| 278 | 249 |
| 279 | 249 |
| 280 | 250 |
| 281 | 250 |
| 282 | 251 |
| 283 | 252 |
| 284 | 253 |
| 285 | 254 |
| 286 | 255 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| **ÂL-İ İMRÂN SÛRESİ** (s. 257-377) | |
| 1 | 258 |
| 2 | 258 |
| 3 | 259 |
| 4 | 259 |
| 5 | 260 |
| 6 | 260 |
| 7 | 261 |
| 8 | 262 |
| 9 | 262 |
| 10 | 263 |
| 11 | 263 |
| 12 | 263 |
| 13 | 264 |
| 14 | 264 |
| 15 | 265 |
| 16 | 265 |
| 17 | 266 |
| 18 | 267 |
| 19 | 270 |
| 20 | 270 |
| 21 | 271 |
| 22 | 271 |
| 23 | 272 |
| 24 | 272 |
| 25 | 273 |
| 26 | 273 |
| 27 | 275 |
| 28 | 276 |
| 29 | 278 |
| 30 | 278 |
| 31 | 279 |
| 32 | 281 |
| 33 | 282 |
| 34 | 282 |
| 35 | 282 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 36 | 282 |
| 37 | 283 |
| 38 | 285 |
| 39 | 286 |
| 40 | 288 |
| 41 | 288 |
| 42 | 289 |
| 43 | 289 |
| 44 | 290 |
| 45 | 290 |
| 46 | 290 |
| 47 | 291 |
| 48 | 292 |
| 49 | 292 |
| 50 | 292 |
| 51 | 293 |
| 52 | 293 |
| 53 | 293 |
| 54 | 294 |
| 55 | 294 |
| 56 | 295 |
| 57 | 295 |
| 58 | 295 |
| 59 | 295 |
| 60 | 296 |
| 61 | 296 |
| 62 | 297 |
| 63 | 297 |
| 64 | 297 |
| 65 | 298 |
| 66 | 299 |
| 67 | 299 |
| 68 | 299 |
| 69 | 300 |
| 70 | 300 |
| 71 | 301 |
| 72 | 301 |
| 73 | 301 |
| 74 | 302 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 75 | 303 |
| 76 | 304 |
| 77 | 304 |
| 78 | 304 |
| 79 | 305 |
| 80 | 307 |
| 81 | 307 |
| 82 | 308 |
| 83 | 308 |
| 84 | 309 |
| 85 | 309 |
| 86 | 310 |
| 87 | 310 |
| 88 | 310 |
| 89 | 311 |
| 90 | 311 |
| 91 | 312 |
| 92 | 312 |
| 93 | 313 |
| 94 | 313 |
| 95 | 314 |
| 96 | 314 |
| 97 | 314 |
| 98 | 320 |
| 99 | 321 |
| 100 | 321 |
| 101 | 321 |
| 102 | 322 |
| 103 | 323 |
| 104 | 324 |
| 105 | 325 |
| 106 | 325 |
| 107 | 325 |
| 108 | 326 |
| 109 | 326 |
| 110 | 326 |
| 111 | 327 |
| 112 | 328 |
| 113 | 328 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 114 | 328 |
| 115 | 329 |
| 116 | 329 |
| 117 | 330 |
| 118 | 330 |
| 119 | 331 |
| 120 | 331 |
| 121 | 332 |
| 122 | 332 |
| 123 | 332 |
| 124 | 333 |
| 125 | 333 |
| 126 | 333 |
| 127 | 334 |
| 128 | 334 |
| 129 | 334 |
| 130 | 335 |
| 131 | 335 |
| 132 | 335 |
| 133 | 336 |
| 134 | 336 |
| 135 | 338 |
| 136 | 338 |
| 137 | 339 |
| 138 | 339 |
| 139 | 340 |
| 140 | 340 |
| 141 | 341 |
| 142 | 341 |
| 143 | 341 |
| 144 | 342 |
| 145 | 343 |
| 146 | 343 |
| 147 | 344 |
| 148 | 344 |
| 149 | 345 |
| 150 | 345 |
| 151 | 345 |
| 152 | 346 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 153 | 347 |
| 154 | 347 |
| 155 | 350 |
| 156 | 351 |
| 157 | 351 |
| 158 | 351 |
| 159 | 352 |
| 160 | 355 |
| 161 | 356 |
| 162 | 356 |
| 163 | 357 |
| 164 | 357 |
| 165 | 358 |
| 166 | 358 |
| 167 | 358 |
| 168 | 359 |
| 169 | 360 |
| 170 | 360 |
| 171 | 360 |
| 172 | 361 |
| 173 | 362 |
| 174 | 362 |
| 175 | 362 |
| 176 | 363 |
| 177 | 363 |
| 178 | 363 |
| 179 | 364 |
| 180 | 365 |
| 181 | 365 |
| 182 | 365 |
| 183 | 367 |
| 184 | 367 |
| 185 | 368 |
| 186 | 368 |
| 187 | 369 |
| 188 | 369 |
| 189 | 369 |
| 190 | 370 |
| 191 | 370 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 192 | 373 |
| 193 | 373 |
| 194 | 374 |
| 195 | 374 |
| 196 | 375 |
| 197 | 375 |
| 198 | 376 |
| 199 | 376 |
| 200 | 376 |
| **NİSA SÛRESİ** (s. 379-482) | |
| 1 | 380 |
| 2 | 382 |
| 3 | 383 |
| 4 | 383 |
| 5 | 384 |
| 6 | 384 |
| 7 | 385 |
| 8 | 386 |
| 9 | 386 |
| 10 | 387 |
| 11 | 387 |
| 12 | 389 |
| 13 | 389 |
| 14 | 390 |
| 15 | 390 |
| 16 | 391 |
| 17 | 391 |
| 18 | 392 |
| 19 | 393 |
| 20 | 394 |
| 21 | 394 |
| 22 | 394 |
| 23 | 395 |
| 24 | 396 |
| 25 | 396 |
| 26 | 397 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 27 | 398 |
| 28 | 398 |
| 29 | 400 |
| 30 | 400 |
| 31 | 400 |
| 32 | 401 |
| 33 | 403 |
| 34 | 404 |
| 35 | 405 |
| 36 | 405 |
| 37 | 405 |
| 38 | 408 |
| 39 | 408 |
| 40 | 409 |
| 41 | 409 |
| 42 | 409 |
| 43 | 410 |
| 44 | 412 |
| 45 | 412 |
| 46 | 412 |
| 47 | 413 |
| 48 | 413 |
| 49 | 413 |
| 50 | 413 |
| 51 | 414 |
| 52 | 414 |
| 53 | 415 |
| 54 | 415 |
| 55 | 415 |
| 56 | 416 |
| 57 | 416 |
| 58 | 417 |
| 59 | 417 |
| 60 | 418 |
| 61 | 419 |
| 62 | 419 |
| 63 | 419 |
| 64 | 420 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 65 | 420 |
| 66 | 421 |
| 67 | 421 |
| 68 | 421 |
| 69 | 422 |
| 70 | 422 |
| 71 | 422 |
| 72 | 422 |
| 73 | 422 |
| 74 | 423 |
| 75 | 424 |
| 76 | 424 |
| 77 | 425 |
| 78 | 427 |
| 79 | 427 |
| 80 | 428 |
| 81 | 428 |
| 82 | 429 |
| 83 | 429 |
| 84 | 430 |
| 85 | 430 |
| 86 | 430 |
| 87 | 431 |
| 88 | 431 |
| 89 | 432 |
| 90 | 432 |
| 91 | 433 |
| 92 | 434 |
| 93 | 434 |
| 94 | 435 |
| 95 | 435 |
| 96 | 435 |
| 97 | 436 |
| 98 | 436 |
| 99 | 436 |
| 100 | 437 |
| 101 | 438 |
| 102 | 439 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 103 | 439 |
| 104 | 440 |
| 105 | 440 |
| 106 | 440 |
| 107 | 441 |
| 108 | 441 |
| 109 | 442 |
| 110 | 442 |
| 111 | 442 |
| 112 | 443 |
| 113 | 443 |
| 114 | 444 |
| 115 | 446 |
| 116 | 447 |
| 117 | 447 |
| 118 | 447 |
| 119 | 447 |
| 120 | 448 |
| 121 | 448 |
| 122 | 448 |
| 123 | 449 |
| 124 | 449 |
| 125 | 449 |
| 126 | 449 |
| 127 | 451 |
| 128 | 451 |
| 129 | 453 |
| 130 | 454 |
| 131 | 454 |
| 132 | 454 |
| 133 | 455 |
| 134 | 455 |
| 135 | 456 |
| 136 | 457 |
| 137 | 457 |
| 138 | 457 |
| 139 | 458 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 140 | 458 |
| 141 | 460 |
| 142 | 460 |
| 143 | 460 |
| 144 | 461 |
| 145 | 462 |
| 146 | 463 |
| 147 | 464 |
| 148 | 465 |
| 149 | 467 |
| 150 | 468 |
| 151 | 468 |
| 152 | 469 |
| 153 | 470 |
| 154 | 471 |
| 155 | 471 |
| 156 | 472 |
| 157 | 472 |
| 158 | 472 |
| 159 | 473 |
| 160 | 474 |
| 161 | 474 |
| 162 | 474 |
| 163 | 475 |
| 164 | 475 |
| 165 | 476 |
| 166 | 477 |
| 167 | 477 |
| 168 | 477 |
| 169 | 477 |
| 170 | 478 |
| 171 | 479 |
| 172 | 479 |
| 173 | 479 |
| 174 | 480 |
| 175 | 481 |
| 176 | 481 |

# Mütercimin Önsözü

İslam dininin ana kaynağı olan Kur'an-ı Kerîm'in ortaya koyduğu maddi ve manevi hayat düsturlarının, ilahi murada uygun bir biçimde yerine getirilebilmesi, her şeyden önce onun doğru anlaşılmasına bağlıdır. Bu nedenledir ki, Kur'an'ın inmeye başladığı ilk günden itibaren bu husus, Müslümanlar için birinci derecede öncelikli konu olmuştur. Zira Kur'an, gerek bazı ayetlerindeki meydan okumalarından gerekse de nüzul döneminde Arap dilinde otorite kabul edilen bazı Kureyşli müşriklerin itiraflarından da anlaşılacağı üzere, hem üslup hem de içerik bakımından o güne kadar alışılmış olandan tamamen farklı bir yapıda inmiştir.

Bu arada, Hz. Peygamber (s.a.v.) hayatta iken hem Kur'an'ın doğru anlaşılmasını sağlamış hem de getirdiği inanç ve hayat prensiplerinin örnek uygulayıcısı olmuştur. Bu sayede Müslümanlar, onu doğru anlayıp doğru yaşamada karşılaştıkları her problemi kolayca çözebilmişlerdir. Ancak Hz. Peygamber'in vefat etmesi, yanı sıra Arap dışı unsurların Müslüman olmaya başlaması ve yabancı kültürlerle yaşanan yoğun temas, Kur'an'ın doğru anlaşılması için özel birtakım ilmî çabaların sarf edilmesi ihtiyacını ortaya koymuştur. İşte bu ihtiyacı karşılamak üzere yapılan çalışmalar, belli bir süre sonra müstakil bir İslamî ilim haline gelmiş ve "Tefsir İlmi" adını almıştır. Aynı zamanda bu ilim, doğrudan Kur'an merkezli olması sebebiyle, İslamî ilimlerin önemce başta geleni olarak kabul edilmiştir.

Tefsir ilmi çerçevesindeki çalışmalar, tarihi süreç içerisinde çeşitlilik arz etmeye ve buna bağlı olarak farklı isimlerle anılmaya başlamıştır. Buna göre öne çıkan başlıca çalışmalar şöyledir:

a) Rivayet Tefsiri Çalışmaları

b) Dirayet Tefsiri Çalışmaları

c) Tasavvufî Tefsir Çalışmaları

Çalışmamızın konusu olan ünlü tasavvuf âlimi Abdulkerîm el-Kuşeyrî'ye ait *"Letâifu'l-İşârât"* adlı eser de tasavvufî tefsir çalışmalarının en önemli klasik örneklerinden biridir. Bu realiteden hareketle, Türkçe İslamî literatüre katkıda bulunmak, yanı sıra genelde tasavvuf ve tefsir alanlarına ilgi duyan okuyucu kitlesinin, özelde de tefsir alanında akademik çalışmalar yapan araştırmacıların istifadesine sunmak üzere, Çelik Yayınevi'nin önerisiyle eseri Arapça aslından Türkçeye çevirmeye karar verdik.

Bu arada okuyucunun, eseri daha bilinçli okumasını ve ondan daha fazla faydalanmasını sağlamak amacıyla, hem belli başlı bazı özellikleri hem de tercümede izlediğimiz yol hakkında gerekli olduğuna inandığımız hususlara yer vermek yararlı olacaktır:

## Eserin Belli Başlı Bazı Biçim ve İçerik Özellikleri

1. Eserde kullanılan dilin en önemli biçimsel özelliği, yoğun bir şekilde seci sanatına başvurulmuş olmasıdır. Bu özellik, müellifin Arap dili, belagati ve edebiyatı ile alanın kavramlarına olan hâkimiyetini ortaya koyması bakımından olumlu; seci kaygısıyla yer yer birtakım zorlamalara ve tekrarlara yol açması bakımından ise olumsuz değerlendirilebilir.
2. Çok miktarda mecazlı ve teşbihli ifade ve terkipler kullanılmıştır. Bu, müellifin Arap dili belagatındaki derinliğini göstermekte, ancak söylediklerinin anlaşılmasını kısmen zorlaştırabilmektedir.
3. Zaman zaman ayetlerin sözlük ve gramer izahlarına da yer verilmiştir.

4. Çok miktarda eşanlamlı kelime kullanılmıştır. Müellif, bunu seci sanatı uğruna yapmak zorunda kalmıştır.
5. Eserde en fazla kullanılan tasavvufî terimler; hak, şuhûd, müşahede, ru'yet, nefis, kalp, sır, latîfe, latâif, tarîk, edeb, abid, arif, zahid, muhib, mürid, irade, zahir, bâtın, marifet, mahabbet, ubûdiyet, rubûbiyet, safâ, mahv, sahv, fenâ, bekâ, kurb, vuslat, firak, istiklal, hicâb, nûr, ilhâm, fark, cem' ve keşif gibi lafız ve tabirlerdir.
6. Ahkâm yönü olan ayetlerde önce fıkhî izaha yer verildikten sonra işârî tefsirlerine geçilmiştir.
7. Gerektiğinde ayetin ayetle veya hadisle tefsiri de yapılmıştır.
8. Çok sayıda şiir örneğine yer verilmiştir. Bunlar arasında kendisine ait bazı şiirler de bulunmaktadır.
9. Az sayıda da olsa bazı ayetlerin tefsiri yapılmamış ve eserin Arapça aslında bunlara yer verilmemiştir.
10. Münasebet düştükçe kelamî izahlar da yapılarak Ehl-i Sünnet'in görüşleri ısrarla savunulmuştur.
11. Bir ayetin hem ilmî hem de işârî tefsirine yer verileceği zaman önce tefsir âlimlerinin izahına değinildikten sonra işârî tefsirine geçilmiştir.

Ayrıca:

Bu eserde müellif, tefsir, fıkıh, kelam ve edebiyat alanlarındaki geniş ilmî birikimini kullanarak tasavvufî kavramları ve ilham ya da sezgi merkezli işârî yorumları, önce tefsirini yapmakta olduğu ayetle, ardından varsa konuya uygun başka bir iki ayet veya hadisle, sonra da uygun bir şiirle temellendirmektedir. Öte yandan istihraçta bulunduğu tasavvufî kavramlar ve işârî yorumların gerek akait gerekse de fıkıh prensipleri açısından, Ehl-i Sünnet çizgisine uygun olmasına özen göstermektedir. Bu sayede müellif, kendisinden önceki ve sonraki işârî tefsirlerin tenkide maruz kalan aşırılıklarından başarıyla korunabilmekte, onların düştüğü hatalara düşmemekte ve yorumlarını, değişik tabirlerle de olsa nefis tezkiyesi ve Allah'a kavuşup O'nu görmede yoğunlaştırmaktadır.

Nihayet bir kulun varabileceği manevî zirveyi, *"Hakk'ı Hak ile görmek"* şeklinde tanımlanan ***"şuhûd"*** kavramıyla ifade etmektedir. Bu arada müellif, çoğu zaman bir ayetin birden fazla yorumuna yer vermekte, ancak farklı yorumların sahiplerine ismen değinmemektedir. İsmen zikrettiği yegâne şahsiyet, bu eseri ortaya koymasında en büyük ilham kaynağı olan şeyhi Ebû Ali ed-Dakkâk'tır. Zira Kuşeyrî, şeyhiyle tanışmadan ve 434/1042 tamamladığı bu tefsirin telifinden önce 410/1019 yılında *"et-Teysîr fî ilmi't-tefsîr"* adıyla, ilmi esaslara uygun ve *"et-Tefsîru'l-kebîr"* olarak da bilinen klasik bir tefsir telif etmiştir.

## Tercümede İzlenen Yol

Konuyla ilgilenenlerin malumu olduğu üzere tercüme çalışması, başarıyla gerçekleştirilmesi hayli zor olan işlerden biridir. Çevirisi yapılan eserin, yaklaşık on asırlık ve kendine has terminolojisi olan işârî bir tefsir olması, yanı sıra daha önce çevirisinin yapılmamış olması ise çalışmanın zorluğunu daha da artıra bir husustur. Bu nedenle, daha önceki tercüme deneyimlerimizden de yararlanarak söz konusu eseri Arapçadan Türkçeye çevirirken benimsediğimiz ve titizlikle uymaya çalıştığımız birinci ilke, aslını doğru anlamak ve Türkçeye doğru ve anlaşılır bir dille aktarmak olmuştur.

Buna ilave olarak gözetilen diğer bazı hususlar da şöyle sıralanabilir:

1. Çeviride, eser üzerinde mastır ve doktora çalışması yapan Dr. İbrahîm Besyûnî'nin, bu çalışmalarının ürünü olan tahkikli, takdimli ve açıklayıcı dipnotlar içeren baskısı esas alınmıştır. Muhammed Ali Beydûn baskısı ise daha yeni olmasına rağmen, eserin aslıyla ilgili kayda değer bir özellik taşımadığından çalışmamızda dikkate alınmamıştır.
2. Çeviride terimler hariç, aslın Arapça lafız ve ifade biçimlerine bağlılık değil, müellifin meramının doğru ve yeterli aktarımı esas alınmıştır.

3. Müellifin tefsirde kullandığı başka ayetlerin sûre ve ayet numaralarına yer verilmiştir.
4. Müellifin tefsirini yapmadığı ayetlerin mealine, ait oldukları suredeki numarası korunarak, yer verilmiştir.
5. Eserde yer alan şiirlerin hemen hemen tamamı şiir üslubunda çevrilmiştir.
6. Rastlanan az sayıdaki baskı hataları düzeltildikten sonra ilgili kelimelerin çevirisi yapılmıştır.
7. Eserin Arapça aslında Besyûnî'nin, okunamadığını veya silik olduğunu söyleyip boş bıraktığı yerler, çeviride de boş bırakılmış ve (...) şeklinde gösterilmiştir.
8. Müellifin, yaygın bir biçimde yer verdiği farklı yorumlar için kullandığı "و يقال" tabirinin sözlük anlamı "denilir, deniliyor, denilmekte" olmakla birlikte, çeviride bu kelimelerin sık sık tekrar edilmesini önlemek ve bu yolla Türkçeye uygun akıcılık ve insicamı sağlamak amacıyla, bir farklı yorum için: "Bir yoruma göre de" denilmiş, iki farklı yorum için: "Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır", ikiden fazla farklı yorum içinse: "Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır" denildikten sonra yorumlar, önlerine tire konularak alt alta sıralanmıştır. "قيل" tabiriyle dile getirilen farklı yaklaşımlar ise görüş veya iddia şeklinde aktarılmıştır.

Çevirinin kusursuz olduğu iddiasında olmadığımızı, aksine, yapılacak olan iyi niyetli ve yapıcı eleştirileri memnuniyet ve şükranla karşılayacağımızı belirtir, ilim ve irfan dünyasına katkı sağlamasını Allah'tan niyaz ederiz.

*Prof. Dr. Mehmet YALAR*

# Kuşeyrî'nin Kısa Biyografisi

## Tam adı, soyu, doğum tarihi ve yeri

Müellifin tam adı Abdulkerîm b. Hevâzin b. Abdulmelik b. Talha b. Muhammed el-Kuşeyrî'dir. Lakabı Zeynulislâm, şöhreti ise el-Kuşeyrî'dir. Kuşeyrî, Rabiulevvel 376/Temmuz 986 tarihinde Horasan bölgesinin Nisabur şehrine bağlı Ustuvâ nahiyesinde dünyaya gelmiştir. Baba tarafından Kuşeyr adlı Arap kabilesine mensuptur. Annesi de yine ünlü bir Arap kabilesi olan Benû Sulem kabilesinden Ebû Ukayl es-Sulemî'nin kızıdır.

## Tahsili ve Hocaları

Henüz çocukken memleketlerinde meydana gelen kıtlık üzerine ailesi, aralarında kendisinin de bulunduğu bazı fertlerini, muhasebe alanında tahsil görüp iktisadi durumlarını yoluna koymaya katkıda bulunmaları amacıyla Nisabur'a göndermiştir. Ancak Kuşeyrî, burada bu tahsile hazırlanırken kısa süre sonra fıkıh, kelam, hadis, tefsir ve edebiyat meclisleri, kendisini cezp etmeye başlamıştır.

Nisabur, o tarihte ilmî ve fikrî faaliyetler bakımından büyük bir canlılığa sahip bulunuyordu. Bu durum, Kuşeyrî'nin ilgisini daha da artıyor ve bu yöndeki amacına ulaşmada işini kolaylaştırıyordu. Söz konusu ilmî ve fikrî canlılığın arkasında ise, ortaya koydukları ilmî

ve fikrî eserler ile yetiştirdikleri öğrenciler sayesinde, hem yaşadıkları dönemde hem günümüzde İslam düşünce ve ilim tarihinin otorite şahsiyetleri olarak kabul edilen pek çok ünlü âlimin ilmî mesaileri yatmaktadır.

Bu âlimlerin başlıcaları şunlardır:

1. Büyük bir fıkıh, usul ve kelam âlimi olup müstakil bir medresesi ve pek çok eseri bulunan, Kuşeyrî'nin usulde hocası olan Ebûbekr Muhammed b. Fûrek el-Ensârî el-İsbehânî (406/1015).
2. Döneminde el-Üstaz diye tanınan ve bütün Horasan âlimlerinin en büyük hocası olarak kabul edilen, Nisabur'da kendi adını taşıyan ünlü bir medresesi bulunan kelam ve usul otoritesi Ebû İshâk İbrahim b. Muhammed el-İsferâînî (417/1025). Bu zat, Kuşeyrî'nin en önemli hocası ve ilimde kendisini yetiştiren kişidir.
3. Kuşeyrî'nin özellikle fıkıhta hocası olan Ebûbekir Muhammed b. Ebûbekir et-Tûsî (460/1067).
4. Aynı zamanda kayınpederi olan Ebû Alî el-Hasen b. Alî en-Nisâbûrî ed-Dakkâk (405/1015)) ise onun tasavvuftaki yegâne hocası, şeyhi ve feyiz kaynağıdır.

Böylece Kuşeyrî fıkıh, usul, kelam, tefsir ve Arap dili, belagatı ve edebiyatı ile tasavvuf alanında önde gelen büyük alimlerden biri olmuş, bu çerçevede pek çok öğrenci yetiştirmiş ve pek çok eser telif etmiş, yanı sıra şair denecek seviyede çok sayıda şiir ve bir kaside de yazmıştır.

## Bazı Öğrencileri

Kuşeyrî'nin önde gelen bazı öğrencileri şunlardır:

1. Ebû Alî el-Fadl b. Muhammed b. Ali el-Kasbânî (444/1052)
2. Ebûbekr Ahmed b. Alî b. Sâbit el-Hatîb el-Bağdâdî (4631070)

3. Ebulkâsim Suleymân b. Nâsir b. İmrân el-Ensârî (512/1118)
4. Ebû Abdillah Muhammed b. el-Fadl b. Ahmed el-Ferâvî (530/1135)
5. Ebû İbrahîm İsmail b. Huseyn el-Huseynî (531/1136)

## Eserleri

Yirmi beş kadar eserinden söz edilen Kuşeyrî'nin bu eserlerinin büyük kısmı henüz basılmamıştır. Bu eserlerin başlıcalarından bazıları şunlardır:

1. *et-Teysîr fî ilmi't-tefsîr*. Büyük Tefsir olarak da bilinen bu eserini 410/1019 tarihinde tamamlamıştır.
2. *Letâifu'l-işârât*. Çevirisi sunulan bu eser, 434/1042 yılında tamamlanmıştır.
3. *er-Risâletu'l-Kuşeyriyye*. Tasavvuf anlayışı ve sistematiğinin yanı sıra önde gelen mutasavvıflara dair bilgiler de içeren en ünlü eseri olup birkaç defa basılmıştır. Eserin Fransızca çevirisi ise Roma'da basılmıştır. Eser, 437/1045 yılında tamamlanmıştır.
4. *et-Tahbîr fi't-tezkîr*. Eser, esmâ-i husnânın şerhine dairdir. Eser, İlk Harf Yayınevi tarafından Türkçeye kazandırılmıştır.
5. *Şikâyetu ehli's-sunne bi hikâyeti mâ nâlehum mine'l-mihne*. Eserde genelde Ehl-i Sünnet'in, özelde de Eş'arî âlimlerin çektiği on yıllık çileyi konu almaktadır.

## Mezhebi

Kuşeyrî fıkıhta Şafiî, akaitte ise Eş'arî mezhebinin en önde gelen savunucularından biridir. Bu durumu, diğer bazı büyük İslam âlimleriyle birlikte on yıllık çileli bir sürgün hayatı yaşamasına sebep olmuştur.

## Vefatı

Kuşeyrî, on yıllık sürgün hayatından sonra, ünlü Selçuklu veziri Nizamülmülk'ün iş başına gelmesiyle, diğer âlimlerle birlikte büyük bir saygı ve ihtişamla memleketine geri dönmüş ve ömrünün sonuna kadar mutlu ve huzurlu bir hayat yaşamıştır. Kuşeyrî, 465/1072 yılında Nisabur'da vefat etmiş ve Şeyhi Ebû Alî ed-Dakkâk'ın yanına defnedilmiştir.

**“Rahman ve Rahim olan Allah’ın adıyla.”**
Rabbim kolaylaştır, zorlaştırma!

Hamd Allah’a özgüdür. O, velilerinin kalplerini irfanıyla açmış; O’nun yolunu arzulayanlar için hak yolu apaçık deliliyle aydınlatmış; hakkı gerçekleştirmek isteyene anlayış vermiş; Kur’an’ı seçkin kulu Muhammed’e hidayet, mu’cize ve açıklayıcı olarak indirmiş; âlimlerin kalplerine Kur’an bilgisi ve te’vilini emanet etmiş; onlara Kur’an kıssaları ve nüzulünün ilmini lütfetmiş; muhkem, müteşabih, nâsih, vaat ve uyarı ayetlerine iman etmeyi nasip kılmış; Kur’an’ın kapsamına aldığı güvence altındaki ince işaretlerini ve nurlarını iyice kavramaları için, seçkin kullarına sırlarının inceliklerini anlama yeteneğini bahşetmiştir. Böylece onlar, kendilerine özgü kılınan gaybın nurlarıyla, başkalarından gizli kalan hususlardan haberdar olmuş, sonra da dereceleri ve güçleri oranında konuşmuşlardır. Ve şanı yüce Allah, değerlerini artıran hususları onlara ilham etmektedir. Onlar da bununla O’nu konuşmakta, O’nun sırlarından söz etmekte, O’na işarette bulunmakta, O’nu açıklamaktadır. Yaptıklarının ve yapmadıklarının hepsinde hüküm O’nundur.

İmam Cemalu’l-İslâm Ebu’l-Kâsim el-Kuşeyrî şöyle der:

Bu kitabımız, marifet ehlinin dilinden Kur’an’ın zor ulaşılan bazı işaretlerini ayrıntılı olarak anlatmaktadır. Söz konusu işaretler, ya söylediklerinin anlamlarına ya da prensipleriyle ilgili meselelere

ilişkindir. Biz bu kitapta okuyucuyu usandırma endişesiyle işaret sayısını az miktarda tutmaya özen gösterdik. Bunu, lütuf ve keremiyle sonumuzu hayırlı kılması için, Allah'tan nimetinin bereketlerini dileyerek, güçsüzlüğümüzü itiraf ederek, hata ve yanılgıdan korunmaya çalışarak, söz ve davranışın en doğrusunu gözeterek yaptık. Hicri 434 yılının ayları içerisinde bu kitaba başlamak nasip oldu. Tamamlanması ise Allah'a aittir.

سورة الْفَاتِحَةِ

# FATİHA SÛRESİ

(Fâtiha Sûresi, Mekke döneminde Müddessir Sûresi'nden sonra inmiştir. 7 âyettir. Kur'an'ın ilk sûresi olduğu için açış yapan, açan anlamında "Fâtiha" denilmiştir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**"Rahman ve Rahim olan Allah'ın adıyla."**

Bu sûre Kur'an'ın başlangıcıdır. Bu arada Allah'ın, dostlarla kendi katından olan hitap ve kitapla söze başlaması, nimetlerin en büyüğü ve güzelliklerin en değerlisidir. Zira o, (...)[1] ve başlangıçtır.

Şu dizeler de, bu anlamda söylenmiştir:

*Doğrusu feda olurum ben sana zamanımın bütün günlerinde*
*Sen (...) günler (...) feda olursun*
*Ne mübarektir o ahdin ki, olmasaydı eğer o*
*Olmazdı kalbim aşk ateşinin merkezi*

Hz. Peygamber (s.a.v), bu durumu beklememekteydi ve bu söz aklına bile gelmemişti. Nitekim Hz. Cibril kendisine geldiğinde kaçmaya çalıştı ve bu işten uzaklaşmayı tercih ederek (...): *"Örtün beni, örtün beni"* dedi. O sıralarda Hz. Peygamber Hirâ Dağı'nda ibadete kapanıyor ve inzivaya çekiliyordu. (...) Derken ansızın bu olayla karşılaştı.

---

1 Bu işaret, kitabın aslındaki noksanlığı göstermektedir.

Tıpkı şu beyitte söylendiği gibi:

*Geldi bana sevgilinin sevdası, tanımadan önce ben sevdayı*
*Boş buldu böylece kalbimi ve ele geçirdi onu*

Aslında Hz. Peygamber, kendisine *Hatice'nin ücretlisi* denilmesine rıza göstermişti. Ancak Allah (c.c.), Yasîn Sûresi'nin ilk ayetlerinde buyurduğu üzere, O'nun öncekilerin de sonrakilerin de efendisi olmasını diledi, O'nu makamların en şereflisine yükseltti. Oysa Allah'ın bir sünneti olarak kimse, beklentiyle bu makama yükselmez. O'nun bu işe ehil olduğuna akılları ermeyenler hariç, (...). Hakkında şaşırtıcı şeyler anlatmaları da bundan ötürüdür. İnsanların arasından Ebû Tâlib'in yetimi (...). Oysa Allah'ın ezeli ilminde Hz. Peygamber'e (Allah'ın salâtı ve selamı üzerine olsun), benzerleri olan bütün varlıkların önünde yer verilmiştir.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Bu, (…) eski elbiseler*
*Yoksulluk içindeydi gidip gelmelerden*
*Bence yüceltilmeye daha layıktır o*
*Kardeşimden ve komşumdan*
*Gümüş ve altın sahibinden de*
*Zira çoklukla birliktedir makam sahibi*

Aslında Hz. Peygamber (s.a.v.), peygamberlikten önce de saygın, iyilikle anılan, adına övgüler dizilen ve herkesin güven duyduğu bir kişiliğe sahipti. Ancak kâfirler, durumunu (…) adını değiştirdiler, vasfını çarpıttılar ve onu kötülükle andılar. Bu çerçevede kimisi ona sihirbaz, kimisi deli, kimisi yalancı, kimisi de şair diyordu.

Şiir:

*En çirkin bir hikâye yaydılar kabile içerisinde hakkımızda*
*Ve düşman kesildiler bize, daha önce barışık iken bizimle*

Zaten sevenin özelliği de böyledir, sitem etmeden duramaz. Lakin bu, şu şiirde söylendiği gibi olur:

*Lezzetli buluyorum ben senin aşkın uğruna yapılan sitemi*
*Anılmanı sevdiğim için, varsın sitem etsin bana sitemkârlar*

Çirkin söz söyleyenlerin ona ne zararı olur ki! Nitekim şanı yüce Allah ona hitaben şöyle buyurmaktadır:

( وَلَقَدْ نَعْلَمُ اَنَّكَ يَضِيقُ صَدْرُكَ بِمَا يَقُولُونَ فَسَبِّحْ بِحَمْدِ رَبِّكَ وَكُنْ مِنَ السَّاجِدِينَ )

*"Şüphesiz biz, onların söyledikleri sebebiyle içinin daraldığını biliyoruz. O halde Rabbine hamd ederek tesbihte bulun."* (Hicr, 15/96-97).

Yani, hakkında söylenenleri, bize güzel övgüde bulunarak dinle.

**Bir Fasıl**

Bu sûre, *Ummu'l-kitâb* yani kitabın aslı diye de adlandırılmaktadır. Burada *"umm"* "asıl" anlamındadır. *"İmam"* sözcüğü ise "bir şeyin önde yer alan kısmı" demektir. Ayrıca bu sure, kulluğa dair emir, ilahi yüceliğin güzelliği ve noksansızlığı gibi faziletleri ihtiva etmesi sebebiyle, farz ibadetler onsuz sahih olmamaktadır. Hz. Peygamber (s.a.v.)'in, yüce Allah'tan rivayetle söylediği: *"Namazı kulumla aramda yarı yarıya taksim ettim"* şeklindeki hadis, bu surenin okunması demektir. Böylece Fatiha Sûresi Kitab'ın temeli, üstüne bina edilen engin meziyetlerin, Allah'a yakınlaşmak ve katında makbul olmak gibi lütufların aslı olmuştur.

بِسْــــــــــمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ ١

1- "Rahman ve Rahim olan Allah'ın adıyla."

*"Bismillahi"* lafzındaki *"bâ"* tazmîn harfidir. Yani olaylar, sadece Allah ile ortaya çıkmış ve yaratıklar O'nunla var olmuştur. Böylece ne kadar yaratık, varlık, cisim, eser, taş, toprak, yıldız, ağaç, işaret, enkaz, hikmet ve gerekçe varsa hepsi Allah ile vücut bulmuştur. Aynı zamanda onların sahibi de, baştan yaratanı da O'dur ve onların dönüşleri de yine O'nadır. Bu nedenle Allah'ın birliğine inanan, aradığını O'nunla bulmuş, O'nu inkâr eden dinden çıkmış, O'nu kabul eden arif olmuş ve günah işleyen O'nunla gerilerde kalmıştır.

Kimilerine göre, "Allah ile" demek olan *"Billahi"* değil de "Allah'ın adıyla" demek olan *"Bismillahi"* denilmiş olması, teberrüken ismini zikretmiş olmak içindir. Bazılarına göre ise bunun sebebi, bu lafız ile yemin lafzını birbirinden ayırt etmektir. Bazı âlimlere göre de bu, isimle isim sahibinin aynı olmasından dolayıdır. İrfan ehlinin görüşüne göre ise bunun sebebi, kalplerin diğer ilgilerden temizlenmesi, sırların da engellerden arındırılmasıdır. Böylece *"Allah"* lafzı, temizlenmiş bir kalbe ve arındırılmış bir sırra yerleşmiş olur. Kimileri ise, bu ayet zikredilirken *"bâ"* harfinden Allah'ın velilerine olan iyiliğini, *"sîn"* harfinden seçkin kullarıyla olan sırrını, *"mîm"* harfinden ise velilerine olan minnetini hatırlamaktadırlar. Böylece onlar, Allah'ın iyiliğiyle sırrını tanıdıklarını, üzerlerindeki minneti ile emrini koruduklarını ve yine O'nunla O'nun yüceliğini tanıdıklarını öğrenmiş olurlar. Kimileri de *"Bismillahi"*yi duyduklarında *"bâ"* harfiyle, Allah'ın her türlü kötülükten uzak olduğunu, *"sîn"* ile kusursuz olduğunu, *"mîm"* ile de yücelik demek olan mecdini hatırlamış olurlar. Diğer bazıları ise *"bâ"*da Allah'ın güzellik demek olan behâsını, *"sîn"*de yücelik demek olan senâsını, *"mîm"*de ise mülkünü anarlar. Böylelikle Allah, Besmele ayetini her sûrede tekrarlayıp bu ayetin o sûreden oluşu kesinleşince biz de onun her sûredeki işaretlerinden tekrarlanmamış kelimeler ve işaretler zikretmek istedik. Bu nedenle sadece Allah'a güvenerek burada sözü detaylandırıyoruz.

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿٢﴾

## 2-"Hamd Allah'a mahsustur."

Hamdin hakikati, iyiliğe karşılık Allah'ın yüce sıfatlarını ve güzel fiillerini zikretmek suretiyle övgüde bulunmaktır. Hamd kelimesinin başındaki "el" takısı burada "cins" için olup her türlü hamdi ifade etmektedir. Bu itibarla gerek sıfatları bakımından gerekse de yaratan olarak, övgüye layık bütün iyilikler Allah'a özgüdür. Ham O'na özgüdür, zira hâkimiyeti açıktır. Şükür de O'na özgüdür; çünkü ihsanı boldur. Hamd Allah'a özgüdür; çünkü yücelik ve güzelliğinden dolayı hamde layık olan O'dur. Şükür Allah'a özgüdür; çünkü

lütfü bol ve nimetleri paha biçilmezdir. Bu arada Allah'ın kendine olan hamdı, kemalinin ve gücünün sıfatlarındandır. Yaratılanların, nimeti, kudreti, büyüklüğü ve cemaline karşılık O'na olan hamdı ise yücelik ve üstünlük sıfatlarına hakkıyla sahip olmasından dolayıdır. O, ezeli varlığa, kerem vesilesi cömertliğe, tartışılmaz birliğe, başlangıçsız ve sonsuz varlık, kalıcılık, güzellik, işitme, görme, kaza, kader, konuşma ve söz söyleme, üstünlük, kudret, rahmet, cömertlik, öz (göz), yüz, güzellik, güç ve yüceliğe sahiptir. O; bir ve aşkındır. Yüceliği libası, ululuğu üstünlüğü, varlığı zâtı, başlangıçsızlığı sonsuzluğu, kadimliği ebediyeti, hak oluşu kesinliği, var oluşu özü, daimiliği kalıcılığı, kaderi kazası, yüceliği cemali, yasağı emri, gazabı rahmeti ve iradesi dileğidir. O karşı konulmaz bir melik ve eşsiz bir hükümdardır. Her noksandan münezzeh olan Allah yüceler yücesidir. Her noksandan münezzeh olan Allah'ın şanı ne de yücedir!

**Bir Fasıl**

Şanı yüce Allah, dostlarının O'nun Hamd ve senasına olan şiddetli arzusunu, övgüsünün hakkını yüceliğiyle orantılı olarak yerine getirmekten aciz kalışlarını bildiğinden hitabının açılışını yaptığı *"Hamd Allah'a mahsustur"* ifadesiyle kendini övmüştür. Böylece dostları, tökezlemeden sonra toparlanmış, sönüklükten sonra canlanmış ve sırları gücün en yüksek değerine ulaşmakla bağımsız hale gelmiştir. Zira onlar, Hakk'a yönelik övgüyü Hak'tan ve Hakk'ın hitabıyla duydukları için cismanî varlıklarla ilgili ifadelerdeki gibi, sembolik izahlarla konuşarak şöyle dediler:

*Sevgilinin yine kendi yüzündendir yüzündeki ay güzelliği*
*Yine kendi gözündendir gözünün sürmesi*

İşte öncekilerin ve sonrakilerin hatibi, fasahat ehlinin efendisi ve belagat erbabının önderi olan Hz. Peygamber (s.a.v.), Allah'ın, kendine hamd ettiğini ve hakkını övdüğünü duyunca, bu durumda dilin yetersiz kalışının kendisine daha çok yakıştığını anlamış ve: *"Sana övgüyü sayamam, sen kendini övdüğün gibisin"* buyurmuştur.

Şiir:

*Duysaydı eğer sevgilinin sözünü Davud'un kulakları*
*Terennüm etmezdi makamları Davud*
*Şarkı söyleyince Suad kendi sesiyle, utandı*
*Davud'un makamları mahcubiyetten*

**Bir Fasıl**

Hamd edenlerin tabakaları, durumlarının farklı oluşundan dolayı birbirinden değişiktir. Şöyle ki, bir grup faydalı şeyleri vermesi, zararlı şeyleri de defetmesi şeklindeki nimet ve keremine kavuşmalarına karşılık olarak Allah'a hamd ederken, kendilerine ihsan ettiği nimetlerin çoğunu bilememişlerdir. Bu konuda Allah şöyle buyurmuştur:

(وَاِنْ تَعُدُّوا نِعْمَةَ اللّٰهِ لَا تُحْصُوهَا)

*"Eğer Allah'ın nimetini sayarsanız, onu sayamazsınız."* (Nahl, 16/18)

Bir grup, kalplerinde tecelli eden ilahî lütuflar, ruhlarında var ettiği saklı iyilikler, kendisiyle sırlarını keşfettiği bilinmez gaybı ve ruhlarına özgü kıldığı tecellilerine karşılık olarak Allah'a hamd etmişlerdir. Bir grup da kadîm sıfatlarıyla kendilerine tecelli ettiğinde Allah'a hamd etmiş, izzet ve keremini düşünmekten nimetlerin çeşitlerini araştırmaya ve nasiplerin özelliklerini düşünmeye yönelmemişlerdir. Nitekim Allah'ı, yüceliğinin üstünlüğüyle öven ile O'na dünyalık nimetlerinin varlığına karşılık olarak şükreden arasında fark vardır.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Fakirlik değildir bizi aşiretin toprağından süren*
*Lakin biz sana kavuşmakla mutlu olmak üzere geldik*

Bir grup ise O'na hamd etmede kullandıkları ifadelerle kendilerinden geçmişlerdir. Çünkü bunların sırlarını ilahî tevhidin gerçekleri kaplamıştır. Böylece onlar, Allah'ı yine O'nunla ifade eder ve O'ndan O'na işaret ederler. Allah, haklarında ilahî tasarrufun hükümlerini uygulamaktadır. Zahirleri tefrika sıfatıyla gözetilmekte, sırları da cemin cemi gereğince Allah'tan başkasını hissedemez hale getirilmektedir.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Hakkı açıklamanın açıklamasının sensin izahı*
*Gaybın bütün anlamlarının da sensin lisanı*

*"Âlemlerin Rabbi."*

*"Rab"* büyük demektir. Âlemler ise bütün yaratıklardır. *"âlem"* lafzının akıl sahiplerine özgü çoğul kalıbı olan *"âlemîn"* şeklinde cemi yapılması, bu lafzın hem akıl sahiplerini hem de cansız varlıkları içermesinden dolayıdır. Bu itibarla Allah, varlıkların sahibi ve yoktan var edenidir. Yerleri ve yurtları içindekilerle birlikte var edendir.

*"Rab"* lafzı, aynı zamanda yaratılanları terbiye etmenin de adıdır. Buna göre Allah, yardımıyla abidlerin nefislerini, doğruya yöneltmekle taliplerin kalplerini, tevhidle ariflerin ruhlarını, nimetlerin varlığıyla cismanî varlıkları, kereminin müşahedesiyle de ruhları terbiye edendir. Bu lafız ayrıca, Allah'ın, kullarının işlerini yoluna koymasını da ifade etmektedir. Bu itibarla O, güzel himayesiyle zahidlerin işlerini, güzel yeterliliğiyle abidlerin işlerini, ezeli lütfuyla da bulanların -vecd içinde olanların- işlerini yoluna koyandır. Allah, kimilerinin işlerini yoluna koymuş ve onlar bu lütuf sayesinde muhtaç olmaktan çıkmışlardır. İşlerini yoluna koyduğu bazı kimseler ise O'na kavuşmayı arzulamışlardır. İşlerini yoluna koyduğu üçüncü bir kesim de, O'na kavuşmak için istikamet üzere olmuşlardır.

Şiir:

*Mutlu olduğu sürece izzetinin tezahürleri*
*Umurumda değil yaşamış mı yok mu olmuş insanlar*

اَلرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِۙ ﴿٣﴾

### 3- "O Rahman'dır ve Rahîm'dir."

Bu iki lafız, *"rahmet"* mastarından türemiştir. Rahmet ise ezelî bir sıfat olup nimet bahşetme iradesidir. Rahman ve Rahîm lafızları, aynı zamanda mübalağa anlamlı iki isim olup tahkîk ehline göre aralarında fazilet farkı bulunmamaktadır. Kimisine göre ise Rahman

lafzındaki mübalağa daha güçlü, anlatımı daha mükemmeldir. Aynı zamanda bu lafız, hiçbir şekilde Allah'tan başkası için kullanılamaz. Rahîm lafzı ise Allah'tan başkası için de sıfat olarak kullanılabilir. Bu arada kul, Allah'ın rahmeti sayesinde O'nun Rahman olduğunu öğrenmiştir. Eğer Allah'ın rahmeti olmasaydı hiç kimse O'nun Rahman olduğunu bilemeyecekti. Bu itibarla rahmet, nimeti bahşetme iradesi veya kimilerinin söylediği gibi, nimetin kendisidir. Nitekim nimetler, mahiyetleri bakımından değişik olduğu gibi, dereceleri de birbirinden farklıdır. Şöyle ki, bazı nimetler karaltı ve görüntülerle, bazıları da ruhlar ve kalplerle ilgilidir.

Bu iki lafız arasında ayrım gözetenlere göre Rahman, lafız bakımından özel, mana bakımından ise geneldir. Rahîm de, lafız bakımından genel, anlam bakımından özeldir. Bu bakımdan Allah, Rahman olduğu için hepsine zahirlerinin rahatına vesile olan şeyleri rızık olarak verirken, Rahîm olduğu için de müminleri, kalplerine hayat veren şeylere muvaffak kılmıştır. Böylece Rahman sıfatı rahat vesilesi olan şeylerle, Rahîm sıfatı da manevî işaretlerle gerçekleşir. Rahatlık iyiliklerle, işaret ise nurlarla meydana gelir. Rahman sıfatı tecellisinin keşfiyle, Rahîm sıfatı sahip çıkma lütfuyla; Rahman sıfatı, verdiği imanla, Rahîm sıfatı bahşettiği irfanla; Rahman sıfatı verdiği irfanla, Rahîm sıfatı ise üzerine aldığı gufranla, daha doğrusu Rahman sıfatı mağfiret nimetiyle, Rahîm sıfatı rıza lütfuyla; daha da doğrusu Rahman sıfatı saklı kıldıklarıyla, Rahîm sıfatı görülebilir ve açık kıldıklarıyla; hatta doğrusu Rahman sıfatı muvaffakiyet vermesiyle, Rahîm sıfatı ise hakikate dönüştürmesiyledir. Bir de muvaffakiyet muameleler için, hakikate dönüştürmek ise vuslatlar içindir. Muameleler irade sahiplerinin, vuslatlar ise bulanlarındır. Rahman sıfatı kulları için yarattığı şeylerle, Rahîm sıfatı onlardan defettiği şeylerledir. Yaratma güzel himayesiyle, defetme ise inayetinin güzelliğiyledir.

مَالِكِ يَوْمِ الدِّينِ ﴿٤﴾

4- "Ceza gününün mâlikidir."

( مَالِكِ ) Mâlik, mülk sahibi olandır. Allah'ın mülkü ise yoktan yaratma kudretidir. Bu itibarla *"melik"* lafzı, mâlikin mübalağasıdır.

Şanı yüce Allah, melik ve mâlik olup mülk de O'nundur. Aynı zamanda O'ndan başka hiçbir ilah olmadığı gibi, O'ndan başka yoktan yaratmaya gücü yeten hiç kimse de yoktur. Bu sebeple O, ilahlığında bir, mâlikliğinde de şeriksiz, yani ortaksızdır. Allah, abidlerin nefislerine malik olup onları hizmetine döndürmüş, ariflerin kalplerine mâlik olup onları marifetiyle onurlandırmış, O'nu kast edenlerin nefislerine mâlik olup onları divane kılmış, erenlerin kalplerine mâlik olup akıllarını başlarından almıştır. Ona ibadet edenlerin bedenlerine mâlik olup onlarla lütuf ve nimetleriyle muamele etmiş, sevdiklerinin ruhlarına mâlik olup celal ve cemaliyle onları keşfetmiştir. Tevhid erbabının dizginine mâlik olup onları dilediği gibi dilediği tarafa yöneltmiş, onları dilediği gibi dilediği hususta muvaffak kılmış ve bir an bile onları kendi halleriyle baş başa bırakmamış, kendilerini işlerine mâlik kılmamıştır. Onlar yerine onların olmuş, onları fena mertebesine kavuşturup kendine özgü kılmıştır.

**Bir Fasıl**

Allah'ın ihsanı, abidlerin kalplerine mâlik olunca lütfünü beklemişler, hâkimiyeti tevhid ehlinin kalplerine mâlik olunca da sonsuzluğuyla yetinmişlerdir. Tevhid erbabına, mâliklerinin kendisi olduğunu öğretince iradeleri ellerinden gitmiştir. Bilmişler ki, kulun hiçbir mülkü –tasarruf yetisi- ; mülkü olmayanın hiçbir hükmü; hükmü olmayanın da hiçbir iradesi bulunmamaktadır. Bu nedenle onlar ne taatinden yüz çevirebilir, ne hükmüne itiraz edebilir, ne iradesine karşı çıkabilir, ne de muhalefetine yeltenebilir. ( يَوْمِ الدِّينِ ) *"Din günü"* ise ceza ve neşir, hesap ve haşir günüdür. Şanı yüce Allah, her kese dilediği gibi karşılık verir. Böylece haşir günü kimileri, kendi fiilleriyle değil, Allah'ın lütfüyle kabul olunur, kimileri de suçlarıyla değil, Allah'ın hükmüyle reddedilir. Allah düşmanlarını hesaba çektikten sonra cezalandırır. Dostları ise sitem ettikten sonra yakınlaştırır.

Şiir:

*Öyle bir kavim ki bizi ele geçirdiklerinde*
*Bizi azat ederek cömertlik yaparlar*

إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَإِيَّاكَ نَسْتَعِينُ ﴿٥﴾

5- "Sadece sana kulluk eder ve sadece senden yardım dileriz."

Yani sana ibadet eder ve senden yardım dileriz. Bu arada söze mabudun zikriyle başlamak, O'na kulluk etmek ve O'ndan yardım dilemekten ibaret olan sıfatıyla başlamaktan daha yeterlidir. Nitekim bu üslup, söz bakımından daha vurgulu bulunmakta ve kulağa daha hoş gelmektedir. Öte yandan *"ibadet (kulluk)"*, teslimiyetin nihai noktasını yaşamaktır. Bu, emre uymak ve şer'in durduğu yerde durmakla olur. *"İstiane (yardım dilemek)"* ise Hak'tan yardım talep etmek demektir.

Bir de kulluk, çaba ve güç sarf etmeye işaret ederken, yardım dilemek güç ve kuvvet elde etme isteğini dile getirmektedir. Böylece kullukla kulun şerefi ortaya çıkar. Yardım dilemekle de kul için bir lütuf gerçekleşir. Kullukta şerefi vücut bulmakta, yardım dilemekle de yok olmama güvencesi sağlanmaktadır. Kulluğun zahiri aşağılanma, hakikati ise değer kazanma ve tahammüldür.

Şiir:

*Tezellül ettiği zaman boyunlar, yakınlaşmak üzere*
*Bizden sana, aziz olmaları alçalmalarındadır*

Aynı mealde diğer bir şiir:

*Beni teslim ettiğin zaman "zâl" ve "lâm"a (zülle)*
*Attın beni "ayn" ve "zâ"nın (azizliğin) içine*

**Bir Fasıl**

İbadet, Allah'ı kast edenlerin gezintisi, O'nu dileyenlerin dinlencesi, sevenlerin dostluk kaynağı, arifler için ise ruhun gıdasıdır. Gözleri onunla aydınlanır, kalplerinin sevinci ona bağlıdır, ruhlarına o huzur verir. Nitekim Hz. Peygamber (s.a.v.) de: *"Onunla bizi rahatlat ey Bilal!"* sözüyle buna işaret etmiştir. Kaldı ki, bir insan da diğer bir insan hakkında şu dizeleri söylemiştir:

*Ey kavim, Esmâ'mın yanındadır coşkum*
*Bilir bunu, duyan da gören de*
*Çağırma beni, "Esma'nın Kulu"ndan başka bir isimle*
*Çünkü benim en doğru ismimdir o*

Yardım dilemek ise Allah'ın kerem sıfatlarını yüceltmen, cömertliğinin sahasına inmen, hükmünün eline teslim olmandır. Böylece sen, O'nu geniş bir ümitle kast etmiş, O'na doğru büyük bir adım atmış, O'na güçlü bir ümit bağlamış, ezeli bir lütfe güven duymuş, kesin bir iradeye dayanmış ve zaaf göstermeksizin cömertliğine sarılmış olursun.

اِهْدِنَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيمَ ﴿٦﴾

6- "Bize doğru yolu göster!"

*"Hidayet"* yol göstermek demek olup aslı meylettirmektir. Hidayet edilen ise Hak Teâlâ'yı tanıyan, O'nun rızasını tercih eden ve O'na inanan kimsedir. Bu arada emir lafzında bir takdir mevcut olup halıhazırda zaten iman üzere olan müminlerin imanlarının devam etmesi ve artması talep edilmiştir. ( الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيمَ ) *"Sırat-ı müstakîm"* ise tevhid ehlinin üzerinde bulunduğu hak yol demektir. ( اِهْدِنَا ) *"İhdinâ"* da, bizi kendine meylettir, bizi kendine bağla, bize karşı delilimiz ol, gayretlerimizi yeterli kıl ve kaygılarımızı kendine odakla demektir.

**Bir Fasıl**

Sırlarımızı başkalarını görmekten alıkoy, kalplerimizde ışıldayan nurlar ortaya çıkar, niyetlerimizi maddî varlıkların kirinden arındırıp kendine yönlendir, bizleri talep ve akıl yürütme merhalelerinden yakınlık ve vuslat alanlarını cemetme mertebesine yükselt.

**Bir Fasıl**

Bize lütfettiğin vuslatın varlığını ve keşfine mazhar kılıp gösterdiğin celal ve cemalini, maddî varlıklarla hemhâl olmamıza engel kıl.

**Bir Fasıl**

Bize hakka giden doğru yolu göster ki, dünyevî ilişkilerin araçlarına dayanmayalım ve tevhidin yüzüne, zannın tozu ile gerekçe uydurmanın kaygıları düşmesin. *"Bizi doğru yola hidayet et!"* sözü, arayışımızın gölgelerinden sıyrılıp kudsiyetinin nurlarıyla aydınlanmamız için bizi durumlarımızın karanlıklarından kurtar, cömertliğinin yıldızlarıyla görebilmemiz ve böylece seni seninle bulmamız için çabamızın gölgesini üzerimizden kaldır, demektir.

**Bir Fasıl**

Bizi doğru yola hidayet et ki, şeytanın saptırmaları ve vesveselerinden bir yandaş, nefsin geçici arzularından bir arkadaş bize eşlik etmesin. Veya taklitler dünyasındaki bir zikzak bizi kavuşmaktan alıkoymasın. Yahut da alışılmış bir telkine olan meyil, görmemize engel olmasın. Veya şuursuzluk, gevşeklik, zan, alışkanlık, yılgınlık, irade zaafı, mala tamah etme veya onu çoğaltma arayışı gibi bir afetin cazibesine kapılmayalım.

**Bir Fasıl**

(الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيمَ) *"Sırat-ı müstakîm"*, hakkında Kitap ve Sünnet'ten delil bulunan, bid'atin etki edemediği ve yol bulamadığı, tevhid delillerinin doğruluğuna tanıklık ettiği, tahkik şahitlerinin dikkat çektiği, ümmetin selefinin üzerinde yürüdüğü, ibret delillerinin doğruluğunu dile getirdiği, izleyicisi nefsin arzularına karşı çıkan, kast edeni haklarından kendi isteği ile vazgeçebilen, izleyicisini tevhid alanına taşıyan, kendi çabasının sonucu olduğunu sanmaması için sahibine ilahi lütuf ve cömertliği gösteren şeydir.

صِرَاطَ الَّذِينَ اَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ غَيْرِ الْمَغْضُوبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّٓالّ۪ينَ ﴿٧﴾

7- "Kendilerine lütufta bulunduğun kimselerin yoluna ilet, gazaba uğramışların ve sapmışların yoluna değil."

Yani doğru yola hidayet etmek lütfünde bulunduğun kimselerin yoluna ilet. Bu kimseler, veliler ve seçkinlerdir.

Bu ayet ile ilgili olarak yapılan diğer yorumlar ise şöyledir:

- Yolda durmamaları ve gizli tuzakların engeline takılmamaları için fena mertebesine kavuşturduklarının ve kendinle, kendin için istikamet verdiğin kimselerin yoluna.

- Arzularının cazibesiyle yalpalamadan senin haklarını yerine getirmeleri lütfünde bulunduğun kimselerin yoluna.

- Beşerî özelliklerinden tertemiz kıldığın ve böylece seninle, sana ulaşanların yoluna.

- Beşeri özellikler sönmeden önce var olan şeytanın hilelerinden, nefislerin aldatmacalarından, zanların kuruntularından ve vuslat hesaplarından kurtulanların yoluna.

- Fikir yürütüp senden yardım dilemeyi, güç ve kuvvetten sıyrılmayı, ezelde kendileri için takdir edilen saadeti görmeyi, sevindiren veya sıkıntı veren icraatın konusunda tevhidini bilmeyi lütfettiğin kimselerin yoluna.

- Hizmet zamanlarında edebi korumak ve heybet sıfatının şuuruna varmaları lütfünde bulunduğun kimselerin yoluna.

- Apaçık hakikatlerin galebe çalışı esnasında kendileri için şeriatın adap ve hükümlerini güvence altına aldığın, böylece ne ilmin sınırının dışına çıkan ne de şeriatın hükümlerinden olan bir şeyi ihlal edenlerin yoluna.

- Hakikatin hâkimiyeti ortaya çıktığında kulluk lütfunda bulunduğun kimselerin yoluna.

(غَيْرِ الْمَغْضُوبِ عَلَيْهِمْ وَلَا الضَّآلِّينَ) *"Gazaba uğramışların ve sapmışların yoluna değil."*

Gazaba uğramışlardan maksat, başarısızlık etkenlerine maruz kalan, mahrumiyet afetlerine yakalanan, reddedilmişliğin hâkim olduğu, alıkonulma ve kovulma belirtilerinin öne çıktığı kimselerdir.

Gazaba uğramışlar ile ilgili diğer yorumlar ise şöyledir:

- Değersizlik züllüne yakalanan, kaybetmişlik musibetine uğrayan, böylece bir dayanakları olduğunu sandıkları için, o anda gerçekte mutsuzluk olan arzuların cazibesiyle meşgul olan kimselerdir. Bu kimselerin mutsuzluğunda ise Hakk'ın bir sırrı vardır.

- Bir süre Allah'a yakınlaşmanın esintileriyle tanıştıktan sonra şanı yüce Allah'ın, haklarında başka bir durum ortaya çıkarttığı kimselerdir. Böylece vuslatları uzaklaşmaya dönüştürülmüş, yakınlaşmayı ummuş ancak hiçbir murada erememişlerdir. İşte bunlar, çabası boşa giden ve hayal kırıklığına uğrayan kimselerdir.

- Muvaffakiyeti unutmak ve ilahî desteği görmezlikten gelmek suretiyle gazaba uğramış kimselerdir. Ezelî tercih, ilahî tasarruf ve mukadderatın meydana gelişini görme anlayışından sapmış kimselerin yoluna da değil.

- Hizmetin adabını gözetmemeleri ve taatin şartlarını yerine getirmede kusur işlemeleri sebebiyle gazaba uğramış kimselerdir.

- Bunlar, kaybolmuşluğun ıssız çöllerinde paramparça olan ve kaygıların, çeşit çeşit hesapların vadilerinde dağıttığı kimselerdir.

**Bir Fasıl**

Kul, bu sûreyi okurken *"amîn"* der. Bunu demek sünnettir. Anlamı ise: *"Allah'ım yap ve kabul et"*tir. Böylece kul, bu söz ile işlerde başarıya ulaşmaya, umutların gerçekleşmesine dua etmekte, ayağı muhtaçlık zeminine basmakta, yakarış diliyle kerem sahibi Allah'a yakarışta bulunmakta, güç, takat, kudret ve güç yetirebilme iddiasından kaçınmayı Allah katında vesile edinmektedir. Muhtacın en güçlü vesilesi ise, kesintisiz yardım dilemek suretiyle Allah'a olan bağlılığıdır. Çünkü bu bağlılık, samimi bir şekilde Allah'a yalvarmakla gerçekleşir.

سورة الْبَقَرَة

# BAKARA SÛRESİ

(Medine döneminde inmiştir. Kur'an-ı Kerim'in en uzun sûresi olup 286 âyettir. Adını, 67-73. âyetlerde yer alan "bakara" (sığır) kelimesinden alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**"Rahman ve Rahim olan Allah'ın adıyla."**

Besmelede yer alan *"isim"* lafzı, yükselme anlamındaki *"sumuvvun"* ile özellik anlamındaki *"simetun"* köklerinden türemiştir. O halde bu ismi zikreden kimsenin yolu, dış görünüşüyle her türlü çabayı harcama özelliğine sahip olmak ve gayretiyle müşahede makamlarına yükselmektir. Zira görünüşünde çabaların işareti, gönül dünyasında da vuslat için gayretle yükselme bulunmayan kimse, ne diliyle yaptığı zikrin sırrına ne de halinin duruluğuyla Allah'a yaklaşmanın lütfuna erer.

**Bir Fasıl**

*"Allah"* lafzı, ilahlık vasfına sahip olan demektir. İlahlık ise celâl sıfatlarına layık olmaktır. Buna göre; *"Allah'ın adıyla"* sözü, kuvvet ve kudrette benzeri olmayanın adıyla demektir. *"Rahman ve Rahîm"* ise karşılıksız lütuf ve yardımda bir olan demektir. Böylece ilahlığı duymak heybet ve teslimiyete, rahmeti duymak ise yakınlık ve kereme vesile olur. Bu ayeti duyan kimseye lütufta bulunan şanı yüce Allah, onu sahv -kendinde olma- ve mahviyet ile bekâ ve fenâ mertebeleri

arasında götürüp getirir. Ona ilahlık sıfatıyla tecelli ettiği zaman ise kendisine celalini gösterir. Bu durumda onun hali mahviyettir. Ona rahmet sıfatıyla tecelli ettiği zaman ise kendisine cemalini gösterir ve bu durumda onun hali kendinde olmaktır.

Şiir:

*Kendimden geçiyor, sonra diriliyorum seni gördüğümde*
*Senin katında nice diriliyor ve yok oluyorum*

الٓمٓ ﴿١﴾

1- "Elif Lâm Mîm."

Sûrelerin başındaki *"Mukattaa"* adı verilen bu harfler, kimilerine göre; Allah'tan başka hiç kimsenin te'vilini bilmediği müteşabih ayetlerdendir. Bunlara göre; her kitabın bir sırrı vardır. Allah'ın Kur'an'daki sırrı da bu mukattaa harflerdir. Kimileri de bu harflerin Allah'ın adının anahtarları olduğunu söylemiştir. Buna göre *"Elif"* harfi *"Allah"* lafzını, *"Lâm"* harfi *"Latîf"* adını, *"Mîm"* de *"Mecîd"* ve *"Melik"* adlarını ifade etmektedir.

Bu konudaki diğer görüşler ise şöyledir:

- Allah'ın bu harflere yemin etmesi, harflerin şerefli oluşlarından ötürüdür. Çünkü bunlar, Allah'ın tek harfe indirgenmiş isimleri ve hitâbıdır.

- Bu harfler sûrelerin adlarıdır.

- *"Elif"* harfi *"Allah"* adını, *"Lâm"* harfi *"Cibrîl"* adını, *"Mîm"* de, *"Muhammed"* adını ifade etmektedir. Buna göre; bu Kitap, Allah'tan Hz. Cibrîl'in dili üzerine Hz. Muhammed (s.a.v)'e inmiştir.

Öte yandan *"Elif"* harfi, diğer harflerden farklı olarak yazılışta başka bir harfe bitişmemektedir. Az sayıdaki birkaç harf dışındaki diğer harfler ise ona bitişmektedir. Böylece bu sıfatı düşündüğünde kul, bütün yaratıkların Allah'a muhtaç olduğunun, kendisinin ise hiç birine muhtaç olmadığının farkına varmış olur.

- İhlâs sahibi kul, elifin durumundan Allah'ın mekândan münezzeh oluşunu hatırlar. Zira diğer harflerin gırtlak, dudak, dil vb. mahreçlerde yerleri varken, elif bunların dışında kalmaktadır. Zira o, mahiyeti bakımından herhangi bir yere izafe edilememektedir.

- Elif, kulun sadece Allah'a yöneldiğine işaret etmektedir. Böylece kul, herhangi bir harfe bitişmeyen elif gibi dosdoğru olur ve Allah'ın huzurunda ibadete durmaktan ayrılmaz.

- Kulun ruh dünyasına Elif'le hitap edildiğinde kalbiyle sadece Allah'a yönelmesi istenir. Lâm ile hitap edildiğinde Allah'ın hakkını gözetmede teslimiyet içinde olmakla yükümlü kılınır. Mîm'i duyduğunda ise Allah'ın koyduğu yükümlülüklerde emrine uyması istenir.

- Her harfin kendine özgü bir şekli bulunmaktadır. Elif ise diğer harflerden farklı olarak dik boylu olma ve bu harflerden herhangi birine bitişmeme özelliğine sahiptir. Böylece, benzerleriyle ilişki kurmaktan ve uğraşlardan soyutlanan kimsenin de yüksek mertebeye sahip olacağına, en üst dereceyi kazanacağına ve kendisine birleşik olmayan, tek tek harflerle hitap edilmeye layık olacağına işaret etmek için Kitab'ın başı Elif'e ayrılmıştır. Nitekim bu durum, dostların hali saklı tutma ve olayı yabancı kimseden gizleme ilkesine de uymaktadır.

Şiir:

*Ona: "Dur bizim için" dedim o da: "Kâf" dedi*
*O korkmaz, sözünü unuttuğumuzu sanma*

Burada muhatap, durumu düşmanından saklamak için *durdum* dememiş, bunun Arapça karşılığı olan *"vakaftu"*nun *Kâf* harfini söylemekle yetinmiştir. Aynı zamanda sevgilinin gönlünü kırmamak için *durmam* da dememiştir.

Bir yoruma göre de açık ifadelerin çokluğu insanların geneli için, sembol ve işaretlerin çokluğu ise özel kimseler içindir. Allah, Hz. Musa'ya sözünü bin yerde duyururken peygamberimiz Hz. Muhammed'e (s.a.v.) *"Elif..."* demiştir. Ayrıca Hz. Peygamber (a.s.):

*"Bana kapsamlı sözler verilmiş, bu amaçla söz benim için iyice kısa tutulmuştur"* buyurmuştur. Kimisi de şöyle bir diyalog nakleder:

- Mevla'm bana: "Ne bu ağır hastalık?" dedi.

- "Beni arzuluyor musun?" dedim.

- O: "Lâm Elif" dedi.

ذٰلِكَ الْكِتَابُ لَا رَيْبَ فِيهِ هُدًى لِلْمُتَّقِينَ ﴿٢﴾

2- "O Kitap; onda asla şüphe yoktur. O, takva sahipleri için bir yol göstericidir."

Bu ayetle ilgili görüşler şöyledir:

- O kitap demek olan (ذٰلِكَ الْكِتَابُ) *"zâlike'l-kitâbu"*, bu kitap anlamına gelen هذا الكتاب *"hâze'l-kitâbu"* demektir.

- Buradaki işaret, daha önce indirilen hitabadır.

- Güvence verdiğim gün sana indirmeye söz verdiğim Kitap işte budur. Onda hiç şüphe yoktur ve indirileceği zaman da budur.

- İçinde senin ümmetine rahmet sözü verdiğim bu (o) Kitap'ta hiç şüphe yoktur. Böylece bu Kitap benim sözümle gerçek olmuştur.

- Kitap, Allah'ın insanlar ve onların akıbetleri hakkındaki saadet ve şekavet ile ilgili ezeli hüküm ve takdiri demek olup onda hiç şüphe yoktur.

- Buradaki işaret, Allah'ın, velilerinin kalplerine yazdığı iman, irfan, mahabbet ve ihsanadır. Bir de dostların kitabı, özellikle buluşmanın gerçekleşmediği durumlarda dostlar nezdinde azizdir. Aynı zaman dostlar, dostlarının kitabıyla teselli bulurlar ve yalnızlıklarını giderirler. Şifaları ve huzurları da ondadır.

Bu mealde iki şiir:

*Yazdıkların yanımdadır, ayrılmaz başucumdan*
*Onlardadır gizlediğim ıztırabın şifası*

-----------------------------------------------------------------

*Mektup, gözlerimizi aydınlatan şeyler getirdi*
*Şifa verdi kalplere ve ulaştı son gayelerine kalpler*
*Paylaştı insanlar sevinci aralarında*
*Parça parça ve ben idim en büyük payın sahibi*

(هُدًى لِلْمُتَّقِينَ) *"O, takva sahipleri için bir yol göstericidir."*

Yani o, şanı yüce Allah'ın, cehaletin karanlıklarından koruduğu, aklın nurlarıyla aydınlattığı ve vuslatın gerçekleriyle arındırdığı kimse için açıklama, delil, aydınlık ve dayanak olarak inmiştir. Ve bu Kitap, dostlar için şifa, düşmanlar içinse körlük ve imtihandır. Takva sahibi, takvasının görülmesinden sakınan ve ona güvenmeyen, kurtuluşunu ise sadece Mevla'sının lütfunda gören kimsedir.

اَلَّذِينَ يُؤْمِنُونَ بِالْغَيْبِ وَيُقِيمُونَ الصَّلٰوةَ وَمِمَّا رَزَقْنَاهُمْ يُنْفِقُونَ ﴿٣﴾

3- "Onlar, gayba inanır ve namaz kılarlar. Kendilerine verdiğimiz mallardan Allah yolunda harcarlar."

İmanın özü, önce tasdik sonra tahkiktir. Bu iki durumun sonucu ise muvaffakiyettir. Bu arada tasdik akıl ile yapılır. Tahkik ise ahdi korumaya ve haddi kollamaya çaba harcamaktır. Bu itibarla müminler, inançlarıyla tasdik eden, sonra çabalarında samimi olan kimselerdir.

Gayb ise kulun zorunlu olarak bilinenlerin dışında bildiği şeylerdir. Buna göre; kulun bir nevi akıl yürütme, düşünme ve delil getirmekle kavradığı her dini husus gaybe aittir. Bu nedenle şanı yüce Allah gaybdır. Allah'ın bildirdiği haşir, neşir, sevap, O'na dönüş, hesap ve azap da gaybdır.

Kimisine göre; gayba ancak beraberinde gaybın feneri olan iman eder. Bir de aklın deliliyle desteklenenler, ilmin delaleti ve yakinin işaretiyle iman etmişlerdir. Böylece doğru delil arama, kendilerini gaybı görebildikleri alanlara taşımıştır. İsabetli delil getirme de onları huzur mertebelerine ulaştırmıştır. O halde gayba imanları, ilimlerinin şüphe sebeplerini zorlamasıyla gerçekleşmiştir. İrfanın

çeşitleriyle kalpleri açılanların üzerini Allah, nurların perdeleriyle örter. Bu yolla Allah, beyanın tecellileriyle onları her türlü fikir ve düşünmeden, duru duygularla arayış içine girmekten, anlamsız sebeplerle reddedişten müstağni kılmıştır. Böylece ruh dünyalarında doğan güneşlerle onlar, delil fenerlerine başvurma ihtiyacından kurtulmuşlardır.

Bu mealde iki şiir:

*Kuşluk güneşidir gecem senin yüzünle*
*Oysa yürümekte karanlığı insanlar arasında*
*Alaca karanlıktayken insanlar*
*Gündüzün aydınlığındayız biz*
---------------------------------------------------
*Doğdu seni sevenin güneşi gece vaktinde*
*Ve aydınlandı bir daha batmamak üzere*
*Batar gündüzün güneşi gece vaktinde*
*Oysa batmaz kalplerin güneşi*

Bu arada gayba iman eden kimse, gaybın müşahedesinde kaybolur ve böylece gözlerden kaybolan gayba dönüşür.

Namaz kılmak ise onu rükünleri ve sünnetleriyle yerine getirmek, sonra da kendisi için namaz kılınanı görmek suretiyle namazı görmez hale gelmektir. Böylece Allah, hakkındaki ilahi tasarrufuyla o kimse emrin hükümlerini güvence altına alır. Oysa kul, bunlardan habersizdir. Bu durumda kendileri kıbleye dönük, kalpleri ise vuslatın gerçeklerinde gark olmuştur.

Şiir:

*Ona yöneldiğimi görüyorum namaz kıldığımda*
*Yüzümle, arkamda bile kalsa namazlık*
*Namaz kılıyorum, ancak kılarken bilmiyorum*
*Kuşluğu iki mi yoksa sekiz mi kıldığımı*

Sıradan kimseler, namaz kılmaya başlarken kalplerini, kıldıkları farzı bilmeye yönlendirmek için çaba harcarlar. Ancak gaflet vadilerinden dönmezler. Allah'ın dostu olma özelliğine sahip kimseler

de, kalplerini yerine getirdikleri farzı bilmeye yönlendirirler; ancak onlar, vuslatın gerçeklerinden dönmezler. Bu nedenle, gayba inanıp dinin hükümlerini gaflet içerisinde yerine getiren ile gayba inanıp vuslatın gerçekleriyle birlikte dinin hükümlerine dayanan kimse arasında büyük fark bulunmaktadır.

(وَمِمَّا رَزَقْنَاهُمْ يُنْفِقُونَ) *"Kendilerine verdiğimiz mallardan Allah yolunda harcarlar."*

Rızk, insanın yararlanabildiği şeydir. Tefsir ilminin bu konudaki yorumu şöyledir: Onlar, mallarını ilgili ilimde yapılan izaha uygun olarak sünnet veya farz olarak Allah yolunda harcarlar. İşârî izaha göre ise onlar, güçleri dâhilindeki hiçbir şeyi Allah'tan esirgemezler. Böylece canlarını kulluğun adabı uğrunda feda ederken, kalplerini de rablığı müşahede etmenin devamına hasrederler. Bu itibarla, şeriat ehlinin harcaması mal ile ilgili iken, hakikat ehlinin harcaması hal ile ilgilidir. Nitekim şeriat ehlinden, yirmide yarım ve iki yüzde beş ile yetinilmekte olup bütün mallarda nisap bu şekilde takdir edilir. Oysa hakikat ehli, bütün mallarından nefislerine veya arzularına bir an bile ayırsalar başlarına kıyamet kopar.

**Bir Fasıl**

Zahidler, nefislerine uymayı Allah yolunda feda ettiler. Böylece O'nun rızasını emellerine tercih ettiler. Abidler, güç ve kuvvetlerini Allah yolunda harcayarak gizli ve açık nefisleriyle uğraşmaktan geri durmadılar. Allah'ı murat edenler, kendilerini Mevlalarını anmaktan alıkoyan ne varsa hepsini O'nun yolunda feda ederek dünyalarından ve ahiretlerinden hiçbir şeye iltifat etmediler. Arifler ise Mevlaları dışındaki her şeyi Allah yolunda harcadılar. Böylece Hak Teâlâ, onları kendine yakın kıldı ve eşsizliğinin gereği olarak kendine kavuşturdu.

**Bir Fasıl**

Zenginler, nimetlerini akıbetleri için harcadılar. Fakirler ise çabalarını tövbeleri için harcadılar. Bir yoruma göre de, kulun varlığı kalbi, bedeni ve malıyladır. Nitekim müminler, kalpleriyle gayba iman ettiler, bedenleriyle namaz kıldılar, mallarıyla da Allah yolunda

harcama yaptılar. Böylece Allah'a yakın olmanın özelliklerini hak ettiler. Allah'ın hakkını bütün olarak yerine getirmekle de özel kul olmanın değerine layık bir hale geldiler.

وَالَّذِينَ يُؤْمِنُونَ بِمَٓا اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمَٓا اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ وَبِالْاٰخِرَةِ هُمْ يُوقِنُونَ ﴿٤﴾

4- "Yine onlar, sana indirilene ve senden önce indirilene iman ederler. Ahiret gününe de kesinkes inanırlar."

Gayba iman etmeleri, Kur'an'a ve Allah'ın Kur'an'dan önce indirdiği kitaplara iman etmelerini de gerektirmiştir. Ancak Allah, burada imanı, ona özel bir vurguda bulunmak için tekrar zikretmiştir. Bu arada gaybın aracı olan Hz. Peygamber'i bazı konularda tasdik etmek, haber verdiği diğer bütün konularda da onu tasdik etmek demektir. Zira onun doğruluğu, özel bir kayda tâbi kılınmaksızın, mutlak tanıklığı ifade eder. Ahirete kesinkes iman etmeleri ise gayba tanıklık etmelerinden ötürüdür. Zira Allah Resûlü'nün: *"Nasıl sabahladın?"* diye sorduğu Hâris: *"Ben kesinkes Allah'a iman etmiş olarak sabahladım. Ben cennet ehlinin ziyaretleştiklerini, cehennem ehlinin de havlaştıklarını ve Rabbimin arşının ortaya çıktığını görür gibiydim"* demiş, bunun üzerine Allah Resûlü: *"Doğru yoldasın, ayrılma!"* buyurmuştur.

Amir b. Abdilkays da: *"Gaybın perdesi kaldırılsa bile imanımdaki kesinlik ancak bu kadar olurdu"* demiştir. Bu arada *"yakîn"* diye ifade edilen kesin imanın özü, tahmin şeklindeki tereddütten kurtulmak ve zanna yol açan hususlardan uzaklaşmak demektir.

اُو۬لٰٓئِكَ عَلٰى هُدًى مِنْ رَبِّهِمْ وَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ﴿٥﴾

5- "İşte onlar, Rablerinden gelen bir hidayet üzeredirler ve kurtuluşa erenler de ancak onlardır."

Yani onlar, Rablerinden gelen bir açıklama, kesin inanç, keşif ve tahkik üzeredirler. Şöyle ki, Allah önce ayetleriyle, sonra sıfatlarıyla, sonra da hakkı ve zâtıyla kalplerine tecelli etmiştir.

Bu arada bazı kimseler, aklın delilleriyle, Rablerinden gelen hidayet üzeredirler. Onlar, bu delilleri yerinde kullanarak ilimlerin gerçeklerine ulaşmışlardır. Kimileri de Allah'ın yakınlaştırmaya vesile olan lütuflarını görebilecek anlama kabiliyetine sahiptirler. Böylece bunlar, rahmet ve keremi müşahede ederek kesin imanın sırrına ermişlerdir. Hakikatin, sırlarına göründüğü diğer bazıları ise gayb yoluyla Allah'ın Samed olma sıfatının hakikatine tanık olmuş ve böylece irfanın hükmüyle, basiret mertebesine ermişlerdir.

(وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ) *"Ve kurtuluşa erenler de ancak onlardır."* *Kurtuluşa ermek*, arzuladığını elde etmek ve aradığını bulmaktır. Nitekim bu durumda olanlar, Allah'ın huzurunda iken beka mertebesine ulaşmış ve bu sayede düşmanları kahredebilmişlerdir. Aynı zamanda nefislerini ve kalplerini hatalı duygu ve arzulardan temizlediklerinden akıl aracılığı veya zikir ve fikre başvurmaksızın Hak için Hak ile durmuşlardır.

اِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا سَوَآءٌ عَلَيْهِمْ ءَاَنْذَرْتَهُمْ اَمْ لَمْ تُنْذِرْهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿٦﴾

6- "Gerçek şu ki, kâfir olanları azap ile korkutsan da korkutmasan da onlar için birdir; iman etmezler."

Beşerî örtünün Hakk'ı görmesine engel olduğu kimsenin başlıca özelliği, kendisine hakkı gösterenin sözü ile nefsinin arzularına kapılmasına yardımcı olanın sözü arasında fark gözetmemesi, aksine gaflete yol açan hususlara daha çok meyletmesi ve onlara kulak vermeye daha arzulu olmasıdır. Nasıl olmasın ki? Kendisi ayrılık dağıyla damgalı, kaybolmuşluk hapsinde tutuklu, yakınlık yerinden yasaklıdır. Böyle kimseler, Hakk'ın güvencesine sahip olmadıkları için iman etmezler. Güvende olmayınca iman etmediler. Onlar hakkında Allah'ın ezelî takdiri ve iman ile küfrü ayıran hükmü kesinleşmiştir. Bir de Allah'ın kudretine karşı konulamaz ve her kim, Hakk'ın takdirine karışırsa, ilahî izzetin karşı konulmaz üstünlüğü onu ezip geçer ve ilahi hükmün sürprizleri onu kesip biçer.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Ezelde kötü halli yazıldığı için kâfir, sapıklığından dönmez. Aynı şekilde nefsinin zincirlerine vurulmuş kimse de gaybı ve hakkı görmekten engellenmiş durumdadır. Bu nedenle o, kendisi için doğru olanı görmemekte ve izlemesi gereken yolu izlememektedir.

- Sersemliğinin karanlıklarında kalan kimse için mürşidlerin nasihati ile saptırıcıların şaşırtmaları arasında fark bulunmamaktadır. Çünkü şanı yüce Allah, onun hallerinden insafın bereketlerini almıştır. Bu nedenle o, kabul kulağıyla anlamamakta ve hidayete çağıranı dinlememektedir. Şu şiirde denildiği gibi:

*Nasihatçiye bana nasihat etmek düşer*
*Bana ise nasihatçiye isyan düşmekte*

- Allah'ın, ezelî taksimatıyla kendisine lütfettiği nimetinden şaşan kimse, durumun kendi davranışlarının eseri olduğunu zanneder ve böylece kendi yaptıklarına dayanır ve Allah'ın lütuflarını göremez olur.

خَتَمَ اللّٰهُ عَلٰى قُلُوبِهِمْ وَعَلٰى سَمْعِهِمْ وَعَلٰٓى اَبْصَارِهِمْ غِشَاوَةٌ
وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ ﴿٧﴾

7- "Allah, onların kalplerini ve kulaklarını mühürlemiştir. Gözlerinin üzerinde ise bir perde bulunmakta ve onlar için büyük bir azap vardır."

Bir şeyi mühürlemek, o şeyin içinde olmayanı içine girmekten, içinde olanı da dışına çıkmaktan alıkoyar. Aynı şekilde Hak Teâlâ, düşmanlarının kalplerindeki cehalet ve dalaletin bu kalplerden ayrılmamasını ve basiret ile hidayetin bu kalplere girmemesini hükme bağlamıştır. Kalplerinin kulakları üzerinde şaşırmışlık örtüsü bulunmaktadır. O kulaklar, iman açısından Hakk'ın hitabını anlamaktan alıkonulmuştur. Şöyle ki, şeytanın vesveseleri ve nefislerin kaygıları, kulakları Hakk'ın ilhamlarını duymaktan engellemektedir. Havassa

gelince, ilimlerin yol açtığı düşünceler ve meseleleri araştırma çabalarının kalplerinde dolaşması, Hakk'ın sırlarının vasıtasız olarak üzerlerine inmesine engel olmuştur. Zaten söz konusu ilahî sırların inişi, hassın hassı olan kullar içindir. Bu nedenle Allah Resûlü, şöyle buyurmuştur:

*"Ümmetlerin içinde özel hitaba mazhar olan kimseler olmuştur. Şayet benim ümmetimde öyle biri varsa, o Ömer'dir."*

İlham ile konuşma özelliğine sahip kılınan bu zat, havassın içinden seçilmiş özellikli bir kimsedir. Tıpkı ilim sahibinin, avamın içinden seçilip özellikli kılınması gibi. Yabancıların basiretleri üzerinde ise perde bulunduğundan dolayı onlar, ne ilim gözüyle ne de hakikatlerin basiretiyle görürler. Bir şey üzere olduklarını sandıkları, başlarına getirilen sıkıntıdan gafil oldukları ve (...) için de hem halıhazırda hem de gelecekte (...) Dünyada ayrılığı, ahirette de yakıcılığı vardır.

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَقُولُ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَبِالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَمَا هُمْ بِمُؤْمِنِينَ ﴿٨﴾

8- "İnsanlardan bazıları da vardır ki, inanmadıkları halde: 'Allah'a ve Ahiret gününe inandık' derler."

Onlar, münafıklıklarına devam ettiler ve Müslümanları yanıltmayı alışkanlık haline getirdiler. Bunun üzerine Allah: *"Oysa onlar inanmış değildirler"* sözüyle onların iç yüzlerini meydana çıkardı.

Şiir:

*Her kim süslenirse kendisinde olmayan bir şeyle*
*Rezil eder iddiasını imtihan*

Bu kimselerin söyledikleri anlamsız olduğundan yaptıklarının vebali, o sözlerde var olduğunu sandıkları faydadan fazla olmuştur. Çünkü Allah şöyle buyurmuştur:

(اِنَّ الْمُنَافِقِينَ فِي الدَّرْكِ الْاَسْفَلِ مِنَ النَّارِ)

*"Şüphe yok ki münafıklar, cehennemin en alt katındadırlar."* (Nisâ, 4/145)

Eğer münafıklıkları olmasaydı, azapları artmazdı. Kimisine göre de, onlar davranışlarında samimi olmadıkları için sözlerinin doğruluğu, kendilerine fayda vermemiştir. Zira Allah şöyle buyurmuştur:

(وَاللّٰهُ يَعْلَمُ اِنَّكَ لَرَسُولُهُ وَاللّٰهُ يَشْهَدُ اِنَّ الْمُنَافِقِينَ لَكَاذِبُونَ)

*"Allah, münafıkların kesinlikle yalancı olduklarını bilmektedir."* (Münâfikûn, 63/1) Onlar: "Biz senin, Allah'ın peygamberi olduğuna şahitlik etmekteyiz" diyorlardı. Böylece, kendisinde mevcut olmayan bir şeyi kendisinde varmış gibi gösteren kimse, gerçekleri delilleri ile bilen tahkik ehli katında derhal rezil olur.

Şiir:

*Ey Suleymâ'ya âşık olduğunu iddia eden kimse*
*Sen kesilen tırnak kadar bile onunla ilgili değilsin*
*Sen onu sevmede o "vav" harfi gibisin ki*
*İmlada haksız yere eklenmiş "Amr" lafzının sonuna*

يُخَادِعُونَ اللّٰهَ وَالَّذِينَ اٰمَنُوا وَمَا يَخْدَعُونَ اِلَّٓا اَنْفُسَهُمْ وَمَا
يَشْعُرُونَ ﴿٩﴾

9- "Onlar, sözde Allah'ı ve müminleri aldatırlar. Halbuki onlar ancak kendilerini aldatırlar ve bunun farkında değillerdir."

Aldatma girişimlerinin vebali ve sebep olduğu azap, kendilerine dönmüştür. Böylece onlar, gerçekte kendilerini aldatmış gibi oldular. Bu nedenle sadece kendi değerlerini düşürmüş, kendilerini hafife almış, fiillerinin vebalini ancak onlar tatmış ve sadece kendi can damarlarını kesmiş oldular. O halde kim gerçek bilgilerin sahibini kandırmaya kalkışırsa, o sadece kendini kandırmış olur.

Bu ayette işaret edilen husus ise şudur: Kim, Allah'ın ezelî lütfünü unutmuş görünerek ben merkezli konuşursa, başkası hakkında kötü zan ve yanlış kanaatte bulunur. Bu vehim ise, cezaların en çetin olanıdır. Çünkü gördüğü serabı şarap zanneder, ancak yanına va-

rınca onun bir hiç olduğunu görür ve karşısında hesabını noksansız gören Allah'ı bulur.

فِي قُلُوبِهِمْ مَرَضٌ فَزَادَهُمُ اللّٰهُ مَرَضًا وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيمٌ بِمَا كَانُوا يَكْذِبُونَ ﴿١٠﴾

10- "Onların kalplerinde bir hastalık vardır. Allah da onların hastalığını çoğaltmıştır. Söylemekte oldukları yalanlar sebebiyle de onlar için elim bir azap vardır."

Münafıkların kalplerinde şüphe hastalığı vardır. Allah da Müslümanları şaşırtmaları ve şaşırtmakla kurtulduklarını vehmetmeleri sebebiyle onların hastalığını artırmaktadır. Sonra onlar için ahirette acısını çekecekleri acıklı ve acıtıcı bir azap vardır. Ayetin işari izahı ise şöyledir: Niyetine dünyalık arzusunu karıştıran ve iradesine nefsinin hevesini bulaştıran kimse, niyetiyle bir adım ileri atarken aslında zevklerine ve nefsine uyarak bir adım geri atmak durumunda kalır. Bu nedenle o, ne samimiyetle Allah'a yönelen biridir ne de kendinden emin bir akıl sahibidir. Eğer münafıklar, itikatlarında samimi olsalardı, dünyada müşrik ve zimmîlere uygulanan cizye vb. yükümlülüklerden kurtuldukları gibi ahirette de azaptan kurtulmuş olurlardı. Aynı şekilde eğer Allah'a yönelmek isteyen kimse, samimi olsaydı kalbiyle ermişliğin gerçeklerine ulaşır ve arzuladığı muradı elde etmede doğruluğun bereketlerine sahip olurdu. Ne var ki durumu şu beyitte söylendiği gibidir:

*Sebat göstermedik ki bizim için adalet şaşmadan gerçekleşsin*
*İyi niyetli olsaydık eğer kurtulurduk zorluklardan*

Kulluğu hastalıklı olan kimseyle cennetlerin dereceleri arasına engeller girer. Niyeti hastalıklı olan kimsenin de yakınlık ve yakarış mertebelerine ulaşmasına engel olunur. Dünyaya meyledip nefsine uyanlara gelince, aldanma yurdu olan dünyayla tatmin olmaları, kalpleri için bir hastalıktır. Hastalıklarının artması ise hırslarının artışıyla

gerçekleşir. Onlar, dünyadan – gerçekte azaplarını çabuklaştıran – bir şey buldukça, bulduklarına dönük hırsları kat kat artmış olur.

Sonra çabuklaştırılan azaplarından biri de, zihinlerinin dağınık ve hayatlarının mutsuz olmasıdır. Bu hayat için Allah'tan yüz çevirirler. Nefislerinin peşine düşmeyi tercih etmeleri de, onlara bir huzur ve rahat sağlamaz. İşte Mevla'sıyla birlikte olmaktan yüz çevirenin cezası budur. Aynı mealde şu şiir söylenmiştir:

*Değişince sen değiştik biz de ve yazıklar olsun*
*Avunmak için bedel arayıp bulmayana*

Söylemekte oldukları yalanlar sebebiyle uğradıkları acıklı azap ile ilgili işaret ise, keşif günü onların, doğruyu söyleyen benzerlerinin nasıl da vuslata erdiklerini, kendilerinin ise nasıl da hüsrana uğradıklarını gördükleri zaman, çekecekleri hasretten başka bir şey değildir.

وَاِذَا ق۪يلَ لَهُمْ لَا تُفْسِدُوا فِي الْاَرْضِۙ قَالُٓوا اِنَّمَا نَحْنُ مُصْلِحُونَ ﴿١١﴾

11- "Onlara: 'Yeryüzünde fesat çıkarmayın' denildiği zaman: Biz, 'Ancak ıslah edicileriz' derler."

اَلَٓا اِنَّهُمْ هُمُ الْمُفْسِدُونَ وَلٰكِنْ لَا يَشْعُرُونَ ﴿١٢﴾

12- "Şunu bilin ki, onlar bozguncuların ta kendileridir, lakin anlamazlar."

Bu ayetlerin işaret ettiği şudur: Kalplerinin içinden gelen yol gösterici gizli bir ses, onları, doğruyu bulmalarının vesilesi olan şeye çağırdığı zaman te'vil ruhsatlarını araştırmaya koyulurlar ve kalplerinin katılığına tanıklık eden hususları görmezlikten gelirler. Bu kimseler, hakkın, kalplerinin ilhamlarından gelen delilini inkâr ettiklerinde Allah, hallerinden bereketi alır. Bunun yerine onları, hakkı duyamaz kılar, tarikata itirazda bulunmakla imtihan eder ve tarikata inanmayı kendilerinden alır.

Bir de nasıl ki, mürted kişi Müslümanların en aşırı düşmanı ise, aynı şekilde müritlikten dünyaya ve âdete dönen kimse de bu tarikatı herkesten daha çok inkâr eder ve onun ehlinden daha fazla uzak olur. Atasözünde de: *"Birikimini kaybeden kimse, başına gelenlerin, bütün insanların başına gelmesini temenni eder"* denilmiştir. Bir de müridlik yolundan dönenlerin yardımı da kabul edilmez. Nitekim Hz. Peygamber (s.a.v.) de, Sa'lebe'nin zekâtını kabul etmemiştir.

Bir yoruma göre de, yalancının yüzüne: *Sen yalan söyledin,* demek rüsvalık olarak ona yeter. Nitekim onlar: (اِنَّمَا نَحْنُ مُصْلِحُونَ) *"Biz, ancak ıslah edicileriz"* deyince Allah kendilerini yalanlayarak şöyle buyurdu: (اَلَٓا اِنَّهُمْ هُمُ الْمُفْسِدُونَ وَلٰكِنْ لَا يَشْعُرُونَ) *"Şunu bilin ki, onlar bozguncuların ta kendileridir, lakin anlamazlar."* Yani, biz onları biliriz ve kendilerini rezil ederiz.

وَاِذَا قِيلَ لَهُمْ اٰمِنُوا كَمَٓا اٰمَنَ النَّاسُ قَالُوٓا اَنُؤْمِنُ كَمَٓا اٰمَنَ
السُّفَهَٓاءُ اَلَٓا اِنَّهُمْ هُمُ السُّفَهَٓاءُ وَلٰكِنْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿١٣﴾

13- "Onlara: 'İnsanların iman ettiği gibi siz de iman edin' denildiği zaman: 'Biz, hiç akılsızların iman ettikleri gibi iman eder miyiz?' derler. Biliniz ki, akılsızlar ancak kendileridir; fakat bunu bilmezler."

Bu ayetteki işaret şöyledir: Münafıklar hakka davet edilince Müslümanları akılsızlıkla nitelediler. Aynı şekilde servet sahibi kimseler de, dünyayı terk etmeleri istendiği zaman, rüşd ehlini tembellik ve acizlikle itham eder ve: *Fakirlerin hiçbir dayanağı bulunmamaktadır. Çünkü onların ne malları ne itibarları ne rahatları ne de hayatları vardır,* derler. Gerçekte ise fakir olan ve sıkıntı çekenler onlardır. Onlar, zül korkusuyla zülle düştüler ve itibar kaybetme kaygısıyla itibarsızlığı şiar edindiler. Saraylar yaptılar; fakat kabirleri mesken tuttular. Beşiği süslerken mezar kanalına yerleştiler, gaflet meydanında cirit atarken hasret vadilerinde tökezlediler. Yakında öğrenecekler, ancak bilgilerinin kendilerine fayda vermediği ve hiçbir şeyin işlerine yaramadığı bir zamanda.

Şiir:

*Göreceksin toz dağıldığı zaman*
*Altındakinin at mı yoksa eşek mi olduğunu!*

وَإِذَا لَقُوا الَّذِينَ اٰمَنُوا قَالُوٓا اٰمَنَّا وَإِذَا خَلَوْا إِلٰى شَيَاطِينِهِمْ قَالُوٓا
إِنَّا مَعَكُمْ إِنَّمَا نَحْنُ مُسْتَهْزِؤُنَ ﴿١٤﴾

14- "Bu münafıklar, müminlerle karşılaştıkları vakit: 'İman ettik' derler. Şeytanlarıyla baş başa kaldıklarında ise: 'Biz sizinle beraberiz, biz onlarla sadece alay ediyoruz' derler."

اَللّٰهُ يَسْتَهْزِئُ بِهِمْ وَيَمُدُّهُمْ فِي طُغْيَانِهِمْ يَعْمَهُونَ ﴿١٥﴾

15- "Gerçekte Allah, onlarla alay eder de azgınlıklarında onlara fırsat verir. Bu yüzden onlar, bir müddet başıboş dolaşırlar."

Münafıklar, kâfirlerin dostluğu ile Müslümanlarla beraber olmayı bir arada yürütmek istediler. Bu nedenle Müslümanların karşısına çıktıkları zaman: *Biz, sizinle beraberiz,* derlerdi. Kendi benzerleri olan kâfirlerle baş başa kaldıklarında ise onlara karşı samimi olduklarını ortaya koyarlardı. Böylece her iki durumu bir araya getirmek istediklerinden her ikisinden de yoksun bırakıldılar. Şanı yüce Allah şöyle buyurur:

(مُذَبْذَبِينَ بَيْنَ ذٰلِكَ لَآ إِلٰى هٰٓؤُلَٓاءِ وَلَآ إِلٰى هٰٓؤُلَٓاءِ)

*"Bunların arasında bocalayıp durmaktalar. Ne onlara bağlanıyorlar ne bunlara."* (Nisâ, 4/143)

Müritlik ile âdeti bir araya getirmek isteyen de böyledir. Zıtlar, bir araya gelemediğinden bu kaynaşma gerçekleşmez. Nitekim kitabet akdi yapılan köle, üzerinde bir dirhem bile borç kaldığı sürece köledir. Ayrıca bir taraftan gece karanlığı bastığında diğer taraftan gündüz geri çekilir. Her tarafta gönül bağı içinde bulunduğu bir arkadaşı olan kimse, felaketlerin hedefi olur ve herkesten zarar görür.

Kalbi sürekli yıkık olur ve hiçbir yaşama biçimiyle huzur bulmaz. Gönül dünyasının ise hakikatte payı yoktur.

Şair şöyle der:

*Görüyorum seni Musa'nın kavminin bakayası olarak*
*Şöyle ki, dayanamazlar onlar yemeğe*

Bu arada münafıklar: *"Biz onlarla sadece alay ediyoruz"* deyince şanı yüce Allah: *"Gerçekte Allah, onlarla alay eder"* buyurdu. Yani Allah, onları alay etmeleriyle cezalandırır. Aynı şekilde münafıklar topluluğu, dizginlerini nefsanî arzularına kaptırınca bu arzular, onları tefrikanın vadilerine sürüklediler. Böylece onlar, hiçbir yerde karar kılamadıklarından kaybolmuşluğun şaşkınlığı içerisinde bocaladılar. Bir de Allah, onlara azgınlıklarında başıboş dolaşma fırsat verdiği gibi, kuruntularla avunma sürelerini de uzatır. Bu nedenle ecelleri yaklaştığında emelleri daha da uzar ve amelleri daha da kötüleşir. İşte bu, yaptıklarının karşılığı ve işlediklerinin vebalidir. Çirkin amellerinin gözlerinde güzel gösterilmesi de, onlara verilmiş en ağır cezadır. İçinde bulundukları fetrete rıza göstermeleri ise, onlar için en büyük musibettir.

أُولٰٓئِكَ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الضَّلَالَةَ بِالْهُدٰى فَمَا رَبِحَتْ تِجَارَتُهُمْ وَمَا
كَانُوا مُهْتَدِينَ ﴿١٦﴾

16- "İşte onlar, hidayete karşılık dalaleti satın alanlardır. Ancak onların bu ticareti kârlı olmamış ve kendileri de doğru yola girmemişlerdir."

Bu ayetten çıkan işaret şudur: Zevkler dünyasında kalmak suretiyle haklardan mahrum kalan kimseler, alış verişlerinde zarar etmiştir ve ticaretleri kazançlı olmamıştır. Ahiret yerine dünyaya rıza gösteren kimse, zaten açık zararda olur. Dünyayı veya ahireti Hak Teâlâ'ya tercih eden kimsenin zararı ise çok daha büyük olur.

Nimetleri kaybetme musibetine uğrayan kimse aldandığına göre, münacattan uzaklaşma musibetine maruz kalan, kalbiyle Mevla'sından kopan ve şehvetlerin esaretinde kalan kimsenin ne kalbine giden bir elçi, ne ruhu için bir vuslat, ne beraberinde bir münacat, ne kendisine bir yöneliş ne de sırrında bir şuhud söz konusu olur. İşte imtihana tabi tutulan gerçek musibetzede budur.

Bir de bir vakit kaybeden kimse, şüphesiz Rabbini de kaybetmiş demektir. Zira vakitlerin telafisi yoktur ve yeri doldurulamaz.

Bir şairin dediği gibi:

*Sen idin göz bebeğim*
*Ağladı sana gözlerim*
*Senden sonra dileyen ölsün*
*Zira senin içindi endişem*

مَثَلُهُمْ كَمَثَلِ الَّذِي اسْتَوْقَدَ نَارًا فَلَمَّآ اَضَاءَتْ مَا حَوْلَهُ ذَهَبَ اللّٰهُ
بِنُورِهِمْ وَتَرَكَهُمْ فِي ظُلُمَاتٍ لَا يُبْصِرُونَ ﴿١٧﴾

17- "Münafıkların durumu, bir ateş yakan kimse misalidir. O ateş yanıp da etrafını aydınlattığı anda Allah, hemen onların aydınlığını giderir ve onları karanlıklar içinde bırakır. Artık görmezler."

Allah, münafıklar için verdiği bu örnekte onları gecenin başlangıcında ateş yakan, sonra ateşleri sönen ve bu yüzden karanlıkta kalan kimseye benzetmiştir. İşte münafık da görünürde bir miktar dünyalık huzura kavuştuktan sonra ahirette acıklı azapla imtihan edilir veya söyledikleriyle bir miktar avunduktan sonra inkârının karanlığında kalır.

Bu ayetin işareti ise, iyi bir başlangıç yapıp müritlik yolunu izleyen, bir süre özenli olmaya çalışan ve üst üste gelen zorluklara göğüs geren, ancak henüz hakikate ermeden dünya sevgisine ve daha önce içinde bulunduğu beşerî karanlıklara dönüş yapan kimseye yöneliktir. Bu kimsenin ağacı yapraklanmış; ancak meyve vermemiş, dalı çiçek açmış; fakat meyvesini toplayamamıştır. Üstüne çöken fetret,

ereceği huzurun ay ışıklarını çabucak karartmıştır. Çağrı lütfünün dili onu huzura aldıktan sonra kahrın eli kendisini geri çevirmiştir. Böylece kalbi, yakınlık mertebelerinden uzaklaşmış ve nefsi, Allah'ın rızasını arayanlardan nefret eder hale gelmiştir.

Böylece o, şu şiirde söylendiği gibi olmuştur:

*İçimiz rahat edip sevindik derken*
*Ayrılıktan kurtulduk zannederken*
*Gönderdi ayrılık gizlice elçilerini*
*Ve dağıttılar toparladığımız işimizi*

Aynı şekilde bu ayette, azıcık bir maneviyata kavuşunca bulunduğu seviyenin üzerinde bir takım iddialarda bulunan kimseye de işaret vardır. Bu kimse, (...) sahip olduğu hallerini kaybedince iddialarının karanlığında kalır.

Dünyalık mala ve cazibelere kapılan kimse de öyledir. İşleri yoluna girip şansı yaver gider ve muradı zirvedeyken ölüm, kurduğu pusulardan karşısına çıkıverince bu kimse, her şeyi bırakıp bütün sorumlulukları taşımış olur.

صُمٌّ بُكْمٌ عُمْيٌ فَهُمْ لَا يَرْجِعُونَ ﴿١٨﴾

18- "Onlar sağırdırlar, dilsizdirler ve kördürler. Bu sebeple onlar geri dönemezler."

Sağırdırlar, kalplerinin kulaklarıyla Hakk'ın davetçilerini duyamazlar. Dilsizdirler, ruh dünyalarının dilleriyle Hakk'a yakarışta bulunamazlar. Kördürler, kaderin cereyan edişini gözleriyle göremezler. Böyle onlar, gafilliklerinden dönüş yapmazlar ve kapıldıkları yanlış yoldan vazgeçmezler.

Bir diğer izah da şöyledir: Sağırdırlar, hakkı işitmezler. Dilsizdirler, hakkı söylemezler. Kördürler, Hak'tan hareketle mahlûku görmezler. Ezelde, günahlardan sıyrılmaları hükme bağlanmamış ve kader, yanlış yoldan vazgeçmelerine yardımcı olmamıştır.

اَوْ كَصَيِّبٍ مِنَ السَّمَآءِ فِيهِ ظُلُمَاتٌ وَرَعْدٌ وَبَرْقٌ يَجْعَلُونَ اَصَابِعَهُمْ فٖٓي اٰذَانِهِمْ مِنَ الصَّوَاعِقِ حَذَرَ الْمَوْتِ وَاللّٰهُ مُحٖيطٌ بِالْكَافِرٖينَ ﴿١٩﴾

19- "Yahut onların durumu, gökten sağanak halinde boşanan, içinde yoğun karanlıklar, gürültü ve yıldırımlar bulunan yağmura tutulmuş kimselerin durumu gibidir. O münafıklar, yıldırımlardan gelecek ölüm korkusuyla parmaklarını kulaklarına tıkarlar. Halbuki Allah, kâfirleri çepeçevre kuşatmıştır."

Ayette (اَوْ) *"Yahut"* sözcüğüne, münafıkların durumunu iki türlü örneklemek için yer verilmiştir. Kur'an, münafıkların durumunu gökten inen bir yağmura, Kur'an'daki vaat ve uyarıları da yağmurun içindeki yıldırım ve şimşeğe benzetirken, münafıkların halini de yıldırımların sesini duyunca kaçmaya yeltenen kimsenin haline benzetmiştir. Ayette aynı şekilde gaflet ehline de işaret vardır. Bu kimseler, vaizlerin vaazı kulaklarını çınlattığı zaman veya saadetin nurları kalplerinde belirdiği zaman, eğer içinde bulundukları gafletten ayılsalardı saadete ereceklerdi. Ne var ki onlar, yalancı emelleriyle avunmaya meylettiler, yanlış yollarında ısrar ettiler, geçersiz mazeretler ileri sürdüler. Bir de eğer gücümüz yetseydi, sizinle beraber çıkardık diye Allah'a yemin ederek kendilerini helak etmekteler ve yeminleriyle tehlikeye çabalamaktadırlar. Şiir:

*İyi insan seni sevgisiyle ödüllendirdiği zaman*
*Örter çirkin olanı ve çıkarır ortaya iyiliği*
*Kötü de alakayı kesmek istediğinde*
*Usanır vuslattan ve başlar yakınmaya*

يَكَادُ الْبَرْقُ يَخْطَفُ اَبْصَارَهُمْ كُلَّمَآ اَضَآءَ لَهُمْ مَشَوْا فٖيهِ وَاِذَآ اَظْلَمَ عَلَيْهِمْ قَامُوا وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ لَذَهَبَ بِسَمْعِهِمْ وَاَبْصَارِهِمْ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدٖيرٌ ﴿٢٠﴾

20- “O esnada şimşek sanki gözlerini çıkaracakmış gibi çakar, onlar için etrafı aydınlatınca orada birazcık yürürler, karanlık üzerlerine çökünce de oldukları yerde kalırlar. Allah dileseydi, elbette onların kulaklarını sağır, gözlerini kör ederdi. Allah şüphesiz her şeye kadirdir.”

Bu ayet, münafıklar hakkında verilen -aynı zamanda diğer gafiller için de geçerli olan- tamamlayıcı örnektir. Onlar, vaazın tecellilerine mazhar oldukları veya kalpleri yumuşamaya meylettiği veya içlerine biraz korku girdiği zaman, halleri tövbeye yakınlaşır ve günahlardan dönüş arzuları güçlenir. Ancak düşünceleriyle baş başa kalıp yandaşlarına danışınca, aileleri ve çocukları dünyalıklara dönmelerini tavsiye eder, onlara sözde nasihat için uzunca dil döker zaaf ve acizlikle kendilerini tehdit ederler. Bunun üzerine niyetleri zayıflar, iradeleri yok olur şu şiirde söylenen duruma düşerler:

*Tövbe ettiği zaman döner cehaletine*
*Tıpkı çökmeye başlayan zayıf kimse gibi*

(وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ لَذَهَبَ بِسَمْعِهِمْ وَاَبْصَارِهِمْ) *“Allah dileseydi, elbette onların kulaklarını sağır, gözlerini kör ederdi.”*

Yani Allah, münafıkları manen sağır ve kör ettiği gibi, dileseydi bedenen de onları sağır ve kör edebilirdi. Bu arada gaflet ehli olan ve İslam’ın zahirî hükümleriyle yetinenler de böyledir. Allah, onları gizledikleri hallerin safiyeti konusunda hakikate ulaşmaktan mahrum ettiği gibi, yaptıkları zahirî ibadetlerde de kendilerini başarısız kılmaya kadirdir.

يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ اعْبُدُوا رَبَّكُمُ الَّذ۪ي خَلَقَكُمْ وَالَّذ۪ينَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَۙ ﴿٢١﴾

21- “Ey insanlar, sizi ve sizden öncekileri yaratan Rabbinize kulluk ediniz. Umulur ki, böylece korunmuş olursunuz.”

Kulluk, emre uymak demektir. Bu ise gaybın gereklerini gerçekleştirmek için bütün enerjiyi sarf etmek demek olup buna kalp

ile tevhid, ruh ile dünyadan arınmak, niyetin sırf Allah için olması, nefse boyun eğdirmek ve hükme teslim olmak da dâhildir. Diğer bir yoruma göre Allah'a kulluk; haramlardan arınmak, ibadetleri yerine getirmede direnç göstermek, dinî vecibeleri huşu ve teslimiyetle karşılamak, tembellik ve gevşekliğe kapılıp kalmaktan uzak durmak demektir.

(لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ) *"Umulur ki, böylece korunmuş olursunuz."*

Bu, Allah'ın onlar için kulluğu yapılabilir kılması ve kolaylaştırması demektir. Bir de Allah, (لَعَلَّكُمْ) *"umulur ki siz"* ifadesiyle onları korku ve ümit sınırında tutmuştur.

Takvanın mahiyeti ise hakkında uyarı yapılan azaptan sakınmak ve ibadeti yerine getirmektir.

اَلَّذ۪ي جَعَلَ لَكُمُ الْاَرْضَ فِرَاشًا وَالسَّمَٓاءَ بِنَٓاءًۖ وَاَنْزَلَ مِنَ السَّمَٓاءِ مَٓاءً فَاَخْرَجَ بِه۪ مِنَ الثَّمَرَاتِ رِزْقًا لَكُمْۚ فَلَا تَجْعَلُوا لِلّٰهِ اَنْدَادًا وَاَنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٢٢﴾

22- "O Rab ki, yeri sizin için bir döşek, göğü de bir tavan yaptı. Gökten su indirerek onunla, size besin olsun diye yerden çeşitli ürünler çıkardı. Artık bunu bile bile Allah'a şirk koşmayın."

Allah, yüce zâtını onlara verdiği nimetlerle kendilerine tanıtmak istemiştir. Bu nimetler; kendileri için gökyüzünü yükseltilmiş bir tavan, yeri de konulmuş bir döşek olarak yaratması, bitkileri de yağmurla birlikte toplu bir rızk olarak çıkartmasıdır. Ayetle ilgi olarak yapılan bir yorum da şöyledir: Allah, insanlara muhtaç oldukları nimetleri vermekle onları emsallerinin minnetinden kurtarmıştır. Şöyle ki, onlar için gökyüzü bir örtü, yeryüzü bir döşek, helal gıdalar rızk, itaat bir meslek, ibadet bir meşguliyet, zikir bir dost, Allah da vekil olarak yeter. O halde Allah'a ortaklar koşmayın, ihtiyaçlarınızı aramada kalplerinizi başkalarına bağlamayın. Çünkü şanı yüce Allah'ın, kâinatı yoktan var etmede eşi ve kendisinden başka hiçbir

yaratıcı bulunmamaktadır. Bu nedenle, varlıklardan zararlı veya faydalı, iyi veya kötü bir şeyin bir yaratık tarafından meydana getirildiğini vehmettiğiniz zaman bu, gerçekte şirk olur.

Oysa bilirsiniz ki, kendisi muhtaç olan bir kimse, ihtiyaç arz edilmeye ehil değildir. Bir de muhtacın muhtaca sarılması ve güçsüzün güçsüze bel bağlaması ihtiyacı artırır, zarar verici unsurları ortadan kaldırmaz.

وَاِنْ كُنْتُمْ فِي رَيْبٍ مِمَّا نَزَّلْنَا عَلٰى عَبْدِنَا فَأْتُوا بِسُورَةٍ مِنْ مِثْلِهِ
وَادْعُوا شُهَدَٓاءَكُمْ مِنْ دُونِ اللّٰهِ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٢٣﴾

23- "Eğer kulumuza indirdiklerimizden herhangi bir şüpheye düşüyorsanız, haydi onun benzeri bir sure getirin. Eğer iddianızda doğru iseniz, Allah'tan gayri şahitlerinizi de çağırın."

فَاِنْ لَمْ تَفْعَلُوا وَلَنْ تَفْعَلُوا فَاتَّقُوا النَّارَ الَّتِي وَقُودُهَا النَّاسُ
وَالْحِجَارَةُ اُعِدَّتْ لِلْكَافِرِينَ ﴿٢٤﴾

24- "Bunu yapamazsanız ki, elbette yapamayacaksınız, yakıtı, insan ve taş olan cehennem ateşinden sakının. Çünkü o ateş kâfirler için hazırlanmıştır."

Allah yabancıların basiretini kapattığı için onlar, Allah'ın sevgili Peygamberini, Allah'ın salâtı üzerine olsun, göremediler. Böylece ilahî inayetin nurunu kaybedince zan vadilerinde şaşkına döndüklerinden Hz. Peygamber, onlara daha çok ayetler getirdikçe ve mucizeler ortaya koydukça şüphe ve kuşkuları kat kat arttı. Zaten Hak Teâlâ'dan yüz çevirenin saptığı yol da böyledir. Delillerin aydınlığı, sadece onun hakikat ile ilgili körlüğünü artırır. Nitekim Allah şöyle buyurmuştur:

(وَمَا تُغْنِي الْاٰيَاتُ وَالنُّذُرُ عَنْ قَوْمٍ لَا يُؤْمِنُونَ)

*"İnanmayan bir topluma deliller ve uyarılar fayda sağlamaz"* (Yûnus, 10/101).

Öte yandan Allah, delille onları daha fazla susturmak için, gönderdiği ve baştan sona bütün insanlara üstünlük sağlayan Kur'an mucizesine karşı koyamayacaklarını kendilerine bildirmiştir. Onlar, kendi aralarında yardımlaşıp yandaşlarından destek alsalar, bütün güçlerini ve çarelerini tüketseler bile, Allah, onların Kur'an sûrelerinden birine benzer bir sure getirmeye güç yetiremeyeceklerini takdir etmiştir. Allah: (فَاِنْ لَمْ تَفْعَلُوا ) *"Bunu yapamazsanız"* dedikten sonra onu asla yapamayacaklarını ve yapmayacaklarını da kendilerine bildirmek üzere (وَلَنْ تَفْعَلُوا ) *"ki elbette yapamayacaksınız"* buyurmuştur. Böylece onlara şöyle denilmiş olmaktadır: Kendinize bakın ve sizin için yakıtı insanlar ve taşlar olacak kadar dehşetli olan cehennem azabına yol açacak şirkten sakının. Şimdi bu ateşe katılığına rağmen taşlar dayanamazken, güçsüz oldukları halde insanlar nasıl dayanabileceklerdir? Cehennem azabıyla ilgili bu uyarıyı duyan müminlerin kalplerinde sonsuz bir korku belirince Allah, kaygılarını gidermek üzere:

(اُعِدَّتْ لِلْكَافِرِينَ ) *"O ateş kâfirler için hazırlanmıştır"* buyurdu. Bu ifadede müminler için müjde bulunmaktadır. Düşmanlarını korkuttuğu zaman onunla birlikte dostlarını müjdelemek, şanı yüce Allah'ın bir prensibidir.

Kâfirlerin tuzağının, peygamberlerin mucizeleri karşısında çökmesi gibi, aynı şekilde insanları yoldan çıkaranların iddiaları da dosdoğru insanların nurlarının ortaya çıkışı karşında zayıflar. Bu arada davasında batıl üzere olan kimsenin alameti, kalpleri haktan alıkoyması, özüyle doğruyu savunanın alameti ise, kalplere heybet vermesidir. Kalpleri haktan alıkoyan ile kalplere heybet veren arasındaki farkı bilen kimse ise nadirdir.

وَبَشِّرِ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ اَنَّ لَهُمْ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ كُلَّمَا رُزِقُوا مِنْهَا مِنْ ثَمَرَةٍ رِزْقًا قَالُوا هٰذَا الَّذِي رُزِقْنَا مِنْ قَبْلُ وَاُتُوا بِهِ مُتَشَابِهًا وَلَهُمْ فِيهَٓا اَزْوَاجٌ مُطَهَّرَةٌ وَهُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ﴿٢٥﴾

25- “İman edip iyi davranışlarda bulunanlara, içinden ırmaklar olan cennetler olduğunu müjdele! O cennetlerdeki bir meyveden kendilerine rızık olarak yedirildikçe: ‘Bundan önce dünyada verilenlerdendir bu’ derler. Bu rızıklar, onlara benzer olarak verilmiştir. Onlar için cennette tertemiz eşler de vardır. Ve onlar, orada ebedî kalıcılardır.”

Cennetlerle yapılan bu müjde, bütün müminlere ahirette verilecek olan nimetlerin, açıklayıcı ifadelerle yapılan tarifini içermektedir. Bu tarif, aynı zamanda adı geçen nimetlere ilave olarak, Allah’ın özel kullarına özgü kıldığı bir takım acil nimetlerle müjdelemeye de işaret etmektedir. Şöyle ki, ahiretteki nimetler, sevap cennetleri iken, bunlar Allah’a yakınlık cennetleridir. Onlar ferahlama bahçeleri, bunlar ise Allah’a yakın olmanın gülistanlıklarıdır. Daha doğrusu onlar, maddî nimetlerin bahçeleri, bunlar ise ermişliğin gerçekleridir. Onlar derecelerin yükseltilmesidir, bunlar ise yakarışın ferahlığıdır. Onlar Allah’ın cömertliği gereğidir, bunlar ise Allah’ın varlığıyla tutuşmaktır. Onlar sevinmenin rahatlığı, bunlar ise ruhların dinlencesidir. Onlar maddi nimetlerin lütfedilmesidir, bunlar ise sırlar âleminin üzerinden perdenin kaldırılmasıdır. Onlar nimetlerin bahşedilmesidir, bunlar ise Allah’ın cemal ve celalinin keşfidir.

(كُلَّمَا رُزِقُوا مِنْهَا مِنْ ثَمَرَةٍ رِزْقًا قَالُوا هٰذَا الَّذِي رُزِقْنَا مِنْ قَبْلُ وَاُتُوا بِهِ مُتَشَابِهًا وَلَهُمْ فِيهَآ اَزْوَاجٌ مُطَهَّرَةٌ وَهُمْ فِيهَا خَالِدُونَ) *“O cennetlerdeki bir meyveden kendilerine rızık olarak yedirildikçe: ‘Bundan önce dünyada verilenlerdendir bu’ derler. Bu rızıklar, onlara benzer olarak verilmiştir. Onlar için cennette tertemiz eşler de vardır. Ve onlar, orada ebedî kalıcılardır.”*

Nasıl ki nimetler cennetlikler için yenilenmekte ve onlar ikinci nimeti birinci nimet gibi zannetmekte, ancak tattıklarında onu öncekinden üstün bulmaktalar ise aynı şekilde hakikat ehli olanların sırlar âlemindeki halleri de daima yükselme halindedir. Onlardan biri, daha yüksek bir makama yükseltildiğinde, bu merhalede erişeceği makamın, tıpkı bir önceki makam gibi olduğunu zanneder. Ancak tadına vardığında eskisinden kat kat üstün olduğunu görür.

Tıpkı şairin dediği gibi:

*Ben hâlâ senin sevginin öyle bir yerindeyim ki*
*Hayretler içinde kalır onun altındakiler*

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَسْتَحْيِٓي اَنْ يَضْرِبَ مَثَلًا مَا بَعُوضَةً فَمَا فَوْقَهَا فَاَمَّا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا فَيَعْلَمُونَ اَنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَبِّهِمْ وَاَمَّا الَّذ۪ينَ كَفَرُوا فَيَقُولُونَ مَاذَٓا اَرَادَ اللّٰهُ بِهٰذَا مَثَلًا يُضِلُّ بِه۪ كَث۪يرًا وَيَهْد۪ي بِه۪ كَث۪يرًا وَمَا يُضِلُّ بِه۪ٓ اِلَّا الْفَاسِق۪ينَ ﴿٢٦﴾

26- "Şüphesiz Allah, sivrisinek ve onun da ötesinde bir varlığı misal getirmekten çekinmez. İman etmişlere gelince, onlar böyle misallerin Rablerinden gelen hak ve gerçek olduğunu bilirler. Kâfir olanlara gelince: 'Allah, böyle misal vermekle ne murat eder?' derler. Allah, onunla birçok kimseyi saptırır, birçoklarını da doğru yola yöneltir. Verdiği misallerle Allah, ancak fâsıkları saptırır."

Allah'ın çekinmesi, bir şeyi yapmamasıdır. Bu itibarla Allah, kendini bir şeyden çekinmekle vasıflandırdığı zaman bu, o şeyi yapmayacağı anlamına gelir. Allah çekinmez, denildiği zaman da bu, o şeyi yapmaktan endişe etmez, demek olur.

Allah'ın varlığına kıyasla, hakikatte yaratma havada buharlaşan zerreden daha basittir. Çünkü bu, sınırlı bir varlığı yine sınırlı diğer bir varlıkta yok etmektir. O halde Allah'ın kudreti bakımından arş ile sivrisinek aynıdır. Şöyle ki, ne arşı yaratmak daha meşakkatli ve daha zor ne de sivrisineği yaratmak Allah için daha hafif ve daha kolaydır. Çünkü Allah, zorluk ve kolaylık yaşamaktan münezzehtir.

Hal böyle olunca Allah, tıpkı arşı örnek vermekten çekinmediği gibi, sivrisinek ve daha ufağını örnek vermekten de çekinmez.

Bu konuda şu iki görüş de ileri sürülmüştür:

- Sivrisineğin örnek verilmesinin sebebi, acıktığı zaman uçup kaçması, doyduğu zaman da çatlayıp ölmesidir. Aynı şekilde insan da ihtiyacının kalmadığını gördüğünde haddini aşar.

- Sivrisineğin ötesindeki varlıktan maksat, sinek olup ona işarette bulunmanın gerekçesi hırçınlığıdır. Nitekim öyle hırçın saldırır ki, eğer bu hırçınlık aslanda olsa, hiçbir yaratık ondan kurtulamazdı. Ancak Allah, aslanda kuvvet yarattığında aynı anda onda insandan ürkmeyi de yaratmıştır. Sinekte de hırçınlığı yaratırken aynı anda onda güçsüzlüğü de yaratmıştır. Böylece Allah, hikmetinin mükemmelliğine ve kudretinin üstünlüğüne dikkat çekmiştir.

(فَاَمَّا الَّذِينَ اٰمَنُوا فَيَعْلَمُونَ اَنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَبِّهِمْ وَاَمَّا الَّذِينَ كَفَرُوا فَيَقُولُونَ مَاذَٓا اَرَادَ اللّٰهُ بِهٰذَا مَثَلًا ) *"İman etmişlere gelince, onlar böyle misallerin Rablerinden gelen hak ve gerçek olduğunu bilirler. Kâfir olanlara gelince: 'Allah, böyle misal vermekle ne murat eder?' derler."*

Sırlarının gözleri açılan kimse, Allah dışındaki varlıklara ve eserlere sadece ibret gözüyle bakar ve bununla ancak basiretinin keskinliği artar. Gafletin etkisiyle gözleri sarhoşluk halinde olan kimselere gelince, örneklerin verilmesi, onların sadece cehaletlerini, şaşkınlıklarını ve azaplarını artırır.

(يُضِلُّ بِهٖ كَثِيرًا وَيَهْدِي بِهٖ كَثِيرًا وَمَا يُضِلُّ بِهٖٓ اِلَّا الْفَاسِقِينَ) *"Allah, onunla birçok kimseyi saptırır, birçoklarını da doğru yola yöneltir. Verdiği misallerle Allah, ancak fâsıkları saptırır."*

Bu Kitap, bazıları için şifa ve rahmet, bazıları içinse mutsuzluk ve fitnedir. Şöyle ki, Allah'ın Âdemoğullarından söz aldığı gün söylediği: (اَلَسْتُ بِرَبِّكُمْ ) *"Ben sizin Rabbiniz değil miyim?"* (Araf, 7/172) şeklindeki sözünü duyduklarında Kitab'ı tanıyanlar, Hz. Peygamber (s.a.v.) geldiği zaman eski sözü ve sevgiyi hatırlar ve basiretleri daha da artmış olur. Kitab'ı ilgisizlikle karşılayıp o günden gafil kalanlara gelince, Hz. Peygamber'in daveti gerçekleştiğinde sadece inkârları kat kat artmış olur. Doğruluğu apaçık olan o günü gözden kaçırmaları ise ezelde dalalet ehli olmalarından ötürüdür. Bu nedenledir ki,

Allah: (وَمَا يُضِلُّ بِهٖٓ اِلَّا الْفَاسِقٖينَ) *"Verdiği misallerle Allah, ancak fâsıkları saptırır"* buyurmuştur.

اَلَّذٖينَ يَنْقُضُونَ عَهْدَ اللّٰهِ مِنْ بَعْدِ مٖيثَاقِهٖ وَيَقْطَعُونَ مَٓا اَمَرَ اللّٰهُ بِهٖٓ اَنْ يُوصَلَ وَيُفْسِدُونَ فِي الْاَرْضِ اُولٰٓئِكَ هُمُ الْخَاسِرُونَ ﴿٢٧﴾

27- "Onlar, öyle fâsıklar ki, Allah'a kesin söz verdikten sonra sözlerinden dönerler. Allah'ın, ziyaret edilip hal ve hatırının sorulmasını istediği kimseleri ziyaretten vazgeçerler ve yeryüzünde fitne ve fesat çıkarırlar. İşte onlar, gerçekten zarara uğrayanlardır."

Burada işaret, müridlik yoluna girdikten sonra âdet ehlinin üzerinde bulunduğu duruma dönen kimsenin halinedir. Bu kimse, nefsini terk etmeye karar verdikten sonra sıra uygulamaya gelince dürüst davranmamış ve hakikatin işaretinden şeriatın ruhsatına inmiştir. Nasıl ki, kendi başına yola düşen kimsenin, kesesinde bir dirhem kaldığı sürece, dönüşü makbul değilse, aynı şekilde kalbiyle niyetlenen kimsenin de ruhundan bir nefes kaldığı sürece, dönüş yapmasına rıza gösterilmez.

Şiir:

*Hidayet dini üzere ölenler*
*Ölümü tatlı bir kaynak olarak buldular*

Onlar, Allah'ın gözetilmesini emrettiği bağları koparırlar. Allah'ın emrettiği Hakk'a götürücü bağlar, varlıklarla olan bağları koparmakla gözetilmiş olur. Allah'a ait olan bağ, ancak sana ait olanı koparmakla gerçekleşir. Aksi halde durum tersine döner.

Bu arada kulun korumakla emredildiği bağlar şunlardır: Bu tarikata mensup olanların öncülüğünü korumak, bunu gerçekleştirmek için nimetleri harcayarak değil, samimi çabalar sarf etmektir. Nitekim onların çabaları, bu yolun vesilelerini korumaya ve durumlarını düzenli olmaya vakfedilirken, kalpleri de Allah'ın, bu yolun mensuplarını koruma beklentisine yönlendirilmiştir. Bu yolun yeryüzünde

bozulması ise dünyalık işlerinin ayrıntılarıyla uğraşanlar yüzünden olur. Onlar, sözleriyle bir müridi irşad etmek ve çabalarıyla niyetlerini bilemekten geri dururlar. Bu ise Allah'ın hoşnut olmadığı davranışlarındandır.

Sözü bozmanın bir şekli de, sırrının bir an bile O'nun şuhudundan sapmasıdır. Gözetmekle emrolunduğun bağı koparmanın bir biçimi de bir nefeslik zamanını bile O'nun hakkını yerine getirmenin dışında harcamandır. Bir saatlik zamanını bile O'nu görmeden geçirmen ise yeryüzünde bozgunculuk yapman demektir. Bil ki, bu apaçık zarar, büyük meşakkat ve en büyük perişanlıktır.

كَيْفَ تَكْفُرُونَ بِاللّٰهِ وَكُنْتُمْ اَمْوَاتًا فَاَحْيَاكُمْ ثُمَّ يُمِيتُكُمْ ثُمَّ يُحْيِيكُمْ
ثُمَّ اِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ﴿٢٨﴾

28- "Siz ölü iken sizi dirilten Allah'ı nasıl inkâr edersiniz? Sonra sizi öldürecek, tekrar sizi diriltecek ve sonunda O'na döndürüleceksiniz."

Bu söz, kulun içinde bulunduğu durumun şaşırtıcı ve önemli olduğunu ifade etmektedir. Yani ayetler ortaya çıktığı halde kalbinin küfre meyletmemesi gerekir.

Bu ayet ile ilgili olarak şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, apaçık beyanları ve ışık saçan ayetleri ile kendini yaratıklarına tanıtmak istemiş ve bu amaçla: (وَكُنْتُمْ اَمْوَاتًا) *"Siz ölü iken"* buyurmuştur. Yani siz parçaları birbirine eşit bir damla iken Allah, size bir beşer olarak hayat verdi. Bu süreçte damlanın bazı parçaları kemik, bir kısmı et, bir kısmı saç, bir kısmı deri vs. oldu. Sonra sizi kemik ve toprak yığını haline getirmek suretiyle öldürecektir. Sonra öldükten sonra sizleri haşirde toplamak suretiyle diriltecektir. (ثُمَّ اِلَيْهِ تُرْجَعُونَ) *"Sonunda O'na döndürüleceksiniz."* Yani ezelde takdir edilmiş olan saadet veya şakavete döndürüleceksiniz.

- Siz, bizi bilmemeniz sebebiyle ölü idiniz. Sonra bizi tanımanız sebebiyle Allah size hayat verdi. Sonra Allah, sizi maddi varlıklarınızdan koparmak suretiyle öldürecek, sonra sizi sizden almak suretiyle diriltecek, sonra hakkı uygulayarak dinin hükümlerini korumak suretiyle O'na döndürüleceksiniz.

- Nefisleriniz yok olmadığı için sizler ölü idiniz. Nefislerinizin yok olmasıyla Allah sizi diriltti. Sonra bu durumu görüp yoldan çıkmamanız için sizi sizden habersiz kılmak suretiyle öldürecek, sonra sizi sizden almak suretiyle sizleri öldürecek, sonra O'nun elinde halden hale geçirilmek suretiyle O'na döndürüleceksiniz.

- Halleri sınırlanmaktadır. Bu nedenle ne kesintisiz bir hayat ne de bütünüyle yok olma vardır. Onlar: *"İşte hayat budur"* dedikçe Allah, durumlarını değiştirerek kendilerini yok etmektedir. Onlar yok olmaya yüz tutunca da bu kez kendilerini var edip yerlerinde bırakmaktadır. Hal böyle olunca onlar, hep nefiy ve isbat, beka ve fena ile kendinde olma ve kendinden geçme halleri arasında olurlar. Allah'ın bu kullarıyla ilgili ilahî prensibi böyledir.

هُوَ الَّذِي خَلَقَ لَكُمْ مَا فِي الْاَرْضِ جَمِيعًا ثُمَّ اسْتَوٰۤى اِلَى السَّمَاۤءِ
فَسَوّٰيهُنَّ سَبْعَ سَمٰوَاتٍ وَهُوَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ﴿٢٩﴾

29- "Yerde ne varsa hepsini sizin için yaratan O'dur. Sonra semaa yöneldi, onu yedi gök olarak yaratıp düzenledi. O her şeyi hakkıyla bilendir."

Hepsinden yararlanabilme anlamında olmak üzere, Allah bütün mahlûkatı onların hizmetine vermiştir. Şöyle ki, yeryüzünde yerleşir, gökyüzünün yaşar, yıldızlarla yollarını bulur ve her bir mahlûktan başka türlü yararlanırlar. Daha doğrusu, hakkında fikir yürüttükleri her şeyde ilahî kudretin kemalini ve Rab oluşunun ortaya çıkışını öğrenirler.

Diğer bir yoruma göre ise Allah onlar için irfan yolunu hazırlamış, kendilerine mahsus kıldığı ihsana dikkatlerini çekmiş, sonra

onlara, himmeti yüksek olmanın ne demek olduğunu öğretmiştir. Böylece onların amellerini ve hallerini sadece kendine dönük kılarak şöyle buyurmuştur:

(لَا تَسْجُدُوا لِلشَّمْسِ وَلَا لِلْقَمَرِ)

*"Güneşe ve aya secde etmeyin"* (Fussilet, 41/37) .

(ثُمَّ اسْتَوٰىٓ اِلَى السَّمَآءِ فَسَوّٰيهُنَّ سَبْعَ سَمٰوَاتٍ وَهُوَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ) *"Sonra semaa yöneldi, onu yedi gök olarak yaratıp düzenledi. O her şeyi hakkıyla bilendir."*

Varlıklar, Allah'ın kudretiyle düzene girmiştir. Yoksa Allah, zâtıyla herhangi bir varlığın üzerinde yer edinmemiştir. Bu asla olamaz. Bir ve en büyük olmak O'nun hakkıdır. Özel bir yer edinmesinin caiz olduğuna ilişkin iddia ise imkânsızı öngören bir vehimden ibarettir. Zira Hak Teâlâ, yüce zatıyla herhangi bir mekânda karar kılmamış, aksine mekân O'nunla düzenli bir vücut bulmuştur.

وَاِذْ قَالَ رَبُّكَ لِلْمَلٰٓئِكَةِ اِنّ۪ي جَاعِلٌ فِي الْاَرْضِ خَل۪يفَةًۜ قَالُوٓا اَتَجْعَلُ ف۪يهَا مَنْ يُفْسِدُ ف۪يهَا وَيَسْفِكُ الدِّمَآءَۚ وَنَحْنُ نُسَبِّحُ بِحَمْدِكَ وَنُقَدِّسُ لَكَۜ قَالَ اِنّ۪ٓي اَعْلَمُ مَا لَا تَعْلَمُونَ ﴿٣٠﴾

30- "Hatırla ki, Rabbin meleklere: 'Ben yeryüzünde bir halife yaratacağım' dedi. Onlar: 'Bizler, hamdinle seni tesbih ve seni takdis edip dururken yeryüzünde fesat çıkaracak, orada kan dökecek insanı mı halife kılıyorsun?' dediler. Allah da onlara: 'Sizin bilemeyeceğinizi herhalde ben bilirim' dedi."

Bu, Allah'ın, sırrını Âdem'de ve zürriyetinde ortaya çıkarmasının başlangıcıdır. Allah, yöreden bir parça toprak toplanmasını, sonra toprağının kırk sabah mayalanmasını emretti. Bu arada meleklerden her biri, "Bu toprağın hikmeti nedir?" diye şaşkınlık içerisinde kalmaktaydı. Âdem'e şekil verilince melekler, harika bir sanat eseri ve şaşırtıcı hikmetiyle onun bir benzerine görmemişlerdi. Oysa Allah: (اِنّ۪ي جَاعِلٌ فِي الْاَرْضِ خَل۪يفَةً ) *"Ben yeryüzünde bir halife yaratacağım",*

dediği zaman zanlar havada uçuşmuş, kalpler bölük pörçük olmuş ve suçlayıcı söylentiler meydana gelmişti. Durum, şu şiirde söylendiği gibi olmuştu:

*Nece güzellikler gördüm ben lakin*
*İnsanlardan tercihim sen oldun*

Bir görüşe göre; Allah yaratacağı varlıkları yaratırken onlardan hiç biri hakkında Hz. Âdem ile ilgili olarak söylediği bu sözü söylememiştir. Bu itibarla yaratılanlar tarafından yapılmış olması halinde, bu hitabın zahiri, istişareye benzemektedir. Oysa Allah, cennetleri içindekilerle birlikte, arşı sahip olduğu uyum ve biçim mükemmelliğiyle birlikte yaratırken, bir arş veya bir cennet yahut da bir melek yaratacağını söylememiş; ancak Âdem'i onurlandırmak ve özel kılmak için: (اِنّي جَاعِلٌ فِي الْاَرْضِ خَليفَةً ) *"Ben yeryüzünde bir halife yaratacağım"* demiştir.

**Bir Fasıl**

Meleklerin: (اَتَجْعَلُ فيهَا مَنْ يُفْسِدُ فيهَا ) *"Yeryüzünde fesat çıkaracak insanı mı halife kılıyorsun?"* şeklindeki sözü, ilahî takdire itiraz değil, sorarak anlamak içindir. Zira melekler masum oldukları için hitabı, melekleri tenzih edecek şekilde yorumlamak daha doğru olur. Nitekim Allah: (لَا يَعْصُونَ اللّٰهَ مَآ اَمَرَهُمْ)*"Melekler, Allah'ın onlara emrettiği şeylere karşı çıkmazlar"* buyurmuştur. (Tahrîm, 66/6)

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Şanı yüce Allah, bu hitapla meleklerin kalplerinde ibadetlerini büyütmelerini ve onlara bu gözle bakışlarını açığa çıkarmak istemiş, onlar da: (وَنَحْنُ نُسَبِّحُ بِحَمْدِكَ ) *"Bizler, hamdinle seni tesbih ediyoruz"* şeklindeki sözleriyle gizli sırlarını ifşa etmişlerdir. Sonra Hak Teâlâ, onlara ilimle fazilet sahibi olmanın, fiille fazilet sahibi olmaktan daha mükemmel olduğunu öğretmiştir. Bu bağlamda melekler, fiil bakımından daha yeterli ve daha kıdemli iken, Hz. Âdem'in ilmi daha fazla idi. Böylece Hz. Âdem'in, fazilet ve mertebe üstünlüğü ortaya çıkmıştır.

- Allah meleklere cevaben: *"Siz, yeryüzünde bozgunculuk yapmıyor ve kan akıtmıyorsunuz"* dememiş, lakin: (اِنّٖي اَعْلَمُ مَا لَا تَعْلَمُونَ) *"Sizin bilemeyeceğinizi herhalde ben bilirim"* buyurmuştur. Yani siz onları bağışlayacağımı bilmiyorsunuz.

- Meleklerin tesbihi, yaptıkları işi ortaya koymakta, özelliklerini ve faziletlerini üne kavuşturmaktadır. Allah'ın, Âdemoğullarının günahlarını bağışlaması da O'nun kerem ve rahmetini ortaya koymaktadır. Kaldı ki, Hak Teâlâ'nın hiç kimsenin taatine ihtiyacı bulunmamaktadır. Şayet tesbihleri sebebiyle melekler övünmeyi hak ediyorlarsa, bağışlaması sebebiyle Allah'ın da övünmeyi hak edişi kesinleşmiş olur.

- Âdemoğullarından mümin olanların bizi sevmeye dair itikatlarının bilmediğiniz duruluğunu ve zahirleri günahla kirlenmiş olsa bile, ahitlerimizi koruma konusunda sırlarının bilmediğiniz temizliğini ben bilirim. Şiir:

*Geldiği zaman sevgili tek bir günahla*
*Getirir iyilikleri bin şefaatçi*

- Âdemoğullarına olan ve sizin bilmediğiniz sevgimi ben bilirim. Bir de siz, durumlarınızı ortaya koyarken, ben onlar ile ilgili sırlarımı kendilerinden gizliyorum. Aynı mealde şu şiir söylenmiştir:

*Düşüremedi gammazlar seni hiçbir mertebeden*
*Katımdaki ve sana zarar veremedi hiçbir gıybetçi*
*Sanki bilmeden övdüler*
*Seni katımda, ayıpladıkları şeyle*

- Çirkin davranışlarda bulunsalar bile, Âdemoğullarının bilmediğiniz kalbî kırıklıklarını ve sizler tesbih ve kutsamanızı açıklarken kalplerinizin saldırganlığını ben bilirim. Böylece siz, Allah'ın emirlerine uymak mertebesinde iken, günah işlemezken ve tesbihinizi allayıp pullarken Âdemoğulları tecellilerinden alıkonulmakta ve alçak gönüllü olmaktadırlar. Oysa kulların kırık kalpli oluşunun bizde güçlü bir güvencesi bulunmaktadır.

- Benim lütfüm olmazsa sizin tesbihinizin ne önemi vardır! Bir de benim affım olduğu zaman onların günahlarından ne zarar doğar!

- Ben siz meleklere taatimden, insanlara da rahmetimden elbise giydirdim. Bu durumda siz, taatinizin, kutsamanızın ve tesbihinizin elbisesine bürünürken onlar, af ve rahmetimle kuşatılıp örtülmüşlerdir. Ben onlara kerem ve affımın elbisesini giydirdim.

- Şayet sizi korumam mutlu ettiyse onları da rahmetim kuşatmıştır. Kaldı ki, korumam siz var olduğunuzda size ulaşmış, oysa onlar ezelden beri rahmetime mazhar olmuştur.

- Şayet sizin iyi olanınızı ismet (korunmuşluk) kurtarmışsa, onların günahkâr olanı rahmete boğulmuştur.

- Onların bana dayanmaları, hallerini arındırmış ve Allah'ın kendilerine bahşettiği miktarın dışındaki bilgilerden uzak durmaları için, bu durum onları, cehaleti itiraf etmeye yöneltmiştir. Böylece onlar: *"Sen her türlü noksandan uzaksın. Bizim senin bize öğrettiklerinizden başka hiç bir bilgimiz yoktur"* demişlerdir.

وَعَلَّمَ اٰدَمَ الْاَسْمَاۤءَ كُلَّهَا ثُمَّ عَرَضَهُمْ عَلَى الْمَلٰۤئِكَةِ فَقَالَ اَنْبِؤُنِي
بِاَسْمَاۤءِ هٰۤؤُلَاۤءِ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٣١﴾

31- "Allah, Âdem'e bütün isimleri öğretti. Sonra onları önce meleklere arz edip: 'Eğer siz sözünüzde sadık iseniz, şunların isimlerini bana bildirin' dedi."

Ayetteki *"isimler"* tabirinin genel olması, her türlü ismi kapsamasını gerektirmektedir. Yanı sıra *"bütün"* denilmiş olması, kapsamlılık ve pekiştirmeyi ifade eder. Bu çerçevede - İbn Abbas tefsiri ve diğerlerinde dile getirildiği üzere - Allah, Hz. Âdem'e bütün yaratıkların adlarını öğrettiği gibi, Hak Teâlâ'nın adlarını da öğretmiştir. Fakat Hz. Âdem, meleklere sadece kendisinin bildiği yaratıkların adlarını bildirmiş ve bununla meleklere olan üstünlüğü ortaya çıkmıştır. Yalnızca kendisinin Allah'ın adlarını bilmesine gelince, bu Allah'ın sevgisini kazanmış hiç bir meleğin bile öğrenemediği bir

sırdır. Yaratıkların adlarını bilmede bile Âdem'le eşit mertebeye sahip olamayan kimse, Allah'ın adları ve gaybın sırlarına vakıf olma konularında ona yaklaşmayı nasıl umabilir?!

Bu arada yaratıkların adlarını bilme ayrıcalığına sahip olmak, meleklerin kendisine secde etmesini sahih kıldığına göre, Allah'ın isimlerini bilme özelliğine sahip olmanın ne tür ayrıcalıklar sağladığını varın siz düşünün! Bu ikrama layık görülen Âdem'e daha neler sağlanmıştır acaba?

Konuyla ilgili diğer bazı yorumlar ise şöyledir:

- Meleklerin özelliği tesbih ve kutsama iledir. Bunlar ise yaratıklara uygun düşen ibadetlerdir. Zira ibadet, kulların özelliği olup onları aşamaz. İlim ise özü itibariyle Allah'ı vasıflandırmada, başkası için sahih olmayacak şekilde gerekli olan bir övgü sıfatıdır.

- Allah, sır âleminde öğrettikleriyle Âdem'e ikramda bulunduktan sonra açıklama günü onun bu özelliğini beyan etmiş ve kendisini meleklerin önüne geçirmiştir.

- İsimlerin arz edilişindeki sonralık, ya Âdem ile ilgilidir. Bu takdirde Allah, Âdem'e isimle kalbinde karar kılacak ve bilgisi kesinlik kazanacak kadar zaman tanımıştır. İşte o zaman Allah, Âdem'den hakkında kesin bilgi ve kanaat sahibi olduğu konuda bilgi vermesini istemiştir. Yahut da isimlerin arz edilişindeki gecikme meleklerle ilgilidir. Yani Allah, ansızın onlara : (اَنْبِؤُنِي) *"Bana bildirin"* buyurmuş, ancak bu konuda daha önce kendilerine bilgi verilmediği için melekler şaşırmışlardır. Oysa daha önce kendisine bilgi verildiğinden Âdem, Allah'ın daha önceki bu lütfunu ortaya koymak üzere, cevap vermiş, isimleri anlatmış, konuşmuş ve kurtuluşa ermiştir.

Bu arada: (اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ) *"Eğer siz sözünüzde sadık iseniz"* ifadesinde meleklerin, Âdem'e karşı ayrıcalık, fazilet ve meziyet iddiasında bulunduklarına işaret vardır. Bu nedenle Allah, meleklere, üstünlüğün tesbihlerini sunmakla değil, Âdem'in önceden ayrıcalıklı kılınmasında olduğunu bildirmiştir. Ayrıca Allah, meleklerin bilgilerinin, yaratıkların isimlerini bilmeye yetmediğini bilip kendilerini

isimleri bildirmekle yükümlü kılınca, gerçek emir ve hükmün O'na mahsus olduğu apaçık ortaya çıkmış oldu. Bu itibarla, aklın prensiplerini ileri sürerek Hak Teâlâ'nın hükümlerinin gaflet sahiplerinin istihsanına dayalı olması gerektiğini vehmedenlerin aksine Allah, güç sahibi kimseyi yükümlü kılabilir. Hayır, aksine Allah dilediği kimseyi dilediği hükümle yükümlü kılabilir. İyi, O'nun, iyiliğine hükmettiğidir, kötü de, onun kötülüğüne hükmettiği şeydir.

قَالُوا سُبْحَانَكَ لَا عِلْمَ لَنَآ اِلَّا مَا عَلَّمْتَنَا اِنَّكَ اَنْتَ الْعَلِيمُ الْحَكِيمُ ﴿٣٢﴾

32- "Melekler: 'Ya Rab! Seni noksan sıfatlardan tenzih ederiz. Senin bize öğrettiklerinden başka hiçbir bilgimiz yoktur. Şüphesiz alîm ve hakîm olan ancak sensin' dediler."

Melekler, övgüyü diledikleri özrün önüne almış ve Allah'ın arz edilen hükmünün hakikatini, kendileri tarafından itiraz edilebilir olmaktan tenzih etmişlerdir. Yani hakkında bize soru sorduğun isimlerle ilgi hiç bir bilgimiz yoktur. Aynı zamanda bazı kimseleri güç yetiremediğini bildiğin şeylerle yükümlü kılman konusunda da sana sitem edilemez. Şüphesiz alîm ve hakîm olan sensin. Yani senini yaptığın, hak ve doğrudur. Hiç kimsenin senin üzerinde hükmü bulunmamakta ve senden tutarsızlık ve kötülük beklenmemektedir.

قَالَ يَآ اٰدَمُ اَنْبِئْهُمْ بِاَسْمَآئِهِمْ فَلَمَّآ اَنْبَاَهُمْ بِاَسْمَآئِهِمْ قَالَ اَلَمْ اَقُلْ لَكُمْ اِنِّيٓ اَعْلَمُ غَيْبَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَاَعْلَمُ مَا تُبْدُونَ وَمَا كُنْتُمْ تَكْتُمُونَ ﴿٣٣﴾

33- "Bunun üzerine Allah: 'Ey Âdem, eşyanın isimlerini meleklere anlat' dedi. Âdem, eşyanın isimlerini onlara anlatınca: 'Ben, size, muhakkak göklerde ve yerde görülmeyenleri bilirim. Bundan da öte, gizli ve açık yapmakta olduklarınızı da bilirim, dememiş miydim?' dedi."

Allah'ın Âdem'e olan lütuflarından biri de şudur: Allah meleklere: (اَنْبِؤُنِي) *"Bana bildirin"* deyince, özellikle de ilimlerinin kuşatmadığı bir şeyi kendisine bildirmekle onları yükümlü kıldığı zaman hitabın heybetinden meleklerin içine, kendilerinden alınmış olan bir panik düştü. Söz sırası Hz. Âdem'e gelince, Allah isimleri bildirmede onu meleklere yöneltmek üzere: (اَنْبِئْهُمْ بِاَسْمَآئِهِمْ) *"Eşyanın isimlerini meleklere anlat"* buyurdu. Bu arada Hz. Âdem'in meleklere hitabı, heybete gark olmasına yol açmadı. Hz. Âdem, meleklere bilgilerinin yetersiz kaldığı isimleri bildirince onlara olan üstünlüğü ortaya çıktı ve bunun üzerine Allah şöyle buyurdu:

(اَلَمْ اَقُلْ لَكُمْ اِنّ۪ي اَعْلَمُ غَيْبَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ) *"Ben, size muhakkak göklerde ve yerde görülmeyenleri bilirim, dememiş miydim?"* Yani ben, yaratıkların bilgisinin yetersiz kaldığı hususları, açık yaptığınız ibadetlerinizi ve gizlemek istediğiniz Âdem'den daha iyi olduğunuza dair inancınızı bilirim.

**Bir Fasıl**

Şanı yüce Allah, Hz. Âdem'i kurtarmak isteyince onu korudu, ona isimleri öğretti, onun üzerinde ilahî korumanın belirtilerini gösterdi ve bu nedenle o, kendisine öğretileni bildirdi. Allah, Âdem hakkında hükmünü icra etmeyi dilediği zaman ise onu unutkanlığa maruz bıraktı. Bu yüzden o, Allah'ın huzurunda verdiği sözü unuttu ve haddini aştı. Bunun üzerine Allah şöyle buyurdu:

(وَلَقَدْ عَهِدْنَآ اِلٰٓى اٰدَمَ مِنْ قَبْلُ فَنَسِيَ وَلَمْ نَجِدْ لَهُ عَزْمًا)

*"Andolsun, biz daha önce Âdem'e ahit vermiştik. Ne var ki o ahdi unuttu. Onda azim de bulmadık"* (Tâhâ, 20/115)

İlahi lütfun kendisine yardım ettiği zaman Âdem, ilim ve iyilikte herkesin önüne geçerken Allah, onun hakkında hükmünü icra ettiği vakit ise kendisini unutkanlık ve isyan haline döndürdü. İşte Hakk Teâlâ'nın olup bitenler ile ilgili hükümleri böyledir. Kullar, O'nun hükmüyle zelil olurlar. O, dilediğini yapandır.

**Bir Fasıl**

Melekler, tesbih ve kutsamaları sebebiyle üstünlüklerinin varlığını vehmedince, Allah onlara ilahî üstünlüğün, itaat ehli birinin ibadetiyle güzelleşmekten veya inatçı bir inançsızın zilletiyle kirlenmekten daha kutsal olduğunu öğreterek kendilerini Âdem'e secde etmeye döndürmüştür. Böylece Allah, her türlü uyum ve uyumsuzluktan gani olduğunu ortaya koymuştur.

وَاِذْ قُلْنَا لِلْمَلٰٓئِكَةِ اسْجُدُوا لِاٰدَمَ فَسَجَدُوٓا اِلَّٓا اِبْلِيسَ اَبٰى
وَاسْتَكْبَرَ وَكَانَ مِنَ الْكَافِرِينَ ﴿٣٤﴾

34- "Hani biz meleklere: 'Âdem'e secde edin' demiştik. İblis hariç, hepsi secde ettiler. O, yüz çevirdi ve büyüklük tasladı, böylece kâfirlerden oldu."

Secde etmek, bizzat Âdem'e ibadet etmek için değil, Allah'ın emrine uymak içindir. Böylece meleklerin Âdem'e secde etmeleri, Allah'a ibadet mesabesinde olmuştur. Çünkü bu secde, Allah'ın emriyle ve Âdem'i yüceltmek için olmuştur. Çünkü Allah, Âdem'i onurlandırmak için melekleri ona secde etmekle görevlendirmiştir. Bu tür bir secde, Âdem'e bir boyun eğme gibidir. Ancak bu, ibadet diye adlandırılamaz. Çünkü ibadet, boyun eğmenin nihai şekli olup Allah'tan başkası için sahih değildir.

Bir yoruma göre de Allah, kutsiyetinin meleklerin yaptıklarıyla değil, O'nun yüceliğiyle olduğunu, kutsama ve tesbihin de Allah'a değil, onu yapan meleklere güzellik kattığını açıklamıştır. Zira kendisini yüceltenleri celaliyle yücelten, kadrini üstün tutanları da izzetiyle aziz kılan Allah'tır. Kaldı ki Allah'ın kadri, yaratıklar tarafından yüceltilmekten daha yüce, zikri de, yaratıklar tarafından izzetle anılmaktan daha azizdir.

(فَسَجَدُوٓا اِلَّٓا اِبْلِيسَ) *"İblis hariç, hepsi secde ettiler."* İblis, kalbiyle karşı çıkarak ve nefsinin kibrine kapılarak secde etmek istemedi. Zaten o, Allah'ın ezelî hükmünde ve ilminde kâfirlerden idi. Bu arada

İblis, taat ve uyumu sayesinde saygın ve itibarlı bir dönem yaşamıştı. Melekler ona önde olma payesi vermiş ve ayrıcalığı hak ettiğine inanmışlardı. Böylece durumu, şu şiirde söylendiği gibi olmuştur:

*Aramızda parlayan bir vuslat lambasıydı o*
*Aradan esti bir rüzgâr ve sönüverdi o*

İblis, iyilik, yakınlık ve ayrıcalığın kendisine ait bir hak olduğunu hesaplıyordu.

Şiir:

*İyi geçirdi geceyi dünya huzurlu iken*
*Ancak bir gün sabahlarken değişmişti zaman*

Böylece durum değişmiş ve ne geçmişteki ibadet kendisine fayda vermiş ne bir şefaatçinin şefaati imdadına yetişmiş ne de ezeli lütuf onu korumuştur. Kaderin mağlup ettiği kimseye çile fayda vermez.

Aynı zamanda Âdem de bir beşerî yanılgıya düşmüş; ancak hemen ardından ilahî rahmet imdadına yetişmiştir. İblis ise ezelî mutsuzluğa yakalanmış, kısmet ve kadere yenilmiş, ümidi boşa çıkmış ve çilesi hedef şaşırmıştır.

وَقُلْنَا يَٓا اٰدَمُ اسْكُنْ اَنْتَ وَزَوْجُكَ الْجَنَّةَ وَكُلَا مِنْهَا رَغَدًا حَيْثُ
شِئْتُمَا وَلَا تَقْرَبَا هٰذِهِ الشَّجَرَةَ فَتَكُونَا مِنَ الظَّالِمِينَ ﴿٣٥﴾

35- "Biz: 'Ey Âdem, sen ve eşin beraberce cennete yerleşin. Orada istediğiniz zaman her yerde cennet nimetlerinden kolaylıkla yeyin. Sadece şu ağaca yaklaşmayın. Eğer bu ağaçtan yerseniz her ikiniz de kendine kötülük eden zalimlerden olursunuz' dedik."

Allah, Hz. Âdem'i cennete yerleştirdi; ancak cennete girmesiyle beraber imtihan ağacını da yarattı. Eğer ezeli takdir olmasaydı, Allah o ağacın tazeliğini çürüklüğe, yeşilliğini kuruluğa, varlığını da yokluğa dönüştürür ve yaprakları üstüne çırpmak üzere Âdem'in eli ağaca yetişmez ve yaşananlar var olmazdı.

Bir de eğer ağacın boyu, Hz. Âdem'in eli yetişemeyecek kadar uzasaydı, hakkında bütün bu karmaşa meydana gelmezdi. Ne var ki, karşısına ezelî hükmün kaçınılmaz kıldığı ilahi takdir çıkmıştır.

Öte yandan cennetten daha iyi bir yer, Hz. Âdem'den daha akıllı bir insan, Hakk'ın ona olan emrinden daha yol gösterici bir emir, hataya düşmeden önce yaptığı hiçbir tuhaflık ve onunkinden daha güçlü bir kararlılık bulunmamaktadır. Ne var ki ilahî kudrete direnme söz konusu olamaz ve ilahî hükme karşı çıkılamaz.

Bir yoruma göre de Allah:

(وَقُلْنَا يَٓا اٰدَمُ اسْكُنْ اَنْتَ وَزَوْجُكَ الْجَنَّةَ وَكُلَا مِنْهَا رَغَدًا حَيْثُ شِئْتُمَا) *"Ey Âdem, sen ve eşin beraberce cennete yerleşin. Orada cennet nimetlerinden kolaylıkla yeyin"* buyurmakla mahlûka yakışanın mahlûkla birlikte yaşamak ve kısmet aramak olduğuna işarette bulunmuştur. Nitekim Hz. Âdem, yalnızken tam bir huzur ve afiyet içerisinde idi. Hayatına şekil ve eş girince fitnenin azı dişleri göründü ve imtihan kapısı açılmış oldu. Hz. Havva ile birlikte yaşamaya başladığı anda ağaçtan yemeğe dair isteğine boyun eğdi ve gerçekleşen o hataya düşmüş oldu.

Şiir:

*Eski bir hastalıktır Âdemoğullarında*
*Bir insanın bir insana olan tutkusu*

**Bir Fasıl**

Âdemoğluna ne yasaklanırsa, ona yakınlaşmasının sebepleri meydana gelir. İşte Hz. Âdem! Kendisine cennetin tamamı mubah kılındı ve sadece bir ağaçtan alıkonuldu. Rivayetlerde Âdem'in, kendisine mubah kılınanlardan herhangi birine elini uzattığına dair bir bilgi bulunmamaktadır. Ne var ki alıkonulduğu şeye yenik düşmüş ve ona bulaşmıştır. İşte mahlûkun temel özelliği budur!

**Bir Fasıl**

Aslında Allah: (اِنّي جَاعِلٌ فِي الْاَرْضِ خَليفَةً) *"Ben, yeryüzünde bir halife yaratacağım"* (Bakara,2/30) buyurduğunda Hz. Âdem'in cennete

girişinin, çıkmasını gerektirecek hatayı işlemek şeklindeki akıbetine zaten dikkat çekmiştir. Yani Allah, onu yeryüzünde halifesi kılacağını bildirdiğine göre, cennette kalması nasıl mümkün olur?!

Bir yoruma göre; Hz. Âdem, melekler nezdinde saygın, herkesin secde ettiği, başında vuslat tacı, belinde gurbet kuşağı ve boynunda Allah'a yakınlık gerdanlığı taşıyan bir kişi olarak yaşamıştır. Rütbece ondan üstün ve onun gibi yüksek itibar sahibi hiç kimse yoktu. Sürekli kendisine: *"Ey Âdem! Ey Âdem!"* çağrısı yapılıyordu. Ağaca bulaşınca akşama varmadan elbiseleri üzerinden alındı ve dostluktan mahrum edildi. Melekler de onu şiddetle tartaklayıp beklemeden çıkmasını istiyorlardı.

Şiir:

*Güvendim ona, oluşturdu güvenimden bana*
*Bir tuzak, böyle olur dostlara güvenenin hali*

Âdem, yürüyüşünde şaşırınca bir saat zarfında bir milyon sitemle çıktı ve şu dizelerde belirtilen duruma düştü:

*Helal olsun o yiğitlere ki geldiler*
*Krallar gibi ve gittiler miskinler gibi*

**Bir Fasıl**

Allah, kendi emriyle Hz. Âdem'i ağaca yaklaşmaktan alıkoydu, kahrıyla onu alıkoyduğu durumun içine attı ve onda gizli tuttuğu sırrı konusunda kendisini şaşırttı.

فَاَزَلَّهُمَا الشَّيْطَانُ عَنْهَا فَاَخْرَجَهُمَا مِمَّا كَانَا فِيهِ وَقُلْنَا اهْبِطُوا
بَعْضُكُمْ لِبَعْضٍ عَدُوٌّ وَلَكُمْ فِي الْاَرْضِ مُسْتَقَرٌّ وَمَتَاعٌ اِلٰى حِينٍ ٣٦

36- "Şeytan, onların ayaklarını kaydırıp haddi tecavüz ettirdi ve içinde bulundukları cennetten onları çıkardı. Ve biz şöyle dedik: 'Bir kısmınız diğerine düşman olarak ininiz. Sizin için yeryüzünde barınak ve belli bir zamana dek yaşamak vardır.'"

Şeytan onları hata işlemeye sevk etti. Gerçekte ise sadece ilahî kudret onlarla ilgili tasarrufta bulunmuş ve durumlarındaki değişiklik kaderin gereği olarak meydana gelmiştir. Şeytan, onları görünürde sahip oldukları mertebe ve derecenin dışına çıkardı. Fakat Allah'ın hükmünde değerleri daha da yükselmiş oldu.

(وَقُلْنَا اهْبِطُوا بَعْضُكُمْ لِبَعْضٍ عَدُوٌّ) *"Ve biz şöyle dedik: Bir kısmınız diğerine düşman olarak ininiz."*

Allah, onlarla Şeytan'ın arasına düşmanlık soktu. Fakat Hak Teâlâ, Hz. Âdem'le beraberdi.

**Bir Fasıl**

Şeytan'ın düşmanlığı kesin olsa da tehlike arz edişi sabit değildir. Çünkü Allah'ın kullarına tanıdığı ayrıcalık üstündür. Allah şeytana hitaben şöyle buyurmuştur:

(اِنَّ عِبَادِي لَيْسَ لَكَ عَلَيْهِمْ سُلْطَانٌ)

*"Şüphesiz kullarım üzerinde senin bir hâkimiyetin yoktur"* (Hicr, 15/42)

**Bir Fasıl**

Eğer şeytanın başkasını saptırmaya gücü yetseydi, aynı zamanda kendini hidayete erdirme imkânına da sahip olması gerekirdi. Oysa bu olamaz. Kaldı ki, yalnız başına her şeyi yoktan var etmek, Allah'a özgü sıfatlardandır.

(وَلَكُمْ فِي الْاَرْضِ مُسْتَقَرٌّ وَمَتَاعٌ اِلَى حِينٍ) *"Sizin için yeryüzünde barınak ve belli bir zamana dek yaşamak vardır."*

Maddî varlıkların yerleşip kaynaşacakları yer, yeryüzüdür. Ruhların alışıp yaşadıkları yer ise arşın eteğidir. Ancak etek lafzı burada mecâzî anlamdadır. Zira himmetlerin sonradan yaratılmış olanlarla ilgisi olamadığı gibi, gerçeklere doğru yükselen niyetler de bu sahanın yabancısı olanlara ait olamaz.

فَتَلَقّٰٓى اٰدَمُ مِنْ رَبِّه۪ كَلِمَاتٍ فَتَابَ عَلَيْهِ اِنَّهُ هُوَ التَّوَّابُ الرَّح۪يمُ ٣٧

37- "Bu durum devam ederken Âdem, Rabbinden bir takım kelimeler aldı ve derhal tevbe etti. Çünkü Allah, tevbeleri kabul eden ve merhameti bol olandır."

Hz. Âdem Allah'a yalvarırken dilinden bazı kelimeler döküldü. Allah da ona bazı kelimeler duyurdu.

Şiir:

*Gözle denetlenmekten korkarken bizler*
*Konuştu sırlar kalplerde*

Allah, hikâyeyi saklı tutmak veya ihtimal ve zannı mümkün kılmak ve te'vile yer bırakmak için bu konudaki sözü oldukça kısa tutmuştur.

Bu arada Hz. Âdem'in kelimeleri, özür dileme ve kurtuluşa erme çabasından, Allah'ın sözleri de kabul ve lütuftan ibaret olabilir. Tefsir ilminin izahına göre bu karşılıklı sözler şöyledir:

- Ey Âdem, yoksa bizden kaçıyor musun?

- Ey Rabbimiz, nefsimize zulmettik. Beni cennetten çıkaracak mısın?

- Evet.

- Beni tekrar cennete döndürecek misin?

- Evet.

Bir yoruma göre de Allah Hz. Âdem'in cennetten çıkarılmasını emrettiği zaman ona ilahî hitabından duyurduğu bu sözleri kendisi için manevî bir hatırlatıcı gıda kıldı.

Şiir:

*Hatırlıyorum müdafaa günlerini, eğiliyorum sonra*
*Ciğerimin üstüne, param parça olacağı korkusuyla*

Bu arada dostların karşılıklı konuşmaları şerhe konu edilemez ve yabancılar onları yeterince bilemez. Bir de tefsir, te'vil ve gayb hakkında, onun şöyle olduğuna ve Hak Teâlâ'nın onunla şunu irade buyurduğuna hükümetmek anlamında değil, ancak işaret yoluyla, dostların ayrılık esnasındaki ve veda vakitlerindeki hallerinde şunların söylenmiş olması muhtemeldir: *"Yanımdan çıktığın zaman ahdimi unutma. Şayet benden yeterince haber alamazsan, sakın başkasını bana tercih etmeyesin."* Şu sözün söylenmiş olması da ihtimal dâhilindedir: *"Şayet seninle buluşma fırsatını kaçırdıysam, hiç olmazsa elçinin bana gelişi gecikmesin."*

قُلْنَا اهْبِطُوا مِنْهَا جَمِيعًا فَاِمَّا يَأْتِيَنَّكُمْ مِنّ۪ي هُدًى فَمَنْ تَبِعَ هُدَايَ
فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿٣٨﴾

38- "Dedik ki: 'Hepiniz cennetten inin! Eğer benden size bir hidayet gelir de her kim hidayetime tabi olursa onlar için herhangi bir korku yoktur ve onlar üzülmezler.'"

Huzurda edebe aykırılık, kapıya geri çevrilmeye sebep olur. Nitekim Hz. Âdem, kurbet gözüyle edebe aykırı hareket edince Allah şöyle buyurmuştur:

(اهْبِطُوا بَعْضُكُمْ لِبَعْضٍ عَدُوٌّ وَلَكُمْ فِي الْاَرْضِ مُسْتَقَرٌّ وَمَتَاعٌ اِلٰى ح۪ينٍ)

*"Birbirinize düşman olarak inin ve sizin için yeryüzünde karar kılacak yer vardır."* (Bakara,2/36)

Yani siz, kurbet makamında belli bir zamana kadar kalıp nimetlerden yararlandıktan sonra birbirinize düşman olarak inin. Onlar, yeryüzünde nimetlerden az miktarda yararlanırlar; ancak sonunda yoksullaşırlar.

Şiir:

*Muhtaç oldukları zaman dönerler gönüllü olarak fakirliğe*
*Şayet bolluğa kavuşurlarsa, çabucak dönerler fakirliğe*

Allah, Hz. Âdem'i cennetten çıkarıp yeryüzüne indirdikten sonra, kalben dönüşe meyletmesi halinde onu eski haline döndürmekle müjdeleyerek:

(فَاِمَّا يَأْتِيَنَّكُمْ مِنّ۪ي هُدًى فَمَنْ تَبِعَ هُدَايَ فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ)

*"Eğer benden size bir hidayet gelir de her kim hidayetime tabi olursa onlar için herhangi bir korku yoktur ve onlar üzülmezler"* buyurmuştur.

وَالَّذ۪ينَ كَفَرُوا وَكَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَٓا اُو۬لٰٓئِكَ اَصْحَابُ النَّارِ هُمْ ف۪يهَا خَالِدُونَ ﴿٣٩﴾

39- "İnkâr edip ayetlerimizi yalanlayanlara gelince, onlar cehennemliktir. Onlar orada ebedi kalırlar."

Nimeti şükürden başka bir şeyle karşılayıp tasdik ve tahkikten gafil kalanlar için belli bir zaman sonra acıklı bir azap ve acil bir ayrılık vardır.

يَا بَن۪ٓي اِسْرَٓائ۪يلَ اذْكُرُوا نِعْمَتِيَ الَّت۪ٓي اَنْعَمْتُ عَلَيْكُمْ وَاَوْفُوا بِعَهْد۪ٓي اُو۫فِ بِعَهْدِكُمْ وَاِيَّايَ فَارْهَبُونِ ﴿٤٠﴾

40- "Ey İsrail oğulları! Size verdiğim nimetlerimi hatırlayın. Bana verdiğiniz sözü yerine getirin ki, ben de size va'dettiklerimi vereyim. Yalnızca benden korkun."

Âlimlerin izahına göre; nimetin mahiyeti, şaibelerden arınmış bir lezzettir. Aynı şekilde böyle bir lezzetin sebebi de onlara göre nimettir. Hakikat ehline göre ise nimet, inamda bulunanı sana gösteren veya hatırlatan veya seni ona ulaştıran veya ona ulaşmana engel teşkil etmeyen şeydir. Ayrıca nimet, görüntü ve zevahir nimeti ile ruhlar ve sırlar nimeti olmak üzere iki kısma ayrılır. Birinci kısım çeşitli rahatlıklardır. İkinci kısım ise müşahede ve keşif çeşitleridir. Bu çerçevede manevî nimetlerden bazısı kalplerin irfanı, ruhların mahabbeti ve sırların müşahedeleridir.

**Bir Fasıl**

Bir yoruma göre; Allah, İsrail oğullarına nimetleri, Hz. Muhammed'in ümmetine ise nimetin sahibi olan Allah'ı anmayı emretmiştir. Kendisine: *"Nimetimi an"* denilen ile kendisine: *"Beni anın, ben de sizi anayım"* denilen arasında ise büyük fark vardır.

(وَاَوْفُوا بِعَهْدِيٓ اُوفِ بِعَهْدِكُمْ) *"Bana verdiğiniz sözü yerine getirin ki, ben de size va'dettiklerimi vereyim."*

Allah'a verilen söz marifeti korumak, sevgisini korumak ve dergâhına varmaktır. Bize vaat ettiği ise kesintisiz mağfiret, sevabını lütfetmesi ve hayırlı akıbettir.

Bana verdiğiniz sözü, sırrı korumakla yerine getirin, size va'dettiğimi güzel sevapla yerine getireyim. Misak günü bana vermeyi kabul ettiğiniz sözü yerine getirin, huzuruma çıkacağınız gün size garanti verdiğim vaadi yerine getireyim. Başkasını bana tercih etmeyeceğinize dair sözü yerine getirin, lütuf ve iyiliğimi sizden esirgemeyeceğime dair vaadi yerine getireyim. Size tevdi ettiğim emanetlere riayet edeceğinize dair sözünüzü yerine getirin, sizin için aydınlık parıltıları ve parlak tecellileri devamlı kılmakla vaadimi yerine getireyim. Sözünüzü, sırlarımı koruyarak yerine getirin, güzel sevaplarımla size vaat ettiğimi yerine getireyim. Beni tanımaya devam ederek sözünüzü yerine getirin, ihsanımı devamlı kılarak size olan vaadimi yerine getireyim. Bana hizmet ifa etmede sözünüzü yerine getirin, o hizmeti sizden kabul etmek lütfunda bulunarak vaadimi yerine getireyim. Güzel mücahede ve muamelede bulunarak sözünüzü yerine getirin, benimle olan bağınızı ve müşahedeyi devamlı kılarak vaadimi yerine getireyim. Kendi gücünüze güvenmekten vazgeçmek suretiyle verdiğiniz sözü yerine getirin, size sürekli lütuf ve ikramda bulunarak vaadimi yerine getireyim. Beni üstün tutarak ve bana tevekkül ederek sözünüzü yerine getirin, sizin için yeterli olmak ve lütufta bulunmakla vaadimi yerine getireyim. Sözünüzü samimi sevgiyle yerine getirin, noksansız yakınlıkla vaadimi yerine getireyim. Sadece beni yeterli bularak sözünüzü yerine getirin, amelinizle sizden razı olarak vaadimi yerine getireyim.

Gayb âleminin hizmet zemininde taat kemerini bağlayarak ve her türlü çabayı harcayarak sözünüzü yerine getirin, dostluğu, görünmeyi, hitabı duymayı ve noksansız yakınlığı devam ettirmekle vaadimi yerine getireyim. Nefsin arzularını terk ederek mükellefiyetlerde sözünüzü yerine getirin, o mükellefiyetleri sizin için yeterli bularak vaadimi yerine getireyim. Sonsuza dek: *"Rabbim, Rabbim!"* diyerek sözünüzü yerine getirin, ben de size: *"Kulum, kulum!"* diyerek vaadimi yerine getireyim.

(وَاِيَّايَ فَارْهَبُونِ) *"Yalnızca benden korkun."*

Yani sadece ben yaratma gücüne sahip olduğum için, yalnızca benden korkun. Zira zerre kadar gücü ve nimeti olmayandan korkmak doğru olmaz.

وَاٰمِنُوا بِمَٓا اَنْزَلْتُ مُصَدِّقًا لِمَا مَعَكُمْ وَلَا تَكُونُوٓا اَوَّلَ كَافِرٍ بِهٖ
وَلَا تَشْتَرُوا بِاٰيَاتٖي ثَمَنًا قَلٖيلًا وَاِيَّايَ فَاتَّقُونِ ﴿٤١﴾

41- "Elinizdekini (Tevrat'ı) tasdik edici olarak indirdiğime (Kur'an'a) iman edin. Sakın onu inkâr edenlerin ilki olmayın. Ayetlerimizi az bir karşılık ile satmayın, yalnız benden korkun."

Bu ayetin işarî izahı, kulun beyana dayalı imanını burhana dayalı imanıyla uyumlu hale getirmesidir. Bu arada müminlerin çoğunluğu, akıl yürütme şartına bağlı burhanî imana sahip iken havastan olan müminler, ilahî teveccühün gereği olarak beyana dayalı imana sahiptirler. Bunlara Hak Teâlâ teveccühte bulunmuş, onlar da böylece Allah'a iman etmişlerdir. Havassın havassı diye adlandırılan diğer bir kesim de vardır ki, imanları müşahedeye dayalıdır.

(وَلَا تَكُونُوٓا اَوَّلَ كَافِرٍ بِهٖ) *"Sakın onu inkâr edenlerin ilki olmayın."*

Yani küfür çığırını açmayın. Çünkü bu çığırı açanın vebali, bu konuda ona uyanın vebalinden büyüktür.

(وَلَا تَشْتَرُوا بِاٰيَاتٖي ثَمَنًا قَلٖيلًا) *"Ayetlerimizi az bir karşılık ile satmayın."*

Yani değersiz arzunuzu benim büyük hakkıma tercih etmeyin.

(وَإِيَّايَ فَاتَّقُونِ) *"Yalnız benden korkun."*

Allah'ın azabından korkanlar pek çoktur. İlahi müşahede ve ru'yetten heybet duyanlar ise nadirdir.

وَلَا تَلْبِسُوا الْحَقَّ بِالْبَاطِلِ وَتَكْتُمُوا الْحَقَّ وَاَنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٤٢﴾

42- "Bilerek hakkı bâtıl ile karıştırmayın, hakkı gizlemeyin."

İki zıddı birleştirebileceğinizi ve aynı durum içerisinde iki yerde olabileceğinizi sanmayın. Zira kul, ya hakka bağlılığın huzurunu veya nefsanî arzulara tutkunluğun sıkıntısını yaşar. Her iki hususun birlikte gerçekleşmesi ise, imkansız bir zandır.

Bu arada hakkı bâtıl ile karıştırmak kirletme ve saygısızlık (tednis), hakkı gizlemek ise hile (telbis)dir. Oysa siz, Hak Teâlâ'nın hakkının takdis olduğunu bilirsiniz.

Şiir:

*Ey Ülker ve Süheyl yıldızlarını birleştirmek isteyen kişi!*
*Allah sana uzun ömür versin, nasıl birleşir onlar*
*Şam tarafında görünürken Ülker*
*Yemen tarafında beliriverir Süheyl*

وَاَقِيمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ وَارْكَعُوا مَعَ الرَّاكِعِينَ ﴿٤٣﴾

43- "Namazı tam kılın, zekâtı hakkıyla verin, rükû edenlerle beraber rüku edin."

Allah'ın huzurunda olmanın adabını koruyun. Zira âdâbı korumak, hizmet ehlinin yaptığı ibadet hizmetinin daha mükemmel olmasını sağlar. Zekâtı verme emrindeki işaret ise, himmetlerin zekâtına yöneliktir. Tıpkı nimetlerin zekâtı ödendiği gibi.

Şiir:

*Ödenen bir zekâtı vardır her şeyin*
*Güzelliğin zekâtı ise benim gibilere merhamettir*

Böylece mümin, artan himmetlerinden ve nazarının letâifinden, yol gösteren ve terbiye edenlerin üstüne, kendisiyle hayat bulacakları ve (...) şeyler akıtır.

(وَارْكَعُوا مَعَ الرَّاكِعِينَ) *"Rükû edenlerle beraber rükû edin."*

Yani ahvalde selefin izinden yürürsün ve yalnızlık çığırından sakınırsın. Zira toplum kalabalığının içinde bulunmak, herkesten ayrı yaşamaktan daha güvenlidir.

اَتَأْمُرُونَ النَّاسَ بِالْبِرِّ وَتَنْسَوْنَ اَنْفُسَكُمْ وَاَنْتُمْ تَتْلُونَ الْكِتَابَ اَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿٤٤﴾

44- "Sizler Kitab'ı okuduğunuz halde insanlara iyiliği emredip kendinizi unutuyor musunuz? Aklınızı kullanmıyor musunuz?"

Siz, insanları tez davranmaya teşvik ederken kendiniz geri durmaya mı razı oluyorsunuz?

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Siz halkı bize davet ederken kendiniz geri mi duruyorsunuz? Grupları yola çıkarırken kendiniz varmada kusur mu işliyorsunuz? Ahvalin iç yüzü bakımından başkalarıyla rekabet edip didişirken görünürde iflasınıza mı razı oluyorsunuz?

- Haktan zerre ağırlığı ve tane miktarınca aksamayı görüyorsunuz da kendinizdeki kumlar ve dağlar kadar kusurları göz ardı mı ediyorsunuz?

Şiir:

*Sen benim gözümde görürken ince tozu*
*Görmüyorsun gözündeki kocaman çöpü*

- Sizi kana kana içirirken ara sıra bile mi içmiyorsunuz?

(وَاَنْتُمْ تَتْلُونَ الْكِتَابَ ) *"Oysa siz Kitab'ı okuyorsunuz."* Sonra da gizli iddialarla inatçılık yapıyor ve kalplerinize damgasını vuran açık engeller ve çirkin duygular sebebiyle inkârda bulunuyorsunuz.

Bunun kötü huylardan ve çirkin davranışlardan olduğu konusunda (اَفَلَا تَعْقِلُونَ ) *"aklınızı kullanmıyor musunuz?"*

وَاسْتَعٖينُوا بِالصَّبْرِ وَالصَّلٰوةِ وَاِنَّهَا لَكَبٖيرَةٌ اِلَّا عَلَى الْخَاشِعٖينَ ﴿٤٥﴾

45- "Sabır ve namaz ile Allah'tan yardım isteyin. Şüphesiz o, Allah'a saygıdan kalbi ürperenler dışında herkese zor ve ağır gelen bir görevdir."

Sabır, nefsi alışkanlıklarından koparmaktır. Namaz ise Allah ile temas kurmaya çabalamaktır. Bu itibarla sabır, başkasını terk etmeye, namaz da gaybın huzurunda devamlı durmaya işaret etmektedir. Bu ikisiyle yardım istemek ise Hakk'ın, sırrına tecelli ettiği kimse hariç, çok ağır bir durumdur. Çünkü hadiste şu rivayet edilmiştir: *"Allah bir şeye tecelli ettiği zaman, o şey O'na boyun eğer."* Hak, tecelli ettiği zaman yaratıkların sakındıkları şey hafif ve kolay hale gelir. Çünkü taatlerin peş peşe gelmesi, karşılaşılan zorluk ölçüsünde yükümlülük gerektirir. Müşahedelerle tecelli ise tahkikin sonucu olarak, noksansız vuslatı ve devamlı yakınlaşmayı sağlar.

Bir yoruma göre de benimle beraber olmaya sabretmek konusunda benden yardım dileyin. Bana kıldığınız namaz konusunda da sizi korumam için yardım dileyin. Ta ki, keşif ve heybet tecellileri, sizi kaplayıp da hizmeti yerine getirme gücünden yoksun bırakmasın.

Kuşkusuz kulun, zahirî hükümleri yerine getirebilmesi için, keşif esnasında kalbin üstüne çöken ağırlıkların hafifletilmesi, Hakk'ın büyük bir nimetidir.

Bu arada sabrın; Allah yolunda sabır, Allah için sabır, Allah ile sabır ve Allah ile beraber olmaya sabır şeklindeki bütün kısımları iyidir. Sadece bir kısmı iyi değildir. O da Allah'a uzak olmaya sabırdır.

Şiir:

*Her yerde güzeldir sabır*
*Sana karşı olan hariç, çirkindir o çünkü*

اَلَّذِينَ يَظُنُّونَ اَنَّهُمْ مُلَاقُوا رَبِّهِمْ وَاَنَّهُمْ اِلَيْهِ رَاجِعُونَ ﴿٤٦﴾

**46- "Onlar, kesinlikle Rablerine kavuşacaklarını ve O'na döneceklerini düşünen ve bunu kabullenen kimselerdir."**

Ayette kullanılan zan tabirinin kesinlik ifade ettiği söylenmiştir ki, burada bu daha uygundur. Bazen de zan, sanmak anlamında kullanılır. Bu çerçevede her kim kesinlik derecesinde zannederse o vuslat sahibidir. Her kim de tahmin ölçüsünde zannederse, o kimse ayrılık sahibidir. Rablerine kavuşma ifadesi ise hem geçmiş hem de şimdiki zamanı ifade etmeye yararken onlar, Rablerine gelecekte kavuşacaklardır. Ancak sözü edilen kimseler, gaybın meydana gelecek hükümlerinden emin olduklarından onlara göre bu vaat gerçekleşmiş, gayb da gözler önüne serilmiş gibidir.

يَا بَنِي اِسْرَآءِيلَ اذْكُرُوا نِعْمَتِيَ الَّتِي اَنْعَمْتُ عَلَيْكُمْ وَاَنِّي فَضَّلْتُكُمْ عَلَى الْعَالَمِينَ ﴿٤٧﴾

**47- "Ey İsrail oğulları! Size verdiğim nimetimi ve sizi cümle âleme üstün kıldığımı hatırlayın."**

Allah, (وَاَنِّي فَضَّلْتُكُمْ عَلَى الْعَالَمِينَ) *"sizi cümle âleme üstün kıldığımı"* sözüyle İsrail oğullarının üstünlüğüne kendilerini şahid kılmıştır. (قُلْ بِفَضْلِ اللّٰهِ وَبِرَحْمَتِهِ فَبِذٰلِكَ فَلْيَفْرَحُوا) *"De ki: Ancak Allah'ın lütfü ve rahmetiyle, işte bunlarla sevinsinler"* (Yûnus, 10/58) ayetiyle de Allah, Hz. Muhammed (s.a.v.)'in ümmeti olan Müslümanları kendi ilahi lütfuna şahid kılmıştır.

Tanıklık ettiği şey, kendi üstünlüğü olan ile tanıklık ettiği şey Rabbinin lütfu olan kimseler arasında ise büyük fark vardır. Nitekim kulun kendi üstünlüğüne tanıklık etmesi, kendisini beğenme

tehlikesine yol açar. Oysa kulun, celal ve cemal sıfatlarına sahip olan Hak Teâlâ'nın lütfüne tanıklık etmesi kabule vesile olan senayı gerektirir.

وَاتَّقُوا يَوْمًا لَا تَجْزِي نَفْسٌ عَنْ نَفْسٍ شَيْئًا وَلَا يُقْبَلُ مِنْهَا شَفَاعَةٌ وَلَا يُؤْخَذُ مِنْهَا عَدْلٌ وَلَا هُمْ يُنْصَرُونَ ﴿٤٨﴾

48- "Öyle bir günden korkun ki, o günde hiç kimse başkası için herhangi bir ödemede bulunamaz; hiç kimseden şefaat kabul olunmaz, fidye alınmaz; onlara asla yardım da yapılmaz."

Allah, avamı fiilleriyle korkutarak: *"Öyle bir günden korkun ki"* ve: *"Ateşten korkun"* buyurmuştur. Havassı sıfatlarıyla korkutarak şöyle buyurmuştur:

(وَقُلِ اعْمَلُوا فَسَيَرَى اللّٰهُ عَمَلَكُمْ وَرَسُولُهُ)

*"De ki: Yapın yapacağınızı! Allah da Resulü de ... amelinizi görecektir."* (Tevbe, 9/105);

(وَلَا تَعْمَلُونَ مِنْ عَمَلٍ اِلَّا كُنَّا عَلَيْكُمْ شُهُودًا)

*"Ne zaman sen bir işte bulunsan... biz mutlaka üstünüzde şahidizdir"* (Yunus, 10/61). Havassın havassını ise kendisiyle korkutarak:

(وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهُ)

*"Allah sizi kendisinden sakındırır"* (Ali İmran, 3/28), buyurmuştur.

Ayetteki *"adl"* lafzı fidye ödemek demektir.

Kıyamet günü Allah'ın şefaat emri ve izni vermediği hiç kimsenin şefaati dinlenmez. Bu itibarla, nasslarda yer almadığı için Allah hakkında *"şefî' (şefaatçi)"* sıfatı kullanılmamakla birlikte gerçekte en büyük şefaatçi O'dur.

Bu arada kaderin tokadını yiyenlere şefaatçilerin şefaati fayda vermediği gibi, hiçbir yardımcıları da yoktur. Bu nedenle, gökleri ve yerleri dolduracak kadar fidye verseler dahi onlardan bu fidye kabul olunmaz.

وَاِذْ نَجَّيْنَاكُمْ مِنْ اٰلِ فِرْعَوْنَ يَسُومُونَكُمْ سُوٓءَ الْعَذَابِ يُذَبِّحُونَ
اَبْنَآءَكُمْ وَيَسْتَحْيُونَ نِسَآءَكُمْ وَفِي ذٰلِكُمْ بَلَآءٌ مِنْ رَبِّكُمْ عَظِيمٌ ﴿٤٩﴾

49- "Hatırlayın ki, sizi Firavun taraftarlarından kurtardık. Çünkü onlar, azabın en kötüsünü size reva görüyorlar, yeni doğan erkek çocuklarınızı kesiyorlar, kızlarınızı hayatta bırakıyorlardı. Aslında o size reva görülenlerde Rabbinizden büyük bir imtihan vardı."

Her kim, düşmanından gelen musibete Allah yolunda sabrederse, Allah buna bedel olarak kendisine dostlarının arkadaşlığını ve güzel bağışını lütfeder. İşte İsrail oğulları! Firavun ve kavminden gelen zararın çilesini çekmeye sabrettikleri için Allah onlardan peygamberler meydana getirdi, onları hükümdar kıldı ve onlara, hiç kimseye vermediklerini verdi.

(وَفِي ذٰلِكُمْ بَلَآءٌ مِنْ رَبِّكُمْ عَظِيمٌ) *"Bunda Rabbinizden büyük bir imtihan vardı."*

Bir görüşe göre; buradaki imtihandan maksat büyük nimet, başka bir görüşe göre de şiddetli meşakkattir. Ancak gerçek şu ki, görünürde Allah'tan meşakkat gibi gelen şey, O'nu tanıyan için hakikatte nimet ve lütuftur.

وَاِذْ فَرَقْنَا بِكُمُ الْبَحْرَ فَاَنْجَيْنَاكُمْ وَاَغْرَقْنَآ اٰلَ فِرْعَوْنَ وَاَنْتُمْ
تَنْظُرُونَ ﴿٥٠﴾

50- "Bir zamanlar biz sizin için denizi yardık, sizi kurtardık, Firavun'un taraftarlarını da, siz bakıp dururken denizde boğduk."

İsrail oğullarının basiretleri yetersiz kalınca Allah, onlara açık mucizeler göstermiştir. Bu ümmetin ise basiretleri keskin olduğu için Allah ayetleriyle onlara keşfi gizli verdi. Zaten Allah'ın sünneti böyle yürümektedir. Basireti keskin olan kişinin yükümlülüğü daha esrarengiz ve işaretlerle dolu olur. Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur:

*"Bana kapsamlı kelimeler verildi ve benim için söz iyice kısa tutuldu."*

Onlar, denizin yarılması, Firavun ve taraftarlarının boğulması şeklindeki bu mucizelerin zahirini görünce içlerine bir şüphe girdi ve "Firavun boğulmadı" dediler. Bu şüphe, deniz Firavun ve taraftarlarını kenara atıp İsrail oğulları onları boğulmuş halde görünceye kadar devam etti. Bu ümmetin ise tasdik ifadesi ve basiretlerinin gücü o kadar sağlamdır ki, aralarından çıkmış bir genç olan Hz. Peygamber (s.a.v.)'in şu sözünü yeterli bulmuşlardır: *"Cennet ehlinin ziyaretleştiğini görür gibiyim. Cehennem ehlinin de havlaştıklarını görür gibiyim. Aynı şekilde Rabbimin arşını da ortaya çıkmış halde görür gibiyim."* İman noktasında mucizeleri açıkça gördüğü halde şüphe eden ile sadece duymakla yetinerek görmüş gibi iman eden kimse arasında ise büyük fark bulunmaktadır.

وَاِذْ وٰعَدْنَا مُوسٰٓى اَرْبَع۪ينَ لَيْلَةً ثُمَّ اتَّخَذْتُمُ الْعِجْلَ مِنْ بَعْدِه۪
وَاَنْتُمْ ظَالِمُونَ ﴿٥١﴾

51- "Musa'ya kırk gece söz vermiştik. Sonra haksızlık ederek buzağıyı tanrı edindiniz."

Hz. Muhammed (s.a.v.)'in ümmeti ile Hz. Musa'nın ümmeti arasında büyük bir fark bulunmaktadır. Şöyle ki, Hz. Musa'nın ümmetinin peygamberi kırk gün kaybolunca onlar buzağıyı kendilerine tanrı edindiler ve buzağı gibi bir tanrıları olmasını isteyerek şöyle dediler:

(فَقَالُوا هٰذَٓا اِلٰهُكُمْ وَاِلٰهُ مُوسٰى فَنَسِيَ)

*"Bu, sizin de Musa'nın da ilahıdır da o onu unutmuştur"* (Tâhâ, 20/88).

Hz. Muhammed'in (s.a.v.) ümmeti ise peygamberlerinin yaşadığı zaman üzerinden uzun yıllar geçtiği halde bir kimseden Allah hakkında teşbih içeren bir şey duyarlarsa canları pahasına da olsa o kimseden eser bırakmazlar.

Bir yoruma göre de, Hz. Musa ümmetini kardeşine bırakarak: Benim yerime kavmimi gözet, dedi. Döndükten sonra ise onları fitneye düşmüş olarak buldu. Bizim peygamberimiz (s.a.v.) ise Allah'a tevekkül etti ve bu nedenle ümmetin yönetimi hakkında kimseyi işaret etmedi. Bunun yanı sıra o, hayatının son anında da: "En yüce dost" diyordu. İşte Allah'ın bu ümmet için tevhid inancına nasıl da kefil olduğunu gözden kaçırmamak gerekir. Yemin ederim ki, bu ümmetin fertleri haklarını feda ederler, ancak tevhid inançlarını bozmazlar.

ثُمَّ عَفَوْنَا عَنْكُمْ مِنْ بَعْدِ ذٰلِكَ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿٥٢﴾

52- "O davranışlarınızdan sonra şükredersiniz diye sizi affettik."

Büyük günaha rağmen hemen affetmek, affedilenin gücünün azlığını gösterir. Buna Müslümanların analarına hitaben Allah'ın söylediği şu söz şahitlik etmektedir:

(مَنْ يَأْتِ مِنْكُنَّ بِفَاحِشَةٍ مُبَيِّنَةٍ يُضَاعَفْ لَهَا الْعَذَابُ ضِعْفَيْنِ)

*"Sizden kim açık bir ahlak dışılık yaparsa, onun azabı ikiye katlanır."* (Ahzab, 33/30) İsrail oğulları ise, buzağıya taptılar ve Allah onlara: "*O davranışlarınızdan sonra sizi affettik*" buyurmuştur. Bu ümmete ise şöyle buyurmuştur:

(وَمَنْ يَعْمَلْ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ شَرًّا يَرَهُ)

*"Kim, zerre ağırlığı kadar kötülük işlerse onu görür"* (Zilzal, 99/8).

وَاِذْ اٰتَيْنَا مُوسَى الْكِتَابَ وَالْفُرْقَانَ لَعَلَّكُمْ تَهْتَدُونَ ﴿٥٣﴾

53- "Doğru yolu bulasınız diye Musa'ya kitabı ve hak ile bâtılı ayıran hükümleri verdik."

Bu ümmetin kendisine özgü kılınan hak ile batıl ayırıcısı, kendisiyle hak ile bâtılı ayırdıkları kalplerindeki bir nurdur. Hz. Peygamber (s.a.v.) Vâbısa'ya: *"Fetvayı kalbinden iste"* buyurmuştur.

Bir de: *"Müminin ferasetinden sakın; çünkü o Allah'ın nuruyla bakar"* buyurmuştur.

Allah da şöyle buyurmuştur:

(اِنْ تَتَّقُوا اللّٰهَ يَجْعَلْ لَكُمْ فُرْقَانًا)

*"Eğer Allah'tan korkarsanız, O size hak ile bâtılı ayıran bir özellik verir."* (Enfal, 8/29)

وَاِذْ قَالَ مُوسٰى لِقَوْمِهِ يَا قَوْمِ اِنَّكُمْ ظَلَمْتُمْ اَنْفُسَكُمْ بِاتِّخَاذِكُمُ الْعِجْلَ فَتُوبُوٓا اِلٰى بَارِئِكُمْ فَاقْتُلُوٓا اَنْفُسَكُمْ ذٰلِكُمْ خَيْرٌ لَكُمْ عِنْدَ بَارِئِكُمْ فَتَابَ عَلَيْكُمْ اِنَّهُ هُوَ التَّوَّابُ الرَّحِيمُ ﴿٥٤﴾

54- "Musa kavmine demişti ki: 'Ey kavmim, şüphesiz siz buzağıyı tanrı edinmekle kendinize kötülük ettiniz. Onun için Yaradan'ınıza tevbe edin. Bunun için nefislerinizi öldürün. Öyle yapmanız, Yaratıcınızın katında sizin için daha iyidir. Böylece Allah tevbenizi kabul etmiş olur. Çünkü acıyıp tevbeleri kabul eden ancak O'dur.'"

Yani siz işlediğiniz günahlarınızla sadece kendinize zarar verdiniz. Allah ise üstün sıfatlara sahiptir. Zalimlerin zulmünden hiçbir şey onun izzetine dokunamaz. Kim, nefsine uyar ve arzusunun peşinden giderse, onun buzağısı, ilgisini odakladığı ve sadece kendisini amaçladığı şeydir.

(فَتُوبُوٓا اِلٰى بَارِئِكُمْ) *"Onun için Yaradan'ınıza tevbe edin."*

Ayetin bu ifadesi, büsbütün Allah'a yönelmek suretiyle oluşan tevbenin hakikatine işarettir.

(فَاقْتُلُوٓا اَنْفُسَكُمْ) *"Bunun için nefislerinizi öldürün."*

Nefisleri öldürmek suretiyle tevbe (...) değildir. Ancak İsrail oğulları kendilerini açıkça öldürebiliyorlardı. Bu ümmetin tevbesi ise, nefislerini iç dünyalarında gizlice öldürmekledir. Nitekim Allah'a yönelmedeki ilk adım, nefsin dışına çıkmaktır.

**Bir Fasıl**

İnsanlar, İsrail oğullarının tevbesinin daha zor olduğunu sanmışlardır. Oysa durum zannettikleri gibi değildir. Çünkü bu, bir defalığına ölüm acısına katlanmak idi. Bu ümmetin havassı ise her an ölürler. Bu nedenle şöyle denilmiştir:

*Ölüp rahata kavuşan kimse ölü değildir*
*Gerçek ölü yaşayanların ölüsüdür*

Nefsi gerçekte öldürmek ise onun, gücünden ve kuvvetinden arınmak veya nefisten bir şey görmek, iddiasını yüzüne çarpmak, planını bozmak, işleri bütün halinde Allah'a teslim etmek, nefsi tercihinden ve iradesinden sıyırmak ve beşerî izleri üzerinden silmektir. Şekil ve kalıpların kalması ise bir şey ifade etmemektedir.

(ذٰلِكُمْ خَيْرٌ لَكُمْ عِنْدَ بَارِئِكُمْ فَتَابَ عَلَيْكُمْ اِنَّهُ هُوَ التَّوَّابُ الرَّحِيمُ) *"Öyle yapmanız, Yaratıcınızın katında sizin için daha iyidir. Böylece Allah tevbenizi kabul etmiş olur. Çünkü acıyıp tevbeleri kabul eden ancak O'dur."*

Allah'ın sizin için olması, sizin kendiniz için olmanızdan daha iyidir.

وَاِذْ قُلْتُمْ يَا مُوسٰى لَنْ نُؤْمِنَ لَكَ حَتّٰى نَرَى اللّٰهَ جَهْرَةً فَاَخَذَتْكُمُ
الصَّاعِقَةُ وَاَنْتُمْ تَنْظُرُونَ ﴿٥٥﴾

55- "Bir zamanlar: 'Ey Musa, biz Allah'ı açıkça görmedikçe asla sana inanmayız' demiştiniz de bakıp durur olduğunuz halde hemen sizi yıldırım çarpmıştı."

Arada bir ilahî nimet olmaksızın, Allah'ın zâtını görmeye yeltenmek, hürmeti terk etmenin açık ifadesi olur. Bu da uzaklığın ve Allah'ın yardımından uzak kalmanın belirtilerindendir. Allah'a yakınlığın incelikleriyle birlikte olan izzetinin keşiflerinden hareketle dostluk sıfatının ispatı ise vuslatın alametlerinden ve saadetin göstergelerindendir.

Bu nedenle, şüphe yok ki, onlar Allah'a saygısızlığı güçlü kılmak suretiyle cehalet dilini uzatınca onları titreme ve yıldırım çarpmış oldu.

ثُمَّ بَعَثْنَاكُمْ مِنْ بَعْدِ مَوْتِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿٥٦﴾

56- "Sonra ölümünüzün ardından sizi dirilttik ki şükredesiniz."

İsrail oğulları azabın dehşetlerini yeterince yaşadıktan sonra Allah, haklarında hükmünün gereğini yerine getirmek ve günahı bağışlamadaki prensibini uygulamak üzere onları tekrar hissedebilir hale getirdi. Nitekim keremin gereklerinden biri de kulların yanılgılarını örtmektir.

وَظَلَّلْنَا عَلَيْكُمُ الْغَمَامَ وَاَنْزَلْنَا عَلَيْكُمُ الْمَنَّ وَالسَّلْوٰى كُلُوا مِنْ طَيِّبَاتِ مَا رَزَقْنَاكُمْ وَمَا ظَلَمُونَا وَلٰكِنْ كَانُوا اَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ﴿٥٧﴾

57- "Ve sizi bulutla gölgeledik. Size kudret helvası ve bıldırcın gönderdik ve 'verdiğimiz güzel nimetlerden yeyiniz' dedik. Hakikatte onlar bize değil, sadece kendilerine kötülük ediyorlardı."

Allah, onları gurbetin şaşkınlıkları içerisine attıktan sonra sadece kendilerini gölgelemeye, rızk elbisesiyle örtmeye, çalışıp kazanma külfetinden azad etmeye rıza gösterdi ve ihtiyaçları konusunda güzel muamelesiyle onlara sahip çıktı. Şöyle ki, kılları uzamıyor, tırnakları çıkmıyor, elbiseleri kirlenmiyor ve güneş ışınları üzerlerine yayılmıyordu. Zaten Allah'ın, kendisiyle tercihi arasına girdiği kimse hakkındaki sünneti böyle olup, bu kimse hakkında yaptığı tercih, onun kendisi için yaptığı tercihten daha hayırlı olur.

وَاِذْ قُلْنَا ادْخُلُوا هٰذِهِ الْقَرْيَةَ فَكُلُوا مِنْهَا حَيْثُ شِئْتُمْ رَغَدًا وَادْخُلُوا الْبَابَ سُجَّدًا وَقُولُوا حِطَّةٌ نَغْفِرْ لَكُمْ خَطَايَاكُمْ وَسَنَزِيدُ الْمُحْسِنِينَ ﴿٥٨﴾

58- "İsrail oğullarına: 'Bu kasabaya girin, orada bulunanlardan dilediğiniz şekilde bol bol yeyin, kapısından eğilerek girin. Girerken 'Hıtta (Ya Rabbi bizi affet)' deyin ki, sizin hatalarınızı bağışlayalım. Zira biz, iyi davrananlara karşılığını fazlasıyla vereceğiz' demiştik."

İsrail oğulları emrolundukları şeyi heder etmeyi alışkanlık haline getirmişlerdi. O kadar ki, bir sözü korumaları tavsiye edildi, onu değiştirdiler, secde halinde girmeleri emredildi, onu da çarpıttılar ve kendilerini gaybın oklarına hedef kıldılar. Sonra vuruşlarına dayanamadılar. Sürpriz cezalara maruz kaldılar ve çarpmaları karşısında duramadılar.

فَبَدَّلَ الَّذِينَ ظَلَمُوا قَوْلًا غَيْرَ الَّذِي قِيلَ لَهُمْ فَأَنْزَلْنَا عَلَى الَّذِينَ
ظَلَمُوا رِجْزًا مِنَ السَّمَاءِ بِمَا كَانُوا يَفْسُقُونَ ﴿٥٩﴾

59- "Fakat zalimler, kendilerine söylenenleri başka sözlerle değiştirdiler. Bunun üzerine biz, yapmakta oldukları kötülükler sebebiyle zalimlerin üzerine gökten acı bir azap indirdik."

Onlar, eğilimli oldukları hallerinden dolayı gökyüzünün kapısını hileleriyle kapatamadılar veya musibetin sebeplerini üzerlerinden savamadılar. Acının dişleri onları ısırınca da pişmanlık duygusuyla ürktüler. Ancak bunun kendilerine fayda vermesi beklenemez. Çünkü bu, imkânsız bir vehimdir.

وَإِذِ اسْتَسْقَى مُوسَى لِقَوْمِهِ فَقُلْنَا اضْرِبْ بِعَصَاكَ الْحَجَرَ فَانْفَجَرَتْ
مِنْهُ اثْنَتَا عَشْرَةَ عَيْنًا قَدْ عَلِمَ كُلُّ أُنَاسٍ مَشْرَبَهُمْ كُلُوا وَاشْرَبُوا مِنْ
رِزْقِ اللَّهِ وَلَا تَعْثَوْا فِي الْأَرْضِ مُفْسِدِينَ ﴿٦٠﴾

60- "Musa çölde kavmi için su istemişti de biz ona: 'Değneğinle taşa vur' demiştik. Derhal taştan on iki kaynak fışkırdı. Her bölük içeceği kaynağı bildi. Onlara: 'Allah'ın rızkından yeyin, için, sakın yeryüzünde bozgunculuk etmeyin' dedik."

Suyu sert kayadan çıkarmaya kadir olan Allah, onların susuzluğunu su olmadan da giderebilirdi. Fakat bu konuda mucizenin sonucunu göstermek, yardım istenen konuyu kendisine iletmek, taşı yerinden oynatmada Musa'nın da çaba harcama sorumluluğunun bulunması ve asâ ile vurmakla yükümlü tutulması için, kavmi lehine su talebinde bulunurken hükmünü nafiz kılacak bir çabanın harcanması söz konusudur.

Sonra Hak Teâlâ, her kavmin, kendi sınırını aşmadan ve arkadaşını sıkıntıya sokmadan bir sünnet üzere yürümesini istemiş ve bu amaçla her su içecekleri yeri tanımalarını sağlayan ayrı bir işaret tayin etmiştir. Böylece gruplardan biri, diğerinin suyuna dokunmamış olurdu.

Allah, onlara istediklerini verince şükretmelerini, emri korumalarını ve günahı tercih etmeyi terk etmelerini emrederek:

(وَلَا تَعْثَوْا فِي الْاَرْضِ مُفْسِدِينَ) *"Yeryüzünde bozgunculuk etmeyin"* buyurmuştur.

Bu arada kaynaklar değişik ve su içilen yerler farklı olup her grup kendi suyunun başına varır. Bu sulardan kimisi tatlı, kimisi acı, kimisi duru, kimisi de damla damla akacak kadar azdır. Ayrıca her bir kavmin bir yöneteni ve her bir taifenin bir önderi bulunmaktadır. Bu bağlamda nefisler arzu ve şehvetlerin, kalpler takva ve taatin, ruhlar keşif ve müşahedelerin kaynaklarına yönelirken sırlar da önce varlık ve görüntülerden sonra hissediş ve sıfatlardan koparak, sonra vücudun hakikatinde ve zâtında yok olarak gerçeklerin kaynaklarına inerler.

وَاِذْ قُلْتُمْ يَا مُوسٰى لَنْ نَصْبِرَ عَلٰى طَعَامٍ وَاحِدٍ فَادْعُ لَنَا رَبَّكَ يُخْرِجْ لَنَا مِمَّا تُنْبِتُ الْاَرْضُ مِنْ بَقْلِهَا وَقِثَّٓائِهَا وَفُومِهَا وَعَدَسِهَا وَبَصَلِهَا قَالَ اَتَسْتَبْدِلُونَ الَّذ۪ي هُوَ اَدْنٰى بِالَّذ۪ي هُوَ خَيْرٌ اِهْبِطُوا مِصْرًا فَاِنَّ لَكُمْ مَا سَاَلْتُمْ وَضُرِبَتْ عَلَيْهِمُ الذِّلَّةُ وَالْمَسْكَنَةُ

وَبَآؤُ بِغَضَبٍ مِنَ اللّٰهِ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ كَانُوا يَكْفُرُونَ بِاٰيَاتِ اللّٰهِ
وَيَقْتُلُونَ النَّبِيّٖنَ بِغَيْرِ الْحَقِّ ذٰلِكَ بِمَا عَصَوْا وَكَانُوا يَعْتَدُونَ ﴿٦١﴾

61- "Hani siz: 'Ey Musa! Bir tek yemekle yetinemeyiz, bizim için Rabbine dua et de yerin bitirdiği şeylerden; sebzesinden hıyarından, sarımsağından, mercimeğinden, soğanından bize çıkarsın' dediniz. Musa ise: 'Daha iyiyi daha kötü ile değiştirmek mi istiyorsunuz? O halde şehre inin. Zira istedikleriniz sizin için orada var' dedi. İşte üzerlerine aşağılık ve yoksulluk damgası vuruldu. Allah'ın gazabına uğradılar. Bu musibetler, Allah'ın ayetlerini inkâra devam etmeleri, haksız olarak peygamberleri öldürmeleri sebebiyle geldi. Bunların hepsi, sadece isyanları ve taşkınlıkları sebebiyledir."

İsrail oğulları, Hz. Musa'nın onlar için yaptığı doğru tercihe razı olmadılar ve onlar için gerekli olan yiyecek ve giyecek işini üstlenmesine sabır gösteremediler. Böylece onlar, yemeğin kalitesiz olanını yemek ve adiliğe rıza göstermek şeklindeki adetlerine meyletme seviyesizliğine düştüler. Bunun üzerine Allah, onları zillet ıstırabına geri döndürdü ve kesintisiz perişanlığa mahkûm etti. Nihayet peygamberlerin kanlarını akıttılar, utanmazlık ve sorumsuzluk yaparak emrin saygınlığını çiğnediler. Allah da çirkin fiilleri sebebiyle onları cezalandırdı ve kendileri için tercih ettikleri seviyesiz durumlara tekrar düşürdü. Nasihat onlarda sonuç vermeyince musibete ve rezalete uğradılar.

Bir yoruma göre de, İsrail oğullarının öncelikleri farklı ve darmadağın idi. Kendileri için tek bir yiyeceğe razı olmamışlardı ve dindarlıklarında tek bir mabutla yetinmemişlerdi. O kadar ki, puta tapan bir kavim görünce, Hz. Musa'ya: 'Ey Musa onların tanrısı olduğu gibi, bize de bir tanrı meydana getir' dediler. Esasen ikiliğe düşenlerin özelliği zaten budur. Bir Allah inancına sabretmek onlara ağır gelmektedir. Allah şöyle buyurur:

(وَاِذَا ذَكَرْتَ رَبَّكَ فِي الْقُرْاٰنِ وَحْدَهُ وَلَّوْا عَلٰٓى اَدْبَارِهِمْ نُفُورًا )

*"Sen Kur'an'da Rabbini yad ettiğinde onlar, canları sıkılmış bir vaziyette gerisin geri dönüp giderler."* (İsra,17/ 46)

اِنَّ الَّذٖينَ اٰمَنُوا وَالَّذٖينَ هَادُوا وَالنَّصَارٰى وَالصَّابِئٖينَ مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَعَمِلَ صَالِحًا فَلَهُمْ اَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿٦٢﴾

62- "Şüphesiz iman edenler; yani Yahudilerden, Hıristiyanlardan ve Sabiilerden Allah'a ve ahiret gününe hakkıyla inanıp salih amel işleyenler için Rableri katında mükâfatlar vardır. Onlar için herhangi bir korku yoktur. Onlar, üzüntü çekmeyeceklerdir."

Asıl bir iken yolun farklı oluşu, kabulün güzelliğine engel değildir. Bu itibarla kim, Hak Teâlâ'yı ayetleri konusunda tasdik eder, zâtı ve sıfatları ile ilgili olarak haber verdiği şeylere iman ederse, din farkı ve isim değişikliği ilahî rızayı hak etmeye zarar vermez. Bu nedenle Allah önce: (اِنَّ الَّذٖينَ اٰمَنُوا وَالَّذٖينَ هَادُوا) *"Şüphesiz iman edenler; yani Yahudilerden..."* dedikten sonra: (مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ) *"Onlardan iman edenler..."* buyurmuştur. Yani onlar, marifetlerde ittifak ettikleri zaman hepsi için güzel bir son ve bol sevap vardır. Zaten mümin de Allah'ın güvencesi altında olan kimsedir. Allah'ın güvencesi altında olan kimselerin üzerinde ise elbette ki, ne korku ne de üzüntü olur.

وَاِذْ اَخَذْنَا مٖيثَاقَكُمْ وَرَفَعْنَا فَوْقَكُمُ الطُّورَ خُذُوا مَٓا اٰتَيْنَاكُمْ بِقُوَّةٍ وَاذْكُرُوا مَا فٖيهِ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ ﴿٦٣﴾

63- "Sizden sağlam bir söz almış, Tûr Dağı'nın altında, size verdiğimizi kuvvetle tutun, onda bulunanları daima hatırlayın, umulur ki, korunursunuz demiştik de;"

ثُمَّ تَوَلَّيْتُمْ مِنْ بَعْدِ ذٰلِكَ فَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهُ لَكُنْتُمْ مِنَ الْخَاسِرٖينَ ﴿٦٤﴾

64- "Ondan sonra sözünüzden dönmüştünüz. Eğer sizin üzerinizde Allah'ın rahmeti ve ihsanı olmasaydı, muhakkak zarara uğrayanlardan olurdunuz."

Allah, bütün mükelleflerden sağlam söz almıştır. Ancak Allah'ın kendini tanıttığı bir topluluk, isteyerek O'nun birliğine inanmış ve bu sözü kabul etmiş, diğer bir topluluk ise kendisini tanıyamadıkları için bu sözü istemeyerek kabul etmiş ve Allah'ı inkâr etmişlerdir. Bu arada Tûr Dağı'nın, üzerlerinde yükseltilmesini görmelerinden daha güçlü bir delil olur mu? Ancak onlar, basiret nurunu kaybettiklerinden gözün görmesi onlara fayda vermemiştir. Allah: (ثُمَّ تَوَلَّيْتُمْ مِنْ بَعْدِ ذٰلِكَ) *"Ondan sonra sözünüzden dönmüştünüz"* buyurmuştur. Yani, o mucizeleri gözlerinizle gördükten sonra isyana dönüş yaptınız. Eğer Allah'ın mühlet verme hükmü olmasa ve hilmiyle lütufta bulunmasaydı, size hemen ceza verir, başınıza büyük musibet getirir ve bütünüyle kaybederdiniz.

وَلَقَدْ عَلِمْتُمُ الَّذِينَ اعْتَدَوْا مِنْكُمْ فِي السَّبْتِ فَقُلْنَا لَهُمْ كُونُوا قِرَدَةً خَاسِئِينَ ﴿٦٥﴾

65- "İçinizden cumartesi günü azgınlık edip de bu yüzden kendilerine: Aşağılık maymunlar olun, dediklerimizi elbette bilmektesiniz."

Bu ümmetin bozulması kalpler üzerinde gerçekleşmiştir. Nasıl ki, İsrail oğullarının, Allah'ın emrini terk edip yükümlü kılındıkları hususları alaya almaları sebebiyle yerin dibine batırılmaları, mesh edilmeleri ve hakkında nass vârit olan çeşitli şekillerdeki diğer cezaları çabuklaştırıldıysa, aynı şekilde bu ümmet de, sözünde durmamak ve hükümleri reddetmekten dolayı kalplerinin bozulması ve durumlarının değiştirilmesiyle cezalandırılmıştır. Allah şöyle buyurur:

(وَنُقَلِّبُ اَفْئِدَتَهُمْ وَاَبْصَارَهُمْ كَمَا لَمْ يُؤْمِنُوا بِهٖٓ اَوَّلَ مَرَّةٍ وَنَذَرُهُمْ فِي طُغْيَانِهِمْ يَعْمَهُونَ)

*"Yine ona iman etmedikleri ilk durumdaki gibi onların gönüllerini ve gözlerini ters çeviririz."* (En'âm, 6/110)

Kalplerin cezası ise canlara verilen cezadan daha ağırdır.

Şu dizeler de bu mealde söylenmiştir:

*Ey: "Ondan sonra nasıl oldun?" diye bana soran kimse*
*Beni üzen, onu ise sevindiren durumla karşılaştım*
*Birlikteliğimle gurur duymaya devam ettim, hatta*
*Zamanın tuzağından bile emin oldum*
*Derken benden yüz çevrildi uzunca, o kadar ki,*
*Zerre bırakmadı daha önce gördüklerimden*

فَجَعَلْنَاهَا نَكَالًا لِمَا بَيْنَ يَدَيْهَا وَمَا خَلْفَهَا وَمَوْعِظَةً لِلْمُتَّقِينَ ﴿٦٦﴾

66- "Biz bunu, hadiseyi bizzat görenlere ve sonradan gelenlere bir ibret dersi, takva sahipleri için de bir öğüt vesilesi kıldık."

İşte böylece terk edilmişliğe ve perişanlığa maruz kalan kimsenin durumu ibret olur, durumunu düşündükçe hasret çilesi çeker ve zavallı, azizliğinden sonra her değersiz insanın maskarası olur. İşte hükümdarların gazabının ve büyüklerin küçüklerden yüz çevirmesinin sonuçları böyledir. Şiir:

*Kuşattı beni çocuklar ve toplandılar*
*Etrafımda ve saldılar üstüme köpekleri arkadan*

وَاِذْ قَالَ مُوسٰى لِقَوْمِهٖٓ اِنَّ اللّٰهَ يَأْمُرُكُمْ اَنْ تَذْبَحُوا بَقَرَةً قَالُوٓا
اَتَتَّخِذُنَا هُزُوًا قَالَ اَعُوذُ بِاللّٰهِ اَنْ اَكُونَ مِنَ الْجَاهِلِينَ ﴿٦٧﴾

67- "Hani Mûsâ kavmine, "Allah size bir sığır kesmenizi emrediyor" demişti. Onlar da, "Sen bizimle eğleniyor musun?" demişlerdi. Mûsâ, "Kendini bilmez cahillerden olmaktan Allah'a sığınırım" demişti."

İsrail oğullarının yapması gereken, bu emri kucaklamayla karşılamak idi. Ancak onlar, özelliklerin belirsiz kalışını gerekçe göstererek bunun, kendileri için yükümlülükten yüz çevirmeye meyletmenin (...) olacağını sandılar. Bu nedenle meşakkatleri ikiye katlandı ve sakındıkları rezalet başlarına geldi.

قَالُوا ادْعُ لَنَا رَبَّكَ يُبَيِّنْ لَنَا مَا هِيَ قَالَ اِنَّهُ يَقُولُ اِنَّهَا بَقَرَةٌ لَا
فَارِضٌ وَلَا بِكْرٌ عَوَانٌ بَيْنَ ذٰلِكَ فَافْعَلُوا مَا تُؤْمَرُونَ ﴿٦٨﴾

68- "'Bizim için Rabbine dua et, onun ne olduğunu bize açıklasın.' dediler. Mûsâ şöyle dedi: 'Allah diyor ki: O, ne yaşlı, ne de körpe; ikisi arasında bir sığırdır. Artık size emredileni yapın.'"

**Bir Fasıl**

Allah: (اِنَّهَا بَقَرَةٌ لَا فَارِضٌ وَلَا بِكْرٌ عَوَانٌ بَيْنَ ذٰلِكَ) *"O ne yaşlı ne de körpe; ikisi arasında bir inek"* (Bakara, 2/68), yani onun ne genç ne de yaşlanmış olduğunu, aksine bu iki yaşın arasında bulunduğunu söyleyince şu işaret gerçekleşmiş oldu: Bu tarikata yarayan insan, gençliğin cazibesi ve sarhoşluğuna kapılmayan, ihtiyarlığın acizliği ve zaafının atıl hale getirmediği, aksine sarhoşluğundan ayılıp kendinde olan ve sonrasında ömründen kendisi için bir zindelik kalan kimsedir.

قَالُوا ادْعُ لَنَا رَبَّكَ يُبَيِّنْ لَنَا مَا لَوْنُهَا قَالَ اِنَّهُ يَقُولُ اِنَّهَا بَقَرَةٌ
صَفْرَآءُ فَاقِعٌ لَوْنُهَا تَسُرُّ النَّاظِرِينَ ﴿٦٩﴾

69- "Onlar, "Bizim için Rabbine dua et de, rengi neymiş? açıklasın" dediler. Mûsâ şöyle dedi: "Rabbim diyor ki, o, sapsarı; rengi, bakanların içini açan bir sığırdır" dedi."

قَالُوا ادْعُ لَنَا رَبَّكَ يُبَيِّنْ لَنَا مَا هِيَ اِنَّ الْبَقَرَ تَشَابَهَ عَلَيْنَا وَاِنَّآ اِنْ
شَآءَ اللّٰهُ لَمُهْتَدُونَ ﴿٧٠﴾

70- "Ey Musa! Bizim için Rabbine dua et de onun nasıl bir sığır olduğunu bize açıklasın. Nasıl bir inek keseceğimizi anlayamadık. Biz, inşaallah emredileni yapma yolunu buluruz, dediler."

İneğin, rengiyle göz kamaştırması şuna işarettir: Hal ehli olan kimsenin sevgilisi olan Allah, karşı konulmazlık sıfatı nedeniyle kalpleri mest eder ve gaybı müşahede eden bu makamda karar kılar. O kadar ki O'nu gören, beşeri durumları unutmaya başlar ve ona Hakk'ın

zikri hâkim oluverir. Yapılan bir rivayette şöyle denilmiştir: *"Allah'ın velileri, Allah'ın anıldığını gördükleri zaman (...) kimselerdir."*

قَالَ اِنَّهُ يَقُولُ اِنَّهَا بَقَرَةٌ لَا ذَلُولٌ تُثِيرُ الْاَرْضَ وَلَا تَسْقِي الْحَرْثَ مُسَلَّمَةٌ لَا شِيَةَ فِيهَا قَالُوا الْـٰٔنَ جِئْتَ بِالْحَقِّ فَذَبَحُوهَا وَمَا كَادُوا يَفْعَلُونَ ﴿٧١﴾

71- "Musa dedi ki: 'Allah şöyle buyuruyor: O, henüz boyunduruk altına alınmayan, yer sürmeyen, ekin sulamayan, serbest dolaşan, renginde hiç alacası bulunmayan bir inektir.' 'İşte şimdi gerçeği anlattın' dediler ve bunun üzerine onu alıp kestiler, ama az kalsın kesmeyeceklerdi."

İş, adı geçen ineği boyunduruk altına almadığı ve inek, çalıştırılmak suretiyle değersiz hale getirilmediği gibi, renginin görkemine aykırı bir renge de sahip değildir. Bunun işareti ise şudur: Allah'ın dostları, dünyalık ihtiyaçlarını karşılamak için başkalarına umut bağlayarak değer kaybetmeyen, kalpleriyle şekil ve görüntülere meyletmeyen, tercih ve hileye dayanmayan kimselerdir. Bunlar, ne arzuların yağmalığı ne dünyanın pençesindeki av ne şehvetlerin esiri ne de beşeri duyguların hâkimiyeti altındadır. Bir de onlar, amaçlarını tahsil etmeye çalışmadıkları gibi, arzularını elde etmek için kötülük de işlemediler. Üzerlerinde ne başkalarının damgası ne de sebeplerin emaresi bulunur. Onlar Allah ile vardırlar, Allah'tan başkasıyla ilgileri yoktur. Daha doğrusu onlar, Allah'ın yönlendirdiği mahviyet halindeki kimseler olup kalplerine hâkim olan da Allah'tır. Bir de mabutları Allah olduğu gibi, maksutları da Allah'tır. Maksutları Allah olduğu gibi, gördükleri de yegâne varlık olarak kabul ettikleri de Allah'tır. Daha doğrusu onlar, Allah ile mahviyete ermişler ve Allah onlardan (... )

Şiir:

*Hoşnut olmamı, hoşnut ve malik olmak istediğin zaman*
*Dizginime, yaşadığımız sürece*
*O halde bak dünyaya gözümle ve duy*
*Onu kulağımla ve konuş benim dilimle*

(قَالُوا الْـٰٔنَ جِئْتَ بِالْحَقِّ فَذَبَحُوهَا وَمَا كَادُوا يَفْعَلُونَ) *"'İşte şimdi gerçeği anlattın' dediler ve bunun üzerine onu alıp kestiler, ama az kalsın kesmeyeceklerdi."*

Onlar, imkânları ölçüsünde hileye yeltendiler. Entrikaları çıkmaza girince de teslim olup ağır yükümlülüklerden kurtuldular. Şayet kendilerine emredileni yapsalardı, meşakkatleri ikiye katlanmazdı.

وَاِذْ قَتَلْتُمْ نَفْسًا فَادّٰرَءْتُمْ فِيهَا وَاللّٰهُ مُخْرِجٌ مَا كُنْتُمْ تَكْتُمُونَ ﴿٧٢﴾

72- "Hani siz bir adam öldürmüştünüz de onun hakkında birbirinizle atışmıştınız. Halbuki Allah gizlemekte olduğunuzu ortaya çıkaracaktır."

Hain korkaktır ve sırrının ortaya çıkacağı korkusuyla kafa karıştırma, saptırma, inkâr etme ve reddetmeye yeltenir. Oysa ister istemez kusuru ve sırları ortaya çıkacak, yaptığı işin kötülüğü nedeniyle itibarı kaybolacaktır. Nitekim Allah: (وَاللّٰهُ مُخْرِجٌ مَا كُنْتُمْ تَكْتُمُونَ) *"Halbuki Allah gizlemekte olduğunuzu ortaya çıkaracaktır"* buyurmuştur.

فَقُلْنَا اضْرِبُوهُ بِبَعْضِهَا كَذٰلِكَ يُحْيِي اللّٰهُ الْمَوْتٰى وَيُرِيكُمْ اٰيَاتِهِ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ﴿٧٣﴾

73- "'Hadi, şimdi öldürülen adama, kesilen ineğin bir parçasıyla vurun' dedik. Böylece Allah ölüleri diriltir ve düşünesiniz diye size ayetlerini gösterir."

Allah, katili hakkında şahitlik edip onu rezil etmesi için öldürülen adamı diriltmek istedi. Bu amaçla kendilerine ait bir hayvanın öldürülmesini emredip adamın dirilmesini bu hayvanın öldürülmesi şartına bağlamış oldu. Bu ayetteki işaret ise şöyledir: Kim kalbinin yaşamasını isterse, buna ancak nefsini boğazlayarak ulaşabilir. Bu itibarla kim çabalarla nefsini boğazlarsa, kalbi müşahedelerin nurlarıyla dirilir. Aynı şekilde Allah, kimin anısının ebdâller arasında yaşamasını dilerse, onu şöhretten koruyarak dünyada anılmasını öldürür.

ثُمَّ قَسَتْ قُلُوبُكُمْ مِنْ بَعْدِ ذٰلِكَ فَهِيَ كَالْحِجَارَةِ اَوْ اَشَدُّ قَسْوَةً وَاِنَّ مِنَ الْحِجَارَةِ لَمَا يَتَفَجَّرُ مِنْهُ الْاَنْهَارُ وَاِنَّ مِنْهَا لَمَا يَشَّقَّقُ فَيَخْرُجُ مِنْهُ الْمَآءُ وَاِنَّ مِنْهَا لَمَا يَهْبِطُ مِنْ خَشْيَةِ اللّٰهِ وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ﴿٧٤﴾

74- "Bunlardan sonra yine kalpleriniz katılaştı. Artık kalpleriniz taş gibi yahut daha da katıdır. Çünkü taşlardan öylesi var ki, içinden ırmaklar kaynar. Öylesi de var ki, çatlar da ondan su fışkırır. Taşlardan bir kısmı da, Allah korkusuyla yukardan aşağı yuvarlanır. Allah yapmakta olduklarınızdan gafil değildir."

Allah, büyük mucizeleri ve apaçık delilleri görseler de inayet onlara yardım ettiği ve Allah kendilerine hidayet takdir etmediği zaman, mucizelerin çokluğunun, sadece katılıklarını artırdığını ve karşılarına takdirin derinliklerinden mutsuzluk üstüne mutsuzluktan başka bir şey çıkmayacağını açıklamış ve kalplerini taşa benzetmiştir. Çünkü taş, bir şey bitirmez ve gelişmez. Aynı şekilde onların kalpleri de anlamaz ve onlara fayda vermez. Sonra Allah, kalplerinin taştan daha da katı olduğunu açıklamıştır. Çünkü bazı taşlardan nehirler fışkırır, bazısında ise Allah korkusunun izleri belirir. Onların kalplerinde ise hiçbir iyilik yoktur. Nasıl böyle olmasın ki, bu kalpler Hakk'ın yüz çevirmesine maruz kalmış ve özellikle içi iyiliklerden boşaltılmıştır.

اَفَتَطْمَعُونَ اَنْ يُؤْمِنُوا لَكُمْ وَقَدْ كَانَ فَرِيقٌ مِنْهُمْ يَسْمَعُونَ كَلَامَ اللّٰهِ ثُمَّ يُحَرِّفُونَهُ مِنْ بَعْدِ مَا عَقَلُوهُ وَهُمْ يَعْلَمُونَ ﴿٧٥﴾

75- "Şimdi onların size inanacaklarını mı umuyorsunuz? Oysaki onlardan bir zümre, Allah'ın kelamını işitirler de iyice anladıktan sonra, bile bile onu tahrif ederlerdi."

Allah, müminlere İsrail oğullarının imanı hakkında bilgi vererek onların, Allah'tan kendilerine olan hitabını duyduktan sonra bu

hitabı tahrif ve tebdil ettiklerini anlatmıştır. O halde sadece peygamberlik vasıtasıyla duyarak size nasıl iman ederler?! Gözle gördükten sonra bile imanını koruyamayan bir kimse delille nasıl iman eder?! Hakk'a yaramayan kimse size de yaramaz. Hak'tan utanmayan kimse sizden nasıl utanır?!

وَإِذَا لَقُوا الَّذِينَ اٰمَنُوا قَالُوٓا اٰمَنَّا وَإِذَا خَلَا بَعْضُهُمْ اِلٰى بَعْضٍ قَالُوٓا اَتُحَدِّثُونَهُمْ بِمَا فَتَحَ اللّٰهُ عَلَيْكُمْ لِيُحَآجُّوكُمْ بِهِ عِنْدَ رَبِّكُمْ اَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿٧٦﴾

76- "Onlar, inananlarla karşılaştıklarında 'iman ettik' derler. Birbirleriyle baş başa kaldıkları vakit ise: 'Allah'ın size açtıklarını (Tevrat'taki bilgileri), Rabbiniz katında sizin aleyhinize hüccet getirmeleri için mi onlara anlatıyorsunuz. Bunları düşünemiyor musunuz?' derler."

اَوَلَا يَعْلَمُونَ اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ مَا يُسِرُّونَ وَمَا يُعْلِنُونَ ﴿٧٧﴾

77- "Onlar bilmezler mi ki, gizlediklerini de açıkça yaptıklarını da Allah bilmektedir."

Onlar, kendi aralarında birbirlerine hakkı inkâr etmeyi ve durumu Müslümanlardan gizlemeyi tavsiye ettiler, Allah'ın, Peygamber'ini onların sırlarından haberdar edeceğini ve gaybın ortaya çıkardığı bir nurun başkalarının girişimleriyle sönmeyeceğini bilemediler. Bir de, inanç farklı olduğu halde dil ile uyumlu gözükmek sadece ayrılığı arttırır.

وَمِنْهُمْ اُمِّيُّونَ لَا يَعْلَمُونَ الْكِتَابَ اِلَّٓا اَمَانِيَّ وَاِنْ هُمْ اِلَّا يَظُنُّونَ ﴿٧٨﴾

78- "İçlerinde bir takım ümmiler vardır ki, Kitab (Tevrat)'ı bilmezler. Bütün bildikleri kulaktan dolma şeylerdir. Onlar, sadece zan ve tahminde bulunuyorlar."

فَوَيْلٌ لِلَّذِينَ يَكْتُبُونَ الْكِتَابَ بِاَيْدِيهِمْ ثُمَّ يَقُولُونَ هٰذَا مِنْ عِنْدِ
اللّٰهِ لِيَشْتَرُوا بِهِ ثَمَنًا قَلِيلًا فَوَيْلٌ لَهُمْ مِمَّا كَتَبَتْ اَيْدِيهِمْ وَوَيْلٌ
لَهُمْ مِمَّا يَكْسِبُونَ ﴿٧٩﴾

79- "Elleriyle bir Kitap yazıp sonra onu az bir bedel karşılığında satmak için: 'Bu Allah katındandır' diyenlere yazıklar olsun! Yazıklar olsun onlara ellerinin yazdıkları sebebiyle ve yazıklar olsun onlara taptıkları sebebiyle."

Allah onların, küfürlerinin yol açtığı noksanlıklar bakımından farklı olduklarını bildirmiştir. Şöyle ki, bazıları derece bakımından daha değersiz ve daha çok cahil olup taklide meyletmiş, tamamen şüpheciliğin esiri olmamış; ancak zan ve tahmine dayanmıştır. Bu gibi insanların, kitaplarından nasipleri, manalarını anlamaksızın onu sadece okumaktır. Kimilerinin ise önde gelen özelliği iç kuruntuları olup ne bir imkânın yardımına mazhar olurlar ne de zanlarının gerçeklikle bir ilgisi vardır. Sonra Allah, akıbetlerinin kötü oluşunu: (فَوَيْلٌ لَهُمْ مِمَّا كَتَبَتْ اَيْدِيهِمْ وَوَيْلٌ لَهُمْ مِمَّا يَكْسِبُونَ) "*Yazıklar olsun onlara ellerinin yazdıkları sebebiyle ve yazıklar olsun onlara taptıkları sebebiyle*" şeklindeki sözüyle bildirmiştir.

Yani onlar hem şimdiki durumları hem de akıbetleri bakımından kaybetmişlerdir. Bu ayetteki işaret, hak yoldaki arkadaşlıkta ihlası bulunmayan kimseyedir. Bu kimse, görüntü itibari ile dostların yanında yer almaktadır, ancak iradesinde samimi değildir. Bu kimse, gaflet ehlinin yandaşı olup bu tarikatla da bir teması vardır. Zevk çağrıcıları kendisini çağırdıkça o, gönüllü olarak ve hemen bunu kabul eder. Hakk'ın davetçileri onu yönlendirdikleri zaman ise bunu kabul etmede biraz zorlanır. Şayet ihlaslı hale gelmezse durumu kötü olur. Allah'tan esirgedikleri sebebiyle pişmanlığı çok şiddetli olur, sonra kurtuluşa da ermez.

وَقَالُوا لَنْ تَمَسَّنَا النَّارُ اِلَّٓا اَيَّامًا مَعْدُودَةً قُلْ اَتَّخَذْتُمْ عِنْدَ اللّٰهِ عَهْدًا
فَلَنْ يُخْلِفَ اللّٰهُ عَهْدَهُٓ اَمْ تَقُولُونَ عَلَى اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ﴿٨٠﴾

80- "İsrail oğulları: 'Sayılı birkaç gün müstesna, bize ateş dokunmayacaktır' dediler. De ki: 'Siz Allah katından bir söz mü aldınız – ki Allah sözünden caymaz -, yoksa Allah hakkında bilmediğiniz şeyleri mi söylüyorsunuz?'"

Bu ayetteki işaret, kalbi geniş arzularının uğrağı haline gelen, kuruntularına yenik düşen, böylece aşırı gafletinden dolayı, kendisinin tasavvuf ehli olduğuna hükmeden, emelinin vesveselerine meyledip gaybın göz ardı edilebileceğine karar veren kimseyedir. Bu kimse, daha önceki kabahatlerini unuturken yanlış zanlarını hatırda tutar. Böyle o, nefsinin kulu olup iyi zannına yenik düşer. Gerçekte ise gafleti hilesinin sonuçlarına maruz kalır. Allah şöyle buyurur:

(وَذٰلِكُمْ ظَنُّكُمُ الَّذِي ظَنَنْتُمْ بِرَبِّكُمْ اَرْدٰيكُمْ فَاَصْبَحْتُمْ مِنَ الْخَاسِرِينَ)

*"Rabbiniz hakkında beslediğiniz zan var ya, işte sizi o mahvetti ve ziyana uğrayanlardan oldunuz."* (Fussilet, 41/23)

بَلٰى مَنْ كَسَبَ سَيِّئَةً وَاَحَاطَتْ بِهٖ خَطٖيئَتُهُ فَاُولٰٓئِكَ اَصْحَابُ النَّارِ هُمْ فٖيهَا خَالِدُونَ ﴿٨١﴾

81- "Hayır! Kim bir kötülük eder de kötülüğü kendisini çepeçevre kuşatırsa işte o kimseler cehennemliktirler. Onlar orada devamlı kalırlar."

İlmî tefsire göre; kötülüğü kendisini çepeçevre kuşatan kimse ile kastedilen kâfirdir. Ancak işârî tefsire göre; bu ayet, kalbi sürekli kendi yakarışlarıyla tatmin olan kimseye işaret etmektedir. Çünkü gerçeklerin sahipleri, kendinde olma (sahv) zamanlarında tavadaki tane gibi, yerlerinde duramazlar. Yerinde duran ise, Allah'ın sınırsız izzetinden dolayı durmaktadır.

Kim, tevessül edeceği bir taata dayanır ve onunla Allah'a yaklaştığını sanırsa, bununla tatmin olmaya uzak durması gerekir. Gerçek tevhid inancına sahip olan kimse, Allah'tan başka Allah'a ulaştıran hiçbir vesilenin bulunmadığını bilir.

وَالَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ اُولٰٓئِكَ اَصْحَابُ الْجَنَّةِ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ﴿٨٢﴾

82- "İman edip yararlı iş yapanlara gelince, onlar da cennetliktirler. Onlar orada devamlı kalırlar."

Halde vuslatın cennetleri vardır. (...)

وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَ بَنِي إِسْرَائِيلَ لَا تَعْبُدُونَ إِلَّا اللَّهَ وَبِالْوَالِدَيْنِ إِحْسَانًا وَذِي الْقُرْبَى وَالْيَتَامَى وَالْمَسَاكِينِ وَقُولُوا لِلنَّاسِ حُسْنًا وَأَقِيمُوا الصَّلَاةَ وَآتُوا الزَّكَاةَ ثُمَّ تَوَلَّيْتُمْ إِلَّا قَلِيلًا مِنْكُمْ وَأَنْتُمْ مُعْرِضُونَ ﴿٨٣﴾

83- "Vaktiyle biz, İsrâiloğullarından; yalnızca Allah'a kulluk edeceksiniz, ana-babaya, yakın akrabaya, yetimlere, yoksullara iyilik edeceksiniz diye söz almış ve: "İnsanlara güzel söz söyleyin, namazı kılın, zekâtı verin" diye de emretmiştik. Sonra azınız hariç, yüz çevirerek dönüp gittiniz."

وَإِذْ أَخَذْنَا مِيثَاقَكُمْ لَا تَسْفِكُونَ دِمَاءَكُمْ وَلَا تُخْرِجُونَ أَنْفُسَكُمْ مِنْ دِيَارِكُمْ ثُمَّ أَقْرَرْتُمْ وَأَنْتُمْ تَشْهَدُونَ ﴿٨٤﴾

84- "Yine vaktiyle, birbirinizin kanını dökmeyeceğinize, birbirinizi yurtlarınızdan çıkarmayacağınıza dair sizden söz de almıştık. Sonra her şeyi görerek kabul ettiniz."

ثُمَّ اَنْتُمْ هٰٓؤُلَٓاءِ تَقْتُلُونَ اَنْفُسَكُمْ وَتُخْرِجُونَ فَرِيقًا مِنْكُمْ مِنْ دِيَارِهِمْ تَظَاهَرُونَ عَلَيْهِمْ بِالْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ وَاِنْ يَاْتُوكُمْ اُسَارٰى تُفَادُوهُمْ وَهُوَ مُحَرَّمٌ عَلَيْكُمْ اِخْرَاجُهُمْ اَفَتُؤْمِنُونَ بِبَعْضِ الْكِتَابِ وَتَكْفُرُونَ

بِبَعْضٍ فَمَا جَزَٓاءُ مَنْ يَفْعَلُ ذٰلِكَ مِنْكُمْ اِلَّا خِزْيٌ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا
وَيَوْمَ الْقِيٰمَةِ يُرَدُّونَ اِلٰٓى اَشَدِّ الْعَذَابِ وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ﴿٨٥﴾

85- "Bu misakı kabul eden sizler, birbirinizi öldürüyor, aranızdan bir zümreyi yurtlarından çıkarıyor, kötülük ve düşmanlıkta onlara karşı birleşiyorsunuz. Onları yurtlarından çıkarmak size haram olduğu halde, size esir olarak geldiklerinde fidye verip onları kurtarıyorsunuz. Yoksa siz, Kitab'ın bir kısmına inanıp bir kısmını inkâr mı ediyorsunuz? Sizden öyle davrananların cezası, dünya hayatında ancak rüsvalık; kıyamet gününde ise en şiddetli azaba itilmektir. Allah, sizin yapmakta olduklarınızdan asla gafil değildir."

(ثُمَّ اَنْتُمْ هٰٓؤُلَٓاءِ تَقْتُلُونَ اَنْفُسَكُمْ وَتُخْرِجُونَ فَرِيقًا مِنْكُمْ مِنْ دِيَارِهِمْ تَظَاهَرُونَ عَلَيْهِمْ بِالْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ) *"Bu misakı kabul eden sizler, birbirinizi öldürüyor, aranızdan bir zümreyi yurtlarından çıkarıyor, kötülük ve düşmanlıkta onlara karşı birleşiyorsunuz."*

Benzerleriniz ve arkadaşlarınız olan kimselere karşı kötülük ve düşmanlıkta birleşiyorsunuz. Ayetteki işaret şudur: Sınandıkları konuda kardeşlerinize arka çıkmanız, mutsuzluklarına yol açacak aleyhte bir yardımdır. Bu itibarla dostlar, o gün birbirlerine düşmandırlar.

(وَاِنْ يَاْتُوكُمْ اُسَارٰى تُفَادُوهُمْ وَهُوَ مُحَرَّمٌ عَلَيْكُمْ اِخْرَاجُهُمْ اَفَتُؤْمِنُونَ بِبَعْضِ الْكِتَابِ وَتَكْفُرُونَ بِبَعْضٍ) *"Onları yurtlarından çıkarmak size haram olduğu halde, size esir olarak geldiklerinde fidye verip onları kurtarıyorsunuz. Yoksa siz, Kitab'ın bir kısmına inanıp bir kısmını inkâr mı ediyorsunuz?"*

Yani nasıl ki, siz onlar için fidye vererek haklarını koruyorsanız, aynı şekilde ellerinizi onlardan çekmeniz ve onları memleketlerinden uzaklaştırmayı terk etmeniz de beklenir. Bu itibarla siz, üstünüze düşen bazı görevleri yerine getirirken neden geri kalanlarını yerine getirmekten geri duruyorsunuz? Böyle yapmazsanız, size emredileni aynen yerine getirmiş olursunuz. Kendisine emredilen

hususlar arasında ayrım yapıp bir kısmına inanan, bir kısmını ise inkâr eden kimsenin amelinden kaynaklanan ecrinin boşa gitmiş olduğunu bilmez misiniz?

(فَمَا جَزَآءُ مَنْ يَفْعَلُ ذٰلِكَ مِنْكُمْ اِلَّا خِزْيٌ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَيَوْمَ الْقِيٰمَةِ يُرَدُّونَ اِلٰٓى اَشَدِّ الْعَذَابِ وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ) *"Sizden öyle davrananların cezası, dünya hayatında ancak rüsvalık; kıyamet gününde ise en şiddetli azaba itilmektir. Allah, sizin yapmakta olduklarınızdan asla gafil değildir."*

Yani onlar, yaptıklarının kendilerine fayda verdiğini sandılar. Ancak yaptıkları şeyleri art niyet içine girip dürüstlük ve samimiyetten soyutladıkları için, hiç birinin kendilerinden kabul edilmediğini ahirette gördüler.

Bu arada esirler birkaç kısımdır: Onlardan kimisi, heva denizlerinde gark olmuştur. Bunu kurtarmak, ona hidayetin yolunu göstermektir. Kimisi vesveselerin elinde kalmıştır. Bunun için fidye vermek, kendisini şüphe ve tahminden kurtarmak ve taklidin karanlıklarından çıkarmak üzere açık delillerle onu kesin imana irşat etmektir. Bu esirlerden kimisini duygularının esaretinde bulursun. Bu kimseyi nefsinin karmaşaları tutsak etmiş olup esaretini çözmek, Allah'tan başka hiç kimsenin gücünü dikkate almamak suretiyle kendisine, ilahî lütufları görmenin yolunu göstermektir. Esirlerden kimisini de benliğinin tuzağında bulursun. Bunun esaretini çözmek, bu tuzaktan kurtulması için kendisine nasihatte bulunmaktır. Kimisini sıfatlarının esaretinde bulursun. Bunun esaretini çözmek, onu Hakk'a iletmek şeklinde olur. Kimisini ise Hakk'ın avucunda bulursun. Bu kimseye, esirleri için fidye, ölüleri için dönüş, tuzaktakileri için kurtuluş olmadığını, kendilerine ihtiyaç bulunduğunu, ulaşılamaz durumda olduklarını, onlara karşı tedbir alınamadığını, onlar dışındaki kimselerle rahat olamayacağını ve hükümlerinin geri çevrilemediğini bildirirsin.

اُولٰٓئِكَ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا بِالْاٰخِرَةِ فَلَا يُخَفَّفُ عَنْهُمُ الْعَذَابُ وَلَا هُمْ يُنْصَرُونَ ﴿٨٦﴾

86- "İşte onlar, ahirete karşılık dünya hayatını satın alan kimselerdir. Bu yüzden ne azapları hafifletilecek ne de kendilerine yardım edilecektir."

Herhangi bir şeyi Allah'a tercih edenler, dünya ve ahirette hüsrana uğramışlardır.

Tıpkı şu dizelerde söylenildiği gibi:

*Yüz çevirdi bizden bazı insanlar*
*Suçsuz ve anlamsız olarak*
*Eğer bize ihtiyaçları kalmadıysa*
*Biz onlara hiç de muhtaç değiliz*

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوسَى الْكِتَابَ وَقَفَّيْنَا مِنْ بَعْدِهِ بِالرُّسُلِ وَاٰتَيْنَا عِيسَى
ابْنَ مَرْيَمَ الْبَيِّنَاتِ وَاَيَّدْنَاهُ بِرُوحِ الْقُدُسِ اَفَكُلَّمَا جَٓاءَكُمْ رَسُولٌ
بِمَا لَا تَهْوٰٓى اَنْفُسُكُمُ اسْتَكْبَرْتُمْ فَفَرِيقًا كَذَّبْتُمْ وَفَرِيقًا تَقْتُلُونَ ﴿٨٧﴾

87- "Andolsun biz Musa'ya Kitab'ı verdik. Ondan sonra art arda peygamberler gönderdik. Meryem oğlu İsa'ya da mucizeler verdik. Ve onu, Cebrail ile destekledik. Ne var ki, gönlünüzün arzulamadığı şeyleri söyleyen bir elçi geldikçe, ona karşı büyüklük tasladınız. Size gelen peygamberlerden bir kısmını yalanladınız, bir kısmını da öldürdünüz."

İşârî yorum: Biz, onlara hitabı ulaştırdık ve peş peşe elçiler gönderdik. Bütün elçiler insanları, bir olan Allah'a davet ettiler. Fakat onlar, davetçilerin çağrısını heva kulağıyla dinlediler. Bu nedenle nefislerinin hoşuna gideni kabul ettiler. Hevalarının ağır bulduğunu ise inkâr ettiler. Bu itibarla heva, onların niteliği haline gelip sonra da ona tapınca, tapanla tapılanın nitelikleri birbirine karışmış oldu. O halde tekrar tekrar onlara yazıklar olsun!

وَقَالُوا قُلُوبُنَا غُلْفٌ بَلْ لَعَنَهُمُ اللّٰهُ بِكُفْرِهِمْ فَقَلِيلًا مَا يُؤْمِنُونَ ﴿٨٨﴾

88- "Yahudiler: 'Kalplerimiz perdelidir' dediler. Hayır; küfür ve isyanları sebebiyle Allah onlara lanet etmiştir. O yüzden çok az inanırlar."

Eğer onlar sadece iddia ile sınırlı bir şey yapsalardı, kolayca anlaşılabilirdi. Ne var ki, hakikate ulaşma yükümlülükleri karşısında hak ile bâtılı karıştıranlar, keskin azı dişlerini gösterirler. Hatta (...)

Şiir:

*Yanakların üzerinden gözyaşları süzüldüğünde*
*Ayırt edilir ağlayan ağlama numarası yapandan*

وَلَمَّا جَآءَهُمْ كِتَابٌ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ مُصَدِّقٌ لِمَا مَعَهُمْ وَكَانُوا مِنْ قَبْلُ يَسْتَفْتِحُونَ عَلَى الَّذِينَ كَفَرُوا فَلَمَّا جَآءَهُمْ مَا عَرَفُوا كَفَرُوا بِهِ فَلَعْنَةُ اللّٰهِ عَلَى الْكَافِرِينَ ﴿٨٩﴾

89- "Daha önce kâfirlere karşı zafer isterlerken kendilerine Allah katından ellerindeki Tevrat'ı doğrulayan bir kitap gelip de Tevrat'tan bilip öğrendikleri gerçekler karşılarına dikilince onu inkâr ettiler. İşte Allah'ın laneti böyle inkarcılaradır."

Ayet şu kimseye işaret etmektedir: Önce kötülüklerden arınmada kararlılık gösterir, samimiyetle vefayı gerçekleştireceğine söz verir, er meydanına çıktığında gayret bayraklarını dalgalandırarak meydana çıkmaya ve fedakârca savaşmaya çağrıda bulunurken, savaşçılar birbirine girmeye başlayınca kaçar ve tehlike korkusuyla toplumun dışına çekilir. Allah şöyle buyurur: (فَإِذَا عَزَمَ الْأَمْرُ فَلَوْ صَدَقُوا اللّٰهَ لَكَانَ خَيْرًا لَهُمْ) *"İş ciddiye bindiği zaman Allah'a sadakat gösterselerdi, elbette kendileri için daha hayırlı olurdu."* (Muhammed, 47/21)

بِئْسَمَا اشْتَرَوْا بِهٖٓ اَنْفُسَهُمْ اَنْ يَكْفُرُوا بِمَآ اَنْزَلَ اللّٰهُ بَغْيًا اَنْ يُنَزِّلَ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ عَلٰى مَنْ يَشَآءُ مِنْ عِبَادِهٖ فَبَآؤُ بِغَضَبٍ عَلٰى غَضَبٍ وَلِلْكَافِرِينَ عَذَابٌ مُهِينٌ ﴿٩٠﴾

90- "Allah'n, kullarından dilediğine peygamberlik ihsan etmesini kıskandıkları için Allah'ın indirdiğini (Kur'an'ı) inkar ederek kendilerini harcamaları ne kötü bir şeydir! Böylece onlar, gazap üstüne gazaba uğradılar. Ayrıca kâfirler için alçaltıcı bir azap vardır."

Karşılıklı kıskanma, onları azizlik makamından utancın alçaklığına düşürmüştür. İlahî hükmün gereğine rıza göstermeyince küçülmüşlük züllünün damgasını yediler. Böylece onlar, geçmişte hak ettikleri gazaba yakındaki bir gazabı hak etmeyi de eklemiş oldular.

وَاِذَا قِيلَ لَهُمْ اٰمِنُوا بِمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ قَالُوا نُؤْمِنُ بِمَٓا اُنْزِلَ عَلَيْنَا وَيَكْفُرُونَ بِمَا وَرَٓاءَهُ وَهُوَ الْحَقُّ مُصَدِّقًا لِمَا مَعَهُمْ قُلْ فَلِمَ تَقْتُلُونَ اَنْبِيَٓاءَ اللّٰهِ مِنْ قَبْلُ اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ﴿٩١﴾

91- "Kendilerine: 'Allah'ın indirdiğine iman edin' denildiğinde: 'Biz sadece bize indirilene (Tevrat'a) inanırız' derler. Halbuki o Kur'an, kendi ellerinde bulunan Tevrat'ı doğrulayıcı olarak gelmiş hak bir kitaptır. Ey Muhammed onlara: 'Şayet siz gerçekten inanıyor idiyseniz, daha önce Allah'ın peygamberlerini neden öldürüyor idiniz?' deyiver."

Ayetteki işaret şöyledir: Onlara; göstermelik yaptığınız işi, delillendirmek suretiyle gerçekle uyumlu hale getirin denildiği zaman nefisleri, net olmadan ve nefsin arzularına uygun düşen bazı şeyleri hoş görürken, bu arzularının ötesindeki hususları inkâr ederler. (...) havas zümresinden uzaklaşmış ve ihtisas erbabı cümlesinden sayılmamış olurlar.

وَلَقَدْ جَٓاءَكُمْ مُوسٰى بِالْبَيِّنَاتِ ثُمَّ اتَّخَذْتُمُ الْعِجْلَ مِنْ بَعْدِهٖ وَاَنْتُمْ ظَالِمُونَ ﴿٩٢﴾

92- "Andolsun Musa size apaçık mucizeler getirmişti. Sonra onun ardından zalimler olarak buzağıyı tanrı edindiniz."

Yani Allah sizi tevhide ve mabudu her mabuttan ve sınırlı varlıktan ayırmaya davet etti. Ancak siz, yalnızca edindiğiniz ve size yakışan bir buzağıya ve temenni ettiğiniz bir puta tapmaya meylettiniz. Böylece Allah, tevhidi aralarından kaldırdı. Ancak onların ve haleflerinin kalplerinde bazı izleri kaldığından Yahudilerin çoğu teşbih inancına sahiptirler.

وَاِذْ اَخَذْنَا مِيثَاقَكُمْ وَرَفَعْنَا فَوْقَكُمُ الطُّورَ خُذُوا مَٓا اٰتَيْنَاكُمْ بِقُوَّةٍ وَاسْمَعُوا قَالُوا سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا وَاُشْرِبُوا فِي قُلُوبِهِمُ الْعِجْلَ بِكُفْرِهِمْ قُلْ بِئْسَمَا يَأْمُرُكُمْ بِهٖٓ اِيمَانُكُمْ اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ﴿٩٣﴾

93- "Hatırlayın ki, Tûr altında sizden söz almış: 'Size verdiklerimizi kuvvetlice tutun, söylediklerimizi anlayın' demiştik. Onlar: 'İşittik ve isyan ettik' dediler. İnkârları sebebiyle kalplerine buzağı sevgisi dolduruldu. De ki: 'Eğer inanıyorsanız, imanınız size ne kötü şeyler emrediyor!'"

Allah, onların buzağıya olan aşırı sevgilerini, hakkı kabulden yüz çevirmelerini ve (...) ve yaptıkları kötü işlere karşılık olarak kendilerine hemen azap vereceğini onlara anlatmış olduğunu tekrar hatırlatmaktadır. Bu itibarla ne nasihat onlara etki etmiş ne azap günahlarından vazgeçmelerini sağlamış, ne kötülenmeyi dikkate almışlar ne de emrin gereğiyle amel etmişlerdir.

قُلْ اِنْ كَانَتْ لَكُمُ الدَّارُ الْاٰخِرَةُ عِنْدَ اللّٰهِ خَالِصَةً مِنْ دُونِ النَّاسِ فَتَمَنَّوُا الْمَوْتَ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٩٤﴾

94- "Ey Muhammed onlara: 'Şayet iddia ettiğiniz gibi ahiret yurdu Allah katında diğer insanlara değil de yalnızca size aitse ve bu iddianızda doğru iseniz, haydi ölümü temenni edin bakalım' de."

وَلَنْ يَتَمَنَّوْهُ اَبَدًا بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيهِمْ وَاللّٰهُ عَلِيمٌ بِالظَّالِمِينَ ﴿٩٥﴾

95- "Onlar, kendi elleriyle önceden yaptıkları işler sebebiyle hiçbir zaman ölümü temenni etmeyeceklerdir. Allah zalimleri iyi bilir."

Cenneti arzulamanın alametlerinden biri de huzurlu bir hayata rağmen ölümü temenni etmektir. Zira cennete kesin olarak gireceğinden emin olan kimse, ister istemez onu arzular. Oysa onlar ölümü temenni etmeyince, Allah da onların asla ölümü temenni etmeyeceklerini bildirince, bu tanımlama Hz. Peygamber (s.a.v.) için bir mucize oldu. Çünkü dediği gerçekleşti.

Bu beyanda aynı zamanda ölümü arzulayan müminler için bağışlanacaklarına dair müjde vardır. Zaten Allah, cennete ulaşmaları kesinleşmeden müminlere ölüm arzusunu vermez. Nitekim öteden beri şöyle denilmiştir: Huzura çıkma günü, kusur sahibi için utanmak yeter. Allah: (وَلَنْ يَتَمَنَّوْهُ اَبَدًا بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيهِمْ) "*Onlar, kendi elleriyle önceden yaptıkları işler sebebiyle hiçbir zaman ölümü temenni etmeyeceklerdir*" buyurmuştur.

وَلَتَجِدَنَّهُمْ اَحْرَصَ النَّاسِ عَلٰى حَيٰوةٍ وَمِنَ الَّذِينَ اَشْرَكُوا يَوَدُّ
اَحَدُهُمْ لَوْ يُعَمَّرُ اَلْفَ سَنَةٍ وَمَا هُوَ بِمُزَحْزِحِهِ مِنَ الْعَذَابِ اَنْ
يُعَمَّرَ وَاللّٰهُ بَصِيرٌ بِمَا يَعْمَلُونَ ﴿٩٦﴾

96- "Yemin olsun ki, sen onları yaşamaya karşı insanların en düşkünü olarak bulursun. Putperestlerden her biri de arzular ki, bin sene yaşasın. Oysa yaşatılması, onu azaptan uzaklaştırmaz. Allah, onların yapmakta olduklarını eksiksiz görür."

Dünyada yaşamayı sevmek, Allah'tan gafil olmanın sonucudur. Onların en çok gafil olanı ise, dünyada kalmayı en fazla sevenleridir. Müminin durumu ise bunun tam tersidir. Gaflet ehli ve günah sahipleri ise hayata düşkündürler. Çünkü onlar, hayatta elden kaçırdıkları ibadetleri bilirler. Nitekim kaçan köle efendisine dönmek istemez. Müminler için iyiliği umulan Allah'a dönmek, şerrinden emin olunamayanla beraber kalmaktan daha iyidir. Sonra ölümün kesin olduğunu bile bile ve ansızın emir geldiği zaman biten

ömrün uzamasının hiçbir değeri yoktur. Kaldı ki her gelen yakındır. Süre sona erdiği zaman da emelin omuzlarına binerek ecelin saldırısı geri çevrilemez.

قُلْ مَنْ كَانَ عَدُوًّا لِجِبْرِيلَ فَاِنَّهُ نَزَّلَهُ عَلٰى قَلْبِكَ بِاِذْنِ اللّٰهِ مُصَدِّقًا
لِمَا بَيْنَ يَدَيْهِ وَهُدًى وَبُشْرٰى لِلْمُؤْمِنِينَ ﴿٩٧﴾

97- "De ki: 'Cebrâîl'e kim düşman ise şunu iyi bilsin ki, Allah'ın izniyle Kur'an'ı senin kalbine bir hidayet rehberi, önce gelen kitapları doğrulayıcı ve müminler için de müjdeci olarak o indirmiştir.'"

مَنْ كَانَ عَدُوًّا لِلّٰهِ وَمَلٰٓئِكَتِهِ وَرُسُلِهِ وَجِبْرِيلَ وَمِيكَالَ فَاِنَّ اللّٰهَ عَدُوٌّ
لِلْكَافِرِينَ ﴿٩٨﴾

98- "Kim, Allah'a, meleklerine, peygamberlerine, Cebrâîl'e ve Mikâil'e düşman olursa, bilsin ki Allah da inkârcı kâfirlerin düşmanıdır."

Yahudiler, Cebrâil'in iyilik getirmediğini, onu sevmediklerini, gelenin Mikâil olması halinde ise ona iman edeceklerini ileri sürdüler. Bunun üzerine Allah: "*Cebrâîl'e kim -iyilik getirmediği gerekçesiyle- düşman ise...*" buyurdu. Acaba hangi iyilik, Kur'an'ın getirdiğinden daha iyi olabilir?!

Sonra Allah, Cibril'e ve Mikâil'e düşmanlık yapanın kendisinin düşmanı olduğunu söyledi. Çünkü sevenin, çok saygın bir yere sahip olan sevgiliye gönderdiği elçi de değerli bir makama ve büyük bir şerefe sahiptir. Ancak Allah onun dostu iken, kâfirlerin düşmanlığı, Cibril'e zarar verememiştir. Kim Cibril'e düşmanlık ederse Allah onun düşmanıdır. Bu da Cibril için en değerli bir onur ve en büyük bir yüceliktir!

وَلَقَدْ اَنْزَلْنَٓا اِلَيْكَ اٰيَاتٍ بَيِّنَاتٍ وَمَا يَكْفُرُ بِهَٓا اِلَّا الْفَاسِقُونَ ﴿٩٩﴾

99- "Andolsun ki, sana apaçık ayetler indirdik. Ey Muhammed, onları ancak fâsıklar inkâr eder."

اَوَكُلَّمَا عَاهَدُوا عَهْدًا نَبَذَهُ فَرِيقٌ مِنْهُمْ بَلْ اَكْثَرُهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿١٠٠﴾

100- "Ne zaman onlar bir antlaşma yaptılarsa, yine kendilerinden bir grup onu bozmadı mı? Zaten onların çoğu iman etmez."

Allah'ın ayetlerini, basiret yetenekleri idrake kapalı olan ve Allah'ın ezelde şaki olarak yazdığı kimseden başka hiç kimse inkâr etmemiştir. Zaten gündüzün gündüz olduğunu inkâr edenin aklı yoktur. Aynı şekilde kendisine, Hak'tan gelen nur ve görme kabiliyeti yardım etmeyen kimse de Allah'ın rızasına kavuşamaz. Onlar, bir antlaşma yaptıkça, ezeli takdir onları şaşırtmış, kendi tedbirleri de verdikleri sözü bozmuştur. Allah ise işinde galiptir.

وَلَمَّا جَٓاءَهُمْ رَسُولٌ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ مُصَدِّقٌ لِمَا مَعَهُمْ نَبَذَ فَرِيقٌ مِنَ الَّذِينَ اُوتُوا الْكِتَابَ كِتَابَ اللّٰهِ وَرَٓاءَ ظُهُورِهِمْ كَاَنَّهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿١٠١﴾

101- "Allah tarafından kendilerine, yanlarında bulunanı tasdik edici bir elçi gelince ehl-i kitaptan bir grup, sanki Allah'ın kitabını bilmiyormuş gibi, onu arkalarına atıp terk ettiler."

Onlar, Hakk'ın, kalplerine giden elçilerini iç dünyalarında inkâr ettiler, maddeler âleminde kendilerine gelen peygamberlerini de yalanladılar. İçinde irfandan bir kıvılcım bile bulunmayan cehalete ve perişanlıkla birlikte gelen mahrumiyete bakın!

وَاتَّبَعُوا مَا تَتْلُوا الشَّيَاطِينُ عَلٰى مُلْكِ سُلَيْمٰنَ وَمَا كَفَرَ سُلَيْمٰنُ وَلٰكِنَّ الشَّيَاطِينَ كَفَرُوا يُعَلِّمُونَ النَّاسَ السِّحْرَ وَمَٓا اُنْزِلَ عَلَى الْمَلَكَيْنِ بِبَابِلَ هَارُوتَ وَمَارُوتَ وَمَا يُعَلِّمَانِ مِنْ اَحَدٍ حَتّٰى يَقُولَٓا اِنَّمَا نَحْنُ فِتْنَةٌ فَلَا تَكْفُرْ فَيَتَعَلَّمُونَ مِنْهُمَا مَا يُفَرِّقُونَ بِهِ بَيْنَ الْمَرْءِ وَزَوْجِهِ وَمَا هُمْ بِضَٓارِّينَ بِهِ مِنْ اَحَدٍ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ وَيَتَعَلَّمُونَ مَا

يَضُرُّهُمْ وَلَا يَنْفَعُهُمْ وَلَقَدْ عَلِمُوا لَمَنِ اشْتَرٰيهُ مَا لَهُ فِي الْاٰخِرَةِ
مِنْ خَلَاقٍ وَلَبِئْسَ مَا شَرَوْا بِهٖٓ اَنْفُسَهُمْ لَوْ كَانُوا يَعْلَمُونَ ﴿١٠٢﴾

102- "Süleyman'ın hükümranlığı hakkında onlar, şeytanların uydurup söylediklerine tabi oldular. Halbuki Süleyman büyü yapıp kâfir olmadı. Lakin şeytanlar kâfir oldular. Çünkü insanlara sihri ve Babil'de Harut ile Marut adlı iki meleğe indirileni öğretiyorlardı. Halbuki o melek her kese: Biz ancak imtihan gönderildik, sakın yanlış inanıp da kâfir olmayasınız, demeden hiç kimseye sihir ilmini öğretmezlerdi. Onlar, o iki melekten karı ile koca arasını açacak şeyleri öğreniyorlardı. Oysa büyücüler, Allah'ın izni olmadan hiç kimseye zarar veremezler. Onlar, kendilerine fayda vereni değil de zarar vereni öğrenirler. Sihri satın alanların ahiretten nasibi olmadığını çok iyi bilmektedirler. Karşılığında kendilerini sattıkları şey ne kötüdür! Keşke bunu anlasalardı!"

Nefsî arzuların, dağınıklığa düşürdüğü kimse gafletin her türlüsüne maruz kalır. Böylece cehaletin her cinsten problemiyle karşılaşır. Sonra uzun süre ilahî huzurdan kaybolan kimse, insanlar için ibret, yolunu izleyen için de fitne vesilesi olur. Kim, sapkınlığında ona uyarsa onun çizgisine düşmüş ve onunla özdeşleşmiş olur. İşte Harut ve Marut'un karşılaştıkları olaydaki durumları da böyledir. Onlar insanlar için ibret, daha doğrusu fitne unsuru olmuşlardır. Bu nedenle kim onların sözüne kulak verip cehaletlerini dikkate almadıysa belalarına maruz kaldı ve ahiretteki ıstıraplarına duçar oldu.

Harut ve Marut'un kıssasından çıkan işaret, bu yolda çarpıtma ve kandırmaya meyleden ve aldatarak bir dava ortaya koyan kimseye yöneliktir. Bu kimse, kendisine uyanı yoldan çıkarmakta ve batılıyla onu cehenneme atmaktadır. (...)

Kim, saplantılarına meylederek değerini yitirirse iç yüzü ortaya çıkar ve kusurları basiret sahiplerince görülür. Harut ve Marut da alışkanlık haline getirdikleri günahla mağrur olunca, günahkâr

insanlara sitem dilini uzattılar. Ayrıca kendilerinde şehvet cazibeleri ile fitne ve afetlerin sebepleri birleştiği için isyana giriştiler ve ravilerin dillerine destan olup her tarafa yayılan hatalar işlediler. Ayrıca kıyamet gününe kadar sürecek olan kötü bir duruma düştüler. Eğer Allah onlara merhamet etmeseydi, kıyamet günü de azapları bitmeyecekti. Ancak Allah'ın herkese lütfu çoktur. Bu arada Allah: (وَيَتَعَلَّمُونَ مَا يَضُرُّهُمْ وَلَا يَنْفَعُهُمْ) *"Onlar, kendilerine fayda vereni değil de zarar vereni öğrenirler"* buyurunca ilim tahsil edenler anladılar ki, her şeyi bilmek övünülecek bir sıfat olsa da zarar veren ilmi öğrenmek arzulanan bir husus olmadığı gibi, ondan Allah'a sığınmak gerekir. Hz. Peygamber: *"Allah'ım ben, faydasız ilimden sana sığınırım"* buyurmuştur.

(وَلَبِئْسَ مَا شَرَوْا بِهٖٓ اَنْفُسَهُمْ لَوْ كَانُوا يَعْلَمُونَ) *"Karşılığında kendilerini sattıkları şey ne kötüdür! Keşke bunu anlasalardı!"*

Eğer aldanan insan, neyin kalıp neyin elden gittiğini bilseydi, üzüntüden iç organları parça parça olurdu. Lakin o, kıyamet günü hangi nimetleri kaçırdığını öğrenecektir.

وَلَوْ اَنَّهُمْ اٰمَنُوا وَاتَّقَوْا لَمَثُوبَةٌ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ خَيْرٌ لَوْ كَانُوا
يَعْلَمُونَ ﴿١٠٣﴾

103- "Eğer iman edip kendilerini kötülükten korusalardı, şüphesiz Allah tarafından verilecek sevap daha hayırlı olacaktı. Keşke bunları anlasalardı!"

Eğer onlar, Allah'a yönelmeyi Allah'tan gafil kalmaya tercih etselerdi, her iki yurdun hazırlığını da yapmış olup hem dünya hem de ahirette aziz olma mertebesine erişirlerdi. Fakat kahrın baskıları onları frenleyerek hicran yurtlarına mahkûm etmiştir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا لَا تَقُولُوا رَاعِنَا وَقُولُوا انْظُرْنَا وَاسْمَعُوا
وَلِلْكَافِرِينَ عَذَابٌ اَلِيمٌ ﴿١٠٤﴾

104- "Ey iman edenler! 'Râinâ' demeyin, 'unzurnâ' deyin. Söylenenleri dinleyin. Kâfirler için elem verici bir azap vardır."

Düşmanların, davranış ve sözlerden oluşan bütün hallerinde amaçları kötüdür. Bu itibarla onlar, yöntemlerine uygun olarak yaptıklarında da yapmadıklarında da kötü niyetlidirler. O halde Allah'ın dostlarının yolu, onlara benzemekten sakınmak ve onların yolu dışındaki bir yola koyulmaya başlamaktır.

مَا يَوَدُّ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ اَهْلِ الْكِتَابِ وَلَا الْمُشْرِكِينَ اَنْ يُنَزَّلَ عَلَيْكُمْ مِنْ خَيْرٍ مِنْ رَبِّكُمْ وَاللّٰهُ يَخْتَصُّ بِرَحْمَتِهِ مَنْ يَشَآءُ وَاللّٰهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظِيمِ ﴿١٠٥﴾

105- "Ehl-i Kitap'tan kâfirler ve putperestler de Rabbinizden size bir hayır indirilmesini istemezler. Halbuki Allah, rahmetini dilediğine verir. Allah, büyük lütuf sahibidir."

Düşmanların, dostların işlerinin yoluna girmesinden hoşlanmamaları sürekli ve kesintisizdir. Ancak kıskanç iflah olmaz ve hiçbir maksudu gerçekleşmez. Kaldı ki, öfkeli düşman, sevinç dünyalarının yıkıldığını iddia etse dahi, dostlara özgü rahmet tecellileri kâfidir.

مَا نَنْسَخْ مِنْ اٰيَةٍ اَوْ نُنْسِهَا نَاْتِ بِخَيْرٍ مِنْهَآ اَوْ مِثْلِهَا اَلَمْ تَعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ﴿١٠٦﴾

106- "Biz, bir ayetin hükmünü yürürlükten kaldırır ve onu unutturursak, mutlaka daha iyisini veya benzerini getiririz. Bilmez misin ki, Allah her şeye kadirdir."

Ayette yer alan "*nesh*" sözcüğü bir şeyi yerinden almak demektir. Yani seni bir durumdan onun üstündeki daha yüksek bir duruma taşıtaşıyan şeydir. Böylece vuslat dalın daima canlı, izzet yıldızın da sonsuza dek parlak olur. Bu nedenle biz, ibadetin eserlerinden bir şeyi ortadan kaldırır kaldırmaz mutlaka onun yerine,

kulluk nurlarından olan başka şeyler ikame ederiz. Kulluk nurlarından da bir şeyleri ortadan kaldırdığımızda muhakkak onların yerine kulluğun daha mükemmel nurlarını ikame ederiz.

Şiir:

*Senin sırrın terakkidedir ebediyen*
*Güzel dost edinmekle kadrin artmadadır*

Bir görüşe göre de *"nesh"* şu demektir: Allah, seni kulluk makamından aldığında muhakkak özgürlük alanlarında yürütür ve üzerinden beşeriyetin vasıflarından birini kaldırdığında muhakkak ulûhiyetin delillerinden biriyle seni var eder.

اَلَمْ تَعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ لَهُ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَمَا لَكُمْ مِنْ دُونِ اللّٰهِ مِنْ وَلِيٍّ وَلَا نَصِيرٍ ﴿١٠٧﴾

107- "Yine bilmez misin göklerin ve yerin mülkiyet ve hükümranlığı yalnızca Allah'ındır. Sizin için Allah'tan başka ne bir dost ne de bir yardımcı vardır."

Allah'ın prensibi, dostlarını önce mülkünün şühûdundan O'nun mülkiyetinde olduğunu görme mertebesine, ardından da bunu görmekten hakkını müşahede etme derecesine intikal ettirir. Böylece Allah onları ayetlerini görme mertebesinden sıfatlarını görme mertebesine, sıfatlarını görme mertebesinden de zatını müşahede mertebesine yükseltir.

اَمْ تُرِيدُونَ اَنْ تَسْـَٔلُوا رَسُولَكُمْ كَمَا سُئِلَ مُوسٰى مِنْ قَبْلُ وَمَنْ يَتَبَدَّلِ الْكُفْرَ بِالْاِيمَانِ فَقَدْ ضَلَّ سَوَآءَ السَّبِيلِ ﴿١٠٨﴾

108- "Yoksa siz de ey Müslümanlar, daha önce Musa'ya sorulduğu gibi, peygamberinize sorular sormak mı istiyorsunuz? Kim imanı küfre değişirse, şüphesiz dosdoğru yoldan sapmış olur."

İsrail oğulları Hz. Musa'ya eziyet ettikleri için Müslümanlar, onların yaptıklarını yapmaktan alıkonularak Hz. Peygamber'i olabilen en geniş anlamda yüceltmekle emrolundular. Bu nedenle Müslümanlar, onun huzurunda, başlarının üzerinde kuş varmış gibi dururlardı. Nitekim Allah: (وَتُعَزِّرُوهُ وَتُوَقِّرُوهُ) "*Resûlüne yardım edesiniz, ona saygı gösteresiniz*" (Feth, 48/9), buyurmuştur. Bu arada zahirdeki güzel edep, batında Allah'a karşı olan güzel edebin göstergesidir.

وَدَّ كَثِيرٌ مِنْ اَهْلِ الْكِتَابِ لَوْ يَرُدُّونَكُمْ مِنْ بَعْدِ اِيمَانِكُمْ كُفَّارًا
حَسَدًا مِنْ عِنْدِ اَنْفُسِهِمْ مِنْ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُمُ الْحَقُّ فَاعْفُوا
وَاصْفَحُوا حَتّٰى يَاْتِيَ اللّٰهُ بِاَمْرِهِ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ١٠٩

109- "Ehl-i Kitaptan çoğu, hakikat kendilerine apaçık belli olduktan sonra, sırf içlerindeki kıskançlıktan ötürü, sizi imanınızdan vazgeçirip küfre döndürmek istediler. Yine de siz, Allah onlar hakkındaki emrini getirinceye kadar affedip bağışlayın. Şüphesiz Allah her şeye kadiridir."

Gaflet ehlinden kavrama kaybına uğrayan kimse, hiç kimsenin mutluluk yıldızının doğmasını istemez. Kim de hasede tutulursa haset ettiği kimsenin üzerine güneş ışığının yayılmasını istemez.

Kâfirlerin sıfatları da böyledir. Bu nedenle Allah, burunlarını yere sürtmüş ve kendilerini yüz üstü süründürmüştür.

Bu ayet, sülûku arzulayan irade sahiplerinin (müridliğe niyetlenenlerin) başlangıçtaki hallerine işaret etmektedir. Bu süreçte sohbette muvaffak olmayıp şekilcilik ve zahire düşkün kimselerle beraber olanları, bu tür arkadaşları müridlik yolun izlemekten men ederler. Ayrıca onlara nasihatle hitap eder, kendilerini acizlikle korkutup fakirlikle tehdit ederler. Böylece onları gaflet yoluna taşır ve müritlik yollarını keserler. İşte bunlar, Allah'ın gerçek düşmanları olup, anında Allah'ın gazabına uğrarlar. Cezaları ise, doğruluğun kokularından bir şey koklamaktan mahrum kalmalarıdır.

(فَاعْفُوا وَاصْفَحُوا ) *"Affedip bağışlayın..."* Müridin yolu, başkalarından sırrını saklaması, herkes ile iyi geçinmesi ve arayışında kapsamlı çaba harcamasıdır. Bu takdirde Allah yakın zamanda ona yolunu açar.

وَاَقِيمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ وَمَا تُقَدِّمُوا لِاَنْفُسِكُمْ مِنْ خَيْرٍ
تَجِدُوهُ عِنْدَ اللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ﴿١١٠﴾

110- "Namazı kılın, zekâtı verin. Önceden kendiniz için yaptığınız her iyiliği Allah'ın katında bulacaksınız. Şüphesiz Allah, yapmakta olduklarınızı noksansız görür."

Müride düşen görev, harcadığı samimi çabaların semeresinin en sonunda elde edileceğinden emin olarak, alakayı canlı tutması ve çeşitli ibadetlerle tevessülü sürdürmesidir.

وَقَالُوا لَنْ يَدْخُلَ الْجَنَّةَ اِلَّا مَنْ كَانَ هُودًا اَوْ نَصَارٰى تِلْكَ اَمَانِيُّهُمْ
قُلْ هَاتُوا بُرْهَانَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿١١١﴾

111- "Ehl-i Kitap: 'Yahudiler yahut Hıristiyanlardan başka hiç kimse cennete giremeyecek' dediler. Bu onların kuruntusudur. Sen de onlara: 'Eğer sahiden doğru söylüyorsanız, delilinizi getirin' de."

Her grup, ümidi kendisi hazırlar, kurtuluşu kendi hali için zanneder, Allah'a ulaşmanın da kendi payına düşeceğini ileri sürer. Ne var ki, delilin varlığına dayanmayan kuru tahmin hiçbir sonuç getirmediği gibi, hiçbir fayda da sağlamaz.

بَلٰى مَنْ اَسْلَمَ وَجْهَهُ لِلّٰهِ وَهُوَ مُحْسِنٌ فَلَهُ اَجْرُهُ عِنْدَ رَبِّهِ وَلَا خَوْفٌ
عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿١١٢﴾

112- "Bilakis kim ihsan ehli olarak yüzünü Allah'a çevirirse, onun ecri Rabbi katındadır. Öyleleri için ne bir korku vardır, ne de üzüntü çekerler."

Yüzünü Allah'a çevirmekten maksat, niyetinin sırf Allah rızası için olması, sadece Allah'a yönelmesi ve aklını şaibelerden tertemiz kılmasıdır. İhsan ehli olmak ise, yaptığı işin ve kullandığı yöntemin gerçeğini bilmesi demektir. Bu durumda o, şimdiki halde Müslüman olduğu gibi, akıbeti itibariyle de ihsan ehlidir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- İhsan, Allah'ı görüyormuşsun gibi O'na kulluk etmendir. Böylece sen, zahirinle O'na teslim olmuş, sırlarınla da O'nu görmüş olursun. Böylece görünürde çaba ve sücut, bâtında ise keşif ve vücut gerçekleşmiş olur.

- Kişi, ibadetlere bağlı kalarak yüzünü Allah'a çevirmiş olur. İhsan ehli olan ise huzurda adâbı güzel yerine getirmek suretiyle hizmetin adâbını yerine getiren kimsedir. Bunların üzerinde ne ayrılık korkusu bulunur, ne de gizli tuzaklara maruz kalırlar. Böylece ne dünya onları müşahededen alıkoyar, ne de yarın ahiret Allah'ı görmelerine engel olur.

وَقَالَتِ الْيَهُودُ لَيْسَتِ النَّصَارٰى عَلٰى شَيْءٍ وَقَالَتِ النَّصَارٰى لَيْسَتِ الْيَهُودُ عَلٰى شَيْءٍ وَهُمْ يَتْلُونَ الْكِتَابَ كَذٰلِكَ قَالَ الَّذِينَ لَا يَعْلَمُونَ مِثْلَ قَوْلِهِمْ فَاللّٰهُ يَحْكُمُ بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ فِيمَا كَانُوا فِيهِ يَخْتَلِفُونَ ﴿١١٣﴾

113- "Hepsi de kitabı (Tevrat ve İncil'i) okumakta oldukları halde, Yahudiler: 'Hıristiyanlar doğru yolda değillerdir' derler. Hıristiyanlar da: 'Yahudiler doğru yolda değillerdir' derler. Kitabı bilmeyenler de birbirleri hakkında tıpkı onların söylediklerini söylediler. Allah, ihtilafa düştükleri hususlarda kıyamet günü onlar hakkında hükmünü verecektir."

Bu ayet, zahir hükmün aksine işaret etmektedir. Şöyle ki, düşmanlar -kâfirler- bugün birbirlerinden uzaklaşmaya çalışırlar. Veliler de bir yönden böyledirler. Bu nedenle: *Sufiler, birbirlerinden nefret*

*ettikleri sürece iyidirler,* denilmiştir. Onlar, birbirlerini kabul etmezler. Çünkü eğer birbirlerini kabul etselerdi, beraber kalırlardı. Ancak şu var ki, kâfirler birbirlerinden yaka silkerken hepsi bâtıl üzeredirler. Oysa velilerin tamamı hak üzeredirler. İşte zahir hükmün aksinden maksadımız budur.

وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنْ مَنَعَ مَسَاجِدَ اللّٰهِ اَنْ يُذْكَرَ فِيهَا اسْمُهُ وَسَعٰى فِي خَرَابِهَا اُولٰٓئِكَ مَا كَانَ لَهُمْ اَنْ يَدْخُلُوهَٓا اِلَّا خَٓائِفِينَ لَهُمْ فِي الدُّنْيَا خِزْيٌ وَلَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيمٌ ﴿١١٤﴾

114- "Allah'ın mescidlerinde O'nun adının anılmasına engel olan ve onların harap olmasına çalışandan daha zalim kim vardır! Aslında bunların oralara ancak korkarak girmeleri gerekir. Bunlar için dünyada rezillik, ahirette de büyük azap vardır."

Ayetteki işaret şöyledir: Zalim, ibadet yurtlarını şehvetlerle harap eden kimsedir. İbadet yurtları ise abidlerin nefisleridir. Yine zalim, marifetin yurtlarını arzu ve ilgilerle yıkan kimsedir. Marifetin yurtları da ariflerin kalpleridir. Aynı zamanda zalim, mahabbetin yurtlarını da nefse ait haz ve tatminlerle yıkan kimsedir. Bu yurtlar erenlerin ruhlarıdır. Bir de zalim, müşahedelerin yurtlarını ibadetlere iltifat ederek harap eden kimsedir. Bu yurtlar ise tevhid ehlinin sırlarıdır.

(لَهُمْ فِي الدُّنْيَا خِزْيٌ وَلَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيمٌ) *"Bunlar için dünyada rezillik, ahirette de büyük azap vardır."*

İşaret ehli için dünyadaki rezillik perdenin atılmasıdır. Ahiretteki azap ise mertebelerle korunmaktır.

وَلِلّٰهِ الْمَشْرِقُ وَالْمَغْرِبُ فَاَيْنَمَا تُوَلُّوا فَثَمَّ وَجْهُ اللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ وَاسِعٌ عَلِيمٌ ﴿١١٥﴾

115- "Doğu da Allah'ındır batı da. Nereye dönerseniz, Allah'ın yüzü oradadır. Şüphesiz Allah'ın rahmeti ve nimeti geniştir, O her şeyi bilendir."

Ayet, kalplerin doğularına ve batılarına işaret etmektedir. Kalplerin hem aydınlatıcıları hem de afetleri vardır. Afetlerinden maksat, nefsin vesveseleri olup bunlar arzu ve şehvetlerin karanlıklarında kalbe sirayet eder. Aydınlatıcıları ise, ilimlerin yıldızları, huzurun ayları ve marifetlerin güneşleridir.

Bu itibarla, aydınlatıcılar var olduğu sürece kalplerin kıblesi açıktır. Hakikatler, kalplere hâkim olduğu zaman aydınlatıcıların hükmü kaybolur. Tıpkı güneşin doğmasıyla birlikte yıldızların kaybolması gibi. Aynı şekilde hak ortaya çıktığı zaman kökten yok olma ve etkisizleşme gerçekleşir. Böylece ne şekli görüntü ne his ve anlama ne akıl ve ilmin hâkimiyeti ne de irfanın aydınlığı kalır. Zira bütün bunların varlığı, beşeriliğin devamına uygun sıfatlardır. Sıfatın sahibi mahviyet mertebesine eriştiği zaman sıfatları nerede kalır?!

(فَاَيْنَمَا تُوَلُّوا فَثَمَّ وَجْهُ اللّٰهِ) "Nereye dönerseniz, Allah'ın yüzü oradadır." Duyuş ve temyizden en ufak bir kalıntı dahi kalmış ise kıble gözetilir. Şayet bilinmiyorsa aranır. Fıkhî izaha göre; bütün yönlerle ilgili deliller belirsiz olduğu zaman, kıbleye dair bir bilgi de yoksa namazın caiz olması için yönlerin tamamı eşit hale gelir. Bu durumda niyette bir tercih oluşmamışsa herhangi bir yöne doğru namaz kılınabilir.

وَقَالُوا اتَّخَذَ اللّٰهُ وَلَدًا سُبْحَانَهُ بَلْ لَهُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ كُلٌّ لَهُ قَانِتُونَ ﴿١١٦﴾

116- "'Allah çocuk edindi' dediler. Haşa! O, bundan münezzehtir. Göklerde ve yerde olanların hepsi O'nundur. Hepsi O'na boyun eğmiştir."

(وَقَالُوا اتَّخَذَ اللّٰهُ وَلَدًا سُبْحَانَهُ) *"'Allah çocuk edindi' dediler. Haşa! O, bundan münezzehtir."* Allah onları, hemen yok etmemek suretiyle daha kötü bir duruma düşürdü. Daha doğrusu uzun süre mühlet vermeyi, mağrur olmalarına sebep kıldı. Böylece Allah'a büyük iftirayı dile getirdiler, Allah'ı vasıflandırırken alışılmadık şüpheler uydurdular. Bu amaçla O'nu çocuk sahibi olmakla nitelendirdiler. Zâtı bir olan Allah'ın nasıl çocuğu olur! Nitekim zâtı hiçbir şeyle sınırlanamaz ve sıfatlarında şehvet caiz değildir.

(بَلْ لَهُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ كُلٌّ لَهُ قَانِتُونَ) *"Göklerde ve yerde olanların hepsi O'nundur. Hepsi O'na boyun eğmiştir."*

Yani varlıkta ne kadar ihtiyaç halindeki eser veya müstakil cisim varsa hepsinin üzerinde sonradan yaratıldıklarını gösteren açık izler ve bunu beyan eden yaradılış delilleri bulunmaktadır. Konuşmayanlarından her biri dile gelmekte ve Allah'ın birliğine tanıklık etmektedir.

بَدِيعُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَاِذَا قَضٰىٓ اَمْرًا فَاِنَّمَا يَقُولُ لَهُ كُنْ فَيَكُونُ ﴿١١٧﴾

117- "O, göklerin ve yerin eşsiz yaratıcısıdır. Bir şeyi dileğinde ona sadece 'Ol!' der, o da hemen oluverir."

Ayette yer alan (بَدِيع) *"bedî'"* lafzı, ilim ehline göre varlığı örneksiz bir şekilde icat etmektir. İşaret ehline göre ise benzeri olmayan şey demektir. Bu itibarla bu isim, Allah'ın hem zâtının hem de fiillerinin benzersiz olduğunu ifade etmektedir. Şöyle ki O, hiçbir sayının kuşatamadığı bir birliğe, hiçbir zaman diliminin kesemediği bir sonsuzluğa sahiptir. O, hiçbir vehmin tasvir edemediği Hak ve hiçbir idrakin erişemediği bir varlıktır. Bir işe karar verdiği zaman kudret kapsamındaki hiçbir şey karşı çıkamaz ve hiçbir yasak hükmünün dışında kalamaz.

وَقَالَ الَّذِينَ لَا يَعْلَمُونَ لَوْلَا يُكَلِّمُنَا اللّٰهُ اَوْ تَاْتِينَٓا اٰيَةٌ كَذٰلِكَ قَالَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ مِثْلَ قَوْلِهِمْ تَشَابَهَتْ قُلُوبُهُمْ قَدْ بَيَّنَّا الْاٰيَاتِ لِقَوْمٍ يُوقِنُونَ ﴿١١٨﴾

118- "Bilmeyenler dediler ki: 'Allah bizimle konuşmalı ya da bize bir ayet gelmeli değil miydi?' Onlardan öncekilerde işte tıpkı onların dediklerini demişlerdi. Kalpleri nasıl da birbirine benzedi! Gerçekleri iyice bilmek isteyenlere ayetleri apaçık gösterdik."

Allah'ın kelamı, cisimleri ve özellikleriyle bütün yaratılanlarla ilgilidir. Bu bağlamda *"Ol!"* emri, yükümlüleri de yükümlülüklerini de kapsamaktadır. Ancak anlayan kulağa sahip olmayan kimse hakkı dinlemede sağır kesilir. Çünkü Allah, Kitap ehlinden bir topluluğa hitap ederek kelamını duyurmuş, ancak onlar bunu duymaya tahammül edememişlerdir. Bu insanlar, büyük mucizeleri gördükten sonra ise tahrif ve tebdile yeltenmişlerdir. Allah'ın gösterdiği mucizeler de karşı çıkanların gerekçelerini yok etmiş ve seçkin insanları rahatlatmıştır. Lakin kaderinde şakilik olan kimselere, apaçık da olsa deliller ne fayda verir?!

اِنَّٓا اَرْسَلْنَاكَ بِالْحَقِّ بَشٖيرًا وَنَذٖيرًا وَلَا تُسْـَٔلُ عَنْ اَصْحَابِ الْجَحٖيمِ ﴿١١٩﴾

119- "Doğrusu biz seni Hak Kur'an ile müjdeleyici ve uyarıcı olarak gönderdik. Sen, cehennemliklerden sorumlu değilsin."

Kimsede göstermediğimiz bazı özellikleri sadece sana verdik. Bu nedenle kitle ve insanların geneli senin sancağın altındadır. Sana uyan makbul, sana karşı çıkan ise rahmetinden uzak kalmış olur. Sana karşı çıkanların hallerinden sen sorumlu değilsin ve hiç kimsenin senden (...)

وَلَنْ تَرْضٰى عَنْكَ الْيَهُودُ وَلَا النَّصَارٰى حَتّٰى تَتَّبِعَ مِلَّتَهُمْ قُلْ اِنَّ هُدَى اللّٰهِ هُوَ الْهُدٰى وَلَئِنِ اتَّبَعْتَ اَهْوَٓاءَهُمْ بَعْدَ الَّذٖي جَٓاءَكَ مِنَ الْعِلْمِ مَا لَكَ مِنَ اللّٰهِ مِنْ وَلِيٍّ وَلَا نَصٖيرٍ ﴿١٢٠﴾

120- "Dinlerine uymadıkça Yahudiler de Hıristiyanlar da asla senden razı olmayacaklardır. De ki: 'Doğru yol, ancak Allah'ın yoludur.' Sana gelen ilimden sonra onların arzularına uyacak olursan, andolsun ki, Allah'tan sana ne bir dost ne de bir yardımcı vardır."

Biz senden razı olduktan sonra, sen düşmanların rızasını önemseme! Çünkü onlar, dinlerine uymaktan başka hiçbir şekilde senden

razı olmazlar. Dahası onların savaşma arzuları vardır. Öyleyse onlarla ilginin bulunmadığını ve anlaşmazlık halinde olduğunu açıkça ilan et! Onlara düşmanlık yap ve bil ki, kendilerini hoşnut edecek iyi geçinme, ebedî mutsuzluğun sebebidir. Böyle bir düşüncenin aklına gelmemesine dikkat et! Ümmetini de onlardan ve onların yolundan kopmaya çağır! Bizden başka her şeyden koparak ve yardımımıza güvenerek bizimle bizim ol! Çünkü sen bizimlesin ve bizimsin.

اَلَّذِينَ اٰتَيْنَاهُمُ الْكِتَابَ يَتْلُونَهُ حَقَّ تِلَاوَتِهِ اُولٰٓئِكَ يُؤْمِنُونَ بِهِ وَمَنْ يَكْفُرْ بِهِ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْخَاسِرُونَ ﴿١٢١﴾

121- “Kendilerine kitap verdiğimiz kimselerden bazısı, onu, hakkını gözeterek okurlar. Çünkü onlar, ona iman ederler. Onu inkâr edenlere gelince, işte gerçekten zarara uğrayanlar onlardır.”

Gözlerini hakkımızın şühûduyla açtığımız, kalplerinin kulaklarını hitabımızı duymakla taçlandırdığımız, inayetin nuruna mazhar olma özelliğine sahip kıldığımız, iç dünyalarında gerçek marifetle desteklediğimiz Kitab’ı hakkıyla okuyan, iman ve marifet özelliklerini taşıyan kimseler, Allah’ın has kullarıdır. Onların dışındakiler ise reddedilmiş kimselerdir.

يَا بَنِي اِسْرَٓاءِيلَ اذْكُرُوا نِعْمَتِيَ الَّتِٓي اَنْعَمْتُ عَلَيْكُمْ وَاَنِّي فَضَّلْتُكُمْ عَلَى الْعَالَمِينَ ﴿١٢٢﴾

122- “Ey İsrail oğulları, size verdiğim nimetimi ve sizi bir zamanlar cümle aleme üstün kılmış olduğumu hatırlayın.”

Allah’ın, Hz. Musa’nın kavmine olan hitaptaki üslubu, onlara ayırıcı vasıflarıyla seslenerek: *“Ey İsrail oğulları”* buyurması şeklindedir. Bu, ey Ya’kûb’un oğulları, demektir. Hz. Peygamber’in ümmetine ise keramet nidasıyla hitap ederek: *“Ey iman edenler”* diye buyurmaktadır.

وَاتَّقُوا يَوْمًا لَا تَجْزِي نَفْسٌ عَنْ نَفْسٍ شَيْئًا وَلَا يُقْبَلُ مِنْهَا عَدْلٌ
وَلَا تَنْفَعُهَا شَفَاعَةٌ وَلَا هُمْ يُنْصَرُونَ ﴿١٢٣﴾

123- "Ve bir günden sakının ki, o günde hiç kimse başkası namına bir şey ödeyemez, kimseden fidye kabul edilmez, hiç kimseye şefaat fayda vermez. Onlar, hiçbir yardım da görmezler."

Allah, düşmanlardan hiçbir şey kabul etmez. Dostlara gelince, onlar hakkında Hz. Peygamber: *"Hurmanın yarısıyla da olsa cehennemden sakının"* buyurmuştur. Aynı zamanda kâfirlere, şefaatçilerin şefaati de fayda vermez. Bu, her ümmetin peygamberiyle olan hükmüdür. Müminlere gelince, bir özellik olmak üzere, onlara peygamberlerinin şefaati fayda verir. O gün herkes: *"Nefsim, nefsim!"* derken bizim Peygamberimiz: *"Ümmetim, ümmetim!"* demektedir.

وَاِذِ ابْتَلٰٓى اِبْرٰهٖيمَ رَبُّهُ بِكَلِمَاتٍ فَاَتَمَّهُنَّ قَالَ اِنّٖي جَاعِلُكَ لِلنَّاسِ
اِمَامًا قَالَ وَمِنْ ذُرِّيَّتٖي قَالَ لَا يَنَالُ عَهْدِي الظَّالِمٖينَ ﴿١٢٤﴾

124- "Bir zamanlar Rabbi İbrahim'i bir takım kelimelerle sınamış, o da onları tam olarak yerine getirmişti. Bunun üzerine Allah: 'Ben seni insanlara önder yapacağım' demişti. 'Soyumdan da önderler yap yâ Rabbi!' dedi. Allah: 'Ahdim zalimlere ermez' buyurdu."

(وَاِذِ ابْتَلٰٓى اِبْرٰهٖيمَ رَبُّهُ بِكَلِمَاتٍ فَاَتَمَّهُنَّ) *"Bir zamanlar Rabbi İbrahim'i bir takım kelimelerle sınamış, o da onları tam olarak yerine getirmişti."* Sınanmak, bağlılığın gerçekleşmesi demektir. Bu nedenle kulların en içten bağlı olanları, en ağır şekilde sınananlardır. Nitekim Hak Teâlâ, dostu İbrahim (a.s.)'ı üzerine farz kıldığı dini hükümlerle sınamış, o da bunların gereğini hakkıyla yerine getirince Allah kendisini şu sözüyle övmüştür: (وَاِبْرٰهٖيمَ الَّذٖي وَفّٰى)

*"Ve vecibeleri hakkıyla yerine getiren İbrahim'in"* (Necm, 53/37).

Yani hiçbir şekilde kusur işlememiştir.

Bir yoruma göre de Allah, Hz. İbrahim'e peygamberliğin sorumluluklarını yüklemiş ve dostluğun hükümleriyle kendisini yükümlü kılmıştır. Bu arada Hz. İbrahim'in en ağır sınavı, dostluğun koşullarını yerine getirmesi, herkesten ve her şeyden uzaklaşarak sadece Allah'a yönelmesi şeklinde olmuştur. O da, gizli ve açık, Allah'tan başka her şeyden koparak bunu doğru bir biçimde yerine getirmiştir.

Aynı şekilde o, ateşe atılırken karşısına çıkıp: *"Bir ihtiyacın var mı?"* diye soran Cibril'e cevaben: *"Kendini kast ediyorsan, hayır sana ihtiyacım yoktur..."* demiştir. Esasen Hz. İbrahim'in en büyük sınavı, Cibril'in bu durumda kendisine görünmesiydi. Ancak Hz. İbrahim'de, kim olursa olsun, hiçbir mahlûkun nüfuz edemeyeceği kadar bir mahviyet hali gerçekleşmişti.

Bu izahta aynı zamanda Peygamberimizin haliyle Hz. İbrahim'in hali arasındaki farka da işaret bulunmaktadır. Çünkü Cibril, Hz. İbrahim'e görünerek ona yardım teklif etmiş, o da: *"Kendini kast ediyorsan, hayır sana ihtiyacım yoktur..."* demiştir. Oysa Cibril, miraçta Hz. Peygamber (s.a.v.)'e eşlik edememiş, bu nedenle aczini dile getirerek şöyle demiştir: *"Bir parmak ucu kadar daha yaklaşsaydım yanacaktım."*

Cibril'in, Hz. İbrahim'e yardım teklif edecek kadar kendini güçlü hissettiği durum ile Hz. Peygamber (s.a.v.)'e aczini itiraf ettiği durum arasında ise büyük fark bulunmaktadır. (قَالَ إِنِّي جَاعِلُكَ لِلنَّاسِ إِمَامًا قَالَ وَمِنْ ذُرِّيَّتِي قَالَ لَا يَنَالُ عَهْدِي الظَّالِمِينَ ) "Bunun üzerine Allah: 'Ben seni insanlara önder yapacağım' demişti. 'Soyumdan da önderler yap yâ Rabbi!' dedi. Allah: 'Ahdim zalimlere ermez' buyurdu."

Önder, kendisine tabi olunan kimse demektir. Allah, Hz. İbrahim için bunu gerçekleştirmiştir. O kadar ki, bütün mahlûkatı, kıyamet gününe kadar ona tabi olmakla yükümlü kılarak: (فِي الدِّينِ مِنْ حَرَجٍ مِلَّةَ أَبِيكُمْ إِبْرٰهِيمَ ) *"Babanız İbrahim'in dinine"* (Hac, 22/78), buyurmuştur. Yani, Hz. İbrahim'in tevhidden ibaret olan dinine uyunuz. Ayrıca: (وَاتَّخِذُوا مِنْ مَقَامِ إِبْرٰهِيمَ مُصَلًّى ) *"Ve İbrahim'in makamından kendinize bir namaz yeri edinin"* (Bakara, 2/125) buyurmuştur. İşte gerçek

önderlik budur. Önderlik mertebesi ise önce Hakk'ı anlayıp sonra halka anlatmaktır. Böylece Hak ile halkın arasında vasıta olur. Peygamberliği tebliğde yılgınlığa düşmeden, zahiriyle halkla beraber iken bâtınıyla Hakk'ı müşahede eder. Halindeki safiyet değişmez ve halka, Hakk'ın kendisine söylediğini söyler.

(قَالَ وَمِنْ ذُرِّيَّتِي) *"Soyumdan da önderler yap."*

Hz. İbrahim, burada soyuna duyduğu şefkat duygusuyla konuşarak kendisine yapılmış olan ikramı onlar için de istemiştir. Bunun üzerine Allah, bunun soy bağıyla kazanılan bir hak veya yapılan bir hazırlığın sonucu olmadığını, sadece ezelde takdir edilen kısmetler olduğunu kendisine bildirerek: (لَا يَنَالُ عَهْدِي الظَّالِمِينَ) *"Ahdim zalimlere ermez"* buyurmuştur. Aynı zamanda bu, dünyalık nimetler ve buradaki rızkların genişliğine benzememektedir. Zira bu nimetler, kâfir de olsa kimseden esirgenmemektedir. Bu nedenle Cenab-ı Hak: (رَبِّ اجْعَلْ هٰذَا بَلَدًا اٰمِنًا وَارْزُقْ اَهْلَهُ مِنَ الثَّمَرَاتِ مَنْ اٰمَنَ مِنْهُمْ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ قَالَ وَمَنْ كَفَرَ فَأُمَتِّعُهُ قَلِيلًا) *"'Ve halkından Allah'a ve ahiret gününe inananları her çeşit meyvelerle rızıklandır. Allah da: 'Kim inkâr ederse az bir süre faydalandırırım' buyurdu."* (Bakara, 2/126)

Yani, dünyanın kâfirlerden alıkonulacak kadar önemi yoktur. Ancak benim ahdime, kullarımın havassından seçtiklerim dışında kimse erişemez. Yiyecek ve içeceğe gelince, onlar kimseden engellenmez. İslam ve sevgi makamı ise herkese bahşedilmez.

وَاِذْ جَعَلْنَا الْبَيْتَ مَثَابَةً لِلنَّاسِ وَاَمْنًا وَاتَّخِذُوا مِنْ مَقَامِ اِبْرٰه۪يمَ مُصَلًّى وَعَهِدْنَٓا اِلٰٓى اِبْرٰه۪يمَ وَاِسْمٰع۪يلَ اَنْ طَهِّرَا بَيْتِيَ لِلطَّٓائِف۪ينَ وَالْعَاكِف۪ينَ وَالرُّكَّعِ السُّجُودِ ﴿١٢٥﴾

125- "Biz, o zaman Beyt'i (Kâbe'yi) insanlar için bir sevap ve güven yeri kıldık. Ve 'İbrahim'in makamından kendinize bir namaz yeri edinin.' İbrahim ve İsmail'e, 'hem tavaf edenler için hem kendini ibadete verenler için hem de rükû ve secdeye varanlar için evimi tertemiz bulundurun' diye emir verdik."

(وَإِذْ جَعَلْنَا الْبَيْتَ مَثَابَةً لِلنَّاسِ وَاَمْنًا) *"Biz, o zaman Beyt'i (Kâbe'yi) insanlar için bir sevap ve güven yeri kıldık."* Ey Muhammed hatırla! O zaman biz Beyt'i, yani Kâbe'yi insanlar için, toplandıkları bir sevap yeri, döndükleri ve her taraftan yöneldikleri güvenli bir mekân kıldık.

O, benim taştan yarattığım, fakat ezel ile irtibatlı kıldığım bir evdir. Bu nedenle kim, Beyt'e yaratılmışlık nazarıyla bakarsa kopmuş olur. Kim de irtibat nazarıyla bakarsa bağlantı kurmuş ve bağlanmış olur. Aynı zamanda kim o eve sığınırsa, sığınması yüceltme, saygı ve günahlardan tevbe cihetiyle olduğu zaman ahiret azabından kurtulmuş olur.

Bir yoruma göre de Kâbe taştan yapılmış, lakin bu tıpkı mıknatıs taşının demiri çekmesi gibi, kalpleri cezbeder.

Bu öyle bir evdir ki, gölgesi kimin üstüne düşse, geniş bir güvenli alana konmuş olur.

Öyle bir evdir ki, kimin nazarı üstüne düşerse, kesin mağfiretle müjdelenir.

Öyle bir evdir ki, kim etrafında tavaf ederse, letâif kalbini tavaf ederler. Bu durumda bir tavaf bir tavafa, bir tur da bir tura karşılıktır. Zaten iyiliğin karşılığı da iyilikten başka bir şey değildir.

Öyle bir evdir ki, ona varmak için malını harcayan kimse zarar etmiş olmaz.

Öyle bir evdir ki, ona karşı cimrilik yapan kazançlı çıkmaz. Onu ziyaret eden, başka ziyaretleri unutur ve yurdunu terk eder.

Öyle bir evdir ki, ona giden mesafe uzak görülmez. Öyle bir evdir ki, bir korkunun meydana gelmesi veya bir afetin hücumu için ziyareti terk edilmez. Öyle bir evdir ki, fakirlerin ruhunda kaygı meydana getirmez.

Öyle bir evdir ki, onu ziyaretten geri duran, bunu ya kişilik yokluğundan veya muhabbetinin azlığından yapmış olur.

Öyle bir evdir ki, kim onu ziyaret etmemeye sabrederse, kalbi taştan daha katıdır. Öyle bir evdir ki, nurlarının parıltısı üstüne düştüğü kimse, kendi güneşlerini ve aylarını unutur.

Öyle bir evdir ki, yanında kalan nasıl sabrettiğine şaşmaz, lakin ziyaretine gelen, nasıl dönerim diye şaşkınlık içinde kalır.

(وَاتَّخِذُوا مِنْ مَقَامِ اِبْرٰهٖيمَ مُصَلًّى) *"Ve İbrahim'in makamından kendinize bir namaz yeri edinin."*

Hz. İbrahim öyle bir kuldur ki, Allah için bir ayağını kaldırınca Allah, kendisini sonsuz bir ikramda bulunmak üzere, ayağının izini bütün Müslümanların kıblesi kılmıştır.

(وَعَهِدْنَٓا اِلٰٓى اِبْرٰهٖيمَ وَاِسْمٰعٖيلَ اَنْ طَهِّرَا بَيْتِيَ لِلطَّٓائِفٖينَ وَالْعَاكِفٖينَ وَالرُّكَّعِ السُّجُودِ) *"İbrahim ve İsmail'e, 'hem tavaf edenler için hem kendini ibadete verenler için hem de rükû ve secdeye varanlar için evimi tertemiz bulundurun' diye emir verdik."*

Zahiren emir, evin temizlenmesine dönük olmakla beraber, aslında kalbin temizlenmesine işaret edilmektedir. Bu arada evin temizlenmesi, onu kirden ve pislikten korumakla olur. Kalbin temizlenmesi ise onu başkalarını düşünüp görmekten korumakla gerçekleşir.

Bu arada hacıların Kâbe etrafındaki tavafları, fıkıh dilinde bilinen bir şeydir. Manaların tavafı ise hak ehlinin malumudur. Şöyle ki, manalar ariflerin kalplerinde tavaf etmekte, hakikatler de tevhid ehlinin kalplerinde karar kılmaktadır. Birinci kısımdan olanlar halden hale geçerken, ikinci gruptakiler hallerinde sebat ederler.

Kasıtların kalpleri, teslimiyetten ayrılmamakla cömertlik kapısında ebediyen beklemektedir.

Tevhid ehlinin kalpleri, vuslat sergisinde ebediyen rükûdadır.

Bulanların kalpleri ise yakınlık sergisinde ebediyen secde halindedir.

Bir yoruma göre de talip olanların yükselen arzuları, kerem kapısında ebediyen beklemektedir. Müridlerin yükselen iradeleri cömertlik

makamında ebediyen tavaf yapmaktadır. Ariflerin kafileler halindeki himmetleri de Allah'ın huzurunda ebediyen durmaktadır.

وَاِذْ قَالَ اِبْرٰهٖيمُ رَبِّ اجْعَلْ هٰذَا بَلَدًا اٰمِنًا وَارْزُقْ اَهْلَهُ مِنَ الثَّمَرَاتِ مَنْ اٰمَنَ مِنْهُمْ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ قَالَ وَمَنْ كَفَرَ فَاُمَتِّعُهُ قَلٖيلًا ثُمَّ اَضْطَرُّهُ اِلٰى عَذَابِ النَّارِ وَبِئْسَ الْمَصٖيرُ ﴿١٢٦﴾

126- "O zaman İbrahim demişti ki: 'Ey Rabbim, burayı güvenli bir şehir yap. Halkından Allah'a ve ahiret gününe iman edenlere meyvelerden rızık ver.' Allah da: 'Kim inkâr ederse, onu az bir süre faydalandırır, sonra onu cehennem azabına mecbur ederim. Ne kötü varılacak yerdir orası!' buyurmuştu."

Dilek, kulun nefsî arzularıyla şaibeli değilse kabul edilir. Hz. İbrahim'in dileği de nefsinin arzusu için değildi. Aksine o, Rabbinin hakkı içindi.

Bir de Hz. İbrahim, edep kuralına riayet edip onlardan özellikle iman edenlere rızk dilediği için dileği, hem iman edenleri hem de iman etmeyenleri kapsayacak şekilde kabul oldu. Oysa önderlik ile ilgili ayette, Hz. İbrahim Allah'tan izin almadan zürriyeti için de önderlik istediğinde bu dileği kabul edilmedi ve kendisine şöyle denildi:

(لَا يَنَالُ عَهْدِي الظَّالِمِينَ) *"Ahdim zalimlere erişmez"* (Bakara, 2/124).

وَاِذْ يَرْفَعُ اِبْرٰهٖيمُ الْقَوَاعِدَ مِنَ الْبَيْتِ وَاِسْمٰعٖيلُ رَبَّنَا تَقَبَّلْ مِنَّا اِنَّكَ اَنْتَ السَّمٖيعُ الْعَلٖيمُ ﴿١٢٧﴾

127- "Bir zamanlar İbrahim, İsmail ile beraber Beytullah'ın temellerini yükseltiyor, şöyle diyorlardı: 'Ey Rabbimiz, bizden bunu kabul buyur! Şüphesiz sen işitensin, bilensin.'"

Dileğin başarılı olması, yakarıştaki samimiyete bağlıdır. Bu nedenle Hz. İbrahim ve Hz. İsmail, dua ederken teslimiyete bağlı kaldıkları için kendilerine yardım ulaştı ve dilekleri gerçek oldu.

Şüphesiz sen sözlerimizi işiten ve hallerimizi bilensin.

رَبَّنَا وَاجْعَلْنَا مُسْلِمَيْنِ لَكَ وَمِنْ ذُرِّيَّتِنَآ اُمَّةً مُسْلِمَةً لَكَ وَاَرِنَا مَنَاسِكَنَا وَتُبْ عَلَيْنَا اِنَّكَ اَنْتَ التَّوَّابُ الرَّحِيمُ ﴿١٢٨﴾

128- "Ey Rabbimiz, bizi sana boyun eğenlerden kıl! Neslimizden de sana itaat eden bir ümmet çıkar! Bize ibadet usullerimizi göster, tevbemizi kabul et! Zira tevbeleri çokça kabul eden, çok merhametli olan ancak sensin."

Ayetteki (مُسْلِمَيْنِ) *"muslimeyni (iki Müslim)"* tabiri, bizi bir damarı bile rızan olmaksızın hareket etmeyecek ölçüde hükmüne boyun eğen iki kişi kıl, demektir. Zürriyetimizden de bizden sonra senin haklarını gözetmede bizim yerimize geçmesi için, sana boyun eğen bir ümmet ortaya çıkar. Bu arada malı için varis talep eden kimse ile kendisinden sonra yerine, hal ve hareketlerinde Allah'a itaat edecek olan bir halef isteyen kimse arasında büyük fark vardır.

(وَاَرِنَا مَنَاسِكَنَا) *"Bize ibadet usullerimizi göster."* Çünkü Allah'ın rızasına uygun vecibeleri, O'nun muvaffakiyeti ve bildirmesi dışındaki bir yolla bilmek mümkün değildir.

(وَتُبْ عَلَيْنَا) *"Tevbemizi kabul et."* Bizler, bize emrettiklerinin tamamını yerine getirdikten sonra tevbemizi kabul et. Ta ki, hareketlerimizi ve duruşlarımızı görmeyelim, fiillerimizi görmekten vazgeçip sana dönelim. Böylece, bizdeki bir özelliğin kendi gücümüzden kaynaklandığını vehmetmek şeklindeki gizli şirk tehlikesi ortadan kalkmış olur.

رَبَّنَا وَابْعَثْ فِيهِمْ رَسُولًا مِنْهُمْ يَتْلُوا عَلَيْهِمْ اٰيَاتِكَ وَيُعَلِّمُهُمُ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ وَيُزَكِّيهِمْ اِنَّكَ اَنْتَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿١٢٩﴾

129- "Ey Rabbimiz, onlara içlerinden senin ayetlerini okuyacak, onlara kitap ve hikmeti öğretecek, onları temizleyecek bir peygamber gönder. Çünkü üstün gelen, her şeyi yerli yerince yapan yalnız sensin."

Vecibeler, sadece akılla değil, peygamberler tarafından getirildiği için Hz. İbrahim, Allah'tan onları başıboş, peygambersiz ve dinsiz bırakmamasını dilerken peygamberin de onlardan olmasını istemiştir. Çünkü onunla daha çok tatmin olurlar ve onu kabul etmeleri daha kolay olur. Ayet şöyle de yorumlanabilir: Allah, Hz. İbrahim'e Peygamberimiz (s.a.v.)'in durumunu öğretince, o da Allah'tan kendisine verdiği sözü, haber verdiği şekilde, yerine getirmesini diledi.

وَمَنْ يَرْغَبُ عَنْ مِلَّةِ اِبْرٰهِيمَ اِلَّا مَنْ سَفِهَ نَفْسَهُ وَلَقَدِ اصْطَفَيْنَاهُ فِي الدُّنْيَا وَاِنَّهُ فِي الْاٰخِرَةِ لَمِنَ الصَّالِحِينَ ﴿١٣٠﴾

130- "İbrahim'in dininden kendini bilmezlerden başka kim yüz çevirir? Andolsun ki, biz onu dünyada elçi seçtik. Şüphesiz o, ahirette de iyilerdendir."

Allah, İbrahim Halil (s.a.)'i insanlara tercih ettiğini, onun dinini gerçek din, tevhidi onun şiarı, marifeti de onun sıfatı kıldığını bildirmektedir. Bu nedenle kim onun dininden yüz çevirir veya yolundan saparsa, bâtılın içine savrulmuş ve küfrün uçurumuna düşmüş olur. Zira bütün nurlar, onun nurunun parçasından başka bir şey değildir.

اِذْ قَالَ لَهُ رَبُّهُ اَسْلِمْ قَالَ اَسْلَمْتُ لِرَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿١٣١﴾

131- "Çünkü Rabbi ona: 'Müslüman ol' demiş, o da: 'Âlemlerin Rabbine boyun eğdim' demişti."

İslam, teslimiyeti ifade eden içtenlik demektir. Özü ise tercih uyuşmazlıkları ve nefsin karşı çıkışlarından ibaret olan beşeri hallerin bütünüyle dışına çıkmaktan ibarettir. Bu itibarla: (اَسْلَمْتُ لِرَبِّ الْعَالَمِينَ) "*Âlemlerin Rabbine boyun eğdim*" ifadesi, "emri dinleme ve itaat etmekle karşıladım ve hükmü gücüm yettiğince kabul ettim" anlamına gelmektedir. Bu arada Hz. İbrahim, malından, bedeninden ve çocuğundan hiçbir şeyi esirgememiştir. Çocuğunu kurban etmekle emrolunduğu zaman onu kurban etmek istemiştir. Allah

Hz. İbrahim'e: "Onu salıver" dediği zaman da emredileni yapmıştır. Böylece her iki durumda da onun tercihi veya tedbiri söz konusu olmamıştır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Hz. İbrahim'in boyun eğdiğini söylemesi, kendisi tarafından yerine getirilecek bir hususun ifadesi değildir. Zira gerçek anlamda boyun eğmek, güç ve kuvvetten arınmak demektir. Bu itibarla Hz. İbrahim: "Boyun eğdim" derken: "Beni, yükümlü kıldığın vecibelerini yerine getirir vaziyette tut ve bana emrettiklerini yerine getirmemi sağla" demiş olmaktadır. O halde Hz. İbrahim'in, durumu kendine izafe etmesi, kendisi tarafından bir mananın ortaya konulması veya bir şeyin garanti altına alınması amacıyla değildir.

- Allah, Hz. İbrahim'e güç yetirilebilecek olan yükümlülükleri tercih etmesini emretmiştir. Çünkü kim, Hz. İbrahim'in sahip olduğu dostluk makamına yerleşirse, kaçınılmaz olarak onun başına gelenler bu kimsenin de başına gelir.

Burada şöyle bir soru sorulabilir: Nasıl Hz. İbrahim: "Boyun eğdim" dedi de Peygamberimiz (s.a.v.), kendisine *"Bil!"* denildiğinde: "Bildim" demedi?

Bu soruya şu şekillerde cevap verilmiştir:

* Hz. Peygamber (s.a.v.): *"İçinizden Allah'ı en iyi bilen benim"* buyurmuştur. Ancak kendisinden sonra bir din gelmediği için hakkında: *"Bildim"* dediği şeklinde bir rivayet de yapılmamıştır.

* Allah, Hz. Peygamber (s.a.v.)'den: "Peygamber iman etti" şeklinde söz etmiştir. İman ise Allah'ı bilmek demektir. Kaldı ki, Allah'ın Hz. Peygamber'den söz etmiş olması, onun, kendinden söz etmesinden daha anlamlıdır.

* Hz. İbrahim: "Boyun eğdim" sözüyle kendini anlatınca imtihanla karşılaşmıştır. Oysa Hz. Peygamber (s.a.v.), şeklen iddia içeren sözden sakındığı için Allah tarafından korunmuştur.

* Hz. İbrahim'e, fiil türünden şeyler emredilmiştir. Çünkü sözünü ettiği boyun eğme buna işaret etmektedir. Oysa Hz. Peygamber (s.a.v.)'e birden fazla inceliği bulunan ilim emredilmiştir.

وَوَصّٰى بِهَٓا اِبْرٰهٖيمُ بَنٖيهِ وَيَعْقُوبُ يَا بَنِيَّ اِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰى لَكُمُ
الدّٖينَ فَلَا تَمُوتُنَّ اِلَّا وَاَنْتُمْ مُسْلِمُونَ ﴿١٣٢﴾

132- "Bunu İbrahim de oğullarına vasiyet etti. Ya'kub da: 'Oğullarım, Allah sizin için bu dini (İslam'ı) seçti. O halde sadece Müslümanlar olarak ölünüz' dedi."

Allah, Hz. İbrahim'in oğullarına vasiyette bulunduğunu, aynı şekilde Hz. Ya'kub'un da oğullarına: "*Ancak Müslümanlık sıfatına sahip olduğunuz halde ölüm sizi yakalasın*" dediğini haber vermektedir. Bu itibarla peygamberlerin dinleri, fiillerde farklılık taşısalar da temelde birdir. Tevhid meşrebinin de ikincisi bulunmamaktadır. Bir de Allah'ın: (اِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰى لَكُمُ الدّٖينَ) "*Allah sizin için bu dini (İslam'ı) seçti*" şeklindeki sözü, kendilerini yükümlü kıldığı İslam'a dönük arzularının sebeplerini güçlendiren bir müjdedir. Çünkü onlar, Allah'ın bu dini kendileri için seçtiğinden emin oldukları zaman, kesin olarak onlara yardım edeceğini de bilmiş olurlar. Böylece İslam'ın öngördüğü hakkı yerine getirmeleri de kolaylaşmış olur.

اَمْ كُنْتُمْ شُهَدَٓاءَ اِذْ حَضَرَ يَعْقُوبَ الْمَوْتُ اِذْ قَالَ لِبَنٖيهِ مَا تَعْبُدُونَ
مِنْ بَعْدٖي قَالُوا نَعْبُدُ اِلٰهَكَ وَاِلٰهَ اٰبَٓائِكَ اِبْرٰهٖيمَ وَاِسْمٰعٖيلَ وَاِسْحٰقَ
اِلٰهًا وَاحِدًا وَنَحْنُ لَهُ مُسْلِمُونَ ﴿١٣٣﴾

133- "Yoksa Ya'kub'a ölüm geldiği zaman siz orada mı idiniz? O zaman Ya'kub oğullarına: 'Benden sonra kime kulluk edeceksiniz?' demişti. Onlar: 'Senin ataların İbrahim, İsmail ve İshak'ın ilahı olan tek Allah'a kulluk edeceğiz. Biz, ancak O'na teslim olmuşuzdur' dediler."

Bütün bu peygamberler, tevhid ve İslam konusunda aynı yolu izlemiş ve bunu halef selef silsilesi içerisinde birbirinden tevarüs etmişlerdir. Bu itibarla onlar, Allah'a yakın bir ailenin fertleri, yakınlığı hak eden ve Allah tarafından gerçek üzere tertemiz kılınmış kimselerdir.

Öte yandan Ya'kub'un oğullarının: *Kendi ilahımıza*, dememeleri, babalarının özel konumuna riayet etmek içindir. Şöyle ki, onlar Hz. Ya'kub'un meziyetini teslim etmiş, kendilerini ise onun makamının devamı olarak görmüşlerdir. Sonra kendilerinin Allah'a itaat edeceğinden bahisle de: (وَنَحْنُ لَهُ مُسْلِمُونَ ) "*Biz, ancak O'na teslim olmuşuzdur*" demişlerdir.

تِلْكَ اُمَّةٌ قَدْ خَلَتْ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَلَكُمْ مَا كَسَبْتُمْ وَلَا تُسْـَٔلُونَ عَمَّا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٣٤﴾

134- "Onlar bir ümmetti, gelip geçti. Onların kazandıkları kendilerinin, sizin kazandıklarınız sizindir. Siz onların yaptıklarından sorguya çekilmezsiniz."

Allah, hükmü gereğince herkese, layık olduğu yeri ve değeri vermiştir. Böylece bir grubun diğer benzerlerinden haberi vardır, ne de birinin özel durumu diğerini etkilemektedir. Her biri kendi bölgesinde bir hükümdardır ve her birinin mutluluk getiren bir âlemi vardır.

وَقَالُوا كُونُوا هُودًا اَوْ نَصَارٰى تَهْتَدُوا قُلْ بَلْ مِلَّةَ اِبْرٰهِيمَ حَنِيفًا وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِكِينَ ﴿١٣٥﴾

135- "Yahudiler ve Hıristiyanlar Müslümanlara: 'Yahudi ya da Hıristiyan olun ki doğru yolu bulasınız' dediler. De ki: 'Hayır! Biz, Hanif olan İbrahim'in dinine uyarız. O, müşriklerden değildi.'"

Yani, fırkalar seninle çekiştiklerinde ve farklı isteklere uyman talep edildiğinde iddialarının çelişkili olduğuna hükmet ve babası da

olsa Mevla'sının emrine uymayan herkesten uzak duran İbrahim'in yolunu izleyerek, bize daha fazla yönel. Nitekim İbrahim de bu nedenle şöyle dedi: (وَاَعْتَزِلُكُمْ وَمَا تَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ) *"Sizden de Allah'ın dışında taptığınız şeylerden de - Hak için ve hak ile – uzaklaşıyorum."* (Meryem, 19/48)

قُولُوٓا اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَمَآ اُنْزِلَ اِلَيْنَا وَمَآ اُنْزِلَ اِلٰٓى اِبْرٰهٖمَ وَاِسْمٰعٖيلَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوبَ وَالْاَسْبَاطِ وَمَآ اُوتِيَ مُوسٰى وَعٖيسٰى وَمَآ اُوتِيَ النَّبِيُّونَ مِنْ رَبِّهِمْ لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِنْهُمْ وَنَحْنُ لَهُ مُسْلِمُونَ ﴿١٣٦﴾

136- "'Biz, Allah'a ve bize indirilene; İbrahim, İsmail, İshak, Ya'kub ve esbâta indirilene, Musa ve İsa'ya verilenlerle Rableri tarafından diğer peygamberlere verilenlere onların hiç biri arasında fark gözetmeksizin inandık ve biz sadece Allah'a teslim olduk' deyin."

Peygamberimiz (s.a.v.), kendisinden önce indirilenlerin tamamına inandığı için, kendisinden önceki peygamberlere yapılan ikramın toplamı kadar ikrama layık görüldü. Bir de Hz. Peygamber bütün peygamberlere muvafakat ettiğini ortaya koyunca hepsini bayrağının altında toplayarak şöyle: *"Gerek Âdem gerekse onun dışındakiler kıyamet günü benim bayrağım altında olurlar"* buyurdu.

Aynı şekilde onun ümmeti de Allah'ın, peygamberlerine indirdiklerinin tamamına iman edip aralarında ayırım gözetmedikleri için, ilahî lütuftan en büyük payı aldılar ve böylece bütün ümmetlerin önüne geçtiler.

فَاِنْ اٰمَنُوا بِمِثْلِ مَآ اٰمَنْتُمْ بِهٖ فَقَدِ اهْتَدَوْا وَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّمَا هُمْ فٖي شِقَاقٍ فَسَيَكْفٖيكَهُمُ اللّٰهُ وَهُوَ السَّمٖيعُ الْعَلٖيمُ ﴿١٣٧﴾

137- "Eğer onlar da sizin inandığınız gibi inanırlarsa, doğru yolu bulmuş olurlar. Dönerlerse, mutlaka anlaşmazlık içine düşmüş olurlar. Onlara karşı Allah sana yeter. O işitendir, bilendir."

Eğer onlar da sizin yolunuzu izler ve sizin yolunuzu tutarlarsa, size yapılan ikram onlara da yapılır, sizin ulaştığınız mertebeye onlar da ulaşırlar. Şayet onlar, ayrıcalıktan başka her şeye karşı çıkarlarsa, biz de onları sadece değersiz kılarız. Çünkü ey Muhammed, biz sana hizmet edenlere vuslat nazarımızla bakar, sana ters düşenden ve muhalefet edenden de yüz çeviririz. (...) Sana muhalefet edenler düşmanların tarafında, sana hizmet edenler ise dostların tarafındadır.

(فَسَيَكْفِيكَهُمُ اللّٰهُ وَهُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ) *"Onlara karşı Allah sana yeter. O işitendir, bilendir."* Allah'ın yeterli olduğu kesindir. Çünkü Allah'ın inayeti sizinledir. Bu nedenle kim size karşı husumet beslerse ilahî yardım eli kökünü kazır. Kim de size karşı çıkarsa ilahî takdir onu kahreder. Aynı zamanda Allah, devamlı bir şekilde bizimle kalben sürdürdüğünüz dua etmeyi işitendir, lütfumuzu ve keremimizi hak ettiğinizi de bilendir.

صِبْغَةَ اللّٰهِ وَمَنْ اَحْسَنُ مِنَ اللّٰهِ صِبْغَةً وَنَحْنُ لَهُ عَابِدُونَ ﴿١٣٨﴾

138- "Allah'ın rengiyle boyandık. Allah'ın verdiği renkten daha güzel rengi kim verebilir? Biz, ancak O'na kulluk ederiz."

Yani, Allah'ın rengine bağlı kalın. Bu itibarla ayette geçen (صِبْغَةَ) *"Sıbğate"* kelimesi, takdir edilen *"ilzemû"* fiiliyle mansuptur.

Ayet şuna işaret etmektedir: Geçerli olan, kulun derlediği değil, Hakk'ın va'zettiğidir. Nitekim yaratıkların tekellüfle edindiklerinin sonu yok olmaktır. Oysa dikkate alınacak olan, Hakk'ın, fıtratı dayandırdığı şeyin ortaya konulmasıdır.

Bu arada kalplerin, ruhların, sırların ve zahirlerin farklı renkleri bulunmaktadır. Cisimlerin ve zahir durumların rengi muvaffakiyetin tezahürleriyledir. Ruhların ve sırların rengi ise hakikate ulaşmanın nurlarıyladır.

قُلْ اَتُحَٓاجُّونَنَا فِي اللّٰهِ وَهُوَ رَبُّنَا وَرَبُّكُمْ وَلَنَٓا اَعْمَالُنَا وَلَكُمْ اَعْمَالُكُمْ
وَنَحْنُ لَهُ مُخْلِصُونَ ﴿١٣٩﴾

139- "De ki: 'Allah bizim de Rabbimiz sizin de Rabbiniz olduğu halde O'nun hakkında bizimle tartışmaya mı girişiyorsunuz? Bizim yaptıklarımız bize, sizin de yaptıklarınız size aittir. Biz, O'na gönülden bağlananlarız.'"

Allah'a uzaklık perdesi ve gölgesi altındaki yabancılar ile keşfin aydınlığında ve tecellinin gün ışığında olan dostların tartışması nasıl doğru olur!

Bir de Allah'a uzaklığı sebebiyle iflas eden kimse ile Allah'a yakınlıkta gark olduğu için ihtisas ve ihlas makamında olan kimse ne zaman aynı olur! Onlar asla aynı olamazlar!

اَمْ تَقُولُونَ اِنَّ اِبْرٰهٖيمَ وَاِسْمٰعٖيلَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوبَ وَالْاَسْبَاطَ
كَانُوا هُودًا اَوْ نَصَارٰى قُلْ ءَاَنْتُمْ اَعْلَمُ اَمِ اللّٰهُ وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنْ
كَتَمَ شَهَادَةً عِنْدَهُ مِنَ اللّٰهِ وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ﴿١٤٠﴾

140- "Yoksa siz, İbrahim, İsmail, İshak, Ya'kub ve esbâtın Yahudi yahut Hıristiyan olduklarını mı söylüyorsunuz? De ki: 'Siz mi daha iyi bilirsiniz yoksa Allah mı? Allah tarafından kendisine bildirilmiş bir şahitliği gizleyen kimseden daha zalim kim olabilir? Allah, yaptıklarınızdan gafil değildir.'"

Kim kendinden hareketle mahlûka bakarsa herkesi kendi ölçüleriyle hayal eder ve hepsini kendisi gibi zanneder. Onlar hakikate yabancı oldukları için peygamberlerin de kendileri gibi olduğuna hükmettiler. Bunun üzerine Allah, onların peygamberler hakkındaki zanlarını reddetti ve haklarındaki görüşlerini geçersiz kıldı. Hiç benliğinden bütünüyle kopartılmış kimse ile benzeriyle değerlendirilen kimse aynı olur mu?! İşte kâfir olanların zannı budur. Yazıklar olsun onlara!

تِلْكَ اُمَّةٌ قَدْ خَلَتْ لَهَا مَا كَسَبَتْ وَلَكُمْ مَا كَسَبْتُمْ وَلَا تُسْـَٔلُونَ عَمَّا
كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٤١﴾

141- "Onlar bir ümmetti; gelip geçti. Onların kazandıkları kendilerine, sizin kazandıklarınız da size aittir. Siz, onların yaptıklarından sorguya çekilmezsiniz."

Ezelden beri sizlerle onların arasına bazı engeller girmiştir. Şöyle ki, onlar yapılarını ayrılık ve gaflet üzerine tesis ederken, siz çadırlarınızı yakınlık ve vuslat üzerine kurdunuz. Oysa lütfumuzla azat olan kimse, kahrımızla kovulan kimseye benzemez.

سَيَقُولُ السُّفَهَٓاءُ مِنَ النَّاسِ مَا وَلّٰيهُمْ عَنْ قِبْلَتِهِمُ الَّت۪ي كَانُوا عَلَيْهَا
قُلْ لِلّٰهِ الْمَشْرِقُ وَالْمَغْرِبُ يَهْد۪ي مَنْ يَشَٓاءُ اِلٰى صِرَاطٍ مُسْتَق۪يمٍ ﴿١٤٢﴾

142- "İnsanlardan bir kısım akılsızlar: 'Yönelmekte oldukları kıblelerinden onları çeviren nedir?' diyecekler. De ki: 'Doğu da batı da Allah'ındır. O, dilediğini doğru yola iletir.'"

Kâfirlerin basiretleri hastalıklı hale gelince müminlerin bütün durumlarıyla ilgili olarak doğru olanı göremez oldular. Böylece durumlarına kötü gözle baktılar ve müminlerin yaptıkları ve yapmakta oldukları her şeye itirazlarıyla dil uzattıklarından gördükleri her yeni şeye yeni bir itirazda bulundular.

Bu itiraz konularından biri de kıble meselesidir. Kıble, Kâbe'ye çevrildiğinde eğer kıbleleri hak idi ise neden ondan yüz çevirmişlerdi, dediler.

(قُلْ لِلّٰهِ الْمَشْرِقُ وَالْمَغْرِبُ يَهْد۪ي مَنْ يَشَٓاءُ اِلٰى صِرَاطٍ مُسْتَق۪يمٍ) *"De ki: 'Doğu da batı da Allah'ındır. O, dilediğini doğru yola iletir.'"*

Kullar, istedikleri yöreye, (...) ve tarafa yönelerek ibadet ederler. Aynı şekilde Allah'ın dostlarına yönelik tasarruflarını görmekten aciz kalanlar, kendi durumlarına dayanak yapacakları prensipler talep ederler. Eğer bu kimseler, hepsine aynı gözle baksalardı,

fikir ve duygu dağınıklığının verdiği acıdan ve bölük pörçük zanların dayattığı isteklerden kurtulmuş olurlardı. Ne var ki, Allah, nuruna sadece dilediğini iletir.

وَكَذٰلِكَ جَعَلْنَاكُمْ اُمَّةً وَسَطًا لِتَكُونُوا شُهَدَٓاءَ عَلَى النَّاسِ وَيَكُونَ الرَّسُولُ عَلَيْكُمْ شَهِيدًا وَمَا جَعَلْنَا الْقِبْلَةَ الَّتِي كُنْتَ عَلَيْهَٓا اِلَّا لِنَعْلَمَ مَنْ يَتَّبِعُ الرَّسُولَ مِمَّنْ يَنْقَلِبُ عَلٰى عَقِبَيْهِ وَاِنْ كَانَتْ لَكَبِيرَةً اِلَّا عَلَى الَّذِينَ هَدَى اللّٰهُ وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُضِيعَ اِيمَانَكُمْ اِنَّ اللّٰهَ بِالنَّاسِ لَرَؤُ۫فٌ رَحِيمٌ ﴿١٤٣﴾

143- "İşte böylece sizin insanlığa şahitler olmanız, Resûlün de size şahid olması için sizi mutedil bir millet kıldık. Önceden bağlı olduğun Kâbe'yi sana kıble yapmamız, sırf peygamberin izinde gidenleri, iki ökçesi üzerine gerisin geriye döneceklerden ayırmamız içindi. Elbette bu, Allah'ın hidayet ettiği kimselerden başkasına ağır gelecekti. Allah, imanınızı boşa çıkarmaz. Şüphesiz Allah, insanlara karşı şefkatli ve merhametlidir."

(وَكَذٰلِكَ جَعَلْنَاكُمْ اُمَّةً وَسَطًا لِتَكُونُوا شُهَدَٓاءَ عَلَى النَّاسِ وَيَكُونَ الرَّسُولُ عَلَيْكُمْ شَهِيدًا ) *"İşte böylece sizin insanlığa şahidler olmanız, Resûlün de size şahid olması için sizi mutedil bir millet kıldık."* İdeal olan mutedil olmaktır. Bu nedenle Allah, bu ümmeti ümmetlerin seçkin olanı kılmıştır. Bu arada nasıl ki, kıyamet günü bu ümmet, diğer ümmetler hakkında şahid olacaksa, bu taife de ümmetin aslıdır. Dayanak olan ve zirvede bulunan da onlardır. Allah, bütün ümmeti onlarla korur. Onların kalpleri kimi kabul ederse o makbul, kimi de dışlarsa o reddedilmiş olur. Bu itibarla isabetli hüküm, onların ferasetinden doğar. Doğru olan, onların hükmü ve nazarıdır. Ümmetin tamamı, hatada fikir birliği yapmaktan korunmuş iken, bu taife de nazar, hüküm, kabul ve ret konusunda hataya düşmekten korunmuştur. Sonra durumlarının esası Hz. Peygamber (s.a.v.)'in sünnetine dayanmaktadır. Nitekim Hz. Peygamber (s.a.v.)'e uymayı içermeyen her şey, sahibinin yüzüne çarpılır ve sahibi dayanaktan yoksun kalır.

(وَمَا جَعَلْنَا الْقِبْلَةَ الَّتِي كُنْتَ عَلَيْهَآ اِلَّا لِنَعْلَمَ مَنْ يَتَّبِعُ الرَّسُولَ مِمَّنْ يَنْقَلِبُ عَلٰى عَقِبَيْهِ وَاِنْ كَانَتْ لَكَبِيرَةً اِلَّا عَلَى الَّذِينَ هَدَى اللّٰهُ وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُضِيعَ اِيمَانَكُمْ اِنَّ اللّٰهَ بِالنَّاسِ لَرَؤُفٌ رَحِيمٌ) *"Önceden bağlı olduğun Kâbe'yi sana kıble yapmamız, sırf peygamberin izinde gidenleri, iki ökçesi üzerine gerisin geriye döneceklerden ayırmamız içindi. Elbette bu, Allah'ın hidayet ettiği kimselerden başkasına ağır gelecekti. Allah, imanınızı boşa çıkarmaz. Şüphesiz Allah, insanlara karşı şefkatli ve merhametlidir."*

Allah, kıble meselesini karara bağlamayı çevirme zamanına, çevirmeyi de değiştirme zamanına bırakılmasının onlar için Hak'tan bir sınav olduğunu açıklamaktadır. Zira böylece samimi olan, karşı çıkandan ayırt edilmiş oldu. Bu arada kim, meseleye tefrika gözüyle bakarsa kıblenin çevrilmesi ona ağır gelir. Hakikat gözüyle bakan ise basiretiyle meselenin doğru taraflarını görebilir. Sonra: (وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُضِيعَ اِيمَانَكُمْ) *"Allah, imanınızı boşa çıkarmaz"* buyurdu. Yani, kim aynı samimi inançla bütün hallerde Allah ile beraber olursa, onun için değişik haller bir tek hal gibidir. Bu durumda ister Allah kıbleyi değiştirsin, ister karara bağlasın, ister olduğu gibi bıraksın, ister yerine başkasını emretsin, isterse de çevirsin, bu kimseler bütün hallerde Allah ile Allah içindirler.

Şiir:

*Döneriz biz, nasıl dönerse şişe*
*Delirdiğimizi sanır cahiller*

Allah ile beraber olanlar, ister doğuya yönelsinler ister batıya, ister taşa dursunlar ister toprağa yaklaşsınlar kalplerinin maksudu birdir. Bir için olan kıble hakkında ise hepsinin hükmü birdir.

قَدْ نَرٰى تَقَلُّبَ وَجْهِكَ فِي السَّمَآءِ فَلَنُوَلِّيَنَّكَ قِبْلَةً تَرْضٰيهَا فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَحَيْثُ مَا كُنْتُمْ فَوَلُّوا وُجُوهَكُمْ شَطْرَهُ وَاِنَّ الَّذِينَ اُو۫تُوا الْكِتَابَ لَيَعْلَمُونَ اَنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَبِّهِمْ وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ عَمَّا يَعْمَلُونَ ﴿١٤٤﴾

144- "Ey Muhammed! Biz, senin yüzünün göğe doğru çevrilmekte olduğunu görüyoruz. İşte şimdi seni, memnun olacağın bir kıbleye döndürüyoruz. Artık yüzünü Mescid-i Haram tarafına çevir. Siz de nerede olursanız olun, yüzlerinizi o tarafa çevirin. Şüphe yok ki, kitap ehli, onun Rablerinden gelen gerçek olduğunu çok iyi bilirler. Allah, onların yapmakta olduklarından habersiz değildir."

Hz. Peygamber (s.a.v.), kalbiyle temenni ettiği kıble meselesinde diliyle talepte bulunmayıp sükût etmekle adabı korumuştur. Bu amaçla o, Cibril'in yolu olan gökyüzüne bakmıştır. Bunun üzerine Allah: (قَدْ نَرٰى تَقَلُّبَ وَجْهِكَ فِي السَّمَآءِ) *"Biz, senin yüzünün göğe doğru çevrilmekte olduğunu görüyoruz"* buyurmuştur. Yani biz, dilinle dua edip açıklamadığın şeyi istediğini bildik. İşte senin için kıbleyi değiştirdik. Bu ise sevenin sevilen için yapacağı son şeydir.

Bütün kullar, benim rızamı arama çabası içerisinde iken, ben senin hoşnutluğunu arıyorum.

(فَلَنُوَلِّيَنَّكَ قِبْلَةً تَرْضٰيهَا فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ و) *"İşte şimdi seni, memnun olacağın bir kıbleye döndürüyoruz. Artık yüzünü Mescid-i Haram tarafına çevir."* Ancak kalbini taşlara ve eserlere bağlama. Kalbinde sadece bana yer ayır. Kıble nefsinin maksudu, Hak ise kalbinin gördüğü olsun. Ey müminler (وَحَيْثُ مَا كُنْتُمْ فَوَلُّوا وُجُوهَكُمْ شَطْرَهُ) *"Siz de nerede olursanız olun, yüzlerinizi o tarafa çevirin."* Ancak kalbinizde sadece bana yer verin ve sadece beni görmeye çalışın.

(وَاِنَّ الَّذِينَ اُوتُوا الْكِتَابَ لَيَعْلَمُونَ اَنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَبِّهِمْ وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ عَمَّا يَعْمَلُونَ) *"Şüphe yok ki, kitap ehli, onun Rablerinden gelen gerçek olduğunu çok iyi bilirler. Allah, onların yapmakta olduklarından habersiz değildir."*

Lakin o, haklarında delil olmayacak, onlara huzur getirmeyecek ve artış sağlamayacak bir bilgidir. (وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ عَمَّا يَعْمَلُونَ) *"Allah, onların yapmakta olduklarından habersiz değildir"* sözü ise, düşmanları korkutmak ve dostları düşündürmek içindir.

وَلَئِنْ اَتَيْتَ الَّذِينَ اُوتُوا الْكِتَابَ بِكُلِّ اٰيَةٍ مَا تَبِعُوا قِبْلَتَكَ وَمَٓا
اَنْتَ بِتَابِعٍ قِبْلَتَهُمْ وَمَا بَعْضُهُمْ بِتَابِعٍ قِبْلَةَ بَعْضٍ وَلَئِنِ اتَّبَعْتَ
اَهْوَٓاءَهُمْ مِنْ بَعْدِ مَا جَٓاءَكَ مِنَ الْعِلْمِ اِنَّكَ اِذًا لَمِنَ الظَّالِمِينَ ﴿١٤٥﴾

145- "Yemin olsun ki, sen kitap ehline her türlü ayeti getirsen, yine de onlar, senin kıblene dönmezler. Sana gelen ilimden sonra eğer onların arzularına uyacak olursan, işte o zaman sen hakkı çiğneyenlerden olursun."

Ezelde sizin için yalnızca hak olan yolda yürümek, düşmanınıza da uzaklık tarafına düşmek takdir edilmiştir. Bu itibarla aranızda birbirinize karışmanızı önleyen bir sınır vardır. O halde kendilerine güneşten ve aydan daha açık deliller göstersen bile onlar, sizin kıblenize uymazlar. Sen de her türlü entrikaya başvursalar da onların kıblesine uymazsın. Bu, Allah'ın ezelde takdir ettiği bir hükümdür.

اَلَّذِينَ اٰتَيْنَاهُمُ الْكِتَابَ يَعْرِفُونَهُ كَمَا يَعْرِفُونَ اَبْنَٓاءَهُمْ وَاِنَّ فَرِيقًا
مِنْهُمْ لَيَكْتُمُونَ الْحَقَّ وَهُمْ يَعْلَمُونَ ﴿١٤٦﴾

146- "Kendilerine kitap verdiklerimiz onu, öz oğullarını tanıdıkları gibi tanırlar. Buna rağmen onlardan bir grup gerçeği bile bile gizler."

İçlerinde kökleşmiş haset duyguları, onları apaçık bildikleri şeye karşı inat etmeye sevk etmiştir. Aynı şekilde, nefsin karanlıklarında yenilen kişi, hayâ elbisesini üstünden attığından hiçbir sitem onu etkileyemez ve hiçbir söz onu sapkınlığından geri çeviremez.

اَلْحَقُّ مِنْ رَبِّكَ فَلَا تَكُونَنَّ مِنَ الْمُمْتَرِينَ ﴿١٤٧﴾

147- "Gerçek olan, Rabbinden gelendir. O halde şüpheye düşenlerden olma!"

Yani kesin iman güneşi sana göründükten sonra tahminin öngördüğü ihtimalleri dikkate alma! Bu arada hitap Hz. Peygember (s.a.v.)'e olsa da asıl kast edilen ümmettir.

وَلِكُلٍّ وِجْهَةٌ هُوَ مُوَلِّيهَا فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرَاتِ اَيْنَ مَا تَكُونُوا يَاْتِ
بِكُمُ اللّٰهُ جَمِيعًا اِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ﴿١٤٨﴾

148- "Herkesin yöneldiği bir kıblesi vardır. Siz, hayır işlerinde yarışın. Nerede olursanız olun, sonunda Allah hepinizi bir araya getirir. Şüphesiz Allah, her şeye kadirdir."

Ayet, şuna işaret etmektedir: Her kavim, bizimle aralarına giren bir şeyle uğraşıp bizi göz ardı etti. Siz ise ey müminler, bizim için ve bizimle olun!

Şiir:

*Alıkoyduğunda meşguliyetler beni senden*
*Seni meşguliyet kıldım ve unutturdun bana meşguliyetimi*

وَمِنْ حَيْثُ خَرَجْتَ فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَاِنَّهُ
لَلْحَقُّ مِنْ رَبِّكَ وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ﴿١٤٩﴾

149- "Nereden çıkarsan çık, yüzünü Mescid-i Haram tarafına çevir. Bu emir, Rabbinden sana gelen gerçektir. Allah, yaptıklarınızdan habersiz değildir."

Nasıl ki, ister yakınında ister uzağında, nerede olursanız olun, kıbleye yöneliyorsanız, aynı şekilde ne durumda olursanız olun, kalplerinizle bize yöneliniz.

وَمِنْ حَيْثُ خَرَجْتَ فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَحَيْثُ
مَا كُنْتُمْ فَوَلُّوا وُجُوهَكُمْ شَطْرَهُ لِئَلَّا يَكُونَ لِلنَّاسِ عَلَيْكُمْ حُجَّةٌ
اِلَّا الَّذِينَ ظَلَمُوا مِنْهُمْ فَلَا تَخْشَوْهُمْ وَاخْشَوْنِي وَلِاُتِمَّ نِعْمَتِي
عَلَيْكُمْ وَلَعَلَّكُمْ تَهْتَدُونَ ﴿١٥٠﴾

150- "Nerede olursanız olun, yüzünüzü o yana çevirin ki, aralarında haksızlık edenler hariç, insanların, aleyhinizde bir delili bulunmasın. Sakın onlardan korkmayın, yalnız benden korkun! Böylece size olan nimetimi tamamlayayım da doğru yolu bulasınız."

(وَمِنْ حَيْثُ خَرَجْتَ فَوَلِّ وَجْهَكَ شَطْرَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَحَيْثُ مَا كُنْتُمْ فَوَلُّوا وُجُوهَكُمْ شَطْرَهُ لِئَلَّا يَكُونَ لِلنَّاسِ عَلَيْكُمْ حُجَّةٌ اِلَّا الَّذِينَ ظَلَمُوا مِنْهُمْ) *"Nerede olursanız olun, yüzünüzü o yana çevirin ki, aralarında haksızlık edenler hariç, insanların, aleyhinizde bir delili bulunmasın."* Kimsenin senin aleyhinde bir yolunun olmamasını, hiçbir yaratığın gölgesinin üstüne düşmemesini ve hiçbir elin sana kötülük ulaştırmamasını istediğin zaman, nerede ve ne durumda olursan ol, bizim için ve bizden ol! Çünkü sadece bize bağlanan kimse değişikliklere maruz kalmaz.

(فَلَا تَخْشَوْهُمْ وَاخْشَوْنِي) *"Sakın onlardan korkmayın, yalnız benden korkun!"*

Müminler, zahirî varlıklarından sıyrılıp mahviyet yani içine girdikleri zaman haklarında hükümlerimiz gerçekleşir. Bu takdirde de onlardan korkmaları söz konusu olmaz.

(وَلِاُتِمَّ نِعْمَتِي عَلَيْكُمْ وَلَعَلَّكُمْ تَهْتَدُونَ) *"Böylece size olan nimetimi tamamlayayım da doğru yolu bulasınız."*

Nimetin tamamlanması, lutfa keşfi eklemekle olur. Çünkü Allah'ın, cömertliği gereği yettiği kimse, varlığının hakkıyla muhtaç olmaktan çıkardığı kimsenin gerisindedir.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Biz, sevincin en mükemmeli içerisindeyiz lakin*
*Ancak sizinle sevinç kemale erer*
*Ey sevgimin ehli, içinde bulunduğumuz durumun kusuru*
*Sizin gözden uzak olmanız, bizim ise hazır olmamızdır*

كَمَٓا اَرْسَلْنَا فِيكُمْ رَسُولًا مِنْكُمْ يَتْلُوا عَلَيْكُمْ اٰيَاتِنَا وَيُزَكِّيكُمْ
وَيُعَلِّمُكُمُ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ وَيُعَلِّمُكُمْ مَا لَمْ تَكُونُوا تَعْلَمُونَ ﴿١٥١﴾

**151- "Nitekim kendi içinizden size ayetlerimizi okuyan, sizi kötülüklerden arındıran, size Kitabı ve hikmeti talim edip bilmediklerinizi size öğreten bir resûl gönderdik."**

Peygamber göndermek, vuslat kapılarını açmak demektir. Şöyle ki, Allah'ın ezeli ilminde, dostlarının kalplerinin O'na kavuşmaya susadığı mevcut idi. Hiç kimsenin, arada peygamberler olmadan Allah'a kavuşması ise mümkün değildir. Böylece Allah, peygamberler göndermek suretiyle kimilerini yükümlülük altına sokmuş, kimilerine de yakınlık çeşitleriyle lütufta bulunmuştur. Bu iki grup arasında ise büyük fark bulunmaktadır.

فَاذْكُرُونٖيٓ اَذْكُرْكُمْ وَاشْكُرُوا لٖي وَلَا تَكْفُرُونِ ﴿١٥٢﴾

**152- "Öyleyse siz beni anın ki, ben de sizi anayım. Bana şükredin, sakın bana nankörlük etmeyin!"**

Anma, anan kimsenin anılanın şuhudunda gark olmasıdır. Sonra da onun varlığında yok olmasıdır. Nihayet kendisinden hiçbir eser kalmamış olur. O kadar ki: *"Bir defasında biri vardı -bir varmış bir yokmuş-."* denilir.

(فَاذْكُرُونٖيٓ اَذْكُرْكُمْ) *"Öyleyse siz beni anın ki, ben de sizi anayım."* Yani, bizim varlığımızda yok olun ki, kendinizi kaybettikten sonra biz de sizi analım. Allah şöyle buyurmuştur:

(اِنَّهُمْ كَانُوا قَبْلَ ذٰلِكَ مُحْسِنٖينَ)

*"Kuşkusuz onlar bundan önce güzel davrananlardı"* (Zâriyât, 51/16)

Onlar, bir süre için var idiler, ancak süresiz olarak benliklerinden koptular.

Şiir:

*Güzel bir sözden ibarettir insanlar*
*Sen de güzel bir söz ol anlayan için*

Bu arada ayetin lafza dayalı yorumu: *Uygun amellerle beni anın, ben de nimetlerle sizi anayım,* şeklindedir. İşârî tefsiri ise şöyledir:

- Her türlü arzuyu terk ederek beni anın ki, ben de kendinizden geçtikten sonra hakkımla sizi dosdoğru bir hale getirmek suretiyle anayım.

- Benimle yetinerek nimetlerimi beklememek suretiyle beni anın ki, ben de davranışlarınızdan değil, sizden hoşnut olarak sizi anayım.

- Beni, anlattıklarınızı size anlatmamla anın. Eğer daha önce ben sizi anmamış olsaydım, siz de daha sonra beni anmazdınız.

- Alakaları kesmek suretiyle beni anın ki, ben de sizi hakikatlerin sıfatlarıyla anayım.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Rastladığın herkese beni anlat, ben de hitap ettiğim herkese seni anlatayım. Kim, beni bir mecliste anlatırsa, ben de onu onlardan daha hayırlı bir mecliste anarım.

- Üzerinizdeki büyük nimetimden dolayı da bana şükrediniz. Bu nimet, *"beni anın ki, ben de sizi anayım"* sözüdür. Kimisine göre şükür de zikir -anma- kabilindendir. Bu arada *nankörlük etmeyin*, sözüyle nankörlükten alıkoymak da şükrü emretmek demektir. Şükür de zikir demek olduğundan zikre dair emir tekrarlanmış olmaktadır. Üç sayısı çokluğun başlangıcıdır. Çokça anmaya dair emir ise, sevgiyi emretmek demektir. Çünkü hadiste: *"Kim bir şeyi severse onu çokça anar"* denilmiştir. O halde anmaya dair bu emir, gerçekte sevgiyi emretmektir. Yani, beni sev ben de seni seveyim. Böylece: (فَاذْكُرُونِي اَذْكُرْكُمْ ) *"Öyleyse siz beni anın ki, ben de sizi anayım*" sözü: Siz beni sevin ki, ben de sizi seveyim demektir.

- Siz boyun bükerek beni anın ki, ben de lütufla sizi anayım.

- Siz eğilerek beni anın ki, ben de sizi iyiliklerle anayım.

- Siz dil ile beni anın ki, ben de sizi cennetlerle anayım.

- Siz kalplerinizle beni anın ki, ben de isteklerinizi gerçekleştirerek sizi anayım.

- Siz hizmet kapısında beni anın ki, ben de nimeti tamamlayarak sizi kurbet makamında kabul ederek anayım.

- Siz sırrı arındırarak beni anın ki, ben de sizi yeterli sevapla anayım.

- Siz çaba ve çileyle beni anın ki, ben de sizi cömertlik ve lütufla anayım.

- Siz beni selamet vasfıyla anın ki ben de sizi pişmanlığın fayda vermediği kıyamet gününde anayım.

- Siz beni korkuyla anın ki, ben de arzunuzu yerine getirerek sizi anayım.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا اسْتَع۪ينُوا بِالصَّبْرِ وَالصَّلٰوةِ اِنَّ اللّٰهَ مَعَ الصَّابِر۪ينَ ﴿١٥٣﴾

153- "Ey iman edenler! Sabır ve namaz ile Allah'tan yardım isteyin. Çünkü Allah muhakkak sabredenlerle beraberdir."

Namaz konusunda sabırla yardım talep ediniz. Yani, Hakk'ın hükümleri üzerinizde gerçekleşirken siz sabrınızla Rabbinizin bağışlamasını hak etmiş olursunuz. Bu nedenledir ki daha sonra Allah şöyle buyurmuştur:

(وَبَشِّرِ الصَّابِر۪ينَ) "*Sabredenleri müjdele*" (Bakara, 2/155).

(اُو۬لٰٓئِكَ عَلَيْهِمْ صَلَوَاتٌ مِنْ رَبِّهِمْ) "*İşte Rablerinden bağışlamalar hep onlaradır*" (Bakara, 2/157).

Bir yoruma göre de sabredenler, sevabın en büyüğünü ve kadrin en yükseğini hak etmişlerdir. Zira onlar, Allah ile beraber olma payesine ermişlerdir. Nitekim Allah: (اِنَّ اللّٰهَ مَعَ الصَّابِر۪ينَ) "*Muhakkak Allah sabredenlerle beraberdir*" buyurmuştur.

وَلَا تَقُولُوا لِمَنْ يُقْتَلُ ف۪ي سَب۪يلِ اللّٰهِ اَمْوَاتٌ بَلْ اَحْيَٓاءٌ وَلٰكِنْ لَا تَشْعُرُونَ ﴿١٥٤﴾

154- "Allah yolunda öldürülenlere 'ölüler' demeyin. Bilakis onlar diridirler, lakin siz anlayamazsınız."

Dünyadaki hayat ellerinden gitti, ancak ahirette onlar ebedi hayata kavuştular. O halde onlar gerçekte diridirler ve Allah katında türlü türlü nimetler bulmaktadırlar.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Onlar diridirler; çünkü halefleri Allah'tır. Halefi Allah olan ise ölü değildir.

Şu dizeler de bir mahluk için bile şöyle denilmiştir:

*Her ne kadar bizden ayrılıp yoluna devam ettiyse de*
*Arkasından Halid gibi birini bırakan ölmüş sayılmaz*

- Onlar, Allah'ın kendilerini anması sebebiyle diridirler. Allah tarafından güzellikle ve sonsuza dek anılan kimse ise ölü değildir.

- Her ne kadar cesetleri dağılmışsa da ruhlarının Allah ile birlikte olduğu kesindir. Şayet cesetleri, Allah'ın emriyle yok olmuşsa, kuşkusuz ruhları Allah ile bakidir. Çünkü Allah ile yok olan kimse yine Allah ile var olur.

- Onlar, yücelik emareleriyle diridirler. Üzerlerinde heybet kisvesi bulunmakta, ünsiyet gölgesinde barınmakta, kendilerini kâh Allah'ın cemali kaplamakta kâh da celalinde gark olmaktadırlar.

وَلَنَبْلُوَنَّكُمْ بِشَيْءٍ مِنَ الْخَوْفِ وَالْجُوعِ وَنَقْصٍ مِنَ الْاَمْوَالِ
وَالْاَنْفُسِ وَالثَّمَرَاتِ وَبَشِّرِ الصَّابِرِينَ ﴿١٥٥﴾

155- "Andolsun ki, sizi biraz korku ve açlık; mallardan, canlardan ve ürünlerden biraz azaltma ile deneriz. Sabredenleri müjdele!"

اَلَّذِينَ اِذَٓا اَصَابَتْهُمْ مُصِيبَةٌ قَالُوٓا اِنَّا لِلّٰهِ وَاِنَّٓا اِلَيْهِ رَاجِعُونَ ﴿١٥٦﴾

156- "O sabredenler, kendilerine bir bela geldiği zaman: 'Biz, Allah'ın kullarıyız ve biz O'na döneceğiz' derler."

Allah, şükürlerini ortaya çıkarmak için onları nimetle imtihan etmiş, sabırlarını ortaya koymak için de onları meşakkatle sınamıştır. Böylece onların bilinen halini ortaya koyunca, taksim ettiği miktarı onlara tahsis edince ve onları bildiği vasıf üzere sabit kılınca, kendilerini, kalplerinin arınmasına vesile olan korkuyla, bedenlerini temizleyen açlıkla, nefislerini arındıran mal noksanlığıyla, Allah katındaki ecirlerini artıran canlara yönelik musibetlerle ve Allah tarafından kat kat telafi edilen ürün afetleriyle imtihan etti.

(وَبَشِّرِ الصَّابِرِينَ) *"Sabredenleri müjdele!"* Yani, Allah'ın yaptıkları ile ilgili takdirine hiçbir itirazı olmayanları müjdele!

Bir yoruma göre de Allah, onları azabından uzak tutmak için korkuyla, kendisine yakın kılıp nimette bulunmak için açlık çilesiyle, marifetini elde etmek suretiyle daha hayırlısını istemek üzere, malları sadaka olarak verip içinden çıkmaları için mal noksanlığıyla kendilerini yükümlü kılmıştır.

Canlardaki noksanlık ise kulluğuna teslimiyetlerini sağlamak içindir. Ürünlerin noksanlığı da ihtiyaç fazlası nimetlere umut bağlamaktan vazgeçmeleri demektir.

Allah'ın hükmünü güzel bulmak ve kudretinin gerçekleşmesine boyun eğmek suretiyle sabredenleri müjdele!

Bu arada gaybın yükümlülükleri malla, canla veya yakınlarla olur. Böylece kim, malını Allah için vakfederse onun için kurtuluş vardır. Kim, hükmüne nefsini feda ederse, ona dereceler vardır. Kim, yakınlarının başına gelen musibetlere sabrederse, ona telafi ve Allah'a yaklaştırıcı sevaplar vardır. Kim de canını O'ndan sakınmazsa ona kesintisiz vuslat vardır.

(اَلَّذِينَ اِذَٓا اَصَابَتْهُمْ مُصِيبَةٌ) *"O sabredenler, kendilerine bir bela geldiği zaman..."*

Onlar, durumu sabırla, hayır doğrusu şükürle, hayır daha doğrusu sevinç ve övünçle karşılamışlardır.

Zaten kim ki, eşyayı Hakk'ın mülkü olarak görürse, kendini O'nunla hükmü arasında bir yabancı olarak görür. Zira mahlûku yaratan, onun üzerinde diğer mahlûklardan daha fazla hak sahibidir.

Bir yoruma göre de musibetleri gören kimse, kendini Allah için ve Allah'a yönelik görmüş olur. Belayı vereni gören ise olan bitenin Allah'tan olduğunu bildiği için Allah ile kul olmuş olur. Allah için olan ile Allah ile olan arasında ise büyük fark vardır. Şöyle ki, Allah için olan sabreder durur. Allah ile olan ise tercih etme ve karar verme iradesini kaybetmiştir. Allah onu yerinde bırakırsa kalır, yok ederse yok olur, hareket ettirirse hareket eder ve durdurursa durur. Böylece o, kendi tercihlerinden koparak Allah'ın kudretiyle yönetilmeye başlamış olur.

أُولٰٓئِكَ عَلَيْهِمْ صَلَوَاتٌ مِنْ رَبِّهِمْ وَرَحْمَةٌ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُهْتَدُونَ ﴿١٥٧﴾

157- "İşte Rablerinden bağışlamalar ve rahmet hep onlaradır. Ve hidayete erenler de onlardır."

Onlar, Allah'ın kendilerine olan bağışlamalarıyla sabrın ve takdirin yükümlülüklerinin sınırında durma mertebesine erdiler. Yoksa sabırları ve durmalarıyla bağışlamasına ermediler. Zira eğer Allah'ın ezeli rahmeti olmasaydı, taatleri kulluğa uygun bir biçimde gerçekleşmeyecekti. Bu itibarla Allah'ın ezeli inayeti, onlar için halis bir hidayet sağlamıştır. (وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُهْتَدُونَ) "*Ve hidayete erenler de onlardır.*" Allah, başlangıçta onlara rahmet kılınca sonuçta hidayete ermiş oldular.

اِنَّ الصَّفَا وَالْمَرْوَةَ مِنْ شَعَآئِرِ اللّٰهِ فَمَنْ حَجَّ الْبَيْتَ اَوِ اعْتَمَرَ فَلَا
جُنَاحَ عَلَيْهِ اَنْ يَطَّوَّفَ بِهِمَا وَمَنْ تَطَوَّعَ خَيْرًا فَاِنَّ اللّٰهَ شَاكِرٌ عَلِيمٌ ﴿١٥٨﴾

158- "Şüphesiz Safa ve Merve Allah'ın koyduğu sembollerdendir. Her kim, Beytullah'ı ziyaret eder veya umre yaparsa, onları tavaf etmesinde kendisine bir günah yoktur. Her kim, gönüllü olarak bir iyilik yaparsa, şüphesiz Allah kabul eder ve hakkıyla bilir."

(اِنَّ الصَّفَا وَالْمَرْوَةَ مِنْ شَعَآئِرِ اللّٰهِ) *"Şüphesiz Safa ve Merve Allah'ın koyduğu sembollerdendir."* O işaret ve semboller, o kalıntı ve tepeler yüceltilmekte, ziyaret edilmekte ve kendilerine yolculuklar yapılmaktadır. Çünkü onlar, dostların kalıntılarıdır ve eserler oralarda görünmektedir.

Şiir:

*Yurtları oturanları için arzuluyorum*
*Oysa yoktur yurtta ne bir fısıltı ne bir hareket*

Aynı zamanda yollarındaki toprağın, hatta eserlerindeki tozların ihtiyaç sahibi dostlar için büyük değerleri vardır. Bir de yollarına düşen her bir toz, en değerli miskten daha kıymetlidir.

(فَمَنْ حَجَّ الْبَيْتَ اَوِ اعْتَمَرَ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِ اَنْ يَطَّوَّفَ بِهِمَا وَمَنْ تَطَوَّعَ خَيْرًا فَاِنَّ اللّٰهَ شَاكِرٌ عَلِيمٌ) *"Her kim, Beytullah'ı ziyaret eder veya umre yaparsa, onları tavaf etmesinde kendisine bir günah yoktur. Her kim, gönüllü olarak bir iyilik yaparsa, şüphesiz Allah kabul eder ve hakkıyla bilir."*

Safa ve Merve, Kâbe'ye komşu oldukları için aralarında sa'y yapmak ibadet olmuştur. Tıpkı Beyt'i tavaf etmek ibadet olduğu gibi. Böylece nasıl ki, hac ibadetinde tavaf rükün ise sa'y de aynı şekilde rükündür. Nitekim komşuya komşusu için saygı gösterilir.

اِنَّ الَّذِينَ يَكْتُمُونَ مَٓا اَنْزَلْنَا مِنَ الْبَيِّنَاتِ وَالْهُدٰى مِنْ بَعْدِ مَا بَيَّنَّاهُ لِلنَّاسِ فِي الْكِتَابِ اُو۬لٰٓئِكَ يَلْعَنُهُمُ اللّٰهُ وَيَلْعَنُهُمُ اللَّاعِنُونَ ﴿١٥٩﴾

159- "İndirdiğimiz açık delilleri ve kitapta insanlara apaçık gösterdiğimiz hidayet yolunu gizleyenlere hem Allah hem de bütün lanet ediciler lanet eder."

Bu ayetteki işaret şöyledir: Her kim, Allah sülûk adabının ilmiyle kendisine keşif lütfeder de o, bunu nasihat ve irşad amacıyla müritlere göstermede cimrilik yaparsa, anında Allah'ın gazabına müstahak olur, hak sahibine öğretmede kusur edip geciktiği için de ilminden bereketin kalkmasından korkulur.

اِلَّا الَّذٖينَ تَابُوا وَاَصْلَحُوا وَبَيَّنُوا فَاُولٰٓئِكَ اَتُوبُ عَلَيْهِمْ وَاَنَا التَّوَّابُ الرَّحٖيمُ ﴿١٦٠﴾

160- "Ancak tevbe edip durumlarını düzeltenler ve gerçeği açıkça ortaya koyanlar başkadır. Zira ben onların tevbelerini kabul ederim. Ben, tevbeyi çokça kabul eden ve çokça esirgeyenim."

Bunlar, güzel dönüş yapmak ve nasihat yoluyla müritlere sahip çıkmak suretiyle geçmiş kusurlarını telafi eden ve müritlere, kendilerine iyi muamelede bulunduklarını güzel izahla ve söylediklerini delillendirerek açıklayan kimselerdir. Çünkü fiillerini açıklayan en kesin delil ve kendisiyle halkı Allah'a davet ettiğin sözün doğruluğunun en isabetli kanıtı, söyleminle işaret ettiğin şeye eyleminle ters düşmemendir. Allah şöyle buyurur: (وَمَٓا اُرٖيدُ اَنْ اُخَالِفَكُمْ اِلٰى مَٓا اَنْهٰيكُمْ عَنْهُ) *"Size yasakladığım şeylerin aksini yaparak size aykırı davranmak istemiyorum."* (Hûd, 11/88)

اِنَّ الَّذٖينَ كَفَرُوا وَمَاتُوا وَهُمْ كُفَّارٌ اُولٰٓئِكَ عَلَيْهِمْ لَعْنَةُ اللّٰهِ وَالْمَلٰٓئِكَةِ وَالنَّاسِ اَجْمَعٖينَ ﴿١٦١﴾

161- "Ayetlerimizi inkâr etmiş ve kâfir olarak ölmüşlere gelince, işte Allah'ın, meleklerin ve tüm insanların laneti onların üzerinedir."

خَالِدٖينَ فٖيهَا لَا يُخَفَّفُ عَنْهُمُ الْعَذَابُ وَلَا هُمْ يُنْظَرُونَ ﴿١٦٢﴾

162- "Onlar ebedî olarak lânet içinde kalırlar. Artık ne kendilerinden azap hafifletilir, ne de yüzlerine bakılır."

Bundaki işaret şudur: Müridlik yoluna girdikten sonra normal hallerine dönüş yapıp o vahşet içerisinde ölen ve o durum üzere dünyadan çıkanlar, yoldan ayrılmış kimselerdir. Böylece ne ruhlarına iltifat edilir ne musibetlerinin telafisi olur ne de kendilerine

rahmet okunur. Onlar, dünyada da ahirette de hüsrana uğramışlardır. Her şey onlara lanet okur. Onlar, ebedî olarak değersizlik ve küçülmüşlük içerisinde kalırlar. Onlar için ne hafifletme ne yardım etme ne acıma ne de lütuflar söz konusudur.

وَاِلٰهُكُمْ اِلٰهٌ وَاحِدٌ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الرَّحْمٰنُ الرَّح۪يمُ ﴿١٦٣﴾

163- "İlahınız bir tek Allah'tır. O'ndan başka ilah yoktur. O, rahmândır, rahîmdir."

Allah: "*İlahınız*" demekle onları son derece onurlandırmıştır. Bu taifenin şeyhleri şöyle demişlerdir: Allah'ın, bir kimseyi havassın havassı saymasının alameti, ona: "Kulum" demesidir. İlahınız sözü ise kulum sözünden çok daha mükemmeldir. Aynı şekilde sıfatını kula izafe etmesi, kulu kendine izafe etmesinden daha mükemmeldir. Zira senin ilahın olması, gerekçesizdir. Oysa O'na olan kulluğun, sendeki her noksanlığı ve yetersizliği telafi etmektedir. Bir de Allah ne zaman size: "*İlahınız*" demiştir?

Taatin, hareketlerin, duruşların ve niteliklerin var olduğu zaman mı? Hayır, aksine ondan önce ezelin ezelinde henüz zaman, şekil ve varlık yok iken, bunu söylemiştir. Ayette geçen (وَاحِدٌ) "*vahid*" lafzı, ona yaklaşacak hiçbir benzeri, karşılaşacağı hiçbir şekli, paydaşı olacak hiçbir hemcinsi ve ünsiyet bulacağı hiçbir arkadaşı olmayan demektir. O'nun ne arka çıkacak bir ortağı ne yardım edecek bir yardımcısı ne de kendisiyle inatlaşacak bir hasmı bulunur.

O, Hak olarak bir, varlık olarak samed, daima baki, ebediyen izzet sahibi ve zatıyla ezelidir. Yüceliğinin üstünlüğünde bir, güzelliğinin celalinde tek, karşı konulmaz büyüklüğünde eşsiz, izzetinin hükümranlığında kadim ve büyük mülkünün cemalinde yücedir. Her kim, vasfını uzun uzun anlatırsa, kör gibi şaşırır. Eğer O, Rahmân ve Rahîm olmasaydı, kul onu tanımaya kalkıştığı zaman, yüceliğinin ilk tecellisiyle çaresizliğe düşmüş olurdu.

اِنَّ فِي خَلْقِ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَاخْتِلَافِ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ وَالْفُلْكِ
الَّتِي تَجْرِي فِي الْبَحْرِ بِمَا يَنْفَعُ النَّاسَ وَمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ مِنَ السَّمَٓاءِ
مِنْ مَٓاءٍ فَاَحْيَا بِهِ الْاَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا وَبَثَّ فِيهَا مِنْ كُلِّ دَٓابَّةٍ
وَتَصْرِيفِ الرِّيَاحِ وَالسَّحَابِ الْمُسَخَّرِ بَيْنَ السَّمَٓاءِ وَالْاَرْضِ
لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يَعْقِلُونَ ﴿١٦٤﴾

164- "Şüphesiz göklerin ve yerin yaratılmasında, gece ile gündüzün bir biri peşinden gelmesinde, insanlara fayda veren şeylerle yüklü olarak denizde yüzüp giden gemilerde, Allah'ın gökten indirip de ölü haldeki toprağı canlandırdığı suda, yeryüzünde her çeşit canlıyı yaymasında, rüzgârları ve yer ile gök arasında emre hazır bekleyen bulutları yönlendirmesinde, düşünen bir toplum için birçok deliller vardır."

Allah, delille gerçeğe ulaşmak isteyen akıl sahiplerinin kalplerine kendini, kudretinin delilleriyle, varlığının alametleriyle ve fiillerinin parçaları olan Rab oluşunun göstergeleriyle tanıtmak istemiştir. Ayrıca sözün ifade edemediği delillerle ve işaretin yetersiz kaldığı izah tarzlarıyla ispatladığı hikmetin varlığına ve vahdaniyetin göstergelerine dikkat çekmiştir. Bu itibarla yoktan var edilen; kişi, kalıntı, işaret, eser, gökyüzü, feza, hava, su, güneş, ay, damla, yağmur, kum, taş, yıldız veya ağaç, her ne varsa muhakkak vahdaniyete delildir ve Allah'ın varlığını arayan kimse için bir yoldur.

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَتَّخِذُ مِنْ دُونِ اللّٰهِ اَنْدَادًا يُحِبُّونَهُمْ كَحُبِّ
اللّٰهِ وَالَّذِينَ اٰمَنُوٓا اَشَدُّ حُبًّا لِلّٰهِ وَلَوْ يَرَى الَّذِينَ ظَلَمُوٓا اِذْ يَرَوْنَ
الْعَذَابَ اَنَّ الْقُوَّةَ لِلّٰهِ جَمِيعًا وَاَنَّ اللّٰهَ شَدِيدُ الْعَذَابِ ﴿١٦٥﴾

165- "İnsanlardan bazıları, Allah'tan başkasını Allah'a denk tanrılar edinir de onları, Allah'ı sever gibi severler. İman edenlerin, Allah'a

olan sevgileri ise çok daha fazladır. Keşke zalimler azabı gördükleri zaman, bütün kuvvetin Allah'a ait olduğunu ve Allah'ın azabının çok şiddetli olduğunu önceden anlayabilselerdi."

(وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَتَّخِذُ مِنْ دُونِ اللّٰهِ اَنْدَادًا يُحِبُّونَهُمْ كَحُبِّ اللّٰهِ) "*İnsanlardan bazıları, Allah'tan başkasını Allah'a denk tanrılar edinir de onları, Allah'ı sever gibi severler.*" Bunlar, Hak Teâlâ'nın muhabbet ehli kılmadığı bir kavimdir. Böylece Allah, onları başkalarının muhabbetiyle meşgul etmiştir. Nihayet onlar da Allah'tan başka nefislerinin arzuladığı her şeyi sevmeyi benimseyerek kendi yapıları olan bir şeye tapmaya ve yonttukları bir taşı sevmeye rıza göstermişlerdir.

(وَالَّذِينَ اٰمَنُوٓا اَشَدُّ حُبًّا لِلّٰهِ وَلَوْ يَرَى الَّذِينَ ظَلَمُوٓا اِذْ يَرَوْنَ الْعَذَابَ اَنَّ الْقُوَّةَ لِلّٰهِ جَمِيعًا وَاَنَّ اللّٰهَ شَدِيدُ الْعَذَابِ) "*İman edenlerin, Allah'a olan sevgileri ise çok daha fazladır. Keşke zalimler azabı gördükleri zaman, bütün kuvvetin Allah'a ait olduğunu ve Allah'ın azabının çok şiddetli olduğunu önceden anlayabilselerdi.*"

Bundan amaç, başkalarının putları sevmelerini anlatmak değildir. Lakin amaç, muhabbetlerinden dolayı müminleri övmektir. Aslında kâfirlerin putlara olan sevgisinden daha fazla sevmek için çok fazla sevgiye ihtiyaç yoktur. Ancak bir sevgiliyi seven kimse, onu çokça anar, daha doğrusu onun her şeyini güzel bulur. Bu ayetle ilgili diğer bazı yorumlar ise şöyledir:

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Müminlerin Allah'a olan sevgisinin, kâfirlerin putlara olan sevgisinden fazla olmasının sebebi, ikincisinin, cinsin cinse olan meyli şeklindeki sevgiden ibaret olması, birincisinin ise, cins olmayana dönük sevgi olmasıdır ki bu, daha yüce ve daha isabetlidir.

- Onlar, gördüklerini sevdiler. Görüleni sevmekte ise şaşılacak bir durum yoktur. Oysa müminler, kibriya perdesinin görmelerini engellediği Allah'ı gereği gibi sevdiler.

- İman edenlerin Allah'a olan sevgileri çok daha fazladır; çünkü onlar, kendilerini cezalandırsa da Allah'tan uzaklaşmazlar. Oysa kâfir

puttan, putta kâfirden uzaklaşmıştır. Şu ayette ifade edildiği gibi:( اِذْ تَبَرَّاَ الَّذ۪ينَ اتُّبِعُوا مِنَ الَّذ۪ينَ اتَّبَعُوا ) *"İşte o zaman kendilerine uyulanlar, uyanlardan uzaklaşırlar."* (Bakara, 2/166)

- Müminlerin sevgisi, Allah'ın onlara olan sevgisinden kaynaklandığı için daha mükemmeldir. Tıpkı Allah'ın: (يُحِبُّهُمْ وَيُحِبُّونَهُ ) *"Allah onları sever, onlar da Allah'ı severler"* (Mâide, 5/54) buyurduğu gibi. Kâfirlerin putlara olan sevgisi ise nefislerinin arzularından dolayıdır.

- Müminlerin sevgisi daha mükemmel ve çok daha fazladır; çünkü emre uymaya dayanır. Kâfirlerin sevgisi ise nefislerine ve tabiatlarına uymak içindir.

- Kâfirler, durumları düzelip elleri bollaştığı zaman, fakirken taptıkları putlardan daha güzel putlar edinirlerdi. Şöyle ki, zenginleşince demirden olan putları bırakıp gümüşten yapılmış putlar edinirler ve durumları böyle sürüp giderdi. Halbuki müminler, Allah'ı çok daha fazla severler; çünkü bollukta da darlıkta da bir tek ilaha ibadet ederler.

اِذْ تَبَرَّاَ الَّذ۪ينَ اتُّبِعُوا مِنَ الَّذ۪ينَ اتَّبَعُوا وَرَاَوُا الْعَذَابَ وَتَقَطَّعَتْ بِهِمُ الْاَسْبَابُ ﴿١٦٦﴾

166- "İşte o zaman kendilerine uyulanlar, uyanlardan uzaklaşırlar ve azabı görmüş, nihayet aralarındaki bağlar kopup parçalanmıştır."

Azabın başlangıç safhaları onlara göründüğü zaman, doğruluk üzere olmadıklarını anlamış olurlar. Müminlere gelince Allah, canlarını, mülklerini, eşlerini ve çocuklarını ellerinden alır. Kâfirleri ise Allah, yıllarca kabirlerde beklettikten sonra, kıyamet günü uzun ömürleri ve kötü amelleriyle imtihan eder, ardından da cehenneme atar. Halbuki müminlerin günleri ve amelleri uzadıkça Allah'a olan sevgileri artar. Bu nedenledir ki Allah şöyle buyurmuştur:

(وَالَّذ۪ينَ اٰمَنُوا اَشَدُّ حُبًّا لِلّٰهِ ) *"İman edenlerin, Allah'a olan sevgileri ise çok daha fazladır"* (Bakara, 2/165).

وَقَالَ الَّذٖينَ اتَّبَعُوا لَوْ اَنَّ لَنَا كَرَّةً فَنَتَبَرَّاَ مِنْهُمْ كَمَا تَبَرَّؤُا مِنَّا كَذٰلِكَ
يُرٖيهِمُ اللّٰهُ اَعْمَالَهُمْ حَسَرَاتٍ عَلَيْهِمْ وَمَا هُمْ بِخَارِجٖينَ مِنَ النَّارِ ﴿١٦٧﴾

167- “Kötülere uyanlar şöyle derler: 'Ah, keşke bir daha dünyaya geri gitmemiz mümkün olsaydı da şimdi onların bizden uzaklaştıkları gibi, biz de onlardan uzaklaşsaydık. Böylece Allah onlara işlerini, pişmanlık ve üzüntü kaynağı olarak gösterir ve onlar, artık ateşten çıkamazlar.'”

Bu esnada yaratıklarla arkadaşlık etmenin tadındaki acılığı anlarlar; ancak hasretten başka bir şey de elde edemezler.

يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ كُلُوا مِمَّا فِي الْاَرْضِ حَلَالًا طَيِّبًا وَلَا تَتَّبِعُوا خُطُوَاتِ
الشَّيْطَانِ اِنَّهُ لَكُمْ عَدُوٌّ مُبٖينٌ ﴿١٦٨﴾

168- “Ey insanlar, yeryüzünde bulunanların helal ve temiz olanlarından yeyin, şeytanın peşine düşmeyin; şeytan sizin açık bir düşmanınızdır.”

Haram, her ne kadar o anda zevk verse de sonu felakettir. Helal da her ne kadar o anda hoş gelmese de sonu afiyettir.

Katıksız helal ise öyle bir şeydir ki, kazananı, onu kazanırken, hakkı unutmamıştır.

Bir yoruma göre de helal öyle bir şeydir ki, onu kazanıp biriktiren, her durumda Hakk'ı gözetmektedir.

Bir de seni, Hakk'ı unutmaya veya Hakk'a isyan etmeye sevk eden ne varsa hepsi, şeytanın adımlarındandır.

اِنَّمَا يَأْمُرُكُمْ بِالسُّٓوءِ وَالْفَحْشَٓاءِ وَاَنْ تَقُولُوا عَلَى اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ﴿١٦٩﴾

169- “O, size ancak kötülüğü, çirkini ve Allah hakkında bilmediğiniz şeyleri söylemenizi emreder.”

Şeytan, Allah'a karşı cüretkâr olduğu için insanı da Allah'a iftira etmeye davet eder.

وَاِذَا قِيلَ لَهُمُ اتَّبِعُوا مَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ قَالُوا بَلْ نَتَّبِعُ مَٓا اَلْفَيْنَا عَلَيْهِ اٰبَٓاءَنَا اَوَلَوْ كَانَ اٰبَٓاؤُ۬هُمْ لَا يَعْقِلُونَ شَيْـًٔا وَلَا يَهْتَدُونَ ﴿١٧٠﴾

170- "Onlara: 'Allah'ın indirdiğine uyun' denildiği zaman onlar: 'Hayır, biz atalarımızı üzerinde bulduğumuz yola uyarız' dediler. Ya ataları bir şey anlamamış, doğruyu da bulamamış idiyseler?"

Onlar, gözlerini kendi benzerlerinden ayırmadıkları için onların yolunda gittiler ve kaçınılmaz olarak cehennemi boyladılar ve cehennemliklerin safına katılmış oldular. Eğer onlar, seleflerinin, kötü yoldan alıkoyan bir akla ve kendilerini bir araya getirecek bir rüşte sahip olmadıklarını bilselerdi, onlara karşı çıkarlar ve ısrarla muhalefet ederlerdi. Ne var ki onlar, basiretin ışıklarından nasipsiz ve kesin gerçeğin delillerinden mahrum bırakıldılar.

وَمَثَلُ الَّذِينَ كَفَرُوا كَمَثَلِ الَّذِي يَنْعِقُ بِمَا لَا يَسْمَعُ اِلَّا دُعَٓاءً وَنِدَٓاءًۜ صُمٌّ بُكْمٌ عُمْيٌ فَهُمْ لَا يَعْقِلُونَ ﴿١٧١﴾

171- "Kâfirlerin durumu, sadece çobanın bağırıp çağırmasını işiten hayvanların durumuna benzer. Çünkü onlar sağırdırlar, dilsizdirler ve kördürler. Bu sebeple düşünmezler."

Onlar, anlamayı ve kabulü sağlayacak duyma yeteneğini yitirdiler. Böylece zahiren duymak onlara fayda vermediğinden sonuçtan mahrum kalmada hayvanların durumuna düşmüş oldular. Her kim, hayvan gibi olmaya razı olursa, çok da değer kazanamaz.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا كُلُوا مِنْ طَيِّبَاتِ مَا رَزَقْنَاكُمْ وَاشْكُرُوا لِلّٰهِ اِنْ كُنْتُمْ اِيَّاهُ تَعْبُدُونَ ﴿١٧٢﴾

172- "Ey iman edenler, size verdiğimiz rızkların temiz olanlarından yeyin. Eğer siz, yalnız Allah'a kulluk ediyorsanız, O'na şükredin."

Helal insanı vebal altında bırakmayan, temiz ise içinde mahlûkun minneti bulunmayan şeydir. İşte kul, bu iki vasfı birlikte taşıyan bir yiyecek bulduğu zaman o helal ve temizdir.

Ondan dolayı yapılacak gerçek şükür ise insanda o yiyecekten yararlanabilme gücü olduğu sürece, Hakk'ın rızası dışında nefes alıp vermemektir.

اِنَّمَا حَرَّمَ عَلَيْكُمُ الْمَيْتَةَ وَالدَّمَ وَلَحْمَ الْخِنْزِيرِ وَمَٓا اُهِلَّ بِهٖ لِغَيْرِ اللّٰهِ
فَمَنِ اضْطُرَّ غَيْرَ بَاغٍ وَلَا عَادٍ فَلَٓا اِثْمَ عَلَيْهِ اِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَح۪يمٌ ﴿١٧٣﴾

173- "Allah, size ancak ölüyü, kanı, domuz etini ve Allah'tan başkası adına kesileni haram kıldı. Her kim, bunlardan yemeye mecbur kalırsa, başkasının hakkına saldırmadan ve haddi aşmadan bir miktar yemesinde günah yoktur. Şüphe yok ki Allah, çokça bağışlayan çokça esirgeyendir."

Zahirî hükümler olarak Allah, bu sayılanları, yani üzerinde Allah'ın adı anılmayanları haram kılarken, sırlara da Allah'tan başkasıyla beraber olmayı, hatta Allah'tan başkasını görmeyi haram kılmıştır. Bu durumda her kim, mecbur kalırsa, yani Hakk'ın gerçeklerinde yok olmaya yol bulamazsa, o zaman dinin yolundan başka bir yol izlemesin. Bu takdirde de ya Allah'ta mahviyeti yaşasın, ya Allah ile var olsun veya Allah için çalışsın. Dördüncü ihtimal ise önemsiz bir tedbirsizliktir.

اِنَّ الَّذ۪ينَ يَكْتُمُونَ مَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ مِنَ الْكِتَابِ وَيَشْتَرُونَ بِهٖ ثَمَنًا قَل۪يلًاۙ
اُو۬لٰٓئِكَ مَا يَأْكُلُونَ ف۪ي بُطُونِهِمْ اِلَّا النَّارَ وَلَا يُكَلِّمُهُمُ اللّٰهُ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ
وَلَا يُزَكّ۪يهِمْۚ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَل۪يمٌ ﴿١٧٤﴾

174- "Allah'ın indirdiği kitaptan bir şeyi gizleyip onu az bir paha ile değişenler yok mu, işte onların yeyip de karınlarına doldurdukları ateşten başka bir şey değildir. Kıyamet günü, Allah ne kendileriyle konuşur ve ne de onları temize çıkarır. Orada onlar için can yakıcı bir azap vardır."

Âlimler, ilmin delillerini yaymakla, veliler de sır âleminin emanetlerini korumakla yükümlüdürler. Eğer âlimler, ilmin delillerini ketmederlerse yani gizlerlerse, ağızlarına ateşten bir gem vurulur. Veliler de sırdan bir parçacık ifşa ederlerse, sırlar âleminden hemen uzaklaştırılır ve kendilerine verilen nurlar ellerinden alınır. Her birine düşen bir çaba vardır. Ve her durumun yol açtığı bir kopuş vardır.

أُولٰٓئِكَ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الضَّلَالَةَ بِالْهُدٰى وَالْعَذَابَ بِالْمَغْفِرَةِ فَمَٓا اَصْبَرَهُمْ عَلَى النَّارِ ﴿١٧٥﴾

175- "Onlar, doğru yol karşılığında sapıklığı, mağfirete bedel olarak da azabı satın almış kimselerdir. Onlar, ateşe karşı ne kadar dayanıklıdırlar!"

ذٰلِكَ بِاَنَّ اللّٰهَ نَزَّلَ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ وَاِنَّ الَّذِينَ اخْتَلَفُوا فِي الْكِتَابِ لَفِي شِقَاقٍ بَعِيدٍ ﴿١٧٦﴾

176- "O azabın sebebi, Allah'ın, kitabı hak olarak göndermiş olmasıdır. Kitapta ayrılığa düşenler ise elbette derin bir anlaşmazlığın içine düşmüşledir."

Gayrı gayba, halkı Hakk'a, nefsi ünsiyete tercih edenlerin kalpleri çok katı, sevip aradıkları çok çirkin, değerleri çok düşük ve basiret sahipleri nezdinde durumları büyük rezalettir. Sebebi ise Allah'ın, kitabı hak ile indirmiş olması, kitaptaki hükmünü ve takdirini doğrulukla icra etmesi, onları ehil kıldığı noktaya ulaştırması ve kendilerini üzerinde yarattığı karakterde sabit kılmasıdır.

لَيْسَ الْبِرَّ اَنْ تُوَلُّوا وُجُوهَكُمْ قِبَلَ الْمَشْرِقِ وَالْمَغْرِبِ وَلٰكِنَّ
الْبِرَّ مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَالْمَلٰٓئِكَةِ وَالْكِتَابِ وَالنَّبِيّٖنَ
وَاٰتَى الْمَالَ عَلٰى حُبِّهٖ ذَوِي الْقُرْبٰى وَالْيَتَامٰى وَالْمَسَاكٖينَ وَابْنَ
السَّبٖيلِ وَالسَّٓائِلٖينَ وَفِي الرِّقَابِ وَاَقَامَ الصَّلٰوةَ وَاٰتَى الزَّكٰوةَ
وَالْمُوفُونَ بِعَهْدِهِمْ اِذَا عَاهَدُوا وَالصَّابِرٖينَ فِي الْبَأْسَٓاءِ وَالضَّرَّٓاءِ
وَحٖينَ الْبَأْسِ اُولٰٓئِكَ الَّذٖينَ صَدَقُوا وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُتَّقُونَ ﴿١٧٧﴾

177- "İyilik, yüzlerinizi doğu ve batı tarafına çevirmeniz değildir. Asıl iyilik, o kimsenin yaptığıdır ki, Allah'a, ahiret gününe, meleklere, kitaplara, peygamberlere inanır. Yakınlara, yetimlere, yoksullara, yolda kalmışlara, dilenenlere ve kölelere sevdiği maldan harcar, namaz kılar, zekât verir. Antlaşma yaptığı zaman sözlerini yerine getirir. Sıkıntı, hastalık ve savaş zamanlarında sabreder. İşte doğru olanlar, bu vasıfları taşıyanlardır. Takva sahipleri ancak onlardır."

Ayet, görünüşe çok itibar edilmediğine, değerli olanın Allah'ı anlatan hususlar olduğuna işaret etmektedir. Bu arada virdlerin çokluğu, her ne kadar büyük bir iş ise de aslında koca karıların mesleğidir. Taatin ihlâslı oluşu da her ne kadar değerli ise de avamın vasfıdır. Pek çok vecibede ve yoğun çabalarda geceyi gündüze katmanın, sevap kazanmak için önemi büyükse de asıl değerli olan, Hakk'ı tanımaktır.

Bu ayette zikredilen iyilik çeşitleri, iman meselleri, mal vermek, amelleri halis kılmak, akrabalık bağını gözetmek, günahlardan koruyan çeşitli tedbirlere sarılmak, sözünde durmak, sınırlara riayet etmek gibi hususların sonuçları büyük, önemi çok, dinen Hakk'ı hoşnut kılan ve emrine uygun olan şeylerdir. Lakin fena halinin ardından insanın üzerinden hakkın kalkması, zahiri âlemden sıyrılması, kıdemin varlığında yok olması, hissiyatına hitap eden şekli unsurların iş

görmemesi, mana aleminde daha mükemmel ve daha yücedir. Çünkü tevhid, ne bir şekil ve eser bırakır ne de bir şeyi göz ardı eder.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِصَاصُ فِي الْقَتْلٰى اَلْحُرُّ بِالْحُرِّ وَالْعَبْدُ بِالْعَبْدِ وَالْاُنْثٰى بِالْاُنْثٰى فَمَنْ عُفِيَ لَهُ مِنْ اَخٖيهِ شَيْءٌ فَاتِّبَاعٌ بِالْمَعْرُوفِ وَاَدَٓاءٌ اِلَيْهِ بِاِحْسَانٍ ذٰلِكَ تَخْفٖيفٌ مِنْ رَبِّكُمْ وَرَحْمَةٌ فَمَنِ اعْتَدٰى بَعْدَ ذٰلِكَ فَلَهُ عَذَابٌ اَلٖيمٌ ﴿١٧٨﴾

178- "Ey iman edenler, öldürülenler hakkında size kısas farz kılındı. Hüre hür, köleye köle, kadına kadın öldürülür. Ancak her kimin cezası, kardeşi tarafından bir miktar bağışlanırsa, artık taraflar hakkaniyet uymalı ve öldüren, ona gereken diyeti güzellikle ödemelidir. Bu söylenenler, Rabbinizden bir hafifletme ve rahmettir. Her kim, bundan sonra haddi aşarsa, muhakkak onun için elem verici bir azap vardır."

Kısas hakkı meşrudur, bağışlamak ise daha hayırlıdır. Bu nedenle kim, hakkını tahsil etmeye meylederse bu, kendisine teslim edilir. Kim de hakkını aramaktan feragat ederse, iyilik yapmış olur. Bu itibarla birincisi, ibadet, daha doğrusu ubudiyet sahibidir. İkincisi ise yiğitlik, daha doğrusu hürriyet sahibidir.

İlim ehlinin izahına göre; akıtılan kanda kısas geçer. İşaret ehline göre ise kanları karşılıksız, ruhları da hederdir.

Şiir:

*Sana hamd etmekte korkuttuğun bir kalp*
*Seninle övünmekte akıttığın bir kan*

Kurbiyet makamında sevenlerin kanını akıtmak, vuslat ehli için güzel kokudur. Hz. Peygamber: *"Renk kan rengi, koku ise misk kokusudur"* buyurmuştur.

وَلَكُمْ فِي الْقِصَاصِ حَيٰوةٌ يَٓا اُو۬لِي الْاَلْبَابِ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ ﴿١٧٩﴾

179- "Ey akıl sahipleri, kısasta sizin için hayat vardır. Umulur ki, suç işlemekten sakınırsınız."

Kısas uygulamada hayat vardır. Çünkü kişi, öldürdüğü takdirde öldürüleceğini bildiği zaman, öldürmekten sakınır. Bu durumda ise hem katil hem de maktul için hayat vardır.

Ancak işârî tefsire göre; kısası terk etmede hayatın en büyüğü vardır. Çünkü insan, Allah'ta yok olduğu zaman onun halefi Allah'tır. Allah ile yaşaması ise kendisiyle var olmasında daha mükemmeldir. Bu kimselerin vârisi ve halefi Allah olduğu zaman, bu takdirde halefin bekası, telef olmaya maruz kalanın hayatından daha azizdir.

كُتِبَ عَلَيْكُمْ اِذَا حَضَرَ اَحَدَكُمُ الْمَوْتُ اِنْ تَرَكَ خَيْرًا اَلْوَصِيَّةُ
لِلْوَالِدَيْنِ وَالْاَقْرَبِينَ بِالْمَعْرُوفِ حَقًّا عَلَى الْمُتَّقِينَ ﴿١٨٠﴾

180- "Birinize ölüm geldiği zaman, eğer bir mal bırakacaksa, anaya, babaya, yakınlara, uygun bir biçimde vasiyet etmek Allah'tan korkanlar üzerine bir borçtur."

Her kim, bir mal bırakırsa, malından vasiyet etmesi müstehabtır. Bir şey bırakmayanın ise vasiyeti söz konusu değildir. Bu arada zenginler, ömürlerinin sonunda mallarının üçte birini vasiyet ederler. Veliler ise daha hayattayken malın tamamından sıyrılırlar. Böylece onlardan arta kalan tek şey, kendilerinden kopan, ancak başka bir şeye de bitişmeyen bir himmettir. Çünkü himmet Hakk'a ulaşamaz. Himmetin aynı zamanda hiçbir mahlukla da ilgisi yoktur. Böylece ayrı ve hiçbir şeye bitişmeksizin tek başına kalmış olur.

Şiir:

*Seveceğim sizi yaşadığım sürece, ölürsem eğer*
*Sevecek sizi, toprakta çürüyen kemiklerim*

Bu, onların vasiyetidir.

Şiir:

*(...)*

Şiir:

*Geldi elçi ve yakında göç ettiklerini haber verdi*
*Vatanlarına dönerken onlar, gözyaşım aktı buna*

فَمَنْ بَدَّلَهُ بَعْدَ مَا سَمِعَهُ فَاِنَّمَٓا اِثْمُهُ عَلَى الَّذٖينَ يُبَدِّلُونَهُ اِنَّ اللّٰهَ سَمٖيعٌ عَلٖيمٌ ﴿١٨١﴾

181- "Her kim, bunu işittikten ve kabul ettikten sonra vasiyeti değiştirirse, günahı onu değiştirenleredir. Şüphesiz Allah işitir ve bilir."

Her kim, hakkında varit olan bir sözü değiştirirse, kötülüğü ve vebali onun üzerine olur. Bunun cezası ise doğruluk kokusunu koklamaktan mahrum bırakılmasıdır. Bu itibarla her kim, dine yardım ederse, Allah da ona yardım eder. Her kim de yardımını dinin aleyhinde yaparsa Allah onu yüzüstü bırakır.

فَمَنْ خَافَ مِنْ مُوصٍ جَنَفًا اَوْ اِثْمًا فَاَصْلَحَ بَيْنَهُمْ فَلَٓا اِثْمَ عَلَيْهِ اِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَحٖيمٌ ﴿١٨٢﴾

182- "Her kim, vasiyet edenin haksızlığa yahut günaha meyletmesinden endişe eder de aralarını bulursa kendisine günah yoktur. Şüphesiz Allah çok bağışlayan ve esirgeyendir."

Ayet şuna işaret etmektedir: Her kim, müridlerden birinde bir zaaf sezer veya yolun başındaki bazı insanlarda irade gevşekliği görür veya nasihat edenlerden kimisinin, söylenenlere katlanamayacak olan kimseyle katıksız doğruyu konuştuğuna rastlar da o müride, ruhsat tanımak veya meylettirmek veya onu idare etmek yahut da mubah bir şeyi kullanmasına razı olmak suretiyle, şefkat gösterirse bunda bir beis olmaz. Çünkü insanları katıksız doğruya mecbur etmek, çok sevap getiren durumlardan değildir. Bu itibarla henüz kesin kararlılığa ve samimi çabaya sahip olamadıkları zaman,

yolun başındakilere şefkat göstermek, düzelmeyi temin etmek için büyük bir rükündür.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا كُتِبَ عَلَيْكُمُ الصِّيَامُ كَمَا كُتِبَ عَلَى الَّذ۪ينَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ ١٨٣

183- "Ey iman edenler, oruç sizden önce gelip geçmiş ümmetlere farz kılındığı gibi size de farz kılındı. Umulur ki korunursunuz."

Oruç iki kısımdır: Biri zahirî oruçtur ki bu, niyetle birlikte olmak kaydıyla oruç bozucu şeylerden sakınmak demektir. Diğeri ise kalbi afetlerden, sonra ruhu ülfetlerden, sonra da sırrı mülahazalardan korumak demek olan bâtınî oruçtur.

Bir yoruma göre de abidlerin oruçlarının kusursuz olmasının şartı, dili gıybetten, gözü de şüpheli bakıştan korumaktır. Nitekim hadiste: *"Kim oruç tutarsa, kulağı ve gözü de oruç tutsun"* buyrulmuştur. Ariflerin orucu ise sırrı Allah'tan başka her şeyin müşahedesinden korumaktır.

Bu arada oruç bozucu şeylerden sakınan kimsenin orucu, akşamla sona erer. Her kim, Allah dışındaki şeyleri terk ederse orucu, Hakk'ı görmekle son bulur. Hz. Peygamber: *"Onu görerek oruç tutun ve onu görerek iftar açın"* buyurmuştur. Tahkik ehline göre; hadisteki *"onu"* zamiri Allah'a gitmektedir. Bu nedenle âlimler hadisin manasının: *"Ramazan hilalini gördüğünüz zaman oruç tutunuz, Şevval hilalini gördüğünüz zaman da iftar yapınız"* olduğunu söylerler. Havassa gelince, onların orucu Allah'tan dolayıdır. Çünkü onlar Allah'ı görür, Allah ile iftar açar, Allah'a yönelir, Allah'a teslim olurlar. Kendisiyle mahviyet yaşadıkları da yine Allah'tır.

اَيَّامًا مَعْدُودَاتٍ فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ مَر۪يضًا اَوْ عَلٰى سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِنْ اَيَّامٍ اُخَرَ وَعَلَى الَّذ۪ينَ يُط۪يقُونَهُ فِدْيَةٌ طَعَامُ مِسْك۪ينٍ فَمَنْ تَطَوَّعَ خَيْرًا فَهُوَ خَيْرٌ لَهُ وَاَنْ تَصُومُوا خَيْرٌ لَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ١٨٤

184- "Sayılı günlerde olmak üzere, oruç size farz kılındı. Sizden her kim, hasta yahut yolcu olursa, diğer günlerde kaza eder. Oruç tutmaya güçleri yetmeyenlere bir fakiri doyuracak fidye gerekir. Bununla birlikte kim gönüllü olarak hayır yaparsa, bu kendisi için daha iyidir. Eğer bilirseniz, oruç tutmanız sizin için daha hayırlıdır."

( اَيَّامًا مَعْدُودَاتٍ فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ مَرِيضًا اَوْ عَلٰى سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِنْ اَيَّامٍ اُخَرَ ) "*Sayılı günlerde olmak üzere, oruç size farz kılındı. Sizden her kim, hasta yahut yolcu olursa, diğer günlerde kaza eder.*" Kim, ayı idrak ederse Allah için oruç tutar. Kim de ayın yaratıcısını idrak ederse Allah ile oruç tutar. Allah için oruç tutmak sevap kazandırır. Allah ile oruç tutmak ise, O'na yakınlığı sağlar. Allah için oruç tutmak, ibadeti gerçekleştirmektir. Allah ile oruç tutmak ise iradeyi düzeltmektir. Allah için oruç tutmak, her ibadet ehlinin sıfatıdır. Allah ile oruç tutmak ise her irade sahibinin vasfıdır. Allah için oruç tutmak, zevahiri yerine getirmektir. Allah ile oruç tutmak, yürekleri ihya etmektir. Allah için oruç tutmak, fıkhın ibadetleri bakımından bir sakınmadır. Allah ile oruç tutmak ise hakikatin işaretleriyle imsak yapmaktır.

Her kim ayı idrak ederse, oruç bozucu şeylerden sakınır. Kim Hakk'ı idrak ederse, bütün vakitlerinde mahlûkatı görmekten sakınır.

Kim, nefsiyle oruç tutarsa kendisine selsebil şarabından içirilir. Kim kalbiyle oruç tutarsa kabul nimetiyle kendisine sevgi şarabı içirilir.

Kim, sırrıyla oruç tutarsa, işte onlar, Allah'ın haklarında: (وَسَقٰيهُمْ رَبُّهُمْ شَرَابًا طَهُورًا ) "*Rableri, onlara tertemiz bir şarap içirdi*" (İnsan, 76/21) buyurduğu kimselerdir.

Şarap ki, nasıl şarap! Öyle bir şarap ki, eller üzerinde doldurulmaz; fakat o hakkedene lütuftan çıkıverir. O bardak şarabı değil, ünsiyet şarabıdır.

(فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ مَرِيضًا اَوْ عَلٰى سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِنْ اَيَّامٍ اُخَرَ) *"Sizden her kim, hasta yahut yolcu olursa, diğer günlerde kaza eder."* Yani kim, bu özürlerden dolayı oruç tutamazsa, tutamadığı günlerin kazası olarak o günler sayısınca oruç tutması gerekir. Ayetin işârî tefsiri ise şöyledir: İradesinde hastalık meydana gelen ve bu nedenle tevile başvurarak veya güç ve tahammül azlığından ötürü veya hakikatin hükümlerinin sorumluluğunu taşımaktan aciz kaldığı için başkasına dönerse, bu takdirde kararlılığı güçlenip iradesi sağlamlaşıncaya kadar kendisine mühlet verilsin. O zaman tevil yoluyla verilen ruhsat konusu edilen husus telafi edilmiş olur. Bu da yolun başında olanların işini kolaylaştırmak için Allah'ın koyduğu bir prensiptir. Ancak işin sonunda bunun telafi edilmesi zorunludur.

(وَعَلَى الَّذِينَ يُطِيقُونَهُ فِدْيَةٌ طَعَامُ مِسْكِينٍ فَمَنْ تَطَوَّعَ خَيْرًا فَهُوَ خَيْرٌ لَهُ وَاَنْ تَصُومُوا خَيْرٌ لَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ) *"Oruç tutmaya güçleri yetmeyenlere bir fakiri doyuracak fidye gerekir. Bununla birlikte kim gönüllü olarak hayır yaparsa, bu kendisi için daha iyidir. Eğer bilirseniz, oruç tutmanız sizin için daha hayırlıdır."*

Ayetin işaret ettiği husus şudur: Kendisinde hakikatin yükümlülüklerini üstlenecek güç kalmış olan, hal böyleyken dinin kolaylaştırıcı yönüne başvuran ve tevil ruhsatına yeltenen kimse, durumunun gereği olarak ödemede bulunması gerekir. Bu da elinde mevcut belli miktardaki maldan feragat etmek veya kaza etmek şeklinde olur. Böylece kişi, kendisini sadece Allah'a adamış olur.

**Bir Fasıl**

Bir görüşe göre; Allah yükümlülüğün zorluğa yol açtığını bildiği için: *Sayılı birkaç gün,* sözüyle, oruç tutulacak günlerin sayısını gözünde az göstermek suretiyle insanın yükünü hafifletmiştir. Buradaki durum, tıpkı: (وَجَاهِدُوا فِي اللّٰهِ حَقَّ جِهَادِهِ) *"Allah yolunda hakkıyla cihad edin"* (Hac, 22/78) dendikten sonra aynı ayette: (وَمَا جَعَلَ عَلَيْكُمْ فِي الدِّينِ) *"Allah, dinde size zorluk yaratmamıştır"* buyrulmasına benzemektedir. Yani, cihadını hakkıyla yerine getirmek, size fazla zorluk çıkarmaz.

شَهْرُ رَمَضَانَ الَّذِيٓ اُنْزِلَ فِيهِ الْقُرْاٰنُ هُدًى لِلنَّاسِ وَبَيِّنَاتٍ مِنَ الْهُدٰى وَالْفُرْقَانِ فَمَنْ شَهِدَ مِنْكُمُ الشَّهْرَ فَلْيَصُمْهُ وَمَنْ كَانَ مَرِيضًا اَوْ عَلٰى سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِنْ اَيَّامٍ اُخَرَ يُرِيدُ اللّٰهُ بِكُمُ الْيُسْرَ وَلَا يُرِيدُ بِكُمُ الْعُسْرَ وَلِتُكْمِلُوا الْعِدَّةَ وَلِتُكَبِّرُوا اللّٰهَ عَلٰى مَا هَدٰيكُمْ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿١٨٥﴾

185- "Ramazan ayı, insanlara yol gösterici, doğrunun ve doğruyu eğriden ayırmanın açık delilleri olarak Kur'an'ın indirildiği aydır. Öyleyse, sizden ramazan ayını idrak edenler, onda oruç tutsun. Kim, o anda hasta veya yolcu olursa, başka günlerde kaza etsin. Allah, sizin için kolaylık ister, zorluk istemez. Sayıyı tamamlamanız için. Ve size doğru yolu göstermesine karşılık, Allah'ı tazim etmeniz, şükretmeniz içindir."

(شَهْرُ رَمَضَانَ الَّذِيٓ اُنْزِلَ فِيهِ الْقُرْاٰنُ هُدًى لِلنَّاسِ وَبَيِّنَاتٍ مِنَ الْهُدٰى وَالْفُرْقَانِ)
(فَمَنْ شَهِدَ مِنْكُمُ الشَّهْرَ فَلْيَصُمْهُ وَمَنْ كَانَ مَرِيضًا اَوْ عَلٰى سَفَرٍ فَعِدَّةٌ مِنْ اَيَّامٍ اُخَرَ) *"Ramazan ayı, insanlara yol gösterici, doğrunun ve doğruyu eğriden ayırmanın açı delilleri olarak Kur'an'ın indirildiği aydır. Öyleyse, sizden ramazan ayını idrak edenler, onda oruç tutsun. Kim, o anda hasta veya yolcu olursa, başka günlerde kaza etsin."* Ramazan, kimilerinin günahlarını yakar, kimilerinin şekilciliklerini yakar. Allah'ın, rahmetiyle günahlarını yaktığı kimse ile hakikatiyle şekilciliğini yaktığı kimse arasındaki fark ise büyüktür. Ramazan ayı, ilahî hitabın başladığı, Kitab'ın indirildiği, sevabın hâsıl olduğu Allah'a yakınlığın ve makbuliyetin gerçekleştiği, yükümlülüğün hafifletildiği, rahmetin indiği, nimetin bollaştığı aydır. O, kurtuluş ve münacat ayıdır.

(اُخَرَ يُرِيدُ اللّٰهُ بِكُمُ الْيُسْرَ وَلَا يُرِيدُ بِكُمُ الْعُسْرَ) *"Allah, sizin için kolaylık ister, zorluk istemez."*

Allah, sana kolaylık isterken, sen zorluk istediğini zannedersin. Allah'ın, kuluna kolaylık istediğinin belirtilerinden biri de onu

kolaylık arzu eden bir yapıda yaratmış olmasıdır. Eğer ona kolaylık istemeseydi, kendisini kolaylık arzu eder kılmazdı.

Şiir:

*Umduğum ve arzuladığım şeye kavuşmamı istemeseydin eğer*
*Cömertliğinin feyzinden öğretmezdin bana istemeyi*

Allah, umudu gerçekleştirmiş, arzuyu pekiştirmiş ve: "*Sizin için zorluk istemez*" diyerek zanna dayalı ihtimalleri, kendisine özgü hakikatin üzerinden kaldırmak için söz konusu hakikati zorunlu kılmıştır.

(وَلِتُكْمِلُوا الْعِدَّةَ ) "*Sayıyı tamamlamanız için.*"

Bu ifadenin, ilim dilindeki anlamı, *oruç müddetini tamamlamanız için,* demektir. İşaret manası ise *akıbetinizi şimdiki pürüzsüz durumunuz ile denk kılmanız için,* şeklindedir.

(وَلِتُكَبِّرُوا اللّٰهَ عَلٰى مَا هَدٰيكُمْ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ) "*Ve size doğru yolu göstermesine karşılık, Allah'ı tazim etmeniz, şükretmeniz içindir.*" Yani, bütün bunlar, son nefeste Allah'a şükretmeniz ve imanınızın selametiyle ömrünüzü tamamlamanız içindir. Müslüman'ın, ramazan ayının orucunu tamamlamasındaki muvaffakiyet büyüktür. Ancak ömrünün saadetle tamamlanmasının gerçekleşmesi daha da büyüktür.

وَاِذَا سَاَلَكَ عِبَادِي عَنِّي فَاِنِّي قَرِيبٌ اُجِيبُ دَعْوَةَ الدَّاعِ اِذَا دَعَانِ
فَلْيَسْتَجِيبُوا لِي وَلْيُؤْمِنُوا بِي لَعَلَّهُمْ يَرْشُدُونَ ﴿١٨٦﴾

186- "Kullarım, sana beni sorduğunda, ben çok yakınım. Bana dua ettiği vakit, dua edenin dileğine karşılık veririm. O halde benim davetime uysunlar ve bana inansınlar ki doğru yolu bulalar."

(وَاِذَا سَاَلَكَ عِبَادِي عَنِّي فَاِنِّي قَرِيبٌ ) "*Kullarım, sana beni sorduğunda, ben çok yakınım.*" Herkesin sorusu, kendi durumunu gösterir. Onlar, bir hüküm, bir yaratık, bir din, dünya ve ahiret hakkında sormadılar da Allah'ı sordular. Bu nedenle Allah: (وَاِذَا سَاَلَكَ عِبَادِي عَنِّي ) "*Kullarım,*

*sana beni sorduğunda*" buyurdu. Ancak bunlar aşağıdaki ayetlerde soru soran kimseler değildir:

(وَيَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الْجِبَالِ) "*Sana dağları sorarlar.*" (Tâhâ, 20/105)

(وَيَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الْيَتَامٰى) "*Sana yetimleri sorarlar.*" (Bakara, 2/220)

(وَيَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الْمَحِيضِ) "*Sana hayız hakkında sorarlar.*" (Bakara, 2/222)

(وَيَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الرُّوحِ) "*Sana ruh hakkında sorarlar.*" (İsrâ, 17/85)

(يَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الْخَمْرِ وَالْمَيْسِرِ) "*Sana içki ve kumarı sorarlar.*" (Bakara, 2/219)

(يَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الشَّهْرِ الْحَرَامِ) "*Sana haram ayı, yani onda savaşmayı soruyorlar.*" (Bakara, 2/217).

(وَاِذَا سَاَلَكَ عِبَادٖي عَنّٖي) "*Kullarım, sana beni sorduğunda*" ifadesinde sözü edilenler, özel bir topluluktur.

Yani, kullarım sana beni sorduğunda onlara ne ile cevap verirsin? Bu cevap, senin dilinle olmaz ey Muhammed! Her ne kadar sen, bizimle yaratıklar arasında bir elçi isen de bu cevabı ben üstlenirim. (فَاِنّٖي قَرٖيبٌ) "*Ben çok yakınım.*" Böylece Allah, kendisi dışındaki vasıtaları kaldırmış ve Onlara benim yakın olduğumu söyle dememiş, aksine: Ben çok yakınım, buyurmuştur. Sonra Allah, bu yakınlığın ne olduğunu açıklamıştır. Zira Hak Teâlâ, cihet yakınlığı veya uzaklığından veya bir yerle sınırlı olmaktan münezzehtir. Bu nedenle: (اُجٖيبُ دَعْوَةَ الدَّاعِ اِذَا دَعَانِ) "*Dua edenin duasını kabul ederim*" buyurmuştur. Hak Teâlâ, ilim, kudret, işitme ve görmeyle herkese ve her şeye yakındır. Allah, yaratıkların özelliklerinden uzaklık, yardım, dua kabul etmek suretiyle yakındır. Yoksa zatıyla ve mekân bakımından bir kimseye yakın olmaktan Allah münezzehtir. Çünkü O, benzersiz birlik sıfatına sahip olup hiçbir tarafa yönelmez, aziz olup mahiyet ve miktar sıfatlarını taşımaz.

(اُجٖيبُ دَعْوَةَ الدَّاعِ اِذَا دَعَانِ فَلْيَسْتَجٖيبُوا لٖي وَلْيُؤْمِنُوا بٖي لَعَلَّهُمْ يَرْشُدُونَ) "*Bana dua ettiği vakit, dua edenin dileğine karşılık veririm. O halde benim davetime uysunlar ve bana inansınlar ki doğru yolu bulalar.*"

Allah bu ayette, züht ile hak edileni veya ibadet zamanında yapılanı kabul etmeye söz vermemiş; fakat ne zaman, nasıl ve nerede dua ederse etsin, dua edenin duasını kabul edeceğini söylemiştir. Sonra: (فَلْيَسْتَجِيبُوا لِي ) *"O halde benim davetime uysunlar"* buyurmakla yükümlülük getirmiştir. (أُجِيبُ دَعْوَةَ الدَّاعِ اِذَا دَعَانِ ) *"Dua edenin dileğine karşılık veririm"* sözü, Allah'ın kendini tanıtmasını ve kulunun yükümlülüğünü hafifletmesini ifade eder. Bu arada Allah, hafifletmeyi yükümlü kılmanın önüne almış ve şunu demek istemiştir: Ey kulum, sen dua ettiğin zaman duanı kabul ederim. O halde ben de seni çağırdığım zaman çağrımı kabul et. Ey kulum, ben, duanı reddetmekten hoşnut olmam. O halde sen de beni başından savmaktan hoşnut olma! Ey kulum, seni hayırla kabul etmek, seni bana dua etmeye yöneltir. Senin duan da, beni duanı kabul etmeye yöneltir.

(فَلْيَسْتَجِيبُوا لِي وَلْيُؤْمِنُوا بِي ) *"O halde benim davetime uysunlar ve bana inansınlar!"* Bana güvensinler! Çünkü bana dua edenin duasını kabul ederim.

Şiir:

*Ey Azze, kulu olduğum Allah'a yemin ederim,*
*Hacıların da Arafat'ın müştemilatının da sahibi olan Allah'a*
*İstemem senden başka hiçbir dost,*
*Güven sözüme, güvenilirdir soylular.*

Sonra Allah, ayetin sonunda: (لَعَلَّهُمْ يَرْشُدُونَ ) *"Belki doğru yolu bulurlar"* buyurmuştur. Yani, yükümlülüğünden ve duandan maksat, rüştüne ermenden başka bir şey değildir.

اُحِلَّ لَكُمْ لَيْلَةَ الصِّيَامِ الرَّفَثُ اِلٰى نِسَآئِكُمْ هُنَّ لِبَاسٌ لَكُمْ وَاَنْتُمْ
لِبَاسٌ لَهُنَّ عَلِمَ اللّٰهُ اَنَّكُمْ كُنْتُمْ تَخْتَانُونَ اَنْفُسَكُمْ فَتَابَ عَلَيْكُمْ
وَعَفَا عَنْكُمْ فَالْـٰٔنَ بَاشِرُوهُنَّ وَابْتَغُوا مَا كَتَبَ اللّٰهُ لَكُمْ وَكُلُوا
وَاشْرَبُوا حَتّٰى يَتَبَيَّنَ لَكُمُ الْخَيْطُ الْاَبْيَضُ مِنَ الْخَيْطِ الْاَسْوَدِ مِنَ

الْفَجْرِ ثُمَّ اَتِمُّوا الصِّيَامَ اِلَى الَّيْلِ وَلَا تُبَاشِرُوهُنَّ وَاَنْتُمْ عَاكِفُونَ فِي الْمَسَاجِدِ تِلْكَ حُدُودُ اللّٰهِ فَلَا تَقْرَبُوهَا كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ اٰيَاتِهِ لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَّقُونَ ﴿١٨٧﴾

187- "Oruç gecesinde kadınlarınıza yaklaşmak size helal kılındı. Onlar sizin için birer elbise, siz de onlar için birer elbisesiniz. Allah, sizin kendinize kötülük ettiğinizi bildi ve tevbenizi kabul edip sizi bağışladı. Artık onlara yaklaşın ve Allah'ın sizin için takdir ettiklerini isteyin. Sabahın beyaz ipliği, siyah ipliğinden ayırt edilinceye kadar yeyin, için. Sonra akşama kadar orucu tamamlayın. Mescidlerde ibadete çekilmiş olduğunuz zamanlarda kadınlarla birleşmeyin. Bunlar, Allah'ın koyduğu sınırlardır. Sakın, bu sınırlara yaklaşmayın. İşte böylece Allah, ayetlerini insanlara açıklar. Umulur ki korunurlar."

(اُحِلَّ لَكُمْ لَيْلَةَ الصِّيَامِ الرَّفَثُ اِلٰى نِسَآئِكُمْ هُنَّ لِبَاسٌ لَكُمْ وَاَنْتُمْ لِبَاسٌ لَهُنَّ عَلِمَ اللّٰهُ اَنَّكُمْ كُنْتُمْ تَخْتَانُونَ اَنْفُسَكُمْ فَتَابَ عَلَيْكُمْ وَعَفَا عَنْكُمْ فَالْئٰنَ بَاشِرُوهُنَّ وَابْتَغُوا مَا كَتَبَ اللّٰهُ لَكُمْ وَكُلُوا وَاشْرَبُوا حَتّٰى يَتَبَيَّنَ لَكُمُ الْخَيْطُ الْاَبْيَضُ مِنَ الْخَيْطِ الْاَسْوَدِ مِنَ الْفَجْرِ ثُمَّ اَتِمُّوا الصِّيَامَ اِلَى الَّيْلِ) *"Oruç gecesinde kadınlarınıza yaklaşmak size helal kılındı. Onlar sizin için birer elbise, siz de onlar için birer elbisesiniz. Allah, sizin kendinize kötülük ettiğinizi bildi ve tevbenizi kabul edip sizi bağışladı. Artık onlara yaklaşın ve Allah'ın sizin için takdir ettiklerini isteyin. Sabahın beyaz ipliği, siyah ipliğinden ayırt edilinceye kadar yeyin, için. Sonra akşama kadar orucu tamamlayın."* Allah, hakikatte yaratıkların vasıflarından hiç birinin Allah'ın sıfatı olamayacağını bildirmektedir. Eğer insan Hakk'ın hakkı olan ibadette ise veya hemcinsinin arkadaşlığı gibi, nefsin ve arzunun amacı olup adetten sayılan bir durumda ise bu takdirde eğer hakkında izin varit olmuşsa, her iki durum aynıdır. Bu arada ayet, Hz. Ömer'den sadır olan bir zelle üzerine inmiş olup onun yaşadığı durum, kıyamete kadar bütün Müslümanlar için bir ruhsat sebebi kılınmıştır. Esasen inayetin hükümleri zaten böyledir.

Bir yoruma göre de Allah, kulun hazlara ihtiyacı olduğunu bildiği için ramazan ayında gece gündüzü kendi hakkı ile kulun hazzı arasında taksim etmiştir. Kendi hakkı için: (ثُمَّ اَتِمُّوا الصِّيَامَ اِلَى الَّيْلِ) "*Akşama kadar orucu tamamlayın*" buyururken kul hazzı için de: (وَكُلُوا وَاشْرَبُوا حَتّٰى يَتَبَيَّنَ لَكُمُ الْخَيْطُ الْاَبْيَضُ مِنَ الْخَيْطِ الْاَسْوَدِ مِنَ الْفَجْرِ) "*Sabahın beyaz ipliği, siyah ipliğinden ayırt edilinceye kadar yeyin, için*" buyurmuştur.

(وَلَا تُبَاشِرُوهُنَّ وَاَنْتُمْ عَاكِفُونَ فِي الْمَسَاجِدِ تِلْكَ حُدُودُ اللّٰهِ فَلَا تَقْرَبُوهَا كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ اٰيَاتِهِ لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَّقُونَ) "*Mescidlerde ibadete çekilmiş olduğunuz zamanlarda kadınlarla birleşmeyin. Bunlar, Allah'ın koyduğu sınırlardır. Sakın, bu sınırlara yaklaşmayın. İşte böylece Allah, ayetlerini insanlara açıklar. Umulur ki korunurlar.*"

Allah, kudret kaynağının hazları celbetmekten yani kendi tarafına çekmekten münezzeh olduğunu bildirmiştir. Bir de: Eğer siz, nefislerinizle meşgul iseniz, kendi hakkınızda kendinizle engellenmiş olursunuz. Şayet siz bizimle var iseniz, bizden yüz çevirip kendinize dönmeyiniz, buyurmuştur.

Bir yoruma göre de, Allah'ın vakitlerle ilgili gayreti, ciddi olanın, ciddi olmayanla karıştırılması noktasındadır. Hz. Aişe: *Ey Allah'ın Resûlü, ben seni de sana yakın olmayı da severim,* deyince Hz. Peygamber (s.a.v.) de şöyle der: *"Bırak beni ey Ebubekr'in kızı, ben Rabbime ibadet etmekteyim."* Bir diğer hadiste ise Hz. Peygamber (s.a.v.): *"Benim bir vaktim vardır ki, Rabbimden başka hiçbir şey beni kavrayamaz"* buyurmuştur.

وَلَا تَاْكُلُوٓا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ وَتُدْلُوا بِهَٓا اِلَى الْحُكَّامِ لِتَاْكُلُوا فَرِيقًا مِنْ اَمْوَالِ النَّاسِ بِالْاِثْمِ وَاَنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿١٨٨﴾

188- "Mallarınızı aranızda haksız sebeplerle yemeyin. Kendiniz bilip dururken insanların mallarından bir kısmını haram yollardan yemeniz için o malları hâkimlere vermeyin."

Yaratıkların hakemliğine başvurduğunuz zaman, biliniz ki, Allah sizden haberdardır ve ilmi sizi kuşatmaktadır. O halde Hak Teâlâ'dan utanılacak yeri gözetin. Şayet yaratıklar, zahirleri biliyorlarsa, Allah (c.c.) sırlara hakkıyla vakıftır.

يَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الْاَهِلَّةِ قُلْ هِيَ مَوَاق۪يتُ لِلنَّاسِ وَالْحَجِّ وَلَيْسَ الْبِرُّ بِاَنْ تَأْتُوا الْبُيُوتَ مِنْ ظُهُورِهَا وَلٰكِنَّ الْبِرَّ مَنِ اتَّقٰى وَأْتُوا الْبُيُوتَ مِنْ اَبْوَابِهَا وَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿١٨٩﴾

189- "Sana hilal şeklinde yeni doğan ayları sorarlar. De ki: Onlar, insanlar ve özellikle hac için vakit ölçüleridir. İyi davranış, evlere arkalarından gelip girmeniz değildir. Lakin iyi davranış, korunan kimsenin davranışıdır. Evlere kapılarından girin, Allah'tan korkun, umulur ki kurtuluşa erersiniz."

(يَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الْاَهِلَّةِ قُلْ هِيَ مَوَاق۪يتُ لِلنَّاسِ وَالْحَجِّ) *"Sana hilal şeklinde yeni doğan ayları sorarlar. De ki: Onlar, insanlar ve özellikle hac için vakit ölçüleridir."* Ayette yer alan (الْاَهِلَّةِ) *"ehille"* lafzı *"hilal"*in çoğulu olup hilaller, demektir. İnsanlar için vakit ölçüleri olmaları da insanların meşguliyetleri hesap işlerinin ölçüleri anlamındadır. Tarikat ehli için ise bu hilaller, halleri arasındaki farklılığın ölçüleridir. Şöyle ki, zahidler için virtlerin vakitleridir. Özel bazı kesimlerin ise halleri için vakit ölçüleridir.

Şiir:

*Sayarım geceleri peyderpey*
*Oysa saymazdım ben geceleri eskiden*

Şiir:

*Kavuşmadan geçti sekizi*
*Sekizden fazlası yok sabrın içinde*

Şiir:

*Farkına varmadık biz, aylar geçerken*
*Yarıları ve son geceleriyle*

(وَلَيْسَ الْبِرُّ بِاَنْ تَاْتُوا الْبُيُوتَ مِنْ ظُهُورِهَا وَلٰكِنَّ الْبِرَّ مَنِ اتَّقٰى وَاْتُوا الْبُيُوتَ مِنْ اَبْوَابِهَا وَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ) *"İyi davranış, evlere arkalarından gelip girmeniz değildir. Lakin iyi davranış, korunan kimsenin davranışıdır. Evlere kapılarından girin, Allah'tan korkun, umulur ki, kurtuluşa erersiniz."*

Yani, iyilik zahirî işlere riayet etmek değildir. Lakin iyilik, sırları arındırmak ve kalpleri temizlemektir.

وَقَاتِلُوا فِي سَبِيلِ اللّٰهِ الَّذِينَ يُقَاتِلُونَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوا اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِينَ ﴿١٩٠﴾

190- "Size karşı savaş açanlara siz de Allah yolunda savaş açın. Sakın aşırı gitmeyin; çünkü Allah aşırıları sevmez."

Nefisleriniz, sizin yanınızda Hakk'ın emanetleri olsun. Eğer O, onları tutmanızı emrederse, onları tutun ve koruyun. Şayet onları ölüme teslim etmeyi emrederse, onları O'nun emrinden esirgemeyin. İşte: (وَلَا تَعْتَدُوا) *"Sakın aşırı gitmeyin"* bu demektir. Aşırı gitmemek, durdurulduğun yerde durman ve sana emredileni yapmandır.

وَاقْتُلُوهُمْ حَيْثُ ثَقِفْتُمُوهُمْ وَاَخْرِجُوهُمْ مِنْ حَيْثُ اَخْرَجُوكُمْ وَالْفِتْنَةُ اَشَدُّ مِنَ الْقَتْلِ وَلَا تُقَاتِلُوهُمْ عِنْدَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ حَتّٰى يُقَاتِلُوكُمْ فِيهِ فَاِنْ قَاتَلُوكُمْ فَاقْتُلُوهُمْ كَذٰلِكَ جَزَٓاءُ الْكَافِرِينَ ﴿١٩١﴾

191- "Onları yakaladığınız yerde öldürün. Ve sizi çıkardıkları yerden onları çıkarın. O fitne, adam öldürmekten daha kötüdür. Yalnız Mescid-i Haram'ın yanında, onlar sizinle savaşmadıkça siz de onlarla savaşmayınız. Fakat sizi öldürmeye kalkışırlarsa, hemen onları öldürün. Kâfirlerin cezası böyledir."

(وَاقْتُلُوهُمْ حَيْثُ ثَقِفْتُمُوهُمْ) *"Onları yakaladığınız yerde öldürün."* Yani, siz benim düşmanlarıma karşı düşmanlık edin. Tıpkı dostlarımla dostluk içerisinde bulunduğunuzu ispatlamak zorunda olduğunuz

gibi. O halde aranızda akrabalık bağları olsa bile, onlara şefkat göstermeyiniz.

(وَاَخْرِجُوهُمْ مِنْ حَيْثُ اَخْرَجُوكُمْ) *"Ve sizi çıkardıkları yerden onları çıkarın."* Önce onların sevgilerini ve dostluklarını kalplerinizden çıkartınız. Sonra da küçülmüşlük muamelesi görmeleri için onları İslam topraklarından çıkartınız.

(وَالْفِتْنَةُ اَشَدُّ مِنَ الْقَتْلِ) *"O fitne, adam öldürmekten daha kötüdür."*

İfadenin işârî tefsiri şöyledir: Engelleyici unsurlardan dolayı kalbe gelen zorluk, ruhu feda etmekten dolayı nefislere gelen zorluktan daha şiddetlidir. Çünkü kalbin hayatını kaybetmek, nefsin hayatını kaybetmekten daha ağırdır. Zira nefislerin hayatı ülfet ettikleriyledir. Oysa kalbin hayatı sadece Allah iledir.

Bir yoruma göre de bu ifade; Allah'tan uzaklaşman, ruhundan ve hayatından uzaklaşmandan daha büyüktür anlamına gelmektedir.

(وَلَا تُقَاتِلُوهُمْ عِنْدَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ حَتّٰى يُقَاتِلُوكُمْ فِيهِ فَاِنْ قَاتَلُوكُمْ فَاقْتُلُوهُمْ كَذٰلِكَ جَزَٓاءُ الْكَافِرِينَ) *"Yalnız Mescid-i Haram'ın yanında, onlar sizinle savaşmadıkça siz de onlarla savaşmayınız. Fakat sizi öldürmeye kalkışırlarsa, hemen onları öldürün. Kâfirlerin cezası böyledir."*

Bunun işarî tefsiri şöyledir: İçinde bulunduğun duruma göre nitelik değiştiren ve Allah ile olan beraberlik vaktin, sıfatlar vasfıyla olduğu zaman onu, bir takım nafile ibadetler dahi olsalar, nefsini maruz bırakacağın meşguliyetlerle, haleldar etme. Şayet seni Allah'tan alıkoyacak bir baskı unsuruyla karşılaşırsan, seni Allah'tan menedecek bir alakanın kalmaması için, bütün imkânınla o unsuru nefsinden kopar.

فَاِنِ انْتَهَوْا فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿١٩٢﴾

192- "Artık Allah'a ortak koşmaktan vazgeçerlerse, şüphesiz ki Allah pek bağışlayan ve pek merhamet edendir."

Seni Allah'tan uzaklaşmaya zorlayan engelleyici duyguların ve nefsinden kaynaklanan düşmanların senden koptukları zaman nefsi

muhatap almayı ve çabalarını bir kenara bırak. Çünkü sırları korumakla yükümlü olan kimse, çeşitli muhalefetlerle nefsin çabalarına zaman ayırmaz.

وَقَاتِلُوهُمْ حَتّٰى لَا تَكُونَ فِتْنَةٌ وَيَكُونَ الدِّينُ لِلّٰهِ فَاِنِ انْتَهَوْا فَلَا عُدْوَانَ اِلَّا عَلَى الظَّالِمِينَ ﴿١٩٣﴾

193- "Bir fitne kalmayıp din yalnız Allah'ın oluncaya kadar onlarla çarpışın. Eğer vazgeçerlerse artık düşmanlık ancak zalimlere karşıdır."

Ayet, nefsin çabalarına işaret etmektedir. Çünkü senin en büyük düşmanın içindeki nefsindir. Yani, beşerî eserlerden hiçbir şey kalmaması ve nefsi ve kalbi Allah'a teslim etmek için riyazâtın hükümlerini sonuna kadar yerine getirmen gerekir. Böylece hiçbir durumda ne sakınmak ne etkilenmek suretiyle ve ne mecbur bırakılarak ne de isteyerek, senden kaynaklanan bir aykırı ve karşıt unsur kalmamış olur. Bu durumda Allah'ın tasarrufları senin üzerinde O'nun dilediği gibi yürümüş olur ve sen, hükmün gereğine aykırı tercihler yapmaktan mahviyet içerisinde olursun. Böylece nefis, teslim olduğu zaman, artık kusur işleyenlerden başka hiç kimseye karşı düşmanlık söz konusu olmaz. Emrin hakkını yerine getiren ise, yükümlülük sorumluluğundan uzaklaşmış olur.

اَلشَّهْرُ الْحَرَامُ بِالشَّهْرِ الْحَرَامِ وَالْحُرُمَاتُ قِصَاصٌ فَمَنِ اعْتَدٰى عَلَيْكُمْ فَاعْتَدُوا عَلَيْهِ بِمِثْلِ مَا اعْتَدٰى عَلَيْكُمْ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُتَّقِينَ ﴿١٩٤﴾

194- "Haram ay, haram aya ve bütün haramlar birbirine karşılıktır. O halde kim size saldırıda bulunursa, siz de ona yaptığı saldırının misliyle saldırın ve bu konuda Allah'tan korkun. Ve bilin ki, Allah takva sahibi olanlarla beraberdir."

Bundaki işaret şöyledir: İkisi de Allah'a ait olan iki hak karşı karşıya geldiği zaman, bu takdirde vakti yine vaktin hükmüyle teslim

et ve vaktin işaretleriyle beraber tavır takın. Az da sahip olduğun haz sebebiyle o iki haktan birini diğerine tercih etmekten sakın. Yoksa Hakk'ın tecellisinden alıkonulursun ve kalbinin basireti körleşmiş olur. Nitekim nefsin hilafına olan hususa en yakın ve seni nefse doğru çekip yanında huzur bulmaktan en uzak olan her şey, gerçekte en isabetli olandır.

(وَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُتَّقِينَ) *"Ve bilin ki, Allah takva sahibi olanlarla beraberdir."* Bunlar, o kimselerdir ki, nefislerini Allah'ın rızasına vesile olana tercih etmekten sakınırlar. Böylece yaptıkları işlerde kendilerini değil, Allah'ı gözettikleri zaman, Allah yardımıyla onlarla beraber olur. Nitekim Allah: *"Eğer siz Allah'a yardım ederseniz, O da size yardım eder"* buyurmuştur.

وَاَنْفِقُوا فِي سَبِيلِ اللّٰهِ وَلَا تُلْقُوا بِاَيْدِيكُمْ اِلَى التَّهْلُكَةِ وَاَحْسِنُوا اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِينَ ﴿١٩٥﴾

195- "Allah yolunda malınızı verin de kendinizi (elinizi) tehlikeye atmayın ve güzel hareket edin. Çünkü Allah, güzel davrananları sever."

Zenginlerin harcaması mallarındandır. Abidlerin harcaması ise nefisleriyle olup bunlar, nefislerini ibadetlerden ve vecibelerden alıkoymazlar. Ariflerin harcamaları da kalpleriyledir ve onlar, kalplerini Allah'ın hükümlerinden alıkoymazlar. Sevenlerin harcamasına gelince bu, ruhlarıyla olup onlar da ruhlarını Allah'ı sevmekten kısıtlamazlar.

Zenginleri harcaması nimetlerden, fakirlerin harcaması ise himmetlerdendir.

Zenginlerin harcaması, çantadan para çıkartmak şeklinde iken, fakirlerin harcaması ruhu en değerli yerden çıkartmaktır. Tevhid ehlinin harcaması da halkı sırdan çıkartmaktır.

(وَلَا تُلْقُوا بِاَيْدِيكُمْ اِلَى التَّهْلُكَةِ) *"Kendinizi (elinizi) tehlikeye atmayın."* Bu ifade, eli harcamadan alıkoymaya işaret etmektedir. Bu itibarla

her kim, elini tutar ve kendisi için bir şey biriktirirse, elini tehlikeye atmış olur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır.:

- Nefsi Allah'ın rızasına tercih etmeye işaret etmektedir.

- İsteyerek Allah'tan gafil kalmak demektir.

- Bir an bile Allah'ın lütfü ve teveccühü olmaksızın yaşadığını vehmetmektir.

- İçinde bulunulan tembellik ve kopukluk haline rıza göstermektir.

- Her nefeste Allah'tan yardım dilemeye devam etmekten dili alıkoymaktır.

(وَاَحْسِنُوا اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِينَ) *"Güzel hareket edin. Çünkü Allah, güzel davrananları sever."* Güzel hareket (ihsan), kendin dışındaki her şeye şefkat göstermendir. Bu itibarla, bir şekilde nefsine güzel davranman, gerçekler âleminde ona kötülük yapman demektir. Sebebi ise, her zorluğu üstlenmen ve bu yolda her büyük çileye göğüs germendir. İhsan, aynı zamanda firesiz olarak bütün hazlarını terk etmendir. İhsan, bir de seninle ilgisi olan herkesin hakkını ödemeye zaman ayırmandır. Ayrıca ihsan, Allah'a gafletsiz ve müşahede vasfına sahip olarak kulluk etmendir.

وَاَتِمُّوا الْحَجَّ وَالْعُمْرَةَ لِلّٰهِ فَاِنْ اُحْصِرْتُمْ فَمَا اسْتَيْسَرَ مِنَ
الْهَدْيِ وَلَا تَحْلِقُوا رُؤُ۫سَكُمْ حَتّٰى يَبْلُغَ الْهَدْيُ مَحِلَّهُ فَمَنْ كَانَ
مِنْكُمْ مَرِيضًا اَوْ بِه۪ٓ اَذًى مِنْ رَاْسِه۪ فَفِدْيَةٌ مِنْ صِيَامٍ اَوْ صَدَقَةٍ
اَوْ نُسُكٍ فَاِذَٓا اَمِنْتُمْ فَمَنْ تَمَتَّعَ بِالْعُمْرَةِ اِلَى الْحَجِّ فَمَا اسْتَيْسَرَ
مِنَ الْهَدْيِ فَمَنْ لَمْ يَجِدْ فَصِيَامُ ثَلٰثَةِ اَيَّامٍ فِي الْحَجِّ وَسَبْعَةٍ اِذَا
رَجَعْتُمْ تِلْكَ عَشَرَةٌ كَامِلَةٌ ذٰلِكَ لِمَنْ لَمْ يَكُنْ اَهْلُهُ حَاضِرِي
الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ شَد۪يدُ الْعِقَابِ ١٩٦

196- "Haccı ve umreyi de Allah için tamam yapın. Eğer kısıtlanırsanız o vakit kolayınıza gelen kurbanı gönderin. Kurban yerine varıncaya kadar başlarınızı tıraş etmeyin. İçinizden hasta olana veya başında bir rahatsızlığı bulunana tıraş için oruç, sadaka veya kurbandan ibaret bir fidye gerekir. Kısıtlılıktan kurtulduğunuzda her kim hacca kadar umre ile sevap kazanmak isterse ona da kurbanın kolay geleni gerekir. Bunu bulamayana ise üç gün hacda yedi gün de döndükten sonra, toplam on gün oruç tutmak gerekir. Bu hüküm Mescid-i Haram'da ikamet etmeyenler içindir. Allah'tan korkun ve bilin ki, Allah'ın cezası gerçekten çok çetindir."

( وَاَتِمُّوا الْحَجَّ وَالْعُمْرَةَ لِلّٰهِ ) *"Haccı ve umreyi de Allah için tamam yapın."* İlmî izaha göre; haccı tam yapmak, rükünlerini, sünnetlerini ve adabını yerine getirmek ve bazı durumlarını aksatmaksızın vacip olan kanları akıtmak demektir. Tefsirde yer aldığına göre, tabi olduğun mikattan itibaren hacca ve umreye niyet etmendir. İşârî tefsire göre ise hac kasıt demektir. Buna göre kastın biri Hakk'ın evine, diğeri de Hakk'ın kendisine yöneliktir. Birincisi, avamın, ikincisi ise havassın haccıdır.

Bu arada nasıl ki, bedeniyle hac yapan kimse, niyetlenip ihrama girer, vakfe yapar, sonra Kâbe'yi tavaf eder, sa'y yapar, sonra da tıraş oluyorsa, kalbiyle hac yapan da aynen öyledir. Böylece bunun hacca niyetlenmesi de açık bir iradeye dayalı sahih bir akitten ibarettir. Sonra bu kimse, muhalefet ve şehvet elbiselerinden sıyrılır, sonra sabır ve ihtiyaç elbisesine bürünür, nefsin arzularına uymaktan ve emel duygularını serbest bırakmaktan ve bu anlamdaki şeylerden sakınır. Sonra hac yapan kimsenin üstü başı dağınık olup üzerinde Allah'a itaat ve teslimiyet belirtileri görülür. Sonra da senden her parçanın, daveti kabul etmesi suretiyle sırların evet, demesidir.

Haccın en faziletlisi, kan akıtmak ve yüksek sesle *lebbeyke* söylemektir. Nefsin kanını arzularına karşı çıkma bıçaklarıyla kesmek, Allah'tan sürekli yardım istemek suretiyle sırrın seslerini yükseltmek, güzel itaat, sonra heybetin vasıflarını tamamlamak suretiyle

Allah'a yakınlık alanlarında vakfe yapmak da böyledir. Öte yandan bedenlerin vakfe yeri Arafat, kalplerin vakfe yeri ise vuslat esnasında Allah'ın isim ve sıfatlarıdır. Sonra kalplerin tavafı, Allah'ın tecelli yerlerinin etrafında gerçekleşir. Sırlarla sa'y ise celalin keşfi ile cemalin lütfü arasında olur. İhramdan çıkmak ise nefsin arzu ve tercihlerinin, emel ve muhalefetlerinin bağlarını her yönden koparmak demektir.

(فَإِنْ أُحْصِرْتُمْ فَمَا اسْتَيْسَرَ مِنَ الْهَدْيِ) *"Eğer kısıtlanırsanız, o vakit kolayınıza gelen kurbanı gönderin."*

Kısıtlanma düşman veya hastalık yoluyla olur.

Bundaki işaret ise şöyledir: Eğer nefis düşmanı hâkim olur da ruhsatlar ve ilmin tevilleriyle çözüm bulmak zorunlu hale gelirse, o zaman mazeret ve zaruret gereğince ihramdan çıkarsın. Çünkü hükme karşı çıkılmaz. Sözü edilen kurban ise mazerete binaen ihramdan çıkarken kesilmesi gereken kurbandır. Bu durumda bilinen ihramdan çıkılır, kurban fakirlere teslim edilir ve hac tekrarlanmak üzere kısıtlılık halinin ortadan kalkması beklenir. Şayet ilhamlar ve niyetler hastalıklı hale gelir de durum zorluk arz etmeye başlarsa bu kimse, tıpkı zahirî hacda kişinin, her hastalık için veya elbise, tıraş vb. şeylere muhtaç olduğu takdirde fidye ödemek şartıyla dönmemeye çalışması gibi hacdan dönmemeye çalışsın.

Sonra eğer hacı, aciz kalırsa ihramdan çıkışı acze kanaat getirdiği yerde olur. Böylece o, niyet ve iradesinin vasıfları ve hükümleri çerçevesinde davranır. Allah korusun, eğer dönerse sadece ret ve engellenmeyle karşılanır.

Şiir:

*Nefretten değildi aramızdaki uzaklık*
*Lakin felektir bu uzaklaştırır da birleştirir de*

Şiir:

*Fezada oturanı sevsem de değilim ben*
*Ulaşamayacağı ihtiyacı umanların ilki*

(وَلَا تَحْلِقُوا رُؤُسَكُمْ حَتّٰى يَبْلُغَ الْهَدْيُ مَحِلَّهُ فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ مَرِيضًا اَوْ بِهٖٓ اَذًى مِنْ رَاْسِهٖ فَفِدْيَةٌ مِنْ صِيَامٍ اَوْ صَدَقَةٍ اَوْ نُسُكٍ) *"Kurban yerine varıncaya kadar başınızı tıraş etmeyin. İçinizde hasta olana veya başında bir rahatsızlığı bulunana tıraş için oruç, sadaka veya kurbandan ibaret bir fidye gerekir."*

Kişi, bunu sahip olduğu imkânı harcamakla yapar ve mâlik olduğu her şeyden sıyrılır. Bunu yaparken de hala hasret belirtileri taşır ve kısıtlanmanın yol açtığı hüzünleri hisseder.

(فَمَنْ كَانَ مِنْكُمْ مَرِيضًا) *"İçinizde hasta olana..."* Bu ifade, velilerin etrafında dolaşmak, fakirlere hizmet etmek, imkân bulduğu türlü tedbir ve dualarla Allah'a yaklaşmak suretiyle yalvarmaya ve çaba harcamaya işaret etmektedir.

(فَاِذَٓا اَمِنْتُمْ فَمَنْ تَمَتَّعَ بِالْعُمْرَةِ اِلَى الْحَجِّ فَمَا اسْتَيْسَرَ مِنَ الْهَدْيِ فَمَنْ لَمْ يَجِدْ فَصِيَامُ ثَلٰثَةِ اَيَّامٍ فِي الْحَجِّ وَسَبْعَةٍ اِذَا رَجَعْتُمْ تِلْكَ عَشَرَةٌ كَامِلَةٌ ذٰلِكَ لِمَنْ لَمْ يَكُنْ اَهْلُهُ حَاضِرِي الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ) *"Kısıtlılıktan kurtulduğunuzda her kim, hacca kadar umre ile sevap kazanmak isterse, ona da kurbanın kolay geleni gerekir. Bunu bulamayan ise üç gün hacda, yedi gün de döndükten sonra, toplam on gün oruç tutmak gerekir. Bu hüküm, Mescid-i Haram'da ikamet etmeyenler içindir. Allah'tan korkun ve bilin ki, Allah'ın cezası gerçekten çok çetindir."*

Niyetler netleşip vuslat güneşleri ortaya çıktığı zaman ve Allah'a yöneliş nuru, vakfe günleri arasında parladığı zaman, kişi vuslat için zamanı yenilesin, Allah'a yakınlık için zemin hazırlasın ve sevincin hakkını yerine getirmek için yeniden faaliyete geçerek: *Sevince gelin, artık zorluk günleri geçti,* desin.

Ayrıca, haccı ve umreyi tamamlasın, sohbet ve hizmet hükümlerini yerine getirmeyi sürdürsün.

(وَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ) *"Bilin ki, Allah'ın cezası gerçekten çok çetindir."* Allah, bu cezayı, vuslat ve yakınlaşma hilallerini göstermemek suretiyle engellediği kimseye verir.

اَلْحَجُّ اَشْهُرٌ مَعْلُومَاتٌ فَمَنْ فَرَضَ فِيهِنَّ الْحَجَّ فَلَا رَفَثَ وَلَا
فُسُوقَ وَلَا جِدَالَ فِي الْحَجِّ وَمَا تَفْعَلُوا مِنْ خَيْرٍ يَعْلَمْهُ اللّٰهُ
وَتَزَوَّدُوا فَاِنَّ خَيْرَ الزَّادِ التَّقْوٰى وَاتَّقُونِ يَٓا اُولِي الْاَلْبَابِ ١٩٧

197- "Hac vakti bilinen aylardır. Kim, bu aylarda hacca başlarsa, artık hac sırasında ne kadına yaklaşma, ne günah işleme ne de kavga vardır. Hayra dair ne işlerseniz, Allah onu bilir. Azık hazırlayın. Çünkü en hayırlı azık takvadır. Ve ey akıl sahipleri, bana her türlü fenalıktan korunarak gelin."

(اَلْحَجُّ اَشْهُرٌ مَعْلُومَاتٌ) *"Hac vakti bilinen aylardır."* Nasıl ki, bedenle yapılan haccın vakti, bilinen aylar olup hac niyeti ancak onlarda geçerli oluyorsa, hac yapmak da bütün sene içerisinde sadece özel bir zamanda caiz oluyorsa ve bu vakti kaçıran da haccı kaçırmış oluyorsa, aynı şekilde kalplerle yapılan haccın da kendisi dışında sahih olmadığı bilinen vakitleri vardır. Bu vakitler gençlik günleridir. Bu nedenle gençlik halinde niyet sahibi olmayan kimsenin, yaşlılığında vuslatı olamaz. Aynı şekilde kastının vaktini ve iradesinin halini kaçıran kimse, sonu vuslat olan iradeye değil, sadece sonu cennet olan ibadete yarar.

(فَمَنْ فَرَضَ فِيهِنَّ الْحَجَّ فَلَا رَفَثَ وَلَا فُسُوقَ وَلَا جِدَالَ فِي الْحَجِّ) *"Kim, bu aylarda hacca başlarsa, artık hac sırasında ne kadına yaklaşma, ne günah işleme ne de kavga vardır."*

İşârî tefsire göre; aynı şekilde müridlik yolunu izleyen kimsenin de bu yolun ilkelerinden hiç birini çiğnememesi ve müridliğine başka bir şey karıştırmaması gerekir. Bu nedenle bir kimse onunla kavga eder, karşı çıkar veya kendisiyle çekişirse, bu takdirde ne dünya için kimseyle kavga eder, ne de nefsin hiçbir arzusu ve mevki için kimseyle çekişir. Allah bu gibi kimseler hakkında şöyle buyurmuştur:

(وَاِذَا خَاطَبَهُمُ الْجَاهِلُونَ قَالُوا سَلَامًا) *"Cahiller onlarla konuştukları zaman: 'Selam' derler"* (Furkan, 25/63)

(وَمَا تَفْعَلُوا مِنْ خَيْرٍ يَعْلَمْهُ اللّٰهُ) *"Hayra dair ne işlerseniz, Allah onu bilir."*

Sen, Allah'ın halkını görmek, halkının hükmü ve halkının bilgisi yerine O'nun hükmü ve ilmiyle yetinmelisin.

(وَتَزَوَّدُوا فَاِنَّ خَيْرَ الزَّادِ التَّقْوٰى وَاتَّقُونِ يَٓا اُو۬لِي الْاَلْبَابِ) *"Azık hazırlayın. Çünkü en hayırlı azık takvadır. Ve ey akıl sahipleri, bana her türlü fenalıktan korunarak gelin."*

Avamın takvası, yanlışlıklardan uzak durmaktır. Havassın takvası ise sırlar yoluyla yabancılardan uzak durmak demektir.

لَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ تَبْتَغُوا فَضْلًا مِنْ رَبِّكُمْ فَاِذَٓا اَفَضْتُمْ مِنْ عَرَفَاتٍ فَاذْكُرُوا اللّٰهَ عِنْدَ الْمَشْعَرِ الْحَرَامِ وَاذْكُرُوهُ كَمَا هَدٰيكُمْ وَاِنْ كُنْتُمْ مِنْ قَبْلِهِ لَمِنَ الضَّٓالّٖينَ ﴿١٩٨﴾

198- "Hac mevsiminde Rabbinizden rızık isteyerek ticaret yapmanız size günah değildir. Arafat'tan sel gibi taşarak döndüğünüzde Meş'ari'l-Harâm yanında Allah'ı zikredin. O'nu size doğrusunu öğrettiği gibi zikredin. Doğrusu siz, bundan önce yolunu şaşırmışlardan idiniz."

(لَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ تَبْتَغُوا فَضْلًا مِنْ رَبِّكُمْ) *"Hac mevsiminde Rabbinizden rızık isteyerek ticaret yapmanız size günah değildir."* Buradaki işaret şöyledir: Allah'ın lütfünden olup O'nun hakkını yerine getirmeye yardımcı olan ve içinde Müslümanların faydası bulunan veya dine güç katan şeyi istemek yerinde bir harekettir. Nefsin arzusunu yerine getirmek için talep ettiğin şey ise hastalıklıdır.

(فَاِذَٓا اَفَضْتُمْ مِنْ عَرَفَاتٍ فَاذْكُرُوا اللّٰهَ عِنْدَ الْمَشْعَرِ الْحَرَامِ وَاذْكُرُوهُ كَمَا هَدٰيكُمْ وَاِنْ كُنْتُمْ مِنْ قَبْلِهِ لَمِنَ الضَّٓالّٖينَ) *"Arafattan sel gibi taşarak döndüğünüzde Meş'ari'l-Harâm yanında Allah'ı zikredin. O'nu size doğrusunu öğrettiği gibi zikredin. Doğrusu siz, bundan önce yolunu şaşırmışlardan idiniz."*

Buradaki işaret şöyledir: Sen, Allah'ın talebinin hakkını yerine getirinceye kadar vakfe yaptığın zaman, O'nun seninle beraber olan

lütfünü hatırla. Zira eğer O seni dilemeseydi, sen O'nu dileyemezdin. Eğer O, seni seçmeseydi, sen O'nun rızasını tercih etmezdin.

ثُمَّ اَفِيضُوا مِنْ حَيْثُ اَفَاضَ النَّاسُ وَاسْتَغْفِرُوا اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿١٩٩﴾

199- "Sonra insanların akın ettiği yerden siz de dönün ve Allah'ın bağışlamasını isteyin. Çünkü Allah bağışlayan ve merhamet edendir."

Ayet, nefsin, ne giyim ne hırka ne de herhangi bir vasıf gibi bir özellikle benzerlerinden farklı olduğunu bilmemesi gerektiğine işaret etmektedir. Aksine, sen insanlardan biri gibi olursun. Bir şey yaptığın veya senin sayende, senin için ya da seninle beraber bir şey olduğu aklına geldiği zaman Allah'tan mağfiret dile ve imanını yenile. Çünkü bu, kalbine bulaşan gizli bir şirktir.

فَاِذَا قَضَيْتُمْ مَنَاسِكَكُمْ فَاذْكُرُوا اللّٰهَ كَذِكْرِكُمْ اٰبَٓاءَكُمْ اَوْ اَشَدَّ ذِكْرًا فَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَقُولُ رَبَّنَٓا اٰتِنَا فِي الدُّنْيَا وَمَا لَهُ فِي الْاٰخِرَةِ مِنْ خَلَاقٍ ﴿٢٠٠﴾

200- "Nihayet hac ibadetinizi bitirdiğinizde, bir zamanlar atalarınızı andığınız gibi hatta daha coşkulu bir anmayla Allah'ı anın. Çünkü insanların bir takımı: Rabbimiz, bize dünyada ver, der. Ona ahirette bir kısmet yoktur."

(فَاِذَا قَضَيْتُمْ مَنَاسِكَكُمْ) "*Hac ibadetinizi bitirdiğinizde*" ifadesi, kulluk hakkını yerine getirmeye işarettir.

(فَاذْكُرُوا اللّٰهَ كَذِكْرِكُمْ اٰبَٓاءَكُمْ) "*Atalarınızı andığınız gibi... Allah'ı anın*" sözü, sevgi hakkını yerine getirmeye işarettir.

Bu arada hacdaki görevleri yerine getirmek, onları bedenen yapmak demektir.

Tıpkı ataları anmak gibi Allah'ı anmak, bunu kesintisiz ve ömrün tamamını içine alacak şekilde kalp ile yapmaktır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Nasıl ki, başkaları atalarıyla övünüyor ve geçmişleriyle seviniyorlarsa, sizin de övüncünüz ve sevinciniz bizimle olsun.

- Eğer atalarınızın sizler üzerinde terbiye hakları varsa, bizim üzerinizdeki hakkımız daha bağlayıcı ve size olan lütuflarımız daha mükemmeldir.

- Eğer geçmişlerinizin bir takım meziyet ve menkıbeleri varsa, bizim celal sıfatlarına olan liyakatimiz, atalarınızın sahip oldukları iyi halden üstündür.

- İnsan, genellikle babasını anmaktan usanmaz ve onu unutmaz. O halde bizi de kesintisiz anmalı ve bu konuda bıkkınlığa, usanca ve unutmaya maruz kalmamalıdır.

- Nasıl ki, bir kimse, nesebine dil uzattığında, buna rıza göstermiyorsan, aynı şekilde dalalet ve bidat ehlinin sözlerine karşı da bizi savunmalısın.

- Baba, saygı ve ihtişamla anılır. İşte aynı şekilde güzel terbiye ışığında Allah'a yakınlık lütfünü anmayla birlikte O'nu da heybetle zikretmek gerekir.

Öte yandan ayette, anaların değil de ataların anılmasından söz edilmesinin sebebi, ataların saygıyla, anaların ise şefkatle anılmasıdır. Nitekim Allah da merhamet edendir, merhamete muhtaç değildir.

(اَوْ اَشَدَّ ذِكْرًا) *"Hatta daha coşkulu bir anmayla Allah'ı anın."* Çünkü Allah, anılmaya daha layıktır. Bir de insan çok zaman babasından ürkebilmektedir. Oysa Allah, O'nu tanıyanın kalbinde, hakkında zerre kadar zatına aykırı bir hususun dahi meydana gelmesinden münezzehtir.

Öte yandan atalar liyakatleri ölçüsünde, Allah da liyakati ölçüsünde anılır.

(فَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَقُولُ رَبَّنَٓا اٰتِنَا فِي الدُّنْيَا وَمَا لَهُ فِي الْاٰخِرَةِ مِنْ خَلَاقٍ) *"Çünkü insanların bir takımı: 'Rabbimiz, bize dünyada ver' der. Ona ahirette bir kısmet yoktur."*

Bu öyle bir hitaptır ki, eğer onu bir yaratık söylemiş olsaydı, şikâyette bulunmuş olurdu. Bu arada eğer Allah, sana şikâyette bulunduğu gibi, senden şikâyetçi olsaydı, durum kötü olurdu. Lakin Allah, lütfuyla Hz. Peygamberi (s.a.v.) şikâyet edilen merci konumunda kabul edip şöyle buyurmuştur: İnsanlardan kimisi vardır ki, kalbi bize meyletmez ve bizden yüz çevirerek başkasından hoşnut olur. Böylece o, nefsinden ve arzusundan başka bir şey görmez. Bu kimsenin, Rabbine ve O'nun hakkına iman etmesi de mümkün olmaz.

وَمِنْهُمْ مَنْ يَقُولُ رَبَّنَٓا اٰتِنَا فِي الدُّنْيَا حَسَنَةً وَفِي الْاٰخِرَةِ حَسَنَةً وَقِنَا عَذَابَ النَّارِ ﴿٢٠١﴾

201- "Kimisi de: 'Rabbimiz, bize dünyada bir güzellik, ahirette de bir güzellik ver ve bizi ateş azabından koru' der."

Allah, bu güzellikle, bütün güzelliklerin düzene girdiği güzelliği kastetmiştir. Bu arada kendisiyle dünyadaki bütün güzelliklerin gerçekleştiği güzellik, ahirette imanlarının korunmasıdır. Çünkü dünyadan mümin olarak çıkan kimse, cehennemde ebedi olarak kalmaz. Bu güzelliğin kaçırılması halinde ise diğer güzelliklerden hiçbir şey gerçekleşmez. Öte yandan kendisiyle ahiretteki bütün güzelliklerin gerçekleştiği güzellik de bağışlanmaktır. Zira insan bağışlandığı zaman, ondan sonra iyilikten başka bir şey söz konusu değildir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Dünyadaki güzellik, ondan yüz çevirmektir. Ahiretteki güzellik ise onunla huzur bulmaktan, ateşten ve özellikle ayrılık ateşinden korunmuş olmaktır. Zira "nâr" lafzı üzerindeki "el" takısı cin anlamındadır. Böylece bu dua ile hem yakıcı ateşten hem de ayrılık ateşinden korunma talebi gerçekleşmiştir.

- Dünyadaki güzellik, sırlar yoluyla tecelli ile şereflenmek, ahirette ise gözlerle görmektir.

- Dünyanın güzelliği, Allah'ın seni sana muhtaç olmaktan çıkarmaması, ahiretin güzelliği ise seni sana döndürmemesidir.

- Dünyanın güzelliği, hizmette muvaffakiyet, ahiretin güzelliği ise vuslatı gerçekleştirmektir.

أُولٰٓئِكَ لَهُمْ نَصِيبٌ مِمَّا كَسَبُوا وَاللّٰهُ سَرِيعُ الْحِسَابِ ﴿٢٠٢﴾

202- "İşte bunlara kazandıklarından bir nasip vardır. Allah'ın hesabı çok çabuktur."

(أُولٰٓئِكَ لَهُمْ نَصِيبٌ مِمَّا كَسَبُوا وَاللّ) "*İşte bunlara kazandıklarından bir nasip vardır.*" Eğer yaptıkları hayır ise nasipleri de hayır, yok eğer yaptıkları başkaysa nasipleri de başka olur.

(وَاللّٰهُ سَرِيعُ الْحِسَابِ) "*Allah'ın hesabı*" avam için fırsatta, havas içinse her nefeste "*çok çabuktur.*"

Bir yoruma göre de; Allah, burada iki gruptan söz etmiştir: Birincisi: "Ey Rabbimiz bize dünyada ver" derken ikincisi: "Dünyada ve ahirette ver" demektedir. Bu arada Allah'ın zikretmediği üçüncü bir grup daha vardır ki, o da Allah'ın hükmüne rıza gösteren, emrine teslim olan ve her türlü talepten geri duran gruptur.

وَاذْكُرُوا اللّٰهَ فِيٓ اَيَّامٍ مَعْدُودَاتٍ فَمَنْ تَعَجَّلَ فِي يَوْمَيْنِ فَلَٓا اِثْمَ عَلَيْهِ وَمَنْ تَاَخَّرَ فَلَٓا اِثْمَ عَلَيْهِ لِمَنِ اتَّقٰى وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوٓا اَنَّكُمْ اِلَيْهِ تُحْشَرُونَ ﴿٢٠٣﴾

203- "Bir de sayılı günlerde Allah'ı zikredin, tekbir getirin. Bunlardan iki gün içinde dönüş için acele edene günah yoktur, geç dönene de günah yoktur; fakat korunan için. Allah'tan korkun ve bilin ki, O'nun huzurunda toplanacaksınız."

Burada anlatılan, hac görevlerinin sonlarında, Mina günlerinde şeytanı taşlama durumudur. Hacılar, haccın rükünlerini yerine

getirince, Allah onları Mina'da kalmak ile acele edip dönmek arasında serbest bırakmak suretiyle işlerini kolaylaştırmıştır.

Burdaki işaret ise şöyledir: Nefsi sönüp kalbi dirilen ve sırrı tecellinin gerçekleriyle süreklilik kazanan kimsenin, virdlerinin ayrıntılarından bir şeyler aksarsa bu takdirde, aksatmadığı huzur adabından bazı şeyler, söz konusu aksaklıkları telafi eder.

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يُعْجِبُكَ قَوْلُهُ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَيُشْهِدُ اللّٰهَ عَلٰى مَا فِي قَلْبِهٖ وَهُوَ اَلَدُّ الْخِصَامِ ﴿٢٠٤﴾

204- "İnsanlardan kimi de vardır ki, dünya hayatı hakkındaki sözü seni imrendirir ve kalbindekine Allah'ı şahid tutar. Oysa o, düşmanların en azılısıdır."

Ayette anlatılan şudur: Allah, bir kavmin kalplerinden yüz çevirerek zahirde onlara dil genişliği vermiştir. Kalplerini ise mahrumiyet bağlarıyla bağlamıştır. Bu nedenle onlar, cehaletlerinin örtüsüne bürünerek manadan mahrum kalmışlardır. Bunların ne sözlerine itimat edilir ne imanlarına dayanılabilir, ne de onlara hiçbir şekilde güven duyulabilir.

Bu arada ayet, basiret nurlarının yardımına mazhar olamayan zahir ehline işaret etmektedir. Bu kimseler, zahirin hükümlerine bağlanmışlardır. Onların ne bu söze imanları vardır ne de bu cümleyi anlarlar. O halde yapılması gereken, sırları onlardan korumaktır. Çünkü onlar, bu sözü ancak inkâr ile karşılarlar. Kalplerinde bu tarikata saygı besleyen ve bu söze netice itibariyle iman eden avamdan peşin hükümsüz kimseler, bu tarikata kendisini havastan saydığı halde bu işe iman etmeye uzak bulunan pek çok kimseden daha yakındır.

وَاِذَا تَوَلّٰى سَعٰى فِي الْاَرْضِ لِيُفْسِدَ فِيهَا وَيُهْلِكَ الْحَرْثَ وَالنَّسْلَ وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الْفَسَادَ ﴿٢٠٥﴾

205- "İş başına geçtiğinde yeryüzünde bozgunculuk çıkarmak, ekini ve nesli yok etmek için didinir. Oysa Allah bozgunculuğu sevmez."

Ayet, çabası arzularını elde etmekle sınırlı olan kimseye işaret etmektedir. Bu gibi kimseler, dünyalık işleri yoluna girip, topladıkları haramdan ve dünya menfaatinden ibaret olan emelleri düzenli gerçekleştikten sonra dinin kopan halkalarına ve İslam'ın zayıflayan vesilelerine önem vermezler. Bu nedenle onlar, vesveseleri ve kötü niyetleriyle baş başa kaldıklarında, dünyalık araçlara başvurmak ve işlerini yürütmede yardım talep ettikleri ve Allah'ın kalplerinden basireti kopardığı kimseleri kullanmak suretiyle bozgunculuk yapmaya çalışırlar.

(وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الْفَسَادَ) *"Oysa Allah bozgunculuğu sevmez."* Din işlerinde ve dünya ahvalinin düzeninde tahribata yol açan şey, açık bozgunculuktur.

وَاِذَا قِيلَ لَهُ اتَّقِ اللّٰهَ اَخَذَتْهُ الْعِزَّةُ بِالْاِثْمِ فَحَسْبُهُ جَهَنَّمُ وَلَبِئْسَ الْمِهَادُ ﴿٢٠٦﴾

206- "Ona: 'Allah'tan kork' denildiği zaman da gururu kendisini daha çok günaha iter. Cehennem de ona yeter. O, gerçekten ne kötü yataktır."

Bunlar, kendilerine kibirlenmenin hâkim olduğu ve insaftan kaynaklanan tevazuun yok olduğu topluluklardır. Böylece hakkı kabul etmeye karşı burunları havaya dikilmiştir. Bu nedenledir ki, böyle birisine iyilik emredildiği zaman: *"Bu, benim gibi birisine söylenir mi! Ben şöyle şöyle biriyim!"* der. Sonra da kendisine nasihatte bulunana karşı kibirlenerek sözüne şöyle devam eder: *Sen, iyilikle emredilmeye ve kötülüklerden alıkonulmaya benden daha fazla muhtaçsın. Çünkü senin şöyle şöyle durumların ve olayların vardır.*

Veya başarıya mazhar olur, rahmet kendisine ulaşır, hatasını görmesini sağlayan ve sahip olduğu kötü vasfa dikkatini çeken kimseye minnettar olsa dahi, bu olumlu gelişme onun iç dünyasına nüfuz etmez ve kibrin olumsuzlukları yıllarca kalpte var olmaya devam eder.

(فَحَسْبُهُ جَهَنَّمُ) *"Cehennem de ona yeter."* Cehennemden maksat, fiilen yaşadığı ürkeklik, nefsin karanlıkları ve kısır tercihtir. O kadar ki bu kimse, kendi amacından başka bir şeye çaba harcamadığı için her an defalarca azaba ve meşakkate maruz kalır. Sonra bu kimse, bu azabın ardından en büyük azaba uğratılır. Allah şöyle buyurur:

(وَلَنُذِيقَنَّهُمْ مِنَ الْعَذَابِ الْاَدْنٰى دُونَ الْعَذَابِ الْاَكْبَرِ)

*"En büyük azaptan önce onlara mutlaka en yakın azaptan tattıracağız."* (Secde, 32/21)

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَشْرِي نَفْسَهُ ابْتِغَٓاءَ مَرْضَاتِ اللّٰهِ وَاللّٰهُ رَؤُ۫فٌ بِالْعِبَادِ ﴿٢٠٧﴾

207- "Yine insanlar arasında kimi de vardır ki, Allah'ın rızasını kazanmak için kendini feda eder. Allah ise, kullarına çok şefkatlidir."

Bu kimseler, rahmetin özelliklerine mazhar oldukları ve kaderin bahşettiği güzelliklerle bezendikleri için Hakk'ın rızasını nefislerine tercih ettiler ve bütünüyle Mevlalarına teslim oldular. Allah da, kullarına karşı çok şefkatlidir. Zaten Allah'ın kendilerine olan şefkatinden dolayıdır ki, onlar bu iyi durumlara vasıl oldular. Yoksa bu durumlardan dolayı Allah'ın şefkatini hak etmiş değillerdir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا ادْخُلُوا فِي السِّلْمِ كَٓافَّةً وَلَا تَتَّبِعُوا خُطُوَاتِ الشَّيْطَانِ اِنَّهُ لَكُمْ عَدُوٌّ مُبِينٌ ﴿٢٠٨﴾

208- "Ey iman edenler, topluca barışa girin ve şeytanın adımlarına uymayın. Çünkü o, aranızı açan belli bir düşmandır."

Allah, mümini kendi nefsinden başka herkesle barış yapmakla yükümlü kılmıştır. Çünkü nefis, ancak sahibinin, efendisine muhalefet etmesiyle harekete geçer. Nitekim nefsiyle barış içerisinde olan kimse, ona olan mücadelelerinde tembelleşir. Bu da niyet sahibi her insanın kopuşunun ve irade sahibi herkesin tembelliğinin sebebidir.

Şeytanın adımlarından maksat ise, muamelata dair hükümleri yerine getiremeyeceğini ve aslında değersiz olan ve iltifat edilmemesi gereken nefsî eğilimleri terk edemeyeceğini vesvese halinde insana telkin etmesidir. Nitekim Allah, böyle bir muhtemel vesveseye karşı Hz. Musa'nın annesine hitaben: (فَاِذَا خِفْتِ عَلَيْهِ فَاَلْقِيهِ فِي الْيَمِّ) *"Sen Musa'ya zarar geleceğinden korktuğun zaman onu denize bırakıver"* (Kasas, 28/7) buyurmuştur. Sonra annesi onu denize atınca, Allah'ın Musa'ya ne yaptığını ve kendisini kurtardıktan sonra annesine nasıl da geri döndürdüğünü görmek zorundayız.

فَاِنْ زَلَلْتُمْ مِنْ بَعْدِ مَا جَٓاءَتْكُمُ الْبَيِّنَاتُ فَاعْلَمُٓوا اَنَّ اللّٰهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٢٠٩﴾

209- "Sizlere bunca açık deliller geldikten sonra yine kayarsanız, iyi biliniz ki, Allah çok onurlu bir hikmet sahibidir."

Kesin delilin ortaya çıkmasından sonraki bir tek hata, ondan önceki pek çok hatadan daha çirkindir. Nitekim hainlikle tanınan kimseye güven duygusuyla itimat edilmez. Kaldı ki, büyük insanlardan hata meydana geldiği zaman, bütünüyle yokluğa mahkûm olurlar.

هَلْ يَنْظُرُونَ اِلَّٓا اَنْ يَأْتِيَهُمُ اللّٰهُ فِي ظُلَلٍ مِنَ الْغَمَامِ وَالْمَلٰٓئِكَةُ وَقُضِيَ الْاَمْرُ وَاِلَى اللّٰهِ تُرْجَعُ الْاُمُورُ ﴿٢١٠﴾

210- "Onlar, sadece Allah'ın buluttan gölgelikler içinde melekler birlikte gelmesini gözetiyorlar. Oysa iş bitirilmiş ve bütün işler Allah'a götürülür."

(هَلْ يَنْظُرُونَ اِلَّٓا اَنْ يَأْتِيَهُمُ اللّٰهُ فِي ظُلَلٍ مِنَ الْغَمَامِ وَالْمَلٰٓئِكَةُ) *"Onlar, sadece Allah'ın buluttan gölgelikler içinde melekler birlikte gelmesini gözetiyorlar."* Bu ayetin konu ettiği insanlar, kıyametin geciktiğini söyleyince kendilerine, koptuğu zaman durumun şiddetli olacağı bu anlatılanlarla izah edilmiş oldu.

Burada sözü edilen hususlar, durumlar anlamındaki davranışlar olup Allah onları, yüce şanı hakkında ve dilediğini uygulayabilme gücüne sahip olduğu konusunda insanların yaşadıkları problemleri kendilerinden gidermek için ortaya koymaktadır.

(وَقُضِيَ الْاَمْرُ وَاِلَى اللّٰهِ تُرْجَعُ الْاُمُورُ) *"Oysa iş bitirilmiş ve bütün işler Allah'a götürülür."* Yani gaybın örtüsü, açık olan ezelî takdirin üzerinden kalkmıştır. Bu arada tevhid ehlinin kalpleri, içlerindeki basiret ışıklarından ötürü, bu ve benzeri ayetler için tevil arayışına girmekten ihtiyaç duymaz hale gelmiştir. Çünkü Allah, her türlü değişim ve yok oluştan, yer ve zamana bağlı olmaktan, her türlü hareket ve duruştan münezzeh ve mukaddestir.

سَلْ بَنِي اِسْرَآءِيلَ كَمْ اٰتَيْنَاهُمْ مِنْ اٰيَةٍ بَيِّنَةٍ وَمَنْ يُبَدِّلْ نِعْمَةَ اللّٰهِ مِنْ
بَعْدِ مَا جَآءَتْهُ فَاِنَّ اللّٰهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ ﴿٢١١﴾

211- "İsrail oğullarına, onlara ne kadar açık mucize verdiğimizi sor! Her kim Allah'ın nimetini, kendisine geldikten sonra, değiştirirse şüphesiz Allah'ın cezası pek çetindir. Allah'ın nimetini, kendisine geldikten sonra, değiştirirse şüphesiz Allah'ın cezası pek çetindir."

Burada soru sormanın faydası, soru yöntemiyle haklarında delil ispatlamaktır. Yoksa faydası, onlara soru sordurmak suretiyle, anlayamadıkları açık sevgiyi Hz. Peygamber'e anlatmak değildir.

(وَمَنْ يُبَدِّلْ نِعْمَةَ اللّٰهِ مِنْ بَعْدِ مَا جَآءَتْهُ فَاِنَّ اللّٰهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ) *"Allah'ın nimetini, kendisine geldikten sonra, değiştirirse şüphesiz Allah'ın cezası pek çetindir."* Bu azap, nimetin yok oluşu şeklinde gerçekleşir. O zaman bu nimetin değerini anlayıp onu ararlar, ancak asla ona ulaşamazlar.

Şiir:

*Beni bırakıp terk edeceksin*
*Sonra da arayıp bulamayacaksın*

زُيِّنَ لِلَّذِينَ كَفَرُوا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا وَيَسْخَرُونَ مِنَ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَالَّذِينَ اتَّقَوْا فَوْقَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ وَاللّٰهُ يَرْزُقُ مَنْ يَشَٓاءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ﴿٢١٢﴾

212- "İnkârcılara dünya hayatı bezendi de iman edenlerle eğleniyorlar. Oysa korunan o müminler, kıyamet günü onların üstündedirler. Allah, dilediğine hesapsız nimetler verir."

Onlar, farkında olmadan tuzağa düştüler. Basiretleri üzerindeki zifiri karanlık, onları Allah'ın velilerine dil uzatmaya ve kendileriyle alay etmeye sevk etti. Cehaletin örtüleri kalplerinden sıyrılınca, onlardan kimin zarar ettiğini, kimin dalalette olduğunu anladılar.

كَانَ النَّاسُ اُمَّةً وَاحِدَةً فَبَعَثَ اللّٰهُ النَّبِيِّنَ مُبَشِّرِينَ وَمُنْذِرِينَ وَاَنْزَلَ مَعَهُمُ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ لِيَحْكُمَ بَيْنَ النَّاسِ فِيمَا اخْتَلَفُوا فِيهِ وَمَا اخْتَلَفَ فِيهِ اِلَّا الَّذِينَ اُوتُوهُ مِنْ بَعْدِ مَا جَٓاءَتْهُمُ الْبَيِّنَاتُ بَغْيًا بَيْنَهُمْ فَهَدَى اللّٰهُ الَّذِينَ اٰمَنُوا لِمَا اخْتَلَفُوا فِيهِ مِنَ الْحَقِّ بِاِذْنِهِ وَاللّٰهُ يَهْدِي مَنْ يَشَٓاءُ اِلٰى صِرَاطٍ مُسْتَقِيمٍ ﴿٢١٣﴾

213- "İnsanlar tek bir ümmet idi. Ayrılmaları üzerine Allah, nimetinin müjdecileri ve azabın habercileri olarak peygamberleri gönderdi ve onlarla birlikte insanlar arasındaki anlaşmazlıklarda hakem olması için, hak ile kitap indirdi. Bunda da yalnızca kendilerine kitap verilenler, kendilerine bunca apaçık ayetler geldikten sonra, tutup aralarındaki ihtiras yüzünden anlaşmazlığa düştüler. Bunun üzerine Allah, kendi izniyle inananları anlaşmazlığa düştükleri hakka doğrudan ulaştırdı. Allah, dilediğini doğru yola çıkarır."

Yani haktan kopuş, onların bir araya getirdi. Bu arada onlara peygamberler gelince, bu kez sahip kılındıkları veya mahrum bırakıldıkları basiret ışıklarına göre çelişkiye düştüler. Bir görüşe göre de, onlar eski tercihlerine bağlıydılar. Derken peygamberlerin gelişiyle

bazıları Yahudi, bazıları da Hıristiyan oldular. Sonra neticede her biri, ezelde hakkında takdir edilen duruma dönüş yapar. Bu arada bütün insanlar, Allah'ın ilminde önce bir araya geldiler sonra hükmü konusunda ihtilafa düştüler. Bu itibarla Allah, onların bazısını hidayete erdirirken, diğer bazısını dalalete düşürdü. Bazısının önüne perde çekti, diğer bazısını kendine çekti. Bazılarını hüsranla bağladı, diğer bazısına bol ihsanda bulundu. O halde ne makbul olanların, emekleriyle kazandıkları bir şey, ne de reddedilenlerin reddedilmesi için bir sebep vardır. Aksine bu, Allah tarafından verilmiş olan kesin bir hüküm ve karardır.

اَمْ حَسِبْتُمْ اَنْ تَدْخُلُوا الْجَنَّةَ وَلَمَّا يَاْتِكُمْ مَثَلُ الَّذِينَ خَلَوْا مِنْ قَبْلِكُمْ مَسَّتْهُمُ الْبَاْسَاۤءُ وَالضَّرَّاۤءُ وَزُلْزِلُوا حَتّٰى يَقُولَ الرَّسُولُ وَالَّذِينَ اٰمَنُوا مَعَهُ مَتٰى نَصْرُ اللّٰهِ اَلَاۤ اِنَّ نَصْرَ اللّٰهِ قَرِيبٌ ٢١٤

214- "Yoksa siz, sizden önce geçenlerin örnek olmuş durumları, hiç başınıza gelmeden cennete gireceğinizi mi sandınız! Onların başına öyle ezici sıkıntılar, kımıldatmaz zaruretler geldi ve öylesine sarsıldılar ki, peygamber ve beraberindeki iman edenler: 'Allah'ın yardımı ne zaman?" diyeceklerdi. Bak işte, Allah'ın yardımı yakındır."

Allah, cenneti yaratmış ve onu zorluklarla çevirmiştir. Cehennemi de yaratıp şehvet ve arzularla kuşatmıştır. Bu nedenle her kim, risk almaktan korkarsa, emellerine kavuşmaktan geri kalır. Sonra Allah, ilk insanları çeşitli zorluklarla sınamış, arkalarından gelen hak dostu kimseleri de onların yolunda yürütmüş ve aralarına katmıştır. Bunun dışında bir şey zanneden kimse, serabı su sanmış olur ve bu, aynı zamanda tevil sandığı yöntemle gerçekleşmeyen bir hükümdür. Bu arada Allah'ın veliler hakkındaki prensibi şudur: Onlar, ümitsizlik aşamalarını yaşamadan zaferin huzur menzilinde konaklayamazlar. Bekleyişleri uzadığı sırada ansızın lütuf karşılarına çıkmış ve amaçları gerçekleşmiştir. Allah: (اِنَّ نَصْرَ اللّٰهِ قَرِيبٌ) "*Bak işte, Allah'ın yardımı yakındır*" buyurmuştur.

يَسْـَٔلُونَكَ مَاذَا يُنْفِقُونَ قُلْ مَٓا اَنْفَقْتُمْ مِنْ خَيْرٍ فَلِلْوَالِدَيْنِ وَالْاَقْرَبِينَ وَالْيَتَامٰى وَالْمَسَاكِينِ وَابْنِ السَّبِيلِ وَمَا تَفْعَلُوا مِنْ خَيْرٍ فَاِنَّ اللّٰهَ بِهٖ عَلِيمٌ ﴿٢١٥﴾

215- "Sana, Allah yolunda mallarını neye harcayacaklarını sorarlar. De ki: 'Vereceğiniz nafaka ana, baba, en yakınlar, öksüzler, yoksullar ve yolda kalmışlar içindir. Hayır olarak daha ne yaparsanız, Allah onu muhakkak bilir.'"

Onlar, kulun tek başına bir şey yapamadığını anladılar. Zira Mevla'sının izni olmaksızın kul hiçbir şey yapamaz. Bunun üzerine, ayette yer verilen müsaade ayrıntısının da işaret ettiği gibi, harcama konusunda duraksadılar. Zira kulluk, durumun gerektirdiği yerde durmasını bilmektir.

Bir yoruma göre de, onlar nefsin işaretlerine harcama yapmayıp harcamaya dair emrin ayrıntılarını ve dinin işaretlerini öğrenmek istediler. Ayetteki harcama alanları arasında yer verilen "vav-ve-" harfi bir nevi sıralamaya işaret etmektedir. Buna göre iyilik yapacağın kimseler arasında en öncelikli olanlar annen ve baban, sonra akrabaların, sonra da ayette söylenen sıralamaya göredir.

كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ وَهُوَ كُرْهٌ لَكُمْ وَعَسٰٓى اَنْ تَكْرَهُوا شَيْـًٔا وَهُوَ خَيْرٌ لَكُمْ وَعَسٰٓى اَنْ تُحِبُّوا شَيْـًٔا وَهُوَ شَرٌّ لَكُمْ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ وَاَنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ﴿٢١٦﴾

216- "Savaş, hoşunuza gitmese de üzerinize yazıldı. Gerçi o size hoş gelmez; fakat olur ki, siz bir şeyden hoşlanmazsınız; oysa o, hakkınızda hayırlıdır. Olur ki, siz bir şeyi seversiniz; ama o, sizin hakkınızda bir fenalıktır. Allah bilir, siz bilmezsiniz."

Bizzat savaşmak nefislere zor geldiğinden Allah, nefislerin gerçek rahatlıklarının ahirete bırakıldığını açıklamıştır. Çünkü bu rahatlıklar,

nefsin terbiye edilmesi mesabesindedir. Bunun aksine kalplerin rahatlığı ise Allah'a yakınlık özelliği nedeniyle dünyada gerçekleşir. Bu itibarla mutluluk, nefislere muhalefettedir. O halde her kim, nefislere uyarsa, o ideal muhabbetten sapmış olur. Aynı şekilde mutluluk da kalplere uymaktadır. Bu nedenle her kim, kalplere muhalefet ederse yüce sünnetin dışına çıkmış olur.

Öte yandan Allah'ın, kolaylık garantisi veren müjdesi, nefsin, zorluk ve sıkıntının gerçekleşmesine sebep olup uyuşturucu nitelikte olan sızıntılarından daha çok kabule şayandır.

يَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الشَّهْرِ الْحَرَامِ قِتَالٍ فٖيهِ قُلْ قِتَالٌ فٖيهِ كَبٖيرٌ وَصَدٌّ
عَنْ سَبٖيلِ اللّٰهِ وَكُفْرٌ بِهٖ وَالْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَاِخْرَاجُ اَهْلِهٖ مِنْهُ
اَكْبَرُ عِنْدَ اللّٰهِ وَالْفِتْنَةُ اَكْبَرُ مِنَ الْقَتْلِ وَلَا يَزَالُونَ يُقَاتِلُونَكُمْ
حَتّٰى يَرُدُّوكُمْ عَنْ دٖينِكُمْ اِنِ اسْتَطَاعُوا وَمَنْ يَرْتَدِدْ مِنْكُمْ
عَنْ دٖينِهٖ فَيَمُتْ وَهُوَ كَافِرٌ فَاُو۬لٰٓئِكَ حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ فِي
الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَاُو۬لٰٓئِكَ اَصْحَابُ النَّارِ هُمْ فٖيهَا خَالِدُونَ ﴿٢١٧﴾

217- "Sana haram ay ve onda savaşma hakkında soru yöneltiyorlar. De ki: 'Onda savaş büyük bir günahtır. Allah yolundan engellemek, O'nu inkâr etmek, Mescid-i Haram'a gidişi engellemek ve halkını oradan çıkarmak ise Allah katında daha büyük bir günahtır. Onlar güçleri yeterse, sizi dininizden döndürmek için sizinle savaşı sürdürürler, sizden her kim de dininden döner ve kâfir olarak ölürse, bunların yaptığı bütün iyi işler dünya ve ahirette boşa gitmiştir ve artık onlar, cehennemliktirler, hep orada sonsuza kadar kalacaklardır.'"

Bazı günahlar, içeriği bakımından daha ağır ve zordur. Mesela eşikte gerçekleşen edebe aykırılık, huzurdaki edebe aykırılığın yol açtığı sonuca yol açmaz. Bu itibarla hata, bedenle gerçekleştiği zaman, onun sonucu ahirete bırakılmış olan cezadır ki, bu da cehennemde

yanmaktır. Kalp hata ettiği zaman ise cezası, dünyada ayrılık şeklinde olur. Aynı zamanda gafletin kalpler üzerindeki etkisi, hatanın bedenlere olan zararından daha büyüktür. Zira nefis arzuyla, kalp ise Hak ile var olmaya devam eder.

(وَلَا يَزَالُونَ يُقَاتِلُونَكُمْ حَتّٰى يَرُدُّوكُمْ عَنْ دٖينِكُمْ اِنِ اسْتَطَاعُوا وَمَنْ يَرْتَدِدْ مِنْكُمْ عَنْ دٖينِهٖ فَيَمُتْ وَهُوَ كَافِرٌ فَاُولٰٓئِكَ حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَاُولٰٓئِكَ اَصْحَابُ النَّارِ هُمْ فٖيهَا خَالِدُونَ) *"Onlar güçleri yeterse, sizi dininizden döndürmek için sizinle savaşı sürdürürler, sizden her kim de dininden döner ve kâfir olarak ölürse, bunların yaptığı bütün iyi işler dünya ve ahirette boşa gitmiştir ve artık onlar, cehennemliktirler, hep orada sonsuza kadar kalacaklardır."*

Burdaki işaret şöyledir. Gaflet ehli, seninle diyaloga girdiklerinde seni de içinde bulundukları gaflete yöneltmek ister. Bu nedenle eski haline dönmek suretiyle sahip olduğun kararlı iradeyi bozmandan başka hiçbir şeye rıza göstermezler. Oysa kim, Allah ile olan ahdini bozarsa kalbini işe yaramaz hale getirir.

اِنَّ الَّذٖينَ اٰمَنُوا وَالَّذٖينَ هَاجَرُوا وَجَاهَدُوا فٖي سَبٖيلِ اللّٰهِ اُولٰٓئِكَ يَرْجُونَ رَحْمَتَ اللّٰهِ وَاللّٰهُ غَفُورٌ رَحٖيمٌ ﴿٢١٨﴾

218- "Şüphesiz inanlar ve Allah yolunda hicret edip savaşanlar; kesinlikle bunlar, Allah'ın rahmetini umarlar. Alla, gerçekten bağışlayıcı ve merhamet sahibidir."

Niyetlerinde dürüst, ahitlerinde samimi olanlar ve iradelerinde geriye dönüş yapmayanlar, işte onlar bekanın kemaline ve lika yurduna kavuşuncaya dek ümitli olmanın huzuru içerisinde yaşamış olurlar.

يَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الْخَمْرِ وَالْمَيْسِرِ قُلْ فٖيهِمَٓا اِثْمٌ كَبٖيرٌ وَمَنَافِعُ لِلنَّاسِ وَاِثْمُهُمَٓا اَكْبَرُ مِنْ نَفْعِهِمَا وَيَسْـَٔلُونَكَ مَاذَا يُنْفِقُونَ قُلِ الْعَفْوَ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمُ الْاٰيَاتِ لَعَلَّكُمْ تَتَفَكَّرُونَ ﴿٢١٩﴾

219- "Sana şarap ve kumardan soruyorlar. De ki: 'Bu ikisinde büyük bir günah ve insanlara bazı yararlar vardır." Yine sana neyi başkalarına vereceklerini soruyorlar. De ki: 'Sizi sıkmayanını.' Allah, düşünesiniz diye ayetlerini size böylece açıklıyor."

(الْخَمْرِ) "*Hamr*" lafzı, aklı örten şey anlamındadır. Bu arada aklı örten, yani sarhoşluk veren maddenin bizzat kendisi haram olduğu gibi, her türlü içecek maddesiyle sarhoş olmak da Hz. Peygamber'in şu sözüyle haram kılınmıştır: *"Hem sarhoşluk veren maddenin kendisi hem de her türlü içecek maddesiyle sarhoş olmak haramdır."* Bu itibarla işaretler -işârî tefsir- açısında her kim, gaflet şarabıyla sarhoş olursa, tıpkı içki içen kimsenin hak ettiği cezayı hak eder. Böylece nasıl ki sarhoş kişi, namazdan alıkonuluyorsa gaflet sarhoşu olan kişi de Allah'a ulaşmaktan ve en açık tecellilerden alıkonulmuş olur. Kim inanmıyorsa denesin. Öte yandan kumarın özü de hile, aldatma ve konuşmada yalancılık yolunu izledikleri zaman, gaflet ehlinin muamelelerinin çoğunda mevcuttur. Nitekim doğruluk ve insafı elden bırakmanın maliyeti büyüktür.

(وَيَسْـَٔلُونَكَ مَاذَا يُنْفِقُونَ قُلِ الْعَفْوَ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمُ الْاٰيَاتِ لَعَلَّكُمْ تَتَفَكَّرُونَ) *"Yine sana neyi başkalarına vereceklerini soruyorlar. De ki: 'Sizi sıkmayanını.' Allah, düşünesiniz diye ayetlerini size böylece açıklıyor."*

Bir görüşe göre, ayette yer alan "afv" sözcüğü, insanın ihtiyacından artan şeydir. Bu durum, havassa özgü olup onlar, ihtiyaçlarından artan mallarını çıkartıp verirler. Havassın havassına gelince bunların yolu, ayırım yapmaksızın başkasının ihtiyacını gidermeyi kendi ihtiyacına öncelemek demek olan "isâr"dır.

فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَيَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الْيَتَامٰى قُلْ اِصْلَاحٌ لَهُمْ خَيْرٌ
وَاِنْ تُخَالِطُوهُمْ فَاِخْوَانُكُمْ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ الْمُفْسِدَ مِنَ الْمُصْلِحِ وَلَوْ
شَٓاءَ اللّٰهُ لَاَعْنَتَكُمْ اِنَّ اللّٰهَ عَز۪يزٌ حَك۪يمٌ ﴿٢٢٠﴾

220- "O ayetler, dünya ve ahiret hakkındadır. Bir de sana öksüzlerden soruyorlar. De ki: 'Onların işlerini düzene koymak daha

hayırlıdır.' Kendilerine karışırsanız kardeşinizdirler. Allah, yararlı iş yapanı bozguncudan ayırır. Eğer Allah dileseydi, sizi kesinkes sarpa sardırırdı. Şüphesiz ki, Allah çok güçlü ve hikmet sahibidir."

Onların hallerini, edepli olmalarını sağlayacak şekilde ıslah etmek, mallarını düzene koymaktan iyidir. Yapılacak bir iş de onlara iyilik dilemenin yanı sıra, işlerini düzene koyarken ortaya çıkan zorluklara karşı da sabırlı olmaktır.

( وَاللّٰهُ يَعْلَمُ الْمُفْسِدَ مِنَ الْمُصْلِحِ وَلَوْ شَٓاءَ اللّٰهُ لَاَعْنَتَكُمْ اِنَّ اللّٰهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ) *"Allah, yararlı iş yapanı bozguncudan ayırır. Eğer Allah dileseydi, sizi kesinkes sarpa sardırırdı. Şüphesiz ki, Allah çok güçlü ve hikmet sahibidir."*

Böylece Allah, herkese, çeşitli zahirî kazanç yollarına göre değil, kalbinde duran niyetlere göre muamele eder.

وَلَا تَنْكِحُوا الْمُشْرِكَاتِ حَتّٰى يُؤْمِنَّ وَلَاَمَةٌ مُؤْمِنَةٌ خَيْرٌ مِنْ مُشْرِكَةٍ
وَلَوْ اَعْجَبَتْكُمْ وَلَا تُنْكِحُوا الْمُشْرِكِينَ حَتّٰى يُؤْمِنُوا وَلَعَبْدٌ مُؤْمِنٌ
خَيْرٌ مِنْ مُشْرِكٍ وَلَوْ أَعْجَبَكُمْ اُولٰٓئِكَ يَدْعُونَ اِلَى النَّارِ وَاللّٰهُ يَدْعُٓوا
اِلَى الْجَنَّةِ وَالْمَغْفِرَةِ بِاِذْنِهِ وَيُبَيِّنُ اٰيَاتِهِ لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَذَكَّرُونَ ﴿٢٢١﴾

221- "Allah'a ortak koşan kadınlarla, iman etmedikçe evlenmeyin. Allah'a ortak koşan bir kadın hoşunuza gitse bile, iman etmiş bir cariye herhalde ondan hayırlıdır. İnanan kadınları, Allah'a ortak koşan erkeklerle, iman etmedikçe evlendirmeyin. Allah'a ortak koşan erkek size hoş görünse bile, bir köle ondan daha hayırlıdır. Onlar, sizi ateşe davet ederler. Allah ise kendi izniyle cennete ve mağfirete davet ediyor. İnsanlara, hatırda tutmaları için ayetlerini iyice açıklıyor."

Din bağını korumak ve Müslümanların dokunulmazlıklarına sımsıkı bağlı kalmak, küfür yolunu izleyen birine varmaya rıza göstermek çok daha doğrudur. Hatta fıkhın ruhsatı, bunu yapmaya

müsaade etse dahi, Müslüman'ı uzak tutmak bakımında, hakikatin işareti buna manidir. Bu hüküm, kendileriyle evlenmek caiz olan kitap ehli kadınlar içindir. Şirk ehline gelince, bunlara evlenmek kesin bir biçimde haram olup bu konudaki uzlaşmazlığın gerekçeleri kesin hüküm içermektedir.

وَيَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الْمَحِيضِ قُلْ هُوَ اَذًى فَاعْتَزِلُوا النِّسَآءَ فِي الْمَحِيضِ وَلَا تَقْرَبُوهُنَّ حَتّٰى يَطْهُرْنَ فَاِذَا تَطَهَّرْنَ فَأْتُوهُنَّ مِنْ حَيْثُ اَمَرَكُمُ اللّٰهُ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ التَّوَّابِينَ وَيُحِبُّ الْمُتَطَهِّرِينَ ﴿٢٢٢﴾

222- "Sana kadınların aybaşı âdetlerinden soruyorlar. De ki: 'O, bir eziyettir. Onun için âdet günlerinde kadınlardan çekinin ve temizleninceye kadar onlarla cinsel ilişkide bulunmayın. İyice temizlendikleri vakit, Allah'ın size emrettiği yerden onlara varın. Allah, çok tevbe edenleri de sever çok temizlenenleri de sever.'"

Utanma ve tiksinme sebebi olan her şey, kulun tercihiyle olan hususlardan değildir. Bu itibarla bazen kulun katkısı bulunmayan bir takım eksiklikler mevcut olabilir. Aslında o durum, başlangıcı itibariyle Hakk'ın hükmüdür. İşte bu durumlardan biri de Allah'ın kadınlar için koymuş olduğu aybaşı halidir. Sonra kadınlar, bu durumda iken namazgâhlardan uzak durmakla emrolunmuşlardır. Nitekim namaz kılan kişi, Rabbine münacatta bulunmaktadır. Bu durumdaki kadınlar ise kendilerinin bir suçu olarak değil; fakat Allah'ın bir hükmü olarak münacat mahallinden uzak tutulmuşlardır. Bu konuda şu işaret tefsiri vardır: Kadınlar, her ne kadar bu durumda bedenen Allah'ın huzurunda durmak olan namazdan alıkonulmuşlarsa da kalp ve dil ile Allah'ı zikretmekten alıkonulmamışlardır. Bu da Allah'a yakınlığa vesile olur. Hz. Peygamber (s.a.v.) Allah'tan rivayetle şöyle buyurmuştur: *"Ben, beni zikredenle beraberim."*

(اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ التَّوَّابِينَ وَيُحِبُّ الْمُتَطَهِّرِينَ) *"Allah, çok tevbe edenleri de sever çok temizlenenleri de sever."*

Bu ifade ile ilgili olarak şu yorumlar yapılmıştır:

- Allah, günahlardan tevbe edenleri ve kusurlardan temizlenenleri sever.

- Allah, yanılgıdan tevbe edenleri ve kurtuluşlarının tevbe ile olduğunu vehmetmekten temizlenenleri sever.

- Allah, yasaklanan hususları işlemekten tevbe edenleri ve dünyevî meşguliyetlerden temizlenenleri sever.

- Allah, mağfiret dileme suyuyla tevbe edenleri ve tevazu sıfatıyla beraber mahcubiyet suyu dökünerek temizlenenleri sever.

- Zilletten tevbe edenleri ve gafletten temizlenenleri sever.

- Tevbeyi yaşamaktan tevbe edenleri ve hakikatte her şey başından itibaren Allah'ın hükmüyle olduğundan, herhangi bir şeyin yanılgıdan doğduğunu vehmetmekten temizlenenleri sever.

نِسَآؤُكُمْ حَرْثٌ لَكُمْ فَأْتُوا حَرْثَكُمْ اَنّٰى شِئْتُمْ وَقَدِّمُوا لِاَنْفُسِكُمْ
وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوٓا اَنَّكُمْ مُلَاقُوهُ وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِينَ ﴿٢٢٣﴾

223- "Kadınlarınız sizin için bir tarladır. O halde tarlanıza dilediğiniz gibi varın ve kendiniz için ileri dönük hazırlık yapın. Allah'tan korkun ve herhalde O'nun huzuruna varacağınızı bilin. Sen müminleri müjdele!"

Nefisler, hakikatten kopuk olma vasfını taşıdığından Allah izin verildiği şekilde onlara hemcinsleriyle birlikte olmayı mubah kılmıştır. Ancak kalpler huzur mahallinde olduklarında artık Allah dışındaki herhangi bir yaratıkla birlikte olmaları haram kılınmıştır. Ayrıca kendiniz için, iflas edeceğiniz gün size faydalı olacak salih amelleri önceden gönderin. Bu nedenle Allah: (وَاعْلَمُوٓا اَنَّكُمْ مُلَاقُوهُ) "*Ve herhalde O'nun huzuruna varacağınızı bilin*" buyurmuştur. O halde, Rabbiniz katında bulunması, sizi sevindirecek olan güzellikleri kendiniz için önceden gönderin.

وَلَا تَجْعَلُوا اللّٰهَ عُرْضَةً لِاَيْمَانِكُمْ اَنْ تَبَرُّوا وَتَتَّقُوا وَتُصْلِحُوا بَيْنَ
النَّاسِ وَاللّٰهُ سَمٖيعٌ عَلٖيمٌ ﴿٢٢٤﴾

224- "Yeminlerinizden dolayı, Allah'ı iyilik etmenize, O'ndan sakınmanıza ve insanların arasını düzeltmenize engel kılmayın. Allah işitir ve bilir."

Rabbinizi anmayı, nefsî arzularınızdan herhangi biriyle değerden düşürmeyin. Bir yoruma göre de Allah'ı anmayı, dünya metaının kazanılacağı avcı tuzağı haline getirmeyin.

لَا يُؤَاخِذُكُمُ اللّٰهُ بِاللَّغْوِ فٖيٓ اَيْمَانِكُمْ وَلٰكِنْ يُؤَاخِذُكُمْ بِمَا كَسَبَتْ
قُلُوبُكُمْ وَاللّٰهُ غَفُورٌ حَلٖيمٌ ﴿٢٢٥﴾

225- "Allah sizi, kasıtsız yeminlerinizden sorumlu tutmaz. Lakin kasıtlı yaptığınız yeminlerinizden dolayı sizi sorumlu tutar. Allah bağışlayandır, halimdir."

Dilin hata ile söylediği sözün, iyilik ve kötülükte fazla rolü bulunmamaktadır. Bu konuda geçerli kabul edilen, yüreklerde barınan ve sırlarda saklı bulunan doğru niyetler ve güçlü kararlılıklardır. Bunlar iyi ise karşılığı güzel olur. Kötü olması halinde ise bu karşılık uzunca bir meşakkat olur.

لِلَّذٖينَ يُؤْلُونَ مِنْ نِسَآئِهِمْ تَرَبُّصُ اَرْبَعَةِ اَشْهُرٍ فَاِنْ فَآؤُ فَاِنَّ اللّٰهَ
غَفُورٌ رَحٖيمٌ ﴿٢٢٦﴾

226- "Kadınlarına yaklaşmamaya yemin edenler, dört ay beklerler. Eğer dönerlerse Allah bağışlayandır, merhamet edendir."

Hemcinslerin beraberlikten doğan hakları kayıt altına alınıp hesabı sorulduğuna göre, Hakk'ın hakkı, zorunlu olarak gözetilmeye daha layıktır.

(فَاِنْ فَاۤؤُ) *"Eğer dönerlerse."* Yani eğer öldürdükleri değerleri diriltmeye ve zayi ettiklerini telafi etmeye dönüş yaparlarsa (فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ) *"Allah bağışlayandır, merhamet edendir."* Hanım, kocanın elinde esir olduğu için dili kısa olunca, Allah onun hakkını koruma altına alarak kocaya, ya kendisine dönmesini veya onu boşamasını emretmiştir.

وَاِنْ عَزَمُوا الطَّلَاقَ فَاِنَّ اللّٰهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٢٢٧﴾

227- "Eğer boşamaya karar verirlerse, biliniz ki, Allah işitir ve bilir."

Eğer koca, hanımıyla beraber olma hakkından usanır ve ondan ayrılmaya karar verirse, kuşkusuz Allah, o kocanın halinden ve sırrından haberdardır. Şayet kocada boşamadan cayma belirtileri zuhur ederse bu takdirde boşamanın rükünlerini ihlal etmesin. Çünkü Allah onun, hanımını boşadığını bilir.

Bu arada ayrılık çok ağır geldiği için, Allah boşama sözünün ürkütücülüğünü işittiğini söylemek üzere, kadını teselli etmiştir. O halde bu söz teselli amaçlıdır.

وَالْمُطَلَّقَاتُ يَتَرَبَّصْنَ بِاَنْفُسِهِنَّ ثَلٰثَةَ قُرُوۤءٍ وَلَا يَحِلُّ لَهُنَّ اَنْ يَكْتُمْنَ مَا خَلَقَ اللّٰهُ فِيۤ اَرْحَامِهِنَّ اِنْ كُنَّ يُؤْمِنَّ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَبُعُولَتُهُنَّ اَحَقُّ بِرَدِّهِنَّ فِي ذٰلِكَ اِنْ اَرَادُوۤا اِصْلَاحًا وَلَهُنَّ مِثْلُ الَّذِي عَلَيْهِنَّ بِالْمَعْرُوفِ وَلِلرِّجَالِ عَلَيْهِنَّ دَرَجَةٌ وَاللّٰهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٢٢٨﴾

228- "Boşanmış kadınlar, kendi başlarına üç ay hali beklerler. Eğer onlar, Allah'a ve ahiret gününe gerçekten inanmışlarsa, rahimlerinde Allah'ın yarattığını gizlemeleri kendilerine helal olmaz. Kocaları, boşadıkları kadınları geri almaya daha fazla hak sahibidirler. Eğer kocalar bu konuda barışmak isterlerse. Kadınların da, sorumluluklarına denk hakları vardır ancak erkekler, kadınlara göre bir derece üstünlüğe sahiptirler. Allah azîzdir, hakîmdir."

Allah, boşanmış olan kadınları, kocalarıyla olan beraberliklerine saygı için iddet beklemekle memur kılmıştır. Yani, eğer aranızdaki ilişki koparsa, daha önceki beraberlik hakkına vefa gösterin ve aceleyle eski eşin yerine bir başkasını geçirmeyin. Aksine belli bir süre geçinceye kadar sabredin. Nitekim aralarında beraberlik gerçekleşmeden boşanan karı ile koca için iddet emredilmemiştir.

(وَلَا يَحِلُّ لَهُنَّ اَنْ يَكْتُمْنَ مَا خَلَقَ اللّٰهُ فٖٓي اَرْحَامِهِنَّ اِنْ كُنَّ يُؤْمِنَّ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ) *"Eğer onlar, Allah'a ve ahiret gününe gerçekten inanmışlarsa, rahimlerinde Allah'ın yarattığını gizlemeleri kendilerine helal olmaz."*

Yani eğer aranızdaki evlilik bağı koptuysa, hiç olmazsa Allah'ın yarattığı nesep bağını koparmayınız.

(وَبُعُولَتُهُنَّ اَحَقُّ بِرَدِّهِنَّ فٖي ذٰلِكَ) *"Kocaları, boşadıkları kadınları geri almaya daha fazla hak sahibidirler."*

Yani daha önce gerçekleşen nikâh bağı nedeniyle, kadınla beraberlik önceliğine sahip olan koca, onu geri almaya daha fazla hak sahibidir.

(اِنْ اَرَادُٓوا اِصْلَاحًا) "Eğer kocalar bu konuda barışmak isterlerse."

Yani kadını geri almaktan maksat, onu geri aldıktan sonra tekrar boşamak suretiyle iddetini uzatmak değil de gerçekleşmiş olan ayrılığı telafi etmek olmalıdır.

(وَلَهُنَّ مِثْلُ الَّذٖي عَلَيْهِنَّ بِالْمَعْرُوفِ) *"Kadınların da sorumluluklarına denk hakları vardır."*

Yani şayet kocanın, kendisine yaptığı harcamalardan dolayı kadının üzerinde hakkı varsa, kadının geçmişte kendisi için yerine getirdiği hizmetten doğan hakkı vardır.

(وَلِلرِّجَالِ عَلَيْهِنَّ دَرَجَةٌ وَاللّٰهُ عَزٖيزٌ حَكٖيمٌ) "Ancak erkekler, kadınlara göre bir derece üstünlüğe sahiptirler. Allah azîzdir, hakîmdir."

Erkeklerin bu üstünlüğüne karşılık kadınların da beşeriyetin zaaf ve aczini temsil etme meziyeti vardır.

اَلطَّلَاقُ مَرَّتَانِ فَاِمْسَاكٌ بِمَعْرُوفٍ اَوْ تَسْرِيحٌ بِاِحْسَانٍ وَلَا يَحِلُّ
لَكُمْ اَنْ تَأْخُذُوا مِمَّآ اٰتَيْتُمُوهُنَّ شَيْئًا اِلَّآ اَنْ يَخَافَآ اَلَّا يُقِيمَا
حُدُودَ اللّٰهِ فَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا يُقِيمَا حُدُودَ اللّٰهِ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا
فِيمَا افْتَدَتْ بِهِ تِلْكَ حُدُودُ اللّٰهِ فَلَا تَعْتَدُوهَا وَمَنْ يَتَعَدَّ حُدُودَ
اللّٰهِ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظَّالِمُونَ ﴿٢٢٩﴾

229- "Boşama iki defadır. Bundan sonrası, ya iyilikle tutmak ya da güzellikle salıvermektir. Kadınlara verdiklerinizden bir şey almanız, size helal olmaz. Ancak erkek ve kadın, Allah'ın sınırlarında kalıp evlilik haklarını tam tatbik edememekten korkaklarsa bu durum müstesna. Siz de karı ile kocanın, Allah'ın sınırlarını hakkıyla muhafaza etmelerinden kuşkuya düşerseniz, kadının fidye vermesinde her iki taraf için de sakınca yoktur. Bu söylenenler, Allah'ın koyduğu sınırlardır. Sakın onları aşmayın. Kim Allah'ın sınırlarını aşarsa, işte onlar zalimlerdir."

Boşanmanın parça parça öngörülmesi, ayrılığı gerçekleştirmede acele etmeyi önlemek içindir.

Şiir:

*Beni öldürmeye kararlı olduğunu anlasam da*
*Bırak da azar azar tükeneyim ben*

( فَاِمْسَاكٌ بِمَعْرُوفٍ اَوْ تَسْرِيحٌ بِاِحْسَانٍ ) *"Bundan sonrası, ya iyilikle tutmak ya da güzellikle salıvermektir."*

Ya güzel bir beraberlik yahut da güzel bir ayrılık olmalıdır. Kötü beraberlik ve kötü ahlak ile hayatın tadını kaçırmak ise, ne tarikatta hoş görülür ne de şeriatta beğenilir.

( وَلَا يَحِلُّ لَكُمْ اَنْ تَأْخُذُوا مِمَّآ اٰتَيْتُمُوهُنَّ شَيْئًا ) *"Kadınlara verdiklerinizden bir şey almanız, size helal olmaz."*

Çünkü hadiste: *"Bağışını geri alan kimse, kusmuğunu yutan kimse gibidir"* buyrulmuştur. Kaldı ki, elden çıkarılan bir şeyi geri istemek cimriliktir.

(اِلَّٓا اَنْ يَخَافَٓا اَلَّا يُقٖيمَا حُدُودَ اللّٰهِ فَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا يُقٖيمَا حُدُودَ اللّٰهِ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا فٖيمَا افْتَدَتْ بِهٖ) *"Ancak erkek ve kadın, Allah'ın sınırlarında kalıp evlilik haklarını tam tatbik edememekten korkaklarsa bu durum müstesna. Siz de karı ile kocanın, Allah'ın sınırlarını hakkıyla muhafaza etmelerinden kuşkuya düşerseniz, kadının fidye vermesinde her iki taraf için de sakınca yoktur."*

Yani eğer kadın, kocasından kurtulmak isterse, feda edeceği mal konusunda kendisi için bir sakınca bulunmaz. Çünkü sahibi için kişilik, her şeye bedeldir. Erkek de kadınla birlikte olma imkânını yitirdiği zaman, alacağı bu malla asgarî bir telafide bulunmuş olur. Böylece şayet yaşantısında rahatlığı kaçırdıysa, hiç olmazsa eline maldan bir şey geçmiş olur.

(تِلْكَ حُدُودُ اللّٰهِ فَلَا تَعْتَدُوهَا وَمَنْ يَتَعَدَّ حُدُودَ اللّٰهِ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الظَّالِمُونَ) *"Bu söylenenler, Allah'ın koyduğu sınırlardır. Sakın onları aşmayın. Kim Allah'ın sınırlarını aşarsa, işte onlar zalimlerdir."*

Yani, bunlar Allah'ın size öğrettiği ve sizin için ortaya koyduğu prensiplerdir. O halde Allah'ın sınırlarını koruyun ve haklarını tanımaya devam edin.

فَاِنْ طَلَّقَهَا فَلَا تَحِلُّ لَهُ مِنْ بَعْدُ حَتّٰى تَنْكِحَ زَوْجًا غَيْرَهُ فَاِنْ طَلَّقَهَا
فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَٓا اَنْ يَتَرَاجَعَٓا اِنْ ظَنَّٓا اَنْ يُقٖيمَا حُدُودَ اللّٰهِ وَتِلْكَ
حُدُودُ اللّٰهِ يُبَيِّنُهَا لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ ﴿٢٣٠﴾

230- "Eğer erkek kadını üçüncü defa boşarsa, ondan sonra kadın, bir başka erkekle evlenmedikçe, onu alması kendisine helal olmaz. Eğer bu koca da onu boşarsa, birbirlerine dönmelerinde beis yoktur. Eğer Allah'ın sınırlarını muhafaza edeceklerine inanırlarsa bunlar, Allah'ın sınırlarıdır. Allah, bunları bilmek, öğrenmek isteyenler için açıklar."

Bir başkasının, karısını nikâhlaması erkeğe zor geldiğinden Allah, ayrılığı tercih etmesini, nihai ayrılık uyarısıyla engellemek istemiştir. Bu amaçla Allah, karısından ayrılması halinde o kadın, kendisi için katlanılması çok güç olan ikinci bir erkekle evlenmedikçe kendisine helal olamayacağını açıklamıştır. Amaç, kocanın, imkân ölçüsünde karısını boşamaktan sakınmasıdır.

(فَاِنْ طَلَّقَهَا فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَٓا اَنْ يَتَرَاجَعَٓا) *"Eğer bu koca da onu boşarsa, birbirlerine dönmelerinde beis yoktur."* Yani kadın, birinci kocasıyla evlenebilir.

Burdaki işaret şöyledir: Sevginin kalbi istila etmesi her türlü zorluğa katlanmayı kolaylaştırır. Bu itibarla şayet eşler, ayrılıktan sonra kaybettikleri vuslata hasret çekerek yaptıklarından son derece pişmanlık duyarlarsa, birbirlerine dönmelerinde kendileri için bir sakınca yoktur. Bu durumda kadın, ikinci kocanın varlığı nedeniyle birinci kocadan nasipsiz kalmış gibidir. Koca da bu ayrılığa katlanmakla, canına kıymış gibidir.

(اِنْ ظَنَّٓا اَنْ يُقِيمَا حُدُودَ اللّٰهِ وَتِلْكَ حُدُودُ اللّٰهِ يُبَيِّنُهَا لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ) *"Eğer Allah'ın sınırlarını muhafaza edeceklerine inanırlarsa. Bunlar, Allah'ın sınırlarıdır. Allah, bunları bilmek, öğrenmek isteyenler için açıklar."*

Yani eşler, birbirlerine muhtaç olduklarını anladıkları zaman ondan sonra bir daha ayrılmaya yeltenmezler.

Şiir:

*Yemin ettim, eğer bir defa rastlarsam sana*
*Senden ayrılmaya yeltenmemeye bir daha*

وَاِذَا طَلَّقْتُمُ النِّسَٓاءَ فَبَلَغْنَ اَجَلَهُنَّ فَاَمْسِكُوهُنَّ بِمَعْرُوفٍ اَوْ سَرِّحُوهُنَّ بِمَعْرُوفٍ وَلَا تُمْسِكُوهُنَّ ضِرَارًا لِتَعْتَدُوا وَمَنْ يَفْعَلْ ذٰلِكَ فَقَدْ ظَلَمَ نَفْسَهُ وَلَا تَتَّخِذُوٓا اٰيَاتِ اللّٰهِ هُزُوًا وَاذْكُرُوا نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَمَٓا اَنْزَلَ عَلَيْكُمْ مِنَ الْكِتَابِ وَالْحِكْمَةِ يَعِظُكُمْ بِهِ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ﴿٢٣١﴾

231- "Kadınları boşadığınız ve onlar da bekleme müddetlerini bitirdikleri vakit, ya onları iyilikle tutun yahut iyilikle bırakın. Fakat haksızlık ederek ve zarar vermek için onları nikâh altında tutmayın. Kim, bunu yaparsa muhakkak kendine kötülük etmiş olur. Allah'ın ayetlerini eğlenceye almayın. Allah'ın, sizin üzerinizdeki nimetini, size öğüt vermek üzere indirdiği kitabı ve hikmeti hatırlayın. Allah'tan korkun, bilesiniz ki Allah her şeyi bilir."

Ayet, güzel geçinmeye ve hanıma katı davranmaktan vazgeçmeye dair emri ve anlaşmazlık olması halinde çözümü içermektedir. Bu çözüm, ya haksızlık yapmadan kadını boşamak veya vefa koşuluna bağlı olarak birliktelik hakkını yerine getirmektir.

وَاِذَا طَلَّقْتُمُ النِّسَٓاءَ فَبَلَغْنَ اَجَلَهُنَّ فَلَا تَعْضُلُوهُنَّ اَنْ يَنْكِحْنَ
اَزْوَاجَهُنَّ اِذَا تَرَاضَوْا بَيْنَهُمْ بِالْمَعْرُوفِ ذٰلِكَ يُوعَظُ بِه۪ مَنْ كَانَ
مِنْكُمْ يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ذٰلِكُمْ اَزْكٰى لَكُمْ وَاَطْهَرُ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ
وَاَنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ﴿٢٣٢﴾

232- "Kadınları boşadığınız ve onlar da bekleme müddetlerini bitirdikleri vakit, aralarında iyilikle anlaştıkları takdirde, onların eski kocalarıyla evlenmelerine engel olmayın. İşte bununla içinizden Allah'a ve ahiret gününe inanan kimselere öğüt verilmektedir. Bu öğüdü tutmanız, kendiniz için en iyisi ve en temizidir. Allah bilir, siz bilmezsiniz."

Ayet, velileri kadınlara zarar vermekten alıkoymayı, cahiliye duygusunu terk etmeyi ve evlenmek istedikleri takdirde, kadınları evlendirme konusunda, kibir ve gurura kapılmaksızın Allah'ın hükmüne boyun eğmeyi içermektedir.

Hatta kadın, kendisine talip olan denk biriyle evlenmeye razı olduğu zaman, ona zulmetmeniz haramdır. Bu arada nefsi yenmek

suretiyle beşerî vasıflardan arınmak, Allah için yapılan en zor bir cihad ve en dürüst bir muameledir.

وَالْوَالِدَاتُ يُرْضِعْنَ اَوْلَادَهُنَّ حَوْلَيْنِ كَامِلَيْنِ لِمَنْ اَرَادَ اَنْ يُتِمَّ الرَّضَاعَةَ وَعَلَى الْمَوْلُودِ لَهُ رِزْقُهُنَّ وَكِسْوَتُهُنَّ بِالْمَعْرُوفِ لَا تُكَلَّفُ نَفْسٌ اِلَّا وُسْعَهَا لَا تُضَآرَّ وَالِدَةٌ بِوَلَدِهَا وَلَا مَوْلُودٌ لَهُ بِوَلَدِهِ وَعَلَى الْوَارِثِ مِثْلُ ذٰلِكَ فَاِنْ اَرَادَا فِصَالًا عَنْ تَرَاضٍ مِنْهُمَا وَتَشَاوُرٍ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا وَاِنْ اَرَدْتُمْ اَنْ تَسْتَرْضِعُوٓا اَوْلَادَكُمْ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ اِذَا سَلَّمْتُمْ مَآ اٰتَيْتُمْ بِالْمَعْرُوفِ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ﴿٢٣٣﴾

233- "Emzirmeyi tamamlatmak isteyen baba için anneler, çocuklarını iki tam yıl emzirirler. Onların, örfe uygun olarak beslenmesi ve giyimi, baba tarafına aittir. Bir insan, ancak gücü yettiğinden sorumlu tutulur. Hiçbir anne, çocuğu sebebiyle zarar uğratılmamalıdır. Hiçbir baba da, çocuğu yüzünden zarara uğratılmamalıdır. Eğer ana ve baba, birbiriyle görüşerek ve karşılıklı anlaşarak çocuğu memeden kesmek isterlerse kendilerine günah yoktur. Çocuklarınızı emzirtmek istediğiniz takdirde, sütanneye vermekte olduğunuzu iyilikle teslim etmeniz şartıyla, üzerinize günah yoktur. Allah'tan korkun ve bilin ki, Allah yaptıklarınızı bilir."

Dillere destan olan en büyük merhamet, annelerin merhametidir. Bu itibarla Allah, annelere, çocuğu iki tam yıl emzirmek suretiyle merhameti tamamlamalarını emretmiştir. Çocuğu iki yıldan önce sütten kesmek ise Allah'ın kula olan merhametinin, annelerin merhametinden daha mükemmel olduğunu göstermektedir.

(وَعَلَى الْمَوْلُودِ لَهُ رِزْقُهُنَّ وَكِسْوَتُهُنَّ بِالْمَعْرُوفِ) *"Onların, örfe uygun olarak beslenmesi ve giyimi, baba tarafına aittir."*

Yani, çocuğu emziren kadınların beslenmesi ve giyimi örfe uygun olarak babaya aittir. Bu kadınlar, baba adına çocuğu emzirdiklerinden

hakları da onun üzerine vacip olur. Çünkü tamamı bir kimseye ait olan şeyin sorumluluğunun tamamı da o kimseye aittir.

(لَا تُكَلَّفُ نَفْسٌ اِلَّا وُسْعَهَا) *"Bir insan, ancak gücü yettiğinden sorumlu tutulur."*

Sahip olunan imkânı esirgemek cimriliktir. Güçsüzlük halinde durgun kalmak ise mazerettir.

(لَا تُضَٓارَّ وَالِدَةٌ بِوَلَدِهَا) *"Hiçbir anne, çocuğu sebebiyle"* emzirme ve babanın sorumlu olduğu diğer hususlarda *"zarar uğratılmamalıdır."*

(وَلَا مَوْلُودٌ لَهُ بِوَلَدِه۪ وَعَلَى الْوَارِثِ مِثْلُ ذٰلِكَ) *"Hiçbir baba da çocuğu yüzünden zarara uğratılmamalıdır."*

Yani gerekli olan nafaka ve şefkat konusunda baba, çocuğu sebebiyle mağdur edilmemelidir. Zira nasıl ki, çocuğun ebeveyn üzerinde hakkı varsa, ebeveynin de çocuk üzerinde hakkı vardır.

(فَاِنْ اَرَادَا فِصَالًا عَنْ تَرَاضٍ مِنْهُمَا وَتَشَاوُرٍ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَا وَاِنْ اَرَدْتُمْ اَنْ تَسْتَرْضِعُوٓا اَوْلَادَكُمْ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ اِذَا سَلَّمْتُمْ مَٓا اٰتَيْتُمْ بِالْمَعْرُوفِ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ بِمَا تَعْمَلُونَ بَص۪يرٌ) *"Eğer ana ve baba, birbiriyle görüşerek ve karşılıklı anlaşarak çocuğu memeden kesmek isterlerse kendilerine günah yoktur. Çocuklarınızı emzirtmek istediğiniz takdirde, sütanneye vermekte olduğunuzu iyilikle teslim etmeniz şartıyla, üzerinize günah yoktur. Allah'tan korkun ve bilin ki, Allah yaptıklarınızı bilir."*

Yani, niyet iyi olduktan sonra, çocuğu iki yıldan önce sütten kesmenin günahı yoktur. Allah, bu ifadelerle birlikteliğin yolunu açmakta ve maddî sıkıntının olduğu şartlarda güzel ahlakı öğretmektedir. Nitekim *merhamet etmeyene merhamet edilmez*. Hz. Peygamber (s.a.v.) de çocuklarını öpmediğini söyleyen adama: *"Kuşkusuz Allah, merhameti sadece kötü insanın kalbinden söküp atar"* buyurmuştur.

وَالَّذ۪ينَ يُتَوَفَّوْنَ مِنْكُمْ وَيَذَرُونَ اَزْوَاجًا يَتَرَبَّصْنَ بِاَنْفُسِهِنَّ اَرْبَعَةَ اَشْهُرٍ وَعَشْرًا فَاِذَا بَلَغْنَ اَجَلَهُنَّ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ ف۪يمَا فَعَلْنَ ف۪ٓي اَنْفُسِهِنَّ بِالْمَعْرُوفِ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَب۪يرٌ ٢٣٤

234- "Sizden ölenlerin, geride bıraktıkları eşleri, kendi başlarına dört ay on gün beklerler. Bekleme müddetlerini bitirdikleri vakit, kendileri hakkında yaptıkları meşru işlerde size bir günah yoktur. Allah, yapmakta olduklarınızı bilir."

Ayrılığı tercih sonucu olmadığı için, ölen kocanın hakkı daha büyük olunca, ona gösterilecek vefanın süresi de daha uzun tutulmuştur. Bu arada İslam'ın başlangıç döneminde vefat iddeti bir yıl iken daha sonra, kadının rahminin ölen kocanın dölünden boş olduğunun kesinleşmesi için bu süre, dört ay on güne indirilmiştir. Bu süre sona erdikten sonra kadın, başka bir kocayla evlenebilir. Hiç kimse, ölüye vefa hakkını ömrün sonuna kadar sürdürmez.

Şiir:

*Nasıl ki çürüyorsa toprakta yüzler*
*Çürür öyle de onlar için duyulan hüzünler*

وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ فٖيمَا عَرَّضْتُمْ بِهٖ مِنْ خِطْبَةِ النِّسَٓاءِ اَوْ
اَكْنَنْتُمْ فٖيٓ اَنْفُسِكُمْ عَلِمَ اللّٰهُ اَنَّكُمْ سَتَذْكُرُونَهُنَّ وَلٰكِنْ لَا
تُوَاعِدُوهُنَّ سِرًّا اِلَّٓا اَنْ تَقُولُوا قَوْلًا مَعْرُوفًا وَلَا تَعْزِمُوا
عُقْدَةَ النِّكَاحِ حَتّٰى يَبْلُغَ الْكِتَابُ اَجَلَهُ وَاعْلَمُٓوا اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ
مَا فٖيٓ اَنْفُسِكُمْ فَاحْذَرُوهُ وَاعْلَمُٓوا اَنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ حَلٖيمٌ ﴿٢٣٥﴾

235- "İddet beklemekte olan kadınlarla evlenme hususundaki düşüncelerinizi üstü kapalı biçimde anlatmanızda veya onu içinizde gizli tutmanızda size günah yoktur. Allah bilir ki, siz onları anacaksınız. Lakin meşru sözler söylemeniz müstesna, sakın onlara gizlice buluşma sözü vermeyin. Farz olan bekleme müddeti dolmadan, nikah kıymaya kalkışmayın. Bilin ki, Allah gönlünüzdekini bilir. Bu sebeple Allah'tan sakının. Şunu iyi bilin ki, Allah gafûrdur, halimdir."

Bu konuda sadece sevgiyi celp edecek ve vuslat haline temel oluşturacak sözler mubah sayılmıştır. Bir günaha işarette bulunmak veya suç sayılan bir davranışta bulunma sözü vermek gibi sakıncalı durumlara kalkışmak ise haram kılınmıştır.

(وَلَا تَعْزِمُوا عُقْدَةَ النِّكَاحِ حَتّٰى يَبْلُغَ الْكِتَابُ اَجَلَهُ وَاعْلَمُوا اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ مَا فِي اَنْفُسِكُمْ فَاحْذَرُوهُ وَاعْلَمُوا اَنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ حَلِيمٌ) *"Farz olan bekleme müddeti dolmadan, nikâh kıymaya kalkışmayın. Bilin ki, Allah gönlünüzdekini bilir. Bu sebeple Allah'tan sakının. Şunu iyi bilin ki, Allah gafûrdur, halimdir."*

Yani, birinci kocadan dolayı gerekli olan iddet müddeti bitmelidir. Çünkü geçmişe olan sayı zayi edilemez.

لَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ اِنْ طَلَّقْتُمُ النِّسَٓاءَ مَا لَمْ تَمَسُّوهُنَّ اَوْ تَفْرِضُوا لَهُنَّ فَرِيضَةً وَمَتِّعُوهُنَّ عَلَى الْمُوسِعِ قَدَرُهُ وَعَلَى الْمُقْتِرِ قَدَرُهُ مَتَاعًا بِالْمَعْرُوفِ حَقًّا عَلَى الْمُحْسِنِينَ ﴿٢٣٦﴾

236- "Nikâhtan sonra henüz dokunmadan veya onlar için belli bir mehir tayin etmeden kadınları boşarsanız, bunda size mehir zorunluluğu yoktur. Bu durumda onlara hediye cinsinden bir şeyler verin. Zengin olan, durumuna göre, fakir de durumuna göre vermelidir. Münasip bir hediye vermek iyiler için bir borçtur."

Hemcinsinizle birleşme şeklinde gerçekleşen bir tecrübeden sonra ayrılmaya karar verdiğiniz takdirde, istemeniz halinde ayrılmayı tercih etmenizde bir sakınca yoktur. Çünkü kendisinde ayrılmak caiz olmayan yegâne varlık Allah'tır. Yaratıkların birbiriyle olan beraberliği ise vacip değil, netice itibariyle caizdir.

Bu arada sırf eşleriniz olarak anılmış olmalarından dolayı, belirtilen mehrin yarısını kendilerine vermeniz vaciptir.

Zira her ne şekilde olursa olsun, ayrılık zor olduğundan hak olarak tanınan bu bedel, ayrılık acısının telafisi mesabesinde olur.

Şayet mehrin miktarı belirtilmemişse, bu durumda akit kadına yapılacak mali bir katkıdan arındırılamaz. Çünkü rahatlatıcı hiçbir çareye başvurmadan ayrılık acısı çekmek büyük bir beladır.

وَاِنْ طَلَّقْتُمُوهُنَّ مِنْ قَبْلِ اَنْ تَمَسُّوهُنَّ وَقَدْ فَرَضْتُمْ لَهُنَّ فَرِيضَةً فَنِصْفُ مَا فَرَضْتُمْ اِلَّٓا اَنْ يَعْفُونَ اَوْ يَعْفُوَا الَّذِي بِيَدِهِ عُقْدَةُ النِّكَاحِ وَاَنْ تَعْفُوٓا اَقْرَبُ لِلتَّقْوٰى وَلَا تَنْسَوُا الْفَضْلَ بَيْنَكُمْ اِنَّ اللّٰهَ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ﴿٢٣٧﴾

237- "Kendilerine mehir tayin ederek evlendiğiniz kadınları, temas etmeden boşarsanız, tayin ettiğiniz mehrin yarısı onların hakkıdır. Ancak kadınların vazgeçmesi veya nikâh bağı elinde bulunan velinin vazgeçmesi hali müstesna, mehri bahşetmeniz takvaya daha uygundur. Aranızda iyiliği unutmayın. Şüphesiz Allah, yapmakta olduklarınızı hakkıyla görür."

Mehri bahşetmenin daha olgunca ve daha güzel bir davranış olması, ya kadının, hakkı olan yarısından vazgeçmesi yahut da kocanın, kendisine ait olan diğer yarısından vazgeçmesi şeklinde olur.

( وَلَا تَنْسَوُا الْفَضْلَ بَيْنَكُمْ اِنَّ اللّٰهَ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ) *"Aranızda iyiliği unutmayın. Şüphesiz Allah, yapmakta olduklarınızı hakkıyla görür."*

Bu konuda şu iki yorum yapılmıştır:

- İyiliği göz ardı edip farzla yetinen kimse, yakın zamanda farzı da ihlal eder.

- İyiliği unutmak, sahibini cimriliğe yaklaştır. Oysa cömertlerin şiarı şudur: iyilik noktalarını kestiremedikleri zaman, iyiliğin ince noktalarını görebilmek ve bu sayede iyiliğin vesilelerini yeterince elde edebilmek için cömertlik basiretlerini bilerler.

حَافِظُوا عَلَى الصَّلَوَاتِ وَالصَّلٰوةِ الْوُسْطٰى وَقُومُوا لِلّٰهِ قَانِتِينَ ﴿٢٣٨﴾

238- "Namazlara ve orta namaza devam edin. Allah'a saygı ve bağlılık içinde namaz kılın."

Namazı muhafaza etmek, onu heybetle kılmaya başlamak tazimle bitirmek ve edep sıfatıyla, tecellinin sürekliliğini sağlamak demektir. Bu arada orta namazın müphem bırakılması, namazlardan her birinin orta namaz olabileceği inancıyla hepsini titizlikle kılmamızı ve namazlardan hiç birinde bir kusur işlemememizi temin etmek içindir.

فَاِنْ خِفْتُمْ فَرِجَالًا اَوْ رُكْبَانًا فَاِذَٓا اَمِنْتُمْ فَاذْكُرُوا اللّٰهَ كَمَا عَلَّمَكُمْ
مَا لَمْ تَكُونُوا تَعْلَمُونَ ﴿٢٣٩﴾

239- "Eğer herhangi bir şeyden korkarsanız, namazlarınızı yürüyerek veya binmiş olarak kılın. Güvene kavuştuğunuz zaman, siz bilmezken Allah'ın size öğrettiği şekilde O'nu anın."

Yani, imkânınız olan şekil üzere, yapabildiğiniz münacatımın vakitlerini bozmayın. Çünkü düşmanlarınızdan hissettiğiniz korku, aslında onları üzerinize benim musallat kılmamdan dolayıdır. O halde siz, kalplerinizle benimle baş başa kaldığınız zaman, onların eliyle size zarar verdirmem ve onlara karşı size zafer veririm. Sonra korkunuz geçip güvene kavuştuğunuz zaman, vakitlerinizi, gizli ve açık olarak huzurumda gireceğiniz itikafta tüketmek suretiyle istikrarınıza dönün.

وَالَّذِينَ يُتَوَفَّوْنَ مِنْكُمْ وَيَذَرُونَ اَزْوَاجًا وَصِيَّةً لِاَزْوَاجِهِمْ
مَتَاعًا اِلَى الْحَوْلِ غَيْرَ اِخْرَاجٍ فَاِنْ خَرَجْنَ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ
فِي مَا فَعَلْنَ فِٓي اَنْفُسِهِنَّ مِنْ مَعْرُوفٍ وَاللّٰهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٢٤٠﴾

240- "Sizden ölüp de dul eşler bırakan kimseler, zevcelerinin, evlerinden çıkarılmadan, bir yıla kadar bıraktıkları maldan faydalanmaları hususunda sağlıklarında vasiyet etsinler. Eğer o kadınlar, kendiliklerinden çıkıp giderlerse, kendileri hakkında

yaptıkları meşru şeylerden size bir günah yoktur. Allah azîzdir, hakîmdir."

İslam'ın başlangıcında vefat iddeti, tıpkı Arapların bu konudaki söylem ve eylemleri gibi, kesintisiz bir yıl idi. Sonra bu hüküm kaldırılıp süre, dört ay on güne indirildi. Çünkü ölen kocaya saygı ve vefa süresinin sona ermesi gerekir.

Şiir:

*Dedi ki: Ölürsen eğer, yaşayamam ben*
*Dedim ki: münafıklık yaptın, sus!*
*Hangi canlıyı gördün ki,*
*Öldü, ölünün üzüntüsüyle*

وَلِلْمُطَلَّقَاتِ مَتَاعٌ بِالْمَعْرُوفِ حَقًّا عَلَى الْمُتَّقِينَ ﴿٢٤١﴾

241- "Boşanmış kadınların hakkaniyet ölçülerinde kocalarından menfaat sağlamak haklarıdır. Bu, Allah korkusu taşıyanlar üzerine bir borçtur."

Ayet, kadınların üzerinde ayrılığı ve mahrumiyeti bir araya getirmek suretiyle musibetlerini ikiye katlamamaya işaret etmektedir.

كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيَاتِهِ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ﴿٢٤٢﴾

242- "Allah, size işte böyle ayetlerini açıklar ki, düşünüp hakikati anlayasınız."

Yani, delilleri anlayıp size emredilen kurallara göre davranmanız ve hükmünün işaretlerini anlamak suretiyle felaha ermeniz için Allah ayetlerini açıklar.

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِينَ خَرَجُوا مِنْ دِيَارِهِمْ وَهُمْ اُلُوفٌ حَذَرَ الْمَوْتِ
فَقَالَ لَهُمُ اللّٰهُ مُوتُوا ثُمَّ اَحْيَاهُمْ اِنَّ اللّٰهَ لَذُو فَضْلٍ عَلَى النَّاسِ
وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَشْكُرُونَ ﴿٢٤٣﴾

243- “Binlerce oldukları halde, ölüm korkusundan dolayı yurtlarından çıkıp gidenleri görmedin mi? Allah onlara: ‘Ölün’ dedi, öldüler. Sonra onları diriltti. Şüphesiz Allah, insanlara karşı lütufkârdır. Lakin insanların çoğu şükretmez.”

Onlar, Allah’ın ölüleri diriltebileceğini akla uzak görünce bunu onlarda uygulayarak gözler önüne sermiş oldu. Sonra tevhid konusunda basireti keskin olmayanlara bu da fayda vermedi. Oysa basireti güçlü olana bu tür müşahedelerin olmaması zarar vermez. Çünkü öyleleri gayba inandıkları için kendilerine haber verileni hakikat kabul ederler.

وَقَاتِلُوا فِي سَبِيلِ اللّٰهِ وَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٢٤٤﴾

244- “Allah yolunda savaşın ve bilin ki, Allah her şeyi işitir ve bilir.”

Yani eğer bir acı duyar da yüksek sesle inlerseniz bilin ki, Allah iniltinizi işitir, durumlarınızı bilir ve işlerinizi görür. Bu arada ayet, karşılaştıkları acıyı hafifletmeyi hedeflemektedir.

Şiir:

*Dilediği zaman insanlar huzur ve rahatı*
*Ben sana şikâyette bulunup işitmeni diledim*

مَنْ ذَا الَّذِي يُقْرِضُ اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا فَيُضَاعِفَهُ لَهُٓ اَضْعَافًا كَثِيرَةً
وَاللّٰهُ يَقْبِضُ وَيَبْصُۜطُ وَاِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ﴿٢٤٥﴾

245- “Verdiğini kat kat fazlasını kendisine ödemesi için, Allah’a güzel bir borç verecek yok mu?”

Arapçada sözlük anlamı kesmek olan (قَرْضًا) *“kard”* kelimesinin borç anlamında kullanılmasının nedeni, borç verenin, borçluya vermek üzere, kendi malından bir miktar kesip ayırmasıdır. Bu bağlamda sadaka veren de, onu malından kestiği için sadakası *“kard”* lafzıyla ifade edilmiştir. Bu itibarla *“kard”* kesmek demektir. Ancak bu

adlandırma, dostların kalplerini korumak içindir. Zira Allah, sadaka babında *"kard"* adı ve lafıyla hitapta bulunmuştur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Ayet, kendisinden borç istenmesi suretiyle zenginin rütbesinin büyüklüğünü ifade etmektedir. Ancak burada fakirin mertebesi daha büyüktür. Çünkü Allah, onun için borç istemiştir. Nitekim herkesten borç istenebilir, ancak herkes için borç istenmez. Nitekim hadiste şu rivayet yer almıştır: *"Hz. Peygamber (s.a.v.) vefat ederken, zırhı ailesinin azığı için aldığı bir miktar arpa karşılığında Ebû Şahme adlı Yahudi'nin elinde rehin bulunuyordu."* İşte Hz. Peygamber (s.a.v.)'in, kimden ve kimler için borç aldığını gözden kaçırmamak gerekir.

- Güzel borç, bir karşılık olarak peşine düşmediğin ve karşılığında bedel istemediğin şeydir.

- Güzel borç, gafletle değil, şuurla verilen şeydir.

- Güzel borç, ilim ehline göre zengin iken, hakikat ehline göre ise isâr şartını taşıdığında zorunlu olarak verilen şeydir.

- Güzel borç, ilim ehline göre iki yüzde beş oranında, tasavvuf ehli ıstılahında ise hepsini vermek ve verilene canı da eklemektir.

( وَاللّٰهُ يَقْبِضُ وَيَبْصُۜطُ ) *"Darlık veren de bolluk veren de Allah'tır."*

Allah sadakayı, kabul olacak şekilde zenginlerden alır, sonra onlara fazlasıyla vererek yerini doldurur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah'ın rızkı alması onu daraltması anlamındadır. Ayette yer alan ( وَيَبْصُۜطُ ) *"bast"* kelimesi ise Allah'ın rızkı genişletmesi demektir. Allah, kendilerini sabırla imtihan etmek için fakirlere darlık verir. Şükürle yükümlü kılmak için de zenginlere bolluk verir.

- Rızkı zenginlerden bilmemekle yükümlü kılmak suretiyle yoksulları teselli için rızkı daraltır. Fakirler, zenginlerin minneti altına girmesin diye de rızkı genişletir.

- Allah zenginlere şöyle buyurmuştur: *Ben, fakirlerin rızkını daralttığım zaman onları o halde bırakmayın. Sizin rızkınızı genişlettiğim zaman da bunun, sizdeki bir faziletten dolayı olduğunu sanmayın.*

- Allah, yüz çevirmek suretiyle kalplere kabz hali, onlara yönelmek suretiyle de bast hali vermiştir.

- Kabz, kalplere hâkim olan korkudan, bast ise kalplere hâkim olan ümitten dolayıdır.

- Kabz kahrının, bast ise lütfünün göstergesidir.

- Kabz sırrını, bast ise keşfini ifade eder.

- Kabz müritler için, bast ise muratlar içindir.

- Kabz yarışanlar için, bast ise arifler içindir.

- Kabz seni senden almak, bast ise seni kendisiyle huzurlu kılmaktır.

- Kabz Allah'ın hakkı, bast ise senin nasibindir.

- Kabz hakka sırt çeviren için, bast ise Hakk'ın kendisine tecelli ettiği kimse içindir.

- Allah, sana senin yaptığını gösterdiği zaman darlık, sana kendi lütfünü gösterdiği zaman da genişlik vermiş olur.

- Allah, azabı anlatarak darlık, kabulü anlatarak da genişlik verir.

اَلَمْ تَرَ اِلَى الْمَلَاِ مِنْ بَنِي اِسْرَآءِيلَ مِنْ بَعْدِ مُوسٰى اِذْ قَالُوا
لِنَبِيٍّ لَهُمُ ابْعَثْ لَنَا مَلِكًا نُقَاتِلْ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ قَالَ هَلْ عَسَيْتُمْ
اِنْ كُتِبَ عَلَيْكُمُ الْقِتَالُ اَلَّا تُقَاتِلُوا قَالُوا وَمَا لَنَآ اَلَّا نُقَاتِلَ
فِي سَبِيلِ اللّٰهِ وَقَدْ اُخْرِجْنَا مِنْ دِيَارِنَا وَاَبْنَآئِنَا فَلَمَّا كُتِبَ
عَلَيْهِمُ الْقِتَالُ تَوَلَّوْا اِلَّا قَليلًا مِنْهُمْ وَاللّٰهُ عَليمٌ بِالظَّالِمِينَ ٢٤٦

246- "Mûsâ'dan sonra İsrail oğullarından ileri gelen kimseleri görmedin mi? Kendilerine gönderilmiş bir peygambere: 'Bize bir hükümdar gönder ki, Allah yolunda savaşalım' demişlerdi. 'Ya

size savaş yazılır da savaşmazsanız' dedi. 'Yurtlarımızdan çıkarılmış, çocuklarımızdan uzaklaştırılmış olduğumuz halde, Allah yolunda neden savaşmayalım' dediler. Kendilerine savaş yazılınca, içlerinden pek azı hariç, geri dönüp kaçtılar. Allah, zalimleri iyi bilir."

İsrail oğulları, yaşadıkları durumu bir tercihle karşılayarak peygamberlerinden, kendilerine savaşma izni vermesini istediler. Ancak kendiliklerinden üstlendikleri savaş konusundaki talepleri kabul edilince bu kez tembelliğe meylederek savaşmamak için çeşitli bahaneler uydurdular. Kimisine göre de İsrail oğulları, mallarını ve yurtlarını savunmak için savaşma azmini ve kararlığını ortaya koymuşlardır. Zira:

(قَالُوا وَمَا لَنَآ اَلَّا نُقَاتِلَ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ وَقَدْ اُخْرِجْنَا مِنْ دِيَارِنَا وَاَبْنَآئِنَا فَلَمَّا كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقِتَالُ تَوَلَّوْا اِلَّا قَلِيلًا مِنْهُمْ وَاللّٰهُ عَلِيمٌ بِالظَّالِمِينَ) *"'Yurtlarımızdan çıkarılmış, çocuklarımızdan uzaklaştırılmış olduğumuz halde, Allah yolunda neden savaşmayalım' dediler. Kendilerine savaş yazılınca, içlerinden pek azı hariç, geri dönüp kaçtılar. Allah, zalimleri iyi bilir."*

İşte bu nedenle amaçları gerçekleşmedi. Çünkü kararlılıkları, sadece Allah'ın hakkını korumaya dönük değildi. Şayet onlar: O, bize emrettiği ve vacip kıldığı halde, aynı zamanda O bizim ulu Tanrımız ve Mevla'mız olup emri üzerimize vacip olduğu halde, Allah yolunda neden savaşmayalım, deselerdi, belki de amaçlarını gerçekleştirmeye muvaffak olurlardı.

وَقَالَ لَهُمْ نَبِيُّهُمْ اِنَّ اللّٰهَ قَدْ بَعَثَ لَكُمْ طَالُوتَ مَلِكًا قَالُوٓا اَنّٰى
يَكُونُ لَهُ الْمُلْكُ عَلَيْنَا وَنَحْنُ اَحَقُّ بِالْمُلْكِ مِنْهُ وَلَمْ يُؤْتَ سَعَةً
مِنَ الْمَالِ قَالَ اِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰيهُ عَلَيْكُمْ وَزَادَهُ بَسْطَةً فِي الْعِلْمِ
وَالْجِسْمِ وَاللّٰهُ يُؤْتِي مُلْكَهُ مَنْ يَشَآءُ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيمٌ ﴿٢٤٧﴾

247- "Peygamberleri onlara: 'Bilin ki, Allah, Tâlût'u size hükümdar olarak gönderdi' dedi. Bunu üzerine: 'Biz hükümdarlığa daha

layık olduğumuz halde, kendisine servet ve zenginlik yönünden geniş imkânlar verilmemişken o bize nasıl hükümdar olur?' dediler. 'Allah, sizin üzerinize onu seçti, ilimde ve bedende ona üstünlük verdi. Allah, mülkünü dilediğine verir. Allah, her şeyi ihata eden ve her şeyi bilendir' dedi."

Onlar, tercih hakkını unuttular ve duruma zahir gözüyle baktıklarından Tâlût'un hükümdar olmasını akla uzak buldular. Çünkü o, malı olmayan fakir bir kimse idi. Bunun üzerine Allah, faziletin hakkı tercih etmekle gerçekleşeceğini ve malı olmasa da, Tâlût'a fazla ilim vererek bilgisi ve beden gücüyle onu kendilerinden üstün kıldığını İsrail oğullarına açıkladı. Kimisine göre de ayette Tâlût'un, bünyece iri yarı oluşu değil, ahlakî meziyetlere sahip olduğu ifade edilmek istenmiştir. Nitekim atasözünde: *"Falanca, cisimsiz bir isimdir"* denilmiştir. Yani, anlamsız bir anlatımdır.

وَقَالَ لَهُمْ نَبِيُّهُمْ اِنَّ اٰيَةَ مُلْكِه۪ٓ اَنْ يَاْتِيَكُمُ التَّابُوتُ ف۪يهِ سَك۪ينَةٌ مِنْ رَبِّكُمْ وَبَقِيَّةٌ مِمَّا تَرَكَ اٰلُ مُوسٰى وَ اٰلُ هٰرُونَ تَحْمِلُهُ الْمَلٰٓئِكَةُ اِنَّ ف۪ي ذٰلِكَ لَاٰيَةً لَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِن۪ينَ ﴿٢٤٨﴾

248- "Peygamberleri onlara dedi ki: 'Onun hükümdarlığının alameti, Tâbût'un size gelmesidir. Meleklerin taşıdığı o Tâbût'un içinde Rabbinizden size bir ferahlık ve sükûnet, Musa ve Harun hanedanlarının bıraktıklarından bir kalıntı vardır. Eğer inanmış kimseler iseniz, sizin için bunda şüphesiz bir alamet vardır.'"

Allah (c.c.), bir nur ortaya koyduğu zaman onu, kendi katından bir teyitle destekler. Bu itibarla Allah, peygamberlerinin, yaptığı seçimde isabet ettiğini gösteren delillerini göstermek suretiyle, onlara hükümdar tayin ettiği Tâlût'un sıfatı hakkındaki belirsizliği ortadan kaldırdı. Bu amaçla, huzur vesilesi olan Tâbût'u onlara geri gönderdi ve böylece Tâlût'un hükümdarlığının alameti ve peygamberlerinin, kendilerine haber verdiği konuda doğruyu söylediği anlaşılmış oldu.

Bir yoruma göre de, Allah İsrail oğullarının huzurunu, levhalar, Hz. Musa'nın asası ve peygamberlerinin diğer eserlerinin yerine rıza gösterdikleri Tâbût'a bağlarken, bu ümmetin huzurunu kalplerine bağlayarak: (هُوَ الَّذ۪ٓي اَنْزَلَ السَّك۪ينَةَ ف۪ي قُلُوبِ الْمُؤْمِن۪ينَ) *"Müminlerin kalplerine huzuru indiren O'dur"* (Fetih, 48/4) buyurmuştur. Sonra Tâbût, düşmanların ve diğer bazı kimselerin eline geçiyordu. Bu nedenle bazen yere gömülüyor, bazen ele geçirilip taşınıyor, bazen geri getiriliyor ve daha pek çok duruma maruz kalıyordu. Müminlerin kalplerine gelince Allah, onlarla sahiplerinin arasına girmiş ve bu kalpleri ne bir hükümdara ne bir peygambere ne semaa ne havaya ne bir yere ve ne de bir şahsa emanet etmiştir. Hz. Peygamber (s.av.) de: *"Müminin kalbi, Rahmân'ın parmaklarından iki parmağın arasındadır"* buyurmuştur. Yani, müminin kalbi, Allah'ın elindedir, yönlendirmesi ve tasarrufu altındadır. Burada el ve parmaklardan maksat kudrettir. Bu arada huzuru, düşmanın tasallutu altındaki şeye bağlı bulunan bir topluluk ile huzuru, hiç bir yaratığın üzerinde hâkimiyet sahibi olmadığı şeye bağlı olan ümmet arasında ise büyük fark bulunur.

فَلَمَّا فَصَلَ طَالُوتُ بِالْجُنُودِ قَالَ اِنَّ اللّٰهَ مُبْتَل۪يكُمْ بِنَهَرٍ فَمَنْ شَرِبَ مِنْهُ فَلَيْسَ مِنّ۪ي وَمَنْ لَمْ يَطْعَمْهُ فَاِنَّهُ مِنّ۪ٓي اِلَّا مَنِ اغْتَرَفَ غُرْفَةً بِيَدِه۪ فَشَرِبُوا مِنْهُ اِلَّا قَل۪يلًا مِنْهُمْ فَلَمَّا جَاوَزَهُ هُوَ وَالَّذ۪ينَ اٰمَنُوا مَعَهُ قَالُوا لَا طَاقَةَ لَنَا الْيَوْمَ بِجَالُوتَ وَجُنُودِه۪ قَالَ الَّذ۪ينَ يَظُنُّونَ اَنَّهُمْ مُلَاقُوا اللّٰهِ كَمْ مِنْ فِئَةٍ قَل۪يلَةٍ غَلَبَتْ فِئَةً كَث۪يرَةً بِاِذْنِ اللّٰهِ وَاللّٰهُ مَعَ الصَّابِر۪ينَ ﴿٢٤٩﴾

249- "Tâlût, askerlerle beraber ayrılınca: 'Biliniz ki Allah, sizi bir ırmakla imtihan edecek. Kim ondan içerse benden değildir. Eliyle bir avuç içen müstesna, kim ondan içmezse bendendir' dedi. İçlerinden pek azı müstesna, hepsi ırmaktan içtiler. Tâlût ve iman edenler, beraberce ırmağı geçince: 'Bugün bizim Câlût'a ve askerlerine karşı koyacak hiç gücümüz yoktur' dediler. Allah'ın

huzuruna varacaklarına inananlar: 'Nice az sayıda bir birlik, Allah'ın izniyle çok sayıdaki bir birliği yenmiştir. Allah, sabredenlerle beraberdir' dediler."

Bu ayet şuna işaret etmektedir: Allah, yaratıklarını diğer yaratıklarla, dünya ile ve nefisle birlikte yaşama sınavına tabi tutmuştur. Bu çerçevede beraberliği dengeli, zaruret sınırı dahilinde ve gerektiği kadar olan kimse kurtulur ve güvende olur. Ancak kim, zaruret sınırını aşar ve dünya, nefis ve diğer yaratıklarla olan ilişkilerinde fazla açılır ve onları amaç haline getirerek tercihe yönelirse, bu takdirde eğer yürüttüğü beraberlik günah işlemek şeklinde ise bu kimsenin Allah ile bir ilişiği kalmamış olur. Şayet söz konusu beraberlik ahlakî, ancak zorunlu değilse, o zaman da adı geçenin bu tarikatla ilişiği kesilmiş olur.

(فَشَرِبُوا مِنْهُ اِلَّا قَليلًا مِنْهُمْ) *"İçlerinden pek azı müstesna, hepsi ırmaktan içtiler."*

İşte havas her zaman böyledir. Sayıları az, fakat değerleri büyük olur.

(فَلَمَّا جَاوَزَهُ هُوَ وَالَّذينَ اٰمَنُوا مَعَهُ قَالُوا لَا طَاقَةَ لَنَا الْيَوْمَ بِجَالُوتَ وَجُنُودِهِ) *"Tâlût ve iman edenler, beraberce ırmağı geçince: 'Bugün bizim Câlût'a ve askerlerine karşı koyacak hiç gücümüz yoktur' dediler."*

Böylece onlar, duruma zahir gözüyle baktıklarından içlerine beşerî bir zaaf olan korkudan bir şeyler girmiş oldu. Bunun üzerine Allah, dilediğinde dostlarına olan yardımı hatırlatarak kalplerine güç verdi.

(قَالَ الَّذينَ يَظُنُّونَ اَنَّهُمْ مُلَاقُوا اللّٰهِ كَمْ مِنْ فِئَةٍ قَليلَةٍ غَلَبَتْ فِئَةً كَثيرَةً بِاِذْنِ اللّٰهِ وَاللّٰهُ مَعَ الصَّابِرينَ) *"Allah'ın huzuruna varacaklarına inananlar: "Nice az sayıda bir birlik, Allah'ın izniyle çok sayıdaki bir birliği yenmiştir. Allah, sabredenlerle beraberdir' dediler."*

Bu yenme, onlarla değil; fakat Allah'ın izni, isteği, inayeti ve yardımıyla olur. Allah yardım, destek ve kuvvetle sabredenlerle beraberdir.

وَلَمَّا بَرَزُوا لِجَالُوتَ وَجُنُودِهِ قَالُوا رَبَّنَآ اَفْرِغْ عَلَيْنَا صَبْرًا وَثَبِّتْ اَقْدَامَنَا وَانْصُرْنَا عَلَى الْقَوْمِ الْكَافِرِينَ ﴿٢٥٠﴾

250- "Câlût ve askerleriyle savaşa tutuştuklarında: 'Ey Rabbimiz, yüreğimizi sabırla doldur, Bize direnme gücü ver, kâfir kavme karşı bize yardım et' dediler."

Onların en önemli işi, önce sabır ve düşmana karşı durmak, sonra da onlara karşı zafer kazanmaktır. Çünkü sabır, kul üzerindeki hakkı, zafer de kulların nasibidir. Bu nedenle onlar, Allah'ın hakkını gerçekleştirmeyi ve kendilerine muvaffakiyet vermesini öne aldıktan sonra nasipleri olan zaferi dile getirdiler. Daha sonra ise düşmanlarına karşı zaferi, kendilerini nasiplerinden mahrum kılmaktan doğan intikam için değil; fakat o düşmanlar kâfir ve Allah'ın düşmanları oldukları için talep ettiklerine işarette bulundular.

Böylece onlar, her yönden Allah'a dayanarak ve Allah için hareket ettikleri için yardıma mazhar oldular ve zafere ulaştılar.

فَهَزَمُوهُمْ بِاِذْنِ اللّٰهِ وَقَتَلَ دَاوُدُ جَالُوتَ وَاٰتٰيهُ اللّٰهُ الْمُلْكَ وَالْحِكْمَةَ وَعَلَّمَهُ مِمَّا يَشَآءُ وَلَوْلَا دَفْعُ اللّٰهِ النَّاسَ بَعْضَهُمْ بِبَعْضٍ لَفَسَدَتِ الْاَرْضُ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ ذُو فَضْلٍ عَلَى الْعَالَمِينَ ﴿٢٥١﴾

251- "Sonunda Allah'ın izniyle onları yendiler. Davud da Câlût'u öldürdü. Allah ona hükümdarlık ve hikmet verdi, dilediği ilimlerden ona öğretti. Eğer Allah'ın, insanların bir kısmını diğerleriyle savması olmasaydı, elbette yeryüzü alt üst olurdu. Lakin Allah, bütün âlemlere karşı lütuf ve kerem sahibidir."

Allah, düşmanları kendisine verdiği olağanüstü bedeni güce sahip olan Tâlût ile korkuttu. Ancak savaşta zaferi Davud'un eliyle gerçekleştirdi. Hikâyesinde de anlatıldığı üzere; Davud orta boylu, iri yarı olmayan vasat yapıda bir insandı. Silah olarak da yanında sapandan başka bir şey bulunmuyordu. Ancak zafer onun oldu; çünkü Allah'ın yardımı kendisiyle beraberdi.

(فَهَزَمُوهُمْ بِاِذْنِ اللّٰهِ ) *"Sonunda Allah'ın izniyle onları yendiler."*

Böylece onlardan ne bir eser ne de bir varlık kalmış oldu. Davud da Câlût'u öldürdü. Oysa beden ölçüleri bakımından Câlût'a göre, Davud, onu yenmesi düşünülemeyecek durumdaydı. Ancak sonuç, şu dizelerde söylendiği gibi olmuştu:

*Çıktı karşıma kılıcı çekilmiş olarak*
*Ve: Birimiz saf dışıdır, dedi bana*

(وَلَوْلَا دَفْعُ اللّٰهِ النَّاسَ بَعْضَهُمْ بِبَعْضٍ لَفَسَدَتِ الْاَرْضُ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ ذُو فَضْلٍ عَلَى الْعَالَمِينَ ) Eğer *"Allah'ın, insanların bir kısmını diğerleriyle savması olmasaydı, elbette yeryüzü alt üst olurdu. Lakin Allah, bütün âlemlere karşı lütuf ve kerem sahibidir."*

Eğer insanlar, birbirlerine arka çıkarak hep birlikte ittifak etselerdi, güçlülerin galebesi yüzünden güçsüzler helak olurlardı. Ancak Allah, bazılarından şerlerini defetmek için insanları birbiriyle meşgul etmiştir.

تِلْكَ اٰيَاتُ اللّٰهِ نَتْلُوهَا عَلَيْكَ بِالْحَقِّ وَاِنَّكَ لَمِنَ الْمُرْسَلِينَ ﴿٢٥٢﴾

252- "İşte bunlar Allah'ın ayetleridir. Biz, onları sana doğru olarak anlatıyoruz. Şüphesiz sen, Allah tarafından gönderilmiş peygamberlerdensin."

Senin ilminde ve imkânların dâhilinde, geçmiş olaylara dair olarak bilinmeyen bu hususlara vakıf olmak söz konusu değildi. Sen, ancak Allah tarafından verilen bilgiyle bunlardan haberdar oldun.

تِلْكَ الرُّسُلُ فَضَّلْنَا بَعْضَهُمْ عَلٰى بَعْضٍ مِنْهُمْ مَنْ كَلَّمَ اللّٰهُ
وَرَفَعَ بَعْضَهُمْ دَرَجَاتٍ وَاٰتَيْنَا عِيسَى ابْنَ مَرْيَمَ الْبَيِّنَاتِ وَاَيَّدْنَاهُ
بِرُوحِ الْقُدُسِ وَلَوْ شَٓاءَ اللّٰهُ مَا اقْتَتَلَ الَّذِينَ مِنْ بَعْدِهِمْ مِنْ
بَعْدِ مَا جَٓاءَتْهُمُ الْبَيِّنَاتُ وَلٰكِنِ اخْتَلَفُوا فَمِنْهُمْ مَنْ اٰمَنَ وَمِنْهُمْ
مَنْ كَفَرَ وَلَوْ شَٓاءَ اللّٰهُ مَا اقْتَتَلُوا وَلٰكِنَّ اللّٰهَ يَفْعَلُ مَا يُرِيدُ ﴿٢٥٣﴾

253- "O peygamberlerin bir kısmını diğerlerinden üstün kıldık. Allah, onlardan bir kısmıyla konuşmuş, bazılarını da derece derece yükseltmiştir. Meryem oğlu İsâ'ya açık mucizeler verdik ve onu Ruhu'l-Kudüs ile güçlendirdik. Allah dileseydi, o peygamberlerden sonra gelen milletler, kendilerine açık deliller geldikten sonra birbirleriyle savaşmazlardı. Fakat onlar, ihtilafa düştüler de içlerinden kimi iman etti, kimi de inkâr etti. Allah dileseydi, onlar savaşmazdı. Lakin Allah dilediğini yapar."

Peygamberler, peygamberlik vasfında ortak, ancak özellikleri bakımından farklıdırlar. Her birinin nurları ve nurlarının yansımaları vardır. Bu yönden bazıları, nur ve mertebe bakımından daha yüksektirler. Bu nedenle faziletleri, fiilleri ve durumlarına dayalı liyakatlerinden ötürü değildir. Aksine bu, mazhar oldukları güzel bir ilahî takdir ve hayırlı akıbettir.

(وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ مَا اقْتَتَلَ الَّذِينَ مِنْ بَعْدِهِمْ مِنْ بَعْدِ مَا جَآءَتْهُمُ الْبَيِّنَاتُ وَلٰكِنِ اخْتَلَفُوا فَمِنْهُمْ مَنْ اٰمَنَ وَمِنْهُمْ مَنْ كَفَرَ وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ مَا اقْتَتَلُوا وَلٰكِنَّ اللّٰهَ يَفْعَلُ مَا يُرِيدُ) *"Allah dileseydi, o peygamberlerden sonra gelen milletler, kendilerine açık deliller geldikten sonra birbirleriyle savaşmazlardı. Fakat onlar, ihtilafa düştüler de içlerinden kimi iman etti, kimi de inkâr etti. Allah dileseydi, onlar savaşmazdı. Lakin Allah dilediğini yapar."*

Lakin onlar, ezelî takdirle yönlendirilirler ve dayanak teşkil edip dikkate alınacak gerçek tercihten arındırılmışlardır. Nitekim ubudiyet, hizmet kemerini bağlamak ve ezelî takdiri görebilmektir.

يَآ اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوٓا اَنْفِقُوا مِمَّا رَزَقْنَاكُمْ مِنْ قَبْلِ اَنْ يَاْتِيَ يَوْمٌ لَا بَيْعٌ فِيهِ وَلَا خُلَّةٌ وَلَا شَفَاعَةٌ وَالْكَافِرُونَ هُمُ الظَّالِمُونَ ﴿٢٥٤﴾

254- "Ey iman edenler, kendisinde artık alış veriş, dostluk ve kayırma bulunmayan gün gelmeden önce size verdiğimiz rızktan hayır yolunda harcayın. Gerçekleri inkâr edenler elbette zalimlerdir."

Yani, güç kaybolmadan ve ümit tükenmeden önce, iyilik yapma imkânı değerlendirin.

اَللّٰهُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ اَلْحَيُّ الْقَيُّومُ لَا تَاْخُذُهُ سِنَةٌ وَلَا نَوْمٌ لَهُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ مَنْ ذَا الَّذِي يَشْفَعُ عِنْدَهُٓ اِلَّا بِاِذْنِهِ يَعْلَمُ مَا بَيْنَ اَيْدِيهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ وَلَا يُحِيطُونَ بِشَيْءٍ مِنْ عِلْمِهِٓ اِلَّا بِمَا شَٓاءَ وَسِعَ كُرْسِيُّهُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ وَلَا يَؤُدُهُ حِفْظُهُمَا وَهُوَ الْعَلِيُّ الْعَظِيمُ ﴿٢٥٥﴾

255- "Allah, ondan başka tanrı yoktur. O hayydir, kayyûmdur. Kendisine ne uyku gelir ne de uyuklama. Göklerde ve yerdekilerin hepsi O'nundur. İzni olmadan O'nun katında kim şefaat edebilir? O, kullarının yaptıklarını ve yapacaklarını bilir. O'nun bildirdiklerinin dışında insanlar, O'nun ilminden hiçbir şeyi tam olarak bilemezler. O'nun kürsüsü, gökleri ve yeri içine almıştır. Onları koruyup gözetmek O'na zor gelmez. O yücedir, büyüktür."

"Allah" lafzı, Hak Teâlâ'ya özgü bir isim olup onda adaşı yoktur. Allah şöyle buyurmuştur:

(هَلْ تَعْلَمُ لَهُ سَمِيًّا) *"Sen, O'na bir adaş bilir misin?"* (Meryem, 19/65)

Yani sen, O'ndan başka "Allah" adı taşıyan birini bilir misin?

"Allah" lafzında iştikakı gözeten kimse, çelişkiye düşmüş olur. Zira bu, lafızların iştikakını değil, celal sıfatlarının hak edilişini ifade eden bir isimdir. Nitekim tartışma konusu yapılamayacak lafızlarda tartışma olmaz.

(اَللّٰهُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا) *"Ondan başka tanrı yoktur."* Bu söz, Allah'ın layık olduğu takdis ve tenzih yoluyla, emsal ve benzerinin olmadığını ifade eder. Bu sözle hakikate ulaşan kimse, onun dışındaki bir şeyle veya başka bir delilden yola çıkarak zerre kadar bir ispat düşünmez. Bu

nedenle ihtiyacını O'ndan başkasına arz etmez, O'nun dışındaki varlıklardan zerre kadar bir şey görmez. Böylece Allah'a bağlılığı içten olur ve varlığını sürekli O'nun birliğine vakfeder. Bu haliyle o, ancak Allah'tan ve Allah ile işitir; ancak Allah ile şahitlik eder; ancak Allah'a yönelir ve ancak Allah ile meşgul olur. Böyle biri, Allah dışındaki her şeyden mahviyet içindedir. Onun ne bir şikâyeti ne de bir iddiası vardır. Bir tek damarı bile Allah'tan başkası için hareket etmez. Nitekim kul bir hakkı tam olarak aldığı zaman, kesin bir biçimde nefsî arzulara gerek kalmaz.

Sonra bu ifade, onunla hakikate ulaşmayı, maddî varlıklardan bütünüyle kopmayı ve hiçbir mahlûkun, Hakk'ın varlığına ulaşmasının mümkün olmadığını kesin olarak bilmeyi gerektirir. O halde gerçek anlamda ne kavuşum ne ayrılık ne yakınlık ne de uzaklık vardır. Çünkü bütün bunlar, kadimliğe yakışmayan arazlardır.

( هُوَ اَلْحَيُّ الْقَيُّومُ ) "*O hayydir, kayyûmdur*." Yani kullarının işlerini yöneten, her türlü hareketi sevk ve idare eden, her varlık ve esere hayat verendir.

( لَا تَأْخُذُهُ سِنَةٌ وَلَا نَوْمٌ ) "*Kendisine ne uyku gelir ne de uyuklama*." Çünkü O, bir olma sıfatına sahip olup gafletten etkilenmez, emsalsiz olup hastalığa yakalanmaz, azizdir azlık O'na yaklaşamaz, cebbardır yalnızlık O'nu ayıramaz, birdir beden O'nu kavrayamaz, tektir cihet O'nu sınırlayamaz, kadimdir hiçbir afete maruz kalmaz ve yücedir hiçbir mesafe O'nu yakalayamaz.

( لَهُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ) "*Göklerde ve yerdekilerin hepsi O'nundur*." Her şey, mülk olarak, örneksiz sanat olarak, yaratık olarak ve yoktan var ediliş olarak O'nundur.

( مَنْ ذَا الَّذِي يَشْفَعُ عِنْدَهُٓ اِلَّا بِاِذْنِهِ ) "*İzni olmadan O'nun katında kim şefaat edebilir?*" O icra etmeden kim bir tek nefes alıp verebilir? O izin vermeden ve iradesini gün yüzüne çıkartmadan kim O'na yakınlaşabilir? Her kim, hak ederek, amel, boyun bükerek, ümit, yakınlık, nesep, gerekçe veya bir sebeple O'na yakınlaşacağını zannederse, zan onun yurdu, cehalet onun barınağı, yanlışlık onun sonu, uzaklık da varacağı nihai nokta olur.

(يَعْلَمُ مَا بَيْنَ اَيْدِيهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ) *"O, kullarının yaptıklarını ve yapacaklarını bilir."*

Çünkü bilgiye konu olabilecek hiçbir şey bilgisi dışında kalmaz ve O, hiçbir varlığı ve yokluğu birbirine karıştırmaz.

(وَلَا يُحِيطُونَ بِشَيْءٍ مِنْ عِلْمِهِ اِلَّا بِمَا شَآءَ) *"O'nun bildirdiklerinin dışında insanlar, O'nun ilminden hiçbir şeyi tam olarak bilemezler."*

Burada ilminden maksat Allah'ın bildikleridir. Yani Allah'ın izni olmadan ilimler, O'nun bildiklerini kuşatmada yetersiz kalır.

O halde ilimler, Allah'ın zâtını ve hakkını kuşatma konusunda hangi ümidi besleyebilir? Bir de izzetinde hiçbir zaman ve ölçüye sığmayan Allah'ı kuşatmak nerede caiz olur?

(وَسِعَ كُرْسِيُّهُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ) *"O'nun kürsüsü, gökleri ve yeri içine almıştır."*

Bu, insanlara, kavrayışları ölçüsünde yapılan bir hitaptır. Yoksa Allah'ın sıfatları yanında varlıkların ne önemi var ki!

Allah'ın yüceliği, arş veya kürsü ile büyümesine ve bir cin ya da insanla güzelleşmesine elvermez.

(وَلَا يَؤُدُهُ حِفْظُهُمَا وَهُوَ الْعَلِيُّ الْعَظِيمُ) *"Onları koruyup gözetmek O'na zor gelmez. O yücedir, büyüktür."*

Zerreden kürreye kadar bütün varlıkları yaratmak kendisi için aynı olan Allah'ı yaratıklar nasıl yorabilir! Zira o, ne azı kolay, ne de çoğu zor bulur.

لَٓا اِكْرَاهَ فِي الدِّينِ قَدْ تَبَيَّنَ الرُّشْدُ مِنَ الْغَيِّ فَمَنْ يَكْفُرْ بِالطَّاغُوتِ وَيُؤْمِنْ بِاللّٰهِ فَقَدِ اسْتَمْسَكَ بِالْعُرْوَةِ الْوُثْقٰى لَا انْفِصَامَ لَهَا وَاللّٰهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٢٥٦﴾

256- "Dinde zorlama yoktur. Artık doğrulukla eğrilik birbirinden ayrılmıştır. O halde kim tâğûtu reddedip Allah'a inanırsa, sağlam kulpa yapışmıştır. O kulp için kopuş yoktur. Allah işitir ve bilir."

Çünkü deliller göz önünde, kanıtlar apaçık ortadadır.

(قَدْ تَبَيَّنَ الرُّشْدُ مِنَ الْغَيِّ) *"Artık doğrulukla eğrilik birbirinden ayrılmıştır."*

Gece karanlığıyla aydınlık gündüzden ayrılmıştır. Ezelî haklar malum, konulan ilk sınırlar maluldür. Zira biri kadimlik, diğeri ise yokluk sıfatına sahiptir.

(فَمَنْ يَكْفُرْ بِالطَّاغُوتِ وَيُؤْمِنْ بِاللّٰهِ) *"O halde kim tâğûtu reddedip Allah'a inanırsa"*

Herkesin tâğûtu, onu Rabbinden alıkoyan şeydir. İman ise kalbin Allah ile hayat bulmasıdır.

(فَقَدِ اسْتَمْسَكَ بِالْعُرْوَةِ الْوُثْقٰى) *"Sağlam kulpa yapışmıştır."*

Kopmayan sağlam kulpa yapışmak, emir ve yasakların sınırında durmaktır. Bu ise Hz. Peygamber (s.a.v.)'in yolunu izlemek demektir.

(لَا انْفِصَامَ لَهَا وَاللّٰهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ) *"O kulp için kopuş yoktur. Allah işitir ve bilir."*

Her kim, sırda o kulpu hakikat haline getirir, görünürde de ona bağlı kalırsa o, her iki dünyada da kurtulmuş ve saadete ermiş olur.

اَللّٰهُ وَلِيُّ الَّذِينَ اٰمَنُوا يُخْرِجُهُمْ مِنَ الظُّلُمَاتِ اِلَى النُّورِ وَالَّذِينَ كَفَرُوٓا اَوْلِيَٓاؤُهُمُ الطَّاغُوتُ يُخْرِجُونَهُمْ مِنَ النُّورِ اِلَى الظُّلُمَاتِ اُولٰٓئِكَ اَصْحَابُ النَّارِ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ﴿٢٥٧﴾

257- "Allah iman edenlerin dostudur. Onları karanlıklardan aydınlığa çıkarır. İnkâr edenlere gelince, onların dostları da tâğuttur. Onları aydınlıktan alıp karanlığa götürürler. İşte bunlar cehennemliklerdir. Onlar, orada devamlı kalırlar."

Ayetteki ( وَلِيُّ ) *"veli"* lafzı, işlerini yöneten ve yalnız başına durumlarını düzelten demektir. Bu lafız, ismi mef'ul anlamında bir sıfat olabilir. Bu takdirde de anlamı müminlerin, taatini üstlendikleri zât demek olur. Bu iki mana da isabetli olup birincisi beraberliği, diğeri ise ayrılığı ifade eder. Nitekim ayrılıkla kayıtlı olmayan her beraberlik ve beraberlikle desteklenmeyen her ayrılık hatalıdır ve sahibi batıl üzeredir. Ayet ise ikisini de ihtimal dahilinde tutar.

(يُخْرِجُهُمْ مِنَ الظُّلُمَاتِ اِلَى النُّورِ) *"Onları karanlıklardan aydınlığa çıkarır."*

Yani Allah, ezeli hükmüyle, onları dalalet ve bidatlerden ibaret olan karanlıklardan korumuştur. Çünkü onlar, ezeli ilminde asla karanlıklar içerisinde değillerdi.

(وَالَّذِينَ كَفَرُوا اَوْلِيَآؤُهُمُ الطَّاغُوتُ ) *"İnkâr edenlere gelince, onların dostları da tâğuttur."*

Tâğut, onları cezbeden küfrün sebepleridir.

(يُخْرِجُونَهُمْ مِنَ النُّورِ اِلَى الظُّلُمَاتِ اُولٰٓئِكَ اَصْحَابُ النَّارِ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ) *"Onları aydınlıktan alıp karanlığa götürürler. İşte bunlar cehennemliklerdir. Onlar, orada devamlı kalırlar."*

Bu, şüphelerin kalplerini istila etmesi ve ardından Rablığı inkâr etmeleri sebebiyledir. İşte bunlar, ebediyen haktan geri kalanlardır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah müminleri tedbirlerinin karanlığından takdirini görebilmenin genişliğine çıkarır.

- Allah, onları Allah'a bazı hareket ve duruşlarıyla yaklaşıp ulaşabileceklerine dair zanlarının karanlıklarından çıkarır.

- Allah onları kendi nefislerinin gölgesini üzerlerinden kaldırmak ve inayetinin gölgesine dahil etmek suretiyle, karanlıklarından çıkarır.

- Allah onları, kendi kendilerine kurtulabilecekleri vehminden kurtarır.

- Allah müminler ile kendi davranışlarına güvenmelerinin ve kendi hallerine dayanmalarının arasına girer.

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذ۪ي حَٓاجَّ اِبْرٰه۪يمَ ف۪ي رَبِّه۪ٓ اَنْ اٰتٰيهُ اللّٰهُ الْمُلْكَۢ اِذْ
قَالَ اِبْرٰه۪يمُ رَبِّيَ الَّذ۪ي يُحْي۪ وَيُم۪يتُۙ قَالَ اَنَا۬ اُحْي۪ وَاُم۪يتُۜ
قَالَ اِبْرٰه۪يمُ فَاِنَّ اللّٰهَ يَأْت۪ي بِالشَّمْسِ مِنَ الْمَشْرِقِ فَأْتِ بِهَا مِنَ
الْمَغْرِبِ فَبُهِتَ الَّذ۪ي كَفَرَۜ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظَّالِم۪ينَۚ ﴿٢٥٨﴾

258- "Allah, kendisine mülk verdiği için şımararak Rabbi hakkında İbrahim ile tartışmaya gireni görmedin mi? İşte o zaman İbrahim: 'Rabbim hayat veren ve öldürendir' demişti. O da: 'Hayat veren ve öldüren benim' demişti. İbrahim: 'Allah, güneşi doğudan getirmektedir. Haydi sen de onu batıdan getir' dedi. Bunun üzerine kâfir apışıp kaldı. Allah, zalim kimseleri hidayete erdirmez."

Allah, düşmanlarını yakmayla cezalandırmadan önce, ayrılık cezalarını çabuklaştırmıştır. Eğer basiret gözleri olsa, bu ceza gerçekte daha çok etki etmektedir. Bu arada Allah, Hz. İbrahim'in, mel'un düşmanla tartışırken, doğru ve yerinde olan delilden, delildeki bir tutarsızlıktan dolayı değil; fakat o kâfirin kavrayışındaki yetersizlikten dolayı, daha açık bir delile intikal etmiştir. Basiretleri hakikatten perdelenmiş olan kimsenin ölçüsü, zamanı faydasız yere zayi etmektir. Bu zayi ediş, gerekli olan bir ihtiyaçla orantılı değildir.

اَوْ كَالَّذ۪ي مَرَّ عَلٰى قَرْيَةٍ وَهِيَ خَاوِيَةٌ عَلٰى عُرُوشِهَاۚ قَالَ اَنّٰى
يُحْي۪ هٰذِهِ اللّٰهُ بَعْدَ مَوْتِهَاۚ فَاَمَاتَهُ اللّٰهُ مِائَةَ عَامٍ ثُمَّ بَعَثَهُۜ قَالَ كَمْ
لَبِثْتَۜ قَالَ لَبِثْتُ يَوْمًا اَوْ بَعْضَ يَوْمٍۜ قَالَ بَلْ لَبِثْتَ مِائَةَ عَامٍ
فَانْظُرْ اِلٰى طَعَامِكَ وَشَرَابِكَ لَمْ يَتَسَنَّهْۚ وَانْظُرْ اِلٰى حِمَارِكَ
وَلِنَجْعَلَكَ اٰيَةً لِلنَّاسِ وَانْظُرْ اِلَى الْعِظَامِ كَيْفَ نُنْشِزُهَا ثُمَّ نَكْسُوهَا
لَحْمًاۜ فَلَمَّا تَبَيَّنَ لَهُۙ قَالَ اَعْلَمُ اَنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرٌ ﴿٢٥٩﴾

259- “Yahut görmedin mi o kimseyi ki, evlerinin duvarları çatıları üzerine çökmüş bir kasabaya uğradı. ‘Ölümünden sonar acaba Allah bunları nasıl diriltir’ dedi. Bunun üzerine Allah onu öldürüp yüz sene bıraktı. Sonra tekrar diriltti. ‘Ne kadar kaldın?’ dedi. ‘Bir gün yahut daha az’ dedi. Allah ona: ‘Hayır sene kaldın. Yiyeceğine ve içeceğine bak, henüz bozulmamıştır. Eşeğine de bak. Seni insanlara bir ibret kılalım diye bunu yaptık. Şimdi sen kemiklere bak, onları nasıl düzenliyor, sonra ona nasıl et giydiriyoruz’ dedi. Durum, kendisince anlaşılınca: ‘Şimdi iyice biliyorum ki, Allah her şeye kâdirdir’ dedi.”

Bu anlatılan, inkâr sorusu, bilgisizlik sorunu veya kudretteki bir şüphenin delili değildi. Çünkü bu olay, Hz. Uzeyr’den rivayet edilmektedir. Peygamberler hakkında ise şüphe ve bilgisizlik caiz değildir. Lakin bu, hayretten kaynaklanan bir soru olup Hz. Uzeyir bu sözle inancının artmasını istemiş, Allah da bunu onun nefsinde icra ederek kendisine göstermiştir. Şöyle ki, önce onu öldürmüş, sonra diriltmiş, daha sonra da gözünün önünde eşeğini diriltmiş ve böylece imanı kat kat artmıştır. Bu arada kesin iman için Allah’a soru sormak ve problemli duyguları geri çevirme yönünde tedbir almak, Allah’ı tanımak isteyenlerin adetidir. Bu nedenle Allah, Hz. Uzeyr’i bu sözünde (...) ve istediği iman artışını kendisi için takdir buyurdu. Nitekim o da: “Şimdi iyice biliyorum ki, Allah diriltme ve öldürme gibi hususların hepsine kâdirdir. Yani bunu daha çok öğrendim ve Allah, bana imanımı artıran büyük deliller gösterdi” dedi. Çünkü o uzun müddet zarfında yiyecek ve içeceği bozulmamış, eşeği ise kemikleri bile çürüyecek şekilde ölmüştü. Oysa yiyecek ve içecek bozulmaya daha müsaittir.

وَاِذْ قَالَ اِبْرٰهٖيمُ رَبِّ اَرِنٖي كَيْفَ تُحْيِي الْمَوْتٰى قَالَ اَوَلَمْ تُؤْمِنْ
قَالَ بَلٰى وَلٰكِنْ لِيَطْمَئِنَّ قَلْبٖي قَالَ فَخُذْ اَرْبَعَةً مِنَ الطَّيْرِ فَصُرْهُنَّ
اِلَيْكَ ثُمَّ اجْعَلْ عَلٰى كُلِّ جَبَلٍ مِنْهُنَّ جُزْءًا ثُمَّ ادْعُهُنَّ يَأْتٖينَكَ سَعْيًا
وَاعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ عَزٖيزٌ حَكٖيمٌ ٢٦٠

260- "İbrahim Rabbine: 'Ey Rabbim, ölüleri nasıl dirilttiğini bana göster' demişti. Rabbi ona 'Yoksa inanmadın mı?' dedi. İbrahim: 'Hayır, inandım; fakat kalbimin mutmain olması için' dedi. Bunun üzerine Allah: 'Öyleyse dört tane kuş yakala, onları yanına al, sonra kesip parçalayarak her dağın başına onlardan bir parça koy. Sonra da onları kendine çağır. Koşarak sana gelirler. Bil ki, Allah azîzdir, hakîmdir' buyurdu."

Bu konuda şu görüşler ileri sürülmüştür:

- Hz. İbrahim, imanının artmasını istediğinden aynelyakîn şeklindeki inancını hakkalyakîn ile birleştirmek istedi.

- Hz. İbrahim'in bu sözü söylemesi, Allah'ın: (قَالَ اَوَلَمْ تُؤْمِنْ) "*Yoksa inanmadın mı?*" şeklindeki sözüne sebep oldu. İbrahim de: Hayır, ben zaten inanıyordum; fakat bana: "*Yoksa inanmadın mı?*" demeni özledim. Çünkü bu söz kalbimi tatmin etmektedir. Nitekim seven, daima sevgilisinin mümkün olan herhangi bir şekilde hitabını temine çaba harcar.

- Bu, Allah'ı simge ve işaret yoluyla görme isteği olduğundan, Hz. İbrahim: (وَاعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ) "*Bil ki, Allah azîzdir, hakîmdir*" ifadesi kullanılmak suretiyle işaret yoluyla bu görmeden alıkonulmuştur. Nitekim Hz. Musa da açıkça Allah'ı görmek istemiş ve bu amaçla: (رَبِّ اَرِنِي اَنْظُرْ اِلَيْكَ) "*Rabbim bana kendini göster, sana bakayım*" (A'râf, 7/143), demiş, ancak bu isteği açıkça reddedilerek kendisine: (لَنْ تَرٰينِي) "*Beni göremeyeceksin*" denilmiştir.

- Hz. İbrahim kalbinin dirilmesini istemiş bunun üzerine şu kuşları kesmesi önerilmiştir: Tavus, karga, horoz ve ördek. Tavus kuşu dünya şatafatının, karga hırsının, horoz yürüyüşünün, ördek de rızk arayışının boğazlanmasını simgelemektedir.

Bu arada Hz. İbrahim: (اَرِنِي كَيْفَ تُحْيِي الْمَوْتٰى) "*Ölüleri nasıl dirilttiğini bana göster*" deyince, Hz. İsmail'e işaretle ve isteğe istekle karşılık vermek üzere ona: Sen de bana diriyi nasıl boğazladığını göster, denildi. Bunun üzerine Hz. İbrahim, kendisinden isteneni yerine getirince, Allah da onun isteğinin gereğini yerine getirdi.

- Allah, Hz. İbrahim'i dost edinmeyi takdir etmişti. Bunun delili, ölüleri onun eliyle diriltmesidir. Böylece olanlar olmuştur.

Bu arada Allah, kendisine ölüleri diriltme şeklinde mucizeler gösterdiği ve eliyle gerçekleştirdiği Hz. İbrahim'in olayı ile kendisine şahsında mucizeler gösterdiği Hz. Uzeyr arasında ilişki kurmuştur. Bu çerçevede Hz. İbrahim, hem sorduğu sorusu hem de hali itibariyle Uzeyr'den üstündür. Zira Allah'ın hiçbir söylediğini reddetmemiş ve soruyu yumuşak bir üslupla sormuştur. Oysa Hz. Uzeyr, Allah'a ölüleri diriltmeyi uzak görür gibi sormuştur. Bunu üzerine Allah, Hz. İbrahim için en güçlü ve en anlamlı mucizeyi ortaya koymak istemiştir. Şöyle ki, Nemrut: "*Dirilten ve öldüren sadece Rabbimdir*" şeklindeki sözünü anlayamayıp: "Ben, diriltir ve öldürürüm" dediğinde Allah, Hz. İbrahim'in eliyle ölüleri diriltme mucizesini gerçekleştirmiştir. Zaten Hz. İbrahim de dirilten ve öldürenin kendisi olmadığını bilmesi için Nemrut'a, Allah'ın ölüleri diriltme mucizesini göstermesini istemiştir.

Öte yandan bu iki ayette, tefekkür halinde imanın artması için Allah'tan dilekte bulunmanın caiz olduğuna dair delil bulunmaktadır.

Bir yoruma göre de, Hz. İbrahim, vuslat nuruyla kalbi diriltmeyi istemiş, bunun üzerine kendisine: "Sen inanmadın mı?" denilmiştir. Yani, sen bizi ararken gördüğün her şeye: "Bu benim rabbimdir" dedin. Hatırlamıyor musun? Bu durumda seni, bu hedefe nasıl ulaştırdığımızı anlayamadın. İşte aynı şekilde Allah, seni gayretinin uzandığı hedefe de ulaştırır.

Bununla işaret edilen husus ise kalbin hayatının, ancak bu şeylerin, yani nefsin boğazlanmasıyla gerçekleştiğidir. Bu nedenle kim, nefsini çabalarla boğazlamazsa onun kalbi Allah ile dirilmez.

Burada şuna da işaret bulunmaktadır: Allah, Hz. İbrahim'e: "Elinle bu kuşları parçala ve parçalarını ayırdıktan sonra onları çağır, çabucak sana gelirler" dedi. Böylece dostun eliyle kesilip yine onun eliyle parçalanıp dağıtılan şeyi kendisi çağırdığı zaman, dağıtılmış

olan her parça çağrısını kabul eder. Aynı şekilde Hakk'ın dağıtıp birbirinden uzaklaştırdığı şey de böyledir. Hak, onu çağırdığı zaman çağrısını kabul eder.

Şiir:

*Eğer çağırsaydın beni üzerimde toprak olduğu halde*
*Cevap verirdim sesine kemik çürümüşken*

مَثَلُ الَّذِينَ يُنْفِقُونَ اَمْوَالَهُمْ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ كَمَثَلِ حَبَّةٍ اَنْبَتَتْ سَبْعَ سَنَابِلَ فِي كُلِّ سُنْبُلَةٍ مِائَةُ حَبَّةٍ وَاللّٰهُ يُضَاعِفُ لِمَنْ يَشَآءُ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيمٌ ﴿٢٦١﴾

261- "Allah yolunda mallarını harcayanların örneği, yedi başak bitiren bir dane gibidir ki, her başakta yüz dane vardır. Allah dilediğine kat kat fazlasını verir. Allah'ın lütfü geniştir, O her şeyi bilir."

Onların harcadıklarının yerini dolduran cennettir. Allah yolunda canlarını harcayanların yerini ise Hak Teâlâ doldurur. O halde malını harcayıp sevabını gören ile halini harcayıp Allah'ın yakınlığını bulan arasında fark vardır. Zira Allah yolunda mal harcamak sadaka yoluyla olurken, O'nun yolunda halleri harcamak, doğruluktan ayrılmamak ve her türlü nefsi arzuyu reddetmekle olur. Böylece kul, kalbi rencide etmeden Allah'ın, üzerinde gerçekleşen hükmüne rıza göstermiş olur.

Şiir:

*İsterken ben ona kavuşmayı hicranımı ister o*
*Terk ederim böylece ben onun isteği için isteğimi*

Bu arada harcama iki kısımdır:

Biri abidlerin, diğeri ise bulanların harcamasıdır. Abidler, bir dane harcadıkları zaman, Allah onların sevabını yetmişten sonsuza kadar artırır. Bulanların durumu ise şu beyitte söylendiği gibidir:

*Ne yaptığımız güzelliği kabul ederler*
*Ne de kötülük yaptığımızda onu yok sayarlar*

اَلَّذِينَ يُنْفِقُونَ اَمْوَالَهُمْ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ ثُمَّ لَا يُتْبِعُونَ مَٓا اَنْفَقُوا مَنًّا وَلَٓا
اَذًى لَهُمْ اَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿٢٦٢﴾

262- "Malllarını Allah yolunda harcayıp ta arkasından başa kakmayan, fakirlerin gönlünü kırmayan kimseler var ya, onların Allah katında has mükâfatları vardır. Onlar için korku yoktur, üzüntü de çekmeyeceklerdir."

Başa kakma, yaptığın iyiliği görmen, eza ise iyilik yaptığın kimseye iyiliğini hatırlatmandır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Harcayacaklarını harcarlar, sonra da bu yaptıklarını hiçbir şekilde görmezler.

- Mazeretiniz olan ve hak ettiğiniz bir şeyi nasıl başa kakarlar!

- Yaptıklarını başa kakmazlar. Aksine Onları buna muvaffak kılan Allah'ın nimetini görürler.

قَوْلٌ مَعْرُوفٌ وَمَغْفِرَةٌ خَيْرٌ مِنْ صَدَقَةٍ يَتْبَعُهَٓا اَذًى وَاللّٰهُ غَنِيٌّ حَلِيمٌ ﴿٢٦٣﴾

263- "Güzel söz ve bağışlama, arkasından incitme gelen sadakadan daha hayırlıdır. Allah ihtiyaçsızdır, halîmdir."

Mazeretini ortaya koyup talepte bulunan kimseye cevap için fakir bir kimsenin söylediği söz, yaptığını beğenen kimsenin sadakasından ve bunu izleyen başa kakmadan daha hayırlı ve daha mükemmeldir.

Bir yoruma göre de Allah'a karşı aczini ve günahını itiraf etmen ve bu sözden dolayı Allah'ın seni bağışlaması, başa kakma ile şaibeli ve eziyetle birlikte olan sadakadan daha hayırlıdır.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوا لَا تُبْطِلُوا صَدَقَاتِكُمْ بِالْمَنِّ وَالْاَذٰى كَالَّذٖي يُنْفِقُ مَالَهُ رِئَٓاءَ النَّاسِ وَلَا يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ فَمَثَلُهُ كَمَثَلِ صَفْوَانٍ عَلَيْهِ تُرَابٌ فَاَصَابَهُ وَابِلٌ فَتَرَكَهُ صَلْدًا لَا يَقْدِرُونَ عَلٰى شَيْءٍ مِمَّا كَسَبُوا وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكَافِرٖينَ ﴿٢٦٤﴾

264- "Ey iman edenler, Allah'a ve ahiret gününe inanmadığı halde, malını gösteriş için harcayan kimse gibi, başa kakmak ve incitmek suretiyle, yaptığınız hayırlarınızı boşa çıkarmayın. Böyle bir kimsenin durumu, üzerinde biraz toprak bulunan düz kayaya benzer ki, sağanak bir yağmur isabet etmiş de onu çıplak pürüzsüz kaya haline getirivermiştir. Bunlar, kazandıklarından hiçbir şeye sahip olamazlar. Allah, kâfirleri doğru yola iletmez."

Güzel minnet, sadece Allah'tan kabul edilir. Halka gelince, hiç kimsenin bir başkası üzerinde minneti olamaz. Çünkü mahlûklardan minnet kabul etmek, en büyük meşakkattir. Allah'tan minnet görmek ise en büyük nimettir.

Şiir:

*Zül değildir büyükleri yüceltmen*
*Zül olan küçükleri yüceltmendir*

Bir yoruma göre de, yaratıkların en yoksulu, kendini zengin zannedip sonra müflis olduğunu anlayandır. Aynı şekilde yaratıkların en az değerli olanı da, bir şey üzere olduğunu zannedip ardından Allah'tan başına hesapta olmayan bir musibet gelendir.

وَمَثَلُ الَّذٖينَ يُنْفِقُونَ اَمْوَالَهُمُ ابْتِغَٓاءَ مَرْضَاتِ اللّٰهِ وَتَثْبٖيتًا مِنْ اَنْفُسِهِمْ كَمَثَلِ جَنَّةٍ بِرَبْوَةٍ اَصَابَهَا وَابِلٌ فَاٰتَتْ اُكُلَهَا ضِعْفَيْنِ فَاِنْ لَمْ يُصِبْهَا وَابِلٌ فَطَلٌّ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصٖيرٌ ﴿٢٦٥﴾

265- “Allah’ın rızasını kazanmak ve ruhlarındaki cömertliği kuvvetlendirmek için mallarını hayra sarf edenlerin durumu, bir tepeye kurulmuş güzel bir bahçeye benzer ki, üzerine bol yağmur yağmış da iki kat ürün vermiştir. Bol yağmur yağmasa bile, bir çisinti düşer. Allah, yaptıklarını görmektedir.”

أَيَوَدُّ اَحَدُكُمْ اَنْ تَكُونَ لَهُ جَنَّةٌ مِنْ نَخِيلٍ وَاَعْنَابٍ تَجْرِي مِنْ
تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ لَهُ فِيهَا مِنْ كُلِّ الثَّمَرَاتِ وَاَصَابَهُ الْكِبَرُ وَلَهُ ذُرِّيَّةٌ
ضُعَفَاءُ فَاَصَابَهَا اِعْصَارٌ فِيهِ نَارٌ فَاحْتَرَقَتْ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمُ
الْاٰيَاتِ لَعَلَّكُمْ تَتَفَكَّرُونَ ﴿٢٦٦﴾

266- “Sizden biriniz arzu eder mi ki, hurma ve üzüm ağaçlarıyla dolu, arasından sular akan ve kendisi için orada her çeşit meyveden bulunan bir kasırga isabet ederek yakıp kül etsin. İşte düşünüp anlayasınız diye Allah size ayetleri açıklar.”

Bunlar, Allah’ın, samimi olan ile münafık olan kimseler için örnek olarak zikrettiği ayetlerdir. Örnekler, malını Allah yolunda harcayan ile batılda harcayan içindir. Birinciler için şeref ve sevap gerçekleşirken, diğerleri için şimdi reddedilmekten başka, ahirette ise yok olmaktan başka bir şey gerçekleşmez. Birincilerin emeği şükürle karşılanırken, diğerleri dövünerek cehennemi boylarlar. Mallarını Allah yolunda harcayanların amelleri temizlenir, malları gelişir, halleri Allah katında yücelir ve akıbetleri Allah’a kavuşmak olur. Mallarını bâtılda harcayanların ise amelleri boşa gider, halleri hüsran ve akıbetleri kötü olur, veballeri kat kat artırılır.

Bir yoruma göre de mallarını Allah yolunda harcayanların durumu, ekin ekip ekininin kökü güzel çıkan, dalları büyüyüp yükselen ve verimi çok olan kimsenin durumu gibidir. Mallarını harcayanların durumu ise ticareti zarar eden, malı çalınan, büyük yaşına rağmen, tedbiri boşa giden, her taraftan ve her yerde peş peşe meşakkatlerle

karşılaşan kimsenin durumu gibidir. Örnek olarak bu ikisi aynı olur mu? Bir de aralarında yakın bir benzerlik var mı?

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُٓوا اَنْفِقُوا مِنْ طَيِّبَاتِ مَا كَسَبْتُمْ وَمِمَّٓا اَخْرَجْنَا لَكُمْ مِنَ الْاَرْضِ وَلَا تَيَمَّمُوا الْخَب۪يثَ مِنْهُ تُنْفِقُونَ وَلَسْتُمْ بِاٰخِذ۪يهِ اِلَّٓا اَنْ تُغْمِضُوا ف۪يهِ وَاعْلَمُٓوا اَنَّ اللّٰهَ غَنِيٌّ حَم۪يدٌ ﴿٢٦٧﴾

267- "Ey iman edenler, kazandıklarınızın iyilerinden ve rızk olarak size yerden çıkardıklarımızdan hayra harcayın. Size verilse, gözünüzü yummadan alamayacağınız kötü malı, hayır diye vermeye kalkışmayın. Biliniz ki, Allah zengindir, övgüye layıktır."

Herkes, kendisi için ne harcadığına ve Rabbinin emriyle neyi çıkardığına baksın. Bu itibarla karşına çıkan şey, senin yaptığın tasarrufun sonucudur. Kendi arzuna dönük olan, mülkünün kıymetli unsurlarıdır. Rabbinin rızasına dönük olan ise esasen Allah'a ait olan malının özel olanlarıdır. Nitekim rızk da O'nun rızkıdır. Senin için olan ise kıymetçe en değerli ve nimet olarak en mükemmel olandır.

Sonra da senin ayıplarını nasıl örttüğüne, dahası senin iyiliklerini nasıl kabul ettiğine, hatta harcadıklarını senin için nasıl telafi ettiğine, nasıl kabul edip seni övdüğüne ve nasıl da iyiliği sana nispet ettiğine bakman gerekir. Aslında her şey O'nun lütfü olmasına rağmen O, bunu fiilen sana nispet etmektedir. O, insana eksiksiz lütufta bulunurken bunu mükâfat diye adlandırmaktadır. Ayrıca muvaffak kılmak suretiyle, insanın iyilik alanını genişletmekte, sonra dünyayı insanın şükrüyle doldurmaktadır.

اَلشَّيْطَانُ يَعِدُكُمُ الْفَقْرَ وَيَأْمُرُكُمْ بِالْفَحْشَٓاءِ وَاللّٰهُ يَعِدُكُمْ مَغْفِرَةً مِنْهُ وَفَضْلًا وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَل۪يمٌ ﴿٢٦٨﴾

268- "Şeytan, sizi fakirlikle korkutur ve size çirkinliği telkin eder. Allah ise size katından bir mağfiret ve bir lütuf vaat eder. Allah, her şeyi ihata eden ve her şeyi bilendir."

Şeytan, fakir olduğu için fakirliği, Allah da kerem sahibi olduğu için mağfireti vaat eder.

Şeytan, size fakirliği vaat ederek malum olana sahip olmanızı önerir. Bir görüşe göre de o, sizlere en büyük fakirlik olan hırs yoluyla kendisine itaati dikte etmektedir.

Şeytan sizi kendi tedbir ve tercihinize yönlendirmek suretiyle size fakirliği vaat etmektedir.

Şeytan, Allah'ın alışık olduğunuz lütfunu unutmak suretiyle size fakirliği vaat etmektedir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Şeytan, şikâyetini artırmamak suretiyle sana fakirliği vaat etmektedir.

- Şeytan, senin kalbini muhtaç olmadığı şeye bağlamak suretiyle sana fakirliği vaat etmektedir.

- Şeytan, Allah'ın yeterli oluşunu görmeni engellemek suretiyle sana fakirliği vaat etmektedir.

(وَيَأْمُرُكُمْ بِالْفَحْشَاءِ) *"ve size çirkinliği telkin eder."* Yani dünyayı arzulamayı telkin eder.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Hırsı güçlendiren sebeplerle özendirir.

- Emeli çoğaltıp kanaati unutmak suretiyle özendirir.

- Şehevî arzulara uymakla özendirir.

- Nefsi arzuları tercih etmekle özendirir.

- Başkasına bakmakla özendirir

- İnsanın aklına Allah'tan başkasını getirmekle özendirir.

- Hak ortaya çıktıktan sonra, ruhsat ve tevillerin çukuruna düşmek suretiyle özendirir.

- Allah rızası için terk edilene dönmek suretiyle özendirir.

(وَاللّٰهُ يَعِدُكُمْ مَغْفِرَةً مِنْهُ وَفَضْلًا ) *"Allah ise size katından bir mağfiret ve bir lütuf vaat eder."*

Dünyada vaat edilen lütuf kanaat, ahirette vaat edilen lütuf ise sevap, cennetler, Allah'ı görmek, Allah'ın rızası ve mağfiretidir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Bir görüşe göre ise dünyadaki lütuf, nefse hâkimiyettir.

- Bir yoruma göre de bu lütuf irfan kapısının açılması, Allah'a yakınlık ve dostluk tecellilerine mazhar olmaktır.

يُؤْتِي الْحِكْمَةَ مَنْ يَشَٓاءُ وَمَنْ يُؤْتَ الْحِكْمَةَ فَقَدْ اُو۫تِيَ خَيْرًا كَث۪يرًاۜ وَمَا يَذَّكَّرُ اِلَّٓا اُو۬لُوا الْاَلْبَابِ ﴿٢٦٩﴾

269- "Allah, hikmeti dilediğine verir. Kime hikmet verilirse, ona pek çok hayır verilmiş demektir. Ancak akıl sahipleri düşünüp ibret alırlar."

Hikmet, nefsin içgüdüsü değil, Hakk'a olan inancın insana hâkim olmasıdır. Bu durumda şeytanın koyduğu engeller değil, Allah'ın kahredici ilkeleri sizi yönetmiş olur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Hikmet, işlerin doğru olanıdır.

- Hikmet, beşerî zaafların kişiye hâkim olmamasıdır. Nitekim kendine hâkim olamayan başkasına da hâkim olamaz.

- Hikmet, Allah'ın emrine uymak, sefâhet ise emrine muhalefet etmektir.

- Hikmet Hakk'ı, sefâhet ise gayrı görmektir.

وَمَٓا اَنْفَقْتُمْ مِنْ نَفَقَةٍ اَوْ نَذَرْتُمْ مِنْ نَذْرٍ فَاِنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُهُۜ وَمَا لِلظَّالِم۪ينَ مِنْ اَنْصَارٍ ﴿٢٧٠﴾

270- "Yaptığınız her harcamayı ve adadığınız her adağı muhakkak Allah bilir. Zalimler için hiç yardımcı yoktur."

Allah, kimilerini azabıyla uyarırken, kimilerini de sevabıyla müjdelemiştir. Kimilerine ise ilmini hatırlatmıştır. Azabıyla uyardıkları ve sevabıyla müjdeledikleri avam, ilmini hatırlattığı kimseler ise havastır. Allah şöyle buyurmuştur:

(وَاصْبِرْ لِحُكْمِ رَبِّكَ فَاِنَّكَ بِاَعْيُنِنَا)

*"Rabbinin hükmüne sabret. Çünkü sen gözlerimizin önündesin"* (Tûr, 52/48).

Bu itibarla hiçbir şey, kendisine kalbiyle verdiği sözde durmamak kadar kulun Allah'ın gözünden düşmesine yol açmaz. O halde mürid, bu konuda kendini zor duruma düşürmekten son derece sakınmalıdır.

اِنْ تُبْدُوا الصَّدَقَاتِ فَنِعِمَّا هِيَ وَاِنْ تُخْفُوهَا وَتُؤْتُوهَا الْفُقَرَآءَ فَهُوَ
خَيْرٌ لَكُمْ وَيُكَفِّرُ عَنْكُمْ مِنْ سَيِّاَتِكُمْ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرٌ ﴿٢٧١﴾

271- "Eğer sadakaları açıktan verirseniz ne ala! Eğer onu fakirlere gizlice verirseniz, işte bu sizin için daha hayırlıdır. Allah da bu sebeple sizin günahlarınızı örter. Allah, yapmakta olduklarınızı bilir."

Eğer sen, bize olan dostluğunu ortaya koyup açıklarsan iyi ve güzel bir iş yapmış olursun. Şayet sırrımızı aracıların aramıza girmesinden korursan, bu takdirde de dostluğun şartlarını korumuş ve vuslatın direğini sağlamlaştırmış olursun.

لَيْسَ عَلَيْكَ هُدٰيهُمْ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ يَهْدِي مَنْ يَشَآءُ وَمَا تُنْفِقُوا مِنْ خَيْرٍ
فَلِاَنْفُسِكُمْ وَمَا تُنْفِقُونَ اِلَّا ابْتِغَآءَ وَجْهِ اللّٰهِ وَمَا تُنْفِقُوا مِنْ خَيْرٍ
يُوَفَّ اِلَيْكُمْ وَاَنْتُمْ لَا تُظْلَمُونَ ﴿٢٧٢﴾

272- "Onları doğru yola iletmek sana ait değildir. Lakin Allah, dilediğini doğru yola iletir. Hayır olarak harcadıklarınız kendi iyiliğiniz içindir. Yapacağınız hayırları ancak Allah'ın rızasını kazanmak

için yapmalısınız. Hayır olarak verdiğiniz ne varsa, karşılığı size tam olarak verilir ve asla haksızlığa uğratılmazsınız."

Yüce makam, yükseltilmiş sancak, onurlu mertebeler, yüksek mevkiler ve hoşnutluğa vesile olan prensipler sana özgüdür. Aynı zamanda sen, ilklerin de sonların da efendisisin. Seninle yükseklikte yarışmak şöyle dursun, hiç kimse sana yaklaşamaz bile. Ancak onları hidayete erdirmek sana ait değildir. Zira hidayete erdirmek bize mahsus olan durumlardandır. Ondan en ufak bir şey bile başkalarına ait değildir. Ey Muhammed, onları sen davet edersin, ancak kendilerini hidayete biz erdiririz.

لِلْفُقَرَٓاءِ الَّذِينَ اُحْصِرُوا فِي سَبِيلِ اللّٰهِ لَا يَسْتَطِيعُونَ ضَرْبًا فِي الْاَرْضِ يَحْسَبُهُمُ الْجَاهِلُ اَغْنِيَٓاءَ مِنَ التَّعَفُّفِ تَعْرِفُهُمْ بِسِيمٰيهُمْ لَا يَسْـَٔلُونَ النَّاسَ اِلْحَافًا وَمَا تُنْفِقُوا مِنْ خَيْرٍ فَاِنَّ اللّٰهَ بِهٖ عَلِيمٌ ﴿٢٧٣﴾

273- "Yapacağınız hayırlar, kendilerini Allah yoluna adamış, bu sebeple yeryüzünde kazanç için dolaşamayan fakirler için olsun. Bilmeyen kimseler iffetlerinden dolayı, onları zengin zanneder. Sen, onları simalarından tanırsın. Çünkü onlar, yüzsüzlük ederek istemezler. Yaptığınız her hayrı muhakkak Allah bilir."

Gerçeğin sultanı, bütün yollarını kesmiştir. Bu nedenle onların ne doğuya ne de batıya çıkacak bir çıkış yolları bulunmamaktadır. Nasıl bakarlarsa baksınlar, tevhid duvarlarının kendilerini kuşattığını görürler.

Şiir:

*Genişliğiyle dar gelmiş gibi yerin geniş yolları*
*Onlara, ne uzunluğu ne de genişliği artar böylece*

Onların diğer yaratıklarla hiçbir ilişkileri bulunmaz. Olmayan yaratıklarla nasıl ilişki olsun ki! Tevhide göre, olmayan bir şeyin ispatı ise şirktir.

Bu arada dürüst fakir, Allah'a dayanarak Allah ile beraberdir. Yabancıların ise onun üzerinde hiçbir denetimi bulunmamaktadır. Hiçbir yaratığın da ona nüfuz etmesi mümkün değildir. Başkaları, ona olduğundan farklı bakarlar. Allah: (يَحْسَبُهُمُ الْجَاهِلُ اَغْنِيَآءَ مِنَ التَّعَفُّفِ) *"Bilmeyen kimseler iffetlerinden dolayı, onları zengin zanneder"* buyurmaktadır. Basiret sahibi olan ise onların halleriyle ilgili olarak hiçbir problem yaşamaz. Ey Muhammed, sen onları simalarıyla tanırsın. O sima, gözle değil, basiretle görülen simadır. Onlar, ahadiyet nurundan başka hiçbir şeyle denetlenemezler.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Simalarıyla tanınmaları, nefisleri alçaldığı zaman kalplerinin duyduğu sevinç ve zahirleri cansızlaştığı zaman sırlarının coşkudan çığlık atması demektir.

- Bu sima, batın mütevazı olunca zahirin mütevazı oluşu veya aksi demektir. İşte bundan dolayıdır ki, onlar yüzsüzlük ederek istemezler. Şayet insanlardan yüzsüzlük etmeden bir şey isterlerse, bu onları ve sırlarının mahiyetini korumak içindir. Böylece insanlar onlara dilenci gözüyle bakmamış olur ki, zaten sırları üzerinde başkalarını ispattan zerre bulunmamaktadır.

- Kendilerini Allah yolunda adamak, Allah'ın hükmünün sınırında durmak demektir. Onlar, nefislerini Allah'a itaat etmeye, kalplerini O'nun marifetine, ruhlarını O'nun sevgisine, sırlarını da O'nu görmeye adamışlardır.

اَلَّذِينَ يُنْفِقُونَ اَمْوَالَهُمْ بِالَّيْلِ وَالنَّهَارِ سِرًّا وَعَلَانِيَةً فَلَهُمْ اَجْرُهُمْ
عِنْدَ رَبِّهِمْ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿٢٧٤﴾

274- "Mallarını gece ve gündüz, gizli ve açık hayra sarf edenler var ya, onların mükâfatları Allah katındadır. Onlara korku yoktur, üzüntü de çekmezler."

Malları olduğu sürece, onlar bu malı gece gündüz Allah yolunda harcamaktan geri durmazlar. Mal tükenince de bu kez onlar, gece gündüz bir an bile Allah'ı müşahede etmekte gevşeklik etmezler.

اَلَّذِينَ يَأْكُلُونَ الرِّبٰوا لَا يَقُومُونَ اِلَّا كَمَا يَقُومُ الَّذِي يَتَخَبَّطُهُ الشَّيْطَانُ مِنَ الْمَسِّ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَالُوٓا اِنَّمَا الْبَيْعُ مِثْلُ الرِّبٰوا وَاَحَلَّ اللّٰهُ الْبَيْعَ وَحَرَّمَ الرِّبٰوا فَمَنْ جَٓاءَهُ مَوْعِظَةٌ مِنْ رَبِّهٖ فَانْتَهٰى فَلَهُ مَا سَلَفَ وَاَمْرُهُٓ اِلَى اللّٰهِ وَمَنْ عَادَ فَاُو۬لٰٓئِكَ اَصْحَابُ النَّارِ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ﴿٢٧٥﴾

275- "Faiz yiyenler, kabirlerinden şeytan çarpmış kimselerin cinnet nöbetinden kalktığı gibi kalkarlar. Bu hal onların: 'Alım-satım tıpkı faiz gibidir' demeleri yüzündendir. Halbuki Allah, alım-satımı helal, faizi haram kılmıştır. Bundan sonra, kime Rabbinden bir öğüt gelir de faizden vazgeçerse, geçmişte olan kendisinindir ve artık onun işi Allah'a kalmıştır. Kim tekrar faize dönerse, işte onlar cehennemliktir, orada devamlı kalırlar."

Emirden yüz çevirip duygularının kendisine telkin ettiği teville kendine ruhsat bulan kimseler için halıhazırda bağımsızlık, gelecekte de hayat olmaz. Onlar, dünyalarında kaybettikleri gibi, ahiretlerinde de kazançlı çıkmadılar.

Her kim, vaaz uyarılarıyla uyanır, nefsin dizginini çeker ve ısrarı başı boş bırakmazsa, ona hemen mühlet verilir. Şayet eski kötü hallere dönüş yaparsa, o zaman kökünün kazınmasını ve sürpriz felaketi beklesin.

يَمْحَقُ اللّٰهُ الرِّبٰوا وَيُرْبِي الصَّدَقَاتِ وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ كُلَّ كَفَّارٍ اَثِيمٍ ﴿٢٧٦﴾

276- "Allah faizi tüketir, sadakaları ise bereketlendirir. Allah, küfürde ve günahta ısrarda hiç kimseyi sevmez."

Allah'ın izniyle olan tasarruflar, hayır ve bereketler getirir. Nefse uymanın sonucu olanları ise, Allah yok olmaya maruz bırakır ve böyle kimselerin akıbeti hursan olur.

اِنَّ الَّذٖينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ لَهُمْ اَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿٢٧٧﴾

277- “İman edip iyi işler yapan, namaz kılan ve zekât verenler var ya, onların mükâfatları Rableri katındadır. Onlara korku yoktur, onlar üzüntü de çekmezler.”

Bizim için olanlara, bizden buldukları yeter. Biz, güzel iş yapanların ecrini zayi etmeyiz.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَذَرُوا مَا بَقِيَ مِنَ الرِّبٰوٓا اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنٖينَ ﴿٢٧٨﴾

278- “Ey iman edenler! Allah’tan korkun. Eğer gerçekten inanıyorsanız mevcut faiz alacaklarınızı terk edin.”

Allah’ın vaat ettiğiyle yetinmek, Müslüman için kalbini nefsinin amacına bağlamaktan hayırlıdır. İnsanın amacı nefsin telkin ettiklerinden, kendisine vaat edilen ise Hakk’ın garanti ettiklerinden ibarettir.

فَاِنْ لَمْ تَفْعَلُوا فَاْذَنُوا بِحَرْبٍ مِنَ اللّٰهِ وَرَسُولِهٖ وَاِنْ تُبْتُمْ فَلَكُمْ رُؤُسُ اَمْوَالِكُمْ لَا تَظْلِمُونَ وَلَا تُظْلَمُونَ ﴿٢٧٩﴾

279- “Şayet faiz hakkında söylenenleri yapmazsanız, Allah ve Resûlü tarafından faizcilere karşı açılan savaştan haberiniz olsun. Eğer tevbe edip vazgeçerseniz, sermayeniz sizindir. Ne haksızlık etmiş, ne de haksızlığa uğramış olursunuz.”

Israr sahibinin katımızda ne bir ağırlığı ne bir değeri ne de önemi vardır.

وَاِنْ كَانَ ذُو عُسْرَةٍ فَنَظِرَةٌ اِلٰى مَيْسَرَةٍ وَاَنْ تَصَدَّقُوا خَيْرٌ لَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٢٨٠﴾

280- "Eğer borçlu darlık içinde ise eli genişleyinceye kadar ona mühlet vermek gerekir. Eğer anlarsanız, bunu sadakaya saymak sizin için daha hayırlıdır."

Kadı, mahpusun iflas ettiğinden emin olduğu zaman onu hapiste tutmaya devam ederse bu caiz olmaz. Eğer hak sahibi, iflas eden borçlunun delilini yerinde bulursa, bu takdirde borçlunun sorumluluğu devam eder; ancak kendisine mühlet ve süre verilir. Oysa Allah bizim hakkımızda böyle hüküm vermez. Zira O, darlık içinde oluşumuzu, aczimizi, samimi olarak kendisine muhtaç olduğumuzu ve bütün ümidimizi kendisine bağladığımızı bildiği için bize merhamet eder.

(اِلٰى مَيْسَرَةٍ) *"Eli genişleyinceye kadar..."* Müflis fakirin, Allah'ın borçlular sınıfının payından ayırdığı zekâttan başka elde edebileceği hiçbir şey yoktur. Gelir ise sadece mallar ve anlaşmalar yoluyla elde edildiğinden fakirin bu yoldan mal edinmesi mümkün değildir. Müflis, aynı zamanda sermaye işleterek ticari kazanç elde etme imkânına da sahip değildir. Böylece güçsüz de olsa, müflis için sadece fakihlerden kimisinin söylediği (...) kalmış olur. Bu da, kendisinde hareket etme gücü kalan kimse içindir. Malı bakımından müflis olduğu gibi, gücü bakımından da müflis olan kimseye gelince, Mevlâsı'nın kendisine sebebiyet edeceğinden başka hiçbir çaresi kalmamıştır.

وَاتَّقُوا يَوْمًا تُرْجَعُونَ فٖيهِ اِلَى اللّٰهِ ثُمَّ تُوَفّٰى كُلُّ نَفْسٍ مَا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ﴿٢٨١﴾

281- "Allah'a döndürüleceğiniz, sonra da herkese hak ettiğinin eksiksiz verileceği ve kimsenin haksızlığa uğratılmayacağı bir günden sakının."

Dönüş iki kısımdır: Biri, vefat etmek suretiyle bedenler ve canlarla gerçekleşen dönüştür. Diğeri ise muhasebeye tabi olan her nefeste sırlar ve kalplerle olan dönüştür. Bu itibarla dönüş uyarmak ve vaat etmek demektir. Bu çerçevede Allah'ın, yükümlülükle

uyarması, kıyamet günü gerçekleşecek olan vaadinden daha uygundur. Bu arada Allah avama: ... (وَاتَّقُوا يَوْمًا) *"bir günden sakının"* buyururken, havassa: "*Benden sakının*" buyurmuştur.

يَآ اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوٓا اِذَا تَدَايَنْتُمْ بِدَيْنٍ اِلٰٓى اَجَلٍ مُسَمًّى فَاكْتُبُوهُ
وَلْيَكْتُبْ بَيْنَكُمْ كَاتِبٌ بِالْعَدْلِ وَلَا يَأْبَ كَاتِبٌ اَنْ يَكْتُبَ كَمَا عَلَّمَهُ
اللّٰهُ فَلْيَكْتُبْ وَلْيُمْلِلِ الَّذٖي عَلَيْهِ الْحَقُّ وَلْيَتَّقِ اللّٰهَ رَبَّهُ وَلَا يَبْخَسْ
مِنْهُ شَيْـًٔا فَاِنْ كَانَ الَّذٖي عَلَيْهِ الْحَقُّ سَفٖيهًا اَوْ ضَعٖيفًا اَوْ لَا يَسْتَطٖيعُ
اَنْ يُمِلَّ هُوَ فَلْيُمْلِلْ وَلِيُّهُ بِالْعَدْلِ وَاسْتَشْهِدُوا شَهٖيدَيْنِ مِنْ رِجَالِكُمْ
فَاِنْ لَمْ يَكُونَا رَجُلَيْنِ فَرَجُلٌ وَامْرَاَتَانِ مِمَّنْ تَرْضَوْنَ مِنَ الشُّهَدَٓاءِ
اَنْ تَضِلَّ اِحْدٰيهُمَا فَتُذَكِّرَ اِحْدٰيهُمَا الْاُخْرٰى وَلَا يَأْبَ الشُّهَدَٓاءُ اِذَا
مَا دُعُوا وَلَا تَسْـَٔمُوٓا اَنْ تَكْتُبُوهُ صَغٖيرًا اَوْ كَبٖيرًا اِلٰٓى اَجَلِهٖ ذٰلِكُمْ
اَقْسَطُ عِنْدَ اللّٰهِ وَاَقْوَمُ لِلشَّهَادَةِ وَاَدْنٰٓى اَلَّا تَرْتَابُوٓا اِلَّآ اَنْ تَكُونَ
تِجَارَةً حَاضِرَةً تُدٖيرُونَهَا بَيْنَكُمْ فَلَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَلَّا تَكْتُبُوهَا
وَاَشْهِدُوٓا اِذَا تَبَايَعْتُمْ وَلَا يُضَٓارَّ كَاتِبٌ وَلَا شَهٖيدٌ وَاِنْ تَفْعَلُوا فَاِنَّهُ
فُسُوقٌ بِكُمْ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَيُعَلِّمُكُمُ اللّٰهُ وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلٖيمٌ ﴿٢٨٢﴾

282- "Ey iman edenler! Belirlenmiş bir süre için birbirinize borçlandığınız vakit, onu yazın. Bir kâtip onu aranızda adaletle yazsın. Hiçbir kâtip, Allah'ın kendisine öğrettiği gibi yazmaktan geri durmasın, yazsın. Üzerinde hak olan kimse de yazdırsın. Rabbinden korksun ve borcunu asla eksik yazdırmasın. Şayet borçlu sefih veya aklı zayıf veya kendisi söyleyip yazdıramayacak durumda ise velisi adaletle yazdırsın. Erkeklerinizden iki de şahit bulundurun. Eğer iki erkek bulunamazsa rıza göstereceğiniz şahitlerden bir erkek ile – biri unutursa diğerinin

ona hatırlatması için – iki kadın olsun. Çağırıldıkları vakit, şahitler gelmemezlik etmesin. Büyük veya küçük, vadesine kadar hiçbir şeyi yazmaktan sakın üşenmeyin. Böyle yapmanız, Allah nezdinde daha adaletli, şahitlik için daha sağlam, şüpheye düşmemeniz için daha uygundur. Ancak aranızda yapıp bitirdiğiniz peşin bir ticaret olursa, bu durum farklıdır. Bu durumda onu yazmamanızda sizin için bir sakınca yoktur. Alış veriş yaptığınızda şahit tutun. Ne yazan ne şahit zarara uğratılsın. Eğer bunu yaparsanız, şüphe yok ki, bu, sizin yoldan çıkmanız demektir. Allah'tan korkun. Allah, size gerekli olanı öğretiyor. Allah, her şeyi bilmektedir."

وَاِنْ كُنْتُمْ عَلٰى سَفَرٍ وَلَمْ تَجِدُوا كَاتِبًا فَرِهَانٌ مَقْبُوضَةٌ فَاِنْ اَمِنَ
بَعْضُكُمْ بَعْضًا فَلْيُؤَدِّ الَّذِي اؤْتُمِنَ اَمَانَتَهُ وَلْيَتَّقِ اللّٰهَ رَبَّهُ وَلَا تَكْتُمُوا
الشَّهَادَةَ وَمَنْ يَكْتُمْهَا فَاِنَّهُٓ اٰثِمٌ قَلْبُهُ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ عَلِيمٌ ﴿٢٨٣﴾

283- "Yolculukta olur da yazacak kimse bulamazsanız, alınmış bir rehin de yeterlidir. Birbirinize bir emanet bırakırsanız, emanet bırakılan kimse emaneti sahibine versin ve Rabbi olan Allah'tan korksun. Şahitliği, bildiklerinizi gizlemeyin. Kim onu gizlerse bilsin ki, onun kalbi günahkârdır. Allah, yapmakta olduklarınızı bilir."

Allah, insanları, doğru davranmakla memur kılmış ve onlara aralarındaki muamelelerin nasıl olması gerektiğini, ihtiyata bağlı kalmalarını, birbirlerini mağdur etmemeleri için şahit tutmalarını öğretmiştir. Bu ise birbirlerine düşman olmamaları için Allah'ın insanlara karşı olan şefkatinin ve merhametinin bir gereğidir. Bu nedenle Allah, yazmak ve şahit tutmak suretiyle hakların güvence altına alınmasını, şahitlere de şahitliği kabul edip yerine getirmelerini emretmiştir.

İşte bugün, insanlar arasında husumeti önleyecek olan hükümleri koyan Allah'ın, kıyamet günü aralarındaki husumetin izlerini

ortadan kaldıracak olan uygulamada bulunması şanına daha da layıktır. Nitekim bir rivayette şöyle denilmiştir: *"Kendi aranızda hibeleşin. Nitekim ben, üzerinizdeki hakkımı hibe ettim. Zira kerem sahibi kimse, gücü yettiği zaman bağışlar."*

Allah'ın borçlar hukukunda koyduğu ilkelerde ihtiyaç sahiplerine acıma vardır. Çünkü ihtiyaç, sahibini sıkıntıya sokarak hileye başvurmasına yol açabilir. Bu kimse aynı zamanda darlığa katlanmaktan aciz kalabilir ve güzel imajını koruma arzusu, onu çalışmaktan ve dilenmekten alıkoyabilir. İşte bu nedenlerle Allah ona, o sırada durumunu düzeltmesi, gelecek için de Allah'ın lütfünü beklemesi için borçlanma izni vermiştir. Ayrıca Allah, borç vermeye de büyük sevap vaat etmiştir. Bu ise Allah'ın lütfundandır.

لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَاِنْ تُبْدُوا مَا فٖٓي اَنْفُسِكُمْ اَوْ تُخْفُوهُ يُحَاسِبْكُمْ بِهِ اللّٰهُ فَيَغْفِرُ لِمَنْ يَشَٓاءُ وَيُعَذِّبُ مَنْ يَشَٓاءُ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدٖيرٌ ﴿٢٨٤﴾

284- "Göklerde ve yerdekilerin hepsi Allah'ındır. İçinizdekileri açığa vursanız da gizleseniz de Allah ondan dolayı sizi hesaba çekecektir. Sonra dilediğini affeder, dilediğine de azap verir. Allah, her şeye kadirdir."

Yani Allah, bütün manalara ve davalara kadirdir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Amaçları, arzuları, çeşitli ihtiyaçları ve istekleri yerine getirmeye kadirdir.

- Allah, ibadetin ortaya koydukları ile iradenin gizlediklerine kadirdir.

- Allah, hislerin gizledikleri ile ifadelerin açıkladıkları şeylere kadirdir.

- Allah, hareket ve duruşların gizledikleri şeylere kadirdir.

- Bu ifade, sürekli denetim ve kesintisiz muhasebeye işaret etmektedir. O halde bir an bile gafil olma ve bir nefeslik vaktini bile zayi etme.

اٰمَنَ الرَّسُولُ بِمَٓا اُنْزِلَ اِلَيْهِ مِنْ رَبِّه۪ وَالْمُؤْمِنُونَ كُلٌّ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَمَلٰٓئِكَتِه۪ وَكُتُبِه۪ وَرُسُلِه۪ لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِنْ رُسُلِه۪ وَقَالُوا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا غُفْرَانَكَ رَبَّنَا وَاِلَيْكَ الْمَص۪يرُ ﴿٢٨٥﴾

285- "Peygamber, Rabbi tarafında kendisine indirilene iman etti. Müminler de iman ettiler. Her biri Allah'a, meleklerine, kitaplarına, peygamberlerine iman ettiler. 'Allah'ın peygamberlerinden hiç biri arasında ayırım yapmayız. İşittik, itaat ettik. Ey Rabbimiz, affına sığındık. Dönüş sanadır' dediler."

Bu, Hakk'ın, peygamberinin imanına olan tanıklığıdır. Bu tanıklık, peygamberin kendi hakkındaki tanıklığından daha yeterlidir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Diğer yaratıklar delilden hareketle iman ederken peygamber, müşahede ederek iman etmiştir.

- Diğer yaratıklar, vasıtalar aracılığıyla iman etmiş, Hz. Muhammed ise vasıtasız iman etmiştir.

- Bu ifade, Allah'ın, Miraç gecesi Hz. Peygambere yönelik yüceltme amaçlı bir ifadesidir. Nitekim bu amaçla Allah: "*Sen iman ettin*" yerine üçüncü şahıs kipini kullanarak: (اٰمَنَ الرَّسُولُ) "*Peygamber iman etti*" buyurmuştur. Tıpkı saygın ve fazilet sahibi bir kimseye hitaben: "*Sen söyledin*" yerine: "*Üstad söyledi*" denildiği gibi.

- Peygamber ve müminler, hepsi Allah'a, meleklerine, kitaplarına ve peygamberlerine iman etti. Lakin imandan imana büyük fark vardır. Onların hepsi, delilden hareketle iman ederken sen ey Muhammed, Allah'a kavuşarak iman ettin.

لَا يُكَلِّفُ اللّٰهُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا لَهَا مَا كَسَبَتْ وَعَلَيْهَا مَا اكْتَسَبَتْ
رَبَّنَا لَا تُؤَاخِذْنَٓا اِنْ نَسٖينَٓا اَوْ اَخْطَاْنَا رَبَّنَا وَلَا تَحْمِلْ عَلَيْنَٓا اِصْرًا
كَمَا حَمَلْتَهُ عَلَى الَّذٖينَ مِنْ قَبْلِنَا رَبَّنَا وَلَا تُحَمِّلْنَا مَا لَا طَاقَةَ
لَنَا بِهٖ وَاعْفُ عَنَّا وَاغْفِرْ لَنَا وَارْحَمْنَا اَنْتَ مَوْلٰينَا فَانْصُرْنَا عَلَى
الْقَوْمِ الْكَافِرٖينَ ﴿٢٨٦﴾

286- "Allah her şahsı ancak gücünün yettiği ölçüde mükellef kılar. Herkesin kazandığı kendinedir. Yapacağı kötülük de kendinedir. 'Ey Rabbimiz, bizden öncekilere yüklediğin gibi, bize de ağır bir yük yükleme! Ey Rabbimiz, bize gücümüzün yetmediği işler de yükleme! Bizi affet! Bizi bağışla!'"

Allah, insanlara olan noksansız merhametinden dolayı kendilerini güçlerinin ölçüsüne ve çok daha aşağısına vakıf kılmıştır. Bunun tamamı ise, O'nun şefkat ve lütfudur.

(لَهَا مَا كَسَبَتْ) *"Herkesin kazandığı kendinedir."*

Bu kazanılanlar, hayırlardan ibarettir.

(وَعَلَيْهَا مَا اكْتَسَبَتْ) *"Yapacağı kötülük de kendinedir."*

Ettiği ve sahibini kurtaran tevbe kendisinedir.

(رَبَّنَا لَا تُؤَاخِذْنَٓا اِنْ نَسٖينَٓا اَوْ اَخْطَاْنَا رَبَّنَا وَلَا تَحْمِلْ عَلَيْنَٓا اِصْرًا كَمَا حَمَلْتَهُ عَلَى الَّذٖينَ مِنْ قَبْلِنَا رَبَّنَا وَلَا تُحَمِّلْنَا مَا لَا طَاقَةَ لَنَا بِهٖ) *"Ey Rabbimiz, bizden öncekilere yüklediğin gibi, bize de ağır bir yük yükleme! Ey Rabbimiz, bize gücümüzün yetmediği işler de yükleme!"*

Bir ihtiyaç vaki olduğu zaman insanlar, vasıtanın diliyle Allah'a hitap ederlerdi. Bu bağlamda İsrail oğulları: (قَالُوا يَا مُوسَى ادْعُ لَنَا رَبَّكَ) *"Ey Musa, bizim için Rabbine dua et"* (A'râf, 7/134), derken Allah bu ümmete hitaben şöyle buyurmuştur:

(وَقَالَ رَبُّكُمُ ادْعُونِي اَسْتَجِبْ لَكُمْ) *"Rabbiniz dedi ki: 'Bana dua edin, duanızı kabul edeyim.'"* (Mümin, 40 /60)

Bir de eski topluluklar, bir günah işledikleri zaman tevbenin kabulü için bir süre beklemeye ihtiyaçları olurdu. Bu ümmet hakkında ise Hz. Peygamber (s.a.v.): *"Pişmanlık tevbedir"* buyurmuştur.

Ayrıca eski toplulukların kimi mensupları: "*Tıpkı onların tanrıları olduğu gibi, bizim için de bir tanrı yap*" demiştir. Bu ümmetin özelliği ise tevhid inançlarının ışıklarıyla aydınlık yapmasıdır. Aslında bu ümmetin özellikleri, izaha sığmayacak kadar çoktur.

(وَاعْفُ عَنَّا) *"Bizi affet!"*

Şimdiki hayatımızda.

(وَاغْفِرْ لَنَا) *"Bizi bağışla!"*

Ahiret hayatımızda.

Bize acı! Sen bizim Mevlâ'mızsın. Kâfirler topluluğuna karşı bize yardım et!

Bütün durumlarda bize yardım et! Çünkü senden başka hiç kimsemiz yoktur. Sen bizim Mevlâ'mızsın. O halde bizi senden alıkoyacak durumlara karşı bize zafer ver!

Bu arada bu duayı yapanlar: "*Ey Rabbimiz, bizden öncekilere yüklediğin gibi, bize de ağır bir yük yükleme*" deyince Allah önceki topluluklar gibi, onları yok etmek yerine günahlarını yok etti. Onlara, diğer hayvanların şekline sokma cezası vermek yerine günahlarını iyiliklere çevirdi ve önceki toplulukların başına yağdırdığı gibi, başlarına taş yağdırmak yerine üzerlerine rahmet yağdırdı.

Hamd, âlemlerin Rabbi olan Allah'a mahsustur.

سورة اٰلِ عِمْرٰنَ

# ÂL-İ İMRÂN SÛRESİ

(Âl-i İmran Sûresi Medine'de inmiştir. 200 ayettir.
Adını, 34-37. ayetlerde sözü edilen Hz. İsa'nın mensup olduğu âileden almıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**"Rahman ve Rahim olan Allah'ın adıyla."**

Tahkik ehli, "Allah" lafzının bir manadan türetilmiş olup olmadığı konusunda ihtilafa düşmüşlerdir. Onların çoğu, bu lafzın bir manadan türetilmediğini ve Allah'a özgü bir isim olduğunu söylemiştir. Bu lafzın Allah için kullanılması, tıpkı diğer özel isimlerin varlıklar hakkındaki kullanılması gibidir. Nitekim marifet ehlinin isimleri bu lafızla birlikte kullanıldığında zihinleri ve bilgileri Allah'ın varlığından ve hakkından başka bir anlama yönelmez. Bu lafzın hakkı, kalbin müşahedesiyle birlikte olmasıdır. Mesela bir kimse, diliyle: "*Allah*" dediği veya kulaklarıyla onu işittiği zaman kalbiyle Allah'ı müşahede etmiş olur.

Hal böyle olunca, bu kelime Allah'tan başka hiçbir anlama delalet etmediği gibi, onu söyleyenin gördüğü şey de Allah'tan başkası olamaz. Böylece o, diliyle Allah demiş, aklıyla Allah'ı bilmiş, kalbiyle Allah'ı tanımış, ruhuyla Allah'ı sevmiş, sırrıyla Allah'ı müşahede etmiş, zahiriyle Allah'ın huzurunda yalvarmış, iç dünyasıyla Allah'ı benimsemiş, ahvaliyle de Allah ile baş başa kalmış ve O'nda yok olmuş

olur. Bu itibarla Allah'tan başkasının onda nasibi kalmamış olur. Bu kimse, Allah'ta, Allah için Allah ile mahviyet hali yaşadığı zaman Hak Teâlâ, ruhunu yok olmaktan korumak ve kalbini temizlemek için onu rahmetinin kapsamına alarak "*Rahmân ve rahîm*" sözüyle ona tecelli eder. Dostlarının külliyen yok olmaması için, lütufta bulunmak Allah'ın bir sünnetidir.

الٓمٓ ﴿١﴾ اَللّٰهُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْحَيُّ الْقَيُّومُ ﴿٢﴾

1, 2- "Elif. Lâm. Mîm. Hayy ve kayyûm olan Allah'tan başka ilâh yoktur."

Allah, "*Elif*" lafzıyla bütün hallerinde insanın ihtiyacını yerine getirdiğine işaret etmiştir. Zira insan, gafletinin tutsağı olup kendi başına onu iyiliğe ve doğruluğa götüren yolu bulamamaktadır. Oysa Allah, insanın eksiklerini tamamlayan hususları icra etmekte ve kendisine yeterli yardımı yapmaktadır. Böylece Allah, kendi durumunun farkında bile olmayan insanın ihtiyaçlarını yerine getirir ve kendisi talepte bulunmadan verir.

"*Lâm*" lafzı, gizli sırda Allah'ın insana olan lütfuna işaret etmektedir. O kadar ki Allah, insanı yerleştirdiği makamda kendisine minnette de bulunmaz. "*Mîm*" lafzı ise ilahî takdirin dostlardan gelen taleplere uygun cereyan etmesine işaret etmektedir. Bu çerçevede âlemde her şeyin hareketi ve her zerrenin ortaya çıkışı Allah'ın dostlarının rızası istikametinde gerçekleşir. O kadar ki eğer bir kimse: (هُوَ فِي شَأْنٍ) "*Allah, her an yaratma halindedir*" (Rahmân, 55/29), ayetindeki yaratmadan maksadın, dostların muradını gerçekleştirmek olduğunu söylerse bu, uzak bir ihtimal olmaz.

Bir yoruma göre de; insanların konuşma şeklinden farklı olan bu kesik harfleri duymakla, insanların kalplerinde zorunluluk, duyu ve içtihattan kaynaklanan bilgiler, şekiller, alışkanlıklar ve hayallerin tamamı dağılmış olur. Nihayet kalpler vehimler ve bilgilerden boşalıp sırlar alışkanlıklar ve bilinen hususlardan arındırılınca, "Allah" lafzı her türlü gayrdan kutsanmış kalbe ve her keyfiyetten arındırılmış

sırra yerleşerek: “*Elif. Lâm. Mîm.*” (اَللّٰهُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْحَيُّ الْقَيُّومُ) “*Hayy ve kayyûm olan Allah’tan başka ilâh yoktur*” ayetlerinde ifadesini bulmuş olur.

O halde insandan habersiz kalmayan ve insan hakkında asla yanılgıya düşmeyen O’dur. Bu nedenle Allah, insanın bütün hallerinde sırrını denetlemektedir. Yalnız başına kalan kimseyi de, araya aracıları koyanı da denetim altında tutan O’dur. Hulâsa, insanın durumları ne denli değişirse değişsin, onun gerçek sevgilisi Allah olmalıdır.

نَزَّلَ عَلَيْكَ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ مُصَدِّقًا لِمَا بَيْنَ يَدَيْهِ وَاَنْزَلَ التَّوْرٰيةَ وَالْاِنْجِيلَ ﴿٣﴾ مِنْ قَبْلُ هُدًى لِلنَّاسِ وَاَنْزَلَ الْفُرْقَانَ اِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا بِاٰيَاتِ اللّٰهِ لَهُمْ عَذَابٌ شَدِيدٌ وَاللّٰهُ عَزِيزٌ ذُو انْتِقَامٍ ﴿٤﴾

3, 4- “O, sana Kitab’ı hak olarak tedricen indirdi. Kendisinden önceki kitapları tasdik edici olarak. Daha önce de insanlara doğru yolu göstermek üzere, Tevrat ile İncil’i ve Furkan’ı indirmiştir. Allah’ın ayetlerini inkâr edenler için şiddetli bir azap vardır. Allah azizdir, intikam sahibidir.”

Ey Muhammed, sen ne kitabın ne olduğunu ne de dostların hikâyesini bilirdin. Ancak karşına ezeli bir tercih çıktı ve seni olağanüstü özelliğe, apaçık delile ve üstün bir yere sahip bir durumun içine attı.

(مُصَدِّقًا لِمَا بَيْنَ يَدَيْهِ) “*Kendisinden önceki kitapları tasdik edici olarak.*”

Yani Allah, peygamberlerin dilleri üzerine Kitap’ta sana vaat ettiklerini gerçekleştirmek üzere onu indirdi.

(وَاَنْزَلَ التَّوْرٰيةَ وَالْاِنْجِيلَ مِنْ قَبْلُ هُدًى لِلنَّاسِ وَاَنْزَلَ الْفُرْقَانَ) “*Daha önce de insanlara doğru yolu göstermek üzere, Tevrat ile İncil’i ve Furkan’ı indirmiştir.*”

Yani biz her ne kadar senden önce peygamberlere kitaplarımızı indirdiysek de seni anmadığımız hiçbir kitap bırakmadık.

Şiir:

*Yanımda, hazır olmayan dostlara dair*
*Başlığı seni anmak olan sahifeler varır.*

Peygamberlerin nurlarını seninle tamamladığımız gibi, indirdiğimiz bütün vahiyleri de seni anmakla süsledik.

(اِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا بِاٰيَاتِ اللّٰهِ لَهُمْ عَذَابٌ شَدِيدٌ) *"Allah'ın ayetlerini inkâr edenler için şiddetli bir azap vardır."*

Bu azap, hakkı görmekten alıkonulmuşluğun züllüdür. Lakin onlar, farkında değildirler.

(وَاللّٰهُ عَزِيزٌ ذُو انْتِقَامٍ) "*Allah*" dostları nazarında "*azizdir*." Düşmanlarına karşı "*intikam sahibidir*." O, herkesin aradığı, ancak çoğu zaman kimsenin bulamadığı bir azizdir.

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَخْفٰى عَلَيْهِ شَيْءٌ فِي الْاَرْضِ وَلَا فِي السَّمَٓاءِ ﴿٥﴾

5- "Şüphesiz ki, ne yerde ne de gökte hiçbir şey Allah'a gizli kalmaz."

Allah, kulun alıp verdiği her nefesin sayısını mutlaka kayıt altına alır. Göklerde ve yerde ne oluyorsa mutlaka onun yaratıcısı ve yoktan var edicisi Allah'tır. Kimde ne tür bir vasıf ve nitelik varsa, mutlaka o, Allah'ın tasarrufu altındadır. Bu, genel durum itibariyle böyledir. Özel duruma gelince, kim O'na ihtiyacını arz ederse, mutlaka onu yerine getirir. Kim bir musibet halinde O'na başvurursa, mutlaka O, bu musibeti ortadan kaldırmaya yeter.

هُوَ الَّذِي يُصَوِّرُكُمْ فِي الْاَرْحَامِ كَيْفَ يَشَٓاءُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿٦﴾

6- "Sizi rahimlerde dilediği gibi şekillendiren O'dur. Ondan başka ilah yoktur. O, mutlak güç ve hikmet sahibidir."

Bu durum, devam eden yaratma süreciyle ilgilidir. Aynı zamanda Allah, ezelde hallerinizi de dilediği gibi takdir etmiştir ki, bu da ezeldeki kaza ve kader ile ilgilidir.

(لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ) *"Ondan başka ilah yoktur. O, mutlak güç ve hikmet sahibidir."*

Bu nedenle O'nun hükmünün ardından bir noksanlık meydana gelmez. Takdirine de ihmal veya ret ile karşı çıkılamaz.

هُوَ الَّذِي اَنْزَلَ عَلَيْكَ الْكِتَابَ مِنْهُ اٰيَاتٌ مُحْكَمَاتٌ هُنَّ اُمُّ الْكِتَابِ وَاُخَرُ مُتَشَابِهَاتٌ فَاَمَّا الَّذِينَ فِي قُلُوبِهِمْ زَيْغٌ فَيَتَّبِعُونَ مَا تَشَابَهَ مِنْهُ ابْتِغَاءَ الْفِتْنَةِ وَابْتِغَاءَ تَاْوِيلِهِ وَمَا يَعْلَمُ تَاْوِيلَهُٓ اِلَّا اللّٰهُ وَالرَّاسِخُونَ فِي الْعِلْمِ يَقُولُونَ اٰمَنَّا بِهِ كُلٌّ مِنْ عِنْدِ رَبِّنَا وَمَا يَذَّكَّرُ اِلَّٓا اُولُوا الْاَلْبَابِ ﴿٧﴾

7- "Sana Kitab'ı indiren O'dur. Onun bazı ayetleri muhkemdir ki, bunlar Kitab'ın esasıdır. Diğerleri de müteşâbihtir. Kalplerinde eğrilik olanlar, fitne çıkarmak ve onu tevil etmek için ondaki müteşâbih ayetlerin peşine düşerler. Halbuki onun tevilini Ancak Allah bilir. İlimde yüksek payeye erişenler ise: 'Ona inandık; hepsi Rabbimiz tarafındandır' derler. Bu inceliği ancak akıl sahipleri düşünüp anlar."

Allah, onlara yönelik hitabı çeşitlendirmiştir. Bu hitabın bazısı açık ve anlaşılır iken bazısı kapalı olup tevili zordur. Birinci kısım, dinin hükümlerini açıklamak ve zahir ehlinin hidayeti içindir. İkinci kısım da sırları yabancıların muttali olmasından korumak içindir. Bu nedenle âlimlerin yolu, usule uygun şekilde anlamını araştırmada derinleşmektir. Bu çerçevede anlaşılabilen kısım kabul ile karşılanır. Fikri kapasitenin yetersizliğinden dolayı nüfuz edilemeyen kısım ise gaybı bilen Allah'a hava edilir.

İşaret ve idrak ehlinin yolu ise kalbin huzuruyla kulak vermektir. Bu durumda keşfin işaretlerini, idraklerinde beliren tanımlamalar üzerine inşa ederler.

Eğer gizliliği sürdürmek ve sırrı kapalı tutmakla yükümlü kılınırlarsa, dilsizleşirler. Şayet açıklamak ve yaymakla memur kılınırlarsa, hakkı açıklamak üzere dillerini salıverirler ve gaybın tanımlamalarını dile getirirler. Basiretlerin nurlarıyla desteklenenlere gelince, bunlar idrak güneşlerinin ışıltılarıyla aydınlanmışlardır. Şüphe örtüsü giydirilip hakikatlerin inceliklerinden mahrum bırakılanlar ise, halden hale düşerler, zanlarla savrulurlar, şüphe ve belirsizlik vadilerinde helak olduklarından cehaletlerine cehalet ve şüphelerine nefret eklerler.

(وَمَا يَعْلَمُ تَاْوِيلَهُٓ اِلَّا اللّٰهُ) *"Halbuki onun tevilini ancak Allah bilir."*

İlmini Allah'tan elde edenlerin imanı, caiz görme kaygılarının dalgalanmalarına maruz kalmayıp apaçık ve pürüzsüz kesinlikten kaynaklanır. Duru akılların sahibi kimseler ise tefekkürün eşliğinde delillerin ortaya çıkmasını hedeflerler.

رَبَّنَا لَا تُزِغْ قُلُوبَنَا بَعْدَ اِذْ هَدَيْتَنَا وَهَبْ لَنَا مِنْ لَدُنْكَ رَحْمَةً اِنَّكَ اَنْتَ الْوَهَّابُ ﴿٨﴾

8- "Rabbimiz! Bizi doğru yola ilettikten sonra kalplerimizi eğriltme. Bize tarafından rahmet bağışla. Lütfü en bol olan sensin."

Yakınlıkları arttıkça edepleri de artar. Uzaklaşmaya yeltenmek de edebe riayet etme sebeplerinin en güçlü olanıdır. Bir yoruma göre de onlar, güzel niyazda samimi olunca yeterlilik nurlarıyla desteklenmiş oldular.

رَبَّنَٓا اِنَّكَ جَامِعُ النَّاسِ لِيَوْمٍ لَا رَيْبَ فِيهِ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُخْلِفُ الْمِيعَادَ ﴿٩﴾

9- "Rabbimiz! Gelmesinde şüphe edilmeyen bir günde, insanları mutlaka toplayacak olan sensin. Allah, asla sözünden dönmez."

Bugün dostlar yakınlık makamında toplanırken, yarın herkes, sevap ve azap yeri için toplanacaktır. Bugün sırlar, celal ve cemalin

keşfi için toplanırken, yarın durumları müşahede etmek için sevinçlerin bir araya geldiği ve sözü edilen hallerin zorluklarının çekildiği gündür.

اِنَّ الَّذٖينَ كَفَرُوا لَنْ تُغْنِيَ عَنْهُمْ اَمْوَالُهُمْ وَلَٓا اَوْلَادُهُمْ مِنَ اللّٰهِ
شَيْـًٔا وَاُولٰٓئِكَ هُمْ وَقُودُ النَّارِ ﴿١٠﴾

10- "İnkâr edenlerin ne malları ne de evlatları Allah huzurunda kendilerine bir fayda sağlayacaktır. İşte onlar, cehennemin yakıtıdır."

Onlara ne bir fidye fayda verir ne bir zenginlik azaplarına engel olur ne bir mal kendilerinden kabul edilir ne bir engel üzerlerinden kaldırılır ne de haklarında bir söz dinlenir. Cehennem onlarla alevlendirilir. Acıklı kovulma, uzaklık ve cehennemin kaynar suyu onlara özgüdür.

كَدَاْبِ اٰلِ فِرْعَوْنَ وَالَّذٖينَ مِنْ قَبْلِهِمْ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا فَاَخَذَهُمُ اللّٰهُ
بِذُنُوبِهِمْ وَاللّٰهُ شَدٖيدُ الْعِقَابِ ﴿١١﴾

11- "Onların yolu, Firavun hanedanının ve onlardan öncekilerin tuttuğu yola benzer. Onlar, bizim ayetlerimizi yalanladılar. Allah da kendilerini günahları yüzünden yakalayıverdi. Allah'ın cezası çok şiddetlidir."

Onlar, âdetleri üzere büyüklük taslamada ısrar ettiler. Biz de ceza vermede onlara karşı prensibimizi sürdürdük. Ancak onlar, ne ısrardan vazgeçtiler ne de iyilikleri arzuladılar. Yemin ederim, önceden yaptıklarından dolayı pişmanlık duyup hasret çekenler yine onlar oldu. Ancak bu pişmanlık ve hasret, kapının kapalı olduğunu ve pişmanlığın yüzlerine çarpıldığını gördükleri zaman gerçekleşti.

قُلْ لِلَّذٖينَ كَفَرُوا سَتُغْلَبُونَ وَتُحْشَرُونَ اِلٰى جَهَنَّمَ وَبِئْسَ الْمِهَادُ ﴿١٢﴾

12- "İnkâr edenlere de ki: 'Yakında mağlup olacaksınız ve cehenneme sürüleceksiniz. Orası kalınacak ne kötü bir yerdir!'"

Allah, bu kimselere, kıyamette kendisiyle konuşma fırsatını kaçırdıklarını, dünyada da hayatın tadını çıkaramayacaklarını bildirmektedir. Bu arada ahirette, yanmak suretiyle karşılaşacakları azabın şiddeti, dünyada maruz kaldıkları Allah'tan kopukluk ve ayrılıktan daha ağırdır. Lakin basiretler hastalıklı olduğundan acıklı azabı fark edemediler.

قَدْ كَانَ لَكُمْ اٰيَةٌ في فِئَتَيْنِ الْتَقَتَا فِئَةٌ تُقَاتِلُ في سَبيلِ اللّٰهِ وَاُخْرٰى كَافِرَةٌ يَرَوْنَهُمْ مِثْلَيْهِمْ رَأْيَ الْعَيْنِ وَاللّٰهُ يُؤَيِّدُ بِنَصْرِه۪ مَنْ يَشَٓاءُ اِنَّ في ذٰلِكَ لَعِبْرَةً لِاُو۬لِي الْاَبْصَارِ ﴿١٣﴾

13- "Bedir'de karşı karşıya gelen şu iki grubun halinde sizin için büyük bir ibret vardır. Biri, Allah yolunda çarpışan bir grup, diğeri ise bunları apaçık kendilerinin iki misli gören kâfir bir grup. Allah, dilediğini yardımı ile destekler. Elbette bunda basiret sahipler için büyük bir ibret vardır."

Allah, bir işi gerçekleştirmek istediği zaman çok olanı, bir topluluğun gözünde az gösterir, az olanı da bir topluluğun gözünde çok gösterir. Bir kavmin basiretini kapattığı zaman ise gözlerinin görür olması fayda vermez. Diğer bazılarının kalplerini açık tuttuğu zaman da basiretlerinin kapalı olması onlara zarar vermez.

زُيِّنَ لِلنَّاسِ حُبُّ الشَّهَوَاتِ مِنَ النِّسَٓاءِ وَالْبَنينَ وَالْقَنَاطيرِ الْمُقَنْطَرَةِ مِنَ الذَّهَبِ وَالْفِضَّةِ وَالْخَيْلِ الْمُسَوَّمَةِ وَالْاَنْعَامِ وَالْحَرْثِ ذٰلِكَ مَتَاعُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَاللّٰهُ عِنْدَهُ حُسْنُ الْمَاٰبِ ﴿١٤﴾

14- "Nefsanî arzulara, kadınlara, oğullara, yığın yığın biriktirilmiş altın ve gümüşe, salma atlara, sağmal hayvanlara ve ekinlere karşı düşkünlük insanlara çekici kılındı. Bunlar, dünya hayatının geçici menfaatleridir. Halbuki varılacak güzel yer Allah katındadır."

Aslında mahiyetleri aynı olan şehevî arzuların bazısı diğerlerinin yerine de örnek olarak zikredilmektedir. Netice itibariyle insanı ilahî müşahededen alıkoyan şey bu arzulardandır. Bu arada bu yoldaki en güçlü engel, gizli şehvettir. Nefse hoş gelecek şekilde taatları yerine getirmek de tarikat ehli nazarında gizli şehvet kapsamında sayılır. Bu konudaki zor aşamalardan biri de Allah'ın kulu kendine yakın tutma çeşitleriyle karşılamasıdır. Sanki Allah, insanı gizlice kendine çağırırken aynı zamanda onu sınamaktadır. Çünkü Allah, insanı her incelikli sıfatla vasıflandırdığında, bunların altında nefsin baştan çıkarıcı gizli tuzakları bulunabilir. Kim de saadete mazhar olursa, Allah onu güzel halleri ve kendisine özgü kıldığı lütufları ve istikameti üzere tutmak suretiyle, celal ve cemalini müşahede ettirerek keşif ehli kılar.

قُلْ اَؤُ۬نَبِّئُكُمْ بِخَيْرٍ مِنْ ذٰلِكُمْ لِلَّذِينَ اتَّقَوْا عِنْدَ رَبِّهِمْ جَنَّاتٌ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا وَاَزْوَاجٌ مُطَهَّرَةٌ وَرِضْوَانٌ مِنَ اللّٰهِ وَاللّٰهُ بَصِيرٌ بِالْعِبَادِ ﴿١٥﴾

15- "De ki: 'Size bunlardan daha iyisini bildireyim mi? Takva sahipleri için Rableri yanında, içinden ırmaklar akan, ebediyen kalacakları cennetler, tertemiz eşler ve Allah'ın hoşnutluğu vardır.' Allah, kullarını çok iyi görür."

Allah, bu ayette takva ehlinin dünya sahiplerine olan üstünlüğünü açıklamak üzere şunu demek istemiştir: Dünya ehli için emellerinin peşinden gitmek ve nefsin arzusuna uymak varken, takva ehli için yüksek dereceler bulunmaktadır. Nitekim Allah kullarını çok iyi görür. Aynı zamanda her topluluğu layık olduğu yere konumlandırmış ve ehil kıldığı noktaya ulaştırmıştır.

اَلَّذِينَ يَقُولُونَ رَبَّنَٓا اِنَّنَٓا اٰمَنَّا فَاغْفِرْ لَنَا ذُنُوبَنَا وَقِنَا عَذَابَ النَّارِ ﴿١٦﴾

16- "Bu nimetler: 'Ey Rabbimiz! İman ettik, bizim günahlarımızı bağışla, bizi ateş azabından koru' diyenler içindir."

Yani bunlar, bütünüyle bize bağlanırlar, zorlukları ve sıkıntıyı dile getirerek huzurumuzda tazarruda bulunurlar yani tevazu ile yalvarırlar. İşte onlar, bizden yakınlık, özellik, yüksek dereceler ve hoşnut kılan kısmetler kazanırlar.

اَلصَّابِرِينَ وَالصَّادِقِينَ وَالْقَانِتِينَ وَالْمُنْفِقِينَ وَالْمُسْتَغْفِرِينَ
بِالْاَسْحَارِ ﴿١٧﴾

17- "Bunlar sabreden, dürüst olan, huzurda boyun büken, hayra harcayan ve seher vaktinde Allah'tan bağış dileyenlerdir."

Sabır, nefsi hapsetmek demek olup üç mertebedir:

- Kulun, emredildiği hususta sabretmesi

- Kulun, alıkonulduğu hususta sabretmesi

- Allah'ın, iradesine uygun olarak, cereyan eden hükmünün altında durmak. Bu tür sabır, ya insanın sevdiğini kaçırması veya güç yetiremediği bir hususun baskısı karşısında söz konusu olur.

İnsan, bu durumlar karşısında zorluk çekmemek veya huzura ermek suretiyle daha üst bir seviyeye çıktığında, bu takdirde yaşadığı durum sabır değil, rızadır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Onlar, Allah'ın emirleri karşısında sabreden, Allah'a söz verdikleri konularda dürüst davranan, Allah sevgisinde istikamet üzere olmak suretiyle nefisleriyle itaat eden ve Allah hakkındaki kusurlarını gördükleri için yaptıklarının tamamından istiğfarda bulunan kimselerdir.

- Onlar, kalpleriyle sabreden, ruhlarıyla dürüst davranan, nefisleriyle itaat eden ve dilleriyle istiğfarda bulunan kimselerdir. Onlar, niyetlerin samimiyeti üzerine sabreden, ahitlerde dürüst davranan, sınırları korumak suretiyle itaat eden ve tevhid inancının hâkimiyeti gerçekleştiğinde bütün amel ve hallerinden istiğfarda bulunan kimselerdir.

- Sabredenler, talep konusunda sabırlı davranan, mazeret uydurarak kaçmayan, yorgunluğu abartmayan, her türlü rahatı ve arzuyu terk edebilen, sıkıntıya dayanabilen, şikâyetçiliği reddeden, nihayet Mevla'ya ulaşan, dünya ve ahiret işlerinden hiç birinin Allah'tan koparamadığı kimselerdir. Dürüst olanlar, talepte samimi olup irade ortaya koyan, sonra mana âlemine varıncaya kadar, ardından müşahede edinceye kadar, ardından buluncaya kadar, ardından da kaybedinceye kadar iradelerini sürdüren kimselerdir. Böylece bunların haller sıralaması; irade, varış, müşahede, bulma ve sönme şeklinde gerçekleşir. Boyun bükenler, kapıdan ayrılmayan ve meşakkatleri yudumlamaya devam eden, arzuları terk eden ve yakınlaşmadan emin oluncaya kadar arkadaşları reddedenlerdir. Hayra harcayanlar, amelleri bakımından nefislerini feda eden, sonra da imkânları dâhilindeki mallarıyla, sonra hallerinde dürüst olmak suretiyle kalpleriyle, sonra yakınlık ve vuslat halinde her şeyi gözden çıkarıp dünya ve ahiretteki bütün arzuları terk etmek suretiyle cömertlik yapanlardır. Allah'tan bağış dileyenler ise, coğrafi ufuklardaki şafağın değil, kalplerin şafağının aydınlanması esnasında uyanışa dönüş yaptıkları zaman bütün bu söylenenlerden istiğfarda bulunanlardır.

شَهِدَ اللّٰهُ اَنَّهُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ وَالْمَلٰٓئِكَةُ وَاُو۬لُوا الْعِلْمِ قَٓائِمًا بِالْقِسْطِ
لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ الْعَز۪يزُ الْحَك۪يمُ ﴿١٨﴾

18- "Allah, kendisinden başka ilah olmadığını açıklamıştır."

Yani Allah, kendisinden başka ilah olmadığını bilmiş, haber vermiş ve buna hükmetmiştir. Bu itibarla bu beyan, Allah'ın, Hakk'ın sadece kendisi olduğuna dair olarak kendi lehine tanıklık etmesidir. Aynı zamanda Allah'ın, sadece kendisi olduğuna ilk tanıklık eden de O'dur. Böylece Allah, ezelî sıfatları hakkında sözüyle, kelamıyla ve ezelî hitabıyla tanıklık etmiştir. Aynı zamanda tek ve sonsuz varlığından, yönetme vasfına sahip yardımından, daimi zatından, sermedi celalinden ve ebedi cemalinden de söz ederek: (شَهِدَ اللّٰهُ ) "*Allah açıklamıştır*" buyurmuştur. Sonra Allah, ebedilerini açıklamıştır. Yani

ortaya koyduğu delillerle beyanda bulunmuş, kesinlik ifade eden kanıtlar ispatlamış, apaçık mucizeler göstermiş, deliller ortaya çıkarmıştır. Şöyle ki, varlığı yok olmaya mahkûm müstakil varlıklar ve eserler, karşılaşma kabiliyetine sahip kişiler ve peş peşe yer değiştiren sıfatlardan ibaret olmak üzere yarattığı, yokluk sırrından ortaya çıkardığı ve dilediği şekilde var ettiği bütün varlıkların her bir parçası, Allah'ın varlığını açıklamakta, Rablığını ortaya koymakta, kadim oluşuna şahitlik etmekte, O'nun bir, aziz ve şerefli olduğunu akıllara bildirmektedir. Allah, hiçbir inkâr ve çabanın, hiçbir yaratık veya aklın bilgisinin, hiçbir uyum, küfür, var oluş, gayr, inançsızlık, şirk, anlama, düşünce, gökyüzü, uzay, karanlık, aydınlık, çiftlerin kavuşması ve değişik afetlerin gelişi sebebiyle hikmetsizliğin bulunmadığı bir zamanda kadrinin celaline ve azizliğinin kemaline şahitlik etmiştir.

(وَالْمَلٰٓئِكَةُ) *"Ve melekler..."*

Allah, burada birliğine dair şahitliği meleklerin şahitliğiyle teyit etmemiş, aksine onları şahitliğiyle muvaffak kılıp güçlü kılmak ve varlığının bilgisine irşad etmek suretiyle kendilerini mutlu kılıp güçlendirmiştir.

(وَاُولُوا الْعِلْمِ ) *"Ve ilim sahipleri..."*

Bunlar, Âdemoğullarının velileridir. Çünkü onlar, Allah'ın kudretinin celalini bilmiş ve izzetinin vasfını tanımışlarıdır. Bu nedenle Allah, kendi şahitliğini onların şahitliğiyle yan yana zikretmek suretiyle kendilerine değer vermiştir. Böylece onlar, zan ve tahmine değil, müşahede ve belirlemeye dayalı olarak şahitlik etmişlerdir. Şayet Allah'ı bugün apaçık ve hissederek idrak edemediler ise de O'na zan ve seziyle de inanmadılar. Allah, kendini onlara tanıttı, onlar da kendisini tanmış oldular. Allah onları tanık kıldı ve bu nedenle onlar da tanıklık ettiler. Eğer Allah, onlara, kendisinin kim olduğunu söylemeseydi, onlar da O'nun kim olduğunu bilmezlerdi.

Şu var ki, âlimler akıllarının berraklığıyla, tevhid ehli ise söndükten sonra tanıklık ederler.

Şiir:

*Tüketildiler Hakk'ın kahrıyla, söndüler*
*Yok olmalarından sonraysa konuşturuldular tevhidle*

Bu itibarla, onlardan meydana gelen hususları kendilerine yaptıran bir başkasıdır. Onlar adına işlerini sevk ve idare eden de bir başkasıdır. Aslında onlar var idiler, ancak varlıklarından koptular.

Şiir:

*Yazıyorum size mektubumu ölümümden bir gece sonra*
*Bilemedim ölümümden sonra da yazacağımı*

Bu arada ilim sahiplerinin farklı mertebeleri vardır:

Kimi âlim vardır ki, uyum ve ruhbanlık vasfına sahiptir. Kimisinin vasfı fena ve rabbaniliktir. Kimisi helalinin ve haramının hükmünü bilir. Kimisi rivayetleri, sünnetleri ve eserleri bilir. Kimisi kitabını, tefsirini, tevilini, muhkemini, indirilişini bilir. Kimisi sıfatlarını bilir ve delillerini ve tevhid inancını tahriç ettiği bir hadisle güçlendirir. Kimisine de Allah lütufla muamele ederek huzuruna çağırdıktan sonra kendisini keşif ile kahra maruz bırakır. Bu itibarla isim kalıcıdır, zât ise mahviyet içindedir. Hüküm çalar kapıyı, kul ise yok olmaktadır.

Şiir:

*Hak ile katıksız oldular hakperestler*
*Bu nedenle gizlidir onlarda halkın sıfatı*

Bu ayetin işaret ettiği husus, kendilerini bildiklerinde âlimleri duyuşlarından koparmaktan başka bir şey değildir. Amelleri ve zâtları ise yaratılmıştır. Zâtları aracılığıyla anlaşılan hallerinin öncesinde ise takdir vardır. Hakk'ın zâtına gelince O, sonradan var olmayı kabul etmekle vasıflandırılamaz. Zatının sıfatları da ne başkasına bitişmeyi ne de zâttan ayrılmayı kabul eder. Allah, her türlü zıttan, benzerden, bitişmeden, kopuştan, birleşmeden, ayrılmadan, cisimlikten, yaratıl-

mışlıktan, mülkiyetten, uzaydan, şekilden, eserden, kuldan, beşerden, güneşten, aydan, şahıstan ve topraktan münezzehtir.

اِنَّ الدّ۪ينَ عِنْدَ اللّٰهِ الْاِسْلَامُ وَمَا اخْتَلَفَ الَّذ۪ينَ اُو۫تُوا الْكِتَابَ اِلَّا
مِنْ بَعْدِ مَا جَٓاءَهُمُ الْعِلْمُ بَغْيًا بَيْنَهُمْ وَمَنْ يَكْفُرْ بِاٰيَاتِ اللّٰهِ فَاِنَّ اللّٰهَ
سَر۪يعُ الْحِسَابِ ﴿١٩﴾

19- "Allah nezdinde hak din İslam'dır. Kitap verilenler, kendilerine ilim verildikten sonradır ki, aralarındaki kıskançlık yüzünden ayrılığa düştüler. Allah'ın ayetlerini inkâr edenler, bilmelidirler ki, Allah'ın hesabı çok çabuktur."

Allah'ın rıza gösterdiği, sahibini mükâfatlandırıp yükseltmeye söz verdiği ve lütufla buluşturdu din İslam'dır.

İslam ise içtenlik ve teslimiyet demektir. Onun dışındakiler ise reddedilmiş ve kurtuluş yolu, sahibinin yüzüne kapatılmıştır.

(وَمَا اخْتَلَفَ الَّذ۪ينَ اُو۫تُوا الْكِتَابَ اِلَّا مِنْ بَعْدِ مَا جَٓاءَهُمُ الْعِلْمُ بَغْيًا بَيْنَهُمْ وَمَنْ يَكْفُرْ بِاٰيَاتِ اللّٰهِ فَاِنَّ اللّٰهَ سَر۪يعُ الْحِسَابِ) *"Kitap verilenler, kendilerine ilim verildikten sonradır ki, aralarındaki kıskançlık yüzünden ayrılığa düştüler. Allah'ın ayetlerini inkâr edenler, bilmelidirler ki, Allah'ın hesabı çok çabuktur."*

Onlara, beyan ve delil vesilesi olacak bilgi değil, aleyhlerinde delil olan ilim geldi. Nitekim onlar, şuhud makamından perdelendikleri için inkârda ısrar ettiler.

فَاِنْ حَٓاجُّوكَ فَقُلْ اَسْلَمْتُ وَجْهِيَ لِلّٰهِ وَمَنِ اتَّبَعَنِ وَقُلْ لِلَّذ۪ينَ
اُو۫تُوا الْكِتَابَ وَالْاُمِّيّ۪نَ ءَاَسْلَمْتُمْ فَاِنْ اَسْلَمُوا فَقَدِ اهْتَدَوْا وَاِنْ
تَوَلَّوْا فَاِنَّمَا عَلَيْكَ الْبَلَاغُ وَاللّٰهُ بَص۪يرٌ بِالْعِبَادِ ﴿٢٠﴾

20- "Eğer seninle tartışmaya girerlerse, de ki: 'Bana uyanlarla birlikte ben kendimi Allah'a teslim ettim.' Kitap ehline ve ümmilere

de: 'Siz de Allah'a teslim oldunuz mu?' de. Eğer teslim olurlarsa doğru yolu buldular demektir. Yok eğer yüz çevirdilerse, sana düşen yalnızca duyurmaktır. Allah, kullarını çok iyi görmektedir."

Sen onları ilahî tasarruf gözüyle değerlendir ki, ihtilaflarını ve tavırları arasındaki çelişkiyi gözlemlemede dağınıklık hali yaşamayasın. Çünkü varlıkları kudret gözüyle değerlendiren kimse, her birine verdiği özellik esasına göre, hepsini var edenin bir Allah olduğunu bilir.

O halde sen, onları açıktan açığa davet et ve onları sevk ve idare edişimizi gizliden gizliye gözlemle, dilini onlara nasihatle meşgul et, kalbini onların sözlerinden boşalt ve sırrını onları görmekten ayır. Zira onların işleriyle ilgili olarak seni yükümlü kıldığımız yegane husus tebliğdir. İşleri yürüten ve ortaya çıkaran ise biziz.

اِنَّ الَّذ۪ينَ يَكْفُرُونَ بِاٰيَاتِ اللّٰهِ وَيَقْتُلُونَ النَّبِيّ۪نَ بِغَيْرِ حَقٍّ وَيَقْتُلُونَ
الَّذ۪ينَ يَأْمُرُونَ بِالْقِسْطِ مِنَ النَّاسِ فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ اَل۪يمٍ ﴿٢١﴾

21- "Allah'ın ayetlerini inkâr edenler, haksız yere peygamberlerin canlarına kıyanlar ve adaleti emreden insanları öldürenler yok mu, onlara acı bir azabı haber ver!"

Perişanlıkla bağladığımız ve mahrumiyet vasfıyla işaretlediğimiz kimselere, onlardan yüz çevirmemizin ebedî olduğunu ve takdirimizin, onları cennetler yurdundan perişanlık yurduna, perişanlık ve mahrumiyet halinden de azap ve ateşlere taşımayı önceden hükme bağladığını haber ver!

اُو۬لٰٓئِكَ الَّذ۪ينَ حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَمَا لَهُمْ مِنْ
نَاصِر۪ينَ ﴿٢٢﴾

22- "İşte bunlar dünyada da ahirette de çabaları boşa giden kimselerdir. Onların hiçbir yardımcısı da yoktur."

Bunlar, öyle kimselerdir ki, ne bugün işlerinde muvaffakiyet vardır, ne de yarın emelleri gerçekleşir. Bunun sebebi ise, hem dünyada hem de ahirette yardımımızı yitirmeleri ve izzet ile kudretimizi görmemeleridir.

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذ۪ينَ اُو۫تُوا نَص۪يبًا مِنَ الْكِتَابِ يُدْعَوْنَ اِلٰى كِتَابِ اللّٰهِ لِيَحْكُمَ بَيْنَهُمْ ثُمَّ يَتَوَلّٰى فَر۪يقٌ مِنْهُمْ وَهُمْ مُعْرِضُونَ ﴿٢٣﴾

23- "Kendilerine Kitap'tan bir pay verilenleri görmez misin ki, aralarında hükmetmesi için Allah'ın kitabına çağırılıyorlar da sonra içlerinden bir grup cayarak geri dönüyor."

Seni, ezelden daveti kabul etmeyeceklerini bildiğimiz kimselere davette bulunmakla imtihan ettik. O halde, onlar hakkında sana verilen emir konusunda sabret ve durumlarının kötü olduğunu bil. Kuşkusuz onlar, kabul etmekten yüz çeviren kimselerdir. Çünkü onlar, ezeli irademiz gereği güzel tecellimizi elden kaçırmışlardır.

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَالُوا لَنْ تَمَسَّنَا النَّارُ اِلَّٓا اَيَّامًا مَعْدُودَاتٍ وَغَرَّهُمْ ف۪ي د۪ينِهِمْ مَا كَانُوا يَفْتَرُونَ ﴿٢٤﴾

24- "Onların bu tutumlar: 'Bize ateş sadece sayılı günlerde dokunacaktır' demelerinin bir sonucudur. Onların vaktiyle uydurdukları şeyler de dinleri hakkında kendilerini yanıltmıştır."

Biz, onları dünyada istidrac ile cezalandırdık. O kadar ki, kendileri hakkında kurtuluşa ve azabın hafifletilmesine hükmettiler. Oysa ilerde musibetlerinin kat kat arttığını öğreneceklerdir. Onlar, bir temelleri olduğunu sanırlar. Oysa onlar, yalancıların ta kendileridir. Hükümde hataya düşen bu kimseler, zanna kapılmışlardır.

فَكَيْفَ اِذَا جَمَعْنَاهُمْ لِيَوْمٍ لَا رَيْبَ ف۪يهِ وَوُفِّيَتْ كُلُّ نَفْسٍ مَا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ﴿٢٥﴾

25- “Fakat onları gelmesinde şüphe edilmeyen bir gün için topladığımız ve hiçbir haksızlığa uğramaksızın herkese kazandığı şeyler tastamam ödendiği zaman halleri nice olur!”

Bu ayet, Allah’ın bildirdiği işin büyüklüğü ve adı geçen kimselerin akıllarının şaşkına döndüğü, sırlarının dehşet içinde kaldığı, gerekçelerinin yok olduğu, kalplerinin yerinden söküldüğü ve nefeslerinin tıkandığı esnadaki durumun büyütülmesi karşısındaki şaşkınlığı ifade etmektedir. Ayetin, hakkında şaşkınlık ifade ettiği diğer bir husus ise hesap, itap, azap, ceza, değersizlik, yalvarışlarının kabul edilmeyişi ve benzeri durumlarla karşılaşmalarıdır.

Bu arada kâfirlerin kıyameti haşir günü, dostların kıyameti ise her vakittedir. Bu hususun izahı için uzunca bir yorumu vardır.

قُلِ اللّٰهُمَّ مَالِكَ الْمُلْكِ تُؤْتِي الْمُلْكَ مَنْ تَشَٓاءُ وَتَنْزِعُ الْمُلْكَ مِمَّنْ تَشَٓاءُ وَتُعِزُّ مَنْ تَشَٓاءُ وَتُذِلُّ مَنْ تَشَٓاءُ بِيَدِكَ الْخَيْرُ اِنَّكَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرٌ ﴿٢٦﴾

26- “De ki: ‘Mülkün gerçek sahibi olan Allah’ım! Sen, mülkü dilediğine verirsin ve mülkü dilediğinden geri alırsın. Dilediğini aziz kılarsın. Dilediğini de zelil kılarsın. Her türlü iyilik senin elindedir. Gerçekten sen her şeye kadirsin.’”

(اللّٰهُمَّ) “*Allahumme*” lafzının anlamı *“Ya Allah”* demektir. Sonundaki “*mim*” harfi ise nida harfi olan “yâ”nın yerine geçer. Bu ifadeyle Allah, kendisine nasıl sena okunacağını öğretmektedir. Yani beni hakkım olan kadrin celaliyle vasıflandırarak şöyle de: “Ey mülkün mâliki, zâtında senin hiçbir şerikin, hiçbir yardımcın, hiçbir destekçin, hiçbir arkadaşın ve hiçbir paydaşın; mülkte hiçbir ortağın; yaratmada da hiçbir muhalifin yoktur.”

(تُؤْتِي الْمُلْكَ مَنْ تَشَٓاءُ وَتَنْزِعُ الْمُلْكَ مِمَّنْ تَشَٓاءُ) *“Sen, mülkü dilediğine verirsin ve mülkü dilediğinden geri alırsın.”*

Ta ki biz, mülkün sana özgü olduğunu bilelim. Yaratıklardan gerçek melik ise Allah'a karşı boyun bükendir. Mülksüz kalan ise Allah'a karşı kibir taslayandır. O halde yaratıkların güzelliği, Hakk'a boyun bükmelerindedir. Aziz olmaları, Allah'a karşı mahviyet içerisinde olmalarına; kalıcı oluşları da Allah ile yok olmalarına bağlıdır.

(وَتُعِزُّ مَنْ تَشَآءُ) *"Dilediğini aziz kılarsın."*

Bunu zâtının aziz oluşuyla yaparsın.

(وَتُذِلُّ مَنْ تَشَآءُ ) *"Dilediğini de zelil kılarsın."*

Bunu, o kimseyi sahipsiz bırakarak yaparsın.

Bir de dilediğini aziz kılmayı, seni görmesi ve birliğine inanması için bir kimseyi hidayete erdirmek suretiyle yaparsın. Dilediğini zelil kılman da o kimsenin seni inkâr edip kaybetmesidir. Sen, dilediğini iltifatının bereketiyle aziz kılar, dilediğini yüz çevirmenin ürküntüsüyle zelil kılarsın. Dilediğini dost edinerek aziz kılar, dilediğini kendine yabancılaştırarak zelil kılarsın. Dilediğini kendinle meşgul ederek aziz kılar, dilediğini kendinden gafil kılarak zelil kılarsın. Dilediğini nefsinin hükümlerini geçersiz kılmakla aziz kılar, dilediğini nefsinin tutsağı kılmakla zelil kılarsın. Dilediğini ünsiyetinin tezahürleriyle aziz kılar, dilediğini nefsinin vesveseleriyle zelil kılarsın. Dilediğini kendinle bast halinde aziz kılar, dilediğini senden kabz halinde tutmakla zelil kılarsın.

Mülkü de hizmetine koşması sebebiyle dilediğine verir, dergâhından kovmakla da dilediğinden alırsın. Sırrını sadece kendine bağlamakla mülkü dilediğine verir, kalbini bir mahlûka bağlamakla da dilediğinden alırsın. Dilediğini iradesinde sabit kılmakla aziz kılar, dilediğini adet ehlinin durumuna döndürmekle zelil kılarsın.

(بِيَدِكَ الْخَيْرُ) *"Her türlü iyilik senin elindedir."*

Allah burada, hitabın adabını korumak, güzelin zikriyle iyimserlik ifade etmek ve kötülüğü anmaktan kaçınmak için şerri zikretmemiştir.

(اِنَّكَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدٖيرٌ) *"Gerçekten sen her şeye kadirsin."*

Bu şeyler, perdelemek ve cezbetmek, yardım etmek ve yardımsız bırakmak, almak ve geri vermek, fark ve cem, kabz ve bast gibi hususlardır.

Ayet ile ilgili diğer iki yorum ise şöyledir:

- Allah: (وَتَنْزِعُ الْمُلْكَ مِمَّنْ تَشَآءُ) *"Ve mülkü dilediğinden geri alırsın"* buyurunca, kendisini melik zanneden herkesin mahmurluğu kırıldı. Çünkü yokluğa maruz kaldığını gördüğü mülkünün, elinde kalmasında Allah nezdinde boyun bükmenin, kendini beğenmekten ve ağırdan satmaktan daha iyi olduğunu öğrenmiş oldu.

- Gerçekte melik, ilgi duyulan hiçbir şeyin gerçek melik olan Allah'tan alıkoyamadığı kimsedir.

تُولِجُ الَّيْلَ فِي النَّهَارِ وَتُولِجُ النَّهَارَ فِي الَّيْلِ وَتُخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ وَتُخْرِجُ الْمَيِّتَ مِنَ الْحَيِّ وَتَرْزُقُ مَنْ تَشَآءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ﴿٢٧﴾

27- "Geceyi gündüze katar, gündüzü de geceye katarsın. Ölüden diriyi çıkarır, diriden de ölüyü çıkarırsın. Dilediğine de sayısız rızk verirsin."

Geceyi gündüze katarsın ki, tevhid ışığının hâkimiyeti galip gelerek nefsin eserlerinden ve karanlıklarından bir şey kalmasın. Gündüzü de geceye katarsın ki, kalplerin güneşleri tutulmuş gibi veya gece devam etmiş gibi yahut da sabah yok olmuş gibi olsun.

Ölüden diriyi çıkarırsın ki, ölüm süreci yaşanmamış, kavuşma dönemi canlı bir biçimde geri dönmüş ve kalplerin fidanı yeniden taptaze hale gelmiş gibi olsun.

Diriden de ölüyü çıkarırsın ki, buğday bitkisi diken yaprağı ve çiçeği açmış gibi olsun. Umutsuz kimse de hiç hayır görmemiş, koku koklamamış olsun. Kalpleri ve gözleri de, tıpkı ilk kez inanmadıkları gibi, dönmüş şaşkına olsun.

(وَتَرْزُقُ مَنْ تَشَآءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ) *"Dilediğine de sayısız rızk verirsin."*

O kadar ki, emek, çaba, alın teri ve yemin yorgunluğu yoktur. Bu kimsenin gecesi rahat ve huzur, gündüzü coşku ve sevinç, saatleri kerametler, lahzaları yakınlıklar, davranışlarının türleri ise dillere sığmayacak, ifade ve açıklamalarla da sonu gelmeyecek ölçüdedir.

Bu çerçevede işarette bulunduklarımız, bunları nasıl açıklamak gerektiği yönünde bir hatırlatmadır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah: *"Ve mülkü dilediğinden geri alırsın"* buyurunca, mülk sahibi olduğunu sanan herkesin aklı başına geldi. Çünkü o, mülkünün zevale maruz kaldığını gördü ve böylece Allah'a karşı boyun eğmenin, mülkünün varlığını korumada kendisi için kendini beğenmek ve nazlanmaktan daha iyi olduğunu anlamış oldu.

- Hakikatte mülk sahibi, hiçbir şeyin, ona olan ilgisi sebebiyle, hakiki mülk sahibini görmekten laıkoyamadığı kimsedir.

لَا يَتَّخِذِ الْمُؤْمِنُونَ الْكَافِرِينَ اَوْلِيَآءَ مِنْ دُونِ الْمُؤْمِنِينَ وَمَنْ يَفْعَلْ ذٰلِكَ فَلَيْسَ مِنَ اللّٰهِ فِي شَيْءٍ اِلَّٓا اَنْ تَتَّقُوا مِنْهُمْ تُقٰيةً وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهُ وَاِلَى اللّٰهِ الْمَصِيرُ ﴿٢٨﴾

28- "Müminler, müminleri bırakıp da kâfirleri dost edinmesin. Kim bunu yaparsa, artık onun Allah nezdinde hiçbir değeri yoktur. Ancak kâfirlerden gelebilecek bir tehlikeden sakınmanız başkadır. Allah, kendisine karşı gelmekten sizi sakındırıyor. Dönüş yalnız Allah'adır."

İmanın gerçeklerinden biri de Allah yolunda dostluk ve düşmanlık yapmaktır.

Kâfirleri terk edip onlardan yüz çevirme acısını tattırman gereken ilk şey nefsindir. Çünkü nefis: Benim için, benden ve benimle, dediği için Mecusilik üzerine yaratılmıştır. Allah da şöyle buyurmuştur:

(يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوا قَاتِلُوا الَّذٖينَ يَلُونَكُمْ مِنَ الْكُفَّارِ)

*"Ey iman edenler, kâfirlerde yakınınızda olanlara karşı savaşın."* (Tevbe, 9/123)

Bu tarikatta iman azizdir. Avamdan kim, bu tarikata iman etmezse, zühd ve çaba bakımından büyük bir mevkie ulaşmış olsa dahi, senin dostluğuna ehil değildir. Benzer benzere daha çok yakışır.

(وَمَنْ يَفْعَلْ ذٰلِكَ فَلَيْسَ مِنَ اللّٰهِ فٖي شَيْءٍ اِلَّٓا اَنْ تَتَّقُوا مِنْهُمْ تُقٰيةً وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهُ وَاِلَى اللّٰهِ الْمَصٖيرُ ) *"Kim bunu yaparsa, artık onun Allah nezdinde hiçbir değeri yoktur. Ancak kâfirlerden gelebilecek bir tehlikeden sakınmanız başkadır. Allah, kendisine karşı gelmekten sizi sakındırıyor. Dönüş yalnız Allah'adır."*

Allah ile beraberlik ve O'na yakınlık, asla karşıtlarıyla beraberlik ve onlara yakınlık ile birlikte olamaz.

(وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهُ) *"Allah, kendisine karşı gelmekten sizi sakındırıyor."* Bu hitap, marifet ehlinden olan havassa yöneliktir. Mertebeleri bundan aşağı olanlara ise Allah: *"Öyle bir ateşten korunun ki..."* ve: *"Döndürüleceğiniz bir günden sakının"* gibi ayetlerle hitap etmiştir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, artık kendisine ulaştığınızı düşünmekten sizi sakındırmaktadır. Çünkü gizli tuzaklar, büyüklerin karşısına çıkabilmektedir.

Şiir:

*Güvendim ona ben, hazırladı bana güvendiğim yerden*
*Bir tuzak, böyledir zaten dostlara güvenen*

- Allah, bir mahlûkun O'na ulaştığının veya izzet dergâhına beşer himmetinin ayak basabildiğinin, herhangi bir kimsenin vehminde cereyan etmesinden sakındırmıştır. Allah'ın birliği yüce ve azizdir.

Bir de her kim, kendisini Allah'a en yakın insan zannederse, hakikatte o, Allah'a en uzak insandır.

قُلْ اِنْ تُخْفُوا مَا فِي صُدُورِكُمْ اَوْ تُبْدُوهُ يَعْلَمْهُ اللّٰهُ وَيَعْلَمُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ﴿٢٩﴾

29- "De ki: 'İçinizdekileri gizleseniz de açığa vursanız da Allah onu bilir. Göklerde ve yerde olanları da bilir. Allah, her şeye kadirdir.'"

Hiçbir şey, O'nun ilminin dışında kalamaz. O halde başına gelen sıkıntıcı verici bir afetten dehşete kapılma. Zira yakında sana yardım ve kabul gelecektir. Ve yakında musibet ve meşakkat yok olacaktır. Allah, yardımını ve yeterli oluşunu çabuklaştırır.

يَوْمَ تَجِدُ كُلُّ نَفْسٍ مَا عَمِلَتْ مِنْ خَيْرٍ مُحْضَرًا وَمَا عَمِلَتْ مِنْ سُوٓءٍ تَوَدُّ لَوْ اَنَّ بَيْنَهَا وَبَيْنَهُٓ اَمَدًا بَعِيدًا وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهُ وَاللّٰهُ رَؤُفٌ بِالْعِبَادِ ﴿٣٠﴾

30- "Herkesin iyilik olarak yaptıklarını da kötülük olarak yaptıklarını da karşısında hazır bulduğu günde insan, isteyecek ki, kötülükleri ile kendi arasında uzun bir mesafe bulunsun. Allah, kendisine karşı gelmekten sizi sakındırıyor. Allah, kullarına çok şefkatlidir."

İbadet ehli olanlar, ibadetleri çokça yapmış olmayı temenni ettiler. Muhalefet ehli ise bulundukları alanlardan geri dönmüş olmayı temenni ettiler.

Şiir:

*Eğer verilseydi bana dileğim hayatımda*
*Dileği verilen herkes de güvencede değil ya*
*Dönün, diyecektim geçen günlere*
*Ve: Uzaklaşın, diyecektim gelen günlere*

(وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهُ وَاللّٰهُ رَؤُفٌ بِالْعِبَادِ) *"Allah, kendisine karşı gelmekten sizi sakındırıyor. Allah, kullarına çok şefkatlidir."*

*"Allah, kendisine karşı gelmekten sizi sakındırıyor"* sözünün işareti ariflere yöneliktir. *"Allah, kullarına çok şefkatlidir"* sözünün işareti de yeniden günah işleyenler içindir. Bu itibarla arifler sertliğe, diğerleri ise tahfif ve kolaylığa muhatap kılınmışlardır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah: *"Allah, kendisine karşı gelmekten sizi sakındırıyor"* buyurunca bu hitabın onlara duyurulması, dikkatlerini çekmeyi gerekli kıldı. Bunun üzerine, ümitlerini gerçeğe dönüştürmek için Allah, bu ifadeyle birlikte: *"Allah, kullarına çok şefkatlidir"* buyurdu. Zaten Allah'ın prensibi böyledir; kullarını korkuttuğu ifadenin aynısında ümitlendirmektedir.

- Allah: *"Allah, kendisine karşı gelmekten sizi sakındırıyor"* sözüyle onları yok ettikten sonra: *"Allah, kullarına çok şefkatlidir"* sözüyle kendilerini dirilterek kalıcı kılmıştır.

قُلْ اِنْ كُنْتُمْ تُحِبُّونَ اللّٰهَ فَاتَّبِعُونِي يُحْبِبْكُمُ اللّٰهُ وَيَغْفِرْ لَكُمْ
ذُنُوبَكُمْ وَاللّٰهُ غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿٣١﴾

31- "De ki: 'Eğer Allah'ı seviyorsanız, bana uyunuz ki, Allah da sizi sevsin ve günahlarınızı bağışlasın. Allah, son derece bağışlayıcı ve esirgeyicidir.'"

(اِنْ كُنْتُمْ تُحِبُّونَ اللّٰهَ) *"Allah'ı seviyorsanız"* sözü ayırmayı;(يُحْبِبْكُمُ اللّٰهُ) *"Allah da sizi sevsin"* sözü ise bir araya getirmeyi ifade etmektedir.

*"Allah'ı seviyorsanız"* sözü pürüzlü sevgiyi; *"Allah da sizi sevsin"* sözü ise pürüzsüz, daha doğrusu vuslatın hakikati olan sevgiyi ifade eder.

Bu arada kulun Allah'ı sevmesi, kendi nefsinden bulduğu ince bir haldir. Bu hal kulu, Allah'ın emrine istemeyerek değil, isteyerek uymaya sevk eder. Bu hal, aynı zamanda kulun, Allah'ı her şeye ve herkese tercih etmesini gerekli kılar.

Sevginin şartı, onda hiçbir şekilde nefsin hazzının olmamasıdır. Bu nedenle kim, nefsinin hazlarından bütünüyle arınmazsa, onun sevgiden bir zerrecik bile nasibi yoktur.

Hakk'ın, kulu sevmesi ise ona ihsan ve lütufta bulunma iradesidir. Bu, özel bir lütfa dair irade olup Allah'ın, kulunu takdir edip övmesi anlamına gelir. Söz konusu irade, aynı zamanda Allah'a özgü lütuf anlamına da gelmekte olup bu durumda fiilinin sıfatlarından olur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Sevginin şartı, sevgilinde tükenmen için benliğinin bütünüyle yok olmasıdır.

Şiir:

*Ağlamayla boşalmadıkça göz var olamaz sevgi*
*Ve çağıranı cevaplamayacak ölçüde dilsizleşmedikçe*

Bu durum, Allah'ın sevgilisi olan Hz. Peygamber ile Allah'ın dostu olan Hz. İbrahim arasındaki farktır. Hz. İbrahim: (فَمَنْ تَبِعَنِي فَإِنَّهُ مِنِّي) "*Kim, bana uyarsa o bendendir*" (İbrahim, 14/36), derken, Hz. Peygamber: "*Bana uyunuz ki, Allah da sizi sevsin*" demiştir.

Bu durumda şayet Hz. İbrahim'e uyan kimse, bir lütuf olarak kendisinden oluyorsa, Hz. Peygamber'e uyan, Allah'ın sevgilisi olmaktadır. Bu da, yakınlık ve hal olarak yeter.

- Sevginin şartı, ilklerin ve sonların efendisi olan Hz. Peygamber'i önder ve imam edinmedikçe can taşıyan herhangi bir kimsenin sevgiyi hak etmesinden herkesin ümidini kesmesidir.

- Bu ayette, sevginin pürüzsüz olduğuna ve ibadet veya engelden arınmış olmanın gereği olmadığına işaret vardır. Çünkü Allah: "*Allah da sizi sevsin ve günahlarınızı bağışlasın*" buyurmakla bir kulun, çeşitli ve çok sayıda hataları olduğu halde Allah'ın onu, onun da Allah'ı sevmesinin mümkün olduğunu açıklamıştır.

- Sevgi ile bağışlama ifadeleri arasındaki "vav-ve" edatı burada sıralama anlamında olduğundan, sevginin bağışlamadan önce geldiğini

bildirmek üzere, Allah önce sevgiyi, sonra da bağışlamayı söylemiştir. Böylece önce Allah kulları, kullar da Allah'ı sevdikten sonra, Allah onları bağışlar, onlar da bağışlanma dilerler. Bu itibarla, bağışlama sevgiye değil, sevgi bağışlamaya yol açar.

Sevgi, aynı zamanda hallerin duruluğuna da işaret etmektedir. Nitekim sevgi anlamındaki "*mahhabbet*" lafzıyla aynı kökten gelen "*habeb*" lafzı da dişler anlamına gelen "*esnân*" lafzıyla birlikte dişlerin duruluğu anlamında "*habebu'l-esnân*" şeklinde kullanılmaktadır.

Sevgi, sır âleminde sevgilinin huzurunda itikafı gerektirir.

Sevmek anlamındaki "*ahabbe*" fiili, vurmakla yerinden kıpırdamayacak şekilde deveyi ıhtırmak yani çöktürüp oturtmak anlamına da gelmektedir.

Sevmek anlamındaki "*Hub*" kelimesi, "*hâ*" ve "*bâ*" harflerinden ibaret olup bunlardan birincisi ruha, diğeri ise bedene işaret etmektedir. Bu itibarla, seven ne kalbini ne de bedenini sevgilisinden esirger.

قُلْ اَطِيعُوا اللّٰهَ وَالرَّسُولَ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْكَافِرِينَ ﴿٣٢﴾

32- "De ki: Allah'a ve Resûlü'ne itaat edin. Eğer yüz çevirirlerse bilsinler ki, Allah kâfirleri sevmez."

Allah, onlara itaati emrettikten sonra: (فَاِنْ تَوَلَّوْا) "*Eğer yüz çevirirlerse*" buyurmuştur. Yani Allah'ın emrine muhalefet ederek itaatte kusur işlerler ise... Allah, ardından da asileri sevmediğini söylememiş; fakat: (فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْكَافِرِينَ) "*Allah kâfirleri sevmez*" buyurmuştur. Bu hitap tarzı, asi de olsalar Allah'ın, müminleri sevdiğini göstermektedir.

اِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰٓى اٰدَمَ وَنُوحًا وَاٰلَ اِبْرٰهِيمَ وَاٰلَ عِمْرٰنَ عَلَى الْعَالَمِينَ ﴿٣٣﴾ ذُرِّيَّةً بَعْضُهَا مِنْ بَعْضٍ وَاللّٰهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٣٤﴾

33, 34- "Allah, birbirinden gelme bir nesil olarak Âdem'i, Nuh'u, İbrahim ailesi ile İmrân ailesini seçip âlemlere üstün kıldı. Allah işiten ve bilendir."

Hz. Âdem ve nesli, yaradılışın temelinde aynıdır. Ayrıcalık ise nesep ve vasıtayla değil, Allah tarafından seçilmiş olmakla gerçekleşir.

اِذْ قَالَتِ امْرَاَةُ عِمْرٰنَ رَبِّ اِنّ۪ي نَذَرْتُ لَكَ مَا ف۪ي بَطْن۪ي مُحَرَّرًا فَتَقَبَّلْ
مِنّ۪يۚ اِنَّكَ اَنْتَ السَّم۪يعُ الْعَل۪يمُ ﴿٣٥﴾ فَلَمَّا وَضَعَتْهَا قَالَتْ رَبِّ اِنّ۪ي
وَضَعْتُهَٓا اُنْثٰىۜ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا وَضَعَتْۜ وَلَيْسَ الذَّكَرُ كَالْاُنْثٰىۚ وَاِنّ۪ي
سَمَّيْتُهَا مَرْيَمَ وَاِنّ۪ٓي اُع۪يذُهَا بِكَ وَذُرِّيَّتَهَا مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّج۪يمِ ﴿٣٦﴾

35, 36- "İmrân'ın karısı şöyle demişti: 'Rabbim! Karnımdakini azatlı bir kul olarak sırf sana adadım. Adağımı kabul buyur! Şüphesiz hakkıyla işiten ve bilen sensin.' Onu doğurunca, Allah ne doğurduğunu bilip dururken: 'Rabbim! Ben onu kız doğurdum. Oysa erkek kız gibi değildir. Ona Meryem adını verdim. Kovulmuş şeytana karşı onu ve soyunu senin korumanı diliyorum' dedi."

Ayette yer alan (مُحَرَّرًا ) "*muharrar*" kelimesi, hiçbir yaratığın kölesi olmayan demektir. Allah onu, ezelî hükmünde her biçim ve haldeki meşguliyete köle olmaktan azat kılmıştır. Meryem'in annesi, bu adakta bulunup çocuğu kız olarak doğurunca mahcup oldu. Çocuğu fiilen gördüğünde ise: (رَبِّ اِنّ۪ي وَضَعْتُهَٓا اُنْثٰى ) "*Rabbim! Ben onu kız doğurdum*" dedi. Oysa kız çocuğu adanmaya uygun değildir. Bunun üzerine Allah, onun ne doğurduğunu daha iyi bildiğini söyledi. Yemin ederim ki, zahirde erkek, kız gibi değildir. Ancak Allah onu kabul ettiği zaman her türlü harikaya kaynak olabilir.

Bu arada İmran'ın karısı: (رَبِّ اِنّ۪ي نَذَرْتُ لَكَ مَا ف۪ي بَطْن۪ي مُحَرَّرًا فَتَقَبَّلْ مِنّ۪ي) "*Rabbim! Karnımdakini azatlı bir kul olarak sırf sana adadım. Adağımı kabul buyur!*" deyince, Allah niyazını kabul etti ve bu kabulün sonuçları hem kızı Meryem hem de Meryem'in oğlunda tezahür

etti. Meryem'in sözleriyle bir kesim kurtuldu, bir kesim helak oldu, bir kesimin içine de kendisi ve oğlu için fitne girdi.

İmran'ın karısı ayrıca: (وَاِنّ۪ي سَمَّيْتُهَا مَرْيَمَ وَاِنّ۪ٓي اُع۪يذُهَا بِكَ وَذُرِّيَّتَهَا مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّج۪يمِ ) "*Ona Meryem adını verdim. Kovulmuş şeytana karşı onu ve soyunu senin korumanı diliyorum*" dedi. Sözlerinde şeytana ait bir şeyin bulunmasından en kolay ifadeyle Allah'a sığındı. Çünkü kalpler dünyasının bütün hükümleri onlarda yerine gelmişti.

فَتَقَبَّلَهَا رَبُّهَا بِقَبُولٍ حَسَنٍ وَاَنْبَتَهَا نَبَاتًا حَسَنًا وَكَفَّلَهَا زَكَرِيَّا كُلَّمَا دَخَلَ عَلَيْهَا زَكَرِيَّا الْمِحْرَابَ وَجَدَ عِنْدَهَا رِزْقًا قَالَ يَا مَرْيَمُ اَنّٰى لَكِ هٰذَا قَالَتْ هُوَ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ يَرْزُقُ مَنْ يَشَٓاءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ﴿٣٧﴾

37- "Rabbi, Meryem'e hüsnü kabul gösterdi. Onu güzel bir bitki gibi yetiştirdi. Zekeriyyâ'yı da onun bakımıyla görevlendirdi. Zekeriyyâ, onun yanına mabede her girişinde orada bir rızk bulur ve: 'Ey Meryem, bu sana nereden geliyor?' der. O da: 'Bu, Allah tarafındandır. Allah, dilediğine sayısız rızk verir' derdi."

Böylece Allah, Meryem'i annesinin dilediğinden daha yüksek bir makama çıkartmış oldu.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, Meryem'i öyle bir hüsnü kabul ile kabul etti ki, ona ibadetini özgü kıldı ve velilerine sahip çıktığı gibi ona sahip çıktı. O kadar ki çağındaki herkes, kız çocuğu olduğu halde, Allah'ın onu güzel sahiplenmesinden duyduğu şaşkınlığı ifade etti.

- Güzel kabul, Meryem sebebiyle hakkında neler söyleneceğini bildiği halde, düşmanların sözlerinin çirkinliğine bakmayan Allah'ın onu güzel terbiye etmesidir.

Şiir:

*Lezzetli buluyorum sevdan uğruna yapılan sitemi*
*Etsinler sitemi sitemkârlar anılmana olan sevgimden dolayı*

Şiir:

*Söylesin dileyen dilediğini*
*Umurumda değildir çünkü*

- Güzel kabul, Allah'ın Meryem'i iffet vasfı üzere terbiye etmesidir. O kadar ki Meryem Hz. Cebrail'e: "*Senden, çok esirgeyici olan Allah'a sığınırım. Eğer Allah'tan sakınan bir kimse isen bana dokunma*" demiştir.

(وَاَنْبَتَهَا نَبَاتًا حَسَنًا) "*Onu güzel bir bitki gibi yetiştirdi.*" O derecede ki, Meryem itaat üzere istikamet sahibi oldu ve her zaman Allah'ın rızasını tercih etti. Yine Allah, o derecede Meryem'i güzel yetiştirdi ki, bunun Hz. İsa gibi bir meyvesi oldu. İşte güzel bitki budur. Zekeriyyâ'yı da onun bakımıyla görevlendirdi. Güzel kabul ve güzel bitkinin bir göstergesi de, onu korumak ve işlerini üstlenmekle Hz. Zekeriyyâ gibi bir peygamberi görevlendirmiş olmasıdır. Allah, Hz. Davud'a da şunu vahyetmiştir: "*Beni arayan birini bulursan ona hizmetkâr ol.*"

(كُلَّمَا دَخَلَ عَلَيْهَا زَكَرِيَّا الْمِحْرَابَ وَجَدَ عِنْدَهَا رِزْقًا قَالَ يَا مَرْيَمُ اَنّٰى لَكِ هٰذَا قَالَتْ هُوَ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ يَرْزُقُ مَنْ يَشَآءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ) "*Zekeriyyâ, onun yanına mabede her girişinde orada bir rızk bulur ve: 'Ey Meryem, bu sana nereden geliyor?' der. O da: 'Bu, Allah tarafındandır. Allah, dilediğine sayısız rızk verir' derdi.*"

Güzel kabulün belirtilerinden biri de, Meryem'in hep mabedde bulunmasıdır. Meskeni ve yeri, ibadet ettiği mabed olan kimse ise aziz bir kuldur.

Bir yoruma göre de; güzel kabulün alametlerinden biri de işinin tamamını Hz. Zekeriyyâ'ya yüklememesidir. Şöyle ki, Zekeriyyâ, kendisine yiyecek temin etmek üzere yanına girdiğinde, yanında bir rızk bulurdu. Amaç, Allah'ın, dostlarının işini başkasına yüklemediğini amillerin bilmesidir. Bu çerçevede kim, Allah'ın velilerinden birine hizmet ederse, velilerden dolayı bir meşakkate maruz kalmadığı gibi, velinin şefkatine mazhar olur. Bu ifadede aynı zamanda, fakirlere hizmet eden kimsenin, onların şefkatine mazhar olduğunu bilmesi gerektiğine işaret vardır.

Sonra Hz. Zekeriyyâ, Hz. Meryem'e: "*Bu sana nerden geliyor?*" diyordu. Çünkü Zekeriyyâ, onun bu mertebeyi hak ettiğine inanmıyor, başkasının kendisini devre dışı bırakmasından ve bir fırsatını bulup ondan önce Meryem'in işlerini üstlenmesinden korkuyordu. Bu nedenle: "Bu sana nerden geliyor ve kim getirdi bunu?" diye soruyordu.

Hz. Meryem de: "*O, Allah katındandır, herhangi bir mahlûktan değildir*" diyordu. Böylece Hz. Zekeriyyâ iki yönden rahatlıyordu: Birincisi, Hz. Meryem'in Allah katındaki makamı ve kerametidir. İkincisi de kimsenin kendisinin önüne geçerek işlerini üstlenmemesidir. Bu arada ayette yer alan (كُلَّمَا) "*Kullemâ*" lafzı, tekrar ifade eder. Bu ifadede ise, şu işaret bulunmaktadır: Hz. Zekeriyyâ, onun yanında rızk bulduğu halde, işlerini yürütmekten vazgeçmemiştir. Aksine her gün ve her vakit halini araştırıyordu. Çünkü velilerin kerametlerinin devam etmesi zorunlu değildir. Bu itibarla Allah, kerameti velilerde sürekli kılabildiği gibi, bunu ortaya çıkarmaması da mümkündür. Bu nedenle Hz. Zekeriyyâ, bu keramete dayanarak halini sormaktan vazgeçmiyordu. Sonra: "Sana bu nerden geliyor" sorusunu da yeniliyordu. Çünkü Allah'a hiçbir şey vacip olmadığından bugün gördüğü rızk, dünkü gibi olmayabilirdi.

(اِنَّ اللّٰهَ يَرْزُقُ مَنْ يَشَٓاءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ) "*Allah, dilediğine sayısız rızk verir*" sözü ise tevhidin özüne dair izahtır. Aynı zamanda bu ifade, kullara rızk vermesi ve onlara ihsanda bulunmasının Allah'ın iradesinin gereği olduğunu, yoksa onların taat ve ibadetleri vesilesiyle olmadığını da ortaya koymaktadır.

هُنَالِكَ دَعَا زَكَرِيَّا رَبَّهُ قَالَ رَبِّ هَبْ لِي مِنْ لَدُنْكَ ذُرِّيَّةً طَيِّبَةً
اِنَّكَ سَمِيعُ الدُّعَٓاءِ ﴿٣٨﴾

38- "Orada Zekeriyyâ Rabbine dua etti: 'Rabbim! Bana tarafından hayırlı bir nesil bağışla. Şüphesiz sen, duayı hakkıyla işitensin' dedi."

Yani Hz. Zekeriyyâ, Allah'ın Hz. Meryem'e olan lütfünü görünce inancı ve ümidi kat kat arttı ve bunun üzerine, büyük yaşına rağmen çocuk istedi. Bu duasının kabul edilmesi ise normal dışı bir durumdu.

Bir yoruma göre de; Hz. Zekeriyyâ'nın çocuk istemesinin nedeni, ibadette kendisine yardım etmesi ve Allah'ın hakkını eda etmek üzere, neslinden birinin peygamberlikte kendisine varis olmasıdır. Bu nedenle dua, kabule şayan olmuştur. Çünkü dilek, nefsin arzusu için değil de Allah'ın hakkı için olduğu zaman reddedilmesi söz konusu olmaz.

Bu olayda Hz. Zekeriyyâ, Hz. Meryem'in yanında kışın yaz meyvelerini, yazın da kış meyvelerini görürdü. Bunun üzerine, bir mucize olması için yaşlılık halinde çocuk istemiş oldu.

فَنَادَتْهُ الْمَلٰٓئِكَةُ وَهُوَ قَآئِمٌ يُصَلِّي فِي الْمِحْرَابِ اَنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكَ بِيَحْيٰى
مُصَدِّقًا بِكَلِمَةٍ مِنَ اللّٰهِ وَسَيِّدًا وَحَصُورًا وَنَبِيًّا مِنَ الصَّالِحِينَ ﴿٣٩﴾

39- "Zekeriyyâ mabede durmuş namaz kılarken melekler ona şöyle nida ettiler: 'Allah sana, kendisi tarafından gelen bir Kelime'yi tasdik edici, efendi, iffetli ve salihlerden bir peygamber olarak Yahya'yı müjdeler.'"

Hz. Zekeriyyâ dilekte bulunup eşikten ayrılmayınca kabule mazhar oldu.

Ayette aynı zamanda, hükümdarlara ihtiyacı olan kimsenin, isteği kabul edilinceye kadar eşikten ayrılmaması gerektiğine işaret vardır.

Bir yoruma göre; Allah'ın hükmü, sadece O'nun hizmetiyle kucaklaşan kimsenin dileğini kabul ile karşılamak şeklindedir. İbadetten yüz çevireni ise Allah, kimsesizlik züllünün içine atar.

(اَنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكَ بِيَحْيٰى مُصَدِّقًا بِكَلِمَةٍ مِنَ اللّٰهِ وَسَيِّدًا وَحَصُورًا وَنَبِيًّا مِنَ الصَّالِحِينَ) *"Allah sana, kendisi tarafından gelen bir Kelime'yi tasdik edici, efendi, iffetli ve salihlerden bir peygamber olarak Yahya'yı müjdeler."*

Bir görüşe göre; bu peygamberin Yahya diye adlandırılması, kalbi Allah ile hayat bulduğu içindir. Tefsir ilminin izahına göre ise bunun sebebi, annesinin doğurganlık yeteneğinin kendisiyle yeniden hayat bulmasıdır.

Diğer bir görüşe göre de Yahya, kalbiyle kendisine iman eden kimsenin hayat bulmasına sebep olur.

Allah tarafından gelen bir Kelime'yi tasdik edici olması, Allah'a karşı kulluk vazifesini yerine getirmesi konusunda O'nun kelimesini tasdik etmesi veya Allah'ın kelimesiyle yaratılmış olması demektir.

Ayette yer alan efendi anlamındaki (سَيِّدًا ) "*seyyid*" kelimesi, hiçbir yaratığın kölesi olmayan, hem kendi nefsinin esiri olmaktan hem de her mahlûktan kurtulmuş olan kimse demektir. Bu lafız ile ilgili diğer bazı yorumlar da şöyledir:

- Seyyid, Allah'ın yüceliği hakkında kesin kanaat sahibi olan kimsedir.

- Seyyid, çağının insanlarından üstün olan kimsedir ki, Hz. Yahya da böyle idi.

Bir yoruma göre de, seyyid olması, kendisi için bir makam istememesi ve onda herhangi bir değer görmemesinden dolayıdır. Hz. Yahya, her yönüyle tevazuunda samimi olunca Allah, onu herkesten üstün ve hepsine efendi kıldı.

(حَصُورًا ) "*Hasûr*" kelimesi de şehvetlerden azat olmuş ve beşerden olduğu halde, beşeri hükümlerden uzak duran kimse demektir. Kimisine göre de yükümlülüklerden sakınan, ağır başlılık ve Allah'a yakınlık için nefsini bundan alıkoyan kimse demektir. Bir görüşe göre de apaçık hakikatleri görmesi, onu nefsin arzularından alıkoymuş ve böylece kendisinde nefsin arzularından bir şey kalmamıştır.

قَالَ رَبِّ اَنّٰى يَكُونُ لِي غُلَامٌ وَقَدْ بَلَغَنِيَ الْكِبَرُ وَامْرَاَتِي عَاقِرٌ
قَالَ كَذٰلِكَ اللّٰهُ يَفْعَلُ مَا يَشَٓاءُ ﴿٤٠﴾

40- "Zekeriyyâ: 'Rabbim!' dedi, 'Bana ihtiyarlık gelip çattığına, üstelik karım da kısır olduğuna göre, benim nasıl oğlum olabilir?' Allah şöyle buyurdu: 'Allah dilediğini yapar.'"

Bir görüşe göre; Hz. Zekeriyyâ'nın dileği ile kabulü arasında uzun zaman geçtiği için o; "*Benim nasıl oğlum olabilir!*" demiştir.

Hz. Zekeriyyâ'nın bu sorusu konusunda şu ihtimaller de dile getirilmiştir:

- Eğer lütfun olmazsa benim bu dileğim hangi hak edişimle kabul edilir?

- Bu hangi yoldan olacak? Evlat edinme şeklinde mi yoksa nesil dünyaya getirme şeklinde mi?

- Çocuk, yaşı ilerlemiş olan karısı dışındaki bir karıdan mı yoksa edineceği bir cariyeden mi yoksa bu karısından mı olacaktır?

Bunun üzerine kendisine denildi ki: "Hayır, bundan olacaktır. Çünkü ikiniz, yalnızlık çilesini beraber çektiniz. Bu nedenle çocuk sevincini de ikiniz birlikte yaşacaksınız."

قَالَ رَبِّ اجْعَلْ لِيٓ اٰيَةً قَالَ اٰيَتُكَ اَلَّا تُكَلِّمَ النَّاسَ ثَلٰثَةَ اَيَّامٍ اِلَّا
رَمْزًا وَاذْكُرْ رَبَّكَ كَثٖيرًا وَسَبِّحْ بِالْعَشِيِّ وَالْاِبْكَارِ ﴿٤١﴾

41- "Zekeriyyâ: 'Rabbim! Bana bir alamet göster' dedi. Allah buyurdu ki: 'Senin için alamet, insanlara üç gün işaretten başka söz söylememendir. Ayrıca Rabbini çok an. Sabah akşam tesbih et!'"

Hz. Zekeriyyâ'nın alamet istemesi, kabulün aslı ile ilgili bir kuşkudan dolayı değil, kabul vaktini somut olarak bilmek istemesindendir.

Allah ona alamet olarak dilini Allah'ı tesbihte serbest bırakmasını, başkalarıyla konuşmaktan ise alıkoymasını emretmiştir. Yani, bana hitap etmekten sakınma! Çünkü ben, dostlarımı münacatımdan alıkoymam.

(وَاذْكُرْ رَبَّكَ كَثٖيرًا) "*Ayrıca Rabbini çok an.*" Bunu bütün vakitlerinde kalbinle ve dilinle yap!

(وَسَبِّحْ بِالْعَشِيِّ وَالْاِبْكَارِ) "*Sabah akşam tesbih et!*" Bunu düzenli namazlarda yap.

وَاِذْ قَالَتِ الْمَلٰٓئِكَةُ يَا مَرْيَمُ اِنَّ اللّٰهَ اصْطَفٰيكِ وَطَهَّرَكِ وَاصْطَفٰيكِ عَلٰى نِسَٓاءِ الْعَالَمٖينَ ﴿٤٢﴾

42- "Hani melekler demişlerdi: 'Ey Meryem! Allah seni seçti, seni tertemiz yarattı ve seni bütün dünya kadınlarına tercih etti.'"

Bu ifade, durumunu yüceltmek için, meleklerin kendiliklerinden Meryem ile başlattıkları bir hitabın başlangıcı olabileceği gibi, Meryem meleklerin kelamını işitmiş ve onları görmüş de olabilir. Ayrıca Meryem melekleri görmeksizin kendisine yönelik şu sözlerini duymuş da olabilir: Allah seni, üstün kılmak, benzerlerinden ve emsallerinden ayırmak suretiyle seçti ve güzelce korumak suretiyle seni ahlak dışılıklardan, günahlardan ve insanlarla ilişki kurmaktan tertemiz kıldı. Ayrıca seni zamanındaki bütün kadınlardan üstün kıldı.

Burada seçme ifadesinin tekrarında şu fayda vardır: Birincisi seni keramet, mertebe ve durumunun yüceliğiyle seçkin kıldı. İkinci olarak da sen babasız olarak Hz. İsa'ya gebe kaldın. Bu konuda hiçbir kadın sana benzememiştir ve kıyamete kadar da benzemeyecektir. Bu nedenle Allah: (وَاصْطَفٰيكِ عَلٰى نِسَٓاءِ الْعَالَمٖينَ) "*Seni, bütün dünya kadınlarına tercih etti*" buyurmuştur.

يَا مَرْيَمُ اقْنُتٖي لِرَبِّكِ وَاسْجُدٖي وَارْكَعٖي مَعَ الرَّاكِعٖينَ ﴿٤٣﴾

43- "Ey Meryem! Rabbine ibadet et, secdeye kapan, eğilenlerle beraber sen de eğil!"

İbadet makamına sarıl, taate devam et, hizmetin sürekliliğinde kusur işleme! Nasıl ki Allah, yalnızca sana bu makamı verdiyse, sen de ibadetinde zamanının eşsiz insanı ol!

ذٰلِكَ مِنْ اَنْبَٓاءِ الْغَيْبِ نُوحِيهِ اِلَيْكَ وَمَا كُنْتَ لَدَيْهِمْ اِذْ يُلْقُونَ
اَقْلَامَهُمْ اَيُّهُمْ يَكْفُلُ مَرْيَمَ وَمَا كُنْتَ لَدَيْهِمْ اِذْ يَخْتَصِمُونَ ﴿٤٤﴾

44- "Bunlar bizim sana vahiy yoluyla bildirmekte olduğumuz gayb haberlerindendir. İçlerinden hangisi Meryem'i himayesine alacak diye kur'a çekmek üzere, kalemlerini atarlarken sen onların yanında değildin. Onlar çekişirken de yanlarında değildin."

Yani biz bu olayları sana tanıttık ve manalarıyla sana hitapta bulunduk. Eğer biz bunu sana anlattıysak, bilesin ki, bizim hitabımız değerlidir. Hatta o olayları görmüş olmandan da daha değerli ve daha mükemmeldir.

اِذْ قَالَتِ الْمَلٰٓئِكَةُ يَا مَرْيَمُ اِنَّ اللّٰهَ يُبَشِّرُكِ بِكَلِمَةٍ مِنْهُ اسْمُهُ الْمَسِيحُ
عِيسَى ابْنُ مَرْيَمَ وَجِيهًا فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَمِنَ الْمُقَرَّبِينَ ﴿٤٥﴾
وَيُكَلِّمُ النَّاسَ فِي الْمَهْدِ وَكَهْلًا وَمِنَ الصَّالِحِينَ ﴿٤٦﴾

45, 46- "Melekler demişlerdi ki: 'Ey Meryem! Allah, sana kendisinden bir kelimeyi müjdeliyor. Adı Meryem oğlu İsa'dır. Mesîh'tir; dünyada da ahirette de itibarlı ve Allah'ın kendisine yakın kıldıklarındandır. O, salihlerden olarak beşikte iken ve yetişkinlik halinde insanlara konuşacak.'"

Allah, Meryem'i ne dünya ne de ahiretteki arzulardan biriyle değil, fakat Hz. İsa gibi büyük bir mucizevî evlat ve mucizeyle desteklenmiş bir peygamber ile müjdelemiştir.

Bu konudaki şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, Hz. Meryem'e kudretin hâkimiyeti altına giren ve Allah'ın hükmünün sınırında duran kimseye, hiç kimsenin aşina olmadığı kudret harikalarından verildiğini anlatmıştır. Bu bağlamda Hz. Meryem bir süre güzel imaj ve iffetle ün yapmış, ancak ardından Hz. İsa ile gebe kalma durumunun zahiri, insanlardan gelen sitem sebebiyle,

kendisini sıkıntıya sokmuştur. Ancak gerçekte durum, gözleri dönüp takdirin meydana gelişini göremeyen geri zekâlıların sandıkları gibi değildir.

- Allah, bunu Hz. Meryem'e tedricen ve ayrıntılarıyla anlatmıştır. Şöyle ki, bu çocuğun hem çocukken hem de yetişkinlik halinde insanlarla konuşuncaya dek yaşayacağını ve düşmanların tuzağının onu etkilemeyeceğini bildirmiştir.

- Hz. İsa'nın yetişkinliğinde konuşması, gökten inişinden sonra olacaktır.

- Allah, Hz. Meryem'e, diliyle suçsuz olduğunu söylememesi halinde, İsa'yı konuşturarak doğruluğunu ve büyüklüğünü göstereceğini bildirmek suretiyle kalbine direnç vermiştir.

قَالَتْ رَبِّ اَنّٰى يَكُونُ لِي وَلَدٌ وَلَمْ يَمْسَسْنِي بَشَرٌ قَالَ كَذٰلِكِ اللّٰهُ
يَخْلُقُ مَا يَشَٓاءُ اِذَا قَضٰٓى اَمْرًا فَاِنَّمَا يَقُولُ لَهُ كُنْ فَيَكُونُ ﴿٤٧﴾

47- "Meryem: 'Rabbim!' dedi, bana bir erkek eli değmediği halde nasıl çocuğum olur!' Allah şöyle buyurdu: 'İşte böyledir, Allah dilediğini yaratır. Bir işe hükmedince. Ona sadece 'ol' der, o da oluverir.'"

Nasıl ki sen, rızk vermemizde âdete aykırı bazı şeyler gördü isen, aynı şekilde biz, bir beşer dokunmaksızın çocuk yaratmada da adeti bozarız.

(اِذَا قَضٰٓى اَمْرًا) *"Bir işe hükmedince."* Yani bir hükmü onaylamak istediği zaman.

(فَاِنَّمَا يَقُولُ لَهُ كُنْ فَيَكُونُ) *"Ona sadece 'ol' der, o da oluverir."*

Bu nedenle bir şeyi ortaya çıkarmak veya inşa etmek Allah'a zor gelmez.

Onlar, Hz. Meryem hakkında sitem dilini uzatınca, Allah sadece bir günlük olan Hz. İsa'yı konuşturmuş oldu. O kadar ki Hz. İsa: "*Size Rabbinizden bir mucize getirdim*" dedi.

وَيُعَلِّمُهُ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ وَالتَّوْرٰيةَ وَالْاِنْجِيلَ ﴿٤٨﴾ وَرَسُولًا اِلٰى
بَنٖٓي اِسْرَٓاءٖيلَ اَنّٖي قَدْ جِئْتُكُمْ بِاٰيَةٍ مِنْ رَبِّكُمْ اَنّٖٓي اَخْلُقُ لَكُمْ مِنَ
الطّٖينِ كَهَيْـَٔةِ الطَّيْرِ فَاَنْفُخُ فٖيهِ فَيَكُونُ طَيْرًا بِاِذْنِ اللّٰهِ وَاُبْرِئُ الْاَكْمَهَ
وَالْاَبْرَصَ وَاُحْيِ الْمَوْتٰى بِاِذْنِ اللّٰهِ وَاُنَبِّئُكُمْ بِمَا تَاْكُلُونَ وَمَا
تَدَّخِرُونَ فٖي بُيُوتِكُمْ اِنَّ فٖي ذٰلِكَ لَاٰيَةً لَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنٖينَ ﴿٤٩﴾

48, 49- "Allah, ona yazmayı, hikmeti, Tevrat'ı, İncil'i öğretecektir. O, İsrail oğullarına bir elçi olacak: 'Size Rabbinizden bir mucize getirdim. Size çamurdan bir kuş sureti yapar, onu üflerim ve Allah'ın izniyle o bir kuş oluverir. Yine Allah'ın izniyle körü ve alacalıyı iyileştirir, ölüleri diriltirim. Ayrıca evlerinizde ne yeyip ne biriktirdiğinizi size haber veririm. Eğer inanan kimseler iseniz, bunda sizin için bir ibret vardır' diyecek."

Bunlar onun, ölüleri diriltmek, körü ve alacalıyı iyileştirmek, gizli yaptıkları işleri onlara haber vermek ve benzeri açık mucizeleri ve üstün şaşırtıcı ifadeleridir. Ayrıca Hz. İsa, Kur'an'ın tafsilatlı olarak dile getirdiği gibi, kendisinden önceki dinleri tasdik edici olduğunu ve önceki dinlerin bir kısmını nesheden, bir kısmını ise onaylayan müstakil bir dine sahip olduğunu bildirmiştir.

وَمُصَدِّقًا لِمَا بَيْنَ يَدَيَّ مِنَ التَّوْرٰيةِ وَلِاُحِلَّ لَكُمْ بَعْضَ الَّذٖي
حُرِّمَ عَلَيْكُمْ وَجِئْتُكُمْ بِاٰيَةٍ مِنْ رَبِّكُمْ فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَطٖيعُونِ ﴿٥٠﴾
اِنَّ اللّٰهَ رَبّٖي وَرَبُّكُمْ فَاعْبُدُوهُ هٰذَا صِرَاطٌ مُسْتَقٖيمٌ ﴿٥١﴾

50- "Benden önce gelen Tevrat'ı doğrulayıcı olarak ve size haram kılınan bazı şeyleri helâl kılmak için gönderildim ve Rabbiniz tarafından size bir mucize de getirdim. Artık Allah'a karşı gelmekten sakının ve bana itaat edin."

51- "Şüphesiz Allah, benim de Rabbim, sizin de Rabbinizdir. Öyleyse ona ibadet edin. İşte bu, doğru yoldur."

فَلَمَّٓا اَحَسَّ عِيسٰى مِنْهُمُ الْكُفْرَ قَالَ مَنْ اَنْصَارٖيٓ اِلَى اللّٰهِ قَالَ الْحَوَارِيُّونَ نَحْنُ اَنْصَارُ اللّٰهِ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَاشْهَدْ بِاَنَّا مُسْلِمُونَ ﴿٥٢﴾

52- "İsa, onlardan küfrü sezince: 'Allah yolunda yardımcılarım kim?' dedi. Havariler: 'Biziz Allah yolunun yardımcıları. Allah'a iman ettik. Şahit ol, biz Müslümanlarız' dediler."

Hz. İsa, onlara peygamberliği bildirmesi üzerine ihtilafa düşüp kimileri onu tasdik ederken çoğunluk olan diğerleri onu yalanlayınca, peygamberliğin belasız ve düşmansız olamayacağını anlamış, bunun üzerine kalbini onlardan kopararak samimi niyetiyle Allah'a yönelmiş ve kavmine: "Allah'ın hakkını gözetmeye soyunmak ve niyetinde samimi olmak için bana yardımda bulunmak üzere, Allah'a giden yolda yardımcılarım kimlerdir?" demiştir. Bunun inayetin tezahürlerine mazhar olanlar ve kendilerini Allah'a adayanlar: "Allah'ın yardımcıları bizleriz, Allah'a iman ettik, doğruluğumuza şahitlik et ve içinde bulunduğumuz durumdan hiçbir şey senin için problem olacak değildir" dediler.

رَبَّنَٓا اٰمَنَّا بِمَٓا اَنْزَلْتَ وَاتَّبَعْنَا الرَّسُولَ فَاكْتُبْنَا مَعَ الشَّاهِدٖينَ ﴿٥٣﴾

53- "'Rabbimiz! İndirdiğine inandık ve peygambere uyduk. Şimdi bizi şahitlerinden yaz' dediler."

Diğerleri ise ayrılığa çaba harcadılar, düşmanlıkta ileri gittiler ve tuzaklar kurdular. Lakin Allah tuzaklarının vebalini kendilerine tattırdı. Bunun üzerine Hz. İsa'yı çarmıha gerip öldürdüklerini zannettiler. Oysa bu, onların cehaletini ve kafa karışıklıklarını gösteriyordu. Zira Allah, peygamberi ve dostu Hz. İsa'yı yükseltmişti. Kovulmayı ve laneti ise düşmanları hak etmişti. Allah'ın, onların tuzaklarına verdiği karşılık ise şöyle ifade edilmiştir:

وَمَكَرُوا وَمَكَرَ اللّٰهُ وَاللّٰهُ خَيْرُ الْمَاكِرِينَ ﴿٥٤﴾

54- "Yahudiler tuzak kurdular. Allah da onların tuzaklarını bozdu. Allah tuzak kuranların hayırlısıdır."

اِذْ قَالَ اللّٰهُ يَا عِيسٰٓى اِنّ۪ي مُتَوَفّ۪يكَ وَرَافِعُكَ اِلَيَّ وَمُطَهِّرُكَ مِنَ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا وَجَاعِلُ الَّذ۪ينَ اتَّبَعُوكَ فَوْقَ الَّذ۪ينَ كَفَرُوٓا اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ ثُمَّ اِلَيَّ مَرْجِعُكُمْ فَاَحْكُمُ بَيْنَكُمْ ف۪يمَا كُنْتُمْ ف۪يهِ تَخْتَلِفُونَ ﴿٥٥﴾

55- "Allah buyurmuştu ki: 'Ey İsa! Seni vefat ettireceğim, seni nezdime yükselteceğim, seni inkâr edenlerden arındıracağım ve sana uyanları kıyamete kadar kâfirlerden üstün kılacağım. Sonra dönüşünüz bana olacak. İşte o zaman ayrılığa düştüğünüz şeyler hakkında aranızda ben hükmedeceğim.'"

Ayet şuna işaret etmektedir: Ben, seni senden ölümle ayıracağım, seni senden alacağım, seni beşeri vasıfların üstüne çıkaracağım, seni bütünüyle iradenden temizleyeceğim. Böylece sen, bizimle bizim için yönetilmiş olursun. Senin hakkında kendine ait hiçbir tercihin olmayacaktır. Üzerindeki ilahî tasarruf, sana hâkim olacaktır. İşte bu vasıfla Hz. İsa'nın eliyle ölüler diriltiliyordu ve bu olaylar, ancak ve ancak ilahî yüce kudretle gerçekleşiyordu.

Bir yoruma göre de Allah, bütün hal ve hareketlerde Hz. İsa'nın kalbini başkalarını düşünmekten, benzerleri ve eserleri görmekten tertemiz kılmıştır.

(وَجَاعِلُ الَّذ۪ينَ اتَّبَعُوكَ فَوْقَ الَّذ۪ينَ كَفَرُوٓا اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ) *"Sana uyanları kıyamete kadar kâfirlerden üstün kılacağım."*

Bunu yardım, kahr ve delille yapacağım.

Bu arada ona uyanlar, dinini değiştirmeyen ve tevhidde onun inancı üzere bulunan müminlerdir. Onlar kıyamete kadar hak üzere olup kendilerine yardım edilecektir. Sonra Allah, kıyamet günü onunla düşmanları arasında hükmünü verir. Böylece kâfirler cehennemde, müminlerde cennette yerleşirler.

فَاَمَّا الَّذِينَ كَفَرُوا فَاُعَذِّبُهُمْ عَذَابًا شَدِيدًا فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَمَا
لَهُمْ مِنْ نَاصِرِينَ ﴿٥٦﴾

56- "İnkâr edenlere gelince, onlara dünyada da, ahirette de şiddetli bir şekilde azab edeceğim. Onların hiç yardımcıları da olmayacaktır."

وَاَمَّا الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ فَيُوَفِّيهِمْ اُجُورَهُمْ وَاللّٰهُ لَا
يُحِبُّ الظَّالِمِينَ ﴿٥٧﴾

57- "İman edip salih ameller işleyenlere gelince, Allah onların mükâfatlarını tastamam verecektir. Allah zalimleri sevmez."

ذٰلِكَ نَتْلُوهُ عَلَيْكَ مِنَ الْاٰيَاتِ وَالذِّكْرِ الْحَكِيمِ ﴿٥٨﴾

58- "Bu söylenenleri biz sana ayetlerden ve hikmet dolu Kur'an'dan okuyoruz."

Ey Muhammed! Biz bunu sana okuyor, sana gönderdiğimiz vahiyle manalarını sana biz öğretiyoruz. Yoksa bu bilgiye sen, ne harcadığın çabayla ne emsallerden öğrenmekle ne de delil kullanarak çıkardığın hükümlerle ulaşamazsın.

اِنَّ مَثَلَ عِيسٰى عِنْدَ اللّٰهِ كَمَثَلِ اٰدَمَ خَلَقَهُ مِنْ تُرَابٍ ثُمَّ قَالَ لَهُ كُنْ
فَيَكُونُ ﴿٥٩﴾

59- "Allah nezdinde İsa'nın durumu Âdem'in durumu gibidir. Sonra ona: 'Ol' dedi ve oluverdi."

Allah bu ikisini ruhun sulplerinde oluşmaktan temizlemiştir. Bu arada Hz. Âdem'e ilk olma sıfatını, Hz. İsa'ya da kendisini aziz kılmak üzere, ruhun üflenmesi suretiyle yaratılma özelliği verilmiştir. Ancak ikisi de, çok büyük olmalarına rağmen sonradan olma ve

yaratılmışlıktan arınmış değillerdir: (ثُمَّ قَالَ لَهُ كُنْ فَيَكُونُ ) *"Sonra ona: 'Ol' dedi ve oluverdi."*

اَلْحَقُّ مِنْ رَبِّكَ فَلَا تَكُنْ مِنَ الْمُمْتَرِينَ ﴿٦٠﴾

60- "Gerçek, Rabbinden gelendir. Öyleyse şüühecilerden olma."

Ey Muhammed! Hakikat Rabbinden gelendir. O halde Allah'ın yaratmada hiçbir benzerinin olmadığında ve hiçbir mahlûkun, delili ispatlama gücünün bulunmadığında şüphe etme! Yokluk sırrından var edilen varlıkların ise başlangıçları Allah'tan olduğu gibi, dönüşleri de O'nadır.

فَمَنْ حَٓاجَّكَ فِيهِ مِنْ بَعْدِ مَا جَٓاءَكَ مِنَ الْعِلْمِ فَقُلْ تَعَالَوْا نَدْعُ اَبْنَٓاءَنَا وَاَبْنَٓاءَكُمْ وَنِسَٓاءَنَا وَنِسَٓاءَكُمْ وَاَنْفُسَنَا وَاَنْفُسَكُمْ ثُمَّ نَبْتَهِلْ فَنَجْعَلْ لَعْنَتَ اللّٰهِ عَلَى الْكَاذِبِينَ ﴿٦١﴾

61- "Sana ilim geldikten sonra seninle bu konuda çekişenlere: 'Gelin, sizler ve bizler de dahil olmak üzere, siz kendi çocuklarınızı, biz de kendi çocuklarımızı, siz kendi kadınlarınızı, biz de kendi kadınlarımızı çağıralım, sonra da dua edelim de Allah'tan yalancılar üzerine lanet dileyelim' de."

Yani sen, sana söylenenlerin doğruluğuna vakıf olduktan sonra ve sana hitaben söylediklerimizin gerçek olduğundan kalbinle emin olduktan sonra, artık onları karşılıklı beddua ve lanet okumaya davet etmekten çekinme ve şuna güven ki, üstünlük ve zafer senin olur, biz seni sahiplendik ve seni yakınlığımızın himayesinde barındırdık. Eğer onlar bu karşılıklı bedduayı arzu etselerdi, onlara karşı vadiler kızgın ateşlerle yakılacaktı. Fakat Allah, nesillerindeki müminleri bildiği için bunu onlardan ertelemiştir.

Bu ayetteki işaret, durumu sıddîklerin durumlarından aşağı olan kimselere yöneliktir. Çünkü sıdıkların nurları belirdiği zaman, di-

ğerlerinin eserleri yok olur. O zaman da ne bir itiraf ne de onlardan eserler kalır.

اِنَّ هٰذَا لَهُوَ الْقَصَصُ الْحَقُّ وَمَا مِنْ اِلٰهٍ اِلَّا اللّٰهُ وَاِنَّ اللّٰهَ لَهُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿٦٢﴾

62- "Şüphesiz bu, doğru haberlerdir. Allah'tan başka ilah yoktur. Muhakka ki Allah, evet O, mutlak güç ve hikmet sahibidir."

Tevhidin delilleri üzerine şüpheden eser tasallut edemez, Allah'ın hükmünün sırrını hiçbir mahlûkun vehmi kavrayamaz, varlığın sınırladığı hiçbir malum veya takdirin tasvir ettiği hiçbir mevhum ona yaklaşamaz.

فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّ اللّٰهَ عَلِيمٌ بِالْمُفْسِدِينَ ﴿٦٣﴾

63- "Eğer yüz çevirirlerse, şüphesiz Allah bozguncuları hakkıyla bilir."

Ey Muhammed! Eğer onlar yüz çevirirlerse, hiçbir bâtıl ehlinin şüphesi, senin nurlarının parıltısı karşısında duramaz.

(فَاِنَّ اللّٰهَ عَلِيمٌ بِالْمُفْسِدِينَ) *"Şüphesiz Allah bozguncuları hakkıyla bilir."* Ya köklerini kazır veya bir süre fırsat verir ve nihayet zanları güçlenince onları ansızın yakalar ve bu durumda kendilerine yardım da edilmez.

قُلْ يَٓا اَهْلَ الْكِتَابِ تَعَالَوْا اِلٰى كَلِمَةٍ سَوَٓاءٍ بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمْ اَلَّا نَعْبُدَ اِلَّا اللّٰهَ وَلَا نُشْرِكَ بِهٖ شَيْـًٔا وَلَا يَتَّخِذَ بَعْضُنَا بَعْضًا اَرْبَابًا مِنْ دُونِ اللّٰهِ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَقُولُوا اشْهَدُوا بِاَنَّا مُسْلِمُونَ ﴿٦٤﴾

64- "De ki: 'Ey kitap ehli! Sizinle bizim aramızda müşterek olan bir söze gelin! Allah'tan başkasına tapmayalım. O'na hiçbir şeyi ortak koşmayalım ve Allah'ı bırakıp da kimimiz kimimizi Rab edinmesin.' Eğer onlar yine yüz çevirirlerse, işte o zaman: 'Şahit olun ki biz Müslümanlarız' deyiniz."

Bu, tevhid kelimesidir ve şuhud yoluyla Allah'ın eşyayı yaratmada birliğini ifade eden sözdür.

(اَلَّا نَعْبُدَ اِلَّا اللّٰهَ) *"Allah'tan başkasına tapmayalım."* Sırrınla hiçbir mahlûku düşünme! Nasıl ki, Allah'tan başkası mabudun olamıyorsa, aynı şekilde O'ndan başkasının, senin maksudun ve gördüğün de olmamalıdır. İşte şirkten sakınmak da budur. Aslında sen, onları görmemesi gereken diğerlerin ilkisin.

(وَلَا يَتَّخِذَ بَعْضُنَا بَعْضًا اَرْبَابًا مِنْ دُونِ اللّٰهِ) *"Ve kimimiz kimimizi Rab edinmesin."* Bunun doğruluğu, onları övmeyi ve yermeyi terk etmekle, onlar hakkındaki şikâyet ve şüpheyi ortadan kaldırmakla ve bir zerre bile mahviyet ve ispatın onlardan geleceğini hesaplamaktan sırrı temizlemekle ortaya çıkar. Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurur: *Arapların söylediği en doğru söz, Lebid'in şu sözüdür:*

*Uyarıyorum! Batıldır Allah'tan başka her şey*
*Ve çare yok, her nimet zaildir*

Çünkü kalpleri üzerindeki meşakkatler daha şiddetlidir. İşin başında olanlar ise vazife ve virdleri yerine getirmede zorlanırlar. Onların yolu, daha meşakkatli ve daha zor olana sarılmaktır. Çünkü onlar, kalpleri itibariyle manalardan halidirler. Kim bunun aksini zannederse hata etmiş olur. Bu ayetteki işaret şu ayette de vardır:

يَٓا اَهْلَ الْكِتَابِ لِمَ تُحَآجُّونَ فٖٓي اِبْرٰهٖيمَ وَمَٓا اُنْزِلَتِ التَّوْرٰيةُ
وَالْاِنْجٖيلُ اِلَّا مِنْ بَعْدِهٖ اَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿٦٥﴾

65- "Ey kitap ehli! Neden İbrahim hakkında çekişiyorsunuz? Halbuki Tevrat ve İncil, kesinlikle ondan sonra indirildi. Siz hiç düşünmez misiniz?"

Allah, dostu Hz. İbrahim'i sakınma örtüsü ve kıskanma perdesine büründürerek, herkesin hakkındaki iddialardan sonra hepsiyle ilişkisini kesti, şüphelerinin çelişkili olduğuna hükmetti. Bir de Hz. İbrahim, nasıl kendisinden sonra gelenlerin dini üzerine olurdu. İşte bu, çelişkili bir zandır.

هَٓا اَنْتُمْ هٰٓؤُلَٓاءِ حَاجَجْتُمْ ف۪يمَا لَكُمْ بِه۪ عِلْمٌ فَلِمَ تُحَٓاجُّونَ ف۪يمَا
لَيْسَ لَكُمْ بِه۪ عِلْمٌ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ وَاَنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ﴿٦٦﴾

66- "İşte siz böyle kimselersiniz. Hadi hakkında bilgi sahibi olduğunuz konuda tartıştınız. Fakat bilgi sahibi olmadığınız konuda niçin tartışıyorsunuz? Oysa ki Allah her şeyi bilir, siz ise bilmezsiniz."

Yani kitabınızda yer alan bilginin izahı vardır. Onun hakkında sizin bir deliliniz de olabilir. Böylece Allah, onlara hak veya batıl üzere olma özelliği vermiştir. Ancak hakkında hiçbir deliliniz olmayan ve öğrenme imkânınız bulunmayan bir hususta nasıl olur da hüküm vermeye kalkar ve onu ihata ettiğinizi iddia edersiniz.

مَا كَانَ اِبْرٰه۪يمُ يَهُودِيًّا وَلَا نَصْرَانِيًّا وَلٰكِنْ كَانَ حَن۪يفًا مُسْلِمًا وَمَا
كَانَ مِنَ الْمُشْرِك۪ينَ ﴿٦٧﴾

67- "İbrahim, ne Yahudi ne de Hıristiyan idi. Fakat o, Allah'ı bir tanıyan dosdoğru bir Müslüman idi; müşriklerden de değildi."

Ayette yer alan (حَن۪يفًا ) "*hanif*" kelimesi, hak üzere dosdoğru yürüyen demektir. "*Ahnef*" lafzı ise iyimserlik ifadesi olarak ayağında eğrilik bulunan kimse anlamında kullanılmaktadır. Hz. İbrahim de haktan meyletmeyen, dinden sapmayan ve nefsin payı bulunan bir şeye düşkünlük göstermeyen bir Hanif idi. Nitekim o, malını, nefsini, çocuğunu ve her şeyini Allah'ın hükmüne teslim etmiş ve emrini beklemişti.

اِنَّ اَوْلَى النَّاسِ بِاِبْرٰه۪يمَ لَلَّذ۪ينَ اتَّبَعُوهُ وَهٰذَا النَّبِيُّ وَالَّذ۪ينَ اٰمَنُوا
وَاللّٰهُ وَلِيُّ الْمُؤْمِن۪ينَ ﴿٦٨﴾

68- "İnsanların İbrahim'e en yakın olanı, ona uyanlar, şu peygamber ve iman edenlerdir. Allah müminlerin dostudur."

Nefsanî arzular ve bidatler yayılıp her grup başka bir hataya yönelince, hak ehli her çağda, zamanda ve vakitte en üstün delile bağlı kaldılar. Böylece onlar bir tek grup oldular. Bu nedenle onlar birbirine daha yakındırlar. Bu arada Hz. İbrahim, hak sahibidir. Peygamber efendimiz ve ümmeti gibi, kim onun dinini benimserse İşte o, Allah'ın birliğine inanmaktan ibaret olan Hz. İbrahim'in bağlı olduğu din üzere olmuş olur.

(وَاللّٰهُ وَلِيُّ الْمُؤْمِنِينَ) "*Allah müminlerin dostudur*." Çünkü onlar, dinini kabul etmiş ve tevhidine uymuşlardır. Allah'ın dostluğu ise yardım, ayrıcalık ve yakınlık şeklinde olur.

وَدَّتْ طَٓائِفَةٌ مِنْ اَهْلِ الْكِتَابِ لَوْ يُضِلُّونَكُمْ وَمَا يُضِلُّونَ اِلَّٓا اَنْفُسَهُمْ وَمَا يَشْعُرُونَ ﴿٦٩﴾

69- "Kitap ehlinden bir kısmı istediler ki, ne yapıp edip sizi saptırabilsinler. Oysa onlar, sadece kendilerini saptırırlar da farkına bile varmazlar."

Kim ki başına bir fitne gelir, bir sıkıntıya yakalanır ve bir sapıklık kendini cezbederse, o başına gelenlerin, herkesin başına gelmesinden hoşnut olur. Bu itibarla kitap ehli de müminlerin haktan sapmalarını isterler. Ancak Allah, mutlaka nurunu tamamlamayı ve fiillerinin vebalinin kendilerine dönmesini istemiştir.

يَٓا اَهْلَ الْكِتَابِ لِمَ تَكْفُرُونَ بِاٰيَاتِ اللّٰهِ وَاَنْتُمْ تَشْهَدُونَ ﴿٧٠﴾

70- "Ey kitap ehli! Gerçeği gördüğünüz halde niçin Allah'ın ayetlerini inkâr edersiniz?"

Siz, kendisi henüz peygamber olarak gönderilmeden önce peygamberliğinin doğruluğunu gördüğünüz halde, sizi sapıklığa yönelten nedir ki, bildiğiniz şeyi inkâr ettiniz.

يَٓا اَهْلَ الْكِتَابِ لِمَ تَلْبِسُونَ الْحَقَّ بِالْبَاطِلِ وَتَكْتُمُونَ الْحَقَّ وَاَنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٧١﴾

**71- "Ey kitap ehli! Neden doğruyu eğriye karıştırıyor ve bile bile gerçeği gizliyorsunuz?"**

Doğru sözlü peygamber olduğunu bildiğiniz halde neden Hz. Muhammed (s.a.v.) hakkında hakkı gizliyorsunuz? Aslında bu, perişanlığın sonucu olan bir hüküm ve mahrumiyet meselesinden başka bir şey değildir. Sonra Allah, onlardan kimisinin durumunda münafıklık yaparak bu yolla Müslümanların zararından kurtulmak istediğini, gerçekte ise kâfir kardeşlerine muhalefet etmediğini haber vermiştir. Bunun üzerine münafıklar, görünürde Hz. Peygamber (s.a.v.)'e ve Müslümanlara uymayı, gizli olarak da bozuk inançlarında birbirlerine bağlı kalmayı kendi aralarında yekdiğerine tavsiye ettiler.

وَقَالَتْ طَٓائِفَةٌ مِنْ اَهْلِ الْكِتَابِ اٰمِنُوا بِالَّذ۪ٓي اُنْزِلَ عَلَى الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا
وَجْهَ النَّهَارِ وَاكْفُرُوٓا اٰخِرَهُ لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُونَۚ ﴿٧٢﴾

**72- "Kitap ehlinden bir grup şöyle dedi: 'Müminlere indirilmiş olana sabahleyin inanıp akşamleyin onu inkâr edin. Belki onlar dönerler."**

Bunun üzerine Allah, bu kimselerin münafıklığının Müslümanlarca bilindiğini ve münafıklığın onlara fayda vermeyeceğini açıklamış oldu. Dünyada fayda vermemesi, Allah'ın, peygamberini ve müminleri ondan haberdar etmesi sebebiyledir. Ahirette ise bu konuda samimi olmadıklarından dolayıdır.

وَلَا تُؤْمِنُوٓا اِلَّا لِمَنْ تَبِعَ د۪ينَكُمْۜ قُلْ اِنَّ الْهُدٰى هُدَى اللّٰهِۙ اَنْ يُؤْتٰٓى
اَحَدٌ مِثْلَ مَٓا اُو۫ت۪يتُمْ اَوْ يُحَٓاجُّوكُمْ عِنْدَ رَبِّكُمْۜ قُلْ اِنَّ الْفَضْلَ بِيَدِ اللّٰهِۚ
يُؤْت۪يهِ مَنْ يَشَٓاءُۜ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَل۪يمٌۚ ﴿٧٣﴾

**73- "Sizin dininize uyanlardan başka hiçbir kimseye inanmayın. De ki: 'Doğru yol ancak Allah'ın yoludur. Birine, sizde verilenin benzerinin verilmesinden veya Rabbinizin huzurunda aleyhinize deliller getireceklerinden ötürü mü böyle söylüyorsunuz?'**

De ki: 'Lütuf, Allah'ın elindedir. Onu dilediğine verir. Allah, lütfü geniş olandır.'"

Bu ifade, muhtemeldir ki, Allah'tan Müslümanlara yönelik bir emrin başlangıcıdır. Ayet, şuna işaret etmektedir: Zıtlarla dostluk kurmayın ve sırlarınızı yabancılara ifşa etmeyin.

(قُلْ اِنَّ الْفَضْلَ بِيَدِ اللّٰهِ) *"De ki: 'Lütuf ve ihsan Allah'ın elindedir.'"*

Dilediğine marifet nurlarını, dilediğine de perişanlığı ve mahrumiyeti ayırır.

يَخْتَصُّ بِرَحْمَتِه۪ مَنْ يَشَٓاءُ وَاللّٰهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظ۪يمِ ﴿٧٤﴾

74- "O, rahmetini dilediğine ayırır. Allah, büyük lütuf sahibidir."

Allah, dilediğine çeşitli nimetlerini ayırır. Bu itibarla rahmet, nimeti dilediğine ayırmasının sebebidir. Bu yoruma göre nimetin takdir edilmesi gerekir. Diğer ihtimal ise rahmetini dilediğine ayırmasıdır. Bu yoruma göre rahmet sebep mesabesinde olmayıp peygamberlik veya veliliği ifade etmiş olur.

Rahmet günahsızlık ve kullarından herhangi birine bir parçasını ayırdığı bütün iyilik kısımları anlamında da olabilir. Bu takdirde rahmetin kapsamına nimet girmiş olur.

Bu kapsamda Allah, kimilerine ahlak nimetini, kimilerine rızk nimetini, kimilerine ibadet nimetini, kimilerine müritlik nimetini, kimilerine zevahirde muvaffakiyeti, kimilerine lütuflarla müjdelenmeyi, kimilerine de sırlara mazhar olmayı bahşetmiştir. Nitekim Allahşöyle buyurmuştur:

(وَاِنْ تَعُدُّوا نِعْمَةَ اللّٰهِ لَا تُحْصُوهَا) *"Eğer siz, Allah'ın nimetini saymaya kalkarsanız, onu sayamazsınız."* (İbrahim, 14/34)

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Onlar, Allah'ın: *"O, rahmetini dilediğine ayırır"* sözünü işitince, vesilelerin hidayet edici olmadığını, bu işin başlangıçta ve sadece Allah'ın iradesiyle olduğnu anladılar.

- Allah, keşfine mazhar kıldığı sırlar ve ilham ettiği çeşitli bilgilerle dilediğini, rahmetiyle O'nu anlama özelliğine sahip kılar.

وَمِنْ اَهْلِ الْكِتَابِ مَنْ اِنْ تَأْمَنْهُ بِقِنْطَارٍ يُؤَدِّهٖ اِلَيْكَ وَمِنْهُمْ مَنْ اِنْ تَأْمَنْهُ بِدينَارٍ لَا يُؤَدِّهٖ اِلَيْكَ اِلَّا مَا دُمْتَ عَلَيْهِ قَٓائِمًا ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَالُوا لَيْسَ عَلَيْنَا فِي الْاُمِّيّنَ سَبيلٌ وَيَقُولُونَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ وَهُمْ يَعْلَمُونَ ﴿٧٥﴾

75- "Kitap ehlinden öylesi vardır ki, ona yüklerle mal emanet bıraksan onu sana noksansız iade eder. Fakat onlardan öylesi de vardır ki, ona bir dinar emanet bıraksan tepesine dikilip durmazsan onu sana iade etmez. Bu da 'Ümmîlere karşı yaptıklarımızdan dolayı, bize vebal yoktur' demelerindendir. Allah adına bile bile yalan söylüyorlar."

Allah, dalaletlerine ve kâfirliklerine rağmen ahlakları bakımından birbirlerinden farklı olduklarını haber vermektedir. Aslında din emaneti konusunda hepsi haindir. Lakin onlardan kimisi muamelede dürüstlüğe uyar. Sonra muameleleri dürüstçe olsa da sevap kazandırmada onlara fayda vermez. Ancak azaplarının hafifletilmesinde fayda verir. Çünkü kâfirler, dinin detaylarıyla yükümlüdürler. Bu itibarla cezaları ebedi olsa da küfürlerinde daha az günah işledikleri zaman, daha çok ziyanda olanlara kıyasla daha az azap çekerler.

Sonra Allah, hükmün onlara ait olmadığını açıklamıştır. Nihayet onlar şöyle dediler:

(قَالُوا لَيْسَ عَلَيْنَا فِي الْاُمِّيّنَ سَبيلٌ) *"'Ümmîlere karşı yaptıklarımızdan dolayı, bize vebal yoktur' dediler."*

Bu durum kendileri için geçerli olmaz ve söyledikleri bu söz kendilerine fayda vermez. Aksine hüküm Allah'ındır.

بَلٰى مَنْ اَوْفٰى بِعَهْدِهٖ وَاتَّقٰى فَاِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَّقينَ ﴿٧٦﴾

76- "Hayır! Kim sözünü yerine getirir ve Allah'a karşı gelmekten sakınırsa şüphesiz Allah da sakınanları sever."

اِنَّ الَّذٖينَ يَشْتَرُونَ بِعَهْدِ اللّٰهِ وَاَيْمَانِهِمْ ثَمَنًا قَلٖيلًا اُو۬لٰٓئِكَ لَا خَلَاقَ لَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ وَلَا يُكَلِّمُهُمُ اللّٰهُ وَلَا يَنْظُرُ اِلَيْهِمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ وَلَا يُزَكّٖيهِمْ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلٖيمٌ ﴿٧٧﴾

77- "Allah'a karşı verdikleri sözü ve yeminlerini az bir bedelle değiştirenlere gelince, işte bunların ahirette bir payı yoktur. Kıyamet günü Allah onlarla konuşmayacak, onlara bakmayacak ve onları temize çıkarmayacaktır. Onlar için acı bir azap vardır."

Nefsi arzularını ahiretlerine, emellerini de Mevlâ'larının rızasına tercih edenlerin ahirette hiçbir nasibi yoktur. Tercih ettikleri dünya ile eğlenmekten ötürü hem dünyayı hem de ahireti kaybettiler.

Onlar, haktan geri kaldıkları gibi, hiçbir nasipten de yararlanamadılar. Allah, başlarına türlü meşakkatler topladı; fakat onlar başlarına gelenleri bilmezler. Kıyamet günü Allah, onlarla konuşmayacak, onlara bakmayacak ve onları temize çıkarmayacaktır. Sonra bunun yanı sıra, onları sonsuz azapta ebedi kılacaktır.

وَاِنَّ مِنْهُمْ لَفَرٖيقًا يَلْوُ۫نَ اَلْسِنَتَهُمْ بِالْكِتَابِ لِتَحْسَبُوهُ مِنَ الْكِتَابِ وَمَا هُوَ مِنَ الْكِتَابِ وَيَقُولُونَ هُوَ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ وَمَا هُوَ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ وَيَقُولُونَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ وَهُمْ يَعْلَمُونَ ﴿٧٨﴾

78- "Kitap ehlinden bir grup, okuduklarını kitaptan sanasınız diye, kitabı okurken dillerini eğip bükerler. Halbuki okudukları kitaptan değildir. Söyledikleri Allah katından olmadığı halde: 'Bu, Allah katındandır' derler. Onlar, bile bile Allah'a iftira ediyorlar."

Bu ayetteki işaret, bu tarikat konusundaki iddialarında bâtıl üzere olan kimselere yöneliktir. Süslü ifadeler kullanırlar; ancak

kalplerinde, hakkında hiçbir bilgi bulunmayan ve gerçek bilgiye sahip olmadıkları konularda dillerini uzatırlar. Bunu, geri zekâlıların, avamın ve taşradaki insanların kafasını karıştırmak için yaparlar. O kimselere, dilleriyle söyledikleri şeylerin gerçek bilgisine sahip olduklarını vehmettirirler. Allah, bu kimselerin vasfı hakkında: (يَلْوُنَ اَلْسِنَتَهُمْ بِالْكِتَابِ لِتَحْسَبُوهُ مِنَ الْكِتَابِ وَمَا هُوَ مِنَ الْكِتَابِ) *"Okuduklarını kitaptan sanasınız diye, kitabı okurken dillerini eğip bükerler. Halbuki okudukları kitaptan değildir"* buyurmuştur. Zaten gerçeği saptırıp kafa karıştıranların durumu budur. Sözlerini güçsüzlerin nazarında ballandırırlar. Oysa söylediklerinin iç yüzü, hakikat ehlince açıkça bilinmektedir. Nitekim Allah: (وَيَقُولُونَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ وَهُمْ يَعْلَمُونَ) *"Onlar, bile bile Allah'a iftira ediyorlar"* buyurmuştur. Yani onlar, yalancı olduklarını bilirler. Aynı şekilde bu tarikatta da gerçeği saptıran bâtıl ehli kimseler, yıkık kalpler ve perdelenmiş sırlar hakkında konuşurlar. Gazaba müstahak olmaktan Allah'a sığınırız.

مَا كَانَ لِبَشَرٍ اَنْ يُؤْتِيَهُ اللّٰهُ الْكِتَابَ وَالْحُكْمَ وَالنُّبُوَّةَ ثُمَّ يَقُولَ لِلنَّاسِ كُونُوا عِبَادًا لِي مِنْ دُونِ اللّٰهِ وَلٰكِنْ كُونُوا رَبَّانِيِّنَ بِمَا كُنْتُمْ تُعَلِّمُونَ الْكِتَابَ وَبِمَا كُنْتُمْ تَدْرُسُونَ ﴿٧٩﴾

79- "Hiçbir insanın, Allah'ın kendisine Kitap, hikmet ve peygamberlik vermesinden sonra kalkıp insanlara: 'Allah'ı bırakıp bana kul olun' demesi mümkün değildir. Bilakis şöyle demesi gerekir: 'Okutmakta ve öğretmekte olduğunuz Kitap uyarınca Rabbe halis kullar olunuz.'"

Yani, insanları kendine davet etmek veya kendi nefsini ve arzusunu ispata çalışmak, kendisini peygamberlik ve veliliğe seçtiğimiz insanların vasfı değildir. Çünkü Allah'ın, onları peygamber olarak seçmesi, caiz olmayan hususlardan masum oluşlarını garanti altına almaktadır. Bu nedenle bunu onların vasfında caiz görmek, halleriyle çelişir. Peygamber ve veliler, halkı sadece Allah'a davet ederler. Nitekim: (وَلٰكِنْ كُونُوا رَبَّانِيِّنَ) *"Bilakis Rabbe halis kullar olunuz"*

sözü de bu demektir. Ayetteki "*Rabbânî*" kelimesi, Rabbe mensup olan kimse demektir.

Bu arada Rabbe halis olan kullar, Allah'ı bilen, Allah yolunda halim olan, Allah'tan başka her şeyden kopan, nefsî arzuları kalmayan, kendi nefislerinin hallerini hissetmeyip O'nun varlığının gerçeklerinde gark olan kimseler olup Allah ile konuşur, Allah ile duyar ve Allah ile bakarlar. Böylece onlar Allah ile Allah dışındaki her şeyden mahviyet içerisindedirler.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Rabbânî, nefsinin gölgesi üzerinden kalkan ve Allah'ın gölgesinde yaşayan kimse demektir.

- Rabbânî, "tevhid ehli olup Rabbinden başka hiçbir şeyi ispata çalışmayan, Allah'tan başkası için veya başkasından zerre kadar mahviyet ve ispat görmeyen kimsedir.

- Rabbânî, Allah'ın varlığında yok olup kendini göremeyen kimse demektir. Böylece başkası onun yerine iş görür ve yükümlülüklerini başkası yerine getirir.

- Rabbânî, değişik kaderlerin tasarruflarından etkilenmeyen kimsedir.

- Rabbânî, hiçbir meşakkatin değiştirmediği ve hiçbir nimetin zarar veremediği kimsedir. Farklı şartlarda bile o, tek bir hal üzeredir.

- Rabbânî, karşılaştığı durumlardan etkilenmeyen kimsedir. Bu nedenle yufka yürekliliğin konuşturduğu, etkin bir duruma göre yönlenen veya bir olayın sonuçları arasında ayırım gözeten kimse Rabbânî değildir.

- Rabbânî, kalbi ve sırrıyla hiçbir olayı umursamayan ve davranışıyla dindeki hiç bir şeyde kusur işlemeyen kimse demektir.

(بِمَا كُنْتُمْ تُعَلِّمُونَ الْكِتَابَ وَبِمَا كُنْتُمْ تَدْرُسُونَ) "*Okutmakta ve öğretmekte olduğunuz Kitap uyarınca...*" Okutup öğrettikleriniz, size olan kesintisiz ihsanım ve elinizdeki kat kat nimetimdir.

وَلَا يَأْمُرَكُمْ اَنْ تَتَّخِذُوا الْمَلٰٓئِكَةَ وَالنَّبِيّٖنَ اَرْبَابًا اَيَأْمُرُكُمْ بِالْكُفْرِ بَعْدَ اِذْ اَنْتُمْ مُسْلِمُونَ ﴿٨٠﴾

80- "Ve size 'melekleri ve peygamberleri ilah edinin' diye de emretmez. Siz Müslüman olduktan sonra hiç size kâfirliği emreder mi!"

Yani hayır ve şer konusunda onlara zerre kadar ispat nispet etmeyin.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, size beşeriyet haddini ve Rab olmanın hakkını öğretmektedir.

- Allah size, emir ve din bakımından meleklere ve peygambere saygılı olun; ancak Rablığa nazaran yaratıkların kadrini küçümseyin.

(اَيَأْمُرُكُمْ بِالْكُفْرِ بَعْدَ اِذْ اَنْتُمْ مُسْلِمُونَ) *"Siz Müslüman olduktan sonra hiç size kâfirliği emreder mi!"* Yani Hakk'ı gördükten sonra halkı ispatlamayı size emreder mi?

- Sırlarınızda tevhidin nurları parladıktan ve kalplerinizde birleme güneşleri doğduktan sonra Allah size, şekilleri düşünmenizi ve olayları varlıklara nispet etmenizi emreder mi?

وَاِذْ اَخَذَ اللّٰهُ مِيثَاقَ النَّبِيّٖنَ لَمَٓا اٰتَيْتُكُمْ مِنْ كِتَابٍ وَحِكْمَةٍ ثُمَّ جَٓاءَكُمْ رَسُولٌ مُصَدِّقٌ لِمَا مَعَكُمْ لَتُؤْمِنُنَّ بِهٖ وَلَتَنْصُرُنَّهُ قَالَ ءَاَقْرَرْتُمْ وَاَخَذْتُمْ عَلٰى ذٰلِكُمْ اِصْرٖي قَالُٓوا اَقْرَرْنَا قَالَ فَاشْهَدُوا وَاَنَا۬ مَعَكُمْ مِنَ الشَّاهِدٖينَ ﴿٨١﴾

81- "Hani, Allah peygamberlerden: "Ben size kitap ve hikmet verdikten sonra, nezdinizdekileri tasdik eden bir peygamber geldiğinde ona mutlaka iman edip yardım edeceksiniz" diye söz

almıştı. Allah: "Kabul ettiniz ve bu ahdimi üzerinize aldınız mı?" dediğinde onlar: "Kabul ettik" demişlerdi. Allah da: "O halde şahitlik edin! Ben de, sizinle birlikte şahitlik edenlerdenim" buyurmuştu."

Allah, bütün peygamberlerden, tıpkı onlardan kendi Rablığını ikrar edeceklerine dair söz aldığı gibi, Hz. Muhammed (s.a.v.)'e dair söz aldı. Bu ise Hz. Peygamber için sonsuz bir onurlandırmadır. Zira Allah, onun ismini kendi ismiyle yan yana getirmiş ve onun kadrini de tıpkı kendi kadri gibi ortaya koymuştur. Bu itibarla Hz. Peygamber (s.a.v.), bu rütbede bütün varlıkların biricik şahsiyetidir. Sonra Allah, onun üzerinden ortaya koyduğu mucizelerle O'nun celalini tanımada herkes için yolu kolay kılmıştır.

فَمَنْ تَوَلّٰى بَعْدَ ذٰلِكَ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْفَاسِقُونَ ﴿٨٢﴾

82- "Artık bundan sonra her kim dönerse, işte onlar yoldan çıkmışların ta kendileridir."

Ayetteki işaret şöyledir: Her kim, delilinin ortaya çıkmasından ve mucizesinin açıkça anlaşılmasında sonra Hz. Peygamber (s.a.v)'in sünnetinden veya yolunu izlemekten saparsa, işte onların dereceleri kötüleşmiş olur. İnkârları ve ilahî inayetin dışına çıkmalarından dolayı da gazabı hak etmişlerdir.

اَفَغَيْرَ دِينِ اللّٰهِ يَبْغُونَ وَلَهُٓ اَسْلَمَ مَنْ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ
طَوْعًا وَكَرْهًا وَاِلَيْهِ يُرْجَعُونَ ﴿٨٣﴾

83- "Göklerde ve yerdekiler, ister istemez O'na teslim olduğu halde kitap ehli, Allah'ın dininden başkasını mı arıyorlar? Halbuki O'na döndürüleceklerdir."

Her kim, Allah'ı hakikatte olduğundan farklı düşünürse veya başkasını kutsanmaya değer bulursa, o kimse, serabı görüp su zanneden, ancak yanına geldiğinde bir hiç olduğunu anlayan kimse gibidir. Zandan kaynaklanan yanlışlıklar, insanı hakikatten koparарак

problemle karşı karşıya bırakır. Bu nedenle bu yanlışlıklara düşen kimse, ıssız bir vadiye inmiş olur.

(وَلَهُ اَسْلَمَ مَنْ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ طَوْعًا وَكَرْهًا ) *"Göklerde ve yerdekiler, ister istemez O'na teslim olduğu halde..."*

Bu durum, isteseler de istemeseler de ilahî hükmün haklarında uygulanması içindir.

قُلْ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَمَٓا اُنْزِلَ عَلَيْنَا وَمَٓا اُنْزِلَ عَلٰٓى اِبْرٰهِيمَ وَاِسْمٰعِيلَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوبَ وَالْاَسْبَاطِ وَمَٓا اُوتِيَ مُوسٰى وَعِيسٰى وَالنَّبِيُّونَ مِنْ رَبِّهِمْ لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ اَحَدٍ مِنْهُمْ وَنَحْنُ لَهُ مُسْلِمُونَ ﴿٨٤﴾

84- "De ki: 'Biz Allah'a, bize indirilene, İbrahim, İsmail, İshak, Ya'kub ve Ya'kub'un oğullarına indirilenlere, Musa, İsa ve diğer peygamberlere Rableri tarafından verilenlere iman ettik. Onları birbirinden ayırt etmeyiz. Biz, ancak O'na teslim oluruz.'"

Biz iman ettik; ancak nefislerimiz, gücümüz veya kuvvetimizle değil.

Biz, Allah'a dayanarak bize indirilenlere iman ettik ve yine gücümüz, tercihimiz, çabamız ve emeğimizle değil; fakat O'na dayanarak peygamberler arasında bir ayırım yapmamaktayız. Eğer O, kendisinin kim olduğunu bize öğretmeseydi biz bilmezdik. Yoksa biz bunu nasıl bilebilirdik?

وَمَنْ يَبْتَغِ غَيْرَ الْاِسْلَامِ دِينًا فَلَنْ يُقْبَلَ مِنْهُ وَهُوَ فِي الْاٰخِرَةِ مِنَ الْخَاسِرِينَ ﴿٨٥﴾

85- "Kim, İslam'dan başka bir din ararsa, bilsin ki, o din kendisinden asla kabul edilmeyecek ve o, ahirette ziyan edenlerden olacaktır."

Her kim, Allah'ın hükmü altında teslim olmaktan başka bir yol izlerse, ayağı, dipsiz bir yanlışlıklar çukuruna kayar.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kim, kendisine sarılmaktan başka bir şeyle Allah'a tevessül ederse, zararı kârından fazla olur.

- Her kim, her şeyi gözden çıkarmazsa, her şeyin sahibi olan Allah'a ulaşamaz.

- Her kim, kadri büyük ve vasfı yüce olan Muhammed Mustafa (s.a.v.)'nın bayrağı altında yürümezse, ondan ne bir şey ne de bir zerre kabul edilir.

كَيْفَ يَهْدِي اللّٰهُ قَوْمًا كَفَرُوا بَعْدَ اِيمَانِهِمْ وَشَهِدُوٓا اَنَّ الرَّسُولَ حَقٌّ وَجَٓاءَهُمُ الْبَيِّنَاتُ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظَّالِمِينَ ﴿٨٦﴾

86- "İman etmelerinden, Resulün hak olduğuna şehadet getirmelerinden ve kendilerine apaçık deliller gelmesinden sonra inkârcılığa sapan bir kavme Allah, nasıl hidayet nasip eder! Allah, zalimler topluluğunu doğru yola iletmez."

Allah, ezelî hükmünde vuslatı hak etmekten uzaklaştırdığı kimseyi, vakti geldiğinde yine kendi fiiliyle hizmet dergâhına nasıl yaklaştırır! Bir yoruma göre ise ezel hükmünün uzaklaştırdığı kimseyi işteki dürüstlük nasıl yakınlaştırır! Kaldı ki Allah, işine hâkimdir.

اُو۬لٰٓئِكَ جَزَٓاؤُ۬هُمْ اَنَّ عَلَيْهِمْ لَعْنَةَ اللّٰهِ وَالْمَلٰٓئِكَةِ وَالنَّاسِ اَجْمَعِينَ ﴿٨٧﴾

87- "İşte onların cezası, Allah'ın, meleklerin ve bütün insanlığın lanetine uğramalarıdır."

O kimselerin son durumu, işin başında Allah'ın, haklarında kesinleşmiş olan hükmüdür. Başlangıçları, kısmetlerinin reddedilmesidir. Ara dönemleri hizmetten alıkonulmaktır. Sonları ise kovulup zelil olmaktır.

خَالِدِينَ فِيهَا لَا يُخَفَّفُ عَنْهُمُ الْعَذَابُ وَلَا هُمْ يُنْظَرُونَ ﴿٨٨﴾

88- "Bu lanete ebedî gömülüp gidecekler. Onların azapları hafifletilmez, yüzlerine de bakılmaz."

Onlar, o zelillik içinde kalır, azapları bir an bile gevşemez ve ayrılıkları bir saat dahi hafifletilmez.

اِلَّا الَّذٖينَ تَابُوا مِنْ بَعْدِ ذٰلِكَ وَاَصْلَحُوا فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَحٖيمٌ ﴿٨٩﴾

89- "Ancak bundan sonra tevbe edip yola gelenler başka. Çünkü Allah çok bağışlayıcı ve merhametlidir."

İşte rahmete nail olanlar bunlardır. Bunlar, her ne kadar halkın zannında diğer zümreden olsalar da onlar, ezelde o zümreden olmamışlardır.

اِنَّ الَّذٖينَ كَفَرُوا بَعْدَ اٖيمَانِهِمْ ثُمَّ ازْدَادُوا كُفْرًا لَنْ تُقْبَلَ تَوْبَتُهُمْ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الضَّٓالُّونَ ﴿٩٠﴾

90- "İnandıktan sonra kâfirliğe sapıp sonra inkârcılıkta daha da ileri gidenlerin tevbeleri asla kabul edilmeyecektir. Ve işte onlar, sapıkların ta kendisidirler."

Ayetteki işaret şöyledir: Müridlik yolunu izledikten sonra âdet ehlinin hallerine dönüş yapanların, dünyayı ve nefse uymayı Allah'ı aramaya tercih edenlerin, sonra tarikat ehline karşı çıkıp karanlıklarının ürkütücülüğünü artıranların tevbeleri kabul edilmeyecek ve onlar, hak yoldan sapanlardan olacaklardır. Çünkü hainlik ortaya çıktıktan sonra güvenilirlik kabul edilemez. Bunların azabı, gün geçtikçe kalplerinin tarikattan daha fazla nefret etmesidir. Bunlar, saf hallerinin elden gitmesine de hasret çekmezler. Eğer onlar, bunda ısrar etmekten dönüş yapsalardı, tevbeleri kabul edilecekti. Lakin Allah, bu tarikatta ara verenler hakkındaki ilkesini şöyle icra etmiştir: Onlar, âdetin prensiplerine döndükleri zaman geçmiş olan vakitlerine üzülmezler.

Allah şöyle buyurmuştur:

(وَنُقَلِّبُ اَفْـِٔدَتَهُمْ وَاَبْصَارَهُمْ كَمَا لَمْ يُؤْمِنُوا بِهٖٓ اَوَّلَ مَرَّةٍ) *"O'na iman etmedikleri ilk durumdaki gibi, onların gönüllerini ve gözlerini ters çeviririz."* (En'am, 6/110)

Bu arada İslam'dan dönen kimsenin Müslümanlara karşı olan düşmanlığı, aslî kâfirin düşmanlığından daha şiddetlidir. Aynı şekilde bu tarikattan dönen kimsenin ona yönelik inkârı ve onun ehlinden yüz çevirişi, ona yabancı olan kimsenin inkârından daha şiddetlidir.

اِنَّ الَّذٖينَ كَفَرُوا وَمَاتُوا وَهُمْ كُفَّارٌ فَلَنْ يُقْبَلَ مِنْ اَحَدِهِمْ مِلْءُ الْاَرْضِ ذَهَبًا وَلَوِ افْتَدٰى بِهٖ اُو۬لٰٓئِكَ لَهُمْ عَذَابٌ اَلٖيمٌ وَمَا لَهُمْ مِنْ نَاصِرٖينَ ﴿٩١﴾

91- "Gerçekten inkâr edip kâfir olarak ölenler var ya, onların hiç birinden fidye olarak dünya dolusu altın verecek olsa dahi, kabul edilmeyecektir. Onlar için acı bir azap vardır. Hiç yardımcıları da yoktur."

Ayetteki işaret şöyledir: Güzel bir başlangıcı olsa bile, ara verdikten sonra ölen kimse, ona bin arif şefaat dahi etse, tarikat ehliyle haşir olunmayacaktır. Ona karşı alınan mükemmel bir tedbir de başkasının, onun kılığında görünmesi sebebiyle onu tanıyan marifet ehlinin bu kimsenin o olduğunu zannetmesi ve bu nedenle kendisine şefaat etmek gerektiğinin, kimsenin aklına gelmemesidir.

لَنْ تَنَالُوا الْبِرَّ حَتّٰى تُنْفِقُوا مِمَّا تُحِبُّونَ وَمَا تُنْفِقُوا مِنْ شَيْءٍ فَاِنَّ اللّٰهَ بِهٖ عَلٖيمٌ ﴿٩٢﴾

92- "Sevdiğiniz şeylerden Allah yolunda harcamadıkça iyiye eremezsiniz. Her ne harcarsanız, Allah onu hakkıyla bilir."

İyiliğin bulunması, istenen bir husus olduğundan ayette "*teb'îz*" ifade eden "*min*" harfi kullanılarak: (مِمَّا تُحِبُّونَ) "*Sevdiğiniz şeylerden*" denilmiştir. Bu itibarla kim iyilik yapmak isterse, sevdiği malının bazısını harcasın. Kim ki Allah'ı isterse sevdiği şeylerin tamamını harcasın. Nitekim her kim, dünyadan sevdiğini harcarsa, Allah'tan

dilediğini bulur. Kim, nefsinin arzularına bağlı olursa, Rabbine yakınlıktan nasibini alamaz.

Bir yoruma göre de, sen sevdiğin malı harcamadan iyiliğe kavuşamazken, nefsinin arzularını kendisine tercih ettiğin halde Allah'a nasıl ulaşırsın? ( وَمَا تُنْفِقُوا مِنْ شَيْءٍ فَاِنَّ اللّٰهَ بِهِ عَلِيمٌ ) *"Her ne harcarsanız, Allah onu hakkıyla bilir."* İnsanlardan kimisi, mükâfat ve karşılık için harcar. Kimisi, bela ve üzüntüyü defetmek için harcar. Kimisi de Allah'ın onu bilmesiyle yetinmek için harcar.

Şiir:

*Yüksek mertebeler peşinde titrer iyilik yapmak için*
*Anılsın diye bir gün Selma'nın yanında meziyetleri*

كُلُّ الطَّعَامِ كَانَ حِلًّا لِبَنِي اِسْرَآءِيلَ اِلَّا مَا حَرَّمَ اِسْرَآءِيلُ عَلٰى
نَفْسِهِ مِنْ قَبْلِ اَنْ تُنَزَّلَ التَّوْرٰيةُ قُلْ فَاْتُوا بِالتَّوْرٰيةِ فَاتْلُوهَآ اِنْ كُنْتُمْ
صَادِقِينَ ﴿٩٣﴾ فَمَنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ مِنْ بَعْدِ ذٰلِكَ فَاُولٰٓئِكَ
هُمُ الظَّالِمُونَ ﴿٩٤﴾

93, 94- "Tevrat'ın indirilmesinden önce, İsrail'in, kendisine haram kıldıkları dışında, yiyeceğin her türlüsü İsrail oğullarına helal idi. De ki: 'Eğer doğru sözlü iseniz, o zaman Tevrat'ı getirip onu okuyun. Artık bundan sonra, her kim Allah'a karşı yalan uydurursa işte bunlar, zalimlerin ta kendisidirler.'"

Varlıklarda asıl olan, haklarında helal veya haram hükmü vermemektir. Bu itibarla hakkında sınırlama bulunmaması, Allah'tan lütfedilmiş bir genişlik ve merhamet olup bu durum, o şey hakkında bir emir ve hüküm vârid oluncaya kadar devam eder. Çünkü Allah, mükellefiyet hükümlerini avam için geniş tutmuştur. Bu nedenle avamın yolu, kalbe ait olarak yükümlü bulundukları hükümlerin tamamlanması için, hükümlerin en kolayına uymaktır. Çünkü kalpleri üzerindeki meşakkatler daha şiddetlidir. Havassa gelince, onlar vazifeler ve virdler bakımından daha ağır yükümlülükler altına

sokulmuşlardır. Bu itibarla onların yolu, kalpleriyle gailelerden boşalmış olduklarından, daha meşakkatli ve daha zor olana uymaktır. Her kim, bunun aksini zannederse şüphesiz hata etmiş olur.

Bu ayetin: (فَمَنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ) *"Her kim, Allah'a karşı yalan uydurursa ..."* ifadesinde aynı zamanda iddia ve yanlış yapmayı şiar edinen kimselerin hallerine de işarette bulunulmuştur. Çünkü onlar nefisleriyle baş başa kalarak vesveselerini Allah'a nispet ederler. Oysa Allah bunlardan uzaktır. Bu arada ilhamlar ile vesveseler arasında ayırım yapabilen bir kul ise azizdir.

قُلْ صَدَقَ اللّٰهُ فَاتَّبِعُوا مِلَّةَ اِبْرٰهِيمَ حَنِيفًا وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِكِينَ ﴿٩٥﴾

95- "De ki: 'Allah, doğruyu söylemiştir. Öyle ise hakka yönelmiş olarak İbrahim'in dinine uyunuz. O, müşriklerden değildi.'"

İbrahim'in dini, geride hiçbir şey kalmamak üzere, bütünüyle Allah'a yönelmek, O'nun hükmüne teslim olmaktır. Bu itibarla, sonradan var olanlardan zerre kadar bir şeyi hesapta tutmak hakikatte şirktir.

اِنَّ اَوَّلَ بَيْتٍ وُضِعَ لِلنَّاسِ لَلَّذِي بِبَكَّةَ مُبَارَكًا وَهُدًى لِلْعَالَمِينَ
﴿٩٦﴾ فِيهِ اٰيَاتٌ بَيِّنَاتٌ مَقَامُ اِبْرٰهِيمَ وَمَنْ دَخَلَهُ كَانَ اٰمِنًا وَلِلّٰهِ
عَلَى النَّاسِ حِجُّ الْبَيْتِ مَنِ اسْتَطَاعَ اِلَيْهِ سَبِيلًا وَمَنْ كَفَرَ فَاِنَّ
اللّٰهَ غَنِيٌّ عَنِ الْعَالَمِينَ ﴿٩٧﴾

96, 97- "Şüphesiz âlemlere bereket ve hidayet kaynağı olarak insanlar için kurulan ilk ev Mekke'deki Kâbe'dir. Orada apaçık nişaneler, İbrahim'in makamı vardır. Oraya giren emniyette olur. Yoluna gücü yetenlerin o evi haccetmesi, Allah'ın insanlar üzerinde bir hakkıdır. Kim inkâr ederse bilmelidir ki, Allah bütün âlemlerden müstağnidir."

Kâbe taştan, kul ise topraktan ibarettir. Böylece Allah toprağı taşa bağlamıştır. O halde toprak taş ile beraberdir. Ezelî olan Allah ise üstün ve yücedir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kâbe, nefislerin tavaf yeridir. Allah da kalplerin maksududur.

- Kâbe, kalıntı ve eserlerden, hatta şekil ve taşlardan ibarettir.

Şiir:

*Onlar, bizi ifade eden eserlerimizdir*
*O halde eserlere bakın bizden sonra*

- Kâbe taştan ibarettir; ancak her taş hemcinsi olan diğer taşlara benzemez. Kâbe taştır, lakin dostların kalplerini sıkıştırır, daha doğrusu fakirlerin ciğerlerini sarsar. Hayır, doğrusu bazılarının kalplerini serinletip sevindirir, bazılarının kalplerini ise sarsar ve rahatsız eder.

Bu arada Kâbe insanlara göre kısımlara ayrılır:

Bir Kâbe vardır ki, dostların maksadı ve ziyaretgâhıdır. Onun yanında haberleri duyulur ve eserleri görülür.

Bir Kâbe vardır ki, ona tefrika gözüyle bakan yıkık bir kalp ile döner. Ona aidiyet gözüyle bakan ise her türlü yakınlık ve kabulden yararlanır.

Şiir:

*Her ne kadar sussa da memleketler, vardır onların*
*Dostlarımızla bir geçmişleri, zira konakladılar onların yanında*

- Allah bir ayette: (وَطَهِّرْ بَيْتِيَ) *"Evimi tertemiz kıl"* (Hac, 22/26), derken burada: *"İnsanlar için kurulan ilk ev"* buyurmuştur. Bu durum, birlikteliğe işaretin bir parçasını oluşturmaktadır.

Öte yandan buraya (بِبَكَّةَ) *"Bekke"* adı verilmesi, insanların izdihamından dolayıdır. Şöyle ki, bütün insanlar, ona doğru acele etmede

birbirleriyle yarışır, etrafında tavaf yapmak için izdihama yol açar ve ona kavuşmak için yolda canlarını feda ederler.

Bu arada Kâbe, yapıldığından beri hiç kimseye ümitle hitap etmemiş, hiç kimseyi sevgiyle karşılamamış ve hiç kimseyle bir mektuptaki bir satırla bile mektuplaşmamıştır. Şimdi Allah'ın taştan yarattığı ev, azizlikte bu seviyede ise evin kendisine ait olduğu Allah hakkında ne düşünürsün? Hz. Peygamber (s.a.v.), Allah'tan naklen: *"Büyüklük benim gömleğim, yücelik ise benim eteğimdir"* buyurmuştur.

- Allah'a nispet edilen Kâbe'nin bir köşesine çölleri ve ıssız yolları katetmeden ulaşmak mümkün olmadığına göre; onun Rabbine gevşeklikle ve zorluklara katlanıp rahatlıkları terk etmeden nasıl ulaşabilirsin?

- Kalbini, senin için yapılmış olan ilk eve bağlama! Lakin yalnızca sırrını seni tercih eden ilk sevgiline ayır.

- Kendisi için yapılmış olan ilk evin yanında itikafa giren kul ile kendisine ait olmuş olan ilk Aziz'in huzurundan ayrılmayan kul arasında büyük fark vardır.

- Fakirlerin, gayretleriyle Kâbe'nin etrafında oluşturdukları izdiham, ayaklarıyla tavaf yapanların izdihamından daha az değerli değildir. Zira zenginler, Kâbe'yi ziyaret edip ayaklarıyla tavaf ederken, fakirler ondan geri kalırlar ve onun etrafında gayretleriyle tavaf yaparlar.

- Kâbe, Allah'ın taştaki evidir. Kalp ise O'nun sırdaki evidir.

Şiir:

*Sevenler cümlesinden olmam ben eğer*
*Kalbi kılmaz isem O'na ev ve makam*
*Tavafım da sırrı O'nda dolaştırmaktır*
*Ve O benim rüknümdür istilam yapmak istediğimde*

Bu itibarla, manevî duygular, ariflerin kalplerini tavaf ederler. Hakikatler, tevhid ehlinin kalplerinde itikâfa girerler. Kâbe, kulun

hacdaki amacıdır. Kalp ise tevhid ve vecdi sadece onda yaratmış olmakla Hakk'ın maksududur.

(مُبَارَكًا وَهُدًى لِلْعَالَمِينَ) *"Âlemlere bereket ve hidayet kaynağı olarak..."*

Allah'ın bereketleri, lütufların ve keşiflerin ulaşmasıdır. Şöyle ki, her kim O'nu gayretiyle kast ederse ve kastıyla huzuruna varırsa, Allah onu hidayetinin yoluna eriştirir.

(فِيهِ اٰيَاتٌ بَيِّنَاتٌ) *"Orada apaçık nişaneler vardır."*

Lakin o nişaneler kafatası içindeki gözlerle değil, kalplerin basiretleriyle idrak edilir. Hz. İbrahim'in makamı ise zahirde ayak bastığı yerdir. İşârî izaha göre ise kendisinin himmetleriyle üzerinde durduğu makamdır.

Bir yoruma göre de, Hz. İbrahim'in makamının şerefi, Allah dostunun eseri olmasından ötürüdür. Nitekim Allah'ın dostunun eseri büyük önemi haizdir.

(وَمَنْ دَخَلَهُ كَانَ اٰمِنًا ) *"Oraya giren emniyette olur."*

Bu konudaki yorumlar şöyledir:

- Kim İbrahim'in makamına girerse emniyette olur. İbrahim'in makamı ise teslimiyettir. Her kim, işlerini Allah'a teslim ederse, onun hiçbir tercihi kalmaz ve güvencede olur. Bu itibarla güvenin zıttı korkudur. Korku ise kişinin muradının istediği gibi gerçekleşmemesidir. Oysa kul için irade ve tercih söz konusu olmayınca onun vasıfları arasında hangi korkunun yeri olur?

- "Ona" zamiri Kâbe'ye gider. Buna göre; kim gerçekte Kâbe'sine girerse emniyette olur. Gerçekte girmek, oraya edep vasfı üzere girmek demektir. Kâbe'ye edep dairesinde girmek ise, işleri Kâbe'nin Rabbine teslim etmekten başka bir biçimde olamaz. Çünkü teslimiyet sahibi olmayan kimse, takdire karşı çıkmış olur. Kâbe'ye girişteki edep, bu girişin muhalefet ve anlaşmazlık üzere değil, teslimiyet üzere olmasıdır. Böylece bu yorum da bundan önceki yorumla özdeşleşmiş olur.

Şayet ayette sözü edilen ev, kalbe işaret sayılırsa bu takdirde ayetin anlamı şöyle olur: Her kimin kalbine hakikat sultanı girerse, o kişi beşeri engellerden ve nefsin saptırıcı kuruntularından emin olur. Çünkü hükümdarın gölgesine sığınan kimse sakıncalı bir durumla karşılaşmaz.

- Gerçekte Kâbe'ye girmen, ancak kendinle çıkmanla olur. Bu itibarla kendinden çıktığın zaman Kâbe'ye girişin doğru olur. Yine kendinden çıktığın zaman emniyet içinde olursun.

- Yerinde yurdunda gezip tozarken doğru anlamda Allah'ın evine girmiş olamazsın. Çünkü bir şahıs, aynı durumda iki yerde olamaz. Bu nedenle her kim, Rabbinin evine girerse, nefsinin alışkanlıklarından öncelikle çıkmış olur.

(وَلِلّٰهِ عَلَى النَّاسِ حِجُّ الْبَيْتِ مَنِ اسْتَطَاعَ اِلَيْهِ سَبِيلًا) *"Yoluna gücü yetenlerin o evi haccetmesi, Allah'ın insanlar üzerinde bir hakkıdır."*

Zengine düşen, malından hiçbir şeyi Kâbe'den, fakire düşen de ruhundan bir nefesi bile Allah'ın evine ulaşmaktan esirgememesidir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Güç yetirmenin çeşitleri vardır. Bu bakımdan kimisi, hem nefsi hem de malıyla güç yetirmektedir ki, bu, sağlıklı olandır. Kimisi de başkasına dayanarak güç yetirebilir. Bu da yardıma muhtaç yatalak kimsedir. Üçüncüsü ise pek çok kimsenin habersiz olduğu, ancak Rabbiyle güç yetirebilen kimsedir. Bu da ihlas ve hak sahibi olan herkesin vasfıdır. Çünkü Allah'ın koyduğu yükümlülükleri ancak insanlar taşıyabilir.

- Hacca gitmek, mal sahiplerine farzdır. Kâbe'nin Rabbi ise fakirlere kesin bir biçimde farzdır. Şöyle ki, bazen Kâbe'ye giden yol kapanabilir; ancak Kâbe'nin Rabbine giden yol kapanmaz. Bir de fakir, Kâbe'nin Rabbinden alıkonulmaz.

- Hac, insanın yücelttiği kimseye yönelmek demektir. Buna göre kimisi, bedeniyle Kâbe'yi ziyarete yönelirken kimisi de kalbiyle Kâbe'nin Rabbini görmeye yönelmektedir. Böylece hacdan hacca büyük fark ortaya çıkmaktadır. Birinci kısımdakiler, hac vecibelerini ve

farzını yerine getirdikten sonra ihramdan çıkarken ikinci kısımda yer alanlar, Rablerini gördüklerinde ihramlarından çıkarlar. Aynı zamanda bedenleriyle hac edenler ihramın bilinen yasaklarından sakınmak üzere ihrama girmiş olurlar. Kalpleriyle hacca niyetlenenler ise, başkalarında huzur bulmaktan, başkasını görmekten ve bütün varlıklardan sakınmak için ihrama girmiş olurlar.

(وَمَنْ كَفَرَ فَاِنَّ اللّٰهَ غَنِيٌّ عَنِ الْعَالَمِينَ) *"Kim inkâr ederse bilmelidir ki, Allah bütün âlemlerden müstağnidir."*

Allah, bu ayette haccı terk edene küfür damgasını vurmuştur. Nitekim bu söz yüzünden âlimler tevil çabasına girmişlerdir. Allah bu damgayı vurduktan sonra: (فَاِنَّ اللّٰهَ غَنِيٌّ عَنِ الْعَالَمِينَ) *"Allah bütün âlemlerden müstağnidir"* buyurmuştur. Bu ifade, hacca daha da özel bir önem atfetmeyi ve ilave tehdidi içermektedir.

Bir yoruma göre de, hac yapan kimsenin yolu, haccın adabını yerine getirmesidir. Bu çerçevede kalbiyle ihram bağladığı zaman, onu bu yoldan alıkoyan her bağlantıyı feshetmesi ve bu hakikatten kendisini geri çeviren her kararı bozması gerekir. Temizlik yaptığı zaman, başkalarının izleri olan her türlü kirden önce mahcubiyet suyuyla, sonra vefa suyuyla, sonra safa suyuyla temizlenmiş olur. Aynı şekilde elbisesinden çıktığı zaman, üstünde taşıdığı her türlü kötü ahlaktan arınmış olur. Diliyle *"lebbeyke"* dediği zaman, bedeninde Allah'ın davetine icabet etmeyen bir kıl dahi kalmaması gerekir. Vakfe yerine ulaştığı zaman, kalbi ve sırrıyla Hakk'ın, makam tercihi olmaksızın ve hiçbir ayırıma maruz kalmaksızın kendisini durdurduğu yerde durur. Arafat'ta durduğu zaman, Allah'ı tanır ve Allah'ın, üzerindeki hakkını öğrenmiş olur. Bir de kendi güç ve kuvvetinden teberri ederek Allah'ı tanımaya çalışır. Allah da nimeti ve kuvvetiyle kendisini ona tanıtır. Meşarulharam'a vardığı zaman, kendini unutmak suretiyle Mevlâ'sını hatırlar. Rabbini, kendi nefsiyle birlikte anması ise sahih olmaz. Mina'ya ulaştığı zaman, bütün emelini, isteğini, şehvetini ve nefsî arzularını kalbinden söküp atar.

Cemreleri taşladığı zaman dünyadaki ve ahiretteki her ilgiyi kalbinden ve sırrından çıkarıp atar. Kurban kestiği zaman da nefsi

arzusunu bütünüyle kesmiş ve bununla Hakk'a yakınlaşmış olur. Hareme girdiği zaman hem dini izah hem de hakikatin işaretine uygun olarak her türlü haramdan uzaklaşmaya karar vermiş olur. Gözüyle Kâbe'yi gördüğü zaman kalbiyle Beyt'in Rabbini görmüş olur. Beyt'i tavaf ettiği zaman da sırrı, kutsal alemde dolaşmaya başlar.

Safâ ile Merve arasında gidip geldiği zaman her türlü beşerî arıza ve engelden arındırılmış olur. Saçını kestiği zaman ise arta kalan her türlü alakayı kesmiş olur.

Kul, nefsinin ihramından çıkıp Rabbinin Beyt'ine dönük niyeti sona erdiği zaman bu kez kalbiyle yeni bir ihrama girmiş olur. Bu itibar nasıl ki, kendi evinden çıkıp Rabbinin evine yöneldiyse, bu kez de Rabbinin evinden çıkıp Rabbine yönelmiş olur. Bu nedenle her kim, haccını tamamlarsa, o ancak kendisi için amel etmiş olur. Kim de tembellik yaparsa şüphesiz Allah, bütün âlemlerden müstağnidir. Bu arada Hz. Peygamber: *"Hac yapanın başı üstü dağınık ve tozlu topraklıdır"* buyurmuştur. O halde her kim, mükemmel bir teslimiyet ve bütünüyle kendinden arınma ile hakikate ulaşmazsa o bu hadisin kapsamına girmemiş olur.

قُلْ يَٓا اَهْلَ الْكِتَابِ لِمَ تَكْفُرُونَ بِاٰيَاتِ اللّٰهِ وَاللّٰهُ شَهٖيدٌ عَلٰى مَا تَعْمَلُونَ ﴿٩٨﴾

98- "De ki: 'Ey kitap ehli! Allah yaptıklarınızı görüp dururken niçin Allah'ın ayetlerini inkâr edersiniz!'"

Bu ayetle yapılan hitap, onların aleyhine olan delili güçlendirmek içindir. Hakikat ve kahr bakımından ise delil getirmenin yolunu yüzlerine kapatmaktadır. Bu itibarla onlar, din ve emir bakımından davet edilirken, hüküm ve kahr bakımından kovulmuşlardır.

قُلْ يَٓا اَهْلَ الْكِتَابِ لِمَ تَصُدُّونَ عَنْ سَبٖيلِ اللّٰهِ مَنْ اٰمَنَ تَبْغُونَهَا عِوَجًا وَاَنْتُمْ شُهَدَٓاءُ وَمَا اللّٰهُ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ﴿٩٩﴾

99- "De ki: 'Ey kitap ehli! Gerçeği görüp bildiğiniz halde niçin Allah'ın yolunu eğri göstermeye yeltenerek müminleri Allah yolundan çevirmeye kalkışıyorsunuz? Allah, yaptıklarınızdan habersiz değildir.'"

Bizzat kendisi engellenmiş olan kimse, nasıl olur da başkasını engelleyebilir? Kuşkusuz bunda rububiyetin bir sırrı vardır.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوٓا اِنْ تُط۪يعُوا فَر۪يقًا مِنَ الَّذ۪ينَ اُو۫تُوا الْكِتَابَ
يَرُدُّوكُمْ بَعْدَ ا۪يمَانِكُمْ كَافِر۪ينَ ﴿١٠٠﴾

100- "Ey iman edenler! Kendilerine kitap verilenlerden bir gruba uyarsanız, imanınızdan sonra sizi yeniden inkârcılığa sevk ederler."

Yabancılık, sahipleriyle sınırlı kalmayıp aksine onlara yakın duran herkese bulaşır. O halde her kim, düşmanlarla birlikte olma uğursuzluğuna yeltenmek üzere Allah'ın düşmanına boyun eğerse, Allah onu çukuruna atar.

وَكَيْفَ تَكْفُرُونَ وَاَنْتُمْ تُتْلٰى عَلَيْكُمْ اٰيَاتُ اللّٰهِ وَف۪يكُمْ رَسُولُهُ وَمَنْ
يَعْتَصِمْ بِاللّٰهِ فَقَدْ هُدِيَ اِلٰى صِرَاطٍ مُسْتَق۪يمٍ ﴿١٠١﴾

101- "Size Allah'ın ayetleri okunurken, üstelik Allah Resûlü de aranızda iken nasıl inkâra saparsınız? Her kim Allah'a bağlanırsa, kesinlikle doğru yola iletilmiştir."

Kalbinde irfan güneşleri doğan kimsenin üzerine küfrün gölgesinin düşmesi uygun olmaz. Çünkü bir taraftan gündüz geldiği zaman, öbür taraftan gece gider.

(وَمَنْ يَعْتَصِمْ بِاللّٰهِ) *"Her kim Allah'a bağlanırsa..."*

Allah'a ancak kurtuluşu Allah'ta bulan kimse bağlanır. Allah'ın hidayet etmediği kimse ise, ne zaman Allah'a bağlanır ki? O halde

başta O'ndan gelen hidayet, sonunda insanın O'na bağlanmasını sağlar. Yoksa insanın O'na bağlanması, hidayeti sağlamaz.

Bu arada Allah'a bağlanmanın gerçek mahiyeti, samimiyetle O'na sığınmak, O'na kaçmak ve O'ndan yardım dilemeyi ilke haline getirmektir. Kim, sırrının üzerinden tefrikanın örtüsünü kaldırırsa, Allah'tan başkasına ait zerre kadar bir şeyin bulunmadığı gerçeğine varır. Hz. Peygamber (s.a.v.): *"Senden sana sığınırım"* buyurmuştur.

Kim, kendi nefsine bağlanarak Allah'a bağlanması konusunda kendi güç ve kuvvetinden mahviyet içinde olmazsa şirk onun vatanı olur ve o, bunun farkında da olmaz.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ حَقَّ تُقَاتِه۪ وَلَا تَمُوتُنَّ اِلَّا وَاَنْتُمْ مُسْلِمُونَ ﴿١٠٢﴾

102- "Ey iman edenler! Allah'tan O'na yaraşır şekilde korkun. Ve ancak Müslümanlar olarak can verin!"

Allah'a yaraşır şekilde O'ndan korkmak, bu korkunun, insan tarafından eksiltilip artırılmadan, emre uygun olmasıdır.

Bu izah, konuyla ilgili görüşlerin en güvenilir olanıdır. Bu arada Allah korkusuna dönük emir, vaciplik ve mendubluk olmak üzere iki hususu ifade eder. Buna yönelik nehiy de haramlık ve tenzih olmak üzere iki hüküm içerir. O halde gerçek korku çerçevesinde önce zilletten, sonra gafletten, sonra Allah dışındaki her türlü dostluktan sakınmak, ardından da her türlü illetten arınmak gerekir. Böylece insan, sahibi olmaya başladıktan sonra korkusunu görmekten sakındığı zaman, Allah'tan gerçekten korkmuş olur.

Gerçek Allah korkusu, isyanı reddetmek, unutmayı yok etmek, ahitleri korumak, sınırları kollamak, ilahlığı görmek, beşeri hükümlerden sıyrılmak, her türlü suç ve zulümden sakındıktan sonra ilahî hükmün icrası altında sönmek, O'nun keremi olmadan hiçbir ibadetle kendisine tevessül edilemeyeceği bilincine ermek ve Allah'ın sebebe bağlı olarak hiç kimseyi ne kabul ne de reddettiğinden emin olmaktır.

(وَلَا تَمُوتُنَّ اِلَّا وَاَنْتُمْ مُسْلِمُونَ) *"Ve ancak Müslümanlar olarak can verin!"*

Vefat sizi ancak siz vefa halinde iken yakalasın!

وَاعْتَصِمُوا بِحَبْلِ اللّٰهِ جَم۪يعًا وَلَا تَفَرَّقُوا وَاذْكُرُوا نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ
اِذْ كُنْتُمْ اَعْدَٓاءً فَاَلَّفَ بَيْنَ قُلُوبِكُمْ فَاَصْبَحْتُمْ بِنِعْمَتِه۪ٓ اِخْوَانًا وَكُنْتُمْ
عَلٰى شَفَا حُفْرَةٍ مِنَ النَّارِ فَاَنْقَذَكُمْ مِنْهَا كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيَاتِه۪
لَعَلَّكُمْ تَهْتَدُونَ ﴿١٠٣﴾

103- "Hep birlikte Allah'ın ipine sımsıkı sarılın, parçalanmayın. Allah'ın, size olan nimetini hatırlayın. Hani siz birbirinize düşman kişiler idiniz de O, gönüllerinizi birleştirmişti de O'nun nimeti sayesinde kardeş kimseler olmuştunuz. Yine siz, bir ateş çukurunun tam kenarında iken oradan da sizi O kurtarmıştı. İşte Allah, ayetlerini size böyle açıklar ki doğru yolu bulasınız."

Allah'ın ipine sarılmak, Hz. Peygamber'in eserlerine sarılmak demektir. Bu da Kitap ve sünnete bağlı olmakla gerçekleşir.

Bu konuda şu yorum da yapılabilir: (وَاعْتَصِمُوا بِحَبْلِ اللّٰهِ) *"Allah'ın ipine sımsıkı sarılın"* ifadesi havas için kullanılırken, havassın havassı için: *"Allah'a sımsıkı sarılın"* denilmiştir. Bu arada arzularını yerine getirmek isterken kişisel tercih ve tedbirlerine veya kendi fikir ve delillendirmelerine veya bilgi ve ölçülerine başvuran, kendi tedbirinin gölgesine sığınan, akıl ve düşüncesinin ışığıyla aydınlanmaya çalışan kimseye gelince o, inayetin gölgesinden yoksun ve kötü haliyle baş başa bırakılmıştır.

(وَلَا تَفَرَّقُوا) *"Parçalanmayın."* Parçalanma, cezaların en şiddetlisidir ve aynı zamanda şirkin de göstergesidir.

(وَاذْكُرُوا نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ كُنْتُمْ اَعْدَٓاءً) *"Allah'ın, size olan nimetini hatırlayın. Hani siz birbirinize düşman kişiler idiniz."*

Onlar, nefsi arzularını yerine getirdiklerinde, beşer olmanın dar alanında savrulduklarında ve nefsin ihtirasına uyarak çekiştiklerinde düşman idiler.

(فَاَلَّفَ بَيْنَ قُلُوبِكُمْ) *"O, gönüllerinizi birleştirmişti."* Bu birleşme, varlığınızı oluşturan unsurların esaretinden kurtulmak ve sırlarından kaygıları atmak suretiyle gerçekleşti. Böylece hepsinin maksudu birleşmiş oldu. Nitekim Allah, bin kişiyi bir tek istek üzerinde uzlaştırsa, o kimseler hakikatte tek kişidirler.

(فَاَصْبَحْتُمْ بِنِعْمَتِه۪ٓ اِخْوَانًا) *"O'nun nimeti sayesinde kardeş kimseler olmuştunuz."* Bu nimet, Allah'ın sizi, amaçları ve gayretleri birleşmiş, nefsin arzularından, cimrilik ve ihtirasın gizli tehlikelerinden kurtulmuş kardeşler olarak korumasıdır.

(وَكُنْتُمْ عَلٰى شَفَا حُفْرَةٍ مِنَ النَّارِ) *"Yine siz, bir ateş çukurunun tam kenarında idiniz."* Arzularınızın esareti altında ve nefsi isteklerinizin kaydında olmanız sebebiyle siz bu durumda idiniz.

(فَاَنْقَذَكُمْ مِنْهَا) *"Oradan da sizi O kurtarmıştı."* Bu kurtarma, rızanın nuru ve ilahî kaza gerçekleştiğinde gösterilen teslimiyet sayesinde olmuştur. Bu ise gerçekten en büyük makam ve derecedir. Bunun kapsamına, insanın sahip olduğu meziyetler, takva, akıl, izan, kazanım ve yetenekle tatmin olmayı terk etmek ve Allah dışındaki her şeyden O'na kaçmak da girer.

وَلْتَكُنْ مِنْكُمْ اُمَّةٌ يَدْعُونَ اِلَى الْخَيْرِ وَيَاْمُرُونَ بِالْمَعْرُوفِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ﴿١٠٤﴾

104- "Sizden hayra çağıran, iyiliği emredip kötülükten alıkoyan bir topluluk bulunsun. İşte onlar kurtuluşa erenlerdir."

Bu ayet, Allah için Allah'ın emrini yerine getiren, sitem eden hiç kimsenin siteminden etkilenmeyen, hiçbir gerekçenin Allah'tan koparamadığı topluluklara işaret etmektedir. Bunlar, topluca Allah'ın emirlerinin hükümlerine vâkıf olmuş, nefeslerini ve ömürlerini O'nun rızasını kazanmaya harcamış, Allah için çalışan, Allah için dine sadık kalan, Allah'ın yaratıklarını O'na davet eden, böylece ticaretleri kârlı olan ve satışlarında zarar etmeyen kimselerdir.

وَلَا تَكُونُوا كَالَّذِينَ تَفَرَّقُوا وَاخْتَلَفُوا مِنْ بَعْدِ مَا جَاءَهُمُ الْبَيِّنَاتُ
وَأُولَٰئِكَ لَهُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ ﴿١٠٥﴾

105- "Kendilerine apaçık deliller geldikten sonra parçalanıp ayrılığa düşenler gibi olmayın. İşte bunlar için büyük bir azap vardır."

Bunlar, Allah'ın başlangıçta üzerlerinde kendisine dönük talep etiketleri ortaya koyduktan sonra ayrılık dağıyla damgaladığı kimselerdir. Böylece onlar, geceyi dostların olduğu tarafta geçirirken yabancılar zümresinde sabahlamış oldular.

يَوْمَ تَبْيَضُّ وُجُوهٌ وَتَسْوَدُّ وُجُوهٌ فَأَمَّا الَّذِينَ اسْوَدَّتْ وُجُوهُهُمْ
أَكَفَرْتُمْ بَعْدَ إِيمَانِكُمْ فَذُوقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنْتُمْ تَكْفُرُونَ ﴿١٠٦﴾ وَأَمَّا
الَّذِينَ ابْيَضَّتْ وُجُوهُهُمْ فَفِي رَحْمَةِ اللَّهِ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ﴿١٠٧﴾

106, 107- "Nice yüzlerin ağardığı, nice yüzlerin de karardığı günü düşünün. İmdi yüzleri kararanlara: 'İnanmanızdan sonra kâfir mi oldunuz? Öyle ise inkâr etmiş olmanız yüzünden tadın azabı!' denilir. Yüzleri ağaranlara gelince, onlar Allah'ın rahmeti içindedirler. Orada ebedî kalacaklardır."

İddia sahiplerinin yüzleri kararırken, mana ehlinin yüzleri ağarır. Keşif ehli olanların da yarın yüzleri parlayarak ağaracaktır. Önlerine perde çekilmiş olanların yüzleri ise bu perdelerle kararacaktır. Böylece bu yüzleri keder bürüyecek ve onlar hüzünden dolayı kapkara kesilecektir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Bugün kalbi ağarının yarın yüzü ağaracaktır. Aksi takdirde durum tersine dönecektir.

- Her kim, arzuları belirdiğinde yaratıklardan yüz çevirirse, yüzü Allah'a dayanma ruhuyla ağarır. İhtiyaçları için kalbini başkalarına bağlayan kimsenin ise yüzü, tamah toprağıyla kararır. Böylece

yüzleri ağaranlar, dostluk ve huzur içerisindedirler. Yüzleri kararanlar ise meşakkat ve feryat içerisinde olurlar.

تِلْكَ اٰيَاتُ اللّٰهِ نَتْلُوهَا عَلَيْكَ بِالْحَقِّ وَمَا اللّٰهُ يُرِيدُ ظُلْمًا لِلْعَالَمِينَ ﴿١٠٨﴾
وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَاِلَى اللّٰهِ تُرْجَعُ الْاُمُورُ ﴿١٠٩﴾

108, 109- "İşte bunlar, Allah'ın, sana hak olarak okuduğumuz ayetleridir. Allah, hiçbir kimseye haksızlık etmek istemez. Göklerde ve yerde ne varsa Allah'ındır. İşler, dönüp dolaşıp Allah'a varır."

Ey Muhammed, sevgi ve dostluk yolunu mamur kılmak için seninle olan konuşmamızı devamlı ve her konuda sürdürmekteyiz.

(وَمَا اللّٰهُ يُرِيدُ ظُلْمًا لِلْعَالَمِينَ) "*Allah, hiçbir kimseye haksızlık etmek istemez.*" Bütün yaratıklar O'nun ve onları yönetme gücü de O'na ait iken gerek farazi gerekse de fiilî olarak Allah'ı zulümle vasıflandırmak nasıl caiz olur! Göklerde ve yerdeki varlıklar mülk olarak Allah'ındır. Hüküm bakımından da işler dönüp dolaşıp Allah'a varır.

كُنْتُمْ خَيْرَ اُمَّةٍ اُخْرِجَتْ لِلنَّاسِ تَاْمُرُونَ بِالْمَعْرُوفِ وَتَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَتُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَلَوْ اٰمَنَ اَهْلُ الْكِتَابِ لَكَانَ خَيْرًا لَهُمْ مِنْهُمُ الْمُؤْمِنُونَ وَاَكْثَرُهُمُ الْفَاسِقُونَ ﴿١١٠﴾

110- "Siz, insanların iyiliği için ortaya çıkarılmış en hayırlı ümmetsiniz. İyiliği emreder, kötülükten alıkoyar ve Allah'a inanırsınız. Kitap ehli de inansaydı, elbet bu kendileri için çok iyi olurdu. İçlerinden iman edenler var; fakat çoğu yoldan çıkmışlardır."

Hz. Peygamber (s.a.v.), peygamberlerin en şereflisi olunca, ümmeti de ümmetlerin en hayırlısı olmuştur. Bu ümmetin fertleri, ümmetlerin en hayırlısı olunca ümmetlerin en şereflisi oldular. Ümmetlerin en şereflisi olunca ümmetlerin en iştiyaklısı oldular. Ümmetlerin en iştiyaklısı olunca ömrü en kısa kimseler oldular ve yer altında uzun

süre kalmamaları için Allah, onları en son yaratıklar olarak yarattı. Ancak iyi ümmet oluşları, namazlarının ve ibadetlerinin çokluğuyla değil, lakin Allah'ın lütfu ve onlara bu özelliği vermiş olmasından dolayıdır. Bu arada öncekilerin kapıdaki bekleyişleri uzun sürmüş; ancak giriş izni çıktığında sonrakiler öne geçmiş oldular.

Şiir:

*Bize ulaşmak için el uzatan niceleri vardır!*
*Alıkoyarım onları hiçbir nasibe ulaşmaksızın*

(تَأْمُرُونَ بِالْمَعْرُوفِ وَتَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ) *"İyiliği emreder, kötülükten alıkoyarsınız."*

İyilik Hakk'a hizmet, kötülük ise nefse arkadaş olmaktır.

İyilik, Allah'ın hakkını tercih etmek, kötülük ise nefsin isteğini öncelemektir.

İyilik, kişiyi Allah'a yaklaştıran, kötülük ise kişiyi O'ndan alıkoyan şeydir.

Bu arada iyiliği emredenin şartı, iyiliği yaşıyor olmasıdır. Kötülükten alıkoyanın görevi de, kötülükten vazgeçmiş olmaktır.

(وَلَوْ اٰمَنَ اَهْلُ الْكِتَابِ لَكَانَ خَيْرًا لَهُمْ مِنْهُمُ الْمُؤْمِنُونَ وَاَكْثَرُهُمُ الْفَاسِقُونَ) *"Kitap ehli de inansaydı, elbet bu kendileri için çok iyi olurdu. İçlerinden iman edenler var; fakat çoğu yoldan çıkmışlardır."*

Eğer hepsi, emrimizin altına girmiş olsalardı, hem dünyada hem de ahirette gerçek azizliğe ulaşırlardı. Lakin ezeldeki tercihte kabulden uzaklaştıkları için onların çoğu şirkle damgalanmış oldular.

لَنْ يَضُرُّوكُمْ اِلَّٓا اَذًىۜ وَاِنْ يُقَاتِلُوكُمْ يُوَلُّوكُمُ الْاَدْبَارَ ثُمَّ لَا يُنْصَرُونَ ﴿١١١﴾

111- "Onlar size, incitmekten başka bir zarar veremeyeceklerdir. Sizinle savaşa girecek olsalar, size arkalarını dönüp kaçarlar. Sonra kendilerine yardım da edilmez."

Allah, velilerine sadece Allah'a olan kaçışlarının içtenliği ölçüsünde başkalarını musallat eder. Velilerin O'na doğru kaçışları kesinleştiği zaman, onları kendi katında değer vererek kabul eder. Eğer insanlar, kendi zanlarına göre velilere dil uzatırlarsa, durumları kötüleşerek değerden düşmüş olurlar.

ضُرِبَتْ عَلَيْهِمُ الذِّلَّةُ اَيْنَ مَا ثُقِفُوٓا اِلَّا بِحَبْلٍ مِنَ اللّٰهِ وَحَبْلٍ مِنَ النَّاسِ وَبَٓاؤُ۫ بِغَضَبٍ مِنَ اللّٰهِ وَضُرِبَتْ عَلَيْهِمُ الْمَسْكَنَةُ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ كَانُوا يَكْفُرُونَ بِاٰيَاتِ اللّٰهِ وَيَقْتُلُونَ الْاَنْبِيَٓاءَ بِغَيْرِ حَقٍّ ذٰلِكَ بِمَا عَصَوْا وَكَانُوا يَعْتَدُونَ ﴿١١٢﴾

112- "Yahudiler, nerede bulunurlarsa bulunsunlar, Allah'ın ahdine ve insanların himayesine sığınmadıkça kendilerine zillet damgası vurulmuştur. Allah'ın hışmına uğramışlar ve miskinliğe mahkûm edilmişlerdir. Çünkü onlar, Allah'ın ayetlerini inkar ediyorlar ve haksız yere peygamberleri öldürüyorlardı. Bu da, onların isyan etmiş ve haddi aşmış bulunmalarındandır."

Hicran bayrağı saklı kalamaz, uzaklık damgası gizli tutulamaz ve kopuşun göstergesi gözden kaçmaz. Bu itibarla onlar, kovulmuşluğun küçüklüğü ve reddedilmişliğin zilleti içindedirler. İdrak sahipleri onlardan ibret alırlar. Benzerleri olan kâfirler ve facirler ise onlara aldanırlar.

لَيْسُوا سَوَٓاءً مِنْ اَهْلِ الْكِتَابِ اُمَّةٌ قَٓائِمَةٌ يَتْلُونَ اٰيَاتِ اللّٰهِ اٰنَٓاءَ الَّيْلِ وَهُمْ يَسْجُدُونَ ﴿١١٣﴾ يُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَيَأْمُرُونَ بِالْمَعْرُوفِ وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَيُسَارِعُونَ فِي الْخَيْرَاتِ وَاُو۬لٰٓئِكَ مِنَ الصَّالِحِينَ ﴿١١٤﴾

113, 114- "Hepsi bir değildir. Kitap ehli içinde istikamet sahibi bir topluluk vardır ki, gece saatlerinde secdeye kapanarak Allah'ın

ayetlerini okurlar. Onlar, Allah'a ve ahiret gününe inanırlar. İyiliği emreder, kötülükten alıkoyarlar, hayırlı işlere koşuşurlar. İşte bunlar iyi insanlardandır."

Allah, nasıl ki aydınlık ile karanlığı birbiriyle çelişecek şekilde farklı kılmışsa, aynı şekilde dostlar ile düşmanların halleri arasında da zıtlık meydana getirmiştir. O halde aydınlık ile karanlık, iman ile itham, vuslat ile ayrılık, uzaklaşma ile ülfet, dergâhta itikafa kapanan ile kapıdan dönen, dostluk vasfına sahip olan ile vefadan sapan ne zaman bir olur? Karşılaşmaları dahi çok uzak iken nasıl birleşir veya eşitlenirler?

وَمَا يَفْعَلُوا مِنْ خَيْرٍ فَلَنْ يُكْفَرُوهُ وَاللّٰهُ عَلِيمٌ بِالْمُتَّقِينَ ﴿١١٥﴾

115- "Onların yaptıkları hiçbir hayır, karşılıksız bırakılmayacaktır. Allah, takva sahiplerini çok iyi bilir."

Allah'a yönelen hiç kimse, kapısından eli boş dönmeyecektir. O'nunla ticaret yapan zarar etmemiş, O'na arkadaş olan yabancılık çekmemiş ve O'nu arayan zelil olmamıştır.

اِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا لَنْ تُغْنِيَ عَنْهُمْ اَمْوَالُهُمْ وَلَٓا اَوْلَادُهُمْ مِنَ اللّٰهِ
شَيْـٔاً وَاُو۬لٰٓئِكَ اَصْحَابُ النَّارِ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ﴿١١٦﴾

116- "İnkâr edenler var ya, onların malları da evlatları da Allah'a karşı kendilerine hiçbir fayda sağlamayacaktır. İşte onlar cehennemlikledir. Onlar, orada ebedî kalacaklardır."

Onlara ne hemen bir bedel ödenir ne de gelecekte kayıpları telafi edilir. Onlar, dünyalarında zarar ettiler, ahiretlerinde de kopuş, hicran, bela, zarar, azap ve reddedilmişlik içindedirler.

Şiir:

*Değişti sevgili, değiştik biz de, yazıklar olsun!*
*Selma'ya alternatif arayıp bulamayana*

مَثَلُ مَا يُنْفِقُونَ فِي هٰذِهِ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا كَمَثَلِ رِيحٍ فِيهَا صِرٌّ اَصَابَتْ حَرْثَ قَوْمٍ ظَلَمُوٓا اَنْفُسَهُمْ فَاَهْلَكَتْهُ وَمَا ظَلَمَهُمُ اللّٰهُ وَلٰكِنْ اَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ﴿١١٧﴾

117- "Onların bu dünya hayatında yapmakta oldukları harcamaların durumu, kendilerine zulmetmiş olan bir kavmin ekinlerini vurup ta mahveden kavurucu bir rüzgârın durumu gibidir. Onlara Allah zulmetmedi. Fakat onlar, kendilerine zulmediyorlar."

Allah'tan başkası için yaptıkları harcamaların karşılığı olarak, peş peşe gelen hasretlerden başka bir şey bulamadılar. Beklentilerinden de arka arkaya gelen meşakkatlerden başka bir şey elde edemediler. Bu ise yüz çevirip arkasını dönen kimsenin bulacağı karşılıktır.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا لَا تَتَّخِذُوا بِطَانَةً مِنْ دُونِكُمْ لَا يَأْلُونَكُمْ خَبَالًا وَدُّوا مَا عَنِتُّمْ قَدْ بَدَتِ الْبَغْضَٓاءُ مِنْ اَفْوَاهِهِمْ وَمَا تُخْفِي صُدُورُهُمْ اَكْبَرُ قَدْ بَيَّنَّا لَكُمُ الْاٰيَاتِ اِنْ كُنْتُمْ تَعْقِلُونَ ﴿١١٨﴾

118- "Ey iman edenler! Kendi dışınızdakileri sırdaş edinmeyin. Çünkü onlar, size fenalık etmekten asla geri durmazlar, hep sıkıntıya düşmenizi isterler. Gerçekten kin ve düşmanlıkları ağızlarından belli olmaktadır. Kalplerinde sakladıkları ise daha büyüktür. Eğer düşünüp anlıyorsanız, ayetlerimizi size açıklamış bulunuyoruz."

Meşakkatler belirdikten sonra zıdda meyletmek, düşman tuzağının bile erişemeyeceği ölçüde aleyhte bir yardım biçimidir. Bu nedenle Allah Müslümanlara, itirazda bulunmaktan sakınmayı, yabancı olan herkesle açıkça ilişkilerini kesmeyi ve hem kalp hem de sır ile Hakk'a daima içtenlikle bağlılığı emretmiştir. Bir de Allah, o kimselerin Hz. Peygamber'e olan karşıtlıklarının sonradan meydana gelen bir durum olmayıp temelde var olduğunu bildirmiştir. Nasıl olmasın

ki! Hz. Peygamber'e Allah teveccüh buyururken onlardan yüz çevirmiştir. O halde gece ile gündüz ne zaman bir araya gelirler!

هَٓا اَنْتُمْ اُو۬لَٓاءِ تُحِبُّونَهُمْ وَلَا يُحِبُّونَكُمْ وَتُؤْمِنُونَ بِالْكِتَابِ كُلِّه۪ وَاِذَا لَقُوكُمْ قَالُوٓا اٰمَنَّا وَاِذَا خَلَوْا عَضُّوا عَلَيْكُمُ الْاَنَامِلَ مِنَ الْغَيْظِ قُلْ مُوتُوا بِغَيْظِكُمْ اِنَّ اللّٰهَ عَل۪يمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ ﴿١١٩﴾

119- "İşte siz öyle kimselersiniz ki, onlar sizi sevmedikleri halde siz onları seversiniz. Siz bütün kitaplara inanırsınız. Onlar ise sizinle karşılaştıklarında: 'İnandık' derler. Kendi başlarına kaldıklarında da size olan kinlerinden dolayı parmaklarının uçlarını ısırırlar. De ki: 'Kininizden ölün! Şüphesiz Allah, kalplerin içindekini hakkıyla bilmektedir.'"

Sizler, iyiliğinizin bir gereği olarak kalpleri art niyetlerden temiz kimselersiniz. Bu nedenle onlara şefkat etme duygusu size galip gelir. Oysa onlar, katı yürekli ve vefasız olduklarından, güçlerinin yettiği ölçüde size tuzak kurarlar. Aşırı acımasızlıklarından dolayı da onlardan dışarıya sadece öfkelerinin damlaları yansır. İşte bu nedenle ya Muhammed, kalbini onlardan boşalt!

(قُلْ مُوتُوا بِغَيْظِكُمْ اِنَّ اللّٰهَ عَل۪يمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ) *"De ki: 'Kininizden ölün! Şüphesiz Allah, kalplerin içindekini hakkıyla bilmektedir.'"*

Bırak onları! İçlerine soktuğumuz öfkeyle baş başa kalsınlar. Başlarına gelenlerden da kalplerinizi rahatlatın. Çünkü Allah, kullarına daha uygun muamele eder. Dilediğine dilediğini ulaştırır.

اِنْ تَمْسَسْكُمْ حَسَنَةٌ تَسُؤْهُمْ وَاِنْ تُصِبْكُمْ سَيِّئَةٌ يَفْرَحُوا بِهَا وَاِنْ تَصْبِرُوا وَتَتَّقُوا لَا يَضُرُّكُمْ كَيْدُهُمْ شَيْـًٔا اِنَّ اللّٰهَ بِمَا يَعْمَلُونَ مُح۪يطٌ ﴿١٢٠﴾

120- "Size bir iyilik dokunsa, bu onları tasalandırır. Başınıza bir musibet gelse buna da sevinirler. Eğer sabreder ve korunursanız, onların hilesi size hiçbir zarar vermez. Şüphesiz Allah, onların yaptıklarını çepeçevre kuşatmıştır."

Bu ayet, müridlik yolundan ayrılarak âdet ehlinin hallerine dönenlere işaret etmektedir. Müridin bir etkinliği olduğunu benimsemezler. Bir müridin, müridliğe ara verdiğini gördüklerinde bundan huzur duyarlar. Oysa Allah, lütfu ve minnetiyle nurunu, inayetinin ehli üzerine tamamlar. Yolundan sapan zalimleri ise kendilerini neyin beklediğine bakmaksızın, uzaklıklarının azabı içerisinde bırakır.

وَاِذْ غَدَوْتَ مِنْ اَهْلِكَ تُبَوِّئُ الْمُؤْمِن۪ينَ مَقَاعِدَ لِلْقِتَالِ وَاللّٰهُ سَم۪يعٌ عَل۪يمٌ ﴿١٢١﴾

121- "Hani sen, sabah erkenden müminleri savaş mevzilerine yerleştirmek için ailenden ayrılmıştın. Allah, hakkıyla bilen ve işitendir."

Allah, Hz. Peygamber'i savaş için yer hazırlamakla görevlendirdi. Böylece Hz. Peygamber, Allah'ın emriyle bu iş için seçilmiş oldu. Sonra Allah, bu konuda sırrının gizliliklerini ortaya çıkardı. O halde dayanak O'nun kaza ve kaderidir. Hesaba katılması gereken de O'nun uygulaması ve tercihidir.

اِذْ هَمَّتْ طَٓائِفَتَانِ مِنْكُمْ اَنْ تَفْشَلَا وَاللّٰهُ وَلِيُّهُمَا وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُونَ ﴿١٢٢﴾

122- "O zaman içinizdeki iki bölük bozulmaya yüz tutmuştu. Halbuki Allah, onların yardımcısı idi. Müminler, yalnız Allah'a dayanıp güvensinler."

Allah, olumlu veya olumsuz tavır takınmada ve bir şeyi yapıp yapmamada iş kendilerine bırakılmış gibi, herkesi tercih alanına çıkarır. Oysa gerçekte insanlar, sadece ilahî kudretin evirip çevirmesiyle dönüp dolaşırlar.

وَلَقَدْ نَصَرَكُمُ اللّٰهُ بِبَدْرٍ وَاَنْتُمْ اَذِلَّةٌ فَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿١٢٣﴾

123- "Andolsun sizler güçsüz olduğunuz halde Allah, Bedir'de de size yardım etmişti. Öyleyse Allah'tan sakının ki, O'na şükretmiş olasınız."

Geçmişteki inamı yani inanılmış şeyleri hatırlatmak, gelecekte de benzerlerini talep etmeye kapı aralamaktır.

اِذْ تَقُولُ لِلْمُؤْمِنِينَ اَلَنْ يَكْفِيَكُمْ اَنْ يُمِدَّكُمْ رَبُّكُمْ بِثَلٰثَةِ اٰلَافٍ مِنَ الْمَلٰٓئِكَةِ مُنْزَلِينَ ﴿١٢٤﴾ بَلٰىۙ اِنْ تَصْبِرُوا وَتَتَّقُوا وَيَأْتُوكُمْ مِنْ فَوْرِهِمْ هٰذَا يُمْدِدْكُمْ رَبُّكُمْ بِخَمْسَةِ اٰلَافٍ مِنَ الْمَلٰٓئِكَةِ مُسَوِّمِينَ ﴿١٢٥﴾

124, 125- "O zaman sen müminlere şöyle diyordun: 'İndirilen üç bin melekle Rabbinizin sizi takviye etmesi, sizin için yeterli değil midir?' Evet, siz sabır gösterir ve Allah'tan sakınırsanız, onlar, hemen şu anda üzerinize gelseler, Rabbinizi nişanlı beş bin melekle sizi takviye eder."

Allah'ın, Hz. Peygamber'in kalbini teskin etmesi vasıtasız olmuştur. Müminlerin kalplerini güçlü tutmak ise, Hz. Peygamber vasıtasıyla olmuştur. Eğer kalplerinde bir miktar zafiyet kalmamış olsaydı, zafer konusunda onları meleklere muhtaç kılmazdı. Zira bütün hüküm Allah'a ait iken meleklerin sözü mü olur!

وَمَا جَعَلَهُ اللّٰهُ اِلَّا بُشْرٰى لَكُمْ وَلِتَطْمَئِنَّ قُلُوبُكُمْ بِهٖ وَمَا النَّصْرُ اِلَّا مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ الْعَزِيزِ الْحَكِيمِ ﴿١٢٦﴾

126- "Allah, bunu size sırf bir müjde olsun ve kalpleriniz bu sayede rahatlasın diye yaptı. Zafer, yalnızca mutlak güç ve hikmet sahibi Allah katındandır."

Allah'ın dostlarıyla olan prensibi şudur: Niyetleri zayıfladığı veya iradelerinde noksanlık meydana geldiği veya bir miktar tembelliğe meylettiği zaman Allah, onlara irfanlarının sebeplerini güçlendirecek ve imanlarının hakikatlerini pekiştirecek lütuflar ve çeşitli kerametler gösterir.

İşte bu hitap, bu prensip çerçevesinde inmiştir. Sonra Allah, kalplerini ve sırlarını başkalarından bütünüyle kopararak: (وَمَا النَّصْرُ اِلَّا مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ) *"Zafer, yalnızca Allah katındandır"* buyurmuştur.

لِيَقْطَعَ طَرَفًا مِنَ الَّذِينَ كَفَرُوٓا اَوْ يَكْبِتَهُمْ فَيَنْقَلِبُوا خَآئِبِينَ ﴿١٢٧﴾

127- "Allah, kâfirlerden bir kısmının kökünü kessin veya onları perişan etsin. Böylece bozulmuş bir halde dönüp gitsinler."

Allah, dostlarını bir düşmanın diline düşürmez. Bu nedenle eğer müminin başına bir musibet gelirse, bu takdirde Allah onun düşmanını fitne ve cezanın içine atar.

لَيْسَ لَكَ مِنَ الْاَمْرِ شَيْءٌ اَوْ يَتُوبَ عَلَيْهِمْ اَوْ يُعَذِّبَهُمْ فَاِنَّهُمْ ظَالِمُونَ ﴿١٢٨﴾ وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ يَغْفِرُ لِمَنْ يَشَآءُ وَيُعَذِّبُ مَنْ يَشَآءُ وَاللّٰهُ غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿١٢٩﴾

128, 129- "Bu işte senin yapacağın bir şey yoktur. Yahut tevbelerini kabul etsin ya da onlara azap etsin diye. Çünkü onlar zalimdirler. Göklerde ve yerde ne varsa Allah'ındır. Dilediğini bağışlar, dilediğine azap eder. Allah, çok bağışlayıcı ve çok merhametlidir."

İlah, emir ve alıkoyma yetkisine sahip olandır. Bu nedenle Allah'ın ilahlıkta bir benzeri olmadığı için Hz. Peygamber'in de emir ve alıkoyma yetkisi olmamıştır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, kendisine olan hitabı ve öğretimiyle Hz. Peygamber'i başka olan her varlıktan, nasipten ve iddiadan soyutlamıştır. Çünkü yapacağı bir şey bulunmadığını kendisine bildirmiştir. Şimdi evvelkilerin de sonrakilerin de efendisi olan Hz. Peygamber'in yapacağı bir şey bulunmadığına göre, mertebesi onun mertebesinin altında olan kimsenin nasıl yapacağı bir şey olabilir?

- Allah, hükmünü koyarken kulları ile ilgili sırrı kendine ayırarak: Ben, kullarımdan dilediğimin tevbesini kabul eder, dilediğimi cezalandırırım. Akıbetler ise senden gizlidir. Ve sen ey Muhammed, onlar hakkındaki sırrımı bilmezsin, buyurmuştur.

- Allah, bir vakit Hz. Peygamber'i öyle bir makamda tutmuştur ki, kendisine şöyle buyurmuştur:

(وَمَا رَمَيْتَ اِذْ رَمَيْتَ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ رَمٰى)

*"Attığın zaman da sen atmadın, fakat Allah attı."* (Enfâl, 8/17)

Bu olayda Hz. Peygamber, bir avuç toprak attı ve bu toprak bütün yüzlere isabet etti. Bir diğer zamanda ise, Allah kendisine: "*Senin yapacağın bir şey yoktur*" buyurmuştur. Sonra: "*Göklerde ve yerde ne varsa Allah'ındır*" ifadesiyle ilave izahta bulunmuştur. Şimdi mülk, emir ve hüküm O'nun olunca dilediğini cezalandırır, dilediğini yakınlaştırır, dilediğini hidayete erdirir ve dilediğini de saptırır.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا لَا تَأْكُلُوا الرِّبٰٓوا اَضْعَافًا مُضَاعَفَةً وَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿١٣٠﴾ وَاتَّقُوا النَّارَ الَّت۪ٓي اُعِدَّتْ لِلْكَافِر۪ينَ ﴿١٣١﴾

130, 131- "Ey iman edenler! Kat kat artırılmış olarak faiz yemeyin! Allah'tan sakının ki, kurtuluşa eresiniz. Kâfirler için hazırlanmış bulunan ateşten de sakının."

Allah, faizi kullara haram kılmıştır. Bu arada bire karşılık iki almak üzere borçlandırmak da faizdendir. Oysa Allah, kulundan karşılığı yedi yüzden başlayıp sonsuza kadar artan mükâfat olmak üzere, bir tek borç istemektedir. Ayet, iyiliğin halka yakışmadığına, onun gerçek anlamda Allah'a özgü olduğuna işaret etmektedir.

(وَاتَّقُوا النَّارَ الَّت۪ٓي اُعِدَّتْ لِلْكَافِر۪ينَ) "*Kâfirler için hazırlanmış bulunan ateşten de sakının.*" Ayet, müminin cehennemle cezalandırılmayacağına delildir. Şayet onunla bir süre cezalandırılsa da onda ebedi olarak bırakılmaz.

وَاَط۪يعُوا اللّٰهَ وَالرَّسُولَ لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُونَ ﴿١٣٢﴾

132- "Allah' ve Resûl'üne itaat edin ki, rahmete kavuşturulasınız."

Allah, Peygamber'ine itaati kendi zatına itaat ile yan yana zikretmiş olup bu yolla Hz. Peygamber'in kadrini yüceltmek ve ümmetin

yükünü hafifletmek istemiştir. Zira Allah, onlara kendilerinden biri olan peygambere arkadaş olma imkânı vermiştir ki, her cins kendi hemcinsinde huzur bulur.

وَسَارِعُوٓا اِلٰى مَغْفِرَةٍ مِنْ رَبِّكُمْ وَجَنَّةٍ عَرْضُهَا السَّمٰوَاتُ وَالْاَرْضُ اُعِدَّتْ لِلْمُتَّقِينَ ﴿١٣٣﴾ اَلَّذِينَ يُنْفِقُونَ فِي السَّرَّٓاءِ وَالضَّرَّٓاءِ وَالْكَاظِمِينَ الْغَيْظَ وَالْعَافِينَ عَنِ النَّاسِ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِينَ ﴿١٣٤﴾

133, 134- "Rabbinizin bağışına ve takva sahipleri için hazırlanmış olup genişliği gökler ve yer kadar olan cennete koşun. O takva sahipleri ki, bollukta da darlıkta da Allah için harcarlar. Öfkelerini yutarlar ve insanları affederler. Allah da güzel davranışta bulunanları sever."

Yani, sizin için Rabbinizin mağfiretini sağlayacak olan amele koşun. Bu emir üzerine kalpler kısımlara ayrılarak bunun şiddetli bir emir olduğunu vehmettiler. Bunun üzerine Hz. Peygamber (s.a.v.): *"Pişmanlık tevbedir"* buyurdu. Nitekim mağfireti sağlayan da tevbedir. Çünkü mağfirete muhtaç olan da günahkâr kişidir.

Bu arada insanlar koşmada kısımlara ayrılırlar:

Abidler, ayaklarıyla ibadetlere koşarlar. Arifler gayretleriyle yakınlıklara doğru koşarlar. Günahkârlar da hasret çekmek ve pişmanlık duymak suretiyle koşarlar. Böylece ayaklarıyla koşan sevabını, gayretleriyle koşan yakınlığını, pişmanlığıyla koşan ise rahmetini bulur.

Allah, cenneti zikrederken onu genişliğiyle nitelemiştir. Ancak bu ifade, cennetin aynı zamanda uzun olduğuna da dikkat çekmektedir. Mağfireti zikrederken ise uzunluk ve genişlikten söz etmemiştir. Bu nedenle kimileri şöyle demiştir: Mağfiret zâtın sıfatlarından olup rahmet anlamındadır. Buna göre; Allah'ın mağfireti kulunun günahından vazgeçmeye hükmetmesidir ki, bu da O'nun kelamından ibarettir. Zatın sıfatı ise uzunluk ve genişlikten münezzehtir. Allah'ın

mağfiretini fiilinin sıfatı kabul edenlere göre ise günahların çokluğundan dolayı, Allah bütün günahları kapsadığına işarette bulunmak üzere, mağfireti sonlu olmakla nitelememiştir.

(اَلَّذِينَ يُنْفِقُونَ فِي السَّرَّآءِ وَالضَّرَّآءِ) *"O takva sahipleri ki, bollukta da darlıkta da Allah için harcarlar."*

Onlar, Allah'tan hiçbir şey esirgemezler ve O'nu her şeye tercih ederler. Bedenlerini ibadetlerde, çeşit çeşit virdlerde ve çabalarda, mallarını türlü türlü sadakalar vermek suretiyle iyilikleri yayma ve Allah'a yakınlığı aramada, kalplerini önce arayışta, sonra da kesintisiz riayette, ruhlarını katıksız muhabbetlere ve bütün hallerde vefada, sırlarını da bütün zamanlarda müşahedelerde harcarlar. Aynı zamanda onlar, aceleyle ince keşiflere hazırlanmak üzere, mükellefiyetlerin işaretlerini beklerler.

(وَالْكَاظِمِينَ الْغَيْظَ) *"Öfkelerini yutarlar."* Bunlar, insanları nisbet gözüyle gördükleri için hatalarından vazgeçerler. Bazı kimseler, insanlara karşı halim davranırlar. Çünkü onlar, başlarına gelenlerin kendi suçlarından dolayı olduğunu bilerek kendilerini tasallut gözüyle görürler. Diğer bazıları, Allah'ın onların neler çektiğini bildiğinden emin oldukları için öfkelerini yutar ve böylece tahammül göstermeleri kolaylaşmış olur. Diğer bazıları da beşerî hükümlerden arınarak tevazudaki katıksız dereceleri bulurlar. Çünkü nefisleri devreden çıkarak yok olmuştur. Diğer bazıları, Allah dışındaki varlıklardan zerre kadar bir inşa ve icraatı kabul etmediklerinden gerçek failin Allah olduğunu bilir ve bu nedenle diğer varlıklarla olan düşmanlık ve anlaşmazlıkları yok olur. Çünkü onlar, yaratıcı olarak sadece Allah'a inanınca O'nun hükmüne boyun eğmiş oldular ve hükmüne teslim olmaktan başka bir yol bulamadılar. Böylece Allah, onlara hoşnutluğun serinliğini lütfetti. Onlar da Allah'a karşı kulluğun gereğini yerine getirmiş oldular.

(وَالْعَافِينَ عَنِ النَّاسِ) *"Ve insanları affederler."* Onlar, bunu insanlara karşı bir lütuf olarak değil, üzerlerine farz kılınmış bir görev olarak yaparlar.

Şiir:

*Beni incitici taşlarla taşlayan nicesi vardır ki,*
*Bulamadım ona acımaktan başka bir çare*

(وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِينَ) *"Allah da güzel davranışta bulunanları sever."* İhsan, Allah'a, O'nu görüyormuş gibi kulluk etmendir. Bu, ihsanın, Hakk'a yönelik muamele ile ilgili anlamıdır. Halka yönelik muamele ile ilgili manası ise ne kadar ve kimin üzerinde olursa olsun, sana ait olan hakkı büsbütün terk etmen ve alacaklı olduğun kişinin başına bunu kakmamandır.

وَالَّذِينَ اِذَا فَعَلُوا فَاحِشَةً اَوْ ظَلَمُوٓا اَنْفُسَهُمْ ذَكَرُوا اللّٰهَ فَاسْتَغْفَرُوا
لِذُنُوبِهِمْ وَمَنْ يَغْفِرُ الذُّنُوبَ اِلَّا اللّٰهُ وَلَمْ يُصِرُّوا عَلٰى مَا فَعَلُوا
وَهُمْ يَعْلَمُونَ ﴿١٣٥﴾ اُولٰٓئِكَ جَزَآؤُهُمْ مَغْفِرَةٌ مِنْ رَبِّهِمْ وَجَنَّاتٌ
تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا وَنِعْمَ اَجْرُ الْعَامِلِينَ ﴿١٣٦﴾

135, 136- "Yine onlar ki, bir kötülük yaptıklarında ya da kendilerine zulmettiklerinde Allah'ı hatırlayıp günahlarından dolayı hemen tevbe istiğfar ederler. Zaten günahları Allah'tan başka kim bağışlayabilir ki! Bir de onlar, işledikleri kötülüklerde bile bile ısrar etmezler. İşte onların mükâfatı, Rableri tarafından bağışlanma ve altlarından ırmaklar akan, içinde ebedî kalacakları cennetledir. Böyle amel edenlerin mükâfatı ne güzeldir!"

Allah, Hz. Musa'ya şunu vahyetti: *Zalimlere söyle! Beni anmasınlar! Çünkü ben, beni ananı anmayı üzerime vacip kıldım. Zalimleri anmam ise onları lanetlemek şeklinde olur.* Oysa bu ümmetin zalimleri iç Allah: (اَوْ ظَلَمُوٓا اَنْفُسَهُمْ ذَكَرُوا اللّٰهَ) *"Ya da kendilerine zulmettiklerinde Allah'ı hatırlarlar"* buyurmuştur. Ayetin sonunda da: (وَمَنْ يَغْفِرُ الذُّنُوبَ اِلَّا اللّٰهُ) *"Zaten günahları Allah'tan başka kim bağışlayabilir ki!"* buyurmaktadır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Herkesin kötülüğü, hali ve makamına göredir. Aynı zamanda zulümleri de böyledir. Bu çerçevede büyük insanların kalbine muhalefetlerin gelmesi, başkalarının bunları yapması gibidir.

Şiir:

*Benim gözümsün sen ve gözümün hakkı değildir*
*Çirkinliklere karşı kapaklarını yummak*

Bu itibarla huzurdaki suç, kapıdaki günah gibi değildir.

- Onlar, kendi fiillerine meyletmek suretiyle kötülük yaptılar veya hallerini görerek nefislerine zulmettiler. Bunun üzerine, Allah nezdinde yine O'ndan başka vesile bulunmadığını bildiklerinden dolayı hareket ve duruşlarından kopmak suretiyle günahları için mağfiret dilediler. Allah da onları nefislerinin karanlıklarından kurtardı. Bu arada gerçeklerin ortaya çıkması esnasında halleri ve fiilleri görmek karanlıklardır. Allah, kimi inayetin nuruyla tertemiz kılarsa, onu beşeri hatalara bulaşmaktan korumuş olur.

( أُولٰٓئِكَ جَزَآؤُهُمْ مَغْفِرَةٌ مِنْ رَبِّهِمْ ) *"İşte onların mükâfatı, Rableri tarafından bağışlanmaktır."* Bu, o kimselere, Allah'ın büyüklüğünü ve ezelde kendileri için takdir edilmiş olan güzellikleri göstermek şeklinde olur.

( وَجَنَّاتٌ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا ) *"Ve altlarından ırmaklar akan, içinde ebedî kalacakları cennetledir."* Bunlar, ahirette cennetler, dünyada ise mubah nimetler ve noksansız ünsiyetin vereceği huzurdur.

قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِكُمْ سُنَنٌ فَسِيرُوا فِي الْاَرْضِ فَانْظُرُوا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُكَذِّبِينَ ﴿١٣٧﴾ هٰذَا بَيَانٌ لِلنَّاسِ وَهُدًى وَمَوْعِظَةٌ لِلْمُتَّقِينَ ﴿١٣٨﴾

137, 138- "Sizden önce nice ilahî kanunlar gelip geçmiştir. Onun için yeryüzünde gezin dolaşın da Allah ayetlerini yalan sayanların akıbeti ne olmuş, görün! Bu, bütün insanlara bir açıklamadır. Takva sahipleri için de bir hidayet ve bir öğüttür."

Yani onlar, geçmişlerden ibret almışlardır. Bakın, biz uyanlara nasıl davrandık ve düşmanlık yapanlardan nasıl intikam aldık. Ayetteki: (هٰذَا بَيَانٌ لِلنَّاسِ ) *"Bu, bütün insanlara bir açıklamadır"* sözü, kimileri için aklın delilleri bakımından, kimilerine kalplerin keşifleri bakımından, kimileri için de hakkın sırlarda tecelli etmesi bakımından açıklamayı ifade etmektedir.

وَلَا تَهِنُوا وَلَا تَحْزَنُوا وَاَنْتُمُ الْاَعْلَوْنَ اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ﴿١٣٩﴾

139- "Gevşeklik göstermeyin, üzüntüye kapılmayın. Eğer inanmışsanız üstün gelecek olan sizsiniz."

Yani siz, Allah ile söylediğiniz ve Allah ile hareket ettiğiniz zaman, Allah'tan başkasından korkmanız uygun olmaz. Bir de gevşemeyin ve zafiyet göstermeyin! Zira zafer Allah katındandır ve galip olan da Allah'tır. O'nun dışındakilerin ise zerre kadar gücü ve kuvveti yoktur.

(اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ) *"Eğer inanmışsanız."* Yani mümine yakışan, Allah'tan başkasından korkmanın, kendisini gölgelememesidir.

اِنْ يَمْسَسْكُمْ قَرْحٌ فَقَدْ مَسَّ الْقَوْمَ قَرْحٌ مِثْلُهُ وَتِلْكَ الْاَيَّامُ نُدَاوِلُهَا بَيْنَ النَّاسِ وَلِيَعْلَمَ اللّٰهُ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَيَتَّخِذَ مِنْكُمْ شُهَدَٓاءَ وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الظَّالِمِينَ ﴿١٤٠﴾

140- "Eğer siz, bir acıya uğradınız ise o kavim de benzer bir acıya uğramıştır. O günleri biz, insanlar arasında döndürür dururuz. Ta ki, Allah iman edenleri ortaya çıkarsın ve aranızdan şahitler edinsin. Allah, zalimleri sevmez."

Eğer bizim yolumuzda başınıza bir sıkıntı geldiyse, sizden öncekiler de sizin karşılaştığınızın bir benzeriyle karşılaştılar ve uğradığınız musibete uğradılar. Bu nedenle onlardan sabreden kazandı. Karşılaştığı duruma katlanmakta yılgınlık gösteren ise kaybetti. Ni-

tekim günler sırayladır ve haller değişkendir. Hak'tan ise hiçbir şey gizli kalmaz.

وَلِيُمَحِّصَ اللّٰهُ الَّذٖينَ اٰمَنُوا وَيَمْحَقَ الْكَافِرٖينَ ﴿١٤١﴾

141- "Bir de böylece Allah, iman edenleri günahlardan temize çıkarmak, kâfirleri de helak etmek ister."

Gaybın sınavları, kulu arındırır; hallerin değişmesi, onu şaibelerden temizler. Böylece o, hiçbir artık maddenin olmadığı saf altın gibi olur. Aynı şekilde manevî hastalıklardan da arınarak sadece Allah için olmuş olur.

(وَيَمْحَقَ الْكَافِرٖينَ) "*Kâfirleri de helak etmek ister.*" Onları, ayrılık vadilerinde helak eder.

اَمْ حَسِبْتُمْ اَنْ تَدْخُلُوا الْجَنَّةَ وَلَمَّا يَعْلَمِ اللّٰهُ الَّذٖينَ جَاهَدُوا مِنْكُمْ وَيَعْلَمَ الصَّابِرٖينَ ﴿١٤٢﴾

142- "Yoksa Allah, içinizde cihad edenleri, belli etmeden, sabredenleri ortaya çıkarmadan cennete gireceğinizi mi sandınız?"

Her kim, büyük zorluklar çekmeden büyük bir yere ulaşacağını zannederse, kuruntuları onu helak uçurumlarının içine atmış olur. Kim de matlubunun kadrini bilirse, çabasını harcamak ona kolay gelir. (...)

Şiir:

*Manaların parıltısını beklediği zaman genç*
*Uykunun tadıdır kaçırdığı en hafif şey*

وَلَقَدْ كُنْتُمْ تَمَنَّوْنَ الْمَوْتَ مِنْ قَبْلِ اَنْ تَلْقَوْهُ فَقَدْ رَاَيْتُمُوهُ وَاَنْتُمْ تَنْظُرُونَ ﴿١٤٣﴾

143- "Andolsun ki, siz ölümle yüz yüze gelmeden önce onu temenni ederdiniz. İşte şimdi onu karşınızda gördünüz."

Temenniler, zorluklara katlanma sabrını gösterdikten sonra gerçekleşir. Lakin şu şiirde söylendiği gibi:

*Süzüldüğü zaman yanakların üzerinden gözyaşları*
*Ayırt edilir ağlayan ile ağlama numarası yapan*

وَمَا مُحَمَّدٌ اِلَّا رَسُولٌ قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِ الرُّسُلُ اَفَائِنْ مَاتَ اَوْ قُتِلَ انْقَلَبْتُمْ عَلٰٓى اَعْقَابِكُمْ وَمَنْ يَنْقَلِبْ عَلٰى عَقِبَيْهِ فَلَنْ يَضُرَّ اللّٰهَ شَيْـًٔا وَسَيَجْزِي اللّٰهُ الشَّاكِر۪ينَ ﴿١٤٤﴾

144- "Muhammed, ancak bir peygamberdir. Ondan önce de peygamberler gelip geçmiştir. Şimdi ölür ya da öldürülürse, gerisin geriye mi döneceksiniz? Kim geri dönerse, Allah'a hiçbir şekilde zarar vermiş olmayacaktır. Allah, şükredenleri mükâfatlandıracaktır."

Peygamberler durduruldukları yerde durur ve kendilerine öğretilenleri öğrendikleri kadarıyla bildirirler. Bu nedenle basiretlerin nurlarıyla desteklendikleri zaman, işaretin incelikleriyle sırların derinliklerine vâkıf olurlar. Bunu da kendilerine verilen tebliğ vazifeleriyle yapacakları aydınlatma miktarınca yaparlar.

(اَفَائِنْ مَاتَ اَوْ قُتِلَ انْقَلَبْتُمْ عَلٰٓى اَعْقَابِكُمْ) *"Şimdi ölür ya da öldürülürse, gerisin geriye mi döneceksiniz?"* Hz. Peygamber (s.a.v.) vefat edince, Allah'ın temkin gücüyle desteklediği ve sorumluluk üstlenme gücünü verdiği Hz. Ebubekir'in basireti hariç, diğer basiretler arızalandı. O: *"Her kim, Muhammed'e kulluk ediyor idiyse, kuşkusuz Muhammed ölmüştür"* dedi. Bunun üzerine herkes, sözünün ağırlığı altında ezilmiş oldu. Çünkü onun duruşunun nuru, tıpkı doğunca ışığının içinde yıldızların kaybolduğu ve her bir yıldızın ışığının birkaç mislini örten güneş gibi onları kaplamıştı. Bu arada ölüm ihtimalinin öldürülme ihtimalinden önce zikredilmesi, kendisinin öldürülmeden ölmesi sebebiyledir. Bir görüşe göre ise öldürülme ihtimalinden söz edilmiş olması, Hz. Peygamber'in şu hadisinden dolayıdır: *"Hayber'deki*

*zehirli yemek, hâlâ beni etkilemeye devam ediyor. Bu, kalp damarımın (aortumun) kesildiği andır."*

وَمَا كَانَ لِنَفْسٍ اَنْ تَمُوتَ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ كِتَابًا مُؤَجَّلًا وَمَنْ يُرِدْ ثَوَابَ الدُّنْيَا نُؤْتِه۪ مِنْهَا وَمَنْ يُرِدْ ثَوَابَ الْاٰخِرَةِ نُؤْتِه۪ مِنْهَا وَسَنَجْز۪ي الشَّاكِر۪ينَ ﴿١٤٥﴾

145- "Hiçbir kimse yok ki, ölümü Allah'ın iznine bağlı olmasın. Ölüm, belli bir süreye göre yazılmıştır. Her kim, dünya nimetini isterse, kendisine ondan veririz. Kim de ahiret sevabını isterse, ona da bundan veririz. Biz, şükredenleri mükâfatlandıracağız."

Nefesler sayılı olup ne artarlar ne de eksilirler.

(وَمَنْ يُرِدْ ثَوَابَ الدُّنْيَا نُؤْتِه۪ مِنْهَا) *"Her kim, dünya nimetini isterse, kendisine ondan veririz."* Salihler için güzel akıbet, diğerleri içinse gaflet vardır.

(وَمَنْ يُرِدْ ثَوَابَ الْاٰخِرَةِ نُؤْتِه۪ مِنْهَا) *"Kim de ahiret sevabını isterse, ona da bundan veririz."* Ahiret sevabının başlangıcı gufran, sonra cennetler, sonra da Allah'ın rızasıdır.

(وَسَنَجْز۪ي الشَّاكِر۪ينَ) *"Biz, şükredenleri mükâfatlandıracağız."* Şükrün karşılığı şükürdür.

وَكَاَيِّنْ مِنْ نَبِيٍّ قَاتَلَ مَعَهُ رِبِّيُّونَ كَث۪يرٌ فَمَا وَهَنُوا لِمَٓا اَصَابَهُمْ ف۪ي سَب۪يلِ اللّٰهِ وَمَا ضَعُفُوا وَمَا اسْتَكَانُوا وَاللّٰهُ يُحِبُّ الصَّابِر۪ينَ ﴿١٤٦﴾

146- "Nice peygamberler vardı ki, beraberlerinde birçok Allah erleri bulunduğu halde, savaştılar da bunlar, Allah yolunda başlarına gelenlerden dolayı gevşeklik ve zaaf göstermediler, boyun eğmediler. Allah, sabredenleri sever."

Vefayı şiar edinerek arınmışlığın hakkını yerine getiren, yoldan dönmeyen, nefislerini hakikati aramakla yükümlü kılan ve onu bu

konuda iyice sıkıştıranlar, sabırlarının mirası olarak Hakk'ın sevgisini buldular. İşlerinin sonunda onların eksiklerini telafi eden de Allah'tır. Böylece onlar, ne çaba harcama yükümlülüğünden ne de sözü korumak konusundan saptılar. Onlar, hakkıyla teslim olup dünyadan çıktılar. Aynı zamanda her biri, ahdi hakkıyla yerine getirerek sürdürdü, hizmet ve sevgi şartı üzerine dosdoğru yürüdü.

وَمَا كَانَ قَوْلَهُمْ اِلَّٓا اَنْ قَالُوا رَبَّنَا اغْفِرْ لَنَا ذُنُوبَنَا وَاِسْرَافَنَا فٖٓي اَمْرِنَا وَثَبِّتْ اَقْدَامَنَا وَانْصُرْنَا عَلَى الْقَوْمِ الْكَافِرٖينَ ﴿١٤٧﴾

147- "Onların sözleri sadece şöyle demekten ibaretti: 'Ey Rabbimiz, günahlarımızı ve işimizdeki taşkınlığımızı bağışla, ayaklarımızı sabit kıl! Kâfirler topluluğuna karşı bize zafer ver!'"

Onlar, manevî hakikatlere erdikleri için iddiayı duşa vurmadılar. Sonra dilleriyle mağfiret dilediler ve hayâ makamında durdular.

Şiir:

*Sakınır günahlardan sonra da korkar onlardan*
*İyilikleri de günahmış gibi*

فَاٰتٰيهُمُ اللّٰهُ ثَوَابَ الدُّنْيَا وَحُسْنَ ثَوَابِ الْاٰخِرَةِ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنٖينَ ﴿١٤٨﴾

148- "Allah da onlara dünya nimetini verdi. Ahiret sevabının güzelliğini de verdi. Allah, iyi davrananları sever."

Bu nimetin en azı kanaat etmek, sonra rıza göstermek, sonra onunla birlikte yaşamak, huzurunda oturmakta huzur bulmak, sonra O'na kavuşmakla sevincin kemale ermesi, sonra da sırrın O'nu bulmakla istiklale kavuşmasıdır:

(وَحُسْنَ ثَوَابِ الْاٰخِرَةِ وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنٖينَ) "*Ahiret sevabının güzelliğini de verdi. Allah, iyi davrananları sever.*"

Ahiret sevabı, cennete karşı özgür olup tutsağı haline gelmeden ona girmektir. Bir yoruma göre de dünya ve ahiret sevabı, ikisinin yaratanını görmek suretiyle onlardan kopmaktır. Ayette, "*dünya nimeti*" ifadesine karşılık "*ahiret sevabının güzelliği*" denilmiş olması,

güzellik vasfından dolayı, ahiret sevabının dünya nimetine olan üstünlüğünü gerekli kılmaktadır. Bu üstünlüğün devamlı ve kusursuz oluşu, meyveleri, zıtlardan ve afetlerden arınmış olmasıdır.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوٓا اِنْ تُط۪يعُوا الَّذ۪ينَ كَفَرُوا يَرُدُّوكُمْ عَلٰٓى اَعْقَابِكُمْ فَتَنْقَلِبُوا خَاسِر۪ينَ ﴿١٤٩﴾ بَلِ اللّٰهُ مَوْلٰيكُمْ وَهُوَ خَيْرُ النَّاصِر۪ينَ ﴿١٥٠﴾

149, 150- "Ey iman edenler! Eğer kâfirlere uyarsanız, sizi gerisin geriye döndürürler de hüsrana uğrayanların durumuna düşersiniz. Oysa sizin Mevlânız Allah'tır ve O, yardımcıların en hayırlısıdır."

Yani eğer siz, karşıtlarınıza itaat ederseniz, sizi kendi durumlarına sürükleyerek bulundukları karanlıkların içine atarlar. Oysa Mevlânız Allah'tır. Sizin yardımcınız, büyüğünüz ve işlerinizi yola koyandır. (وَهُوَ خَيْرُ النَّاصِر۪ينَ) *"O, yardımcıların en hayırlısıdır."* Çünkü O, sizi nefsinizin şerrinden korumak için ona karşı size yardım eder. O'nun dışındakiler ise sizinle yardımlaştıklarında, sizlere karşı nefislerinize yardım ettikleri için sıkıntınızı artırırlar.

(وَهُوَ خَيْرُ النَّاصِر۪ينَ) *"O, yardımcıların en hayırlısıdır."* Çünkü O'nun dışındaki kimse, sana olan yardımı sebebiyle onu başına kakar. Halbuki Allah, kendisinden yardım dilemene karşılık vermektedir. Bir yoruma göre de, yardım talebinde bulunduğun herkese, kıymetli varlıklarından bir şey vermen gerekir. Sonra sana yardım edebilir de etmeyebilir de. Oysa Allah'tan yardım dilediğin zaman, sana her türlü lütufta bulunur ve sana yardım etmemeye rıza göstermez.

سَنُلْق۪ي ف۪ي قُلُوبِ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا الرُّعْبَ بِمَٓا اَشْرَكُوا بِاللّٰهِ مَا لَمْ يُنَزِّلْ بِه۪ سُلْطَانًا وَمَاْوٰيهُمُ النَّارُ وَبِئْسَ مَثْوَى الظَّالِم۪ينَ ﴿١٥١﴾

151- "Allah'ın, hakkında hiçbir delil indirmediği şeyleri O'na ortak koşmaları sebebiyle, kâfirlerin kalplerine yakında korku salacağız. Gidecekleri yer de cehennemdir. Zalimlerin varacağı yer ne kötüdür!"

Allah (c.c.), Hz. Peygamber'e, düşmanlarının kalbine korkusunu salma özelliği vermiştir. Nitekim Hz. Peygamber (a.s.): *"Bana, korku salmayla yardım edilmiştir"* buyurmuştur. Allah, aynı şekilde bu prensibi velileri için de uygulamıştır. Kalplere velilerden korkmayı salar. Hak üzere olan hemen herkesin, bâtıl üzere olup gerçekleri örtbas eden iddiacıların kalplerinde heybeti ve kahrediciliği vardır.

وَلَقَدْ صَدَقَكُمُ اللّٰهُ وَعْدَهُٓ اِذْ تَحُسُّونَهُمْ بِاِذْنِه۪ حَتّٰٓى اِذَا فَشِلْتُمْ وَتَنَازَعْتُمْ فِي الْاَمْرِ وَعَصَيْتُمْ مِنْ بَعْدِ مَٓا اَرٰيكُمْ مَا تُحِبُّونَ مِنْكُمْ مَنْ يُر۪يدُ الدُّنْيَا وَمِنْكُمْ مَنْ يُر۪يدُ الْاٰخِرَةَ ثُمَّ صَرَفَكُمْ عَنْهُمْ لِيَبْتَلِيَكُمْ وَلَقَدْ عَفَا عَنْكُمْ وَاللّٰهُ ذُو فَضْلٍ عَلَى الْمُؤْمِن۪ينَ ﴿١٥٢﴾

152- "Siz, Allah'ın izniyle düşmanlarınızı öldürürken Allah, size olan vaadini yerine getirmiştir. Nihayet öyle bir an geldi ki, Allah arzuladığınızı size gösterdikten sonra zaafa düştünüz, emir konusunda tartışmaya kalkıştınız ve asi oldunuz. Dünyayı isteyeniniz de vardı, ahireti isteyeniniz de vardı. Sonra Allah, denemek için sizi onlardan alıkoydu ve andolsun sizi bağışladı. Zaten Allah, müminlere karşı lütufkârdır."

Bu ayet, şuna işaret etmektedir: Allah, velilerini hakkının hakkı çerçevesinde ayakta tutmuş, kendilerini nefislerinin arzularından geri tutmuş ve her yönüyle ihtiyaçlarını yerine getirmiştir. Bu itibarla her kim istikamet yoluna bağlı kalır, O'nun sınırından sapmaz ve ahdinde sadakatsizlik yapmazsa, Allah ona verdiği sözü, güzel ve kesintisiz karşılık vererek yerini getirir. Kim de bir adımlık bile olsa, istikametten şaşarsa, gidişinde tökezler ve suçu oranında durumu ve rızkındaki düzeni bozulur. Bu nedenledir ki, iyiliğini artıranın mükâfatı artırılırken, iyiliği eksilenin ise mükâfatı eksiltilir.

(مِنْكُمْ مَنْ يُر۪يدُ الدُّنْيَا وَمِنْكُمْ مَنْ يُر۪يدُ الْاٰخِرَةَ ثُمَّ صَرَفَكُمْ عَنْهُمْ لِيَبْتَلِيَكُمْ وَلَقَدْ عَفَا عَنْكُمْ وَاللّٰهُ ذُو فَضْلٍ عَلَى الْمُؤْمِن۪ينَ) *"Dünyayı isteyeniniz de vardı, ahireti isteyeniniz de vardı. Sonra Allah, denemek için sizi onlardan alıkoydu ve andolsun sizi bağışladı. Zaten Allah, müminlere karşı lütufkârdır."*

Herkesin değeri iradesi ölçüsündedir. Bu itibarla, gayreti dünyaya yönelik olanın kıymeti de, tıpkı dünya gibi ucuz ve değersizdir. Himmeti ahirete yönelik olanın ise konumu onurludur. Himmeti, Allah'a yönelik olana gelince, bu kimse vaktinin efendisidir. Bir yoruma göre de her kim, iradesinden arınırsa Allah'a ulaşır. Allah'a ulaşana ise Allah lütfuyla yönelir ve onu katındaki özel makama yaklaştırır.

(صَرَفَكُمْ عَنْهُمْ) *"Sonra Allah, sizi onlardan alıkoydu."* Bu ifade şuna işaret etmektedir: Allah, bazı kimseleri kendinden alıkoyarak başkasıyla meşgul etmiştir. Diğer bazılarını da başkalarından alıkoyarak yalnızca kendine bağlamıştır. Bu çerçevede Allah, zahidleri dünyadan, abidleri nefse uymaktan, müridleri emelden, tevhid ehlini ise kendi dışındaki her şeyden alıkoymuştur.

إِذْ تُصْعِدُونَ وَلَا تَلْوُ۫نَ عَلٰٓى اَحَدٍ وَالرَّسُولُ يَدْعُوكُمْ ف۪ٓي اُخْرٰيكُمْ
فَاَثَابَكُمْ غَمًّا بِغَمٍّ لِكَيْلَا تَحْزَنُوا عَلٰى مَا فَاتَكُمْ وَلَا مَٓا اَصَابَكُمْ
وَاللّٰهُ خَب۪يرٌ بِمَا تَعْمَلُونَ ﴿١٥٣﴾ ثُمَّ اَنْزَلَ عَلَيْكُمْ مِنْ بَعْدِ الْغَمِّ اَمَنَةً
نُعَاسًا يَغْشٰى طَٓائِفَةً مِنْكُمْ وَطَٓائِفَةٌ قَدْ اَهَمَّتْهُمْ اَنْفُسُهُمْ يَظُنُّونَ بِاللّٰهِ
غَيْرَ الْحَقِّ ظَنَّ الْجَاهِلِيَّةِ يَقُولُونَ هَلْ لَنَا مِنَ الْاَمْرِ مِنْ شَيْءٍ قُلْ
اِنَّ الْاَمْرَ كُلَّهُ لِلّٰهِ يُخْفُونَ ف۪ٓي اَنْفُسِهِمْ مَا لَا يُبْدُونَ لَكَ يَقُولُونَ
لَوْ كَانَ لَنَا مِنَ الْاَمْرِ شَيْءٌ مَا قُتِلْنَا هٰهُنَا قُلْ لَوْ كُنْتُمْ ف۪ي بُيُوتِكُمْ
لَبَرَزَ الَّذ۪ينَ كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقَتْلُ اِلٰى مَضَاجِعِهِمْ وَلِيَبْتَلِيَ اللّٰهُ مَا ف۪ي
صُدُورِكُمْ وَلِيُمَحِّصَ مَا ف۪ي قُلُوبِكُمْ وَاللّٰهُ عَل۪يمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ ﴿١٥٤﴾

153, 154- "O zaman Peygamber, sizi arkanızdan çağırdığı halde siz, durmadan uzaklaşıyor, hiç kimseye dönüp bakmıyordunuz. Allah, size keder üstüne keder verdi ki, bundan dolayı gerek elinizden gidene, gerekse başınıza gelenlere üzülmeyesiniz. Allah, yaptıklarınızdan haberdardır. Sonra o kederin arkasından

Allah, size bir güven indirdi ki, uyuklama hali bir kısmınızı kaplıyordu. Kendi canlarının kaygısına düşmüş bir grup da Allah'a karşı haksız yere cahiliye devrindekine benzer düşüncelere kapılıyorlar: 'Bu işten bize ne' diyorlardı. De ki: 'İş tamamen Allah'a aittir.' Onlar, sana açıklayamadıklarını içlerinde gizliyorlar. 'Bu işten bize bir şey olsaydı, burada öldürülmezdik' diyorlar. Şöyle de: 'Evlerinizde kalmış olsaydınız bile, öldürülmesi takdir edilmiş olanlar, öldürülüp düşecekleri yerlere kendiliklerinden çıkıp giderlerdi. Allah, içinizdekileri yoklamak ve kalplerinizdekileri temizlemek için böyle yaptı. Allah, içinizde ne varsa hepsini bilir.'"

(اِذْ تُصْعِدُونَ) *"O zaman siz durmadan uzaklaşıyordunuz."* Bu ayet, gevşeyen bir topluluğa işaret etmektedir. Oysa hem kendi benliklerinden hem de bütün yörelerden; o kadar ki, taşlar caddelerden ve kerpiçler duvarlardan bu duruma düşen insana seslenerek: Ey Allah'ın kulu yapma, demekte ancak o, şaşkınlığında ısrarcı davranmakta, sapkınlığını sürdürmekte ve içinde bulunduğu durumdan daha hak ve iyi olduğunu bildiği hususları inkâr etmektedir. Bu kimse, arzusunu yerine getirip elinden geleni yaptığı zaman, ister istemez ardından kendini dizginlemeye ve meydanda at koşturmaktan vazgeçmeye başlar; ancak o zaman da nefes nefese bırakan bir yorgunluk ve hadsiz hasretlerden başka bir şey elde edemediği için Allah, ona yalnızlık üstüne yalnızlık verir. Nihayet uzun süre hasret içinde kaldıktan sonra Allah, lütfuyla yardımına ulaşır, güzel şefkatiyle ona teveccühte bulunur, kendisini esaretin darlığından kurtarır ve onu af ve lütfunun genişliği içine alır. Bunlardan pek çok kimse, büyük insanların makamlarına erişir, Allah ile Allah için durur ve yakınlık veya sevinç, düşünce ve beklentileri olmaksızın Allah'ın emirlerini yine Allah için yerine getirirler.

(ثُمَّ اَنْزَلَ عَلَيْكُمْ مِنْ بَعْدِ الْغَمِّ اَمَنَةً نُعَاسًا يَغْشٰى طَٓائِفَةً مِنْكُمْ وَطَٓائِفَةٌ قَدْ اَهَمَّتْهُمْ اَنْفُسُهُمْ يَظُنُّونَ بِاللّٰهِ غَيْرَ الْحَقِّ ظَنَّ الْجَاهِلِيَّةِ) *"Sonra o kederin arkasından Allah, size bir güven indirdi ki, uyuklama hali bir kısmınızı kaplıyordu.*

*Kendi canlarının kaygısına düşmüş bir grup da Allah'a karşı haksız yere cahiliye devrindekine benzer düşüncelere kapılıyorlar*." Bu çerçevede hakikat arayıcısı ve tevhid ehli kimseler, fetretlerinden sonra kendi nefislerini terk etme, kendi benliklerinden ümitlerini kesme ve kalplerini kendilerinden daha yüksek bir seviyeye taşıma kararına ulaşabilirler. Böylece onlar, hiçbir tamah ve istek düşüncesi olmaksızın, hatta her şeyden ümit kesme inancına dayalı olarak Allah ile Allah için yaşamış olurlar. Onlar buna dayalı olarak kesin söz vermiş, karşılık bekleme düşüncelerini değiştirmiş ve her türlü nasip ve arzuyu terk etmişlerdir. Zaten üzerine güven indirilen kimsenin vasfı da budur.

Kendi canlarının kaygısına düşmüş gruba gelince, onlar nefislerinin yalnızlığı içinde kaldılar. Onlara verilen peşin cezadan biri de tarikata inandıktan sonra, hakkındaki inançlarının kötüleşmesidir. Allah şöyle buyurmuştur:

( وَنُقَلِّبُ اَفْـِٕدَتَهُمْ وَاَبْصَارَهُمْ كَمَا لَمْ يُؤْمِنُوا بِهٖٓ اَوَّلَ مَرَّةٍ ) "*Yine O'na iman etmedikleri ilk durumdaki gibi onların gönüllerini ve gözlerini ters çeviririz*." (En'âm, 6/110)

( يَقُولُونَ هَلْ لَنَا مِنَ الْاَمْرِ مِنْ شَيْءٍ ) "'*Bu işten bize ne' diyorlardı*." Bu söz, onların kendi durumlarıyla ilgili şaşkınlıklarına işaret etmektedir. O halde onların gerçekte doğruyu bulma arzuları bulunmamakta, ancak bütünüyle yüz de çevirmemektedirler. Onlar, gevşekliklerini kötü tercihlerine bağlarken, şayet kalplerinde bir temizlik varsa onu da kendi çabalarına bağlayarak her iki halde de Rablerini unuttukları için Allah'ın takdirini göremezler.

( قُلْ اِنَّ الْاَمْرَ كُلَّهُ لِلّٰهِ ) "*De ki: İş tamamen Allah'a aittir*." Her kim, gerçek yaratanın Allah olduğunu bilirse, tıpkı kılın hamurdan çekilmesi gibi, kendi tercihlerinden ve hallerinden sıyrılır ve işlerini bütünüyle Allah'a teslim eder. Bunu gerçekten yapabilenin emaresi, kendi tedbirinin külfetinden istirahata çekilmesi ve ilahi takdiri görmenin genişliği içerisinde yaşamasıdır.

(وَ يُخْفُونَ فِي اَنْفُسِهِمْ مَا لَا يُبْدُونَ لَكَ) *"Onlar, sana açıklayamadıklarını içlerinde gizliyorlar."* Onlar, inançlarında samimi olamadılar ve açıkladıklarının aksini içlerinde sakladılar. Sakladıklarından başka şeyleri açıkladılar. Kâinatı da vehmettikleri bazı sebeplere dayandırdılar.

(قُلْ لَوْ كُنْتُمْ فِي بُيُوتِكُمْ لَبَرَزَ الَّذِينَ كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقَتْلُ اِلٰى مَضَاجِعِهِمْ) *"Şöyle de: 'Evlerinizde kalmış olsaydınız bile, öldürülmesi takdir edilmiş olanlar, öldürülüp düşecekleri yerlere kendiliklerinden çıkıp giderlerdi.'"* Burada takdirin zorlanamayacağı, kadere karşı çıkılamayacağı, kâinatın kesin hükümlere tabi kılındığı ve Allah'ın, emrini yerine getirmeye kadir olduğu bildirilmiştir.

(وَلِيَبْتَلِيَ اللّٰهُ مَا فِي صُدُورِكُمْ) *"Allah, içinizdekileri yoklamak için böyle yaptı."* Allah, hakikat ehlinin kalplerinden her türlü arıza ve engeli kaldırarak ruhlarını Allah'a yönelişle ve yakınlıkla arındırır. Böylece kalpleri şaibelerden arınmış, gailelerden temizlenmiş, sadece Hakk'a bağlanmış, yaratıklardan soyutlanmış, dünyalık arzu ve nefisten kurtulmuş, onda Allah'a yönelişin eserleri belirmiş, Allah'a teslimiyetin güzelliği ona hâkim olmuş ve tecellinin nurları onda görünür olmuştur.

اِنَّ الَّذِينَ تَوَلَّوْا مِنْكُمْ يَوْمَ الْتَقَى الْجَمْعَانِ اِنَّمَا اسْتَزَلَّهُمُ الشَّيْطَانُ
بِبَعْضِ مَا كَسَبُوا وَلَقَدْ عَفَا اللّٰهُ عَنْهُمْ اِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ حَلِيمٌ ١٥٥

155- "İki ordu karşılaştığı gün, sizi bırakıp gidenleri, sırf işledikleri bazı hatalar yüzünden şeytan caydırmıştı. Yine de Allah onları affetti. Çünkü Allah çok bağışlayıcıdır, halîmdir."

Bu ayet, iradeleri hastalıklı, niyetleri zayıf olan, hevanın güttüğü ve fetretin hâkim olduğu kimselerin hallerine işaret etmektedir. Onlar, nasihatçilerin nasihati, emelin çağrısı ve şeytanların vesveselerine muhatap olduklarında gıybete meyledip nefsin arzusunu takvaya tercih ettiklerinden hem takvadan geri kaldılar hem de takvaya tercih ettikleri nefisle mutlu olamadılar.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا لَا تَكُونُوا كَالَّذ۪ينَ كَفَرُوا وَقَالُوا لِاِخْوَانِهِمْ اِذَا
ضَرَبُوا فِي الْاَرْضِ اَوْ كَانُوا غُزًّى لَوْ كَانُوا عِنْدَنَا مَا مَاتُوا وَمَا
قُتِلُوا لِيَجْعَلَ اللّٰهُ ذٰلِكَ حَسْرَةً ف۪ي قُلُوبِهِمْ وَاللّٰهُ يُحْي۪ي وَيُم۪يتُ وَاللّٰهُ
بِمَا تَعْمَلُونَ بَص۪يرٌ ﴿١٥٦﴾

156- "Ey iman edenler! Sizler inkâr edenler ve yeryüzünde sefere çıkan veya savaşan kardeşleri hakkında: 'Eğer bizim yanımızda kalsalardı, ölmezler, öldürülmezlerdi' diyenler gibi olmayın. Allah, bu kanaati onların kalplerine bir hasret olarak koydu. Canı veren de alan da Allah'tır. Allah, yaptıklarınızı hakkıyla görür."

Geçmişine hasret çekmeye veya geleceği hakkında düşünmeye alışan kimsenin en az cezası, gafletinden dolayı kalbinin ilgi alanlarına dar gelmesi, gerçek hayatın kalbinden silinmesi ve sözünün: Keşke şöyle olsa ve belki şöyle olur, tarzında olmasıdır. Keşke ve belki sözlerinin altında yatan düşüncenin sonucu ise, yalnızlık, hasret, kalbin daralması ve tefrikadır.

وَلَئِنْ قُتِلْتُمْ ف۪ي سَب۪يلِ اللّٰهِ اَوْ مُتُّمْ لَمَغْفِرَةٌ مِنَ اللّٰهِ وَرَحْمَةٌ خَيْرٌ
مِمَّا يَجْمَعُونَ ﴿١٥٧﴾ وَلَئِنْ مُتُّمْ اَوْ قُتِلْتُمْ لَاِلَى اللّٰهِ تُحْشَرُونَ ﴿١٥٨﴾

157, 158- "Eğer Allah yolunda öldürülür veya ölürseniz, şunu bilin ki, Allah'ın mağfireti ve rahmeti onların topladıkları bütün şeylerden daha hayırlıdır. Andolsun ölseniz de öldürülseniz de Allah'ın huzurunda toplanacaksınız."

Allah yolunda ruhu feda etmek, Allah'sız yaşamaktan iyidir. Allah'a dönüş yapmak, Allah'ı tanıyan için Allah'tan başkasıyla kalmaktan hayırlıdır. Kulun, Allah'a tercih ettiği şey, ister dünya ister ahiret olsun, mübarek değildir.

(وَلَئِنْ مُتُّمْ اَوْ قُتِلْتُمْ لَاِلَى اللّٰهِ تُحْشَرُونَ) *"Andolsun ölseniz de öldürülseniz de Allah'ın huzurunda toplanacaksınız."* Son varış Allah'a olduğu zaman, Allah'a yürümek de güzel olur. O'na dönük olup ardından yüklerimizi indireceğimiz bir yolculuğun çilesi, baldan daha tatlıdır.

فَبِمَا رَحْمَةٍ مِنَ اللّٰهِ لِنْتَ لَهُمْ وَلَوْ كُنْتَ فَظًّا غَلِيظَ الْقَلْبِ لَانْفَضُّوا مِنْ حَوْلِكَ فَاعْفُ عَنْهُمْ وَاسْتَغْفِرْ لَهُمْ وَشَاوِرْهُمْ فِي الْاَمْرِ فَاِذَا عَزَمْتَ فَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَوَكِّلِينَ ﴿١٥٩﴾

159- "O vakit Allah'tan bir rahmet ile onlara yumuşak davrandın. Şayet sen, kaba, katı yürekli olsaydın, hiç şüphesiz etrafından dağılıp giderlerdi. Şu halde onları affet. Bağışlanmaları için dua et. İş hakkında onlara danış. Kararını verdiğin zaman da artık Allah'a dayanıp güven. Çünkü Allah, kendisine dayanıp güvenenleri sever."

Allah, Hz. Peygamberi beşerî vasıflardan soyutlayarak sadece kendisine tanrılık sıfatından elbise giydirmiş, gördüğü mucizelerin, uyum ve nefisten kopuşun eserleri değil, Allah'a teslimiyetin nurlarından olduğunu bildirmiştir. Eğer Allah, onu bu özel vasfa sahip kılmasaydı, kendisi ne zaman buna sahip olurdu!?

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah'ın, Hz. Peygamber'e olan rahmetinin özelliklerinden biri de onlarla arkadaşlık edebilecek, kendilerine peygamberliği tebliğ etmeye ve ihtilaflarından çektiği zorluğa sabır gösterebilecek kadar kendisine güç vermiş olmasıdır. Yanı sıra, Hz. Peygamber'in kendisini de bütün vakitlerini de Hakk'ın kendisine olan hâkimiyeti kaplamıştır. Eğer Allah'ın kendisine özel olarak verdiği ilahî bir güç olmasaydı, onların arkadaşlığına nasıl katlanabilirdi?

Nitekim Hz. Musa, Allah'ın kelamını yeni duyduğu için kardeşinin konuşmasına karşı sabır gösterememiş ve başından tutup kendine doğru çekmiştir.

- Eğer Hz. Peygamber, Allah'ın, haklarında cereyan eden tasarruf hükümleri altında kendilerini mahviyet içerisinde görmeseydi ve hükümlerin gerçek sahibinin Allah olduğuna kesin olarak inanmasaydı, onlarla arkadaşlık edemezdi.

(وَلَوْ كُنْتَ فَظًّا غَلِيظَ الْقَلْبِ لَانْفَضُّوا مِنْ حَوْلِكَ) *"Şayet sen, kaba katı yürekli olsaydın, hiç şüphesiz etrafından dağılıp giderlerdi."* Eğer sen, içine onların bazı arzularını katmaksızın, kendilerine katıksız tevhid şarabını içirseydin, bir an bile duramayacak derecede etrafından sersemce dağılıp giderlerdi. (فَاعْفُ عَنْهُمْ) *"Şu halde onları affet."* Onları, senin hakkındaki kusurları ve saygısızlıkları konusunda affet. Bizim hizmet ve taatimiz konusunda kendilerinde rastladığın kusurları hakkında ise, onlar için bizim nezdimizde şefaate dur.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Sen onları affet. Çünkü senin hükmün de bizim hükmümüzdür. Bu nedenle sen affettiğin anda biz de affetmiş oluruz. Sonra Allah, Hz. Peygamberi kulluk makamına yerleştirmek suretiyle bu vasfından geri çevirmiş ve onu tefrika vasfına taşıyarak: Sonra onlara mağfiret dilemede bize niyazda bulunarak tezellül makamında dur, buyurmuştur. Zaten Allah'ın peygamberleri ve velileriyle olan prensibi böyledir. Onları cemden farka, farktan da ceme döndürmektedir. Bu itibarla: "*Şu halde onları affet*" sözü cemi, (وَاسْتَغْفِرْ لَهُمْ) "*Bağışlanmaları için dua et*" sözü de farkı ifade etmektedir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Hz. Peygamber'in onları affetmesi, onlar üzerindeki haklarından vazgeçmesi ve bununla da yetinmeyerek iyiliği tamamlamak üzere, kendilerine mağfiret dilemesi demektir. Nitekim bu nedenledir ki, Hz. Peygamber: *"Allah'ım! Kavmimi hidayete erdir! Zira bilmiyorlar"* buyururdu.

- Hz. Peygamber ile ilgili olarak işledikleri kusur, biri Allah'ın, diğeri de Hz. Peygamber'in olmak üzere iki hak ile ilgilidir. Bu itibarla Allah buyurmaktadır ki: Yalnızca sen affettiğin zaman, bu kadarı yetmez. Aksine eğer ben, hakkımdaki kusurlarını affetmezsem

onlar azabı hak etmiş olurlar. O halde hasmını razı eden kimsenin hali, Allah onu, terk ettiği emirleri konusunda bağışlamadıkça düzelmez.

(وَاسْتَغْفِرْ لَهُمْ وَشَاوِرْهُمْ فِي الْاَمْرِ) *"Bağışlanmaları için dua et. İş hakkında onlara danış."* Yani onları bir yere konumlandır. Zira affedilen kişi, mahcubiyet konumunda olduğundan kendisini saygınlık makamında görmez. Şayet sen onlara danışırsan, mahcubiyetlerini gidermiş ve kalplerini rahatlatmış olursun.

- Durumları türlü türlüdür. Kimisi, hakkında kusur işlemiş ve affedilmesi emredilmiştir. Kimisi günah işlemiş olup kendisi için mağfiret dilenmesi emredilmiştir. Kimisi de itaat ehli olup kusur işlememiş ve kendisiyle danışılması emredilmiştir.

(فَاِذَا عَزَمْتَ فَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ) *"Kararını verdiğin zaman da artık Allah'a dayanıp güven."* Yani, hiçbir yaratığın görüşüne dayanıp güvenme ve işleri bana havale et. Çünkü biz seni hiçbir durumda Allah'ın tasarrufundan mahrum bırakmayız.

Bu arada gerçek tevekkül, takdiri görmek ve kalplerin, tedbire dönük çabayı bırakıp rahatlamasıdır.

(اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَوَكِّلِينَ) *"Çünkü Allah, kendisine dayanıp güvenenleri sever."* Her türlü yorgunluk ve sıkıntıdan kurtulmaları için Allah, onlara ilahî güvencenin serinliğini tattırmıştır. Zaten Allah, herkese hak ettiğiyle muamele eder. Bu çerçevede kimilerini, tevekkül ettiklerinde, vergisiyle ihtiyaçsız kılar. Kimilerine, tevekkül ettiklerinde, kendisine kavuşturmakla yeterli ikramda bulunur. Kimilerini ise Allah, genel durumlarıyla hoşnut kılar. O kadar ki onlar, O'nunla var olmakla yetinir ve kader ve kazasının değişimlerine uygun olarak Allah ile beraber, Allah ile ve Allah için dururlar.

اِنْ يَنْصُرْكُمُ اللّٰهُ فَلَا غَالِبَ لَكُمْ وَاِنْ يَخْذُلْكُمْ فَمَنْ ذَا الَّذِي
يَنْصُرُكُمْ مِنْ بَعْدِهِ وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُونَ ﴿١٦٠﴾

160- "Allah size yardım ederse, artık size üstün gelecek hiç kimse yoktur. Eğer sizi bırakıverse ondan sonra size kim yardım eder? Müminler, ancak Allah'a güvenip dayanmalıdırlar."

Allah'ın müminlere yardımı, bedenlerine muvaffakiyeti, ruhlarına da hakikate ulaşmayı nasip kılmasıyladır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, zahirlerinizi güçlendirmek ve sırlarınızı sağlamlaştırmak suretiyle size yardım eder.

- Yardım, sadece düşmana karşı yapılır. Senin en azgın düşmanın ise içindeki nefsindir. Nefse karşı üstünlük sağlamak ise, şehvetlerin askerlerinin, ilahî rahmet kuvvetlerinin hücumu karşısında dağılması için, onun güç unsurlarını ilahî rahmetin koruyucu unsurlarıyla yenmektir. Böylece beşerî vasıflar ile nefislerin şehvetleri ve isteklerinden ibaret olan şüphelerden arınan gerçek dostluk, Allah'a ait olarak kalmış olur. Nitekim söz konusu istekler, Allah'a yakınlıktan alıkoyan örtü ve engellerin ürünleridir.

( وَاِنْ يَخْذُلْكُمْ ) *"Eğer sizi bırakıverse..."* Allah'ın bırakıvermesi, günahlarla baş başa bırakmak demektir. Allah, kime yardım ederse, onu günah işlemekten alıkoyar. Kimi de bırakıverirse, ipini boynunun üstüne atarak kendisini kötü tercihiyle baş başa bırakır. Böylece bu kimse, şehvetler çukurunda halden hale düşer. Bir defa sorumsuzca doğuya, bir defa da saygısızca batıya savrulur. Bilmek gerekir ki, Allah'ın sahipsiz bıraktığı kimsenin elinden tutanı yoktur. Nefsine teslim ettiği kimsenin de hiçbir koruyucusu bulunmaz.

( وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُونَ ) *"Müminler, ancak Allah'a güvenip dayanmalıdırlar."* Bu dayanma, samimi yakarış esnasında güven bulmaktan ve kişisel güç ve kuvvetten arınmak suretiyle içten sığınma esnasında günahların üstünü örten af elbisesinin indirilmesine mazhar olmaktan ibarettir.

Bir yoruma göre de, yardım söz konusu olunca Allah: ( فَلَا غَالِبَ لَكُمْ ) *"artık size üstün gelecek hiç kimse yoktur"* buyururken

sahipsiz bırakıverme söz konusu olduğunda Allah: Hiçbir yardımcınız yoktur, demeyip işaret ve ima yoluyla: (فَمَنْ ذَا الَّذِي يَنْصُرُكُمْ مِنْ بَعْدِهِ) "*Ondan sonra size kim yardım eder?*" Buyurmuştur. Bu ifade tarzında ise anlatım prensiplerini göz önünde bulundurmakla ilgili bir incelik bulunmaktadır.

وَمَا كَانَ لِنَبِيٍّ اَنْ يَغُلَّ وَمَنْ يَغْلُلْ يَاْتِ بِمَا غَلَّ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ثُمَّ تُوَفّٰى كُلُّ نَفْسٍ مَا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ﴿١٦١﴾

161- "Bir peygambere, emanete hıyanet yaraşmaz. Kim emanete hıyanet ederse, kıyamet günü, hainlik ettiği şeyin günahı boynuna asılı olarak gelir. Sonra herkese, asla haksızlığa uğratılmaksızın, kazandığı tastamam verilir."

Allah, peygamberlerin hallerini hainliklerle kirlenmekten tenzih etmektedir. Bu nedenle Allah'ın, kullarına iletilmek üzere, yüklediği peygamberlik vazifesini bir görev olarak hak sahiplerine ulaştırır ve Allah'ın emri olmadan ne hiçbir yakın dostunun durumuyla ilgilenemez. Aynı şekilde Allah'ın, ulaştırılmasını emrettiği bir nasibi, içinde taşıdığı bir kin sebebiyle, sahibinden esirgemez. Nitekim Hz. Peygamber, kendisine: *"Yolunu şaşırmış olan amcan öldü"* diyen Hz. Ali'ye amcası Ebû Tâlib hakkında: *"Git onu göm"* buyurmuştur. Ayrıca Hz. Hamza'nın katili 'Vahşi'yi kabul etmiştir.

Bir yoruma göre de, Hz. Peygamber (s.a.v.), bizim sırlarımızı ehil olmayanlara emanet edecek değildi. Aksine peygamberler, herkese hak ettiği şekilde muamelede bulunurlar. Bir hadiste: *"İnsanlara layık oldukları şekilde muamelede bulunmakla emrolunduk"* buyrulmuştur.

اَفَمَنِ اتَّبَعَ رِضْوَانَ اللّٰهِ كَمَنْ بَٓاءَ بِسَخَطٍ مِنَ اللّٰهِ وَمَاْوٰيهُ جَهَنَّمُ وَبِئْسَ الْمَصِيرُ ﴿١٦٢﴾

162- "Allah'ın hoşnutluğunu gözetenle Allah'ın hışmına uğrayan bir olur mu hiç? Berikisinin yeri cehennemdir. Cehennem ise ne kötü bir varış noktasıdır."

Allah'ın, ezelden beri hoşnut olduğu kimse ile hallerinde perişanlık içinde bıraktığı ve kendi amellerine güvenip O'nun lütuflarını gözetmeyi unutan kimse bir olur mu? Bu arada Allah'ın hoşnutluğunu gözetmek, kulun, alıkonulduğu şeyleri bırakması ve kendisine emredilenlere sarılmasıyla olur. Her kim, yasaklanandan soyutlanır ve emredileni kabul ederse, o hoşnutluğu gözetmiş ve cenneti hak etmiş olur.

هُمْ دَرَجَاتٌ عِنْدَ اللّٰهِ وَاللّٰهُ بَصِيرٌ بِمَا يَعْمَلُونَ ﴿١٦٣﴾

163- "Onlar, Allah katında derece derecedirler. Allah, onların yaptıklarını görmektedir."

Yani Allah katında onlar, derecelere sahiptirler. Kimisi Allah'a yakın olup mutludur. Kimisi de Allah'a uzaktır ve mutsuzdur.

لَقَدْ مَنَّ اللّٰهُ عَلَى الْمُؤْمِنِينَ اِذْ بَعَثَ فِيهِمْ رَسُولًا مِنْ اَنْفُسِهِمْ يَتْلُوا عَلَيْهِمْ اٰيَاتِهِ وَيُزَكِّيهِمْ وَيُعَلِّمُهُمُ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ وَاِنْ كَانُوا مِنْ قَبْلُ لَفِي ضَلَالٍ مُبِينٍ ﴿١٦٤﴾

164- "Andolsun ki, içlerinden kendilerine Allah'ın ayetlerini okuyan, kendilerini temizleyen, kendilerine kitap ve hikmeti öğreten bir peygamber göndermekle Allah, müminlere büyük bir lütufta bulunmuştur. Halbuki daha önce onlar, apaçık bir sapıklık içinde idiler."

Allah, Kâinatın Efendisi Muhammed Mustafa (s.a.v.) gibi birini göndermek, dinlerini öğretmek ve delillerini açıklamak suretiyle onlara bol lütuflarda bulunmuş ve nimetler ihsan etmiştir. Allah, her yönüyle onlara yardım etmiştir. Oysa onlar, ne nimetlerine şükrettiler, ne hakkına saygı gösterdiler, ne irşadıyla basiret sahibi oldular ne de dalaletlerinden geri durdular. İşte inkârda bulunan ve kibre kapılan düşmanlarının vasfı budur. Müminlere gelince onlar, tercihlerinde Allah'ın lütfüne sarıldılar, emrini güçleri yettiğince dinlemek

ve itaat etmekle karşıladılar. Böylece dünyada da ahirette de saadete ererek Allah'tan ikram ve yakınlığı hak ettiler.

اَوَلَمَّٓا اَصَابَتْكُمْ مُصِيبَةٌ قَدْ اَصَبْتُمْ مِثْلَيْهَا قُلْتُمْ اَنّٰى هٰذَا قُلْ هُوَ مِنْ عِنْدِ اَنْفُسِكُمْ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرٌ ﴿١٦٥﴾

165- "İki katını düşmanınızın başına getirdiğiniz bir musibet kendi başınıza geldiği için mi: 'Bu nasıl oluyor' dediniz? De ki: 'O, kendi kusurunuzdandır. Şüphesiz Allah'ın her şeye gücü yeter.'"

Yaratıkların âdeti, işledikleri hata ve isyanları unutarak kendileriyle ilgili meşakkatler, kaybediş, istenmeyen çeşitli durumlar ve musibetler konusunda Allah'a töhmet ile dönmektir. Halbuki suç işleyen kimseye yakışan, başına belanın geleceğini unutmamasıdır.

وَمَٓا اَصَابَكُمْ يَوْمَ الْتَقَى الْجَمْعَانِ فَبِاِذْنِ اللّٰهِ وَلِيَعْلَمَ الْمُؤْمِن۪ينَ ﴿١٦٦﴾ وَلِيَعْلَمَ الَّذ۪ينَ نَافَقُوا وَق۪يلَ لَهُمْ تَعَالَوْا قَاتِلُوا ف۪ي سَب۪يلِ اللّٰهِ اَوِ ادْفَعُوا قَالُوا لَوْ نَعْلَمُ قِتَالًا لَاتَّبَعْنَاكُمْ هُمْ لِلْكُفْرِ يَوْمَئِذٍ اَقْرَبُ مِنْهُمْ لِلْاِيمَانِ يَقُولُونَ بِاَفْوَاهِهِمْ مَا لَيْسَ ف۪ي قُلُوبِهِمْ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا يَكْتُمُونَ ﴿١٦٧﴾

166, 167- "İki birliğin karşılaştığı gün başınıza gelenler, ancak Allah'ın dilemesiyle olmuştur ki, bu da müminleri ayırt etmesi ve münafıkları ortaya çıkarması içindi. Bunlara: 'Gelin, Allah yolunda çarpışın ya da savunma yapın' denildiği zaman: 'Savaşmayı bilseydik, elbette peşinizden gelirdik' dediler. Onlar, o gün imandan çok, küfre yakın idiler. Ağızlarıyla, kalplerinde olmayanı söylüyorlardı. Halbuki Allah, onların içlerinde gizlediklerini daha iyi bilir."

Allah, olan bitenin tamamının O'nun izniyle gerçekleştiğini, O'nun izniyle gerçekleşen her musibetin de baldan daha tatlı ve

her nimetten daha iştah çekici olduğunu söylemek suretiyle, Uhud günü karşılaştıkları büyük fitneyi müminlere ve basiret sahiplerine hafifletmiştir. Sonra Allah, Hz. Peygamber'e arkadaş olmada samimi olmayanların nasıl da bahaneler uydurup tembel davrandıklarını bildirmiştir.

Şiir:

*Böyledir yılgın insan, kopmak istediğinde*
*Birliktelikten usanır ve: Oldu da oldu, der*

(يَقُولُونَ بِاَفْوَاهِهِمْ مَا لَيْسَ فِي قُلُوبِهِمْ) *"Ağızlarıyla, kalplerinde olmayanı söylüyorlardı."* Bal içirdiler; fakat desiseyle içine zehir kattılar. Onlar, tuzak kurdular. Allah da onların tuzaklarını bozdu. Allah tuzak kuranların hayırlısıdır.

اَلَّذِينَ قَالُوا لِاِخْوَانِهِمْ وَقَعَدُوا لَوْ اَطَاعُونَا مَا قُتِلُوا قُلْ فَادْرَؤُا
عَنْ اَنْفُسِكُمُ الْمَوْتَ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿١٦٨﴾

168- "Evlerinde oturup da kardeşleri hakkında: 'Bize uysalardı, öldürülmezlerdi' diyenlere: 'Eğer doğru sözlü insanlar iseniz, canlarınızı ölümden kurtarın bakalım' de."

Nefislerinin kendilerini içine sürüklediği nefsanî tercihe meyledenler, daha sonra kaderin hükümlerine boyun eğenlere itirazda bulunarak: "Eğer savaşa çıkmaktan sakınsalardı, selamet derecesinden düşmezlerdi" dediler. Onların bu zanları çirkindir. O kalpler de hakikati görmekten kopmuşlardır.

Ey Muhammed! Onlara de ki: "Kendiniz için hayatı devamlı kılıp ölümün gelişini üzerinizden defedin, bakalım! Bunu ne zaman yapabilirsiniz ki!" Heyhat! Heyhat!

وَلَا تَحْسَبَنَّ الَّذِينَ قُتِلُوا فِي سَبِيلِ اللّٰهِ اَمْوَاتًا بَلْ اَحْيَاءٌ عِنْدَ رَبِّهِمْ
يُرْزَقُونَ ﴿١٦٩﴾ فَرِحِينَ بِمَآ اٰتٰيهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهِ وَيَسْتَبْشِرُونَ بِالَّذِينَ
لَمْ يَلْحَقُوا بِهِمْ مِنْ خَلْفِهِمْ اَلَّا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿١٧٠﴾

169, 170- "Allah yolunda öldürülenleri sakın ölü sanmayın. Bilakis onlar diridirler. Allah'ın, lütuf ve kereminden kendilerine verdikleri ile sevinçli bir halde Rableri yanında rızıklara mazhar olmaktadırlar. Arkalarından gelecek ve henüz kendilerine katılmamış olan şehid kardeşlerine de hiçbir keder ve korku bulunmadığı müjdesinin sevincini duymaktadırlar."

Nefisler, Allah'ın hoşnutluğunda yok olduktan sonra, O'nu anmakla gerçekleşen hayat, Hak'tan engellenerek halkın nimetiyle var olmaktan daha mükemmeldir.

Bir yoruma göre de vârisi, ebediyet sahibi Allah olan kimse, öldürülse bile ölü değildir.

Şiir:

*Kullar ölüm için yaratıldığına göre*
*Bir kimsenin Allah yolunda öldürülmesi, kuşkusuz daha faziletlidir*

(وَيَسْتَبْشِرُونَ بِالَّذِينَ لَمْ يَلْحَقُوا بِهِمْ مِنْ خَلْفِهِمْ اَلَّا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ) "*Arkalarından gelecek ve henüz kendilerine katılmamış olan şehid kardeşlerine de sevinirler.*" Dostlarının refah ve nimet içerisinde kendisini beklediklerini bilen kimse, onlara kavuşmadan hayatla mutlu olmaz.

يَسْتَبْشِرُونَ بِنِعْمَةٍ مِنَ اللّٰهِ وَفَضْلٍ وَاَنَّ اللّٰهَ لَا يُضِيعُ اَجْرَ الْمُؤْمِنِينَ ﴿١٧١﴾

171- "Onlar, Allah'tan gelen nimet ve keremin; Allah'ın, müminlerin ecrini zayi etmeyeceği müjdesinin sevinci içindedirler."

Bu müjdenin sevinci içinde olmalarının sebebi, Allah'ın lütuf ve nimetidir. Yani, eğer O'nun lütuf ve nimeti olmasaydı, ne zaman bu müjdenin sevinci içinde olurlardı! O halde sevinçleri, nimetle değil, ancak ve ancak Allah'ın kulları olmaları, O'nun da onların Mevlâ'sı olması sebebiyledir. Şayet Allah'ın üzerlerindeki lütuf ve nimeti olmasaydı, bu durumları olmayacaktı.

اَلَّذٖينَ اسْتَجَابُوا لِلّٰهِ وَالرَّسُولِ مِنْ بَعْدِ مَٓا اَصَابَهُمُ الْقَرْحُ لِلَّذٖينَ
اَحْسَنُوا مِنْهُمْ وَاتَّقَوْا اَجْرٌ عَظٖيمٌ ﴿١٧٢﴾

172- "Yara aldıktan sonra yine Allah'ın ve peygamber'in çağrısına uyanlar, bunların içlerinden özellikle iyilik yapanlar ve takvâ sahibi olanlar için pek büyük bir mükâfat vardır."

Arap dilinin kuralları bakımından değil de işârî tefsir bakımından, ayette yer alan (اسْتَجَابُوا) "*isticabet*" tabirinin "*icabet*" tabirine meziyet ve üstünlüğü bulunmaktadır. Zira isticabet'te zoraki değil, gönüllü kabul etme söz konusudur. Bu nedenle onlar, hiçbir zorluk çekmeden sadece kalbin işareti, gönlün sevgisi, ruhun tercihi ve hükmü üstlenmenin hazzıyla çağrıya uymuşlardır. Bu çerçevede Hakk'ın çağrısına uymak, O'nun varlığıyladır. Hz. Peygamber'in çağrısına uymak ise koyduğu dinî prensipleri ahlak haline getirmekle olur.

Hakk'ın çağrısına uymak, rububiyet hakkında safiyetle kesin inanca sahip olmakla, Hz. Peygamber'in çağrısına uymak ise kulluk görevini yerine getirmede vefa göstermekle olur.

(مِنْ بَعْدِ مَٓا اَصَابَهُمُ الْقَرْحُ) "*Yara aldıktan sonra...*" Yara alma, kalplerinde tecellinin nurları ortaya çıkmadan ve sırlarında hakikatler tebessüm etmeden önceki muamelelerinin başlangıcında olmuştur.

(لِلَّذٖينَ اَحْسَنُوا مِنْهُمْ) "*Bunların içlerinden özellikle iyilik yapanlar için...*" Sözlük anlamı iyilik yapmak demek olan "*ihsan*" hadiste: "*Allah'ı görürcesine O'na ibadet etmendir*" şeklinde tanımlanmıştır. Bu tanım, müşahede ve takvayı ifade etmektedir. "*Şayet sen O'nu görmezsen şüphesiz O, seni görmektedir.*" Hadisin bu kısmı da, mücâhede halinde murâkabeyi ifade eder.

(اَجْرٌ عَظٖيمٌ) "*...pek büyük bir mükâfat vardır.*" Bu mükâfat, işin başındakilere daha sonra, işin sonuna gelmiş olanlara ise hemen verilir.

اَلَّذٖينَ قَالَ لَهُمُ النَّاسُ اِنَّ النَّاسَ قَدْ جَمَعُوا لَكُمْ فَاخْشَوْهُمْ
فَزَادَهُمْ اٖيمَانًا وَقَالُوا حَسْبُنَا اللّٰهُ وَنِعْمَ الْوَكٖيلُ ﴿١٧٣﴾

173- "Bir kısım insanlar, müminlere: 'Düşmanlarınız olan insanlar, size karşı asker topladılar. Aman sakının onlardan' dediklerinde bu, onların imanlarını bir kat daha artırdı. Ve: 'Allah bize yeter. O, ne güzel vekildir' dediler."

Onların zahirlerine dünya hallerinden bir şeyde karışıklık meydana gelir gelmez hemen sırlarında keşif tecellileri açılır ve böylece onların kesin inancı kat kat artmış olur.

Bu arada kesin inancın alametlerinden biri de, yardım ümidi bağlanan halktan ümidin kesilmesi esnasında kalplerin sadece Allah'a bağlanmasıdır.

فَانْقَلَبُوا بِنِعْمَةٍ مِنَ اللّٰهِ وَفَضْلٍ لَمْ يَمْسَسْهُمْ سُوٓءٌ وَاتَّبَعُوا رِضْوَانَ اللّٰهِ وَاللّٰهُ ذُو فَضْلٍ عَظِيمٍ ﴿١٧٤﴾

174- "Bunun üzerine kendilerine hiçbir fenalık dokunmadan Allah'ın nimet ve keremiyle geri geldiler. Böylece Allah'ın rızasına uymuş oldular. Allah, büyük kerem sahibidir."

İşte Hakk'ın, samimiyetle kendisine sığınan kimseyle ilgili prensibi böyledir. Onun güvenini kendi himayesinin gölgesinde hazırlar. Böylece o kimseye ne musibet dokunur ne meşakkat isabet eder ne de zorluk gölgeler.

اِنَّمَا ذٰلِكُمُ الشَّيْطَانُ يُخَوِّفُ اَوْلِيَٓاءَهُ فَلَا تَخَافُوهُمْ وَخَافُونِ اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ﴿١٧٥﴾

175- "İşte o şeytan, ancak kendi dostlarını korkutur. Şu halde eğer iman etmiş kimseler iseniz, onlardan korkmayın, benden korkun."

Ayet, Allah'a olan kaçışlarının samimiyetini test etmek üzere, tıpkı bir çocuğu, çocukların korktuğu bir şeyle korkutmak gibi velilerin kalplerine şeytanî arzuları musallat kılmaya işaret etmektedir. Bu durumda çocuk korktuğu zaman, sadece annesinden başkasına gitmez. Annesine gelince de annesi onu himayesine alarak bağrına basar ve yanağını onun yanağına yapıştırır.

Aynı şekilde kul da Allah'a olan yakarışında ve O'na muhalefet etmekten dönüş yapmasında samimi olduğu zaman Allah onu yakınlığının himayesine alarak lütfunun güzelliğiyle imdadına yetişir.

وَلَا يَحْزُنْكَ الَّذِينَ يُسَارِعُونَ فِي الْكُفْرِ اِنَّهُمْ لَنْ يَضُرُّوا اللّٰهَ شَيْـًٔا يُرِيدُ اللّٰهُ اَلَّا يَجْعَلَ لَهُمْ حَظًّا فِي الْاٰخِرَةِ وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ ﴿١٧٦﴾

176- "İnkârda yarışanlar sana kaygı vermesin. Çünkü onlar Allah'a hiçbir zarar veremezler. Allah, onlara ahiretten yana bir nasip vermemek istiyor. Onlar için çok büyük bir azap vardır."

Allah, Hz. Peygamber'e verdiği sözü yeniden pekiştirmekle kalbinin kuvvetini artırmıştır. Böylece onu hiçbir düşmanın hakaretine maruz bırakmayacağı ve düşmanlardan kendisine hiçbir kötülüğün ulaşmayacağı güvencesini vermiştir.

اِنَّ الَّذِينَ اشْتَرَوُا الْكُفْرَ بِالْاِيمَانِ لَنْ يَضُرُّوا اللّٰهَ شَيْـًٔا وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيمٌ ﴿١٧٧﴾

177- "Şurası muhakkak ki, imanı verip küfrü alanlar, Allah'a hiçbir zarar veremezler. Onlar için elim bir azap vardır."

Onlar, eğer zarar verirlerse, sadece kendilerine zarar vermiş olurlar. Şayet ısrar ederlerse, sadece kaybetmede ısrar etmiş olurlar.

Şiir:

*Biz ne onların diyarından uzaklık sebebiyle acı çektik*
*Ne de ihtiyaçlar bizi onlara sevk etti*

وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذِينَ كَفَرُوٓا اَنَّمَا نُمْلِي لَهُمْ خَيْرٌ لِاَنْفُسِهِمْ اِنَّمَا نُمْلِي لَهُمْ لِيَزْدَادُوٓا اِثْمًا وَلَهُمْ عَذَابٌ مُهِينٌ ﴿١٧٨﴾

178- "İnkâr edenler, sanmasınlar ki, kendilerine mühlet vermemiz onlar için daha hayırlıdır. Onlara, ancak günahlarını arttırmaları için fırsat veriyoruz. Onlar için alçaltıcı bir azap vardır."

Onların tuzaklarını başlarına geçirmenin tamamlayıcısı olan ve azaplarını artıran unsurlarından biri de onlara verdiğimiz cezanın farkında olmamalarıdır. Onları, hiç bilmedikleri yerden yavaş yavaş helak ediyoruz. Biz onlara mühlet verince bunu nimet zannederek ceza saymazlar. Ancak takdirin bilinmeyen yönleri karşılarına çıkınca kesin bir ziyanda olduklarını anlamış olurlar. Nitekim her basiret sahibi açıkça bilmektedir ki, isyana ve nisyana sebep olan şey, nimetler cümlesinden sayılmamaktadır.

مَا كَانَ اللّٰهُ لِيَذَرَ الْمُؤْمِنِينَ عَلٰى مَٓا اَنْتُمْ عَلَيْهِ حَتّٰى يَمِيزَ الْخَبِيثَ مِنَ الطَّيِّبِ وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُطْلِعَكُمْ عَلَى الْغَيْبِ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ يَجْتَبِي مِنْ رُسُلِهِ مَنْ يَشَٓاءُ فَاٰمِنُوا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهِ وَاِنْ تُؤْمِنُوا وَتَتَّقُوا فَلَكُمْ اَجْرٌ عَظِيمٌ ﴿١٧٩﴾

179- "Allah, müminleri şu bulunduğunuz durumda bırakacak değildir. Sonunda murdarı temizden ayıracaktır. Bununla beraber Allah, size gaybı da bildirecek değildir. Fakat Allah, elçilerinden dilediğini ayırt eder. O halde Allah'a ve peygamberlerine iman edin. Eğer iman eder, takva sahibi olursanız, sizin için de çok büyük bir ecir vardır."

Allah onları kişiler ve binalar olarak bir araya getirmiş; ancak hakikatler ve manalar bakımından birbirinden ayırmıştır. Bu itibarla onlardan kimisinin karakteri temizdir, kimisinin de yapısı bozuktur. Böylelikle onlar, her ne kadar karışık halde olsalar da havassın basiretinde birbirinden ayrıdırlar.

(وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُطْلِعَكُمْ عَلَى الْغَيْبِ) "*Allah, size gaybı da bildirecek değildir.*" Çünkü gaybın sırları, beşeriyetin kirleriyle kirlenenlere görünmez. Bir de Allah, iğneden ipliğe her şeye dair bilgiyi kendine ayırmıştır. Bu arada peygamberlerinden dilediğine, bazı sırlarının bilgisini özel olarak verir.

وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذٖينَ يَبْخَلُونَ بِمَٓا اٰتٰيهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهٖ هُوَ خَيْرًا لَهُمْ
بَلْ هُوَ شَرٌّ لَهُمْ سَيُطَوَّقُونَ مَا بَخِلُوا بِهٖ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ وَلِلّٰهِ مٖيرَاثُ
السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبٖيرٌ ﴿١٨٠﴾

180- "Allah'ın, kereminden kendilerine verdiklerini harcamada cimrilik gösterenler, sanmasınlar ki o, kendileri için hayırlıdır. Tersine bu, onlar için pek fenadır. Cimrilik ettikleri şey de kıyamet gününde boyunlarına dolanacaktır. Göklerin ve yerin mirası Allah'ındır. Allah, bütün yaptıklarınızdan haberdardır."

Her kim, bir şeyi Allah'a tercih ederse, Allah o şeyi ona mübarek kılmaz. Bu nedenle de o kimse, dünyada bu şeyden yararlanamaz. Ondan dolayı ahirette alacağı ceza da hiçbir şekilde üzerinden def edilemez.

Âlimlerin izahına göre; cimrilik, vacibi engellemek demektir. İşaretin gereğine göre ise maldan zerre kadar veya hallerden bir nefes miktarını dahi bırakmaktır.

لَقَدْ سَمِعَ اللّٰهُ قَوْلَ الَّذٖينَ قَالُوٓا اِنَّ اللّٰهَ فَقٖيرٌ وَنَحْنُ اَغْنِيَٓاءُ سَنَكْتُبُ
مَا قَالُوا وَقَتْلَهُمُ الْاَنْبِيَٓاءَ بِغَيْرِ حَقٍّ وَنَقُولُ ذُوقُوا عَذَابَ الْحَرٖيقِ
﴿١٨١﴾ ذٰلِكَ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدٖيكُمْ وَاَنَّ اللّٰهَ لَيْسَ بِظَلَّامٍ لِلْعَبٖيدِ ﴿١٨٢﴾

181, 182- "'Gerçekten Allah fakir, biz ise zenginiz' diyenlerin sözünü andolsun ki Allah işitmiştir. Onların bu dediklerini, haksız yere peygamberleri öldürmeleri ile birlikte yazacağız ve diyeceğiz ki: 'Tadın o yakıcı azabı! Bu, dünyada iken kendi ellerinizle yapmış olduğunuzun karşılığıdır. Yoksa Allah, kullarına zulmetmez.'"

Bu hitap, eğer insanlar arasında olsaydı şikâyet olurdu. Düşmanlardan dostlara şikâyette bulunmak dostların prensibidir.

Bir yoruma göre de, Allah, müminler arasında insanları gıybet edenler bulunduğunu bilmektedir. Oysa bu tür sözler söylemeleri çirkindir. Bu nedenle Allah, müminlerin sözlerinin çirkinliği kâfirlerin sözlerinin çirkinliğine kıyasla küçük görünmesi için, müminlerin yaptığı gıybetten daha büyük bir çirkinlik ortaya çıkardı. Sanki Allah şöyle demektedir: Şayet müminlerin gıybetteki sözleri çirkin ise bizim hakkımızda nimetimizle bağdaşmayan sözler söylemeleri sebebiyle, kâfirlerin sözü, onların sözünden daha çirkindir.

Ayette aynı zamanda halka çağrıya ve hasmın hatalarını bağışlamaya işaret de bulunmaktadır. Çünkü Allah, hakkında işledikleri çirkin kusura rağmen, verdiği nimetleri kendilerinden almamıştır.

(سَنَكْتُبُ مَا قَالُوا ) *"Onların bu dediklerini yazacağız."* Bu ifade, kusur işleyenleri en ince bir işaretle mahcup eden hususlardandır. Yani her ne kadar onlar, kendi durumlarını ve sözlerini unutmuşlarsa da biz, haklarında yazdıklarımızı onlara karşı yayınlayacağız.

Şiir:

*Bazı sayfalar var bende itap için, dürdüm onları*
*Yayınlanacak bir gün onlar ve uzayacak itap*
*Sabredeceğim ben, Allah bir araya getirinceye kadar bizi*
*Şayet karşılaşırsak bir gün, işte o zaman söyleyeceğim*

(ذٰلِكَ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيكُمْ وَاَنَّ اللّٰهَ لَيْسَ بِظَلَّامٍ لِلْعَبِيدِ ) *"Bu, dünyada iken kendi ellerinizle yapmış olduğunuzun karşılığıdır. Yoksa Allah, kullarına zulmetmez."* Eğer bu söz, bir yaratıktan diğer bir yaratığa hitaben söylenmiş olsaydı, bu, yaptığından özür dilemek gibi olurdu. Allah şöyle der gibidir: "Kulum! Bugün karşılaştığın azap, günahın sana ait olmasından dolayıdır. Şayet sen, onu yapmamış olsaydın, sana azap vermezdim."

اَلَّذِينَ قَالُوٓا اِنَّ اللّٰهَ عَهِدَ اِلَيْنَآ اَلَّا نُؤْمِنَ لِرَسُولٍ حَتّٰى يَأْتِيَنَا بِقُرْبَانٍ
تَأْكُلُهُ النَّارُ قُلْ قَدْ جَٓاءَكُمْ رُسُلٌ مِنْ قَبْلِي بِالْبَيِّنَاتِ وَبِالَّذِي قُلْتُمْ
فَلِمَ قَتَلْتُمُوهُمْ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿١٨٣﴾

183- "'Doğrusu Allah bize, ateşin yiyeceği bir kurban getirmedikçe hiçbir peygambere inanmamamızı emretti' diyenlere şöyle de: 'Size, benden önce mucizelerle, dediğiniz ile nice peygamberler geldi. Eğer doğru insanlar iseniz, ya onları niçin öldürdünüz?'"

İmanı terk etmede ileri sürdükleri gerekçelerde Allah'a iftira ederek şöyle dediler: *"Bize, hiç kimseyi tasdik etmememiz emredildi. Meğerki o kimse, bize gökyüzü için kurban edeceği bir kurbanlık getirmiş olsun. Aynı zamanda gökten bir ateş inip o kurbanı herkesin gözü önünde alıp götürmüş olsun."* İşte bunun üzerine Allah şöyle buyurdu: Onlara de ki: *"Benden önceki peygamberler, benden istediğiniz kurbanlığı getirdiler. Sonra siz iman etmediniz. Bu nedenle ben de talebinizi kabul etsem, siz bana da iman etmeyeceksiniz."* Çünkü ilahî takdirin imandan uzaklaştırdığı kimseye güneş dahi apaçık bir dille konuşsa veya dağlar ona secde edip o da bunu gözleriyle aynen görse, yine de irfan kalbine işlemez ve sadece şüphesi bir kat daha artar.

فَاِنْ كَذَّبُوكَ فَقَدْ كُذِّبَ رُسُلٌ مِنْ قَبْلِكَ جَٓاؤُ بِالْبَيِّنَاتِ وَالزُّبُرِ
وَالْكِتَابِ الْمُنِيرِ ﴿١٨٤﴾

184- "Eğer seni yalancılıkla itham ettilerse, gerçekten senden önce apaçık mucizeler, sahifeler ve aydınlatıcı kitap getiren nice peygamberler de yalancılıkla itham edildi."

Yani, kâfirlerin âdeti, peygamberleri yalanlamaktır. Nitekim selefleri de aynı yolu izlemişlerdir. Arkalarından gelen bu kimseler de onlara uymuşlardır.

كُلُّ نَفْسٍ ذَٓائِقَةُ الْمَوْتِ وَاِنَّمَا تُوَفَّوْنَ اُجُورَكُمْ يَوْمَ الْقِيمَةِ فَمَنْ
زُحْزِحَ عَنِ النَّارِ وَاُدْخِلَ الْجَنَّةَ فَقَدْ فَازَ وَمَا الْحَيوةُ الدُّنْيَٓا اِلَّا مَتَاعُ
الْغُرُورِ ﴿١٨٥﴾

185- "Her canlı ölümü tadacaktır. Ve ancak kıyamet günü yaptıklarınızın karşılığı size tastamam verilecektir. Kim, cehennemden uzaklaştırılıp cennete konulursa, o gerçekten kurtuluşa ermiştir. Bu dünya hayatı ise aldatma metaından başka bir şey değildir."

Yani ölüm şerbetinin bardağı, her canlının eline verilir. Her kim, onu içi rahat olarak kabullenirse bu şerbet, ona vecd sarhoşluğunu kazandırır. Her kim de yüzünü buruşturarak onu içerse reddedilmişlik çukuruna düşer ve engellenmişlik dağlamasıyla damgalanır. Sonra kıyamet günü kim, ateşten korunursa en büyük rahata kavuşurken, cehennemi boylayan ise en büyük meşakkatin içine düşmüş olur.

(وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَٓا اِلَّا مَتَاعُ الْغُرُورِ) *"Bu dünya hayatı ise aldatma metaından başka bir şey değildir."* Çünkü gelmekte olan her şey yakındır.

لَتُبْلَوُنَّ فٖي اَمْوَالِكُمْ وَاَنْفُسِكُمْ وَلَتَسْمَعُنَّ مِنَ الَّذٖينَ اُو۫تُوا الْكِتَابَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَمِنَ الَّذٖينَ اَشْرَكُٓوا اَذًى كَثٖيرًا وَاِنْ تَصْبِرُوا وَتَتَّقُوا فَاِنَّ ذٰلِكَ مِنْ عَزْمِ الْاُمُورِ ﴿١٨٦﴾

186- "Andolsun ki, mallarınız ve canlarınız konusunda imtihana çekileceksiniz. Sizden önce kendilerine kitap verilenlerden ve müşriklerden bir çok üzücü şeyler işiteceksiniz. Eğer sabreder ve takva gösterirseniz, muhakkak ki bu, işlerin en değerlisidir."

Allah, zararın sebepleri başlarına gelmeden önce hakkında bilgi vermek suretiyle, onları bu sebeplerden korumuştur. Ayrıca kendileri için en hayırlı olan işin, kaderin tecellileri altında sabra öncelik vermeleri ve sükûneti tercih etmeleridir.

وَاِذْ اَخَذَ اللّٰهُ مٖيثَاقَ الَّذٖينَ اُو۫تُوا الْكِتَابَ لَتُبَيِّنُنَّهُ لِلنَّاسِ وَلَا تَكْتُمُونَهُ فَنَبَذُوهُ وَرَٓاءَ ظُهُورِهِمْ وَاشْتَرَوْا بِهٖ ثَمَنًا قَلٖيلًا فَبِئْسَ مَا يَشْتَرُونَ ﴿١٨٧﴾

187- "Allah, kendilerine kitap verilenlerden, 'onu mutlaka insanlara açıklayacaksınız, onu gizlemeyeceksiniz' diyerek söz almıştı. Onlar ise bunu kulak ardı ettiler. Onu az bir dünyalığa değiştiler. Yaptıkları alışveriş ne kadar kötü!"

Allah, bu kimselerin, ahitlerine vefadan ayrılmayacaklarına dair olarak kesin söz verdiklerini, ancak yöneldikleri nankörlük sebebiyle bağlılıklarını bozduklarını haber vermektedir. Sonra, kaybettikleri dinin yerine koydukları değersiz metaların da kendilerine fayda vermediği ortaya çıkmıştır.

لَا تَحْسَبَنَّ الَّذِينَ يَفْرَحُونَ بِمَآ اَتَوْا وَيُحِبُّونَ اَنْ يُحْمَدُوا بِمَا لَمْ يَفْعَلُوا فَلَا تَحْسَبَنَّهُمْ بِمَفَازَةٍ مِنَ الْعَذَابِ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيمٌ ﴿١٨٨﴾

188- "Sanma ki, ettikleriyle sevinen, yapmadıklarıyla övülmek isteyenler, evet, sanma ki onlar azaptan kurtulacaklardır. Onlar için elem verici bir azap vardır."

Kalbi, sadece halkı görmekle meşgul olan, sırrıyla da onları düşünen kimselerin azaplarının kıyamet gününe erteleneceğini zannetmeyiniz. Aksine onlar dünyada da azaptan kurtulmazlar. Hangi azap, Hak'tan engellenip halka döndürülmekten daha şiddetli olabilir!

وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ﴿١٨٩﴾

189- "Göklerin ve yerin hükümranlığı Allah'ındır. Allah'ın her şeye gücü yeter."

Bu ayet, Allah'ın kâinattaki hiçbir şeye muhtaç olmadığına işaret etmektedir. Varlıklar, O'na hiçbir halef ve alternatif bulamadıkları halde Allah nasıl onlara muhtaç olur ki!

اِنَّ فِي خَلْقِ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَاخْتِلَافِ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ لَاٰيَاتٍ لِاُولِي الْاَلْبَابِ ﴿١٩٠﴾

اَلَّذِينَ يَذْكُرُونَ اللّٰهَ قِيَامًا وَقُعُودًا وَعَلٰى جُنُوبِهِمْ وَيَتَفَكَّرُونَ فِي خَلْقِ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ رَبَّنَا مَا خَلَقْتَ هٰذَا بَاطِلًا سُبْحَانَكَ فَقِنَا عَذَابَ النَّارِ ﴿١٩١﴾

190, 191- "Göklerin ve yerin yaratılışında, gece ile gündüzün birbiri ardınca gelip gidişinde sağduyu sahipleri için gerçekten açık ibretler vardır. Onlar, ayakta dururken, otururken, yanları üzerine yatarken Allah'ı anarlar. Göklerin ve yerin yaratılışı hakkında da derin derin düşünür ve şöyle derler: 'Rabbimiz! Sen, bunu boşuna yaratmadın. Seni tesbih ederiz. Bizi cehennem azabından koru!'"

Allah'ın kendileriyle zatını avama tanıttığı ayetler, kâinatta var olan ibretler ve eserlerdir. Zâtını havassa tanıttığı ayetler ise bizatihi onların içindeki şeylerdir. Allah: (سَنُرِيهِمْ اٰيَاتِنَا فِي الْاٰفَاقِ وَفِي اَنْفُسِهِمْ) *"İnsanlara, ufuklarda ve kendi nefislerinde ayetlerimizi göstereceğiz"* (Fussilet, 41/53) buyurmuştur. Bu çerçevede görünen ayetler ilmelyakîni, görünmeyen ayetler ise aynelyakîni sağlar.

Gece ile gündüzün birbiri ardınca gelip gidişi, kulların gecelerinin geliş gidişine işarettir. Buna göre; vuslat ehlinin geceleri kısa, firkat ehlinin geceleri ise uzundur.

Şiir:

*Gelip geçmekte aylar ama farkında olmadık biz*
*Onların ortalarının da gizemlerinin de*

Şiir:

*Sabahın sarhoşluk akşamınsa mahmurluk*
*Uyudun sen, kısa iken sevinç günleri*

Şiir:

*(...) göçerleri durduran geceleri*
*Şikâyet ettin sen, oysa uzundur gecesi âşıkların*

Üçüncü bir grup da vardır ki, gecelerin ne uzunluğundan ne de kısalığından haberi vardır. Bu durumdaki kimse, ona galebe çalan halden dolayı şöyle der:

Şiir:

*Bilemem ben uzadı mı gecem uzamadı mı?*
*Nasıl bilir bunu kavrulmakta olan kimse*
*Kendimi gecemi uzun bulmaya verseydim eğer*
*Ve gözleseydim yıldızları, helal sayan olurdum*

(لِأُولِي الْأَلْبَابِ) *"Sağduyu sahipleri için."* Sağduyu sahipleri, akılları gaflet sarhoşluğundan ayılmış kimselerdir. Bu durumda olan kimsenin belirtisi, bakışının Hak ile olmasıdır. Bir kimse, hakkı gözeterek Hakk'a baktığı zaman, bakışı istikamet üzere olur. Oysa halktan hareketle Hakk'a baktığı zaman, nimeti değişmiş ve düşünceleri şüphe doğuracak hale gelmiş olur.

(اَلَّذِينَ يَذْكُرُونَ اللّٰهَ قِيَامًا وَقُعُودًا وَعَلٰى جُنُوبِهِمْ) *"Onlar, ayakta dururken, otururken, yanları üzerine yatarken Allah'ı anarlar."*

Bu kimselerin bütün zamanını zikir almaktadır. O kadar ki, kalkarlarsa O'nun zikriyle kalkarlar. Aynı şekilde, oturur, uyur veya secde ederlerse, bütün bu halleri, zikrin hakikatlerinde geçer. Böylece onlar, zikrinin hakkını yerine getirir ve emrine aykırı davranmaktan geri dururlar. Hallerinin safiyetini yaşarken, o halleri görüp iddiacı olmaktan geri dururlar.

Onlar, Allah'ı hizmet makamında ayakta zikrettikten sonra, yakınlık makamında otururlar. Kim, ayakta duruşunun başlangıcında kusur işlemekten kurtulamazsa, sonunda huzura ermiş olarak oturmak ona nasip olmaz.

Bu arada zikir, Hakk'ın yoludur. Bu nedenle müridler, zikir yolundan daha doğru ve daha açık bir yol izlememişlerdir. Hatta eğer zikir hakkında: *"Ben, beni zikredenle beraberim"* sözünden başka hiçbir şey bulunmasa bile bu, yeterli olurdu.

Öte yandan halleri birbirinden farklı olduğu için, zikredenler birkaç kısımdır: Bir kısım zikir, zikredende kabz haline yol açar. Çünkü o, daha önce işlediği bir kusuru veya yaptığı bir çirkinliği hatırlar ve bundan duyduğu mahcubiyet, onu Allah'ı zikretmekten alıkoyar. İşte bu kabz zikridir.

Bir kısım zikir de zikredende bast sağlar. Nedeni ise zikirden aldığı lezzetlerin yanı sıra, Allah'ın onu güzel teveccühü ile kendine yaklaştırmasıdır.

Bir kısım zikreden de vardır ki, zikrettiği Allah'ın şuhudunda mahviyet yaşar. Bu durumda onun dili zikrederken, kalbi gördükleriyle yerinden fırlamıştır.

Bir kısım zikreden de vardır ki yüceltilmeye değerdir. Bu kimse, zikrine değer vermez ve anlatılmasını çirkin bulur. Sanki o, bu durumu küçümsediğinden kendisi için dünyada ve ahirette ne bir övgü ne bir kalış, ne bir varlık ne de bir güzelliğin olmasını ister.

Şiir:

*Ne kadar andıysam seni, lanetlemek istedi beni*
*Kalbim, ruhum ve sırrım, seni anarken ben*
*Hatta sanki senden bir rakip bana şöyle sesleniyor:*
*Sakın ha sakın anmaktan!*

Zikir, aynı zamanda bağlılığın göstergesi, vuslatın izahı, müridliğin gerçekleştirilmesi, doğru başlangıç yapıldığının alameti ve sonucun safiyetinin ifadesidir. Bu itibarla zikrin ötesinde bir şey yoktur. Bütün güzel vasıflar zikre dayanır ve zikirden oluşturulur.

(وَيَتَفَكَّرُونَ فِي خَلْقِ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ رَبَّنَا مَا خَلَقْتَ هٰذَا بَاطِلًا) *"Göklerin ve yerin yaratılışı hakkında da derin derin düşünür ve şöyle derler: 'Rabbimiz! Sen, bunu boşuna yaratmadın.'"*

Tefekkür, her arayana verilmiş bir nimettir. Semeresi ise ilim şartıyla kavuşmaktır. Bu nedenle zikir şaibesiz olduğu zaman, sahibi hakikatin kaynaklarına varmış olur. Şuhud ve huzur gerçekleş-

tiği zaman da sahibi fikir merhalesinden zikrin sınırına yükselmiş olur. Bu itibar kalıcı olan zikirdir.

Sonra zahidlerin düşüncesi, dünyanın fani oluşuna ve taliplerine olan vefasının azlığına yöneliktir. Bu düşünceyle onların dünya hakkındaki zühtleri artmaktadır.

Abidlerin düşüncesi ise güzel sevaba yönelik olduğundan onların ibadetle ilgili çaba ve arzuları artar.

Ariflerin düşüncesi ise lütuf ve nimetlere dönük olduğundan onların Hakk'a olan sevgileri artmış olur.

(سُبْحَانَكَ فَقِنَا عَذَابَ النَّارِ) *"Seni tesbih ederiz. Bizi cehennem azabından koru!"*

Tesbih, sırların tazim denizlerinde yüzmesine işaret etmektedir.

رَبَّنَٓا اِنَّكَ مَنْ تُدْخِلِ النَّارَ فَقَدْ اَخْزَيْتَهُ وَمَا لِلظَّالِمٖينَ مِنْ اَنْصَارٍ ﴿١٩٢﴾

192- "Ey Rabbimiz! Doğrusu sen, kimi cehenneme koyarsan, artık onu rüsva etmişsindir. Zalimlerin hiç yardımcıları yoktur."

Kıyamette yakmakla cezalandırdığın kimseyi rüsva etmiş olursun. Dünyada firkatle cezalandırdığın kimseyi de mutsuz kılmış olursun. Vuslatın bereketiyle koruduğun kimseyi de barındırmış ve yakınlaştırmış olursun.

رَبَّنَٓا اِنَّنَا سَمِعْنَا مُنَادِيًا يُنَادٖي لِلْاٖيمَانِ اَنْ اٰمِنُوا بِرَبِّكُمْ فَاٰمَنَّا رَبَّنَا فَاغْفِرْ لَنَا ذُنُوبَنَا وَكَفِّرْ عَنَّا سَيِّاٰتِنَا وَتَوَفَّنَا مَعَ الْاَبْرَارِ ﴿١٩٣﴾

193- "Ey Rabbimiz! Gerçek şu ki biz, 'Rabbinize inanın' diye imana çağıran bir davetçiyi işittik, hemen iman ettik. Artık bizim günahlarımızı bağışla! Kötülüklerimizi ört, ruhumuzu iyilerle beraber al, Ey Rabbimiz!"

Yani biz davetçiyi kabul ettik; ancak hidayeti veren sensin. O halde bizi bize bırakma ve inayetinin gölgesini üzerimizden kaldırma.

Bu arada iman, güvenin sebepleri içinde yer almaktan ibarettir. Nitekim Hakk'a, ancak O'nun güvene kavuşturduğu kimse iman eder. O halde Hakk'ın kula, alacağı olan güveni sağlaması, kulun Hakk'ı tasdikine ve tanımaktan ibaret olan imanına vesile olur.

(وَتَوَفَّنَا مَعَ الْاَبْرَارِ) *"Ruhumuzu iyilerle beraber al."* İyiler, tevhidin gerçekleri hakkında ihtisas sahibi olup Allah'ı birlemenin şartlarını yerine getirenler ve tecridin özellikleriyle Allah ile beraber duranlardır.

رَبَّنَا وَاٰتِنَا مَا وَعَدْتَنَا عَلٰى رُسُلِكَ وَلَا تُخْزِنَا يَوْمَ الْقِيٰمَةِ اِنَّكَ لَا تُخْلِفُ الْمِيعَادَ ﴿١٩٤﴾

194- "Rabbimiz! Bize peygamberlerin vasıtasıyla vaat ettiklerini de ikram et ve kıyamet gününde bizi rezil rüsva etme! Şüphesiz sen, vaadinden caymazsın."

Vasıtaların dilleri üzerinden bize vaat ettiklerini gerçekleştir. Bunlar, nimetlerin tamamlanması ve daha önce nefse uyarak yaptığımız bütün hataların bağışlanması gibi hususlardır.

فَاسْتَجَابَ لَهُمْ رَبُّهُمْ اَنّ۪ي لَٓا اُض۪يعُ عَمَلَ عَامِلٍ مِنْكُمْ مِنْ ذَكَرٍ اَوْ اُنْثٰى بَعْضُكُمْ مِنْ بَعْضٍ فَالَّذ۪ينَ هَاجَرُوا وَاُخْرِجُوا مِنْ دِيَارِهِمْ وَاُو۫ذُوا ف۪ي سَب۪يل۪ي وَقَاتَلُوا وَقُتِلُوا لَاُكَفِّرَنَّ عَنْهُمْ سَيِّـَٔاتِهِمْ وَلَاُدْخِلَنَّهُمْ جَنَّاتٍ تَجْر۪ي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ ثَوَابًا مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ وَاللّٰهُ عِنْدَهُ حُسْنُ الثَّوَابِ ﴿١٩٥﴾

195- "Bunu üzerine Rableri, onların dualarını kabul etti. De ki: 'Ben, erkek olsun, kadın olsun ki, hep birbirinizdensiniz, içinizden çalışan hiçbir kimsenin yaptığını boşa çıkarmayacağım. Onlar ki, hicret ettiler, yurtlarından çıkarıldılar, benim yolumda eziyete uğradılar, çarpıştılar ve öldürüldüler. Andolsun, ben de

onların kötülüklerini örteceğim ve onları, altlarından ırmaklar akan cennetlere koyacağım.' Bu mükâfat Allah tarafındandır. Karşılığın güzeli ise Allah katındadır."

Onlara duayı telkin eden kendisi olduğu halde Allah, dualarını nasıl kabul etmez ki? Aynı zamanda kabul etmeyi onlar için taahhüt eden de kendisidir. Kaldı ki, Allah'ın duaya karşılık olarak verdiği güzel sevap sözü, ihtiyaçlar için istediklerinden fazladır.

(فَالَّذِينَ هَاجَرُوا) "*Onlar ki, hicret ettiler.*" Yani memleketlerini, ziyaret yerlerini ve karşıt veya yandaş kendisi dışında kim varsa hepsini terk ettiler.

(وَأُخْرِجُوا مِنْ دِيَارِهِمْ) "*Yurtlarından çıkarıldılar.*" Böylece onlar, alıştıkları yerlerden ayrılmış oldular.

(وَأُوذُوا فِي سَبِيلِي) "*Benim yolumda eziyete uğradılar.*" Fakirlik ve sitemle horlandılar ve her türlü meşakkat ve acıyla musibete uğradılar.

(وَقَاتَلُوا وَقُتِلُوا) "*Çarpıştılar ve öldürüldüler.*" Tatlı ve acı pek çok değişik durumu tattılar.

(لَأُكَفِّرَنَّ عَنْهُمْ سَيِّئَاتِهِمْ) "*Andolsun, ben de onların kötülüklerini örteceğim.*" Yani, yemin olsun ki, onlara beklediklerinin üstünde ve amelleri ve halleriyle hak ettiklerinden daha fazlasını vereceğiz.

لَا يَغُرَّنَّكَ تَقَلُّبُ الَّذِينَ كَفَرُوا فِي الْبِلَادِ ﴿١٩٦﴾ مَتَاعٌ قَلِيلٌ ثُمَّ مَأْوٰيهُمْ جَهَنَّمُ وَبِئْسَ الْمِهَادُ ﴿١٩٧﴾

196, 197- "İnkârcıların diyar diyar dolaşması, sakın seni aldatmasın! Azıcık bir menfaattir o. Sonra onların varacakları yer cehennemdir. O ne kötü varış yeridir!"

İçine, katımızda herhangi bir kadir ve kıymetlerinin olduğu konusunda senin içine bir vehim düşmesin. Onların refah günleri, az sayıdaki günler ve birkaç nefesten ibarettir. Sonrasında ise peş peşe gelen hasretler ve kat kat artmış üzüntüler vardır.

لٰكِنِ الَّذِينَ اتَّقَوْا رَبَّهُمْ لَهُمْ جَنَّاتٌ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا نُزُلًا مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ وَمَا عِنْدَ اللّٰهِ خَيْرٌ لِلْاَبْرَارِ ﴿١٩٨﴾

198- "Fakat Rablerine karşı gelmekten sakınanlar için, Allah tarafından bir ikram, altlarından ırmaklar akan, ebedî olarak kalacakları cennetler vardır. İyi kişiler için Allah katındakiler daha hayırlıdır."

Firkat züllüyle damgaladığımız kimselerin hali kötüdür. Bizim için bir adım atanların halleri ise çok güzeldir. Onlar kalıcı sevaba kavuşarak vuslat ve nimetler içerisinde kaldılar. Allah'ın, kendi katında onlar için hazırladığı nimetler, onların kendi tercihleriyle umdukları şeylerden daha hayırlıdır.

وَاِنَّ مِنْ اَهْلِ الْكِتَابِ لَمَنْ يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَمَٓا اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ وَمَٓا اُنْزِلَ اِلَيْهِمْ خَاشِعِينَ لِلّٰهِ لَا يَشْتَرُونَ بِاٰيَاتِ اللّٰهِ ثَمَنًا قَلِيلًا اُو۬لٰٓئِكَ لَهُمْ اَجْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ اِنَّ اللّٰهَ سَرِيعُ الْحِسَابِ ﴿١٩٩﴾

199- "Kitap ehlinden öyleleri var ki, Allah'a, hem size indirilene, hem de kendilerine indirilene tam bir samimiyetle ve Allah'a boyun eğerek iman ederler. Allah'ın ayetlerini az bir paraya satmazlar. İşte onlar için Rableri katında ecirler vardır. Şüphesiz Allah, hesabı çabuk olandır."

Yani, kaderin güzellikle yaver olduğu kimseler, kaderde olduğu gibi, nimette de Allah'ın velileriyle birlikte olurlar.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا اصْبِرُوا وَصَابِرُوا وَرَابِطُوا وَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿٢٠٠﴾

200- "Ey iman edenler! Sabredin, düşman karşısında sebat gösterin. Hazırlıklı ve uyanık bulunun ve Allah'tan korkun ki, felaha erişebilesiniz."

Sabır, kulun tek başına yaşadığı bir haldir. “Musabara” ise düşmana karşı gösterilen sabırdır. “Ribat” ise sabrın özel bir çeşididir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Sabrın başlangıcı, sabırlı olmaya çalışmak şeklinde olur. Bunu sırayla “sabır”, “musabara” ve son merhale olan “ıstıbar (sabrı özümseme)” izler.

- İbadetleri yerine getirmede ve aykırılıklardan sakınmada sabredin. Nefsî ve şehevî arzularınızı terk edip emel ve ilgilerinizi koparmak konusunda sabır üzerine yardımlaşın. Bütün vakitlerde ve hallerde beraberlikte istikameti gözetmek suretiyle hazırlık içinde olun.

- Nefislerinizle sabredin. Kalplerinizle sabırda yarışın. Sırlarınızla da Allah’a bağlı kalın.

- Sevabı düşünmede sabırlı olun. Sabırla Allah’a yakınlığı arama konusunda yardımlaşın. Allah’a yakınlık makamında O’nun cemal ve izzetini seyretmeyi bırakmayın.

Bu arada kulun, tecelliye mazhar olmadan göstermeye çalıştığı sabrın tadı acıdır. Kulun, Allah’ı müşahede ve görme üzerine tattığı sabır ise lezzetlidir.

(وَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ) “*Allah’tan korkun ki, felaha erişebilesiniz.*” Felah, arzu edileni elde etmektir. Onların bugünkü himmeti ise nefislerini ele geçirmektir. O zaman kurtuluşları gerçek olur. Onlar, nefislerini ele geçirdikleri zaman, onu mücâhede kılıçlarıyla keserek tahammül sehpasında asarlar. Nefisten kurtulduktan sonra ise Allah ile beka makamına ererler.

سورة النِّساءِ

# NİSA SÛRESİ

(Medine'de Hicretin 3-5. yılları arasında inmiştir.
176 ayettir. "Nisâ" kadınlar demektir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**"Rahman ve Rahim olan Allah'ın adıyla."**

Âlimler, "isim" lafzının hangi kökten türetildiği konusunda ihtilafa düşmüşlerdir. Onlardan kimisi, bu lafzın yükseklik anlamındaki "sumuvv" kökünden türetildiğini söylerken, kimisi de: Bu lafız, nişan anlamındaki "simet" kökünden türetilmiştir, demiştir.

Her iki görüşün de işârî tefsirde yeri vardır. Bu itibarla, "sumuvv" kökünden türetildiğini söyleyen görüşe göre; bu lafız, öyle bir isimdir ki, onu zikredenin rütbesi, onu tanıyanın hali, onunla birlikte olanın ise himmeti yükselir. Bu çerçevede rütbenin yükselmesi sevap ve iyiliklerin çoğalmasını, halin yükselmesi sırlarda nurların ortaya çıkmasını, himmetin yükselmesi de başkalarına köle olmaktan kurtulmayı sağlar.

Aslının "simet" kökünden geldiği şeklindeki görüşe göre ise bu lafız, öyle bir isimdir ki, ona yönelen kimse ibadet nişanı, onunla birlikte olan kimse müridlik nişanı, onu seven kimse havas nişanı, onu tanıyan kimse de ihtisas nişanı kazanmış olur. Bu çerçevede ibadet nişanı, cehennem ateşinin, sahibinin üzerine alevlerini atmaktan

korkmasını, müritlik nişanı, bu onurlu önemine rağmen sahibinin köleleştirilmesine dönük arzudan ürkmeyi, havas nişanı, su ve çamurdan yaratılmış olan insanın, her şeyden üstün olmasından duyulan şaşkınlığın ortadan kalkmasını, ihtisas nişanı da hakikat sultanının hâkimiyeti esnasında hükmün yok olmasını sağlar.

Diğer bir görüşe göre de bu, öyle bir isimdir ki, ona bağlı kalan kimsenin nazarında Allah'ın kadri vehimlerin üstüne çıkmış olur. Ondan ayrılan ise ayrılık damgasıyla damgalanmış olur. İşte Allah'ın ismi, bütün bu anlamları ifade eder.

يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوا رَبَّكُمُ الَّذ۪ي خَلَقَكُمْ مِنْ نَفْسٍ وَاحِدَةٍ وَخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا وَبَثَّ مِنْهُمَا رِجَالًا كَث۪يرًا وَنِسَٓاءً وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذ۪ي تَسَٓاءَلُونَ بِه۪ وَالْاَرْحَامَ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلَيْكُمْ رَق۪يبًا ﴿١﴾

1- "Ey insanlar! Sizi bir tek nefisten yaratan ve ondan da eşini yaratan ve ikisinden birçok erkekler ve kadınlar üretip yayan Rabbinizden sakının. Adını kullanarak birbirinizden dilekte bulunduğunuz Allah'tan ve akrabalık haklarına riayetsizlikten de sakının. Şüphesiz Allah, sizin üzerinizde gözetleyicidir."

(النَّاسُ) "*Nâs*" lafzı cins isim olup iştikakı güçlü değildir. Bir görüşe göre insana "ins" adının verilmesi, görünür olmasından dolayıdır. Buna göre ayetin işareti şöyledir: Ey yokluğun gizliliğinden teklifimin hükmüyle ortaya çıkan insanlar! Daha sonra ben, içinizden dilediğimi özel olarak şerefli kıldım. İçinizden kimilerini de hidayetim ve marifetimden mahrum ettim. Ve tasarrufum çerçevesinde sizi dilediğim yere taşıdım. Daha doğrusu dilediğim yere ulaştırdım.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Ben, ne size benzeyen birilerini yoktan ortaya çıkardım ne de sizde medya getirdiğim halleri hiçbir kimsede meydana getirdim.

- İnsanın insan olarak adlandırılması, unutkanlık demek olan nisyanından ötürüdür. Bu itibarla eğer sen beni unutursan, senden

daha değersiz bir şey olamaz. Şayet beni anmayı unutursan, bu kez de senden daha alçak biri olamaz.

- Kim Hakk'ı unutursa, meşakkatini sonu yoktur. Kim de halkı unutursa, halinin yüksekliğinin sonu yoktur.

- Allah, günahkârlara şöyle der: Ey bana verdiğin söz sana unutturulan, sevgimi reddeden ve koyduğum sınırı aşan kimse, lütuf ve kabulümü hak etmen için kapıma dönmenin zamanı gelmiştir. Ariflere de şöyle der: Ey bizim yolumuzda nefsinin payını unutan, bakışını ve sözünü bizden başkasından koruyan kimse, üzerimizdeki hakkın büyüdü, katımızda sana yardım etmek vacip oldu ve bizde kadrin büyüdü.

- Ey benim yakınlığımın esintisiyle dost olan, zâtımın tecellisiyle huzura kavuşan ve kadrimin yüceliğiyle övünen kimse, sen katımda kullarımın en büyüğüsün.

(اتَّقُوا رَبَّكُمْ) "*Rabbinizden sakının.*" Takva, ibadetlerin bileşkesidir. Başlangıcı şirki terk etmek, sonu ise Allah'tan başka her şeye uzak durmaktır. Senin için başkaların başında nefsin gelmektedir. Her kim, nefsinden sakınırsa, hiçbir makam ve hal tecellisi beklemeden Allah ile beraber olur. Allah ile beraberliği, dünya ve ahiret hazlarından birini görme için değil, sırf Allah içindir.

(الَّذِي خَلَقَكُمْ مِنْ نَفْسٍ وَاحِدَةٍ) "*Sizi bir tek nefisten yaratan.*" Söz konusu tek nefis, Hz. Âdem'dir. Biz Âdem'den, Âdem de Allah'ın eliyle yaratıldığına göre, biz de Allah'ın eliyle yaratılmış bulunuyoruz. Allah'ın eliyle yaratılmış olmakla, Hz. Âdem'in diğer bütün erkek ve dişi yaratıklardan üstünlüğü ortaya çıkınca, biz de aynı vasfa sahip olmuş olduk. Nitekim Allah: (أُولَٰئِكَ هُمْ خَيْرُ الْبَرِيَّةِ) "*Yaratıkların en hayırlısıdır onlardır*" (Beyyine, 98/7), buyurmuştur. Bu arada ayetteki "nefis" lafzı genel anlamdadır. Genellik ise herkesi içine almasını gerektirir.

(وَخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا) "*Ondan da eşini yaratan.*" Allah, neslin devamı ve benzeri benzerle birlikte kılmak için, yaratıkların beraber yaşamalarına hükmetmiş ve türleri birbirine bağlamıştır.

(وَبَثَّ مِنْهُمَا رِجَالًا كَثِيرًا وَنِسَآءً) *"ikisinden birçok erkekler ve kadınlar üretip yayan."* Allah, kudretinin kemalini esas alarak ortaya koyduğu rububiyyet delilleri ve hikmetin gerekleriyle kendini akıl sahiplerine tanıtmıştır. Şöyle ki, görünüş ve şekillerinin farklılığı ile ahlaklarının uyumsuzluğuna rağmen, bütün halkı bir tek kişinin neslinden yaratmıştır. Nitekim bunlardan iki kişi bile birbirine benzememektedir. Her birinin kendine özgü bir görünüşü, ahlakı, gayreti ve durumu vardır. Bu nedenle kudreti sınırsız ve ilmi sonsuz olan Allah, her türlü noksanlıktan münezzehtir.

(وَاتَّقُوا اللّٰهَ) *"Allah'tan sakının."* Takvaya dair emrin tekrarlanması, hükmünün önemini göstermektedir.

(تَسَآءَلُونَ بِهٖ وَالْاَرْحَامَ) *"Akrabalık haklarına riayetsizlikten de sakının."* Yani akrabalık bağlarını koparmaktan sakının. Zira kim, bu bağı koparırsa, kendisiyle olan bağ koparılır. Kim de onu korursa, kendisiyle olan bağ korunur.

(اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلَيْكُمْ رَقِيبًا) *"Şüphesiz Allah, sizin üzerinizde gözetleyicidir."* Allah sizden haberdardır ve sizi gözetlemektedir. İnsanın nefeslerini saymakta, duygularını görmektedir. Aynı zamanda Allah, insanın içine doğanlara hâkim olmanın yanı sıra, hareket ve duruşlarının da yaratıcısıdır. Bu itibarla kim, Allah'ın kendisini gözetlediğini bilirse O'ndan utanması kendisine yakışır.

وَاٰتُوا الْيَتَامٰىٓ اَمْوَالَهُمْ وَلَا تَتَبَدَّلُوا الْخَبِيثَ بِالطَّيِّبِ وَلَا تَاْكُلُوٓا
اَمْوَالَهُمْ اِلٰىٓ اَمْوَالِكُمْ اِنَّهُ كَانَ حُوبًا كَبِيرًا ﴿٢﴾

2- "Yetimlere mallarını verin, temizi pis olanla değişmeyin, onların mallarını kendi mallarınıza katarak yemeyin. Çünkü bu, büyük bir günahtır."

Her kim, sorumluluk mevkiine getirilir de sorumlu olduğu kimselerin haklarını çiğnerse, onun hasmı Allah'tır. Çünkü Allah, kendisi için vermediği cezayı kulları için verir. Bu itibarla yetimin velisi, insaf ve güzellikle davrandığı zaman, onun hakkı Allah'a ait olur.

Şayet kötü davranıp hakka tecavüz ederse, bu kez de Allah, onun hasmı olur.

وَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا تُقْسِطُوا فِي الْيَتَامٰى فَانْكِحُوا مَا طَابَ لَكُمْ مِنَ
النِّسَاۤءِ مَثْنٰى وَثُلٰثَ وَرُبَاعَ فَاِنْ خِفْتُمْ اَلَّا تَعْدِلُوا فَوَاحِدَةً اَوْ مَا
مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ ذٰلِكَ اَدْنٰٓى اَلَّا تَعُولُوا ﴿٣﴾ وَاٰتُوا النِّسَاۤءَ صَدُقَاتِهِنَّ
نِحْلَةً فَاِنْ طِبْنَ لَكُمْ عَنْ شَيْءٍ مِنْهُ نَفْسًا فَكُلُوهُ هَنِيۤـًٔا مَرِيۤـًٔا ﴿٤﴾

3,4- "Eğer yetimlerin haklarına riayet edememekten korkarsanız, beğendiğiniz kadınlardan ikişer, üçer, dörder alın. Haksızlık yapmaktan korkarsanız bir tane alın yahut sahip olduğunuz cariye ile yetinin. Bu, adaletten ayrılmamanız için en uygun olanıdır. Kadınlara mehirlerini gönül rızası ile verin. Eğer gönül hoşluğu ile o mehrin bir kısmını size bağışlarlarsa, onu da afiyetle yeyin."

Allah, hür erkeklere aynı anda dört kadınla evlenmeyi mubah ve aralarında adaleti gözetmeyi vacip kılmıştır. Bu nedenle kulun, bu vacibe riayet etmesi vaciptir. O halde eğer bu vacibin hakkını yerine getireceğine inanıyorsa bu mubahı tercih edebilir. Şayet bu vacip hakkında kusur işleyeceğine inanıyorsa, o takdirde bu mubaha bulaşmasın. Çünkü vacip sorulur.

(فَاِنْ طِبْنَ لَكُمْ عَنْ شَيْءٍ مِنْهُ نَفْسًا فَكُلُوهُ هَنِيۤـًٔا مَرِيۤـًٔا) *"Eğer gönül hoşluğu ile o mehrin bir kısmını size bağışlarlarsa, onu da afiyetle yeyin."*

Bu ayet, mert ve cömert insanların yemeğinin helal olduğunu göstermektedir. Çünkü onlar, ancak gönül hoşluğuyla yedirirler. Cimrilerin yemeği ise kötüdür. Çünkü onlar, kendi nefislerini görürler ve gönül hoşluğuyla değil, zorlanarak yedirirler. Hz. Peygamber: *"Cömerdin yemeği ilaç, cimrinin yemeği ise hastalıktır"* buyurmuştur.

وَلَا تُؤْتُوا السُّفَهَاۤءَ اَمْوَالَكُمُ الَّتِي جَعَلَ اللّٰهُ لَكُمْ قِيَامًا وَارْزُقُوهُمْ
فِيهَا وَاكْسُوهُمْ وَقُولُوا لَهُمْ قَوْلًا مَعْرُوفًا ﴿٥﴾

5- "Allah'ın, geçiminize dayanak kıldığı mallarınızı aklı ermezlere vermeyin. O mallarla onları besleyin, giydirin ve onlara güzel söz söyleyin."

Aklı ermezden maksat, insanı Hak'tan alıkoyarak meşgul eden kimsedir. Aile fertleri ve çocuklardan aklı ermezler ise arzuları Allah'ın haklarına tercih edilenlerdir.

(الَّتِي جَعَلَ اللهُ لَكُمْ قِيَامًا) *"Allah'ın geçiminize dayanak kıldığı."* Güzel durumunuzu muhafaza etmeniz, sizin için savurganlık, dilencilik ve sahtekârlığa maruz kalmaktan daha faydalıdır. Nitekim harcama, ancak kalbin hür ve sabra güvenin var olduğu durumda tutumluluktan daha iyi olur. Ancak dilencilik ve kendisiyle aile fertlerini insanların sırtına yük yapmak niyeti söz konusu olduğu zaman, bu takdirde Allah'ın insana verdiği kendi geçimini koruması daha iyi olur. Cömertliği de rızkından artan kısımla yapar.

(وَارْزُقُوهُمْ فِيهَا وَاكْسُوهُمْ وَقُولُوا لَهُمْ قَوْلًا مَعْرُوفًا) *"O mallarla onları besleyin, giydirin ve onlara güzel söz söyleyin."* Elindeki mallar, onların günlük ihtiyaçlarına yetip artıyorsa, yarınki fakirlik korkusuyla, ihtiyaçlarının gerektirdiği harcamalardan kısma. Yok eğer harcayamayacak derecede elin darda ise bu durumda dilini çirkin sözlerle genişlik içinde tutma.

Bir yorum da şöyledir: Nefsin seni batıl yolunda harcamaya sevk ettiği zaman, bu takdirde sen sefihlerin en sefihisin. O halde nefsine uyma!

وَابْتَلُوا الْيَتَامٰى حَتّٰٓى اِذَا بَلَغُوا النِّكَاحَ فَاِنْ اٰنَسْتُمْ مِنْهُمْ رُشْدًا فَادْفَعُوٓا اِلَيْهِمْ اَمْوَالَهُمْ وَلَا تَاْكُلُوهَٓا اِسْرَافًا وَبِدَارًا اَنْ يَكْبَرُوا وَمَنْ كَانَ غَنِيًّا فَلْيَسْتَعْفِفْ وَمَنْ كَانَ فَقِيرًا فَلْيَاْكُلْ بِالْمَعْرُوفِ فَاِذَا دَفَعْتُمْ اِلَيْهِمْ اَمْوَالَهُمْ فَاَشْهِدُوا عَلَيْهِمْ وَكَفٰى بِاللّٰهِ حَسِيبًا ﴿٦﴾

6- "Evlilik çağına gelinceye kadar yetimleri gözetip deneyin. Eğer onlarda akılca bir olgunlaşma görürseniz, hemen mallarını kendilerine verin. Büyüyecekler diye o malları israf ile ve tez elden

yemeyin. Zengin olan veli, iffetli olmaya çalışsın. Yoksul olan da uygun olarak yesin. Mallarını kendilerine verdiğiniz zaman, yanlarında şahit bulundurun. Hesap soran olarak ta Allah yeter."

Rüştün göstergeleri iffet, dindarlık, cömertlik, hakkı korumak, olgun kimselerle arkadaşlık etmek, iyiliği gözetmeye düşkün olmak ve emre uygun olarak ibadetleri yerine getirmektir.

Bir yoruma göre ise reşit, Rabbine giden yolu bulan, bir ihtiyacı belirdiğinde kendi gücüne, kuvvetine, tedbirine ve tercihine dayanmayan kimsedir.

لِلرِّجَالِ نَصِيبٌ مِمَّا تَرَكَ الْوَالِدَانِ وَالْاَقْرَبُونَ وَلِلنِّسَآءِ نَصِيبٌ مِمَّا
تَرَكَ الْوَالِدَانِ وَالْاَقْرَبُونَ مِمَّا قَلَّ مِنْهُ اَوْ كَثُرَ نَصِيبًا مَفْرُوضًا ﴿٧﴾

7- "Ana-babanın ve yakınların bıraktıklarından erkeklere bir pay vardır. Ana-babanın ve yakınların bıraktıklarından kadınlara da bir pay vardır. Gerek azından gerek çoğundan belli bir hisse ayrılmıştır."

Mirasın hükmü ne fazilet ve menkıbeyle ne de kusur, noksanlık ve günahla değişir. Bu itibarla bir adam ölür de geride iki erkek çocuğu bırakırsa, bunlar istihkakta eşit olurlar. Bunlarda biri iyi ve takva sahibi, diğeri ise fâsık ve asi olduğu takdirde, bu durumda ne takvasından dolayı takvalıya bir fazlalık verilir ne de fâsıklığından dolayı fâsık olanın hakkından kısılır. Bundaki hikmet, mirasın Allah tarafından tanınmış olan bir hakkın başlangıcı oluşudur. Bu nedenle iyi ile kötü onda eşittir. Aynı şekilde imanın hükmü de onun, Müslümanlara Allah'ın bir lütfunun başlangıcı olmasıdır. Allah şöyle buyurur:

(ثُمَّ اَوْرَثْنَا الْكِتَابَ الَّذِينَ اصْطَفَيْنَا مِنْ عِبَادِنَا فَمِنْهُمْ ظَالِمٌ لِنَفْسِهِ)

*"Sonra Kitab'ı kullarımız arasından seçtiklerimize verdik. Onlardan kimi kendisine zulmeder."* (Fâtır, 35/32)

وَاِذَا حَضَرَ الْقِسْمَةَ اُولُوا الْقُرْبٰى وَالْيَتَامٰى وَالْمَسَاكِينُ فَارْزُقُوهُمْ
مِنْهُ وَقُولُوا لَهُمْ قَوْلًا مَعْرُوفًا ﴿٨﴾

8- “Mirastan payı olmayan yakınlar, yetimler ve yoksullar miras taksiminde hazır bulunursa, bundan onları da rızklandırın ve onlara güzel söz söyleyin.”

Yani mirasın taksimatında pay ve istihkak sahipleri ile birlikte mirasta payı olmayan kimi fakirler hazır bulunduklarında, onları da bundan mahrum etmeyin. Eğer hak sahibi varis, velayet altında ise, bu takdirde o fakirlere: “Çocuk erginleştiği zaman, sana bir şey vermesi için ona söyleriz” diyerek güzel vaatte bulunun. İşte: (وَقُولُوا لَهُمْ قَوْلًا مَعْرُوفًا) “*Onlara güzel söz söyleyin*” ifadesinin anlamı da budur. Bu ayette aynı zamanda, yarın Allah'ın huzuruna çıktıkları zaman, günahkâr müminler için de ince bir işaret bulunmaktadır. Bu çerçevede Allah, itaat ehlini bağışlar ve kendilerine amellerinin sevabını verir. O halde Allah, iman ehli olduktan sonra, sizden olan fakir Müslümanları mağfiretinden inşaallah mahrum kılmaz. Aynı şekilde taksimat günü sen hazır değildin ve senin geçmişten gelen bir istihkakın da yoktur. O halde Allah, gelecekte bir takım hatalı durumlarının olacağını bildiği halde, lütfuyla, kendisini tanımaya seni ehil kılmıştır.

وَلْيَخْشَ الَّذِينَ لَوْ تَرَكُوا مِنْ خَلْفِهِمْ ذُرِّيَّةً ضِعَافًا خَافُوا عَلَيْهِمْ
فَلْيَتَّقُوا اللّٰهَ وَلْيَقُولُوا قَوْلًا سَدِيدًا ﴿٩﴾

9- “Geriye eli ermez, gücü yetmez çocuklar bıraktıkları takdirde halleri ne olur diye korkacak olanlar, yetimlere haksızlık etmekten korkup titresinler. Allah'tan sakınsınlar ve doğru söz söylesinler.”

Allah, bu ayette, Müslüman'a yakışanın aile fertlerine birikim olarak mal değil, takva ve iyilik bırakması olduğunu açıklamaktadır. Çünkü Allah: Onlar mal toplasınlar, akar çoğaltsınlar ve eşya bıraksınlar, dememiş, aksine: (فَلْيَتَّقُوا اللّٰهَ) “*Allah'tan sakınsınlar*” buyurmuştur. Çünkü iyilere sahiplik yapan da O'dur.

اِنَّ الَّذِينَ يَأْكُلُونَ اَمْوَالَ الْيَتَامٰى ظُلْمًا اِنَّمَا يَأْكُلُونَ فِي بُطُونِهِمْ
نَارًا وَسَيَصْلَوْنَ سَعِيرًا ﴿١٠﴾

10- "Haksızlıkla yetimlerin mallarını yiyenler, şüphesiz karınlarına ancak ateş tıkınmış olurlar. Zaten onlar, alevlenmiş ateşe gireceklerdir."

Allah'ın, yetimin hakkını üzerine almasının sebebi, yetimlerin kendisinden başka kimsesinin olmamasıdır. Her kim, Allah yetimin sorumluluğunu uhdesine verdiği halde o, bu konuda bir çaba harcamazsa, Allah kendisi için vermediği cezayı o yetim için verir.

يُوصٖيكُمُ اللّٰهُ فٖٓي اَوْلَادِكُمْ لِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَيَيْنِ فَاِنْ كُنَّ نِسَٓاءً
فَوْقَ اثْنَتَيْنِ فَلَهُنَّ ثُلُثَا مَا تَرَكَ وَاِنْ كَانَتْ وَاحِدَةً فَلَهَا النِّصْفُ وَلِاَبَوَيْهِ
لِكُلِّ وَاحِدٍ مِنْهُمَا السُّدُسُ مِمَّا تَرَكَ اِنْ كَانَ لَهُ وَلَدٌ فَاِنْ لَمْ يَكُنْ
لَهُ وَلَدٌ وَوَرِثَهُٓ اَبَوَاهُ فَلِاُمِّهِ الثُّلُثُ فَاِنْ كَانَ لَهُٓ اِخْوَةٌ فَلِاُمِّهِ السُّدُسُ
مِنْ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُوصٖي بِهَٓا اَوْ دَيْنٍ اٰبَٓاؤُكُمْ وَاَبْنَٓاؤُكُمْ لَا تَدْرُونَ
اَيُّهُمْ اَقْرَبُ لَكُمْ نَفْعًا فَرٖيضَةً مِنَ اللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلٖيمًا حَكٖيمًا ١١

11- "Allah, size çocuklarınız hakkında erkeğe, kadının payının iki misli miras vermenizi emreder. İkiden fazla kadın iseler, ölünün bıraktığının üçte ikisi onlarındır. Eğer yalnız bir kadınsa yarısı onundur. Ölenin çocuğu varsa, ana-babasından her birinin mirastan altıda bir hissesi vardır. Eğer çocuğu yok ta ana-babası ona vâris olmuş ise anasına üçte bir düşer. Eğer ölenin kardeşleri varsa, anasına altıda bir düşer. Bütün bu paylar, ölenin yapacağı vasiyetten ve borçtan sonradır. Babalarınız ve oğullarınızdan hangisinin size, fayda bakımından daha yakın olduğunu bilemezsiniz. Bunlar, Allah tarafından konmuş farzlardır. Şüphesiz Allah, ilim ve hikmet sahibidir."

Burada yer alan vasiyet tabiri, emir anlamındadır. Çünkü Allah mirası, vârisler arasında iki yolla edinilen bir hak olarak vazetmiştir. Bu yollardan biri, oranı belirlenmiş olan pay demek olan farz, diğeri ise bu paylardan arta kalan kısım demek olan asabelik yani akrabalık

yoludur. Bu arada asabelik, farzdan daha güçlüdür. Çünkü asabelik, bazen mirasın tamamını kapsayabilmektedir. Oysa farz şeklindeki pay, kalan mirasın üçte ikisinden fazla olamamaktadır. Sonra mirasın taksimine istihkakları daha zayıf olan farz sahiplerinden başlanır. Ardından istihkakları daha güçlü olan asabelerle devam edilir. Hz. Peygamber (s.a.v.): *"Paylardan artakalanlar, en yakın erkek asabenin hakkıdır"* buyurmuştur. Tıpkı şu ayette olduğu gibi:

(ثُمَّ اَوْرَثْنَا الْكِتَابَ الَّذِينَ اصْطَفَيْنَا مِنْ عِبَادِنَا) *"Sonra Kitab'ı kullarımız arasından seçtiklerimize verdik."* (Fâtır, 35/32)

Allah, onlara Kitab vermeyi miras tabiriyle ifade etmiştir. Sonra istihkak bakımından daha zayıf durumda olan zalimleri öne almıştır. Amaç, zalime olan keremini ortaya koymaktır. Çünkü zalimin kalbi kırıktır ve vakti uzun müdafaaya el vermemektedir.

(لِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَيَيْنِ) *"Erkeğe, kadının payının iki misli miras vermenizi emreder."* Eğer durum akıl yürütmeye dayalı olsaydı, güçsüzlüğü ve aktiviteden aciz oluşundan dolayı, kadın daha öncelikli olurdu. Fakat Allah'ın hükmünde illet aranmaz.

(اٰبَآؤُكُمْ وَاَبْنَآؤُكُمْ لَا تَدْرُونَ اَيُّهُمْ اَقْرَبُ لَكُمْ نَفْعًا فَرِيضَةً مِنَ اللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيمًا حَكِيمًا) *"Babalarınız ve oğullarınızdan hangisinin size, fayda bakımından daha yakın olduğunu bilemezsiniz. Bunlar, Allah tarafından konmuş farzlardır. Şüphesiz Allah, ilim ve hikmet sahibidir."*

Oğullar hizmetleriyle, babalar da merhametleriyle size faydalı olmaktadırlar. Babaların merhametle faydalı olmaları, ömrün başlangıcındaki güçsüzlük halindedir. Oğulların hizmetle faydalı olmaları da ömrün nihayetindeki güçsüzlük halindedir.

وَلَكُمْ نِصْفُ مَا تَرَكَ اَزْوَاجُكُمْ اِنْ لَمْ يَكُنْ لَهُنَّ وَلَدٌ فَاِنْ كَانَ لَهُنَّ وَلَدٌ فَلَكُمُ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكْنَ مِنْ بَعْدِ وَصِيَّةٍ يُوصِينَ بِهَآ اَوْ دَيْنٍ وَلَهُنَّ الرُّبُعُ مِمَّا تَرَكْتُمْ اِنْ لَمْ يَكُنْ لَكُمْ وَلَدٌ فَاِنْ كَانَ لَكُمْ وَلَدٌ فَلَهُنَّ الثُّمُنُ مِمَّا تَرَكْتُمْ مِنْ بَعْدِ وَصِيَّةٍ تُوصُونَ بِهَآ اَوْ دَيْنٍ وَاِنْ كَانَ رَجُلٌ

يُورَثُ كَلَالَةً اَوِ امْرَاَةٌ وَلَهُ اَخٌ اَوْ اُخْتٌ فَلِكُلِّ وَاحِدٍ مِنْهُمَا السُّدُسُ
فَاِنْ كَانُوا اَكْثَرَ مِنْ ذٰلِكَ فَهُمْ شُرَكَاءُ فِي الثُّلُثِ مِنْ بَعْدِ وَصِيَّةٍ
يُوصٰى بِهَا اَوْ دَيْنٍ غَيْرَ مُضَارٍّ وَصِيَّةً مِنَ اللّٰهِ وَاللّٰهُ عَلِيمٌ حَلِيمٌ ﴿١٢﴾

12- "Yapacakları vasiyetten ve borçtan sonra eşlerinizin, eğer çocukları yoksa, bıraktıklarının yarısı sizindir. Çocukları varsa, bıraktıklarının dörtte biri sizindir. Çocuğunuz yoksa, sizin de yapacağınız vasiyetten ve borçtan sonra, bıraktığınızın dörtte biri onlarındır. Çocuğunuz varsa, bıraktığınızın sekizde biri onlarındır. Eğer bir erkek veya kadının anababası ve çocukları bulunmadığı halde, malı mirasçılara kalırsa ve bir erkek yahut bir kız kardeşi varsa, her birine altıda bir düşer. Bundan fazla iseler, üçte bire ortaktırlar. Bu taksim, yapılacak vasiyetten ve borçtan sonra, kimse zarara uğramaksızın yapılacaktır. Bunlar, Allah'tan size vasiyettir. Allah, her şeyi hakkıyla bilendir, halîmdir."

Ayet, akraba durumundaki vârislere tanınan mirasın nesep yoluyla olduğuna işaret etmektedir. Sebebi ise akrabanın ölen kişi için katlandığı üzüntülerdir. Böylece Allah, akrabanın ölü için duyduğu üzüntüleri ve çektiği acıları, malından miras vermek suretiyle telafi etmiştir. Zaten Allah'ın prensibi, bazılarının vehmettiği gibi üzerine vacip olduğu için değil, lakin bir lütuf olarak, çekilen acıları telafi etmektir. Bu arada kimin ölüyle olan nesep bağı daha yakın ve akrabalık ilişkisi daha güçlüyse, mirasında daha çok istihkak sahibi olur.

تِلْكَ حُدُودُ اللّٰهِ وَمَنْ يُطِعِ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ يُدْخِلْهُ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ
تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا وَذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيمُ ﴿١٣﴾

13- "Bunlar, Allah'ın koyduğu sınırlardır. Kim, Allah'a ve peygamberine itaat ederse, Allah onu zemininden ırmaklar akan cennetlere koyacaktır. Orada devamlı kalıcıdırlar. İşte büyük kurtuluş budur."

Allah'ın sınırları emirleri, yasakları ve kullarını yükümlü kıldığı ibadetlerdir. Bu arada kulluğun aslı, sınırları korumak ve ahitleri kollamaktır. Kim, Allah'ın sınırlarını korursa, başına hiçbir tatsız olay ve afet gelmez. Zaten her belanın temeli sınırları aşmaktır.

وَمَنْ يَعْصِ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ وَيَتَعَدَّ حُدُودَهُ يُدْخِلْهُ نَارًا خَالِدًا فِيهَا وَلَهُ عَذَابٌ مُهِينٌ ﴿١٤﴾

14- "Kim, Allah'a ve peygamberine karşı isyan eder ve sınırlarını aşarsa, Allah onu, devamlı kalacağı bir ateşe sokar ve onun için alçaltıcı bir azap vardır."

Azap iki türlüdür: Biri peşin dünya azabı, diğeri de gecikmeli ahiret azabıdır. İkisinin de beraberinde zül vardır. Bu itibarla eğer bütün yaratıklar, günah işlemeleri sebebiyle başlarına gelen züllün bir benzeriyle günahları zelil kılmaya çalışsalar, buna güç yetiremezler. İşte bu nedenle kimisi: Kim geceyi bir günah işleyerek geçirirse, üstünde onun züllünü taşıyarak sabahlar, demiştir. Ben de diyorum ki: Kim, bir iyilik yapmış olarak sabahlarsa, o iyiliğin heybetini taşımaya devam eder.

وَالّٰلَاتِي يَأْتِينَ الْفَاحِشَةَ مِنْ نِسَآئِكُمْ فَاسْتَشْهِدُوا عَلَيْهِنَّ اَرْبَعَةً مِنْكُمْ فَاِنْ شَهِدُوا فَاَمْسِكُوهُنَّ فِي الْبُيُوتِ حَتّٰى يَتَوَفّٰيهُنَّ الْمَوْتُ اَوْ يَجْعَلَ اللّٰهُ لَهُنَّ سَبِيلًا ﴿١٥﴾

15- "Kadınlarınızdan fuhuş yapanlara karşı aranızdan dört şahit getirin. Eğer şahitlik ederlerse, o kadınları ölüm alıp götürünceye kadar yahut Allah onlara bir yol açıncaya kadar evlerde hapsedin."

Zinadan ibaret olan fuhuşu ispatlamada fazla sayıda şahit istenmesi, kulların haysiyetlerini kerem örtüsüyle örtmek içindir. Çünkü dinde öngörüldüğü şekilde bu durumu ispatlamak imkânsız gibidir.

Aynı şekilde kendisine gelip: Ey Allah'ın Resulü! Ben zina yaptım, beni temizle, diyen Maiz adlı şahsa, Hz. Peygamber: *"Sadece öpmüş olabilirsin"* buyurmuştur. Adam ısrar edince, bu kez Hz. Peygamber, sarhoş olup olmadığını öğrenmek için ağzını koklamalarını emretmiştir. İşte bu hadis de, çirkin davranışların üstünün örtüldüğü şeklindeki görüşümüze en güçlü bir delildir.

وَاللَّذَانِ يَاْتِيَانِهَا مِنْكُمْ فَاٰذُوهُمَا فَاِنْ تَابَا وَاَصْلَحَا فَاَعْرِضُوا عَنْهُمَا اِنَّ اللّٰهَ كَانَ تَوَّابًا رَحِيمًا ﴿١٦﴾

16- "İçinizden fuhuş yapan her iki tarafa ceza verin. Eğer tevbe eder uslanırlarsa, artık onlara ceza verip eziyet etmekten vazgeçin. Çünkü Allah, tevbeleri çok kabul eden ve çok esirgeyendir."

Bu davranıştan dolayı çeşitli cezaların verilmesini emretmek, caydırıcılık bakımından en etkili yöntemdir. Bu sayede kul, bu tür bir davranıştan sakınmak suretiyle en büyük azaba müstahak olmayabilir.

اِنَّمَا التَّوْبَةُ عَلَى اللّٰهِ لِلَّذِينَ يَعْمَلُونَ السُّوٓءَ بِجَهَالَةٍ ثُمَّ يَتُوبُونَ مِنْ قَرِيبٍ فَاُولٰٓئِكَ يَتُوبُ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ وَكَانَ اللّٰهُ عَلِيمًا حَكِيمًا ﴿١٧﴾

17- "Allah'ın kabul edeceği tevbe, ancak bilmeden kötülük edip de sonra tez elden tevbe edenlerin tevbesidir. İşte Allah, bunların tevbesini kabul eder. Allah, her şeyi bilendir, hikmet sahibidir."

Israrla birlikte mağfiret dilemek geçersizdir. Çünkü günahtan vazgeçmeden yapılan tevbe, yalancıların özelliğidir.

(يَعْمَلُونَ السُّوٓءَ بِجَهَالَةٍ) "*Bilmeden kötülük*" cahillerin yaptığını yapmak demektir.

Bu arada herkesin günahı, kendi haline uygun olarak değerlendirilir. Bu çerçevede havassın günahı, ibadetleriyle bir makam ve keramet hak ettiklerini sanmalarıdır. Bu zanda bulundukları için

bir gevşeklik demektir. Çünkü Allah'a giden yoldaki vesile Allah'tan başkası olamaz.

(ثُمَّ يَتُوبُونَ مِنْ قَرِيبٍ) *"Sonra tez elden tevbe ederler."* Âlimlerin yorumuna göre bu, ölümden önceki tevbedir. Pratiği esas alan izaha göre ise bu, nefsin günah işlemeyi alışkanlık haline getirmesinden önce yapılan tevbedir.

Şiir:

*Nefse dedim ki: Dönmek istersen eğer*
*Dön! Yol kapanmadan önce*

وَلَيْسَتِ التَّوْبَةُ لِلَّذِينَ يَعْمَلُونَ السَّيِّئَاتِ حَتّٰى اِذَا حَضَرَ اَحَدَهُمُ الْمَوْتُ قَالَ اِنّ۪ي تُبْتُ الْـٰٔنَ وَلَا الَّذ۪ينَ يَمُوتُونَ وَهُمْ كُفَّارٌ اُو۬لٰٓئِكَ اَعْتَدْنَا لَهُمْ عَذَابًا اَل۪يمًا ﴿١٨﴾

18- "Yoksa kötülükleri yapıp yapıp da içlerinden birine ölüm gelip çatınca 'Ben şimdi tevbe ettim' diyenler ile kâfir olarak ölenler için tevbe yoktur. Onlar için acı bir azap hazırlamışızdır."

Yani örtü kaldırılıp bilgiler zorunlu hale geldiği zaman, tevbe kapısı kapatılır. Çünkü mükellefiyetin şartlarından biri de imanın gaybî olmasıdır. Sonra bu tarikatta bir kimse hainlikle tanındığı zaman, ondan sonra artık gerçek doğruluğu koklayamaz. Nitekim Allah, ağlamakta olan Hz. Davud'a: *"Ey Davud, neden ağlıyorsun? Oysa ben seni bağışladım, hasmını razı ettim ve tevbeni kabul ettim"* buyurdu.

Hz. Davud: İlahî, daha önce sahip olduğum vakti bana geri ver, dedi.

Bunun üzerine Allah şöyle buyurdu: *"Heyhat! Ey Davud, bu zamanı geçmiş olan bir arzudur."*

Şiir:

*Senden sonra bırak ağlasın gözler!*
*Dönecek değildir sefa günleri*

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا لَا يَحِلُّ لَكُمْ اَنْ تَرِثُوا النِّسَٓاءَ كَرْهًا وَلَا
تَعْضُلُوهُنَّ لِتَذْهَبُوا بِبَعْضِ مَٓا اٰتَيْتُمُوهُنَّ اِلَّٓا اَنْ يَأْت۪ينَ بِفَاحِشَةٍ
مُبَيِّنَةٍ وَعَاشِرُوهُنَّ بِالْمَعْرُوفِ فَاِنْ كَرِهْتُمُوهُنَّ فَعَسٰٓى اَنْ تَكْرَهُوا
شَيْـًٔا وَيَجْعَلَ اللّٰهُ ف۪يهِ خَيْرًا كَث۪يرًا ﴿١٩﴾

19- "Ey iman edenler! Kadınlara zorla vâris olmanız size helal değildir. Apaçık bir edepsizlik yapmadıkça, onlara verdiğinizin bir kısmını ele geçirmeniz için de kadınları sıkıştırmayın. Onlarla iyi geçinin. Eğer onlardan hoşlanmazsanız biliniz ki, Allah'ın hakkınızda çok hayırlı kılacağı bir şeyden de hoşlanmamış olabilirsiniz."

Zayıf Müslümanların kafasını karıştırmak ve barış ve sükûnet taraftarı Müslümanları kandırmak, Allah katında iyi şeyler değildir. Bu nedenle kim bunu alışkanlık haline getirirse Allah onu cezalandırır, haksızlık ve hile ile insanlardan kaptığı mallardan da kendisini faydalandırmaz. Kim, Allah katında hasmını küçümserse, Allah'ın kendisine vereceği en hafif ceza, onu sevdiği şeylere kavuşmaktan mahrum kılmaktır.

(وَعَاشِرُوهُنَّ بِالْمَعْرُوفِ) "*Onlarla iyi geçinin.*" Yani onlarla dinin öğretileri, Müslümanların ahlak ve edepleri, nefsin hoşlanmamasına rağmen güzel birliktelik çerçevesinde ve eziyetlerine katlanmak, onlara hizmet yükünü yüklememek ve mahcup olacakları durumları görmezlikten gelmek suretiyle iyi geçinin.

(فَاِنْ كَرِهْتُمُوهُنَّ فَعَسٰٓى اَنْ تَكْرَهُوا شَيْـًٔا وَيَجْعَلَ اللّٰهُ ف۪يهِ خَيْرًا كَث۪يرًا) "*Eğer onlardan hoşlanmazsanız biliniz ki, Allah'ın hakkınızda çok hayırlı kılacağı bir şeyden de hoşlanmamış olabilirsiniz.*" Senin nefsine daha meşakkatli gelen her şeyin sonu daha da bereketli ve huzurlu olur.

Bir de bilmek gerekir ki, Allah hiç kimseyi gaybına muttali kılmamıştır. Nitekim insanın hoşlanmadığı pek çok şey vardır ki, ondaki hayır daha mükemmel olur. Kaldı ki Allah'ın hükmü de nefse

muhalefetin, sahibini mertebelerin en yükseğine ulaştıracağı şeklindedir. Nefse uymak ise bunun aksinedir. Tıpkı kalplere muhalefetin basiret körlüğüne yol açması, nefse uymanın ise bunun aksine sebep olması gibi.

وَاِنْ اَرَدْتُمُ اسْتِبْدَالَ زَوْجٍ مَكَانَ زَوْجٍ وَاٰتَيْتُمْ اِحْدٰيهُنَّ قِنْطَارًا فَلَا تَاْخُذُوا مِنْهُ شَيْـًٔا اَتَاْخُذُونَهُ بُهْتَانًا وَاِثْمًا مُبِينًا ﴿٢٠﴾ وَكَيْفَ تَاْخُذُونَهُ وَقَدْ اَفْضٰى بَعْضُكُمْ اِلٰى بَعْضٍ وَاَخَذْنَ مِنْكُمْ مِيثَاقًا غَلِيظًا ﴿٢١﴾

20, 21- "Eğer bir eşi bırakıp da yerine başka bir eş almak isterseniz, onlardan birine yüklerle mehir vermiş olsanız dahi, ondan hiçbir şeyi geri almayın. Siz iftira ederek ve apaçık günah işleyerek onu geri alır mısınız? Vaktiyle siz birbirinizle haşir neşir olduğunuz ve onlar, sizden sağlam bir teminat almış olduğu halde onu nasıl geri alırsınız!"

Allah onlara, birlikte yaşarken, güzel anlaşma ve onurlu vasfı öğretmektedir. Bu amaçla demek istemektedir ki: Kadını hem ayrılığa hem de kendisinden malı geri almaya birlikte maruz bırakma. Çünkü bu iyiliği terk etmektir. Hatta eğer bir kadına bolca mal verdikten sonra ayrılıkla ona cefa edersen, kendisine vermiş olduğun mal, ayrılıkla ona çektirdiğin acının yanında az kalır.

(وَكَيْفَ تَاْخُذُونَهُ ) *"Onu nasıl geri alırsınız!"* Yani eski birlikteliğin güçlü bir saygınlığı vardır. O halde hakların gözetileceği sınırda durun ve güvencenin gereğini hakkıyla yerine getirin.

وَلَا تَنْكِحُوا مَا نَكَحَ اٰبَاؤُكُمْ مِنَ النِّسَاۤءِ اِلَّا مَا قَدْ سَلَفَ اِنَّهُ كَانَ فَاحِشَةً وَمَقْتًا وَسَاۤءَ سَبِيلًا ﴿٢٢﴾

22- "Geçmişte olanlar bir yana, babalarınızın evlendiği kadınlarla evlenmeyin. Çünkü bu bir hayâsızlıktır. İğrenç bir şeydir ve kötü bir yoldur."

Ayet, hakların korunmasına ve saygı sınırında durmaya işaret etmektedir. Çünkü insan tabiatı, bir başkasının yatak arkadaşını nikâhlamasından nefret eder. Bu nedenle Allah çocukları, babaların nikâhladıkları kadınla evlenmek konusunda haklarına tecavüzde bulunmaktan alıkoymuştur.

حُرِّمَتْ عَلَيْكُمْ اُمَّهَاتُكُمْ وَبَنَاتُكُمْ وَاَخَوَاتُكُمْ وَعَمَّاتُكُمْ وَخَالَاتُكُمْ
وَبَنَاتُ الْاَخِ وَبَنَاتُ الْاُخْتِ وَاُمَّهَاتُكُمُ الّٰت۪ٓي اَرْضَعْنَكُمْ وَاَخَوَاتُكُمْ
مِنَ الرَّضَاعَةِ وَاُمَّهَاتُ نِسَٓائِكُمْ وَرَبَٓائِبُكُمُ الّٰت۪ي ف۪ي حُجُورِكُمْ
مِنْ نِسَٓائِكُمُ الّٰت۪ي دَخَلْتُمْ بِهِنَّ فَاِنْ لَمْ تَكُونُوا دَخَلْتُمْ بِهِنَّ فَلَا
جُنَاحَ عَلَيْكُمْ وَحَلَٓائِلُ اَبْنَٓائِكُمُ الَّذ۪ينَ مِنْ اَصْلَابِكُمْ وَاَنْ تَجْمَعُوا
بَيْنَ الْاُخْتَيْنِ اِلَّا مَا قَدْ سَلَفَ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُورًا رَح۪يمًا ﴿٢٣﴾

23- "Analarınız, kızlarınız, kız kardeşleriniz, halalarınız, teyzeleriniz, kardeş kızları, kız kardeş kızları, sizi emziren analarınız, süt bacılarınız, eşlerinizin anaları, kendileriyle birleştiğiniz eşlerinizden olup evlerinizde bulunan üvey kızlarınız size haram kılındı. Eğer onlarla henüz birleşmemişseniz, kızlarını almanızda size bir mahzur yoktur. Kendi sulbünüzden olan oğullarınızın eşleri ve iki kız kardeşi birden almak da size haram kılındı. Ancak geçen geçmiştir. Allah, çok bağışlayıcı ve esirgeyicidir."

Bu yasaklamaların kendisi için yapıldığı gerekçeleri çıkarmaya çalışmak imkânsız bir durumdur. Çünkü dinî hükümler gerekçelerle izah edilemez. Doğrusu, Allah dilediğini dilediğine haram kılmış, aynı şekilde dilediğini de dilediğine mubah kılmıştır. Hiçbir şekilde dini hükümlerin illeti olamaz. Şayet bu haram kılınanlar, helal kılınmış olsalardı bu caiz olurdu.

وَالْمُحْصَنَاتُ مِنَ النِّسَاۤءِ اِلَّا مَا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ كِتَابَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ
وَاُحِلَّ لَكُمْ مَا وَرَاۤءَ ذٰلِكُمْ اَنْ تَبْتَغُوا بِاَمْوَالِكُمْ مُحْصِنِينَ غَيْرَ مُسَافِحِينَ
فَمَا اسْتَمْتَعْتُمْ بِهٖ مِنْهُنَّ فَاٰتُوهُنَّ اُجُورَهُنَّ فَرِيضَةً وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ
فِيمَا تَرَاضَيْتُمْ بِهٖ مِنْ بَعْدِ الْفَرِيضَةِ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيمًا حَكِيمًا ﴿٢٤﴾

24- "Sahip olduğunuz cariyeler müstesna, evli kadınlar da size haram kılındı. Allah'ın size emri budur. Bunlardan başkasını, namuslu olmak ve zina etmemek üzere, mallarınızla istemeniz size helal kılındı. Onlardan faydalanmanıza karşılık kararlaştırılmış olan mehirlerini verin. Mehir kesiminden sonra karşılıklı anlaşmanızda size günah yoktur. Şüphesiz Allah, ilim ve hikmet sahibidir."

Sen, sınırları koruyup ahitlere riayet ettiğin ve dinin hükmüyle kadınlar arasında karşılıklı rıza hâsıl olduğu zaman, bu takdirde içinde halkın hakkı ve Hakk'ın yasağı bulunmayan şey mubah ve serbesttir.

وَمَنْ لَمْ يَسْتَطِعْ مِنْكُمْ طَوْلًا اَنْ يَنْكِحَ الْمُحْصَنَاتِ الْمُؤْمِنَاتِ فَمِنْ مَا
مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ مِنْ فَتَيَاتِكُمُ الْمُؤْمِنَاتِ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِاِيمَانِكُمْ بَعْضُكُمْ
مِنْ بَعْضٍ فَانْكِحُوهُنَّ بِاِذْنِ اَهْلِهِنَّ وَاٰتُوهُنَّ اُجُورَهُنَّ بِالْمَعْرُوفِ
مُحْصَنَاتٍ غَيْرَ مُسَافِحَاتٍ وَلَا مُتَّخِذَاتِ اَخْدَانٍ فَاِذَاۤ اُحْصِنَّ فَاِنْ
اَتَيْنَ بِفَاحِشَةٍ فَعَلَيْهِنَّ نِصْفُ مَا عَلَى الْمُحْصَنَاتِ مِنَ الْعَذَابِ ذٰلِكَ
لِمَنْ خَشِيَ الْعَنَتَ مِنْكُمْ وَاَنْ تَصْبِرُوا خَيْرٌ لَكُمْ وَاللّٰهُ غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿٢٥﴾

25- "İçinizden, imanlı hür kadınlarla evlenmeye gücü yetmeyen kimse, ellerinizin altında bulunan imanlı genç kızlarınız sayılan cariyelerinizden alsın. Allah, sizin imanınızı daha iyi bilmektedir. Hep aynı köktensiniz. Öyle ise iffetli yaşamaları, zina etmemeleri

ve gizli dost da tutmamaları şartı ve sahiplerinin izni ile onları nikâhlayıp alın, mehirlerini de normal miktarda verin. Evlendikten sonra bir fuhuş yaparlarsa onlara, hür kadınların cezasının yarısı uygulanır. Bu, içinizden günaha düşmekten korkanlar içindir. Sabretmeniz ise sizin için daha hayırlıdır. Allah, çok bağışlayıcı ve esirgeyicidir."

Ruhsatlar, zayıflara verilmiştir. Güçlü olanların yapacağı ise, azimete, ihtiyata ve dar alana bağlılıktır. Çünkü onların, Allah'ın hakkını yerine getirmekten başka hiç meşguliyetleri bulunmamaktadır. Şayet zahiri emir, onları kalplere riayetten alıkoyuyorsa, bu takdirde zahirî işlerde kolay ve daha hafif olana uymak, sırra riayet etmeye engel teşkil eden konuda çok derine inmekten iyidir. Çünkü bu, en önemli ve en yüce olan için bazı şeyleri terk etmek demektir. Bu itibarla, derecesi, en sağlam ve en ihtiyatlı olana uymanın altına inen kimsenin, ruhsat vasfının sınırına kadar inmesi mubahtır.

Sonra Allah, ayetin sonunda: (وَاَنْ تَصْبِرُوا خَيْرٌ لَكُمْ) "*Sabretmeniz ise sizin için daha hayırlıdır*" buyurmuştur. Yani sıkıntılı olana katlanmak konusunda sabretmeniz daha hayırlıdır. Bu ifadede aynı zamanda kulları sabra bir nevi meylettirmek de vardır. Çünkü Allah: Sabredin, demeyip: "Sabretmeniz ise sizin için daha hayırlıdır" buyurmuştur.

يُرِيدُ اللّٰهُ لِيُبَيِّنَ لَكُمْ وَيَهْدِيَكُمْ سُنَنَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَيَتُوبَ
عَلَيْكُمْ وَاللّٰهُ عَلِيمٌ حَكِيمٌ ﴿٢٦﴾

26- "Allah, size bilmediklerinizi açıklamak ve sizi, sizden öncekilerin yollarına iletmek ve sizin günahlarınızı bağışlamak istiyor. Allah, hakkıyla bilicidir, yegâne hikmet sahibidir."

Allah, Hz. Peygamber ve ümmetine geçmiş milletlerin haberlerini, yaptıklarını ve kendisinin onlara yaptığı muameleyi öğretince, ümmet, Allah'ın kendilerine ne yapacağını beklemeye başladı. Çünkü onlar arasında da caiz olmayan işler yapanlar vardır. Bu neden onlar:

"Keşke Allah'ın bize ne tür bir muamelede bulunacağını bilseydik. Acaba yerin dibine batırmakla mı, hayvan kılığına sokmakla mı, azapla mı yoksa başka bir şeyle mi?" dediler.

Bunun üzerine Allah: (وَيَهْدِيَكُمْ سُنَنَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِكُمْ) *"Sizi, sizden öncekilerin yollarına iletmek istiyor"* buyurmuş oldu. Yani biz, onlara ne yaptığımızı size öğretiyoruz.

(وَيَتُوبَ عَلَيْكُمْ) *"Sizin günahlarınızı bağışlamak istiyor."* Yani sizin tevbenizi kabul ediyorum. Ancak daha öncekileri ben yerle bir ettim.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- (يُرِيدُ اللّٰهُ لِيُبَيِّنَ لَكُمْ) *"Allah, size bilmediklerinizi açıklamak istiyor."* Yani başkalarına gizli kalan şeyleri sizin için ortaya çıkarmak suretiyle size sırlarını gösteriyor.

- Allah, var etmeyi ve yoktan yaratmayı yalnız başına yaptığını ve hiç kimsenin bunda bir katkısı olmadığını size açıklamak ister.

(وَيَهْدِيَكُمْ سُنَنَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِكُمْ) *"Sizi, sizden öncekilerin yollarına iletmek istiyor."* Allah, sizi peygamberlerin ve velilerin yolu olan Allah'a tevekküle, hoşnutluğa ve O'nun hükmüne ve kazaya teslim olmaya iletmek istemektedir.

Bir görüşe göre de; Allah'ın günahları bağışlamak istemesi şu demektir: Allah, tevbenizi yarattıktan sonra onu sizden kabul eder. Sonra, sizin için yarattığı tevbeye karşılık size sevap verir.

وَاللّٰهُ يُرِيدُ اَنْ يَتُوبَ عَلَيْكُمْ وَيُرِيدُ الَّذِينَ يَتَّبِعُونَ الشَّهَوَاتِ اَنْ تَمِيلُوا مَيْلًا عَظِيمًا ﴿٢٧﴾ يُرِيدُ اللّٰهُ اَنْ يُخَفِّفَ عَنْكُمْ وَخُلِقَ الْاِنْسَانُ ضَعِيفًا ﴿٢٨﴾

27, 28- "Allah, sizin tevbenizi kabul etmek ister. Şehvetlerine uyanlar ise büsbütün yoldan çıkmanızı isterler. Allah yükünüzü hafifletmek ister. Çünkü İnsan zayıf yaratılmıştır."

Bu açıklamayla Allah, öncekilerin de sonrakilerin de dedikle-rini kenara itmiştir.

Allah, tevbesini kabul etmek istediği kimseyi, ne düşmanların hakaretine maruz bırakır ne de dünyada ve ahirette ona bir kötü-lük bulaşır.

(يَتَّبِعُونَ الشَّهَوَاتِ) *"Şehvetlerine uyanlar ise..."* Bunların iradesi ters yüz edilmiştir. Aynı zamanda o, Allah'ın iradesi yanında geçersizdir ve reddedilir.

(يُرِيدُ اللّٰهُ اَنْ يُخَفِّفَ عَنْكُمْ) *"Allah yükünüzü hafifletmek ister."* Yani Allah, virdlerin kalplerinize akması sayesinde üzerinizdeki günah-ların ağırlığını hafifletmek ister.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, kalplerinize işleyen tecellilerin nurları sayesinde, üze-rinizdeki çaba harcama çilesini hafifletmek ister.

- Allah, ibadetlerin zevki sayesinde hizmetin yorgunluklarını üzerinizden hafifletmek ister.

- Allah, üzerinizden kaldırmak suretiyle, emanetin üzerinizdeki yükümlülüklerini hafifletir.

- Allah, vuslat sevinciyle arayışın yorgunluklarını üzerinizden hafifletir.

(وَخُلِقَ الْاِنْسَانُ ضَعِيفًا) *"İnsan zayıf yaratılmıştır."* Allah, insanların fakirlik ve mağduriyetlerini bu vasıfla nitelemiş ve mazeretlerini de aynı vasıftan dolayı kabul etmiştir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا لَا تَأْكُلُوٓا اَمْوَالَكُمْ بَيْنَكُمْ بِالْبَاطِلِ اِلَّٓا اَنْ تَكُونَ
تِجَارَةً عَنْ تَرَاضٍ مِنْكُمْ وَلَا تَقْتُلُوٓا اَنْفُسَكُمْ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِكُمْ
رَحِيمًا ﴿٢٩﴾ وَمَنْ يَفْعَلْ ذٰلِكَ عُدْوَانًا وَظُلْمًا فَسَوْفَ نُصْلِيهِ نَارًا
وَكَانَ ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ يَسِيرًا ﴿٣٠﴾

29, 30- "Ey iman edenler! Karşılıklı rızaya dayalı ticaret olması hali müstesna, mallarınızı aranızda bâtıl ile yemeyin ve kendinizi öldürmeyin. Şüphesiz Allah, sizi esirgeyecektir. Kim, düşmanlık ve haksızlık ile bunu yaparsa, onu ateşe koyacağız. Bu ise Allah'a çok kolaydır."

Allah'tan başkası için olan her harcama, bir malı bâtıl ile yemektir.

Bir yoruma göre de alım gafletle, harcama da hakikat gözetilmeksizin yapıldığı zaman ikisi de batıldır.

(وَلَا تَقْتُلُوٓا اَنْفُسَكُمْ) "*Kendinizi öldürmeyin.*" Yani günahlar işlemek suretiyle.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Nefislerinizi Allah'ın gazabına maruz bırakmak suretiyle kendinizi öldürmeyin.

- Nefislerinize bakmak ve onları hesaba katmak suretiyle kendinizi öldürmeyin.

- Nefsin yaptığı bir şeyi güzel bulup onu Hakk'ın rızasına tercih etmek suretiyle kendinizi öldürmeyin.

(وَمَنْ يَفْعَلْ ذٰلِكَ عُدْوَانًا وَظُلْمًا) "*Kim, düşmanlık ve haksızlık ile bunu yaparsa*" biz onu, ipini boynuna dolayıp sahibine teslim etmek suretiyle, şiddetli bir azaptan muaf tutmayacağız.

اِنْ تَجْتَنِبُوا كَبَٓائِرَ مَا تُنْهَوْنَ عَنْهُ نُكَفِّرْ عَنْكُمْ سَيِّاٰتِكُمْ وَنُدْخِلْكُمْ مُدْخَلًا كَرِيمًا ﴿٣١﴾

31- "Eğer yasaklandığınız büyük günahlardan kaçınırsanız, sizin küçük günahlarınızı örteriz ve sizi şerefli bir yere sokarız."

İlmî izaha göre; buradaki büyük günahlardan maksat şirktir. İşârî izaha göre de bu, gizli şirk demektir. Bu arada halkı hesaba katıp kabullerinden hoşlanmak, onların sevgisini kazanmaya çalışmak

ve onlar sebebiyle Allah'ın hakkı konusunda göz yummak da, gizli şirkin çeşitlerindendir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Ahit sağlam olduğu takdirde, vaki olan sınır tecavüzü tekfirden uzaktır.

- Büyük günahların en büyüğü, nefsini ispatlamandır. Bu itibarla sen onun yok olduğunu gördüğün zaman, meşakkatlerin esaretinden kurtulmuş olursun.

(وَنُدْخِلْكُمْ مُدْخَلًا كَرِيمًا) "...*ve sizi işlerinizde şerefli bir yere*" güzel bir şekilde, sokarız. Siz, ne girmenizi ne de çıkmanızı kendinizden bilmeyeceksiniz. Siz, ancak sizi evirip çeviren Allah'ı bileceksiniz.

وَلَا تَتَمَنَّوْا مَا فَضَّلَ اللّٰهُ بِهٖ بَعْضَكُمْ عَلٰى بَعْضٍ لِلرِّجَالِ نَصٖيبٌ مِمَّا اكْتَسَبُوا وَلِلنِّسَٓاءِ نَصٖيبٌ مِمَّا اكْتَسَبْنَ وَسْـَٔلُوا اللّٰهَ مِنْ فَضْلِهٖ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلٖيمًا ﴿٣٢﴾

32- "Allah'ın, sizi birbirinizden üstün kıldığı şeyleri hasretle arzu etmeyin. Erkeklerin de kazandıklarından nasipleri var, kadınların da kazandıklarından nasipleri var. Allah'tan lütfunu isteyin. Şüphesiz Allah, her şeyi bilmektedir."

Muamele ilkesine göre, iş temenni ile değil, ilgi ve gayretle olur. Tevhid ilkesine göre ise iş irade ve arzuya değil, hüküm ve kazaya dayanır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah'ın hakkını yerine getirmede sizden öncekilerin yolunu izleyin. Allah'ın özgü kıldığı lütfuna ise nail olmaya çabalamayın. Siz Mevlâ'nızın hakkını yerine getirin. Nefsinizin peşine düşmeyin ve arzularınıza öncelik tanımayın.

- Yollarını izlemeden, hayat tarzlarına bağlı kalmadan ve onlar gibi davranmadan büyüklerin makamını temenni etmeyin. Çünkü bu, zanna dayalı bir zulümdür.

- Sen, Allah'ın haklarını ara, ister dünya ister ahiretle ilgili her ne şekilde olursa olsun, kendi nasibine talip olma. Yoksa farkında olmadan, tevhid inancında şirk yapmış olursun.

- Büyük insanların makamlarını temenni etme. Çünkü Allah katında her makamın bir ehli vardır ve bunlar sayılıdır. Bu nedenle onlardan biri ölmedikçe yeri bir diğerine miras bırakılmaz. Allah şöyle buyurmuştur:

(وَهُوَ الَّذِي جَعَلَكُمْ خَلَآئِفَ)

*"Allah sizi halifeler kılmıştır."* (En'âm, 6/165; Fâtır, 35/39)

Halife ise kendisinden öncekinin yerine geçen demektir. Bu itibarla sen, velilerden birinin makamını temenni ettiğin zaman, çabuk vefat etmesini istemiş gibi olursun. İster genel anlamda ister ayrıntılı bir biçimde temenni et, fark etmez. Bu da kabul edilir bir durum değildir.

- Allah'ın hükmü altında, O'nun ezelde tercih ettiği gibi teslimiyet içinde olman, senin için arzunu öne çıkarmandan daha faydalıdır. Çünkü arzun, ölümüne sebep olabilir.

- Kim, zahirini çeşitli muamelelerle terbiye etmez ve batınını türlü fedakârlıklarla güzelleştirmezse, hedeflere ulaşmaya soyunması uygun olmaz. Heyhat heyhat! Bu ne zaman olur ki!

(واَسْئَلُوا اللّٰهَ مِنْ فَضْلِهِ) *"Allah'tan lütfunu isteyin."* Temenni ile Allah'ın lütfundan istemek arasındaki fark şu yönlerdendir:

- Bir şeye yönelik temenni, Allah'tan gafil iken olur. Böylece sen, o şeyi Allah'tan beklemeden var olmasını kalbinle temenni etmiş olursun. Oysa Allah'tan bir şey istediğin zaman, ister istemez O'nu anmış olursun.

- İsteyen kişi, nefsinin bunu hak ettiğini düşünmediği için, iradesindeki doğruluk yalvarış ve yakarışa sevk eder. Oysa temennide bulunan kimse, bundan yoksundur.

- Allah, başkasına verdiği nimeti temenni etmeyi yasaklamıştır. Çünkü bu, ona verdiği nimeti kendisinden alıp sana vermesi demektir. Halbuki Allah, ona verdiğinin bir benzerini de sana vermek suretiyle, kendisinden istekte bulunmayı mubah kılmıştır.

Diğer bir yoruma göre de, Allah'tan, lütfundan sana maddî nimetin yokluğuna rızayı vermesini iste. Çünkü bu, maddî nimetten daha mükemmeldir. Zira eşyanın köleliğinden kurtulmak, ona malik olmaktan daha noksansız bir nimettir.

وَلِكُلٍّ جَعَلْنَا مَوَالِيَ مِمَّا تَرَكَ الْوَالِدَانِ وَالْاَقْرَبُونَ وَالَّذِينَ عَقَدَتْ
اَيْمَانُكُمْ فَاٰتُوهُمْ نَصِيبَهُمْ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ شَهِيدًا ﴿٣٣﴾

33- "Erkek ve kadından her biri için ana, baba ve akrabanın bıraktığından vârisler kıldık. Yeminlerinizin bağladığı kimselere de paylarını verin. Çünkü Allah her şeyi görmektedir."

Allah, İslam'ın başında sözleşmeleri de tıpkı nesep gibi miras sebebi saymıştır. Daha sonra miras hükmü ortadan kaldırılmış; ancak saygı gösterme hükmü kalmıştır. Şimdi, insanlar arasındaki sözleşme bu mesabede ise Allah ile yapılan anlaşmayı nasıl düşünmek gerekir? Allah şöyle buyurmuştur:

(مِنَ الْمُؤْمِنِينَ رِجَالٌ صَدَقُوا مَا عَاهَدُوا اللّٰهَ عَلَيْهِ)

*"Allah'a verdikleri sözde duran nice erler vardır!"* (Ahzâb, 33/23)

Şiir:

*Nefse borçlu ölen kimseler*
*Ballı bir kaynak olarak buldular ölümü*

اَلرِّجَالُ قَوَّامُونَ عَلَى النِّسَٓاءِ بِمَا فَضَّلَ اللّٰهُ بَعْضَهُمْ عَلٰى بَعْضٍ
وَبِمَٓا اَنْفَقُوا مِنْ اَمْوَالِهِمْ فَالصَّالِحَاتُ قَانِتَاتٌ حَافِظَاتٌ لِلْغَيْبِ
بِمَا حَفِظَ اللّٰهُ وَالّٰتِي تَخَافُونَ نُشُوزَهُنَّ فَعِظُوهُنَّ وَاهْجُرُوهُنَّ فِي

الْمَضَاجِعِ وَاضْرِبُوهُنَّ فَاِنْ اَطَعْنَكُمْ فَلَا تَبْغُوا عَلَيْهِنَّ سَبِيلًا اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيًّا كَبِيرًا ﴿٣٤﴾

34- "Allah'ın, insanlardan bir kısmını diğerlerinden üstün kılması sebebiyle ve mallarından harcama yaptıkları için, erkekler kadınların yöneticisi ve koruyucusudur. Onun için saliha kadınlar itaatkârdır. Allah'ın, kendilerini korumasına karşılık gizliyi koruyucudurlar. Baş kaldırmasından endişe ettiğiniz kadınlara öğüt verin, onları yataklarda yalnız bırakın ve dövün. Eğer size itaat ederlerse, artık onların aleyhine başka bir yol aramayın. Çünkü Allah yücedir, büyüktür."

Güçlü olma özelliği erkeklere verildiğinden yükleri de artırılmıştır. O halde yük, güce göredir. Ancak güç konusunda ölçü nefisler ve cüsseler değil, kalpler ve himmetlerdir.

(وَالّٰتِي تَخَافُونَ نُشُوزَهُنَّ فَعِظُوهُنَّ وَاهْجُرُوهُنَّ فِي الْمَضَاجِعِ وَاضْرِبُوهُنَّ) *"Baş kaldırmasından endişe ettiğiniz kadınlara öğüt verin, onları yataklarda yalnız bırakın ve dövün."* Yani onları eğitmede tedricilik ve şefkatle ilerleyin. Şayet durum vaaz ile düzelirse dövmek için asa kullanılmaz. Böylece ayet, geçinme kurallarını içermektedir.

(فَاِنْ اَطَعْنَكُمْ فَلَا تَبْغُوا عَلَيْهِنَّ سَبِيلًا) *"Eğer size itaat ederlerse, artık onların aleyhine başka bir yol aramayın."* Yani eğer kadın, geçimsizliği hemen bırakır ve itaate dönerse geçmişteki durumlardan dolayı onu cezalandırma ve özrünü kabul edip kendisine iyi davranmaya karşı çıkma.

Bir yoruma göre de, adının hak ettiği ceza miktarını aşmak suretiyle onların aleyhine yol aramayınız.

وَاِنْ خِفْتُمْ شِقَاقَ بَيْنِهِمَا فَابْعَثُوا حَكَمًا مِنْ اَهْلِهِ وَحَكَمًا مِنْ اَهْلِهَا اِنْ يُرِيدَآ اِصْلَاحًا يُوَفِّقِ اللّٰهُ بَيْنَهُمَا اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيمًا خَبِيرًا ﴿٣٥﴾

35- "Eğer karı-kocanın aralarının açılmasından korkarsanız, erkeğin ailesinden bir hakem ve kadının ailesinden bir hakem gönderin. Bunlar, barıştırmak isterlerse, Allah aralarını bulur. Şüphesiz Allah, her şeyi bilen, her şeyden haberdar olandır."

Bu konuda şu iki yorum yapılmıştır:

- Kadın erkeğe bedeniyle itaat etmekle yükümlüdür. Erkeği sevmesi ve ona kalben meyletmesi ise Allah'ın tasarrufundadır. Bu nedenle erkek, Allah'ın kadından ona nasip kılmadığı şeyle kadını yükümlü kılamaz. Çünkü kalpler Allah'ın kudretine bağlıdır. Dilediğini onlara sevdirir, dilediğinden de buğzettirir.

- Yani bir anlık ortaya çıkan nadir bir haksızlık yüzünden kadının geçmişteki vefasını unutmamak gerekir. Çünkü durum tekrar güzel bir şekil alabilir.

وَاعْبُدُوا اللّٰهَ وَلَا تُشْرِكُوا بِه۪ شَيْـًٔا وَبِالْوَالِدَيْنِ اِحْسَانًا وَبِذِي الْقُرْبٰى
وَالْيَتَامٰى وَالْمَسَاك۪ينِ وَالْجَارِ ذِي الْقُرْبٰى وَالْجَارِ الْجُنُبِ وَالصَّاحِبِ
بِالْجَنْبِ وَابْنِ السَّب۪يلِ وَمَا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنْ
كَانَ مُخْتَالًا فَخُورًا ﴿٣٦﴾ اَلَّذ۪ينَ يَبْخَلُونَ وَيَأْمُرُونَ النَّاسَ بِالْبُخْلِ
وَيَكْتُمُونَ مَٓا اٰتٰيهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِه۪ وَاَعْتَدْنَا لِلْكَافِر۪ينَ عَذَابًا مُه۪ينًا ﴿٣٧﴾

36, 37- "Allah'a ibadet edin ve O'na hiçbir şeyi ortak koşmayın. Anababaya, akrabaya, yetimlere, yoksullara, yakın komşuya, uzak komşuya, yakın arkadaşa, yolcuya, ellerinizin altında bulunanlara iyi davranın. Allah, kendini beğenen ve daima böbürlenip duran kimseyi sevmez. Bunlar cimrilik eden ve insanlara da cimriliği tavsiye eden, Allah'ın kendilerine lütfünden verdiğini gizleyen kimselerdir. Biz, kâfirler için alçaltıcı bir azap hazırladık."

(وَاعْبُدُوا اللّٰهَ ) *"Allah'a ibadet edin."* Kulluk, emre sarılmak ve yasaktan uzak durmak demektir.

(وَلَا تُشْرِكُوا بِهِ شَيْئًا) "... *ve O'na hiçbir şeyi ortak koşmayın.*" Açık şirk, Allah'tan başka bir mabuda inanmaktır. Gizli şirk ise, O'nun dışında bir varlık görmektir. Tevhid, bütün varlıkların Allah ile meydana geldiğini ve varlıklarını O'nunla sürdürdüklerini bilmektir. Bu itibarla, varlıkları yürüten, inşa eden ve bırakan O'dur. Hiç kimsenin meydana getirmede ve yaratmada zerre kadar bir etkisi bulunmamaktadır.

Öte yandan riyanın incelikleri, yapmacıkların gizlilikleri, gizli duygularla kendini beğenmişlik, insanların bakışına göre davranmak, övgülerinden hoşlanmak, onların ret ve yergilerinin altında çürümek gibi hususların tamamı gizli şirktendir.

(وَبِالْوَالِدَيْنِ) "*Ana-babaya...*" Ana-babaya iyilik, beraberliği hedefleyen bir tedricilik şeklinde olur. Çünkü insan, önce onların haklarıyla yükümlü kılınmıştır. Çünkü onlar çocuklarının hemcinsi ve terbiye edicisidirler. Ayrıca insan baba ve annesi sayesinde fazlasını hak eder ve marifetin hakikatine ulaşır. Aynı şekilde insan, akrabalar, fakirler, miskinler ve onların sınıfındaki insanlarla arkadaşlık yapmaya ve iyi geçinmeye yarar hale geldiği zaman, Allah ile beraberliği sevme mertebesine yükselir. O halde insan, baba ve annesini isyanıyla incitmemeli ve kendilerine iyi davranmak suretiyle haklarına riayet etmelidir.

(وَالْجَارِ ذِي الْقُرْبٰى وَالْجَارِ الْجُنُبِ وَالصَّاحِبِ بِالْجَنْبِ) Komşularından "... *yakın komşuya, uzak komşuya, yakın arkadaşa iyi davranın.*" O halde uyumsuzluğunla onları incitme ve kendilerine yapacağın iyilikle onların hakkına riayet et.

Ev komşuna, iyilik yapmak ve haklarına riayet etmek gerektiğine göre; nefsinin komşusu olan kalbin, hakkını zayi etmemene, ondan gafil olmamana ve kötü duyguların içine nüfuz etmesine imkân tanımamana daha da layıktır.

Nefsinin komşusunun hükmü bu ise kalbinin komşusu olan ruhun, hakkını korumana ve ona aykırı olan şeylerin, onun yanında durmasına ve ona komşuluk yapmasına müsaade etmemene daha

da layıktır. Ruhunun komşusu olan sırrın da hakkına riayet etmene daha çok hak sahibidir. O halde onun, tecelli makamlarından saatler boyunca kaybolmasına müsaade etme. Allah şöyle buyurmuştur:

(وَهُوَ مَعَكُمْ اَيْنَ مَا كُنْتُمْ)

*"Nerede olursanız olun, O sizinle beraberdir"* (Hadîd, 57/4)

Bu ayetin işareti, tahkik sahiplerinin kalplerince belirsiz değildir.

(اَلَّذِينَ يَبْخَلُونَ) *"Bunlar cimrilik eden..."* İlmî izaha göre; cimrilik, vacibe engel olmak demektir. İşaretin izahına göre ise cimrilik, darlık zamanında tercihte bulunmayı terk etmektir. İnsanlara cimriliği emretmek ise, dine göre kendilerine şefkat göstermek gerekçesiyle, onları hakikatleri aramaktan alıkoymak demektir. Yani, senin dilinle, gereksiz ilgilerden kopuşun ve fuzuli hallerin yok edilişinin gerçekleşmesidir. Başkasına nasihatte bulunmak üzere: "Buna gücün yetmeyebilir. Malum helalini koruman, dilenci durumuna düşmenden iyidir. Belki de insanlardan dilenmek için yola çıkar ve Müslümanlara yük olursun" diyen ve bu konuda kendisine aynı paralelde hadisler rivayet eden kişinin, kalbine gizlenmiş olan cimriliği olmasaydı, nasihatte bulunduğu kişiyi, şefkat gerekçesiyle cömertlikten alıkoymak yerine, kalbine doğan cömertlik duygusu konusunda himmetiyle ona yardım ederdi. İşte bu vasfa sahip olan kimseyi ilahî gazap hemen yakalar. Çünkü kendince dini bir nasihat ve şefkat olarak kabul ettiği şeyle, o zavallının müritlik kıvılcımını söndürmüştür.

(وَيَكْتُمُونَ مَٓا اٰتٰيهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِه۪) *"Allah'ın kendilerine lütfünden verdiğini gizleyen kimselerdir."* Eğer Allah, kendilerine verdikleriyle onları bir şeyler istemekten müstağni hale getirmişse, onlar Allah'ın iznine aykırı bir biçimde fazlasına göz diktikleri için bunu gizlerler. Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Bir mürid, kendilerinde bulunan ve onun kurtuluşuna vesile olabilecek bir şeyi onlardan istediği zaman, Allah'ın, kendilerine lütfundan verdiğini gizler ve o müridi irşad etmek konusunda cimri davranırlar.

- Zenginlerin cimriliği nimeti esirgemek, fakirlerin cimriliği de himmeti esirgemekle olur.

وَالَّذٖينَ يُنْفِقُونَ اَمْوَالَهُمْ رِئَٓاءَ النَّاسِ وَلَا يُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَلَا بِالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَمَنْ يَكُنِ الشَّيْطَانُ لَهُ قَرٖينًا فَسَٓاءَ قَرٖينًا ﴿٣٨﴾

38- "Allah'a ve ahiret gününe inanmadıkları halde, mallarını insanlara gösteriş için sarf edenler de ahirette azaba uğrarlar. Şeytan bir kimseye arkadaş olursa, ne kötü bir arkadaştır o!"

Allah, bunları da: (اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنْ كَانَ مُخْتَالًا فَخُورًا) "*Allah, kendini beğenen ve daima böbürlenip duran kimseyi sevmez*" (Nisa, 4/36) şeklindeki sözünün kapsamına dahil etmiştir. Bu kimselerin dünyadaki azabı, Allah'ı sevenler arasında yer almamalarıdır ki bu da, meşakkat olarak yeter.

Bu arada (مُخْتَالًا) "*muhtal*" kendini beğenen, "*mürai*" ise hemcinslerine bakan kimse demektir. Bunların ikisi de, gizli şirkle damgalanmışlardır. Allah da müşrikleri sevmez. (فَخُورًا) "*Fahûr*" kelimesi, tıpkı koyun gibi, süt sağılan, ancak gerçeğe aykırı olarak müşterinin, memesinde biriken sütün normal sütü olduğunu vehmetmesi için bir süre sağılmayan deve demektir. İşte sırf iddiaya dayanarak nefsinde normalüstü bir mertebe gören kimseye de tıpkı bu deve gibi "*Fahûr*" denilmiştir. Oysa Allah onu sevmez. Bu arada malını insanlara riya olsun diye harcayan mürai de böyledir.

وَمَاذَا عَلَيْهِمْ لَوْ اٰمَنُوا بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَاَنْفَقُوا مِمَّا رَزَقَهُمُ اللّٰهُ وَكَانَ اللّٰهُ بِهِمْ عَلٖيمًا ﴿٣٩﴾

39- "Allah'a ve ahiret gününe iman edip de Allah'ın kendilerine verdiğinden harcasalardı, ne olurdu sanki! Allah, onların durumunu hakkıyla bilmektedir."

Allah'a iman etmelerinde onlar için bir zorluk bulunmamaktadır. Aksine eğer iman etselerdi, dünya ve ahiret azizliğine ulaşırlardı.

Onları Allah'tan yüz çevirmeye de sadece vefa ve hürmet azlığı sevk etmektedir.

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَظْلِمُ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ وَاِنْ تَكُ حَسَنَةً يُضَاعِفْهَا وَيُؤْتِ مِنْ
لَدُنْهُ اَجْرًا عَظِيمًا ﴿٤٠﴾

40- "Şüphe yok ki, Allah zerre kadar haksızlık etmez. İyilik olursa onu kat kat artırır, kendinden de büyük mükâfat verir."

Allah, sevaplarından bir şey eksiltmez. Aksine hak etmedikleri halde başından itibaren onlara lütufta bulunur ve amellerinin karşılığı olan ecirlerini kat kat artırır. Zulmün ise Allah'ı vasıflandırmada var sayılması imkânsızdır. Çünkü halk da mülk de O'nundur. Bu arada zalim, kendisi için çizilen sınırı aşan kimsedir. Bu ise Allah'ın vasfında imkânsızdır. Çünkü O, kadrinin yüceliğinde üstündür.

فَكَيْفَ اِذَا جِئْنَا مِنْ كُلِّ اُمَّةٍ بِشَهِيدٍ وَجِئْنَا بِكَ عَلٰى هٰٓؤُلَٓاءِ شَهِيدًا ﴿٤١﴾
يَوْمَئِذٍ يَوَدُّ الَّذِينَ كَفَرُوا وَعَصَوُا الرَّسُولَ لَوْ تُسَوّٰى بِهِمُ
الْاَرْضُ وَلَا يَكْتُمُونَ اللّٰهَ حَدِيثًا ﴿٤٢﴾

41, 42- "Her bir ümmetten bir şahit getirdiğimiz ve seni de onlara şahit olarak gösterdiğimiz zaman halleri nice olacak! Küfür yoluna sapıp peygamberi dinlemeyenler, o gün yerin dibine batırılmayı temenni ederler ve Allah'tan hiçbir haberi gizleyemezler."

Hz. Peygamber, aynı zamanda şefaatçileri olduğu ümmetine şahit kılındığına göre o, şefaate yer bırakacak şekilde şahitlik yapacaktır.

(يَوْمَئِذٍ يَوَدُّ الَّذِينَ كَفَرُوا وَعَصَوُا الرَّسُولَ لَوْ تُسَوّٰى بِهِمُ الْاَرْضُ) *"Küfür yoluna sapıp peygamberi dinlemeyenler, o gün yerin dibine batırılmayı temenni ederler."* Pişmanlık duyarlar, ancak bu onlara fayda vermez. Parmak uçlarını ısırırlar, ancak bu, onların sıkıntısını dindirmez. Böylece onlar, zül örtüsüne bürünerek meşakkat ve zarar yurtlarına yuvarlanırlar.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوا لَا تَقْرَبُوا الصَّلٰوةَ وَاَنْتُمْ سُكَارٰى حَتّٰى
تَعْلَمُوا مَا تَقُولُونَ وَلَا جُنُبًا اِلَّا عَابِرٖي سَبٖيلٍ حَتّٰى تَغْتَسِلُوا
وَاِنْ كُنْتُمْ مَرْضٰٓى اَوْ عَلٰى سَفَرٍ اَوْ جَٓاءَ اَحَدٌ مِنْكُمْ مِنَ
الْغَٓائِطِ اَوْلٰمَسْتُمُ النِّسَٓاءَ فَلَمْ تَجِدُوا مَٓاءً فَتَيَمَّمُوا صَعٖيدًا طَيِّبًا
فَامْسَحُوا بِوُجُوهِكُمْ وَاَيْدٖيكُمْ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَفُوًّا غَفُورًا ﴿٤٣﴾

43- "Ey iman edenler! Siz sarhoş iken, ne söylediğinizi bilinceye kadar, cünüp iken de yolcu olan müstesna, gusül edinceye kadar namaza yaklaşmayın. Eğer hasta olur veya bir yolculuk üzerinde bulunursanız yahut sizden biriniz ayak yolundan gelirse yahut kadınlara dokunup da su bulamamışsanız, o zaman temiz bir toprakla teyemmüm edin. Yüzlerinize ve ellerinize sürün. Şüphesiz Allah, çok affedici ve bağışlayıcıdır."

Buradaki yasaklama, namaza değil, sarhoşluk veren içeceğe ilişkindir. Yani siz sarhoş iken namaz vaktiniz gelmiş olmasın. Yani sarhoş eden şeyi içmekten imtina edin. Çünkü içerseniz sarhoş olursunuz. Sonra o vaziyette namaz vaktiniz girdiğinde namazınız kabul olmayacaktır.

Bu arada sarhoşluk, akıl ve sezginin gitmesidir ki, bu durumda Hakk'a münacatta bulunmak doğru değildir.

Namaz kılan kimse, Rabbine münacatta bulunur. İşârî tefsire göre; kalbi Allah'tan gafil kılan her şey, sarhoşluk hükmündedir. Öte yandan sarhoşluk birkaç kısma ayrılır:

- İçkiden doğan sarhoşluk

- Dünya sevgisi istila ettiği için gafletten doğan sarhoşluk

- En zor sarhoşluk ise kişinin nefsinden kaynaklanan sarhoşluktur. Nitekim kişiyi Allah'tan ayıran budur. Zira içkiden sarhoş olan kimsenin bağışlanmaması halinde en son cezası yanmaktır. Kendi nefsinden dolayı sarhoş olan kimsenin durumu ise hakikatten hemen

kopmaktır. Sûfilerin işaret ettiği sekre gelince, namaz kılıncaya kadar sahibinin vakti koruma altındadır. Aynı zamanda onun için durum hafifletilmiştir.

(وَلَا جُنُبًا اِلَّا عَابِرِي سَبِيلٍ) *"...cünüp iken de yolcu olan müstesna..."* Cünüp iken mecbur kalan kimsenin ruhsat olarak camiden geçmesine izin verilmiştir. Zaruret miktarını aşması halinde mazur sayılmayıp cezalandırılır. Vaktin şartları ile ilgili olarak meydana gelen mazeretlerde de durum aynıdır. Mazeret sahibi, vakti gözetmekten muaftır.

Sonra Allah, suyun bulunmaması halinde, lütfuyla teyemmümü su ile abdest almanın yerine koymuştur. Aynı şekilde meydana gelen zaaf oranında cemin zirvesinden farkın alanlarına inmek de, hakikat ehli için bir alternatiftir.

Sonra suyun bedeli teyemmüm toprağı, sudan daha fazla bulunmakta ve ondan daha az kullanılmaktadır. Çünkü daha yakın olan kimsenin üzerindeki yükümlülükler daha zordur.

Sonra biz zahirde toprağı kullanmakla, bâtında ise kesintisiz teslimiyet ve yok olma hissiyle memur kılınmış bulunuyoruz.

Bu arada Allah, teyemmümü az organ üzerine bina etmiş ve insanın başını ve ayaklarını topraktan korumayı gözetmiştir. Çünkü azizlik mümine, içinde bulunduğu müflislik sebebiyle başına gelen zülden daha çok yakışır. Şayet amellerinden dolayı iflas edişi, kendisi için tezellüle sebep oluyorsa, Rabbinin celalini tanıması, ona her türlü azizlik ve güzelleşmeyi sağlar.

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِينَ اُوتُوا نَصِيبًا مِنَ الْكِتَابِ يَشْتَرُونَ الضَّلَالَةَ وَيُرِيدُونَ
اَنْ تَضِلُّوا السَّبِيلَ ﴿٤٤﴾ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِاَعْدَآئِكُمْ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَلِيًّا وَكَفٰى بِاللّٰهِ
نَصِيرًا ﴿٤٥﴾ مِنَ الَّذِينَ هَادُوا يُحَرِّفُونَ الْكَلِمَ عَنْ مَوَاضِعِهِ وَيَقُولُونَ
سَمِعْنَا وَعَصَيْنَا وَاسْمَعْ غَيْرَ مُسْمَعٍ وَرَاعِنَا لَيًّا بِاَلْسِنَتِهِمْ وَطَعْنًا فِي

الذِّينِ وَلَوْ اَنَّهُمْ قَالُوا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا وَاسْمَعْ وَانْظُرْنَا لَكَانَ خَيْرًا لَهُمْ وَاَقْوَمَ وَلٰكِنْ لَعَنَهُمُ اللّٰهُ بِكُفْرِهِمْ فَلَا يُؤْمِنُونَ اِلَّا قَليلًا ﴿٤٦﴾

**44, 45, 46- "Kendilerine kitaptan nasip verilenlere baksana! Sapıklığı satın alıyorlar ve sizin de yoldan çıkmanızı istiyorlar. Allah, düşmanlarınızı sizden daha iyi bilir. Gerçek bir dost olarak Allah yeter. Bir yardımcı olarak da Allah kâfidir. Yahudilerden bir kısmı, kelimeleri yerlerinden değiştirirler. Dillerini eğerek, bükerek ve dine saldırarak 'işittik ve karşı geldik', 'dinle, dinlemez olası', 'raina' derler. Eğer onlar 'işittik, itaat ettik, dinle ve bizi gözet' deselerdi, şüphesiz kendileri için daha hayırlı ve daha doğru olacaktı. Fakat küfürleri sebebiyle Allah onları lanetlemiştir. Artık pek az inanırlar."**

Onlar bir tuzak kurdular; ancak tuzaklarının yönünü bilemediler. Yani kendilerine kitap verildi, sonra da onu anlamanın bereketlerinden mahrum kaldılar. O kadar ki, onu tahrif edip bunda ısrar ettiler.

(مِنَ الَّذِينَ هَادُوا) *"Yahudilerden bir kısmı..."* Onlar, Hz. Peygamber (s.a.v.)'in haşmetini terk edip ona saygı göstermeyi reddettiler. Böylece, durumu hakkında şüphe ederek cezalandırılmış oldular. Bu nedenle, her kim Hz. Peygamber'in haşmetini terk ettiyse, onunla Hz. Peygamber'in sohbetinin bereketleri ve hizmetinin artıları arasına engel girmiştir. Eğer onlar, içlerine giren hasedi tez elden yok edip Hz. Peygamber'in durumunu yüceltmeyi tazimle karşılasalardı, ona uymanın bereketlerini görecek ve her iki dünyada da onunla mutlu olacaklardı. Nasıl olabilirlerdi ki! Ezeli takdir, onları uzaklaştırmış ve kader kendilerini hizmet makamından geri bırakmıştır. Kaderin yerde bıraktığı kimseyi tedbir ayağa kaldıramaz.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اُو۫تُوا الْكِتَابَ اٰمِنُوا بِمَا نَزَّلْنَا مُصَدِّقًا لِمَا مَعَكُمْ مِنْ قَبْلِ اَنْ نَطْمِسَ وُجُوهًا فَنَرُدَّهَا عَلٰٓى اَدْبَارِهَٓا اَوْ نَلْعَنَهُمْ كَمَا لَعَنَّٓا اَصْحَابَ السَّبْتِ وَكَانَ اَمْرُ اللّٰهِ مَفْعُولًا ﴿٤٧﴾

47- "Ey Kitap ehli! Biz, bir takım yüzleri silip dümdüz ederek arkalarına çevirmeden yahut onları, cumartesi adamları gibi lanetlemeden önce, size gelenleri doğrulamak üzere indirdiğimize iman edin. Allah'ın emri mutlaka yerine gelecektir."

Allah, kalpleri müritlikten adet ehlinin hallerine çevirdi. O kadar ki müridin temayülleri, daha önce dünyayı reddetmekte yoğunlaşırken, dünyayı kendisi için toplayıp başkasından esirgemeden sabredemez hale geldi.

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُشْرَكَ بِه۪ وَيَغْفِرُ مَا دُونَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَشَٓاءُ وَمَنْ يُشْرِكْ بِاللّٰهِ فَقَدِ افْتَرٰٓى اِثْمًا عَظ۪يمًا ﴿٤٨﴾

48- "Allah, kendisine ortak koşulmasını asla bağışlamaz. Bundan başkasını dilediği kimse için bağışlar. Allah'a ortak koşan kimse büyük bir günah ile iftira etmiş olur."

Avam açık şirki, havas da gizli şirki terk etmekle yükümlü kılındılar. Bu itibarla kim, kendi ameli veya kendi hakkındaki zan ile Allah'a tevessül eder veya ilahî hükümlerinin, kendi hareket ve duruşlarına dayandığını vehmeder veya halkı hesaba katar veya nefsi göz önünde bulundurursa, hakikat ehli nezdinde onun yurdu şirktir.

Oysa Allah kendisine ortak koşulmasını bağışlamaz. Aynı şekilde Allah'ın emrine muhalefetin, O'nun takdiri olmadan gerçekleştiğini vehmeden de, şirk ehline katılmış olur.

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذ۪ينَ يُزَكُّونَ اَنْفُسَهُمْ بَلِ اللّٰهُ يُزَكّ۪ي مَنْ يَشَٓاءُ وَلَا يُظْلَمُونَ فَت۪يلًا ﴿٤٩﴾ اُنْظُرْ كَيْفَ يَفْتَرُونَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ وَكَفٰى بِه۪ٓ اِثْمًا مُب۪ينًا ﴿٥٠﴾

49, 50- "Nefislerini temize çıkaranlara ne dersin! Hayır, Allah dilediğini temize çıkarır ve hiç kimse, kıl payı kadar haksızlık gör-

mez. Bak, nasıl da Allah üzerine yalan uyduruyorlar! Apaçık bir günah olarak bu yeter."

Kim, insanların kendisini tezkiye etmesine meyleder ve avam şöyle dursun, havassın bile kendisini kabul edişlerinden zevk alırsa, o nefsini temize çıkaran kimsedir. Kişinin kendini beğenmesi ise en büyük perdedir. Her kim, virdleri, çalışması veya hareketleri ve duruşlarıyla kendini zorlayarak kendini temize çıkaracağını zannederse, o cehaletinin örtüsüne bürünmüş olur.

(أُنْظُرْ كَيْفَ يَفْتَرُونَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ) *"Bak, nasıl da Allah üzerine yalan uyduruyorlar!"* Bu ayet, hakikati gözetmeksizin iddiacı bir dil kullanan kimseye işaret etmektedir. Bu meselede söylediğiyle iftirada bulunan kimsenin söylediği her şeyi kulaklar itici, kalpler de rahatsız edici bulur. Sustuğu zaman ise yıkık bir kalbe dönmüş olur.

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذ۪ينَ اُو۫تُوا نَص۪يبًا مِنَ الْكِتَابِ يُؤْمِنُونَ بِالْجِبْتِ وَالطَّاغُوتِ
وَيَقُولُونَ لِلَّذ۪ينَ كَفَرُوا هٰٓؤُلَٓاءِ اَهْدٰى مِنَ الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا سَب۪يلًا ﴿٥١﴾
اُو۬لٰٓئِكَ الَّذ۪ينَ لَعَنَهُمُ اللّٰهُ وَمَنْ يَلْعَنِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهُ نَص۪يرًا ﴿٥٢﴾

51, 52- "Kendilerine kitaptan nasip verilenleri görmedin mi? Putlara ve tâğûta (bâtıla) iman ediyorlar. Sonra da kâfirler için: 'Bunlar, Allah'a iman edenlerden daha doğru yoldadır' diyorlar. Bunlar, Allah'ın lanetlediği kimselerdir. Allah'ın, rahmetinden uzaklaştırdığı kimseye gerçek bir yardımcı bulamazsın."

Herkesin tâğûtu nefsi ve hevâsıdır. Putları ise Allah dışındaki maksutlarıdır. Bu itibarla her kim, bir şahsı dikkate alır veya bir sebep arar veya bir illete yönelir veya bir nefsanî arzuya uyarsa, işte bunlardan her biri, onun tâğûtu ve putlarıdır. Put ve tâğût sahipleri ise laneti hak ederler. Lanet, kulluk makamından kovulmak ve rububiyyetin müşâhedesinden engellenmektir.

اَمْ لَهُمْ نَص۪يبٌ مِنَ الْمُلْكِ فَاِذًا لَا يُؤْتُونَ النَّاسَ نَق۪يرًا ﴿٥٣﴾
اَمْ يَحْسُدُونَ النَّاسَ عَلٰى مَٓا اٰتٰيهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِه۪ فَقَدْ اٰتَيْنَٓا اٰلَ

اِبْرٰهيمَ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ وَاٰتَيْنَاهُمْ مُلْكًا عَظيمًا ﴿٥٤﴾ فَمِنْهُمْ
مَنْ اٰمَنَ بِهٖ وَمِنْهُمْ مَنْ صَدَّ عَنْهُ وَكَفٰى بِجَهَنَّمَ سَعيرًا ﴿٥٥﴾

53, 54, 55- "Yoksa onların mülkten bir nasipleri mi var? Öyle olsaydı, insanlara çekirdek filizi vermezlerdi. Yoksa onlar, Allah'ın, lütfünden verdiği şeyler için insanlara hased mi ediyorlar. Oysa İbrahim soyuna Kitab'ı ve hikmeti verdik ve onlara büyük bir hükümranlık bahşettik. Onlardan bir kısmı İbrahim'e inandı. Kimi de ondan yüz çevirdi. Onlara, kavurucu bir ateş olarak cehennem yeter."

Cimrilik üzere yaratılmış olan kimse, elinin bolluk görmesiyle, halkın rahata kavuşmasından ancak daha fazla üzüntü duyar. Zannedersin ki, bir damla su içen kimse, onun hayat suyundan içmiştir.

(اَمْ يَحْسُدُونَ النَّاسَ) "*Yoksa onlar, insanlara hased mi ediyorlar.*" Doğrusu onlar, nefislerinden kaynaklanan bir hasetten dolayı, Allah'ın dilediğini velilerine tahsis etmesinden hoşlanmazlar. Bu nedenle de onları saygıyla karşılamazlar. Oysa Allah'ın, velileriyle ilgili prensibi, kendilerine değer verilip saygı gösterilmesi, kâfirlerin geleneği ise kudret hakkında şüphe etmek şeklinde yerleşmiştir. Böylece insanlardan kimisi, velilere inanmış, kimisi de bunu reddedip inkâr etmiştir. Buna karşılık olarak Allah'ın onlara vereceği ceza yeter.

(وَاٰتَيْنَاهُمْ مُلْكًا عَظيمًا) "*Onlara büyük bir hükümranlık bahşettik.*" Büyük hükümranlık, hükümdarı tanımaktır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bu hükümranlık nefse hâkimiyettir.

- Hükümranlık, Kendisine hiçbir şey gizli kalmamak üzere memleketin sırlarını denetim altına almaktır.

- Hükümranlık, halkın sırlarına muttali olmaktır.

اِنَّ الَّذينَ كَفَرُوا بِاٰيَاتِنَا سَوْفَ نُصْليهِمْ نَارًا كُلَّمَا نَضِجَتْ جُلُودُهُمْ
بَدَّلْنَاهُمْ جُلُودًا غَيْرَهَا لِيَذُوقُوا الْعَذَابَ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَزيزًا حَكيمًا ﴿٥٦﴾

56- "Şüphesiz ayetlerimizi inkâr edenleri, gün gelecek bir ateşe sokacağız. Onların derileri pişip acı duymaz hale geldikçe, derilerini başka derilerle değiştiririz ki acıyı duysunlar. Allah, daima üstün ve hakîmdir."

Ayet, velilerin kerametlerini inkâr edenlere işaret etmektedir. Allah, onları küçük kimseler olarak nitelemekte ve inkâr yalnızlığı içerisinde bırakmaktadır. Kalplerinde mana ehliyle ilgili bir şey belirdikçe, inkâr duyguları onları buna inanmamaya ve gerçeğe uzak bir şey olarak onunla alay etmeye doğru sürüklemektedir. Bu nedenle azapları ebedileştirilmiştir.

وَالَّذٖينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ سَنُدْخِلُهُمْ جَنَّاتٍ تَجْرٖي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِدٖينَ فٖيهَٓا اَبَدًا لَهُمْ فٖيهَٓا اَزْوَاجٌ مُطَهَّرَةٌ وَنُدْخِلُهُمْ ظِلًّا ظَلٖيلًا ﴿٥٧﴾

57- "İnanıp iyi işler yapanları da içinde ebediyen kalmak üzere gireceklerı, zemininden ırmaklar akan cennetlere sokacağız. Orada onlar için tertemiz eşler vardır ve onları koyu bir gölgeye koyarız."

Onlar, bugün riayetin gölgesindedirler, yarın da himaye ve kifayetin gölgesinde olacaklardır. Daha doğrusu onlar, dünyada da ahirette de inayetin gölgesindedirler.

Bu dünyada insanlar, birbirlerinden farklıdırlar. Onlardan kimisi, Allah'ın rahmetinin, kimisi riayetinin, kimisi ikramının, kimisi inayetinin, kimisi de yakınlığının gölgesindedir.

اِنَّ اللّٰهَ يَاْمُرُكُمْ اَنْ تُؤَدُّوا الْاَمَانَاتِ اِلٰٓى اَهْلِهَا وَاِذَا حَكَمْتُمْ بَيْنَ النَّاسِ اَنْ تَحْكُمُوا بِالْعَدْلِ اِنَّ اللّٰهَ نِعِمَّا يَعِظُكُمْ بِهٖ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ سَمٖيعًا بَصٖيرًا ﴿٥٨﴾

58- "Allah size, mutlaka emanetleri ehli olanlara vermenizi ve insanlar arasında hükmettiğiniz zaman adaletle hükmetmenizi emreder. Allah, size ne kadar güzel öğütler veriyor. Şüphesiz Allah her şeyi işitici, her şeyi görücüdür."

Emanetleri ehline vermek, onlarla ilgili sorumluluk aldıktan sonra halkın mallarını zarar görmemiş olarak kendilerine teslim etmektir.

Bir yoruma göre de; Allah'ın sana teslim ettiği emanetleri vardır. Bu itibarla, emaneti ehline geri vermek, hakkında hıyanet yapmaksızın onu salimen Allah'a teslim etmektir. Mesela, kalp emaneti hakkındaki hıyanet, o konuda iddiacı olmandır. Sır emaneti hakkındaki hainlik ise, onu görmendir.

İnsanlar arasında adaletle hükmetmek ise, verirken yakın olan kimseyle uzak olan kimse arasında eşitlik gözetmek ve kin duygusunun seni, nefsin için intikam almaya sevk etmemesidir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُٓوا اَط۪يعُوا اللّٰهَ وَاَط۪يعُوا الرَّسُولَ وَاُو۬لِي الْاَمْرِ
مِنْكُمْۚ فَاِنْ تَنَازَعْتُمْ ف۪ي شَيْءٍ فَرُدُّوهُ اِلَى اللّٰهِ وَالرَّسُولِ اِنْ كُنْتُمْ
تُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِۜ ذٰلِكَ خَيْرٌ وَاَحْسَنُ تَاْو۪يلًا ٥٩

59- "Ey iman edenler! Allah'a itaat edin. Peygamber'e ve sizden olan idarecilere de itaat edin. Eğer bir hususta anlaşmazlığa düşerseniz, -Allah'a ve ahirete gerçekten inanıyorsanız- onu Allah'a ve Resûl'e götürün. Bu, hem hayırlı hem de netice bakımından daha güzeldir."

Allah, Hz. Peygamber (s.a.v.)'in şanını yüceltmek ve kadrini yükseltmek için adını kendi adıyla birlikte zikretmiştir.

İdarecilere gelince, ilmî izaha göre bu hükümdar demektir. Marifetin ıstılahında ise ârif, işin başında bulunan kimsenin idarecisi, şeyh de müridin idarecisidir. Bir de her topluluğun önderi onun idarecisidir.

Bir yoruma göre de; veli müride müridden daha yakındır.

(فَاِنْ تَنَازَعْتُمْ فٖي شَيْءٍ فَرُدُّوهُ اِلَى اللّٰهِ وَالرَّسُولِ اِنْ كُنْتُمْ تُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ) *"Eğer bir hususta anlaşmazlığa düşerseniz, -Allah'a ve ahirete gerçekten inanıyorsanız- onu Allah'a ve Resul'e götürün."*

İlmî yoruma göre; anlaşmazlığın Allah'a ve Resûl'üne götürülmesi, Kur'an'a ve Sünnet'e başvurmak demektir. Tevhidi esas alan açıklamaya göre ise bu, anlaşmazlığın ve ona dair bilginin Allah'a bırakılması demektir. Bu itibarla müminin kalbinde farklı iki husus belirdiği zaman, bu takdirde eğer o kimse içtihat yapabilecek ilmî kapasiteye sahipse kavrayışının işaretine uygun olarak, içine doğan hususu değerlendirir. Mana ehli olan kimse ise, konuyu Allah'a havale eder ve kendi sırlar âleminde muhatap kılınıp vasıtasız olarak kalbine ilham edilen yükümlülüklere riayet eder.

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذٖينَ يَزْعُمُونَ اَنَّهُمْ اٰمَنُوا بِمَٓا اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمَٓا اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ يُرٖيدُونَ اَنْ يَتَحَاكَمُوٓا اِلَى الطَّاغُوتِ وَقَدْ اُمِرُوٓا اَنْ يَكْفُرُوا بِهٖ وَيُرٖيدُ الشَّيْطَانُ اَنْ يُضِلَّهُمْ ضَلَالًا بَعٖيدًا ﴿٦٠﴾

60- "Sana indirilene ve senden önce indirilenlere inandıklarını ileri sürenleri görmedin mi? Tâğût'a inanmamaları kendilerine emrolunduğu halde, Tâğût'un önünde muhakemeleşmek istiyorlar. Halbuki Şeytan, onları büsbütün saptırmak istiyor."

Onlar ihlâslı görünüp kalben münafıklık yaptıklarından Allah, Hz. Cibril'in dili üzerine onları rüsva ederek: (يُرٖيدُونَ اَنْ يَتَحَاكَمُوٓا اِلَى الطَّاغُوتِ وَقَدْ اُمِرُوٓا اَنْ يَكْفُرُوا بِهٖ) *"Tâğût'a inanmamaları kendilerine emrolunduğu halde, Tâğût'un önünde muhakemeleşmek istiyorlar"* buyurdu. Yani onu reddetmekle yükümlü kılındılar. Bu itibarla kim, Allah yolundan sapar ve üstazından başkasına dönerse, mahrumiyeti ve kötülenmeyi hak etmiş olur.

وَاِذَا ق۪يلَ لَهُمْ تَعَالَوْا اِلٰى مَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ وَاِلَى الرَّسُولِ رَاَيْتَ الْمُنَافِق۪ينَ
يَصُدُّونَ عَنْكَ صُدُودًا ﴿٦١﴾

61- "Onlara: 'Allah'ın indirdiğine ve Resûl'e gelin' denildiği zaman, münafıkların senden iyice uzaklaştıklarını görürsün."

Hak sözü dışındaki her şey, münafıklara hafif gelir. Tevhide gelince, onun kelimesini ancak ihlâs sahibi bir insan duyar. Allah hakkında gevşek olanlar ve nefret sahipleri ise hak olanı duymazlar. Çünkü nefse karşı çıkmak, sıddîkler dışındaki kimselere zor gelir. Nasıl ki göz, güneşin karşısında duramıyorsa, aynı şekilde münafıklar da Hz. Peygamber (s.a.v.)'e karşı duramadıklarından ondan yüz çevirmiş oldular.

فَكَيْفَ اِذَٓا اَصَابَتْهُمْ مُص۪يبَةٌ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْد۪يهِمْ ثُمَّ جَٓاؤُ۫كَ يَحْلِفُونَ
بِاللّٰهِ اِنْ اَرَدْنَٓا اِلَّٓا اِحْسَانًا وَتَوْف۪يقًا ﴿٦٢﴾

62- "Elleriyle yaptıkları yüzünden başlarına bir felaket gelince hemen: 'Biz, yalnızca iyilik etmek ve arayı bulmak istedik' diye yemin ederek sana nasıl gelirler!"

Samimi olmayan kimsenin, tehlike esnasındaki yakarışının hiçbir aslı yoktur. Bu nedenle dikkate alınmaması gerekir. Çünkü bu yakarışın ömrü, sıkıntının ortadan kalktığı zamana kadardır. En büyük musibet ise yapılan kusura karşı pervasız davranmaktır. Bir yoruma gör de, musibetin bir türü de sana faydası olmayan şeylerle vaktini heder etmendir.

اُو۬لٰٓئِكَ الَّذ۪ينَ يَعْلَمُ اللّٰهُ مَا ف۪ي قُلُوبِهِمْ فَاَعْرِضْ عَنْهُمْ وَعِظْهُمْ وَقُلْ
لَهُمْ ف۪ٓي اَنْفُسِهِمْ قَوْلًا بَل۪يغًا ﴿٦٣﴾

63- "Onlar, Allah'ın, kalplerindekini bildiği kimselerdir. Onlara aldırma, kendilerine öğüt ver ve onlara, kendileri hakkında tesirli söz söyle."

Onlara, şefkat göstermenin gereği olarak rahatça ve genişçe vaaz et. Fakat onları önemsemekten ve kendilerinden huzur duymaktan kalbini alıkoy. Şunu da bilmen gerekir ki, bizim sahip çıkmadığımız kimseye senin yardımının hiçbir faydası olamaz.

وَمَٓا اَرْسَلْنَا مِنْ رَسُولٍ اِلَّا لِيُطَاعَ بِاِذْنِ اللّٰهِ وَلَوْ اَنَّهُمْ اِذْ ظَلَمُوٓا اَنْفُسَهُمْ جَٓاؤُ۫كَ فَاسْتَغْفَرُوا اللّٰهَ وَاسْتَغْفَرَ لَهُمُ الرَّسُولُ لَوَجَدُوا اللّٰهَ تَوَّابًا رَح۪يمًا ﴿٦٤﴾

64- "Biz, her peygamberi Allah'ın izniyle, ancak kendisine itaat edilmesi için gönderdik. Eğer kendilerine zulmettikleri zaman, sana gelseler de Allah'tan bağışlanmayı dileseler, Resûl de onlar için istiğfar etseydi, Allah'ı ziyadesiyle affedici, esirgeyici bulurlardı."

Biz, peygamberi sadece halkı bize davet etmekle memur kıldık.

(وَلَوْ اَنَّهُمْ اِذْ ظَلَمُوٓا اَنْفُسَهُمْ جَٓاؤُ۫كَ) *"Eğer kendilerine zulmettikleri zaman, sana gelselerdi..."* Eğer onlar seni kendilerine vasıta edinselerdi, bize kavuşurlardı. Diğer bir yoruma göre de eğer onlar Allah'a karşı tezellül ve muhtaçlık duygusundan ayrılmayıp mağfiret dilemeyi binek edinselerdi, iyiliklerin menzilinde konaklayacaklardı.

فَلَا وَرَبِّكَ لَا يُؤْمِنُونَ حَتّٰى يُحَكِّمُوكَ ف۪يمَا شَجَرَ بَيْنَهُمْ ثُمَّ لَا يَجِدُوا ف۪ٓي اَنْفُسِهِمْ حَرَجًا مِمَّا قَضَيْتَ وَيُسَلِّمُوا تَسْل۪يمًا ﴿٦٥﴾

65- "Hayır, Rabbine andolsun ki, aralarında çıkan anlaşmazlık hususunda seni hakem kılıp sonra da verdiğin hükümden içlerinde hiçbir sıkıntı duymaksızın onu tam manasıyla kabullenmedikçe iman etmiş olmazlar."

Allah, kendisine gelen yolu, Hz. Peygember (s.a.v.)'e iman etmedikleri sürece herkesin yüzüne kapatmıştır. Bu nedenle kim, onun sancağı altında yürümezse, Allah'tan bir nefeslik bir yardım bile alamaz.

Sonra Allah, insanın kalbindeki muhalefetlerin tamamen yok olmasını da imanın şartı kılmıştır.

(ثُمَّ لَا يَجِدُوا فِي اَنْفُسِهِمْ حَرَجًا) *"...içlerinde hiçbir sıkıntı duymaksızın..."* O halde müminin, o tehlikeleri güler yüzle karşılaması gerekir.

Şiir:

*İnsaflı olmasa dahi sevgili, ben insaflı olurum*
*Yudumlarım onun için en acı olanı ve içiririm ona en duru olanı*
*Eğer bana: İkiye bölün, dese o*
*Seçerim bunu rızayla, hiç zorlanmadan*

وَلَوْ اَنَّا كَتَبْنَا عَلَيْهِمْ اَنِ اقْتُلُوٓا اَنْفُسَكُمْ اَوِ اخْرُجُوا مِنْ دِيَارِكُمْ مَا
فَعَلُوهُ اِلَّا قَلِيلٌ مِنْهُمْ وَلَوْ اَنَّهُمْ فَعَلُوا مَا يُوعَظُونَ بِهِ لَكَانَ خَيْرًا
لَهُمْ وَاَشَدَّ تَثْبِيتًا ﴿٦٦﴾ وَاِذًا لَاٰتَيْنَاهُمْ مِنْ لَدُنَّٓا اَجْرًا عَظِيمًا ﴿٦٧﴾
وَلَهَدَيْنَاهُمْ صِرَاطًا مُسْتَقِيمًا ﴿٦٨﴾

66, 67, 68- "Eğer onlara: 'Kendinizi öldürün yahut yurtlarınızdan çıkın' diye emretmiş olsaydık, içlerinden pek azı müstesna, bunu yapmazlardı. Eğer kendilerine verilen öğüdü yerine getirselerdi, onlar için hem daha hayırlı hem de imanlarını daha pekiştirici olurdu. O zaman elbette kendilerine nezdimizden büyük mükâfat verirdik. Ve onları dosdoğru bir yola iletirdik."

Allah, burada samimiyetlerindeki hastalıktan ve iflaslarının ne denli güçlü olduğundan söz ettikten sonra, işledikleri kusurdan haberdar olduğunu bildirmiştir.

Allah, onları pek çok imtihanlardan muaf tuttuktan sonra şöyle buyurmuştur: Eğer onlar, hizmete meyletselerdi ve ibadet hizmetine soyunsalardı, bu onlar için küfürde ve kibirlenmede ısrar etmelerinden daha hayırlı olurdu. Eğer onlar, bunu yapsalardı, biz onlara kendi katımızdan büyük bir sevap verir, onları doğru yola iletir ve kendilerini kalıcı bir nimete kavuştururduk.

İşarî tefsire göre bu emir, hevaya muhalefeti ve alışkanlıklarına mani olmak suretiyle nefisleri boğazlamayı, nefsin etkin olduğu alandan dışarı çıkmayı ve dünyaya bağlılığın yurtlarını terk etmeyi öngörmektedir.

وَمَنْ يُطِعِ اللّٰهَ وَالرَّسُولَ فَاُو۬لٰٓئِكَ مَعَ الَّذ۪ينَ اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ مِنَ النَّبِيّ۪نَ وَالصِّدّ۪يق۪ينَ وَالشُّهَدَٓاءِ وَالصَّالِح۪ينَ وَحَسُنَ اُو۬لٰٓئِكَ رَف۪يقًا ﴿٦٩﴾ ذٰلِكَ الْفَضْلُ مِنَ اللّٰهِ وَكَفٰى بِاللّٰهِ عَل۪يمًا ﴿٧٠﴾

69, 70- "Kim, Allah'a ve Resûl'e itaat ederse, işte onlar, Allah'ın kendilerine lütuflarda bulunduğu peygamberler, sıddîkler, şehitler ve salih kişilerle beraberdir. Bunlar, ne güzel arkadaştır. Bu lütuf Allah'tandır. Bilen olarak Allah yeter."

Allah, Hz. Peygamber'e itaati, ümmete uygun düşecek şekilde, peygamberlerin, sıddîklerin ve şehitlerin makamlarına ulaşmanın anahtarı kılmıştır. Bu da Hz. Peygamber'e şeref olarak yeter.

Sonra: (ذٰلِكَ الْفَضْلُ مِنَ اللّٰهِ) *"Bu lütuf Allah'tandır"* buyurmuştur. Bu ifadeyle Allah, bu makamlarını, her türlü gerekçe, istihkak ve sebepten soyutlamıştır. Çünkü onlara beliren ve nail oldukları makamlar, yalnız Allah'ın lütfu ve hiçbir sebebe dayanmayan keremidir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا خُذُوا حِذْرَكُمْ فَانْفِرُوا ثُبَاتٍ اَوِ انْفِرُوا جَم۪يعًا ﴿٧١﴾ وَاِنَّ مِنْكُمْ لَمَنْ لَيُبَطِّئَنَّۚ فَاِنْ اَصَابَتْكُمْ مُص۪يبَةٌ قَالَ قَدْ اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيَّ اِذْ لَمْ اَكُنْ مَعَهُمْ شَه۪يدًا ﴿٧٢﴾ وَلَئِنْ اَصَابَكُمْ فَضْلٌ مِنَ اللّٰهِ لَيَقُولَنَّ كَاَنْ لَمْ تَكُنْ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُ مَوَدَّةٌ يَا لَيْتَن۪ي كُنْتُ مَعَهُمْ فَاَفُوزَ فَوْزًا عَظ۪يمًا ﴿٧٣﴾

71, 72, 73- "Ey iman edenler, tedbiriniz alın. Bölük bölük savaşa çıkın yahut gerektiğinde topyekûn savaşın. İçinizden bazıları vardır

ki, pek ağırdan alırlar. Eğer size bir felaket erişirse: 'Allah, bana lütfetti de onlarla beraber bulunmadım' der. Eğer Allah'tan size bir lütuf erişirse, sanki sizinle onun arasında bir dostluk yokmuş gibi: 'Keşke onlarla beraber olsaydım da ben de büyük bir başarı kazansaydım' der."

Allah'a sığınmak, iyi niyet sahiplerinin, Allah ile beraber seyretmek ise erenlerin sıfatlarındandır. Bu nedenle samimiyetle Allah'a sığınanlardan başka hiçbir kimse, Allah ile beraberliği yakalayamaz. Allah dışındaki her şeyden kaçmak ise, tevhid ehli her insanın özelliğidir.

(وَاِنَّ مِنْكُمْ لَمَنْ لَيُبَطِّئَنَّ) *"İçinizden bazıları vardır ki, pek ağırdan alırlar."* Yani inançları bir vasıf üzerine karar kılmamıştır. Böylece bu kimseler, nefsanî arzularına bağlanmışlardır. Nitekim Müslümanların başına gelen bir nahoş olay gördüklerinde şükrederek: Bizi onlara uymaktan koruyan Allah'a hamd olsun. Yoksa onların başına gelen, bizim de başımıza gelecekti. Şayet bir nimet ve hayra kavuşursanız, o zaman size yakın dururlar ve sizinle beraber olmayı temenni ederler. İşte bu kimseler hem dünyada hem de ahirette kaybedenlerdir. Onlar, ne çirkin birer kâfir, ne de samimi birer mümindirler.

(كَاَنْ لَمْ تَكُنْ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُ مَوَدَّةٌ) *"Sanki sizinle onun arasında bir dostluk yokmuş gibi."* Yani onlar, hayatın haşmetini bir kenara itip size saygıyı gözetmediler.

فَلْيُقَاتِلْ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ الَّذِينَ يَشْرُونَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا بِالْاٰخِرَةِ وَمَنْ يُقَاتِلْ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ فَيُقْتَلْ اَوْ يَغْلِبْ فَسَوْفَ نُؤْتِيهِ اَجْرًا عَظِيمًا ﴿٧٤﴾

74- "O halde dünya hayatını ahiret karşılığında satanlar, Allah yolunda savaşsınlar. Kim, Allah yolunda savaşır da öldürülür veya galip gelirse, biz ona büyük bir mükâfat vereceğiz."

Kim nefsini iç dünyasında öldürmezse, bizatihi cihad yapması doğru olmaz. Bu itibarla önce can korkusunu kalpten çıkarmak, ondan sonra nefsi ölüme teslim etmek gerekir.

(فَسَوْفَ نُؤْتِيهِ اَجْرًا عَظِيمًا) *"Biz ona büyük bir mükâfat vereceğiz."* Yani bizim onun ölümünden sonraki bekamız, onun için kendisinin kendi nefsi için yaşamasından daha hayırlıdır.

Şiir:

*Sen benim yerimde değil misin? Bana yeten bir şeref olarak*
*Senin ötende yoktur benim kastım ve matlubum*

وَمَا لَكُمْ لَا تُقَاتِلُونَ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ وَالْمُسْتَضْعَفِينَ مِنَ الرِّجَالِ وَالنِّسَٓاءِ وَالْوِلْدَانِ الَّذِينَ يَقُولُونَ رَبَّنَٓا اَخْرِجْنَا مِنْ هٰذِهِ الْقَرْيَةِ الظَّالِمِ اَهْلُهَا وَاجْعَلْ لَنَا مِنْ لَدُنْكَ وَلِيًّا وَاجْعَلْ لَنَا مِنْ لَدُنْكَ نَصِيرًا ﴿٧٥﴾

75- "Size ne oldu da Allah yolunda ve: 'Rabbimiz, bizi halkı zalim olan bu şehirden çıkar. Bize, tarafından bir sahip gönder, bize katından bir yardımcı yolla' diyen zavallı erkekler, kadınlar ve çocuklar uğrunda savaşmıyorsunuz!"

Sizi Allah yolunda savaşmaktan alıkoyan ne?! Sizi, canlarınızı Allah için feda etmeye özendirmeyen ne?! Şayet canlarınızı Allah yolunda ve Allah için feda ederseniz bundan size ne zarar gelir?! Acaba Allah'tan dolayı zarar edeceğinizden mi korkarsınız? Yoksa topluca Allah'ın huzuruna çıkarılacağınızı mı bilmiyorsunuz? O halde siz Allah yolunda yok olduktan sonra O'nun bekasıyla neden yetinmezsiniz?

اَلَّذِينَ اٰمَنُوا يُقَاتِلُونَ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ وَالَّذِينَ كَفَرُوا يُقَاتِلُونَ فِي سَبِيلِ الطَّاغُوتِ فَقَاتِلُٓوا اَوْلِيَٓاءَ الشَّيْطَانِ اِنَّ كَيْدَ الشَّيْطَانِ كَانَ ضَعِيفًا ﴿٧٦﴾

76- "İman edenler, Allah yolunda savaşırlar. İnanmayanlar ise tâğût yolunda savaşırlar. O halde şeytanın dostlarına karşı savaşın. Şüphe yok ki, şeytanın kurduğu düzen zayıftır."

İhlas sahipleri, hiçbir şeyi Allah'a tercih etmez ve hiçbir şeyi Allah'tan esirgemezler. Onlar, daima Allah için nefislerine karşıdırlar.

Kâfirler ise, müminlerin durumlarının aksi üzeredirler. Sonra Allah, müminleri: (فَقَاتِلُوٓا اَوْلِيَٓاءَ الشَّيْطَانِ) *"O halde şeytanın dostlarına karşı savaşın"* sözüyle kuvvetlendirip teşvik etmiştir. Yani kalben onlardan korkmayın. Çünkü sahibiniz ve düşmana karşı size yetecek olan benim.

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذٖينَ قٖيلَ لَهُمْ كُفُّٓوا اَيْدِيَكُمْ وَاَقٖيمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ فَلَمَّا كُتِبَ عَلَيْهِمُ الْقِتَالُ اِذَا فَرٖيقٌ مِنْهُمْ يَخْشَوْنَ النَّاسَ كَخَشْيَةِ اللّٰهِ اَوْ اَشَدَّ خَشْيَةً وَقَالُوا رَبَّنَا لِمَ كَتَبْتَ عَلَيْنَا الْقِتَالَ لَوْلَٓا اَخَّرْتَنَٓا اِلٰٓى اَجَلٍ قَرٖيبٍ قُلْ مَتَاعُ الدُّنْيَا قَلٖيلٌ وَالْاٰخِرَةُ خَيْرٌ لِمَنِ اتَّقٰى وَلَا تُظْلَمُونَ فَتٖيلًا ﴿٧٧﴾

77- "Kendilerine: 'Ellerinizi savaştan çekin, namazı kılın ve zekâtı verin' denilen kimseleri görmedin mi? Sonra onlara savaş farz kılınınca, içlerinden bir grup hemen Allah'tan korkar gibi, hatta daha fazla bir korku ile insanlardan korkmaya başladılar da: 'Rabbimiz, savaşı bize niçin yazdın! Bizi yakın bir süreye kadar ertelesen, olmaz mıydı?' dediler. Onlara de ki: 'Dünya menfaati, önemsizdir. Allah'tan korkanlar için ahiret daha hayırlıdır ve size kıl payı kadar haksızlık edilmez.'"

Ellerinizi işlerinizden çekiniz ve onları mabudunuza bırakınız.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Ellerinizi haramı almak ve onda tasarrufta bulunmaktan alıkoyun.

- Şehevî arzulara yanaşmayın.

- Yalvararak dilekte bulunmak üzere, ellerinizi Allah'a doğru yükseltmekten başka her şeyden alıkoyun.

Onlara savaş farz kılınınca, Allah'ın emrini ağır bularak hemen lütfunu talep ettiler. Oysa kulluk, ağır bulmayı terk edip aceleciliği

yok etmek, can sıkıntısına ve Allah'ın emrini ağır bulmaya uzak durmakla gerçekleşir.

(قُلْ مَتَاعُ الدُّنْيَا قَلِيلٌ وَالْاٰخِرَةُ خَيْرٌ لِمَنِ اتَّقٰى وَلَا تُظْلَمُونَ فَتِيلًا) *"Onlara de ki: 'Dünya menfaati, önemsizdir. Allah'tan korkanlar için ahiret daha hayırlıdır ve size kıl payı kadar haksızlık edilmez.'"*

Allah, sana dünya menfaatlerini kullanma imkânı verdikten sonra: (قُلْ مَتَاعُ الدُّنْيَا قَلِيلٌ) *"De ki, dünya menfaati önemsizdir"* buyurarak onu sana ait bir şey olarak saymadı. Sonra ondan bir hurmanın yarısı kadarını sadaka olarak verdiğin zaman cehennemden kurtulur ve cenneti kazanırsın ki, bu da keremin son sınırıdır.

Bu arada insanın, sevdiği için yaptığı çok miktardaki fedakârlığı azımsaması, birlikteliğinin en güçlü göstergesidir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, müminlerden dünyaya az ilgi göstermelerini isteyince, onu kolayca terk edebilmeleri için değerini gözlerinde azaltmış oldu.

- De ki: Dünya menfaati bir bütün olarak değersizdir. Ondan senin payına düşen ise azın en azıdır. Bu durumda eğer sözünde durursan, Allah, helal menfaat edindin diye neden onun için seni sorumlu kılsın?

Bu arada dünyanın değeri az olduğuna göre, gerçekte en değersiz olan, değerli olan yerine değersize razı olan kimsedir. Öte yandan Allah, mümini dünyalık varlıktan tedricen koparmıştır. Bu amaçla önce: (قُلْ مَتَاعُ الدُّنْيَا قَلِيلٌ وَالْاٰخِرَةُ خَيْرٌ لِمَنِ اتَّقٰى) *"Onlara de ki: 'Dünya menfaati, önemsizdir. Allah'tan korkanlar için ahiret daha hayırlıdır'"* buyurarak onları ahiret ile dünyadan korumuş, sonra da onları hem dünya hem de ahiretten kopararak: (وَاللّٰهُ خَيْرٌ وَاَبْقٰى) *"Allah, en hayırlı ve en sürekli olandır"* (Tâhâ, 20/73), buyurmuştur.

اَيْنَ مَا تَكُونُوا يُدْرِكْكُمُ الْمَوْتُ وَلَوْ كُنْتُمْ فِي بُرُوجٍ مُشَيَّدَةٍ وَاِنْ تُصِبْهُمْ حَسَنَةٌ يَقُولُوا هٰذِهِ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ وَاِنْ تُصِبْهُمْ سَيِّئَةٌ يَقُولُوا

هٰذِهٖ مِنْ عِنْدِكَ قُلْ كُلٌّ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ فَمَالِ هٰٓؤُلَٓاءِ الْقَوْمِ لَا يَكَادُونَ
يَفْقَهُونَ حَدٖيثًا ﴿٧٨﴾

78- "Nerede olursanız olun, ölüm size ulaşır. Sarp ve sağlam kalelerde olsanız bile. Kendilerine bir iyilik dokunsa, 'Bu, Allah'tan, derler.' Başlarına bir kötülük gelince de 'Bu senden derler.' 'Hepsi Allah'tandır' de. Bu adamlara ne oluyor ki, bir türlü laf anlamıyorlar."

Ölüm, mümin için ferah vesilesidir. Allah'a yakın olmaya dair haber, mümin için müjdedir. Çünkü bu, onu Allah'a kavuşturan bir sebeptir. Nitekim Allah'a kavuşmayı severse, Allah da ona kavuşmayı sever. Bir yoruma göre ise ölüm kaçınılmaz olduğuna göre, isteyerek Allah'ın emrine teslim olmak, istemeyerek ona katlanmaktan iyidir.

Sonra Allah, şunu haber vermiştir: Onlar, basiretleri zayıf, inançları da hastalıklı olduğu için, bir güzelliğe kavuştuklarında onunla sevinir ve zahiren şükrederler. Başlarına bir kötülük geldiği zaman ise Allah'a giden yolu bulamazlar ve şirk damarları harekete geçerek bunu mahlûka izafe ederler.

İşte bu nedenle Allah, onlara cevap vererek şöyle buyurmuştur: Ey Muhammed! Onlara de ki: "Her şey, yaratma, yoktan var etme, inşa etme, yeniden yaratma, takdir etme ve kolaylık dileme gibi bütün yönlerden Allah tarafındandır."

مَٓا اَصَابَكَ مِنْ حَسَنَةٍ فَمِنَ اللّٰهِ وَمَٓا اَصَابَكَ مِنْ سَيِّئَةٍ فَمِنْ نَفْسِكَ
وَاَرْسَلْنَاكَ لِلنَّاسِ رَسُولًا وَكَفٰى بِاللّٰهِ شَهٖيدًا ﴿٧٩﴾

79- "Sana gelen iyilik Allah'tandır. Başına gelen kötülük ise nefsindendir. Seni insanlara elçi gönderdik. Şahit olarak da Allah yeter."

Sana gelen iyilik, lütuf olarak Allah'tandır. Başına gelen bir kötülük ise kesp olarak senin nefsindendir. Yaratılışı bakımından ise ikisi de Allah'tandır.

مَنْ يُطِعِ الرَّسُولَ فَقَدْ اَطَاعَ اللّٰهَ وَمَنْ تَوَلّٰى فَمَٓا اَرْسَلْنَاكَ عَلَيْهِمْ حَفِيظًا ﴿٨٠﴾

80- "Kim, peygamber'e itaat ederse, Allah'a itaat etmiş olur. Yüz çevirene gelince, seni onların başına bekçi göndermedik."

Bu ayet, Hz. Peygamberin cem haline işaret etmektedir. Allah (c.c.), şöyle buyurmuş olmaktadır ki: Peygambere itaat bize itaattir. Bu itibarla kim, ona yakın olmaya çalışırsa, bize yakın olmaya çalışmış olur. Onun kabul ettiğini biz de kabul ederiz. Onun reddettiğini biz de reddederiz.

وَيَقُولُونَ طَاعَةٌ فَاِذَا بَرَزُوا مِنْ عِنْدِكَ بَيَّتَ طَٓائِفَةٌ مِنْهُمْ غَيْرَ الَّذِي تَقُولُ وَاللّٰهُ يَكْتُبُ مَا يُبَيِّتُونَ فَاَعْرِضْ عَنْهُمْ وَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيلًا ﴿٨١﴾

81- "'Baş üstüne' derler. Ama yanından ayrılınca onlardan bir kısmı, senin dediğinden başkasını gizlice kurar. Allah da, onların gizlice kurduklarını yazar. Sen onlara aldırma ve Allah'a dayan. Sana vekil olarak Allah yeter."

Yani onlar yanına geldikleri zaman karşında teslim olurlar. Çıktıkları zaman ise onlara olan yönelişinin nuru kendilerinden kesilir. Bu nedenle tekrar karanlıklara dönmüş olurlar.

اَفَلَا يَتَدَبَّرُونَ الْقُرْاٰنَ وَلَوْ كَانَ مِنْ عِنْدِ غَيْرِ اللّٰهِ لَوَجَدُوا فِيهِ اخْتِلَافًا كَث۪يرًا ﴿٨٢﴾ وَاِذَا جَٓاءَهُمْ اَمْرٌ مِنَ الْاَمْنِ اَوِ الْخَوْفِ اَذَاعُوا بِه۪ وَلَوْ رَدُّوهُ اِلَى الرَّسُولِ وَاِلٰٓى اُو۬لِي الْاَمْرِ مِنْهُمْ لَعَلِمَهُ الَّذ۪ينَ يَسْتَنْبِطُونَهُ مِنْهُمْ وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهُ لَاتَّبَعْتُمُ الشَّيْطَانَ اِلَّا قَل۪يلًا ﴿٨٣﴾

82, 83- "Hâlâ Kur'an üzerinde gereği gibi düşünmeyecekler mi! Eğer o, Allah'tan başkası tarafından gelmiş olsaydı, onda birçok tutarsızlık bulurlardı. Onlara, güven veya korkuya dair bir haber gelince, hemen onu yayarlar. Halbuki onu peygambere veya aralarında yetki sahibi kimselere götürselerdi, onların arasından işin iç yüzünü anlayanlar, onun ne olduğunu bilirlerdi. Allah'ın size lütuf ve rahmeti olmasaydı, pek azınız müstesna, şeytana uyup giderdiniz."

Manaların işaretini anlamak, fikirlerin dalışıyla, manaların cevherlerini ortaya çıkarmak ise çıkarsamanın incelikleriyle olur.

(وَاِذَا جَٓاءَهُمْ اَمْرٌ مِنَ الْاَمْنِ اَوِ الْخَوْفِ) *"Onlara, güven veya korkuya dair bir haber gelince..."* Onlar, haktan gafil oldukları için kendilerine sırlarını aktaracak kimse bulunmamış ve bu nedenle sırrı birbirlerine açıklamışlardır. Oysa müminlerin sırlarını bilen Mevlâları olduğu için ve kalplerine bir şey doğduğu zaman onunla Allah'a hitap ettikleri için, sırrı herhangi bir mahlûka aktarmaya ihtiyaç duymamışlardır. Bu itibarla onların gizli sözlerini duyan da hitaplarını bilen de Allah'tır.

(وَلَوْ رَدُّوهُ اِلَى الرَّسُولِ وَاِلٰٓى اُولِي الْاَمْرِ مِنْهُمْ) *"Halbuki onu peygambere veya aralarında yetki sahibi kimselere götürselerdi..."* Yani eğer onlar, sırlarını Allah'ın yolunda olanlara aktarmış olsalardı, onların problemini halleder ve kendilerine hidayet ve irşad nuruyla yardımcı olurlardı.

(وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهُ) *"Allah'ın size lütuf ve rahmeti olmasaydı..."* Allah'ın, velilerine olan lütfü olmasaydı, tıpkı vakitteki benzerleri gibi, o kimseler, tefrikanın her vadisinde sersem sersem dolaşacaklardı.

فَقَاتِلْ فٖي سَبٖيلِ اللّٰهِ لَا تُكَلَّفُ اِلَّا نَفْسَكَ وَحَرِّضِ الْمُؤْمِنٖينَ عَسَى
اللّٰهُ اَنْ يَكُفَّ بَاْسَ الَّذٖينَ كَفَرُوا وَاللّٰهُ اَشَدُّ بَاْسًا وَاَشَدُّ تَنْكٖيلًا ﴿٨٤﴾

84- "Artık Allah yolunda savaş! Sen, kendinden başkası sebebiyle sorumlu tutulmazsın. Müminleri de teşvik et. Umulur ki Allah, kâfirlerin gücünü kırar. Allah'ın gücü daha çetin ve cezası daha şiddetlidir."

Senden gelen her şeyi bizim emrimize teslim etmek suretiyle bize karşı dürüst ol. Çünkü nasıl ki, sen mertebece hepsinden üstün olduğun için, kimse senin seviyende olamıyorsa, aynı zamanda biz, senden başkasını senin üstlendiğinin bir benzeriyle yükümlü kılmayız ve yüklendiğin sorumluluğu da senden başkasına yüklemeyiz. Çünkü önderlikte sen, benzerlerinden farklısın.

مَنْ يَشْفَعْ شَفَاعَةً حَسَنَةً يَكُنْ لَهُ نَصِيبٌ مِنْهَا وَمَنْ يَشْفَعْ شَفَاعَةً سَيِّئَةً يَكُنْ لَهُ كِفْلٌ مِنْهَا وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ مُقِيتًا ﴿٨٥﴾

85- "Kim, iyi bir işe aracılık ederse, onun da o işten bir nasibi olur. Kim, kötü bir işe aracılık ederse, onun da ondan bir payı olur. Allah, her şeyin karşılığını verendir."

Şefaatçi, şefaat ettiği kimsenin durumunu kurtarır ve şefaatine karşılık olarak Allah'tan büyük bir mertebe kazanır. Kim, bizim işimizde bozgunculuğa çabalarsa, vebal yüklenmiş ve günaha girmiş olur.

وَاِذَا حُيِّيتُمْ بِتَحِيَّةٍ فَحَيُّوا بِاَحْسَنَ مِنْهَآ اَوْ رُدُّوهَا اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ حَسِيبًا ﴿٨٦﴾

86- "Bir selam ile selamlandığınız zaman, siz de ondan daha güzeli ile selamlayın yahut aynı ile karşılık verin. Şüphesiz Allah, her şeyin hesabını arayandır."

Bu ayet, onlara güzel geçinme ve sohbetin adabını öğretmektedir. Sana bir fazilet kazandıran kimsenin bu iyiliği boynunda borç olur. O halde ya onun yaptığından daha fazlasını yaparsın yahut da yaptığından az yapmazsın.

اَللّٰهُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ لَيَجْمَعَنَّكُمْ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَا رَيْبَ فٖيهِ وَمَنْ
اَصْدَقُ مِنَ اللّٰهِ حَدٖيثًا ﴿٨٧﴾

87- “Allah ki, O’ndan başka hiçbir tanrı yoktur, elbette sizi kıyamet günü toplayacaktır. Bunda asla şüphe yoktur. Söz bakımından Allah’tan daha doğru kim vardır!”

Bu hitap hem olumsuzluk hem de olumluluk içermektedir. Olumsuzluk, Allah’tan başka varlıklarla ilgili olup O’nun başkaları için yok saydığının varlığı imkânsızdır. Olumluluk ise Allah için tanrılık ispatlamak olup kendisi için ispatladığı şeyin yokluğu imkânsızdır.

فَمَا لَكُمْ فِي الْمُنَافِقٖينَ فِئَتَيْنِ وَاللّٰهُ اَرْكَسَهُمْ بِمَا كَسَبُوا اَتُرٖيدُونَ
اَنْ تَهْدُوا مَنْ اَضَلَّ اللّٰهُ وَمَنْ يُضْلِلِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهُ سَبٖيلًا ﴿٨٨﴾

88- “Size ne oldu da münafıklar hakkında iki gruba ayrıldınız? Halbuki Allah onları, kendi ettikleri yüzünden baş aşağı etmiştir. Allah’ın saptırdığını doğru yola getirmek mi istiyorsunuz? Allah’ın saptırdığı kimse için asla yol bulamazsın.”

Onlar hakkındaki hükmüm, benim düşmanlarım oldukları şeklindedir. Onlar, dünyada ve ahirette rızama kavuşamazlar. Bir de siz çabalarınızla, kaderini çizdiğim kimseyi kurtaramazsınız. Çünkü her şey, tedbire değil, takdire bağlıdır.

وَدُّوا لَوْ تَكْفُرُونَ كَمَا كَفَرُوا فَتَكُونُونَ سَوَٓاءً فَلَا تَتَّخِذُوا
مِنْهُمْ اَوْلِيَٓاءَ حَتّٰى يُهَاجِرُوا فٖي سَبٖيلِ اللّٰهِ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَخُذُوهُمْ
وَاقْتُلُوهُمْ حَيْثُ وَجَدْتُمُوهُمْ وَلَا تَتَّخِذُوا مِنْهُمْ وَلِيًّا وَلَا نَصٖيرًا
﴿٨٩﴾ اِلَّا الَّذٖينَ يَصِلُونَ اِلٰى قَوْمٍ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ مٖيثَاقٌ اَوْ جَٓاؤُ۫كُمْ
حَصِرَتْ صُدُورُهُمْ اَنْ يُقَاتِلُوكُمْ اَوْ يُقَاتِلُوا قَوْمَهُمْ وَلَوْ شَٓاءَ

اللّٰهُ لَسَلَّطَهُمْ عَلَيْكُمْ فَلَقَاتَلُوكُمْ فَاِنِ اعْتَزَلُوكُمْ فَلَمْ يُقَاتِلُوكُمْ
وَاَلْقَوْا اِلَيْكُمُ السَّلَمَ فَمَا جَعَلَ اللّٰهُ لَكُمْ عَلَيْهِمْ سَبِيلًا ﴿٩٠﴾

89, 90- "Sizin de kendileri gibi inkâr etmenizi istediler ki onlarla eşit olasınız. O halde Allah yolunda göç edinceye kadar, onlardan hiç birini dost edinmeyin. Eğer yüz çevirirlerse, onları yakalayın, bulduğunuz yerde öldürün ve hiçbirini dost ve yardımcı edinmeyin. Ancak kendileriyle aranızda antlaşma bulunan bir topluma sığınanlar yahut ne sizinle ne de kendi toplumlarıyla savaşmak istemediklerinden yürekleri sıkılarak size gelenler müstesna. Allah dileseydi, onları başınıza bela ederdi de sizinle savaşırlardı. Artık onlar sizi bırakıp bir tarafa çekilir de sizinle savaşmazlar ve sizinle barış teklif ederlerse bu durumda Allah size, onların aleyhinde bir yola girme hakkı vermemiştir."

Ayet, karıştırıcılara ve hastalıklı hallere sahip olanlara işaret etmektedir. Bunlar, sıddîklerin kendilerinden olmasını temenni ederler ki, isteklerinin gerçekleşmesi imkânsızdır. Bu arada size muhalif olanlar, uyumlu hale gelmedikleri sürece, onlara karşı çıkın, muhalefet edin ve hiçbir halde onlara uymayın, onlarla dost olmayın ve onlardan hiçbir dost ve yardımcı edinmeyin. Allah yolunda seninle uyumlu olan bir kimse, senin için zoraki olarak geçineceğin bir muhaliften hayırlıdır.

(اِلَّا الَّذِينَ يَصِلُونَ اِلٰى قَوْمٍ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ مِيثَاقٌ) *"Ancak kendileriyle aranızda antlaşma bulunan bir topluma sığınanlar..."* Bu ayet, mazeret halinde, güçsüzlere acımak maksadıyla zahiren geçinmeye izin verildiğine işaret etmektedir.

(فَاِنِ اعْتَزَلُوكُمْ) *"Artık onlar sizi bırakıp bir tarafa çekilir de...* Ayet şuna işaret etmektedir: Mana ehli olmayan kimseler, kendi alanlarında kalarak sizinle iyi geçinmeye çalıştıkları zaman, siz onları tarikatınıza davet etmeyin ve onları kendi halleriyle baş başa bırakın. Şayet himmetinizle onlara etki edecek şekilde, kendilerine rahmet

gözüyle bakabilirseniz bunu yapınız. Aksi takdirde onları kendi hallerine bırakınız.

سَتَجِدُونَ اٰخَرٖينَ يُرٖيدُونَ اَنْ يَأْمَنُوكُمْ وَيَأْمَنُوا قَوْمَهُمْ كُلَّمَا رُدُّٓوا اِلَى الْفِتْنَةِ اُرْكِسُوا فٖيهَا فَاِنْ لَمْ يَعْتَزِلُوكُمْ وَيُلْقُٓوا اِلَيْكُمُ السَّلَمَ وَيَكُفُّٓوا اَيْدِيَهُمْ فَخُذُوهُمْ وَاقْتُلُوهُمْ حَيْثُ ثَقِفْتُمُوهُمْ وَاُو۬لٰٓئِكُمْ جَعَلْنَا لَكُمْ عَلَيْهِمْ سُلْطَانًا مُبٖينًا ﴿٩١﴾

91- "Hem sizden hem de kendi toplumlarından emin olmak isteyen başkalarını da bulacaksınız. Bunlar, her ne zaman fitneye götürülseler, ona baş aşağı dalarlar. Eğer sizden uzak durmaz, sulh teklif etmez ve ellerini çekmezlerse, onları yakalayın, rastladığınız yerde öldürün. İşte onlar üzerine sizin için apaçık yetki verdik."

İki zıddı bir araya getirmek isteyen kimsenin çabası boşa gider ve kararlılığı değer taşımaz. Nasıl ki aynı kişi, hem münafık hem de Müslüman olamıyorsa, aynı şekilde bir şahıs hem hakka mürid hem de âdet ehlinin hükümlerine bağlı olamaz. Çünkü müridlik ve âdet, zıt iki husustur. Olması gereken ise, zıtlara karşı ve yabancılara uzak durmaktır.

وَمَا كَانَ لِمُؤْمِنٍ اَنْ يَقْتُلَ مُؤْمِنًا اِلَّا خَطَـًٔا وَمَنْ قَتَلَ مُؤْمِنًا خَطَـًٔا فَتَحْرٖيرُ رَقَبَةٍ مُؤْمِنَةٍ وَدِيَةٌ مُسَلَّمَةٌ اِلٰٓى اَهْلِهٖٓ اِلَّٓا اَنْ يَصَّدَّقُوا فَاِنْ كَانَ مِنْ قَوْمٍ عَدُوٍّ لَكُمْ وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَتَحْرٖيرُ رَقَبَةٍ مُؤْمِنَةٍ وَاِنْ كَانَ مِنْ قَوْمٍ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ مٖيثَاقٌ فَدِيَةٌ مُسَلَّمَةٌ اِلٰٓى اَهْلِهٖ وَتَحْرٖيرُ رَقَبَةٍ مُؤْمِنَةٍ فَمَنْ لَمْ يَجِدْ فَصِيَامُ شَهْرَيْنِ مُتَتَابِعَيْنِ تَوْبَةً مِنَ اللّٰهِ وَكَانَ اللّٰهُ عَلٖيمًا حَكٖيمًا ﴿٩٢﴾

92- "Yanlışlıkla olması dışında, bir müminin bir mümini öldürmeye hakkı olamaz. Yanlışlıkla bir mümini öldüren kimsenin, mümin bir köle azat etmesi ve ölenin ailesine teslim edilecek bir diyet vermesi gerekir. Meğerki ölünün ailesi, o diyeti bağışlamış olsun. Eğer öldürülen mümin olduğu halde, size düşman olan bir toplumdan ise mümin bir köle azat etmek lazımdır. Eğer kendileriyle aranızda antlaşma bulunan bir toplumdan ise ailesine teslim edilecek bir diyet ve bir mümin köleyi azat etmek gerekir. Bunları bulamayan kimsenin, Allah tarafından tevbesinin kabulü için iki ay peş peşe oruç tutması lazımdır. Allah, her şeyi bilendir, hikmet sahibidir."

Allah, hata ile adam öldürmenin faili üzerindeki cezasını hafifletmiştir. O kadar ki, bunun gerektirdiği diyeti baba tarafından yakınlara yüklemiştir. Bu çerçevede havas, ümmetin zayıflarının sorumluluk üstlenen yakınlarıdır. Marifet ehli müridlerin, şeyhler de fakirlerin yakınlarıdır. Bu itibarla, bu insanların yolu, karşılaştıkları sıkıntılarda zayıfların yüklerini taşımalarıdır.

وَمَنْ يَقْتُلْ مُؤْمِنًا مُتَعَمِّدًا فَجَزَآؤُهُ جَهَنَّمُ خَالِدًا فِيهَا وَغَضِبَ اللّٰهُ عَلَيْهِ وَلَعَنَهُ وَاَعَدَّ لَهُ عَذَابًا عَظِيمًا ﴿٩٣﴾

93- "Kim, bir mümini kasten öldürürse cezası, içinde ebediyen kalacağı cehennemdir. Allah, ona gazap etmiş, onu lanetlemiş ve onun için büyük bir azap hazırlamıştır."

Sana, başkasını öldürmek haram kılındığı gibi, kendini öldürmen de sana haram kılınmıştır. Her kim, nefsine uyarsa kendi kanını akıtmaya çaba harcamış olur. Kim, güzel vaazıyla bir müride öğüt vermez ve himmetiyle ona yardım etmezse, onun kanını akıtmaya çalışmış olur. Bu kimse, aynı zamanda onun halinden sorumludur ve müridden sakladığı nimetlerden yararlanmamak suretiyle eziyet çekme cezasını hak eder. Nitekim Allah Hz. Davud'a: "*Ey Davud! Beni arayan birini gördüğün zaman ona hizmetçi ol*" buyurmuştur.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوٓا اِذَا ضَرَبْتُمْ فٖي سَبٖيلِ اللّٰهِ فَتَبَيَّنُوا وَلَا تَقُولُوا لِمَنْ
اَلْقٰٓى اِلَيْكُمُ السَّلَامَ لَسْتَ مُؤْمِنًا تَبْتَغُونَ عَرَضَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا فَعِنْدَ
اللّٰهِ مَغَانِمُ كَثٖيرَةٌ كَذٰلِكَ كُنْتُمْ مِنْ قَبْلُ فَمَنَّ اللّٰهُ عَلَيْكُمْ فَتَبَيَّنُوا اِنَّ
اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبٖيرًا ﴿٩٤﴾

94- "Ey iman edenler! Allah yolunda savaşa çıktığınız zaman, iyi anlayıp dinleyin. Size selam verene, geçici dünya menfaatine göz dikerek: 'Sen mümin değilsin' demeyin. Çünkü Allah'ın nezdinde sayısız ganimetler vardır. Önceden siz de böyle iken Allah size lütfetti. O halde iyi anlayıp dinleyin. Şüphesiz Allah, bütün yaptıklarınızdan haberdardır."

İnsanlara görünen hallerine göre muamele edin. Onlarda bâtıl aramaya çalışmayın. Çünkü sırların sahibi Allah'tır. Bu ilke, nefsin sizi sevk ettiği fasit bir amaç için olduğu zaman geçerlidir. Bakışı Allah ile olup kendisine bir şey gizli kalmayan kimseye gelince, o keşif yoluyla muttali olduğu ilahi sırrı korusun ve sahibine, Allah'ın kendisi hakkındaki iradesini açıklamasın.

لَا يَسْتَوِي الْقَاعِدُونَ مِنَ الْمُؤْمِنٖينَ غَيْرُ اُولِي الضَّرَرِ وَالْمُجَاهِدُونَ
فٖي سَبٖيلِ اللّٰهِ بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ فَضَّلَ اللّٰهُ الْمُجَاهِدٖينَ بِاَمْوَالِهِمْ
وَاَنْفُسِهِمْ عَلَى الْقَاعِدٖينَ دَرَجَةً وَكُلًّا وَعَدَ اللّٰهُ الْحُسْنٰى وَفَضَّلَ اللّٰهُ
الْمُجَاهِدٖينَ عَلَى الْقَاعِدٖينَ اَجْرًا عَظٖيمًا ﴿٩٥﴾ دَرَجَاتٍ مِنْهُ وَمَغْفِرَةً
وَرَحْمَةً وَكَانَ اللّٰهُ غَفُورًا رَحٖيمًا ﴿٩٦﴾

95, 96- "Müminlerden özür sahibi olanlar dışında, oturanlarla, malları ve canlarıyla Allah yolunda cihad edenler bir olmaz. Allah, malları ve canları ile cihad edenleri, derece bakımından, oturanlardan üstün kıldı. Gerçi Allah, hepsine de güzellik vaat etmiştir.

"Ama mücahidleri oturanlardan çok büyük bir ecirle üstün kılmıştır. Kendinden dereceler, bağışlama ve rahmet vermiştir."

Allah (c.c.), bütün velilerini lütuflarında bir araya getirmiş; ancak derecelerini farklı kılmıştır. Kimisi zengin, kimisi ise ondan daha zengindir. Kimisi büyük, kimisi de ondan daha büyüktür. Bu yıldızlar parlaktır, ancak ay onlardan üstündür. Güneş doğduğu zaman ise hepsi onun ışığıyla şaşkına döner.

اِنَّ الَّذِينَ تَوَفّٰيهُمُ الْمَلٰٓئِكَةُ ظَالِمٖٓي اَنْفُسِهِمْ قَالُوا فٖيمَ كُنْتُمْ قَالُوا كُنَّا مُسْتَضْعَفٖينَ فِي الْاَرْضِ قَالُوٓا اَلَمْ تَكُنْ اَرْضُ اللّٰهِ وَاسِعَةً فَتُهَاجِرُوا فٖيهَا فَاُولٰٓئِكَ مَاْوٰيهُمْ جَهَنَّمُ وَسَٓاءَتْ مَصٖيرًا ﴿٩٧﴾

97- "Kendilerine yazık eden kimselere melekler, canlarını alırken: 'Ne işte idiniz!' dediler. Bunlar: 'Biz, yeryüzünde çaresizdik' diye cevap verdiler. Melekler de: 'Allah'ın toprağı geniş değil miydi? Hicret etseydiniz ya!' dediler. İşte onların barınağı cehennemdir. Orası ne kötü bir gidiş yeridir."

Ayet, ecel geldiğinde nefsinin esaretinde ve şehvetlerinin köleliğinde olan kimseye işaret etmekte olup bu kimsenin hiçbir mazereti de bulunmamaktadır. Çünkü o, nefsinin arzusundan kurtulmak için Allah'a yakınlık gölgesine hicret etmemiştir. Nitekim insan ile bu sözün arasında nefsinin arzularından başka hiçbir perde bulunmamaktadır.

اِلَّا الْمُسْتَضْعَفٖينَ مِنَ الرِّجَالِ وَالنِّسَٓاءِ وَالْوِلْدَانِ لَا يَسْتَطٖيعُونَ حٖيلَةً وَلَا يَهْتَدُونَ سَبٖيلًا ﴿٩٨﴾ فَاُولٰٓئِكَ عَسَى اللّٰهُ اَنْ يَعْفُوَ عَنْهُمْ وَكَانَ اللّٰهُ عَفُوًّا غَفُورًا ﴿٩٩﴾

98, 99- "Erkekler, kadınlar ve çocuklardan gerçekten aciz olup hiçbir çareye gücü yetmeyenler, hiçbir yol bulamayanlar müstes-

nadır. İşte bunları umulur ki Allah affeder. Allah, çok affedicidir, bağışlayıcıdır."

Ayet, maneviyatın hâkim olup kendilerini beşerî benliklerinden kopardığı kimselere işaret etmektedir. Bunlar, böylece yalnız ilahî tasarruf altında kalarak kendilerinde ne bir güç ne de bir kuvvet görürler. Allah'ın onlar hakkındaki icraatı üzerlerinde gözükür. Bu halleriyle onlar, nefislerinin Hakk'ın hakkıyla dönüş yapmasından sonra kendi benliklerinden mahviyet içerisinde olduklarından Allah'a giden yoldan başka yola girmezler. O'ndan başkası için de bir nefes bile alıp vermezler.

Ayetin zahirinden hareket eden diğer bir yoruma göre, mazeretlerin tercihten alıkoyduğu kimselere Allah, bağışlamayla lütufta bulunabilir.

وَمَنْ يُهَاجِرْ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ يَجِدْ فِي الْاَرْضِ مُرَاغَمًا كَثِيرًا
وَسَعَةً وَمَنْ يَخْرُجْ مِنْ بَيْتِهِ مُهَاجِرًا اِلَى اللّٰهِ وَرَسُولِهِ ثُمَّ يُدْرِكْهُ
الْمَوْتُ فَقَدْ وَقَعَ اَجْرُهُ عَلَى اللّٰهِ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُورًا رَحِيمًا ﴿١٠٠﴾

100- "Allah yolunda hicret eden kimse, yeryüzünde gidecek birçok güzel yer ve bolluk bulur. Kim, Allah ve Resulü uğrunda hicret ederek evinden çıkar da sonra kendisine ölüm yetişirse, artık onun mükâfatı Allah'a düşer. Allah da, çok bağışlayıcı ve esirgeyicidir."

Kim, Allah yolunda O'ndan başkasını terk eder ve Allah'a dönük niyetini sağlamlaştırırsa, kerem eseri olan affında bir genişlik, kabulün zirvesinde bir söz ve yakınlığın himayesinde bir hayat ve ferahlık bulur.

Gerçek muhacir ise nefsini ve hevâsını terk edendir. Bu da ancak bütün muratlarından sıyrılmakla gerçekleşir. Kim, Allah'a yönelir de ardından ecele yakalanırsa, o Allah'ın vuslat alanlarından başka

bir yerde konaklamaz. Ruhunun konacağı yer de Allah'a yakınlık yurtlarından başkası olmaz.

وَاِذَا ضَرَبْتُمْ فِي الْاَرْضِ فَلَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ تَقْصُرُوا مِنَ الصَّلٰوةِ اِنْ خِفْتُمْ اَنْ يَفْتِنَكُمُ الَّذِينَ كَفَرُوا اِنَّ الْكَافِرِينَ كَانُوا لَكُمْ عَدُوًّا مُبِينًا ﴿١٠١﴾

101- "Yeryüzünde sefere çıktığınız zaman, kâfirlerin size kötülük etmelerinden endişe ederseniz, namazı kısaltmanızda size bir günah yoktur. Şüphesiz kâfirler, sizin apaçık düşmanınızdır."

Yolculukta namazı kasretmek sünnettir. Bu hüküm, İslam'ın başlangıcında korku haline mahsustu. Daha sonra kullara merhamet için, korku olmayan hallerde de öylece bırakıldı. Bu arada farz namaza kasır girince, binek üzerinde kıbleye dönme şartı aranmaksızın, bineğin döndüğü her tarafa dönük olarak sünnet namazının kılınabileceğine hükmedildi ki, yaya için de durum aynıdır. Sebebi ise münacat ile ilgili iznin her zaman devam etmekte olduğunun bilinmesidir.

İbadet haline girmek istersen, istediğin zaman bunu yapabilirsin. Ruhsatı gözeterek uzak durmak istersen, dilediğini yapabilirsin. Bu, keremin nihayeti, vefa prensibinin korunması ve bağlılık anlamının gerçekleşmesi demektir.

وَاِذَا كُنْتَ فِيهِمْ فَاَقَمْتَ لَهُمُ الصَّلٰوةَ فَلْتَقُمْ طَٓائِفَةٌ مِنْهُمْ مَعَكَ وَلْيَاْخُذُوٓا اَسْلِحَتَهُمْ فَاِذَا سَجَدُوا فَلْيَكُونُوا مِنْ وَرَٓائِكُمْ وَلْتَاْتِ طَٓائِفَةٌ اُخْرٰى لَمْ يُصَلُّوا فَلْيُصَلُّوا مَعَكَ وَلْيَاْخُذُوا حِذْرَهُمْ وَاَسْلِحَتَهُمْ وَدَّ الَّذِينَ كَفَرُوا لَوْ تَغْفُلُونَ عَنْ اَسْلِحَتِكُمْ وَاَمْتِعَتِكُمْ فَيَمِيلُونَ عَلَيْكُمْ مَيْلَةً وَاحِدَةً وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ اِنْ

كَانَ بِكُمْ اَذًى مِنْ مَطَرٍ اَوْ كُنْتُمْ مَرْضٰٓى اَنْ تَضَعُوٓا اَسْلِحَتَكُمْ
وَخُذُوا حِذْرَكُمْ اِنَّ اللّٰهَ اَعَدَّ لِلْكَافِرِينَ عَذَابًا مُهِينًا ﴿١٠٢﴾

102- "Sen de içlerinde bulunup onlara namaz kıldırdığın zaman, onlardan bir kısmı seninle beraber namaza dursunlar, silahlarını yanlarına alsınlar. Böylece namazı kılıp secde ettiklerinde diğerleri arkanızda olsunlar. Sonra henüz kılmamış olan bu diğer grup gelip seninle beraber namazlarını kılsınlar ve onlar da ihtiyat tedbirlerini ve silahlarını alsınlar. O kâfirler arzu ederler ki, siz silahlarınızdan ve eşyanızdan gafil olsanız da üstünüze birden baskın yapsalar. Eğer size yağmurdan bir eziyet olur yahut hasta bulunursanız, silahlarınızı bırakmanızda size günah yoktur. Yine de tedbirinizi alın. Şüphesiz Allah, kâfirler için alçaltıcı bir azap hazırlamıştır."

Bu ayet, kendisinde bir nefeslik bile can bulunduğu sürece, ne korku ne de güven halinde kulun üzerinden namazın keyfi olarak kalkmayacağını ifade etmektedir. Aynı zamanda namaz, ne tefrika vasfına sahip olduğu zaman, dinin hükümleri ağırlaştığında, ne de cem nazarına mazhar olduğu zaman hakikat sultanının hâkimiyeti esnasında kulun üzerinden kalkar.

فَاِذَا قَضَيْتُمُ الصَّلٰوةَ فَاذْكُرُوا اللّٰهَ قِيَامًا وَقُعُودًا وَعَلٰى جُنُوبِكُمْ فَاِذَا
اطْمَاْنَنْتُمْ فَاَقِيمُوا الصَّلٰوةَ اِنَّ الصَّلٰوةَ كَانَتْ عَلَى الْمُؤْمِنِينَ كِتَابًا
مَوْقُوتًا ﴿١٠٣﴾

103- "Namazı bitirince de ayakta, otururken ve yanınız üzerinde yatarken daima Allah'ı anın. Huzura kavuşunca da namazı dosdoğru kılın. Çünkü namaz, müminler üzerine vakitleri belli bir farzdır."

Zahirî vazifeler vakte bağlıdır. Kalbin zikirle huzur bulması ise ebedî ve kesintisizdir. Biçimlere dayalı ibadetler, zaman zamandır.

Kalplere gelince, halleriniz ne denli değişirse değişsin, bir an bile hakikatten kopmaktan sakının. Zikir, nasıl ve ne durumda olursanız olun yapılmalıdır. Namazı ise huzurlu olduğunuz zaman kılınız.

وَلَا تَهِنُوا فِي ابْتِغَٓاءِ الْقَوْمِ اِنْ تَكُونُوا تَاْلَمُونَ فَاِنَّهُمْ يَاْلَمُونَ كَمَا تَاْلَمُونَ وَتَرْجُونَ مِنَ اللّٰهِ مَا لَا يَرْجُونَ وَكَانَ اللّٰهُ عَلٖيمًا حَكٖيمًا ﴿١٠٤﴾

104- "O düşman topluluğu takipte gevşeklik göstermeyin. Eğer siz acı çekiyorsanız onlar da, sizin çektiğiniz gibi acı çekmektedirler. Üstelik siz Allah'tan onların ümit etmedikleri şeyleri umuyorsunuz. Allah, ilim ve hikmet sahibidir."

Allah'a dayanarak kalkın ve cihadınızda dayanağınız Allah olsun.

(اِنْ تَكُونُوا تَاْلَمُونَ فَاِنَّهُمْ يَاْلَمُونَ كَمَا تَاْلَمُونَ) *"Eğer siz acı çekiyorsanız onlar da, sizin çektiğiniz gibi acı çekmektedirler."* O topluluk, acı duymada sizinle aynı durumdadır. Ancak kalbin tecellilerinde sizden farklıdırlar. Siz, onların görmediğini görüyor ve onların hissetmediklerini kalplerinizde hissediyorsunuz. O halde gayret ve çaba harcamada onlardan geri kalmanız yersizdir.

اِنَّٓا اَنْزَلْنَٓا اِلَيْكَ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ لِتَحْكُمَ بَيْنَ النَّاسِ بِمَٓا اَرٰيكَ اللّٰهُ وَلَا تَكُنْ لِلْخَٓائِنٖينَ خَصٖيمًا ﴿١٠٥﴾ وَاسْتَغْفِرِ اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُورًا رَحٖيمًا ﴿١٠٦﴾

105, 106- "Allah'ın sana gösterdiği şekilde insanlar arasında hükmedesin diye sana Kitab'ı hak ile indirdik. Hainlerden taraf olma! Ve Allah'tan mağfiret iste. Çünkü Allah çok mağfiret edici, ziyadesiyle esirgeyicidir."

Allah, sana onlar arasında körü körüne değil, lakin sana gösterdikleriyle hükmetmeyi emretmemiştir. Yani sana keşif olarak gösterdiği basiret nurlarıyla hükmetmeyi emretmiştir. Nihayet sana öğretmemizle ve seni hazır hale getirmemizle buna vakıf oldun. Ümmetinden hak ile hükmeden kimse de böyledir.

(وَلَا تَكُنْ لِلْخَآئِنِينَ خَصِيمًا) *“Hainlerden taraf olma!”* Yani nefsanî arzulara sahip kimseler için mücadele etme! Lakin hakları savunanlarla beraber mücadele et. Her kim, hevâya meylederse, iç dünyasına yerleştirdiği takvaya hainlik etmiş olur. Kim de emelin türlü cazibelerine meylederse, yükümlü kılındığı hayâya hainlik etmiş olur. Çünkü Allah bundan haberdardır.

(وَاسْتَغْفِرِ اللّٰه) *“Ve Allah’tan mağfiret iste.”* Ümmetin için. Çünkü senin bağışlanmış olduğuna, sana olan şu sözümüz yeterli delildir:

(لِيَغْفِرَ لَكَ اللّٰهُ مَا تَقَدَّمَ مِنْ ذَنْبِكَ وَمَا تَاَخَّرَ)

*“Böylece Allah, senin geçmiş ve gelecek günahlarını bağışlar.”* (Fetih, 48/2).

وَلَا تُجَادِلْ عَنِ الَّذِينَ يَخْتَانُونَ اَنْفُسَهُمْ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ مَنْ كَانَ
خَوَّانًا اَثِيمًا ﴿١٠٧﴾ يَسْتَخْفُونَ مِنَ النَّاسِ وَلَا يَسْتَخْفُونَ مِنَ اللّٰهِ وَهُوَ
مَعَهُمْ اِذْ يُبَيِّتُونَ مَا لَا يَرْضٰى مِنَ الْقَوْلِ وَكَانَ اللّٰهُ بِمَا يَعْمَلُونَ
مُحِيطًا ﴿١٠٨﴾

107, 108- “Kendilerine hıyanet edenleri savunma! Çünkü Allah, hainliği meslek edinmiş günahkârları sevmez. İnsanlardan gizler de Allah’tan gizlemezler. Halbuki geceleyin O’nun razı olmadığı sözü düzüp kurarken O, onlarla beraber idi. Allah, yaptıklarını kuşatıcıdır.”

Onlar, arzularını Allah’ın haklarına tercih eden ve ilahî rızanın kazandırdığı mertebelere değil, nefislerinin yurtlarında kalmaya razı olan kimselerdir. Allah, hıyanet ehlini sevmediğinden, kuşkusuz onları zelil kılar ve kendilerine değer vermez.

(يَسْتَخْفُونَ مِنَ النَّاسِ وَلَا يَسْتَخْفُونَ مِنَ اللّٰهِ) *“İnsanlardan gizler de Allah’tan gizlemezler.”* Kalplerine hâkim olan duygu, halkın görmesidir. Onlar Allah’ın, kalplerine muttali olduğunun farkında değillerdir. Onlar, Allah’ın, kalplerini ayrılık damgasıyla damgaladığı kimselerdir.

هَٓا اَنْتُمْ هٰٓؤُ۬لَٓاءِ جَادَلْتُمْ عَنْهُمْ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا فَمَنْ يُجَادِلُ اللّٰهَ عَنْهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ اَمْ مَنْ يَكُونُ عَلَيْهِمْ وَك۪يلًا ﴿١٠٩﴾

109- "Haydi siz dünya hayatında onlara taraf çıkıp savundunuz. Ya kıyamet günü Allah'a karşı onları kim savunacak yahut onlara kim vekil olacak?"

Sen, aralarında bulunuyorsun diye, saygın gereğince, onları savunuyorsan, kıyamet günü bereketleriniz onlardan kaybolduğu zaman durumları ne olur ey müminler?

وَمَنْ يَعْمَلْ سُٓوءًا اَوْ يَظْلِمْ نَفْسَهُ ثُمَّ يَسْتَغْفِرِ اللّٰهَ يَجِدِ اللّٰهَ غَفُورًا رَح۪يمًا ﴿١١٠﴾

110- "Kim, bir kötülük yapar yahut nefsine zulmeder de sonra Allah'tan mağfiret dilerse, Allah'ı çok yarlığayıcı ve esirgeyici bulacaktır."

(ثُمَّ) "*summe*" kelimesi, gecikmeyi ifade eden bir bağlaç edatıdır. Yani ömürlerini bâtıllarda ve muhalefetlerde harcadıktan sonra hayatlarının sonunda Allah'tan mağfiret dilerler.

(يَجِدِ اللّٰهَ غَفُورًا رَح۪يمًا) "*Allah'ı çok yarlığayıcı ve esirgeyici bulacaktır.*" Bulmak, sözün varacağı son noktadır. Asi kimse ise, mağfiretten başka bir şey istemez. Ancak Allah dilediği zaman lütfuyla onu nihayete ulaştırır. Bu itibarla Allah'ın prensibi, kendisine ümit bağlayan için beklenenin üstündekini gerçekleştirmektir.

وَمَنْ يَكْسِبْ اِثْمًا فَاِنَّمَا يَكْسِبُهُ عَلٰى نَفْسِه۪ وَكَانَ اللّٰهُ عَل۪يمًا حَك۪يمًا ﴿١١١﴾

111- "Kim, bir günah işlerse, onu ancak kendi aleyhine işlemiş olur. Allah, her şeyi bilicidir, hikmet sahibidir."

Allah'ın, itaat edenlerin itaatine ve asilerin zilletine ihtiyacı bulunmamaktadır. Bu nedenle kim itaat ederse, Allah maksadını hâsıl eder. Kim de isyan ederse, Allah muradını elinden alır.

وَمَنْ يَكْسِبْ خَطٖيٓـَٔةً اَوْ اِثْمًا ثُمَّ يَرْمِ بِهٖ بَرٖيٓـًٔا فَقَدِ احْتَمَلَ بُهْتَانًا وَاِثْمًا مُبٖينًا ﴿١١٢﴾

112- "Kim, kasıtlı veya kasıtsız bir günah işler de sonra onu bir suçsuzun üzerine atarsa, muhakkak ki, büyük bir iftira ve apaçık bir günah yüklenmiş olur."

Kim, kendisine ait küçük dürücü günahlardan birini günahsız bir kimseye isnad ederse, Allah, onun durumunu tersine çevirir ve günahsıza, bu iftirayı atan kimsenin iyiliklerini verir, ayrıca hatalarını da af ile örter. Allah, kendisini emsalleri arasında ve ahvalinin genelinde rezil etmek suretiyle, durumu haksızlık yapanın aleyhine çevirir.

وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكَ وَرَحْمَتُهُ لَهَمَّتْ طَٓائِفَةٌ مِنْهُمْ اَنْ يُضِلُّوكَ وَمَا يُضِلُّونَ اِلَّٓا اَنْفُسَهُمْ وَمَا يَضُرُّونَكَ مِنْ شَيْءٍ وَاَنْزَلَ اللّٰهُ عَلَيْكَ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ وَعَلَّمَكَ مَا لَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ وَكَانَ فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكَ عَظٖيمًا ﴿١١٣﴾

113- "Allah'ın sana lütfü ve esirgemesi olmasaydı, onlardan bir güruh, seni saptırmaya yeltenmişti. Onlar, yalnızca kendilerini saptırırlar, sana hiçbir zarar veremezler. Allah, sana kitabı ve hikmeti indirmiş ve sana bilmediğini öğretmiştir. Allah'ın lütfu, sana gerçekten büyük olmuştur."

Lütuf, hak edilmeyen bir iyiliktir. Ayetin burada işaret ettiği lütuf ise Allah'ın Hz. Peygamber'i korumasıdır. Allah, Hz. Peygamber'i kendisine özgü kıldığı bir koruma türüyle korumuştur. Allah, Hz. Peygamber'i kendisine ait olan hakkı terk etmekten koruduğu gibi, aynı zamanda onu, yaratıklarının tuzaklarından da korumuştur. Bu nedenle de: (وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكَ وَرَحْمَتُهُ) *"Allah'ın sana lütfu ve esirgemesi olmasaydı..."* buyurmuştur.

Hayır! Hiç kimse, seni saptırmaya güç yetiremeyecektir. Sen Allah'ın himayesindesin. Onlar, sadece kendilerini saptırırlar. Onlar, sana hiçbir zarar da veremezler. Çünkü bizim tarafımızdan muhafaza altına alınan kimse, her şeyden korunmuş olur. Bir de Allah, özel olarak kitap indirmiştir. Ve seni kendi katında özelliklere ve kabule mazhar kılmış, sana bilmediklerini öğretmiştir. Aynı zamanda Allah, sana, özel kullarına tahsis ettiği ilim nimeti kadar büyük bir nimet daha vermemiştir. Buradaki ilimden maksat, Hz. Peygamber'in Allah'ın celaline ve kendi kulluğuna, bu izzet ve cemali ne kadar hak ettiğine dair ilmi de olabilir. Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, sana daha önce bilmediğin hizmet adabını öğretmiştir. Çünkü sen, hakikati başka şeylerle karıştırmıyordun.

- Allah, herkesin nurunun, senin nurundan alınmış olması için, seni başkalarının öğretiminden müstağni kılmıştır. Senin sancağın altında yürümeyen kimse, iyiliğimizin tamamına kavuşamaz ve yakınlığımız ve vuslatımızdan nasiplenemez.

- Allah, bilmediğin bir durum olan rütbece herkese üstün oluşunu sana öğretmiştir.

- Sana, herkesin bizim kadrimizi ancak bizim emrimize olan itaati miktarınca bildiğini öğretmiştir.

(وَكَانَ فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكَ عَظِيمًا) *"Allah'ın lütfu, sana gerçekten büyük olmuştur."* Ezelden beri biz, izzetin şerefi ve Rab olmanın yüceliğiyle seni biliyorduk.

لَا خَيْرَ فِي كَثِيرٍ مِنْ نَجْوٰيهُمْ اِلَّا مَنْ اَمَرَ بِصَدَقَةٍ اَوْ مَعْرُوفٍ اَوْ اِصْلَاحٍ بَيْنَ النَّاسِ وَمَنْ يَفْعَلْ ذٰلِكَ ابْتِغَآءَ مَرْضَاتِ اللّٰهِ فَسَوْفَ نُؤْتِيهِ اَجْرًا عَظِيمًا ﴿١١٤﴾

114- "Onların fısıldaşmalarının birçoğunda hayır yoktur. Ancak bir sadaka yahut bir iyilik yahut insanların arasını düzeltmeyi isteyen müstesna. Kim, Allah'ın rızasını elde etmek için bunu yaparsa, biz ona yakında büyük bir mükâfat vereceğiz."

Amellerin en faziletlisi, bereketleri, sahibini aşıp başkalarına ulaşandır. Bu nedenle sadakanın fazileti, faydasının ulaştığı kimseye kadar gitmesiyledir. Yiğitlik de, başkası için çaba harcamantır. Nitekim hadiste: *"İnsanların kötüsü, tek başına yiyen kimsedir"* buyrulmuştur. Kaldı ki sadaka, her türlü iyiliği kapsamaktadır.

Hz. Peygamber (s.a.v.), seferde namazı kasırlı kılmakla ilgili olarak: *"Bu, Allah'ın size verdiği bir sadakadır. O halde sadakasını kabul ediniz"* buyurmuştur.

Sadaka da birkaç kısımdır:

- İnsanın kendine olan sadakası.

- İnsanın başkasına olan sadakası.

İnsanın kendine olan sadakası, nefsini Allah'ın haklarını yerine getirmeye sevk etmesi, emrine muhalefetten alıkoyması, halka eziyet etmesine engel olması, duygu ve inançlarını kötülükten korumasıdır. Başkalarına olan sadakası ise; mal ile sadaka, kalp ile sadaka ve beden ile sadaka olmak üzere üç kısma ayrılır. Bu çerçevede mal ile olan sadaka nimeti harcamakla, beden ile olan sadaka hizmeti yerine getirmekle, kalp ile olan sadaka da, iyi niyet ve himmeti güçlendirmekle olur.

Bu arada fakirlere verilen sadaka açık ve problemsizdir. Zenginlere verilen sadaka da onlardan ümidi kesip iyiliklerine göz dikmemek suretiyle bizzat onlarla onlara cömertlik yapmak şeklinde olur.

(مَعْرُوفٍ ) "*Maruf*" diye tabir edilen iyiliğe gelince, dinen güzel olan her şey maruftur. Bazı örnekleri; Müslümanlara yardım etmek, Allah'a yaklaştırıcı davranışlarından dolayı onları mutlu kılmak ve ibadetle alınları açık tutmaktır. Kim, nefsiyle Rabbinin ibadetine, kalbiyle de Allah'ın hükmüne rıza göstererek tasaddukta bulunur, nefsi için intikama kalkışmaz, Allah'a giden yolu göstermek suretiyle insanları kurtuluşlarını sağlayan şeylere teşvik eder ve halindeki dürüstlükle insanların arasını düzeltirse, bu kimsenin davranış dili konuşma dilinden daha etkili olur ve o kendi zamanının Sıddîk'i olur.

Kim, nefsini terbiye etmezse, başkası onunla terbiye olmaz. Aynı şekilde halini düzeltmeyen kimseyle başkaları düzelmez.

(وَمَنْ يَفْعَلْ ذٰلِكَ ابْتِغَٓاءَ مَرْضَاتِ اللّٰهِ) *"Kim, Allah'ın rızasını elde etmek için bunu yaparsa..."* Bununla mal istemez veya nefsine bir paye biçmezse, o kimse yakında Allah yolunda önderlik mertebesine ulaşır. İşte bu ayette vaat edilen ecir de budur.

وَمَنْ يُشَاقِقِ الرَّسُولَ مِنْ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُ الْهُدٰى وَيَتَّبِعْ غَيْرَ سَبِيلِ
الْمُؤْمِنِينَ نُوَلِّهِ مَا تَوَلّٰى وَنُصْلِهِ جَهَنَّمَ وَسَٓاءَتْ مَصِيرًا ﴿١١٥﴾

115- "Kendisi için doğru yol belli olduktan sonra, kim peygambere karşı çıkar ve müminlerin yolundan başka bir yola giderse, onu o yönde bırakırız ve cehenneme sokarız. O ne kötü bir yerdir!"

Hakk'ın ilhamları, kula giden elçileridir. Bu nedenle kim, yükümlü kılındığı bâtın yolunun işaretlerine muhalefet ederse, kalplerin cezalarını hak eder. Bu cezalardan biri de kendi doğru yolunu görmekten kör olmasıdır. Bir de nasıl ki icmaa muhalefet eden kimse, dinden çıkıyorsa, aynı şekilde yolu öğrendikten sonra bilinen hakikate muhalefet eden de gözden çıkarılmış olur.

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُشْرَكَ بِهٖ وَيَغْفِرُ مَا دُونَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَشَٓاءُ
وَمَنْ يُشْرِكْ بِاللّٰهِ فَقَدْ ضَلَّ ضَلَالًا بَعِيدًا ﴿١١٦﴾ اِنْ يَدْعُونَ مِنْ
دُونِهٖٓ اِلَّٓا اِنَاثًا وَاِنْ يَدْعُونَ اِلَّا شَيْطَانًا مَرِيدًا ﴿١١٧﴾ لَعَنَهُ اللّٰهُ وَقَالَ
لَاَتَّخِذَنَّ مِنْ عِبَادِكَ نَصِيبًا مَفْرُوضًا ﴿١١٨﴾ وَلَاُضِلَّنَّهُمْ وَلَاُمَنِّيَنَّهُمْ
وَلَاٰمُرَنَّهُمْ فَلَيُبَتِّكُنَّ اٰذَانَ الْاَنْعَامِ وَلَاٰمُرَنَّهُمْ فَلَيُغَيِّرُنَّ خَلْقَ اللّٰهِ وَمَنْ
يَتَّخِذِ الشَّيْطَانَ وَلِيًّا مِنْ دُونِ اللّٰهِ فَقَدْ خَسِرَ خُسْرَانًا مُبِينًا ﴿١١٩﴾

**116, 117, 118, 119-** “Allah, kendisine ortak koşulmasını asla bağışlamaz. Ondan başka günahları, dilediği kimse için bağışlar. Kim, Allah’a ortak koşarsa, büsbütün sapıtmıştır. Onlar O’nu bırakıp yalnız bir takım dişi isimli tanrılardan istiyorlar. Ancak inatçı şeytandan dilekte bulunuyorlar. Allah şeytanı lanetlemiş, o da: ‘Yemin ederim ki, kullarından belli bir pay edineceğim’ demiştir. ‘Onları mutlaka saptıracağım, muhakkak onları boş kuruntulara boğacağım, kesinlikle onlara emredeceğim de hayvanların kulaklarını yaracaklar, şüphesiz onlara emredeceğim de Allah’ın yarattığını değiştirecekler’ dedi. Kim, Allah’ı bırakır da şeytanı dost edinirse, elbette apaçık bir ziyana düşmüştür.”

(اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُشْرَكَ بِه۪ وَيَغْفِرُ) “*Allah, kendisine ortak koşulmasını asla bağışlamaz.*” Bir zerreyi yaratmada bile başkasının varlığını vehmetmek şirkin ta kendisidir. Bu nedenle bağışlanma imkânı yoktur. Şirkin dışındakilerin ise bağışlanması mümkündür. Kendi nefsinden vehmettiği şeylerle Allah’a tevessül eden kimse, bilmeden şirke düşmüş olur. Hayır! O, bir olan Allah’tır.

(اِنْ يَدْعُونَ مِنْ دُونِه۪ٓ اِلَّٓا اِنَاثًا) “*Onlar O’nu bırakıp yalnız bir takım dişi isimli tanrılardan istiyorlar.*” Cansız varlıklara bazı isimler koydular, vehmin yoluna düştüler, hesap yanlışlıklarına meylettiler ve böylece hakikatten sapmış oldular.

(وَاِنْ يَدْعُونَ اِلَّا شَيْطَانًا مَر۪يدًا) “*Ancak inatçı şeytandan dilekte bulunuyorlar.*” Yani onlar, sadece Allah’ı, rahmetinden uzaklaştırdığı ve kendinden uzak tutmakla cezalandırdığı İblis’i çağırırlar. Oysa İblis, Allah’ın dilediği şekilde yine O’nun tasarrufu altındadır. Şayet zerre kadar bir varlık gösterebilseydi, bu yolla tanrılıkta ortak olurdu. Asla! Allah, sadece yaratıklar üzerinde birtakım haller uygulamaktadır. İblis’in vesveseleri ardından da halk için bir sapıklık halk eder. Bu itibarla hidayet eden de dalalete götüren de O’dur. Bütün varlıkları dönüştüren de O’dur. Böylece, şeytanın vesveseleri ardından insanların kalplerinde uzun emeller yaratır, çirkin işleri gözlerinde güzelleştirir. Sonra isteklerinin hakikat olmasına müsaade etmez ve ümitlerini doğru çıkarmaz. Bu nedenle bütün bu sonuçların mucidi

Allah'tır. Ancak bazen onları şeytana, bazen de kâfire atfeder. İşte: (وَلَاُضِلَّنَّهُمْ وَلَاُمَنِّيَنَّهُمْ) *"Onları mutlaka saptıracağım, muhakkak onları boş kuruntulara boğacağım"* ve: (يَعِدُهُمْ وَيُمَنِّيهِمْ) *"Onlara söz verir ve onları ümitlendirir"* şeklindeki ayetlerin ifade ettiği de budur.

يَعِدُهُمْ وَيُمَنِّيهِمْ وَمَا يَعِدُهُمُ الشَّيْطَانُ اِلَّا غُرُورًا ﴿١٢٠﴾
اُولٰٓئِكَ مَاْوٰيهُمْ جَهَنَّمُ وَلَا يَجِدُونَ عَنْهَا مَحِيصًا ﴿١٢١﴾

120, 121- "Şeytan, onlara söz verir ve onları ümitlendirir. Halbuki şeytanın onlara söz vermesi, aldatmacadan başka bir şey değildir. İşte onların yeri cehennemdir. Ondan kaçıp kurtulacakları bir yer de bulamayacaklardır."

Dünyada kendileri için dalalet takdir edilenlere, ahirette haklarında azaba hükmedilir. Şayet Allah'ın, kudretiyle ortaya çıkardığı takdir olmasaydı, sahiplerine bir parçacık bile dalalet ve hidayet nasıl söz konusu olurdu! İçten tevhide bağlılık az bulunur. Tevhid ehlinin sayısı da azdır.

وَالَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ سَنُدْخِلُهُمْ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَٓا اَبَدًا وَعْدَ اللّٰهِ حَقًّا وَمَنْ اَصْدَقُ مِنَ اللّٰهِ قِيلًا ﴿١٢٢﴾

122- "İman eden ve iyi işler yapanları, içinde ebedî kalmak üzere, zemininden ırmaklar akan cennetlere koyacağız. Allah, bu söylenenleri hak bir söz olarak vaat etti. Söz verme ve onu tutma bakımından kim, Allah'tan daha doğru olabilir!"

Hem hüküm hem de sözle mutlu kıldıklarımıza, kendilerini yaratırken bir kerem ve lütuf olarak, yardım ettik. Sonra ikram edeceğimiz güzel akıbet ile kendileri için vaat edilen sevabı da gerçekleştireceğiz.

لَيْسَ بِاَمَانِيِّكُمْ وَلَٓا اَمَانِيِّ اَهْلِ الْكِتَابِ مَنْ يَعْمَلْ سُوٓءًا يُجْزَ بِهٖ
وَلَا يَجِدْ لَهُ مِنْ دُونِ اللّٰهِ وَلِيًّا وَلَا نَصِيرًا ﴿١٢٣﴾ وَمَنْ يَعْمَلْ مِنَ
الصَّالِحَاتِ مِنْ ذَكَرٍ اَوْ اُنْثٰى وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَاُو۬لٰٓئِكَ يَدْخُلُونَ الْجَنَّةَ
وَلَا يُظْلَمُونَ نَقِيرًا ﴿١٢٤﴾

123, 124- "Ne sizin kuruntularınız ne de kitap ehlinin kuruntuları gerçektir. Kim bir kötülük yaparsa onun cezasını görür ve kendisi için Allah'tan başka dost da yardımcı da bulamaz. Erkek olsun, kadın olsun, her kim de mümin olarak iyi işler yaparsa, işte onlar cennete girerler ve zerre kadar haksızlığa uğratılmazlar."

Ebucehil karpuzu eken, gül ve yasemin biçemez. Acı zehir içen de bal tadını alamaz. Aynı şekilde, hizmetin hakkını zayi eden, yakınlık makamında yer edinemez. Şakilikle damgalanan kimseye, arınmışlık nasip olmaz. İlahî takdirin yok ettiği kimseye, varlıklardan yardımcı bulunamaz.

(وَمَنْ يَعْمَلْ مِنَ الصَّالِحَاتِ) "...*her kim de mümin olarak iyi işler yaparsa*..." Kim, bizim hizmetimizde çaba harcarsa, nimetimize kavuşmaktan geri kalmaz. Aksine biz, onu bizi aradığı için zengin kılarız, bizi bulmasıyla da ona ikramda bulunuruz. Daha doğrusu, bize duyduğu özlem şarabından içirdiğimiz kimseyi, bizimle buluşmanın ünsiyetine kavuştururuz.

وَمَنْ اَحْسَنُ دِينًا مِمَّنْ اَسْلَمَ وَجْهَهُ لِلّٰهِ وَهُوَ مُحْسِنٌ وَاتَّبَعَ
مِلَّةَ اِبْرٰهِيمَ حَنِيفًا وَاتَّخَذَ اللّٰهُ اِبْرٰهِيمَ خَلِيلًا ﴿١٢٥﴾ وَلِلّٰهِ مَا فِي
السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَكَانَ اللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ مُحِيطًا ﴿١٢٦﴾

125, 126- "İşlerinde doğru olarak kendini Allah'a veren ve İbrahim'in Allah'ı bir tanıyan dinine tabi olan kimseden dince daha güzel

kim vardır? Allah, İbrahim'i dost edinmiştir. Göklerde ve yerde ne varsa hepsi Allah'ındır ve Allah her şeyi kuşatmıştır."

Hiç kimse, kendini Allah'a veren kimseden dince daha güzel değildir. Yani bu kimse, niyetini Allah'a mahsus kılmış, Allah'a verdiği sözü başkalarının etkisinden kurtarmış, sonra bütün hallerinde Allah'ın inayetiyle Allah'a teslim olmuş, malından, bedeninden, ruhundan gücünden, ailesinden ve çocuklarından hiçbir şeyi Allah'tan esirgememiştir. Nitekim Hz. İbrahim'in hali de böyle idi.

(وَهُوَ مُحْسِنٌ ) "...*doğru olarak*..." İhsan, dinin izahına göre; Allah'ı görüyormuş gibi O'na ibadet etmektir. Ancak kul, Allah'ın haklarını yerine getirebilmesi için arta kalan bir miktar farka sahip olmalıdır. Çünkü hakikate bir dokunuş gerçekleştiği zaman kişinin ne Müslümanlığı ne de ihsanı geçerli olur. İşte bu, kendisinden devam vasfı üzere hiçbir şey kalmayan hanif Hz. İbrahim'e uymak demektir.

(وَاتَّخَذَ اللّٰهُ اِبْرٰهِيمَ خَلِيلًا ) "*Allah, İbrahim'i dost edinmiştir.*" Allah, sözü her türlü çaba, emek, talep ve çalışmadan soyutlayarak: "*Allah, İbrahim'i dost edinmiştir*" buyurmuştur. Böylece, dostluğun kulun kazandığı bir nitelik değil, Allah'ın kişiye kazandırdığı bir vasıf olduğu anlaşılmaktadır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Dost, bütünüyle ve her nefeste Allah'a muhtaç olan ve kendisi hakkında hiçbir yetkisi bulunmayan kimsedir. Daha doğrusu o, bütün nefeslerinde ve hallerinde Allah ile ve Allah içindir. Çünkü dostluğun Arapça karşılığı olan "*hullet*" kelimesi, ihtiyaç demektir.

- Buradaki "*hullet*" kelimesi, insanın her tarafına sirayet eden sevgi anlamındadır. Bu sevgi, aynı zamanda Allah'tan başkasına yer olmaması için, insanın sırrına da nüfuz eder.

Böylece Allah, Hz. İbrahim'i beşerî benliğinden arındırıp boşaltınca, onu kendi hakkını yerine getirmekle görevlendirmiş oldu. Bu da Hz. İbrahim'in, Allah dışındaki her şeyden mahviyet içerisine girmesinden sonra gerçekleşmiştir. Sonra da Allah, ona hitaben) şöyle buyurmuştur:

(وَاَذِّنْ فِي النَّاسِ بِالْحَجِّ) *"İnsanlar arasında haccı ilan et"* (Hac, 22/27).

Hac yapan kimse, sadece Allah'ın çağrısını kabul etmiş olmaktadır. Bu da, cemin cemine işaret etmektedir.

وَيَسْتَفْتُونَكَ فِي النِّسَآءِ قُلِ اللّٰهُ يُفْتِيكُمْ فِيهِنَّ وَمَا يُتْلٰى عَلَيْكُمْ
فِي الْكِتَابِ فِي يَتَامَى النِّسَآءِ الّٰتِي لَا تُؤْتُونَهُنَّ مَا كُتِبَ لَهُنَّ
وَتَرْغَبُونَ اَنْ تَنْكِحُوهُنَّ وَالْمُسْتَضْعَفِينَ مِنَ الْوِلْدَانِ وَاَنْ تَقُومُوا
لِلْيَتَامٰى بِالْقِسْطِ وَمَا تَفْعَلُوا مِنْ خَيْرٍ فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِهٖ عَلِيمًا ﴿١٢٧﴾

127- "Senden kadınlar hakkında fetva istiyorlar. De ki: 'Onlara ait hükmü size Allah açıklıyor. Kitapta kendileri için yazılmış mirası vermeyip nikâhlamak istediğiniz yetim kadınlar, çaresiz çocuklar ve yetimlere karşı adil davranmanız hakkında size okunan ayetler, Allah'ın hükmünü apaçık ortaya koymaktadır. Hayırdan ne yaparsanız, şüphesiz Allah onu bilmektedir.'"

Allah onları, kadınlardan ve yetimlerden ibaret olan güçsüzlere haksızlık ve zulüm yapmaya sevk eden tamahtan alıkoymuş ve bundan dolayı onlar adına intikam alacak olanın da, kendisi olduğunu açıklamıştır. Kim ki, onlar hakkındaki tasarruflarında Allah'ın rızasını gözetirse Allah katında zarar etmez. Aksine güzel karşılık bulur. Kim de onların aleyhinde davranmaya cesaret ederse bundan dolayı acıklı bir bela ile karşılaşır.

وَاِنِ امْرَاَةٌ خَافَتْ مِنْ بَعْلِهَا نُشُوزًا اَوْ اِعْرَاضًا فَلَا جُنَاحَ عَلَيْهِمَآ
اَنْ يُصْلِحَا بَيْنَهُمَا صُلْحًا وَالصُّلْحُ خَيْرٌ وَاُحْضِرَتِ الْاَنْفُسُ
الشُّحَّ وَاِنْ تُحْسِنُوا وَتَتَّقُوا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرًا ﴿١٢٨﴾

128- "Eğer bir kadın, kocasının geçimsizliğinden yahut kendisinden yüz çevirmesinden endişe ederse, aralarında bir sulh yapmalarında onlara günah yoktur. Sulh daima hayırlıdır. Zaten nefisler

kıskançlığa hazırdır. Eğer iyi geçinir ve Allah'tan korkarsanız, şüphesiz Allah, yaptıklarınızdan haberdardır."

İnsanların birbirleriyle olan beraberliği eğer hak sözden soyutlanırsa, o beraberlik soğukluğa, siteme, nefrete ve usanca maruz kalır. Her kim, kalbiyle Allah'tan yüz çevirirse, halk da onun hakkına riayet etmekten yüz çevirir. Herkes, durumunu küçümsemek ve değerini düşürmek suretiyle ona karşı çıkar. Kim de kalbiyle Allah'a dönerse, her hâlükârda durumu düzelir ve kalbi, karşılaştığı insanların kötü huylarına katlanabilecek şekilde genişler. Bu haliyle o, hepsinin hatalarının üstüne af örtüsü çeker ve onların payını teslim edip kendi payını terk etmek suretiyle sulhu tercih eder. Nitekim Allah da: (وَالصُّلْحُ خَيْرٌ) "*Sulh daima hayırlıdır*" buyurmuştur.

İç dünyasında, sana karşı husumet besleyen kimseyle nefretleşmekten geri durman, kendin için, intikam peşine düşerek hasmına haksızlık etmenden ve sahip olduğun imkânı bir makam meziyeti gibi görmenden daha faydalıdır ve sana daha çok yakışır. Nitekim münafıkların çoğu, bu meşakkatin esaretindedirler.

(وَاُحْضِرَتِ الْاَنْفُسُ الشُّحَّ) "*Zaten nefisler kıskançlığa hazırdır.*" Bu, kulun nefsine uyması demektir. Bu itibarla, hakkı görmekten engellenen kimse, kaçınılmaz olarak nefsini görmeye döndürülür.

(وَاِنْ تُحْسِنُوا) "*Eğer iyi geçinirseniz...*" Yani bu sizin için hayırlı olur. İhsan ise, Allah'a, O'nu görüyormuş gibi ibadet etmektir.

(وَتَتَّقُوا) "*ve Allah'tan korkarsanız...*" Yani kendi yerinizi ve değerinizi görmekten korkarsanız... Yani eğer Rabbinizi görür ve O'nu görmekle kendi kadrinizi görmez olursanız.

(فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرًا) "*şüphesiz Allah, yaptıklarınızdan haberdardır.*" Yani kendinizi ve amelinizi görmez olduğunuz zaman, siz böylece fenaya erdikten sonra, bunu bilen olarak Allah yeter. Mahviyetinizin ardından da var eden olarak Allah yeter.

وَلَنْ تَسْتَطٖيعُوٓا اَنْ تَعْدِلُوا بَيْنَ النِّسَآءِ وَلَوْ حَرَصْتُمْ فَلَا تَمٖيلُوا
كُلَّ الْمَيْلِ فَتَذَرُوهَا كَالْمُعَلَّقَةِ وَاِنْ تُصْلِحُوا وَتَتَّقُوا فَاِنَّ اللّٰهَ
كَانَ غَفُورًا رَحٖيمًا ﴿١٢٩﴾

129- "Üzerine düşüp uğraşsanız da kadınlar arasında adil davranmaya güç yetiremezsiniz. Bari birisine tamamen kapılıp da diğerini askıya alınmış gibi bırakmayın. Eğer arayı düzeltir, günahtan sakınırsanız, Allah şüphesiz çok bağışlayıcı ve esirgeyicidir."

Yani siz işlerinizde kendinize güvendiğiniz zaman durumunuz tersine döner ve aranızdaki güzel durum, sizin için bir bozgunculuğa dönüşür. İşlerinizde Allah'a dayandığınız zaman ise hayatınız düzene girer ve vaktiniz bulanıklıktan arınmış olur.

Bir yoruma göre de kim, kendi durumuyla ilgili olarak, aklının noksanlığıyla Allah hakkında hüküm verirse siz, onların noksanlığını kendi yeterliliğinizle telafi edemezsiniz.

(فَلَا تَمٖيلُوا كُلَّ الْمَيْلِ) "*Bari birisine tamamen kapılıp da...*" Yani emredilen istikametten sapmayın, durdurulduğunuz yerde durun ve size emredileni uygulayın.

(فَتَذَرُوهَا كَالْمُعَلَّقَةِ) "*...diğerini askıya alınmış gibi bırakmayın.*" Yani siz, kadınları başkalarının birlikteliğinden alıkoyduktan sonra sizden almaları gereken nasiplerini de keserseniz, onlara iki yönden zarar vermiş olursunuz: Ne sizden nasiplenirler ne de başkalarına yol bulurlar. Bu da büyük bir mağduriyettir. Konunun işarî izahı ise şöyledir: Nasiplerinin yolu, yüzüne kapandığı zaman Allah sana hakkının müşahedesine ve lütfünün varlığına giden yolu açar. Çünkü yokluğu Allah yolunda olanın halefi Allah'tır. Eğer kendinizle halkın arasını düzeltirseniz, kendinizle Allah arasındaki bağa da güvenirseniz, şüphesiz Allah kusurlarınızı bağışlar ve günahlarınızı affederek size merhamette bulunur.

وَاِنْ يَتَفَرَّقَا يُغْنِ اللّٰهُ كُلًّا مِنْ سَعَتِهِ وَكَانَ اللّٰهُ وَاسِعًا حَكِيمًا ﴿١٣٠﴾

130- "Eğer eşler, birbirinden ayrılırsa Allah, bol nimetinden her birini zenginleştirir. Allah'ın lütfü geniş, hikmeti büyüktür."

Kaçınılmaz olan birliktelik, Allah'a olan ihtiyacın devamıyla beraber kalbin birlikteliğidir. Çünkü Allah vazgeçilmezdir. Allah dışındaki varlıklara gelince, onların birbirlerine olan ihtiyacı, sadece zahir bakımındandır. Bu da tefrika sahiplerinin zannına göre böyledir. Tahkik ehlinin ise yaratıkların bütün ihtiyaçlarının Allah'a olduğunda şüpheleri bulunmamaktadır.

وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَلَقَدْ وَصَّيْنَا الَّذِينَ اُوتُوا الْكِتَابَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَاِيَّاكُمْ اَنِ اتَّقُوا اللّٰهَ وَاِنْ تَكْفُرُوا فَاِنَّ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَكَانَ اللّٰهُ غَنِيًّا حَمِيدًا ﴿١٣١﴾

131- "Göklerde ve yerde ne varsa hepsi Allah'ındır. Sizden önce kendilerine Kitap verilenlere ve size: 'Allah'tan korkun' diye emrettik. Eğer inkâr ederseniz, biliniz ki göklerde ve yerde ne varsa hepsi Allah'ındır. Allah, hudutsuz zengindir, ziyadesiyle övgüye layıktır."

Allah, herkesi kendisine dönmek, dışındakilerden uzak durmak ve emrinin sınırında durmakla yükümlü kılmıştır. Ancak bir grup muvaffak, bir grup da başarısız olmuştur. Sonra Allah, tahkik ehline, kendisinin hiçbir velinin ibadetine muhtaç olmadığını ve her yoldan çıkmışın zilletinden uzak olduğunu öğretmiştir.

وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيلًا ﴿١٣٢﴾

132- "Göklerde ve yerde olanlar Allah'ındır. Vekil olarak Allah yeter."

Allah, sırların başkalarıyla olan ilgisini koparmıştır. Bunu da göklerde ve yerdekilerin tek maliki olduğunu onlara öğretmek suretiyle yapmıştır. Sonra da onları, kendilerine güzel sahip çıkacağı ve

güzel lütuf ve yeterlilikle ihtiyaçlarını yerine getireceği konusunda: (وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيلًا) "*Vekil olarak Allah yeter*" sözüyle ümitlendirdi. Allah, senin haline mâliktir ve malını ziyan etmez.

اِنْ يَشَاْ يُذْهِبْكُمْ اَيُّهَا النَّاسُ وَيَاْتِ بِاٰخَرِينَ وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰى ذٰلِكَ قَدِيرًا ﴿١٣٣﴾

133- "Ey insanlar! Allah dilerse sizi yokluğa gönderip başkalarını getirir. Allah buna kadirdir."

Allah, ezelde kimden müstağni olmuşsa ebede kadar da ona ihtiyacı olmaz.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, hiç kimseye muhtaç olmazken, kul bir nefes bile O'ndan müstağni olamaz.

- Allah'ın kudreti altındaki varlıkların sonu yoktur. Amr olmazsa Zeyd olacak, kul olmazsa kulcuk olacaktır. Kendisinin ne alternatifi ne de halefi olan ise bir ve eşsiz olan Allah'tır.

مَنْ كَانَ يُرِيدُ ثَوَابَ الدُّنْيَا فَعِنْدَ اللّٰهِ ثَوَابُ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَكَانَ اللّٰهُ سَمِيعًا بَصِيرًا ﴿١٣٤﴾

134- "Kim dünya mükâfatı isterse, bilsin ki, dünyanın da ahiretinde mükâfatı Allah katındadır. Allah, her şeyi işiten ve her şeyi görendir."

İnsanlar, kalplerini peşin olan dünyaya bağlayınca, onlara ahiret meselesini hatırlattı ve bu değersiz dünyadan olan beklentilerinin üstünde onlardan daha yüksek ahiret nimetlerinin bulunduğunu kendilerine öğretmek için: (فَعِنْدَ اللّٰهِ ثَوَابُ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ) "*Dünyanın da ahiretinde mükâfatı Allah katındadır*" buyurdu. Kasıtları ahirete doğru yükselince de onları şu sözüyle her türlü şekil ve mahlûktan koparmış oldu:

(وَاللّٰهُ خَيْرٌ وَاَبْقٰى) *"Allah, en hayırlı ve en sürekli olandır"* (Tâhâ, 20/73),

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا كُونُوا قَوَّام۪ينَ بِالْقِسْطِ شُهَدَٓاءَ لِلّٰهِ وَلَوْ عَلٰٓى اَنْفُسِكُمْ اَوِ الْوَالِدَيْنِ وَالْاَقْرَب۪ينَ اِنْ يَكُنْ غَنِيًّا اَوْ فَق۪يرًا فَاللّٰهُ اَوْلٰى بِهِمَا فَلَا تَتَّبِعُوا الْهَوٰٓى اَنْ تَعْدِلُوا وَاِنْ تَلْوُٓا اَوْ تُعْرِضُوا فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُونَ خَب۪يرًا ﴿١٣٥﴾

135- "Ey iman edenler! Adaleti titizlikle ayakta tutan, kendiniz, ana-babınız ve akrabanız aleyhinde de olsa, Allah için şahitlik eden kimseler olun. Haklarında şahitlik ettikleriniz zengin olsunlar fakir olsunlar, Allah onlara sizden daha yakındır. Hislerinize uyup adaletten sapmayın. Eğer doğru şahitlik etmez yahut şahitlik etmekten kaçınırsanız, bilin ki Allah yaptıklarınızdan haberdardır."

Ayette yer alan (قِسْط) *"kıst"* kelimesi, adalet demektir. Allah'ı gözeterek davranmak ise, kendi nefsimizden ve sözümüzün geçtiği herkesten haklarını noksansız tahsil etmek suretiyle adalet yapmaktır. Nitekim bu hakkı tahsil etmek de mümkündür. Bu da ya iyiyi emir veya Allah'ın rızasına aykırı bir şeyden alıkoyma veya nasihat yoluyla bir vaaz veya dine irşad etmek yahut da hakka hidayet etmek şeklinde olur. Kimin üzerinde Allah'ın bir hakkı kalırsa sırrı Allah için tahkikin özüne ulaşmaz. Bu arada dinin aslı, Allah'ın hakkını halkın hakkına tercih etmektir. Bu nedenle kim, bir kimseyi; babayı, anayı, çocuğu, yakını veya bir akrabalık bağı olanı Allah'a tercih eder veya bir nasibi ondan esirgerse, o adaleti yerine getirmekten uzaktır.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُٓوا اٰمِنُوا بِاللّٰهِ وَرَسُولِه۪ وَالْكِتَابِ الَّذ۪ي نَزَّلَ عَلٰى رَسُولِه۪ وَالْكِتَابِ الَّذ۪ٓي اَنْزَلَ مِنْ قَبْلُ وَمَنْ يَكْفُرْ بِاللّٰهِ وَمَلٰٓئِكَتِه۪ وَكُتُبِه۪ وَرُسُلِه۪ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ فَقَدْ ضَلَّ ضَلَالًا بَع۪يدًا ﴿١٣٦﴾

136- "Ey iman edenler! Allah'a, peygamberine, peygamberine indirdiği Kitab'a ve daha önce indirdiği kitaba iman ediniz. Kim Allah'ı, meleklerini, kitaplarını, peygamberlerini ve kıyamet gününü inkâr ederse tam manasıyla sapıtmıştır."

Ey delile dayanarak iman edenler! Açıklamaya dayanarak iman edin ki, keşif ve müşahedeye dayanarak iman etme mertebesine de yükselesiniz.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Ey tasdik ile iman edenler! Kurtuluşunuzun imanınızla değil, O'nun lütfü ile olduğunu muhakkak bilerek iman edin.

- Ey şimdi iman edenler! İmanın ahirete kadar sürdürülmesine de inanın.

- Ey iman edenler! Her türlü vuslat ve ayrılık ile kazanç ve kaybın ötesinde iman edin.

- Ey aklın delillerini kullanarak iman edenler! Vuslat makamına yerleştiğiniz zaman ve şaşkınlık hali ile zühulün galebe çaldığı durumlar size hâkim olduktan sonra kendinize geldiğinizde, size galebe çalan şeyin, Allah'ın gerçek zatı değil, Hakk'ın şahidi olduğuna inanın. Çünkü Allah'ın samed sıfatı, her türlü yakınlık ve uzaklık ile vuslat ve ayrılıktan münezzehtir.

اِنَّ الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا ثُمَّ كَفَرُوا ثُمَّ اٰمَنُوا ثُمَّ كَفَرُوا ثُمَّ ازْدَادُوا كُفْرًا لَمْ يَكُنِ اللّٰهُ لِيَغْفِرَ لَهُمْ وَلَا لِيَهْدِيَهُمْ سَب۪يلًا ﴿١٣٧﴾ بَشِّرِ الْمُنَافِق۪ينَ بِاَنَّ لَهُمْ عَذَابًا اَل۪يمًا ﴿١٣٨﴾

137, 138- "İman edip sonra inkâr edenleri, sonra yine iman edip tekrar inkâr edenleri, sonra da inkârlarını artıranları Allah ne bağışlayacak, ne de onları doğru yola iletecektir. Münafıklara, kendileri için acı bir azap olduğunu müjdele!"

Durumları değişen ve kalkıp düştükten sonra kendine gelen, sonra da hallerinin sonu kötü olanlar, mutlak gücün, hükmüyle helak ettiği ve kaderlerindeki mutsuzluğun, şimdi de sonuçta da yakaladığı kimselerdir. Bu itibarla Allah, onları hiçbir muratlarına erdirmez ve kendilerine rüştün yolunu göstermez. İşte bu nedenle onları ebedi ayrılıkla müjdele ve kendilerine sonsuz bir azabı haber ver.

اَلَّذِينَ يَتَّخِذُونَ الْكَافِرِينَ اَوْلِيَاءَ مِنْ دُونِ الْمُؤْمِنِينَ اَيَبْتَغُونَ
عِنْدَهُمُ الْعِزَّةَ فَاِنَّ الْعِزَّةَ لِلّٰهِ جَمِيعًا ﴿١٣٩﴾ وَقَدْ نَزَّلَ عَلَيْكُمْ فِي
الْكِتَابِ اَنْ اِذَا سَمِعْتُمْ اٰيَاتِ اللّٰهِ يُكْفَرُ بِهَا وَيُسْتَهْزَأُ بِهَا فَلَا
تَقْعُدُوا مَعَهُمْ حَتّٰى يَخُوضُوا فِي حَدِيثٍ غَيْرِهِ اِنَّكُمْ اِذًا مِثْلُهُمْ
اِنَّ اللّٰهَ جَامِعُ الْمُنَافِقِينَ وَالْكَافِرِينَ فِي جَهَنَّمَ جَمِيعًا ﴿١٤٠﴾

139, 140- "Müminleri bırakıp ta kâfirleri dost edinenler, onların yanında izzet mi arıyorlar? Bilsinler ki, bütün izzet yalnızca Allah'a aittir. Allah, Kitap'ta size şöyle indirmiştir ki: Allah'ın ayetlerinin inkâr edildiğini yahut onlarla alay edildiğini işittiğiniz zaman, onlar bundan başka bir söze dalıncaya kadar kâfirlerle beraber oturmayın. Yoksa siz de onlar gibi olursunuz. Elbette Allah, münafıkları ve kâfirleri cehennemde bir araya getirecektir."

Bir mahlûka sarılan kimse, şüphesiz koruyamayan birine sığınmış, barınak olamayan bir yere yaslanmış ve dibi çok derin, zararı da çok ağır olan yanlışlıklar uçurumuna düşmüştür. Onlar, yaratılmışlık züllüne uğramış olan kimsenin yanında mı izzet ararlar? Bu kimsenin gerçekte ne zaman azizliği olur ki? O halde hiçbir kalıcı azizliği bulunmayan kimseden başkasına azizlik nasıl geçebilir!

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Biz onların hangi halinin daha çirkin olduğunu bilmemekteyiz. Kahrın züllünde ve ilahî kudretin esaretinde iken üstünlük peşinde koşmaları mı yoksa bunun Allah'tan başkasına ait olduğunu zannetmeleri mi?

- Kim, bir şeyi uygun olmayan yoldan ararsa, çabasının sonucu başarısızlık olur. Kim de zenginliği yoksulluğun olduğu yerlerde ararsa emeğinin varacağı nihai nokta fakirlik olur.

- Eğer onlar, üstünlüğün Allah'a ait olduğunu fark etselerdi, yönelişleri elinden hiçbir şey gelmeyen kimseye doğru olmazdı.

(فَاِنَّ الْعِزَّةَ لِلّٰهِ جَمِيعًا) *"Bütün izzet yalnızca Allah'a aittir."* İzzet iki kısma ayrılır: Biri kadim izzettir ki o Allah'a aittir. Diğeri de sonradan meydana gelen izzettir ki o da Allah'ın dilediğine verdiği kısımdır. O halde izzet, mülk olarak da lütuf olarak da Allah'a mahsustur.

(وَقَدْ نَزَّلَ عَلَيْكُمْ فِي الْكِتَابِ) *"Allah, Kitap'ta size şöyle indirmiştir"*: Allah'a yabancı olan kimselere yakın durmayın. Çünkü nefislerinin karanlıkları, alıp verdikleri nefesi soluduğunuzda kalplerinize sirayet eder. Zira kesin bir vasfa sahip olan kimsenin yanında bulunanlar da bu vasıfta ona ortak olurlar. Bu itibarla ünsiyet içinde olan kimseyle oturan da ünsiyet içinde olurken, karanlıkta olan kimseyle oturan kimse de yabancılığın ürküntüsünü yaşar.

Bir yoruma göre de, Hakk'ın düşmanlarını terk etmek farz, karşıtlara muhalefet edip onlardan ayrılmak da dinin ta kendisidir. Gaflet sahiplerine meyletmek ise ayrılık kapısını çalmak demektir.

(اِنَّكُمْ اِذًا مِثْلُهُمْ) *"Yoksa siz de onlar gibi olursunuz."* Kişinin iç dünyasını gösteren en açık delil, beraber olduğu kimsenin arkadaşlığı ve kendisiyle dostluk kurduğu kimsenin dostluğudur. Nitekim benzer, benzerine bağlı kalır. Dal da kökünden yayılır.

اَلَّذِينَ يَتَرَبَّصُونَ بِكُمْ فَاِنْ كَانَ لَكُمْ فَتْحٌ مِنَ اللّٰهِ قَالُوٓا اَلَمْ نَكُنْ
مَعَكُمْ وَاِنْ كَانَ لِلْكَافِرِينَ نَصِيبٌ قَالُوٓا اَلَمْ نَسْتَحْوِذْ عَلَيْكُمْ
وَنَمْنَعْكُمْ مِنَ الْمُؤْمِنِينَ فَاللّٰهُ يَحْكُمُ بَيْنَكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ وَلَنْ يَجْعَلَ
اللّٰهُ لِلْكَافِرِينَ عَلَى الْمُؤْمِنِينَ سَبِيلًا ﴿١٤١﴾

141- "Sizi gözetleyip duranlar, eğer size Allah'tan bir zafer olursa: 'Sizinle beraber değil miydik?' derler. Kâfirlerin zaferden bir nasipleri olursa, bu sefer de onlara: 'Sizi yenip öldürebileceğimiz halde öldürmeyip müminlerden korumadık mı?' derler. Artık Allah, kıyamet gününde aranızda hükmedecektir ve kâfirler için müminler aleyhine asla bir yol vermeyecektir."

Onlar, gerçek itibariyle iyi niyetli, taşıdıkları inançta da samimiyetsiz olunca, hüküm bakımından Müslümanlardan ayrıldılar ve ismen kâfirlerden farklılaşmış oldular. Onlardan sakınıp korunmak, hak ehlinin üzerine vaciptir. Sonra Allah, Müslümanlara güzelce yeteceğini: (وَلَنْ يَجْعَلَ اللّٰهُ لِلْكَافِرِينَ عَلَى الْمُؤْمِنِينَ سَبِيلًا) "*Allah, kâfirler için müminler aleyhine asla bir yol vermeyecektir*" sözüyle taahhüt etmiştir. Bu, genel durum itibariyle böyledir. Çünkü tuzaklarının vebali onlara yöneltilir ve hilelerinin cezası onlarla sınırlı kalır. Hak ehli kimselere Allah zafer verirken, bâtılın ise Allah'ın yardımıyla kökü kazınır.

اِنَّ الْمُنَافِقِينَ يُخَادِعُونَ اللّٰهَ وَهُوَ خَادِعُهُمْ وَاِذَا قَامُوٓا اِلَى الصَّلٰوةِ قَامُوا كُسَالٰى يُرَٓاؤُ۫نَ النَّاسَ وَلَا يَذْكُرُونَ اللّٰهَ اِلَّا قَلِيلًا ﴿١٤٢﴾ مُذَبْذَبِينَ بَيْنَ ذٰلِكَ لَٓا اِلٰى هٰٓؤُ۬لَٓاءِ وَلَٓا اِلٰى هٰٓؤُ۬لَٓاءِ وَمَنْ يُضْلِلِ اللّٰهُ فَلَنْ تَجِدَ لَهُ سَبِيلًا ﴿١٤٣﴾

142, 143- "Şüphesiz münafıklar, Allah'a oyun etmeye kalkışıyorlar. Halbuki Allah, onların oyunlarını başlarına çevirmektedir. Onlar, namaza kalktıkları zaman üşenerek kalkarlar, insanlara gösteriş yaparlar, Allah'ı da pek az hatıra getirirler. Bunların arasında bocalayıp durmaktadırlar. Ne onlara bağlanıyorlar ne bunlara. Allah'ın şaşırttığı kimseye asla bir çıkar yol bulamazsın."

Münafıkların oyunu, tarikatta uyumlu olduklarını gösterirken inançta şirk duygusuna sahip olmalarıdır. Allah'ın, onların oyunlarına karşılık vermesi ise, kurtulduklarını zannedip kurtuluşun kendilerine özgü bir hak olduğuna hükmetmişken, gerçeğin üzerindeki

perde kaldırılınca şarap sandıkları şeyin serap çıktığını görmeleridir. Allah, şöyle buyurmuştur:

(وَبَدَا لَهُمْ مِنَ اللّٰهِ مَا لَمْ يَكُونُوا يَحْتَسِبُونَ) *"Zalimler için Allah tarafından hiç hesaba katmadıkları şeyler ortaya çıkmıştır."* (Zümer, 39/47)

(وَاِذَا قَامُوٓا اِلَى الصَّلٰوةِ قَامُوا كُسَالٰى) *"Onlar, namaza kalktıkları zaman üşenerek kalkarlar."* Münafıklığın alameti, halkı gördüklerinde faal hale gelmeleri, halkı görmedikleri zaman ise gevşemeleridir.

(مُذَبْذَبِينَ بَيْنَ ذٰلِكَ) *"Bunların arasında bocalayıp durmaktadırlar."* Halkın en değersiz olanı, kulluk gömleğini çıkarıp hürriyetin hakikatine giden yolu bulamayandır. Bu nedenle onun ne izzetten en ufak bir payı ne de gaflette huzurlu bir yaşantısı olur.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا لَا تَتَّخِذُوا الْكَافِرِينَ اَوْلِيَٓاءَ مِنْ دُونِ الْمُؤْمِنِينَ
اَتُرِيدُونَ اَنْ تَجْعَلُوا لِلّٰهِ عَلَيْكُمْ سُلْطَانًا مُبِينًا ﴿١٤٤﴾

144- "Ey iman edenler! Müminleri bırakıp da kâfirleri dost edinmeyin. Allah'a aleyhinizde apaçık bir delil mi vermek istiyorsunuz?"

Allah, uyarıyı şiddetlendirip alıkoymayı ağırlaştırmak ve mazereti kabul etmek yerine delili bağlayıcı kılmak için onlara yönelik vaazı tekrarlamış ve düşmanlara karşı çıkmalarına dair emri pekiştirmiştir.

(اَتُرِيدُونَ اَنْ تَجْعَلُوا لِلّٰهِ عَلَيْكُمْ سُلْطَانًا مُبِينًا) *"Allah'a aleyhinizde apaçık bir delil mi vermek istiyorsunuz?"* Allah, Müslümanları kâfirleri dost edinmek konusunda, diğer muhalefetler konusunda uyardığından daha şiddetli bir şekilde uyarmıştır. Çünkü kâfirleri dost edinmek, başkasını Allah'a tercih etmek demektir. Sevginin ilkeleri bakımından başkalarını sevgiliye tercih etmek, büyük günahların en büyüğüdür. Bir Müslüman, kalbinde müminlere ait olan bir yeri dahi başkalarına ayırdığı zaman cezayı hak ederken, kalbinde Allah'a ait olan yeri başkalarıyla meşgul edince durumu nasıl olur?! Allah'ın

bu konuda vereceğini söylediği ceza ise kendilerini tercih ettikleri kâfirlerin dostluğuyla baş başa bırakmasıdır ki, bu da çok kötü bir karşılıktır. Hak'tan geri duran kimseyi Allah, halk ile baş başa bırakır. Böylece başındaki bela, Hak'tan kopuş ve halkla beraberlik şeklinde ikiye katlanmış olur. Bunların ikisi de şiddetli cezalardır.

اِنَّ الْمُنَافِقِينَ فِي الدَّرْكِ الْاَسْفَلِ مِنَ النَّارِ وَلَنْ تَجِدَ لَهُمْ نَصِيرًا ﴿١٤٥﴾

145- "Şüphesiz münafıklar, cehennemin en alt katındadırlar. Artık onlara asla bir yardımcı bulamazsın."

Ayet, münafığın güvende olmadığını ifade etmektedir. Çükü güveni sağlayan şey imandır. Bu itibarla mümin, imanıyla cehennemden kurtulur. O halde münafığın, cehennemin en alt katında yer almasına sebep olan şey iman olamaz.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bu ayet: ( وَاللّٰهُ خَيْرُ الْمَاكِرِينَ ) *"Allah, hileleri boşa çıkaranların en hayırlısıdır"* (Al'i-İmran, 3/54) mealindeki ayetin teyididir. Yani Allah'ın tedbiri, her türlü hilenin üstündedir. Bu arada münafık, müminlere karşı hile sergilediği için cezası, küfrünü saklamayan kimsenin cezasından daha ağır olmuştur.

- Allah, münafıkları ahirette dünyadaki en zor durumlarının içine taşır. Çünkü hadiste: *"Kim, dünyada ne durumda ise, ahirette de o durumda Allah'ın huzuruna çıkar"* ifadesi yer almıştır. Bu itibarla münafıklar bugün terk edilmişliğin en aşağısında olduğuna göre, aynı şekilde kıyamet günü de cehennemin en alt katına taşınacaklardır. Bugünkü terk edilmişliğin en alt katı, sadece imanın adına sahip olmalarıdır. Oysa gerçekte Allah'tan en ufak bir sevap alamazlar ki, bu da büyük musibettir.

- Münafıklar, cehennemin en alt tabakasını hak ettiler. Çünkü onlar, bugün Allah'ın en yüce adını saygı yoluyla anmadılar.

- Onlar, bunu hak ettiler. Çünkü onlar huzurdayken dilleriyle edebe aykırı davrandılar. Edepsizlik ise kovulmayı gerektirir.

اِلَّا الَّذ۪ينَ تَابُوا وَاَصْلَحُوا وَاعْتَصَمُوا بِاللّٰهِ وَاَخْلَصُوا د۪ينَهُمْ لِلّٰهِ
فَاُو۬لٰٓئِكَ مَعَ الْمُؤْمِن۪ينَ وَسَوْفَ يُؤْتِ اللّٰهُ الْمُؤْمِن۪ينَ اَجْرًا عَظ۪يمًا ﴿١٤٦﴾

146- "Ancak tevbe edip hallerini düzeltenler, Allah'a sımsıkı sarılıp dinlerini yalnız O'nun için yapanlar başkadır. İşte bunlar, müminlerle beraberdirler ve Allah, müminlere yakında bir mükâfat verecektir."

Allah, münafıkların, nifaklarından dönüş yapmaları için şart koştuğu bu koşulları başka hiç kimsenin suçundan dönüş yapmasında şart koşmamıştır. Çünkü münafıkların küfürlerindeki durumları ağırdır. Onlar bu şartları yerine getirdikten sonra da Allah, haklarında: Onlar müminlerdendir, dememiş: (فَاُو۬لٰٓئِكَ مَعَ الْمُؤْمِن۪ينَ) "*İşte bunlar, müminlerle beraberdirler*" buyurmuştur. Bunda da samimiyetleriyle daha önceki musibetlerini telafi etseler de mertebeleri bakımından yine noksan olduklarına işaret bulunmaktadır.

Şiir:

*Özür sergilenmiştir ancak*
*Epeyce fark var özürle şükür arasında*

Bir yoruma göre ise müminlerle beraber oldukları zaman onlar da müminler toluluğunun hak ettiklerini hak ederler. Zira burada tevbe, nifaklarından vazgeçtikleri, imanlarındaki samimiyetleriyle hallerini düzelttikleri ve güç ve kuvvetlerinden teberri etmek suretiyle Allah'a sarıldıkları anlamındadır. Ayrıca onlar, Allah'ın kendilerini hidayete erdirmek ve münafıklıktan kurtarmak suretiyle, lütfettiği nimetini de gördüler. (وَاَخْلَصُوا د۪ينَهُمْ لِلّٰهِ) "*...dinlerini yalnız O'nun için yapanlar...*" Onların kurtuluşu, o andaki imanları ve geçmişte yaşadıkları münafıklık hallerinden dönüş yapmalarından dolayı değil, Allah'ın lütfu sayesindedir.

Bu konudaki şu iki yorum da yapılmıştır:

- Dinlerini yalnız Allah için yapmaları, kendilerini iman üzere tutması ve daha önce üzerinde bulundukları münafıklık haline

dönmekten koruması için Allah'tan yardım dilemeye devam etmeleridir.

- Onlar, münafıklıktan tevbe ettiler, samimi inançlarıyla hallerini düzelttiler, muvaffakiyet dilemek suretiyle Allah'a sarıldılar ve hakikatte kurtuluşlarının, bu yaptıklarıyla değil, fakat Allah'ın lütfü ve keremiyle olduğu konusunda dinlerini yalnız Allah için yerine getirdiler.

مَا يَفْعَلُ اللّٰهُ بِعَذَابِكُمْ اِنْ شَكَرْتُمْ وَاٰمَنْتُمْ وَكَانَ اللّٰهُ شَاكِرًا عَلِيمًا ﴿١٤٧﴾

147- "Eğer siz, şükredip iman ederseniz, Allah size neden azap etsin. Allah, şükre karşılık veren ve her şeyi bilendir."

Bu ayet, güzel ve güçlü ümit gerektiren ayetlerdendir. Çünkü Allah şükür ve imandan ibaret olan iki şeyi azaplardan emin olmanın alametlerinden kılmıştır. Bu iki şey ise kolay ve hafif iki haslettir. Çünkü şükür sözden, iman da özden ibarettir. Allah da, sözü ve özü sebebiyle kuldan razı olmakla ona yolu kolaylaştırmıştır. Bu arada şükür, sadece müminlerden kabul edilir. Kâfirden ise şükür kabul olunmaz. Zira şükür ibadettir. İbadet ise müminden başka kimseden kabul edilmemektedir.

(وَاٰمَنْتُمْ) "...*iman ederseniz*..." Yani ahirete imanla giderseniz... Sanki Allah, kurtuluşun ancak akıbeti iman üzere olmuş olan kimselere mahsus olduğunu açıklamaktadır. Buna göre ayetin manası şöyledir: Eğer siz şimdi şükreder, sonunda da iman ederseniz Allah, sizi ebedî azapla cezalandırmaz.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır.

- Buradaki şükür ve imandan maksat, kurtuluşunuzun şükrünüz ve imanınızla değil, Allah ile olduğunu tasdik etmenizdir.

- Şükür nimetin Allah'tan olduğunu görmek, iman da nimette Allah'ı görmektir. Sanki Allah: Eğer Allah'tan nimet görürseniz, nimeti görmeniz sizi, nimeti verenden koparmasın.

(وَكَانَ اللّٰهُ شَاكِرًا عَلِيمًا) *"Allah, şükre karşılık veren ve her şeyi bilendir."* Yani Allah şâkir ve alîmdir. Allah'ın şâkir olmasının manası, kulun yaptıklarından dolayı onu övüp lehinde şahitlik yaptırmasıdır. Çünkü şükrün özü ve tanımı, iyilik yapanı anmak suretiyle onu övmektir. Bu itibarla kulun Allah'a şükretmesi, kendisine nimet vermesinden ibaret olan iyiliğini anarak O'nu övmesidir. Allah da kuluna şükrederken kendisine yaptığı ibadetten ibaret olan iyiliğini zikrederek onu över. Çünkü Allah, kulunun pek çok günahlarının olduğunu bildiği halde, yaptığı ibadet sebebiyle yine de onu över.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, kulun gelecekte çirkin davranışlarına dönüş yapacağını bildiği halde yine kuluna şükreder.

- Allah kuluna şükreder; çünkü zayıf olduğunu bilir.

- Allah kuluna şükreder; çünkü günah işlerken bunu Rabbine muhalefet kastıyla yapmadığını, fakat beşeri hallerden olan güçlü şehvet duygularının kendisine hâkim olmasından ötürü günah işlediğini bilmektedir.

- Allah kuluna şükreder; çünkü kul, günah işlerken kendisini bağışlayacak olan bir Rabbinin olduğunu bilmektedir.

لَا يُحِبُّ اللّٰهُ الْجَهْرَ بِالسُّوٓءِ مِنَ الْقَوْلِ اِلَّا مَنْ ظُلِمَ وَكَانَ اللّٰهُ سَمِيعًا عَلِيمًا ﴿١٤٨﴾

148- "Allah, kötü sözün açıkça söylenmesini sevmez. Ancak haksızlığa uğrayan başka. Allah, her şeyi işitici ve bilicidir."

Mazlumun zalim hakkında söylediği söz, bir ruhsat olarak hakikatte kötü söz değildir. Ancak "kötü" sözcüğüyle nitelenebilir. Tıpkı şu ayette olduğu gibi:

( وَجَزٰٓؤُا سَيِّئَةٍ سَيِّئَةٌ مِثْلُهَا ) *"Bir kötülüğün karşılığı yine onun gibi bir kötülüktür"* (Şura, 42/40)

Oysa karşılık özü itibariyle kötü değildir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Mevlâ'sının kendisini duyduğunu bilen kimse, nefsinin kendisini davet ettiği pek çok şeyi söylemekten utanır.

- Kötü sözün açıkça söylenmesi, başkaları hakkında kendi kendine konuşup söylediğin şeyi nefsinin senden duymasıdır. Çünkü havas, kendi kendilerine söyledikleri öyle şeylerden sorumlu tutulur ki, avamın pek çoğu, insanların kendilerinden duydukları benzer şeylerden sorumlu tutulmaz.

(اِلَّا مَنْ ظُلِمَ) "*Ancak haksızlığa uğrayan başka.*" Bir görüşe göre zulme uğrayan da bunu yapamaz. Diğer bir görüşe göre ise lakin zulme uğrayan, kendisine zulmedeni kötülükle anabilir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kim, hakkı övmeyi halkı eleştirmeye tercih etmezse o, anında aldanmış olur.

- Kim, halkı Allah'ın kulları oldukları gerekçesiyle Hakk'a aidiyet gözüyle görürse, onlar hakkında sitemci dil kullanmaz. İnsan, arkadaşına şöyle der: "Ben, sana olan saygımdan dolayı, çocuğum için katlanamadığım hizmete senin için katlanırım." Şimdi böyle bir teamül insandan insana geçerli olduğuna göre; kulun Mevla'sına karşı bu kurala uyması daha da önemlidir.

- Allah, avam tarafından kötü sözün açıkça söylenmesini, havassın ise aklına bile gelmesini sevmez.

- Avam tarafından kötü sözün açıkça söylenmesi, Allah'ın sıfatı hakkında izin verilmeyen şeyler söylenmesi demektir. Halkın sıfatı hakkında kötü sözün açıkça söylenmesi ise, dinin yasakladığı şeyi söylemektir. Hakk'ın sıfatı ile ilgili olarak insan, O'nu taşımadığı bir vasıfla nitelediği zaman yalan söylemiş olur. Halk hakkında havassın söylediği noksanlık sıfatı doğru da olsa bu, kötü sözün açıkça söylenmesi demektir.

(وَكَانَ اللّٰهُ سَمِيعًا عَلِيمًا) *"Allah, her şeyi işitici ve bilicidir."* Allah, sözlerinizi işiten, kusurlarınızı bilendir. Yani başkalarını, kendileri gibi olduğunuzu bildiğiniz şeyler söyleyerek ayıplamayınız.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, sözlerinizi işitir ve haklarında söz uydurduğunuz kimselerin masum olduklarını bilir. Böylece bu ifadede, masum kimse hakkında söz uydurması sebebiyle, bu sözü söyleyene yönelik tehdit bulunmuş olmaktadır.

- Allah'ın işiten olması zalime hitap eden bir tehdit, bilen olması da, mazluma hitap eden bir müjdelemedir.

اِنْ تُبْدُوا خَيْرًا اَوْ تُخْفُوهُ اَوْ تَعْفُوا عَنْ سُوٓءٍ فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَفُوًّا قَدِيرًا ﴿١٤٩﴾

149- "Bir iyiliği açıklar yahut gizlerseniz veya bir kötülüğü affederseniz, şüphesiz Allah da ziyadesiyle affedici ve kadirdir."

(اِنْ تُبْدُوا خَيْرًا اَوْ تُخْفُوهُ) *"Bir iyiliği açıklar yahut gizlerseniz..."* Dinin adabına uyarak bir iyiliği açıklar veya hakikatin hükümlerini yaşayarak gizlerseniz.

(اَوْ تَعْفُوا عَنْ سُوٓءٍ) *"...veya bir kötülüğü affederseniz..."* Allah'tan, sizi yükümlü kıldığı ahlak güzelliklerini alarak bunu yaparsanız.

(فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَفُوًّا قَدِيرًا) *"...şüphesiz Allah da"* kusurlarınızı *"ziyadesiyle affedici ve"* sevip aradığınız şeyleri yaratıp gerçekleştirmeye *"kadirdir."*

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Eğer ortaya koyduğunuz ve izlenmesi konusunda başkalarına yardımcı olduğunuz prensiple ilgili olarak insanlara örnek olmak için bir iyiliği açıklarsanız, eğer o iyiliği bilmekle yetinmek, nefislerinizi yapmacıklığın afetlerinden korumak ve kendisi için çalıştığınız Allah'ın, bunu yaptığınızı görüp bildiğinden emin olduğunuz için onu gizlerseniz, eğer bir kötülüğü affederseniz, yani nefislerinizin sizi davet ettiği şeyleri terk ederseniz, işte o takdirde Allah

yaptığınıza, affıyla karşılık verir. Oysa Allah, zalimi müptela kıldığı şeyle sizi de müptela kılabilir. Böylece bu ifade, Allah'ın nimetlerini görmekten gafil olmamaları konusunda bir uyarı, masumiyetten mahrum bırakılmaktan ve fitne ve meşakkate düşmekle sonuçlanacak olan perişanlığa mahkûm edilmekten Allah'a sığınmaya bir dikkat çekmedir.

- Eğer bir iyiliği açıklamak suretiyle insanlara iyilik yaparsanız veya onlar için gizlice dua etmek suretiyle iyiliği gizli tutarsanız ya da size zulmedildiği zaman kötülüğü bağışlarsanız.

- Kim sana iyilik ederse, ona karşı iyiliği açıkla, kim sana bir kötülüğün dokunmasına engel olursa, gizli olarak onu samimi bir dost edin ve kendisine dua et. Sana kötülük yapanı da bir lütuf ve iyilik olarak bağışla. Bu takdirde Allah'ın, işlediğin günahları bağışladığını görürsün. Çünkü senin günahların daha çoktur. Bir de Allah, senin hasmından hak tahsili ve intikam yoluyla elde edemeyeceğin kadar sana lütuf ve inamda bulunma gücüne sahiptir.

اِنَّ الَّذٖينَ يَكْفُرُونَ بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ وَيُرٖيدُونَ اَنْ يُفَرِّقُوا بَيْنَ اللّٰهِ وَرُسُلِهٖ
وَيَقُولُونَ نُؤْمِنُ بِبَعْضٍ وَنَكْفُرُ بِبَعْضٍ وَيُرٖيدُونَ اَنْ يَتَّخِذُوا بَيْنَ
ذٰلِكَ سَبٖيلًا ﴿١٥٠﴾ اُولٰٓئِكَ هُمُ الْكَافِرُونَ حَقًّا وَاَعْتَدْنَا لِلْكَافِرٖينَ
عَذَابًا مُهٖينًا ﴿١٥١﴾

150, 151- "O kimseler ki, Allah'ı ve peygamberlerini inkâr ederek kâfir olurlar, Allah ile peygamberlerinin arasını ayırmak isterler ve: 'Peygamberlerin bir kısmına inanırız, bir kısmını inkâr ederiz' derler ve böylece imanla küfür arasında orta bir yol tutmak isterler, işte bunlar gerçekten kâfirlerdir. Biz de kâfirler için rüsva edici bir azap hazırlamışızdır."

Allah, bu kimselerin çirkin küfürlerine, sayılan kötü fiillerini de eklediklerini bildirdikten sonra, fesat ehlini cezalandırmaya hazır ol-

duğunu bilmen için, suçlarının karşılığı olan azaplarını iki misline çıkardığını açıklamıştır.

وَالَّذٖينَ اٰمَنُوا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ وَلَمْ يُفَرِّقُوا بَيْنَ اَحَدٍ مِنْهُمْ اُولٰٓئِكَ سَوْفَ يُؤْتٖيهِمْ اُجُورَهُمْ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُورًا رَحٖيمًا ﴿١٥٢﴾

152- "Allah'a ve peygamberlerine iman eden ve peygamberlerden hiç biri arasında fark gözetmeyen kimselere gelince, işte bunların kıyamette Allah mükâfatlarını verecektir. Allah, çok bağışlayıcıdır, çok merhamet edicidir."

Onlar, bütün peygamberlere iman edip kendilerine emredilen bütün hususlarda dürüst davranınca, makbuliyet ve güzel karşılığı hak etmiş oldular. Bu arada imanın bazı varlıkları kapsamaması, tıpkı bazı zamanları kapsamaması gibidir. Bu itibarla Allah, imanı bütün yükümlülüklerini kapsamayan kimsenin imanını kabul etmediği gibi, iman etmekle yükümlü kılındığı kimselere iman etmeyen kimsenin imanını da kabul etmemektedir. Çünkü Allah bunu, imanın gerçek iman olmasının ve kemalinin şartı kılmıştır. Ayetin bu çerçevede işaret ettiği husus şudur: Kim, yükümlülüğün gereğini bütünüyle yerine getirmezse, onun için vuslatın hakikatinden hiçbir şey yoktur. Örneğin, Hz. Peygamber: *"Hac Arefe'dir"* buyurmuştur. Buna karşılık kim, çok uzak yoldan bile gelse, son anda dahi olsa vakfeye yetişemediği zaman hac yapmamış olur. Bir Hz. Peygamber: *"Azatlık anlaşması yapılan köle, üzerinde bir dirhem bile borç kalmış olsa, köleliği devam eder"* buyurmuştur.

يَسْـَٔلُكَ اَهْلُ الْكِتَابِ اَنْ تُنَزِّلَ عَلَيْهِمْ كِتَابًا مِنَ السَّمَٓاءِ فَقَدْ سَاَلُوا مُوسٰٓى اَكْبَرَ مِنْ ذٰلِكَ فَقَالُٓوا اَرِنَا اللّٰهَ جَهْرَةً فَاَخَذَتْهُمُ الصَّاعِقَةُ بِظُلْمِهِمْ ثُمَّ اتَّخَذُوا الْعِجْلَ مِنْ بَعْدِ مَا جَٓاءَتْهُمُ الْبَيِّنَاتُ فَعَفَوْنَا عَنْ ذٰلِكَ وَاٰتَيْنَا مُوسٰى سُلْطَانًا مُبٖينًا ﴿١٥٣﴾

153- "Kitap ehli, senden üzerlerine gökten bir kitap indirivermeni isterler. Gerçekten bundan daha büyüğünü Musa'dan istemişlerdi de: 'Allah'ı bize açıkça göster' demişlerdi. İşte zulümleri yüzünden onlara yıldırım çarptı. Sonra kendilerine bunca açık mucizeler gelmişken tuttular buzağıya taptılar. Nihayet biz, tevbe ettikleri için, bunları bağışladık ve Musa'ya açık bir hükümranlık verdik."

Ayet, onların işlediği iki çirkin davranışı kapsamaktadır: Birincisi, Allah'ı görmeye dair talepleri, ikincisi de apaçık mucizeler gördükten sonra buzağıya tapmalarıdır.

Bu çerçevede Allah'ı görme taleplerinden dolayı kötülendiler. Çünkü bunu, mucizeler gösterilmek suretiyle mazeretleri yok edildikten sonra istediler. Sonra Allah'ı görme istekleri de öğrenmek veya tasdikin gereği olarak veya O'na olan şiddetli arzularından dolayı değil idi. Böyle bir istek ise büsbütün edep dışılıktır.

Ayetin işareti ise şöyledir: Buzağıyı, yeterli tanrı olarak gören kimse, Allah'ı görmeyi hak edemez.

Bir yoruma göre de o topluluk, irfan ruhlarına ulaşmadığı için akıllarıyla kendilerine yakışan sınırlı bir varlığa kapılıp tanrıları olmasını caiz gördüler.

(وَاٰتَيْنَا مُوسٰى سُلْطَانًا مُبِينًا) "*Musa'ya açık bir hükümranlık verdik.*" Yani ona açık bir delil verdik. Daha doğrusu ona, Allah'ı başkasına benzetmeyen ve atıl göstermeyen tevhid inancını verdik. Bu arada açık delil, atıl olmaktan ve teşbihten alıkoyan tahsil ve tenzih demektir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Hz. Musa'ya verilen delil, Allah'ın hitabını vasıtasız duyabilme gücüdür.

- Bu delil, bu ümmet için kıyamet günü ebediyen Allah'a kavuştukları zaman gerçekleşecektir. Hz. Peygamber (s.a.v.) Allah'ı görmeye dair hadiste: *"Allah'ı görmede zorlanmayacaksınız"* buyurmuştur.

وَرَفَعْنَا فَوْقَهُمُ الطُّورَ بِمِيثَاقِهِمْ وَقُلْنَا لَهُمُ ادْخُلُوا الْبَابَ سُجَّدًا
وَقُلْنَا لَهُمْ لَا تَعْدُوا فِي السَّبْتِ وَاَخَذْنَا مِنْهُمْ مِيثَاقًا غَلِيظًا ﴿١٥٤﴾

154- "Verdikleri sözü kuvvetlendirmek ve ona bağlanmak için Tur Dağı'nı üstlerine kaldırdık da kendilerine: 'O şehrin kapısından secdeye kapanarak girin' dedik. Hem: 'Cumartesi günü av yaparak sınırı aşmayın' diye söyledik. Böylece kendilerinden ağır bir güvence aldık."

Allah, onlara ilave açık bir mucize gösterdikçe onlar kalben daha çok inkârda bulunurlardı. Böylece kalp gözleri mucizeleri görmeye açılmayınca tebliğden nasiplerinin fazla oluşu, onlara fayda vermemiştir. Allah şöyle buyurmuştur:

(وَمَا تُغْنِي الْاٰيَاتُ وَالنُّذُرُ عَنْ قَوْمٍ لَا يُؤْمِنُونَ) *"Mucizeler ve uyarılar, inanmayan bir kavme fayda vermez."* (Yunus, 10/101)

فَبِمَا نَقْضِهِمْ مِيثَاقَهُمْ وَكُفْرِهِمْ بِاٰيَاتِ اللّٰهِ وَقَتْلِهِمُ الْاَنْبِيَاءَ بِغَيْرِ حَقٍّ
وَقَوْلِهِمْ قُلُوبُنَا غُلْفٌ بَلْ طَبَعَ اللّٰهُ عَلَيْهَا بِكُفْرِهِمْ فَلَا يُؤْمِنُونَ اِلَّا
قَلِيلًا ﴿١٥٥﴾

155- "Fakat onların, ahitlerini bozmaları, Allah'ın ayetlerini inkâr etmeleri, peygamberleri haksız yere öldürmeleri ve: 'Kalplerimiz perdelidir' demeleri sebebiyle kendilerine lanet ettik. Doğrusu Allah, onların kalpleri üzerine küfürleri yüzünden mühür vurmuştur. Onun için pek azı müstesna, onlar imana gelmezler."

Yani, bu yasakları işlemeleri ve bu küçük düşürücü vasıfları taşımaları sebebiyle onları küçültücü yerlere yerleştirdik ve başlarına türlü cezalar sardık.

Bir yoruma göre de Allah'ın hükümlerine aykırı davranmalarının uğursuzluğu, peyderpey onları yakaladı. Çünkü günahların cezalarından biri de, başka günahlar da işlemeye yatkın hale gelmektir.

Bu itibarla, ahitlerini bozmaları ve ardından tevbe etmemeleri sebebiyle Allah, onları mucizeleri inkâr etme noktasına sürüklemiştir. Sonra küfürlerinin uğursuzluğundan dolayı biraz daha alçaldılar ve bu kez de peygamberlerini haksız yere öldürdüler. Sonra bunun uğursuzluğundan dolayı aldıkları cesaretle, çok derin kavrayışa sahip olduklarını ileri sürerek: Bizim kalplerimiz ilimlerin kaplarıdır, dediler. Bunun üzerine Allah onlara: (بَلْ طَبَعَ اللّٰهُ عَلَيْهَا بِكُفْرِهِمْ) *"Doğrusu Allah, onların kalpleri üzerine küfürleri yüzünden mühür vurmuştur"* cevabını vermiş oldu. Böylece Allah, onları irfanın kaynağından alıkoydu ve bu nedenle onlar dalaletlerinde debelenmiş oldular.

وَبِكُفْرِهِمْ وَقَوْلِهِمْ عَلٰى مَرْيَمَ بُهْتَانًا عَظِيمًا ﴿١٥٦﴾ وَقَوْلِهِمْ اِنَّا قَتَلْنَا
الْمَسِيحَ عِيسَى ابْنَ مَرْيَمَ رَسُولَ اللّٰهِ وَمَا قَتَلُوهُ وَمَا صَلَبُوهُ وَلٰكِنْ شُبِّهَ
لَهُمْ وَاِنَّ الَّذِينَ اخْتَلَفُوا فِيهِ لَفِي شَكٍّ مِنْهُ مَا لَهُمْ بِهِ مِنْ عِلْمٍ اِلَّا اتِّبَاعَ
الظَّنِّ وَمَا قَتَلُوهُ يَقِينًا ﴿١٥٧﴾ بَلْ رَفَعَهُ اللّٰهُ اِلَيْهِ وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيزًا حَكِيمًا ﴿١٥٨﴾

156, 157, 158- "Bir de o Yahudilerin İsa'yı inkâr etmeleri ve Meryem'e zina isnadı ile büyük bir iftirada bulunup aleyhine sözleri ve: 'Biz Allah'ın peygamberi olan Meryem'in oğlu İsa'yı öldürdük' demeleri sebebiyle kendilerini lanetledik, rahmetimizden kovduk. Halbuki onlar, İsa'yı öldürmediler ve asmadılar. Fakat kendilerine bir benzetme yapıldı. Esasen İsa'nın katli hakkında kendileri de ihtilafa düşüp kesin bir şüphe içindedirler. Onların, bu öldürme olayına dair bir bilgileri yoktur. Ancak kuru bir zan peşindedirler. Onu gerçekten öldürememişlerdir. Doğrusu Allah, onu yükseltip himayesine almıştır. Allah azizdir, hükmünde hikmet sahibidir."

Haktan kısmak ve geri durmak dalalet olduğu gibi haddi aşmak da dalalettir. Bu çerçevede bazıları, Meryem'e iftira atıp kendisini zina ile suçladılar. Diğer bazıları da onu tazimde haddi aşarak: "Onun oğlu, Allah'ın oğludur" dediler. Bu iki grup da dalalete düştüler.

Bir yoruma göre ise Hz. Meryem, Allah'ın velisi bir kadın olup biri ifrat, diğeri de tefrit ehli olan iki grup onunla yoldan çıkmış oldular. Zaten Allah'ın velilerinin durumu böyledir. Onların münkiri, kendilerine saygıyı terk ettiği için yoldan çıkarken, onlar hakkında hak etmedikleri şeylere inananlar da, kendilerini fazla yücelttikleri için şakavete düşerler. Nitekim büyük velilerin çoğunluğunun karşılaştıkları durum bu olmuştur.

(وَمَا قَتَلُوهُ وَمَا صَلَبُوهُ) *"Halbuki onlar, İsa'yı öldürmediler ve asmadılar..."* Bir görüşe göre; Allah, Hz. İsa'yı jurnal edeni onun kılığına sokmuş ve bu nedenle onun yerine bu kişi öldürülüp çarmıha gerilmiştir. Nitekim: *"Kişi, kardeşine kazdığı kuyuya düşer"* denilmiştir. Bir görüşe göre de, Hz. İsa: *"Kim benim kılığıma sokulup yerime öldürülmeye razı olursa, ona cennet vardır"* deyince taraftarlarından biri buna razı oldu.

Bu çerçevede şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah: (اِنَّا لَا نُضِيعُ اَجْرَ مَنْ اَحْسَنَ عَمَلًا) *"Gerçekten biz, güzel bir amel işleyenin ecrini zayi etmeyiz"* (Kehf, 18/30), buyurarak yok olma çilesine karşı sabreden bu kişiyi yaptığının karşılığından mahrum bırakmamıştır.

- Adam, kişiliğiyle Hz. İsa'ya gerçek arkadaş olunca, ruhuyla da ona arkadaş oldu. Bu itibarla Hz. İsa yakınlık makamına yükseltilince canıyla kendisini ona feda eden bu adamın ruhu da, yakınlık makamına yükseltildi.

وَاِنْ مِنْ اَهْلِ الْكِتَابِ اِلَّا لَيُؤْمِنَنَّ بِهِ قَبْلَ مَوْتِهِ وَيَوْمَ الْقِيٰمَةِ يَكُونُ عَلَيْهِمْ شَهِيدًا ﴿١٥٩﴾

159- "Kitap ehlinden her biri, ölümünden önce muhakkak ona iman edecektir. Kıyamet gününde de o, onlara şahit olacaktır."

Ümitsizlik vaktinde hiçbir güvenceleri olmadığına hükmedilince, o durumda iman da kendilerine fayda vermedi. Böylece, geçerli olanın, kulun imanı değil, Hakk'ın güvencesi olduğu anlaşılmaktadır.

فَبِظُلْمٍ مِنَ الَّذِينَ هَادُوا حَرَّمْنَا عَلَيْهِمْ طَيِّبَاتٍ اُحِلَّتْ لَهُمْ وَبِصَدِّهِمْ
عَنْ سَبِيلِ اللّٰهِ كَثِيرًا ﴿١٦٠﴾ وَاَخْذِهِمُ الرِّبٰوا وَقَدْ نُهُوا عَنْهُ وَاَكْلِهِمْ
اَمْوَالَ النَّاسِ بِالْبَاطِلِ وَاَعْتَدْنَا لِلْكَافِرِينَ مِنْهُمْ عَذَابًا اَلِيمًا ﴿١٦١﴾

160, 161- "Yahudilerin zulmü sebebiyle, bir de çok kimseyi Allah yolundan çevirmeleri, menedildikleri halde faizi almaları ve haksız yollar ile insanların mallarını yemeleri yüzünden kendilerine daha önce helal kılınmış bulunan temiz ve iyi şeyleri onlara haram kıldık ve içlerinden inkâra sapanlara acı bir azap hazırladık."

Bir yoruma göre, günah işlemek mubah şeylerin de haram kılınmasına sebep olur. Bu nedenle kim, görünen davranışlarıyla bir günah işlerse, bulduğu mubah hallerden ve onun sırlarında gerçekleşen lütuflardan mahrum edilir.

لٰكِنِ الرَّاسِخُونَ فِي الْعِلْمِ مِنْهُمْ وَالْمُؤْمِنُونَ يُؤْمِنُونَ بِمَٓا اُنْزِلَ
اِلَيْكَ وَمَٓا اُنْزِلَ مِنْ قَبْلِكَ وَالْمُقِيمِينَ الصَّلٰوةَ وَالْمُؤْتُونَ الزَّكٰوةَ
وَالْمُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ اُو۬لٰٓئِكَ سَنُؤْتِيهِمْ اَجْرًا عَظِيمًا ﴿١٦٢﴾

162- "Fakat içlerinden ilimde derinleşmiş olanlar ve müminler, sana indirilene ve senden önce indirilene iman edenler, namazı kılanlar, zekâtı verenler, Allah'a ve ahiret gününe inananlar var ya, işte onlara pek yakında büyük mükâfat vereceğiz."

İlimde derinleşen kimse, ne delilde ne de hükümde mukallid olan kimsedir. Fakat o, aklında şüpheye yer kalmayacak noktaya varıncaya kadar doğru akıl yürüten kimsedir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- İlimde derinleşen, delili düşünmenin sınırını aşan ve beyanın hakikatlerine ulaşan kimsedir.

- İlimde derinleşen, ilmiyle amel eden ve nihayet ameli sayesinde başkasına gizli kalanı bilen kimsedir. Nitekim hadiste şöyle denilmiştir:

*"Kim, bildiğiyle amel ederse, Allah onu, bilmediklerinin bilgisine varis kılar."* Bu arada ayette, Kur'an'daki yerlerin çoğunda imandan sonra geldiği için ibadetler arasında özel bir yeri olan (وَالْمُقِيمِينَ الصَّلٰوةَ) "*namazı kılanlar*" anlamındaki lafız, başında "*a'nî*" fiili takdir edilmek suretiyle, özellik ifade etmek üzere irap bakımından mansup kılınmıştır. Bir de Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) namaz emrini miraç gecesi Cibril vasıtasıyla olmaksızın vermiştir. Bu konuda başka gerekçeler de belirtilmiştir. Ayetteki büyük ecir, amel ile hak edilen miktardan fazla olan demektir.

اِنَّٓا اَوْحَيْنَٓا اِلَيْكَ كَمَٓا اَوْحَيْنَٓا اِلٰى نُوحٍ وَالنَّبِيِّنَ مِنْ بَعْدِهٖ وَاَوْحَيْنَٓا اِلٰٓى اِبْرٰهٖيمَ وَاِسْمٰعٖيلَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوبَ وَالْاَسْبَاطِ وَعٖيسٰى وَاَيُّوبَ وَيُونُسَ وَهٰرُونَ وَسُلَيْمٰنَ وَاٰتَيْنَا دَاوُ۫دَ زَبُورًا ﴿١٦٣﴾

163- "Biz Nuh'a ve ondan sonraki peygamberlere vahiy ettiğimiz gibi sana da vahiy ettik. Ve nitekim İbrahim'e, İsmail'e, İshak'a Yakûb'a, esbâta, İsa'ya, Eyyûb'e, Yûnus'a, Harûn'a ve Süleyman'a, vahiy ettik. Davud'a da Zebur'u verdik."

Hz. Peygamber'in imanla diğer peygamberlerden ayırt edilmesi, onları da diğer bazı özellik ve faziletlerle ayırt etmek içindir. Şöyle ki, Allah Hz. Nuh ve Hz. Peygamber'den her birine hak ettiği makamı vermiştir. Böylece bu iki peygamber, müstakil özelliğe sahip olmada ortak, her birinin, makama göre sahip olduğu fazilette ise farklıdırlar. Nitekim biri, faziletlerinden söz edilmeden emsallerinden ayrılırken, diğeri emsallerinden bin faziletle ayrılmıştır.

وَرُسُلًا قَدْ قَصَصْنَاهُمْ عَلَيْكَ مِنْ قَبْلُ وَرُسُلًا لَمْ نَقْصُصْهُمْ عَلَيْكَ وَكَلَّمَ اللّٰهُ مُوسٰى تَكْلٖيمًا ﴿١٦٤﴾

164- "Bir kısım peygamberleri sana daha önce anlattık, bir kısmını ise sana anlatmadık. Ve Allah, Musa ile gerçekten konuştu."

Allah'ın, velileri hakkındaki ilkesi, bir kavmi örtüp diğer birini teşhir etmektir. Allah, aynı ilkeyi peygamberler hakkında da uygulamaktadır. Bu çerçevede bazılarının adlarını açıklarken diğer bazılarının bilgilerini özet olarak vermiştir. Bu arada topluca ve ayrıntılı olarak, bütün peygamberlere iman etmek gerekir. Tıpkı topluca ve ayrıntılı olarak, bütün velilere saygı göstermenin gerektiği gibi. Diğer kulların durumları da böyledir. Allah, bazı durumları onlardan saklarken, diğer bazısını kendilerine açıklamıştır. Bu arada onlara açıkladığı durumlarda kendilerini ihlaslı olmakla yükümlü kılmıştır. Onlardan bazı halleri gizlemesi ise, kendilerine mahsus kıldığı gerçeklerin mahiyetlerine onları ehil hale getirmek için bazı hallere kalben vâkıf olmalarını istememesidir.

(وَكَلَّمَ اللّٰهُ مُوسٰى تَكْل۪يمًا) *"Ve Allah, Musa ile gerçekten konuştu."* Bu ifade, Hz. Musa'nın Allah ile vasıtasız konuşma özelliğine sahip olduğunu bildirmektedir.

رُسُلًا مُبَشِّر۪ينَ وَمُنْذِر۪ينَ لِئَلَّا يَكُونَ لِلنَّاسِ عَلَى اللّٰهِ حُجَّةٌ بَعْدَ
الرُّسُلِ وَكَانَ اللّٰهُ عَز۪يزًا حَك۪يمًا ﴿١٦٥﴾

165- "Müjdeleyici ve sakındırıcı olarak peygamberler gönderdik. Peygamberlerden sonra Allah'a karşı bir bahaneleri olmasın diye. Allah, izzet ve hikmet sahibidir."

Allah, yaratıkları güçlerinin sınırında tutmuş ve onlara peygamberler gönderdiğini açıklamıştır. Böylece peygamberler, sevaplarını tercih edip azabı hak etmelerine yol açacak günahlardan sakınmakla diğerlerinden ayrılmış oldular. Bir de Allah, yaratıkların şimdi veya gelecekte ne isteyecekleri bir rahata ne de sakınacakları bir afete giden yola sahip olduklarını açıklamıştır.

(لِئَلَّا يَكُونَ لِلنَّاسِ عَلَى اللّٰهِ حُجَّةٌ بَعْدَ الرُّسُلِ وَكَانَ اللّٰهُ عَز۪يزًا حَك۪يمًا) *"Peygamberlerden sonra Allah'a karşı bir bahaneleri olmasın diye. Allah, izzet ve hikmet sahibidir."*

Allah'a ihtiyacı olanın, Allah'a karşı nerede delili olur ki! Ancak Allah, onlara akılları ölçüsünde hitap etmiştir.

لٰكِنِ اللّٰهُ يَشْهَدُ بِمَٓا اَنْزَلَ اِلَيْكَ اَنْزَلَهُ بِعِلْمِه۪ وَالْمَلٰٓئِكَةُ يَشْهَدُونَ
وَكَفٰى بِاللّٰهِ شَه۪يدًا ﴿١٦٦﴾

166- "Fakat Allah, sana indirdiğine şahitlik eder. Onu kendi ilmi ile indirdi. Melekler de buna şahitlik ederler. Ve şahit olarak Allah yeter."

Allah, doğru sözlü olduğunu bildiğini anlatmak suretiyle, Hz. Peygamber (s.a.v.)'i, insanların kendisini yalanlamalarına karşı teselli etmiştir. Nitekim bu nedenle: (وَكَفٰى بِاللّٰهِ شَه۪يدًا ) "*Ve şahit olarak Allah yeter*" buyurmuştur.

اِنَّ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا وَصَدُّوا عَنْ سَب۪يلِ اللّٰهِ قَدْ ضَلُّوا ضَلَالًا بَع۪يدًا
﴿١٦٧﴾ اِنَّ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا وَظَلَمُوا لَمْ يَكُنِ اللّٰهُ لِيَغْفِرَ لَهُمْ وَلَا لِيَهْدِيَهُمْ
طَر۪يقًا ﴿١٦٨﴾ اِلَّا طَر۪يقَ جَهَنَّمَ خَالِد۪ينَ ف۪يهَٓا اَبَدًا وَكَانَ ذٰلِكَ عَلَى
اللّٰهِ يَس۪يرًا ﴿١٦٩﴾

167, 168, 169- "İnkâr eden ve başkalarını da Allah yolundan alıkoyanlar, şüphesiz doğru yoldan çok uzaklaşmışlardır. İnkâr edip zulmedenleri Allah asla bağışlayacak değildir. Onları başka bir yola iletecek de değildir. Ancak orada ebedî kalmak üzere, onları cehennem yoluna iletecektir. Bu da, Allah'a çok kolaydır."

Allah, onların müminleri hakka uymaktan alıkoymasını Allah'ı inkâr yerine koymuştur. Allah, velilerinin haklarını, tıpkı kendi hakkı gibi yüce kılmıştır. Sonra Allah: (اِنَّ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا وَظَلَمُوا) "*İnkâr edip zulmedenler*" buyurmak suretiyle zulümlerini küfürlerine sebep kılmıştır. Böylelikle Allah, ebedî azabı hak etmelerini bütün bu hususlara bağlamıştır. Bu arada zulüm, her ne kadar ebedî uyarıyı hak etmede küfür gibi olmasa da küfrün çirkinliğinden dolayı, Allah'ın,

zulüm eden kimseyi küfür üzerine Rabbinin huzuruna çıkacak kadar perişanlığa mahkûm etmesi uzak ihtimal değildir.

يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَٓاءَكُمُ الرَّسُولُ بِالْحَقِّ مِنْ رَبِّكُمْ فَاٰمِنُوا خَيْرًا لَكُمْ وَاِنْ تَكْفُرُوا فَاِنَّ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَكَانَ اللّٰهُ عَلٖيمًا حَكٖيمًا ﴿١٧٠﴾

170- "Ey insanlar peygamber size Rabbinizden gerçeği getirdi. Şu halde kendi iyiliğinize olarak ona iman edin. Eğer inkâr ederseniz, göklerde ve yerde ne varsa şüphesiz hepsi Allah'ındır. Allah, geniş ilim ve hikmet sahibidir."

( يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ ) "*Ey insanlar*..." Allah, kendilerine muhtaç olmadığını bildirmektedir. Bu itibarla, eğer onlar iman ederlerse, canlarının istediğini elde etmiş olurlar. Şayet inkâr ederlerse, üzerlerine çektikleri belalar onlarındır. Oysa Allah'ın kemal sıfatına sahip oluşu, birinin uymasına bağlı olmadığı gibi, birinin muhalefeti de O'nda noksanlık meydana getirmez.

( وَاِنْ تَكْفُرُوا فَاِنَّ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ ) "*Eğer inkâr ederseniz, göklerde ve yerde ne varsa şüphesiz hepsi Allah'ındır.*" Yani eğer onlar, fiilen kulluğu yaşamanın dışına çıkarlarsa, yaradılışları itibariyle hakikatte yine Allah'ın kulları olmaktan çıkmazlar. Allah şöyle buyurur:

( اِنْ كُلُّ مَنْ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ اِلَّٓا اٰتِي الرَّحْمٰنِ عَبْدًا )

"*Göklerde ve yerde kim varsa, muhakkak Allah'ın huzuruna kul olarak gelecektir.*" (Meryem, 19/93)

يَٓا اَهْلَ الْكِتَابِ لَا تَغْلُوا فٖي دٖينِكُمْ وَلَا تَقُولُوا عَلَى اللّٰهِ اِلَّا الْحَقَّ اِنَّمَا الْمَسٖيحُ عٖيسَى ابْنُ مَرْيَمَ رَسُولُ اللّٰهِ وَكَلِمَتُهُ اَلْقٰيهَٓا اِلٰى مَرْيَمَ وَرُوحٌ مِنْهُ فَاٰمِنُوا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖ وَلَا تَقُولُوا ثَلٰثَةٌ

اِنْتَهُوا خَيْرًا لَكُمْ اِنَّمَا اللّٰهُ اِلٰهٌ وَاحِدٌ سُبْحَانَهُ اَنْ يَكُونَ لَهُ وَلَدٌ
لَهُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيلًا ﴿١٧١﴾

171- "Ey Kitap ehli dininizde aşırı gitmeyin ve Allah hakkında gerçekten başkasını söylemeyin. Meryem oğlu İsa Mesih, ancak Allah'ın resûlüdür. O, Allah'ın Meryem'e ulaştırdığı 'kün' (ol) kelimesinin eseridir, O'ndan bir ruhtur. Şu halde Allah'a ve peygamberlerine iman edin. 'Tanrı üçtür' demeyin. Sizin için hayırlı olmak üzere bundan vazgeçin. Allah, ancak bir tek Allah'tır. O, çocuğu olmaktan münezzehtir. Göklerde ve yerde ne varsa hepsi O'nundur. Vekil olarak Allah yeter."

Dinlerinde aşırı gitmeleri, kendi hesaplarına göre davranmaları demektir. Zira onlar, tanrılarını önce yaratıkların benzeri, sonra da zıddı olmakla nitelemişlerdir. Şöyle ki onlar: *"Bir üçtür, üç birdir"* demişlerdir. Bâtılda ısrar ise bâtılı artırmaktan başka bir işe yaramaz.

لَنْ يَسْتَنْكِفَ الْمَسِيحُ اَنْ يَكُونَ عَبْدًا لِلّٰهِ وَلَا الْمَلٰٓئِكَةُ الْمُقَرَّبُونَ
وَمَنْ يَسْتَنْكِفْ عَنْ عِبَادَتِهِ وَيَسْتَكْبِرْ فَسَيَحْشُرُهُمْ اِلَيْهِ جَمِيعًا
﴿١٧٢﴾ فَاَمَّا الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ فَيُوَفِّيهِمْ اُجُورَهُمْ
وَيَزِيدُهُمْ مِنْ فَضْلِهِ وَاَمَّا الَّذِينَ اسْتَنْكَفُوا وَاسْتَكْبَرُوا فَيُعَذِّبُهُمْ
عَذَابًا اَلِيمًا وَلَا يَجِدُونَ لَهُمْ مِنْ دُونِ اللّٰهِ وَلِيًّا وَلَا نَصِيرًا ﴿١٧٣﴾

172, 173- "Ne Mesih ne de Allah'a yakın melekler, Allah'ın kulu olmaktan geri dururlar. O'na kulluktan geri durup büyüklenen kimselerin hepsini Allah, yakında huzurunda toplayacaktır. İman edip iyi işler yapanlara Allah, ecirlerini tam olarak verecek ve onlara lütfünden daha fazlasını da ihsan edecektir. Fakat o kibirlenip de Allah'a ibadet etmekten çekinenleri, çok acıklı bir

azaba uğratacak ve onlar, Allah'a karşı kendilerine ne bir dost ne de bir yardımcı bulamayacaklardır."

Şerefi, Allah'a kulluğa bağlı iken İsa O'na kul olmaktan nasıl geri durur?! Kibirlenmek de onun helakine sebep iken nasıl o, Allah'a boyun eğmeyip kibirlenir?! Bu nedenledir ki, Hz. İsa'nın söylediği ilk söz: *"Şüphesiz ben Allah'ın kuluyum"* olmuştur. Kulların, boyun bükerek efendilerine güzel görünmeleri ise, kuşku götürmeyen malum bir durumdur.

(وَلَا الْمَلٰٓئِكَةُ الْمُقَرَّبُونَ) *"...ne de Allah'a yakın melekler..."* Bu söz, meleklerin, Hz. İsa'dan üstün olduklarını göstermez. Çünkü Allah, onlara inançlarına göre hitapta bulunmuştur. Onlar ise meleklerin insanlardan üstün olduğuna inanmışlardır.

(وَاَمَّا الَّذِينَ اسْتَنْكَفُوا وَاسْتَكْبَرُوا فَيُعَذِّبُهُمْ عَذَابًا اَلِيمًا وَلَا يَجِدُونَ لَهُمْ مِنْ دُونِ اللّٰهِ وَلِيًّا وَلَا نَصِيرًا) *"Fakat o kibirlenip de Allah'a ibadet etmekten çekinenleri, çok acıklı bir azaba uğratacak ve onlar, Allah'a karşı kendilerine ne bir dost ne de bir yardımcı bulamayacaklardır."*

Çok acıklı azap, Allah'ın celalini tanıdıktan sonra O'na asla ulaşamayacak olmalarıdır. Bu çerçevede bilgileri, kesin hale geldiğinde onlar, Allah'tan uzak kaldıklarını anlamış olurlar. Bu nedenle o zaman kaçırdıkları fırsata çektikleri hasret, onlara daha çok acı vermektedir.

يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَٓاءَكُمْ بُرْهَانٌ مِنْ رَبِّكُمْ وَاَنْزَلْنَٓا اِلَيْكُمْ نُورًا مُبِينًا ﴿١٧٤﴾

174- "Ey insanlar! Size Rabbinizden bir delil geldi ve size apaçık bir nur indirdik."

Delil, Hakk'ın kalplerinde beliren şahitleridir. Apaçık nur ise manalarını düşünmeleri, kendilerinde basiretin meydana gelmesini sağlayan ilahî hitaptır.

فَاَمَّا الَّذِينَ اٰمَنُوا بِاللّٰهِ وَاعْتَصَمُوا بِهٖ فَسَيُدْخِلُهُمْ فِي رَحْمَةٍ مِنْهُ
وَفَضْلٍ وَيَهْدِيهِمْ اِلَيْهِ صِرَاطًا مُسْتَقِيمًا ﴿١٧٥﴾

175- "Allah, kendisine iman edip dinine sarılanları kendi katından bir rahmet ve lütuf içine koyacak ve kendisine varan doğru bir yola iletecektir."

Yani Allah, hayatlarının sonunda vefatları esnasında imanlarını koruyacaktır. Tıpkı hâlihazırda onlara irfanla ve imanla ikramda bulunduğu gibi.

(وَيَهْدِيهِمْ اِلَيْهِ صِرَاطًا مُسْتَقِيمًا) *"... ve onları kendisine varan doğru bir yola iletecektir."*

Bu doğru yola iletme, söz konusu hidayetin, kendilerinin ne arayış ve çabalarıyla ne de yorulma ve emekleriyle onu hak etmelerinden dolayı değil; fakat Allah'tan bir lütuf olduğunu bilmelerine karşılık bir ikramdır.

يَسْتَفْتُونَكَ قُلِ اللّٰهُ يُفْت۪يكُمْ فِي الْكَلَالَةِ اِنِ امْرُؤٌا هَلَكَ لَيْسَ لَهُ وَلَدٌ وَلَهُٓ اُخْتٌ فَلَهَا نِصْفُ مَا تَرَكَ وَهُوَ يَرِثُهَٓا اِنْ لَمْ يَكُنْ لَهَا وَلَدٌ فَاِنْ كَانَتَا اثْنَتَيْنِ فَلَهُمَا الثُّلُثَانِ مِمَّا تَرَكَ وَاِنْ كَانُٓوا اِخْوَةً رِجَالًا وَنِسَٓاءً فَلِلذَّكَرِ مِثْلُ حَظِّ الْاُنْثَيَيْنِ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اَنْ تَضِلُّوا وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَل۪يمٌ ﴿١٧٦﴾

176- "Ey Resûlüm, babası ve çocuğu olmayanın mirası hakkında senden fetva istiyorlar. De ki: Allah, babası ve çocuğu olmayan için size şöyle fetva veriyor: 'Eğer bir kimse ölür de çocuğu bulunmazsa ve geride ana-baba bir veya baba bir olan tek bir kız kardeşi olursa, terikenin yarısı bunundur. Eğer ölen bir kadının geride çocuğu kalmaz da erkek kardeşi bulunursa, o terikenin tamamına vâris olur. Ölenin iki ve daha çok kız kardeşi varsa, bunlara terikenin üçte ikisi vardır. Eğer kardeşler erkekli ve dişili olurlarsa, erkek için iki dişinin payı kadar pay vardır.' Şaşırırsınız diye Allah size, dininizin hükümlerini açıklıyor. Allah, her şeyi hakkıyla bilendir."

Allah, hükmü açık ifadelerle vurgulamak suretiyle, miras taksimi konusunda aralarında mevcut husumeti ortadan kaldırmıştır. Çünkü mal insana sevdirilmiş ve nefisler, hırs üzerine yaratılmıştır. Nitekim eğer Allah, hakların miktarlarını açıkça vurgulamasaydı, bu konuda yapılacak içtihatta karışıklık meydana gelecek ve bu, çekişme ve kapışmaya yol açacaktı. Bu nedenle Allah'ın bu sözü, anlaşmazlığı ortadan kaldırmak için mirastaki miktarları kesin bir vurguyla dile getirmiştir. Aileyi geçindirmekle yükümlü olmadıkları halde, kadınların mirasçı kılınması, güçsüzlüklerinin dikkate alındığını göstermektedir. Erkeklerin onlardan üstün tutulması ise taşıdıkları nafaka yükümlülükleri, kazanç için emek harcamaları ve kadınların sorumluluklarını üstlenmelerinden dolayıdır.

# Dizin


**A**

abid 9, 121
Abid 39
Âdemoğulları 65
Hz. Aişe 175
Hz. Ali 356
Allah'ın ezelî hükmü 70
Allah'ın ipine sarılmak 323
Amir b. Abdilkays 40
Arafat 173, 183, 186, 319
Arap 7, 8, 13, 14, 218, 361
Arefe 469
aybaşı hali 203

**B**

bast 220, 221, 274, 275, 372
bâtınî oruç 167
bedî 123
beşeri duygular 98
beşerî yanılgı 71
Beyt 128, 129, 153, 320
bidat 188, 300
boşama 206
buzağı 86, 110
büyük nimet 85
büyük şefaatçi 84

**C**

Câlût 224, 225, 226, 227
Cebrâil 112
Hz. Cibril 19, 418
cimrilik 129, 153, 213, 324, 365, 405, 407
Cünüp 411

**D**

Davud 24, 226, 227, 284, 392, 434, 475
denizin yarılması 86
Dünya menfaati 425, 426

**E**

Ebubekr 175
Ebû Şahme 220
Ebû Tâlib 20, 356

ezeli takdir 71, 113

## F

fakirin mertebesi 220
fetret 50, 350
fidye 84, 105, 106, 126, 168, 169, 182, 183, 184, 208, 209, 263, 312
Firavun 85, 86, 263

## G

gaflet ehli 53, 102
gayb 41, 76, 83, 290
gıybet 167, 366

## H

Hz. Hamza 356
Hanif 136, 299
Hâris 40
Harut ve Marut 114
hased 118, 415
Hatice'nin ücretlisi 20
Hz. Havva 72
hayâ 144, 344
Hayber 342
Hıristiyan 136, 139, 197, 299
Hikmet 244
hilal 176
Hirâ Dağı 19
Hz. Âdem 64
Hz. Aişe 175
Hz. Ali 356
Hz. Hamza 356
Hz. İbrahim 127
Hz. Ömer 174
Hz. Ya'kub 135

## İ

İbn Abbas tefsiri 66
Hz. İbrahim 127, 128, 130, 131, 133, 134, 135, 234, 236, 237, 280, 298, 299, 300, 317, 450
İbrahim (a.s.) 126
İhsan 120, 181, 338, 450, 452
ilahî kudret 72, 74
İlahi müşahede 80
imam 21, 280
İmam 17, 21
İmran 84, 257, 282, 283, 462
İmran'ın karısı 282, 283
irfan 11, 36, 62, 244, 321, 367, 470
Hz. İsa 257, 284, 289, 290, 291, 292, 293, 294, 295, 473, 480
Hz. İsmail 131, 236
ismet (korunmuşluk) 66
İsrail oğulları 77, 78, 83, 85, 86, 87, 88, 90, 91, 93, 103, 118, 125, 222, 255
istidrac 272

## K

Kâbe 128, 129, 130, 140, 141, 142, 153, 182, 314, 315, 316, 317, 318, 320
Kabz 221
keşif 9, 40, 46, 77, 82, 92, 120, 153, 265, 269, 362, 435, 440, 457
keşif ve heybet tecellileri 82
Kıble 140, 143
kırk gün 86
kısas 164

Kitab 21, 35, 59, 81, 82, 101, 105, 107, 125, 170, 259, 261, 385, 388, 415, 440, 457
kıst 456
kulun kendi üstünlüğüne tanıklık etmesi 83
kurban 133, 183, 367
kurbet makamı 76
Kurbiyet makamı 164
kutsama 67, 70
kutsiyet 70
kürre 231

**L**

levha 224

**M**

Maiz 391
mâlik 27, 184
manevî nimetler 77
Marifet 121, 434
melik 23, 26, 27, 274, 275
Meryem 107, 137, 228, 229, 282, 283, 284, 285, 286, 289, 290, 291, 472, 473, 478, 479
Mikâil 112
Mina 190, 191, 319
Miraç 254
miras 386, 387, 388, 389, 402, 403, 482
Misak günü 78
muhase 250
Mukattaa 34
mürid 9, 118, 245, 407, 433
müşahede 9, 33, 39, 41, 77, 80, 97, 117, 128, 181, 247, 254, 257, 263, 265, 267, 268, 361, 377
Müşahedelerle tecelli 82

**N**

nafile ibadet 178
namazı kasretmek 438
Namazı muhafaza etmek 217
Nemrut 237
nesh 116, 117
Hz. Nuh 475

**Ö**

Hz. Ömer 174

**P**

puta tapma 110

**R**

Rab 25, 54, 62, 68, 156, 297, 298, 307, 444
rabbanilik 269
Ramazan 167, 170
riyazât 179
ruhbanlık 269
ru'yet 9, 80
rüşd ehli 47

**S-Ş**

sadaka 151, 182, 184, 219, 220, 238, 426, 444, 445
Safa ve Merve 152, 153
Sa'lebe 47

sa'y 153, 182, 183
secde 63, 67, 70, 73, 91, 130, 367, 371, 439
sefâhet 244
sırrı korumak 78
Şakilik 449
şefaat 84, 126, 229, 230, 312, 430
Şefaatçi 430
şekilcilik 118

**T**

Tâbût 223, 224
Tâbût' 223
tâğût 232, 414, 424
Tâlût 222, 223, 224, 225, 226
tavaf 128, 129, 130, 131, 152, 153, 182, 315, 316, 320
tesbih 63, 64, 65, 67, 70, 288, 289, 370, 373
tevessül 103, 310, 322, 413, 447
te'vil 46, 76
teyemmüm 410, 411
Tûr Dağı 94, 95

**U**

Ummu'l-kitâb 21
Hz. Uzeyir 235

**V**

Vâbısa 87
Vahşi 356
vakfe 182, 183, 184, 186
veli 233, 385, 418
vird 163

**Y**

Yahudi 110, 136, 139, 197, 220, 299
Hz. Yahya 287
Hz. Ya'kub 135, 136
yoktan var etmek 74

**Z**

zahid 9, 373
zahire düşkün kimseler 118
zahirî oruç 167
Zahirî vazifeler 439
Hz. Zekeriyyâ 284, 285, 286, 288
zenginin rütbesi 220
Zerre 96, 231
Zevk çağrıcı 102

# Hadis İndeksi


- Allah bir şeye tecelli ettiği zaman, o şey O'na boyun eğer. 82
- Allah'ı görmede zorlanmayacaksınız 470
- Azatlık anlaşması yapılan köle, üzerinde bir dirhem bile borç kalmış olsa, köleliği devam eder 469
- Bağışını geri alan kimse, kusmuğunu yutan kimse gibidir 209
- Bana kapsamlı sözler verilmiş, bu amaçla söz benim için iyice kısa tutulmuştur 36
- Bana, korku salmayla yardım edilmiştir 346
- Ben, beni zikredenle beraberim. 203
- Ben, fakirlerin rızkını daralttığım zaman onları o halde bırakmayın. Sizin rızkınızı genişlettiğim zaman da bunun, sizdeki bir faziletten dolayı olduğunu sanmayın 221
- Benim bir vaktim vardır ki, Rabbimden başka hiçbir şey beni kavrayamaz 175
- Bırak beni ey Ebubekr'in kızı, ben Rabbime ibadet etmekteyim 175
- Cennet ehlinin ziyaretleştiğini görür gibiyim. Cehennem ehlinin de havlaştıklarını görür gibiyim. Aynı şekilde Rabbimin arşını da ortaya çıkmış halde görür gibiyim 86
- Cömerdin yemeği ilaç, cimrinin yemeği ise hastalıktır 383
- Fetvayı kalbinden iste 87
- Gerek Âdem gerekse onun dışındakiler kıyamet günü benim bayrağım altında olurlar 137
- Hac Arefe'dir 469
- Hem sarhoşluk veren maddenin kendisi hem de her türlü içecek maddesiyle sarhoş olmak haramdır 201
- İçinizden Allah'ı en iyi bilen benim 134
- Kendi aranızda hibeleşin. Nitekim ben, üzerinizdeki hakkımı hibe ettim. Zira kerem sahibi kimse, gücü yettiği zaman bağışlar. 253
- Kim oruç tutarsa, kulağı ve gözü de oruç tutsun 167
- Kuşkusuz Allah, merhameti sadece kötü insanın kalbinden söküp atar 213
- Müminin kalbi, Rahmân'ın parmaklarından iki parmağın arasındadır 224
- Namazı kulumla aramda yarı yarıya taksim ettim 21
- Onu görerek oruç tutun ve onu görerek iftar açın 167
- Pişmanlık tevbedir 256, 336
- Renk kan rengi, koku ise misk kokusudur 164
- Senden sana sığınırım 322

ABDULKERÎM
EL-KUŞEYRÎ

KUR'AN-I KERİM
TEFSİRİ

لطائف الإشارات

# LETÂİFU'L İŞÂRÂT

تفسير صوفي كامل للقرآن الكريم

ilkharf YAYINLARI

بسم الله الرحمن الرحيم

Abdulkerîm el-Kuşeyrî • Letâifu'l-İşârât **KUŞEYRÎ TEFSİRİ**

©İlk Harf Yayınevi, 2012
Kitabın tüm yayın hakları "İlk Harf Yayınevi"ne aittir.

İlk Harf Yayınevi, 18
Tefsir Serisi, 1/2

ISBN
978-605-5457-57-0 (cilt: 2)
978-605-5457-55-6 (takım)

Editör
Ersan Güngör

Tercüme
Prof. Dr. Mehmet Yalar

Sayfa Düzeni
İrfan Güngörür

Kapak Tasarımı
Sercan Arslan

Basım Tarihi
1. Baskı, İstanbul, Kasım 2012

Baskı / Cilt
Şenyıldız Yay. Matbaacılık Ltd. Şti.
Gümüşsuyu Cad. No: 3, K: 2 Topkapı/İstanbul
Tel: 0212 483 47 92 (Sertifika No: 11964)

**İLK HARF YAYINEVİ**
www.ilkharf.com.tr • info@ilkharf.com.tr

**Genel Dağıtım**
Çelik Yayınevi
(Sertifika No, 14710)
Ticarethane Sokak No: 19/A Cağaloğlu - Fatih / İstanbul
Tel: +90 212 511 28 11 - 513 73 19 • Fax: +90 212 511 28 12
www.celikyayinevi.com • info@celikyayinevi.com

Abdulkerîm el-Kuşeyrî

Letâifu'l-İşârât

# Kuşeyrî Tefsiri

## -2-

Tercüme
Prof. Dr. Mehmet Yalar

ilkharf YAYINLARI

# ÂYETLER FİHRİSTİ


| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| **MÂİDE SÛRESİ (s. 7-90)** | |
| 1 | 7 |
| 2 | 9 |
| 3 | 12 |
| 4 | 17 |
| 5 | 18 |
| 6 | 20 |
| 7 | 22 |
| 8 | 23 |
| 9 | 24 |
| 10 | 25 |
| 11 | 25 |
| 12 | 26 |
| 13 | 28 |
| 14 | 29 |
| 15 | 30 |
| 16 | 30 |
| 17 | 31 |
| 18 | 32 |
| 19 | 33 |
| 20 | 33 |
| 21 | 34 |
| 22 | 35 |
| 23 | 36 |
| 24 | 37 |
| 25 | 37 |
| 26 | 37 |
| 27 | 38 |
| 28 | 39 |
| 29 | 39 |
| 30 | 39 |
| 31 | 40 |
| 32 | 40 |
| 33 | 41 |
| 34 | 41 |
| 35 | 42 |
| 36 | 43 |
| 37 | 43 |
| 38 | 43 |
| 39 | 44 |
| 40 | 44 |
| 41 | 45 |
| 42 | 46 |
| 43 | 47 |
| 44 | 47 |
| 45 | 49 |
| 46 | 49 |
| 47 | 50 |
| 48 | 50 |
| 49 | 52 |
| 50 | 53 |
| 51 | 53 |
| 52 | 54 |
| 53 | 54 |
| 54 | 55 |
| 55 | 57 |
| 56 | 58 |
| 57 | 58 |
| 58 | 59 |
| 59 | 59 |
| 60 | 59 |
| 61 | 60 |
| 62 | 60 |
| 63 | 60 |
| 64 | 61 |
| 65 | 62 |
| 66 | 63 |
| 67 | 63 |
| 68 | 64 |
| 69 | 65 |
| 70 | 65 |
| 71 | 65 |
| 72 | 66 |
| 73 | 66 |
| 74 | 66 |
| 75 | 67 |
| 76 | 67 |
| 77 | 68 |
| 78 | 68 |
| 79 | 68 |
| 80 | 69 |
| 81 | 69 |
| 82 | 70 |
| 83 | 70 |
| 84 | 70 |
| 85 | 71 |
| 86 | 71 |
| 87 | 71 |
| 88 | 72 |
| 89 | 72 |
| 90 | 73 |
| 91 | 75 |
| 92 | 75 |
| 93 | 76 |
| 94 | 77 |
| 95 | 77 |
| 96 | 78 |
| 97 | 78 |
| 98 | 79 |
| 99 | 79 |
| 100 | 79 |
| 101 | 80 |
| 102 | 80 |
| 103 | 81 |
| 104 | 81 |
| 105 | 81 |
| 106 | 82 |
| 107 | 82 |
| 108 | 82 |
| 109 | 83 |
| 110 | 84 |
| 111 | 85 |
| 112 | 85 |
| 113 | 85 |
| 114 | 86 |
| 115 | 86 |
| 116 | 87 |
| 117 | 88 |
| 118 | 88 |
| 119 | 89 |
| 120 | 90 |
| **EN'ÂM SÛRESİ (s. 91-167)** | |
| 1 | 91 |
| 2 | 92 |
| 3 | 93 |
| 4 | 93 |
| 5 | 94 |
| 6 | 94 |
| 7 | 95 |
| 8 | 95 |
| 9 | 96 |
| 10 | 96 |
| 11 | 96 |
| 12 | 96 |
| 13 | 97 |
| 14 | 97 |
| 15 | 98 |
| 16 | 98 |
| 17 | 98 |
| 18 | 98 |
| 19 | 99 |
| 20 | 99 |
| 21 | 100 |
| 22 | 100 |
| 23 | 100 |
| 24 | 100 |
| 25 | 101 |
| 26 | 101 |
| 27 | 102 |
| 28 | 102 |
| 29 | 102 |
| 30 | 103 |
| 31 | 104 |
| 32 | 104 |
| 33 | 104 |
| 34 | 105 |
| 35 | 106 |
| 36 | 106 |
| 37 | 107 |
| 38 | 107 |
| 39 | 107 |
| 40 | 108 |
| 41 | 108 |
| 42 | 109 |
| 43 | 109 |
| 44 | 109 |
| 45 | 110 |
| 46 | 110 |
| 47 | 111 |
| 48 | 111 |
| 49 | 111 |
| 50 | 112 |
| 51 | 112 |
| 52 | 113 |
| 53 | 115 |
| 54 | 115 |
| 55 | 117 |
| 56 | 117 |
| 57 | 117 |
| 58 | 118 |
| 59 | 118 |
| 60 | 119 |
| 61 | 119 |
| 62 | 119 |
| 63 | 120 |
| 64 | 120 |
| 65 | 120 |
| 66 | 121 |
| 67 | 121 |
| 68 | 121 |
| 69 | 122 |
| 70 | 122 |
| 71 | 123 |
| 72 | 124 |
| 73 | 124 |
| 74 | 124 |
| 75 | 124 |
| 76 | 125 |
| 77 | 125 |
| 78 | 125 |
| 79 | 126 |
| 80 | 126 |
| 81 | 127 |
| 82 | 127 |
| 83 | 128 |
| 84 | 128 |
| 85 | 128 |
| 86 | 128 |
| 87 | 128 |
| 88 | 128 |
| 89 | 129 |
| 90 | 130 |
| 91 | 130 |
| 92 | 131 |
| 93 | 131 |
| 94 | 132 |
| 95 | 133 |
| 96 | 133 |
| 97 | 134 |
| 98 | 134 |
| 99 | 134 |
| 100 | 135 |
| 101 | 135 |
| 102 | 136 |
| 103 | 136 |
| 104 | 136 |
| 105 | 137 |
| 106 | 137 |
| 107 | 137 |
| 108 | 137 |
| 109 | 138 |
| 110 | 139 |
| 111 | 139 |
| 112 | 140 |
| 113 | 140 |
| 114 | 140 |
| 115 | 141 |
| 116 | 141 |
| 117 | 141 |
| 118 | 142 |
| 119 | 142 |
| 120 | 142 |
| 121 | 143 |
| 122 | 144 |
| 123 | 144 |
| 124 | 145 |
| 125 | 145 |
| 126 | 146 |
| 127 | 147 |
| 128 | 149 |
| 129 | 150 |
| 130 | 150 |
| 131 | 150 |
| 132 | 150 |
| 133 | 151 |
| 134 | 151 |
| 135 | 151 |
| 136 | 152 |
| 137 | 152 |
| 138 | 153 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 139 | 153 |
| 140 | 154 |
| 141 | 154 |
| 142 | 156 |
| 143 | 156 |
| 144 | 156 |
| 145 | 157 |
| 146 | 158 |
| 147 | 158 |
| 148 | 159 |
| 149 | 159 |
| 150 | 159 |
| 151 | 160 |
| 152 | 160 |
| 153 | 160 |
| 154 | 161 |
| 155 | 161 |
| 156 | 162 |
| 157 | 162 |
| 158 | 163 |
| 159 | 163 |
| 160 | 164 |
| 161 | 165 |
| 162 | 166 |
| 163 | 166 |
| 164 | 166 |
| 165 | 167 |
| **A'RAF SÛRESİ** (s. 169-280) | |
| 1 | 170 |
| 2 | 172 |
| 3 | 172 |
| 4 | 173 |
| 5 | 173 |
| 6 | 173 |
| 7 | 174 |
| 8 | 174 |
| 9 | 174 |
| 10 | 175 |
| 11 | 175 |
| 12 | 176 |
| 13 | 176 |
| 14 | 177 |
| 15 | 177 |
| 16 | 177 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 17 | 177 |
| 18 | 178 |
| 19 | 178 |
| 20 | 179 |
| 21 | 181 |
| 22 | 181 |
| 23 | 183 |
| 24 | 183 |
| 25 | 184 |
| 26 | 184 |
| 27 | 185 |
| 28 | 186 |
| 29 | 186 |
| 30 | 187 |
| 31 | 188 |
| 32 | 188 |
| 33 | 189 |
| 34 | 191 |
| 35 | 191 |
| 36 | 191 |
| 37 | 192 |
| 38 | 193 |
| 39 | 193 |
| 40 | 193 |
| 41 | 193 |
| 42 | 194 |
| 43 | 194 |
| 44 | 196 |
| 45 | 196 |
| 46 | 196 |
| 47 | 197 |
| 48 | 198 |
| 49 | 198 |
| 50 | 198 |
| 51 | 200 |
| 52 | 200 |
| 53 | 200 |
| 54 | 201 |
| 55 | 202 |
| 56 | 203 |
| 57 | 204 |
| 58 | 205 |
| 59 | 205 |
| 60 | 205 |
| 61 | 205 |
| 62 | 206 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 63 | 206 |
| 64 | 207 |
| 65 | 207 |
| 66 | 207 |
| 67 | 207 |
| 68 | 207 |
| 69 | 207 |
| 70 | 208 |
| 71 | 209 |
| 72 | 210 |
| 73 | 210 |
| 74 | 211 |
| 75 | 212 |
| 76 | 212 |
| 77 | 212 |
| 78 | 212 |
| 79 | 212 |
| 80 | 213 |
| 81 | 213 |
| 82 | 213 |
| 83 | 213 |
| 84 | 213 |
| 85 | 213 |
| 86 | 214 |
| 87 | 214 |
| 88 | 215 |
| 89 | 215 |
| 90 | 216 |
| 91 | 216 |
| 92 | 216 |
| 93 | 217 |
| 94 | 218 |
| 95 | 218 |
| 96 | 218 |
| 97 | 218 |
| 98 | 219 |
| 99 | 219 |
| 100 | 220 |
| 101 | 220 |
| 102 | 220 |
| 103 | 221 |
| 104 | 221 |
| 105 | 221 |
| 106 | 221 |
| 107 | 222 |
| 108 | 222 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 109 | 223 |
| 110 | 223 |
| 111 | 223 |
| 112 | 223 |
| 113 | 224 |
| 114 | 224 |
| 115 | 224 |
| 116 | 224 |
| 117 | 224 |
| 118 | 224 |
| 119 | 224 |
| 120 | 224 |
| 121 | 224 |
| 122 | 224 |
| 123 | 225 |
| 124 | 225 |
| 125 | 225 |
| 126 | 226 |
| 127 | 226 |
| 128 | 226 |
| 129 | 227 |
| 130 | 227 |
| 131 | 228 |
| 132 | 228 |
| 133 | 229 |
| 134 | 229 |
| 135 | 229 |
| 136 | 229 |
| 137 | 230 |
| 138 | 230 |
| 139 | 230 |
| 140 | 231 |
| 141 | 231 |
| 142 | 232 |
| 143 | 234 |
| 144 | 238 |
| 145 | 239 |
| 146 | 240 |
| 147 | 241 |
| 148 | 242 |
| 149 | 244 |
| 150 | 244 |
| 151 | 245 |
| 152 | 246 |
| 153 | 246 |
| 154 | 247 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 155 | 247 |
| 156 | 248 |
| 157 | 250 |
| 158 | 252 |
| 159 | 253 |
| 160 | 253 |
| 161 | 254 |
| 162 | 254 |
| 163 | 255 |
| 164 | 255 |
| 165 | 256 |
| 166 | 256 |
| 167 | 257 |
| 168 | 257 |
| 169 | 258 |
| 170 | 259 |
| 171 | 260 |
| 172 | 261 |
| 173 | 261 |
| 174 | 263 |
| 175 | 263 |
| 176 | 264 |
| 177 | 265 |
| 178 | 266 |
| 179 | 266 |
| 180 | 267 |
| 181 | 269 |
| 182 | 270 |
| 183 | 270 |
| 184 | 270 |
| 185 | 271 |
| 186 | 271 |
| 187 | 272 |
| 188 | 272 |
| 189 | 273 |
| 190 | 274 |
| 191 | 274 |
| 192 | 274 |
| 193 | 274 |
| 194 | 275 |
| 195 | 275 |
| 196 | 276 |
| 197 | 276 |
| 198 | 276 |
| 199 | 277 |
| 200 | 277 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 201 | 278 |
| 202 | 278 |
| 203 | 279 |
| 204 | 279 |
| 205 | 280 |
| 206 | 280 |
| **ENFÂL SÛRESİ** (s. 281-334) | |
| 1 | 281 |
| 2 | 282 |
| 3 | 283 |
| 4 | 283 |
| 5 | 284 |
| 6 | 285 |
| 7 | 286 |
| 8 | 286 |
| 9 | 287 |
| 10 | 287 |
| 11 | 288 |
| 12 | 289 |
| 13 | 290 |
| 14 | 290 |
| 15 | 291 |
| 16 | 291 |
| 17 | 292 |
| 18 | 295 |
| 19 | 296 |
| 20 | 297 |
| 21 | 298 |
| 22 | 298 |
| 23 | 298 |
| 24 | 299 |
| 25 | 301 |
| 26 | 303 |
| 27 | 304 |
| 28 | 304 |
| 29 | 305 |
| 30 | 306 |
| 31 | 307 |
| 32 | 307 |
| 33 | 308 |
| 34 | 309 |
| 35 | 310 |
| 36 | 311 |
| 37 | 311 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 38 | 312 |
| 39 | 313 |
| 40 | 313 |
| 41 | 314 |
| 42 | 315 |
| 43 | 317 |
| 44 | 317 |
| 45 | 318 |
| 46 | 318 |
| 47 | 319 |
| 48 | 320 |
| 49 | 321 |
| 50 | 321 |
| 51 | 322 |
| 52 | 322 |
| 53 | 323 |
| 54 | 323 |
| 55 | 323 |
| 56 | 324 |
| 57 | 324 |
| 58 | 325 |
| 59 | 325 |
| 60 | 326 |
| 61 | 327 |
| 62 | 327 |
| 63 | 327 |
| 64 | 328 |
| 65 | 328 |
| 66 | 329 |
| 67 | 330 |
| 68 | 330 |
| 69 | 331 |
| 70 | 331 |
| 71 | 332 |
| 72 | 333 |
| 73 | 334 |
| 74 | 334 |
| 75 | 334 |
| **TEVBE SÛRESİ (s. 335-431)** | |
| 1 | 336 |
| 2 | 337 |
| 3 | 338 |
| 4 | 339 |
| 5 | 339 |
| 6 | 341 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 7 | 342 |
| 8 | 343 |
| 9 | 344 |
| 10 | 344 |
| 11 | 344 |
| 12 | 345 |
| 13 | 345 |
| 14 | 346 |
| 15 | 346 |
| 16 | 347 |
| 17 | 348 |
| 18 | 348 |
| 19 | 349 |
| 20 | 349 |
| 21 | 350 |
| 22 | 352 |
| 23 | 352 |
| 24 | 353 |
| 25 | 354 |
| 26 | 354 |
| 27 | 355 |
| 28 | 356 |
| 29 | 356 |
| 30 | 357 |
| 31 | 358 |
| 32 | 359 |
| 33 | 359 |
| 34 | 360 |
| 35 | 360 |
| 36 | 361 |
| 37 | 362 |
| 38 | 363 |
| 39 | 364 |
| 40 | 365 |
| 41 | 368 |
| 42 | 369 |
| 43 | 370 |
| 44 | 371 |
| 45 | 371 |
| 46 | 371 |
| 47 | 372 |
| 48 | 373 |
| 49 | 373 |
| 50 | 373 |
| 51 | 374 |
| 52 | 375 |
| 53 | 376 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 54 | 376 |
| 55 | 377 |
| 56 | 377 |
| 57 | 378 |
| 58 | 378 |
| 59 | 378 |
| 60 | 379 |
| 61 | 384 |
| 62 | 385 |
| 63 | 385 |
| 64 | 386 |
| 65 | 386 |
| 66 | 387 |
| 67 | 387 |
| 68 | 388 |
| 69 | 388 |
| 70 | 389 |
| 71 | 390 |
| 72 | 390 |
| 73 | 391 |
| 74 | 392 |
| 75 | 393 |
| 76 | 393 |
| 77 | 394 |
| 78 | 394 |
| 79 | 395 |
| 80 | 395 |
| 81 | 396 |
| 82 | 396 |
| 83 | 397 |
| 84 | 397 |
| 85 | 398 |
| 86 | 398 |
| 87 | 398 |
| 88 | 399 |
| 89 | 399 |
| 90 | 399 |
| 91 | 400 |
| 92 | 401 |
| 93 | 402 |
| 94 | 403 |
| 95 | 404 |
| 96 | 405 |
| 97 | 405 |
| 98 | 405 |
| 99 | 406 |
| 100 | 406 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 101 | 407 |
| 102 | 408 |
| 103 | 409 |
| 104 | 410 |
| 105 | 411 |
| 106 | 411 |
| 107 | 412 |
| 108 | 412 |
| 109 | 413 |
| 110 | 414 |
| 111 | 414 |
| 112 | 418 |
| 113 | 421 |
| 114 | 421 |
| 115 | 422 |
| 116 | 422 |
| 117 | 423 |
| 118 | 424 |
| 119 | 425 |
| 120 | 426 |
| 121 | 426 |
| 122 | 426 |
| 123 | 427 |
| 124 | 428 |
| 125 | 429 |
| 126 | 429 |
| 127 | 430 |
| 128 | 430 |
| 129 | 430 |
| **YÛNUS SÛRESİ (s. 433-492)** | |
| 1 | 433 |
| 2 | 434 |
| 3 | 435 |
| 4 | 436 |
| 5 | 438 |
| 6 | 438 |
| 7 | 439 |
| 8 | 439 |
| 9 | 440 |
| 10 | 441 |
| 11 | 442 |
| 12 | 442 |
| 13 | 443 |
| 14 | 444 |
| 15 | 444 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 16 | 445 |
| 17 | 445 |
| 18 | 446 |
| 19 | 446 |
| 20 | 447 |
| 21 | 447 |
| 22 | 448 |
| 23 | 449 |
| 24 | 450 |
| 25 | 452 |
| 26 | 453 |
| 27 | 455 |
| 28 | 455 |
| 29 | 455 |
| 30 | 456 |
| 31 | 456 |
| 32 | 457 |
| 33 | 457 |
| 34 | 458 |
| 35 | 458 |
| 36 | 459 |
| 37 | 460 |
| 38 | 460 |
| 39 | 460 |
| 40 | 461 |
| 41 | 461 |
| 42 | 461 |
| 43 | 462 |
| 44 | 462 |
| 45 | 463 |
| 46 | 463 |
| 47 | 464 |
| 48 | 464 |
| 49 | 464 |
| 50 | 465 |
| 51 | 465 |
| 52 | 465 |
| 53 | 466 |
| 54 | 466 |
| 55 | 467 |
| 56 | 467 |
| 57 | 467 |
| 58 | 468 |
| 59 | 469 |
| 60 | 470 |
| 61 | 470 |
| 62 | 471 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 63 | 473 |
| 64 | 473 |
| 65 | 474 |
| 66 | 475 |
| 67 | 475 |
| 68 | 475 |
| 69 | 476 |
| 70 | 476 |
| 71 | 477 |
| 72 | 477 |
| 73 | 478 |
| 74 | 478 |
| 75 | 478 |
| 76 | 479 |
| 77 | 479 |
| 78 | 480 |
| 79 | 480 |
| 80 | 480 |
| 81 | 480 |
| 82 | 481 |
| 83 | 481 |
| 84 | 481 |
| 85 | 482 |
| 86 | 482 |
| 87 | 482 |
| 88 | 483 |
| 89 | 483 |
| 90 | 484 |
| 91 | 484 |
| 92 | 485 |
| 93 | 485 |
| 94 | 486 |
| 95 | 486 |
| 96 | 487 |
| 97 | 487 |
| 98 | 487 |
| 99 | 487 |
| 100 | 488 |
| 101 | 488 |
| 102 | 489 |
| 103 | 489 |
| 104 | 490 |
| 105 | 490 |
| 106 | 490 |
| 107 | 491 |
| 108 | 491 |
| 109 | 492 |

سورة الْمَائِدَةِ

# MÂİDE SÛRESİ

(Mâide sûresi 120 ayettir. 3. ayet Mekke'de Vedâ Haccı sırasında, diğerleri ise 4. hicret yılında Medîne'de inmiştir. Adını, 112 ve 114. ayetlerde sözü edilen, Hz. İsa'nın Allah'tan istediği sofradan (Mâide) almıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**"Rahman ve Rahim olan Allah'ın adıyla."**

Allah'ın adını duymak, heybete sebep olur. Heybet ise fena ve kendinden geçmeyi içerir. Rahman ve Rahim lafızlarını duymak da huzura ve Allah'a dönüş yapmaya vesile olur. Huzur ise beka ve yakınlığı içerir.

Bu itibarla Allah, ismini duyurduğu kimseyi celalini keşifte dehşete düşürür. Rahman ve Rahim lafızlarını duyurduğu kimseyi de lütuflarını bahş etmekle yaşatır.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُٓوا اَوْفُوا بِالْعُقُودِ اُحِلَّتْ لَكُمْ بَه۪يمَةُ الْاَنْعَامِ اِلَّا مَا
يُتْلٰى عَلَيْكُمْ غَيْرَ مُحِلِّي الصَّيْدِ وَاَنْتُمْ حُرُمٌ اِنَّ اللّٰهَ يَحْكُمُ مَا يُر۪يدُ ١

1- "Ey iman edenler! Akitleri yerine getiriniz. İhramlı iken avlanmayı helal saymamak üzere, size okunacaklar dışında kalan hayvanlar, sizin için helal kılındı. Allah, dilediğine hükmeder."

Ayette yer alan (يَآ ) *"yâ"* nida harfidir. (اَيُّ ) *"Eyyü"* lafzı da münada bir isimdir. *"Hâ"* harfi tenbih edatıdır. (الَّذٖينَ اٰمَنُوٓا ) *"Ellezîne âmenû"* cümlesi de münadanın sılasıdır. Allah, onları varlıklar âlemine çıkarmadan önce kendilerine nidada bulunmuş, onları görmeden önce isimlendirmiş ve kendilerini, ebedde ulaştıracağı makama ezelde ehil kılmıştır.

Allah onları: (يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوٓا ) *"Ey iman edenler"* sözüyle onurlandırmış,(اَوْفُوا بِالْعُقُودِ) *"akitleri yerine getiriniz"* sözüyle de mükellef kılmıştır. Bu arada Allah, yükümlülüğün meşakkate yol açtığını bildiği için, övgüyle onurlandırmayı meşakkate yol açan mükellefiyetin önüne almıştır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- İman iki kısımdır: Bunlardan biri, lütfun ta kendisidir. İkincisi de çaba harcamaya işaret etmektedir. Buna göre; çaba harcamak senin hizmetin, lütfun kendisi ise Allah'ın takdiridir. Bu arada hizmetinle bedenler yorulur. Allah'ın takdiriyle de ruhlar aydınlanır.

İmanın hakikati ise, gaybdan haber verilenleri kalbin hakikat olarak kabul etmesidir.

- Ey bana iman edenlere dahil olanlar! Sizler, benim güvenceme ancak ezeldeki ihsanım sayesinde ulaştınız.

- Ey kendilerinden yüz çevirdiğim yaratıklarım gibi olmamaları için, hakkımı görmeye basiretlerini açtığım kimseler!

(اَوْفُوا بِالْعُقُودِ ) *"Akitleri yerine getiriniz."*

Her mükellef, akdini hakkıyla yerine getirmekle yükümlüdür. Akit, Allah'ın insanı ezelden yükümlü kıldığı, sonra da hitabı esnasında onu varlıklar âlemine çıkarmasının ardından kabul etmeye muvaffak kıldığı şeydir. Böylece akit, hitabın gerçekleşmesi ve cevap vermek suretiyle kabul etmekle kesinleşmiş oldu.

Buna insanın Allah ile kalben yaptığı akit de dahildir. Bu durumda akdin konusu, insanın Allah'a karşı beslediği içten bağlılık veya anlayıp öğrendiği bir şey veya muttali kılınıp yahut da sorumlu tutulup kabul ettiği bir manadan ibarettir.

Bir yoruma göre de; ahde vefa, iyi niyete bağlıdır. Bu ise ancak insanın kendi gücünden teberri etmesi ve Allah'ın (c.c.), minnetin incelikleriyle kendisine sahip çıktığından emin olmasıyla gerçekleşir.

(اُحِلَّتْ لَكُمْ بَهِيمَةُ الْاَنْعَامِ اِلَّا مَا يُتْلٰى عَلَيْكُمْ غَيْرَ مُحِلِّي الصَّيْدِ وَاَنْتُمْ حُرُمٌ) *"İhramlı iken avlanmayı helal saymamak üzere, size okunacaklar dışında kalan hayvanlar, sizin için helal kılındı."*

Hiçbir suç işlemedikleri halde bazı hayvanların kesilmesinin helal ve mubah kılınması, bazılarının da hiçbir taatları olmadığı halde, kesilmelerinin haram ve yasak kılınması, Allah'ın yaptıklarının hiçbir illeti olmadığına delildir.

Bu arada, ihramda bulunan kimseye avlanmak özellikle haram kılınmıştır. Çünkü ihramlı kişi, Allah'a yönelmesi sebebiyle nefsinin payından soyutlanmıştır. Bu nedenle onun durumuna uygun olan, her hayvanı eziyetten korumaktır.

(اِنَّ اللّٰهَ يَحْكُمُ مَا يُرِيدُ) *"Allah, dilediğine hükmeder."*

Allah üzerinde fiillerinde hiçbir kısıtlılık yoktur. Böylece O, dilediğine nimet, dilediğine de musibet verebilir. Zira Allah, işleri ezelde nasıl irade edip bildirmiş ve karara bağlamışsa ebedde de onları öyle yürütür.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا لَا تُحِلُّوا شَعَٓائِرَ اللّٰهِ وَلَا الشَّهْرَ الْحَرَامَ وَلَا
الْهَدْيَ وَلَا الْقَلَٓائِدَ وَلَٓا اٰمِّينَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ يَبْتَغُونَ فَضْلًا مِنْ
رَبِّهِمْ وَ رِضْوَانًا وَاِذَا حَلَلْتُمْ فَاصْطَادُوا وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ
قَوْمٍ اَنْ صَدُّوكُمْ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ اَنْ تَعْتَدُوا وَتَعَاوَنُوا
عَلَى الْبِرِّ وَالتَّقْوٰى وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ ٢

2- "Ey iman edenler! Allah'ın işaretlerine, haram aya, kurbana, gerdanlıklara, Rablerinin lütuf ve rızasını arayarak Beyt-i Haram'a yönelmiş kimselere saygısızlık etmeyin. İhramdan çıktığınız

zaman avlanabilirsiniz. İhramdan çıktığınız zaman avlanabilirsiniz. Sizi Mescid-i Haram'dan menettiler diye, bir kavme karşı beslediğiniz kin, sakın sizi tecavüze sevk etmesin. İyilik etmek ve takva üzerinde yardımlaşın. Allah'tan korkun. Çünkü Allah'ın azabı şiddetlidir."

Ayette yer alan (شَعَآئِرَ ) "*şe'âir*" kelimesi, dinin işaretleri demektir. Bunu tazim edip yüceltmek ise dinin özüdür. Bu tazim de ancak takdir geldiğinde teslim olmak ve güzelce kabul etmek suretiyle emre bağlanmakla olur. Kuralları çiğnemek ise emirleri çiğnemekle olur.

(وَلَا الشَّهْرَ الْحَرَامَ وَلَا الْهَدْىَ وَلَا الْقَلَآئِدَ ) "*Haram aya, kurbana ve gerdanlıklara da saygısızlık etmeyin.*"

Allah'ın yücelttiği mekânı yüceltmek, Allah'ın değerli kıldığı zamana değer vermek ve işaretleri, Allah'ın emrettiği şekilde şerefli kabul etmek, emir olarak kuldan istenen bir husus ve kulun yaşayacağı sevimli bir durumdur.

(وَلَآ اٰمِّينَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ يَبْتَغُونَ فَضْلًا مِنْ رَبِّهِمْ وَ رِضْوانا ) "*Rablerinden lütuf ve rızasını arayarak Beyt-i Haram'a yönelmiş kimselere de saygısızlık etmeyin.*"

Beyt'i kast edene yakışan da Beyt'in Rabbine muhalefet etmemesidir. Bu arada lütuf ve rızayı aramak, gazap sebeplerinden korunmak ve isyandan sakınmakla olur.

(وَاِذَا حَلَلْتُم فَاصْطَادُوا وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ اَنْ صَدُّوكُمْ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ اَنْ تَعْتَدُوا) "*İhramdan çıktığınız zaman avlanabilirsiniz. Sizi Mescid-i Haram'dan menettiler diye, bir kavme karşı beslediğiniz kin, sakın sizi tecavüze sevk etmesin.*"

Siz haklarımıza dair emrin dışına çıktığınız zaman, arzularınızı elde etmeye dönüş yapınız. Ancak bizim karşı konulmaz gücümüzün hükmü altında olmaya devam ettiğiniz sürece sizden size bir nasip olmaz ve siz bize ait olursunuz.

Aynı zamanda, sizi Mescid-i Haram'dan menettiler diye, bir kavme karşı olan buğzunuz, sizi intikamda izin sınırını aşmaya sevk

etmesin. Yani size ait her türlü nasip ve arzudan soyutlanarak bizimle var olun.

(وَتَعَاوَنُوا عَلَى الْبِرِّ وَالتَّقْوٰى) *"İyilik etmek ve takva üzerinde yardımlaşın."*

İyilik, emredildiğin şeyi yapman, takva da menedildiğin şeyi terk etmendir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- İyilik, Allah'ın hakkına öncelik vermek, takva da arzunu terk etmektir.

- İyilik dine uymak, takva da nefse muhalefet etmektir.

- İyilikte yardımlaşmak, müminlere güzel nasihat ve telkinlerde bulunmakla, takva üzerine yardımlaşmak da, duruma uygun güzel vaaz ve etkili uyarı yoluyla, hata yapanları alıkoymakla olur. Noksansız alıkoyma ise, ilmin gereğine uygun yapılandır.

Günah ve haddi aşma üzerine yardımlaşmak ise, dine aykırı olup yaptığında başkasına örnek olduğun işi yapmandır. Bu çerçevede söylediğin ve başkasının seni örnek aldığı söz, senin açtığın bir çığır olur. Onun günahını da sen taşırsın. Aynı şekilde iyilik ve takva üzerine yardımlaşmak da, örnek alınacak şekilde güzel hasletler taşımaya çalışmaktır.

(وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ) *"Allah'tan korkun. Çünkü Allah'ın azabı şiddetlidir."*

Ceza, suçu takip eden ve sahibini kötü duruma düşüren şeydir. Cezanın en şiddetlisi de, ceza verilenin, cezayı veren Allah'ı görmekten alıkonulmasıdır. Çünkü sıkıntıya sokan Allah'ı görme yolunda çokça sıkıntı şarabı yudumlamak, baldan daha tatlıdır.

حُرِّمَتْ عَلَيْكُمُ الْمَيْتَةُ وَالدَّمُ وَلَحْمُ الْخِنْزِيرِ وَمَٓا اُهِلَّ لِغَيْرِ اللّٰهِ بِه۪
وَالْمُنْخَنِقَةُ وَالْمَوْقُوذَةُ وَالْمُتَرَدِّيَةُ وَالنَّط۪يحَةُ وَمَٓا اَكَلَ السَّبُعُ اِلَّا مَا

ذَكَّيْتُمْ وَمَا ذُبِحَ عَلَى النُّصُبِ وَاَنْ تَسْتَقْسِمُوا بِالْاَزْلَامِ ذٰلِكُمْ فِسْقٌ اَلْيَوْمَ
يَئِسَ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ دِينِكُمْ فَلَا تَخْشَوْهُمْ وَاخْشَوْنِ اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ
لَكُمْ دِينَكُمْ وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِي وَرَضِيتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِينًا فَمَنِ
اضْطُرَّ فِي مَخْمَصَةٍ غَيْرَ مُتَجَانِفٍ لِاِثْمٍ فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿٣﴾

3- "Ölmüş hayvan, kan domuz eti, Allah'tan başkası adına boğazlanan, boğulmuş, vurulup öldürülmüş, yukarıdan yuvarlanıp ölmüş, boynuzlanıp ölmüş, ölmeden yetişip kestikleriniz müstesna, canavarların yediği hayvanlar, dikili taşlar üzerine boğazlanmış hayvanlar ve fal oklarıyla kısmet aramanız size haram kılındı. Bunlar, yoldan çıkmaktır. Bugün kâfirler sizin dininizden ümit kesmişlerdir. Artık onlardan korkmayın, benden korkun. Bugün size dininizi ikmal ettim, üzerinize nimetimi tamamladım ve sizin için din olarak İslam'ı seçtim. Kim, gönülden günaha yönelmeksizin, açlık halinde dara düşer de haram etlerden yerse, şüphesiz ki Allah, çok bağışlayıcı ve çok merhamet edicidir. "

Ölmüş hayvanın etini yemek, gıybet yoluyla kardeşinin ırzına dil uzatmandır. Bu, hiçbir şekilde ne zaruret halinde ne de isteyerek ruhsat verilecek bir durum değildir. Bunun dışındaki ölü hayvan ise zaruret halinde mubahtır. Bir yoruma göre de nasıl ki, hayvanlar arasında kesileni mubah, kesilmeden öleni ise haram olan varsa, aynı şekilde mücadele bıçaklarıyla nefsini boğazlayıp temizleyen kimsenin de yakınlığı mubah, arkadaşlığı helaldir. Her kim de dinî hususlarda hiçbir şey hissetmeyecek ölçüde, nefsi gafletinin karanlığında ölmüşse, işte onun nefsi murdar, yakınlığı sakıncalı, beraberliği haram, arkadaşlığı da uğursuzdur.

Bu arada selef, dünyayı domuz diye adlandırarak yakınlığı gaflete düşüren, meyli mabudu unutturan ve isyana sevk eden şeyin, kalplere haram olduğu görüşünü savunmuşlardır. Bu nedenle, her ne kadar beden ve nefisler için dünyanın birazını elde tutmak helal ise de, tarikat ehline göre dünya sevgisi kalplere haramdır.

(وَمَٓا اُهِلَّ لِغَيْرِ اللّٰهِ بِه۪ وَالْمُنْخَنِقَةُ وَالْمَوْقُوذَةُ وَالْمُتَرَدِّيَةُ وَالنَّط۪يحَةُ) *"Allah'tan başkası adına boğazlanan, boğulmuş, vurulup öldürülmüş, yukarıdan yuvarlanıp ölmüş, boynuzlanıp ölmüş"*

Nasıl ki Allah'ın ismi dışındaki şeyler anılarak kesilen hayvanlar helal değilse, aynı şekilde her kim ruhunu Allah yolunda feda ederse ruhunu yine O'ndan bulur. Dünya köpeklerinin didiştiği, tamah pençelerinin tırmaladığı, garaz ve meta arzularının tutsak aldığı kimsenin ise malı, azizlik ilkesine göre hakikat ehli için haramdır. Zarafet ve takdir hakkı dine mahsustur.

İşarî tefsire göre boğulmuş hayvan, arzu ve isteklerin tuzağına düşmüş kimseye işarettir. Bu kimseyi boğucu tamah yakalamış ve hırs zincirleri boğmuştur. Bu nedenle saliklerin, bu gibi kimselerin yolunu izlemeleri haram, müritlerin de onların mezhebine uymaları sakıncalıdır.

Vurulmuş hayvana gelince, onun işareti değersiz şeyler arzu etmek üzerine yaratılmış olan ve büsbütün onların esiri olmuş nefislere yöneliktir. Bu nefisler, hiçbir sonuç elde edemeden yok olup gitmiştir. Bu gibi durumlar, bu tarikatın ehline haramdır.

Yuvarlanmış hayvan ise tefrika vadilerinde helak olmuş ve hakikatin rüştünü görme yeteneğini kaybetmiş kimseye işarettir. Bu kimse, zanların ıssız çöllerinde şaşkın dolaşır ve arzunun şaşkınlıkları içerisinde helak olur.

Boynuzlanmış olan hayvanın işaret ettiği de, emsalleriyle kavga eden, benzerleriyle çekişen ve dünya köpekleriyle çatışan kimsedir. Onlar, bu kimseyi köpeğe benzeyen hırslarıyla ezdiler ve üstüne daha fazla saldırmak suretiyle yendiler. Ayetin şu ifadesi de aynı şeye işaret etmektedir:

(وَمَٓا اَكَلَ السَّبُعُ اِلَّا مَا ذَكَّيْتُمْ) *"ölmeden yetişip kestikleriniz müstesna, canavarların yediği hayvanlar"*

Canavarın parçaladığından maksat, dünya köpeklerinin ağzını soktuğu şeydir. Çünkü dünya leştir. Leş yiyenler de köpeklerdir. Ancak

canlı iken kesilen bundan müstesnadır. Bu, Allah rızasının gözetildiği dünya malıdır. Çünkü müminin azığı dünyadandır. Bu nedenle Allah için kazanılanı güzel, nefis için olanı ise çirkindir.

(وَمَا ذُبِحَ عَلَى النُّصُبِ) *"dikili taşlar üzerine boğazlanmış hayvanlar"*

Bu, Allah'tan başkası için hazırlanan şeydir. Her hırs sahibinin maksudu, kendi dini gereğince, nefsinin arzusu itibariyle mabududur. Nitekim Allah, bir ayette şöyle buyurmuştur:

(اَفَرَاَيْتَ مَنِ اتَّخَذَ اِلٰهَهُ هَوٰيهُ وَاَضَلَّهُ اللّٰهُ عَلٰى عِلْمٍ وَخَتَمَ عَلٰى سَمْعِهٖ وَقَلْبِهٖ وَجَعَلَ عَلٰى بَصَرِهٖ غِشَاوَةً فَمَنْ يَهْدِيهِ مِنْ بَعْدِ اللّٰهِ اَفَلَا تَذَكَّرُونَ) *"Nefsinin arzusunu ilah edinen, Allah'ın; (halini) bildiği için saptırdığı ve kulağını ve kalbini mühürlediği, gözüne de perde çektiği kimseyi gördün mü? Şimdi onu Allah'tan başka kim doğru yola eriştirebilir? Hâlâ düşünüp ibret almayacak mısınız?"* (Câsiye, 45/23) Yani bu kimse, hevasını kendine tanrı edinmiştir.

(وَاَنْ تَسْتَقْسِمُوا بِالْاَزْلَامِ) *"ve fal oklarıyla kısmet aramanız size haram kılındı."*

Bu ifade, izin verilmeyen dünyevi hazların elde edilmesi üzerine bina edilmiş olan her türlü muamele ve arkadaşlığa işaret etmektedir. Çünkü kumar bu demektir. Nitekim zamanımızda bu nitelikten arınmış pek az muamele bulunmaktadır.

(ذٰلِكُمْ فِسْقٌ) *"Bunlar, yoldan çıkmaktır."*

Yani bu şeyleri tercih etmek, dinden çıkmaktır.

(اَلْيَوْمَ يَئِسَ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ دِينِكُمْ فَلَا تَخْشَوْهُمْ وَاخْشَوْنِ) *"Bugün kâfirler sizin dininizden ümit kesmişlerdir. Artık onlardan korkmayın, benden korkun."*

Yani siz, kalplerinizden zanların izlerini silip tek yaratıcının biz olduğumuzu kesin olarak bildikten sonra benden başkasını düşünmeyin ve benden başkasından olan korku da kalbinizi asla gölgelemesin.

Bir yoruma göre de, basiretler fayda, zarar, hayır ve şerden en ufak bir şeyin dahi Hakk'ın kudreti dışında gerçekleşmediğini kesin

bildikten sonra, bir mahlûktan korkmaları veya ona ümit bağlamaları imkansızdır.

(اَلْيَوْمَ اَكْمَلْتُ لَكُمْ دِينَكُمْ) *"Bugün size dininizi ikmal ettim."*

Allah'ın, kendine nisbet ettiği dini ikmal etmesi, inancı noksanlıktan koruması demektir. Şöyle ki, Allah tevhid inancını nasıl arayacaklarını öğrenmek isteyenlerin kalplerine tedirginlik verince, aynı kalpleri teyit ve istikrarlı tutmanın nurlarıyla ümitlendirmiştir. Bu sayede onlar, kusursuz bir şekilde uygun akıl yürüttüler ve irfanın kemaline erdiler.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Dinin ikmal edilmesi, neticede kabulü gerçekleştirmek demektir. Tıpkı dinin başlangıcının da, şimdi gerçekleşme muvaffakiyeti olduğu gibi. Şayet O'nun verdiği muvaffakiyet olmasaydı, din gerçekleşmezdi. Yine eğer O, gerçekleştirmeseydi, dinin kabulü söz konusu olmazdı.

- Dinin ikmali, Allah'ın, insana öğretilmesi gereken bütün sıfatlarını ona öğretmesidir.

- Dinin ikmali, insanın, aklıyla ayrıntılı olarak belirleyemediği ilahi sıfatları Allah'ın, haber vermek suretiyle ona öğretmesidir.

Bu arada Allah, "bugün" lafzından ayetin iniş zamanını kast etmiştir. Öte yandan hitapta vaktin "bugün" ile kayıtlanması, dini ikmal etmenin kendisiyle değil, o vaktin bize tanıtılmasıyla ilgilidir.

Din, Allah tarafından bağışlanmış ve aranan bir şeydir. Aranan şey, gerçekleşmesi mümkün olan, bağışlanan da Allah tarafından ezelde gerçekleştirilen husustur.

(وَاَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِي ) *"Üzerinize nimetimi tamamladım."*

Gerçekte nimet, seni onu verenden koparmayan, aksine ona ulaştıran şeydir. Zikredilen nimet ise, din nimetidir. Bu nimetin tamamlanması ise gelecekteki yeterliliği ve beraberinde mağfiretin gerçekleşmesidir. Bu itibarla dinin ikmal edilmesi marifetin gerçekleştirilmesi,

nimetin tamamlanması da mağfiretin var edilmesidir. Bu hitap, Müslümanlar topluluğuna yöneliktir. Bütün müminlerin bağışlanacağında da hiç şüphe bulunmamaktadır. Şüphe ise, sadece tek tek bireylerin iman üzere kalıp kalmayacakları ile ilgilidir.

(وَرَضِيتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِينًا) *"Ve sizin için din olarak İslam'ı seçtim."*

Allah, mahlûkata dinlerini taksim ettiğinde bir kısmına Yahudiliği, bir kısmına Hıristiyanlığı, bir kısmına diğer dinleri verirken Müslümanlara özel olarak tevhid ve mağfireti verdi. Bu arada kimileri, kemale erdirmeyi tamamlamanın önüne geçirerek şöyle demişlerdir: Tamamlama, artışa müsait olduğundan Allah, nimeti onunla nitelemiştir. Çünkü nimetler artabilme özelliğine sahiptir. Oysa kemalden sonra başka bir mertebe bulunmamaktadır. Bu nedenle Allah, dini onunla nitelemiştir.

Bir yoruma göre de din ile burada zikredilen nimet arasında fark bulunmamaktadır. İki lafızla zikredilmesi, tekit ifade etmesi içindir. Sonra Allah, bunu: "*Nimetimi*" demek suretiyle "nimet" lafzıyla kendine, "*dininizi*" demek suretiyle de "din" lafzıyla kula izafe etmiştir. Bu çerçevede kula izafe edilmesi kulun onu edinmesi bakımındandır. Allah'a izafe edilmesi de O'nun tarafından yaratılması itibariyledir. Bu itibarla din, Allah'ın vergisi ve kulun yükümlülüğü demektir. İslam'ın gerçek anlamı ise, samimiyet, teslimiyet ve sırda hiçbir karşı çıkma olmaksızın, hükmün gerçekleşmesine boyun eğmektir.

(فَمَنِ اضْطُرَّ فِي مَخْمَصَةٍ غَيْرَ مُتَجَانِفٍ لِاِثْمٍ فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ) *"Kim, gönülden günaha yönelmiş olmaksızın, açlık halinde dara düşer de, haram etlerden yerse, şüphesiz ki Allah, çok bağışlayıcı ve çok merhamet edicidir."*

Bu ayet, şuna işaret etmektedir: Eğer bir salikte tembellik veya bir müritte sülûk esnasında bir durgunluk meydana gelir de sonra başına gelen işin büyüklüğünün farkına varır ve olup bitenden dolayı bütün benliğiyle hasret çekmek suretiyle hemen dönüş yaparsa, Allah onu rahmetiyle kucaklar ve dönüşüne kabul nazarıyla bakar.

(غَيْرَ مُتَجَانِفٍ لِاِثْمٍ) *"Gönülden günaha yönelmiş olmaksızın"* sözü tembellikte ve durgunlukta devam etmemeye işaret etmektedir. İfadenin anlamı şöyle de olabilir: Kim, o anda kendinde bulduğu bir zaaf nedeniyle, gerçeklerin yükümlülüklerinden ilmin ruhsatlarına inerse, müritlik aktini bozmadığı zaman, kendisine kolaylık gösterilebilir.

يَسْـَٔلُونَكَ مَاذَٓا اُحِلَّ لَهُمْ قُلْ اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبَاتُ وَمَا عَلَّمْتُمْ مِنَ الْجَوَارِحِ مُكَلِّبِينَ تُعَلِّمُونَهُنَّ مِمَّا عَلَّمَكُمُ اللّٰهُ فَكُلُوا مِمَّٓا اَمْسَكْنَ عَلَيْكُمْ وَاذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ عَلَيْهِ وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ سَرِيعُ الْحِسَابِ ﴿٤﴾

4- "Kendileri için nelerin helal kılındığını sana soruyorlar. De ki: 'Bütün iyi ve temiz şeyler size helal kılınmıştır. Allah'ın size öğrettiğinden öğretip avcı hale getirdiğiniz hayvanların sizin için yakaladıklarından da yiyin ve üzerine besmele çekin. Allah'tan korkun. Allah'ın hesabı pek çabuktur.'"

Onlar, güzel fiillerinin, hakkında emir gelip izin gerçekleşen fiil olduğunu anlayınca, bunu dinin tafsilatından öğrenmeye çalıştılar. Bu nedenle Allah önce: (يَسْـَٔلُونَكَ مَاذَٓا اُحِلَّ لَهُمْ) *"Kendileri için nelerin helal kılındığını sana soruyorlar"* buyurduktan sonra: (قُلْ اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبَاتُ) *"De ki: Bütün iyi ve temiz şeyler size helal kılınmıştır"* buyurdu. Bu, kalplerin yemekten huzur duyduğu helal demektir. Çünkü haram yemek, kalp kasvetine yol açar. Bu bağlamda yalnızlık ve yabancılık kalbin kasvetine, kalbin aydınlığı ve vakitlerin güzelliği ise ahlakı, haram ve şüphelerden korumaya bağlıdır.

(وَمَا عَلَّمْتُمْ مِنَ الْجَوَارِحِ مُكَلِّبِينَ تُعَلِّمُونَهُنَّ مِمَّا عَلَّمَكُمُ اللّٰهُ فَكُلُوا مِمَّٓا اَمْسَكْنَ عَلَيْكُمْ) *"Allah'ın size öğrettiğinden öğretip avcı hale getirdiğiniz hayvanların sizin için yakaladıklarından da yiyin."*

Eğitimli av köpeği, arzusunu terk edip avladığını sahibine sakladığı için yakaladığı hayvan helal ve beslenmesi caiz hale gelmiş ve değersizliği bunda kaybolmuştur. İşte aynı şekilde amelleri ve ahvali,

sırf Allah rızasına yönelik olup onlara nefis arzusunu bulaştırmayan kimsenin de rütbesi büyük ve hali yüksek olur. Bir yoruma göre de güzel edep, değersizleri büyüklerin mertebesine katarken, edepsizlik azizleri en küçük olanların durumuna düşürür.

(وَاذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ عَلَيْهِ) *"ve üzerine besmele çekin."* Allah, gafletle bir şeyler yemeye rıza gösterilmediğini açıklamaktadır.

(وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ سَرِيعُ الْحِسَابِ) *"Allah'tan korkun. Allah'ın hesabı pek çabuktur."* O kadar ki, hiçbir husus O'nu diğer bir husustan alıkoymaz. Allah, aynı zamanda bugün dostları ve velilerine karşı da hesabı çabuk görür. Bu itibarla attıkları adımda da düşündüklerinde de müsamahayla karşılanmazlar ve hesapları çabuk görülür, sevapları ve azapları o anda ikiye katlanır.

اَلْيَوْمَ اُحِلَّ لَكُمُ الطَّيِّبَاتُ وَطَعَامُ الَّذِينَ اُوتُوا الْكِتَابَ حِلٌّ لَكُمْ وَطَعَامُكُمْ حِلٌّ لَهُمْ وَالْمُحْصَنَاتُ مِنَ الْمُؤْمِنَاتِ وَالْمُحْصَنَاتُ مِنَ الَّذِينَ اُوتُوا الْكِتَابَ مِنْ قَبْلِكُمْ اِذَٓا اٰتَيْتُمُوهُنَّ اُجُورَهُنَّ مُحْصِنِينَ غَيْرَ مُسَافِحِينَ وَلَا مُتَّخِذِٓي اَخْدَانٍ وَمَنْ يَكْفُرْ بِالْاِيمَانِ فَقَدْ حَبِطَ عَمَلُهُ وَهُوَ فِي الْاٰخِرَةِ مِنَ الْخَاسِرِينَ ﴿٥﴾

5- "Bugün size temiz ve iyi şeyler helal kılınmıştır. Kendilerine Kitap verilenlerin yiyeceği size helaldir, sizin yiyeceğiniz de onlara helaldir. Mümin kadınlardan iffetli olanlar ile daha önce kendilerine Kitap verilenlerden iffetli kadınlar da, mehirlerini vermeniz şartıyla, namuslu olmak, zina etmemek ve gizli dost tutmamak üzere size helaldir. Kim inanmayı kabul etmezse, onun ameli boşa gitmiştir. O, ahirette de ziyana uğrayanlardandır."

İyi şey, nefislerin iyi bulduğu değil, Hakk'ın rızasına vesile olan şeydir. O zaman kalplerin huzuru gerçekleşir.

(وَطَعَامُ الَّذِينَ اُو۫تُوا الْكِتَابَ حِلٌّ لَكُمْ) *"Kendilerine Kitab verilenlerin yiyeceği size helaldir."* Allah'ın Rab oluşunu kabul etmede bizimle onlar arasındaki uyum miktarı, Allah'a yakınlık konusunda tamamen etkisiz değildir. Nitekim Allah şöyle buyurmuştur:

(وَلَتَجِدَنَّ اَقْرَبَهُمْ مَوَدَّةً لِلَّذِينَ اٰمَنُوا الَّذِينَ قَالُوٓا اِنَّا نَصَارٰى) *"Onlar içinde iman edenlere sevgi bakımından en yakın olarak da: Biz Hıristiyanlarız, diyenleri bulacaksın."* (Mâide, 5/82)

Durum, iffetli kadınlar hakkında da aynıdır. Bu arada yiyecek ve kesilen hayvanlar, bizimle onlar arasında iki yönden helal kılınmıştır. Böylece onların kestiklerini yemek bize helal olduğu bibi, kestiklerimizden onlara yedirmemiz de caizdir. Ancak onların kadınlarıyla evlenmek bize caiz olduğu halde, onların bizim kadınlarımızla evlenmesi caiz değildir. Çünkü İslam üstündür, ondan üstün olunmaz.

(مُحْصِنِينَ غَيْرَ مُسَافِحِينَ وَلَا مُتَّخِذِيٓ اَخْدَانٍ) *"... namuslu olmak, zina etmemek ve gizli dost tutmamak üzere..."* Yani onlar kâfir de olsalar, zina günahının büyüklüğünü göstermek ve Allah'tan gelen emre riayet etmenin vacip oluşuna dikkat çekmek üzere, nikâhsız olarak kadınlarıyla birlikte yaşamak caiz değildir. *"Gizli dost tutmamak"* da böyledir. Çünkü gizli dostluk kurmak üzere, bir kimsenin kalbinin müminlere bağlanması bile caiz olmadığına göre, bu, düşman olan kâfirlerle nasıl caiz olur!

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوٓا اِذَا قُمْتُمْ اِلَى الصَّلٰوةِ فَاغْسِلُوا وُجُوهَكُمْ وَاَيْدِيَكُمْ
اِلَى الْمَرَافِقِ وَامْسَحُوا بِرُؤُ۫سِكُمْ وَاَرْجُلَكُمْ اِلَى الْكَعْبَيْنِ وَاِنْ كُنْتُمْ
جُنُبًا فَاطَّهَّرُوا وَاِنْ كُنْتُمْ مَرْضٰٓى اَوْ عَلٰى سَفَرٍ اَوْ جَٓاءَ اَحَدٌ مِنْكُمْ
مِنَ الْغَٓائِطِ اَوْ لٰمَسْتُمُ النِّسَٓاءَ فَلَمْ تَجِدُوا مَٓاءً فَتَيَمَّمُوا صَعِيدًا طَيِّبًا
فَامْسَحُوا بِوُجُوهِكُمْ وَاَيْدِيكُمْ مِنْهُ مَا يُرِيدُ اللّٰهُ لِيَجْعَلَ عَلَيْكُمْ مِنْ
حَرَجٍ وَلٰكِنْ يُرِيدُ لِيُطَهِّرَكُمْ وَلِيُتِمَّ نِعْمَتَهُ عَلَيْكُمْ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿٦﴾

6- "Ey iman edenler! Namaz kılmaya kalktığınız zaman yüzlerinizi, dirseklerinize kadar ellerinizi, başlarınızı meshedip topuklara kadar ayaklarınızı yıkayın. Eğer cünüp oldunuz ise boy abdesti alın. Hasta yahut yolculuk halinde bulunursanız yahut biriniz tuvaletten gelirse yahut da kadınlara dokunmuşsanız ve bu hallerde su bulamamışsanız, temiz toprakla teyemmüm edin de yüzünüzü ve dirseklere kadar ellerinizi onunla meshedin. Allah, size herhangi bir güçlük çıkarmak istemez, fakat sizi tertemiz kılmak ve size nimetini tamamlamak ister. Umulur ki şükredersiniz."

Nasıl ki fıkıhta namaz temizliksiz sahih olmuyorsa, hakikatte de temizliksiz olmaz. Aynı şekilde nasıl ki zahirin bir temizliği varsa, sırların da bir temizliği vardır. Bu bağlamda bedenlerin temizliği gök suyu ile, yani yağmurladır. Kalplerin temizliği ise önce pişmanlık ve mahcupluk suyuyla, sonra da hayâ ve korku suyuyladır.

Bir de nasıl ki namaza kalkarken yüzü yıkamak vacip ise işaret tefsirine göre; aynı şekilde yüzü değersiz dünya malları için yerlerde sürünmekten korumak da vaciptir.

Nasıl ki abdestte elleri yıkamak vacip ise aynı şekilde onları haram ve şüpheden alıkoymak da vaciptir.

Nasıl ki başı meshetmek vacip ise onu herkesin önünde eğilmekten korumak da vaciptir.

Nasıl ki abdestte her iki ayağı yıkamak vacip ise iç temizliğinde onları caiz olmayan yerlerde dolaşmaktan korumak da vaciptir.

(وَاِنْ كُنْتُمْ جُنُبًا فَاطَّهَّرُوا وَاِنْ كُنْتُمْ مَرْضٰىٓ اَوْ عَلٰى سَفَرٍ اَوْ جَآءَ اَحَدٌ مِنْكُمْ مِنَ الْغَآئِطِ اَوْ لٰمَسْتُمُ النِّسَآءَ فَلَمْ تَجِدُوا مَآءً فَتَيَمَّمُوا صَعِيدًا طَيِّبًا فَامْسَحُوا بِوُجُوهِكُمْ وَاَيْدِيكُمْ مِنْهُ)

*"Eğer cünüp oldunuz ise boy abdesti alın. Hasta yahut yolculuk halinde bulunursanız yahut biriniz tuvaletten gelirse yahut da kadınlara dokunmuşsanız ve bu hallerde su bulamamışsanız, temiz toprakla teyemmüm edin de yüzünüzü ve dirseklere kadar ellerinizi onunla meshedin."*

Nasıl ki boy abdestinde vücudun tamamını yıkamak gerekiyorsa, aynı şekilde iç temizlikte de sonuna kadar çaba harcamak gerekir. Şöyle ki, müridde tembellik meydana geldiği zaman o, akdi yeniler, verdiği sözü pekiştirir, kararlılıktan ayrılmaz, vakti teslim eder, sürekli pişmanlık duyar ve mahcubiyet hisseder.

Nasıl ki temizlik yapan kimsenin su bulamadığı zaman teyemmüm yapması farz ise aynı şekilde mürid, üzerine himmetinin feyzini akıtan, onu işaretinin bereketleriyle yıkayan ve harekete geçmesini sağlayacak yardımı yapan kimseyi bulamadığı zaman, imkânı dahilinde onların yolunu takip etmekle meşgul olur ve geçmişteki yaşantıları ile eldeki hikayelerinde huzur bulmaya çalışır.

Nasıl ki teyemmüm, abdestte yıkanan organların bir kısmıyla sınırlı olarak farz kılınmış ise, aynı şekilde bu durumun manevi temizliği için gerekli olan yükümlülükler de daha hafif olur. Çünkü o, fetret vakti ve güçsüzlük zamanıdır.

(مَا يُرِيدُ اللّٰهُ لِيَجْعَلَ عَلَيْكُمْ مِنْ حَرَجٍ) *"Allah, size herhangi bir güçlük çıkarmak istemez."*

Bu cümleden şu işaret çıkmaktadır: Mürid, müridliğin hükümlerinden geri durduğu zaman ibadet alanına adım atsın. Sırlarında letâifi yitirdiği zaman vazifeleri zahiri üzerine devam ettirsin. Hakikatin hükümlerinden emin olamadığı zaman fıkhın kurallarını ilke edinsin. Şayet fazileti terk etmekten sakınmıyorsa, hiç olmazsa tasarrufunu haram ve şüphe ile kirletmesin.

(وَلٰكِنْ يُرِيدُ لِيُطَهِّرَكُمْ) *"Fakat sizi tertemiz kılmak ister."*

Yani Allah, sizi koruyarak zahirinizi zilletten, rahmetiyle de kalplerinizi gafletten temizlemek ister.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, sırlarınızı şekilleri düşünmekten, zahirlerinizi de meşguliyetlerin tuzağına düşmekten tertemiz kılar.

- Allah, inançlarınızı, mukadderatın gerekçelerle kirleneceği vehminden tertemiz kılar.

(وَلِيُتِمَّ نِعْمَتَهُ عَلَيْكُمْ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ) *"Ve size nimetini tamamlamak ister. Umulur ki şükredersiniz."*

Kimilerine nimet, nefislerinin kurtuluşu şeklinde iken kimilerine de nefislerinden kurtulmaları şeklinde olur ki, iki grup arasında büyük fark vardır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Nimetin tamamlanması, akıbetin iyi olmasına bağlıdır. Bu itibarla insan, dünyadan irfan ve iman vasfı üzerine çıktığı zaman saadeti tamamlanmış ve nimeti arınmış olur.

- Nimetin tamamlanması, nimeti veren Allah'ı görmeye bağlıdır. Zira nimetin varlığı herkes için söz konusudur. Lakin tamamlanması, nimeti veren Allah'ı görmeye bağlıdır.

وَاذْكُرُوا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَمِيثَاقَهُ الَّذ۪ي وَاثَقَكُمْ بِه۪ٓ اِذْ قُلْتُمْ
سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ عَل۪يمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ ٧

7- "Allah'ın size olan nimetini, "duyduk ve kabul ettik" dediğiniz zaman sizi bununla bağladığı sözü hatırlayın ve Allah'tan korkun. Şüphesiz Allah, kalplerin içindekini bilmektedir."

Bu ifade, Allah'ın daha önce kendini kullarına tanıtmış olmasına işaret etmektedir. Eğer bu tanıtma olmasaydı, insan Allah'ın kim olduğunu bilmeyecekti.

Kimisine göre de Allah insanlara, onlar henüz yokluk perdesi altındayken kendileri için yapılmış olan ezeli taksimatı hatırlamalarını emretmektedir. Bu itibarla ne Allah'tan başka kimsenin onlardan haberi vardır, ne maddî vücutları ve bir eserleri bulunmaktadır ve ne de hiçbir basirete konu olmuşlardır. Allah, onlara müminlik nişanı vermiş ve daha günah gerçekleşmeden kendileri için bağışlamaya hükmetmiştir. Sonra Allah, ortaya çıkarıp hayat verdiği insanlara, yükümlülüklerden önce tevhidi öğretmiştir. Daha sonra kendilerine emaneti takdim edip onları hıyanetten sakındırmıştır. Bunun üzerine

insanlar, Allah'ın bu sözünü tasdikle karşılayıp hakikate bağlılık şartına vefa göstereceklerine dair söz verdiler. Allah da güzel muvaffakiyetle onlara yardım etti, kendilerini istikamet yolu üzerine sabit kıldı. Sonra Allah, onlardan: (اِذْ قُلْتُمْ سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا) *"O zaman siz: 'Duyduk ve itaat ettik' dediniz"* şeklinde söz ederek kendilerine teşekkür etti.

(وَاتَّقُوا اللّٰهَ) *"Ve Allah'tan korkun."* Yani, kesin söz verdiğiniz akitleri bozmak ve takdim ettiğiniz ahitlerden dönmek konusunda Allah'tan korkunuz.

(اِنَّ اللّٰهَ عَل۪يمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ) *"Şüphesiz Allah, kalplerin içindekini bilmektedir."* Kalplerinize doğan hususlardan ve içinizdeki niyetlerden hiç biri O'na gizli kalmaz.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا كُونُوا قَوَّام۪ينَ لِلّٰهِ شُهَدَٓاءَ بِالْقِسْطِ وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ عَلٰٓى اَلَّا تَعْدِلُوا اِعْدِلُوا هُوَ اَقْرَبُ لِلتَّقْوٰى وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ خَب۪يرٌ بِمَا تَعْمَلُونَ ﴿٨﴾

8- "Ey iman edenler! Allah için hakkı ayakta tutan, adaletle şahitlik eden kimseler olun. Bir topluluğa duyduğunuz kin, sizi adil davranmamaya itmesin. Adaletli olun! Bu, Allah korkusuna daha çok yakışır. Allah'a isyandan sakının. Allah yaptıklarınızı hakkıyla bilmektedir."

Sizin için herhangi bir kazancın gerçekleşmesi, bize karşı vefalı olmaktan ve üzerinize vacip olan hakkımızı yerine getirmekten sizi alıkoymasın.

Kimisine göre, her kim arzularını gerçekleştirirken adil olmaz ve şehvetleriyle isteklerinin tezahürlerini üzerinden atmazsa, Allah'ın hiçbir hakkını yerine getirmemiş ve ödevleri konusunda hiçbir şarta sadakat göstermemiş olur.

(وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَاٰنُ قَوْمٍ عَلٰٓى اَلَّا تَعْدِلُوا اِعْدِلُوا هُوَ اَقْرَبُ لِلتَّقْوٰى وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ خَب۪يرٌ بِمَا تَعْمَلُونَ)

*"Bir topluluğa duyduğunuz kin, sizi adil davranmamaya itmesin. Adaletli olun! Bu, Allah korkusuna daha çok yakışır. Allah'a isyandan sakının. Allah, yaptıklarınızı hakkıyla bilmektedir."*

Yani içinizdeki kinler, sizi haksızlık tarafında yer almaya sevk etmesin. Çünkü zulüm yuvası vebalı, sapkınlık merkezleri ise helak edicidir.

Sonra Allah, adaleti açıkça emrederek: (اِعْدِلُوا) "*Adaletli olun*" buyurmuştur. Gerçek adalet ise ancak her türlü haz ve nasipten dönüş yapmakla gerçekleşir. Bu arada adalet takvaya, zulüm de helak olmaya daha yakın olup kısa zamanda büyük belaya düşürür.

وَعَدَ اللّٰهُ الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ لَهُمْ مَغْفِرَةٌ وَاَجْرٌ عَظ۪يمٌ ﴿٩﴾

9- "Allah, iman eden ve iyi şeyler yapanlara söz vermiştir. Onlara bağışlama ve büyük mükâfat vardır."

Bağışlama, ancak günah ile ilgili olur. Bu durumda Allah, onları salih amellerle niteledikten sonra, günahların ibadetleri yok ettiğini ileri sürenlerin bu görüşünün aksine, kulun bağışlanmaya muhtaç günahlarının yanı sıra salih amellerinin de olabileceğini bildirmek için bağışlama sözü vermiştir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, bir takım salih amelleri olsa da kulun, O'nun affına ve mağfiretine muhtaç olduğunu açıklamıştır. Allah'ın, suçsuza azap vermesinin caiz olmadığı ve iyilik yapanlara sevap vermesinin vacip olduğu şeklindeki görüşün aksine, eğer O'nun bağışlaması olmasaydı insan helak olurdu.

- Eğer iyilik yapanların sevabı vacip olsaydı ve suçsuza ceza vermek yerinde olmasaydı, Allah'ın suçsuzu bağışlaması vacip hale gelir ve dolayısıyla insanlara yapacağı bir lütfu kalmamış olurdu.

وَالَّذ۪ينَ كَفَرُوا وَكَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَٓا اُو۬لٰٓئِكَ اَصْحَابُ الْجَح۪يمِ ﴿١٠﴾

10- "İnkâr eden ve ayetlerimizi yalanlayanlara gelince, onlar cehennemliklerdir."

Bunların iki azabı vardır: Biri, hemen dünyada verilen ayrılık, diğeri de sonradan ahirette verilen yanmadır.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوا اذْكُرُوا نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ هَمَّ قَوْمٌ اَنْ يَبْسُطُوٓا اِلَيْكُمْ اَيْدِيَهُمْ فَكَفَّ اَيْدِيَهُمْ عَنْكُمْ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُونَ ﴿١١﴾

11- "Ey iman edenler! Allah'ın size olan nimetini unutmayın. Hani bir topluluk size el uzatmaya yeltenmişti de Allah onların ellerini sizden çekmişti. Allah'tan korkun ve müminler yalnızca Allah'a güvensinler!"

Allah, onlara daha önceki def etme nimetlerini hatırlatmaktadır. Bu def etme, düşmanların ellerini onlara ulaştırmamak olup Allah'ın inayetinin göstergelerindendir. Böylece, hiçbir talep veya önceden yapılmış bir aracılık veya gelecekteki bir fayda beklentisi veya hemen gerçekleşecek bir kazanç ya da gelecekte bir hakkın varlığı söz konusu olmaksızın senin için gaybı ortaya çıkaran Allah, sana büyük iyilik yapmıştır.

(وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُونَ) "*Ve müminler yalnızca Allah'a güvensinler!*" Yani nasıl ki hak etmediğiniz halde geçmişte size iyilik yaptıysam, aynı şekilde yine hak etmediğiniz halde gelecekte de güzel iyiliğimi bekleyiniz.

وَلَقَدْ اَخَذَ اللّٰهُ مٖيثَاقَ بَنٖٓي اِسْرَٓاءٖيلَ وَبَعَثْنَا مِنْهُمُ اثْنَيْ عَشَرَ نَقٖيبًا وَقَالَ اللّٰهُ اِنّٖي مَعَكُمْ لَئِنْ اَقَمْتُمُ الصَّلٰوةَ وَاٰتَيْتُمُ الزَّكٰوةَ وَاٰمَنْتُمْ بِرُسُلٖي وَعَزَّرْتُمُوهُمْ وَاَقْرَضْتُمُ اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا لَاُكَفِّرَنَّ عَنْكُمْ

سَيِّاٰتِكُمْ وَلَاُدْخِلَنَّكُمْ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ فَمَنْ كَفَرَ
بَعْدَ ذٰلِكَ مِنْكُمْ فَقَدْ ضَلَّ سَوَآءَ السَّبِيلِ ﴿١٢﴾

12- "Andolsun ki Allah, İsrail oğullarından söz almıştı. Kefil olarak başlarında on iki de başkan göndermiştik. Allah, onlara şöyle demişti: Ben sizinle beraberim. Eğer namazı dosdoğru kılar, zekâtı verir, peygamberlerime inanır, onları desteklerseniz ve Allah'a güzel borç verirseniz, and olsun ki sizin günahlarınızı örterim ve sizi, zemininden ırmaklar akan cennetlere sokarım. Bundan sonra sizden kim inkâr yolunu tutarsa, doğru yoldan sapmış olur."

Allah, onlara olan lütuflarının güzelliğini ve iyiliğinin karşılığında ahitlerini bozmak şeklindeki davranışlarının çirkinliğini hatırlatmaktadır.

Bu arada müminlere de uyarıda bulunmak üzere, İsrail oğullarının durumuna düşmemelerini, aksi takdirde tıpkı onların hak ettikleri ceza gibi bir cezayı hak edeceklerini bildirmiştir.

(لَئِنْ اَقَمْتُمُ الصَّلٰوةَ وَاٰتَيْتُمُ الزَّكٰوةَ وَاٰمَنْتُمْ بِرُسُلِي وَعَزَّرْتُمُوهُمْ) *"Eğer namazı dosdoğru kılar, zekâtı verir, peygamberlerime inanır, onları desteklerseniz..."*

Yani eğer siz hakkımı yerine getirirseniz, kuşkusuz ben de sizi arzularınıza kavuşturacağım. Eğer siz, dünyada emrimi yüceltirseniz, ben de ahirette kadrinizi yücelteceğim.

Bu arada namazı dosdoğru kılmak, ibadet ettiğin Allah'ı görmen demektir. Bu nedenle Hz. Peygamber: *"Allah'a, O'nu görüyormuş gibi ibadet et"* buyurmuştur.

Bir yoruma göre, namazı dosdoğru kılmanın şartı, münacatta bulunduğun Allah'a yönelmendir. Bu da, Kâbe'nin bulunduğu yere yönelmekle olur. Zekât vermeye gelince, hakkı malı meşru kaynaktan kazanıp onda hakkıyla tasarrufta bulunmak, ehlinin ondaki hakkına engel olmamak, onu zamanında vermek ve fakiri, istemek zorunda bırakmamaktır. Çünkü insana vacip olan, onu hak sahibine ulaştırmaktır.

Peygamberleri desteklemek ise tazim niyetiyle onlara iman etmek, noksansız bir çaba ile emirlerini kabul etmek ve bütün hallerde onları kendimize tercih etmektir.

(وَاَقْرَضْتُمُ اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا) *"... ve Allah'a güzel borç verirseniz..."*

Zenginler, malını Allah yolunda harcarken fakirler canlarını ve ruhlarını Allah'ı aramada harcarlar. Zenginler, iki yüz dirhemden beş dirhem verirken, fakirler, Allah'ın emrinden bir nefes ve bir zerre dahi esirgemezler.

(لَاُكَفِّرَنَّ عَنْكُمْ سَيِّاٰتِكُمْ وَلَاُدْخِلَنَّكُمْ جَنَّاتٍ تَجْر۪ي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ) *"Andolsun ki, sizin günahlarınızı örterim ve sizi, altından ırmaklar akan cennetlere sokarım."*

Ayette geçen "tekfir" lafzı, örtmek ve kapatmak demektir. Allah, günahkârın da günahlarını örter ve böylece onun amel defterinden günahlarını siler, geçmiş günahlarını meleklere unutturur, geçmiş günahlarını hatırlamayı kalbinden kaldırır, onu daha önceki günahlarına bağlı olarak mahşerde tutmaz, sonra da lütfuyla onu cennete koyar. Nitekim Allah: (وَلَاُدْخِلَنَّكُمْ جَنَّاتٍ تَجْر۪ي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ) *"Sizi, altından ırmaklar akan cennetlere sokarım"* buyurmuştur.

(فَمَنْ كَفَرَ بَعْدَ ذٰلِكَ مِنْكُمْ فَقَدْ ضَلَّ سَوَٓاءَ السَّب۪يلِ) *"Bundan sonra sizden kim inkâr yolunu tutarsa, doğru yoldan sapmış olur."*

Kim, apaçık ortaya çıkan bu nimetleri inkâr ederse, vefa ehlinin yolundan dönmüş ve dostluk bağına sahip kimselerin çığırından sapmış olur.

فَبِمَا نَقْضِهِمْ م۪يثَاقَهُمْ لَعَنَّاهُمْ وَجَعَلْنَا قُلُوبَهُمْ قَاسِيَةًۚ يُحَرِّفُونَ الْكَلِمَ عَنْ مَوَاضِعِه۪ۙ وَنَسُوا حَظًّا مِمَّا ذُكِّرُوا بِه۪ۚ وَلَا تَزَالُ تَطَّلِعُ عَلٰى خَٓائِنَةٍ مِنْهُمْ اِلَّا قَل۪يلًا مِنْهُمْ فَاعْفُ عَنْهُمْ وَاصْفَحْۜ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُحْسِن۪ينَ ﴿١٣﴾

13- "Sözlerini bozmaları sebebiyle onları lanetledik ve kalplerini katılaştırdık. Onlar, kelimelerin yerlerini değiştirirler. Kendilerine öğretilen ahkâmın önemli bir bölümünü de unuttular. İçlerinden pek azı hariç, onlardan daima bir hainlik görürsün. Yine de sen, onları affet ve aldırış etme. Şüphesiz Allah, iyilik edenleri sever."

Allah, daha çok asi olmaları için isyanın cezasını hayal kırıklığı olarak vermiştir.

(وَجَعَلْنَا قُلُوبَهُمْ قَاسِيَةً يُحَرِّفُونَ الْكَلِمَ عَنْ مَوَاضِعِهِ) *"Ve kalplerini katılaştırdık. Onlar, kelimelerin yerlerini değiştirirler."*

Kelimeleri değiştirmeleri, onların bir tür isyanıdır. Kelimeleri değiştirmelerinin sebebi ise kalplerinin katılığıdır. Kalbin katılığı da ahitleri bozmaları sebebiyle, Allah tarafından onlara verilen bir cezadır. Ahit bozmak, kulun altına girdiği en büyük vebal olup cezası da, kula verilen en şiddetli cezadır. Bu arada kalbin katılığı, kendisinden yüz çevrilme sınavından acı duymamasıdır. Yakında da o, yüz çevrilmeden sonra geri çevrilme meşakkatiyle imtihan edilecektir. Bu ise ayrılık ve uzaklığın son haddidir.

Kimisine göre; kalbin katılığı safiyetin kaybolmasıyla başlar, sonra şehvet istilası, sonra gafletin meydana gelmesi, sonra da katılığın kök salması şeklinde gelişir. Eğer bütün bunlardan kopuş gerçekleşmezse, bu tam anlamıyla bir şakâvet olur.

İşârî tefsire göre; kelimelerin yerini değiştirmenin bir türü de sözü, kendi kendini kandırdığı ve hakkında ilmi delillerin ve ilkelerin tanıklık etmediği bir takım tevillere dayandırmaktır.

(وَنَسُوا حَظًّا مِمَّا ذُكِّرُوا بِهِ) *"Kendilerine öğretilen ahkâmın önemli bir bölümünü de unuttular."*

Uğradıkları ilk afet unutkanlıklarıdır. Nitekim onlar, ancak unuttuktan sonra Allah'a isyan ettiler. O halde unutkanlık isyanın başlangıcıdır. Ayrıca unutkanlık perişanlıktan meydana gelir.

(وَلَا تَزَالُ تَطَّلِعُ عَلٰى خَائِنَةٍ مِنْهُمْ اِلَّا قَلِيلًا مِنْهُمْ) *"İçlerinden pek azı hariç, onlardan daima bir hainlik görürsün."*

Hainlik, ağır bir durum olup büyük insanlardan çok uzak ve onlar için çok ağır ve zordur. Kim şehvetlerin peşine düşmeyi alışkanlık haline getirir ve hainlik sevgisi kalbine sızdırılmış ise, artık ömrünün sonuna kadar bu huy ile yaşamaya devam eder. Meğerki Allah ona güzel lütfuyla cömertçe muamele etmiş olsun.

(فَاعْفُ عَنْهُمْ وَاصْفَحْ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُحْسِنِينَ) *"Yine de sen, onları affet ve aldırış etme! Şüphesiz Allah, iyilik edenleri sever."*

Bazen bağışlamanın sebebi, bağışlananın önemsizliği olur. Çünkü herkes ceza alma ehliyetine sahip değildir. Bu arada, aldırış etmemek, aftan üstündür. Bu üstünlük, afta sorumluluğun ortadan kaldırılması, aldırış etmemekte ise tepki duygusunun kalpten çıkarılması şeklinde olur. Bu itibarla kim, caniden vazgeçer ve vazgeçtikten sonra da ona hakaret ve alaylı bir gözle bakmazsa işte o, aldırış etmeyen kimsedir. İyilik etmek ise, bir lütuf olarak bütün kitleyi kapsamaktadır.

وَمِنَ الَّذِينَ قَالُوٓا اِنَّا نَصَارٰىٓ اَخَذْنَا مِيثَاقَهُمْ فَنَسُوا حَظًّا مِمَّا ذُكِّرُوا بِهٖ فَاَغْرَيْنَا بَيْنَهُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَٓاءَ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ وَسَوْفَ يُنَبِّئُهُمُ اللّٰهُ بِمَا كَانُوا يَصْنَعُونَ ﴿١٤﴾

14- "Biz Hıristiyanlarız, diyenlerden de kesin sözlerini almıştık; ama onlar da kendilerine zikredilenin önemli bir bölümünü unuttular. Bu sebeple kıyamete kadar aralarına düşmanlık ve kin saldık. Yakında Allah, onlara yaptıklarını haber verecektir."

Bu ayetin işaret ettiği husus şudur: Hıristiyanlara kendi ifadelerine dayalı olarak bu isim verilmiştir. Zira onlar: ( اِنَّا نَصَارٰى ) *"Biz Hıristiyanlarız"* demişlerdir. Bu ismi almaları ise, kendi ararlarında yardımlaşmalarından ötürüdür. Yine kendi itiraflarıyla kelimelerin kendilerini de yerlerini de değiştirmişlerdir. Müslümanlara gelince,

Allah onlar hakkında: (هُوَ سَمّٰيكُمُ الْمُسْلِمِينَ) *"Allah size Müslümanlar adını verdi"* (Hac, 22/78), buyurmuştur. Tıpkı: (وَرَضِيتُ لَكُمُ الْاِسْلَامَ دِينًا) *"Sizin için din olarak da İslam'ı seçtim"* (Mâide, 5/3), dediği gibi. Bu itibarla Müslümanların Hıristiyan olarak adlandırılmayacaklarında şüphe yoktur. Ayrıca Allah, onlara Müslüman adını verip kendileri için buna rıza gösterince, onları değişiklik yapmaktan korudu, onlar da korunmuş oldular. Öte yandan unutkanlık onlarda kök salınca, kendi aralarında düşman kesildiler ve araları bozulmuş oldu. İşte böylece gaflet sahipleri arasında ülfet bulunmaz. Vefa ehli olanlar arasında ise zıtlaşma olmaz. Hz. Peygamber: *"Müminler tek vücut gibidirler."* buyurmuştur. Allah da cennet ehlinin vasfı hakkında: (عَلٰى سُرُرٍ مُتَقَابِلِينَ) *"Karşılıklı koltuklar üzerine kurulmuşlardır"* buyurmuştur. (Saffât, 37/44)

يَٓا اَهْلَ الْكِتَابِ قَدْ جَٓاءَكُمْ رَسُولُنَا يُبَيِّنُ لَكُمْ كَث۪يرًا مِمَّا كُنْتُمْ
تُخْفُونَ مِنَ الْكِتَابِ وَيَعْفُوا عَنْ كَث۪يرٍ قَدْ جَٓاءَكُمْ مِنَ اللّٰهِ نُورٌ وَكِتَابٌ
مُب۪ينٌ ﴿١٥﴾ يَهْد۪ي بِهِ اللّٰهُ مَنِ اتَّبَعَ رِضْوَانَهُ سُبُلَ السَّلَامِ وَيُخْرِجُهُمْ
مِنَ الظُّلُمَاتِ اِلَى النُّورِ بِاِذْنِه۪ وَيَهْد۪يهِمْ اِلٰى صِرَاطٍ مُسْتَق۪يمٍ ﴿١٦﴾

**15, 16- "Ey Kitap ehli! Resulümüz size Kitap'tan gizlemekte olduğunuz birçok şeyi açıklamak üzere geldi. Birçok kusurunuzu da affediyor. Gerçekten size Allah'tan bir nur, apaçık bir kitap geldi. Rızasını arayanı Allah onunla kurtuluş yollarına iletir ve onları iradesiyle karanlıklardan aydınlığa çıkarır, dosdoğru bir yola iletir."**

Allah, Hz. Peygamber'i onların gizledikleri bazı şeyleri açıklamakla nitelemiştir. Bu da Hz. Peygamber'in doğru sözlü olduğunun alametidir. Çünkü eğer doğru söylemeseydi, bunu bilmeyecekti. Ayrıca Allah, Hz. Peygamber'i onların pek çok fiillerini bağışlamakla nitelemiştir. Bu da, onun ahlakının alametlerindendir. Çünkü eğer ahlakı olmasaydı, bunu yapmayacaktı. Bu itibarla gizlediklerini açıklaması,

Hz. Peygamber'in bilgisinin, gizlenen pek çok hususu affetmesi de, halim oluşunun delilidir.

(قَدْ جَٓاءَكُمْ مِنَ اللّٰهِ نُورٌ وَكِتَابٌ مُبِينٌ يَهْدِي بِهِ اللّٰهُ مَنِ اتَّبَعَ رِضْوَانَهُ سُبُلَ السَّلَامِ وَيُخْرِجُهُمْ مِنَ الظُّلُمَاتِ اِلَى النُّورِ بِاِذْنِهِ وَيَهْدِيهِمْ اِلٰى صِرَاطٍ مُسْتَقِيمٍ)

*"Gerçekten size Allah'tan bir nur ve apaçık bir kitap geldi. Rızasını arayanı Allah onunla kurtuluş yollarına iletir ve onları iradesiyle karanlıklardan aydınlığa çıkarır, dosdoğru bir yola iletir."*

Tevhid nurları açıktır; ancak basiret yok olduğunda fayda vermez. Bu duruma göre; Allah ezeli inayetiyle ayrıcalıklı kıldığı kimseyi tefrikanın karanlıklarından cemin alanlarına çıkarır. Böylece bu kimsenin kalbinden Allah dışındaki varlıkların izleri silinmiş olur. Bu ise, en iyi delile dayanan herkesin niteliğidir.

لَقَدْ كَفَرَ الَّذِينَ قَالُٓوا اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْمَسِيحُ ابْنُ مَرْيَمَ قُلْ فَمَنْ يَمْلِكُ مِنَ اللّٰهِ شَيْـًٔا اِنْ اَرَادَ اَنْ يُهْلِكَ الْمَسِيحَ ابْنَ مَرْيَمَ وَاُمَّهُ وَمَنْ فِي الْاَرْضِ جَمِيعًا وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا يَخْلُقُ مَا يَشَٓاءُ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ﴿١٧﴾

17- "'Şüphesiz Allah, Meryem oğlu Mesih'tir' diyenler, andolsun ki kâfir olmuşlardır. De ki: 'Öyleyse Allah, Meryem oğlu Mesih'i, anasını ve yeryüzündekilerin hepsini imha etmek isterse, Allah'a kim bir şey yapabilecektir! Göklerde, yerde ve ikisi arasında ne varsa, hepsinin mülkiyeti Allah'a aittir. O, dilediğini yaratır ve Allah, her şeye tam manasıyla kadirdir.'"

Kadınların rahmine sığan bir kimse, hilkat noksanlığından nasıl kurtulabilir? Kendisinde değişim belirtileri ortaya çıkan kimse de tanrılık vasfına nasıl layık olabilir? Şayet Allah, bütün yarattıklarını yok ederse, O'nda hangi noksanlık meydana gelir?!

وَقَالَتِ الْيَهُودُ وَالنَّصَارٰى نَحْنُ اَبْنَٓاءُ اللّٰهِ وَاَحِبَّٓاؤُهُ قُلْ فَلِمَ يُعَذِّبُكُمْ
بِذُنُوبِكُمْ بَلْ اَنْتُمْ بَشَرٌ مِمَّنْ خَلَقَ يَغْفِرُ لِمَنْ يَشَٓاءُ وَيُعَذِّبُ مَنْ
يَشَٓاءُ وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا وَاِلَيْهِ الْمَص۪يرُ ﴿١٨﴾

18- "Yahudiler ve Hıristiyanlar: 'Biz, Allah'ın oğulları ve sevgilileriyiz' dediler. De ki: 'Öyleyse günahlarınızdan dolayı size niçin azap ediyor? Doğrusu, siz de O'nun yarattığı insanlardansınız. O, dilediğini bağışlar ve dilediğine azap eder. Göklerde, yerde ve ikisinin arasında ne varsa mülkiyeti Allah'a aittir. Sonunda dönüş de ancak O'nadır.'"

Peygamberlik, hemcins olmayı gerektirir. Allah ise bundan münezzehtir. Hemcinsler arasındaki sevgi de karşılıklı haz ve ünsiyet gerektirir. Oysa Allah bundan mukaddestir.

İşte bu nedenledir ki, Allah, onlara: (بَلْ اَنْتُمْ بَشَرٌ مِمَّنْ خَلَقَ) "*Doğrusu siz de O'nun yarattığı insanlardansınız*" şeklinde cevap vermiştir.

Nitekim yaratılan varlık, kadimin bir parçası olamaz. Zira kadim, birlik hakkına sahip olduğu için onun hakkında parça söz konusu değildir. Kendisi için sayı söz konusu olamayınca çocuk sahibi olması da caiz değildir. Çocuk sahibi olması caiz olmadığına göre; onlarla Allah arasında, kendilerinin inandığı şekilde bir sevgi de caiz olmamaktadır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Ayette, muhabbet ehli için azap ve cezadan kurtuluş müjdesi bulunmaktadır. Çünkü Allah: (قُلْ فَلِمَ يُعَذِّبُكُمْ بِذُنُوبِكُمْ) "*De ki: Öyleyse günahlarınızdan dolayı size niçin azap ediyor?*" buyurmuştur.

- Allah, bu ayette bir yaratığın sonunun azap veya bağışlanmak olduğunu, bunun ötesinde başka bir şeyin mümkün olmadığını açıklamıştır.

يَٓا اَهْلَ الْكِتَابِ قَدْ جَٓاءَكُمْ رَسُولُنَا يُبَيِّنُ لَكُمْ عَلٰى فَتْرَةٍ مِنَ الرُّسُلِ
اَنْ تَقُولُوا مَا جَٓاءَنَا مِنْ بَشِيرٍ وَلَا نَذِيرٍ فَقَدْ جَٓاءَكُمْ بَشِيرٌ وَنَذِيرٌ
وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ﴿١٩﴾

19- "Ey Kitap ehli! Peygamberlerin arası kesildiği bir sırada size elçimiz geldi. Gerçekleri size açıklıyor ki: 'Bize bir müjdeleyici ve uyarıcı gelmedi' demeyesiniz. İşte size müjdeleyici ve uyarıcı gelmiştir. Allah, her şeye hakkıyla kadirdir."

Denilmektedir ki: Her bir zamanda Allah yolundaki çabalarda bir kesinti meydana gelmekte, sonra durum yenilenmekte ve bu yolda yürüyecek pek çok insan, yokluk âleminden ortaya çıkarılmaktadır. Bu çerçevede Hz. Peygamber'in zamanı, zamanların en bereketlisi idi. Allah, onun ortaya çıkmasıyla çökmüş olan yolu hayata geçirdi ve kararmış olan delili onun nuruyla aydınlatmış oldu. Nitekim Allah, bununla onlara lütufta bulunmuş ve üzerlerindeki büyük nimetini kendilerine hatırlatmıştır.

وَاِذْ قَالَ مُوسٰى لِقَوْمِهِ يَا قَوْمِ اذْكُرُوا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ جَعَلَ فِيكُمْ
اَنْبِيَٓاءَ وَجَعَلَكُمْ مُلُوكًا وَاٰتٰيكُمْ مَا لَمْ يُؤْتِ اَحَدًا مِنَ الْعَالَمِينَ ﴿٢٠﴾

20- "Bir zamanlar Musa, kavmine şöyle demişti: 'Ey kavmim! Allah'ın, size lütfettiği nimetini hatırlayın! Zira O, içinizden peygamberler çıkardı ve sizi hükümdarlar kıldı. Âlemlerde hiçbir kimseye vermediğini size verdi."

Söz konusu emir, peygamberleri aracılığıyla Allah'ın, üzerlerindeki nimetini anmalarına dair olarak İsrail oğullarına yönelik olmuştur. Bu ümmete yönelik emir ise bir mahlûkun aracılığı olmaksızın, doğrudan Allah'ın hitabıyla O'nu anmalarına dair olmuştur. Nitekim Allah: (فَاذْكُرُونِي اَذْكُرْكُمْ) *"Beni anın ki ben de sizi anayım"* (Bakara, 2/152) buyurmuştur. Allah'ın, kendi zatını anmakla memur kıldığı kimseler ile nimetini anmakla memur kıldığı kimseler arasında ise büyük

bir fark vardır. Sonra Allah, onlara mükâfat olarak lütfundan ibaret olan sevabı verirken, bu ümmete mükâfat olarak: “*Beni anın ki ben de sizi anayım,*” şeklindeki hitabını lütfetmiştir.

(وَجَعَلَكُمْ مُلُوكًا) “*Ve sizi hükümdarlar kıldı.*”

Mahlûklardan hükümdar, hakiki hükümdar olan Allah'a kulluk edendir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Hükümdar, nefsine hâkim olandır. Köle ise şehvetlerinin kölesi olandır.

- Sizi hükümdarlar kılması demek, sizi emsalinize muhtaç kılmaması, meşguliyetlerinizle sizi kendinden alıkoymaması ve ahvalinizin genelinde, kendisine giden yolu size kolay kılmış olmasıdır.

(وَاٰتٰيكُمْ مَا لَمْ يُؤْتِ اَحَدًا مِنَ الْعَالَمِينَ) “*Âlemlerde hiçbir kimseye vermediğini size verdi.*”

Şayet Allah, lütfunun gereği olarak İsrail oğullarına bunu vermişse, şüphesiz bu ümmeti bundan müstağni kılmıştır. Bundan dolayı ümmetin fertleri, sadece O'nun varlığını gaye edinmişlerdir. Sadece O'nun varlığını gaye edinmek de, lütfunun gereğiyle yetinmekten daha mükemmeldir.

يَا قَوْمِ ادْخُلُوا الْاَرْضَ الْمُقَدَّسَةَ الَّتِي كَتَبَ اللّٰهُ لَكُمْ وَلَا تَرْتَدُّوا عَلٰى اَدْبَارِكُمْ فَتَنْقَلِبُوا خَاسِرِينَ ﴿٢١﴾

21- “Ey kavmim! Allah'ın size yazdığı mukaddes toprağa girin ve arkanıza dönmeyin, yoksa kaybederek dönmüş olursunuz.”

Bu ümmet ile İsrail oğulları arasındaki farklardan biri de şudur: Allah, mukaddes toprağa girmeyi özel olarak İsrail oğullarına mubah kılarak: (يَا قَوْمِ ادْخُلُوا الْاَرْضَ الْمُقَدَّسَةَ الَّتِي كَتَبَ اللّٰهُ لَكُمْ) “*Ey kavmim! Allah'ın size yazdığı mukaddes toprağa girin*” buyurmuştur. Sonra

onlar, bu toprağa ancak bir süre sonra ve bir hayli zorluk ve çabayla girdiler. Bu ümmet hakkında ise Allah şöyle buyurmaktadır:

(وَلَقَدْ كَتَبْنَا فِي الزَّبُورِ مِنْ بَعْدِ الذِّكْرِ اَنَّ الْاَرْضَ يَرِثُهَا عِبَادِيَ الصَّالِحُونَ) *"Andolsun ki, Zikir'den sonra Zebûr'da da: Yeryüzüne iyi kullarım vâris olacaktır, diye yazmıştık."* (Enbiyâ, 21/105)

Böylece Allah, onlara kutsal toprağa girmeyi bir yükümlülük olarak yazmış, sonra onlar bunda kusur işlemişlerdir. Oysa Allah, bu ümmete, kendisini onurlandırmak üzere bütün yeryüzüne girme imkânı vermiştir. Sonra bu ümmetin mensupları, kendileri için yazılana kavuştular ve bunda kusur işlemediler.

Allah, İsrail oğullarına: (ادْخُلُوا الْاَرْضَ الْمُقَدَّسَةَ) *"Mukaddes toprağa girin"* derken bu ümmete: (هُوَ الَّذِي جَعَلَ لَكُمُ الْاَرْضَ ذَلُولًا فَامْشُوا فِي مَنَاكِبِهَا وَكُلُوا مِنْ رِزْقِهِ) *"Yeryüzünü size boyun eğdiren O'dur. Şu halde yerin omuzlarında dolaşın ve Allah'ın rızkından yeyin"* (Mülk, 67/15) buyurmuştur. Böylece Allah, bu ümmete yeryüzünü boyun eğdirerek kolaylaştırırken, İsrail oğullarına, kendilerine indirdiği vahiyde verdiği emirlere ulaşmalarını zorlaştırmıştır.

(وَلَا تَرْتَدُّوا عَلٰۤى اَدْبَارِكُمْ فَتَنْقَلِبُوا خَاسِرِينَ) *"Ve arkanıza dönmeyin! Yoksa kaybederek dönmüş olursunuz."*

Dönüş iki kısımdır: Biri dinden ve kulluk vazifesini yerine getirmekten dönüş yapmaktır ki, bu ölüm cezasını gerektirir. Diğeri de müritlikten dönüş yapmaktır ki, bu da kalplerde, kopuştan ibaret olan şakâvete yol açar.

قَالُوا يَا مُوسٰۤى اِنَّ فِيهَا قَوْمًا جَبَّارِينَ وَاِنَّا لَنْ نَدْخُلَهَا حَتّٰى
يَخْرُجُوا مِنْهَا فَاِنْ يَخْرُجُوا مِنْهَا فَاِنَّا دَاخِلُونَ ﴿٢٢﴾

22- "Onlar dediler ki: 'Ey Musa! Orada zorba bir toplum vardır. Onlar oradan çıkmadıkça biz oraya asla girmeyeceğiz. Eğer oradan çıkarlarsa, biz de hemen gireceğiz.'"

Onlar, başkalarına değer biçerek baktılar ve sonradan yaratılanların etki sahibi olduklarını zannettiler. Böylece içlerine korku girdi ve bunun üzerine emri terk etmede ısrar ettiler. Bu arada her kim, başkalarını basiretin nurlarıyla değerlendirirse, onları ilahî takdire tutsak, yaratma imkânından arınmış kalıplar olarak görür ve kalbinin üstüne vehmin gölgesi düşmemiş olur.

قَالَ رَجُلَانِ مِنَ الَّذِينَ يَخَافُونَ اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيْهِمَا ادْخُلُوا عَلَيْهِمُ الْبَابَ فَاِذَا دَخَلْتُمُوهُ فَاِنَّكُمْ غَالِبُونَ ﴿٢٣﴾

23- "Korkanların içinden Allah'ın kendilerine lütufta bulunduğu iki kişi: 'Onların yanına kapıdan girin. Oraya bir girdiniz mi, artık siz zaferi kazanmışsınızdır' dedi."

Allah, o iki kişiye irfanın nurlarıyla lütufta bulunduğundan onlar, mahlûklardan korkmadılar ve Allah'a, kendilerini başkalarına muhtaç kılmamasını dileyerek dönüş yapanı, Allah'ın hemen himayesi altına aldığını bildiler.

(وَعَلَى اللّٰهِ فَتَوَكَّلُوٓا اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ) *"Eğer mümin iseniz ancak Allah'a güvenin."*

Yani tevekkül etmek müminlerin şanından olduğu gibi, mümine yakışan da zaten odur.

Şu yorum da yapılabilir: Tevekkül imanın şartlarındandır. Müminlerin geneli için geçerli olan tevekkül, Allah'ın hükmünü hiç kimsenin geri çeviremeyeceğini, tevekkülün hakikatlerinin ve müminlerin havassına ait olan lütuflarının, olanları Allah ile, Allah'tan ve Allah için görmekten ibaret olduğunu bilmektir. Çünkü bunu yitiren kimseden mümin ismi kalkmıştır.

قَالُوا يَا مُوسٰىٓ اِنَّا لَنْ نَدْخُلَهَآ اَبَدًا مَا دَامُوا فِيهَا فَاذْهَبْ اَنْتَ وَرَبُّكَ فَقَاتِلَآ اِنَّا هٰهُنَا قَاعِدُونَ ﴿٢٤﴾

24- "Dediler ki: 'Ey Musa! Onlar orada bulundukları müddetçe bizler oraya asla girmeyiz. Şu halde sen ve Rabbin gidin, savaşın. Biz burada oturacağız.'"

Yoğun nasihat, takdirin ezeli hükümlerinin uzaklaştırdığı kimsede sadece nefret ve inkârı artırır.

(فَاذْهَبْ اَنْتَ وَرَبُّكَ فَقَاتِلَٓا اِنَّا هٰهُنَا قَاعِدُونَ) *"Şu halde sen ve Rabbin gidin, savaşın. Biz burada oturacağız."*

Onlar, konuşma adabını terk ederek açık inkârda bulundular ve reddi açıkça dile getirmekten sakınmadılar.

قَالَ رَبِّ اِنّ۪ي لَٓا اَمْلِكُ اِلَّا نَفْس۪ي وَاَخ۪ي فَافْرُقْ بَيْنَنَا وَبَيْنَ الْقَوْمِ الْفَاسِق۪ينَ ٢٥

25- "Musa dedi ki: 'Rabbim, ben kendimden ve kardeşimden başkasına hâkim olamıyorum. Bizimle bu yoldan çıkmış toplumun arasını ayır.'"

Hz. Musa, nefsine hâkim olduğunu iddia edince, kardeşinin kafasını tutup kendine doğru çekmek suretiyle, kendine hâkim olmaktan aciz olduğunu anlamış oldu.

Bir yoruma göre de, sadece kendi nefsine hâkim olması demek, onu Allah'ın emrine feda etmekten sakınmaması demektir. Sadece kardeşine hâkim olması ise kardeşinin, nefsini Hz. Musa'nın Allah tarafından kendisine getirdiği yükümlülüğe tercih etmemesinden dolayıdır.

قَالَ فَاِنَّهَا مُحَرَّمَةٌ عَلَيْهِمْ اَرْبَع۪ينَ سَنَةً يَت۪يهُونَ فِي الْاَرْضِ فَلَا تَاْسَ عَلَى الْقَوْمِ الْفَاسِق۪ينَ ٢٦

26- "Allah buyurdu ki: 'Öyleyse orası, onlara kırk yıl yasaklanmıştır. Yeryüzünde şaşkın şaşkın dolaşacaklardır. Artık sen, yoldan çıkmış toplum için üzülme!'"

Açıkça reddetmek, azabı çabuklaştırır. Çünkü hakikate tuzak kuranın karşısına hakikat, ilahi takdirin hazinelerinden onu zül içinde bocalamak zorunda bırakacak şeyler çıkarır.

Bir yoruma göre de Allah onları önlerini göremeyecek ölçüde ıssız çöllerinde şaşkınlık içinde bırakmıştır. Bu nedenle onlar, uzun ve yorgun bir yolculuktan sonra sabahladıkları yerde geceliyorlardı. Aynı şekilde Allah'ın, kalbin ıssız çöllerinde şaşkına çevirdiği kimse de gece gündüz zanlar içerisinde savrulmak suretiyle dönüp dolaştıktan sonra, şaşkınlık kaynaklarından başka bir yere varamaz. Böylece göçtükleri yere konarlar. Kendilerinde hiçbir şekilde doğru bir fikir belirmez. Bundan sonra onlara yardımcı olacak hiçbir kurtuluş yolu da olamaz. Oysa ilahi tecelliye sığınan kimse, kendi fikrinin gelgitlerinden rahatlamış olur ve vehim yorgunluklarından sonra basiretin verdiği huzura kavuşur.

وَاتْلُ عَلَيْهِمْ نَبَاَ ابْنَيْ اٰدَمَ بِالْحَقِّ اِذْ قَرَّبَا قُرْبَانًا فَتُقُبِّلَ مِنْ اَحَدِهِمَا وَلَمْ يُتَقَبَّلْ مِنَ الْاٰخَرِ قَالَ لَاَقْتُلَنَّكَ قَالَ اِنَّمَا يَتَقَبَّلُ اللّٰهُ مِنَ الْمُتَّق۪ينَ ﴿٢٧﴾

27- "Onlara Âdem'in iki oğlunun haberini gerçek olarak anlat: Hani birer kurban takdim etmişlerdi de birisinden kabul edilmiş, diğerinden ise kabul edilmemişti. Kurbanı kabul edilmeyen kardeş: 'Andolsun, seni öldüreceğim' dedi. Diğeri de: "Allah, ancak takva sahiplerinden kabul eder" dedi.

Dünya bütün imkânlarıyla ellerinde idi. İki kardeşten biri, diğerini çekemedi. Bu nedenle o kadar sabırsız davrandı ki, kendini aceleyle bir tehlikenin eşiğine getirdi. Kurbanı da kabul edilmeyince kardeşine olan hasedi, şiddetlendi ve kurbanının kabul edilmeyişini ondan bilerek kendisini ölümle tehdit etti. Bunun üzerine kardeşi ona tevhid diliyle şöyle cevap verdi: (قَالَ اِنَّمَا يَتَقَبَّلُ اللّٰهُ مِنَ الْمُتَّق۪ينَ) *"Allah, ancak takva sahiplerinden kabul eder, dedi."*

Yani kurban, ancak onda ilahi kudretin yardımını gören ve kabulün kendi hak edişiyle olduğu düşüncesini kafasından atan kimseden kabul edilir.

لَئِنْ بَسَطْتَ اِلَيَّ يَدَكَ لِتَقْتُلَن۪ي مَٓا اَنَا بِبَاسِطٍ يَدِيَ اِلَيْكَ لِاَقْتُلَكَۚ
اِنّ۪يٓ اَخَافُ اللّٰهَ رَبَّ الْعَالَم۪ينَ ﴿٢٨﴾

28- “Andolsun ki, sen öldürmek için bana elini uzatsan bile, ben sana, öldürmek için el uzatacak değilim. Ben, âlemlerin Rabbi olan Allah’tan korkarım.”

Şayet sen, beni tahrikle işe başlasan bile, ben cahillerin yaptığı gibi, sana karşılık vermem ve işimi, bütün işlerin dizginini elinde bulunduran Allah’a havale ederim.

اِنّ۪يٓ اُر۪يدُ اَنْ تَبُٓوأَ بِاِثْم۪ي وَاِثْمِكَ فَتَكُونَ مِنْ اَصْحَابِ النَّارِۚ وَذٰلِكَ
جَزٰٓؤُا الظَّالِم۪ينَۚ ﴿٢٩﴾

29- “Ben istiyorum ki, sen, hem benim günahımı hem kendi günahını yüklenip ateşe atılacaklardan olasın. Zalimlerin cezası işte budur.”

Kardeşi, kendisini öldürmek isteyen kardeşinin, işlediği günahlardan dolayı azaba uğrayacağından emin olduğu için kendisi intikam almaktan vazgeçip Allah’ın intikam almasına razı oldu.

Ayette sözü edilen günah ise onu öldürmesinden dolayı kardeşinin hak edeceği vebalden ibarettir. Bu arada öldürülen kardeş, günahı kendine de izafe etmiştir. Öte yandan mazlum, zalimin başına gelen acıklı belayı gördüğü zaman, karşılaştığı haksızlık kendisine hafif gelir ve kalbi hoş olur.

فَطَوَّعَتْ لَهُ نَفْسُهُ قَتْلَ اَخ۪يهِ فَقَتَلَهُ فَاَصْبَحَ مِنَ الْخَاسِر۪ينَ ﴿٣٠﴾

30- “Nihayet nefsi, onu kardeşini öldürmeye itti ve onu öldürdü. Bu yüzden de kaybedenlerden oldu.”

Nefsin vesveseleri, ancak Hakk’ın nasihatleri ortadan kaybolduktan sonra sahibine hâkim olur. Böylece çirkin arzular peş peşe

gelip bozuk niyetler, kulda kökleştiği zaman hakka çağıran faktörler kayıp ve görülmez hale gelir. Nefis ise sadece şehvetlere uymayı ve günahların peşinden gitmeye çağırır. Aynı zamanda nefis, Mecusilik ahlakı üzere yaratılmıştır. Bu itibarla her kim, şehvetlerin peşine düşerse kısa zamanda pişmanlıklar duyar, sonra da bu kendisine fayda vermez.

فَبَعَثَ اللّٰهُ غُرَابًا يَبْحَثُ فِي الْاَرْضِ لِيُرِيَهُ كَيْفَ يُوَارِي سَوْاَةَ اَخِيهِ قَالَ يَا وَيْلَتٰٓى اَعَجَزْتُ اَنْ اَكُونَ مِثْلَ هٰذَا الْغُرَابِ فَاُوَارِيَ سَوْاَةَ اَخِي فَاَصْبَحَ مِنَ النَّادِمِينَ ﴿٣١﴾

31- "Derken Allah, kardeşinin cesedini nasıl gömeceğini ona göstermek için yeri eşeleyen bir karga gönderdi. Katil kardeş: 'Yazıklar olsun bana! Şu karga kadar da olamadım mı ki, kardeşimin cesedini gömeyim' dedi ve ettiğine yananlardan oldu."

Allah'ın iradesi, halkın, geçim araçları konusunda ihtiyat inceliğini yakalaması yönündedir. Bu nedenle onlar, tedbirin inceliklerinden birinde zorluk yaşadıklarında Allah, bunu kendilerine öğretecek olan bir şeyi sebep kılar.

مِنْ اَجْلِ ذٰلِكَ كَتَبْنَا عَلٰى بَنٖٓي اِسْرَٓاءٖيلَ اَنَّهُ مَنْ قَتَلَ نَفْسًا بِغَيْرِ نَفْسٍ اَوْ فَسَادٍ فِي الْاَرْضِ فَكَاَنَّمَا قَتَلَ النَّاسَ جَمٖيعًا وَمَنْ اَحْيَاهَا فَكَاَنَّمَٓا اَحْيَا النَّاسَ جَمٖيعًا وَلَقَدْ جَٓاءَتْهُمْ رُسُلُنَا بِالْبَيِّنَاتِ ثُمَّ اِنَّ كَثٖيرًا مِنْهُمْ بَعْدَ ذٰلِكَ فِي الْاَرْضِ لَمُسْرِفُونَ ﴿٣٢﴾

32- "Bundan dolayı İsrail oğullarına şöyle yazdık: Kim, bir cana veya yeryüzünde bozgunculuk çıkarmaya karşılık olmaksızın bir cana kıyarsa, bütün insanları öldürmüş gibi olur. Herkim, bir canı kurtarırsa, bütün insanları kurtarmış gibi olur. Peygamberlerimiz, onlara apaçık deliller getirdiler. Ama bundan sonra da onların çoğu, yine yeryüzünde aşırı gitmektedirler."

Bu ayet, Hz. Peygamber'in şu sözüne yakındır:

*"Kim güzel bir çığır açarsa, , hem ona hem de o çığırla amel edene kıyamete kadar sevap vardır. Kim de kötü bir çığır açarsa, hem o hem de o çığırla amel eden, kıyamete kadar vebal altına girer."*

اِنَّمَا جَزٰٓؤُا الَّذ۪ينَ يُحَارِبُونَ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ وَيَسْعَوْنَ فِي الْاَرْضِ
فَسَادًا اَنْ يُقَتَّلُوٓا اَوْ يُصَلَّبُوٓا اَوْ تُقَطَّعَ اَيْد۪يهِمْ وَاَرْجُلُهُمْ مِنْ خِلَافٍ
اَوْ يُنْفَوْا مِنَ الْاَرْضِۜ ذٰلِكَ لَهُمْ خِزْيٌ فِي الدُّنْيَا وَلَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ
عَذَابٌ عَظ۪يمٌ ﴿٣٣﴾

33- "Allah'a ve Resulüne karşı savaşanların ve yeryüzünde düzeni bozmaya çalışanların cezası, ancak ya öldürülmeleri ya asılmaları yahut el ve ayaklarının çaprazlama kesilmesi yahut da bulundukları yerden sürülmeleridir. Bu, onların dünyadaki rüsvalığıdır. Onlar için ahirette de büyük azap vardır."

Yeryüzünde bozgunculuk iki kısımdır: Biri zahirî bozgunculuktur ki, onun cezası ilmin dilinden fıkıh meseleleri arasında malumdur. Diğeri de içteki bozgunculuk olup bunun cezası sırlara dönüktür. Söz konusu ceza, kesintisiz gelmeye devam eden Hakk'ın lütuflarının kesilmesi, irfan güneşinin kararması, keşfin ardından kapanma ve bastın ardından perdelenmedir. Perdelenme, ünsiyetten sonra yabancılık hissetmek, peş peşe gelen muvaffakiyetlerin türlü türlü hayal kırıklıklarına dönüşmesi, ibadet makamında yok olmak ve nefse uyma noktasına taşınmaktır. Allah'a yemin ederim ki, bu da büyük bir utanç ve acıklı bir azaptır.

اِلَّا الَّذ۪ينَ تَابُوا مِنْ قَبْلِ اَنْ تَقْدِرُوا عَلَيْهِمْۚ فَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ
رَح۪يمٌ ﴿٣٤﴾

34- "Ancak siz kendilerini yenip ele geçirmeden önce tevbe edenler müstesna. Biliniz ki, Allah çok bağışlayıcı ve esirgeyicidir."

Her kim, üzerindeki güven örtüsü yırtılmadan önce günahlarından kopar ve kusur işlemekten vazgeçerse, zahirde ona dini cezalar uygulanmaz. Çünkü devlet nezdindeki suçu kesin değildir. Onun bu durumu, güvende olmayı hak ettiğini ispatladığı için, Allah da, onu daha önceki suçlarından sorumlu tutmaz. Şayet devlet başkanı suçunu sabit görürse, takva örtüsüne bürünse dahi, ona ceza uygulanır.

İşte böylece kul, Allah'ın gözünden düştüğü zaman, ondan sonra artık daha önce sahip olduğu Allah'a yakınlık durumuna kavuşamaz.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَابْتَغُوٓا اِلَيْهِ الْوَسِيلَةَ وَجَاهِدُوا فٖي سَبٖيلِهٖ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿٣٥﴾

35- "Ey iman edenler! Allah'tan korkun. O'na yaklaşmaya yol arayın ve yolunda cihat edin ki, kurtuluşa eresiniz."

Allah'a yaklaşmaya yol aramak, insanın kendi gücünden ve kuvvetinden sıyrılarak Allah'ın lütuf ve minnetini göreceğinden emin olmasıdır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah'a yaklaşmaya yol aramak, Allah'ın ezelde kişi için takdir ettiği iyilikle O'na yaklaşmaktır.

- Bu yol, Allah'ın kişiye daha önce lütfettiği ezeli inayettir.

- Bu yol, Allah'ın bir kimse hakkında güzellik dilemesidir.

- Bu yol, aklın şüpheden arınmasıdır.

- Allah'a yaklaşmaya yol aramak, ömrün sonuna kadar Allah'a bağlılıkta samimiyeti devam ettirmektir.

- Allah'a yaklaşmaya yol aramak, amelleri riyadan, ahvali kendini beğenmişlikten arındırmak ve nefsi arzulardan kurtarmaktır.

اِنَّ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا لَوْ اَنَّ لَهُمْ مَا فِي الْاَرْضِ جَم۪يعًا وَمِثْلَهُ مَعَهُ لِيَفْتَدُوا
بِه۪ مِنْ عَذَابِ يَوْمِ الْقِيٰمَةِ مَا تُقُبِّلَ مِنْهُمْ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَل۪يمٌ ﴿٣٦﴾

36- "Şüphe yok ki kâfir olanlar, yeryüzündeki her şey ve bunun yanında da bir o kadarı kendilerinin olsa da kıyamet gününün azabından kurtulmak için onu fidye verseler onlardan asla kabul edilmez. Onlar için acı bir azap vardır."

Allah, bugün dostlardan zerre ağırlığındaki bir iyiliği dahi kabul ederken, yarın düşmanlardan yeryüzü dolusu altını bile kabul etmez. İşte durum böyle olur.

Bir yoruma göre de, düşmanın yakınlaşmada aşırı gitmesi, gazaba sebep olur. Dostun sevgi kazanmak konusunda gizlenmeye çalışması ise, sevginin sebeplerini sağlamlaştırır.

يُر۪يدُونَ اَنْ يَخْرُجُوا مِنَ النَّارِ وَمَا هُمْ بِخَارِج۪ينَ مِنْهَا وَلَهُمْ
عَذَابٌ مُق۪يمٌ ﴿٣٧﴾

37- "Ateşten çıkmak isterler; fakat onlar oradan çıkacak değillerdir. Onlar için devamlı bir azap vardır."

Nasıl ki düşmanların ateşten kurtuluşu yok ise, aynı şekilde muvaffakiyetten uzaklaştırılmış olanlar da, rüsvalıktan kurtulmak istedikçe sürpriz utançtan dolayı kendilerini meşakkat çukuruna atan bir duruma yakalanırlar.

وَالسَّارِقُ وَالسَّارِقَةُ فَاقْطَعُوٓا اَيْدِيَهُمَا جَزَٓاءً بِمَا كَسَبَا نَكَالًا مِنَ
اللّٰهِ وَاللّٰهُ عَز۪يزٌ حَك۪يمٌ ﴿٣٨﴾

38- "Hırsızlık eden erkek ve kadının yaptıklarına karşılık bir ceza ve Allah'tan bir ibret olmak üzere, ellerini kesin. Allah, izzet ve hikmet sahibidir."

Eğer bir veli, nisap miktarı en değersiz bir şey dahi çalar ve kendisinde ceza ehliyeti bulunursa, tıpkı günahkâr kimseye uygulandığı gibi, ona da el kesme cezası uygulanır ve iyi bir kimsedir diye cezası düşmez. Bu ayette işaret edilen husus, hükümdarın emrinin tazimle karşılanmasıdır. Daha doğrusu, rütbesi daha büyük olanın önemi, daha mükemmel ve daha mahremdir. Bundan doğan sorumluluk da daha ağırdır. O halde sakın hiç kimse, zillete yeltenmeyi hafife almasın! (وَتَحْسَبُونَهُ هَيِّنًا وَهُوَ عِنْدَ اللّٰهِ عَظِيمٌ) *"Onu önemsiz sanıyorsunuz. Halbuki o, Allah katında çok büyük bir suçtur."* (Nûr, 24/15)

فَمَنْ تَابَ مِنْ بَعْدِ ظُلْمِهِ وَاَصْلَحَ فَاِنَّ اللّٰهَ يَتُوبُ عَلَيْهِ اِنَّ اللّٰهَ
غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿٣٩﴾

39- "Kim, bu haksız davranışından sonra tevbe eder ve durumunu düzeltirse, şüphesiz Allah onun tevbesini kabul eder. Allah çok bağışlayıcı ve esirgeyicidir."

Kim, tevbenin hükümlerini tam olarak yerine getirir de kaçırdığı fırsatları telafi eder, yaptıklarından pişmanlık duyar ve kötüleştirdiği durumunu düzeltirse, Allah lütfuyla ona yönelir ve kendisini bağışlar. Yine lütufla kendisine dönerek eksiklerini telafi eder.

اَلَمْ تَعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ لَهُ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ يُعَذِّبُ مَنْ يَشَٓاءُ
وَيَغْفِرُ لِمَنْ يَشَٓاءُ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ﴿٤٠﴾

40- "Bilmez misin ki, göklerde ve yerde ne varsa hepsinin mülkiyeti Allah'a aittir. Dilediğine azap eder ve dilediğini bağışlar. Allah, her şeye hakkıyla kadirdir."

Allah, azap çektirdiği kimseye bir gerekçeden dolayı azap çektirmediğini, merhamet ettiği kimseye de bir gerekçeden dolayı merhamet etmediğini, fakat kulu hakkında, mülkiyet sahibi olmasından dolayı tasarrufta bulunduğunu, hükmün O'nun hükmü, emrin de O'nun emri olduğunu açıklamaktadır.

يَٓا اَيُّهَا الرَّسُولُ لَا يَحْزُنْكَ الَّذٖينَ يُسَارِعُونَ فِي الْكُفْرِ مِنَ الَّذٖينَ
قَالُوٓا اٰمَنَّا بِاَفْوَاهِهِمْ وَلَمْ تُؤْمِنْ قُلُوبُهُمْ وَمِنَ الَّذٖينَ هَادُوا سَمَّاعُونَ
لِلْكَذِبِ سَمَّاعُونَ لِقَوْمٍ اٰخَرٖينَ لَمْ يَأْتُوكَ يُحَرِّفُونَ الْكَلِمَ مِنْ بَعْدِ
مَوَاضِعِهٖ يَقُولُونَ اِنْ اُوتٖيتُمْ هٰذَا فَخُذُوهُ وَاِنْ لَمْ تُؤْتَوْهُ فَاحْذَرُوا وَمَنْ
يُرِدِ اللّٰهُ فِتْنَتَهُ فَلَنْ تَمْلِكَ لَهُ مِنَ اللّٰهِ شَيْـًٔا اُولٰٓئِكَ الَّذٖينَ لَمْ يُرِدِ اللّٰهُ اَنْ
يُطَهِّرَ قُلُوبَهُمْ لَهُمْ فِي الدُّنْيَا خِزْيٌ وَلَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظٖيمٌ ﴿٤١﴾

41- "Ey Resûl! Kalpleri iman etmediği halde ağızlarıyla 'inandık' diyen kimselerden ve Yahudilerden küfür içinde koşuşanların hali seni üzmesin. Onlar, durmadan yalana ve sana gelmeyen bazı kimselere kulak verirler. Kelimeleri yerlerinden kaydırıp değiştirirler. 'Eğer size şu verilirse hemen alın, o verilmezse sakının' derler. Allah, bir kimseyi şaşkınlığa düşürmek isterse, sen Allah'a karşı onun lehine hiçbir şey yapamazsın. Onlar, Allah'ın kalplerini temizlemek istemediği kimselerdir. Onlar için dünyada rezillik, ahirette ise kendilerine özgü büyük bir azap vardır."

Allah, kimi yakınlık makamından uzaklaştırır ve kendisi için mühlet dizginini salıverirse, onu kendi entrikasıyla baş başa bırakır ve hem hali hem de sırrı konusunda kendisini şaşırtır. Böylece bu kimse, zannının vadilerinde bocalayıp durur. Sadece nefsi için çabalar ve bu nedenle vebali kendisine dönen işler yapar. İşte bu sebeple Allah, Peygamber'ine, öylelerini önemsemeyi terk etmesini ve durumlarını az önemsemesini emrederek o kimselerin, ilahi rahmetinden uzak olduklarını öğretmiştir. Bu arada ezeli takdirin geri çevirdiği kimseye gelecekte gerekçeler fayda vermez. Bu nedenledir ki Allah: (وَمَنْ يُرِدِ اللّٰهُ فِتْنَتَهُ فَلَنْ تَمْلِكَ لَهُ مِنَ اللّٰهِ شَيْـًٔا) *"Allah, bir kimseyi şaşkınlığa düşürmek isterse, sen Allah'a karşı onun lehine hiçbir şey yapamazsın"* buyurmuştur. Yani eğer Allah, o kimseyi mahrumiyete ehil kılmış ve utancın ağına düşürmüşse, başkalarının onun hakkındaki şefaati kabul edilmez ve kabul latifeleri ona ulaşmaz.

(أُولَٰٓئِكَ الَّذِينَ لَمْ يُرِدِ اللّٰهُ اَنْ يُطَهِّرَ قُلُوبَهُمْ) *"Onlar, Allah'ın kalplerini temizlemek istemediği kimselerdir."*

Onlar, hamurları mutluluk suyuyla yoğrulmayan ve şirk necaseti üzere yaratılan kimselerdir. Çünkü yaradılıştan gelen pislik, çeşitli muamelelerle temizlenmez.

Bir yoruma göre de, Allah'ın şaşkınlığa düşürdüğü kimse, üstüne nefsanî arzuların cazibelerini saldığı ve kaderin zelil kıldığı kimsedir. Bu nedenle onun üstüne şakâvetten başka bir şey indirilmez.

(لَهُمْ فِي الدُّنْيَا خِزْيٌ وَلَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ عَظِيمٌ) *"Onlar için dünyada rezillik, ahirette ise kendilerine özgü büyük bir azap vardır."*

Onlar, perişanlıktan perişanlığa sürüklenmiş, kendilerine ayrılık uyarısı yapılmış ve yanmaya mahkûm edilmişledir. Bu nedenle, hangi hallerinin züllü hak etmeye daha yakın olduğunu bilemezsin. Baştaki reddedilmişlikleri mi yoksa sondaki şirkleri ve inkârları mı?

سَمَّاعُونَ لِلْكَذِبِ اَكَّالُونَ لِلسُّحْتِ فَاِنْ جَٓاؤُكَ فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ اَوْ اَعْرِضْ عَنْهُمْ وَاِنْ تُعْرِضْ عَنْهُمْ فَلَنْ يَضُرُّوكَ شَيْئًا وَاِنْ حَكَمْتَ فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ بِالْقِسْطِ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُقْسِطِينَ ﴿٤٢﴾

42- "Hep yalana kulak verir, durmadan haram yerler. Sana gelirlerse, ister aralarında hüküm ver, ister onlardan yüz çevir. Eğer onlardan yüz çevirirsen, sana hiçbir zarar veremezler. Ve eğer hüküm verirsen, aralarında adaletle hükmet. Allah, âdil olanları sever."

Yani onlar dinin saygınlığını bir kenara attılar, değersiz arzular ve ufak tefek karşılıklarla yetindiler. Bu nedenle aralarında hakemlik yapmak üzere, sana başvurdukları zaman, halimliğinle onlara layık oldukları muamelede bulun. Sen, istediğinde muhayyersin. İstersen onları kabul edip aralarında hüküm ver. İstersen de onları geri çevir. Tercih senindir.

(اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُقْسِطٖينَ) *"Allah, âdil olanları sever."*

Adil olmak, nefsin arzusuna meyletmeden durumun gerektirdiği yerde durmaktır.

وَكَيْفَ يُحَكِّمُونَكَ وَعِنْدَهُمُ التَّوْرٰيةُ فٖيهَا حُكْمُ اللّٰهِ ثُمَّ يَتَوَلَّوْنَ مِنْ بَعْدِ ذٰلِكَ وَمَٓا اُو۬لٰٓئِكَ بِالْمُؤْمِنٖينَ ﴿٤٣﴾

43- "İçinde Allah'ın hükmü bulunan Tevrat yanlarında olduğu halde, nasıl seni hakem kılıyorlar da sonra, bunun arkasından yüz çevirip gidiyorlar. Onlar, inanmış kimseler değildir."

Yani onlar, inkâra kalkışmış, sapıklıkta ısrar etmiş ve imandan yüz çevirmeyi alışkanlık haline getirmişlerdir. Hal böyle olunca senin çağrın onları nasıl etkiler? Oysa kulakları kabule karşı kapalıdır ve ezeli takdir kalplerini mühürlemiştir.

اِنَّٓا اَنْزَلْنَا التَّوْرٰيةَ فٖيهَا هُدًى وَنُورٌ يَحْكُمُ بِهَا النَّبِيُّونَ الَّذٖينَ اَسْلَمُوا لِلَّذٖينَ هَادُوا وَالرَّبَّانِيُّونَ وَالْاَحْبَارُ بِمَا اسْتُحْفِظُوا مِنْ كِتَابِ اللّٰهِ وَكَانُوا عَلَيْهِ شُهَدَٓاءَ فَلَا تَخْشَوُا النَّاسَ وَاخْشَوْنِ وَلَا تَشْتَرُوا بِاٰيَاتٖي ثَمَنًا قَلٖيلًا وَمَنْ لَمْ يَحْكُمْ بِمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْكَافِرُونَ ﴿٤٤﴾

44- "Biz, içinde doğruya rehberlik ve nur olduğu halde Tevrat'ı indirdik. Kendilerini Allah'a vermiş peygamberler onunla Yahudilere hükmederlerdi. Allah'ın kitabını korumaları kendilerinden istendiği için Rablerine teslim olmuş zâhidler ve bilginler de onunla hükmederlerdi. Hepsi onun hak olduğuna şahitlerdi. Şu halde insanlardan korkmayın, benden korkun. Âyetlerimi az bir bedel karşılığında satmayın. Kim, Allah'ın indirdiği ile hükmetmezse, işte onlar kâfirlerin ta kendileridir."

Allah, İsrail oğullarından Tevrat'ı korumalarını istediğini, ancak onu tahrif ettiklerini haber vermektedir. Böylece Allah, Tevrat'ın korunmasını onlara verince onu zayi ettiler.

Bu ümmete ise Allah Kur'an'ı özgü kılmış ve kendileri için onu korumayı üzerine alarak şöyle buyurmuştur:

(إِنَّا نَحْنُ نَزَّلْنَا الذِّكْرَ وَإِنَّا لَهُ لَحَافِظُونَ) *"Kur'an'ı kesinlikle biz indirdik. Elbette onu yine biz koruyacağız."* (Hicr, 15/9)

Şüphe yok ki, eğer bir kimse, Kur'an'dan bir hareke veya sekeneyi değiştirseydi, çocuklar bile yanlış yaptığını haykıracaklardı.

(فَلَا تَخْشَوُا النَّاسَ وَاخْشَوْنِ) *"Şu halde insanlardan korkmayın, benden korkun."*

Şüphesiz yaratıklar hakkında kudretin hükümleri ve ilahi tasarrufun çeşitleri cereyan etmektedir. Bu nedenle insanlardan korkmak imkânsızın bir dalıdır. Şimdi en ufak bir yaratma gücüne sahip olmayan kimseden korkmak nasıl doğru olur!

(وَلَا تَشْتَرُوا بِاٰيَاتِي ثَمَنًا قَلِيلًا وَمَنْ لَمْ يَحْكُمْ بِمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْكَافِرُونَ) *"Ayetlerimi az bir bedel karşılığında satmayın! Kim Allah'ın indirdiğiyle hükmetmezse işte onlar, kâfirlerin ta kendileridir."*

Velilerimi inkâra ve düşmanlarımı hoşnut edecek olan şeylere meyletmeye karşılık olarak değersiz bir bedel almayın. Yoksa benden uzaklaşırsınız ve aldığınız bedelde de sizin için hiçbir bereket olmaz.

(وَمَنْ لَمْ يَحْكُمْ بِمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ) *"Kim Allah'ın indirdiğiyle hükmetmezse..."* O halde her kim, ondan başkasını hakem edinir ve onun hükmü altında hoşnutluk ve teslimiyet göstermezse o, kalbini örten bir şirk ve sırrını kuşatan bir küfür içinde olur. Bu kimsenin hidayet üzere olması ihtimal dışıdır.

وَكَتَبْنَا عَلَيْهِمْ فِيهَٓا اَنَّ النَّفْسَ بِالنَّفْسِ وَالْعَيْنَ بِالْعَيْنِ وَالْاَنْفَ بِالْاَنْفِ
وَالْاُذُنَ بِالْاُذُنِ وَالسِّنَّ بِالسِّنِّ وَالْجُرُوحَ قِصَاصٌ فَمَنْ تَصَدَّقَ بِه۪
فَهُوَ كَفَّارَةٌ لَهُ وَمَنْ لَمْ يَحْكُمْ بِمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الظَّالِمُونَ ﴿٤٥﴾

45- "Tevrat'ta onlara şöyle yazdık: Cana can, göze göz, buruna burun, kulağa kulak, dişe diş cezası verilir. Yaralar da kısastır. Kim, kısası bağışlarsa, kendisi için o kefaret olur. Kim, Allah'ın indirdiğiyle hükmetmezse, işte onlar zalimlerdir."

Allah, adaletin, Yahudilerin dininde farz olduğunu açıklamaktadır. Ancak hükümleri zayi etmeye meyledince sitemi hak etmiş oldular.

(فَمَنْ تَصَدَّقَ بِهٖ فَهُوَ كَفَّارَةٌ لَهُ) "*Kim, kısası bağışlarsa, kendisi için o kefaret olur.*" Yani kim, affa sarılmak suretiyle, kendisine ait olan alacağı terk ederse, şükrü hak etmiş olacağı için bizim katımızda bir şey kaybetmez. Ancak kim, nefsin çağrılarını kabul etmeye devam ederse, işte onlar uygun davranmamış olanlar onlardır. Yani gerçeklere bağlılığı nefsin arzularına uymakla değiştirmiş olurlar. Mertliği tercih etmeyi de beşeri arzularla değiştirmişlerdir.

وَقَفَّيْنَا عَلٰٓى اٰثَارِهِمْ بِعِيسَى ابْنِ مَرْيَمَ مُصَدِّقًا لِمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ التَّوْرٰيةِ وَاٰتَيْنَاهُ الْاِنْجِيلَ فِيهِ هُدًى وَنُورٌ وَمُصَدِّقًا لِمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ التَّوْرٰيةِ وَهُدًى وَمَوْعِظَةً لِلْمُتَّقِينَ ﴿٤٦﴾

46- "Kendinden önce gelen Tevrat'ı doğrulayıcı olarak peygamberlerin izleri üzerine, Meryem oğlu İsa'yı arkalarından gönderdik. Ve ona, içinde doğruya rehberlik ve nûr bulmak, önündeki Tevrat'ı tasdik etmek, sakınanlara bir hidayet ve öğüt olmak üzere İncil'i verdik."

Yani biz, onların ardından İsa'yı getirdik ve ona İncil'i verdik. İncil'de de kendisinden öncekileri doğrulama ve Allah'ın vacip kıldıklarını gerçekleştirme vardır. Buna rağmen onlar, ne dinin hakkını verdiler ne İncil'in farzını tanıdılar ne de peygamberin emrini korudular. Böylece yoldan çıkıp sapıttılar ve zulmedip zelil oldular.

وَلْيَحْكُمْ اَهْلُ الْاِنْجِيلِ بِمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ فِيهِ وَمَنْ لَمْ يَحْكُمْ بِمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْفَاسِقُونَ ﴿٤٧﴾

47- "İncil'e inanlar, Allah'ın onda indirdiği hükümler ile hükmetsinler. Kim, Allah'ın indirdiği ile hükmetmezse işte onlar fasıklardır."

Allah bu surede:(وَمَنْ لَمْ يَحْكُمْ بِمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْفَاسِقُونَ ) *"Kim Allah'ın indirdiğiyle hükmetmezse işte onlar, kâfirlerin ta kendileridir; işte onlar zalimlerdir; işte onlar fasıklardır"* buyurmuştur. Bu bağlamda Allah birincisinde: (وَلَا تَشْتَرُوا بِاٰيَاتٖي ثَمَنًا قَلٖيلًا وَمَنْ لَمْ يَحْكُمْ بِمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْكَافِرُونَ ) *"Ayetlerimi az bir bedel karşılığında satmayın! Kim Allah'ın indirdiğiyle hükmetmezse işte onlar, kâfirlerin ta kendileridir"* buyurmuştur. Çünkü Allah'ın indirdiğiyle hükmetmeyen kimse inkârcıdır. İnkârcı ise kâfirdir.

İkincisinde Allah: ( وَكَتَبْنَا عَلَيْهِمْ فٖيهَٓا اَنَّ النَّفْسَ بِالنَّفْسِ ... فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الظَّالِمُونَ) *"Tevrat'ta onlara şöyle yazdık: Cana can... işte onlar zalimlerdir"* buyurmuştur. Çünkü kim kısası ve mütekabiliyeti aşar da hasmına haksızlık ederse o zalimdir. Çünkü bu durumda biri diğerine zulmetmiş olur.

Üçüncüsünde ise Allah: (وَلْيَحْكُمْ اَهْلُ الْاِنْجٖيلِ بِمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ فٖيهِ ... فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْفَاسِقُونَ) *"İncil'e inanlar, Allah'ın onda indirdiği hükümler ile hükmetsinler... işte onlar fasıklardır"* buyururken bununla küfür ve inkarın altındaki bir günahı kast etmiştir.

وَاَنْزَلْنَٓا اِلَيْكَ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ مُصَدِّقًا لِمَا بَيْنَ يَدَيْهِ مِنَ الْكِتَابِ
وَمُهَيْمِنًا عَلَيْهِ فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ بِمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَٓاءَهُمْ عَمَّا
جَٓاءَكَ مِنَ الْحَقِّ لِكُلٍّ جَعَلْنَا مِنْكُمْ شِرْعَةً وَمِنْهَاجًا وَلَوْ شَٓاءَ اللّٰهُ
لَجَعَلَكُمْ اُمَّةً وَاحِدَةً وَلٰكِنْ لِيَبْلُوَكُمْ فٖي مَٓا اٰتٰيكُمْ فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرَاتِ
اِلَى اللّٰهِ مَرْجِعُكُمْ جَمٖيعًا فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ فٖيهِ تَخْتَلِفُونَ ﴿٤٨﴾

48- "Sana da daha önceki kitabı doğrulamak ve onu korumak üzere, hak olarak Kitab'ı gönderdik. Artık aralarında Allah'ın indirdiği ile hükmet. Sana gelen gerçeği bırakıp da onların arzularına uyma!

Ey ümmetler! Her birinize bir din ve bir yol verdik. Allah, dileseydi sizi bir tek ümmet yapardı. Fakat size verdiğinde sizi denemek için böyle yaptı. Öyleyse iyi işlerde birbirinizle yarışın. Hepinizin dönüşü Allah'adır. Artık size, üzerinde ayrılığa düştüğünüz şeylerin gerçek tarafını O haber verecektir."

Allah, Hz. Peygamberi, indirdiği hükümlere uymakla yükümlü kılmadan önce ona evvelkilerin kıssalarını öğretmiştir ki, o da kendisinden öncekilerin yolunu izlemesin ve onların hak ettikleri cezayı hak etmesin.

(فَاحْكُمْ بَيْنَهُمْ بِمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَٓاءَهُمْ عَمَّا جَٓاءَكَ مِنَ الْحَقِّ لِكُلٍّ جَعَلْنَا مِنْكُمْ شِرْعَةً وَمِنْهَاجًا وَلَوْ شَٓاءَ اللّٰهُ لَجَعَلَكُمْ اُمَّةً وَاحِدَةً وَلٰكِنْ لِيَبْلُوَكُمْ فٖي مَٓا اٰتٰيكُمْ) *"Artık aralarında Allah'ın indirdiği ile hükmet. Sana gelen gerçeği bırakıp da onların arzularına uyma! Ey ümmetler! Her birinize bir din ve bir yol verdik. Allah, dileseydi sizi bir tek ümmet yapardı. Fakat size verdiğinde sizi denemek için böyle yaptı."*

Bir yakının veya samimi bir dostun sevgisi sana hâkim olmasın. Sana ait olan her payı terk etmek suretiyle, Allah'ın emrine bağlılığı kabul et.

Sonra Allah: (لِكُلٍّ جَعَلْنَا مِنْكُمْ شِرْعَةً وَمِنْهَاجًا) *"Her birinize bir din ve bir yol verdik"* buyurmuştur. Bu ayette yer alan (شِرْعَةً) "şir'at" ve (مِنْهَاجًا) "minhac" kelimeleri, ikisi de yol demek olan "tarikat" ve "sünnet" demektir. Yani ey peygamberler topluluğu! Biz, her birinize bir yol verdik. Senin yolunda ise ey Muhammed, sana hiç kimse yaklaşamaz. Sen, herkesin önündesin ve tamamına üstün kılınmışsın. Eğer Allah dileseydi, mertebelerinizi eşit kılardı. Fakat imtihan için sizleri farklı kılmış, kiminizi diğer kiminize üstün kılmıştır.

(فَاسْتَبِقُوا الْخَيْرَاتِ اِلَى اللّٰهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيعًا فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ فِيهِ تَخْتَلِفُونَ) *"Öyleyse iyi işlerde birbirinizle yarışın. Hepinizin dönüşü Allah'adır. Artık size, üzerinde ayrılığa düştüğünüz şeylerin gerçek tarafını O haber verecektir."*

Herkesin iyi işlerde yarışması kendi vaktine göre olur. Bu itibarla abidlerin önde oluşu, virdler bakımındadır. Ariflerin himmeti ise, tecelliler itibariyledir.

Bir yoruma göre de zahitlerin öne geçmesi dünyayı reddetmekle, abidlerin öne geçmesi nefsanî arzuyu kesmekle, ariflerin öne geçmesi dünyevi gayeleri yok etmekle, tevhid ehlinin öne geçmesi ise varlıkları terk edip dünya ve ahireti unutmakla olur.

وَاَنِ احْكُمْ بَيْنَهُمْ بِمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَٓاءَهُمْ وَاحْذَرْهُمْ اَنْ يَفْتِنُوكَ عَنْ بَعْضِ مَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ اِلَيْكَ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاعْلَمْ اَنَّمَا يُرِيدُ اللّٰهُ اَنْ يُصِيبَهُمْ بِبَعْضِ ذُنُوبِهِمْ وَاِنَّ كَث۪يرًا مِنَ النَّاسِ لَفَاسِقُونَ ﴿٤٩﴾

49- "Aralarında Allah'ın indirdiği ile hükmet ve onların arzularına uyma. Allah'ın sana indirdiği hükümlerin bir kısmından seni saptırmamalarına dikkat et. Eğer yüz çevirirlerse, bil ki Allah ancak günahlarının bir kısmını onların başına bela etmek ister. İnsanların birçoğu da zaten yoldan çıkmışlardır."

Aralarında verdiğin hükümde Allah'a dayanarak hareket et. Geriye veya öne aldığın hususlarda Allah'ın haklarını uygula ve tercih ve terklerinde başkalarını düşünme. Çünkü hakikatte hepsi yok hükmündedir.

(فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاعْلَمْ اَنَّمَا يُرِيدُ اللّٰهُ اَنْ يُصِيبَهُمْ بِبَعْضِ ذُنُوبِهِمْ وَاِنَّ كَث۪يرًا مِنَ النَّاسِ لَفَاسِقُونَ) *"Eğer yüz çevirirlerse, bil ki Allah ancak günahlarının bir kısmını onların başına bela etmek ister. İnsanların birçoğu da zaten yoldan çıkmışlardır."*

Yani ilmin diliyle onlara vaaz et. Eğer karşı çıkarlarsa, sen hakem gözüyle onları gör. Bir yorum göre de yükümlülüğün gereklerini kabullenmede onları sıkıştır. Eğer yüz çevirirlerse, onları tasarruf gözüyle gözetle. Çünkü Allah, onları yükümlülük şartıyla yükümlü kılmakta ve tasarruf hükmüyle ileri geri almaktadır. Bu itibarla yükümlülük, Allah'ın vacip kıldıklarıyla, tasarruf ise yarattıklarıyla ilgilidir. Zaten muteber olan da yaratmak ve vacip kılmaktır.

اَفَحُكْمَ الْجَاهِلِيَّةِ يَبْغُونَ وَمَنْ اَحْسَنُ مِنَ اللّٰهِ حُكْمًا لِقَوْمٍ يُوقِنُونَ ﴿٥٠﴾

50- "Yoksa onlar, cahiliye idaresini mi arıyorlar? İyi anlayan bir topluma göre, hükümranlığı Allah'tan daha güzel kim vardır?"

Onlar, irfan şafağı parıldadıktan, hakikat güneşi doğduktan ve şüphe örtüleri yırtıldıktan sonra, perdenin karanlığına ve şaşırmışlığın yabancılığına mı dönerler?

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Onlar, deliller açığa çıkıp hakikat tecelli ettikten sonra, senden en ideal sevgiden sapmanı mı istiyorlar?

- Hakikatin güneşleri tecelli ettikten sonra onlar, hakikatlerin sırlarda kaybolmasını mı umuyorlar?

- Gerçeklerin gündüzü doğmuşken şekkin karanlığının bir hâkimiyeti olduğunu mu zannedersiniz? Asla!... Çünkü bu imkânsızdır.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا لَا تَتَّخِذُوا الْيَهُودَ وَالنَّصَارٰٓى اَوْلِيَٓاءَ بَعْضُهُمْ اَوْلِيَٓاءُ بَعْضٍ وَمَنْ يَتَوَلَّهُمْ مِنْكُمْ فَاِنَّهُ مِنْهُمْ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظَّالِم۪ينَ ﴿٥١﴾

51- "Ey iman edenler! Yahudileri ve Hıristiyanları dost edinmeyin. Zira onlar birbirinin dostudurlar. İçinizden onları dost tutanlar, onlardandır. Şüphesiz Allah, zalimler topluluğunu hidayete erdirmez."

Nefsin arzularıyla huzur bulmak veya hakkı yerine getirmekten sakınmak veya nesep yakınlığını gözetmek veya bir dostun sevgisini hak etmek ya da bir dostu gücendirmemek için Allah'ın düşmanlarıyla dostluk kurmaya meyletmeyiniz. Aksine bağlantılarınızı her yönden onlardan kopuş üzerine kurun. Zira onlar, birbirlerinin dostlarıdır. Sizler ile onlar arasındaki uzlaşmazlık da kıyamete kadar devam eder.

(بَعْضُهُمْ اَوْلِيَٓاءُ بَعْضٍ) *"İçinizden onları dost tutanlar..."* Böyle kimseler, onlara katılmış, onların yoluna girmiş ve onlardan sayılmış olurlar.

فَتَرَى الَّذِينَ فِي قُلُوبِهِمْ مَرَضٌ يُسَارِعُونَ فِيهِمْ يَقُولُونَ نَخْشٰٓى اَنْ
تُصِيبَنَا دَٓائِرَةٌ فَعَسَى اللّٰهُ اَنْ يَاْتِيَ بِالْفَتْحِ اَوْ اَمْرٍ مِنْ عِنْدِهِ فَيُصْبِحُوا
عَلٰى مَٓا اَسَرُّوا فٖيٓ اَنْفُسِهِمْ نَادِمٖينَ ﴿٥٢﴾ وَيَقُولُ الَّذٖينَ اٰمَنُوٓا اَهٰٓؤُلَٓاءِ
الَّذٖينَ اَقْسَمُوا بِاللّٰهِ جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ اِنَّهُمْ لَمَعَكُمْ حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ
فَاَصْبَحُوا خَاسِرٖينَ ﴿٥٣﴾

52, 53- "Kalplerinde hastalık bulunanların: 'Başımıza bir felaketin gelmesinden korkuyoruz' diyerek onların arasına koşuştuklarını görürsün. Umulur ki, Allah bir fetih yahut da katından bir emir getirecek de onlar, içlerinde gizledikleri şeyden dolayı pişman olacaklardır. O zaman iman edenler: 'Bunlar mıdır sizinle beraber olduklarına bütün güçleriyle yemin edenler?' diyeceklerdir. Onların bütün yaptıkları boşa gitmiştir de kaybedenlerden olmuşlardır."

Yani yürekleri hastalıklı ve hakikati bulmada basiretleri zayıf olanların kalplerine, hemen düşmanlarla iyi geçinme hissi doğar. Çünkü bu kimseler, onlardan korkmakta ve arkadaşlıklarından bir şeyler beklemektedirler. Eğer bu kimseler, düşmanların tutsaklar kadar aciz, yüz çevrilmişliğin züllü ve kovulmuşluğun yol açtığı hiçlik içerisinde olduklarına inansalardı, hakkın kendileri için yeterli olduğuna ve kendilerini güzelce koruyacağına ümit bağlayacaklardı. Lakin onlar, tevhid makamını göremedikleri için kuruntu ve zanların vadilerinde dağıldılar. Ancak ey müminler! Geçmişteki tercihten dolayı yakında ferahlığa kavuşacaksınız, Allah'ın güzel lütfuyla fetih ve murada ermek size nasip kılınacaktır. O zaman onlar, pişmanlık duyarak acı çekerken siz, başınızı dik tutacaksınız, Allah'ın tertemiz ikramından yararlanacaksınız ve kalpleriniz Allah'a yakınlığın parıltılarıyla aydınlanacaktır. İşte o zaman müminler, sırlarında

inandıkları gayb gerçeğini gözleriyle görerek ve kendilerine söz verilenlere fazlasıyla kavuşmuş olarak: (اَهٰٓؤُلَٓاءِ الَّذٖينَ اَقْسَمُوا بِاللّٰهِ جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ) *"Bunlar mıdır sizinle beraber olduklarına bütün güçleriyle yemin edenler?"* diyeceklerdir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوا مَنْ يَرْتَدَّ مِنْكُمْ عَنْ دٖينِهٖ فَسَوْفَ يَأْتِي اللّٰهُ بِقَوْمٍ
يُحِبُّهُمْ وَيُحِبُّونَهٓ اَذِلَّةٍ عَلَى الْمُؤْمِنٖينَ اَعِزَّةٍ عَلَى الْكَافِرٖينَ ﴿٥٤﴾

54- "Ey iman edenler! Sizden kim dininden dönerse, Allah sevdiği ve kendisini seven, müminlere karşı alçak gönüllü, kâfirlere karşı onurlu ve zorlu bir toplum getirecektir."

Allah, kendisini sevmeyi ve kendisince sevilmeyi, dinden dönmeyenlerin sıfatı kılmıştır. Bunda ise müminler için büyük bir müjde vardır. Çünkü dinden dönmeyeni Allah'ın sevmesi, bilinmesi gereken bir husustur. Ayette aynı zamanda ince bir işaret de vardır. Çünkü mümin olan kimsenin Allah'ı sevmesi gerekir. Allah'a sevgisi olmadığı zaman ise imanı tehlikededir. Ayet, aynı zamanda hem kulun Allah'ı sevmesinin hem de Allah'ın kulu sevmesinin caiz olduğunu ifade etmektedir.

Bu arada Allah'ın kulu sevmesi şu birkaç şekille sınırlı olur: Kula merahmet etmesi, lütuf ve iyilikte bulunması, onu övmesidir. Bir yoruma göre de, kulu kendisine yaklaştırmak ve ona yerini tahsis etmek istemesi demektir.

Bir de nasıl ki, Allah'ın rahmeti kula nimet verme iradesi ise kulunu sevmesi de ona ikramda bulunma iradesidir. Bu görüşe göre sevgi ve merhamet arasındaki fark şudur: Sevgi, belli bir nimete dair irade iken, merhamet her nimete dair irade demektir. Böylece sevgi merhametten daha dar çerçeveli olmaktadır. Ancak netice itibariyle her iki lafız aynı manayı ifade eder. Çünkü Allah'ın iradesi tek olup diğer muratlarını da onunla irade eder. Bu arada iradenin adları, taalluk ettiği şeyin vasıflarının değişmesiyle değişmektedir.

Kulun Allah'ı sevmesine gelince, bu kendisinin kalbinde hissettiği incelikli bir haldir. Bu hal, kulu Allah'ın emrine uymaya, her yönüyle haklarını tercih etmeye ve nefsinin arzularını terk etmeye sevk eder.

Bu sevgi halini dile getirmek ise, kulun bunu dile getirdiği vakitteki durumuna göre şekillenir. Buna göre sevgi şu şekillerde ifade edilir:

- Sevgi, sevgilinin varlığından dolayı kalbin rahatlamasıdır.

- Sevgi, sevenin sevgiliyi anmada bütünüyle yok olup gitmesidir.

- Sevgi, sevenin sevgilisine her yönden samimi davranmasıdır.

- Sevgi, her onurlu insanın imtihanıdır.

- Sevgi, himmetin sonucudur. Buna göre kimin himmeti daha yüksek ise sevgisi de daha katıksız, daha yeterli ve daha yüksek olur.

- Sevgi, içinde hiç sahv bulunmayan bir sekr ve sevgiliyle karşılaşıldığında temyiz yeteneğini yok eden bir dehşet halidir.

- Sevgi, dermansız bir dert ve ilaçsız bir hastalıktır.

- Sevgi, yakana yapışıp ayrılmayan bir alacaklı ve haller devam ederken sevgili adına, bütün hakları senden tahsil eden bir hasımdır.

- Sevgi, sevgiye yol açan bir olgudur. Bu itibarla Hakk'ın sevgisi, kulun sevgisine yol açmıştır.

(يُجَاهِدُونَ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ وَلَا يَخَافُونَ لَوْمَةَ لَآئِمٍ ذٰلِكَ فَضْلُ اللّٰهِ يُؤْتِيهِ مَنْ يَشَآءُ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيمٌ) *"Bunlar, Allah yolunda cihad ederler ve hiçbir kınayanın kınamasından korkmazlar. Bu, Allah'ın, dilediğine verdiği lütfüdür. Allah'ın lütfü ve ilmi geniştir."*

Eğer Allah, onları sevmeseydi, onlar da O'nu sevmezlerdi. Yine eğer Allah, onlara sevgiyi bildirmeseydi, çamurdan yaratılmış olan insan, sevgiyi nerden hatırlardı. Sonra Allah burada, sevenlerin vasfını da zikrederek: (اَذِلَّةٍ عَلَى الْمُؤْمِنِينَ اَعِزَّةٍ عَلَى الْكَافِرِينَ) *"Müminlere karşı alçak gönüllü, kâfirlere karşı onurlu ve zorlu"* buyurmuştur. Onlar,

hiç rahatsızlık duymadan canlarını sevgilinin yolunda harcamakta ve ellerindeki hiçbir imkânı esirgemeden sevgiliyi savunmada ruhlarını feda etmektedirler.

Sonra Allah, onları anlatırken: (يُجَاهِدُونَ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ) "*Bunlar, Allah yolunda cihad ederler*" buyurmuştur. Yani onlar, ibadetlerini devam ettirmek suretiyle bedenleriyle, hayal ve arzularını bırakmak suretiyle kalpleriyle, dünyalık ilişkilerini koparmak suretiyle ruhlarıyla ve her zaman şuhud istikametinde yürümek suretiyle de sırlarıyla cihad ederler.

Sonra Allah: (وَلَا يَخَافُونَ لَوْمَةَ لَآئِمٍ) "*Hiçbir kınayanın kınamasından korkmazlar*" buyurmuştur. Yani onlar, bir dostun sözüne bakmaz, kendi başlarına hüküm vermeye meyletmez, arzu ve nasiplere eğilim göstermez ve hiçbir halde vefa yolundan sapmazlar.

Sonra Allah, bütün bunların onlardan değil, kendisinden olduğunu açıklamak üzere şöyle buyurmuştur: (ذٰلِكَ فَضْلُ اللّٰهِ يُؤْتِيهِ مَنْ يَشَآءُ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيمٌ ) "*Bu, Allah'ın, dilediğine verdiği lütfudur. Allah'ın lütfu ve ilmi geniştir.*" Allah, kullarından bu meziyeti verdiği kimselere lütufta bulunmakta ve onları bilmektedir.

إِنَّمَا وَلِيُّكُمُ اللّٰهُ وَرَسُولُهُ وَالَّذِينَ اٰمَنُوا الَّذِينَ يُقِيمُونَ الصَّلٰوةَ
وَيُؤْتُونَ الزَّكٰوةَ وَهُمْ رَاكِعُونَ ﴿٥٥﴾

55- "Sizin dostunuz ancak Allah'tır, Resûlüdür, iman edenlerdir. Onlar ki Allah'ın emirlerine boyun eğerek namazı kılarlar, zekâtı verirler."

Burada dost, yardımcı demektir. Bu itibarla müminler ile Allah'ın düşmanları arasında dostluk olmaz. Zira Allah'ın düşmanları dinin de düşmanlarıdır. (إِنَّمَا ) "*innemâ*" lafzı, onun kapsamında zikredilenlerin dışındaki herkesin, dostluğa aykırı bir durumda olduğunu ifade eder. Hadiste de yer aldığı üzere, en azılı düşman ise insanın kendi nefsidir. Bu nedenle kim nefsine düşmanlık ederse, halkla husumeti, Hakk'a karşı da muhalefeti kalmamış olur.

وَمَنْ يَتَوَلَّ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ وَالَّذٖينَ اٰمَنُوا فَاِنَّ حِزْبَ اللّٰهِ هُمُ الْغَالِبُونَ ﴿٥٦﴾

56- "Kim Allah'ı, Resûlünü ve iman edenleri dost edinirse bilsin ki, üstün gelecek olanlar şüphesiz Allah'ın tarafını tutanlardır."

Bunlar, nefsi arzularını yenen, Allah'a dostluk için nefislerine düşmanlık yapan, ancak nefisleri uğruna Allah'a düşmanlık yapmayan kimselerdir. Buradaki üstünlük, el ile değil, delil ile olan üstünlüktür.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Kim, samimiyetle Allah için hareket ederse, batıl taraftarı herkes onun karşısında ezilir.

- Hakkın nurları doğduğu zaman batıl ehlinin gecesi çekip gider.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوا لَا تَتَّخِذُوا الَّذٖينَ اتَّخَذُوا دٖينَكُمْ هُزُوًا وَلَعِبًا مِنَ الَّذٖينَ اُو۫تُوا الْكِتَابَ مِنْ قَبْلِكُمْ وَالْكُفَّارَ اَوْلِيَٓاءَ وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنٖينَ ﴿٥٧﴾

57- "Ey iman edenler! Sizden önce kendilerine Kitap verilenlerden dininizi alay ve oyun konusu edinenleri ve kâfirleri dost edinmeyin. Allah'tan korkun, eğer müminler iseniz."

Allah, müminleri onlardan uzak durmaları konusunda uyarmıştır. Çünkü inançta aykırı olan hakikatte uyumlu olmaz.

Bir yoruma göre de Allah, tıpkı onların Müslümanlara hakaret gözüyle baktıkları gibi, müminlere kâfirlere küçümseyici bir gözle bakmalarını emretmiştir.

وَاِذَا نَادَيْتُمْ اِلَى الصَّلٰوةِ اتَّخَذُوهَا هُزُوًا وَلَعِبًا ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَا يَعْقِلُونَ ﴿٥٨﴾

58- “Namaza çağırdığınız zaman, onu alay ve eğlence konusu yaparlar. Bu davranış, onların düşünemeyen bir toplum olmalarındandır.”

Ezan, Allah’a yakarış makamına çağrıdır. Her kim, o makamın yüceliğine kesin olarak inanırsa, ezanı işitmek ona kalben huzur ve ruhen rahatlık sağlar. Durumun gerçek mahiyetini idrakten aciz kılınmış kimse ise, bunu oyun gözüyle görür ve alaycı bir kulakla idrak eder. Bu da Allah’ın bir hükmüdür; İstediği konuda kullarını farklı kılar.

قُلْ يَٓا اَهْلَ الْكِتَابِ هَلْ تَنْقِمُونَ مِنَّٓا اِلَّٓا اَنْ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَمَٓا اُنْزِلَ اِلَيْنَا
وَمَٓا اُنْزِلَ مِنْ قَبْلُ وَاَنَّ اَكْثَرَكُمْ فَاسِقُونَ ﴿٥٩﴾

59- “De ki: ‘Ey Kitap ehli! Yalnızca Allah’a, bize indirilene ve daha önce indirilene inandığımız için mi bizden hoşlanmıyorsunuz? Oysa çoğunuz, yoldan çıkmış kimselersiniz.’”

Sizin nazarınızda, Allah katında mahviyet içerisinde olmamız gerektiğine ve kâinatın ancak O’nun iradesiyle var olduğuna olan inancımızdan ve O’nun yolunu yine O’nun rızası için izlememizden başka bir kusurumuz yoktur. Allah’a yemin ederim ki bu, yok olmaya mahkûm sözde bir kusur ve gerçekte varit olmayan sözde bir noksanlıktır.

قُلْ هَلْ اُنَبِّئُكُمْ بِشَرٍّ مِنْ ذٰلِكَ مَثُوبَةً عِنْدَ اللّٰهِ مَنْ لَعَنَهُ اللّٰهُ وَغَضِبَ
عَلَيْهِ وَجَعَلَ مِنْهُمُ الْقِرَدَةَ وَالْخَنَازِيرَ وَعَبَدَ الطَّاغُوتَ اُو۬لٰٓئِكَ شَرٌّ
مَكَانًا وَاَضَلُّ عَنْ سَوَٓاءِ السَّبِيلِ ﴿٦٠﴾

60- “De ki: ‘Allah katında yeri bundan daha kötü olanı size haber vereyim mi? Allah’ın lanetlediği ve gazap ettiği, aralarından maymunlar, domuzlar ve tâğûta tapanlar çıkardığı kimseler. İşte bunlar, yeri daha kötü olan ve doğru yoldan daha ziyade sapmış bulunanlardır.’”

Yani adı geçen varlıklardan daha değersiz ve onlardan daha önemsiz olanlar, Allah'ın gözden düşürüp zelil kıldığı, ayrıcalık vasfından uzaklaştırıp saptırdığı, yakınlık vasfından engelleyip uzaklaştırdığı, hakikati görmekten alıkoyup kovduğu kimselerdir.

وَاِذَا جَٓاؤُ۫كُمْ قَالُوٓا اٰمَنَّا وَقَدْ دَخَلُوا بِالْكُفْرِ وَهُمْ قَدْ خَرَجُوا بِه۪
وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا كَانُوا يَكْتُمُونَ ﴿٦١﴾

61- "Yanınıza inkârla girip yine inkârla çıktıkları halde size geldiklerinde 'inandık' derler. Allah, gizlediklerini daha iyi bilmektedir."

Onlar, görünürde sadakati dile getirirken hakikatte münafıklık yaptılar. Şaşırtmaya çalışırken rezil oldular.

Böylece ne halleri saklı kaldı ne de sırları Allah katında gizli idi. Zaten batıl taraftarı herkesin durumu budur. Bir de bu gibi kimselerin durumları, hakikat erbabının aydınlık ferasetlerinde açıktır.

وَتَرٰى كَث۪يرًا مِنْهُمْ يُسَارِعُونَ فِي الْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ وَاَكْلِهِمُ
السُّحْتَ لَبِئْسَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿٦٢﴾

62- "Onlardan birçoğunun günah, düşmanlık ve haram yemede yarıştıklarını görürsün. Yaptıkları ne kadar kötüdür."

Tamahkârlıklar onlara hâkim olmuş ve kendilerini çileli şaşkınlık alanlarına cezp etmiştir. Bu ise, olmadık yerlere göz diken kimsenin özelliği olup gecikmeyen bir zül ve kuşatıcı bir küçülme demektir.

لَوْلَا يَنْهٰيهُمُ الرَّبَّانِيُّونَ وَالْاَحْبَارُ عَنْ قَوْلِهِمُ الْاِثْمَ وَاَكْلِهِمُ
السُّحْتَ لَبِئْسَ مَا كَانُوا يَصْنَعُونَ ﴿٦٣﴾

63- "Din adamları ve âlimleri, onları günah olan sözleri söylemekten ve haram yemekten menetselerdi ya! İşledikleri fiiller ne kötüdür!"

Ayette yer alan “Rabbânî” sözcüğü, Allah için ve Allah ile olup bütün benliğini Allah’a adamış kimse demektir. Kimisine göre de bu, sınırların ötesine yükselen kimse demektir.

Rabbanî, manevî afetlerden sakınan, sonra makamlara yükselen, sonra kendisine keşif olarak verilen fazla ibadetler edinen ve böylece nefsinden boşalan, beşeri vasfından arınan, Rabbi için ve Rabbi ile var olan kimse demektir.

Öte yandan Allah, Rabbânîleri din sahibi olan peygamberlere tabi kılmıştır. Bu itibarla onlar, peygamberlerin halifeleri olup sözlerinden çok davranışlarıyla halkı yanlışlıklardan alıkoyarlar. Çünkü onlar, Allah’tan bir dilekte bulundukları zaman Allah, dileklerini gerçekleştirir ve himmetlerini yönelttikleri husus gerçeğe dönüşür.

وَقَالَتِ الْيَهُودُ يَدُ اللّٰهِ مَغْلُولَةٌ غُلَّتْ اَيْد۪يهِمْ وَلُعِنُوا بِمَا قَالُوا
بَلْ يَدَاهُ مَبْسُوطَتَانِ يُنْفِقُ كَيْفَ يَشَٓاءُ وَلَيَز۪يدَنَّ كَث۪يرًا مِنْهُمْ
مَٓا اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَبِّكَ طُغْيَانًا وَكُفْرًا وَاَلْقَيْنَا بَيْنَهُمُ الْعَدَاوَةَ
وَالْبَغْضَٓاءَ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ كُلَّمَٓا اَوْقَدُوا نَارًا لِلْحَرْبِ اَطْفَاَهَا
اللّٰهُ وَيَسْعَوْنَ فِي الْاَرْضِ فَسَادًا وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ الْمُفْسِد۪ينَ ٦٤

64- “Yahudiler: ‘Allah’ın eli bağlıdır’ dediler. Hay dedikleri yüzünden elleri bağlanası ve lanet olasılar! Bilakis Allah’ın eli açıktır, dilediği gibi verir. Andolsun ki, sana Rabbinden indirilen, onlardan çoğunun azgınlığını ve küfrünü arttırır. Aralarına kıyamete kadar sürecek düşmanlık ve kin soktuk. Ne zaman savaş için bir ateş yakmışlarsa, Allah onu söndürmüştür. Onlar, yeryüzünde bozgunculuğa koşarlar. Allah ise bozguncuları sevmez.”

Allah, tevhid ehlinin, tevhid ve şahadeti dile getirdikten sonra birbirlerini gıybet etmede kullandıkları kötü sözleri, kâfirlerin Allah hakkında söylediklerine kıyasla küçük göstermiştir. Yani şayet onlar kötü bir söz söylemişlerse, bize münezzeh olduğumuz şeyler

nisbet edenler ve bizi mukaddes olduğumuz vasıflarla niteleyenlerin sözleri, onlarınkinden çok daha kötüdür.

Sonra Allah şöyle buyurmuştur: (غُلَّتْ اَيْدِيهِمْ وَلُعِنُوا بِمَا قَالُوا) *"Hay dedikleri yüzünden elleri bağlanası ve lanet olasılar!"* Bu halleriyle onlar, ne doğruluğun kokusunu alabilir ne de haktan bir nefes bile bulabilirler.

Sonra Allah, kendi zatına senada bulunarak:(بَلْ يَدَاهُ مَبْسُوطَتَانِ) *"Bilakis Allah'ın eli açıktır"* buyurmuştur. Yani aksine, Allah'ın kudreti büyük, dilediği geçerli, nimeti bol ve iradesi nafizdir.

Bir yoruma göre de, Allah'ın elinin açık olması, yaratıkları yükseltip alçaltması, faydalandırması ve defetmesi demektir. Bu arada def nimetine sahip olmayan bazı kimseler olsa da fayda nimetinden yararlanmayan hiç kimse bulunmamaktadır.

وَلَوْ اَنَّ اَهْلَ الْكِتَابِ اٰمَنُوا وَاتَّقَوْا لَكَفَّرْنَا عَنْهُمْ سَيِّاٰتِهِمْ وَلَاَدْخَلْنَاهُمْ جَنَّاتِ النَّعِيمِ ٦٥

65- "Eğer Kitap ehli, iman edip sakınsalardı, herhalde kötülüklerini örter ve onları, nimetleri bol cennetlere sokardık."

Allah, onlara sadece takva şartıyla bağışlanma sözü vermiştir. Hitabın delili, Allah'ın, içlerinden takva sahibi olmayanları bağışlamamasını gerektirmektedir. Allah bu ümmetin zalimlerine de şöyle buyurmuştur:

(ثُمَّ اَوْرَثْنَا الْكِتَابَ الَّذِينَ اصْطَفَيْنَا مِنْ عِبَادِنَا فَمِنْهُمْ ظَالِمٌ لِنَفْسِهِ) *"Sonra Kitab'ı, kullarımız arasından seçtiklerimize verdik. Onlardan kimi, kendisine zulmeder."* (Fâtır, 35/32)

Bundan sonraki ayetin başında da: (جَنَّاتُ عَدْنٍ يَدْخُلُونَهَا يُحَلَّوْنَ فِيهَا مِنْ اَسَاوِرَ مِنْ ذَهَبٍ) *"Onların mükâfatı, içine girecekleri Adn cennetleridir."* (Fâtır, 35/33) buyurmuştur. Bu kimselerden maksat, takva ehlidir. Çünkü mağfiret ehli olanlar onlardır. Şayet siz takvayı terk etseniz de yine Allah bağışlamaya ehildir.

Bir yoruma göre de, eğer onlar emrimize riayet etselerdi, biz de durumlarını düzeltirdik. Fakat onlar bundan geri durdukları için bu noktada bırakıldılar.

وَلَوْ اَنَّهُمْ اَقَامُوا التَّوْرٰيةَ وَالْاِنْجِيلَ وَمَٓا اُنْزِلَ اِلَيْهِمْ مِنْ رَبِّهِمْ لَاَكَلُوا مِنْ فَوْقِهِمْ وَمِنْ تَحْتِ اَرْجُلِهِمْ مِنْهُمْ اُمَّةٌ مُقْتَصِدَةٌ وَكَث۪يرٌ مِنْهُمْ سَٓاءَ مَا يَعْمَلُونَ ﴿٦٦﴾

66- "Eğer onlar Tevrat'ı, İncil'i ve onlara Rablerinden indirileni doğru dürüst uygulasalardı, şüphesiz hem üstlerinden hem de ayaklarının altından yerlerdi. Onlardan aşırılığa kaçmayan bir zümre vardır. Fakat çoğunun yaptıkları ne kötüdür!"

Yani eğer onlar ibadet yolunu izleselerdi, onlar için geçim vesilelerini genişletir ve durumu kolaylaştırırdık. O kadar ki, sağ elleriyle vurduklarında bereketten başka bir şeyle karşılaşmaz, sola yöneldiklerinde de ancak bolluk bulurlardı.

(مِنْهُمْ اُمَّةٌ مُقْتَصِدَةٌ وَكَث۪يرٌ مِنْهُمْ سَٓاءَ مَا يَعْمَلُونَ) *"Onlardan aşırılığa kaçmayan bir zümre vardır. Fakat çoğunun yaptıkları ne kötüdür!"*

Aşırılığa kaçmayan kişi, işin ideal sınırında duran kimse olup ne kusur işleyip noksanlığa yol açar ne de aşırı gidip fazlalığa sebep olur.

Kimisine göre de aşırılığa kaçmayan kişi, himmetinde varlıkların yokluğuyla varlığı eşit olan kimsedir.

يَٓا اَيُّهَا الرَّسُولُ بَلِّغْ مَٓا اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَبِّكَ وَاِنْ لَمْ تَفْعَلْ فَمَا بَلَّغْتَ رِسَالَتَهُ وَاللّٰهُ يَعْصِمُكَ مِنَ النَّاسِ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكَافِر۪ينَ ﴿٦٧﴾

67- "Ey Resûl! Rabbinden sana indirileni tebliğ et! Eğer bunu yapmazsan onun elçiliğini yapmamış olursun. Allah seni insanlardan koruyacaktır. Doğrusu Allah, kâfirler topluluğuna rehberlik etmez."

Başkasını düşünerek, sana vahiyle indirdiklerimizden hiçbir şeyi saklama! Çünkü hakikatte başkaları, yapmacık şekillerden başka bir şey olmayıp haklarında ilahi kudretin hükümleri cereyan etmektedir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Herkese, Âdemoğullarının efendisi olduğunu ve Âdem'in, senin sancağın altında bulunduğunu açıkla.

- Sana indirdiğim vahiyde, umursamadan asileri bağışladığımı, itaat ehlinden de dilediğimi umursamadan geri çevirdiğimi bildir.

(وَاللّٰهُ يَعْصِمُكَ مِنَ النَّاسِ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكَافِرِينَ) *"Allah seni insanlardan koruyacaktır. Doğrusu Allah, kâfirler topluluğuna rehberlik etmez."*

Allah, senin zahirini sana eziyet etmelerinden korumaktadır. Bu nedenle bundan sonra herhangi bir düşman sana musallat olmaz. Veya onların etkisinde kalmaması için Allah sırrını onlardan korur.

Bir görüşe göre de, evham denizinde boğulmaman ve onları oldukları gibi, yokluğun iki tarafı arasındaki varlık olarak görmen için Allah seni onlardan korumaktadır.

قُلْ يَٓا اَهْلَ الْكِتَابِ لَسْتُمْ عَلٰى شَيْءٍ حَتّٰى تُقِيمُوا التَّوْرٰيةَ
وَالْاِنْجِيلَ وَمَٓا اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ مِنْ رَبِّكُمْ وَلَيَزِيدَنَّ كَثِيرًا مِنْهُمْ مَٓا اُنْزِلَ
اِلَيْكَ مِنْ رَبِّكَ طُغْيَانًا وَكُفْرًا فَلَا تَاْسَ عَلَى الْقَوْمِ الْكَافِرِينَ ﴿٦٨﴾

68- "De ki: 'Ey Kitap ehli! Siz Tevrat'ı, İncil'i ve Rabbinizden size indirileni hakkıyla uygulamadıkça bir şey üzerinde değilsinizdir. Rabbinden sana indirilen, onlardan çoğunun küfür ve azgınlığını elbette arttıracaktır. O halde kâfirler topluluğuna üzülme!'"

Yani sizin yaşamanız, geçim düzeniniz, dünya ve ahiretteki değeriniz, herhangi bir durumdaki değer ve mevkiiniz, sadece emir ve yasağa riayet etmeye ve dinin hükümlerini korumaya bağlıdır.

اِنَّ الَّذٖينَ اٰمَنُوا وَالَّذٖينَ هَادُوا وَالصَّابِؤُ۫نَ وَالنَّصَارٰى مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ
وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَعَمِلَ صَالِحًا فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿٦٩﴾

69- "İman edenler ile Yahudiler, Sâbiîler ve Hıristiyanlardan Allah'a ve ahiret gününe inanıp iyi amel işleyenler üzerine asla korku yoktur. Onlar, üzülecek de değillerdir."

Halleri birbirinden farklı olsa da onlar, tevhidin esaslarında birleştikten sonra azap uyarısından kurtulabileceklerini ve fazla sevap kazanabileceklerini açıkla!

لَقَدْ اَخَذْنَا مٖيثَاقَ بَنٖٓي اِسْرَٓاءٖيلَ وَاَرْسَلْنَٓا اِلَيْهِمْ رُسُلًا كُلَّمَا جَٓاءَهُمْ
رَسُولٌ بِمَا لَا تَهْوٰٓى اَنْفُسُهُمْ فَرٖيقًا كَذَّبُوا وَفَرٖيقًا يَقْتُلُونَ ﴿٧٠﴾
وَحَسِبُوٓا اَلَّا تَكُونَ فِتْنَةٌ فَعَمُوا وَصَمُّوا ثُمَّ تَابَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ
ثُمَّ عَمُوا وَصَمُّوا كَثٖيرٌ مِنْهُمْ وَاللّٰهُ بَصٖيرٌ بِمَا يَعْمَلُونَ ﴿٧١﴾

70, 71- "Andolsun ki, İsrail oğullarının sağlam sözünü aldık ve onlara peygamberler gönderdik. Ne zaman bir peygamber onlara nefislerinin arzu etmediğini getirdi ise bir kısmını yalanladılar, bir kısmını da öldürdüler. Bir bela olmayacak zannettiler de kör ve sağır kesildiler. Sonra Allah, tevbelerini kabul etti. Sonra içlerinden çoğu yine kör ve sağır oldu. Allah, onların yaptıklarını görmektedir."

Onlar, nefislerine uydukları için belaya düştüler. Nitekim şakâvetin emarelerinden biri de, nefse uymada ısrar etmektir. Onlar, hiçbir bela olmayacağını zannederek kör ve sağır oldular. Kendilerine uzun süre mühlet verilmesiyle aldandılar ve çirkin amellerde ısrar ettiler. Bu arada onları ansızın azap yakalayıverince onlara pişmanlık fayda vermedi ve acı içerisinde kıvrandılar.

لَقَدْ كَفَرَ الَّذٖينَ قَالُوٓا اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْمَسٖيحُ ابْنُ مَرْيَمَ وَقَالَ الْمَسٖيحُ
يَا بَنٖٓي اِسْرَٓاءٖيلَ اعْبُدُوا اللّٰهَ رَبّٖي وَرَبَّكُمْ اِنَّهُ مَنْ يُشْرِكْ بِاللّٰهِ فَقَدْ
حَرَّمَ اللّٰهُ عَلَيْهِ الْجَنَّةَ وَمَاْوٰيهُ النَّارُ وَمَا لِلظَّالِمٖينَ مِنْ اَنْصَارٍ ﴿٧٢﴾

72- "Andolsun ki, 'Allah, kesinlikle Meryem oğlu Mesih'tir' diyenler kâfir olmuşlardır. Halbuki Mesih: 'Ey İsrail oğulları! Rabbim ve Rabbiniz olan Allah'a kulluk ediniz. Biliniz ki, kim Allah'a ortak koşarsa, muhakkak Allah ona cenneti haram kılar. Artık onun yeri ateştir ve zalimler için yardımcılar yoktur' demişti."

Onların basiretleri hastalıklı hale gelmiş olup yaratılmışlığın emarelerini şaşırdıkları için inançlarında, kıdem sıfatlarını hak etmeyi, sonradan yaratılmış olmanın özellikleriyle karıştırmış oldular.

لَقَدْ كَفَرَ الَّذٖينَ قَالُوٓا اِنَّ اللّٰهَ ثَالِثُ ثَلٰثَةٍ وَمَا مِنْ اِلٰهٍ اِلَّٓا اِلٰهٌ وَاحِدٌ
وَاِنْ لَمْ يَنْتَهُوا عَمَّا يَقُولُونَ لَيَمَسَّنَّ الَّذٖينَ كَفَرُوا مِنْهُمْ عَذَابٌ
اَلٖيمٌ ﴿٧٣﴾ اَفَلَا يَتُوبُونَ اِلَى اللّٰهِ وَيَسْتَغْفِرُونَهُ وَاللّٰهُ غَفُورٌ رَحٖيمٌ ﴿٧٤﴾

73, 74- "Andolsun 'Allah üçün üçüncüsüdür' diyenler de kâfir olmuşlardır. Halbuki bir tek Allah'tan başka hiçbir tanrı yoktur. Eğer söyleye geldiklerinden vazgeçmezlerse, içlerinden kâfir olanlara acı bir azap isabet edecektir. Hala Allah'a tevbe edip O'ndan bağışlanmayı dilemeyecekler mi? Allah çok yarlığayıcı, çok esirgeyicidir."

Perişanlık, onları öyle bir noktaya getirdi ki, apaçık gerçeğe karşı inada başvurarak bir olan Allah için "üç" dediler. Bu iddianın geçersizliği akıllı insan şöyle dursun, bir deliye dahi gizli kalmaz.

(اَفَلَا يَتُوبُونَ اِلَى اللّٰهِ وَيَسْتَغْفِرُونَهُ وَاللّٰهُ غَفُورٌ رَحٖيمٌ) *"Hâlâ Allah'a tevbe edip O'ndan bağışlanmayı dilemeyecekler mi? Allah çok yarlığayıcı, çok esirgeyicidir."* Bu ayet, çirkin sözleri ve bozuk inançlarına rağmen, Allah'ın onların yüzüne tevbe kapısını kapatmadığını göstermektedir.

Maksat, ilahi rahmetin inceliklerine iman edenlerin ümitlerini arttırmaktır.

مَا الْمَسِيحُ ابْنُ مَرْيَمَ اِلَّا رَسُولٌ قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِ الرُّسُلُ وَاُمُّهُ صِدِّيقَةٌ كَانَا يَأْكُلَانِ الطَّعَامَ اُنْظُرْ كَيْفَ نُبَيِّنُ لَهُمُ الْاٰيَاتِ ثُمَّ انْظُرْ اَنّٰى يُؤْفَكُونَ ﴿٧٥﴾

75- "Meryem oğlu Mesih ancak bir resuldür. Ondan önce de birçok resûller gelip geçmiştir. Anası da çok doğru bir kadındır. Her ikisi de yemek yerlerdi. Bak, onlara delilleri nasıl açıklıyoruz. Sonra bak, haktan nasıl yüz çeviriyorlar."

Rahme sığan ve peş peşe gelen etkilere sırayla maruz kalan kimse, tanrılık vasfına nasıl layık olur?

Sonra şiddetli ihtiyaç içerisine giren ve yemek yemenin yanı sıra, yediğini dışarı atmak zorunda kalan bir kimsenin, mabut olmayı hak etmesi ve tanrı olarak adlandırılması nasıl uygun olur?!

Bak ey Muhammed, nasıl da biz delili fazlasıyla açıklıyoruz ve nasıl da onlar yolu şaşırıyorlar!

قُلْ اَتَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ مَا لَا يَمْلِكُ لَكُمْ ضَرًّا وَلَا نَفْعًا وَاللّٰهُ هُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ﴿٧٦﴾

76- "De ki: 'Allah'ı bırakıp da sizin için faydaya ve zarara gücü yetmeyen şeylere mi tapıyorsunuz? Hakkıyla işiten ve bilen yalnız Allah'tır.'"

Şerri def edip hayrı temin etme talebinde kalpleri Allah dışındaki şeylere bağlamak, faydasız şeyde vakit kaybetmek ve boşuna ömür tüketmektir. Zira bir olan yaratıcı benzersizdir.

قُلْ يَٓا اَهْلَ الْكِتَابِ لَا تَغْلُوا فِي دِينِكُمْ غَيْرَ الْحَقِّ وَلَا تَتَّبِعُٓوا اَهْوَٓاءَ قَوْمٍ قَدْ ضَلُّوا مِنْ قَبْلُ وَاَضَلُّوا كَثِيرًا وَضَلُّوا عَنْ سَوَٓاءِ السَّبِيلِ ﴿٧٧﴾

77- "De ki: 'Ey Kitap ehli! Dininizde haksız yere haddi aşmayın! Daha önceden sapan, birçoklarını saptıran ve yolun doğrusundan uzaklaşan bir topluma uymayın.'"

Bâtılda derinleşmek, dönüş ümitlerini yok etmek demektir. Bu itibarla Allah'tan ne kadar çok uzaklaşılsa, dönüşten ümitsizlik o kadar kesin olur. Öte yandan dalalete uyan kimse, onu uydurandan daha kötüdür. Çünkü uyduran yapıyı kurmaya başlar, uyan ise onu tamamlar. Bu nedenle, şerri tamamlayan, onu başlatandan daha kötüdür.

لُعِنَ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ بَنِي اِسْرَآءِيلَ عَلٰى لِسَانِ دَاوُدَ وَعِيسَى ابْنِ مَرْيَمَ ذٰلِكَ بِمَا عَصَوْا وَكَانُوا يَعْتَدُونَ ﴿٧٨﴾

78- "İsrail oğullarından kâfir olanlar, Davud ve Meryem oğlu İsa'nın dilinden lanetlenmişlerdir. Bunun sebebi, söz dinlememeleri ve sınırı aşmalarıdır."

Allah, peygamberlere emretmiş, onlar da kâfirleri kötülükle zikretmişlerdir. Velilerden ise bizatihi Allah söz ederek: (هُوَ الَّذِي يُصَلِّي عَلَيْكُمْ) *"Üzerinize rahmetini gönderen O'dur"* (Ahzâb, 33/43) buyurmuştur. Böylece kâfirler peygamberlerin diliyle lanetlenirken, müminlerin güzellik ile zikri, Hakk'ın diliyle olmuştur. O kadar ki, Hakk'ın bu zikri, kötüleyici dahi olsaydı, onda yine fazileti hak etme özelliği olacaktı. Şimdi bu zikir güzellik ile olduğuna göre, bundaki fazilet ne kadar da büyüktür!

Şiir:

*Beni kötü karşılaman beni üzmüşse eğer*
*Kuşkusuz sevindirmiştir beni hatırlaman*

كَانُوا لَا يَتَنَاهَوْنَ عَنْ مُنْكَرٍ فَعَلُوهُ لَبِئْسَ مَا كَانُوا يَفْعَلُونَ ﴿٧٩﴾

79- "Onlar, işledikleri kötülükten birbirlerini vazgeçirmeye çalışmazlardı. Andolsun yaptıkları ne kötüdür!"

Sevgilinin emrine yapılan muhalefete rıza göstermek, muhalefet edene muvafakat demektir. Muhalefetin belirginleşmesinden sonra ise kibirlenme olmaz. Sana karşı yapılan bir haksızlık karşısında susman onurdur. Sevgilin hakkında söylenenlere göz yumman ise alçaklıktır.

تَرٰى كَثٖيرًا مِنْهُمْ يَتَوَلَّوْنَ الَّذٖينَ كَفَرُوا لَبِئْسَ مَا قَدَّمَتْ لَهُمْ اَنْفُسُهُمْ اَنْ سَخِطَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ وَفِي الْعَذَابِ هُمْ خَالِدُونَ ﴿٨٠﴾

80- "Onlardan çoğunun, inkâr edenlerle dostluk ettiklerini görürsün. Nefislerinin onlar için önceden hazırladığı şey ne kötüdür. Allah onlara gazap etmiştir ve onlar, azap içinde devamlı kalıcıdırlar."

Kötülerin en kötü hasletleri, dosta karşı olan kimseyle uyum içinde olmaktır. Bu nedenle şayet Allah'ın gazabı, düşmanlarına dostluk yapmaya bağlı ise rahmeti de düşmanlarına düşmanlık yapmaya bağlıdır.

وَلَوْ كَانُوا يُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَالنَّبِيِّ وَمَٓا اُنْزِلَ اِلَيْهِ مَا اتَّخَذُوهُمْ اَوْلِيَٓاءَ وَلٰكِنَّ كَثٖيرًا مِنْهُمْ فَاسِقُونَ ﴿٨١﴾

81- "Eğer onlar, Allah'a, Peygamber'e ve O'na indirilene iman etmiş olsalardı, onları dost edinmezlerdi. Fakat onların çoğu yoldan çıkmışlardır."

Allah, Hz. Peygamber'e karşı çıkanlarla uyum içinde olan kimsenin ondan uzaklaşmayı tercih ettiğini açıklamaktadır. Çünkü eğer bu kimse ile Hz. Peygamber arasında kopmamış en ufak bir bağ olsaydı, Hz. Peygamber onun dostluğunu samimiyetle kabul eder, o da Hz. Peygamber'e karşı iyi niyetli davranırdı.

لَتَجِدَنَّ اَشَدَّ النَّاسِ عَدَاوَةً لِلَّذٖينَ اٰمَنُوا الْيَهُودَ وَالَّذٖينَ اَشْرَكُوا وَلَتَجِدَنَّ اَقْرَبَهُمْ مَوَدَّةً لِلَّذٖينَ اٰمَنُوا الَّذٖينَ قَالُٓوا اِنَّا نَصَارٰى ذٰلِكَ بِاَنَّ مِنْهُمْ قِسّٖيسٖينَ وَرُهْبَانًا وَاَنَّهُمْ لَا يَسْتَكْبِرُونَ ﴿٨٢﴾

82- "İnsanlar içerisinde iman edenlere düşmanlık bakımından en şiddetli olarak Yahudiler ile şirk koşanları bulacaksın. Onlar içinde iman edenlere sevgi bakımından en yakın olarak da: 'Biz Hıristiyanlarız' diyenleri bulacaksın. Çünkü onların içinde keşişler ve rahipler vardır ve onlar büyüklük taslamazlar."

Allah, düşmanlık vasfında birleştikleri halde bazılarının düşmanlığının diğer bazısından fazla olduğunu açıklamıştır. Bu arada hak ehlinin Hıristiyanlardaki eseri, sahip oldukları rahiplik kadardır. Onlar, her ne kadar kurtuluşu sağlayacak kadar müminlerden yararlanmamışlarsa da hiç olmazsa Allah, kendilerini has mümin kullarına yakın olmakla anmıştır.

وَاِذَا سَمِعُوا مَٓا اُنْزِلَ اِلَى الرَّسُولِ تَرٰٓى اَعْيُنَهُمْ تَفِيضُ مِنَ الدَّمْعِ
مِمَّا عَرَفُوا مِنَ الْحَقِّ يَقُولُونَ رَبَّنَٓا اٰمَنَّا فَاكْتُبْنَا مَعَ الشَّاهِدِينَ ﴿٨٣﴾

83- "Peygamber'e indirileni duydukları zaman, tanış çıktıkları gerçekten dolayı gözlerinden yaşlar boşandığını görürsün. Derler ki: 'Rabbimiz! İman ettik. Bizi şahit olanlarla beraber yaz.'"

Bu, Allah'ın kabul nazarıyla baktığı kimsenin sıfatıdır. Şöyle ki, kulaklarına hakkın çağrısı gittiği zaman kalplerindeki basiret gülümser. Böylece onlar, buldukları hakikatten dolayı, işitilenden huzura kavuşurlar.

وَمَا لَنَا لَا نُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَمَا جَٓاءَنَا مِنَ الْحَقِّ وَنَطْمَعُ اَنْ يُدْخِلَنَا رَبُّنَا
مَعَ الْقَوْمِ الصَّالِحِينَ ﴿٨٤﴾

84- "Rabbimizin bizi iyiler arasına katmasını umup dururken niçin Allah'a ve bize gelen gerçeğe iman etmeyelim?"

Kalplerimizde deliller tecelli ettiği halde şüpheli alanlarda debelenmek konusunda ne mazeretimiz olabilir! Sonra umduğumuz güzel akıbeti biz O'nsuz nasıl isteyebiliriz!

فَاَثَابَهُمُ اللّٰهُ بِمَا قَالُوا جَنَّاتٍ تَجْر۪ي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِد۪ينَ
ف۪يهَا وَذٰلِكَ جَزَٓاءُ الْمُحْسِن۪ينَ ﴿٨٥﴾

85- “Söyledikleri sözden dolayı Allah onlara, içinde devamlı kalmak üzere, zemininden ırmaklar akan cennetleri mükâfat olarak verdi. İyilik yapanların mükâfatı işte budur.”

Umutları içten olunca Allah, kendisine ümit besleyeni boş çevirmeme prensibi çerçevesinde onları kabul ile karşılamıştır. Ancak sevabı, şuhuduna dair şahitlik demek olan kalbin sözüne bağlamıştır. Basiretten kopuk nazara gelince o, ne sevap kazandırır ne de sonuç verir.

وَالَّذ۪ينَ كَفَرُوا وَكَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَٓا اُو۬لٰٓئِكَ اَصْحَابُ الْجَح۪يمِ ﴿٨٦﴾

86- “İnkâr eden ve ayetlerimizi yalanlayanlara gelince, işte onlar cehennemliklerdir.”

Bu, velilere lütufta bulunmasına karşılık, Allah’ın düşmanlardan yüz çevirmesinin er veya geç yol açtığı sonuçtur.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا لَا تُحَرِّمُوا طَيِّبَاتِ مَٓا اَحَلَّ اللّٰهُ لَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوا
اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَد۪ينَ ﴿٨٧﴾

87- “Ey iman edenler! Allah’ın size helal kıldığı iyi ve temiz şeyleri siz kendinize haram kılmayın ve sınırı aşmayın. Allah, sınırı aşanları sevmez.”

Emrin sınırında durmak, saadetin emarelerindendir. Eğer Allah bir şeyi mubah kılarsa, onu kabul eder ve huşu ile karşılar. Şayet bir şeyi yasaklarsa, bu kez de o noktada durur ve inkâra yeltenmez.

Bu çerçevede Allah’ın mubah kıldığı güzelliklerden biri de, halvet makamlarında ibadetlerin esintisiyle huzur bulmaktır. Bunun ha-

ram kılınmasının sebebi ise uzlet yerine karışıklığı, halvet yerine de işreti tercih etmektir ki, bu büyük düşmanlık ve apaçık kayıptır.

وَكُلُوا مِمَّا رَزَقَكُمُ اللّٰهُ حَلَالًا طَيِّبًا وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذٖٓي اَنْتُمْ بِهٖ مُؤْمِنُونَ ﴿٨٨﴾

88- "Allah'ın size helal ve temiz olarak verdiği rızıklardan yeyin ve kendisine iman etmiş olduğunuz Allah'tan korkun."

Katıksız helal, kulun, Allah'ı görürcesine yediğidir. Durum bunun altına indiği zaman, bu kez Allah'ı anarak yediğidir. Çünkü gaflet üzere yemek, müridlik ilkesinde haramdır.

لَا يُؤَاخِذُكُمُ اللّٰهُ بِاللَّغْوِ فٖٓي اَيْمَانِكُمْ وَلٰكِنْ يُؤَاخِذُكُمْ بِمَا عَقَّدْتُمُ الْاَيْمَانَۚ فَكَفَّارَتُهُٓ اِطْعَامُ عَشَرَةِ مَسَاكٖينَ مِنْ اَوْسَطِ مَا تُطْعِمُونَ اَهْلٖيكُمْ اَوْ كِسْوَتُهُمْ اَوْ تَحْرٖيرُ رَقَبَةٍۜ فَمَنْ لَمْ يَجِدْ فَصِيَامُ ثَلٰثَةِ اَيَّامٍۜ ذٰلِكَ كَفَّارَةُ اَيْمَانِكُمْ اِذَا حَلَفْتُمْۜ وَاحْفَظُٓوا اَيْمَانَكُمْۜ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيَاتِهٖ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿٨٩﴾

89- "Allah, kasıtsız olarak ağzınızdan çıkıveren yeminlerinizden dolayı sizi sorumlu tutmaz. Fakat bilerek yaptığınız yeminlerden dolayı, sizi sorumlu tutar. Bunun da kefareti, ailenize yedirdiğiniz yemeğin orta hallisinden on fakire yedirmek yahut onları giydirmek yahut da bir köle azat etmektir. Bunları bulamayan, üç gün oruç tutmalıdır. Yemin ettiğiniz takdirde yemininizin kefareti işte budur. Yeminlerinizi koruyun. Belki şükredersiniz diye Allah, size ayetlerini açıklıyor."

Ayet, Allah'ın lütfüne veya O'na kavuşmaya olan susamışlığın, insanın kalbine galebe çaldığı vakte işaret etmektedir. Böylece insan, kendisine bu lütuftan birazcık bahşetmesi için Allah'ın cemaline veya celaline yemin eder. Aynı şekilde hoşnutluk prensibinde de bir

tür yemin söz konusudur. Böylece Allah, zayıf halinden dolayı insana merhamet etmek için onu bağışlar. En iyisi ise, insanın, Allah'ın kendisi hakkında icra ettiği ret ve yüz çevirme hükümleri altında gönül hoşnutluğuyla eriyip sönmesi ve Allah'ın haklarını yerine getirme konusundaki istikameti, onu kendisine güzellikle yaklaştırıp lütufta bulunmak suretiyle ikramda bulunmasına tercih etmesidir.

Şiir:

*Vuslatını isterken ben, istemekte o hicranımı*
*Terk ederim ben isteğimi onun isteği için*

Tarikat ehline göre, vecdin galebe çaldığı hallerde ahdi tecrit edip akdi pekiştirmeye dönük olarak ağızdan çıkan sözler de kasıtsız yemindendir. Mesela şu söz gibi:

Hakkına yemin ederim ki, senden başkasına bakmadım, senden başkasıyla söz söylemedim ve senin ahdinden dönmedim vb.

Bütün bunlar, tevhidin hükmünde kasıt dışıdır ve birlik ahdinin şuhudundan gafil kalmaktır. İnsan yükseklik bakımından kimdir ki, nefsini yok sayar. Mekânda kim vardır ki, insan onu terk etmekten söz edebilsin veya ona kavuşmaktan ya da ondan ayrı düşmekten emin olabilsin! Hayır, hayır... Doğrusu O, bir ve yegâne galip olan Allah'tır.

Bir de nasıl ki, dinî kefaret köle azat etmek veya yedirmek veya giydirmek yahut da bunlara güç yetirilemediği takdirde üç gün oruç tutmak ise, işarete göre göre de onların kefareti ya vecdin hükmüyle ruhu ya doğru niyetle kalbi ya da çabanın devamıyla nefsi feda etmektir. Şayet aciz kalırsan bu kefaret, yasaklardan sakınarak manen oruç tutmaktır.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوٓا اِنَّمَا الْخَمْرُ وَالْمَيْسِرُ وَالْاَنْصَابُ وَالْاَزْلَامُ
رِجْسٌ مِنْ عَمَلِ الشَّيْطَانِ فَاجْتَنِبُوهُ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿٩٠﴾

90- "Ey iman edenler! Şarap, kumar, dikili taşlar, fal ve şans okları şeytan işi birer pisliktir. O halde bunlardan uzak durun ki kurtuluşa eresiniz."

"Hamr(içki)", akılları örten şeydir ve haramdır. Buradaki işaret, içkinin yol açtığı kafa karışıklığı sebebiyle aklın fazlasıyla tükenmesine sebep olduğu şeklindedir. Bu arada gaflet içkisinden içen kimsenin sarhoşluğu daha ağır olur. Bu nedenle gaflet şarabı, hakikatten uzaklaşmaya sebep olur. Nasıl ki dünya içkisinden sarhoş olan kimse, namazdan alıkonuluyorsa, aynı şekilde gaflet içkisiyle sarhoş olan kimse de, Allah ile irtibattan engellenmiş olur.

Ve nasıl ki dünya içkisini içene ceza lazım geliyorsa, aynı şekilde gaflet şarabını içene de ceza lazım gelir. Çünkü o da korku kırbaçlarıyla kırbaçlanır.

Bir de nasıl ki ayılmadığı sürece, sarhoşa ceza uygulanmıyorsa, aynı şekilde gafil de gafletinden vazgeçmedikçe vaaz onda etkili olamaz.

Ve nasıl ki, büyük günahların anahtarı içki içmek ise, aynı şekilde gaflet de her yanılgının aslı, her zilletin sebebi ve Allah'tan uzaklığın ve alıkonulmuşluğun başlangıcıdır.

Bir yoruma göre de, Allah insana dünya şarabını haram kılarken muhakkak ona kalplerin şarabını mubah kılmıştır. Bu nedenle büyük günahlardan olan şarap haramdır. Ünsiyet şarabı ise alabildiğine serbesttir. Sofiler de vecdleri oranında bu şaraptan yararlanmışlardır. Öte yandan nerde şarap varsa orda sarhoşluk vardır.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Ne içireni usandı ne de içeni*
*Bakışların şarabıdır, badesi sarhoş eder akılları*
*Sözümle ayılman vuslattır tamamı*
*Bakışımla sarhoş olman da mubah kılar sana içmeyi*

Dinde kumar da haram kılınmıştır. Sevgi kanununda sofiler çaresizdir. Bu itibarla işaret bakımından bedenleri takdir caddelerinin üstüne atılmıştır. İlahi kudretin eseri olan her yolcu, o yollara ayak basmaktadır. Ruhları da, çaresizlik gereğince mubah kılınmıştır. Hükümden (...) kura onlar hakkında böyle çıkmıştır. Allah da şöyle buyurmuştur:

(فَسَاهَمَ فَكَانَ مِنَ الْمُدْحَضِينَ) *"Karşılıklı kura çektiler de o, kaybedenlerden oldu."* (Saffât, 37/141)

اِنَّمَا يُرِيدُ الشَّيْطَانُ اَنْ يُوقِعَ بَيْنَكُمُ الْعَدَاوَةَ وَالْبَغْضَٓاءَ فِي الْخَمْرِ
وَالْمَيْسِرِ وَيَصُدَّكُمْ عَنْ ذِكْرِ اللّٰهِ وَعَنِ الصَّلٰوةِ فَهَلْ اَنْتُمْ مُنْتَهُونَ ﴿٩١﴾

91- "Şeytan, içki ve kumar yoluyla ancak aranıza düşmanlık ve kin sokmak, sizi Allah'ı anmaktan ve namazdan alıkoymak ister. Artık bunlardan vazgeçtiniz değil mi?"

Uzun süre hakikatten uzak kaldılar. Böylece gurbet çöllerinde perişanlık çektiler ve şeytanın oyuncağı oldular. Allah'a yakarışın ve noksansız huzurun yeri olan namazdan geri kaldılar ve meydana gelen kin ve nefret sebebiyle araları açılmış oldu.

وَاَطِيعُوا اللّٰهَ وَاَطِيعُوا الرَّسُولَ وَاحْذَرُوا فَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَاعْلَمُوٓا اَنَّمَا
عَلٰى رَسُولِنَا الْبَلَاغُ الْمُبِينُ ﴿٩٢﴾

92- "Allah'a itaat edin, Peygamber'e de itaat edin ve kötülüklerden sakının. Eğer itaatten yüz çevirirseniz, bilin ki, peygamberimizin vazifesi apaçık duyurmak ve bildirmektir."

Kul Rabbini daha çok tanıdıkça, ondan daha çok korkar. Korkunun kulun üzerinden kalkması ise, vaadin Allah'ın: (اُولٰٓئِكَ لَهُمُ الْاَمْنُ) *"İşte güven onlarındır"* (En'âm, 6/82), sözüyle gerçekleşmesi sırasında olur. Bu da cennete girildiği zamandır. Gerçek korku ise, nefeslerin gidiş gelişleriyle beraber kalbin devamlı yardım dileğinde bulunmasıdır.

لَيْسَ عَلَى الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ جُنَاحٌ فِيمَا طَعِمُوٓا
اِذَا مَا اتَّقَوْا وَاٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ ثُمَّ اتَّقَوْا وَاٰمَنُوا ثُمَّ اتَّقَوْا
وَاَحْسَنُوا وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُحْسِنِينَ ﴿٩٣﴾

93- "İman eden ve iyi işler yapanlara, hakkıyla sakınıp iman ettikleri ve iyi işler yaptıkları, sonra yine hakkıyla sakınıp iman ettikleri, sonra da hakkıyla sakınıp yaptıklarını, ellerinden geldiğince güzel yaptıkları takdirde tattıklarından dolayı günah yoktur. Allah, iyi ve güzel yapanları sever."

Kim emir ve yasağı korursa, yediği lokmanın kendsini sıkıntıya sokacak kadar önemi olmaz. Esas itibariyle kuldan beklenen, Allah yolunda yürürken sohbet adabına riayet etmesidir. Şöyle ki, kul şirkten sakındığı zaman Allah'ı tanımış, sonra haramdan sakındığı zaman ona bulaşmamış, ihtirastan sakındığı zaman da doğru tercihte bulunmuş ve israf yapmamış olur.

(وَاٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ ثُمَّ اتَّقَوْا وَاٰمَنُوا ثُمَّ اتَّقَوْا وَاَحْسَنُوا) *"... sonra yine hakkıyla sakınıp iman ettikleri, sonra da hakkıyla sakınıp yaptıklarını, ellerinden geldiğince güzel yaptıkları takdirde..."* Yani iyiliğe engel olmaktan sakındıkları ve halka iyilik yaptıkları zaman... Bu durum avam içindir. Sonra halkı görmekten sakınıp hakkı güzel gördükleri zaman... Hakkı güzel görmek ise, Allah'ı görüyormuş gibi O'na ibadet etmektir. Bu da havas içindir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا لَيَبْلُوَنَّكُمُ اللّٰهُ بِشَيْءٍ مِنَ الصَّيْدِ تَنَالُهُٓ اَيْد۪يكُمْ
وَرِمَاحُكُمْ لِيَعْلَمَ اللّٰهُ مَنْ يَخَافُهُ بِالْغَيْبِ فَمَنِ اعْتَدٰى بَعْدَ
ذٰلِكَ فَلَهُ عَذَابٌ اَل۪يمٌ ﴿٩٤﴾ يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا لَا تَقْتُلُوا الصَّيْدَ
وَاَنْتُمْ حُرُمٌ وَمَنْ قَتَلَهُ مِنْكُمْ مُتَعَمِّدًا فَجَزَٓاءٌ مِثْلُ مَا قَتَلَ مِنَ
النَّعَمِ يَحْكُمُ بِه۪ ذَوَا عَدْلٍ مِنْكُمْ هَدْيًا بَالِغَ الْكَعْبَةِ اَوْ كَفَّارَةٌ
طَعَامُ مَسَاك۪ينَ اَوْ عَدْلُ ذٰلِكَ صِيَامًا لِيَذُوقَ وَبَالَ اَمْرِه۪ عَفَا اللّٰهُ
عَمَّا سَلَفَ وَمَنْ عَادَ فَيَنْتَقِمُ اللّٰهُ مِنْهُ وَاللّٰهُ عَز۪يزٌ ذُو انْتِقَامٍ ﴿٩٥﴾

94, 95- "Ey iman edenler! Allah sizi ellerinizin ve mızraklarınızın erişeceği bir avlanma ile dener ki, gizlide kendisinden kimin korktuğu ortaya çıksın. Kim bundan sonra sınırı aşarsa, onun için acı bir azap vardır. Ey iman edenler! İhramlı iken avı öldürmeyin. İçinizden kim onu kasten öldürürse, öldürdüğü hayvanın dengi ona cezadır. Buna Kâbe'ye varacak bir kurban olmak üzere, içinizden adalet sahibi iki kişi hükmeder. Yahut avlanmanın cezası, fakirleri doyurmaktan ibaret bir kefarettir. Yahut onun dengi oruç tutmaktır. Allah geçmişi affetmiştir. Kim, bu suçu tekrar işlerse, Allah da ondan karşılığını alır. Allah daima galiptir, öç alandır."

Allah, ihramda olmayan kimseye avlanmayı helal kılmıştır. Niyeti Kâbe'yi ziyaret etmek olan ihramlı kimseye ise avlanmayı yasaklamıştır. Ayet şuna işaret etmektedir: Bizim evimize niyetlenen kimsenin elinden av güven içinde olmalıdır. Ondan hiçbir canlı hiçbir şekilde incinmemelidir. Bu nedenle demişlerdir ki: *İyi insan, karıncayı bile incitmeyen ve kalbinde kötülük beslemeyen kimsedir.*

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Bizi kast eden kimse, arzuları topluca atmalı ve hiçbir şekilde beklentisi olmamalıdır.

Bir de nasıl ki, ihramdan çıkıncaya kadar ihramlıya avlanmak haram ise aynı şekilde kalbiyle ihramda olduğu sürece, vec halindeki kimse için de talep, tamah ve tercih haramdır.

- Arif, Allah'ın avıdır. Av olanın ise avı olmaz.

İhramlı kimse, avı öldürdüğü zaman, ona kefaret lazım gelir. Arif de, başkalarını gördüğü veya bir şeye göz diktiği veya ona arzu duyduğu yahut da onu tercih ettiği zaman kendisine kefaret lazım gelir. Fakat onun için ne göz diktiği veya tasarrufta bulunduğunun benzeriyle ne de birkaç misliyle ceza yeterli görülmez. Lakin onun hakikatte kefareti, az veya çok; küçük veya büyük, Allah dışındaki her şeyden arınmasıdır.

أُحِلَّ لَكُمْ صَيْدُ الْبَحْرِ وَطَعَامُهُ مَتَاعًا لَكُمْ وَلِلسَّيَّارَةِ وَحُرِّمَ عَلَيْكُمْ صَيْدُ الْبَرِّ مَا دُمْتُمْ حُرُمًا وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذٖٓي اِلَيْهِ تُحْشَرُونَ ﴿٩٦﴾

96- "Hem size hem de yolculara fayda olmak üzere, deniz avı yapmak ve onu yemek size helal kılındı. İhramlı olduğunuz müddetçe kara avı size haram kılındı. Huzuruna toplanacağınız Allah'tan korkun."

Deniz avının hükmü kara avının hükmünden farklıdır. Kul, hakikatlerin denizlerine gark olduğu zaman hükmü ortadan kalkar ve ona deniz avı helal olur. Çünkü o, gark olduğu zaman mahviyet içine girdiğinden kendisine ait hiçbir şeyde rolü kalmamış olur. Allah, onun durumuna hâkimdir.

جَعَلَ اللّٰهُ الْكَعْبَةَ الْبَيْتَ الْحَرَامَ قِيَامًا لِلنَّاسِ وَالشَّهْرَ الْحَرَامَ وَالْهَدْيَ وَالْقَلَٓائِدَ ذٰلِكَ لِتَعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَاَنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلٖيمٌ ﴿٩٧﴾

97- "Allah Kâbe'yi, o saygıya layık evi, haram ayı, hac kurbanını ve gerdanlıkları insanların belini doğrultmaya sebep kıldı. Bu da Allah'ın göklerde ve yerde ne varsa hepsini bildiğini ve Allah'ın her şeyi bilen olduğunu bilmeniz içindir."

Allah, evinin, bugün her ümit sahibinin sığındığı, istikamet yolundan sapan herkesin, ziyaretinin bereketleriyle doğru yolu bulduğu ve her ihtiyaç sahibinin, içinde Allah'a yakarmakla muvaffakiyet dilediği bir sığınak olmasına hükmetmiştir.

Bu arada Kâbe taş, kul ise toprak olup Allah, toprağı taşa bağlı kılmıştır. Maksat, yaratıkların ve gayrinin hala ulaşabilme imkânları bulunmayan yegâne varlığın kendisi olduğunun bilinmesidir.

اِعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ شَدٖيدُ الْعِقَابِ وَاَنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَحٖيمٌ ﴿٩٨﴾

98- "Biliniz ki, Allah'ın cezalandırması çetindir ve yine Allah'ın bağışlaması ve esirgemesi sınırsızdır."

Allah, düşmanlara karşı çetin azaplı, dostlara karşı ise bağışlayıcı ve merhamet edicidir.

Bir yoruma göre de bir an bile şuhuddan gafil kalırlarsa, araya hemen perde çekmek suretiyle havassa azabı çetindir. Eğer kendisine tevbe ve hasretle dönerlerse, avamı bağışlayıcı ve esirgeyicidir.

مَا عَلَى الرَّسُولِ اِلَّا الْبَلَاغُ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ مَا تُبْدُونَ وَمَا تَكْتُمُونَ ﴿٩٩﴾
قُلْ لَا يَسْتَوِي الْخَبِيثُ وَالطَّيِّبُ وَلَوْ اَعْجَبَكَ كَثْرَةُ الْخَبِيثِ فَاتَّقُوا
اللّٰهَ يَٓا اُو۬لِي الْاَلْبَابِ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿١٠٠﴾

99, 100- "Peygamber'e düşen vazife, ancak duyurmaktır. Allah, açıkladığınızı da gizlediğinizi de bilir. De ki: 'Pis ve kötü ile temiz ve iyi bir değildir. Pis ve kötünün çokluğu tuhafına gitse de bu böyledir. Öyleyse ey akıl sahipleri! Allah'tan korkunuz ki, kurtuluşa eresiniz.'"

Yalnız başına tanrılık vasfına sahip olan Allah'tır. Peygamber'e gelince, kadri yüce olsa da, kendisine düşen, sadece bildirmektir ki, bu da Allah'ın müyesser kılmasıyla olur.

(قُلْ لَا يَسْتَوِي الْخَبِيثُ وَالطَّيِّبُ) *"De ki: 'Pis ve kötü ile temiz ve iyi bir değildir.'"* Pis ve kötü, kazanması esnasında Allah'tan gafil olan kimsenin kazandığı şeydir. Temiz ve iyi ise kişinin, hakkın şuhudu üzere kazandığıdır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Pis ve kötü, içinden Allah'ın hakkı çıkarılmayan, temiz ve iyi de içinden Allah'ın hakkı çıkarılan şeydir.

- Pis ve kötü nefsin için, temiz ve iyi de Allah'ın emri için biriktirdiğin şeydir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوا لَا تَسْـَٔلُوا عَنْ اَشْيَٓاءَ اِنْ تُبْدَ لَكُمْ تَسُؤْكُمْ
وَاِنْ تَسْـَٔلُوا عَنْهَا حٖينَ يُنَزَّلُ الْقُرْاٰنُ تُبْدَ لَكُمْ عَفَا اللّٰهُ عَنْهَا وَاللّٰهُ
غَفُورٌ حَلٖيمٌ ﴿١٠١﴾

101- "Ey iman edenler! Açıklanırsa hoşunuza gitmeyecek olan şeyleri sormayın. Eğer Kur'ân indirilirken onları sorarsanız size açıklanır. Allah, onları affetmiştir. Allah çok bağışlayıcıdır, aceleci değildir."

Allah, lütuf örtüsünü üstünüze çektiği zaman sizden saklanan bir bilgiyi elde etmeye yeltenmeyin. Yoksa tecessüs ile hayatınızın tadı kaçmış olur.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Büyük insanların hak etmediğiniz makamlarına vakıf olmaya çalışmayın ki, mertebelerinizin düşüklüğü sizi üzmesin.

- Peşine düşmediğiniz bir konuda karşınıza bilgi çıkarsa, ona iyimser bir anlam yüklemeye çalışın ve Allah'ın sırlarını aramayın. Bir de sizleri kaplayan yüz çevirmeden kurtulmak için ümidin sağlayacağı huzura meyledin, ancak bunun sırrını araştırmayın ve Allah'ın emrine topluca riayet edin.

قَدْ سَاَلَهَا قَوْمٌ مِنْ قَبْلِكُمْ ثُمَّ اَصْبَحُوا بِهَا كَافِرٖينَ ﴿١٠٢﴾

102- "Sizden önce de bir toplum onları sormuş, sonra da bunları inkâr eder olmuştu."

Yani bazı kimseler, karşılaştıkları kader sürprizlerinden etkilenmekten azat olduklarını sandılar. Oysa bu, onların sadece bir zannından ibarettir.

مَا جَعَلَ اللّٰهُ مِنْ بَحٖيرَةٍ وَلَا سَٓائِبَةٍ وَلَا وَصٖيلَةٍ وَلَا حَامٍ وَلٰكِنَّ
الَّذٖينَ كَفَرُوا يَفْتَرُونَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ وَاَكْثَرُهُمْ لَا يَعْقِلُونَ ﴿١٠٣﴾

103- "Allah bahîra, sâibe, vasîle ve hâm diye bir şey meşru kılmamıştır. Fakat kâfirler, yalan yere Allah'a iftira etmektedirler ve onların çoğunun da kafaları çalışmaz."

Bunlar, onların uydurdukları hükümlerdir. Bu nedenle Allah, onları bu bidatçilikten geri çevirerek Allah'ın emrine güzelce uymakla memur kılmış ve ortaya çıkan âdetlerinin ibadetlerden sayılmadığını haber vermiştir.

وَاِذَا قِيلَ لَهُمْ تَعَالَوْا اِلٰى مَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ وَاِلَى الرَّسُولِ قَالُوا حَسْبُنَا مَا وَجَدْنَا عَلَيْهِ اٰبَٓاءَنَا اَوَلَوْ كَانَ اٰبَٓاؤُ۬هُمْ لَا يَعْلَمُونَ شَيْـًٔا وَلَا يَهْتَدُونَ ﴿١٠٤﴾

104- "Onlara, 'Allah'ın indirdiğine ve Peygamber'e gelin' denildiği vakit, 'Babalarımızı üzerinde bulduğumuz yol bize yeter' derler. Ataları hiçbir şey bilmiyor ve doğru yol üzerinde bulunmuyor iseler de mi?"

Hakk'ın davetçileri onları doğruluk vasfına meyletmeye çağırdığı zaman, alıştıkları taklit kolaycılığı kendilerini kabul etmekten alıkoymaktadır. Uydukları selefleri de ancak dalalet içerisinde idiler.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا عَلَيْكُمْ اَنْفُسَكُمْ لَا يَضُرُّكُمْ مَنْ ضَلَّ اِذَا اهْتَدَيْتُمْ اِلَى اللّٰهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيعًا فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿١٠٥﴾

105- "Ey iman edenler! Siz kendinize bakın. Siz doğru yolda olunca sapan kimse size zarar veremez. Hepinizin dönüşü Allah'adır. Artık O, yaptıklarınızı size bildirecektir."

Bazı açıklarının kapatılması, fakirin yürümesi için yeterlidir. Ancak fakir, ilerleme veya başkasına yardımcı olma iddiasına kalkıştığı zaman, bu gerçekleşmesi imkânsız bir sezgi ve zandır.

Bir yoruma göre de, başkasıyla uğraşan kimse, kendi nefsinden alıkonulmuş olur. Kendi nefsiyle meşgul olan kimse de başkasına zaman ayıramaz.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوا شَهَادَةُ بَيْنِكُمْ اِذَا حَضَرَ اَحَدَكُمُ الْمَوْتُ
حٖينَ الْوَصِيَّةِ اثْنَانِ ذَوَا عَدْلٍ مِنْكُمْ اَوْ اٰخَرَانِ مِنْ غَيْرِكُمْ اِنْ
اَنْتُمْ ضَرَبْتُمْ فِي الْاَرْضِ فَاَصَابَتْكُمْ مُصٖيبَةُ الْمَوْتِ تَحْبِسُونَهُمَا
مِنْ بَعْدِ الصَّلٰوةِ فَيُقْسِمَانِ بِاللّٰهِ اِنِ ارْتَبْتُمْ لَا نَشْتَرٖي بِهٖ ثَمَنًا
وَلَوْ كَانَ ذَا قُرْبٰى وَلَا نَكْتُمُ شَهَادَةَ اللّٰهِ اِنَّٓا اِذًا لَمِنَ الْاٰثِمٖينَ ﴿١٠٦﴾
فَاِنْ عُثِرَ عَلٰٓى اَنَّهُمَا اسْتَحَقَّٓا اِثْمًا فَاٰخَرَانِ يَقُومَانِ مَقَامَهُمَا مِنَ
الَّذٖينَ اسْتَحَقَّ عَلَيْهِمُ الْاَوْلَيَانِ فَيُقْسِمَانِ بِاللّٰهِ لَشَهَادَتُنَٓا اَحَقُّ
مِنْ شَهَادَتِهِمَا وَمَا اعْتَدَيْنَٓا اِنَّٓا اِذًا لَمِنَ الظَّالِمٖينَ ﴿١٠٧﴾ ذٰلِكَ اَدْنٰٓى
اَنْ يَأْتُوا بِالشَّهَادَةِ عَلٰى وَجْهِهَٓا اَوْ يَخَافُوٓا اَنْ تُرَدَّ اَيْمَانٌ بَعْدَ
اَيْمَانِهِمْ وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاسْمَعُوا وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْفَاسِقٖينَ ﴿١٠٨﴾

106, 107, 108- "Ey iman edenler! Birinize ölüm gelip çatınca vasiyet esnasında içinizden iki adalet sahibi kişi aranızda şahitlik etsin. Yahut seferde iken başınıza ölüm musibeti gelmişse, sizden olmayan başka iki kişi şahit olsun. Eğer şüpheye düşerseniz, o iki şahidi namazdan sonra alıkoyarsınız. 'Bu vasiyet karşılığında hiçbir şeyi satın almayacağız, akraba da olsa Allah için yaptığımız şahitliği gizlemeyeceğiz. Aksini yaparsak bu takdirde biz elbette günahkârlardan oluruz' diye Allah üzerine yemin ederler. Bu şahitlerin, bir günah kazandıkları anlaşılırsa, şahitlerin haklarına tecavüz ettiği ölüye daha yakın olan mirasçılardan iki kişi, onların yerini alır ve 'Andolsun ki bizim şahitliğimiz onların şahitliğinden daha gerçektir ve biz

kimsenin hakkına tecavüz etmedik. Aksi takdirde biz, elbette zalimlerden oluruz' diye Allah'a yemin ederler. Bu usul, şahitliği gerektiği şekilde yapmaya yahut yeminlerinden sonra, yeminlerin mirasçılar tarafından reddedilmesinden korkmalarına daha uygundur. Allah'tan korkun ve O'nu dinleyin. Allah, yoldan çıkmışlar topluluğuna rehberlik etmez."

Bu ayetin hükmü daha önce sabit iken sonradan nesh edilmiştir. Bu konunun ayrıntılı açıklaması tefsirlerde yer almıştır.

Nesh, ortadan kaldırmak demektir ki bu da ibadetlerde caizdir. Neshin anlamı, aynı zamanda müridlerin sülûkunda da bulunur. Şöyle ki, başlangıçta yükümlü oldukları farz, çabaları itibariyle zahirleri yerine getirmeleridir. Bu arada onlarda kalplerin hallerinden bir şey belirdiği zaman kendi halleri, kalplere riayete dönüşür. Bu aşamada zahiri virt yükümlülükleri kalkmış olur. İşte bu durum, görünüş itibariyle nesh gibidir.

Allah şöyle buyurur:

(مَا نَنْسَخْ مِنْ اٰيَةٍ اَوْ نُنْسِهَا نَاْتِ بِخَيْرٍ مِنْهَٓا اَوْ مِثْلِهَا) *"Biz, bir ayetin hükmünü yürürlükten kaldırır veya onu unutturursak, mutlaka daha iyisini veya benzerini getiririz."* (Bakara, 2/106). Onların kalplere riayet etme vasfına sahip olmaları, fıkhın hükümleriyle terbiye edilmekle daha mükemmel hale gelir.

يَوْمَ يَجْمَعُ اللّٰهُ الرُّسُلَ فَيَقُولُ مَاذَٓا اُجِبْتُمْ قَالُوا لَا عِلْمَ لَنَا اِنَّكَ اَنْتَ عَلَّامُ الْغُيُوبِ ﴿١٠٩﴾

109- "Allah'ın, peygamberleri toplayıp da 'Size ne cevap verildi' dediği gün, 'Bizim hiçbir bilgimiz yok, şüphesiz gizlilikleri hakkıyla bilen ancak sensin' diyeceklerdir."

Allah, celal sıfatıyla kendilerine tecelli edince kavrayış ve bilgileri yetersiz kalır ve hakikati dile getirmekten vazgeçerek: "Bizim hiçbir bilgimiz yoktur" derler. Nitekim yarın da durum şöyle olur: Kim,

yaratıkların vasfından olan bir şey söyler veya bir şeye meylederse, bu takdirde Allah'ın her yerde var olan izzeti belirdiğinde bunların hepsi yetersiz hale gelir. Nitekim melekler: "Sana hakkıyla ibadet etmedik" derken peygamberler: "Hiç bir bilgimiz yoktur" derler.

اِذْ قَالَ اللّٰهُ يَا عِيسَى ابْنَ مَرْيَمَ اذْكُرْ نِعْمَتِي عَلَيْكَ وَعَلٰى وَالِدَتِكَ اِذْ اَيَّدْتُكَ بِرُوحِ الْقُدُسِ تُكَلِّمُ النَّاسَ فِي الْمَهْدِ وَكَهْلًا وَاِذْ عَلَّمْتُكَ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ وَالتَّوْرٰيةَ وَالْاِنْجِيلَ وَاِذْ تَخْلُقُ مِنَ الطِّينِ كَهَيْئَةِ الطَّيْرِ بِاِذْنِي فَتَنْفُخُ فِيهَا فَتَكُونُ طَيْرًا بِاِذْنِي وَتُبْرِئُ الْاَكْمَهَ وَالْاَبْرَصَ بِاِذْنِي وَاِذْ تُخْرِجُ الْمَوْتٰى بِاِذْنِي وَاِذْ كَفَفْتُ بَنِي اِسْرَٓاءِيلَ عَنْكَ اِذْ جِئْتَهُمْ بِالْبَيِّنَاتِ فَقَالَ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْهُمْ اِنْ هٰذَٓا اِلَّا سِحْرٌ مُبِينٌ ﴿١١٠﴾

110- "Allah o zaman şöyle diyecek: Ey Meryem oğlu İsa! Sana ve annene verdiğim nimetimi hatırla! Hani seni mukaddes ruh ile desteklemiştim. Sen beşikte iken de yetişkin çağında da insanlarla konuşuyordun. Sana Kitab'ı, hikmeti, Tevrat'ı ve İncil'i öğretmiştim. Benim iznimle çamurdan kuş şeklinde bir şey yapıyordun da ona üflüyordun. Hemen benim iznimle o bir kuş oluyordu. Yine benim iznimle anadan doğma körü ve alacalıyı iyileştiriyordun. Ölüleri benim iznimle hayata çıkarıyordun. Hani İsrail oğullarını seni öldürmekten engellemiştim. Kendilerine apaçık deliller getirdiğin zaman içlerinden inkâr edenler: 'Bu, apaçık bir sihirden başka bir şey değildir' demişlerdi."

Çeşitli nimetleri hatırlatmak, anılana olan sevgi ve tutkunluğun özünü ortaya çıkartır. Dostların geride bıraktıkları zaman da, kendilerinden sonra ya haklarında veya kendilerinden aktarılarak konuşulan bir söze dönüşür.

وَاِذْ اَوْحَيْتُ اِلَى الْحَوَارِيِّنَ اَنْ اٰمِنُوا بِي وَبِرَسُولِي قَالُوٓا اٰمَنَّا وَاشْهَدْ بِاَنَّنَا مُسْلِمُونَ ﴿١١١﴾

**111-** “Hani havarilere: ‘Bana ve Peygamberime iman edin’ diye ilham etmiştim. Onlar da: ‘İman ettik. Bizim Allah’a teslim olmuş kimseler olduğumuza sen de şahit ol’ demişlerdi.”

Allah’ın, onları ilham ve ikram yoluyla özel olarak vahyine mazhar kılması, Hz. İsa’nın nurunun üzerlerine yayılmasından ötürüdür. Tıpkı şu rivayette denildiği gibi: “Gerçek insanlar onlardır. Hiç kimse, onlarla beraber olmaktan mutsuz olmaz.”

اِذْ قَالَ الْحَوَارِيُّونَ يَا عِيسَى ابْنَ مَرْيَمَ هَلْ يَسْتَطِيعُ رَبُّكَ اَنْ
يُنَزِّلَ عَلَيْنَا مَٓائِدَةً مِنَ السَّمَٓاءِ قَالَ اتَّقُوا اللّٰهَ اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ﴿١١٢﴾
قَالُوا نُرِيدُ اَنْ نَاْكُلَ مِنْهَا وَتَطْمَئِنَّ قُلُوبُنَا وَنَعْلَمَ اَنْ قَدْ صَدَقْتَنَا
وَنَكُونَ عَلَيْهَا مِنَ الشَّاهِدِينَ ﴿١١٣﴾

**112, 113-** “Hani Havariler: ‘Ey Meryem oğlu İsa! Rabbin bize gökten, donatılmış bir sofra indirebilir mi?’ demişlerdi. O: ‘İman etmiş kimseler iseniz, Allah’tan korkun’ cevabını vermişti. Onlar: ‘Ondan yiyelim, kalplerimiz mutmain olsun. Bize doğru söylediğini bilelim ve ona, gözleriyle görmüş şahitler olalım istiyoruz’ demişlerdi.”

Kalplerinin, görecekleri büyük ve olağanüstü mucizeyle huzur bulması için sofra istediler. Bu nedenle mazur görüldüler ve istekleri kabul edildi. Çünkü amaçları, kesin inancın gerçekleşmesi ve basiretin artması idi.

Bir yoruma göre de, herkes ihtiyacını kendine özgü zarurete ve duruma göre talep eder. Mesela, onlardan kimisinin huzuru, eline geçecek olan yemek sofrasında, kimisinin de üstüne inen maneviyat sofrasındadır. Ancak fena haline kavuşup düşüneceği bir delile veya arayacağı bir izaha ihtiyaç duymayanlar pek azdır.

قَالَ عِيسَى ابْنُ مَرْيَمَ اللّٰهُمَّ رَبَّنَٓا اَنْزِلْ عَلَيْنَا مَٓائِدَةً مِنَ السَّمَٓاءِ تَكُونُ
لَنَا عِيدًا لِاَوَّلِنَا وَاٰخِرِنَا وَاٰيَةً مِنْكَ وَارْزُقْنَا وَاَنْتَ خَيْرُ الرَّازِقِينَ ﴿١١٤﴾

114- "Meryem oğlu İsa şöyle dedi: 'Ey Rabbimiz! Bize gökten bir sofra indir ki, bizim için, geçmiş ve geleceklerimiz için bayram ve senden bir ayet olsun. Bizi rızıklandır. Zaten rızık verenlerin en hayırlısısın.'"

Peygamberlerinin, üzerlerine sofra indirilmesi suretiyle huzur istediği bir ümmet ile hiç kimsenin talebi olmaksızın, Allah'ın başından itibaren üzerine gönül huzuru indirdiği ümmet arasında büyük bir fark bulunmaktadır. Allah bu konuda şöyle buyurur: (هُوَ الَّذِيٓ اَنْزَلَ السَّكِينَةَ فِي قُلُوبِ الْمُؤْمِنِينَ لِيَزْدَادُوٓا اِيمَانًا مَعَ اِيمَانِهِمْ) *"İmanlarını bir kat daha arttırsınlar diye, müminlerin kalplerine huzur indiren O'dur."* (Fetih, 48/4)

Yine Allah, onların vasfı hakkında şöyle buyurmuştur:

(وَاِذَا تُلِيَتْ عَلَيْهِمْ اٰيَاتُهُ زَادَتْهُمْ اِيمَانًا) *"Kendilerine Allah'ın ayetleri okunduğunda imanlarını arttırır."* (Enfâl, 8/2)

İmanı, Allah'ın kendisine okunan ayetleriyle artan kimseler ile huzurları, kendilerine mubah kılınacak olan birtakım ikram ve nimetlere bağlı olanlar arasında büyük bir fark bulunmaktadır.

قَالَ اللّٰهُ اِنِّي مُنَزِّلُهَا عَلَيْكُمْ فَمَنْ يَكْفُرْ بَعْدُ مِنْكُمْ فَاِنِّيٓ اُعَذِّبُهُ
عَذَابًا لَآ اُعَذِّبُهُٓ اَحَدًا مِنَ الْعَالَمِينَ ﴿١١٥﴾

115- "Allah da şöyle buyurdu: Ben, onu şüphesiz indireceğim. Ama bundan sonra, içinizden kim inkâr ederse, kâinatta hiçbir kimseye etmediğim azabı ona edeceğim."

Allah, Hz. İsa'dan olan taleplerini kabul etmiş, ancak nimetten sonra muhalefet etmeleri halinde kendilerini acıklı bir azapla uyarmıştır ki, Allah yolunda yürüyenler, amaç meydana gelip ikram gerçekleştiği zaman, tehlikenin daha şiddetli ve durumun afete daha yakın olduğunu bilsinler. Bir de mertebe yükseldikçe afet daha derin, büyüklerin başına gelen meşakkatler de daha büyük olur.

وَاِذْ قَالَ اللّٰهُ يَا عِيسَى ابْنَ مَرْيَمَ ءَاَنْتَ قُلْتَ لِلنَّاسِ اتَّخِذُونِي
وَاُمِّيَ اِلٰهَيْنِ مِنْ دُونِ اللّٰهِ قَالَ سُبْحَانَكَ مَا يَكُونُ لِيَ اَنْ
اَقُولَ مَا لَيْسَ لِي بِحَقٍّ اِنْ كُنْتُ قُلْتُهُ فَقَدْ عَلِمْتَهُ تَعْلَمُ مَا فِي
نَفْسِي وَلَٓا اَعْلَمُ مَا فِي نَفْسِكَ اِنَّكَ اَنْتَ عَلَّامُ الْغُيُوبِ ﴿١١٦﴾

116- "Bir de Allah: 'Ey Meryem oğlu İsa! İnsanlara: Beni ve anamı Allah'tan başka iki tanrı bilin, diye sen mi dedin?' buyurduğu zaman o şöyle dedi: 'Hâşâ! Seni tenzih ederim. Hakkım olmayan şeyi söylemek bana yakışmaz. Hem ben söyleseydim, sen onu şüphesiz bilirdin. Sen benim içimdekini bilirsin. Halbuki ben senin zatında olanı bilmem. Gizlilikleri eksiksiz bilen yalnızca sensin.'"

Bu sualden maksat, Hz. İsa'nın, insanları teslis inancına çağırdığı şeklinde kendisine yapılan isnattan uzak olduğunu ortaya koymaktır. O halde bu, azarlayıcı bir hitap değil, aksine onurlandırıcı bir sualdir.

Sonra Hz. İsa, hitap adabını korumuş ve nefsini tezkiye etmemiştir. Aksine o, Allah'ı övmekle söze başlayarak: Sen münezzehsin. Ben gerçekten seni, vasfına layık olmayan şeylerden tenzih ediyorum, demiştir.

Hz. İsa daha sonra şöyle demiştir: (مَا يَكُونُ لِيٓ اَنْ اَقُولَ مَا لَيْسَ لِي بِحَقٍّ ) "*Hakkım olmayan şeyi söylemek bana yakışmaz.*" Yani eğer bana özel olarak peygamberlik verilmişse, peygamberliğin de şartı masumiyet olduğu halde, benim için caiz olmayanı yapmam nasıl caiz olur!

(اِنْ كُنْتُ قُلْتُهُ فَقَدْ عَلِمْتَهُ ) "*Sonra ben söyleseydim, sen onu şüphesiz bilirdin.*" Bunu söyleyen Hz. İsa, Allah'ın onun, bu sözden münezzeh olduğunu bildiğinden emin idi.

(تَعْلَمُ مَا فِي نَفْسِي) "*Sen benim içimdekini bilirsin.*" Yani senin ilmin, her malumu kuşatmaktadır.

(وَلَٓا اَعْلَمُ مَا ف۪ي نَفْسِكَ ) *"Halbuki ben senin zatında olanı bilmem."* Yani ben, ancak senin bana bildirdiklerini bilirim.

(اِنَّكَ اَنْتَ عَلَّامُ الْغُيُوبِ) *"Gizlilikleri eksiksiz bilen yalnızca sensin."* Hiçbir malum, senin ilminin, kudrete konu olan hiçbir şey de senin hükmünün dışına çıkamaz.

مَا قُلْتُ لَهُمْ اِلَّا مَٓا اَمَرْتَن۪ي بِه۪ٓ اَنِ اعْبُدُوا اللّٰهَ رَبّ۪ي وَرَبَّكُمْ وَكُنْتُ
عَلَيْهِمْ شَه۪يدًا مَا دُمْتُ ف۪يهِمْ فَلَمَّا تَوَفَّيْتَن۪ي كُنْتَ اَنْتَ الرَّق۪يبَ
عَلَيْهِمْ وَاَنْتَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ شَه۪يدٌ ﴿١١٧﴾

117- "Ben onlara, ancak senin bana emrettiğini söyledim. Benim de Rabbim, sizin de Rabbiniz olan Allah'a kulluk edin, dedim. İçlerinde bulunduğum müddetçe onlar üzerine kontrolcü idim. Beni vefat ettirince artık onlar üzerine gözetleyici yalnız sen oldun. Sen, her şeyi hakkıyla görensin."

Ben, onları sadece sana kulluk etmeye davet ettim. Onlara sadece seni mukaddes ve bir bilmelerini emrettim. Ben sağ kaldığım sürece de bütün bunlara devam edeceğim. Ben, onlardan ayrıldığım zaman tasarrufları, iradene uygun olarak senin elinde olacaktır. Zira sen, onların uyum ve uyumsuzluk halleri ile ölçülü ve savurgan tutumlarını en iyi bilensin.

اِنْ تُعَذِّبْهُمْ فَاِنَّهُمْ عِبَادُكَ وَاِنْ تَغْفِرْ لَهُمْ فَاِنَّكَ اَنْتَ الْعَز۪يزُ
الْحَك۪يمُ ﴿١١٨﴾

118- "Eğer kendilerine azap edersen, şüphesiz onlar senin kullarındır. Eğer onları bağışlarsan, şüphesiz sen izzet ve hikmet sahibisin."

Hz. İsa, Allah'ın kulları hakkındaki hükmünün, mutlak mülkiyet sahibi olmasından dolayı, geçerli olduğunu açıklayarak şöyle

demiştir: Eğer sen, onlara azap edersen, onları cezalandırman yerinde olur. Bunun böyle olması, onların, senin kulların olmalarından dolayıdır. Şayet onları bağışlarsan, şüphesiz aziz ve hikmet sahibi olan sensin. Yani bağışlamanla onları aziz kılan sensin.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Küfürlerinin zarar veremediği izzet ve hikmet sahibi sensin.

- Aziz, onlardan intikam alma gücüne sahip olan demektir. Bu itibarla kudretle birlikte bağışlamak, kerem alametidir. Acizlik esnasında bağışlamak ise zül alametidir.

- Eğer onları bağışlarsan, zaten sen bir itaat ehlinin itaatiyle güzelleşmekten ve bir asinin zilletiyle eksilmekten daha azizsin. Burada “hikmet sahibi” tabiri: “Şirki bağışlamak hikmete uygun değildir” diyenlerin bu sözüne cevaptır.

قَالَ اللّٰهُ هٰذَا يَوْمُ يَنْفَعُ الصَّادِقِينَ صِدْقُهُمْ لَهُمْ جَنَّاتٌ تَجْر۪ي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِد۪ينَ ف۪يهَٓا اَبَدًا ﴿١١٩﴾

119- “Allah, şöyle buyuracaktır: Bu, doğrulara, doğruluklarının fayda vereceği gündür. Onlara, içinde ebedi kalacakları, zemininden ırmaklar akan cennetler vardır.”

Her kim, doğruluğunun mirasını dünyada, insanlar tarafından kabul görme veya riyaset elde etme veya mal ve makam gibi bir menfaat şeklinde hemen almak isterse, bu doğruluğun karşılığı olarak ahirette ona bir şey yoktur. Çünkü Allah, kıyamet gününde doğrulara, doğruluklarının fayda vereceğine vurgu yapmıştır.

(رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمْ وَرَضُوا عَنْهُ ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظ۪يمُ) *“Allah onlardan razı olmuştur. Onlar da, O’ndan razı olmuşlardır. İşte büyük kurtuluş ve kazanç budur.”*

Allah’ın rızası, onlara bir yer var etmek, onları övmek, onlara lütuflarını ve çeşitli nimetlerini tahsis etmektir. Onların ahirette

Allah'tan razı olmaları ise gayelerine kavuşmalarıdır. Nitekim bu en büyük kazanç ve en büyük kurtuluştur.

لِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَمَا فٖيهِنَّ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدٖيرٌ ﴿١٢٠﴾

120- "Göklerin, yerin ve içlerindeki her şeyin mülkiyeti Allah'ındır. Allah, her şeye hakkıyla kadirdir."

Allah, güç yetirilebilen her şeyi kapsayan ve bütün yaratıkları yaratmaya yeterli olan kadim kudretiyle övünmüş, fakat varlıklardan isim, eser, cisim veya harabe gibi gayr olan herhangi bir şeyi kendine izafe etmek suretiyle güzelleşmeye çalışmamıştır.

(وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدٖيرٌ) *"O, her şeye hakkıyla kadirdir."* Bunlar; uzaklaştırmak, mutlu kılmak, yüz çevirmek, reddetmek, defetmek, fayda vermek, kontrol etmek ve engellemek gibi hususlardır.

سورة الْأَنْعَامِ

# EN'ÂM SÛRESİ

(En'âm sûresi, Mekke'de bir gecede inmiştir. 165 ayet olup, Hz. Peygamber vahiy kâtiplerini toplayarak aynı gecede yazdırmıştır. Ancak 91-93 ve 151-153 arası altı ayetin Medine'de indiği nakledilir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**"Rahman ve Rahim olan Allah'ın adıyla."**

Allah'ın adıyla kalpler nurlanarak bağımsızlık kazanmış, O'nun adıyla üzüntüler yok olup gitmiş, O'nun rahmetiyle ruhlar irfana kavuşup huzur bulmuş ve (...) ile akıllar yetersiz kalıp helak olmuştur.

Bir de Allah'ın adıyla her ümit sahibi ümidine kavuşmuş ve Allah'ın rahmetiyle herkes aradığını bulmuştur.

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذ۪ي خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ وَجَعَلَ الظُّلُمَاتِ
وَالنُّورَ ثُمَّ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا بِرَبِّهِمْ يَعْدِلُونَ ﴿١﴾

1- "Hamd, gökleri ve yeri yaratan, karanlıkları ve aydınlığı var eden Allah'a mahsustur. Sonra, kâfir olanlar, putları Rableri ile denk tutuyorlar."

Allah, kendini övmekle söze başlamıştır. Bu amaçla ezeli övgüsüyle kendine hamd etmiş ve sonsuz büyüklüğü ile birliğinde

somutlaşan yüceliğinden söz ederek: (اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ) *"Hamd, Allah'a mahsustur"* buyurmuştur.

(خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ) *"... gökleri ve yeri yaratan ..."*

Ayetteki (الَّذِي) *"ellezî (o Allah ki)"* lafzı işaret, *"gökleri ve yeri yaratmıştır"* anlamındaki kısım da izahtır. Sadece kalpler, "ellezî (o Allah ki)"yi anlamaktadır. Çünkü kalpler, Allah'ın varlığını kesin bir biçimde kavramış ve tecellilerine mazhar olmaya devam etmişlerdir. Öte yandan kalpler, "ellezî (o Allah ki)"yi duyduklarında gramerde "sıla" denilen *"gökleri ve yeri yaratmıştır"* anlamındaki kısma da ihtiyaç duymuştur. Çünkü "ellezî", kalplerin gaybın perdesi altında olduğunu gösteren mevsul isimlerdendir.

(وَجَعَلَ الظُّلُمَاتِ وَالنُّورَ ثُمَّ الَّذِينَ كَفَرُوا بِرَبِّهِمْ يَعْدِلُونَ) *"... karanlıkları ve aydınlığı var eden Allah'a mahsustur. Sonra, kâfir olanlar, putları Rableri ile denk tutuyorlar."*

Allah, gece karanlığını ve gündüz aydınlığını, küfür ve şirkin yalnızlığını, irfan ve basiret nurunu yaratmıştır. Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, karanlıkları bir kavmin nasibi kılmış, ancak geçmişteki bir günahlarından dolayı değil. Diğer bir topluluğa da nuru nasip kılmış, ancak bunu da ezelden hak ettikleri için yapmamış, lakin bu, Allah'ın takdiriyle gerçekleşen bir hükümdür.

- Allah, isyanın karanlıklarını bir kavim için meşakkat, irfanın nurunu da diğer bir kavim için ferahlık kılmıştır.

هُوَ الَّذِي خَلَقَكُمْ مِنْ طِينٍ ثُمَّ قَضٰى اَجَلًا وَاَجَلٌ مُسَمًّى عِنْدَهُ ثُمَّ اَنْتُمْ تَمْتَرُونَ ﴿٢﴾

2- "Sizi bir çamurdan yaratan, sonra ölüm zamanını takdir eden ancak O'dur. Bir de O'nun katında muayyen bir ecel vardır. Siz hala şüphe ediyorsunuz."

Allah, insanın aslını topraktan var edip ona olağanüstü yetenekler tevdi etmiş ve onda hiçbir yaratıkta ortaya çıkarmadığı özellikler ortaya çıkarmıştır. Bu nedenle dikkate alınması gereken, asıl değil, bağlantıdır. Zira bağlantı yakınlık, asıl ise bir parça topraktır. Asıl meni damlasından, bağlantı ise yakınlık ve yardımdan kaynaklanmaktadır.

(ثُمَّ قَضٰٓى اَجَلًا وَاَجَلٌ مُسَمًّى عِنْدَهُ) *"Sonra ölüm zamanını takdir eden ancak O'dur. Bir de O'nun katında muayyen bir ecel vardır."*

Allah, hem imtihan için hem de nimette bulunmak için bir zaman belirlemiştir. Bu çerçevede imtihanın zamanı dünyada, nimetin zamanı da ahirettedir.

Diğer bir yoruma göre, Allah talep için bir zaman koymuştur ki o, mühlet vaktidir. Sonra onun arkasından başka bir zaman belirlemiştir ki o da, vuslat vaktidir. Bu çerçevede mühletin bir süresi ve sonu varken vuslat süresiz ve sonsuzdur. Bu itibarla var olmanın vakti için bir başlangıç vardır. O başlangıç, tevhid güneşlerinin doğduğu zamandır. Sonra ebedileşir ve bu nedenle doğuştan sonra artık batış yoktur.

وَهُوَ اللّٰهُ فِي السَّمٰوَاتِ وَفِي الْاَرْضِ يَعْلَمُ سِرَّكُمْ وَجَهْرَكُمْ
وَيَعْلَمُ مَا تَكْسِبُونَ ﴿٣﴾

3- "O, göklerde ve yerde tek Allah'tır. Gizlinizi, açığınızı bilir. Ne kazanacağınızı da bilir."

Göktekilerin mabudu ve yerdekilerin maksudu yalnızca Allah'tır. Aynı zamanda Allah, her semadan, fezadan, karanlıktan, aydınlıktan, güneşten, aydan, özden, eserden, gayrdan ve topraktan öncedir.

وَمَا تَاْت۪يهِمْ مِنْ اٰيَةٍ مِنْ اٰيَاتِ رَبِّهِمْ اِلَّا كَانُوا عَنْهَا مُعْرِض۪ينَ ﴿٤﴾

4- "Rablerinin ayetlerinden onlara bir ayet gelmeye dursun, o ayetlerden ille de yüz çevirirler."

Yani Allah onlara keşif ve lütfunu artırdıkça onlar, bunu inkâr ve küfürle karşılarlar. Allah, onlara bir şans tanıdıkça onlar buna yüz çevirmeyle karşılık verirler. Onlara kalp ferahlığı verdikçe onlardan hep sıkıntıyla karşılaşır.

فَقَدْ كَذَّبُوا بِالْحَقِّ لَمَّا جَٓاءَهُمْ فَسَوْفَ يَأْتِيهِمْ اَنْبٰٓؤُا مَا كَانُوا بِهٖ يَسْتَهْزِؤُنَ ﴿٥﴾

5- "Gerçekten onlar, kendilerine hak geldiğinde onu yalanlamışlardı. Fakat yakında onlara, alay ettikleri şeyin haberleri gelecektir."

Gerçekten onlar, kibirlenerek karşı çıkmada ısrar ettiler. Yakında da durumlarının vebaliyle karşılaşacak ve inkârlarının akıbetini tadacaklardır.

اَلَمْ يَرَوْا كَمْ اَهْلَكْنَا مِنْ قَبْلِهِمْ مِنْ قَرْنٍ مَكَّنَّاهُمْ فِي الْاَرْضِ مَا لَمْ نُمَكِّنْ لَكُمْ وَاَرْسَلْنَا السَّمَٓاءَ عَلَيْهِمْ مِدْرَارًا وَجَعَلْنَا الْاَنْهَارَ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهِمْ فَاَهْلَكْنَاهُمْ بِذُنُوبِهِمْ وَاَنْشَاْنَا مِنْ بَعْدِهِمْ قَرْنًا اٰخَرِينَ ﴿٦﴾

6- "Görmediler mi ki, onlardan önce yeryüzünde size vermediğimiz bütün imkânları kendilerine verdiğimiz, gökten üzerlerine bol bol yağmurlar indirip evlerinin altından ırmaklar akıttığımız nice nesilleri helak ettik. Biz, onları günahları sebebiyle helak ettik ve onların ardından başka nesiller yarattık."

Yani onlardan öncekiler, mühletimizden daha çok yararlanmışlar ve zahire göre sözlerimizden daha çok nasiplenmişler idi. Biz, onlara geçim araçlarını kolay kılmış ve dirilişin kapılarını onlar için alabildiğine genişletmiş idik. Derken onlar, kalplerini yalan kuruntulara alıştırıp dünyadan sevgili ve amaç edindiklerine kavuştukları anda biz, ilahî takdirin derinliklerinden ve kapalı durumlardan

karşılarına ürktükleri pişmanlığı ve tattıkları acıyı çıkardık. Sonra onların ardından yeni nesiller yarattık, onları bunların meskenlerine varis kıldık ve yerlerinde iskân ettik. Bunlar da yoldan çıkmada diğerlerini izleyince onları da kendilerine kattık. Bu, bizim intikamda düşmanlarımıza uyguladığımız bir prensibimiz ve ikramda, dostlarımıza uyguladığımız bir âdetimizdir.

وَلَوْ نَزَّلْنَا عَلَيْكَ كِتَابًا فٖي قِرْطَاسٍ فَلَمَسُوهُ بِاَيْدٖيهِمْ لَقَالَ الَّذٖينَ كَفَرُوٓا اِنْ هٰذَٓا اِلَّا سِحْرٌ مُبٖينٌ ﴿٧﴾

7- "Eğer sana, kâğıt üzerine yazılmış bir kitap indirseydik de onlar, elleriyle onu tutmuş olsalardı, yine de inkâr ediciler; Bu, apaçık büyüden başka bir şey değildir, derlerdi."

Allah, onlar hakkında dalalete hükmettikten sonra, dilediğini ortaya koyma kudretinin kemalinden söz etmektedir. Eğer Allah, onlara her delili gösterip her yolu açık tutsaydı bile onların, yine de sadece dalalet ve nefrete devam etmeleri, cehalet ve sapıklığa batmaları artardı.

وَقَالُوا لَوْلَٓا اُنْزِلَ عَلَيْهِ مَلَكٌ وَلَوْ اَنْزَلْنَا مَلَكًا لَقُضِيَ الْاَمْرُ ثُمَّ لَا يُنْظَرُونَ ﴿٨﴾

8- "'Muhammed'e bir melek indirilseydi ya' dediler. Eğer biz öyle bir melek indirseydik, elbette iş bitirilmiş olur, artık kendilerine göz bile açtırılmazdı."

Allah, dikkate alınması gerekenin delil değil, takdir olduğunu açıklamaktadır. Nitekim lamba, görme kabiliyetini kaybedene fayda vermemektedir. Aynı şekilde, üzerinde ezeli inayet bulunmayan kimseye deliller fayda vermemektedir.

وَلَوْ جَعَلْنَاهُ مَلَكًا لَجَعَلْنَاهُ رَجُلًا وَلَلَبَسْنَا عَلَيْهِمْ مَا يَلْبِسُونَ ﴿٩﴾

9- "Eğer peygamberi bir melek kılsaydık, muhakkak ki, onu insan suretine sokar, onları yine düşmekte oldukları kuşkuya düşürürdük."

Her kim, Allah'ın sırrını kutsamazsa Allah onu emri kousunda şaşırtır.

وَلَقَدِ اسْتُهْزِئَ بِرُسُلٍ مِنْ قَبْلِكَ فَحَاقَ بِالَّذِينَ سَخِرُوا مِنْهُمْ مَا
كَانُوا بِهِ يَسْتَهْزِؤُنَ ﴿١٠﴾

10- "Senden önceki peygamberlerle de alay edilmiş, bu yüzden onlarla alay edenleri alay ettikleri şey kuşatıvermişti."

Yani ey Muhammed! Tıpkı senin yalanlandığın gibi, senden önce de yalanlanan peygamberler geldi. Onlar, yardımımızı hak ettiler. Böylece onlara karşı çıkanlardan intikam aldık ve entrikalarının cezasını çekmiş oldular.

قُلْ سِيرُوا فِي الْاَرْضِ ثُمَّ انْظُرُوا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُكَذِّبِينَ ﴿١١﴾

11- "De ki: 'Yeryüzünde dolaşan, sonra peygamberi yalanlayanların sonunun nasıl olduğuna bakın.'"

De ki: Yeryüzünde sersemce dolaşın ve enine boyuna onu gezin. Sonra da bakın; acaba kimse hükmümüzden kurtulmuş mudur ve emrimiz olmaksızın bir sığınak bulmuş mudur?

قُلْ لِمَنْ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ قُلْ لِلّٰهِ كَتَبَ عَلٰى نَفْسِهِ
الرَّحْمَةَ لَيَجْمَعَنَّكُمْ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَا رَيْبَ فِيهِ اَلَّذِينَ خَسِرُٓوا
اَنْفُسَهُمْ فَهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿١٢﴾

12- "Onlara: 'Göklerde ve yerde olanlar kimindir?' diye sor. 'Allah'ındır' de. O, merhamet etmeyi kendi zâtına farz kıldı. Sizi, varlığında şüphe olmayan kıyamet gününde elbette toplayacaktır. Kendilerini ziyana sokanlar var ya, işte onlar inanmazlar."

Onlara sor: Yurtta kimse var mı? Hakikatte Allah katında kâinatın bir ağırlığı var mıdır? Şayet yeterli bir cevaptan aciz kalırlarsa, de ki: Rab olarak Allah yeter.

(كَتَبَ عَلٰى نَفْسِهِ الرَّحْمَةَ) *"O, merhamet etmeyi kendi zatına farz kıldı."* Allah, ilmine uygun olarak haber vermekte, hükmetmekte ve dilemektedir. Bu çerçevede Allah'ın ilmi, kimin kurtuluşuna taalluk ederse, o kimsenin derecelerine dair hükmü önceden gerçekleşir. Ezelde şaki olduğunu bildiği kimse ise şakiliği miktarınca azapta kalır.

وَلَهُ مَا سَكَنَ فِي الَّيْلِ وَالنَّهَارِ وَهُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ﴿١٣﴾

13- "Gecede ve gündüzde barınan her şey O'nundur. O, her şeyi işitendir, bilendir."

Sonradan olan şeylerin mülkiyeti Allah'ın, ortaya çıkışları Allah ile başlangıçları Allah'tan ve dönüşleri Allah'adır.

Aynı zamanda iştiyak sahiplerinin iniltisini işiten ve vecde gelenlerin özlemini bilen de O'dur.

قُلْ اَغَيْرَ اللّٰهِ اَتَّخِذُ وَلِيًّا فَاطِرِ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَهُوَ يُطْعِمُ وَلَا يُطْعَمُ قُلْ اِنِّي اُمِرْتُ اَنْ اَكُونَ اَوَّلَ مَنْ اَسْلَمَ وَلَا تَكُونَنَّ مِنَ الْمُشْرِكِينَ ﴿١٤﴾

14- "De ki: 'Gökleri ve yeri yoktan var eden, yedirdiği halde yedirilmeyen Allah'tan başkasını mı dost edineceğim?'"

Güzel dostluğuyla bana ikramda bulunduktan sonra, Allah'tan başkasını mı dost edineceğim? Bir de üstüme inayetinin ışığı düştükten sonra dünyada ve ahirette O'ndan başkasına mı bakacağım? Bu, hem zan hem de takdir olarak imkânsızdır.

(وَهُوَ يُطْعِمُ وَلَا يُطْعَمُ) *"yedirdiği halde yedirilmeyen…"* Allah, kerem sıfatına sahip olduğu için yedirmekte, kıdem hakkı olduğu için de yedirilmemektedir.

قُلْ اِنِّيٓ اَخَافُ اِنْ عَصَيْتُ رَبّ۪ي عَذَابَ يَوْمٍ عَظ۪يمٍ ﴿١٥﴾

15- "De ki: 'Ben Rabbime isyan edersem gerçekten büyük bir günün azabından korkarım.'"

Yani ben, aczimi kesin olarak bilir, Rabbimin azabından korkar ve emrine uymakla yaşantımı düzenlerim.

مَنْ يُصْرَفْ عَنْهُ يَوْمَئِذٍ فَقَدْ رَحِمَهُ وَذٰلِكَ الْفَوْزُ الْمُب۪ينُ ﴿١٦﴾

16- "O gün kim azaptan kurtarılırsa, gerçekten Allah onu esirgemiştir. İşte apaçık kurtuluş budur."

Ezeli inayetinin yetiştiği kimsenin üzerinden Allah, sonraki azabını geri çevirir.

وَاِنْ يَمْسَسْكَ اللّٰهُ بِضُرٍّ فَلَا كَاشِفَ لَهُٓ اِلَّا هُوَ وَاِنْ يَمْسَسْكَ بِخَيْرٍ فَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرٌ ﴿١٧﴾

17- "Eğer Allah seni bir zarara uğratırsa, onu kendisinden başka giderecek yoktur. Ve eğer sana bir hayır verirse, bunu da geri alacak yoktur. Şüphesiz o her şeye kadirdir."

Seni beladan kurtaran da meşakkatin içine atan da O'dur. Şimdi hüküm çıkaran yalnız Allah olduğuna göre O'nun dışında kalanların tamamı O'nun fiillerinden ibarettir. Fiiller ise yaratma yeteneğine sahip değildir."

وَهُوَ الْقَاهِرُ فَوْقَ عِبَادِه۪ وَهُوَ الْحَك۪يمُ الْخَب۪يرُ ﴿١٨﴾

18- "O kullarının üstünde her türlü tasarrufa sahiptir. O, hüküm ve hikmet sahibidir, her şeyden haberdardır."

Birlik mertebesi, beşer olma vasfının üstündedir. Şöyle ki, biri ezelidir, diğeri ise daha önce yokken sonradan var olmuştur. Şimdi tevhidin hakimiyeti apaçık ortada iken varlıklar nasıl kalıcı olabilirler?!

قُلْ اَیُّ شَیْءٍ اَكْبَرُ شَهَادَةً قُلِ اللّٰهُ شَهٖيدٌ بَيْنٖي وَبَيْنَكُمْ وَاُوحِيَ
اِلَيَّ هٰذَا الْقُرْاٰنُ لِاُنْذِرَكُمْ بِهٖ وَمَنْ بَلَغَ اَئِنَّكُمْ لَتَشْهَدُونَ اَنَّ مَعَ
اللّٰهِ اٰلِهَةً اُخْرٰى قُلْ لَٓا اَشْهَدُ قُلْ اِنَّمَا هُوَ اِلٰهٌ وَاحِدٌ وَاِنَّنٖي بَرٖيٓءٌ
مِمَّا تُشْرِكُونَ ﴿١٩﴾

19- "De ki: 'Hangi şey şahadetçe en büyüktür?' De ki: 'Benimle sizin aranızda Allah şahittir. Bu Kur'an bana, kendisiyle sizi ve ulaştığı herkesi uyarmam için vahyolundu. Yoksa siz, Allah ile beraber başka tanrılar olduğuna şahitlik mi ediyorsunuz?' De ki: 'Ben, buna şahitlik etmem.' 'O, ancak bir tek Allah'tır, ben sizin ortak koştuğunuz şeylerden kesinlikle uzağım' de."

Allah'ın şehadeti, her türlü şehadete galip gelmiştir. Şöyle ki onlar, şahitlik etmeye yöneldikleri zaman, bilgileri konunun gerçeklerini kuşatamazken, Allah'a hiçbir şey saklı kalmamaktadır. Sonra Allah, Hz. Peygamber'e, kendisinin kıyamete kadar gelip geçecek olan herkese peygamber olarak gönderildiğini haber vermektedir.

اَلَّذٖينَ اٰتَيْنَاهُمُ الْكِتَابَ يَعْرِفُونَهُ كَمَا يَعْرِفُونَ اَبْنَٓاءَهُمْ اَلَّذٖينَ خَسِرُوٓا
اَنْفُسَهُمْ فَهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿٢٠﴾

20- "Kendilerine Kitap verdiklerimiz, peygamberi kendi oğullarını tanıdıkları gibi tanırlar. Kendilerini ziyan edenler var ya, işte onlar inanmazlar."

Onların bilgisi, Muhammed Mustafa'nın (s.a.v.) peygamberlik konusunda doğruyu söylediğini kuşatmıştır. Ancak ezeli şakiliğe yakalandıkları için dilleri bunu ikrar etmekten tutulmuştur. Bu nedenle açıktan onu inkâr ederken doğruluğunu kalben bilmişlerdir.

وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا اَوْ كَذَّبَ بِاٰيَاتِهٖ اِنَّهُ لَا يُفْلِحُ
الظَّالِمُونَ ﴿٢١﴾

21- "Yalan sözlerle Allah'a iftira edenden veya O'nun ayetlerini yalanlayandan daha zalim kimdir? Şüphe yok ki zalimler kurtuluşa ermezler."

Perişanlıklarının uğursuzluğu, onları öyle şaşırtmıştır ki, kendilerini Allah hakkında yalan söylemekte ısrar etme noktasına sürüklemiştir. Sonra da ne Allah'ın bunu bileceğinden utandılar ne de azabından korktular.

وَيَوْمَ نَحْشُرُهُمْ جَم۪يعًا ثُمَّ نَقُولُ لِلَّذ۪ينَ اَشْرَكُوٓا اَيْنَ شُرَكَٓاؤُكُمُ الَّذ۪ينَ كُنْتُمْ تَزْعُمُونَ ﴿٢٢﴾

22- "Unutma o günü ki, onları hep birden toplayacağız. Sonra da Allah'a ortak koşanlara; 'Nerede boş yere davasını güttüğünüz ortaklarınız?' diyeceğiz."

Allah onları, haşir ve neşir günü için toplayacak, fakat hükümde ve emirde birbirinden ayıracaktır. Bu itibarla haşir onları bir araya getirmekte, hüküm ise ayırmaktadır.

ثُمَّ لَمْ تَكُنْ فِتْنَتُهُمْ اِلَّٓا اَنْ قَالُوا وَاللّٰهِ رَبِّنَا مَا كُنَّا مُشْرِك۪ينَ ﴿٢٣﴾

23- "Sonra onların mazeretleri: 'Rabbimiz Allah hakkı için biz, ortak koşanlar olmadık' demekten başka bir şey olmadı."

Kendilerinden rivayet edilen bu husus, isyanın son haddidir. Zira onlar, söyledikleri yalanı inkâr edip üzerine yemin etmişlerdir. Eğer onların Allah hakkında bilgileri olsaydı, sırlarını ve gizliliklerini bildiğini, dünyalarından da ahiretlerinden de hiçbir şeyin kendisinden saklı kalmadığını kesin olarak bileceklerdi. Ancak kendilerine galip gelen cehalet, onlara rezil olacakları şeyleri söyletmiştir.

اُنْظُرْ كَيْفَ كَذَبُوا عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ وَضَلَّ عَنْهُمْ مَا كَانُوا يَفْتَرُونَ ﴿٢٤﴾

24- "Gör ki, kendi aleyhlerine nasıl yalan söylediler ve tanrı diye uydurdukları şeyler, kendilerinden nasıl kaybolup gitti!"

Bu, hayret sözüdür. Yani, hikâyelerinin bazısı, sizin gibiler için hayret konusudur.

وَمِنْهُمْ مَنْ يَسْتَمِعُ اِلَيْكَ وَجَعَلْنَا عَلٰى قُلُوبِهِمْ اَكِنَّةً اَنْ يَفْقَهُوهُ وَفِي اٰذَانِهِمْ وَقْرًا وَاِنْ يَرَوْا كُلَّ اٰيَةٍ لَا يُؤْمِنُوا بِهَا حَتّٰى اِذَا جَٓاؤُكَ يُجَادِلُونَكَ يَقُولُ الَّذِينَ كَفَرُوٓا اِنْ هٰذَٓا اِلَّٓا اَسَاطِيرُ الْاَوَّلِينَ ﴿٢٥﴾

25- "Onlardan Kur'an okurken seni dinleyenler de vardır. Fakat onu anlamalarına engel olmak için kalplerinin üstüne perdeler, kulaklarına da ağırlık verdik. Onlar, her türlü mucizeyi görseler bile yine de ona inanmazlar. Hatta o kâfirler sana geldiklerinde: 'Bu Kur'an, eskilerin masallarından başka bir şey değildir' diyerek seninle tartışırlar."

Allah, gerçek işitmenin, kabule vesile olan işitme olduğunu açıklamaktadır. Bu ise kesin inançtan doğar. Zahiren işitmenin ise hiçbir geçerliliği bulunmamaktadır.

Bir yoruma göre de Allah, kimi mühürlenmiş bir kalp ile imtihan eder ve basiretinin üstüne şaşkınlık perdesi çekerse bu, onun sadece kat kat nefretini arttırır. (وَاِنْ يَرَوْا كُلَّ اٰيَةٍ لَا يُؤْمِنُوا بِهَا حَتّٰى اِذَا جَٓاؤُكَ يُجَادِلُونَكَ يَقُولُ الَّذِينَ كَفَرُوٓا اِنْ هٰذَٓا اِلَّٓا اَسَاطِيرُ الْاَوَّلِينَ) *"Onlar, her türlü mucizeyi görseler bile yine de ona inanmazlar. Hatta o kâfirler sana geldiklerinde: 'Bu Kur'an, eskilerin masallarından başka bir şey değildir' diyerek seninle tartışırlar."* Yani ezeli takdirin uzaklaştırdığı kimseye, ebedi tedbir hayat veremez.

وَهُمْ يَنْهَوْنَ عَنْهُ وَيَنْـَٔوْنَ عَنْهُ وَاِنْ يُهْلِكُونَ اِلَّٓا اَنْفُسَهُمْ وَمَا يَشْعُرُونَ ﴿٢٦﴾

26- "Onlar, hem insanları Peygamber'e yaklaşmaktan vazgeçirmeye çalışırlar hem de kendileri ondan uzaklaşırlar. Oysa onlar, farkında olmadan ancak kendilerini helak ederler."

Bu ayette, görünürde hakka davet edip gizli halde onu yerine getirmeyen kimseye dönük çetin bir işaret bulunmaktadır.

Bir yoruma göre de halleri, sözlerinin gereğine aykırı olmuş ve suçları, kendilerini işi bitmiş kimselerin durumuna düşürmüştür. Böylece kaderin uzaklaştırdığı kimseyi davranışı yaklaştıramaz.

وَلَوْ تَرٰىٓ اِذْ وُقِفُوا عَلَى النَّارِ فَقَالُوا يَا لَيْتَنَا نُرَدُّ وَلَا نُكَذِّبَ بِاٰيَاتِ رَبِّنَا وَنَكُونَ مِنَ الْمُؤْمِنِينَ ﴿٢٧﴾

27- “Onların, ateşin karşısında durdurulup: ‘Ah! Keşke dünyaya geri gönderilsek de bir daha Rabbimizin ayetlerini yalanlamasak ve inananlardan olsak!’ dediklerini bir görsen!..”

Yani Allah, kuluna vaat ettiği yakınlığı gerçekleştirdiği zaman, kimsenin sırların kaynağına muttali olmaması için, dilediğini herhangi bir sebeple meşgul eder.

بَلْ بَدَا لَهُمْ مَا كَانُوا يُخْفُونَ مِنْ قَبْلُ وَلَوْ رُدُّوا لَعَادُوا لِمَا نُهُوا عَنْهُ وَاِنَّهُمْ لَكَاذِبُونَ ﴿٢٨﴾ وَقَالُوٓا اِنْ هِيَ اِلَّا حَيَاتُنَا الدُّنْيَا وَمَا نَحْنُ بِمَبْعُوثِينَ ﴿٢٩﴾

28, 29- “Hayır! Daha önce gizlemekte oldukları şeyler kendilerine göründü. Eğer dünyaya geri gönderilseler, yine kendilerine yasak edilen şeylere döneceklerdir. Zira onlar gerçekten yalancıdırlar. Onlar: ‘Hayat, ancak bu dünyadaki hayatımızdan ibarettir. Biz, bir daha da diriltilecek değiliz’ demişlerdir.”

Yarın perdelerin yırtıldığı ve sırların ortaya çıktığı gün nice takva elbisesiyle bezenmiş, tanıyanları onun dünyada zahit, ahiretini arayan, Mevlâ'sını seven ve hevasından kopmuş bir olduğuna hükmederken durum, anladıklarının aksine çıkar ve bu kimse, zannedilenin hilafına onlar nezdinde rezil olur.

Zahiriyle gerçek hüviyeti örtülmüş olup kötü sanılan nice kimse de vardır ki, herkes onu hayâ yoksunu, kişiliksiz ve iç dünyası karmaşık biri zannederken basiret sahiplerince cevheri görülür ve örtülmüşlüğün gizlilikleri içinden gerçek kimliği beliriverir.

(وَلَوْ رُدُّوا لَعَادُوا لِمَا نُهُوا عَنْهُ) *"Eğer dünyaya geri gönderilseler, yine kendilerine yasak edilen şeylere döneceklerdir."* Allah, onlar hakkında bildiğinden haber vererek temenninin, onların sonucunu değiştirmeyeceğini şöyle ifade etmiştir: Eğer azap ehli kimseler dünyalarına geri döndürülselerdi, tekrar inkârlarına başvuracaklardı. Aynı şekilde kalbi temiz vefa ehli kimseler dünyalarına geri gönderilselerdi, onlar da güzel amellerine döneceklerdi.

وَلَوْ تَرٰٓى اِذْ وُقِفُوا عَلٰى رَبِّهِمْ قَالَ اَلَيْسَ هٰذَا بِالْحَقِّ قَالُوا بَلٰى
وَرَبِّنَا قَالَ فَذُوقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنْتُمْ تَكْفُرُونَ ﴿٣٠﴾

30- "Rablerinin huzuruna getirildikleri zaman sen onları bir görsen! Allah: 'Bu yeniden dirilme olayı hak değil mi imiş?' diyecek. Onlar da: 'Rabbimize andolsun ki, evet' diyecekler. Allah da: 'Öyleyse inkâr ettiğinizden dolayı azabı tadın' diyecek."

Mahcubiyet sahnesinden, karşılaşılan korkulu manzaradan ve amelde kusur işlemekten dolayı onlara yazıklar olsun.

Onlar, hasret ayakları üzerinde durmakta, pişmanlığın kendilerine fayda vermediği bir anda pişmanlıktan dişlerini gıcırdatmakta, hiçbir şikâyeti dinlenmemekte ve üzerlerine inecek bir rahmet bulunmamaktadır.

Bir de Allah onlara: "Bu hak değil midir?" diye sorduğunda onlar, istemeyerek ikrarda bulunmakta ve hiçbir şeyle ilgileri olmadığını haykırmaktadırlar.

قَدْ خَسِرَ الَّذ۪ينَ كَذَّبُوا بِلِقَٓاءِ اللّٰهِ حَتّٰٓى اِذَا جَٓاءَتْهُمُ السَّاعَةُ بَغْتَةً
قَالُوا يَا حَسْرَتَنَا عَلٰى مَا فَرَّطْنَا ف۪يهَا وَهُمْ يَحْمِلُونَ اَوْزَارَهُمْ

عَلٰى ظُهُورِهِمْ اَلَا سَٓاءَ مَا يَزِرُونَ ﴿٣١﴾ وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَٓا اِلَّا
لَعِبٌ وَلَهْوٌ وَلَلدَّارُ الْاٰخِرَةُ خَيْرٌ لِلَّذِينَ يَتَّقُونَ اَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿٣٢﴾

31, 32- "Allah'ın huzuruna çıkmayı yalanlayanlar, gerçekten ziyana uğramıştır. Nihayet onlara kıyamet vakti ansızın gelip çatınca onlar, günahlarını sırtlarına yüklenerek diyecekler ki: 'Dünyada iyi amelleri terk etmemizden dolayı, vah bize!' Dikkat edin, yüklendikleri şey ne kötüdür! Dünya hayatı, bir oyun ve eğlenceden başka bir şey değildir. Takva sahibi olanlar işin ahiret yurdu, muhakkak ki daha hayırlıdır. Hala akıl erdiremiyor musunuz?"

Ziyan ki ne ziyan! Onların kaybı mal, makam ve halden ibaret değildir. Lakin durum şu dizelerde söylendiği gibidir:

*Hayatıma yemin ederim ki, eğer ben gözyaşlarımı akıttıysam bu*
*Kendisini anmak uğruna bir ömür tükettiğim sevgilinin ayrılığı içindir*

Musibet onlar için, hasret ise başkası içindir. Allah'ın kadrinin yüceliğini bilmeyen kimse, ne zaman O'nun sözünü ve emrini yerine getirmediğine üzülür?

(وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَٓا اِلَّا لَعِبٌ وَلَهْوٌ) *"Dünya hayatı, bir oyun ve eğlenceden başka bir şey değildir."*

İçinde nefsin payı ve günlük nasibin olduğu şey dünyalıktır. Dünyalık olan ise, ister istemez seni Mevlâ'ndan gafil kılar. Meyli, seni haktan alıkoyan şeye yakınlık ise bereketli değildir.

قَدْ نَعْلَمُ اِنَّهُ لَيَحْزُنُكَ الَّذِي يَقُولُونَ فَاِنَّهُمْ لَا يُكَذِّبُونَكَ وَلٰكِنَّ
الظَّالِمِينَ بِاٰيَاتِ اللّٰهِ يَجْحَدُونَ ﴿٣٣﴾

33- "Onların söylediklerinin hakikaten seni üzdüğünü biliyoruz. Aslında onlar seni yalanlamıyorlar, fakat o zalimler açıkça Allah'ın ayetlerini inkâr ediyorlar."

Bu, Hz. Peygamber'e verilmiş olan bir tesellidir. Yani biz, senin hakkında ne söylediklerini biliyoruz. Onlar, aslında bunu bizden dolayı ve bizim için söylediler. Nitekim biz sana bu peygamberlik sorumluluğunu yüklemeden önce sen, onlar nezdinde büyük itibar sahibi idin. Sana "Muhammed el-Emîn (Güvenilir Muhammed)" diyorlardı. İşte bu nedenle, başına bunlar geliyorsa, bizim sözümüzden dolayı gelmektedir. Ancak senin için bu durumun katımızda zayi olmayacaktır. Senin bizimle ilgili durumun tıpkı şu beyitte söylendiği gibidir:

*Kabilede yaydılar hakkımızda en çirkin hikâyeyi*
*Barışık iken bizimle daha önce, savaşır oldular bizimle*

وَلَقَدْ كُذِّبَتْ رُسُلٌ مِنْ قَبْلِكَ فَصَبَرُوا عَلٰى مَا كُذِّبُوا وَاُو۫ذُوا حَتّٰٓى اَتٰيهُمْ نَصْرُنَا وَلَا مُبَدِّلَ لِكَلِمَاتِ اللّٰهِ وَلَقَدْ جَٓاءَكَ مِنْ نَبَاِ۬ئ الْمُرْسَل۪ينَ ﴿٣٤﴾

34- "Andolsun ki, senden önceki peygamberler de yalanlanmıştı. Onlar, yalanlanmalarına ve eziyet edilmelerine rağmen sabrettiler. Sonunda yardımımız onlara yetişti. Allah'ın kelimelerini değiştirebilecek hiç kimse yoktur. Muhakkak ki peygamberlerin haberlerinden bazısı sana da geldi."

Yani kim bizim yolumuzu izlerse, sözümüzden dolayı başına gelenlere sabreder. Bu durumda bizim için giriştiği mücadelede kaybetmez ve durumu bizden gizli kalmaz. Bizi tanıyanlar, hükmümüzü canlarıyla karşılamış ve yolumuzda karşılaştıklarını da gözleri üstünde taşımışlardır.

Şiir:

*Aşk dini üzere ölenler*
*Buldular ölümü ballı bir kaynak olarak*

وَاِنْ كَانَ كَبُرَ عَلَيْكَ اِعْرَاضُهُمْ فَاِنِ اسْتَطَعْتَ اَنْ تَبْتَغِيَ نَفَقًا فِي الْاَرْضِ اَوْ سُلَّمًا فِي السَّمَاءِ فَتَاْتِيَهُمْ بِاٰيَةٍ وَلَوْ شَاءَ اللّٰهُ لَجَمَعَهُمْ عَلَى الْهُدٰى فَلَا تَكُونَنَّ مِنَ الْجَاهِلِينَ ﴿٣٥﴾

35- "Eğer onların yüz çevirmesi sana ağır geldi ise yapabilirsen yerin içine inebileceğin bir tünel ya da göğe çıkabileceğin bir merdiven ara ki, onlara bir mucize getiresin. Allah dileseydi, elbette onları hidayet üzerinde toplayıp birleştirirdi. O halde sakın cahillerden olma!"

Hz. Peygamber (s.a.v.), aşırı şefkatinden dolayı sonuna kadar onlar için Allah'tan rahmet dilemiş ve durumlarının kötü olduğunu bildiği için, mübarek kalbine etki eden çeşitli üzüntüler taşımıştır. Bunun üzerine Allah ona, kendilerinin Allah'a yakınlıktan uzaklaştırıldıklarını ve ezeli takdir ile perişanlığa terk edildiklerini bildirmiştir.

Eğer Allah dileseydi, onların azabını hafifletirdi. Eğer onları hidayete erdirmek isteseydi, kalplerinde bir huzur, faaliyetlerinde de bir kararlılık olurdu. Lakin izzetin tokadını yiyen kimseye tedbir hayat veremez.

اِنَّمَا يَسْتَجِيبُ الَّذِينَ يَسْمَعُونَ وَالْمَوْتٰى يَبْعَثُهُمُ اللّٰهُ ثُمَّ اِلَيْهِ يُرْجَعُونَ ﴿٣٦﴾

36- "Ancak samimiyetle dinleyenler daveti kabul eder. Ölülere gelince, Allah onları diriltecek, sonra da O'na döndürülecekler."

Her kim sırlarında dinleme yeteneğini yitirirse, zahiriyle de emre uymadaki muvaffakiyeti kaybeder. Galip olan ise Allah'ın ilmi dâhilindeki ezeli tercihtir.

وَقَالُوا لَوْلَا نُزِّلَ عَلَيْهِ اٰيَةٌ مِنْ رَبِّهِ قُلْ اِنَّ اللّٰهَ قَادِرٌ عَلٰٓى اَنْ يُنَزِّلَ اٰيَةً وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٣٧﴾

37- "'O'na Rabbinden bir mucize indirilseydi ya!' dediler. De ki: 'Şüphesiz Allah, mucize indirmeye kadirdir.' Fakat onların çoğu bilmezler."

Mucizelerin çok olmasını istediler. Oysa mazeretlerinin önünü kesecek kadar mucize gerçekleşmişti. Onlar, kendilerini engelleyenin Allah olduğunu bilemediler. Nitekim eğer basiretleri kapatılmasaydı, delillerin yokluğunu vehmetmezlerdi.

وَمَا مِنْ دَآبَّةٍ فِي الْاَرْضِ وَلَا طَآئِرٍ يَطِيرُ بِجَنَاحَيْهِ اِلَّٓا اُمَمٌ اَمْثَالُكُمْ
مَا فَرَّطْنَا فِي الْكِتَابِ مِنْ شَيْءٍ ثُمَّ اِلٰى رَبِّهِمْ يُحْشَرُونَ ﴿٣٨﴾

38- "Yeryüzünde yürüyen hayvanlar ve gökyüzünde iki kanadı ile uçan kuşlardan ne varsa hepsi, ancak sizin gibi topluluklardır. Biz o kitapta hiçbir şeyi eksik bırakmadık. Nihayet hepsi toplanıp rablerinin huzuruna getirileceklerdir."

Yani, yaratana muhtaçlık bakımından yaratıklar eşittirler ve benzerdirler. Bu, yoktan var edilirken de yaşarken de böyledir. Aynı şekilde diğer nefsî ve zâtî sıfatlar da icat ve tercihten geri kalmışlardır. Bu nedenle somut, soyut, şekil ve kalıntı ne varsa, hepsi O'nun birliğine şahit ve kendi yaratılmışlığına açık delildir.

وَالَّذِينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا صُمٌّ وَبُكْمٌ فِي الظُّلُمَاتِ مَنْ يَشَاِ اللّٰهُ يُضْلِلْهُ
وَمَنْ يَشَاْ يَجْعَلْهُ عَلٰى صِرَاطٍ مُسْتَقِيمٍ ﴿٣٩﴾

39- "Ayetlerimizi yalanlayanlar karanlıklar içinde kalmış sağır ve dilsizlerdir. Allah, kimi dilerse onu şaşırtır. Dilediği kimseyi de doğru yola iletir."

Ezeli inayeti kaçıranlar, mahrumiyet kulaklarını kapatmış ve rüsvalık gözlerini örtmüştür. İlahi iradeye ise karşı konulamaz, takdire baskı yapılamaz. Allah da bütün hallerde galiptir.

قُلْ اَرَاَيْتَكُمْ اِنْ اَتٰيكُمْ عَذَابُ اللّٰهِ اَوْ اَتَتْكُمُ السَّاعَةُ اَغَيْرَ اللّٰهِ تَدْعُونَ
اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٤٠﴾ بَلْ اِيَّاهُ تَدْعُونَ فَيَكْشِفُ مَا تَدْعُونَ اِلَيْهِ اِنْ
شَٓاءَ وَتَنْسَوْنَ مَا تُشْرِكُونَ ﴿٤١﴾

40, 41- "De ki: 'Ne dersiniz; size Allah'ın azabı gelse veya o kıyamet gelip çatıverse Allah'tan başkasına mı yalvarırsınız? Doğru sözlü iseniz söyleyin bakalım. Bilakis yalnız Allah'a yalvarırsınız. O da kaldırılması için kendisine yalvardığınız belayı dilerse kaldırır ve siz, ortak koştuğunuz şeyleri unutursunuz.'"

Size sıkıntı dokunduğu zaman ve başınıza bir iş gelince, onun defedilmesini kimden istersiniz ve kimin lütfünü umarsınız? Doğulu bir yaratıktan mı batılı bir şahıstan mı yoksa gökteki bir melekten mi veya yeryüzündeki bir kuldan mı?

(بَلْ اِيَّاهُ تَدْعُونَ) *"Bilakis yalnız Allah'a yalvarırsınız."*

Yani siz, eğer nefislerinizle alçak gönüllülük yapar veya kalplerinizle uzunca düşünürseniz, O'ndan başka hiç kimseyi ve hükmünden kurtuluşu bulamayacaksınız. Böylece sıkıntının defedilmesi ve iyilikle lütufta bulunulması konusunda O'na döneceksiniz. Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Döndürüyor beni sana yiğitleri tanımak*
*Uzak olsa da yurdum senden*
*Seni istediğine bıraktık biz*
*Ola ki dönersin denersen onu*

Bu itibarla her şeyi denediğin ve tatlıyı da acıyı da tattığın zaman sıkıntı seni O'nun kapısına götürecektir. Bu durumda sen, tevazu sıfatı, zül ve mecburiyet tanıklarıyla dönüş yaptığın zaman O, dilediğini yapar. Dilerse kolaylık bahşedip sıkıntıyı giderir. Dilerse sıkıntıyı katlayarak karşılığında sevap verir. Dilerse de durumu yakarıştan önceki vaziyet üzere bırakır.

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَٓا اِلٰٓى اُمَمٍ مِنْ قَبْلِكَ فَاَخَذْنَاهُمْ بِالْبَاْسَٓاءِ وَالضَّرَّٓاءِ
لَعَلَّهُمْ يَتَضَرَّعُونَ ﴿٤٢﴾

42- "Andolsun ki, senden önceki ümmetlere de elçiler gönderdik. Ardından boyun eğsinler diye onları darlık ve hastalıklara uğrattık."

Allah, eski ümmetlerde önceden uyguladığı prensibinden, aralarından kendisine itaat edenlere verdiği nimet ve yaptığı lütuftan ve O'na karşı çıkanların başına getirdiği acının ve azabın çeşitlerinden söz etmektedir.

فَلَوْلَٓا اِذْ جَٓاءَهُمْ بَاْسُنَا تَضَرَّعُوا وَلٰكِنْ قَسَتْ قُلُوبُهُمْ وَزَيَّنَ لَهُمُ
الشَّيْطَانُ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿٤٣﴾ فَلَمَّا نَسُوا مَا ذُكِّرُوا بِه۪ فَتَحْنَا
عَلَيْهِمْ اَبْوَابَ كُلِّ شَيْءٍ حَتّٰٓى اِذَا فَرِحُوا بِمَٓا اُو۫تُوٓا اَخَذْنَاهُمْ بَغْتَةً
فَاِذَا هُمْ مُبْلِسُونَ ﴿٤٤﴾

43, 44- "Hiç olmazsa, onlara bu şekilde azabımız geldiği zaman, boyun eğselerdi. Fakat kalpleri iyice katılaştı ve şeytan da onlara yaptıklarını cazip gösterdi. Kendilerine yapılan uyarıları unuttuklarında, üzerlerine her şeyin kapılarını açtık. Nihayet kendilerine verilenler yüzünden şımardıkları zaman, onları ansızın yakaladık. Birden bire onlar, bütün ümitlerini yitirdiler."

Yani onların başına bela geldiğinde, eğer güzel bir yalvarış ve yakarışla dönselerdi, biz de üzerlerinden meşakkatleri kaldırır, nimetleri lütfederdik. Lakin rüsvalık, onları ahiretten alıkoyduğu için isyanlarında ısrar ettiler. Bunun üzerine kalpleri katılaştı ve şakilik sebepleri kat kat artmış oldu.

(فَلَمَّا نَسُوا مَا ذُكِّرُوا بِه۪) *"Kendilerine yapılan uyarıları unuttuklarında..."*

Allah, onlara karşı uyguladığı gizli tedbirden ve kendilerine, nasıl önce fırsat verdikten sonra yaptıklarının vebalini tattırdığından söz etmektedir. Onların huzurda bulunmama süreleri uzayıp öğütlerimiz onlarda başarılı sonuç vermeyince, onlara önce afiyetin vesilelerini kolaylaştırdık, üzerlerine sağanak yağmur gibi nimetler indirdik ve kendileri için refah kapılarını açtık. İşte bu durumda ümit, kalplerinde kök salmışken, ansızın kendilerini yakalayıp cezalandırdık ve onlara hasreti tattırdık. Hal böyle olunca, onlar rahmetten ve kalplerine hâkim olan yabancılığın sebeplerinden dolayı, münacatın devamıyla huzura kavuşmaktan ümit kestiler.

فَقُطِعَ دَابِرُ الْقَوْمِ الَّذِينَ ظَلَمُوا وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿٤٥﴾

45- "Böylece zulmeden toplumun kökü kesildi. Hamd, âlemlerin rabbi Allah'a mahsustur."

Onlar, henüz az bir şey kalmışlardı ki, onlardan ne bir varlık ne bir eser kaldı ve onlar hakkında ne bir söz ne de bir haber geldi. Allah ise izzet sıfatı ve celal hakkından dolayı ne onların yokluğundan bir yalnızlık çekmekte ne de onların varlığından huzur ve sevinç duymaktadır.

قُلْ اَرَاَيْتُمْ اِنْ اَخَذَ اللّٰهُ سَمْعَكُمْ وَاَبْصَارَكُمْ وَخَتَمَ عَلٰى قُلُوبِكُمْ مَنْ اِلٰهٌ غَيْرُ اللّٰهِ يَاْتِيكُمْ بِهِ اُنْظُرْ كَيْفَ نُصَرِّفُ الْاٰيَاتِ ثُمَّ هُمْ يَصْدِفُونَ ﴿٤٦﴾

46- "De ki: 'Ne dersiniz? Eğer Allah kulaklarınızı sağır, gözlerinizi kör eder, kalplerinizi de mühürlese, bunları size Allah'tan başka hangi tanrı geri verebilir!' Bak, delilleri nasıl açıklıyoruz! Onlar hala yüz çeviriyorlar."

Allah, onlara aciz oldukları noktayı ve yoksulluklarından dolayı, ilahî kudrete muhtaç oluşlarının hakikatini öğretmektedir.

Aynı zamanda Allah, onları sakındırmak üzere, şöyle buyurmaktadır: Eğer Allah, onlara işitme ve görme nimetini devam ettirmez, her an ve her yönden kendilerine afiyet vermezse, O'nun aldığını kim verebilir, O'nun engellediğini kim koyabilir, O'nun ortadan kaldırdığını kim geri getirebilir veya ortaya çıkardığını kim geri çevirebilir? Asla... Doğrusu yegâne Allah O'dur.

قُلْ اَرَاَيْتَكُمْ اِنْ اَتٰيكُمْ عَذَابُ اللّٰهِ بَغْتَةً اَوْ جَهْرَةً هَلْ يُهْلَكُ اِلَّا
الْقَوْمُ الظَّالِمُونَ ﴿٤٧﴾

47- "De ki: 'Söyler misiniz; size Allah'ın azabı ansızın veya açıkça gelirse, zalim toplumdan başkası mı helak olur?'"

Allah buyurmaktadır ki: Eğer O, size vaat ettiği azabı çabuklaştırırsa, o azabı hak edenden başkasının mı bunu çekeceğini zannedersiniz? Veya azabı hak eden, ondan bir kaçış yolu mu bulacaktır? Bu, imkânsız bir zandır.

وَمَا نُرْسِلُ الْمُرْسَلِينَ اِلَّا مُبَشِّرِينَ وَمُنْذِرِينَ فَمَنْ اٰمَنَ وَاَصْلَحَ فَلَا
خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿٤٨﴾ وَالَّذِينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا يَمَسُّهُمُ
الْعَذَابُ بِمَا كَانُوا يَفْسُقُونَ ﴿٤٩﴾

48, 49- "Biz peygamberleri ancak müjdeleyiciler ve uyarıcılar olarak göndeririz. Kim, iman eder ve kendini düzeltirse, onlara korku yoktur. Onlar, üzüntü de çekmeyecekler. Ayetlerimizi yalanlayanlara gelince, yoldan çıkmalarından dolayı, onlar azap çekeceklerdir."

Yani bizim onlara olan emrimiz, ancak kurtuluşlarına vesile olan şeylere bağlı kalmaları yönündedir. Sonra onlara güzel vaatlerde bulunuyor ve helak olmalarına yol açacak şeylerden kopmalarını emrediyor, ardından da aykırı davranışlarının sebep olduğu ahiretteki acıklı azapla kendilerini uyarıyoruz.

Bu çerçevede her kim, inanır ve tasdik ederse, ona olan vaadimizi yerine getiririz. Kim de kâfir olup inkârda bulunursa, işini ters çevirir ve başına sıkıntı açarız.

قُلْ لَٓا اَقُولُ لَكُمْ عِنْدٖي خَزَٓائِنُ اللّٰهِ وَلَٓا اَعْلَمُ الْغَيْبَ وَلَٓا اَقُولُ لَكُمْ اِنّٖي مَلَكٌۚ اِنْ اَتَّبِعُ اِلَّا مَا يُوحٰٓى اِلَيَّۜ قُلْ هَلْ يَسْتَوِي الْاَعْمٰى وَالْبَصٖيرُۜ اَفَلَا تَتَفَكَّرُونَ ﴿٥٠﴾

50- "De ki: 'Ben size: Allah'ın hazineleri benim yanımdadır, demiyorum. Ben gaybı da bilmem. Size, ben bir meleğim de demiyorum. Ben, sadece bana vahiy olunana uyarım.' De ki: 'Kör ile gören hiçbir olur mu? Hiç düşünmez misiniz?'"

Yani de ki: Ben kendiliğimden bir adım atmam, haddimi aşmam ve hiçbir şey ortaya koymam. Sadece bana: "Sen tebliğde bulundun mu?" diye sorulur. Ben de: "Evet, ulaştırdım" derim.

(قُلْ هَلْ يَسْتَوِي الْاَعْمٰى وَالْبَصٖيرُ) *"De ki: 'Kör ile gören hiçbir olur mu?'"*

Hiç aydınlıkla karanlık birbirine benzer mi? Ve hiç inkâr ile tevhid aynı olur mu? Asla... Böyle olmaz.

وَاَنْذِرْ بِهِ الَّذٖينَ يَخَافُونَ اَنْ يُحْشَرُٓوا اِلٰى رَبِّهِمْ لَيْسَ لَهُمْ مِنْ دُونِهٖ وَلِيٌّ وَلَا شَفٖيعٌ لَعَلَّهُمْ يَتَّقُونَ ﴿٥١﴾

51- "Rablerinin huzurunda toplanacaklarından korkanları Kur'an'la uyar. Onlar için Rablerinden başka ne bir dost ne de bir aracı vardır. Belki sakınırlar."

Uyarı, korkulması gereken hususları bildirmek demektir. Burada Allah'ın, özellikle korkanları uyarıp: "Kur'an takva sahipleri için bir hidayettir" sözüyle takva sahiplerine hidayeti izafe etmesinin sebebi, faydalanma ve Hz. Peygamber'e uymanın takva ile gerçekleşmesi, uyarının da inkârcılara mahsus olmasıdır.

Bir yoruma göre de burada korkudan maksat ilimdir. Zira sadece bilen korkar. Cehalet perdesi altındaki kalplere ise korku habercileri ulaşamaz.

(لَيْسَ لَهُمْ مِنْ دُونِهِ وَلِيٌّ وَلَا شَفِيعٌ) *"Onlar için Rablerinden başka ne bir dost ne de bir aracı vardır."* Yani nasıl ki onların Allah'tan başka bir yardımcısı yok ise aynı zamanda fiillerinden onlar için bir güvence, hallerinden de bir dayanak yoktur. Onlar, inayetin yönelişi ve rahmetin özelliklerinden başka bir şeyden de emin olamazlar.

وَلَا تَطْرُدِ الَّذِينَ يَدْعُونَ رَبَّهُمْ بِالْغَدٰوةِ وَالْعَشِيِّ يُرِيدُونَ وَجْهَهُ مَا عَلَيْكَ مِنْ حِسَابِهِمْ مِنْ شَيْءٍ وَمَا مِنْ حِسَابِكَ عَلَيْهِمْ مِنْ شَيْءٍ فَتَطْرُدَهُمْ فَتَكُونَ مِنَ الظَّالِمِينَ ﴿٥٢﴾

52- "Rablerinin rızasını isteyerek sabah akşam O'na yalvaranları kovma! Onların hesabından sana bir sorumluluk, senin hesabından da onlara herhangi bir sorumluluk yoktur ki, bunları kovup da zalimlerden olasın."

Bu, fakirler ve güçsüzler konusunda Hz. Peygamber'e yapılan bir tavsiyedir. Çünkü onlar, Hz. Peygamber'in meclisinden kovulma ihtimaliyle karşı karşıya kaldıklarında kendilerini savunmak için aykırı bir dil kullanmadılar ve kalpleriyle Allah'a yalvarıp durdular. Allah, burada onların müdafaasını üstlenmek suretiyle, kendisine yalvarmanın güzelliğini açıklamak istemiş ve şöyle buyurmuştur:

(وَلَا تَطْرُدِ الَّذِينَ يَدْعُونَ رَبَّهُمْ بِالْغَدٰوةِ وَالْعَشِيِّ يُرِيدُونَ وَجْهَهُ) *"Rablerinin rızasını isteyerek sabah akşam O'na yalvaranları kovma!"*

Ey Muhammed, onların görünürdeki perişanlıklarına değil, sırlarıyla nasıl yandıklarına bak.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Onlar, halleri itibariyle bilinmiyorlardı. Bunun üzerine Allah, hikâyelerini ortaya çıkarmak suretiyle kendilerini ifşa etmiş oldu.

Nitekim eğer Allah: "*Rablerinin rızasını istiyorlar*" diyerek bu isteklerine şahitlik etmeseydi, bir yaratığın Allah'ı arzuladığını söylemeye kim cesaret ederdi?

- İrade, gerçekte yalnızca sonradan olmayı ilgilendirirken, ebediliğin özü sonradan olma vasfından münezzeh olduğuna göre, bu iradenin, dilcilerin iştikakında öngörüldüğü üzere dilemek anlamında olmadığı anlaşılmaktadır.

- İnsanlar "irade" kavramı konusunda konuşmuşlardır: Söylenenlerden hakikate en yakın olanı şudur: İrade, Kalplerde meydana gelen ve Allah'a ulaşması için kararı kulun ehlinden alan bir ihtiyaçtır. Bu nedenledir ki, iradenin sahibi, gece gündüz duramamakta ve Allah'a kavuşmadan sükûnet ve karar bulamamaktadır. Tıpkı şu şiirde söylendiği gibi:

*Sonra geçirdim geceyi ıssız bir çölde*
*Ne aslandan ne de kurttan korkmadan*
*Galebe çalıyordu bana özlemim ve dürüyordum yolculuğu*
*Zaten yenik ol gelmiştir hep özlem sahibi*

- Dualarının gece ve gündüzle kayıtlanmış olması, zahiri amellerden olmasından ötürüdür. Zira zahiri ameller vakte bağlıdır. İradeleri ise, bâtınî hallerden olduğu için devam ederek bütün vakitlerini kaplamıştır. Zira bâtınî haller vakte bağlı olmayıp ebedidir. Nitekim Allah önce: "*Sabah akşam Rablerine yalvarırlar*" ardından da: "*O'nun rızasını isteyerek*" buyurmuştur. Bu ifade, gramer bakımından hâl konumundadır.

- Bunlar öyle bir makamdadırlar ki, onlara dünyalarıyla ilgili olarak bir şey sorulmaz, ahirette sorgulanmazlar, Mevlalarıyla konuşmaktan başka da bir kaygıları bulunmamaktadır. Böylece onlar, Allah için her şeyden arınınca Hakk'ın mahza inayetine layık oldular ve Allah onlar adına konuşarak önce: Onları kovma ey Muhammed, buyurduktan sonra:

(مَا عَلَيْكَ مِنْ حِسَابِهِمْ مِنْ شَيْءٍ وَمَا مِنْ حِسَابِكَ عَلَيْهِمْ مِنْ شَيْءٍ) "*Onların hesabından sana bir sorumluluk, senin hesabından da onlara herhangi bir sorumluluk yoktur*" demiştir.

Onların hesabı sana sorulmaz, senin hesabın da onlara sorulmaz. Aksine hepsinin hesabını Allah üstlenir. Bu durumda eğer durumu hayırlı olursa bunu kendisi görecek, şayet kötü olursa cezasını da kendisi çekecektir.

وَكَذٰلِكَ فَتَنَّا بَعْضَهُمْ بِبَعْضٍ لِيَقُولُوا اَهٰؤُلَاءِ مَنَّ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ مِنْ بَيْنِنَا اَلَيْسَ اللّٰهُ بِاَعْلَمَ بِالشَّاكِرِينَ ﴿٥٣﴾

53- "'Aramızdan Allah'ın kendilerine lütuf ve ihsanda bulunduğu kimseler de bunlar mı!' demeleri için onların bir kısmını diğerleri ile işte böyle imtihan ettik. Allah, şükredenleri daha iyi bilmez mi?!"

Faziletçe üstün olan şükretsin. Faziletçe noksan olan ise sabretsin.

Bir yoruma göre de muhabbet ehlinin ilkesine göre faziletçe noksan olanın yapacağı iş şükürdür. Nitekim onun şükrü de, faziletçe üstün olanın şükründen az değerli değildir. Şu iki beyit de bu mealdedir:

*Senden bana hakaret geldi, et hakareti*
*Almadın mı adımı ağzına? İşte yeter bu bana*
.....
*Sattığım kalp sana şükretmekte*
*Akıttığım kan da sana hamd etmekte*

وَاِذَا جَاءَكَ الَّذِينَ يُؤْمِنُونَ بِاٰيَاتِنَا فَقُلْ سَلَامٌ عَلَيْكُمْ كَتَبَ رَبُّكُمْ عَلٰى نَفْسِهِ الرَّحْمَةَ اَنَّهُ مَنْ عَمِلَ مِنْكُمْ سُوٓءًا بِجَهَالَةٍ ثُمَّ تَابَ مِنْ بَعْدِهِ وَاَصْلَحَ فَاَنَّهُ غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿٥٤﴾

54- "Ayetlerimize inananlar sana geldiğinde onlara de ki: 'Selam size! Rabbiniz merhamet etmeyi kendisine yazdı. Gerçek şu ki,

sizden kim bilmeyerek bir kötülük yapar, sonra ardından tevbe edip de kendini ıslah ederse, bilsin ki Allah çok bağışlayan, çok esirgeyendir.' "

Allah, Hz. Peygamber'i, büyük şahsiyetlerin yerine koymuştur. Zira normal halde selamı, gelenin vermesi gerektiği halde, büyüklerde durum farklıdır. Çünkü gelen kişi, yanına geldiği kimsenin heybetinden dolayı, kendisi söze başlayıncaya kadar susar. O konuşunca gelen kişi cevap verir. Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Onlar, gelmenin yorgunluğunu çektikleri zaman bu meşakkati onlardan gidermek üzere: "Selam size" de.

- Selam selamet demektir. Bu takdirde: Selam size, sözü şu demektir: Şimdi firkatten, ahirette de ateşte yanmaktan salim olasınız.

(كَتَبَ رَبُّكُمْ عَلٰى نَفْسِهِ الرَّحْمَةَ) *"Rabbiniz merhamet etmeyi kendisine yazdı."*

Şayet Allah, senin hatalarını yazacak bir kimseyi görevlendirdiyse, kuşkusuz senin için rahmet yazmayı da kendisi üstlenmiştir.

- Burada yazmak, hükmetmek anlamında olup Allah, sadece bildiğine hükmeder.

- Senin lehine yazması ezeli, aleyhine yazması ise vakte bağlıdır. Vakte bağlı olan ise ezeli olanı hükümsüz kılmaz.

(اَنَّهُ مَنْ عَمِلَ مِنْكُمْ سُوٓءًا بِجَهَالَةٍ ثُمَّ تَابَ مِنْ بَعْدِهِ وَاَصْلَحَ فَاَنَّهُ غَفُورٌ رَحِيمٌ) *"Gerçek şu ki, sizden kim bilmeyerek bir kötülük yapar, sonra ardından tevbe edip de kendini ıslah ederse, bilsin ki Allah çok bağışlayan, çok esirgeyendir."*

Yani kim, cahillerin amellerinden bir şey işler de sonra dönüş ve tevbeyi geciktirirse, biz ona karşılık veririz. Yani Allah'ın güzel mühletine ve lütfuna güvenerek bir şey yapan kimse, tevbe ve hasretle dönüş yaptığı zaman biz, her türlü lütuf ve kabul ile ona yöneliriz.

وَكَذٰلِكَ نُفَصِّلُ الْاٰيَاتِ وَلِتَسْتَبِينَ سَبِيلُ الْمُجْرِمِينَ ٥٥

55- "Böylece suçluların yolu belli olsun diye, ayetleri iyice açıklıyoruz."

Biz problemi giderir, delil arama yolunu açıklar, tevhid güneşlerini doğurur, onun ehli olanları güzel yardımımızla destekleriz. Hiç kimsenin bir mazereti ve yolda bir problem kalmasın diye de düşmanların kalplerini rüsvalık damgasıyla damgalar ve onlara mahrumiyetin ıstırabını tattırırız.

قُلْ اِنّ۪ي نُه۪يتُ اَنْ اَعْبُدَ الَّذ۪ينَ تَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ قُلْ لَٓا اَتَّبِعُ
اَهْوَٓاءَكُمْ قَدْ ضَلَلْتُ اِذًا وَمَٓا اَنَا۬ مِنَ الْمُهْتَد۪ينَ ﴿٥٦﴾

56- "De ki: 'Allah'ın dışında taptığınız şeylere tapmak bana yasak edildi.' De ki: 'Ben, sizin arzularınıza uymam. Aksi halde sapıtırım da hidayete erenlerden olmam.'"

Yani sana özgü kıldığımız güzel masumiyet ve nimet çeşitlerini açıkça dile getirerek onlara, Allah'ın himayesi altında olduğunu ve O'nun tasarrufuyla yönlendirildiğini haber ver. Bu itibarla senin üzerinde ne hevanın hâkimiyeti vardır ne de sen, haktan uzaklaşıp huzurdan kaybolursun.

قُلْ اِنّ۪ي عَلٰى بَيِّنَةٍ مِنْ رَبّ۪ي وَكَذَّبْتُمْ بِه۪ مَا عِنْد۪ي مَا تَسْتَعْجِلُونَ بِه۪
اِنِ الْحُكْمُ اِلَّا لِلّٰهِ يَقُصُّ الْحَقَّ وَهُوَ خَيْرُ الْفَاصِل۪ينَ ﴿٥٧﴾

57- "De ki: 'Şüphesiz ben Rabbimden gelen apaçık bir delile dayanıyorum. Siz ise onu yalanladınız. Çabucak gelmesini istediğiniz azap benim yanımda değildir. Hüküm ancak Allah'ındır. O hakkı anlatır ve O, doğru hüküm verenlerin en hayırlısıdır.'"

De ki: Allah, arayışımda beni yalnızlık ve şaşkınlık içinde bırakmamıştır, delil arama yorgunluğuna muhtaç kılmamış ve hakikatin güneşleriyle huzura kavuşturmuştur. Şayet siz, şaşkınlığın karanlığı içinde kaldıysanız, benim başınıza gelen şaşkınlığı giderecek, kendi-

siyle imtihan edildiğiniz cehaleti ve tereddüdü ortadan kaldıracak gücüm yoktur.

قُلْ لَوْ اَنَّ عِنْدِي مَا تَسْتَعْجِلُونَ بِهِ لَقُضِيَ الْاَمْرُ بَيْنِي وَبَيْنَكُمْ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِالظَّالِمِينَ ﴿٥٨﴾ وَعِنْدَهُ مَفَاتِحُ الْغَيْبِ لَا يَعْلَمُهَٓا اِلَّا هُوَ وَيَعْلَمُ مَا فِي الْبَرِّ وَالْبَحْرِ وَمَا تَسْقُطُ مِنْ وَرَقَةٍ اِلَّا يَعْلَمُهَا وَلَا حَبَّةٍ فِي ظُلُمَاتِ الْاَرْضِ وَلَا رَطْبٍ وَلَا يَابِسٍ اِلَّا فِي كِتَابٍ مُبِينٍ ﴿٥٩﴾

58, 59- "De ki: 'Acele istediğiniz şey benim elimde olsaydı, elbette benimle sizin aranızda iş bitirilmişti. Allah, zalimleri daha iyi bilir. Gaybın anahtarları Allah'ın yanındadır. Onları O'ndan başkası bilmez. O, karada ve denizde ne varsa bilir. O'nun ilmi dışında bir yaprak bile düşmez. O, yerin karanlıkları içindeki tek bir taneyi dahi bilir. Yaş ve kuru ne varsa, hepsi apaçık bir kitaptadır.'"

Eğer istediğiniz delilleri getirmeye benim gücüm yetseydi, bana önerdiğiniz her şeyi, size olan şefkatimden dolayı, kabul ederdim. Lakin hükmün yegâne sahibi olan Allah'a iradesinde karşı konulamaz.

(وَعِنْدَهُ مَفَاتِحُ الْغَيْبِ) *"Gaybın anahtarları Allah'ın yanındadır."*

Anahtar, kendisiyle kapalılığın ortadan kaldırıldığı ve herkesin muradını gerçekleştiren şeydir ki bu da Allah'ın kudretidir. Çünkü yaratmadaki tesir bu kudrete aittir. Yaratma kudreti sıfatına sahip olan ise sadece Allah'tır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, bununla ilminin kapsamlı oluşunu kast etmiştir. Yani yalnızca O, her şeyi kuşatan ilmin sahibidir. Bir de kesinlikle hiçbir şeyden sorulmaz ve hiçbir şey O'ndan saklı kalmaz.

- Gaybın anahtarları insanda da vardır, Allah'ta da vardır. Bu çerçevede insan Allah'ın gaybına inandığı zaman bu gayb güneş gibi onun gaybını görünmez kılar.

وَهُوَ الَّذ۪ي يَتَوَفّٰيكُمْ بِالَّيْلِ وَيَعْلَمُ مَا جَرَحْتُمْ بِالنَّهَارِ ثُمَّ يَبْعَثُكُمْ
ف۪يهِ لِيُقْضٰٓى اَجَلٌ مُسَمًّىۚ ثُمَّ اِلَيْهِ مَرْجِعُكُمْ ثُمَّ يُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ
تَعْمَلُونَ ﴿٦٠﴾

60- "Geceleyin sizi öldüren (öldürür gibi uyutan), gündüzün de ne işlediğinizi bilen; sonra belirlenmiş ecel tamamlansın diye gündüzün sizi dirilten (uyandıran) O'dur. Sonra dönüşünüz yine O'nadır. Sonunda O, yaptıklarınızı size haber verecektir."

Allah, insanları uyku halinde ve vefat halinde ölümlü kılar. İşte nasıl ki, Allah gece ölümünde, yaptıklarını bildiği halde, gündüz işlediklerinden dolayı insanı cezalandırmıyorsa, aynı şekilde yarın vefat ile insanı ölümlü kıldığı zaman da, çirkin fiillerini bildiği halde ona hayda ceza vermeyebilir.

وَهُوَ الْقَاهِرُ فَوْقَ عِبَادِه۪ وَيُرْسِلُ عَلَيْكُمْ حَفَظَةًۜ حَتّٰٓى اِذَا جَٓاءَ
اَحَدَكُمُ الْمَوْتُ تَوَفَّتْهُ رُسُلُنَا وَهُمْ لَا يُفَرِّطُونَ ﴿٦١﴾

61- "O, kulların üzerinde yegâne kudret ve tasarruf sahibidir. Size koruyucular gönderir. Nihayet birinize ölüm geldi mi elçilerimiz (görevli melekler) onun canını alırlar. Onlar, vazifede kusur etmezler."

Allah kahrı, yüceliği ve kudretiyle kullarına hâkim olup üzerlerine indireceği azapla ve gazapla kendilerini cezalandırabilir.

ثُمَّ رُدُّٓوا اِلَى اللّٰهِ مَوْلٰيهُمُ الْحَقِّۜ اَلَا لَهُ الْحُكْمُ وَهُوَ اَسْرَعُ
الْحَاسِب۪ينَ ﴿٦٢﴾

62- "Sonra insanlar, gerçek sahipleri olan Allah'a döndürülürler. Bilesiniz ki hüküm yalnız O'nundur ve O, hesap görenlerin en çabuğudur."

Allah, onları kendine döndürmüş ve onlar ilahi tasarruftan kurtulamamışlardır.

قُلْ مَنْ يُنَجّ۪يكُمْ مِنْ ظُلُمَاتِ الْبَرِّ وَالْبَحْرِ تَدْعُونَهُ تَضَرُّعًا وَخُفْيَةً لَئِنْ اَنْجٰينَا مِنْ هٰذِه۪ لَنَكُونَنَّ مِنَ الشَّاكِر۪ينَ ﴿٦٣﴾

63- "De ki: 'Karanın ve denizin karanlıklarından (tehlikelerinden) sizi kim kurtarır ki? O zaman O'na gizli gizli yalvararak: 'Eğer bizi bundan kurtarırsan, andolsun şükredenlerden olacağız' diye dua edersiniz.'"

Nimeti hatırlatmak, sevginin artmasına sebep olur. Çünkü kul, Allah'ın verdiği bir güzelliği öğrendiği zaman sevgi kalbinde kökleşir.

قُلِ اللّٰهُ يُنَجّ۪يكُمْ مِنْهَا وَمِنْ كُلِّ كَرْبٍ ثُمَّ اَنْتُمْ تُشْرِكُونَ ﴿٦٤﴾

64- "De ki: 'Ondan ve bütün sıkıntılardan sizi Allah kurtarır. Sonra siz, yine O'na ortak koşarsınız.'"

Sizi yaratma gücüne sahip yegâne varlık Allah'tır. Kaçırdığınız fırsatları telafi edecek olan da yine Allah'tır. Sizin kurtuluşunuza hükmedecek olan da Allah'tır. Her tökezlediğinizde elinizden tutan da Allah'tır.

قُلْ هُوَ الْقَادِرُ عَلٰٓى اَنْ يَبْعَثَ عَلَيْكُمْ عَذَابًا مِنْ فَوْقِكُمْ اَوْ مِنْ تَحْتِ اَرْجُلِكُمْ اَوْ يَلْبِسَكُمْ شِيَعًا وَيُذ۪يقَ بَعْضَكُمْ بَأْسَ بَعْضٍ اُنْظُرْ كَيْفَ نُصَرِّفُ الْاٰيَاتِ لَعَلَّهُمْ يَفْقَهُونَ ﴿٦٥﴾

65- "De ki: 'Allah'ın size üstünüzden veya ayaklarınızın altından bir azap göndermeye ya da sizi birbirinize düşürüp kiminize kiminizin hıncını tattırmaya gücü yeter.' Bak, anlasınlar diye ayetlerimizi nasıl açıklıyoruz."

Allah, bir kavmi helak etmek istediği zaman, kendilerini çepeçevre kuşatması için belaya emir verir. Tıpkı yarın azap kendilerini yakaladığında, kâfirleri kuşatması gibi. Onlar, birbirlerine o denli karşı çıkarlar ki, uyan uyulandan, uyulan da uyandan kaçmaya çalışır.

İnsan için yine insanı tatmak kadar çirkin bir şey yoktur. Bu, ister dostluk ve sevgi tadı, isterse de kin ve düşmanlık tadı olsun fark etmez. Mesela; hemcinslerine karşı kin besleyen bir kimsenin dünya hayatının tadı kaçar. Hemcinslerinin sevgisine tutulan kimsenin de Mevla'sıyla olan durumu, safiyetini kaybeder. Koruma altında ve afiyette olan ise Allah'ın, halktan koruduğu kimsedir.

وَكَذَّبَ بِهِ قَوْمُكَ وَهُوَ الْحَقُّ قُلْ لَسْتُ عَلَيْكُمْ بِوَكِيلٍ ﴿٦٦﴾
لِكُلِّ نَبَإٍ مُسْتَقَرٌّ وَسَوْفَ تَعْلَمُونَ ﴿٦٧﴾

66, 67- "Kur'an hak olduğu halde kavmin onu yalanladı. De ki: 'Ben size vekil değilim. Her haberin gerçekleşeceği bir zaman vardır. Yakında siz de gerçeği bileceksiniz.'"

Yani onlara de ki: Bana düşen, sadece peygamberliği bildirmektir. Fiilen vuslatı gerçekleştirmek ise, kudretin özelliklerinden ve ezeli iradenin hükümlerindendir.

وَاِذَا رَاَيْتَ الَّذِينَ يَخُوضُونَ فِي اٰيَاتِنَا فَاَعْرِضْ عَنْهُمْ حَتّٰى
يَخُوضُوا فِي حَدِيثٍ غَيْرِهِ وَاِمَّا يُنْسِيَنَّكَ الشَّيْطَانُ فَلَا تَقْعُدْ بَعْدَ
الذِّكْرٰى مَعَ الْقَوْمِ الظَّالِمِينَ ﴿٦٨﴾

68- "Ayetlerimiz hakkında ileri geri konuşmaya dalanları gördüğünde, onlar başka bir söze geçinceye kadar onlardan uzak dur. Eğer şeytan sana unutturursa, hatırladıktan sonra artık o zalimler topluluğu ile oturma."

Onların durumuna uyma ve onlarla polemiğe girme. Onlardan güzelce yüz çevirmek ve güzelce içe kapanarak saçmalıklarını

dinlemekten uzak durmak suretiyle kendilerini yabancılıklarıyla baş başa bırak.

(وَاِمَّا يُنْسِيَنَّكَ الشَّيْطَانُ فَلَا تَقْعُدْ بَعْدَ الذِّكْرٰى مَعَ الْقَوْمِ الظَّالِمِينَ) *"Eğer şeytan sana unutturursa, hatırladıktan sonra artık o zalimler topluluğu ile oturma."*

Yani eğer farkında olmadan senden bir yanılgı hâsıl olur da sen onu güzel bir hatırlama ve kendine gelmeyle telafi edersen, bizden gelecek acıklı bir azabı çekmemen için ikinci kez aynı hataya düşmemeye çalış.

وَمَا عَلَى الَّذِينَ يَتَّقُونَ مِنْ حِسَابِهِمْ مِنْ شَيْءٍ وَلٰكِنْ ذِكْرٰى
لَعَلَّهُمْ يَتَّقُونَ ﴿٦٩﴾

69- "Takva sahiplerine inanmayanların hesabından herhangi bir sorumluluk yoktur. Fakat belki sakınırlar diye hatırlatmak gerekir."

Yani eteği günah işlemekten temiz olan kimse, kıyamet günü o acılarla karşılaşmaktan uzak tutulur.

وَذَرِ الَّذِينَ اتَّخَذُوا دِينَهُمْ لَعِبًا وَلَهْوًا وَغَرَّتْهُمُ الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا وَذَكِّرْ
بِهٖٓ اَنْ تُبْسَلَ نَفْسٌ بِمَا كَسَبَتْ لَيْسَ لَهَا مِنْ دُونِ اللّٰهِ وَلِيٌّ وَلَا
شَفِيعٌ وَاِنْ تَعْدِلْ كُلَّ عَدْلٍ لَا يُؤْخَذْ مِنْهَا اُولٰٓئِكَ الَّذِينَ اُبْسِلُوا بِمَا
كَسَبُوا لَهُمْ شَرَابٌ مِنْ حَمِيمٍ وَعَذَابٌ اَلِيمٌ بِمَا كَانُوا يَكْفُرُونَ ﴿٧٠﴾

70- "Dinlerini bir oyuncak ve bir eğlence edinen ve dünya hayatının aldattığı kimseleri bir tarafa bırak! Kazandıkları sebebiyle hiçbir nefsin felakete dûçâr olmaması için Kur'an ile nasihat et. O nefis için Allah'tan başka ne dost vardır ne de şefaatçi. O, bütün varını fidye olarak verse yine de ondan kabul edilmez. Onlar, kazandıkları günahlar yüzünden helake sürüklenmiş kimselerdir.

İnkâr ettiklerinden dolayı, onlar için kaynar sudan ibaret bir içecek ve elem verici bir azap vardır."

Yani onları tercihleriyle baş başa bırak. Çünkü biz, onlara bilmedikleri öyle bir ceza hazırladık ki, onu başlarına getirdiğimiz zaman yüzlerindeki vehim ve hata örtüsünü yırtarız.

قُلْ اَنَدْعُوا مِنْ دُونِ اللّٰهِ مَا لَا يَنْفَعُنَا وَلَا يَضُرُّنَا وَنُرَدُّ عَلٰٓى اَعْقَابِنَا
بَعْدَ اِذْ هَدٰينَا اللّٰهُ كَالَّذِي اسْتَهْوَتْهُ الشَّيَاطِينُ فِي الْاَرْضِ حَيْرَانَ
لَهُٓ اَصْحَابٌ يَدْعُونَهُٓ اِلَى الْهُدَى ائْتِنَا قُلْ اِنَّ هُدَى اللّٰهِ هُوَ الْهُدٰى
وَاُمِرْنَا لِنُسْلِمَ لِرَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿٧١﴾

71- "De ki: Allah'ı bırakıp da bize fayda ve zarar vermeyecek olan şeylere mi tapalım? Allah, bizi doğru yola ilettikten sonra, şeytanların saptırıp şaşkın olarak çöle düşürmek istedikleri, arkadaşlarının ise: 'Bize gel' diye doğru yola çağırdıkları şaşkın kimse gibi, gerisin geri inkârcılığa mı döndürüleceğiz? De ki: Allah'ın hidayeti, doğru yolun ta kendisidir. Bize, âlemlerin Rabbine teslim olmamız emredilmiştir."

Yani kâfirler, Müslümanları dinden çıkıp şirke dönmeye davet ediyorlardı. Bunun üzerine Allah şöyle buyurmuş oldu: Ey Muhammed! Onlara de ki: Hakikat güneşi doğduktan sonra dalaleti hidayete mi tercih edeceğiz? Ve Allah'ın beyanı ortaya çıktıktan sonra biz, en iyi yolu ve sahasına indiğimiz cenneti terk edip Allah'ın bizi koruduğu cehennemi mi barınak edineceğiz? Bu, akla sığmayan imkânsız bir zandır.

Bir de, şeytanın yandaşları, nasıl olur da onların arkadaşlığından kurtulmuş olan ve onları sapıklık içinde gören kimseye yardımcı olurlar?

وَاَنْ اَقِيمُوا الصَّلٰوةَ وَاتَّقُوهُ وَهُوَ الَّذِٓي اِلَيْهِ تُحْشَرُونَ ﴿٧٢﴾

72- "Namazı dosdoğru kılın ve Allah'tan korkun, diye de emredildik. O, huzuruna varıp toplanacağınız Allah'tır."

Yani Allah, bize münacat yerinden ayrılmamamızı emretmiştir. Zira dil, sultanla sırdaş olmaya alışırsa artık değersiz kimseyle nasıl konuşur?

وَهُوَ الَّذ۪ي خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ وَيَوْمَ يَقُولُ كُنْ فَيَكُونُ قَوْلُهُ الْحَقُّ وَلَهُ الْمُلْكُ يَوْمَ يُنْفَخُ فِي الصُّورِ عَالِمُ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ وَهُوَ الْحَك۪يمُ الْخَب۪يرُ ﴿٧٣﴾

73- "O, gökleri ve yeri hak ve hikmet ile yaratandır. 'Ol' dediği gün her şey oluverir. O'nun sözü gerçektir. Sûra üflendiği gün de hükümranlık onundur. Gizliyi ve açığı bilendir ve O, hikmet sahibidir, her şeyden haberdardır."

Yani hiçbir maksadın meydana gelmesi O'nun kudretini zorlayamaz ve hiçbir varlığın yönetimi, O'nun hükmünü aşındıramaz.

وَاِذْ قَالَ اِبْرٰه۪يمُ لِاَب۪يهِ اٰزَرَ اَتَتَّخِذُ اَصْنَامًا اٰلِهَةً اِنّ۪ي اَرٰيكَ وَقَوْمَكَ ف۪ي ضَلَالٍ مُب۪ينٍ ﴿٧٤﴾

74- "İbrahim, babası Azer'e: 'Bir takım putları tanrılar mı ediniyorsun? Doğrusu ben, seni de kavmini de apaçık bir sapıklık içinde görüyorum' demişti."

Baba, inkârcılıkla itham edilmekte, nesil ise tevhid sıfatı taşımaktadır. Böylece Allah, dilediğini yapmaktadır.

وَكَذٰلِكَ نُر۪ٓي اِبْرٰه۪يمَ مَلَكُوتَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَلِيَكُونَ مِنَ الْمُوقِن۪ينَ ﴿٧٥﴾

75- "Böylece biz, kesin iman edenlerden olması için İbrahim'e göklerin ve yerin olağanüstü yapısını gösteriyorduk."

Allah, önce Hz. İbrahim'e ezeli inayetle lütufta bulunmuş, ardından hidayetiyle ona tecelli etmiş ve kendisine sırrının fezasında noksanlıktan en ufak bir iz bırakmayacak ölçüde tevhid delillerini göstermiştir. Böylece Hz. İbrahim, mecaz bulutundan kurtulduktan sonra sırrı yükselmiş ve bunun üzerine o, Allah'tan başka her şeyi reddetmiş ve hepsinden alakayı kesmiş, bunlardan bir töhmeti bile yerinde bırakmamıştır.

فَلَمَّا جَنَّ عَلَيْهِ الَّيْلُ رَاٰ كَوْكَبًا قَالَ هٰذَا رَبّ۪ي فَلَمَّٓا اَفَلَ قَالَ لَٓا اُحِبُّ
الْاٰفِل۪ينَ ﴿٧٦﴾ فَلَمَّا رَاَ الْقَمَرَ بَازِغًا قَالَ هٰذَا رَبّ۪ي فَلَمَّٓا اَفَلَ قَالَ لَئِنْ
لَمْ يَهْدِن۪ي رَبّ۪ي لَاَكُونَنَّ مِنَ الْقَوْمِ الضَّٓالّ۪ينَ ﴿٧٧﴾ فَلَمَّا رَاَ الشَّمْسَ
بَازِغَةً قَالَ هٰذَا رَبّ۪ي هٰذَٓا اَكْبَرُ فَلَمَّٓا اَفَلَتْ قَالَ يَا قَوْمِ اِنّ۪ي بَر۪ٓيءٌ
مِمَّا تُشْرِكُونَ ﴿٧٨﴾

76, 77, 78- "Gecenin karanlığı onu kaplayınca, bir yıldız gördü: 'Rabbim budur' dedi. Yıldız batınca: 'Batanları sevmem' dedi. Ayı doğarken görünce: 'Rabbim budur' dedi. O da batınca: 'Rabbim bana doğru yolu göstermezse, elbette yoldan sapan topluluktan olurum' dedi. Güneşi doğarken görünce de: 'Rabbim budur; zira bu daha büyük' dedi. O da batınca dedi ki: 'Ey kavmim, ben sizin Allah'a ortak koştuğunuz şeylerden uzağım.'"

Yani onu, arayış örtüleri kuşatmış ve önünde henüz varlık sabahı aydınlanmamıştı. Ancak ardından aklın yıldızı doğmuş ve Hz. İbrahim delilin nuruyla hakkın sırrını görerek: "Rabbim budur" demiştir. Sonra her bir aşamada aydınlık arttıkça Hz. İbrahim duygularını açıklayarak: "Rabbim budur" demiştir.

Sonra sabah ağardı, gündüz aydınlandı ve irfan güneşleri doğdu. Böylece arayış için yer, ihtimal için hüküm ve töhmet için karar kalmadı ve bunun üzerine Hz. İbrahim:

(يَا قَوْمِ اِنِّي بَرِيٓءٌ مِمَّا تُشْرِكُونَ) *"Ey kavmim, ben sizin Allah'a ortak koştuğunuz şeylerden uzağım"* dedi. Çünkü gözle gördükten sonra şüphe, ortaya çıkıştan sonra da örtü yoktur.

Bir yoruma göre de Hz. İbrahim'in, yıldızları, ayı ve güneşi görünce: Rabbim budur, demesi şunu göstermektedir: O, eserlere ve başka varlıklara Allah'ı gözeterek bakıyor, nesneleri Allah için ve Allah'tan görüyordu. Sonunda da o, varlıkları Allah'ta mahviyet içinde değerlendirmiştir.

اِنِّي وَجَّهْتُ وَجْهِيَ لِلَّذِي فَطَرَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ حَنِيفًا وَمَٓا اَنَا۬ مِنَ الْمُشْرِكِينَ ﴿٧٩﴾

79- "Ben, Hanif olarak yüzümü, gökleri ve yeri yoktan yaratan Allah'a çevirdim ve ben müşriklerden değilim."

Ben, niyetimi Allah'a özgü kıldım, sözleşmemi Allah'ın dışındaki şeylerden arındırdım ve Allah ile ilgili ahdimi yine Allah için korudum. Vecdimi Allah'ın yardımıyla kurtardım. Çünkü ben Allah için davranırım ve Allah ile varım. Vallahi daha doğrusu ben Allah'ta mahviyet içindeyim.

وَحَٓاجَّهُ قَوْمُهُ قَالَ اَتُحَٓاجُّٓونِّي فِي اللّٰهِ وَقَدْ هَدٰينِ وَلَٓا اَخَافُ مَا تُشْرِكُونَ بِهٖٓ اِلَّٓا اَنْ يَشَٓاءَ رَبِّي شَيْـًٔا وَسِعَ رَبِّي كُلَّ شَيْءٍ عِلْمًا اَفَلَا تَتَذَكَّرُونَ ﴿٨٠﴾

80- "Kavmi onunla tartışmaya girişti. Onlara dedi ki: 'Beni doğru yola iletmişken Allah hakkında benimle tartışıyorsunuz. Ben, sizin O'na ortak koştuğunuz şeylerden korkmam. Ancak, Rabbim'in bir şey dilemesi hariç. Rabbim'in ilmi her şeyi kuşatmıştır. Hâlâ ibret almıyor musunuz?'"

Yani onlara şöyle dedi: Siz yenlerinizi üstüne çekmek suretiyle güneşleri örtmek mi istiyorsunuz? Yoksa siz, Allah'ın hâkimiyetinin

yüceliği ve beyanının peş peşe gelişi karşısında, eteklerinizi ve örtülerinizi gündüzün aydınlığının üstüne mi kapatmak istiyorsunuz?

وَكَيْفَ اَخَافُ مَٓا اَشْرَكْتُمْ وَلَا تَخَافُونَ اَنَّكُمْ اَشْرَكْتُمْ بِاللّٰهِ مَا لَمْ يُنَزِّلْ بِه۪ عَلَيْكُمْ سُلْطَانًا فَاَيُّ الْفَر۪يقَيْنِ اَحَقُّ بِالْاَمْنِ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٨١﴾

81- "Siz, Allah'ın size haklarında hiçbir hüküm indirmediği şeyleri O'na ortak koşmaktan korkmazken, ben sizin O'na ortak koştuğunuz şeylerden korkmam. Şimdi biliyorsanız söyleyin. İki gruptan hangisi güvende olmaya daha layıktır?"

Yani ben şirke bulaşmamış ve şirke hiç meyletmemiş olduğum halde, hangi korkunun gölgesi kalbimin üstüne düşer ki! Oysa siz, hayatınız boyunca tevhidi koklamadınız ve geçen zamanlarınızda imanı tatmadınız. Sonra kötü zannınıza dayanarak cesaret taslayıp sakınmadınız, kaybettiniz ve umursamadınız. Şimdi bu durumda karşı karşıya bulunduğu kötü tedbirini ve sonunu sırrıyla itiraf etmek hangimize daha uygun düşer?

اَلَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَلَمْ يَلْبِسُٓوا ا۪يمَانَهُمْ بِظُلْمٍ اُو۬لٰٓئِكَ لَهُمُ الْاَمْنُ وَهُمْ مُهْتَدُونَ ﴿٨٢﴾

82- "İnanıp da imanlarına herhangi bir haksızlık bulaştırmayanlar var ya, işte güven onlarındır ve onlar, doğru yolu bulanlardır."

Burada, Allah'a işaret edip sonra Allah'tan başkasına dönmeyenler kastedilmiştir. Çünkü: "Allah" dedikten sonra ihtiyaçları, istekleri ve durumlarından herhangi biri için Allah'tan başkasına başvuran kimsenin dünya ve ahirette hasmı Allah'tır.

Gerçek anlamda zulüm ise bir şeyi olması gereken yerde kullanmamaktır. En ağır olanı da sonradan var olan kimi varlıkların gerçekte var olduklarını sanmaktır. Çünkü yaratan ve yürüten sadece

Allah'tır. Allah'tan başka hiçbir ilah da yoktur. Ve Allah'tan başka her şey hesap dışıdır.

وَتِلْكَ حُجَّتُنَآ اٰتَيْنَاهَآ اِبْرٰهِيمَ عَلٰى قَوْمِهِ نَرْفَعُ دَرَجَاتٍ مَنْ نَشَآءُ اِنَّ
رَبَّكَ حَكِيمٌ عَلِيمٌ ﴿٨٣﴾

83- "İşte bu, kavmine karşı İbrahim'e verdiğimiz delilimizdir. Biz, dilediğimiz kimselerin derecelerini yükseltiriz. Şüphesiz ki, senin Rabbin hikmet sahibidir, hakkıyla bilendir."

Allah, Hz. İbrahim'in ayetlerini görme derecesinden zatını ispatlama makamına yükseldiğine işaret etmektedir. Bu da, sülûk ehlinin Allah'a ulaşmadaki tertibidir. Bu itibarla birinci mertebe, Allah'ın fiillerinden ibaret olan ayetlerini kesin olarak görüp buna riayet etmek, ikincisi Allah'ın sıfatlarını ispatlamak, sonra da Allah'a kavuşmanın nihai merhalesi olan Allah'ın varlığına ve zatına kesin imandır. Böylece kul, yaratıklarıyla Allah'ın sıfatlarını, sıfatlarıyla da zatının sübutunu tanımış olur.

وَوَهَبْنَا لَهُٓ اِسْحٰقَ وَيَعْقُوبَ كُلًّا هَدَيْنَا وَنُوحًا هَدَيْنَا مِنْ قَبْلُ وَمِنْ
ذُرِّيَّتِهِ دَاوُ۫دَ وَسُلَيْمٰنَ وَاَيُّوبَ وَيُوسُفَ وَمُوسٰى وَهٰرُونَ وَكَذٰلِكَ
نَجْزِي الْمُحْسِنِينَ ﴿٨٤﴾ وَزَكَرِيَّا وَيَحْيٰى وَعِيسٰى وَاِلْيَاسَ كُلٌّ مِنَ
الصَّالِحِينَ ﴿٨٥﴾ وَاِسْمٰعِيلَ وَالْيَسَعَ وَيُونُسَ وَلُوطًا وَكُلًّا فَضَّلْنَا
عَلَى الْعَالَمِينَ ﴿٨٦﴾ وَمِنْ اٰبَآئِهِمْ وَذُرِّيَّاتِهِمْ وَاِخْوَانِهِمْ وَاجْتَبَيْنَاهُمْ
وَهَدَيْنَاهُمْ اِلٰى صِرَاطٍ مُسْتَقِيمٍ ﴿٨٧﴾ ذٰلِكَ هُدَى اللّٰهِ يَهْدِي بِهِ مَنْ
يَشَآءُ مِنْ عِبَادِهِ وَلَوْ اَشْرَكُوا لَحَبِطَ عَنْهُمْ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿٨٨﴾

84, 85, 86, 87, 88- "Biz ona İshak ve Ya'kûb'u da armağan ettik. Hepsini de doğru yola ilettik. Daha önce de Nuh'u ve onun soyundan Davud'u, Süleyman'ı, Eyyûb'u, Yusuf'u, Musa'yı ve Harun'u doğru

yola iletmiştik. Biz, iyi davrananları işte böyle mükâfatlandırırız. Zekeriyya, Yahya, İsa ve İlyas'ı da doğru yola iletmiştik. Hepsi de iyilerden idi. İsmail, Elyesa', Yûnus ve Lût'u da hidayete erdirdik. Hepsini âlemlere üstün kıldık. Onların babalarından, çocuklarından ve kardeşlerinden bazılarına da üstün meziyetler verdik. Onları seçkin kıldık ve doğru yola ilettik. İşte bu, Allah'ın hidayetidir. Kullarından dilediğini ona iletir. Eğer onlar da Allah'a ortak koşsalardı, yapmakta oldukları amelleri elbette boşa giderdi."

Allah, bütün peygamberlere olan büyük lütfunu anlatmakta ve kendisinin özel olarak onları tanıtmaması, sonsuz bir onurlandırmayla başkalarına üstün kılmaması halinde onların, hiçbir meziyeti hak etmiş olmayacaklarını açıklamaktadır.

(ذٰلِكَ هُدَى اللّٰهِ) *"İşte bu, Allah'ın hidayetidir."*

Yani eğer onlar, başkasını hesaba katar veya bizden başka bir şeyi görür veya varlıklardan en ufak bir şeyi, meydana gelmede bizim kudretimizden başka bir şeye nisbet etselerdi, daha önce yaptıkları güzellik ve iyilikleri boşa giderdi. Çünkü Allah, hiçbir halde şirki bağışlamaz. Ondan aşağısını dilediği kimse için bağışlasa da.

اُولٰٓئِكَ الَّذٖينَ اٰتَيْنَاهُمُ الْكِتَابَ وَالْحُكْمَ وَالنُّبُوَّةَ فَاِنْ يَكْفُرْ بِهَا
هٰٓؤُلَٓاءِ فَقَدْ وَكَّلْنَا بِهَا قَوْمًا لَيْسُوا بِهَا بِكَافِرٖينَ ٨٩

89- "İşte onlar, kendilerine kitap, hikmet ve peygamberlik verdiğimiz kimselerdir. Eğer onlar, bunları inkâr ederse, şüphesiz yerlerine bunları inkâr etmeyecek bir toplum getiririz."

Yani ey Muhammed! Eğer kavmin yüz çevirdilerse, şüphesiz yarattığımız herkes inkâr üzere değildir. Aksine pek çoğunun kalplerini inkârdan münezzeh kıldık ve topraklarını saadet suyuyla yoğurduk. Aynı zamanda onlar, bir an bile tevhidden ve tahsilden sapmazlar.

اُولٰٓئِكَ الَّذٖينَ هَدَى اللّٰهُ فَبِهُدٰيهُمُ اقْتَدِهْ قُلْ لَٓا اَسْـَٔلُكُمْ عَلَيْهِ اَجْرًا
اِنْ هُوَ اِلَّا ذِكْرٰى لِلْعَالَمٖينَ ٩٠

90- "İşte o peygamberler, Allah'ın hidayet ettiği kimselerdir. Sen de onların yoluna uy. De ki: 'Ben, buna karşılık sizden bir ücret istemiyorum. Bu Kur'an, âlemler için ancak bir öğüttür.'"

Onlar öyle kimselerdir ki, Allah sırlarını inkârdan tertemiz kılmış ve kadirlerini herkesin üstüne çıkarmıştır. O halde ey Muhammed! Sen de onların yoluna uy. Çünkü doğru yolu izleyen, meşakkatten emin olur.

وَمَا قَدَرُوا اللّٰهَ حَقَّ قَدْرِهٖٓ اِذْ قَالُوا مَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ عَلٰى بَشَرٍ مِنْ شَيْءٍ
قُلْ مَنْ اَنْزَلَ الْكِتَابَ الَّذِي جَٓاءَ بِهٖ مُوسٰى نُورًا وَهُدًى لِلنَّاسِ
تَجْعَلُونَهُ قَرَاطِيسَ تُبْدُونَهَا وَتُخْفُونَ كَثِيرًا وَعُلِّمْتُمْ مَا لَمْ تَعْلَمُوٓا
اَنْتُمْ وَلَٓا اٰبَٓاؤُ۬كُمْ قُلِ اللّٰهُ ثُمَّ ذَرْهُمْ فِي خَوْضِهِمْ يَلْعَبُونَ ﴿٩١﴾

91- "Yahudiler, Allah'ı gereği gibi tanımadılar. Çünkü: 'Allah, hiçbir beşere bir şey indirmedi' dediler. De ki: 'Öyle ise Musa'nın insanlara bir nur ve bir hidayet olarak getirdiği Kitab'ı kim indirdi? Siz, onu kâğıtlara yazıp istediğinizi açıklıyor, çoğunu da gizliyorsunuz. Sizin de atalarınızın da bilemediği şeyler, Kur'an'da size öğretilmiştir.' Resulüm, sen 'Allah' de, sonra onları bırak. Daldıkları bataklıkta oynayadursunlar!"

Kim, ilimlerin, Allah'ın celalini kuşatacağını vehmederse, bu kuşatma O'nun sıfatı hakkında imkânsızdır. Tıpkı idrakin, O'nun vasfında caiz olmaması ve zâtına muttali olmanın muhal olması gibi.

(قُلْ مَنْ اَنْزَلَ الْكِتَابَ الَّذِي جَٓاءَ بِهٖ مُوسٰى نُورًا وَهُدًى لِلنَّاسِ) *"De ki: 'Öyle ise Musa'nın insanlara bir nur ve bir hidayet olarak getirdiği Kitab'ı kim indirdi?'"*

Yani ahvali onlara sor, işaretlere ve kalıntılara ilişkin hükümlerin manaları hakkında onlara hitap et. Şayet şaşkınlık karanlığının içinde kalırlarsa sen: "Allah" dedikten sonra onları terk et. Yani tevhidden açıkça söz et ve bâtıla dalmaları seni korkuya sevk etmesin. Çünkü batılın şaşırtmalarının, hakikatlerde hiçbir etkisi yoktur.

وَهٰذَا كِتَابٌ اَنْزَلْنَاهُ مُبَارَكٌ مُصَدِّقُ الَّذ۪ي بَيْنَ يَدَيْهِ وَلِتُنْذِرَ اُمَّ
الْقُرٰى وَمَنْ حَوْلَهَا وَالَّذ۪ينَ يُؤْمِنُونَ بِالْاٰخِرَةِ يُؤْمِنُونَ بِه۪ وَهُمْ عَلٰى
صَلَاتِهِمْ يُحَافِظُونَ ﴿٩٢﴾

92- "Bu Kur'an, Mekke ve çevresindekileri uyarman için sana indirdiğimiz ve senden öncekileri doğrulayıcı mübarek bir kitaptır. Ahirete inananlar, buna da inanırlar ve onlar, namazlarını hakkıyla kılmaya devam ederler."

Dostların kitabının saygın bir önemi ve büyük bir etkisi bulunur. Vecdin galebe çaldığı hallerde onda teselli bulunur. Vuslattan geri kalan kimse ise elçiye boyun eğer.

Şiir:

*Etrafımdadır yazdıkların terk etmezler yatağımı*
*Onlarda şifa vardır sakladığım hastalığım için*
*Sanki çalrpılmışım ben cinlerden bir bakışla*
*Etrafımdaysa muskalar ve nazarlıklar*

وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا اَوْ قَالَ اُو۫حِيَ اِلَيَّ وَلَمْ
يُوحَ اِلَيْهِ شَيْءٌ وَمَنْ قَالَ سَاُنْزِلُ مِثْلَ مَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ وَلَوْ تَرٰٓى
اِذِ الظَّالِمُونَ ف۪ي غَمَرَاتِ الْمَوْتِ وَالْمَلٰٓئِكَةُ بَاسِطُٓوا اَيْد۪يهِمْ
اَخْرِجُٓوا اَنْفُسَكُمْ اَلْيَوْمَ تُجْزَوْنَ عَذَابَ الْهُونِ بِمَا كُنْتُمْ
تَقُولُونَ عَلَى اللّٰهِ غَيْرَ الْحَقِّ وَكُنْتُمْ عَنْ اٰيَاتِه۪ تَسْتَكْبِرُونَ ﴿٩٣﴾

93- "Allah'a karşı yalan uydurandan yahut kendisine hiçbir şey vahiy edilmemişken: 'Bana da vahiy olundu' diyenden ve: 'Ben de Allah'ın indirdiği ayetlerin benzerini indireceğim' diyenden daha zalim kim vardır? O zalimler, ölümün boğucu dalgaları içinde, melekler de pençelerini uzatmış, onlara: 'Haydi canlarınızı kurtarın!

Allah'a karşı gerçek olmayanı söylemenizden ve O'nun ayetlerine karşı kibirlilik taslamış olmanızdan ötürü, bugün alçaklık azabı ile cezalandırılacaksınız' derken onların halini bir görsen."

Yani sırlarına ilahi hitaba yatkın özellikler verilmediği halde, kendilerine Allah tarafından hitap edilenlerin yerine geçmek isteyenlerden Allah uzaktır. Elde edemediği şeylere sahip olduğu görüntüsü vermeye çalışan kimse, yalancılık kılıfına bürünmüş olur. Tıpkı şu beyitte söylendiği gibi:

*Çarpıştığı zaman gözyaşları yanaklarda*
*Ayrılır birbirinden ağlayanla ağlar görünen*

وَلَقَدْ جِئْتُمُونَا فُرَادٰى كَمَا خَلَقْنَاكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ وَتَرَكْتُمْ مَا خَوَّلْنَاكُمْ وَرَآءَ ظُهُورِكُمْ وَمَا نَرٰى مَعَكُمْ شُفَعَآءَكُمُ الَّذِينَ زَعَمْتُمْ اَنَّهُمْ فِيكُمْ شُرَكٰٓؤُا لَقَدْ تَقَطَّعَ بَيْنَكُمْ وَضَلَّ عَنْكُمْ مَا كُنْتُمْ تَزْعُمُونَ ﴿٩٤﴾

94- "Andolsun ki, sizi ilk defa yarattığımız gibi teker teker bize geleceksiniz ve dünyada size verdiğimiz şeyleri arkanızda bırakacaksınız. Yaratılışınızda ortaklarımız sandığınız şefaatçilerinizi de yanınızda göremeyeceğiz. Andolsun, aranız açılmış ve tanrı sandığınız şeyler sizden kaybolup gitmiştir."

Sen, dünyaya bir bez parçasıyla girdin ve dünyadan bir bez parçasıyla çıktın. Dünyaya girişin ancak arınma vasfıyla, çıkışın da ancak yalnızlığın hükmüyle olmuştur. Sonra sorumlulukların, günahların, yüklerin ve pisliklerin haddi hesabı yoktur. Böylece ne malınız size fayda verir, ne durumunuzdan kurtulursunuz ne de hakkınızda bizimle konuşacak bir şefaatçiniz vardır. Aranızdaki bağ kopmuş, irtibatınız kesilmiş, birliğiniz dağılmış, zannınız boşa çıkmış ve gücünüz, hakikatte size vefasızlık etmiştir.

اِنَّ اللّٰهَ فَالِقُ الْحَبِّ وَالنَّوٰى يُخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ وَمُخْرِجُ الْمَيِّتِ مِنَ الْحَيِّ ذٰلِكُمُ اللّٰهُ فَاَنّٰى تُؤْفَكُونَ ﴿٩٥﴾

95- "Şüphesiz Allah, tohumu ve çekirdeği çatlatandır. Ölüden diriyi çıkaran, diriden de ölüyü çıkarandır. İşte Allah budur. O halde haktan nasıl dönersiniz?"

Kâinattaki nesnelerin, eserlerin, işaretlerin, enkazların yaratıcısı, yaptıklarından istediğini yokluğa maruz bırakır ve yine yaratıklarından istediğinin de kalmasına hükmeder. Bu itibarla ne hükmü reddedilebilir ne de hakkı inkâr edilebilir.

فَالِقُ الْاِصْبَاحِ وَجَعَلَ الَّيْلَ سَكَنًا وَالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ حُسْبَانًا ذٰلِكَ
تَقْد۪يرُ الْعَز۪يزِ الْعَل۪يمِ ﴿٩٦﴾

96- "O, sabahı aydınlatandır. O, geceyi dinlenme zamanı, güneşi ve ayı da birer hesap ölçüsü kılmıştır. İşte bu, aziz olan ve her şeyi pekiyi bilen Allah'ın takdiridir."

Allah, nasıl ki kâinatın sabahını aydınlatmış ve bu sayede ışıklar doğmuşsa, aynı şekilde kalplerin sabahını da aydınlatmış ve onunla sırlar aydınlanmıştır. Bir de nasıl ki Allah, insanların geçim uğruna çektikleri yorgunluktan kurtulup içinde dinlenmesi için geceyi dinlenme zamanı kılmışsa, aynı şekilde geceyi dostlar için de bir sükunet vakti kılmıştır. Onlar, gözler gayrilerden rahatladığı zaman onda münacatın huzurunu yaşarlar.

Allah, güneşi ve ayı da belli bir ölçü dahilinde bilinen bir hesapla hareket eder kılmıştır. Şöyle ki, güneş bu haliyle yaratıldığından eksilip artmamıştır. Ay ise hiçbir gece aynı durumda kalmaz ve devamlı artıp eksilir. Bu çerçevede, dolunay haline gelinceye kadar büyür, sonra gözden kayboluncaya kadar eksilir. Sonra yeniden görünmeye başlar. Ayın durumu, sistemi bozuluncaya dek böylece sürüp gitmektedir.

وَهُوَ الَّذ۪ي جَعَلَ لَكُمُ النُّجُومَ لِتَهْتَدُوا بِهَا ف۪ي ظُلُمَاتِ الْبَرِّ وَالْبَحْرِ
قَدْ فَصَّلْنَا الْاٰيَاتِ لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ ﴿٩٧﴾

97- "O, kara ve denizin karanlıklarında kendileri ile yol bulasınız diye, sizin için yıldızları yaratandır. Gerçekten biz, bilen bir toplum için ayetleri geniş geniş açıkladık."

Nasıl ki çöllerde gökyüzünün yıldızlarıyla yol bulunuyorsa, aynı şekilde kalplerin yıldızlarıyla da yerlerin ve göklerin Rabbini tanımaya giden yollar bulunur.

وَهُوَ الَّذ۪ٓي اَنْشَاَكُمْ مِنْ نَفْسٍ وَاحِدَةٍ فَمُسْتَقَرٌّ وَمُسْتَوْدَعٌ قَدْ فَصَّلْنَا الْاٰيَاتِ لِقَوْمٍ يَفْقَهُونَ ﴿٩٨﴾

98- "O, sizi bir tek nefisten yaratandır. Sizin için bir kalma yeri, bir de emanet olarak konulacağınız yer vardır. Anlayan bir toplum için ayetleri ayrıntılı bir şekilde açıkladık."

Allah, onlara kendilerini Hz. Âdem'den yarattığı andaki vasıflarını hatırlatmaktadır. Nasıl ki nefisler ve bedenler için karar kılıp barındırılacakları bir yer varsa aynı şekilde sırların ve kalplerin de karar kılıp barındırılacağı bir yeri vardır. Mesela, kimi kul vardır ki, kalbinin karar kıldığı yer şehvetin ve emellerin yurtlarıdır. Kimi kul da vardır ki, karar kıldığı yer, züht ve takva merkezidir. Kimi kul da vardır ki, karar kıldığı yer, varlıkların ötesinde, barınağın ve sığınağın bulunmadığı yerdir.

وَهُوَ الَّذ۪ٓي اَنْزَلَ مِنَ السَّمَٓاءِ مَٓاءًۚ فَاَخْرَجْنَا بِه۪ نَبَاتَ كُلِّ شَيْءٍ فَاَخْرَجْنَا مِنْهُ خَضِرًا نُخْرِجُ مِنْهُ حَبًّا مُتَرَاكِبًاۚ وَمِنَ النَّخْلِ مِنْ طَلْعِهَا قِنْوَانٌ دَانِيَةٌ وَجَنَّاتٍ مِنْ اَعْنَابٍ وَالزَّيْتُونَ وَالرُّمَّانَ مُشْتَبِهًا وَغَيْرَ مُتَشَابِهٍۜ اُنْظُرُوٓا اِلٰى ثَمَرِه۪ٓ اِذَٓا اَثْمَرَ وَيَنْعِه۪ۜ اِنَّ ف۪ي ذٰلِكُمْ لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ ﴿٩٩﴾

99- "O, gökten su indirendir. İşte biz, her çeşit bitkiyi onunla bitirdik. O bitkiden de kendisine üst üste binmiş taneler bitireceğimiz

bir yeşillik, hurmanın tomurcuğundan sarkan salkımlar, üzüm bağları; bir kısmı birbirine benzeyen, bir kısmı da benzemeyen zeytin ve nar bahçeleri meydana getirdik. Meyve verirken ve olgunlaştığı zaman her birinin meyvesine bakın! Kuşkusuz bütün bunlarda inanan bir toplum için ibretler vardır."

Yerin parçaları hemcins, kâinatın bölgeleri uyumlu, bitkilerin renk ve tadı ile nesneler birbirinden farklı olmuş ve her yaratık, fasih bir dil ve açık bir vurguyla, kendi başına buyruk olmadığını ortaya koymuştur.

وَجَعَلُوا لِلّٰهِ شُرَكَٓاءَ الْجِنَّ وَخَلَقَهُمْ وَخَرَقُوا لَهُ بَنِينَ وَبَنَاتٍ بِغَيْرِ
عِلْمٍ سُبْحَانَهُ وَتَعَالٰى عَمَّا يَصِفُونَ ﴿١٠٠﴾

100- "Cinleri Allah'a ortak koştular. Oysaki onları da Allah yaratmıştı. Bilgisizce O'na oğullar ve kızlar yakıştırdılar. Hâşâ! O, onların ileri sürdüğü vasıflardan uzak ve yücedir."

Basiretleri kapandı ve bu yüzden tapmak için her türlü eksik varlıkla yetindiler. Bu ise Allah tarafından gaflet sahiplerine çabucak verilmiş bir azaptır.

بَدِيعُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ اَنّٰى يَكُونُ لَهُ وَلَدٌ وَلَمْ تَكُنْ لَهُ صَاحِبَةٌ
وَخَلَقَ كُلَّ شَيْءٍ وَهُوَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ﴿١٠١﴾

101- "O, göklerin ve yerin eşsiz yaratıcısıdır. O'nun eşi olmadığı halde, nasıl çocuğu olabilir. Her şeyi O yaratmıştır ve her şeyi hakkıyla bilen O'dur."

Ayette yer alan "Bedî' " kelimesi, benzeri olmayan veya örneksiz yaratan demektir ki, ikisi de Allah'ı vasıflandırmada uygundur. Bir olan için çocuk imkânsızdır. Çünkü çocuk sahibi olmak, parça olmayı gerektirir ki, bu tevhide sığmaz.

ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمْ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ خَالِقُ كُلِّ شَيْءٍ فَاعْبُدُوهُ وَهُوَ
عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ وَكِيلٌ ﴿١٠٢﴾

102- "İşte Rabbiniz Allah O'dur. O'ndan başka tanrı yoktur. O, her şeyin yaratıcısıdır. Öyle ise O'na kulluk edin. O, her şeye vekildir."

Allah, kendini onlara önce ayetleriyle, sonra sıfatlarıyla tanıttıktan sonra zatının hakikatleriyle kendilerine tecelli etmiştir.

(لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ) *"O'ndan başka tanrı yoktur."* Bu, büyüklere dönük bir tanıtmadır. (خَالِقُ كُلِّ شَيْءٍ ) *"O, her şeyin yaratıcısıdır."* Bu da avama ve küçüklere dönük bir tanıtmadır.

لَا تُدْرِكُهُ الْاَبْصَارُ وَهُوَ يُدْرِكُ الْاَبْصَارَ وَهُوَ اللَّطِيفُ الْخَبِيرُ ﴿١٠٣﴾

103- "Gözleri O'nu göremez. Halbuki O, gözleri görür. O, eşyayı pekiyi bilen, her şeyden haberdar olandır."

Allah, "samed" sıfatını her türlü değişimden ve kavranabilir olmaktan mukaddes kılmıştır. Sınırı ve kenarı olmayan varlık nasıl olur da kavranabilir!

(وَهُوَ اللَّطِيفُ) *"O latîftir."* Hiçbir şey ondan gizlenemez. (الْخَبِيرُ ) *"Haberdardır."* İlmi her şeyi kuşatmıştır.

قَدْ جَٓاءَكُمْ بَصَٓائِرُ مِنْ رَبِّكُمْ فَمَنْ اَبْصَرَ فَلِنَفْسِهِ وَمَنْ عَمِيَ
فَعَلَيْهَا وَمَٓا اَنَا عَلَيْكُمْ بِحَفِيظٍ ﴿١٠٤﴾

104- "Doğrusu size Rabbiniz tarafından basiretler verilmiştir. Artık kim hakkı görürse faydası kendisine, kim de kör olursa zararı kendinedir. Ben, üzerinize bekçi değilim."

Allah, beyanı açıkça yapmış, delili apaçık ortaya koymuş, engelleri ortadan kaldırmış ve yolu aydınlatmıştır. Lakin şiirde şöyle denilmiştir:

*Faydalanamaz dünyanın dostu gözünden*
*Gözünde aydınlıklarla karanlıklar aynı olduğu zaman*

وَكَذٰلِكَ نُصَرِّفُ الْاٰيَاتِ وَلِيَقُولُوا دَرَسْتَ وَلِنُبَيِّنَهُ لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ ﴿١٠٥﴾

105- "Böylece biz ayetleri geniş geniş açıklıyoruz ki, 'Sen ders almışsın' desinler de, biz de anlayan toplum için Kur'an'ı iyice açıklayalım."

Allah, kalplerine fitne soktu ve bu yüzden durumdan duruma düştüler. Şöyle ki, bazen içlerine şüphe düştü, bazen de hayret içinde kaldılar. Kimileri hakikati kavrarken kimilerine de Allah kendini tanıtmış oldu.

اِتَّبِعْ مَٓا اُوحِيَ اِلَيْكَ مِنْ رَبِّكَ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ وَاَعْرِضْ عَنِ الْمُشْرِكِينَ ﴿١٠٦﴾

106- "Rabbinden sana vahyolunana uy. O'ndan başka ilah yoktur. Allah'a ortak koşanlardan da yüz çevir!"

وَلَوْ شَٓاءَ اللّٰهُ مَٓا اَشْرَكُوا وَمَا جَعَلْنَاكَ عَلَيْهِمْ حَفِيظًا وَمَٓا اَنْتَ
عَلَيْهِمْ بِوَكِيلٍ ﴿١٠٧﴾

107- "Allah dileseydi, onlar ortak koşmazlardı. Biz, seni onların üzerine bir bekçi kılmadık. Sen, onların vekili de değilsin."

Muradından geri kaldığı için, halinin övülmeyi hak etmeye yetmediğini itiraf edene şaşılır. Bu kimse, nasıl olur da mabudunu, muradının, O'nun mülkünde ortadan kalkmamasının caiz olduğuyla vasıflandırır?!

وَلَا تَسُبُّوا الَّذِينَ يَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ فَيَسُبُّوا اللّٰهَ عَدْوًا بِغَيْرِ عِلْمٍ
كَذٰلِكَ زَيَّنَّا لِكُلِّ اُمَّةٍ عَمَلَهُمْ ثُمَّ اِلٰى رَبِّهِمْ مَرْجِعُهُمْ فَيُنَبِّئُهُمْ بِمَا
كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٠٨﴾

108- "Allah'tan başkasına tapanlara sövmeyin. Sonra onlar da bilgisizce, düşmanca Allah'a söverler. Böylece biz, her ümmete kendi işlerini cazip gösterdik. Sonunda dönüşleri Rablerinedir. Artık O, ne yaptıklarını kendilerine bildirecektir."

Yani sen delil diliyle, delillere bağlı kalarak ve şüpheyi ortadan kaldıracak şekilde onlara hitap et. Yoksa onlarla nefis ve adetten kaynaklanan faktörlerin gereğine göre konuşma. Zira bu, onları Allah'ı saygıyla anmayı terk etmeye sevk edebilir.

Bir yoruma göre de, yaptıkları çirkinlikler konusunda onlarla uyum içinde olma. Yoksa onların, sapkınlıklarındaki cüretleri artmış olur. Böylece senin davranışın, küfür ve fasıklıklarının artmasına sebep ve gerekçe teşkil etmiş olur.

(كَذٰلِكَ زَيَّنَّا لِكُلِّ اُمَّةٍ عَمَلَهُمْ ثُمَّ اِلٰى رَبِّهِمْ مَرْجِعُهُمْ فَيُنَبِّئُهُمْ بِمَا كَانُوا يَعْمَلُونَ) *"Böylece biz, her ümmete kendi işlerini cazip gösterdik. Sonunda dönüşleri Rablerinedir. Artık O, ne yaptıklarını kendilerine bildirecektir."*

Onların nazarında eşyanın hakikatlerini karıştırdık. O kadar ki onlar, çirkini güzel sanarak kötü durumlarında bir değişiklik düşünmediler. Böylece onlar, nefse meylederek afiyetleri ve belayı birbirinden ayırt edemediler.

وَاَقْسَمُوا بِاللّٰهِ جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ لَئِنْ جَٓاءَتْهُمْ اٰيَةٌ لَيُؤْمِنُنَّ بِهَا قُلْ اِنَّمَا الْاٰيَاتُ عِنْدَ اللّٰهِ وَمَا يُشْعِرُكُمْ اَنَّهَٓا اِذَا جَٓاءَتْ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿١٠٩﴾

109- "Kendilerine bir mucize gelirse, ona mutlaka inanacaklarına dair kuvvetli bir şekilde Allah'a and içtiler. De ki: 'Mucizeler ancak Allah katındandır.' Ama mucize geldiğinde de inanmayacaklarının farkında mısınız?"

Onlar, delil gördükleri takdirde kendiliklerinden iman edecekleri sözünü verdiler ve kendilerinin, hükmün pençesinde olduklarını bilemediler. Kaldı ki ezeli rahmetin, imdadına yetişmediği ve kaderin gereği olarak sonradan korunmayan kimseye delillerin açıklığı ne fayda verir!

وَنُقَلِّبُ اَفْـِٔدَتَهُمْ وَاَبْصَارَهُمْ كَمَا لَمْ يُؤْمِنُوا بِهٖٓ اَوَّلَ مَرَّةٍ وَنَذَرُهُمْ فِي طُغْيَانِهِمْ يَعْمَهُونَ ﴿١١٠﴾

110- "Yine O'na iman etmedikleri ilk durumdaki gibi, onların gönüllerini ve gözlerini ters çeviririz. Ve onları, şaşkın olarak azgınlıklarının içerisinde bırakırız."

Kader meselesinde kalbinde bir şüphe kalan kimseye şaşılır. Oysa Allah şöyle buyurur:

(وَنُقَلِّبُ اَفْـِٔدَتَهُمْ وَاَبْصَارَهُمْ كَمَا لَمْ يُؤْمِنُوا بِهٖٓ اَوَّلَ مَرَّةٍ) *"Yine O'na iman etmedikleri ilk durumdaki gibi, onların gönüllerini ve gözlerini ters çeviririz."*

Hayır! Doğrusu ters çevirmenin ortaya koyduğu gerçeklerden biri de açık olduğu halde, bu meselenin akıl sahiplerinden olan bazı kimselerin kalbinde bir problem olarak kalmasıdır. Açık olduğu halde, bu meseleyi gizli hale getiren Allah'ın şanı ne de yücedir! İşte kudret sahibinin kahrı ve bir olan Allah'ın hükmü budur.

وَلَوْ اَنَّنَا نَزَّلْنَآ اِلَيْهِمُ الْمَلٰٓئِكَةَ وَكَلَّمَهُمُ الْمَوْتٰى وَحَشَرْنَا عَلَيْهِمْ
كُلَّ شَيْءٍ قُبُلًا مَا كَانُوا لِيُؤْمِنُوٓا اِلَّآ اَنْ يَشَآءَ اللّٰهُ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ
يَجْهَلُونَ ﴿١١١﴾

111- "Eğer biz, onlara melekleri indirseydik, ölüler de onlarla konuşsaydı ve her şeyi toplayıp karşılarına getirseydik, Allah dilemedikçe yine de inanacak değillerdi. Fakat çokları bunu bilmezler."

Çünkü mucizeler peş peşe gelse ve delil güneşleri yükselse de izzetin belini kırdığı ve kaderin işlevsiz hale getirdiği kimsede bu deliller, şaşkınlık ve dalaleti artırmaktan ve yeni bir şakilik durumu meydana getirmekten başka bir sonuç vermezler.

وَكَذٰلِكَ جَعَلْنَا لِكُلِّ نَبِيٍّ عَدُوًّا شَيَاطِينَ الْاِنْسِ وَالْجِنِّ يُوحِي
بَعْضُهُمْ اِلٰى بَعْضٍ زُخْرُفَ الْقَوْلِ غُرُورًا وَلَوْ شَآءَ رَبُّكَ مَا
فَعَلُوهُ فَذَرْهُمْ وَمَا يَفْتَرُونَ ﴿١١٢﴾

112- "Böylece biz, her peygambere, insan ve cin şeytanlarını düşman kıldık. Bunlar, aldatmak için birbirlerine yaldızlı sözler fısıldarlar. Rabbin dileseydi, onu da yapamazlardı. Artık onları, uydurdukları şeylerle baş başa bırak."

Makam yükseldikçe musibetler daha büyük ve yükümlülükler daha güçlü olur. Nitekim peygamberlerin rütbeleri daha şerefli olduğu için onlara karşı yapılan düşmanlık da daha şiddetli ve daha zor olmuştur.

وَلِتَصْغٰٓى اِلَيْهِ اَفْـِٔدَةُ الَّذ۪ينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِالْاٰخِرَةِ وَلِيَرْضَوْهُ وَلِيَقْتَرِفُوا
مَا هُمْ مُقْتَرِفُونَ ﴿١١٣﴾

113- "Ahirete inanmayanların kalpleri ona kansın, ondan hoşlansınlar ve işledikleri suçu işlemeye devam etsinler diye böyle yaparlar."

Kâfirlerin kulakları boş laflarla, kalpleri de kötülükle dolduğundan kendileri için en değersiz nasibe razı oldular.

اَفَغَيْرَ اللّٰهِ اَبْتَغ۪ي حَكَمًا وَهُوَ الَّذ۪ٓي اَنْزَلَ اِلَيْكُمُ الْكِتَابَ مُفَصَّلًاۜ
وَالَّذ۪ينَ اٰتَيْنَاهُمُ الْكِتَابَ يَعْلَمُونَ اَنَّهُ مُنَزَّلٌ مِنْ رَبِّكَ بِالْحَقِّ فَلَا
تَكُونَنَّ مِنَ الْمُمْتَر۪ينَ ﴿١١٤﴾

114- "De ki: Allah'tan başka bir hakem mi arayacağım? Halbuki size Kitab'ı açık olarak indiren O'dur. Kendilerine kitap verdiğimiz kimseler Kur'an'ın gerçekten Rabbin tarafından indirilmiş olduğunu bilirler. Sakın şüpheye düşenlerden olma!"

De ki: Beyanın ortaya çıkmasından ve delilin belirginleşmesinden sonra, kesin inancı terk edip tahmini tercih edeceğimi, haktan kopacağımı ve nefsin arzusuna bağlı kalacağımı mı düşünüyorsunuz? Bu, gerçekleşmesi imkânsız bir zandır.

وَتَمَّتْ كَلِمَتُ رَبِّكَ صِدْقًا وَعَدْلًا لَا مُبَدِّلَ لِكَلِمَاتِهِ وَهُوَ السَّمِيعُ
الْعَلِيمُ ﴿١١٥﴾

115- "Rabbinin sözü, doğruluk ve adalet bakımından tamamlanmıştır. O'nun sözlerini değiştirecek kimse yoktur. O işitendir, bilendir."

Allah'ın zatı ve sıfatları, değişiklikten mukaddes ve münezzehtir. Mükemmellik de noksanlığı ortadan kaldırır. Bu itibarla her noksanlığın menşei, sonradan var olmuşluktur. O halde sıfatı kıdem olan Allah'ta noksanlık nasıl olur ki!

وَاِنْ تُطِعْ اَكْثَرَ مَنْ فِي الْاَرْضِ يُضِلُّوكَ عَنْ سَبِيلِ اللّٰهِ اِنْ يَتَّبِعُونَ
اِلَّا الظَّنَّ وَاِنْ هُمْ اِلَّا يَخْرُصُونَ ﴿١١٦﴾

116- "Yeryüzünde bulunanların çoğuna uyacak olursan, seni Allah'ın yolundan saptırırlar. Onlar, zandan başka bir şeye tabi olmaz. Yalandan başka söz de söylemezler."

Allah'a yakın kimseler, ağırlık ve önemleri bakımından çok olsalar da sayıca azdırlar. Düşmanlara gelince onlar çoktur. Eğer onlara bakarsan, seni fitneye düşürür, onlara arkadaşlık ettiğin takdirde de seni haktan alıkoyup ters çevirirler.

اِنَّ رَبَّكَ هُوَ اَعْلَمُ مَنْ يَضِلُّ عَنْ سَبِيلِهِ وَهُوَ اَعْلَمُ بِالْمُهْتَدِينَ ﴿١١٧﴾

117- "Muhakkak senin Rabbin, evet O, kendi yolundan sapanı en iyi bilendir. O, doğru yolda gidenleri de iyi bilendir."

Yaratıkların ilimleri, kendilerine öğrettikleri hariç, Allah'ın gaybını idrak etmede yetersiz kalmıştır. Hiç bir şeyin gizli kalmadığı yegâne varlık ise bir olan Allah'tır.

فَكُلُوا مِمَّا ذُكِرَ اسْمُ اللّٰهِ عَلَيْهِ اِنْ كُنْتُمْ بِاٰيَاتِهِ مُؤْمِنِينَ ﴿١١٨﴾

118- "Allah'ın ayetlerine inanıyorsanız, üzerine O'nun adı anılarak kesilenlerden yeyin."

Tefsir ilminin izahına göre bu hüküm, kesilen hayvanla ilgilidir. İşârî anlamına göre ise gafletle yemeği yasaklamaktır. Çünkü gafletle yiyen kimsenin bu yemek ile kazandığı kuvvet kendisinde kaldığı sürece kalbine doğan hususlar ya nefsin hevesleridir ya da şeytanın vesveseleridir.

وَمَا لَكُمْ اَلَّا تَاْكُلُوا مِمَّا ذُكِرَ اسْمُ اللّٰهِ عَلَيْهِ وَقَدْ فَصَّلَ لَكُمْ مَا حَرَّمَ عَلَيْكُمْ اِلَّا مَا اضْطُرِرْتُمْ اِلَيْهِ وَاِنَّ كَثِيرًا لَيُضِلُّونَ بِاَهْوَآئِهِمْ بِغَيْرِ عِلْمٍ اِنَّ رَبَّكَ هُوَ اَعْلَمُ بِالْمُعْتَدِينَ ﴿١١٩﴾

119- "Üzerine Allah'ın adı anılıp kesilenden yememenize sebep ne? Oysa Allah, çaresiz yemek zorunda kaldığınız dışında, haram kıldığı şeyleri size açıklamıştır. Doğrusu, birçokları bilgisizce kendi kötü arzularına uyarak saptırıyorlar. Muhakkak ki Rabbin haddi aşanları çok iyi bilir."

Yani eğer gafleti terk ederseniz hangi sorumluluğun altına girersiniz? Bir de Allah'ı anmaya devam ederseniz, size ne zarar verir?

Bu arada siz, zikrin huzuru ile şu durumda ve şu andaki yabancılık arasındaki farkı anlamış oldunuz. Şimdi artık siz, sevabın ve azabın ahiretteki hükmünü bilmez misiniz?

وَذَرُوا ظَاهِرَ الْاِثْمِ وَبَاطِنَهُ اِنَّ الَّذِينَ يَكْسِبُونَ الْاِثْمَ سَيُجْزَوْنَ بِمَا كَانُوا يَقْتَرِفُونَ ﴿١٢٠﴾

120- "Günahın açığını da gizlisini de bırakın. Çünkü günah işleyenler, yaptıklarının cezasını mutlaka çekeceklerdir."

Günahın açığı, başkalarının muttali olduğu şeydir. Günahın gizlisi ise, insanla Allah arasındaki sır demek olup hiçbir mahlûk ona vakıf değildir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Günahın gizlisi, gizli inançlardır...

- Günahın gizlisi, nefsin bir nevi teville kişiye dikte ettiği şeydir.

- Marifet ehlinin dilinden günahın gizlisi, insanın arzu ettiği şeye göz yummasıdır.

- Muhabbet ehlinin dilinden günahın gizlisi, sevginin yükümlülüklerinden yüz çevirmeye devam etmektir. Sevginin yükümlülüklerinin yapısı ise, suçlama ve kahretmeye dayalıdır.

Şiir:

*Ben: "Ne suç işledim" dediğimde der ki, cevap vererek:*
*Hayatın, günahtan ibarettir, kıyaslanamaz onunla hiçbir günah*

- Ben, size nimetleri açık ve gizli olarak verdim. O halde siz de hem açık hem de gizli halde günahı terk edin. Çünkü şükrün bir şartı da nimeti, günah ve muhalefet olan şeyde kullanmayı terk etmektir.

وَلَا تَأْكُلُوا مِمَّا لَمْ يُذْكَرِ اسْمُ اللّٰهِ عَلَيْهِ وَاِنَّهُ لَفِسْقٌ وَاِنَّ الشَّيَاطِينَ
لَيُوحُونَ اِلٰٓى اَوْلِيَٓائِهِمْ لِيُجَادِلُوكُمْ وَاِنْ اَطَعْتُمُوهُمْ اِنَّكُمْ لَمُشْرِكُونَ ﴿١٢١﴾

121- "Üzerine Allah'ın adı anılmadan kesilen hayvanlardan yemeyin. Kuşkusuz bu büyük günahtır. Gerçekten şeytanlar dostlarına, sizinle mücadele etmeleri için telkinde bulunurlar. Eğer onlara uyarsanız, şüphesiz siz de Allah'a ortak koşanlar olursunuz."

Her kim, davranışlarında asi olur ve Rabbini unutursa, (...) sahipleri nazarında sakınılması şarttır.

(وَاِنَّ الشَّيَاطِينَ لَيُوحُونَ اِلٰٓى اَوْلِيَٓائِهِمْ لِيُجَادِلُوكُمْ) *"Gerçekten şeytanlar dostlarına, sizinle mücadele etmeleri için telkinde bulunurlar."*

Bu ifade, söz konusu durumdan sakınan kimsenin duygularının, Allah rızası için birlik olacağını ve şeytanın telkinlerinin kendisinden

kopacağını dile getirmektedir. Nitekim her katılığın aslı, şehvetlere uymaktır. Bu nedenle kim, şehvetlere uyarsa kalbin safiyetine veda etsin.

اَوَمَنْ كَانَ مَيْتًا فَاَحْيَيْنَاهُ وَجَعَلْنَا لَهُ نُورًا يَمْشِي بِهِ فِي النَّاسِ كَمَنْ مَثَلُهُ فِي الظُّلُمَاتِ لَيْسَ بِخَارِجٍ مِنْهَا كَذٰلِكَ زُيِّنَ لِلْكَافِرِينَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٢٢﴾

122- "Ölü iken diriltttiğimiz ve kendisine insanlar arasında yürüyebileceği bir ışık verdiğimiz kimse, karanlıklar içinde kalıp ondan hiç çıkamayacak durumdaki kimse gibi olur mu? İşte, kâfirlere yaptıkları böyle süslü gösterilmiştir."

Bunlara göre iman, kalbin Allah ile hayat bulmasıdır. Bu çerçevede gaflet ehli, Allah'ı andıkları zaman, önceden ölüler gibi iken dirilmiş olurlar. Zikir erbabı da unutmaya maruz kaldıkları zaman, hayattan sonra ölmüş olurlar. Allah'a yakınlığın nurları içinde, irfanın ışığı altında ve basiretin huzuru içindeki kimseye ise karanlıkların tutsağı olan yaklaşamaz ve afetlerin rehinesi olmuş kimse de onunla aynı seviyede olamaz.

وَكَذٰلِكَ جَعَلْنَا فِي كُلِّ قَرْيَةٍ اَكَابِرَ مُجْرِمِيهَا لِيَمْكُرُوا فِيهَا وَمَا يَمْكُرُونَ اِلَّا بِاَنْفُسِهِمْ وَمَا يَشْعُرُونَ ﴿١٢٣﴾

123- "Böylece biz, her kasabada, oralarda bozgunculuk yapmaları için, günahkârlarını liderler yaptık. Onlar, yalnız kendilerini aldatırlar; ama farkında olmazlar."

Biz onları, tevhidin hakikatlerini birbirinden ayırt edemez kıldık. Zanlarınca kendilerinde mahviyet ve ispattan bir kıvılcım vardır. Böylece onlar, bataklığa saplanarak bir tuzak kurduklarını sandılar. Oysa gerçekte aldatılanlar kendileridir. Bunu da bilmenin kendilerine fayda vermeyeceği bir zamanda bileceklerdir.

وَاِذَا جَٓاءَتْهُمْ اٰيَةٌ قَالُوا لَنْ نُؤْمِنَ حَتّٰى نُؤْتٰى مِثْلَ مَٓا اُو۫تِيَ رُسُلُ اللّٰهِ
اَللّٰهُ اَعْلَمُ حَيْثُ يَجْعَلُ رِسَالَتَهُ سَيُص۪يبُ الَّذ۪ينَ اَجْرَمُوا صَغَارٌ عِنْدَ
اللّٰهِ وَعَذَابٌ شَد۪يدٌ بِمَا كَانُوا يَمْكُرُونَ ﴿١٢٤﴾

124- "Onlara bir ayet geldiğinde: 'Allah'ın elçilerine verilenin benzeri bize de verilmedikçe, kesinlikle inanmayız' dediler. Allah, peygamberliğini kime vereceğini daha iyi bilir. Suç işleyenlere, yapmakta oldukları hilelere karşılık Allah tarafından aşağılık ve çetin bir azap erişecektir."

Gerekçeleri yok edilip delilin açıklanması ve şüphenin ortadan kaldırılmasından sonra, daha çok basiret istemeyi gerekçe göstermek, edep dışılığı dile getirmek demektir. Bunu yapmaları ise haddi aşmaları anlamına gelir. Zira hakkı yerine getiren ile nefsin telkinlerini dile getiren kimseyi eşit tutmak, değersizlikle ıstırabını çekmeye sebep olur. Allah'ın koyduğu sınırlara bağlılık ve hakka tecavüzü terk etmek ise muvaffakiyetin gereğidir.

فَمَنْ يُرِدِ اللّٰهُ اَنْ يَهْدِيَهُ يَشْرَحْ صَدْرَهُ لِلْاِسْلَامِ وَمَنْ يُرِدْ اَنْ يُضِلَّهُ
يَجْعَلْ صَدْرَهُ ضَيِّقًا حَرَجًا كَاَنَّمَا يَصَّعَّدُ فِي السَّمَٓاءِ كَذٰلِكَ يَجْعَلُ
اللّٰهُ الرِّجْسَ عَلَى الَّذ۪ينَ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿١٢٥﴾

125- "Allah, kimi doğru yola iletmek isterse, onun kalbini İslam'a açar. Kimi de saptırmak isterse, göğe çıkıyormuş gibi, kalbini iyice daraltır. Allah, inanmayanların üstüne işte böyle murdarlık verir."

Müslüman'ın iç dünyasında, bir damar bile kaderle pençeleşmek için kıpırdamaz. Çünkü İslam, kişinin kendine bir pay çıkarmadan bütünüyle teslimiyetini gerektirir. Her kim, yükümlülükten herhangi bir şeyi ağır bulur veya bu konuda kendisinde bir nefeslik dahi hoşnutsuzluk kalırsa o, Allah'ın hükmüne teslim olmamış sayılır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Baştaki nur aklın, ortalardaki nur ilmin, sondaki nur da irfanın nurudur. Bu itibarla, akıl sahibi delile, ilim sahibi izaha, marifet sahibi de müşahedenin hükmüne bağlıdır.

- Kim, gaybın nurlarını bulursa, gizli işler ona görünmeye başlar. Böylece nurun ortaya çıkmasıyla, kalbe ait olan hususlardan herhangi bir şey onun için problem olmaz. Nitekim Hz. Peygamber de şöyle buyurmuştur: *"Müminin ferasetinden sakının! Çünkü o, Allah'ın nuruyla bakar."*

- Gaybın, kuldaki ilk etkisi, onu eksikliklerinin ve sapkınlığının yol açtığı kusurların farkına vardırması, sonra da kalbinde Rabbine yönelik olarak beliren tecelliler sayesinde nefsini görmekten onu alıkoymasıdır. Diğer etkisi de nurların, sırrına hâkim olmasıdır. Tıpkı güneşin küresine bakan kimsenin, göz ışıklarının güneşin ışıklarında yok olması gibi daha önce görmekte olduğu sırrı da göremez olur. İşte aynı şekilde basiretin nurları da, tecellilerin hakikatleri içinde yok olmaktadır. Böylece kul, tecellinin değil, sadece varlığın sahibi olur. Bundan sonraki safhada ise, kul bütünüyle kaybolur ve Allah'ın birliği ebedilik sıfatıyla kalır.

(وَمَنْ يُرِدْ اَنْ يُضِلَّهُ يَجْعَلْ صَدْرَهُ ضَيِّقًا حَرَجًا كَاَنَّمَا يَصَّعَّدُ فِي السَّمَٓاءِ كَذٰلِكَ يَجْعَلُ اللّٰهُ الرِّجْسَ عَلَى الَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ) *"Kimi de saptırmak isterse, göğe çıkıyormuş gibi, kalbini iyice daraltır. Allah, inanmayanların üstüne işte böyle murdarlık verir."*

Bundan maksat, bu kimsenin, Allah'ın muradından başka bir şeye çaba harcamamasıdır. Bu arada beşer olmanın sınırı, kalbinin daralmasıdır. Daralan kalbin sahibi, olup bitenlerin ve gerekçelerin esiridir. Hak'tan gafil olmak şeklindeki azaptan daha şiddetli bir azap da yoktur.

وَهٰذَا صِرَاطُ رَبِّكَ مُسْتَقِيمًا قَدْ فَصَّلْنَا الْاٰيَاتِ لِقَوْمٍ يَذَّكَّرُونَ ﴿١٢٦﴾

126- "Bu din, Rabbinin dosdoğru yoludur. Biz, öğüt alacak bir kavim için ayetleri ayrıntılı olarak açıkladık."

Dosdoğru yol, Allah'ın Rab oluşuna kesin olarak iman ettikten sonra kulluğu hakkıyla yerine getirmektir. Bu itibarla adı geçen yol, cem ile teyit edilmiş bir fark, din ile kayıtlı bir cem, irfanın her türlü imkân kullanılarak ispatı, bütün çabayı harcayarak aykırılıklardan uzaklık, uygulayıcının hiçbir ortağı bulunmayan Allah olduğundan emin olmak, sonra kendi yaptıklarına ve yapmadıklarına güvenmemek, aksine ilahî takdirin tecellilerini beklemektir. Eğer istikamet sahibi insan, bir an sapar ve sağa yahut da sola dönerse bir daha kalkamayacak şekilde düşer.

لَهُمْ دَارُ السَّلَامِ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَهُوَ وَلِيُّهُمْ بِمَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٢٧﴾

127- "Rableri katında onlara esenlik yurdu vardır. Ve yapmakta oldukları güzel işler sebebiyle Allah onların dostudur."

Ayette yer alan "selam" lafzı, "selamet" demektir. Bu nedenle selam -esenlik- yurdu da, selamet yurdu demektir. Bu arada her kim, herhangi bir nefsi arzuya veya mahlûka köle olursa, selameti bulamaz. Selameti ancak yaratıkların köleliğinden kurtulmuş olan kimse bulur. Ayet de bu kimselerin cennetlik olduklarına, lakin cennetin tutsağı olmadıklarına, aksine her yaratığın köleliğinden azat olduklarına işaret etmektedir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Her kim, bugün nefsine, canına ve her türlü değerli varlığına veda selamı vermezse, yarın o fazileti görmez. Kim ki, yarın Rabbi'nin selamına mazhar olmak istiyorsa, öncelikle nefsi ve canı olmak üzere, kâinata topluca veda selamı versin.

- Yarın selamet yurdu, bugün dili ve kalbi gıybetten, bedeni ve zahiri davranışları hatadan, sırları ve maneviyatı gafletten, aklı bidatten, muamelesi haram ve şüpheden, amelleri riya ve yapmacıktan, halleri de kendini beğenmişlikten salim kalan kimsedir.

- Selamet yurdunun kadri, saygınlık makamında ve Allah'a yakınlığın özel sembolü olmasından dolayıdır. Yoksa bütün yerler yurttur. Lakin evin kıymeti komşuyladır.

Şiir:

*Kıskanırım ben civarınızdaki bir evi*
*Ne mutlu senin evine komşu olana*
*Verseydi keşke bana komşun evinden bir karış*
*Verirdim ben ona bir ev bir karışa karşılık*

Her ne kadar selamet yurdu, komşu kabul etmekten münezzeh olup ona yakınlık, yer yakınlığı şeklinde değilse de bu tabirin kullanılması, sevenlerin kalplerine huzur vermektedir. Daha doğrusu eğer bu yakınlık mesafe yönünden olsaydı, bu denli büyük etkisi olmazdı. Ancak kalplerin hayatı buna bağlıdır. Çünkü bu yakınlığın özü, mesafe gibi vasıflardan mukaddestir. Bu şekilde ifade edilmesi ise, sevenlerin gönlünü ısındırmak için olup âlimleri tevil külfetine sokmaktadır. Bu da sevmenin alametidir.

Şiir:

*Girdim senin için yükün altına*
*Gücümün yetmediği yükün altına*

(وَهُوَ وَلِيُّهُمْ بِمَا كَانُوا يَعْمَلُونَ) "*Ve yapmakta oldukları güzel işler sebebiyle Allah onların dostudur.*"

(وَهُوَ وَلِيُّهُمْ) "*Allah onların dostudur*" ifadesi, o makamların kadrinin şerefini dile getirmektedir. Çünkü Allah onların dostu olduğu zaman nasıl olursa olsun, bütün makamlar güzel olur.

Şiir:

*Arzuluyorum o yerleri orda oturandan dolayı*
*Evde ise ne arzum vardır ne de ihtiyacım*

Allah hem dünya hayatlarında hem de ahiret hayatlarında onların dostudur. O öyle bir dosttur ki, sözü kalplerini kaplamıştır. Böylece Allah, onların kalplerinde başkasına yer bırakmamıştır. Allah, kullarına kendilerinden daha yakın bir dosttur. Allah, onların öyle bir dostudur ki, kendilerini başkalarına ve hemcinslerine tercih ettiği için onlar da bütün hallerinde O'nu tercih etmişlerdir. Allah, onların

hoşnutluğunu isteyen bir dostlarıdır. Allah, onların öyle bir dostudur ki, kendilerini ne nefisleri ne dünyaları ne de ahiretleriyle baş başa bırakmıştır. Allah, onlara nimetleriyle lütufta bulunan, cemali ve celaliyle de tecelli eden dostlarıdır.

Allah, onları bütün nefsi haz ve arzulardan koparan, kendileriyle bütün yakınlarının arasına giren dostlarıdır. Böylece Allah, onları her vasıf sahibinden, matluptan ve sevgiliden kurtarmıştır. Allah, ruhlarına huzur veren dostlarıdır. O'nun tecellileri, gözlerinin itikaf yeri, huzuru da ruhlarının besin kaynağıdır.

Allah, onların öyle bir dostudur ki, O'ndan başka kimseleri yoktur ve O'ndan başkasını görmez, O'ndan başkasını bulmazlar. Ne başlangıçta O'ndan başkasına yönelirler ne nihayetlerinde O'ndan başkasını bulurlar, ne de vesilelerinde O'ndan başkasını görürler.

وَيَوْمَ يَحْشُرُهُمْ جَمِيعًا يَا مَعْشَرَ الْجِنِّ قَدِ اسْتَكْثَرْتُمْ مِنَ الْاِنْسِ
وَقَالَ اَوْلِيَآؤُهُمْ مِنَ الْاِنْسِ رَبَّنَا اسْتَمْتَعَ بَعْضُنَا بِبَعْضٍ وَبَلَغْنَآ
اَجَلَنَا الَّذِيٓ اَجَّلْتَ لَنَا قَالَ النَّارُ مَثْوٰيكُمْ خَالِدِينَ فِيهَآ اِلَّا مَا شَآءَ
اللّٰهُ اِنَّ رَبَّكَ حَكِيمٌ عَلِيمٌ ﴿١٢٨﴾

128- "Allah, onların hepsini bir araya topladığı gün: 'Ey cinler topluluğu! Siz insanlarla çok uğraştınız' der. Onların, insanlardan olan dostları ise: 'Ey Rabbimiz! Biz, birbirimizden yararlandık ve bize verdiğin sürenin sonuna ulaştık' derler. Allah da buyurdu ki: Allah'ın dilediği hariç, içinde ebedi kalacağınız yer ateştir. Şüphesiz Rabbin hikmet sahibidir, bilendir."

Onlar, özür beyan ederler, fakat dinlenmez. Delil getirirler, fayda vermez. Oysa daha önce öyle bir durumda idiler ki, daha azını da getirseler onlardan kabul edilirdi. Lakin kader öne geçti ve onlar şakiliği hak ettiler.

وَكَذٰلِكَ نُوَلِّي بَعْضَ الظَّالِمِينَ بَعْضًا بِمَا كَانُوا يَكْسِبُونَ ﴿١٢٩﴾

129- "İşte böylece, işledikleri günahlardan ötürü, zalimlerin bir kısmını diğer bir kısmının peşine takarız."

Yani biz, benzerleri bir araya getiririz. Mesela, veliler bir araya getirilip birbirlerini dinlerken, düşmanlar da bir araya getirilip birbirlerinden kaçarlar.

يَا مَعْشَرَ الْجِنِّ وَالْاِنْسِ اَلَمْ يَأْتِكُمْ رُسُلٌ مِنْكُمْ يَقُصُّونَ عَلَيْكُمْ اٰيَاتٖي وَيُنْذِرُونَكُمْ لِقَٓاءَ يَوْمِكُمْ هٰذَا قَالُوا شَهِدْنَا عَلٰٓى اَنْفُسِنَا وَغَرَّتْهُمُ الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا وَشَهِدُوا عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ اَنَّهُمْ كَانُوا كَافِرٖينَ ﴿١٣٠﴾

130- "Ey cin ve insan topluluğu! İçinizden size ayetlerimi anlatan ve bugünle karşılaşacağınıza dair sizi uyaran peygamberler gelmedi mi? Derler ki: 'Kendi aleyhimize şahitlik ederiz.' Dünya hayatı onları aldattı ve kâfir olduklarına dair kendi aleyhlerine şahitlik ettiler."

Allah onlara, bağlayıcı delil olması bakımından delillerini geçersiz kıldığını anlatmış, ancak şaki oluşlarına ezelde hükmetmiştir. Böylece onları, yöntemi bilemez hale getirmiştir.

ذٰلِكَ اَنْ لَمْ يَكُنْ رَبُّكَ مُهْلِكَ الْقُرٰى بِظُلْمٍ وَاَهْلُهَا غَافِلُونَ ﴿١٣١﴾

131- "Gerçek şu ki: Halkı habersizken, Rabbin haksızlık ile ülkeleri helak edici değildir."

Mülk O'nun mülkü, yaratıklar da O'nun yaratıkları olduğu halde Allah'ı vasıflandırmada zulüm vehmetmek nasıl doğru olur!

Bir de kul O'nun kulu ve hüküm O'nun hükmü iken, iradesiyle bir kimse hakkında bulunduğu tasarruf nasıl çirkin olur!

وَلِكُلٍّ دَرَجَاتٌ مِمَّا عَمِلُوا وَمَا رَبُّكَ بِغَافِلٍ عَمَّا يَعْمَلُونَ ﴿١٣٢﴾

132- "Herkesin, yaptıkları işlere göre dereceleri vardır. Rabbin, onların yaptıklarından habersiz değildir."

İyilik yapan, sevabın huzurundan yararlanır. Günah işleyen de azabın acısıyla inler.

وَرَبُّكَ الْغَنِيُّ ذُو الرَّحْمَةِ اِنْ يَشَاْ يُذْهِبْكُمْ وَيَسْتَخْلِفْ مِنْ بَعْدِكُمْ
مَا يَشَٓاءُ كَمَٓا اَنْشَاَكُمْ مِنْ ذُرِّيَّةِ قَوْمٍ اٰخَرِينَ ﴿١٣٣﴾

133- "Rabbin zengindir, rahmet sahibidir. Dilerse sizi yok eder ve sizi başka bir kavmin zürriyetinden yarattığı gibi, sizden sonra yerinize dilediği bir kavmi yaratır."

Zengin, Allah'ın tecellisine, rahmet sahibi olmak da lütfuna işaret eder. Allah, zenginliğinden söz etmekle onlara celalini, rahmet sahibi oluşundan söz etmekle de lütuflarını bildirmiştir. Böylece Allah, celaliyle tecelli etmek suretiyle onları fena makamına iletirken, lütuflarıyla nimette bulunmak suretiyle de kendilerine hayat verir.

Bir yoruma göre de, Allah'ın zenginliğini duymak, mahviyetlerine, rahmetini duymak ise ayılmalarına vesile olur. Böylece onlar, bu ayeti duymakla beka ve fena, ikram ve yok edilme, yakınlaştırılma ve eritilme, mahvedilme ve huzur bulma gibi durumlar arasında gidip gelmektedir.

اِنَّ مَا تُوعَدُونَ لَاٰتٍ وَمَٓا اَنْتُمْ بِمُعْجِزِينَ ﴿١٣٥﴾

134- "Size vaat edilen mutlaka gelecektir. Siz bunu önleyemezsiniz."

Bu ayet, kısa emelli olmaya işaret etmektedir. Zira kimin emeli kısa olursa, ameli güzel olur. Gelecek olan her şeyin de süresi yakındır.

قُلْ يَا قَوْمِ اعْمَلُوا عَلٰى مَكَانَتِكُمْ اِنّ۪ي عَامِلٌ فَسَوْفَ تَعْلَمُونَ مَنْ
تَكُونُ لَهُ عَاقِبَةُ الدَّارِ اِنَّهُ لَا يُفْلِحُ الظَّالِمُونَ ﴿١٣٥﴾

135- "De ki: 'Ey kavmim! Elinizden geleni yapın. Ben de yapacağım. Yurdun sonunun kimin lehine olduğunu yakında bileceksiniz. Gerçek şu ki, zalimler iflah olmazlar.'"

Bu uyarının son haddidir. Çünkü emir kalıbında gelmiş olsa da ifade tehdit şeklindedir.

وَجَعَلُوا لِلّٰهِ مِمَّا ذَرَاَ مِنَ الْحَرْثِ وَالْاَنْعَامِ نَصِيبًا فَقَالُوا هٰذَا لِلّٰهِ بِزَعْمِهِمْ وَهٰذَا لِشُرَكَٓائِنَا فَمَا كَانَ لِشُرَكَٓائِهِمْ فَلَا يَصِلُ اِلَى اللّٰهِ وَمَا كَانَ لِلّٰهِ فَهُوَ يَصِلُ اِلٰى شُرَكَٓائِهِمْ سَٓاءَ مَا يَحْكُمُونَ ﴿١٣٦﴾

136- "Allah'ın yarattığı ekinlerle hayvanlardan Allah'a pay ayırıp zanlarınca 'Bu Allah'a, bu da ortaklarımıza (putlarımıza)' dediler. Ortakları için ayrılan, Allah'a ulaşmıyor; fakat Allah için ayrılan ortaklarına ulaşıyor. Ne kötü hüküm veriyorlar."

Onlar, işlerinin kuralını nefsin isteği doğrultusunda düzenleyince, uzantıları da asılları gibi olmuştur. Tıpkı şu şiirde söylendiği gibi:

*Hâkimlik çakala bırakılınca*
*Şahitlik de maymunlara kaldı*

وَكَذٰلِكَ زَيَّنَ لِكَثِيرٍ مِنَ الْمُشْرِكِينَ قَتْلَ اَوْلَادِهِمْ شُرَكَٓاؤُهُمْ لِيُرْدُوهُمْ وَلِيَلْبِسُوا عَلَيْهِمْ دِينَهُمْ وَلَوْ شَٓاءَ اللّٰهُ مَا فَعَلُوهُ فَذَرْهُمْ وَمَا يَفْتَرُونَ ﴿١٣٧﴾

137- "Bunun gibi ortakları, müşriklerden çoğuna çocuklarını öldürmeyi hoş gösterdi ki, hem kendilerini mahvetsinler hem de dinlerini karıştırıp bozsunlar. Allah dileseydi, bunu yapamazlardı. Öyle ise onları, uydurduklarıyla baş başa bırak!"

Şeytanları onlara batıl vesvesesi verdiler. Nefisleri de bunu kabul etti. Çünkü benzerler yardımlaşırlar. Mesela, nefis, sahibini sadece yabancı kadına davet etmektedir. Çünkü o, bunda farklı bir şey vehmeden bir iddiacıdır. Her şirkin aslı da iddiadır. Şeytan da sadece batıl ve küfür vesvesesi verir. Bu itibarla onlar, birbirleriyle yardımlaşan avanelerdir.

(وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ مَا فَعَلُوهُ) *"Allah dileseydi, bunu yapamazlardı."* Allah, muradın kendi iradesine bağlı olduğunu ve ezeli takdire dayanmak gerektiğini açıkça belirtmektedir.

وَقَالُوا هٰذِهٖٓ اَنْعَامٌ وَحَرْثٌ حِجْرٌ لَا يَطْعَمُهَآ اِلَّا مَنْ نَشَآءُ بِزَعْمِهِمْ
وَاَنْعَامٌ حُرِّمَتْ ظُهُورُهَا وَاَنْعَامٌ لَا يَذْكُرُونَ اسْمَ اللّٰهِ عَلَيْهَا افْتِرَآءً
عَلَيْهِ سَيَجْزِيهِمْ بِمَا كَانُوا يَفْتَرُونَ ﴿١٣٨﴾ وَقَالُوا مَا فِي بُطُونِ
هٰذِهِ الْاَنْعَامِ خَالِصَةٌ لِذُكُورِنَا وَمُحَرَّمٌ عَلٰٓى اَزْوَاجِنَا وَاِنْ يَكُنْ
مَيْتَةً فَهُمْ فِيهِ شُرَكَآءُ سَيَجْزِيهِمْ وَصْفَهُمْ اِنَّهُ حَكِيمٌ عَلِيمٌ ﴿١٣٩﴾

138, 139- "Onlar, saçma düşüncelerine göre dediler ki: 'Bu hayvanlarla ekinler haramdır. Bunları bizim dilediğimizden başkası yiyemez. Bunlar da binilmesi yasaklanmış hayvanlardır.' Bir takım hayvanlar da vardır ki, O'na iftira ederek üzerlerine Allah'ın adını anmazlar. Yapmakta oldukları iftiraları yüzünden Allah onları cezalandıracaktır. Dediler ki: 'Şu hayvanların karınlarında olanlar, yalnız erkeklerimize aittir. Kadınlarımıza ise haram kılınmıştır. Şayet yavru ölü doğarsa, o zaman kadın erkek hepsi onda ortaktır.' Allah, bu değerlendirmelerinin cezasını verecektir. Şüphesiz ki o hikmet sahibidir, hakkıyla bilendir."

Allah, onların kendi istekleri doğrultusunda uydurdukları bazı şeyler ile alışkanlık haline getirdikleri şekilde prensip edindikleri, sonra da delilsiz olarak Allah'a nispet ettikleri diğer bazı durumlardan haber vermektedir. Onlar bu hususları Hz. Peygamber'den izin almak gibi bir delile de dayandırmadan prensip haline getirmişlerdir. Ayet, bu kimselerin yolunu izleyerek dine bir ilavede bulunan veya Müslümanların şer'inden bir şey eksilten kimsenin, batılda tıpkı onlar gibi olduğuna ve haddi aşmada onların çizgisine girdiğine işaret etmektedir.

قَدْ خَسِرَ الَّذِينَ قَتَلُوٓا اَوْلَادَهُمْ سَفَهًا بِغَيْرِ عِلْمٍ وَحَرَّمُوا مَا رَزَقَهُمُ
اللّٰهُ افْتِرَآءً عَلَى اللّٰهِ قَدْ ضَلُّوا وَمَا كَانُوا مُهْتَدِينَ ﴿١٤٠﴾

140- "Bilgisizlikleri yüzünden beyinsizce çocuklarını öldürenler ve Allah'ın kendilerine verdiği rızkı, Allah'a iftira ederek haram kılanlar, muhakkak ki ziyana uğramışlardır. Onlardan gerçekten sapmışlardır ve doğru yolu bulacak da değillerdir."

Allah'a güvenme yolu yüzlerine kapanmış, bu yüzden fakirlik korkusu, kendilerini çocuklarını öldürmeye sevk etmiştir. Nitekim bu nedenle tahkik ehli şöyle demişlerdir: Kesin imanın belirtilerinden ve gerçeklerinden biri de, tevekkül zeminine dayalı aile fertlerinin çokluğudur.

وَهُوَ الَّذِيٓ اَنْشَاَ جَنَّاتٍ مَعْرُوشَاتٍ وَغَيْرَ مَعْرُوشَاتٍ وَالنَّخْلَ
وَالزَّرْعَ مُخْتَلِفًا اُكُلُهُ وَالزَّيْتُونَ وَالرُّمَّانَ مُتَشَابِهًا وَغَيْرَ مُتَشَابِهٍ كُلُوا
مِنْ ثَمَرِهٖٓ اِذَٓا اَثْمَرَ وَاٰتُوا حَقَّهُ يَوْمَ حَصَادِهٖ وَلَا تُسْرِفُوا اِنَّهُ لَا يُحِبُّ
الْمُسْرِفِينَ ﴿١٤١﴾

141- "Çardaklı ve çardaksız üzüm bahçeleri, ürünleri çeşit çeşit hurmaları, ekinleri bir birine benzer ve benzemez biçimde zeytin ve narları yaratan O'dur. Her biri meyve verdiği zaman meyvesinden yeyin. Devşirip toplandığı gün de hakkını (zekât ve sadakasını) verin, fakat israf etmeyin. Çünkü Allah israf edenleri sevmez."

Yani nasıl ki Allah, zahirde maddi bağ ve bahçeler yaratmışsa, aynı şekilde sırlar âleminde de birtakım manevi bağ ve bahçeler yaratmıştır. Nitekim kalplerin ferahlığı, zahirin bahçelerinden daha mükemmeldir.

Bu çerçevede kalplerin çiçekleri göz kamaştırıcı, maneviyatın güneşleri parlak ve marifetlerin nehirleri dopdoludur. Diğer bir

yoruma göre, nasıl ki meyveler birbirine benzer ise, aynı şekilde haller de birbirine benzemektedir. Bir de nasıl ki, meyveler bir yönden benzer oldukları halde, tatları ve kokuları farklıysa, aynı şekilde haller de, hal olmaları bakımından ortak oldukları halde, tezahürleri farklıdır.

( وَاٰتُوا حَقَّهُ يَوْمَ حَصَادِه۪ ) *"Devşirip toplandığı gün de hakkını (zekât ve sadakasını) verin."*

Devşirme günü, Allah'ın hakkı şükür vecibesini hakkıyla yerine getirmektir. Bir kısmını ayırıp vermek ise, ilmin dilinden yapılan izahıdır. Bu arada nimet vereni, nimetin kendisinde görmek, nimetin varlığına şükretmekten üstündür.

(وَلَا تُسْرِفُوا اِنَّهُ لَا يُحِبُّ الْمُسْرِف۪ينَ ) *"Fakat israf etmeyin. Çünkü Allah israf edenleri sevmez."*

İlmin dilinden israf, haddi aşmaktır. İşârî izaha göre ise israf bir susam tanesi kadar dahi olsa, insanın kendi nefsi arzusu için harcadığı şeydir. İnsanın, Allah yolunda harcadığı ise, binlerin üstüne dahi çıksa israf değildir.

وَمِنَ الْاَنْعَامِ حَمُولَةً وَفَرْشًا كُلُوا مِمَّا رَزَقَكُمُ اللّٰهُ وَلَا تَتَّبِعُوا
خُطُوَاتِ الشَّيْطَانِ اِنَّهُ لَكُمْ عَدُوٌّ مُب۪ينٌ ﴿١٤٢﴾ ثَمَانِيَةَ اَزْوَاجٍ مِنَ
الضَّاْنِ اثْنَيْنِ وَمِنَ الْمَعْزِ اثْنَيْنِ قُلْ آٰلذَّكَرَيْنِ حَرَّمَ اَمِ الْاُنْثَيَيْنِ
اَمَّا اشْتَمَلَتْ عَلَيْهِ اَرْحَامُ الْاُنْثَيَيْنِ نَبِّؤُ۫ن۪ي بِعِلْمٍ اِنْ كُنْتُمْ صَادِق۪ينَ
﴿١٤٣﴾ وَمِنَ الْاِبِلِ اثْنَيْنِ وَمِنَ الْبَقَرِ اثْنَيْنِ قُلْ آٰلذَّكَرَيْنِ حَرَّمَ اَمِ
الْاُنْثَيَيْنِ اَمَّا اشْتَمَلَتْ عَلَيْهِ اَرْحَامُ الْاُنْثَيَيْنِ اَمْ كُنْتُمْ شُهَدَٓاءَ
اِذْ وَصّٰيكُمُ اللّٰهُ بِهٰذَا فَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا
لِيُضِلَّ النَّاسَ بِغَيْرِ عِلْمٍ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظَّالِم۪ينَ ﴿١٤٤﴾

142, 143, 144- "Hayvanlardan yük taşıyanı ve tüyünden döşek yapılanları yaratan O'dur. Allah'ın size verdiği rızıktan yeyin. Şeytan'ın ardına düşmeyin. Şüphesiz o, sizin için apaçık bir düşmandır. Dişi ve erkek olarak sekiz eş yarattı: Koyundan iki, keçiden iki. De ki: O, bunların erkeklerini mi dişilerini mi yoksa bu iki dişinin rahimlerinde bulunan yavruları mı haram etti? Eğer doğru iseniz bana ilimle söyleyin. Deveden de iki sığırdan da iki yarattı. De ki: O, bunların erkeklerini mi dişilerini mi yoksa bu iki dişinin rahimlerinde bulunan yavruları mı haram kıldı? Yoksa Allah'ın size böyle vasiyet ettiğine şahit mi oldunuz? Bilgisizce insanları saptırmak için Allah'a karşı yalan uydurandan kim daha zalimdir? Şüphesiz Allah, o zalimler topluluğunu doğru yola iletmez."

(وَمِنَ الْاَنْعَامِ حَمُولَةً وَفَرْشًا) *"Hayvanlardan yük taşıyanı ve tüyünden döşek yapılanları yaratan O'dur."*

Yani hayvanların, insanın emrine verilmiş olması, faziletçe diğer mahlûklardan daha meziyetli olmanın delilidir. Bu arada nasıl ki Allah, varlıkları insanın emrine vermişse, aynı şekilde, olaylarda tasarrufta bulunma noktasında zamanları da havastan olan insanların emrine vermiştir.

(كُلُوا مِمَّا رَزَقَكُمُ اللهُ وَلَا تَتَّبِعُوا خُطُوَاتِ الشَّيْطَانِ اِنَّهُ لَكُمْ عَدُوٌّ مُبِينٌ
ثَمَانِيَةَ اَزْوَاجٍ مِنَ الضَّأْنِ اثْنَيْنِ وَمِنَ الْمَعْزِ اثْنَيْنِ...اِنَّ اللهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظَّالِمِينَ)

*"Allah'ın size verdiği rızıktan yeyin. Şeytan'ın ardına düşmeyin. Şüphesiz o, sizin için apaçık bir düşmandır. Dişi ve erkek olarak sekiz eş yarattı: Koyundan iki, keçiden iki... Şüphesiz Allah, o zalimler topluluğunu doğru yola iletmez."*

Rızık, yiyecek maddelerine mahsus değildir. Aksine istifade edilebilen her şeyi kapsamaktadır. Öte yandan rızık, zahiri ve manevi olmak üzere iki kısma ayrılır. Birincisi nimetlerin varlığı, diğeri de keremi görmek, dahası kıdemin varlığında sönüp yok olmaktır.

Ayrıca kalbin de bir rızkı vardır ki o da irfan bakımından hakikate ulaşmaktır. Ruhun da bir rızkı vardır ki o da, samimiyetle varlıklardan kurtulmak suretiyle sevmektir. Sırrın da bir rızkı vardır ki o da, kulun mazhar olduğu şuhuddur. Bu, görmeyle birlikte olur.

(وَمِنَ الْاِبِلِ اثْنَيْنِ وَمِنَ الْبَقَرِ اثْنَيْنِ) *"Dişi ve erkek olarak sekiz eş yarattı: Koyundan iki, keçiden iki..."*

Koyunun zikredilmesindeki işaret, kulun sükûneti kalıcı hale getirmesinden ve güzel ahlaka bağlılıktan ibarettir. Çünkü koyunluk vasfı, sahibine teslimiyeti gerektirir. Nitekim koyun, ne bağırışıyla ne de kaçışıyla rahatsızlık verir. Yani, bu sahaya ayak basanın yolu da aynıdır.

Aynı şekilde devede de yularını çekene uyması, çöktürüldüğü zaman karşı koymadan ve tercihte bulunmadan çökmesi, binek olarak kullanılması, susuzluğa karşı sabırlı ve yürüyüşte ahenkli olması gibi bir takım deliller vardır.

قُلْ لَٓا اَجِدُ فِي مَٓا اُو۫حِيَ اِلَيَّ مُحَرَّمًا عَلٰى طَاعِمٍ يَطْعَمُهُٓ اِلَّٓا اَنْ
يَكُونَ مَيْتَةً اَوْ دَمًا مَسْفُوحًا اَوْ لَحْمَ خِنْز۪يرٍ فَاِنَّهُ رِجْسٌ اَوْ فِسْقًا اُهِلَّ
لِغَيْرِ اللّٰهِ بِه۪ۚ فَمَنِ اضْطُرَّ غَيْرَ بَاغٍ وَلَا عَادٍ فَاِنَّ رَبَّكَ غَفُورٌ رَح۪يمٌ ﴿١٤٥﴾

145- "De ki: 'Bana vahiy olunanda leş veya akıtılmış kan yahut domuz eti ki, pisliğin kendisidir, ya da günah işlenerek Allah'tan başkası adına kesilmiş bir hayvandan başka, yiyecek kimseye haram kılınmış bir şey bulamıyorum.' Başkasına zarar vermemek ve sınırı aşmamak üzere, kim bunlardan yemek zorunda kalırsa, bilsin ki, Rabbin bağışlayan ve esirgeyendir."

Allah, hüküm koyanın ve yaratıklardan esirgeyenin kendisi olduğunu açıklamaktadır. O'nun dışındaki varlıklardan gelen her şey, O'nun katında zayi ve batıldır. Allah, zaruret hâsıl olduğunda muhayyerlik halindeki hükmün ortadan kalktığını açıklamaktadır.

وَعَلَى الَّذِينَ هَادُوا حَرَّمْنَا كُلَّ ذِي ظُفُرٍ وَمِنَ الْبَقَرِ وَالْغَنَمِ حَرَّمْنَا عَلَيْهِمْ شُحُومَهُمَٓا اِلَّا مَا حَمَلَتْ ظُهُورُهُمَٓا اَوِ الْحَوَايَٓا اَوْ مَا اخْتَلَطَ بِعَظْمٍ ذٰلِكَ جَزَيْنَاهُمْ بِبَغْيِهِمْ وَاِنَّا لَصَادِقُونَ ﴿١٤٦﴾

146- "Yahudilere bütün tırnaklı hayvanları haram kıldık. Sırtlarında yahut bağırsaklarında taşıdıkları ya da kemiğe karışan yağlar hariç olmak üzere, sığır ve koyunun iç yağlarını da onlara haram kıldık. Bu, zulümleri yüzünden onlara verdiğimiz cezadır. Biz, elbette doğru söyleyeniz."

Allah, kendilerine haram kıldığı şeyi zayi ettiklerini beyan etmektedir. Zira bundan dolayı onlara ceza vermeyince, kendi nefislerinden hareketle uydurdukları şeyler konusunda Allah'ın büyük cezasını görmediler. Bu yüzden hükmünü ihmal ettiler ve onu korumadılar. Böylece büyük sorumluluğu ve acı veren terk edilmişliği hak etmiş oldular.

فَاِنْ كَذَّبُوكَ فَقُلْ رَبُّكُمْ ذُو رَحْمَةٍ وَاسِعَةٍ وَلَا يُرَدُّ بَاْسُهُ عَنِ الْقَوْمِ الْمُجْرِمِينَ ﴿١٤٧﴾

147- "Eğer seni yalanlarlarsa, de ki: 'Rabbiniz geniş bir rahmet sahibidir. Bununla beraber O'nun azabı suçlular topluluğundan uzaklaştırılamaz.'"

Ayet, rahmetin velilere, kovulma ve lanetin de düşmanlara özgü kılındığına işaret etmektedir. Bu arada insan olma ortak özelliğinde buluşmalarına rağmen, ezeli takdir onları ayırmış bulunmaktadır.

سَيَقُولُ الَّذِينَ اَشْرَكُوا لَوْ شَٓاءَ اللّٰهُ مَٓا اَشْرَكْنَا وَلَٓا اٰبَٓاؤُنَا وَلَا حَرَّمْنَا مِنْ شَيْءٍ كَذٰلِكَ كَذَّبَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ حَتّٰى ذَاقُوا بَاْسَنَا قُلْ هَلْ عِنْدَكُمْ مِنْ عِلْمٍ فَتُخْرِجُوهُ لَنَا اِنْ تَتَّبِعُونَ اِلَّا الظَّنَّ وَاِنْ اَنْتُمْ اِلَّا تَخْرُصُونَ ﴿١٤٨﴾

148- "Putperestler diyecekler ki: 'Allah dileseydi, ne biz ortak koşardık ne de atalarımız. Hiçbir şeyi de haram kılmazdık.' Onlardan öncekiler de aynı şekilde peygamberleri yalanladılar ve sonunda azabımızı tattılar. De ki: 'Yanınızda bize açıklayacağınız bir bilgi var mı? Siz zandan başka bir şeye uymuyorsunuz ve siz sadece yalan söylüyorsunuz.'"

Söyledikleri yalan çıkmıştır. Çünkü içten gelmemiştir. Böylece cehaletlerinden dolayı kötülenmiş oldular.

قُلْ فَلِلّٰهِ الْحُجَّةُ الْبَالِغَةُ فَلَوْ شَٓاءَ لَهَدٰيكُمْ اَجْمَع۪ينَ ﴿١٤٩﴾

149- "De ki: 'Kesin delil ancak Allah'ındır. Allah dileseydi, elbette hepinizi doğru yola iletirdi.'"

Allah, iradesinin hiçbir muratta yetersiz kalmayacağını ve ona hiçbir itiraz yapılamayacağını açıklamaktadır.

قُلْ هَلُمَّ شُهَدَٓاءَكُمُ الَّذ۪ينَ يَشْهَدُونَ اَنَّ اللّٰهَ حَرَّمَ هٰذَاۚ فَاِنْ شَهِدُوا
فَلَا تَشْهَدْ مَعَهُمْۚ وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَٓاءَ الَّذ۪ينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا وَالَّذ۪ينَ لَا
يُؤْمِنُونَ بِالْاٰخِرَةِ وَهُمْ بِرَبِّهِمْ يَعْدِلُونَ ﴿١٥٠﴾

150- "De ki: 'Allah, şunu yasak etti, diye şehadet edecek şahitlerinizi getirin.' Eğer onlar şahitlik ederlerse, sen onlarla beraber şahitlik etme! Ayetlerimizi yalanlayanların ve ahiret gününe inanmayanların arzularına uyma. Onlar, Rablerine eş tutuyorlar."

Allah, açıklayacağı bir delili ve dile getireceği bir izahı olmayan kimsenin yaptığı işin, kendisinden kabul edilmediğine işarette bulunmaktadır.

قُلْ تَعَالَوْا اَتْلُ مَا حَرَّمَ رَبُّكُمْ عَلَيْكُمْ اَلَّا تُشْرِكُوا بِه۪ شَيْـًٔا وَبِالْوَالِدَيْنِ
اِحْسَانًاۚ وَلَا تَقْتُلُٓوا اَوْلَادَكُمْ مِنْ اِمْلَاقٍۜ نَحْنُ نَرْزُقُكُمْ وَاِيَّاهُمْۚ وَلَا
تَقْرَبُوا الْفَوَاحِشَ مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَمَا بَطَنَۚ وَلَا تَقْتُلُوا النَّفْسَ الَّت۪ي

حَرَّمَ اللّٰهُ اِلَّا بِالْحَقِّ ذٰلِكُمْ وَصّٰيكُمْ بِهٖ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ﴿١٥١﴾ وَلَا
تَقْرَبُوا مَالَ الْيَت۪يمِ اِلَّا بِالَّت۪ي هِيَ اَحْسَنُ حَتّٰى يَبْلُغَ اَشُدَّهُ وَاَوْفُوا
الْكَيْلَ وَالْم۪يزَانَ بِالْقِسْطِ لَا نُكَلِّفُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا وَاِذَا قُلْتُمْ
فَاعْدِلُوا وَلَوْ كَانَ ذَا قُرْبٰى وَبِعَهْدِ اللّٰهِ اَوْفُوا ذٰلِكُمْ وَصّٰيكُمْ بِهٖ
لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُونَ ﴿١٥٢﴾ وَاَنَّ هٰذَا صِرَاط۪ي مُسْتَق۪يمًا فَاتَّبِعُوهُ وَلَا تَتَّبِعُوا
السُّبُلَ فَتَفَرَّقَ بِكُمْ عَنْ سَب۪يلِه۪ ذٰلِكُمْ وَصّٰيكُمْ بِه۪ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ ﴿١٥٣﴾

151, 152, 153- "De ki: 'Gelin, size Rabbinizin neleri haram kıldığını okuyayım: O'na hiçbir şeyi ortak koşmayın, ana-babaya iyilik edin, fakirlik korkusuyla çocuklarınızı öldürmeyin, sizin de onların da rızkını biz veririz, kötülüklerin açığına da gizlisine de yaklaşmayın ve Allah'ın yasakladığı cana haksız yere kıymayın! İşte bunlar, Allah'ın size emrettikleridir. Umulur ki düşünüp anlarsınız. Rüşt çağına erişinceye kadar, yetimin malına sadece en iyi tutumla yaklaşın. Ölçü ve tartıyı adaletle yapın. Biz, herkese ancak gücünün yettiği kadarını yükleriz. Söz söylediğiniz zaman, yakınlarınız dahi olsa, adaletli olun, Allah'a verdiğiniz sözü tutun. İşte Allah size, iyice düşünesiniz diye bunları emretti. Şüphesiz bu, benim dosdoğru yolumdur. Buna uyun, başka yollara uymayın! Zira o yollar, sizi Allah'ın yolundan ayırır. İşte sakınmanız için Allah, size bunları emretti.'"

Bunlar, bu ayetlerin kapsadığı on şeydir ki, birincisi Allah'a ortak koşmaktır. Çünkü şirk haram kılınan hususların başında yer almaktadır. Şirkle birlikte hiçbir ibadet kabul olunmaz. Şirk, açık ve gizli olmak üzere iki kısma ayrılır. Açık şirk putlara tapmaktır. Gizli şirk de, yüceltilmeyi hak ettikleri düşüncesiyle insanları dikkate almaktır.

Bu hasletlerden ikincisi, ebeveyne isyanı terk etmek ve vacip olan önemli haklarını korumak suretiyle onlara saygı göstermektir.

Sonra fakirlik korkusuyla çocukları öldürmek ve haksız yere kanlarını akıtmaktır.

Sonra gizli ve açık ahlak dışı günahlar işlemektir. Bu kısma günahların bütün kısımları girmektedir.

Sonra haksız yere cana kıymak. Çünkü bu hata, yaratıklara karşı şefkatin yokluğundan ileri gelir.

Sonra yetim malından sakınmak ve ona saygılı bir gözle bakmak.

Sonra muamelelerde insaflı olmak ve bütün sorumluluklardan korunmak.

Sonra sözde doğru ve davranışta adil olmak.

Sonra delilin laihalarının işareti istikametinde yolu izlemek.

Her kim, bu emirleri güzelce kabul ederse, dünyada ve ahirette mutlu olur ve büyük mertebeler kazanır.

ثُمَّ اٰتَيْنَا مُوسَى الْكِتَابَ تَمَامًا عَلَى الَّذ۪ٓي اَحْسَنَ وَتَفْص۪يلًا لِكُلِّ
شَيْءٍ وَهُدًى وَرَحْمَةً لَعَلَّهُمْ بِلِقَٓاءِ رَبِّهِمْ يُؤْمِنُونَ ﴿١٥٤﴾

154- "Sonra iyilik edenlere nimetimizi tamamlamak, her şeyi açıklamak, hidayete erdirmek ve rahmet etmek maksadıyla Musa'ya da Kitab'ı verdik. Umulur ki, Rablerinin huzuruna varacaklarına iman ederler."

Allah, kendilerinden önceki toplulukların zaafta ve acizlikte tıpkı kendileri gibi olduğunu, sonra sabredip kazandıklarını ve iyi niyet taşıyıp kurtulduklarını bildirmek suretiyle onlara yükümlülük altına girmenin meşakkatini hafifletmektedir.

وَهٰذَا كِتَابٌ اَنْزَلْنَاهُ مُبَارَكٌ فَاتَّبِعُوهُ وَاتَّقُوا لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُونَ ﴿١٥٥﴾

155- "İşte bu Kur'an, bizim indirdiğimiz mübarek bir kitaptır. Buna uyun ve Allah'tan korkun ki, size merhamet edilsin."

Kitabın indirilmesi, gerekenin yapılması demektir. Bu arada kul, ilahi hitabı duyamadığı zaman kitabı okumakla teselli bulur. Kim, Kur'an'ı okumada tam bir hayat ve huzur bulmazsa, bunun sebebi onu içten değil, şeklen okumasıdır.

اَنْ تَقُولُٓوا اِنَّمَٓا اُنْزِلَ الْكِتَابُ عَلٰى طَٓائِفَتَيْنِ مِنْ قَبْلِنَا وَاِنْ كُنَّا
عَنْ دِرَاسَتِهِمْ لَغَافِلِينَ ﴿١٥٦﴾ اَوْ تَقُولُوا لَوْ اَنَّٓا اُنْزِلَ عَلَيْنَا الْكِتَابُ
لَكُنَّٓا اَهْدٰى مِنْهُمْ فَقَدْ جَٓاءَكُمْ بَيِّنَةٌ مِنْ رَبِّكُمْ وَهُدًى وَرَحْمَةٌ
فَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنْ كَذَّبَ بِاٰيَاتِ اللّٰهِ وَصَدَفَ عَنْهَا سَنَجْزِي الَّذِينَ
يَصْدِفُونَ عَنْ اٰيَاتِنَا سُٓوءَ الْعَذَابِ بِمَا كَانُوا يَصْدِفُونَ ﴿١٥٧﴾

156, 157- "'Kitap, yalnız bizden önceki iki topluluğa indirildi. Biz ise, onların okumasından gerçekten habersizdik' demeyesiniz diye, yahut da: 'Bize de kitap indirilseydi, biz onlardan daha çok doğru yolda olurduk' demeyesiniz diye Kur'an'ı indirdik. İşte size de Rabbinizden açık bir delil, hidayet ve rahmet geldi. Kim, Allah'ın ayetlerini yalanlayıp onlardan yüz çevirenden daha zalimdir! Ayetlerimizden yüz çevirenleri, yüz çevirmelerinden ötürü azabın en kötüsüyle cezalandıracağız."

Allah, her türlü bahaneyi ortadan kaldırarak her türlü vuslatı ortaya koymuştur. Böylece insan için ne bir gerekçe ne de mazerete sığınmaya yer bırakmıştır.

(فَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنْ كَذَّبَ بِاٰيَاتِ اللّٰهِ وَصَدَفَ عَنْهَا سَنَجْزِي الَّذِينَ يَصْدِفُونَ عَنْ اٰيَاتِنَا سُٓوءَ الْعَذَابِ بِمَا كَانُوا يَصْدِفُونَ) *"Kim, Allah'ın ayetlerini yalanlayıp onlardan yüz çevirenden daha zalimdir! Ayetlerimizden yüz çevirenleri, yüz çevirmelerinden ötürü azabın en kötüsüyle cezalandıracağız."*

Her suçun cezası daha sonra verilirken, yalanlamanın cezası peşin verilir. Bu ceza, o kimselerin kalplerinin bir noktada karar kılmaması için, şüpheye tutsak kalmalarına yol açan şeydir.

هَلْ يَنْظُرُونَ اِلَّٓا اَنْ تَأْتِيَهُمُ الْمَلٰٓئِكَةُ اَوْ يَأْتِيَ رَبُّكَ اَوْ يَأْتِيَ بَعْضُ
اٰيَاتِ رَبِّكَ يَوْمَ يَأْتِي بَعْضُ اٰيَاتِ رَبِّكَ لَا يَنْفَعُ نَفْسًا اِيمَانُهَا لَمْ
تَكُنْ اٰمَنَتْ مِنْ قَبْلُ اَوْ كَسَبَتْ فِي اِيمَانِهَا خَيْرًا قُلِ انْتَظِرُوٓا اِنَّا
مُنْتَظِرُونَ ﴿١٥٨﴾

158- "Onlar, ancak kendilerine meleklerin gelmesini ve Rabbinin gelmesini bekliyorlar. Rabbinin bazı alametleri geldiği gün, önceden inanmamış ya da imanında bir hayır kazanmamış kimseye artık imanı bir fayda sağlamaz. De ki: 'Bekleyin, şüphesiz biz de beklemekteyiz.'"

Allah, onların bahanelerini ortadan kaldırdıktan sonra, kendilerine ait olmayan şeyler önerdiklerini ve uzun süre selamet içinde kalmaya aldandıklarını anlatmış, sonra bir kulun azabına hükmettiği zaman, takdirine ve tedbirine karşı çıkan kimsenin olamayacağını açıklamıştır.

اِنَّ الَّذِينَ فَرَّقُوا دِينَهُمْ وَكَانُوا شِيَعًا لَسْتَ مِنْهُمْ فِي شَيْءٍ اِنَّمَا
اَمْرُهُمْ اِلَى اللّٰهِ ثُمَّ يُنَبِّئُهُمْ بِمَا كَانُوا يَفْعَلُونَ ﴿١٥٩﴾

159- "Dinlerini parça parça edip gruplara ayrılanlar var ya, senin onlarla hiçbir ilişkin yoktur. Onların işi, ancak Allah'a kalmıştır. Sonra Allah, onlara yaptıklarını bildirecektir."

Onlar, bedenleriyle birlik olurken kalpleriyle ayrılığa düşmüşlerdir. Böylece görünürde bir araya gelmiş, ancak hakikatte içten içe ayrılmışlardır.

(لَسْتَ مِنْهُمْ فِي شَيْءٍ) *"Senin onlarla hiçbir ilişkin yoktur."*

Seni onlarla bir araya getirmeyeceğiz. Yani, senin bulunduğun taraf gerçeklerin tarafı, onların tarafı ise bâtılın tarafı olup zıtlar birleşmez.

مَنْ جَٓاءَ بِالْحَسَنَةِ فَلَهُ عَشْرُ اَمْثَالِهَا وَمَنْ جَٓاءَ بِالسَّيِّئَةِ فَلَا يُجْزٰٓى
اِلَّا مِثْلَهَا وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ﴿١٦٠﴾

160- "Kim, iyilikle gelirse, ona getirdiğinin on katı vardır. Kim de kötülükle gelirse o, sadece getirdiğinin dengiyle cezalandırılır. Onlar, haksızlığa uğratılmazlar."

Bu iyilikler zahir içindir. Kalplerin iyiliklerine gelince, bir iyiliğin karşılığı yüz misliyle başlayıp kat kat artar.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- İyilik, Allah'ın lütfundan doğar ve onunla gerçekleşir. Bu itibarla O, icra eder ve kabul edip över. Sonra da mükâfatlandırır ve iyilik bahşeder.

- Allah'ın muvaffakiyet vermek demek olan iyiliği, insanın uyumdan ibaret olan iyiliğini sağlar. Taati yaratmaktan ibaret olan iyiliği ise, insanın kulluktan ibaret olan iyilik vasfına vesile olur. O halde insanın çektiği meşakkat, Allah'ın fiili, insana verdiği mükâfat ise O'nun lütfudur.

- Nefislerin iyiliği, hizmeti hakkıyla yerine getirmektir. Kalplerin iyiliği hürmeti korumak, ruhların iyiliği de mahcubiyetin adabına riayet etmektir.

- Zahirde iyilik yapmak, Allah'ın sırlarla ilgili iyiliğine vesile olur. Bu çerçevede insana düşen çaba harcamasıdır. Kazanacağı ise tecellidir.

- Zahidlerin iyiliği dünyayı terk etmek, müridlerin iyiliği nefsanî arzuyu reddetmek, ariflerin iyiliği emeli kesmek, tevhid ehlinin iyiliği dünyadan ve ahiretten arınarak Mevlâ'nın varlığıyla yetinmektir.

- İşin başındakilerin iyiliği arayışta samimiyettir, nihai noktadakilerin iyiliği de edebi korumaktır. Bu itibarla arayışın şartı, insanın, gücü dahilindeki bütün çabayı harcamasıdır. Edebin şartı da, bir şeye gücün yetmeye başlar başlamaz onu kesmen ve terk etmendir.

- Zahidlerin, abidlerin, vird sahiplerinin ve çaba erbabının sınırlı bir mükâfatı vardır. Vecd ehlinin ise bitmez tükenmez bir buluşması vardır.

(وَمَنْ جَآءَ بِالسَّيِّئَةِ فَلَا يُجْزٰى اِلَّا مِثْلَهَا وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ) *"Kim de kötülükle gelirse o, sadece getirdiğinin dengiyle cezalandırılır. Onlar, haksızlığa uğratılmazlar."*

Yani bu kimse, ektiğini biçmekte ve kendine uygun gördüğü yerde tutulmaktadır.

قُلْ اِنَّن۪ي هَدٰين۪ي رَبّ۪ي اِلٰى صِرَاطٍ مُسْتَق۪يمٍ د۪ينًا قِيَمًا مِلَّةَ اِبْرٰه۪يمَ حَن۪يفًا وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِك۪ينَ ﴿١٦١﴾

161- "De ki: 'Şüphesiz Rabbim beni doğru yola, dosdoğru dine, Allah'ı birleyen İbrahim'in dinine iletti. O, ortak koşanlardan değildi."

Allah, onu doğru yola irşat etti. İrşad ise, ancak Allah'tan başkasına ileten yolların kapanmasıyla olur. Kim ki bir mahlûka giden bir yol bulursa, o vehimden vehme geçer. Çünkü başkalarının en ufak bir yaratma gücü yoktur. Kim de bir mahlûka giden bir yol izler ve başkalarına kesin ümit bağlar veya onlara yaslanırsa, o yolu şaşırmış ve saptırılmışlığın acısını yutmuş olur.

Bu arada (صِرَاطٍ مُسْتَق۪يمٍ) *"doğru yol"* Allah dışında hiç kimsenin en ufak bir şeyi var edemeyeceğine inanmaktır.

(د۪ينًا قِيَمًا) *"Dosdoğru din"* ise içinde temsil ve tatilin olmadığı, kulluğa işaret eden farkın yok sayılmadığı ve Rablığın tecellisi olan cemin reddedilmediği şeydir.

قُلْ اِنَّ صَلَات۪ي وَنُسُك۪ي وَمَحْيَايَ وَمَمَات۪ي لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَم۪ينَ ﴿١٦٢﴾ لَا شَر۪يكَ لَهُ وَبِذٰلِكَ اُمِرْتُ وَاَنَا۬ اَوَّلُ الْمُسْلِم۪ينَ ﴿١٦٣﴾

162, 163- "De ki: 'Şüphesiz benim namazım, kurbanım, hayatım ve ölümüm hepsi, âlemlerin Rabbi Allah içindir. O'nun ortağı yoktur. Bana sadece bu emrolundu ve ben, Müslümanların ilkiyim.'"

Kendisine tevhidin hakikatleri tecelli eden kimse, kendisini yönetenin, hakkında icraat yapanın, kendisini tutanın, bir vasıftan diğer bir vasfa taşıyanın, başından türlü işler geçirenin, hiçbir ortağı ve benzeri olmayan bir ve Yüce Allah olduğunu görür.

Diğer bir yoruma göre de, kim Allah ile var olduğunu bilirse, o aynı zamanda Allah içindir. Bu kimse, Allah için olduğunu bilince de kendisinde Allah'tan başkasının nasibi kalmamış olur. Bu haliyle o, Allah'ın hükmüne teslim olup takdirine itiraz etmemekte, tercihine karşı çıkmamakta ve emrini kabul etmekten yüz çevirmemektedir.

قُلْ اَغَيْرَ اللّٰهِ اَبْغِي رَبًّا وَهُوَ رَبُّ كُلِّ شَيْءٍ وَلَا تَكْسِبُ كُلُّ نَفْسٍ اِلَّا عَلَيْهَا وَلَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِزْرَ اُخْرٰى ثُمَّ اِلٰى رَبِّكُمْ مَرْجِعُكُمْ فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ فِيهِ تَخْتَلِفُونَ ﴿١٦٤﴾

164- "De ki: 'Allah, her şeyin Rabbi iken ben O'ndan başka Rab mı arayacağım? Herkesin kazanacağı, yalnız kendisine aittir. Hiçbir suçlu başkasının suçunu yüklenmez. Sonunda dönüşünüz Rabbinizedir. Ve O, uyuşmazlığa düştüğünüz gerçeği size haber verecektir.'"

Nasıl olur da insan, Allah'ın hükmünden kurtulamadığı halde başkasını O'na tercih eder? Nasıl olur da O'ndan başkasının veya O'nun zıddının yahut da ortağının varlığını kabul eder? Veya O'nun dışında bir mabut veya bir maksut olduğunu söyler? Oysa insan, sağına ve soluna baktığında O'nun mülkünden başka bir şey görememektedir. Daha doğrusu insan, sağına baktığında O'nun bereketini, soluna baktığı zaman da O'nun verdiği bolluğu görür.

وَهُوَ الَّذٖي جَعَلَكُمْ خَلَٓائِفَ الْاَرْضِ وَرَفَعَ بَعْضَكُمْ فَوْقَ
بَعْضٍ دَرَجَاتٍ لِيَبْلُوَكُمْ فٖي مَٓا اٰتٰيكُمْ اِنَّ رَبَّكَ سَرٖيعُ الْعِقَابِ
وَاِنَّهُ لَغَفُورٌ رَحٖيمٌ ﴿١٦٥﴾

165- "Sizi yeryüzünün halifeleri kılan, size verdiği nimetler hususunda sizi denemek için kiminizi kiminizden derecelerle üstün kılan O'dur. Şüphesiz Rabbin, cezası çabuk olandır ve gerçekten O, bağışlayan, merhamet edendir."

Allah tevbe etmeyi size bırakmış, çağınızın hükmünü de size yüklemiştir. Bu itibarla bugün kast edilen başkası değil, sizsiniz. Sonra Allah, sizi sınıflara ayırmış ve farklı yaratmıştır. Şöyle ki, kimisine başkaları hizmetkâr kılınmış, refah ve rahatlık verilmiştir. Pek çok kimse de onun için yorulmaktadır. Kimisine de zorluk ve meşakkat verilmiş olup başı döndürülmektedir. Allah, size verdiği nimetlerle sizi imtihan etmek için başınıza bela vermektedir. Allah'ın hesabı sizi yakalayacaktır. Hakkınızdaki hükmü de ezelde gerçekleşmiştir.

سورة الْاَعْرَافِ

# A'RAF SÛRESİ

(A'râf Sûresi 206 ayettir. Mekke'de inmiştir. 163-171 arası ayetlerin Medîne'de indiği söylenmiştir. 46 ve 48. ayetlerde geçen "A'râf" sözcüğü; cennetle cehennem arasında bir sur olup, bir görüşe göre iyi ve kötü amelleri eşit çıktığı için, orada bekleşen bir topluluğu ifade eder).

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**"Rahman ve Rahim olan Allah'ın adıyla."**

Besmeledeki "b" harfi kesrelidir. Ameli ise cer yapmaktır. Çünkü o, isimleri mecrur eden harflerdendir. Aynı zamanda o, yazılışta ufak boyludur. Diğer harflerden ayrıldığı noktası da tek olup azlığın nihayetidir. Sonra bu noktanın yeri harfin alt kısmıdır. Bu haliyle nokta, tevazu ve her yönden boyun eğmeye işaret etmektedir.

Besmele'deki "s" harfi de harekesiz bir harftir. Hal böyle olunca, "b" harfinin işareti insanın, bütün imkânını boyun eğme, tezellül, çaba ve tevessülde harcadıktan sonra takdiri beklemesine yöneliktir. Eğer Allah, keremiyle kabul etmek lütfunda bulunursa, zaten umulan budur. Şayet bir şekilde reddederse, o zaman da hüküm O'nundur. O zaman insana düşen, buna rıza göstermek suretiyle Allah'ın takdirine muvafakat etmektir. Zira besmeledeki "m" harfi, dilemesi halinde Allah'ın minnetine işaret etmektedir. Sonra da, minnet etmemesi halinde insanın, O'nun takdirine rıza göstermek suretiyle muvafakat etmesine işaret eder.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- "b" harfi, Allah'ın, diğer yaratıklardan farklı olarak kendilerine verdiği özellik sayesinde hakikatler ehlinin kalplerinin, tecellilerin incelikleriyle sırların beyanına vakıf olmasına işaret etmektedir. Bu özellikleriyle onlar, başkalarına gizli kalan hususları açıkça bilmektedirler. Bu nedenle gayb onlara açıktır, rivayet de onlar için görülmüş gibidir. Diğer insanlara göre bilgi olan husus onlar için varlıktır.

"s" harfi de bastın yaklaşması esnasında kalplerinin sevincine işaret eder. Çünkü bu halde (...) çeşitli riayet şekilleri ve münacatın türlü incelikleri bulunmaktadır. Böylece onlar, nimetleri bol cennetlerde, rahat bir hayat, ikram, devamlı ve kalıcı bir huzur içinde olurlar.

"m" harfi de Allah'ın başından itibaren onlara olan muhabbetine işarettir. Çünkü insanların Allah'a olması gereken sevgilerini sağlayan bu muhabbettir. Zira bütün sevgiler Allah'ın sevgisinden doğmuş olduğu için, kendilerini sevmesi sebebiyle onlar da Allah'ı sevmişlerdir. Allah'ın, onları kast etmesi sebebiyle onlar da Allah'ı kast etmiş ve Allah'ın onları irade etmesi sebebiyle onlar da Allah'ı irade etmişlerdir.

- Tevhid ehlinin ruh huzuru besmelenin sahasında konaklamaya bağlıdır. Her kim, o sahaya yerleşirse kutsiyet bahçelerinden beslenmiş ve dostluk esintisinin huzuruna ermiş olur.

- Besmele, kalpleriyle fakir olanların vakfe yaptığı yerdir. Zenginlerin vakfe yaptığı yer Arafat, fakirlerin vakfe yaptığı yer ise keşifler ve müşahedelerdir.

- Besmele lafzı, dostların baharı olup çiçekleri vuslatın incelikleri, tomurcukları ise Allah'a yakınlıktaki artışlardır.

الٓمٓصٓ ١

1- "Elif. Lâm. Mîm. Sâd."

Bazı selef âlimlerine göre; bu harfler Kur'an'daki müteşabih ayetlerdendir. Allah, bu harflere dair ilmi, yaratıklarına vermeyip kendine özgü kılmıştır. Diğer bazılarına göre ise, bu harflerin bilinen anlamları ve anlatılabilen işaretleri vardır. Mesela; "Elif" mutlu ruhların ülfetine işaret etmektedir. Bu ülfet, bazı mutlu ruhlarla şekle bürünmüştür. Bu itibarla söz konusu ülfette bir araya gelen ruhlar hakikatte bütünleşmiş gibidir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kalp, Allah'ın sözüne o kadar ülfet etti ki, ruhunu feda etmekten bile sakınmadı.

- "Elif" Allah'ı kasteden herkesin Allah'ın dışındaki her şeyden arınması ve böylece hiçbir şeyle irtibatının kalmamasıdır. Bir kimse, her şeyden müstağni olunca da her şey, ihtiyaç bağıyla ona bağlanmış olur.

- "Lâm" harfinin şekli tıpkı Elif'in şekli gibidir. Lakin harflere bitişince tıpkı diğer harfler gibi, harekelerin akınına uğradı. Böylece bazen fethalı, bazen kesreli ve bazen de zammeli olmuştur. Oysa başka harflere bitişmeyen "Elif", arınmışlık vasfını koruyarak asli harekesizliği üzerine kalmaya devam eder.

"Sâd" harfine gelince, o iştiyak içinde bulunanların hallerinin samimi niyete, ariflerin hallerinin de samimi vecde dayandığına işaret etmektedir. Ayrıca bu harfte, müritlerin ve arayış sahiplerinin kalplerindeki samimiyete de işaret bulunmaktadır.

- "Sâd" harfi, göğüslerdeki sevgiyi açığa vurmaktadır ki bu, dostların imtihanıdır.

- "Sâd" harfi, insanı sevgide sadık olmakla yükümlü kılar. Sevgide sadakatin emaresi ise, nihayete ve kemale ermesidir. O kadar ki, iyilikle artmaz, alıkonulmakla da eksilmez.

كِتَابٌ اُنْزِلَ اِلَيْكَ فَلَا يَكُنْ فِي صَدْرِكَ حَرَجٌ مِنْهُ لِتُنْذِرَ بِه۪
وَذِكْرٰى لِلْمُؤْمِن۪ينَ ﴿٢﴾

2- "Bu, kendisiyle insanları uyarman, inananlara öğüt vermen için sana indirilen bir kitaptır. Artık göğsünde bir sıkıntı olmasın."

Dostların mektubu, vaktin hediyesidir ve uzaklık acısı çekmeye şifadır. Aynı zamanda o, sıkıntı hastalığını giderir ve şüphenin yol açtığı mutsuzluğu yok eder. Bu arada Allah: Artık kalbinde bir sıkıntı olmasın dememiş de: (فَلَا يَكُنْ فِي صَدْرِكَ حَرَجٌ) "*Artık göğsünde bir sıkıntı olmasın*" buyurmuştur. Çünkü Hz. Peygamber'in kalbi, tecelli makamındadır. İşte bu nedenle Allah: (وَلَقَدْ نَعْلَمُ اَنَّكَ يَضِيقُ صَدْرُكَ بِمَا يَقُولُونَ) "*Şüphesiz biz, söyledikleri sebebiyle göğsünün daraldığını bilmekteyiz*" buyurmuştur. (Hicr, 15/97) Aynı şekilde Hz. Musa da: (قَالَ رَبِّ اشْرَحْ لِي صَدْرِي) "*Rabbim, göğsüme ferahlık ver, demiştir.*" (Tâhâ, 20/25) Ayrıca Allah, Hz. Peygamber'e de:(اَلَمْ نَشْرَحْ لَكَ صَدْرَكَ) "*Biz senin göğsüne ferahlık vermedik mi!*" (İnşirah, 94/1) buyurmuştur. Zira kalp, hem tecelli makamındadır hem de daima Allah'a yakınlığın huzuru içindedir. Hz. Peygamber şöyle buyurmaktadır:

*"Gözüm uyur, lakin kalbim uyumaz."*

*"Allah'ım! Ben, senden zâtına bakma lezzetini istiyorum."*

Lezzet sahibinin ise sıkıntısı olmaz.

اِتَّبِعُوا مَٓا اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ مِنْ رَبِّكُمْ وَلَا تَتَّبِعُوا مِنْ دُونِه۪ٓ اَوْلِيَٓاءَۜ قَليلًا مَا تَذَكَّرُونَ ﴿٣﴾

3- "Rabbinizden size indirilene uyun. O'nu bırakıp da başka dostların peşinden gitmeyin. Ne kadar da az öğüt alıyorsunuz!"

Takdirin yükümlülüklerine teslim olunuz! Durdurulduğunuz yerde durunuz. Bildiğinizden emin olunuz. Kendinizi mazhar kılındığınız keşiflere adapte ediniz. Allah'tan başkasını görmeyiniz, hiçbir bahaneye yaslanmayınız ve O'ndan başka bir vesilenizin olduğunu sanmayınız.

وَكَمْ مِنْ قَرْيَةٍ اَهْلَكْنَاهَا فَجَٓاءَهَا بَاْسُنَا بَيَاتًا اَوْ هُمْ قَٓائِلُونَ ﴿٤﴾ فَمَا
كَانَ دَعْوٰيهُمْ اِذْ جَٓاءَهُمْ بَاْسُنَٓا اِلَّٓا اَنْ قَالُوٓا اِنَّا كُنَّا ظَالِم۪ينَ ﴿٥﴾

4, 5- "Nice memleketler var ki biz onları helak ettik. Azabımız onlara geceleyin yahut gündüz istirahat ederlerken geldi. Azabımız onlara geldiğinde çağırışları: 'Biz gerçekten zalim kişilermişiz' demelerinden başka bir şey olmadı."

Yani nice memleketler vardır ki, gaflete meylettiler ve mühletin uzunluğuna aldandılar. Hayatın bolluğu içinde akşamlarken, sabahladıklarında ansızın belalara ve kadere yakalandıklarını gördüler. Bu durumda ne bir bela üzerlerinden kaldırıldı, ne bir duaları duyuldu, ne bir kaçış kendilerine fayda verdi ne de bir feryat onları kurtardı. Onlar, panik içinde yakarmaya: 'Eyvah!' diye bağırmaya, musibetin üzerlerinden kaldırılmasına dua etmeye ve azabın kendilerine dokunmasından ağlamaya devam ettiler. Ne bir cisim ne bir eser, ne de onların hiç birinden bir haber varmış gibi yok olup gittiler. İşte bu, Allah'ın, gelip geçen kâfirlerle ilgili prensibi ve asiler hakkında geçerli olan âdetidir.

فَلَنَسْـَٔلَنَّ الَّذ۪ينَ اُرْسِلَ اِلَيْهِمْ وَلَنَسْـَٔلَنَّ الْمُرْسَل۪ينَ ﴿٦﴾

6- "Elbette kendilerine peygamber gönderilen kimseleri de gönderilen peygamberleri de mutlaka sorguya çekeceğiz."

Kendilerine peygamber gönderilen kimselerin sorguya çekilmesi, azarlama ve cezalandırma sorgusudur.

Peygamberlerin sorguya çekilmesi ise, onurlandırma ve yakınlaştırma sorgusudur.

Yani, elbette biz, kendilerine peygamber gönderilenlere kabulü soracağız, onlar da mahcubiyet örtüsüne bürünmeye çalışacaklardır.

Peygamberlere de tebliği soracağız ve onlar, heybet içinde açıklama yaparak konuşacaklardır. Bu itibarla onların tamamı, kulluk ve saygı gösterme özelliğine, Allah ise yücelik ve takdir sıfatına sahiptir.

فَلَنَقُصَّنَّ عَلَيْهِمْ بِعِلْمٍ وَمَا كُنَّا غَآئِبِينَ ﴿٧﴾

7- "Ve onlara, olup bitenleri tam bir bilgi ile mutlaka anlatacağız. Biz, onlardan uzak değiliz."

Kıyamet günü biz, bugün içinde bulundukları durumu şüphesiz onlara anlatacağız, geçmişte yaptıklarına kendilerini muttali kılacağız ve onları küçüklük ve utanç içinde tutacağız. Onlar, ne küçük ne de büyük hiçbir şeyin ilmimizden kaybolmadığını bileceklerdir.

Diğer bir yoruma göre; Allah prensibini, kullarını bazen ilmiyle, bazen de azabıyla korkutmak şeklinde koymuştur. Nitekim bu nedenle bir yerde, o gün gerçekleşecek olan azabı kast ederek: (وَاتَّقُوا يَوْمًا) *"Öyle bir günden sakının ki..."* (Bakara, 2/48) buyururken, diğer bir yerde daha korkutucu olan şu ifadeyi söylemiştir: (وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهُ) *"Allah, sizi kendinden sakındırıyor."* (Al-i İmrân, 3/28) Ayrıca Allah: (اَلَمْ يَعْلَمْ بِاَنَّ اللّٰهَ يَرٰى) *"O, Allah'ın görmekte olduğunu bilmedi mi!"* (Alak, 96/14) buyurmuştur.

وَالْوَزْنُ يَوْمَئِذٍ الْحَقُّ فَمَنْ ثَقُلَتْ مَوَازِينُهُ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ﴿٨﴾ وَمَنْ خَفَّتْ مَوَازِينُهُ فَاُولٰٓئِكَ الَّذِينَ خَسِرُوٓا اَنْفُسَهُمْ بِمَا كَانُوا بِاٰيَاتِنَا يَظْلِمُونَ ﴿٩﴾

8, 9- "O gün tartı haktır. Kimin sevap tartıları ağır gelirse, işte onlar kurtuluşa erenlerdir. Kimin de tartıları hafif gelirse, işte onlar ayetlerimize karşı haksızlık ettiklerinden dolayı, kendilerini ziyana sokanlardır."

Allah, onların amellerini ihlas tartısıyla tartar. Böylece amelleri riya ile birlikte olanların Allah amellerini kabul etmez. Hallerinde,

kendini beğenmişlik şaibesi bulunanların da Allah hallerini yükseltmez.

وَلَقَدْ مَكَّنَّاكُمْ فِي الْاَرْضِ وَجَعَلْنَا لَكُمْ فِيهَا مَعَايِشَ قَلِيلًا مَا تَشْكُرُونَ ﴿١٠﴾

10- "Doğrusu biz, sizi yeryüzüne yerleştirdik ve orada size geçim vasıtaları verdik. Ne kadar da az şükrediyorsunuz!"

Geçim yollarını sizin için kolay, tasarruf hallerini de müyesser kıldık. Sonra Allah, sizden O'na doğru bir yol edinmenizi istedi ve hiçbir muradınız O'na zor gelmedi.

(قَلِيلًا مَا تَشْكُرُونَ) *"Ne kadar da az şükrediyorsunuz!"* Çünkü siz bedenlerinizi aykırı işlerde kullanıyorsunuz, israfla hallerinizi heder ediyorsunuz, zamanlarınızı nefsanî arzularınızda tüketiyorsunuz. Böylece siz, ne boş vakit nimetine şükrettiniz, ne de azabın dokunmasından şikâyet ettiniz. Kaybettiğiniz halde farkında olmadınız.

وَلَقَدْ خَلَقْنَاكُمْ ثُمَّ صَوَّرْنَاكُمْ ثُمَّ قُلْنَا لِلْمَلٰٓئِكَةِ اسْجُدُوا لِاٰدَمَ فَسَجَدُوٓا اِلَّٓا اِبْلِيسَ لَمْ يَكُنْ مِنَ السَّاجِدِينَ ﴿١١﴾

11- "Andolsun sizi yarattık. Sonra size şekil verdik, sonra da meleklere: 'Âdem'e secde edin' diye emrettik. İblis'in dışındakiler secde ettiler. O, secde edenlerden olmadı."

Biz sizi, istediğimiz sıfat üzere sabit kıldık ve sizi, sizin için seçtiğimiz özellikler içinde var ettik. Böylece kimisi yaradılış bakımından çirkin, kimisi de güzeldir. Kimisi ahlak bakımından hasta, kimisi de sağlıklıdır. Sonra size, babanız Âdem'e olan nimetlerimizi, sonra bir damarı sizde de kalmış olan sonraki aykırı davranışı, sonra da kıskançlığı sebebiyle size düşmanlık yaptığını bildiğimiz şeytanı tanıtıyoruz.

قَالَ مَا مَنَعَكَ اَلَّا تَسْجُدَ اِذْ اَمَرْتُكَ قَالَ اَنَا خَيْرٌ مِنْهُ خَلَقْتَن۪ي مِنْ نَارٍ وَخَلَقْتَهُ مِنْ ط۪ينٍ ﴿١٢﴾

12- "Allah buyurdu: 'Ben sana emretmişken seni secde etmekten alıkoyan nedir?' İblis: 'Ben, ondan daha üstünüm. Çünkü beni ateşten yarattın, onu çamurdan yarattın' dedi."

Yani eğer rübubiyetin kahrına uğramadıysan, benim emrimi tazim ettiğin halde Âdem'e secde etmekten seni alıkoyan nedir? Böylece tevhid ehli, İblis'in secde etmek istememesinin nedeninin meydana gelen utanç olduğundan emin olurlar. Şayet muvaffakiyet ona yardımcı olsaydı, secdeden ayrılmazdı.

(اَنَا خَيْرٌ مِنْهُ) *"Ben, ondan daha üstünüm."* İblis, üstünlük iddia etmiştir. Oysa eğer şakiliği olmasaydı, özellikle de kendisine gelen hitap Allah'tan olduğu için, boyun eğmeyi kibirlenmeye tercih etmesi gerekirdi.

Sonra İblis, her ne kadar mukayese yolunu izlemişse de, nefis söz konusu olunca bunun hiçbir geçerliliği yoktur. Çünkü bu mukayese, nefsin arzusundan kaynaklandığı için onun sadece hiçliği hak etmesine yol açmıştır. Zira o, özü bakımından üstünlük iddia etmiş ve üstünlüğün, sadece Allah'ın hükmü ve takdiriyle olduğunu bilememiştir.

قَالَ فَاهْبِطْ مِنْهَا فَمَا يَكُونُ لَكَ اَنْ تَتَكَبَّرَ ف۪يهَا فَاخْرُجْ اِنَّكَ مِنَ الصَّاغِر۪ينَ ﴿١٣﴾

13- "Allah: 'Öyle ise in oradan! Orada büyüklük taslamak senin haddin değildir. Çık! Çünkü sen, aşağılıklardansın' buyurdu."

Yakınlık makamını terk et. Çünkü burada kibir ve yücelik taslamak, edebi terk etmek demektir. Edebi terk etmek ise kovulmayı gerektirir.

Bir yoruma göre de, kim nefsi için bir yer veya kıymet görürse o kibir taslamış olur. Kibir taslayan ise Hak'tan uzaktır. Ayrıca,

kendini makama layık görmek, rübubiyete karşı çıkmak demektir. Çünkü Allah'tan başka hiç kimsenin değeri yoktur. Bu nedenle her kim, kendi nefsi için bir yer iddia ederse kuşkusuz o, rübubiyetle çekişmiş olur.

قَالَ اَنْظِرْنٖٓي اِلٰى يَوْمِ يُبْعَثُونَ ﴿١٤﴾ قَالَ اِنَّكَ مِنَ الْمُنْظَرٖينَ ﴿١٥﴾

14, 15- "İblis: 'Bana, insanların tekrar dirilecekleri güne kadar mühlet ver' dedi. Allah: 'Haydi sen, mühlet verilenlerdensin' buyurdu."

Allah, onun duasını hemen kabul etti. Lakin bu, ona hazırlanmış bir cezaydı. Çünkü Allah, bu yolla ona kıyamete kadar emrine muhalefet etme imkânı verdi. Böylece Allah, bu imkânı vermekle sadece onun şakiliğini artırmış oldu. Bu ise, bütün dua kabullerinin nimet ve lütuf olmadığını, aksine bazen musibet ve ceza da olabildiğini herkesin bilmesi içindir.

قَالَ فَبِمَٓا اَغْوَيْتَنٖي لَاَقْعُدَنَّ لَهُمْ صِرَاطَكَ الْمُسْتَقٖيمَ ﴿١٦﴾

16- "İblis dedi ki: 'Öyle ise beni azdırmana karşılık, and içerim ki, ben de onları saptırmak için senin doğru yolunun üstüne oturacağım.'"

İblis, kulluktaki sonsuz samimiyetini zahiren dile getirdikten sonra, hakikate açıkça karşı çıkmıştır. Böylece, daha önceki halinde yaptıklarının tamamının, iyi niyet ve samimiyetten kaynaklanmadığı anlaşılmıştır.

ثُمَّ لَاٰتِيَنَّهُمْ مِنْ بَيْنِ اَيْدٖيهِمْ وَمِنْ خَلْفِهِمْ وَعَنْ اَيْمَانِهِمْ وَعَنْ
شَمَٓائِلِهِمْ وَلَا تَجِدُ اَكْثَرَهُمْ شَاكِرٖينَ ﴿١٧﴾

17- "'Sonra elbette onlara önlerinden, arkalarından, sağlarından, sollarından sokulacağım ve sen, onların çoklarını şükredenlerden bulmayacaksın' dedi."

İblis, onları yanlarından kuşatacağını ve her taraflarından kendilerine musallat olacağını bildirmiş; ancak Allah'ın onları kendisinden korumaya kadir olduğunu bilememiştir. Çünkü onlara kurmak istediği tuzak, ilahî kudretten hâsıl olur ve ilahî iradeyle meydana gelir. Şayet iş onun eline verilmiş olsaydı, önce çabasının, herkesten önce kendisinde etki etmesi gerekirdi. Oysa geçmişteki ahvalinde sarf ettiği çaba, kendisine fayda vermediği için, insanları tehdit etme aracı olarak kullandığı kötü fiilleriyle kurduğu tuzak da onlara zarar vermemiştir.

قَالَ اخْرُجْ مِنْهَا مَذْؤُمًا مَدْحُورًا لَمَنْ تَبِعَكَ مِنْهُمْ لَاَمْلَئَنَّ جَهَنَّمَ مِنْكُمْ اَجْمَعِينَ ﴿١٨﴾

18- "Allah buyurdu: 'Haydi, yerilmiş ve kovulmuş olarak oradan çık! Andolsun ki, onlardan kim sana uyarsa, sizin hepinizi cehenneme dolduracağım.'"

Allah, onu derecesinden, halinden ve mertebesinden indirdi ve kendisini, hak ettiği kovulmuşluk ve lanetlenmişliğin içine sürükledi, sonra da azapta kalıcı kıldı. Allah, ona rahmetinin serinliğinden zerre kadar tattırmayacaktır. Bu haliyle İblis, işin başında herkesin önündeyken sonunda zümrenin en uzak kişisi oldu. Bu gelişmeler ise izzetin kahrının eserleridir. Şimdi kim bu hikâyeyi duyar da şaşkına dönmez!

وَيَٓا اٰدَمُ اسْكُنْ اَنْتَ وَزَوْجُكَ الْجَنَّةَ فَكُلَا مِنْ حَيْثُ شِئْتُمَا وَلَا تَقْرَبَا هٰذِهِ الشَّجَرَةَ فَتَكُونَا مِنَ الظَّالِمِينَ ﴿١٩﴾

19- "Allah buyurdu ki: 'Ey Âdem! Sen ve eşin cennette yerleşip dilediğiniz yerden yeyin. Ancak şu ağaca yaklaşmayın. Sonra zalimlerden olursunuz.'"

Allah, Âdem'i cennette iskân edince fitnenin sebebini de onunla birlikte yarattı. Bu sebep, Âdem'e ikram ettiği eştir. Eğer Allah'ın

insandan saklı tuttuğu kaderin sırrı olmasa, içinde meşakkat ve imtihan ağacını yaratmaması halinde cennetin ne eksiği olurdu!

فَوَسْوَسَ لَهُمَا الشَّيْطَانُ لِيُبْدِيَ لَهُمَا مَا وُرِيَ عَنْهُمَا مِنْ سَوْاٰتِهِمَا وَقَالَ مَا نَهٰيكُمَا رَبُّكُمَا عَنْ هٰذِهِ الشَّجَرَةِ اِلَّٓا اَنْ تَكُونَا مَلَكَيْنِ اَوْ تَكُونَا مِنَ الْخَالِدِينَ ﴿٢٠﴾

20- "Derken şeytan, onlara vesvese verdi. Birbirlerine kapalı ayıp yerlerini kendilerine göstermek için. Ve şöyle dedi: 'Rabbiniz size bu ağacı, sırf melek olursunuz veya ebedî kalanlardan olursunuz' diye yasakladı."

Allah'ın, Âdem ve Havvâ'dan hâsıl olan hatayı şeytana nisbet etmesi, inayetin emarelerindendir. Hata ikisinden meydana gelmiş, lakin Allah: (فَوَسْوَسَ لَهُمَا الشَّيْطَانُ) *"Derken şeytan, onlara vesvese verdi"* buyurmuştur.

Bir yoruma göre de, bu olaydan sonra Hz. Âdem İblis'le karşılaşmış ve kendisine: "Ey şaki! Sen, bana vesvese verdin, ben de bunu yaptım" demiş, bunun üzerine İblis de ona şöyle cevap vermiştir: "Ey Âdem! Farz et ki, senin İblis'in benim. Ya benim İblis'im kim?"

(لِيُبْدِيَ لَهُمَا مَا وُرِيَ عَنْهُمَا مِنْ سَوْاٰتِهِمَا) *"Birbirlerine kapalı ayıp yerlerini kendilerine göstermek için."*

Bu ifadede fazladan bir inayet söz konusudur. Çünkü Allah, avret yerlerini sadece kendilerine göstermiş, ikisinden başkasını ise buna muttali kılmamıştır.

(وَقَالَ مَا نَهٰيكُمَا رَبُّكُمَا عَنْ هٰذِهِ الشَّجَرَةِ اِلَّٓا اَنْ تَكُونَا مَلَكَيْنِ اَوْ تَكُونَا مِنَ الْخَالِدِينَ) *"Ve şöyle dedi: 'Rabbiniz size bu ağacı, sırf melek olursunuz veya ebedî kalanlardan olursunuz' diye yasakladı."*

Hz. Âdem ile Hz. Havvâ'nın canları melek olmak istedi. Ancak bu, meleklerin rütbesinin, Hz.Âdem'in rütbesinden daha yüksek olduğu için değil, onlardaki şehvet ve arzuların yok olması içindir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Onlar, ebediyete tamah edince sönüklüğe, belaya ve korkuya düştüler. Her meşakkatin aslı ise tamahtır.

- Ebediyet yurdu olan cennette bile tamah, bunca meşakkatlere yol açtığına göre; ölümlülük yurdu olan dünyadaki tamahın sahibi nasıl olur da bu meşakkatlerden kurtulur?

- Şayet onlar, ebediyete meyletmişlerse, bu nefislerinin arzusu için değil, lakin Allah ile beraber kalmak içindir. Bu izah daha uygundur. Çünkü peygamberlik makamını tenzih etmeyi sağlamaktadır. Denilmiştir ki: Kavuşma saatleri kısa, ayrılık günleri ise uzundur. Onlar, vuslat yurdunda sadece günün bir miktarı kaldılar. Gündüzün ilk saatlerinde girip gün ortasında çıktılar.

- Ayrılık, vuslat ehlini vuran bir göz değmesidir.

Şiir:

*Değdiyse eğer sana bir göz, değildir o*
*Gözün sadece güzele değmesinden başka*

- Onlar için vuslat sebepleri gerçekleşip Allah, kendilerini yakınlığın devamına alıştırınca, ayrılık saklandığı yerden çıktı ve düzenli birlikteliklerini dağıtmış oldu.

Şiir:

*Arzu tam gerçekleşip sevindik derken*
*Ve ayrılıktan emin olduğumuzu sanmışken*
*Gönderdi ayrılık gizlice elçilerini*
*Ve dağıttılar toparladığımız birliğimizi*

وَقَاسَمَهُمَٓا اِنّ۪ي لَكُمَا لَمِنَ النَّاصِح۪ينَ ﴿٢١﴾ فَدَلّٰيهُمَا بِغُرُورٍ فَلَمَّا
ذَاقَا الشَّجَرَةَ بَدَتْ لَهُمَا سَوْاٰتُهُمَا وَطَفِقَا يَخْصِفَانِ عَلَيْهِمَا مِنْ
وَرَقِ الْجَنَّةِ وَنَادٰيهُمَا رَبُّهُمَٓا اَلَمْ اَنْهَكُمَا عَنْ تِلْكُمَا الشَّجَرَةِ وَاَقُلْ
لَكُمَٓا اِنَّ الشَّيْطَانَ لَكُمَا عَدُوٌّ مُب۪ينٌ ﴿٢٢﴾

21, 22- "Ve onlara: 'Ben, gerçekten size öğüt verenlerdenim' diye yemin etti. Böylece onları hile ile aldattı. Ağacın meyvesini tattıklarında ayıp yerleri kendilerine göründü ve cennet yapraklarından üzerlerini örtmeye başladılar. Rableri onlara: 'Ben size o ağacı yasaklamadım mı ve: Şeytan size apaçık bir düşmandır, demedim mi!' diye nidâ etti."

Hz. Âdem'in hüsnü zannı, onu düşmanın yeminiyle tatmin olmaya sevk etti. Çünkü şeytanın, Allah'ın adıyla yalan yemin edeceği onun aklına gelmemişti. Sonra şeytanın, kendilerini hile ile aldattığını anlayınca samimi bir pişmanlıkla Allah'a tevbe etti ve kötü bir iş yapıp suç işlediğini itiraf etti. Allah da, onun pişmanlığında samimi olduğunu bildi ve onu, güzel af ve keremiyle bağışladı.

(بَدَتْ لَهُمَا سَوْاٰتُهُمَا) *"ayıp yerleri kendilerine göründü."*

Nefis için ağaçtan yeme ve ondan yararlanma eylemi gerçekleşir gerçekleşmez cezanın ve durumun kötüleşmesinin habercileri ortaya çıkmış oldu. İşte kendisinden arta kalan bir şeyi Allah'a tercih eden kimsenin durumu budur. O, tercih ettiği şeyden yararlanamaz. Aynı şekilde canını, malını veya başka bir şeyi bir biçimde Allah'tan esirgeyen kimseye de, Allah bunu mübarek kılmaz. Nitekim Allah, düşmanların vasfı hakkında

(خَسِرَ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةَ) *"Dünyayı da ahireti de kaybetmiştir"* (Hacc, 22/11) buyurmaktadır.

Bir yoruma göre de avret yerleri görününce onu örtmenin yolunu aradılar ve cennet yapraklarından üzerlerini örtmeye başladılar. Böylece daha önce giysileri, cennetin süslü elbiseleri iken bu kez, cennetin yapraklarıyla örtünmeye başladılar.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Helal olsun o gençlere ki geldiler erkenden*
*Krallar gibi ve gittiler miskinler gibi*
.............................................
*Zelil oluşuma şaşmayın, benim o kimse ki*
*Oynadı zaman ruhumla ve onu zelil kıldı*

Sonra Hz. Âdem, yapraklarla örtünme imkânı bulamadı. Çünkü ağaçlar uzuyor ve Hz. Âdem'in, yapraklarından almasına müsaade etmiyordu. Oysa bundan önce Hz. Âdem cennete bakmıyor, kâinatın tamamına şaşkınlıkla bakıyordu. Lakin o, şu dizelerde söylendiği gibi oldu:

*Nefsim aziz idi günler karşısında*
*Ancak zülle sabrettiğimi görünce zelil oldu*

Öte yandan Hz. Âdem cennetten çıkarılıp yeryüzünde iskân edilince, çalışmak, çabalamak, ekmek ve dikmekle yükümlü kılındı. Kendisi yeni bir durumla karşılaştıkça yeniden ağlıyordu. Bu sırada Hz. Cibril yanına gelip şöyle diyordu: *"Sana: Senin için cennette acıkmama ve çıplak kalmama nimeti vardır, denilmedi mi? Lakin sen kıymetini bilmedin. O halde bu söze aykırı davranmanın cezasını çek!"* Bu söz üzerine Hz. Âdem sakinleşiyordu. Bir yoruma göre de hüküm, itaate dairdir. Tıpkı şu beyitte söylendiği gibi:

*İlk defasında tepki gösterdi bana nefis*
*İstemediği yükleri artınca sakinleşti*

(وَطَفِقَا يَخْصِفَانِ عَلَيْهِمَا مِنْ وَرَقِ الْجَنَّةِ وَنَادٰيهُمَا رَبُّهُمَآ اَلَمْ اَنْهَكُمَا عَنْ تِلْكُمَا الشَّجَرَةِ وَاَقُلْ لَكُمَآ اِنَّ الشَّيْطَانَ لَكُمَا عَدُوٌّ مُبِينٌ) *"Ve cennet yapraklarından üzerlerini örtmeye başladılar. Rableri onlara: 'Ben size o ağacı yasaklamadım mı ve: Şeytan size apaçık bir düşmandır, demedim mi!' diye nidâ etti."*

Hz. Âdem, yaprakları koparıp kendini örtmek için elini uzattığında eli yapraklara yetişmiyordu. Eğer eli, o meşakkat ağacına da ulaşmasaydı, bu onun için bir inayet olurdu. Lakin imtihan ve fitnenin tamamlanması için eli meşakkat ağacına ulaştı. Eğer kahrın artması için, eli örtünme ağacına ulaşmasaydı, Allah'ın emrine karşı çıkmamış olurdu ve olan olmazdı.

(وَنَادٰيهُمَا رَبُّهُمَآ اَلَمْ اَنْهَكُمَا عَنْ تِلْكُمَا الشَّجَرَةِ) *"Rableri onlara: 'Ben size o ağacı yasaklamadım mı!' diye nidâ etti."* Bu nida sonucu içlerine giren mahcubiyet, her türlü azaptan daha şiddetli idi. Şayet onlar bu

nida esnasında kendilerinde olmasalardı bu utanma olmayabilirdi. Çünkü huzurda bulunmak heybete sebep olur. Bu nedenle Allah, onlara hitapla seslenince derin bir mahcubiyet hissettiler.

Şiir:

*Evlerinin ortasında durmaktan ne de çok mahcup oldum*
*Çünkü öfkeyle bana: "Kimsin sen be adam?" dedi*

قَالَا رَبَّنَا ظَلَمْنَٓا اَنْفُسَنَا وَاِنْ لَمْ تَغْفِرْ لَنَا وَتَرْحَمْنَا لَنَكُونَنَّ مِنَ الْخَاسِرِينَ ﴿٢٣﴾

23- "Âdem ile eşi dediler ki: 'Ey Rabbimiz! Biz, kendimize zulmettik. Eğer bizi bağışlamaz ve bize acımazsan, mutlaka ziyan edenlerden oluruz.'"

İkisi, zulmü açıkça itiraf ettiler ve bu konudaki hükmün sırrını öğrenmiş oldular. Bu itibarla onların: (رَبَّنَا ظَلَمْنَٓا اَنْفُسَنَا) "*Ey Rabbimiz! Biz, kendimize zulmettik*" sözü, dinin zahiri açısından zulmü itiraf, hakikat açısından da hükmün temel dayanak olduğunu bilmiş olmak demektir. Bu nedenle her kim, yaratıklara zulmü itiraf etmezse dini geçersiz kılar. Kim de, geçerli olanın, Hakk'ın hükmü olduğunu tanımazsa hakikati inkâr etmiş olur. Bu arada Âdem ve eşi, zulmü ikrar ettiklerinde: (وَاِنْ لَمْ تَغْفِرْ لَنَا وَتَرْحَمْنَا لَنَكُونَنَّ مِنَ الْخَاسِرِينَ) "*Eğer bizi bağışlamaz ve bize acımazsan, mutlaka ziyan edenlerden oluruz*" dediler. Bu sözleriyle onlar, tevhidin özünü dile getirmiş oldular. Çünkü: "Zulmümüzle kaybettik" demediler. Lakin şunu demiş oldular: Biz bunu yapmış olduk. Eğer sen bizi bağışlamazsan, biz zulüm işlememiz sebebiyle mağfiretinden mahrum kaldığımız için kaybetmiş olacağız.

قَالَ اهْبِطُوا بَعْضُكُمْ لِبَعْضٍ عَدُوٌّ وَلَكُمْ فِي الْاَرْضِ مُسْتَقَرٌّ وَمَتَاعٌ اِلٰى حِينٍ ﴿٢٤﴾

24- "Allah şöyle buyurdu: Birbirinize düşman olarak inin! Sizin için yeryüzünde bir süreye kadar yerleşme ve faydalanma vardır."

Allah, onları indirdi. Lakin İblis'i rütbesinden indirdiği için o, laneti boyladı. Âdemi ise yerinden indirdiği için o, rahmete mazhar oldu.

Bir yoruma göre de Hz. Âdem, her ne kadar cennetten çıkarıldıysa da Allah onu fazilet rütbesinden çıkarmadı. Bu nedenle Allah onun hakkında: "Sonra Rabbi onu seçkin kıldı" buyurmuştur. İblis'e gelince, o hem eski durumundan hem de rütbesinden atıldığı için, o düşüşten bir daha hiç kalkamadı.

(وَلَكُمْ فِي الْاَرْضِ مُسْتَقَرٌّ وَمَتَاعٌ اِلٰى حِينٍ) *"Sizin için yeryüzünde bir süreye kadar yerleşme ve faydalanma vardır."*

Yeryüzünde bir süreye kadar yerleşme geneldir. Bir süreye kadar faydalanma ise İblis'e özgü bir durumdur.

قَالَ فِيهَا تَحْيَوْنَ وَفِيهَا تَمُوتُونَ وَمِنْهَا تُخْرَجُونَ ﴿٢٥﴾

25- "'Orada yaşayacaksınız, orada öleceksiniz ve oradan çıkarılacaksınız' dedi."

Allah, dünyada kendilerini farklı durumların beklediğini ve birbirini izleyen değişik aşamalardan geçeceklerini haber vermektedir. Şöyle ki, darlık ve bolluk, iyilik ve kötülük, hayat ve ölüm, kazanma ve kaybetme vb. hallerle karşılaşacaklardır.

يَا بَنِي اٰدَمَ قَدْ اَنْزَلْنَا عَلَيْكُمْ لِبَاسًا يُوَارِي سَوْاٰتِكُمْ وَرِيشًا وَلِبَاسُ التَّقْوٰى ذٰلِكَ خَيْرٌ ذٰلِكَ مِنْ اٰيَاتِ اللّٰهِ لَعَلَّهُمْ يَذَّكَّرُونَ ﴿٢٦﴾

26- "Ey Âdemoğulları! Size ayıp yerlerinizi örtecek giysi, süslenecek elbise yarattık. Takva elbisesi... İşte o daha hayırlıdır. Bunlar, Allah'ın ayetlerindendir. Belki düşünüp öğüt alırlar."

Sizi zahirî sebeplerden koruduk ve sizin için çeşitli menfaatleri mümkün kılmak suretiyle, üzerinizden türlü türlü zararları def edeceğiniz imkânlar hazırladık.

(وَلِبَاسُ التَّقْوٰى ذٰلِكَ خَيْرٌ) *"Takva elbisesi... İşte o daha hayırlıdır."* Çünkü zahiri elbise, dünya afetlerinin en kalıcı olanıdır. Takva elbisesi ise Allah'ın öfkesine sebep olan afetlerden korur. Bir de takva elbisesi, kulun bütün parçaları ve organları ile gerçekleşir. Bu arada nefsin de takvadan bir elbisesi vardır ki o da çaba harcayıp ruhu ve kalbi feda etmektir. Takvadan oluşan elbise, tamahı yok etmek suretiyle gerçekleşen samimi niyettir. Ruhun da takvadan bir elbisesi vardır ki o da, alakaları terk etmek ve engelleri silip süpürmektir. Sırrın da takvadan bir elbisesi vardır. Bu elbise, arkadaşlıkları yok etmek ve düşüncelerden korunmaktır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Abidlerin takvası haramı terk etmek, ariflerin takvası da insanlarla oturup kalkmayı yok etmektir.

- Avam için "takva" söz konusu iken, havas için söz konusu olan, takvayı görmekten sakınma elbisesidir.

يَا بَنِي اٰدَمَ لَا يَفْتِنَنَّكُمُ الشَّيْطَانُ كَمَآ اَخْرَجَ اَبَوَيْكُمْ مِنَ الْجَنَّةِ
يَنْزِعُ عَنْهُمَا لِبَاسَهُمَا لِيُرِيَهُمَا سَوْاٰتِهِمَا اِنَّهُ يَرٰيكُمْ هُوَ وَقَبِيلُهُ مِنْ
حَيْثُ لَا تَرَوْنَهُمْ اِنَّا جَعَلْنَا الشَّيَاطِينَ اَوْلِيَآءَ لِلَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿٢٧﴾

27- "Ey Âdemoğulları! Şeytan, ana-babanızı, ayıp yerlerini kendilerini göstermek için elbiselerini soyarak cennetten çıkardığı gibi, sizi de aldatmasın! Çünkü o ve yandaşları, sizin onları göremeyeceğiniz yerden sizi görürler. Şüphesiz biz, şeytanları inanmayanların dostları kıldık."

Kim, nefsinin vesveselerine kulak verirse, şeytanın vesveseleriyle nefsin telkini arasındaki şüpheyle karşılaşır. Burada vesvese ve telkin yardımlaşırlar ve kalbin ilhamlarıyla ilmin yasakları etkisizleşip hezimete uğramış olurlar. Bu nedenle söz konusu telkinler ve vesveseler yakın zamanda sahibini kaplar ve bu kimse, nefse uyma çizgisine girdiği için zillet uçurumuna düşer. Bu durumda, tevbe

bağıyla bir toparlanma gerçekleşmediği zaman, durum kalpte kasvet halini alır. Kalp katılaştığı zaman ise hayat ondan ayrılır ve tam bir musibete maruz kalmış olur.

(اِنَّهُ يَرٰيكُمْ هُوَ وَقَبيلُهُ مِنْ حَيْثُ لَا تَرَوْنَهُمْ اِنَّا جَعَلْنَا الشَّيَاطينَ اَوْلِيَاۤءَ لِلَّذينَ لَا يُؤْمِنُونَ ) *"Çünkü o ve yandaşları, sizin onları göremeyeceğiniz yerden sizi görürler. Şüphesiz biz, şeytanları inanmayanların dostları kıldık."*

Kul, göremediği şeytanın kendisini görmesinden ancak Allah'ı kalbiyle görmek suretiyle sakınabilir. Böylece Şeytanın hilesinden Allah'a sığınmış olur. Allah da, onu inayetinin güvencesi altına alır ve kul, şeytanın hilesinden kurtuluşa erer.

وَاِذَا فَعَلُوا فَاحِشَةً قَالُوا وَجَدْنَا عَلَيْهَاۤ اٰبَاۤءَنَا وَاللّٰهُ اَمَرَنَا بِهَا قُلْ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَأْمُرُ بِالْفَحْشَاۤءِ اَتَقُولُونَ عَلَى اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ﴿٢٨﴾

28- "Onlar, bir kötülük yaptıkları zaman: 'Babalarımızı bu yolda bulduk. Allah da bize bunu emretti' derler. De ki: 'Allah kötülüğü emretmez. Allah'a karşı, bilmediğiniz şeyleri mi söylüyorsunuz?'"

Bunlar, seleflerinin yolunu izlemede bahanelere sığındılar. Bu nedenle zayıf bir ipe sarıldıkları için kibrin cüceleri ayaklarını kaydırdı ve meşakkatin çukuruna düşmüş oldular.

قُلْ اَمَرَ رَبّي بِالْقِسْطِ وَاَقيمُوا وُجُوهَكُمْ عِنْدَ كُلِّ مَسْجِدٍ وَادْعُوهُ مُخْلِصينَ لَهُ الدّينَ كَمَا بَدَاَكُمْ تَعُودُونَ ﴿٢٩﴾

29- "De ki: Rabbim adaleti emretti. Her secde ettiğinizde yüzlerinizi ona çevirin ve dini yalnız Allah'a has kılarak O'na yalvarın. İlkin sizi yarattığı gibi yine O'na döneceksiniz."

Ayette yer alan (قِسْطِ ) "*kıst*" kelimesi adalet demek olup hem Allah hem yaratıklar hem de kişinin kendi nefsi hakkında kullanılır. Bu çerçevede Allah hakkında adalet, emredilen hususta kusur işlemeksizin ve yasaklananı yapmaya kalkışmaksızın emrinin sınırında

durmak, sonra verdiği hiçbir şeyi O'ndan esirgememek, insana helal kıldığı hiçbir şeyi O'na tercih etmemektir. Yaratıklar hakkında adalet, ilmin izahına göre, insafı gözetmektir. Yiğitliğin gereğine göre ise alacağı terk etmektir. İnsanın kendi nefsi hakkındaki adaleti ise, onu tutsak edip rahatın bütün kapılarını yüzüne kapatmak ve bütün hallerde ve her nefeste ona aykırı davranmaktır.

( وَاَقِيمُوا وُجُوهَكُمْ عِنْدَ كُلِّ مَسْجِدٍ وَادْعُوهُ مُخْلِصِينَ لَهُ الدِّينَ كَمَا بَدَاَكُمْ تَعُودُونَ ) *"Her secde ettiğinizde yüzlerinizi ona çevirin ve dini yalnız Allah'a has kılarak O'na yalvarın. İlkin sizi yarattığı gibi yine O'na döneceksiniz."*

Ayet, bütün hallerde Allah'ı gözetmeyi devam ettirmeye, yaptığın, terk ettiğin, önceden ve sonradan yaptığın her şeyde bir an bile O'nu unutmamaya işaret etmektedir.

فَرِيقًا هَدٰى وَفَرِيقًا حَقَّ عَلَيْهِمُ الضَّلَالَةُ اِنَّهُمُ اتَّخَذُوا الشَّيَاطِينَ
اَوْلِيَاءَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ وَيَحْسَبُونَ اَنَّهُمْ مُهْتَدُونَ ﴿٣٠﴾

30- "O, bir grubu doğru yola iletti, bir grup da sapıklığı hak etti. Çünkü onlar, Allah'ı bırakıp şeytanları kendilerine dost edindiler. Böyle iken kendilerinin doğru yolda olduğunu sanıyorlar."

Allah'ın saadet takdir ettiği kimsenin fıtratı da saadet üzere olur, halinde de saadet vasfına sahip olur. Halinde saadet vasfına sahip olan kimsenin ise akıbeti de saadet olur. Kimin kaderi bunun aksine olursa, durumu da bunun zıttı olur. Hz. Peygamber: *"Kim ne durumda ise o durum üzere Allah'ın huzuruna çıkar"* buyurmuştur.

Bu arada kaza ve kadere dair bilginin özeti, Allah'ın olanların nasıl olduğunu ve bildiği gibi olmasını irade ettiğini bildiğine kulun kesin olarak inanmasıdır. Olması mümkün olup olmasını irade etmediği şeyin olmayacağını Allah bilmekte ve bunu haber vermektedir. Ayrıca Allah, ezeli hükmünü, haber verdiğine ve kul hakkındaki kaza ve kaderine uygun olarak icra eder. Kul da hakkındaki kadere göre bu vasfa sahip olur.

يَا بَنِي اٰدَمَ خُذُوا زِينَتَكُمْ عِنْدَ كُلِّ مَسْجِدٍ وَكُلُوا وَاشْرَبُوا وَلَا تُسْرِفُوا اِنَّهُ لَا يُحِبُّ الْمُسْرِفِينَ ﴿٣١﴾

31- "Ey Âdemoğulları! Her secde edişinizde güzel elbiselerinizi giyin. Yeyin, için, fakat israf etmeyin. Çünkü Allah, israf edenleri sevmez."

İlmin izahına göre; namazda avreti örtmek gerekir. İşaretin ifadesine göre ise kulun süsü Allah'ın huzurunda durmak, eşiğe bağlılık ve hakikati görmeye devam etmektir.

Bir yoruma göre de abidlerin nefislerinin süsü secdenin izleri, ariflerin kalplerinin süsü ise varlığın nurlarıdır. Bu itibarla abid, abidlik sıfatıyla kapıda, arif de hürriyetin hükmüyle dergâhta durmaktadır ki, kuldan kula büyük fark vardır.

(وَكُلُوا وَاشْرَبُوا وَلَا تُسْرِفُوا اِنَّهُ لَا يُحِبُّ الْمُسْرِفِينَ) *"Yeyin, için, fakat israf etmeyin. Çünkü Allah, israf edenleri sevmez."*

İsraf, bir susam tanesi kadar da olsa, kendin için el uzattığın şeydir.

Bir yoruma göre de israf, payına düşende tasarrufta bulunurken, her ne şekilde olursa olsun, zaruret sınırını aşmaktır.

قُلْ مَنْ حَرَّمَ زِينَةَ اللّٰهِ الَّتِي اَخْرَجَ لِعِبَادِهِ وَالطَّيِّبَاتِ مِنَ الرِّزْقِ قُلْ هِيَ لِلَّذِينَ اٰمَنُوا فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا خَالِصَةً يَوْمَ الْقِيٰمَةِ كَذٰلِكَ نُفَصِّلُ الْاٰيَاتِ لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ ﴿٣٢﴾

32- "De ki: 'Allah'ın, kulları için yarattığı süsü ve temiz rızıkları kim haram kıldı.' De ki: 'Onlar, dünya hayatında, özellikle kıyamet gününde müminlerindir. İşte bilen bir topluluk için âyetleri böyle açıklıyoruz.'

Ayet, sırların süsüne işaret etmektedir. Buna göre; ariflerin süsü muvaffakiyetin eserleri, bulanların süsü hakikatin nurları, kast edenlerin süsü adeti terk etmek, abidlerin süsü de ibadetin güzelliğidir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Nefislerin süsü hizmet yeleği, kalplerin süsü yasağı korumak, ruhların süsü de heybet ve saygıyı devamlı kılmak suretiyle huzurda başı önünde olmaktır.

- Dilin süsü zikir, kalbin süsü de şükürdür.

- Zahirin süsü secde, batının süsü de şuhuddur.

- Nefislerin süsü, çabalardan kaynaklanan muamele güzelliği, kalplerin süsü de müşahedelerden kaynaklanan iletişimin devamıdır.

(قُلْ مَنْ حَرَّمَ زِينَةَ اللّٰهِ الَّتِي اَخْرَجَ لِعِبَادِهِ) *"De ki: Allah'ın, kulları için yarattığı süsü kim haram kıldı."* Yani Allah, bu süsü, onu bulabilen kimseye yasaklamamıştır. Bu itibarla kim onu aramaya soyunursa, niyetleri geri plana atmaksızın, bu kendisi için mubahtır.

(وَالطَّيِّبَاتِ مِنَ الرِّزْقِ) *"...ve temiz rızıkları..."* Nefislerin rızıkları, Allah'ın lütufları gereğincedir. Kalplerin rızıkları da Allah'ın iltifatının sonucudur.

Bir yoruma göre de müritlerin rızıkları Allah'ın zikrinin ilhamı, ariflerin rızıkları da Allah'tan başkasını unutma ikramıdır.

قُلْ اِنَّمَا حَرَّمَ رَبِّيَ الْفَوَاحِشَ مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَمَا بَطَنَ وَالْاِثْمَ
وَالْبَغْيَ بِغَيْرِ الْحَقِّ وَاَنْ تُشْرِكُوا بِاللّٰهِ مَا لَمْ يُنَزِّلْ بِهِ سُلْطَانًا وَاَنْ
تَقُولُوا عَلَى اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ﴿٣٣﴾

33- "De ki: 'Rabbim, ancak açık ve gizli kötülükleri, günahı ve haksız yere sınırı aşmayı, hakkında hiçbir delil indirmediği bir şeyi, Allah'a ortak koşmanızı ve Allah hakkında bilmediğiniz şeyleri söylemenizi haram kılmıştır.'"

Açık kötülük yanılgı, gizli kötülük ise gaflettir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Açık kötülük, fıkhın hükmünü unutmakla, gizli olan ise hakikatin işaretiyle olur.

- Kimileri için, ruhsatları terk etmek kusur olur. Onlar için uygun ve daha iyi olan ruhsata uymaktır. Kimileri ise, ruhsatlara meylettikleri takdirde başlarına kıyamet kopar.

- Havassın kötülüğü, zerre kadar dahi olsa, nefislerinin arzuladığı şeyin peşine düşmeleridir.

- Sevenlerin kötülüğü, sevgilinin ayrılığına sabretmektir.

- Sevenlerin kötülüğü, ayrılığa düştüğü halde sağ kalabilmektir.

Şiir:

*Yoktur hayat, ayrılıklarından sonra*
*Budur en büyük musibet*

- Kimilerinin kötülüğü de Allah'tan başkasına hak sahibi gözüyle bakmalarıdır.

Şiir:

*Ey göz nuru! Sor gözüme, sürmelenmiş midir hiç*
*Güzel bir manzarayla, sen kaybolduğundan beri gözümden*

- Kimilerinin kötülüğü ise, hala ayrılıktan dökmedikleri bir gözyaşının veya hasretten tüketmedikleri bir nefesin kalabilmesidir.

Şiir:

*Eğer kalmışsa gözümde henüz bir damla yaş*
*O zaman yabancıyım ben âşıklar arasında*

وَلِكُلِّ اُمَّةٍ اَجَلٌ فَاِذَا جَٓاءَ اَجَلُهُمْ لَا يَسْتَأْخِرُونَ سَاعَةً وَلَا يَسْتَقْدِمُونَ ﴿٣٤﴾

34- "Her ümmetin bir eceli vardır. Ecelleri gelince ne bir an geri kalırlar ne de bir an ileri gidebilirler."

Her kavmin belirlenmiş bir süresi vardır. O süre geçtiği zaman o durum da ortadan kalkar. Bu itibarla refah ehlinin nimetinin bir süresi vardır. O nimet yok olduğu zaman sonrasında sıkıntıdan başka bir şey yoktur. Güçsüzlerin meşakkatinin de bir süresi vardır. O süre sona erdiği zaman o sıkıntı da yok olur.

Bir yoruma göre de güneş battığı zaman gündüzün saltanatı sona erer ve karanlık gittikçe zifirileşir. Şafağın doğuşuyla birlikte karanlığın askerleri göç edince, bu kez gündüzün üzerinde bir şaibe kalmaz.

يَا بَنِيٓ اٰدَمَ اِمَّا يَأْتِيَنَّكُمْ رُسُلٌ مِنْكُمْ يَقُصُّونَ عَلَيْكُمْ اٰيَاتِي فَمَنِ
اتَّقٰى وَاَصْلَحَ فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿٣٥﴾

35- "Ey Âdemoğulları! Size kendi içinizden ayetlerimi anlatacak peygamberler gelir de kim onlara karşı gelmekten sakınır ve kendini ıslah ederse, onlara korku yoktur ve onlar üzülmeyeceklerdir."

Size peygamber geldiği zaman, zanların caiz gösterdiklerine meyletmeyin ve işi ciddiye alın. Çünkü biz, başkalarından müstağni ve menfaat ve zararlardan uzak olduğumuz halde, azla da çokla da sorumlu kılar ve irili ufaklı her şeyin hesabını sorarız.

وَالَّذِينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا وَاسْتَكْبَرُوا عَنْهَآ اُو۬لٰٓئِكَ اَصْحَابُ النَّارِ هُمْ
فِيهَا خَالِدُونَ ﴿٣٦﴾

36- "Ayetlerimizi yalanlayanlar ve büyüklenip onlardan yüz çevirenler var ya, işte onlar ateş ehlidir. Onlar, orada ebedi kalacaklardır."

Rübubiyetimizi inkârla, hükmümüzü de ret ile karşılayan kimse, değersizlikle karşılaşır ve acılar ve üzüntüler çeker. Sonra acizlik, onu teslimiyete mecbur bırakır, ancak artık bu fayda vermez ve dinlenmez.

فَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا اَوْ كَذَّبَ بِاٰيَاتِهٖ اُولٰٓئِكَ يَنَالُهُمْ نَصِيبُهُمْ مِنَ الْكِتَابِ حَتّٰٓى اِذَا جَٓاءَتْهُمْ رُسُلُنَا يَتَوَفَّوْنَهُمْ قَالُوٓا اَيْنَ مَا كُنْتُمْ تَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ قَالُوا ضَلُّوا عَنَّا وَشَهِدُوا عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ اَنَّهُمْ كَانُوا كَافِرِينَ ﴿٣٧﴾

37- "Allah'a iftira eden ya da O'nun ayetlerini yalanlayandan daha zalim kimdir? Onların kitaptaki nasipleri kendilerine erişecektir. Sonunda elçilerimiz (melekler), gelip canlarını alırken 'Allah'ı bırakıp da tapmakta olduğunuz tanrılar nerede?' derler. Onlar da: 'Bizden sıvışıp gittiler' derler. Ve kâfir olduklarına dair kendi aleyhlerine şahitlik ederler."

Onlara, kitaptan ezelde haklarında kesinleşmiş olan hüküm isabet eder. Böylece her kimin saadetine hükmedilmişse, o saadete mazhar olur. Kimin de şakiliğine hükmedilmişse, o da şakiliği hak etmiş olur.

Bir yoruma göre de hakkında ezelden saadet takdir edilen kimse, cehennemin dibine dahi düşse, ilahî inayet ona yetişir ve rahmet kendisini çıkartır. Hakkında şakilik takdir edilen kimse ise, cennete de girse Allah'ın kahrı onu yakalar ve lanet onu çıkartır.

قَالَ ادْخُلُوا فٖٓي اُمَمٍ قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِكُمْ مِنَ الْجِنِّ وَالْاِنْسِ فِي النَّارِ كُلَّمَا دَخَلَتْ اُمَّةٌ لَعَنَتْ اُخْتَهَا حَتّٰٓى اِذَا ادَّارَكُوا فٖيهَا جَمٖيعًا قَالَتْ اُخْرٰيهُمْ لِاُو۫لٰيهُمْ رَبَّنَا هٰٓؤُلَٓاءِ اَضَلُّونَا فَاٰتِهِمْ عَذَابًا ضِعْفًا مِنَ النَّارِ قَالَ لِكُلٍّ ضِعْفٌ وَلٰكِنْ لَا تَعْلَمُونَ ﴿٣٨﴾ وَقَالَتْ اُو۫لٰيهُمْ لِاُخْرٰيهُمْ فَمَا كَانَ لَكُمْ عَلَيْنَا مِنْ فَضْلٍ فَذُوقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنْتُمْ تَكْسِبُونَ ﴿٣٩﴾

38, 39- "Allah buyuracak ki: 'Sizden önce geçmiş cin ve insan toplulukları arasında siz de ateşe girin.' Her ümmet girdikçe yoldaşlarına lanet edecekler. Hepsi, bir biri ardından orada toplanınca sonrakiler, öncekiler için: 'Ey Rabbimiz' Bizi işte bunlar saptırdılar. Onun için onlara ateşten bir kat daha fazla azap ver!' diyecekler. Allah da: 'Zaten herkes için bir kat daha fazla azap vardır; fakat siz bilmezsiniz' diyecektir. Öncekiler de sonrakilere derler ki: 'Sizin bize bir üstünlüğünüz yok. O halde siz de yaptıklarınıza karşılık azabı tadın.'"

Allah'ın onlardan yüz çevirmesinin eserleri, kendilerinde vakte yabancılaşmaya yol açmıştır. Birbirlerinden rahatsız olmuşlar ve her biri, nefsi de dahil, her şeyden sıkılmaya başlamıştır. Bunun üzerine birbirlerine beddua etmişler ve birbirlerinden rahatsızlık duymuşlardır. Rahmetten kovulanların özelliği de zaten budur.

اِنَّ الَّذِينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا وَاسْتَكْبَرُوا عَنْهَا لَا تُفَتَّحُ لَهُمْ اَبْوَابُ السَّمَٓاءِ وَلَا يَدْخُلُونَ الْجَنَّةَ حَتّٰى يَلِجَ الْجَمَلُ فِي سَمِّ الْخِيَاطِ وَكَذٰلِكَ نَجْزِي الْمُجْرِمِينَ ﴿٤٠﴾

40- "Bizim ayetlerimizi yalanlayıp da onlara karşı kibirlenmek isteyenler var ya, işte onlara gök kapıları açılmayacak ve onlar, deve iğne deliğine girinceye kadar, cennete giremeyeceklerdir. Suçluları işte böylece cezalandırırız."

Onların ne duaları duyulur ne ağlamaları fayda verir ne musibetleri giderilir ne de meşakkatleri kaldırılır.

لَهُمْ مِنْ جَهَنَّمَ مِهَادٌ وَمِنْ فَوْقِهِمْ غَوَاشٍ وَكَذٰلِكَ نَجْزِي الظَّالِمِينَ ﴿٤١﴾

41- "Onlar için cehennem ateşinden döşekler, üstlerinde de örtüler vardır. İşte biz zalimleri böyle cezalandırırız."

Nasıl ki dünyada azaplar onları kuşatmış, bâtınları gaflet ile kirlenmiş ve zahirleri hata ile pislenmiş ise, aynı şekilde cezalar da çevrelerini sarmıştır. Bu nedenle üzerlerinde de azap vardır, altlarında da azap vardır. Aynı şekilde kalplerinde her taraflarından yetip her şeyden fazla olan hayatın sıkıntısı ve yabancılığın istilası vardır.

وَالَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ لَا نُكَلِّفُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا اُو۬لٰٓئِكَ اَصْحَابُ الْجَنَّةِ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ﴿٤٢﴾

42- "İnanıp da iyi işler yapanlara gelince, -ki hiç kimseye gücünün üstünde bir vazife yüklemeyiz- işte onlar cennet ehlidir. Orada onlar, ebedî kalacaklardır."

Biz, zahirlerinin ve bâtınlarının üzerinden çalışma külfetini kaldırdık. Böylece muvaffakiyetin güzelliğiyle taatleri kendilerine kolaylaştırdık ve teklifi azaltmak suretiyle ibadetlerini hafiflettik.

وَنَزَعْنَا مَا فِي صُدُورِهِمْ مِنْ غِلٍّ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهِمُ الْاَنْهَارُ وَقَالُوا الْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِي هَدٰينَا لِهٰذَا وَمَا كُنَّا لِنَهْتَدِيَ لَوْلَٓا اَنْ هَدٰينَا اللّٰهُ لَقَدْ جَٓاءَتْ رُسُلُ رَبِّنَا بِالْحَقِّ وَنُودُٓوا اَنْ تِلْكُمُ الْجَنَّةُ اُو۫رِثْتُمُوهَا بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٤٣﴾

43- "Cennette onların altlarından ırmaklar akarken kalplerinde kinden ne varsa, hepsini çıkarıp atarız. Ve onlar derler ki: 'Hidayetiyle bizi bu nimete kavuşturan Allah'a hamd olsun. Allah, bizi doğru yola iletmeseydi, kendiliğimizden doğru yolu bulacak değildik. Hakikaten Rabbimizin elçileri gerçeği getirmişler. Onlara: 'İşte size cennet! Yapmış olduğunuz iyi amellere karşılık ona vâris kılındınız' diye seslenilir."

Biz, onların kalplerini her türlü aldatmacadan tertemiz kıldık, sırlarını da her türlü kusurdan arındırdık. Allah ariflerin

kalplerini her türlü arzu ve alakadan tertemiz klmıştır. Tıpkı, zahidlerin kalplerini her türlü arzu ve emelden, abidlerin kalplerini her türlü töhmet ve şehvetten, sevenlerin kalplerini de her türlü yaratığın sevgisinden ve göğsün kininden rütbelerine uygun bir biçimde arındırdığı gibi.

Diğer bir yoruma göre; Allah cenneti yaratınca tertibini Rıdvan'a, Arş'ı koruma görevini taşıyıcı meleklere emanet etmiş, Kâbe'nin anahtarını da Benû Şeybe kabilesine teslim etmiştir. Müminlerin kalplerini temizlemeyi ise üzerine almıştır.

(وَنَزَعْنَا مَا في صُدُورِهِمْ مِنْ غِلٍّ) *"Kalplerinde kinden ne varsa, hepsini çıkarıp atarız."*

Kin, O'nun tarafından kalplerden atıldığına göre, o zaman hasımlardan dolayı kendilerini bağlayan birtakım sorumlulukların altına girmeleri yersizdir. Çünkü onu Allah ödemektedir.

(وَقَالُوا الْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِي هَدٰينَا لِهٰذَا وَمَا كُنَّا لِنَهْتَدِيَ لَوْلَٓا اَنْ هَدٰينَا اللّٰهُ لَقَدْ جَٓاءَتْ رُسُلُ رَبِّنَا بِالْحَقِّ) *"Ve onlar derler ki: 'Hidayetiyle bizi bu nimete kavuşturan Allah'a hamd olsun. Allah, bizi doğru yola iletmeseydi, kendiliğimizden doğru yolu bulacak değildik. Hakikaten Rabbimizin elçileri gerçeği getirmişler.'"*

Onların bu sözlerinde, ulaştıkları bolca nimetlere ve büyük rütbe ve makamlara, kendi çabaları ve fiillerinin hak edişiyle ulaşmadıklarını itiraf ve ikrar vardır. Doğrusu bütün bunlar, başından beri sadece Allah'ın lütfu ve keremidir.

(وَنُودُٓوا اَنْ تِلْكُمُ الْجَنَّةُ اُورِثْتُمُوهَا بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ) *"Onlara: 'İşte size cennet! Yapmış olduğunuz iyi amellere karşılık ona vâris kılındınız' diye seslenilir."*

Bu seslenme, kalplerini sükûnet ve huzura kavuşturmak içindir. Yoksa onlar, o dereceleri gördükleri zaman, kusurlarla şaibeli olan amellerinin kendilerine bütün o dereceleri sağlamadığını zaten bilirler.

وَنَادٰٓى اَصْحَابُ الْجَنَّةِ اَصْحَابَ النَّارِ اَنْ قَدْ وَجَدْنَا مَا وَعَدَنَا رَبُّنَا حَقًّا فَهَلْ وَجَدْتُمْ مَا وَعَدَ رَبُّكُمْ حَقًّا قَالُوا نَعَمْ فَاَذَّنَ مُؤَذِّنٌ بَيْنَهُمْ اَنْ لَعْنَةُ اللّٰهِ عَلَى الظَّالِمِينَ ﴿٤٤﴾ اَلَّذِينَ يَصُدُّونَ عَنْ سَبِيلِ اللّٰهِ وَيَبْغُونَهَا عِوَجًا وَهُمْ بِالْاٰخِرَةِ كَافِرُونَ ﴿٤٥﴾

44, 45- "Cennet ehli cehennem ehline: 'Biz, Rabbimizin bize vaat ettiğini gerçek bulduk. Siz de Rabbinizin size vaat ettiğini gerçek buldunuz mu?' diye seslenir. 'Evet' derler. Ve aralarından bir çağrıcı: 'Allah'ın laneti, zalimlerin üzerine olsun' diye bağırır. Onlar, Allah yolundan alıkoyan ve onu eğip bükmek isteyen zalimlerdir. Onlar, ahireti de inkâr edenlerdir."

Cehennem ehli, dinin hakikatini itiraf ettiler ve yaptıklarının kötülüğünü ikrarda bulundular. Ne var ki bunu, ikrarın hiçbir şekilde kendilerine fayda vermeyeceği bir zamanda yaptılar.

وَبَيْنَهُمَا حِجَابٌ وَعَلَى الْاَعْرَافِ رِجَالٌ يَعْرِفُونَ كُلًّا بِسِيمٰيهُمْ وَنَادَوْا اَصْحَابَ الْجَنَّةِ اَنْ سَلَامٌ عَلَيْكُمْ لَمْ يَدْخُلُوهَا وَهُمْ يَطْمَعُونَ ﴿٤٦﴾

46- "İki taraf arasında bir perde vardır. Araf üzerinde de herkesi simalarından tanıyan adamlar vardır. Bunlar, henüz cennete giremedikleri halde girmeyi umarak cennet ehline: 'Selam size!' diye seslenirler."

İki taraf arasındaki o perde, daha önce geçen perdeden meydana gelmiştir. Onlar, ezeli takdirde ta başta müminlere has kılınan Allah'a yakınlıkla aralarına perde konulunca, aynı şekilde sonunda da saadete erenlere has kılınan mağfiret ve rahmetten engellenmiş oldular.

Bir yoruma göre de perde ki nasıl perde! Hiçbir tedbirle kaldırılamaz ve ona karşı hiçbir vesile fayda vermez.

Öyle bir perde ki, taat ve günahtan önce hakkında ezeli hüküm gerçekleşmiştir.

(وَعَلَى الْاَعْرَافِ رِجَالٌ يَعْرِفُونَ كُلًّا بِسِيمٰيهُمْ) *"Araf üzerinde de herkesi simalarından tanıyan adamlar vardır."*

O şerefli kimselere, bugün basiretlerin nurları özgü kılınmış, böylece onlar, sırlarıyla yaratıkların değerlerine muttali olmuşlardır. Yarın da hepsinin makamlarına ve tabakalarına gözleriyle muttali olacaklardır.

Diğer bir yoruma göre de Araf'takiler, insanları dünyada iken kendilerini sahip buldukları simalarıyla tanıyacaklardır. Şöyle ki, bazı topluluklar Allah'a yakınlığın nurlarıyla işaretlenmiş, diğer bazıları ise reddedilmişlik ve perdelenmişlik damgasıyla damgalanmışlardır.

(وَنَادَوْا اَصْحَابَ الْجَنَّةِ اَنْ سَلَامٌ عَلَيْكُمْ لَمْ يَدْخُلُوهَا وَهُمْ يَطْمَعُونَ) *"Bunlar, henüz cennete giremedikleri halde girmeyi umarak cennet ehline: 'Selam size!' diye seslenirler."*

Onlar, bugün inkâr ve inançsızlıktan salim kalarak irfan ve tevhid ile onurlandırıldılar. Yarın ise çeşitli şekillerde azapla uyarılmaktan salim kalacak, lütufların artmasıyla saadete erecek ve ümitlerinin erişemediği, akıllarının, ayrıntılarını idrak edemediği mertebelere eriştiklerinden emin olacaklardır.

وَاِذَا صُرِفَتْ اَبْصَارُهُمْ تِلْقَٓاءَ اَصْحَابِ النَّارِ قَالُوا رَبَّنَا لَا تَجْعَلْنَا
مَعَ الْقَوْمِ الظَّالِمِينَ ﴿٤٧﴾

47- "Gözleri cehennem ehli tarafına döndürülünce de: 'Ey Rabbimiz! Bizi zalimler topluluğu ile beraber kılma!' derler."

Allah'ın, bugün onların yüzlerini çevirmesi, kurtuluşlarının bağlı olduğu büyük lütfu haklarında takdir etmek içindir. Böylece onlar,

daha çok Allah'tan yardım diler ve samimiyetle niyazda bulunurlar. Bu sayede Allah'ın kendilerine lütfettiği barınma ve korunma nimetleri devamlı kılınmak suretiyle üzerlerindeki nimet kemale ermiş olur.

وَنَادٰٓى اَصْحَابُ الْاَعْرَافِ رِجَالًا يَعْرِفُونَهُمْ بِسِيمٰيهُمْ قَالُوا مَٓا اَغْنٰى عَنْكُمْ جَمْعُكُمْ وَمَا كُنْتُمْ تَسْتَكْبِرُونَ ﴿٤٨﴾ اَهٰٓؤُلَٓاءِ الَّذ۪ينَ اَقْسَمْتُمْ لَا يَنَالُهُمُ اللّٰهُ بِرَحْمَةٍ اُدْخُلُوا الْجَنَّةَ لَا خَوْفٌ عَلَيْكُمْ وَلَٓا اَنْتُمْ تَحْزَنُونَ ﴿٤٩﴾

48, 49- "A'raf ehli, simalarından tanıdıkları birtakım adamlara seslenerek derler ki: 'Ne çokluğunuz ne de taslamakta olduğunuz büyüklük size hiçbir yarar sağlamadı. Allah'ın, kendilerini hiçbir rahmete erdirmeyeceğine dair yemin ettiğiniz kimseler bunlar mı?' Ve cennet ehline dönerek: 'Girin cennete! Artık size korku yoktur ve siz, üzülecek de değilsiniz' derler."

Bu, onların, üzerlerinde gördükleri reddedilmişlik tozu ve uzaklık emareleridir. Bunlar, gözü gören hiç kimseye gizli kalmayan hususlardandır. İnsanlar onlara şöyle derler: Meylettiğiniz bâtıllarınız, dayandığınız fasit zanlarınız ve bâtıl tevilleriniz size fayda veriyor mu? Bugün, Allah'ın, aranızda zayıf sandığınız kimseleri özel kulları haline getirdiğini görün. Ve bakın bakayım, dostlarınız ve ortaklarınız olduğunu iddia ettiğiniz kimseler size fayda veriyor mu?

وَنَادٰٓى اَصْحَابُ النَّارِ اَصْحَابَ الْجَنَّةِ اَنْ اَف۪يضُوا عَلَيْنَا مِنَ الْمَٓاءِ اَوْ مِمَّا رَزَقَكُمُ اللّٰهُ قَالُوٓا اِنَّ اللّٰهَ حَرَّمَهُمَا عَلَى الْكَافِر۪ينَ ﴿٥٠﴾

50- "Cehennem ehli cennet ehline: 'Suyunuzdan veya Allah'ın size verdiği rızıktan biraz da bize verin' diye seslenirler. Onlar da: 'Allah, bunları kâfirlere haram kılmıştır' derler."

Ayet, insanın son ana kadar hayatta kalmasını sağlayan nimetlerin yiyecek ve içecek olduğunu göstermektedir. Çünkü onlar, o şiddetli azaplar içinde bile açlığa ve susuzluğa maruz kalmakta ve dayanılmaz acılar içinde oldukları halde, bu nedenle yalvararak bir yudum su ve bir lokma yiyecek istemektedirler. Oysa bugün dünya hayatında normal olan, şiddetli bir acı çeken kimsenin yiyip içmemesidir. Bu da zor bir durumdur.

Sonra şunu da görmek gerekir ki, Allah, onları cezalandırmaktan müstağni ve istediklerini vermeye kadir olduğu halde, kendilerine bir damla bile içirmemektedir. Doğrusu bu, Rab olmanın kahrı, bir olmanın izzeti ve istediğini yapabilir olmanın tezahürüdür. Nasıl ki Allah bugün onlara irfanından bir zerre bile nasip etmemişse, aynı şekilde yarın da o durumlarda kendilerine bir damla bile içirmez.

Şu dizeler de o anlamda söylenmiştir:

*Yemin etti kadınlar, bize bir damla bile içirmeyeceklerine*
*Topraklarından denizler bile fışkırtılsa*

Bir yoruma göre de onlar, gözyaşları kuruduktan sonra suyu, kendisiyle ağlamak için istediler.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Ey ayrılığı gözyaşlarımı kurutan göçmüş sevgili*
*Kendisiyle sana ağlayacağım gözyaşı bağışla bana*

Şiir:

*Yok etti ağlamak göz yaşını, ödünç al öyleyse*
*Başkasına ait yaşı bolca akan bir göz*
*Kendisiyle ağlaman için, kim ödünç verir sana gözünü!*
*Hiç gördün mü ağlamak için gözün ödünç verildiğini!*

اَلَّذِينَ اتَّخَذُوا دِينَهُمْ لَهْوًا وَلَعِبًا وَغَرَّتْهُمُ الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا فَالْيَوْمَ
نَنْسٰيهُمْ كَمَا نَسُوا لِقَاءَ يَوْمِهِمْ هٰذَا وَمَا كَانُوا بِاٰيَاتِنَا يَجْحَدُونَ ﴿٥١﴾

51- "O kâfirler ki, dinlerini bir eğlence ve oyun edindiler de dünya hayatı onları aldattı. Onlar, bu günleri ile karşılaşacaklarını unuttukları ve ayetlerimizi bile bile inkâr ettikleri gibi, biz de bugün onları unuturuz."

Nasıl ki onlar, Allah'ın emrini terk edip zayi ettilerse, Allah da onları azapta bıraktı. Böylece üzerlerinden dönemler gelip geçer, ancak ne azapları kaldırılır ne içeceğin serinliği ne güzel cevap ne de hitapla bir ikram vardır. İşte bu, mühlet vakitlerinde vuslatın kadrini bilmeyenin cezasıdır.

وَلَقَدْ جِئْنَاهُمْ بِكِتَابٍ فَصَّلْنَاهُ عَلٰى عِلْمٍ هُدًى وَرَحْمَةً لِقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ ﴿٥٢﴾

52- "Gerçekten onlara, inanan bir toplum için yol gösterici ve rahmet olarak, ilim üzere açıkladığımız bir kitap getirdik."

Biz onlara öyle bir kitap indirdik ve öyle bir hitap vahiy ettik ki, eğer onu tasdik ile karşılamış ve hakikat olarak kabul etmiş olsalardı, uzaklığın çilesinden şifa bulur, sevginin yakınlığıyla aydınlığa kavuşur ve dünyada da ahirette de güzel murada ererlerdi. Lakin Allah, kaderlerinde sadece şakiliği dilemiştir.

هَلْ يَنْظُرُونَ اِلَّا تَأْوِيلَهُ يَوْمَ يَأْتِي تَأْوِيلُهُ يَقُولُ الَّذِينَ نَسُوهُ مِنْ قَبْلُ قَدْ جَاءَتْ رُسُلُ رَبِّنَا بِالْحَقِّ فَهَلْ لَنَا مِنْ شُفَعَاءَ فَيَشْفَعُوا لَنَا اَوْ نُرَدُّ فَنَعْمَلَ غَيْرَ الَّذِي كُنَّا نَعْمَلُ قَدْ خَسِرُوا اَنْفُسَهُمْ وَضَلَّ عَنْهُمْ مَا كَانُوا يَفْتَرُونَ ﴿٥٣﴾

53- "Fakat onlar, onun tevilinden başka bir şey beklemiyorlar. Tevili geldiği gün, önceden onu unutmuş olanlar derler ki: 'Doğrusu Rabbimizin elçileri gerçeği getirmişlerdir. Şimdi bizim şefaatçilerimiz var mı ki bize şefaat etsinler veya dünyaya geri

döndürülmemiz mümkün mü ki yapmış olduğumuz amellerden başkasını yapalım?' Onlar, cidden kendilerine yazık ettiler ve uydurdukları şeyler de kendilerinden kaybolup gitti.

Gaybın celali görünüp şüphe örtüleri kalplerinden kalktığı zaman, ne ağlamaları fayda verir, ne duaları duyulur, ne şikâyetleri yükselir, ne de sıkıntıları sonu bulur.

اِنَّ رَبَّكُمُ اللّٰهُ الَّذ۪ي خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ ف۪ي سِتَّةِ اَيَّامٍ ثُمَّ اسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ يُغْشِي الَّيْلَ النَّهَارَ يَطْلُبُهُ حَث۪يثًا وَالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ وَالنُّجُومَ مُسَخَّرَاتٍ بِاَمْرِه۪ اَلَا لَهُ الْخَلْقُ وَالْاَمْرُ تَبَارَكَ اللّٰهُ رَبُّ الْعَالَم۪ينَ ﴿٥٤﴾

54- "Şüphesiz ki Rabbiniz, gökleri ve yeri altı günde yaratan, sonra Arş'a istiva eden, geceyi, durmadan kendisini kovalayan gündüze bürüyüp örten, güneşi, ayı ve yıldızları emrine boyun eğmiş durumda yaratan Allah'tır. Bilesiniz ki, yaratmak da emretmek de O'na mahsustur. Âlemlerin Rabbi Allah ne yücedir!

Allah, kendini yaratıklarına, fiillerinden ibaret olan ve kudretini gösteren açık ayetleriyle tanıtmıştır. Havastan yaratıklarına ise kendini, lütuf ve iltifatlarından ibaret olan ve yardımına delalet eden ayetleriyle tanıtırken, havassın havassının sırlarına cemali ve celalinden ibaret olan zati sıfatlarıyla görünmüştür. Bu kesimler arasında ise büyük mesafe bulunmaktadır.

Sonra nasıl ki Allah, zahirde gündüzü geceyle, geceyi de gündüzle örtüyorsa, aynı şekilde bastı kabzla, kabzı da bastla örtebilmektedir. Bunda aynı zamanda kalplerin gecesine ve gündüzüne de işaret vardır. Bu çerçevede kullardan kimisinin hallerinin tamamı kabz, kimisinin hallerinin tamamı bast, kimisinin de bazen kabz bazen de bast olur. Tıpkı kâinatın bazı yerlerinde gecesiz gündüz, bazı yerlerinde gündüzsüz gece var iken, bazı yerlerinde de gündüzü gece, geceyi de gündüz örtmektedir.

(اَلَا لَهُ الْخَلْقُ وَالْاَمْرُ ) *"Bilesiniz ki, yaratmak da emretmek de O'na mahsustur."*

O halde hayır da, şer de, fayda da, zarar da O'ndandır. Çünkü yaratmak da, emretmek de O'na mahsustur.

(تَبَارَكَ اللّٰهُ رَبُّ الْعَالَمِينَ) *"Âlemlerin Rabbi Allah ne yücedir!"* Bu cümle, en kapsamlı duadır. Çünkü Allah'ın kıdemini ve varlığının kalıcılığını ifade etmektedir.

Aynı zamanda bu cümle, İzzetin vasıflarını hak etmesi demek olan celalinin manasını da ifade eder. Çünkü O, yücelik vasfına sahip olmuştur. Bir de bu cümle, nimet ve iyiliklerin bahşedilmesine de işaret etmektedir. Çünkü cümlede yer alan (تَبَارَكَ ) "tebâreke" lafzının kökü olan "bereket" sözcüğü artış demektir. İşte bu nedenle söz konusu cümle, Allah'a dönük sena ve methin tamamını kapsamaktadır.

اُدْعُوا رَبَّكُمْ تَضَرُّعًا وَخُفْيَةً اِنَّهُ لَا يُحِبُّ الْمُعْتَدِينَ ﴿٥٥﴾

55- "Rabbinize yalvara yakara ve gizlice dua edin. Bilesiniz ki O, haddi aşanları sevmez."

Duanın emredilmesi, meşakkat sahipleri için teselliye dair bir izin mesabesindedir. Çünkü onlar, meşakkatleri geçip umduklarını buluncaya kadar teselliyi dua halindeki münacatın vereceği huzurda aramışlardır. Nitekim dua, ihtiyaç sahiplerinin dinlencesi ve yükümlülük sahiplerinin rahatıdır. Ve ünsiyete çabucak ulaştırır. Bir kul, duasında ihlâslı olduğu sürece mutlaka Allah (c.c.) anında onun kalbini rahatlatmıştır.

Bir yoruma göre de Allah: (تَضَرُّعًا وَخُفْيَةً ) *"Yalvara yakara ve gizlice"* buyurmak suretiyle onlara duanın adabını öğretmiştir. Duanın bu adabı, insanların ihtiyaç, tevazu ve mecburiyet vasfıyla dua etmeleridir. Allah'ın insana dönük kerem sıfatının sabit olmasının vardığı bir nokta da, insanın, kendisi için zorunlu olan duadan geri durmasını haddi aşması olarak kabul etmesidir.

وَلَا تُفْسِدُوا فِي الْاَرْضِ بَعْدَ اِصْلَاحِهَا وَادْعُوهُ خَوْفًا وَطَمَعًا اِنَّ
رَحْمَتَ اللّٰهِ قَر۪يبٌ مِنَ الْمُحْسِن۪ينَ ﴿٥٦﴾

56- "Islah edilmesinden sonra, yeryüzünde bozgunculuk yapmayın. Korkarak ve rahmetini umarak Allah'a dua edin. Muhakkak ki, iyilik edenlere Allah'ın rahmeti çok yakındır."

Islahtan sonraki bozgunculuğun bir türü de, ağzına gem vurarak nefsi, aykırılıklar meydanında cirit atmaktan bir süre alıkoyduktan sonra, üzerinden sorumluluk perdesini indirip çabalardan uzak tutmaktır. Diğer bozgunculuklar ise şunlardır:

- Kalbi, müridlik vasıfları üzerinde tuttuktan sonra heves vadilerinde salıvermek,

- Hakları yerine getirdikten sonra nefsin arzularına dönüş yapmak,

- Kendisinden başka kimseyi sevmemeye dair olarak Allah'a söz verdikten sonra yaratıklara dönük sevgi duygularına sahip olmak,

- Nefsi, öncelikli ve en zor olana bağlı kalmaya yönelttikten sonra arayış yolunda ruhsatları kollamaya meyletmek,

- Allah'a her türlü arzuyu terk etme sözü verdikten sonra bir makam veya ikram talep etme arzusuyla alçalmak,

- Kısacası daha yüksek bir noktadan daha alçak bir noktaya dönüş, ıslahtan sonra yeryüzünde bozgunculuk demektir.

(اِنَّ رَحْمَتَ اللّٰهِ قَر۪يبٌ مِنَ الْمُحْسِن۪ينَ) *"Muhakkak ki, iyilik edenlere Allah'ın rahmeti çok yakındır."*

Bu konuda şu yorumlar yapılmıştır:

- Hem amelleri hem de emelleri bakımından iyi olanlar. Birinci gruptakiler abidler, ikinci gruptakiler ise asilerdir.

- İyilik eden, kalbiyle hazır olup Rabbinden gafil olmayan ve O'nun hakkını unutmayan kimsedir.

- İyilik eden, gerekli olan hakları yerine getiren kimsedir.

- İyilik eden, imkân ölçüsünde bir kelimelik dahi olsa, iyiliğin dışına çıkmayan kimsedir.

وَهُوَ الَّذ۪ي يُرْسِلُ الرِّيَاحَ بُشْرًا بَيْنَ يَدَيْ رَحْمَتِه۪ۜ حَتّٰٓى اِذَٓا اَقَلَّتْ سَحَابًا ثِقَالًا سُقْنَاهُ لِبَلَدٍ مَيِّتٍ فَاَنْزَلْنَا بِهِ الْمَٓاءَ فَاَخْرَجْنَا بِه۪ مِنْ كُلِّ الثَّمَرَاتِۜ كَذٰلِكَ نُخْرِجُ الْمَوْتٰى لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُونَ ﴿٥٧﴾

57- “Rüzgârları, rahmetinin önünde müjde olarak gönderen O’dur. Sonunda rüzgârlar, ağır bulutları yüklenince, onu ölü bir memlekete sevk ederiz. Orada suyu indirir ve onunla türlü türlü meyveler çıkarırız. İşte ölüleri de böyle çıkaracağız. Herhalde bundan ibret alırsınız.”

Allah’a yakınlığın müjdeleri ilerler ve tatlı esintisi sırların menfezlerine nüfuz eder. Aynı şekilde yüz çevirmenin eserleri de ilerleyerek içerde kabzın karanlığını meydana getirir. Böylece yabancılaşmanın gölgesi önünde, vuslat esintisi ise arkasındadır.

(حَتّٰٓى اِذَٓا اَقَلَّتْ سَحَابًا ثِقَالًا سُقْنَاهُ لِبَلَدٍ مَيِّتٍ فَاَنْزَلْنَا بِهِ الْمَٓاءَ فَاَخْرَجْنَا بِه۪ مِنْ كُلِّ الثَّمَرَاتِۜ كَذٰلِكَ نُخْرِجُ الْمَوْتٰى لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُونَ) *“Sonunda rüzgârlar, ağır bulutları yüklenince, onu ölü bir memlekete sevk ederiz. Orada suyu indirir ve onunla türlü türlü meyveler çıkarırız. İşte ölüleri de böyle çıkaracağız. Herhalde bundan ibret alırsınız.”*

Ayet, hicrana maruz kalan kimsede, göğsüne acı veren, ruhu yara bere içinde bırakan ve bedende çözülmeye yol açan bir durumun meydana geldiğine işaret etmektedir. Hatta uzaklık, bedenin tamamını işlemez hale getirir. Sonra yakınlığa mazhar olur ve bunun üzerine vuslatının filizi çürümenin ardından yeniden canlanır ve enkaza dönüşmüş hali düşüşten sonra tekrar ayağa kalkar.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Kefenleri giydirilen kimse gibiydik*
*Ve yaklaştırılmıştı tabut mezara*
*Derken hareketlendi ruh bedeninde*
*Ve doğuşa döndürdü vuslat onu*

وَالْبَلَدُ الطَّيِّبُ يَخْرُجُ نَبَاتُهُ بِاِذْنِ رَبِّهِ وَالَّذِي خَبُثَ لَا يَخْرُجُ اِلَّا
نَكِدًا كَذٰلِكَ نُصَرِّفُ الْاٰيَاتِ لِقَوْمٍ يَشْكُرُونَ ﴿٥٨﴾

58- "Rabbinin izniyle güzel memleketin bitkisi güzel çıkar. Kötü olandan ise faydasız bitkiden başka bir şey çıkmaz. İşte biz, şükreden bir kavim için ayetleri böyle açıklıyoruz."

Asıl temiz olduğu zaman ürün gelişir. Öz, kötü olduğu zaman ise ondan türeyen şey iyi olmaz. Eğer asli unsur iyi ise parçası da aslına benzer. Dış görünüş, iç görünüşü yansıtır. Bu itibarla kalbinin içi duru olan kimsenin fiilinin zahiri de temiz olur. Aksine olanın durumu ise bunun zıttı olur.

لَقَدْ اَرْسَلْنَا نُوحًا اِلٰى قَوْمِهِ فَقَالَ يَا قَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَكُمْ مِنْ اِلٰهٍ
غَيْرُهُ اِنّ۪ٓي اَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمٍ عَظ۪يمٍ ﴿٥٩﴾

59- "Andolsun ki, Nuh'u elçi olarak kavmine gönderdik. Dedi ki: 'Ey kavmim! Allah'a kulluk edin. Sizin O'ndan başka tanrınız yoktur. Doğrusu ben, üstünüze gelecek büyük bir günün azabından korkuyorum.'"

Hz. Nuh, peygamberliği tebliğ etti, ancak ortaya koyduğu nimetler onlarda başarı sağlamadı. Çünkü kaderce mahrum olan kimseye, tedbire dönük çaba fayda vermez.

قَالَ الْمَلَاُ مِنْ قَوْمِه۪ٓ اِنَّا لَنَرٰيكَ ف۪ي ضَلَالٍ مُب۪ينٍ ﴿٦٠﴾ قَالَ يَا قَوْمِ
لَيْسَ ب۪ي ضَلَالَةٌ وَلٰكِنّ۪ي رَسُولٌ مِنْ رَبِّ الْعَالَم۪ينَ ﴿٦١﴾

60, 61- "Kavminden ileri gelenler dediler ki: 'Biz, seni gerçekten apaçık bir sapıklık içinde görüyoruz.' Dedi ki: 'Ey kavmim! Bende herhangi bir sapıklık yoktur. Fakat ben, âlemlerin Rabbi tarafından gönderilmiş bir elçiyim.'"

(لَيْسَ بِي ضَلَالَةٌ) *"Bende herhangi bir sapıklık yoktur."* Onlar, Hz. Nuh'a sapıklık isnat ettiler. Bunun üzerine Hz. Nuh, onlara cevap vermeyi üzerine alarak: *"Ey kavmim! Bende herhangi bir sapıklık yoktur"* dedi. Oysa bizim peygamberimize isnatta bulunulunca, Allah, onun yerine cevap vererek: (مَا ضَلَّ صَاحِبُكُمْ وَمَا غَوٰى) *"Arkadaşınız (Muhammed) sapmadı ve bâtıla inanmadı"* (Necm, 53/2) buyurdu. Kendini savunan ile Rabbinin savunup suçsuz ilan ettiği kimse arasında ise büyük fark vardır.

اُبَلِّغُكُمْ رِسَالَاتِ رَبّ۪ي وَاَنْصَحُ لَكُمْ وَاَعْلَمُ مِنَ اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ﴿٦٢﴾

62- "Size, Rabbimin vahiy ettiklerini duyuruyorum ve sizin bilmediklerinizi, Allah'tan gelen vahiy ile biliyorum."

Ben biliyorum ki, peygamberliği duyurmada abartılı da davransam, kaderinde şakilik yazılmış olan kimseye nasihatim fayda vermeyecek ve sözüm onu etkilemeyecektir. Böylece kaderin düşürdüğü kimseyi nasihat ayağa kaldıramaz.

اَوَعَجِبْتُمْ اَنْ جَٓاءَكُمْ ذِكْرٌ مِنْ رَبِّكُمْ عَلٰى رَجُلٍ مِنْكُمْ لِيُنْذِرَكُمْ وَلِتَتَّقُوا وَلَعَلَّكُمْ تُرْحَمُونَ ﴿٦٣﴾

63- "Allah'ın azabından sakınıp da rahmete nail olmanız ümidiyle, içinizde sizi uyaracak bir adam vasıtasıyla size bir zikir gelmesine şaştınız mı?"

Onlar bir şahsın Allah'ın elçisi olmasına şaştılar ancak putun Allah'a ortak olmasına şaşmadılar. İşte bu, aşırı cehaletin ve ahmaklığın son haddidir.

فَكَذَّبُوهُ فَاَنْجَيْنَاهُ وَالَّذ۪ينَ مَعَهُ فِي الْفُلْكِ وَاَغْرَقْنَا الَّذ۪ينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا اِنَّهُمْ كَانُوا قَوْمًا عَم۪ينَ ﴿٦٤﴾

64- "Onu yalanladılar, biz de onu ve onunla beraber gemide bulunanları kurtardık. Ayetlerimizi yalanlayanları da suda boğduk. Çünkü onlar, kör bir kavim idiler."

Onlar, cezayı tattıklarında yalanlamanın sonucunu yaşıyorlardı. Bu nedenle taşıdıklarıyla mutlu olamadılar ve umduklarına erişemediler.

وَاِلٰى عَادٍ اَخَاهُمْ هُودًا قَالَ يَا قَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَكُمْ مِنْ اِلٰهٍ غَيْرُهُ
اَفَلَا تَتَّقُونَ ﴿٦٥﴾ قَالَ الْمَلَاُ الَّذٖينَ كَفَرُوا مِنْ قَوْمِهٖٓ اِنَّا لَنَرٰيكَ فٖي
سَفَاهَةٍ وَاِنَّا لَنَظُنُّكَ مِنَ الْكَاذِبٖينَ ﴿٦٦﴾ قَالَ يَا قَوْمِ لَيْسَ بٖي سَفَاهَةٌ
وَلٰكِنّٖي رَسُولٌ مِنْ رَبِّ الْعَالَمٖينَ ﴿٦٧﴾ اُبَلِّغُكُمْ رِسَالَاتِ رَبّٖي وَاَنَا
لَكُمْ نَاصِحٌ اَمٖينٌ ﴿٦٨﴾ اَوَعَجِبْتُمْ اَنْ جَٓاءَكُمْ ذِكْرٌ مِنْ رَبِّكُمْ عَلٰى
رَجُلٍ مِنْكُمْ لِيُنْذِرَكُمْ وَاذْكُرُٓوا اِذْ جَعَلَكُمْ خُلَفَٓاءَ مِنْ بَعْدِ قَوْمِ نُوحٍ
وَزَادَكُمْ فِي الْخَلْقِ بَصْۜطَةً فَاذْكُرُٓوا اٰلَٓاءَ اللّٰهِ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿٦٩﴾

65, 66, 67, 68, 69- "Âd kavmine de kardeşleri Hûd'u gönderdik. O dedi ki: 'Ey kavmim! Allah'a kulluk edin, sizin O'ndan başka tanrınız yoktur. Hâlâ sakınmayacak mısınız!' Kavminden ileri gelen kâfirler dediler ki: 'Biz, seni kesinlikle bir beyinsizlik içinde görüyoruz ve gerçekten seni yalancılardan sanıyoruz.' Dedi ki: 'Ey kavmim ben beyinsiz değilim. Fakat ben, âlemlerin Rabbinin gönderdiği bir elçiyim. Size, Rabbimin vahiy ettiklerini duyuruyorum ve ben sizin için güvenilir bir öğütçüyüm. Sizi uyarmak için içinizden bir adam vasıtasıyla Rabbinizden size bir zikir gelmesine şaştınız mı? Düşünün ki O, sizi Nuh kavminden sonra onların yerine getirdi ve yaradılışta sizi onlardan üstün kıldı. O halde Allah'ın nimetlerini hatırlayın ki, kurtuluşa eresiniz."

Allah o kimselerin, seleflerinin ve kardeşlerinin yolunu izlediğini, bu yüzden aynı çukura düştüklerini ve aynı durumla karşılaştıklarını

haber vermektedir. O halde nefsinin arzusunu Allah'ın rızasına tercih eden kimsede hiçbir hayır yoktur. Nefsinin arzusunu Allah'ın hakkının önüne geçiren de asla kazançlı çıkmamıştır.

(وَاذْكُرُوٓا اِذْ جَعَلَكُمْ خُلَفَٓاءَ مِنْ بَعْدِ قَوْمِ نُوحٍ) *"Düşünün ki O, sizi Nuh kavminden sonra onların yerine getirdi."*

Allah, bazı yaratıklarını diğer bazısına halef kılmıştır. Bu nedenle onlardan bir grubu yok ettiğinde muhakkak onların yerine aynı cinsten başka bir grup ikame eder. Bu itibarla gaflet ehli münkariz olduklarında onların yerine başka bir kavim geçer. Vuslat ehli de yükselerek makam değiştirince onların yerine başkaları geçer. Bu çerçevede, yukarıya doğru bakarak büyüklerin yerine göz dikmek kula yakışmaz. Çünkü o makam, ehli tarafından doldurulmuştur. Bu nedenle, onların nöbeti bitmeden sıra bunlara gelmez.

(وَزَادَكُمْ فِي الْخَلْقِ بَصْطَةً) *"Ve yaradılışta sizi onlardan üstün kıldı."*

Allah, nasıl ki bir kavmi yaradılışta öncekilerden üstün kılmışsa, aynı şekilde bir kavmi de ahlakta öncekilerden üstün kılmıştır. Yine nasıl ki, bünyeleri bakımından iki şahıs arasında farklılık meydana getirmişse, aynı şekilde maneviyat bakımından da iki kavim arasında farklılık meydana getirmiştir.

(فَاذْكُرُوٓا اٰلَٓاءَ اللّٰهِ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ) *"O halde Allah'ın nimetlerini hatırlayın ki, kurtuluşa eresiniz."*

"Na'mâ" tabiri genel nimetleri, (اٰلَٓاءَ) "âlâ" tabiri ise özel nimetleri ifade eder. Birincisi, zevahiri rahatlatmayı içerirken, ikincisi sırlardaki işareti içermektedir. Birincisi, iyiliklerin varlığıyla rahatlatmak, diğeri ise sırların müşahedesiyle işarette bulunmak suretiyle gerçekleşir.

قَالُوٓا اَجِئْتَنَا لِنَعْبُدَ اللّٰهَ وَحْدَهُ وَنَذَرَ مَا كَانَ يَعْبُدُ اٰبَٓاؤُنَا فَأْتِنَا بِمَا
تَعِدُنَٓا اِنْ كُنْتَ مِنَ الصَّادِقِينَ ﴿٧٠﴾

70- "Dediler ki: 'Sen bize, tek Allah'a kulluk etmemiz ve atalarımızın tapmakta olduklarını bırakmamız için mi geldin? Eğer doğrulardan isen, bizi tehdit ettiğini bize getir.'"

Onlar, ayrılık vadilerinde şaşkına döndüler. Bu nedenle tevhid sahalarında karar kılamadıkları için, Allah'tan başkasından yüz çevirmek onlara zor geldi.

Şiir:

*Seni Musa kavminden arta kalan biri olarak görüyorum*
*Zira sabredemezler onlar bir yiyecekle yetinmeye*

Bir yoruma göre de, kimisi, tefrikanın aldatmasından kurtulamaz, kimisi de bir an bile tevhid çizgisinden ayrılmaz. İşte bu kimse, bir olan Allah'tan başkasına kulluk etmez. Bir olan Allah'tan başkasına kulluk etmediği gibi, O'ndan başka kimseyi de görmez.

Şiir:

*Bulamaz kalbim sizden başkasını*
*Çünkü kapanmıştır üstüne yol*

قَالَ قَدْ وَقَعَ عَلَيْكُمْ مِنْ رَبِّكُمْ رِجْسٌ وَغَضَبٌ اَتُجَادِلُونَنِي فِي
اَسْمَاءٍ سَمَّيْتُمُوهَا اَنْتُمْ وَاٰبَاؤُكُمْ مَا نَزَّلَ اللّٰهُ بِهَا مِنْ سُلْطَانٍ فَانْتَظِرُوا
اِنِّي مَعَكُمْ مِنَ الْمُنْتَظِرِينَ ﴿٧١﴾

71- "Hûd dedi ki: 'Üzerinize Rabbinizden bir azap ve bir hışım inmiştir. Haklarında Allah'ın hiçbir delil indirmediği, sadece sizin ve atalarınızın taktığı kuru isimler hususunda benimle tartışıyor musunuz? Bekleyin öyleyse, şüphesiz ben de sizinle bekleyenlerdenim.'"

Allah, bir kulu değerden düşürmek istediği zaman, onu tefrikanın ıssız çöllerinin içine atar. Bu arada Allah'ın gazabının ve yüz çevirişinin alametlerinden biri de, kulu başkalarını görmeye çevirmesi ve zanların denizlerinde boğmasıdır. Çünkü Allah'tan başkalarının var etme anlamında bir gerçekleştiriciliği yoktur.

فَاَنْجَيْنَاهُ وَالَّذٖينَ مَعَهُ بِرَحْمَةٍ مِنَّا وَقَطَعْنَا دَابِرَ الَّذٖينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا وَمَا كَانُوا مُؤْمِنٖينَ ﴿٧٢﴾

72- "Onu ve onunla beraber olanları rahmetimizle kurtardık ve âyetlerimizi yalanlayıp da iman etmeyenlerin kökünü kestik."

Peygamberlik mertebesi üstünde bir mertebe ve derecesinden daha yüksek bir derece yoktur.

Allah, kurtuluşun çalışmayla hak edilmediğini, lakin sadece Allah'ın lütfu ve rahmetiyle olduğu bilinsin diye, Hz. Hûd'u ve kendisiyle beraber iman edenleri rahmetiyle kurtardığını haber vermektedir. Bu itibarla, kurtulan ancak ve ancak Allah'ın lütfuyla kurtulmuştur.

وَاِلٰى ثَمُودَ اَخَاهُمْ صَالِحًا قَالَ يَا قَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَكُمْ مِنْ اِلٰهٍ غَيْرُهُ قَدْ جَٓاءَتْكُمْ بَيِّنَةٌ مِنْ رَبِّكُمْ هٰذِهٖ نَاقَةُ اللّٰهِ لَكُمْ اٰيَةً فَذَرُوهَا تَاْكُلْ فٖٓي اَرْضِ اللّٰهِ وَلَا تَمَسُّوهَا بِسُٓوءٍ فَيَاْخُذَكُمْ عَذَابٌ اَلٖيمٌ ﴿٧٣﴾

73- "Semûd kavmine de kardeşleri Salih'i gönderdik. De ki: 'Ey kavmim! Allah'a kulluk edin. Sizin O'ndan başka tanrınız yoktur. Size Rabbinizden açık bir delil gelmiştir. O da size bir mucize olarak Allah'ın şu devesidir. Onu bırakın. Allah'ın arzında yesin, içsin. Ona kötülük etmeyin. Sonra sizi elem verici bir azap yakalar.'"

Allah, peygamberlerin dinleri arasında prensip farklılıkları meydana getirmekle birlikte, tevhidde onları birleştirmiştir. İbadetlerden ibaret olan bu prensipler farklıdır, ancak peygamberlerin tamamı, aynı şekilde tevhidle memurdurlar.

Sonra Allah, peygamberler göndermek suretiyle sünnetini icra edişinden ve ümmetlerine, onların mucizelerine bakma fırsatı verdiğinden söz etmiştir.

Daha sonra da, kavminin elinden çektiği bela konusunda Hz. Peygamber'i teselli etmek için o ümmetlerin, kendi peygamberlerini yalanlamayı alışkanlık haline getirdiklerinden haber vermiştir.

وَاذْكُرُوٓا اِذْ جَعَلَكُمْ خُلَفَٓاءَ مِنْ بَعْدِ عَادٍ وَبَوَّاَكُمْ فِي الْاَرْضِ
تَتَّخِذُونَ مِنْ سُهُولِهَا قُصُورًا وَتَنْحِتُونَ الْجِبَالَ بُيُوتًا فَاذْكُرُوٓا اٰلَٓاءَ
اللّٰهِ وَلَا تَعْثَوْا فِي الْاَرْضِ مُفْسِدِينَ ﴿٧٤﴾

74- “Düşünün ki, Allah Âd kavminden sonra yerlerine sizi getirdi ve yeryüzünde sizi yerleştirdi. Onun düzlüklerinde saray yapıyorsunuz. Dağlarında evler yontuyorsunuz. Artı Allah’ın nimetlerini hatırlayın da yeryüzünde fesatçılar olarak karışıklıklar çıkarmayın.”

Allah, geniş anlatımıyla onların bahanelerini yok etmiştir. Allah, durumlarına uygun olarak kendilerini nimetlere sahip kılmak suretiyle hallerinde bolluk vermiştir. Ne var ki onlar, ne delil düşünmüş ne Allah’ın yoluna bağlı kalmış ne nimetin kadrini bilmiş ne de lütfuna şükürde bulunmuşlardır. İşte bunun üzerine benzerlerinin başına gelen bela onların da başına gelmiş oldu.

قَالَ الْمَلَاُ الَّذِينَ اسْتَكْبَرُوا مِنْ قَوْمِهِ لِلَّذِينَ اسْتُضْعِفُوا لِمَنْ اٰمَنَ
مِنْهُمْ اَتَعْلَمُونَ اَنَّ صَالِحًا مُرْسَلٌ مِنْ رَبِّهِ قَالُوٓا اِنَّا بِمَٓا اُرْسِلَ بِهِ
مُؤْمِنُونَ ﴿٧٥﴾ قَالَ الَّذِينَ اسْتَكْبَرُوٓا اِنَّا بِالَّذِٓي اٰمَنْتُمْ بِهِ كَافِرُونَ
﴿٧٦﴾ فَعَقَرُوا النَّاقَةَ وَعَتَوْا عَنْ اَمْرِ رَبِّهِمْ وَقَالُوا يَا صَالِحُ ائْتِنَا بِمَا
تَعِدُنَٓا اِنْ كُنْتَ مِنَ الْمُرْسَلِينَ ﴿٧٧﴾ فَاَخَذَتْهُمُ الرَّجْفَةُ فَاَصْبَحُوا
فِي دَارِهِمْ جَاثِمِينَ ﴿٧٨﴾ فَتَوَلّٰى عَنْهُمْ وَقَالَ يَا قَوْمِ لَقَدْ اَبْلَغْتُكُمْ
رِسَالَةَ رَبِّي وَنَصَحْتُ لَكُمْ وَلٰكِنْ لَا تُحِبُّونَ النَّاصِحِينَ ﴿٧٩﴾

75, 76, 77, 78, 79- "Kavminin ileri gelenlerinden büyüklük taslayanlar, içlerinden zayıf görülen inananlara dediler ki: 'Siz, Salih'in, Rabbi tarafından gönderildiğini biliyor musunuz?' Onlar da: 'Şüphesiz biz, onunla ne gönderilmişse, ona inananlarız' dediler. Büyük taslayanlar dediler ki: 'Biz de sizin inandığınızı inkâr edenleriz.' Derken o dişi deveyi ayaklarını keserek öldürdüler ve Rablerinin emrinden dışarı çıktılar da: 'Ey Salih! Eğer sen, gerçekten peygamberlerden isen, bizi tehdit ettiğin azabı bize getir' dediler. Bunun üzerine onları, o gürültülü sarsıntı yakaladı da yurtlarında diz üstü donakaldılar. Salih, o zaman onlardan yüz çevirdi ve şöyle dedi: 'Ey kavmim! And olsun ki ben size, Rabbimin vahiy ettiklerini tebliğ ettim ve size öğüt verdim. Fakat siz, öğüt verenleri sevmiyorsunuz.'"

Allah prensibini, lütuf, güzel muamele ve iltifatını sadece O'na yüceltme nazarıyla bakan kimseye has kılma ve bu kimseyi emsalleri arasında öne çıkarmama şeklinde icra etmektedir. Nitekim her peygamberin yardımcıları, sadece o vaktin zayıfları olmuştur. Gaflet ehli de onlara küçümseyici gözle bakarlar. Ancak durum, ne vehimlerdeki gibi ne de insanların haklarında düşündükleri gibidir. Doğrusu, cevherler madenlerinde saklıdırlar. Yerlerin değeri de sakinleriyledir.

Hz. Peygamber şöyle buyurur: *"Nice başı üstü perişan insan vardır ki, eğer Allah'a yemin ederse, Allah yeminini kabul edecektir."*

(وَنَصَحْتُ لَكُمْ وَلٰكِنْ لَا تُحِبُّونَ النَّاصِحِينَ) *"Ve size öğüt verdim. Fakat siz, öğüt verenleri sevmiyorsunuz."* Düşündükleri tedbir, nefsin arzusuna uymaya davet etmektedir. Bu nedenle nefis, nasihat edenlerin sözünü ağır bulmaktadır. Bu nefsin sahibi kimseler de, nasihat edenleri ayıplayan gibi görerek kendilerine karşı çıkmaktadırlar.

وَلُوطًا اِذْ قَالَ لِقَوْمِه۪ٓ اَتَاْتُونَ الْفَاحِشَةَ مَا سَبَقَكُمْ بِهَا مِنْ
اَحَدٍ مِنَ الْعَالَم۪ينَ ﴿٨٠﴾ اِنَّكُمْ لَتَاْتُونَ الرِّجَالَ شَهْوَةً مِنْ دُونِ
النِّسَٓاءِۜ بَلْ اَنْتُمْ قَوْمٌ مُسْرِفُونَ ﴿٨١﴾ وَمَا كَانَ جَوَابَ قَوْمِه۪ٓ

اِلَّٓا اَنْ قَالُوٓا اَخْرِجُوهُمْ مِنْ قَرْيَتِكُمْ اِنَّهُمْ اُنَاسٌ يَتَطَهَّرُونَ ﴿٨٢﴾ فَاَنْجَيْنَاهُ وَاَهْلَهُٓ اِلَّا امْرَاَتَهُ كَانَتْ مِنَ الْغَابِرِينَ ﴿٨٣﴾ وَاَمْطَرْنَا عَلَيْهِمْ مَطَرًا فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُجْرِمِينَ ﴿٨٤﴾

80, 81, 82, 83, 84- "Lût'u da peygamber gönderdik. Kavmine dedi ki: 'Sizden önceki milletlerden hiç birinin yapmadığı fuhşu mu yapıyorsunuz? Çünkü siz, şehveti tatmin için kadınları bırakıp da şehvetle erkeklere yanaşıyorsunuz. Doğrusu siz, taşkın bir milletsiniz.' Kavminin cevabı: 'Onları memleketinizden çıkarın. Çünkü onlar fazla temizlenen insanlarmış' demelerinden başka bir şey olmadı. Biz de onu ve karısından başka aile efradını kurtardık. Çünkü karısı, geride kalanlardan (kâfirlerden) idi. Ve üzerlerine taş yağmuru yağdırdık. Bak ki, günahkârların sonu nasıl oldu!"

Allah, dinde mazereti ortadan kaldıracak şeyi mubah kıldı. O halde kim bunu aşar ve nefsin arzusu üzere yürürse değersizlikle karşılaşır, zelil olmayı hak eder ve kendi eliyle kendini küçük düşürmüş olur.

وَاِلٰى مَدْيَنَ اَخَاهُمْ شُعَيْبًا قَالَ يَا قَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَكُمْ مِنْ اِلٰهٍ غَيْرُهُ قَدْ جَٓاءَتْكُمْ بَيِّنَةٌ مِنْ رَبِّكُمْ فَاَوْفُوا الْكَيْلَ وَالْمِيزَانَ وَلَا تَبْخَسُوا النَّاسَ اَشْيَٓاءَهُمْ وَلَا تُفْسِدُوا فِي الْاَرْضِ بَعْدَ اِصْلَاحِهَا ذٰلِكُمْ خَيْرٌ لَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ﴿٨٥﴾

85- "Medyene de kardeşleri Şuayb'ı gönderdik. Dedi ki: 'Ey kavmim! Allah'a kulluk edin, sizin O'ndan başka tanrınız yoktur. Size Rabbinizden açık bir delil gelmiştir. Artık ölçüyü, tartıyı tam yapın. İnsanların eşyalarını eksik vermeyin. Düzeltilmesinden sonra yeryüzünde bozgunculuk yapmayın. Eğer inananlar iseniz, bunlar sizin için daha hayırlıdır.'"

Şuayb'in kavminin kişilikleri zayıfladığı için muameleleri esnasında ölçüde ve tartıda hile yapmakla tatmin oldular. Sonra Allah, kişilerin değerlerinin konumlarına göre olmadığının bilinmesi için, bu konuda onlara müsamaha göstermedi.

وَلَا تَقْعُدُوا بِكُلِّ صِرَاطٍ تُوعِدُونَ وَتَصُدُّونَ عَنْ سَبِيلِ
اللّٰهِ مَنْ اٰمَنَ بِهٖ وَتَبْغُونَهَا عِوَجًا وَاذْكُرُٓوا اِذْ كُنْتُمْ قَلِيلًا
فَكَثَّرَكُمْ وَانْظُرُوا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُفْسِدِينَ ﴿٨٦﴾ وَاِنْ كَانَ
طَٓائِفَةٌ مِنْكُمْ اٰمَنُوا بِالَّذِٓي اُرْسِلْتُ بِهٖ وَطَٓائِفَةٌ لَمْ يُؤْمِنُوا
فَاصْبِرُوا حَتّٰى يَحْكُمَ اللّٰهُ بَيْنَنَا وَهُوَ خَيْرُ الْحَاكِمِينَ ﴿٨٧﴾

86, 87- "Tehdit ederek, inananları Allah yolundan alıkoyarak ve o yolu eğip bükmek isteyerek öyle her yolun başında oturmayın. Düşünün ki siz az idiniz de O sizi çoğalttı. Bakın ki, bozguncuların sonu nasıl olmuştur! Eğer içinizden bir grup, benimle gönderilene inanır, bir grup da inanmazsa, Allah aranızda hükmedinceye kadar bekleyin. O, hâkimlerin en iyisidir."

Bazı günahlar vardır ki, sahibiyle sınırlı kalmayıp başkasına da bulaşır. Sonra başkasına bulaştığı oranda bulaştırana zarar verir.

(وَاذْكُرُٓوا اِذْ كُنْتُمْ قَلِيلًا فَكَثَّرَكُمْ وَانْظُرُوا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُفْسِدِينَ وَاِنْ كَانَ طَٓائِفَةٌ مِنْكُمْ اٰمَنُوا بِالَّذِٓي اُرْسِلْتُ بِهٖ وَطَٓائِفَةٌ لَمْ يُؤْمِنُوا فَاصْبِرُوا حَتّٰى يَحْكُمَ اللّٰهُ بَيْنَنَا وَهُوَ خَيْرُ الْحَاكِمِينَ) *"Düşünün ki siz az idiniz de O sizi çoğalttı. Bakın ki, bozguncuların sonu nasıl olmuştur! Eğer içinizden bir grup, benimle gönderilene inanır, bir grup da inanmazsa, Allah aranızda hükmedinceye kadar bekleyin. O hâkimlerin en iyisidir."*

Allah, sayılarını çoğaltmakla kendilerine lütufta bulunmuştur. Çünkü yardımlaşmayla işler yürür ve maksatlar hâsıl olur.

Bir yoruma göre de, ister iyilik ister kötülük olsun, her şey taraftarlar ve yardımcılar ile gerçekleşir. Bu nedenle taraftarların iyilikte

ittifak etmesinden daha üstün bir nimet, kötülükte ittifak etmelerinden de daha büyük bir meşakkat yoktur.

قَالَ الْمَلَأُ الَّذِينَ اسْتَكْبَرُوا مِنْ قَوْمِهِ لَنُخْرِجَنَّكَ يَا شُعَيْبُ
وَالَّذِينَ اٰمَنُوا مَعَكَ مِنْ قَرْيَتِنَآ اَوْ لَتَعُودُنَّ فِي مِلَّتِنَا قَالَ اَوَلَوْ كُنَّا
كَارِهِينَ ﴿٨٨﴾

88- "Kavminden ileri gelen kibirliler dediler ki: 'Ey Şuayb! Seni ve seninle beraber inananları memleketimizden kesinlikle çıkaracağız veya dinimize döneceksiniz.' Şuayb: 'İstemesek de mi?' dedi."

Nasıl ki hayır ehli kimseler, benzerlerinden başkasına meyletmiyorlarsa, kötülük ehli de, içinde bulundukları durumda kendilerine yardımcı olanlardan başka kimseye yardım etmezler. Ancak emsalsiz kişi, benzerlerinden farklı davranabilendir.

قَدِ افْتَرَيْنَا عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا اِنْ عُدْنَا فِي مِلَّتِكُمْ بَعْدَ اِذْ نَجّٰينَا اللّٰهُ
مِنْهَا وَمَا يَكُونُ لَنَآ اَنْ نَعُودَ فِيهَآ اِلَّآ اَنْ يَشَآءَ اللّٰهُ رَبُّنَا وَسِعَ رَبُّنَا
كُلَّ شَيْءٍ عِلْمًا عَلَى اللّٰهِ تَوَكَّلْنَا رَبَّنَا افْتَحْ بَيْنَنَا وَبَيْنَ قَوْمِنَا بِالْحَقِّ
وَاَنْتَ خَيْرُ الْفَاتِحِينَ ﴿٨٩﴾

89- "Doğrusu Allah, bizi ondan kurtardıktan sonra, tekrar sizin dininize dönersek, Allah'a karşı yalan uydurmuş oluruz. Rabbimiz Allah dilemiş başka, yoksa ona geri dönmemiz, bizim için olacak şey değildir. Rabbimizin ilmi her şeyi kuşatmıştır. Biz, sadece Allah'a dayanırız. Rabbimiz! Bizimle kavmimiz arasında adaletle hükmet! Sen, hükmedenlerin en hayırlısısın."

Niyetlerinin doğruluğundan söz ederek: (قَدِ افْتَرَيْنَا عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا اِنْ عُدْنَا فِي مِلَّتِكُمْ) *"Tekrar sizin dininize dönersek, Allah'a karşı yalan uydurmuş oluruz"* dedikten sonra: (بَعْدَ اِذْ نَجّٰينَا اللّٰهُ مِنْهَا) *"Allah, bizi ondan*

*kurtardıktan sonra*" diyerek şükrü ikrar ettiler. Daha sonra kendi güç ve kuvvetlerinden arınarak şöyle dediler: (وَمَا يَكُونُ لَنَا اَنْ نَعُودَ فِيهَٓا اِلَّٓا اَنْ يَشَٓاءَ اللّٰهُ رَبُّنَا) "*Rabbimiz Allah dilemiş başka, yoksa ona geri dönmemiz, bizim için olacak şey değildir.*" Yani eğer Allah, bize perişanlık elbisesi giydirirse, tekrar küçülmüş ve değerden düşmüş oluruz.

Sonra onlar, güzel tevekkülü arzulayarak: (عَلَى اللّٰهِ تَوَكَّلْنَا) "*Biz, sadece Allah'a tevekkül ederiz*" dediler. Yani sadece O'na güvenir ve sadece O'ndan iyilik umarız.

Sonra işlerini Allah'a bırakarak: (رَبَّنَا افْتَحْ بَيْنَنَا وَبَيْنَ قَوْمِنَا بِالْحَقِّ) "*Rabbimiz! Bizimle kavmimiz arasında adaletle hükmet*" dediler. Bunun üzerine Allah, güzel koruma ve yeterlilikle onların imdadına yetişti.

وَقَالَ الْمَلَاُ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ قَوْمِهِ لَئِنِ اتَّبَعْتُمْ شُعَيْبًا اِنَّكُمْ اِذًا لَخَاسِرُونَ ﴿٩٠﴾ فَاَخَذَتْهُمُ الرَّجْفَةُ فَاَصْبَحُوا فِي دَارِهِمْ جَاثِمِينَ ﴿٩١﴾

90, 91- "Kavminden ileri gelen kâfirler dediler ki: 'Eğer Şuayb'e uyarsanız, o takdirde siz mutlaka ziyana uğrarsınız.' Derken o şiddetli deprem, onları yakalayıverdi de yurtlarında diz üstü donakaldılar."

Kendi aralarında peygamberlerini yalanlamayı bir birlerine tavsiye ettiler ve bir kısmı, peygambere uymakla fitnenin vaki olacağını hissettiğine işarette bulundu. Oysa onlar, hükümlerinde hata içinde ve zanlarında batıl üzere idiler. Böylece anlaşıldı ki, her nasihatin kabulü gerekmez ve her tavsiyeye uymak yerinde olmaz.

اَلَّذِينَ كَذَّبُوا شُعَيْبًا كَاَنْ لَمْ يَغْنَوْا فِيهَا اَلَّذِينَ كَذَّبُوا شُعَيْبًا كَانُوا هُمُ الْخَاسِرِينَ ﴿٩٢﴾

92- "Şuayb'ı yalanlayanlar, sanki yurtlarında hiç oturmamış gibiydiler. Asıl ziyana uğrayanlar, Şuayb'ı yalanlayanların kendileridir."

Kendi zamanlarında galebe onların elindeydi. Lakin günleri yok olunca şöhretleri düştü, anılmaz oldular ve onlarda bir şeyler vehmedenlerin bulutları dağılmış oldu.

(اَلَّذِينَ كَذَّبُوا شُعَيْبًا كَانُوا هُمُ الْخَاسِرِينَ) *"Asıl ziyana uğrayanlar, Şuayb'ı yalanlayanların kendileridir."*

Hak, her konuda galip, bâtıl ise her vasfıyla yok olup gidicidir. Bu arada izzet, varlığı ezeli olan Allah'a mahsus, celal da gerçekten hükümdar olan Allah'ın hakkı olduğuna göre, kudrete karşı çokluğun ne etkisi olur?! Ve ezelin karşısında bahanelerin ne önemi olur?!

Şu dizeler de buna yakın anlamda söylenmiştir:

*Kılıcı çekilmiş olarak beni karşıladı*
*Ve: Birimiz kınanmıştır, dedi,*

فَتَوَلّٰى عَنْهُمْ وَقَالَ يَا قَوْمِ لَقَدْ اَبْلَغْتُكُمْ رِسَالَاتِ رَبّ۪ي وَنَصَحْتُ لَكُمْ فَكَيْفَ اٰسٰى عَلٰى قَوْمٍ كَافِر۪ينَ ﴿٩٣﴾

93- "Şuayb, onlardan yüz çevirdi ve içinden dedi ki: 'Ey kavmim! Ben size Rabbimin gönderdiği gerçekleri duyurdum ve size öğüt verdim. Artık kâfir bir kavme nasıl acırım?!'"

Allah, Hz. Şuayb'ın, emrin sınırına riayet ettiğini açıklamaktadır. Böylece o, tebliğ yükümlüğünü yerine getirdiği zaman, artık onların ikrarından veya inkârından, tevhidlerinden veya reddedişlerinden kendisi sorumlu olmaz. Bu durumda eğer onlar iyilik yaparlarsa, güzel miras onların olur. Yok eğer kötülük yaparlarsa, acı verici zarar da onlara ait olur. Kaldı ki, varlıkların sahibi olan Allah, onlara başkalarından daha layıktır. Nitekim yaratıklar O'nun yaratıkları, mülk de O'nun mülküdür. Dilerse onları hidayet eder, dilerse saptırır. O halde yok olmalarına üzülmek gerekmez ve herhangi bir varlığın da etkisi olmaz.

وَمَٓا اَرْسَلْنَا ف۪ي قَرْيَةٍ مِنْ نَبِيٍّ اِلَّٓا اَخَذْنَٓا اَهْلَهَا بِالْبَاْسَٓاءِ وَالضَّرَّٓاءِ لَعَلَّهُمْ
يَضَّرَّعُونَ ﴿٩٤﴾ ثُمَّ بَدَّلْنَا مَكَانَ السَّيِّئَةِ الْحَسَنَةَ حَتّٰى عَفَوْا وَقَالُوا قَدْ
مَسَّ اٰبَٓاءَنَا الضَّرَّٓاءُ وَالسَّرَّٓاءُ فَاَخَذْنَاهُمْ بَغْتَةً وَهُمْ لَا يَشْعُرُونَ ﴿٩٥﴾

94, 95- "Biz, hangi ülkeye bir peygamber gönderdiysek, ora halkını, peygambere başkaldırdıklarından ötürü, bize yalvarıp yakarsınlar diye mutlaka yoksulluk ve darlıkla sıkmışızdır. Sonra kötülüğü değiştirip yerine iyiliği getirdik. Nihayet çoğaldılar ve 'Atalarımız da böyle sıkıntı ve sevinç yaşamışlardı' dediler. Biz de onları, kendileri farkına varmadan ansızın yakaladık."

Daha ağır musibetten sakındırmak için Allah onları daha hafif bir musibetle sarsmıştır. Onlar, sapıklıklarına devam edip gafletlerinden uyanmayınca, Allah, yaptıklarına hemen karşılık vermek için, üzerlerine yanıltıcı nimetlerin gölgesini düşürdü ve tefrika sebeplerini genişletti. Onlar, gönüllerini dünyanın yaverliğine tam olarak kaptırıp sürüp gitme hayaline meylettikleri sırada, Allah karşılarına, takdirin derinliklerinden hayatı kendilerine dar kılan şeyler çıkardı ve sevincin boynu ansızın kırılmış oldu. Daha önce hayal badelerinden içmekle itibar kazanırken, gündüzlerin aydınlığı yalnızlık karanlığına dönüştü ve ezeli takdire uygun olarak, duru pınarları musibetlerin eliyle bulanmış oldu.

وَلَوْ اَنَّ اَهْلَ الْقُرٰٓى اٰمَنُوا وَاتَّقَوْا لَفَتَحْنَا عَلَيْهِمْ بَرَكَاتٍ مِنَ
السَّمَٓاءِ وَالْاَرْضِ وَلٰكِنْ كَذَّبُوا فَاَخَذْنَاهُمْ بِمَا كَانُوا يَكْسِبُونَ
﴿٩٦﴾ اَفَاَمِنَ اَهْلُ الْقُرٰٓى اَنْ يَاْتِيَهُمْ بَاْسُنَا بَيَاتًا وَهُمْ نَٓائِمُونَ ﴿٩٧﴾

96, 97- "O peygamberlerin gönderildiği ülkelerin halkı inansalar ve günahtan sakınsalardı, elbette onların üstüne gökten ve yerden nice bereket kapıları açardık. Fakat yalanladılar, biz de ettikleri yüzünden onları yakalayıverdik. Yoksa o ülkelerin halkı,

geceleyin uyurlarken kendilerine azabımızın gelmeyeceğinden emin mi oldular."

Eğer onlar, Allah'a iman edip şirkten sakınsalardı, elbette nimetlerin vesileleri ve maddi nimetten daha mükemmel olan rızanın kapılarıyla onların üstüne gökten ve yerden nice bereketler açardık. Ancak kader, ezelde bunun aksine gerçekleşmiştir.

Bir yoruma göre de, dikkate alınması gereken nimet değil, nimetteki berekettir. Bu nedenle Allah: Onlara nimeti ikiye katladık, dememiş; fakat verdiğimizi bereketli kıldık, buyurmuştur.

اَوَ اَمِنَ اَهْلُ الْقُرٰىٓ اَنْ يَاْتِيَهُمْ بَاْسُنَا ضُحًى وَهُمْ يَلْعَبُونَ ﴿٩٨﴾

98- "Ya da o ülkelerin halkı kuşluk vakti eğlenirlerken kendilerine azabımızın gelmeyeceğinden emin mi oldular?"

Musibet, çoğunlukla ehlinin gafleti halinde ve ansızın iner.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Gecelemekten sakınan kimse, uykuda huzur bulmaz.

- Sevinçle başlayan nice gece vardır ki, ıstırapla noktalanmıştır.

- Güneşi mutluluk tepesinden doğan nice gün vardır ki, öğlesi fitnenin kopuşuyla başlar.

اَفَاَمِنُوا مَكْرَ اللّٰهِ فَلَا يَاْمَنُ مَكْرَ اللّٰهِ اِلَّا الْقَوْمُ الْخَاسِرُونَ ﴿٩٩﴾

99- "Allah'ın azabından emin mi oldular? Fakat ziyana uğrayan topluluktan başkası, Allah'ın böyle mühlet vermesinden emin olamaz."

Kim, Allah'ın kadrinin yüceliğini bilirse, görünmeyen musibetinden korkar. Görünmeyen musibetinden emin olan kimse ise yüce kadrini unutur.

اَوَلَمْ يَهْدِ لِلَّذِينَ يَرِثُونَ الْاَرْضَ مِنْ بَعْدِ اَهْلِهَآ اَنْ لَوْ نَشَآءُ اَصَبْنَاهُمْ
بِذُنُوبِهِمْ وَنَطْبَعُ عَلٰى قُلُوبِهِمْ فَهُمْ لَا يَسْمَعُونَ ﴿١٠٠﴾

100- "Önceki sahiplerinden sonra yeryüzüne vâris olanlara hala şu gerçek belli olmadı mı ki: Eğer biz dileseydik, onları da günahlarından dolayı musibetlere uğratırdık. Biz onların kalplerini mühürleriz de onlar, gerçekleri işitmezler."

Uzun süreli örtmemizle mağrur olanlar, dilediğimiz takdirde kendilerini cezalandırmayı çabuklaştırabildiğimizi ve köklerini kazabildiğimizi, sonra da ne pişmanlıklarının fayda vereceğini ne de acılarının dindirileceğini bilmezler mi?

تِلْكَ الْقُرٰى نَقُصُّ عَلَيْكَ مِنْ اَنْبَٓائِهَا وَلَقَدْ جَٓاءَتْهُمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنَاتِ فَمَا كَانُوا لِيُؤْمِنُوا بِمَا كَذَّبُوا مِنْ قَبْلُ كَذٰلِكَ يَطْبَعُ اللّٰهُ عَلٰى قُلُوبِ الْكَافِرِينَ ﴿١٠١﴾

101- "İşte o ülkeler... Onların haberlerinden bir kısmını sana anlatıyoruz. Andolsun ki peygamberleri onlara apaçık deliller getirmişlerdi. Fakat önceden yalanladıkları gerçeklere iman edecek değillerdi. İşte kâfirlerin kalplerini Allah böyle mühürler.

Onlar, isyanda tek bir yol izlediler, inkârda ve idraksizlikte aynı çizgide birleştiler. Böylece ne imana meylettiler ne de düşmanlıktan dönüş yaptılar. İşte kaderinde şakilik geçkesinleşmiş ve hakkında azap hükmü karara bağlanmış olan kimsenin durumu budur.

وَمَا وَجَدْنَا لِاَكْثَرِهِمْ مِنْ عَهْدٍ وَاِنْ وَجَدْنَٓا اَكْثَرَهُمْ لَفَاسِقِينَ ﴿١٠٢﴾

102- "Onların çoğunda sözünde durma diye bir şey bulamadık. Gerçek şu ki, onların çoğunu yoldan çıkmış bulduk."

İradelerine hainlik hâkim olmuş ve vefa semasındaki ışıkları kaybolmuştur. Bu nedenle onların çoğu, ahde riayeti yitirmiş ve Allah tarafından onlar hakkında reddedilmişlik kader olarak kesinleşmiştir.

Bir yoruma göre de, Allah, çoğunluklarını azınlıklarına şikâyet etmiştir. Bu itibarla çoğunluk, kaderin reddettiği kimseler iken, azınlık vuslatın kabul ettikleridir.

ثُمَّ بَعَثْنَا مِنْ بَعْدِهِمْ مُوسٰى بِاٰيَاتِنَٓا اِلٰى فِرْعَوْنَ وَمَلَا۬ئِهٖ فَظَلَمُوا بِهَا
فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُفْسِدِينَ ﴿١٠٣﴾

103- "Sonra onların ardından Musa'yı mucizelerimizle Firavun ve kavmine gönderdik de o mucizeleri inkâr ettiler. Ama bak ki, fesatçıların sonu ne oldu!"

Günleri geçince ve onlar kabul makamına ayak basmaktan geri kalınca, Allah, peygamberi Hz. Musa'yı gönderdi ve yanına seçkin kulu Harun'u verdi. Ancak yalanlama ve inkârla karşılandılar. Böylece Allah, o kimselere de kardeşlerine uyguladığı cezalandırma ve uzaklaştırma yöntemini uyguladı.

وَقَالَ مُوسٰى يَا فِرْعَوْنُ اِنّ۪ي رَسُولٌ مِنْ رَبِّ الْعَالَم۪ينَ ﴿١٠٤﴾ حَق۪يقٌ
عَلٰٓى اَنْ لَٓا اَقُولَ عَلَى اللّٰهِ اِلَّا الْحَقَّ قَدْ جِئْتُكُمْ بِبَيِّنَةٍ مِنْ رَبِّكُمْ
فَاَرْسِلْ مَعِيَ بَن۪ٓي اِسْرَٓائ۪يلَ ﴿١٠٥﴾ قَالَ اِنْ كُنْتَ جِئْتَ بِاٰيَةٍ فَأْتِ بِهَٓا
اِنْ كُنْتَ مِنَ الصَّادِق۪ينَ ﴿١٠٦﴾

104, 105, 106- "Musa dedi ki: 'Ey Firavun! Ben, Âlemlerin Rabbi tarafından gönderilmiş bir peygamberim. Allah hakkında gerçekten başkasını söylememek, benim üzerime borçtur. Size Rabbinizden açık bir delil getirdim. İsrail oğullarını benimle bırak.' Firavun dedi ki: 'Eğer bir mucize getirdiysen ve gerçekten doğru söylüyorsan onu göster bakalım!'"

Allah'ın kelamını vasıtasız dinledikten sonra, Firavun'u Allah'a davet etmek zor ve çetin bir iştir. Lakin Allah'ın emri öyle gelince Hz. Musa onu hüsnü kabul ile karşılamıştır. Bu çerçevede Hz. Musa, nefsini tercih etmeyi terk edince Allah onu teyit nuruyla desteklemiş ve o, Firavun'u ilahi takdirde bir hiç olarak görmüş ve: (حَق۪يقٌ عَلٰٓى اَنْ لَٓا اَقُولَ عَلَى اللّٰهِ اِلَّا الْحَقَّ) *"Allah hakkında gerçekten başkasını söylememek, benim üzerime borçtur"* demiştir. Bu arada ezeli varlık âleminde

yaratıklar bir hiç mesabesinde oldukları halde, onların aleyhinde bile bir şey söylemesi doğru olmadığına göre, cemin hakikatleri içinde tefrikanın eserlerinin hangi hâkimiyeti olabilir!

(قَالَ اِنْ كُنْتَ جِئْتَ بِاٰيَةٍ فَاْتِ بِهَٓا اِنْ كُنْتَ مِنَ الصَّادِقِينَ) *"Firavun dedi ki: 'Eğer bir mucize getirdiysen ve gerçekten doğru söylüyorsan onu göster bakalım!'"* Mücerret iddianın hiçbir delil değerinin olmadığı, bilinen hususlardandır. Lakin bir delil ortaya çıktığı zaman hakka boyun eğmekten başka çare kalmaz. Bu nedenle kim, teslim olursa kurtulur, kim de izah tablosu ortaya çıktıktan sonra hakikatleri inkâr ederse, bir daha ayağa kalkmayacak şekilde düşer.

فَاَلْقٰى عَصَاهُ فَاِذَا هِيَ ثُعْبَانٌ مُبِينٌ ﴿١٠٧﴾

107- "Bunun üzerine Musa asasını yere attı. O, hemen apaçık bir ejderha oluverdi."

Allah'ın, Hz. Musa'ya mucizeyi asasından yaratması, asasıyla uzun süre hemhal olmasından ötürüdür. Çünkü insan alışık olduğu şeyde kalbiyle daha çok huzur bulur. Bu arada Hz. Musa, asadaki değişikliği görünce, kaçmaya başladı. Çünkü o, bunu hakikatlerin kahrından sanmıştı. Bunda her ne olursa olsun, bir şeyde huzur bulmanın yanılgı ve gaflet olduğuna işaret vardır. Çünkü kulun değişmesi kudretin kabzasındadır. Kul da değişmenin esiridir. Bir de varlıkta, hiçbir şekilde tamaha cevaz verilmez.

وَنَزَعَ يَدَهُ فَاِذَا هِيَ بَيْضَٓاءُ لِلنَّاظِرِينَ ﴿١٠٨﴾

108- "Ve elini cebinden çıkardı. Birden bire o da seyredenlere bembeyaz görünüverdi."

Her ne kadar asa, belli bir zamanda Hz. Musa ile beraber olmuşsa da eli organı olduğu için daha da ona has bir şeydir. Böylece Allah, ona önce kendisine ait işaretlerden birini tecelli ettirdikten sonra, bu kez özünden ona bir mucize gösterdi. Bununla Hz. Musa, son mucizenin ona daha uygun düştüğünü anlamış oldu. Aynı

zamanda o, elindeki durum değişikliğini görünce, hiçbir işinin kendi elinde olmadığını öğrendi.

قَالَ الْمَلَأُ مِنْ قَوْمِ فِرْعَوْنَ اِنَّ هٰذَا لَسَاحِرٌ عَلِيمٌ ﴿١٠٩﴾ يُرِيدُ اَنْ
يُخْرِجَكُمْ مِنْ اَرْضِكُمْ فَمَاذَا تَأْمُرُونَ ﴿١١٠﴾

109, 110- "Firavun'un kavminden ileri gelenler dediler ki: 'Bu, çok bilgili bir sihirbazdır. Sizi yurdunuzdan çıkarmak istiyor. Ne buyurursunuz?'"

Allah, bir kulun değerden düşmesini irade ettiği zaman, hakkın delilini güçlendirdiği oranda batıl ehlinin onun hakkındaki şüphesini de artırmaktadır. Bu nedenledir ki, Hz. Musa da çok mucize gösterdikçe, onların tevillere yeltenmedeki şaşkınlıkları da artmıştır.

قَالُوٓا اَرْجِهْ وَاَخَاهُ وَاَرْسِلْ فِي الْمَدَآئِنِ حَاشِرِينَ ﴿١١١﴾ يَأْتُوكَ بِكُلِّ
سَاحِرٍ عَلِيمٍ ﴿١١٢﴾

111, 112- "Dediler ki: 'Onu da kardeşini de beklet. Şehirlere toplayıcı memurlar yolla. Bütün bilgili sihirbazları sana getirsinler.'"

İnsanlar, bekletmek, tedbiri öncelemek, çaba harcamak ve kolları sıvamakla takdiri öne veya sona almak suretiyle değiştirebileceklerini vehmettiler. İlahî kazanın galip olduğunu, hükmün ezelden kesinleştiğini, gerçekleştiği zaman da bilgi, anlama, acelecilik ve halimliğin hiçbir hükmünün olmadığını bilemediler. Hayır hayır! Doğrusu O, bir, kahhar ve sonsuz ilim sahibi olan Allah'tır.

وَجَآءَ السَّحَرَةُ فِرْعَوْنَ قَالُوٓا اِنَّ لَنَا لَاَجْرًا اِنْ كُنَّا نَحْنُ الْغَالِبِينَ
﴿١١٣﴾ قَالَ نَعَمْ وَاِنَّكُمْ لَمِنَ الْمُقَرَّبِينَ ﴿١١٤﴾ قَالُوا يَا مُوسٰٓى اِمَّآ اَنْ
تُلْقِيَ وَاِمَّآ اَنْ نَكُونَ نَحْنُ الْمُلْقِينَ ﴿١١٥﴾ قَالَ اَلْقُوا فَلَمَّآ اَلْقَوْا
سَحَرُوٓا اَعْيُنَ النَّاسِ وَاسْتَرْهَبُوهُمْ وَجَآؤُ بِسِحْرٍ عَظِيمٍ ﴿١١٦﴾

113, 114, 115, 116- "Sihirbazlar Firavun'a geldi ve: 'Eğer üstün gelen biz olursak, bize kesin bir mükâfat var mı?' dediler. Firavun: 'Evet hem de siz mutlaka yakınlarımdan olacaksınız' dedi. Sihirbazlar: 'Ey Musa! Sen mi önce atacaksın yoksa atanlar biz mi olalım?' dediler. 'Siz atın' dedi. Onlar, atınca insanların gözlerini büyülediler. Onları korkuttular ve büyük bir sihir gösterdiler."

Onlar, yaptıkları sihirle galip olacaklarını sandılar ve ilahi kudretin onlardaki etkisinin, sihirlerinin etkisinden daha galip olduğunu ve kendi iç dünyalarında uydurdukları türlü türlü entrikaların onları bir şeyden koruyamayacağını bilemediler. Böylece onlar, tuzak kurdular da onlara aynıyla karşılık verildi.

Bu durum, şu dizelerde söylendiği gibidir:

*Bana, hedefini bulan oklar attı*
*Ben de ona kasten bir ok attım, fakat ıskaladı hedefi*

Onlar, tam da galibiyetin kendilerinde olduğunu zannederken, ansızın onlara karşı kudretin bilinmez alanlarından bir ordu çıkartıldı. Böylece kendilerini, ilahî iradenin kılıcıyla kahredilmiş olarak kudretin fethinde buldular.

وَاَوْحَيْنَٓا اِلٰى مُوسٰٓى اَنْ اَلْقِ عَصَاكَۚ فَاِذَا هِيَ تَلْقَفُ مَا يَأْفِكُونَۚ ﴿١١٧﴾ فَوَقَعَ الْحَقُّ وَبَطَلَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَۚ ﴿١١٨﴾ فَغُلِبُوا هُنَالِكَ وَانْقَلَبُوا صَاغِرِينَۚ ﴿١١٩﴾ وَاُلْقِيَ السَّحَرَةُ سَاجِدِينَۚ ﴿١٢٠﴾ قَالُٓوا اٰمَنَّا بِرَبِّ الْعَالَمِينَۙ ﴿١٢١﴾ رَبِّ مُوسٰى وَهٰرُونَ ﴿١٢٢﴾

117, 18, 119, 120, 121, 122- "Biz de Musa'ya: 'Asanı at' diye vahiy ettik. Bir de baktılar ki bu, onların uydurduklarını yakalayıp yutuyor. Böylece gerçek ortaya çıktı ve onların yapmakta oldukları yok olup gitti. İşte Firavun ve kavmi orada yenildi ve küçük düşerek geri döndüler. Sihirbazlar ise secdeye kapandılar. 'Musa ve Harun'un Rabbi olan Âlemlerine Rabbine inandık' dediler."

Sihirleriyle galip olduklarını kurguladılar. Bunun üzerine Allah, onların bu kurgularının üstüne hakkın kahrını indirdi, o tedbirler hedefine ulaşmadı, emelleri boşa çıktı ve Allah, sırlarını çarçabuk cezbetti. Böylece onlar, hakikatte dost iken baş düşman olmuşlardı. Şanı yüce Allah, düşmanı dost kılığında ortaya çıkarır, sonra hükmü değiştirerek dostu düşman kılığında ortaya çıkarır. Sonra durum, takdir edilenden başkasının gerçekleşmesine müsaade etmez.

قَالَ فِرْعَوْنُ اٰمَنْتُمْ بِهٖ قَبْلَ اَنْ اٰذَنَ لَكُمْۚ اِنَّ هٰذَا لَمَكْرٌ مَكَرْتُمُوهُ
فِي الْمَدٖينَةِ لِتُخْرِجُوا مِنْهَٓا اَهْلَهَاۚ فَسَوْفَ تَعْلَمُونَ ﴿١٢٣﴾ لَاُقَطِّعَنَّ
اَيْدِيَكُمْ وَاَرْجُلَكُمْ مِنْ خِلَافٍ ثُمَّ لَاُصَلِّبَنَّكُمْ اَجْمَعٖينَ ﴿١٢٤﴾

123, 124- "Firavun dedi ki: 'Ben, size izin vermeden ona iman mı ettiniz? Bu hiç şüphesiz şehirde halkını oradan çıkarmak için kurduğunuz bir tuzaktır. Ama yakında başınıza gelecekleri göreceksiniz. Mutlaka ellerinizi ve ayaklarınızı çaprazlama keseceğim, sonra da hepinizi asacağım.'"

Firavun, işi yapanın kendileri olduğuna inanarak sihirbazlara hitap etti. Oysa sihirbazlar, o sırların şekillerin kölesi olmaktan kurtulduğunu, kalplerinin tefrikanın pasından temizlendiğini ve irfan güneşinin sırlarının semasında doğduğunu biliyorlardı. Bu nedenle onlar, doğru bir nazarla hakkı şahit kıldılar ve ne nefsin korkutmalarının onlar üzerinde bir hâkimiyeti ne de hiçbir bahanenin geçerliliği kaldı.

قَالُٓوا اِنَّٓا اِلٰى رَبِّنَا مُنْقَلِبُونَۚ ﴿١٢٥﴾

125- "Dediler ki: 'Biz zaten Rabbimize döneceğiz.'"

Son varışları Allah'a olduğu için, O'na doğru olan seyirlerinde karşılaştıkları zorluklar da kendilerine kolay gelmiştir.

وَمَا تَنْقِمُ مِنَّٓا اِلَّٓا اَنْ اٰمَنَّا بِاٰيَاتِ رَبِّنَا لَمَّا جَٓاءَتْنَاۜ رَبَّنَٓا اَفْرِغْ عَلَيْنَا
صَبْرًا وَتَوَفَّنَا مُسْلِمٖينَ ﴿١٢٦﴾

126- "Sen, sadece Rabbimizin ayetleri bize geldiğinde, onlara inandığımız için bizden intikam alıyorsun. 'Ey Rabbimiz! Bize bol bol sabır ver ve Müslüman olarak canımızı al' dediler."

Onlar, Allah için amel edip Allah yolunda işkenceye uğrayınca, Allah'a giden yoldaki niyetlerinde samimi oldular ve yardımı da Allah'tan istediler. Zaten Allah için olan kimsenin şiarı, büsbütün Allah'a dayanmaktır.

وَقَالَ الْمَلَاُ مِنْ قَوْمِ فِرْعَوْنَ اَتَذَرُ مُوسٰى وَقَوْمَهُ لِيُفْسِدُوا فِي الْاَرْضِ وَيَذَرَكَ وَاٰلِهَتَكَ قَالَ سَنُقَتِّلُ اَبْنَٓاءَهُمْ وَنَسْتَحْيِي نِسَٓاءَهُمْ وَاِنَّا فَوْقَهُمْ قَاهِرُونَ ﴿١٢٧﴾

127- "Firavun'un kavminden ileri gelenler dediler ki: "Musa'yı ve kavmini, seni ve tanrılarını bırakıp yeryüzünde bozgunculuk çıkarsınlar diye mi bırakacaksın. ?" Firavun: "Biz, onların oğullarını öldürüp kadınlarını sağ bırakacağız. Elbette biz, onları ezecek üstünlükteyiz" dedi.

Taraftarları, Firavun'dan Hz. Musa ve kavmi hakkında daha kararlı davranmasını isteyince o da, acizliğini ikrar ve gücünün yetersizliğini itiraf etmeyi kabul etmeyerek Hz. Musa ve kavmini tehdit etti. Ancak Allah, aksine onun tedbirini aleyhine çevirdi ve ilahi takdirini ona galip kıldı.

قَالَ مُوسٰى لِقَوْمِهِ اسْتَعِينُوا بِاللّٰهِ وَاصْبِرُوا اِنَّ الْاَرْضَ لِلّٰهِ يُورِثُهَا مَنْ يَشَٓاءُ مِنْ عِبَادِهِ وَالْعَاقِبَةُ لِلْمُتَّقِينَ ﴿١٢٨﴾

128- "Musa kavmine dedi ki: 'Allah'tan yardım isteyin ve sabredin. Şüphesiz ki yeryüzü Allah'ındır. Kullarından dilediğini ona vâris kılar. Sonuç, Allah'tan korkup günahtan sakınanlarındır.'"

Hz. Musa, dönüşü Allah'a olduğu için, onları Allah'a havale etti ve bu amaçla şöyle dedi: İşlerimde çözümsüzlüğe düştüğüm zaman

dönüşüm Rabbimedir. O halde sizin de dönüşünüz ve tevekkülünüz O'na olsun. Bolluğunun esintilerine mazhar olmaya çalışın. Çünkü O, sabır ehli için güzel akıbete hükmetmiştir.

قَالُوٓا اُو۪ذ۪ينَا مِنْ قَبْلِ اَنْ تَأْت۪يَنَا وَمِنْ بَعْدِ مَا جِئْتَنَا قَالَ عَسٰى رَبُّكُمْ اَنْ يُهْلِكَ عَدُوَّكُمْ وَيَسْتَخْلِفَكُمْ فِي الْاَرْضِ فَيَنْظُرَ كَيْفَ تَعْمَلُونَ ﴿١٢٩﴾

129- "Onlar da: 'Sen bize peygamber olarak gelmeden önce de geldikten sonra da bize işkence edildi' dediler. Musa: 'Umulur ki, Rabbiniz düşmanınızı helak eder ve onların yerine sizi yeryüzüne hâkim kılar da nasıl hareket edeceğinize bakar' dedi."

Hakikati görmek, gözlerinden kaçtı ve gözleri görmez oldu. O kadar ki şöyle dediler: 'Üstümüze peş peşe belalar geldi. Sen varken bela vardır. Senden önce de mutsuzluk vardı. O halde lütuf nerede?' Bunun üzerine Hz. Musa onlara, belanın kaldırılacağına dair ümidi dile getiren: (عَسٰى رَبُّكُمْ اَنْ يُهْلِكَ عَدُوَّكُمْ) "*Umulur ki, Rabbiniz düşmanınızı helak eder*" şeklindeki cevabı vererek kendilerini beklemede tuttu. Her kim, sırların gözüyle görürse, kaderin tasarruflarını görmüş olur.

وَلَقَدْ اَخَذْنَآ اٰلَ فِرْعَوْنَ بِالسِّن۪ينَ وَنَقْصٍ مِنَ الثَّمَرَاتِ لَعَلَّهُمْ يَذَّكَّرُونَ ﴿١٣٠﴾

130- "Andolsun ki, biz de Firavun'a uyanları ders alsınlar diye yıllarca kuraklık ve mahsul kıtlığıyla cezalandırdık."

Allah, Firavun'un kavmine kat kat nimet vesilelerini verdikten sonra üzerlerindeki kudret baskısını şiddetlendirdi. Ne var ki, ne baskının şiddeti onları ıslah etti ne de nimet onları uyandırabildi. Hayır, aksine bir bolluğa kavuştuklarında ona hak ediş gözüyle bakar, bir darlık dokunduğu zaman da yanılgılarına uygun olarak onu Musa'nın uğursuzluğuna bağlarlardı.

فَاِذَا جَآءَتْهُمُ الْحَسَنَةُ قَالُوا لَنَا هٰذِهِ وَاِنْ تُصِبْهُمْ سَيِّئَةٌ يَطَّيَّرُوا بِمُوسٰى
وَمَنْ مَعَهُ اَلَٓا اِنَّمَا طَٓائِرُهُمْ عِنْدَ اللّٰهِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿١٣١﴾

131- "Onlara bir iyilik gelince: 'Bu, bizim hakkımızdır' derler. Eğer kendilerine bir fenalık gelirse, Musa ve onunla beraber onları uğursuz sayarlardı. Bilesiniz ki, onlara gelen uğursuzluk, Allah katındandır; fakat onların çoğu bunu bilmezler."

Nankör kimse, nimeti verenin lütfunu görmediğinden, iyiliğe hak ediş gözüyle bakar. Sonra kendisine hoşlanmadığı bir şey bulaştığı zaman da suçlamada bulunur ve işi kendi dileğine uygun yorumlar.

Şiir:

*Böyledir bezgin, kopmak istediği zaman*
*Usanır vuslattan ve: şöyle şöyle oldu, der*
*İyi insan ise sana dostluğunu armağan ettiği zaman*
*Örter kötülüğü ve ortaya çıkarır iyiliği*

(اِنَّمَا طَٓائِرُهُمْ عِنْدَ اللّٰهِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُونَ الْآيَةَ) *"Bilesiniz ki, onlara gelen uğursuzluk, Allah katındandır; fakat onların çoğu bunu bilmezler."*

Yaratan yegâne varlık bir olan Allah'tır. Fakat gözleri kapatılmış, akılları hakikati görmekten engellenmiş ve kavrayışları manaları idrak etmekten alıkonulmuştur.

وَقَالُوا مَهْمَا تَأْتِنَا بِهِ مِنْ اٰيَةٍ لِتَسْحَرَنَا بِهَا فَمَا نَحْنُ لَكَ بِمُؤْمِنِينَ ﴿١٣٢﴾

132- "Ve dediler ki: 'Bizi büyülemek için ne mucize getirirsen getir, biz sana inanacak değiliz.'"

Onlar, kibirlenmede ısrar etmeyi kendilerine şiar edindiler ve haddi şan ifadeleriyle örtülerini yırttılar.

فَاَرْسَلْنَا عَلَيْهِمُ الطُّوفَانَ وَالْجَرَادَ وَالْقُمَّلَ وَالضَّفَادِعَ وَالدَّمَ اٰيَاتٍ
مُفَصَّلَاتٍ فَاسْتَكْبَرُوا وَكَانُوا قَوْمًا مُجْرِمِينَ ﴿١٣٣﴾

133- "Biz de ayrı ayrı mucizeler olarak onların üzerine tufan, çekirge, haşere, kurbağalar ve kan gönderdik. Yine de büyüklük tasladılar ve günahkâr bir kavim oldular."

Onlar türlü türlü muhalefetlerde bulununca, Allah da onlara türlü türlü cezalar verdi. Böylece onlar ne tekfire döndüler, ne de temizlenmeye karşı koyabildiler. Kalplerinin, hakikatleri görmekten alıkonulmasıyla cezalandırıldılar. Bu ise, zahirleriyle ilgili çeşitli belalardan daha etkilidir. Allah'ın gözünden düşmekten Allah'a sığınırız.

وَلَمَّا وَقَعَ عَلَيْهِمُ الرِّجْزُ قَالُوا يَا مُوسَى ادْعُ لَنَا رَبَّكَ بِمَا عَهِدَ عِنْدَكَ لَئِنْ كَشَفْتَ عَنَّا الرِّجْزَ لَنُؤْمِنَنَّ لَكَ وَلَنُرْسِلَنَّ مَعَكَ بَنِي إِسْرَآءِيلَ ﴿١٣٤﴾

134- "Azap üzerlerine çökünce: 'Ey Musa! Sana verdiği söz hürmetine, bizim için Rabbine dua et. Eğer bizden azabı kaldırırsan, mutlaka sana inanacağız ve muhakkak İsrail oğullarını seninle göndereceğiz' dediler."

Onlar: Ey Musa! Bizim için Rabbimize dua et, demediler. Fakat: (ادْعُ لَنَا رَبَّكَ) "*Bizim için Rabbine dua et*" dediler. İşte onlar, bu tür zorlukları artırmakla daha çok uzaklaşıp yabancılaşmış oldular.

فَلَمَّا كَشَفْنَا عَنْهُمُ الرِّجْزَ اِلَى اَجَلٍ هُمْ بَالِغُوهُ اِذَا هُمْ يَنْكُثُونَ ﴿١٣٥﴾ فَانْتَقَمْنَا مِنْهُمْ فَاَغْرَقْنَاهُمْ فِي الْيَمِّ بِاَنَّهُمْ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا وَكَانُوا عَنْهَا غَافِلِينَ ﴿١٣٦﴾

135, 136- "Biz, ulaşacakları bir müddete kadar onlardan azabı kaldırınca hemen sözlerinden dönüverdiler. Biz de ayetlerimizi yalanlamaları ve onlardan gafil kalmaları sebebiyle, kendilerinden intikam aldık ve onları denizde boğduk."

Onlar, önce kesin söz verdiler, sonra onu bozup reddettiler.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Cehaletine döner dönüş yaptığı zaman*
*Hastalığı nükseden hasta gibi*
*Terk etmez ahlakını ihtiyar*
*Kabrinin toprağına gömülünceye dek*

وَاَوْرَثْنَا الْقَوْمَ الَّذِينَ كَانُوا يُسْتَضْعَفُونَ مَشَارِقَ الْاَرْضِ
وَمَغَارِبَهَا الَّتِي بَارَكْنَا فِيهَا وَتَمَّتْ كَلِمَتُ رَبِّكَ الْحُسْنٰى عَلٰى
بَنِيٓ اِسْرَٓاءِيلَ بِمَا صَبَرُوا وَدَمَّرْنَا مَا كَانَ يَصْنَعُ فِرْعَوْنُ وَقَوْمُهُ
وَمَا كَانُوا يَعْرِشُونَ ﴿١٣٧﴾

137- "Hor görülüp ezilmekte olan o kavmi (Yahudileri) de, içini bereketle doldurduğumuz yerin doğu taraflarına ve batı taraflarına mirasçı kıldık. Sabırlarına karşılık Rabbinin İsrail oğullarına verdiği güzel söz yerine geldi. Firavun ve kavminin yapmakta olduklarını ve yetiştirdikleri bahçeleri helak ettik."

Kim, Allah yolunda sıkıntıya katlanırsa, Allah onun başını irfanla taçlandırır. Zira Allah aziz olup dostlarına düşmanlarını güldürmez ve güzel sözünden ötürü mükâfatlarını boşa götürmez.

وَجَاوَزْنَا بِبَنِيٓ اِسْرَٓاءِيلَ الْبَحْرَ فَاَتَوْا عَلٰى قَوْمٍ يَعْكُفُونَ عَلٰٓى اَصْنَامٍ
لَهُمْ قَالُوا يَا مُوسَى اجْعَلْ لَنَٓا اِلٰهًا كَمَا لَهُمْ اٰلِهَةٌ قَالَ اِنَّكُمْ قَوْمٌ
تَجْهَلُونَ ﴿١٣٨﴾ اِنَّ هٰٓؤُلَٓاءِ مُتَبَّرٌ مَا هُمْ فِيهِ وَبَاطِلٌ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٣٩﴾

138, 139- "İsrail oğullarını denizden geçirdik. Orada kendilerine mahsus birtakım putlara tapan bir kavme rastladılar. Bunun üzerine: 'Ey Musa! Onların tanrıları olduğu gibi, sen de bizim için bir tanrı yap!' dediler. Musa: 'Gerçekten siz cahil bir toplumsunuz' dedi. Şüphesiz bunların içinde bulundukları din yıkılmıştır. Yapmakta oldukları da bâtıldır."

Tevhidin hakikatleri, kalplerinde durulmadığı için nefisleri Allah'tan başkasına ibadet etmeyi arzuladı. O kadar ki Peygamberleri Musa'ya: (اجْعَلْ لَنَآ اِلٰهًا كَمَا لَهُمْ اٰلِهَةٌ) *"Onların tanrıları olduğu gibi, sen de bizim için bir tanrı yap!"* dediler. İşte kalbi, uğraş ve bahanelerden, benzer ve emsallerde huzur aramaktan arınmayan kimsenin özelliği budur.

Bir yoruma göre de, putun, kendi mabudu olmasını arzu eden kimsenin Allah'a yönelik niyetinin temiz olması nasıl düşünülebilir!

قَالَ اَغَيْرَ اللّٰهِ اَبْغِيكُمْ اِلٰهًا وَهُوَ فَضَّلَكُمْ عَلَى الْعَالَمِينَ ﴿١٤٠﴾

140- "Musa dedi ki: 'Allah, sizi âlemlere üstün kılmışken ben size Allah'tan başka bir tanrı mı arayayım?'"

Allah, onları yoktan var edenin yalnızca kendisi olduğunu ve kendisinden başka yaratma gücüne sahip hiçbir tanrının bulunmadığını kendilerine hatırlatmış, onlar üzerindeki büyük nimetine ve onlar için tamamladığı nimetinin hakkının, ona başkasını dost ve tanrı edinmekle karşılık vermek olmadığına dikkatlerini çekmiştir.

وَاِذْ اَنْجَيْنَاكُمْ مِنْ اٰلِ فِرْعَوْنَ يَسُومُونَكُمْ سُوٓءَ الْعَذَابِ يُقَتِّلُونَ
اَبْنَآءَكُمْ وَيَسْتَحْيُونَ نِسَآءَكُمْ وَفِي ذٰلِكُمْ بَلَآءٌ مِنْ رَبِّكُمْ عَظِيمٌ ﴿١٤١﴾

141- "Hatırlayın ki, size işkencenin en kötüsünü yapan Firavun'un adamlarından sizi kurtardık. Onlar, oğullarınızı öldürüyorlar, kadınlarınızı sağ bırakıyorlardı. İşte bunda size Rabbiniz tarafından büyük bir imtihan vardır."

Hz. Musa, Allah'ın onlar üzerindeki nimetlerini sayıp bu nimetlerin büyüklüğüne dikkatlerini çektikçe, inkârları ve irfan noktasından uzaklaşmaları kat kat artıyordu. Bu da Allah'ın ezelden beri koparma ve reddetmeyle imtihan ettiği kimsenin belirtisidir.

وَوٰعَدْنَا مُوسٰى ثَلٰثِينَ لَيْلَةً وَاَتْمَمْنَاهَا بِعَشْرٍ فَتَمَّ مِيقَاتُ رَبِّهٖٓ اَرْبَعِينَ لَيْلَةً وَقَالَ مُوسٰى لِاَخِيهِ هٰرُونَ اخْلُفْنِي فِي قَوْمِي وَاَصْلِحْ وَلَا تَتَّبِعْ سَبِيلَ الْمُفْسِدِينَ ﴿١٤٢﴾

142- "Musa'ya otuz gece vade verdik ve ona on gece daha ilave ettik. Böylece Rabbinin tayin ettiği vakit kırk geceyi buldu. Musa, kardeşi Harun'a dedi ki: 'Kavmimin içinde benim yerime geç, onları ıslah et, bozguncuların yoluna uyma.'"

Dostların sözü azizdir. Bu nedenle dostlar arasında randevulaşma gerçekleştiği zaman bu, ne şekilde olursa olsun tatlı ve zevklidir.

Şiir:

*Oyala bizi ey sevgili ve savsakla!*
*Söz ver bize ve yerine getirme!*

Bir yoruma göre de Allah, Hz. Musa'ya bu sözü, bir daha kendini ona dinletmek için vermiştir. Çünkü birincisinde Allah, söz vermeksizin onu dinletmeyle imtihan etti. Bu nedenle Musa'da herhangi bir beklenti ve ümit mevcut değildi. Böylece ilahi hitabı duyması, Hz. Musa'nın kalbini bütün olarak etkiledi ve Allah, ümidi kendisine gerekçe kılmak için kalbini bilinen mikata bağladı. Sonra Hakk'ın vaadi, doğruluktan başka ihtimal taşımaz. Bunun üzerine Hz. Musa'nın kalbi adı geçen mikatla rahatladı. Sonra otuz gece geçince tıpkı vaatte geçtiği gibi geldi. Bu sırada Allah, onun için on gece daha ekledi. Dostların prensibi hariç, aslında sözü yerine getirmeyi geciktirmek makbul bir durum değildir. Dostlar arasında ise geciktirme uygulamadan daha caziptir.

Şu dizeler de buna yakın anlamda söylenmiştir:

*Hayatın hakkı için kal, bizi terk etme*
*Ümitlendir bizi sonra da oyala*
*Bir söz ver bize dilediğin sürece, kuşkusuz biz*
*Seviyoruz, bize söz verirken oyalasan da*
*Ya yerine getirirsin sözünü ya da kuşkusuz biz*
*Sana ümit bağlayarak bir süre yaşarız*

(وَقَالَ مُوسٰى لِاَخِيهِ هٰرُونَ اخْلُفْنِي فِي قَوْمِي وَاَصْلِحْ وَلَا تَتَّبِعْ سَبِيلَ الْمُفْسِدِينَ) *"Musa, kardeşi Harun'a dedi ki: 'Kavmimin içinde benim yerime geç, onları ıslah et, bozguncuların yoluna uyma!'"*

Harun, güzel ahlak ile donatılmıştı. Firavun'a gidileceği zaman, Hz. Musa, Harun'un kendisine arkadaş olmasını isteyerek: (وَاَخِي هٰرُونُ هُوَ اَفْصَحُ مِنِّي لِسَانًا) *"Kardeşim Harun dil bakımından benden daha fasihtir"* (Kasas, 28/34), dedikten sonra: (وَاَشْرِكْهُ فِي اَمْرِي) *"Onu işime ortak kıl"* (Tâhâ, 20/32), dedi. Hz. Musa, ilahî hitabı dinlemeye gidince Harun'u kendinden ayırarak: Kavmimin arasında benim yerimde kal, dedi. Bu durum, Harun'un fedakârlığının, sabırlı davranmasının ve razı olmasının son sınırıdır. Nitekim; "Senin kavmin arasında kalmam. Neden Firavun'a giderken beni götürdüğün gibi, şimdi de beraberinde götürmüyorsun" demedi. Aksine sabretti ve gerekene rıza gösterdi. Bu da dostların en ağır imtihanlarındandır.

Sonra Hz. Musa, hitabı dinlemekten dönüp kavminin buzağıya taptığını görünce, kardeşinin başından tutup kendine doğru çekti. O kadar ki, Harun kendisiyle yumuşak bir dille konuşarak: "Ey annemin oğlu! Başımdan ve sakalımdan tutma" dedi.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Eğer Harun: "Şayet sen, kaçırdığım arkadaşlığını telafi etmiyorsan, hiç olmazsa zerre ve habbe kadar dahi suçlu olmadığım bir hususta bana itapta bulunma" deseydi yeri idi.

- Günah İsrail oğullarından meydana gelmişti. İtap ise Harun'a yöneldi. Olay bu şekilde olmuştur. Bu itibarla, asi olup suç işleyen herkes, itabı hak etmez. Böylece itap yabancılardan engellenmiştir.

وَلَمَّا جَٓاءَ مُوسٰى لِمِيقَاتِنَا وَكَلَّمَهُ رَبُّهُ قَالَ رَبِّ اَرِنِٓي اَنْظُرْ اِلَيْكَ
قَالَ لَنْ تَرٰيِنِي وَلٰكِنِ انْظُرْ اِلَى الْجَبَلِ فَاِنِ اسْتَقَرَّ مَكَانَهُ فَسَوْفَ
تَرٰيِنِي فَلَمَّا تَجَلّٰى رَبُّهُ لِلْجَبَلِ جَعَلَهُ دَكًّا وَخَرَّ مُوسٰى صَعِقًا فَلَمَّٓا
اَفَاقَ قَالَ سُبْحَانَكَ تُبْتُ اِلَيْكَ وَاَنَا۬ اَوَّلُ الْمُؤْمِنِينَ ﴿١٤٣﴾

143- "Musa, tayin ettiğimiz vakit Tûr'a gelip de Rabbi onunla konuşunca: 'Rabbim, bana kendini göster, seni göreyim' dedi. Rabbi: 'Sen beni asla göremezsin. Fakat şu dağa bak! Eğer o yerinde durabilirse, sen de beni göreceksin.' Buyurdu. Rabbi, o dağa tecelli edince, onu paramparça etti. Musa da baygın düştü. Ayılınca dedi ki: 'Seni noksan sıfatlardan tenzih ederim, sana tevbe ettim. Ben inananların ilkiyim.'"

Hz. Musa, çok arzulu ve adeta kendinden geçmiş halde geldi. Musa, Musa'sız geldi. Musa, Musa'dan Musa'ya hiçbir şey kalmamış olarak geldi. Binlerce adam uzun mesafeler katettiler, ancak kimse onlardan söz etmedi. Bu Musa ise birkaç adım attı ve çocuklar kıyamete kadar: (وَلَمَّا جَآءَ مُوسٰى لِمِيقَاتِنَا وَكَلَّمَهُ رَبُّهُ) "*Musa, tayin ettiğimiz vakit Tûr'a gelip de Rabbi onunla konuşunca*" diye okumaya devam edeceklerdir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Hz. Musa Allah'ın mikatına geldiğinde ilahi hitabı duymakla dengesini kaybederek kendine hâkim olamadı ve: (قَالَ رَبِّ اَرِنٖيٓ اَنْظُرْ اِلَيْكَ) "*Rabbim, bana kendini göster, seni göreyim*" dedi. Çünkü vecdin kendisine galebe çalan halleri, şuhud yoluyla tam vuslat isteğini dile getirmesine yol açtı.

Şu dizelerde de öyle söylenmiştir:

*Ayrılmam ben bir gün arzu oldukça*
*Çadırlar çadırlara yaklaştığı zaman*

- Hz. Musa, ilahî hitabı duyduğu esnada kendinden geçti ve söylediğini söylemiş oldu. Kendinden geçen kimse, söylediğinden sorumlu tutulmaz. Nitekim görüldüğü üzere, Kur'an'ın ifadesinde ona yönelik bir harfle bile itap sözü yer almamıştır.

- Hz. Musa, duymanın cazibesine kapılınca, cömertçe gelen ilahi feyiz ve engin vuslat halinin bir sonucu olarak dili kontrolünden çıkmış oldu.

- Hz. Musa, mikat esnasında dile getirmek istediği pek çok söz derledi. Çünkü anlatıldığına göre o vaat günlerinde Hakk'ın sözlerini

alıyor ve tanıdıklarına şöyle diyordu: Sizin Allah'a bir ihtiyacınız var mıdır? O'na söyleyecek bir sözünüz var mıdır? Çünkü ben, O'nunla münacata gitmek istiyorum.

Sonra gelip hitabı duyunca, içinde hazırladığı, kavminden aldığı ve kalbinde derlediği sözlerden hiçbir şey, bir harf bile hatırlayamadı. Aksine sadece o esnada kalbine hâkim olanı dile getirerek: (رَبِّ اَرِنِي اَنْظُرْ اِلَيْكَ) "*Rabbim, bana kendini göster, seni göreyim*" dedi.

Şu dizeler de bu anamda söylenmiştir:

*Leyla! Benim nice önemli ihtiyacım vardır ki*
*Onun ne olduğunu bilemiyorum size geldiğimde, Leyla!*

- Halkın sevgiliyi en çok arzu edeni, onların sevgiliye en yakın olanıdır. İşte Musa, Allah'ın selamı üzerine olsun, köklü bir vuslat halindeydi, münacat mahallinde durmaktaydı, dostluğun örtüleriyle kuşatılmıştı, kendisine var olmanın apaçık tecellileri hâkim olmuştu ve aynı anda, adeta hakikatten kopmuş gibi: "*Rabbim, bana kendini göster, seni göreyim*" diyordu. Lakin mana ehli olanlar, içtikçe susuzlukları artar, sevdaları arttıkça da arzuları artar. Çünkü kemalden başka bir yolla vuslata erişilemez. Allah da has kullarının sırlarını, bezginliğin bulaşmasından korur.

- Hz. Musa, muhtaçlık diliyle konuşarak: "*Rabbim, bana kendini göster, seni göreyim*" dedi. En azından bir bakış istemiş ki, kul zaten bu olayın kurbanıdır, ancak hemen ret ile karşılanmış ve kendisine: (قَالَ لَنْ تَرٰينِي ) "*Sen beni asla göremezsin*" denilmiştir. Zaten dostların kahredişi böyledir.

Şu dizeler de bundan dolayı söylenmiştir:

*Adaletinden daha güzeldir aşkın zulmü*
*Cimriliği de daha zariftir bağışından*

- Hz. Musa, Allah'ı görmeyi açıkça isteyince ve bunu yüksek sesle dile getirince, ona: (قَالَ لَنْ تَرٰينِي ) *"Sen beni asla göremezsin"* denildi.

Oysa bizim peygamberimiz, bunu sırrıyla söyleyip işaretli cevabı beklemek üzere gökyüzüne işarette bulununca şu ayet inmiş oldu:

(قَدْ نَرٰى تَقَلُّبَ وَجْهِكَ فِي السَّمَٓاءِ فَلَنُوَلِّيَنَّكَ قِبْلَةً تَرْضٰيهَا)

*"Ey Muhammed! Biz senin yüzünün göğe doğru çevrilmekte olduğunu görüyoruz. İşte şimdi seni memnun olacağın bir kıbleye döndürüyoruz."* (Bakara, 2/144)

Böylece Allah, herhangi bir kimsenin bugün O'nu görmeye heveslenemeyeceği kadar yüce olduğuna işaret etmek üzere Hz. Musa'yı cihet ve emarelere yönlendirdi. Doğrusu bugün gözlerin bakışı, sadece diğer varlıkları görmekle sınırlanmıştır.

- Hz. Musa'nın himmeti, en yüce hedef olan Allah'ı görmeye doğru yükselince, "asla!" cevabıyla karşılanmıştır. Ayı zamanda Hz. Musa, halka dönüp Hz. Hızır'a: (هَلْ اَتَّبِعُكَ عَلٰٓى اَنْ تُعَلِّمَنِ مِمَّا عُلِّمْتَ رُشْدًا) "*Sana öğretilenden bana doğruyu bulmama yardım edecek bir bilgi öğretmen için sana tabi olayım mı?*" (Kehf, 18/66) dediğinde Hz. Hızır ona: (اِنَّكَ لَنْ تَسْتَطِيعَ مَعِيَ صَبْرًا) "*Doğrusu sen, benimle beraberliğe sabredemezsin*" (Kehf, 18/67) diyerek aynı şekilde olumsuz cevap verdi. Böylece Musa, hem Hak'tan hem de halktan ret cevabı almış oldu. Maksat, Musa'nın Musa'sız hale gelmesi ve Musa'dan Musa'ya olacak her türlü nasipten arınmasını sağlamaktır.

Şu dizeler de buna yakın anlamda söylenmiştir:

*Ey babamızın oğullar! Öyle evlerin sakinleriyiz ki*
*İlelebet ötüyor aramızda ayrılık kargası*

- Hz. Musa, Allah'ı görmeye talip olduğunda tefrika vasfıyla idi. Bu nedenle o: "*Rabbim, bana kendini göster, seni göreyim*" dedi ve kendisine: "Asla!" diye cevap verildi. Çünkü cemin gözü, farkın gözünden daha tamdır. Bu cevap üzerine Musa düşüp bayıldı, dağ da paramparça oldu. Sonra gerçek huzur, vücudun yaşadığı baygınlığın ardından birlik hakikatlerinin Musa'ya gösterilmesidir. Bu çerçevede Musa'ya ait işaretlerin yok olmasından sonra, Musa için Allah, Musa'nın Musa için kalmasından daha hayırlıdır. Bu nedenle

hakikatte Hak ile hakikatleri görmek, halkın halk ile kalmasından daha anlamlıdır.

- Hz. Musa'nın: (قَالَ لَنْ تَرَينِي ) "*Sen beni asla göremezsin*" cevabını alması, (تَرَينِي فَاِنِ اسْتَقَرَّ مَكَانَهُ فَسَوْفَ ) "*Eğer o yerinde durabilirse, sen de beni göreceksin*" ve: (فَلَمَّا تَجَلّٰى رَبُّهُ لِلْجَبَلِ جَعَلَهُ دَكًّا ) "*Rabbi, o dağa tecelli edince, onu paramparça etti*" ifadeleriyle karşılaştığı imtihandan daha tamdır ve daha büyüktür. Çünkü birincisinde açık ret bulunmaktadır. Ümitsizlikte ise bir rahatlama söz konusudur. Ancak alıkonulduğu görmeye dair bu kez ümit verilince bekleyişi şiddetlenmiş ve Allah, dağı yerinde tutabildiği halde onu paramparça etmiştir. Bu ise dostların ilke haline gelen kahrıdır.

- (انْظُرْ اِلَى الْجَبَلِ) "*Dağa bak*" sözünde Hz. Musa için ağır bir imtihan vardır. Çünkü maksudunu görmekten alıkonulmuş ve dağı görmekle avutulmuştur. Şayet muradı olan görmeye erememenin ardından gözlerini kapatıp herhangi bir şeye bakmamasına izin verilseydi, işi daha kolay olurdu. Ancak Allah kendisine: "*Sen beni asla göremezsin. Fakat şu dağa bak!*" demiştir.

Sonra bundan daha ağır olan, Allah'ın dağa tecelli etmesidir. Böylece dağ O'nu görmüş, fakat Hz. Musa O'nu görmemiştir. Sonra Allah, Hz. Musa'ya, bu istek konusunda kendisine öncelenen dağa bakmasını emretmiştir. Bu da, Allah'a yemin ederim ki, çok zor ve çetin bir şeydir. Lakin Hz. Musa karşı çıkmamış ve: "*Ben, sana bakmak istiyorum. Seni göremeyeceğime göre senden başkasına da bakmam*" dememiş, aksine: "*Bakmamı emrettiğin şeyden gözümü kaldırmam*" demiştir.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Ona kavuşmayı isterken ben, o ben terk etmek istemekte*
*Terk ediyorum ben de istediğimi onun istediği için*

- Aslında Allah: "*Fakat şu dağa bak!*" sözüyle Hz. Musa'yı reddedilmişliğiyle baş başa bırakmayarak gönlünü almış ve kendisini göremeyişinin nedenini ona şefkatle anlatmıştır.

Şu dizede olduğu gibi:

*Bırak beni yok olayım azar azar*

- Hz. Musa ayılıp kendine gelince işin başına döndü ve: (تُبْتُ اِلَيْكَ) "*Sana tevbe ettim*" dedi. Yani şayet en yüksek mertebe olan Allah'ı görmek gerçekleşmediyse, hiç olmazsa tevbeden geri kalmayayım. Bunun üzerine Allah, Hz. Musa'yı kabul etti. Çünkü himmeti, yüksek mertebeye çıkmıştır.

(تُبْتُ اِلَيْكَ ) "*Sana tevbe ettim.*"

Bu, kulluk sahasında diz çökmenin ifadesidir. İnsafın gereği, yakınlıkla arasına engel konulsa bile, kulun, hizmet mahallini terk etmemesidir. Çünkü yakınlık nefsinin payı, hizmet ise Rabbinin hakkıdır. Bu hizmet ise, nefsinin payına bağlı kalmamasıyla gerçekleşir.

قَالَ يَا مُوسٰى اِنّ۪ي اصْطَفَيْتُكَ عَلَى النَّاسِ بِرِسَالَاتِي وَبِكَلَامِي
فَخُذْ مَٓا اٰتَيْتُكَ وَكُنْ مِنَ الشَّاكِر۪ينَ ﴿١٤٤﴾

144- "Allah dedi ki: Ey Musa! Ben, risaletlerimle ve sözlerimle seni insanların başına seçtim. Sana verdiğimi al ve şükredenlerden ol!"

Bu hitap, büyük bir şefkatle Hz. Musa'nın gönlünü almak içindir. Allah, sanki şunu demektedir: Ey Musa, ben seni, beni görmekten ibaret olan bir tek şeyden alıkoydum, lakin pek çok faziletleri sana has kıldım. Seni peygamber olarak seçtim ve bu halin şerefiyle sana ikramda bulundum. O halde bu cümleye şükret, bu nimeti bil, şükredenlerden ol ve şikâyetçi durumuna düşmeye yeltenme.

(وَكُنْ مِنَ الشَّاكِر۪ينَ) "*Ve şükredenlerden ol!*"

Bu sözde ince bir işaret vardır. Sanki Allah şöyle buyurmuştur: Şikâyetçilerden olma. Yani eğer ben seni dileğinden alıkoyduysam ve matlubunu vermediysem, ayrıldığın zaman benden şikâyetçi olma!

وَكَتَبْنَا لَهُ فِي الْاَلْوَاحِ مِنْ كُلِّ شَيْءٍ مَوْعِظَةً وَتَفْص۪يلاً لِكُلِّ شَيْءٍ
فَخُذْهَا بِقُوَّةٍ وَاْمُرْ قَوْمَكَ يَاْخُذُوا بِاَحْسَنِهَا سَاُر۪يكُمْ دَارَ الْفَاسِق۪ينَ ﴿١٤٥﴾

145- "Nasihat ve her şeyin açıklamasına dair ne varsa hepsini Musa için levhalarda yazdık. Bunları kuvvetle tut! Kavmine de onun en güzelini almalarını emret. Yakında size yoldan çıkmışların yurdunu göstereceğim."

Rivayete göre Hz. Musa, kalem cızıltısını duyuyordu. Bunda da bir tür lütuf vardır. Çünkü Allah, onu kendisini görmekten alıkoysa da eser ile teselli etmiştir.

(فَخُذْهَا بِقُوَّةٍ) *"Bunları kuvvetle tut!"*

Ayet, tutmanın, yakınlığın son sınırı olduğuna işaret etmektedir. Burada yakınlıktan maksat, halin safiyetidir. Çünkü mekân yakınlığı, Allah hakkında caiz değildir.

(وَاْمُرْ قَوْمَكَ يَاْخُذُوا بِاَحْسَنِهَا) *"Kavmine de onun en güzelini almalarını emret."*

Allah'ın, Hz. Musa'ya emrettiği tutma ile kavmine emretmesini emrettiği alma arasında önemli fark vardır. Şöyle ki, Hz. Musa'nın Allah'tan aldığı emirle levhaları tutması, bir şekilde yakınlığın gerçekleştirilmesi ve vuslatın pekiştirilmesi demektir. Onların alması ise, kulluğun yükümlülüklerini kabul etmek anlamındadır ki, ikisi arasında büyük fark vardır.

Ayette yer alan *"en güzeli"*, *"güzelliği"* anlamındadır. Ancak "ahsen" lafzının "hemze"si mübalağa için de olabilir. Yani, herhangi bir tevile yeltenme ve en iyisine yönel.

(سَاُر۪يكُمْ دَارَ الْفَاسِق۪ينَ) *"Yakında size yoldan çıkmışların yurdunu göstereceğim."*

Yani binaları, çardakları ve tavanları yıkılıp yerle bir olmuş olan o yurdun üzerinde azabın üzüntüsü ve kararmışlığı vardır.

Bu arada fasıkların yurdu, şehvetlerin peşine düşen nefislere, emellerin ve kötü arzuların kaynağı olan kalplere işaret etmektedir. Çünkü fasıklık, içinde cereyan ettiği yerin harap olmasına yol açar. Nitekim fasıklık kimin nefsinde gerçekleşirse, o nefis harap olur. Nefislerin harap oluşunun belirtisi ise içindeki ibadet huzurunun ortadan kalkmasıdır. Böylece nasıl ki, evler yıkılmaya yüz tuttuğunda sakinlerinden muattal oluyorsa, aynı şekilde nefisler de, günahlar işlemek suretiyle harap olduğu zaman, içlerindeki ibadetler ve onlara dair alışkanlıklar ortadan kalkar. Mesela, daha önce kul, ibadetleri kolaylıkla yapıyor iken, bir günah işlediğinde ibadet yapmak ona zor gelir. O kadar ki, iki rekât namaz ile ondan çok daha zor olan bazı işler arasında tercih yapması istendiğinde, o meşakkatli işleri ibadete tercih eder. Bulundukları yerin harap olmasına yol açmada kalplerin kararıp bozulması da böyledir.

سَاَصْرِفُ عَنْ اٰيَاتِيَ الَّذٖينَ يَتَكَبَّرُونَ فِي الْاَرْضِ بِغَيْرِ الْحَقِّ وَاِنْ يَرَوْا كُلَّ اٰيَةٍ لَا يُؤْمِنُوا بِهَا وَاِنْ يَرَوْا سَبٖيلَ الرُّشْدِ لَا يَتَّخِذُوهُ سَبٖيلًا وَاِنْ يَرَوْا سَبٖيلَ الْغَيِّ يَتَّخِذُوهُ سَبٖيلًا ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا وَكَانُوا عَنْهَا غَافِلٖينَ ﴿١٤٦﴾

146- "Yeryüzünde haksız yere böbürlenenleri ayetlerimden uzaklaştıracağım. Onlar, bütün mucizeleri görseler de iman etmezler. Doğru yolu görseler, onu yol edinmezler. Fakat azgınlık yolunu görürlerse, hemen ona saparlar. Bu durum, onların ayetlerimizi yalanlamalarından ve onlardan gafil olmalarından ileri gelmektedir."

Ben kibirlenenleri bana uymanın bereketlerinden mahrum kılacağım. O kadar ki onlar, kendilerine gösterilen ayetleri kabul ile karşılamayacak ve hitap edildikleri şeyleri de iman kulağıyla dinlemeyeceklerdir.

İlmi izaha göre kibirlenme, hakkı inkâr etmek demektir. Bu itibarla her kim, Hakk'ın hakikatlerini inkâr ederse, işte onun inkârı kibirlenmesi demektir. İlahi takdire itirazda bulunması ise, inkârı kalpte gerçekleşen hususlardandır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kibirlenme, hakkın sana ait olduğunu vehmetmendir.

- Her kim, dünyada ve ahirette nefsinde bir kıymet görürse, işte o kibirlenendir.

- Her kim, kazanç yoluyla edinmek hariç, bir şeyin var veya yok edilmesi bakımından, kendisinden veya kendisine ait veya kendisine dönük olduğunu zannederse, işte o kibirlenendir.

وَالَّذِينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا وَلِقَاءِ الْاٰخِرَةِ حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ هَلْ يُجْزَوْنَ اِلَّا مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٤٧﴾

147- "Halbuki ayetlerimizi ve ahirete kavuşmayı yalanlayanların amelleri boşa gitmiştir. Onlar, yapmakta oldukları amellerden başka bir şey için mi cezalandırılırlar!"

Bu olaydan, sadece hakkı hak, batılı da batıl olarak görmenin yeterli olmadığı ortaya çıkmaktadır. Fakat aynı zamanda hakkı görmek, ona yönelik muvaffakiyetin varlığından kaynaklanmalı, bâtılı göz ardı etmek de ona uymaktan korunmanın varlığına dayanmalıdır.

Bir yoruma göre de hakkı bildiği halde onu inkâr eden kimsenin durumu, onu bilmeyen ve tanımada yetersiz kalan kimsenin durumundan daha kötüdür.

وَاتَّخَذَ قَوْمُ مُوسٰى مِنْ بَعْدِهِ مِنْ حُلِيِّهِمْ عِجْلًا جَسَدًا لَهُ خُوَارٌ اَلَمْ يَرَوْا اَنَّهُ لَا يُكَلِّمُهُمْ وَلَا يَهْدِيهِمْ سَبِيلًا اِتَّخَذُوهُ وَكَانُوا ظَالِمِينَ ﴿١٤٨﴾

148- "Musa'nın arkasından kavmi, ziynet takımlarından böğürebilen bir buzağı heykelini tanrı edindiler. Görmediler mi ki, o onlara ne konuşuyor ne de onlara yol gösteriyor! Onu tanrı olarak benimsediler ve zalimler oldular."

Allah, işin başında kalplerini zanların vehminden temizlememişti ve onlar, kıdemin özelliklerini ve sonradan var olmanın şartlarını kesin bilmemişlerdi. Bu nedenle yola çıktıklarında fikren derin hatalara düşmüş oldular.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Buzağının, tanrıları olmasını isteyen kimselerin kalpleri, tevhidin kokusunu nasıl alabilir! Hayır hayır! Asla! Aynı şekilde Allah dışındaki Cibril, Mikâil, arş, yeryüzü, cinler veya insanları tanrı olarak gören de böyledir. Buna maruz kalan veya sonradan var olan varlıkların niteliklerini taşıyanlardan bulunan veya takdirin tecellilerinden ve keyfiyetin şartlarından etkilenebilen hiçbir varlık tanrılık hakkına sahip değildir.

- Şu iki ümmet arasında büyük bir fark vardır: Biri, peygamberleri kırk gün aralarından çıkınca buzağıya tapmıştır. Diğeri ise üzerinden dört asırdan fazla zaman geçtiği halde, eğer bir kimse, yanlarında güneş, ay veya diğer herhangi bir varlığın tanrılık hakkına sahip olduğunu söylerse himmetiyetleri ile onu yakarlar.

- Tanrılığa engel olması bakımından cisim ile ceset arasında fark bulunmamaktadır. Böylece, nasıl ki tanrının cisim olması mümkün değilse, aynı şekilde bu anlamdaki bir vasfa sahip olması da mümkün değildir. Aynı zamanda tanrının sesi de olamaz. Çünkü ses, özü itibariyle, sert cisimlerin sürtüşmesinden ibarettir. Ezeli tevhid ise bu durumla bağdaşmamaktadır.

- Kendi elleriyle yaptıkları bir şeyin, kendi tanrıları olduğuna inanan bir topluluk ne kadar da cahildir! Eğer Allah'ın kahrının ve dilediğini yapabilir olmasının bir eseri değilse, hangi akıl bu şaşkınlığı kabul edebilir!

(اَلَمْ يَرَوْا اَنَّهُ لَا يُكَلِّمُهُمْ وَلَا يَهْدِيهِمْ سَبِيلًا اِتَّخَذُوهُ وَكَانُوا ظَالِمِينَ) *"Görmediler mi ki, o onlara ne konuşuyor ne de onlara yol gösteriyor! Onu tanrı olarak benimsediler ve zalimler oldular."*

Allah, konuşabilir ve hidayet edebilir olmasını, buzağının tanrılık vasıflarını hak edebilmesinin şartı kılmıştır. Bu da ezeliyetin hakikatleri kapsamında Allah'ın kelam sıfatına sahip olması ve kendisinden başka hiçbir hidayet edici bulunmamak üzere, ancak O'nun, kulunu hidayet etmesi suretiyle, sıfatlara istihkakı bulunduğunu göstermektedir. Ayette aynı zamanda Allah'ın kuluna hitap ettiğine ve onunla konuştuğuna da işaret bulunmaktadır. Oysa hükümdarlar, rütbeleri yüceldiği zaman başkalarına dilleriyle hitap etmeye tenezzül etmezler.

O kadar ki şair de şöyle demiştir:

*Köleleri unutmuş görünmesi şaşırtıcı değildir*
*Efendinin, köleler çoğaldığı zaman*

Ancak Allah, mümin kullarıyla ilgili prensibini bunun aksine koymuştur. Düşmanlara gelince, Allah onlara: (اخْسَؤُا فِيهَا وَلَا تُكَلِّمُونِ) *"Alçaldıkça alçalın orada! Bana karşı konuşmayın artık!"* (Müminûn, 23/108) buyurur. Müminler hakkında ise Hz. Peygamber: *"İçinizden hiç kimse yoktur ki, Allah onunla tercümansız konuşmasın"* buyurmuştur.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Bizi alıkoymaz onlara karşı kibirlenmek*
*Onlara cevap vermekten, bizimle konuştukları zaman*

Allah şöyle buyurur:

(قُلْ لَوْ كَانَ الْبَحْرُ مِدَادًا لِكَلِمَاتِ رَبّي لَنَفِدَ الْبَحْرُ قَبْلَ اَنْ تَنْفَدَ كَلِمَاتُ رَبّي وَلَوْ جِئْنَا بِمِثْلِهِ مَدَدًا)

*"De ki: Rabbimin sözleri için derya mürekkep olsa ve bir o kadar da ilave getirsek dahi, Rabbimin sözleri bitmeden önce deniz tükenecektir."* (Kehf, 18/109)

وَلَمَّا سُقِطَ فِي اَيْدِيهِمْ وَرَاَوْا اَنَّهُمْ قَدْ ضَلُّوا قَالُوا لَئِنْ لَمْ يَرْحَمْنَا
رَبُّنَا وَيَغْفِرْ لَنَا لَنَكُونَنَّ مِنَ الْخَاسِرِينَ ﴿١٤٩﴾

149- "Pişman olup da kendilerinin gerçekten sapmış olduklarını görünce, dediler ki: Eğer Rabbimiz bize acımaz ve bizi bağışlamazsa mutlaka ziyana uğrayanlardan olacağız."

Onlar, yaptıklarının kötü olduğundan emin olunca, pişmanlık duyarak çok çok üzüldüler ve Allah'ın, güzel lütfuyla onları kurtarmaması halinde ziyanda olacaklarını itiraf ettiler.

وَلَمَّا رَجَعَ مُوسٰى اِلٰى قَوْمِهِ غَضْبَانَ اَسِفًا قَالَ بِئْسَمَا خَلَفْتُمُونِي
مِنْ بَعْدِي اَعَجِلْتُمْ اَمْرَ رَبِّكُمْ وَاَلْقَى الْاَلْوَاحَ وَاَخَذَ بِرَاْسِ اَخِيهِ
يَجُرُّهُٓ اِلَيْهِ قَالَ ابْنَ اُمَّ اِنَّ الْقَوْمَ اسْتَضْعَفُونِي وَكَادُوا يَقْتُلُونَنِي
فَلَا تُشْمِتْ بِيَ الْاَعْدَٓاءَ وَلَا تَجْعَلْنِي مَعَ الْقَوْمِ الظَّالِمِينَ ﴿١٥٠﴾

150- "Musa, kızgın ve üzgün bir halde kavmine dönünce: 'Benden sonra arkamdan ne kötü işler yapmışsınız! Rabbinizin emrini beklemeyip acele mi ettiniz!' dedi. Tevrat levhalarını yere attı ve kardeşinin başını tutup kendine doğru çekmeye başladı. Kardeşi: 'Anam oğlu! Bu kavim, beni cidden zayıf gördüler ve neredeyse beni öldüreceklerdi. Sen de düşmanları bana güldürme ve beni bu zalim kavimle beraber tutma!' dedi."

Eğer Hz. Musa, kavmini bir milyon defa uyum içinde görseydi, ilahî hitabı duymaktan mahrum bırakılıp başkalarını görmeye yönlendirildiği için, yine de can sıkıntısı içinde olacaktı. Bu yetmiyormuş gibi bir de kavmini, yoldan çıkmış ve buzağıya tapmış halde bulmuştur. Bu durumda meşakkatlerin hangisinin Hz. Musa'ya daha ağır geldiği bilinmez.

İlahi hitaptan mahrumiyet mi, görme isteğinin yerine gelmemesi mi yoksa İsrail oğullarının fitneye düşüp buzağıya tapma konusunda

şehvetin kalplerine hâkim olduğunu görmesi mi? Suphanallah! Allah'ın, dostlarına yönelik imtihanı ne kadar da ağırdır!

قَالَ رَبِّ اغْفِرْ لِي وَلِاَخِي وَاَدْخِلْنَا فِي رَحْمَتِكَ وَاَنْتَ اَرْحَمُ الرَّاحِمِينَ ﴿١٥١﴾

151- "Musa dedi ki: 'Ey Rabbim! Beni ve kardeşimi bağışla, bizi rahmetine kabul et. Zira sen, merhametlilerin en merhametlisisin.'"

Hz. Musa, her ne kadar kavminin fitnelerini Allah'tan duymuş idiyse de onları gözüyle görmesi, duymanın kendisinde bırakmadığı etkiyi bırakmış oldu. Her ne kadar kendisinin duymaktan da etkilendiği kesin ise de ancak müşahedenin başka bir etkisi vardır.

Sonra Hz. Musa, kardeşinin başını tutup çektiğinde kardeşi Harun, ona yumuşak üslupla hitap ederek: "*Anam oğlu!*" demiştir. Harun, burada anneyi, şefkat ve merhameti celp etmek için zikretmiştir.

Aynı şekilde Harun: "*Sakalımı ve başımı tutma*" derken de çok sıkıntılarla karşılaştığını ve kendisini içinde bulunduğu durumla baş başa bırakması gerektiğini, musibetini artırmamasını, kendisinin onu halef bıraktığını ve kavminin, onun nasihatini dinlemediğini anlatmak istemiştir. Ayrıca şunu söylemektedir: Bu durum bana ağır gelmektedir. Senden sonra onlardan beni üzen şeylerle karşılaştım. Sen de, bunun başıma gelen büyük bir musibet olduğunu bilmektesin. Oysa sen döndüğünde bana sitem etmeye ve başımı çekmeye başladın, beni dövmek istedin. Ben ise beni teselli etmeni bekliyordum. O halde bana şefkat göster, düşmanları bana güldürme ve musibetimi ikiye katlama.

İşte bunun üzerine Hz. Musa, ona karşı yumuşayarak muhtaçlığını dile getirmiş ve Allah'a yalvarmaya başlayarak: (رَبِّ اغْفِرْ لِي وَلِاَخِي وَاَدْخِلْنَا فِي رَحْمَتِكَ) "*Ey Rabbim! Beni ve kardeşimi bağışla, bizi rahmetine kabul et.*" buyurmuştur. Bu da, mağfiret dilemenin, her halükarda kula vacip olduğuna ve Allah'ın, suçsuza da ceza verebileceğinden

emin olması gerektiğine işaret etmektedir. Çünkü yaratıkların tamamı O'nun mülküdür. Malikin de mülkündeki tasarrufu geçerlidir.

Bir yoruma göre de, günahı İsrail oğulları işlemiş, özrü ise Hz. Musa ve Hz. Harun dilemiştir. Zaten kullukta samimiyetin ölçüsü de budur.

اِنَّ الَّذِينَ اتَّخَذُوا الْعِجْلَ سَيَنَالُهُمْ غَضَبٌ مِنْ رَبِّهِمْ وَذِلَّةٌ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَكَذٰلِكَ نَجْزِي الْمُفْتَرِينَ ﴿١٥٢﴾

152- "Buzağıyı tanrı edinenler var ya, işte onlara mutlaka Rablerinden bir gazap ve dünya hayatlarında bir alçaklık erişecektir. Biz, iftiracıları böyle cezalandırırız."

Yani buzağıyı mabut edinenlere, gelecekteki hallerinde, yaptıklarının cezası ulaşacaktır. Bu arada (سَيَنَالُهُمْ) "seyenâluhum" lafzındaki "s" harfi geleceği ifade eder. Asilerin isyanının zarar veremediği Allah, cezayı şimdilik uygulamayıp ertelemekten kaygı duymaz. Ancak mühlet vermekle ihmal arasında büyük fark vardır. Nitekim Allah, mühlet verir ancak ihmal etmez. Günah işleyip hemen cezalandırılmayan kimse de, mühlet verilmesine aldanmamalıdır.

وَالَّذِينَ عَمِلُوا السَّيِّئَاتِ ثُمَّ تَابُوا مِنْ بَعْدِهَا وَاٰمَنُوا اِنَّ رَبَّكَ مِنْ بَعْدِهَا لَغَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿١٥٣﴾

153- "Kötülükler yaptıktan sonra, ardından tevbe edip de iman edenlere gelince, şüphesiz ki, o tevbe ve imandan sonra, Rabbin elbette bağışlayan ve esirgeyendir."

Allah, kötülükler işlemelerinden sonra onları önce tevbeyle, ardından da imanla vasıflandırmıştır. Daha sonra da Allah: (اِنَّ رَبَّكَ مِنْ بَعْدِهَا لَغَفُورٌ رَحِيمٌ) "*O tevbe ve imandan sonra, Rabbin elbette bağışlayan ve esirgeyendir*" buyurmuştur. Tevbeden sonraki imandan maksadın, Allah'ın tevbeyi kabul edeceğine olan iman olması muhtemeldir. Veya onlar, hiçbir isyanın, Allah'a zarar veremeyeceğine veya

Allah'ın lütfu olmadan tevbeleriyle kurtulamayacaklarına ya da daha önce sözlerini bozmuş olmalarının şirk olduğuna inanmışlardır.

Bir yoruma göre de onlar, imanı devam ettirdiler ve böylece iman üzere vefat ettiler.

Veya onlar, sözlerini tekrar bozup Allah'ın emrini boşa götürmeleri halinde Allah'ın gözünden düşeceklerine iman ettiler. Çünkü her defasında testi sağlam kalmaz.

وَلَمَّا سَكَتَ عَنْ مُوسَى الْغَضَبُ اَخَذَ الْاَلْوَاحَ وَفِي نُسْخَتِهَا هُدًى
وَرَحْمَةٌ لِلَّذِينَ هُمْ لِرَبِّهِمْ يَرْهَبُونَ ﴿١٥٤﴾

154- "Musa'nın öfkesi dinince levhaları aldı. Onlardaki yazıda Rablerinden korkanlar için hidayet ve rahmet haberi vardı."

Ayet, kulun temyiz yeteneğini yitirdiği ve gaybın, karşı koyamadığı tecellileri kendisine galebe çaldığı zaman Allah'ın ona yönelik güzel mühletine işaret etmektedir.

Bu arada peygamberler bile, kendilerini tercih yapamaz duruma düşüren haller yaşıyorlarsa, onların aşağısındaki kimseler hakkında ne düşünmeli!

وَاخْتَارَ مُوسٰى قَوْمَهُ سَبْعِينَ رَجُلًا لِمِيقَاتِنَا فَلَمَّآ اَخَذَتْهُمُ الرَّجْفَةُ
قَالَ رَبِّ لَوْ شِئْتَ اَهْلَكْتَهُمْ مِنْ قَبْلُ وَاِيَّايَ اَتُهْلِكُنَا بِمَا فَعَلَ
السُّفَهَآءُ مِنَّا اِنْ هِيَ اِلَّا فِتْنَتُكَ تُضِلُّ بِهَا مَنْ تَشَآءُ وَتَهْدِي مَنْ
تَشَآءُ اَنْتَ وَلِيُّنَا فَاغْفِرْ لَنَا وَارْحَمْنَا وَاَنْتَ خَيْرُ الْغَافِرِينَ ﴿١٥٥﴾

155- "Musa, tayin ettiğimiz vakitte kavminden yetmiş adam seçti. Onları, o müthiş deprem yakalayınca, Musa dedi ki: 'Ey Rabbim! Dileseydin, onları da beni de daha önce helak ederdin. İçimizden birtakım beyinsizlerin işlediği günah yüzünden hepimizi helak mı edeceksin! Bu iş, senin imtihanından başka bir

şey değildir. Onunla dilediğini saptırırsın, dilediğini de doğru yola iletirsin. Sen, bizim sahibimizsin. Bizi bağışla ve bize acı. Sen, bağışlayanların en iyisisin.'"

Şu iki ümmet arasında büyük bir fark vardır: Bir ümmeti peygamberleri seçerken diğerini Allah seçerek şöyle buyurmuştur:

( وَلَقَدِ اخْتَرْنَاهُمْ عَلٰى عِلْمٍ عَلَى الْعَالَمِينَ)

*"Andolsun biz, onlara bilerek âlemlerin üstünde bir imtiyaz verdik."* (Duhan, 44/32)

Hz. Musa'nın seçtiği kimseler: ( فَقَالُوٓا اَرِنَا اللّٰهَ جَهْرَةً فَاَخَذَتْهُمُ الصَّاعِقَةُ) *"Bize Allah'ı apaçık göster, demişlerdi. Hemen onları yıldırım çarptı."* (Nisâ, 4/153) Allah'ın seçtiği kimseler hakkında ise Cenabı Hak şöyle buyurur: ( وُجُوهٌ يَوْمَئِذٍ نَاضِرَةٌ) *"Yüzler vardır ki, o gün ışıl ışıl parıldayacaktır."* (Kıyamet, 76/22)

Bir yoruma göre de Hz. Musa, Allah'a karşı hakikati yüksek sesle dile getirerek sakınmayı bırakmış ve açıkça: ( اِنْ هِيَ اِلَّا فِتْنَتُكَ) *"Bu iş, senin imtihanından başka bir şey değildir"* dedikten sonra, hükmü O'na bırakmış ve: (تُضِلُّ بِهَا مَنْ تَشَآءُ وَتَهْدِي مَنْ تَشَآءُ) *"Onunla dilediğini saptırırsın, dilediğini de doğru yola iletirsin"* demiştir. Sonra bunun ardından yakarışı dile getirerek: (فَاغْفِرْ لَنَا وَارْحَمْنَا) *"Bizi bağışla ve bize acı"* derken öncesinde de: ( اَنْتَ وَلِيُّنَا) *"Sen, bizim sahibimizsin"* demiştir.

وَاكْتُبْ لَنَا فِي هٰذِهِ الدُّنْيَا حَسَنَةً وَفِي الْاٰخِرَةِ اِنَّا هُدْنَآ اِلَيْكَ قَالَ عَذَابِيٓ اُصِيبُ بِهِ مَنْ اَشَآءُ وَرَحْمَتِي وَسِعَتْ كُلَّ شَيْءٍ فَسَاَكْتُبُهَا لِلَّذِينَ يَتَّقُونَ وَيُؤْتُونَ الزَّكٰوةَ وَالَّذِينَ هُمْ بِاٰيَاتِنَا يُؤْمِنُونَ ﴿١٥٦﴾

156- "Bize bu dünyada da ahirette de iyilik yaz. Şüphesiz biz sana döndük. Allah buyurdu ki: Kimi dilersem onu azabıma uğratırım. Rahmetim ise her şeyi kuşatmıştır. Onu, sakınanlara, zekâtı verenlere ve ayetlerimize inananlara yazacağım."

Hz. Musa, bütün ihtiyacı Allah'a arz etmek üzere yalvarış ve yakarış üslubuyla konuşmuş ve dileğinde samimi davranarak: (وَاكْتُبْ لَنَا فِي هٰذِهِ الدُّنْيَا حَسَنَةً وَفِي الْاٰخِرَةِ) "*Bize bu dünyada da iyilik yaz, ahirette de*" demiştir. Yani bizi kendine hidayet eyle!

Bu ayette aynı zamanda, kendi kişisel güç ve kuvvetinden uzaklaşıp Allah'a yönelme özelliğinin Hz. Peygambere mahsus bir özellik olduğuna işaret vardır. Çünkü Hz. Musa: "*Bize bu dünyada da...*" derken, peygamberimiz: *"Allah'ım! Beni göz açıp kapayıncaya kadar dahi nefsime emanet etme"* buyurmuştur. Hatta bundan azına da emanet etme. *"Bir çocuğa kefil olunduğu gibi bana kefil ol."* Sonra da şunu ilave etmiştir: *"Sana layık bir övgüde bulunamıyorum."*

(اِنَّا هُدْنَآ اِلَيْكَ) "*Şüphesiz biz sana döndük.*"

Yani senin dinine meylettik ve kendimize hiçbir şey bırakmaksızın bütünüyle sana ait olduk.

(قَالَ عَذَابِي اُصِيبُ بِهٖ مَنْ اَشَآءُ وَرَحْمَتِي وَسِعَتْ كُلَّ شَيْءٍ) "*Allah buyurdu ki: Kimi dilersem onu azabıma uğratırım. Rahmetim ise her şeyi kuşatmıştır.*"

Bu ifadede bir incelik vardır. Zira Allah: Hiç kimseyi azabımdan vareste kılmam, dememiş, fakat onu ilahi iradeye bağlamıştır. Bunda, Allah'ın fiillerinin, kulların çabalarına bağlı olmadığına da işaret vardır. Çünkü Allah: Azabıma asileri uğratırım, dememiş: (مَنْ اَشَآءُ) "*Kimi dilersem*" demiştir. Bu da, Allah'ın dilediğini bağışlayacağına işarettir. Çünkü: (عَذَابِي اُصِيبُ بِهٖ مَنْ اَشَآءُ) "*Kimi dilersem onu azabıma uğratırım*" buyurmuştur. O halde Allah, hiç kimseyi azaba uğratmamayı dilediği zaman bunu yapabilir. Aksi takdirde yaptığında serbest olmamış olur.

Sonra sıra rahmete gelince Allah: (وَرَحْمَتِي وَسِعَتْ كُلَّ شَيْءٍ) *"Rahmetim ise her şeyi kuşatır"* buyurarak onu iradeye bağlamamıştır. Çünkü rahmet dileğin kendisidir ve kadimdir. Kadim ise iradeye konu olmaz. Azaba gelince o, fiilin sıfatlarından olduğundan Allah, onu iradeye bağlamıştır. Rahmet ise, zatın sıfatlarından olduğundan bunun aksinedir.

Bir yoruma göre de: "*Rahmetim ise her şeyi kuşatmıştır*" sözünde asiler için bir ümit alanı vardır. Çünkü onlar, itaatkârlar, abidler ve arifler cümlesinden olmasalar da yine bir şeydirler.

(فَسَاَكْتُبُهَا لِلَّذِينَ يَتَّقُونَ وَيُؤْتُونَ الزَّكٰوةَ وَالَّذِينَ هُمْ بِاٰيَاتِنَا يُؤْمِنُونَ) "*Onu, sakınanlara, zekâtı verenlere ve ayetlerimize inananlara yazacağım.*"

Yani rahmeti onlara kaçınılmaz kılacağım. Böylece Allah, sevabı müminlerin hakkı haline getirmiş olmaktadır. Bu arada hiç kimsenin Allah'a vacip olan bir hakkı olamaz. Çünkü Allah, zatıyla izzet sahibi olduğu için O'na hiçbir şey vacip olamaz.

Burada sakınmaktan maksat, rahmeti hak ettiklerini görmekten sakınmalarıdır. Onlar, bu zanlardan sakınıp Allah'ın hükümlerinin, kendi çabalarına bağlı olmadığına kesin olarak inandıkları zaman rahmeti hak etmiş ve onlar için rahmete hükmedilmiş olur.

(وَالَّذِينَ هُمْ بِاٰيَاتِنَا يُؤْمِنُونَ) "*Ve ayetlerimize inananlara...*" Yani onlar, Allah'ın kendilerini fikren keşfine mazhar kıldığı ve çeşitli akıl yürütmelerle muttali oldukları hususlara ve Allah'ın lütuf olarak sırlarda kendilerine bahşedip nefislerinde buldukları çeşitli hallere inanırlar.

اَلَّذِينَ يَتَّبِعُونَ الرَّسُولَ النَّبِيَّ الْاُمِّيَّ الَّذِي يَجِدُونَهُ مَكْتُوبًا عِنْدَهُمْ
فِي التَّوْرٰيةِ وَالْاِنْجِيلِ يَاْمُرُهُمْ بِالْمَعْرُوفِ وَيَنْهٰيهُمْ عَنِ الْمُنْكَرِ
وَيُحِلُّ لَهُمُ الطَّيِّبَاتِ وَيُحَرِّمُ عَلَيْهِمُ الْخَبَٓائِثَ وَيَضَعُ عَنْهُمْ
اِصْرَهُمْ وَالْاَغْلَالَ الَّتِي كَانَتْ عَلَيْهِمْ فَالَّذِينَ اٰمَنُوا بِهٖ وَعَزَّرُوهُ
وَنَصَرُوهُ وَاتَّبَعُوا النُّورَ الَّذِٓي اُنْزِلَ مَعَهُٓ اُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ﴿١٥٧﴾

157- "Yanlarındaki Tevrat ve İncil'de yazılı buldukları o elçiye, o ümmi peygambere uyanlar var ya, işte o peygamber onlara iyiliği emreder, onları kötülükten men eder, onlara temiz şeyleri helal, pis şeyleri haram kılar. Ağırlıklarını ve üzerlerindeki

zincirleri indirir. O peygambere inanıp ona saygı gösteren, ona yardım eden ve onunla gönderilen nura uyanlar var ya, işte kurtuluşa erenler onlardır."

Allah, Hz. Peygamberin şerefini "ümmi peygamber" demek suretiyle ortaya koymuştur. Yani onun faziletlerinden, ilminin kemalinden ve dinin ayrıntılarına olan hazırlığından hiçbir şey, kendisinden veya çaba harcayarak öğrenmesinden veya çalışmasından ve tasarrufundan değildir. Aksine onda ne ortaya çıkmışsa, hepsi, Allah tarafından olmuştur. Zira o, kitapları okuyamayan ve hayat hikâyelerini araştıramayan bir ümmi idi.

(يَأْمُرُهُمْ بِالْمَعْرُوفِ وَيَنْهٰيهُمْ عَنِ الْمُنْكَرِ) *"İşte o peygamber onlara iyiliği emreder, onları kötülükten meneder."*

Ayette "maruf" olarak yer alan iyilik, Allah'ın hakkını yerine getirmektir. Ayette "münker" olarak yer alan kötülük ise, nefsin arzularına ve hükümlerine bağlı kalmak, emel dünyasında zikzaklar çizmek ve nefsin kul için uydurduğu iddialara kapılmaktır. Oysa bu ikisini birbirinden ayıran şey dindir. Bu çerçevede kulun fiillerinden güzel olan, Allah'ın izin verdiği hususlar olup kullar bunları yapabilir. Kötü olan ise Allah'ın yasakladığı şeyler olup kulların bunu yapması caiz değildir.

(وَيَضَعُ عَنْهُمْ اِصْرَهُمْ وَالْاَغْلَالَ الَّت۪ي كَانَتْ عَلَيْهِمْ) *"Ağırlıklarını ve üzerlerindeki zincirleri indirir."*

Tedbir çabasından daha ağır bir şey olamaz. Bu nedenle kim, tedbire dönük çabayı bırakıp takdiri görebilmenin huzuruna yönelirse, şüphesiz her türlü ağırlık üzerinden indirilmiş ve her türlü yükümlülükten vareste tutulmuş olur.

Üzerlerindeki zincirler ise kendi nefislerinden hareketle ve kendi istekleriyle Allah'a yapacakları ibadetler konusunda kendilerine farz kılınmayan bidatler uydurmalarıdır. Onlar bu konuda kendi güç ve kuvvetleriyle baş başa bırakılmışlardır. Bunun üzerine onlar, bu bidatleri ihmal etmiş ve ahitlerini bozmuşlardır.

Rızanın kazandırdığı özelliklerle kim, kaderin tecellileriyle karşılaşır ve her türlü varlıkta Hakk'ı görürse, her türlü nimet ve lütuf ona has kılınır.

(فَالَّذِينَ اٰمَنُوا بِهٖ وَعَزَّرُوهُ وَنَصَرُوهُ وَاتَّبَعُوا النُّورَ الَّذِيٓ اُنْزِلَ مَعَهُٓ اُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ) *"O peygambere inanıp ona saygı gösteren, ona yardım eden ve onunla gönderilen nura uyanlar var ya, işte kurtuluşa erenler onlardır."*

Allah onlara, Hz. Peygambere yardım etmeyi öğretmiştir. Yoksa Allah, onun koruyucusu idi. Sadece Hakk'a dayanan bir kimsenin yaşaması halkın yardımına dayalı olmaz.

قُلْ يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ اِنّ۪ي رَسُولُ اللّٰهِ اِلَيْكُمْ جَم۪يعًا الَّذ۪ي لَهُ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ يُحْي۪ وَيُم۪يتُ فَاٰمِنُوا بِاللّٰهِ وَرَسُولِهِ النَّبِيِّ الْاُمِّيِّ الَّذ۪ي يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَكَلِمَاتِه۪ وَاتَّبِعُوهُ لَعَلَّكُمْ تَهْتَدُونَ ﴿١٥٨﴾

158- "De ki: 'Ey insanlar! Gerçekten ben sizin hepinize, göklerin ve yerin sahibi olan Allah'ın elçisiyim. O'ndan başka tanrı yoktur, O diriltir ve öldürür.' Öyle ise Allah'a ve ümmi peygamber olan Resulüne -ki o, Allah'a ve O'nun sözlerine inanır- iman edin ve ona uyun ki, doğru yolu bulasınız."

Seni yükselttiğimiz makamı açıkça söyle ve seni kavuşturduğumuz ikramı net bir ifadeyle dile getir. De ki: Ben sizin topluluğunuza gönderilmiş bir peygamberim ve hepinize üstün kılınmışımdır. Dinim de, bakıp ibret alabilen ve düşünüp inceleyen kimse için tafsilatlıdır. Mesela, kendisine karşı çıkabilecek bir ortağı ve O'na benzeyen bir benzeri bulunmayan ilahım, hükmetmek istediği şekilde mülkünde tasarrufta bulunma hakkına sahiptir. O'nun hükmedip karara bağladığı ve takdirde uyguladığı hususlardan biri de, emirlerine boyun eğmeniz ve yasaklarından sakınmanız için, beni size göndermesidir. Size emrettiklerinden biri de dünyada ve ahirette kurtulmanız, Allah'a yakınlığı ve güzel sevabı hak etmeniz, bela ve nefisten kurtulmanız için, ümmi peygambere iman etmenizi söylemesidir.

وَمِنْ قَوْمِ مُوسٰى اُمَّةٌ يَهْدُونَ بِالْحَقِّ وَبِهٖ يَعْدِلُونَ ﴿١٥٩﴾

159- "Musa'nın kavminden hak ile doğru yolu bulan ve onun sayesinde adil davranan bir topluluk vardır."

Onlar, ezelde inayetin eriştiği ve gerçek dostluğun nasip olduğu kimselerdir. Böylece onlar, tahrifsiz ve değişiklik yapmadan hak üzere kaldılar. Onlar, ezeli rahmete erdiler ve bu nedenle ne gizli ne de sürpriz bir değişiklikle karşılaştılar.

وَقَطَّعْنَاهُمُ اثْنَتَيْ عَشْرَةَ اَسْبَاطًا اُمَمًا وَاَوْحَيْنَٓا اِلٰى مُوسٰٓى اِذِ اسْتَسْقٰيهُ قَوْمُهُٓ اَنِ اضْرِبْ بِعَصَاكَ الْحَجَرَ فَانْبَجَسَتْ مِنْهُ اثْنَتَا عَشْرَةَ عَيْنًا قَدْ عَلِمَ كُلُّ اُنَاسٍ مَشْرَبَهُمْ وَظَلَّلْنَا عَلَيْهِمُ الْغَمَامَ وَاَنْزَلْنَا عَلَيْهِمُ الْمَنَّ وَالسَّلْوٰى كُلُوا مِنْ طَيِّبَاتِ مَا رَزَقْنَاكُمْ وَمَا ظَلَمُونَا وَلٰكِنْ كَانُٓوا اَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ﴿١٦٠﴾

160- "Biz, İsrail oğullarını, oymaklar halinde on iki kabileye ayırdık. Kavmi, kendisinden su isteyince Musa'ya, 'Asanı taşa vur!' diye vahyettik. Derhal ondan on iki pınar fışkırdı. Her kabile, içeceği yeri belledi. Sonra üzerlerine bulutla gölge yaptık. Onlara kudret helvası ve bıldırcın eti indirdik. Onlara dedik ki: 'Size verdiğimiz rızıkların temizlerinden yeyin.' Ama onlar, emirlerimizi dinlememekle bize değil, kendilerine zulmediyorlardı."

Allah, onları sınıflara ve farklı hiziplere ayırmış, sonra ihtiyaçlarını karşılamış ve karşılaştıkları durumlarda kendileri için gerekli olanı vermiştir. Bu çerçevede Allah, üzerlerinde kendilerini sıcağın ve soğuğun zararından koruyan gölgeler yarattı ve açlık, çalışma, çaba ve emek harcamanın yol açtığı yorgunluğu giderecek kudret helvası ve bıldırcın indirdi. Bir de konakladıklarında Allah, onlar için pınarlar fışkırttı. O kadar ki onlar, bu pınarları fışkırırken görmekteydiler. Kalplerine de inançlarını güçlendirecek deliller ilham etti.

Ancak göz önünde bulundurulması gereken husus, yaratıkların fiil ve amelleri değil, gerçek dayanak olan Allah'ın, onlar hakkında icra ettiği türlü türlü haller konusundaki iradesidir.

وَاِذْ قٖيلَ لَهُمُ اسْكُنُوا هٰذِهِ الْقَرْيَةَ وَكُلُوا مِنْهَا حَيْثُ شِئْتُمْ وَقُولُوا حِطَّةٌ وَادْخُلُوا الْبَابَ سُجَّدًا نَغْفِرْ لَكُمْ خَطٖيـَٓٔاتِكُمْ سَنَزٖيدُ الْمُحْسِنٖينَ ﴿١٦١﴾

161- "Onlara denildi ki: Şu şehirde yerleşin, ondan dilediğiniz gibi yeyin. Bağışlanmak istiyoruz deyin ve kapıdan eğilerek girin ki hatalarınızı bağışlayalım. İyilik yapanlara ileride ihsanımızı daha da artıracağız."

Allah, kendilerini yükümlü kıldığı sınırlara uymaktan, ahitleri bozmalarından, yükümlü kılınmalarından, onlara lütfettiği çeşitli bilgilendirmelerden, aralarından dilediğine muvaffakiyet ve tasdiki ikram etmesinden, içlerinden dilediğini sahipsiz bırakmak ve hakikatten mahrum kılmak suretiyle, perişan etmekten, sonra çeşitli belalarla onları cezalandırmaktan söz etmektedir. Böylece onlar, hiçbir rehberlik elde edemediler. Ayrıca Allah, kesin bir hüküm ve kararlı bir uygulama olarak onlara cezanın acısını çektirdi.

فَبَدَّلَ الَّذٖينَ ظَلَمُوا مِنْهُمْ قَوْلًا غَيْرَ الَّذٖي قٖيلَ لَهُمْ فَاَرْسَلْنَا عَلَيْهِمْ رِجْزًا مِنَ السَّمَٓاءِ بِمَا كَانُوا يَظْلِمُونَ ﴿١٦٢﴾

162- "Fakat onlardan zalim olanlar, sözü, kendilerine söylenenden başkasıyla değiştirdiler. Biz de zulmetmelerinden ötürü, üzerlerine gökten bir azap gönderdik."

Bu ayetin tefsiri ile ilgili olarak onların, "hıttatun" lafzını "hıntatun" diye değiştirdikleri ifade edilmiştir. Bunun üzerine, dinde ilave ve bidat meydana getirmenin çok tehlikeli, emrin sınırını aşmanın da çok zararlı olduğunu öğretmek için büyük bir belaya maruz kaldılar.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Tevbeden ibaret olan bir kelimeyi değiştirmek bütün bu azaba sebep oluyorsa, Allah'ın sıfatları ile haberini değiştirmeye ne demeli!

- Söz, her yönüyle eylemden daha az önemlidir. Hal böyleyken sözde yapılan değişiklik bütün bunlara sebep oluyorsa, acaba davranıştaki değişiklik nasıl olur!

وَسْـَٔلْهُمْ عَنِ الْقَرْيَةِ الَّتِي كَانَتْ حَاضِرَةَ الْبَحْرِۢ اِذْ يَعْدُونَ فِي السَّبْتِ اِذْ تَأْتِيهِمْ حِيتَانُهُمْ يَوْمَ سَبْتِهِمْ شُرَّعًا وَيَوْمَ لَا يَسْبِتُونَۙ لَا تَأْتِيهِمْۚ كَذٰلِكَۚ نَبْلُوهُمْ بِمَا كَانُوا يَفْسُقُونَ ﴿١٦٣﴾

163- "Onlara, deniz kıyısında bulunan şehir halkının durumunu sor. Hani onlar, cumartesi gününe saygısızlık gösterip haddi aşıyorlardı. Çünkü cumartesi tatili yaptıkları gün, balıklar meydana çıkarak akın akın onlara gelirdi. Cumartesi tatili yapmadıkları günde gelmezlerdi. İşte böylece biz, yoldan çıkmalarından dolayı onları imtihan ediyorduk."

Onların din anlayışı, tevile sarılmaktan ibaretti. Bu ise, hakikatin ölçülerine göre yoldan sapmak demektir. Bir de gerçekler, doğruluktan başka hiçbir şeyi kabul etmez. Ayrıca, nefsin arzuları arasında gidip gelmek ve muhtemel ruhsatlara meyletmek, hakikatin güçlü güvencelerini feshetmek demektir. Bu arada şaibeli davranan kimseye şaibeyle, samimi davranan kimseye ise samimiyetle karşılık verilir.

وَاِذْ قَالَتْ اُمَّةٌ مِنْهُمْ لِمَ تَعِظُونَ قَوْمًاۙ اللّٰهُ مُهْلِكُهُمْ اَوْ مُعَذِّبُهُمْ عَذَابًا شَدِيدًاۜ قَالُوا مَعْذِرَةً اِلٰى رَبِّكُمْ وَلَعَلَّهُمْ يَتَّقُونَ ﴿١٦٤﴾

164- "İçlerinden bir topluluk: 'Allah'ın helak edeceği yahut şiddetli bir şekilde azap edeceği bir kavme ne diye öğüt veriyorsunuz?' dedi. Öğüt verenler dediler ki: 'Rabbinize mazeret beyan edelim diye, bir de sakınırlar ümidiyle öğüt veriyoruz.'"

Hakikatler gerekli olmakla birlikte, dinin gerekleri karşısında kul için mazeret değildir. Aksine vücub, din tarafından konulur. İlahî takdir her yönden galip olmakla birlikte bu böyledir.

فَلَمَّا نَسُوا مَا ذُكِّرُوا بِهٖٓ اَنْجَيْنَا الَّذٖينَ يَنْهَوْنَ عَنِ السُّوٓءِ وَاَخَذْنَا الَّذٖينَ ظَلَمُوا بِعَذَابٍ بَٔيٖسٍ بِمَا كَانُوا يَفْسُقُونَ ﴿١٦٥﴾

165- "Onlar, kendilerine yapılan uyarıları unutunca, biz de kötülükten men edenleri kurtardık. Zulmedenleri de yapmakta oldukları kötülüklerden ötürü şiddetli bir azap ile yakaladık."

Kul, hükümleri çiğnemeye devam ettiği ve verilen uzun mühlet ve örtmeyi umursamadığı zaman, takdirin eli, en büyük azabı vermeden önce bunu yapanın kökünü sökmeyi, izini silmeyi, hesabı ve yakın azabı çabuklaştırmayı ihmal etmez. Sonra suçsuz olan kimse selametin uzayında, ilahi korumanın gölgesi, özel kul olma huzurunun devamı ve Allah'a yakınlığı yaşamanın serinliği altındadır.

فَلَمَّا عَتَوْا عَنْ مَا نُهُوا عَنْهُ قُلْنَا لَهُمْ كُونُوا قِرَدَةً خَاسِئٖينَ ﴿١٦٦﴾

166- "Kibirlenip de kendilerine yasak edilen şeylerden vazgeçmeyince onlara: Aşağılık maymunlar olun, dedik."

Mühlet verme süresi sona erdiği zaman, ondan sonra kök sökme gerçeğinden başka bir şey kalmaz. Kul da Allah'ın gözünden düştüğü zaman, ondan sonra artık asla yaşayamaz. Bu itibarla, hükümdarların hükmünün düşürdüğü kimsenin reddedilmesinden sonra kabulü söz konusu değildir.

Şu dizeler de bu anlama yakın söylenmiştir:

*Bir şeyden yüz çevirdiği zaman nefsim*
*İlelebet ona yönelmeye yanaşmaz bir daha*

وَاِذْ تَاَذَّنَ رَبُّكَ لَيَبْعَثَنَّ عَلَيْهِمْ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ مَنْ يَسُومُهُمْ سُوٓءَ الْعَذَابِ اِنَّ رَبَّكَ لَسَرٖيعُ الْعِقَابِ وَاِنَّهُ لَغَفُورٌ رَحٖيمٌ ﴿١٦٧﴾

167- "Rabbin, elbette kıyamet gününe kadar onlara en kötü eziyeti yapacak kimseler göndereceğini ilan etti. Şüphesiz Rabbin cezayı çabuk verendir. Ve o çok bağışlayan, pek esirgeyendir."

Allah, gerekçe göstermekten çok yüce olmakla birlikte, vereceği cezanın gerekçesini ortaya koymak üzere, uyarı yoluyla ve herkesin yaptığı hatalar dolayısıyla hak ettiği cezayı anlatmak suretiyle prensibini uyguladığı zaman, eğer söz onlarda etkili olursa maksat hâsıl olmuş olur. Aksi takdirde azapla dünyayı başlarına yıkar.

وَقَطَّعْنَاهُمْ فِي الْاَرْضِ اُمَمًا مِنْهُمُ الصَّالِحُونَ وَمِنْهُمْ دُونَ ذٰلِكَ
وَبَلَوْنَاهُمْ بِالْحَسَنَاتِ وَالسَّيِّئَاتِ لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُونَ ﴿١٦٨﴾

168- "Yahudileri, grup grup yeryüzüne dağıttık. Onlardan, iyi kimseler vardır. Yine onlardan bundan aşağı olanları da vardır. Belki dönerler diye, onları iyiliklerle ve kötülüklerle imtihan ettik."

Allah onları, içinde bulunmakta olduklarını bildiği iyilik ve dürüstlük veya günahlar ve bozgunculuk üzere yürütmüştür. Sonra onları, gün yüzüne çıkardığı birtakım meşakkatler ve yaptığı lütuflar şeklindeki fiillerle imtihan etmiş, bu çerçevede onları, verdiği nimetlere şükretmekle, yaptığı imtihana karşı da sabırlı olmakla yükümlü kılmıştır. Maksat, onların itaatteki ve itaatsizlikteki, samimiyet ve münafıklıktaki cevherlerini hem meleklere hem de bütün yaratıklara göstermektir. Bu arada iyilikler, onlara Allah'ı gösteren ve O'ndan gafil kılmayan hususlardır. Kötülükler ise uygulama ve erteleme ile günahları mubah sayma ve kusur işleme arasında gidip gelmektir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- İyilik Allah'ın insana nefsini unutturması, kötülük de kendisine nefsini göstermesidir.

- İyilikler, gafletlerin olmadığı bir vaktin müyesser kılınması ve musibetlerden uzak bir günün kolaylaştırılmasıdır. Allah'ın kendilerini

imtihan ettiği kötülükler ise gerçekleşen bir utanç ve kesintisiz bir mahrumiyettir.

فَخَلَفَ مِنْ بَعْدِهِمْ خَلْفٌ وَرِثُوا الْكِتَابَ يَأْخُذُونَ عَرَضَ هٰذَا الْاَدْنٰى وَيَقُولُونَ سَيُغْفَرُ لَنَا وَاِنْ يَأْتِهِمْ عَرَضٌ مِثْلُهُ يَأْخُذُوهُ اَلَمْ يُؤْخَذْ عَلَيْهِمْ مِيثَاقُ الْكِتَابِ اَنْ لَا يَقُولُوا عَلَى اللّٰهِ اِلَّا الْحَقَّ وَدَرَسُوا مَا فِيهِ وَالدَّارُ الْاٰخِرَةُ خَيْرٌ لِلَّذِينَ يَتَّقُونَ اَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿١٦٩﴾

169- "Onların ardından da şu değersiz dünya malını alıp, nasıl olsa bağışlanacağız, diyerek kitaba varis olan birtakım kötü kimseler geldi. Onlara, ona benzer bir menfaat daha gelse, onu da alırlar. Peki kitapta Allah hakkında gerçekten başka bir şey söylemeyeceklerine dair onlardan söz alınmamış mıydı ve onlar kitaptakini okumamışlar mıydı? Ahiret yurdu, sakınanlar için daha hayırlıdır. Hala aklınız ermiyor mu?"

Onlar, Allah'ın: (فَخَلَفَ مِنْ بَعْدِهِمْ خَلْفٌ) *"Onların ardından da birtakım kötü kimseler geldi"* şeklindeki sözüyle kötülenmişlerdir. Çünkü onlar, en değersiz metaı tercih edip dünyanın acil varlıklarına meylederken, ahiretten nasiplerini ise temenniden ibaret kıldılar ve: (سَيُغْفَرُ لَنَا) *"Bağışlanacağız"* dediler.

Bir yoruma göre de istidracın emarelerinden bazıları da; zilleti irtikap etmek, mühlet zamanına aldanmak ve cezanın ertelenmesini vuslatın hak edilişi olarak yorumlamaktır.

(وَاِنْ يَأْتِهِمْ عَرَضٌ مِثْلُهُ يَأْخُذُوهُ) *"Onlara, ona benzer bir menfaat daha gelse, onu da alırlar."*

Allah, temenniyle aldanmada ısrar etmelerinden ve nefse uymayı tercih etmelerinden söz etmektedir.

(اَلَمْ يُؤْخَذْ عَلَيْهِمْ مِيثَاقُ الْكِتَابِ اَنْ لَا يَقُولُوا عَلَى اللّٰهِ اِلَّا الْحَقَّ) *"Peki kitapta Allah hakkında gerçekten başka bir şey söylemeyeceklerine dair onlardan söz alınmamış mıydı?"*

Buradaki soru, sorulan hususun gerçekleştiği anlamındadır. Yani onlara, Allah'ı celal sıfatıyla nitelemeleri, kemal sıfatlarını hak ettiğini itiraf etmeleri, kendisiyle ilgili olarak, hakkında O'ndan bir haber gelmeyen ve doğruluğuna hiçbir delil ve değerlendirmenin tanıklık etmediği yorumlarla hüküm vermeye çalışmamaları emredildi.

(وَدَرَسُوا مَا فِيهِ وَالدَّارُ الْاٰخِرَةُ خَيْرٌ لِلَّذِينَ يَتَّقُونَ اَفَلَا تَعْقِلُونَ) *"Ve onlar kitaptakini okumamışlar mıydı? Ahiret yurdu, sakınanlar için daha hayırlıdır. Hala aklınız ermiyor mu?"*

Yani, kitabın içeriğinin hak olduğunu kesin olarak bildiler, sonra da izah tablosu ve delilin ortaya çıkmasının ardından inkârda bulundular. Yani Allah'ın nimetini ümit eden kimse için lütfunun esintilerine mazhar olmak, nefsanî arzusunu tahsilde çaba harcayan kimsenin yorgunluk çilesi çekmesinden hayırlıdır.

وَالَّذِينَ يُمَسِّكُونَ بِالْكِتَابِ وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ اِنَّا لَا نُضِيعُ اَجْرَ الْمُصْلِحِينَ ﴿١٧٠﴾

170- "Kitab'a sımsıkı sarılıp namazı dosdoğru kılanlar var ya işte biz, böyle iyiliğe çalışanların ecrini zayi etmeyiz."

Onlar, imanları gereği Kitab'a sımsıkı sarılır ve iyilik olarak namazı dosdoğru kılarlar. Böylece imanla güveni, iyilikle de Allah'ın rızasını bulmuşlardır. Bu çerçevede güven dünyada, Allah'ı rızası da ahirette gerçekleşir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Kitab'a sımsıkı sarılmak kurtuluşun sebebi, namazı dosdoğru kılmak da münacatın gerçekleşmesidir. Bu itibarla kurtuluş ahirette, münacat da dünyada olur.

- Diğer ibadetlerden ayrı olarak burada sadece namazın zikredilmiş olması, Allah'ın zatını ve sıfatlarını tanıdıktan sonraki en faziletli ibadet olduğunun bilinmesi içindir.

(إِنَّا لَا نُضِيعُ اَجْرَ الْمُصْلِحِينَ) *"İşte biz, böyle iyiliğe çalışanların ecrini zayi etmeyiz."*

Her kim, nimetimizin vesilesine ümit bağlarsa, bu manevi ticaretinde zarar etmez ve ümit bağladığı şefkat sonuçsuz kalmaz.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Kim, dünyada Allah'ın kapısına doğru adım atarsa, ahirette nimetinden mahrum kalmaz. Kim, O'nun cömertliğinin alanlarına doğru gayretlerini yükseltirse, hemen keremine nail olur.

- Kim, Allah'ın cömertliğine sarılarak O'na ulaşmak isterse, dünyada ve ahirette şerefe nail olur. Kim, Allah'ın varlığıyla yetinirse, Allah ona kefil olur.

وَاِذْ نَتَقْنَا الْجَبَلَ فَوْقَهُمْ كَاَنَّهُ ظُلَّةٌ وَظَنُّوا اَنَّهُ وَاقِعٌ بِهِمْ خُذُوا مَا اٰتَيْنَاكُمْ بِقُوَّةٍ وَاذْكُرُوا مَا فِيهِ لَعَلَّكُمْ تَتَّقُونَ ﴿١٧١﴾

171- "Bir zamanlar dağı İsrail oğullarının üzerine gölge gibi kaldırdık da üstlerine düşecek sandılar. 'Size verdiğim kitabı kuvvetle tutun ve içinde olanı hatırlayın ki, korunasınız' dedik."

Gönüllü olarak gelen, zorla gelen gibi değildir. Çünkü zorla gelen kimse, asla Allah'ın kadrini bilmez.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Seni aracılıktan başka bir şey hoşnut kılmadığı zaman*
*Aracıya olan sevgide hiçbir hayır olamaz*
..........................................................
*Bezgine sitem ettiğim zaman, sadece*
*Kalemlerimle suyun üzerinde harfler çizerim*
*Sitemden sonra döndüğünü farz edelim*
*Dostluğu tabii iken zorakiye dönüşmedi mi?*

Bir yoruma göre de zorla gelenin sonu, gönüllü olarak bırakıp gitmektir. Nitekim onlar da, zorlanarak kitapla karşılaştıkları için fazla beklemeden onu tahrifle karşılamışlardır.

وَاِذْ اَخَذَ رَبُّكَ مِنْ بَنٖٓي اٰدَمَ مِنْ ظُهُورِهِمْ ذُرِّيَّتَهُمْ وَاَشْهَدَهُمْ
عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْۚ اَلَسْتُ بِرَبِّكُمْۜ قَالُوا بَلٰىۚ شَهِدْنَاۚ اَنْ تَقُولُوا يَوْمَ
الْقِيٰمَةِ اِنَّا كُنَّا عَنْ هٰذَا غَافِلٖينَۙ ﴿١٧٢﴾ اَوْ تَقُولُٓوا اِنَّمَٓا اَشْرَكَ اٰبَٓاؤُ۬نَا
مِنْ قَبْلُ وَكُنَّا ذُرِّيَّةً مِنْ بَعْدِهِمْۚ اَفَتُهْلِكُنَا بِمَا فَعَلَ الْمُبْطِلُونَ ﴿١٧٣﴾

172, 173- "Kıyamet gününde: 'Biz, bundan habersizdik' demeyesiniz diye Rabbin Âdemoğullarından, onların bellerinden zürriyetlerini çıkardı, onları kendilerine şahit tuttu ve dedi ki: 'Ben sizin Rabbiniz değil miyim?' Onlar da: 'Evet, buna şahit olduk' dediler. Yahut: 'Daha önce babalarınız Allah'a ortak koştu, biz de onlardan sonra gelen bir nesildik. Bâtıl işleyenlerin yüzünden bizi helak mı edeceksin?' dememeniz için böyle yaptık."

Allah bu ayetle geçmişteki ahdinden, doğru vaadinden ve kulunu tanıtmak suretiyle dostluğunun sağlamlığından söz etmektedir.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Yaşasın Leyla ve o geceler ki*
*Leyla ile buluşurduk onlarda*
*Feda olayım sana, daha doğrusu zamanımın bütün günleri*
*Feda olsun içinde seni tanıdığım günlere*

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, hiçbir mahlûk onları görmeden veya hiçbir yaratık kalplerinde iz bırakmadan veya hiçbir sıcak dosttan, bir yakından, bir arkadaştan ve bir şefkat sahibinden haberdar olmadan önce, irfanı gerçekleştirmekle onlara cevap verdi.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Yakaladı beni onun aşkı, ben aşkı tanımadan önce*
*Boş buldu kalbimi ve yerleşti*

- Allah, onları hitapta birleştirmiş, ancak halde ayırmıştır. Bir gruba yakınlık vasfıyla hitap ettiği için onları aynı hitap çerçevesinde

tanıtmıştır. Bir grubu da kaybolmuşluk alanlarında bıraktığı için irfan sıfatından uzaklaştırıp perdelemiştir.

- Allah, bazı topluluklara tecellisi dairesinde lütufta bulunduğu için onlar, tevhid sıfatını ikrar ettiler. Diğer bazılarını da kendilerine gösterdikleri çerçevesinde uzaklaştırdığı için, onlar baştan itibaren inkârı dile getirdiler.

- Allah, bir topluluğu cehaletle damgalamış, bu nedenle onları, delili açıklamak suretiyle şahitlikle yükümlü kılmış, ardından da tevhidle kendilerine ikramda bulunmuştur. Diğer bazılarına ise apaçık olan delili göstermiştir. (...)

- Allah, bir topluluğa tecelli edip onlara kendini tanıtmayı üzerine aldı ve bu sayede onlar, kesin bir inançla: "Evet" dediler. Diğer bazılarına tecelli etmek istemedi ve böylece onları inkâr noktalarında sabitledi. Bu yüzden de onlar zan ve tahminden hareketle: "Evet" dediler.

- Allah, müminleri isimlerde bir araya getirmiş, ancak mertebelerde farklı kılmıştır. Bu çerçevede bazılarını iyiliklere arzulu kılmak suretiyle kalplerini ikrara cezbetmiştir. Diğer bazılarına da, kendilerine açıkça gösterdikleri ve keşfine mazhar kıldığı sırlarla, samimi ikrarı söyletmiştir.

- Allah bir fırkayı heybetle yüzleştirmiş ve bunlar, şaşkına dönmüşlerdir. Bir fırkaya da yakınlık lütfetmiş ve bu sayede bunlar, istikamet üzere olmuşlardır.

- Allah, velilere kim olduğunu öğretmiş, böylece onlar, halis imanlarıyla hakikati bulmuşlardır. Düşmanları ise şaşırtmış ve bunlar, kafalarındaki şaşkınlık dolayısıyla durakalmışlardır.

- Allah, onlara sözünü duyurdu. Duyurduğu şeyin kendisinde onları huzuruna getirdi. Sonra onları, huzuruna getirdiği konuda kendilerinden aldı. Sonra araya mesafe koyarak, kendini onlara tanıttığı şekle uygun olarak kendilerini konuşturdu ve güzel bir sahiplenmeyle mükellefiyetin hükümlerini onlar için korudu. Bunlar olup biterken

onları yükümlü kılan, dilediği gibi yöneten, verdiği özelliklerle tanıtan ve yükselttiği mertebelerle onurlandıran hep O olmuştur.

- Allah, bir topluluğa, hitabı esnasında, cemaliyle tecelli ettiğinden onları sevgisinin tutkusuyla sersemletmiş, böylece sevgileri sırlarının derinliklerinde kök salmıştır. Bu nedenle onlar, bugün o döneme dair bir şey duydukları zaman o haller yenilenmektedir. İşte kendilerinde ortaya çıkan rahatsızlık, geçmişte yaşadıklarını hatırlamalarından ötürüdür.

- Allah, bir topluluğa rububiyyetin delilini duyurmuş, böylece onları delilin ta kendisiyle uyandırmış, bunun üzerine onlar, hakikatin özünden yola çıkarak cevap vermişlerdir. Diğer bazılarına da rububiyyetin delilini duyurduktan sonra onları hakikati elde etmekten engellemiş, böylece onlar, inkâr vasfıyla cevap vermişlerdir.

- Allah, bir topluluğa, üzerlerine serptiği nurları has kılarken ta başından itibaren inayetin eserlerini ortaya koymuştur. Bu itibarla Allah, bu nurlardan mahrum kıldığı kimseyi vuslata ehil kılmadı. Bu nurların nasip olduğu kimse ise, hiçbir zorluk çekmeden kendisine has kılınanları açıkça dile getirdi.

وَكَذٰلِكَ نُفَصِّلُ الْاٰيَاتِ وَلَعَلَّهُمْ يَرْجِعُونَ ﴿١٧٤﴾

174- "Belki inkârdan dönerler diye, ayetleri böyle ayrıntılı bir şekilde açıklıyoruz."

Basiret gözleri kapandığı zaman, delilin açık olmasının ne faydası olur!

وَاتْلُ عَلَيْهِمْ نَبَاَ الَّذٖيٓ اٰتَيْنَاهُ اٰيَاتِنَا فَانْسَلَخَ مِنْهَا فَاَتْبَعَهُ الشَّيْطَانُ
فَكَانَ مِنَ الْغَاوٖينَ ﴿١٧٥﴾

175- "Yahudilere, kendisine ayetlerimizden verdiğimiz ve fakat onlardan sıyrılıp çıkan, o yüzden de şeytanın takibine uğrayan ve sonunda azgınlardan olan kimsenin haberini oku!"

Allah, düşmanları dostluk giysisi içinde gösterir, sonra da onları ezeli taksimata geri çevirir. Velileri de muhalefet ve zillet sıfatıyla ortaya çıkardıktan sonra vuslatın kısmetleri onlara galip gelir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah onu yakınlık makamına yerleştirdikten sonra, ezeli takdirde kendisi için hazırladıklarını gün yüzüne çıkarıp kendisine gösterdi. Böylece bir ara herkes rütbece onun altında iken, daha sonra değersizliğine rağmen, köpek dahi ondan üstün olmuştur.

Şu dizeler de bu manada söylenmiştir:

*Kendisi iyi, dünya da rahat iken*
*Bir gün sabahladı ki zaman değişmiştir*

- Dikkate alınması gereken, o anda ortaya çıkan durum değil, insanın sonunun varacağı durumdur.

وَلَوْ شِئْنَا لَرَفَعْنَاهُ بِهَا وَلٰكِنَّهُٓ اَخْلَدَ اِلَى الْاَرْضِ وَاتَّبَعَ هَوٰيهُ فَمَثَلُهُ كَمَثَلِ الْكَلْبِ اِنْ تَحْمِلْ عَلَيْهِ يَلْهَثْ اَوْ تَتْرُكْهُ يَلْهَثْ ذٰلِكَ مَثَلُ الْقَوْمِ الَّذِينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا فَاقْصُصِ الْقَصَصَ لَعَلَّهُمْ يَتَفَكَّرُونَ ﴿١٧٦﴾

176- "Dileseydik elbette onu bu ayetler sayesinde yükseltirdik. Fakat o dünyaya saplandı ve hevesinin peşine düştü. Onun durumu, tıpkı köpeğin durumuna benzer. Üstüne varsan da dilini çıkarıp solur. Bıraksan da dilini sarkıtıp solur. İşte ayetlerimizi yalanlayan kavmin durumu böyledir. Kıssayı anlat, belki düşünürler."

Eğer ilahî irade, ezelî saadete ermesine elverseydi, ebedî şekâvete yakalanmazdı. Lakin takdirin belini kırdığı kimseye sonraki durumlar hayat veremez.

(وَلٰكِنَّهُٓ اَخْلَدَ اِلَى الْاَرْضِ) *"Fakat o dünyaya saplandı."*

Hz. Âdem'in cennette sükunet bulması ve onda ölümsüz olmayı arzulaması, cennetten çıkmasına yol açtığına göre, nasıl olur da dünyaya meyletmek, onda kalıcı olmayı sağlar!

(وَاتَّبَعَ هَوٰيهُ ) *"Ve hevesinin peşine düştü."*

Nefse uymak, sahibini azizliğin göğünden züllün toprağına indirir ve değersizlik çukurunun içine atar. Bu arada her kim, bir bilgiyi tasdik etmezse, yakında varlığından muzdarip olacaktır.

(فَمَثَلُهُ كَمَثَلِ الْكَلْبِ) *"Onun durumu, tıpkı köpeğin durumuna benzer."*

Köpeğin huylarından biri, başta kendisini korkutmayan kimseye saldırması, sonra da bir lokmayla ondan hoşnut olmasıdır. Aynı şekilde müritlik yolundan dönen kimse de, tahammülsüz ve kötü ahlaklı olup suçsuz olan herkesi incitmeyle işe başlar, sonra yırtıcılığı, her türlü değersiz metaa kavuşmakla yatışır.

(اِنْ تَحْمِلْ عَلَيْهِ يَلْهَثْ اَوْ تَتْرُكْهُ يَلْهَثْ ذٰلِكَ مَثَلُ الْقَوْمِ الَّذِينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا فَاقْصُصِ الْقَصَصَ لَعَلَّهُمْ يَتَفَكَّرُونَ) *"Üstüne varsan da dilini çıkarıp solur. Bıraksan da dilini sarkıtıp solur. İşte ayetlerimizi yalanlayan kavmin durumu böyledir. Kıssayı anlat, belki düşünürler."*

Hakikatten engellenen kimseye göre iyilikle kötülük eşittir. Bu nedenle o bu iki durumda ya can sıkıntısı çeker veya kibirlenir. Bu kimse, meşakkati, devletin zevali diye algılar, nimeti de aşırı istekle karşılar. Böylece her iki halde de o, hakikatten engellenmiştir.

Diğer bir yoruma göre, köpeğin necaseti asli, değersizliği ise küllidir. İşte reddedilen kişinin niteliği de böyledir. Değeri noksan, kaderi ise mahrumiyettir.

سَٓاءَ مَثَلًا الْقَوْمُ الَّذِينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا وَاَنْفُسَهُمْ كَانُوا يَظْلِمُونَ ﴿١٧٧﴾

177- "Ayetlerimizi yalanlayan ve kendilerine zulmetmiş olan kavmin durumu ne kötüdür!"

Yani onun sıfatı, ezeli yüz çevirmeyle imtihan edilen kimsenin sıfatından daha aşağıdadır. Hal böyle olunca, hangi vasıf, ebedî kabul ile ikram gören kimsenin vasfından daha yüksek olabilir! Hangi tedbir, tedbirin yaratıcısına karşı fayda verir! Vesilenin kendisine ait olduğu Allah'tan başkasına vesile nasıl doğru olur!

مَنْ يَهْدِ اللّٰهُ فَهُوَ الْمُهْتَد۪يۚ وَمَنْ يُضْلِلْ فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْخَاسِرُونَ ﴿١٧٨﴾

178- "Allah, kimi hidayete erdirirse, doğru yolu bulan odur. Kimi de şaşırtırsa işte asıl ziyana uğrayanlar onlardır."

Hidayet, çabadan kaynaklanmamakta, ancak baştan itibaren var olmaktadır. Hidayet, kulun düşüncesi ve fikir yürütmesine bağlı olmayıp ancak Allah'ın lütfü ve güzelce anmasıyla olur.

وَلَقَدْ ذَرَأْنَا لِجَهَنَّمَ كَث۪يرًا مِنَ الْجِنِّ وَالْاِنْسِۘ لَهُمْ قُلُوبٌ لَا يَفْقَهُونَ بِهَاۘ وَلَهُمْ اَعْيُنٌ لَا يُبْصِرُونَ بِهَاۘ وَلَهُمْ اٰذَانٌ لَا يَسْمَعُونَ بِهَاۜ اُو۬لٰٓئِكَ كَالْاَنْعَامِ بَلْ هُمْ اَضَلُّۜ اُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْغَافِلُونَ ﴿١٧٩﴾

179- "Andolsun biz, cinler ve insanlardan birçoğunu cehennem için yaratmışızdır. Onların kalpleri vardır, onlarla kavramazlar. Gözleri vardır, onlarla görmezler. Kulakları vardır, onlarla işitmezler. İşte onlar hayvanlar gibidir. Hatta daha da şaşkındırlar. İşte asıl gafiller onlardır."

Allah'ın, cehennem için yarattığı kimse, nasıl olur da cenneti hak eder!

Allah'ın, gazabına ehil kıldığı kimse, nasıl olur da rızasını hak eder. Eğer basiretler kapalı değilse, bu izahtan sonra artık hangi belirsizlik vardır?

Bir yoruma göre de onlar bugün inkâr cehenneminde, perişanlık zincirlerine vurulmuş ve mahrumiyet elbiseleri giydirilmiş vaziyettedirler. Yiyecekleri kuru diken gibi yalnızlık, içecekleri ise kaynar su gibi ayrılıktır. Yarın da yakıcı cehennemde olacaklardır.

Allah, bu durumu kitapta açıkladığı gibi düzenlemiştir.

(لَهُمْ قُلُوبٌ لَا يَفْقَهُونَ بِهَا وَلَهُمْ اَعْيُنٌ لَا يُبْصِرُونَ بِهَا وَلَهُمْ اٰذَانٌ لَا يَسْمَعُونَ بِهَا اُولٰٓئِكَ كَالْاَنْعَامِ بَلْ هُمْ اَضَلُّ اُولٰٓئِكَ هُمُ الْغَافِلُونَ) *"Onların kalpleri vardır, onlarla kavramazlar. Gözleri vardır, onlarla görmezler. Kulakları vardır, onlarla işitmezler. İşte onlar hayvanlar gibidir. Hatta daha da şaşkındırlar. İşte asıl gafiller onlardır."*

Yani onlar, hitabın manalarını Allah'ın ilham verdiği kimseler gibi anlamazlar. Aynı zamanda onlar, Allah'ın ilhamlarıyla nefsin kuruntuları ve şeytanın vesveselerini birbirinden ayıracak temyiz yeteneğine de sahip değildirler. Gözleri vardır; ancak o gözlerle tevhidin delillerini ve kesin inancın alametlerini görmezler. Böylece sadece gaflet noktasından bakmaktadırlar. Bir de fitnenin davetçilerinden başkasını duymazlar ve sadece şehvetin peşine düşenlerle yolculuk yaparlar.

(اُولٰٓئِكَ كَالْاَنْعَامِ بَلْ هُمْ اَضَلُّ) *"İşte onlar hayvanlar gibidir. Hatta daha da şaşkındırlar."* Çünkü hayvanlardan teklif kaldırılmıştır. Şayet dine uyumları yoksa aynı zamanda emre muhalefetleri de yoktur. Hayvanları ilgilendiren tek şey, yemlenmek ve hemcinsleriyle temas kurmanın yolunu aramaktır. Aynı şekilde nefsinin delilleriyle şekillenen ve nefsin hükümlerine bağlı kimselerden olan da böyledir.

Şu dizeler de bu manada söylenmiştir:

*Ey aldanan! Yanılgı ve gaflettir gündüzün*
*Uykudur gecen ve kaçınılmazdır ölümün*
*Dünyalık çabandan da nefret edeceksin*
*İşte hayvanlar böyle yaşar dünyada*

وَلِلّٰهِ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى فَادْعُوهُ بِهَا وَذَرُوا الَّذٖينَ يُلْحِدُونَ فٖٓي اَسْمَآئِهٖ سَيُجْزَوْنَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٨٠﴾

180- "En güzel isimler Allah'ındır. O halde O'na güzel isimlerle dua edin. O'nun isimleri hakkında eğri yola gidenleri bırakın. Onlar, yapmakta olduklarının cezasına çarptırılacaklardır."

Şanı yüce Allah, kendini velilerine sıfatları ve isimleriyle tanıtmıştır. Bu çerçevede onlara, kim olduğunu, hangi sıfatı taşıdığını, sıfatında neyin vacip neyin caiz olduğunu, hakkında ve hükmünde neyin muhal olduğunu öğretmiştir. Böylece kendilerine gösterdiği isimleri ve sıfatları ile kalplerine tecelli etmiştir. Zira akıllar, vacip, caiz ve muhal kavramlarının özüne vakıf olmakla birlikte, Allah'ın vasfı ile ilgili olarak söylenmesi doğru olan hususlar konusunda kendi başlarına hareket edemez. Bu itibarla akıl toplu bilgiye sahiptir. Allah ve sıfatları hakkında herhangi bir ifade kullanıp açıklamada bulunmak ise din ile mümkündür. Muvaffakiyetin gerçekleştiği konuda söz söylenebilir. Muvaffakiyetin sessiz kaldığı konuda ise söz söylenemez.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Kim Allah'ın hangi sıfatının tezahürlerine mazhar olursa, O'nu o sıfatın gerekleriyle anar. Mesela, Allah'ın nimet bahşedici sıfatının tecellisine mazhar olan ve kalbi lütuflarına bağlı olan kimsenin, sözüne hâkim olan, Allah'ı çok bahşeden anlamındaki "vehhâb", iyilik yapan anlamındaki "Bârr" ve veren demek olan "Mu'tî" ve bu anlamdaki diğer sıfatlarıyla övmektir. Nimet vericilik sıfatını müşahede etmekten uzak tutulan ve rahmet sıfatının tecellisine mazhar kılınan kimsenin zikrine hâkim olan, Allah'ı "rahman", "rahîm", "kerîm" ve bu anlamdaki sıfatlarıdır. Himmeti kendi varlığını görmeyi aşan ve Allah'ın varlığının hakikatlerinde gark olan kimsenin diline hâkim olan ise Hak'tır. Bu nedenle, âlimlerin Allah'tan söz ederken en fazla kullandıkları söz yaratan anlamındaki "Bârî" lafzıdır. Çünkü onlar, fiili müşahede etmekten faili müşahede etmeye yükselirler. Marifet ehline gelince, onların diline hâkim olan sözcük, "Hak" lafzıdır. Zira onlar, eserleri müşahede etmekten koparılıp varlığın hakikatlerine dair kesin inanca sahip olmuşlardır.

- Allah, halkı isimlerine vâkıf kılmıştır. Bu nedenle insanlar, isimlerini söz olarak zikrederler. Ancak Allah, halkı zatına vakıf kılmak istememiştir. Bu arada akıllar, duru olmakla birlikte, idrakin hakikatlerine yeltenmezler. Çünkü idrak edilmek, Allah hakkında caiz

değildir. Bu nedenledir ki, hakikatlerin işaretleri belirip onları kavramak durumunda kalan akıllar, şaşkınlık örtüsüne bürünürler. Zatın hakikatine muttali olmaya niyetlenildiğinde marifetler de şaşkınlık içinde kalır. Allah'ı görme noktasındaki idrak arayışı esnasında da gözler yetersiz kalır. Allah aziz olup yücelik sıfatlarını hak etmek, kendisine mahsustur.

(وَذَرُوا الَّذِينَ يُلْحِدُونَ فِي اَسْمَآئِهِ) *"O'nun isimleri hakkında eğri yola gidenleri bırakın."* "İlhâd" doğru iradeden sapmaktır. Bu da biri ilave, diğeri de noksanlık olmak üzere iki şekilde olur. Bu çerçevede temsil ehli, ilavede bulunarak, tatil ehli de noksanlık meydana getirerek ilhâda düşmüş oldular.

وَمِمَّنْ خَلَقْنَآ اُمَّةٌ يَهْدُونَ بِالْحَقِّ وَبِهِ يَعْدِلُونَ ﴿١٨١﴾

181- "Yarattıklarımızdan daima hakka ileten ve adaleti hak ile yerine getiren bir millet bulunur."

Allah sünnetini, yardım istenecek ve hakkın devamlı ortaya çıkmasına vesile olacak kimselerden yeryüzünü boş bırakmamak şeklinde cari kılmıştır.

Şu dizeler de bu manada söylenmiştir:

*Kutup olmadığı zaman*
*Kim idare eder yeryüzünü*

Hakka iletmeleri demek, hakka çağırmaları, hakkı göstermeleri, hakla hareket etmeleri, hak için hakla durmalarıdır. Onlar, hakkı yerine getirmekte ve Allah onları hak ile yönlendirmektedir. Onlar, halkın yardımcıları olup insanlar kıtlık yaşadıklarında onlarla rızıklandırılır, kuraklık yaşadıklarında onlarla kendilerine yağmur verilir ve dua ettiklerinde duaları kabul edilir.

وَالَّذِينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا سَنَسْتَدْرِجُهُمْ مِنْ حَيْثُ لَا يَعْلَمُونَ ﴿١٨٢﴾
وَاُمْلِي لَهُمْ اِنَّ كَيْدِي مَتِينٌ ﴿١٨٣﴾

**182, 183- "Âyetlerimizi yalanlayanları hiç bilmeyecekleri yerden yavaş yavaş helake götüreceğiz. Onlara mühlet veririm; ama benim cezam çetindir."**

"İstidrac", onlara vuslat ehli olduklarının vehmettirilmesidir. Hakikatte ise kendilerine ezelde takdir edilen, ayrılığın hakikatleridir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- İstidrac, halk arasında hayırla şöhret bulurken Allah'a karşı olan sırda kötülük barındırmaktır.

- İstidrac, bir kimsenin geleceğinde beraberlik arttıkça mertebece noksanlığı hak etmesidir.

- İstidrac, bir kimsenin, halin safiyeti vehminden kötü ameller işlemeye dönüş yapmasıdır. Eğer bu kimse halinde dürüst olsaydı, amellerinde masum olurdu.

- İstidrac, hastalıklı anlamlardan doğan geniş iddialardır.

- İstidrac, şükür (...) birlikte nimetin bolca verilmesidir.

اَوَلَمْ يَتَفَكَّرُوا مَا بِصَاحِبِهِمْ مِنْ جِنَّةٍ اِنْ هُوَ اِلَّا نَذِيرٌ مُبِينٌ ﴿١٨٤﴾

**184- "Düşünmediler mi ki, arkadaşlarında delilik yoktur? O, ancak apaçık bir uyarıcıdır."**

Hz. Peygamber'in bütün hallerinde Allah'a yakınlığın tezahürlerinden ibaret ahlakı görmeleri ve bu delilin uydurulmuş bir delil olmadığını bilmeleri için, basiret nurlarıyla düşünmediler mi?

Bir yoruma göre de, Hz. Peygamber'in kürkleri, Allah'a yakınlık esintisiyle tütsülenmişti. Ancak o güzel koku, sadece irfanı koklamış olmakla fark edilir. Bu özelliğe sahip olmayan kimsenin, Hz. Peygamber'in gerçek durumundan ne haberi olur?

اَوَلَمْ يَنْظُرُوا فِي مَلَكُوتِ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَمَا خَلَقَ اللّٰهُ مِنْ شَيْءٍ وَاَنْ عَسٰٓى اَنْ يَكُونَ قَدِ اقْتَرَبَ اَجَلُهُمْ فَبِاَيِّ حَدِيثٍ بَعْدَهُ يُؤْمِنُونَ ﴿١٨٥﴾

185- "Göklerin ve yerin hükümranlığına, Allah'ın yarattığı her şeye ve ecellerinin yaklaşmış olabileceğine bakmadılar mı? O halde Kur'an'dan sonra hangi söze inanacaklar?"

Allah, ay gibi mucizeler gösterdi ve ışıklarını şüphe bulutlarından temizledi. Her kim, onlarla aydınlanırsa, kudretin tecellisine doğru yükselmiş olur.

Bir yoruma göre de Allah, tahsilin hakikatlerini, tefekkür gözleriyle bakan kimselerin kalplerine görünür kılmıştır. Bu itibarla kim, taksirat alanlarında debelenmezse, sırrın binekleri onu hakikate ulaşmanın sahalarına indirirler.

(وَاَنْ عَسٰٓى اَنْ يَكُونَ قَدِ اقْتَرَبَ اَجَلُهُمْ فَبِاَيِّ حَد۪يثٍ بَعْدَهُ يُؤْمِنُونَ)

*"ve ecellerinin yaklaşmış olabileceğine bakmadılar mı? O halde Kur'an'dan sonra hangi söze inanacaklar?"*

İnsanlar, emellerinin yanlışlıklarına dalınca yaklaşan ecellerini unuturlar. Nitekim kendi kefenini dokuyan, düşmanına bina yapan ve ektiğini biçemeyen nice insan vardır.

Heyhat! Koç yemlenirken kasap onun için hazırlık yapmaktadır.

Bir yoruma göre de, ecelin çabukluğu emelin tadını kaçırır.

مَنْ يُضْلِلِ اللّٰهُ فَلَا هَادِيَ لَهُ وَيَذَرُهُمْ ف۪ي طُغْيَانِهِمْ يَعْمَهُونَ ﴿١٨٦﴾

186- "Allah, kimi şaşırtırsa, artık onun için yol gösteren yoktur. Ve onları, azgınlıkları içinde şaşkın olarak bırakır."

Allah'ın, hakikat nurlarından mahrum kıldığı kimse, cehaletin sisi içinde kalır. Böylece o, sağa kayıp sola düşer.

يَسْـَٔلُونَكَ عَنِ السَّاعَةِ اَيَّانَ مُرْسٰيهَا قُلْ اِنَّمَا عِلْمُهَا عِنْدَ رَبّ۪ي لَا يُجَلّ۪يهَا لِوَقْتِهَٓا اِلَّا هُوَ ثَقُلَتْ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ لَا تَأْت۪يكُمْ اِلَّا بَغْتَةً يَسْـَٔلُونَكَ كَاَنَّكَ حَفِيٌّ عَنْهَا قُلْ اِنَّمَا عِلْمُهَا عِنْدَ اللّٰهِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ ﴿١٨٧﴾

187- “Sana kıyameti, ne zaman gelip çatacağını soruyorlar. De ki: ‘Onun ilmi ancak Rabbimin katındadır. Onun vaktini, O’ndan başkası açıklayamaz. O, göklere de yere de ağır gelmiştir. O, size ansızın gelecektir.’ Sanki sen, onu biliyormuşsun gibi, sana soruyorlar. De ki: ‘Onun bilgisi, ancak Allah’ın katındadır; ama insanların çoğu bilmezler.’”

İki türlü insan, kıyameti sorar: Biri, aşırı cehaletinden dolayı hayret eden inkârcı, diğeri de aşırı arzusundan dolayı, acele eden özlem içindeki ariftir. Allah’ın varlığıyla hakikate ulaşmış olan kimse ise, kendi halinde sakindir. Bu nedenle ona göre, kıyametin kopmasıyla selametin devamı arasında fark bulunmamaktadır.

Bir yoruma göre de, Allah kıyamet bilgisini kendine has kılmış olup ne hiçbir nebiyi ne de hiçbir seçkin kulunu onun vaktinden haberdar etmemiştir. O halde kıyamete iman etmek, gaybîdir. Tevhid ehlinin inancı da, şüphelerin şaibelerinden arınmıştır. Sonra dünyadaki kıyametleri, ahiretteki kıyamete iman etmeyi sağlamaktadır.

قُلْ لَٓا اَمْلِكُ لِنَفْس۪ي نَفْعًا وَلَا ضَرًّا اِلَّا مَا شَٓاءَ اللّٰهُ وَلَوْ كُنْتُ اَعْلَمُ الْغَيْبَ لَاسْتَكْثَرْتُ مِنَ الْخَيْرِ وَمَا مَسَّنِيَ السُّٓوءُ اِنْ اَنَا اِلَّا نَذ۪يرٌ وَبَش۪يرٌ لِقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ ﴿١٨٨﴾

188- “De ki: ‘Ben, Allah’ın dilediğinden başka kendime herhangi bir fayda veya zarar verecek güce sahip değilim. Eğer ben gaybı bilseydim, elbette daha çok hayır yapmak isterdim ve bana hiçbir fenalık dokunmazdı. Ben, sadece inanan bir kavim için bir uyarıcı ve müjdeleyiciyim.’”

Allah, Hz. Peygamber’e, kendi gücünden ve kuvvetinden uzak durmasını açıkça emretmiş ve varlığı, işi ve düzeninin, Rabbinin gücü ve lütfuyla olduğunu belirtmiştir. Hz. Peygamber demiş oluyor ki; İşte bu nedenle ahvalimde çeşitlilik ve durumlarımda değişiklik meydana gelmektedir. Mesela; bazen sıkıntı çekiyor, bazen de ferahlık yaşıyorum. Oysa eğer durum benim irademe bağlı olsaydı ve dizginim

başkasının elinde olmasaydı, bollukta hallerim birbirine benzer, sıkıntıdan uzak olmada da vakitlerim aynı şekle tabi olurdu.

هُوَ الَّذِي خَلَقَكُمْ مِنْ نَفْسٍ وَاحِدَةٍ وَجَعَلَ مِنْهَا زَوْجَهَا لِيَسْكُنَ اِلَيْهَا فَلَمَّا تَغَشّٰيهَا حَمَلَتْ حَمْلًا خَفِيفًا فَمَرَّتْ بِهِ فَلَمَّٓا اَثْقَلَتْ دَعَوَا اللّٰهَ رَبَّهُمَا لَئِنْ اٰتَيْتَنَا صَالِحًا لَنَكُونَنَّ مِنَ الشَّاكِرِينَ ﴿١٨٩﴾

189- "Sizi bir tek candan yaratan, ondan da yanında huzur bulsun diye eşini yaratan O'dur. Eşi ile birleşince eşi hafif bir yük yüklendi (hamile kaldı). Onu bir müddet taşıdı. Hamileliği ağırlaşınca, Rableri Allah'a: 'Andolsun bize kusursuz bir çocuk verirsen, muhakkak şükredenlerden olacağız' diye dua ettiler. "

Allah, insanı bir tek candan ortaya çıkardığı halde, ahlakları değişik ve himmetleri çelişiktir. Tıpkı bir tek meni damlasından olduğu halde kişinin organları ve parçalarının değişik olması gibi. İşte parçaları aynı şekle sahip meni damlasını çeşitlendirebilen Allah, bir tek candan ortaya çıkardığı insanların ahlakını da çeşitlendirmeye kadirdir.

(فَلَمَّا تَغَشّٰيهَا حَمَلَتْ حَمْلًا خَفِيفًا فَمَرَّتْ بِهِ فَلَمَّٓا اَثْقَلَتْ دَعَوَا اللّٰهَ رَبَّهُمَا لَئِنْ اٰتَيْتَنَا صَالِحًا لَنَكُونَنَّ مِنَ الشَّاكِرِينَ) *"Eşi ile birleşince eşi hafif bir yük yüklendi (hamile kaldı). Onu bir müddet taşıdı. Hamileliği ağırlaşınca, Rableri Allah'a: 'Andolsun bize kusursuz bir çocuk verirsen, muhakkak şükredenlerden olacağız' diye dua ettiler."*

Âlimler, halkın huzurunun Hak ile birleşmede değil, Hakk'ın beraberliğinde olduğunu bilsinler diye Allah şeklen benzeyenleri birbirine ait kılmış ve bağlamıştır. Aynı şekilde Allah, halkı Hak'tan değil, yine halktan türetmiştir. Bu itibarla Hak, mukaddes olup yaratıcı olarak halkın her türlü nasibi O'ndandır. Ancak Hak olarak herhangi bir şeyin O'nun hakikatinden türemiş olmasından münezzehtir.

فَلَمَّٓا اٰتٰيهُمَا صَالِحًا جَعَلَا لَهُ شُرَكَٓاءَ فِيمَٓا اٰتٰيهُمَا فَتَعَالَى اللّٰهُ عَمَّا يُشْرِكُونَ ﴿١٩٠﴾

190- "Fakat Allah, onlara kusursuz bir çocuk verince, kendilerine verdiği bu çocuk hakkında (insanlar sonradan) Allah'a ortak koştular. Allah ise onların ortak koştuğu şeyden yücedir."

İnsanların en kötüsü, bela geldiğinde samimi dua, şiddetli yakarış ve ağlama ile Allah'a yalvaran, Allah'ın lütfuyla şikâyetleri yok olup defedildiği zaman ise vefayı zayi eden, belayı unutan, nimete ahdi bozmakla karşılık veren ve akdi dostluğun reddine dönüştüren kimsedir. İşte bunlar, Allah'ın ezeli hükmünde uzaklaştırdığı ve ret ehli olanların saffına kattığı kimselerdir.

اَيُشْرِكُونَ مَا لَا يَخْلُقُ شَيْـًٔا وَهُمْ يُخْلَقُونَ ﴿١٩١﴾

191- "Kendileri yaratıldığı halde, hiçbir şeyi yaratamayan varlıkları Allah'a ortak mı koşuyorlar?"

Nasıl ki Rabb'in mahlûk olması caiz değilse, aynı şekilde Rab dışındaki varlıkların da yaratan olması caiz değildir. Bu nedenle her kim, Hakk'ı halkın özellikleriyle vasıflandırırsa, şüphesiz o ilhada düşmüş olur. Kim de, halkı Hakk'a mahsus özelliklerle nitelerse, inkâra düşmüş olur.

وَلَا يَسْتَطِيعُونَ لَهُمْ نَصْرًا وَلَٓا اَنْفُسَهُمْ يَنْصُرُونَ ﴿١٩٢﴾

192- "Halbuki putlar, ne onlara bir yardım edebilirler ne de kendilerine bir yardımları olur."

Her kim, hiçbir şeyin, Allah'ın kudreti dahilinde olmadığına hükmederse, bu takdirde o, Allah'ı kendisine yardımcı olma kudretine sahip olmamakla nitelemiş olacağından, tıpkı cansız varlıklara tapan kimse gibi olur. Doğru yoldan sapmaktan Allah'a sığınırız.

وَاِنْ تَدْعُوهُمْ اِلَى الْهُدٰى لَا يَتَّبِعُوكُمْ سَوَٓاءٌ عَلَيْكُمْ اَدَعَوْتُمُوهُمْ
اَمْ اَنْتُمْ صَامِتُونَ ﴿١٩٣﴾

193- "Onları doğru yola çağırırsanız size uymazlar. Onları çağırsanız da sükût etseniz de sizin için birdir."

Davetçisinin hidayetine kadir olan, sadece Allah'tır. Kulun, mabudunun kudretine dair bilgisi ise, kendi gücünden ve kuvvetinden uzaklaşmasını ve sadece Allah'ın, ihtiyaçlarını yerine getirmeye ve sıkıntısını gidermeye kadir olduğuna inanmasını sağlar. Böylece halkı kast etmeye yönelik adımlar atmaktan geri durur ve Mevlâ'sı dışındaki varlıklardan ümidi kesilmiş olur.

اِنَّ الَّذِينَ تَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ عِبَادٌ اَمْثَالُكُمْ فَادْعُوهُمْ فَلْيَسْتَجِيبُوا لَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿١٩٤﴾

194- "Allah'ı bırakıp da taptıklarınız, sizler gibi kullardır. Doğru iseniz, onları çağırın da size cevap versinler."

Zaruret zaruretle yan yana getirildiği zaman bela ikiye katlanır ve meşakkat üst üste biner. Mesela; mahlûk mahlûktan yardım istediği zaman muradının gerçekleşmeye olan uzaklığı artar. Nasıl olur da insan, şikâyet sahibine şikâyette bulunur? Heyhat! Kuşkusuz bu, hatalı bir zan ve geçersiz bir hesaptır.

اَلَهُمْ اَرْجُلٌ يَمْشُونَ بِهَا اَمْ لَهُمْ اَيْدٍ يَبْطِشُونَ بِهَا اَمْ لَهُمْ اَعْيُنٌ يُبْصِرُونَ بِهَا اَمْ لَهُمْ اٰذَانٌ يَسْمَعُونَ بِهَا قُلِ ادْعُوا شُرَكَٓاءَكُمْ ثُمَّ كِيدُونِ فَلَا تُنْظِرُونِ ﴿١٩٥﴾

195- "Onların yürüyecekleri ayakları mı var, yoksa tutacakları elleri mi var veya görecekleri gözleri mi var yahut işitecekleri kulakları mı var!? De ki: 'Ortaklarınızı çağırın sonra bana istediğiniz tuzağı kurun ve bana göz bile açtırmayın.'"

Allah bu ayetlerle, taptıkları putların, haklarında inandıkları övgü sıfatları bakımından kendilerinden aşağı olduğunu açıklamıştır. Sonra onlar, birbirlerine tapmadıkları halde, noksanlıkta kendilerinden daha ileride olan putlara tapmayı nasıl caiz görmüşlerdir?

(قُلِ ادْعُوا شُرَكَٓاءَكُمْ ثُمَّ كِيدُونِ فَلَا تُنْظِرُونِ) *"De ki: 'Ortaklarınızı çağırın sonra bana istediğiniz tuzağı kurun ve bana göz bile açtırmayın.'"*

Allah'a samimiyetle tevekkül etmek, O'ndan başkasını önemsemekten vazgeçmeyi gerektirir. Nasıl olmasın ki! Oysa yalnızca Allah faydaya, zarara, hayra ve şerre kadirdir.

اِنَّ وَلِيِّيَ اللّٰهُ الَّذ۪ي نَزَّلَ الْكِتَابَ وَهُوَ يَتَوَلَّى الصَّالِح۪ينَ ﴿١٩٦﴾ وَالَّذ۪ينَ
تَدْعُونَ مِنْ دُونِه۪ لَا يَسْتَط۪يعُونَ نَصْرَكُمْ وَلَٓا اَنْفُسَهُمْ يَنْصُرُونَ ﴿١٩٧﴾

196, 197- "Şüphesiz ki, benim koruyanım Kitab'ı indiren Allah'tır. Ve O, bütün salih kullarını görüp gözetir. Allah'ın dışında taptıklarınızın ne size yardıma güçleri yeter ne de kendilerine yardım edebilirler."

Kim, Allah'ın hakkını yerine getirirse, Allah yeterli olacak şekilde onun işlerini üzerine alır. Böylece onu, emsaline muhtaç kılmaz ve bütün ahvalini, lütuflarının güzelliğiyle, onun isteğine uygun bir şekilde icra eder. Şayet Allah, kulun istediğini yerine getirmezse, bu takdirde de onu, yaptığıyla hoşnut kılar. Hoşnutluğun ruhlara verdiği huzur ise isteneni vermenin kalplere verdiği rahatlıktan daha tamdır.

وَاِنْ تَدْعُوهُمْ اِلَى الْهُدٰى لَا يَسْمَعُوا وَتَرٰيهُمْ يَنْظُرُونَ اِلَيْكَ وَهُمْ
لَا يُبْصِرُونَ ﴿١٩٨﴾

198- "Onları doğru yola çağırmış olsanız işitmezler. Ve onları, sana bakar görürsün. Oysa onlar görmezler."

Onlar, Hz. Peygamber'i gözleriyle gördüler, ancak sırlarının ve kalplerinin basiretleriyle göremediklerinden, görmeleri dikkate alınmamıştır.

Bir yoruma göre de, büyüklerin görülmesi, şahıslarını görmekle değil, lakin gaybın kalplerde gerçekleşen keşifleriyle olur. Bu da, gösterilen saygı ve gerçekleşen iman miktarıncadır.

خُذِ الْعَفْوَ وَأْمُرْ بِالْعُرْفِ وَاَعْرِضْ عَنِ الْجَاهِلِينَ ﴿١٩٩﴾

199- "Sen af yolunu tut, iyiliği emret ve cahillerden yüz çevir."

Allah'ın, keremiyle ilgili sünnetinin özelliklerinden biri de, kereme bağlı kalmasını peygamberine emretmesidir. Çünkü müminin, güzel ahlakı Allah'tan aldığı rivayet edilmiştir. Bu çerçevede, hata ne kadar büyük olursa, onu af etmek de o ölçüde daha büyük ve daha mükemmel olur. Aynı zamanda, küçükleri ve hizmetçileri bağışlamak, kulun keremle ilgili mertbesinin büyüklüğü oranında gerçekleşir. Hz. Peygamber (s.a.v.), Uhud Savaşı'nda aldığı yaralar konusunda: *"Allah'ım, kavmimi bağışla! Çünkü onlar bilmezler"* buyurmuştur.

(وَأْمُرْ بِالْعُرْفِ) *"İyiliği emret."* İyiliğin en faziletlisi, en mükemmelinin en çok cefa çektirene yapılmasıdır. Nitekim Hz. Peygamber de, insanlara böyle muamele etmiştir.

(وَاَعْرِضْ عَنِ الْجَاهِلِينَ) *"Ve cahillerden yüz çevir."* Başkalarından yüz çevirmek, zevali olmayan Allah'a yönelmekle olur. Aynı zamanda perdelenmişlikten kurtuluş ve izaha sığmayan lütufları hak etmek de buna bağlıdır.

وَاِمَّا يَنْزَغَنَّكَ مِنَ الشَّيْطَانِ نَزْغٌ فَاسْتَعِذْ بِاللّٰهِ اِنَّهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٢٠٠﴾

200- "Eğer şeytanın fitlemesi seni dürterse, hemen Allah'a sığın. Çünkü O işitendir, bilendir."

Eğer içinde vesveselerden bir eser ortaya çıkarsa, Allah'a sığın, O güzel muvaffakiyetiyle sana yetişir. Şayet kalbine dünyevi arzulardan bir his doğarsa, Allah'a sığın, O kalbindeki tüm dünyevi nasipleri yok etmek suretiyle sana yetişir. Eğer çaba sarf etmede bir gevşeklik hissedersen, Allah'a sığın, O nimetlerini devam ettirerek sana yetişir. Eğer vuslat makamına yükselmede bir durgunluk yaşarsan, Allah'a sığın, O hakikati devam ettirerek sana yetişir. Eğer seni makamı görmekten korumak üzere, yakınlığın özelliklerinden bazı

şeylere kavuşamazsan, Allah'a sığın, O seni kendin için ve kendinle olmak yerine kendisi için sabit kılar.

إِنَّ الَّذِينَ اتَّقَوْا اِذَا مَسَّهُمْ طَٓائِفٌ مِنَ الشَّيْطَانِ تَذَكَّرُوا فَاِذَا هُمْ مُبْصِرُونَ ﴿٢٠١﴾

201- "Takvâya erenler var ya, onlara şeytan tarafından bir vesvese dokunduğunda hatırlayıp hemen gerçeği görürler."

Şeytanın vesvesesi, takva sahiplerinin sadece Allah'ın zikrinden gafil oldukları saatlerde dokunur. Şayet onlar, kalpleriyle Allah'ı zikretmeye devam etselerdi, onlara şeytan tarafından vesvese dokunmazdı. Çünkü şeytan, Allah'ı müşahede halinde olan bir kalbe yaklaşamaz. Zira o bu sırada etkisizleşir. Ne var ki her kılıcın bir körelmesi, her âlimin bir gafleti, he Abidin bir sıkıntısı, her kast edenin bir fetreti, her yürüyenin bir durması ve her arifin bir perdelenişi vardır. Nitekim Hz. Peygamber, başkalarında meydana gelen bazı hallerin kendisinde de meydana geldiğini bildirmek üzere: *"Benim kalbime bir şeyler doğar"* buyurmuştur. Bir de: *"Öfke, ümmetimin seçkinlerinde meydana gelir"* buyurmak suretiyle de ümmetin seçkinlerinin, mertebeleri yüksek de olsa, bazı hallerinde hiddete maruz kalmaktan ve böylece daima halim olma vasfını yitirmekten kurtulamadıklarını haber vermiştir.

وَاِخْوَانُهُمْ يَمُدُّونَهُمْ فِي الْغَيِّ ثُمَّ لَا يُقْصِرُونَ ﴿٢٠٢﴾

202- "Şeytanların dostlarına gelince, şeytanlar onları azgınlığa sürüklerler. Sonra da yakalarını bırakmazlar."

Şeytanın dostları, devamlı gıybet edenlerdir. Onlar, tam bir gaflet içerisinde olup hakikati görmekten devamlı aciz kalan kimselerdir. Onlardan bazısı zelleye bulaşmamış veya bulaşmış, lakin ısrarda bulunmamıştır. İşte bunlar en iyileridir. Onlardan bazıları da gaflete düşmüş, mağrur olmuş ve gıybetin devamında ısrar etmiştir. İşte bun-

lar, hakikati görmekten kesin olarak alıkonulan ve Allah'a yakınlık makamından iyice uzaklaştırılıp reddedilen kimselerdir.

وَاِذَا لَمْ تَأْتِهِمْ بِاٰيَةٍ قَالُوا لَوْلَا اجْتَبَيْتَهَا قُلْ اِنَّمَٓا اَتَّبِعُ مَا يُوحٰٓى اِلَيَّ
مِنْ رَبِّي هٰذَا بَصَٓائِرُ مِنْ رَبِّكُمْ وَهُدًى وَرَحْمَةٌ لِقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ ﴿٢٠٣﴾

203- "Onlara bir mucize getirmediğin zaman, 'onu derleyip getirseydin ya' derler. De ki: 'Ben, ancak Rabbimden bana vahiy olunana uyarım. Bu Kur'an, Rabbinizden gelen basiretlerdir. İnanan bir kavim için hidayet ve rahmettir.'"

Her kim, halkı ölçü alarak Hakk'ı görürse, yanlışların uçurumuna düşer. O, şüphenin şaşkınlıkları içerisinde kuşkuların menzillerini dolaşarak körlük üstüne körlük artışı yaşar. Kim de ilahî kudretin tasarrufu gözüyle halka bakarsa, yaratıkların, ancak Hakk'ın tercih ettiği şekilde ortaya çıktığından emin olur. Böylece o, basiret nuruyla bakar ve kalben tatmin olmuş olarak ilahî tasarrufu görmeye devam eder.

وَاِذَا قُرِئَ الْقُرْاٰنُ فَاسْتَمِعُوا لَهُ وَاَنْصِتُوا لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُونَ ﴿٢٠٤﴾

204- "Kur'ân okunduğu zaman onu dinleyin ve susun ki, size merhamet edilsin."

İman ve tasdik kulağıyla dinleyin ve duygularınızı, itirazın yol açtığı muhalefetlerden ve tecelli arayışlarından koruyarak susun. Hakikat arayışı, sırrıyla temasa geçen kimsenin kalbi kalıcı tasdike mazhar olur.

Bu arada zahirde susmak kapı ehlinin, sırlarla susmak ise makam ehlinin adabındandır. Allah, cinlerin Hz. Peygamber'i görmeleri esnasında birbirlerine yaptıkları tavsiyenin şekli konusunda şöyle buyurmaktadır: (فَلَمَّا حَضَرُوهُ قَالُوٓا اَنْصِتُوا ) *"Kur'ân'ı dinlemeye hazır olunca, birbirlerine 'susun' dediler"* (Ahkâf, 46/29). Şimdi vasıtanın huzurunda bulunmak, heybeti gerektirdiğine göre kalbin Rabbi

müşahede etmek suretiyle huzurda olması esnasında heybete riayet ve edebin korunması daha da öncelikli ve gerekli hale gelir. Nitekim Allah şöyle buyurmuştur:

(وَخَشَعَتِ الْاَصْوَاتُ لِلرَّحْمٰنِ فَلَا تَسْمَعُ اِلَّا هَمْسًا) *"Artık çok esirgeyici Allah hürmetine sesler kısılmıştır. Bu yüzden fısıltıdan başka bir şey işitemezsin."* (Tâhâ, 20/108)

وَاذْكُرْ رَبَّكَ فِي نَفْسِكَ تَضَرُّعًا وَخِيفَةً وَدُونَ الْجَهْرِ مِنَ الْقَوْلِ بِالْغُدُوِّ وَالْاٰصَالِ وَلَا تَكُنْ مِنَ الْغَافِلِينَ ﴿٢٠٥﴾

205- "Kendi kendine yalvararak ve ürpererek yüksek olmayan bir sesle sabah akşam Rabbini an, gafillerden olma!"

Yalvarma, bast anlarında Allah cemal sıfatıyla kula tecelli ettiği zaman, ürperme ise heybet hallerinde celal sıfatıyla tecelli ettiği zaman olur. Bu, en büyük olanlara mahsus bir anma şeklidir.

Onlardan aşağı olan kimselere gelince, bunların durumları korku, umut, arzu ve sakınma bakımından çeşitlilik arz etmektedir. Hepsinin üstünde olanlar ise beka, fena, sahv ve mahviyet sahipleridir. Bunların ardından da hakikat sahipleri, temkin noktalarında yerleştirilmiş olup hakkı yerine getirmeleri ve kendi delillerinden tamamen kopmaları sebebiyle çeşitliliğe ve değişikliğe uğramazlar.

اِنَّ الَّذِينَ عِنْدَ رَبِّكَ لَا يَسْتَكْبِرُونَ عَنْ عِبَادَتِهِ وَيُسَبِّحُونَهُ وَلَهُ يَسْجُدُونَ ﴿٢٠٦﴾

206- "Kuşkusuz Rabbin katındakiler, O'na kulluk etmekten kibirlenmezler, O'nu tesbih eder ve yalnız O'na secde ederler."

Allah, o kimseler için O'nun katında olma şerefini ispatlamış ve cem hallerinin fark vasıflarından ayrılmaması için kulluk yükümlülüklerini korumuştur. Bu, Allah'ın havas olan kullarına yönelik sünnetidir. Hakikatin var olduğu anlarda kulluğun âdâbını ihlal etmemeleri için, onların karşısına cemin özünün özellikleriyle çıkar ve haklarında farkın özünün gerçeklerini korur.

سورة الْاَنْفَالِ

# ENFÂL SÛRESİ

(Enfâl Sûresi, 75 âyettir. 30-36. âyetler Mekke'de, diğerleri Medine'de Bedir savaş ganimetleri ile ilgili olarak inmiştir. Enfâl "ziyâde" anlamına gelen "nefl" in çoğuludur).

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**"Rahman ve Rahim olan Allah'ın adıyla."**

"*Bismillah*", Allah'ın, yoktan var etmeye kadir olduğunu bildirmektedir. "*Rahman ve Rahim oluşu*" da, O'nun ikna ve güzel savunma yoluyla tasarrufta bulunduğunu ifade etmektedir. Bu itibarla, Allah var ettiklerini kudretiyle var etmiş, tevhid inancına sahip olan kimse de, O'nun yardımıyla tevhid ehli olmuştur.

يَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الْاَنْفَالِ قُلِ الْاَنْفَالُ لِلّٰهِ وَالرَّسُولِ فَاتَّقُوا اللّٰهَ
وَاَصْلِحُوا ذَاتَ بَيْنِكُمْ وَاَطٖيعُوا اللّٰهَ وَرَسُولَهُٓ اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنٖينَ ﴿١﴾

**1- "Sana savaş ganimetlerini soruyorlar. De ki: 'Ganimetler Allah ve peygambere aittir. O halde eğer siz gerçek müminler iseniz Allah'tan korkun, aranızı düzeltin, Allah'a ve Resûlüne itaat edin."**

Bu ayette yer alan (الْاَنْفَالِ) "*enfâl*" lafzı burada, müşriklerin, Müslümanların eline geçen malları demektir. Onların sorusu, bu malların

hükmüyle ilgili idi. Bunun üzerine Allah şöyle buyurdu: Onlara de ki: "O malların mülkiyeti Allah'a ve Resûlüne aittir." Hükmü ise hakkında verilen dinî emre göredir.

(فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَصْلِحُوا ذَاتَ بَيْنِكُمْ) *"O halde Allah'tan korkun, aranızı düzeltin."*

Yani Allah'ın emrine icabet edin, arzularınızın saiklerine ve hallerinizin gereği olan hükme boyun eğmeyin. Hakk'ın hoşnutluğunu nefsin muradına tercih edin ve aranızı düzeltin. Bu da nefsin ihtirasından sıyrılmak, başkasının hakkını kendinize ait olan paya tercih etmek ve kalpleri kıskançlığın ve kinin gizli kötülüklerinden arındırmakla olur.

(وَاَطِيعُوا اللّٰهَ وَرَسُولَهُ) *"Allah'a ve Resûlüne itaat edin."*

Yani size gelen irşada icabet etme konusunda itaat edin.

(اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ) *"Eğer siz, gerçek müminler iseniz."*

Yani müminin yolu, bu hususların hiç birine muhalefet etmemektir.

اِنَّمَا الْمُؤْمِنُونَ الَّذِينَ اِذَا ذُكِرَ اللّٰهُ وَجِلَتْ قُلُوبُهُمْ وَاِذَا تُلِيَتْ عَلَيْهِمْ اٰيَاتُهُ زَادَتْهُمْ اِيمَانًا وَعَلٰى رَبِّهِمْ يَتَوَكَّلُونَ ﴿٢﴾

2- "Müminler, ancak Allah anıldığı zaman yürekleri titreyen, kendilerine Allah'ın ayetleri okunduğunda imanlarını artıran ve yalnız Rablerine dayanıp güvenen kimselerdir."

(وَجل) *"Vecel"* lafzı, şiddetli korku demektir. Buradaki anlamı ise, bu korkunun onları gaflet alanlarının dışına çıkarması ve gıybetin olduğu yerlerde rahatsızlık vermesidir. Böylece onlar, tefrikanın vadilerinden ayrılıp zikrin tezahürlerine sığındıkları zaman Allah ile huzur bulmaya erişirler. O zaman onlara okunan ayetler, tasdiklerini ve hakikate olan bağlılıklarını kat kat artırır. Bu durumda onlar, Allah'ın kadrinin yüceliğini görüp onu idrak etmekten aciz olduklarına kesin

inandıklarında, başta inayetiyle kendilerini seçkin kıldığı gibi, akıbetlerinde de kendilerini gözetmek suretiyle, imdatlarına yetişmesi konusunda Allah'a tevekkül ederler.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah'ın, irfan ehliyle ilgili prensibi, onları celalin tecellisi ve cemalin lütfu arasında götürüp getirmesi şeklindedir. Bu çerçevede celaliyle onlara tecelli ettiği zaman yürekleri titrer. Onlara cemaliyle lütfettiği zaman da kalpleri sükûnet bulur. Allah: (وَتَطْمَئِنُّ قُلُوبُهُمْ بِذِكْرِ اللّٰهِ) "*Gönülleri Allah'ın zikriyle sükûnete erer*" buyurmuştur. (Ra'd, 13/28)

- Yürekleri, Allah'tan kopmanın korkusuyla titrer, sonra sırları O'na kavuşmanın huzuruyla mutmain olur ve sükûnet bulur. Bu arada ayrılığı hatırlamak onları yok etmekte, vuslatı hatırlamak ise onları ayıltmakta ve kendilerine hayat vermektedir.

- Allah'ı arayanlar, korkularından inlerken, O'na kavuşanlar yakınlıklarının huzurunu yaşamaktadırlar. Tevhid ehli olanlar ise kendilerinden geçmiş olmanın mahviyeti içindedirler. Onlara hakikatler hâkim olup ne korkunun kendilerini sarsmasına veya tamahın sürüklemesine yol açacak yeni bir vakit beklentileri ne de kendilerine zevki hâkim kılacak bir duyuşları vardır. Zira kendilerine hâkim olan halin sürpriz tezahürleriyle kökleri sökülünce benlikleri tamamen yok olmuş ve başkasının hâkimiyeti altına girmişlerdir.

اَلَّذِينَ يُقِيمُونَ الصَّلٰوةَ وَمِمَّا رَزَقْنَاهُمْ يُنْفِقُونَ ٣ اُو۬لٰٓئِكَ هُمُ
الْمُؤْمِنُونَ حَقًّا لَهُمْ دَرَجَاتٌ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَمَغْفِرَةٌ وَرِزْقٌ كَر۪يمٌ ٤

3,4- "Onlar, namazlarını dosdoğru kılan ve kendilerine rızık olarak verdiğimizden Allah yolunda harcayan kimselerdir. İşte onlar gerçek müminlerdir. Onlar için Rableri katında nice dereceler, bağışlanma ve tükenmez bir rızık vardır."

Onlar, amellerinde hiçbir ihlale rıza göstermez, helal dışında mal biriktirmekle vasıflanmaz ve hiçbir şekilde kusur alanlarında

kalmazlar. İşte bunların temel özelliği, dinin itabına muhatap olmamaları ve hakikatin hükümlerinden sapmamalarıdır.

(أُولَٓئِكَ هُمُ الْمُؤْمِنُونَ حَقًّا) *"İşte onlar gerçek müminlerdir."* Yani onlar, gerçekten hakkı aradılar ve içten tasdik ettiler. Bir yoruma göre de bu, onlar için kesin bir hak haline gelmiştir.

(لَهُمْ دَرَجَاتٌ عِنْدَ رَبِّهِمْ) *"Onlar için Rableri katında nice dereceler vardır."* Bu dereceler, Allah'ın kendilerini ehil kıldığı mertebelere göredir. Bu nedenle onlar, bu dereceleri önce Allah'ın kendilerine yönelik ezeli takdiriyle, sonra da samimi hizmetleriyle hak etmişledir. Allah, onları buna muvaffak edince, onlar da bu derecelere erişmiş oldular.

Kıyamette de onlar için mağfiret vardır. Dünyada da büyük günahlarını örter. Bu itibarla mağfiret örtmek demektir. Allah, asilerin günahlarını örter ve faziletlerine bağladıkları umutlarından mahrum bırakılmamak için onları rüsva etmez. Allah amelleri ve halleriyle mağrur olmamaları için ariflerin menkıbelerini de örter. Ancak örtmeden örtmeye fark vardır ve aralarındaki mesafe büyüktür.

Tükenmez rızka gelince, bu konuda şu ihtimaller söz konusudur:

- Allah, bu rızkı beklenmedik biçimde verir.

- Bu, suç işlemeleriyle eksilmeyen bir rızktır.

- Bu, varlığıyla onları, Rızkı veren Allah'ı görmekten alıkoymayan bir rızktır.

- Bu, sırlara verilen ve bağımsızlıklarına vesile olan keşiflerden ibarettir.

كَمَٓا اَخْرَجَكَ رَبُّكَ مِنْ بَيْتِكَ بِالْحَقِّ وَاِنَّ فَرِيقًا مِنَ الْمُؤْمِنِينَ لَكَارِهُونَ ﴿٥﴾

5- "Onların bu hali, müminlerden bir grup kesinlikle istemediği halde, Rabbinin seni evinden hak uğruna çıkardığı zamanki halleri gibidir."

Allah, tartışmanın, onların âdeti ve karakteri olduğunu açıklamaktadır. Nitekim onların her konuda tartışmaları ve tercihleri vardır. Bu çerçevede onlar, Hz. Peygamber'in Bedir'e çıkmasından hoşlanmamış, ganimet meselesinde de tartışmaya girmişlerdi.

Allah: (يَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الْاَنْفَالِ) "*Sana savaş ganimetlerini soruyorlar*" (Enfal, 8/1) buyurmuştur. Bu arada, kulun tekrarlanmayan ve nadiren meydana gelen hasletleri, bağışlanıp vazgeçilmeye daha yakın olur. Ancak bu, adet halini alınca, daha da zorlaşır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- İmanın özü kalbe işlemedikçe tam teslimiyet ve tercihin terki gerçekleşmez. Kulda tercihe dönük bir damar bile hareket ettikçe o, imanın huzurundan uzaktır.

Öte yandan Allah, velileri ve peygamberleriyle ilgili prensibini şöyle koymuştur: Onlar, bütün eski alışkanlıklarını terk edip nefsin dahli olan her arzudan sıyrılmadıkça, Allah kendilerine bütün nimetlerin kapısını açmaz.

- Peygamberlerin vatanlarından hicret etmeleri, düşmanların tecavüzlerinden kurtulmalarına ve onlara gitme imkânına sahip olmayan bazı kimselerin kalplerinin ihyasına vesile olmaktadır.

Aynı zamanda Allah'ın has velilerinin hicreti de böyledir. Onların hicreti, hem kendilerinin hem de pek çok kimsenin belalardan kurtulmasına vesile olur.

يُجَادِلُونَكَ فِي الْحَقِّ بَعْدَ مَا تَبَيَّنَ كَاَنَّمَا يُسَاقُونَ اِلَى الْمَوْتِ وَهُمْ
يَنْظُرُونَ ﴿٦﴾

6- "Hak ortaya çıktıktan sonra sanki gözleri göre göre ölüme sürükleniyorlarmış gibi, hak konusunda seninle tartışıyorlardı."

Delili açıkça ortaya çıktıktan sonra, hakkı inkâr etmek, sahibinin kibirliliğine alamettir. Bu kimse, sapıklığının yabancılığı içinde kalır, reddedilmişlik ve hayatın çekilmezliği ile cezalandırılır. O, hayatından

usanır ve ölümünü temenni eder. (كَاَنَّمَا يُسَاقُونَ اِلَى الْمَوْتِ وَهُمْ يَنْظُرُونَ) *"Sanki gözleri göre göre ölüme sürükleniyorlarmış gibi."*

وَاِذْ يَعِدُكُمُ اللّٰهُ اِحْدَى الطَّٓائِفَتَيْنِ اَنَّهَا لَكُمْ وَتَوَدُّونَ اَنَّ غَيْرَ ذَاتِ الشَّوْكَةِ تَكُونُ لَكُمْ وَيُرِيدُ اللّٰهُ اَنْ يُحِقَّ الْحَقَّ بِكَلِمَاتِهِ وَيَقْطَعَ دَابِرَ الْكَافِرِينَ ﴿٧﴾

7- "Hatırlayın ki, Allah size iki taifeden birinin sizin olduğunu vaat ediyordu. Siz de kuvvetsiz olanın sizin olmasını istiyordunuz. Oysa Allah, sözleriyle hakkı gerçekleştirmek ve kâfirlerin ardını kesmek istiyordu."

Tembellik alanlarında zigzaklar çizmek ve rahatın sağladığı alışkanlıklara yaslanmak, nefsin hükümlerinin özelliklerindendir. Nefis, tabiatı gereği her durumda kendi arzusunu ve payının lezzetini tercih etmektedir. Oysa hiç kimse, şiddetli sıkıntılar çekmeden ve nefsin alışkanlıklarından sıyrılmadan büyük nimetlere kavuşamaz. Allah da sözleriyle hakkı gerçekleştirmek ister. Yani, Allah bir kimseyi dost edinmek istediği zaman, nefsin etkilerini yok eder, bazı arzularını işlemez hale getirir. Derken, hakikatlerin ışıklarının doğuşuna ve nefsin önüne geçen engelleri bir araya getirmeye hükmeder.

لِيُحِقَّ الْحَقَّ وَيُبْطِلَ الْبَاطِلَ وَلَوْ كَرِهَ الْمُجْرِمُونَ ﴿٨﴾

8- "Bunlar, günahkârlar istemese de hakkı gerçekleştirmek ve bâtılı ortadan kaldırmak içindi."

Bunlar, çaba sarf edilerek gerçekleşen konularda hakkı muvaffakiyetle hâkim kılmak ve cömertliğin ta kendisinden ortaya çıkanı gerçekleştirmek içindir.

Bir yoruma göre de bunlar, vuslat bayraklarını dalgalandırmak suretiyle hakkı hâkim kılmak ve ciddiyetsizliğin her türlüsünü yenmek suretiyle batılı geçersiz kılmak içindir.

اِذْ تَسْتَغِيثُونَ رَبَّكُمْ فَاسْتَجَابَ لَكُمْ اَنّ۪ي مُمِدُّكُمْ بِاَلْفٍ مِنَ
الْمَلٰٓئِكَةِ مُرْدِف۪ينَ ﴿٩﴾ وَمَا جَعَلَهُ اللّٰهُ اِلَّا بُشْرٰى وَلِتَطْمَئِنَّ بِه۪
قُلُوبُكُمْ وَمَا النَّصْرُ اِلَّا مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ عَز۪يزٌ حَك۪يمٌ ﴿١٠﴾

9, 10- "Hatırlayın ki, siz Rabbinizden yardım istiyordunuz. O da: 'Ben, peş peşe gelen bin melekle size yardım edeceğim' diyerek duanızı kabul buyurdu. Allah bunu, sadece müjde olsun ve onunla kalbiniz yatışsın diye yapmıştı. Zaten yardım, yalnız Allah tarafındandır. Çünkü Allah, mutlak galiptir, yegâne hüküm ve hikmet sahibidir."

İhtiyacı, güçsüzlüğü ve takatsizliği görerek yardım dilemek ve sıkıntıları giderebilme kudretine de yalnızca Allah'ın sahip olduğuna kesin olarak inanmak, dileği kolaylaştırır ve umulanı gerçekleştirir. Böylece yardım dilemedeki samimiyet, kabulle ortaya çıktığı zaman, ümitler gerçekleşir ve ihtiyaç yerine getirilir. Zaten Allah'ın sünneti de böyle cari olmuştur.

Bir yoruma göre de, Allah müminleri önce meleklerle müjdeledikten sonra, bunu gerçekleştirenin kendisi olduğunu onlara göstermek suretiyle, kendilerini daha üst bir seviyeye çıkarmış ve meleklerin yardımına yaslanma seviyesinde bırakmamıştır. Bu amaçla önce: (وَمَا النَّصْرُ اِلَّا مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ) *"Zaten yardım, yalnız Allah tarafındandır"* dedikten sonra: (اِنَّ اللّٰهَ عَز۪يزٌ) *"Çünkü Allah, mutlak galiptir"* buyurmuştur. Böylece beladan kurtuluş gerçekleşmekte, türlü türlü gerçekleştirmeler ve güç vermek suretiyle yapılan yardımlar peş peşe gelmekte, dualar dikkate alınmakta, kabul engellenmemekte ve fazlaca ihsanda bulunulmaktadır. Ancak üstün olan Allah'tır.

Arayan, ancak O verince bulur. Arzu sahibi de ancak O'nun lütuflarına ulaşır. Yol kolaydır, ancak bu yol O'nun lütfunu bulmaya yönelik olmalıdır. Allah'a gelince O, üstün olup her türlü vuslat, ayrılık, yakınlık ve uzaklığın ötesindedir. Bir de hiç kimse, nasibinden

başka bir şeye ulaşamamış ve payından başka hiçbir şeyden geri kalmamıştır.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Dediler ki bize: Biz hilaliz, ancak*
*Gece yol yürüyene aydınlık yaparız, misafir ağırlamayız*
*O halde bakanın edindiği azıktan başka bir ikram yoktur*
*Gece yolculuğuna çıkaran güzellikten başkasıyla da kavuşmak yoktur*

اِذْ يُغَشّٖيكُمُ النُّعَاسَ اَمَنَةً مِنْهُ وَيُنَزِّلُ عَلَيْكُمْ مِنَ السَّمَاۤءِ مَاۤءً لِيُطَهِّرَكُمْ بِهٖ وَيُذْهِبَ عَنْكُمْ رِجْزَ الشَّيْطَانِ وَلِيَرْبِطَ عَلٰى قُلُوبِكُمْ وَيُثَبِّتَ بِهِ الْاَقْدَامَ ﴿١١﴾

11- "O zaman katından bir güven olmak üzere, sizi hafif bir uykuya daldırıyordu. Sizi temizlemek, şeytanın pisliğini sizden gidermek, kalplerinizi birbirine bağlamak ve savaşta ayaklara sebat vermek için, üzerinize gökten bir su indiriyordu."

O gece onları uyku bürüdü. Böylece Allah, zahirlerinden ve nefislerinden başkalarının verdiği yorgunluk ve yılgınlığı gidermişti. Kalplerinin üzerine güven huzurunu indirdi ve yağmur yağdırdı. Bunun üzerine onlar, ihtilamla kendilerine boy abdesti lazım geldikten sonra yıkandılar, yer yağmurla sağlamlaştığı için ayaklar kuma batmadı ve şeytanların verdiği, kumda yürümekten ve gusül yapmamaktan dolayı zorluk yaşayacakları şeklindeki vesvese kalplerinden silindi. Derken uykularını alıp Allah'ın yeterli olan himayesi ve yardımı kendilerine yetişince, gerçek yardımın Allah tarafından olduğuna, başarının onların davranışlarına bağlı olmadığına kesin olarak inanmış oldular. Allah da, onlara katıksız desteğini ve noksansız yeterliliğini gösterdi.

Bir de Allah, zahirlerini gök suyuyla tertemiz kıldığı gibi, içlerini de hakikat suyuyla, her türlü gayr ve illetten tertemiz kıldı. Ayrıca sırlarını da vesveselere kulak vermekten korudu ve takdirin

Allah'ın dilediği şekilde gerçekleştiğini görmeleri suretiyle gönüllerini tasarrufu altına aldı.

(وَيُثَبِّتَ بِهِ الْاَقْدَامَ) *"ve ayaklara sebat vermek için"*

Zahiri ayaklara savaş meydanlarında, kalplere de takdirin nasıl cereyan ettiğini görmek suretiyle istikamet yolu üzerine sebat vermek için.

اِذْ يُوحِي رَبُّكَ اِلَى الْمَلٰٓئِكَةِ اَنِّي مَعَكُمْ فَثَبِّتُوا الَّذِينَ اٰمَنُوا سَاُلْقِي فِي قُلُوبِ الَّذِينَ كَفَرُوا الرُّعْبَ فَاضْرِبُوا فَوْقَ الْاَعْنَاقِ وَاضْرِبُوا مِنْهُمْ كُلَّ بَنَانٍ ﴿١٢﴾

12- "Hani Rabbin meleklere: 'Muhakkak ben sizinle beraberim. Haydi iman edenlere destek olun. Ben, kâfirlerin yüreğine korku salacağım. Vurun boyunlarına! Vurun onların bütün parmaklarına!' diye vahiy ediyordu."

Allah bize, meleklerin, tevhid meselelerini kendisinden öğrenmeye muhtaç olduklarını öğretmektedir. Meleklerin, müminlere sebat vermesine gelince; bu konuda şu görüşler ileri sürülmüştür:

- Melekler, müminlere erkekler şeklinde görünüyor, müşriklerin sayıca az oluşunu ve Müslümanların onlara hâkim olacağını haber vererek kendilerine hitap ediyordu. Müslümanlar ise onların melek olduğunu bilmiyorlardı.

- Meleklerin Müslümanlara sebat vermesi, bu duyguyu kalplerine ilham etmeleri şeklinde olmuştur. Sonra Allah, bu duyguyu kalplerinde yaratıyordu. Yani nasıl ki Allah, şeytanın vesveselerini kalplere ulaştırıyorsa, aynı şekilde meleklerin ilhamlarını da ulaştırmaktadır. Ayrıca Allah, kâfirlerin kalplerine korku salarak müminleri desteklemiştir.

(فَاضْرِبُوا فَوْقَ الْاَعْنَاقِ) *"Vurun boyunlarına!"*

Bu vurma, Allah'ın vahiy ve kitap yoluyla emredip öğretmesi şeklinde olmuştur. Bu söz, müşriklere vurmanın ve her ne şekilde

olursa olsun zarar vermenin mubah olduğunu ifade etmektedir. Manasının, onların boyunlarına öldürücü darbeler indirin, şeklinde olması ihtimali de vardır. Çünkü boyun vurulduktan sonra hayat söz konusu olamaz. Bu durumda (فَوْقَ ) "*fevka*" lafzı gramer bakımından sıla olur.

(وَاضْرِبُوا مِنْهُمْ كُلَّ بَنَانٍ ) "*Vurun onların bütün parmaklarına!*" Yani öyle vurun ki, bu onları vurmaktan ve Müslümanlarla savaşmaktan aciz bıraksın. Çünkü organlar kaybedildikten sonra, savaşmak mümkün olmaz.

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ شَٓاقُّوا اللّٰهَ وَرَسُولَهُۚ وَمَنْ يُشَاقِقِ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ فَاِنَّ اللّٰهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ ﴿١٣﴾

13- "Bu söylenenler, onların Allah'a ve Resûl'üne karşı gelmelerinden ötürüdür. Kim, Allah ve Resûlüne karşı gelirse, bilsin ki, Allah azabı şiddetli olandır."

Allah onların, hesap hataları ve zanlarının yalanları içerisinde olduklarını açıklamaktadır. Oysa her yönüyle inşa eden Allah'tır. Çünkü sadece kendisi var etme kudretine sahiptir.

(وَمَنْ يُشَاقِقِ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ فَاِنَّ اللّٰهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ ) "*Kim, Allah ve Resûlüne karşı gelirse, bilsin ki, Allah azabı şiddetli olandır.*"

Allah, suçluya mühlet verir, ancak sonuna kadar onu ihmal etmez, aksine ona yaptığının cezasını tattırır ve zannının şüphesini giderir.

ذٰلِكُمْ فَذُوقُوهُ وَاَنَّ لِلْكَافِرِينَ عَذَابَ النَّارِ ﴿١٤﴾

14- "İşte bu yenilgi size Allah'ın azabı! Şimdilik onu tadın! Kâfirlere bir de cehennem ateşinin azabı vardır."

İşte azap bu! O halde onu hemen tadın ey müşrikler ve bilin ki, kâfirler için ertelenmiş bir azap da vardır. Bu itibarla asilerin iki

cezası vardır: Biri hemen gerçekleştirilen, diğeri de verilen sözle ertelenendir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُٓوا اِذَا لَق۪يتُمُ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا زَحْفًا فَلَا تُوَلُّوهُمُ
الْاَدْبَارَ ﴿١٥﴾ وَمَنْ يُوَلِّهِمْ يَوْمَئِذٍ دُبُرَهُٓ اِلَّا مُتَحَرِّفًا لِقِتَالٍ اَوْ مُتَحَيِّزًا
اِلٰى فِئَةٍ فَقَدْ بَٓاءَ بِغَضَبٍ مِنَ اللّٰهِ وَمَاْوٰيهُ جَهَنَّمُ وَبِئْسَ الْمَص۪يرُ ﴿١٦﴾

15, 16- "Ey müminler! Toplu halde kâfirlerle karşılaştığınız zaman onlara arkanızı dönmeyin. Tekrar savaşmak için bir tarafa çekilme veya diğer bölüğe ulaşıp mevzi tutma durumu dışında, kim öyle bir günde onlara arka çevirirse, muhakkak ki o, Allah'ın gazabını hak etmiş olarak döner. Onun yeri de cehennemdir. Orası varılacak ne kötü yerdir!"

Siz savaşta kâfirlerle topluca karşılaştığınız zaman onlarla savaşmak için direnin ve kaçmayın! Cesaret, kalplerin sebat unsurudur. Denildiği gibi, cesaret, ibadete ve düşmana karşı cihat etmeye sabretmektir. O halde vacip olan, saldırı halinde sebat göstermektir. Bu, konunun zahire göre izah tarzıdır. Bâtına göre ise bu, şeytana karşı cihattır. Bu cihatta vacip olan da şeytanın zillete davet eden çağrılarından geri durmaktır. Zira kim, ona icabetten geri durabilirse ve vesveseleriyle çağrıda bulunduğu hususları yerine getirmezse, cihadı hakkıyla yerine getirmiş olur.

Durum, nefisle yapılan mücadelede de böyledir. Kul, telkinleriyle çağrıda bulunduğu hususlarda nefse icabet etmekten geri durup arzusunu yerine getirmekle başına getirmek istediği bela konusunda şehvetine boyun eğmediği zaman, o da cihadın hakkını vermiş olur.

(اِلَّا مُتَحَرِّفًا لِقِتَالٍ) "*Tekrar savaşmak için bir tarafa çekilme durumu dışında.*" Bu söz, mesela bir kimsenin gece uykusuz kalabilme gücüne sahip olmak için bir şeyler yemek ve susuzluğunu gidermek, açlık, soğuk ve benzeri zorlukları çekmemek için bir miktar dinlenmeyi

tercih etmek suretiyle nefsine şefkat etmesi gibi, daha zor olana güç yetirebilmek için bazı ruhsatları tercih etmeye işaret etmektedir. Böylece kalbine riayet etmekten geri kalmamış ve kalbinin onunla olan irtibatını sürdürmüş olur. Eğer bir kimse, manevi feyizlerin hükümleri konusunda istikametten geri kalmamak için zahirin bazı virtlerini terk ederse, cihat hakkında en doğru olana sarılmış olur.

(اَوْ مُتَحَيِّزًا اِلٰى فِئَةٍ) "*veya diğer bölüğe ulaşıp mevzi tutma durumu dışında.*" Bu söz, nefisle mücadeleyle ilgili olarak kendisine yardımcı olacakları konularda müridin, akranının arkadaşlığıyla güç kazanmasına işaret etmektedir. Bu kimse, arkadaşlarının çektiklerine tanık olmakla nefisle olan mücadelesine devam etmiş olur. Ayrıca mürid, şeyhlerin himmetlerinden istimdatta bulunmakla güç kazanır. Çünkü mürit, şeyhinin himmetiyle yetişir. Nitekim güçlü zenginler hizmetçilerine nimetlerinden harcarken seçkin veliler, müritlerine himmetlerinden harcama yaparlar. Bu çerçevede aksaklıklarını giderir, tevbe etmelerini telkin eder ve güzel irşatlarıyla onlara yardımcı olurlar. Bir de her kim, samimi olduğunu bilerek bir müridi ihmal eder veya faziletini ve hakkını bildiği halde bir şeyhe muhalefet ederse, şüphesiz o Allah'ın gazabını hak etmiş olur. Bu çirkin vasfına karşılık vererek hesabını görür.

فَلَمْ تَقْتُلُوهُمْ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ قَتَلَهُمْ وَمَا رَمَيْتَ اِذْ رَمَيْتَ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ
رَمٰى وَلِيُبْلِيَ الْمُؤْمِنِينَ مِنْهُ بَلَٓاءً حَسَنًا اِنَّ اللّٰهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿١٧﴾

17- "Onları siz öldürmediniz; fakat Allah öldürdü onları. Attığın zaman da sen atmadın, fakat Allah attı. Ve bunu, müminleri güzel bir imtihanla denemek için yaptı. Şüphesiz Allah işitendir, bilendir."

Allah'ın, gerçekleştirmediklerini söylediği öldürme, ruhu ölümlü kılmak, ölümü var etmek olup bu, ilahi kudretin özelliklerindendir. Yaratıkların öldürücü olmaları ise, birbirlerinin canları hakkında yaptıkları eylem ve bunun ardından ruhun gitmesinden ibarettir.

Ayetin faydası ise onların övünerek: Ben, falancayı öldürdüm, şeklindeki sözlerinde ileri sürdüklerinin önünü kesmektir. Bu nedenle Allah: (فَلَمْ تَقْتُلُوهُمْ ) *"Onları siz öldürmediniz"* buyurmuştur. Yani fiilleriniz, sizin tek başınıza meydana getirdiğiniz şeylerden değildir. Aksine onları inşa edip ortaya çıkaran Allah'tır. Allah, bu ayetle müminleri ve Hz. Peygamber'i kendi fiil ve hallerine paye biçmekten korumuştur.

(وَمَا رَمَيْتَ اِذْ رَمَيْتَ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ رَمٰى) *"Attığın zaman da sen atmadın, fakat Allah attı."*

Yani sen kendi gücünle değil, bizim gücümüzle attın. Bu itibarla Hz. Peygamber'in yaptığı şey, kesp açısından toprağı alıp elinden salıvermesidir. Onun kesbi ise, Allah'ın kudretiyle yaratılmıştır. Tebliğ ve isabetin yaratılması ve yoktan var edilmesi de Allah tarafındandır. Aynı şekilde, yok ettiğini var eden, var ettiğini de yok eden de Allah'tan başkası değildir. Fiil, bir zatın fiili olup farklılık fiilin cevherinde değil, yöneldiği cihettedir.

Bu arada: (وَمَا رَمَيْتَ ) *"Sen atmadın"* sözü fark, (وَلٰكِنَّ اللّٰهَ رَمٰى ) *"fakat Allah attı"* sözü de cemdir. Birincisi kulluğun, ikincisi de Rab olmanın sıfatıdır. Ancak zımnında cem bulunmayan hiç bir farkın ve kul hakkında, farkla teyit edilmeyen hiçbir cemin sahibi, doğru çizgide değildir.

Ayrıca Allah, gayr olanları kendi zanlarına havale eder. Böylece onlar, zan vadilerinde şaşkına döner ve kendilerinden meydana gelen şeyleri tek başlarına yaptıklarını vehmederler. Bu ise içine düştükleri bir tuzaktır. Allah şöyle buyurur: (اَنَّهُمْ يُحْسِنُونَ صُنْعًا ) *"Onlar, iyi işler yaptıklarını sanırlar."* (Kehf, 18/104)

Tevhid ehline gelince, Allah onlara takdirin tecelli noktalarını gösterir, kendilerine hükmün nasıl cereyan ettiğini öğretir ve nefislerinin, ilahi tasarruf ile hükmün hakimiyeti altında olduğunu gösterir. Velilerden ve irfan sahiplerinden havassa gelince, kendileri hiçbir şey hissetmeksizin, Allah onlar hakkında dilediğini icra eder. Bunları

Allah himayesine almış olup kendilerini nazar ve takdir delilleriyle var etmekte ve dine muhalefetten korumaktadır.

(وَلِيُبْلِيَ الْمُؤْمِنِينَ مِنْهُ بَلَٓاءً حَسَنًا) *"Ve bunu, müminleri güzel bir imtihanla denemek için yaptı."*

Ayette geçen (بَلَٓاءً) *"belâ"* lafzı imtihan demektir. Böylece Allah, şükür mü yoksa nankörlük mü ettikleri ortaya çıksın diye, onları bazen nimetlerle, bazen de sabırlarını, hatırlamalarını ve unutmalarını ortaya çıkarmak üzere meşakkatlerle imtihan etmektedir.

Güzel imtihan, nimete karşılık şükürde muvaffakiyet, meşakkat halinde de sabrı gerçekleştirmek demektir. Bu arada Allah'ın yaptığı her şey güzeldir. Çünkü O, bunu yapma hakkına sahiptir. Hakikati bu olan "güzel" kavramı, failin yapma hakkına sahip olduğu şeydir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bu imtihan, Allah'tan olduğu için güzeldir.

- Güzel imtihan, imtihan edeni imtihanın kendisinde görebilmendir.

- Güzel imtihan, nimet şeklinde olduğu zaman imtihan edilenin hiçbir iddiasının, meşakkat olduğu zaman da hiçbir şikâyetinin olmaması demektir.

- Güzel imtihan, zorluk şeklinde olduğu zaman rahatsızlık vermeyen, kolaylık şeklinde olduğu zaman da haksızlığa yol açmayandır.

- Herkesin imtihanı, onun haline ve makamına göredir. Bu nedenle en zor imtihan en seçkin velinindir. Nitekim Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur: *"İmtihanı en zor olan insanlar peygamberler, sonra veliler, sonra sırayla en faziletli olan kimselerdir."*

(اِنَّ اللّٰهَ سَمِيعٌ عَلِيمٌ) *"Şüphesiz Allah işitendir, bilendir."*

Bu ifade, bazıları için rahatlatıcı, bazıları için ise tehdittir. Bu çerçevede Allah, şefkat ehline: Allah, sizin iniltinizi işitmektedir, buyurarak bununla vakitlerini huzurlu kılmakta ve bağlılıklarını üzerine almaktadır.

Şiir:

*Rahat ve huzuru temenni ettiği zaman insanlar*
*Bden sana şikâyet edip duymanı temenni ederim*

Şiir:

*Söyle teneffüs dilleriyle*
*Nasılsın ve nicedir halin?*

Büyüklere gelince, onlara rahatlama izni verilmeyip hiçbir yakınma ve şikâyeti dışa vurmaksızın sabırlı olmak ve takdirin cereyanı altında durmakla yükümlü kılınırlar. Böylece Allah onlara şöyle buyurmuş olur: Eğer içmekle yükümlü kılındığın şeyi sızdırırsan sana sitem yönelecektir. Şayet hiçbir açıklama yapmazsan, bu takdirde ben dediğini işitir, halini bilirim. Bir yoruma göre de, “bilendir” sözünde imtihan sahiplerine teselli vardır. Çünkü maksudu olan Allah’ın, halinden haberdar olduğunu bilen kimse, O’nun yolunda çektikleri kendisi için kolaylaşmış olur. Nitekim Allah, Hz. Peygamber’e hitaben şöyle buyurmuştur: (وَلَقَدْ نَعْلَمُ اَنَّكَ يَضِيقُ صَدْرُكَ بِمَا يَقُولُونَ)

*“Onların söyledikleri şeyler yüzünden senin canının sıkıldığını ant olsun biliyoruz.”* (Hicr, 15/ 97)

ذٰلِكُمْ وَاَنَّ اللّٰهَ مُوهِنُ كَيْدِ الْكَافِرِينَ ﴿١٨﴾

18- “Bu böyledir. Şüphesiz Allah, kâfirlerin tuzağını bozar.”

Allah, onların tuzağını, müminlerin kalplerini kesin iman nuru ve Allah tarafından gelecek lütfu beklemeye sebat göstermekle güçlendirerek bozar. Bir de Allah, kâfirlerin tuzağını, onları farkında olmadıkları bir biçimde yakalayıvermek ve kendilerine karşı Müslümanların askerlerine zafer vermek suretiyle bozar.

اِنْ تَسْتَفْتِحُوا فَقَدْ جَٓاءَكُمُ الْفَتْحُ وَاِنْ تَنْتَهُوا فَهُوَ خَيْرٌ لَكُمْ وَاِنْ تَعُودُوا نَعُدْ وَلَنْ تُغْنِيَ عَنْكُمْ فِئَتُكُمْ شَيْـًٔا وَلَوْ كَثُرَتْ وَاَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُؤْمِنِينَ ﴿١٩﴾

19- "Eğer siz fetih istiyorsanız, işte size fetih geldi. Ve eğer inkârdan vazgeçerseniz, bu sizin için daha iyidir. Yine dönerseniz, biz de döneriz. Topluluğunuz çok bile olsa, sizden hiçbir şeyi savamaz. Çünkü Allah, müminlerle beraberdir."

Müşrikler Bedir günü: Ey Allah'ımız! İki gruptan en çok sevdiğine zafer ver, dediler ve Allah dualarını kabul ederek iki gruptan en çok sevdiğine zafer verdi ki, bunlar Müslümanlardır. Böylece müşrikler, dilleriyle kendi helaklerini istemiş oldular. Sebebi ise zanlarından kaynaklanan yanlışlıklara takılmalarıdır. Zira onlar, firkatin özünde ve şekâvetin hükmü altında oldukları halde, Allah'a yakınlığı hak ettiklerini vehmetmişlerdi. Onlar, laneti hak etmekle damgalanıp şekâvete düştükleri için, kendi tercihleriyle sonlarını getirmiş oldular.

Bir yoruma göre de, onlar rahmet ehli olduklarını zannettiler ve zillete düştüler. Gerçek durum ortaya çıkınca da eli boş ve boynu bükük kaldılar. İşte o zaman zanlarında yanılıp şaşırdıklarını anlamış oldular.

(وَاِنْ تَنْتَهُوا فَهُوَ خَيْرٌ لَكُمْ ) *"Ve eğer inkârdan vazgeçerseniz, bu sizin için daha iyidir."*

Böylece Allah, sizin geçmişte Hz. Muhammed'e karşı yaptığınız muhalefeti bağışlamış olur.

Bu arada ayetteki (خَيْرٌ ) "*hayr*" lafzında mübalağa anlamı bulunmamaktadır. Zira bu anlamın olabilmesi için daha iyi olana göre diğer durumun da içinde kötülük barındırmaması gerekir. Oysa Hz. Peygamber'e uymamaları onlar için her yönden kötü bir durumdur. Lakin Allah, burada dünyayla ilgili durumlar hakkında ve zanlarının icabına göre daha iyi, demek istemiştir.

(وَاِنْ تَعُودُوا نَعُدْ ) *"Yine dönerseniz, biz de döneriz."*

Yani eğer siz, güzel ahlaka dönüş yaparsanız, biz de güzel lütufla size dönmüş oluruz. Yok eğer tekrar kötülüğe dönerseniz, tattırdığımız acıyı size tekrar veririz.

(وَلَنْ تُغْنِيَ عَنْكُمْ فِئَتُكُمْ شَيْئًا وَلَوْ كَثُرَتْ وَاَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُؤْمِنِينَ) *"Topluluğunuz çok bile olsa, sizden hiçbir şeyi savamaz. Çünkü Allah, müminlerle beraberdir."*

Allah'ın kudretinin mağlup ettiği kimseye sayı çokluğu fayda vermez.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُٓوا اَطٖيعُوا اللّٰهَ وَرَسُولَهُ وَلَا تَوَلَّوْا عَنْهُ وَاَنْتُمْ تَسْمَعُونَ ﴿٢٠﴾

20- "Ey iman edenler! Allah'a ve Resûlüne itaat edin. İşittiğiniz halde ondan yüz çevirmeyin!"

Allah'a itaat konusunda insanlar birkaç kısma ayrılırlar:

- Azabının korkusundan itaat edenler
- Sevabını arzuladığı için itaat edenler
- Kulluk vecibesini yerine getirmek için itaat edenler
- Onu Rab edinmekle şereflenmek için itaat edenler

Böylece itaat edenden itaat edene fark vardır.

Şiir:

*Severim seni ey günün güneşi ve dolunayı*
*Bana sitem etse de hakkında Süha ve Kutup yıldızları*
*Çünkü boldur sende lütuf*
*Çünkü rahattır yanında yaşamak*

Öte yandan Allah: Allah'a ve Peygamber'e itaat edin, değil de: Allah'a ve Peygamberine itaat edin, buyurmakla Hz. Peygamber'e bir nevi özel iltifatta bulunmuş ve ifade ve işarete sığmayan bir fazilet atfetmiştir.

(وَلَا تَوَلَّوْا عَنْهُ وَاَنْتُمْ تَسْمَعُونَ) *"İşittiğiniz halde ondan yüz çevirmeyin!"*

Yani sizi çağırdığını ve ona indirdiğim vahiyle size olan çağrımı duyduğunuz halde.

وَلَا تَكُونُوا كَالَّذِينَ قَالُوا سَمِعْنَا وَهُمْ لَا يَسْمَعُونَ ﴿٢١﴾

21- "İşitmedikleri halde işittik, diyenler gibi olmayın!"

Zahiren şahadet getirip içinden inkâr edenlerden olmayınız.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- İnkârınızda ısrar ederken dilinizle ikrarda bulunmayınız.

- Sözleriyle yanıltan kimseyi tecrübe yalancı çıkarır.

اِنَّ شَرَّ الدَّوَآبِّ عِنْدَ اللّٰهِ الصُّمُّ الْبُكْمُ الَّذِينَ لَا يَعْقِلُونَ ﴿٢٢﴾

22- "Şüphesiz Allah katında canlıların en kötüsü, düşünmeyen sağırlar ve dilsizlerdir."

Hakkın çağırıcıları, güzel açıklamaları dile getirmekte, delilin dilleri teklif konularında doğruyu söylemekte, gaybın ilhamları şüphelerin karanlıklarını dağıtmayı ortaya çıkarmakta ve hakikatin saptırmaya uymaktan alıkoyan unsurları kalplere yerleşmiş bulunmaktadır. Bu itibarla her kim, sırrına yönelik hitabı idrakten sağır, kalbine bahşedilen keşifleri görmekten kör, zihni ve aklı kendisine yol gösteren delillere icabet etmekten dilsiz hale gelirse, onun kadri hayvanların da drecesinin altında olur.

وَلَوْ عَلِمَ اللّٰهُ فِيهِمْ خَيْرًا لَاَسْمَعَهُمْ وَلَوْ اَسْمَعَهُمْ لَتَوَلَّوْا وَهُمْ مُعْرِضُونَ ﴿٢٣﴾

23- "Allah, onlarda bir hayır görseydi, elbette onlara işittirirdi. Fakat işittirseydi bile, yine onlar yüz çevirerek dönerlerdi."

Kaderin ezeli tezahürlerinin uzaklaştırdığı kimseyi, hizmetle ilgili sonraki gelişmeler yakınlaştırmaz. Allah, kimi şekâvet sıfatıyla bilirse, onu affına vesile olan hususlardan mahrum bırakır.

Bir yoruma göre de eğer onlar rahmetin kapsamı içinde olsalardı, Allah onlara da koruma gömleği giydirirdi. Lakin onlar

hakkındaki ezeli takdir mahrumiyete hükmettiğinden sonları dalalet olmuştur.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا اسْتَج۪يبُوا لِلّٰهِ وَلِلرَّسُولِ اِذَا دَعَاكُمْ لِمَا يُحْي۪يكُمْ
وَاعْلَمُٓوا اَنَّ اللّٰهَ يَحُولُ بَيْنَ الْمَرْءِ وَقَلْبِه۪ وَاَنَّهُٓ اِلَيْهِ تُحْشَرُونَ ٢٤

24- "Ey inananlar! Hayat verecek şeylere sizi çağırdığı zaman, Allah ve Resûlüne uyun! Ve bilin ki, Allah kişi ile onun kalbi arasına girer ve siz mutlaka onun huzurunda toplanacaksınız."

Kabul etmek demek olan "ecâbe" ve "istecâbe" lafızları, tıpkı yakmak anlamındaki "evkade" ve "istevkade" lafızları gibi aynı anlama gelmektedir. Kimisine göreyse "istecâbe" lafzında diğerinden farklı olarak zoraki değil, gönüllü kabul anlamı bulunmaktadır. Nitekim korku veya beklentiden dolayı kabul eden ile ivazsız ve garazsız kabul eden arasında da fark vardır. Öte yandan kabulün şartlarından biri de yapılabilenden hiçbir şeyi terk etmemektir.

Bu arada Rabbinin davetini kabul eden kimse, hakikatin hâkim olmasıyla kendinden büsbütün kopmuştur. Hz. Peygamber'in davetine icabet eden kimse de hükümlerinden hiçbir şeyi ihlal etmemek üzere, dinini yerine getiren kimsedir. Nitekim Allah, kendisine de peygamberine de icabet edilmesini emretmiştir. Bu nedenle, gerçek anlamda icabet eden kul, içinden Allah'la yaşayan, zahirde de dinin prensiplerini yerine getiren kimsedir. Böylece Allah onu tek başına cemin hakikatlerine mazhar kılar ve farkı müşahede etmede (...). Bu durumda ne varlıklar onun hakikatlerinin beslendiği kaynağı bulandırabilir ne de dinin yükümlülükleri bakımından onun ahvalinde bir aykırılık bulunur.

(لِمَا يُحْي۪يكُمْ) *"Hayat verecek şeylere..."*

Çünkü Allah, onları kendilerinden koparınca, kendisiyle ihya etmiştir.

Bir yoruma göre de Allah abidleri muhalefetinden kopardıktan sonra, ibadetiyle onları ihya etmiştir. Allah, âlimleri de cehaletten ve onun karanlığından kopardıktan sonra Rab oluşunun delilleriyle ihya etmiştir. Müminleri ise Allah, çabalarının kılıçlarıyla yok ettikten sonra O'na olan itaatlerinin nuruyla ihya etmiştir. Tevhid ehline gelince, Allah onları, kendisinden başka hiçbir şeyi hissedemez ve hiçbir varlığı göremez kıldıktan sonra, tevhidinin nuruyla ihya etmiştir.

(وَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ يَحُولُ بَيْنَ الْمَرْءِ وَقَلْبِهٖ وَاَنَّهُٓ اِلَيْهِ تُحْشَرُونَ) *"Ve bilin ki, Allah kişi ile onun kalbi arasına girer ve siz mutlaka onun huzurunda toplanacaksınız."*

Allah, kalpleri, sahiplerinin tasarrufundan korur ve dilediği gibi yönetir. Bu çerçevede dilediği hususlar; hidayet, dalalet, kayboluş, vuslat, perdelenme, yakınlık, kesin inanç, şüphe, ünsiyet ve yabancılıktır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, kulların kalplerini tembelliğe meyletmekten korumuş, onlar da muamelelerinde çaba harcamışlardır. Müridlerin kalplerini, başarısızlık çizgisinde zigzak çizmekten korumuş, onlar da mücadelelerinde samimi olmuşlardır. Ariflerin kalplerini istikametten sapmaktan korumuş, böylece onlar yürüyüşlerine devam etmek suretiyle hakikate erişmişlerdir.

- Allah, onlarla kalplerinin arasına, O'ndan başkasına dönüş yapmamaları için girmiştir. Böylece, bir durumla karşılaştıkları zaman, ne başkalarına giden bir yol bulabilir ne de kalplerine güvenebilirler. İçine bir şey doğunca kalbine başvuran ile Rabbine giden yoldan başka bir yerde hidayet aramayan kimse arasında büyük fark vardır.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Bulamaz kalbim sizden başkasını*
*Çünkü kapanmıştır yol yüzüne*

- Âlimler, kalplerini bulanlardır. Allah şöyle buyurmuştur:

(اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَذِكْرٰى لِمَنْ كَانَ لَهُ قَلْبٌ)

*"Şüphesiz bunda kalbi olan kimse için bir öğüt vardır."* (Kaf, 50/37) Arifler ise kalplerini yitirenlerdir.

وَاتَّقُوا فِتْنَةً لَا تُصِيبَنَّ الَّذِينَ ظَلَمُوا مِنْكُمْ خَاصَّةً وَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ ﴿٢٥﴾

25- "Bir de öyle bir fitneden sakının ki, o içinizden sadece zulmedenlere erişmekle kalmaz. Biliniz ki, Allah'ın azabı şiddetlidir."

Öyle bir hatayı işlemekten sakının ki, sadece onu işleyenle sınırlı kalmayacak, aksine zararı ona bulaşana da bulaşmayana da dokunacak olan bir azaba uğramanıza sebep olur.

Aslında suç işlemeyen kimse, günah işleyenin suçundan sorumlu tutulmaz, ancak bazen bir kimse tek başına bir suç işlemekle birlikte, ona yakın bazı kimseler de bu sorumluluğun altına girerler. Mesela; suçlu, işlediği suçtan mahkûm edildiği zaman ona arka çıkmaları gibi. Bu durumda onlar, daha önce zalim değilken bu zalimin lehine yardımlaşmaları ve ona arka çıkmaları sebebiyle zalim olurlar. Hal böyle olunca, söz konusu fitne, o anda zalim olan kimseyle sınırlı kalmayıp aksine, o zalime arka çıkmaları, onunla uyum içinde olmaları ve yaptığına rıza göstermeleri sebebiyle, daha sonra zalimleşen kimseleri de kapsamış olur. Bu, ayetin zahire göre yapılan tefsiridir. İşaret yönüne gelince; kul, nefsiyle bir hataya bulaştığı zaman ondan, peşin cezadan ibaret olan bir fitne kalbe döner. Bu hatadan dolayı nefse de daha sonraki ceza isabet eder. Caiz olmayan hususlara yönelmek suretiyle hata fitnesi, kalpten meydana geldiği zaman ise, bu fitne sırra, perdelenme şeklinde sirayet eder.

Mürşit mertebesindeki kimse, caiz olmayan bir şey yaptığı zaman, kendisinden uyanlarına ve öğrencilerine sirayet eden bere-

ketler kesilir ve bir günah işlemedikleri halde, onlar da bu fitneden nasiplerini alırlar.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Büyükler, zikirleri terk eden küçükleri yadırgamadıkları zaman, işledikleri fitne kendilerine de isabet eder. Nitekim: Sefih alıkonulmadığı zaman sorumludur, denilmiştir. İşte bu duruma göre, hatanın yol açtığı fitne, onu işleyene de kötülükten alıkoymayı terk edene de bulaşır. Tıpkı, iyiliği emretmeyi terk edenin de bu kimsenin suçundan sorumlu olması gibi.

- Zahid, helal yoldan dahi olsa, kifayet sınırını aşarak dünyadan fazlaca almada dinin ruhsatlarının altına düştüğü zaman, fitnesi, onunla beraber henüz yeni yola çıkan kimselere de sirayet eder. Böylece bu kimse, sırf dünyaya yönelik olarak ortaya koyduğu arzu ve azla yetinmeyi terk etmekle gaflet vadilerine ve dünyalık meşguliyetlere dalmaya yol açmış olur.

Öte yandan abid, daha zor olandan yan çizdiği ve evla olanı terk ettiği zaman bu, nefisle mücadele etmeye çaba harcayana da sirayet eder. Bu yolla onlar, tembelliğe alışır. Sonra boş zaman ve nefisle mücadeleyi terk ediş, kendilerini şehvetlerinin peşine düşmeye sevk eder. Böylece onlar şu dizelerde söylendiği gibi olur:

*Gençlik, boş zaman ve zenginlik*
*Kişiyi bozarla ki nasıl bozarlar!*

İşte onların da fitneden nasipleri böyle olur.

Bu arada arif, çıkarının olduğu bir hususa dönüş yaptığı zaman, mürit de kendisine bakar ve nefse karşı verdiği samimi mücadelede içine bir gevşeklik girer. Arifin fitnesinden müridin de nasibi bu olur.

Özetle, hükümdar gafil olup halkının yönetimine ilgisiz kaldığı zaman asker de halk da atıl hale gelir, aralarında başıbozukluk ve bela büyümüş olur.

Şiir:

*Cehaletlerinden kaybetti senin çobanların*
*Bazı koyunları ve yönetti onları kurtlar*

(اَنَّ اللّٰهَ شَد۪يدُ الْعِقَابِ) *"Allah'ın azabı şiddetlidir."* Allah, azabı çabuklaştırmakla bunu yapar. Azabının şiddetli oluşunun bir sebebi de, bir kulu cezalandırmak için sorumlu tuttuğu zaman, cezaya sebep olan hususu telafi etmesine imkân tanımamasıdır.

وَاذْكُرُٓوا اِذْ اَنْتُمْ قَل۪يلٌ مُسْتَضْعَفُونَ فِي الْاَرْضِ تَخَافُونَ اَنْ يَتَخَطَّفَكُمُ النَّاسُ فَاٰوٰيكُمْ وَاَيَّدَكُمْ بِنَصْرِه۪ وَرَزَقَكُمْ مِنَ الطَّيِّبَاتِ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿٢٦﴾

26- "Hatırlayın ki, bir zamanlar siz yeryüzünde aciz tanınan az bir toplum idiniz. İnsanların sizi kapıp götürmesinden korkuyordunuz da Allah, size yer yurt verdi ve yardımıyla sizi destekledi. Ve şükredesiniz diye size temizinden rızıklar verdi."

Allah, onlara içinde bulundukları azlığı, zilleti, çeşitli noksanlıkları ve daha sonra kendilerini kavuşturduğu imkân, rahatlık, güven ve itibarı hatırlatmaktadır. Bir de Allah onları bu bol kısmetlere karşı şükretme, o güzel nimetlere karşı hamdı aksatmama noktasına getirdi. Böylece onlara, kapılarının gölgesinde huzur bulacakları yerler hazırlayarak riayetinin bereketiyle düşmana, kendilerine ulaşma fırsatı vermemiş oldu.

(وَرَزَقَكُمْ مِنَ الطَّيِّبَاتِ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ) *"Ve şükredesiniz diye size temizinden rızıklar verdi."*

Bedenlere ve maddi varlıklara temiz gıdalardan rızık verirken, ruhlara ve sırlara da türlü türlü aydınlıklar verdi. Bu gaybî nimetlerin hakiki şükrü, nimeti veren Allah'ın görmede gark olmak suretiyle, söz konusu nimetlerden habersiz kalmaktır.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا لَا تَخُونُوا اللّٰهَ وَالرَّسُولَ وَتَخُونُوٓا اَمَانَاتِكُمْ وَاَنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٢٧﴾

27- "Ey iman edenler! Allah'a ve peygamber'e hainlik etmeyin. Sonra bile bile kendi emanetlerinize hainlik etmiş olursunuz."

Hıyanet, kendisine güven konusunda bir kimsenin umulandan farklı bir duyguyu içinde saklamasıdır. Bu çerçevede Allah'a hıyanet, emanet ettiği şeyi zayi etmektir. Bu da dini hakkında iyi niyete aykırı hareket etmektir. Hz. Peygamber'e hıyanet, ona taraftar gözükürken buna aykırı davranmaktır. Emanetlere hıyanet ise, insafı terk etmek ve samimiyetsiz davranmaktır.

Herkesin hıyaneti, yanına bırakılan emanete göredir. Bu çerçevede kendisine emanet edilen malda, sahibinin izni olmaksızın tasarrufta bulunan kimsenin yaptığı hıyanettir. Kadınların emanet edildiği bir kimsenin onlara bakması hıyanettir. Buna göre; amellerde hıyanet, onları gerçekte yaratanın Allah olduğunu dikkate almaksızın kişinin, bu amellerin kendisine ait olduğunu iddia etmesidir.

Hallerde hıyanet ise insanın, Hakk'ı görmede gark olmak suretiyle kendinden geçmemesi sebebiyle bu halleri görmesidir. Oysa insanın, Allah'ın varlığında yok olması gerekir. Aynı zamanda insan, sünnetlerden veya dinin adabından birini ihlal ettiği zaman bu da Hz. Peygamber'e hıyanet olur. İnsan ile Allah arasındaki emanetlerle ilgi hıyanet ise, fiilî muamele şöyle dursun, insanın, nefsinin payını Müslümanların payına kalben tercih etmesidir.

وَاعْلَمُوٓا اَنَّمَٓا اَمْوَالُكُمْ وَاَوْلَادُكُمْ فِتْنَةٌ وَاَنَّ اللّٰهَ عِنْدَهُٓ اَجْرٌ عَظِيمٌ ﴿٢٨﴾

28- "Biliniz ki, mallarınız ve çocuklarınız birer imtihan sebebidir ve büyük mükâfat Allah katındadır."

Mallarınız ve çocuklarınız fitnenizin sebebidir. Çünkü kişi, mal toplamak ve çocukları için emre aykırı şeyler yapmakta, bu da onu azap fitnesine maruz bırakmaktadır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Fitne imtihan demektir. Allah, insanı mallarla imtihan ederek bunları O'nun hakkına tercih edip etmediğini ortaya koymak istemektedir. Çocuklarla da, onlar için Allah'ın rızasını kazandıran şeyleri terk edip etmediğini ortaya koymak için imtihan etmektedir.

Eğer insanlar, Allah'ın hakkını kendi haklarına tercih ederlerse bununla onların fazileti ortaya çıkacaktır. Şayet bunun aksini yaparlarsa, sevdikleri Allah tarafından bunun aksine bir muameleye tabi tutulacaklardır.

- Mal, insanı Allah'tan alıkoyduğu zaman fitnedir. Çocuklar da Allah'ın hakkı konusunda kusur işlemeye sebep oldukları zaman fitnedir.

- Mal, zorunlu ihtiyaç için olduğu sürece nimet, görevi ihmal ve övünme için olduğunda ise fitnedir. Özetle, insanı Allah'tan alıkoyan şey fitnedir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوٓا اِنْ تَتَّقُوا اللّٰهَ يَجْعَلْ لَكُمْ فُرْقَانًا وَيُكَفِّرْ عَنْكُمْ
سَيِّـَٔاتِكُمْ وَيَغْفِرْ لَكُمْ وَاللّٰهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظِيمِ ﴿٢٩﴾

29- "Ey iman edenler! Eğer Allah'tan korkarsanız, O size iyi ile kötüyü ayırt edecek bir anlayış verir, suçlarınızı örter ve sizi bağışlar. Çünkü Allah büyük lütuf sahibidir."

Ayette yer alan (فُرْقَانًا) "*furkan*" lafzı, yeterli bir ilim ve güçlü bir ilham gibi, kendisiyle hak ile bâtılın ayrıldığı şeydir. Bu itibarla âlimlerin hak ile bâtılı ayırmadaki ölçüleri, ele geçirdikleri delildir. Ariflerin furkanı ise kendilerine bahşedilen irfanlarıdır. Bu durumda âlimler kişisel çabalarıyla, arifler de Rablerinin lütfuyla furkan sahibi olurlar.

Öte yandan irfan, Allah tarafından yapılan bir tanıtma, günahların silinmesi, bir hafifletme, gufran da kulun onurlandırılmasıdır.

وَاِذْ يَمْكُرُ بِكَ الَّذٖينَ كَفَرُوا لِيُثْبِتُوكَ اَوْ يَقْتُلُوكَ اَوْ يُخْرِجُوكَ
وَيَمْكُرُونَ وَيَمْكُرُ اللّٰهُ وَاللّٰهُ خَيْرُ الْمَاكِرٖينَ ﴿٣٠﴾

30- "Hatırla ki, kâfirler seni tutup bağlamaları veya öldürmeleri yahut seni yurdundan çıkarmaları için sana tuzak kuruyorlardı. Onlar sana tuzak kurarlarken Allah da, onlara tuzak kuruyordu. Çünkü Allah, tuzak kuranların en iyisidir."

Medine'ye hicret etmek üzere, Mekke'den çıkarken onu öldürmeye ve gizlice ona tuzak kurmaya teşebbüs eden düşmanlarından kendisini haberdar ederek kurtaran Allah, Hz. Peygamber'e bu büyük lütfunu hatırlatmıştır.

Tuzak kurmak, zahiren iyi görünmeye çalışırken, içten kötülük yapmak istemektir. Allah'ın tuzak kurması ise, tuzak kurmaya karşılık ceza vermesidir. Bu ceza, onların kalbine, kendilerine iyilik yaptığı hissini verirken gerçekte onları cezalandırmasıdır. Allah, bir topluluğu dünya ile meşgul ettiği zaman, ahireti unutmaları için gayretlerini ona çevirir. Bu da onlara tuzak kurmaktır. Çünkü onlar, dünyaya alışırlar ve böylece Allah, onların güvenli yerlerinden bir ceza üretir ve kendilerini ansızın yakalayıverir.

Allah'ın bir tuzağı da, kimilerini insanlar arasında iyi şöhrete sahip kılmak ve çokça ibadetler yaptırmak suretiyle, mağrur etmesidir. Böylece onların sırları başkalarıyla birlikte olur. Aynı zamanda onlar, insanlar arasında saygın iken Allah'tan gafildirler.

Şiir:

*Evim size yakındır diye çok kıskandılar beni*
*Nice evi yakın olan vardır ki, gerçekte uzaktır*

وَاِذَا تُتْلٰى عَلَيْهِمْ اٰيَاتُنَا قَالُوا قَدْ سَمِعْنَا لَوْ نَشَٓاءُ لَقُلْنَا مِثْلَ هٰذَٓا اِنْ
هٰذَٓا اِلَّٓا اَسَاطٖيرُ الْاَوَّلٖينَ ﴿٣١﴾

31- "Onlara ayetlerimiz okunduğu zaman dediler ki: 'Evet, işittik, istesek biz de bunun benzerini elbette söyleyebiliriz. Bu, öncekilerin masallarından başka bir şey değildir.'"

Aşırı cahillikleri ve inkârlarının kötülüğü, Kur'an'a karşı koyabilme gücü konusundaki iddialarının çirkinliğini idrak etmelerini engellemiştir. Bu nedenle imtihan esnasında delil yokluğu ve kendilerinde bulunduğunu söyledikleri fesahat ve beyan vasıflarından aciz kalmakla rüsva oldular.

Şiir:

*Kendisinde bulunandan başka bir şeyle bezenmek isteyenin*
*İddiasını skandala çevirir imtihan*

Bir yoruma göre de, onlar Kur'an'a küçümseyici gözle bakınca onu anlamanın bereketlerinden mahrum bırakıldılar ve bu yüzden onu eskilerin masalları saydılar. Aynı şekilde velilere saygı göstermeye riayet etmeyen kimse, onların ahvalini görmekten alıkonulmakla cezalandırılır. Böylece bu kimse, kötülükleri hak etmede velileri de kendi gibi zanneder ve bu yüzden onlara dil uzatır. Oysa söylediklerine kendisi daha müstahaktır. Şu atasözünde olduğu gibi: *"Hastalığını bana bulaştırıp sıyrıldı."*

وَاِذْ قَالُوا اللّٰهُمَّ اِنْ كَانَ هٰذَا هُوَ الْحَقَّ مِنْ عِنْدِكَ فَاَمْطِرْ عَلَيْنَا
حِجَارَةً مِنَ السَّمَآءِ اَوِ ائْتِنَا بِعَذَابٍ اَليمٍ ﴿٣٢﴾

32- "Hani o kâfirler, bir zaman da: 'Ey Allah'ım! Eğer bu kitap, senin katından gelmiş bir gerçekse üzerimize gökten taş yağdır yahut bize elem verici bir azap getir!' demişlerdi."

Azap istemeleri, Resûlüllah'ı yalanlamada kararlı olduklarını ve kendi aleyhlerinde yaptıkları bedduanın kabul edilmeyeceğine kendilerince inandıklarını göstermiştir.

Bu da, nefsin bir şeyle tatmin olmasının ilim olmadığına dair en açık bir delildir. Çünkü bu tatmin, ilimle birlikte olduğu gibi, cahillikle birlikte de olabilmektedir.

وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُعَذِّبَهُمْ وَاَنْتَ فِيهِمْ وَمَا كَانَ اللّٰهُ مُعَذِّبَهُمْ وَهُمْ يَسْتَغْفِرُونَ ﴿٣٣﴾

33- "Halbuki sen, onların içinde iken Allah onlara azap edecek değildir. Ve onlar, mağfiret dilerlerken de Allah onlara azap edici değildir."

Sen onların arasında iken Allah onlara azap verecek değildir. Sen sulplarında iken -dünyaya gelmeden önce atalarının bedenlerinde yaşıyorken- Allah geçmişlerine de azap verecek değildir. Bugün de sen aralarında iken, kadrinin yüceliği ve makamının saygın oluşu nedeniyle onlara azap vermemektedir. Sen aralarından çıktığın zaman da, içlerinde mağfiret dileyen yardımcıların varken Allah, yine onlara azap vermeyecektir. Bu itibarla ayet, Resûlullah'ın kadrinin yüceltildiğini göstermektedir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Komşuluğa saygı gösterilir. Bu nedenle iyilerin komşusu, nimetlerinin gölgesinde yaşar. Nitekim kâfirler, Hz. Peygamber'e yakın olma nimetine mazhar olmasalar da, komşusu olmaları sebebiyle dünyalık azaptan kurtulmuşlardır.

Şiir:

*Severim sevgiliyi ve severim o evini ki*
*Yaşamıştır onda kendisi ve severim ev halkını*

- Hz. Peygamber'in, aralarında bulunması dahi, kâfirlerin üzerinden azabı defettiğine göre, kalplerde marifetin bulunması, azabı hayda defeder.

- Her ne kadar, dünyada Hz. Peygamber ararlarında olduğu sürece, azapları ertelenmişse de ahirette azaba uğrayacaklarında şüphe yoktur. Çünkü önemli olan, zamanlar ve gelip geçen durumlar değil, akıbetlerdir.

(وَمَا كَانَ اللّٰهُ مُعَذِّبَهُمْ وَهُمْ يَسْتَغْفِرُونَ) *"Ve onlar, mağfiret dilerlerken de Allah onlara azap edici değildir."*

Allah, Hz. Peygamber'in, ümmetinin içinde ebedi olarak kalmayacağını bilmiştir. Zira ona hitaben şöyle buyurmuştur:

(وَمَا جَعَلْنَا لِبَشَرٍ مِنْ قَبْلِكَ الْخُلْدَ) *"Senden önce de hiçbir beşere ebedilik vermedik."* (Enbiyâ, 21/34) Yani aralarındaki müddetini tamamlasa da ben, onun ümmetini zayi etmem. O halde dilleri mağfiret diledikçe, azap çeşitleri üzerlerinden kalkacaktır.

وَمَا لَهُمْ اَلَّا يُعَذِّبَهُمُ اللّٰهُ وَهُمْ يَصُدُّونَ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَمَا كَانُوٓا اَوْلِيَٓاءَهُ اِنْ اَوْلِيَٓاؤُهُٓ اِلَّا الْمُتَّقُونَ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٣٤﴾

34- "Onlar, velileri olmadıkları halde müminleri Mescid-i Haram'dan geri çevirirlerken Allah, onlara ne diye azap etmeyecek? O'nun velileri, takva sahiplerinden başkası değildir. Fakat onların çoğu bunu bilmez. "

Allah, bir ayette onlardan azabı kaldırmış, diğer bir ayette ise ispatlamıştır. Kaldırılan dünyadaki, ispatlanan ise ahiretteki azaptır.

Sonra Allah, ahirette onlara azap ulaştıracağını: (وَهُمْ يَصُدُّونَ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ) *"Onlar, müminleri Mescid-i Haram'dan geri çevirdikleri halde"* sözüyle açıklamaktadır. Bu hitabın delili, dinin hakkını yerine getirmede Müslümanlara yardımcı olmanın, Allah'a yakınlığı ve sevabı hak etmeye vesile olmasıdır. Bu arada: (وَمَا كَانُوٓا اَوْلِيَٓاءَهُ) *"Onlar, velileri olmadıkları halde"* ifadesiyle ayette, Allah'ın velilerine azap vermeyeceğine dair delil bulunmaktadır. Zira Allah, velisi olmayanlara azap verdiği zaman bu, velileri cümlesinden olanlara azap vermeyeceğini göstermiş olur. Müminlerin tamamı Allah'ın velileridir. Çünkü O: (اَللّٰهُ وَلِيُّ الَّذِينَ اٰمَنُوا) *"Allah müminlerin dostudur"* (Bakara, 2/257) buyurmuştur. Mümin her ne kadar suçu oranında bir süre azap görse de, şüphesiz o, cehennemde ebedi olarak bırakıl-

maz. O halde müminlerin çektikleri azap, kurtuluşun ebedi oluşuna kıyasla önemsizdir.

Şiir:

*Sağlam durdukça aramızdaki ahit*
*Sağlam durur sevgim, ziyaretgâh uzak da ollsa*

(اِنْ اَوْلِيَآؤُهُٓ اِلَّا الْمُتَّقُونَ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُونَ) *"O'nun velileri, takva sahiplerinden başkası değildir. Fakat onların çoğu bunu bilmez."*

Allah'ın velileri, şirkten sakınan takva sahiplerinden başkası değildir.

وَمَا كَانَ صَلَاتُهُمْ عِنْدَ الْبَيْتِ اِلَّا مُكَآءً وَتَصْدِيَةً فَذُوقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنْتُمْ تَكْفُرُونَ ﴿٣٥﴾

35- "Onların Beytullah yanındaki duaları da, ıslık çalmak ve el çırpmaktan başka bir şey değildir. İnkâr etmekte olduğunuz şeylerden ötürü şimdi azabı tadın!"

Onların zahiri amelleri, samimi inançtan arınmıştır. Bu sebeple Allah, o amellere hiçbir değer vermemiştir. Ohalde sözün değeri, ancak halin safiyetiyle gerçekleşir. Zahirin meşakkati de ancak sırların aydınlığıyla kabul görür.

(فَذُوقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنْتُمْ تَكْفُرُونَ) *"İnkâr etmekte olduğunuz şeylerden ötürü şimdi azabı tadın!"*

İki türlü olan bu azabın biri, dünyalık olup bu, onların bir şey üzere olduklarını sanmalarıdır. Allah bu konuda:

(وَهُمْ يَحْسَبُونَ اَنَّهُمْ يُحْسِنُونَ صُنْعًا) *"Onlar, iyi işler yaptıklarını sanırlar"* (Kehf, 18/104) buyurmuştur.

Diğeri de ahiretteki azap olup:

(وَلَعَذَابُ الْاٰخِرَةِ اَشَقُّ) *"Ahiret azabı ise daha şiddetlidir"* (Ra'd, 13/34) ayetinde söylendiği gibidir.

اِنَّ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا يُنْفِقُونَ اَمْوَالَهُمْ لِيَصُدُّوا عَنْ سَب۪يلِ اللّٰهِ فَسَيُنْفِقُونَهَا ثُمَّ تَكُونُ عَلَيْهِمْ حَسْرَةً ثُمَّ يُغْلَبُونَ وَالَّذ۪ينَ كَفَرُٓوا اِلٰى جَهَنَّمَ يُحْشَرُونَ ﴿٣٦﴾

36- "Şüphesiz ki, inkâr edenler mallarını, Allah yolundan alıkoymak için harcıyorlar. Daha da harcayacaklar. Ama sonunda bu, onlara yürek acısı olacak ve en sonunda mağlup olacaklardır. Kâfirlikte ısrar edenler ise cehenneme toplanacaklardır."

Onlar, çeşitli mallarını harcamakla durumlarını düzeltip düzene koymayı amaçlamaktadırlar. Sonrasında ise hüsrandan başka hiçbir şey alamamakta ve noksanlıktan başka hiçbir şey elde edememektedirler. Onlar kaybettiler, lakin farkında değillerdir. Sonuç alamadıklarını da ilerde öğreneceklerdir.

Şiir:

*Toz dağıldığı zaman göreceksin sen*
*Altındakinin at mı eşek mi olduğunu*

(وَالَّذ۪ينَ كَفَرُٓوا اِلٰى جَهَنَّمَ يُحْشَرُونَ) *"Kâfirlikte ısrar edenler ise cehenneme toplanacaklardır."* Malları onları oyalamış olsa da neticede sonları, değersizlik ve zillete doğrudur. Malları ve amelleri onlara bir fayda vermemiştir. Aksine halleri şekâvetle sonlanmıştır.

لِيَم۪يزَ اللّٰهُ الْخَب۪يثَ مِنَ الطَّيِّبِ وَيَجْعَلَ الْخَب۪يثَ بَعْضَهُ عَلٰى بَعْضٍ فَيَرْكُمَهُ جَم۪يعًا فَيَجْعَلَهُ ف۪ي جَهَنَّمَ اُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْخَاسِرُونَ ﴿٣٧﴾

37- "Bu toplama, Allah'ın murdarı temizden ayıklaması (mümini kâfirden ayırması) ve bütün murdarların bir kısmını diğer bir kısmının üstüne koyup hepsini yığarak cehenneme atması içindir. İşte onlar, ziyana uğrayanların ta kendileridir."

Murdar, Allah'a yaramayan, temiz ise Allah'a yarayan şeydir.

Murdar, dinin, çirkin olduğuna ve işe yaramadığına hükmettiği, temiz ise ilmin, iyiliğine ve işe yaradığına tanıklık ettiği şeydir.

Diğer bir yoruma göre ise murdar kâfir, temiz de mümindir.

Murdar, sahibini Allah'tan alıkoyan, temiz de sahibini Allah'a ulaştıran şeydir.

Murdar, insanın kazanıp nefsinin arzusu için harcadığı, temiz ise Rabbinin emriyle harcadığı şeydir.

Murdar, kâfirin ameli olup onun için şekle sokulur ve ceza olarak sahibinin üstüne atılır. Temiz ise, müminin ameli olup onun için güzel bir şekle sokulur ve sahibi ona bindirilir.

قُلْ لِلَّذٖينَ كَفَرُوٓا اِنْ يَنْتَهُوا يُغْفَرْ لَهُمْ مَا قَدْ سَلَفَ وَاِنْ يَعُودُوا فَقَدْ مَضَتْ سُنَّتُ الْاَوَّلٖينَ ﴿٣٨﴾

38- "İnkâr edenlere, sana düşmanlıktan vazgeçerlerse, geçmiş günahlarının bağışlanacağını söyle. Yok geri dönerlerse kendilerinden öncekilerin hali gözlerinin önündedir."

Eğer onlar, isyanı dizginler, inat ve ceberutluk meydanında cirit atmaktan vazgeçerlerse, değersizliğin küçüklüğünü onlardan giderir ve kendilerine güvenin huzurunu bahşederiz.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Eğer onlar, inat kemerini çözerlerse, biz de onları uzaklık kaydından kurtarırız.

- Eğer onlar, fiillerinin çirkinliğini görürlerse, biz de hallerini ıslah ederek lütufta onlara cömert davranırız.

- Eğer onlar özür dilemeye yönelirlerse, biz de onların üzerine bağışlanmışlık halini atarız.

- Eğer onlar günahlardan sıyrılmaya dönüş yaparlarsa, lütuftan güzelce yararlanmayı onlara mubah kılarız.

Şiir:

*Yüz çevirdi bizden kimi insanlar*
*Suçsuz ve anlamsız bir şekilde*
*Kötü zanda bulundular hakkımızda*
*Neden güzel zanda bulunmadılar*
*Lehimizde olurlarsa, biz de oluruz lehlerinde*
*Bize dönerlerse eğer biz de döneriz onlara*
*Şayet müstağni olmuşlarsa*
*Kuşkusuz biz daha da müstağniyiz onlardan*

وَقَاتِلُوهُمْ حَتّٰى لَا تَكُونَ فِتْنَةٌ وَيَكُونَ الدّ۪ينُ كُلُّهُ لِلّٰهِ فَاِنِ انْتَهَوْا فَاِنَّ اللّٰهَ بِمَا يَعْمَلُونَ بَص۪يرٌ ﴿٣٩﴾

39- "Fitne ortadan kalkıncaya ve din tamamen Allah'ın oluncaya kadar onlarla savaşın. İnkâra son verirlerse, şüphesiz ki Allah onların yaptıklarını çok iyi görür."

Allah, Müslümanlar zararlarından emin olacak ve fitneyi tamamen söndürecek şekilde köklerinin kazınması için kâfirlerle savaşmayı ve bunda ileri gitmeyi emretmiştir. Zira vadideki yılanda bir hareket olduğu sürece, kendisinden emin olunamaz. Düşman da böyledir, yenildiği zaman bütün damarlarının koparılması ve İslam muhitlerinin şirkten beslenen dikenlerden temizlenmesi gerekir.

وَاِنْ تَوَلَّوْا فَاعْلَمُوا اَنَّ اللّٰهَ مَوْلٰيكُمْ نِعْمَ الْمَوْلٰى وَنِعْمَ النَّص۪يرُ ﴿٤٠﴾

40- "Eğer imandan yüz çevirirlerse, bilin ki Allah sizin sahibinizdir. O ne güzel sahip ve ne güzel yardımcıdır."

Eğer onlar, inattan ve imandan uzaklaşmaktan başka bir şeyi kabul etmezlerse, kalplerinizin üzerine, onlardan gelecek korkunun gölgesi düşmemelidir. Çünkü size olan yardımın sahibi ve yeterliliğinizi taahhüt eden, Allah'tır. Eğer iyi kulların bulunduğu bir konumda değilseniz, bu takdirde sizin güzel sahibiniz ve güzel yardımcınız O'dur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- İrfanın taksim edildiği gün Allah, sizin güzel sahibinizdir. Mağfiret nimeti günü de Allah sizin güzel yardımcınızdır.

- Sen yokken Allah senin güzel sahibin, sen varken de senin güzel yardımcındır.

- Allah, yükümlü kılmadan önce kendini tanıtmakla güzel sahip, kötülüklerinizi hafifletmek ve iyiliklerinizi kat kat arttırmak suretiyle de sizin güzel yardımcınızdır.

Şiir:

*Sana olan aşkım tanıdığım ilk aşktır*
*Kalp de unutamaz ilk sevgiliyi*

وَاعْلَمُوٓا اَنَّمَا غَنِمْتُمْ مِنْ شَيْءٍ فَاَنَّ لِلّٰهِ خُمُسَهُ وَلِلرَّسُولِ وَلِذِي الْقُرْبٰى وَالْيَتَامٰى وَالْمَسَاكِينِ وَابْنِ السَّبِيلِ اِنْ كُنْتُمْ اٰمَنْتُمْ بِاللّٰهِ وَمَٓا اَنْزَلْنَا عَلٰى عَبْدِنَا يَوْمَ الْفُرْقَانِ يَوْمَ الْتَقَى الْجَمْعَانِ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ﴿٤١﴾

41- "Eğer Allah'a ve hak ile batılın ayrıldığı gün, iki ordunun birbiri ile karşılaştığı gün (Bedir savaşında) kulumuza indirdiğimize inanmışsanız, bilin ki, ganimet olarak aldığınız herhangi bir şeyin beşte biri Allah'a, Resûlüne, onun akrabalarına, yetimlere, yoksullara ve yolcuya aittir. Allah, her şeye hakkıyla kadirdir."

Ganimet, müminlerin cihat ve savaş esnasında, zafer kazanmaları esnasında kâfirlerin mallarından ele geçirdikleridir. Savaş veya o anlama gelecek bir durum söz konusu olmadığı zaman ise bu mala "fey'" adı verilir.

Bu arada cihat iki kısımdır: Biri kâfirlere karşı olan zahiri cihat, diğeri ise nefis ve şeytana karşı yapılan manevi cihattır ki bu, hadiste yer aldığı üzere, en büyük cihattır.

Nasıl ki zafer halinde küçük cihatta ganimet var ise, en büyük cihatta da ganimet vardır. Bu büyük cihat, kulun, heva ve şeytandan ibaret düşmanın elinde olan nefsine malik olmasıdır. Şöyle ki, daha önce zevahiri kötü amellerin merkezi, bâtını da çirkin hallerin yeri iken, bu kez hevanın olduğu yer hoşnutluğun meskeni, şehvetler ve nefsi arzuların yeri de Allah'tan gelen yükümlülüklere teslim edilmiş olur. Aynı zamanda nefis, şehvetlerin esaretinden kurtarılmış, kalp gafletlerden kopartılmış, ruh alakaların ellerinden alınmış, sır da mülahazalardan korunmuş olur. Bir de nefsin sapkınlığı yenilgiye uğramış ve Allah'ın çağrısını kabul etmek suretiyle hakların üstünlüğü parlamış olur.

Ayrıca, nasıl ki ganimetin tamamından Allah'ın ve Resûlünün beşte bir payı var ise işaret yorumuna göre ganimet sayılan hususlardan biri de, Allah'a has olan bir paydır. Bu pay, ne ahiretin lütuflarından ne Allah'a yakınlığın meyvelerinden ne de ikbalin özelliklerinden içinde kulun hiçbir nasibinin bulunmadığı şeydir. Bu durumda kul, her türlü nasibin köleliğinden kurtarılmış, sırf Allah için olmuş ve Allah'tan başkasını yok saymış olur.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Her kim vazgeçmemişse seninle arzusundan*
*Hevâdan, insanlardan ve dostlardan*
*Durmuş gibidir o mertebeler arasında*
*Bir nasibe kavuşmak veya güzel bir sevap için*

اِذْ اَنْتُمْ بِالْعُدْوَةِ الدُّنْيَا وَهُمْ بِالْعُدْوَةِ الْقُصْوٰى وَالرَّكْبُ اَسْفَلَ
مِنْكُمْ وَلَوْ تَوَاعَدْتُمْ لَاخْتَلَفْتُمْ فِي الْمِيعَادِ وَلٰكِنْ لِيَقْضِيَ اللّٰهُ اَمْرًا
كَانَ مَفْعُولًا لِيَهْلِكَ مَنْ هَلَكَ عَنْ بَيِّنَةٍ وَيَحْيٰى مَنْ حَيَّ عَنْ بَيِّنَةٍ
وَاِنَّ اللّٰهَ لَسَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٤٢﴾

42- "Hatırlayın ki, siz vâdinin yakın kenarında idiniz. Onlar da uzak kenarında idiler. Kervan da sizden daha aşağıda idi. Eğer sözleşmiş

olsaydınız, sözleştiğiniz vakit hususunda ihtilafa düşerdiniz. Fakat Allah, gerekli olan emri yerine getirmesi, helak olanın açık bir delille helak olması, yaşayanın da açık bir delille yaşaması için böyle yaptı. Çünkü Allah hakkıyla işitendir, bilendir."

Allah, Bedir günü meydana gelen savaş ve gerçekleşen çeşitli durumların, insanların aldıkları tedbirle veya bir düşüncenin gereği olan bir hükümle değil, aksine ilâhi takdirin hükmüyle olduğunu haber vermektedir. Hatta eğer bu, tercih ve karşılıklı sözleşmeye dayalı olsaydı, siz bu savaştan hoşlanmaz ve uzak dururdunuz. Oysa Allah'ın takdir ettiği durumu gerçekleştirmesi için, olan olmuş ve hakkında ilahi takdirin kesinleştiği işler gerçekleşmiştir.

(لِيَهْلِكَ مَنْ هَلَكَ عَنْ بَيِّنَةٍ وَيَحْيٰى مَنْ حَيَّ عَنْ بَيِّنَةٍ وَاِنَّ اللّٰهَ لَسَمِيعٌ عَلِيمٌ) *"helak olanın açık bir delille helak olması, yaşayanın da açık bir delille yaşaması için böyle yaptı. Çünkü Allah hakkıyla işitendir, bilendir."*

Yani Allah'ın, hakkı görmemekte ısrar ettikten sonra, haktan sapan kimseyi dalalete düşürmesi ve delil apaçık ortaya çıktıktan sonra hakka bağlı kalan kimsenin de hidayete ermesi için. Bu konudaki diğer iki yorum ise şöyledir:

- Allah, yolu aydınlatmış ve delili ortaya koymuştur. Lakin bazı kimselerin basiretlerini doğruyu görmekten alıkoymuş, hakkın yollarını idrak etmeleri için diğer bazılarının da basiretlerini açmıştır.

Helak olan, tefrika vadilerine düşen, sağ kalan da irfan sahibi kılınmanın nuruyla yaşayan kimsedir.

Bir yoruma göre de helak olan arzusuna tutkun olan, sağ kalan ise her türlü nasibin esaretinden koparılan kimsedir.

اِذْ يُرِيكَهُمُ اللّٰهُ فِي مَنَامِكَ قَلِيلًا وَلَوْ اَرٰيكَهُمْ كَثِيرًا لَفَشِلْتُمْ
وَلَتَنَازَعْتُمْ فِي الْاَمْرِ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ سَلَّمَ اِنَّهُ عَلِيمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ
﴿٤٣﴾ وَاِذْ يُرِيكُمُوهُمْ اِذِ الْتَقَيْتُمْ فِي اَعْيُنِكُمْ قَلِيلًا وَيُقَلِّلُكُمْ فِي
اَعْيُنِهِمْ لِيَقْضِيَ اللّٰهُ اَمْرًا كَانَ مَفْعُولًا وَاِلَى اللّٰهِ تُرْجَعُ الْاُمُورُ ﴿٤٤﴾

43, 44- "Hatırla ki Allah, uykunda sana onları az gösterdi. Eğer onları sana çok gösterseydi, elbette çekinecek ve bu iş hakkında münakaşaya girişecektiniz. Fakat Allah, sizi bundan kurtardı. Şüphesiz O, kalplerin özünü bilir. Allah, olacak bir işi yerine getirmek için, karşılaştığınız zaman onları sizin gözlerinizde az gösteriyor, sizi de onların gözlerinde azaltıyordu. Bütün işler Allah'a döner."

Bir görüşe göre Allah, onları Hz. Peygamber'e rüyasında az sayıda gösterdi. O da, bunu sahabilerine haber verdi ve bunun üzerine sahabilerin kâfirlere karşı cesaretleri artmış oldu.

Diğer bir görüşe göre ise Allah onları Hz. Peygamber'in, uyku organı olan gözlerinde az gösterdi. Yani Allah, onları Hz. Peygamber'in gözlerinde azalttı. Çünkü eğer Müslümanlar, kâfirleri çok bulsalardı onlarla savaşmada başarısız olur ve kalplerinde kırılma meydana gelirdi.

Özetle, Allah Bedir günü aralarında meydana gelen savaşın gerçekleşmesini irade etmiştir. Allah, bir şeyi irade ettiği zaman ise sebeplerini hazırlar. Bu çerçevede Allah, kâfirleri Müslümanların gözlerinde azaltmış, böylece cesaretleri artmıştır. Müslümanları da kâfirlerin gözlerinde azaltmış, bunun üzerine kâfirler savaşa heveslenince, Allah'ın hükmünde daha fazla küçülüp zarar etmişlerdir.

( اِنَّهُ عَلِيمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ ) *"Şüphesiz O, kalplerin özünü bilir."* Her şeyin yaratıcısı O iken ve işler O'na dönmekte iken nasıl bilmesin ki?

Diğer bir yoruma göre, Allah bir kula yardım etmek istediği zaman, bu durumda bütün beşeriyet ona karşı tuzak kursa ve hepsi ona zarar vermek istese, ona zarar vermek isteyene bu, hiçbir çaba fayda vermez ve bu tuzak ile Allah'ın o kimseye olan lütfunun arasına bir set meydana gelir.

Allah, bir kimseye zarar vermek istediği zaman ise o zarar geri çevrilemez, ona karşı hiçbir tedbir fayda vermez ve Allah'ın hükmüne göre düştükten sonra hiçbir gayret onu ayağa kaldıramaz.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوٓا اِذَا لَقٖيتُمْ فِئَةً فَاثْبُتُوا وَاذْكُرُوا اللّٰهَ كَثٖيرًا لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿٤٥﴾

45- "Ey iman edenler! Herhangi bir toplulukla karşılaştığınız zaman, sebat edin ve Allah'ı çok anın ki, başarıya erişesiniz."

Yani, siz müşriklerden bir grupla karşılaştığınız zaman, sebat gösterin. Sebat ise, ancak kalbin gücü ve kesin inancın şiddetiyle gerçekleşir. Bu da, ancak basiretin keskinliği, Allah'a olan kesin bağlılık ve bütün olup bitenlerin O'ndan olduğunu görmekle olur. O zaman insan, Allah'a teslim olur, hükmüne rıza gösterir ve güzel yardımı ondan bekler. İşte bu nedenledir ki, Allah, onları kendisini anmaya yönelterek: (وَاذْكُرُوا اللّٰهَ كَثٖيرًا) "*Allah'ı çok anın*" buyurmuştur.

Diğer bir yoruma göre, bütün hayırlar kalbin sebatına bağlı olup insanların kudretleri de onunla belli olur. Bu çerçevede insanın içine, kendisini rahatsız eden bir duygu veya içine kendisini harekete geçiren bir vehim indiği zaman, bu durumda basiret sahibi olan kişi, inen bu şeyin hakikatinin ortaya çıktığı yerde durur. Böylece, maneviyatı sağlam, kalbi sakin ve düşüncesi pürüzsüz olduğu için sebat göstermiş olur. Bu ise büyük insanların vasfıdır.

وَاَطٖيعُوا اللّٰهَ وَرَسُولَهُ وَلَا تَنَازَعُوا فَتَفْشَلُوا وَتَذْهَبَ رٖيحُكُمْ وَاصْبِرُوا اِنَّ اللّٰهَ مَعَ الصَّابِرٖينَ ﴿٤٦﴾

46- "Allah ve Resûlüne itaat edin, birbirinizle çekişmeyin; sonra korkuya kapılırsınız da kuvvetiniz gider. Bir de sabredin. Çünkü Allah sabredenlerle beraberdir."

Müslümanlar arasında uyum, dinin aslıdır. Bozulmanın başlangıcı ve çözülmenin başı da ihtilaftır. Aynı zamanda, dinde ve inançta olduğu gibi, görüş ve kararlılıkta da uyum vaciptir.

Allah, kâfirlerin sıfatı hakkında şöyle buyurmuştur: (تَحْسَبُهُمْ جَمٖيعًا وَقُلُوبُهُمْ شَتّٰى) "*Sen onları derli toplu sanırsın, halbuki kalpleri*

*darmadağınıktır.”* (Haşr, 59/14) Müslümanların kararlılıklarının birliği, hepsinin kendi güç ve kuvvetlerinden uzak durup Allah'a dönüşte ve takdiri görmede samimi olmalarından ötürüdür. İşte Müslümanlar bu tek durumda birleşmektedirler.

Olayları kendilerinden bilenlere gelince, zanlarının sahalarında kaybolmuş ve işleri kendi görüşlerine göre yürütmüşlerdir. Böylece her biri, kararı uygun gördüğü ve tercih ettiği görüş üzerine bina eder. Bu durumda anlaşmazlığa düştüklerinde görüşleri farklılaşır, yolları ayrıldığından zayıf düşerler ve ayrı ayrı yollara saparlar. Bir de nasıl ki, dinde Hz. Peygamber'e itaat vacip ise aynı şekilde yöneticilere itaat etmek de vaciptir. Bu nedenle her zaman Müslümanlar için bir yönetici tayin etmek vaciptir. Sonra o yöneticiye muhalefet etmek de caiz değildir. Hz. Peygamber: *“Kötürüm bir köle dahi olsa, yöneticiye itaat ediniz”* buyurmuştur. Ayrıca Hz. Peygamber, bir seriyye gönderdiği zaman, başlarına bir yönetici tayin ediyor ve: *“Çoğunluğa bağlı kalınız”* diyordu.

Bu arada Müslümanların icmaı delildir. Cemaatle namaz kılmak müekked sünnettir. Sünnete uymak doğru, bidatçilik ise dalalettir.

(وَاصْبِرُوا) *“Bir de sabredin.”* Sabır, nefsi bir şeye bağlı kılmaktır. Bu bağlamda emredilen sabır, hevânın hilafına olan şeydir.

(اِنَّ اللّٰهَ مَعَ الصَّابِرِينَ) *“Çünkü Allah sabredenlerle beraberdir.”* Müslümanlar sebat edip işlerini güzelce Allah'a havale ettikleri zaman, O onlar için yeterli bir sahip olur.

وَلَا تَكُونُوا كَالَّذِينَ خَرَجُوا مِنْ دِيَارِهِمْ بَطَرًا وَرِئَٓاءَ النَّاسِ
وَيَصُدُّونَ عَنْ سَبِيلِ اللّٰهِ وَاللّٰهُ بِمَا يَعْمَلُونَ مُحِيطٌ ﴿٤٧﴾

47- “Çalım satmak, insanlara gösteriş yapmak ve onları Allah yolundan alıkoymak için yurtlarından çıkanlar gibi olmayın. Allah, onların yaptıklarını çepeçevre kuşatmıştır.”

Yani, Mekkeliler, Bedir yılı, kervana yardım etmek için Mekke'den çıktıklarında, üstünlük duygusu kendilerine hâkim oldu, hak tanımazlık

onlarda kök saldı ve kalplerine insanlara karşı riyakârlık girdi. Böylece onlar, hatalarının ağına takıldılar ve ummadıkları bir sonuçla karşılaştılar. Müminlere gelince, Allah onlara üstün bir zafer verdi ve Peygamber'inden kendisini gölgeleyen korkuyu giderdi. Hz. Peygamber'in: *"Allah'ım! Beni nefsime emanet etme"* derken samimiyetle kendi gücü ve kuvvetinden uzak durması sebebiyle Allah güzel sahip çıkmakla ona yeterli destek olarak şöyle buyurdu:

(وَمَا رَمَيْتَ اِذْ رَمَيْتَ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ رَمٰى) *"Attığın zaman da sen atmadın, fakat Allah attı."* (Enfâl, 8/17)

وَاِذْ زَيَّنَ لَهُمُ الشَّيْطَانُ اَعْمَالَهُمْ وَقَالَ لَا غَالِبَ لَكُمُ الْيَوْمَ مِنَ النَّاسِ وَاِنّ۪ي جَارٌ لَكُمْ فَلَمَّا تَرَآءَتِ الْفِئَتَانِ نَكَصَ عَلٰى عَقِبَيْهِ وَقَالَ اِنّ۪ي بَر۪ٓيءٌ مِنْكُمْ اِنّ۪ٓي اَرٰى مَا لَا تَرَوْنَ اِنّ۪ٓي اَخَافُ اللّٰهَ وَاللّٰهُ شَد۪يدُ الْعِقَابِ ﴿٤٨﴾

48- "Hani şeytan onlara, yaptıklarını güzel gösterdi de: 'Bugün insanlardan size galip gelecek kimse yoktur. Şüphesiz ben de sizin yardımcınızım' dedi. Fakat iki ordu birbirini görünce ardına döndü ve: 'Ben, sizden uzağım, ben sizin görmediklerinizi görüyorum. Ben Allah'tan korkuyorum, Allah'ın azabı şiddetlidir' dedi."

Şeytan, vesveseleriyle bir işi insana süslü gösterdiği zaman, nefis de ona bir şey vehmettirdiği zaman, gaflet sahiplerinin basiretleri doğruyu görmekten kapalı kalır. Böylece gafil kimse, vesveselerinin güdümünde kalır, sonra da beklemediği yerden ilahi tedbirin derinliklerinden gelen takdir okları kendisini yakalar. Bu itibarla ne şeytan verdiği sözü yerine getirebilir ne de nefis, temenni ettiklerinden bir şey bulabilir.

اِذْ يَقُولُ الْمُنَافِقُونَ وَالَّذ۪ينَ ف۪ي قُلُوبِهِمْ مَرَضٌ غَرَّ هٰٓؤُلَٓاءِ د۪ينُهُمْ وَمَنْ يَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ فَاِنَّ اللّٰهَ عَز۪يزٌ حَك۪يمٌ ﴿٤٩﴾

49- "O zaman münafıklarla kalplerinde hastalık bulunanlar: 'Bunları dinleri aldatmış' diyorlardı. Halbuki kim, Allah'a dayanırsa, bilsin ki Allah mutlak galiptir, hikmet sahibidir."

Gaflet ve yanılgı sahiplerinin gafletleri esnasında üstünlüklerinin rüzgârları estiği zaman, hakikat ehline hakaret gözüyle bakmakta, haklarında zayıflığa hükmetmekte, onlara dalalet nispet etmekte ve kendilerini cahillerden saymaktadır. Bu durum, fetret zamanında ve şaşkınlık ehlinin mühlet süresi içinde meydana gelmektedir.

Kesin inanca ve basiret nuruna sahip olanlar hükmün cereyanı altında durmakta, duyuların ulaşamadığı hususları basiret gözüyle ince bir örtünün arkasından görmektedirler. Bu nedenle ne kapılarını çalan zorluklar onları yenmekte ne de zamanın gelişmeleri onları kışkırtabilmektedir. Yakında ise huzur bayrağı belirecek, sıkıntı bulutları dağılacak ve Allah, tuzakçıların tuzağını yok edecektir.

وَلَوْ تَرٰٓى اِذْ يَتَوَفَّى الَّذ۪ينَ كَفَرُوا الْمَلٰٓئِكَةُ يَضْرِبُونَ وُجُوهَهُمْ
وَاَدْبَارَهُمْۚ وَذُوقُوا عَذَابَ الْحَر۪يقِ ﴿٥٠﴾

50- "Melekler, yüzlerine ve arkalarına vurarak ve: 'Tadın yakıcı cehennem azabını' diyerek o kâfirlerin canlarını alırken onları bir görseydin!"

Allah, takdirin imtihanlarından sıkıntı çektikleri esnada müminlere, meşakkatin yok olacağını, huzur ruhunun gerçekleşeceğini, zaferin hızla meydana geleceğini ve zulüm yapanların başına azapların geleceğini hatırlatarak kendilerini teselli etmektedir. Aslında müminin kazançları pek çoktur. Bu çerçevede, suç sahiplerinin başına ceza geldiğini gördüğü zaman, onlara karşı kalbi yumuşar ve bu yüzden düşmanlık gütmez. Çünkü müminin kalbi, intikam arzusundan temizdir. Aslında herkesin, güzellik vasfına sahip olması gerekir.

ذٰلِكَ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْد۪يكُمْ وَاَنَّ اللّٰهَ لَيْسَ بِظَلَّامٍ لِلْعَب۪يدِۙ ﴿٥١﴾

51- "İşte bu, ellerinizle yaptığınız yüzündendir, yoksa Allah kullara zulmedici değildir."

Allah, onlara başlarına gelen şiddetli musibetin daha önce işledikleri hataların cezası olduğunu öğretmektedir.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Aramızda öyle bir prensip koydun ki*
*Attı arkasına belaları*
*Sabreder korkularına*
*Rabbine bir gün itaat eden*

(وَاَنَّ اللّٰهَ لَيْسَ بِظَلَّامٍ لِلْعَب۪يدِ) "*Allah kullara zulmedici değildir.*" Yani Allah, varlıkta ve darlıkta onlara nasıl muamele ederse etsin, bu, O'nun güzel ve adil bir muamelesi olur. Çünkü mülk O'nun mülkü, yaratıklar O'nun yaratıkları ve hüküm O'nun hükmüdür.

كَدَاْبِ اٰلِ فِرْعَوْنَۙ وَالَّذ۪ينَ مِنْ قَبْلِهِمْۜ كَفَرُوا بِاٰيَاتِ اللّٰهِ فَاَخَذَهُمُ اللّٰهُ بِذُنُوبِهِمْۜ اِنَّ اللّٰهَ قَوِيٌّ شَد۪يدُ الْعِقَابِ ﴿٥٢﴾

52- "Bunların gidişatı, tıpkı Firavun ailesi ve onlardan öncekilerin gidişatı gibidir. Onlar da Allah'ın ayetlerini inkâr etmişlerdi de Allah, onları günahları sebebiyle yakalamıştı. Allah güçlüdür. O'nun cezası şiddetlidir."

Onlar, dalalette Firavun ehlinin yolunu izleyince, onlara tattırdığım azap ve kötü durum konusunda kendilerini Firavun ehlinin yolunda yürüttük. Allah'ın âdeti, ceza vermede değişiklik olmadığı şeklindedir. Bu bağlamda, gördüklerinden ders almayan, Allah'ın kendisine yapacağından ders alır.

ذٰلِكَ بِاَنَّ اللّٰهَ لَمْ يَكُ مُغَيِّرًا نِعْمَةً اَنْعَمَهَا عَلٰى قَوْمٍ حَتّٰى يُغَيِّرُوا مَا بِاَنْفُسِهِمْۙ وَاَنَّ اللّٰهَ سَم۪يعٌ عَل۪يمٌۙ ﴿٥٣﴾

53- "Bu da bir millet kendilerinde bulunanı değiştirinceye kadar Allah'ın onlara verdiğini değiştirmeyeceğinden dolayıdır. Gerçekten Allah işitendir, bilendir."

Allah, bir topluluğa inamda bulunup mühlet vermek istediği zaman, şükür muvaffakiyetiyle onlara ikramda bulunur. Onlar Allah'ın nimetine şükrettikleri zaman, bu nimet şükür miktarınca onlarda kalır.

Allah, bir kuldan nimeti almak istediği zaman ise, küfrün perişanlığıyla onu zelil kılar. Bir kul, şükür yolundan saptığı zaman, nimeti yok olmaya maruz bırakır. Bu itibarla kul, nimete şükretmeyi sürdürdükçe, Allah da ona olan nimetini sürdürür. Kul, nimeti küfranla karşıladığı zaman, düzeninin ipi kopmuş olur. Böylece ısrarındaki artışla orantılı olarak iş, onun kararının dışına çıkmış olur.

كَدَاْبِ اٰلِ فِرْعَوْنَ وَالَّذٖينَ مِنْ قَبْلِهِمْ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِ رَبِّهِمْ فَاَهْلَكْنَاهُمْ
بِذُنُوبِهِمْ وَاَغْرَقْنَٓا اٰلَ فِرْعَوْنَ وَكُلٌّ كَانُوا ظَالِمٖينَ ﴿٥٤﴾

54- "Evet bunların durumu, Firavun ailesi ve onlardan öncekilerin durumuna benzer. Onlar, Rablerinin ayetlerini yalanlamışlardı. Biz de, onları günahlarından ötürü helak etmiştik ve Firavun ailesini denizde boğmuştuk. Hepsi de zalimler idiler."

Firavun ailesinin günahları çeşitli olduğundan cezaları da çeşitli olmuştur. Aynı şekilde bunlar da çeşitli hatalar işlediğinden çeşitli cezalarla cezalandırılmışlardır. Bu arada Allah'ın, onları tekrar zikretmesinin faydası, O'nun, mükellef kimseyi bir süre ihmal etse de temelli ihmal etmeyeceğini öğretme konusunda yapılan bir pekiştirmedir.

اِنَّ شَرَّ الدَّوَٓابِّ عِنْدَ اللّٰهِ الَّذٖينَ كَفَرُوا فَهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿٥٥﴾

55- "Allah katında canlıların en kötüsü kâfir olanlardır. Çünkü onlar, iman etmezler."

(عِنْدَ اللّٰهِ ) *"Allah katında."* Yani Allah'ın ezeli ilmi ve doğru hükmünde. Onlar, Allah'ın ilminde yaratıkların en kötüsü olduğuna göre, farklı çabalarla ve arzularla nasıl mutlu olabilirler.

Gerçeklerin değişmesi akla çok uzaktır.

Allah: (فَهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ) *"Onlar, iman etmezler"* buyurduğuna göre ki sözü doğru ve dediği haktır, onlar hakkında hiçbir ümit kalmadığı gibi, hiçbir nasihat ve tebliğ de onları etkilemeyecektir.

اَلَّذِينَ عَاهَدْتَ مِنْهُمْ ثُمَّ يَنْقُضُونَ عَهْدَهُمْ فِي كُلِّ مَرَّةٍ وَهُمْ لَا يَتَّقُونَ ﴿٥٦﴾

56- "Onlar, kendileriyle antlaşma yaptığın, sonra her defasında hiç çekinmeden ahitlerini bozan kimselerdir."

Yani ahdi bozmayı karakter haline getirenler, bütün çabalarını cahilce tüketmekten arta kalan bir şey bırakmamışlardır.

Ayrıca, bu yolda, bağışlanmaz günahlardan biri de kulun ahdi bozması veya kalben Allah'a bağlandığı bir akdi terk etmesidir. İşte bu kimseler, Allah katındaki itibarlarını yitirmiş ve bu sebeple Allah, onların üzerinden inayet ve koruma gölgesini kaldırmıştır.

فَإِمَّا تَثْقَفَنَّهُمْ فِي الْحَرْبِ فَشَرِّدْ بِهِمْ مَنْ خَلْفَهُمْ لَعَلَّهُمْ يَذَّكَّرُونَ ﴿٥٧﴾

57- "Eğer savaşta onları yakalarsan, ibret almaları için onlar ile arkalarında bulunan kimseleri de dağıt."

Yani eğer sen, âdetleri ahdi bozmak olan bu kimselerden birine rastlarsan, aynı yolu izleyip aynı azabı hak etmemeleri için, onları kendilerinden sonra gelecek olanlara ibret kıl.

Aynı şekilde her kim, tevile dönük ruhsatlara başvurmak ve âdetlere yaslanmak suretiyle, Allah'a kalben verdiği sözü bozarsa, Allah onu kendisinden sonrakiler için bir ceza unsuru haline getirir. Allah, bunu o kimseyi hayallerinden mahrum etmek ve ümit

bağladığı nefsi arzularını kursağında bırakmak şeklinde yapar. Böylece o kimse, Allah'ın hakkını yitirmiş olmakta ve Allah'ın hakkına tercih ettiği hususlara karşı çıkamamaktadır.

وَاِمَّا تَخَافَنَّ مِنْ قَوْمٍ خِيَانَةً فَانْبِذْ اِلَيْهِمْ عَلٰى سَوَآءٍ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْخَآئِنِينَ ﴿٥٨﴾

58- "Antlaşma yaptığın bir kavmin hainlik yapmasından korkarsan, sen de onlarla yaptığın ahdi aynı şekilde bozduğunu kendilerine bildir. Çünkü Allah, hainleri sevmez."

Yani, sen onlardan bir topluluğun hıyanetine kesin kanaat getirdiğin zaman, onlarla aranda hiçbir ahdin bulunmadığını açıkça söyle. Zira hıyanet meydana geldiği zaman, güven ortadan kalkmış olur. Bu arada herkesin hıyaneti, onun haline göre olur. Her kim, sahip olduğu imkânı esirgerse, o ahdinde hıyanet etmiş ve ciddiyetini yitirmiş olup cezası hemen verilir. O kimseyi Allah sevmez. Cezası da, zelil ve hakir kılınmak olur.

وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا سَبَقُوا اِنَّهُمْ لَا يُعْجِزُونَ ﴿٥٩﴾

59- "İnkâr edenler, yakayı kurtardıklarını sanmasınlar. Çünkü onlar bizi âciz bırakamazlar."

Bütün halleri Allah'ın elinde bulunan, O'nun kudretiyle yönetilen, varlığı ve yokluğu O'nun tasarrufuna bağlı olan kimse, nasıl olur da O'na karşı muhalefet edebilir veya karşı çıkabilir?

وَاَعِدُّوا لَهُمْ مَا اسْتَطَعْتُمْ مِنْ قُوَّةٍ وَمِنْ رِبَاطِ الْخَيْلِ تُرْهِبُونَ بِهٖ عَدُوَّ اللّٰهِ وَعَدُوَّكُمْ وَاٰخَرِينَ مِنْ دُونِهِمْ لَا تَعْلَمُونَهُمْ اَللّٰهُ يَعْلَمُهُمْ وَمَا تُنْفِقُوا مِنْ شَيْءٍ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ يُوَفَّ اِلَيْكُمْ وَاَنْتُمْ لَا تُظْلَمُونَ ﴿٦٠﴾

60- "Onlara karşı gücünüz yettiği kadar kuvvet ve cihad için bağlanıp beslenen atlar hazırlayın. Onunla Allah'ın düşmanını, sizin düşmanınızı ve onlardan başka sizin bilmediğiniz, Allah'ın bildiği düşman kimseleri korkutursunuz. Allah yolunda ne harcarsanız, size eksiksiz ödenir. Siz asla haksızlığa uğratılmazsınız."

Düşmanlara karşı savaş için kuvvet olarak gücünüzün yettiği her şeyi hazırlayın. Bu hazırlıkların en kusursuzu ise kalbin Allah ile kuvvet kazanmasıdır. Bu kuvvet bakımından insanlar birbirinden farklıdır. Bu çerçevede kimisinin kalbi, Allah'ın vaat edilmiş yardımıyla güçlenirken, kimisinin, Allah tarafından halinin bilinmesiyle, kimisinin de Allah tarafından görüldüğünden emin olmasıyla güçlenir. Allah şöyle buyurur:

(وَاصْبِرْ لِحُكْمِ رَبِّكَ فَاِنَّكَ بِاَعْيُنِنَا) *"Rabbinin hükmüne sabret. Çünkü sen, gözlerimizin önündesin."* (Tûr, 52/48) Bir diğerinin kalbi, Allah'ın rızasını nefsinin muradına tercih etmekle, başka birinin de Mevla'sının, hakkında yaptığına rıza göstermekle güçlenir.

Bir yoruma göre de kulun en güçlü sevgisi; çabası ve kendi güç ve kuvvetinden uzak durmasına dair olan sevgisidir.

(تُرْهِبُونَ بِهِ عَدُوَّ اللّٰهِ وَعَدُوَّكُمْ وَاٰخَرِينَ مِنْ دُونِهِمْ لَا تَعْلَمُونَهُمْ اَللّٰهُ يَعْلَمُهُمْ وَمَا تُنْفِقُوا مِنْ شَيْءٍ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ يُوَفَّ اِلَيْكُمْ وَاَنْتُمْ لَا تُظْلَمُونَ) *"Onunla Allah'ın düşmanını, sizin düşmanınızı ve onlardan başka sizin bilmediğiniz, Allah'ın bildiği düşman kimseleri korkutursunuz. Allah yolunda ne harcarsanız, size eksiksiz ödenir. Siz asla haksızlığa uğratılmazsınız."*

Ayetin işaret ettiği mana, kulun, kavuşacağı bir ganimet ümidiyle veya bir kin meselesi sebebiyle içini rahatlatmak için cihat yapmadığı, aksine niyetinin Allah'ın sözünün en yüce konumda bulunması olduğu şeklindedir.

وَاِنْ جَنَحُوا لِلسَّلْمِ فَاجْنَحْ لَهَا وَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ اِنَّهُ هُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ﴿٦١﴾

61- "Eğer onlar, barışa yanaşırlarsa sen de ona yanaş ve Allah'a tevekkül et. Çünkü o işitendir, bilendir."

Allah, peygamberini halka merhamet ve şefkat etmek üzere ve gelecekte Müslüman olmaları ümidiyle, kâfirlerle barış yapmakla göndermiştir. Şayet kâfirler, Müslüman olmayı kabul etmezlerse, bu durumda hiç kimse Allah'ın izzet elinin dışına çıkamaz.

Diğer bir yoruma göre; kulluk senin Allah tarafından konulan sınırda durmandır. Bu çerçevede, savaşman emredilirse kusur etme! Şayet barış yapmakla memur kılınırsan, barışa "merhaba" de. Her iki halde de (وَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ) *"Allah'a tevekkül et!"* Çünkü Allah, senin için hayırlı olanı tercih eder. Böylece seni en faydalı olana muvaffak kılar. Savaştan ve barıştan hangisi daha üstün ise senin için onu tercih eder.

وَاِنْ يُرِيدُوٓا اَنْ يَخْدَعُوكَ فَاِنَّ حَسْبَكَ اللّٰهُ هُوَ الَّذٖٓي اَيَّدَكَ بِنَصْرِهٖ
وَبِالْمُؤْمِنٖينَ ﴿٦٢﴾ وَاَلَّفَ بَيْنَ قُلُوبِهِمْ لَوْ اَنْفَقْتَ مَا فِي الْاَرْضِ جَمٖيعًا
مَآ اَلَّفْتَ بَيْنَ قُلُوبِهِمْ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ اَلَّفَ بَيْنَهُمْ اِنَّهُ عَزٖيزٌ حَكٖيمٌ ﴿٦٣﴾

62, 63- "Eğer sana hile yapmak isterlerse, şunu bil ki, Allah sana kâfidir. O, seni yardımıyla ve müminlerle destekleyendir. Ve Allah, onların kalplerini birleştirmiştir. Sen, yeryüzünde bulunan her şeyi verseydin, yine onların gönüllerini birleştiremezdin. Fakat Allah, onların aralarını bulup kaynaştırdı. Çünkü O, mutlak galiptir, hikmet sahibidir."

Yani eğer onlar, senin hakkında kalben, açığa vurduklarının aksini düşündükleri halde, senden barış istemek suretiyle, seni şaşırtmak ve kandırmak isterlerse, şüphesiz senin için Allah yeter. O halde sen, sana kurdukları tuzağın kötülüğünü görmezden gelmek suretiyle, kalbini meşgul etme! Çünkü ben, senin bilmediğini bilir ve yapamadığını yapabilirim.

Yardımını sana has kılan, lütfuyla seni destekleyen, her türlü kötülük ve nefsi arzudan seni tertemiz kılan, nesnelerin köleliğinden seni kurtaran ve bütün hallerde senin için olan Allah'tır.

Seni, sana iman eden müminlerle destekleyen, ihtilaf halindeki kalplerini uzlaştırıp dinde ve Hakk'ın rızasını tercihte birleştiren de O'dur. Eğer bu, insanların tedbirleriyle olsaydı, bu birlik düzene girmezdi. Aynı zamanda eğer sen, elinden gelen her şeyi yapıp gücün dâhilindeki bütün malı harcasaydın, yine bu sonuca ulaşmazdın.

يَٓا اَيُّهَا النَّبِيُّ حَسْبُكَ اللّٰهُ وَمَنِ اتَّبَعَكَ مِنَ الْمُؤْمِنِينَ ﴿٦٤﴾

64- "Ey Peygamber! Sana ve sana uyan müminlere Allah yeter."

Bu ayetle ilgili tevillerin en güzeli, (مَنِ) "*men*" lafzının mahallen mansup olmasıdır. Yani, Allah sana uyan müminlere de yeter.

Gramerle ilgili tevillerden biri de (مَنِ) "*men*" lafzının mahallen merfu olmasıdır. Yani, sana uyan müminler sana yeter.

Ancak bilinen şudur ki, Hz. Peygamber başkalarıyla değil, sadece Allah'la yetinmiştir. Allah'ın dışındaki her şey ise O'nun yardımına muhtaçtır. Tıpkı Resûlüllah'ın da O'nun yardımına muhtaç olması gibi.

يَٓا اَيُّهَا النَّبِيُّ حَرِّضِ الْمُؤْمِنِينَ عَلَى الْقِتَالِ اِنْ يَكُنْ مِنْكُمْ عِشْرُونَ صَابِرُونَ يَغْلِبُوا مِائَتَيْنِ وَاِنْ يَكُنْ مِنْكُمْ مِائَةٌ يَغْلِبُٓوا اَلْفًا مِنَ الَّذِينَ كَفَرُوا بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَا يَفْقَهُونَ ﴿٦٥﴾

65- "Ey Peygamber! Müminleri savaşa teşvik et! Eğer sizden sabırlı yirmi kişi bulunursa, iki yüz kâfire galip gelirler. Eğer sizden yüz kişi olursa, kâfir olanlardan bin kişiye galip gelirler. Çünkü onlar, anlamayan bir topluluktur."

Müminin nefsine olan itimadı zayıfladıkça, kalbinin kuvveti artar. Çünkü nefsin kuvvetiyle yetinmek, gafletin sonucudur. Kalbin Allah ile kuvvet kazanması ise hakikate dayanmaktadır.

(اِنْ يَكُنْ مِنْكُمْ عِشْرُونَ صَابِرُونَ يَغْلِبُوا مِائَتَيْنِ وَاِنْ يَكُنْ مِنْكُمْ مِائَةٌ يَغْلِبُوٓا اَلْفًا مِنَ الَّذِينَ كَفَرُوا بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَا يَفْقَهُونَ) *"Eğer sizden sabırlı yirmi kişi bulunursa, iki yüz kâfire galip gelirler. Eğer sizden yüz kişi olursa, kâfir olanlardan bin kişiye galip gelirler. Çünkü onlar, anlamayan bir topluluktur."*

Bu, onlar içindir. Hz. Peygamber'e gelince, o tevhid inancı sebebiyle bütün kâfirlere karşı sebat gösterebileceğini ümit etmekteydi. Zira onun Allah'tan aldığı güç tam idi. Nitekim Hz. Peygamber: *"Allah'ım, ben seninle saldırırım"* buyurmuştur. Ayrıca, Hz. Peygamber'in, müminleri savaşa teşvik etmesi de, Allah'ın emri de müminler için kuvvet olmakta idi. Bu itibarla sahabenin kuvveti, Hz. Peygamber'e dayanmaktaydı. Hz. Peygamber'in müminleri teşvik etmesi ve bundan güç almaları ise Allah'la ve O'nun Hz. Peygamber'e olan emriyle gerçekleşmiştir ki, bu ikisi arasında büyük fark vardır.

اَلْـٰنَ خَفَّفَ اللّٰهُ عَنْكُمْ وَعَلِمَ اَنَّ فِيكُمْ ضَعْفًا فَاِنْ يَكُنْ مِنْكُمْ مِائَةٌ صَابِرَةٌ يَغْلِبُوا مِائَتَيْنِ وَاِنْ يَكُنْ مِنْكُمْ اَلْفٌ يَغْلِبُوٓا اَلْفَيْنِ بِاِذْنِ اللّٰهِ وَاللّٰهُ مَعَ الصَّابِرِينَ ﴿٦٦﴾

66- "Şimdi Allah yükünüzü hafifletti. Sizde zayıflık olduğunu bildi. O halde sizden sabırlı yüz kişi bulunursa, onlardan iki yüz kişiye galip gelir. Ve eğer sizden bin kişi olursa, Allah'ın izniyle onlardan iki bin kişiye galip gelirler. Allah, sabredenlerle beraberdir."

(اَلْـٰنَ خَفَّفَ اللّٰهُ عَنْكُمْ وَعَلِمَ اَنَّ فِيكُمْ ضَعْفًا) *"Şimdi Allah yükünüzü hafifletti. Sizde zayıflık olduğunu bildi."*

Allah'ın onlarda bildiği zayıflık, insan sayısı bakımından zayıflık olup bu yüzden Allah yüklerini hafifletmiştir. Kalplere ise zayıflık girmemiştir.

Bu arada avam, meşakkatlere nefisleri ve bedenleriyle katlanırken, havas kalpleri ve himmetleriyle katlanmaktadırlar. Nitekim: *"Kalp, bedenin taşıyamadığını taşıyabilmektedir"* denilmiştir.

مَا كَانَ لِنَبِيٍّ اَنْ يَكُونَ لَهُٓ اَسْرٰى حَتّٰى يُثْخِنَ فِي الْاَرْضِ تُرِيدُونَ عَرَضَ الدُّنْيَا وَاللّٰهُ يُرِيدُ الْاٰخِرَةَ وَاللّٰهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٦٧﴾

67- "Yeryüzünde ağır basıncaya kadar, hiçbir peygambere esirleri bulunması yaraşmaz. Siz, geçici dünya malını istiyorsunuz. Halbuki Allah, sizin için ahireti istiyor. Allah üstünlük ve hikmet sahibidir."

Yani peygamberlerden hiç birine, düşmanlarından bazı esirler alıp sonra onlardan fidye almaya razı olmak yakışmaz. Aksine yapması gereken, savaşta düşmanlarına var gücüyle yüklenmesidir. Bu arada Bedir günü, Hz. Peygamber düşmanlardan fidye almıştır. Hz. Peygamber masum olduğu için bunu yapması caiz idi. Lakin savaşmaları daha iyi olurdu. Öte yandan Allah, dünya metaıyla fidyeyi kast etmektedir. Allah, her ne kadar fidye hükmünü koymuşsa da hoşnutluğunu onlarla savaşmaya bağlamıştır. Dinin hükmüne saygı göstermek, tabiatın merhametinden farklıdır. Hal böyle olunca, kulluğun şartı, kulun Allah'ı tercih etmesidir. Allah'ın emri katılığı öngördüğü zaman durum, şu ayette buyrulduğu gibi olur: (وَلَا تَاْخُذْكُمْ بِهِمَا رَاْفَةٌ فِي دِينِ اللّٰهِ) *"Allah'ın dininde onlara acıyacağınız tutmasın!"* (Nûr, 24/2)

Allah, düşmanlarından intikam almak suretiyle üstünlük sahibidir. Mülk verme, kolaylaştırma ve tedbir gibi, yaptığı bütün işlerde de hikmet sahibidir.

لَوْلَا كِتَابٌ مِنَ اللّٰهِ سَبَقَ لَمَسَّكُمْ فِيمَٓا اَخَذْتُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ ﴿٦٨﴾

68- "Allah tarafından önceden verilmiş bir hüküm olmasaydı, aldığınız fidyeden ötürü, size mutlaka büyük bir azap dokunurdu."

Eğer Allah ezelde Hz. Muhammed ve ümmetine ganimetin helal olmasına hükmetmeseydi, Bedir günü onlardan aldığınız fidye yüzünden size büyük bir azap dokunurdu. Lakin Allah, size ganimeti helal kıldığından, azabı üzerinizden def etmiştir.

فَكُلُوا مِمَّا غَنِمْتُمْ حَلَالًا طَيِّبًا وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿٦٩﴾

69- "Artık elde ettiğiniz ganimetten helal ve temiz olarak yeyin ve Allah'tan korkun. Şüphesiz ki Allah bağışlayan, merhamet edendir."

Helal, hakkında izin verilen şeydir. Bir şeyin helal ve temiz olması ise, onun insan tarafından hak edilen bir şey değil, Allah tarafından verilen bir lütuf olduğunu bilmektir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Katıksız helal, sahibinin, onunla ilgili olarak mabudunu unutmadığı şeydir.

- Saf helal, onu alırken sahibinin, Rabbini gözetmekten gafil olmadığı şeydir.

يَٓا اَيُّهَا النَّبِيُّ قُلْ لِمَنْ فٖٓي اَيْدٖيكُمْ مِنَ الْاَسْرٰٓى اِنْ يَعْلَمِ اللّٰهُ فٖي قُلُوبِكُمْ خَيْرًا يُؤْتِكُمْ خَيْرًا مِمَّٓا اُخِذَ مِنْكُمْ وَيَغْفِرْ لَكُمْ وَاللّٰهُ غَفُورٌ رَحٖيمٌ ﴿٧٠﴾

70- "Ey Peygamber! Elinizdeki esirlere de ki: 'Eğer Allah, kalplerinizde hayır olduğunu bilirse, sizden alınandan daha hayırlısını size verir ve sizi bağışlar. Çünkü Allah bağışlayandır, esirgeyendir.'"

Kendilerine verilecek olan şey, onlardan alınandan daha hayırlıdır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Daha hayırlı olan şey, ahiretteki güzel sevaptır.

- Daha hayırlı olan şey, dünyadaki güzel karşılıktır.

- Daha hayırlı olan şey, onları Allah'a ulaştıracak olan ibadete muvaffakiyet ve imanın tadıdır. Bu, onlardan alınandan daha hayırlıdır.

- Daha hayırlı olan şey, şirk halindeki zenginliğin ardından Allah'ın bir vergisi olarak, içinde bulundukları fakirliğe rıza göstermeleridir.

وَاِنْ يُرِيدُوا خِيَانَتَكَ فَقَدْ خَانُوا اللّٰهَ مِنْ قَبْلُ فَاَمْكَنَ مِنْهُمْ وَاللّٰهُ عَلِيمٌ حَكِيمٌ ﴿٧١﴾

71- "Eğer sana hainlik etmek isterlerse, üzülme. Çünkü daha önce Allah'a da hainlik etmişlerdi de Allah, onlara karşı sana imkân ve kudret vermişti. Allah bilendir, hikmet sahibidir."

Yani eğer serbest bırakmak suretiyle onlara yaptığın iyilikten sonra, tekrar seninle savaşmaya kalkar ve ahdine hainlik ederlerse, zaten hainlik onların âdeti ve yoludur. Sonra sana, ikinci kez onları ele geçirme imkânını veririz. Tıpkı ilkinde sana, onları esir alma imkânını verdiğimiz gibi.

Şiir:

*Dönerse eğer akrep döneriz biz de ona*
*Pabuç da hazır olur onun için*

اِنَّ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَهَاجَرُوا وَجَاهَدُوا بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ وَالَّذِينَ اٰوَوْا وَنَصَرُوٓا اُولٰٓئِكَ بَعْضُهُمْ اَوْلِيَٓاءُ بَعْضٍ وَالَّذِينَ اٰمَنُوا وَلَمْ يُهَاجِرُوا مَا لَكُمْ مِنْ وَلَايَتِهِمْ مِنْ شَيْءٍ حَتّٰى يُهَاجِرُوا وَاِنِ اسْتَنْصَرُوكُمْ فِي الدِّينِ فَعَلَيْكُمُ النَّصْرُ اِلَّا عَلٰى قَوْمٍ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ مِيثَاقٌ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ﴿٧٢﴾

72- “İman edip de hicret edenler, Allah yolunda mallarıyla canlarıyla cihad edenler ve muhacirleri barındırıp yardım edenler var ya, işte onların bir kısmı diğer bir kısmının dostlarıdır. İman edip de hicret etmeyenlere gelince, onlar hicret edinceye kadar size onların mirasından hiçbir pay yoktur. Eğer onlar, din hususunda sizden yardım isterlerse, sizinle aralarında sözleşme bulunan bir kavim aleyhine olmaksızın o Müslümanlara yardım etmek üzerinize borçtur. Allah, yapacaklarınızı hakkıyla görmektedir.”

Allah, muhacirlerin Hz. Peygamberle ilgili vasıflarını anlatmaktadır. Bu konudaki vasıfları, iman edip sonra da Hz. Peygamberle beraber hicret etmelerinin ardından malları ve canlarıyla cihad etmeleridir. İşte bunlar muhacirlerdir.

Barındıranlar ise ensar olup bunlar, Hz. Peygamberi ve müminleri barındırmışlardır.

İşte bu grup, yardım ve din konusunda birbirlerinin dostudurlar.

İman edip hicret etmeyenler ise, hicret edinceye kadar onlar için bu dostluk payesi yoktur. Şayet bunlar, sizden yardım isterlerse, onlara yardım etmeniz gerekir.

(اِلَّا عَلٰى قَوْمٍ) *“bir kavim aleyhine olmaksızın.”* Bu kavim, sizinle anlaşma yapanlardır.

Bu arada hicretin kemali, kötü ahlakı terk etmektir. Nefsi terk etmek ise, onun davette bulunduğu şehevi arzulara icabet etmemeye bağlıdır. Bunun bir kısmı da, kötü arkadaşları terk etmek, kulun zillet yaşadığı alanlardan uzaklaşması, sonra nefsi arzulara ait alanları bırakıp ilahi rızanın bulunduğu alanlara hicret etmektir.

(وَالَّذِينَ اٰوَوْا وَنَصَرُوٓا ) *“Barındırıp yardım edenler var ya.”* İşte onlar, ihtiyaçları olsa da, kardeşlerini kendi nefislerine tercih edenlerdir. Bunların avamı dünya işlerinde, havassı ahiret nimetlerinde, havassın havassı ise, hayal sınırlarını aşacak ölçüde, ispatın kendisiyle sahih olduğu bütün güzel hallerde kardeşlerini kendi nefislerine tercih ederler.

وَالَّذِينَ كَفَرُوا بَعْضُهُمْ اَوْلِيَٓاءُ بَعْضٍ اِلَّا تَفْعَلُوهُ تَكُنْ فِتْنَةٌ فِي
الْاَرْضِ وَفَسَادٌ كَبِيرٌ ﴿٧٣﴾ وَالَّذِينَ اٰمَنُوا وَهَاجَرُوا وَجَاهَدُوا فِي
سَبِيلِ اللّٰهِ وَالَّذِينَ اٰوَوْا وَنَصَرُوٓا اُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْمُؤْمِنُونَ حَقًّا لَهُمْ
مَغْفِرَةٌ وَرِزْقٌ كَرِيمٌ ﴿٧٤﴾

73, 74- "Kâfir olanlar da birbirlerinin yardımcılarıdır. Eğer siz Allah'ın emrini yerine getirmezseniz, yeryüzünde büyük bir fesat olur. İman edip de Allah yolunda hicret ve cihad edenler, muhacirleri barındıran ve yardım edenler var ya, işte gerçek müminler onlardır. Onlar için mağfiret ve bol rızk vardır."

Allah, onlarla müminler arasındaki dokunulmazlık bağını koparmıştır. Bu nedenle mümin yabancılara uzak, yakınlara da yakın durur. Kâfirler de birbirlerinin destekçisidirler.

Şu dizede söylendiği gibi:

*Sevenlerinin arasına iner gökteki kuş bile*

وَالَّذِينَ اٰمَنُوا مِنْ بَعْدُ وَهَاجَرُوا وَجَاهَدُوا مَعَكُمْ فَاُو۬لٰٓئِكَ مِنْكُمْ
وَاُو۬لُوا الْاَرْحَامِ بَعْضُهُمْ اَوْلٰى بِبَعْضٍ فِي كِتَابِ اللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ
شَيْءٍ عَلِيمٌ ﴿٧٥﴾

75- "Sonradan iman eden ve hicret edip de sizinle beraber cihad edenler de sizdendir. Allah'ın kitabına göre yakın akrabalar, birbirlerine vâris olmaya daha uygundur. Şüphesiz ki Allah her şeyi bilendir."

Yani her kim, şimdi müminlerin yolunu izler, gelecekte ve gelecekteki durumlarda da onlara katılırsa, sevgi onları birleştirecek ve dostluk onları kapsayacaktır. Böylece kıyamette onlar için Allah'tan bolca sevap ve azaptan kurtuluş vardır. Dünyada da dostluk, yardımlaşma, sevgi ve yakınlaşma onlarındır. En doğrusunu ise Allah bilir.

سورة التَّوْبَةِ

# TEVBE SÛRESİ

(Tevbe Sûresi Medine'de hicretin 9. yılında inmiştir. 129 âyettir. Yalnız 128 ve 129. âyetler Mekke'de inmiştir. Sûre, adını 104. âyetteki "Tevbe"den almıştır, buna "Berâe Sûresi" de denilmiştir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**"Rahman ve Rahim olan Allah'ın adıyla."**

Allah, sadece dilediği kimseye ve nesneye dilediği özelliği vereceğinin bilinmesi için, bu sûreyi besmelesiz indirmiştir. O'nun yaptığı bir sebebe, fiilleri de bir gayeye veya ihtiyaca dayalı değildir. Bir de herkes besmele ayetine, Allah tarafından ve onun emriyle var edilip indirildiği için, Kur'an'da yer verildiğini açıkça anlamış olmaktadır.

Kâfirlerle hiç bir ilişiğin kalmadığı uyarısıyla başladığı için, bu sûrede besmelenin zikredilmediğine dair görüş ise, işârî tefsir açısından bir izah tarzı sayılabilir olmakla birlikte, zayıftır. Gerçeklik bakımından ise uzak bir ihtimal gibi gözükmektedir. Çünkü Allah "Beyyine", "Humeze", "Mesed" ve "Kâfirûn" gibi bazı sureleri kâfirlerden söz ederek başlatmıştır. Böylece kâfirlerden söz etmeyi içerdikleri halde, bu sûrelerin başında besmele bulunmaktadır. Kaldı ki, şu yorum da yapılabilir:

Adı geçen surelerin ilk ayetleri, kâfirlerden söz etmekle birlikte, dolayısıyla adı geçen uyarıyı zımnen içermiş olsa dahi, bu ayetlerde

söz konusu uyarı açıkça dile getirilmemiştir. Oysa bu surenin başlangıcı, kâfirlerle hiç bir ilişiğin kalmadığı şeklindeki kesin uyarıdan ibaret olduğu için, başında rahmet demek olan besmeleye yer verilmemiştir.

Diğer bir yoruma göre, Tevbe Sûresi'nin besmele ayetinden tecrit edilmesi, kâfirlerle ilişiğin kesilmiş olduğunu dile getirmeye işaret ettiğine göre, namazın besmeleden tecrit edilmesinin de, vuslatın ve liyakatin kemaline engel olmasından korkmak gerekir.

بَرَٓاءَةٌ مِنَ اللّٰهِ وَرَسُولِهٖٓ اِلَى الَّذٖينَ عَاهَدْتُمْ مِنَ الْمُشْرِكٖينَ ١

1- "Allah ve Resûlünden, kendileriyle antlaşma yapmış olduğunuz müşriklere kesin bir uyarıdır."

Ayrılık zordur. En zor olanı da arkasından vuslat olmayan ayrılıktır. Müşriklerin ayrılığı da böyledir. Çünkü Allah şöyle buyurmuştur:

(اِنَّ اللّٰهَ لَا يَغْفِرُ اَنْ يُشْرَكَ بِهٖ وَيَغْفِرُ مَا دُونَ ذٰلِكَ لِمَنْ يَشَٓاءُ) *"Şüphesiz Allah, kendisine ortak koşulmasını asla bağışlamaz. Bunun dışında kalan günahları ise dilediği kimseler için bağışlar."* (Nisâ, 4/48)

Bir de şöyle denilmiştir:

*"Dostlarının ayrılığına maruz kalan kimsenin arkadaşlığı kötüdür."*

Bu arada Hz. Peygamber (s.a.v.) ile müşrikler arasında bir antlaşma vardı ve şüphesiz onlar, kendilerini buna alıştırmışlardı. Derken gaybdan ansızın haber indi ve kendilerine beklemedikleri ayrılık duyurusu geldi. Allah şöyle buyurdu:

(بَرَٓاءَةٌ مِنَ اللّٰهِ وَرَسُولِهٖٓ) *"Allah ve Resûlünden kesin bir uyarıdır."* (Tevbe, 9/1) Yani bu, Allah ve Resûlünden kesin bir uyarıdır.

Şu şiirde söylendiği gibi:

*Geceyi iyi geçirdin sen, dünya da huzurlu*
*Oysa zaman değişmişti, bir gün sabahladığında*

Özellikle de ansızın ve beklenmedik bir şekilde olduğu zaman ayrılık ne kadar zordur! Allah şöyle buyurmuştur:

(وَاَنْذِرْهُمْ يَوْمَ الْحَسْرَةِ اِذْ قُضِيَ الْاَمْرُ وَهُمْ ف۪ي غَفْلَةٍ وَهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ) *"Onları, gaflet içinde bulunup iman etmezlerken işin bitirileceği o pişmanlık günüyle uyar."* (Meryem, 19/39)

Şiir:

*Parlak yanıyordu aramızdaki vuslat çırası*
*Aradan üstüne esti bir rüzgâr ve söndü çıra*

فَس۪يحُوا فِي الْاَرْضِ اَرْبَعَةَ اَشْهُرٍ وَاعْلَمُوٓا اَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِي اللّٰهِ
وَاَنَّ اللّٰهَ مُخْزِي الْكَافِر۪ينَ ﴿٢﴾

2- "Yeryüzünde dört ay daha dolaşın. Şunu bilin ki, siz Allah'ı âciz bırakacak değilsiniz. Allah ise, kâfirleri perişan edecektir."

Şayet Allah, vuslatı onlardan almışsa, mühlet olarak kendilerine bir süre de tanımıştır. Bu çerçevede, gelecekte karşılaşacakları kopuşun zorluklarına katlanmaya hazırlık yapmaları için, uyarının hemen ardından kendilerine güvence vermiştir. Yani eğer onlar, bu süre zarfında isyanı ve dalaleti bırakırlarsa, kaybettikleri vuslatı gelecekte bulacaklardır. Yok eğer hizmet ve bağlılığı terk etmeye devam ederlerse, Allah ile aralarındaki koruyucu bağ kopmuş olacaktır.

Sonra Allah: (وَاعْلَمُوٓا اَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِي اللّٰهِ وَاَنَّ اللّٰهَ مُخْزِي الْكَافِر۪ينَ) *"Şunu bilin ki, siz Allah'ı âciz bırakacak değilsiniz. Allah ise, inkârcıları perişan edecektir"* buyurmakla şunu demek istemiştir: Eğer siz, çirkin işlerinizde ısrar ederseniz, kendi ayaklarınızla helakinize doğru yol almış olursunuz. Bu yaptığınızdan dolayı da dünyanızda pişmanlık duyacak, ahiretinizde ise zarara uğrayacaksınız. Bu muamelenizden dolayı zarar gören siz olacaksınız ve günahınız, sizden başka kimseye zarar vermeyecektir.

Şiir:

*Ne yazık ki değişti sevgili ve değiştik biz*
*Oysa Leyla'ya alternatif arayan onu bulamaz*

وَاَذَانٌ مِنَ اللّٰهِ وَرَسُولِهٖٓ اِلَى النَّاسِ يَوْمَ الْحَجِّ الْاَكْبَرِ اَنَّ اللّٰهَ بَرٖٓيءٌ مِنَ الْمُشْرِكٖينَ وَرَسُولُهُ فَاِنْ تُبْتُمْ فَهُوَ خَيْرٌ لَكُمْ وَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَاعْلَمُوٓا اَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِي اللّٰهِ وَبَشِّرِ الَّذٖينَ كَفَرُوا بِعَذَابٍ اَلٖيمٍ ﴿٣﴾

3- "Hacc-ı ekber gününde, Allah ve Resûlünden bütün insanlara bir bildiridir. Allah ve Resûlü, Allah'a ortak koşanlardan uzaktır. Eğer tövbe ederseniz, bu sizin için hayırlıdır. Ama yüz çevirirseniz şunu iyi bilin ki, siz Allah'ı âciz bırakabilecek değilsiniz. Kâfir olanlara elem dolu bir azabı müjdele."

Yani bu, Allah ve Resûlü tarafından müşriklerin, antlaşmalarını bozduklarına dair insanlara bir duyuru ve ihmalden ibaret olan alışkanlıklarından vazgeçmedikleri hakkında bir bildiridir. Bu günden itibaren, hiç bir bağlılıklarının bulunmadığı ve anlaşmalarını yerine getirmedikleri, gizli olmaktan çıktığı için herkes onların düşman olduğunu bilsin.

Şiir:

*Yaydılar kabilede bize karşı en çirkin bir hikâye*
*Bizimle barışıkken, düşman kesildiler bize karşı*

(اَنَّ اللّٰهَ بَرٖٓيءٌ مِنَ الْمُشْرِكٖينَ وَرَسُولُهُ) *"Allah ve Resûlü, Allah'a ortak koşanlardan uzaktır."*

Her kim, en ufak bir eseri Allah dışındaki varlıklardan bilir ve kaderin tasarrufuyla olduğuna inanmazsa o, hakikatte şirk koşmuş ve bu uyarıya müstahak olur. Bir de yaratıklara ibret gözüyle bakmayan veya kendini beğenen kimse, Allah'a ait olanı Allah'tan başkasına ait kılmış ve başkasına ait sanmış demektir. Bu nedenle o, Allah'a ortak koşma tehlikesiyle yüz yüzedir.

(فَاِنْ تُبْتُمْ فَهُوَ خَيْرٌ لَكُمْ وَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَاعْلَمُوٓا اَنَّكُمْ غَيْرُ مُعْجِزِي اللّٰهِ وَبَشِّرِ الَّذِينَ كَفَرُوا بِعَذَابٍ اَلِيمٍ) *"Eğer tövbe ederseniz, bu sizin için hayırlıdır. Ama yüz çevirirseniz şunu iyi bilin ki, siz Allah'ı âciz bırakabilecek değilsiniz. Kâfir olanlara elem dolu bir azabı müjdele."*

Eğer onlar, kapıya geri dönerlerse, Allah ümitlerini kesmez ve mazeretleri ortaya çıkıncaya kadar sürelerini uzatır. Ayrıca Allah, isyanlarında ısrar etmeleri halinde dayanamayacakları bir azaba düşeceklerini ve yerlerinin cehennem olacağını açıklamış olmaktadır.

اِلَّا الَّذِينَ عَاهَدْتُمْ مِنَ الْمُشْرِكِينَ ثُمَّ لَمْ يَنْقُصُوكُمْ شَيْـًٔا وَلَمْ يُظَاهِرُوا عَلَيْكُمْ اَحَدًا فَاَتِمُّوٓا اِلَيْهِمْ عَهْدَهُمْ اِلٰى مُدَّتِهِمْ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِينَ ٤

4- "Ancak Allah'a ortak koşanlardan, kendileriyle antlaşma yapmış olduğunuz, sonra da antlaşmalarında size karşı hiçbir eksiklik ve sizin aleyhinize hiç kimseye yardım etmemiş olanlar, bu hükmün dışındadır. Onların antlaşmalarını, süreleri bitinceye kadar tamamlayın. Şüphesiz Allah, kendine karşı gelmekten sakınanları sever."

Kim, verdiği sözde hakkı yerine getirirse, antlaşmasını korumada süresini uzat. Çünkü sözünü yerine getirenle getirmeyen bir değildir.

فَاِذَا انْسَلَخَ الْاَشْهُرُ الْحُرُمُ فَاقْتُلُوا الْمُشْرِكِينَ حَيْثُ وَجَدْتُمُوهُمْ وَخُذُوهُمْ وَاحْصُرُوهُمْ وَاقْعُدُوا لَهُمْ كُلَّ مَرْصَدٍ فَاِنْ تَابُوا وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ فَخَلُّوا سَبِيلَهُمْ اِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ٥

5- "Haram aylar çıkınca, Bu müşrikleri artık bulduğunuz yerde öldürün, onları yakalayıp hapsedin ve her gözetleme yerine oturup onları gözetin. Eğer tövbe ederler, namazı kılıp zekâtı da

verirlerse, kendilerini serbest bırakın. Şüphesiz Allah, çok bağışlayıcıdır, çok merhamet edicidir."

Yani haram aylar sona erdiği zaman, müşriklerden antlaşması olmayanları öldürünüz. Zira müşriklerin antlaşması olmasa dahi, haram aylarda oldukları zaman Allah, bu süre zarfında onlara güven hakkı tanımıştır. Böylece Allah, emrini kabul etmeyen kimseyle dahi savaşmamayı emrederken O'na gelenle bağları koparmaya nasıl rıza gösterir!

(فَاقْتُلُوا الْمُشْرِكِينَ حَيْثُ وَجَدْتُمُوهُمْ وَخُذُوهُمْ وَاحْصُرُوهُمْ وَاقْعُدُوا لَهُمْ كُلَّ مَرْصَدٍ) *"Bu müşrikleri artık bulduğunuz yerde öldürün, onları yakalayıp hapsedin ve her gözetleme yerine oturup onları gözetin."*

Allah müminlere, düşmanlara karşı savaşmanın her türlüsüne başvurmalarını emretmiştir. Senin en azgın düşmanın ise içindeki nefsindir. O halde nefse karşı en büyük cihadı yapmada kulun izleyeceği yol, zikrin bütün çeşitlerini en iyi şekilde yapmak suretiyle onu sıkıştırmak ve bütün çabayı muamelelerde dürüst olmaya harcamaktır. Yine bu cümleden olmak üzere ruhsat ve tevillere yeltenmemek ve bütün durumlarda en zor olana uymaktır.

(فَاِنْ تَابُوا وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ فَخَلُّوا سَبِيلَهُمْ اِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ) *"Eğer tövbe ederler, namazı kılıp zekâtı da verirlerse, kendilerini serbest bırakın. Şüphesiz Allah, çok bağışlayıcıdır, çok merhamet edicidir."*

Gerçek tövbe, geride hiçbir şey bırakmayacak şekilde hatalardan büsbütün dönüş yapmaktır. Bu itibarla eğer kâfir, şirkinden sonra Müslüman olur da yapması ve yapmaması gerekenler konusunda bir kusur işlemezse, onu serbest bırakmaya dair izin çıkmış olur.

Şiir:

*Senin iddialarına şahitler görürsek eğer*
*Kendimizde hak için sınır tanımayız*

Aynı şekilde nefis pasifleşip beşeri etkiler kırıldığı zaman, keşiflerin gerçekleştiği esnada Allah ile olan beraberliğin tehlikelerini gözetmek kaydıyla, hakikatte artık muamelelerde bir sakınca kalmamış

olur. Bu arada Allah ile beraber oturmak, O'nun kapısında dikilmekten iyidir. Kudsi hadiste Allah şöyle buyurmuştur:

*"Ben, beni zikredenin meclis arkadaşıyım."*

وَاِنْ اَحَدٌ مِنَ الْمُشْرِكِينَ اسْتَجَارَكَ فَاَجِرْهُ حَتّٰى يَسْمَعَ كَلَامَ اللّٰهِ ثُمَّ اَبْلِغْهُ مَاْمَنَهُ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٦﴾

6- "Eğer Allah'a ortak koşanlardan biri, senden sığınma talebinde bulunursa, Allah'ın kelamını işitebilmesi için ona sığınma hakkı tanı. Sonra da onu güven içinde olacağı yere ulaştır. Bu, onların bilmeyen bir kavim olmaları sebebiyledir."

Bugün, müşrik sığınma talebinde bulunduğu zaman, Allah'ın kelamını işitebilmesi için geri çevrilmez. O halde mümin kişi, ömrü boyunca ayrılıktan sığınma talebinde bulunduğu zaman, nasıl olur da Allah'ın kelamını işitmekten alıkonur! Ve ne zaman kendilerine:

(قَالَ اخْسَؤُا فِيهَا وَلَا تُكَلِّمُونِ) *"Aşağılık içinde kalın orada ve artık benimle konuşmayın"* (Mü'minûn, 23/108) denilenler zümresinde yer alır!

Bir de Allah, bugün –dünyada- düşmanları hakkında: (فَاَجِرْهُ حَتّٰى يَسْمَعَ كَلَامَ اللّٰهِ) *"Allah'ın kelamını işitebilmesi için ona sığınma hakkı tanı"* dediğine göre, Allah'ın kelamını işittikten sonra iman etmese dahi kendisine dokunulamaz. Zira Allah: (ثُمَّ اَبْلِغْهُ مَاْمَنَهُ) *"Sonra da onu güven içinde olacağı yere ulaştır"* buyurmaktadır. Hal böyleyken acaba Allah, yarın –kıyamet gününde- dostlarını, kendisinden ayrı düşmeyecekleri konusunda güven içinde tutmaz mı? Onlar ki, bugün -dünyada- Allah'a iman ve vefa üzere yaşamışlardır. Doğrusu Allah, onları bununla imtihan etmektedir. Nitekim Allah: (لَا يَحْزُنُهُمُ الْفَزَعُ الْاَكْبَرُ) *"En büyük korku bile onları tasalandırmaz"* (Enbiyâ, 21/103) buyurmuştur.

(ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَا يَعْلَمُونَ) *"Bu, onların bilmeyen bir kavim olmaları sebebiyledir."* Allah'ın, bilmeyenlere lütfu bu olduğuna göre, kim bilir bilene lütfu nasıl olur!

Şiir:

*Kapımızda dikileni nasıl olur da harcarız!*
*Yüz çevirenler bolca nimetlere sahip iken*

كَيْفَ يَكُونُ لِلْمُشْرِكِينَ عَهْدٌ عِنْدَ اللّٰهِ وَعِنْدَ رَسُولِهٖٓ اِلَّا الَّذِينَ عَاهَدْتُمْ عِنْدَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ فَمَا اسْتَقَامُوا لَكُمْ فَاسْتَقِيمُوا لَهُمْ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِينَ ﴿٧﴾

7- "Allah'a ortak koşanların Allah katında ve Resûlü yanında bir ahdi nasıl olabilir! Ancak Mescid-ı Haram'ın yanında kendileriyle antlaşma yaptıklarınız başkadır. Bunlar, size karşı dürüst davrandığı sürece, siz de onlara karşı dürüst davranın. Çünkü Allah, kendine karşı gelmekten sakınanları sever."

Allah'ı tanımada iflas etmiş kimse, nasıl olur da imanında ihlas sahibi kimse gibi olur?!

Allah'ı görmekten engellenen kimse, nasıl olur da Allah'ın varlığında yok olmuş kimse gibi olur?!

"Ben" diyen kimse, nasıl olur da "sen" diyen kimse gibi olur?!

Şiir:

*Yeterli ve yetersiz olmak üzere çeşitlidir dostlarımız*
*Bir olmaz asla seven ile buğzeden*

(فَمَا اسْتَقَامُوا لَكُمْ فَاسْتَقِيمُوا لَهُمْ) *"Bunlar, size karşı dürüst davrandığı sürece, siz de onlara dürüst davranın."*

Eğer onlar, vefa ipimize sarılırlarsa, biz de kendilerini bizimle bağlılık içinde tutarız. Şayet ahdimizden saparlarsa, onları yüz çevirmemizle müptela kılarız. Sonra onlar, bizden hep uzak kalmış olurlar.

(اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُتَّقِينَ) *"Allah, kendine karşı gelmekten sakınanları sever."*

Allah'a karşı gelmekten sakınan, kendisine karşı gelmekten sakınılanın sevgisini kazanan kimse demektir. Bu durum, kişi kendi nefsini sevmekten sakındığı, nefsinin arzusuna uymadığı ve Rabbinin hakkını yerine getirdiği zaman gerçekleşir.

كَيْفَ وَاِنْ يَظْهَرُوا عَلَيْكُمْ لَا يَرْقُبُوا ف۪يكُمْ اِلًّا وَلَا ذِمَّةً يُرْضُونَكُمْ
بِاَفْوَاهِهِمْ وَتَاْبٰى قُلُوبُهُمْ وَاَكْثَرُهُمْ فَاسِقُونَ ﴿٨﴾

8- "Onların bir ahdi nasıl olabilir ki! Eğer onlar size üstün gelselerdi, sizin hakkınızda ne akrabalık bağlarını ne de antlaşma yükümlülüğünü gözetirlerdi. Ağızlarıyla sizi hoşnut etmeye çalışıyorlar, oysa kalpleri buna karşı çıkıyor. Onların pek çoğu fâsık kimselerdir."

Allah, onları kötü tabiatlı olmakla nitelemiş ve bu çerçevede şunu demek istemiştir: Onlar, size karşı kalplerinde hoşnutsuzluk beslerken, nasıl olur da ahitlerini koruyabilirler! Kaldı ki sizi ele geçirir ve size hâkim olurlarsa, hiçbir dokunulmaz hakkınıza riayet etmez ve hiçbir akrabalık bağını veya antlaşma yükümlülüğünü gözetmezler.

Bu da gösteriyor ki, iyi insan galip geldiği zaman bağışlar, güç yetirdiği zaman da gizli veya açık, hiç bir şekilde vefasızlık etmez.

(يُرْضُونَكُمْ بِاَفْوَاهِهِمْ وَتَاْبٰى قُلُوبُهُمْ) *"Ağızlarıyla sizi hoşnut etmeye çalışıyorlar, oysa kalpleri buna karşı çıkıyor."*

Bu tabiatlarından dolayı şaşılacak bir durum yoktur. Çünkü onlar, hakkımızda şunu yaparlar: Görünürde mümin kisvesine bürünürler, içlerinde ise küfrü saklarlar. Bu nedenledir ki onlar, sizinle uyum kisvesi içinde yaşarken uyumsuzluğun ta kendisini ve münafıklığın kötülüğünü içlerinde tutarlar.

اِشْتَرَوْا بِاٰيَاتِ اللّٰهِ ثَمَنًا قَل۪يلًا فَصَدُّوا عَنْ سَب۪يلِه۪ اِنَّهُمْ سَٓاءَ مَا
كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿٩﴾

9- "Allah'ın ayetlerini az bir karşılığa değiştiler de insanları O'nun yolundan alıkoydular. Bunların yapmakta oldukları şeyler, gerçekten ne kötüdür!"

Allah yerine başkasından hoşnut olan kimse, muamelesinde ucuzculuğa kaçmış ve ticaretinde zarar etmiştir. Böylece bu kimse, ne Allah'tan uzak kalarak bir fayda elde edebilir ne de Allah'tan başkasında yeterlilik bulabilir. Allah'tan uzaklaşarak mahrum kalır ve ondan istifade etmemiş olur. İşte apaçık hüsran da budur.

لَا يَرْقُبُونَ فِي مُؤْمِنٍ اِلًّا وَلَا ذِمَّةً وَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْمُعْتَدُونَ ﴿١٠﴾

10- "Bir mümin hakkında ne akrabalık bağlarını ne de antlaşma yükümlülüğünü gözetirler. İşte onlar, taşkınlık yapanların ta kendileridir."

Allah rızası için Allah'ın hakkını gözetmeyen kimse, müminin hakkını nasıl gözetir ki?! Onlar, hakka riayetsizlikte benzer karakterlere sahiptirler.

فَاِنْ تَابُوا وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ فَاِخْوَانُكُمْ فِي الدِّينِ
وَنُفَصِّلُ الْاٰيَاتِ لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ ﴿١١﴾

11- "Fakat tövbe edip namazı kılar ve zekâtı verirlerse, artık onlar, sizin din kardeşlerinizdir. Bilen bir kavme ayetleri işte böyle ayrı ayrı açıklarız."

Yani eğer biz onları kabul eder ve onlar, kulluğumuza yarar hale gelirlerse, sizlerle onlar arasında din bağı kurulmuş olur. Aksi takdirde bize yabancı olanlar, sizden de uzak olsunlar!

وَاِنْ نَكَثُٓوا اَيْمَانَهُمْ مِنْ بَعْدِ عَهْدِهِمْ وَطَعَنُوا فِي دِينِكُمْ فَقَاتِلُٓوا
اَئِمَّةَ الْكُفْرِ اِنَّهُمْ لَٓا اَيْمَانَ لَهُمْ لَعَلَّهُمْ يَنْتَهُونَ ﴿١٢﴾

12- "Eğer antlaşmalarından sonra yeminlerini bozup dininize dil uzatırlarsa, küfrün elebaşlarıyla savaşın. Çünkü onlar, yeminlerine riayet etmeyen kimselerdir. Umulur ki vazgeçerler."

Onlar, riayetsizliğe meyledip ortaya koydukları ahde vefa taahhütlerini bozdukları ve sitemle size dil uzattıkları zaman, fitne çarkının odağı haline gelen bu kimselere doğru harekete geçin. Bu arada kötülüğün dalı kökünden beslenir. Nitekim bu kimseler de kâfirlerin efendileridir ve elebaşlarıdır.

Savaşmanın gereği ise görünürde kuvvet hazırlamak, gönül dünyasında ise güç ve kuvvetin bize ait değil, Allah'a ait olduğuna inanmaktır.

اَلَا تُقَاتِلُونَ قَوْمًا نَكَثُوٓا اَيْمَانَهُمْ وَهَمُّوا بِاِخْرَاجِ الرَّسُولِ وَهُمْ بَدَؤُكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ اَتَخْشَوْنَهُمْ فَاللّٰهُ اَحَقُّ اَنْ تَخْشَوْهُ اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ١٣

13- "Yeminlerini bozan, peygamberi yurdundan çıkarmaya kalkışan ve üstelik size tecavüzü ilk defa kendileri başlatan bir kavimle savaşmaz mısınız? Yoksa onlardan korkuyor musunuz? Oysa eğer siz, gerçek müminler iseniz, Allah kendisinden korkmanıza daha layıktır."

Allah, bir kimseye duyulan kinin gereği olarak değil, bir hikmete binaen verdiği emirle müminleri savaşmaya teşvik etmiştir. Zira nefsi için kızan kimse, kötü vasfa sahiptir. Allah için kızan kimseye ise, Allah'ın zafere götürecek yardımı yakındır.

(اَتَخْشَوْنَهُمْ فَاللّٰهُ اَحَقُّ اَنْ تَخْشَوْهُ اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ) *"Yoksa onlardan korkuyor musunuz? Oysa eğer siz, gerçek müminler iseniz Allah, kendisinden korkmanıza daha layıktır."*

Allah korkusu vuslatın müjdecisi, başkasının korkusu ise, ayrılığın uyarıcısıdır. Allah korkusunun özü ise iç âlemi, yasakları irtikabtan ve emre muhalefetten temizlemekten ibarettir.

قَاتِلُوهُمْ يُعَذِّبْهُمُ اللّٰهُ بِاَيْدِيكُمْ وَيُخْزِهِمْ وَيَنْصُرْكُمْ عَلَيْهِمْ وَيَشْفِ صُدُورَ قَوْمٍ مُؤْمِنِينَ ﴿١٤﴾ وَيُذْهِبْ غَيْظَ قُلُوبِهِمْ وَيَتُوبُ اللّٰهُ عَلٰى مَنْ يَشَٓاءُ وَاللّٰهُ عَلِيمٌ حَكِيمٌ ﴿١٥﴾

14, 15- "Onlarla savaşın ki, Allah onlara sizin ellerinizle azap etsin, onları rezil etsin, onlara karşı size yardım etsin, mümin topluluğun gönüllerini ferahlatsın ve onların kalplerindeki öfkeyi gidersin. Allah, dilediğinin tövbesini kabul eder. Allah, hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Allah, müminlere verdiği yardım ve zafer sözüyle, canlarını tehlikeye atma külfetini hafifletmiştir. Çünkü düşmanın rezil olduğunu görmek, zorluğa göğüs germeyi kolaylaştıran hususlardandır. Bir de amacı elde etmek, arayışın yorgunluğunu giderir.

Bu arada, müminlerin gönüllerinin ferahlatılması, makam ve mertebelerdeki derecelere göredir. Buna göre kimisinin gönlü düşmanını kahretmekle, kimisinin umduğunu bulmakla, kimisinin aradığını elde etmekle, kimisinin sevgilisine kavuşmakla, kimisinin muradına ermekle, kimisinin de bekâbillah mertebesine ulaşmakla ferah bulur. Aynı şekilde kalplerindeki öfkenin gitmesinin de, sebepleri değişik ve kapıları çeşitlidir. Zikrettiğimiz derecelerden bu sebeplere ve kapılara da işaret vardır.

(وَيَتُوبُ اللّٰهُ عَلٰى مَنْ يَشَٓاءُ) *"Allah, dilediğinin tövbesini kabul eder."*

Böylece bu kimse, hallerin değiştiricisi Allah ile baş başa kalmış olur.

اَمْ حَسِبْتُمْ اَنْ تُتْرَكُوا وَلَمَّا يَعْلَمِ اللّٰهُ الَّذِينَ جَاهَدُوا مِنْكُمْ وَلَمْ يَتَّخِذُوا مِنْ دُونِ اللّٰهِ وَلَا رَسُولِهِ وَلَا الْمُؤْمِنِينَ وَلِيجَةً وَاللّٰهُ خَبِيرٌ بِمَا تَعْمَلُونَ ﴿١٦﴾

16- "Yoksa Allah, içinizden, Allah'tan, Resûlünden ve müminlerden başkasını kendilerine sırdaş edinmeksizin cihat edenleri ayırt etmeden bırakılacağınızı mı sandınız? Allah, yaptıklarınızdan hakkıyla haberdardır."

Her kim, özü yaşamadan, sadece iddia ile inandırıcı olunabileceğini zannederse, hesabında hata yapmış olur. Vakıa Allah'ın, emrederek müminleri yükümlü kıldığı hususlar; Allah'a güvenerek, Allah ile yetinerek ve başkalarından arınarak Allah için çaba harcamada samimiyet, Allah'tan başkasına meyletmeyi bırakmak ve Allah'ın düşmanlarıyla yan yana yaşamaktan uzak durmaktır.

Müminlerden başkasını sırdaş edinmemelerine dair bu emirden maksat ise, müminlerin sırlarını kâfirlerin arasında yaymamalarıdır. Bu arada Müslüman'ın sırlara muttali olmaması için terk edeceği ilk şey, en büyük düşmanı olan nefsidir.

Şair bu mealde şöyle der:

*Size ölümümden bir gece sonra yazıyorum*
*Oysa bilmezdim ölümümden sonra yazacağımı*

Rivayete göre Ebû Yezîd el-Bistâmî (261/804), keşif vakitlerinden birinde Hakk'a: "Seni nasıl arayayım?" diye sormuş, Allah da ona: "Nefsini terk et!" demişti r.

Bir yoruma göre de, dünyalıklara, ahiretteki nimetlere, hal ve makam görmeye yönelik arzu ve arayışların köklerini, zerre bırakmayacak şekilde, yakmadan bu durum, hatta bundan bir kıymık bile gerçekleşmez. Hür olmak nadir bir değerdir.

Şair şöyle der:

*Zamandan imkânsızı diliyorum;*
*Gözlerimin hür insanın yüzünü görmesini*

مَا كَانَ لِلْمُشْرِكِينَ اَنْ يَعْمُرُوا مَسَاجِدَ اللّٰهِ شَاهِدِينَ عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ بِالْكُفْرِ اُو۬لٰٓئِكَ حَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ وَفِي النَّارِ هُمْ خَالِدُونَ ﴿١٧﴾

17- "Allah'a ortak koşanların küfürlerine bizzat kendileri şahitlik edip dururken, Allah'ın mescitlerini imar etmeleri düşünülemez. Onların bütün amelleri boşa gitmiştir. Onlar, ateşte ebedî kalacaklardır."

Mescitleri imar etmek, onlarda ibadet yapmakla olur. İbadet de ancak ihlâsla kabul edilir. Oysa müşrik ihlâsı yitirmiştir. Bu arada müşriklerin, küfürlerine kendilerinin şahitlik etmeleri, bazı olayların, sebeplerin etkisiyle meydana geldiğini iddia etmeleri demektir. Bu sebeple her kim, kâinatta bir zerrenin bile Allah'ın takdiri dışında meydana gelebileceğine inanırsa, müşrik damgası yemelerine yol açan anlayışta müşriklere ortak olur.

اِنَّمَا يَعْمُرُ مَسَاجِدَ اللّٰهِ مَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَاَقَامَ الصَّلٰوةَ وَاٰتَى الزَّكٰوةَ وَلَمْ يَخْشَ اِلَّا اللّٰهَ فَعَسٰٓى اُو۬لٰٓئِكَ اَنْ يَكُونُوا مِنَ الْمُهْتَدٖينَ ﴿١٨﴾

18- "Allah'ın mescitlerini, ancak Allah'a ve ahiret gününe inanan, namazı dosdoğru kılan, zekâtı veren ve Allah'tan başkasından korkmayan kimseler imar eder. İşte onların doğru yolu bulmaları umulur."

Mescitlerin imarı, ancak beşerî zaafların kaynaklarını yok etmekle gerçekleşebilir. Bu bağlamda âbid şehvetinin, zâhid emelinin, ârif ilgisinin, muvahhit görüp yaşadıklarının kaynaklarını yok etmek suretiyle mescitleri imar eder. Bunlardan her biri, özelliğinin gerektirdiği yerde durmaktadır. Bu itibarla her yerin sahibi, kendine özgü bir özellik taşımaktadır.

Aynı şekilde iman bakımından da mertebeleri değişiktir. Kimisinin imanı burhana, kimisinin beyana, kimisinin de müşahedeye dayanmaktadır. Bunlar arasında ise büyük farklar bulunmaktadır.

Şair şöyle der:

*Bizden söz etme onları anarken*
*Yatalak gibi değildir, yürüdüğü zaman, sağlam kişi*

اَجَعَلْتُمْ سِقَايَةَ الْحَٓاجِّ وَعِمَارَةَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ كَمَنْ اٰمَنَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَجَاهَدَ ف۪ي سَب۪يلِ اللّٰهِ لَا يَسْتَوُ۫نَ عِنْدَ اللّٰهِ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظَّالِم۪ينَ ﴿١٩﴾

19- "Siz hacılara su dağıtmayı ve Mescid-i Haram'ın bakım ve onarımını, Allah'a ve ahiret gününe iman edip Allah yolunda cihat eden kimselerin amelleri gibi mi tuttunuz? Bunlar Allah katında eşit olmazlar. Allah, zalim topluluğu doğru yola erdirmez."

Zahirinin muamelesini yerine getiren, sırlarının dünyasında kesintisiz istikamet üzere olan kimse gibi değildir. İlimlerinin lambasından biraz ışık alan, marifetlerinin güneşleriyle aydınlanan kimse gibi değildir. Hizmet için kapıda dikilen, içerde yer edinecek derecede yakın olan kimse gibi değildir. Tekellüfle münafıklık yapanın niteliği de gerçek uyum içinde olanın vasfı gibi olmayıp aralarında büyük bir fark vardır.

اَلَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَهَاجَرُوا وَجَاهَدُوا ف۪ي سَب۪يلِ اللّٰهِ بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ اَعْظَمُ دَرَجَةً عِنْدَ اللّٰهِ وَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْفَٓائِزُونَ ﴿٢٠﴾

20- "İman edip hicret eden ve Allah yolunda mallarıyla canlarıyla cihat eden kimselerin mertebeleri, Allah katında daha üstündür. İşte onlar, başarıya erenlerin ta kendileridir."

İman etmelerinden maksat, inançlarının semasında hiçbir şüphe bulutu, marifetlerinin atmosferinde de hiçbir kuşku sisi kalmayacak şekilde basiretlerinin nurlarıyla müşahedede bulunmalarıdır.

Hicret etmeleri, ayrılık diyarlarında ikamet etmemeleri demektir. Böylece davranış ve duruşları, sadece Allah ile ve Allah için olmuştur.

Cihadı ise onlar, bir garaz düşünerek veya bir karşılık gözeterek yapmadıkları için, ellerine ne geçti ise mutlaka Hakk'ı ona tercih

ettiler. Bu sayede onlar, yaratıklardan koptuktan sonra Hak ile var olma nimetine kavuşmuş oldular.

يُبَشِّرُهُمْ رَبُّهُمْ بِرَحْمَةٍ مِنْهُ وَرِضْوَانٍ وَجَنَّاتٍ لَهُمْ فِيهَا نَعِيمٌ مُقِيمٌ ﴿٢١﴾

21- "Rableri onlara, kendi katından bir rahmet, bir hoşnutluk ve kendilerine içinde tükenmez nimetler bulunan cennetler müjdelemektedir."

Allah tarafından verilen müjde iki kısımdır:

Biri, vefat esnasında melek vasıtasıyla verilen müjdedir.

(تَتَنَزَّلُ عَلَيْهِمُ الْمَلٰٓئِكَةُ اَلَّا تَخَافُوا وَلَا تَحْزَنُوا وَاَبْشِرُوا بِالْجَنَّةِ) *"Onların üzerine akın akın melekler iner ve derler ki: Korkmayın, üzülmeyin ve cennetle müjdelenin."* (Fussilet, 41/30)

Diğeri de arada melek sözü olmadan gelen müjdedir. Çünkü Rableri, hesap esnasında onlara rahmetini müjdelemektedir. Allah onlara bu müjdeyi, vasıtayla değil, güzel sahiplenmeyle verir. Bu itibarla önceki müjdeleri Allah'ın nimetiyle, sonraki ise Allah'ın rahmetiyledir. Bu iki müjde arasında ise büyük fark vardır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Nimet ve cennet müjdesi ihsan sahipleri için, rahmet müjdesi ise günah sahipleri içindir. İhsan sahiplerinin iyi durumu, herkesçe bilindiği için Allah, onları aleni bir şekilde müjdelemeleri için bu durumlarını meleklere açıklamıştır. Günahkârların durumunun düzelmesi ise günahlarını örtmekle olduğu için Allah, müjdelerini vasıtasız ve saklı tutarak üzerine almıştır.

- Şayet itaat ehlinin özel oluşuna dair müjdesi varsa, günahkârın da kurtuluşa dair müjdesi vardır. Ve şayet itaat ehli derecelerle müjdeleniyorsa, günahkâr da kurtuluşla müjdelenmektedir.

- Kalpler, iyilik müjdesi vereni sevmek üzere yaratılmıştır. Bu nedenle Allah, kulunun O'na olan sevgisinin özel olmasını istedi ve müjdesini vasıtasız olarak, kendi aziz hitabıyla üstlenerek: (يُبَشِّرُهُمْ رَبُّهُمْ بِرَحْمَةٍ مِنْهُ) *"Rableri onlara, kendi katından bir rahmet müjdelemektedir"* buyurdu.

Şiir:

*Eğer mutlu olmasaydı gözlerim ona kavuşmakla*
*Dönüşünün yaklaştığını müjdelerdim gözlerime*

- Allah, günahkârı rahmetle, itaat ehlini de cennetle müjdeledikten sonra hepsini birlikte cennetle müjdelemiştir. Bu çerçevede günahkârı anlatımda, itaat ehlini de iyilikte öne almıştır. Anlatım, Allah'ın kadim olan sözü, iyilik de O'nun yaygın olan gücünün göstergesidir. Ezelî olan sözü, güç göstergesinden üstündür. Allah, günahkârları öne almış, çünkü zayıfın güçsüzlüğü, şefkate güçlüden daha muhtaçtır.

- Allah günahkârın durumunu rahmetle öne almış ki, kıyamet günü gelip herkes bir araya toplandığında günahkâr rezil olmasın.

- (يُبَشِّرُهُمْ رَبُّهُمْ بِرَحْمَةٍ) *"Rableri onlara, bir rahmet müjdelemektedir."* Allah, kullarına, ulaştıkları mertebelere kendi çaba ve ibadetleriyle değil, aksine Allah'ın nimetine yine O'nun rahmetiyle kavuştuklarını öğretmektedir. Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurdu:

*"Hiç birinizi ameli kurtarmaz. Dediler ki: Seni de mi ey Allah'ın Resûlü? Dedi ki: Evet beni de amelim kurtarmaz. Meğerki Allah beni rahmetiyle esirgesin."*[1]

(لَهُمْ فِيهَا نَعِيمٌ مُقِيمٌ) *"Kendilerine içinde tükenmez nimetler bulunmaktadır."*

Bir kavim vardır ki nimetleri, Rablerinin noksansız bağışıdır. Bir kavim de vardır ki, nimetleri, Rablerine kesintisiz kavuşmadır. Bu

1 Ahmed b. Hanbel, Müsned, II, 344, 519; Zebîdî, İthâfu's-sâde'l-muttakîn, VIII, 416, IX, 184.

itibarla, abidler için Allah'ın noksansız bağışı, arifler için de Allah'a kesintisiz kavuşma vardır.

خَالِدٖينَ فٖيهَٓا اَبَدًا اِنَّ اللّٰهَ عِنْدَهُٓ اَجْرٌ عَظٖيمٌ ﴿٢٢﴾

22- "Onlar orada ebedî kalacaklardır. Şüphesiz ki Allah katında büyük mükâfat vardır."

Bu ayetteki "hâ" zamiri "cennet" lafzına gidebileceği gibi, "hâlet (durum)" lafzına da gidebilir. Özellikle ayetin devamında ecirden söz edilmesi, bunu teyit etmektedir. Böylece Allah, nasıl ki cennette onlardan bağışını kesmeyecekse, aynı şekilde cennette istedikleri zaman, onları huzurundan alıkoymayacaktır. Yani, Vâkıa Sûresi'nin 33. ayetinde de yer aldığı üzere, ne Allah'ın nimeti onlardan kesilir ne de O'nu görmekten alıkonulurlar.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوا لَا تَتَّخِذُوٓا اٰبَٓاءَكُمْ وَاِخْوَانَكُمْ اَوْلِيَٓاءَ اِنِ اسْتَحَبُّوا الْكُفْرَ عَلَى الْاٖيمَانِ وَمَنْ يَتَوَلَّهُمْ مِنْكُمْ فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الظَّالِمُونَ ﴿٢٣﴾

23- "Ey iman edenler! Eğer küfrü imana tercih ederlerse, babalarınız ve kardeşlerinizi bile dost edinmeyin. İçinizden kim onları dost edinirse, işte onlar zalimlerin ta kendileridir."

Her kim, Rabbine itaat etmekle düzelmemişse, onu kendine samimi dost edinme!

Bir yoruma göre de kim bir şeyi Allah'a tercih ederse, Allah kendisini o şeyden yararlandırabilir, ancak o bununla meşgul olduğundan Allah'tan gafil olur. Sonra Allah, bu şeyi onda bırakmaz. Şayet çaba harcayarak bu şeyi elinde tutmak isterse, Allah ecelini sona erdirdiği zaman hayatını nasıl devam ettirecektir!

Şair bu mealde şöyle der:

*Kimin nimeti kendisinden önce yok olmazsa*
*Ölümle kendi yok olur nimetle beraber*

قُلْ اِنْ كَانَ اٰبَآؤُكُمْ وَاَبْنَآؤُكُمْ وَاِخْوَانُكُمْ وَاَزْوَاجُكُمْ وَعَشٖيرَتُكُمْ
وَاَمْوَالٌ اقْتَرَفْتُمُوهَا وَتِجَارَةٌ تَخْشَوْنَ كَسَادَهَا وَمَسَاكِنُ
تَرْضَوْنَهَآ اَحَبَّ اِلَيْكُمْ مِنَ اللّٰهِ وَرَسُولِهٖ وَجِهَادٍ فٖي سَبٖيلِهٖ
فَتَرَبَّصُوا حَتّٰى يَأْتِيَ اللّٰهُ بِاَمْرِهٖ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْفَاسِقٖينَ ﴿٢٤﴾

24- “De ki: Eğer babalarınız, oğullarınız, kardeşleriniz, eşleriniz, aşiretiniz, kazandığınız mallar, kesada uğramasından korktuğunuz bir ticaret ve beğendiğiniz meskenler size Allah’tan, peygamberinden ve O’nun yolunda cihaddan daha sevgili ise artık Allah’ın emri gelinceye kadar bekleyin! Allah fâsık topluluğu doğru yola erdirmez.”

Bu, ne onları muhayyer kılmak ne de onlara, nefsin arzularını haklara tercih edebileceklerine dair bir izin demektir. Aksine bu, nefsin herhangi bir arzusunu dine tercih etmekten onları şiddetle sakındırmak ve alıkoymak demektir. Bu arada geçen zaman, sonuçta takdirin gizli hikmetlerini ortaya çıkaran adil bir hakemdir.

Şair şöyle der:

*Göreceksin toz duman dağıldığında*
*Altındakinin at mı eşek mi olduğunu*

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Tevhidde içtenliğin alameti, alakaları kesmek, adetleri bırakmak, alışkanlıkları terk etmek ve bütün hallerde devamlı Allah ile yetinmektir.

- Din pazarı kesat olan kimsenin nefis arzularının pazarı da kesat olur. Bir de insan, nefis arzularının alanlarını boşaltmadıkça hukuk alanlarını ihya edemez.

لَقَدْ نَصَرَكُمُ اللّٰهُ فٖي مَوَاطِنَ كَثٖيرَةٍ وَيَوْمَ حُنَيْنٍ اِذْ اَعْجَبَتْكُمْ كَثْرَتُكُمْ
فَلَمْ تُغْنِ عَنْكُمْ شَيْـًٔا وَضَاقَتْ عَلَيْكُمُ الْاَرْضُ بِمَا رَحُبَتْ ثُمَّ
وَلَّيْتُمْ مُدْبِرٖينَ ﴿٢٥﴾

25- "Andolsun, Allah birçok yerde ve Huneyn Savaşı gününde size yardım etmiştir. Hani çokluğunuzu beğenmiştiniz; fakat bu çokluk size hiçbir yarar sağlamamış, yeryüzü bütün genişliğine rağmen size dar gelmişti. Nihayet bozularak gerisingeriye dönüp kaçmıştınız."

Allah'ın yardımı, kudretin göstergesi olarak gerçekleşir. Yardım edilen de, Allah'ın vehim ve hesaplardan koruduğu, işlerinde şahsi tedbiriyle baş başa bırakmadığı, kendi güç ve kuvvetinden sıyrılmış, ilahi kudretin tasarruflarını görmekle hakikate ermiş bir halde, ihtiyaç makamında sabit kıldığı kimsedir. Allah, yardım ettiği bu kimsenin elinden tutarak onu şahsi tedbirinin uçurumundan düze çıkarır ve ilahi takdirinin hükmüne sabretme vasfı üzerinde tutar.

(إِذْ اَعْجَبَتْكُمْ كَثْرَتُكُمْ فَلَمْ تُغْنِ عَنْكُمْ شَيْـًٔا وَضَاقَتْ عَلَيْكُمُ الْاَرْضُ بِمَا رَحُبَتْ ثُمَّ وَلَّيْتُمْ مُدْبِرِينَ) *"Hani çokluğunuzu beğenmiştiniz; fakat bu çokluk size hiçbir yarar sağlamamış, yeryüzü bütün genişliğine rağmen size dar gelmişti. Nihayet bozularak gerisingeriye dönüp kaçmıştınız."*

Yani Huneyn günü ashabın çoğunun dağıldığı, saldırının azı dişleri kahrın üzerindeki örtüyü kaldırıp kalplerin kararsızlaştığı, kuvvetlerin sahiplerine hıyanet ettiği ve çokluğunuzun size fayda vermediği bir anda Allah, size yardım etti. Böylece Allah, ihlâsla kendisine dönüş yaptığınızda, üzerinize inen güzel huzur ile sırlarınızı halis kılarak durumu düşmanların aleyhine çevirdi, zafer bayrakları dalgalandı, musibet kâfirlerin üstüne çöktü, yenilgi onlara yöneldi ve küçülmüş olarak geri döndüler.

ثُمَّ اَنْزَلَ اللّٰهُ سَكِينَتَهُ عَلٰى رَسُولِهِ وَعَلَى الْمُؤْمِنِينَ وَاَنْزَلَ جُنُودًا
لَمْ تَرَوْهَا وَعَذَّبَ الَّذِينَ كَفَرُوا وَذٰلِكَ جَزَٓاءُ الْكَافِرِينَ ﴿٢٦﴾

26- "Sonra Allah, Resûlü ile müminler üzerine kendi katından güven duygusu ve huzur indirdi. Bir de sizin göremediğiniz ordular indirdi ve kâfir olanları cezalandırdı. İşte bu, kâfirlerin cezasıdır."

Ayetteki (سَكِينَتَهُ) "*sekînet*" lafzı, Allah'ın hükmü huzur vasfıyla gerçekleştiğinde kalbin serinlemesi, beşeri izlerin bütünüyle silinmesi ve tercih muhalefeti olmaksızın, gaybdan tezahür edene rıza göstermek demektir.

Bir yoruma göre de "sekînet", sahv delilleri eşliğinde şuhûd makamında karar kılmak, zorluk çekmeksizin ve hükme muhalefetin bir damarı bile hareket etmeksizin, kulluk vasıflarını yerine getirmek suretiyle edeb takınmak demektir. Müminlerin üzerine indirilen "sekînet" ise gaybdan gelen hükmün gerçekleşmesi karşısında, beşeri serkeşliklerle hiçbir hoşnutsuzluk duymaksızın sakinleşmek ve herhangi bir varlıktan duyulan endişeyle tahrik olmamaları için Allah'ın, onları beşeri hüviyetlerinden koparmasıdır. Böylece her türlü irade ve tercihleri hareketsiz hale gelmiş olur.

(وَاَنْزَلَ جُنُودًا لَمْ تَرَوْهَا) "*Bir de sizin göremediğiniz ordular indirdi.*" Bunu Allah, inanç ve gönül zenginliğinizden dolayı yaptı.

(وَعَذَّبَ الَّذِينَ كَفَرُوا) "*Ve kâfir olanları cezalandırdı.*" Bu cezayı onlara Allah, tefrikanın şakınlıkları içerisinde bocalamaları, tedbir darlığı ve gaflet sıkıntısının çukuruna düşmeleri ve ilahî takdiri görememeleri sebebiyle verdi.

ثُمَّ يَتُوبُ اللّٰهُ مِنْ بَعْدِ ذٰلِكَ عَلٰى مَنْ يَشَٓاءُ وَاللّٰهُ غَفُورٌ رَح۪يمٌ ﴿٢٧﴾

27- "Sonra Allah, bunun ardından yine dilediği kimsenin tövbesini kabul eder. Allah, çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Allah, onları cehaletten hakikatlerin bilgisine döndürmüş, sonra o makamlardan yakîn mertebelerine nakletmiş, ardından da kendilerini bütün o makamların üstüne çıkararak vuslata erdirmiştir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُٓوا اِنَّمَا الْمُشْرِكُونَ نَجَسٌ فَلَا يَقْرَبُوا الْمَسْجِدَ
الْحَرَامَ بَعْدَ عَامِهِمْ هٰذَا وَاِنْ خِفْتُمْ عَيْلَةً فَسَوْفَ يُغْن۪يكُمُ اللّٰهُ مِنْ
فَضْلِه۪ٓ اِنْ شَٓاءَ اِنَّ اللّٰهَ عَل۪يمٌ حَك۪يمٌ ﴿٢٨﴾

28- "Ey iman edenler! Allah'a ortak koşanlar ancak bir pislikten ibarettirler. Artık bu yıllarından sonra Mescid-i Haram'a yaklaşmasınlar. Eğer yoksulluktan korkarsanız, Allah dilerse sizi lütfuyla zengin kılar. Şüphesiz Allah hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Müşrikler, sırlarını tevhid suyuyla temizleme şansını yitirdikleri için zannın ve vehimlerin pislikleri içinde kaldılar ve buna bağlı olarak, Allah'a yakınlığın mekânları olan mescitlere yaklaşmaktan alıkonuldular. Müminleri ise Allah, başkalarını görmekle kirlenmekten pak kıldığı için onlar, açıkladığı emirler ve icra ettiği hükümleriyle sadece Allah'ı gözettiler.

(وَاِنْ خِفْتُمْ عَيْلَةً فَسَوْفَ يُغْنِيكُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِه۪ٓ اِنْ شَٓاءَ اِنَّ اللّٰهَ عَل۪يمٌ حَك۪يمٌ) *"Eğer yoksulluktan korkarsanız, Allah dilerse sizi lütfuyla zengin kılar. Şüphesiz Allah hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."*

Rızıkları sebeplerden beklemek, tevhid kapısının kapanmasının yol açtığı sorunlardandır. Bu itibarla her kim, kısmetini sadece Allah'tan beklemezse, ebedi yoksulluk içinde kalır.

Bir yoruma göre de, her kim Mevlâ'sının kerem dergâhına kapanır ve cömertliğinin bulutundan yağmur beklerse, Mevlâ onu hiçbir sebebe muhtaç kılmaz, bütün yorgunluklarını karşılar, her dileğini ve ihtiyacını yerine getirir ve kendisine talepsiz verir.

قَاتِلُوا الَّذ۪ينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَلَا بِالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَلَا يُحَرِّمُونَ مَا حَرَّمَ اللّٰهُ وَرَسُولُهُ وَلَا يَد۪ينُونَ د۪ينَ الْحَقِّ مِنَ الَّذ۪ينَ اُو۫تُوا الْكِتَابَ حَتّٰى يُعْطُوا الْجِزْيَةَ عَنْ يَدٍ وَهُمْ صَاغِرُونَ ﴿٢٩﴾

29- "Kendilerine kitap verilenlerden Allah'a ve ahiret gününe iman etmeyen, Allah'ın ve Resûlünün haram kıldığını haram saymayan ve hak din İslam'ı din edinmeyen kimselerle, küçülerek kendi elleriyle cizyeyi verinceye kadar savaşın."

Rezilliğe müstahak olan kimsenin kötülüğünden, ancak müstahak olduğu küçük düşürücü zelil edilişiyle kurtulmak mümkün olur. Her kim, düşmanına yağcılık yaparsa, kendisinden kötülük görmeyi hak etmiş olur.

İnsanın en şiddetli düşmanı ve imandan en uzak olanı, kötülük üzere yaratılmış olan ve ancak mücadele bıçağıyla boğazlanarak kökü kazınabilen nefistir. Nefis, takdire iman etmez, şüphesi asla yok olmaz, daima tedbire yeltenir, ancak maddi olanla tatmin bulur ve yalan vaatlerden başka bir şeyi de kabul etmez.

Şu dizeleri bu nedenle söylemişlerdir:

*Nefsi yalanla oyala kendisiyle konuştuğunda*
*Çünkü umudu boşa çıkarır sözün doğrusu*

وَقَالَتِ الْيَهُودُ عُزَيْرٌ ابْنُ اللّٰهِ وَقَالَتِ النَّصَارَى الْمَسِيحُ ابْنُ اللّٰهِ
ذٰلِكَ قَوْلُهُمْ بِاَفْوَاهِهِمْ يُضَاهِؤُنَ قَوْلَ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ قَبْلُ
قَاتَلَهُمُ اللّٰهُ اَنّٰى يُؤْفَكُونَ ﴿٣٠﴾

30- "Yahudiler: 'Uzeyr, Allah'ın oğludur' dediler. Hıristiyanlar ise: 'İsa Mesih Allah'ın oğludur' dediler. Bu, onların, ağızlarıyla söyledikleri gerçek dışı sözleridir. Onların bu sözleri, daha önce inkârda bulunmuş kimselerin söylediklerine benzemektedir. Allah onları kahretsin. Nasıl da haktan çevriliyorlar!"

Eğer burada anlatılanlar, yaratıkların konuşmalarında söz konusu olsaydı, yakınmanın ta kendisi olurdu. Dostlara yakınma ise vuslatın gerçekleştiğine işaret eder. Allah, Yahudilerin ve Hıristiyanların çirkin davranışlarını müminlere şikâyet etmektedir. Kendisinden şikâyetçi olduğun kimse ile kendisine şikâyette bulunduğun kimse arasında ise büyük fark bulunmaktadır.

(يُضَاهِؤُنَ قَوْلَ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ قَبْلُ قَاتَلَهُمُ اللّٰهُ اَنّٰى يُؤْفَكُونَ) *"Onların bu sözleri, daha önce inkârda bulunmuş kimselerin söylediklerine benzemektedir. Allah onları kahretsin. Nasıl da haktan çevriliyorlar!"*

Onlardan önceki kâfirler, Allah'ı inkâr ederken bunlar Allah'ı kabul ettiler. Ancak Allah'ın çocuğu olduğunu ileri sürünce, kabul ettikleri tevhidi bozdular ve dolayısıyla kendilerinden önceki kâfirler gibi oldular. Muhtemelen Yahudilerin ve Hıristiyanların, Allah'ı nitelerken İsa'nın ve Uzeyr'in O'nun oğlu olduğuna dair söylediklerinin, daha önceki kâfirlerin söylediklerine olan benzerliği, adı geçen kâfirlerin de meleklerin Allah'ın kızları olduğunu söylemeleri hususundadır.

Bir yoruma göre de, Yahudiler ve Hıristiyanlar Allah'ı, münezzeh olduğu hususlarla vasıflandırınca, bu kötü isnatları sebebiyle, O'nun tanrılığını kabul ettiğine dair doğru sözleri de, kendilerine fayda vermemiş oldu. Bu arada her kim, Allah'ı anlatırken hakkında münezzeh olduğu sözler sarf ederse, pişmanlık ve azara müstahak olmada düşmanlara benzemiş olur.

اِتَّخَذُوٓا اَحْبَارَهُمْ وَرُهْبَانَهُمْ اَرْبَابًا مِنْ دُونِ اللّٰهِ وَالْمَسِيحَ ابْنَ مَرْيَمَ
وَمَٓا اُمِرُوٓا اِلَّا لِيَعْبُدُوٓا اِلٰهًا وَاحِدًا لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ سُبْحَانَهُ عَمَّا
يُشْرِكُونَ ﴿٣١﴾

31- "Yahudiler, Allah'ı bırakıp hahamlarını, Hıristiyanlar da rahiplerini ve Meryem oğlu Mesih'i rab edindiler. Oysa bunlar da ancak, bir olan Allah'a ibadet etmekle emrolunmuşlardır. O'ndan başka hiçbir ilah yoktur. O, onların ortak koştukları her şeyden uzaktır."

Nasıl ki alçaltmada haddi aşmak caiz değilse, aynı şekilde yüceltmede de haddi aşmak caiz değildir.

Bir hadis şöyledir:

*"Herkese layık olduğu değeri verin."*

Kimisi, yaratıklarda bir parçacık üstünlük gördüğü zaman onlara tanrı muamelesi yapar. Bu ise hakikatte şirktir. Bütün yaratıkları her türlü özellikleriyle birlikte sadece Allah'tan bilen kimse, en şaibesiz tevhid inancına sahip olur.

(وَمَٓا اُمِرُوٓا اِلَّا لِيَعْبُدُوٓا اِلٰهًا وَاحِدًا) *"Oysa, bunlar da ancak, bir olan Allah'a ibadet etmekle emrolunmuşlardır."*

Her kim, inancı dairesinde bir yaratığı değerinin üstünde yüceltirse, Rabbine ortak koşmuş olur.

يُرِيدُونَ اَنْ يُطْفِؤُا نُورَ اللّٰهِ بِاَفْوَاهِهِمْ وَيَأْبَى اللّٰهُ اِلَّٓا اَنْ يُتِمَّ نُورَهُ وَلَوْ كَرِهَ الْكَافِرُونَ ﴿٣٢﴾

32- "Allah'ın nurunu ağızlarıyla söndürmek istiyorlar. Oysa kâfirler hoşlanmasalar da Allah, nurunu tamamlamaktan başka bir şeye razı olmaz."

Kim, güneşin ışığını içindeki ateşten çıkarttığı dumanla örtmek ister veya gökyüzünün hükmünü kendi çaresiyle ve tedbiriyle engellemeye ya da uzaydaki yıldızları yayının oklarıyla düşürmeye kalkarsa, nefse düşkünlüğünü ortaya koymuş ve muradına ermemiş olur. Aynı şekilde kim, şüphelerin tevhid prensibinin üstüne çıkacağını vehmederse, zannında yanılmış ve vehminde rezil olmuş olur.

هُوَ الَّذِيٓ اَرْسَلَ رَسُولَهُ بِالْهُدٰى وَدِينِ الْحَقِّ لِيُظْهِرَهُ عَلَى الدِّينِ كُلِّهِ وَلَوْ كَرِهَ الْمُشْرِكُونَ ﴿٣٣﴾

33- "Allah, müşrikler hoşlanmasalar bile dinini, bütün dinlere üstün kılmak için, peygamberini hidayetle ve hak dinle gönderendir."

Allah, ortaya koyduğu apaçık kesin delillerle başkalarının gerekçelerini geçersiz kılmış, gösterdiği yolla da şüpheleri ortadan kaldırmıştır. Bu itibarla Hakk'ın güneşleri aydınlıktır ve dinin delilleri parlaktır.

Şairin dediği gibi:

*Güneştir o, ancak batışı vardır güneşin*
*Oysa batmamakta şu bizim kastettiğimiz*

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُٓوا اِنَّ كَث۪يرًا مِنَ الْاَحْبَارِ وَالرُّهْبَانِ لَيَاْكُلُونَ اَمْوَالَ النَّاسِ بِالْبَاطِلِ وَيَصُدُّونَ عَنْ سَب۪يلِ اللّٰهِ وَالَّذ۪ينَ يَكْنِزُونَ الذَّهَبَ وَالْفِضَّةَ وَلَا يُنْفِقُونَهَا ف۪ي سَب۪يلِ اللّٰهِ فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ اَل۪يمٍ ﴿٣٤﴾

34- "Ey iman edenler! Hahamlardan ve rahiplerden birçoğu, insanların mallarını haksız yollarla yiyorlar ve Allah'ın yolundan alıkoyuyorlar. Altın ve gümüşü biriktirip gizleyerek onları Allah yolunda harcamayanları elem dolu bir azapla müjdele."

Âlim, insanlara öğrettiklerinin bedeli olarak mallarına bulaştığı zaman, ilminin bereketi yok olur ve züht yolunda yediği helal olmaz.

Ârif de müridin hizmetinden yararlandığı veya hallerine ve amellerine bulaştığı zaman, himmetinin etkileri yok olur ve tevhid prensibi çerçevesinde, arifliğinin kimseye faydası olmaz.

(وَالَّذ۪ينَ يَكْنِزُونَ الذَّهَبَ وَالْفِضَّةَ وَلَا يُنْفِقُونَهَا ف۪ي سَب۪يلِ اللّٰهِ فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ اَل۪يمٍ) *"Altın ve gümüşü biriktirip gizleyerek onları Allah yolunda harcamayanları elem dolu bir azapla müjdele."*

Onlar için ahirette azap vardır. İhtiyaçları olduğu halde, başkalarını kendilerine tercih etmeyenlerin ise dünyada Allah ile arasına perde konulur. Allah'ın kullarından dünyada perdelenmekten, ahirette de azaptan kurtulanlar azdır.

يَوْمَ يُحْمٰى عَلَيْهَا ف۪ي نَارِ جَهَنَّمَ فَتُكْوٰى بِهَا جِبَاهُهُمْ وَجُنُوبُهُمْ وَظُهُورُهُمْ هٰذَا مَا كَنَزْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ فَذُوقُوا مَا كُنْتُمْ تَكْنِزُونَ ﴿٣٥﴾

35- "O gün bunlar cehennem ateşinde kızdırılacak da onların alınları, böğürleri ve sırtları bunlarla dağlanacak ve: 'İşte bu, kendiniz için biriktirip sakladığınız şeylerdir. Haydi tadın bakalım, biriktirip sakladıklarınızı' denilecek."

Onlar, mallarıyla halk nezdinde itibar arayıp o maldan Allah'ın hakkını çıkarmada cimrilik edince, Allah yüzlerine leke sürdü. Sırtlarını mallarına dayandırdıkları için de Allah: (فَتُكْوٰى بِهَا جِبَاهُهُمْ وَجُنُوبُهُمْ وَظُهُورُهُمْ) "*Onların alınları, böğürleri ve sırtları bunlarla dağlanacak*" buyurdu.

Bir yoruma göre de onlar hak sahiplerine, yüzüne bakarak surat astıkları ve kaşlarını çattıkları için, yoksulları gördüklerinde çatılan o alınları, yine yanlarına oturan fakirlere karşı yan döndükleri için böğürleri dağlandı.

اِنَّ عِدَّةَ الشُّهُورِ عِنْدَ اللّٰهِ اثْنَا عَشَرَ شَهْرًا فِي كِتَابِ اللّٰهِ يَوْمَ خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ مِنْهَٓا اَرْبَعَةٌ حُرُمٌ ذٰلِكَ الدِّينُ الْقَيِّمُ فَلَا تَظْلِمُوا فِيهِنَّ اَنْفُسَكُمْ وَقَاتِلُوا الْمُشْرِكِينَ كَٓافَّةً كَمَا يُقَاتِلُونَكُمْ كَٓافَّةً وَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُتَّقِينَ ﴿٣٦﴾

36- "Şüphesiz Allah'ın gökleri ve yeri yarattığı günkü yazısında, Allah katında ayların sayısı on ikidir. Bunlardan dördü haram aylardır. İşte bu, Allah'ın dosdoğru kanunudur. Öyleyse o aylarda kendinize zulmetmeyin. Fakat müşrikler, sizinle nasıl topyekûn savaşıyorlarsa, siz de onlarla topyekûn savaşın. Bilin ki Allah, kendine karşı gelmekten sakınanlarla beraberdir."

Allah, insanların O'na yakın olmaya devamlı çaba harcamayacaklarını bildiği için, özel olarak fazla ibadet edecekleri bazı ayları faziletli kıldı. Oysa Allah'ın has kulları için bütün aylar Şaban ve Ramazan, bütün günler Cuma, bütün mekânlar da mescittir.

Şair de bu mealde şöyle der:

*Ya Rab! Kesintisizdir benim cihadım*
*Ve Tarsus'un sınır boyudur benim için her yer*

(فَلَا تَظْلِمُوا فِيهِنَّ اَنْفُسَكُمْ وَقَاتِلُوا الْمُشْرِكِينَ كَٓافَّةً كَمَا يُقَاتِلُونَكُمْ كَٓافَّةً وَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُتَّقِينَ) "*Öyleyse o aylarda kendinize zulmetmeyin. Fakat müşrikler,*

*sizinle nasıl topyekûn savaşıyorlarsa, siz de onlarla topyekûn savaşın. Bilin ki Allah, kendine karşı gelmekten sakınanlarla beraberdir."*

Allah avama: Günah işlemek suretiyle bazı aylarda kendinize zulmetmeyin, buyurmuştur. Has kullarına gelince onlar, hiçbir ayda gaflete düşerek kalplerine zulmetmemekle memurdurlar.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kendine zulmetmek, kulun, dizginini kendisini helak edici yerlere sürükleyecek olan şehevî arzularına kaptırması demektir.

- Kendine zulmetmek, Hakk'a taat yerine mahlûka hizmet etmek demektir.

- Kim, kucaklaşmalarla kalbine zulmederse, zamanın akışı içerisinde arınmamakla imtihan edilir.

( وَقَاتِلُوا الْمُشْرِكِينَ كَآفَّةً ) *"Müşriklerle topyekûn savaşın."* Düşmana karşı, kendi güç ve kuvvetinden arınmaktan daha keskin bir silah bulunmamaktadır.

اِنَّمَا النَّسٖٓيءُ زِيَادَةٌ فِي الْكُفْرِ يُضَلُّ بِهِ الَّذٖينَ كَفَرُوا يُحِلُّونَهُ عَامًا وَيُحَرِّمُونَهُ عَامًا لِيُوَاطِؤُا عِدَّةَ مَا حَرَّمَ اللّٰهُ فَيُحِلُّوا مَا حَرَّمَ اللّٰهُ زُيِّنَ لَهُمْ سُوٓءُ اَعْمَالِهِمْ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكَافِرٖينَ ٣٧

37- "Haram ayları ertelemek, ancak inkârda daha da ileri gitmektir ki, bununla inkâr edenler saptırılır. Allah'ın haram kıldığı ayların sayısına uygun getirip böylece Allah'ın haram kıldığını helal kılmak için haram ayı bir yıl helal, bir yıl haram sayıyorlar. Onların bu çirkin işleri, kendilerine süslenip güzel gösterildi. Allah, kâfir topluluğu doğru yola iletmez."

Din, Allah'ın emrini gözetmek, günahtan sakınmak ve dinin bütün hükümlerinde Allah'tan niyazda bulunurken aceleci davranmamaktır. İbadetlerde süreler bellidir, Allah'ı tanımada muvaffakiyet esastır ve işlerin düzelmesi, kulluk vasfı üzerine kalmaya bağlıdır. Bu itibarla ay, Allah'ın ay adını verdiği şey, yıl da Allah'ın yaratıklara dini açıklamasını yaptığı zaman miktarıdır.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا مَا لَكُمْ اِذَا ق۪يلَ لَكُمُ انْفِرُوا ف۪ي سَب۪يلِ اللّٰهِ اثَّاقَلْتُمْ اِلَى الْاَرْضِ اَرَض۪يتُمْ بِالْحَيٰوةِ الدُّنْيَا مِنَ الْاٰخِرَةِ فَمَا مَتَاعُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا فِي الْاٰخِرَةِ اِلَّا قَل۪يلٌ ﴿٣٨﴾

38- "Ey iman edenler! Ne oldunuz ki, size: 'Sefere çıkın' denilince, yere çakılıp kaldınız. Yoksa ahiretten vazgeçip dünya hayatını mı seçtiniz? Oysa ahirete göre dünya hayatının yararı pek az bir şeydir."

Allah, emir verildiğinde hemen yerine getirmemeleri ve ruhsatı fırsat olarak değerlendirmeleri sebebiyle onlara itapta bulunmuştur. Allah, onlara azimde ciddi ve fiilde irade sahibi olmalarını emretmiştir. Tembelliğe meyletmek ve rahata düşkünlük göstererek işi ağırdan almak, imanın zayıflığının alametleridir. Zira iman, kuldan en zor olanı yerine getirmekten ve hakkı yaşamaktan başkasını kabul etmeyen ve borçlunun peşini bırakmayan bir alacaklıdır.

(اَرَض۪يتُمْ بِالْحَيٰوةِ الدُّنْيَا) *"Dünya hayatını mı seçtiniz?"* Hiç dünyasını ahiretine tercih etmek, ibadet ehline yakışır mı? Bir de irfan sahibinin, nefsinin arzusunu Mevlâ'sının hoşnutluğuna tercih etmesi uygun olur mu?

Şair bu mealde şöyle der:

*O dostlara, yaptıkları yakışıyor mu!*
*Çekip gittiler de dönselerdi keşke*

Zahidin bir gün kapıda görünmemesi, aylarca görünmemek gibidir. Arifin ise bir an huzurdan kaybolması, asırlarca bulunmaması mesabesindedir.

Şair şöyle der:

*Dostun ayrılığına dayanamaz dost*
*Göz açıp kapamaktan fazlasına*
*Oysa dayandık biz ayrılığınıza bir saat*
*Böyle değildir sevenlerin yapacağı*

اِلَّا تَنْفِرُوا يُعَذِّبْكُمْ عَذَابًا اَلِيمًا وَيَسْتَبْدِلْ قَوْمًا غَيْرَكُمْ وَلَا تَضُرُّوهُ
شَيْـًٔا وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدٖيرٌ ﴿٣٩﴾

39- "Eğer Allah yolunda sefere çıkmazsanız, sizi elem dolu bir azap ile cezalandırır ve yerinize sizden başka bir topluluk getirir. Siz ise, O'na hiçbir zarar veremezsiniz. Allah, her şeye hakkıyla gücü yetendir."

Kul, ibadetten yüz çevirdiği zaman elem dolu azap, Allah'ın, o kulun arkasından kendisini kapıya döndürecek olan muvaffakiyet askerlerini göndermemesidir.

Elem dolu azap, kul döndüğü zaman Allah'ın, sırdaş olmanın zevkini kendisinden almasıdır.

Elem dolu azap, kıyamet günü Allah'ın kuldan yüz çevirmesidir.

Şair şöyle der:

*Vuslat sözü verdiler bana, tatlıdır vuslat*
*Vurdular beni yüz çevirmekle, zordur yüz çevirmek*

Elem dolu azap, ayrılık uyarısıdır. Ayrılığın kendisi ise tamamen yok olmak demektir.

Şair şöyle der:

*Sen ayrılığın yarın olduğunu ileri sürdün*
*Bununla, yarın yaşayacak olanı tehdit et*

(وَيَسْتَبْدِلْ قَوْمًا غَيْرَكُمْ) *"Ve yerinize sizden başka bir topluluk getirir."* Bu, Allah'ın bir kimseye olan iltifatını onun hemcinslerinden başka birine çevirmesi demektir. Bu arada kuyu kazan herkes, onun kaynağından su içecek değildir.

Şair şöyle der:

*Sulamakta gözyaşlarım koruma reyhanlarını*
*Başkaları ise vuslat bahçesinde beslenmekte*

اِلَّا تَنْصُرُوهُ فَقَدْ نَصَرَهُ اللّٰهُ اِذْ اَخْرَجَهُ الَّذِينَ كَفَرُوا ثَانِيَ اثْنَيْنِ
اِذْ هُمَا فِي الْغَارِ اِذْ يَقُولُ لِصَاحِبِهِ لَا تَحْزَنْ اِنَّ اللّٰهَ مَعَنَا فَاَنْزَلَ
اللّٰهُ سَكِينَتَهُ عَلَيْهِ وَاَيَّدَهُ بِجُنُودٍ لَمْ تَرَوْهَا وَجَعَلَ كَلِمَةَ الَّذِينَ
كَفَرُوا السُّفْلٰى وَكَلِمَةُ اللّٰهِ هِيَ الْعُلْيَا وَاللّٰهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٤٠﴾

40- "Eğer siz, peygambere yardım etmezseniz, biliyorsunuz ki, inkâr edenler onu iki kişiden biri olarak Mekke'den çıkardıkları zaman, ona bizzat Allah yardım etmişti. Hani onlar mağarada bulunuyorlardı. Hani o, arkadaşına: 'Üzülme, çünkü Allah bizimle beraberdir' diyordu. Allah da onun üzerine güven duygusu ve huzur indirmiş, Sizin kendilerini görmediğiniz birtakım ordularla onu desteklemiş, inkâr edenlerin sözünü alçaltmıştı. Allah'ın sözü ise en yücedir. Allah, mutlak güç sahibidir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Bu ender yardımın özelliklerinden biri, Hz. Peygamber'in (s.a.v), ikincisi olan beraberindeki arkadaşında ünsiyet aramaması, aksine Hz. Ebubekir'i Allah'a yönlendirmesi ve huzuru kendisinde bulmaktan onu alıkoyup şöyle buyurmasıdır:

*"Üçüncüleri Allah olan iki kişi hakkında ne zannedersin?"*

(اِذْ يَقُولُ لِصَاحِبِهِ لَا تَحْزَنْ اِنَّ اللّٰهَ مَعَنَا) *"Hani o, arkadaşına: 'Üzülme, çünkü Allah bizimle beraberdir' diyordu."*

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bu yardımın bir özelliği de Allah'ın, Hz. Peygamber'i (s.a.v.) o durumda keşif halinde bırakmasıdır. Eğer Allah'ın yardımı olmasaydı, keşfin ağırlığı altında ezilirdi.

- Hz. Peygamber (s.a.v.), hakikatte yeryüzündekilerin güvencesidir. Nitekim Allah, ona hitaben şöyle buyurmuştur:

(وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُعَذِّبَهُمْ وَاَنْتَ فِيهِمْ) *"Sen, onların içinde iken, Allah onlara azap edecek değildir."* (Enfâl, 8/33)

Zahirde ise Allah, Hz. Peygamber'i (s.a.v) mağaranın kapısında ağını ören örümceğin korumasına emanet edip Mekkelilerin komplosundan kurtarmıştır.

- Eğer bu mağaraya girilseydi, örümceğin ağı yırtılırdı. Bu sebeple Allah'ın, sevgili peygamberinin (s.a.v.) kıssasını saklı tutması ne kadar da hayrete şayan bir durumdur!

- Söylenen şu söz doğrudur: Mekânlar elden ele geçer. Zira o mağaranın, bu büyük insanın sığınağı olacağı, hiç kimsenin aklına bile gelmemiştir. Fakat Allah, merhametini dilediğine tahsis eder.

(وَاللّٰهُ يَخْتَصُّ بِرَحْمَتِهِ مَنْ يَشَآءُ) *"Allah, rahmetini dilediğine tahsis eder."* (Bakara, 2/105)

- Bütün mağaralar, yılanların barınakları değildir. Onlardan bazısı da sevgililerin sığınaklarıdır.

- Bir kavmin kalpleri arşa bağlandı ve onlar, Hakk'ı oradan aradılar. Nitekim Allah da şöyle buyurmaktadır:

*"Hani o, arkadaşına: 'Üzülme, çünkü Allah bizimle beraberdir' diyordu."*

Bu itibarla her ne kadar Allah, her türlü mekândan münezzeh ise de bu hitapta vecd sahiplerinin sırları için hayat vardır.

Şiir:

*Ey Allah'ı, O'nunla yükselmiş arşta arayan*
*Arşı arama! Mağaradadır erdem*

Bu arada ayette, Hz. Ebubekir'in arkadaşlığının hakiki olduğuna dair delil vardır. Zira Allah, onu Hz. Peygamber'in (s.a.v.) arkadaşı olarak adlandırmış, imanda ve mağarada ikincisi saymış, kabirde komşusu kılmıştır. Cennette ise arkadaşı olacaktır.

(فَاَنْزَلَ اللّٰهُ سَكِينَتَهُ عَلَيْهِ) *"Allah da onun üzerine güven duygusu ve huzur indirdi."*

"عليه (aleyhi)" lafzındaki "هُ (hu)" zamiri, Hz. Peygamber'e gitmektedir. Hz. Ebubekir'e gitmesi de muhtemeldir. Şayet zamirin, Hz.

Ebubekir'e gittiği kabul edilirse, bu takdirde huzurun indirilmesi, müminlerin içinden bir kez de ona mahsus bir özellik olarak zikredilmiş olur. Çünkü Allah, başka bir ayette şöyle buyurmuştur:

(هُوَ الَّذِيَ اَنْزَلَ السَّكِينَةَ فِي قُلُوبِ الْمُؤْمِنِينَ) *"Müminlerin kalplerine huzuru indiren O'dur."* (Fetih, 48/4)

Burada ise Allah, Hz. Ebubekir için özel olarak:

*"Allah da onun üzerine güven duygusu ve huzur indirdi"* buyurmuştur. Aynı şekilde Hz. Peygamber de şöyle buyurmuştur:

*"Allah, insanlara genel olarak tecelli eder, Ebubekir'e ise özel olarak tecelli eder."*

Bu arada Hz. Ebubekir'in o gün Hz. Peygamber için duyduğu üzüntü, kendisi için değil, ona olan şefkatinden dolayı idi. Sonra Hz. Peygamber, üzülmesine karşı çıktı ve: *"Üzülme! Şüphesiz Allah bizimle beraberdir"* dedi. Allah ile beraberlikten başka bir şeyle geçmeyen üzüntü ise, ancak ve ancak Hakk'ın hakkı için olur.

(وَاَيَّدَهُ بِجُنُودٍ لَمْ تَرَوْهَا وَجَعَلَ كَلِمَةَ الَّذِينَ كَفَرُوا السُّفْلٰى وَكَلِمَةُ اللّٰهِ هِيَ الْعُلْيَا وَاللّٰهُ عَزِيزٌ حَكِيمٌ) *"Sizin kendilerini görmediğiniz birtakım ordularla onu desteklemiş, inkâr edenlerin sözünü alçaltmıştı. Allah'ın sözü ise en yücedir. Allah, mutlak güç sahibidir, hüküm ve hikmet sahibidir."*

Ayette Allah'ın desteklediği kişiden maksat, Hz. Peygamber'dir. Adı geçen ordular ise, keşiflerin tecelli etmesi suretiyle, kesin inancın artışlarının sırlardaki tezahürleridir.

(وَجَعَلَ كَلِمَةَ الَّذِينَ كَفَرُوا السُّفْلٰى) *"İnkâr edenlerin sözünü alçaltmıştı."* Allah, bunu dininin delillerini ortaya koymak, hakka ve imana götüren yolları hazırlamak suretiyle yapmıştır. Böylece hakkın bayrakları ebediyete dek yükseklerde dalgalanacak, bâtılın çarpıtmaları yerlerde sürünecek, hakkın taraftarları muzaffer olacak, bâtılınkiler ise kahra uğrayacaktır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Hz. Ebubekir, mağarada Hz. Peygamber ile baş başa kalıp onun sırrının üstüne Hz. Peygamber'in arkadaşlığının ışıkları doğup ışıklarının parıltıları üstüne düşünce ve kararlılığını yitirdiği için Allah'a sığınınca, Hz. Peygamber ona, Allah'ın yakınlığını haber vermek suretiyle tedirginliklerini giderdi. Böylece huzursuzluğunun yerini sükûnet, sığınma arzusunun yerini ise tatmin almış oldu. Bir de Allah, onun üzerine yüceliğini görebilmesini sağlayan huzuru indirdi.

- Hz. Peygamber, benzerliği sebebiyle görünürde ikinin ikincisi iken, sırrıyla onun varlık âlemi, bir olan Allah'ta yok olmuştu.

اِنْفِرُوا خِفَافًا وَثِقَالًا وَجَاهِدُوا بِاَمْوَالِكُمْ وَاَنْفُسِكُمْ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ
ذٰلِكُمْ خَيْرٌ لَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٤١﴾

41- "Size kolay da gelse ağır da gelse, Allah yolunda sefere çıkın. Mallarınızla, canlarınızla Allah yolunda cihad edin. Eğer bilirseniz, bu sizin için daha hayırlıdır."

Allah onlara, hakkını gözetmelerini ve bütün hallerinde emrini yerine getirmeye koşmalarını emretmiştir.

(خِفَافًا) *"Size kolay da gelse."* Yani kalplerinizin huzurlu olduğu durumda. Böylece çabalarınızda zorluk hissetmeyeceksiniz.

(وَثِقَالًا) *"Ağır da gelse."* Siz, zorlukların yorgunluğunu çekmede kendinize döndürüldüğünüz zaman. Çünkü her iki durum için de sizden biat alınmıştır.

Bir yoruma göre de kolay gelmek, talep ve tercihlerin köleliğinden kurtulma durumunu, ağır gelmek ise kalplerin üzerinde ihtiyaçların ağırlığının oluşunu ve Allah'ın, ihtiyaçları yerine getirmesini ummayı ifade etmektedir.

لَوْ كَانَ عَرَضًا قَرِيبًا وَسَفَرًا قَاصِدًا لَاتَّبَعُوكَ وَلٰكِنْ بَعُدَتْ عَلَيْهِمُ
الشُّقَّةُ وَسَيَحْلِفُونَ بِاللّٰهِ لَوِ اسْتَطَعْنَا لَخَرَجْنَا مَعَكُمْ يُهْلِكُونَ
اَنْفُسَهُمْ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ اِنَّهُمْ لَكَاذِبُونَ ﴿٤٢﴾

42- “Eğer yakın bir dünya menfaati ve kolay bir yolculuk olsaydı, sefere katılmayan münafıklar da mutlaka sana uyarlardı. Fakat meşakkatli yol, onlara uzak geldi. Gerçi onlar: ‘Eğer gücümüz yetseydi, elbette sizinle beraber çıkardık’ diye Allah’a yemin edeceklerdir. Onlar, kendilerini helâke sürüklüyorlar. Allah, biliyor ki onlar kesinlikle yalancıdırlar.”

Ayette geçenlerden maksat, Tebûk Gazvesi’nden geri duranlardır. Allah, mesafenin yakın, işin de kolay olması halinde bunların, Hz. Peygamber ile beraber olmaktan geri durmayacaklarını açıklamıştır. Çünkü niyeti hakikati bulmak olmayan kimsenin çabası sonuç vermez. Kenarda durur ve tali tasarruflarda bulunur. Eğer bir iyilik yakalarsa onunla tatmin olur. Bir fitneye maruz kaldığı zaman ise gerisingeriye döner. Allah şöyle buyurur:

(فَإِذَا عَزَمَ الْأَمْرُ فَلَوْ صَدَقُوا اللّٰهَ لَكَانَ خَيْرًا لَهُمْ) *“İş ciddileştiği zaman, Allah’a verdikleri söze bağlı kalsalardı, elbette kendileri için daha iyi olurdu.”* (Muhammed, 47/21)

O halde sen, müridin ruhsatlara uyduğunu, tembelliğe meylettiğini ve tevillerin arkasına sığındığını gördüğün zaman, bil ki o yoldan (tarikattan) ayrılmış ve sülûktan geri durmuştur.

Şiir:

*Böyledir bezgin kişi, bağı koparmak istediğinde*
*Usanır vuslattan ve: Şöyle şöyle oldu, der*

Talepte ciddi olan ise başarısızlığa mahkûm olmaz, yürüyüşünü sürdürür, sıkıntı ve zorluk çekmekten de yakınmaz.

Şiir:

*Sonra gece sessizce yol aldım*
*Ne aslandan ne de kurttan korkmaksızın*
*Bana galebe çalardı arzum ve alırdım yolu ben*
*Arzu, devam etmekte sahibine galebe çalmaya*

(وَسَيَحْلِفُونَ بِاللّٰهِ لَوِ اسْتَطَعْنَا لَخَرَجْنَا مَعَكُمْ) *“Eğer gücümüz yetseydi, elbette sizinle beraber çıkardık, diye Allah’a yemin edeceklerdir.”*

Bahane uyduran ve tevile yeltenen kimsenin yemini yalan bir yemindir. Yalan oluşuna, feraset gözleri tanıklık etmekte, kalpler kendisinden nefret etmekte ve böylece o, kalplerde yer bulamamaktadır.

عَفَا اللّٰهُ عَنْكَ لِمَ اَذِنْتَ لَهُمْ حَتّٰى يَتَبَيَّنَ لَكَ الَّذٖينَ صَدَقُوا وَتَعْلَمَ الْكَاذِبٖينَ ﴿٤٣﴾

43- "Allah seni affetsin! Doğru söyleyenler sana iyice belli olup yalancıları bilinceye kadar beklemeden niçin onlara izin verdin?"

Hz. Peygamber, haddi aşmamış ve sakıncalı bir iş yapmamıştır. Yaptığı şey, daha iyi olanı terk etmiş olmasıdır. Bu arada Allah, affı sitem şeklindeki: (لِمَ اَذِنْتَ لَهُمْ) "*Niçin onlara izin verdin?*" hitabının önüne almıştır.

Bu sitem, bir emri tebliğ etmek veya dinî bir hüküm koymakla ilgili olmadığı zaman, peygamberler hakkında yanılgının caiz olduğunu da gösteriyor olabilir. Bu, mazeret sormadan bağışlamak demektir. Esasen dostun dosta karşı olan prensibi de budur.

Şiir:

*Düşüremediler gammazlar seni mertebenden*
*Yanımdaki, ve sana zarar veremedi hiçbir gıybetçi*
*Sanki onlar bilmeden övdüler*
*Seni nazarımda, ayıpladıkları şeylerle*

Başka bir izaha göre, iyilik dahi olsa, düşmanların iyilikleri geri çevrilir. Kötülük dahi olsa, dostların kötülükleri bağışlanmaya değer.

Şiir:

*Kim hesap sorar ki, sevdiğine hatası sebebiyle*
*Kalpte onun, aracılığı geçerli bir aracısı varken*

لَا يَسْتَاْذِنُكَ الَّذ۪ينَ يُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ اَنْ يُجَاهِدُوا
بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ وَاللّٰهُ عَل۪يمٌ بِالْمُتَّق۪ينَ ﴿٤٤﴾

44- "Allah'a ve ahiret gününe iman edenler, mallarıyla ve canlarıyla cihad etmekten geri kalmak için senden izin istemezler. Allah, kendine karşı gelmekten sakınanları çok iyi bilendir."

İtikadında samimi olan, hiçbir şeyi Allah'ın emrine tercih etmez. O'nun yolunda güç tüketirken, çaba harcarken, çile çekerken ve gayret sarf ederken imkanı dahilindeki hiçbir şeyi esirgemez.

اِنَّمَا يَسْتَاْذِنُكَ الَّذ۪ينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَارْتَابَتْ
قُلُوبُهُمْ فَهُمْ ف۪ي رَيْبِهِمْ يَتَرَدَّدُونَ ﴿٤٥﴾

45- "Ancak Allah'a ve ahiret gününe inanmayan, kalpleri şüpheye düşüp kendileri de o şüphelerinin içinde bocalayan kimseler senden izin isterler."

Kim, sorumluluk üstlenmekten kaçmak isterse, iman ve tasdik sahibi olmaması ve şüphenin, kalbinde ve mana dünyasında yer etmesi sebebiyle, gecikmek ve geri durmak için fırsat kollar. İşte bu kimseler, şüphe ve kuşkuları içerisinde gidip gelirler."

وَلَوْ اَرَادُوا الْخُرُوجَ لَاَعَدُّوا لَهُ عُدَّةً وَلٰكِنْ كَرِهَ اللّٰهُ انْبِعَاثَهُمْ
فَثَبَّطَهُمْ وَق۪يلَ اقْعُدُوا مَعَ الْقَاعِد۪ينَ ﴿٤٦﴾

46- "Eğer onlar savaşa çıkmak isteselerdi, elbette bunun için bir hazırlık yaparlardı. Fakat Allah, onların harekete geçmelerini istemedi de onları geri bıraktı ve onlara: 'Oturun, oturan acizlerle beraber' denildi."

Yani eğer itaatte samimi olsalardı, çaba ve güç harcayarak savaşa çıkmayı kabul edeceklerdi. Fakat niyetleri hastalıklı olduğundan, savaşa çıkmalarına engel olan bönlükleri ortaya çıktı.

Şiir:

*Arzun samimi olsaydı eğer*
*Gösterilirdi sana tedbirler*

(وَلٰكِنْ كَرِهَ اللّٰهُ انْبِعَاثَهُمْ فَثَبَّطَهُمْ وَقِيلَ اقْعُدُوا مَعَ الْقَاعِدِينَ) *"Fakat Allah, onların harekete geçmelerini istemedi de onları geri bıraktı ve onlara: Oturun, oturan acizlerle beraber, denildi."*

Allah, onları mükellefiyet bakımından savaşa çıkmakla yükümlü kıldı. Fakat rezil olmaları için onları evlerinde tuttu. Böylece Allah, bu kimseleri sorumluluk prensibiyle davet ederken, tekvin emriyle uzaklaştırdı.

لَوْ خَرَجُوا فِيكُمْ مَا زَادُوكُمْ اِلَّا خَبَالًا وَلَاَوْضَعُوا خِلَالَكُمْ
يَبْغُونَكُمُ الْفِتْنَةَ وَفِيكُمْ سَمَّاعُونَ لَهُمْ وَاللّٰهُ عَلِيمٌ بِالظَّالِمِينَ ﴿٤٧﴾

47- "Eğer onlar da sizin içinizde savaşa çıksalardı, size bozgunculuktan başka bir katkıları olmayacak ve sizi fitneye düşürmek için, aranızda koşuşturacaklardı. Aranızda onları dinleyecek kişiler de vardı. Allah, zalimleri hakkıyla bilendir."

Allah, bu ayette onlar hakkındaki ezeli ilminden haber vermek ve olmayacak olanı bildiğini anlatmak amacıyla şunu demek istemiştir: Eğer onlar, savaşa çıkmada size yardım etselerdi, aranızda fitne meydana getirecek olan kötü huyları, içinizde gammazlık yapmaları ve sizi üzecek şeyler yapmaya çaba harcamaları sonucu uğrayacağınız sıkıntılar, savaştan geri durmalarıyla sayınızda meydana gelen eksilmeden daha büyük olurdu. Zararı faydasından fazla olan kimsenin ise, yokluğu varlığından iyidir. Kötülükten başka bir şey üretemeyen kimsenin de bulunmaması bulunmasından daha faydalıdır.

لَقَدِ ابْتَغَوُا الْفِتْنَةَ مِنْ قَبْلُ وَقَلَّبُوا لَكَ الْاُمُورَ حَتّٰى جَٓاءَ الْحَقُّ
وَظَهَرَ اَمْرُ اللّٰهِ وَهُمْ كَارِهُونَ ﴿٤٨﴾

48- "Andolsun bunlar daha önce de fitne çıkarmak istemişler ve sana karşı türlü türlü işler çevirmişlerdi. Nihayet hak geldi ve onlar, istemedikleri halde Allah'ın dini galip geldi."

Onlar, görünürde sizinle uyum içinde olduklarını söyleseler de, içlerinde size karşı ikiyüzlü davrandılar. Sizi desteklediklerini açıkladılar; ancak komplolarıyla işlerinizi karıştırmak istediler. Nihayet Allah, gizli hallerini ifşa ederek onları rezil edince, siz de iç sırlarının hakikatini anlayarak onlardan sakınmış oldunuz.

وَمِنْهُمْ مَنْ يَقُولُ ائْذَنْ لِي وَلَا تَفْتِنِّي اَلَا فِي الْفِتْنَةِ سَقَطُوا وَاِنَّ
جَهَنَّمَ لَمُحِيطَةٌ بِالْكَافِرِينَ ﴿٤٩﴾

49- "Onlardan: Bana izin ver, beni fitneye sevk etme, diyen de vardır. Bilesiniz ki onlar, böyle diyerek fitnenin ta içine düştüler. Şüphesiz ki cehennem kâfirleri elbette kuşatacaktır."

Onlar, çirkin davranışlarını kötülükten çıkış gibi göstermiş, karakter ve ahlaklarının kötülüğü konusunda Hz. Peygamber ve Müslümanları yanıltmak istemişlerdir. Bunun üzerine Allah, sözleriyle kötülükten kaçındıklarını iddia edenlerin, fiilleriyle o kötülüğün içine düştüklerini açıkladı. Zaten nefsinin arzularına dayanan kimse, musibet vadisinde bocalar. Ahirette ise delile ihtiyaç göstermeyecek bir perişanlığa maruz kalacaktır.

اِنْ تُصِبْكَ حَسَنَةٌ تَسُؤْهُمْ وَاِنْ تُصِبْكَ مُصِيبَةٌ يَقُولُوا قَدْ اَخَذْنَا
اَمْرَنَا مِنْ قَبْلُ وَيَتَوَلَّوْا وَهُمْ فَرِحُونَ ﴿٥٠﴾

50- "Sana bir iyilik gelirse, bu onları üzer. Eğer başına bir musibet gelirse: 'Biz, tedbirimizi önceden almıştık' derler ve sevinerek dönüp giderler."

İşte kıskancın karakteri böyledir. Başkasında güzellik gördüğü zaman, kalbinden iniltinin sesleri yükselir ve o, musibetin gelişinden başka bir şeye kalben sevinmez. Ayrıca kıskancın yaralarının

hiçbir tedavisi de yoktur. Çünkü o, nimetin yok olmasından başka bir şeye razı olmaz.

Şiir:

*Her türlü düşmanlığın yok edilmesi umulabilir*
*Kıskançlıktan dolayı sana düşmanlık yapanın düşmanlığı hariç*

Allah da, kıskancın cezasını dünyada peşin vermiştir. Bu ceza, kıskandığı kişinin selametine kalben üzülmesidir. Böylece kıskanılana nimet, kıskanca da ceza dünyada peşin verilmiştir.

قُلْ لَنْ يُصِيبَنَآ اِلَّا مَا كَتَبَ اللّٰهُ لَنَا هُوَ مَوْلٰينَا وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُونَ ﴿٥١﴾

51- "De ki: 'Bizim başımıza ancak, Allah'ın bizim için yazdığı şeyler gelir. O, bizim yardımcımızdır.' Öyleyse müminler, yalnız Allah'a tevekkül etsinler."

Düşmanın kötülemeleri mümini etkilemez. Çünkü o, Mevlâ'sının muradından başkasını dikkate almaz. Bu itibarla mümin, kendisine ulaşan şeyin Mevlâ'sının muradı olduğundan emin olduğu için, nefsinin arzuladığını kalbinden atar. Aynı zamanda Mevlâ'sından geleni, saf bir hoşnutlukla karşıladığı için zor olan sıkıntıyı da tatlı bulur.

Bu mealde söylenen bir şiir şöyledir:

*Bizi kıskanan sizi sevindirdiyse eğer*
*Sizi hoşnut ettiği zaman acı vermez hiçbir yara*

Bir yoruma göre de, takdirin cereyan etmesi, her zorluğun kul üzerindeki yorgunluğunu hafifletir.

(هُوَ مَوْلٰينَا) "*O, bizim yardımcımızdır.*" Bu ifade, kula, Allah'ın dilediğini yapma hakkına sahip olduğunu öğretmektedir. Çünkü Allah'ın iradesi, mâlikin mülkünde tasarrufta bulunması demektir. Böylece Allah, hükmünün hakkıyla, iradesini ortaya koyup uygulamaktadır.

(وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُونَ) *"Öyleyse müminler, yalnız Allah'a tevekkül etsinler."*

Tevekkülün başlangıcı, Allah'ın vaadine güvenmek, sonra tercihine rıza göstermek, sonra da kalbe hâkim olan zikirleriyle kulun, kendi işlerini unutmasıdır.

Bir yoruma göre de tevekkül, emir gelince sırrın sükûnet bulması ve işi sonuna kadar Allah'a havale etmektir. Bu durumda tatlı ile acı ve nimet ile meşakkat aynı olur.

قُلْ هَلْ تَرَبَّصُونَ بِنَٓا اِلَّٓا اِحْدَى الْحُسْنَيَيْنِ وَنَحْنُ نَتَرَبَّصُ بِكُمْ اَنْ يُصِيبَكُمُ اللّٰهُ بِعَذَابٍ مِنْ عِنْدِهٖٓ اَوْ بِاَيْدِينَا فَتَرَبَّصُوٓا اِنَّا مَعَكُمْ مُتَرَبِّصُونَ ﴿٥٢﴾

52- "De ki: 'Bizim için siz, ancak iki güzellikten birini bekleyebilirsiniz. Biz de Allah'ın, kendi katından veya bizim ellerimizle size ulaştıracağı bir azabı bekliyoruz. Haydi bekleyedurun. Şüphesiz biz de sizinle birlikte beklemekteyiz.'"

Allah, bu ayette müminler ile kâfirler arasındaki farkı açıklamış ve bu amaçla şunu demek istemiştir: Bekleyenlere de ki: Ey kâfirler, eğer savaşta sıkıntı yaşamak müminlerin durumunun gereği ise veya müminler ölüme maruz kalacak ise söz konusu iki durumdan hangisiyle karşılaşırlarsa karşılaşsınlar, bu onlar için Allah'tan bir nimettir. Çünkü eğer biz size karşı zafer kazanırsak, bu bizim için yardım ve ganimet, din için de kuvvet ve üstünlük olur. Şayet öldürülürsek, bu da bizim için şehitlik, rahmet, Allah'ın rızası ve O'na yakınlık olur. Eğer dünyada başımıza gelenler, bir zarar ve musibet ise bu da ecir ve sevaba sebep olur. Öyleyse her halde bizim karşımıza sadece güzellik ve nimet çıkacaktır. Size gelince; eğer size karşı zafer kazanırsak bu, dünyada zelil ve mutsuz olmanız demektir. Öldürüldüğünüz takdirde de Allah'tan size azap ve gazap vardır. Şayet şimdilik siz kazanırsanız, sonuçta Allah sizi bununla perişan edecek, ayrıca bu sizin için azap sebebi ve fazlasıyla felaket olacaktır.

(هَلْ تَرَبَّصُونَ بِنَآ اِلَّآ اِحْدَى الْحُسْنَيَيْنِ) *"Bizim için siz, ancak iki güzellikten birini bekleyebilirsiniz"* ifadesi şöyle de yorumlanmıştır: Ya biz Allah'ın emrini hemen yerine getirdiğimiz için O'nun rızasını kazanmış oluruz. Bu da hakikatte en büyük cennettir. Veya biz, şehit sıfatıyla kıyamette Allah'a kavuşacak ve O'na yakınlığı kazanacağız. Bu da en büyük ilahî lütuftur.

قُلْ اَنْفِقُوا طَوْعًا اَوْ كَرْهًا لَنْ يُتَقَبَّلَ مِنْكُمْ اِنَّكُمْ كُنْتُمْ قَوْمًا فَاسِقِينَ ﴿٥٣﴾

53- "Yine de ki: 'İster gönüllü, ister gönülsüz olarak harcayın, sizden asla kabul olunmayacaktır. Çünkü siz fâsık bir topluluksunuz.'"

Geri çevrilenin yakınlaşma çabası kabul edilmez ve şakiliğinin hükmü de, zorlama ve yapmacık davranışları çoğaltmakla değişmez. Bir yoruma göre de, düşmanın yakınlaşma çabası, kendisine yönelik gazabın artmasına sebep olur. Sevgilinin sevecenliği ise ona daha çok şefkat göstermeyi gerektirir. Nitekim Allah şöyle buyurmuştur:

(فَاُولٰٓئِكَ يُبَدِّلُ اللّٰهُ سَيِّاٰتِهِمْ حَسَنَاتٍ) *"Allah, o kimselerin kötülüklerini iyiliklere çevirir."* (Furkân, 25/70)

وَمَا مَنَعَهُمْ اَنْ تُقْبَلَ مِنْهُمْ نَفَقَاتُهُمْ اِلَّآ اَنَّهُمْ كَفَرُوا بِاللّٰهِ وَبِرَسُولِهِ وَلَا يَاْتُونَ الصَّلٰوةَ اِلَّا وَهُمْ كُسَالٰى وَلَا يُنْفِقُونَ اِلَّا وَهُمْ كَارِهُونَ ﴿٥٤﴾

54- "Harcamalarının kabul edilmesine, yalnızca Allah'ı ve Resûlünü inkâr etmeleri, namaza ancak üşene üşene gelmeleri ve ancak gönülsüzce harcamaları engel olmuştur.

Onlar, mallarıyla ilgili tutumlarında içtenliği yitirince hallerinde de bir özelliğe sahip olamadılar ve hem dünyalarında hem de ahiretlerinde kurtuluştan mahrum kaldılar.

(وَلَا يَاْتُونَ الصَّلٰوةَ اِلَّا وَهُمْ كُسَالٰى) *"Namaza ancak üşene üşene gelirler."* Her kim, coşkulu arzunun sürüklemesi olmaksızın, sırf âdet yerini bulsun diye ibadet yaparsa, ibadetinde huzur ve bereket bulamaz.

Bir yoruma göre de kim, açıktan yaptığı amellerinde halkı dikkate alır ve gizli hallerinde tembelliğe kapılırsa, o perişanlık damgası yemiş ve mahrumiyetle mühürlenmiş olur. Bu da, ayrılığın ve kopuşun göstergesidir. Allah şöyle buyurur:

(وَمَكَرُوا وَمَكَرَ اللّٰهُ وَاللّٰهُ خَيْرُ الْمَاكِرِينَ) *"Onlar tuzak kurdular. Allah da tuzak kurdu. Allah, tuzak kuranların en hayırlısıdır."* (Âl-i İmrân, 3/54)

فَلَا تُعْجِبْكَ اَمْوَالُهُمْ وَلَٓا اَوْلَادُهُمْ اِنَّمَا يُر۪يدُ اللّٰهُ لِيُعَذِّبَهُمْ بِهَا فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَتَزْهَقَ اَنْفُسُهُمْ وَهُمْ كَافِرُونَ ﴿٥٥﴾

55- "Onların malları ve çocukları seni imrendirmesin. Allah, bununla ancak onlara dünya hayatında azap etmeyi ve canlarının kâfir olarak çıkmasını istiyor."

Allah, bu ayette kâfirlerin nimet saydıkları ve Allah'tan bir lütuf olarak kabul ettikleri şeyin hakikatte sıkıntı ve şakilik ile ayrılığın sebebi olduğunu açıklamıştır. İlahî takdir, lezzet aradıkları şarapta onlar için musibet zehirleri hazırlamıştır.

(أَيَحْسَبُونَ أَنَّمَا نُمِدُّهُمْ بِهِ مِنْ مَالٍ وَبَنِينَ نُسَارِعُ لَهُمْ فِي الْخَيْرَاتِ بَلْ لَا يَشْعُرُونَ) *"Kendilerine bol bol verdiğimiz mal ve evlatla onların iyiliğine koştuğumuzu mu sanıyorlar? Hayır, onlar farkına varmıyorlar."* (Müminûn, 23/55, 56)

وَيَحْلِفُونَ بِاللّٰهِ اِنَّهُمْ لَمِنْكُمْ وَمَا هُمْ مِنْكُمْ وَلٰكِنَّهُمْ قَوْمٌ يَفْرَقُونَ ﴿٥٦﴾

56- "Kesinlikle sizden olduklarına dair Allah'a yemin ederler. Oysa onlar, sizden değillerdir. Fakat onlar, korkudan ödleri patlayan bir topluluktur."

Yalan yeminlerle yakınlaşmaya çalışmak, kalplerin kabulden uzak kalmasına sebep olmaktan başka bir işe yaramaz. Bir yoruma göre de, yanıltıcı davranışlar sergilemek, sükûneti geri getirip sırları tatmin etmez, güven ve itimadı geri getirip basiretlere şifa vermez. Olmayacak olan şey, hiçbir tedbirle gerçekleşemeyeceği gibi, olması mukadder olan da olacaktır.

لَوْ يَجِدُونَ مَلْجَاً اَوْ مَغَارَاتٍ اَوْ مُدَّخَلًا لَوَلَّوْا اِلَيْهِ وَهُمْ يَجْمَحُونَ ﴿٥٧﴾

57- "Eğer sığınacak bir yer veya gizlenecek mağaralar yahut girilecek bir delik bulsalardı, hemen koşarak oraya kaçarlardı."

Dostlukta samimiyetsiz olan kimse, en zayıf bir gerekçeyle dostluk çizgisinden kopar. Eğer kaçacağı bir yer bulursa, oraya sığınır ve kaçışına gerekçe kılacağı bir fırsat yakalamayı ümit eder.

وَمِنْهُمْ مَنْ يَلْمِزُكَ فِي الصَّدَقَاتِ فَاِنْ اُعْطُوا مِنْهَا رَضُوا وَاِنْ لَمْ يُعْطَوْا مِنْهَٓا اِذَا هُمْ يَسْخَطُونَ ﴿٥٨﴾

58- "İçlerinden sadakalar konusunda sana dil uzatanlar da var. Kendilerine ondan bir pay verilirse, hoşnut olurlar. Eğer kendilerine ondan bir pay verilmezse, hemen kızarlar."

Onlar tamahkâr kimseler olup birtakım menfaatler elde ettikleri sürece görünürde dalkavukluk yaparlar. Menfaatler kesildiği takdirde ise onlarla aranızda hiçbir dostluk yokmuş gibi dönüş yaparlar.

Bir yoruma göre de hoşnutluğu bir sebebe, öfkesi de menfaat elde etmesini sağlayan vasıtanın bulunmamasına bağlı olan kimse, dost olmaya ehil değildir. O, sadece menfaatini gözetir ve arkadaşlığa yaramaz. Hakiki dost ise şu şiirde belirtildiği gibidir:

*Yüksek değerler peşinde yürüdüm sana doğru ben*
*Oysa geçim peşinde yürüdü benim dışımdakiler*

وَلَوْ اَنَّهُمْ رَضُوا مَٓا اٰتٰيهُمُ اللّٰهُ وَرَسُولُهُ وَقَالُوا حَسْبُنَا اللّٰهُ سَيُؤْتِينَا اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهِ وَرَسُولُهُٓ اِنَّٓا اِلَى اللّٰهِ رَاغِبُونَ ﴿٥٩﴾

59- "Eğer onlar, Allah ve Resûlünün kendilerine verdiğine razı olup: 'Bize Allah yeter. Lütuf ve ihsanıyla Allah ve Resûlü ileride yine

verir. Biz, yalnız Allah'a rağbet ederiz' deselerdi, kendileri için daha hayırlı olurdu."

Eğer onlar, hoşnutluk sırrıyla Allah'ın yanında yer alsalardı, türlü türlü lütuflara ve hakiki gayelere kavuşacaklardı. Nimete kavuştuklarında da hiçbir zorluk çekmeden ve hiçbir yorgunluk hissetmeden Allah'a karşı takınmaları gereken edebi korumuş olurlardı. Ne var ki onlar, tamah noktasında kaldıklarından zül ve kavgalı duruma düştüler.

إِنَّمَا الصَّدَقَاتُ لِلْفُقَرَآءِ وَالْمَسَاكِينِ وَالْعَامِلِينَ عَلَيْهَا وَالْمُؤَلَّفَةِ قُلُوبُهُمْ وَفِي الرِّقَابِ وَالْغَارِمِينَ وَفِي سَبِيلِ اللّٰهِ وَابْنِ السَّبِيلِ فَرِيضَةً مِنَ اللّٰهِ وَاللّٰهُ عَلِيمٌ حَكِيمٌ ٦٠

60- "Sadakalar –zekâtlar- Allah'tan bir farz olarak ancak fakirler, düşkünler, zekât toplayan memurlar, kalpleri İslam'a ısındırılacak olanlarla köleler, borçlular, Allah yolunda cihad edenler ve yolda kalmış yolcular içindir. Allah, hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Fıkıh âlimleri, fakirin niteliği ve farz kılınan zekâtın taksimatındaki ihtiyaçları bakımından, fakir ile miskin arasındaki fark hakkında konuşmuşlardır. Bu çerçevede Ebû Hanîfe'ye (r.a.) göre, miskin hiçbir şeye sahip olmayan, fakir ise bir miktar geçim imkânına sahip olan kimse demektir.

Şâfiî'ye (r.a.) göre ise fakir hiçbir şeye sahip olmayan, miskin ise bir miktar geçim imkânına sahip olan kimse demektir. Yani durum, bir öncekinin aksinedir.

Marifet ehli de bu konuda ihtilafa düşmüş olup bazıları birinci görüşü, bazıları da ikinci görüşü savunmuşlardır. Ancak detayda bunların ihtilafı, fıkıh âlimlerinin ihtilafından farklıdır. Zira hem fıkıh âlimleri hem de marifet ehli, zekât alacak olan kimsenin, hali ve vaktine, varlığına, içeceğine ve konumuna işaret etmekle birlikte,

marifet ehlinden kimisine göre, farz kılınan zekâtı almak, diğer sadakaları almaktan daha iyidir. Çünkü Allah, zekâtı fakirin malı kıldığından, kendisine verilecek olan diğer nafile sadakalardan daha helaldir.

Marifet ehlinden bazılarına göre ise farz kılınan zekât belli kesimlerin hakkıdır. Marifet ehli olan kardeşlerinin ise zekâta muhtaç pay sahiplerini kendilerine tercih edip onlara ortak olmaya çalışmamaları daha iyidir. Bu görüşte olanlar: *"Biz isteyerek fakirliği tercih ettik. O halde neden farz kılınan zekâtı alalım!"* derler.

Sonra, sadece zekât konusunda değil, genel olarak marifet ehlinin prensiplerine göre, fakirliğin bazı mertebeleri vardır:

Önce ihtiyaç, sonra fakirlik, sonra miskinlik. Bu çerçevede ihtiyaç sahibi, dünyasına rıza gösterip ihtiyacını dünya ile kapatan kimsedir. Fakir, ahiretiyle yetinen ve ihtiyacı cennetle karşılanan kimsedir. Miskin ise Mevlâ'sından başkasına rıza göstermeyen; ne dünyaya iltifat eden, ne ahiretle uğraşan ne de Mevlâ'sından başkasıyla yetinen kimsedir.

Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur:

*"Allah'ım! Beni miskin olarak yaşat, miskin olarak canımı al ve miskinler zümresinde haşret!"*

Diğer bir hadiste de: *"Fakirlikten sana sığınırım"* buyurmuştur. Çünkü fakirin üzerinde bir dünya bakiyesi vardır. Bu bakiye sebebiyle de Rabbiyle arasına perde çekilmektedir.

Şöyle bir yorum yerinde olur: Hz. Peygamber'in (s.a.v.), Allah'a sığındığı fakirlik, elinde avucunda hiçbir imkânın olmamasıdır. Makbul olan miskinlik ise varlığı sayesinde kendisini ibadete verebileceği bir imkânının bulunmasıdır. Çünkü elinde hiçbir imkân bulunmadığı zaman, fakirliği onu, Allah'ın hakkını eda etmekten alıkoyar. Bu sebeple Hz. Peygamber (s.a.v.), fakirlikten Allah'a sığınmıştır.

Bazı kimselerin ise himmetleri, bu değerlendirmenin üstüne çıkmıştır. Nitekim onların prensiplerine uygun olan da budur. Onlara

göre gerçek fakir, yerle gök arasında hiçbir şeye sahip olmayan ve bilinenler dünyasında hiçbir şeyin meşgul edemediği kimsedir. Bu haliyle o, Allah'a dayanarak Allah'a kulluk eder. Allah, onu ibadet anlarında şuura kavuşturur. Başka zamanlarda ise o, varlıklardan habersizdir, Rabbi'ne dayanmaktadır ve kendi benliğinden bütünüyle kopuş halindedir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Fakir, Arap dilinde "omur" demek olan "fakra" kökünden olup omurları kırılan -beli bükülen, boynu bükük- kimse demektir.

- Gönül ehline göre fakir, iradesini kaybetmiş, yeri yurdu olmayan, tamamen kendinden geçtiği için varlığı enkaz haline gelen kimsedir. O kadar ki, kendisinden geride sadece hakkında rivayet edilenler kalmış olur.

Mısra:

*Emarelere gelince, yakında göçtüklerini haber verdi*

- Miskin, hali kendisini maksudunun kapısında bekleten kimsedir. Böylece o, kalbiyle itikâf halinde olup bir an bile Rabbi'nden gâfil kalmamaktadır.

(وَالْعَامِلِينَ عَلَيْهَا) "*Zekât toplayan memurlara*" gelince, fıkıh ilmine göre bunlar, bilinen şartlarına uygun olarak zekât toplama işini üstlenen kimselerdir.

İşaret ehli ıstılahında ise zekât almaktan en fazla sakınması gereken insanlar, Allah için olan amellerinde samimi olan kimselerdir. Çünkü onlar, amellerine karşılık olarak herhangi bir bedel beklememekte, hallerinin karşılığında da bir dünya metaı aramamaktadırlar.

Şiir:

*İsteyecek değilim ben sevgiye karşılık rüşveti*
*Çirkindir karşılığında sevap beklenen arzu*

(وَالْمُؤَلَّفَةِ قُلُوبُهُمْ) "*Kalpleri İslam'a ısındırılacak olanlara*" gelince, fıkıh ilmine göre bunlar, kendilerinde dine arzu oluşması için bir nevi iyilikte bulunularak kalpleri İslam'a meylettirilmek istenenlerdir. Bu çerçevede, gönüllerini almak için onların da zekâtta bir payları vardır. Ayrıca bu konunun, fıkıh meseleleri kapsamında bilinen izahları vardır.

Huzura varışı, bir tamah sebebiyle veya sevap kazanma veya bir makam görme ya da bir hale sahip olma amacına dönük olan kimselerin gönül ehli arasında yer alması söz konusu değildir. Bu, avamın vasıfları arasında yer alır. Havassa gelince onlar, şu beyitlerde dile getirildiği gibidirler:

*Seninle dünyalıklarını yok etmeyen*
*Ve kopmayan arzudan, insanlardan ve sevdiklerinden*
*Veya kul olan bir sevgi ateşine ki bir araya getirdi kendisi için*
*Dağınık duran sebepleri*
*İşte kalakalır o dereceler arasında*
*Bir dünyalığı elde etmek ya da güzel bir son için*

(وَفِي الرِّقَابِ ) "*Köleler*"den maksat, fıkıh ilmine göre azatlık sözleşmesi yapılan kölelerdir. Bu konunun, fıkıh meseleleri içerisinde bilinen izahları vardır.

Bu arada gönül ehli olanlar, sebebe takılıp kalmaları veya dünya ve ahiretle ilgili bir arzuları olması halinde hürriyetlerine kavuşamazlar. Zira onları hiçbir talep tahrik edemez. Şayet bir kimsede bu talepten bir kalıntı varsa, o kimse, hür olamamış bir köledir.

Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur:

*"Azatlık sözleşmesi yapılan kölenin üzerinde bir dirhem bile borç kaldığı sürece köleliği devam eder."*

Şiir:

*Zamandan bir muhal temenni ediyorum;*
*Gözlerimin hür bir insanın yüzünü görmesini*

(وَالْغَارِمِينَ) *"Borçlular"* fıkıh ilminde günah olmayan bir sebeple borç altına girmiş olan kimseler demektir.

Gönül ehli olanlar ise Hakk'ın mülkiyetinde kaldıkları sürece, borçları ödenemez. Bu nedenle:

*"Marifet, borcu ödenemeyen bir borçludur"* denilmiştir.

(وَفِي سَبِيلِ اللّٰهِ) *"Allah yolunda cihad edenler."* Fıkıh ilmine göre; her kim Allah yolunda yürürse onun için zekâtta bir pay vacip olur. Bu konunun izahı da fıkıh meseleleri içerisinde yer almıştır.

Tasavvufta ise her kim, Allah yolunda yürürse sorumluluklarla yükümlü olur. Bu çerçevede önce malını, sonra makam ve mevkiini, sonra da canını feda eder. Bu fedakârlıklar, tasavvuftaki ilk adımdır.

(وَابْنِ السَّبِيلِ) *"Yolda kalmış yolcular."* Fıkha göre yolcu, gurbete düşen, özel bazı vasıflar çerçevesinde vatanından ayrılan kimse demektir.

Tasavvuf ehline göre ise memleketindeki alakalardan kopup gurbete düştüğü zaman kul, artık Hakk'ın misafiridir. Bu takdirde yiyeceği açlık, meclisi halvet, içeceği muhabbet, müşahedesi dostluk, müşahede ettiği de Hak'tır.

Allah şöyle buyurmuştur:

(وَسَقٰيهُمْ رَبُّهُمْ شَرَابًا طَهُورًا) *"Rableri onlara tertemiz bir içecek içirecektir."* (İnsan, 76/21)

Bazıları için cennette verilen söz vardır. Diğer bazıları için de peşin nimet vardır. Bugün dostluğun, yarın da sevabın şarabı vardır.

Şu dizeler de bu mealde söylenmiştir:

*Yürür olmuştur toplumdaki nice yatalak şarabımızla*
*Ve gözü açılmış nice amanın üç kez içirmemizle*
*Otuz yıl konuşamayan nice dilsiz*
*Anlatır olmuştur, bir gün kendisine bade sunmamızla*

وَمِنْهُمُ الَّذِينَ يُؤْذُونَ النَّبِيَّ وَيَقُولُونَ هُوَ اُذُنٌ قُلْ اُذُنُ خَيْرٍ لَكُمْ يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَيُؤْمِنُ لِلْمُؤْمِنِينَ وَرَحْمَةٌ لِلَّذِينَ اٰمَنُوا مِنْكُمْ وَالَّذِينَ يُؤْذُونَ رَسُولَ اللّٰهِ لَهُمْ عَذَابٌ اَلِيمٌ ﴿٦١﴾

61- "Yine onlardan peygamberi inciten ve: 'O, her söyleneni dinleyen bir kulaktır' diyen kimseler de vardır. De ki: 'O, sizin için bir hayır kulağıdır ki, Allah'a inanır. İçinizden inanan kimseler için bir rahmettir.' Allah'ın Resulünü incitenler için ise elem dolu bir azap vardır."

Düşmanlık gözü -düşmanca bakan göz-, kusurları görmekle görevlidir. Rıza gözü -dostça bakan göz- ise, kusurlara kapalıdır. Onlar, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) sitem dilini uzatarak, büyüklüğünün nişanı ve faziletinin delili olan hususlarla onu ayıplayarak: "Güzel ahlakı sebebiyle, kendisine söyleneni dinliyor" dediler. Bunun üzerine Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurdu:

*"Mümin temiz kalpli ve iyidir. Münafık ise dolandırıcı ve kötüdür."*

(قُلْ اُذُنُ خَيْرٍ لَكُمْ يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَيُؤْمِنُ لِلْمُؤْمِنِينَ وَرَحْمَةٌ لِلَّذِينَ اٰمَنُوا مِنْكُمْ وَالَّذِينَ يُؤْذُونَ رَسُولَ اللّٰهِ لَهُمْ عَذَابٌ اَلِيمٌ)

*"De ki: 'O, sizin için bir hayır kulağıdır ki, Allah'a inanır. İçinizden inanan kimseler için bir rahmettir.' Allah'ın Resulünü incitenler için ise elem dolu bir azap vardır."*

"Akıllı adam kimdir?" diye sorulmuş ve cevabında: "Görmezden gelen zeki insan" demişlerdir.

Şu dizeler de aynı mealde söylenmiştir:

*İyi insana sahtekârlıkla geldiğin zaman*
*Ve amacın için karşılaştığın zaman davranır hemen*
*Bil ki, cahil değildir kandırdığın o kimse*
*Faziletiyle, kandırılmış gibi görünmektedir o iyi insan*

يَحْلِفُونَ بِاللّٰهِ لَكُمْ لِيُرْضُوكُمْ وَاللّٰهُ وَرَسُولُهُٓ اَحَقُّ اَنْ يُرْضُوهُ اِنْ
كَانُوا مُؤْمِنِينَ ﴿٦٢﴾

62- "Sizi razı etmek için Allah'a yemin ederler. Eğer gerçekten mümin iseler, Allah ve Resûlünü razı etmeleri daha önceliklidir."

Allah, insanlar için bezenen, onlara yakın olmaya çalışan, onların hoşnutluğunu devam ettiren ve bunun için arzularına uyan kimseyi, halkın nazarında da itibarsız kılar, bezenme vesilesi sandıkları hususlarla da onları ayıplı hale getirir. Boşa gitmeyen ise, sadece Allah rızasına dönük olandır. Allah'tan başkaları için olana gelince o, sahibi için bir vebaldir ve imkânsızın peşine düşmektir.

Bir yoruma göre de, onlara yemin de etsen insanlar seni tasdik etmezler. Oysa Hak, geri de kalsan seni kabul eder. Bu itibarla insanlarla uğraşmak, sana sevap kazandırmayan bir meşakkattir. Hakk'a yönelmek ise, karşılığında şükre nail olduğun bir nimettir. Karşılığında şükre nail olduğu şeyi terk edip karşılığında ecir bulunmayan şeyi tercih eden ise aldanmış kimsedir.

اَلَمْ يَعْلَمُوٓا اَنَّهُ مَنْ يُحَادِدِ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ فَاَنَّ لَهُ نَارَ جَهَنَّمَ خَالِدًا فِيهَا
ذٰلِكَ الْخِزْيُ الْعَظِيمُ ﴿٦٣﴾

63- "Allah'a ve Resûlü'ne karşı gelen kimseye, içinde ebedî kalacağı cehennem ateşinin olduğunu bilmediler mi? İşte büyük rezillik budur."

Her kim, Allah'ı inkâr eder ve Allah'a ait olan hakka layık olduğunu ileri sürdüğü hayali bir varlığı ispata yeltenmek suretiyle tevhidde O'na ortak koşarsa, cezası dünyada ayrılıkla, ahirette de ebediyen yanmak şeklinde verilir.

Şiir:

*Ayrılığa düşecek yarın hevâ ehli*
*Çoğalacak ağlayıp pişmanlık duyanlar*

يَحْذَرُ الْمُنَافِقُونَ اَنْ تُنَزَّلَ عَلَيْهِمْ سُورَةٌ تُنَبِّئُهُمْ بِمَا فِي قُلُوبِهِمْ قُلِ اسْتَهْزِؤُا اِنَّ اللّٰهَ مُخْرِجٌ مَا تَحْذَرُونَ ﴿٦٤﴾

64- "Münafıklar, kalplerinde olan şeyleri yüzlerine karşı açıkça haber verecek bir sûrenin üzerlerine indirilmesinden çekinirler. De ki: 'Siz, alay ede durun! Allah, çekindiğiniz o şeyi ortaya çıkaracaktır.'"

Onlar, Allah'ın kendilerini rezil etmeyeceğini sandılar. Bu amaçla sizi şaşırtmak istediler ve içlerindeki niyeti inkâr ettiler. Bunun üzerine Allah, önce onlara biraz mühlet tanıdı, ardından da münafıklıklarının üzerinden perdeyi kaldırarak hakikat ehli nezdinde kendilerini rezil etti. Böylece onlar, mahcubiyet örtüsüne büründüler. Oysa Allah hakikat ehli için, makbul olmanın sırlarını açmıştır. Biz, gurur ehlinin azabından Allah'a sığınırız.

(وَمَكَرُوا وَمَكَرَ اللّٰهُ وَاللّٰهُ خَيْرُ الْمَاكِرِينَ) *"Onlar, tuzak kurdular, Allah da tuzak kurdu. Allah, tuzak kuranların en hayırlısıdır."* (Âl-i İmrân, 3/54)

وَلَئِنْ سَاَلْتَهُمْ لَيَقُولُنَّ اِنَّمَا كُنَّا نَخُوضُ وَنَلْعَبُ قُلْ اَبِاللّٰهِ وَاٰيَاتِهِ وَرَسُولِهِ كُنْتُمْ تَسْتَهْزِؤُنَ ﴿٦٥﴾

65- "Şayet kendilerine sorsan: 'Biz, sadece lafa dalmıştık ve aramızda eğleniyorduk' derler. De ki: 'Allah'la, O'nun ayetleriyle ve peygamberiyle mi eğleniyordunuz?'"

Dine hakaret eden ve İslam'a saygısızlık yapmayı umursamayan kimse için Allah bunu dünyada musibete çevirir, ahirette de onu küçük düşürüp zelil kılmak suretiyle cezalandırır. Allah, asileri cezasız bırakmaz ve herkese bunu hak ettiği kadar tattırır.

لَا تَعْتَذِرُوا قَدْ كَفَرْتُمْ بَعْدَ اِيمَانِكُمْ اِنْ نَعْفُ عَنْ طَٓائِفَةٍ مِنْكُمْ نُعَذِّبْ طَٓائِفَةً بِاَنَّهُمْ كَانُوا مُجْرِمِينَ ﴿٦٦﴾

66- "Boşuna özür dilemeyin! Çünkü siz, sözde iman ettikten sonra küfrünüzü açığa vurdunuz. İçinizden bir zümreyi affetsek bile, suçlarında ısrar etmeleri sebebiyle, diğer bir zümreye azap edeceğiz."

Allah, işi ilahî takdire bağlayarak, affı ve azabı suç gerekçesinden, fiilin sebebini de kulun delilinden soyutlamıştır. Zira eğer affın veya azabın sebebi kulun vasfı olsaydı, Allah, aynı vasfa sahip oldukları zaman, kullara eşit muamelede bulunurdu. Oysa imandan sonra düştükleri küfürde ortak oldukları halde Allah, bazısını affedip diğer bazısını cezalandırmakla, dilediğini yaptığını ve dilediği kimseye dilediği özelliği verdiğini göstermiş olmaktadır.

اَلْمُنَافِقُونَ وَالْمُنَافِقَاتُ بَعْضُهُمْ مِنْ بَعْضٍ يَأْمُرُونَ بِالْمُنْكَرِ وَيَنْهَوْنَ
عَنِ الْمَعْرُوفِ وَيَقْبِضُونَ اَيْدِيَهُمْ نَسُوا اللّٰهَ فَنَسِيَهُمْ اِنَّ الْمُنَافِقِينَ
هُمُ الْفَاسِقُونَ ﴿٦٧﴾

67- "Münafık erkekler ve münafık kadınlar, birbirlerindendir. Kötülüğü emredip iyiliği yasaklarlar, ellerini de sıkı tutarlar. Onlar, Allah'ı unuttular. Allah da onları unuttu. Şüphesiz münafıklar, fâsıkların ta kendileridir."

Mümin, müminden güç alır. Münafık da münafıkla omuz omuza durur. Gökyüzünün kuşları da benzerleriyle birlikte olurlar. Bu itibarla münafık, münafığın dayandığı ve kendisiyle ayakta durduğu temeli ve dayanağıdır. Biri diğerini bozgunculuğunda desteklemekte ve hidayetine vesile olacak yolu karartmaktadır.

Mümin de mümine yardım eder; ona kusurlarını gösterir, günahlarından nefret ettirir ve bunları gözünde çirkin gösterir. Doğru yolda ona yardım eder ve kendisini bozgunculuktan uzaklaştırır.

(وَيَقْبِضُونَ اَيْدِيَهُمْ) "*Ellerini de sıkı tutarlar.*" Ellerini, Allah'tan ihtiyaçlarını talep etmekten alıkoyarlar.

(نَسُوا اللّٰهَ فَنَسِيَهُمْ) *"Onlar, Allah'ı unuttular. Allah da onları unuttu."* Allah, unutmalarından dolayı onları cezalandırdı. Burada unutmanın cezası, unutma diye adlandırılmıştır. Onlar, Allah'a itaat etmeyi terk edip muhalefet etmeyi tercih ettikleri için, Allah onları tercihleriyle baş başa bırakmıştır. Allah şöyle buyurmuştur:

(وَتَرَكَهُمْ فِي ظُلُمَاتٍ لَا يُبْصِرُونَ) *"Allah, onları göremez bir şekilde karanlıklar içinde bırakıverir."* (Bakara, 2/17)

وَعَدَ اللّٰهُ الْمُنَافِقِينَ وَالْمُنَافِقَاتِ وَالْكُفَّارَ نَارَ جَهَنَّمَ خَالِدِينَ فِيهَا
هِيَ حَسْبُهُمْ وَلَعَنَهُمُ اللّٰهُ وَلَهُمْ عَذَابٌ مُقِيمٌ ﴿٦٨﴾

68- "Allah, erkek münafıklara, kadın münafıklara ve kâfirlere, içinde ebedî kalmak üzere, cehennem ateşini va'detti. O, onlara yeter. Allah, onlara lanet etmiştir. Onlar için sürekli bir azap vardır."

Allah, onlara ahirette ateşi va'detti. Onlar için dünyada kalıcı azap vardır. Bu itibarla ahiretteki azapları yanmak, dünyadaki ise ayrılıktır.

كَالَّذِينَ مِنْ قَبْلِكُمْ كَانُوا اَشَدَّ مِنْكُمْ قُوَّةً وَاَكْثَرَ اَمْوَالًا وَاَوْلَادًا
فَاسْتَمْتَعُوا بِخَلَاقِهِمْ فَاسْتَمْتَعْتُمْ بِخَلَاقِكُمْ كَمَا اسْتَمْتَعَ الَّذِينَ
مِنْ قَبْلِكُمْ بِخَلَاقِهِمْ وَخُضْتُمْ كَالَّذِي خَاضُوا اُولٰٓئِكَ حَبِطَتْ
اَعْمَالُهُمْ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْخَاسِرُونَ ﴿٦٩﴾

69- "Ey münafıklar! Siz de tıpkı sizden öncekiler gibisiniz. Onlar, sizden daha güçlü, malları ve çocukları daha fazlaydı. Onlar, paylarına düşenden faydalanmışlardı. Sizden öncekilerin, paylarına düşenden faydalandığı gibi siz de payınıza düşenden önce faydalandınız ve onların daldığı gibi, siz de dünya zevkine daldınız. İşte onların dünyada da ahirette de amelleri boşa gitmiştir. İşte onlar, ziyana uğrayanların ta kendileridir."

Bu konuda şu iki yorum yapılmıştır:

- Ey münafıklar, siz sizden önceki kâfirlerin ve nifak ehlinin yolunu izlediniz. Oysa biz, onların hakkından gelmiştik.

- Sizden öncekiler, sizden daha fazla oldukları halde, tıpkı tefrika ve nifak ehlinin hakkından geldiğimiz gibi, onların hakkından da geldik. Onlar, sürenin çokluğu, donanım gücü, dünyalık imkânlardan yararlanma ve nefislerinin peşinden giderek yoldan sapmada sizden ilerde oldukları halde, felaket günü, hazırlıkları onlara fayda vermedi. Sizden öncekilerin başına gelenler, yakında sizin başınıza da gelecektir.

اَلَمْ يَاْتِهِمْ نَبَاُ الَّذ۪ينَ مِنْ قَبْلِهِمْ قَوْمِ نُوحٍ وَعَادٍ وَثَمُودَ وَقَوْمِ
اِبْرٰه۪يمَ وَاَصْحَابِ مَدْيَنَ وَالْمُؤْتَفِكَاتِ اَتَتْهُمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنَاتِ
فَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيَظْلِمَهُمْ وَلٰكِنْ كَانُٓوا اَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ﴿٧٠﴾

70- "Onlara kendilerinden öncekilerin; Nûh, Âd, ve Semûd kavimlerinin, İbrahim'in kavminin, Medyen halkının ve yerle bir olan şehirlerin haberleri ulaşmadı mı? Peygamberleri onlara apaçık mucizeler getirmişti. Demek ki Allah onlara zulmediyor değildi, ama onlar kendilerine zulmediyorlardı."

Geçen dönemlerin ve geçmiş kavimlerin haberleri onlara ulaşmadı mı? Nasıl da topluluklarını yerle bir etmiş ve birliklerini dağıtmıştık! Onlar hakkında adaletle hükmettik ve hepsinin kökünü kazmaya karar verdik. Böylece onlardan ateşe üfleyecek kimse bile kalmadı ve utançtan başka hiçbir şey elde edemediler.

وَالْمُؤْمِنُونَ وَالْمُؤْمِنَاتُ بَعْضُهُمْ اَوْلِيَٓاءُ بَعْضٍ يَاْمُرُونَ بِالْمَعْرُوفِ
وَيَنْهَوْنَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَيُق۪يمُونَ الصَّلٰوةَ وَيُؤْتُونَ الزَّكٰوةَ وَيُط۪يعُونَ
اللّٰهَ وَرَسُولَهُ اُو۬لٰٓئِكَ سَيَرْحَمُهُمُ اللّٰهُ اِنَّ اللّٰهَ عَز۪يزٌ حَك۪يمٌ ﴿٧١﴾

71- "Mümin erkekler ve mümin kadınlar birbirlerinin dostlarıdır. İyiliği emreder, kötülükten alıkoyarlar. Namazı dosdoğru kılar, zekâtı verirler. Allah'a ve Resûlü'ne itaat ederler. İşte bunlara Allah merhamet edecektir. Şüphesiz Allah, mutlak güç sahibidir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Onlar, ibadetler konusunda birbirlerine yardım etmekte ve günahları terk etmede birbirlerine tavsiyede bulunmaktadırlar. Bu itibarla karşılıklı sevgileri Allah içindir. Allah'ın hakkını yerine getirirler. Arkadaşlıkları da düşmanlıkları da Allah rızası içindir. Nefislerinin arzularını Allah'ın hakkı için terk ettiler ve Allah'ın rızasını hevâlarına tercih ettiler. İşte Allah'ın dünyada koruduğu ve ahirette merhamet edeceği kimseler bunlardır.

وَعَدَ اللّٰهُ الْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنَاتِ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ
خَالِدِينَ فِيهَا وَمَسَاكِنَ طَيِّبَةً فِي جَنَّاتِ عَدْنٍ وَرِضْوَانٌ مِنَ اللّٰهِ
اَكْبَرُ ذٰلِكَ هُوَ الْفَوْزُ الْعَظِيمُ ﴿٧٢﴾

72- "Allah, mümin erkeklere ve mümin kadınlara, ebedî olarak kalacakları, içinden ırmaklar akan cennetler ve Adn cennetlerinde çok güzel köşkler va'detti. Allah'ın rızası ise, bunların hepsinden daha büyüktür. İşte bu, büyük başarıdır."

Allah, hepsine cennet ve güzel meskenler va'detti. Mesken ise ancak sevgiliyi görmekle güzelleşir. Zaten her sevenin meskeni, sevgilisini görmekle güzelleşir. Fakat himmetleri birbirinden farklıdır. Bu çerçevede kimisi, insanlara dönük bir kısmete bağlı iken, kimisi de, Hakk'a ait bir hakkın meczubudur.

Özetle durum, şu dizelerde söylendiği gibidir:

*Hey komşu, ne ürkütücüdür ev sizden sonra*
*Siz evi terk ederken biz kaldığımızda*

Kimisine göre de bazılarının meskeni Allah'ın vergisinin varlığıyla, diğer bazılarının ise O'nun huzuruna çıkmakla güzelleşir.

Şiir:

*Arzuluyorum evi ben, ancak oluşmuyor bende*
*Onda yaşama sevgisi, sana ait olmasından başka bir sebeple*

(وَرِضْوَانٌ مِنَ اللّٰهِ اَكْبَرُ) *"Allah'ın rızası ise bunların hepsinden daha büyüktür."*

Rıza ehlinin emaresi, onun tadına varmaktır. Bu itibarla onlar, yakın dostluğun huzuru içindedirler. Bu huzur ise kutsiyet makamının huzurundan az değil, aksine ondan daha mükemmeldir ve daha büyüktür.

يَٓا اَيُّهَا النَّبِيُّ جَاهِدِ الْكُفَّارَ وَالْمُنَافِقِينَ وَاغْلُظْ عَلَيْهِمْ وَمَاْوٰيهُمْ جَهَنَّمُ وَبِئْسَ الْمَصِيرُ ﴿٧٣﴾

73- "Ey peygamber! Kâfirlere ve münafıklara karşı cihat et ve onlara karşı çetin ol. Onların varacakları yer cehennemdir. Ne kötü bir varış yeridir orası!"

Peygamberimiz (s.a.v.), bütün insanları güzel ahlaka davet etmiştir. Allah Hz. Musa'ya (a.s.): (فَقُولَا لَهُ قَوْلًا لَيِّنًا) *"Firavun'a yumuşak söz söyleyin"* (Tâhâ, 20/44), buyururken peygamberimize (s.a.v.) şöyle buyurmuştur: (وَاغْلُظْ عَلَيْهِمْ) *"Kâfirlere ve münafıklara karşı sert davran"* (Tahrîm, 66/9).

Bir yoruma göre de Allah bunu, delilleri ortaya koyduktan ve mühlet vermek suretiyle mazeretlerini geçersiz kıldıktan sonra söylemiştir. Allah, ilk başta Hz. Peygamber'e (s.a.v.) yumuşak davranmayı emrederek: (اِنَّمَٓا اَعِظُكُمْ بِوَاحِدَةٍ اَنْ تَقُومُوا لِلّٰهِ مَثْنٰى وَفُرَادٰى) *"Ben size ancak bir tek şeyi, Allah için ikişer ikişer, teker teker kalkıp düşünmenizi öneriyorum."* (Sebe', 34/46), buyurmuş; ancak onlar durumlarında ısrar edip kibir taslayınca kendilerine sert davranmasını emretmiştir. Bu arada cihadın başlangıcı, dil ile delili açıklamak ve gerekçeleri izah etmek şeklinde olur. Sonra eğer düşman, mazereti geçersiz kılındıktan sonra inkârda bulunursa, o zaman uyarıya ve azarlamaya

başvurulur. Sonra eğer söz ve sitem etkili olmazsa, bu takdirde savaşta ve cihatta çaba harcamaya sıra gelir.

يَحْلِفُونَ بِاللّٰهِ مَا قَالُوا وَلَقَدْ قَالُوا كَلِمَةَ الْكُفْرِ وَكَفَرُوا بَعْدَ اِسْلَامِهِمْ وَهَمُّوا بِمَا لَمْ يَنَالُوا وَمَا نَقَمُوٓا اِلَّٓا اَنْ اَغْنٰيهُمُ اللّٰهُ وَرَسُولُهُ مِنْ فَضْلِه۪ فَاِنْ يَتُوبُوا يَكُ خَيْرًا لَهُمْ وَاِنْ يَتَوَلَّوْا يُعَذِّبْهُمُ اللّٰهُ عَذَابًا اَل۪يمًا فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَمَا لَهُمْ فِي الْاَرْضِ مِنْ وَلِيٍّ وَلَا نَص۪يرٍ ﴿٧٤﴾

74- "Bir şey söylemediklerine dair Allah'a yemin ederler. Halbuki o küfür sözünü söylediler ve Müslüman olduktan sonra inkâr ettiler. Ayrıca, başaramadıkları şeye de yeltendiler. Sırf Allah ve Resûlü, kendi lütfü ile onları zengin kıldığı için intikam almaya kalktılar. Eğer tövbe ederlerse, kendileri için hayırlı olur. Şayet yüz çevirirlerse, Allah onları dünyada ve ahirette elem dolu bir azaba çarptıracaktır. Artık onlar için yeryüzünde ne bir dost ne de bir yardımcı vardır."

Onlar, yeminlerinin arkasına saklandılar, ancak Allah üzerlerindeki örtüyü yırtarak sırlarını ifşa etti.

(وَلَقَدْ قَالُوا كَلِمَةَ الْكُفْرِ) *"Halbuki o küfür sözünü söylediler."* O söz, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) dil uzatmalarıdır. Bu arada her kim, Allah'ı yaratıkların vasıflarıyla vasıflandırır veya Allah'ın sıfat özelliklerinden olan hususları yaratıklara atfederse, şüphesiz o, küfür sözünü söylemiş olur.

(وَهَمُّوا بِمَا لَمْ يَنَالُوا وَمَا نَقَمُوٓا اِلَّٓا اَنْ اَغْنٰيهُمُ اللّٰهُ وَرَسُولُهُ مِنْ فَضْلِه۪) *"Ayrıca, başaramadıkları şeye de yeltendiler. Sırf Allah ve Resûlü, kendi lütfü ile onları zengin kıldığı için intikam almaya kalktılar."*

Yani onlar, görünürde muvafakat ve teslimiyeti ortaya koyduktan sonra, kalben inkârda bulunduklarını gösteren küfür şiarını dile getirdiler. Bir de Hz. Peygamber'i (s.a.v.) öldürmek ve daha

güçlü olanların daha zayıf olanları Medine'den çıkarması vs. gibi, başaramadıkları hususlara da yeltendiler.

Bir yoruma göre de onlar, İslam devletinin yok olmasını temenni ettiler. Ancak Allah, bu devletin şanını yükseltmekten başka bir şeye rıza göstermedi.

(وَمَا نَقَمُوٓا اِلَّٓا اَنْ اَغْنٰيهُمُ اللّٰهُ وَرَسُولُهُ مِنْ فَضْلِهِ) *"Sırf Allah ve Resûlü, kendi lütfu ile onları zengin kıldığı için intikam almaya kalktılar."*

Yani onlar, onu ancak vasıflarının en yücesiyle ayıpladıkları için bundan, hiçbir mazerete dayanmayan durumlarının herkese ifşa edilmesinden başka bir şey elde edemediler.

(فَاِنْ يَتُوبُوا يَكُ خَيْرًا لَهُمْ وَاِنْ يَتَوَلَّوْا يُعَذِّبْهُمُ اللّٰهُ عَذَابًا اَلِيمًا فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَمَا لَهُمْ فِي الْاَرْضِ مِنْ وَلِيٍّ وَلَا نَصِيرٍ) *"Eğer tövbe ederlerse, kendileri için hayırlı olur. Şayet yüz çevirirlerse, Allah onları dünyada ve ahirette elem dolu bir azaba çarptıracaktır. Artık onlar için yeryüzünde ne bir dost ne de bir yardımcı vardır."*

Tövbenin en güçlü ilkesi, inkârda ısrar ukdesinin kalpten çözülmesinden sonra emrin gereğini, tamamını kapsayacak şekilde, yerine getirmektir.

وَمِنْهُمْ مَنْ عَاهَدَ اللّٰهَ لَئِنْ اٰتٰينَا مِنْ فَضْلِهِ لَنَصَّدَّقَنَّ وَلَنَكُونَنَّ مِنَ
الصَّالِح۪ينَ ﴿٧٥﴾ فَلَمَّٓا اٰتٰيهُمْ مِنْ فَضْلِه۪ بَخِلُوا بِه۪ وَتَوَلَّوْا وَهُمْ
مُعْرِضُونَ ﴿٧٦﴾

75, 76- "İçlerinden: 'Eğer Allah bize lütuf ve kereminden verirse, mutlaka bol bol sadaka veririz ve mutlaka salihlerden oluruz' diye Allah'a söz verenler de vardır. Fakat Allah lütuf ve kereminden onlara verince, onda cimrilik ettiler ve yüz çevirerek dönüp gittiler."

Onlardan kimisi, Allah ile olan bağını pekiştirdikten sonra bozdu, ardından bunun zararını çekti ve ebedî olarak münafıklığının içinde kalmış oldu.

Bir yoruma göre de bu kimse, Rabbi'nin ihsanını aramış ve ahdini yerine getirmek suretiyle ona yakınlaşmaya çalışmıştır. Allah, onun dileğini gerçekleştirip ümidini kabul edince, yerine getireceği ahdini bozmuş, üstlendiği sorumluluktan sıyrılmış, cimrilik ona hâkim olmuş ve sonuçta Allah'ın hakkını yerine getirmede cimrilik yapmıştır. Bunun üzerine münafıklığının, esarette ebedî olarak kalmak olan zararını çekmiştir.

Bu arada ilmin izahına göre cimrilik, gerekeni yapmaya engel olmak demektir. Ayrıca herkesin cimriliği, kendi durumuna göredir. Her kim, Rabbi'nin rızasını gözetmeden bir tercihte bulunursa, o cimrilikle nitelenmiş olur. Bu çerçevede kim, malıyla cimrilik yaparsa, ondan bereket çıkar. Nihayet o mal, ya bir vârise intikal eder ya da bir despotun eliyle yok olur. Kim, nefsiyle cimrilik eder ve Allah'a kullukta gevşek davranırsa, hayatından tat almayacak şekilde sağlığını yitirir. Allah'a karşı canıyla cimrilik yapan kimse ise, hayatı mutsuzluğuna sebep olacak şekilde, rezil olmakla cezalandırılır.

فَاَعْقَبَهُمْ نِفَاقًا ف۪ي قُلُوبِهِمْ اِلٰى يَوْمِ يَلْقَوْنَهُ بِمَٓا اَخْلَفُوا اللّٰهَ مَا وَعَدُوهُ
وَبِمَا كَانُوا يَكْذِبُونَ ﴿٧٧﴾

77- "Allah'a verdikleri sözü tutmadıkları ve yalan söyledikleri için O da kalplerine, kendisiyle karşılaşacakları güne kadar sürecek bir nifak soktu."

Allah, cimrilikleri sebebiyle kalplerine nifak soktu. Hulasa olarak kul, içindeki ahdi bozarsa, sevgi bağını kökünden reddetmiş olur. Görünürde az çok hayrı dile getiren, ancak içinde şer besleyen herkes, münafıklıktan nasibini almış olur. Münafık ise dünyada son sırada, ahirette de cehennemin en alt tabakasında yer alır.

اَلَمْ يَعْلَمُٓوا اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ سِرَّهُمْ وَنَجْوٰيهُمْ وَاَنَّ اللّٰهَ عَلَّامُ الْغُيُوبِ ﴿٧٨﴾

78- "Allah'ın, içinde gizlediklerini ve fısıltılarını bildiğini ve Allah'ın, gaybları çok iyi bilen olduğunu bilmediler mi?"

Allah, kitabının birden fazla yerinde, onları icraatıyla olduğu gibi ilmiyle de korkutmuştur. İçlerinde gizledikleri sırlarından maksat, Allah'tan başkasının muttali olamadığı şeydir. Fısıltıları ise birbirlerine gizlice söyledikleri şeylerdir. Bunlardan maksat, nefislerinin kontrolündeki duyguları da olabilir.

اَلَّذِينَ يَلْمِزُونَ الْمُطَّوِّعِينَ مِنَ الْمُؤْمِنِينَ فِي الصَّدَقَاتِ وَالَّذِينَ
لَا يَجِدُونَ اِلَّا جُهْدَهُمْ فَيَسْخَرُونَ مِنْهُمْ سَخِرَ اللّٰهُ مِنْهُمْ وَلَهُمْ
عَذَابٌ اَلِيمٌ ﴿٧٩﴾

79- "Sadakalar hususunda gönüllü bağışta bulunan müminlerle, güçlerinin yettiğinden başkasını bulamayanları çekiştirip onlarla alay edenler var ya, işte Allah onlarla alay etmiş ve asıl onlar için elem dolu bir azap vardır."

Onlar, çok fazla sadaka verme imkânları bulunmayan, ancak ellerindeki imkânlarla cömertlik yapan müminleri ayıpladılar. Bunun üzerine Allah, sadakasını samimiyetle veren ve bunu vermedeki ihlâsını bildiği kulunun amelini kabul etti. Zaten ihlâs ehlinin az sadakası, nifak ehlinin verdiği çoktan iyidir.

Onlar, alaylarıyla müminleri incitince Allah, dostlarının kalplerini rahatlatmak için zatını, hakikatte hakkında muhal olan başkasını alaya alma sıfatıyla vasıflandırdı. Oysa Allah, Rab olmanın yüceliğinden dolayı, bundan münezzehtir.

اِسْتَغْفِرْ لَهُمْ اَوْ لَا تَسْتَغْفِرْ لَهُمْ اِنْ تَسْتَغْفِرْ لَهُمْ سَبْعِينَ مَرَّةً
فَلَنْ يَغْفِرَ اللّٰهُ لَهُمْ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ كَفَرُوا بِاللّٰهِ وَرَسُولِهِ وَاللّٰهُ لَا
يَهْدِي الْقَوْمَ الْفَاسِقِينَ ﴿٨٠﴾

80- "Onlar için ister bağışlanma dile, ister dileme fark etmez. Onlar için yetmiş kez bağışlanma dilesen de Allah, onları asla affetmeyecektir. Bu, onların Allah ve Resûlü'nü inkâr etmiş olmaları sebebiyledir. Allah, fâsık topluluğu doğru yola iletmez."

Allah, şirk ve nifak ehlini bağışlamayacağına dair nihai hükmünü koymuştur. Bu yüzden onlara vasıtalar fayda vermez ve düşenleri bir daha ayağa kalkamaz.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah'ın, şakiliğine hükmettiği kimseye, yakarışı ve duası fayda vermez.

- Gücünü yitiren kimseyi çaba ve tedbir ayağa kaldıramaz.

فَرِحَ الْمُخَلَّفُونَ بِمَقْعَدِهِمْ خِلَافَ رَسُولِ اللّٰهِ وَكَرِهُوٓا اَنْ يُجَاهِدُوا بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ فٖي سَبٖيلِ اللّٰهِ وَقَالُوا لَا تَنْفِرُوا فِي الْحَرِّ قُلْ نَارُ جَهَنَّمَ اَشَدُّ حَرًّا لَوْ كَانُوا يَفْقَهُونَ ﴿٨١﴾

81- "Allah'ın Resûlü'ne karşı gelerek geri bırakılanlar, oturup kalmalarına sevindiler. Allah yolunda mallarıyla canlarıyla cihat etmek hoşlarına gitmedi ve: 'Bu sıcakta sefere çıkmayın' dediler. De ki: 'Cehennemin ateşi daha sıcaktır.' Keşke anlasalardı.

Geri durmalarıyla kendilerine sevinçleri hâkim oldu. Onlar, felaketlerinin, geri durmalarında ve nefislerinin rahatını Allah'ın hakkını yerine getirmeye ve Hz. Peygamber ile birlikte çıkmaya tercih etmelerinde olduğunu bilemediler. Bunun üzerine Allah, onlara verdiği ceza ile rahatlarını ellerinden aldı. Ahirette de onlar, dünyada yaptıkları münafıklık sebebiyle cehenneme girip hasret çekecekler. Ancak artık zaman, hasret çekme zamanı değildir.

فَلْيَضْحَكُوا قَلٖيلًا وَلْيَبْكُوا كَثٖيرًا جَزَٓاءً بِمَا كَانُوا يَكْسِبُونَ ﴿٨٢﴾

82- "Artık kazandıklarının karşılığı olarak, az gülsünler çok ağlasınlar".

Allah, dünyada çok güldükleri gibi, ahirette de çok ağlasınlar diye, sevinçlerini hasrete, neşelerini üzüntüye, rahatlarını da gözyaşına dönüştürdü. Bu, Rabbi'ni inkâr edenlerin cezasıdır.

فَاِنْ رَجَعَكَ اللّٰهُ اِلٰى طَٓائِفَةٍ مِنْهُمْ فَاسْتَاْذَنُوكَ لِلْخُرُوجِ فَقُلْ لَنْ تَخْرُجُوا مَعِيَ اَبَدًا وَلَنْ تُقَاتِلُوا مَعِيَ عَدُوًّا اِنَّكُمْ رَضِيتُمْ بِالْقُعُودِ اَوَّلَ مَرَّةٍ فَاقْعُدُوا مَعَ الْخَالِفِينَ ﴿٨٣﴾

83- "Eğer bundan böyle Allah seni onlardan bir zümrenin yanına döndürür de onlar sefere çıkmak için senden izin isterlerse, de ki: 'Artık siz benimle birlikte ebediyen çıkmayacak ve benimle birlikte hiçbir düşmanla asla savaşmayacaksınız. Çünkü siz, baştan yerinizde oturup kalmaya razı oldunuz. Şimdi geri kalanlarla birlikte oturun.'"

Onların hainlikleri ortaya çıkıp yalancılık ve münafıklıkları sabit olduktan sonra sen, yalakalıklarına kanma, sözlerine güvenme ve seninle olan göstermelik uyumları konusunda sana arkadaş olmalarına imkân tanıma! Anlaşma bağı gevşediği zaman bir daha güçlenme ihtimali bulunmamakta, yırtık genişlediği zaman da artık yama fayda vermemektedir.

وَلَا تُصَلِّ عَلٰٓى اَحَدٍ مِنْهُمْ مَاتَ اَبَدًا وَلَا تَقُمْ عَلٰى قَبْرِهِ اِنَّهُمْ كَفَرُوا بِاللّٰهِ وَرَسُولِهِ وَمَاتُوا وَهُمْ فَاسِقُونَ ﴿٨٤﴾

84- "Onlardan ölen hiçbirine asla namaz kılma ve kabrinin başında durma! Çünkü onlar, Allah'ı ve Resûlünü inkâr ettiler ve fâsık olarak öldüler."

İlişkinin kopmasından sonra dostluk bağı, ayrılıktan sonra uyum, engellenmeden sonra da yakınlık olmaz. Aslında geçmişte, ümitli olmalarına ve zanlarının gerçekleşmesine yetecek kadar zamanları oldu. Ancak, şaki olmalarına dair kader bunun önüne geçti. Kötü akıbetten Allah'a sığınırız.

وَلَا تُعْجِبْكَ اَمْوَالُهُمْ وَاَوْلَادُهُمْ اِنَّمَا يُرِيدُ اللّٰهُ اَنْ يُعَذِّبَهُمْ بِهَا فِي الدُّنْيَا وَتَزْهَقَ اَنْفُسُهُمْ وَهُمْ كَافِرُونَ ﴿٨٥﴾

85- "Onların malları ve evlatları seni imrendirmesin. Allah, bunlarla ancak dünyada kendilerine azap etmeyi ve canlarının kâfir olarak çıkmasını istiyor."

Yani sen, amaçlarını gerçekleştirme imkânına sahip kılınmalarını ve mallarının çoğaltılmasını, onlara yaptığımız bir iyilik veya kendilerine verdiğimiz bolca bir nimet sanma. Aslında bu, onlara yönelik bir ihmal değil, sadece bir imtihan, istidrac ve mühlet vermedir. Onlar, yakında bunun akıbetini göreceklerdir.

وَاِذَٓا اُنْزِلَتْ سُورَةٌ اَنْ اٰمِنُوا بِاللّٰهِ وَجَاهِدُوا مَعَ رَسُولِهِ اسْتَاْذَنَكَ اُولُوا الطَّوْلِ مِنْهُمْ وَقَالُوا ذَرْنَا نَكُنْ مَعَ الْقَاعِدِينَ ﴿٨٦﴾

86- "'Allah'a iman edin ve Resûlü ile birlikte cihad edin' diye bir sûre indirildiğinde, onlardan servet sahibi olanlar, senden izin istediler ve: 'Bizi bırak da oturup kalanlarla birlikte olalım' dediler."

Onlara cihat emri yöneldiği ve yükümlülük hükmü üzerlerinde şiddetlendiği zaman, imkânlarının yetersizliğini gerekçe kıldılar, terk etmeyi tercihe yeltendiler ve cihattan geri durmanın sebepleri konusunda entrikaya başvurdular. İşte bunlar, Allah'ın özellikle rezil ettiği ve kalplerini, rızasını aramaktan alıkoyduğu kimselerdir.

رَضُوا بِاَنْ يَكُونُوا مَعَ الْخَوَالِفِ وَطُبِعَ عَلٰى قُلُوبِهِمْ فَهُمْ لَا يَفْقَهُونَ ﴿٨٧﴾

87- "Onlar, geride kalanlarla birlikte olmaya razı oldular ve kalpleri mühürlendi. Artık onlar anlamazlar."

İbadet alanından uzaklaşıp terk etmeyi benimsediler ve ayrılık konaklarında ikamet etmeye razı oldular. Oysa eğer onlar, samimi pişmanlıkla Allah'a dönselerdi, Allah onları lütuf ve kerem ile karşılayacaktı. Ne var ki, kader galebe çalmakta ve elde yapacak bir şey kalmamaktadır.

لٰكِنِ الرَّسُولُ وَالَّذ۪ينَ اٰمَنُوا مَعَهُ جَاهَدُوا بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ
وَاُو۬لٰٓئِكَ لَهُمُ الْخَيْرَاتُ وَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ﴿٨٨﴾

88- “Fakat peygamber ve beraberindeki müminler, mallarıyla canlarıyla cihad ettiler. Bütün hayırlar işte bunlarındır. İşte bunlar, kurtuluşa erenlerin ta kendileridir.”

Allah’a yönelen kimse yüz çevirip alıkonulan kimse gibi, kabul edilen kimse reddedilen kimse gibi, Allah’ı birleyen kimse O’nu inkâr eden kimse gibi, ibadet eden kimse inat eden kimse gibi, gelen kimse de gelmemekte direnen kimse gibi değildir. Hiç şüphe yok ki, onların ticareti kârlı, mertebeleri de yüksek olmuştur.

اَعَدَّ اللّٰهُ لَهُمْ جَنَّاتٍ تَجْر۪ي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِد۪ينَ ف۪يهَا ذٰلِكَ
الْفَوْزُ الْعَظ۪يمُ ﴿٨٩﴾

89- “Allah onlara, içinde ebedî kalacakları, içinden ırmaklar akan cennetler hazırlamıştır. İşte bu büyük başarıdır.”

Şimdiki durumda zorluklar olsa da ve görülse de âyet, onlara rahat sözü verildiğine işaret etmektedir.

Bir yoruma göre de onların sevaba olan samimi inançları, şu anda karşılaştıkları zorlukları hafifletmektedir.

وَجَٓاءَ الْمُعَذِّرُونَ مِنَ الْاَعْرَابِ لِيُؤْذَنَ لَهُمْ وَقَعَدَ الَّذ۪ينَ كَذَبُوا اللّٰهَ
وَرَسُولَهُ سَيُص۪يبُ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا مِنْهُمْ عَذَابٌ اَل۪يمٌ ﴿٩٠﴾

90- “Bedevîlerden mazeret ileri sürenler, kendilerine izin verilsin diye geldiler. Allah’a ve Resûlüne yalan söyleyenler ise oturup kaldılar. Onlardan kâfir olanlara elem dolu bir azap isabet edecektir.”

Tefsir âlimlerine göre ayetteki birinci grup, Tebûk Gazvesi'nde geri kalmak konusunda Hz. Peygamber'den (s.a.v.) izin isterken mazeret sahibi oldukları için sitemden kurtulmuşlardır.

Mazeretsiz geri duranlara ise sitem yönelmiş olup bu, onlar için gelecekle ilgili bir uyarıdır.

لَيْسَ عَلَى الضُّعَفَاءِ وَلَا عَلَى الْمَرْضٰى وَلَا عَلَى الَّذِينَ لَا يَجِدُونَ مَا يُنْفِقُونَ حَرَجٌ اِذَا نَصَحُوا لِلّٰهِ وَرَسُولِهِ مَا عَلَى الْمُحْسِنِينَ مِنْ سَبِيلٍ وَاللّٰهُ غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿٩١﴾

91- "Allah'a ve Resûlü'ne karşı sadık ve samimi oldukları takdirde, güçsüzlere, hastalara ve harcayacakları bir şey bulamayanlara bir günah yoktur. İyilikte bulunan kimselerin kınanması için de bir sebep yoktur. Allah, çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Fakirliğin değeri, yükümlülük kalktığı zaman ortaya çıkar. Az varlık sahibi olmanın bundan başka hiçbir faydası olmasa bile, bu fakirlik için fazilet olarak yeter. Onlar, yerlerinde kaldılar ve onlara ne cihat emri yöneldi ne de evden ayrılmakla imtihan edildiler. Allah, onlardan iyi niyeti ve güçlerinin yetmesi halinde cihada çıkma iradelerini yeterli kabul etti.

Oysa mal sahipleri, önce onu toplayıp korumakla imtihan edildiler. Sonra malı terk etmede zorluk çekecek ölçüde onun tutsağı oldular. Sonra Allah yolunda harcamayı terk etmeleri yüzünden kınamaya hedef oldular. Sonra kıyamet günü bunu izleyecek olan hesap ve azap, bunların hepsini gölgede bırakacaktır.

Allah, bunların üzerinden sorumluluğu, Allah'a ve Resûlü'ne karşı sadık ve samimi olmaları şartına bağlı olarak kaldırmıştır. Bu nedenle, bu şart yerine gelmediği zaman sorumluluk üzerlerinden kalkmaz.

(مَا عَلَى الْمُحْسِنِينَ مِنْ سَبِيلٍ) *"İyilikte bulunan kimselerin kınanması için de bir sebep yoktur."* İyilikte bulunandan maksat, dinin ne Allah

hakkında ne de yaratıklar hakkında kendisinden bir şey isteme-
diği kimsedir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- İyilikte bulunandan maksat, bütün olan bitenlerin Allah'tan olduğunu bilen kimsedir.

- İyilikte bulunandan maksat, yükümlülüğünün gereği olan hakları yerine getiren kimsedir. Bu itibarla eğer bir kimse, tasarrufu altındaki bir kuşa yemini vermede bile kusur işlerse o, iyilikte bulunan kimse değildir.

وَلَا عَلَى الَّذِينَ اِذَا مَٓا اَتَوْكَ لِتَحْمِلَهُمْ قُلْتَ لَٓا اَجِدُ مَٓا اَحْمِلُكُمْ عَلَيْهِ
تَوَلَّوْا وَاَعْيُنُهُمْ تَفِيضُ مِنَ الدَّمْعِ حَزَنًا اَلَّا يَجِدُوا مَا يُنْفِقُونَ ﴿٩٢﴾

92- "Kendilerini bindirip cepheye sevk edesin diye sana geldikleri zaman, senin: 'Sizi bindirebileceğim bir şey bulamıyorum' dediğin; bu uğurda harcayacakları bir şey bulamadıklarından dolayı, üzüntüden gözleri yaş döke döke geri dönen kimselere de bir sorumluluk yoktur."

Fakirlik, onları hareket etmekten alıkoydu, onlar da Hz. Peygamber'den (s.a.v.) kendilerini beraberinde bindirip hazırlıklarını yapmasını istediler. Ancak Hz. Peygamber (s.a.v.), isteklerini hemen yerine getirecek imkâna sahip değildi ve bundan üzüntü duyduğu halde, kendilerini bindiremeyeceğine yemin etti. Sonra Hz. Peygamber (s.a.v.), bunların, cihada çıkmak için hazırlık yaptıklarını ve konuştuklarını görünce: *"Sizi ancak Allah bindirir"* buyurdu.

Bu arada Hz. Peygamber (s.a.v.), bindirilme taleplerine olumsuz cevap verince, yanından eli boş döndüler. Bu hususu Allah ayette: (وَاَعْيُنُهُمْ تَفِيضُ مِنَ الدَّمْعِ حَزَنًا) *"Üzüntüden gözleri yaş döke döke geri dönen kimseler"* şeklinde ifade buyurmuştur.

Tıpkı şairin şu dizelerde söylediği gibi:

*Şöyle dedi bana sevgilim, ayrılık girerken aramıza*
*Ve feryadıma eşlik ederken gözyaşlarım*
*Acaba ne yapacaksın yolda benden sonra?*
*Dedim ki: Ağlayacağım sana yol boyunca*

(تَوَلَّوْا وَاَعْيُنُهُمْ تَفِيضُ مِنَ الدَّمْعِ حَزَنًا اَلَّا يَجِدُوا مَا يُنْفِقُونَ) "*Harcayacakları bir şey bulamadıklarından dolayı üzüntüden...*" Onlar yüzünden Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kalben meşgul olmasından sıkıntı duydular. Bu nedenle, dünyaya olan meyillerinden dolayı değil de kendileri yüzünden Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kalbine tekrar bir huzursuzluk girmesin diye, söz konusu meşgul olma halinin ortadan kaldırılmasını temenni ettiler.

Şiir:

*Dosta hafif gelir buluşmak iffetli olanla*
*Oysa bıkılıp usanılır ihtiyaç sahibinden*

Sonra Allah, böyle olduklarını bildiğinden, kalpleri sırf Allah'a bağlandığından ve inançlarında herhangi bir yaratığa yer vermediklerinden dolayı Allah, durumlarını çözüm yoluna koymak üzere Hz. Peygamber'e (s.a.v.) onları bindirmesini emretti. Zaten Allah'ın prensibi budur ve bu amaçla şöyle buyurmuştur: (وَهُوَ الَّذِي يُنَزِّلُ الْغَيْثَ مِنْ بَعْدِ مَا قَنَطُوا) "*İnsanlar, ümitlerini kestikten sonra yağmuru yağdıran Allah'tır.*" (Şûrâ, 42/28)

اِنَّمَا السَّبِيلُ عَلَى الَّذِينَ يَسْتَاْذِنُونَكَ وَهُمْ اَغْنِيَٓاءُ ﴿٩٣﴾

93- "Sorumluluk, ancak zengin oldukları halde senden izin isteyenleredir."

Yani, ceza ve kınamaya yol açan sorumluluk, hazırlık ve imkânları olup bu sayede cihada çıkabildikleri halde, çıkmada senden geri duranların üzerindedir. Bu nedenle bunlar, çıkmamak için senden izin isteyip mazeret ileri sürdüklerinde doğruyu söylemedikleri için itabı

hak ederler. Çünkü bağlılıkta samimi olan, zorluğa göğüs germekten çekinmez. Bağlılıkta samimiyetsiz olan ve dürüstlükten ayrılan kimse ise, asılsız gerekçelere sarılır. Zira o, ehil olduğu hususta içtenlikten yoksun kalmıştır.

Şiir:

*Kopmak istediği zaman bezgin insan*
*Usanır vuslattan ve: Şöyle şöyle oldu, der*

(رَضُوا بِاَنْ يَكُونُوا مَعَ الْخَوَالِفِ) *"Bunlar, geride kalanlarla birlikte olmaya razı oldular."*

Yani bunlar, kadınlarla birlikte evlerde kalmaya razı oldular. Oysa İslam, cesareti övmektedir. Bir hadis şöyledir:

*"Bir yılanı öldürmek konusunda bile olsa, Allah cesareti sever."*

Şiir:

*Farz kılındı bize (gerektiğinde) öldürmek ve savaşmak*
*İffetli kadınlara ise eteklerini sürüklemek*

Bu arada kim, tembelliği binek edinir, başarısızlık elbisesine bürünür ve bozguncu entrikalara yeltenirse, Allah'a yakınlaşmayı hak etmekten mahrum kalır. Allah, kimi itibarsız kılmak ister ve kendisine rezaleti tattırırsa, onun Allah'ın hükmünden kurtuluşu yoktur.

يَعْتَذِرُونَ اِلَيْكُمْ اِذَا رَجَعْتُمْ اِلَيْهِمْ قُلْ لَا تَعْتَذِرُوا لَنْ نُؤْمِنَ
لَكُمْ قَدْ نَبَّاَنَا اللّٰهُ مِنْ اَخْبَارِكُمْ وَسَيَرَى اللّٰهُ عَمَلَكُمْ وَرَسُولُهُ ثُمَّ
تُرَدُّونَ اِلٰى عَالِمِ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٩٤﴾

94- "Onlara döndüğünüzde, size mazeret beyan edeceklerdir. De ki: 'Mazeret beyan etmeyin. Size kesinlikle inanmayız. Çünkü Allah, bize sizin durumunuzu bildirdi. Bundan böyle davranışlarınızı Allah da Resûlü de görecektir. Sonra hepiniz, gaybı da görülen âlemi de bilene döndürüleceksiniz de yapmakta olduğunuz şeyleri size haber verecektir.'"

Yani yalan söyledikleri hususlarda söz uydurup cihattan geri dururken taşıdıkları gerçek niyetleri konusunda sizi yanılttıkları zaman, onlara şunu bildirin: Allah, sizin yalanlarınızdan bizi haberdar etti, rezaletlerinizi açıkça öğrendik, Allah'ın bizi muttali kılması sayesinde kötü ve iyi işlerinizin farkına fardık. Çünkü hiçbir durumunuz, Allah'a gizli kalmaz ve ahirette siz, yaptıklarınızın sonucunu göreceksiniz.

سَيَحْلِفُونَ بِاللّٰهِ لَكُمْ اِذَا انْقَلَبْتُمْ اِلَيْهِمْ لِتُعْرِضُوا عَنْهُمْ فَاَعْرِضُوا عَنْهُمْ اِنَّهُمْ رِجْسٌ وَمَأْوٰيهُمْ جَهَنَّمُ جَزَٓاءً بِمَا كَانُوا يَكْسِبُونَ ﴿٩٥﴾

95- "Yanlarına döndüğünüz zaman, kendilerini rahat bırakmanız için, size Allah adıyla yemin edeceklerdir. Artık onların peşini bırakın. Çünkü onlar pistir. Kazandıklarının karşılığı olarak varacakları yer de cehennemdir."

Yani onların, size Allah'ın adıyla yemin etmeleri, mazeretlerindeki samimiyetlerinden veya çirkin günahlarından duydukları pişmanlıktan dolayı değil, kendilerine yönelik herhangi bir kötülüğünüzü önlemek içindir. Bu çabaları, sadece onların peşini bırakmanız içindir. Öyleyse siz de onların peşini bırakın. Çünkü bu, Allah'ın kıyamet günü onlara vereceği cezayla karşılaşmaktan kendilerini kurtaracak değildir. Doğrusu Allah, günahkâra mühlet verirken o, Allah'ın, kendisini affettiğini zanneder. Oysa bu, tabi tutulduğu bir sınavdır. Nitekim Allah, ona hak ettiği azabı verince, durumun, zannettiğinin hilafına olduğunu anlamış olur. Gerçek durum, rahmetten ümitsizlik iken, imrendiren görüntü fayda vermez.

Şair bu mealde şöyle der:

*Kıskandılar beni, evim onlara yakın diye*
*Nice evi yakın olan var ki gerçekte uzaktır*

يَحْلِفُونَ لَكُمْ لِتَرْضَوْا عَنْهُمْ فَاِنْ تَرْضَوْا عَنْهُمْ فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يَرْضٰى عَنِ الْقَوْمِ الْفَاسِقِينَ ﴿٩٦﴾

96- “Kendilerinden razı olasınız diye, size yemin edeceklerdir. Siz onlardan razı olsanız bile, Allah o fâsıklar topluluğundan asla razı olmaz.”

Hakk’ın gazabına uğrayan kimseye halkın rızası fayda vermez. Kaldı ki geçerli olan, Allah’tan başkasının dediği değildir. Gerçek dayanak, Allah’ın ezeli hükmünde geçen saadettir.

اَلْأَعْرَابُ اَشَدُّ كُفْرًا وَنِفَاقًا وَاَجْدَرُ اَلَّا يَعْلَمُوا حُدُودَ مَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ
عَلٰى رَسُولِهِ وَاللّٰهُ عَلِيمٌ حَكِيمٌ ﴿٩٧﴾

97- “Bedevîler, inkâr ve nifak bakımından daha ileri ve Allah’ın, peygamberine indirdiği hükümlerin sınırlarını tanımamaya daha yatkındırlar. Allah, hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir.”

Kalpleri yaratılıştan katı olduğundan ıslah edici ikazlardan etkilenmediler. Sahip oldukları kötü ahlak yüzünden de hemcinslerinden geri kaldılar. Bu nedenle onlar, gerçekleri anlamaktan hayli uzaktırlar, azabı hak etmeye ise hayli yakındırlar.

وَمِنَ الْاَعْرَابِ مَنْ يَتَّخِذُ مَا يُنْفِقُ مَغْرَمًا وَيَتَرَبَّصُ بِكُمُ الدَّوَٓائِرَ
عَلَيْهِمْ دَٓائِرَةُ السَّوْءِ وَاللّٰهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٩٨﴾

98- “Bedevîlerden öyleleri vardır ki, Allah yolunda harcayacakları şeyi bir zarar sayar ve bundan kurtulmak için size belalar gelmesini beklerler. Kötü belalar kendi başlarına olsun. Allah, hakkıyla işitendir, hakkıyla bilendir.”

İnançları çirkin olduğu için, Müslümanların başına gelmesini diledikleri sıkıntıları beklediler. Bunun üzerine Allah, tuzaklarına ancak kendilerinin düşmesini irade buyurdu. Bu anlamda atasözünde de şöyle denilmiştir:

*“Kardeşin için çukur kazdığın zaman onu geniş tut. Belki de o senin yerin olur.”*

Bu konuda söylenen sözlerden biri de şudur:

*"Arkasına bakan kimse, pek çok tedbir ve görüşünde muvaffak olur."*

وَمِنَ الْاَعْرَابِ مَنْ يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَيَتَّخِذُ مَا يُنْفِقُ قُرُبَاتٍ عِنْدَ اللّٰهِ وَصَلَوَاتِ الرَّسُولِ اَلَآ اِنَّهَا قُرْبَةٌ لَهُمْ سَيُدْخِلُهُمُ اللّٰهُ فِي رَحْمَتِهِ اِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿٩٩﴾

99- "Bedevîlerden kimileri de vardır ki, Allah'a ve ahiret gününe inanır. Harcayacaklarını, Allah katında yakınlığa ve Peygamberin dualarını almaya vesile sayarlar. Bilesiniz ki bu, Allah katında onlar için yakınlıktır. Allah, onları rahmetine sokacaktır. Şüphesiz Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Bedevîler çeşitlidir; onlardan bazısı aldatmış ve kazanmamıştır. Bazısı da iyi niyetli olmuş ve bu sayede zarar etmemiştir. İki yüzlülük yapanlar, itibarsızlık uçurumuna yuvarlanmışlardır. Dürüst olanlara gelince onlar, iyiliklerinin sağladığı huzur içerisindedirler.

وَالسَّابِقُونَ الْاَوَّلُونَ مِنَ الْمُهَاجِرِينَ وَالْاَنْصَارِ وَالَّذِينَ اتَّبَعُوهُمْ بِاِحْسَانٍ رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمْ وَرَضُوا عَنْهُ وَاَعَدَّ لَهُمْ جَنَّاتٍ تَجْرِي تَحْتَهَا الْاَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَآ اَبَدًا ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيمُ ﴿١٠٠﴾

100- "İslâm'ı ilk önce kabul eden muhacirler ve ensar ile iyilikle onlara uyanlar var ya, Allah onlardan razı olmuş, onlar da O'ndan razı olmuşlardır. Allah, onlara içinden ırmaklar akan, içinde ebedî kalacakları cennetler hazırlamıştır. İşte bu büyük başarıdır.

İlk olanlar, farklı farklıdırlar. Kimisi, samimi adım atmasıyla, kimisi de samimi gayretiyle ilk olur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- İlk, kısmetin muvaffakıyetle desteklediği ve hakikatte kaderin saadet bahşettiği, böylece ilk önce Allah'ın rahmetine mazhar olan kimsedir.

- Allah'ın rızası, ilk önce onları ve onları izleyenleri bir araya getirmiştir. Ayetin şu

ifadesi bunu göstermektedir:

(وَالسَّابِقُونَ الْاَوَّلُونَ مِنَ الْمُهَاجِرِينَ وَالْاَنْصَارِ وَالَّذِينَ اتَّبَعُوهُمْ بِاِحْسَانٍ رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمْ) وَرَضُوا عَنْهُ *"İslâm'ı ilk önce kabul eden muhacirler ve ensar ile iyilikle onlara uyanlar var ya, Allah onlardan razı olmuş, onlar da O'ndan razı olmuşlardır."*

- Arkadan gelen, ilk olan gibi değildir. İlk olan, talep huzuru içinde iken onu izleyen, yorgunluk ve meşakkat çilesi çekmektedir.

Şiir:

*Söz ve davranışta ön almaya çalışın ön*
*Sakının geride kalmışlığın üzüntüsünden*

Onların Allah'tan razı olmaları, Allah'ın onlardan razı olmasının gereğidir. Zira eğer ezelde Allah onlardan razı olmasaydı, onlar ne zaman Allah'tan razı olma mertebesine erişirlerdi!

وَمِمَّنْ حَوْلَكُمْ مِنَ الْاَعْرَابِ مُنَافِقُونَ وَمِنْ اَهْلِ الْمَدِينَةِ مَرَدُوا عَلَى النِّفَاقِ لَا تَعْلَمُهُمْ نَحْنُ نَعْلَمُهُمْ سَنُعَذِّبُهُمْ مَرَّتَيْنِ ثُمَّ يُرَدُّونَ اِلٰى عَذَابٍ عَظِيمٍ ﴿١٠١﴾

101- "Çevrenizdeki bedevîlerden birtakım münafıklar vardır. Medine halkından da münafıklıkta direnenler var ki, sen onları bilmezsin. Biz onları biliriz. Onlara iki defa azap edeceğiz. Sonra da büyük bir azaba itileceklerdir."

Samimi olanla münafık olan, hakikatler ve manalarda zıt olsalar bile, şeklen benzer oldukları için yapıca birbirlerinden ayrılmamış ve

bilgileri, irfana erdirmede yetersiz kalmıştır. Bu nedenle Allah, peygamberi için üzerlerindeki örtüleri kaldırmış, böylece Hz. Peygamber (s.a.v.), onları tanımıştır. Oysa onlar, Hz. Peygamber'in (s.a.v.), kendilerini gözetlediğinden habersiz ve münafıklık âlemlerinde yaşamaya yönlendirilmiş idiler. Hal böyle olunca Allah'ın uzun süreli mühlet tanıması, onlara fayda vermemiştir.

(سَنُعَذِّبُهُمْ مَرَّتَيْنِ) *"Onlara iki defa azap edeceğiz."* İlk azapları, dünyada yaşadıkları sıkıntılar, musibetler ve hastalıklar ile rezil olmaları şeklinde olur. Bu sıkıntılar karşılığında ahirette onlar, bir kazanç, ecir veya sevinç de elde edemezler. İkincisi ise kabir azabıdır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- İlk azap, canlarının alınması şeklinde olur. İkincisi de, kabir azabıdır. Daha sonra ise kıyamet günü en büyük azap ile imtihan edilirler.

- Birinci azap, bir haklılık payları olduğunu zannetmeleridir. İkincisi de hayal kırıklığına uğramaları ve beklemedikleri bir durumla karşılaşmalarıdır.

وَاٰخَرُونَ اعْتَرَفُوا بِذُنُوبِهِمْ خَلَطُوا عَمَلًا صَالِحًا وَاٰخَرَ سَيِّئًا عَسَى اللّٰهُ اَنْ يَتُوبَ عَلَيْهِمْ اِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَح۪يمٌ ﴿١٠٢﴾

102- "Diğer bir kısmı ise, günahlarını itiraf ettiler. Bunlar, salih amel ile kötü ameli birbirine karıştırmışlardır. Umulur ki Allah tövbelerini kabul eder. Çünkü Allah, çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Bunların şayet kusurları varsa da günahlarını itiraf etmişlerdir. İkrar ise, mahkemelerde insanlar arasındaki haklara vurgu yapmaktır. Ancak Allah'ın hakkını ikrar etmek, Hakk'ın kerem prensibi gereğince, suçun ortadan kalkmasını sağlar.

Şair bu mealde şöyle der:

*Denildi ki bana: Hakkında kötü davrandı falanca*
*Haksızlığa karşı susmak ise yakışmaz delikanlıya*
*Dedim ki: Geldi bana o ve güzelce özür diledi*
*Bizde suçun diyeti de özrüdür*

(خَلَطُوا عَمَلًا صَالِحًا وَاٰخَرَ سَيِّئًا) *"Bunlar, salih amel ile kötü ameli birbirine karıştırmışlardır."*

Ayette kötü amelin, salih amelin ardından zikredilmesi, günahın, ibadetin sevabını yok etmediğine delildir. Zira eğer yok etseydi, o artık salih amel olmazdı.

(عَسَى اللّٰهُ اَنْ يَتُوبَ عَلَيْهِمْ ) *"Umulur ki Allah tövbelerini kabul eder."* Bu ifade de bir öncekinin benzeridir. Bu arada ümit anlamına gelen "عسى ('asâ)" lafzı, Allah'a hiçbir şeyin vacip olmadığını, tövbeyi dilerse kabul edeceğini, dilerse reddedeceğini ifade etmektedir. Bir de Allah'ın sözü doğru olduğu için, kabul edeceğini söylediği zaman, onu yapar. Bu itibarla kabul etmek, Allah'a vacip değil, ondan vacip olan bir husustur.

Bir yoruma göre de, iyi ameli karıştırmaları, tövbe etmeleri anlamında olabilir. Zira tövbe salih bir ameldir. Kötü amelden maksat ise, tövbeyi bozmaları olabilir. Hal böyle olunca Allah'ın, tövbelerini kabul etmesinin umulması, şuna işaret etmektedir:

Eğer onlar, tövbelerini bozup, terk ettikleri günaha tekrar dönerlerse, yine de tövbelerini kabul etmemiz gerekir. Zira bozmaları yüzünden tövbeleri geçersiz olsaydı bile, lütfumuz sayesinde, tövbelerini kabul etmemize bir halel gelmezdi.

خُذْ مِنْ اَمْوَالِهِمْ صَدَقَةً تُطَهِّرُهُمْ وَتُزَكّ۪يهِمْ بِهَا وَصَلِّ عَلَيْهِمْ اِنَّ
صَلٰوتَكَ سَكَنٌ لَهُمْ وَاللّٰهُ سَم۪يعٌ عَل۪يمٌ ﴿١٠٣﴾

103- "Onların mallarından, onları kendisiyle arındıracağın ve temizleyeceğin bir sadaka al ve onlara dua et. Çünkü senin duan, onlar için sükûnettir. Allah, hakkıyla işitendir, hakkıyla bilendir."

Sen, o sadakayla onları, karşılığında bir şeyler bekleme arzusundan temizler ve karşılık düşüncesinden arındırırsın.

Sen, onları sadakayla nefislerinin ihtirasından temizler ve mallarının çokluğuyla övünmekten arındırırsın. Böylece onlar, bu

duygulardan sıyrılmakla, Allah'ın kendileri üzerindeki büyük nimetini görmüş olurlar.

(وَصَلِّ عَلَيْهِمْ ) *"Ve onlara dua et. Çünkü senin duan, onlar için sükûnettir."*

Himmetinle onlarla hemhal olman, onlar için, mallarıyla baş başa kalmalarından daha değerlidir.

اَلَمْ يَعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ هُوَ يَقْبَلُ التَّوْبَةَ عَنْ عِبَادِهٖ وَيَأْخُذُ الصَّدَقَاتِ
وَاَنَّ اللّٰهَ هُوَ التَّوَّابُ الرَّح۪يمُ ﴿١٠٤﴾

104- "Onlar, kullarının tövbesini kabul edenin ve sadakaları alanın Allah olduğunu; tövbeyi çok kabul edenin, çok merhametli olanın Allah olduğunu bilmediler mi?"

Allah, keremini ortaya koyduğu için, günahkârların tövbesini kabul etmekle övünmüştür. Aynı şekilde izzetinin yüceliğiyle de övünerek bu kabul ile yüceliğini ve ebedîliğini bilmeleri gerektiğine dikkatlerini çekmiştir.

Bir de nasıl ki Allah, büyüklük ve yüceliği hak etmede ortaksız ise aynı şekilde kulun, suçtan ve hatasından tövbesini kabul etmede de ortağı bulunmamaktadır. Aynı şekilde nasıl ki, cemal ve celal sıfatlarında benzersiz ise lütuf ve şefkatinde de hiç bir ortağı yoktur. Allah, az veya çok olsun, sadakaları kabul eder. Bu çerçevede sadakaların değer ve önemi, az veya çok olmasıyla değil, Allah'ın onları kabul etmesiyledir. Onların sadakaları görünürde az idi. Ancak Allah onları alıp kabul edince O'nun kabulüyle büyümüş oldular.

Şiir:

*Acı olur o sizsiz, varınca o*
*Yanınıza alır güzelliğinizi ve güzelleşir*

وَقُلِ اعْمَلُوا فَسَيَرَى اللّٰهُ عَمَلَكُمْ وَرَسُولُهُ وَالْمُؤْمِنُونَ وَسَتُرَدُّونَ
اِلٰى عَالِمِ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿١٠٥﴾

105- "De ki: 'Çalışın, yapın. Yaptıklarınızı Allah da Resulü de müminler de göreceklerdir. Sonra gaybı da görülen âlemi de bilen Allah'ın huzuruna döndürüleceksiniz. O da size bütün yapmakta olduğunuz şeyleri haber verecektir.'"

Allah onları, yaptıklarını gördüğünü belirtmekle korkutmuştur. Sonra Allah, onlar arasında durumları, Hakk'ın haberdar oluşundan utanmaya yetmeyen kimseler bulunduğunu bildiği için, idrak seviyelerine uygun olarak: (وَرَسُولُهُ وَالْمُؤْمِنُونَ) "*Resulü de müminler de göreceklerdir*" buyurmuştur. Bu arada hayânın mani olmadığı ve edebin alıkoymadığı kimse zarar etmiştir. Bir de hayâ örtüsünü yırtan kimse, Allah'ın gözünden düşmüştür.

Şiir:

*Yüzsuyu azaldığı zaman hayâsı azalır*
*Suyu azalan yüzde ise hiçbir hayır yoktur*

Kim ki hayâ onu, dünyada yasakları yapmaktan alıkoymazsa, bunun akıbetiyle yüzleşecektir. Kıyamette de hüsranı yakındır.

وَاٰخَرُونَ مُرْجَوْنَ لِاَمْرِ اللّٰهِ اِمَّا يُعَذِّبُهُمْ وَاِمَّا يَتُوبُ عَلَيْهِمْ وَاللّٰهُ
عَلٖيمٌ حَكٖيمٌ ﴿١٠٦﴾

106- "Diğer bir kısmı da Allah'ın emrine bırakılmışlardır. Bunlara ya azap eder ya da tövbelerini kabul eder. Allah, hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Allah, ne tövbelerinin kabul edileceğini açıkça belirtmiş ne de onları mağfiretinden ümitsiz olmakla damgalamıştır. Bu nedenle onlar, ürküntüyle arzu arasında yalpalayarak ve korkuyla ümit arasında gidip gelerek mahcubiyet içinde kalmışlardır. Allah, onlara azap etmesi halinde kendisine hiçbir itirazın yapılamayacağını, merhamet etmesi halinde de hiç kimsenin kendisine engel olamayacağını bildirmiştir.

Şiir:

*Bana doyurucu ümitler verir bir tek söz*
*Kusurumu bilmem de, bana uyarıcı olarak yeter*

وَالَّذٖينَ اتَّخَذُوا مَسْجِدًا ضِرَارًا وَكُفْرًا وَتَفْرٖيقًا بَيْنَ الْمُؤْمِنٖينَ وَاِرْصَادًا لِمَنْ حَارَبَ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ مِنْ قَبْلُ وَلَيَحْلِفُنَّ اِنْ اَرَدْنَٓا اِلَّا الْحُسْنٰى وَاللّٰهُ يَشْهَدُ اِنَّهُمْ لَكَاذِبُونَ ﴿١٠٧﴾

107- "Bir de zararlı faaliyetlerde bulunmak, küfre yardım etmek, müminler arasına ayrılık sokmak için ve öteden beri Allah ve Resulüne karşı savaşanlara üs olsun diye bir mescit yapanlar vardır. Bunlar: 'Bizim iyilikten başka hiçbir kastımız yok' diye de mutlaka yemin ederler. Ama Allah şahitlik eder ki, bunlar mutlaka yalancıdırlar."

Kim ki bağlılığında kalben samimi olmazsa, gönül onun emek ve çabasına ısınmaz. Zahiren dost görünmesi yamukluğunu haykırmakta, samimiyetsiz sözü ise iyi niyetli olmadığına doğru tanıklık etmektedir.

Şiir:

*Her kim ehil olmazsa vuslata*
*Günah gibidir her iyiliği*

لَا تَقُمْ فٖيهِ اَبَدًا لَمَسْجِدٌ اُسِّسَ عَلَى التَّقْوٰى مِنْ اَوَّلِ يَوْمٍ اَحَقُّ اَنْ تَقُومَ فٖيهِ فٖيهِ رِجَالٌ يُحِبُّونَ اَنْ يَتَطَهَّرُوا وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُطَّهِّرٖينَ ﴿١٠٨﴾

108- "Onun içinde asla namaz kılma! İlk günden temeli takva üzerine kurulan mescit, içinde namaz kılmana elbette daha layıktır. Orada, temizlenmeyi seven adamlar vardır. Allah da tertemiz olanları sever."

Günah işlenen yerleri mesken edinmek, inkâr ve isyan ehlinin diyarında yaşamak, onlarla yardımlaşmanın alametlerindendir. Onların meskenlerinden uzaklaşmak ve yollarına meyledenleri terk etmek ise, kendilerine kalben muhalefet etmenin ve manen düşman olmanın bayrağı mesabesindedir.

(فِيهِ رِجَالٌ يُحِبُّونَ اَنْ يَتَطَهَّرُوا) *"Orada, temizlenmeyi seven adamlar vardır."*

Bunlar, günahlardan temizlenirler. Bu temizlik, ibadet ehlinin alametidir. Şehvetten ve dünyalık diğer arzulardan temizlenirler. Bu, zahitlerin vasfıdır. Allah'tan başka kimseleri sevmekten temizlenirler. Sonra da sahip oldukları vasıflar sayesinde nefislerini görmekten temizlenirler. Bu da, ariflerin vasfıdır.

(وَاللّٰهُ يُحِبُّ الْمُطَّهِّرِينَ) *"Allah da tertemiz olanları sever."*

Allah, sırlarını, bütün yaratıklarla huzur bulmaktan veya sonradan yaratılıp kaderi ezelden çizilmiş olan herhangi bir varlığı dikkate almaktan temizleyenleri sever.

اَفَمَنْ اَسَّسَ بُنْيَانَهُ عَلٰى تَقْوٰى مِنَ اللّٰهِ وَرِضْوَانٍ خَيْرٌ اَمْ مَنْ اَسَّسَ بُنْيَانَهُ عَلٰى شَفَا جُرُفٍ هَارٍ فَانْهَارَ بِهٖ فٖي نَارِ جَهَنَّمَ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظَّالِمٖينَ ﴿١٠٩﴾

109- "Binasını, Allah'a karşı gelmekten sakınmak (takvâ) ve O'nun rızasını kazanmak temeli üzerine kuran kimse mi daha hayırlıdır, yoksa binasını çökmeye yüz tutmuş bir yarın kenarına kurup, onunla birlikte kendisi de cehennem ateşine yuvarlanan kimse mi? Allah, zalimler topluluğunu doğru yola erdirmez."

Mürit, binasını samimi bir inanç, sonra vuslattan önce izlediği yoldan ayrılmamaya dönük içten bir kararlılık, sonra bütün dünyalık gayeleri, şehevî arzuları, ihtiyaç ve isteklerinden sıyrılmak üzerine kurmalıdır. Ardından işini, unutmaya maruz kalmayacak şekilde zikrinin sürekliliğine, sonra kendi nefsine tercih etmek suretiyle, Müslümanların haklarına bağlı kalmaya ve onların çıkarlarını öncelemeye dayandırmalıdır. İşin başında esasları göz ardı eden kimse ise, sonunda vuslattan mahrum kalır. Oysa binasının temelini sağlam yapan kimsenin damı, duvarlarının üstüne oturur.

لَا يَزَالُ بُنْيَانُهُمُ الَّذِي بَنَوْا رِيبَةً فِي قُلُوبِهِمْ اِلَّٓا اَنْ تَقَطَّعَ قُلُوبُهُمْ
وَاللّٰهُ عَلِيمٌ حَكِيمٌ ﴿١١٠﴾

110- "Kurmuş oldukları binaları, kalpleri paramparça olmadıkça yüreklerinde sürekli bir kuşku olarak kalmaya devam edecektir. Allah hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Münafıklığın kök damarları, ancak doğru delile dayalı hakikat orağıyla inanç zemininden koparılabilir. Bu itibarla her kim, yürüyüşünü sürdürmede ilahi yardıma mazhar olur ve delili düşünmeye muvaffak kılınırsa, gönül rahatlığına ve irfanın sağladığı huzura kavuşur.

Kim de, alışılmış taklit üzere kalırsa, tereddüdün tedirginliği, her türlü ihtimali caiz görmenin karanlığı ve problemli duyguların içinde cirit atması sebebiyle, kalbi rahata kavuşmaz.

اِنَّ اللّٰهَ اشْتَرٰى مِنَ الْمُؤْمِنِينَ اَنْفُسَهُمْ وَاَمْوَالَهُمْ بِاَنَّ لَهُمُ
الْجَنَّةَ يُقَاتِلُونَ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ فَيَقْتُلُونَ وَيُقْتَلُونَ وَعْدًا عَلَيْهِ
حَقًّا فِي التَّوْرٰيةِ وَالْاِنْجِيلِ وَالْقُرْاٰنِ وَمَنْ اَوْفٰى بِعَهْدِهِ مِنَ اللّٰهِ
فَاسْتَبْشِرُوا بِبَيْعِكُمُ الَّذِي بَايَعْتُمْ بِهِ وَذٰلِكَ هُوَ الْفَوْزُ الْعَظِيمُ ﴿١١١﴾

111- "Şüphesiz Allah, müminlerden nefislerini (canlarını) ve mallarını, kendilerine vereceği cennet karşılığında satın almıştır. Artık onlar, Allah yolunda savaşırlar, öldürürler ve ölürler. Allah bunu Tevrat'ta, İncil'de ve Kur'an'da kesin olarak va'detmiştir. Kimdir sözünü Allah'tan daha iyi yerine getiren? O halde yapmış olduğunuz bu alışverişten dolayı sevinin. İşte asıl büyük başarı budur."

Müminlere düşen, canlarını ve mallarını Allah'ın hükmüne teslim etmek, Allah'a düşen de mükâfat ve sevap vermek olduğu için, yani bir bedel ve bedele konu olan meta söz konusu olduğundan bu

durum, ticaretle benzerlik taşımış ve buna bağlı olarak satın alma lafzı kullanılmıştır. Nitekim başka iki ayette de Allah şöyle buyurmuştur:

(هَلْ اَدُلُّكُمْ عَلٰى تِجَارَةٍ) *"Size bir ticaret göstereyim mi?"* (Saff, 61/10)

(فَمَا رَبِحَتْ تِجَارَتُهُمْ) *"Bu yüzden ticaretleri kâr getirmemiştir."* (Bakara, 2/16)

Hakikatte ise Allah hakkında satın alma nitelemesi yerinde değildir. Çünkü o, bütün varlıkların malikidir. Nitekim mülkiyet hakkı elde edemeyen kimse hakkında da hakikatte satış yaptığından söz edilemez.

Bu ayette, üzerinde konuşulacak bir alan bulunmaktadır. Bu çerçevede şu yorumlar yapılmıştır:

- Satıcı, sattığı malı teslim etmek istemediği zaman bedeli hak etmez. Aynı şekilde kul da, ancak canını ve malını, dinin emirleri istikametinde teslim ettikten sonra, vaat edilen karşılığı hak eder. Bu itibarla, kendisine düşeni yapmayan veya kusur işleyen kimse, mükâfatı hak etmez.

Dinde bir kimsenin, aynı şeyi hem satmak hem de satın almak suretiyle, aynı zamanda hem satıcı hem de alıcı olması caiz değildir. Meğerki bu şahıs baba ve dede olsun. Ancak burada bu, satış değil şefkat lafzıyla olur. Allah'ın, yine kendi iznine bağlı olarak, kula olan merhameti daha mükemmel ve ona olan iltifatı daha ileri derecede olur. Müminin de bunda açık kazancı vardır. Bu itibarla, Allah'ın hükmü başkalarının hükmüne kıyaslanamamakla birlikte, bu muamele sahihtir.

- Allah, müminlerden kalplerini satın aldığını değil, canlarını satın aldığını söylemektedir. Çünkü can, afetlerin merkezi olduğundan Allah, cenneti ona karşılık yapmış, kalbin bedelini ise cennetten daha büyük tutmuştur. Kalbin bedeli, Allah'ın, cennette velilerine özgü kıldığı kendisini görme nimetidir.

- Nefis kusurun merkezidir. Kerem sahibi olan da, başkalarının satın almaktan çekindiği kusurlu şeyi satın almayı arzu eder.

- Kendi faydalanmak için bir şey satın alan kimse, buldukları-nın en iyisini almış olur. Başkasının faydalanması için bir şey satın alan kimse ise, bedeliyle kendisine faydalı olması için sahibine geri çevrilen şeyi satın almış olur.

Bazı peygamberlere indirilen kimi kitaplarda şu ifade yer al-mıştır:

*"Ey Âdemoğulları! Ben, üzerinizden kâr elde etmek için sizi yarat-madım. Aksine siz, benim üzerimden kâr elde edesiniz diye sizi yarattım."*

- Allah, onlardan nefislerini satın alınca, bundan dolayı O'na şükür olsun diye bu kimseler, kalplerine yöneldiler. Kalbi ise Al-lah, cebren kendine bağladı. Sevenlerin kuralına göre, cebir lütuf-tan daha değerlidir.

Şu dizeler de aynı mealde söylenmiştir:

*Sevgi cebir üzerine kurulmuştur, eğer*
*Dönseydi sevgili bir gün, çirkin olurdu*
*Aşkın kuralında kabul görmez*
*Delilleri bir araya getirmenin peşine düşen âşık*

Şeyh Ebû Ali ed-Dakkâk şöyle diyordu:

*"Allah kalplerini satın aldığını söylememiştir. Çünkü kalpler, Allah'ın sevgisine vakfedilmiştir. Vakıf ise satın alınmaz."*

- Kuşun havada, balığın da suda satın alınması geçerli değildir. Çünkü teslim edilmeleri imkânsızdır. Kalp de öyledir. Sahibi onu teslim edemez.

Allah şöyle buyurmuştur.

(اَنَّ اللّٰهَ يَحُولُ بَيْنَ الْمَرْءِ وَقَلْبِهِ) *"Allah, kişi ile kalbi arasına girer."* (Enfâl, 8/24)

Tevrat'ta da şöyle denilmiştir:

*"Cennet benim cennetim, mal da benim malımdır. O halde ma-lımla cennetimi satın alın. Eğer kâr ederseniz sizin olsun. Şayet zarar ederseniz, onu ben üstlenirim."*

- Allah, insanın kötü huyunu bildiği için, onu yaratmadan önce satın almıştır. Bedelini de pahalı tutmuştur ki baliğ olunca itiraz hakkı olmasın.

- Müminin, nefsi için hiçbir şekilde direnmeye hakkı yoktur. Çünkü o onun değildir. Nefsini satın alan Allah, o nefis üzerinde, aslında yabancısı olan sahibinden daha çok hak sahibidir.

- Allah, nefsi satın aldığını bildirmiştir ki kul, onun hakkında iddia sahibi olmasın. Böylece nefisle huzur bulmaz, nefsi görmez ve onu beğenmez.

(فَيَقْتُلُونَ وَيُقْتَلُونَ) *"Öldürürler ve ölürler."*

Onlar için öldürmek ile ölmek arasında fark bulunmamaktadır.

Şiir:

*Şükür etmekte sana, akıttığın kan*
*Ve hamd etmekte sana, seçtiğin kalp*

Bu arada ayette: "Alışverişinizin bedeliyle sevinin" denilmemiş de: "Alışverişinizle sevinin" denilmiştir. Çünkü burada müminin gerçek alışverişi söz konusu değildir. Gerçekte Allah, kendisinin müminlerden satın aldığını buyurmuş, böylece kendi alışverişini bizim alışverişimizin yerine koymuştur. Buradaki ifade tarzı, bir başka ayette Hz. Peygamber'e hitaben söylenen şu ifade gibidir:

(وَمَا رَمَيْتَ اِذْ رَمَيْتَ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ رَمٰى) *"Attığın zaman, sen atmadın. Fakat Allah attı."* (Enfâl, 8/17) Bu ise, tasavvuf ehlinin işaret ettiği cemin ta kendisidir.

اَلتَّٓائِبُونَ الْعَابِدُونَ الْحَامِدُونَ السَّٓائِحُونَ الرَّاكِعُونَ السَّاجِدُونَ الْاٰمِرُونَ بِالْمَعْرُوفِ وَالنَّاهُونَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَالْحَافِظُونَ لِحُدُودِ اللّٰهِ وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِينَ ﴿١١٢﴾

112- "Bunlar tövbe edenler, ibadet edenler, hamdedenler, oruç tutanlar, rükû' ve secde edenler, iyiliği emredip kötülükten alıkoyanlar ve Allah'ın koyduğu sınırları hakkıyla koruyanlardır. Müminleri müjdele."

Allah, müminleri satın alınmakla niteledikten sonra, onları tövbe edenler ve ibadet edenler olmakla övmüştür. Bu arada kendi rızasıyla bir şey satın alan kimse, satın alma esnasında bilmediği kusurdan dolayı onu reddetme hakkına sahiptir. Şayet kusuru bilerek satın almışsa, bu takdirde onu reddetme hakkına sahip değildir. Allah, şöyle buyurmuştur:

(وَلَقَدِ اخْتَرْنَاهُمْ عَلٰى عِلْمٍ عَلَى الْعَالَمِينَ) *"Andolsun, onları bir bilgi üzerine âlemlere üstün kıldık."* (Duhân, 44/32)

Bir yoruma göre de, kim bir şey satın alır da onda bir kusur bulursa, onu satın aldığı kimseye geri verir. Oysa Allah, nefislerimizi kendisinden satın almıştır. Bu sebeple onları geri vermek istediği zaman, yine kendine geri vermiş olur. Allah şöyle buyurur:

(ثُمَّ رُدُّوا اِلَى اللّٰهِ مَوْلٰيهُمُ الْحَقِّ) *"Sonra onlar, gerçek sahipleri Allah'a döndürülürler."* (En'âm, 6/62)

İşte nasıl ki döndürülme ona ise aynı şekilde eğer müminleri geri çevirirse, onları da yine kendine çevirmiş olacaktır.

Tövbe edenlerden maksat, Allah'a dönüş yapanlardır. Bu çerçevede kimisi, hatasından vazgeçip Allah'a ibadet etmeye, kimisi nefsine uymaktan vazgeçip Allah'ın rızasına uymaya, kimisi kendini görmekten Allah'ın lütfunu görmeye, kimisi de kendi nefsini ve hemcinslerini hissetmekten hakkının hakikatlerinde gark olmaya dönüş yapmıştır.

Bir yoruma göre de, tövbe eden kimi insan, fiillerinden dönüş yaparak durumunu değiştirmeye çalışır. Böylece yarın Allah'ın türlü türlü keremlerini ve çeşitli lütuf ve nimetlerini bulur. Kimi tövbe eden de, bütün dünyalık ihtiyaç ve istekleri aradan kaldırarak Allah dışındaki ve Allah'a karşı olan her şeyden yüz çevirir, Rabbi için Rabbi'nin yardımıyla Rabbi'ne döner.

Kimisi, nefsinin Allah'ın bol olan sevabından nasibini alması veya acıklı azabından korunması için, kimisi, Allah'ın dönüş yapmaya dair emrine itaatle nefsinin kirden ve günahlarından kurtulmaktan duyduğu sevinci yaşamak için, kimisi de Hz. Peygamber'in (s.a.v.) şu hadisini duyduğu için tövbe eder:

*"Allah, kulunun tövbesiyle, yitik hayvanını bulan çöl Arap'ından daha çok sevinir."* Bu ikisi arasındaki fark ise çok büyüktür.

Şiir:

*Ey göç yolculuğundan gelen! Hoş geldin*
*Çağırıyorum ve unutmayacağım seni, estikçe saba rüzgârı*

İbadet edenler ise, her yönüyle Allah'a boyun eğen ve ne dünya nimetlerine ne de ahiret korkularına kul köle olmayan kimselerdir. Zaten kul, ancak gelip geçici olan her şeyden arındıktan sonra Allah'a gerçek kul olur. Yaradılış bakımından ise herkes Allah'ın kuludur.

Nitekim Allah şöyle buyurur:

(اِنْ كُلُّ مَنْ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ اِلَّٓا اٰتِي الرَّحْمٰنِ عَبْدًا) *"Göklerdeki ve yerdeki herkes, Rahman'a kul olarak gelecektir."* (Meryem, 19/93)

Ancak gerçek kulluğun sahibi özeldir.

Hamd edenler, nimetlerinin varlığına karşı Allah'a şükreden, celal ve cemalini gördüklerinde de O'nu övenlerdir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bunlar, Allah'ın kudretinin ürünü olan hiçbir şeye itiraz etmeden ve vacip olan ibadetinden de sıkılmadan hamd edenlerdir.

- Bunlar, nimeti ve vergisine karşı olduğu gibi, alıkoymasına ve imtihan etmesine karşı da Allah'a hamd edenlerdir.

- Bunlar, nankörler şikâyetçi olduklarında Allah'a hamd eden, kişiliksiz olanlar ağladıkları zaman da O'nu medheden kimselerdir.

- Bunlar, kendilerini yaklaştırdığı zaman Allah'a şükreden, onları uzaklaştırdığı zaman da O'na hamdeden kimselerdir.

Oruç tutanlar ise, Allah'tan başkasını görmekten sakınanlar, O'ndan başkasına hizmet etmeyi kabul etmeyenler ve O'nunla yetinenlerdir.

Diğer bir yoruma göre ise bunlar, ibret almak ve basiret sahibi olmak için yeryüzünde seyahat edenlerdir. Bunlar, yeryüzünün doğusunda ve batısında kalpleriyle seyahat edip her tarafını düşünen, ondaki değişiklikleri onu inşa edenin varlığına delil kılan, onda gördükleri mucizeler yoluyla yaratıcısının hikmetiyle hakikate eren kimselerdir. Bunlar, sırlarıyla melekût âleminde seyahat edip vuslatın huzuruna eren ve Hakk'ı görme hakikatine mazhar olmak suretiyle, dostluk esintisiyle yaşayan kimselerdir.

(الرَّاكِعُونَ) "*Rükû' edenler*" tecellinin hükümranlığı altında her durumda Allah'a boyun eğenlerdir.

Bir hadis şöyledir:

*"Allah'ın tecelli ettiği her şey, muhakkak O'na boyun eğmiştir."*

Rükû' eden kimse, görünürde rükû' ettiği gibi kalben de Allah'tan korkmaktadır. Böylece görünürde, Hakk'ın kendisine olan ihsanı sebebiyle, O'na teslimiyeti güzel yaparken, iç dünyasında da, tecellisinin nurları sayesinde Hakk'ı görür gibi O'na itaat eder.

(السَّاجِدُونَ) "*Secde edenler*" bunu görünürde kulluk zemininde nefisleriyle, iç âlemde ise rububiyeti müşahede ettiklerinde kalpleriyle yerine getirirler. Bu arada secde bazı kısımlara ayrılır:

- İradenin sağlam olduğu zamanki secde. Kul, boyun eğmişlik vasfıyla ihtiyaç zemininde secde eder ve ancak vuslat müjdeleri geldiğinde başını secdeden kaldırır.

- Şühud halindeki secde. Hak, kulun kalbine tecelli ettiği zaman, kul kalbiyle secde eder ve secdeden sonra Allah'tan başkasına bakmaz.

- Vücud halindeki secde. Bu secdeyi kul, benliğinden bütünüyle soğumak ve bütün beşeri vasıfları ile topyekûn varlığını hissedemez hale gelmek suretiyle yapar.

(اَلْاٰمِرُونَ بِالْمَعْرُوفِ وَالنَّاهُونَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَالْحَافِظُونَ لِحُدُودِ اللّٰهِ وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِينَ)
*"İyiliği emredip kötülükten alıkoyanlar ve Allah'ın koyduğu sınırları hakkıyla koruyanlardır. Müminleri müjdele."*

Bunlar, halkı Allah'a davet edip başkalarından sakındıranlardır. Bu kimseler, Allah'a yönelmeyi, O'ndan başkasıyla meşgul olmayı terk etmeyi birbirlerine tavsiye ederler. Nefislerini, istikamet prensiplerine yönlendirmek suretiyle, ibadetlere sarılmaya memur eder, gaflet diyarını ve alışkanlık haline getirdikleri tembelliği terk etmek suretiyle de dünyalık amaçlarına ve arzularına uymaktan alıkoyarlar.

(وَالْحَافِظُونَ لِحُدُودِ اللّٰهِ) *"Allah'ın koyduğu sınırları hakkıyla koruyanlar"* ise, Allah'ın durmalarını istediği yerde duran, O'nun rızası istikametinde hareket eden ve duran, nefeslerini O'nun zikriyle alıp veren kimselerdir.

مَا كَانَ لِلنَّبِيِّ وَالَّذِينَ اٰمَنُوٓا اَنْ يَسْتَغْفِرُوا لِلْمُشْرِكِينَ وَلَوْ كَانُوٓا
اُو۬لِي قُرْبٰى مِنْ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُمْ اَنَّهُمْ اَصْحَابُ الْجَح۪يمِ ﴿١١٣﴾

113- "Cehennem ehli oldukları, açıkça kendilerine belli olduktan sonra, yakınları da olsalar, Allah'a ortak koşanlar için af dilemek, ne peygambere yaraşır ne de müminlere."

Dinin aslı, düşmanlarla olan irtibatı kesmek ve dostlarla dostça ilişkiler içinde olmaktır. Dostun ise ne bir yakını ne başkaca sıcak bir dostu ne nesep bağı bulunan kimsesi ne de ahbabı bulunur. Dostluğu Allah'ın emri, düşmanlığı da Allah'ın alıkoyması sebebiyledir.

وَمَا كَانَ اسْتِغْفَارُ اِبْرٰه۪يمَ لِاَب۪يهِ اِلَّا عَنْ مَوْعِدَةٍ وَعَدَهَٓا اِيَّاهُۚ
فَلَمَّا تَبَيَّنَ لَهُٓ اَنَّهُ عَدُوٌّ لِلّٰهِ تَبَرَّاَ مِنْهُۜ اِنَّ اِبْرٰه۪يمَ لَاَوَّاهٌ حَل۪يمٌ ﴿١١٤﴾

114- "İbrahim'in babası için af dilemesi sadece ona verdiği bir söz yüzünden idi. Onun, bir Allah düşmanı olduğu kendisine açıkça belli olunca, ondan uzaklaştı. Şüphesiz İbrahim çok içli, yumuşak huylu bir kişiydi."

Allah Müslümanlara, müşriklerle irtibatı kesmeyi, onlardan yüz çevirmeyi ve kendilerine mağfiret dilemekten rahatsızlık duymayı emrettikten sonra bunun, veliler ve peygamberlerin yolu olduğunu onlara açıkladı. Bir de Hz. İbrahim, her ne kadar babasına mağfiret dilediyse de bu onun mümin olmadığından emin olmadan önce idi. Nitekim babasının, Allah'ın düşmanı olduğunu anlayınca kendisiyle irtibatı kestiğini açıkladı.

وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُضِلَّ قَوْمًا بَعْدَ اِذْ هَدٰيهُمْ حَتّٰى يُبَيِّنَ لَهُمْ مَا يَتَّقُونَ
اِنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلٖيمٌ ﴿١١٥﴾

115- "Doğru yola ilettikten sonra, sakınacakları şeyleri kendilerine apaçık bildirmedikçe, Allah bir toplumu saptıracak değildir. Şüphesiz Allah, her şeyi hakkıyla bilendir."

Alıkonulduğunuzu açıkça bildikten sonra müşriklere mağfiret dilemediğiniz sürece, Allah saptığınıza ve hak yoldan çıktığınıza hükmetmez. Ancak, onlara mağfiret dilemekten alıkonulduğunuzu bildikten sonra, eğer bunu yapmaya kalkışırsanız o zaman, size yasaklanan bir şeyi yapmanız sebebiyle haktan sapmış olursunuz. Bu, ayetin tefsirine dair izahtır. Ayetteki işaret ise, edebi terk etmediğiniz sürece, Allah'ın, nimetini elinizden almayacağı şeklindedir.

Bir yoruma göre de, Allah'ın, vuslat makamına erdirdiği kimse, daha önce saygısızlık yapmış olan kimse hariç, bundan sonra ayrılık azabına maruz kalmaz.

اِنَّ اللّٰهَ لَهُ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ يُحْيٖي وَيُمٖيتُ وَمَا لَكُمْ مِنْ
دُونِ اللّٰهِ مِنْ وَلِيٍّ وَلَا نَصٖيرٍ ﴿١١٦﴾

116- "Şüphesiz göklerin ve yerin hükümranlığı yalnız Allah'ındır. O, diriltir ve öldürür. Sizin için Allah'tan başka ne bir dost ne de bir yardımcı vardır."

Allah, güzelliğini mülkünün varlığından almaz. Yaratıklarının yokluğuyla da noksanlığa maruz kalmaz. Bu itibarla o, hiçbir şeyi

yaratmadan önce de hükümranlık sahibi idi. Bu arada hükümranlığı ifade etmede, “melik” lafzı, “mâlik” lafzından daha yeterlidir. Allah’ın hükümranlığı ise, yoktan var edebilme gücüne sahip olması demektir. Var olmayan da, O’nun kudreti ve mülkü dâhilindedir. Allah, onu var ettiği zaman var oluş halinde de o, Allah’ın kudret ve mülkü dâhilindedir. Allah, bir şeyi yok ettiği zaman da o, var olmaktan çıkar; ancak Allah’ın kudretinin dışına çıkmaz.

(يُحْيِي وَيُمِيتُ) “*O, diriltir ve öldürür.*” Allah, dilediğini irfan ve tevhid inancıyla diriltir, dilediğini de nankörlük ve inkârı ile öldürür.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, ariflerin kalplerini vuslat nurlarıyla diriltir, abidlerin nefislerini de küçük düşürerek öldürür.

- Allah, kendisine yönelen kimseye keremiyle hayat verir, kendisinden yüz çevireni de yüceliğiyle öldürür.

لَقَدْ تَابَ اللّٰهُ عَلَى النَّبِيِّ وَالْمُهَاجِرِينَ وَالْاَنْصَارِ الَّذِينَ اتَّبَعُوهُ فِي سَاعَةِ الْعُسْرَةِ مِنْ بَعْدِ مَا كَادَ يَزِيغُ قُلُوبُ فَرِيقٍ مِنْهُمْ ثُمَّ تَابَ عَلَيْهِمْ اِنَّهُ بِهِمْ رَؤُفٌ رَحِيمٌ ﴿١١٧﴾

117- “Andolsun Allah, peygamber ile içlerinden bir kısmının kalpleri eğrilmeye yüz tuttuktan sonra, sıkıntılı bir zamanda ona uyan muhacirlerle ensarın tövbelerini kabul etmiştir. Evet, onların tövbelerini kabul etmiştir. Şüphesiz O, onlara çok şefkatli ve çok merhametlidir.”

Allah, onların tövbesini kabul etti. Ayrıca, Tebûk Gazvesi'nde kendisiyle beraber olmaktan geri kalan münafıklara izin vermesi konusunda Allah, peygamberinin tövbesini de kabul etti. Hz. Peygamber ile beraber çıkan muhacirler ve ensarın tövbesini ise Allah, Tebûk Gazvesi'nde karşılaştıkları açlık, susuzluk ve yorgunluk sıkıntısına uğramaları sebebiyle dönmeye niyetlenmeleri konusunda kabul etti. Nitekim Allah bu olaya:

(مِنْ بَعْدِ مَا كَادَ يَزِيغُ قُلُوبُ فَرِيقٍ مِنْهُمْ) "*İçlerinden bir kısmının kalpleri eğrilmeye yüz tuttuktan sonra*" ifadesiyle atıfta bulunmuştur. Allah'ın, bunların tövbesini kabul etmesi, kalplerinin eğrilmesini önlemesi şeklinde olmuştur. Zaten Allah'ın, dostlarıyla ilgili prensibi böyledir. Tehlikeyle burun buruna ve yok olmaya yakın hale geldikleri, zaferden ümitsizlik kalplerinde kök saldığı ve nefislerini sıkıntıyı tatmaya alıştırdıkları zaman, Allah, kerem bulutlarından üzerlerine rahmet yağdırır. Böylece hayat fidanı kuruduktan sonra yeniden canlanır, dostluk gülü solduktan sonra yeniden tazelenir ve bu gibilerin durumları, şu dizelerde söylendiği gibi olur:

*Kefen giydirilmiş kimse gibiydik biz*
*Ve naşı lahde yaklaştırılan*
*Derken dalgalandı can suyu vahşice*
*Ve geri çevirdi vuslat onu güle*

وَعَلَى الثَّلٰثَةِ الَّذٖينَ خُلِّفُوا حَتّٰٓى اِذَا ضَاقَتْ عَلَيْهِمُ الْاَرْضُ بِمَا رَحُبَتْ وَضَاقَتْ عَلَيْهِمْ اَنْفُسُهُمْ وَظَنُّٓوا اَنْ لَا مَلْجَاَ مِنَ اللّٰهِ اِلَّٓا اِلَيْهِ ثُمَّ تَابَ عَلَيْهِمْ لِيَتُوبُوا اِنَّ اللّٰهَ هُوَ التَّوَّابُ الرَّحٖيمُ ﴿١١٨﴾

118- "Savaştan geri kalan üç kişinin de tövbelerini kabul etti. Yeryüzü bütün genişliğine rağmen onlara dar gelmiş, vicdanları da kendilerini sıktıkça sıkmış, böylece Allah'ın azabından yine O'na sığınmaktan başka çare olmadığını anlamışlardı. Sonra eski hallerine dönsünler diye, onların tövbelerini de kabul etti. Şüphesiz Allah, tövbeyi çok kabul eden ve çok merhamet edendir."

Sığınmaları içten olunca Allah, onlara afiyet verdi ve belayı üzerlerinden kaldırdı. İşte Hak böyledir. Sıkıntının gecelerini, kolaylığın gündüzüyle örter, nefisle mücadelenin güneşlerini, fitnenin uğursuzluklarının üstüne doğurur. Mutluluk çarkını döndürmek suretiyle de kapıyı çalan musibetlerin etkisini yok eder. Bu, Allah'ın değiştirmediği bir prensibi ve keremiyle ilgili icra ettiği değişmez bir âdetidir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَكُونُوا مَعَ الصَّادِق۪ينَ ﴿١١٩﴾

**119- "Ey iman edenler! Allah'a karşı gelmekten sakının ve doğrularla beraber olun."**

Ey Allah'ın peygamberlerine iman edenler! Ey kitap ehlinden iman eden kimseler! Müslüman olmuş doğru kimselerle beraber olun. Ey şu anda iman etmiş olanlar! Son durumlarınızda doğrularla beraber olun. Yani imanı devam ettirin. Dünyada doğruluğu devam ettirin ki, yarın cennette doğrularla beraber olasınız.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Doğrular; Hz. Ebubekir, Hz. Ömer, Hz. Osman, Hz. Ali ve diğer ilk Müslümanlardır.

- Doğruluk son durumdur. Bu da gizlilik ve alenilik hallerinin eşitlendiği nadir ve kıymetli durumdur.

Zebûr'da şu ifade yer almıştır:

*"Beni sevdiğini iddia edip gece olduğunda beni göz ardı ederek uyuyan kimse, yalan söylemiştir."*

Bu arada doğruluk, hem konuşmalarda hem de davranışlarda söz konusu olup en mükemmel şekli, davranışta doğruluktur.

مَا كَانَ لِاَهْلِ الْمَد۪ينَةِ وَمَنْ حَوْلَهُمْ مِنَ الْاَعْرَابِ اَنْ يَتَخَلَّفُوا
عَنْ رَسُولِ اللّٰهِ وَلَا يَرْغَبُوا بِاَنْفُسِهِمْ عَنْ نَفْسِه۪ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ
لَا يُص۪يبُهُمْ ظَمَاٌ وَلَا نَصَبٌ وَلَا مَخْمَصَةٌ ف۪ي سَب۪يلِ اللّٰهِ وَلَا
يَطَؤُ۫نَ مَوْطِئًا يَغ۪يظُ الْكُفَّارَ وَلَا يَنَالُونَ مِنْ عَدُوٍّ نَيْلًا اِلَّا كُتِبَ
لَهُمْ بِه۪ عَمَلٌ صَالِحٌ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُض۪يعُ اَجْرَ الْمُحْسِن۪ينَ ﴿١٢٠﴾
وَلَا يُنْفِقُونَ نَفَقَةً صَغ۪يرَةً وَلَا كَب۪يرَةً وَلَا يَقْطَعُونَ وَادِيًا
اِلَّا كُتِبَ لَهُمْ لِيَجْزِيَهُمُ اللّٰهُ اَحْسَنَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٢١﴾

120, 121- "Medine halkı ve onların çevresinde bulunan bedevîlere, Allah'ın Resûlünden geri kalmak, kendi canlarını onun canından üstün tutmak yaraşmaz. Çünkü onların, Allah yolunda çektikleri susuzluk, yorgunluk, açlık, kâfirleri öfkelendirmek üzere, bir yere adım atmaları ve düşmana karşı herhangi bir başarı kazanmaları gibi hiçbir olay yoktur ki karşılığında kendilerine iyi bir amelin sevabı yazılmış olmasın. Şüphesiz Allah, iyilik yapanların mükâfatını elbette zayi etmez. Allah yolunda küçük, büyük bir harcama yapmazlar ve bir vadiyi katetmezler ki bunlar, Allah'ın, yaptıklarının daha güzeliyle kendilerini mükâfatlandırması için hesaplarına yazılmış olmasın."

Onların nefis, can, mal, çocuk ve aile dâhil, hiçbir şeyi Hz. Peygamber'e tercih etmeleri caiz değildir. Allah katında zarar etmeleri de asla söz konusu değildir. Aksine onlar, Hz. Peygamber için bir adım attıkça Allah, onlara bin adımla karşılık vermiştir. Ona yaklaştıkça onlara lütuf ve keremde bulunmuş, onun uğruna susuzluk çektikçe, onlara sevgisinin şarabından içirmiş, onun için bir zorluğa katlandıkça onları lütuf ve huzurla karşılamış ve düşmanlardan bir eziyet gördükçe muhakkak Allah, çabalarına kendileri için dünya ve ahiret saadeti sağlayacak olan şükürle karşılıkta bulunmuştur.

وَمَا كَانَ الْمُؤْمِنُونَ لِيَنْفِرُوا كَآفَّةً فَلَوْلَا نَفَرَ مِنْ كُلِّ فِرْقَةٍ مِنْهُمْ طَٓائِفَةٌ لِيَتَفَقَّهُوا فِي الدِّينِ وَلِيُنْذِرُوا قَوْمَهُمْ اِذَا رَجَعُوٓا اِلَيْهِمْ لَعَلَّهُمْ يَحْذَرُونَ ﴿١٢٢﴾

122- "Müminlerin hepsi toptan seferber olacak değillerdir. Öyleyse onların her kesiminden bir grup da din konusunda köklü ve derin bilgi sahibi olmak ve döndükleri zaman kavimlerini uyarmak için geri kalsa ya! Umulur ki sakınırlar."

Eğer herkes, din konusunda köklü ve derin bilgi sahibi olmakla uğraşsaydı, geçimleri aksayacak ve insanların geneli, bu amaca ulaş-

mayacaktı. İşte bu nedenle din ilimlerinde derinleşmek, farz-ı kifâye kılınmıştır.

Diğer bir yoruma göre; Allah, Müslümanları tabakalara ayırmıştır. Bu çerçevede avamları, bir hükümdarın sıradan vatandaşları, hadis yazanlar hükümdarın haznedarları, Kur'an okuyucuları arşiv ve değerli malların koruma görevlileri gibidirler. Fıkıh âlimleri, Allah adına karar verdikleri için, hükümdarın vekilleri mesabesindedirler. Usul âlimleri, ordudaki komutanlar ve subaylara benzerler. Veliler kapı kulları, gönül ehli ve ihlâs sahipleri ise, hükümdarın özel adamları ve sohbet arkadaşları gibidirler.

Böylece bazıları dinin esaslarını korumakla, bazıları kararları imzalamakla, bazıları muhaliflere cevap vermekle, bazıları iyiliği emredip kötülükten alıkoymakla meşgul iken, şuhud ehli olan diğer bazıları da sadece kalbin huzuruyla uğraşmakta, bunun dışında başka bir uğraşları bulunmamaktadır. Bunlar, nefeslerini Allah ile beraberlikte kontrol eden ve kendilerini tamamen Allah'a adamış olan kimselerdir. Hiçbir talep onları tahrik edemez ve hiçbir ihtiyaç onları sarsamaz. Bu itibarla onlar, Allah'ın yardımıyla Allah içindirler ve onlara göre, Allah dışındaki varlıklar yok hükmündedir.

Din konusunda köklü ve derin bilgi sahibi olanlara gelince bunlar, insanları Allah'a davet edenlerdir. Zira ancak Allah'ı anlayan, O'nu başkalarına anlatabilir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا قَاتِلُوا الَّذ۪ينَ يَلُونَكُمْ مِنَ الْكُفَّارِ وَلْيَجِدُوا ف۪يكُمْ
غِلْظَةًۜ وَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُتَّق۪ينَ ﴿١٢٣﴾

123- "Ey iman edenler! Kâfirlerden öncelikle yakınınızda olanlarla savaşın ve sizde bir sertlik bulsunlar. Bilin ki, Allah kendisine karşı gelmekten sakınanlarla beraberdir."

Müslüman'ın, kâfirlerden önce, karşı koyması gereken en yakın düşmanı, aynı zamanda en azılı düşmanı olan nefsidir. O halde

Müslüman, önce onunla savaşmaya başlamalı, sonra da kâfirlere karşı cihat yapmalıdır.

Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur:

*"Biz en küçük cihattan en büyük cihada döndük."*

(وَلْيَجِدُوا فِيكُمْ غِلْظَةً) *"Ve sizde bir sertlik bulsunlar."* Her kim, düşmanına taviz verirse, düşmanı onu hezimete uğratır. Aynı şekilde, hakikatin gereklerinden vazgeçip bir takım tevillere yeltenen, buna bağlı olarak anlaşmasını fesheden ve akdini bozan mürit de böyledir. Bu durum, zahir ehli nezdindeki mürtetlik gibidir.

وَاِذَا مَٓا اُنْزِلَتْ سُورَةٌ فَمِنْهُمْ مَنْ يَقُولُ اَيُّكُمْ زَادَتْهُ هٰذِهٖٓ اِيمَانًا فَاَمَّا الَّذِينَ اٰمَنُوا فَزَادَتْهُمْ اِيمَانًا وَهُمْ يَسْتَبْشِرُونَ ﴿١٢٤﴾

124- "Herhangi bir sûre indirildiğinde, içlerinden alaylı bir şekilde: 'Bu, hanginizin imanını artırdı?' diyenler olur. İman etmiş olanlara gelince, inen sûre onların imanını artırmıştır. Onlar, bunu birbirlerine müjdelerler."

Allah, Kur'an'ın indirilmesini kimileri için şifa, kimileri için de mutsuzluk kılmıştır. Bu itibarla yeni bir sure indirildiği zaman şüphe ve şaşkınlıkları artar ve birbirlerinin durumunu öğrenmeye çalışırlar. Sonra da sadece hasretleri artar. Allah şöyle buyurur:

(وَهُوَ عَلَيْهِمْ عَمًى ) *"Kur'an, onlara kapalı ve anlaşılmaz gelir."* (Fussilet, 41/44)

Müminlere gelince; indirilen sûre, imanlarını artırır ve böylece onlar, delili düşünme sınırından beyanın özüne, oradan da müşahede mertebesine yükselirler. Böylece, başka ihtimaller, tereddüt, yorgunluk ve şaşkınlık kalplerinden bütünüyle kalkmış, sırlarının üstüne irfan güneşleri doğmuş ve hakikat nurları srlarına hâkim olmuştur. Bu sebeple ne arayıştan yorulurlar ne tedbire ihtiyaç duyarlar ne de düşünceye mahkûm olurlar. Nitekim irfan güneşlerinin ışınları, ilim yıldızlarının ışıklarını görünmez kılar.

Şiir:

*Sabah aydınlanınca kapladı aydınlığı*
*Parlaklığıyla, yıldızların ışıklarını*

وَاَمَّا الَّذِينَ فِي قُلُوبِهِمْ مَرَضٌ فَزَادَتْهُمْ رِجْسًا اِلٰى رِجْسِهِمْ وَمَاتُوا وَهُمْ كَافِرُونَ ﴿١٢٥﴾

125- "Kalplerinde hastalık olanların ise, pisliklerine pislik katmış, böylece kâfir olarak ölüp gitmişlerdir."

اَوَلَا يَرَوْنَ اَنَّهُمْ يُفْتَنُونَ فِي كُلِّ عَامٍ مَرَّةً اَوْ مَرَّتَيْنِ ثُمَّ لَا يَتُوبُونَ وَلَا هُمْ يَذَّكَّرُونَ ﴿١٢٦﴾

126- "Görmüyorlar mı ki, onlar her yıl bir veya iki kere belaya çarptırılıp imtihan ediliyorlar. Sonra ne tövbe ediyor ne de ibret alıyorlar."

Allah, mükellefleri bilgi edinme yollarından mahrum etmemiştir. Bilgi sahibi kılınmaları, her zaman açıklamanın bir çeşidiyle olmaktadır. Mükellefiyet ise, her an bir nevi imtihanla gerçekleşmektedir. Bu itibarla delil onlara çokça izah edilmedikçe, Allah kendilerine sadece yeniden perişanlık artışı ve basiretsizlik verir.

Hakikat sahiplerine gelince, başkaları için yılda bir iki defa olan şey, onlar için her nefeste bir söz konusudur. Allah, onları basiret sağlayan uyarılardan, yükümlülük ve emirler içeren ilhamlardan mahrum kılmaz.

Şiir:

*Sanki katından bir denetçi ruhuma kondu*
*Bir kolaylık istediğimde zorluk çıkarır bana*

وَاِذَا مَٓا اُنْزِلَتْ سُورَةٌ نَظَرَ بَعْضُهُمْ اِلٰى بَعْضٍ هَلْ يَرٰيكُمْ مِنْ
اَحَدٍ ثُمَّ انْصَرَفُوا صَرَفَ اللّٰهُ قُلُوبَهُمْ بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَا يَفْقَهُونَ ﴿١٢٧﴾

127- "Bir sûre indirildi mi: 'Sizi bir kimse görüyor mu?' diye birbirlerine göz ederler, sonra da sıvışıp giderler. Anlamayan bir toplum olmalarından dolayı, Allah onların kalplerini çevirmiştir."

Samimiyetsizliklerini saklayabileceklerini sanarak, hile örtüsüne büründüler. Oysa Allah, muhakkak onları rüsva etmeyi dilemiştir. Allah, hem onları inkârcılıkla damgalamış hem de tevhid ehlinini sırlarını, onların durumlarına muttali kılmıştır. Böylece tevhid ehli onları, sahip oldukları gerçek vasıflarıyla tanımışlardır.

لَقَدْ جَٓاءَكُمْ رَسُولٌ مِنْ اَنْفُسِكُمْ عَزِيزٌ عَلَيْهِ مَا عَنِتُّمْ حَرِيصٌ
عَلَيْكُمْ بِالْمُؤْمِنِينَ رَؤُفٌ رَحِيمٌ ﴿١٢٨﴾

128- "Andolsun, size kendi içinizden öyle bir peygamber gelmiştir ki, sizin sıkıntıya düşmeniz ona çok ağır gelir. O, size çok düşkün, müminlere karşı da çok şefkatli ve merhametlidir."

Size, beşer olmada sizin gibi olan bir peygamber geldi. Ancak sadece ona verdiğimiz özellik dolayısıyla, kendisine, size karşı merhamet elbisesi giydirdik. Hepinize göstereceği şefkat ve acıma delilleriyle onu destekledik. O, gayretlerini sizin durumunuza hasretmiştir. En büyük arzusu ise sizin imanınızdır.

فَاِنْ تَوَلَّوْا فَقُلْ حَسْبِيَ اللّٰهُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَهُوَ رَبُّ
الْعَرْشِ الْعَظِيمِ ﴿١٢٩﴾

129- "Eğer yüz çevirirlerse de ki: 'Bana Allah yeter. O'ndan başka hiçbir ilah yoktur. Ben, ancak O'na tevekkül ettim. O, yüce Arş'ın sahibidir.'"

Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.), halkı tevhide çağırmasını emretmiştir. Sonra: "Yüz çevirmeleri halinde sen, tecerrüd vasfıyla bizimle ol!" buyurmuştur.

Bir yoruma göre de, Allah Hz. Peygamber'e (s.a.v.) önce: "*Allah sana yeter!*" dedikten sonra, kendisine: (حَسْبِيَ اللّٰهُ) "*Allah bana yeter*" demesini emretmiştir. Bu ise, cemin ta kendisidir.

(فَقُلْ حَسْبِيَ اللّٰهُ) "*De ki: 'Bana Allah yeter*'" sözü farktır. (...) Daha doğrusu o, cemin cemidir. Yani: Söyle! Lakin sen, ancak bizimle söylemektesin. Senin adına işi üstlenen biziz. Sen ise, tevhidin özünde yok edilmiş durumdasın. O halde sen bizimle varsın. Dışımızdaki şeylerden ise mahviyet içindesin.

سورة يُونُس

# YÛNUS SÛRESİ

(Yunus Sûresi 109 âyettir. 40, 94, 95 ve 96. âyetler Medine'de, diğerleri Mekke'de inmiştir. 98. âyette Yunus'un (a.s.) kıssasından söz edildiği için, sûre bu adı almıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**"Rahman ve Rahim olan Allah'ın adıyla."**

Besmele, öyle bir sözdür ki, işitilmesi her ibadet ehli için şifa, her irade sahibi için aydınlık, her kayba uğrayan için sabır, her varlıklı için imtihan, her korkan için huzur, her arif için teselli, her tövbe eden için güvence ve her arayan için izah sağlar. Ariflerin kalpleri, ancak besmeleyi işitmekle ferahlar. Korkanların tasaları da ancak besmeleyi işittiklerinde geçer.

الٓرٰ تِلْكَ اٰيَاتُ الْكِتَابِ الْحَكِيمِ ﴿١﴾

1- "Elif, Lâm, Râ. Bunlar, hikmet dolu Kitab'ın ayetleridir."

"Elif" Allah lafzının, "Lâm" Latîf lafzının "Râ" da Rahîm lafzının anahtarıdır. Allah, bu kitabın size güvence günü söz verilen kitap olduğu konusunda bu isimle yemin etmiştir. Yani biz, size verdiğimiz sözü yerine getirdik ve dostluk elini uzattık. (...) Söz verme zamanı sona erdi artık. Mücadele bitmiş, sevinçle karşılanan günler

gelmiştir. Artık sevgi badelerinden içmeye davranın ve dostların yolunda dosdoğru yürüyün.

اَكَانَ لِلنَّاسِ عَجَبًا اَنْ اَوْحَيْنَٓا اِلٰى رَجُلٍ مِنْهُمْ اَنْ اَنْذِرِ النَّاسَ وَبَشِّرِ الَّذٖينَ اٰمَنُوٓا اَنَّ لَهُمْ قَدَمَ صِدْقٍ عِنْدَ رَبِّهِمْ قَالَ الْكَافِرُونَ اِنَّ هٰذَا لَسَاحِرٌ مُبٖينٌ ﴿٢﴾

2- "İçlerinden bir adama: 'İnsanları uyar ve iman edenlere, Rableri katında kendileri için bir doğruluk makamı bulunduğunu müjdele' diye vahyetmemiz, insanlar için şaşılacak bir şey mi oldu ki o kâfirler: 'Bu elbette apaçık bir sihirbazdır' dediler?"

Onlar, üç şeye şaştılar: Öldükten sonra dirilmenin mümkün olmasına, insanlara peygamberler gönderilmesine ve insanların arasından peygamberliğin özellikle Hz. Muhammed'e (s.a.v.) verilmesine. Eğer onlar, Allah'ın noksansız hükümranlığını bilselerdi, dirilmenin mümkün olduğunu ve insanlara peygamberler gönderildiğini inkâr etmezlerdi. Eğer onlar, Allah'ın dilediğini yapabileceğini bilselerdi, insanların arasından peygamberliğin özellikle Hz. Muhammed'e (s.a.v.) verilmesine hayret etmezlerdi. Ne var ki basiretleri kapanmış olduğundan şaşkınlık vadilerinde yollarını şaşırdılar ve sapmışlıktan ötürü, çukurdan çukura yuvarlandılar. Bu arada üstat Ebû Ali ed-Dakkâk şöyle der:

*"Onlar, ağaçtan yontulmuş ve kayadan yapılmış bir şeyin ilah olmasını mümkün görürken, kadrinin büyüklüğüne rağmen, Hz. Muhammed (s.a.v.) gibi birinin peygamber olmasına şaşırmışlardır. İşte en derin sapıklık budur."*

(وَبَشِّرِ الَّذٖينَ اٰمَنُوٓا اَنَّ لَهُمْ قَدَمَ صِدْقٍ عِنْدَ رَبِّهِمْ) *"İman edenlere, Rableri katında kendileri için bir doğruluk makamı bulunduğunu müjdele."*

Bu doğruluk makamı, iman edenlerin, daha önce kendileri için ihlas ve doğruluk ile yerine getirdikleri taatler ve ibadetlerdir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Bu makam, Allah'ın kıyamet günü onların durumuna verdiği önem ve yalnızca onlar için kararlaştırdığı türlü türlü ihsan ve nimetlerdir.

- Bu makam, müminlerin baştan itibaren Allah'a yönelik iradeleri esnasında adım atmalarıdır. Çünkü irade sahiplerinin Allah için attıkları adımların Allah katında saygın bir yeri vardır. Ayrıca tereddüt içinde geçen günlerinin ve onlar şaşkınlıkları içinde yanarken Allah'ı aramada geçen gecelerinin Allah katında değerleri vardır.

Şiir:

*Kim unutsa da zamanın şüphesinin hainlik ettiği bir evi*
*Yine de unutacak değilim ben seni*

Şiir:

*Sağlamlaştırırız o ahitleri çözmen için onları*
*Yanımda, oldukları gibi, düğümleri çözülmemiş olarak*

اِنَّ رَبَّكُمُ اللّٰهُ الَّذ۪ي خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ ف۪ي سِتَّةِ اَيَّامٍ ثُمَّ
اسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ يُدَبِّرُ الْاَمْرَۜ مَا مِنْ شَف۪يعٍ اِلَّا مِنْ بَعْدِ اِذْنِه۪ۜ
ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمْ فَاعْبُدُوهُۜ اَفَلَا تَذَكَّرُونَ ۳

3- "Şüphesiz ki Rabbiniz, gökleri ve yeri altı gün içinde yaratan, sonra da Arş'a kurulup işleri yerli yerince düzene koyan Allah'tır. O'nun izni olmaksızın hiç kimse, şefaatçi olamaz. İşte O, Rabbiniz Allah'tır. O halde O'na kulluk edin. Hâlâ düşünmüyor musunuz?"

Allah'ın fiili, süreye ihtiyaç göstermez. Zira zaman ve süre de, O'nun fiillerinin cümlesindendir. Bu itibarla, Allah gökleri ve yeri altı günde yaratırken söz konusu günler de, O'nun yarattıklarının bir parçasıdır.

(ثُمَّ اسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ) *"Sonra da Arş'a kuruldu."* Yani Allah, hâkimiyet sıfatıyla, ortaksız yüceliğin üstünlüğüne sahip olmuştur. İnsanları

yöneten hükümdarlar, yönettikleri insanlara görünmek istedikleri zaman, onların karşısına krallık tahtları üstünde ve çeşitli görüntüler sergileyerek çıkarlar. Bu sebeple Allah, bu konuyu, insanların anlayışına uygun olan ve anlamalarını kolaylaştıran: (اسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ) "*Arş'a kuruldu*" cümlesiyle ifade etmiştir. Allah'ın Arşa kurulması ise, ebedî olmanın üstünlüğü ve bir olmanın yüceliği vasıflarına sahip olması, kudret sıfatı ve tanrılık yüceliğinde de eşsiz olması demektir. Karşı konulmaz kudret sahibi ve yegâne mabut olan Allah, gerçekte ise mekân ve sınırlardan münezzehtir.

(يُدَبِّرُ الْاَمْرَ مَا) "*İşleri yerli yerince düzene koyar.*" Yani varlıklar, O'nun takdir ve tedbirinin ürünleridir. O halde ona yardımcı olacak hiçbir ortağı olmadığı gibi, hükmünü de hiç kimse reddedemez.

(مِنْ شَفِيعٍ اِلَّا مِنْ بَعْدِ اِذْنِهِ) "*O'nun izni olmaksızın hiç kimse, şefaatçi olamaz.*" Hitap ettiği veya kendisine hitap eden kimseyi konuşturan O'dur. Dilediğinde hesap sormak üzere, istediği şeyi istediği kimsenin yükümlülüğü olarak yaratır.

(ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمْ) "*İşte O, Rabbiniz Allah'tır.*" Bu, Allah'ı tanıtıcı bir ifadedir.

(فَاعْبُدُوهُ) "*O halde O'na kulluk edin.*" Bu da yükümlülüğün ifadesidir. Bu itibarla Allah'ı tanımak, O'nun hakikate erdirmesiyle, yükümlülüğün hedefine ulaşmak da O'nun muvaffak kılmasıyla olur.

اِلَيْهِ مَرْجِعُكُمْ جَمِيعًا وَعْدَ اللّٰهِ حَقًّا اِنَّهُ يَبْدَؤُا الْخَلْقَ ثُمَّ يُعِيدُهُ
لِيَجْزِيَ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ بِالْقِسْطِ وَالَّذِينَ كَفَرُوا
لَهُمْ شَرَابٌ مِنْ حَمِيمٍ وَعَذَابٌ اَلِيمٌ بِمَا كَانُوا يَكْفُرُونَ ﴿٤﴾

4- "Hepinizin dönüşü ancak O'nadır. Allah, bunu bir gerçek olarak va'detmiştir. Şüphesiz O, başlangıçta yaratmayı yapar. Sonra iman edip salih ameller işleyenleri mükâfatlandırmak için yaratmayı tekrar eder. Kâfirlere gelince, inkâr etmekte olduklarından dolayı, onlar için kaynar sudan bir içki ve elem dolu bir azap vardır."

Dönüş, ruhların, bedenlere girmeden önce baştan yaratılmış olmalarını gerektirir. Çünkü ruhların tesbih ve takdis makamlarında kalışları söz konusudur. Ayrılmış olan kimse, yolculuğundan vatanına döndüğü zaman ise gelişinin, sevenleri ve yakınları katında bir etkisi olur.

Şiir:

*Ey göç yolculuğundan gelen, hoş geldin!*
*Çağırıyorum ve unutmayacağım seni, estikçe saba rüzgârı*

Bir yoruma göre de itaat ehli kimse, Allah'a dönüş yaptığı zaman yakınlığa, sevaba ve güzelliklere sahip olur. Asi kimse ise Rabbine döndüğü zaman, iflas vasfıyla ve yolunu kaybetmiş olarak döner. Bundan dolayı o, mağfiret, af ve güven elbisesine büründürülür. Bu itibarla, Mevlâ'sının rahmeti, onun için ibadet ve takvasından hayırlıdır.

(وَعْدَ اللّٰهِ حَقًّا) *"Allah, bunu bir gerçek olarak va'detmiştir."* İtaat ehline va'dedilen şey, yüksek Firdevs cennetleridir. Asi kimseye va'dedilen ise rahmet ve rızadır. Bu arada cennet Hakk'ın lütfu, rahmet ise Hakk'ın sıfatıdır. Lütuf, önceden olmayıp daha sonra gerçekleşen bir fiil iken, sıfat ezelidir.

(اِنَّهُ يَبْدَؤُا الْخَلْقَ ثُمَّ يُعِيدُهُ) *"Şüphesiz O, başlangıçta yaratmayı yapar, sonra onu tekrar eder."* Kim ki bütün ömründe Allah'ın başlangıçta yaptığına uygun bir nefese dahi sahip olsa, işaret tefsirine göre, o nefes de tekrar edilir.

Şiir:

*Her nehir ki içinde su akmıştır*
*Dönecektir bir gün ona su*

هُوَ الَّذ۪ي جَعَلَ الشَّمْسَ ضِيَٓاءً وَالْقَمَرَ نُورًا وَقَدَّرَهُ مَنَازِلَ لِتَعْلَمُوا عَدَدَ السِّن۪ينَ وَالْحِسَابَۜ مَا خَلَقَ اللّٰهُ ذٰلِكَ اِلَّا بِالْحَقِّۚ يُفَصِّلُ الْاٰيَاتِ لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ ﴿٥﴾

5- "O, güneşi bir ışık, ayı da bir aydınlık kılan, yılların sayısını ve hesabı bilmeniz için ona menziller takdir edendir. Allah, bunları ancak gerçek ile yaratmıştır. O, âyetlerini, bilen bir topluma detaylıca açıklamaktadır."

Aklın aydınlıkları yıldızlar gibidir. Yıldızlar ise şeytanlara atılan taşlar mesabesindedir. İlimlerin, aydınlık ve basiret kaynağı olan ayları vardır. Marifetlerin ise ariflerin sırlarında doğan güneşleri vardır.

Şu şiirde söylendiği gibi:

*Batar gece vakti gündüz güneşi*
*Oysa batmaz kalplerin güneşi*

Bu arada nasıl ki gökyüzünde güneş ve ay adında iki yıldız bulunmakta olup güneş hep aydınlık iken, ay artıp eksiliyor ve gizlenmek suretiyle kayboluyorsa, sonra aydınlık bir dolunay haline gelinceye kadar olgunlaşmasının ardından eksilmeye başlıyor ve nihayet bütünüyle kaybolup görünmez hale geliyorsa, sonra yeniden dönüyor ve her gece bir miktar büyüyorsa, tam bir dolunaya dönüştüğü zaman da bu kemal noktasında bir geceden fazla kalmayıp sonra eksilmeye başlıyor ve tamamen kayboluncaya kadar bu eksilme devam ediyorsa, işte aynı şekilde insanlardan da bazı kimseler vardır ki, kabzı ve bastı, sahvı ve mahviyeti, gidişi ve gelişi arasında gider gelir. Ne fenâ makamına yükselip rahatlar ne de doğru dürüst varlığını sürdürebilen bekâ makamına yükselir.

Şiir:

*Artık yaklaştı zincirimin çözülmesi, dedikçe ben*
*Vurdular beni zincire ve sıktılar çivileri*

اِنَّ فِي اخْتِلَافِ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ وَمَا خَلَقَ اللّٰهُ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ
لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يَتَّقُونَ ﴿٦﴾

6- "Şüphesiz gece ve gündüzün ard arda değişmesinde, Allah'ın göklerde ve yeryüzünde yarattığı şeylerde, Allah'a karşı gelmekten sakınan bir toplum için pek çok deliller vardır."

Biri mükâfatı, diğeri de cezayı hak etmeksizin, gündüze aydınlık, geceye de karanlık olma özelliği verilmiştir. Bu da göstermektedir ki, ret, kabul, engellenme ve vuslat, ne bir sebebe bağlı kılınmış ne de kazanılmış bir durumla var olmuştur. Gerçek şu ki, bunlar ilahî irade, dilek, hüküm ve kararın ürünüdür.

Gündüz, gaflet ehlinin kazanç yerlerinde bulunmalarının, yakınlık ve vuslat erbabının da Rablerinin müşahedesiyle baş başa kalmalarının zamanıdır.

Şiir:

*Güneştir o, ancak bir batışı vardır güneşin*
*Oysa gözden kaybolmaz bizim yöneldiğimiz*

Gece de iki kişiden biri içindir: Seven için sır vakti, günahkâr içinse şikâyeti yaymak demektir.

اِنَّ الَّذ۪ينَ لَا يَرْجُونَ لِقَٓاءَنَا وَرَضُوا بِالْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَاطْمَاَنُّوا
بِهَا وَالَّذ۪ينَ هُمْ عَنْ اٰيَاتِنَا غَافِلُونَ ﴿٧﴾ اُو۬لٰٓئِكَ مَاْوٰيهُمُ النَّارُ
بِمَا كَانُوا يَكْسِبُونَ ﴿٨﴾

**7, 8- "Şüphesiz bize kavuşacağını ummayan ve dünya hayatına razı olup onunla yetinerek tatmin olan kimseler ile âyetlerimizden gafil olanlar var ya, işte onların kazanmakta oldukları günahlar yüzünden, varacakları yer ateştir."**

Onlar, Allah'ı görmenin caiz olduğunu inkâr ettikleri için bu ümide sahip olamadılar. Müminler ise, Allah'ı görmenin caiz olduğuna inandıkları için bu ümide sahip oldular.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Onlar, Allah'a kavuşmayı ummazlar, çünkü O'na özlem duymadılar. O'na özlem duymadılar, çünkü O'nu tanımadıkları için sevmediler. O'nu tanımadılar, çünkü O'nu aramadılar. O'nu aramayacaklar, çünkü O'nu aramamalarını O irade etmiştir.

Allah şöyle buyurur:

(وَاَنَّ اِلٰى رَبِّكَ الْمُنْتَهٰى) *"Şüphesiz son varış Rabbinedir."* (Necm, 53/42)

- Eğer Allah, O'nu aramalarını isteseydi, O'nu arayacaklardı. Eğer O'nu arasalardı, O'nu tanıyacaklardı. Eğer tanısalardı, seveceklerdi. Eğer sevselerdi, özlem duyacaklardı. Eğer özlem duysalardı, ümitleneceklerdi. Eğer ümitlenselerdi, Allah'a kavuşmayı umacaklardı.

Allah şöyle buyurur:

(وَلَوْ شِئْنَا لَاٰتَيْنَا كُلَّ نَفْسٍ هُدٰيهَا) *"Eğer dileseydik, herkese hidayetini verirdik."* (Secde, 32/13)

(وَرَضُوا بِالْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَاطْمَاَنُّوا بِهَا) *"Onlar, dünya hayatına razı olup onunla yetinerek tatmin oldular."*

Dünya ehli, dünya hayatına razı oldukları için cennetten mahrum kaldılar. Zahidler ve abidler ise cennete meyledip ona razı oldukları için vuslattan geri kaldılar. Herkes feyiz alacağı kaynağı bilmiştir. Herkesin bir makamı vardır.

- Onlar, Allah'a kavuşmayı ummadıkları zaman sonları azap ve ayrılıktır. Bu hitap göstermektedir ki, Allah'a kavuşmayı uman O'nu görür, sonu vuslat, Allah'a yakınlık ve kavuşmak olur.

اِنَّ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ يَهْدِيهِمْ رَبُّهُمْ بِاِيمَانِهِمْ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهِمُ الْاَنْهَارُ فِي جَنَّاتِ النَّعِيمِ ﴿٩﴾

9- "İman edip salih ameller işleyenlere gelince, Rableri onları imanları sebebiyle, hidayete erdirir. Nimetlerle dolu cennetlerde altlarından ırmaklar akar."

Allah, bugün onları vasıtasız olarak marifetine erdirdiği gibi, yarın da yaratıklardan hiç bir yardımcı ve aracı olmaksızın onları cennetine ve sevabına erdirecektir.

Bir yoruma göre de itaat ehli olanlara gelince, onlar ibadetlerinin binekleri üzerinde iken, aydınlıkları önlerinden gitmekte, Allah ve melekler de onları karşılamaktadır.

Allah şöyle buyurur:

(يَوْمَ نَحْشُرُ الْمُتَّقِينَ اِلَى الرَّحْمٰنِ وَفْدًا) *"Allah'a karşı gelmekten sakınanları Rahman'ın huzurunda bir elçiler heyeti gibi toplayacağımız günü düşünün."* (Meryem, 19/85)

Yani Allah, onları toplarken, asiler dağınık bir şekilde yalnız başlarına kalırlar. İbadet ehli kimseler onlarla birlikte saf tutmaz ve onlar, kıyametin ıssız ve helak edici yollarında şaşkınlık içinde kalırlar.

Allah ise onlara şöyle der: Ey kullarım! Bugün cennetlikler, sizden habersizdirler. Onlar, sevap içindedirler ve size zaman ayırmazlar. Cehennemlikler de, azabın şiddetinden siz miskinler topluluğunu gözetemezler. Şimdi hemcinsleriniz ve arkadaşlarınız sizi geçmişken siz nasılsınız? Onlardan hiç biri size yol göstermez, ancak ben size yol gösteririm. Çünkü eğer ben, müstahak olduğunuz şekilde size muamele edersem (...) Şayet biz de vefasızlıkta onlar gibi olur ve sizi tıpkı onların terk ettikleri gibi terk edersek, o zaman bize layık olan kerem nerede kalır!

دَعْوٰيهُمْ فٖيهَا سُبْحَانَكَ اللّٰهُمَّ وَتَحِيَّتُهُمْ فٖيهَا سَلَامٌ وَاٰخِرُ دَعْوٰيهُمْ
اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمٖينَ ﴿١٠﴾

10- "Bunların oradaki duaları: 'Seni eksikliklerden uzak tutarız Allah'ım!', aralarındaki esenlik dilekleri: 'selâm', dualarının sonu ise: 'Hamd âlemlerin Rabbi Allah'a mahsustur' sözleridir."

Onların sözü, Allah'a senada bulunmaktan ibarettir. Bunu, Allah'a kavuştuklarında söylerler. O durumda Allah'ın onlara selamı: "Selâmun aleykum (Selam üzerinizde olsun)" şeklindedir.

(وَاٰخِرُ دَعْوٰيهُمْ اَنِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمٖينَ) *"Dualarının sonu ise: 'Hamd Allah'a mahsustur' sözleridir."*

Hamd burada övgü ve sena anlamındadır. Böylece onlar, Allah'a senada bulunur ve O'na, ebedî ve sonsuz bir hamd ile hamd eder-

ler. İzzet, sonsuzluk, yücelik ve bir olma sıfatlarına sahip Allah da onları ezelî bir selam ve ebedî bir kelam ile selamlar.

وَلَوْ يُعَجِّلُ اللّٰهُ لِلنَّاسِ الشَّرَّ اسْتِعْجَالَهُمْ بِالْخَيْرِ لَقُضِيَ اِلَيْهِمْ اَجَلُهُمْ فَنَذَرُ الَّذ۪ينَ لَا يَرْجُونَ لِقَٓاءَنَا ف۪ي طُغْيَانِهِمْ يَعْمَهُونَ ﴿١١﴾

11- "Eğer Allah, insanlara onların hemen hayra kavuşmayı istedikleri gibi, şerri de acele verseydi, elbette onların ecellerine hükmolunurdu. İşte biz, bize kavuşmayı ummayanları, kendi azgınlıkları içinde bocalar halde bırakırız."

Yani eğer onların, kızıp rahatsızlık duyduklarında kendilerine yaptıkları bedduaları kabul etseydik, onları çabucak helak ederdik. Fakat beddualarını kabul etmemeyi ve onlara olan merhametimizle, beddualarını dinlememeyi üstlendik. Allah'ın, kendisine bir lütuf olarak duasını kabul etmediğini, duasını kabul etmesi halinde bunun kendisi için bir musibet olacağını bildiği halde kul, zaman zaman Allah'ın, duasını kabul etmemesinden şikâyet edebilmektedir.

Şiir:

*Yüz çevirdi bizden kimileri*
*Suçsuz ve anlamsız bir şekilde*
*Kötü zanda bulundular hakkımızda*
*İyi zanda bulunsalardı ya!*

وَاِذَا مَسَّ الْاِنْسَانَ الضُّرُّ دَعَانَا لِجَنْبِه۪ٓ اَوْ قَاعِدًا اَوْ قَٓائِمًا فَلَمَّا كَشَفْنَا عَنْهُ ضُرَّهُ مَرَّ كَاَنْ لَمْ يَدْعُنَٓا اِلٰى ضُرٍّ مَسَّهُ كَذٰلِكَ زُيِّنَ لِلْمُسْرِف۪ينَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٢﴾

12- "İnsana bir sıkıntı dokundu mu, gerek yan üstü yatarken, gerek otururken, gerekse ayakta iken bize dua eder. Ama biz, onun bu sıkıntısını ondan kaldırdık mı, sanki kendisine dokunan bir sıkıntı için bize hiç yalvarmamış gibi geçer gider. İşte o haddi aşanlara, yapmakta oldukları şeyler, böylece süslenmiştir."

Kul sınava tabi tutulup zarara uğradığı zaman, durumdan rahatsız olur. Bu rahatsızlık, başına gelenlerden kurtulma iradesini gösterip Allah'tan başkasının kendisini kurtaramayacağını anlayıncaya kadar devam eder. Bu aşamada zaruret, onu samimiyetle Allah'a sığınmaya sevk eder. Allah, kaldırılması için dua ettiği sıkıntıyı üzerinden kaldırınca, bu kez sıkıntıdan kurtulmuş olmanın yol açtığı rahatlık, bu durumu sürdürmesine engel olur, sığınma duygusunu yitirir ve hiç sıkıntı yaşamamış gibi davranır.

Şiir:

*Hiçbir gün çıplak kalmamış gibi davranır delikanlı, giyinince*
*Ve hiç züğürtlük çekmemiş gibi davranır, mal sahibi olunca*

وَلَقَدْ اَهْلَكْنَا الْقُرُونَ مِنْ قَبْلِكُمْ لَمَّا ظَلَمُوا وَجَٓاءَتْهُمْ رُسُلُهُمْ
بِالْبَيِّنَاتِ وَمَا كَانُوا لِيُؤْمِنُوا كَذٰلِكَ نَجْزِي الْقَوْمَ الْمُجْرِمِينَ ﴿١٣﴾

13- "Andolsun, sizden önceki nice nesilleri, peygamberleri, kendilerine apaçık deliller getirdikleri halde, zulmettikleri vakit helak ettik. Onlar, zaten inanacak değillerdi. İşte biz, suçlu toplumu böyle cezalandırırız."

Allah, zalimlerin helak edilmesinden söz etmektedir. Tıpkı şu hadiste yer aldığı gibi:

*"Eğer zulüm cennette bir ev olsaydı, Allah onu yıkılmaya mahkûm ederdi."*

Bu arada zulüm, bir şeyi, uygun olmayan yere koymak demektir. Bu itibarla kul, ihtiyaçlarının karşılanması konusunda yaratıklara yönelir, yardım dilerken ve umduğunu ararken kalbi onlara bağlanırsa, işte bu takdirde o, bir şeyi uygun olmayan yere koymuş olur. Bu ise zulümdür. Bu zulmün cezası, kalbin harap olmasıdır. Kalbin harap olması ise Allah'a dönüş yolunun kapanması demektir. Zira eğer bu kalbin sahibi, Allah'a dönüş yapsaydı, Allah ona yardım edecekti ve yetecekti. Ne var ki o, kalbini mahlûka bağlamada ısrar ettiğinden Allah'tan uzak kalmakta, ihtiyacı da başkası tarafından

karşılanmış olmamaktadır. Böylece de kendisi, yoksulluk ve ihtiyacından dolayı mazarrat içerisinde kalır. Şayet bu mazarrat, zillete ve kötü insana muhtaç olma durumuna dönüşürse, o zaman büyük bir meşakkat olur.

Buna kıyasla kul, bir mahlûku sevdiği zaman, sevgisini uygun olmayan yere koymuş olur. Bu da zulüm olup cezası, ruhunun harap olmasıdır. Sebebi ise Allah'a olan sevgisinin tertemiz olmaması ve Allah ile bulduğu huzurun yok olup gitmesidir. Kul, Allah'tan uzak kaldığı zaman, Allah onu yaratıklardan zevk alır hale getirir. Böylece o, mahlûkta teselli bulamadığı gibi, Allah'tan da uzaklık ve hoşnutsuzluktan başka bir karşılık göremez.

ثُمَّ جَعَلْنَاكُمْ خَلَٓائِفَ فِي الْاَرْضِ مِنْ بَعْدِهِمْ لِنَنْظُرَ كَيْفَ تَعْمَلُونَ ﴿١٤﴾

14- "Sonra nasıl davranacağınızı görelim diye, onların ardından yeryüzünde sizi onların yerine getirdik."

Sizi, sizden öncekilerin sırrına ve günahları sebebiyle başlarına gelen musibetlere muttali kıldık. Böylece onlardan ibret aldığınız zaman kurtulursunuz. Duyduklarından ibret almayan ise kendisinden sonra gelenlere ibret olur. Diğer bir yoruma göre; başınıza gelen azabın bir benzerini de onların başına getirdik. Her kim, kendisinden öncekilerden ibret almazsa, kendisinden sonrakiler ondan ibret alırlar.

وَاِذَا تُتْلٰى عَلَيْهِمْ اٰيَاتُنَا بَيِّنَاتٍ قَالَ الَّذِينَ لَا يَرْجُونَ لِقَٓاءَنَا ائْتِ
بِقُرْاٰنٍ غَيْرِ هٰذَٓا اَوْ بَدِّلْهُ قُلْ مَا يَكُونُ لِٓي اَنْ اُبَدِّلَهُ مِنْ تِلْقَٓائِ
نَفْسِي اِنْ اَتَّبِعُ اِلَّا مَا يُوحٰٓى اِلَيَّ اِنِّٓي اَخَافُ اِنْ عَصَيْتُ رَبِّي
عَذَابَ يَوْمٍ عَظِيمٍ ﴿١٥﴾

15- "Âyetlerimiz kendilerine apaçık bir delil olarak okunduğunda, bize kavuşmayı ummayanlar: 'Ya bize bundan başka bir Kur'an

getir veya onu değiştir' dediler. De ki: 'Onu kendiliğimden değiştirmem, benim için olacak şey değildir. Ben, ancak bana vahyolunana uyarım. Eğer Rabbime isyan edecek olursam, elbette büyük bir günün azabından korkarım.'"

Onlar, sana emretmediğimiz bir şeyi kendileri için getirmeni veya seni muttali kılmadığımız bazı mucizeleri kendilerine göstermeni senden istedikleri zaman, tek başına bunu yapamayacağını ve bu işin sana bırakılmadığını kendilerine bildir. Zira seni yöneten ve çekip çeviren biziz. Sen ise hakkındaki uygulamalarımıza uyarsın, yaptıklarının yaratıcısı değilsin.

قُلْ لَوْ شَٓاءَ اللّٰهُ مَا تَلَوْتُهُ عَلَيْكُمْ وَلَٓا اَدْرٰيكُمْ بِه۪ فَقَدْ لَبِثْتُ ف۪يكُمْ عُمُرًا مِنْ قَبْلِه۪ اَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿١٦﴾

16- "De ki: 'Eğer Allah dileseydi, ben size onu okumazdım, Allah da size onu bildirmezdi. Ben, sizin aranızda bundan önce bir ömür yaşadım. Hiç düşünmüyor musunuz?'"

Ben, aranızda bir süre yaşadım ve hakkında benden delil istediğiniz konudaki tavırlarımı öğrendiniz. Bu çerçevede beni bir tutarsızlık içinde görmediniz, aksine dosdoğru yolda yürümeye devam ettiğimi gördünüz. Bu itibarla eğer Allah, beni peygamber olarak göndermeseydi ve bana yüklediği teklife ehil kılmasaydı, ben ne bu dini getirirdim ne de bu kitabı okurdum.

(اَفَلَا تَعْقِلُونَ) *"Hiç düşünmüyor musunuz?"* Size ne olmuş da itiraz ediyorsunuz ve kendinize bakmıyorsunuz?!

فَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا اَوْ كَذَّبَ بِاٰيَاتِه۪ اِنَّهُ لَا يُفْلِحُ الْمُجْرِمُونَ ﴿١٧﴾

17- "Artık Allah'a karşı yalan uydurandan veya O'nun âyetlerini yalanlayandan daha zalim kimdir? Şüphe yok ki suçlular, asla kurtuluşa ermezler."

Dinde yalan çirkindir. Allah hakkında olduğu zaman ise çok daha çirkin olur. Bu arada Allah'a iftira edenlerden bazıları da, samimi olmadıkları durumlar ortaya koyanlardır. Onların cezası, ebediyen mahrum bırakılmaları ve böylece hiçbir amaca ulaşamamalarıdır.

وَيَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ مَا لَا يَضُرُّهُمْ وَلَا يَنْفَعُهُمْ وَيَقُولُونَ هٰٓؤُلَٓاءِ شُفَعَٓاؤُ۬نَا عِنْدَ اللّٰهِ قُلْ اَتُنَبِّؤُ۫نَ اللّٰهَ بِمَا لَا يَعْلَمُ فِي السَّمٰوَاتِ وَلَا فِي الْاَرْضِ سُبْحَانَهُ وَتَعَالٰى عَمَّا يُشْرِكُونَ ﴿١٨﴾

18- "Allah'ı bırakıp kendilerine ne zarar ne de fayda verecek şeylere tapıyorlar ve: 'İşte bunlar, Allah katında şefaatçilerimizdir' diyorlar. De ki: 'Siz Allah'a göklerde ve yerde O'nun bilmediği bir şeyi mi haber veriyorsunuz? O, onların ortak koştukları şeylerden uzaktır, yücedir.'"

Allah, kendisinden ne zarar ne de fayda gelen şeylere tapmalarından dolayı, onları kötülemiştir. Bu ifade gösteriyor ki, kendisine ibadet edilenin, zarar ve fayda verebilmesi gerekir. Oysa onlar, aşırı ahmaklıklarından dolayı, kıyamette, bugün bile ne zararı ne de faydası olan kimseden şefaat beklediler. Sonra Allah, onların gerçeğe uymayan şeylerden söz ettiklerini haber vermiştir. Eğer durum söyledikleri gibi olsaydı, onlar da hiçbir şeyin Allah'ın bilgisi dışında kalmadığını bileceklerdi.

Allah'ın bir şeyi bilmemesi söz konusu olmayıp bunun aksi doğrudur. Zararları def edip faydaları celp etmede kalbi yaratıklara bağlı olan kimse, putlara tapanların yolunu izleyen kimse gibidir. Çünkü her şeyi yoktan inşa edip var kılan Allah'tır.

وَمَا كَانَ النَّاسُ اِلَّٓا اُمَّةً وَاحِدَةً فَاخْتَلَفُوا وَلَوْلَا كَلِمَةٌ سَبَقَتْ مِنْ رَبِّكَ لَقُضِيَ بَيْنَهُمْ فِيمَا فِيهِ يَخْتَلِفُونَ ﴿١٩﴾

19- "İnsanlar, tek bir ümmet idiler. Sonra ayrılığa düştüler. Eğer Rabbinden bir söz geçmiş olmasaydı, ayrılığa düştükleri hususlarda aralarında derhal hüküm verilirdi."

Bu ayrılık, Hz. Âdem zamanından itibaren başlamış, insanlar arasında savaşa dönüşünceye dek devam etmiştir. Allah, onların hesabını ahirete tehir etmeyi çok önceden hükme bağlamıştır. Bundan dolayıdır ki, insanların kıyametin hemen kopmasına dönük dualarını kabul etmemektedir. Bu arada insanların ayrılığa düşmelerinin sebebi, Allah'ın, bazılarına inayetini ve kabulünü, diğer bazılarına da küçümsemeyi ve uzaklaştırmayı layık görmesidir. Eğer öyle olmasaydı, aralarında bu ayırım olmazdı.

وَيَقُولُونَ لَوْلَٓا اُنْزِلَ عَلَيْهِ اٰيَةٌ مِنْ رَبِّه۪ فَقُلْ اِنَّمَا الْغَيْبُ لِلّٰهِ فَانْتَظِرُوا اِنّ۪ي مَعَكُمْ مِنَ الْمُنْتَظِر۪ينَ ﴿٢٠﴾

20- "'Peygambere Rabbinden bir mucize indirilse ya!' diyorlar. De ki: 'Gayb ancak Allah'ındır. Bekleyin, şüphesiz ben de sizinle birlikte bekleyenlerdenim!'"

Allah, Hz. Peygamber'in (s.a.v.), ilminin gelecekte olacaklara yetmemesi sebebiyle, gaybı bilmediğini ve durumun kendisine gizli kaldığını bildirmektedir. Bu itibarla, kendisine tahsis edilen marifet nurlarının olduğu durumlar dışında, Hz. Peygamber gayb konusunda diğer insanlar gibidir. Hal böyle olunca nasıl ki onlar, gelecekte meydana gelecek hususu beklemek durumunda iseler, aynı şekilde Hz. Peygamber (s.a.v.) de Allah'ın var edeceği hususları beklemek durumundadır. Hz. Peygamber (s.a.v.) ile onlar arasındaki fark, onun, Allah'ın takdiriyle ve O'ndan gelerek gerçekleşen hususları görmesi, onların ise, cehalet vadisinde şaşkın kalarak, durumu bazen zamana, bazen yıldızlara, bazen de tabiata dayandırmalarıdır. Bütün bunlar ise şaşkınlık ve körlüktür.

وَاِذَٓا اَذَقْنَا النَّاسَ رَحْمَةً مِنْ بَعْدِ ضَرَّٓاءَ مَسَّتْهُمْ اِذَا لَهُمْ مَكْرٌ فّ۪ٓي اٰيَاتِنَا قُلِ اللّٰهُ اَسْرَعُ مَكْرًا اِنَّ رُسُلَنَا يَكْتُبُونَ مَا تَمْكُرُونَ ﴿٢١﴾

21- "Kendilerine dokunan bir sıkıntıdan sonra, insanlara bir rahmet tattırdığımız zaman, bir de bakarsın ki âyetlerimiz hakkında

onların bir tuzakları vardır. De ki: 'Allah, daha çabuk tuzak kurar.' Şüphesiz elçilerimiz, kurmakta olduğunuz tuzakları yazıyorlar."

Yani bir zarar ve meşakkate uğradıklarında biz onlara merhamet edip sıkıntıyı üzerlerinden kaldırınca, işi başkalarına havale eder ve bunu başkalarının yaptığını zannederler. Örneğin, şunları söylerler:

*Falanca yıldız sayesinde yağmura kavuştuk.*
*Bu, yıldızın getirdiği bir uğurdur.*
*Bu, şansın yardımıyla ve feleğin etkisiyle olmuştur.*
*Bunlar, zamanın nimetleridir.*

İşte onların tuzağı bu idi. Allah'ın onlara yönelik tuzağı ise tuzaklarına karşı kendilerini cezalandırmaktır. Bu arada âyetin işârî tefsiri şöyledir: Mürid veya talib bir perdelenme veya duraksama halinde olabilir. (...) Bu itibarla Allah, bir keşif, bir tecelli veya bir iltifat lütfettiği zaman onunla tatmin olmak şöyle dursun, onu görmemeleri dahi onların hakkıdır. Çünkü onlar, kendi hallerine bakmaktan kurtulup kendilerinden geçmek suretiyle, Allah'ı görme mertebesine yükselmedikleri zaman, Allah onları tuzaklarıyla cezalandırır. Bu cezalandırma, Allah'ın, onları o halleri içerisinde darmadağın ederek bu hallerin üstüne çıkartmaması veya bu hallerde ilerletmemesidir. Bu, Allah'ın onların havassına verdiği cezadır.

هُوَ الَّذ۪ي يُسَيِّرُكُمْ فِي الْبَرِّ وَالْبَحْرِ حَتّٰٓى اِذَا كُنْتُمْ فِي الْفُلْكِ
وَجَرَيْنَ بِهِمْ بِر۪يحٍ طَيِّبَةٍ وَفَرِحُوا بِهَا جَٓاءَتْهَا ر۪يحٌ عَاصِفٌ
وَجَٓاءَهُمُ الْمَوْجُ مِنْ كُلِّ مَكَانٍ وَظَنُّوٓا اَنَّهُمْ اُح۪يطَ بِهِمْ دَعَوُا اللّٰهَ
مُخْلِص۪ينَ لَهُ الدّ۪ينَ لَئِنْ اَنْجَيْتَنَا مِنْ هٰذِه۪ لَنَكُونَنَّ مِنَ الشَّاكِر۪ينَ ﴿٢٢﴾

22- "O, sizi karada ve denizde gezdirip dolaştırandır. Öyle ki, gemilerle denize açıldığınız ve gemilerinizin, içindekilerle birlikte uygun bir rüzgârla seyrettiği, yolcuların da bununla sevindikleri

bir sırada ona şiddetli bir fırtına gelip çatar ve her taraftan dalgalar onlara hücum eder de çepeçevre kuşatıldıklarını anlayınca dini Allah'a has kılarak: 'Andolsun, eğer bizi bundan kurtarırsan, mutlaka şükredenlerden olacağız' diye Allah'a yalvarırlar."

Allah, buyurmak istemektedir ki, onlar nimetler içerisinde eteklerini sürükleyerek sabahlıyor, sonra geceleyin ağlamak üzere akşamlıyorlar. Bazen de gecelerini sevince boğularak geçirirlerken, takdirin gizlilikleri onları helak etmiş olarak sabahlarlar.

Şiir:

*Bir süre, gözlerin aydınlık olarak kaldın*
*Derken bir gün gözlerden yaşlar akıtır oldun*

Onlar, samimi dua ile Allah'a dönüş yaptıkları zaman, Allah musibeti gidermek suretiyle onlara lütufta bulunur. Ancak Allah, dualarını kabul ederek onları kurtarınca, bir de bakarsın ki, Allah'tan başkasına dönüş yaparlar ve isyan yollarında yürürler.

فَلَمَّٓا اَنْجٰيهُمْ اِذَا هُمْ يَبْغُونَ فِي الْاَرْضِ بِغَيْرِ الْحَقِّ يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ اِنَّمَا بَغْيُكُمْ عَلٰٓى اَنْفُسِكُمْ مَتَاعَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ثُمَّ اِلَيْنَا مَرْجِعُكُمْ فَنُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٢٣﴾

23- "Fakat onları kurtarınca, bir de bakarsın ki yeryüzünde haksız yere taşkınlık yapıyorlar. Ey insanlar! Sizin taşkınlığınız, sırf kendi aleyhinizedir. Bununla sadece dünya hayatının yararını elde edersiniz. Sonunda dönüşünüz bizedir. Biz de bütün yaptıklarınızı size haber vereceğiz."

(يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ اِنَّمَا بَغْيُكُمْ عَلٰٓى اَنْفُسِكُمْ) "*Ey insanlar! Sizin taşkınlığınız, sırf kendi aleyhinizedir.*" Yani size az sayıdaki birkaç gün fırsat veririz. Sonra bunun sonucuna katlanır ve uzun bir azap çekmeye başlarsınız.

اِنَّمَا مَثَلُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا كَمَٓاءٍ اَنْزَلْنَاهُ مِنَ السَّمَٓاءِ فَاخْتَلَطَ بِهٖ نَبَاتُ الْاَرْضِ مِمَّا يَاْكُلُ النَّاسُ وَالْاَنْعَامُ حَتّٰٓى اِذَٓا اَخَذَتِ الْاَرْضُ زُخْرُفَهَا وَازَّيَّنَتْ وَظَنَّ اَهْلُهَٓا اَنَّهُمْ قَادِرُونَ عَلَيْهَٓا اَتٰيهَٓا اَمْرُنَا لَيْلًا اَوْ نَهَارًا فَجَعَلْنَاهَا حَصٖيدًا كَاَنْ لَمْ تَغْنَ بِالْاَمْسِ كَذٰلِكَ نُفَصِّلُ الْاٰيَاتِ لِقَوْمٍ يَتَفَكَّرُونَ ﴿٢٤﴾

24- "Dünya hayatının hali, ancak gökten indirdiğimiz bir yağmurun hali gibidir ki, insanların ve hayvanların yedikleri yeryüzü bitkileri onunla yetişip birbirine karışmıştır. Nihayet yeryüzü o bitkilerle bütün ziynetlerini ve güzelliklerini alıp süslendiği ve sahipleri de onun üzerine her türlü tasarrufa kadir olduklarını sandıkları bir sırada, geceleyin veya güpegündüz ansızın ona emrimiz geliverir de bunları sanki dün yerinde hiç yokmuş gibi, kökünden yolunmuş bir hale getiririz. İşte düşünen bir toplum için âyetleri böyle ayrı ayrı açıklıyoruz."

Allah, dünya hayatını gökyüzünden indirilen ve kendisiyle bitkilerin yeşerdiği, yeryüzünün yeşillendiği ve meyvelerin çıktığı suya benzetmiştir. Bu nimetlerin sahipleri onlara tam alışmış iken, onları ansızın semavi bir afet vurur ve hiç yokmuş gibi olurlar.

Aynı şekilde insan da yaşı kâmil, kuvveti tam olup kendisinde güzel vasıflar toplandıktan sonra ölüm onu çürütür. Bunun yanı sıra, düzene girmiş işleri de vefatıyla bozulur ve boşa gider.

Tıpkı şu dizelerde dile getirildiği gibi:

*Yitirdik onu, tamamlanıp yükseklere çıkmışken*
*Aynı şekilde dolunay da kaybolur tamamlandığında*

Dünya ile ilgili durumların, gökten indirilen suya benzetilme yönlerinden biri de tıpkı yağmurun entrikayla yağmaması gibi, dünya işlerinin de sadece kaderin desteğinde olmasıdır. Sonra yağmur, her ne kadar ancak takdirle yağsa da, bazen yağması için dua

da edilir. Bunun gibi rızk da her ne kadar kısmetle oluyorsa da bazen Allah'tan istenir ve verilmesi talep edilir.

Dünya işleri ile su arasındaki bazı benzerlikler de şöyledir:

- Su, yerinde kullanıldığı zaman insanların hayat sebebi, yerinde kullanılmadığı zaman ise yıkım sebebi olur. Aynı şekilde mal da hak eden için selamet sebebidir ve onunla hemhal olanlara fayda verir. Hak etmeyen için ise azgınlık sebebi, ona bulaşanın başına da musibet olur. Tıpkı şu sözde ifadesini bulduğu gibi:

*"Allah'ın nimetleri ayıplanmaz, ancak kimileri, hakkına riayetten aciz kalabilir."*

Şiir:

*Ey içinde yüksek değerlerden eser bulunmayan devlet (zenginlik)!*
*Yok ol! Sen iyilerin başına beladan başka bir şey değilsin*

- Su, belli bir miktarda olduğu zaman düzelmeye, sınırı aştığı zaman ise yıkılmaya sebep olur. Aynı şekilde mal da, ihtiyaca yetecek ve geçimi sağlayacak miktarda olduğu zaman sahibi nimet içinde olur. Çoğalıp ölçüyü aştığı zaman ise nankörlük ve azgınlığa sebep olur.

- Su aktığı sürece güzeldir. Uzun süre durgun kaldığı zaman ise değişir. Aynı şekilde mal da, sahibi onu hayır yolunda harcadığı zaman övgüye değer bulunur. Sahibi, onu stok edip harcamadığı zaman ise hastalıklı ve kötü olur.

- Su, temiz olduğu zaman helal olup içmeye, temizlik yapmaya ve pislikleri gidermeye yarar. Temiz olmadığı zaman ise aksi olur. Aynı şekilde mal da helal olduğu zaman faydalı, haram olduğu zaman ise aksine olur.

Bir yoruma göre de nasıl ki ilk baharda ağaçlar, güller ve çiçekler açar, çimenler yeşillenir, dere tepe bitkilerle bezenir; ancak beklenmedik bir şekilde bir afete maruz kalmayacağından ve hesapta olmayan bir olayla durumun değişmeyeceğinden emin olunamıyorsa,

aynı şekilde kimi insan da vardır ki saf halleri ve ihlâs ile arınmış amelleri vardır. Dostluk dalları gelişmiş, yakınlık çimenleri güzelleşmiştir. Derken bir süre sonra onlara bir kötü göz isabet eder, bunun üzerine vuslat dalı çürür ve talihinin feyiz kapıları kapanmış olur.

Şiir:

*Bir göz değdi sana, hedefini şaşmaz göz*
*Bazen de kıskançlığa doğru hızlanır göz*

وَاللّٰهُ يَدْعُوٓا اِلٰى دَارِ السَّلَامِ وَيَهْد۪ي مَنْ يَشَٓاءُ اِلٰى صِرَاطٍ مُسْتَق۪يمٍ ﴿٢٥﴾

25- "Allah, esenlik yurduna çağırır ve dilediğini doğru yola iletir."

Allah, onları esenlik yurduna çağırmıştır. Ancak gerçekte Allah, onları kendilerine esenlik yurdunu kazandıracak şeye çağırmıştır. Bu da, emirlerini yerine getirip yasaklarından sakınmaktır. Bu arada dua mükellefiyeti, hidayetin, ehline has kılınması ise onurlandırmayı ifade eder.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Dua yükümlülük, hidayet ise Allah'ın kendini tanıtmasıdır. Bu itibarla yükümlülük herkesi, kendini tanıtması ise özel kimseleri kapsar.

- Yükümlülük, Allah'ın hükümranlık hakkının, kendini tanıtması da ihsanının gereğidir.

- Dua Allah'ın sözü, hidayet ise O'nun gücüdür. Sözünün kapsamına herkes, gücünün kapsamına ise sadece veliler girmiştir. Esenlik yurdu (Dâru's-Selâm), Allah'ın yurdudur. Çünkü "Selâm" O'nun isimlerindendir. Bu arada "Selâm" lafzı, esenlik anlamına da geldiği için orası aynı zamanda esenlik yurdudur. Yani o yurdun sakinleri, orada esenlik içindedirler. Yanmaktan ve ayrılıktan kurtulmuşlardır. Yanmaktan kurtuldukları için vergisinin tadına, ayrılıktan kurtuldukları için de paha biçilmez vuslat nimetine ermişlerdir.

- Esenlik yurduna, ancak nefsi puta secde etmekten, kalbi de şirkten ve zulümden arınan kimse erişebilir.

O yurt derece derecedir. Kalbi, başkalarının sevgisinden arınan kimsenin derecesi, nefsi günahlardan ve kirlerden arınan kimsenin derecesinden daha yüksektir.

- Bunlar, kalpleri aldatma, kıskançlık ve kin duygularından arınıp halkın kendilerinden emin olduğu kimselerdir. Bu itibarla başkalarıyla aralarında hesaplaşma bulunmamaktadır ve hiç kimseden alacaklı değillerdir. Zaten Müslüman, diğer Müslümanların dilinden ve elinden emin olduğu, ihsan sahibi de bütün yaratıkların kalbinden emin olduğu kimsedir.

Doğru yol, Müslümanların yoludur. Bu, ilmelyakîn şartıyla avamın yoludur. Sonra müminlerin yoludur. Bu, aynelyakîn şartıyla havassın yoludur. Sonra ihsan sahiplerinin yoludur. Bu da, hakkalyakîn şartıyla hasın hasının yoludur. Birinci grup, aklın aydınlığıyla burhan sahibidir. İkinci grup, ilmin keşfiyle beyan sahibidir. Üçüncü grup da, Allah'ın sıfatlarına dair marifetin aydınlığıyla O'nu görür gibidir. İşte Hz. Peygamber'in (s.a.v.), haklarında şu hadisi söylediği kimseler bu grupta yer alanlardır:

*"İhsan, Allah'ı görüyormuşsun gibi O'na ibadet etmendir."*

لِلَّذِينَ اَحْسَنُوا الْحُسْنٰى وَزِيَادَةٌ وَلَا يَرْهَقُ وُجُوهَهُمْ قَتَرٌ وَلَا ذِلَّةٌ
اُولٰٓئِكَ اَصْحَابُ الْجَنَّةِ هُمْ فِيهَا خَالِدُونَ ﴿٢٦﴾

26- "Güzel iş yapanlara, daha güzeli ve bir de fazlası vardır. Onların yüzlerine ne bir kara bulaşır ne de bir zillet. İşte onlar, cennetliklerdir ve orda ebedî kalacaklardır."

Güzel iş yapanlar, fiillerinin, Allah'ın iznine uygun olması şartına bağlı olarak, amel eden ve bunu güzel bir şekilde ifa edenlerdir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Güzel iş yapanlar, vaciplerde kusur işlemeyen ve sünnetleri ihlal etmeyenlerdir.

- Güzel iş yapanlar, üzerlerindeki her hakka riayet edenlerdir. Eğer bu, Allah'ın hakkıysa buna kusursuz riayet eder, yaratıkların haklarını da geciktirmeden öderler.

- Güzel iş yapanlar, şimdi olduğu gibi gelecekte de güzel iş yapmaya devam edip istikamet üzere olanlardır. Onlara verilecek daha güzel şey ise, cennet ve içindeki türlü türlü nimetlerdir.

- Söz konusu daha güzel şey, dünyada sürekli iyiliğe muvaffak kılınmak ve noksansız hakikate ulaşmak, ahirette ise hemen bağışlanmak ve ebedî olarak Allah'ın cemalini görmektir.

Fazlasına gelince, hadise ve selefin icmaına göre bu, Allah'ı temaşa etmektir. Bir ihtimale göre, "daha güzel şey" Allah'ı görmek, "fazlası" ise görmenin devamıdır. Başka bir ihtimale göre de "daha güzel şey" Allah'a kavuşmak, "fazlası" ise kavuşma halinde kalmaktır.

- Daha güzel olan şey, ellerinden alınmaz ve engellenmez, fazlası da onlardan esirgenmez ve ondan mahrum bırakılmazlar.

(وَلَا يَرْهَقُ وُجُوهَهُمْ قَتَرٌ وَلَا ذِلَّةٌ اُولٰٓئِكَ اَصْحَابُ الْجَنَّةِ هُمْ فٖيهَا خَالِدُونَ) *"Onların yüzlerine ne bir kara bulaşır ne de bir zillet. İşte onlar, cennetliklerdir ve orda ebedî kalacaklardır."*

Onların üzerine engellenme tozu toprağı konmaz. Oysa kâfirlerin durumu bunun aksinedir. Allah bu konuda şöyle buyurmaktadır:

(وَوُجُوهٌ يَوْمَئِذٍ عَلَيْهَا غَبَرَةٌ) *"O gün nice yüzler vardır ki, toz toprak içindedirler."* (Abese, 80/40)

Onlara zilletin bulaşmaması, Allah'ı görmeden başka şeyleri görmeye yönlendirilmemeleridir. Bu itibarla onlar, her türlü faziletleri ve halleriyle cennette kalıcıdırlar.

وَالَّذٖينَ كَسَبُوا السَّيِّـَٔاتِ جَزَٓاءُ سَيِّئَةٍ بِمِثْلِهَا وَتَرْهَقُهُمْ ذِلَّةٌ مَا لَهُمْ
مِنَ اللّٰهِ مِنْ عَاصِمٍ كَاَنَّمَٓا اُغْشِيَتْ وُجُوهُهُمْ قِطَعًا مِنَ الَّيْلِ مُظْلِمًا
اُولٰٓئِكَ اَصْحَابُ النَّارِ هُمْ فٖيهَا خَالِدُونَ ﴿٢٧﴾

27- "Kötü işler yapmış olanlara gelince, bir kötülüğün cezası misliyledir ve onları bir zillet kaplayacaktır. Onları, Allah'ın azabından koruyacak hiçbir kimse de yoktur. Sanki yüzleri, karanlık geceden parçalarla örtülmüştür. İşte onlar cehennemliklerdir. Onlar, orada ebedî kalacaklardır."

Kötülük işleyip yanlışlıklar yapanların cezası, o kötülük ve yanlışlığın miktarıncadır. Bu arada "بمثلها (bimislihâ)" ifadesindeki "با (bâ)" harfi, 'bire karşılık bir' anlamını ifade etmektedir.

(وَتَرْهَقُهُمْ ذِلَّةٌ) *"Onları bir zillet kaplayacaktır."* Bu ifade, cezayı pekiştirmek içindir.

(مَا لَهُمْ مِنَ اللّٰهِ مِنْ عَاصِمٍ) *"Onları, koruyacak hiçbir kimse de yoktur."* Yani onlar, kendilerini Allah'ın azabından koruyacak bir koruyucuya sahip değildirler. Onlara, mahcubiyetin züllü tattırılmış, ebedî azaba ve Allah'tan uzak kalmanın perişanlığına maruz kalmışlardır. Bir de mahcup oluşun eserleri yüzlerinde açıkça görülmektedir. Zira yüz hatları, kişinin iç dünyasını göstermektedir.

وَيَوْمَ نَحْشُرُهُمْ جَمِيعًا ثُمَّ نَقُولُ لِلَّذِينَ اَشْرَكُوا مَكَانَكُمْ اَنْتُمْ
وَشُرَكَاۤؤُكُمْ فَزَيَّلْنَا بَيْنَهُمْ وَقَالَ شُرَكَاۤؤُهُمْ مَا كُنْتُمْ اِيَّانَا تَعْبُدُونَ ﴿٢٨﴾
فَكَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيدًا بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمْ اِنْ كُنَّا عَنْ عِبَادَتِكُمْ لَغَافِلِينَ ﴿٢٩﴾

28, 29- "Onların hepsini bir araya toplayacağımız, sonra da Allah'a ortak koşanlara: 'Siz de ortaklarınız da yerinizde bekleyin' diyeceğimiz günü düşün. Artık onların aralarını tamamen ayırırız ve ortak koştukları derler ki: 'Siz bize ibadet etmiyordunuz. Şimdi ise sizin bize tapınmanızdan habersiz olduğumuza dair sizinle bizim aramızda şâhit olarak Allah yeter.'"

Allah, kâfirler ile Allah'tan başka ibadet ettikleri putlarını bir araya getirir. Bu esnada putlar: "Bize tapmanızı size emretmedik" deyince, kâfirler, itaat ettikleri şeytanlara ve kendilerine ibadet etmelerini onlara emreden putlara beddua ederler. Putlar da şöyle

derler: "Allah, şahit olarak yeter. Kaldı ki biz, cansız olduğumuz için size bunu emretmiş değiliz." Bu arada putların konuşmaları, Allah'ın kıyamet günü, putları diriltip onları konuşturması sebebiyledir. Hulasa onlar, birbirlerinden yaka silkmekte ve her biri, yaptığının vebalini çekmektedir. Bu bilgiyi vermenin faydası, Allah için olmayan şeyin, onların boynunda vebal olduğunu belirtmektir. Böylece onların dünyada putlarla hemhal olmaları Allah'tan yüz çevirmektir. Ahirette de bundan dolayı onlar için ceza vardır.

هُنَالِكَ تَبْلُوا كُلُّ نَفْسٍ مَٓا اَسْلَفَتْ وَرُدُّوٓا اِلَى اللّٰهِ مَوْلٰيهُمُ الْحَقِّ
وَضَلَّ عَنْهُمْ مَا كَانُوا يَفْتَرُونَ ﴿٣٠﴾

30- "Orada herkes, daha önce yaptığı şeyleri yoklayacak, hepsi de gerçek sahipleri olan Allah'a döndürülecekler ve uydukları şeyler, kendilerinden kaybolup gidecektir."

Onlar, ancak perişanlıklarını tadınca hüsranlarının farkına varırlar. Bu nedenle Allah'a geri götürüldüklerinde O'ndan uzak kalmışlıktan ve O'nun tarafından kovulmaktan başka bir şey bulamazlar. Bu, başkasını Allah'a tercih etmenin cezasıdır.

قُلْ مَنْ يَرْزُقُكُمْ مِنَ السَّمَٓاءِ وَالْاَرْضِ اَمَّنْ يَمْلِكُ السَّمْعَ وَالْاَبْصَارَ
وَمَنْ يُخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ وَيُخْرِجُ الْمَيِّتَ مِنَ الْحَيِّ وَمَنْ يُدَبِّرُ
الْاَمْرَ فَسَيَقُولُونَ اللّٰهُ فَقُلْ اَفَلَا تَتَّقُونَ ﴿٣١﴾

31- "De ki: 'Sizi gökten ve yerden kim rızıklandırıyor? Ya da işitme ve görme yetisi üzerinde mutlak hâkim kimdir? Ölüden diriyi, diriden de ölüyü kim çıkarıyor? İşleri kim yürütüyor?' 'Allah' diyecekler. De ki: 'O halde Allah'a karşı gelmekten sakınmayacak mısınız?'"

Allah, yegâne yaratan olduğu gibi aynı şekilde yegâne rızık veren de O'dur. Bir de nasıl ki O'ndan başka yaratan yoksa aynı şekilde O'ndan başka rızık veren de yoktur.

Sonra rızık bir kaç kısımdır:

- Bedenlerin rızkı, kimileri için ibadetlerde muvaffakiyet, kimileri için de yanlışlıkların yol açtığı perişanlıktır.

- Ruhların rızkı, kimileri için vuslatın gerçekleri, diğer bazıları için de dünyada gaflet, ahirette ise azap ve mühlettir.

(اَمَّنْ يَمْلِكُ السَّمْعَ وَالْاَبْصَارَ) *"Ya da işitme ve görme yetisi üzerinde mutlak hâkim kimdir?"* O, kimi görme yetilerini, tevhidle kemale erdirirken, bazısını da hakikati görme konusunda kör eder.

(وَمَنْ يُخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ وَيُخْرِجُ الْمَيِّتَ مِنَ الْحَيِّ) *"Ölüden diriyi, diriden de ölüyü kim çıkarıyor?"* Allah, mümini kâfirden, kâfiri de müminden çıkarıyor.

(فَسَيَقُولُونَ اللّٰهُ) *"'Allah' diyecekler."* Fakat onlar, bunu basirete değil, zanna dayalı olarak, içten tasdik ederek değil, sözde söyleyeceklerdir.

فَذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمُ الْحَقُّ فَمَاذَا بَعْدَ الْحَقِّ اِلَّا الضَّلَالُ فَاَنّٰى تُصْرَفُونَ ﴿٣٢﴾

32- "İşte O, sizin gerçek Rabbiniz olan Allah'tır. Hak'tan sonra sadece sapıklık vardır. O hâlde nasıl oluyor da Hak'tan döndürülüyorsunuz?"

Hakkın konularından olan, iradenin taalluk ettiği, meşietin kapsadığı, takdirin sınıflandırdığı ve kudretin dönüştürdüğü hususlar, boş kalıplar olup haklarında takdirin hükümleri gerçekleşmektedir.

كَذٰلِكَ حَقَّتْ كَلِمَتُ رَبِّكَ عَلَى الَّذِينَ فَسَقُوا اَنَّهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿٣٣﴾

33- "Rabbinin, yoldan çıkanlar hakkındaki: 'Onlar, artık imana gelmez' sözü, işte böylece gerçekleşmiştir."

Haklarındaki hüküm önceden kesinleşmiş ve doğru söz söylenmiştir. Bu itibarla Allah'ın hükmünde de sözünde de hiçbir değişiklik olmaz. Çünkü sebepler, ezeli olanı değiştiremez.

قُلْ هَلْ مِنْ شُرَكَٓائِكُمْ مَنْ يَبْدَؤُا الْخَلْقَ ثُمَّ يُع۪يدُهُ قُلِ اللّٰهُ يَبْدَؤُا الْخَلْقَ ثُمَّ يُع۪يدُهُ فَاَنّٰى تُؤْفَكُونَ ﴿٣٤﴾

34- "De ki: 'Allah'a koştuğunuz ortaklarınızdan, başlangıçta yaratmayı yapacak, sonra onu tekrarlayacak kimse var mı?' De ki: 'Allah, başlangıçta yaratmayı yapar sonra onu tekrar eder. O hâlde, nasıl oluyor da haktan çevriliyorsunuz?'"

Allah bu ayette inançlarının içerdiği yaratma ve yaratmayı tekrarlaması söz konusu olmayan varlıklara ibadet etmek şeklindeki çirkinlikleri ifşa etmiş ve mabudun, yaratan ve yaratmayı tekrar eden olduğunu ortaya koymuştur.

Kimileri, kaderi ileri sürerek yaratmada Allah'a ortaklar koştular, bazıları da yaratmayı tekrar etmesini mümkün görmediler. Oysa bütün bunlar, küfre meyletmektir ve dinden kopuştur.

قُلْ هَلْ مِنْ شُرَكَٓائِكُمْ مَنْ يَهْد۪ٓي اِلَى الْحَقِّ قُلِ اللّٰهُ يَهْد۪ي لِلْحَقِّ اَفَمَنْ يَهْد۪ٓي اِلَى الْحَقِّ اَحَقُّ اَنْ يُتَّبَعَ اَمَّنْ لَا يَهِدّ۪ٓي اِلَّٓا اَنْ يُهْدٰى فَمَا لَكُمْ كَيْفَ تَحْكُمُونَ ﴿٣٥﴾

35- "De ki: 'Allah'a koştuğunuz ortaklarınızdan hakka iletecek olan bir kimse var mı?' De ki: 'Hakka Allah iletir.' Öyle ise hakka ileten mi uyulmaya daha lâyıktır yoksa iletilmedikçe doğru yolu bulamayan kimse mi? Ne oluyor size? Nasıl hüküm veriyorsunuz?"

Hak lafzı, Allah'ın isimlerinden olup var olan, hak sahibi ve hakkı hak kılan anlamlarındadır. Yaratıkların vasıflarından olan hak ise, yaptığı güzel, itikadı doğru kimse ve konuşulması caiz olan şeydir.

(اللّٰهُ يَهْد۪ي لِلْحَقِّ) "*Hakka Allah iletir*". Yani Allah'ın ilettiği yer haktır. Bu ayette geçen "هداية (hidayet)" lafzı, cer harfleri olan "لام (lâm)" ve "إلى (ilâ)" ile kullanıldığında aynı anlama gelir. Allah, hakka ilet-

tiği kimseyi ona vâkıf kılar. Allah'ın, hak için hakka ilettiği kimseler nadir olup her şeyleri O'nun içindir.

وَمَا يَتَّبِعُ اَكْثَرُهُمْ اِلَّا ظَنًّا اِنَّ الظَّنَّ لَا يُغْنِي مِنَ الْحَقِّ شَيْـًٔا اِنَّ اللّٰهَ عَلِيمٌ بِمَا يَفْعَلُونَ ﴿٣٦﴾

36- "Onların çoğu, ancak zannın ardından gider. Oysa zan, hak namına hiçbir şeyin yerini tutmaz. Şüphesiz Allah, onların yapmakta olduklarını hakkıyla bilendir."

Zan, kesin inanç ile çelişir. Çünkü zan, kesinlik ifade etmeksizin, hükmün iki tarafından birini diğerine tercih etmektir. Oysa hakikat sahipleri, basiret ve kesin hüküm üzere olurlar. Bu itibarla Allah'ın sıfatları bakımından zan yetersizdir. Kesinlik de, nefsin vasıfları bakımından hiç kimse için geçerli değildir. Kulun, dünyada zandan arınması gerekir. Çünkü hiç kimse, nefsinin gayb olan ahiretteki durumunu bilemez.

Allah'ın sıfatı ile ilgili olarak kulun, kesinlik ve basiret üzere olması gerekir. Allah hakkında zan yetersizdir. Zan, Allah'tan gelen hususlarda makbul değildir. Marifet ehlinin ise, Allah'ın sıfatlarıyla ilgili hususlarda zanna dayanmaları hiçbir şekilde caiz değildir. Nasıl caiz olabilir ki? Allah, peygamberine olan emrinde şöyle buyurmuştur:

(قُلْ هٰذِهِ سَبِيلِي اَدْعُوا اِلَى اللّٰهِ عَلٰى بَصِيرَةٍ اَنَا وَمَنِ اتَّبَعَنِي) *"De ki: 'İşte bu, benim yolumdur. Ben ve bana uyanlar, bilerek Allah'a çağırırız.'"* (Yûsuf, 12/108)

Bizim de şu şiirimizde söylediğimiz gibi:

*Doğdu sabah, zamanı değil artık lambanın*
*Geldi yakîn, zamanı değil artık tartışmanın*
*Gerçekleşti kavuşmayı umduğumuz şey*
*Sancakların bağlanıp kapıların çözülmesinden*
*Topladı uzaklık çadırlarını, yaklaşmakla*
*Bağladı vuslat kovasını iple*
*Geldi sevinmenin zamanı, hadi gelin artık*
*Püskürtmeye üzüntülerin akınlarını*

وَمَا كَانَ هٰذَا الْقُرْاٰنُ اَنْ يُفْتَرٰى مِنْ دُونِ اللّٰهِ وَلٰكِنْ تَصْدِيقَ الَّذِي بَيْنَ يَدَيْهِ وَتَفْصِيلَ الْكِتَابِ لَا رَيْبَ فِيهِ مِنْ رَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿٣٧﴾

37- "Bu Kur'ân, Allah'tan indirilmiş olup başkası tarafından uydurulmamıştır. Fakat o, kendinden öncekileri doğrulayıcı ve Kitab'ı açıklayıcı olarak indirilmiştir. Bunda hiçbir şüphe yoktur. O, Âlemlerin Rabbi tarafındandır."

Basiretleri kapanmış olduğundan Kur'an'ı çok dinledikçe onların körlükleri kat kat artar. Hakikat ehlinin ise hidayetleri kat kat artar. Böylece şanı Yüce Allah, hitabını dinlemeyi bir topluluk için şaşkınlığa, diğer bir topluluk içinse basiret sahibi olmaya sebep kılmıştır.

اَمْ يَقُولُونَ افْتَرٰيهُ قُلْ فَاْتُوا بِسُورَةٍ مِثْلِهِ وَادْعُوا مَنِ اسْتَطَعْتُمْ مِنْ دُونِ اللّٰهِ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٣٨﴾

38- "Yoksa onu, Muhammed kendisi uydurdu mu diyorlar? De ki: 'Eğer doğru söyleyenler iseniz, hadi siz de onun benzeri bir sure getirin ve Allah'tan başka çağırabileceğiniz kim varsa, onları da yardıma çağırın.'"

Onlardaki yetenekler körelmiş, fesahatlerinin ateşleri sönmüş ve her usta hatip, bu Kitab'a karşı koymaktan aciz kaldığını itiraf etmiştir. Bu nedenle, söyledikleriyle rezil olandan başka hiç kimse, Kur'an'a karşı çıkmaya yeltenmemiştir.

بَلْ كَذَّبُوا بِمَا لَمْ يُحِيطُوا بِعِلْمِهِ وَلَمَّا يَاْتِهِمْ تَاْوِيلُهُ كَذٰلِكَ كَذَّبَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الظَّالِمِينَ ﴿٣٩﴾

39- "Hayır öyle değil. Onlar, ilmini kavrayamadıkları ve kendilerine yorumu gelmemiş olan bir şeyi yalanladılar. Kendilerinden öncekiler de, peygamberleri ve onlara indirilen kitapları böyle yalanlamışlardı. Bak, o zalimlerin sonu nasıl oldu!"

Hakikate ulaştırıcı ilimleri yetersiz olduğundan, hakka yalanlamayla karşılık verdiler. Bu itibarla, hakikate ulaşmak tasdikin şartıdır. Gayba da Allah'ın, hakikatlerin kesin delillerini kalbine nakşettiği ve şüphelerin sebeplerinden koruduğu kimse iman eder.

وَمِنْهُمْ مَنْ يُؤْمِنُ بِهٖ وَمِنْهُمْ مَنْ لَا يُؤْمِنُ بِهٖ وَرَبُّكَ اَعْلَمُ بِالْمُفْسِدٖينَ ﴿٤٠﴾

40- "İçlerinden öylesi var ki, Kur'an'a inanır. Yine onlardan öylesi de var ki, ona inanmaz. Rabbin, bozguncuları daha iyi bilendir."

İnananlar, Hakk'ın, kalp gözlerini kesin iman nuruyla aydınlattığı kimselerdir. İnanmayanlar ise kalplerine körlük mili çekilen ve bu nedenle hidayetten uzaklaşıp dalalete sapan kimselerdir. Bu, Allah'ın, her iki topluluk hakkındaki prensibidir. Allah'ın prensibinde ise değişiklik bulamazsın.

وَاِنْ كَذَّبُوكَ فَقُلْ لٖي عَمَلٖي وَلَكُمْ عَمَلُكُمْ اَنْتُمْ بَرٖيؤُنَ مِمَّٓا اَعْمَلُ
وَاَنَا بَرٖيٓءٌ مِمَّا تَعْمَلُونَ ﴿٤١﴾

41- "Eğer onlar, seni yalanlarlarsa, de ki: 'Benim işim bana aittir. Sizin işiniz de size. Siz, benim yaptığımdan uzaksınız. Ben de sizin yapmış olduğunuz şeylerden uzağım.'"

Gizlilik yok olmuş, hakikatler ortaya çıkmış ve her iki yol birbirinden ayrılmıştır. Bu itibarla, ne iyilik yapan kötülük yapanın suçuyla cezalandırılır ne de kötülük yapana iyilik yapanın hatası sebebiyle itap edilir. Her biri, ameliyle baş başadır ve yaptıklarından sorumludur.

وَمِنْهُمْ مَنْ يَسْتَمِعُونَ اِلَيْكَ اَفَاَنْتَ تُسْمِعُ الصُّمَّ وَلَوْ كَانُوا لَا
يَعْقِلُونَ ﴿٤٢﴾

42- "Onlardan sana kulak verenler de vardır. Fakat sağırlara, hele akılları da ermiyorsa, sen mi işittireceksin?"

Seni tekellüfle dinleyen, çok iş karıştırması sebebiyle, daha da geri kalır. Allah'ın lütfuyla hakkı dinleyen ise onu idrak etmede tekellüfe ihtiyaç duymaz. Bu arada Allah, sırlarında kendilerine gizlice seslendiği hususları velilerine duyurur. Böylece onlar, daha önce Hakk'ı dinlediklerinden, vasıta olan Hz. Peygamber'i (s.a.v.) duyduklarında kendisini kabul ile karşılarlar. Hakk'ın, idraki sağlamak amacıyla yaptığı duyuruya mazhar olmamış kimsenin peygamberi dinlemesi ise, inkârını ve uzaklığını kat kat artırmaktan başka bir sonuç vermez.

وَمِنْهُمْ مَنْ يَنْظُرُ اِلَيْكَ اَفَاَنْتَ تَهْدِي الْعُمْيَ وَلَوْ كَانُوا لَا يُبْصِرُونَ ﴿٤٣﴾

43- "İçlerinden sana bakanlar da vardır. Fakat körlere, hele gerçeği görmüyorlarsa, sen mi doğru yolu göstereceksin?!"

Basireti gaflet ve yoldan çıkmışlıkla kapanan kimsenin gözünün görüyor olması, perdelenmişliğini kat kat artırmaktan başka bir işe yaramaz. Her kim de Allah'a Allah ile bakmaz ve Allah'ı Allah ile duymazsa, onun akıbeti körlük ve sağırlıktır.

Allah şöyle buyurur:

(فَاِنَّهَا لَا تَعْمَى الْاَبْصَارُ وَلٰكِنْ تَعْمَى الْقُلُوبُ الَّتِي فِي الصُّدُورِ) *"Çünkü gerçekte gözler değil, göğüslerdeki kalpler kör olur."* (Hacc, 22/46)

Kutsi bir hadiste de Hz. Peygamber (s.a.v.), Allah'tan şöyle buyurduğunu rivayet etmiştir:

*"Kul, benimle işitir ve benimle görür."*

Şair de şöyle der:

*Hak gözüyle düşün, bakıyorsan eğer*
*O'ndan gelen ve O'na dönen bir manzaraya*

اِنَّ اللّٰهَ لَا يَظْلِمُ النَّاسَ شَيْئًا وَلٰكِنَّ النَّاسَ اَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ﴿٤٤﴾

44- "Şüphesiz Allah, insanlara hiçbir şekilde zulmetmez. Fakat insanlar, kendilerine zulmederler."

Allah bu ayette, sıfatlarından sayılması muhal olan şeyden kendini tenzih etmiştir. İstediği takdirde akla gelen her şeyi yapma hakkına sahip iken, nasıl olur da zulümle vasıflandırılabilir. Zira hak O'nun hakkı, mülk de O'nun mülküdür. Kendisinden çirkin bir şeyin gerçekleşmesinin var sayılması doğru olmayan Allah'ın, zulümle vasıflandırılması nasıl caiz veya vacip olur?!

وَيَوْمَ يَحْشُرُهُمْ كَاَنْ لَمْ يَلْبَثُوٓا اِلَّا سَاعَةً مِنَ النَّهَارِ يَتَعَارَفُونَ بَيْنَهُمْ قَدْ خَسِرَ الَّذٖينَ كَذَّبُوا بِلِقَٓاءِ اللّٰهِ وَمَا كَانُوا مُهْتَدٖينَ ﴿٤٥﴾

45- "Onları yeniden diriltip hepsini bir araya toplayacağı gün, sanki gündüzün bir saatinden başka kalmamışlar gibi, aralarında tanışırlar. Allah'a kavuşmayı yalan sayanlar, ziyana uğramış ve doğru yolu bulamamışlardır."

Günler ve aylar, yıllar ve asırlar geçtikten sonra, onları düşünenler için bir an hükmündedir. Şimdi günler, aylar, yıllar ve asırlar gelip geçtikten sonra ne zaman etkileri olur? Gelecek zaman da yakındır. O kadar ki, sanki geçmiş uzun zamanın miktarı bilinmemiş gibidir.

وَاِمَّا نُرِيَنَّكَ بَعْضَ الَّذٖي نَعِدُهُمْ اَوْ نَتَوَفَّيَنَّكَ فَاِلَيْنَا مَرْجِعُهُمْ ثُمَّ اللّٰهُ شَهٖيدٌ عَلٰى مَا يَفْعَلُونَ ﴿٤٦﴾

46- "Onları tehdit ettiğimiz şeylerin bir kısmını sana göstersek de, seni vefat ettirsek de sonunda onların dönüşü bizedir. Sonra, Allah onların yapmakta olduklarına da şahittir."

Yani Allah'ın haber verdikleri doğrudur, vaadi ve uyarısı haktır. Neşirden sonra haşir vardır ve o zaman sorgu yapılır, hesap sorulur. Amellere karşılık sevap ve azap verilir. Bilinen gerçek de hemencecik var olur ve görülür.

وَلِكُلِّ اُمَّةٍ رَسُولٌ فَاِذَا جَٓاءَ رَسُولُهُمْ قُضِيَ بَيْنَهُمْ بِالْقِسْطِ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ﴿٤٧﴾

47- "Her ümmetin bir peygamberi vardır. Onların peygamberi geldiği zaman, aralarında adaletle hükmedilir ve onlara asla zulmedilmez."

Allah, hiçbir zamanı dinsiz, hiçbir dini hükümsüz, hiçbir hükmü de sonuçları olan sevapsız ve azapsız bırakmamıştır.

وَيَقُولُونَ مَتٰى هٰذَا الْوَعْدُ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٤٨﴾

48- "'Eğer doğru söyleyenler iseniz, bu tehdit ne zaman gerçekleşecek?' diyorlar."

Va'dedilen azabın çabuk gerçekleşmesini istemek, peygamberi yalanlayan kimselerin alametlerindendir. Hakikat ehli kimselere gelince bunlar, gelecekte karşılaşacakları durumların meydana gelmesinden önce onlarla uğraşmazlar, vaktinden önce gerçekleşmesini talep etmezler, gerçekleştiği zaman da, içerdiği hükmü şu veya bu şekilde karşılamazlar. Bu itibarla onlar, bir damarları bile serbest iradeleriyle hareket etmeyecek derecede, hükme tutsak edilmişledir.

قُلْ لَٓا اَمْلِكُ لِنَفْسٖي ضَرًّا وَلَا نَفْعًا اِلَّا مَا شَٓاءَ اللّٰهُ لِكُلِّ اُمَّةٍ
اَجَلٌ اِذَا جَٓاءَ اَجَلُهُمْ فَلَا يَسْتَاْخِرُونَ سَاعَةً وَلَا يَسْتَقْدِمُونَ ﴿٤٩﴾

49- "De ki: 'Allah dilemedikçe, ben kendime bile ne bir zarar ne de bir fayda verme gücüne sahibim. Her milletin bir eceli vardır. Onların eceli geldi mi, ne bir an geri kalabilirler ne de öne geçebilirler.'"

Başkasının mülkü olan kimsenin ne zaman mülkü olur?! Şimdi kâinatın efendisi (s.a.v.) bile kendine ne bir zarar ne de bir fayda verme gücüne sahip değil iken, mertebesi düşük ve durumu eksik olan kimse, nasıl olur da zerre kadar güce sahip olur veya onun irade ve tercihine dayalı en ufak bir sonuç söz konusu olabilir?! Hakikatte var sayılmayan her şey yok olup giderken, sadece kudret sahibi Allah, malik olma sıfatına sahiptir.

قُلْ اَرَاَيْتُمْ اِنْ اَتٰيكُمْ عَذَابُهُ بَيَاتًا اَوْ نَهَارًا مَاذَا يَسْتَعْجِلُ مِنْهُ الْمُجْرِمُونَ ﴿٥٠﴾

50- "De ki: 'Söyleyin bakalım, O'nun azabı size geceleyin veya gündüzün ansızın gelecek olsa, suçlular bunun hangisini acele isterler?'"

Kudretin kemalini bilen kimse, ansızın şiddetli bir şekilde yakalanmaktan emin olmaz. Gecenin azabından korkan kimse de, uykunun rahatlığından zevk almaz.

Bir yoruma göre de kim gaflet yastığında uyursa, cezanın sürpriziyle uyanır. Yanlışlığı binek edinmeye alışan kimse de, meşakkat çukuruna yuvarlanır.

اَثُمَّ اِذَا مَا وَقَعَ اٰمَنْتُمْ بِهٖ آٰلْـٰٔنَ وَقَدْ كُنْتُمْ بِهٖ تَسْتَعْجِلُونَ ﴿٥١﴾

51- "Onlara: 'Azap gerçekleştikten sonra mı O'na iman ettiniz? Şimdi mi? Oysa siz, onu acele istiyordunuz' denilecek."

Gayb örtüsü yırtıldıktan sonra, mazeretlerin dile getirildiği yakarış kabul olunmaz.

Bir yoruma göre de, bahane yok edildikten sonra delil, delil ortaya çıktıktan sonra da mazeret söz konusu olamaz.

ثُمَّ قِيلَ لِلَّذِينَ ظَلَمُوا ذُوقُوا عَذَابَ الْخُلْدِ هَلْ تُجْزَوْنَ اِلَّا بِمَا كُنْتُمْ تَكْسِبُونَ ﴿٥٢﴾

52- "Sonra da zulmedenlere: 'Ebedî azabı tadın! Siz, ancak vaktiyle kazanmakta olduğunuzun cezasına çarptırılıyorsunuz' denilecektir."

Hiçbir nefis, içtiğinden başka bir şeyi yudumlamakla yükümlü kılınmaz. Hiçbir ekici, ektiğinden başka bir ürün alamaz.

Şiir:

*Öyle prensipler koydun ki hakkımızda*
*Saçtı peşinden belalar*
*Sabreder zorluklarına karşı*
*Bir gün Rabbine itaat eden kimse*

وَيَسْتَنْبِؤُنَكَ اَحَقٌّ هُوَ قُلْ اِي وَرَبِّي اِنَّهُ لَحَقٌّ وَمَٓا اَنْتُمْ بِمُعْجِزِينَ ﴿٥٣﴾

53- "'O azap gerçek midir?' diye senden haber soruyorlar. De ki: 'Evet, Rabbime andolsun ki o elbette gerçektir. Siz, Allah'ı aciz kılacak değilsiniz.'"

Onlar, haber almak istediklerinde sen, onlara açıkça haber ver, cahillerinin anlayamadıkları hususlardaki şüpheyi giderecek bilgiyi ver ve daha önce yaptığın açıklamaya ilave olarak, anlattıklarını edeceğin yemin ile pekiştir. Buna rağmen nasihatin, onlara fayda vermeyecek ve vaazın onlara etki etmeyecektir. Nasıl etki etsin ki? Onlara perdelenmişlik şarabı içirilmiş ve ayrılık damgasıyla damgalandıklarından ne basiretleri ne anlama kabiliyetleri ne de sağduyuları vardır.

وَلَوْ اَنَّ لِكُلِّ نَفْسٍ ظَلَمَتْ مَا فِي الْاَرْضِ لَافْتَدَتْ بِهٖ وَاَسَرُّوا النَّدَامَةَ
لَمَّا رَاَوُا الْعَذَابَ وَقُضِيَ بَيْنَهُمْ بِالْقِسْطِ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ﴿٥٤﴾

54- "O gün zulmetmiş herkes, eğer yeryüzündeki her şeye sahip olsa, kendini kurtarmak için onu fidye verir. Azabı gördüklerinde, için için derin bir pişmanlık duyarlar. Onlara zulmedilmeksizin aralarında adaletle hükmedilir."

Onlardan hiçbir dönüş ve harcama kabul edilmez ve ezelde haklarında gerçekleşen azap uyarısının hedefi şaşmaz, içten olsa bile onlara pişmanlık fayda vermez, isteseler bile lütfa kavuşmazlar, kendilerine hiçbir zulüm ve haksızlık yapılmaz. Böyle bir şey asla olmaz. Aksine Allah, hükmünde adildir ve ululuk sıfatı gereğince yüceliğinde ortağı yoktur.

اَلَٓا اِنَّ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ اَلَٓا اِنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٥٥﴾

55- "Bilesiniz ki göklerdeki her şey, yerdeki her şey Allah'ındır. Yine bilesiniz ki, Allah'ın va'di haktır. Fakat onların çoğu bunu bilmez."

Bütün varlıklar, baştanbaşa Allah'ın mülküdür, O'nunla ortaya çıkar, O'ndan başlar ve O'nda sona erer. Bu itibarla sözü hak, vaadi doğru, emri kesin ve hükmü tartışılmazdır. O, yücedir ve her şeye gücü yeter.

هُوَ يُحْيِي وَيُمِيتُ وَاِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ﴿٥٦﴾

56- "O diriltir ve öldürür. Ancak O'na döndürüleceksiniz."

Allah, müşahedenin ışıklarıyla kalpleri diriltir. Nefisleri de türlü çabalarla öldürür. Bu nedenle ibadet ehlinin nefislerinin ölümü, türlü türlü çabalarla gerçekleşir. Ariflerin kalpleri de müşahedenin gözleriyle şereflenir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, kendisine yönelen kimseyi diriltir. O'ndan yüz çevireni de öldürür.

- Allah, kimilerinin kalplerini güzel ümit ile diriltir, kimilerinin kalplerini de ümitsizlik damgasıyla öldürür.

يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَٓاءَتْكُمْ مَوْعِظَةٌ مِنْ رَبِّكُمْ وَشِفَٓاءٌ لِمَا فِي الصُّدُورِ وَهُدًى وَرَحْمَةٌ لِلْمُؤْمِنِينَ ﴿٥٧﴾

57- "Ey insanlar! İşte size Rabbinizden bir öğüt, kalplere bir şifa ve inananlar için yol gösterici bir rehber ve rahmet geldi."

Öğüt herkes içindir, ancak kimilerine fayda vermezken kimilerine faydalı olur. Bu çerçevede kim, onu sırrının kulağıyla dinlerse,

hakikat nuru kalbinde belirginleşir. Kim de onu yolu kaybetmiş olarak dinlerse o, devamlı engellenmekten başka hiçbir vasfa sahip olamaz.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Öğüt, dönüş yapmaları için yolu kaybetmiş olanlara yöneliktir. Şifa da mutlu olmaları için huzur ehline mahsustur.

- Öğüt avam için, şifa havas için, hidayet hasın hası için, rahmet de hepsi içindir. Zaten onlar rahmetle buna ulaşmışlardır.

- Herkesin şifası hastalığına göredir. Bu çerçevede günahkârların şifası rahmetin varlığıyla, itaat ehlinin şifası nimetin varlığıyla, ariflerin şifası yakınlığın varlığıyla, erenlerin şifası da hakikati görmekle gerçekleşir.

- Asilerin şifası kurtuluşun varlığıyla, itaat ehlinin şifası derecelerin varlığıyla, ariflerin şifası ise yakınlık ve münacat iledir.

قُلْ بِفَضْلِ اللّٰهِ وَبِرَحْمَتِه۪ فَبِذٰلِكَ فَلْيَفْرَحُوا هُوَ خَيْرٌ مِمَّا يَجْمَعُونَ ٥٨

58- "De ki: 'Ancak Allah'ın lütuf ve rahmetiyle; yalnız bunlarla sevinsinler. Bu, onların toplayıp durduklarından daha hayırlıdır.'"

Lütuf, yapanına vacip olmayan iyiliktir. Rahmet, nimette bulunma iradesi, kimisine göre de nimetin kendisidir.

İhsan ise birkaç kısımdır. Nimet de aynı şekildedir. Allah'ın nimetleri, sayılamayacak kadar çoktur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Lütuf, Allah'ın onlara verdiği hayırlı fırsatlardır. Rahmet de Allah'ın onlardan giderdiği afetlerdir.

- Allah'ın lütfu, onlara ikram ettiği ibadetleri yerine getirmeleridir. Rahmet de Allah'ın, kendisiyle onları yanlışlıklar yapmaktan koruduğu şeydir.

- Allah'ın lütfu muvaffakiyetin devamı, rahmeti de noksansız hakikattir.

- Allah'ın lütfu, ibadet ehline mahsus kıldığı çeşitli iyiliklerdir. Rahmeti de, yanlışlık yapanlara mahsus kıldığı mağfiret şekilleridir.

- Allah'ın lütfu, O'nu görmektir. Rahmeti de onları görme halinde bırakmasıdır.

- Allah'ın lütfu başlangıçtaki marifet, rahmeti de sondaki mağfirettir.

- Allah'ın lütfu, kulunu talep müşahedesine mazhar kılmasıdır. Rahmeti de beyan hükmüyle kuluna hakkını göstermesidir. Nihayetinde kul, kıyamet günü müşahede keşfiyle O'nu görür.

(فَبِذٰلِكَ فَلْيَفْرَحُوا) "*Yalnız bunlarla sevinsinler.*" Yani onlar, zoraki yaptıkları ve yapmadıkları veya bir tür tekellüf ve yapmacıkla ulaştıkları şeylerle değil, Allah'ın kendilerini ehil kıldığı hususlarla sevinsinler.

(هُوَ خَيْرٌ مِمَّا يَجْمَعُونَ) "*Bu, onların toplayıp durduklarından daha hayırlıdır.*" Yani size bahşedilen tertemiz haller, topladığınız bolca mallardan daha hayırlıdır.

- Allah'ın ezelde kuluna takdir ettiği şey, zoraki yapmaya çalıştığı ibadet ve hizmetten hayırlıdır.

قُلْ اَرَاَيْتُمْ مَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ لَكُمْ مِنْ رِزْقٍ فَجَعَلْتُمْ مِنْهُ حَرَامًا وَحَلَالًاۜ
قُلْ آٰللّٰهُ اَذِنَ لَكُمْ اَمْ عَلَى اللّٰهِ تَفْتَرُونَ ﴿٥٩﴾

59- "De ki: 'Allah'ın size indirdiği, sizin de bir kısmını helal, bir kısmını haram kıldığınız rızklar hakkında ne dersiniz?' De ki: 'Bunun için Allah mı size izin verdi, yoksa Allah'a iftira mı ediyorsunuz?'"

Uydurarak bazı şeyleri helal, bazı şeyleri de haram kılmaları sebebiyle Allah, onları şiddetle azarlamakta ve uydurduklarını O'nun

iznine ve dinine dayandırırken söyledikleri yalanlarını ortaya çıkarmaktadır.

وَمَا ظَنُّ الَّذِينَ يَفْتَرُونَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ اِنَّ اللّٰهَ لَذُو فَضْلٍ عَلَى النَّاسِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَشْكُرُونَ ﴿٦٠﴾

60- "Allah'a karşı yalan uyduranların, kıyamet günü hakkındaki zanları nedir? Şüphesiz Allah, insanlara karşı çok lütufkârdır. Fakat onların çoğu şükretmezler."

Bu ifade, geçmişte söyledikleri yalanların çok büyük günah olduğunu onlara hatırlatmak ve kendilerini bununla korkutmak içindir.

(اِنَّ اللّٰهَ لَذُو فَضْلٍ عَلَى النَّاسِ) *"Şüphesiz Allah, insanlara karşı çok lütufkârdır."* Allah, suç işleyene mühlet vermede ve suç işlemeyeni korumada lütufkârdır.

وَمَا تَكُونُ فِي شَأْنٍ وَمَا تَتْلُوا مِنْهُ مِنْ قُرْاٰنٍ وَلَا تَعْمَلُونَ مِنْ عَمَلٍ اِلَّا كُنَّا عَلَيْكُمْ شُهُودًا اِذْ تُفِيضُونَ فِيهِ وَمَا يَعْزُبُ عَنْ رَبِّكَ مِنْ مِثْقَالِ ذَرَّةٍ فِي الْاَرْضِ وَلَا فِي السَّمَاءِ وَلَٓا اَصْغَرَ مِنْ ذٰلِكَ وَلَٓا اَكْبَرَ اِلَّا فِي كِتَابٍ مُبِينٍ ﴿٦١﴾

61- "Sen, hangi işte bulunursan bulun, ona dair Kur'an'dan ne okursan oku ve hangi şeyi yaparsanız yapın, siz ona daldığınızda biz sizi mutlaka görürüz. Ne yerde ne de gökte zerre ağırlığınca, bu zerreden daha küçük veya daha büyük olsun, hiçbir şey Rabbinden uzak olmaz. Hepsi muhakkak apaçık bir kitaptadır."

Allah, her hallerinde kendilerinden haberdar olduğunu ve yapacakları çeşitli işleri gördüğünü bildirmek suretiyle onları korkutmuştur. Allah'ın onları gördüğünü bilmeleri, O'ndan utanmalarını gerektirir. Bu, murakabe halidir. Kul, Mevlâ'sının kendisini gördüğünü bildiği zaman, O'ndan utanır, nefsinin arzusuna uymayı

bırakır ve Allah'ın kendisine yasakladığı alanın etrafında dolaşıp durmaz.

Şiir:

*Sanki ruhumun içine yerleşmiş senden bir denetçi*
*Bir kolaylığa yeltendiğimde ise zorluk çıkıvermekte*

Şiir:

*Nefse itap ederim ben senin adına her hususta ki*
*İtap edersin o hususta bana sen yerinde durarak*

(وَمَا يَعْزُبُ عَنْ رَبِّكَ مِنْ مِثْقَالِ ذَرَّةٍ) *"Zerre ağırlığınca hiçbir şey Rabbinden uzak olmaz."* Allah, her şeyi inşa edip var ettiği halde nasıl olur da O'na gizli kalır veya ilmi onu kuşatmaya yetmez! Bu arada Allah'ın caiz bazı hükümleri, belli kimselere veya durumlara mahsustur.

(فِي كِتَابٍ مُبِينٍ) *"Hepsi muhakkak apaçık bir kitaptadır."* Allah, o kimselerin dikkatini, her şeylerinin kayda geçirildiğine çekmiştir. Çünkü onlar, kendilerine yasaklanan şeylerden sakınmada Allah'ı görmeyi ve bilmeyi yeterli bulmamışlardır.

اَلَآ اِنَّ اَوْلِيَآءَ اللّٰهِ لَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿٦٢﴾

62- "Bilesiniz ki, Allah'ın dostlarına hiçbir korku yoktur. Onlar üzülmeyeceklerdir de."

"Velî" kelimesi, "فعيل (fe'îl)" vezninde fâilin mübalağasıdır. Veli, araya hiçbir günah girmeksizin ibadetlere devam eden kimsedir. Buradaki "fe'îl" vezninin, mef'ûl anlamında olması da caizdir. Tıpkı aynı vezindeki "cerîh" ve "katîl" lafızlarının "mecrûh (yaralı-yaralanan)" ve "maktûl (ölü-öldürülen)" anlamında olduğu gibi. Bu itibarla veli, Allah'ın ihsanının ve lütuflarının kesintisiz olarak üstüne indiği kimsedir. Buna göre veli lafzı, bütün hallerinde sıkıntılardan korunmuş olan kimse anlamında olur. Sıkıntıların en şiddetlisi, günah işlemek olup Allah, ömrü boyunca veliyi yanlışlıklardan korur. Bir de nasıl ki peygamber, daima ismet sıfatına sahip ise veli

de hep koruma altındadır. İsmet sıfatına sahip -masum- olanla koruma altında -mahfuz- olan arasındaki fark, birincisinin günaha hiçbir şekilde yeltenmemesi, ikincisinin ise bazı gelip geçici anlık heveslere kapılabilmesidir. Nadiren bazı yanlışlıkları da olabilir. Fakat bunda ısrarı yoktur.

(ثُمَّ يَتوبونَ مِنْ قريبٍ) *"Sonra yakında tövbe ederler."* (Nisâ, 4/17)

(لَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ) *"Onlara hiçbir korku yoktur. Onlar üzülmeyeceklerdir de."* Onlara dünyada korku yoktur, ahirette de üzülmezler. Bu, güzel bir yorumdur, ancak şu yorum daha uygundur: Onlardan havas olanların üzerinde hali hazırda hiçbir korku yoktur. Çünkü gerçek korku, gelecekte bir sıkıntı veya sevilen bir şeyin yok olmasını beklemektir. Oysa bu kimseler vaktin hükmüne bağlıdırlar ve geleceğe dönük bir arayışları bulunmamaktadır. Üzüntü ise, onların hali hazırda üzüntüye maruz kalmalarıdır. Oysa veliler, olup biten her şeye rıza göstermenin huzuru içinde olduklarından kendileri için vaktin üzüntüsü söz konusu olmaz. Bu itibarla velinin ne şu anda üzerinde bir korku vardır ne de onun için herhangi bir şekilde üzüntü söz konusudur. O halde veli, vaktin hükmüne bağlıdır.

Bir de kişi, yükümlü olduğu bütün ibadetlerde muvaffak olmadıkça ve her yönden bütün hatalardan korunmadıkça veli olmaz. Bu arada, itibar edilebilen her iyi hasletin velilerin vasfı olduğu, velinin de bu hasleti taşıyan kimse olduğu söylenebilir.

Bir yoruma göre de veli, Allah'ın hakkı konusunda kusur işlemeyen, yaratıkların hakkını göz ardı etmeyen, itaati ceza korkusundan kaynaklanmayan ve güzel bir gelecek düşüncesine dayanmayan veya acil bir yakınlık arayışı içinde olmayan, herkese hakkını veren, başkası lehine kendi hakkından vazgeçebilen, intikam peşinde koşmayan, kötülüğe karşılık vermeyen, sövmeyen, kin tutmayan, kimseye minnette bulunmayan, nefsine ve ameline hiçbir değer ve kıymet biçmeyen kimsedir.

اَلَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَكَانُوا يَتَّقُونَ ﴿٦٣﴾

63- “Onlar, iman etmiş ve Allah’a karşı gelmekten sakınmış kimselerdir.”

Bu, velilerin vasfıdır. Onlar, dünyada iman etmiş, ahirette de şirkten sakınmışlardır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Onlar iman ettiler, yani marifetleri bakımından kalpleriyle amel ettiler. Sakındılar, yani vazifeleri yerine getirmek suretiyle, nefisleriyle istikamet üzere bulundular.

- Onlar, Allah’ın bildirdiklerini alıp kabul etmek suretiyle iman ettiler. Mükellefiyet gereğince, haramlardan sakınmak suretiyle takva sahibi oldular.

لَهُمُ الْبُشْرٰى فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَفِي الْاٰخِرَةِۜ لَا تَبْد۪يلَ لِكَلِمَاتِ اللّٰهِۜ ذٰلِكَ هُوَ الْفَوْزُ الْعَظ۪يمُ ﴿٦٤﴾

64- “Dünya hayatında da ahirette de onlar için müjde vardır. Allah’ın sözlerinde hiçbir değişme yoktur. İşte bu, büyük başarıdır.”

Emri yerine getirmek, işin doğruluğunu gösterir. Böylece onlar, kendilerine emredilenleri yerine getirdikleri ve alıkonuldukları şeyleri bırakmak suretiyle istikamet üzere yürüdükleri zaman, din onlara sorumluluk uhdesinden kurtulduklarını, hakikat da onlara, ikramı hak ettiklerini müjdeler. Bu, kendilerine açıkça bildirilerek yapılır. Söz konusu müjde, onların dünyadaki müjdeleridir. Ahiretteki müjdelerini ise Allah, başka bir ayette şu ifadelerle tanıtıp üstlenmektedir:

(يُبَشِّرُهُمْ رَبُّهُمْ بِرَحْمَةٍ مِنْهُ وَرِضْوَانٍ) *“Rableri, onlara kendi katından bir rahmet ve hoşnutluk müjdelemektedir.”* (Tevbe, 9/21)

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- En büyük müjde, arzularını yok etmek suretiyle nefislerine karşı kazandıkları zaferi kalplerinde hissetmeleridir. Acaba hangi mülk, nefsin arzularını yok edip mevcuda rıza göstermek kadar mükemmel olabilir? En büyük nimet budur. Bu hale sahip olmak da en büyük müjdedir.

- Onlara verilen bu müjde ile başkalarına verilen müjde arasındaki fark, başkalarına verilen müjdenin güzelliğe dair bir vaat olması, onlara verilen müjdenin ise peşin ve gerçekleşmiş olmasıdır.

وَلَا يَحْزُنْكَ قَوْلُهُمْ اِنَّ الْعِزَّةَ لِلّٰهِ جَمِيعًا هُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ﴿٦٥﴾

65- "İnkârcıların sözleri seni üzmesin. Çünkü bütün güç Allah'ındır. O, hakkıyla işitendir hakkıyla bilendir."

Kul, fark halinde olduğu sürece, başkalarından ve kâfirlerden Allah'ın sıfatının münezzeh olduğu şeyler duyup görmesi sebebiyle canı sıkılır ve kalben yalnızlık hissine kapılır. Eğer ariflik mertebesine yükselirse, bu durumdan kurtulur. Çünkü artık o, Allah'ın her türlü ibadet ve hatanın ötesinde olduğu gerçeğini kavramış olur. Zira Allah, ne kulların hatasından yalnızlık hissine kapılır ne de ibadetleriyle ünsiyet sahibi olur.

Sonra arif, bir hakikat olarak bilmektedir ki, itaat sahiplerinin ibadetini yoluna koyan ve asilerin hallerini var eden de Allah'tır. Ne olup biten Hakk'ın umurunda ne de olup biteni görmek kulun umurundadır.

Şiir:

*Sadece hak ile hükmettiler Hakk'ın taraftarları*
*O halde ödünçtür onlarda yaratık olma vasfi*

اَلَآ اِنَّ لِلّٰهِ مَنْ فِي السَّمٰوَاتِ وَمَنْ فِي الْاَرْضِ وَمَا يَتَّبِعُ الَّذِينَ يَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ شُرَكَٓاءَ اِنْ يَتَّبِعُونَ اِلَّا الظَّنَّ وَاِنْ هُمْ اِلَّا يَخْرُصُونَ ﴿٦٦﴾

66- “Bilesiniz ki göklerde kim var, yerde kim varsa, hep Allah’ındır. Allah’tan başkasına tapanlar, gerçekte Allah’a koştukları ortaklara tâbi olmuyorlar. Şüphesiz onlar, ancak zanna uyuyorlar ve sadece yalan söylüyorlar.”

Göklerdeki ve yerdeki herkes mülk olarak Allah’ındır. Allah, onlar hakkında dilediğini kesin hüküm olarak ortaya koyar. Bu sebeple ne kabulünün bir illeti, ne de hatayı reddedişinin bir sebebi vardır. Asla böyle bir şey yoktur. Gerçek şu ki bütün olup bitenler, ezelde kesinleşmiş hükümler olup ne sonradan meydana gelen maddi varlıklar ne de samimi taatler ve ibadetler sebebiyledir.

هُوَ الَّذ۪ي جَعَلَ لَكُمُ الَّيْلَ لِتَسْكُنُوا ف۪يهِ وَالنَّهَارَ مُبْصِرًاۜ اِنَّ ف۪ي ذٰلِكَ
لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يَسْمَعُونَ ﴿٦٧﴾

67- “O, içinde dinlenesiniz diye geceyi sizin için karanlık, gündüzü ise aydınlık kılandır. Şüphesiz bunda işiten bir toplum için ibretler vardır.”

Gaflet ehli için gece, uzaklık ve kayboluştur. Pişmanlık ehli için tövbe ve dönüş, sevenler için ise Allah’a yakınlık vesilesidir. Aslında gece, görünüşüyle munis değildir, ancak vuslat ehli için Allah’a yakınlığın zamanıdır.

Şiir:

*Bende gece karanlığının nice delilleri vardır ki*
*Haber vermekte manizmin yalan söylediğini*

قَالُوا اتَّخَذَ اللّٰهُ وَلَدًا سُبْحَانَهُۜ هُوَ الْغَنِيُّۜ لَهُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا
فِي الْاَرْضِۜ اِنْ عِنْدَكُمْ مِنْ سُلْطَانٍ بِهٰذَاۜ اَتَقُولُونَ عَلَى اللّٰهِ مَا لَا
تَعْلَمُونَ ﴿٦٨﴾

68- “‘Allah bir çocuk edindi’ derler. O, bundan uzaktır. O, her bakımdan sınırsız zengindir. Göklerdeki her şey, yerdeki her şey

O'nundur. Bu konuda elinizde hiçbir delil de yoktur. Allah'a karşı bilmediğiniz bir şeyi mi söylüyorsunuz?"

Çocuk, babanın bir parçasıdır. Allah'ın "samed" sıfatı ise parçalıktan münezzehtir. Bu nedenle Allah, "subhânehu" sözüyle zatını bundan uzak tutmuştur. Sonra Allah, kullarının çirkin sözlerine rağmen ve gücü yettiği halde, onlara hikmetin yolunu göstermek üzere, cezalarını çabuklaştırmamıştır. Vasfı dikkate alındığında O'nun için çocuk sahibi olmaktan söz etmek caiz değildir. Çünkü O birdir. Bu itibarla O'nun paydaşı bulunmamaktadır. Aynı zamanda O'nu çocuk edinmekle vasıflandırmak da caiz değildir. Çünkü O tektir ve hiçbir benzeri yoktur.

(هُوَ الْغَنِيُّ) "*O zengindir*." Zenginlik ihtiyaçsızlıktır. Oysa temas arzusu bir ihtiyaçtır. Allah ise ondan münezzehtir.

قُلْ اِنَّ الَّذِينَ يَفْتَرُونَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ لَا يُفْلِحُونَ ﴿٦٩﴾ مَتَاعٌ فِي الدُّنْيَا ثُمَّ اِلَيْنَا مَرْجِعُهُمْ ثُمَّ نُذِيقُهُمُ الْعَذَابَ الشَّدِيدَ بِمَا كَانُوا يَكْفُرُونَ ﴿٧٠﴾

69, 70- "De ki: 'Allah hakkında yalan uyduranlar, asla kurtuluşa eremezler.' Onlar için dünyada geçici bir yararlanma vardır. Sonra dönüşleri bizedir. Sonra da inkâr etmekte olduklarına karşılık onlara şiddetli azabı tattıracağız."

Aslında içinde bulundukları imkânların, gerçekte kendilerine bir faydası yoktur. Bunlar, birkaç günlük olup ardından uzunca acılar gelecektir. Ondan sonra ne bir adım atabilirler ne de pişmanlık onlara fayda verir.

وَاتْلُ عَلَيْهِمْ نَبَاَ نُوحٍ اِذْ قَالَ لِقَوْمِهِ يَا قَوْمِ اِنْ كَانَ كَبُرَ عَلَيْكُمْ مَقَامِي وَتَذْكِيرِي بِاٰيَاتِ اللّٰهِ فَعَلَى اللّٰهِ تَوَكَّلْتُ فَاَجْمِعُوا اَمْرَكُمْ وَشُرَكَاءَكُمْ ثُمَّ لَا يَكُنْ اَمْرُكُمْ عَلَيْكُمْ غُمَّةً ثُمَّ اقْضُوا اِلَيَّ وَلَا تُنْظِرُونِ ﴿٧١﴾

71- "Nuh'un haberini onlara oku! Hani o, bir vakit kavmine şöyle demişti: 'Ey kavmim! Eğer benim konumum ve Allah'ın ayetleriyle öğüt vermem size ağır geliyorsa, biliniz ki ben, sadece Allah'a dayanıp güvenmişim. Artık siz de bana ne yapacağınızı ortaklarınızla beraber kararlaştırın ki işiniz size dert olmasın. Bundan sonra bana hükmünüzü uygulayın. Bana mühlet de vermeyin.'"

Allah, bu ayeti peygamberine bir teselli olmak üzere indirmiştir. Çünkü kavminden ona, şiddetli baskı geliyordu. Hz. Nuh'un günleri, her ne kadar uzamış olsa da çok sürmeden gelip geçmiştir.

Şiir:

*En güzel şey şudur musibetlerde*
*Geldiklerinde kalıcı değillerdir*

Sonra Allah, kavmi ne yaparsa yapsın, Hz. Nuh'un, Rabbine tevekkül ettiğini açıklamıştır. Zaten hiçbir kul, Rabbine güvendiği sürece, başına gelen hiçbir şeyden sakınmamıştır. Sonra Hz. Nuh: *"Şüphesiz ben Allah'a tevekkül ettim"* demiştir. Bu da, tefrikanın ta kendisidir. Oysa Allah Hz. Peygamber'e (s.a.v.) şöyle buyurmuştur: (يَٓا اَيُّهَا النَّبِيُّ حَسْبُكَ اللّٰهُ ) *"Ey Peygamber! Allah sana yeter"* (Enfâl, 8/64). Bu da cemin ta kendisidir. Böylece Hz. Peygamber'in (s.a.v.) meziyeti ve hususiyeti ortaya çıkmıştır.

فَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَمَا سَاَلْتُكُمْ مِنْ اَجْرٍ اِنْ اَجْرِيَ اِلَّا عَلَى اللّٰهِ وَاُمِرْتُ
اَنْ اَكُونَ مِنَ الْمُسْلِمِينَ ﴿٧٢﴾

72- "Eğer yüz çeviriyorsanız, sizden zaten hiçbir ücret istemedim. Benim ücretim, ancak Allah'a aittir. Bana Müslümanlardan olmam emredildi."

İnsanın ameli Allah için olduğu zaman, Allah'tan başkasından ücret talep etmez. Allah'ın, bütün dostları hakkındaki prensibi budur.

فَكَذَّبُوهُ فَنَجَّيْنَاهُ وَمَنْ مَعَهُ فِي الْفُلْكِ وَجَعَلْنَاهُمْ خَلَٓائِفَ وَاَغْرَقْنَا
الَّذِينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُنْذَرِينَ ﴿٧٣﴾

73- "Onu yine de yalanladılar. Biz de onu ve onunla beraber gemide bulunanları kurtardık ve onları, ötekilerin yerine geçirdik. Ayetlerimizi yalanlayanları da suda boğduk. Bak, uyarılan fakat söz anlamayanların sonu nasıl oldu!"

Allah, Hz. Nuh'un kavmini, suyun dalgalarıyla boğdu. Hakikatte ise onları, ahkâmın ve kudretin dalgalarıyla gark etti. Allah, Hz. Nuh'u ve taraftarlarını gemide korudu. Hakikatte ise onları selamet gemisinde kurtardı. Bu arada Hz. Nuh, Allah'ın ezeli hükmünde korunmuşlardan idi. Kavmi ise ezeli takdirinde boğulanlar cümlesinden idi. Böylece durumlar, ezeldeki kaderin öngördüğü gibi cereyan etmiş oldu.

ثُمَّ بَعَثْنَا مِنْ بَعْدِهِ رُسُلًا اِلٰى قَوْمِهِمْ فَجَٓاؤُ۫هُمْ بِالْبَيِّنَاتِ فَمَا
كَانُوا لِيُؤْمِنُوا بِمَاكَذَّبُوا بِهٖ مِنْ قَبْلُ كَذٰلِكَ نَطْبَعُ عَلٰى قُلُوبِ
الْمُعْتَدِينَ ﴿٧٤﴾ ثُمَّ بَعَثْنَا مِنْ بَعْدِهِمْ مُوسٰى وَهٰرُونَ اِلٰى
فِرْعَوْنَ وَمَلَائِه۪ بِاٰيَاتِنَا فَاسْتَكْبَرُوا وَكَانُوا قَوْمًا مُجْرِمِينَ ﴿٧٥﴾

74, 75- "Sonra onun ardından birçok peygamberi kendi toplumlarına gönderdik. Onlara apaçık mucizeler getirdiler. Fakat onlar, önceden yalanlamakta oldukları şeye inanacak değillerdi. İşte biz, haddi aşanların kalplerini böylece mühürleriz. Sonra bunların ardından Firavun ile ileri gelenlerine de Mûsâ ve Hârûn'u mucizelerimizle gönderdik. Ama büyüklük tasladılar ve suçlu bir toplum oldular."

Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) öncekilerin haberlerini anlatmış ve geçen kavimlerin bütün hallerini açıklamış, sonra kendisini hepsine üstün kılmıştır. Böylece onlar yıldız iken kendisi dolunay olmuştur.

Onlar nehir iken kendisi deniz olmuştur. Sonra onunla zincirleri tamamlanmış, onun nuruyla günleri aydınlanmış ve onun gelmesiyle sayıları hitama ermiştir.

Şiir:

*Öyle bir gündür ki o, ondan dolayıdır zamanın yeterliliği*
*Selam durdu ona yarın ve dönüverdi onun için dün*

فَلَمَّا جَٓاءَهُمُ الْحَقُّ مِنْ عِنْدِنَا قَالُوٓا اِنَّ هٰذَا لَسِحْرٌ مُبينٌ ﴿٧٦﴾ قَالَ مُوسٰٓى اَتَقُولُونَ لِلْحَقِّ لَمَّا جَٓاءَكُمْ اَسِحْرٌ هٰذَا وَلَا يُفْلِحُ السَّاحِرُونَ ﴿٧٧﴾

76, 77- "Katımızdan kendilerine hak mucize gelince: 'Şüphesiz bu, apaçık bir sihirdir' dediler. Mûsâ: 'Size hak gelince onun hakkında böyle mi diyorsunuz? Bu bir sihir midir? Oysa sihirbazlar iflah olmazlar' dedi."

Allah, onlara daha çok açıklama yaptıkça, azgınlıkları daha da artmaktadır. Çünkü Allah, O'nu tanımaktan yüz çevirenler hakkındaki prensibini, hidayet için delilleri artırdıkça kalp körlüklerinin daha da artması şeklinde koymuştur. Sonra onlar, peygamberlerin yapmak istediklerini anlayamamışlardır. Allah şöyle buyurur:

(يُرِيدُ اَنْ يُخْرِجَكُمْ مِنْ اَرْضِكُمْ بِسِحْرِهِ فَمَاذَا تَأْمُرُونَ) *"Yaptığı sihirle sizi yurdunuzdan çıkarmak istiyor. Ne dersiniz?"* (Şu'arâ, 26/35)

Onlar, olaya bulundukları noktadan bakmış ve kendi zevklerinden başka bir tadın farkında olamamışlardır. Zaten kaderin uzaklaştırdığı ve ilahî iradenin geri çevirdiği kimsenin durumu böyledir.

قَالُوٓا اَجِئْتَنَا لِتَلْفِتَنَا عَمَّا وَجَدْنَا عَلَيْهِ اٰبَٓاءَنَا وَتَكُونَ لَكُمَا الْكِبْرِيَٓاءُ فِي الْاَرْضِ وَمَا نَحْنُ لَكُمَا بِمُؤْمِنِينَ ﴿٧٨﴾

78- "Dediler ki: 'Bizi, atalarımızı üzerinde bulduğumuz yoldan döndüresin de yeryüzünde hâkimiyet ikinizin eline geçsin diye mi bize geldin? Biz, ikinize de inanmıyoruz.'"

Onlar, atalarını, üzerinde bulundukları yolda taklit etmeye meylettiler ve üzerinde bulundukları yolda devam etmek istediler. Bunun üzerine o inancın uğursuzluğuna ve o yolun kötülüğüne maruz kaldılar. O kadar ki, peygamberlerin, sırf Allah'ın kullarına karşı büyüklük kendilerinin olsun diye kendilerini Allah'a çağırdıklarını sandılar ve kendilerini sadece Allah'ın emriyle Allah'a çağırdıklarını bilemediler.

وَقَالَ فِرْعَوْنُ ائْتُونِي بِكُلِّ سَاحِرٍ عَلِيمٍ ﴿٧٩﴾

79- "Firavun: 'Bütün usta sihirbazları bana getirin' dedi."

Firavun, karşılaştığı durumu Allah'tan başkasının yardımıyla defetmek istediğinden fazla bekleyemedi ve kavmiyle bağını kopararak: *"Şöyle yapacağım, böyle yapacağım"* diye onları tehdit etmeye başladı. İşte Allah yolunda olmayan her delil ve dostluğun sonu böyledir. Zira bu tür dostluklar, sonuçta düşmanlık ve kine dönüşür.

فَلَمَّا جَٓاءَ السَّحَرَةُ قَالَ لَهُمْ مُوسٰى اَلْقُوا مَٓا اَنْتُمْ مُلْقُونَ ﴿٨٠﴾
فَلَمَّٓا اَلْقَوْا قَالَ مُوسٰى مَا جِئْتُمْ بِهِ السِّحْرُ اِنَّ اللّٰهَ سَيُبْطِلُهُ اِنَّ اللّٰهَ لَا
يُصْلِحُ عَمَلَ الْمُفْسِدِينَ ﴿٨١﴾

80, 81- "Sihirbazlar gelince Mûsâ onlara: 'Atacağınızı atın' dedi. Sihirbazlar atacaklarını atınca Mûsâ dedi ki: 'Sizin bu yaptığınız sihirdir. Allah, elbette onu boşa çıkaracaktır. Çünkü Allah, bozguncuların işini düzeltmez.'"

Hz. Mûsâ, onlardan batıl üzere olduklarını ortaya koyacak bir şey istemiştir. Amacı, çarpıtmalarına hakkı hâkim kılmaktır. Bu nedenle o: (اِنَّ اللّٰهَ سَيُبْطِلُهُ) *"Allah, elbette onu boşa çıkaracaktır"* demiştir. Allah'ın yılana çevirdiği Mûsâ'nın asası, onların iplerini ve asalarını yutunca, onlar, Allah'ın o nesneleri boşa çıkarıp yok ettiğini anladılar.

وَيُحِقُّ اللّٰهُ الْحَقَّ بِكَلِمَاتِهِ وَلَوْ كَرِهَ الْمُجْرِمُونَ ﴿٨٢﴾

82- "Suçluların hoşuna gitmese de Allah, hakkı sözleriyle gerçekleştirecektir."

Allah'ın gerçekleştirdiği bir hak da şudur: Sihirbazlar, Firavuna yardım ettiklerine ve emrini kabul etmeleri gerektiğine inandıkları için: (بِعِزَّةِ فِرْعَوْنَ اِنَّا لَنَحْنُ الْغَالِبُونَ) *"Firavun'un gücüne andolsun ki, elbette biz üstün geleceğiz"* (Şu'arâ, 26/44) diyerek Firavun'un gücüne yemin ediyorlardı. Allah ise: *"İzzetime yemin ederim ki, sizler yenileceksiniz"* buyurdu ve onların değil, Allah'ın dediği oldu.

Şiir:

*Nice isabet eden ok attı bana sevgili*
*Bense bir ok attım ona ve şaşırdı hedefi*

فَمَٓا اٰمَنَ لِمُوسٰٓى اِلَّا ذُرِّيَّةٌ مِنْ قَوْمِهِ عَلٰى خَوْفٍ مِنْ فِرْعَوْنَ وَمَلَائِهِمْ اَنْ يَفْتِنَهُمْ وَاِنَّ فِرْعَوْنَ لَعَالٍ فِي الْاَرْضِ وَاِنَّهُ لَمِنَ الْمُسْرِفِينَ ﴿٨٣﴾

83- "Firavun ve ileri gelenlerinin kötülük yapmaları korkusu ile kavminin küçük bir bölümünden başkası Mûsâ'ya iman etmedi. Çünkü Firavun, o yerde zorba bir kişi idi. O, gerçekten aşırı gidenlerden idi."

Her zaman hakikat ehlinin sayıları az, ancak Allah katında önemleri büyüktür.

وَقَالَ مُوسٰى يَا قَوْمِ اِنْ كُنْتُمْ اٰمَنْتُمْ بِاللّٰهِ فَعَلَيْهِ تَوَكَّلُوٓا اِنْ كُنْتُمْ مُسْلِمِينَ ﴿٨٤﴾

84- "Mûsâ: 'Ey kavmim! Eğer siz, gerçekten Allah'a iman etmişseniz, eğer O'na teslim olmuş kimseler iseniz, artık sadece O'na tevekkül edin' dedi."

Allah, imanın sözlerle olamayacağını, aksine imanda bilince dayalı samimi pratikler gerektiğini açıklamıştır. Gerçek tevekkül ise, kesintisiz olarak ortaya konulan tevessüldür. Sonra Müslüman, kurtuluşunun, yaptığı zorlama hareketlerle değil, Allah'ın lütfuyla gerçekleşeceğini bilmelidir. İşte gerçek tevekkül budur.

فَقَالُوا عَلَى اللّٰهِ تَوَكَّلْنَا رَبَّنَا لَا تَجْعَلْنَا فِتْنَةً لِلْقَوْمِ الظَّالِمِينَ ﴿٨٥﴾
وَنَجِّنَا بِرَحْمَتِكَ مِنَ الْقَوْمِ الْكَافِرِينَ ﴿٨٦﴾

85, 86- "Onlar da şöyle dediler: 'Biz yalnız Allah'a tevekkül ettik. Ey Rabbimiz! Bizi zalimler topluluğunun baskı ve şiddetine maruz bırakma!' Bizi rahmetinle o kâfirler topluluğundan kurtar!"

Biz, kendi güç ve kuvvetimizden sıyrıldık ve senden gelen güç ve nimete hakikaten inandık. O halde bizi intikamınla cezalandırmak suretiyle, hükümlerinin oklarına hedef kılma, bize lütuf ve kereminle merhamet eyle! Bizi, gazabına uğratıp zelil kıldığın ve ayrılığının ateşiyle damgaladığın kimselerden kurtar!

وَاَوْحَيْنَٓا اِلٰى مُوسٰى وَاَخِيهِ اَنْ تَبَوَّاٰ لِقَوْمِكُمَا بِمِصْرَ بُيُوتًا وَاجْعَلُوا
بُيُوتَكُمْ قِبْلَةً وَاَقِيمُوا الصَّلٰوةَ وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِينَ ﴿٨٧﴾

87- "Mûsâ'ya ve kardeşine: 'Kavminiz için Mısır'da evler hazırlayın ve evlerinizi namaz kılınacak yerler yapın. Namazı dosdoğru kılın. Mü'minlere müjdele!' diye vahyettik."

İbadetimiz için onlara bazı yerler hazırla. Bu yerler, onların nefisleridir. Marifetlerimiz için evler hazırla. Bu evler onların kalpleridir. Sevgimiz için bir takım mekânlar hazırla. Bu mekânlar onların ruhlarıdır. Müşahedemiz için bazı merkezler hazırla. Bu merkezler, onların sırlarıdır. Bu itibarla ibadet ehlinin nefisleri, hizmet evleridir. Ariflerin kalpleri, edep yurtlarıdır. Aşk tutkunlarının ruhları sevgi alanlarıdır. Tevhid ehlinin sırları da heybet konaklarıdır.

وَقَالَ مُوسٰى رَبَّنَٓا اِنَّكَ اٰتَيْتَ فِرْعَوْنَ وَمَلَأَهُ زِينَةً وَاَمْوَالًا فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا رَبَّنَا لِيُضِلُّوا عَنْ سَبِيلِكَ رَبَّنَا اطْمِسْ عَلٰٓى اَمْوَالِهِمْ وَاشْدُدْ عَلٰى قُلُوبِهِمْ فَلَا يُؤْمِنُوا حَتّٰى يَرَوُا الْعَذَابَ الْاَلِيمَ ﴿٨٨﴾

88- "Mûsâ şöyle dedi: 'Ey Rabbimiz! Gerçekten sen, Firavun'a ve onun ileri gelenlerine, dünya hayatında nice zinet ve mallar verdin. Ey Rabbimiz! Yolundan saptırsınlar diye mi? Ey Rabbimiz! Sen onların mallarını silip süpür ve kalplerine darlık ver! Çünkü onlar, elem dolu azabı görünceye kadar iman etmezler.'"

Hz. Mûsâ, Allah'a davet ettiği kavminin, davetini kabul etmelerinden ümidini kesince, üzerlerine gazabın inmesi ve ayrılığı tatmaları için kendilerine beddua etti. Bilindiği üzere, peygamberlerin haklarından biri de hatadan korunmuş olmaktır. Bu nedenle Hz. Mûsâ, onlara bu ifadelerle beddua ettiği zaman, hakikatte bu, ancak Allah tarafından verilen izinle yapılmış idi.

قَالَ قَدْ اُجِيبَتْ دَعْوَتُكُمَا فَاسْتَقِيمَا وَلَا تَتَّبِعَٓانِّ سَبِيلَ الَّذِينَ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٨٩﴾

89- "Allah da: 'Her ikinizin de duası kabul edildi. Öyleyse dürüst olmakta devam edin ve sakın bilmeyenlerin yolunda gitmeyin' dedi."

Duada dürüstlük, talep edilenin gerçekleşmesi konusunda aceleci davranmamaktır. Acelecilik ise, kalpten ancak onda huzurun var olmasıyla çıkar. Bu huzur da, ancak gaybdan gelen her şeyden güzelce hoşnut olmakla gerçekleşir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kula yakışan, imkân ölçüsünde Allah ile yetinmektir. O zaman duası azalır. Sonra dua etmesinin caiz olduğuna dair gaybdan gelen bir işaret üzerine dua ettiği zaman da, aceleci davranmaması ve içinin rahat olması gerekir.

- Duanın şartlarından biri de başlangıçta samimi dilekte bulunmak, sonuçta da güzelce beklemektir. Bunun kemal noktası ise, kaderin sevindirici ve üzücü tecellilerine rıza göstermektir.

- Duada dürüstlük, gayba karşı bir hesap içine girmemek, güzel güven ve iyi zan ile aceleci davranmamaktır.

- Ayette, işlerin belli vakitleri olduğuna dikkat çekilmiştir. Böylece vakit geldiği zaman, belirlenmiş olan zamana bağlı kısmette hiçbir gecikme olmaz.

وَجَاوَزْنَا بِبَنٖٓي اِسْرَٓاءٖيلَ الْبَحْرَ فَاَتْبَعَهُمْ فِرْعَوْنُ وَجُنُودُهُ بَغْيًا وَعَدْوًاۜ حَتّٰٓى اِذَٓا اَدْرَكَهُ الْغَرَقُۙ قَالَ اٰمَنْتُ اَنَّهُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا الَّذٖٓي اٰمَنَتْ بِهٖ بَنُٓوا اِسْرَٓاءٖيلَ وَاَنَا۬ مِنَ الْمُسْلِمٖينَ ﴿٩٠﴾

90- "İsrailoğullarını denizden geçirdik. Firavun da, askerleriyle birlikte zulmetmek ve saldırmak üzere, derhal onları takibe koyuldu. Nihayet boğulmak üzere iken: 'İsrailoğullarının iman ettiğinden başka hiçbir ilâh olmadığına inandım. Ben de Müslümanlardanım' dedi."

Üstünlük duygusu, Firavun'u onların peşinden denizi aşma girişiminde bulunmaya sevk etti. Helak kesinlik kazanınca da zorunlu tedbir, onu imana sığınmaya yöneltti. Ancak isteyerek iman etmenin zamanı geçtiği için, bu sığınma kendisine fayda vermedi.

Bir yoruma göre de; Firavun takdirin karşı konulmaz gücünü görünce yanlışlığın sarhoşluğundan uyandı, ancak zoru gördükten sonra yapmacık tevazu ve üzülme fayda vermez.

آٰلْـٰٔنَ وَقَدْ عَصَيْتَ قَبْلُ وَكُنْتَ مِنَ الْمُفْسِدٖينَ ﴿٩١﴾

91- "Şimdi mi?! Oysa daha önce isyan etmiş ve bozgunculardan olmuştun."

Uzun mühletten, kötü davranışlarda ısrardan, mağrurluk meydanında cirit atmaktan ve özür dileme vaktinin sonra ermesinden sonra mı?! Heyhat! Şüphesiz sen, dileğinin yüzüne geri çarpılmasını hak ettin. Böylece ne özrün kabul olur ne de amacına ulaşırsın.

فَالْيَوْمَ نُنَجّ۪يكَ بِبَدَنِكَ لِتَكُونَ لِمَنْ خَلْفَكَ اٰيَةًۜ وَاِنَّ كَث۪يرًا مِنَ النَّاسِ عَنْ اٰيَاتِنَا لَغَافِلُونَ ﴿٩٢﴾

92- "Biz de bugün bedenini, arkandan geleceklere ibret olman için kurtaracağız. Çünkü insanlardan birçoğu, ayetlerimizden gerçekten habersizdir."

Yemin ederiz ki, arkandan geleceklere ibret olman ve ayıldığın zaman üzüntü ve hasretinin artması için, cezanı teşhir edeceğiz ve sana haddini nasıl bildirdiğimizi basiret sahiplerine göstereceğiz.

وَلَقَدْ بَوَّأْنَا بَن۪ٓي اِسْرَٓاء۪يلَ مُبَوَّاَ صِدْقٍ وَرَزَقْنَاهُمْ مِنَ الطَّيِّبَاتِۚ فَمَا اخْتَلَفُوا حَتّٰى جَٓاءَهُمُ الْعِلْمُۜ اِنَّ رَبَّكَ يَقْض۪ي بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ف۪يمَا كَانُوا ف۪يهِ يَخْتَلِفُونَ ﴿٩٣﴾

93- "Andolsun, biz İsrailoğullarını çok güzel bir yurda yerleştirdik ve onlara temiz rızıklar verdik. Kendilerine bilgi gelinceye kadar ayrılığa düşmediler. Şüphesiz ki, ayrılığa düşmüş oldukları şey hakkında Rabbin kıyamet günü aralarında hükmünü verecektir."

Biz, günleri emirlerine amade kıldık, nimetlerini çoğalttık, onlara makam ikram ettik, onlar için türlü türlü güzel imkânlar hazırladık ve kendilerine kesintisiz iyiliklerde bulunduk. Ancak nimete nankörlükle karşılık verip isyan ve düşmanlıkta ısrar edince onlara acıklı azabı tattırdık ve kendileri için açmış olduğumuz ikram ve kabul kapılarını yüzlerine kapattık. Bu, itaat yolundan saparak isyan tarafına meyleden kimsenin cezasıdır.

فَاِنْ كُنْتَ فِي شَكٍّ مِمَّآ اَنْزَلْنَآ اِلَيْكَ فَسْئَلِ الَّذِينَ يَقْرَؤُنَ الْكِتَابَ مِنْ قَبْلِكَ لَقَدْ جَآءَكَ الْحَقُّ مِنْ رَبِّكَ فَلَا تَكُونَنَّ مِنَ الْمُمْتَرِينَ ﴿٩٤﴾

94- "Eğer sana indirdiğimizden şüphe içinde isen, senden önce Kitab'ı okuyanlara sor. Andolsun ki, sana Rabbinden hak gelmiştir. O halde sakın şüphe edenlerden olma!"

Aslında Hz. Peygamber (s.a.v.), kendisine indirilen şeylerde şüpheye düşmemiş ve kendisinden öncekiler hakkında soru sormamıştır. Doğrusu bu hitap tevile tabi olup amacı, doğru yola bağlı kalmaları konusunda insanları uyarmaktır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Havassın özelliği, nefislerine ve hallerine küçümseyici bir gözle bakmalarıdır.

- Eğer sen, mülahazaları terk etmek konusunda edep ehlinin seviyesine inersen, o takdirde senden önce gönderdiklerimize sor: Kimseyi senin mertebene ulaştırdık mı? Ve sana verdiğimiz özellikleri kimseye verdik mi?

وَلَا تَكُونَنَّ مِنَ الَّذِينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِ اللّٰهِ فَتَكُونَ مِنَ الْخَاسِرِينَ ﴿٩٥﴾

95- "Sakın Allah'ın ayetlerini yalanlayanlardan da olma! Yoksa zarara uğrayanlardan olursun."

Yasaklanan ve çirkin olan şey, dine göre çirkin olandır. O halde taat ve ibadete kaynaklık etmesi için dine dair emir gelmesi gerekir. Bu arada Hz. Peygamber'in (s.a.v.), sıfatları itibariyle Allah'ın ayetlerini yalanlaması caiz değildir. Çünkü o, bundan alıkonulmuştur. Ancak bu alıkonulma, yalanlamanın aklın ölçülerine göre çirkin olması sebebiyle değildir. Aksi takdirde Hz. Peygamber (s.a.v.), yalanlamadan uzak olduğu halde nasıl olur da bundan alıkonulur, diye sorulur.

اِنَّ الَّذ۪ينَ حَقَّتْ عَلَيْهِمْ كَلِمَتُ رَبِّكَ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿٩٦﴾ وَلَوْ جَٓاءَتْهُمْ
كُلُّ اٰيَةٍ حَتّٰى يَرَوُا الْعَذَابَ الْاَل۪يمَ ﴿٩٧﴾

96, 97- "Şüphesiz, haklarında Rabbinin sözü gerçekleşmiş olanlar, kendilerine bütün mucizeler gelse bile, elem dolu azabı görünceye kadar inanmazlar."

Düşmanlar hakkında azap sözü, dostlar hakkında da sevap sözü gerçekleşmiştir. Bu söz ezelidir, hükümler de önceden kesinleşmiştir. Gelecekteki fiiller ise, geçen zamana paralel ve ilahi takdire uygun olarak arkadan gelmektedir. Bu itibarla, kaderden nasipleri kısmetsizlik olanlar, her türlü delili ve mucizeyi gözleriyle görseler bile iman etmezler.

فَلَوْلَا كَانَتْ قَرْيَةٌ اٰمَنَتْ فَنَفَعَهَٓا ا۪يمَانُهَٓا اِلَّا قَوْمَ يُونُسَۜ لَمَّٓا اٰمَنُوا كَشَفْنَا
عَنْهُمْ عَذَابَ الْخِزْيِ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَمَتَّعْنَاهُمْ اِلٰى ح۪ينٍ ﴿٩٨﴾

98- "Yunus'un kavminden başka, keşke iman edip imanı kendisine fayda veren bir tek memleket halkı olsaydı! Yunus'un kavmi iman edince, dünya hayatında rezillik azabını onlardan uzaklaştırmış ve onları belli bir zamana kadar yararlandırmıştık."

Hz. Yunus'un kavmi, ezelî rahmete mazhar olup niyazda bulunmaya muvaffak olunca Allah, onlardan azabı uzaklaştırdı ve rahmet kapılarını görmelerinden sonra, üzerlerindeki azap gölgelerini geri çekti. Bu arada onlar, Allah'ın rahmetiyle niyaza muvaffak olmuşlar, yoksa niyazlarıyla rahmetine erişmemişlerdir.

وَلَوْ شَٓاءَ رَبُّكَ لَاٰمَنَ مَنْ فِي الْاَرْضِ كُلُّهُمْ جَم۪يعًاۜ اَفَاَنْتَ تُكْرِهُ
النَّاسَ حَتّٰى يَكُونُوا مُؤْمِن۪ينَ ﴿٩٩﴾

99- "Eğer Rabbin dileseydi, yeryüzünde bulunanların hepsi elbette topyekûn iman ederlerdi. Böyle iken sen mi mümin olsunlar diye insanları zorlayacaksın!"

Allah, hiçbir muradında zorlukla karşılaşmaz. Muradından bir şey gerçekleşmeyen kimse ise, yanılgı içindedir veya yenik düşmüştür. Oysa izzetin celalini hak eden, hiçbir muradı kaçırmaz.

وَمَا كَانَ لِنَفْسٍ اَنْ تُؤْمِنَ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ وَيَجْعَلُ الرِّجْسَ عَلَى الَّذِينَ لَا يَعْقِلُونَ ﴿١٠٠﴾

100- "Allah'ın izni olmadıkça hiçbir kimse iman edemez. Allah, azabı akıllarını kullanmayanlara verir."

Bu ayetteki iznin, ilahî iradeden başka bir anlama geldiğini söylemek mümkün değildir. Çünkü söz konusu izin, herkesi kapsayan iman ile ilgilidir. Bir kimseye, memur kılındığı şey hakkında izin verilmediği söylenemez. Bu ayetin, Allah mecbur etmedikçe hiç kimsenin iman edemeyeceği anlamında olduğunu söylemek ise caiz değildir. Çünkü bu iddia, dünyada hiç kimsenin, serbest iradesiyle iman etmediği anlamına gelir. Bu da yanlıştır. Böylece bu ayette, bir kimsenin gönüllü olarak iman etmesinin, Allah'ın iradesine bağlı olduğu ifade edilmek istenmiştir. Ancak buradan, bir kimsenin, gönüllü olarak iman etmesine Allah'ın iradesi olduğu halde, iman etmediği sonucunu çıkarmak caiz değildir. Çünkü bu, ayeti anlamsız kılar. O halde Ehl-i Sünnet'in: "Allah'ın dilediği olur, dilemediği olmaz" şeklindeki görüşü doğrudur.

قُلِ انْظُرُوا مَاذَا فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَمَا تُغْنِي الْاٰيَاتُ وَالنُّذُرُ عَنْ قَوْمٍ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿١٠١﴾

101- "De ki: 'Göklerde ve yerde neler var, bir baksanıza!' Fakat ayetler ve uyarılar, inanmayan bir topluma hiçbir fayda vermez."

Apaçık olsa da deliller, basiretler kapalı olduğu zaman fayda vermez. Tıpkı doğmuş olsa da güneşin, körlük sebebiyle gözler görmediği zaman, fayda vermemesi gibi.

Şiir:

*Ne fayda görür dünyalık adam gözlerinden?*
*Nazarında ışıklar ve karanlıklar aynı olduğu zaman*

فَهَلْ يَنْتَظِرُونَ اِلَّا مِثْلَ اَيَّامِ الَّذِينَ خَلَوْا مِنْ قَبْلِهِمْ قُلْ فَانْتَظِرُوٓا
اِنّ۪ي مَعَكُمْ مِنَ الْمُنْتَظِر۪ينَ ﴿١٠٢﴾

102- "Onlar, sadece kendilerinden önce gelip geçenlerin başlarına gelen günlerin benzerini mi bekliyorlar? De ki: 'Bekleyin bakalım! Ben de sizinle bekleyenlerdenim.'"

Hakikat nurlarının lütuflarını temenni etmek; yanılgı içerisinde çaba harcamak, sonuç almamak ve saptırmaya devam etmek demektir.

ثُمَّ نُنَجّ۪ي رُسُلَنَا وَالَّذ۪ينَ اٰمَنُوا كَذٰلِكَ حَقًّا عَلَيْنَا نُنْجِ الْمُؤْمِن۪ينَ ﴿١٠٣﴾

103- "Sonra resûllerimizi ve iman edenleri kurtarırız. Aynı şekilde bizden bir hak olarak, inananları da kurtaracağız."

Sıfatlarla birlikte kullanılan harfler, birbirlerinin yerine geçebilirler. Nitekim buradaki "عَلَيْنَا (aleynâ-üzerimizde)" lafzı "مِنَّا (minnâ-bizden)" anlamındadır. Bu itibarla, ilâh ve hükümran olduğu için hiçbir şey Allah'a vacip değildir. Fakat doğru söylediği için, herhangi bir şey O'ndan vaci olur, ancak izzet sahibi olduğu için, O'na vacip olmaz.

Ayrıca nasıl ki, hiçbir peygamberin cehenneme girmesi caiz değilse, aynı şekilde hiçbir müminin ebedî olarak cehennemde kalması da caiz değildir. Çünkü Allah, peygamberleri ve bütün müminleri kurtaracağını bildirmiştir.

قُلْ يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ اِنْ كُنْتُمْ ف۪ي شَكٍّ مِنْ د۪ين۪ي فَلَٓا اَعْبُدُ الَّذ۪ينَ
تَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ وَلٰكِنْ اَعْبُدُ اللّٰهَ الَّذ۪ي يَتَوَفّٰيكُمْ وَاُمِرْتُ اَنْ
اَكُونَ مِنَ الْمُؤْمِن۪ينَ ﴿١٠٤﴾

104- "De ki: 'Ey insanlar, eğer benim dinimden herhangi bir şüphede iseniz, bilin ki ben, Allah'ı bırakıp da sizin taptıklarınıza tapmam, fakat sizin canınızı alacak olan Allah'a kulluk ederim. Bana müminlerden olmam emrolundu.'"

Şayet siz, şüphenin örtüsü içerisinde iseniz, ben gaybdan gelen bir aydınlığın içerisindeyim. Eğer siz, cehaletin karanlığında iseniz, ben vuslatın güneşlerindeyim. Eğer siz, sapıklığın karanlığında iseniz, ben peygamberliğin hilati içerisinde ve irşadın nurları üzerindeyim.

Bir yoruma göre de, biz yol ayırımında ayrıldık. Siz, eğriliğin çukuruna düştünüz. Ben ise, doğru yol üzere bulunmaktayım.

وَاَنْ اَقِمْ وَجْهَكَ لِلدِّينِ حَنِيفًا وَلَا تَكُونَنَّ مِنَ الْمُشْرِكِينَ ﴿١٠٥﴾

105- "Yine bana şöyle emredildi: 'Hakka yönelen bir kimse olarak yüzünü dine çevir. Sakın Allah'a ortak koşanlardan olma!'"

Yani kalbini içtenlikle dine bağla ve tekvinin kahrına uğramış olan her şeyi ispatlamaktan kalbini arındır. Saplantı ve bidatlerden yüz çevir ve hakikatte ihlâs sahibi olanların arasında yer al.

وَلَا تَدْعُ مِنْ دُونِ اللّٰهِ مَا لَا يَنْفَعُكَ وَلَا يَضُرُّكَ فَاِنْ فَعَلْتَ فَاِنَّكَ
اِذًا مِنَ الظَّالِمِينَ ﴿١٠٦﴾

106- "Allah'ı bırakıp da sana ne fayda ne de zarar verebilecek olan şeylere yalvarma. Eğer böyle yaparsan, şüphesiz ki sen zâlimlerden olursun."

İbadeti sana ne fayda ne de zarar verebilen şeylere tapma. Bu gibi şeylere tapmak, Allah'tan başka şeylere tapan herkesin özelliğidir. Mahlûkun mahlûktan yardım dilemesi ise, zamanı boşa harcamaktır. Kendine bile ne bir faydası ne de bir zararı olan kimseden, nasıl olur da tıpkı onun gibi olanlar yardım dilerler? Kaldı ki zayıf zayıfa katıldığı zaman, zayıflık daha da artar.

وَاِنْ يَمْسَسْكَ اللّٰهُ بِضُرٍّ فَلَا كَاشِفَ لَهُٓ اِلَّا هُوَۚ وَاِنْ يُرِدْكَ بِخَيْرٍ فَلَا
رَٓادَّ لِفَضْلِه۪ۜ يُص۪يبُ بِه۪ مَنْ يَشَٓاءُ مِنْ عِبَادِه۪ۜ وَهُوَ الْغَفُورُ الرَّح۪يمُ ﴿١٠٧﴾

107- "Eğer Allah, sana herhangi bir zarar verecek olursa, bil ki onu, O'ndan başka giderebilecek yoktur. Eğer sana bir hayır dilerse, O'nun lütfunu engelleyebilecek de yoktur. O, bunu kullarından dilediğine eriştirir. O, çok bağışlayıcıdır, çok merhamet edicidir."

Allah, nasıl ki hiçbir yardım eden ortağı olmaksızın ve yalnız başına zararı var ediyorsa, aynı şekilde hiçbir yardımcısı olmaksızın ve yalnız başına zararı da giderir ve onu geri çevirir.

Diğer bir yoruma göre, Allah: (وَاِنْ يَمْسَسْكَ اللّٰهُ بِضُرٍّ) *"Eğer Allah, sana herhangi bir zarar verecek olursa"* sözüyle zarar vermeyi kendine izafe etmek suretiyle, zararın mümin üzerindeki etkisini hafifletmiştir. Zira sevgilinin elinden olunca ebucehil karpuzu bile lezzetli olur.

Bu arada Allah, zarar O'nun iradesinin ürünü olmakla birlikte: "*Eğer sana bir zarar dilerse*" dememiş: "*Eğer sana herhangi bir zarar verecek olursa*" demek suretiyle, zarar vermeyi kendi zatına izafe etmiş ve böylece zarar ile hayrı birbirinden ayırmıştır. Burada aynı zamanda lafız açısından da bir incelik mevcuttur.

Bir yoruma göre de zarar, faydaya yol açtığı yerde tatlı olur. Nitekim Allah, zararla çile çektirdikten sonra onu sevinç ve coşkuya dönüştürmüştür.

قُلْ يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ قَدْ جَٓاءَكُمُ الْحَقُّ مِنْ رَبِّكُمْۚ فَمَنِ اهْتَدٰى فَاِنَّمَا
يَهْتَد۪ي لِنَفْسِه۪ۚ وَمَنْ ضَلَّ فَاِنَّمَا يَضِلُّ عَلَيْهَاۚ وَمَٓا اَنَا۬ عَلَيْكُمْ بِوَك۪يلٍۜ ﴿١٠٨﴾

108- "De ki: 'Ey insanlar! Size Rabbinizden gerçek gelmiştir. Artık kim doğru yola girerse, ancak kendisi için girer. Kim de saparsa ancak kendi aleyhine sapar. Ben, sizden sorumlu değilim.'"

Kim basiret sahibi olursa, nefsinin rüştünü kazanmış olur. Dalalete düşen ise yolundan sapmış olur. Bu, musibeti hak etmiş, diğeri ise aydınlık ve şifa elde etmiştir.

وَاتَّبِعْ مَا يُوحٰٓى اِلَيْكَ وَاصْبِرْ حَتّٰى يَحْكُمَ اللّٰهُ وَهُوَ خَيْرُ الْحَاكِم۪ينَ ﴿١٠٩﴾

109- "Sana vahyolunana uy ve Allah hükmünü verinceye kadar sabret. O, hüküm verenlerin en hayırlısıdır."

Allah'ın, senin hakkında irade buyurduğunu icra etmesi için, hükümlerinin cereyan ettiği yerde dur ve kendin yapmak istediğinden büsbütün sıyrıl! Doğrusunu ise en iyi Allah bilir.

# Dizin


**A**

abid 188, 302
Âdem 38, 64, 134, 175, 176, 178, 179, 181, 182, 183, 184, 265, 447
Âdemoğulları 64, 184, 185, 188, 191, 416
Hz. Ali 425
Araf 196, 197
arif 188, 302, 433, 474

**B**

Bârr 268
bast 201, 280
Bedevîler 405, 406
Bedir günü 296, 316, 317, 330, 331
beka 7, 151, 280
Beyt 9, 10
boy abdesti 20, 21, 288
buzağı 242

**C**

Cibril 182, 242

**D**

Devşirme günü 155

**E**

ebedî şekâvet 264
Ebû Ali ed-Dakkâk 416, 434
Hz. Ebubekir 365, 366, 367, 368, 425
Ebû Hanîfe 379
Ebû Yezîd el-Bistâmî 347
Esenlik yurdu (Dâru's-Selâm) 452
ezelî saadet 264

**F**

fey 314
fidye 43, 122, 330, 331, 466
Firavun 221, 222, 223, 224, 225, 226, 227, 230, 231, 233, 322, 323, 391, 478, 480, 481, 483, 484

**G**

gaflet sahipleri 30
ganimet 285, 314, 315, 326, 375
Gizli dost tutmamak 19

**H**

Hak ile birleşme 273
Hakk'ın beraberliği 273
halvet 71, 72, 383
Harun 128, 221, 224, 232, 233, 245, 246
Hz. Havvâ 179
Hıristiyan 30, 357
Hz. Ebubekir 365
Hz. Havvâ 179
Hz. Musa 37

**İ**

İblis 175, 176, 177, 178, 179, 184
Hz. İbrahim 125, 126, 128, 422
ilahî irade 224, 264, 439
İncil 49, 50, 63, 64, 84, 250, 414
irfan 22, 41, 53, 92, 125, 157, 197, 225, 231, 262, 283, 293, 305, 316, 363, 423, 428
İsa 7, 49, 68, 84, 85, 86, 87, 88, 129, 357, 358
israf 76, 154, 155, 188
İsrail oğulları 34, 66, 246
İstidrac 270
itikâf 381

**K**

Kâbe 26, 77, 78, 195
kabz 201
kıst 186

**M**

mahviyet 59, 78, 126, 144, 280, 431
Marifet ehli 268, 379, 380
Medine 91, 281, 306, 335, 393, 407, 426, 433
melekût âlemi 420
Mescid-i Haram 10, 309, 349, 356
Mikâil 242
Miskin 380, 381
mucize 106, 107, 138, 210, 221, 222, 223, 228, 279, 447, 479
Muhammed el-Emîn 105
Hz. Musa 37, 172, 221, 222, 223, 226, 227, 231, 232, 233, 234, 235, 236, 237, 238, 239, 244, 245, 246, 248, 249, 391
Mu'tî 268

**N**

Hz. Nuh 205, 206, 477, 478

**O**

Hz. Osman 425
Hz. Ömer 425

**P**

put 275

**R**

Rabbânî 61
Rabbânîler 61
riya 42, 147, 174

## S-Ş

sahv 56, 280, 355
sekînet 355
selamet yurdu 147, 148
Sihir 225
sihirbazlar 225, 479
Sofi 74
sülûk 16, 128, 369
Şâfiî 379
Şeyh Ebû Ali ed-Dakkâk 416
Şuayb 213, 214, 215, 216, 217
Şühud halindeki secde 420

## T

takva 10, 11, 38, 42, 62, 102, 112, 134, 185, 278, 309, 310, 412, 473
tartıda hile yapmak 214
Tebûk Gazvesi 369
tekfir 27
Tevekkül 36

## U

Uhud Savaşı 277
Uzeyr 357, 358

## V

Va'dedilen azabın çabuk gerçekleşmesini istemek 464
vecd 74, 366
vehhâb 268
veli 44, 471, 472
vird 52, 165
Vücud halindeki secde 420

## Y

Yahudi 357
yakîn 355, 459

## Z

Zahid 302
Zekât 26, 381

# Hadis İndeksi


- Allah'a, O'nu görüyormuş gibi ibadet et 26
- Allah'ım! Beni göz açıp kapayıncaya kadar dahi nefsime emanet etme 249
- Allah'ım! Beni nefsime emanet etme 320
- Allah'ım, ben seninle saldırırım 329
- Benim kalbime bir şeyler doğar 278
- Bir çocuğa kefil olunduğu gibi bana kefil ol 249
- Fakirlikten sana sığınırım 380
- İçinizden hiç kimse yoktur ki, Allah onunla tercümansız konuşmasın 243
- Kim ne durumda ise o durum üzere Allah'ın huzuruna çıkar 187
- Müminin ferasetinden sakının! Çünkü o, Allah'ın nuruyla bakar 146
- Mümin temiz kalpli ve iyidir. Münafık ise dolandırıcı ve kötüdür. 384
- Nice başı üstü perişan insan vardır ki, eğer Allah'a yemin ederse, Allah yeminini kabul edecektir. 212
- Öfke, ümmetimin seçkinlerinde meydana gelir 278
- Sana layık bir övgüde bulunamıyorum. 249
- Sizi ancak Allah bindirir 401

ABDULKERİM
EL-KUŞEYRÎ

KUR'AN-I KERİM
TEFSİRİ

# LETÂİFU'L İŞÂRÂT

تفسير صوفي كامل للقرآن الكريم

ilkharf

بسم الله الرحمن الرحيم

©İlk Harf Yayınevi, 2013
Kitabın tüm yayın hakları "İlk Harf Yayınevi"ne aittir.

Abdulkerîm el-Kuşeyrî • Letâifu'l-İşârât **KUŞEYRÎ TEFSİRİ**

İlk Harf Yayınevi, 18
Tefsir Serisi, 1/3

ISBN
978-605-5457-78-5 (cilt: 3)
978-605-5457-55-6 (takım)

Editör
Ersan Güngör

Tercüme
Prof. Dr. Mehmet Yalar

Sayfa Düzeni
İrfan Güngörür

Kapak Tasarımı
Sercan Arslan

Basım Tarihi
1. Baskı, İstanbul, Temmuz 2013

Baskı / Cilt
Şenyıldız Yay. Matbaacılık Ltd. Şti.
Gümüşsuyu Cad. No: 3, K: 2 Topkapı/İstanbul
Tel: 0212 483 47 92 (Sertifika No: 11964)

**İLK HARF YAYINEVİ**
www.ilkharf.com.tr • info@ilkharf.com.tr

**Genel Dağıtım**
Çelik Yayınevi
(Sertifika No, 14710)
Ticarethane Sokak No: 19/A Cağaloğlu - Fatih / İstanbul
Tel: +90 212 511 28 11 - 513 73 19 • Fax: +90 212 511 28 12
www.celikyayinevi.com • info@celikyayinevi.com

Abdulkerîm el-Kuşeyrî

Letâifu'l-İşârât

# Kuşeyrî Tefsiri

## -3-

Tercüme
Prof. Dr. Mehmet Yalar

İlkharf Yayınları

# ÂYETLER FİHRİSTİ


| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| **HÛD SÛRESİ (s. 9-72)** | |
| 1 | 9 |
| 2 | 9 |
| 3 | 10 |
| 4 | 12 |
| 5 | 13 |
| 6 | 13 |
| 7 | 15 |
| 8 | 16 |
| 9 | 16 |
| 10 | 17 |
| 11 | 18 |
| 12 | 18 |
| 13 | 19 |
| 14 | 19 |
| 15 | 20 |
| 16 | 20 |
| 17 | 21 |
| 18 | 22 |
| 19 | 22 |
| 20 | 23 |
| 21 | 23 |
| 22 | 23 |
| 23 | 23 |
| 24 | 24 |
| 25 | 25 |
| 26 | 25 |
| 27 | 25 |
| 28 | 26 |
| 29 | 26 |
| 30 | 27 |
| 31 | 27 |
| 32 | 28 |
| 33 | 28 |
| 34 | 28 |
| 35 | 29 |
| 36 | 29 |
| 37 | 30 |
| 38 | 30 |
| 39 | 31 |
| 40 | 31 |
| 41 | 33 |
| 42 | 33 |
| 43 | 33 |
| 44 | 34 |
| 45 | 35 |
| 46 | 35 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 47 | 36 |
| 48 | 36 |
| 49 | 36 |
| 50 | 37 |
| 51 | 37 |
| 52 | 38 |
| 53 | 38 |
| 54 | 39 |
| 55 | 39 |
| 56 | 39 |
| 57 | 40 |
| 58 | 40 |
| 59 | 41 |
| 60 | 41 |
| 61 | 42 |
| 62 | 42 |
| 63 | 42 |
| 64 | 42 |
| 65 | 43 |
| 66 | 43 |
| 67 | 43 |
| 68 | 43 |
| 69 | 44 |
| 70 | 44 |
| 71 | 46 |
| 72 | 46 |
| 73 | 46 |
| 74 | 47 |
| 75 | 48 |
| 76 | 48 |
| 77 | 48 |
| 78 | 49 |
| 79 | 49 |
| 80 | 50 |
| 81 | 50 |
| 82 | 51 |
| 83 | 51 |
| 84 | 52 |
| 85 | 52 |
| 86 | 53 |
| 87 | 53 |
| 88 | 53 |
| 89 | 55 |
| 90 | 56 |
| 91 | 57 |
| 92 | 57 |
| 93 | 57 |
| 94 | 58 |
| 95 | 58 |
| 96 | 58 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 97 | 58 |
| 98 | 59 |
| 99 | 60 |
| 100 | 60 |
| 101 | 60 |
| 102 | 61 |
| 103 | 61 |
| 104 | 62 |
| 105 | 62 |
| 106 | 63 |
| 107 | 63 |
| 108 | 64 |
| 109 | 64 |
| 110 | 65 |
| 111 | 66 |
| 112 | 66 |
| 113 | 67 |
| 114 | 67 |
| 115 | 68 |
| 116 | 69 |
| 117 | 69 |
| 118 | 70 |
| 119 | 70 |
| 120 | 71 |
| 121 | 71 |
| 122 | 71 |
| 123 | 72 |
| **YÛSUF SÛRESİ (s. 73-142)** | |
| 1 | 74 |
| 2 | 75 |
| 3 | 76 |
| 4 | 77 |
| 5 | 78 |
| 6 | 79 |
| 7 | 80 |
| 8 | 80 |
| 9 | 81 |
| 10 | 82 |
| 11 | 83 |
| 12 | 83 |
| 13 | 84 |
| 14 | 84 |
| 15 | 85 |
| 16 | 85 |
| 17 | 85 |
| 18 | 86 |
| 19 | 87 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 20 | 87 |
| 21 | 89 |
| 22 | 90 |
| 23 | 91 |
| 24 | 91 |
| 25 | 93 |
| 26 | 95 |
| 27 | 95 |
| 28 | 95 |
| 29 | 95 |
| 30 | 96 |
| 31 | 97 |
| 32 | 97 |
| 33 | 98 |
| 34 | 98 |
| 35 | 99 |
| 36 | 99 |
| 37 | 100 |
| 38 | 101 |
| 39 | 101 |
| 40 | 101 |
| 41 | 101 |
| 42 | 102 |
| 43 | 102 |
| 44 | 103 |
| 45 | 103 |
| 46 | 104 |
| 47 | 104 |
| 48 | 105 |
| 49 | 105 |
| 50 | 105 |
| 51 | 106 |
| 52 | 107 |
| 53 | 107 |
| 54 | 108 |
| 55 | 108 |
| 56 | 109 |
| 57 | 109 |
| 58 | 109 |
| 59 | 110 |
| 60 | 110 |
| 61 | 111 |
| 62 | 111 |
| 63 | 112 |
| 64 | 112 |
| 65 | 113 |
| 66 | 113 |
| 67 | 114 |
| 68 | 114 |
| 69 | 115 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 70 | 115 |
| 71 | 116 |
| 72 | 116 |
| 73 | 116 |
| 74 | 117 |
| 75 | 117 |
| 76 | 118 |
| 77 | 118 |
| 78 | 119 |
| 79 | 119 |
| 80 | 120 |
| 81 | 120 |
| 82 | 121 |
| 83 | 121 |
| 84 | 121 |
| 85 | 123 |
| 86 | 123 |
| 87 | 124 |
| 88 | 125 |
| 89 | 126 |
| 90 | 127 |
| 91 | 128 |
| 92 | 129 |
| 93 | 129 |
| 94 | 131 |
| 95 | 131 |
| 96 | 132 |
| 97 | 132 |
| 98 | 133 |
| 99 | 133 |
| 100 | 134 |
| 101 | 136 |
| 102 | 138 |
| 103 | 138 |
| 104 | 138 |
| 105 | 139 |
| 106 | 139 |
| 107 | 139 |
| 108 | 140 |
| 109 | 140 |
| 110 | 141 |
| 111 | 142 |
| **RA'D SÛRESİ (s. 143-175)** | |
| 1 | 143 |
| 2 | 144 |
| 3 | 145 |
| 4 | 145 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 5 | 146 |
| 6 | 147 |
| 7 | 147 |
| 8 | 148 |
| 9 | 148 |
| 10 | 148 |
| 11 | 148 |
| 12 | 150 |
| 13 | 152 |
| 14 | 152 |
| 15 | 153 |
| 16 | 154 |
| 17 | 156 |
| 18 | 157 |
| 19 | 158 |
| 20 | 158 |
| 21 | 158 |
| 22 | 159 |
| 23 | 160 |
| 24 | 160 |
| 25 | 161 |
| 26 | 162 |
| 27 | 163 |
| 28 | 163 |
| 29 | 163 |
| 30 | 164 |
| 31 | 165 |
| 32 | 166 |
| 33 | 166 |
| 34 | 167 |
| 35 | 168 |
| 36 | 168 |
| 37 | 169 |
| 38 | 170 |
| 39 | 170 |
| 40 | 172 |
| 41 | 173 |
| 42 | 174 |
| 43 | 175 |
| **İBRÂHÎM SÛRESİ (s. 177-210)** | |
| 1 | 177 |
| 2 | 178 |
| 3 | 178 |
| 4 | 179 |
| 5 | 179 |
| 6 | 180 |
| 7 | 181 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 8 | 182 |
| 9 | 182 |
| 10 | 183 |
| 11 | 184 |
| 12 | 184 |
| 13 | 185 |
| 14 | 186 |
| 15 | 186 |
| 16 | 187 |
| 17 | 187 |
| 18 | 188 |
| 19 | 188 |
| 20 | 189 |
| 21 | 189 |
| 22 | 190 |
| 23 | 190 |
| 24 | 191 |
| 25 | 191 |
| 26 | 191 |
| 27 | 193 |
| 28 | 194 |
| 29 | 195 |
| 30 | 195 |
| 31 | 196 |
| 32 | 197 |
| 33 | 197 |
| 34 | 198 |
| 36 | 200 |
| 36 | 200 |
| 37 | 202 |
| 38 | 203 |
| 39 | 203 |
| 40 | 204 |
| 41 | 204 |
| 42 | 205 |
| 43 | 206 |
| 44 | 207 |
| 45 | 207 |
| 46 | 207 |
| 47 | 208 |
| 48 | 208 |
| 49 | 209 |
| 50 | 209 |
| 51 | 209 |
| 52 | 209 |

**HİCR SÛRESİ**
**(s. 211-242)**

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 1 | 212 |
| 2 | 212 |
| 3 | 213 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 4 | 213 |
| 5 | 213 |
| 6 | 213 |
| 7 | 214 |
| 8 | 214 |
| 9 | 214 |
| 10 | 215 |
| 11 | 215 |
| 12 | 215 |
| 13 | 215 |
| 14 | 215 |
| 15 | 215 |
| 16 | 216 |
| 17 | 216 |
| 18 | 216 |
| 19 | 216 |
| 20 | 217 |
| 21 | 217 |
| 22 | 218 |
| 23 | 219 |
| 24 | 220 |
| 25 | 220 |
| 26 | 221 |
| 27 | 221 |
| 28 | 221 |
| 29 | 221 |
| 30 | 221 |
| 31 | 221 |
| 32 | 222 |
| 33 | 222 |
| 34 | 222 |
| 35 | 222 |
| 36 | 223 |
| 37 | 223 |
| 38 | 223 |
| 39 | 224 |
| 40 | 224 |
| 41 | 224 |
| 42 | 224 |
| 43 | 225 |
| 44 | 225 |
| 45 | 226 |
| 46 | 226 |
| 47 | 227 |
| 48 | 228 |
| 49 | 228 |
| 50 | 229 |
| 51 | 229 |
| 52 | 229 |
| 53 | 229 |
| 54 | 230 |
| 55 | 230 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 56 | 230 |
| 57 | 231 |
| 58 | 231 |
| 59 | 231 |
| 60 | 231 |
| 61 | 231 |
| 62 | 231 |
| 63 | 231 |
| 64 | 231 |
| 65 | 232 |
| 66 | 232 |
| 67 | 232 |
| 68 | 232 |
| 69 | 233 |
| 70 | 233 |
| 71 | 233 |
| 72 | 233 |
| 73 | 234 |
| 74 | 234 |
| 75 | 234 |
| 76 | 234 |
| 77 | 234 |
| 78 | 235 |
| 79 | 235 |
| 80 | 235 |
| 81 | 235 |
| 82 | 235 |
| 83 | 235 |
| 84 | 235 |
| 85 | 236 |
| 86 | 237 |
| 87 | 237 |
| 88 | 237 |
| 89 | 239 |
| 90 | 239 |
| 91 | 240 |
| 92 | 240 |
| 93 | 240 |
| 94 | 241 |
| 95 | 241 |
| 96 | 241 |
| 97 | 241 |
| 98 | 241 |
| 99 | 242 |

**NAHL SÛRESİ**
**(s. 243-306)**

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 1 | 244 |
| 2 | 245 |
| 3 | 245 |
| 4 | 246 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 5 | 246 |
| 6 | 246 |
| 7 | 246 |
| 8 | 247 |
| 9 | 247 |
| 10 | 248 |
| 11 | 248 |
| 12 | 249 |
| 13 | 250 |
| 14 | 250 |
| 15 | 251 |
| 16 | 251 |
| 17 | 252 |
| 18 | 252 |
| 19 | 252 |
| 20 | 253 |
| 21 | 253 |
| 22 | 253 |
| 23 | 254 |
| 24 | 254 |
| 25 | 255 |
| 26 | 255 |
| 27 | 256 |
| 28 | 256 |
| 29 | 256 |
| 30 | 257 |
| 31 | 258 |
| 32 | 259 |
| 33 | 260 |
| 34 | 260 |
| 35 | 260 |
| 36 | 261 |
| 37 | 262 |
| 38 | 262 |
| 39 | 262 |
| 40 | 263 |
| 41 | 263 |
| 42 | 264 |
| 43 | 264 |
| 44 | 265 |
| 45 | 265 |
| 46 | 265 |
| 47 | 265 |
| 48 | 266 |
| 49 | 266 |
| 50 | 266 |
| 51 | 267 |
| 52 | 267 |
| 53 | 267 |
| 54 | 268 |
| 55 | 268 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 56 | 269 |
| 57 | 269 |
| 58 | 270 |
| 59 | 270 |
| 60 | 271 |
| 61 | 271 |
| 62 | 271 |
| 63 | 272 |
| 64 | 272 |
| 65 | 273 |
| 66 | 273 |
| 67 | 273 |
| 68 | 274 |
| 69 | 274 |
| 70 | 275 |
| 71 | 276 |
| 72 | 277 |
| 73 | 277 |
| 74 | 278 |
| 75 | 278 |
| 76 | 279 |
| 77 | 279 |
| 78 | 279 |
| 79 | 280 |
| 80 | 280 |
| 81 | 281 |
| 82 | 282 |
| 83 | 282 |
| 84 | 283 |
| 85 | 283 |
| 86 | 283 |
| 87 | 283 |
| 88 | 284 |
| 89 | 284 |
| 90 | 284 |
| 91 | 286 |
| 92 | 287 |
| 93 | 288 |
| 94 | 289 |
| 95 | 290 |
| 96 | 290 |
| 97 | 291 |
| 98 | 293 |
| 99 | 293 |
| 100 | 293 |
| 101 | 294 |
| 102 | 294 |
| 103 | 294 |
| 104 | 295 |
| 105 | 295 |
| 106 | 296 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 107 | 296 |
| 108 | 297 |
| 109 | 297 |
| 110 | 297 |
| 111 | 298 |
| 112 | 298 |
| 113 | 299 |
| 114 | 299 |
| 115 | 299 |
| 116 | 300 |
| 117 | 300 |
| 118 | 300 |
| 119 | 301 |
| 120 | 301 |
| 121 | 302 |
| 122 | 302 |
| 123 | 303 |
| 124 | 303 |
| 125 | 304 |
| 126 | 304 |
| 127 | 305 |
| 128 | 306 |

**İSRÂ SÛRESİ**
**(s. 307-362)**

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 1 | 307 |
| 2 | 309 |
| 3 | 310 |
| 4 | 311 |
| 5 | 311 |
| 6 | 311 |
| 7 | 312 |
| 8 | 312 |
| 9 | 313 |
| 10 | 314 |
| 11 | 314 |
| 12 | 315 |
| 13 | 316 |
| 14 | 316 |
| 15 | 317 |
| 16 | 318 |
| 17 | 318 |
| 18 | 318 |
| 19 | 319 |
| 20 | 320 |
| 21 | 320 |
| 22 | 321 |
| 23 | 321 |
| 24 | 322 |
| 25 | 322 |
| 26 | 323 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 27 | 323 |
| 28 | 323 |
| 29 | 324 |
| 30 | 324 |
| 31 | 324 |
| 32 | 325 |
| 33 | 325 |
| 34 | 325 |
| 35 | 326 |
| 36 | 326 |
| 37 | 327 |
| 38 | 328 |
| 39 | 328 |
| 40 | 329 |
| 41 | 329 |
| 42 | 329 |
| 43 | 329 |
| 44 | 330 |
| 45 | 330 |
| 46 | 330 |
| 47 | 331 |
| 48 | 331 |
| 49 | 332 |
| 50 | 332 |
| 51 | 332 |
| 52 | 333 |
| 53 | 333 |
| 54 | 333 |
| 55 | 334 |
| 56 | 334 |
| 57 | 335 |
| 58 | 336 |
| 59 | 336 |
| 60 | 337 |
| 61 | 338 |
| 62 | 338 |
| 63 | 338 |
| 64 | 339 |
| 65 | 339 |
| 66 | 340 |
| 67 | 340 |
| 68 | 341 |
| 69 | 341 |
| 70 | 342 |
| 71 | 345 |
| 72 | 346 |
| 73 | 346 |
| 74 | 346 |
| 75 | 347 |
| 76 | 347 |
| 77 | 348 |
| 78 | 348 |
| 79 | 348 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 80 | 349 |
| 81 | 349 |
| 82 | 350 |
| 83 | 351 |
| 84 | 351 |
| 85 | 352 |
| 86 | 352 |
| 87 | 353 |
| 88 | 353 |
| 89 | 353 |
| 90 | 354 |
| 91 | 354 |
| 92 | 354 |
| 93 | 354 |
| 94 | 355 |
| 95 | 355 |
| 96 | 356 |
| 97 | 356 |
| 98 | 356 |
| 99 | 357 |
| 100 | 357 |
| 101 | 358 |
| 102 | 358 |
| 103 | 358 |
| 104 | 358 |
| 105 | 359 |
| 106 | 359 |
| 107 | 359 |
| 108 | 359 |
| 109 | 360 |
| 110 | 360 |
| 111 | 361 |
| **KEHF SÛRESİ (s. 363-419)** | |
| 1 | 363 |
| 2 | 364 |
| 3 | 365 |
| 4 | 365 |
| 5 | 365 |
| 6 | 366 |
| 7 | 366 |
| 8 | 367 |
| 9 | 367 |
| 10 | 368 |
| 11 | 369 |
| 12 | 369 |
| 13 | 369 |
| 14 | 370 |
| 15 | 371 |
| 16 | 372 |
| 17 | 373 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 18 | 374 |
| 19 | 377 |
| 20 | 379 |
| 21 | 380 |
| 22 | 380 |
| 23 | 381 |
| 24 | 381 |
| 25 | 382 |
| 26 | 383 |
| 27 | 383 |
| 28 | 384 |
| 29 | 386 |
| 30 | 387 |
| 31 | 387 |
| 32 | 389 |
| 33 | 389 |
| 34 | 389 |
| 35 | 389 |
| 36 | 389 |
| 37 | 389 |
| 38 | 389 |
| 39 | 389 |
| 40 | 389 |
| 41 | 389 |
| 42 | 391 |
| 43 | 391 |
| 44 | 391 |
| 45 | 392 |
| 46 | 393 |
| 47 | 394 |
| 48 | 394 |
| 49 | 396 |
| 50 | 397 |
| 51 | 398 |
| 52 | 399 |
| 53 | 400 |
| 54 | 400 |
| 55 | 400 |
| 56 | 401 |
| 57 | 402 |
| 58 | 402 |
| 59 | 403 |
| 60 | 403 |
| 61 | 404 |
| 62 | 404 |
| 63 | 404 |
| 64 | 404 |
| 65 | 405 |
| 66 | 406 |
| 67 | 406 |
| 68 | 406 |
| 69 | 406 |
| 70 | 407 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 71 | 407 |
| 72 | 408 |
| 73 | 408 |
| 74 | 408 |
| 75 | 409 |
| 76 | 409 |
| 77 | 409 |
| 78 | 410 |
| 79 | 411 |
| 80 | 411 |
| 81 | 411 |
| 82 | 412 |
| 83 | 412 |
| 84 | 412 |
| 85 | 412 |
| 86 | 413 |
| 87 | 413 |
| 88 | 413 |
| 89 | 413 |
| 90 | 413 |
| 91 | 413 |
| 92 | 413 |
| 93 | 414 |
| 94 | 414 |
| 95 | 414 |
| 96 | 415 |
| 97 | 415 |
| 98 | 415 |
| 99 | 415 |
| 100 | 416 |
| 101 | 416 |
| 102 | 416 |
| 103 | 417 |
| 104 | 417 |
| 105 | 417 |
| 106 | 418 |
| 107 | 418 |
| 108 | 418 |
| 109 | 418 |
| 110 | 419 |
| **MERYEM SÛRESİ (s. 421-458)** | |
| 1 | 421 |
| 2 | 422 |
| 3 | 423 |
| 4 | 423 |
| 5 | 424 |
| 6 | 424 |
| 7 | 424 |
| 8 | 425 |
| 9 | 426 |
| 10 | 426 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 11 | 427 |
| 12 | 427 |
| 13 | 427 |
| 14 | 428 |
| 15 | 428 |
| 16 | 428 |
| 17 | 428 |
| 18 | 429 |
| 19 | 429 |
| 20 | 429 |
| 21 | 429 |
| 22 | 430 |
| 23 | 430 |
| 24 | 431 |
| 25 | 431 |
| 26 | 432 |
| 27 | 432 |
| 28 | 432 |
| 29 | 433 |
| 30 | 433 |
| 31 | 434 |
| 32 | 434 |
| 33 | 435 |
| 34 | 435 |
| 35 | 436 |
| 36 | 436 |
| 37 | 436 |
| 38 | 437 |
| 39 | 437 |
| 40 | 437 |
| 41 | 439 |
| 42 | 439 |
| 43 | 440 |
| 44 | 440 |
| 45 | 440 |
| 46 | 441 |
| 47 | 441 |
| 48 | 441 |
| 49 | 442 |
| 50 | 442 |
| 51 | 442 |
| 52 | 442 |
| 53 | 443 |
| 54 | 443 |
| 55 | 443 |
| 56 | 444 |
| 57 | 444 |
| 58 | 444 |
| 59 | 445 |
| 60 | 445 |
| 61 | 445 |
| 62 | 446 |
| 63 | 446 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 64 | 447 |
| 65 | 447 |
| 66 | 448 |
| 67 | 448 |
| 68 | 449 |
| 69 | 449 |
| 70 | 450 |
| 71 | 450 |
| 72 | 450 |
| 73 | 451 |
| 74 | 451 |
| 75 | 451 |
| 76 | 452 |
| 77 | 453 |
| 78 | 453 |
| 79 | 453 |
| 80 | 453 |
| 81 | 454 |
| 82 | 454 |
| 83 | 454 |
| 84 | 454 |
| 85 | 455 |
| 86 | 455 |
| 87 | 455 |
| 88 | 456 |
| 89 | 456 |
| 90 | 456 |
| 91 | 456 |
| 92 | 456 |
| 93 | 456 |
| 94 | 456 |
| 95 | 457 |
| 96 | 457 |
| 97 | 457 |
| 98 | 458 |
| **TÂHÂ SÛRESİ (s. 459-523)** | |
| 1 | 459 |
| 2 | 460 |
| 3 | 461 |
| 4 | 461 |
| 5 | 461 |
| 6 | 462 |
| 7 | 462 |
| 8 | 462 |
| 9 | 462 |
| 10 | 463 |
| 11 | 464 |
| 12 | 464 |
| 13 | 465 |
| 14 | 465 |
| 15 | 466 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 16 | 466 |
| 17 | 466 |
| 18 | 467 |
| 19 | 467 |
| 20 | 469 |
| 21 | 469 |
| 22 | 470 |
| 23 | 470 |
| 24 | 470 |
| 25 | 471 |
| 26 | 471 |
| 27 | 471 |
| 28 | 471 |
| 29 | 471 |
| 30 | 471 |
| 31 | 471 |
| 32 | 472 |
| 33 | 472 |
| 34 | 472 |
| 35 | 472 |
| 36 | 472 |
| 37 | 473 |
| 38 | 473 |
| 39 | 473 |
| 40 | 476 |
| 41 | 478 |
| 42 | 478 |
| 43 | 478 |
| 44 | 479 |
| 45 | 480 |
| 46 | 481 |
| 47 | 481 |
| 48 | 482 |
| 49 | 483 |
| 50 | 483 |
| 51 | 483 |
| 52 | 483 |
| 53 | 484 |
| 54 | 484 |
| 55 | 484 |
| 56 | 484 |
| 57 | 485 |
| 58 | 485 |
| 59 | 486 |
| 60 | 486 |
| 61 | 486 |
| 62 | 486 |
| 63 | 487 |
| 64 | 487 |
| 65 | 487 |
| 66 | 487 |
| 67 | 487 |
| 68 | 487 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 69 | 487 |
| 70 | 487 |
| 71 | 487 |
| 72 | 488 |
| 73 | 489 |
| 74 | 490 |
| 75 | 490 |
| 76 | 490 |
| 77 | 490 |
| 78 | 490 |
| 79 | 490 |
| 80 | 491 |
| 81 | 491 |
| 82 | 492 |
| 83 | 494 |
| 84 | 494 |
| 85 | 495 |
| 86 | 496 |
| 87 | 496 |
| 88 | 497 |
| 89 | 498 |
| 90 | 498 |
| 91 | 499 |
| 92 | 499 |
| 93 | 499 |
| 94 | 500 |
| 95 | 500 |
| 96 | 501 |
| 97 | 501 |
| 98 | 502 |
| 99 | 502 |
| 100 | 503 |
| 101 | 503 |
| 102 | 503 |
| 103 | 504 |
| 104 | 504 |
| 105 | 504 |
| 106 | 504 |
| 107 | 504 |
| 108 | 505 |
| 109 | 505 |
| 110 | 506 |
| 111 | 506 |
| 112 | 507 |
| 113 | 507 |
| 114 | 507 |
| 115 | 509 |
| 116 | 510 |
| 117 | 511 |
| 118 | 512 |
| 119 | 512 |
| 120 | 512 |
| 121 | 513 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 122 | 515 |
| 123 | 515 |
| 124 | 516 |
| 125 | 517 |
| 126 | 517 |
| 127 | 517 |
| 128 | 518 |
| 129 | 518 |
| 130 | 518 |
| 131 | 519 |
| 132 | 520 |
| 133 | 522 |
| 134 | 522 |
| 135 | 523 |
| **ENBİYÂ SÛRESİ** (s. 525-576) | |
| 1 | 526 |
| 2 | 526 |
| 3 | 527 |
| 4 | 527 |
| 5 | 528 |
| 6 | 528 |
| 7 | 529 |
| 8 | 530 |
| 9 | 530 |
| 10 | 531 |
| 11 | 531 |
| 12 | 531 |
| 13 | 532 |
| 14 | 532 |
| 15 | 532 |
| 16 | 532 |
| 17 | 533 |
| 18 | 533 |
| 19 | 533 |
| 20 | 534 |
| 21 | 534 |
| 22 | 534 |
| 23 | 535 |
| 24 | 535 |
| 25 | 536 |
| 26 | 536 |
| 27 | 536 |
| 28 | 537 |
| 29 | 537 |
| 30 | 538 |
| 31 | 539 |
| 32 | 539 |
| 33 | 540 |
| 34 | 540 |
| 35 | 540 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 36 | 541 |
| 37 | 541 |
| 38 | 541 |
| 39 | 542 |
| 40 | 542 |
| 41 | 542 |
| 42 | 542 |
| 43 | 543 |
| 44 | 543 |
| 45 | 544 |
| 46 | 544 |
| 47 | 545 |
| 48 | 546 |
| 49 | 546 |
| 50 | 546 |
| 51 | 547 |
| 52 | 547 |
| 53 | 548 |
| 54 | 548 |
| 55 | 548 |
| 56 | 548 |
| 57 | 549 |
| 58 | 549 |
| 59 | 549 |
| 60 | 549 |
| 61 | 549 |
| 62 | 549 |
| 63 | 549 |
| 64 | 550 |
| 65 | 550 |
| 66 | 550 |
| 67 | 550 |
| 68 | 550 |
| 69 | 551 |
| 70 | 552 |
| 71 | 552 |
| 72 | 552 |
| 73 | 552 |
| 74 | 553 |
| 75 | 553 |
| 76 | 553 |
| 77 | 553 |
| 78 | 554 |
| 79 | 554 |
| 80 | 555 |
| 81 | 556 |
| 82 | 557 |
| 83 | 557 |
| 84 | 557 |
| 85 | 563 |
| 86 | 563 |
| 87 | 563 |
| 88 | 565 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 89 | 566 |
| 90 | 567 |
| 91 | 568 |
| 92 | 568 |
| 93 | 569 |
| 94 | 569 |
| 95 | 570 |
| 96 | 570 |
| 97 | 570 |
| 98 | 570 |
| 99 | 571 |
| 100 | 571 |
| 101 | 572 |
| 102 | 572 |
| 103 | 573 |
| 104 | 574 |
| 105 | 574 |
| 106 | 574 |
| 107 | 575 |
| 108 | 575 |
| 109 | 575 |
| 110 | 576 |
| 111 | 576 |
| 112 | 576 |
| **HAC SÛRESİ** (s. 577-627) | |
| 1 | 577 |
| 2 | 578 |
| 3 | 579 |
| 4 | 579 |
| 5 | 580 |
| 6 | 582 |
| 7 | 582 |
| 8 | 582 |
| 9 | 583 |
| 10 | 583 |
| 11 | 584 |
| 12 | 584 |
| 13 | 584 |
| 14 | 585 |
| 15 | 586 |
| 16 | 586 |
| 17 | 587 |
| 18 | 587 |
| 19 | 588 |
| 20 | 589 |
| 21 | 589 |
| 22 | 589 |
| 23 | 589 |
| 24 | 589 |
| 25 | 591 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 26 | 591 |
| 27 | 593 |
| 28 | 594 |
| 29 | 595 |
| 30 | 596 |
| 31 | 597 |
| 32 | 597 |
| 33 | 598 |
| 34 | 598 |
| 35 | 599 |
| 36 | 601 |
| 37 | 602 |
| 38 | 603 |
| 39 | 604 |
| 40 | 604 |
| 41 | 606 |
| 42 | 607 |
| 43 | 607 |
| 44 | 607 |
| 45 | 608 |
| 46 | 608 |
| 47 | 609 |
| 48 | 610 |
| 49 | 610 |
| 50 | 610 |
| 51 | 611 |
| 52 | 612 |
| 53 | 612 |
| 54 | 613 |
| 55 | 613 |
| 56 | 613 |
| 57 | 614 |
| 58 | 614 |
| 59 | 614 |
| 60 | 614 |
| 61 | 615 |
| 62 | 615 |
| 63 | 616 |
| 64 | 616 |
| 65 | 617 |
| 66 | 618 |
| 67 | 618 |
| 68 | 619 |
| 69 | 619 |
| 70 | 620 |
| 71 | 620 |
| 72 | 621 |
| 73 | 621 |
| 74 | 622 |
| 75 | 623 |
| 76 | 623 |
| 77 | 623 |
| 78 | 624 |

سورة هُودٍ

# HÛD SÛRESİ

(Hûd Sûresi 123 âyettir. 12, 17 ve 114. âyetler Medine'de, diğerleri Mekke'de inmiştir. 50-60 arası âyetlerde Hûd'un (a.s) hayatı anlatıldığı için sûreye bu ad verilmiştir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

Bu öyle bir sözdür ki, kimilerinin akıllarını kaplayıp basiret sahibi kılmış, kimilerinin de kalplerini kuşatıp basiretten tecrit etmiştir. Basiret sahibi kıldıklarını, Allah'ın nurunun burhanıyla kılmış, tecrit ettiklerini de hükümranlığının kahrıyla etmiştir. Bu çerçevede ilim sahibi, araştırma ve delil arama yolunu izlemiş, sonuçta ikbalinin gölgeleri altından aklının yıldızları doğunca durmuştur. Marifet sahibi ise Allah'a kavuşmaya kalkışmış, bu esnada Allah'ın mukaddes zatından, celalinin gereğini ortaya koymak suretiyle bir ışıltı belirince helak olmuştur.

الٓرٰ كِتَابٌ اُحْكِمَتْ اٰيَاتُهُ ثُمَّ فُصِّلَتْ مِنْ لَدُنْ حَك۪يمٍ خَب۪يرٍۙ ﴿١﴾
اَلَّا تَعْبُدُٓوا اِلَّا اللّٰهَ اِنَّن۪ي لَكُمْ مِنْهُ نَذ۪يرٌ وَبَش۪يرٌۙ ﴿٢﴾

1, 2- "Elif lâm Râ. Bu Kur'an; ayetleri, hüküm ve hikmet sahibi bulunan ve her şeyden hakkıyla haberdar olan Allah tarafından muhkem kılınmış, sonra da Allah'tan başkasına kulluk etmeyesiniz diye, ayrı ayrı açıklanmış bir kitaptır. (De ki: ) 'Şüphesiz ben, size O'nun tarafından gönderilmiş bir uyarıcı ve müjdeleyiciyim.' "

"Elif", Allah'ın yalnız Rab oluşuna, "Lâm" tevhid ehline olan lütfuna, "Râ" da bütün yaratıklara olan rahmetine işarettir. Bu ifade, yemin anlamındadır. Yani ben, yalnız Rab oluşuma, beni birliğimle tanıyanlara olan lütfuma ve bütün yaratıklara olan rahmetime yemin ederim ki bu Kur'an, ayetleri muhkem kılınmış bir kitaptır.

Ayetlerinin muhkem kılınması ise, değiştirilmekten korunması demektir. Sonra ayetler, Hakk'ın sıfatlarının izahıyla detaylı olarak açıklanmıştır. Bu açıklamalar, "samed" sıfatının yüceliği, kulların yerine getirdiği kulluk hükümleri, sonra tevhid ehlinin ve Allah'ı sevenlerin dünyada iken kalplerinde beliren yakınlık tecellileri, kıyamet gününde O'na kavuşacaklarına dair vaadiyle duyacakları sevinç ve başkalarından ayrıldıkları ayrıcalıklı özellikleriyle ilgilidir.

( اَلَّا تَعْبُدُوٓا اِلَّا اللّٰهُ اِنَّن۪ي لَكُمْ مِنْهُ نَذ۪يرٌ وَبَش۪يرٌ ) *"Allah'tan başkasına kulluk etmeyesiniz diye. Şüphesiz ben, size O'nun tarafından gönderilmiş bir uyarıcı ve müjdeleyiciyim."*

Yani Allah'ın ayetleri, O'ndan başkasına ibadet etmeyesiniz diye detaylı olarak açıklanmıştır. Bir yoruma göre de bu kitapta Allah'tan başkasına kulluk etmemeniz yer almaktadır. Şüphesiz ben, ayrılıkla uyaran apaçık bir uyarıcı ve vuslatın devamıyla müjdeleyen bir müjdeleyiciyim.

وَاَنِ اسْتَغْفِرُوا رَبَّكُمْ ثُمَّ تُوبُوٓا اِلَيْهِ يُمَتِّعْكُمْ مَتَاعًا حَسَنًا اِلٰٓى اَجَلٍ مُسَمًّى وَيُؤْتِ كُلَّ ذ۪ي فَضْلٍ فَضْلَهُ وَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنّ۪يٓ اَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمٍ كَب۪يرٍ ﴿٣﴾

3- "Rabbinizden bağışlama dileyin, sonra da O'na tövbe edin ki sizi, belirlenmiş bir süreye kadar güzel bir şekilde yararlandırsın ve her fazilet sahibine faziletinin karşılığını versin. Eğer yüz çevirirseniz, ben sizin adınıza büyük bir günün azabından korkuyorum."

Önce Rabbinizden mağfiret dileyin, ondan sonra da O'na tövbe edin. Ayette geçen "istiğfar", mağfiret talep etmek demektir. Yani

sizler, tövbe etmeden önce güzel bakışla ve günahkarın ebedî olarak ateşte kalmayacağına, kesin olarak Allah'ın onu cehennemden çıkaracağına dair ümit ve güvenle O'ndan mağfiret talep edin. Böylece önce mağfiret talep edin, sonra günahlarınızı terk etmek ve ısrarınızdan arınmak suretiyle tövbe ediniz.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Şimdi geçmiş hatalarınızdan mağfiret dileyin. Sonra eğer başka bir yanlışlığa bulaşırsanız tövbe edin.

- Şimdi mağfiret dileyin, sonra da günaha dönmeyip geçmişteki çirkin amellerinizden yaptığınız tövbeyi ahiretinize kadar devam ettirin.

- Mağfiret dilemek, tövbe ve bütün günahlardan arınmak demektir. Sonra tövbenizin kabul edildiğini sanmanızdan tövbe edin. Bilin ki Allah, amellerinizle değil, keremiyle dileğinizi kabul etmektedir.

- Mağfiret dilemek, affımızdan nasiplerinizi talep etmenizdir. İşte bunu yaptığınız zaman, her nasip ve arzuya dönük talepten tövbe ediniz, bize dönünüz ve bizimle yetininiz. Affedilme kapasitenize veya Allah'ın affınıza sebep kılacağı diğer herhangi bir hususa rıza göstererek bunu yapınız.

( يُمَتِّعْكُمْ مَتَاعًا حَسَنًا اِلٰٓى اَجَلٍ مُسَمًّى ) *"Belirlenmiş bir süreye kadar güzel bir şekilde yararlandırsın."*

Yani sizi, güzel, iyi ve bereketli bir hayatla yaşatırız. Bu konudaki diğer bazı yorumlar ise şöyledir:

- Bu, Allah'ın hırsı yok etmesi ve yanı sıra yeterli rızık vermesidir.

- Bu, mevcuda kanaat etmek demektir.

- Bu, insanı başkasına -özellikle kötüye- muhtaç etmemesi ve kimsenin minneti altına sokmamasıdır.

- Allah'ın, insanı hak sahiplerine iyilik yapmaya muvaffak kılmasıdır.

- İnsan eliyle başkalarının ihtiyaçlarının yerine getirilmesidir.

- İnsanın, gençliğinde günaha bulaşmaması ve Allah'tan gafil olma vasfına sahip olmamasıdır.

- İnsanın, karşılaştığı darlığa da bolluğa da -zorluğa da kolaylığa da- rıza göstermesidir.

( وَيُؤْتِ كُلَّ ذِي فَضْلٍ فَضْلَهُ وَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنِّيَ اَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمٍ كَبِيرٍ ) *"Ve her fazilet sahibine faziletinin karşılığını versin. Eğer yüz çevirirseniz, ben sizin adınıza büyük bir günün azabından korkuyorum."*

İyilikleri kötülüklerinden fazla olan kimseye Allah, yaptığı fazla ibadetlerin karşılığını verir. Kötülükleri iyiliklerinden fazla olan kimseyi ise Allah, hak ettiği kötülüklerin çoğalmasıyla cezalandırır.

Bu konudaki diğer yorumlar ise şöyledir:

- Allah, güzel muvaffakiyet lütfunda bulunduğu kimseyi, hak ettiği lütfuna erdirir ve fazlasını verir.

- Haline ve makamına bakmaması, aksine nefsine ve ondan gelen her şeye hakir bir gözle bakması için Allah'ın, kulu üzerindeki lütfunu ondan gizlemesidir.

- Allah'ın, kulunu beşeriyetin yurtlarında bırakmayıp Allah'ın birliğini görme makamının ibadetlerine yükseltmesi ve onu, beşeriyetin zaaflarından ve takdirin ortaya çıkan sürprizlerinden üzüntü duymaktan arındırmasıdır.

- Anlık olarak olup biten hiçbir şeyin kendisini ürkütmemesidir.

- Allah'ın, kulu için çabasının yöneldiği şeyi gerçekleştirmesi ve onu hak ettiğinin üzerindeki bir yere ulaştırmasıdır.

اِلَى اللّٰهِ مَرْجِعُكُمْ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ﴿٤﴾

4- "Dönüşünüz ancak Allah'adır. O, her şeye hakkıyla gücü yetendir."

Allah'a dönüş yapınca iddialar kesilir, zanlar yok olur, Allah'tan başkasına bağlanan her türlü ümit tükenir, kul mecburiyet sıfatıyla

baş başa kalır ve Allah onun hakkında ezelde geçmiş olan her türlü kaderi icra eder.

اَلَآ اِنَّهُمْ يَثْنُونَ صُدُورَهُمْ لِيَسْتَخْفُوا مِنْهُ اَلَا حِينَ يَسْتَغْشُونَ
ثِيَابَهُمْ يَعْلَمُ مَا يُسِرُّونَ وَمَا يُعْلِنُونَ اِنَّهُ عَلِيمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ ٥

5- "İyi bilin ki onlar, O'ndan gizlenmek için kalplerindeki düşmanlığı gizliyorlar. Yine iyi bilin ki, elbiselerine büründükleri zaman bile, Allah onların gizlediklerini de açığa vurduklarını da bilir. Çünkü O, göğüslerin özünü -kalplerde olanı- hakkıyla bilendir."

Yani onlar, inançlarının içeriğini saklıyor ve Hz. Peygamber (s.a.v.) ile müminlere karşı, açıkladıklarına zıt duygular besliyorlar. Oysa Allah, kalplerine muttalidir ve içlerindeki gizlilikleri bilir. Bu nedenle çarpıtmaları, Allah'a karşı onlara hiçbir fayda vermez. Aynı zamanda Allah, ya vahiy yoluyla bildirerek veya nurun gücünü göstererek peygamberini onların gizledikleri hususlardan haberdar ederdi. Aynı şekilde müminler de, özel olarak feraset sahibi kılınmışlardı. Bu çerçevede Allah tarafından her mümine, durumuyla mütenasip olarak bir hidayet verilmiştir. Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur:

*"Müminin ferasetinden sakının! Çünkü mümin, Allah'ın nuruyla bakar."*

Şiir:

*Gözümle mi görüyorum seni yoksa kalbimle mi?*
*Göze görünmekte kalpteki her şey*

وَمَا مِنْ دَآبَّةٍ فِي الْاَرْضِ اِلَّا عَلَى اللّٰهِ رِزْقُهَا وَيَعْلَمُ مُسْتَقَرَّهَا
وَمُسْتَوْدَعَهَا كُلٌّ فِي كِتَابٍ مُبِينٍ ٦

6- "Yeryüzünde hiçbir canlı yoktur ki, rızkı Allah'a ait olmasın. Her birinin duracakları yeri de, emaneten konulacakları yeri de O bilir. Bunların hepsi açık bir kitaptadır."

Allah, her canlının rızkının muhakkak kendisine ait olduğunu söylemek suretiyle, kalpleri taksimattan duydukları şaşkınlıktan, fikirleri de rızık konusunda düşünme çilesinden kurtararak rahatlatmıştır. Böylece kalpler, rızkın Allah'a ait olduğu gerçeğini kavrayınca, sükunete ermiştir.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Rızık Allah'a ait olduğuna göre, dükkan sahibi, hesap hatası yapmaktadır. Sonra Allah, kendisine ait olan rızkın durumunu açıklamış ve bu amaçla: "*Rızkınız göktedir*" buyurmuştur. Gökte bulunan ise ne çarşıda ve pazarda ne de şarkı ve garbı dolaşmada bulunur.

- Rızıklar, değişik olup her canlının rızkı, özelliğine uygun şekildedir.

- Nefislerin bir rızkı vardır. Bu rızık, vasıtası yaratıklar olan gıdadır. Kalplerin de bir rızkı vardır. Bu da, mucidi Allah olan bir aydınlıktır.

- Ayette Allah, canlıların arzuladıkları rızkın mahiyetinden veya yeterli olan miktardan söz etmemiştir. Bu rızık, Allah'ın iradesine bırakılmış olup kimisi için geniş, kimisi için de dar tutulmuştur.

( وَيَعْلَمُ مُسْتَقَرَّهَا وَمُسْتَوْدَعَهَا كُلٌّ فِي كِتَابٍ مُبِينٍ ) "*Her birinin duracakları yeri de, emaneten konulacakları yeri de O bilir. Bunların hepsi açık bir kitaptadır.*"

Kimisine göre, ayette geçen iki yerden maksat, babaların sulbları ile anaların rahimleri veya dünya ile ahirettir.

Bu konudaki diğer bazı yorumlar da şöyledir:

- Tıpkı çocuğun duracağı yerin ebeveyninin kapısı olduğu gibi müridin duracağı yer de şeyhinin kapısıdır.

- Abidlerin duracakları yer camiler, ariflerin duracakları yer ise ilahi tecellilerin olduğu yerlerdir. Bu itibarla camiler, abidlerin nefislerinin sükunete ereceği yer, tecellilerin yerleri de ariflerin kalplerinin sükunete erdiği yerdir.

- Sevenin duracağı yer, geçerken görebilme ümidiyle, sevgilisinin geçtiği yolun ilk durağıdır.

- Camiler ibadet ehli için ayağın duracağı yer, tecelli yerleri ise arifler için himmetlerin duracağı yerdir. Fakirlerin duracakları yer de, kerem kapısıdır.

- Herkesin barınacağı ve duracağı bir yer vardır. Tevhid ehlinin ise, ne sığınacağı ne duracağı ne barınacağı bir yeri ne de bir evi vardır.

- Nefisler, Allah'ın verdiği muvaffakiyetin, kalpler de Allah tarafından bahşedilen hakikatin emanet edildiği yerlerdir.

- Kalpler, marifetin emanet edildiği yerlerdir. Bu itibarla marifet, kalplerde bir emanettir. Ruhlar, muhabbetin emanet edildiği yerlerdir. Bu itibarla muhabbetler, ruhlarda birer emanettir. Sırlar ise, müşahedelerin emanet edildiği yerlerdir. Bu itibarla müşahedeler, sırlarda birer emanettir.

وَهُوَ الَّذ۪ي خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ ف۪ي سِتَّةِ اَيَّامٍ وَكَانَ عَرْشُهُ
عَلَى الْمَٓاءِ لِيَبْلُوَكُمْ اَيُّكُمْ اَحْسَنُ عَمَلًا وَلَئِنْ قُلْتَ اِنَّكُمْ مَبْعُوثُونَ
مِنْ بَعْدِ الْمَوْتِ لَيَقُولَنَّ الَّذ۪ينَ كَفَرُوٓا اِنْ هٰذَٓا اِلَّا سِحْرٌ مُب۪ينٌ ٧

7- "O, hanginizin amelinin daha güzel olacağı konusunda sizi imtihan için, henüz arşı su üstünde iken gökleri ve yeri altı gün içinde yaratandır. Böyle iken: 'Ölümden sonra şüphesiz diriltileceksiniz' desen, inkârcılar: 'Mutlaka bu, apaçık bir büyüdür' derler."

Amellerin en güzeli, emre uygun davranıştır. Bu arada Allah, hanginizin amelinin daha çok olacağından söz etmemiştir.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Amellerin en güzeli, sahibi en çok ihlaslı olandır.

- İnsanların amel bakımından en güzel olanı, amellerini görmekten en çok uzak durandır.

- Amellerin en güzeli, sahibinin küçümseyici gözle baktığı ameldir.

- Amellerin en güzeli, sahibinin, karşılık istemediği ameldir.

- Amellerin en güzeli, Allah'ı görmede gark olduğu için, sahibinin farkında olmadığı ameldir.

( وَلَئِنْ قُلْتَ اِنَّكُمْ مَبْعُوثُونَ مِنْ بَعْدِ الْمَوْتِ لَيَقُولَنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا اِنْ هٰذَا اِلَّا سِحْرٌ مُبِينٌ ) *" 'Ölümden sonra şüphesiz diriltileceksiniz' desen inkârcılar: 'Mutlaka bu, apaçık bir büyüdür' derler."*

Onlar, öldükten sonra dirilmeyi uzak buldular. Çünkü bilgileri, Hakk'ın kudretinin kemaline dair hakikati idrakte yetersiz kalmıştı. Şayet bunu bilselerdi, öldükten sonra dirilmeyi gerçekleştirmenin zor, takdirinin de muhal olmadığına inanacaklardı.

وَلَئِنْ اَخَّرْنَا عَنْهُمُ الْعَذَابَ اِلٰى اُمَّةٍ مَعْدُودَةٍ لَيَقُولُنَّ مَا يَحْبِسُهُ اَلَا يَوْمَ يَأْتِيهِمْ لَيْسَ مَصْرُوفًا عَنْهُمْ وَحَاقَ بِهِمْ مَا كَانُوا بِهِ يَسْتَهْزِؤُنَ ﴿٨﴾

8- "Andolsun, biz onlardan azabı belirli bir süreye kadar geciktirsek, o zaman da mutlaka: 'Onu ne alıkoyuyor?' derler. İyi bilin ki, azap onlara geleceği gün, kendilerinden bir daha uzaklaştırılmaz ve alay etmekte oldukları şey kendilerini çepeçevre kuşatmış olur."

Yani eğer biz, onlara mühlet verir ve azaplarını ertelersek, hatalarından dönmezler, aksine azabın çabuklaştırılmasını isterler. Şayet cezalarını çabuklaştırırsak, tövbe edip mağfiret dilemezler. Her iki durumda da cehalet onlara hakim olmuş, basiretleri körleşip takdiri göremez ve gayba inanmaz olmuştur. Oysa onlara azap geleceği gün, kendileri için hiçbir kurtuluş ve huzur olmayacaktır.

وَلَئِنْ اَذَقْنَا الْاِنْسَانَ مِنَّا رَحْمَةً ثُمَّ نَزَعْنَاهَا مِنْهُ اِنَّهُ لَيَؤُسٌ كَفُورٌ ﴿٩﴾

9- "Eğer insana tarafımızdan bir rahmet tattırır da sonra bunu ondan çekip alırsak, şüphesiz o ümitsiz ve nankör oluverir."

Katıksız nimetlerin bulanması, bahşedilen iyilik ve lütufların değişmesi, bilinen genel bir durumdur. Bu itibarla hiç kimse yoktur

ki, bundan nasibini almasın. Bu durumda kim, kalbi üzüntüye kapılıp dönüş yapmaz ve her nefeste keder ve hasreti kat kat artmazsa, unutulanlar güruhunda yer alır ve adı, terk edilenler arasında tescil edilir. Kim de yakarış kulpuna tutunur ve alçak gönüllülüğe devam ederse, rahmet sıfatıyla, Hakk'a itaat özleminin kaselerinden kana kana içer, yıkılmış yakınlık hallerini yeniler, batış ve kayboluştan sonra üstüne ikbal güneşi doğar.

Şiir:

*Dağıldı hicran bulutu aşk ayının üzerinden*
*Parladı sabah ışığı gaybın karanlığında*

Kaldı ki hakikatte dünya ile ilgili hallerin bir önemi yoktur ve gelip geçmeleri ya da bulanık bir hal almaları tahsil erbabı nezdinde meşakkatler cümlesinden sayılmaz. Fakat en büyük meşakkat ve felaket, vuslat dalının çürümesi, yakınlık pınarının bulanması, dostluk güneşlerinin batması ve şuhûd erbabının basiretlerinin hastalıklı hale gelmesidir. İşte o zaman kıyametleri kopar ve o durumda göz yaşları dökülür.

Bir yoruma göre, bu insanların alanlarında ayrılık kargaları öttüğü -ayrılık tehlikesinin çanları çaldığı- zaman mana dünyalarından gökyüzüne vaveyla ile feryatları yükselmeye başlar.

Yaydıkları feryatlardan biri de şu dizelerimizde dile gelmiştir:

*Söyleyin, ayrılığı gönlümüzü çalana:*
*Azat edilmesinin mubah olmasıdır geleneğimiz*
*Ayrılıktan sonra (...) Yemin ederim aramızda olana*
*(.......................................................)*

وَلَئِنْ اَذَقْنَاهُ نَعْمَاۤءَ بَعْدَ ضَرَّاۤءَ مَسَّتْهُ لَيَقُولَنَّ ذَهَبَ السَّيِّاٰتُ عَنّ۪ي
اِنَّهُ لَفَرِحٌ فَخُورٌۙ ﴿١٠﴾

10- "Ama kendisine dokunan bir sıkıntıdan sonra, ona bir nimet tattırırsak, mutlaka: 'Kötülükler benden gitti' diyecektir. Çünkü o, şımarık ve böbürlenen biridir."

Rahmetimizin bir tezahürü olarak onlardan sıkıntıyı kaldırdığımız zaman, bize yakınlaşmaya çalışmak yerine, kötülüklerine geri dönerler ve şükrümüzü eda etmek yerine çirkin yüzlerini gösterirler. Biz, onlara mühlet tanıdıkça, kahrımızdan emin olarak davranırlar ve kendilerini kahrımızla ansızın yakalamamızdan korkmazlar.

اِلَّا الَّذٖينَ صَبَرُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ اُولٰٓئِكَ لَهُمْ مَغْفِرَةٌ وَاَجْرٌ كَبٖيرٌ ﴿١١﴾

11- "Ancak sabredip salih amel işleyenler böyle değildir. İşte onlar için bağışlanma ve büyük bir mükafat vardır."

Bir önceki ayette geçen "insan" lafzı ismi cinstir. Bu ayetteki ( إلاّ ) "*illâ*" lafzı da onun istisnasıdır. Kimisine göre de ( إلاّ ) "*illâ*" lafzı ( لكن ) "*lâkin*" anlamındadır. Yani, sıkıntıdan sonra onlara nimet tattırdığımız zaman yoldan çıkarırlar. Ancak müminler böyle olmayıp bunun aksini yaparlar. Çünkü emir ve yasaklar konusunda sabretmeleri ve ibadetlere sarılıp yanlışlıkları terk etmeleri sebebiyle müminler için mağfiret ve ecir vardır. Günahları bağışlanır ve iyiliklerine karşılık sevap verilir. Adı geçen bu iki grup bir değildir.

Şiir:

*Çeşitlidir dostlarımız; vefalıdır kimisi, kimisi de kusurlu*
*Oysa bir değildir seven ile buğzeden*

فَلَعَلَّكَ تَارِكٌ بَعْضَ مَا يُوحٰٓى اِلَيْكَ وَضَٓائِقٌ بِهٖ صَدْرُكَ اَنْ يَقُولُوا لَوْلَٓا اُنْزِلَ عَلَيْهِ كَنْزٌ اَوْ جَٓاءَ مَعَهُ مَلَكٌ اِنَّمَٓا اَنْتَ نَذٖيرٌ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ وَكٖيلٌ ﴿١٢﴾

12- "Belki de sen: 'Ona bir hazine indirilseydi veya beraberinde bir melek gelseydi ya!' demelerinden dolayı sana vahyolunanlardan bir kısmını göz ardı edeceksin ve o yüzden göğsün daralacak. Fakat sen, ancak bir uyarıcısın. Allah ise, her şeye vekildir."

Onlar, Hz. Peygamber'e (s.a.v.), içinde tanrılarına hakaret olmayan bir kitap getirmesini önerdiler. Ancak Allah, ona müşrikler hoşlanmıyor diye, kendisine indirilenleri tebliğ etmekten vazgeçmemesini ve vahyolunanları değiştirmemesini açıkladı. Bu açıklama, söylediklerini yapmasının beklenmediğini ifade etmek içindir. Yani, sana vahyolunanları terk etmek şeklinde bir davranışın olmaz ve gaybtan gelenler sebebiyle göğsün daralmaz. Allah'ın, göğsünü tevhid ile ferahlattığı ve iç dünyasını takdiri görebilmenin nuruyla ışıklandırdığı kimse, nasıl olur da göğüs darlığına yakalanır veya bir emri hoş karşılamama duygusuna kapılır!

Sonra Allah: (اِنَّمَٓا اَنْتَ نَذ۪يرٌ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ وَك۪يلٌ) *"Fakat sen, ancak bir uyarıcısın. Allah ise, her şeye vekildir"* buyurmuştur. Yani sen, peygamberlikle görevlisin ve hakkında kaderin hükümleri uygulanmaktadır.

اَمْ يَقُولُونَ افْتَرٰيهُ قُلْ فَاْتُوا بِعَشْرِ سُوَرٍ مِثْلِه۪ مُفْتَرَيَاتٍ وَادْعُوا مَنِ
اسْتَطَعْتُمْ مِنْ دُونِ اللّٰهِ اِنْ كُنْتُمْ صَادِق۪ينَ ﴿١٣﴾

13- "Yoksa: 'Kur'an'ı uydurdu' mu diyorlar? De ki: 'Eğer doğru söyleyenler iseniz, haydi Allah'tan başka gücünüzün yettiklerini de çağırıp, siz de onun gibi on sûre getirin.' "

Ayette, karşısına dikilen deliller ve hakikati idrak etme ehliyetine sahip kılınması sebebiyle, mükellefin elinden bahaneleri alındığına ve vasıtaya -Hz. Peygamber'e (s.a.v.)- iman etmenin vacip olduğuna dair açıklama vardır. Çünkü ona, kâfirlerin karşı koymaktan aciz kaldıkları Allah tarafından indirilmiş apaçık kitap olan Kur'an'ın açıkladığı mucizeler tahsis edilmiştir.

فَاِلَّمْ يَسْتَج۪يبُوا لَكُمْ فَاعْلَمُوٓا اَنَّمَٓا اُنْزِلَ بِعِلْمِ اللّٰهِ وَاَنْ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا
هُوَ فَهَلْ اَنْتُمْ مُسْلِمُونَ ﴿١٤﴾

14- "Eğer size cevap veremezlerse, bilin ki Kur'an, ancak Allah'ın ilmiyle indirilmiştir ve O'ndan başka hiçbir ilâh yoktur. Artık Müslüman oluyor musunuz?!"

Yani onlar, belagat ehli oldukları halde, eğer Kur'an'ın bir benzerini getirmek konusunda size cevap veremezlerse, bu, onun Allah tarafından olduğundan emin olduklarını gösterir. Fakat bu, hakikati arayıp bulma prensibine uygun gerçekleşmemiştir. (...) Körlük, ancak haktan sapan ve şaşkınlığın karanlığı içerisinde bocalayan kimselerin basiretlerinde olur.

مَنْ كَانَ يُرِيدُ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا وَزِينَتَهَا نُوَفِّ اِلَيْهِمْ اَعْمَالَهُمْ فِيهَا وَهُمْ فِيهَا لَا يُبْخَسُونَ ﴿١٥﴾

15- "Kim yalnız dünya hayatını ve onun zinetini isterse, biz onlara yaptıklarının karşılığını orada tastamam öderiz. Orada onlar, bir eksikliğe uğratılmazlar."

Onlardan kim, vasfı değersizlik olan dünya ile yetinirse, onda geçireceği günlerden kendisini bolca yararlandırırız. Fakat kemale ermelerinin ardından bu günlerin yok olduğunu görecek ve balından sonra acısını tadacaktır.

اُولٰٓئِكَ الَّذِينَ لَيْسَ لَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ اِلَّا النَّارُ وَحَبِطَ مَا صَنَعُوا فِيهَا وَبَاطِلٌ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٦﴾

16- "İşte onlar, kendileri için ahirette ateşten başka bir şey olmayan kimselerdir. Dünyada yaptıkları şeyler, orada boşa gitmiştir. Zaten bütün yapmakta oldukları da boş şeylerdir."

Bunlar, ümitleri suya düşen, beklentilerinin aksine acıları karşılarına çıkan, amelleri boşa giden ve kötü durumları kendilerini kuşatan kimselerdir.

اَفَمَنْ كَانَ عَلٰى بَيِّنَةٍ مِنْ رَبِّهٖ وَيَتْلُوهُ شَاهِدٌ مِنْهُ وَمِنْ قَبْلِهٖ كِتَابُ مُوسٰٓى اِمَامًا وَرَحْمَةً اُولٰٓئِكَ يُؤْمِنُونَ بِهٖ وَمَنْ يَكْفُرْ بِهٖ مِنَ الْاَحْزَابِ فَالنَّارُ مَوْعِدُهُ فَلَا تَكُ فِي مِرْيَةٍ مِنْهُ اِنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَبِّكَ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿١٧﴾

17- “Rabbi katından açık bir delile dayanan kimse, yalnız dünyalık isteyen kimse gibi midir? Kaldı ki bu delili, Rabbinden bir şahit ve bir de ondan önce bir önder ve bir rahmet olarak indirilmiş olan Mûsâ’nın kitabı desteklemektedir. İşte bunlar, Kur’an’a inanırlar. Gruplardan her kim onu inkar ederse, ateş onun varacağı yerdir. Ondan hiç şüphen olmasın. Şüphesiz o, Rabbin tarafından bildirilmiş gerçektir. Fakat insanların çoğu inanmazlar.”

Ayetin lafzında, belagat sanatlarından takdir vardır. Bu takdirle birlikte ayetin başındaki ifade: ( اَفَمَنْ كَانَ عَلٰى بَيِّنَةٍ مِنْ رَبِّهٖ ) *“Açık bir delile dayanan kimse, (açık bir delile dayanmayan kimse gibi) midir?”* anlamında olur. Bunlar bir değildir. Bu arada açık delil, bazıları için ilmin burhanı, bazıları için de kesin ve kararlı emrin izahıdır. Allah onları, başkalarını muttali kılmadığı şeylere muttali kılar.

Şiir:

*Yüzün sayesinde kuşluk güneşidir gecem*
*(.................................................)*
*Gecelerinin karanlığında iken insanlar*
*Aydınlıktayız biz yüzün sayesinde*

Bu itibarla Allah’ın dost edindiği kimse, O’nu müşahede eder. Hadiste şöyle denilmiştir:

*“Allah’ın dostları, o kimselerdir ki, Allah’ı zikretmek istedikleri zaman (...)”*

Allah şöyle buyurmuştur:

( وَلَوْ نَشَآءُ لَاَرَيْنَاكَهُمْ فَلَعَرَفْتَهُمْ بِسِيمٰيهُمْ ) *“Eğer dileseydik, onları sana gösterirdik de sen, onları yüzlerinden tanırdın.”* (Muhammed, 47/30)

وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا اُولٰٓئِكَ يُعْرَضُونَ عَلٰى رَبِّهِمْ
وَيَقُولُ الْاَشْهَادُ هٰٓؤُلَٓاءِ الَّذ۪ينَ كَذَبُوا عَلٰى رَبِّهِمْ اَلَا لَعْنَةُ اللّٰهِ عَلَى
الظَّالِم۪ينَ ﴿١٨﴾

18- "Kim Allah'a karşı yalan uydurandan daha zalimdir?! İşte bunlar, Rablerine arz edilecekler ve şahitler de: 'Rablerine karşı yalan söyleyenler işte bunlardır' diyeceklerdir. Biliniz ki, Allah'ın laneti zalimler üzerinedir."

Kim, gerçek olarak bilmediği bir durumu Allah hakkında iddia ederse o, yalan yere Allah'a iftira etmiş ve gazabını hak etmiş olur. Cezası ise hiçbir halde bereketten nasibini alamamasıdır. Sonra Allah, şahitleri onun kusurlarına muttali kılar ve böylece halkın arasında kendisini rezil eder. Söz konusu şahitler, velilerin kalpleridir. Kalplerin, ret şeklinde aleyhinde şahitlik ettikleri kimse ise, Allah katında kabul görmez.

اَلَّذِينَ يَصُدُّونَ عَنْ سَبِيلِ اللّٰهِ وَيَبْغُونَهَا عِوَجًا وَهُمْ بِالْاٰخِرَةِ هُمْ كَافِرُونَ ﴿١٩﴾

19- "Onlar, halkı Allah yolundan alıkoyan, onu eğri ve çelişkili göstermek isteyen kimselerdir. Hem de onlar, ahireti inkâr edenlerin ta kendileridir."

Bu, Allah'a yalan iftirasında bulunan kimselerin vasıfları cümlesindendir. Bu kimselerin, halkı Allah yolundan alıkoyma biçimlerinden biri de dinin hükümlerini ihlal eden bazı haller sergilemeleridir. Onlar, bu durumu tarikatta büyük günah olarak görmemekte ve kendilerine itirazda bulunan güçsüz kimselere, bunda kendileri için ruhsat bulunduğunu telkin ederek hep sapmış hem de saptırmış olmaktadırlar. Allah yolundan alıkoymalarının diğer bir şekli de, insanları aldatıp hataya düşürmeleridir. Ayrıca insanların elindeki dünya malından yararlanırlar, hiçbir şekilde hak etmedikleri bir şeyi almaktan utanmazlar ve Allah'ın dini üzerinden sahtekarlık yaparlar.

اُولٰٓئِكَ لَمْ يَكُونُوا مُعْجِزِينَ فِي الْاَرْضِ وَمَا كَانَ لَهُمْ مِنْ دُونِ اللّٰهِ مِنْ اَوْلِيَٓاءَ يُضَاعَفُ لَهُمُ الْعَذَابُ مَا كَانُوا يَسْتَطِيعُونَ السَّمْعَ وَمَا كَانُوا يُبْصِرُونَ ﴿٢٠﴾

20- “Onlar, yeryüzünde Allah’ı âciz bırakabilecek değillerdir. Onların, Allah’tan başka sığınabilecekleri bir yardımcıları da yoktur. Azap, onlar için kat kat artırılacaktır. Çünkü onlar, gerçekleri işitmeye tahammül edemiyorlar, hem de görmüyorlardı.”

Nitelikleri bu olan kimseler, ticaretlerinde kazançlı olamazlar, istedikleri gayeye ulaşamazlar, böylece haktan geri kalırlar ve Allah ile birlikteliğin yerine koydukları halkın beraberliğinde bereket bulamazlar. Bunlar, alışverişlerinde zarar etmiş, metaları heder olmuş, değerleri kalmamış, ümitsizlik ve mahrumiyeti tatmışlardır.

اُو۬لٰٓئِكَ الَّذ۪ينَ خَسِرُوٓا اَنْفُسَهُمْ وَضَلَّ عَنْهُمْ مَا كَانُوا يَفْتَرُونَ ﴿٢١﴾
لَا جَرَمَ اَنَّهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ هُمُ الْاَخْسَرُونَ ﴿٢٢﴾

21, 22- “İşte bunlar, kendilerini ziyana uğratan kimselerdir. Uydurmakta oldukları şeyler de, kendilerini yüz üstü bırakıp kaybolup gitmiştir. Şüphesiz bunlar, ahirette en çok ziyana uğrayanlardır.”

İster istemez ahirette en ağır zarara uğrayanlar ve nimetlerden en az faydalananlar onlardır.

اِنَّ الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ وَاَخْبَتُوٓا اِلٰى رَبِّهِمْ اُو۬لٰٓئِكَ اَصْحَابُ الْجَنَّةِ هُمْ ف۪يهَا خَالِدُونَ ﴿٢٣﴾

23- “İman edip salih ameller işleyen ve Rablerine gönülden bağlananlara gelince, işte onlar cennetliklerdir. Onlar, orada ebedî kalacaklardır.”

( إخبات ) “*İhbât*” lafzı, kesintisiz tevazu yoluyla kalben Allah korkusunu yaşamaktır. Bunun alametlerinden biri de, devamlı gönülden yardım dilemek suretiyle kaderin hükmüne teslim olmaktır.

مَثَلُ الْفَرِيقَيْنِ كَالْاَعْمٰى وَالْاَصَمِّ وَالْبَصِيرِ وَالسَّمِيعِ هَلْ
يَسْتَوِيَانِ مَثَلًا اَفَلَا تَذَكَّرُونَ ﴿٢٤﴾

24- "Bu iki zümrenin durumu, kör ve sağır ile gören ve işiten kimseler gibidir. Bunların durumları, hiç birbirlerine denk olur mu? Hâlâ düşünmez misiniz?"

Kâfirin küfründeki durumu, körün ve sağırın durumu gibidir. Müminin imanındaki durumu ise işiten ve gören kimsenin durumu gibidir. Ayetin zahiri tefsir yönünden izahı budur. İşaret tefsiri bakımından ise kör, kalbiyle göremeyen, sağır da kalbinin kulağıyla işitemeyen kimse demektir. Böylece o, ne aradığı delillerle Allah'ın fiillerindeki takdirin sırrını görebilir, ne sezginin nuruyla kalbine yansıyabilecek gaybın tecellilerini sezebilir ne kabul kulağıyla dinin gereklerini kabul eder ne de hakkaniyetin gereği olarak, iç alemine yansıyan hakikat işaretleri şeklindeki zorunlu yükümlülüklere boyun eğer.

Görene gelince o, Allah'ın fiillerini ilmelyakîn, sıfatlarını aynelyakîn, zatını da hakkalyakîn ile görür. Görünmez durumlar gözünün önünde, gizli haller de keşfi altındadır. Bir de işitenin özelliği, nefsin fısıltılarını ve şeytanın vesveselerini duymamasıdır. Böylece o, ilmin vasıtalarıyla dini, marifetin ilhamlarıyla da kaderi duyar. Sonra Hak'tan gelen hitapla da mana alemini keşfeder. İşte bunlar aynı değiller ve aynı yolda buluşmazlar.

Şiir:

*Doğuya gitti sevgili, bense gittim batıya*
*Ne zaman buluşur doğuya gidenle batıya giden*

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا نُوحًا اِلٰى قَوْمِهِ اِنّ۪ي لَكُمْ نَذ۪يرٌ مُب۪ينٌ ﴿٢٥﴾ اَنْ لَا تَعْبُدُٓوا
اِلَّا اللّٰهَ اِنّ۪يٓ اَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمٍ اَل۪يمٍ ﴿٢٦﴾

**25, 26- "Andolsun, biz Nûh'u kavmine peygamber olarak gönderdik. Onlara şöyle dedi: 'Ben sizin için apaçık bir uyarıcıyım. Allah'tan başkasına ibadet ve kulluk etmeyin. Doğrusu ben, sizin adınıza elem dolu bir günün azabından korkuyorum.' "**

Hz. Nûh, peygamberlerin en uzun ömürlü ve sıkıntısı en şiddetli olanı idi. "Nûh" ismiyle adlandırılması, kendi haline ettiği feryadın çokluğundan dolayıdır. Bunun sebebi, Hz. Nuh'un yanından geçtiği köpeğe: "Bu ne çirkin!" demesi üzerine Allah'ın kendisine: "Bundan daha güzelini yaratsana!" diye vahiy indirmesidir. Bu olay üzerine Hz. Nûh, kendi haline ağlamış ve bu denli feryat etmiştir. Durum bu iken, acaba mükellefiyet süresince ömründen geçen hiçbir günü hatırlamayan ve Allah ile kayda değer bir dostluk bağı kurmayan kimsenin hali nasıl olur?!

فَقَالَ الْمَلَأُ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ قَوْمِهِ مَا نَرٰيكَ اِلَّا بَشَرًا مِثْلَنَا وَمَا
نَرٰيكَ اتَّبَعَكَ اِلَّا الَّذِينَ هُمْ اَرَاذِلُنَا بَادِيَ الرَّاْيِ وَمَا نَرٰى لَكُمْ عَلَيْنَا
مِنْ فَضْلٍ بَلْ نَظُنُّكُمْ كَاذِبِينَ ﴿٢٧﴾

**27- "Kavminin inkâr eden ileri gelenleri: 'Biz, senin ancak bizim gibi bir insan olduğunu görüyoruz. İlk bakışta sana uyanların da ancak en aşağılıklarımızdan ibaret olduğunu görüyoruz. Sizin bize karşı herhangi bir üstünlüğünüzü de görmüyoruz. Aksine sizin yalancı kimseler olduğunuzu sanıyoruz' dediler."**

Şeklen benzediği için onlar, Hz. Nûh'un peygamber olabileceğini inkâr ettiler ve aralarındaki farkın, şekille değil, kişilikle olduğunu bilemediler. Sonra Allah: ( وَمَا نَرٰيكَ اتَّبَعَكَ اِلَّا الَّذِينَ هُمْ اَرَاذِلُنَا بَادِيَ الرَّاْيِ ) "*İlk bakışta sana uyanların da ancak en aşağılıklarımızdan ibaret olduğunu görüyoruz*" buyurmuştur. Kavmi, onun taraftarlarına küçümseyici bir gözle bakmış ve az birikimli olduklarını söylemişlerdir. Oysa kim, kendini üstün gördüğü için diğerini küçümserse, muhakkak Allah başına bir şeyler musallat eder ve ona değersizliğin züllünü tattırır. Nitekim ayrıcalık, yapıyla değil mahiyetledir.

Şiir:

*Görürsün çelimsiz adamı ve küçümsersin onu*
*Oysa bir aslan vardır elbiselerinin içinde*
*Şayet az değerliysem kötüleriniz arasında*
*Çok değerliyim ben seçkinleriniz içinde*

قَالَ يَا قَوْمِ اَرَاَيْتُمْ اِنْ كُنْتُ عَلٰى بَيِّنَةٍ مِنْ رَبّ۪ي وَاٰتٰين۪ي رَحْمَةً مِنْ
عِنْدِه۪ فَعُمِّيَتْ عَلَيْكُمْ اَنُلْزِمُكُمُوهَا وَاَنْتُمْ لَهَا كَارِهُونَ ﴿٢٨﴾

28- "Nûh dedi ki: 'Ey kavmim! Söyleyin bakalım; şayet ben Rabbimden gelen apaçık bir delil üzerinde isem ve O, kendi katından bana bir rahmet vermiş de siz ona karşı kör kalmışsanız, onu istemediğiniz halde, biz sizi ona zorlayacak mıyız?' "

Bakanlar kördür diye sabahın aydınlığına, kullananlar çocuktur diye de kılıcın keskinliğine bir halel gelmez. Peygamber dahi olsa, Allah'ın dalalete düşürdüğü kimseyi hidayete erdirmeye bir beşerin gücü nasıl yeter! Heyhat! Cahile nasihat fayda vermez ve müzmin günahkara dönük vaaz başarılı olmaz.

وَيَا قَوْمِ لَٓا اَسْـَٔلُكُمْ عَلَيْهِ مَالًا اِنْ اَجْرِيَ اِلَّا عَلَى اللّٰهِ وَمَٓا اَنَا۬ بِطَارِدِ
الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا اِنَّهُمْ مُلَاقُوا رَبِّهِمْ وَلٰكِنّ۪ٓي اَرٰيكُمْ قَوْمًا تَجْهَلُونَ ﴿٢٩﴾

29- "Ey kavmim! Buna karşı ben sizden herhangi bir mal da istemiyorum. Benim mükafatım ancak Allah'a aittir. Ben, o iman edenleri kovacak da değilim. Çünkü onlar Rablerine kavuşacaklardır. Fakat ben, sizin bilgisizce davranan bir toplum olduğunuzu görüyorum."

Peygamberlerin prensibi, peygamberliklerine karşılık olarak ücret istememeleri ve kendileri için insanlar katında bir itibar beklememeleridir. Amelleri, Allah için olup Allah'tan başkasından hiçbir şey istemezler. Bu itibarla, alimlerden her kim onların yollarını izlerse, onların zümresinde haşrolunur. Kim de yola gelmesine karşılık olarak bir kimseden bir şey alır veya iyiliğini makam edinme

vesilesi yaparsa, Allah'tan itibarsızlık ve değersizlikten başka bir şey göremez.

وَيَا قَوْمِ مَنْ يَنْصُرُنِي مِنَ اللّٰهِ اِنْ طَرَدْتُهُمْ اَفَلَا تَذَكَّرُونَ ﴿٣٠﴾

30- "Ey kavmim! Eğer ben onları kovarsam, beni Allah'tan kim koruyabilir? Hiç düşünmüyor musunuz?"

Dünyada, kıyamet günü Allah ile beraber olacak olan fakirlerle oturmak, ret ehli olan zengin kimselerle oturmaktan daha faydalıdır. Bir de kim, Allah'ın kendine yakın kıldığı kimseyi kovarsa, dünyasında perişanlığa, ahiretinde de değersizliğe müstahak olur.

وَلَٓا اَقُولُ لَكُمْ عِنْدِي خَزَٓائِنُ اللّٰهِ وَلَٓا اَعْلَمُ الْغَيْبَ وَلَٓا اَقُولُ اِنِّي مَلَكٌ وَلَٓا اَقُولُ لِلَّذِينَ تَزْدَرِٓي اَعْيُنُكُمْ لَنْ يُؤْتِيَهُمُ اللّٰهُ خَيْرًا اَللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا فِٓي اَنْفُسِهِمْ اِنِّٓي اِذًا لَمِنَ الظَّالِمِينَ ﴿٣١﴾

31- "Size ben: 'Allah'ın hazineleri yanımdadır' demiyorum. Gaybı da bilmem. 'Ben, bir meleğim de' demiyorum. Sizin hor gördüğünüz kimseler için: 'Allah, onlara asla hiçbir hayır vermez' de diyemem. Allah, onların içindekini daha iyi bilir. Böyle bir şey söylersem, o zaman ben gerçekten zalimlerden olurum."

Bana yüklenen peygamberlik görevimden bir adım bile şaşmam, yükümlü kılındıklarımın sınırını aşmam, bana emredilene bir şey ilave etmem ve bana bildirdiklerinin dışına çıkmam. Aksine beni görevlendirdikleri noktada şahidimle birlikte dikilip dururum. Kuşkusuz Allah'ın velileri, elbiseleri içerisindedirler ve onları, mana alemlerinde kendilerine yaklaşanlardan başkası göremez. Hallerini de en iyi Allah bilir. Özetle: *"Gökyüzündeki kuşlar, emsallerinin arasına inerler."*

قَالُوا يَا نُوحُ قَدْ جَادَلْتَنَا فَاَكْثَرْتَ جِدَالَنَا فَاْتِنَا بِمَا تَعِدُنَٓا اِنْ كُنْتَ مِنَ الصَّادِقِينَ ﴿٣٢﴾

32- "Dediler ki: 'Ey Nûh! Bizimle tartıştın ve tartışmayı uzattın. Eğer doğru söyleyenlerden isen, haydi kendisiyle bizi tehdit ettiğin azabı getir.' "

Hz. Nûh, onlara öyle deliller açıkladı ki, eğer onları dikkatle düşünselerdi kesin imana sahip olacaklardı. Lakin onlar, inkârda ısrar ettiler ve vaat edilen hususlardan görmediklerine inanmadılar.

قَالَ اِنَّمَا يَاْتِيكُمْ بِهِ اللّٰهُ اِنْ شَٓاءَ وَمَٓا اَنْتُمْ بِمُعْجِزِينَ ﴿٣٣﴾

33- "Nûh dedi ki: 'Onu size, dilerse ancak Allah getirir ve siz, Allah'ı aciz bırakamazsınız.' "

Hz. Nûh, kulluğunu itiraf etmiş, kendi güç ve kuvvetinden arınmış ve durumu Allah'ın iradesine havale etmiştir. İddiada haddini aşmayan kimse, insaflı davranmış olur. Bu arada peygamberler, her ne kadar mucizeleriyle insanlara meydan okusalar da hadlerinin sınırında durmak zorunda olduklarını itiraf ederler.

وَلَا يَنْفَعُكُمْ نُصْحٖيٓ اِنْ اَرَدْتُ اَنْ اَنْصَحَ لَكُمْ اِنْ كَانَ اللّٰهُ يُرٖيدُ اَنْ يُغْوِيَكُمْ هُوَ رَبُّكُمْ وَاِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ﴿٣٤﴾

34- "Ben size öğüt vermek istesem de, eğer Allah sizi azdırmak istemişse, öğüdüm size fayda vermez. O, sizin Rabbinizdir ve O'na döndürüleceksiniz."

Kim, Allah'ın, inayeti gereğince verdiği bilgiden yararlanmazsa, sonuç itibariyle ona mahlukun öğüdü fayda vermez.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Allah'ın ezelde vuslata erdirmediği kimseye dünya hayatında başkasının öğüdü fayda vermez.

- Ezelde dalaletine hükmedilen kimseye öğüt ve delil serd etmek nereden fayda verir?!

- Ezeldeki taksimatın elvermediği kimseye mahlukların öğüdü fayda vermez.

( اِنْ كَانَ اللّٰهُ يُر۪يدُ اَنْ يُغْوِيَكُمْ ) *"Eğer Allah sizi azdırmak istemişse..."*

Hidayet ile dalaletin bir araya gelmesi imkansızdır. Bu nedenle, Allah bir topluluk hakkında dalalet dilediği zaman ona hidayet ehli demek doğru olmaz.

Sonra Allah, Rab oluşunun gereği olarak, kulları hakkında dilediğini yapabileceğini alimlerin bilmeleri için bu ayetteki muradını: ( هُوَ رَبُّكُمْ ) *"O, sizin Rabbinizdir"* sözüyle açıklamıştır.

اَمْ يَقُولُونَ افْتَرٰيهُ قُلْ اِنِ افْتَرَيْتُهُ فَعَلَيَّ اِجْرَام۪ي وَاَنَا بَر۪يٓءٌ مِمَّا تُجْرِمُونَ ﴿٣٥﴾

35- "Yoksa: 'Kur'an'ı kendisi uydurdu' mu diyorlar? De ki: 'Eğer onu uydurmuşsam, suçum bana aittir. Ben de sizin işlediğiniz suçlardan uzağım.' "

Beni nasıl nitelerseniz niteleyin, şüphesiz ben, Allah'a icabet ederim. Aynı zamanda her kes, arkadaşının fiilinden değil, kendi fiilinden sorumludur.

وَاُو۫حِيَ اِلٰى نُوحٍ اَنَّهُ لَنْ يُؤْمِنَ مِنْ قَوْمِكَ اِلَّا مَنْ قَدْ اٰمَنَ فَلَا تَبْتَئِسْ بِمَا كَانُوا يَفْعَلُونَ ﴿٣٦﴾

36- "Nûh'a vahyolundu ki: 'Kavminden daha önce iman etmiş olanlardan başka, artık hiç kimse iman etmeyecek. O halde onların yapmakta oldukları şeylerden dolayı üzülme.' "

Allah, Hz. Nûh'a (as), onların imanına ihtiyacı bulunmadığını bildirmiştir. Bu amaçla ona, kendileriyle ilgili hükümleri ve içlerinden iman etmeyenler hakkında ezelden şakilik hükmü verildiğini açıklamıştır. İşte bunun üzerine Hz. Nûh, helak olmaları için beddua etmiştir.

Bir yoruma göre de, imanlarında ümit olduğu sürece, Hz. Nûh kendilerine beddua etmemiş ancak aksi gerçekleşince helak olmalarına dair dileği dile getirmiştir.

وَاصْنَعِ الْفُلْكَ بِاَعْيُنِنَا وَوَحْيِنَا وَلَا تُخَاطِبْنِي فِي الَّذِينَ ظَلَمُوا اِنَّهُمْ مُغْرَقُونَ ﴿٣٧﴾

37- "Gözetimimiz altında ve vahyimize göre gemiyi yap. Zulmedenler hakkında bana bir şey söyleme. Çünkü onlar, suda boğulacaklardır."

Yani, emrimizle gemiyi yapmak suretiyle, kulluğun şartını yerine getir, bizi göreceğine ve seni görmekte olduğumuza muhakkak inan. Her kim, Allah'ın kendisini gördüğünü bilir, özellikle de O'nun yegane icra sahibi olduğuna hakikaten inanırsa, bu takdirde o, ne kendini ne de başkasını düşünür.

Bir de Allah, Hz. Nûh'a şöyle demiştir: Edep sınırını gözet! Bir kimseye şefaat konusunda iznimiz olmadıkça, onlar hakkında bizimle konuşma!

Bu konudaki diğer iki yorum şöyledir:

- Takdir denizinin dalgaları çarpışırken, boğulacaklarına dair hüküm ezelde kesinleşmiş idi. Böylece, Allah'ın, kendi hükmüyle ehil kılıp inayet gemisinde taşıdığı kimseler hariç, hepsi kudretin denizlerinde boğulmuş oldular.

- Hz. Nûh'un kavmi, suyun denizlerinde boğulanlardan idi. Daha önce ise onlar, kudretin denizlerinde boğulmuşlardı.

وَيَصْنَعُ الْفُلْكَ وَكُلَّمَا مَرَّ عَلَيْهِ مَلَاٌ مِنْ قَوْمِهِ سَخِرُوا مِنْهُ قَالَ اِنْ تَسْخَرُوا مِنَّا فَاِنَّا نَسْخَرُ مِنْكُمْ كَمَا تَسْخَرُونَ ﴿٣٨﴾

38- "Nûh gemiyi yapıyordu. Kavminden ileri gelenler, her ne zaman yanına uğrasalar, onunla alay ediyorlardı. De ki: 'Bizimle

alay ediyorsanız, sizin bizimle alay ettiğiniz gibi, biz de sizinle alay edeceğiz.' "

Allah'ın emrine kesin olarak inanınca, yükümlü kılındığı görevi yerine getirirken duyduğu sözleri umursamadı ve vaat edilene tasdik gözüyle baktı. Böylece gerçekleşmeden önce durumu görmüş gibi oldu.

فَسَوْفَ تَعْلَمُونَ مَنْ يَأْتِيهِ عَذَابٌ يُخْزِيهِ وَيَحِلُّ عَلَيْهِ عَذَابٌ مُقِيمٌ ﴿٣٩﴾

39- "Artık geldiği kimseyi rezil eden azabın kime geleceğini, kimin üzerine sürekli bir azabın ineceğini ileride anlayacaksınız."

Allah'ın takdiri karşısında hiçbir mahluka itaat olamaz. Ancak Allah'ın hükmüyle taşıyabileceği şeyi, O'nun lütfuyla üstlenen kimse hariç.

حَتّٰٓى اِذَا جَٓاءَ اَمْرُنَا وَفَارَ التَّنُّورُ قُلْنَا احْمِلْ فِيهَا مِنْ كُلٍّ زَوْجَيْنِ اثْنَيْنِ وَاَهْلَكَ اِلَّا مَنْ سَبَقَ عَلَيْهِ الْقَوْلُ وَمَنْ اٰمَنَ وَمَٓا اٰمَنَ مَعَهُٓ اِلَّا قَلِيلٌ ﴿٤٠﴾

40- "Nihayet emrimiz gelip tandır kaynamaya başlayınca, Nûh'a dedik ki: 'Her cins canlıdan birer çift, bir de kendileri hakkında daha önce hüküm verilmiş olanlar dışındaki ailen ile iman edenleri ona yükle.' Ama, onunla beraber sadece pek az kimse iman etmişti."

Onlar, Hz. Nûh'un, kendilerini uyardığı azabı, uzak bir ihtimal kabul ederek uzun süre beklediler. Bu arada günler uzadıkça küfürleri daha da arttı ve onu yalanlamaya kesin karar verdiler. Sonra kavmine vaat edilen uyarı, ansızın geliverip hoşlanmadıkları durum ortaya çıkınca su, yanan tandırdan kaynadı ve gökyüzü, akan yağmuru cömertçe salıverdi.

( قُلْنَا احْمِلْ فِيهَا مِنْ كُلٍّ زَوْجَيْنِ اثْنَيْنِ ) *"Dedik ki: 'Her cins canlıdan birer çift ona yükle.'"*

Bu, neslin devam ettirilmesi için yapılmıştır. Konuyla ilgili diğer yorumlar ise şöyledir:

- Bazen güvenin kaynağı, sakıncalı duruma da kaynaklık edebilir. Zira İblis, Hz. Nûh'a gelip: *"Beni gemiye al"* demiş, ancak Hz. Nûh onu kabul etmeyince İblis kendisine şöyle demiştir:

*"Malum güne kadar mühlet verilenlerden olduğumu bilmiyor musun? Bugün geminden başka da yerim yoktur."* Bunun üzerine Allah, Hz. Nûh'a vahiy indirerek İblis'i gemiye almasını emretmiştir.

- Hz. Nûh'un yanında oğluna yer yokken, en katı düşmanı olan İblis'i yanına alması emredildi. Bu ise, ilahi takdir sırlarının, yaratıkların ölçülerine göre gerçekleşmediğine işaret etmektedir. Sanki Hz. Nûh'a şöyle denilmiş olmaktadır: *"Ey Nûh! Oğlunu gemiye alma, ama düşmanını al! Zira Allah, dilediğini yapar."*

( وَاَهْلَكَ اِلَّا مَنْ سَبَقَ عَلَيْهِ الْقَوْلُ ) *"Kendileri hakkında daha önce hüküm verilmiş olanlar hariç."*

Daha önce verilmiş olan söz konusu hüküm, bu kimselerin şakiliğine dairdir. Bu, aynı zamanda ezelî hükmün reddedilemez olduğunu, Allah'a karşı konulamayacağını, düşmanlık yapılamayacağını ve Rabbinin uzaklaştırdığı kimseyi, hiçbir uyarı, iyilik ve vaazın yakınlaştıramayacağını göstermektedir.

( وَمَنْ اٰمَنَ وَمَٓا اٰمَنَ مَعَهُٓ اِلَّا قَل۪يلٌ ) *"Ama, onunla beraber sadece pek az kimse iman etmişti."*

Lakin Allah, onun neslinden kurtardığı kimseleri bereketli kıldı ve kavminden helak ettiklerinin helakinden sonra dünyada bir halel meydana gelmedi.

وَقَالَ ارْكَبُوا ف۪يهَا بِسْمِ اللّٰهِ مَجْرٰيهَا وَمُرْسٰيهَا اِنَّ رَبّ۪ي لَغَفُورٌ رَح۪يمٌ ﴿٤١﴾

41- "Nûh: 'Binin ona. Onun yüzüp gitmesi de durması da, Allah'ın adıyladır. Şüphesiz Rabbim çok bağışlayandır, çok merhamet edendir' dedi."

Hz. Nûh anladı ki yağan yağmurdan kurtulması, ne denli çeşitli ve çok olsalar da tedbirlerle değildir. Bu itibarla selameti Allah'ın adıyla, kurtuluşu ve rahatı O'na tevekkül ile huzuru ve afiyeti de O'nun lütfuyladır.

وَهِيَ تَجْر۪ي بِهِمْ ف۪ي مَوْجٍ كَالْجِبَالِ وَنَادٰى نُوحٌ ابْنَهُ وَكَانَ ف۪ي مَعْزِلٍ يَا بُنَيَّ ارْكَبْ مَعَنَا وَلَا تَكُنْ مَعَ الْكَافِر۪ينَ ﴿٤٢﴾

42- "Gemi, dağlar gibi dalgalar arasında onları götürüyordu. Nûh, ayrı bir yere çekilmiş olan oğluna: 'Yavrucuğum, bizimle beraber sen de bin, inkârcılarla birlikte olma!' diye seslendi."

Oğlu, hem zahirde hem de Hz. Nûh ve kavmi için hükme bağlanmış olan ezeli takdirin iç aleminde ayrı bir yerde idi. Bu arada Hz. Nûh, şefkat diliyle konuşup: ( يَا بُنَيَّ ارْكَبْ مَعَنَا وَلَا تَكُنْ مَعَ الْكَافِر۪ينَ ) *"Yavrucuğum, bizimle beraber sen de bin, inkârcılarla birlikte olma!"* diye seslendiği zaman oğluna: *"Kâfirlerden olma!"* dememiştir. Çünkü oğlu, ona iki yüzlülük yapıyordu. Bunun üzerine Hz. Nûh'a şöyle denildi: *"Ey Nûh! O kâfirlerle beraberdir. Çünkü o, ezeldeki hükmümüzde kafirlerdendir."*

قَالَ سَاٰو۪ي اِلٰى جَبَلٍ يَعْصِمُن۪ي مِنَ الْمَٓاءِ قَالَ لَا عَاصِمَ الْيَوْمَ مِنْ اَمْرِ اللّٰهِ اِلَّا مَنْ رَحِمَ وَحَالَ بَيْنَهُمَا الْمَوْجُ فَكَانَ مِنَ الْمُغْرَق۪ينَ ﴿٤٣﴾

43- "O: 'Ben, kendimi sudan koruyacak bir dağa sığınacağım' dedi. Nûh: 'Bugün Allah'ın rahmet ettikleri hariç, O'nun azabından korunacak hiç kimse yoktur' dedi. Derken aralarına dalga giriverdi de oğlu boğulanlardan oldu."

Hz. Nûh'un oğlu iki yönden hata yaptı: Helaki sudan bildi. Oysa o Allah'tandı. Kurtuluşu ve korunmayı da dağdan bildi. Oysa o da Allah'tan idi. Nitekim bunun üzerine Hz. Nûh kendisine: *"Bugün Allah'ın azabından korunacak hiç kimse yoktur"* dedi.

Bu arada ayette geçen (لَا عَاصِمَ الْيَوْمَ مِنْ اَمْرِ اللّٰهِ) ifadesi, iki türlü yorumlanmıştır:

- Yani, Allah'tan korunacak hiç kimse yoktur.

- Hiç kimse, bir diğerini Allah'ın emrinden koruyamaz. Ancak Rabbi kendisine rahmet eden kimse bundan korunur. Onun da tek bir koruyanı vardır ki o da Allah'tır.

Hz. Nûh, oğluyla bu konuşmaları yaparken su dalgaları gelerek aralarına girmiş ve oğlu, boğulanlardan olmuştur. Böylece Hz. Nûh'un ne vaazı ve nasihati oğluna fayda vermiş ne de sözü ve hatırlatması onu kurtarmıştır. Bir yoruma göre Hz. Nûh'a şöyle de denilmiş olabilir: *"Ey Nûh! Biz senin davetinden dünyayı haberdar ettik. O halde oğlunun bunu bilip bilmemesinden sen sorumlu değilsin."*

وَقِيلَ يَٓا اَرْضُ ابْلَعِي مَٓاءَكِ وَيَا سَمَٓاءُ اَقْلِعِي وَغِيضَ الْمَٓاءُ
وَقُضِيَ الْاَمْرُ وَاسْتَوَتْ عَلَى الْجُودِيِّ وَقِيلَ بُعْدًا لِلْقَوْمِ
الظَّالِمِينَ ﴿٤٤﴾

44- " 'Ey yeryüzü! Yut suyunu. Ey gök! Tut suyunu' denildi. Su çekildi, iş bitirildi. Gemi de Cûdî'ye oturdu ve: 'Zalimler, Allah'ın rahmetinden uzak olsun!' denildi."

Hz. Nûh'un oğlu boğulunca dalga durdu, su çekildi ve gök suyu tuttu. Sanki tufandan amaç, Hz. Nûh'un oğlunun boğulması idi.

Şiir:

*Şaştım feleğin aramızdaki gidiş gelişine*
*Durdu felek sona erince aramızda olup bitenler*

وَنَادٰى نُوحٌ رَبَّهُ فَقَالَ رَبِّ اِنَّ ابْنِي مِنْ اَهْلِي وَاِنَّ وَعْدَكَ الْحَقُّ
وَاَنْتَ اَحْكَمُ الْحَاكِمِينَ ﴿٤٥﴾ قَالَ يَا نُوحُ اِنَّهُ لَيْسَ مِنْ اَهْلِكَ اِنَّهُ
عَمَلٌ غَيْرُ صَالِحٍ فَلَا تَسْئَلْنِ مَا لَيْسَ لَكَ بِهٖ عِلْمٌ اِنّ۪ٓي اَعِظُكَ اَنْ
تَكُونَ مِنَ الْجَاهِلِينَ ﴿٤٦﴾

45, 46- "Nûh, Rabbine seslenip şöyle dedi: 'Rabbim! Şüphesiz oğlum da ailemdendir. Senin va'din elbette gerçektir. Sen de, hükmedenlerin en iyi hükmedenisin.' Allah dedi ki: 'Ey Nûh! O, asla senin ailenden değildir. Onun yaptığı, iyi olmayan bir iştir. O halde, hakkında hiçbir bilgin olmayan bir şeyi benden isteme! Ben, sana cahillerden olmamanı öğütlerim.' "

Hz. Nûh, oğlu hakkında Allah'a hitap etti ve şefkat dileyerek: ( اِنَّ ابْنِي مِنْ اَهْلِي ) *"Şüphesiz oğlum da ailemdendir"* dedi. Bunun üzerine Allah ona şöyle dedi: *"Nesep bağı bakımından senin ailenden olsa bile, o kaderi bakımından vuslat ehlinden değildir. Hakkında konuşman da iyi olmayan bir iştir."* Veya: *"O da, iyi olmayan işler yapmıştır."*

( فَلَا تَسْئَلْنِ مَا لَيْسَ لَكَ بِهٖ عِلْمٌ ) *"O halde, hakkında hiçbir bilgin olmayan bir şeyi benden isteme!"*

Yani ben, dostlarım ve düşmanlarımın durumlarıyla ilgili gaybımı gizli tuttuğum için takdirimin iç yüzü bilinmez.

( اِنّ۪ٓي اَعِظُكَ اَنْ تَكُونَ مِنَ الْجَاهِلِينَ ) *"Ben, sana cahillerden olmamanı öğütlerim."*

Bu öğüdün sebebi, yaşlılığına ve büyüklüğüne verilen değer ile oğlu hakkındaki duasının kabul edilmemesidir. Böylece Allah, güzel hitapla Hz. Nûh'un gönlünü almıştır.

Rivayete göre, Hz. Nûh'un oğlu, babası gemi yapmakla meşgul iken, camdan bir ev inşa etmiştir. Hz. Nûh, gemiye bindiğinde oğlu da camdan yaptığı eve girmiştir. Sonra Allah, ona sidiğini tutamama hastalığını musallat kılmış ve cam ev, onun sidiğiyle dolmuştur. Böylece

herkes, deniz suyunda boğulurken, kaderden kaçış olmadığının bilinmesi için, Hz. Nûh'un oğlu kendi sidiğinde boğulmuştur.

قَالَ رَبِّ اِنّ۪ٓي اَعُوذُ بِكَ اَنْ اَسْـَٔلَكَ مَا لَيْسَ ل۪ي بِه۪ عِلْمٌ وَاِلَّا تَغْفِرْ ل۪ي وَتَرْحَمْن۪ٓي اَكُنْ مِنَ الْخَاسِر۪ينَ ﴿٤٧﴾

47- "Nuh: 'Rabbim! Şüphesiz ben senden hakkında bilgim olmayan şeyi istemekten sana sığınırım. Eğer beni bağışlamaz ve bana acımazsan, şüphesiz ziyana uğrayanlardan olurum' dedi."

Hz. Nûh, konuşurken oğlunun dediklerini unutarak Allah'ın lütfuna sığındı ve Rabbinden, şu ayette ifade edilen selameti buldu:

ق۪يلَ يَا نُوحُ اهْبِطْ بِسَلَامٍ مِنَّا وَبَرَكَاتٍ عَلَيْكَ وَعَلٰٓى اُمَمٍ مِمَّنْ مَعَكَ وَاُمَمٌ سَنُمَتِّعُهُمْ ثُمَّ يَمَسُّهُمْ مِنَّا عَذَابٌ اَل۪يمٌ ﴿٤٨﴾

48- "Ona denildi ki: 'Ey Nûh! Sana ve seninle birlikte bulunanlardan birçok ümmete bizden esenlik ve bereketlerle in. Daha birtakım ümmetler de olacak ki biz onları yararlandıracağız. Sonra da bizden kendilerine elem dolu bir azap dokunacak.' "

Allah, yeryüzünü düşmanlarından temizledi, Hz. Nûh'u ve beraberindeki dostlarını ve akrabalarını ilahî musibetinden korudu. Bu arada Allah'ın, önce yararlandıracağını, sonra da azap dokunacağını haber verdiği ümmetler, saadet ehlinden olmayanlardır.

تِلْكَ مِنْ اَنْبَٓاءِ الْغَيْبِ نُوح۪يهَٓا اِلَيْكَ مَا كُنْتَ تَعْلَمُهَٓا اَنْتَ وَلَا قَوْمُكَ مِنْ قَبْلِ هٰذَا فَاصْبِرْ اِنَّ الْعَاقِبَةَ لِلْمُتَّق۪ينَ ﴿٤٩﴾

49- "İşte bunlar, sana vahyettiğimiz gayb haberlerindendir. Bundan önce onları ne sen biliyordun ne de kavmin. O halde sabret. Çünkü sonuç, Allah'a karşı gelmekten sakınanların olacaktır."

Bu topluca bilgiyi sana bildirdik ve bu kıssaları sana haber verdik. Çünkü biz sana, başkasından veya kitaptan okuyarak öğrenmeme özelliği verdik. Şayet kavmin, sana yalanlamayla karşılık verirse sabret. Yakında bu işler tersine dönecektir.

وَاِلٰى عَادٍ اَخَاهُمْ هُودًا قَالَ يَا قَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَكُمْ مِنْ اِلٰهٍ غَيْرُهُ
اِنْ اَنْتُمْ اِلَّا مُفْتَرُونَ ﴿٥٠﴾

50- "Âd kavmine de kardeşleri Hûd'u gönderdik. Hûd şöyle dedi: 'Ey kavmim! Allah'a kulluk edin. O'ndan başka sizin hiçbir ilâhınız yoktur. Siz, sadece iftirâ ediyorsunuz.' "

Allah, peygamberleri halka gitmekle yükümlü kılmıştır. Peygamberler de isabetli bir şekilde kendilerinden önce gelip geçmiş olan kavimlerin dönemlerini görürcesine bilmişlerdir. Lakin onlar, bu yükümlülüğe katlanmış ve Allah, kendilerini halka gitmekle memur kıldığında rıza göstererek rehberliklerini açıkça ortaya koymuş ve peygamberliklerini yerine getirmişlerdir. Ne var ki insanların nefreti kat kat artmıştır.

يَا قَوْمِ لَآ اَسْئَلُكُمْ عَلَيْهِ اَجْرًا اِنْ اَجْرِيَ اِلَّا عَلَى الَّذِي فَطَرَنِي اَفَلَا
تَعْقِلُونَ ﴿٥١﴾

51- "Ey kavmim! Ben, buna karşı sizden bir ücret istemiyorum. Benim ücretim, ancak beni yaratana aittir. Hâlâ aklınızı kullanmayacak mısınız?!"

Gelen hiçbir peygamber yoktur ki, Allah'tan başka kimseden ecir isteme hakkına ve yetkisine sahip olmadığını söylemiş olmasın.

وَيَا قَوْمِ اسْتَغْفِرُوا رَبَّكُمْ ثُمَّ تُوبُوٓا اِلَيْهِ يُرْسِلِ السَّمَآءَ عَلَيْكُمْ
مِدْرَارًا وَيَزِدْكُمْ قُوَّةً اِلٰى قُوَّتِكُمْ وَلَا تَتَوَلَّوْا مُجْرِمِينَ ﴿٥٢﴾

52- "Ey kavmim! Rabbinizden bağışlama dileyin, sonra O'na tövbe edin ki, üzerinize bol bol yağmur yağdırsın. Ve gücünüze güç katsın. Günahkârlar olarak yüz çevirmeyin."

Rabbinizden mağfiret dileyin, mağfiret diledikten sonra da kurtuluşunuzun mağfiret dilemenize bağlı olduğu şeklindeki zannınızdan tövbe edin. Zannınızın aksine, kesin olarak biliniz ki, siz kurtuluşu ancak Rabbinizin lütfuyla bulabilirsiniz. Siz, mağfiret dilemeye O'nun lütfu ve muvaffakiyet vermesiyle ulaştınız, yoksa mağfiret dilemekle kurtuluşa ermediniz. Bir de Allah, rahmetiyle sizi mağfiret dilemeye ehil kıldı. Aksi takdirde siz, ne tövbeye ne de mağfiret dilemeye erişirdiniz.

Bu arada mağfiret dilemek, rızık kapısını çalmak demektir. Bu itibarla kul, güzel yakarışıyla Allah'a dönüş yaptığı zaman, Allah rahmet kapılarını yüzüne açar ve nimetlerinin vesilelerini müyesser kılar.

Diğer bir yoruma göre Allah, zahirinizin üzerine nimet yağmurlarını yağdırır, kalpleriniz ve iç dünyalarınızın üzerine çeşitli lütufları indirir ve kuvvetinizi kat kat artırır. Kuvvetin biriyle rızkın çeşitlerini genişletirsiniz, diğeriyle de ahlakın türlü şekillerini güzelleştirirsiniz.

قَالُوا يَا هُودُ مَا جِئْتَنَا بِبَيِّنَةٍ وَمَا نَحْنُ بِتَارِكِي اٰلِهَتِنَا عَنْ قَوْلِكَ وَمَا
نَحْنُ لَكَ بِمُؤْمِنِينَ ﴿٥٣﴾

53- "Dediler ki: 'Ey Hûd! Sen, bize açık bir mucize getirmedin. Biz de senin sözünle ilâhlarımızı bırakacak değiliz. Biz sana iman edecek de değiliz.' "

Hz. Hûd, onlara peygamberlik alametlerini gözler önüne serip mucizeleri daha fazla açıkladıkça, Allah onların körlüğünü kat kat artırmış ve kendilerine ne basiret ne de hidayet nasip etmiştir. Onlar ise konuştuklarıyla sadece aşırı cahilliklerini ve şiddetli sapkınlıklarını fazlasıyla göstermişlerdir.

اِنْ نَقُولُ اِلَّا اعْتَرٰيكَ بَعْضُ اٰلِهَتِنَا بِسُوٓءٍ قَالَ اِنّٖٓي اُشْهِدُ اللّٰهَ
وَاشْهَدُوٓا اَنّٖي بَرٖٓيءٌ مِمَّا تُشْرِكُونَ ﴿٥٤﴾ مِنْ دُونِهٖ فَكٖيدُونٖي جَمٖيعًا
ثُمَّ لَا تُنْظِرُونِ ﴿٥٥﴾

54, 55- "Biz, sadece şunu söyleriz: 'Seni ilahlarımızdan biri fena çarpmış.' Hûd dedi ki: 'İşte ben , Allah'ı şahit tutuyorum. Siz de şahit olun ki, ben sizin Allah'ı bırakıp da O'na ortak koştuğunuz şeylerden uzağım. Haydi hepiniz toptan bana tuzak kurun, sonra da bana göz açtırmayın.' "

İlahları, kendi düşmanlarına hiçbir zarar, kendi dostlarına da hiçbir fayda veremezken onlar, bu ilahların onların düşmanlarına kötülük dokunduracağını nasıl sandılar! Bu kimselere sapıklık hakim olmuştur. Sonra Hz. Hûd, Rabbinin kendisi üzerindeki lütfünü açıklamış ve ihlası ile güzel inancını açıkça dile getirmek üzere şöyle demiştir: ( اَنّٖي بَرٖٓيءٌ مِمَّا تُشْرِكُونَ مِنْ دُونِهٖ فَكٖيدُونٖي جَمٖيعًا ثُمَّ لَا تُنْظِرُونِ ) *"Ben, sizin Allah'ı bırakıp da O'na ortak koştuğunuz şeylerden uzağım. Haydi hepiniz toptan bana tuzak kurun, sonra da bana göz açtırmayın."*

Böylece Hz. Hûd, onlarla birlikte ilahlarına yakarıp boyun eğmedi, onlardan bir taviz beklemedi. Bu tutumunda da kendi gücüne, kuvvetine ve çabasına dayanmadı, aksine şöyle dedi:

اِنّٖي تَوَكَّلْتُ عَلَى اللّٰهِ رَبّٖي وَرَبِّكُمْ مَا مِنْ دَٓابَّةٍ اِلَّا هُوَ اٰخِذٌ بِنَاصِيَتِهَا
اِنَّ رَبّٖي عَلٰى صِرَاطٍ مُسْتَقٖيمٍ ﴿٥٦﴾

56- "İşte ben, hem benim hem sizin Rabbiniz olan Allah'a dayandım. Yeryüzünde bulunan hiçbir canlı yoktur ki Allah onu perçeminden tutmuş olmasın. Şüphesiz Rabbim, dosdoğru bir yol üzerinedir."

Hz. Hûd, Allah'ın kendisine verdiği yardım sözüne güvendiğini, Rabbine olan içten itaatinden ve O'nu tertemiz bir kalple tanımaktan ayrılmayacağını bildirmiştir.

فَاِنْ تَوَلَّوْا فَقَدْ اَبْلَغْتُكُمْ مَٓا اُرْسِلْتُ بِهٖٓ اِلَيْكُمْ وَيَسْتَخْلِفُ رَبّ۪ي قَوْمًا غَيْرَكُمْ وَلَا تَضُرُّونَهُ شَيْـًٔا اِنَّ رَبّ۪ي عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ حَف۪يظٌ ﴿٥٧﴾

57- "Eğer yüz çevirirseniz, bilin ki, ben benimle gönderileni size tebliğ ettim. Rabbim dilerse sizden başka bir kavmi sizin yerinize getirir ve siz O'na bir zarar veremezsiniz. Şüphesiz Rabbim, her şeyi koruyup gözetendir."

Biz, Hûd'a şöyle demesini vahyettik:

Eğer yüz çevirir ve bana iman etmez iseniz, şüphesiz ben, yükümlü kılındığım peygamberliğimi tebliğ ettim. Bir de ben eminim ki, Allah sizi helak ettiği zaman, O'na sizden daha çok itaatkar olan bazı kavimler getirecektir. Şayet sizi yok ederse, mülküne bir halel gelmez. Çünkü tevhid ehli de olsalar başkalarının varlığıyla Allah'a ilave bir güzellik katılamaz. İnkarcı ve inançsız da olsalar yokluklarıyla Allah'a bir kusur bulaştırılamaz.

وَلَمَّا جَٓاءَ اَمْرُنَا نَجَّيْنَا هُودًا وَالَّذ۪ينَ اٰمَنُوا مَعَهُ بِرَحْمَةٍ مِنَّا وَنَجَّيْنَاهُمْ مِنْ عَذَابٍ غَل۪يظٍ ﴿٥٨﴾

58- "Helak emrimiz gelince, Hûd'u ve beraberindeki iman etmiş olanları, tarafımızdan bir rahmetle kurtardık. Onları ağır bir azaptan kurtardık."

Onları helak etmeye dair emrimiz gelince, Hûd'u ve iman edenleri rahmetimizle kurtardık. Allah burada Hz. Hûd'un, peygamberliği vesilesiyle veya itaati ve peygamberliğinin büyüklüğü sebebiyle kurtuluşa hak kazandığını söylememiş, aksine: ( بِرَحْمَةٍ مِنَّا ) "*Tarafımızdan bir rahmetle*" buyurmuştur. Ta ki, herkes, peygamberler ve diğerlerinin, Allah'ın rahmetinin azatlıları ve minnetinde gark olmuş kimseler olduklarını, yoksa hakları veya herhangi bir şekilde Allah'a vacip olduğu için kurtulmadıklarını bilsin.

وَتِلْكَ عَادٌ جَحَدُوا بِاٰيَاتِ رَبِّهِمْ وَعَصَوْا رُسُلَهُ وَاتَّبَعُوٓا اَمْرَ كُلِّ
جَبَّارٍ عَنِيدٍ ﴿٥٩﴾

59- "İşte Âd kavmi! Rablerinin ayetlerini inkar ettiler. O'nun peygamberlerine karşı geldiler ve inatçı her zorbanın emrine uydular."

Peygamberlerin kıssalarının indirilmesinde Hz. Peygamber (s.a.v.) için çektiği meşakkat konusunda, müminler için de tabi tutuldukları güzel imtihan ile ilgili teselli ve karşılaştıkları sıkıntının ümide dönüşeceğine dair söz vardır.

وَاُتْبِعُوا فٖي هٰذِهِ الدُّنْيَا لَعْنَةً وَيَوْمَ الْقِيٰمَةِ اَلَآ اِنَّ عَادًا كَفَرُوا رَبَّهُمْ
اَلَا بُعْدًا لِعَادٍ قَوْمِ هُودٍ ﴿٦٠﴾

60- "Onlar, hem bu dünyada hem de kıyamet gününde lanete uğratıldılar. Biliniz ki Âd kavmi, Rablerini inkâr etti. Yine biliniz ki Hûd'un kavmi Âd, Allah'ın rahmetinden uzaklaştı."

Allah, onların hem dünyayı hem de ahireti yitirdiklerini haber vermektedir. Dünyayı yitirmeleri, şiddetli bir acı ve onu izleyen lanetle köklerinin kazınmasıyla, ahireti yitirmeleri ise karşılaşacakları ebedî azapla olmuştur. Kaldı ki, Allah'ın rahmetinden mahrum kalmış olmaları, o meşakkatin her türlüsünden daha zordur.

Şiir:

*Değişti o ve değiştik biz, ne yazık!*
*Selma'ya alternatif arayıp bulamayana*

وَاِلٰى ثَمُودَ اَخَاهُمْ صَالِحًا قَالَ يَا قَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَكُمْ مِنْ اِلٰهٍ
غَيْرُهُ هُوَ اَنْشَاَكُمْ مِنَ الْاَرْضِ وَاسْتَعْمَرَكُمْ فٖيهَا فَاسْتَغْفِرُوهُ ثُمَّ
تُوبُوٓا اِلَيْهِ اِنَّ رَبّٖي قَرٖيبٌ مُجٖيبٌ ﴿٦١﴾

61- "Semûd Kavmine de kardeşleri Salih'i peygamber gönderdik. Dedi ki: "Ey kavmim! Allah'a kulluk edin. Sizin O'ndan başka hiçbir ilâhınız yok. O, sizi yeryüzünden yarattı ve sizi oranın imarında görevli kıldı. Öyle ise O'ndan bağışlanma dileyin. Sonra da O'na tövbe edin. Şüphesiz Rabbim yakındır ve dualara cevap verendir."

قَالُوا يَا صَالِحُ قَدْ كُنْتَ فِينَا مَرْجُوًّا قَبْلَ هٰذَٓا اَتَنْهٰينَٓا اَنْ نَعْبُدَ مَا
يَعْبُدُ اٰبَٓاؤُنَا وَاِنَّنَا لَفِي شَكٍّ مِمَّا تَدْعُونَٓا اِلَيْهِ مُرِيبٍ ﴿٦٢﴾

62- "Onlar şöyle dediler: 'Ey Salih! Bundan önce sen aramızda ümit beslenen bir kimseydin. Şimdi babalarımızın taptıklarına tapmamızı bize yasaklıyor musun? Şüphesiz biz, senin bizi çağırdığın şeyden derin bir şüphe içindeyiz.' "

قَالَ يَا قَوْمِ اَرَاَيْتُمْ اِنْ كُنْتُ عَلٰى بَيِّنَةٍ مِنْ رَبِّي وَاٰتٰينِي مِنْهُ رَحْمَةً
فَمَنْ يَنْصُرُنِي مِنَ اللّٰهِ اِنْ عَصَيْتُهُ فَمَا تَزِيدُونَنِي غَيْرَ تَخْسِيرٍ ﴿٦٣﴾

63- "Salih dedi ki: 'Ey kavmim! Söyleyin bakayım, eğer ben Rabbim tarafından apaçık bir delil üzerinde isem ve bana tarafından bir rahmet vermişse, O'na karşı geldiğim takdirde beni Allah'tan kim koruyabilir? Demek ki zarara uğratmaktan başka bana bir katkınız olmaz.' "

وَيَا قَوْمِ هٰذِهِ نَاقَةُ اللّٰهِ لَكُمْ اٰيَةً فَذَرُوهَا تَاْكُلْ فٖيٓ اَرْضِ اللّٰهِ وَلَا
تَمَسُّوهَا بِسُوٓءٍ فَيَاْخُذَكُمْ عَذَابٌ قَرِيبٌ ﴿٦٤﴾

64- "Ey kavmim! İşte size mucize olarak Allah'ın dişi bir devesi. Bırakın onu, Allah'ın arzında yayılıp otlasın. Ona kötülük dokundurmayın. Yoksa sizi yakın bir azap yakalar."

فَعَقَرُوهَا فَقَالَ تَمَتَّعُوا فِي دَارِكُمْ ثَلٰثَةَ اَيَّامٍ ذٰلِكَ وَعْدٌ غَيْرُ مَكْذُوبٍ ﴿٦٥﴾

65- "Derken onu kestiler. Salih dedi ki: 'Yurdunuzda üç gün daha yaşayın. İşte bu, yalanlanamayacak bir tehdittir.' "

فَلَمَّا جَٓاءَ اَمْرُنَا نَجَّيْنَا صَالِحًا وَالَّذِينَ اٰمَنُوا مَعَهُ بِرَحْمَةٍ مِنَّا وَمِنْ خِزْيِ يَوْمِئِذٍ اِنَّ رَبَّكَ هُوَ الْقَوِيُّ الْعَزِيزُ ﴿٦٦﴾

66- "Helak emrimiz geldiğinde Salih'i ve beraberindeki iman etmiş olanları, tarafımızdan bir rahmetle helakten ve o günün rezilliğinden kurtardık. Şüphesiz Rabbin, mutlak güç sahibidir, hüküm ve hikmet sahibidir."

وَاَخَذَ الَّذِينَ ظَلَمُوا الصَّيْحَةُ فَاَصْبَحُوا فِي دِيَارِهِمْ جَاثِمِينَ ﴿٦٧﴾

67- "Zulmedenleri o korkunç uğultulu ses yakaladı da diz üstü çökekaldılar."

كَاَنْ لَمْ يَغْنَوْا فِيهَا اَلَٓا اِنَّ ثَمُودَا۬ كَفَرُوا رَبَّهُمْ اَلَا بُعْدًا لِثَمُودَ ﴿٦٨﴾

68- "Sanki orada hiç yaşamamışlardı. Biliniz ki, Semûd kavmi Rablerini inkâr etti. Yine biliniz ki Semûd kavmi Allah'ın rahmetinden uzaklaştı."

Allah, geçen Âd kıssasından hemen sonra Semûd kıssasını anlatmıştır. Semûd Salih Peygamber'in kavmidir. Onlar da, kendilerinden öncekilerin yolunu izleyerek isyan edenlerin safına katıldıkları için ceza hepsini yakaladı. Sonra Allah o kavmin, kendi peygamberlerini yalanlamayla karşıladıklarını, dikkatlerini çektiği tövbe ve tasdik üzerinde durmadıklarını ve durumu hakkında şüphe içerisinde olduklarında ısrar ettiklerini haber vermiştir. Bir de Allah, Salih Peygamberin, tebliğde kusur işlemediğini açıklamıştır.

İsyan edip hatadan dönüş yapmayı kabul etmemeleri ve davete icabet etmemekte ısrar etmelerinden sonra, hakkında Hz. Salih'in, kendilerine uyarıda bulunduğu sahici azaba müstahak oldular. Allah, onların peygamberini ve kendisine uyanları her türlü cezadan kurtardı. Bu, dostlarını kurtarmada Allah'ın bir prensibi, lütfuna ve rahmetine layık olanlar hakkında uyguladığı bir adetidir.

وَلَقَدْ جَٓاءَتْ رُسُلُنَٓا اِبْرٰهِيمَ بِالْبُشْرٰى قَالُوا سَلَامًا قَالَ سَلَامٌ فَمَا
لَبِثَ اَنْ جَٓاءَ بِعِجْلٍ حَنِيذٍ ﴿٦٩﴾ فَلَمَّا رَآ اَيْدِيَهُمْ لَا تَصِلُ اِلَيْهِ نَكِرَهُمْ
وَاَوْجَسَ مِنْهُمْ خِيفَةً قَالُوا لَا تَخَفْ اِنَّٓا اُرْسِلْنَٓا اِلٰى قَوْمِ لُوطٍ ﴿٧٠﴾

69, 70- "Andolsun, elçilerimiz (melekler), İbrahim'e müjde getirip: 'Selam sana!' dediler. O: 'Size de selam' dedi ve kızartılmış bir buzağı getirmekte gecikmedi. Ellerini yemeğe uzatmadıklarını görünce, onları yadırgadı ve onlardan dolayı içinde bir korku duydu. Dediler ki: 'Korkma, çünkü biz, Lût kavmine gönderildik.' "

Allah, meleklerin, Hz. İbrahim'e müjde getirdiklerini, Hz. İbrahim'in onları yadırgadığını ve melek olduklarını bilmediğini haber vermiştir. Muhtemeldir ki Allah, söz konusu müjdenin, sevinç yaratmada daha tam ve noksansız bir etkisinin olması için dikkat çekilmeden ve ansızın olmasını dilemiştir. Bu müjde, özellikle Hz. İbrahim'in duyduğu korkudan sonra daha etkili olmuştur.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Hz. İbrahim, hem nebilik hem resûllük hem de dostluk vasfına sahipti. Bu nedenle sezgisinin herkesin sezgisinden daha yüksek olması gerekir. Ancak bu olayda Hz. İbrahim melekleri tanımamıştır. Amaç, Allah'ın bir hükmü icra etmek istemesi halinde, sezgi sahibi Hz. İbrahim dahi olsa, tıpkı "ifk" kıssasında Peygamberimizin (s.a.v.) sezgisini de vahyin ineceği zamana kadar kapatması gibi, dilediği kimsenin sezgi gözlerini kapatacağının bilinmesidir. Ayrıca Hz. Lût da durumu tam anlayıncaya kadar karışıklık yaşamıştır.

Öte yandan söz konusu müjdenin ne olduğu konusunda değişik görüşler dile getirilmiştir:

- Müjde, Hz. İshak'a ve onun neslinden ve sülalesinden bir çocuğun doğacağına dair idi. Allah şöyle buyurmuştur: ( فَبَشَّرْنَاهَا بِاِسْحٰقَ وَمِنْ وَرَٓاءِ اِسْحٰقَ يَعْقُوبَ ) *"İshak'ın arkasından da Yakûb'u müjdeledik."* (Hûd, 11/71)

- Müjde, Haz. İbrahim'in kavminin selametine dair idi. Çünkü melekler, Lût kavmini helak etmek göreviyle gönderilmişlerdi.

- Müjde, dostluğa ve noksansız vuslata dair idi.

- Dostluk ve sevginin temeli sır saklamaktır. Buna göre meleklerin herhangi bir müjdeyle gönderildikleri bilinmekte, ancak başkaları bundan haberdar bulunmamaktadırlar.

Mısra:

*Bir söz vardır sevenler arasında bilmediğim*

- Müjde, meleklerin: "Selam" şeklindeki sözleri ve bunun Allah tarafından olduğudur. Hangi müjde, sevgilinin selamından daha mükemmel olabilir ki! Hangi sabah, sevgilinin selamıyla başlarsa, o mübarek bir sabahtır. Aynı şekilde sevgilinin selamıyla başlayan akşam da mübarektir.

( فَمَا لَبِثَ اَنْ جَٓاءَ بِعِجْلٍ حَنِيذٍ ) *"Kızartılmış bir buzağı getirmekte gecikmedi."*

Hz. İbrahim, onların misafir olduklarını sanınca misafirliğin hakkını yerine getirdi. Bu çerçevede Hz. İbrahim, Allah'ın kendisine hakkında teşekkür ettiği, elindekinin en iyisini ikram etmiştir. Nitekim başka bir yerde de Allah: ( فَجَٓاءَ بِعِجْلٍ سَمِينٍ ) *"Semiz bir buzağı getirdi"* (Zâriyât, 51/26) buyurmuştur. Sevgi, sevgiliden gelen az şeyi çok bulmayı, kendisinden sevgiliye giden şeyi ise az bulmayı gerektirir. Bunda aynı zamanda, misafir geldiği zaman, o anda mevcut olandan hemen önüne sofrayı koymanın gerekli olduğuna işaret vardır.

( فَلَمَّا رَآ اَيْدِيَهُمْ لَا تَصِلُ اِلَيْهِ نَكِرَهُمْ ) *"Ellerini yemeğe uzatmadıklarını görünce, onları yadırgadı."*

Misafire ikramın mükemmel şekli, kendisine sunulan yemeğe elini uzatmasıdır. Kendisine ikram edileni yemeğe yanaşmamak, zarafet ehli insanların nazarında haksızlık sayılır. Ayrıca bir görüşe göre, davette ikram edilen yemekten yemek vaciptir.

( وَاَوْجَسَ مِنْهُمْ خِيفَةً ) *"Onlardan dolayı içinde bir korku duydu."*

Yani misafirler, yemeğini yemeğe yanaşmayınca, Hz. İbrahim, durumunda bir halel meydana geldiğinden korktu. Bu itibarla Hz. İbrahim, onlardan değil de onlar için korku hissetmiştir.

Bir yoruma göre de, o zaman melekler, sadece bir ceza için açık bir şekilde inerlerdi. Bu nedenle misafirler yemeği reddedip kendisi de onların melek olduklarını anlayınca kavmini cezalandırmak için gönderilmiş olmalarından korkmuştur.

وَامْرَاَتُهُ قَآئِمَةٌ فَضَحِكَتْ فَبَشَّرْنَاهَا بِاِسْحٰقَ وَمِنْ وَرَآءِ اِسْحٰقَ
يَعْقُوبَ ﴿٧١﴾ قَالَتْ يَا وَيْلَتٰى ءَاَلِدُ وَاَنَا عَجُوزٌ وَهٰذَا بَعْلِي
شَيْخًا اِنَّ هٰذَا لَشَيْءٌ عَجِيبٌ ﴿٧٢﴾ قَالُوٓا اَتَعْجَبِينَ مِنْ اَمْرِ اللّٰهِ
رَحْمَةُ اللّٰهِ وَبَرَكَاتُهُ عَلَيْكُمْ اَهْلَ الْبَيْتِ اِنَّهُ حَمِيدٌ مَجِيدٌ ﴿٧٣﴾

71, 72, 73- "İbrahim'in karısı ayakta idi, güldü. Ona da İshak'ı müjdeledik. İshak'ın arkasından da Yakûb'u. Karısı: 'Vay başıma gelenler! Ben bir koca karı ve bu kocam da bir ihtiyar iken çocuk mu doğuracağım! Gerçekten bu, çok şaşılacak bir şey!' dedi. Melekler: 'Allah'ın emrine mi şaşıyorsun? Allah'ın rahmeti ve bereketi size olsun ey ev halkı! Şüphesiz o, övülmeye layıktır, şanı yücedir' dediler."

Hanımı, misafirlere hizmet ediyordu. Müjdeyi duyunca bu yaşta nasıl çocuğu olabileceğine hayret etmenin bir ifadesi olarak güldü. Bir görüşe göre hanımı zarar görmemeye sevinmiştir. Muhtemeldir

ki, hanımı misafirlerin yemek yemeye yanaşmamalarına şaşarak gülmüş veya melek olduklarını öğrenince, meleklerin insan kılığında olmalarına şaşmıştır. Çocukla müjdelendiği için duyduğu sevinç sebebiyle gülmüş olması ihtimali de vardır. Nitekim o, Hz. İshak'la ve İshak'ın ardından Yakub'un gelişiyle müjdelenmiştir.

Sonra da kalbindeki şaşkınlığı açıklayarak şöyle demiştir: ( ءَاَلِدُ وَاَنَا عَجُوزٌ وَهٰذَا بَعْلِي شَيْخًا اِنَّ هٰذَا لَشَيْءٌ عَجِيبٌ ) *"Ben bir koca karı ve bu kocam da bir ihtiyar iken çocuk mu doğuracağım! Gerçekten bu, çok şaşılacak bir şey!"*

Bunun üzere melekler: ( اَتَعْجَبِينَ مِنْ اَمْرِ اللّٰهِ ) *"Allah'ın emrine mi şaşıyorsun?"* diyerek çocuğun yaratılmasını ilahî takdire havale ettiler. Böylece şaşkınlığın sebebi ortadan kalkmış oldu. Bir de melekler: ( رَحْمَةُ اللّٰهِ وَبَرَكَاتُهُ عَلَيْكُمْ اَهْلَ الْبَيْتِ ) *"Allah'ın rahmeti ve bereketi size olsun ey ev halkı!"* dediler. Böylece bizim dinimizde bu ayetin sonundaki ifadeyle dua etme adeti yerleşti. Zira dua eden şöyle der:

*"Tıpkı İbrahim ve ev halkına rahmet ve bereket indirdiğin gibi. Şüphesiz sen hamda layıksın ve yücesin."*

Bu arada bereket artış demektir. Bu çerçevede Hz. İbrahim'in nesli kesintisiz sürmüştür. Nitekim sayıları bir hayli çok olan İsrail oğulları ve Hz. İsmail'in soyundan gelip büyük bir kitle olan Araplar da bu nesildendirler.

فَلَمَّا ذَهَبَ عَنْ اِبْرٰهِيمَ الرَّوْعُ وَجَٓاءَتْهُ الْبُشْرٰى يُجَادِلُنَا فِي قَوْمِ لُوطٍ ﴿٧٤﴾

**74- "İbrahim'in korkusu gidip kendisine müjde gelince, Lût kavmi hakkında bizimle tartışmaya başladı."**

Hz. İbrahim'in Lût kavminin durumu hakkında Allah ile olan tartışması, nefsinin payesi için değil, Allah'ın hakkına yönelik olduğundan zararsız olmuştur. Bunun, Hz. İbrahim için hoş görülmesi, Allah katındaki makamının yüksekliğini göstermektedir.

إِنَّ إِبْرٰهِيمَ لَحَلِيمٌ اَوَّاهٌ مُنِيبٌ ﴿٧٥﴾

75- "Çünkü İbrahim, çok içli ve Allah'a yönelen bir kimseydi."

Ayet, Hz. İbrahim'in malı, canı ve çocuklarının başına gelen sıkıntıyı tahammülle karşıladığını göstermektedir. Bu arada Allah, Lût kavminin durumu hakkında hak sahibi olduğu için Hz. İbrahim ile tartıştı ve sonunda kendisine, Hz. Lût'un selamette olduğunu açıkladı. Allah şöyle buyurur:

يَٓا إِبْرٰهِيمُ اَعْرِضْ عَنْ هٰذَا اِنَّهُ قَدْ جَٓاءَ اَمْرُ رَبِّكَ وَاِنَّهُمْ اٰتِيهِمْ عَذَابٌ غَيْرُ مَرْدُودٍ ﴿٧٦﴾

76- "Ey İbrahim bundan vazgeç! Çünkü Rabbinin emri kesin olarak gelmiştir. Şüphesiz onlara, geri döndürülemeyecek bir azap gelecektir."

Ey İbrahim bundan vazgeç! Çünkü azaplarına dair hüküm inmiştir ve onlardan intikam almanın zamanı gelmiştir.

وَلَمَّا جَٓاءَتْ رُسُلُنَا لُوطًا سِيٓءَ بِهِمْ وَضَاقَ بِهِمْ ذَرْعًا وَقَالَ هٰذَا يَوْمٌ عَصِيبٌ ﴿٧٧﴾

77- "Elçilerimiz Lût'a gelince, onların yüzünden üzüldü, göğsü daraldı ve: 'Bu, çok zor bir gün' dedi."

Yani Hz. Lût, kavminden onlara, Allah'ın dininde caiz olmayan bir kötülük gelmesinden korkması sebebiyle üzülmüştür. Söz konusu üzüntü, kendisine bir kazanç veya nefsine bir paye için değil, Allah'ın hakkı için olmuştur. Bu nedenle, Hz. Lût, üzüntüsünden dolayı övülmüştür. Çünkü Allah'ın hakkı için üzüntüye katlanmak, övgüye değer bir şeydir.

وَجَٓاءَهُ قَوْمُهُ يُهْرَعُونَ اِلَيْهِ وَمِنْ قَبْلُ كَانُوا يَعْمَلُونَ السَّيِّاٰتِ قَالَ يَا قَوْمِ هٰٓؤُ۬لَٓاءِ بَنَاتِي هُنَّ اَطْهَرُ لَكُمْ فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَلَا تُخْزُونِ فِي ضَيْفِي اَلَيْسَ مِنْكُمْ رَجُلٌ رَشِيدٌ ﴿٧٨﴾

78- "Kavmi, ona doğru koşa koşa geldiler. Zaten onlar, önceden de bu tür çirkin işler yapıyorlardı. Lût dedi ki: 'Ey kavmim! İşte kızlarım. Onlar, sizin için daha temizdir. Allah'a karşı gelmekten sakının ve konuklarıma karşı beni rezil etmeyin. İçinizde hiç aklı başında bir adam yok mu?' "

Bir görüşe göre Hz. Lût: ( يَا قَوْمِ هٰٓؤُ۬لَٓاءِ بَنَاتِي هُنَّ اَطْهَرُ لَكُمْ ) *"Ey kavmim! İşte kızlarım. Onlar, sizin için daha temizdir"* şeklindeki sözüyle ümmetinin kadınlarını kast etmiştir. Zira her ümmetin peygamberi, şefkat ve nasihatte o ümmetin babası mesabesindedir. Diğer bir görüşe göre de Hz. Lût, öz kızlarını kast etmiştir.

( اَلَيْسَ مِنْكُمْ رَجُلٌ رَشِيدٌ ) *"İçinizde hiç aklı başında bir adam yok mu?"*

Yani içinizde takva elbisesi giyecek, Allah'ın hakkını beşerî zaafın gereklerine tercih edecek ve misafirlik hakkını gözetip Allah'a isyanı terk edecek biri yok mu?

قَالُوا لَقَدْ عَلِمْتَ مَا لَنَا فِي بَنَاتِكَ مِنْ حَقٍّ وَاِنَّكَ لَتَعْلَمُ مَا نُرِيدُ ﴿٧٩﴾

79- "Onlar: 'İyi biliyorsun ki, kızlarında bizim gözümüz yok. Sen, bizim ne istediğimizi çok iyi biliyorsun' dediler."

Onlar, isyanlarında ısrar ederek dinin izin verdiğine yanaşmadılar ve nefsî arzularının kendilerini sevk ettiği tarafa sürüklendiler. Bu ise hiç bir aklın reddetmeyeceği gibi hayvanların vasfıdır. Nitekim Allah şöyle buyurmuştur: ( اُو۬لٰٓئِكَ كَالْاَنْعَامِ بَلْ هُمْ اَضَلُّ ) *"Onlar, hayvanlar gibidirler. Hatta daha da aşağıdadırlar."* (Arâf, 7/179)

قَالَ لَوْ اَنَّ لِي بِكُمْ قُوَّةً اَوْ اٰوِيٓ اِلٰى رُكْنٍ شَدِيدٍ ﴿٨٠﴾

80- "Lût: 'Keşke size karşı koyacak bir gücüm olsaydı ya da sağlam bir desteğe dayanabilseydim' dedi."

Keşke benim bir gücüm olsaydı da bu sayede sizi günahtan alıkoysaydım. Çünkü Allah'ın dostlarının en çok önemsedikleri husus, Allah'ın rızasına uymayan şeyleri günahkarların yapmamasıdır. Bu konudaki iki yorum da şöyledir:

- Günah işlediğiniz halde, eğer benim size rahmeti ulaştıracak gücüm olsaydı, ben size merhamet eder ve sizi af ederdim.

- Eğer gücüm olsaydı, sizi dine hidayet eder ve aykırı davranışlardan korurdum.

قَالُوا يَا لُوطُ اِنَّا رُسُلُ رَبِّكَ لَنْ يَصِلُوٓا اِلَيْكَ فَاَسْرِ بِاَهْلِكَ بِقِطْعٍ
مِنَ الَّيْلِ وَلَا يَلْتَفِتْ مِنْكُمْ اَحَدٌ اِلَّا امْرَاَتَكَ اِنَّهُ مُصِيبُهَا مَٓا اَصَابَهُمْ
اِنَّ مَوْعِدَهُمُ الصُّبْحُ اَلَيْسَ الصُّبْحُ بِقَرِيبٍ ﴿٨١﴾

81- "Konukları şöyle dedi: 'Ey Lût! Biz, Rabbinin elçileriyiz. Onlar, sana asla ulaşamayacaklar. Geceleyin bir vakitte aileni al götür. İçinizden kimse ardına bakmasın. Ancak karın müstesna. Çünkü onların başına gelecek olan azap, onun başına da gelecektir. Onların, azapla buluşma zamanı sabahtır. Sabah yakın değil midir?!' "

Hz. Lût darda kalınca Allah, üzerinden sıkıntıyı kaldırdı ve melekler kendilerini tanıtarak: "Kaygılanma! Onlar, sana bir kötülük ulaştıramazlar. Biz, Rabbinin elçileriyiz, onları helak etmek için geldik. Şimdi sen ve ailen, aralarından çıkın. Bir de bilmelisin ki, amellerinde onlara bir şekilde iştirak eden kimsenin bu azaptan payı olacaktır. Bunlardan biri de, ahlaksızlık yapmaları için, o topluluğa melekleri gösteren karındır. Şüphesiz ceza onu yakalayacaktır."

Bu olay, hataya cesaret etmenin, bir süre sonra da olsa sonunun vahim olduğuna işaret etmektedir. Bir de, hükümde ve kaderde şakilerden olan kimseye, peygamberler ve veliler ile olan bağı fayda vermez.

( اِنَّ مَوْعِدَهُمُ الصُّبْحُ اَلَيْسَ الصُّبْحُ بِقَرِيبٍ ) *"Onların, azapla buluşma zamanı sabahtır. Sabah yakın değil midir?!"*

Olacak olan yakındır. Uzak ise olmayacak olandır. Sonra her kim, bir günah işlemeye kalkar, sonra asırlarca ve sayısız yıllarca süren uzun bir zaman geçtikten sonra da olsa, günahından dolayı hesaba çekilirse, durumu günah işlediği an gibi tasvir edilir.

فَلَمَّا جَٓاءَ اَمْرُنَا جَعَلْنَا عَالِيَهَا سَافِلَهَا وَاَمْطَرْنَا عَلَيْهَا حِجَارَةً مِنْ
سِجّيلٍ مَنْضُودٍ ﴿٨٢﴾ مُسَوَّمَةً عِنْدَ رَبِّكَ وَمَا هِيَ مِنَ الظَّالِمِينَ بِبَعِيدٍ ﴿٨٣﴾

82, 83- "Emrimiz gelince oranın altını üstüne getirdik. Üzerine de Rabbinin katında işaretlenmiş pişirilmiş balçıktan taşlar yağdırdık. Bunlar, zalimlerden uzak değildir."

Allah'ın kullarıyla ilgi sünneti, durumları onların aleyhine çevirmektir. Durum değişikliği ise sonradan var olmuş olmanın işaretlerindendir. Yok olmayacak ve değişmeyecek olan ise her şeyin kendisine muhtaç olduğunu, kendisinin hiçbir şeye muhtaç olmadığını gösteren sıfatlarıyla ezelî ve ebedî olan Allah'tır.

Her kim, bir süre sevinç içinde yaşar, ardından da bolluğu darlığa dönüşürse, o hiç iyilik görmemiş kimse gibidir. Ömrü boyunca sıkıntı çekip sonra kendisine bolluk verilen kimse ise hiç darlık görmemiş kimse gibidir.

Allah şöyle buyurmuştur:

( وَنُقَلِّبُ اَفْـِٔدَتَهُمْ وَاَبْصَارَهُمْ كَمَا لَمْ يُؤْمِنُوا بِهٖٓ اَوَّلَ مَرَّةٍ ) *"Biz, tıpkı ilkin ona iman etmedikleri gibi, onların kalplerini ve gözlerini ters döndürürüz."* (En'âm, 6/110)

( وَمَا هِيَ مِنَ الظَّالِمِينَ بِبَعِيدٍ ) *"Bunlar, zalimlerden uzak değildir."*

Allah, günahlarına karşılık olarak zalimlerin başlarına gelen azabı anlattıktan sonra, o azabın, onların yolunu izleyen kimsenin de başına geleceğini haber vermektedir. Maksadı, yollarını tanıması halinde zalimlere itibar etmeyecek olan kimseleri sakındırmaktır.

Şiir:

*Kim beni görür de benden sonra ibret almazsa*
*Şüphesiz bir cezası vardır her günahın*

وَاِلٰى مَدْيَنَ اَخَاهُمْ شُعَيْبًا قَالَ يَا قَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَكُمْ مِنْ اِلٰهٍ غَيْرُهُ وَلَا تَنْقُصُوا الْمِكْيَالَ وَالْمِيزَانَ اِنّ۪ٓي اَرٰيكُمْ بِخَيْرٍ وَاِنّ۪ٓي اَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمٍ مُح۪يطٍ ﴿٨٤﴾ وَيَا قَوْمِ اَوْفُوا الْمِكْيَالَ وَالْمِيزَانَ بِالْقِسْطِ وَلَا تَبْخَسُوا النَّاسَ اَشْيَٓاءَهُمْ وَلَا تَعْثَوْا فِي الْاَرْضِ مُفْسِد۪ينَ ﴿٨٥﴾

84, 85- "Medyen halkına da kardeşleri Şu'ayb'ı peygamber gönderdik. O şöyle dedi: 'Ey kavmim! Allah'a kulluk edin. Sizin O'ndan başka hiçbir ilahınız yoktur. Ölçüyü ve tartıyı eksik yapmayın. Ben sizi bolluk içinde görüyorum. Ben sizin adınıza kuşatıcı bir günün azabından korkuyorum. Ey kavmim! Ölçüyü ve tartıyı adaletle tam yapın. İnsanların eşyalarını eksiltmeyin. Yeryüzünde bozgunculuk yaparak karışıklık çıkarmayın.' "

Allah kıssalarını, çektikleri acılı azabı ve uğradıkları büyük musibeti anlatmıştır. Onların günahları kendilerine az gibi geliyordu. Anlamadıkları için bu gibi günahları küçük sayıyor ve: *Bunlar büyük günahlardır,* demiyorlardı. Bu ise, ölçüde noksanlıktır. Zira günahların ağırlığı, mahiyetleriyle değildir. Lakin Allah'a muhalefetten dolayı önemleri büyümüştür. Allah şöyle buyurmuştur:

( وَتَحْسَبُونَهُ هَيِّنًا وَهُوَ عِنْدَ اللّٰهِ عَظِيمٌ ) *"Bunu önemsiz iş sanıyorsunuz. Halbuki bu, Allah katında büyük bir günahtır."* (Nûr, 24/15)

بَقِيَّتُ اللّٰهِ خَيْرٌ لَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ وَمَٓا اَنَا عَلَيْكُمْ بِحَفِيظٍ ﴿٨٦﴾

86- "Eğer inanan kimseler iseniz, Allah'ın bıraktığı helal kazanç sizin için daha hayırlıdır. Ben, sizin başınızda bir bekçi değilim."

Hz. Şu'ayb, helal olan az malın, vebale yol açan çok maldan daha faydalı olduğunu anlatmak istediği bu sözü söyleyince, onlar kendilerine yönelik öğüdünü sadece inatla ve kesintisiz inkara devam etmekle karşıladılar.

قَالُوا يَا شُعَيْبُ اَصَلٰوتُكَ تَأْمُرُكَ اَنْ نَتْرُكَ مَا يَعْبُدُ اٰبَٓاؤُنَٓا اَوْ اَنْ نَفْعَلَ فِيٓ اَمْوَالِنَا مَا نَشٰٓؤُا اِنَّكَ لَاَنْتَ الْحَلِيمُ الرَّشِيدُ ﴿٨٧﴾

87- "Dediler ki: 'Ey Şu'ayb! Babalarımızın taptığını, yahut mallarımız hakkında dilediğimizi yapmayı terk etmemizi sana namazın mı emrediyor? Oysa sen, gerçekten yumuşak huylu ve aklı başında bir adamsın.' "

Onlar, cehalet bineğine binmeyi alışkanlık haline getirdiler, taklidin pınarından içmeye çalıştılar, düşünceyi kullanmaktan ve doğru yolu bulma çabasından kalplerini muaf tuttular.

قَالَ يَا قَوْمِ اَرَاَيْتُمْ اِنْ كُنْتُ عَلٰى بَيِّنَةٍ مِنْ رَبِّي وَرَزَقَنِي مِنْهُ رِزْقًا حَسَنًا وَمَٓا اُرِيدُ اَنْ اُخَالِفَكُمْ اِلٰى مَٓا اَنْهٰيكُمْ عَنْهُ اِنْ اُرِيدُ اِلَّا الْاِصْلَاحَ مَا اسْتَطَعْتُ وَمَا تَوْفِيقِيٓ اِلَّا بِاللّٰهِ عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَاِلَيْهِ اُنِيبُ ﴿٨٨﴾

88- "Şu'ayb şöyle dedi: 'Ey kavmim! Söyleyin bakayım, ya ben Rabbimden gelen açık bir delil üzere isem ve katından bana güzel

bir rızık vermiş? Ben, size yasakladığımı kendim yapmak istemiyorum. Ben, sadece gücüm yettiğince sizi düzeltmek istiyorum. Başarım ancak Allah'ın yardımı iledir. Ben sadece O'na tevekkül ettim ve sadece O'na yöneliyorum.' "

Ayette yer alan ( بيّنة ) "*açık delil*", insanın gaflet örtüsünün altında göremediği saklı şeyi kendisiyle gördüğü bir nurdur. Güzel rızık ise, bağımsızlığın devamını sağlayan şeydir. Bu da, ancak Allah'ın ezelî inayetinin gereğidir ve insanın işlerini, lehine olan her hususta noksansız nimet ve sürekli koruma şeklinde güzelce yönetmesidir.

Güzel rızık ile ilgili diğer yorumlar da şöyledir:

- Güzel rızık, sahibinin yolunda çaba harcadığı ve ondan dolayı sıkıntı yaşamadığı şeydir.

- Güzel rızık, kişinin Allah'ın Rezzak sıfatını görerek elde ettiği ve nimetlerden yararlanırken rızkı, onu veren Allah'ın varlığına dayanarak korumasıdır.

- Güzel rızık, Rezzak'ı unutturmayan ve sahibini, aile fertlerine cömert davranmaya ve Allah yolunda harcamaya sevk eden şeydir.

( وَمَٓا اُر۪يدُ اَنْ اُخَالِفَكُمْ اِلٰى مَٓا اَنْهٰيكُمْ عَنْهُ ) "*Ben, size yasakladığımı kendim yapmak istemiyorum.*"

Vaiz veya öğüt verenin, başkasına söylediği her hususta işleri kolaylaştırması mümkündür. Ancak Allah'ın yasakladığı şeyler yapmasına cevaz vermemesi gerekir. Çünkü bütün ibadetleri yerine getirmek mümkün değildir. Ancak bütün haramlardan arınmak mümkündür. Bir yoruma göre de arzularından alıkoymada nefsine hakim olamayan kimse, hidayete irşat etmede başkasına söz geçiremez.

( اِنْ اُر۪يدُ اِلَّا الْاِصْلَاحَ مَا اسْتَطَعْتُ ) "*Ben, sadece gücüm yettiğince sizi düzeltmek istiyorum.*"

Yerine getirilen hedeflerde ölçü, düzeltmeye yönelik güzel iradedir. Allah da, beraberinde güzel muvaffakiyet verir. Kötü niyet besleyeni ise Allah, sürüncemede kalmaya mahkum eder.

( اِنْ اُرِيدُ اِلَّا الْاِصْلَاحَ مَا اسْتَطَعْتُ ) *"Başarım, ancak Allah'ın yardımı iledir."*

Gerçek başarı, kendisiyle işlerin yoluna girdiği şeydir. Dinde ise başarı, kendisiyle ibadetin yerine geldiği şeydir. Bu, ibadet yapabilme gücüdür. Sonra kavrama daha geniş bir açıdan bakmak üzere kulun kendisiyle Allah'a yakınlaştığı her türlü ibadet ile nefsin arzularına ve çeşitli günahlara karşı koymak da başarıdan sayılır.

Başarı, Allah'tandır ve Allah iledir. Aynı zamanda O, başarıyı bir lütuf olarak verir.

( عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَاِلَيْهِ اُنِيبُ ) *"Ben, sadece O'na tevekkül ettim ve sadece O'na yöneliyorum."*

Tevekkül, işi Allah'a havale etmektir. Belirtisi ise, takdiri görerek tedbiri terk etmek ve yokluk halinde vaat edilene güvenmektir. Bu da vasıtaların yokluğu halinde tedirgin olmamakla belirginleşir. Tevekkül konusundaki diğer iki görüş de şöyledir:

- Tevekkül, sükunet ve garanti edilene güvenmektir.
- Tevekkül, Rabbin garantisiyle kalbin sükunete kavuşmasıdır.

وَيَا قَوْمِ لَا يَجْرِمَنَّكُمْ شِقَاقِي اَنْ يُصِيبَكُمْ مِثْلُ مَا اَصَابَ قَوْمَ نُوحٍ
اَوْ قَوْمَ هُودٍ اَوْ قَوْمَ صَالِحٍ وَمَا قَوْمُ لُوطٍ مِنْكُمْ بِبَعِيدٍ ﴿٨٩﴾

89- "Ey kavmim! Bana karşı olan düşmanlığınız, Nûh kavminin veya Hûd kavminin yahut Salih kavminin başına gelenin benzeri gibi bir felaketi sakın sizin de başınıza getirmesin. Lût kavmi sizden uzak değildir."

Sizi davet ettiğim Allah'a ibadet konusunda bana muhalefet etmeniz, yollarında yürüdüğünüz sizden öncekilerin başına gelen acılı cezanın sizin de başınıza gelmesine yol açmaktadır. Başlarına ne tür cezaların geldiğini ve nasıl da nasihatlerin çokluğunun, sapıklıklarını derinleştirmekten ve cehaletteki serkeşliklerini artırmaktan

başka bir işe yaramadığını kesin olarak bildiğiniz kimselerin döneminden uzak değilsiniz.

Şiir:

*Nice öğütler söyledim peşinizde*
*Ne var ki bazen kin devşirir öğüt alan*

وَاسْتَغْفِرُوا رَبَّكُمْ ثُمَّ تُوبُوٓا اِلَيْهِ اِنَّ رَبّ۪ي رَح۪يمٌ وَدُودٌ ﴿٩٠﴾

90- "Rabbinizden bağışlanma dileyin, sonra O'na tövbe edin. Şüphesiz Rabbim çok merhametlidir, çok sevendir."

Mağfiret dilemek tövbedir.

( ثُمَّ تُوبُوٓا اِلَيْهِ ) "*Sonra O'na tövbe edin.*" Yani, tövbe edin ve ondan sonra tövbenizi bozmayın. Burada tövbenin devam ettirilmesi emredilmektedir. Bu itibarla, yaşanan halin duruluğu, akıbetin yeterliliğiyle birleşmediği zaman kabul gerçekleşmez ve önceki gelişme yok hükmünde olur.

( اِنَّ رَبّ۪ي رَح۪يمٌ وَدُودٌ ) "*Şüphesiz Rabbim çok merhametlidir, çok sevendir.*"

Günahkârlara merhamet eder ve onları sever. Diğer bir yoruma göre de Allah onlara merhamet ettiği için onlar da O'nu severler. Böylece ( ودود ) "*Vedûd*" kelimesi ( مودود ) "*sevilen*" anlamına da gelmiş olmaktadır. Tıpkı ( حلوب ) "*Halûb*" lafzının ( محلوب ) "*sağılan*" anlamında olduğu gibi. Bu arada rahmet, günahkâr içindir. Çünkü itaat ehli, ibadetlerine karşılık sevaba hak kazanma vasfına sahiptir. Kaldı ki sultanı seven herkes, büyüklerin makamında olacak değildir. Nitekim küçük askerler de bazen hükümdarı severler.

Şiir:

*Yaklaşan ve seni sevdiğini iddia eden nice kimseler vardır*
*Oysa daha çok sevmekte ve daha yakındır uzak olan*

قَالُوا يَا شُعَيْبُ مَا نَفْقَهُ كَثِيرًا مِمَّا تَقُولُ وَاِنَّا لَنَرٰيكَ فِينَا ضَعِيفًا
وَلَوْلَا رَهْطُكَ لَرَجَمْنَاكَ وَمَٓا اَنْتَ عَلَيْنَا بِعَزِيزٍ ﴿٩١﴾

91- "Dediler ki: 'Ey Şu'ayb! Dediklerinin çoğunu anlamıyoruz. Hem biz seni aramızda zayıf görüyoruz. Eğer kabilen olmasaydı, seni taşa tutardık. Zaten sen, bizce itibarlı biri değilsin.' "

Onlar, Hz. Şu'ayb'e küçümseyici bir gözle baktıkları için hitabının anlamlarını anlamaktan mahrum kaldılar, kendi cahilliklerini ikrar ettiler ve kendisini eziyetten muaf tutmalarını onun kabilesinden ve aşiretinden sakınmalarına bağladılar. Bunun üzerine Hz. Şu'ayb onlara sitem etti.

قَالَ يَا قَوْمِ اَرَهْطٖٓي اَعَزُّ عَلَيْكُمْ مِنَ اللّٰهِ وَاتَّخَذْتُمُوهُ وَرَٓاءَكُمْ ظِهْرِيًّا
اِنَّ رَبّٖي بِمَا تَعْمَلُونَ مُحٖيطٌ ﴿٩٢﴾

92- "Şu'ayb şöyle dedi: 'Ey kavmim! Benim kabilem sizce Allah'tan daha itibarlı mı ki, O'na sırt çevirdiniz. Şüphesiz Rabbim sizin yaptıklarınızı kuşatmıştır.' "

Siz, kabileme tanıdığınız hakkı Rabbime tanımıyor musunuz? Oysa amellerinize karşılık olarak, size bütün hallerinizde hak ettiğiniz karşılığı verecek olan O'dur.

وَيَا قَوْمِ اعْمَلُوا عَلٰى مَكَانَتِكُمْ اِنّٖي عَامِلٌ سَوْفَ تَعْلَمُونَ مَنْ يَأْتٖيهِ
عَذَابٌ يُخْزٖيهِ وَمَنْ هُوَ كَاذِبٌ وَارْتَقِبُٓوا اِنّٖي مَعَكُمْ رَقٖيبٌ ﴿٩٣﴾

93- "Ey kavmim! Elinizden geleni yapın. Şüphesiz ben de, elimden geleni yapacağım. Rezil edici azabın kime geleceğini ve kimin yalancı olduğunu yakında bileceksiniz. Gözleyin, şüphesiz ben de sizinle beraber gözlüyorum."

وَلَمَّا جَآءَ اَمْرُنَا نَجَّيْنَا شُعَيْبًا وَالَّذِينَ اٰمَنُوا مَعَهُ بِرَحْمَةٍ مِنَّا وَاَخَذَتِ
الَّذِينَ ظَلَمُوا الصَّيْحَةُ فَاَصْبَحُوا فِي دِيَارِهِمْ جَاثِمِينَ ﴿٩٤﴾

94- "Emrimiz gelince Şu'ayb'ı ve onunla birlikte iman edenleri, katımızdan bir rahmetle kurtardık. Zulmedenleri ise o korkunç ses yakaladı da yurtlarında diz üstü çökekaldılar."

كَاَنْ لَمْ يَغْنَوْا فِيهَا اَلَا بُعْدًا لِمَدْيَنَ كَمَا بَعِدَتْ ثَمُودُ ﴿٩٥﴾

95- "Sanki orada hiç yaşamamışlardı. Biliniz ki Semûd kavmi Allah'ın rahmetinden uzaklaştığı gibi Medyen halkı da uzaklaştı."

Allah, onlara mühlet örtüsünü indirdi. Ancak sapkınlığa devam etmede ısrar etmeleri üzerine cezaya çarptırıldılar ve adı sanı okunmayacak bir şekilde yok olup gittiler. Allah şöyle buyurmuştur:

( فَاعْتَبِرُوا يَٓا اُولِي الْاَبْصَارِ ) *"O halde ibret alın, ey basiret sahipleri!"* (Haşr, 59/2)

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا مُوسٰى بِاٰيَاتِنَا وَسُلْطَانٍ مُبِينٍ ﴿٩٦﴾ اِلٰى فِرْعَوْنَ وَمَلَائِهٖ
فَاتَّبَعُوٓا اَمْرَ فِرْعَوْنَ وَمَٓا اَمْرُ فِرْعَوْنَ بِرَشِيدٍ ﴿٩٧﴾

96, 97- "Andolsun, biz Mûsâ'yı ayetlerimizle ve apaçık bir mucizeyle Firavun'a ve onun ileri gelen adamlarına peygamber gönderdik de ileri gelenler Firavun'un emrine uydular. Halbuki Firavun'un emri doğru değildi."

Allah, durumunun önemini ve olayının büyüklüğünü ifade edip, katındaki yüceliği ve beraberinde gönderdiği ayetler yerine, olağanüstü mucizelerine ve düşmanları kahreden delillerine dikkat çekmiştir. Bir izaha göre, Hz. Mûsâ'nın ilk yendiği en çetin düşmanı nefsi olmuştur. Bunun yolunu da ona Allah göstermiştir. Hz. Mûsâ: *"Allah'ım! Ben seni nasıl aramalıyım?"* deyince Allah: *"Benim için kalpleri kırık olan kimselerin yanında"* buyurmuştur.

Böylece Allah, Hz. Mûsâ'nın nefsini küçümsemesi ve O'nun için kalbiyle tevazu göstermesi gerektiğine dikkatini çekmiştir. Bunun üzerine, nefsinde meziyet görmekten korununca etkinliği artmıştır. Allah'ın kendisine verdiği bir özellik olan etkileme gücü, görenlerinin kalplerine hâkim olmuştur. Allah şöyle buyurmuştur:

( وَاَلْقَيْتُ عَلَيْكَ مَحَبَّةً مِنّي ) *"Sana da tarafımdan bir sevgi verdim."* (Tâhâ, 20/39)

Bu nedenle gören herkes onu severdi. Hz. Mûsâ, Allah yolunda zaafa kapılmamıştır. Nitekim rivayete göre, o henüz süt emerken Firavun'un yüzünü tokatladığı gibi, canını almak isteyen ölüm meleğinin yüzüne de tokat vurmuştur. Allah'ın hitabını dinlemekten döndüğünde sitem esnasında kardeşinin kafasından tutup çekmiştir. Allah'ı görme isteğinde bulunma cesaretini göstermiştir. Kendisiyle aynı inancı taşıyan kimsenin yardım talebi üzerine de Kıpti adamı öldürmüştür. Bir de dalalete düşmelerinin bir sonucu olarak kavminin buzağıya taptığını kendisine haber veren Allah'a hitaben şöyle demiştir: ( اِنْ هِيَ اِلَّا فِتْنَتُكَ ) *"Bu senin bir imtihanından başka bir şey değildir."* (A'râf, 7/155)

İşte bunların tamamında Allah, kendisine verdiği etkinlik ve kuvvet sebebiyle onu sorumlu tutmamıştır.

يَقْدُمُ قَوْمَهُ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ فَاَوْرَدَهُمُ النَّارَ وَبِئْسَ الْوِرْدُ الْمَوْرُودُ ﴿٩٨﴾

98- "Firavun, kıyamet gününde kavminin önüne geçecek ve onları ateşe götürecektir. Ne kötü varış yeridir orası!"

Onlar, Firavun'a uymaya rıza gösterdiler ve bu yüzden onun hak ettiği cezayı onlar da hak ettiler. Onlar, güzel bir iş yaptıklarını sanarak hatalarının farkına varamadılar. Allah, onları cehenneme atacağı zaman Firavun önderleri olacaktır. Bir de onlar, yakarışlarının ve ağlamalarının fayda vermediği, azaplarının ve sıkıntılarının sona ermediği, zararlarının ve mutsuzluklarının galebe çaldığı o zaman uğradıkları hüsranı anlayacaklardır. İşte bu, mabudunu inkar edip haddini aşmada ileri giden kimselerin cezasıdır.

وَاُتْبِعُوا فٖي هٰذِهٖ لَعْنَةً وَيَوْمَ الْقِيٰمَةِ بِئْسَ الرِّفْدُ الْمَرْفُودُ ﴿٩٩﴾

99- "Onlar, hem bu dünyada hem de kıyamet gününde lanete uğratıldılar. Ne kötü destektir onlara verilen destek!"

Onlar, dünyalarında imandan, ahiretlerinde de gufran ve cennetlerden uzak düştüler. Aslında dünyalarında yaşadıkları Allah'tan kopuş halleri, gerçekte kıyamet günü cehennemde yaşamaktan daha büyüktür. Bu ise, Allah'ın lanetle imtihan ettiği kimselerin durumudur.

ذٰلِكَ مِنْ اَنْبَٓاءِ الْقُرٰى نَقُصُّهُ عَلَيْكَ مِنْهَا قَٓائِمٌ وَحَصٖيدٌ ﴿١٠٠﴾

100- "Bunlar, o memleketlerin haberlerinden bazılarıdır. Onları sana anlatıyoruz. Onlardan ayakta duranlar da var, yıkılıp gidenler de."

Allah'ın, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) anlattığı peygamberler içerisinde ondan daha saygın kimse olmadığı gibi, anlattığı ümmetler içerisinde de onun ümmetinden daha faziletli bir ümmet olmamıştır. Bu itibarla, nasıl ki Hz. Peygamber (s.a.v.), diğer peygamberlerin önünde ise ümmeti de diğer ümmetlerin önündedir. Allah şöyle buyurmuştur:

( كُنْتُمْ خَيْرَ اُمَّةٍ اُخْرِجَتْ لِلنَّاسِ ) *"Siz, insanlar için çıkarılmış en hayırlı ümmetisiniz."* (Âl-i İmrân, 3/110)

وَمَا ظَلَمْنَاهُمْ وَلٰكِنْ ظَلَمُوٓا اَنْفُسَهُمْ فَمَٓا اَغْنَتْ عَنْهُمْ اٰلِهَتُهُمُ الَّتٖي يَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ مِنْ شَيْءٍ لَمَّا جَٓاءَ اَمْرُ رَبِّكَ وَمَا زَادُوهُمْ غَيْرَ تَتْبٖيبٍ ﴿١٠١﴾

101- "Biz, onlara zulmetmedik. Fakat onlar, kendilerine zulmettiler. Rabbinin azap emri gelince, Allah'ı bırakıp da taptıkları ilahları kendilerine hiçbir fayda sağlamadı. İlahları, onların sadece ziyanlarını artırdı."

Allah'ı zulümle vasıflandırmak caiz değildir. Bu nedenle, mülkündeki tasarrufu, ilahlık hakkı gereğince mutlaktır. Allah, irade ve dileğine göre hüküm verir ve hiçbir hakkın hesabını vermesi istenemez. O halde zulümle nitelenmesi nasıl caiz olur! Bir yoruma göre de eğer bu hitap bir mahluktan diğer bir mahluka olsaydı, özre benzemiş olurdu. Fakat özür, Allah hakkında caiz değildir. Zira mahlukat O'nun mahlukatı, mülk O'nun mülkü, hüküm de O'nun hükmüdür.

وَكَذٰلِكَ اَخْذُ رَبِّكَ اِذَٓا اَخَذَ الْقُرٰى وَهِيَ ظَالِمَةٌ اِنَّ اَخْذَهُٓ اَلِيمٌ
شَدِيدٌ ﴿١٠٢﴾

102- "Zulme sapmış memleketlerin halkını yakaladığında, Rabbinin yakalaması işte böyledir! Şüphesiz O'nun yakalaması can yakıcı ve şiddetlidir."

Şüphesiz Hak, mühlet verir, fakat ihmal etmez. Hükmünü icra eder, fakat acele etmez. O, yaptıklarından sorumlu tutulamaz. Bir yoruma göre de Allah, birilerine muvaffakiyet verdiği zaman onlara sahipsizlik uğramaz. Allah'ın, hakikati nasip kıldığı kalplere de mahrumiyetin yolu düşmez.

Allah şöyle buyurmuştur:

(اِنَّ بَطْشَ رَبِّكَ لَشَدِيدٌ) *"Şüphesiz, Rabbinin yakalaması çok çetindir."* (Burûc, 85/12)

اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِمَنْ خَافَ عَذَابَ الْاٰخِرَةِ ذٰلِكَ يَوْمٌ مَجْمُوعٌ لَهُ
النَّاسُ وَذٰلِكَ يَوْمٌ مَشْهُودٌ ﴿١٠٣﴾

103- "Şüphesiz, ahiret azabından korkanlar için bunda bir ibret vardır. Bu, insanların toplanacakları bir gündür. Bu, herkesin toplanıp bir araya geleceği bir gündür."

Bu, görülen bir gün olup onu toplanan bütün yaratıklar o gün görür.

Bir yoruma göre günler üçtür:

a) Yitirilen gün. Bu, elden tamamen gitmiş olan dündür.

b) Amaçlanan gün. Kavuşup kavuşmayacağımızın bilinmediği gündür.

c) Görülen gün. Bu, içinde bulunduğumuz gündür. Bu çerçevede yitirilen gün dönmez, amaçlanan güne ulaşılmayabilir, görülen gün de yaşanan vakittir ki o da yok olmaya mahkumdur. O halde bu anı faydalı işlerde değerlendirmek gerekir.

وَمَا نُؤَخِّرُهُۤ اِلَّا لِاَجَلٍ مَعْدُودٍ ﴿١٠٤﴾

104- "Biz, ancak onu belirli bir zamana erteliyoruz."

Ecel, hiçbir şeyle ilgili olarak öne alınamaz ve ertelenemez. Ecelleri, Allah'ın bilgisine ve iradesine uygun olarak gerçekleşirler. Bu itibarla, miadı dolunca zamanı öne alacak veya erteleyecek hiçbir talep söz konusu değildir. Aynı şekilde kavuşmanın da bir zamanı vardır. Bu nedenle, kavuşma ümidiyle birlikte talep olamaz. Yok olma korkusuyla birlikte de talep olamaz.

Şiir:

*Selametin kusuru şudur ki sahibini*
*Bel büken gelişmeler beklemekte*
*Musibetin fazileti de ehlinin beklemesidir*
*Musibetin ardından zamanın sevincini*

يَوْمَ يَاْتِ لَا تَكَلَّمُ نَفْسٌ اِلَّا بِاِذْنِه۪ فَمِنْهُمْ شَقِيٌّ وَسَع۪يدٌ ﴿١٠٥﴾

105- "O gün geldiği zaman, Allah'ın izni olmadan hiç kimse konuşamaz. Onlardan mutsuz olanlar da vardır, mutlu olanlar da."

Mutsuz, kaderinde mahrum yaşamakta olan kimsedir. Mutlu da geleceğinde iman nasip olan kimsedir. Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Mutsuzluk iki kısımdır: Kimilerinin mutsuzluğu geçici, kimilerinin ise ebedîdir. Mutluluk için de aynı şey söylenebilir. Mutsuz, tedbirin tutsağı olmuş ve takdirin gerçekleşmesini unutmuş kimsedir. Mutlu ise, tedbirin karanlıklarından dönüş yapıp takdiri görme vasfına sahip olmuş kimsedir.

- Mutsuz, ibadetlerinin kendisinden olduğunu sanarak kulluğa köle olmuş kimsedir. Mutlu ise, beşer oluşun köleliğinden azat olup bütün varlıkların Allah'a ait olduğunu bilen kimsedir.

Ebedî mutsuzlara gelince, bunlar ilahî uyarının gereği olan cezayı ebedî olarak çekenlerdir. Ebedî mutlular ise, Allah'ın, haklarında şöyle buyurduğu kimselerdir: (لَهُمْ مَا يَشَآؤُنَ فِيهَا وَلَدَيْنَا مَزِيدٌ) *"Orada kendileri için diledikleri her şey vardır. Katımızda daha fazlası vardır."* (Kâf, 50/35)

فَاَمَّا الَّذِينَ شَقُوا فَفِي النَّارِ لَهُمْ فِيهَا زَفِيرٌ وَشَهِيقٌ ﴿١٠٦﴾ خَالِدِينَ
فِيهَا مَا دَامَتِ السَّمٰوَاتُ وَالْاَرْضُ اِلَّا مَا شَآءَ رَبُّكَ اِنَّ رَبَّكَ فَعَّالٌ
لِمَا يُرِيدُ ﴿١٠٧﴾

106, 107- "Mutsuz olanlara gelince cehennemdedirler. Onların orada şiddetli bir soluyuşları vardır. Onlar, gökler ve yerler durdukça, orada ebedî olarak kalacaklardır. Ancak Rabbinin dilemesi başka. Şüphesiz Rabbin istediğini yapandır."

Ancak Rabbinin, göklerin ve yerlerin süresini artırmayı dilemesi başka.

Ancak Rabbinin, onları şiddetli soluyuştan başka türlü bir azaba nakletmek istemesi başka.

Ancak Rabbinin, onları cehenneme atmadan önce o azabı çekmelerini istemesi başka. Böylece cehenneme atılmadan önce veya atıldıktan sonra, zamanlarının bazısının azapsız geçmesi söz konusu değildir.

Ancak Rabbinin, tevhid ehlini cehennemden çıkarmak istemesi başka. Böylece mutsuzlukları, ebedî olmamış olur.

( اِنَّ رَبَّكَ فَعَّالٌ لِمَا يُرِيدُ ) *"Şüphesiz Rabbin istediğini yapandır."*

Bu ifade, karşılaştıkları durumun, amelleriyle müstahak olmalarından dolayı değil, Allah'ın öyle dilemesi sebebiyle olduğuna işaret etmektedir.

وَاَمَّا الَّذِينَ سُعِدُوا فَفِي الْجَنَّةِ خَالِدِينَ فِيهَا مَا دَامَتِ السَّمٰوَاتُ
وَالْاَرْضُ اِلَّا مَا شَٓاءَ رَبُّكَ عَطَٓاءً غَيْرَ مَجْذُوذٍ ﴿١٠٨﴾

108- "Mutlu olanlara gelince, gökler ve yerler durdukça içinde ebedî kalmak üzere, cennettedirler. Ancak Rabbinin dilemesi başka. Bu, onlara ardı kesilmez bir lütuf olarak verilmiştir."

Onlar için bugün Allah'a yakınlık cennetleri, yarın da sevap cennetleri vardır. Kâfirler ise bugün ayrılığın azabındadırlar, yarın da yanacakları azapta olacaklardır.

Allah, istediğini yapan olduğu için cennet ehlinin, cennete girmeden önce veya cennete girdikten sonra olsun, zamanlarının bir kısmı mutluluk dışı bırakılmamıştır. Bir ihtimale göre de Allah göklerin ve yerlerin süresini artıracaktır.

( غَيْرَ مَجْذُوذٍ ) *"Ardı kesilmez bir lütuf."* Bu ifade, o nimetlerin kesintisiz ve yasaksız olduğunu göstermektedir.

فَلَا تَكُ فِي مِرْيَةٍ مِمَّا يَعْبُدُ هٰٓؤُلَٓاءِ مَا يَعْبُدُونَ اِلَّا كَمَا يَعْبُدُ اٰبَٓاؤُهُمْ
مِنْ قَبْلُ وَاِنَّا لَمُوَفُّوهُمْ نَصِيبَهُمْ غَيْرَ مَنْقُوصٍ ﴿١٠٩﴾

109- "Şunların taptıkları şeylerin batıl olduğu konusunda şüpheye düşme. Onlar sadece daha önce babalarının taptığı gibi tapıyorlar. Şüphesiz biz onlara azaptan paylarını eksiksiz olarak tastamam vereceğiz."

Allah, burada Hz. Peygamber'in (s.a.v.) şüphe içerisinde olduğunu kast etmemekte, lakin bununla adı geçenlerin babalarına benzedikleri gerçeğini vurgulamak istemektedir. Bir kimsenin, muhatabına: Şüphesiz bu gündüzdür, demesi gibi. Bir görüşe göre de hitap Hz. Peygamber'e (s.a.v.) yapılmış, ancak muhatapları onun ümmetidir.

( وَاِنَّا لَمُوَفُّوهُمْ نَص۪يبَهُمْ غَيْرَ مَنْقُوصٍ ) *"Şüphesiz biz onlara azaptan paylarını eksiksiz olarak tastamam vereceğiz."*

Onların iyiliklerine iyilikle, kötülüklerine de zararla karşılık veririz.

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوسَى الْكِتَابَ فَاخْتُلِفَ ف۪يهِ وَلَوْلَا كَلِمَةٌ سَبَقَتْ مِنْ
رَبِّكَ لَقُضِيَ بَيْنَهُمْ وَاِنَّهُمْ لَف۪ي شَكٍّ مِنْهُ مُر۪يبٍ ﴿١١٠﴾

110- "Andolsun biz Mûsâ'ya Kitab'ı vermiştik de onun hakkında ayrılığa düşülmüştü. Eğer daha önce Rabbinin bir sözü geçmemiş olsaydı, elbette aralarında hüküm verilirdi. Onlar da, o Kur'an hakkında derin şüphe içindedirler."

Onlar, Hz. Mûsâ'ya verilen kitap olan Tevrat hakkında ihtilafa düştüler. Hz. Mûsâ'nın peygamberliği konusunda da görüş ayrılığına düştüler. Böylece bazıları onu tasdik ederken bazıları da onu yalanladılar. Sonra Allah, cezalarını ertelemeye karar verdiğini, hikmetinin olmaması halinde cezalarını çabuklaştıracağını haber vermektedir. Ayetteki bu bilgilendirmenin faydası, Hz. Peygamber'in (s.a.v.), kavminden gördüğü yalanlamadan duyduğu sıkıntıyı hafifletmektir. Zira birbirinin uzantısı olan benzerlerin kıssalarını dinlemede teselli vardır.

Şiir:

*Komşu hanım! Yabancıyız burada ikimiz*
*Yabancı ise yabancının yakınıdır*

وَاِنَّ كُلًّا لَمَّا لَيُوَفِّيَنَّهُمْ رَبُّكَ اَعْمَالَهُمْ اِنَّهُ بِمَا يَعْمَلُونَ خَب۪يرٌ ﴿١١١﴾

111- "Şüphesiz Rabbin onların her birine, yaptıklarının karşılığını tastamam verecektir. Şüphesiz Rabbin, onların yaptıklarından hakkıyla haberdardır."

Allah, amellerin sevap ve azap karşılıklarını tekrar anlatmıştır. Çok sakındırmak ve güzel düşünceyle ibret alma yoluna dikkat çekmek için Allah, bu tekrarı Kur'an'da pek çok yerde yapmıştır. Sonra amellere olan karşılık, çabuklaştırılan ve ertelenen olmak üzere iki kısımdır. Her kim, gafletten vazgeçip uyanışa yönelirse, muamelelerinde zarara uğramaz, peşin kar elde eder. Daha sonra da kazancında eksilme değil, artış bulur. Bu arada kişinin nefsinde buldukları, ilmi delillerle elde ettiklerinden daha mükemmeldir.

فَاسْتَقِمْ كَمَآ اُمِرْتَ وَمَنْ تَابَ مَعَكَ وَلَا تَطْغَوْاۜ اِنَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَص۪يرٌ ﴿١١٢﴾

112- "Öyle ise emrolunduğun gibi dosdoğru ol. Beraberindeki tövbe edenler de, dosdoğru olsunlar. Hak ve adalet ölçülerini aşmayın. Şüphesiz O, yaptıklarınızı hakkıyla görür."

( استقم ) "*istakim-dosdoğru ol*" lafzındaki ( س ) "*sîn*" harfi, talep anlamında olabilir. Yani, kendin için, hak üzere kalmayı Allah'tan iste. "İstakim (dosdoğru ol)" emri, emredilene sürekli bağlılık anlamında da olabilir. Bu arada ibadetteki istikametin gerçek anlamı, ihlal etmeksizin hakkını yerine getirmeye devam etmektir. Böylece uyum yolunu izlemede sapma meydana gelmemiş olur.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- İstikamet sahibi, Allah'ın yolundan yüz çevirmeyen, O'nun çizgisinde yürümeyi, takvasıyla korkmayı ve nefsinin arzularını terk etmeyi sürdüren kimsedir.

- Nefislerin istikameti yanlışı, kalplerin istikameti gafleti, ruhların istikameti alakayı, sırların istikameti de mülahazayı yok etmekle gerçekleşir.

Abidlerin istikameti nefislerini ibadetten alıkoymamaları, onu aksatmamaları ve zor olanını da kolay olanını da yerine getirmeleridir. Zahitlerin istikameti, dünyanın ne azından ne de çoğundan bir şey ummamalarıdır. Tövbe ehlinin istikameti, hatanın semtine bile uğramayıp küçüğünü de büyüğünü de terk etmeleridir. İşte herkesin istikameti bu minval üzeredir.

( وَمَنْ تَابَ مَعَكَ ) *"Beraberindeki tövbe edenler de."*

Yani, seninle beraber olanlar da dosdoğru olsunlar.

وَلَا تَرْكَنُوٓا اِلَى الَّذِينَ ظَلَمُوا فَتَمَسَّكُمُ النَّارُ وَمَا لَكُمْ مِنْ دُونِ اللّٰهِ مِنْ اَوْلِيَآءَ ثُمَّ لَا تُنْصَرُونَ ﴿١١٣﴾

113- "Zulmedenlere meyletmeyin. Yoksa size de ateş dokunur. Sizin Allah'tan başka dostlarınız yoktur. Sonra size yardım da edilmez."

Zalimlerin yaptıklarını yapmayın, yaptıklarına rıza göstermeyin, yaptıklarından dolayı onları övmeyin, onlara iyiliği emretmeyi terk etmeyin, haram mallarından hiçbir şey almayın, kalplerinizle onlarla aynı yerde durmayın, aralarına girmeyin ve onlarla vakit geçirmeyin. Bu emir ve hitabın kapsamına bunların tamamı girer.

وَاَقِمِ الصَّلٰوةَ طَرَفَيِ النَّهَارِ وَزُلَفًا مِنَ الَّيْلِ اِنَّ الْحَسَنَاتِ يُذْهِبْنَ السَّيِّـَٔاتِ ذٰلِكَ ذِكْرٰى لِلذَّاكِرِينَ ﴿١١٤﴾

114- "Gündüzün iki tarafında ve gecenin gündüze yakın vakitlerinde namaz kıl. Çünkü iyilikler kötülükleri giderir. Bu, öğüt alanlar için bir öğüttür."

Yani, bütün vakitleri ibadetlerle geçir. Çünkü yerine getirmen gereken bir farzın veya yapacağın bir nafilenin bir anlık bir zamanını bile ihlal etmen, büyük bir hasrettir ve apaçık bir zarardır.

( اِنَّ الْحَسَنَاتِ يُذْهِبْنَ السَّيِّـَٔاتِ ) *"Çünkü iyilikler kötülükleri giderir."*

İyilikler, Allah'ın cömertçe lütfettikleri, kötülükler de kulun işlediği günahlardır. Böylece Allah'ın iyilikleri, kulun kötülüklerinin üstüne geldiği zaman onları silip geçersiz kılar.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Allah'a yakınlığın iyilikleri, hatanın kötülüklerini giderir.

- Pişmanlığın iyilikleri, suçun kötülüklerini giderir.

- Göz yaşlarının dökülmesi, tökezlemeyi giderir.

- İrfanın güzellikleri, isyanın kötülüklerini giderir.

- Mağfiret dilemenin iyilikleri, ısrarın kötülüklerini giderir.

- İnayetin iyilikleri, cinayetin kötülüklerini giderir.

- Kardeşleri bağışlamanın iyilikleri, onlar hakkında kin tutmayı giderir.

- Cömertliğin iyilikleri, hizmetçilerin kötülüklerini giderir.

- İnsanlar hakkında iyi zanda bulunmak, sizinle ilgili karamsarlıklarını giderir.

- Allah'ın lütfunun iyilikleri, ibadeti kendinizden sanmanın kötülüklerini giderir.

- Doğruluğun iyilikleri, kendini beğenmişliğin kötülüklerini giderir.

- İhlasın iyilikleri, riyanın kötülüklerini giderir.

وَاصْبِرْ فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يُضِيعُ اَجْرَ الْمُحْسِنِينَ ﴿١١٥﴾

**115- "Sabret! Çünkü Allah, iyilik edenlerin mükâfatını zayi etmez."**

Sabır, surat asmadan takdirin acı zorluklarını yutabilmektir. Bir yoruma göre de sabır, emri kucaklamaya ve yasağı terk etmeye güzel yöneliştir.

(فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يُضِيعُ اَجْرَ الْمُحْسِنِينَ) *"Çünkü Allah, iyilik edenlerin mükâfatını zayi etmez."*

İyilik eden, sabra karşı ecrin ve ibadetin, amelle kazanılan bir hak değil, Allah'ın lütfuyla olduğunu bilen amel sahibidir.

فَلَوْلَا كَانَ مِنَ الْقُرُونِ مِنْ قَبْلِكُمْ اُولُوا بَقِيَّةٍ يَنْهَوْنَ عَنِ الْفَسَادِ فِي الْاَرْضِ اِلَّا قَليلًا مِمَّنْ اَنْجَيْنَا مِنْهُمْ وَاتَّبَعَ الَّذينَ ظَلَمُوا مَٓا اُتْرِفُوا فيهِ وَكَانُوا مُجْرِمينَ ﴿١١٦﴾

116- "Sizden önceki nesillerden aklı başında kimseler, insanları yeryüzünde bozgunculuk yapmaktan alıkoysalardı ya! Ancak içlerinden kendilerini kurtardığımız pek az kimse bunu yapmıştı. Zulmedenler ise, içinde şımartıldıkları refahın ardına düştüler ve günahkâr kimseler oldular."

Yani, içinizde kötülüklerden alıkoyanlardan az sayıda kimseler bulunuyordu. Bir görüşe göre de, sizden önceki ümmetlerin içerisinde bozgunculuktan alıkoyan, dini koruyan ve peygamberlerine itaat eden az sayıda kimse bulunuyordu.

وَمَا كَانَ رَبُّكَ لِيُهْلِكَ الْقُرٰى بِظُلْمٍ وَاَهْلُهَا مُصْلِحُونَ ﴿١١٧﴾

117- "Rabbin, halkları salih ve ıslah edici kimseler iken memleketleri zulmederek helak etmez."

Yani, Allah ıslah edici olan kimseyi helak etmemiş, sadece zalim olanı helak etmiştir.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Şayet Allah, ıslah edici oldukları halde söz konusu memleketlerin ahalisini helak etmiş olsaydı bile bu, Allah'tan bir zulüm olmazdı. Çünkü mülk O'nun mülküdür, halk O'nun kullarıdır.

- Islah edici, kendine pay istemeden Rabbinin hakkını yerine getiren kimsedir.

- Islah edici, kurtuluşunu helakine tercih eden kimsedir.

- Kimi ıslah edici vardır ki nefsini ibadeti ıslah eder. Kimi ıslah edici vardır ki kalbini efendisini tanımak ıslah eder. Kimi ıslah edici de vardır ki mana alemini, efendisini görmesi ıslah eder.

وَلَوْ شَآءَ رَبُّكَ لَجَعَلَ النَّاسَ اُمَّةً وَاحِدَةً وَلَا يَزَالُونَ مُخْتَلِفِينَ ﴿١١٨﴾ اِلَّا مَنْ رَحِمَ رَبُّكَ وَلِذٰلِكَ خَلَقَهُمْ وَتَمَّتْ كَلِمَةُ رَبِّكَ لَاَمْلَئَنَّ جَهَنَّمَ مِنَ الْجِنَّةِ وَالنَّاسِ اَجْمَعِينَ ﴿١١٩﴾

118, 119 - "Rabbin dileseydi, insanları tek bir ümmet yapardı. Fakat Rabbinin merhamet ettikleri müstesna, onlar ihtilafa devam edeceklerdi. Zaten onları bunun için yarattı. Rabbinin: 'Andolsun ki cehennemi hem cinlerden hem insanlardan dolduracağım' sözü kesinleşti."

Allah dileseydi, onları uyum ehli kılardı. Sonra da onlar, O'nun mülküne bir güzellik katamayacaklardı. Allah dileseydi, onları ayrılığa düşürürdü. Sonra da onlar, O'nun mülküne kusur bulaştıramazlardı.

( وَلَا يَزَالُونَ مُخْتَلِفِينَ ) *"Onlar ihtilafa devam edeceklerdi."* Çünkü Allah, onlar hakkında bunu irade etmiştir.

( اِلَّا مَنْ رَحِمَ رَبُّكَ ) *"Rabbinin merhamet ettikleri müstesna."* Allah, onlara merhameti ezeli hükmünde yapmıştır. Böylece onları pratik işlerinde ihtilaftan korumuş, bu hükümle ayakta tutmuş, o hükme amade kılmış ve kendilerine uyum, sevgi ve tevhitte sebat vermiştir.

( وَتَمَّتْ كَلِمَةُ رَبِّكَ لَاَمْلَئَنَّ جَهَنَّمَ مِنَ الْجِنَّةِ وَالنَّاسِ اَجْمَعِينَ ) *"Rabbinin: 'Andolsun ki cehennemi hem cinlerden hem insanlardan dolduracağım' sözü kesinleşti."* Yani, sözünde ve hükmünde değişiklik yoktur.

وَكُلًّا نَقُصُّ عَلَيْكَ مِنْ اَنْبَآءِ الرُّسُلِ مَا نُثَبِّتُ بِهِ فُؤَادَكَ وَجَآءَكَ فِي هٰذِهِ الْحَقُّ وَمَوْعِظَةٌ وَذِكْرٰى لِلْمُؤْمِنِينَ ﴿١٢٠﴾

120- "Peygamberlerin haberlerinden, kendileriyle senin kalbini pekiştirdiğimiz her bir haberi sana aktarıyoruz. Bunlarda sana hak, müminlere de bir öğüt ve hatırlatma gelmiştir."

Allah, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kalbini, kendisine anlattığı peygamberlerin kıssalarıyla teskin etmiş, hiç kimseyi, kendisini yükselttiği makama yükseltmediğini ve hiç kimseye kendisine verdiği nimeti vermediğini ona bildirmiştir. Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) herkesin kıssalarını anlatmış, ancak kendisini tanıtmak ve özelliğini bildirmek üzere, onun kıssasını kimseye anlatmamıştır.

- Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kalbinin sebatı, kendisine anlatılan hikayelerle değil, lakin kalbinin, kendisine kıssaları anlatan Allah'a bağlılıkla bağımsız olması sebebiyledir. Bu arada, duyduklarıyla düşünen ile kendisinden duyduğu Allah'tan başkasını tanımayan kimse arasında büyük fark vardır.

Şiir:

*Anlattın bana sevgiliyi ey Sa'd ve artırdın bende*
*İniltiyi, o halde çok konuş bana ey Sa'd!*

وَقُلْ لِلَّذٖينَ لَا يُؤْمِنُونَ اعْمَلُوا عَلٰى مَكَانَتِكُمْ اِنَّا عَامِلُونَ ﴿١٢١﴾
وَانْتَظِرُوا اِنَّا مُنْتَظِرُونَ ﴿١٢٢﴾

121, 122- "İman etmeyenlere de ki: 'Elinizden geleni yapın, biz de yapacağız. Bekleyin, biz de bekleyeceğiz.' "

Tevhid konusunda inkarda bulunanlar, hak olmayanı hakka tercih edenler ve uyarıyı tasdik etmeyenlerin üzerine yakında intikam akacak, böylece azabın denizlerinde boğulacaklar ve itibarsızlığın çukurlarına düşeceklerdir. Ne feryatlarının sonu gelir ne de rezillikleri biter.

وَلِلّٰهِ غَيْبُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَاِلَيْهِ يُرْجَعُ الْاَمْرُ كُلُّهُ فَاعْبُدْهُ
وَتَوَكَّلْ عَلَيْهِ وَمَا رَبُّكَ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ﴿١٢٣﴾

123- "Göklerin ve yerin gaybını bilmek Allah'a mahsustur. Bütün işler, O'na döndürülür. Öyleyse O'na kulluk et ve O'na tevekkül et. Rabbin, yaptıklarınızdan habersiz değildir."

Allah, onların kalplerini akıbetleri bilmekten alıkoydu, ezeli hükümleri onlardan gizledi ve dünya hayatında mükellefiyetlerini yerine getirmeye onları mecbur ederek: ( فَاعْبُدْهُ ) *"Öyleyse O'na kulluk et"* buyurdu. Şayet kalpte dağınıklık, zanda isabetsizlik meydana gelir ve kötü akıbetten korkulursa, Allah'a tevekkül et. Yani güzel zan, iyi ve devamlı ümitle musibeti üzerinden defetmeye çalış.

( وَمَا رَبُّكَ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ) "Rabbin, yaptıklarınızdan habersiz değildir." Allah, ilmiyle her şeyi kuşatmış ve her hususta bir hüküm icra etmiştir.

سُورَةُ يُوسُف

# YÛSUF SÛRESİ

(Yûsuf Sûresi, 111 âyettir. 1, 2, 3 ve 7. âyetler Medine'de, diğerleri Mekke'de inmiştir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

Besmelede yer alan ( اسم ) "*ism-ad*" lafzı, ( وسم ) "*veseme-işaretlemek, damga vurmak*" kökünden gelmektedir. Bu çerçevede kim, zahirine kulluk damgasını, mana alemine de Allah'ın Rab oluşunu görme damgasını vurursa, şüphesiz o kimsenin himmeti yüksek mertebelere yükselmiş ve rütbesi, mübarek makamlara yaklaştırılmış olur. Yahut da ( اسم ) "*ism-ad*" lafzı, ( سِمَة ) "*simet-alamet, işaret*" veya ( سُمُوّ ) "*sumuvv- yükselme*" lafızlarından türemiştir.

Allah, burada "Allah" adını beyan ve hüküm cihetiyle, diğer iki ismi "Rahmân" ve "Rahîm" lafızlarının önüne almıştır. Bu itibarla, Allah'ın dünyadaki rahmetiyle kul, ilahî marifetine ulaşmıştır.

Besmele'nin başında yer alıp tazmîn ve ilsak harfi olan ( با ) "*bâ*" harfi ise Allah'ı bilenin de O'nunla bildiğine, bilmekten geri duranın da O'nunla geri durduğuna işaret etmektedir. Böylece Allah'a ulaşan kimse, O'nun ihsanıyla bu mertebeye taşınmış, bundan geri duran da, O'nun rüsva etmesiyle bağlanıp kalmıştır.

الٓرٰ تِلْكَ اٰيَاتُ الْكِتَابِ الْمُبٖينِ ﴿١﴾

1- "Elif Lâm Râ. Bunlar, apaçık Kitab'ın ayetleridir."

Kelimeler halinde dizilmemiş hece harfleriyle konuşmak, sevenlerin, sevgilerini gizleme konusundaki prensibidir. Bu itibarla, Kur'an'dan amaç her ne kadar açıklama ise de, onda hem işaretli hem açık hem ayrıntılı hem de kısa ifadeler bulunmaktadır.

Şiir:

*Doğuya dönerek ağlıyorum eğer bulunuyorsa evleriniz*
*Batı tarafında, dedikodu korkusundan*

Bir yoruma göre de halkın anlayışları, Allah'ın sevgilisiyle olan hitabında yer alan sırları anlamaktan geri kalmıştır. Başkaları, bu hitapla ibadetlerini yerine getirmiş ve ona iman etmişlerdir. Ancak Allah, bu hitabı anlama özelliğini sadece sevgili Peygamberine vermiştir. Bu yönüyle o, sevgili peygamberin, hasmının haberdar olamayacağı sırrıdır.

Şiir:

*Öyle bir sır var ki sevenler arasında, ifşa edemez onu*
*Halka ne bir söz ne de onu anlatacak bir kalem*

Bu harflerin indirilmesinde şu işaret de vardır: Bilinci yerinde ve ayık olan kimse, az lafızdan pek çok anlamlar çıkarabilir. Kendinden geçmiş yokluk makamındaki kimse ise, çok şey işitir, ancak az şey anlar. Birincisinin durumu, bilincinin kemalinden, bunun ise vuslatının tam oluşundan dolayıdır. Hal böyle olunca Allah, anlamlarını bilmek mümkün olmayan bu harfleri, anlaşılmalarının imkansızlığı nedeniyle, anlamlarını bilemeyecek olan dostlara bir çıkış kapısı olmaları için indirdi. Böylece onlar, anlamakla yükümlü kılınmamış olurlar ve birliktelik pınarında gark oldukları zaman bu durum, durumlarına uygun düşmüş olur. Bu nedenle: *"Bilinci yerinde olmayan rahatlar"* denilmiştir.

( تِلْكَ ) "*Bunlar*" lafzının, Allah'ın Hz. Peygamber'e (s.a.v.) bulunduğu vaade dair habere işaret olması muhtemeldir. Kimisine göre ise bu, Allah'ın Hz. Peygamber'e (s.a.v.) verdiği özel bilgi ve sadece onun için gerçekleştirdiği bir yakınlaştırmanın ifadesidir. O halde bu harfler, vaat edilenin yerine getirilmesinin izahıdır.

( الْكِتَابِ الْمُبِينِ ) "*Apaçık Kitap*" ise Allah'ın Hz. Peygamber'i (s.a.v.), başkasının ulaşamayacağı makama yükselteceğine dair ezeli hükmüne işaret etmektedir. Nitekim Allah şöyle buyurmuştur:

( وَمَا كُنْتَ بِجَانِبِ الطُّورِ اِذْ نَادَيْنَا ) "*Biz, Mûsâ'ya seslendiğimiz zaman Tûr'un yan tarafında da değildin.*" (Kasas, 28/46)

Yani biz Mûsâ ile konuşarak senin kadrinin yüceliğini ve seni, şu anda bulunduğun makama ulaştıracağımızı ona bildirdiğimiz zaman sen hazır değildin. Aynı şekilde, vahiy indirdiğimiz herkese kıssanı anlattık ve yaradılışını açıkladık. İşte şimdi, anlattıklarımızı gerçekleştirmenin zamanıdır.

Şiir:

*Şen olsun yerin, olmasaydı eğer o*
*Olmazdı kalbim aşk ateşinin kaynağı*

Bir de Allah şöyle buyurmuştur:

( وَلَقَدْ كَتَبْنَا فِي الزَّبُورِ مِنْ بَعْدِ الذِّكْرِ اَنَّ الْاَرْضَ يَرِثُهَا عِبَادِيَ الصَّالِحُونَ ) "*Andolsun, Zikir'den sonra Zebûr'da da: Yere muhakkak benim iyi kullarım varis olacaktır, diye yazmıştık.*" (Enbiyâ, 21/105)

Burada Zikir'den maksat Tevrât, salih kullardan maksat da Hz. Muhammed'in (s.a.v.) ümmetidir.

اِنَّٓا اَنْزَلْنَاهُ قُرْءٰنًا عَرَبِيًّا لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ﴿٢﴾

2- "Biz, onu akıl erdiresiniz diye, Arapça bir Kur'an olarak indirdik."

Hz. Peygamber'e (s.a.v.) Kitab'ın indirilmesinde ve elçi gönderilmesinde sevginin hükümlerini gerçekleştirmek ve vuslatın

sebeplerini pekiştirmek vardır. Çünkü gerçek vuslatı elde edemeyen kimse elçiyle avunur. Dostları görmekten geri kalan kimse de Kitab'ın varlığıyla teselli bulur.

Şiir:

*Yanımdadır kitapların başucumdan ayrılmaksızın*
*Şifa vardır onlarda sakladığım acı için*

نَحْنُ نَقُصُّ عَلَيْكَ اَحْسَنَ الْقَصَصِ بِمَٓا اَوْحَيْنَٓا اِلَيْكَ هٰذَا الْقُرْاٰنَ وَاِنْ كُنْتَ مِنْ قَبْلِه۪ لَمِنَ الْغَافِل۪ينَ ﴿٣﴾

3- "Sana bu Kur'an'ı vahyetmekle kıssaların en güzelini anlatıyoruz. Halbuki daha önce sen bunlardan habersizdin."

Bunlar, kıssaların en güzelidir. Çünkü işitilmesi kalbin, kusur işlemeye maruz bırakan şeylerle meşgul olmasına sebep olan emir ve yasaklar içermemektedir.

Kıssaların en güzelidir, çünkü içinde dostlar anlatılmaktadır.

Kıssaların en güzelidir, çünkü onda Hz. Yûsuf'un, kardeşlerinin hatalarını affedişi vardır.

Kıssaların en güzelidir, çünkü onda Hz. Yûsuf'un, Aziz'in karısını terk edişinin ve kendisine ilişmek istediğinde ondan yüz çevirmesinin anlatılışı vardır.

Onların, kendisinden anlatmasını istedikleri insanların durumlarına ilişkin olaylara göre kıssaların en güzelidir.

Kıssaların en güzelidir, çünkü mahluk değildir.

Bir yoruma göre de, Allah bu kıssanın, kıssaların en güzeli olduğunu kendisine bildirince Hz. Peygamber (sav), kendisine tahsis edilen meziyet ve artıları fark etti ve Allah'ın, hiç kimseyi onun mertebesine benzer bir mertebeye yükseltmediğini anladı.

(وَاِنْ كُنْتَ مِنْ قَبْلِه۪ لَمِنَ الْغَافِل۪ينَ) *"Halbuki daha önce sen bunlardan habersizdin."*

Yani sen, daha önce bu kıssayı anlamaktan uzak olanlardan idin. Yani biz sana vahiy indirmeden önce sen, gerçekten bu kıssadan habersiz olanlardan idin. Yani sen, bu kıssanın bilgisine kendi emeğin, çaban, arayışın ve gayretinle ulaşmadın. Aksine bunlar, kazanılan (kesbî) değil, Allah tarafından bahşedilen (vehbî) şeylerdir. Bu itibarla, sen bunları çabanla değil bizim bahşetmemizle, öğrenmenle değil keremimizle, zorlamanla değil lütfumuzla, kendinle değil bizimle buldun.

اِذْ قَالَ يُوسُفُ لِاَبِيهِ يَٓا اَبَتِ اِنّ۪ي رَاَيْتُ اَحَدَ عَشَرَ كَوْكَبًا وَالشَّمْسَ
وَالْقَمَرَ رَاَيْتُهُمْ ل۪ي سَاجِد۪ينَ ﴿٤﴾

4- Hani Yûsuf babasına: “Babacığım! Gerçekten ben rüyada on bir yıldız, güneşi ve ayı gördüm. Gördüm ki onlar bana boyun eğiyorlardı” demişti.

Hz. Yûsuf, rüyasını babasına anlatınca Hz. Yakub, doğru tabirini bildi. Bu nedenle Yûsuf’un gözünden kaybolduğu süre zarfında hep onu anıyordu. Bu uzun sürünce, bu kez onu konuşuyordu. O kadar ki kendisine: ( قَالُوا تَاللّٰهِ تَفْتَؤُا تَذْكُرُ يُوسُفَ ) “Allah’a yemin ederiz ki sen hala Yûsuf’u anlatıp duruyorsun” (Yusuf, 12/85) dediler. Bunun üzerine o: ( وَاَعْلَمُ مِنَ اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ) “Ben, Allah tarafından sizin bilmediğiniz şeyleri bilirim” (Yusuf, 12/86) dedi. Hz. Yakub, Hz. Yûsuf’un rüyasının doğruluğundan emin idi.

Eğer denilse ki: Çocuğun fiilinin hiçbir hükmü yokken, rüyasının nasıl hükmü olur? Ve ikisi arasındaki fark nedir?

Şöyle cevap verilir: Fiil, kasten yapıldığı için, yapanının kusurlu oluşuna maruzdur. Rüya ise, onun kastıyla değildir ki ona noksanlık atfedilsin.

Diğer bir yoruma göre de sırrın hakkı, yakın kimseden dahi saklı tutulmasıdır. Bu nedenle Hz. Yûsuf rüyasının sırrının açıklayınca bela yakasına yapıştı.

قَالَ يَا بُنَيَّ لَا تَقْصُصْ رُءْيَاكَ عَلٰٓى اِخْوَتِكَ فَيَكِيدُوا لَكَ كَيْدًا اِنَّ الشَّيْطَانَ لِلْاِنْسَانِ عَدُوٌّ مُبِينٌ ﴿٥﴾

5- Babası şöyle dedi: "Yavrucuğum! Rüyanı kardeşlerine anlatma. Yoksa sana tuzak kurarlar. Çünkü şeytan, insanın apaçık düşmanıdır."

Kader geldiği zaman, öğüt ve sakınma fayda vermez. Çünkü Hz. Yakub'un Hz. Yûsuf'a olan öğüdünden daha fazla bir öğüt ve uyarı olmaz. Ancak, Hz. Yûsuf hakkında takdir daha önce kesinleştiğinden olan olmuştur.

Bu konudaki diğer bazı yorumlar da şöyledir:

- Hz. Yûsuf, rüyasını açıklamakla babasının tavsiyesine aykırı davranmıştır. Zira rüyasını açıklamasaydı, kardeşleri ona komplo düzenlemeyeceklerdi. Şüphesiz o, küçük yaştaki bir çocuk da olsa, babasına muhalefeti sebebiyle beladan kurtulamamıştır.

- Hz. Yûsuf, tevili kardeşlerinin kendisine boyun eğmeleri olan rüyayı görünce, tabiri babası ve teyzesinin kendisine boyun eğmeleri olan rüyayı da gördü. Nitekim ayet şöyledir: ( اِنّ۪ي رَاَيْتُ اَحَدَ عَشَرَ كَوْكَبًا وَالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ رَاَيْتُهُمْ ل۪ي سَاجِد۪ينَ ) *"Gerçekten ben rüyada on bir yıldız, güneşi ve ayı gördüm. Gördüm ki onlar bana boyun eğiyorlardı."* (Yusuf,12/4) Bunun üzerine kardeşleri kıskançlığa kapıldılar. Babası ise aşırı babalık şefkatinden dolayı benliğiyle musibete uğradı.

- Rüyasının kardeşleriyle ilgili tabiri doğru çıkmış ve onlar önünde eğilmişlerdir. Allah: ( وَخَرُّوا لَهُ سُجَّدًا ) *"Onlar, Yûsuf'a saygıyla eğildiler"* (Yûsuf, 12/100) buyurmuştur. Babası ve teyzesi ise eğilmediler. Nitekim Allah şöyle buyurmuştur: ( وَرَفَعَ اَبَوَيْهِ عَلَى الْعَرْشِ ) *"Yûsuf, ana babasını tahtın üzerine çıkardı."* (Yûsuf, 12/100) Zira Hz. Yûsuf, babalık ve analık hakkını gözetmek üzere onları bundan korumuştur.

وَكَذٰلِكَ يَجْتَبِيكَ رَبُّكَ وَيُعَلِّمُكَ مِنْ تَاْوِيلِ الْاَحَادِيثِ وَيُتِمُّ نِعْمَتَهُ
عَلَيْكَ وَعَلٰٓى اٰلِ يَعْقُوبَ كَمَٓا اَتَمَّهَا عَلٰٓى اَبَوَيْكَ مِنْ قَبْلُ اِبْرٰهِيمَ
وَاِسْحٰقَ اِنَّ رَبَّكَ عَلِيمٌ حَكِيمٌ ﴿٦﴾

6- "İşte Rabbin, seni böylece seçecek, sana olayların yorumunu öğretecek ve daha önce ataların İbrahim ve İshak'a nimetlerini tamamladığı gibi, sana ve Yakub soyuna da tamamlayacaktır. Şüphesiz Rabbin, hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Yani, nasıl ki Rabbin, sana gösterdiği bu rüya ile sana lütufta bulunduysa, aynı şekilde seni seçecek ve bu rüyayı gerçekleştirmek suretiyle sana ihsanda bulunacaktır. Nasıl ki sana nimet vaadinde bulunarak lütufta bulunduysa, bu nimeti gerçekleştirmekle de sana lütufta bulunmuştur.

Bu konudaki diğer bazı yorumlar da şöyledir:

- Allah tarafından seçilmek, mahluktan eser taşımayan şeydir. Bu çerçevede kendi çaba ve kastı olmaksızın kul için gerçekleşen iyilikler seçilmenin gereğidir.

- O seçilmişliğin bir tezahürü de Allah'ın, Aziz'in karısının onu arzulamasının yol açacağı günahı işlemekten kendisini korumasıdır.

- Seçilmiş olmanın bir göstergesi de kardeşlerinin yaptığının üstünü örtmesidir. Çünkü hapisten çıkarılışından: ( اِذْ اَخْرَجَنِي مِنَ السِّجْنِ ) "*Rabbim, beni zindandan çıkararak bana iyilikte bulundu*" (Yûsuf, 12/100), diyerek söz ettiği halde, kuyudan kurtuluşunu dile getirmemiştir. Seçilmişliğin diğer bir tezahürü de, kardeşlerini hemen bağışlamaya muvaffak kılınmasıdır. O bu konuda kardeşlerine hitaben şöyle demiştir: ( لَا تَثْرِيبَ عَلَيْكُمُ الْيَوْمَ ) "*Bugün size kınama yoktur.*" (Yûsuf, 12/92)

( وَيُعَلِّمُكَ مِنْ تَاْوِيلِ الْاَحَادِيثِ ) "*Sana olayların yorumunu öğretecek.*" Bunu, herkesin değerini bilmen ve söz söyleyen herkesin değerine, dinlediğin sözüyle muttali olman için yapacaktır. Ancak onun sö-

zünden değil, keskin zekan ve aşırı sezginden dolayı değerine vakıf olacaksın.

( وَيُتِمُّ نِعْمَتَهُ عَلَيْكَ وَعَلٰى اٰلِ يَعْقُوبَ كَمَٓا اَتَمَّهَا عَلٰٓى اَبَوَيْكَ مِنْ قَبْلُ اِبْرٰهِيمَ وَاِسْحٰقَ ) *"Daha önce ataların İbrahim ve İshak'a nimetlerini tamamladığı gibi, sana ve Yakub soyuna da tamamlayacaktır."*

Nimetin tamamlanmasından biri de nimete şükretmeye muvaffak olmaktır. Bir diğeri de nimeti gasptan ve değişiklikten korumaktır. Nimetin diğer bir tamamlanma biçimi de onunla kolayca cömertlik yapabilmek için ondan sakınmaktır.

لَقَدْ كَانَ فِي يُوسُفَ وَاِخْوَتِهِٓ اٰيَاتٌ لِلسَّٓائِلِينَ ﴿٧﴾

7- "Andolsun, Yûsuf ve kardeşlerinde, soranlar için ibretler vardır."

Yani, nasıl sabredeceklerini bilmeleri için, meşakkat sahibi herkes için, nasıl şükür edeceklerini bilmeleri için de nimet sahibi herkes için onlarda ibretler vardır.

Konuyla ilgili diğer yorumlar da şöyledir:

- Onların kıssasında hatanın nasıl affedileceği ve karşılaşırken cefa ehlinin nasıl mahcup oldukları vardır.

- Onların kıssasında Allah'ın, velilerini korumak suretiyle onlara olan lütfunun göstergeleri ve muhabbetin ( ...) meşakkatten olduğuna dair deliller vardır.

Onların kıssasında Allah'a ümit bağlamada samimi olanın, bir gün O'nun özel imtihanına maruz kalacağına dair deliller vardır.

اِذْ قَالُوا لَيُوسُفُ وَاَخُوهُ اَحَبُّ اِلٰٓى اَبِينَا مِنَّا وَنَحْنُ عُصْبَةٌ اِنَّ اَبَانَا لَفِي ضَلَالٍ مُبِينٍ ﴿٨﴾

8- "Kardeşleri dediler ki: 'Biz güçlü bir topluluk olduğumuz halde, Yûsuf ve kardeşi, babamıza bizden daha sevgilidir. Doğrusu babamız, açık bir yanılgı içindedir.' "

Yûsuf'un kardeşleri, gizledikleri hasetleriyle tanıtılmışlardır. Onlar: ( اِنَّ اَبَانَا لَفِي ضَلَالٍ مُبِينٍ ) *"Doğrusu babamız açık bir yanılgı içindedir"* diyecek derecede babalarına dil uzatarak bu hasedi kalplerinden çıkarmak konusunda tedbir aramamışlardır.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Kardeşleri, Yûsuf'u sevmede onların önüne geçirmesi konusunda babalarına kalpleriyle itiraz edince, Allah, babalarına dil uzatıp onu yanılgı içinde olmakla niteleyecek kadar kendilerine mühlet vermek suretiyle onları cezalandırdı. Onlar, babalarının kendisini öncelemesi konusunda Hz. Yûsuf'u kıskanınca, Allah bundan o denli hoşnut olmadı ki, kıskancın büyük insan olamayacağını bilmeleri için, onları Hz. Yûsuf'un huzurunda durup yere eğilmek durumunda bıraktı.

- İnsanların en uzun süre üzüleni, insanlarla bir araya gelmekten acı duyan ve Allah'ın öne geçirdiğini geriye iten, geride bıraktığını da öne geçiren kimsedir. Nitekim Hz. Yûsuf'un kardeşleri onu kuyunun dibine atmak isterken, Allah onu tahta çıkardı.

اُقْتُلُوا يُوسُفَ اَوِ اطْرَحُوهُ اَرْضًا يَخْلُ لَكُمْ وَجْهُ اَبِيكُمْ وَتَكُونُوا مِنْ بَعْدِهِ قَوْمًا صَالِحِينَ ﴿٩﴾

9- "Yûsuf'u öldürün veya onu bir yere atın ki, babanız sadece size yönelsin. Ondan sonra salih kimseler olursunuz."

Yani babanız, sadece size yönelmiş olur. Nitekim eskiden beri şöyle denilmiştir: *"Hepsini isteyen kimse, hepsini kaçırır."*

Kardeşler, Hz. Yakub'un tamamen kendilerine yönelmesini isteyince, Allah şöyle buyurdu: ( وَتَوَلّٰى عَنْهُمْ ) *"Yakub onlardan yüz çevirdi"* (Yûsuf, 12/84).

Bir yoruma göre de kardeşlerin amacı, Yûsuf'un babasının gözü önünde olmamasıdır. Bu nedenle onlar şöyle demişlerdir:

*"Yûsuf'u ya öldürmek veya sürgün etmek gerekir. Yûsuf, ortadan kalktıktan sonra, daha sonra olacaklarda bir sakınca yoktur."*

( وَتَكُونُوا مِنْ بَعْدِهِ قَوْمًا صَالِحِينَ ) *"Ondan sonra salih kimseler olursunuz."*

Onlar, haramı hemen işlerken, tövbeyi geleceğe ertelemiş ve ilerdeki karara havale etmişlerdir. Bu nedenle, erteledikleri tövbe, hemen işledikleri hatayı temizlememiştir. Diğer bir yoruma göre, Allah'ın kapısından büsbütün kopmak içlerine sinmediğinden, nefislerinin kendilerini sevk ettiği hatayı işlemeden önce, güzel dönüşün tedbirini almışlardır. Bu da Allah'ı tanıyanların vasfıdır.

قَالَ قَٓائِلٌ مِنْهُمْ لَا تَقْتُلُوا يُوسُفَ وَاَلْقُوهُ فٖي غَيَابَتِ الْجُبِّ يَلْتَقِطْهُ
بَعْضُ السَّيَّارَةِ اِنْ كُنْتُمْ فَاعِلٖينَ ﴿١٠﴾

10- "Onlardan bir sözcü: 'Yûsuf'u öldürmeyin, onu bir kuyunun dibine bırakın ki geçen kervanlardan biri, onu bulup alsın. Eğer yapacaksanız böyle yapın' dedi."

Yûsuf'un kardeşleri, her ne kadar onu cefa ile karşılamışlarsa da nesep şefkati ve yakınlığa olan saygı, onu öldürmekten kendilerini alıkoymuştur. Bu nedenle onlar: *"Onu öldürmeyin, şahsını gözden kaybettirin"* demişlerdir.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Onları, Hz. Yûsuf'u kuyuya atmaya sevk eden yegane husus, babalarının sadece onlara ilgi göstermesini istemeleridir. Bu amaçlarını da onu gözden kaybettirmekle gerçekleştirmek istediklerinden kendisine aşırı işkence yapmamışlardır.

- Allah'ın ilminde Hz. Yûsuf'u yakınlık makamına ulaştırmak malum olduğu için kardeşlerinin sözcüsünün kalbine: ( لَا تَقْتُلُوا يُوسُفَ ) *"Yûsuf'u öldürmeyiniz."* sözünü söylemesini ilham etmiştir.

Sonra, her ne kadar Allah, o anda Hz. Yûsuf'u musibete maruz kılmışsa da gelecekte onu yükselttiği makamla musibetini hafifletmiştir.

Şiir:

*Kuşattı seni sıkıntılar defalarca*
*Seçkin kıldı seni Allah, sen istemeksizin*

قَالُوا يَٓا اَبَانَا مَا لَكَ لَا تَاْمَ۫نَّا عَلٰى يُوسُفَ وَاِنَّا لَهُ لَنَاصِحُونَ ﴿١١﴾

11- "Babalarına şöyle dediler: 'Ey Babamız! Yûsuf hakkında bize neden güvenmiyorsun? Halbuki biz, onun iyiliğini isteyen kişileriz.' "

Öğüt bağlamında da olsa, kıskanç kişinin sözü dinlenmez ve vaadi kabul edilmez. Çünkü o, bal yedirirken, zehir içirir.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Hz. Yakub, çocuklarının niyetlerini kalben sezerek Yûsuf'a: ( فَيَكِيدُوا لَكَ كَيْدًا ) "*Sana tuzak kurarlar*" dediği halde, onu koruyacaklarına dair yaptıkları açıklamayı kabul etmesi şaşırtıcıdır. Lakin kader gerçekleşeceği zaman basiret kapanır.

- Kim düşmanının, sevgilisi aleyhindeki sözünü kabul ederse, Hz. Yakub'un Hz. Yûsuf ile ilgili olarak karşılaştığı musibetle karşılaşır.

اَرْسِلْهُ مَعَنَا غَدًا يَرْتَعْ وَيَلْعَبْ وَاِنَّا لَهُ لَحَافِظُونَ ﴿١٢﴾

12- "Yarın onu bizimle beraber gönder de gezip oynasın. Şüphesiz biz onu koruruz."

Bir yoruma göre onlar Hz. Yakub'u, Hz. Yûsuf'u kendilerine teslim etmesi konusunda oynayıp ferahlamasıyla tamah ettirdiler. Böylece Hz. Yakub, ayrılığı kendisine zor gelse de, Hz. Yûsuf'u önünden alıp götürmelerine kalben rıza göstermiş oldu. Çünkü seven, sevdiğinin rahatını kendi rahatına tercih eder.

Diğer bir yoruma göre de, Hz. Yakub, onların: ( وَاِنَّا لَهُ لَحَافِظُونَ ) "*Şüphesiz biz onu koruruz*" şeklindeki sözlerine, yani onlar tarafından korunacağına meyledince sonuçta şu sözleriyle karşılaştı:

( وَتَرَكْنَا يُوسُفَ عِنْدَ مَتَاعِنَا فَاَكَلَهُ الذِّئْبُ ) *"Yûsuf'u eşyamızın yanında bırakmıştık. Bir de ne görelim onu kurt yemiş."* (Yûsuf, 12/17) O halde kim sevdiğini düşmanlarına teslim ederse fazlasıyla belasını bulur.

قَالَ اِنّي لَيَحْزُنُنِيٓ اَنْ تَذْهَبُوا بِهٖ وَاَخَافُ اَنْ يَاْكُلَهُ الذِّئْبُ وَاَنْتُمْ عَنْهُ غَافِلُونَ ﴿١٣﴾

13- "Babaları: 'Doğrusu onu götürmeniz beni üzer. Siz ondan habersiz iken onu kurt yer, diye korkuyorum.' "

Onu götürmeniz beni üzer. Çünkü ben, onu görmeden duramam ve ayrılığına dayanamam. Bu, başına bir şey gelmemesi halinde böyle iken, bir de onu kurt yer, diye korktuğuma göre nasıl olur da kendisini size teslim edebilirim.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Hz. Yakub, Hz. Yûsuf için kurttan korkunca, kurt haberiyle imtihan edildi. Hadiste meâlen şöyle denilmiştir:

*"İnsanoğlunun başına korktuğu şey musallat edilir."*

Her ne kadar peygamberlerin makamları itirazdan korunmuşsa da Hz. Yakub'un: *"Ben kurttan değil, Allah'tan korkarım"* demesi kendisine daha uygun düşerdi.

- Hz. Yakub'un ağzından kurt sözü çıkınca bu, çocukları için telkin gibi oldu. Eğer ondan duymasalardı, kurt bahanesine akıl erdiremeyeceklerdi.

قَالُوا لَئِنْ اَكَلَهُ الذِّئْبُ وَنَحْنُ عُصْبَةٌ اِنَّآ اِذًا لَخَاسِرُونَ ﴿١٤﴾

14- "Onlar da: 'Andolsun biz kuvvetli bir topluluk iken onu kurt yerse, biz gerçekten hüsrana uğramış oluruz' dediler."

Yûsuf'un kardeşleri: ( اِنَّآ اِذًا لَخَاسِرُونَ ) *"Biz gerçekten hüsrana uğramış oluruz"* sözleriyle kendilerini vasıflandırdıkları hüsrana uğradılar. Çünkü Yûsuf gibi bir kardeşi öyle bir fiyata satan, zarar etmeyi

hak etmiş olur. Bir yoruma göre de onlar: ( وَنَحْنُ عُصْبَةٌ ) *"Biz kuvvetli bir topluluk iken"* diyerek kuvveti kendilerinde var saydıklarından yalnızlığa terk edilerek bu hatayı işlediler. Diğer bir yoruma göre ise Hz. Yakub onların: *"Biz kuvvetli bir topluluk iken"* şeklindeki sözlerine güvenince, başına gelenler gelmiş oldu.

فَلَمَّا ذَهَبُوا بِهِ وَاَجْمَعُوٓا اَنْ يَجْعَلُوهُ فِي غَيَابَتِ الْجُبِّ وَاَوْحَيْنَآ
اِلَيْهِ لَتُنَبِّئَنَّهُمْ بِاَمْرِهِمْ هٰذَا وَهُمْ لَا يَشْعُرُونَ ﴿١٥﴾

15- "Yûsuf'u götürüp kuyunun dibine bırakmaya karar verdikleri zaman biz de ona: 'Andolsun, farkında değillerken onların bu işlerini sen kendilerine haber vereceksin' diye vahyettik."

Ayetteki şart cümlesinin cevabı mukadderdir. Yani onlar, Hz. Yûsuf'u götürüp kuyuya atmaya karar verince, karar verdikleri şeyi yaptılar. Veya kardeşleri onu götürünce, biz ona vahiy indirdik. Bu durumda " و أوحينا " lafzının başındaki ( و ) *"vav"* harfi zaiddir. Bu ifadedeki işaret ise şöyledir: Hz. Yûsuf'un başına bela gelince, katlandığı şiddetli belanın üzerinden alınması için hemen ona müjdeyi anlattık.

Bir yoruma göre de, babasının emrinde yaşamasının yolları kesilince Hz. Yûsuf'a Mevla'sı tarafından vahiy indirildi. Zaten Allah'ın prensibi böyledir. Dostlarının nefislerine karşı bir belanın kapısını açtığında mutlaka kalplerine huzur ve sahiplenmenin çeşitli lütuflarının kapılarını açar.

وَجَآؤُ اَبَاهُمْ عِشَآءً يَبْكُونَ ﴿١٦﴾ قَالُوا يَآ اَبَانَآ اِنَّا ذَهَبْنَا نَسْتَبِقُ
وَتَرَكْنَا يُوسُفَ عِنْدَ مَتَاعِنَا فَاَكَلَهُ الذِّئْبُ وَمَآ اَنْتَ بِمُؤْمِنٍ لَنَا
وَلَوْ كُنَّا صَادِقِينَ ﴿١٧﴾

16, 17- "Akşamleyin ağlayarak babalarına geldiler. 'Ey babamız! Biz yarışa girmiştik. Bir de ne görelim onu kurt yemiş. Her ne kadar doğru söylesek de sen bize inanmazsın' dediler."

Yalancıya ağlama imkanının verilmiş olması, Allah'ın onu perişan halde bıraktığının işaretidir. Bir hadis şöyledir:

*"Kişinin münafıklığı kemale erdiği zaman, istediği kadar ağlayabilecek ölçüde gözüne hakim olur."*

Bir görüşe göre ayet, şöyle de yorumlanabilir: Onlar, her ne kadar Hz. Yûsuf'a karşı cinayet işledilerse de yaptıklarından pişmanlık duydular. Babalarına açıklamasalar da bu pişmanlıklarından dolayı yüksek sesle ağlayarak kurt hikayesini uydurdular.

وَجَٓاؤُ عَلٰى قَم۪يصِه۪ بِدَمٍ كَذِبٍ قَالَ بَلْ سَوَّلَتْ لَكُمْ اَنْفُسُكُمْ اَمْرًا
فَصَبْرٌ جَم۪يلٌ وَاللّٰهُ الْمُسْتَعَانُ عَلٰى مَا تَصِفُونَ ﴿١٨﴾

18- "Bir de üzerine sahte bir kan bulaştırılmış gömleğini getirdiler. Yakub dedi ki: 'Hayır! Nefisleriniz, sizi aldatıp böyle bir işe sürükledi. Artık bana düşen, güzel bir sabırdır. Anlattıklarınıza karşı yardımı istenilecek de ancak Allah'tır.' "

Uydurdukları bahane, Hz. Yakub'un, onların yalanını tasdik etmesini sağlamada etkili olmadı. Aksine kalbi, ona durumun söylediklerinin aksine olduğunu haber verdi.

( بَلْ سَوَّلَتْ لَكُمْ اَنْفُسُكُمْ اَمْرًا فَصَبْرٌ جَم۪يلٌ وَاللّٰهُ الْمُسْتَعَانُ عَلٰى مَا تَصِفُونَ ) *"Hayır! Nefisleriniz, sizi aldatıp böyle bir işe sürükledi. Artık bana düşen, güzel bir sabırdır. Anlattıklarınıza karşı yardımı istenilecek de ancak Allah'tır."*

Netice itibariyle Hz. Yakub, ayrıntısını bilmese de durumu özetle bilmiş oldu. Böylece işlerin akıbeti, gelecekte ayrıntıları anlaşılıncaya kadar, dosdoğru olan kimselerin kalplerine özetle ulaşmaya devam eder. Bir yoruma göre de Yûsuf'un kardeşleri, yaptıklarına karşılık cezaya çarptırıldılar. Şöyle ki onlar, gömleğini parçalama becerisinden yoksun bırakıldılar ve bu sayede Hz. Yakub, söylediklerinin uydurma olduğunu bilmiş oldu.

وَجَٓاءَتْ سَيَّارَةٌ فَاَرْسَلُوا وَارِدَهُمْ فَاَدْلٰى دَلْوَهُ قَالَ يَا بُشْرٰى هٰذَا
غُلَامٌ وَاَسَرُّوهُ بِضَاعَةً وَاللّٰهُ عَلِيمٌ بِمَا يَعْمَلُونَ ﴿١٩﴾

19- "Bir kervan gelmiş, sucularını suya göndermişlerdi. Sucu, kovasını kuyuya salınca: 'Müjde! Müjde! İşte bir oğlan!' dedi. Onu alıp bir ticaret malı olarak sakladılar. Oysa Allah, onların yaptıklarını biliyordu."

Bir şey isteyen herkese, suyla yetinen kervanın Hz. Yûsuf'u bulması gibi sadece istediği verilmeyip aynı zamanda umduklarının üzerinde de verilebilir. Bir yoruma göre, bir şey bulan herkes, bu kervanın bulduğu gibi bulacak değildir. Onlar, mülkiyet altındaki bir köle bulduklarını sanmışlardı. Oysa hakikatte Hz. Yûsuf hür bir kimse idi.

Diğer bir yoruma göre ise Allah Hz. Yûsuf'un kuyudan kurtulmasını dileyince, yolculukla ilgili kararlılığında kervanın hissiyatında tedirginlik yarattı ve Hz. Yûsuf'un kurtuluşa ermesi için onları susuz bırakıp su aramaya muhtaç kıldı. Bu nedenle şöyle denilmiştir:

*"Dünyada gerçekleşen pek çok karışıklık vardır ki ondan amaç, bir kimsenin sükunete kavuşmasıdır."*

Bir de şöyle denilmiştir:

*"Her çabalayana karşılık bir oturan vardır."*

وَشَرَوْهُ بِثَمَنٍ بَخْسٍ دَرَاهِمَ مَعْدُودَةٍ وَكَانُوا فِيهِ مِنَ الزَّاهِدِينَ ﴿٢٠﴾

20- "Onu ucuz bir fiyata birkaç dirheme sattılar. Zaten ona değer vermiyorlardı."

Onlar, o anda uğradıkları zararı bilemediler, ancak daha sonra bundan haberdar oldular.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Bazen Hz. Yûsuf gibi biri ucuz bir fiyata satılabilmekte, ancak ona ihtiyaç vaki olduğu zaman yol açtığı zarar anlaşılmaktadır.

- Hz. Yûsuf'u ucuz bir fiyata sattıkları gün, ondan sakınmamışlardı. Ancak onlara: *"Ben Yûsuf'um"* dediğinde mahcup olmuşlardı. Bu nedenle: *"Kusur işleyene, karşılaşma günü duyduğu utanç yeter"* denilmiştir.

- Onlar, Hz. Yûsuf'un önünde eğildiklerinde bunun, kardeşini ucuz bir fiyata satanın cezası olduğunu anladılar.

- İnsanlar, Hz. Yûsuf'un şefkatine mazhar olunca onun nimeti içerisinde yaşamışlar ve: ( مَسَّنَا وَاَهْلَنَا الضُّرُّ ) *"Bize ve ailemize darlık ve sıkıntı dokundu"* (Yusuf, 12/88) diyerek huzurunda boynu bükük durmak durumunda kalmışlardır.

Şiir:

*Duyacaksın beni ve hatırlayacaksın*
*Ve arayıp bulamayacaksın*

- Şaşırtıcı olan, Hz. Yûsuf gibi birini ucuz bir fiyata satanların durumu değildir. Şaşırtıcı olan, onun gibi birini ucuz bir fiyata satın alanların durumudur. Satanlar, zaten ona değer vermiyorlardı.

- Şaşırtıcı olan, Hz. Yûsuf gibi birini ucuz bir fiyata satanların durumu değildir. Lakin şaşırtıcı olan, paha biçilmez olan vaktini dünya metalarından değersiz bir metaa satan kimsenin durumudur.

- Kervan, değerini bilmeyip onu birkaç dirheme satmada az ile yetindi. Oysa güzelliğini ve bazı hallerini fark edenler, Mısır'da fiyatını aşırı derecede artırdılar. O kadar ki, kıssasında yer aldığı üzere, defalarca onu ağırlığınca gümüş ve altınla satın aldılar.

Şiir:

*Senin katında gözden düşürülmüş olsam da efendim*
*Gözler üstünde taşınmaktayım ben başkaları katında*

وَقَالَ الَّذِي اشْتَرٰيهُ مِنْ مِصْرَ لِامْرَاَتِهٓ اَكْرِمِي مَثْوٰيهُ عَسٰٓى اَنْ
يَنْفَعَنَآ اَوْ نَتَّخِذَهُ وَلَدًا وَكَذٰلِكَ مَكَّنَّا لِيُوسُفَ فِي الْاَرْضِ وَلِنُعَلِّمَهُ
مِنْ تَاْوِيلِ الْاَحَادِيثِ وَاللّٰهُ غَالِبٌ عَلٰٓى اَمْرِهِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ
لَا يَعْلَمُونَ ﴿٢١﴾

21- "Onu satın alan Mısırlı kişi hanımına dedi ki: 'Ona iyi bak. Belki bize yararı dokunur veya onu evlat ediniriz.' İşte böylece biz Yûsuf'u o yere yerleştirdik ve ona olayların yorumunu öğretelim diye böyle yaptık. Allah, işinde galiptir, fakat insanların çoğu bunu bilmezler."

Hz. Yûsuf, Mısır'da satışa çıkarılınca, Allah buna rıza göstermediği için, sıkıntı ve şiddetli yokluğa maruz kaldılar. O kadar ki, hikayesinde yer aldığına göre, önce bütün mülklerini, sonra da kendilerini ona sattılar. En sonunda da yiyecek istemek suretiyle topluca onun köleleri oldular. Sonra Hz. Yûsuf, onlara malik olmasının ardından hepsini azat ederek kendilerine iyilikte bulundu. Bu itibarla, şayet sadece bir gün o Mısır'da satışa çıkarıldıysa, şüphesiz başka bir gün de o, Mısır'da onların hem bütün mallarına hem de bizzat hepsine malik oldu. Böylece bir güne karşılık bir gün olmuştur. Allah şöyle buyurmuştur: ( وَلَسَوْفَ يُعْطِيكَ رَبُّكَ فَتَرْضٰى ) *"Şüphesiz darlıkla beraber bolluk vardır."* (İnşirah, 94/5) Bu iki gün arasında ise büyük bir fark vardır. Sonra Hz. Yûsuf, onların hepsini azat etmiştir. Zaten iyi insan böyledir; gücü yettiği zaman bağışlar.

( وَكَذٰلِكَ مَكَّنَّا لِيُوسُفَ فِي الْاَرْضِ وَلِنُعَلِّمَهُ مِنْ تَاْوِيلِ الْاَحَادِيثِ ) *"İşte böylece biz Yûsuf'u o yere yerleştirdik ve ona olayların yorumunu öğretelim diye böyle yaptık."*

Hz. Yûsuf'u kıskananlar, kardeşleri ve yakınları üzerinde bir üstünlüğünün olmamasını istediler. Oysa Allah, yeryüzü mülkünün onun olmasını diledi ve düşmanlarının değil, Allah'ın dilediği oldu.

( وَاللّٰهُ غَالِبٌ عَلٰٓى اَمْرِهِ ) *"Allah, işinde galiptir."*

Onlar, Hz. Yûsuf'un kuyuda kalmasını istediler. Oysa Allah, onun taht üstünde olmasını diledi ve Allah'ın dilediği oldu. Allah işinde galiptir. Onlar, Hz. Yûsuf'un, kendisini satın alan kervana köle olmasını istediler. Oysa Allah, onun Mısır'ın güçlü veziri olmasını diledi ve Allah'ın dilediği oldu.

وَلَمَّا بَلَغَ اَشُدَّهُ اٰتَيْنَاهُ حُكْمًا وَعِلْمًا وَكَذٰلِكَ نَجْزِي الْمُحْسِنِينَ ﴿٢٢﴾

22- "Olgunluk çağına erişince, ona hikmet ve ilim verdik. İşte biz, iyi davrananları böyle mükafatlandırırız."

Allah'ın, Hz. Yûsuf'a verdiği hükmün cümlesinden biri de, şehvetini yenip kıssada geçen kadının onu arzulamasına karşı koyabilecek ölçüde nefsine hakim olmasıdır. Zaten nefsine hakim olamayan kimse, başkalarına hakim olamaz.

(وَلَمَّا بَلَغَ اَشُدَّهُ) *"Olgunluk çağına erişince..."*

Yani, gençliği olgunlaşıp gücü kemale erince -ki bu dönem, şehvetin hakim olduğu ve beşerî arzuların sebeplerinin çoğaldığı zamandır- Allah, onu hakka bağlayan ve batıldan döndüren hükmü kendisine verdi. Hz. Yûsuf, zevklerin peşine düşmenin yol açacağı pişmanlıkların, şehveti tahrik eden sebeplere karşı direnmede sabretmenin zorluğuna katlanmaktan daha şiddetli olduğunu anlamıştır. Bu nedenle şehvete karşı koymanın zorluğunu ona uymanın zevkine tercih etmiştir. İşte Allah'ın, kendisine verdiğine işaret ettiği güzel mükafat, muvaffak olmasına yardım etmesidir. Bu sayede o, takva ve Allah korkusu konusunda dosdoğru yol üzere olmuştur. Allah şöyle buyurmuştur:

(وَالَّذِينَ جَاهَدُوا فِينَا لَنَهْدِيَنَّهُمْ سُبُلَنَا) *"Bizim uğrumuzda cihad edenler var ya, biz onları mutlaka yollarımıza ileteceğiz."* (Ankebût, 29/69) Yani, iyi muamele yolunu izleyerek çaba harcayanları biz, bu yolda devam etmenin hakikatlerini açıkça görebilmeleri için istikamet üzerine sabretmenin yollarına ileteceğiz.

وَرَاوَدَتْهُ الَّت۪ي هُوَ ف۪ي بَيْتِهَا عَنْ نَفْسِه۪ وَغَلَّقَتِ الْاَبْوَابَ وَقَالَتْ هَيْتَ
لَكَ قَالَ مَعَاذَ اللّٰهِ اِنَّهُ رَبّ۪ٓي اَحْسَنَ مَثْوَايَ اِنَّهُ لَا يُفْلِحُ الظَّالِمُونَ ﴿٢٣﴾

23- "Evinde bulunduğu kadın, ondan arzuladığı şeyi elde etmek istedi ve kapıları kilitleyerek: 'Haydi gelsene!' dedi. O ise: 'Allah'a sığınırım, çünkü O benim efendimdir, bana iyi baktı. Şüphesiz zalimler, kurtuluşa eremezler' dedi."

Kadın, Yûsuf'un üstüne evin kapılarını kapatınca Allah, yüzüne masumiyetin kapısını açtı. Böylece Allah, açılan manevî kapıyla kendisine ikramda bulunduktan sonra, maddî kapıların kapatılması ona zarar vermedi. Tefsir ilminin izahına göre, Hz. Yûsuf, kendisini satın alan adam olan vezirin ırzını korumuştur. Hakikatte ise Hz. Yûsuf: *"O benim Rabbimdir"* sözüyle Allah'a işaret etmiş ve şunu demek istemiştir: O, benim hak Mevla'mdır. Beni kuyudan kurtaran O'dur. Vezirin kalbinde benim için büyük bir yer meydana getiren ve bana değer vermesini sağlayan da O'dur. Böylece O, beni güzel iyiliğiyle kuşatmışken, kendisine isyan etmeye kalkışmam uygun olmaz.

Diğer bir yoruma göre Hz. Yûsuf kadına şöyle demiştir: *"Vezir: 'Belki bize yararı dokunur' diyerek kendisine faydalı olmamı emretti. O halde ben, onun gıyabında ırzı konusunda kendisine hıyanet edemem."*

Bir yoruma göre de Hz. Yûsuf, yaratılanın ırzını gıyabında koruyunca, Allah, masumiyetle hemen imdadına yetişti ve gelecekte de helal yolla bu masumiyeti sürdürmesini mümkün kıldı.

وَلَقَدْ هَمَّتْ بِه۪ وَهَمَّ بِهَا لَوْلَٓا اَنْ رَاٰ بُرْهَانَ رَبِّه۪ كَذٰلِكَ لِنَصْرِفَ عَنْهُ
السُّٓوءَ وَالْفَحْشَٓاءَ اِنَّهُ مِنْ عِبَادِنَا الْمُخْلَص۪ينَ ﴿٢٤﴾

24- "Andolsun, kadın ona istek duymuştu. Eğer Rabbinin delilini görmemiş olsaydı, Yûsuf da ona istek duyacaktı. Biz, ondan kötülüğü ve fuhşu uzaklaştırmak için işte böyle yaptık. Çünkü o, ihlasa erdirilmiş kullarımızdandı."

İnsanın fiili olmaksızın, tercihsiz ve emeksiz, başına gelenler sorumluluk dışıdır. Çünkü bu, kişiyi yükümlülük altına sokmaz. Bu itibarla, ne Hz. Yûsuf'un ne de kadının isteği hata sayılır. Kadının hatası, isteğini uygulamaya karar vermiş olmasıdır. İstek ise, kulun emeğine bağlı şeylerden değildir. Bir yoruma göre de ikisi istekte ortaktır, ancak delil sadece Hz. Yûsuf'a gösterilmiştir. Delilin ne olduğu konusunda isabetli olmayan zorlamalara gidilmiştir. Zira kesin rivayet dışında, bu delile ulaşmanın hiçbir yolu yoktur.

Kısacası söz konusu delil, Allah'ın ona sanatının ayetlerinden birini tanıtması şeklinde olmuştur. Allah şöyle buyurmuştur:

( سَنُرِيهِمْ اٰيَاتِنَا فِي الْاٰفَاقِ وَفِيٓ اَنْفُسِهِمْ حَتّٰى يَتَبَيَّنَ لَهُمْ اَنَّهُ الْحَقُّ ) *"Biz, delillerimizi ufuklarda ve kendi nefislerinde onlara göstereceğiz ki Kur'an'ın gerçek olduğu onlara iyice belli olsun."* (Fussilet, 41/53)

( كَذٰلِكَ لِنَصْرِفَ عَنْهُ السُّٓوءَ وَالْفَحْشَٓاءَ ) *"Biz, ondan kötülüğü ve fuhşu uzaklaştırmak için işte böyle yaptık."*

Allah, Hz. Yûsuf'tan kötülüğü uzak tutmuştur. O kadar ki, isteği olsa bile o fiili yapma kararı oluşmamıştır. Daha önce anlattığımız üzere, istek suç değildir. Bu arada, istek gerçekleştikten sonra Hz. Yûsuf'un yarı yoldan geri çevrilmesi bir keşiftir. Kendisinden uzaklaştırılan kötülük ise, zina ve fuhşa dair karar veya bizzat zinadır. Allah ikisini de kendisinden uzak tutmuştur.

( اِنَّهُ مِنْ عِبَادِنَا الْمُخْلَصِينَ ) *"Çünkü o, ihlasa erdirilmiş kullarımızdandı."*

Hz. Yûsuf'un manevî kurtuluşu, kadının elinden kurtulmasıyla değil, kötülüğün kendisinden uzaklaştırılması ve seçkin kılınmasıyla gerçekleşmiştir.

وَاسْتَبَقَا الْبَابَ وَقَدَّتْ قَمِيصَهُ مِنْ دُبُرٍ وَاَلْفَيَا سَيِّدَهَا لَدَا الْبَابِ
قَالَتْ مَا جَزَٓاءُ مَنْ اَرَادَ بِاَهْلِكَ سُٓوءًا اِلَّٓا اَنْ يُسْجَنَ اَوْ عَذَابٌ
اَلِيمٌ ﴿٢٥﴾

25- “İkisi de kapıya koştular. Kadın, Yûsuf’un gömleğini arkadan yırttı. Kapının yanında hanımın efendisine rastladılar. Kadın dedi ki: ‘Senin ailene kötülük yapmak isteyenin cezası, ancak zindana atılmak veya can yakıcı bir azaptır.’ ”

Kapıya koşarlarken, Hz. Yûsuf kaçmak için, kadın da yapmak istediği fiil için koşuyordu. Bu arada Hz. Yûsuf’un takva gömleği, üzerinde sağlam kaldıktan sonra, kadının, dünyalık elbisesi olan gömleğini yırtmasının kendisine bir zararı olmamıştır.

Bu konudaki diğer bazı yorumlar da şöyledir:

- Kadın, gömleği yırtmak istemedi, lakin Hz. Yûsuf’u kendine bağlamak için ona asıldı. Amacı, Hz. Yûsuf’un kendisiyle beraber kalmasıydı. Fakat bu davranışı, aleyhinde bir vebale dönüştü. Böylece kadın, belasını rahat ve şifa aradığı yerden bulmuş oldu.

- Gömlek, kadının onu tutmasıyla yırtılmıştır. Bu da, durumunun skandala dönüşmesine yol açmıştır. Çünkü gömleği tutması, kendisine yasaklanmıştı. Maksat, bozuk davranışın yol açtığı sonucun da bozuk olduğunun anlaşılması idi.

- Aşkın, kadına bütünüyle hakim olması sebebiyle, o anda Hz. Yûsuf’un gömleğinin arkadan mı yoksa önden mi yırtıldığını bilememiştir. İşte aşk belasına maruz kalan kimse, bu şekilde temyiz melekesini yitirmektedir.

- Kadın, Hz. Yûsuf’tan muradını elde edemeyince, suçu onun üstüne atmada elinde delil olması için gömleğini yırttı. Bunun üzerine Allah, durumu tersine çevirdi ve bu, kadının aleyhine, Hz. Yûsuf’un ise dürüstlüğüne delil oldu.

Allah şöyle buyurmuştur: ( وَلَا يَحِيقُ الْمَكْرُ السَّيِّئُ اِلَّا بِاَهْلِه ) “*Oysa kötü tuzak, ancak sahibini kuşatır.*” (Fâtır, 35/43)

( وَاَلْفَيَا سَيِّدَهَا لَدَا الْبَابِ ) “*Kapının yanında hanımın efendisine rastladılar.*”

Kapıyı açtıklarında kadının efendisine kapının yanında rastladılar. Ayet, Allah’ın kulunu daima gözetlemekte olduğuna işaret

etmektedir. Kul, hal ve hareketlerinde yükümlülüğün dışına çıktığı zaman sorgunun darlığını boylar. Bir yoruma göre, ayette: *"İkisinin efendisi"* değil de *"hanımın efendisi"* denilmesinin sebebi, Hz. Yûsuf'un hakikatte hür olması ve vezirin, onun efendisi olmamasıdır.

( قَالَتْ مَا جَزَٓاءُ مَنْ اَرَادَ بِاَهْلِكَ سُوٓءًا اِلَّٓا اَنْ يُسْجَنَ اَوْ عَذَابٌ اَلِيمٌ ) *"Kadın dedi ki: 'Senin ailene kötülük yapmak isteyenin cezası, ancak zindana atılmak veya can yakıcı bir azaptır.'"*

Kadın, en başta bunu söylemekle veziri Hz. Yûsuf'a karşı kışkırtarak kendisiyle uğraşmasına engel olmak istemiştir.

Bu konudaki diğer bazı yorumlar da şöyledir:

- Kadın, Hz. Yûsuf'u öldürmeye kalkışmaması için, efendisine zindan veya acıtıcı bir ceza telkin etmiştir. Böylece kadın, Hz. Yûsuf'u jurnal ettiği aynı sözle kollamış ve hayatını kurtarmak istemiştir.

- Kadın: *"Bunu yapanın cezası, ancak zindana atılmaktır. Şayet buna rıza göstermez ve cezayı artırmak istersen, o zaman vücutta iz bırakan dayak şeklindeki acıtıcı azap uygularsın"* demiştir. Böylece kadın, sanki tedrici cezadan söz etmektedir.

- Kadın, zamana yayılan zindanda kalmayı, hemen gerçekleşen acıtıcı dayağın alternatifi olarak koymuştur ki, bedenen acısı bulunmasa da uzun süreli hapsin, acı veren şiddetli dayağın karşılığı olduğu kabul edilmiş olsun. Zira hapis, her ne kadar zor ise de gerçekte acı veren şiddetli dayağın alternatifi olamaz.

- Kadın: ( مَا جَزَٓاءُ مَنْ اَرَادَ بِاَهْلِكَ سُوٓءًا ) *"Senin ailene kötülük yapmak isteyenin cezası"* şeklindeki sözüyle, aileden söz ederek adamın namus duygularını aşırı derecede tahrik etmiştir ve gururunu okşamıştır.

قَالَ هِيَ رَاوَدَتْنِي عَنْ نَفْسِي وَشَهِدَ شَاهِدٌ مِنْ اَهْلِهَا اِنْ كَانَ
قَمِيصُهُ قُدَّ مِنْ قُبُلٍ فَصَدَقَتْ وَهُوَ مِنَ الْكَاذِبِينَ ﴿٢٦﴾ وَاِنْ كَانَ
قَمِيصُهُ قُدَّ مِنْ دُبُرٍ فَكَذَبَتْ وَهُوَ مِنَ الصَّادِقِينَ ﴿٢٧﴾ فَلَمَّا رَاٰ
قَمِيصَهُ قُدَّ مِنْ دُبُرٍ قَالَ اِنَّهُ مِنْ كَيْدِكُنَّ اِنَّ كَيْدَكُنَّ عَظِيمٌ ﴿٢٨﴾

26, 27, 28- “Yûsuf: ‘O, benden arzusunu elde etmek istedi’ dedi. Kadının ailesinden bir şahit de şöyle şahitlik etti: ‘Eğer onun gömleği önden yırtılmışsa, kadın doğru söylemiştir, o yalancılardandır. Eğer gömleği arkadan yırtılmışsa, kadın yalan söylemiştir. O ise, doğru söyleyenlerdendir.’ Kadının kocası, Yûsuf’un gömleğinin arkadan yırtıldığını görünce, dedi ki: ‘Şüphesiz bu, siz kadınların tuzağıdır. Şüphesiz sizin tuzağınız çok büyüktür.’ ”

Hz. Yûsuf, kadının suçunu açık bir dille ortaya koydu. Çünkü fâsıkın korunacak bir mahremiyeti bulunmamaktadır. Bu nedenle Hz. Yûsuf, umursamadan: ( هِيَ رَاوَدَتْنِي عَنْ نَفْسِي ) *“O, benden arzusunu elde etmek istedi”* dedi. Bu arada Hz. Yûsuf doğru söylediği halde, lehinde bir şahit bulunmadığı için Allah, konuştuğu esnada henüz buluğ çağına erişmemiş küçük çocuğu konuşturdu. Bu nedenle denilmiştir ki: *“Kul, gerçekte dürüst olduğu zaman, Allah onun için taşı konuşturmada bile beis görmez.”*

( فَلَمَّا رَاٰ قَمِيصَهُ قُدَّ مِنْ دُبُرٍ ) *“Kadının kocası, Yûsuf’un gömleğinin arkadan yırtıldığını görünce…”*

Durum, net bir şekilde ortaya çıkıp Hz. Yûsuf’un suçsuz olduğu anlaşılınca, vezir: ( اِنَّهُ مِنْ كَيْدِكُنَّ ) *“Şüphesiz bu, siz kadınların tuzağıdır”* dedi. Bu arada ayet, onların dininde zinanın haram olduğunu göstermektedir.

يُوسُفُ اَعْرِضْ عَنْ هٰذَا وَاسْتَغْفِرِي لِذَنْبِكِ اِنَّكِ كُنْتِ مِنَ
الْخَاطِئِينَ ﴿٢٩﴾

29- “Ey Yûsuf! Sen bundan sakın kimseye söz etme. Ey kadın! Sen de günahının bağışlanmasını dile. Çünkü sen, günah işleyenlerdensin.”

Vezir, karısının iffetine halel gelmesini istemediği için Hz. Yûsuf’a: *“Bunu konuşmaktan vazgeç”* dedikten sonra kadına: ( وَاسْتَغْفِرِي لِذَنْبِكِ ) *“Sen de günahının bağışlanmasını dile”* demiştir. Ayet, zinayı günah

sayması hasebiyle haram olduğunu, ancak dinlerinde cezasının olmadığını göstermektedir.

Bir yoruma göre, herkes musibete ehil değildir. Çünkü musibet, dostluk bağıyla bağlı olanların vasfındandır. Yabancılara gelince; saygınlıklarından dolayı değil, fakat değersizliklerinden dolayı onlardan vazgeçilir ve serbest bırakılırlar. İşte Hz. Yûsuf! Suçsuz idi ve herkes, tertemiz olduğunu anladığı halde zindanla musibete maruz kılındı. Vezirin karısı ise, kocasının: ( اِنَّهُ مِنْ كَيْدِكُنَّ ) *"Şüphesiz bu, siz kadınların tuzağıdır"* ve: ( وَاسْتَغْفِرِي لِذَنْبِكِ ) *"Ey kadın! Sen de günahının bağışlanmasını dile"* şeklindeki sözleriyle sabit olduğu gibi,kötü fiiline rağmen, başına en ufak bir musibet gelmemiştir.

وَقَالَ نِسْوَةٌ فِي الْمَدِينَةِ امْرَاَتُ الْعَزِيزِ تُرَاوِدُ فَتٰيهَا عَنْ نَفْسِهِ قَدْ شَغَفَهَا حُبًّا اِنَّا لَنَرٰيهَا فِي ضَلَالٍ مُبِينٍ ﴿٣٠﴾

30- "Şehirde birtakım kadınlar: 'Aziz'in karısı, delikanlısından murad almak istemiş. Ona olan aşkı yüreğine işlemiş. Şüphesiz biz onu açık bir sapıklık içinde görüyoruz' dediler."

Şüphesiz aşk saklanamaz. Bir de aşk gerçekleştiğinde, muhakkak ona yönelik sitem dili de salıverilir. Nitekim kadının Hz. Yûsuf'a olan aşkı kesinleşince, kadınlar onun hakkında sitem dilini uzatmış oldular. Bir de, bu kadın, onun hizmetçileri olan diğer kadınlardan daha değerli olduğu için, siteme daha çabuk sebep oldu.

فَلَمَّا سَمِعَتْ بِمَكْرِهِنَّ اَرْسَلَتْ اِلَيْهِنَّ وَاَعْتَدَتْ لَهُنَّ مُتَّكَاً وَاٰتَتْ كُلَّ وَاحِدَةٍ مِنْهُنَّ سِكِّينًا وَقَالَتِ اخْرُجْ عَلَيْهِنَّ فَلَمَّا رَاَيْنَهُ اَكْبَرْنَهُ وَقَطَّعْنَ اَيْدِيَهُنَّ وَقُلْنَ حَاشَ لِلّٰهِ مَا هٰذَا بَشَرًا اِنْ هٰذَآ اِلَّا مَلَكٌ كَرِيمٌ ﴿٣١﴾ قَالَتْ فَذٰلِكُنَّ الَّذِي لُمْتُنَّنِي فِيهِ وَلَقَدْ رَاوَدْتُهُ عَنْ نَفْسِهِ فَاسْتَعْصَمَ وَلَئِنْ لَمْ يَفْعَلْ مَآ اٰمُرُهُ لَيُسْجَنَنَّ وَلَيَكُونًا مِنَ الصَّاغِرِينَ ﴿٣٢﴾

31, 32- “Kadın, bunların dedikodularını işitince haber gönderip onları çağırdı. Onlar için oturup yaslanacakları yer hazırladı. Her birine birer de bıçak verdi ve Yûsuf’a: ‘Çık karşılarına’ dedi. Kadınlar Yûsuf’u görünce, onu pek büyüttüler ve şaşkınlıkla ellerini kestiler. ‘Haşa! Allah için, bu bir insan değil, ancak şerefli bir melektir’ dediler. Bunun üzerine kadın onlara dedi ki: ‘İşte bu, beni hakkında kınadığınız kimsedir. Andolsun, ben murad almak istedim. Fakat o, iffetinden dolayı bundan kaçındı. Andolsun, eğer emrimi yapmazsa, mutlaka zindana atılacak ve zillete uğrayanlardan olacak.’ ”

Kadın, ona sitem eden kadınların sitemi fazlasıyla hak etmelerini ve kendisinin sitemi hak etmediğini ortaya koymak istedi. Böylece onlara bu oyunu oynadı. Kadınlar, Hz. Yûsuf’u görünce değiştiler, hayrete düştüler ve ne dediklerini bilmeden konuşarak: ( مَا هٰذَا بَشَرًا ) “*Bu, bir insan değil*” dediler. Oysa o bir insandı. Bir de: ( اِنْ هٰذَٓا اِلَّا مَلَكٌ كَرِيمٌ ) “*Bu, ancak şerefli bir melektir*” dediler. Oysa o bir melek değildi.

( فَذٰلِكُنَّ الَّذ۪ي لُمْتُنَّن۪ي ف۪يهِ ) “*İşte bu, beni hakkında kınadığınız kimsedir.*”

Onu görmeleri, kendilerini etkiledi ve bu etkiyle farkına varmaksızın meyveler yerine ellerini kestiler ve vezirin karısı karşısında zaafa düştüler. Kadın onlara: “Ben size demedim mi? İşte siz kendinizi tutamayarak ellerinizi kestiniz. Hal böyleyken ve bu benim evimde olduğu halde nasıl sabredebilirim!”

Bir yoruma göre de vezirin karısı, Hz. Yûsuf olayında diğer kadınlardan daha olgun davranmıştır. Nitekim onu görmek, onları etkilerken, kadını etkilememiştir. Ayrıca ani değişim de, bir konuda henüz işin başında olanların özelliğidir. Olay, devam ettiği zaman değişim sona erer. Bu bağlamda Hz. Ebubekir, yeni Müslüman olmuş bir adamın ağladığını görünce: *“Kalpler katılaşıncaya kadar biz de böyleydik”* demiştir. Yangın da böyledir. İlk başta üzerine su döküldüğü zaman bir ses duyulur. Suyu emmeye alıştığı zaman ise durur ve sesi duyulmaz.

قَالَ رَبِّ السِّجْنُ اَحَبُّ اِلَيَّ مِمَّا يَدْعُونَن۪ٓي اِلَيْهِ وَاِلَّا تَصْرِفْ عَنّ۪ي كَيْدَهُنَّ اَصْبُ اِلَيْهِنَّ وَاَكُنْ مِنَ الْجَاهِل۪ينَ ﴿٣٣﴾

33- "Yûsuf: 'Rabbim! Zindan bana, bunların beni davet ettiği şeyden daha sevimlidir. Onların tuzaklarını benden uzaklaştırmazsan, onlara meyleder ve cahillerden olurum' dedi."

İmtihan tercihe bağlıdır. Eğer Hz. Yûsuf, davet edildiği şeyin yerine Allah'tan afiyet dileseydi, kendisine afiyet verilebilirdi. Lakin: ( السِّجْنُ اَحَبُّ اِلَيَّ مِمَّا يَدْعُونَن۪ٓي اِلَيْهِ ) *"Zindan bana, bunların beni davet ettiği şeyden daha sevimlidir"* deyince söylediğinin doğruluğuyla yükümlü kılındı.

Diğer bir yoruma göre, Hz. Yûsuf, tevhidin kaynağından konuşarak: ( وَاِلَّا تَصْرِفْ عَنّ۪ي كَيْدَهُنَّ اَصْبُ اِلَيْهِنَّ ) *"Onların tuzaklarını benden uzaklaştırmazsan, onlara meylederim"* demiştir. Bu itibarla, o, kurtuluşunun kendi zorlaması ve sakınmasıyla değil, Allah'ın belayı üzerinden defetmesiyle olduğunu bilmiştir.

Bir başka yoruma göre ise Hz. Yûsuf, Allah yolunda meşakkate katlanmayı nefsinin zevkine tercih edince, çağı da onu tercih etmiştir. O kadar ki kendisine şöyle denilmiştir: ( تَاللّٰهِ لَقَدْ اٰثَرَكَ اللّٰهُ عَلَيْنَا ) *"Allah'a andolsun, gerçekten Allah seni bize üstün kıldı."* (Yûsuf, 12/91)

فَاسْتَجَابَ لَهُ رَبُّهُ فَصَرَفَ عَنْهُ كَيْدَهُنَّ اِنَّهُ هُوَ السَّم۪يعُ الْعَل۪يمُ ﴿٣٤﴾

34- "Rabbi, onun duasını kabul etti ve kadınların tuzaklarını ondan uzaklaştırdı. Şüphesiz ki o, hakkıyla işitendir, hakkıyla bilendir."

Hz. Yûsuf içten bir yakarışla Allah'a sığınınca Allah onu himayesine aldı. Aynı şekilde kimin ayakları Allah yolunda tozlanırsa, muhakkak Allah keremiyle onu rahata kavuşturur ve nimetleriyle ona sahip çıkar. Şüphesiz Allah, dilekte bulunanların sözlerini duyar ve hallerini bilir.

ثُمَّ بَدَا لَهُمْ مِنْ بَعْدِ مَا رَاَوُا الْاٰيَاتِ لَيَسْجُنُنَّهُ حَتّٰى حٖينٍ ﴿٣٥﴾

35- "Sonra onlar, Yûsuf'un suçsuzluğunu ortaya koyan delilleri gördükten sonra yine de mutlaka onu bir süre zindana atmayı uygun buldular."

Vezir, karısının rezil olmasını önlemek için, suçsuz olduğu ortaya çıktığı halde Hz. Yûsuf'u zindana atınca, Allah mülkü vezirden alıp Hz. Yûsuf'a verdi. En sonunda da Allah, kadının da çektiği meşakkatten sonra Hz. Yûsuf'un hanımı olmasına hükmetti. İşte bu, sabredenin mükafatıdır.

Bir yoruma göre de, yapılan isnatlarla Hz. Yûsuf'a zulmedilince, Allah o kadını konuşturdu ve sonunda kadın kendisini rezil edecek olan hususu dile getirerek şöyle dedi: (الْـٰٔنَ حَصْحَصَ الْحَقُّ اَنَا رَاوَدْتُهُ عَنْ نَفْسِهٖ) *"Şimdi gerçek ortaya çıktı. Ondan ben murad almak istedim."* (Yûsuf, 12/51)

وَدَخَلَ مَعَهُ السِّجْنَ فَتَيَانِ قَالَ اَحَدُهُمَٓا اِنّٖٓي اَرٰينٖٓي اَعْصِرُ خَمْرًا وَقَالَ الْاٰخَرُ اِنّٖٓي اَرٰينٖٓي اَحْمِلُ فَوْقَ رَاْسٖي خُبْزًا تَاْكُلُ الطَّيْرُ مِنْهُ نَبِّئْنَا بِتَاْوٖيلِهٖ اِنَّا نَرٰيكَ مِنَ الْمُحْسِنٖينَ ﴿٣٦﴾

36- "Onunla beraber zindana iki delikanlı daha girdi. Biri: 'Ben, rüyamda şaraplık üzüm sıktığımı gördüm' dedi. Diğeri: 'Ben de rüyamda başımın üzerinde, kuşların yediği bir ekmek taşıdığımı gördüm. Bize bunun yorumunu haber ver. Şüphesiz biz, seni iyilik yapanlardan görüyoruz' dedi."

Zindan arkadaşlığının, bir süre sonra da olsa, ortaya çıkan bir etkisi vardır. Çünkü Hz. Yûsuf arkadaşına: (اذْكُرْنٖي عِنْدَ رَبِّكَ) *"Efendinin yanında beni an"* (Yûsuf, 12/42) deyip şeytan, onu efendisine anmasını unutturunca Hz. Yûsuf bir süre zindanda kaldı. Sonra Hz. Yûsuf'un kurtuluşu, yine bu arkadaşının: *"Yûsuf'a haber gönderin"* demesi sayesinde olmuştur. Bunun üzerine Hz. Yûsuf'a şöyle de-

nildi: ( يُوسُفُ اَيُّهَا الصِّدِّيقُ اَفْتِنَا فِي ) *"Yûsuf! Ey doğru sözlü! Bize... yorum yap."* (Yûsuf, 12/46)

( اِنَّا نَرٰيكَ مِنَ الْمُحْسِنِينَ ) *"Şüphesiz biz, seni iyilik yapanlardan görüyoruz."*

İyilik yapanın iyiliğine şahitlik etmek, iyiliğini celp etmenin vesilesidir.

قَالَ لَا يَاْتِيكُمَا طَعَامٌ تُرْزَقَانِهٖٓ اِلَّا نَبَّاْتُكُمَا بِتَاْوِيلِهٖ قَبْلَ اَنْ يَاْتِيَكُمَا ذٰلِكُمَا مِمَّا عَلَّمَنِي رَبِّي اِنِّي تَرَكْتُ مِلَّةَ قَوْمٍ لَا يُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَهُمْ بِالْاٰخِرَةِ هُمْ كَافِرُونَ ﴿٣٧﴾

37- "Yûsuf dedi ki: 'Sizin yiyeceğiniz yemek size gelmeden önce, onun ne olduğunu bildiririm. Bu, bana Rabbimin öğrettiklerindendir. Ben, Allah'a inanmayan ve ahireti inkar eden bir milletin dinini bıraktım.' "

Tıpkı Hz. Yûsuf'un iki arkadaşına cevap sözü verip o anda cevaplamada aceleci davranmaması gibi cevabı aceleyle değil temkinle vermek iyi vasıflara sahip insanların alametlerindendir.

Bir yoruma göre, Hz. Yûsuf cevaplamayı geciktirmekle kalplerini verdiği sözle meşgul etmiştir. Nakit olmadığı zaman, vaat olsun.

Diğer bir yoruma göre de, onlar sorularıyla söze başlayınca Hz. Yûsuf da cevaptan önce onlara kelime-i tevhidi önererek şöyle dedi: ( ذٰلِكُمَا مِمَّا عَلَّمَنِي رَبِّي اِنِّي تَرَكْتُ مِلَّةَ قَوْمٍ لَا يُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَهُمْ بِالْاٰخِرَةِ هُمْ كَافِرُونَ ) *"Bu, bana Rabbimin öğrettiklerindendir. Ben, Allah'a inanmayan ve ahireti inkâr eden bir milletin dinini bıraktım."* Sonra dedi ki:

وَاتَّبَعْتُ مِلَّةَ اٰبَٓائِيٓ اِبْرٰهِيمَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوبَ مَا كَانَ لَنَٓا اَنْ نُشْرِكَ بِاللّٰهِ مِنْ شَيْءٍ ذٰلِكَ مِنْ فَضْلِ اللّٰهِ عَلَيْنَا وَعَلَى النَّاسِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَشْكُرُونَ ﴿٣٨﴾

38- "Atalarım İbrahim, İshak ve Yakub'un dinine uydum. Bizim Allah'a herhangi bir şey ortak koşmamız söz konusu olamaz. Bu, bize ve insanlara Allah'ın bir lütfudur. Fakat insanların çoğu şükretmezler."

Hz. Yûsuf, tevhidin izahını ve Allah'a davet etmeyi bitirdikten sonra iki zindan arkadaşına cevap vererek şöyle dedi:

يَا صَاحِبَيِ السِّجْنِ ءَاَرْبَابٌ مُتَفَرِّقُونَ خَيْرٌ اَمِ اللّٰهُ الْوَاحِدُ الْقَهَّارُ
﴿٣٩﴾ مَا تَعْبُدُونَ مِنْ دُونِه۪ٓ اِلَّٓا اَسْمَٓاءً سَمَّيْتُمُوهَٓا اَنْتُمْ وَاٰبَٓاؤُ۬كُمْ
مَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ بِهَا مِنْ سُلْطَانٍ اِنِ الْحُكْمُ اِلَّا لِلّٰهِ اَمَرَ اَلَّا تَعْبُدُٓوا
اِلَّٓا اِيَّاهُ ذٰلِكَ الدّ۪ينُ الْقَيِّمُ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٤٠﴾

39, 40- "Ey zindan arkadaşlarım! Ayrı ayrı ilahlar mı daha iyidir, yoksa mutlak hakimiyet sahibi olan tek Allah mı? Siz Allah'ı bırakıp sadece sizin ve atalarınızın taktığı birtakım isimlere tapıyorsunuz. Allah, onlar hakkında hiçbir delil indirmemiştir. Hüküm, ancak Allah'a aittir. O, kendisinden başka hiçbir şeye tapmamanızı emretmiştir. İşte en doğru din budur. Fakat insanların çoğu bilmezler."

İşte böylece Hz. Yûsuf, tevhidi açıklamaya ve Allah'ı anlatmaya başladığında neredeyse susmayacaktı. Bir hadiste şöyle denilmiştir:

*"Kim bir şeyi severse onu çok anlatır."*

يَا صَاحِبَيِ السِّجْنِ اَمَّٓا اَحَدُكُمَا فَيَسْق۪ي رَبَّهُ خَمْرًا وَاَمَّا الْاٰخَرُ
فَيُصْلَبُ فَتَأْكُلُ الطَّيْرُ مِنْ رَاْسِه۪ قُضِيَ الْاَمْرُ الَّذ۪ي ف۪يهِ تَسْتَفْتِيَانِ ﴿٤١﴾

41- "Ey zindan arkadaşlarım! Biriniz, efendisine şarap sunacak, diğeri ise asılacak ve kuşlar başından yiyecektir. Yorumunu sorduğunuz iş böylece kesinleşmiştir."

İki arkadaşı soruda ortak, hükümde ortak ve zindana girmekte ortak olmuşlardır. Lakin akıbetleri farklı olmuştur. Biri asılmış, diğeri ise hükümdarın yakınlığına ve bağışına mazhar olmuştur. Tevhid ve hakkı tercih etmekle ilgili sorunlar da böyledir. Şöyle ki kimisi gök yüzüne yükseltilirken kimisi de toprağın altında yatmaktadır.

وَقَالَ لِلَّذٖي ظَنَّ اَنَّهُ نَاجٍ مِنْهُمَا اذْكُرْنٖي عِنْدَ رَبِّكَۘ فَاَنْسٰيهُ الشَّيْطَانُ ذِكْرَ رَبِّهٖ فَلَبِثَ فِي السِّجْنِ بِضْعَ سِنٖينَ ﴿٤٢﴾

42- "Yûsuf, onlardan kurtulacağını düşündüğü kişiye: 'Efendinin yanında beni an' dedi. Fakat şeytan, onu efendisine hatırlatmayı unutturdu da bu yüzden o, birkaç yıl daha zindanda kaldı."

Anlaşılan şu ki, rüya yorumu doğru da olsa kesinlik değil, galip zan yoluyla gerçekleşir. Sonra Hz. Yûsuf, zindan arkadaşına: ( اذْكُرْنٖي عِنْدَ رَبِّكَ ) "*Efendinin yanında beni an*" dediğinde, kimden yardım dilemesi gerektiğini dile getirmeyi unuttuğu için Allah, kendisine hitapta bulunmuştur.

Bir yoruma göre de Hz. Yûsuf, Allah'ın kendisine öğrettiği ilme karşılık olarak bir insandan bedel istemiştir. Bu arada kimi semavî kitaplarda şöyle denilmiştir: *"Ey Âdem oğlu! Tıpkı sana bedava öğretildiği gibi sen de bedava öğret."*

Öte yandan Hz. Yûsuf, mahluktan yardım dilediği için zindanda kalışı uzun sürmüştür. İşte Allah, kalbini mahluka bağlayan kimseyi böyle cezalandırır.

وَقَالَ الْمَلِكُ اِنّٖٓي اَرٰى سَبْعَ بَقَرَاتٍ سِمَانٍ يَاْكُلُهُنَّ سَبْعٌ عِجَافٌ وَسَبْعَ سُنْبُلَاتٍ خُضْرٍ وَاُخَرَ يَابِسَاتٍۜ يَٓا اَيُّهَا الْمَلَاُ اَفْتُونٖي فٖي رُءْيَايَ اِنْ كُنْتُمْ لِلرُّءْيَا تَعْبُرُونَ ﴿٤٣﴾

43- "Kral: 'Ben, rüyamda yedi semiz ineği, yedi zayıf ineğin yediğini; ayrıca yedi yeşil başak ve yedi de kuru başak görüyorum.

Ey ileri gelenler! Eğer rüya yorumluyorsanız, rüyamı bana yorumlayın' dedi."

Hz. Yûsuf'un musibeti, gördüğü ve açıkladığı bir rüya sebebiyle başlamıştır. Allah'ın dilediğini yaptığının anlaşılması için kurtuluşunun sebebi de aynı şekilde hükümdarın görüp açıkladığı bir rüyadır. Böylece Allah, nasıl ki Hz. Yûsuf'un musibetini bir rüyanın açıklanmasına bağlamış ise aynı şekilde kurtuluşunu da bir rüyanın açıklanmasına bağlamıştır. Bu yolla herkes işin Allah'ın elinde olduğunu ve O'nun, dilediğini yaptığını öğrenmiş oldu.

قَالُوٓا اَضْغَاثُ اَحْلَامٍ وَمَا نَحْنُ بِتَاْوِيلِ الْاَحْلَامِ بِعَالِمِينَ ﴿٤٤﴾

44- "Dediler ki: 'Bunlar, karmakarışık düşlerdir. Biz, böyle düşlerin yorumunu bilmiyoruz.' "

Rüyanın durumu, yorumda hata yapmakla değişmez. Çünkü topluluk, rüyasının karmakarışık düşler olduğuna hükmettiler. Ancak bu ona zarar vermedi ve yorumunun doğruluğunu etkilemedi.

( وَمَا نَحْنُ بِتَاْوِيلِ الْاَحْلَامِ بِعَالِمِينَ ) *"Biz böyle düşlerin yorumunu bilmiyoruz."*

Bir şeyi yerinden talep etmeyen kimse isteğine kavuşmaz ve amacıyla mutlu olmaz.

وَقَالَ الَّذِي نَجَا مِنْهُمَا وَادَّكَرَ بَعْدَ اُمَّةٍ اَنَا اُنَبِّئُكُمْ بِتَاْوِيلِهِ فَاَرْسِلُونِ ﴿٤٥﴾

45- "Zindandaki iki kişiden kurtulmuş olanı, nice zamandan sonra Yûsuf'u hatırladı ve: 'Ben size onun yorumunu haber veririm. Hemen beni zindana gönderin' dedi."

Allah'ın ilmi ve hükmü, o zaman bu rüyayı yorumlayacak olan kişinin Hz. Yûsuf olacağı yönünde olduğu için söz konusu rüyanın yorumunu bilmesinler diye kalplerini kilitledi. Allah'ın, bir şeyi dilediği zaman sebeplerini kolaylaştırdığının bilinmesi için hükümdarın da içi ancak Hz. Yûsuf'un yorumuyla ferahladı.

Bir yoruma göre de Allah, Hz. Yûsuf'a emsalleri arasında fiziki güzellik ve ilim fazlalığı şeklinde iki ayrı özellik vermiştir. Güzelliği musibetinin, ilmi de kurtuluşunun sebebi olmuştur. Böylece ilmin meziyetinin diğer meziyetlerden üstün olduğu anlaşılmıştır. Bu neden şöyle denilmiştir:

*"İlim, yavaş da olsa meyvesini verir."*

Diğer bir yoruma göre ise rüyayı bilmek, dünyayı kazandırdığına göre, Mevla'yı bilmek, ahireti hayda kazandırır. Allah şöyle buyurmuştur:

( وَاِذَا رَاَيْتَ ثَمَّ رَاَيْتَ نَعِيمًا وَمُلْكًا كَبِيرًا ) *"Orayı gördüğün zaman, nimetler ve büyük bir mülk görürsün."* (İnsân, 76/20)

يُوسُفُ اَيُّهَا الصِّدِّيقُ اَفْتِنَا فِي سَبْعِ بَقَرَاتٍ سِمَانٍ يَاْكُلُهُنَّ سَبْعٌ عِجَافٌ وَسَبْعِ سُنْبُلَاتٍ خُضْرٍ وَاُخَرَ يَابِسَاتٍ لَعَلّٖٓي اَرْجِعُ اِلَى النَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَعْلَمُونَ ﴿٤٦﴾

46- "Yûsuf! Ey doğru sözlü! Rüyada yedi semiz ineği yedi zayıf ineğin yemesi, bir de yedi yeşil başakla diğer yedi kuru başak hakkında bize yorum yap. Ümit ederim ki, insanlara dönerim de onlar da bilirler' dedi."

قَالَ تَزْرَعُونَ سَبْعَ سِنِينَ دَاَبًا فَمَا حَصَدْتُمْ فَذَرُوهُ فِي سُنْبُلِهٖٓ اِلَّا قَلِيلًا مِمَّا تَاْكُلُونَ ﴿٤٧﴾

47- "Yûsuf dedi ki: 'Yedi yıl adetiniz üzere ekin ekeceksiniz. Yiyeceğiniz az bir miktar hariç, biçtiklerinizi başağında bırakın.' "

Hz. Yûsuf, daha önce yaptığı gibi, rüyayı yorumlamadan önce muhatabını Allah'a davet etmemiştir. Çünkü sorunun sahibi, birinci kez rüyasını yorumlamadan önce Allah'a davet ettiği aynı kişidir. Bu durumda ya adam o daveti kabul ettiği için, ya da kabul etmemesi sebebiyle ümidini kestiği için davette bulunmamıştır.

İkinci rüyanın sahibi, Hz. Yûsuf'un yanında bulunmayan hükümdar idi. Oysa vaaz ve davet, hazır bulunmayana değil, hazır bulunana yönelik olur.

Bir yoruma göre de Hz. Yûsuf, her iki gençte tevhidi kabul etme ihtimalini sezmiş olabilir. Çünkü gençler daha yumuşak kalplidirler. Oysa burada söz konusu olan hükümdar, daha katı yürekli ve daha kaba mizaçlıdır. Bu nedenle Hz. Yûsuf, onda sezdiği katılıktan dolayı kendisini tevhide davet etmemiştir.

ثُمَّ يَأْت۪ي مِنْ بَعْدِ ذٰلِكَ سَبْعٌ شِدَادٌ يَأْكُلْنَ مَا قَدَّمْتُمْ لَهُنَّ اِلَّا قَل۪يلاً
مِمَّا تُحْصِنُونَ ﴿٤٨﴾

48- "Sonra bunun ardından yedi kurak yıl gelecek, saklayacağınız az bir miktar hariç, bu yıllar biriktirdiklerinizi yiyip bitirecek."

ثُمَّ يَأْت۪ي مِنْ بَعْدِ ذٰلِكَ عَامٌ ف۪يهِ يُغَاثُ النَّاسُ وَف۪يهِ يَعْصِرُونَ ﴿٤٩﴾

49- "Sonra bunun ardından insanların yağmura kavuşacağı bir yıl gelecek. O zaman şıra ve yağ sıkacaklar.

وَقَالَ الْمَلِكُ ائْتُون۪ي بِه۪ فَلَمَّا جَٓاءَهُ الرَّسُولُ قَالَ ارْجِعْ اِلٰى رَبِّكَ
فَسْـَٔلْهُ مَا بَالُ النِّسْوَةِ الّٰت۪ي قَطَّعْنَ اَيْدِيَهُنَّ اِنَّ رَبّ۪ي بِكَيْدِهِنَّ عَل۪يمٌ ﴿٥٠﴾

50- "Kral: 'Onu bana getirin' dedi. Elçi Yûsuf'a gelince Yûsuf dedi ki: 'Efendine dön de, ellerini kesen o kadınların derdi ne idi, diye sor. Şüphesiz Rabbim, onların hilesini hakkıyla bilendir.' "

Hz. Yûsuf, hükümdarın kendisine hain gözüyle bakmasını istemedi. Çünkü bu kusur, onu hükümdarın gözünden düşürecek ve bu yüzden sözü onu etkilemeyecekti. Bu nedenle Hz. Yûsuf, hükümdar durumunu görüp suçsuz olduğunu anlayıncaya kadar beklemiştir.

قَالَ مَا خَطْبُكُنَّ اِذْ رَاوَدْتُنَّ يُوسُفَ عَنْ نَفْسِهٖ قُلْنَ حَاشَ لِلّٰهِ مَا عَلِمْنَا عَلَيْهِ مِنْ سُوٓءٍ قَالَتِ امْرَاَتُ الْعَزِيزِ الْـٰٔنَ حَصْحَصَ الْحَقُّ اَنَا۬ رَاوَدْتُهُ عَنْ نَفْسِهٖ وَاِنَّهُ لَمِنَ الصَّادِقِينَ ﴿٥١﴾

51- "Kral kadınlara: 'Yûsuf'tan murat almak istediğiniz zaman derdiniz ne idi?' dedi. Kadınlar: 'Hâşâ! Allah için, biz onun kötülüğünü bilmiyoruz' dediler. Aziz'in karısı ise: 'Şimdi gerçek ortaya çıktı. Ondan ben murat almak istedim. Şüphesiz Yûsuf, doğru söyleyenlerdendir' dedi."

Gerçekler, asla saklı kalmaz ve bir süre sonra da olsa, ister istemez ortaya çıkarlar.

Hz. Yûsuf'a ilgisiz olduğu bir şey isnat edildi ve bundan dolayı bir süre azarlandı. Bu konudaki durumu bilinmiyordu. Daha sonra Allah, töhmeti ondan defetti, kötü zannı üzerinden kaldırdı, kendisine sitem edenleri lehine konuşturdu ve gömleğinin yırtılmasına sebep olan olayın gerçek yüzünü ortaya çıkardı. Bu çerçevede o kadınlar: ( قُلْنَ حَاشَ لِلّٰهِ مَا عَلِمْنَا عَلَيْهِ مِنْ سُوٓءٍ ) *"Hâşâ! Allah için, biz onun kötülüğünü bilmiyoruz"* dediler.

( الْـٰٔنَ حَصْحَصَ الْحَقُّ اَنَا۬ رَاوَدْتُهُ عَنْ نَفْسِهٖ وَاِنَّهُ لَمِنَ الصَّادِقِينَ ) *"Aziz'in karısı ise: 'Şimdi gerçek ortaya çıktı. Ondan ben murat almak istedim. Şüphesiz Yûsuf, doğru söyleyenlerdendir' dedi."*

Aziz'in karısı, Hz. Yûsuf'a olan aşkında kemale ermediği için kendi günahını onun üstüne atarak kocasına:

( قَالَتْ مَا جَزَٓاءُ مَنْ اَرَادَ بِاَهْلِكَ سُوٓءًا اِلَّٓا اَنْ يُسْجَنَ اَوْ عَذَابٌ اَلِيمٌ ) *"Senin ailene kötülük yapmak isteyenin cezası, ancak zindana atılmak veya can yakıcı bir azaptır"* (Yûsuf, 12/25) dedi. Oysa Hz. Yûsuf'un bir günahı yoktu. Sonra kadın, aşkında son noktaya varınca, suçunu itiraf ederek: ( الْـٰٔنَ حَصْحَصَ الْحَقُّ ) *"Şimdi gerçek ortaya çıktı..."* dedi. Bu itibarla aşkta son noktaya varmak rüsva olmaya, durumun ve sırrın ortaya çıkmasını umursamamaya sebep olur. Bu konuda şöyle denilmiştir:

*"İsteyen, istediğini söylesin. Çünkü umurumda değildir."*

ذٰلِكَ لِيَعْلَمَ اَنّ۪ي لَمْ اَخُنْهُ بِالْغَيْبِ وَاَنَّ اللّٰهَ لَا يَهْد۪ي كَيْدَ الْخَٓائِن۪ينَ ﴿٥٢﴾

52- "Yûsuf: 'Benim böyle yapmam, Aziz'in, yokluğunda benim kendisine hainlik etmediğimi ve Allah'ın, hainlerin tuzaklarını başarıya ulaştırmayacağını bilmesi içindi' dedi."

Allah'ın, Hz. Yûsuf'un suçsuzluğunu ortaya çıkarmak istemesinin sebebi, ona dil uzatıp hakkında kötü söz söylemelerine karşılık olarak o kimselerin cezaya müstahak olduklarını bilmesidir. Hz. Yûsuf ise, onlara kendisi yüzünden Allah tarafından bir ceza gelmesini istemedi. Çünkü onlara acıyordu. İşte bu şekilde kendine hasım olmak velilerin vasfıdır. Bu nedenle: *"Sofînin kanı heder, mülkü mubahtır"* denilmiştir. Hz. Yûsuf da aynı nedenle şöyle demiştir:

وَمَٓا اُبَرِّئُ نَفْس۪ي اِنَّ النَّفْسَ لَاَمَّارَةٌ بِالسُّٓوءِ اِلَّا مَا رَحِمَ رَبّ۪ي اِنَّ رَبّ۪ي غَفُورٌ رَح۪يمٌ ﴿٥٣﴾

53- " 'Ben, nefsimi temize çıkarmam, çünkü Rabbimin merhamet ettiği hariç, nefis aşırı derecede kötülüğü emreder. Şüphesiz Rabbim, çok bağışlayandır, çok merhamet edendir' dedi."

Hz. Yûsuf: ( ذٰلِكَ لِيَعْلَمَ اَنّ۪ي لَمْ اَخُنْهُ بِالْغَيْبِ وَاَنَّ اللّٰهَ لَا يَهْد۪ي كَيْدَ الْخَٓائِن۪ينَ ) *"Benim böyle yapmam, Aziz'in, yokluğunda benim kendisine hainlik etmediğimi bilmesi içindi"* (Yûsuf, 12/52) şeklindeki sözüyle övününce, sanki mana dünyasında kendisine: *"Kadına niyetlendiğin zaman da mı?..."* diye seslenildi ve bunun üzerine o: ( وَمَٓا اُبَرِّئُ نَفْس۪ي ) *"Ben, nefsimi temize çıkarmam..."* dedi.

Bir yoruma göre de: *"Aziz'in, yokluğunda benim kendisine hainlik etmediğimi bilmesi içindi"* sözü, Allah'ın kendisini korumasına karşılık bir şükür beyanıdır. *"Ben, nefsimi temize çıkarmam"* sözü ise Allah'ın emri konusunda işlediği kusurdan dilediği özrün beyanıdır. Böylece şükrü, üzerindeki iyiliğin artmasına sebep olmuş,

özür dilemesiyle de bağışlanmayı hak etmiştir. Bağışlanması şu ifadede ortaya çıkmaktadır:

وَقَالَ الْمَلِكُ ائْتُونِي بِهٖ اَسْتَخْلِصْهُ لِنَفْسِي فَلَمَّا كَلَّمَهُ قَالَ اِنَّكَ الْيَوْمَ لَدَيْنَا مَكِينٌ اَمِينٌ ﴿٥٤﴾

54- "Kral: 'Onu bana getirin, onu özel olarak yanıma alayım' dedi. Onunla konuşunca dedi ki: 'Şüphesiz bugün sen yanımızda yüksek makam sahibi ve güvenilir bir kişisin.' "

Hükümdar, Hz. Yûsuf'un fiilinin temizliğini ve halinin nezih oluşunu apaçık görünce, onu özel olarak yanına almak üzere getirtti. Kendisiyle konuşup açıklamasını da dinleyince, yerini ve itibarını yükseltti. Kendisine iyi davranacağına dair de güvence vererek şöyle dedi: (اِنَّكَ الْيَوْمَ لَدَيْنَا مَكِينٌ اَمِينٌ) *"Şüphesiz bugün sen yanımızda yüksek makam sahibi ve güvenilir bir kişisin."*

قَالَ اجْعَلْنِي عَلٰى خَزَآئِنِ الْاَرْضِ اِنّ۪ي حَف۪يظٌ عَل۪يمٌ ﴿٥٥﴾

55- "Yûsuf: 'Beni, ülkenin hazinelerine bakmakla görevlendir. Çünkü ben iyi koruyucu ve bilgili bir kişiyim' dedi."

Hz. Yûsuf'un bunu istemesinin sebebi, hakkı yerli yerine oturtmak ve fakirlerin paylarının ellerine geçmesidir. Böylece Hz. Yûsuf, bu konuda kendine bir pay istememiş, aksine Allah'ın hakkını yerine getirmek istemiştir.

Bir yoruma göre de Hz. Yûsuf: *"Ben güzelim ve iyiyim"* dememiş de: (اِنّ۪ي حَف۪يظٌ عَل۪يمٌ) *"Ben, iyi koruyucu ve bilgili bir kişiyim"*, yani yazı ve hesap erbabıyım, demiştir ki faziletin görünüşte değil özde olduğu bilinmiş olsun.

وَكَذٰلِكَ مَكَّنَّا لِيُوسُفَ فِي الْاَرْضِ يَتَبَوَّاُ مِنْهَا حَيْثُ يَشَآءُ نُص۪يبُ بِرَحْمَتِنَا مَنْ نَشَآءُ وَلَا نُض۪يعُ اَجْرَ الْمُحْسِن۪ينَ ﴿٥٦﴾

56- "Böylece Yûsuf'a, dilediği yerde oturmak üzere ülkede imkan ve iktidar verdik. Biz, rahmetimizi istediğimize veririz ve iyi davrananların mükâfatını zayi etmeyiz."

Hz. Yûsuf'un, nefsinden kaynaklanan şehevî istekleri bulunmadığı için Allah ona, mülküne sahip olma imkanını vererek: ( وَلَا نُضِيعُ اَجْرَ الْمُحْسِنِينَ ) *"İyi davrananların mükâfatını zayi etmeyiz"* buyurmuştur.

Bir de Allah şöyle buyurmuştur:

( وَمَنْ يَقْتَرِفْ حَسَنَةً نَزِدْ لَهُ فِيهَا حُسْنًا ) *"Kim güzel bir iş yaparsa, onun iyiliğini artırırız."* (Şûrâ, 42/23)

Sonra Allah, tevhidin gerçek mahiyetini anlatmış ve kullarına olan noksansız lütuflarının kendi fiilleri ve hizmetleriyle değil, O'nun lütfu ve rahmetiyle olduğunu açıklayarak: ( بِرَحْمَتِنَا مَنْ نَشَآءُ ) *"Biz, rahmetimizi istediğimize veririz"* buyurmuştur. Sonra da Allah, bu durumdaki kullarının himmetlerini, kendilerine verdiği nimetlerin üstüne çıkararak şöyle buyurmuştur:

وَلَاَجْرُ الْاٰخِرَةِ خَيْرٌ لِلَّذِينَ اٰمَنُوا وَكَانُوا يَتَّقُونَ ٥٧

57- "Elbetteki ahiret mükâfatı, inananlar ve Allah'a karşı gelmekten sakınanlar için daha iyidir."

Bu beyan, takvanın ve nefsin arzusuna muhalefetin gerekli olduğunu bildirmek içindir.

وَجَآءَ اِخْوَةُ يُوسُفَ فَدَخَلُوا عَلَيْهِ فَعَرَفَهُمْ وَهُمْ لَهُ مُنْكِرُونَ ٥٨

58- "Derken, Yûsuf'un kardeşleri çıkageldiler ve yanına girdiler. Yûsuf onları tanıdı, onlar ise Yûsuf'u tanımıyorlardı."

Hz. Yûsuf, kardeşlerini tanıdı, ancak onlar kendisini tanıyamadılar. Çünkü onlar, Hz. Yûsuf'u sattıkları için hala köle olduğuna inanıyorlardı. Oysa o sırada kendisi, hükümdarın yerinde oturu-

yordu. Hükümdarı köle vasfıyla arayan kimse ise onu hiçbir zaman tanıyamaz!

Aynı şekilde yaratıkların vasıflarından olan bir hususun Allah'ın sıfatları arasında bulunduğuna inanan kimse hiçbir zaman arif olamaz! Heyhât! İnandıkları şey gerçeğe çok uzaktır.

Bir yoruma göre de kardeşleri Hz. Yûsuf'u sakladıkları için, saklı oluşu onlar ile onu tanımaları arasında bir perde olmuştur. İşte günahkârın hali böyledir. Hataları ve yanlışlıkları sebebiyle bilgisinin yüzüne toz konar.

وَلَمَّا جَهَّزَهُمْ بِجَهَازِهِمْ قَالَ ائْتُونِي بِاَخٍ لَكُمْ مِنْ اَبِيكُمْ اَلَا تَرَوْنَ اَنِّيٓ اُوفِي الْكَيْلَ وَاَنَا۬ خَيْرُ الْمُنْزِلِينَ ﴿٥٩﴾

59- "Yûsuf, onların yüklerini hazırlatınca dedi ki: 'Sizin baba bir kardeşinizi de bana getirin. Görmüyor musunuz, ölçeği tam dolduruyorum ve ben, misafir ağırlayanların en iyisiyim.' "

Seven kıskanç olur. Bu çerçevede Hz. Yakub, Hz. Yûsuf'un yerine diğer oğlu Bünyamin'i görmekle teselli olunca, Hz. Yûsuf, Hz. Yakub'un ona bakmasını kıskanmış oldu.

Bir yoruma göre de, Hz. Yûsuf, Bünyamin'i getirtmede ince bir yöntem uygulayarak kardeşlerini hem özendirmiş hem de onlara gözdağı vermiştir. Özendirmeyi: ( اَلَا تَرَوْنَ اَنِّيٓ اُوفِي الْكَيْلَ ) "*Görmüyor musunuz, ölçeği tam dolduruyorum*" diyerek onlara ulaştırdığı mal, gösterdiği ilgi ve yaptığı ikram üzerinden yapmak üzere: ( وَاَنَا۬ خَيْرُ الْمُنْزِلِينَ ) "*Ve ben, misafir ağırlayanların en iyisiyim*" demiştir. Gözdağını ise şöyle diyerek malı engellemekle vermiştir:

فَاِنْ لَمْ تَاْتُونِي بِهِ فَلَا كَيْلَ لَكُمْ عِنْدِي وَلَا تَقْرَبُونِ ﴿٦٠﴾

60- "Eğer onu bana getirmezseniz, artık benim yanımda size verilecek tek ölçek bile yoktur ve bir daha da bana yaklaşmayın."

Yani eğer siz Bünyamin konusunda bana güvence vermezseniz, artık benim yanımda size verilecek tek ölçek bile yoktur ve size yönelik ikramı ve ilgiyi engellerim.

قَالُوا سَنُرَاوِدُ عَنْهُ اَبَاهُ وَاِنَّا لَفَاعِلُونَ ﴿٦١﴾

61- “Dediler ki: ‘Onu babasından isteyeceğiz ve muhakkak bunu yaparız.’ ”

Hz. Yûsuf onların halinden kendisini ucuz bir fiyata sattıklarını anlayınca, erzak alabilmek için ona kardeşlerini getireceklerini ve onu getirmede zorluk çekmeyeceklerini anladı.

وَقَالَ لِفِتْيَانِهِ اجْعَلُوا بِضَاعَتَهُمْ فِي رِحَالِهِمْ لَعَلَّهُمْ يَعْرِفُونَهَآ اِذَا
انْقَلَبُوٓا اِلٰٓى اَهْلِهِمْ لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُونَ ﴿٦٢﴾

62- “Yûsuf adamlarına dedi ki: ‘Onların ödedikleri zahire bedellerini yüklerinin içine koyun. Umulur ki ailelerine varınca onu anlarlar da belki yine dönüp gelirler.’ ”

Zahire bedellerini yüklerinin içine koymak, iyilik olarak o bedelleri onlara açıkça hibe etmesinden daha mükemmeldir. Çünkü açıkça hibe etmek, Hz. Yûsuf’un iyiliği yüz yüze yapması demek olurdu. Oysa bedelleri işaretle onlara bağışlamak, yüz yüze iyilikte bulunma gösterişinden arınmayı sağlar.

Bir yoruma göre de, Hz. Yûsuf, kardeşlerinin başkalarının malını kendilerine helal saymayacaklarını bildiği için, hissettirmeden bedelleri yüklerinin içine koydurdu. Ancak onlar, bunu gördükleri zaman: *“Bu bedeller, yükümüzün içine onlar tarafından yanlışlıkla konulmuştur. Bu nedenle bu bedelleri onlara iade etmemiz gerekir”* dediler. Onlar, isteseler de istemeseler de böyle bir durum sebebiyle dönerlerdi.

فَلَمَّا رَجَعُوٓا اِلٰٓى اَبٖيهِمْ قَالُوا يَٓا اَبَانَا مُنِعَ مِنَّا الْكَيْلُ فَاَرْسِلْ مَعَنَٓا اَخَانَا نَكْتَلْ وَاِنَّا لَهُ لَحَافِظُونَ ﴿٦٣﴾

63- "Onlar, babalarına döndüklerinde: 'Ey babamız! Bize artık zahire verilmedi. Kardeşimizi (Bünyamin'i) bizimle gönder ki zahire alalım. Onu biz elbette koruruz' dediler.

Hz. Yûsuf, zahireyi almalarına engel olmamıştı. Kendisi: ( اَلَا تَرَوْنَ اَنّٖي اُوفِي الْكَيْلَ ) "*Görmüyor musunuz, ölçeği tam dolduruyorum*" (Yusuf,12/59) dediği halde nasıl olur da buna engel olur? Fakat onlar, işi büyütmek ve Hz. Yakub'un Bünyamin'i göndermesini sağlamak için bunu mecazen söylediler.

Bir yoruma göre, onlar: ( مُنِعَ مِنَّا الْكَيْلُ ) "*Bize artık zahire verilmedi*" derken Bünyamin'i götürmemeleri halinde gelecekte kendilerine zahire verilmeyeceğini kast etmişlerdir.

Diğer bir yoruma göre de kardeşleri, Hz. Yakub'a bunu yumuşak bir üslupla söylemişlerdir. Zira onlar, ( اَخَانَا ) "*kardeşimizi*" diyerek Bünyamin'e karşı şefkatli olduklarını göstermiş ve bunu pekiştirmek için de: ( وَاِنَّا لَهُ لَحَافِظُونَ ) "*Onu biz elbette koruruz*" demişlerdir.

قَالَ هَلْ اٰمَنُكُمْ عَلَيْهِ اِلَّا كَمَٓا اَمِنْتُكُمْ عَلٰٓى اَخٖيهِ مِنْ قَبْلُ فَاللّٰهُ خَيْرٌ حَافِظًا وَهُوَ اَرْحَمُ الرَّاحِمٖينَ ﴿٦٤﴾

64- "Yakub onlara: 'Onun hakkında size ancak, daha önce kardeşi hakkında güvendiğim kadar güvenebilirim. Allah, en iyi koruyandır ve O, merhametlilerin en merhametlisidir' dedi."

Hıyanet görmüş olan kimse, güvenmeyi düşünmez. Bu nedenle Hz. Yakub'un kalbi, verdikleri güvenceyle rahatlamamıştı. Çünkü daha önceki sabıkalı durumlarını biliyordu.

( فَاللّٰهُ خَيْرٌ حَافِظًا وَهُوَ اَرْحَمُ الرَّاحِمٖينَ ) "*Allah, en iyi koruyandır ve O, merhametlilerin en merhametlisidir.*"

Allah, en iyi koruyan olduğu için Bünyamin'i de korur ve böylece onlar tarafından başına bir şey gelmez. Bu arada Hz. Yakub: *"Allah, onu bana geri gönderir"* dememiştir. Şayet bunu söyleseydi belki de Allah, Bünyamin'i ona çabuk geri gönderirdi.

وَلَمَّا فَتَحُوا مَتَاعَهُمْ وَجَدُوا بِضَاعَتَهُمْ رُدَّتْ اِلَيْهِمْ قَالُوا يَٓا اَبَانَا مَا
نَبْغِي هٰذِهِ بِضَاعَتُنَا رُدَّتْ اِلَيْنَا وَنَمِيرُ اَهْلَنَا وَنَحْفَظُ اَخَانَا وَنَزْدَادُ
كَيْلَ بَعِيرٍ ذٰلِكَ كَيْلٌ يَسِيرٌ ﴿٦٥﴾

65- "Yüklerini açıp zahire bedellerinin kendilerine geri verildiğini gördüler. 'Ey babamız! Daha ne isteriz? İşte ödediğimiz bedeller de bize geri verilmiş. Onunla yine ailemize yiyecek getirir, kardeşimizi korur ve bir deve yükü zahire de fazladan alırız' dediler."

Hz. Yûsuf, kendileriyle muamelede bulunurken, onlardan alacağı bir bedele ihtiyacı olmadığını anlatmak istemiştir. Bu itibarla, onlara zahire satıp yüklerini tamamladığında kendilerinden bedel almamıştır. Bu uygulama, Allah'ın şu sözüne işaret etmektedir:

(اِنْ اَحْسَنْتُمْ اَحْسَنْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ) *"Eğer iyilik yaparsanız, kendiniz için iyilik yapmış olursunuz."* (İsrâ, 17/7)

Bu arada kim, din için bir adım atarsa, Allah kendisini mükâfatlandırarak onda ibadet ruhunu ve hizmet için hayattan zevk almayı bir araya getirir.

قَالَ لَنْ اُرْسِلَهُ مَعَكُمْ حَتّٰى تُؤْتُونِ مَوْثِقًا مِنَ اللّٰهِ لَتَاْتُنَّنِي بِهٖٓ اِلَّٓا اَنْ
يُحَاطَ بِكُمْ فَلَمَّٓا اٰتَوْهُ مَوْثِقَهُمْ قَالَ اللّٰهُ عَلٰى مَا نَقُولُ وَكِيلٌ ﴿٦٦﴾

66- "Babaları: 'Kuşatılıp çaresiz durumda kalmanız hariç, onu bana geri getireceğinize dair Allah adına sağlam bir söz vermedikçe onu sizinle göndermeyeceğim' dedi. Ona güvencelerini verdiklerinde: 'Allah, söylediklerimize vekildir' dedi."

Tedbir, takdirin önüne geçemez. Nitekim Hz. Yakub, Bünyamin konusunda oğullarına karşı imkân ölçüsünde ihtiyat yapıp onlardan kesin güvence almış ancak çabası ona bir fayda vermemiş ve Allah'ın hükmü gerçekleşmiştir.

وَقَالَ يَا بَنِيَّ لَا تَدْخُلُوا مِنْ بَابٍ وَاحِدٍ وَادْخُلُوا مِنْ اَبْوَابٍ مُتَفَرِّقَةٍ وَمَٓا اُغْنٖي عَنْكُمْ مِنَ اللّٰهِ مِنْ شَيْءٍ اِنِ الْحُكْمُ اِلَّا لِلّٰهِ عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَعَلَيْهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُتَوَكِّلُونَ ﴿٦٧﴾

67- "Sonra da: 'Ey oğullarım! Bir kapıdan girmeyin, ayrı ayrı kapılardan girin. Ama Allah'tan gelecek hiçbir şeyi sizlerden uzaklaştıramam. Hüküm ancak Allah'ındır. Ben, O'na tevekkül ettim. Tevekkül edenler de, yalnız O'na tevekkül etsinler' dedi."

Muhtemeldir ki Hz. Yakub, ayrı ayrı girmelerini, biri görmezse diğeri Hz. Yûsuf'u görebilir ümidiyle istemiştir. Diğer bir yoruma göre, Hz. Yakub çocuklarının, Hz. Yûsuf konusunda çok özenli davrandıklarını sanmış ve itibarlı konumundan hoşlanmadıklarını bilememiştir.

وَلَمَّا دَخَلُوا مِنْ حَيْثُ اَمَرَهُمْ اَبُوهُمْ مَا كَانَ يُغْنٖي عَنْهُمْ مِنَ اللّٰهِ مِنْ شَيْءٍ اِلَّا حَاجَةً فٖي نَفْسِ يَعْقُوبَ قَضٰيهَا وَاِنَّهُ لَذُو عِلْمٍ لِمَا عَلَّمْنَاهُ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٦٨﴾

68- "Babalarının emrettiği şekilde girdiklerinde bu, Allah'tan gelecek hiçbir şeyi onlardan uzaklaştıracak değildi. Sadece Yakub, içindeki bir dileği ortaya koymuş oldu. Şüphesiz o, biz kendisine öğrettiğimiz için bilgi sahibidir. Fakat insanların çoğu bilmezler."

Her ne kadar Hz. Yakub'un maksadı uzun vadeli gerçekleşmemişse de kısa vadeli olarak gerçekleşmiştir. Gönül ehli insanlar ise bu miktarla yetinirler. Bir yoruma göre küçükler, büyüklerin

tavsiyelerini korumalıdırlar. Emirlerinde fayda olup olmadığını tartışmak ise edebi terk etmek demektir.

Diğer bir yoruma göre de Hz. Yakub gibi biri, çocuklarına tavsiyede bulunarak maksadının hasıl olmasını temenni ediyor, sonra bu gerçekleşmiyorsa şeyhler hakkında istedikleri her şeyin maksatlarına uygun olarak gerçekleştiğine inanılmaması gerekir. Çünkü istediğinin dışında zorunlu hiçbir şey bulunmayan ve istediği kesin olarak gerçekleşen yegane varlık, bir ve kahredici olan Allah'tır.

وَلَمَّا دَخَلُوا عَلٰى يُوسُفَ اٰوٰٓى اِلَيْهِ اَخَاهُ قَالَ اِنّ۪ٓي اَنَا۬ اَخُوكَ فَلَا
تَبْتَئِسْ بِمَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿٦٩﴾

69- "Yûsuf'un huzuruna girdiklerinde o, kardeşi Bünyamin'i bağrına bastı ve: 'Haberin olsun ben senin kardeşinim, artık onların yaptıklarına üzülme' dedi."

Aşk olgusu ve hükümleri birkaç kısımdır: Hz. Yakub, Hz. Yûsuf ile buluşmanın özlemini çekerken yıllarca beklemiştir. Oysa Hz. Yûsuf, Bünyamin'i özlemiş ve en kısa zamanda onu görmek kendisine nasip olmuştur. İşte durum budur; sevenlerden kimisi muradına erdirilirken kimisi de musibetle çile doldurmaktadır.

Bir yoruma göre de, şayet Hz. Yakub'un gözü, Bünyamin'in ayrılığı sebebiyle yaşla dolmuşsa, şüphesiz Hz. Yûsuf'un gözü de onu görmekle aydınlanmıştır. İşte durum budur; güneş, birilerinin üzerinde batarken birilerinin de üstüne doğmaktadır.

فَلَمَّا جَهَّزَهُمْ بِجَهَازِهِمْ جَعَلَ السِّقَايَةَ ف۪ي رَحْلِ اَخ۪يهِ ثُمَّ اَذَّنَ
مُؤَذِّنٌ اَيَّتُهَا الْع۪يرُ اِنَّكُمْ لَسَارِقُونَ ﴿٧٠﴾

70- "Yûsuf, onların yüklerini hazırlatırken su kabını kardeşinin yüküne koydurdu. Sonra da bir çağırıcı şöyle seslendi: 'Ey kervancılar! Siz hırsızsınız.' "

Bünyamin, Hz. Yûsuf'la buluştuktan sonra, hakkında ileri sürülen hırsızlık iddiasına katlanmıştır. Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Bünyamin'e isnat edilen kötü fiil, elde ettiği vuslatın yanında ona hafif gelmiştir.

- Hz. Yûsuf, her ne kadar kardeşine hırsızlık isnat ettiyse de, diğer taraftan gizlice:

(اِنّٖٓي اَنَا اَخُوكَ) *"Haberin olsun ben senin kardeşinim"* (Yusuf,12/69) diyerek kendisiyle tanışmıştır. Böylece Bünyamin, göstermelik sitemin yüküne katlanmış, manen ise mazhar olduğu saygın bir konuma taşınmıştır.

Şiir:

*Senin aşkın uğruna lezzetli bulmaktayım sitemi ben*
*Kınasınlar beni, seni anmayı sevdiğim için kınayanlar*

قَالُوا وَاَقْبَلُوا عَلَيْهِمْ مَاذَا تَفْقِدُونَ ﴿٧١﴾

71- "Yûsuf'un kardeşleri onlara dönerek: 'Ne yitirdiniz?' dediler."

قَالُوا نَفْقِدُ صُوَاعَ الْمَلِكِ وَلِمَنْ جَٓاءَ بِهٖ حِمْلُ بَعٖيرٍ وَاَنَا بِهٖ زَعٖيمٌ ﴿٧٢﴾

72- "Onlar: 'Hükümdarın su kabını yitirdik. Onu getirene bir deve yükü ödül var. Ben, buna kefilim' dediler."

قَالُوا تَاللّٰهِ لَقَدْ عَلِمْتُمْ مَا جِئْنَا لِنُفْسِدَ فِي الْاَرْضِ وَمَا كُنَّا سَارِقٖينَ ﴿٧٣﴾

73- "Dediler ki: 'Allah'a andolsun, siz de biliyorsunuz ki biz bu ülkede fesat çıkarmaya gelmedik, hırsız da değiliz.' "

Yani muamelenin seyri içerisindeki güzel muamelemiz, durumla ilgili ahlakımızın güzel oluşunu size göstermektedir. Bir yoruma göre de eğer malınızı çalsaydık, size onu geri getirmezdik ve biz yanınızdan çekip gittikten sonra onu yüklerimizin içinde bulamazdınız.

قَالُوا فَمَا جَزَٓاؤُ۬هُٓ اِنْ كُنْتُمْ كَاذِبِينَ ﴿٧٤﴾

74- "Onlar: 'Eğer yalancı iseniz, hırsızlığın cezası nedir?' dediler."

Hz. Yûsuf'un kardeşleri, hata işlemediklerine dair kendilerine güvendikleri için, kendilerine hırsızlık cezasının uygulanmasını göze alma cesaretini gösterdiler. Suçsuzlukta Bünyamin de onlara ortak idi. Kap onun yükünden çıkınca kardeşleri kendisine dil uzatarak sitem ettiler. Bünyamin ise sanki hırsızlığı itiraf ediyormuş gibi suskun kaldı ve cevap vermedi. Oysa bu doğru değildi. Çünkü o hırsızlık yapmamıştı. Şayet: *"Ben yapmadım"* deseydi, Hz. Yûsuf'un, onu yanında tutmak için kendisiyle birlikte tezgahladığı gizli planını ifşa etmiş olacaktı. Bu nedenle Bünyamin'in dili suskun kalmış ancak kalbi gerçeği kabul etmiştir.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Bünyamin, suçsuz olduğu halde kendisine isnat edilenlerden dolayı maruz kaldığı sitemi göğüslemede zorlanmadı. Zira dostlarla iyi hal sahibi olduktan sonra, keşif ehline kötü söz zarar vermez.

- Bünyamin, kendisine olan etkisi sebebiyle hırsızlık iddiasına bozulmuş ancak bu iddiadan dolayı kendisi için halde duruluk gerçekleşmiştir.

قَالُوا جَزَٓاؤُ۬هُ مَنْ وُجِدَ فِي رَحْلِهِ فَهُوَ جَزَٓاؤُ۬هُ كَذٰلِكَ نَجْزِي
الظَّالِمِينَ ﴿٧٥﴾

75- "Onlar da: 'Cezası, su kabı kimin yükünde bulunursa, o kimsenin kendisi onun cezasıdır. Biz zalimleri böyle cezalandırırız' dediler."

فَبَدَاَ بِاَوْعِيَتِهِمْ قَبْلَ وِعَٓاءِ اَخِيهِ ثُمَّ اسْتَخْرَجَهَا مِنْ وِعَٓاءِ اَخِيهِ
كَذٰلِكَ كِدْنَا لِيُوسُفَ مَا كَانَ لِيَأْخُذَ اَخَاهُ فِي دِينِ الْمَلِكِ اِلَّٓا اَنْ
يَشَٓاءَ اللّٰهُ نَرْفَعُ دَرَجَاتٍ مَنْ نَشَٓاءُ وَفَوْقَ كُلِّ ذِي عِلْمٍ عَلِيمٌ ﴿٧٦﴾

76- "Bunun üzerine Yûsuf, kardeşinin yükünden önce onların yüklerini aramaya başladı. Sonra su kabını kardeşinin yükünden çıkardı. İşte biz Yûsuf'a böyle plan öğrettik. Yoksa kralın kanunlarına göre kardeşini alıkoymazdı. Ancak Allah'ın dilemesi başka. Biz, dilediğimiz kimsenin derecelerini yükseltiriz. Her ilim sahibinin üstünde daha iyi bir bilen vardır."

قَالُوٓا اِنْ يَسْرِقْ فَقَدْ سَرَقَ اَخٌ لَهُ مِنْ قَبْلُ فَاَسَرَّهَا يُوسُفُ فٖي نَفْسِهٖ
وَلَمْ يُبْدِهَا لَهُمْ قَالَ اَنْتُمْ شَرٌّ مَكَانًا وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا تَصِفُونَ ٧٧

77- "Dediler ki: 'Eğer o çalmışsa, daha önce onun bir kardeşi de çalmıştı.' Yûsuf, bunu içinde sakladı ve onlara belli etmedi. İçinden: 'Siz kötü bir durumdasınız. Anlattığınızı Allah çok daha iyi biliyor' dedi."

Bünyamin, kendisine isnat edilen hırsızlık suçundan uzaktı. Bunun üzerine Allah, kardeşlerini söyletti ve nihayet Hz. Yûsuf'u hırsızlıkla itham ettiler. Bu, bir suçlamaya diğer bir suçlamayla karşılık vermek oldu. Amaç, herkesin cezanın zorunlu olduğunu bilmesi idi.

Bir yoruma göre de Hz. Yûsuf'un onlardan işittiği en acıtıcı şey, hırsızlıkla ayıplanmak suretiyle aldığı yara idi. Zira onlar: (قَالُوٓا اِنْ يَسْرِقْ فَقَدْ سَرَقَ اَخٌ لَهُ مِنْ قَبْلُ) *"Eğer o çalmışsa, daha önce onun bir kardeşi de çalmıştı"* demişlerdi. Şüphesiz bunun kalbindeki etkisi, ilk haksızlıktan daha şiddetli olmuştu.

- Hükümdar sana kızdığı zaman, aradan uzun zaman geçse de sana kötü bir son hazırlamasından emin olma. Nitekim Hz. Yûsuf, kardeşlerine kızdığı için onlar, daha sonra kendilerini kötü duruma düşüren muamelesiyle karşılaştılar. Bu muamele, kardeşini alıkoymak ve bundan dolayı babalarına karşı mahcup olmalarına sebep olmaktır.

قَالُوا يَٓا اَيُّهَا الْعَزٖيزُ اِنَّ لَهُٓ اَبًا شَيْخًا كَبٖيرًا فَخُذْ اَحَدَنَا مَكَانَهُ اِنَّا
نَرٰيكَ مِنَ الْمُحْسِنٖينَ ٧٨

78- "Onlar Yûsuf'a: 'Ey güçlü vezir! Bunun çok yaşlı bir babası var. Onun yerine bizden birini alıkoy. Şüphesiz biz, senin iyilik edenlerden olduğunu görüyoruz' dediler."

Kardeşlerinin yakalarını kurtarma çabaları, babalarını vesile kılma arayışları ve Bünyamin yerine onlardan birini alıkoymasına dair talepleri kendilerine fayda vermedi. Herkes kendi yaptığından sorumludur. Hiç kimse, diğerinin günahını taşıyamaz. Bu itibarla ne baba çocuğunun yerine sorumlu tutulur ne de bir kimsenin yakını onun yerine kabul edilir. Bu nedenle Hz. Yûsuf şöyle demiştir:

قَالَ مَعَاذَ اللّٰهِ اَنْ نَأْخُذَ اِلَّا مَنْ وَجَدْنَا مَتَاعَنَا عِنْدَهُۤ اِنَّۤا اِذًا لَظَالِمُونَ ﴿٧٩﴾

79- "Yûsuf: 'Malımızı yanında bulduğumuz kimseden başkasını tutmaktan Allah'a sığınırız. Şüphesiz biz, o takdirde zulmetmiş oluruz' dedi."

Hz. Yûsuf'un kardeşleri, kendileriyle konuşulanın, malla ilgili olduğunu sandılar. Bu nedenle kardeşleri Bünyamin'in yerine onlardan birinin tutulması için kendilerini arz ettiler. Onlar, Hz. Yûsuf'un bu konuda kendilerine plan tezgâhladığını ve bundan maksadının, kalbinde kök salan kardeş sevgisi olduğunu bilemediler. Nitekim sevgilinin alternatifi veya birine diğerlerinin makamını vermek asla söz konusu değildir.

Şiir:

*Bize zevk yaşatmak için bizi ölümsüzlüğe erdirdiği zaman*
*Kabul etmedik ve: "Sen kalbe daha çok yakışırsın" dedik*

Diğer bir Şiir:

*Severim Leyla'yı ben ve menfur gelmiştir bana*
*Hiçbir günahı olmayan diğer kadınlar*

فَلَمَّا اسْتَيْـَٔسُوا مِنْهُ خَلَصُوا نَجِيًّا قَالَ كَبِيرُهُمْ اَلَمْ تَعْلَمُوٓا اَنَّ اَبَاكُمْ
قَدْ اَخَذَ عَلَيْكُمْ مَوْثِقًا مِنَ اللّٰهِ وَمِنْ قَبْلُ مَا فَرَّطْتُمْ ف۪ي يُوسُفَ
فَلَنْ اَبْرَحَ الْاَرْضَ حَتّٰى يَأْذَنَ ل۪ٓي اَب۪ٓي اَوْ يَحْكُمَ اللّٰهُ ل۪ي وَهُوَ خَيْرُ
الْحَاكِم۪ينَ ﴿٨٠﴾

80- "Ondan ümitlerini kesince, kendi aralarında konuşmak üzere bir kenara çekildiler. Büyükleri dedi ki: 'Babanızın Allah adına sizden söz aldığını, daha önce de Yûsuf hakkında işlediğiniz kusuru bilmiyor musunuz? Artık babam bana izin verinceye veya Allah hakkımda hükmedinceye kadar buradan asla ayrılmayacağım. O, hükmedenlerin en hayırlısıdır.' "

Kardeşleri, Hz. Yûsuf'un kardeşinden vazgeçmeyeceğine kanaat getirince, baş başa bir araya geldiler ve derinden mahcubiyet duyarak, Hz. Yakub'un Yûsuf olayına benzer yeni bir olayı daha yaşayacağını anladılar. Bu nedenle en büyük kardeşleri, babalarına geri dönmedi. Haberleri Hz. Yakub'a ulaşınca da onları tasdik etmedi, itham etti, güven verici bulmadı, hain kabul etti.

اِرْجِعُوٓا اِلٰٓى اَب۪يكُمْ فَقُولُوا يَٓا اَبَانَٓا اِنَّ ابْنَكَ سَرَقَ وَمَا شَهِدْنَٓا اِلَّا
بِمَا عَلِمْنَا وَمَا كُنَّا لِلْغَيْبِ حَافِظ۪ينَ ﴿٨١﴾

81- "Siz babanıza dönün ve deyin ki: 'Ey babamız! Şüphesiz oğlun hırsızlık etti. Biz, ancak bildiğimize şahitlik ettik, gaybı bilemezdik.' "

Bu kez onların, söylediklerine dair ellerinde delil vardı. Ancak Hz. Yakub'un kalbi, bununla tatmin olmadı. Çünkü geçen sefer suçun kesinleşmiş olması, son olayda da ithama yol açmıştı.

وَسْـَٔلِ الْقَرْيَةَ الَّت۪ي كُنَّا ف۪يهَا وَالْع۪يرَ الَّت۪ٓي اَقْبَلْنَا ف۪يهَا وَاِنَّا لَصَادِقُونَ ﴿٨٢﴾

82- "Bulunduğumuz kent halkına ve aralarında olduğumuz kervana da sor. Şüphesiz biz doğru söyleyenleriz."

Onlar delilleri çoğalttıkça Hz. Yakub'un, söylediklerinden duyduğu şüphe de artmıştır. Bir yoruma göre de hatıraları konuşturmak, sevenlerin kalplerini kazanmayı sağlar ve mana alemlerine teselli olur. Bu, izaha elverişli bir alandır.

قَالَ بَلْ سَوَّلَتْ لَكُمْ اَنْفُسُكُمْ اَمْرًا فَصَبْرٌ جَمِيلٌ عَسَى اللّٰهُ اَنْ
يَأْتِيَنِي بِهِمْ جَمِيعًا اِنَّهُ هُوَ الْعَلِيمُ الْحَكِيمُ ﴿٨٣﴾

83- "Yakub: 'Nefisleriniz, sizi bir iş yapmaya sürükledi. Artık bana düşen, güzel bir sabırdır. Umulur ki Allah, onların hepsini bana getirir. Çünkü O, hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir' dedi."

Hz. Yakub, sabırla yakından kurtulacağına ümit bağlamıştır. Bir yoruma göre de, Hz. Yakub içinden sabır sözü verdiği halde, daha akşam olmadan: *"Vah Yûsuf'a vah!"* deyince, bundan sevenlerin sabra dair kararlarının, güvenceli olmayıp bozulabileceği anlaşılmıştır.

وَتَوَلّٰى عَنْهُمْ وَقَالَ يَآ اَسَفٰى عَلٰى يُوسُفَ وَابْيَضَّتْ عَيْنَاهُ مِنَ
الْحُزْنِ فَهُوَ كَظِيمٌ ﴿٨٤﴾

84- "Onlardan yüz çevirdi ve: 'Vah Yûsuf vah!' dedi ve üzüntüden iki gözüne ak düştü. O, artık acısını içinde saklıyordu."

Sevginin hiçbir şey bırakmadığının bilinmesi için çocukları da olsalar, Hz. Yakub hepsinden yüz çevirdi. Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Hz. Yûsuf'un kardeşleri, Hz. Yakub'un ilgisinin tamamen onlara olmasını isteyince, Hz. Yakub onlardan yüz çevirdi ve var olan ilgisini de yitirdiler. Bu nedenle: *"Hepsini isteyen hepsini yitirir"* denilmiştir.

- Hz. Yakub, Hz. Yûsuf için duyduğu üzüntü konusunda kendine bir yardımcı bulamadığı için hepsinden yüz çevirerek tek başına üzüntüsünü ortaya koymuştur.

Şiir:

*Dostlardan kopuk tek başınayım ben her ülkede*
*Azalır yardımcılar, hedef büyüdüğü zaman*

- Hz. Davud, Hz. Yakub'tan daha fazla ağladığı halde Hz. Davud'un gözü gitmemiş ancak Hz. Yakub'un gözü gitmiştir. Çünkü Hz. Yakub, Hz. Yûsuf için ağlarken Hz. Yûsuf, Hz. Yakub'un kendisi için ağlayan gözlerini koruma gücüne sahip değildi. Oysa Hz. Davud Allah için ağlıyordu. Allah ise, kendisi için ağlayanın gözlerini koruma gücüne sahiptir.

Ben Ebû Alî ed-Dakkâk hocadan böyle dediğini duydum. Bir de o şöyle dedi:

*"Şüphesiz Yakub, bir mahluk için ağlamış ve bunun üzerine gözleri gitmiştir. Davud ise Allah için ağlamış ve bu sayede gözleri kalmıştır."*

Yine ondan şöyle dediğini duydum: *"Allah: 'Yakub kör oldu' dememiş de: 'iki gözüne ak düştü' demiştir. Çünkü bu, gerçek bir körlük değil ancak Yûsuf'u görmekten engellenmekti."*

- Hz. Yakub'un gözlerinin gitmesi, Hz. Yûsuf'tan başkasını görmeye ihtiyaç duymaması içindi. Çünkü sevenler için hiçbir şey, ayrı düşülmüş sevgiliden başkasını görmek kadar zor değildir.

Şiir:

*Sizi göremeyeceğime kanaat getirince ben*
*Yumdum gözlerimi ve bakmadım kimseye*

Ebû Alî ed-Dakkâk hocadan bir de şöyle dediğini duydum:

*"Yakub (a.s.), Yûsuf'un kayıp olduğu durumda Bünyamin'i görmekle teselli buluyordu. Onu da göremeyince: 'Vah Yûsuf vah!' demiştir."*

Yani Hz. Yakub, Yûsuf'a bakmaktan alıkonulunca ondan izler taşıyan Bünyamin ile teselli buluyordu. Onu da göremeyince bu kez: ( وَقَالَ يَٓا اَسَفٰى عَلٰى يُوسُفَ ) "*Vah Yûsuf vah!*" dedi.

قَالُوا تَاللّٰهِ تَفْتَؤُا تَذْكُرُ يُوسُفَ حَتّٰى تَكُونَ حَرَضًا اَوْ تَكُونَ مِنَ الْهَالِكٖينَ ﴿٨٥﴾

85- "Oğulları: 'Allah'a yemin ederiz ki, sen hala Yûsuf'u anıp duruyorsun. Sonunda üzüntüden eriyip gideceksin veya helak olanlardan olacaksın' dediler."

Çocukları, onu helak olmak üzere olan bir hasta haline gelmekle tehdit ettiler. Vakıa öyle de oldu. Bir de onu, umursamadığı ölümle korkutarak: ( اَوْ تَكُونَ مِنَ الْهَالِكٖينَ ) "*veya helak olanlardan olacaksın*" dediler.

Bir yoruma göre de, helak edici şeylerin en güzeli, aşk niteliği taşıyan şeydir. Hal böyle olunca nasıl olur da kendisince en sevimli şey helak olan kimse, helak ile korkutulur!

قَالَ اِنَّمَٓا اَشْكُوا بَثّٖي وَحُزْنٖٓي اِلَى اللّٰهِ وَاَعْلَمُ مِنَ اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ﴿٨٦﴾

86- "Yakub: 'Ben, tasa ve üzüntümü ancak Allah'a arz ederim. Ben Allah tarafından sizin bilmediğiniz şeyleri bilirim' dedi."

Hz. Yakub, Allah'tan şikâyetçi olmadı, ona şikayette bulundu. Allah'a şikâyette bulunan vuslata erer. Allah'tan şikâyetçi olan ise ayrılığa düşer.

Bu konudaki iki yorum da şöyledir:

- Hz. Yakub Allah'a şikâyette bulununca, O'ndan telafisini buldu.

- Hz. Yakub nefsi ve kalbiyle tahammül göstermiş, mana alemi ve canı ile de vuslat makamına taşınarak müsterih olmuştur. Çünkü o, Allah tarafından doğruluk üzere olduğunu bilmiş ve bu nedenle: ( وَاَعْلَمُ مِنَ اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ) "*Ben Allah tarafından sizin bilmediğiniz şeyleri bilirim*" demiştir.

Şiir:

*Rahat ve huzur temenni ederken insanlar*
*Sana şikâyette bulunsam da duysan diye temenni ettim ben*

يَا بَنِيَّ اذْهَبُوا فَتَحَسَّسُوا مِنْ يُوسُفَ وَاَخِيهِ وَلَا تَايْـَٔسُوا مِنْ رَوْحِ اللّٰهِ اِنَّهُ لَا يَايْـَٔسُ مِنْ رَوْحِ اللّٰهِ اِلَّا الْقَوْمُ الْكَافِرُونَ ﴿٨٧﴾

87- "Ey oğullarım! Gidin Yûsuf'u ve kardeşini araştırın. Allah'ın rahmetinden ümit kesmeyin. Çünkü kâfirler topluluğundan başkası, Allah'ın rahmetinden ümidini kesmez."

Hz. Yakub, oğullarını Hz. Yûsuf'u aramaya gönderiyordu. Oysa kardeşler, aramak üzere yol teperken Yûsuf'un öldüğüne inanıyorlardı. Vakıa insan arzusuna göre düşünür.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Hz. Yakub'un: ( فَتَحَسَّسُوا مِنْ يُوسُفَ وَاَخِيهِ ) "*Gidin Yûsuf'u ve kardeşini araştırın*" ifadesi, bütün duyu organlarıyla onu aramalarına dair bir emirdir. Yani, Hz. Yakub gözlerine ilişebilir diye gözleriyle, haberini duyabilirler diye kulaklarıyla ve kokusunu alabilirler diye koklama duyularıyla onu aramalarını istemiştir. Bunu yaparken Hz. Yakub, Hz. Yûsuf'un durumuna vakıf olma iradesinde çocuklarını da kendisi gibi sanmıştır. Sonara da onları Allah'ın lütfuna havale ederek: ( اِنَّهُ لَا يَايْـَٔسُ مِنْ رَوْحِ اللّٰهِ اِلَّا الْقَوْمُ الْكَافِرُونَ ) "*Kâfirler topluluğundan başkası, Allah'ın rahmetinden ümidini kesmez*" demiştir.

- Hz. Yakub'un çocuklarından hiç biri, Hz. Yûsuf'un sahip olduğu yere sahip olmadığı için bu denli az sabır göstermiş ve Hz. Yûsuf'u arayıp yanında bulunmamalarını, yanında bulunmalarına tercih

etmiştir. Bu itibarla Hz. Yakub'un onlarla ilgili durumu ile Yûsuf'la ilgili durumu arasında büyük fark vardı. Bu çerçevede Hz. Yûsuf'u görmeyince ayrılığı sebebiyle gözlerine ak düşerken, diğerlerine kendi isteğiyle kaybolmalarını söylemiştir.

فَلَمَّا دَخَلُوا عَلَيْهِ قَالُوا يَٓا اَيُّهَا الْعَزِيزُ مَسَّنَا وَاَهْلَنَا الضُّرُّ وَجِئْنَا بِبِضَاعَةٍ مُزْجٰيةٍ فَاَوْفِ لَنَا الْكَيْلَ وَتَصَدَّقْ عَلَيْنَا اِنَّ اللّٰهَ يَجْزِي الْمُتَصَدِّقِينَ ﴿٨٨﴾

88- "Bunun üzerine Yûsuf'un yanına girdiklerinde: 'Ey güçlü vezir! Bize ve ailemize darlık ve sıkıntı dokundu. Değersiz bir sermaye ile geldik. Zahiremizi tam ölç, ayrıca bize sadaka ver. Şüphesiz Allah, sadaka verenleri mükafatlandırır' dediler."

Kardeşleri, Hz. Yûsuf'un yanına girince kendisine, sıkıntı, açlık ve yoksulluğu anlatarak hitap ettiler. Hz. Yûsuf olayından ve babalarının kendilerini göndermesinin sebebinden ise söz etmediler.

Bu konudaki bazı yorumlar da şöyledir:

- Kardeşleri, Hz. Yûsuf'u: ( مَسَّنَا وَاَهْلَنَا الضُّرُّ ) "*Bize ve ailemize darlık ve sıkıntı dokundu*" sözüyle yumuşatmak istedikten sonra sermayelerinin azlığından söz etmişlerdir.

- Kardeşler, yoksulluklarını fark edince güçlerinin durumunu dile getirerek:

( وَجِئْنَا بِبِضَاعَةٍ مُزْجٰيةٍ ) "*Değersiz bir sermaye ile geldik*" dediler. Aynı zamanda kardeşler, Hz. Yûsuf'un gücünü görünce de ondan gücü oranında talepte bulunarak: ( فَاَوْفِ لَنَا الْكَيْلَ ) "*Zahiremizi tam ölç*" dediler.

- Kardeşler, Hz. Yûsuf'a zahirelerini, onların yoksulluğuna ve yokluk içinde olmalarına göre değil, kendi lütfuna ve cömertliğine göre ölçmesini söyledikten sonra bu dili bırakıp: ( وَتَصَدَّقْ عَلَيْنَا ) "*Ayrıca bize sadaka ver*" demek suretiyle en düşük seviyeye inmiş oldular.

Bu söyledikleri şu anlama geliyordu: Şayet biz alışveriş şeklindeki muameleyi hak etmiyorsak, şüphesiz bize mükafat şeklinde bağış yapılmasını hak ediyoruz.

Eğer: *"Onlar, peygamber idiler. Peygamberlere ise sadaka helal değildir. O halde nasıl: 'Ayrıca bize sadaka ver' dediler?"* diye sorulacak olsa, şöyle cevap verilir: *"Onlar peygamber değillerdi. Veya muhtemelen onların dininde sadaka peygamberlere haram kılınmamıştı."*

- Onlar, arkalarında kendilerine sadaka helal olan kimseler bıraktıklarını ifade etmek istemişlerdir.

قَالَ هَلْ عَلِمْتُمْ مَا فَعَلْتُمْ بِيُوسُفَ وَاَخِيهِ اِذْ اَنْتُمْ جَاهِلُونَ ﴿٨٩﴾

89- "Yûsuf dedi ki: 'Siz cahil kimseler iken Yûsuf ve kardeşine neler yaptığınızı biliyor musunuz?' "

Kardeşleri, Hz. Yûsuf'un huzurunda mahcup olup: ( فَاَوْفِ لَنَا الْكَيْلَ ) *"Zahiremizi tam ölç"* (Yusuf,12/88) demeleri üzerine, Hz. Yûsuf onları tanıdı, durumlarını anladı ve kendilerine hadlerini bildirmek üzere: ( هَلْ عَلِمْتُمْ مَا فَعَلْتُمْ بِيُوسُفَ وَاَخِيهِ ) *"Siz Yûsuf ve kardeşine neler yaptığınızı biliyor musunuz?"* dedi. Yani, Yûsuf'a ve kardeşine yaptığınız muameleye benzer muamelede bulunan kimse, sizin cesaret ettiğiniz gibi hitap etmeye cesaret etmemelidir.

Bir görüşe göre de, Hz. Yûsuf onlara şöyle demiştir:

*"Sözünüzü bitirdiğiniz ve çok konuştuğunuz halde, konuşmanızda sıkıntınızı anlatmaktan başka bir şey yoktu. Acaba kardeşiniz Yûsuf'un olayı aklınıza gelmiyor mu?"*

Bu ifade, sitem olarak her türlü cezadan büyüktür. Bu arada sitem yüklü konuşma onları utandırınca Hz. Yûsuf bununla da yetinmemiş ve sözü biraz daha açarak: *"Siz, aynı zamanda cahil kimselersiniz"* dedi.

قَالُوٓا ءَاِنَّكَ لَاَنْتَ يُوسُفُ قَالَ اَنَا يُوسُفُ وَهٰذَٓا اَخِي قَدْ مَنَّ اللّٰهُ
عَلَيْنَا اِنَّهُ مَنْ يَتَّقِ وَيَصْبِرْ فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يُضِيعُ اَجْرَ الْمُحْسِنِينَ ﴿٩٠﴾

90- "Kardeşleri: 'Yoksa sen Yûsuf musun?' dediler. O da: 'Ben Yûsuf'um, bu da kardeşim. Allah, bize iyilikte bulundu. Çünkü kim, kötülükten sakınır ve sabrederse, şüphesiz Allah iyilik yapanların mükâfatını zayi etmez' dedi."

Başta kardeşleri, kendisini henüz tanımadıkları zaman ona hitap ederken:

( يَٓا اَيُّهَا الْعَزِيزُ ) *"Ey güçlü vezir!"* (Yusuf, 12/88) diyorlardı. Onu tanıyınca bu kez:

( ءَاِنَّكَ لَاَنْتَ يُوسُفُ ) *"Yoksa sen Yûsuf musun?"* dediler. Çünkü yabancılık ortadan kalkınca hitapta tekellüf devreden çıkmıştır.

Şiir:

*Bir kavim arasında sevgi katıksız olduğunda*
*Ve sevgileri devam ettiğinde çirkinleşir övgü*

Bu konudaki diğer bazı yorumlar da şöyledir:

- Hz. Yûsuf ve kardeşleri arasındaki kopuş ve ayrışma, onunla Hz. Yakub arasındaki iletişimin önüne geçmiştir. Babası, olayın şüphesiz bir gerçek olduğunu bilmesi için Hz. Yûsuf'u tanımadan önce kardeşleri onun haberini öğrenmişlerdi.

- Kardeşler, Hz. Yûsuf hakkında haber alma ve onu tanıma hakkına sahip olmada babalarının önüne geçmemişler fakat onu tanıdıkları halde kendisine sevgi ve dostluk gözüyle bakmamışlardır. Onların yegâne amacı, erzak ve yiyecek idi. Bu çerçevede Hz. Yûsuf onlara hitaben: ( اَنَا۬ يُوسُفُ وَهٰذَٓا اَخِي ) *"Ben Yûsuf'um, bu da kardeşim"* diyerek kendisinin, onlar gibi insanların değil, Bünyamin gibilerin kardeşi olduğunu ifade etmek istemiştir. Bu nedenle: Ben Yûsuf'um, sizler de kardeşlerimsiniz, dememiş: *"Ben Yûsuf'um, bu da kardeşim"* demiştir. Sanki onlara bir nevi itapta bulunarak kendisine yaptıkları muamelenin, kardeşlerin davranışı olmadığını söylemiştir.

- Hz. Yûsuf: ( اَنَا۬ يُوسُفُ ) *"Ben Yûsuf'um"* demekle kardeşlerinde meydana getirdiği sürpriz mahcubiyeti hafifletmek için: ( وَهٰذَٓا اَخِي )

*"Bu da kardeşim"* demiştir. Sanki o, bu sözle onları avutmak istemiştir. Nitekim: ( وَمَا تِلْكَ بِيَمِينِكَ يَا مُوسٰى ) *"Nedir o sağ elindeki?"* (Tâhâ, 20/17) sözü hakkında, Allah'ın, Hz. Mûsâ'yı bu sözü dinlemekle avutmak istediği savunulmuştur. Bu avutma, Hz. Mûsâ'nın mazhar olduğu: ( اِنَّن۪ي اَنَا اللّٰهُ ) *"Şüphesiz ben Allah'ım"* (Tâhâ, 20/14) tecellisinin içinde asaya dikkati çekilerek yapılmıştır. Sonra Hz. Yûsuf, meşakkat ve zorluğa karşı sabretmenin mükâfatının bulunduğunu itiraf ederek:

( اِنَّهُ مَنْ يَتَّقِ وَيَصْبِرْ فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يُض۪يعُ اَجْرَ الْمُحْسِن۪ينَ ) *"Çünkü kim, kötülükten sakınır ve sabrederse, şüphesiz Allah iyilik yapanların mükâfatını zayi etmez"* demiştir.

Ben, Ebû Ali ed-Dakkâk Hoca'dan şöyle dediğini duydum: *"Hz. Yûsuf: 'Çünkü kim, kötülükten sakınır ve sabrederse' demekle ecri, yerine getirdiği sabra karşılık olarak hak ettiğini ifade edince, Allah ona tevhit diliyle cevap vermeleri için konuşturduğu kardeşleri:*

*( تَاللّٰهِ لَقَدْ اٰثَرَكَ اللّٰهُ عَلَيْنَا ) 'Allah'a andolsun, gerçekten Allah seni bize üstün kıldı'* (Yusuf,12/91) *dediler. Yani: Ey Yûsuf! Ecir kazanman, ne senin sabrınla ne de senin takvan iledir. O, ancak Allah'ın seni bize üstün kılması sebebiyledir. İşte bununla sen bizim önümüze geçtin, yoksa hamdın ve takvanla değil. Bunun üzerine Hz. Yûsuf, hakka boyun eğmek suretiyle: ( لَا تَثْر۪يبَ عَلَيْكُمُ الْيَوْمَ ) 'Bugün size kınama yok'* (Yusuf,12/92) *diyerek onları sitemden muaf tuttu. Çünkü Hz. Yûsuf, kardeşlerinin uyarısı üzerine takvayı nefsinden bilmeyince tevhitten söz etti ve takdirin tecellisinden haber verdi."*

قَالُوا تَاللّٰهِ لَقَدْ اٰثَرَكَ اللّٰهُ عَلَيْنَا وَاِنْ كُنَّا لَخَاطِ۪ئ۪ينَ ﴿٩١﴾

91- "Dediler ki: 'Allah'a andolsun, gerçekten Allah seni bize üstün kıldı. Gerçekten biz suç işlemiştik.' "

Kardeşleri: ( لَقَدْ اٰثَرَكَ اللّٰهُ عَلَيْنَا ) *"Gerçekten Allah seni bize üstün kıldı"* diyerek Hz. Yûsuf'un onlara olan üstünlüğünü itiraf ettiler ve yemin etmek suretiyle de bunu pekiştirdiler. Onlar bunu: ( قَالُوا لَيُوسُفُ وَاَخُوهُ اَحَبُّ اِلٰٓى اَب۪ينَا مِنَّا وَنَحْنُ عُصْبَةٌ اِنَّ اَبَانَا لَف۪ي ضَلَالٍ مُب۪ينٍ ) *"Biz*

*güçlü bir topluluk olduğumuz halde Yûsuf ve kardeşi, babamıza bizden daha sevgilidir. Doğrusu babamız, açık bir yanılgı içindedir"* (Yusuf,12/8) diyerek onun üstünlüğünü inkâr ettikten sonra itiraf ettiler. Böylece inkâr eden, göremediği için inkâr etmekte, gören ise inkâr etmemektedir.

Bir yoruma göre de, kardeşleri onun üstünlüğünü itiraf edip: ( وَاِنْ كُنَّا لَخَاطِئِينَ ) *"Gerçekten biz suç işlemiştik"* diyerek suçlarını kabul edince, Hz. Yûsuf'un şu sözüyle hatalarının bağışlandığını gördüler:

قَالَ لَا تَثْرِيبَ عَلَيْكُمُ الْيَوْمَ يَغْفِرُ اللّٰهُ لَكُمْ وَهُوَ اَرْحَمُ الرَّاحِمِينَ ﴿٩٢﴾

92- "Yûsuf dedi ki: 'Bugün size kınama yok. Allah sizi bağışlasın. O, merhametlilerin en merhametlisidir.' "

Hz. Yûsuf, onların hatasından hemen vazgeçerken, Hz. Yakub: ( قَالَ سَوْفَ اَسْتَغْفِرُ لَكُمْ رَبِّي ) *"Sizin için Rabbimden mağfiret dileyeceğim"* (Yusuf, 12/98) diyerek onlar için mağfiret dileme sözü vermiştir. Çünkü Hz. Yakub, onları Hz. Yûsuf'un sevdiğinden daha çok sevdiği için kendilerine itapta bulunmuştur. Oysa Hz. Yûsuf, onları itaba ehil görmediği için hemen kendilerini affetmiştir.

Şiir:

*İtabı terk etmek, hak ettiği zaman bir kardeş*
*Senden itabı, vesilesidir ayrılığın*

Bir yoruma göre de onlar o anda o kadar mahcup oldular ki bu her türlü cezanın yerine geçmiş oldu. Bu nedenle: *"Kusur işleyen için buluşma gününün utancı yeter"* denilmiştir.

اِذْهَبُوا بِقَمِيصِي هٰذَا فَاَلْقُوهُ عَلٰى وَجْهِ اَبِي يَاْتِ بَصِيرًا وَاْتُونِي بِاَهْلِكُمْ اَجْمَعِينَ ﴿٩٣﴾

93- " 'Bu gömleğimi götürün de babamın yüzüne koyun ki, gözleri açılsın ve bütün ailenizi bana getirin' dedi."

Bela saldırıya geçtiği zaman defaten saldırır. Geçtiği zaman ise tedricen geçer. Bela, Hz. Yakub'un başına, çocuklarının: ( فَاَكَلَهُ الذِّئْبُ ) "*Onu kurt yedi*" (Yusuf,12/17) demeleriyle defaten gelmiştir. Oysa bu bela geçerken Hz. Yakub, önce Hz. Yûsuf'un kokusunu almış, sonra gömleğini bulmuş, sonra Hz. Yûsuf'un yanında buluşma günü gelmiş, sonra da Hz. Yûsuf'u görmek gerçekleşmiştir.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Bela ve göz kaybının sebebi Hz. Yûsuf'un gömleği olduğu için Allah, beladan kurtuluş sebebinin de gömlek olmasını irade buyurmuştur.

- Hz. Yûsuf, Hz. Yakub'un gömleği alırken sevinçten buna dayanamayacağını bildiği için: ( فَاَلْقُوهُ عَلٰى وَجْهِ اَبِي ) "*Onu babamın yüzüne koyun*" demiştir.

- Gömlek, giyilmekten başka bir işe yaramaz. Ancak sevgililerin gömleği öyle değildir. Çünkü o, ancak sevgililerin kokusunu almaya yarar.

- Körlük gözde olduğundan, bundan şifa bulması için Hz. Yûsuf, gömleği yüzüne koymalarını emretmiştir.

- Ağlama, yüzde bulunan gözle olduğu için şifa, gömleğin yüzde bulunan gözün üzerine konulmasıyla olmuştur.

( وَاْتُونِي بِاَهْلِكُمْ اَجْمَعِينَ ) "*Ve bütün ailenizi bana getirin.*"

Hz. Yûsuf, bütün aile fertlerinin kendisi için üzüldüğünü öğrenince, üzülen herkesin sevince iştirak etmesini istemiştir.

Bir yoruma göre de Hz. Yûsuf, Hz. Yakub'un onu karşılayabilecek güce sahip olmadığını bildiği için, düzeni bozulmasın diye onu yanına getirtmiştir. Yoksa Hz. Yûsuf bunu, onun değerini ve kendisine göstermek zorunda olduğu saygıyı ihlal etmek için yapmamıştır.

وَلَمَّا فَصَلَتِ الْعِيرُ قَالَ اَبُوهُمْ اِنِّي لَاَجِدُ رِيحَ يُوسُفَ لَوْلَٓا اَنْ تُفَنِّدُونِ ﴿٩٤﴾

**94- "Kervan (Mısır'dan) ayrılınca babaları: 'Bana bunak demezseniz, şüphesiz ben Yûsuf'un kokusunu alıyorum' dedi."**

Bela gelmeye devam ettiği sürece, Hz. Yûsuf'un durumu ve olayı, Hz. Yakub için problem olmuştur. Derken meşakkat sona erince durumu, her taraftan düzelmeye başlamıştır.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Hz. Yûsuf kuyuya atıldığında Hz. Yakub'tan uzak değildi, fakat haberini ve durumunu çözememişti. Bela ortadan kalkınca Mısır'dan Kenan'a kadar aralarında seksen fersah mesafe bulunduğu halde kokusunu almıştı.

- Kokuyu sadece Hz. Yakub'un almasının sebebi, Hz. Yûsuf'un kaybolmasına da sadece kendisinin üzülmüş olmasıdır. Doğrusu Hz. Yûsuf'un kokusunu ancak onun ayrılığına üzülen duyar. Bu itibarla sevgililerin kokusunu, sevenlerden başkaları tanıyamaz. Bu alanın yabancılarına ise bunu anlamak problemlidir. Zira insanın nerede kokusu olur ki!

- Koku burada mecazi anlamda kullanılmıştır. Nitekim mecazen: *"falancanın rüzgarları esti"* ve: *"Ben, fitnenin kokusunu alıyorum"* vs. denir.

( لَوْلَٓا اَنْ تُفَنِّدُونِ ) *"Bana bunak demezseniz."*

Hz. Yakub, onların kendisi hakkında sitemle dil uzattıklarını sezmiştir. Bu nedenle sözü, onları etkilememiştir. Bunun üzerine onlar, sitemi daha da artırarak şöyle dediler:

قَالُوا تَاللّٰهِ اِنَّكَ لَفِي ضَلَالِكَ الْقَدِيمِ ﴿٩٥﴾

**95- "Onlar da: 'Allah'a yemin ederiz ki sen hala eski şaşkınlığındasın' dediler."**

Sözlerine hakaret kattılar, babalarına saygı göstermediler ve hitapta babalık hakkına riayet etmeyerek onu, sevgide şaşkınlıkla nitelediler.

Bir yoruma göre de Hz. Yakub rüzgârdan Hz. Yûsuf'un esintisini anlamıştır. Bir de Hz. Yûsuf'un haberi o denli yayılmıştı ki rüzgârlara da izin geldi. Esasen, yurtlara soru sormak ve harabelerle konuşmak sevenlerin prensibidir.

Şiir:

*İsterim rüzgârlardan esintinizi hediye olarak*
*Onlar size doğru geldiklerinde eserek*
*Ve isterim onlardan taşımalarını selamımı*
*Tebliğ ederlerse bir gün eğer alın selamımı*

فَلَمَّٓا اَنْ جَٓاءَ الْبَشٖيرُ اَلْقٰيهُ عَلٰى وَجْهِهٖ فَارْتَدَّ بَصٖيرًا قَالَ اَلَمْ اَقُلْ لَكُمْ اِنّٖٓي اَعْلَمُ مِنَ اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ ﴿٩٦﴾

96- "Müjdeci gelip gömleği Yakub'un yüzüne koyunca gözleri açılıverdi. Yakub: 'Ben, size Allah tarafından sizin bilemeyeceğiniz şeyleri bilirim demedim mi?' dedi."

Eğer Hz. Yûsuf'un gömleği, yeryüzündeki bütün körlerin yüzlerine konsaydı gözleri açılmazdı. Hz. Yakub'un gözlerinin özellikle Hz. Yûsuf'un gömleğiyle açılmasının yegâne sebebi, aynı gözlerin yine Hz. Yûsuf'un ayrılığı yüzünden gitmiş olmasıdır. Nitekim Hz. Yûsuf'un gömleğini getirdiklerinde Allah, Hz. Yakub'u konuşturup delilini apaçık hale getirmiş ve bunun üzerine o: (اَلَمْ اَقُلْ لَكُمْ اِنّٖٓي اَعْلَمُ مِنَ اللّٰهِ مَا لَا تَعْلَمُونَ) "*Ben, size Allah tarafından sizin (Yûsuf'un hayatı hakkında) bilemeyeceğiniz şeyleri bilirim demedim mi?*" demiştir.

Şiir:

*Delilimizdir beklenen yüzün*
*İnsanların deliller getirdikleri gün*

قَالُوا يَٓا اَبَانَا اسْتَغْفِرْ لَنَا ذُنُوبَنَٓا اِنَّا كُنَّا خَاطِئٖينَ ﴿٩٧﴾

97- "Oğulları: 'Ey babamız! Allah'tan suçlarımızın bağışlanmasını dile. Biz, gerçekten suçlu idik' dediler."

Her insan, kendi durumunu düşünür. Hz. Yakub ve Hz. Yûsuf, sevinç ve neşeyi yaşarken Hz. Yûsuf'un kardeşleri özür dilemeye ve bağışlanmalarını talep etmeye başlamışlardır.

Bir yoruma göre Hz. Yûsuf'un kardeşleri, her ne kadar daha önce hata işledilerse de babalık şefkati daha önceki hatalarının önüne geçtiği için rahat bir dille babalarıyla konuşmuşlardır.

Diğer bir yoruma göre de bir güne karşılık bir günle ödeşmişlerdir. Şayet Hz. Yûsuf'un kaybolması sebebiyle Hz. Yakub o gün üzgün idiyse, şüphesiz Hz. Yûsuf'un gömleğiyle bugün sevinçli olmuştur. Kardeşler ise Hz. Yûsuf'a yaptıklarından dolayı mahcubiyet içinde idiler.

قَالَ سَوْفَ اَسْتَغْفِرُ لَكُمْ رَبّ۪يۜ اِنَّهُ هُوَ الْغَفُورُ الرَّح۪يمُ ﴿٩٨﴾

98- "Yakub: 'Rabbimden sizin bağışlanmanızı dileyeceğim. Şüphesiz O çok bağışlayandır, çok merhamet edendir' dedi."

Hz. Yakub, onlara bağışlanmalarını dileme sözü vermiştir. Çünkü o, henüz sevincini tamamlayıp fiilen mağfiret dileme aşamasına geçmemişti. Bir yoruma göre de Hz. Yakub, daha önceki kötü davranışlarını kendilerine göstermek için, isteklerine hemen cevap vermemiştir.

Çünkü o sırada Hz. Yûsuf orada yoktu. Bu nedenle şayet Hz. Yûsuf onlardan razı olursa gelecekte bağışlanmalarını dileyeceğine dair kendilerine söz verdi. Çünkü hakkın çoğu Hz. Yûsuf'a aitti. Eğer hakkın hepsi Hz. Yakub'a ait olsaydı hemen bunu onlara bahşedecekti.

فَلَمَّا دَخَلُوا عَلٰى يُوسُفَ اٰوٰٓى اِلَيْهِ اَبَوَيْهِ وَقَالَ ادْخُلُوا مِصْرَ اِنْ
شَٓاءَ اللّٰهُ اٰمِن۪ينَۜ ﴿٩٩﴾

99- "Yûsuf'un huzuruna girdiklerinde Yûsuf, ana babasını bağrına bastı ve: 'Allah'ın iradesi ile güven içinde Mısır'a girin' dedi."

Onlar, Mısır'a aynı şartlarda girdiler, ancak kabulde farklılaştılar. Bu çerçevede ana ve baba, haksızlıktan uzak oldukları için, Hz. Yûsuf sadece onları bağrına bastı. Aynı şekilde yarın -kıyamet günü- bağışlanmaya mazhar olduklarında cennete aynı şartlarda girecekler, ancak Allah'a yakınlık mertebesinde farklılaşacaklardır. Bu mertebeye bugün bir ilerleme kaydedemeyenler değil, özellikle arınmış kimseler sahip olacaklardır.

وَرَفَعَ اَبَوَيْهِ عَلَى الْعَرْشِ وَخَرُّوا لَهُ سُجَّدًا وَقَالَ يَٓا اَبَتِ هٰذَا تَاْوِيلُ رُءْيَايَ مِنْ قَبْلُ قَدْ جَعَلَهَا رَبِّي حَقًّا وَقَدْ اَحْسَنَ بِٓي اِذْ اَخْرَجَنِي مِنَ السِّجْنِ وَجَٓاءَ بِكُمْ مِنَ الْبَدْوِ مِنْ بَعْدِ اَنْ نَزَغَ الشَّيْطَانُ بَيْنِي وَبَيْنَ اِخْوَتِي اِنَّ رَبِّي لَطِيفٌ لِمَا يَشَٓاءُ اِنَّهُ هُوَ الْعَلِيمُ الْحَكِيمُ ﴿١٠٠﴾

100- "Ana babasını tahtın üzerine çıkardı. Hepsi, ona saygı ile eğildiler. Yûsuf dedi ki: 'Babacığım! İşte bu, daha önce gördüğüm rüyanın yorumudur. Rabbim, onu gerçekleştirdi. Şeytan, benimle kardeşlerimin arasını bozduktan sonra Rabbim beni zindandan çıkararak ve sizi çölden getirerek bana çok iyilikte bulundu. Şüphesiz Rabbim, dilediği şeyde nice incelikler sergileyendir. Şüphesiz O, hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir.' "

Hz. Yûsuf, her birini layık olduğu yerde konumlandırmıştır. Bu çerçevede ana babasını tahtın üstüne çıkarmış, kardeşlerini de yerde bırakmıştır. Bu arada, Hz. Yûsuf'a eğilmeleri, selamlama içindi. O zaman adetleri böyleydi. Zahir bakımından ana baba da eğilmeye katılmışlardır. Çünkü ayetteki: *"Eğildiler"* lafzı hepsinden söz etmektedir. Bir de zaten Hz. Yûsuf, işin başında rüyasından şu ifadeyle söz etmiştir:

(اِنِّي رَاَيْتُ اَحَدَ عَشَرَ كَوْكَبًا وَالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ رَاَيْتُهُمْ لِي سَاجِدِينَ) *"Gerçekten ben rüyada on bir yıldız, güneşi ve ayı gördüm. Gördüm ki onlar, bana boyun eğiyorlardı."* (Yusuf,12/4) Burada ise: (هٰذَا تَاْوِيلُ رُءْيَايَ مِنْ قَبْلُ قَدْ جَعَلَهَا رَبِّي حَقًّا) *"İşte bu, daha önce gördüğüm rüyanın yorumudur. Rabbim, onu gerçekleştirdi"* demiştir.

( وَقَدْ اَحْسَنَ بِيٓ اِذْ اَخْرَجَنِي مِنَ السِّجْنِ وَجَٓاءَ بِكُمْ مِنَ الْبَدْوِ مِنْ بَعْدِ اَنْ نَزَغَ الشَّيْطَانُ بَيْنِي وَبَيْنَ اِخْوَتِي اِنَّ رَبِّي لَطِيفٌ لِمَا يَشَٓاءُ اِنَّهُ هُوَ الْعَلِيمُ الْحَكِيمُ ) *"Şeytan, benimle kardeşlerimin arasını bozduktan sonra, Rabbim beni zindandan çıkararak ve sizi çölden getirerek bana çok iyilikte bulundu. Şüphesiz Rabbim, dilediği şeyde nice incelikler sergileyendir. Şüphesiz O, hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."*

Hz. Yûsuf, Allah'ın ihsanını görmüş ve şükretmiştir. Nimeti gören, işte böyle şükreder. Nimet vereni gören de ona hamd eder. Bu arada Hz. Yûsuf, zindan olayını anlatırken kuyu olayını anlatmamıştır. Çünkü zindan süresi uzun, kuyu süresi ise kısa olmuştur. Kimisine göre bunun sebebi, kuyudan söz etmesinin kardeşlerine suçlarını hatırlatıp kendilerini utandıracak olmasıdır. Diğer bir iddiaya göre, Hz. Yûsuf kuyuda şefkat altında idi. Nitekim işin başındaki kimseye şefkat gösterilir. Oysa zindanda artık durumu güçlendiği için bu şefkat beraberliğini kaybetmiştir. Netice itibariyle zayıfa şefkat gösterilir, güçlünün ise durumu ağırlaştırılır.

Şiir:

*Bana sırdaş oldun ve sonunda sövdün bana*
*Öyle bir sözle ki düşürür arta kalanları devasa çöllere*
*Uzaklaştın benden büsbütün çaresizken ben*
*Ve bıraktın bırakacaklarını içimde*

Bu arada: ( وَجَٓاءَ بِكُمْ مِنَ الْبَدْوِ ) *"Ve sizi çölden getirdi"* sözü, Hz. Yûsuf'un, ana babasını görmekle sevindiği gibi kardeşlerini görmekle de sevinmiş olduğunu göstermektedir. Zira haksızlık yapmış olsalar da kardeşlik haksızlığı geride bırakır.

( مِنْ بَعْدِ اَنْ نَزَغَ الشَّيْطَانُ بَيْنِي وَبَيْنَ اِخْوَتِي ) *"Şeytan, benimle kardeşlerimin arasını bozduktan sonra."*

Bu sözüyle Hz. Yûsuf, kardeşlerini bir nevi mazur göstererek durumlarını açıkça yüzlerine söylemiştir. Bu amaçla, aralarında olup bitenlerin şeytanın tahriklerinden kaynaklandığını söylemiş, sonra bununla da yetinmeyerek: ( بَيْنِي وَبَيْنَ اِخْوَتِي ) *"Benimle kardeşlerimin*

*arasında*" demiştir. Yani şayet şeytan kardeşlerime doğru yol bulmuşsa, bana doğru da yol bulmuştur. Çünkü onun: "*Benimle kardeşlerimin arasında*" sözü, olayın taraflarına işaret etmektedir.

Sonra Hz. Yûsuf, tevhidin özünden söz ederek: ( اِنَّ رَبّي لَطِيفٌ لِمَا يَشَاۤءُ ) "*Şüphesiz Rabbim, dilediği şeyde nice incelikler sergileyendir*" demek suretiyle Allah'ın, kardeşlerini lütfuyla koruduğunu, bu sayede kendisini öldürmediklerini ifade etmiştir.

رَبِّ قَدْ اٰتَيْتَنِي مِنَ الْمُلْكِ وَعَلَّمْتَنِي مِنْ تَاْوِيلِ الْاَحَادِيثِ فَاطِرَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ اَنْتَ وَلِيّ۪ي فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ تَوَفَّنِي مُسْلِمًا وَاَلْحِقْنِي بِالصَّالِحِينَ ﴿١٠١﴾

101- "Rabbim! Gerçekten bana mülkten bir miktar verdin ve bana sözlerin yorumunu öğrettin. Ey gökleri ve yeri yaratan! Dünyada ve ahirette sen benim velimsin. Benim canımı Müslüman olarak al ve beni iyilere kat."

( من ) "min" harfi bazıyet içindir. Çünkü mülkün tamamı sadece Allah'a aittir. Bir yoruma göre Hz. Yûsuf'un işaret ettiği mülk iki kısımdır: Biri, yönetim bakımından gerçekleşen zahiri mülkü, diğeri de sayesinde hata işlemekten kurtulduğu nefsine malik olmasıdır. Diğer bir yoruma göre de mahlukların mülkü, her zaman halka hakim olmak anlamına gelmez. Hakikatte mülk ise ahlak temizliğidir.

( وَعَلَّمْتَنِي مِنْ تَاْوِيلِ الْاَحَادِيثِ ) "*Ve bana sözlerin yorumunu öğrettin.*"

Tevil havas için, Kur'an'ın tefsiri de avam için yapılır.

( فَاطِرَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ اَنْتَ وَلِيّ۪ي فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ تَوَفَّنِي مُسْلِمًا وَاَلْحِقْنِي بِالصَّالِحِينَ ) "*Ey gökleri ve yeri yaratan! Dünyada ve ahirette sen benim velimsin. Benim canımı Müslüman olarak al ve beni iyilere kat.*"

( فَاطِرَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ ) "*Ey gökleri ve yeri yaratan!*" sözü övgü, ( تَوَفَّنِي ) "*canımı al*" sözü ise duadır. Allah'a bağlı kimselerin vasfı olduğu üzere, Hz. Yûsuf, övgüyü duanın önüne almıştır.

( اَنْتَ وَلِيّ۪ي فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ ) *"Dünyada ve ahirette sen benim velimsin."* Bu söz, başkalarıyla gönül bağını kopardığının ifadesidir. Bir yoruma göre de ilmiyle dünya ve ahirette hâkim olan sensin. Bu nedenle her iki dünyada da senden başka kimsem yoktur.

( تَوَفَّن۪ي مُسْلِمًا ) *"Benim canımı Müslüman olarak al."* Bu sözle ilgili olarak şu yorumlar yapılmıştır:

- Hz. Yûsuf, kemalden sonra zeval olduğunu bildiği için Allah'tan canını almasını istemiştir.

- Allah'ı özlemenin göstergelerinden biri de huzur içerisinde ölmeyi temenni etmektir. Hz. Yûsuf gibi biri, kuyuya atılırken: *"Benim canımı Müslüman olarak al"* demedi. Köle olarak mezada çıkarılırken: *"Benim canımı Müslüman olarak al"* demedi. Senelerce zindanda tutulurken: *"Benim canımı Müslüman olarak al"* demedi. Sonra yönetim eline geçip işleri yoluna girince, kardeşlerini huzurunda eğilmiş olarak bulunca ve ana babasını tahtın üzerinde görünce: *"Benim canımı Müslüman olarak al"* dediği için, artık Allah'a kavuşmayı özlediği anlaşılmaktadır.

Ben, üstat Ebû Ali ed-Dakkâk'ın şöyle dediğini duydum:

*"Hz. Yûsuf Hz. Yakub'a: 'Sen, öldükten sonra kavuşacağımızı bildiğin halde neden bu kadar ağladın?' demiş, Hz. Yakub da: 'Oğulcuğum! Ortada birçok yollar vardır. Farklı yollar izlememizden korktum' demiştir. İşte bunun üzerine Hz. Yûsuf: 'Benim canımı Müslüman olarak al' dedi."*

- Hz. Yûsuf: *"Benim canımı Müslüman olarak al"* dediğine göre, Hz. Yakub'un da şöyle demesi, haline aykırı uzak bir ihtimal değildir: *"Oğulcuğum! Bırak senden ayrı düştüğüm uzun süreli ayrılıktan duyduğum acıyı telafi etmek için, seninle buluşmaktan şifa elde edeyim. O halde: 'Benim canımı Müslüman olarak al' sözünü bu süratle kulağıma çalma!"*

ذٰلِكَ مِنْ اَنْبَٓاءِ الْغَيْبِ نُوح۪يهِ اِلَيْكَۚ وَمَا كُنْتَ لَدَيْهِمْ اِذْ اَجْمَعُٓوا
اَمْرَهُمْ وَهُمْ يَمْكُرُونَ ﴿١٠٢﴾

102- "İşte bu kıssa, gayb haberlerindendir. Onu sana biz vahiy yoluyla bildiriyoruz. Yoksa onlar, tuzak kurarak işlerine karar verdikleri zaman sen onların yanında değildin."

Herkes anlamıştır ki, bu kıssanın ümmi bir adamın diliyle gerçekleşen böyle bir açıklaması, vahiyden başka bir yolla olamaz. Bir yoruma göre de Hz. Peygamber'in (s.a.v.), baştaki ahvalinde ümmi olması, son ahvalindeki şerefi ve yüce değerinin alametidir. Çünkü Kur'an'ın Allah tarafından oluşunun doğruluğu, ancak Hz. Peygamber'in (s.a.v.) ümmi olmasıyla anlaşılmıştır. Sonra Hz. Peygamber (s.a.v.), hiçbir kitap incelemeden böyle bir kıssayı dile getirmiştir.

وَمَٓا اَكْثَرُ النَّاسِ وَلَوْ حَرَصْتَ بِمُؤْمِنِينَ ﴿١٠٣﴾

103- "Sen ne kadar şiddetle arzu etsen de insanların çoğu inanacak değillerdir."

Allah, bu sözüyle onlar hakkındaki ezeli ilmini ve şaşmaz hükmünü ve hikmetini anlatmıştır. Bir yoruma göre de, iman etmelerine yönelik iradeye ve dine hakikaten inanmalarına dair şiddetli arzuya seni şahit kıldım. Sonra ben, onların çoğunun iman etmeyeceklerini biliyorum ve bunu sana anlattım. Bir de bu konuda beni tasdik etmen sana farz kılınmıştır. Ayrıca ilmim, iman etmeyecekleri yönünde olup buna dair iredemi senin için bağlayıcı kıldım.

وَمَا تَسْـَٔلُهُمْ عَلَيْهِ مِنْ اَجْرٍ اِنْ هُوَ اِلَّا ذِكْرٌ لِلْعَالَمِينَ ﴿١٠٤﴾

104- "Halbuki sen, buna karşılık onlardan bir ücret de istemiyorsun. O (Kur'an) alemler için ancak bir öğüttür."

Bu, Allah'ın peygamberlerine karşı olan prensibidir. Şöyle ki Allah peygamberlere, peygamberliği tebliğ etmeye karşılık olarak bir bedel almamalarını emretmiştir. Aynı şekilde peygamberlerin varisleri olan alimlere de Allah'ın emri, insanları Allah'a çağırmaya karşılık olarak bir bedel almamaları şeklindedir. Bu nedenle alimlerden kim insanlardan bir pay alırsa, onu dinleyen için dinlediklerinde bir bereket olmaz. Aynı zamanda o alim için de insanlardan aldığı şeyde bereket olmaz.

وَكَاَيِّنْ مِنْ اٰيَةٍ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ يَمُرُّونَ عَلَيْهَا وَهُمْ عَنْهَا مُعْرِضُونَ ﴿١٠٥﴾

105- "Göklerde ve yerde nice deliller vardır ki, yanlarına uğrarlar da onlardan yüzlerini çevirerek geçerler."

Ayetler açık, deliller göz kamaştırıcıdır. Yaratıklardan her bir parça, Allah'ın bir olduğunun şahididir. Ancak nasıl ki gözünü kapatan kimse gündüzün aydınlığından yararlanamıyorsa, aynı şekilde bakışı ve ibret almasında kusur olan kimse de irfanından ve idrakinden yararlanamaz.

وَمَا يُؤْمِنُ اَكْثَرُهُمْ بِاللّٰهِ اِلَّا وَهُمْ مُشْرِكُونَ ﴿١٠٦﴾

106- "Onların çoğu, Allah'a ancak ortak koşarak inanırlar."

Açık şirk, insanın Allah'tan başka mabud edinmesidir. Gizli şirk ise, ihtiyaçları vaki olduğunda insanın, kalbiyle Allah'tan başka maksut edinmesidir. Bir yoruma göre, ariflerin şirki, Allah'tan başka birini görülmeye değer bulmaları veya ondan başka bir varlığa bakmalarıdır. Diğer bir yoruma göre de, durumları değerlendirirken şekillere dayanmak ve meşguliyetler yoğunlaştığında tercih ve tedbire yeltenmek de gizli şirktendir.

اَفَاَمِنُوا اَنْ تَاْتِيَهُمْ غَاشِيَةٌ مِنْ عَذَابِ اللّٰهِ اَوْ تَاْتِيَهُمُ السَّاعَةُ بَغْتَةً وَهُمْ لَا يَشْعُرُونَ ﴿١٠٧﴾

107- "Yoksa Allah tarafından kendilerini kuşatacak bir azabın gelmeyeceğinden veya onlar farkında olmadan kıyametin ansızın gelip çatmayacağından emin mi oldular?"

Acaba mühletin uzunluğuna aldanan kimse, kökünün kazınmasıyla cezalandırılmayacağından emin mi oldu? Acaba selametin uzun sürmesiyle aldanan kimse, kıyamet günü başına bela gelmeyeceğinden emin mi oldu?

Bu konudaki iki yorum da şöyledir:

- ( غاشية) *"Ğâşiye"*, kalpte meydana gelen katı bir perde olup yakarışla yok olmaz ve huşu ile açılmaz.

- Azabın bir parçası olan ( غاشية) *"Ğâşiye"*, Allah'a hızla dönüş yapmanın kalpten silinmesidir. O kadar ki gaflet sahibi buna devam ettiği zaman, yok olmasından ümitsiz kılacak bir durum yolda karşısına çıkar.

Şiir:

*Dedim ki nefse: Dönmek istiyorsan eğer*
*Dön, yol kapanmadan önce*

قُلْ هٰذِهٖ سَبٖيلٖٓي اَدْعُٓوا اِلَى اللّٰهِ عَلٰى بَصٖيرَةٍ اَنَا وَمَنِ اتَّبَعَنٖي وَسُبْحَانَ اللّٰهِ وَمَٓا اَنَا مِنَ الْمُشْرِكٖينَ ﴿١٠٨﴾

108- "De ki: 'İşte bu benim yolumdur. Ben ve bana uyanlar bilerek Allah'a çağırırız. Allah'ın şanı yücedir. Ben, Allah'a ortak koşanlardan değilim.' "

Basiret, içinde kuşku barındırmayan kesin inanç ve açıklamadır. Basiret sahibi, açıkça muvaffakiyet lütfuna ermiş ve mana aleminin hakikatlerine dair keşfe mazhar kılınmıştır. Bir yoruma göre de basiret, irfan güneşlerinin doğması ve akıl yıldızları ışıklarının onların içinde kaybolmasıdır. ( اَنَا وَمَنِ اتَّبَعَنٖي ) *"Ben ve bana uyanlar."* Yani bu benim ve benim rehberliğime uyan kimsenin yoludur. Böylece bu kimse de basiret üzere olmuş olur.

وَمَٓا اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ اِلَّا رِجَالًا نُوحٖٓي اِلَيْهِمْ مِنْ اَهْلِ الْقُرٰى اَفَلَمْ يَسٖيرُوا فِي الْاَرْضِ فَيَنْظُرُوا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الَّذٖينَ مِنْ قَبْلِهِمْ وَلَدَارُ الْاٰخِرَةِ خَيْرٌ لِلَّذٖينَ اتَّقَوْا اَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿١٠٩﴾

109- "Biz senden önce de memleketler halkından ancak kendilerine vahyettiğimiz birtakım erkekleri peygamber olarak gönderdik.

Yeryüzünde dolaşıp da kendilerinden önce gelenlerin akıbetlerinin nasıl olduğuna bakmadılar mı? Elbette ahiret yurdu, Allah'a karşı gelmekten sakınanlar için daha iyidir. Hala aklınızı kullanmıyor musunuz?"

Onlar, Allah'ın bir insanı halka peygamber olarak göndermesine şaştılar. Bunun üzerine Allah, daha önceki kavimler hakkında da uyguladığı prensibinin, onlara yalnızca bir insanı peygamber olarak göndermek olduğunu açıkladı. Bunun üzerine onlar da ya peygamberin gönderilmesini tamamen inkar ettiler ya da Allah'ın, bir insanı peygamber olarak göndermesini yadırgadılar. Sonra Allah, onlara delil aramalarını, düşünmelerini, ibret almalarını ve fikir yürütmelerini emrederek: (اَفَلَمْ يَسِيرُوا فِي الْاَرْضِ فَيَنْظُرُوا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ) *"Yeryüzünde dolaşıp da kendilerinden önce gelenlerin akıbetlerinin nasıl olduğuna bakmadılar mı?"* buyurdu.

حَتّٰٓى اِذَا اسْتَيْـَٔسَ الرُّسُلُ وَظَنُّٓوا اَنَّهُمْ قَدْ كُذِبُوا جَٓاءَهُمْ نَصْرُنَا فَنُجِّيَ مَنْ نَشَٓاءُ وَلَا يُرَدُّ بَأْسُنَا عَنِ الْقَوْمِ الْمُجْرِمِينَ ﴿١١٠﴾

110- "Nihayet peygamberler ümitlerini kesecek hale gelip yalanlandıklarını düşündükleri sırada, onlara yardımımız geldi de böylece dilediğimiz kimseler kurtuluşa erdirildi. Azabımız ise suçlular topluluğundan geri çevrilemez."

Nihayet peygamberler, kavimlerinin imanından ümit kesip yalan söylediklerine kanaat getirdikleri sırada onlara yardımımız yetişti. Bu yardım, peygamberlere kurtuluş, kavimlerine ise helak getirmiştir. Bizim azabımız ise asla geri çevrilemez. Bir yoruma göre Allah, müritler için ancak onlar ümitlerini kestikten sonra, bir takım hallere kapı aralamayı hükme bağlamıştır. Nitekim Allah şöyle buyurmuştur:

(وَهُوَ الَّذِي يُنَزِّلُ الْغَيْثَ مِنْ بَعْدِ مَا قَنَطُوا وَيَنْشُرُ رَحْمَتَهُ وَهُوَ) *"O insanlar, ümitlerini kestikten sonra yağmuru indiren, rahmetini her tarafa yayandır."* (Şûrâ, 42/28)

Bu itibarla nasıl ki Allah, yağmuru ümitsizlikten sonra indiriyorsa, aynı şekilde hallere de ancak onlardan ümit kesip iflasa rıza gösterdikten sonra kapı aralar.

لَقَدْ كَانَ فٖي قَصَصِهِمْ عِبْرَةٌ لِاُو۬لِي الْاَلْبَابِۜ مَا كَانَ حَدٖيثًا يُفْتَرٰى وَلٰكِنْ تَصْدٖيقَ الَّذٖي بَيْنَ يَدَيْهِ وَتَفْصٖيلَ كُلِّ شَيْءٍ وَهُدًى وَرَحْمَةً لِقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ ﴿١١١﴾

111- "Andolsun ki onların kıssalarında akıl sahipleri için ibret vardır. Kur'an, uydurulabilecek bir söz değildir. Fakat kendinden öncekileri tasdik eden, her şeyi ayrı ayrı açıklayan ve inanan bir toplum için de bir yol göstericidir ve bir rahmettir."

Bu kıssada tıpkı Hz. Yûsuf'un adaleti yaydığı gibi adaleti yaymada, yönetim ve mülkiyete sahip olduğunda halkına iyilik yapıp onları azat ettiği gibi halkın durumunu güvenli hale getirmede yöneticiler için ibret vardır.

Kıssalarında takva sahipleri için de ibret vardır. Çünkü Hz. Yûsuf, nefsinin arzularını terk edince Allah onu bu denli mertebelere yükseltti.

Nefsin arzularına uymanın ne kadar şiddetli musibete yol açtığı konusunda bu kıssada, örneğin Aziz'in karısının, nefsinin arzusuna uyunca karşılaştığı zarar ve mahrumiyet gibi, hevâ ehli için de ibret vardır.

Örneğin Hz. Yûsuf'un, Züleyha'nın iffetini koruyunca Aziz'in mülküne sahip olması ve Züleyha'nın helal yoldan kendisine eş olması gibi bu kıssada efendilerinin huzurundaki köleler için de ibret vardır.

Tıpkı Hz. Yûsuf'un kardeşlerini bağışlaması gibi bu kıssada, güç sahibi olunduğunda bağışlayıcı olmak konusunda da ibret vardır.

Örneğin Hz. Yakub'un, üzüntüden çektiği çileye sabredince, bir gün Hz. Yûsuf ile buluşma fırsatına sahip olması gibi sabrın meyvesi konusunda da bu kıssada ibret vardır.

سورة الرَّعْدِ

# RA'D SÛRESİ

(Ra'd Sûresi 43 âyettir. Mekke'de mi, Medine'de mi indiği hakkında görüş ayrılığı vardır. Adını 13. âyetteki "Ra'd (gök gürlemesi)"nden almıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillâh" öyle bir sözdür ki, onu işitmek kimilerinde önce istek sonra da coşku meydana getirirken, kimilerinde de önce üzüntü sonra da kaçış duygusu uyandırır. Bu çerçevede kim onu ümit kulağıyla dinlerse, Allah'ın rahmetinin varlığını arar ve böylece kulağı onun için coşar. Kim de onu korku kulağıyla dinlerse, Allah'ın azabının korkusundan üzüntüye kapılır sonra yine O'na doğru kaçar.

الٓمٓرٰ تِلْكَ اٰيَاتُ الْكِتَابِ وَالَّذ۪يٓ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَبِّكَ الْحَقُّ
وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿١﴾

1- "Elif Lâm Mîm Râ. İşte bunlar Kitab'ın ayetleridir. Sana Rabbinden indirilen gerçektir, fakat insanların çoğu inanmazlar."

Allah, bu harflerin ifade ettiği isimlerine yemin etmiştir ki bunlar, sana indireceğimi haber verdiğim Kitab'ın ayetleridir. Bu çerçevede

"Elif" harfi "Allah" ismine, "Lâm" harfi "Latîf" ismine, "Mîm" harfi "Mecîd" ismine, "Râ" harfi de "Rahîm" ismine işaret etmektedir. Böylece Allah: *"Latîf, Mecîd ve Rahîm olan Allah'ın adıyla yemin ederim ki bunlar, Muhammed'e indireceğimi haber verdiğim Kitab'ın ayetleridir"* buyurmuştur. Sonra ( و ) *"vâv"* harfiyle şu ifadeyi de ona atfetmiştir: *"Sana Rabbinden indirilen gerçektir."* Yani o haktır ve doğrudur. Çünkü Allah onu peygamberine indirmiştir.

( وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يُؤْمِنُونَ ) *"Fakat insanların çoğu inanmazlar."*

Yani çeşitli inkârcı gruplardan oluşan insanların çoğu ona inanmazlar. Onlar sayıca daha çokturlar, ancak değer ve önemce daha azdırlar.

اَللّٰهُ الَّذِي رَفَعَ السَّمٰوَاتِ بِغَيْرِ عَمَدٍ تَرَوْنَهَا ثُمَّ اسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ وَسَخَّرَ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ كُلٌّ يَجْرِي لِاَجَلٍ مُسَمًّى يُدَبِّرُ الْاَمْرَ يُفَصِّلُ الْاٰيَاتِ لَعَلَّكُمْ بِلِقَاءِ رَبِّكُمْ تُوقِنُونَ ﴿٢﴾

2- "Allah, gökleri gördüğünüz herhangi bir direk olmadan yükselten, Arş'a kurulan, güneşi ve ayı buyruğu altına alandır. Bunların hepsi, belli bir zamana kadar akıp gitmektedir. O, her işi düzenler, yürütür, ayetleri ayrı ayrı açıklar ki Rabbinize kavuşacağınıza kesin olarak inanasınız."

Allah, haber verdiği ayetleriyle sıfatlarını göstermiştir. Bu ayetlerden biri de gökleri, altlarında onları güçlendiren direkler veya onları tutan kazıklar olmaksızın yükseltmiş olmasıdır. Ayrıca Allah, başka ayetlerde de göğü yıldızlarıyla süslediğini, yere de köşe ve bucaklara sahip olma özelliği verdiğini haber vermiştir.

( اسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ ) *"Arş'a kuruldu."*

Yani Allah, kudret ve tedbiriyle mülküne hakim oldu. Arş mülk demek olup bir kimsenin mülkü yok olduğu zaman: *"Arşı (tahtı) yerle bir oldu"* denilir.

( وَسَخَّرَ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ كُلٌّ يَجْرِي لِاَجَلٍ مُسَمًّى ) *"Güneşi ve ayı buyruğu altına aldı. Bunların her biri, belli bir zamana kadar akıp gitmektedir."*

Her biri, bir yörüngede akıp gitmektedir. Bu bütünün her bir parçası, onun ortaksız bir hükümdarın mülkündeki tasarrufu olduğunu göstermektedir.

وَهُوَ الَّذِي مَدَّ الْاَرْضَ وَجَعَلَ فِيهَا رَوَاسِيَ وَاَنْهَارًا وَمِنْ كُلِّ الثَّمَرَاتِ جَعَلَ فِيهَا زَوْجَيْنِ اثْنَيْنِ يُغْشِي الَّيْلَ النَّهَارَ اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يَتَفَكَّرُونَ ﴿٣﴾

3- "O, yeri yayıp döşeyen, onda dağlar, nehirler meydana getiren, onda her türlü meyveden iki eş yaratandır. O, geceyi gündüze bürüyor. Şüphesiz bunlarda, düşünen bir kavim için deliller vardır."

Allah, yeri yayıp ona elips bir şekil vermiş, onda dağlar dikmiş, pınarlarını fışkırtmış, nehirlerini akıtmış, denizlerini birbirine benzer kılmış, denizde yaşayan çeşitli canlılar yaratmış, yeryüzünde ağaçlar bitirmiş, onun çiçeklerini ve meyvelerini çeşitlendirmiş, ona gecesini ve gündüzünü katmıştır. İşte bu, yüce kudret ve sınırsız ilim sahibi Allah'ın takdiridir.

وَفِي الْاَرْضِ قِطَعٌ مُتَجَاوِرَاتٌ وَجَنَّاتٌ مِنْ اَعْنَابٍ وَزَرْعٌ وَنَخِيلٌ صِنْوَانٌ وَغَيْرُ صِنْوَانٍ يُسْقٰى بِمَاءٍ وَاحِدٍ وَنُفَضِّلُ بَعْضَهَا عَلٰى بَعْضٍ فِي الْاُكُلِ اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يَعْقِلُونَ ﴿٤﴾

4- "Yeryüzünde birbirine komşu kara parçaları, üzüm bağları, ekinler, bir kökten çıkan çok gövdeli ve tek gövdeli hurma ağaçları vardır ki, hepsi aynı su ile sulanır. Ama biz ürünleri konusunda bir kısmını bir kısmına üstün kılıyoruz. Şüphesiz bunda aklını kullanan bir kavim için deliller vardır."

Tuzlu topraktan taş ve kuma kadar değişik türlerin, uyumlu çiftlerin ve birbirinden farklı ekinlerin, bitkilerin ve ağaçların hepsinin kökeni bir olup parçaları birbirine benzemektedir. Lakin Allah, bir kısmını sulu, bir kısmını kabuk, bir kısmını dal, bir kısmını gövde, bir kısmını çiçek, bir kısmını da yaprak olarak yaratmıştır. Sonra aynı suyla sulandıkları halde her birinin kendine özgü bir tabiatı, bir şekli, bir rengi ve bir kabuğu olsa da hepsi aynı şeydir. Çünkü ağacın her bir parçasına, ihtiyaç duyduğu kadar su nüfuz eder. (وَنُفَضِّلُ بَعْضَهَا عَلٰى بَعْضٍ فِي الْاُكُلِ) *"Ama biz ürünleri konusunda bir kısmını bir kısmına üstün kılıyoruz."*

وَاِنْ تَعْجَبْ فَعَجَبٌ قَوْلُهُمْ ءَاِذَا كُنَّا تُرَابًا ءَاِنَّا لَفِي خَلْقٍ جَدِيدٍ اُو۬لٰٓئِكَ الَّذِينَ كَفَرُوا بِرَبِّهِمْ وَاُو۬لٰٓئِكَ الْاَغْلَالُ فٖي اَعْنَاقِهِمْ وَاُو۬لٰٓئِكَ اَصْحَابُ النَّارِ هُمْ فٖيهَا خَالِدُونَ ﴿٥﴾

5- "Eğer şaşacaksan, asıl şaşılacak olan, onların: 'Biz toprak olunca yeniden mi yaratılacakmışız?' demeleridir. İşte bunlar, Rablerini inkâr edenlerdir. İşte onlar, boyunlarına demir halkalar vurulanlardır ve işte onlar cehennemliklerdir. Onlar, orada ebedî kalacaklardır."

Ey Muhammed! Eğer sen sözlerine şaşarsan, aslında burası halkın şaştığı bir alandır. Bu itibarla Allah hakkında şaşkınlık nitelemesi caiz değildir. Zira bir şeye şaşmak, gerçekleşmesini uzak bir ihtimal olarak görmek -garipsemek- demektir. Oysa Allah, hiçbir şeyi uzak bir ihtimal olarak görmez. Bu nedenle şaşılacak şey, ancak yaratıklar için söz konusudur. Nitekim şu söyledikleri, güzel bir sözdür: *"Ancak perdelenen kimse şaşar."* Çünkü basiretin pınarlarına ulaşan kimse, hiçbir şeye şaşmaz.

Kimi yorumcular da bu ifadenin, muvafakat kabilinden olduğunu söylemişlerdir. Eğer şaşarsan bu, senin onların söyledikleriyle uyumlu olmanın şaşkınlığı olur. Bu sözde ince bir işaret olsa da onu bu şekilde yorumlamak caiz değildir. Edebe uygun olan, bu

gibi konularda susmaktır. Adı geçen yorumcular, bunu şöyle ifade etmişlerdir: *"En şaşırtıcı şey, şaşsa bile, şaşkınlıkla nitelenmesi caiz olmayanı söylemektir."*

( ءَاِذَا كُنَّا تُرَابًا ءَاِنَّا لَفِي خَلْقٍ جَدِيدٍ ) *"Biz toprak olunca yeniden mi yaratılacakmışız?"*

Mahiyet bakımından ikisi aynı olduğu halde, onların baştan yaratmayı kabul ederken ikinci kez dirilmeyi garipsemeleri, şaşırtıcı bir durumdur. Çünkü bu, açık bir çelişkidir. Oysa sözü edilen kimseler, temyiz ve bilgi sahibi kimseler idi. O yüzden böyle bir kıyaslama hayrete sebep olmaktadır. Fakat bu durum, şayet Allah: ( فَاَغْشَيْنَاهُمْ فَهُمْ لَا يُبْصِرُونَ ) *"Biz onların gözlerini perdeledik. Artık görmezler"* (Yasîn, 36/9) ayetinde buyurduğu gibi, onları şaşırtmamış olsaydı, söz konusu olurdu. Yoksa apaçık olmasına rağmen bu durumun caiz oluşunun onlara saklı kalması uygun düşmezdi.

وَيَسْتَعْجِلُونَكَ بِالسَّيِّئَةِ قَبْلَ الْحَسَنَةِ وَقَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِمُ الْمَثُلَاتُ وَاِنَّ رَبَّكَ لَذُو مَغْفِرَةٍ لِلنَّاسِ عَلٰى ظُلْمِهِمْ وَاِنَّ رَبَّكَ لَشَدِيدُ الْعِقَابِ ﴿٦﴾

6- "Bir de senden, iyilikten önce kötülüğün acele gelmesini istiyorlar. Oysa onlardan önce ibret alınacak bir çok azap gelip geçmiştir. Şüphesiz Rabbin, insanların zulümlerine rağmen bağışlama sahibidir. Bununla beraber Rabbinin azabı pek şiddetlidir."

وَيَقُولُ الَّذِينَ كَفَرُوا لَوْلَٓا اُنْزِلَ عَلَيْهِ اٰيَةٌ مِنْ رَبِّهِ اِنَّمَٓا اَنْتَ مُنْذِرٌ وَلِكُلِّ قَوْمٍ هَادٍ ﴿٧﴾

7- "İnkâr edenler: 'O'na Rabbinden bir mucize indirilseydi ya!' diyorlar. Sen ancak bir uyarıcısın. Her kavim için de bir yol gösteren vardır."

اَللّٰهُ يَعْلَمُ مَا تَحْمِلُ كُلُّ اُنْثٰى وَمَا تَغٖيضُ الْاَرْحَامُ وَمَا تَزْدَادُ وَكُلُّ شَيْءٍ عِنْدَهُ بِمِقْدَارٍ ﴿٨﴾

8- "Allah, her dişinin neye gebe olduğunu, rahimlerin artırdığı şeyi ve eksilttiği şeyi bilir. Her şey, O'nun katında bir ölçü iledir."

عَالِمُ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ الْكَبٖيرُ الْمُتَعَالِ ﴿٩﴾

9- "O, gaybı da görülen âlemi de bilendir, çok büyüktür, çok yücedir."

سَوَٓاءٌ مِنْكُمْ مَنْ اَسَرَّ الْقَوْلَ وَمَنْ جَهَرَ بِهٖ وَمَنْ هُوَ مُسْتَخْفٍ بِالَّيْلِ وَسَارِبٌ بِالنَّهَارِ ﴿١٠﴾

10- "(O'na göre) içinizden sözü gizleyen ile açığa vuran, geceleyin gizlenenle gündüz ortaya çıkan eşittir."

لَهُ مُعَقِّبَاتٌ مِنْ بَيْنِ يَدَيْهِ وَمِنْ خَلْفِهٖ يَحْفَظُونَهُ مِنْ اَمْرِ اللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُغَيِّرُ مَا بِقَوْمٍ حَتّٰى يُغَيِّرُوا مَا بِاَنْفُسِهِمْ وَاِذَٓا اَرَادَ اللّٰهُ بِقَوْمٍ سُٓوءًا فَلَا مَرَدَّ لَهُ وَمَا لَهُمْ مِنْ دُونِهٖ مِنْ وَالٍ ﴿١١﴾

11- "İnsanı önünden ve ardından takip eden melekler vardır. Allah'ın emriyle onu korurlar. Şüphesiz ki, bir kavim kendi durumunu değiştirmedikçe Allah onların durumunu değiştirmez. Allah bir kavme kötülük diledi mi artık o geri çevrilemez. Onlar için Allah'tan başka hiçbir yardımcı da yoktur."

( له ) "*lehu*" lafzındaki zamir kula gitmektedir. Yani Allah, her bir kul için, gece gündüz birbirini takip eden ve mükellef olan şu veya bu kulu O'nun kudretiyle gerçekleşen beladan koruyan melekler görevlendirmiştir. Melekler, kulları Allah'ın emrinden yine Allah'ın

emriyle korurlar. Zira Allah, yaratıklardan her biri için uyudukları, gafil oldukları veya uyandıkları, ayağa kalktıkları, yürüdükleri zaman ve diğer bütün hallerinde kendilerinden belayı def eden melekler görevlendirmiştir.

(اِنَّ اللّٰهَ لَا يُغَيِّرُ مَا بِقَوْمٍ حَتّٰى يُغَيِّرُوا مَا بِاَنْفُسِهِمْۜ وَاِذَٓا اَرَادَ اللّٰهُ بِقَوْمٍ سُٓوءًا فَلَا مَرَدَّ لَهُۚ وَمَا لَهُمْ مِنْ دُونِه۪ مِنْ وَالٍ) *"Şüphesiz ki, bir kavim, kendi durumunu değiştirmedikçe Allah onların durumunu değiştirmez. Allah, bir kavme kötülük diledi mi, artık o geri çevrilemez. Onlar için Allah'tan başka hiçbir yardımcı da yoktur."*

Kullar, yaşadıkları ibadetli hallerini değiştirdikleri zaman Allah da sahip oldukları ihsan ve nimeti değiştirir. Bir nimet içinde olup ondan dolayı Allah'a yaptıkları şükrü değiştirdikleri zaman, Allah'ın onlara lütfettiği nimet, aleyhlerine değişir. Allah, bahşettiği o nimetten kendilerini mahrum kılar. Onlar bir sıkıntıda oldukları zaman da durumlarını değiştirmedikleri sürece Allah, başlarındaki belayı değiştirmez. Ancak yakarışa başlayıp çaresizliklerini ortaya koydukları zaman içinde bulundukları sıkıntıyı değiştirir.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Onlar, dillerindeki zikri değiştirdikleri zaman Allah da kalplerindeki hazları değiştirerek yerine unutmayı ve gafleti verir. Kul huzur, yakınlık, kalple keşif ve murakabe halinde olduğu zaman, Allah durumunu edep dışılık, hak ihlali ve günaha bulaşma gibi hallerle değiştirmez.

- Kul, yerine getirdiği şükür ve hamdı terk etmek suretiyle durumunu değiştirmediği sürece Allah, ona verdiği açık ve gizli nimeti kesmez. Kul, nimeti küfranla karşılayıp kalbin huzurunu unutma ve kendisini helak edecek olan isyan ile değiştirdiği zaman, Allah da onun sahip olduğu nimeti mahrumiyet ve perişanlıkla değiştirip ona lütfettiği iyiliği kendisinden alır.

- Zorluklar peş peşe gelip kul onların geçmesini istediği zaman, içinde bulunduğu durumu değiştirmediği sürece o zorluklardan kurtulamaz. Bu çerçevede kul, suskunluktan sonra Allah'tan niyazda

bulunmaya ve hareketsizlikten sonra çaresizliğini dile getirmeye başlar. Böylece kul, yalvarmaya başladığı zaman, Allah sabır gerektiren zor durumunu değiştirir.

( وَإِذَآ أَرَادَ اللّٰهُ بِقَوْمٍ سُوٓءًا فَلَا مَرَدَّ لَهُ ) *"Allah, bir kavme kötülük diledi mi, artık o geri çevrilemez."*

Bir yoruma göre; Allah bir kavme bela ve fitne dilediği zaman, ilahî iradeye konu olan şeyin gerçekleşmesi kaçınılmaz olur. Diğer bir yoruma göre de Allah bir kavme kötülük dilediği zaman gözlerini kör eder. Bunun üzerine onlar başlarına bela getirecek işler yapar ve tercihlerde bulunurlar. Bu çerçevede onlar kendi ayaklarıyla helaklarına doğru yürür ve hakikatte ölümlerine koşarlar.

Şiir:

*Ölümüme doğru yürüdü ayaklarım*
*Bir de baktım ki kanımı akıtmıştır ayaklarım*

هُوَ الَّذِي يُرِيكُمُ الْبَرْقَ خَوْفًا وَطَمَعًا وَيُنْشِئُ السَّحَابَ الثِّقَالَ ﴿١٢﴾

12- "O, korku ve ümit vermek için size şimşeği gösterendir, yağmur yüklü bulutları meydana getirendir."

Nasıl ki Allah, zahirde onlara şimşeği gösterir de onlar, korku ve ümit arasında oluyorlarsa; yağmurun kesilmesinden korkuyorlar ve gelmesini ümit ediyorlarsa veya yolcu yağmurun gelişinin zararından korkuyor, mukim de faydasını ümit ediyorsa, aynı şekilde Allah, mana âlemlerinde de önce beliren, sonra parlayan, sonra şimşek gibi parıl parıl olan tecellilerin ortaya çıkmasıyla onlara şimşeği gösterir. Bunlar, önce huzura varmanın, sonra da keşif halinin ışıklarıdır.

Bu durumda korkulan, mana âlemindeki bu halin kesilip yok olmasıdır. Ümit edilen ise sahibinin huzura varma halinden keşif haline, sonra keşif halinden müşahedeye, sonra vücuda, sonra vücudun devamına, sonra da tam sönme haline geçirilmesinin devam etmesidir.

Bu konudaki iki yorum da şöyledir:

- Allah, şimşeği size delil olarak gösterir. Sonra büyüyerek beyanın aylarına dönüşür, sonra da irfanın gündüzü halini alır. Derken tevhid güneşleri doğunca o güneşler için artık ne gizlenme ne kapanma ne de batış vardır.

Şiir:

*Güneştir o, ancak kayboluşu vardır güneşin*
*Oysa kaybolmamakta şu bizim demek istediğimiz*

- Onlara vuslat nurları görünür ve onlar ayrılık gecelerinin üzerlerine çökmesinden korkarlar. Zira vuslat sevincinin ardından ayrılık dalgasının gelmemesi, az rastlanan bir durumdur.

Şiir:

*Hangi gün beni vuslatla sevindirdin de*
*Ardından üç gün yüz çevirerek terk etmedin beni*

( وَيُنْشِئُ السَّحَابَ الثِّقَالَ ) *"Yağmur yüklü bulutları meydana getirendir."*

Gökyüzünde karanlık, bir an için bulutları kapladığı zaman, kuşkusuz bunu çimenliklerin gülümseyişi izler. Bu itibarla gök ağlamadıkça çimenlikler gülmez.

Şiir:

*Göğün ağladığı nice matem vardır ki*
*Gelinidir altındaki yer yüzü*

Aynı şekilde kalpte talep bulutu meydana gelir, ardından kalp bir iç dalgalanma hali yaşar, sonra hakikatin yüzü ortaya çıkar. Bunun üzerine ruh, dostluğun çeşitli rahatlıkları ve yakınlığın türlü türlü çiçeklerinden dolayı güler.

وَيُسَبِّحُ الرَّعْدُ بِحَمْدِهِ وَالْمَلٰٓئِكَةُ مِنْ خٖيفَتِهٖ وَيُرْسِلُ الصَّوَاعِقَ
فَيُصٖيبُ بِهَا مَنْ يَشَٓاءُ وَهُمْ يُجَادِلُونَ فِي اللّٰهِ وَهُوَ شَدٖيدُ الْمِحَالِ ﴿١٣﴾

13- "Gök gürlemesi O'na hamd ederek tespih eder. Melekler de O'nun korkusundan tespih ederler. O, yıldırımlar gönderir de onlarla dilediğini çarpar. Onlar ise Allah hakkında mücadele ediyorlar. Halbuki O, azabı çok şiddetli olandır."

Yani melekler de O'nun korkusundan tespih ederler.

( وَيُرْسِلُ الصَّوَاعِقَ فَيُصِيبُ بِهَا مَنْ يَشَآءُ وَهُمْ يُجَادِلُونَ فِي اللّٰهِ وَهُوَ شَدِيدُ الْمِحَالِ ) *"O, yıldırımlar gönderir de onlarla dilediğini çarpar. Onlar ise Allah hakkında mücadele ediyorlar. Halbuki O, azabı çok şiddetli olandır."*

Kalpte bazen özlem, inilti, iç çekme ve hırıltı olmaktadır. Melekler de müridlerin kalplerine muttali oldukları, özellikle de onlardan birinde bir durgunluk meydana geldiği zaman onlar için kan ağlarlar. Bu tarikatta durgunluk, Allah'ın kendisiyle dilediğini vurduğu yıldırımlardır.

Şiir:

*Değildi bize verdiğin vuslat*
*Parlayıp sönen bir lambadan başka*

لَهُ دَعْوَةُ الْحَقِّ وَالَّذِينَ يَدْعُونَ مِنْ دُونِهِ لَا يَسْتَجِيبُونَ لَهُمْ بِشَيْءٍ اِلَّا كَبَاسِطِ كَفَّيْهِ اِلَى الْمَآءِ لِيَبْلُغَ فَاهُ وَمَا هُوَ بِبَالِغِهِ وَمَا دُعَآءُ الْكَافِرِينَ اِلَّا فِي ضَلَالٍ ﴿١٤﴾

14- "Gerçek dua, ancak O'nadır. Ondan başka yalvardıkları ise, onların isteklerine ancak ağzına ulaşmayacağı halde ulaşsın diye avuçlarını suya uzatan kimsenin isteğine suyun cevap verdiği kadar cevap verirler. Kâfirlerin duası daima boşa çıkar."

Hakk'ın davetçileri, delil olarak kalplerde belirgin olurlar. Bu itibarla kim anlama kulağıyla onları dinlerse ilmin izahını kabul etmiş olur. Bunlara karşı şeytanın davetçileri, kula günahları süsleyerek seslenirler. Böylece kim gaflet kulağıyla onları dinlerse sapıklığın sesini kabul etmiş olur. Yanı sıra nefsin davetçileri de vardır. Bunlar

da kulu nefsani arzuların dizginiyle yönetirler. Kim meyledip onları dikkate alırsa perdelenmişliğin perişanlığını boylar.

Bu arada Hakk'ın davetçileri melek aracılığı, aklın rehberliği ve ilmin yol göstericiliği olmaksızın var olurlar. Böylece Hak bunu kime duyurursa, şüphesiz o, Allah ile ve Allah için onu kabul eder.

( وَمَا دُعَاءُ الْكَافِرِينَ اِلَّا فِي ضَلَالٍ ) *"Kâfirlerin duası daima boşa çıkar."*

Nefsin vesveseleri ve davetçileri tarikatta şirke davet ederler. Bunu da insanın kendinde bir şey görmesi, bir durumu kendine mal etmesi, ayrılık yurtlarında takılıp kalması ve birlikteliğin gerçeklerinden kör olması yoluyla yaparlar.

وَلِلّٰهِ يَسْجُدُ مَنْ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ طَوْعًا وَكَرْهًا وَظِلَالُهُمْ
بِالْغُدُوِّ وَالْاٰصَالِ ﴿١٥﴾

15- "Göklerde ve yerde kim varsa, ister istemez kendileri de gölgeleri de sabah akşam Allah'a boyun eğer."

Mümin, isteyerek Allah'a secde eder. Başına bir sıkıntı geldiği zaman bu, onu tevazu gösterip secde etmeye sevk eder. İşte ister istemez boyun eğmesinin anlamı budur. Bu, tefsir ehlinin görüşüdür. Kâfir de isteyerek ve kendi iradesiyle boyun eğer, ancak boyun eğmesi sıkıntının kaldırılması talebine yönelik olduğu için Allah, onun istemeyerek boyun eğdiğini buyurmuştur. Nitekim bir karşılık elde etmek veya bir sıkıntıyı defetmek için boyun eğen herkes buna dahildir.

Bu konudaki diğer iki görüş de şöyledir:

- Secde iki kısımdır: Kimisi bedensel benliğiyle kimisi de kalbiyle secde eder. Bedenin secdesi malumdur. Kalbin secdesi ise var olmak bakımındandır. Bedeniyle var olan ile kalbiyle bulan arasında ise büyük fark vardır.

- Herkes Allah'a secde eder. Bu secde, ya isteğe bağlı fiil ya da ihtiyaç ve mutluluk arayışı vasfıyla hal şeklinde olmaktadır. Bir secde

Allah'ın birliğini göstermesi itibariyledir. Bu çerçevede varlık olarak her ne varsa Allah'ın birliğine şahitlik ve bu manada Allah'a secde etmektedir. Bir secde de yaratanın kudretine ve celal sıfatlarını hak edişine tanıklık bakımındandır.

قُلْ مَنْ رَبُّ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ قُلِ اللّٰهُ قُلْ اَفَاتَّخَذْتُمْ
مِنْ دُونِه۪ٓ اَوْلِيَٓاءَ لَا يَمْلِكُونَ لِاَنْفُسِهِمْ نَفْعًا وَلَا ضَرًّا قُلْ
هَلْ يَسْتَوِي الْاَعْمٰى وَالْبَص۪يرُ اَمْ هَلْ تَسْتَوِي الظُّلُمَاتُ
وَالنُّورُ اَمْ جَعَلُوا لِلّٰهِ شُرَكَٓاءَ خَلَقُوا كَخَلْقِه۪ فَتَشَابَهَ الْخَلْقُ
عَلَيْهِمْ قُلِ اللّٰهُ خَالِقُ كُلِّ شَيْءٍ وَهُوَ الْوَاحِدُ الْقَهَّارُ ﴿١٦﴾

16- "De ki: 'Göklerin ve yerin Rabbi kimdir?' 'Allah'tır' de. De ki: 'O'nu bırakıp da kendilerine bile bir faydası ve zararı olmayan dostlar mı edindiniz?' De ki: 'Kör ile gören bir olur mu? Ya da karanlıklarla aydınlık bir olur mu? Yoksa Allah'a onun yarattığı gibi yaratan ortaklar buldular da bu yaratma ile Allah'ın yaratması onlara göre birbirine mi benzedi?' De ki: 'Her şeyin yaratıcısı Allah'tır. O birdir, mutlak hakimiyet sahibidir.'"

Ey Muhammed! Gökleri ve yeri yaratanın, onları düzenleyenin ve onlarda olup bitenleri yoktan var edip yönetenin kim olduğunu onlara sor. Şayet kalplerinde karar kılmış olan cehalet onları cevaptan alıkoyup sustursa sen: *"Onları inşa edip yöneten Allah'tır"* de.

( اَفَاتَّخَذْتُمْ مِنْ دُونِه۪ٓ اَوْلِيَٓاءَ ) *"O'nu bırakıp da dostlar mı edindiniz?"*

Dostlardan maksat, kendilerine ne bir faydaları ne de bir zararları olabilen cansız putlardır. Bu arada sonradan var olma damgası taşıyan herkes söz konusu putlarla aynı anlamdadır. Bu çerçevede kim kalbini sonradan var olanlara bağlarsa, bir bakıma putlara tapanla eşit olur. Allah şöyle buyurmuştur: ( وَمَا يُؤْمِنُ اَكْثَرُهُمْ بِاللّٰهِ اِلَّا وَهُمْ مُشْرِكُونَ ) *"Onların çoğu, Allah'a ancak ortak koşarak inanırlar."* (Yûsuf, 12/106)

( قُلْ هَلْ يَسْتَوِي الْاَعْمٰى وَالْبَصِيرُ اَمْ هَلْ تَسْتَوِي الظُّلُمَاتُ وَالنُّورُ ) *"De ki: 'Kör ile gören bir olur mu? Ya da karanlıklarla aydınlık bir olur mu?'"*

Kör, basireti kapalı olan kimsedir. Gören ise Hakk'ın, manevî gözüne tevhid nuruyla sürme çektiği kimse olup bunlar eşit değildir. Sonra şirkin karanlıkları ile tevhidin nurları eşit olur mu? Takdiri müşahede aydınlığına çıkmak da adı geçen nurun bir parçasıdır.

( اَمْ جَعَلُوا لِلّٰهِ شُرَكَٓاءَ خَلَقُوا كَخَلْقِهِ فَتَشَابَهَ الْخَلْقُ عَلَيْهِمْ قُلِ اللّٰهُ خَالِقُ كُلِّ شَيْءٍ وَهُوَ الْوَاحِدُ الْقَهَّارُ ) *"Yoksa Allah'a O'nun yarattığı gibi yaratan ortaklar buldular da bu yaratma ile Allah'ın yaratması onlara göre birbirine mi benzedi?" De ki: 'Her şeyin yaratıcısı Allah'tır. O birdir, mutlak hakimiyet sahibidir.'"*

Yani eğer O'nun ortağı bulunsaydı, emsal ve benzerinin ve bütün hükümlerde denginin de olması gerekirdi ki, bu takdirde ikisinin fiili arasında ayrım yapmanın bir faydası olmazdı. Aynı şekilde eğer dengi bulunsaydı, ikisinin iki şeyi ortaya koymasını, her sıfatı hak etmede ortak olmalarını ve iki tanrıdan her birinin bu sıfatı hak etmesini gerekli kılardı. Bu ise sıfatının yerinin bilinmemesine yol açardı ki bu da muhaldir.

( قُلِ اللّٰهُ خَالِقُ كُلِّ شَيْءٍ وَهُوَ الْوَاحِدُ الْقَهَّارُ ) *"De ki: 'Her şeyin yaratıcısı Allah'tır. O birdir, mutlak hakimiyet sahibidir.'"*

Yaratıklar, sıfatları ve fiilleriyle bu her şeye dahildir. Hitabın sahibi olan Allah ise bu muhataplığın kapsamına girmez.

( وَهُوَ الْوَاحِدُ ) *"O birdir."* O'nun ne yerine geçecek ne de alternatifi olacak kimse yoktur. Öyle bir birdir ki, lütfunda herkesin lütfundan münezzehtir. Bu itibarla o, herkese yetmekte ve herkes ondan yardım dilemektedir.

( الْقَهَّارُ ) *"Mutlak hakimiyet sahibidir."* Mülkünde O'nun hükmü hilafına bir nefes bile gerçekleşmez.

اَنْزَلَ مِنَ السَّمَٓاءِ مَٓاءً فَسَالَتْ اَوْدِيَةٌ بِقَدَرِهَا فَاحْتَمَلَ السَّيْلُ زَبَدًا
رَابِيًا وَمِمَّا يُوقِدُونَ عَلَيْهِ فِي النَّارِ ابْتِغَٓاءَ حِلْيَةٍ اَوْ مَتَاعٍ زَبَدٌ مِثْلُهُ
كَذٰلِكَ يَضْرِبُ اللّٰهُ الْحَقَّ وَالْبَاطِلَ فَاَمَّا الزَّبَدُ فَيَذْهَبُ جُفَٓاءً وَاَمَّا مَا
يَنْفَعُ النَّاسَ فَيَمْكُثُ فِي الْاَرْضِ كَذٰلِكَ يَضْرِبُ اللّٰهُ الْاَمْثَالَ ﴿١٧﴾

17- "O, gökten su indirdi de dereler kendi ölçülerince dolup aktı ve sel üste çıkan köpüğü aldı götürdü. Süs eşyası veya yararlanılacak bir şey elde etmek için ateşte erittikleri şeylerden de böyle köpük olur. İşte Allah, hak ile bâtıla böyle misal getirir. Köpüğe gelince sönüp gider. İnsanlara yararlı olan ise yerde kalır. İşte Allah böyle misaller verir."

Bu ayet Allah'ın, indirilen Kur'ân'ı gökten indirilen suya benzetmek için yer verdiği bazı örnekler içermektedir. Allah kalpleri vadilere, şeytan ve nefsin vesveselerini suyun üstüne çıkan köpüğe, hakkı altın, gümüş ve bakır gibi yabancı maddelerden arınmış cevherlere, bâtılı da bu cevherlerin içindeki yabancı maddelere benzetmiştir.

Bir de nasıl ki vadiler farklı büyüklükte ve küçüklükte olup buna uygun miktarda su taşıyorlarsa, aynı şekilde kalpler de güçlü ve güçsüz olma durumlarına göre farklı kapasitelere sahiptirler. Nasıl ki vadide sel meydana geldiği zaman onu temizliyorsa, aynı şekilde Kur'ân da ezber yoluyla yerleştiği kalplerden vesveseleri ve hevâyı siler. Nasıl ki hem bulandırıcı şeyler içeren sular hem de duru sular bulunuyorsa müminlerin, şeytanın saptırmalarından ve kötü duygulardan arınan kalplerindeki iman ve Ku'ân'ı anlamak da aynıdır. Bu bakımdan kalplerin hem duru olanları hem de bulanık olanları vardır.

Nasıl ki, kap üretilen cevherler, eritildiklerinde yabancı maddelerden arınıyorsa, aynı şekilde hak da bâtıldan ayrılır, hak kalır ve bâtıl kaybolur.

Bir yoruma göre; kalplerde nurlar parladığı zaman sıkıntının izlerini siler. Kesin inancın nuru, kuşkunun karanlığını; ilim, bilgisizlik şaibesini, marifet nuru yabancılığın izini; müşahedenin nuru, beşeriyetin izlerini; birlikteliğin nurları da ayrılığın izlerini yok eder. Hakikatlerin nurları karşısında nefsanî arzular zayıflar. İrfan güneşinin ışıkları, doğduklarında gece karanlığına benzeyen gayrilerin hesaba katılmasının izini siler.

Sonra kap üretilen cevherler de çeşitlidir. Kimi kaplar altından, kimisi de bakır vs.den üretilir. Tıpkı bunun gibi kalpler de çeşitlidir. Bir hadis şöyledir:

*"Allah'ın bazı kapları vardır. Onlar kalplerdir."*

Örneğin irade sahibi zahid, muradına eren âşık, korkan abid, tevhid ehli arif, iffet sahibi ibadet ehli ve gece namaza kalkan mutasavvıf gibi.

لِلَّذٖينَ اسْتَجَابُوا لِرَبِّهِمُ الْحُسْنٰى وَالَّذٖينَ لَمْ يَسْتَجٖيبُوا لَهُ لَوْ اَنَّ
لَهُمْ مَا فِي الْاَرْضِ جَمٖيعًا وَمِثْلَهُ مَعَهُ لَافْتَدَوْا بِهٖ اُولٰٓئِكَ لَهُمْ
سُوٓءُ الْحِسَابِ وَمَاْوٰيهُمْ جَهَنَّمُ وَبِئْسَ الْمِهَادُ ﴿١٨﴾

18- "Rablerinin emrine uyanlar için mükâfatın en güzeli vardır. Ona uymayanlar ise, yeryüzünde olan her şey ve onun yanında bir katı daha kendilerinin olsa kurtulmak için hepsini kurtuluş fidyesi olarak verirlerdi. İşte hesabın kötüsü bunlar içindir. Varacakları yer de cehennemdir. O ne kötü yataktır."

( الْحُسْنٰى ) *"Mükâfatın en güzeli."* Bu mükâfat, emre uymalarının kabulüne dair vaattir. Böyle bir vaat ise onlar katında en büyük şeydir. Zira âşık için sevgilisinin kendisinden bir şey kabul etmesinden daha değerli bir şey yoktur.

Allah'ın emrine uymayanlara gelince, yeryüzündeki her şey onların olsa ve onu harcasalar, bu onlardan kabul olunmaz ve onlar için

kötü bir hesap vardır. Bu, hesabın tartışılmasıdır. Sonra varacakları yer cehennem ve sürekli azaptır.

اَفَمَنْ يَعْلَمُ اَنَّمَٓا اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَبِّكَ الْحَقُّ كَمَنْ هُوَ اَعْمٰى اِنَّمَا يَتَذَكَّرُ اُو۬لُوا الْاَلْبَابِ ﴿١٩﴾

19- "Rabbinden sana indirilenin gerçek olduğunu bilen kimse, kör gibi olur mu? Bunu ancak akıl sahipleri anar."

Ayetteki istifham olumsuzluk anlamındadır. Yani gören ile kör, kabul edilen ile perdelenmeyle geri çevrilen, yakınlık ümidi verilen ile azaba maruz bırakılan ve müşahedemizden uzak tuttuğumuz ile varlığımızla hidayete erdirdiğimiz aynı değildir. Nasihatten aklı uzaklaştırılmasına ve şiddetle azarlanmasına sebep olan değil, ancak aklı kendisi için şeref vesilesi olan kimse yararlanır,

اَلَّذ۪ينَ يُوفُونَ بِعَهْدِ اللّٰهِ وَلَا يَنْقُضُونَ الْم۪يثَاقَ ﴿٢٠﴾

20- "Onlar, Allah'a verdikleri sözü yerine getiren ve sözleşmeyi bozmayanlardır."

Ahde vefa irfanı sürdürmek, ihsan şartını yerine getirmek ve günah işlemekten sakınmak demektir. İşte güvence ve garanti günü akit böyle uygulanır.

Bu arada kimilerinin verdikleri güvence Allah'tan başkasına kul olmamaları, kimilerinin güvenceleri ise O'ndan başkasından dilekte bulunmamaları şeklindedir.

وَالَّذ۪ينَ يَصِلُونَ مَٓا اَمَرَ اللّٰهُ بِه۪ٓ اَنْ يُوصَلَ وَيَخْشَوْنَ رَبَّهُمْ وَيَخَافُونَ سُٓوءَ الْحِسَابِ ﴿٢١﴾

21- "Onlar, Allah'ın riayet edilmesini emrettiği haklara riayet eden, Rablerine saygı besleyen ve kötü hesaptan korkanlardır."

Onlar, Allah'ın emrine iman etmeyi, nebi ve resullere iman etmekle birleştirenlerdir.

Bu konudaki iki yorum da şöyledir:

- Onlar, nefeslerini birbirlerine bitişik alıp verenlerdir. Böylece bu nefeslerin arasına Allah'tan gayrisi için, Allah'tan gayrisiyle ve Allah'tan gayrisini görmeye yönelik olan hiçbir nefes karışmamış olur.

- Onlar, kulluk görevlerini yerine getirmede ve kendi güç ve kuvvetlerinden arınma yolunda gündüz yolculuklarını gece yolculuklarıyla birleştirirler.

( خشية ) "*haşyet- Allah korkusu*", mümini hevâ meydanlarında cirit atmaktan alıkoyan ve takva hükmünün devamına sevk eden bir dizgindir. Kötü hesaptan korkmaları ise Allah'ın karşılarına beklemedikleri şeyler çıkarmasıdır.

وَالَّذِينَ صَبَرُوا ابْتِغَاءَ وَجْهِ رَبِّهِمْ وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاَنْفَقُوا مِمَّا رَزَقْنَاهُمْ سِرًّا وَعَلَانِيَةً وَيَدْرَؤُنَ بِالْحَسَنَةِ السَّيِّئَةَ اُولٰٓئِكَ لَهُمْ عُقْبَى الدَّارِ ﴿٢٢﴾

22- "Onlar, Rablerinin rızasına ermek için sabreden, namazı dosdoğru kılan, kendilerine verdiğimiz rızıklardan gizli olarak ve açıktan Allah için harcayan ve kötülüğü iyilikle ortadan kaldıranlardır. İşte bunlar için dünya yurdunun iyi sonucu vardır."

Sabır, sabredenin kendisi için sabrettiği amaçların değişmesiyle değişir. Bu çerçevede abidler azap korkusundan, zahidler sevap ümidiyle sabrederken Rablerinin rızası için sabredenler irade sahipleridir. Sabrın bu çeşidinin şartı ise vuslata engel olanı reddetmek ve ondan sürekli sakınmaktır. Böylece şehevî arzuları terk etmek ve bütün uğraş ve gailelerden arınmak da bu sabrın kapsamına girmiş olur. Bu şekilde sabreden kimse manevî rahatsızlık ve yanlışlar ile Allah'tan gafil kılan her şeye karşı sabretmiş olur.

Sabırla karşılanması gereken hususlardan biri de Hakk'ın işi ağırdan alma şeklindeki hükmünün sınırında durmaktır. Çünkü Allah, çaba harcayanların tamamına lütufta bulunurken müridlerin işini özel olarak ağırdan alır. Bu vesileyle müridlikleri döneminde onlara sabır bahşeder. Onlar, sabırlarında samimi oldukları zaman Allah, taleplerini yerine getirerek onlara lütufta bulunur.

( وَاَنْفَقُوا مِمَّا رَزَقْنَاهُمْ سِرًّا وَعَلَانِيَةً ) *"Kendilerine verdiğimiz rızıklardan gizli olarak ve açıktan Allah için harcarlar."*

Zenginler mallarını harcarken, abidler canlarını feda ederek türlü çabalar harcamaya tahammül gösterir, farzları ve virdleri yerine getirmeye sabrederler. Müridler ise kalplerini feda ederek farzları ve virdleri çabucak yerine getirir ve karşılarına ikbalden bir işaret çıkıncaya kadar sabrederler. Sevenlere gelince bunlar canlarını feda ederler.

( وَيَدْرَؤُنَ بِالْحَسَنَةِ السَّيِّئَةَ اُولٰٓئِكَ لَهُمْ عُقْبَى الدَّارِ ) *"Kötülüğü iyilikle ortadan kaldırırlar. İşte bunlar için dünya yurdunun iyi sonucu vardır."*

Bunlar, insanlara güzel ahlak ile muamelede bulundukları için işe insaf ile başlarlar ve pay talep etmezler. Şayet bir kimse onlara cefa ile muamelede bulunursa onlar, bunu vefa ile karşılarlar. Birileri onlara karşı suç işlerse onları mazur görürler, hastalanırlarsa onları ziyaret ederler.

جَنَّاتُ عَدْنٍ يَدْخُلُونَهَا وَمَنْ صَلَحَ مِنْ اٰبَٓائِهِمْ وَاَزْوَاجِهِمْ
وَذُرِّيَّاتِهِمْ وَالْمَلٰٓئِكَةُ يَدْخُلُونَ عَلَيْهِمْ مِنْ كُلِّ بَابٍ ﴿٢٣﴾

23- "Bu sonuç da Adn cennetleridir. Atalarından, eşlerinden ve çocuklarından iyi olanlarla beraber oraya girerler. Melekler de her bir kapıdan yanlarına girerler (ve şöyle derler):"

سَلَامٌ عَلَيْكُمْ بِمَا صَبَرْتُمْ فَنِعْمَ عُقْبَى الدَّارِ ﴿٢٤﴾

24- "Sabretmenize karşılık selam sizlere. Dünya yurdunun sonu (olan cennet) ne güzeldir."

Allah, onlara olan nimeti, kendilerini birlikte olmak istedikleri akrabaları ve eşleriyle bir araya getirmek suretiyle tamamlar. Hadiste: *"Kişi, sevdiğiyle beraberdir"* buyrulmuştur. Bu itibarla sevdikleri, emsalleri ve akrabalarından ibaret olan kimse onlarla haşrolunur. Bugün kalbiyle Allah ile birlikte olan kimse yarın da Allah ile beraber olur. Kudsi hadiste: *"Ben, beni zikredenin dostuyum"* buyrulmuştur. Bu, dünya ile ilgilidir. Ahiretle ilgili ise bir hadiste şöyle buyrulmuştur: *"Sabırlı fakirler, kıyamet günü Allah'ın dostlarıdırlar."*

وَالَّذِينَ يَنْقُضُونَ عَهْدَ اللّٰهِ مِنْ بَعْدِ مِيثَاقِهِ وَيَقْطَعُونَ مَٓا اَمَرَ اللّٰهُ
بِهٖٓ اَنْ يُوصَلَ وَيُفْسِدُونَ فِي الْاَرْضِ اُو۬لٰٓئِكَ لَهُمُ اللَّعْنَةُ وَلَهُمْ
سُٓوءُ الدَّارِ ﴿٢٥﴾

25- "Allah'a verdikleri sözü, pekiştirilmesinden sonra bozanlar, Allah'ın korunmasını emrettiği şeyleri koparanlar ve yeryüzünde fesat çıkaranlar var ya; işte lanet onlara, yurdun kötüsü de onlaradır."

Kim, imanından sonra kâfir olursa, verdiği Müslümanlık sözünü zahirde bozmuş olur. Müridlik yolunu izledikten sonra âdetin hükümlerine dönüş yapan kimse ise iç âleminde sözünü bozmuş olur. Bu itibarla birincisi açıktan mürted, ikincisi ise gizli mürteddir. Açıktan mürtedin cezası kafasının kesilmesi, gizli mürtedin cezası da manevî bağının kesilmesidir.

( وَيَقْطَعُونَ مَٓا اَمَرَ اللّٰهُ بِهٖٓ اَنْ يُوصَلَ ) *"Allah'ın korunmasını emrettiği şeyleri koparırlar."* Burada ifade edilen durum: "*Allah'ın riayet edilmesini emrettiği haklara riayet ederler*" ayetinde ifade edilen durumun zıddıdır.

Bu konudaki bazı yorumlar da şöyledir:

- Ahdi bozmak; başkalarından yardım dilemek ve karşı konulmaz olan Allah ile yetinmeyi terk etmektir.

- Ahdi bozmak; kaderi gördükten sonra tercih ve tedbire dönüş yapmaktır.

- Ahdi bozmak; nefsini terk ettiğini söyledikten sonra ona dönüş yapmaktır.

اَللّٰهُ يَبْسُطُ الرِّزْقَ لِمَنْ يَشَٓاءُ وَيَقْدِرُ وَفَرِحُوا بِالْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا فِي الْاٰخِرَةِ اِلَّا مَتَاعٌ ﴿٢٦﴾

26- "Allah, rızkı dilediğine bol verir, dilediğine de kısar. Onlar ise dünya hayatı ile sevinmektedirler. Halbuki dünya hayatı, ahiretin yanında çok az bir yararlanmadan ibarettir."

Allah rızkı zenginlere bol verir ve onları şükürle yükümlü kılar. Fakirlerin ise rızkını daraltır ve kendilerini sabırla yükümlü kılar. Bu arada Allah artışı şükredenlere, beraberliği de sabredenlere söz vermiştir. Zenginler için artışıyla birlikte mallar vardır. Fakirler için de her iki dünyada da malların iyisinden de köhnesinden de arınmak vardır.

( وَفَرِحُوا بِالْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ) *"Onlar ise dünya hayatı ile sevinmektedirler."*

Zenginler, mallarının artmasıyla, fakirler ise hallerinin duruluğuyla sevinirler.

( وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا فِي الْاٰخِرَةِ اِلَّا مَتَاعٌ ) *"Halbuki dünya hayatı, ahiretin yanında çok az bir yararlanmadan ibarettir."*

Bunun azlığı, Allah'ın kendilerine söz verdiklerine kıyasladır. Mesela; zenginlerin malları çok olsa da Allah'ın kendilerine vaat ettiği lütuflarına kıyasla azdır. Fakirlerin halleri de duru bile olsa bu duruluk Allah'ın kendilerine vaat ettiği cemalini ve celalini görmelerine kıyasla azdır.

وَيَقُولُ الَّذِينَ كَفَرُوا لَوْلَٓا اُنْزِلَ عَلَيْهِ اٰيَةٌ مِنْ رَبِّهِ قُلْ اِنَّ اللّٰهَ يُضِلُّ مَنْ يَشَٓاءُ وَيَهْدِٓي اِلَيْهِ مَنْ اَنَابَ ﴿٢٧﴾

27- “İnkâr edenler diyorlar ki: ‘Ona Rabbinden bir mucize indirilseydi ya!’ De ki: ‘Şüphesiz Allah dilediğini saptırır, kendisine yöneleni de doğru yola eriştirir.’”

( اِنَّ اللّٰهَ يُضِلُّ مَنْ يَشَٓاءُ ) “*Allah dilediğini saptırır.*” Bunlar, Peygamberimize (s.a.v.) verilen delilleri görmeyenlerdir.

( وَيَهْد۪ٓي اِلَيْهِ مَنْ اَنَابَ ) “*Kendisine yöneleni de doğru yola eriştirir.*” Bunlar, manevî gözleriyle Hz. Peygamber'e (s.a.v.) özel olarak verilen nurları gördükleri için basiretlerinin nuruyla sükûnete erenlerdir.

اَلَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَتَطْمَئِنُّ قُلُوبُهُمْ بِذِكْرِ اللّٰهِ اَلَا بِذِكْرِ اللّٰهِ تَطْمَئِنُّ الْقُلُوبُ ﴿٢٨﴾

28- “Onlar, inananlar ve kalpleri Allah'ı anmakla huzura kavuşanlardır. Biliniz ki kalpler ancak Allah'ı anmakla huzur bulur.”

Kimileri Allah'ı zikrederek kalpleri huzura kavuşmuş, zikirde teselli bulmuş ve zikirle duruluğa erişmişlerdir. Kimilerinin de kalpleri Allah'ın zikriyle huzura erdiğinden Allah, lütfuyla onları anmış ve özel olarak kalplerinde huzur meydana getirmiştir.

Bir yoruma göre; onlar Allah'ın kendilerini andığını hatırladıklarında kalpleri rahatlar, ruhları neşelenir ve mana âlemleri huzura kavuşur. Nitekim kalpler, Allah'ın zikriyle hayat buldukları için Allah: ( اَلَا بِذِكْرِ اللّٰهِ تَطْمَئِنُّ الْقُلُوبُ ) “*Biliniz ki kalpler ancak Allah'ı anmakla huzur bulur*” buyurmuştur. Kulun kalbi, Allah'ı anmakla huzur bulmadığı zaman ise bu kalbindeki bir halelden dolayıdır. Bu durumda kulun kalbi, sağlam kalpler arasında değildir.

اَلَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ طُوبٰى لَهُمْ وَحُسْنُ مَاٰبٍ ﴿٢٩﴾

29- “İnanan ve salih amel işleyenler için mutluluk ve güzel bir dönüş yeri vardır.”

Bu kimselerin vakitleri güzelleşmiş ve nefisleri rahata kavuşmuştur.

Bir yoruma göre; Hakk'ın mutluluk müjdesini verdiği kimselere ne mutlu! Onlar şimdiki halde mutludurlar ve gelecekte kendileri için güzel bir dönüş yeri vardır.

كَذٰلِكَ اَرْسَلْنَاكَ فٖي اُمَّةٍ قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهَٓا اُمَمٌ لِتَتْلُوَا عَلَيْهِمُ الَّذٖيٓ اَوْحَيْنَٓا اِلَيْكَ وَهُمْ يَكْفُرُونَ بِالرَّحْمٰنِ قُلْ هُوَ رَبّٖي لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَاِلَيْهِ مَتَابِ ﴿٣٠﴾

30- "Böylece seni, kendilerinden önce nice ümmetlerin geçmiş olduğu bir ümmete gönderdik ki, onlar Rahman'ı inkâr ederken sana vahyettiğimizi kendilerine okuyasın. De ki: 'O benim Rabbimdir. O'ndan başka hiçbir ilah yoktur. Ben yalnız O'na tevekkül ettim. Dönüşüm de yalnız O'nadır.'"

Şayet biz seni, onlara peygamber olarak gönderdiysek, şüphesiz senden önce de pek çok peygamber gönderdik. Eğer onlardan sana bir bela geldiyse, şüphesiz senden öncekilerin başına da çok belalar gelmiştir. O halde tıpkı onların sabrettikleri gibi sabret ki, onlara ecir verildiği gibi sana da ecir verilsin.

(وَهُمْ يَكْفُرُونَ بِالرَّحْمٰنِ قُلْ هُوَ رَبّٖي لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَاِلَيْهِ مَتَابِ) *"Onlar Rahman'ı inkâr ederler. De ki: 'O benim Rabbimdir. O'ndan başka hiçbir ilah yoktur. Ben yalnız O'na tevekkül ettim. Dönüşüm de yalnız O'nadır.'"*

Şayet onlar bizi inkâr ederlerse, sen iman et! İman ettiğin zaman da inkâr edenleri umursama! Çünkü kâinattan maksat sensin, peygamberlik ve sevgi sana tahsis edilmiştir. Eğer sıfatlarımız itibariyle fiillerimizde bir gayemizin olması caiz olsaydı, durum böyle olurdu. Şayet gaye yaradılışla ilgili olsa, beşer âleminin efendisi sensin ve beşeriyetin arasından güzel ilgi de sana tahsis edilmiştir.

Kaldı ki, bir insan da diğer bir insan için şöyle diyebilmiştir (şiir):

*Erteledim İhtiyaçlarımı bir zamana*
*Vakit senin vaktindi ve sana idi selam*
*Sevgi istiyordum dünyadan ben*
*Sevgi sen oldun ve sona erdi kelam*

وَلَوْ اَنَّ قُرْاٰنًا سُيِّرَتْ بِهِ الْجِبَالُ اَوْ قُطِّعَتْ بِهِ الْاَرْضُ اَوْ كُلِّمَ
بِهِ الْمَوْتٰى بَلْ لِلّٰهِ الْاَمْرُ جَم۪يعًا اَفَلَمْ يَا۬يْـَٔسِ الَّذ۪ينَ اٰمَنُوٓا اَنْ لَوْ
يَشَٓاءُ اللّٰهُ لَهَدَى النَّاسَ جَم۪يعًا وَلَا يَزَالُ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا تُص۪يبُهُمْ
بِمَا صَنَعُوا قَارِعَةٌ اَوْ تَحُلُّ قَر۪يبًا مِنْ دَارِهِمْ حَتّٰى يَأْتِيَ وَعْدُ اللّٰهِ
اِنَّ اللّٰهَ لَا يُخْلِفُ الْم۪يعَادَ ﴿٣١﴾

31- "Kendisiyle dağların yürütüleceği veya yeryüzünün parçalanacağı ya da ölülerin konuşturulacağı bir Kur'ân olacak olsaydı, o yine bu kitap olurdu. Fakat bütün emir, yalnız Allah'ındır. İman edenler, anlamadılar mı ki, Allah dileseydi bütün insanları doğru yola eriştirirdi. Allah'ın sözü yerine gelinceye kadar inkâr edenlere yaptıkları işler sebebiyle devamlı olarak ya büyük bir felaket gelecek veya o felaket yurtlarının yakınına inecektir. Şüphesiz Allah verdiği sözden dönmez."

Eğer yaratıklardan bir şey, bizim dışımızdaki biri vasıtasıyla varlık âlemine çıkarılsaydı o, bu Kur'ân vasıtasıyla meydana gelirdi. Lakin inşa eden Allah'tır, hayır ve şer topluca Allah'tandır ve emrin tamamı Allah'ındır. Şimdi yaratıklardan hiç biri, yüce Allah'ın kelamı olduğu halde, Kur'ân ile meydana gelmediğine göre, yok etmenin ve var etmenin zerre kadarı bile bir yaratığın olamaz. Çünkü bu imkânsızdır.

( اَنْ لَوْ يَشَٓاءُ اللّٰهُ لَهَدَى النَّاسَ جَم۪يعًا ) *"İman edenler anlamadılar mı ki, Allah dileseydi bütün insanları doğru yola eriştirirdi."*

Ayetteki ( ييئس ) *"ümitsizlik"* fiili, ( يعلم ) *"bilmek, anlamak"* anlamındadır. Bir yoruma göre de iman edenler, Hakk'ın hidayete erdirdiği kimsenin hidayete erdiğini bildikleri halde, imanlarından ümit kesmediler mi?

( وَلَا يَزَالُ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا تُص۪يبُهُمْ بِمَا صَنَعُوا قَارِعَةٌ اَوْ تَحُلُّ قَر۪يبًا مِنْ دَارِهِمْ حَتّٰى يَأْتِيَ وَعْدُ اللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُخْلِفُ الْم۪يعَادَ ) *"Allah'ın sözü yerine gelinceye kadar,*

*inkâr edenlere yaptıkları işler sebebiyle devamlı olarak ya büyük bir felaket gelecek veya o felaket yurtlarının yakınına inecektir. Şüphesiz Allah, verdiği sözden dönmez. "*

Yani inkâr edenlerin küfürlerinin uğursuzluğu kendilerine ulaşmaya devam edecek ve fiillerinin cezası sonsuza dek onları yakalayacaktır.

وَلَقَدِ اسْتُهْزِئَ بِرُسُلٍ مِنْ قَبْلِكَ فَاَمْلَيْتُ لِلَّذٖينَ كَفَرُوا ثُمَّ اَخَذْتُهُمْ
فَكَيْفَ كَانَ عِقَابِ ﴿٣٢﴾

32- "Andolsun, senden önce de nice peygamberler alaya alındı da ben, inkâr edenlere bir süre verdim sonra da onları yakalayıverdim. Benim cezalandırmam nasılmış!"

Allah bu ayeti Hz. Peygamber'e (s.a.v.), müşriklerden çektiği sıkıntılar konusunda teselli olarak indirmiştir. Nasıl ki onlar yalanlamada yollarına devam ettilerse biz de onlara karşı cezalandırma prensibimizi devam ettirdik.

اَفَمَنْ هُوَ قَٓائِمٌ عَلٰى كُلِّ نَفْسٍ بِمَا كَسَبَتْۚ وَجَعَلُوا لِلّٰهِ شُرَكَٓاءَ
قُلْ سَمُّوهُمْ اَمْ تُنَبِّؤُ۫نَهُ بِمَا لَا يَعْلَمُ فِي الْاَرْضِ اَمْ بِظَاهِرٍ مِنَ
الْقَوْلِ بَلْ زُيِّنَ لِلَّذٖينَ كَفَرُوا مَكْرُهُمْ وَصُدُّوا عَنِ السَّبٖيلِ وَمَنْ
يُضْلِلِ اللّٰهُ فَمَا لَهُ مِنْ هَادٍ ﴿٣٣﴾

33- "Herkesin kazandığını görüp gözeten Allah inkâr edilir mi? Halbuki onlar Allah'a ortak koştular. De ki: 'Onların isimlerini açıklayın. Yoksa siz O'na yeryüzünde bilmediği bir şeyi mi haber vermiş olacaksınız, yoksa boş söz mü etmiş olacaksınız?' Hayır, inkâr edenlere hileleri güzel gösterildi ve onlar doğru yoldan saptırıldılar. Allah, kimi saptırırsa artık onu doğru yola iletecek yoktur."

( اَفَمَنْ هُوَ قَائِمٌ عَلٰى كُلِّ نَفْسٍ بِمَا كَسَبَتْ ) *"Herkesin kazandığını görüp gözeten Allah inkâr edilir mi?"*

Bu sorunun cevabı mukadderdir. Yani kainatı yönetip inşa eden, ona muttali olan ve onunla ilgili hiçbir şey kendisine gizli kalmayan Allah, böyle olmayan gibi midir? Yarın ikisi asla bir olmayacaklardır.

( وَجَعَلُوا لِلّٰهِ شُرَكَاءَ قُلْ سَمُّوهُمْ اَمْ تُنَبِّؤُنَهُ بِمَا لَا يَعْلَمُ فِي الْاَرْضِ اَمْ بِظَاهِرٍ مِنَ الْقَوْلِ) *"Halbuki onlar Allah'a ortak koştular. De ki: 'Onların isimlerini açıklayın. Yoksa siz O'na yeryüzünde bilmediği bir şeyi mi haber vermiş olacaksınız, yoksa boş söz mü etmiş olacaksınız?'"*

Onlara de ki: *"Hangi etki onlardandır? Size hangi faydaları vardır? Onlardan size hangi zarar gelir? Şimdi siz, Allah'ın hilafını bildiği şeyi mi söylüyorsunuz?"* Ayetteki: ( اَمْ تُنَبِّؤُنَهُ بِمَا لَا يَعْلَمُ فِي الْاَرْضِ ) *"Yoksa siz O'na yeryüzünde bilmediği bir şeyi mi haber vermiş olacaksınız?"* sözünün anlamı da budur.

( بَلْ زُيِّنَ لِلَّذِينَ كَفَرُوا مَكْرُهُمْ وَصُدُّوا عَنِ السَّبِيلِ وَمَنْ يُضْلِلِ اللّٰهُ فَمَا لَهُ مِنْ هَادٍ ) *"Hayır, inkâr edenlere hileleri güzel gösterildi ve onlar doğru yoldan saptırıldılar. Allah, kimi saptırırsa artık onu doğru yola iletecek yoktur."*

Yani siz bunun şeytanın hilesinden olduğunu açıkça anladınız. Şeytan, kâfirlere hilelerini süslü göstermiştir. Onlar, haktan alıkonulmuş ve yollar yüzlerine kapatılmıştır. Çünkü Allah'ın dalalete düşürdüğü kimseyi hiç kimse asla hidayete erdiremez.

لَهُمْ عَذَابٌ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَلَعَذَابُ الْاٰخِرَةِ اَشَقُّ وَمَا لَهُمْ مِنَ اللّٰهِ مِنْ وَاقٍ ﴿٣٤﴾

34- "Onlara dünya hayatında bir azap vardır. Ahiret azabı ise daha ağırdır ve onları Allah'ın azabından koruyacak kimse de yoktur."

مَثَلُ الْجَنَّةِ الَّتِي وُعِدَ الْمُتَّقُونَ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ اُكُلُهَا
دَائِمٌ وَظِلُّهَا تِلْكَ عُقْبَى الَّذِينَ اتَّقَوْا وَعُقْبَى الْكَافِرِينَ النَّارُ ﴿٣٥﴾

35- "Allah'a karşı gelmekten sakınanlara va'dolunan cennetin durumu şudur: Onun içinden ırmaklar akar. Yemişleri ve gölgeleri devamlıdır. İşte bu, Allah'a karşı gelmekten sakınanların sonudur. İnkâr edenlerin sonu ise ateştir."

Ayette ( مَثَلُ ) "*mesel*" lafzıyla ifade edilen durum "vasıf" demektir. Bu çerçevede takva sahiplerine söz verilen cennetin vasfı şudur: O, altından nehirler akan, yemişleri ve gölgeleri devamlı olan bir cennettir. Yani ondaki lezzetler kesintisizdir. Ancak onlar için, bir kısmı hemen dünyada, bir kısmı da sonradan ahirette olmak üzere iki türlü cennet vardır. Sonradan olan, Allah'ın Kur'an ifadesiyle anlattığı cennettir. Hemen olan ise o andaki cennettir. Bu cennetteki dereceler ise bast durumuna göre kesintisizdir. Dostluk esintileri ise hak edenlerden ne kopartılır ne de engellenir.

وَالَّذِينَ اٰتَيْنَاهُمُ الْكِتَابَ يَفْرَحُونَ بِمَٓا اُنْزِلَ اِلَيْكَ وَمِنَ الْاَحْزَابِ
مَنْ يُنْكِرُ بَعْضَهُ قُلْ اِنَّمَٓا اُمِرْتُ اَنْ اَعْبُدَ اللّٰهَ وَلَٓا اُشْرِكَ بِه۪ اِلَيْهِ اَدْعُوا
وَاِلَيْهِ مَاٰبِ ﴿٣٦﴾

36- "Kendilerine kitap verdiğimiz kimseler, sana indirilen Kur'an ile sevinirler. Fakat gruplardan onun bir kısmını inkâr edenler de vardır. De ki: 'Ben, ancak Allah'a kulluk etmek ve O'na ortak koşmamakla emrolundum. Ben, yalnız O'na çağırıyorum ve dönüşüm de yalnız O'nadır.'"

Allah, bunlardan inançlarında samimi oldukları için indirilen Kur'an ayetlerine sevinen kitap ehlinin müminlerini kast etmektedir.

( وَمِنَ الْاَحْزَابِ مَنْ يُنْكِرُ بَعْضَهُ ) "*Fakat gruplardan onun bir kısmını inkâr edenler de vardır.*"

Bunlar:( قُلِ ادْعُوا اللّٰهَ اَوِ ادْعُوا الرَّحْمٰنَ اَيًّا مَا تَدْعُوا ) *"De ki: 'İster Allah'ı ister Rahman'ı (O'nu ister Allah ister Rahman adıyla) çağırın'"* (İsrâ, 17/110) ayeti inince: *"Muhammed, tek bir ilaha davet ediyordu. Oysa şimdi iki ilaha davet ediyor"* diyenlerdir.

( قُلْ اِنَّمَٓا اُمِرْتُ اَنْ اَعْبُدَ اللّٰهَ وَلَٓا اُشْرِكَ بِه۪ اِلَيْهِ اَدْعُوا وَاِلَيْهِ مَاٰبِ ) *"De ki: 'Ben, ancak Allah'a kulluk etmek ve O'na ortak koşmamakla emrolundum. Ben, yalnız O'na çağırıyorum ve dönüşüm de yalnız O'nadır.'"*

Ey Muhammed! De ki: *"Ben, ancak Allah'a kulluk etmekle emrolundum."* Kulluk ise bana emredileni hemen yapmaya çalışmak, bana yasaklanan şeylerden sakınmak, sonra kendi güç ve kuvvetimden sıyrılmak ve Allah'ın gücünü ve lütfunu itiraf etmektir.

Kulluğun aslı, vazifeleri yerine getirmek sonra manevî huzura kavuşunca istikamet üzere olmaktır.

وَكَذٰلِكَ اَنْزَلْنَاهُ حُكْمًا عَرَبِيًّا وَلَئِنِ اتَّبَعْتَ اَهْوَٓاءَهُمْ بَعْدَ مَا جَٓاءَكَ مِنَ الْعِلْمِ مَا لَكَ مِنَ اللّٰهِ مِنْ وَلِيٍّ وَلَا وَاقٍ ﴿٣٧﴾

37- "Böylece biz onu (Kur'an'ı) Arapça bir hüküm olarak indirdik. Sana gelen bu ilimden sonra eğer sen onların heva ve heveslerine uyarsan, Allah tarafından senin için ne bir dost vardır ne de bir koruyucu."

Yani biz, Arapların açıklama tarzıyla bir hüküm indirdik. Çünkü Allah, her zaman peygamberler göndermiş ve hidayete ermeleri için her peygamberi kendi kavminin diliyle göndermiştir. Bir yoruma göre; Arapların vasıflarından bazıları da cesaret, cömertlik ve haklara riayettir. Bunlar ise dinde makbul olan ve teşvik edilen şeylerdir.

( وَلَئِنِ اتَّبَعْتَ اَهْوَٓاءَهُمْ ) *"Eğer sen, onların heva ve heveslerine uyarsan..."*

Yani eğer sen onlara uyarsan, Allah'a dayanmazsan ve kalbinle Allah'tan başkasını yüceltirsen, bu takdirde Allah'tan sana hiçbir koruyucu olmaz.

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا رُسُلًا مِنْ قَبْلِكَ وَجَعَلْنَا لَهُمْ اَزْوَاجًا وَذُرِّيَّةً وَمَا كَانَ لِرَسُولٍ اَنْ يَاْتِيَ بِاٰيَةٍ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ لِكُلِّ اَجَلٍ كِتَابٌ ﴿٣٨﴾

38- "Andolsun, senden önce de peygamberler gönderdik. Onlara da eşler ve çocuklar verdik. Allah'ın izni olmadan hiçbir peygamber bir mucize getiremez. Her ecelin bir yazısı vardır."

Yani biz, senden önce kendi kavimlerine bazı peygamberler gönderdik. O peygamberler de senin cinsinden başka bir şey değillerdi. Aynı zamanda nasıl ki sizin eşleriniz ve zürriyetiniz varsa onların da eşleri ve zürriyetleri vardı. Bu durum, peygamberliklerinin doğruluğuna bir halel de getirmiyordu. Söz konusu ilişkiler onları görevlerinden de alıkoymuyordu.

Bir yoruma göre; Allah ile meşgul olan kimsenin halini aile fertlerinin çokluğu ve meşguliyetlerin yığılması etkilemez ve bu durum ona zarar vermez.

( لِكُلِّ اَجَلٍ كِتَابٌ ) "*Her ecelin bir yazısı vardır.*" Yani her şeyin Allah'ın kitabında belirlenip korunan bir eceli ve ayrılan bir zamanı vardır. Bir de O'nun ilmine hiç kimse muttali olamaz ve hükmüne hiç kimse itirazda bulunamaz.

يَمْحُوا اللّٰهُ مَا يَشَآءُ وَيُثْبِتُ وَعِنْدَهُٓ اُمُّ الْكِتَابِ ﴿٣٩﴾

39- "Allah, dilediğini siler, dilediğini de sabit kılıp bırakır. Ana kitap O'nun yanındadır."

Sonradan var olma, meşietin konusu olmaz. Silmek ve sabit kılmak ise sonradan var olmayla ilgilidir. Bu itibarla Allah'ın kelam, ilim, söz ve hüküm gibi sıfatları, silmek ve sabit kılmanın kapsamına girmezler. Silmek ve sabit kılmak, ancak fiilinin sıfatlarından olurlar. Silmek yok olmakla, sabit kılmak da var etmekle ilgilidir. Bu çerçevede Allah, zahidlerin kalplerinden dünya sevgisini siler ve onun yerine kalplerinde zühdü sabit kılar. Tıpkı Hârise'nin şu hadisinde

olduğu gibi: *"Ben nefsimi dünyadan uzaklaştırdım. Böylece taşıyla altını yanımda eşit oldu."*

Allah, ariflerin kalplerinden nefsanî arzuları siler ve onların yerine kendi haklarını sabit kılar. Allah, tevhid ehlinin kalplerinden Hak'tan başkasını görmeyi siler ve onun yerine Hakk'ı müşahede etmeyi sabit kılar. Allah, beşeriyetin izlerini siler ve O'nun birliğini müşahede etmenin nurlarını sabit kılar.

Bu konudaki diğer bazı yorumlar da şöyledir:

- Allah, arifleri onların delillerinden arındırır ve Hakk'ın deliliyle sabit kılar.

- Allah, kulu onun vasıflarından sıyırır ve Hak ile sabit kılar. Böylece kul, yaratıklardan arınmış ve Hak'la Hak için sabit kılınmış olur.

- Allah, kulu benliğinden arındırır. Böylece onun hakkında tedbirin hükmü gerçekleşmez. Kul, takdir hükümlerinin gerçekleşmesi bakımından yok hükmünde olur. Bu durumda Allah, kulun benliğine, hakkında tercih gücüne sahip olmadığı bir hususu ilahî iradesine uygun olarak katmak suretiyle tasdikin ve dönüştürmenin hakimiyetini sabit kılar.

- Allah, yabancıların kalplerinden Hakk'ın zikrini siler ve onun yerine gafletin galebeleri ile unutmanın saldırganlıklarını sabit kılar.

- Allah, fetret ehlinin kalplerinden içlerinde beliren müridlik parıltılarını siler ve onların yerine uzaklaştıkları âdetin hükümlerine dönüşü sabit kılar.

- Allah, hatanın pisliklerini isyan içinde olanların nefislerinden, günahkârlığın izlerini de günahkârların nefislerinden siler ve bunun yerine pişmanlığın eziklığini, hasretin boynu büküklüğünü ve şehvetin peşine düşüren ateşin sönüşünü sabit kılar.

- Allah, günahlarından doğan kötülüğü siler ve onun yerine iyiliği sabit kılar. Allah şöyle buyurur: ( فَاُولٰٓئِكَ يُبَدِّلُ اللّٰهُ سَيِّاٰتِهِمْ حَسَنَاتٍ ) *"Allah, onların kötülüklerini iyiliklere çevirir."* (Furkân, 25/70)

- Allah, gençliğin zindeliğini siler ve yaşlılığın güçsüzlüğünü sabit kılar.

- Dünya ehlini sevme arzusuna sahip olanların kalplerinden kendilerini onların arkadaşlığını tercih etmeye sevk eden sebebi siler ve onun yerine bu kimselerle arkadaşlık etmekten ve hemhal olmaktan geri durmalarını sabit kılar.

- Allah, gaybtan bahşedilen kedersiz günlerden ve Allah'a yakınlıkla aydınlanmış gecelerden dilediğini siler, bunun yerine zifiri karanlık gecelerden daha şiddetli olan günleri ve dünyanın genişliğini onlar için zindanlara çeviren zamanı sabit kılar.

- Allah, celâlinin tecellisiyle arifleri siler ve başka bir zamanda onları cemalinin lütfuyla sabit kılar.

- Allah, onlara tecelli ettiği zaman kendilerini siler ve onlara tecelli etmeyi ağırdan aldığı zaman kendilerini sabit kılar.

- Allah, onları ayrılığın sebeplerine döndürdüğü zaman siler. Çünkü onlar, ihtiyaç ve tevazu sıfatıyla görürler. Allah, kalplerine tecelli ettiği zaman onları sabit kılar. Böylece onlar, sevinç sıfatıyla görür ve övünme hükmüyle müşahedede bulunurlar.

( وَعِنْدَهُٓ اُمُّ الْكِتَابِ ) "*Ana kitap O'nun yanındadır*." Bir yoruma göre; ana kitap, ezelde Allah'ın ilmi ve hükmünün kapsadığı ve hiçbir değişikliğin söz konusu olmadığı hususları içinde sabit kıldığı Levh-i Mahfuz'dur. Diğer bir yoruma göre ise ana kitap, Allah'ın her şeyi kapsayan ilmine işarettir.

وَاِنْ مَا نُرِيَنَّكَ بَعْضَ الَّذ۪ي نَعِدُهُمْ اَوْ نَتَوَفَّيَنَّكَ فَاِنَّمَا عَلَيْكَ الْبَلَاغُ وَعَلَيْنَا الْحِسَابُ ﴿٤٠﴾

40- "Onlara va'dettiğimiz azabın bir kısmını sana göstersek de senin ruhunu alsak da görevin sadece tebliğ etmektir. Hesap görmek ise bize aittir."

Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) aceleci davranmamasını emretmiştir. Burada Allah onların kalplerinde va'dettiği azabı açıklayabileceği hissini uyandırmıştır.

اَوَلَمْ يَرَوْا اَنَّا نَاْتِي الْاَرْضَ نَنْقُصُهَا مِنْ اَطْرَافِهَا وَاللّٰهُ يَحْكُمُ لَا مُعَقِّبَ لِحُكْمِهِ وَهُوَ سَرِيعُ الْحِسَابِ ﴿٤١﴾

41- "Onlar, bizim yeryüzüne gelip onu etrafından eksilttiğimizi görmediler mi? Allah hükmeder. O'nun hükmünü bozacak hiç kimse yoktur. O, hesabı çabuk görendir."

Tefsirlerde, yeryüzünün etrafından eksiltilmesi âlimlerin ölümleriyle olduğu belirtilmiştir. Marifet ehlinin ifadelerine göre ise bu, insanların başlarına bir bela ve sıkıntı geldiği zaman sığındıkları velilerin ölümüyle olmaktadır. Veliler, insanların üzerinden belayı kaldırması için Allah'a dua ederler.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Bu eksiltme, marifet ehlinin dünyadan gitmesidir. O kadar ki, Allah yolunda doğruyu bulmak isteyen bir kimse geldiği zaman, kendisine Allah'a giden yolu gösterecek birini bulamaz.

- Her zamanda Allah'ı konuşan bir dil bulunur. Duraklama meydana geldiği zaman ise bu dil hareketsiz kalır. İşte ayetin işaret ettiği etraftan eksiltme budur.

- Allah, yeryüzünü etrafından eksiltmeyi şehirlerin ve kâfirlerin memleketlerinin fethedilip İslam'ın yayılmasıyla yapar. Allah şöyle buyurur: ( وَدِينِ الْحَقِّ لِيُظْهِرَهُ عَلَى الدِّينِ كُلِّهِ ) *"O hak dini bütün dinlere üstün kılmak için."* (Fetih, 48/28)

- Allah, bu eksiltmeyi memleketlerin harap olmasıyla yapar. Allah şöyle buyurur:

( كُلُّ شَيْءٍ هَالِكٌ اِلَّا وَجْهَهُ ) *"O'nun zâtından başka her şey yok olacaktır."* (Kasas, 28/88)

( كُلُّ مَنْ عَلَيْهَا فَانٍ ) *"Yer üzerinde bulunan her canlı yok olacaktır."* (Rahmân, 55/26)

Bu itibarla Hakk'ın va'dettiği husus, dünyanın harap, sakinlerinin de yok olmasıdır. Allah'ın vaadi ise haktır. Çünkü sözü doğrudur. Hükmü veren Allah'tır ve O'nun hükmünü takibat altına alacak, icraatını bozacak, bozduğunu icra edecek, reddettiğini kabul edecek, kabul ettiğini reddedecek, hakir kıldığını aziz kılacak ve aziz kıldığını zelil kılacak hiç kimse de yoktur.

( وَهُوَ سَرِيعُ الْحِسَابِ ) *"O, hesabı çabuk görendir."* Çünkü gelecek olan şey yakındır. Bir yoruma göre de hesabı çabuk görmesi dünyadadır. Çünkü Allah'ın dostları bir hataya bulaştıkları veya bir yasağa niyetlendikleri zaman, anında itaba tabi tutulurlar ve güzel bir dönüş yapmaları istenir.

وَقَدْ مَكَرَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ فَلِلّٰهِ الْمَكْرُ جَمِيعًا يَعْلَمُ مَا تَكْسِبُ كُلُّ نَفْسٍ وَسَيَعْلَمُ الْكُفَّارُ لِمَنْ عُقْبَى الدَّارِ ﴿٤٢﴾

42- "Onlardan öncekiler de tuzak kurmuşlardı. Bütün tuzaklar Allah'a aittir. O, her nefsin kazandığını bilir. İnkâr edenler de dünya yurdunun sonunun kime ait olduğunu bileceklerdir."

Bunların tuzağı, küfürlerini saklarken görünürde uyumlu olduklarını belirtmeleridir. Allah'ın onlara yönelik tuzağı da amellerinin güzel olduğunu vehmetmeleri, hallerinin güvenli olacağını sanmaları ve kendi tuzaklarına düşmeyeceklerini zannetmeleridir. Bu arada Allah'ın kendilerini tuzaklarıyla baş başa bırakması, onlara yönelik en büyük tuzaklarındandır.

وَيَقُولُ الَّذِينَ كَفَرُوا لَسْتَ مُرْسَلًا قُلْ كَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيدًا بَيْنِي وَبَيْنَكُمْ وَمَنْ عِنْدَهُ عِلْمُ الْكِتَابِ ﴿٤٣﴾

**43- "İnkâr edenler: 'Sen, peygamber değilsin' diyorlar. De ki: 'Benimle sizin aranızda şahit olarak Allah ve yanında Kitab'ın bilgisi olan yeter.'"**

Yalanlamalarının vebali onlara aittir. Çünkü Allah, senin doğruluğuna şahitlik etmektedir.

( وَمَنْ عِنْدَهُ عِلْمُ الْكِتَابِ ) *"Ve yanında Kitab'ın bilgisi olan yeter."* Yanında Kitab'ın bilgisi olandan maksat Allah olup bütün müminlerin bilgisi O'nun katındadır. Buna göre ayetin manası şöyledir: *"Allah şahit olarak yeter. Zira Kitab'ın bilgisi O'ndadır. Müminler de şahit olarak yeter. Zira müminler bunu bilmektedirler."*

سورة إبْرٰهيمَ

# İBRÂHÎM SÛRESİ

(İbrahim Sûresi 52 âyettir. 28 ve 29. âyetler Medine'de diğerleri Mekke'de inmiştir. 35-41. âyetlerde Hz. İbrahim'in duası anıldığından, sûreye bu ad verilmiştir)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla.**

Allah'ın adıyla, Allah ile demektir. Bu nedenle, ariflerin kalpleri Allah ile aydınlanmakta, kendini kaybetmiş olanların kalpleri Allah için yanmaktadır. Birinci grup Allah'ın sevgisine, ikinci grup da O'nun eşsiz müşahedesine özlem duymaktadır. Vuslat sahipleri ise: "Allah ile..." derler. Böylece arayanlardan eren ermiş olmaktadır.

الٓرٰ كِتَابٌ اَنْزَلْنَاهُ اِلَيْكَ لِتُخْرِجَ النَّاسَ مِنَ الظُّلُمَاتِ اِلَى النُّورِ بِاِذْنِ
رَبِّهِمْ اِلٰى صِرَاطِ الْعَز۪يزِ الْحَم۪يدِ ﴿١﴾

1- "Elif Lâm Râ. Bu Kur'ân, Rablerinin izniyle insanları karanlıklardan aydınlığa, yani her şeye galip ve övgüye layık olan Allah'ın yoluna çıkarman için sana indirdiğimiz bir kitaptır."

Bu harflere yemin ederim ki o, insanları Rablerinin izniyle cehaletin karanlıklarından ilmin ışığına, şüphenin karanlıklarından kesin inancın nuruna, tedbirin karanlıklarından takdirin müşahede

fezasına, bidatçiliğin karanlıklarından uymanın nuruna, nefsin arzularının karanlıklarından kalbin marifetlerinin nuruna, ayrılığın karanlıklarından birlikteliğin nuruna çıkarman için indirilen bir kitaptır. Allah'ın iradesi, dileği, ezeldeki hükmü ve takdiriyle de onları rahmetinin yoluna çıkarırsın. Aynı zamanda bu kitap, tevhidin ve Allah'ı birlemenin delillerinin de yoludur.

اَللّٰهِ الَّذِي لَهُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَوَيْلٌ لِلْكَافِرِينَ مِنْ عَذَابٍ شَدِيدٍ ﴿٢﴾

2- "O Allah ki, göklerde ve yerde ne varsa hepsi O'nundur. Şiddetli azaptan dolayı kâfirlerin vay haline!"

Allah halka, göklerde ve yerdekilerin O'nun olduğunu öğretmektedir. Bunu böyle bilenin sonu güzel olur. İnkâr eden için de şiddetli azap vardır. Bu azap, Allah'ın kim olduğunu bilmemesidir.

اَلَّذِينَ يَسْتَحِبُّونَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا عَلَى الْاٰخِرَةِ وَيَصُدُّونَ عَنْ سَبِيلِ اللّٰهِ وَيَبْغُونَهَا عِوَجًا اُولٰٓئِكَ فِي ضَلَالٍ بَعِيدٍ ﴿٣﴾

3- "Dünya hayatını ahirete tercih edenler, insanları Allah yolundan çevirip onu eğri ve çelişkili göstermek isteyenler var ya, işte onlar derin bir sapıklık içindedirler."

Sonra Allah onların kötü ahlaklarından söz ederek şöyle demektedir: Onlar, öyle kimselerdir ki, dünya malından az bir şeyi ahiretin önemli nimetlerine tercih etmektedirler. Bu, inkârlarının şiddetinden dolayıdır. Bir de onlar, çok kalabalık olmalarına güvenerek dinde eğrilik ararlar. İşte bunlar için dünyada en şiddetli azap olan ayrılık, ahirette de en büyük musibet ve meşakkat olan yanma vardır.

وَمَٓا اَرْسَلْنَا مِنْ رَسُولٍ اِلَّا بِلِسَانِ قَوْمِهِ لِيُبَيِّنَ لَهُمْ فَيُضِلُّ اللّٰهُ مَنْ يَشَٓاءُ وَيَهْدِي مَنْ يَشَٓاءُ وَهُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿٤﴾

4- "Biz her peygamberi ancak kendi kavminin diliyle gönderdik ki, onlara Allah'ın emirlerini iyice açıklasın. Allah, dilediğini saptırır, dilediğini de doğru yola iletir. O, mutlak güç sahibidir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Bunun böyle olması, delilin bağlayıcılığını daha da pekiştirmesi içindir. Ancak hak yolda muvaffak kılınmadıkları zaman bunun ne faydası olur? Bu çerçevede hidayet ehli olanlar, ezeldeki ilahî inayeti kazanmış, sapıklar ise düşmanlığın züllünü boylamışlardır. O halde yaptıklarında Allah'a hiçbir itiraz olamaz ve yaptıklarından veya yapmadıklarından dolayı sorumlu tutulamaz.

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا مُوسٰى بِاٰيَاتِنَٓا اَنْ اَخْرِجْ قَوْمَكَ مِنَ الظُّلُمَاتِ اِلَى
النُّورِ وَذَكِّرْهُمْ بِاَيَّامِ اللّٰهِ اِنَّ فٖي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِكُلِّ صَبَّارٍ شَكُورٍ ٥

5- "Andolsun Mûsâ'yı da: 'Kavmini karanlıklardan aydınlığa çıkar ve onlara Allah'ın günlerini hatırlat' diye âyetlerimizle gönderdik. Şüphesiz bunda çok sabreden, çok şükreden herkes için ibretler vardır."

Sen, davetinle kavmini şüphelerinin karanlıklarından kesin inanç nuruna, bilgisizliğin çıkmazından ilmin genişliğine çıkar ve onlara Allah'ın günlerini hatırlat. Bunlar, geçmişte verdikleri sözün zamanı ve daha önceki hallerinde Allah'ın üzerlerinden belayı kaldırdığı günlerdir.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Onlara Allah'ın günlerini hatırlat. Bu günlerden maksat, geçmişte ruhlarının bedenlere girmeden önce yaşadığı safiyet ve onlara tevhidin öğretilmesidir.

- Onlara Allah'ın günlerini hatırlat. Bunlar, kulun henüz yokluk âleminde saklı olduğu günlerdir. Allah, kulların henüz hiç bir fiili yok iken de onları yönetir. Nitekim bu süreçte ne henüz hayır işlerinde öne geçenlerin bir çabası, ne orta yolu izleyenlerin terki ne

de zalimin kendi nefsine zulmetmesi söz konusudur. Çünkü Allah, kudretinin alanını ve iradeye hükmedişini ilmiyle biliyordu. Oysa o günlerde kulun hiçbir tercihi yoktu.

( اِنَّ فٖي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِكُلِّ صَبَّارٍ شَكُورٍ ) *"Şüphesiz bunda çok sabreden, çok şükreden herkes için ibretler vardır."*

Çok sabredenden maksat, Allah'ın hükmüne rıza gösteren ve hayatın sevincini tadında bırakan kimsedir. Çok şükreden ise nimetleri görme perdesiyle, Hakk'ın tecellisinde gark olmaktan perdelenen kimsedir. Biri sabrının, diğeri de şükrünün yanında durmakta ve her biri sınırı ve değeriyle yükümlü bulunmaktadır. Oysa Allah işinde galiptir, zâtında mukaddestir, kutsiyetinin celaliyle izzet sahibidir.

وَاِذْ قَالَ مُوسٰى لِقَوْمِهِ اذْكُرُوا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ اَنْجٰيكُمْ
مِنْ اٰلِ فِرْعَوْنَ يَسُومُونَكُمْ سُوٓءَ الْعَذَابِ وَيُذَبِّحُونَ اَبْنَآءَكُمْ
وَيَسْتَحْيُونَ نِسَآءَكُمْ وَفٖي ذٰلِكُمْ بَلَآءٌ مِنْ رَبِّكُمْ عَظٖيمٌ ٦

6- "Hani Mûsâ kavmine: 'Allah'ın size olan nimetini anın. Hani O sizi, Firavun ailesinden kurtarmıştı. Onlar, sizi işkencenin en ağırına uğratıyorlar, oğullarınızı boğazlayıp kadınlarınızı sağ bırakıyorlardı. İşte bunda size Rabbinizden büyük bir imtihan vardır' demişti."

Geçmişteki nimetleri hatırlamak, daha önceki sevgiyi yenilemeyi sağlar. Nitekim hadiste şöyle denilmiştir: *"Kalpler, kendilerine iyilik yapanı sevmek üzere yaratılmıştır."*

Bu bağlamda Allah Hz. Mûsâ'ya, kavmine daha önce sahip oldukları türlü nimetlerini ve ikramının inceliklerini hatırlatmasını emretmiştir. Peygamberlere indirilen kitapların kimisinde şu söz yer almıştır: *"Ey kulum! Ben seni seviyorum. O halde üzerindeki hakkım sebebiyle sen de beni sev!"*

وَاِذْ تَاَذَّنَ رَبُّكُمْ لَئِنْ شَكَرْتُمْ لَاَزِيدَنَّكُمْ وَلَئِنْ كَفَرْتُمْ اِنَّ عَذَابِي لَشَدِيدٌ ﴿٧﴾

7- "Hani Rabbiniz şöyle duyurmuştu: 'Andolsun, eğer şükrederseniz, elbette size nimetimi artırırım. Eğer nankörlük ederseniz, hiç şüphesiz azabım çok şiddetlidir.' "

Eğer şükrederseniz size olan inamımı ve ikramımı artırırım. Şayet iyiliğime karşı nankörlük ederseniz muhakkak bugün imtihanımla, yarın da ayrılığım ve terk edişimle sizi cezalandıracağım. Eğer vuslatımı bilirseniz, verdiğim rızıktan cemal ve celalimi müşahedeye kadar size olan nimetlerimi artırırım.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Eğer siz, ibadete muvaffakiyetin çeşitli şekillerine şükrederseniz nimetlerinize müridliğin gerçekleşmesini de ilave edeceğim.

- Eğer yeterli olanı görmeye şükrederseniz ilave olarak sıfatlarımı görmenizi de sağlayacağım.

- Eğer inamımın çeşitlerine şükrederseniz, önce ikramımı, sonra da yönelişimi görmenizle size olan nimetlerimi artıracağım.

- Eğer özel nimetlerime şükrederseniz, beklediğiniz nimetlerimi size arttıracağım.

- Eğer size özgü kılınan nimetlerime şükrederseniz, ümit edilen keremimi size artıracağım.

- Eğer size bolca verdiklerime şükrederseniz, bana kavuşacağınıza dair sözü yerine getirerek nimetinizi artıracağım.

- Eğer mana âleminizde var ettiğim işaretlere şükrederseniz zahirinize giydirdiğimiz masumiyet elbisenizi artıracağız.

- Eğer siz, kendiniz hak ettiğinizi vehmederek nimetimize nankörlük ederseniz, size acı bulacağınız şeyler tattıracağız.

وَقَالَ مُوسٰٓى اِنْ تَكْفُرُوٓا اَنْتُمْ وَمَنْ فِي الْاَرْضِ جَمِيعًا فَاِنَّ اللّٰهَ لَغَنِيٌّ حَمِيدٌ ﴿٨﴾

8- "Mûsâ şöyle dedi: 'Siz ve yeryüzünde bulunanların hepsi, nankörlük etseniz de gerçek şu ki Allah her bakımdan sınırsız zengindir, övgüye layık olandır.'"

Eğer siz ve size destek verenler, yanınızda olmayanlar, olanlar ve size uyanlar, hep birlikte Allah'ı inkâr etmek üzere bir araya gelseniz ve her gün yanınıza sürüler halinde ortaklar alsanız, tıpkı şükretmeniz halinde mülkümüze bir güzellik katamayacağınız gibi bizim izzetimize gerekçeli bir kusur getiremezsiniz. Kaldı ki Allah, sıfatları ve üstün güce sahip olma vasfıyla yücedir ve baştan başa kâinattan müstağnidir.

اَلَمْ يَاْتِكُمْ نَبَؤُا الَّذِينَ مِنْ قَبْلِكُمْ قَوْمِ نُوحٍ وَعَادٍ وَثَمُودَ وَالَّذِينَ مِنْ بَعْدِهِمْ لَا يَعْلَمُهُمْ اِلَّا اللّٰهُ جَٓاءَتْهُمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنَاتِ فَرَدُّوٓا اَيْدِيَهُمْ فِيٓ اَفْوَاهِهِمْ وَقَالُوٓا اِنَّا كَفَرْنَا بِمَٓا اُرْسِلْتُمْ بِهِ وَاِنَّا لَفِي شَكٍّ مِمَّا تَدْعُونَنَٓا اِلَيْهِ مُرِيبٍ ﴿٩﴾

9- "Sizden önceki Nûh, Ad ve Semûd kavimlerinin ve onlardan sonrakilerin -ki onları Allah'tan başkası bilmez- haberi size gelmedi mi? Onlara peygamberleri mucizeler getirdiler de onlar (öfkeden parmaklarını ısırmak için) ellerini ağızlarına götürüp: 'Biz, sizinle gönderileni inkâr ediyoruz. Bizi çağırdığınız şeyden de derin bir şüphe içindeyiz' dediler."

Buradaki istifham tekrir anlamındadır. Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) şunu haber vermektedir: O kavimlere peygamberler geldiklerinde onları nankörlükle karşıladılar, inkârla muamelede bulundular, ellerini ağızlarına götürdüler, küfürde emsallerinin yolunu izlediler, kurallarını şek ve şüphe üzerine bina ettiler ve inançlarını şirk ve sapkınlık üzerine kurdular.

قَالَتْ رُسُلُهُمْ اَفِي اللّٰهِ شَكٌّ فَاطِرِ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ يَدْعُوكُمْ
لِيَغْفِرَ لَكُمْ مِنْ ذُنُوبِكُمْ وَيُؤَخِّرَكُمْ اِلٰٓى اَجَلٍ مُسَمًّى قَالُوٓا اِنْ اَنْتُمْ
اِلَّا بَشَرٌ مِثْلُنَا تُرِيدُونَ اَنْ تَصُدُّونَا عَمَّا كَانَ يَعْبُدُ اٰبَآؤُنَا فَاْتُونَا
بِسُلْطَانٍ مُبِينٍ ﴿١٠﴾

10- "Peygamberleri dedi ki: 'Gökleri ve yeri yaratan Allah hakkında şüphe mi var? O, günahlarınızı bağışlamak ve sizi belli bir zamana kadar ertelemek için sizi imana çağırıyor.' Onlar: 'Siz de bizim gibi sadece birer insansınız. Bizi babalarımızın taptıklarından alıkoymak istiyorsunuz. Öyleyse bize apaçık bir delil getirin' dediler."

Burada istifhamdan maksat, azarlama ve olumsuzluktur. Allah, bütün noksanlıklardan münezzehtir ve O'nun izni olmadan bir nefes bile hareket edemez. İyiliğinin nuruyla gözünü nurlandırdığı kimseden başkası O'nun kadrinin celalini nasıl görebilir ki?!

(يَدْعُوكُمْ لِيَغْفِرَ لَكُمْ مِنْ ذُنُوبِكُمْ وَيُؤَخِّرَكُمْ اِلٰٓى اَجَلٍ مُسَمًّى) *"O, günahlarınızı bağışlamak ve sizi belli bir zamana kadar ertelemek için sizi imana çağırıyor."*

Efendisi için zorluklara katlanan ve gücünü aşan yükün altına giren, hizmetten kaçmayan ve rahata düşkün olmayan kimseye şaşılmaz. Şaşmaya değer olan, hata işlediği halde kulunu bağışlamak için çağıran ve vefasızlık yaptığı halde ona iyilikle muamelede bulunan izzet ve kerem sahibi efendidir. İnattan alıkoymayan ve efendisinin rızasını nefsinin rahatına tercih etmeyene gelince, o sadece ezelde çizilmiş mutsuz bir kadere mahkûm edilir. Allah'ın inkârcıları reddedişine dair hükümleri doğrudur.

Sonra Allah, onların, peygamberlerine şöyle dediklerini anlatmıştır:

( قَالُوٓا اِنْ اَنْتُمْ اِلَّا بَشَرٌ مِثْلُنَا تُرِيدُونَ اَنْ تَصُدُّونَا عَمَّا كَانَ يَعْبُدُ اٰبَٓاؤُ۬نَا فَأْتُونَا بِسُلْطَانٍ مُب۪ينٍ )

*"Onlar: 'Siz de bizim gibi sadece birer insansınız. Bizi babalarımızın taptıklarından alıkoymak istiyorsunuz. Öyleyse bize apaçık bir delil getirin' dediler."*

Onlar, peygamberlere dış görünüşlerinden hareketle bakmışlar, onların mana âlemlerini bilememişler, kendi seleflerini taklit etmeye meyletmişler ve alışkanlık haline getirdikleri ayrılıkçı ve karşıt tavırlarında ısrar etmişlerdir.

قَالَتْ لَهُمْ رُسُلُهُمْ اِنْ نَحْنُ اِلَّا بَشَرٌ مِثْلُكُمْ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ يَمُنُّ عَلٰى مَنْ يَشَٓاءُ مِنْ عِبَادِه۪ وَمَا كَانَ لَنَٓا اَنْ نَأْتِيَكُمْ بِسُلْطَانٍ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُونَ ﴿١١﴾

11- "Peygamberleri onlara dedi ki: 'Biz ancak sizin gibi birer insanız. Fakat Allah, kullarından dilediğine peygamberlik nimetini bahşeder. Allah'ın izni olmadıkça bizim size bir delil getirmemiz haddimize değil. Müminler ancak Allah'a tevekkül etsinler.'"

Peygamberleri onlara şöyle dediler: Biz ancak sizin gibiyiz. Aramızdaki fark, Allah'ın kendini tanıtmasıyla bize nimet bahşetmesi ve bizi özel bir şekilde başkalarından ayrı olarak onurlandırmasıdır. Delil getirmemize dair yaptığınız öneriye gelince, buna kadir olan Allah dilediği zaman ve dilediği şekilde onu karşımıza çıkarmadıkça bizim onu getirmemiz mümkün değildir.

وَمَا لَنَٓا اَلَّا نَتَوَكَّلَ عَلَى اللّٰهِ وَقَدْ هَدٰينَا سُبُلَنَا وَلَنَصْبِرَنَّ عَلٰى مَٓا اٰذَيْتُمُونَا وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُتَوَكِّلُونَ ﴿١٢﴾

12- "Allah, bize yollarımızı dosdoğru göstermişken, biz ne diye O'na tevekkül etmeyelim?! Bize yaptığınız eziyete elbette katlanacağız. Tevekkül edenler, yalnız Allah'a tevekkül etsinler."

( وَمَا لَنَآ اَلَّا نَتَوَكَّلَ عَلَى اللّٰهِ ) *"Biz ne diye Allah'a tevekkül etmeyelim!"*

Oysa O, delil getirmekle mükellef olmanın sınırından bizi üstümüze akıttığı güzel iyiliklerinin çokluğuyla beyanın verdiği huzurun varlığı makamına yükseltmiş ve değersiz kimselerden korumuştur.

*"Biz ne diye Allah'a tevekkül etmeyelim?!"*

Oysa O, bize ezelde verdiği iyilik güvencesini ve üstümüze gölge kıldığı noksansız nimetini bizim için gerçekleştirmiştir.

*"Biz ne diye Allah'a tevekkül etmeyelim?!"*

Oysa biz, O'nun bize olan vaadi konusunda kendisiyle hesaplaşmak üzere yola çıkmadık.

( وَلَنَصْبِرَنَّ عَلٰى مَٓا اٰذَيْتُمُونَا ) *"Bize yaptığınız eziyete elbette katlanacağız."*

Belaya katlanmak, bela ile imtihan edeni görmeye dayalı olduğu zaman kolay olur.

Şiir:

*Gelmesini beklerler belanın, sanki onlar*
*Dünyadan ümit kesmezler kabul ettiklerinde*

وَقَالَ الَّذٖينَ كَفَرُوا لِرُسُلِهِمْ لَنُخْرِجَنَّكُمْ مِنْ اَرْضِنَٓا اَوْ لَتَعُودُنَّ فٖي مِلَّتِنَا فَاَوْحٰٓى اِلَيْهِمْ رَبُّهُمْ لَنُهْلِكَنَّ الظَّالِمٖينَ ﴿١٣﴾

13- "İnkâr edenler peygamberlerine: 'Andolsun, ya sizi yurdumuzdan çıkaracağız ya da bizim dinimize dönersiniz' dediler. Rableri de onlara şöyle vahyetti: 'Biz, zalimleri mutlaka yok edeceğiz.'"

Düşmanlar, onların delilleri gibi deliller getirmede peygamberlere karşı koymaktan aciz kalınca bu kez türlü uyarılarla eziyet etmeye ve memleketten çıkarmak, ülkelerde süründürmek gibi çeşitli

belalarla tehdit etmeye başladılar. Oysa Allah, verdiği zafer ve O'na kavuşma vaadiyle, peygamberlerin kalplerinin üstüne emrinden onları saran bir gölge yaymış, kalplerine düşmanlarının belalarına karşı verdiği sabretme gücü sayesinde onların meskenlerine hakim olmalarını mümkün kılmıştır. Bu amaçla: ( لَنُهْلِكَنَّ الظَّالِمِينَ ) "*Biz, zalimleri mutlaka yok edeceğiz*" dedikten sonra şöyle buyurmuştur:

وَلَنُسْكِنَنَّكُمُ الْاَرْضَ مِنْ بَعْدِهِمْ ذٰلِكَ لِمَنْ خَافَ مَقَامِي وَخَافَ وَعِيدِ ١٤

14- "Onlardan sonra sizi elbette o yerde yerleştireceğiz. İşte bu, makamımdan korkan ve tehdidimden sakınan kimseler içindir."

Yani bu, yarın hesap yerinde Allah'ın makamından korkan ve bu sebeple özellikle nefsine dönüş yapan kimseler içindir. Bir yoruma göre de bunlar Allah'ın makamından yani kendilerine muttali olmasından korkan kimselerdir. Böylece makamdan korkmak kıyametteki muhasebeyi hatırlatmakta, tehditten sakınmak da dünyadaki gözetimin gerçekleşmesini ifade etmektedir.

وَاسْتَفْتَحُوا وَخَابَ كُلُّ جَبَّارٍ عَنِيدٍ ١٥

15- "Onlar fetih istediler ve her inatçı zorba hüsrana uğradı."

"İstiftâh" lafzı, fetih istemek demektir. Fetih ise ilahî hükmün gerçekleşmesidir. Şu ve benzeri sözlerinde olduğu gibi:

( وَاِذْ قَالُوا اللّٰهُمَّ اِنْ كَانَ هٰذَا هُوَ الْحَقَّ مِنْ عِنْدِكَ فَاَمْطِرْ عَلَيْنَا حِجَارَةً مِنَ السَّمَاۤءِ ) "*Ey Allah'ım! Eğer şu Kur'an senin katından inmiş hak kitap ise hemen üzerimize gökten taş yağdır.*" (Enfâl, 8/32) onlar, ilahî hükmün çabuk gerçekleşmesini istediler.

Bunun üzerine başlarına bela gelip gerçek durumu görünce, yakarış ve ağlamaları kendilerine fayda vermedi, sadaka ve fidyeleri kabul edilmedi. Onlar pişmanlığın söz konusu olmadığı anda pişman oldular ve selameti yitirdikten sonra çaresiz kaldılar.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Onlar, peygamberlerden başkasından fetih istediler. Bu durumda peygamberler, kavimlerinin hatada ısrar ettiklerini görünce, onlara karşı Allah'tan yardım istediler. Örneğin Hz. Nûh'un: ( وَقَالَ نُوحٌ رَبِّ لَا تَذَرْ عَلَى الْاَرْضِ مِنَ الْكَافِرِينَ دَيَّارًا ) *"Ey Rabbim! Kâfirlerden yeryüzünde hiç kimseyi bırakma!"* (Nûh, 71/26) şeklindeki sözü ile Hz. Mûsâ'nın şu sözü gibi: ( رَبَّنَا اطْمِسْ عَلٰٓى اَمْوَالِهِمْ وَاشْدُدْ عَلٰى قُلُوبِهِمْ ) *"Ey Rabbimiz! Sen onların mallarını silip süpür ve kalplerine darlık ver."* (Enfâl, 10/88)

- Bela şiddetlendiği ve dua içtenleştiği zaman kurtuluş yaklaşmış olur.

مِنْ وَرَآئِهٖ جَهَنَّمُ وَيُسْقٰى مِنْ مَآءٍ صَدِيدٍ ﴿١٦﴾ يَتَجَرَّعُهُ وَلَا يَكَادُ يُسِيغُهُ وَيَاْتِيهِ الْمَوْتُ مِنْ كُلِّ مَكَانٍ وَمَا هُوَ بِمَيِّتٍ وَمِنْ وَرَآئِهٖ عَذَابٌ غَلِيظٌ ﴿١٧﴾

16, 17- "Hüsranın ardından da cehennem vardır. Orada kendisine irinli su içirilecektir. Onu yudumlamaya çalışacak, fakat boğazından geçiremeyecektir. Ona her yönden ölüm gelecek, fakat ölmeyecek, arkasından da şiddetli bir azap gelecektir."

Ayetteki ( وَراء ) *"verâ"* lafzı, hem "önünde" hem de "arkasında" anlamına gelir. Ayrıca "saklı şey" anlamında da kullanılır. Yani bu kâfire, hem önündeki zamanda hem de arkasında kalan -geride bıraktığı- zamanda azap gelir. Yani geçmişteki kötü fiillerinden dolayı ona azap gelir. Bu kimseye peş peşe yutacağı ateşten içirilir. Bu kimse, zorluğu ve acısından dolayı ateşi bir defada içememektedir.

( وَيَاْتِيهِ الْمَوْتُ مِنْ كُلِّ مَكَانٍ وَمَا هُوَ بِمَيِّتٍ وَمِنْ وَرَآئِهٖ عَذَابٌ غَلِيظٌ ) *"Ona her yönden ölüm gelecek, fakat ölmeyecek, arkasından da şiddetli bir azap gelecektir."*

Şiddetinden dolayı kâfir söz konusu azabı her organda, her zaman ve her yerde görür. Ancak bu azap ölüm değildir. Çünkü cehennemlikler ölmezler. Ancak bu azap şiddette ölüm gibidir. Sonra arkasından da şiddetli bir azap gelecektir. Bu da cehennemde ebedi olarak kalmaktır. İşte bu, ilahî meşietin elverdiği az sayıdaki günlerle mağrur olan ve arkasından geleceklerin bilincine varmayıp aldanan kimsenin cezasıdır.

مَثَلُ الَّذٖينَ كَفَرُوا بِرَبِّهِمْ اَعْمَالُهُمْ كَرَمَادٍ اشْتَدَّتْ بِهِ الرّٖيحُ فٖي يَوْمٍ عَاصِفٍ لَا يَقْدِرُونَ مِمَّا كَسَبُوا عَلٰى شَيْءٍ ذٰلِكَ هُوَ الضَّلَالُ الْبَعٖيدُ ﴿١٨﴾

18- "Rablerini inkâr edenlerin durumu şudur: Onların işleri, fırtınalı bir günde rüzgârın şiddetle savurduğu küle benzer. Dünyada kazandıkları hiçbir şeyin ahirette yararını görmezler. İşte bu derin sapıklıktır."

Yani Ey Muhammed! Sana okunan vahyin içinde, kâfirlerin yaptıklarının zayıflıkta ve kabul edilmemede bir benzeri vardır. O, fırtınalı bir gündeki kül gibidir. Çünkü o külden hiçbir şey kalmaz. İşte onların amelleri de böyledir. Böyle olan bir kimse ise her iki dünyada da kaybetmiş ve üstüne azap inmiş olur.

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ اِنْ يَشَاْ يُذْهِبْكُمْ وَيَاْتِ بِخَلْقٍ جَدٖيدٍ ﴿١٩﴾

19- "Allah'ın, gökleri ve yeri hakka ve hikmete uygun olarak yarattığını görmedin mi? Dilerse sizi giderir ve yeni bir halk getirir."

Allah, gökleri ve yeri hak olan hüküm ile yarattı. Yani O, mülkün sahibi olma hakkıyla bunu yapabilmektedir. Bir de onları hak olan sözüyle yaratmıştır. Böylece onların her bir parçasını birliğine delil, Rabbine ermek isteyen kimse için de yol kılmıştır.

Sonra isterse sizi yok etmek suretiyle yeryüzünden götürüp yeni inşa edilmiş bir halk getirebileceğini ve bunun kendisi için zor olmadığını söylemiştir.

وَمَا ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ بِعَز۪يزٍ ﴿٢٠﴾

20- "Bu, Allah'a hiç de güç gelmez."

Bu, O'nun için güç değildir. O her şeye kadir iken bu, kendisi için nasıl güç olabilir ki?!

وَبَرَزُوا لِلّٰهِ جَم۪يعًا فَقَالَ الضُّعَفٰٓؤُا لِلَّذ۪ينَ اسْتَكْبَرُوٓا اِنَّا كُنَّا لَكُمْ تَبَعًا
فَهَلْ اَنْتُمْ مُغْنُونَ عَنَّا مِنْ عَذَابِ اللّٰهِ مِنْ شَيْءٍ قَالُوا لَوْ هَدٰينَا اللّٰهُ
لَهَدَيْنَاكُمْ سَوَٓاءٌ عَلَيْنَٓا اَجَزِعْنَٓا اَمْ صَبَرْنَا مَا لَنَا مِنْ مَح۪يصٍ ﴿٢١﴾

21- "İnsanların hepsi Allah'ın huzuruna çıkacak ve güçsüzler büyüklük taslayanlara diyecek ki: 'Şüphesiz biz size uymuştuk. Şimdi siz az bir şey olsun, Allah'ın azabından bizi koruyabilecek misiniz?' Onlar da: 'Eğer Allah, bizi doğru yola eriştirseydi, biz de sizi doğru yola eriştirirdik. Şimdi sızlansak da sabretsek de bizim için birdir. Artık bizim için hiçbir kurtuluş yoktur' derler."

Onlar, Allah'tan saklı değillerdi ki, O'na görünsünler. Bu nedenle ayetin manası şudur: Onlara dair bilgiler apaçık hale geldiğinden kendileri, Allah'tan başka hiç kimsenin hükmü geçmeyen yerlere düştüler ve böylece Allah'a görünmüş gibi oldular. Bunun üzerine güçsüzler, büyüklük taslayanlara: *"Üzerimizden bir miktar meşakkati kaldıracağınız vehmiyle biz sizlere uymuştuk"* dediler.

Bunun üzerine kibir taslayanlar onlara şöyle cevap verdiler: *"Biz hepimiz azapta ortağız. Eğer biz, üzerinizden azabın bazısını kaldırabilseydik ve sizi kurtuluş yoluna eriştirebilseydik, sizi şikâyet ettiğiniz durumdan kurtarır ve dileğinizi yerine getirirdik. Lakin bugün siz de bize yardımcı olamazsınız biz de size yardımcı olamayız ve çağrınızı kabul edecek durumda değiliz."*

وَقَالَ الشَّيْطَانُ لَمَّا قُضِيَ الْاَمْرُ اِنَّ اللّٰهَ وَعَدَكُمْ وَعْدَ الْحَقِّ
وَوَعَدْتُكُمْ فَاَخْلَفْتُكُمْ وَمَا كَانَ لِيَ عَلَيْكُمْ مِنْ سُلْطَانٍ اِلَّٓا
اَنْ دَعَوْتُكُمْ فَاسْتَجَبْتُمْ لِي فَلَا تَلُومُونِي وَلُومُوٓا اَنْفُسَكُمْ
مَٓا اَنَا بِمُصْرِخِكُمْ وَمَٓا اَنْتُمْ بِمُصْرِخِيَّ اِنِّي كَفَرْتُ بِمَٓا
اَشْرَكْتُمُونِ مِنْ قَبْلُ اِنَّ الظَّالِمِينَ لَهُمْ عَذَابٌ اَلِيمٌ ﴿٢٢﴾

22- "İş bitirilince şeytan da diyecek ki: 'Şüphesiz Allah, size gerçek olanı söz verdi. Ben de size söz verdim, ama yalancı çıktım. Zaten benim sizi zorlayacak bir gücüm yoktu. Ben sadece sizi çağırdım, siz de hemen bana geldiniz. O halde beni kınamayın, kendinizi kınayın. Artık ben sizi kurtaramam, siz de beni kurtaramazsınız. Şüphesiz ben, daha önce sizin beni Allah'a ortak koşmanızı kabul etmemiştim. Şüphesiz zalimlere elem dolu bir azap vardır.'"

O halde bize değil, kendi nefsinize sitem ediniz. Kaldı ki, artık şimdi sitem zamanı da değildir. Nefse sitem de ancak onun mühlet zamanında ve mükellefiyet vakitlerinde işlediği kötülükler konusunda fayda verir. Çünkü tövbe kapıları ancak Allah'ın henüz canını almadığı kimseler için açıktır.

وَاُدْخِلَ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ
تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا بِاِذْنِ رَبِّهِمْ تَحِيَّتُهُمْ فِيهَا سَلَامٌ ﴿٢٣﴾

23- "İnanan ve salih ameller işleyenler Rablerinin izniyle ebedi kalacakları ve içlerinden ırmaklar akan cennetlere sokulacaklardır. Oradaki esenlik dilekleri 'selam'dır."

Daha önce anlatılanlar, kâfirlerin ve düşmanların durumuyla ilgili idi. Müminler ve velilere gelince onlar bu ayette anlatılmışlardır. Bu çerçevede "iman" tasdik, "salih ameller işlemek" ise tasdikin gerçekte

yaşanmasıdır. Ayrıca salih amellerin kapsamına, yoldan giderdiğin çöpe varıncaya kadar, az veya çok her türlü hayırlı iş girer.

( فِيهَا سَلَامٌ ) *"Oradaki esenlik dilekleri 'selam'dır."* Aynı şekilde Allah: ( لَهُمْ دَارُ السَّلَامِ ) *"Onlar için selam yurdu vardır"* (En'âm, 6/127) buyurmuştur. Bu itibarla, onlara Allah tarafından verilen genel vasıf ve dilenen esenlik "selam"dır. Bir yoruma göre de onların halleri mertebe mertebe farklılaşmaktadır. Bu çerçevede kimileri önce yanmaktan sonra ayrılıktan, sonra azaptan, sonra da hicaptan kurtulmuşlardır.

اَلَمْ تَرَ كَيْفَ ضَرَبَ اللّٰهُ مَثَلًا كَلِمَةً طَيِّبَةً كَشَجَرَةٍ طَيِّبَةٍ اَصْلُهَا
ثَابِتٌ وَفَرْعُهَا فِي السَّمَاۤءِ ﴿٢٤﴾ تُؤْت۪ٓي اُكُلَهَا كُلَّ ح۪ينٍ بِاِذْنِ رَبِّهَا
وَيَضْرِبُ اللّٰهُ الْاَمْثَالَ لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَذَكَّرُونَ ﴿٢٥﴾ وَمَثَلُ كَلِمَةٍ
خَب۪يثَةٍ كَشَجَرَةٍ خَب۪يثَةٍ اجْتُثَّتْ مِنْ فَوْقِ الْاَرْضِ مَا لَهَا مِنْ قَرَارٍ ﴿٢٦﴾

24, 25, 26- "Görmedin mi, Allah güzel bir sözü nasıl misal getirdi? Güzel bir söz, kökü sağlam, dalları göğe yükselen bir ağaç gibidir. Bu ağaç, Rabbinin izniyle her zaman meyvesini verir. Öğüt alsınlar diye Allah insanlara misaller getirir. Kötü bir sözün durumu da yerden koparılmış, ayakta durma imkanı olmayan kötü bir ağacın durumu gibidir."

Bu, Allah'ın iman ve O'nu tanımak konusunda verdiği bir örnektir. Bu amaçla imanı güzel bir ağaca benzetmiştir. O ağacın kökü yerde sabittir, dalları uzundur ve yüksektir, meyveleri noksansızdır. Bu ağaç, her zaman meyvesini vermektedir ve sahipleri her an ondan faydalanmaktadır. O ağacın kökü, Allah'ı bilmek ve delillere dayalı imandır. Dalları da farzlardan ibaret olan salih ameller ve günahlardan sakınmaktır. Yapılması gereken, ağacın kabuğunu soymak, kökünü kesmek, dallarını yok etmek ve bunun gibi ona zarar veren şeylerden korumaktır. Bu ağacın yaprakları kulluk adabını ye-

rine getirmektir, çiçekleri güzel ahlaktır, meyveleri ise taatin tadı ve hizmetin lezzetidir.

Bu arada nasıl ki, meyveler tat, tabiat, koku ve şekil bakımından değişiyorsa aynı şekilde ibadetlerin semereleri ve kulun kalbinde bulduğu manalar da değişmektedir. Bunlar abidlerin vasfı olan ibadetin tadı, ariflerin vasfı olup kulun o anda bulduğu bast, müridlerin vasfı olan kalbî huzur, sevenlerin vasfı olup kulun mana dünyasında erdiği yakınlık ve iştiyak sahiplerinin vasfı olup kulun, sebebini bilmeksizin hissettiği ve dindiremediği ıstırap ve heyecan gibi hususlardır. İbadetlerin bunlar gibi daha pek çok tezahürleri, parıltıları, işaretleri ve ışıltıları vardır ki, onları ifade etmeye ne zoraki bir söz ne de anlatım yeterli olur.

Şiir:

*Parıldar nurların işaretleri belirdiği zaman*
*Görünür kılar gizliyi ve bildirir birlikteliği*

Sonra ağaçların meyveleri yılda bir kezdir. Bu ağacın meyveleri ise her an defalarcadır. Tıpkı Allah'ın, cennetin sevabı konusunda:

( لَا مَقْطُوعَةٍ وَلَا مَمْنُوعَةٍ ) *"Tükenmeyen ve yasaklanmayan çok çeşitli meyveler içindedirler"* (Vâkı'a, 56/33) buyurduğu gibi bu ağacın nimetleri de ne tükenir ne de yasaklanır. Hakikat ehlinin kalpleri de ne onlardan geri çevrilir ne de engellenir. O meyveler engellenmeksizin her an ve her nefeste onlara görünür.

Aynı zamanda bu ağacın meyveleri meyvelerin en değerlisi, çiçekleri de çiçeklerin en narini ve en zarifidir. Bu kıssada söz konusu edilenlerin mertebeleri ve mana âlemleriyle ilgili işaretleri ve lafızları reyhanlar ve çiçekler gibidir.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Güzel söz, Allah'ın ilahlığına ve Hz. Peygamber'in (s.a.v.) peygamberliğine şahitlik etmektir. Ancak bu söz, samimi bir kalpten çıktığı zaman güzel olur. Güzel ağaç da marifet olup kökü tuzlu olmayan bir topraktadır. Tuzlu toprak kâfir ve münafığın kalbidir. Nasıl

ki ağaç tuzlu toprakta yeşermiyorsa, aynı şekilde iman da kâfirin ve münafığın kalbinde yeşermez. Sonra ağaca su gerekir. Bu ağacın suyu da inayetin sürekliliğidir. Bu ağaç, ancak yeterlilikle yapraklanır ve hidayetle çiçek açar.

- Bu ağacın suyu pişmanlık, haya, ah çekmek, hasret, güven, teslimiyet suyu ve göz yaşı dökmektir.

- Bu ağacın meyveleri Allah dostlarının hallerine göre değişir. Örneğin; tevekkül, işi Allah'a bırakmak, teslimiyet, muhabbet, özlem, rıza, safiyetli ve yeterli haller ile yüksek ve temiz ahlak bunlardan bazılarıdır. Kötü ağaç gibi olan kötü söz ise küfür kelimesidir. Kötülüğü, beraberindeki şirk necasetidir. Bu itibarla söz konusu kelimenin kötülüğü, şirkin yatağı ve kaynağı olan bir kalpten çıkmış olmasından dolayıdır.

Kötü ağaç, yerin üzerinden koparılan şirktir. Çünkü küfür, çelişkili olup onun ne sağlam bir temeli ne bağlayıcı ve hakikati ortaya çıkarıcı bir delili ne de hüküm doğuran bir gerekçesi bulunur. Aksine küfür, hiçbir kalıcılığı olmayan bir takım vesveseler ve yanılmalara yol açan şüphelerden, bâtıllardan ve sapıklıktan ibarettir. Zira bu hususlar, bir takım zayıf şüphelerden ve bozuk temellerden meydana gelmektedir.

يُثَبِّتُ اللّٰهُ الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا بِالْقَوْلِ الثَّابِتِ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَفِي الْاٰخِرَةِ
وَيُضِلُّ اللّٰهُ الظَّالِم۪ينَ وَيَفْعَلُ اللّٰهُ مَا يَشَٓاءُ ﴿٢٧﴾

27- "Allah, iman edenleri hem dünya hayatında hem de ahirette sabit bir sözle sağlamlaştırır, zalimleri ise saptırır. Ve Allah, dilediğini yapar."

Sabit söz, istikamet üzere kalıp eğriliği terk etmektir.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Sabit söz, itikat safiyetinden ve kalp temizliğinden zorunlu olarak çıkan şehadet sözüdür.

- Sabit söz, dilin anlatışıyla değil, kalplerin söyleyişiyle olur.

- Sabit söz, Yüce Allah'ın yok olup boşa gitmesi söz konusu olmayan kadim sözüdür. Bu söz, sabit olmaya kulun sözünden daha layıktır. Çünkü kulun sözü eserdir. Eserlerin ise sabit ve kalıcı olmaları söz konusu değildir. Ancak kulun sebatı, Allah'ın sözü ile hükmen kalıcı olur. Bu, Allah'ın kulun imanına hükmetmesi, mümin olduğunu bildirmesi ve onu imanla adlandırmasıdır. Allah'ın sözü ise ezelidir. Bu itibarla Allah, dünyada kulu bidate maruz kalmayacak şekilde ahirette meleklerden elçileriyle kıyamette sorgu ve muhasebe esnasında sabit kılarken cennette de onu, kulun Allah'a olan hamdı ve O'nu tanıması sonsuzlaştığı için sabit kılar. Kul, çeşitli duygular yaşayıp duasını Allah'a arz ettiği zaman doğru yoldan ve sağlam dinden sapmaması için Allah onu sabit kılar.

- Vesveseler, kulu şeytana uymaya davet ettiği ve kaygılar onu nefse boyun eğmeye sevk ettiği zaman, Hak onu kendi rızası üzerine sabit kılar.

- Dünya sevgisi veya çocuk, akraba, mal ve ahbap sevgisi gibi her türden sevgi faktörleri kulu davet ettikleri zaman Allah ona bunlardan kurtuluşu tercih etmesi konusunda yardım eder. Böylece kul, hepsini terk eder ve sadece hakkın davetçilerine kulak verir.

Tıpkı şu şiirde söylendiği gibi:

*Bizi geri çevirmek üzere çağırdığında bir ihtiyaç*
*Karşı çıktık ve: Önce Hakk'ın talebi! Dedik*

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذ۪ينَ بَدَّلُوا نِعْمَةَ اللّٰهِ كُفْرًا وَاَحَلُّوا قَوْمَهُمْ دَارَ الْبَوَارِ ﴿٢٨﴾

28- "Allah'ın nimetini küfre değişenleri ve kavimlerini helak yurduna sürükleyenleri görmedin mi?!"

Onlar, şükrün yerine nankörlüğü koyduklarından nimeti, yerine getirilmesi gereken şükürde kullanacakları yerde nankörlükte kullandılar. Aynı zamanda nimeti günahta kullanmak da bu cümledendir. Bu çerçevede kulun bütün organları, Allah'ın kul üzerindeki

nimetleridir. Bu nedenle günahkâr kul, bedenini taatte kullanmak yerine hatada kullandığı zaman nimeti küfre değişmiş olur. Aynı şekilde marifetin yerine kalbine gafleti yerleştirdiği, tamamen Allah'a yönelmenin yerine gaileyi koyduğu ve Allah'a güvenmek yerine kalbini başkalarına bağladığı, Allah'ı zikretmek yerine dilini, yaratıkları anmak ve övmekle kirlettiği ve Allah'ı anmada meşakkate katlanmak yerine Allah'tan başkasıyla meşgul olduğu zaman da durum böyle olup bütün bunlar, Allah'ın nimetlerini küfre değişmektir. Oysa kul, tamamen Allah'a yönelip O'nu yeterli gördüğü zaman, Allah ile baş başa kalmada halktan kurtulmanın rahatlığını ve Allah'a yönelmiş olmada O'nun yeterliliğini bulacaktır. Şayet ayrılığın sebeplerine dönüş yapar ve meşguliyet, halkın muamelesi, övgüsü ve yergisinin denizlerine düşerse hiç şüphesiz o, kavmini helak yurduna sürüklemiş olur. Yani kalbini, nefsini ve organlarını halktan kaynaklanan zelilliğin içine düşürmüş ve peşin zarara uğratmış olur. Bu kimsenin durumu, şu şiirde belirtildiği gibidir:

*Görmedim kendimden önce cenneti terk eden*
*Ve cehennemin kapısını çalanı davetsiz olarak*

جَهَنَّمَ يَصْلَوْنَهَا وَبِئْسَ الْقَرَارُ ﴿٢٩﴾

29- "Onlar, cehenneme girecekler. O ne kötü duraktır!"

Bu durak, dünyadaki cehennem olup azabı da yanmak değil, ayrılıktır.

وَجَعَلُوا لِلّٰهِ اَنْدَادًا لِيُضِلُّوا عَنْ سَبِيلِهِ قُلْ تَمَتَّعُوا فَاِنَّ مَصِيرَكُمْ اِلَى النَّارِ ﴿٣٠﴾

30- "Allah'ın yolundan saptırmak için O'na ortak koştular. De ki: 'Bir süre daha faydalananın. Çünkü varışınız ateşedir.' "

Onlar, yaptıklarının taptıkları, yonttuklarının da maksutları olmasına razı olduklarından istikamet yolundan saptılar ve saygınlık

mevkiinden uzaklaştılar. Kıyamet günü de bunlar, yaptıklarının akıbetini göreceklerdir. Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Terk ettik seni de istediğine*
*Belki usanırsın onlardan da dönersin*

De ki: *"Az sayıdaki birkaç gün faydalanın!"* Zira sevinç günleri kısadır ve gaflet eğlenceleri çabuk biter.

قُلْ لِعِبَادِيَ الَّذِينَ اٰمَنُوا يُقِيمُوا الصَّلٰوةَ وَيُنْفِقُوا مِمَّا رَزَقْنَاهُمْ سِرًّا وَعَلَانِيَةً مِنْ قَبْلِ اَنْ يَاْتِيَ يَوْمٌ لَا بَيْعٌ فِيهِ وَلَا خِلَالٌ ﴿٣١﴾

31- "İnanan kullarıma söyle, namazı dosdoğru kılsınlar, hiçbir alışveriş ve dostluğun bulunmadığı bir gün gelmeden önce kendilerine rızık olarak verdiğimiz şeylerden Allah yolunda gizlice ve açıktan harcasınlar."

Allah, bugün kulun noksansız rahatını namaza bağlamıştır. Çünkü namaz münacat yeridir. Hz. Peygamber (s.a.v.) de: *"Ey Bilal! Bizi namazla rahatlat"* buyurmuştur. Namaz aynı zamanda rızık kapısının da açılışıdır. Allah şöyle buyurur: ( وَاْمُرْ اَهْلَكَ بِالصَّلٰوةِ وَاصْطَبِرْ عَلَيْهَا لَا نَسْـَٔلُكَ رِزْقًا ) *"Ailene namazı emret ve kendin de ona devam et. Senden rızık istemiyoruz."* (Tâhâ, 20/132)

Bir de namazda kul, sırlarını ortaya dökerek Hak ile paylaşmaktadır. Aslında söylendiği gibi kardeşlerin buluşması kendileri için teselli iken kulun Allah ile münacatta bulunması ve başından geçenleri O'nun huzurunda ortaya dökmesi kim bilir nasıldır!

Şiir:

*De bana soluklanmanın dilleriyle*
*Nasılsın sen ve nasıldır durumun?*

( وَيُنْفِقُوا مِمَّا رَزَقْنَاهُمْ ) *"Kendilerine rızık olarak verdiğimiz şeylerden Allah yolunda harcasınlar."*

Allah onlara, dillerini zikrine, bedenlerini ibadetine, zamanlarını şükrüne, kalplerini irfanına, ruhlarını sevgisine, sırlarını da müşahedesine harcamalarını emretmiştir. Bu arada Allah, kime ne verdiyse kendisini sadece onunla mükellef kılar. Kuldan ancak kapısına gelmesini ve ona verdiği delille huzurunda durmasını istemektedir. Zavallı kul da şöyle der: *"Eğer bundan daha itaatkâr bir nefsim olsaydı, ben onunla gelirdim. Eğer bundan daha vefalı bir kalbim olsaydı onu da ruhumu ve sırrımı da feda ederdim."*

Şiir:

*Öyle bir ateşle ruhunu sana feda eder ki, olsaydı eğer onun*
*Ruhundan daha aziz bir şeyi, feda ederdi sana onu*

( مِنْ قَبْلِ اَنْ يَاْتِيَ يَوْمٌ لَا بَيْعٌ فِيهِ وَلَا خِلَالٌ ) *"Hiçbir alışveriş ve dostluğun bulunmadığı bir gün gelmeden önce."*

Bu mealde şu dizeler söylenmiştir:

*Dedim ki nefse: Eğer dönüş yapmak istiyorsan*
*Dön! Yol kapanmadan önce*

اَللّٰهُ الَّذِي خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ وَاَنْزَلَ مِنَ السَّمَٓاءِ مَٓاءً فَاَخْرَجَ
بِهٖ مِنَ الثَّمَرَاتِ رِزْقًا لَكُمْ وَسَخَّرَ لَكُمُ الْفُلْكَ لِتَجْرِيَ فِي الْبَحْرِ
بِاَمْرِهٖ وَسَخَّرَ لَكُمُ الْاَنْهَارَ ﴿٣٢﴾ وَسَخَّرَ لَكُمُ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ دَٓائِبَيْنِ
وَسَخَّرَ لَكُمُ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ ﴿٣٣﴾

32, 33- "Allah, gökleri ve yeri yaratan, gökten yağmur indiren ve onunla size rızık olarak türlü meyveler çıkaran, emri gereğince denizde yüzmek üzere gemileri emrinize veren, nehirleri de hizmetinize sunandır. O, âdetleri üzere hareket eden güneşi ve ayı sizin hizmetinize sunan, geceyi ve gündüzü sizin emrinize verendir."

Ayetlerin zahirî tefsirine göre; Allah, göğü kaldırıp yükseltmiş, yeri de altına yaymıştır. Yerde ise denizler yaratmış, nehirler akıtmış, ağaçlar yeşertmiş, ağaçlarda çiçekler var etmiş ve gökten bolca bir su yağdırmıştır. Meyvelerden kısımlar çıkartmış, onlarda türlü türlü vasıflar meydana getirmiş her birine ayrı ve özel bir tat vermiş ve olgunlaşmalarını belli bir zamana bağlamıştır.

İşârî tefsire göre ise Allah kalplerin göğünü akıl lambalarıyla süslemiş, onda tevhid güneşi ve irfan aynın doğmasını sağlamış, kalplere korku ve ümit denizlerini salıvermiştir. Aralarında ise bir engel yaratmış ve onlar birbirine karışmazlar. Ne korku ümide, ne de ümit korkuya ağır basar. Tıpkı şu hadiste yer aldığı gibi: *"Eğer müminin korkusuyla ümidi tartılsa eşit çıkarlar."* Bu, müminlerin avamı içindir. Havas için bunlar kabz ve bast, hassın hası için ise heybet ve ünsiyet ile beka ve fenadır.

Salimen geçmeleri amacıyla Allah bu denizlerde onlar için gemiler görevlendirmiştir. Bunlar muvaffakiyet, masumiyet, aydınlatma ve koruma gemileridir. Bu arada müridler için talep geceleri, sevenlerden dostluk ehli için coşku geceleri ve tövbe edenler için nefisle savaş geceleri de böyledir. Aynı şekilde, kesin inançları gün ortası gibi aydınlandığında ilmin lambasına ihtiyaçları kalmadığından ariflerin gündüzleri de öyledir.

وَاٰتٰيكُمْ مِنْ كُلِّ مَا سَاَلْتُمُوهُ وَاِنْ تَعُدُّوا نِعْمَةَ اللّٰهِ لَا تُحْصُوهَا اِنَّ الْاِنْسَانَ لَظَلُومٌ كَفَّارٌ ﴿٣٤﴾

34- "O, istediğiniz şeylerin hepsinden size verdi. Eğer Allah'ın nimetlerini saymaya kalkışsanız sayamazsınız. Şüphesiz insan çok zalimdir, çok nankördür."

Gayretlerinizin erişebildiği, isteğinize konu olan, gerçekleşmesini hayal ettiğiniz her şeye, sizi umduğunuzdan fazlasına kavuşturduk ve size onları ümit ettiğinizin üzerinde verdik. Allah şöyle

buyurur: ( ادْعُونِي اَسْتَجِبْ لَكُمْ ) *"Bana dua edin, duanızı kabul edeyim."* (Mü'min, 40/60)

Kıraat âlimlerinden kimisi, ayetteki ( مِنْ كُلِّ ما سألتموه ) *"istediğiniz şeylerin hepsinden"* ifadesinde yer alan ( كُلِّ ) *"külli"* kelimesini ( كُلٍّ ) *"küllin"* şeklinde tenvinli olarak okumuş ve ifadedeki ( ما ) *"mâ"* lafzını olumsuzluk edatı olarak kabul etmiştir. Yani Allah, size istemediklerinizden her şeyi vermiştir. Bu kıraate göre ayetin manası şöyle de olabilir: De ki: *"Ey Muhammed ümmeti! Siz benden istemeden önce ben size verdim. Bu, taat sahipleri içindir. Siz benden mağfiret dilemeden önce ben sizi bağışladım. Bu da, hata sahipleri içindir."*

Allah, günahkârın, işlediği hataları hatırladığı zaman dil yetersizliğini, mağfiret dilemesine engel olan ve dilinin tutulmasına yol açan mahcubiyeti bildiği için ona mağfiretini bahşetmiş, dilekte bulunma utancına lüzum bırakmamış ve lütufta bulunarak: *"Siz, benden mağfiret dilemeden önce ben sizi bağışladım"* buyurmuştur.

Lakin kulun kalbine, Hakk'ın kendisini ehil kıldığı irfan ne zaman yerleşir ve bu konuşma nasıl gerçekleşir? Kulun herhangi bir imkanı veya marifet ve ihsanı veya taat ve isyanı veya ibadet ve irfanı veya organ ve araçları bulunmadan ya da kul bir seçim, bir cisim yahut da bir eser olmadan önce bu gerçekleşir. Hayır, doğrusu şu şiirde söylendiği gibi olur:

*Geldi bana aşkı ben aşkı tanımadan önce*
*Buldu boş bir kalp ve yerleşiverdi*

( وَاِنْ تَعُدُّوا نِعْمَةَ اللّٰهِ لَا تُحْصُوهَا اِنَّ الْاِنْسَانَ لَظَلُومٌ كَفَّارٌ ) *"Eğer Allah'ın nimetlerini saymaya kalkışsanız sayamazsınız. Şüphesiz insan çok zalimdir, çok nankördür."*

Sizin şükrünüz çok az, O'nun nimeti ise bol bol iken şükrünüz O'nun nimetini nasıl karşılar ki! İnam denizlerinin yanında şükür damlasının nasıl sözü olur! Bilgileriniz, O'nun nimetlerinin ayrıntısı karşısında yetersiz, kavrayışlarınız da nimetlerini tahsil etmekten aciz kalır. Allah'ın, kulun üzerinden defettiği kudreti dâhilindeki

çeşitli sıkıntıların ve türlü belaların sonu yokken, sonsuz olan nimetlerini sınırlamak ve saymak nasıl mümkün olur?! Bir de nasıl ki, fayda vermek O'nun nimetlerinden ise belayı defetmek de aynı şekilde O'nun nimetlerindendir.

Bir yoruma göre de şükürde başarılı kılmak, Hakk'ın, kul üzerindeki nimetleri cümlesindendir. Buna göre kul, Allah'a şükretmek istediği zaman, diğer bir muvaffakiyet olmadan bunu yapması mümkün olmadığından, nimetlerden sadece şükrünü eda ettikleri kalır.

وَاِذْ قَالَ اِبْرٰهٖيمُ رَبِّ اجْعَلْ هٰذَا الْبَلَدَ اٰمِنًا وَاجْنُبْنٖي وَبَنِيَّ اَنْ نَعْبُدَ
الْاَصْنَامَ ﴿٣٥﴾ رَبِّ اِنَّهُنَّ اَضْلَلْنَ كَثٖيرًا مِنَ النَّاسِ فَمَنْ تَبِعَنٖي فَاِنَّهُ
مِنّٖي وَمَنْ عَصَانٖي فَاِنَّكَ غَفُورٌ رَحٖيمٌ ﴿٣٦﴾

35, 36- "Hani İbrahim demişti ki: 'Rabbim! Bu şehri güvenli kıl, beni ve oğullarımı putlara tapmaktan uzak tut. Rabbim! Çünkü o putlar, insanlardan bir çoğunu saptırdılar. Artık kim bana uyarsa o bendendir. Kim de bana karşı gelirse, şüphesiz sen çok bağışlayan, çok merhamet edensin.'"

Hz. İbrahim, nasıl ki Allah'tan Mekke'yi güvenli bir şehir yapmasını dilediyse, aynı şekilde kalbini de güvenli bir yer yapmasını istemiştir. Yani kalbindeki her şey ancak Allah ile olur.

( وَاجْنُبْنٖي وَبَنِيَّ اَنْ نَعْبُدَ الْاَصْنَامَ ) *"Beni ve oğullarımı putlara tapmaktan uzak tut."*

( الصنم ) *"Sanem-put"* Allah'tan başka tapılan şey demektir. Allah şöyle buyurmuştur: ( اَفَرَاَيْتَ مَنِ اتَّخَذَ اِلٰهَهُ هَوٰيهُ ) "Nefsini *ilâh edinen kimseyi gördün mü?!"* (Câsiye, 45/23) Bu arada herkesin putu, kendisini Allah'tan alıkoyan malı, çocuğu, makamı, taatı ve ibadetidir.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Hz. İbrahim, Kâbe'yi bina edince Allah'tan kendisini nefsini ve fiilini görmekten arındırması için yardım diledi.

- Hz. İbrahim, Allah'ın lütfunu görmek ile nefsinin muhtaçlığını görmek arasında tereddüt içerisinde idi. Bu esnada Allah'ın lütuf ve keremine kavuşunca bast halinin kemalinden şöyle dedi: ( وَاغْفِرْ لِاَبِٓي اِنَّهُ كَانَ مِنَ الضَّٓالّ۪ينَ ) *"Babamı da bağışla. Çünkü o, gerçekten yolunu şaşıranlardandır."* (Şu'arâ, 26/86)

Nefsinin muhtaçlığı noktasından bakınca da bu kez:

( وَاجْنُبْن۪ي وَبَنِيَّ اَنْ نَعْبُدَ الْاَصْنَامَ ) *"Beni ve oğullarımı putlara tapmaktan uzak tut"* dedi.

- Hz. İbrahim, Allah'tan başkasını görünce: *"Beni ve oğullarımı putlara tapmaktan uzak tut"* demiş, Allah'ın lütufunu ve rahmetini görünce de: *"Babamı da bağışla. Çünkü o, gerçekten yolunu şaşıranlardandır"* demiştir.

( فَمَنْ تَبِعَن۪ي فَاِنَّهُ مِنّ۪ي وَمَنْ عَصَان۪ي فَاِنَّكَ غَفُورٌ رَح۪يمٌ ) *"Artık kim bana uyarsa o bendendir. Kim de bana karşı gelirse, şüphesiz sen çok bağışlayan, çok merhamet edensin."*

( فَاِنَّهُ مِنّ۪ي ) *"O bendendir."* Yani bana uymuştur ve benim milletime mensuptur. Kim de bana karşı gelirse, bana muhalefet etmiş ve sana isyanda bulunmuştur.

( فَاِنَّكَ غَفُورٌ رَح۪يمٌ ) *"Şüphesiz sen çok bağışlayan, çok merhamet edensin."* Bu ifade, işaret yoluyla rahmet dilemek demektir. Yani onlara merhamet eyle.

Hz. İbrahim'e karşı gelen, Allah'a karşı gelmiş olmakla birlikte kendisi Allah'a hitaben: *"Kim sana karşı gelirse"* dememiş de: *"Kim bana karşı gelirse"* demiştir. Ancak bu ifade, hakkından vazgeçen, kendini savunmayan aksine muhataplarını merhametle karşılayan kimsenin payı olan bir hususta merhamet talebi içindir.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Peygamberimizin (s.a.v.) bu konudaki sözü, affı daha mükemmel dile getirmektedir. Zira o şöyle demiştir: *"Allah'ım! Kavmimi bağışla. Çünkü şüphe yok ki onlar bilmezler."* Oysa Hz. İbrahim affa

imada bulunarak: *"Şüphesiz sen çok bağışlayan, çok merhamet eden-sin"* demiştir.

- Hz. İbrahim, edep ölçüsüyle dua ettiği için doğrudan bağışlama ve merhamet dilemeyerek: *"Kim de bana karşı gelirse, şüphesiz sen çok bağışlayansın, çok merhamet edensin"* demiştir.

رَبَّنَٓا اِنّ۪يٓ اَسْكَنْتُ مِنْ ذُرِّيَّت۪ي بِوَادٍ غَيْرِ ذ۪ي زَرْعٍ عِنْدَ بَيْتِكَ الْمُحَرَّمِۙ رَبَّنَا لِيُق۪يمُوا الصَّلٰوةَ فَاجْعَلْ اَفْـِٔدَةً مِنَ النَّاسِ تَهْو۪ٓي اِلَيْهِمْ وَارْزُقْهُمْ مِنَ الثَّمَرَاتِ لَعَلَّهُمْ يَشْكُرُونَ ﴿٣٧﴾

37- "Rabbimiz! Ben çocuklarımdan bazısını senin kutsal evinin yanında ekin bitmez bir vadiye yerleştirdim. Rabbimiz! Namazı dosdoğru kılmaları için böyle yaptım. Sen de insanlardan bir kısmının gönüllerini onlara meylettir, onları ürünlerden rızıklandır. Umulur ki şükrederler."

Hz. İbrahim: *"Ben çocuklarımdan bazısını, senin kutsal evinin yanında ekin bitmez bir vadiye yerleştirdim"* sözüyle samimi tevekkülünü ve işi Allah'a havale etmedeki samimiyetini dile getirmektedir. Bu arada onlara şefkati, hayırlı işlerden önce komşuluğa bağlamış ve bu amaçla: *"Senin kutsal evinin yanında"* dedikten sonra: *"Namazı dosdoğru kılmaları için"* demiştir. Yani ben onları, kendi arzularını talep etmek için değil, senin hakkını dosdoğru yerine getirmeleri için yerleştirdim.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Hz. İbrahim onların, Allah'ın nimetinin gölgesinde olmak yerine inayetinin gölgesinde olmalarını tercih etmiştir.

( فَاجْعَلْ اَفْـِٔدَةً مِنَ النَّاسِ تَهْو۪ٓي اِلَيْهِمْ ) *"Sen de insanlardan bir kısmının gönüllerini onlara meylettir."*

Yani senin ibadetinle meşgul olsunlar diye bunu yap ve benim kavmimi yaşadıkları sürece vereceğin yeterli rızıkla ayakta tut.

( وَارْزُقْهُمْ مِنَ الثَّمَرَاتِ ) *"Onları ürünlerden rızıklandır."*

Çünkü kim, Allah'ın hakkını gözetirse, Allah da onun hakkını gözeterek kavmini ayakta tutar, onlar hakkındaki duasını kabul eder. Bütün yeryüzündeki kalpler de bu nesebi, onunla ilişkili olanları ve o evin sakinlerini sevmek üzere yaratılmış gibi olur.

( اَسْكَنْتُ مِنْ ذُرِّيَّتِي بِوَادٍ غَيْرِ ذِي زَرْعٍ ) *"Ekin bitmez bir vadiye yerleştirdim."*

Bir yoruma göre; yani ben onları bu vadiye yerleştirdim ki, kalpleri başkalarına bağlanmasın, düşünce ve mana âlemleri bir şeyle meşgul olmasın. Bu itibarla onlar, senin kapının önüne atılmışlardır, huzurunda koruma altındadırlar ve hükmüne bağlıdırlar. Eğer sen, onları gözetirsen, onlara yetersin ve onlar, senin yaratıklarının en azizleri olurlar. Şayet onları uzaklaştırıp kovarsan, bu kez yaratıklarının en zayıfları ve en zelilleri olurlar.

رَبَّنَٓا اِنَّكَ تَعْلَمُ مَا نُخْفِي وَمَا نُعْلِنُ وَمَا يَخْفٰى عَلَى اللّٰهِ مِنْ شَيْءٍ فِي الْاَرْضِ وَلَا فِي السَّمَٓاءِ ﴿٣٨﴾

38- "Rabbimiz! Şüphesiz sen, gizlediğimizi de açığa vurduğumuzu da bilirsin. Yerde ve gökte hiçbir şey Allah'a gizli kalmaz."

Sen gaybın bilgisini kendine özgü kıldın. Bu sebeple bilgiye konu olabilen hiçbir şey senin ilminin dışına çıkamaz. Benim halim de sana gizli olmayıp nasıl biliyorsan öyledir. Sen benim gizlimi de açığımı bilirsin. Bu çerçevede hakikati bilen kimse başkalarının etkilerinden müsterih olur, kalbi fikirlerin çatışmasından ve varlıkların başkalarının eseri olduğuyla ilgili dağınıklıktan kurtulur.

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِي وَهَبَ لِي عَلَى الْكِبَرِ اِسْمٰعِيلَ وَاِسْحٰقَ اِنَّ رَبِّي لَسَمِيعُ الدُّعَٓاءِ ﴿٣٩﴾

39- "Hamd, iyice yaşlanmış iken bana İsmail'i ve İshak'ı veren Allah'a mahsustur. Şüphesiz Rabbim, duayı işitendir."

Allah Hz. İbrahim'i, yaşlılık halinde kendisine çocuk vermekle, mutlu kılmıştır. Bu, bir nevi mucize mesabesinde olduğundan Allah'a hamd etmiştir. Hz. İbrahim'in bu hamd sözü, daha önceki ayetlerde adı geçen nimetlerini ve nurlarıyla ona ikramda bulunmasını Allah'tan dilemesinin ardından geldiği için, niyaz ve nimeti nimetle talep etmek anlamındadır. Böylece Hz. İbrahim, sanki şöyle demiş olmaktadır:

*"Nasıl ki yaşlılık halinde çocuk bahşetmekle bana ikramda bulunduysan, senden dilediğim bu şeylerle de bana ikramda bulun."*

Bir yoruma göre de bu söz, Hz. İbrahim'in şunu demek istediğine işaret etmektedir: *"Nasıl ki bana lütufta bulunup yaşlılık halinde bana bu çocukları bahşettiysen, nimetin tam olması için bizi putlara tapmaktan da uzaklaştır."* Nitekim: ( اِنَّ رَبّ۪ي لَسَم۪يعُ الدُّعَٓاءِ ) *"Şüphesiz Rabbim, duayı işitendir"* sözünde de bu cümleye işaret bulunmaktadır.

رَبِّ اجْعَلْن۪ي مُق۪يمَ الصَّلٰوةِ وَمِنْ ذُرِّيَّت۪ي رَبَّنَا وَتَقَبَّلْ دُعَٓاءِ ﴿٤٠﴾

40- "Rabbim! Beni namaza devam eden bir kimse eyle. Soyumdan da böyle kimseler yarat. Rabbim! Duamı kabul eyle."

( رَبِّ اجْعَلْن۪ي مُق۪يمَ الصَّلٰوةِ ) *"Rabbim! Beni namaza devam eden bir kimse eyle"* sözü, kulların fiillerinin mahlûk olduğuna işaret etmektedir. Yani, namazımı var eyle. Bu anlamdaki "جَعْل" lafzıyla ( خلق ) *"yaratmak"* lafzı aynı anlamdadır. Bu itibarla Allah, onu namaz kılan biri eylediği zaman bu, ona bir namaz var eylemesi anlamına gelir.

( وَمِنْ ذُرِّيَّت۪ي ) *"Soyumdan da."* Yani onlardan da namaz kılan bir kavim var eyle. Çünkü Allah, başka bir ayetteki sözüyle Hz. İbrahim'e şunu bildirmiştir: ( لَا يَنَالُ عَهْدِي الظَّالِم۪ينَ ) *"Benim verdiğim söz, zalimleri kapsamaz."* (Bakara, 2/124)

رَبَّنَا اغْفِرْ ل۪ي وَلِوَالِدَيَّ وَلِلْمُؤْمِن۪ينَ يَوْمَ يَقُومُ الْحِسَابُ ﴿٤١﴾

41- "Rabbimiz! Hesap görülecek günde, beni, ana-babamı ve inananları bağışla."

Hz. İbrahim bu duayı, babasının iman etmeyeceğini bilmeden önce yapmıştır.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Duayı kabul etmek, Allah'ın lütfunun bir başlangıcıdır. Oysa kulun ne denli yüksek mertebeli olursa olsun, hiç kimsenin duasına yaslanmaması gerekir. Aksine kulun yapması gereken, kalbini Allah'a bağlamasıdır. Nitekim Hz. İbrahim'in duasından daha mükemmel bir dua ve onun babasına gösterdiği özenden daha mükemmel bir özen bulunmamaktadır. Ancak bu dua babasına fayda vermemiş ve Allah, onu babasına şefaatçi kılmamıştır.

- Duasını terk etmesi veya Allah'ın duasını kabul edeceğine dair ümidini kesmesi kula uygun düşmez. Çünkü Allah'ın dostu olan Hz. İbrahim, ebeveynine dua etti ve duası kabul edilmedi. Sonra duadan vazgeçmedi ve kabul edilmediği esnada da dilekte bulundu. Bu itibarla, Mevlâ'sı bir konuda duasını kabul etmediği takdirde, bu kul için bir kusur ve onuru kırıcı bir durum olmaz. Zira dua, kulun yapması gereken bir ibadettir. Kabul ise Hakk'ın bir lütfu olup onu yapabilir de yapmayabilir de.

وَلَا تَحْسَبَنَّ اللّٰهَ غَافِلًا عَمَّا يَعْمَلُ الظَّالِمُونَ اِنَّمَا يُؤَخِّرُهُمْ لِيَوْمٍ
تَشْخَصُ فِيهِ الْاَبْصَارُ ﴿٤٢﴾

42- "Sakın, Allah'ı zalimlerin yaptıklarından habersiz sanma! Allah, onları ancak gözlerin dehşetle bakakalacağı bir güne erteliyor."

Bu, zalimlere bir uyarı, mazlumlara ise bir tesellidir. Zira mazlum, karşılaştığı belayı Allah'ın bildiğinden emin olduğu zaman, çilesi kalbine hafif gelir ve ona katlanmakla yükümlü olur.

Bu arada zulüm birkaç çeşittir:

Nefse zulüm, hatayı taatın yerine koymaktır. Kalbe zulüm, kötü meyilleri içine yerleştirmektir. Ruha zulüm ise, onu yaratıkların sevgisine tahsis etmektir.

Bir yoruma göre; zalimlerden biri de şeytandır. Şöyle ki, mümin kul, onun tarafından zulme uğratılmaktadır. Ancak Allah, yarın o kulun hakkını ondan alacaktır. Bu, eğer kul bugün ona uymaz, çaba harcayarak ve vesveselerini terk ederek onu başından defederse olacaktır. (اِنَّمَا يُؤَخِّرُهُمْ لِيَوْمٍ تَشْخَصُ فِيهِ الْاَبْصَارُ) *"Allah, onları ancak gözlerin dehşetle bakakalacağı bir güne erteliyor."*

Bu durum, müminlerin avamını teselli etmek içindir. Allah, onların kalplerini gelecekte o zalimlerden intikam almaya takılı kılmıştır. Havassa gelince onlar, Allah'ın kendilerini ve hallerini bildiğini bildikleri için o zalimleri affeder ve bununla yetinirler. Havassın havassı ise zalimlerin de Allah'ın kulları olduklarını bildikleri için onlara mağfiret de dilemedikçe sadece zulümlerini affetmekle hoşnut olmazlar. Tıpkı Hz. Peygamber'in (s.a.v.): *"Allah'ım! Kavmimi bağışla. Çünkü şüphe yok ki onlar bilmezler"* buyurduğu gibi.

Şiir:

*Hoşnut olmadılar sadece hatayı affetmekle*
*Hatalının avucunu fazlasıyla dolduruncaya kadar*

Tevhid sahiplerine gelince; bunlar, âlemi inşa edenin Allah olduğunu, kendisinden başka hiçbir yoktan var edenin bulunmadığını bildikleri için hiç kimseyle aralarında ne bir hesaplaşma, ne sitemleşme, ne de hak talebi bulunur. Çünkü onlar, zanda ve hesapta Allah'tan başkasını var kabul etmeyi şirk sayarlar.

مُهْطِعِينَ مُقْنِعِي رُؤُسِهِمْ لَا يَرْتَدُّ اِلَيْهِمْ طَرْفُهُمْ وَاَفْـِٔدَتُهُمْ هَوَآءٌ ﴿٤٣﴾

43- "O gün başlarını dikerek koşarlar. Gözleri kendilerine bile dönmez, kalpleri de bomboştur."

وَاَنْذِرِ النَّاسَ يَوْمَ يَاْتِيهِمُ الْعَذَابُ فَيَقُولُ الَّذِينَ ظَلَمُوا رَبَّنَآ
اَخِّرْنَآ اِلٰٓى اَجَلٍ قَرِيبٍ نُجِبْ دَعْوَتَكَ وَنَتَّبِعِ الرُّسُلَ اَوَلَمْ تَكُونُوٓا
اَقْسَمْتُمْ مِنْ قَبْلُ مَا لَكُمْ مِنْ زَوَالٍ ﴿٤٤﴾

44- "İnsanları, kendilerine azabın geleceği gün ile uyar! Zira o gün zalimler: 'Ey Rabbimiz! Yakın bir süreye kadar bizi ertele de senin çağrına uyalım ve peygamberlerin izinden gidelim' diyecekler. Onlara şöyle denilecek: 'Daha önce siz, sonunuzun gelmeyeceğine yemin etmemiş miydiniz?'"

Onlar, işin başında bozgunculuk yaptılar ve görevlerinde kusur işlediler. Aynı zamanda, delilin aleyhlerinde sabit olması için ne hallerindeki bozulmanın telafisi vardı ne de özürlerinin kabulü söz konusuydu. Böylece içlerinden suçlu olan rezil oldu, kâfir olan hüsrana uğradı ve haklarındaki hüküm kesinleşti.

وَسَكَنْتُمْ فِي مَسَاكِنِ الَّذِينَ ظَلَمُوٓا اَنْفُسَهُمْ وَتَبَيَّنَ لَكُمْ كَيْفَ فَعَلْنَا بِهِمْ وَضَرَبْنَا لَكُمُ الْاَمْثَالَ ﴿٤٥﴾

45- "Kendilerine zulmedenlerin yerlerinde oturdunuz. Onlara ne yaptığımız ise belli olmuştu. Size misaller de vermiştik."

Onları cezaya çarptırdık ve bundan size ibret alacağınız şeyler gösterdik. Oysa siz onların yollarını izlediniz, yaptıklarının benzerini yaptınız ve size mühlet vermemize aldandınız. O halde daha önce yaptıklarınızın cezası olarak size yaptığımız muameleyi bizden bekleyin.

Bir yoruma göre de nefsine düşkün fâsık kimselerle hemhal olmak ve komşuluk yapmak, fiillerinde onlara iştirak etmek demektir. Bu sebeple, bunu yapan kimse, tıpkı onların geleceği gibi bir gelecek bekler. Onları izleyen kimse, tıpkı onlar gibi, helak uçurumuna doğru alçalmış olur.

وَقَدْ مَكَرُوا مَكْرَهُمْ وَعِنْدَ اللّٰهِ مَكْرُهُمْ وَاِنْ كَانَ مَكْرُهُمْ لِتَزُولَ مِنْهُ الْجِبَالُ ﴿٤٦﴾

46- "Onlar, gerçekten tuzaklarını kurmuşlardı. Tuzakları yüzünden dağlar yerinden oynayacak olsa bile, tuzakları Allah katındadır."

فَلَا تَحْسَبَنَّ اللّٰهَ مُخْلِفَ وَعْدِهٖ رُسُلَهُ اِنَّ اللّٰهَ عَزِيزٌ ذُو انْتِقَامٍ ﴿٤٧﴾

47- "Sakın Allah'ın, peygamberlerine verdiği sözden cayacağını sanma! Şüphesiz Allah, mutlak güç sahibidir, intikam sahibidir."

Yani Allah'ın peygamberlerine verdiği sözü tutmayacağın zannetme. Çünkü O, doğru söylediği için sözünden caymaz. Ancak Allah, mülkündeki hakkından dolayı söz verdiği gibi onları cezalandırabilir. Aynı zamanda O, mutlak güç sahibi olup veli bile olsa hiç kimse kendisine ulaşamaz. O, intikam sahibi olup (...) olsa hiç kimse ondan kurtulamaz.

يَوْمَ تُبَدَّلُ الْاَرْضُ غَيْرَ الْاَرْضِ وَالسَّمٰوَاتُ وَبَرَزُوا لِلّٰهِ الْوَاحِدِ الْقَهَّارِ ﴿٤٨﴾

48- "O gün, yer başka bir yere, gökler de başka göklere dönüştürülür ve insanlar bir ve kahhâr olan Allah'ın huzuruna çıkarlar."

Yer ve göklerin mahiyeti değişmez, şekli değişir. Yıldızlar dağılıp ışıkları söndüğü ve gök yarıldığı zaman da böyledir. Bir yoruma göre; Allah bunların mahiyetlerini değiştirmemiş, sadece sevinçli ve sıkıntılı durumları arasındaki farklılığa göre insanların zaman ve mekân algısını değiştirmiştir. Mesela, esenlikten belaya düşen veya musibetten esenliğe kavuşan kimsenin: *"Zaman ve vakit değişti (Devir değişti)"* demesi gibi.

Rivayete göre; iki oğlundan biri diğerini öldürünce Hz. Âdem şöyle demiştir (şiir):

*Değişti memleket ve üzerindekiler*
*Tozlu dumanlıdır yeryüzü ve çirkin*

Bu kıssa çerçevesinde, bast sahibi olup kabz haline döndürülen ve yakın dostluğa sahip iken bundan engellenen kimse hakkında: *"Ona göre yer değiştirildi"* denmesi yerinde olur.

Şiir:

*Ne insanlar aşina olduğum insanlar*
*Ne memleket tanıdığım o memleket*

Aynı şekilde mürid olan kul da bir durgunluk veya gevşeklik yaşadığı zaman onun için güneş tutulmuş, yer sarsılmış, gündüz gece, gece de keder ve acı olmuştur. Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Değildi artık dünya düzlük ve değildi kuşluk vakti*
*Aydınlık ve ferah, ve soğuk değildi hayat suyu*

وَتَرَى الْمُجْرِمِينَ يَوْمَئِذٍ مُقَرَّنِينَ فِي الْاَصْفَادِ ﴿٤٩﴾ سَرَابِيلُهُمْ مِنْ
قَطِرَانٍ وَتَغْشٰى وُجُوهَهُمُ النَّارُ ﴿٥٠﴾ لِيَجْزِيَ اللّٰهُ كُلَّ نَفْسٍ مَا كَسَبَتْ
اِنَّ اللّٰهَ سَرِيعُ الْحِسَابِ ﴿٥١﴾

49, 50, 51- "O gün, suçluları zincirlere vurulmuş görürsün. Gömlekleri katrandandır. Yüzlerini de ateş bürüyecektir. Allah, herkese kazandığının karşılığını vermek için böyle yapar. Şüphesiz Allah, hesabı çabuk görendir."

Kelepçeler onları bir araya getirir, zincirler onları bağlar. Katran gömlekleri, kaynar su içecekleridir. Ve cehennem onları kuşatmıştır. İşte bu, Allah'ına karşı çıkan kimsenin cezasıdır.

هٰذَا بَلَاغٌ لِلنَّاسِ وَلِيُنْذَرُوا بِهٖ وَلِيَعْلَمُوٓا اَنَّمَا هُوَ اِلٰهٌ وَاحِدٌ وَلِيَذَّكَّرَ
اُولُوا الْاَلْبَابِ ﴿٥٢﴾

52- "Bu Kur'an, kendisiyle uyarılsınlar, Allah'ın ancak tek ilâh olduğunu bilsinler ve akıl sahipleri düşünüp öğüt alsınlar diye insanlara bir bildiridir."

Deliller açık, alametler belirgin, sebepler ortada, mühlet geniş, Hz. Peygamber (s.a.v.) tebliğci ve mükellefiyetin gereğini yerine

getirme imkânı elverişlidir. Lakin takdir ezelde öne geçmiş olup muvaffakiyetin önü tıkalıdır. Allah da dilediğini yapar. O halde ibret alan kurtulur, gafil kalan uçuruma yuvarlanır. Emir ise önce de sonra da Allah'ındır. En doğrusunu da Allah bilir.

سورة الْحِجْرِ

# HİCR SÛRESİ

(Hicr Sûresi 99 âyettir. Yalnız 87. âyet Medine'de, diğerleri Mekke'de Yusuf Sûresi'nden sonra inmiştir. 80. âyette geçen ve sûreye ad olan "Hicr", Kuzey Arabistan'da bir bölgenin ve Salih (a.s)'in ülkesinin adıdır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

Besmele'deki "vasıl elifi (hemzesi)", düşürülmesine sebep bulunmadığı halde düşürülmüştür. Başındaki ( با ) "*bâ*" harfi de gerekçesi olmadığı halde biraz uzunca yazılmaktadır. Bunların yapılması, yerinde bırakmak ve düşürmenin gerekçesiz olduğunun bilinmesi içindir. Hal böyle olunca, bunu kabul eden de gerekçenin gereği olarak kabul etmemiş, reddeden de gerekçeye uymak için reddetmemiştir.

Eğer "Besmele'deki 'elif'in düşürülmesinin gerekçesi çokça yazılmasıdır" denilse bu takdirde ( با ) "*bâ*" harfi de çokça yazıldığı halde uzunluğunda fazlalık bulunması problem olur. Eğer: ( با ) "*bâ*" harfinin şeklindeki fazlalığın gerekçesi Allah'ın ismine bitişik olmasının bereketidir denilse, bu takdirde de "vasıl elifi (hemzesi)"nin hazfı problem olur. Çünkü o da Allah'ın ismine bitişik olarak yazılır. O halde bunun yegâne izahı, yerinde bırakmanın ve düşürmenin gerekçesiz olduğudur. Allah dilediğini yükseltir, dilediğini de engeller (alçaltır).

الٓرٰ تِلْكَ اٰيَاتُ الْكِتَابِ وَقُرْاٰنٍ مُبِينٍ ﴿١﴾

1- "Elif Lâm Râ. Bunlar, kitabın ve apaçık olan Kur'an'ın âyetleridir."

Allah, onlara hitapta duydukları kelimeler halindeki düzenli harflerden farklı olarak bu mukattaa -kesik- harfleri duyurdu ve bunun üzerine onlar, her şeyden vazgeçerek bu harflere kulak verdiler. Bu sırada Kur'an, duydukları bu harflerin kitabın ayetleri olduğuna dikkatlerini çekti. Bu sayede sağduyuları işleyip kulakları, onun dediklerini dinlemeye hazır hale gelince Allah, onlara: ( تِلْكَ اٰيَاتُ الْكِتَابِ وَقُرْاٰنٍ مُبِينٍ ) "*Bunlar, kitabın ve apaçık olan Kur'an'ın âyetleridir*" dedi.

Bu ayette Allah, Kur'an'ı "apaçık" diye nitelemiştir. Çünkü Kur'an, müminlere kalplerini sükûnete kavuşturan, müridlere ümitlerini güçlendiren, ihsan ehline arzularını harekete geçiren, özlem duyanlara gönül dünyalarının sevdalarını canlandıran hususları açıklarken, Hz. Peygamber'e de diğer peygamberlerin istedikten sonra alıkonuldukları şeyleri kendisi için gerçekleştirdiğini açıklamıştır. Bilindiği üzere Hz. Mûsâ: ( قَالَ رَبِّ اَرِنٖي اَنْظُرْ اِلَيْكَ ) "*Rabbim! Bana kendini göster, sana bakayım*" (A'râf, 7/143) şeklinde dilekte bulunduktan sonra Allah kendisine: ( قَالَ لَنْ تَرٰينٖي ) "*Beni göremeyeceksin*" buyurmuştur.

رُبَمَا يَوَدُّ الَّذٖينَ كَفَرُوا لَوْ كَانُوا مُسْلِمٖينَ ﴿٢﴾

2- "İnkâr edenler: 'Keşke Müslüman olsaydık' diye çok arzu edeceklerdir."

Eğer onlar, kıyamet günü kendi hallerini ve Müslümanların durumunu bilselerdi nasıl mutsuz olacaklarını ve hangi zehri içeceklerini anlarlardı.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Bilgiler zorunlu hale geldikten sonra azap, kimilerinin canını yaktı ve hasret kalplerini parça parça etti.

- Eğer onlar kendi hallerini ve müminlerin durumunu bilselerdi, kendilerini helak edecek olan azabın gerçekleşeceğini anlarlardı. Çünkü Allah bu ayetin ardından şöyle buyurmaktadır:

ذَرْهُمْ يَأْكُلُوا وَيَتَمَتَّعُوا وَيُلْهِهِمُ الْاَمَلُ فَسَوْفَ يَعْلَمُونَ ﴿٣﴾

3- "Bırak onları yesinler, yararlansınlar, emelleri onları oyalayadursun. İleride bilecekler."

Herkesin değeri, gayreti ölçüsündedir. Buna göre gayreti yemek ve hayvani yeteneklerden yararlanmakla sınırlı olduğu zaman o kimse hesaba katılmaz ve aklın ölçülerine göre yükümlü kılınmaz. Zira yükümlülük, ardından onurlandırılmayı getirir. Yarın ise onlar gerçeği anlayacaklardır.

وَمَٓا اَهْلَكْنَا مِنْ قَرْيَةٍ اِلَّا وَلَهَا كِتَابٌ مَعْلُومٌ ﴿٤﴾

4- "Helak ettiğimiz her memleketin mutlaka bilinen bir yazgısı vardır."

مَا تَسْبِقُ مِنْ اُمَّةٍ اَجَلَهَا وَمَا يَسْتَاْخِرُونَ ﴿٥﴾

5- "Hiçbir toplum ecelini geçemez ve ondan geri de kalamaz."

Eceller bellidir, durumlar taksim edilmiştir, ilahi irade kâinatta hükmünü icra etmekte ve gizli hiçbir şey Hakk'a saklı kalmamaktadır.

وَقَالُوا يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ي نُزِّلَ عَلَيْهِ الذِّكْرُ اِنَّكَ لَمَجْنُونٌ ﴿٦﴾

6- "Dediler ki: 'Ey kendisine zikir indirilen kimse! Sen mutlaka delisin.'"

Delilik, öyle bir olgudur ki, sahibinin, akıl sahiplerinin yapabildikleri tespiti yapamamasına yol açar. Aslında Hz. Peygamber'e (s.a.v.) bunu isnat edenler, hakikatleri karıştıracak niteliğe sahip

olduklarından kendisini niteledikleri delilik vasfına daha da layıktırlar. Bu yönleriyle onların durumu şu atasözünde söylendiği gibidir: *"Kendi hastalığını benim üzerime attı ve aradan sıyrıldı."*

لَوْ مَا تَأْت۪ينَا بِالْمَلٰٓئِكَةِ اِنْ كُنْتَ مِنَ الصَّادِق۪ينَ ﴿٧﴾ مَا نُنَزِّلُ الْمَلٰٓئِكَةَ اِلَّا بِالْحَقِّ وَمَا كَانُوٓا اِذًا مُنْظَر۪ينَ ﴿٨﴾

7, 8- "'Eğer doğru söyleyenlerden isen, bize melekleri getirsene!' Biz, melekleri ancak hak ve hikmete uygun olarak indiririz. O zaman da onlara mühlet verilmez."

Hz. Peygamber'in (s.a.v.) mucizelerle desteklenmesiyle gerekçeleri yok edilen inkârcılar, bu kez melekler getirmesini önerdiler. Böylece onlar, edepsizliklerinden dolayı sitemi hak etmektedirler. Bu arada Allah, şöyle bir prensip koymuştur: Âdemoğullarının melekleri gözleriyle görmeleri, basiret sahibi oldukları zaman gerçekleşir. Çünkü o zaman marifet zorunlu hale gelmektedir. Öte yandan Allah'ın ezeli ilminde onların helak vakitleri henüz gelmemiştir. Çünkü Allah, onların sulblerinde gelecekte O'na iman edecek kimselerin bulunduğunu bilmektedir.

اِنَّا نَحْنُ نَزَّلْنَا الذِّكْرَ وَاِنَّا لَهُ لَحَافِظُونَ ﴿٩﴾

9- "Şüphesiz o zikri biz indirdik biz. Onun koruyucusu da elbette biziz."

Tevrat'ı indirirken Allah, onu koruma görevini İsrail oğullarına vermiştir. Bu, Allah'ın kitabını korumakla görevlendirilmiş olmaları sebebiyledir. Bunun üzerine onlar, kitabı tahrif edip değiştirdiler. Bu defa Allah Furkan'ı indirdi ve koruyucusunun kendisi olduğunu bildirdi. Allah, onu okuyucularıyla korumaktadır. Bu itibarla okuyucuların kalpleri, kitabının hazineleridir. Allah ise kitabını zayi etmez.

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ ف۪ي شِيَعِ الْاَوَّل۪ينَ ﴿١٠﴾ وَمَا يَأْت۪يهِمْ مِنْ رَسُولٍ اِلَّا كَانُوا بِه۪ يَسْتَهْزِؤُ۫نَ ﴿١١﴾ كَذٰلِكَ نَسْلُكُهُ ف۪ي قُلُوبِ الْمُجْرِم۪ينَ ﴿١٢﴾ لَا يُؤْمِنُونَ بِه۪ وَقَدْ خَلَتْ سُنَّةُ الْاَوَّل۪ينَ ﴿١٣﴾

**10, 11, 12, 13- "Andolsun, senden önceki topluluklara da peygamber gönderdik. Onlar, kendilerine gelen her peygamberle alay ediyorlardı. Aynı şekilde biz onu, suçluların kalbine sokarız. Önceki milletlerin kanunu geçmişken onlar buna inanmazlar."**

Allah, onların âdetlerinin yalanlama olduğunu, kendisinin de onlarla ilgili cezalandırma prensibini sürdürdüğünü bildirdikten sonra şöyle buyurmaktadır:

( كَذٰلِكَ نَسْلُكُهُ فِي قُلُوبِ الْمُجْرِمِينَ ) *"Aynı şekilde biz onu, suçluların kalbine sokarız."*

Onlar iman etmezler. Çünkü Allah, kalplerini hakikati görmekten engellemiş, mahrumiyetleri sebebiyle hak yolu izlemelerinin önünü kesmiş ve mucizeleri kendilerine apaçık gösterse bile onların ancak daha fazla haddi aşacaklarını ve despotlaşacaklarını, hakkında ezelde şekavet hükmü kesinleşen kimsenin de zaman geçtikçe ancak bu hükmün öngördüğü şekaveti fazlasıyla yaşayacağını açıklamıştır.

وَلَوْ فَتَحْنَا عَلَيْهِمْ بَابًا مِنَ السَّمَآءِ فَظَلُّوا فِيهِ يَعْرُجُونَ ﴿١٤﴾
لَقَالُوٓا اِنَّمَا سُكِّرَتْ اَبْصَارُنَا بَلْ نَحْنُ قَوْمٌ مَسْحُورُونَ ﴿١٥﴾

**14, 15- "Onlara gökten bir kapı açsak da oradan yukarı çıkmaya koyulsalar, yine: 'Gözlerimiz döndürüldü, biz herhalde büyülenmiş bir toplumuz' derlerdi."**

Kaderi çizilen kimse, yükümlülüğün gereği olarak davet edilmiş ve tekvinin gereği olarak hakkında hüküm konulmuştur. Hal böyle olunca nasihat ne zaman ona fayda verir ve vaaz ne zaman onu etkileyebilir?! Hayır! Bu kimsenin basireti kapalı ve ayağı terk edilmişlik zinciriyle sıkıca bağlıdır. Bu sebeple o, nasihati musibet, hakikati de aldatma diye yorumlamaktadır.

وَلَقَدْ جَعَلْنَا فِي السَّمَآءِ بُرُوجًا وَزَيَّنَّاهَا لِلنَّاظِرِينَ ﴿١٦﴾

16- "Andolsun, biz gökte burçlar yaptık ve onları bakanlar için süsledik."

Burçlardan maksat gökyüzü için süs olan yıldızlardır. Sonra o yıldızlar, şeytanlara atılan taşlardır.

وَحَفِظْنَاهَا مِنْ كُلِّ شَيْطَانٍ رَجِيمٍ ﴿١٧﴾ اِلَّا مَنِ اسْتَرَقَ السَّمْعَ فَاَتْبَعَهُ شِهَابٌ مُبِينٌ ﴿١٨﴾

17, 18- "Onu, kovulmuş her şeytandan koruduk. Ancak kulak hırsızlığı eden olursa, onu da parlak bir ateş takip etmektedir."

Şeytanlar kulak hırsızlığı yapmak istedikleri zaman yıldızlar onlara atılan taşlar olur. Aynı şekilde kalplerin de marifetlerden ibaret olan yıldızları vardır ki bunlar, aynı zamanda şeytanlara atılan taşlardır. Hal böyle olunca eğer şeytan ve askerleri, velilerden birinin kalbine yaklaşırlarsa, o velinin aklının yıldızları, ilminin ayları ve tevhidinin güneşleri onları yakar hatta yok eder.

Bir de nasıl ki gökyüzünün yıldızları, baktıklarında bakanlar için bir süs ise ariflerin kalpleri de gökteki melekler onlara baktıkları zaman bir süstür.

وَالْاَرْضَ مَدَدْنَاهَا وَاَلْقَيْنَا فِيهَا رَوَاسِيَ وَاَنْبَتْنَا فِيهَا مِنْ كُلِّ شَيْءٍ مَوْزُونٍ ﴿١٩﴾

19- "Yeri de yaydık, ona sabit dağlar yerleştirdik ve orada ölçülü her şeyi bitirdik."

Nefisler abidlerin ibadetlerinin zemini, ariflerin kalpleri marifetin zemini, iştiyak sahiplerinin ruhları da sevginin zeminidir. Korku ve ümit ise o zeminlerdeki sabit dağlardır ki, arzu ve sakınma da böyledir. Bir yoruma göre de Allah'ın yerde sabit kıldığı dağlar veliler olup insanlar, başlarına bir korku geldiği zaman, onlarla ayakta dururlar. O dağların bazıları da dini ayakta tutan âlimlerdir. Bu

çerçevede usul âlimleri, dinin temel dayanaklarıdır. Fakihler de dinin düzenli işleyişini sağlarlar.

Şiir:

*Hasret çekerim ben öyle birilerinin ayrılığından ki*
*Onlardır lambalar, güven ve yağmur bulutu*

( وَاَنْبَتْنَا فِيهَا مِنْ كُلِّ شَيْءٍ مَوْزُونٍ ) *"Orada ölçülü her şeyi bitirdik."*

Nasıl ki Allah, yerde beyaz çiçekleri olan türlü bitkilerden bitirmiş ise kalplerde de türlü nurlar yaratmıştır. Yakîn nuru, irfan nuru, huzur nuru, müşahede nuru, tevhid nuru vs. bu nurlardan bazılarıdır.

وَجَعَلْنَا لَكُمْ فِيهَا مَعَايِشَ وَمَنْ لَسْتُمْ لَهُ بِرَازِقِينَ ﴿٢٠﴾

20- "Orada hem sizin için hem de sizin rızık vermediğiniz kimseler için geçimlikler meydana getirdik."

Her birinin geçim vasıtası farklıdır. Mesela müridlerin geçimi Allah'ın yönelişiyle, ariflerin geçimi de Allah'ın nimetleriyle güzelleşmektir.

وَاِنْ مِنْ شَيْءٍ اِلَّا عِنْدَنَا خَزَآئِنُهُ وَمَا نُنَزِّلُهُ اِلَّا بِقَدَرٍ مَعْلُومٍ ﴿٢١﴾

21- "Hiçbir şey yoktur ki, hazineleri yanımızda olmasın. Biz, onu ancak belli bir ölçüyle indiririz."

Allah'ın hazineleri, hakikatte kudreti dahilinde olan şeyler olup O, hâdis -sonradan yaratılmış- olma özelliğine sahip her şeye kadirdir.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Allah'ın yeryüzündeki hazineleri ariflerin kalpleridir. Hazinede ise her türden mücevherler bulunur. Mesela aklın gerçekleri, Allah'ın kimilerinin kalplerinde yerleştirdiği mücevherler, ilmin incelikleri marifetin harikalarının mücevherleri, ariflerin mana âlemleri

Allah'ın sırrının yerleri, nefisler Allah'ın verdiği muvaffakiyetin hazineleri, kalpler hakikatinin tecelli ettiği hazineler, dil de zikrinin hazinesidir.

- Her kim, varlıkların hazinelerinin Allah katında olduğunu bilirse, halktan ümidini keserek, kalbinde sadece Allah'a yer vererek ve Allah'tan başkasıyla ilgilenmekten arınarak, insanlardan şefkat dilemek için kapılarına gidip gelmekten geri adım atar ve yeryüzünde rızkını Allah katındaki bu hazinelerden elde etmek üzere dolaşır.

( وَمَا نُنَزِّلُهُ اِلَّا بِقَدَرٍ مَعْلُومٍ ) *"Biz, onu ancak belli bir ölçüyle indiririz."*

İlahi taksimatı bilen kimse, arayış çabasından kurtulmuş olur. Çünkü malum olan değişmez, kısmet de artmaz ve eksilmez. Bu arada hiç kimseye borcu olmayan Allah, kulun talebini yerine getirme kudretine sahip olması sebebiyle hiçbir yükümlülüğün altına girmiş olmaz.

Bir yoruma göre; Allah, fakirlerin kalplerini, zenginlerin kendilerine bir şeyler vermelerinden dolayı minnetlerini çekmekten, zenginleri de fakirlerin kendilerinden bir şeyler istemesinden kurtararak rahata kavuşturmuştur. Böylece fakir, kalbini Allah'tan mahlûka çevirmez ve hiç kimsenin minnetine inanmaz. Çünkü mülkün tamamı Allah'ındır. Emir Allah'ın elindedir ve Allah'tan başka yoktan var etme gücüne sahip hiç kimse yoktur.

وَاَرْسَلْنَا الرِّيَاحَ لَوَاقِحَ فَاَنْزَلْنَا مِنَ السَّمَآءِ مَآءً فَاَسْقَيْنَاكُمُوهُ وَمَٓا اَنْتُمْ لَهُ بِخَازِنِينَ ﴿٢٢﴾

22- "Rüzgârları da aşılayıcı olarak gönderip yukarıdan su indirerek sizi onunla suladık. Onu toplayıp depolayan da siz değilsiniz."

Nasıl ki yeryüzündeki rüzgârlar yağmurun öncüleri ise aynı şekilde kalplerdeki ümitler, kalbinin üzerine peş peşe inerek kulu Allah'a yaklaştıran müjdeleyici ilhamlar ve kurtuluş esintisi de talepte gerçekleşir. Böylece, Allah'ın yeterlilik ve lütfunun eseri olan amacın gerçekleşmesinden önce kalp, O'nunla huzura kavuşmuş olur.

( فَاَسْقَيْنَاكُمُوهُ وَمَٓا اَنْتُمْ لَهُ بِخَازِنِينَ ) *"Sizi onunla suladık. Onu toplayıp depolayan da siz değilsiniz."*

Tıpkı canlıları suladığı gibi Allah velileri için de belli zamanlarda belli lütuflar bahşetmektedir. Cennet ehlinin vasfında söylediği şu sözde görüldüğü gibi: ( وَلَهُمْ رِزْقُهُمْ فِيهَا بُكْرَةً وَعَشِيًّا ) *"Adn cennetlerinde sabah akşam rızıkları da vardır."* (Meryem, 19/62)

Sonra Allah, her biri için kalplerin şarabından malum bir gül meydana getirir. Sonra adı geçen şarabın özellikleri farklıdır. Bazısı sarhoş eder, bazısı erdirir, bazısı da duyuşu yok eder.

Tıpkı şu beyitte söylendiği gibi:

*Sözümle ayılman tamamıdır ayılmanın*
*Beni görmekten sarhoşluğunsa mubah kılmakta sana içmeyi*

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Mana âlemlerinin üstüne tevhid rüzgârları estiği zaman beşeriyetin izlerini siler süpürür. Böylece ne gayrilerin bu âlemlerde izi bulunur ne de yaratıklardan haberleri olur.

- Ariflerin kalplerinin üstüne Allah'a yakınlık rüzgârları estiği zaman, ünsiyet esintileriyle onlara güzel koku katar ve böylece arifler, onun melteminde sürekli canlanmış olurlar.

- Bir kulun hallerinin üstüne inayet rüzgârları estiği zaman, hataları menkıbelere, kötülükleri de iyiliklere dönüşür.

وَاِنَّا لَنَحْنُ نُحْيِي وَنُمِيتُ وَنَحْنُ الْوَارِثُونَ ﴿٢٣﴾

23- "Hiç şüphesiz biz diriltiriz, biz öldürürüz ve biz vârisleriz."

Biz onların kalplerini müşahedeyle diriltir, nefislerini de çaba harcamalarıyla öldürürüz.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Biz, onları müşahedeyle fena makamına erdirerek diriltir, kendilerini maddî âlemlerinden koparmakla da öldürürüz.

- Allah, müridleri zikriyle diriltir, gafilleri de terkiyle öldürür.

- Allah, kimilerini taatlerde emre uymakla diriltir, kimilerini de şehvetlere uymakla öldürür.

- Allah, kimilerini cemalinin lütfuyla muamele ederek diriltir, kimilerini de lütuflarından engellemekle öldürür.

وَلَقَدْ عَلِمْنَا الْمُسْتَقْدِمِينَ مِنْكُمْ وَلَقَدْ عَلِمْنَا الْمُسْتَاْخِرِينَ ﴿٢٤﴾

24- "Andolsun biz, sizden önce gelip geçenleri de biliriz, sonraya kalanları da."

Arifler gayretleriyle, abidler ayaklarıyla, tövbe edenler de pişmanlıklarıyla ilerlerler. Bir de kimileri ayaklarıyla geri kalırlar. Bunlar asilerdir. Kimileri de gayretleriyle geri kalırlar. Bunlar da aşağılık hallere rıza gösterenlerdir.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- İlerleyenler, iyiliklerde acele edenlerdir. Geri kalanlar ise iyiliklerde tembellik yapanlardır.

- İlerleyenler, düşünmeye yeltenmeden Hakk'ın ilhamlarını kabul edenlerdir. Geri kalanlar da ruhsatlar ve tevillere baş vuranlardır.

- İlerleyenler, muvaffakiyet binekleri üzerinde gelenlerdir. Geri kalanlar da terk edilmişlik sıkıntısının engellediği kimselerdir.

وَاِنَّ رَبَّكَ هُوَ يَحْشُرُهُمْ اِنَّهُ حَكِيمٌ عَلِيمٌ ﴿٢٥﴾

25- "Şüphesiz senin Rabbin, onları diriltip bir araya getirecektir. Şüphesiz o, hüküm ve hikmet sahibidir, hakkıyla bilendir."

Allah, herkesi dünyadan üzerinde çıktığı vasıf üzerine diriltir. Buna göre kimisinin kalbi Rabbiyle baş başadır, kimisi de ayrılık vadilerine yuvarlanmaktadır. Sonra Allah, onları hak ettikleri durum üzere hesaba çeker.

وَلَقَدْ خَلَقْنَا الْاِنْسَانَ مِنْ صَلْصَالٍ مِنْ حَمَاٍ مَسْنُونٍ ﴿٢٦﴾

26- "Andolsun, biz insanı kuru bir çamurdan, şekillendirilmiş bir balçıktan yarattık."

Kendilerini beğenmemeleri için Allah insanlara ve cinlere değersizliklerini hatırlatmıştır. Bir yoruma göre de değer, toprakta değil, Allah'a yakınlıktadır. Bu arada nesep toprağa, nitelik ise Allah'a yakınlığa dayanmaktadır.

وَالْجَٓانَّ خَلَقْنَاهُ مِنْ قَبْلُ مِنْ نَارِ السَّمُومِ ﴿٢٧﴾

27- "Cinleri de daha önce dumansız ateşten yaratmıştık."

Ateş söndüğü zaman hiçbir işe yaramayan küle dönüşür. Kuru çamur da kırıldığı zaman su onu eski haline döndürür. İşte aynı şekilde İblis de üzerinde parıldayan taat lambası sönünce bir daha düzelip yanmadı. Hz. Âdem'e gelince o aldandığında Allah, onu inayet suyuyla düzeltti. Allah şöyle buyurur: ( ثُمَّ اجْتَبٰيهُ رَبُّهُ ) "*Sonra Rabbi onu seçti*." (Tâhâ, 20/122)

وَاِذْ قَالَ رَبُّكَ لِلْمَلٰٓئِكَةِ اِنّ۪ي خَالِقٌ بَشَرًا مِنْ صَلْصَالٍ مِنْ حَمَاٍ
مَسْنُونٍ ﴿٢٨﴾ فَاِذَا سَوَّيْتُهُ وَنَفَخْتُ ف۪يهِ مِنْ رُوح۪ي فَقَعُوا لَهُ سَاجِد۪ينَ
﴿٢٩﴾ فَسَجَدَ الْمَلٰٓئِكَةُ كُلُّهُمْ اَجْمَعُونَ ﴿٣٠﴾ اِلَّٓا اِبْل۪يسَ اَبٰٓى اَنْ يَكُونَ
مَعَ السَّاجِد۪ينَ ﴿٣١﴾

28, 29, 30, 31- "Hani Rabbin meleklere: 'Ben, kuru bir çamurdan, şekillendirilmiş balçıktan bir insan yaratacağım. Onu düzenleyip içine ruhumdan üflediğim zaman, onun için hemen saygı ile eğilin' demişti. Bunun üzerine bütün melekler saygı ile eğildiler. Ancak İblis, saygı ile eğilenlerle beraber olmaktan kaçındı."

Allah, bu ayetlerle melekleri, insanı ve şeytanı açıklamış ve onları açıkladığı aynı noktada gizlemiştir.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Dikkate alınması gereken onların kalıpları değil, Allah'ın onlara yüklediği anlamlardır.

- Melekler, Hz. Âdem'e yaradılış gözüyle baktıkları için değerini ve durumunu küçümsediler. Bu nedenle Allah'ın onları Hz. Âdem'e secde etmekle memur kılmasına şaştılar. Bunun üzerine Allah, onlara Hz. Âdem'in özelliklerinden bir parçacık gösterdi ve secde ettiler.

( اِلَّٓا اِبْلِيسَ اَبٰٓى اَنْ يَكُونَ مَعَ السَّاجِدِينَ ) *"Ancak İblis, saygı ile eğilenlerle beraber olmaktan kaçındı."*

İşte kendi ahvalini görmekten engellenen kimsenin durumu böyledir. O, üstünlük iddia etmiş ve şaşkınlığın karanlığı içerisinde kalmıştır. Bir yoruma göre de İblis, tek bir secdeyle cimrilik etmiş ve: *"Ben, Allah'tan başkasına secde etmeyi kabul etmem"* demiştir.

Sonra kendisi, bedbahtlığı sebebiyle günahlarının çokluğunu umursamamaktadır. Çünkü kim günah işlerse muhakkak İblis, vesvesesinin sebebi ve hatasının davetçisidir. Bu da bedbahtlığın ta kendisi ve terk edilmişliğin gereğidir.

قَالَ يَٓا اِبْلِيسُ مَا لَكَ اَلَّا تَكُونَ مَعَ السَّاجِدِينَ ﴿٣٢﴾ قَالَ لَمْ اَكُنْ لِاَسْجُدَ لِبَشَرٍ خَلَقْتَهُ مِنْ صَلْصَالٍ مِنْ حَمَاٍ مَسْنُونٍ ﴿٣٣﴾ قَالَ فَاخْرُجْ مِنْهَا فَاِنَّكَ رَجِيمٌ ﴿٣٤﴾ وَاِنَّ عَلَيْكَ اللَّعْنَةَ اِلٰى يَوْمِ الدِّينِ ﴿٣٥﴾

32, 33, 34, 35- "Allah: 'Ey İblis! Saygı ile eğilenlerle beraber olmamandaki maksadın ne?' dedi. İblis dedi ki: 'Ben, kuru bir çamurdan, şekillenmiş balçıktan yarattığın insan için saygı ile eğilemem.' Allah: 'öyleyse çık oradan, çünkü sen kovuldun. Şüphesiz hesap gününe kadar lanet senin üzerinedir' dedi."

Allah, İblis'in durumunu bildiği halde kendisine sormuştur. Şayet İblis'in marifeti elverseydi, Allah'a hitaben şöyle derdi: *"Bana: 'Neyin var? Sana engel olan ne? Seni kim engelledi?' de ki, ben de: 'Bunları sen yaptın. Çünkü beni bedbaht kıldın ve kahrınla beni yoldan çıkardın. Eğer bana rahmet eyleseydin, beni hidayete erdirir ve koruman altında barındırırdın' diyeyim."* Ne var ki İblis mahrumiyete yakalandı ve: *"Ben bir beşere secde edecek değilim"* dedi.

قَالَ رَبِّ فَاَنْظِرْنٖٓي اِلٰى يَوْمِ يُبْعَثُونَ ﴿٣٦﴾ قَالَ فَاِنَّكَ مِنَ الْمُنْظَرٖينَ ﴿٣٧﴾
اِلٰى يَوْمِ الْوَقْتِ الْمَعْلُومِ ﴿٣٨﴾

**36, 37, 38- "İblis: 'Rabbim! Öyle ise onların tekrar diriltilecekleri güne kadar bana mühlet ver' dedi. Allah da ona: 'O halde sen, vakti bilinen güne kadar mühlet verilenlerdensin' dedi."**

Allah, İblis'i marifetinden uzaklaştırıp lanetle baş başa bırakınca İblis O'ndan kıyamet ve diriliş gününe kadar mühlet istedi, Allah da onun bu isteğini kabul etti. Bu esnada melun, amacının gerçekleşmesinin hayırlı olduğunu sandı ve Allah'ın, bununla kendisini şiddetle cezalandırmak istediğini bilemedi. Bu nedenle, isteğinin yerine gelmesi, o anda dileğinin bir nevi lütuf ve iyilik olarak kabulü gibi olmakla birlikte hakikatte bu bir ceza yöntemi idi.

Öte yandan ümit ehlinden kimisi şunu söylemiştir: Allah, düşmanını küçümsediği zaman, mühlet vermeye dönük duasını geri çevirmez ve mühlet talebinden kendisini alıkoymaz. Hal böyle olunca mümin, muhtaç sıfatıyla mağfiret dilemek ve istekte bulunmak durumunda olduğundan, Allah'ın rahmetinden ümit kesmemeye daha layıktır. Çünkü meluna mühlet verilmesi bir lütfun gerçekleşmesi değil, bedbahtlığının artması demektir.

قَالَ رَبِّ بِمَٓا اَغْوَيْتَنٖي لَاُزَيِّنَنَّ لَهُمْ فِي الْاَرْضِ وَلَاُغْوِيَنَّهُمْ
اَجْمَعٖينَ ﴿٣٩﴾

39- "İblis: 'Rabbim! Beni azdırmana karşılık, andolsun ki yeryüzünde kötülükleri onlara güzel göstereceğim, onların hepsini azdıracağım' dedi."

Ayetteki "بما أغويتني (*Beni azdırmana karşılık*)" ifadesinin başındaki ( با ) "*bâ*" harfi yemin içindir. Aslında İblis'in aşırı cahilliği olmazsa, Allah'ın onu azdırması, üzerinde yemin edilmesi gereken bir husus değildir. Ancak hakikatte bu yemine uygundur. Çünkü azdırma, ancak Allah'ın yapmaya muktedir olduğu ve onda şeriki bulunmayan hususlardandır. Lakin mel'un, Allah'ı hakikate uygun olarak tanımaz. Zira eğer tanısaydı, dalalete çağırmazdı. Bir de eğer yoldan çıkarmaya muktedir olsaydı, kendini hidayet üzere bırakırdı. Hakikat ehline göre ise Allah'ı asla hakikate uygun olarak tanımamış olan İblis bütün bunları sezgi yoluyla söylemektedir.

اِلَّا عِبَادَكَ مِنْهُمُ الْمُخْلَصِينَ ﴿٤٠﴾

40- "İçlerinden ihlasa erdirilmiş kulların hariç."

İhlas, amelleri art niyetlerden ve salih amellere engel olan afetlerden arındırmaktır. Bu arada melun, Hakk'ın ihlas sahiplerine dönük inayetinden emin olunca, kendilerini azdırma imkanına sahip olmadığını anlamıştır.

قَالَ هٰذَا صِرَاطٌ عَلَيَّ مُسْتَقِيمٌ ﴿٤١﴾

41- "Allah dedi ki: 'İşte bu, bana ulaştıran dosdoğru yoldur.'"

Bu bir tehdittir. Tıpkı şu sözde olduğu gibi: *"Dilediğini yap! Bu benim yolumdur."*

اِنَّ عِبَادِي لَيْسَ لَكَ عَلَيْهِمْ سُلْطَانٌ اِلَّا مَنِ اتَّبَعَكَ مِنَ الْغَاوِينَ ﴿٤٢﴾

42- "Azgınlardan sana uyanlar dışında, kullarım üzerinde senin hiçbir hakimiyetin yoktur."

"Sultân" kelimesi, Allah'ın kullarına karşı kullandığı delil demektir. Şeytanın ise hiçbir mahlûka karşı bir delili bulunmamaktadır. Çünkü onun gücü bulunduğu yeri aşamaz. O halde hakikatte bir mahlûkun diğer bir mahlûka etki etmek anlamında hiçbir tasallutu söz konusu değildir.

( اِنَّ عِبَادِي ) *"Kullarım..."* Allah, bir kimseyi kul diye adlandırdığı zaman, o havaslar cümlesindendir. Bir kimseyi kendine izafe edip "kulum" dediği zaman ise o hassın hasıdır. Bunlar Allah'ın, kendilerini maddî gailelerinden koparıp "mahv" makamına çıkardığı, ayrılık sebeplerinden koruduğu, kendi güç ve kuvvetlerinden arındırdığı kimselerdir. Allah, bütün tasarruf ve hallerinde onlara vekil olur, dinin adabına aykırı davranmaktan onları korur, mükellefiyeti yerine getirirlerken onlara seçkinlik gömleğini giydirir, ilahî müşahedesinde yok etmek ve ilahî varlığında gark etmek suretiyle onları onlardan alır. Hal böyle olunca acaba şeytan hangi yoldan onlara ulaşabilir ve bu düşmanın onlar üzerinde hangi etkisi olur?!

Bir de Hakk'ın tevhid hakikatlerine şahit kıldığı ve âlemin takdir kabzasında evirilip çevrildiğini başkalarının yağmalığı olmadığını gören kimsenin üzerinde melunun ne zaman tasallutu olur?!

Şiir:

*Kutsamadır (Âdem'e secde etmekle) hakkındaki inkârım*
*Aptallıktır hakkında akıl yürütmem*
*Senden başka kimdir Âdem?*
*Ve İblis evde kim?*

وَاِنَّ جَهَنَّمَ لَمَوْعِدُهُمْ اَجْمَعِينَ ﴿٤٣﴾ لَهَا سَبْعَةُ اَبْوَابٍ لِكُلِّ بَابٍ
مِنْهُمْ جُزْءٌ مَقْسُومٌ ﴿٤٤﴾

43, 44- "Şüphesiz cehennem, onların hepsinin buluşacağı yerdir. Onun yedi kapısı vardır ve her kapıya onlardan bir grup ayrılmıştır."

Onlar bugün dalaletin temelinde bir araya gelmişlerdir. Sonra küfür farklı dinlerden ibarettir. Sonra değişik zümreler halinde yarın

azapta birleşecekledir. Cehennemin her bir çukuruna ayrılmış bir kavim vardır.

اِنَّ الْمُتَّق۪ينَ ف۪ي جَنَّاتٍ وَعُيُونٍ ﴿٤٥﴾

45- "Şüphesiz Allah'a karşı gelmekten sakınanlar, cennetler içinde ve pınarlar başındadır."

Takva sahibi, kendini zorlayarak sakınan değil, Allah'ın kendisini lütfuyla koruduğu kimsedir. Daha doğrusu o, ancak Allah kendisini lütfuyla koruduktan sonra kendini zorlayarak sakınabilmektedir. Takva sahipleri bugün cennetlerdedirler. Cennetin ise birbirinden yüksek dereceleri vardır. Aynı zamanda onlar yarın da yek diğerinin üstünde olan dereceleri bulunan cennetlerde olacaklardır.

Bugün kimileri için hizmetten tat alma ve taatte muvaffak olma derecesi, kimileri için bast ve rahat derecesi, kimileri için ümit ve arzu derecesi, kimileri için de ünsiyet ve yakınlık derecesi vardır. Bütün insanlar meşreplerini bilirler ve her grup kendi mezhebine bağlı kalır.

اُدْخُلُوهَا بِسَلَامٍ اٰمِن۪ينَ ﴿٤٦﴾

46- "Girin oraya esenlikle, güven içinde."

Yani onlara: ( اُدْخُلُوهَا ) "*Girin oraya*" denilir. Allah, bunu özetle ifade etmiş ve kendilerine bunu kimin söyleyeceğini söylememiştir. Kimilerine göre onlara melek: "*Girin oraya*" diyecektir.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Onlar, uzak mesafeyi kat ederek ve zor durumlara göğüs gererek cennetin yanına vardıkları zaman artık cennete girmek haklarıdır. Özellikle de onlar cennetin kendilerine mubah kılındığını bilmişlerdir. Şu var ki onlara "Girin" denilinceye kadar bunun farkına varmayabilirler.

- Bir ihtimale göre Allah: "Cennete girin" değinceye kadar onlar, meleğin sözüyle cennete girmezler.

Şu şiirde söylendiği gibi:

*Giymem ben nimetleri senden başkası giydirince*
*Kabul etmem ben dünyayı senden başkası verince*

( بِسَلَامٍ اٰمِنِينَ ) *"Esenlikle, güven içinde."* Bu ayette geçen "selâm" lafzı "selamet" anlamındadır. Bu da "eman (güven)" demektir. Böylece cennete girenler, bir daha ondan çıkmayacaklarından emin olurlar.

Bir yoruma göre de onlar cennetten çıkmadıkları gibi oradaki durumları da değişmez. Böylece Allah'ın cemalini görmeleri ve içinde bulundukları kusursuz durumlar sürüp gider.

وَنَزَعْنَا مَا فِي صُدُورِهِمْ مِنْ غِلٍّ اِخْوَانًا عَلٰى سُرُرٍ مُتَقَابِلِينَ ٤٧

**47- "Biz, onların kalplerindeki kini söküp attık. Artık onlar sedirler üzerinde, kardeşler olarak karşılıklı otururlar."**

Allah, Hz. İbrahim'e Kâbe'yi inşa edip tertemiz yapmasını emrederek şöyle buyurdu: ( وَطَهِّرْ بَيْتِيَ ) *"Evimi tertemiz kıl."* (Hac, 22/26) Hz. Cebrâil'e de emir verdi. O da bu emirle Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kalbini yıkayarak temizledi. Günahkârların kalplerini temizlemeyi ise Allah onlara olan şefkatinden dolayı, üzerine alarak: ( وَنَزَعْنَا مَا فِي صُدُورِهِمْ مِنْ غِلٍّ ) *"Biz, onların kalplerindeki kini söküp attık"* buyurdu. Böylece bazen Allah, zayıfa güçlüyü şaşırtacak muamelede bulunur. Şayet Allah, günahkârların kalplerini temizlemeyi meleklere bıraksaydı, kusurları ifşa olacaktı. Bu sebeple Allah, onlara olan şefkatinden dolayı bunu üzerine aldı.

Bir yoruma göre; Allah: ( في قلوبهم ) *"kalplerindeki"* lafzı yerine ( في صدورهم ) *"göğüslerindeki"* lafzını söylemiştir. Çünkü kalpler, O'nun avucu içerisinde olup onları çevirir. Nitekim hadiste de şöyle denilmiştir:

*"Müminin kalbi, Rahmân'ın parmaklarından iki parmak arasındadır."* Hadisteki parmaktan maksat Allah'ın kudretidir. Burada "parmak" lafzı mecazen kudret anlamında kullanılmıştır. Kimisine göre; burada "iki parmak" iki nimet demektir.

( اِخْوَانًا عَلٰى سُرُرٍ مُتَقَابِلِينَ ) *"Artık onlar sedirler üzerinde, kardeşler olarak karşılıklı otururlar."*

Bunlar karşılıklı olarak yüz yüze durmakta, ancak her biri sırrını ve kalbini diğerinden korumaktadır. Bu itibarla kişiler karşı karşıyadır ancak kalpler karşı karşıya değildir. Çünkü onlar birbirleriyle uğraşmazlar. Allah şöyle buyurur: ( وَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ يَحُولُ بَيْنَ الْمَرْءِ وَقَلْبِه۪ ) *"Bilin ki Allah, kişi ile kalbi arasına girer."* (Enfâl, 8/24)

لَا يَمَسُّهُمْ ف۪يهَا نَصَبٌ وَمَا هُمْ مِنْهَا بِمُخْرَج۪ينَ ﴿٤٨﴾

48- "Onlara orada hiçbir yorgunluk dokunmaz. Onlar, oradan çıkarılacak da değillerdir."

Yani onlar, ne nefisleriyle ne de kalpleriyle yorgunluk yaşarlar. Bir şey istedikleri zaman, bir yerden bir yere geçmeye ihtiyaç duymazlar, gözleri hayrete düşmez, dehşete kapılmazlar, durumlarında herhangi bir değişiklik meydana gelmez ve Allah'ın sıfatlarından hiç biri konusunda problem yaşamazlar.

( وَمَا هُمْ مِنْهَا بِمُخْرَج۪ينَ ) *"Onlar, oradan çıkarılacak da değillerdir."* Yani cennetten çıkarılma züllüne maruz kalmazlar, aksine kesintisiz vuslat halindedirler.

نَبِّئْ عِبَاد۪ٓي اَنّ۪ٓي اَنَا الْغَفُورُ الرَّح۪يمُ ﴿٤٩﴾

49- "Kullarıma, benim elbette çok bağışlayıcı, çok merhametli olduğumu haber ver."

Allah, takva sahipleriyle ilgili durumu ve sahip oldukları yüksek mertebeyi anlatınca günahkârların kalpleri kırıldı. Bunun üzerine Allah, hemen gönüllerini almak istedi ve Peygamberine (s.a.v.) şunu söyledi: *"Günahkâr kullarıma bağışlayıcı ve merhamet sahibi olduğumu haber ver. Şayet ben, itaat ehline karşı şükür ve kerem sahibiysem, günahkârlara karşı da mağfiret ve merhamet sahibiyim."*

Bir yoruma göre de Allah'ın: ( اَنِّي اَنَا ) "*Elbette ben*" sözünü hakikat kulağıyla duyan kimsenin "mağfiret" ve "rahmet" kelimelerini duymasına imkan kalmaz. Çünkü o halde kendisi, madde âleminden koparılmış ve benliği yok edilmiştir.

وَاَنَّ عَذَابِي هُوَ الْعَذَابُ الْاَلِيمُ ﴿٥٠﴾

50- "Azabımın da elem dolu azap olduğunu haber ver."

Buradaki elem dolu azap ayrılıktır. Nitekim zorluk ve elemde ayrılığın üstünde bir azap yoktur.

وَنَبِّئْهُمْ عَنْ ضَيْفِ اِبْرٰهِيمَ ﴿٥١﴾ اِذْ دَخَلُوا عَلَيْهِ فَقَالُوا سَلَامًا قَالَ اِنَّا مِنْكُمْ وَجِلُونَ ﴿٥٢﴾

51, 52- "Onlara İbrahim'in misafirlerinden de haber ver. Hani misafirler İbrahim'in yanına girmiş ve: 'Selâm' demişlerdi. O da: 'Gerçekten biz sizden korkuyoruz' demişti."

Onlara, İbrahim'in misafirperverlikteki ve misafirlerin hakkını yerine getirmedeki yiğitliğini anlat. Hz. İbrahim (a.s.), misafirlere şahsen hizmet ediyordu. Bu sırada misafirler selam verip Hz. İbrahim de selamlarını alıp bunlar yemeğini yemek istemeyince:

( قَالَ اِنَّا مِنْكُمْ وَجِلُونَ ) "*Gerçekten biz sizden korkuyoruz*" demişti.

Çünkü cömertlerin yemeğini yemek istememek kuşkuya sebep olur. Derken Hz. İbrahim, misafirlerin melek olduklarını anlayınca bu kez kavmini cezalandırmak için inmiş olabileceklerinden korktu. Çünkü onlar suçlu kimselerdi. Fakat melekler kendisine şunu söyleyince korkusu geçti:

قَالُوا لَا تَوْجَلْ اِنَّا نُبَشِّرُكَ بِغُلَامٍ عَلِيمٍ ﴿٥٣﴾

53- "Onlar: 'Korkma! Biz, sana bilgin bir oğul müjdeliyoruz' dediler."

Bu da korku değil, sevinç sebebidir. Çünkü biz başkalarını cezalandırsak da sana müjdeciler olarak geldik.

( اِنَّا نُبَشِّرُكَ بِغُلَامٍ عَلِيمٍ ) *"Biz, sana bilgin bir oğul müjdeliyoruz."* Yani o, ilim öğreninceye kadar yaşayacaktır. Çünkü çocuk ilim ehlinden değildir. Ancak asıl şaşırtıcı olan, çocuğu ve çocuğun yaşayacağını müjdelemeleri idi. İşte bu nedenle Hz. İbrahim şöyle dedi:

قَالَ اَبَشَّرْتُمُونِي عَلٰٓى اَنْ مَسَّنِيَ الْكِبَرُ فَبِمَ تُبَشِّرُونَ ﴿٥٤﴾
قَالُوا بَشَّرْنَاكَ بِالْحَقِّ فَلَا تَكُنْ مِنَ الْقَانِطِينَ ﴿٥٥﴾ قَالَ وَمَنْ يَقْنَطُ
مِنْ رَحْمَةِ رَبِّهٖٓ اِلَّا الضَّٓالُّونَ ﴿٥٦﴾

54, 55, 56- "İbrahim: 'Bana yaşlılık gelip çatmış iken mi beni müjdeliyorsunuz! Bana neyi müjdeliyorsunuz?' dedi. 'Biz sana gerçeği müjdeledik. Sakın ümitsizlerden olma!' dediler. Dedi ki: 'Rabbinin rahmetinden sapıklardan başka kim ümit keser!'"

Hz. İbrahim dedi ki: *"Bana yaşlılık gelip çatmış iken mi beni müjdeliyorsunuz! Oysa yaşlı kimsenin dünyalık bir şeyle sevinme zamanı geçmiştir. Yaşım ilerlemişken siz, beni neyle müjdeliyorsunuz? Yakında da ahrete göçeceğim."* Dediler ki: *"Biz sana hakikati müjdeledik. O halde Allah'ın rahmetinden ümit kesenlerden olma. Zaten sapık olandan başkası, Rabbinin rahmetinden ümit kesmez."* Hz. İbrahim dedi ki: *"Hakkımda nasıl yanlış zanda bulundunuz ve bu yüzden, Rabbimin rahmetinden ümit kestiğimi sandınız?!"*

Bu konuda Hz. İbrahim'in içi rahatlayıp onlardan kendisine bir zarar gelmeyeceğini anlayınca durumlarını sordu.

قَالَ فَمَا خَطْبُكُمْ اَيُّهَا الْمُرْسَلُونَ ﴿٥٧﴾ قَالُوٓا اِنَّٓا اُرْسِلْنَٓا اِلٰى قَوْمٍ
مُجْرِمِينَ ﴿٥٨﴾ اِلَّٓا اٰلَ لُوطٍ اِنَّا لَمُنَجُّوهُمْ اَجْمَعِينَ ﴿٥٩﴾ اِلَّا امْرَاَتَهُ
قَدَّرْنَٓا اِنَّهَا لَمِنَ الْغَابِرِينَ ﴿٦٠﴾

57, 58, 59, 60- "İbrahim: 'Ey elçiler! Göreviniz nedir?' dedi. Şöyle dediler: 'Şüphesiz biz suçlu bir millete gönderildik. Lût'un aile fertleri hariç. Lût'un karısı dışında onların hepsini kurtaracağız. Biz, onun geride kalanlardan olmasını takdir ettik.'"

Hz. İbrahim: *"Ne oluyor size? Nereye gitmek istiyorsunuz?"* dedi.

Dediler ki: "*Biz, Lût kavmini cezalandırmak ve bozgunculukta onlara ortak olduğu için karısı hariç, diğer aile fertlerini kurtarmak için gönderildik.*" Hz. Lût'un karısı, misafirlerini kavmine gösterdiği için azabı hak etmiştir.

فَلَمَّا جَٓاءَ اٰلَ لُوطٍ الْمُرْسَلُونَ ﴿٦١﴾ قَالَ اِنَّكُمْ قَوْمٌ مُنْكَرُونَ ﴿٦٢﴾

61, 62- "Elçiler Lût'un ailesine gelince, Lût onlara: 'Gerçekten siz, tanınmayan kimselersiniz' dedi."

Elçiler, Hz. Lût'un evine ulaşınca onları yadırgadı. Çünkü onları insan kılığında bulmadı ve büyük bir iş için geldiklerini şöyle böyle sezinledi.

قَالُوا بَلْ جِئْنَاكَ بِمَا كَانُوا فِيهِ يَمْتَرُونَ ﴿٦٣﴾

63- "Dediler ki: 'Evet, fakat biz sana kavminin şüphe etmekte olduğu azabı getirdik.'"

Dediler ki: *"Doğrusu biz kavmine, hakkında şüphe ettikleri cezayı vereceğimizi sana bildirmeye geldik."*

وَاَتَيْنَاكَ بِالْحَقِّ وَاِنَّا لَصَادِقُونَ ﴿٦٤﴾

64- "Biz, sana gerçeği getirdik. Şüphesiz biz doğru söyleyenleriz."

Biz sana da hakkı yani hak olanı getirdik.

فَاَسْرِ بِاَهْلِكَ بِقِطْعٍ مِنَ الَّيْلِ وَاتَّبِعْ اَدْبَارَهُمْ وَلَا يَلْتَفِتْ مِنْكُمْ اَحَدٌ
وَامْضُوا حَيْثُ تُؤْمَرُونَ ﴿٦٥﴾

65- "Gecenin bir bölümünde aile fertlerini yola çıkar, sen de arkalarından git. Hiç biriniz arkaya bakmasın. Emrolunduğunuz yere geçin, gidin."

Geceden bir miktar geçtikten sonra aile fertlerini yola çıkar, arkalarından yürü, onları önüne geçir, onları arkadan takip et ve kavminizin başına gelen azabı görmemek için hiç biriniz arkaya bakmasın. Karın hariç, biz seni ve aile fertlerini kurtaracağız. Çünkü onu, itaatsizlikte onlara ortak olduğu için cezalandıracağız.

( وَامْضُوا حَيْثُ تُؤْمَرُونَ ) "*Emrolunduğunuz yere geçin, gidin.*" Sizin için esenlik, kavminiz içinse azap vardır.

وَقَضَيْنَٓا اِلَيْهِ ذٰلِكَ الْاَمْرَ اَنَّ دَابِرَ هٰٓؤُ۬لَٓاءِ مَقْطُوعٌ مُصْبِحِينَ ﴿٦٦﴾

66- "Ona şu durumu kesin olarak bildirdik. 'Sabaha çıkarken onların sonu kesilmiş olacak.'"

Yani biz Lût'a, kavminin helak edileceğini ve ceza ile köklerinin kazınacağını bildirdik.

وَجَٓاءَ اَهْلُ الْمَدِينَةِ يَسْتَبْشِرُونَ ﴿٦٧﴾

67- "Şehir halkı sevinerek geldiler."

قَالَ اِنَّ هٰٓؤُ۬لَٓاءِ ضَيْفِي فَلَا تَفْضَحُونِ ﴿٦٨﴾

68- "Lût dedi ki: 'Şüphesiz bunlar, benim misafirlerimdir. Sakın beni rezil etmeyin.'"

Sonra melekler Hz. Lût'un evine varınca kavmine dedi ki: Bunlar benim misafirlerimdir. O halde onlara dokunup beni rezil etmeyin.

وَاتَّقُوا اللّٰهَ وَلَا تُخْزُونِ ﴿٦٩﴾

69- "'Allah'a karşı gelmekten sakının, beni utandırmayın' dedi."

Allah'tan korkunuz, O'nun emrine karşı çıkmaktan sakınınız ve beni mahcup etmeyiniz.

قَالُوٓا اَوَلَمْ نَنْهَكَ عَنِ الْعَالَمِينَ ﴿٧٠﴾

70- "Onlar: 'Biz seni insanlarla ilgilenmekten men etmemiş miydik' dediler."

Bunun üzerine kavmi: *"Birilerini korumaktan seni alıkoymadık mı ve kimseyi bizden alıkoymamanı söylemedik mi?"* dedi.

قَالَ هٰٓؤُلَٓاءِ بَنَاتٖٓي اِنْ كُنْتُمْ فَاعِلٖينَ ﴿٧١﴾

71- "Lût: 'İşte kızlarım. Eğer yapacaksanız' dedi."

Onların bu sözlerine karşılık Hz. Lût: *"Bunlar benim kızlarım, yani ümmetimin kadınlarıdır"* dedi.

Bir görüşe göre de, Hz. Lût öz kızlarını kast etmiş ve o aşırı hatayı işlememeleri için onlara kızlarını teklif etmiştir. Ancak nasihati onlara fayda vermemiş ve onlar habis amaçlarından vazgeçmemişlerdir. Bunun üzerine melekler kendileri için korkmamasını haber vermiş ve gerçek durumlarını, sadece ceza için gönderildiklerini ona haber vermekle kaygısını gidermişlerdir.

لَعَمْرُكَ اِنَّهُمْ لَفٖي سَكْرَتِهِمْ يَعْمَهُونَ ﴿٧٢﴾

72- "Ömrüne andolsun ki, onlar gözleri dönmüş halde, sarhoşlukları içinde bocalayıp duruyorlar."

Allah, Hz. Peygamber'i (s.a.v.) özel olarak onurlandırmak ve bütün insanlara olan üstünlüğünü ortaya koymak üzere onun hayatına yemin etmiş ve şöyle demiştir: *"Ey Muhammed! Hayatına yemin*

*ederim ki, onlar sapıklıkları ve gaflet sarhoşlukları içinde bocalıyor, şirklerinden vazgeçmiyorlardı."*

Bir yoruma göre de Allah onun hayatına yemin etmiştir. Çünkü onun zamanında onun hayatından daha değerli bir hayat yoktu. Şüphesiz onlar, sarhoşluklarının bilinçsizliği ve sapıklıklarının gafleti içerisinde bir ceza beklemiyor ve bir kötülükten korkmuyorlardı.

فَاَخَذَتْهُمُ الصَّيْحَةُ مُشْرِقِينَ ﴿٧٣﴾ فَجَعَلْنَا عَالِيَهَا سَافِلَهَا وَاَمْطَرْنَا عَلَيْهِمْ حِجَارَةً مِنْ سِجِّيلٍ ﴿٧٤﴾

73, 74- "Derken güneşin doğuşu sırasında, o korkunç uğultulu ses onları yakalayıverdi. Hemen onların altını üstüne getirdik. Üzerlerine de balçıktan pişirilmiş taşlar yağdırdık."

Onlar, sevinç ve neşe içinde geceleyip meşakkat ve yıkım içerisinde sabahladılar. Tavanları üzerlerine çöktü, şehirlerinin ve evlerinin altını üstüne getirdik ve üzerlerine ne cisim ne de eser bırakan bir ceza yağdırdık. İşte bunda ibret alacaklar için büyük ibret, basiret sahipleri için de açık delil vardır. İbret alacaklar için kalıntıları hâlâ mevcut bir yol üstünde duruyor.

اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِلْمُتَوَسِّمِينَ ﴿٧٥﴾ وَاِنَّهَا لَبِسَبِيلٍ مُقِيمٍ ﴿٧٦﴾ اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِلْمُؤْمِنِينَ ﴿٧٧﴾

75, 76, 77- "Şüphesiz bunda düşünüp görebilen kimseler için ibretler vardır. O şehrin kalıntıları hâlâ mevcut olan bir yol üstünde duruyor. Şüphesiz bunda inananlar için bir ibret vardır."

Ayetteki " المُتوسّمين " lafzının tefsiri ( المُتفرّسين ) *"feraset sahipleri"* şeklinde yapılmıştır. Feraset ise onu destekleyen bir delil ortaya çıktığında karşıt bir durumla karşılaşmaksızın meydana gelen bir histir. Böylece kalpten de feraset sahibi için gerçekleşen durumun aynısı ortaya çıkar. Feraset lafzı, aslan avı anlamındaki ( فريسة ) kökünden türemiştir. Çünkü aslan avı için öfkelenir. Bu çerçevede

Allah, velilerini başkalarına gizli kalan şeylere muttali kılar. Ancak feraset sahibi de her zaman her şeyi ferasetle anlama koşulunu haiz olmaz. Aksine, peygamberlere yapıldığı gibi bazı zamanlarda ferasetin kaynakları yüzüne kapatılmış olabilir. Mesela, Hz. Peygamber (s.a.v.), iftira olayı zamanında Hz. Aişe'ye (r.a.): *"Eğer yaptı isen Allah'a tövbe et"* diyordu. Bir diğer örnek, melekleri tanıyamayan Hz. İbrahim ve Hz. Lût'tur.

وَاِنْ كَانَ اَصْحَابُ الْاَيْكَةِ لَظَالِمِينَ ﴿٧٨﴾ فَانْتَقَمْنَا مِنْهُمْ وَاِنَّهُمَا
لَبِاِمَامٍ مُبِينٍ ﴿٧٩﴾ وَلَقَدْ كَذَّبَ اَصْحَابُ الْحِجْرِ الْمُرْسَلِينَ ﴿٨٠﴾
وَاٰتَيْنَاهُمْ اٰيَاتِنَا فَكَانُوا عَنْهَا مُعْرِضِينَ ﴿٨١﴾ وَكَانُوا يَنْحِتُونَ مِنَ
الْجِبَالِ بُيُوتًا اٰمِنِينَ ﴿٨٢﴾ فَاَخَذَتْهُمُ الصَّيْحَةُ مُصْبِحِينَ ﴿٨٣﴾
فَمَٓا اَغْنٰى عَنْهُمْ مَا كَانُوا يَكْسِبُونَ ﴿٨٤﴾

78, 79, 80, 81, 82, 83, 84- "Eyke halkı da şüphesiz zalim idiler. Onlardan da intikam aldık. İkisi de belirgin bir ana yol üzerinde idiler. Andolsun, Hicr halkı da peygamberleri yalanlamıştı. Biz, onlara ayetlerimizi vermiştik de onlardan yüz çevirmişlerdi. Onlar güven içinde dağlardan evler yontuyorlardı. Onları da sabaha çıkarlarken o korkunç uğultulu ses yakalayıverdi. Kazanmakta oldukları şeyler kendilerine bir fayda vermedi."

Eyke halkı Hz. Şuayb'in kavmidir. Hz. Şuayb, onlara peygamber olarak gönderilmişti. Onlar, kendisini yalanladılar ve bunun üzerine biz onlardan intikam aldık.

( وَاِنَّهُمَا ) *"İkisi de."* Yani Medyen ve Eyke memleketleri.

( لَبِاِمَامٍ مُبِينٍ ) *"Belirgin bir ana yol üzerinde idiler."* Yani bu iki yerde, gitmek isteyen için belirgin bir yol üzerinde idiler.

Aynı zamanda Allah, Semûd adı verilen Hicr halkının, kendilerine gönderilen peygamberleri yalanladıklarını, Hz. Salih'in devesi

gibi mucizelerden yüz çevirdiklerini, dünyaya saplanıp kaldıklarını, Allah'ın kendilerine uzun süre mühlet verip cezalarını ertelemesine aldandıklarını, dağlardan evler edindiklerini, ölümden ve azaptan kurtulacaklarını sandıklarını haber vermektedir.

Sonra sabaha çıkarlarken o korkunç uğultulu sesin onları yakalayıverdiğini ve miatları dolunca tedbirlerinin kendilerine fayda vermediğini bildirmektedir.

وَمَا خَلَقْنَا السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ وَمَا بَيْنَهُمَٓا اِلَّا بِالْحَقِّ وَاِنَّ السَّاعَةَ لَاٰتِيَةٌ فَاصْفَحِ الصَّفْحَ الْجَم۪يلَ ﴿٨٥﴾

85- "Biz gökleri, yeri, ve her ikisi arasında bulunanları ancak hakka ve hikmete uygun olarak yarattık. Kıyamet günü mutlaka gelecektir. Sen şimdi güzel bir şekilde hoşgörü ile muamele et."

Bu ayet, kullarının kesplerinin Allah tarafından yaratıldığını göstermektedir. Çünkü bu kespler, gökler ve yer arasındadır.

( وَمَا خَلَقْنَا السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ وَمَا بَيْنَهُمَٓا اِلَّا بِالْحَقِّ وَاِنَّ السَّاعَةَ لَاٰتِيَةٌ ) *"Ancak hakka ve hikmete uygun olarak yarattık. Kıyamet günü mutlaka gelecektir."*

Yani ben hakkın sahibiyim. Bir görüşe göre de haktan maksat, olacak olan büyük iştir. Ayetteki ( الساعة ) kelimesi kıyamet demektir.

( فَاصْفَحِ الصَّفْحَ الْجَم۪يلَ ) *"Sen şimdi güzel bir şekilde hoşgörü ile muamele et."*

Bir yoruma göre; hoşgörüyle güzel muamele, içinde hatanın dile getirildiği muameledir.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Hoşgörüyle güzel muamele, hatayı gündemde tutmaksızın ve geçmiş günahı dile getirmeksizin olan bitenin üstüne iyilik olsun diye sünger çekmektir.

- Hoşgörüyle güzel muamele, suçlunun günahlarını sayıp dökmeksizin suçtan dolayı özür dilemek ve günahın günahkârdan değil kendisinden olduğunu ikrar etmektir. Şu sözde ifade edildiği gibi: *"Siz suç işlerken biz unutup özür dilemekteyiz."*

اِنَّ رَبَّكَ هُوَ الْخَلَّاقُ الْعَلِيمُ ﴿٨٦﴾

86- "Şüphesiz Rabbin, hakkıyla yaratanın (ve her şeyi) bilenin ta kendisidir."

Çünkü bilmeyenden düzenli ve ahenkli bir fiilin meydana gelmesi söz konusu değildir.

وَلَقَدْ اٰتَيْنَاكَ سَبْعًا مِنَ الْمَثَانِي وَالْقُرْاٰنَ الْعَظِيمَ ﴿٨٧﴾

87- "Andolsun, biz sana tekrarlanan yedi ayeti ve büyük Kur'an'ı verdik."

Tefsir âlimlerinin çoğunluğuna göre yedi ayetten maksat Fatiha Sûresi'dir. Ona ( مثاني ) "*tekrarlanan ayetler*" adının verilmesi, bir defa Mekke'de bir defa da Medine'de olmak üzere, iki defa inmiş olmasından dolayıdır. Bir de bu ayetler, her namazda tekrarlanmaktadır. Çünkü bu isim, tekrarlamak demek olan " تثنية " kökünden gelmektedir. Ya da bu adlandırmanın sebebi, bazı ayetlerinin Hakk'a, bazısının da halka izafe edilmesidir. Bunun ne demek olduğu, tefsir kitaplarında anlatılmıştır.

لَا تَمُدَّنَّ عَيْنَيْكَ اِلٰى مَا مَتَّعْنَا بِهٖٓ اَزْوَاجًا مِنْهُمْ وَلَا تَحْزَنْ عَلَيْهِمْ
وَاخْفِضْ جَنَاحَكَ لِلْمُؤْمِنِينَ ﴿٨٨﴾

88- "Kâfirlerden bir kısmını faydalandırdığımız şeylerde sakın gözün kalmasın. Onlara karşı mahzun olma ve müminlere şefkat kanadını indir."

Allah, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) dünya süsüne doyasıya bakmasına müsaade etmemiştir.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Allah, Hz. Peygamber'in (s.a.v.), gözlerini yaratıklara bakmada kullanmasını kıskanmıştır.

- Allah, Hz. Peygamber'i (s.a.v.) bu şekilde terbiye etmiştir ki, gözleri ünsiyet vasıtası olmaları bakımından ayıplanmasın.

- Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) vefayı korumasını emretmiştir. Çünkü bugün hiç kimsenin Allah'ı görmesi mümkün olmadığına göre, senin de Allah'a bakması beklenen gözün onlara bahşettiğimiz bazı şeylerde kalmasın.

Şiir:

*Ben sizi göremeyeceğime kesin inanınca*
*Yumdum gözümü ve bakmadım artık hiç kimseye*

- Hz. Peygamber (s.a.v.) ile Hz. Mûsâ arasında büyük fark vardır. Allah, Hz. Mûsâ'ya: ( قَالَ لَنْ تَرٰينِي وَلٰكِنِ انْظُرْ اِلَى الْجَبَلِ ) "*Beni göremeyeceksin, fakat dağa bak*" (A'râf, 7/143) buyururken, Hz. Peygamber'i (s.a.v.), kendini büsbütün kaptıracak şekilde mahlûklara bakmaktan alıkoyarak: ( لَا تَمُدَّنَّ عَيْنَيْكَ ) "*Gözün onlarda kalmasın*" buyurmuştur.

- Hz. Peygamber'in (s.a.v.) beden gözüyle dünyaya doyasıya bakmasına müsaade edilmediğine göre kalbiyle Allah'tan başkasında huzur bulmasına nasıl müsaade edilir!

- Hz. Peygamber (s.a.v.), kâfirlerin dünyada yararlandıkları şeylere gözlerini kapamakla emrolununca, miraç gecesi de edep takınarak ahrette gördüklerinden hiçbir şeye bakmamıştır. Bundan dolayı Allah şu sözüyle onu övmüştür: ( مَا زَاغَ الْبَصَرُ وَمَا طَغٰى ) "*Gözü şaşırmadı ve haddi aşmadı.*" (Necm, 53/17) Bu esnada gördüğü her şey için: *"Mülk Allah'ındır"* diyordu.

( وَلَا تَحْزَنْ عَلَيْهِمْ ) "*Onlara karşı mahzun olma.*" Kimsenin durumundan etkilenip değişmemesi için Allah onu terbiye etmiştir. İşte bu da temkin halidir.

( وَاخْفِضْ جَنَاحَكَ لِلْمُؤْمِنِينَ ) *"Müminlere şefkat kanadını indir."* Yani onlara yumuşak davran. Nitekim bir cariye efendisi nezdinde kendisinden aracılık etmesi için yardım istediği zaman, Hz. Peygamber (s.a.v.) onunla beraber giderdi. Hz. Peygamber (s.a.v.), buna benzer başka güzel ahlak örneklerini de sergilerdi. Hadiste şöyle denilmiştir: *"Şüphesiz o, evine hizmet ederdi ve ailesinin hizmetindeydi."* Ayrıca bulunduğu topluluğun hizmetini de üstlenerek: *"Kavmin efendisi, onlara hizmet edendir"* derdi.

وَقُلْ اِنّ۪ٓي اَنَا النَّذ۪يرُ الْمُب۪ينُ ﴿٨٩﴾

89- "De ki: 'Gerçekten ben, apaçık bir uyarıcıyım.'"

Hz. Peygamber (s.a.v.), kendi gücüne dayanmayıp Allah'ın hakkını yerine getirdiği için, Allah: *"Şüphesiz ben"* ve: *"Ben"* demesine müsaade etmiştir. Bir hadiste yer aldığına göre, Câbir (r.a.), Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kapısını çalmış, Hz. Peygamber: *"Kim o?"* diye sorunca o da: *"Ben"* demiştir. Bunun üzerine Hz. Peygamber, bu cevaptan rahatsızlığını dile getirir gibi: *"Ben ben"* şeklinde karşılık vermiştir.

Bir yoruma göre; Allah Hz. Peygamber'e (s.a.v.) şunu demek istemiştir: *"Söyleyedur...! Senin bizde yok oluşuna sınır yoktur. Bizimle ve bizim için olmandan dolayı: 'Şüphesiz ben' demene müsaade ettik."*

كَمَٓا اَنْزَلْنَا عَلَى الْمُقْتَسِم۪ينَۙ ﴿٩٠﴾

90- "Nitekim biz, kendi kitaplarını parçalara ayıranlara da indirmiştik."

Yani de ki ben sizi, tıpkı kitaplarını parçalara ayıranlara uyguladığımız azap gibi bir azapla uyarıyorum. Bunlar, Hz. Salih'in kıssasında Peygamberine hitaben karşılıklı olarak Allah'a yemin eden kimselerdir.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Bunlar, Allah'ın kitabının bir kısmına inanıp bir kısmına inanmamak suretiyle onu kısımlara ayıranlardır.

- Ben sizi, hac mevsiminde Mekke'deki dağları ve yolları paylaşarak insanları engelleyen kimselerin azabıyla korkutan bir uyarıcıyım. Bunlardan bazısı, yanından geçen kimseye: *"Muhammed'e inanma! Çünkü o sihirbazdır"*, bazısı: *"O kâhindir"*, bazısı da: *"O delidir"* diyordu.

İşte onlar, bu kısımlarıyla:

اَلَّذِينَ جَعَلُوا الْقُرْاٰنَ عِضِينَ ﴿٩١﴾

91- "Kur'an'ı da parça parça edenlerdir."

Onlar, Kur'an hakkında farklı görüşler ileri sürdüler. Kimisi şiir, kimisi sihir, kimisi kahinlik olduğunu, kimisi de başka şeyler söyledi.

فَوَرَبِّكَ لَنَسْـَٔلَنَّهُمْ اَجْمَعِينَ ﴿٩٢﴾ عَمَّا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿٩٣﴾

92, 93- "Rabbine andolsun, onların hepsine yapmakta olduklarını mutlaka soracağız."

Allah, avama amellerinin doğruluğunu, havassa da hallerinin doğruluğunu sorar.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Allah, bazılarına zahirî hareketlerini, bazılarına da iç dünyalarında olup bitenleri, doğruluğu şiar edinenlere düşünce ve duyguları fiilleriyle doğrulayıp doğrulamadıklarını, iddiacılara da kendilerini şiddetle azarlamak için iddialarının doğruluğunu sorar.

- Bu ayeti duymak, bazı kimseler için ünsiyet ve sevince sebep olur. Çünkü onlar, Allah'a olan özlemlerinden dolayı kendileriyle konuşacağını ve hitabını onlara duyuracağını bilmektedirler. Bunda şaşılacak bir durum da bulunmamaktadır. Kaldı ki, bir insan da diğer bir insan hakkında şöyle diyebilmektedir:

Şiir:

*Utangaç beyazlardan kimisinin arkadaşı*
*Keşke tekrarlasaydı, der sözü bittiğinde*

O halde, o insandan daha mutlu kimse yoktur ki, yarın Mevlâ'sının kendisiyle konuşacağını bilir.

فَاصْدَعْ بِمَا تُؤْمَرُ وَاَعْرِضْ عَنِ الْمُشْرِكِينَ ﴿٩٤﴾

94- "Şimdi sen, sana emredileni açıkça ortaya koy ve Allah'a ortak koşanlara aldırış etme."

Bizimle var ol ve bizimle söyle. Sen, bizimle var olup bizim için olduğun zaman, bizden başkasını hesaba katma, sana söylediklerimizi açıkça dile getir, sana mahsus kıldığımız hususları açık bir dille söyle ve sana olan sevgimizi ilan et.

Şiir:

*Açık söyle sevdiğinin adını ve boş ver kinayeleri*
*Hayır yoktur üstünde örtü olan lezzetlerde*

اِنَّا كَفَيْنَاكَ الْمُسْتَهْزِئِينَ ﴿٩٥﴾ اَلَّذِينَ يَجْعَلُونَ مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ
فَسَوْفَ يَعْلَمُونَ ﴿٩٦﴾

95, 96- "Şüphesiz biz, Allah ile beraber başka ilah edinen alaycılara karşı sana yeteriz. İleride bilecekler."

Bunlar, kötülüklerini üzerinden defettiğimiz, kötü tuzaklarını başından savdığımız ve sana olan inayetimizin bir gereği olarak kendilerine karşı sana zafer verdiğimiz kimselerdir. Bu nedenle söylediklerinin ve yaptıklarının sana hiçbir zararı dokunamaz. Sonuçta yardım ve zafer sadece ve sadece senindir.

وَلَقَدْ نَعْلَمُ اَنَّكَ يَضِيقُ صَدْرُكَ بِمَا يَقُولُونَ ﴿٩٧﴾ فَسَبِّحْ بِحَمْدِ رَبِّكَ
وَكُنْ مِنَ السَّاجِدِينَ ﴿٩٨﴾

97, 98- "Andolsun, onların söyledikleri şeylerden dolayı göğsünün daraldığını biliyoruz. O halde Rabbini hamd ile tesbih et ve secde edenlerden ol."

Ayette Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kalbinin değil de göğsünün daralmasından söz edilmiş olmasının sebebi, kendisinin şuhûd makamında olmasıdır. Yoksa mümin Allah'a kavuşmadan rahat edemez. Kavuşunca da hiçbir yabancılık hissi kalmaz.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Allah: (وَلَقَدْ نَعْلَمُ) *"Andolsun biliyoruz"* demekle Hz. Peygamber'in (s.a.v.) göğüs daralmasını hafifletmiştir.

- Şayet hakkında söyledikleri kötüleyici sözleri duymakla göğsün daraldıysa, sen dilinle tesbihimizin ve övgümüzün bahçelerinde yüksel. Bu, göğsünün daralmasının geçmesine sebep, kadrimizin ve kutsiyetimizin yüceliğini, izzetimizin neleri hak ettiğini hatırlamanla da sana teselli olur.

وَاعْبُدْ رَبَّكَ حَتّٰى يَأْتِيَكَ الْيَقٖينُ ﴿٩٩﴾

99- "Sana ölüm gelinceye kadar Rabbine ibadet et."

Allah'a yakınlık makamında oturup vuslat adabıyla yükümlü kılınıncaya kadar hizmeti kabullenerek kulluk makamında dur.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Serbestlik sıfatlarıyla yükselinceye, daha doğrusu yetininceye kadar kulluğun şartlarına bağlı kal.

- Meziyetlerinin en üstün olanı, kulluk hakkını yerine getirmendir.

سورة النَّحْلِ

# NAHL SÛRESİ

(Nahl Sûresi 128 âyettir. Son üç âyet Medine'de, diğerleri Mekke'de inmiştir. "Nahl", bal arısı demektir. 68. âyette Allah'ın, bal arısına dağlarda ev yapma içgüdüsü verdiği anlatıldığından, sûreye bu ad verilmiştir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla.**

( بسم الله ) "*Bismillah*" lafzındaki vasl elifi, ( اسم ) "*isim*" kelimesinin aslında yoktu. Harekesiz harfle başlayan "سم" kelimesini telaffuz edebilmek için vaki olan ihtiyaç üzerine başına bu elif getirildi. Hakkındaki bu işlem, isteği dışında gerçekleştiği için elif, kelimenin cer harfi ( با ) "*bâ*" ile birleşmesi esnasında düşürüldü. Ancak telaffuzda görünmemekle birlikte yazılışta henüz duruyordu. Besmele'de yer alınca bu kez yazılışta da düşürüldü. Zaten böyledir, beraberliği artan, rütbece geriler.

Deniliyor ki, ( عَمْرو ) kelimesindeki ( و ) harfinin yazılışta var olmasının hangi gerekçesi vardır? Aynı şekilde ( قتلوا ) ve ( فعلوا ) lafızlarındaki ( ا ) "*elif*" harfinin hangi gerekçesi vardır? Aynı harfin ( سموات ) "*semâvât*" kelimesinden hazf edilmesinin sebebi nedir?

Doğrusu bu tür imla farklılıklarıyla ilgili gerekçeler geçersiz olup bu, durumun denk gelmesinden başka bir şey değildir. İşte red ve

kabul erbabı ile ilgili izah tarzı da böyledir. Allah şöyle buyurur: ( اِنَّ رَبَّكَ فَعَّالٌ لِمَا يُرِيدُ ) *"Şüphesiz Rabbin, istediğini yapandır."* (Hûd, 11/107)

اَتٰٓى اَمْرُ اللّٰهِ فَلَا تَسْتَعْجِلُوهُ سُبْحَانَهُ وَتَعَالٰى عَمَّا يُشْرِكُونَ ﴿١﴾

1- "Allah'ın emri gelecektir. Artık onun acele gelmesini istemeyin. Allah, onların ortak koştukları şeylerden uzaktır, yücedir."

Ayetteki geldi anlamındaki ( أتى ) lafzı, mazi fiil olmakla birlikte istikbal -gelecek- anlamındadır. Çünkü bu fiil, acele gelmesini istedikleri kıyamete dair emirle ilgilidir. Yani kıyamet emri gelecektir. Bu arada bütün kâinat ve baştan başa yaratıklar, Allah'ın emri cümlesindendir. Yani yaratmaya dair emri gerçekleşmiştir. Zira yaratma da O'nun takdiri, müyesser kılması, hükmü ve tedbiriyle gerçekleştiği için emirlerinden bir emirdir. Bu itibarla hayır, şer, fayda, zarar, tatlı ve acı ne gerçekleşiyorsa Allah'ın emrinin cümlesindendir.

( فَلَا تَسْتَعْجِلُوهُ ) *"Artık onun acele gelmesini istemeyin."*

Tevhid ehli olanlar, kendi tercihleriyle bir şeyin acele olmasını istemezler. Çünkü onların irade ve talepleri ortadan kalkmıştır. Aynı zamanda onlar, kaderin işleyişi altında sönmüşlerdir. Hal böyle olunca onların hiçbir tercih ve seçimleri bulunmadığından hiçbir konuda acele etmezler. Bir şey ümit ettikleri zaman veya bir şeyin gerçekleşeceği kendilerine haber verildiği zaman asla aceleleri olmaz. Aksine tavırları teenni, sebat ve sükûnet şeklinde olur.

Takdirin bir hükmü ortaya çıktığı zaman da karşılaşacakları durum konusunda hiçbir aceleleri olmaz. Aksine takdirin sürprizini güler bir yüzle kabullenir ve gaybdan belirecek olan ret, kabul, men ve fetihleri hoşnutluk vasfıyla karşılar ve buna karşılık olarak Hakk'a hamd ederler.

( سُبْحَانَهُ وَتَعَالٰى عَمَّا يُشْرِكُونَ ) *"Allah, onların ortak koştukları şeylerden uzaktır, yücedir."*

Allah, onların Rablerine ortak koştukları şeylerden yücedir. Kâfirlere ise bir şey müyesser kılınmamıştır. O kadar ki kalpleri, Allah'ın kelamından sükûnet bulmaz.

يُنَزِّلُ الْمَلٰٓئِكَةَ بِالرُّوحِ مِنْ اَمْرِه۪ عَلٰى مَنْ يَشَٓاءُ مِنْ عِبَادِه۪ٓ اَنْ اَنْذِرُٓوا اَنَّهُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّٓا اَنَا فَاتَّقُونِ ﴿٢﴾

2- "Allah: 'Benden başka ilah oktur. Öyleyse bana karşı gelmekten sakının' diye uyarıda bulunmaları için emrini içeren vahiy ile melekleri, kullarından dilediğine indirir."

Allah, melekleri vahiy ve peygamberlik görevleriyle peygamberlere, tanıtma ve ilham görevleriyle de "el-muhaddesûn (kendileriyle konuşulanlar)" denilen tevhid erbabının kalplerinin üzerine indirir. Meleklerin bunların kalpleri üzerine indirilmesi caiz görülmeyen bir durum değildir. Ancak onlar, meleklerin getirdiklerini dile getirmekle memur kılınmaz ve halka peygamberlik mesajını taşımazlar. Ayette geçen "ruh"tan maksat vahiy ve Kur'an'dır. Sonuç itibariyle ruh, hayatın sebebi olan şeydir. Bu hayat, kalbin hayatı veya dünyalık hayat olabilir.

خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ تَعَالٰى عَمَّا يُشْرِكُونَ ﴿٣﴾

3- "Allah, gökleri ve yeri, hak ve hikmete uygun olarak yarattı. O, müşriklerin ortak koştukları şeylerden yücedir."

Allah gökleri ve yeri hak ile yarattı ve onları hak ile yönetmektedir. Bu itibarla O, onları yaratmada haklıdır, çünkü bunu yapabilmektedir. Ayrıca bu haklılığın kapsamına, halkı mükellef kılmaya dönük emri ve bunu takip eden haşir, neşir, sevap ve azap da girer.

( تَعَالٰى عَمَّا يُشْرِكُونَ ) *"O, müşriklerin ortak koştukları şeylerden yücedir."*

Çünkü Allah, ortağı olmaktan veya beraberinde bir mülk sahibinin bulunmasından münezzehtir ve üstünlük sahibidir.

خَلَقَ الْاِنْسَانَ مِنْ نُطْفَةٍ فَاِذَا هُوَ خَصِيمٌ مُبِينٌ ﴿٤﴾

4- "İnsanı nutfeden (bir damla sudan) yarattı. Böyle iken bakarsın ki o, Rabbine açık bir hasım kesilmiştir."

Allah, kendini akıl sahiplerine kudretinin kemaliyle tanıtmıştır. Çünkü O, inşası esnasında benzer parçalardan, ortaya çıktığı zaman ise değişik organlardan meydana gelen şaşırtıcı oluşumu, ince yapısıyla birlikte insana şekil vermeye kadir olduğunu haber vermiştir. Sonra insanın yapısına temyizi ve aklı katmış, ayrıca konuşma, fiil, işlerde tedbir ve boyun eğdirmek suretiyle hayvanlara hakim olmak gibi hususları da kendisine müyesser kılmıştır.

وَالْاَنْعَامَ خَلَقَهَا لَكُمْ فِيهَا دِفْءٌ وَمَنَافِعُ وَمِنْهَا تَأْكُلُونَ ﴿٥﴾

5- "Hayvanları da yarattı. Onlarda sizin için bir ısınma ve bir çok faydalar vardır. Hem de onlardan yersiniz."

Allah, verdiği nimetleri onlara hatırlatmış ve kendileri için hayvanlarda bulunan nimetleri, her durumda onlardan yaralanma şekillerini haber vermiştir. Yararlanma şekilleri; taşıma, onlara binip yolculuk yapmak, mesafeler kat etmek, ihtiyaçları karşılamak ve yavruları ile sütlerinden elde edilen menfaatler gibi hususlardır.

وَلَكُمْ فِيهَا جَمَالٌ حِينَ تُرِيحُونَ وَحِينَ تَسْرَحُونَ ﴿٦﴾ وَتَحْمِلُ
اَثْقَالَكُمْ اِلٰى بَلَدٍ لَمْ تَكُونُوا بَالِغِيهِ اِلَّا بِشِقِّ الْاَنْفُسِ اِنَّ رَبَّكُمْ
لَرَؤُفٌ رَحِيمٌ ﴿٧﴾

6, 7- "Onları akşamleyin getirirken de sabahleyin salıverirken de sizin için bir güzellik vardır. Onlar, ağırlıklarınızı sizin ancak zorlukla varabileceğiniz beldelere taşırlar. Şüphesiz Rabbiniz çok esirgeyicidir, çok merhametlidir."

Zenginin malıyla bir güzelliği vardır. Fakirin de kendi haliyle baş başa olma durumu vardır. İkisi arasındaki fark ise pek büyüktür.

Zira zenginler, hayvanları akşamleyin getirirken ve sabahleyin salıverirken onlarla güzelleşmeye çalışırlar. Fakirler ise sabahladıklarında ve akşamladıklarında Mevlâ'larıyla baş başa olurlar. Zenginlerin yüklerini develer taşırken, fakirlerin kalplerinden ağırlıklarını Allah kaldırır.

( وَتَحْمِلُ اَثْقَالَكُمْ اِلٰى بَلَدٍ لَمْ تَكُونُوا بَالِغِيهِ اِلَّا بِشِقِّ الْاَنْفُسِ ) *"Onlar, ağırlıklarınızı sizin ancak zorlukla varabileceğiniz beldelere taşırlar."*

Öyleleri vardır ki, ahvalleri sıkıntılara göğüs germekten ibaret olup yürüyüşlerini gece yolculuklarıyla birleştirirler. Kimileri de vardır ki, Mevlâlarının yükü içerisindeler, tedbir çabasından uzaktalar, takdiri görmenin rahatlığını yaşarlar ve darlıkta da bollukta da Hakk'ı tercih etmeye razıdırlar.

وَالْخَيْلَ وَالْبِغَالَ وَالْحَمِيرَ لِتَرْكَبُوهَا وَزِينَةً وَيَخْلُقُ مَا لَا تَعْلَمُونَ ﴿٨﴾

8- "Hem binesiniz diye, hem de süs olarak atları, katırları ve merkepleri de yarattı. Bilemeyeceğiniz daha nice şeyleri de yaratır."

Taşıyıcılıkta nefisler hayvanlar gibidir. Oysa kalpler, sebeplerle uğraşmaktan azat kılınmışlardır.

( وَيَخْلُقُ مَا لَا تَعْلَمُونَ ) *"Bilemeyeceğiniz daha nice şeyleri de yaratır."*

Nasıl ki, müminlerden cennetlik olanlar, ahrette hiçbir gözün görmediği, hiçbir kulağın duymadığı ve hiçbir insanın aklına gelmeyen şeyler bulacaklarsa, aynı şekilde hakikat erbabı da bugün hiç akla gelmeyen, hiçbir kitapta okumadıkları ve hiçbir hocadan öğrenmedikleri şeyler bulurlar. Bir de Allah'ın, ayrıntısını kendisinden başka kimsenin bilmediğini haber verdiği şeyler ihata edilemez. Böyleyken Allah'ın, bilmediğini bildirdiği kimse bunları nasıl bilebilir!

وَعَلَى اللّٰهِ قَصْدُ السَّبِيلِ وَمِنْهَا جَآئِرٌ وَلَوْ شَآءَ لَهَدٰيكُمْ اَجْمَعِينَ ﴿٩﴾

9- "Doğru yolu göstermek Allah'a aittir. Yolun eğrisi de vardır. Eğer Allah dileseydi, hepinizi doğru yola iletirdi."

Allah, kimilerine yol göstermiş, delil öğretmiş, böylece kalplerinden şüphe duygularını geri çevirmiş, onları inkâr ve şirkten korumuş, kalplerinde irfan güneşlerini doğurmuş ve kendilerini beyan nuruyla baş başa kılmıştır. Kimilerini de dalalete düşürüp yoldan saptırmış, delilleri göremez kılmış, sebep olmaksızın ezeli hükmünde onları zelil ve kahretmiştir. Oysa eğer Allah dileseydi, onlara hakikati öğretir ve kendilerini hidayete erdirirdi.

هُوَ الَّذِي اَنْزَلَ مِنَ السَّمَآءِ مَآءً لَكُمْ مِنْهُ شَرَابٌ وَمِنْهُ شَجَرٌ فِيهِ تُسِيمُونَ ﴿١٠﴾ يُنْبِتُ لَكُمْ بِهِ الزَّرْعَ وَالزَّيْتُونَ وَالنَّخِيلَ وَالْاَعْنَابَ وَمِنْ كُلِّ الثَّمَرَاتِ اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِقَوْمٍ يَتَفَكَّرُونَ ﴿١١﴾

10, 11- "O, gökten sizin için su indirendir. İçilecek su ondandır. Hayvanlarınızı otlattığınız bitkiler de onunla meydana gelir. Allah, o su ile size ekin, zeytin, hurma ağaçları, üzümler ve her türlü meyvelerden bitirir. Elbette bunda, düşünen bir kavim için bir ibret vardır."

Allah, yağmuru indirip onunla bitkilerin sulanmasını sağlamış ve onunla hayatı devam ettirme, ağaçları yeşertme, meyveleri çıkartma ve nehirleri akıtma prensibini koymuştur. Sonra Allah önce: ( اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِقَوْمٍ يَتَفَكَّرُونَ ) *"Elbette bunda, düşünen bir kavim için bir ibret vardır"*, ardından: ( لِقَوْمٍ يَعْقِلُونَ ) *"Aklını kullanan bir toplum için"* (Nahl, 16/12), ardından da: ( لِقَوْمٍ يَذَّكَّرُونَ ) *"Öğüt alan bir toplum için"* (Nahl, 16/13), buyurmuştur. İşte marifet böyle gerçekleşir.

Bu çerçevede önce düşünmek, sonra bilmek, sonra da öğüt almak gelir. Kişi önce düşünceyi yerli yerine koyar. Eğer düşüncesinde bir halel yoksa kaçınılmaz olarak ona ilim gerekir. Bu arada ilim ile akıl arasında hakikatte bir fark yoktur. Ondan sonra da düşünmenin sürdürülmesi gelir ki bu da zaten öğüt almaktır.

Bir yoruma göre, ( لَاٰيَةً لِقَوْمٍ يَتَفَكَّرُونَ ) *"Aklını kullanan bir toplum için ibretler vardır"* ayetinde *"ibretler"*in çoğul olarak söylenmiş

olmasının sebebi kişinin arif oluncaya kadar pek çok ilme sahip olmasıdır. İlmin her bir cüzü içinse bir ibret ve delil gerçekleşir. Bu itibarla ilim sahibinin Rabbini tanıması için pek çok ibret ve delilleri vardır. Çünkü herhangi bir meselenin delili, diğer meselenin delilinden farklıdır. Böylece insan, bir delille düşünmenin şeklini öğrenirken, pek çok delille de Rabbini tanıyan kişi olur.

وَسَخَّرَ لَكُمُ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ وَالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ وَالنُّجُومُ مُسَخَّرَاتٌ
بِاَمْرِهِ اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يَعْقِلُونَ ﴿١٢﴾

12- "O, geceyi, gündüzü, güneşi ve ayı sizin hizmetinize verdi. Bütün yıldızlar da O'nun emri ile sizin hizmetinize verilmiştir. Şüphesiz bunlarda aklını kullanan bir millet için ibretler vardır."

Gece ve gündüz fiilin zarflarıdır. İnsanlar da fiilleri itibariyle farklı olup kimisi başarılı, kimisi de başarısızdır. Başarılı olan, vaktini Rabbinin ibadetinde geçirir. Başarısız olan ise vaktini hevasına uymada geçirir.

İbadet ehli olan, dosdoğru bir farz kılmakta veya bir nafileye devam etmektedir. Arif, zikriyle ve kalbine ünsiyet olarak yansıyacak olan virdlerini yerine getirmekle meşguldür. Tevhid ehline gelince, onlar yaşadıkları hallerin galebe çalması sebebiyle, zamanlardan ve vakitlerden koparılmışlardır. Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Bilmem ben gecemin uzayıp uzamadığını*
*Nasıl bilir ki bunu, kavrulmakta olan kime*
*Eğer verseydim kendimi gecemin uzunluğuna*
*Ve gözleseydim yıldızları, çiğnemiş olurdum kuralı*

( وَسَخَّرَ لَكُمُ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ وَالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ وَالنُّجُومُ مُسَخَّرَاتٌ بِاَمْرِهِ اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يَعْقِلُونَ ) *"Güneşi ve ayı sizin hizmetinize verdi. Bütün yıldızlar da O'nun emri ile sizin hizmetinize verilmiştir. Şüphesiz bunlarda aklını kullanan bir millet için ibretler vardır."*

Bu zahirde böyledir. Bâtında ise bunlar ilmin yıldızları, marifetin ayları ve tevhidin güneşleridir.

وَمَا ذَرَاَ لَكُمْ فِي الْاَرْضِ مُخْتَلِفًا اَلْوَانُهُ اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِقَوْمٍ يَذَّكَّرُونَ ﴿١٣﴾

13- "Sizin için yeryüzünde çeşitli renklerle ve biçimlerle yarattığı şeyleri de sizin hizmetinize verdi. Öğüt alan bir toplum için bunda ibretler vardır."

Bunlar, Allah'ın kendileri için yeryüzünde bahçeler, ağaçlıklar, evler, saraylar, meskenler, yurtlar, türlü nimetler ve çeşitli kısmetler yarattığı kimselerdir. Bazı kimseler de vardır ki, onların ne yuvaya konan bir kuşları ne bir karış toprakları ne onları kendine bağlayacak evleri ne de alıkoyacak dünyalık bir ilgileri vardır. İşte bunlar, insanların efendileri ve hakkın aydınlığıdırlar.

وَهُوَ الَّذِي سَخَّرَ الْبَحْرَ لِتَاْكُلُوا مِنْهُ لَحْمًا طَرِيًّا وَتَسْتَخْرِجُوا مِنْهُ حِلْيَةً تَلْبَسُونَهَا وَتَرَى الْفُلْكَ مَوَاخِرَ فِيهِ وَلِتَبْتَغُوا مِنْ فَضْلِهِ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿١٤﴾

14- "O, taze et yemeniz ve takınacağınız süs eşyası çıkarmanız için denizi sizin hizmetinize verendir. Gemilerin orada suyu yara yara gittiğini görürsün. Bütün bunlar, O'nun lütfundan nasip aramanız ve şükretmeniz içindir."

Allah, zahirde denizi hizmete vermiş ve gemide ona binmeyi kolaylaştırmış, ondan çıkartılan inci gibi süs eşyasından ve balık ile deniz hayvanları gibi azık edinilen şeylerden yararlanmayı mümkün kılmıştır.

Bu konudaki izahlardan biri de şöyledir:

Allah, çeşitli denizler yaratmıştır. Bu çerçevede kimileri meşguliyet denizlerinde gark olmuş, kimileri hüzün denizlerine düşmüş

iken bazıları da eğlence denizlerindedirler. Meşguliyet denizinden zarar görmemek tevekkül gemisine; hüzün denizinden kurtuluş rıza gemisine; eğlence denizinden kurtulmak ise zikir gemisine binmekle olur.

وَاَلْقٰى فِي الْاَرْضِ رَوَاسِيَ اَنْ تَم۪يدَ بِكُمْ وَاَنْهَارًا وَسُبُلًا لَعَلَّكُمْ تَهْتَدُونَ ﴿١٥﴾

15- "Sizi sarsmaması için yeryüzünde sağlam dağlar, yolunuzu bulmanız için de nehirler ve yollar meydana getirdi."

Ayette yer alan ( الرواسي ) kelimesinin zahir manası "dağlar" demektir. İşârî tefsire göre ise halkın imdadına yetişen veliler demektir. Allah, onlarla halka merhamet eder ve onlarla halka yardımcı olur. Onlardan kimileri abdâl, kimileri evtâd, kimileri de kutubdur. Bir rivayette: *"Toplumunun içinde şeyh, ümmetinin içindeki peygamber gibidir"* denilmiştir. Allah da şöyle buyurmuştur:

( وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُعَذِّبَهُمْ وَاَنْتَ فِيهِمْ ) *"Sen onların içinde iken Allah onlara azap edecek değildi."* (Enfâl, 8/33)

( وَلَوْلَا رِجَالٌ مُؤْمِنُونَ وَنِسَاۤءٌ مُؤْمِنَاتٌ لَمْ تَعْلَمُوهُمْ اَنْ تَطَؤُهُمْ فَتُصِيبَكُمْ مِنْهُمْ مَعَرَّةٌ بِغَيْرِ عِلْمٍ لِيُدْخِلَ اللّٰهُ فِي رَحْمَتِهِ مَنْ يَشَاۤءُ لَوْ تَزَيَّلُوا لَعَذَّبْنَا الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْهُمْ عَذَابًا اَلِيمًا ) *"Eğer oradaki henüz tanımadığınız inanmış erkeklerle, inanmış kadınları bilmeyerek ezmeniz ve böylece size bir eziyet gelecek olmasaydı..."* (Fetih, 48/25)

Şiir:

*Yazık bana o kimselerin ayrılığından ki*
*Onlardır lambalar, güven ve yağmurlu bulut*

وَعَلَامَاتٍ وَبِالنَّجْمِ هُمْ يَهْتَدُونَ ﴿١٦﴾

16- "Birtakım işaretler de meydana getirdi. İnsanlar, yıldızlarla da yollarını bulurlar."

Uzay cisimleri, gökyüzünün yıldızlarıdır. O yıldızlardan bazısı da şeytanlara atılan taşlardır. Veliler ise yeryüzünün yıldızlarıdır. Aynı şekilde âlimler de yeryüzünün yıldızlarıdır. Bir de onlar tevhidde imam, kâfirler ve inançsızlara karşı da Allah'ın silahlarıdır. Bir yoruma göre, kendileriyle dünya yollarında yön belirlenen yıldızlar ile kendileriyle Allah'a giden yolda yürünen yıldızlar arasında büyük fark bulunmaktadır.

اَفَمَنْ يَخْلُقُ كَمَنْ لَا يَخْلُقُ اَفَلَا تَذَكَّرُونَ ﴿١٧﴾

17- "Şu halde yaratan, yaratamayan gibi olur mu! Artık hiç düşünmez misiniz!"

Bu ayet, Allah ile yaratıkları arasında benzerlik bulunmadığını ifade etmektedir. Allah'ın kadîm sıfatları, O'na layık olan sıfatlardır. Sonradan yaratılanların özelliklerine gelince Allah, onların tamamından münezzehtir. Allah'ın ne zâtı yaratıkların zâtlarına, ne sıfatları onların sıfatlarına ne de hükmü onların hükmüne benzetilebilir. Her türlü dalaletin aslı da benzetmedir. Benzetmenin çirkinliği ve bozukluğundan biri de herkesin ondan uzak durmaya çalışması ve intihalinden kaçınmasıdır.

وَاِنْ تَعُدُّوا نِعْمَةَ اللّٰهِ لَا تُحْصُوهَا اِنَّ اللّٰهَ لَغَفُورٌ رَح۪يمٌ ﴿١٨﴾

18- "Halbuki Allah'ın nimetini saymaya kalksanız, onu sayamazsınız. Şüphesiz Allah, çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Varlıkları sayamazsınız; çünkü bilgileriniz onlara yetmez. Bu arada koruyucu nimetlerin sonu yoktur. Aynı zamanda Allah, bağışlayan ve merhamet edendir. Zira şükründen aciz kaldığınız zaman kusurunuzdan vazgeçer ve sizi şükründen (...) bilginize rıza gösterir.

وَاللّٰهُ يَعْلَمُ مَا تُسِرُّونَ وَمَا تُعْلِنُونَ ﴿١٩﴾

19- "Allah, gizlediğinizi de açığa vurduğunuzu da bilir."

Gizlediğiniz ihlası ve şahısları hesaba katmayı bilir. O halde hiçbir hesap O'ndan saklı kalamaz. Açığa vurduğunuz uyumu, uyumsuzluğu, ihsanı ve isyanı da bilir. Bu ayet hata sahiplerini korkutmakta, ibadet sahiplerini ise onurlandırmaktadır.

وَالَّذِينَ يَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ لَا يَخْلُقُونَ شَيْـًٔا وَهُمْ يُخْلَقُونَ ﴿٢٠﴾

20- "Allah'ı bırakıp da taptıkları şeyler, yaratılmış olduklarına göre hiçbir şey yaratamazlar."

Allah, yaratılmış oldukları için putların bir şey yaratamayacaklarını bildirmektedir. Bu ayet, yaratılmışlık özelliğine sahip birinin yaratıcı olamayacağını ifade etmektedir. Yaratmak ise var etmek demektir. Bu itibarla ayette, fiillerin yaratılmış -mahlûk- olduklarına dair delil vardır.

اَمْوَاتٌ غَيْرُ اَحْيَٓاءٍ وَمَا يَشْعُرُونَ اَيَّانَ يُبْعَثُونَ ﴿٢١﴾

21- "Onlar, diri olmayan cansız varlıklardır. Ne zaman dirileceklerinin de şuuruna varamazlar."

Çünkü yaratılmışlık vasfına maruz kalanın var etmesi söz konusu olmaz. Hakikatte ise kalbini bir şeye bağlayan ve onda hayır veya şer vehmeden herkes, zannı sebebiyle Allah'a ortak koşmuş olur. Tevhid ise ancak erkek veya dişi her türlü yaratığın en ufak bir olumsuz ya da olumlu tesirini hesaba katmaktan kalbi arındırmaktır.

اِلٰهُكُمْ اِلٰهٌ وَاحِدٌ فَالَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِالْاٰخِرَةِ قُلُوبُهُمْ مُنْكِرَةٌ وَهُمْ مُسْتَكْبِرُونَ ﴿٢٢﴾

22- "Sizin ilahınız tek bir ilahtır. Ahirete inanmayanların kalpleri bunu inkâr etmekte, kendileri de büyüklük taslamaktadırlar."

Allah'ın zâtının, varlığı caiz veya vacip hiçbir paydaşı, hiçbir benzeri ve hiçbir ortağı bulunmamaktadır. Kim, bu tespite ve delillerin

tafsilî bir şekilde ona tanıklık ettiğine kesin bir hakikat olarak inanmazsa, şirkin uçurumlarına düşmüş ve tevhidin hakikatlerinden kopmuş olur. Allah, kâfirlerin niteliği hakkında: ( قُلُوبُهُمْ مُنْكِرَةٌ وَهُمْ مُسْتَكْبِرُونَ ) *"Kalpleri bunu inkâr etmekte, kendileri de büyüklük taslamaktadırlar"* buyurmaktadır. Yani onlar şirke esir düşmüş ve küfrün örtüsüne bürünmüşlerdir. Sonra kâfirde irfanı arama vasfı bulunmamaktadır. Çünkü marifeti arzu eden için gerekçe hazırdır ve yaratılış delilleri apaçıktır.

لَا جَرَمَ اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ مَا يُسِرُّونَ وَمَا يُعْلِنُونَ اِنَّهُ لَا يُحِبُّ الْمُسْتَكْبِرِينَ ﴿٢٣﴾

23- "Şüphe yok ki Allah, onların gizlediklerini de açığa vurduklarını da bilir. O, büyüklük taslayanları hiç sevmez."

Böylece Allah, onları rüsva ederek münafıklıklarını açıklar ve küfürlerini ve uyumsuzluklarını müminlere duyurur.

( اِنَّهُ لَا يُحِبُّ الْمُسْتَكْبِرِينَ ) *"O, büyüklük taslayanları hiç sevmez."*

Bu hitabın gerekçesi Allah'ın, alçak gönüllüleri ve O'na boyun eğenleri sevmesidir. Hakk'ın, onları sevdiğini kendilerine müjdelemesi ise onlar için fazilet ve lütuf olarak yeter.

وَاِذَا قِيلَ لَهُمْ مَاذَٓا اَنْزَلَ رَبُّكُمْ قَالُوٓا اَسَاطِيرُ الْاَوَّلِينَ ﴿٢٤﴾

24- "Onlara: 'Rabbiniz ne indirdi?' dendiği zaman: 'Öncekilerin masalları' dediler."

Yalanlamalarının uğursuzluğu başlarına geldi. Şöyle ki, düşünmekten yüz çevirdiler, kalpleri katılaştı ve hakkı ikrar etmeye yanaşmadılar. Bu yüzden onlara soranları şaşırtarak: *"Muhammed'in bu getirdiği, acemlerin yalanlarındandır"* dediler ve böylece hem saptılar hem de saptırdılar.

لِيَحْمِلُوٓا اَوْزَارَهُمْ كَامِلَةً يَوْمَ الْقِيٰمَةِ وَمِنْ اَوْزَارِ الَّذِينَ يُضِلُّونَهُمْ
بِغَيْرِ عِلْمٍ اَلَا سَٓاءَ مَا يَزِرُونَ ﴿٢٥﴾

25- "Böylece kıyamet gününde kendi günahlarını tam olarak, bilgisizce saptırdıkları kimselerin günahlarının da bir kısmını yüklenirler. Dikkat et, yüklendikleri ne kötüdür!"

Onlar, dünyada Allah'tan başkası için çaba harcayınca amelleri temiz olmadı. Ahirette ise başkalarının da günahlarını taşıyacaklar. İşte dünyada da ahirette de kaybeden bunlardır.

قَدْ مَكَرَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ فَاَتَى اللّٰهُ بُنْيَانَهُمْ مِنَ الْقَوَاعِدِ فَخَرَّ عَلَيْهِمُ
السَّقْفُ مِنْ فَوْقِهِمْ وَاَتٰيهُمُ الْعَذَابُ مِنْ حَيْثُ لَا يَشْعُرُونَ ﴿٢٦﴾

26- "Onlardan öncekiler de tuzak kurmuşlardı. Allah'ın azabı, binalarını temelinden gelip yıktı da tavanları başlarına çöküverdi ve azap, kendilerine fark edemedikleri yerden geldi."

Onlar, tuzakçılık vasfına sahip olduklarından tuzakları onları kuşattı ve başkaları için kazdıkları kuyuya kendileri düştüler. Mühletin uzun sürmesine aldandıkları için azap onları güvenli mekânlarından aldı. Bir de eğlenceleriyle meşgul olmaları sebebiyle gelen azap, en güzel yaşantılarını onlara zehir etti.

( فَاَتَى اللّٰهُ بُنْيَانَهُمْ مِنَ الْقَوَاعِدِ فَخَرَّ عَلَيْهِمُ السَّقْفُ مِنْ فَوْقِهِمْ وَاَتٰيهُمُ الْعَذَابُ مِنْ حَيْثُ لَا يَشْعُرُونَ ) *"Allah'ın azabı, binalarını temelinden gelip yıktı da tavanları başlarına çöküverdi ve azap, kendilerine fark edemedikleri yerden geldi."*

Kur'an'da Allah, kendi gelişinden söz ettiği zaman bu azabının geldiği anlamındadır. Bu, Arapların konuşmada baş vurdukları mecazlı üsluplarındandır.

Bu arada Allah, dolunayıyla geceyi aydınlatır, sonra da tuzak kuranı, tuzağına uygun bir ceza ile cezalandırır.

Şiir:

*Güvendim ona ben ve güvendiğim yerden hazırladı bana*
*Bir tuzak ki, böyle olur zaten zamana güvenen kimse*

ثُمَّ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ يُخْزِيهِمْ وَيَقُولُ اَيْنَ شُرَكَٓائِيَ الَّذٖينَ كُنْتُمْ تُشَٓاقُّونَ فٖيهِمْ
قَالَ الَّذٖينَ اُو۫تُوا الْعِلْمَ اِنَّ الْخِزْيَ الْيَوْمَ وَالسُّٓوءَ عَلَى الْكَافِرٖينَ ﴿٢٧﴾

27- "Sonra kıyamet günü Allah onları rezil edecek ve diyecek ki: 'Uğrunda mücadele ettiğiniz ortaklarım nerede!' Kendilerine ilim verilenler ise şöyle derler: 'Şüphesiz bugün rezillik, aşağılık ve kötülük kâfirlerin üzerinedir.'"

Dünyada acil belaları, önlerinde de ahiretteki belaları vardır. Hesaba çekildiği ve yaptıklarını müşahede ettiği zaman müflisin hasreti ikiye katlanır.

( الَّذٖينَ اُو۫تُوا الْعِلْمَ ) *"Kendilerine ilim verilenler..."*

Allah, bu ayette kâfirlere müminlerin sözünü duyurmakta ve doğru söylediklerini herkese açıklamaktadır. İnkârcılarının üstüne pişmanlık çöker. Bugüne gelince müminler sabır ve tahammül göstermelidirler. Yakında örtü kalkacaktır.

Şiir:

*Dostlar! Eğer tepemde değirmen taşı dönse*
*Zülden, tasalanmaz ve konuşmazdım*
*"Cefayı bilmez" denecek ölçüde eğerdim başımı önüme*
*Ancak açıkça konuşurdum konuşma günü*

اَلَّذٖينَ تَتَوَفّٰيهُمُ الْمَلٰٓئِكَةُ ظَالِمٖيٓ اَنْفُسِهِمْ فَاَلْقَوُا السَّلَمَ مَا كُنَّا
نَعْمَلُ مِنْ سُٓوءٍ بَلٰٓى اِنَّ اللّٰهَ عَلٖيمٌ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٢٨﴾ فَادْخُلُٓوا
اَبْوَابَ جَهَنَّمَ خَالِدٖينَ فٖيهَا فَلَبِئْسَ مَثْوَى الْمُتَكَبِّرٖينَ ﴿٢٩﴾

28, 29- "O kâfirler, nefislerine zulmederlerken melekler onların canlarını alır da onlar teslim olup: 'Biz, hiçbir kötülük yapmıyorduk' derler. 'Hayır! Allah, sizin yapmakta olduklarınızı hakkıyla bilmektedir. Haydi! İçinde ebedî kalacağınız cehennemin kapılarından girin. Büyüklük taslayanların yeri ne kötüdür!'"

( ظَالِمِي۪ٓ اَنْفُسِهِمْ ) *"Nefislerine zulmederlerken..."* Bunlar, günah işleyerek nefislerine zulmeden kâfirlerdir.

( فَاَلْقَوُا السَّلَمَ ) *"Onlar teslim olup..."* Onlar, Allah'ın hükümlerine boyun eğip teslim oldular.

( مَا كُنَّا نَعْمَلُ مِنْ سُٓوءٍ ) *"Biz, hiçbir kötülük yapmıyorduk."* Onlar, yaptıkları itaatsizlikleri inkâr ettiler.

( بَلٰٓى اِنَّ اللّٰهَ عَل۪يمٌ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ) *"Hayır! Allah, sizin yapmakta olduklarınızı hakkıyla bilmektedir."* Melekler, onlara böyle dediler. Ardından da şöyle dediler:

( فَادْخُلُٓوا اَبْوَابَ جَهَنَّمَ خَالِد۪ينَ ف۪يهَا ) *"Haydi! İçinde ebedî kalacağınız cehennemin kapılarından girin."*

İşte ibadetlerden yüz çevirmeleri sebebiyle nefisleri katılaşanlar böyledir. Ölümle karşılaştıkları zaman tasalanıp yalvarmaya başlarlar. Sonra bunlar, hasımlarına yaptıkları kötü muamelelerden dolayı kendilerini hoşnut etmeye dair olarak yaptıklarının ayrıntılarını insanların arasında ikrar etmeyi hazmedemezler. Sonra Allah, onları hem büyük hem de en küçük günahlarından sorumlu tutacaktır. Sonra da onlar, amel defterlerinde biriktirdikleri günahların vebali altında ebediyen kalacaklardır. Çünkü bu vebalin uğursuzluğu ahiretlerinde onları yakalayacaktır.

وَق۪يلَ لِلَّذ۪ينَ اتَّقَوْا مَاذَٓا اَنْزَلَ رَبُّكُمْ قَالُوا خَيْرًا لِلَّذ۪ينَ اَحْسَنُوا ف۪ي
هٰذِهِ الدُّنْيَا حَسَنَةٌ وَلَدَارُ الْاٰخِرَةِ خَيْرٌ وَلَنِعْمَ دَارُ الْمُتَّق۪ينَ ﴿٣٠﴾

30- "Allah'a karşı gelmekten sakınan kimselere: 'Rabbiniz ne indirdi?' denildiğinde: 'Hayır indirdi' derler. Bu dünyada iyilik yapanlara bir iyilik vardır. Ahiret yurdu ise daha hayırlıdır. Allah'a karşı gelmekten sakınanların yurdu ne güzeldir."

Müslümanlara gelince; melekler yanlarına gidip kendilerine Hz. Peygamber'in (s.a.v.) ahvalini ve Allah'ın kendisine indirdiği vahyi

sordukları zaman, şöyle derler: *"Onun dini haktır ve Allah ona hakkı indirmiştir. Dünyada iyilik yapanlar, ahirette hayrı bulurlar."*

Bir yoruma göre; bu dünyadaki iyilikten maksat, zamanın safiyetiyle sahip oldukları ibadet zevkidir. Söz konusu iyilik, onlara amellerde ve hallerde verilen fazlaca muvaffakiyet de olabilir. Yanı sıra şu iki yorum da yapılabilir:

- Söz konusu iyilik, yaşadıkları ihsan haline ilave olarak Allah'ın, onlara istikamette muvaffakiyet de vermesidir.

- Söz konusu iyilik, Allah'ın onları büyük şahsiyetlerin makamlarına ulaştırmasıdır.

Allah şöyle buyurmuştur:

( وَجَعَلْنَا مِنْهُمْ اَئِمَّةً يَهْدُونَ بِاَمْرِنَا لَمَّا صَبَرُوا وَكَانُوا بِاٰيَاتِنَا يُوقِنُونَ ) *"Sabredip ayetlerimize kesin olarak inandıkları zaman, içlerinden emrimizle doğru yola ileten önderler çıkardık."* (Secde, 32/24)

- Söz konusu iyilik, onu yapanları aşıp başkalarına da ulaşan iyiliktir. Bu, müridleri irşad etmelerinin bereketleri ve onlara uymuş olanlarda kendilerinden alıp öğrendikleri sayesinde gerçekleşenlerdir. Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur: *"Yemin ederim ki, seninle bir kimsenin hidayete ermesi, senin için en değerli nimetlerden daha hayırlıdır."*

Sonra Allah: ( وَلَدَارُ الْاٰخِرَةِ خَيْرٌ ) *"Ahiret yurdu ise daha hayırlıdır"* buyurmuştur. Çünkü ahirette olan şeyler kalıcı olup onlarda yok olma tehlikesi yoktur. Bir de dünyada müşahede, ahirette ise muayene vardır.

جَنَّاتُ عَدْنٍ يَدْخُلُونَهَا تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ لَهُمْ فِيهَا مَا
يَشَٓاؤُ۫نَ كَذٰلِكَ يَجْزِي اللّٰهُ الْمُتَّقِينَ ﴿٣١﴾

31- "İçinden nehirler akan Adn cennetlerine gireceklerdir. Kendileri için orada diledikleri her şey vardır. Allah, kendine karşı gelmekten sakınanları böyle mükâfatlandırır."

Nasıl ki dünyada iradeler ve gayretler farklı ise ahirette de aynı şekildedir. Bir rivayette şöyle denilmiştir: *"Kim hangi halde ise Allah'ın huzuruna o halde çıkar."* Bu çerçevede kimi irade sahibi cennetin gülleriyle yetinirken, kimisi de Allah'ı görmekten başka hiçbir şeyle yetinmez.

Diğer bir yoruma göre; cennetlikler, ellerinden çıkan saraylarına ve bu saraylardaki hallerinde ve işlerinde İblis'le yaptıkları arkadaşlığa dönmek istedikleri zaman bu istekleri kabul edilir. Kim de Allah'ı görmeye devam etmek ve ilahî hitabı ebediyen duymak isterse, cennette onun için bu vardır. Allah katında bundan fazlası da vardır. İşte hiç kimsenin aklına gelmeyen nimet budur.

اَلَّذٖينَ تَتَوَفّٰيهُمُ الْمَلٰٓئِكَةُ طَيِّبٖينَ يَقُولُونَ سَلَامٌ عَلَيْكُمْ ادْخُلُوا الْجَنَّةَ
بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٣٢﴾

32- "Melekler, onların canlarını iyi kimseler olarak alırken: 'Selam sizlere! Yapmış olduğunuz iyi işlere karşılık girin cennete' derler."

Ölüm meleği, ruhlarını iyi bir halde alır. Bir yoruma göre de ( طيّبين ) "*iyi kimseler olarak*" kelimesi, gramer yönünden meleklerin halidir. Bu arada kalp ve ruhlarının huzur bulmasının sebepleri farklıdır. Bu çerçevede kimisinin vakti güzel olmuş; çünkü günahları bağışlanmış ve kusurları örtülmüştür. Kimisinin kalbi huzur bulmuş; çünkü sevgilisi selam vermiştir. Kimisinin kalbi huzur bulmuş; çünkü matlubunu kaçırmamıştır.

Kimisinin vakti güzeldir; çünkü Allah'ın sevabına dönüş yapmakta ve güzel sona ulaşmaktadır. Kimisinin kalbi huzur bulmuş; çünkü bu durumunun sona ermeyeceğinden emin olmuş ve sonunun esenliğine mahzar olmuştur. Kimisinin kalbi huzur bulmuş; çünkü Allah'ın lütuflarına kavuşmuştur. Ayrıca kimisi, Allah'ın cemalinin lütfuna kavuştuğu için, kimisi de celalinin keşfine mahzar olduğu için kalbi huzur bulmaktadır. Herkes nereden huzur bulduğunu bilmektedir.

Bir yoruma göre; melekler onların canlarını, nefisleri aykırılıklardan temizlenmiş, kalpleri gailelerden, sırları da herhangi bir mahlûka iltifat etmekten paklanmış halde iken alırlar.

( سَلَامٌ عَلَيْكُمُ ) "*Selam sizlere!*" Cennetten yaralanın! Onlardan kimisine bu sözü melekler söylemekte, kimisini de buna Allah muttali kılmaktadır.

هَلْ يَنْظُرُونَ اِلَّٓا اَنْ تَاْتِيَهُمُ الْمَلٰٓئِكَةُ اَوْ يَاْتِيَ اَمْرُ رَبِّكَ كَذٰلِكَ فَعَلَ
الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ وَمَا ظَلَمَهُمُ اللّٰهُ وَلٰكِنْ كَانُوٓا اَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ﴿٣٣﴾
فَاَصَابَهُمْ سَيِّـَٔاتُ مَا عَمِلُوا وَحَاقَ بِهِمْ مَا كَانُوا بِهٖ يَسْتَهْزِؤُنَ ﴿٣٤﴾

33, 34- "O kâfirler, kendilerine ancak meleklerin veya senin Rabbinin helak emrinin gelmesini bekliyorlar. Onlardan öncekiler de böyle yapmıştı. Allah, onlara zulmetmedi, fakat onlar kendilerine zulmediyorlardı. Bu sebeple, işledikleri kötülüklerin cezası onlara ulaştı ve alay ettikleri şey, kendilerini kuşattı."

Bu topluluk, meleğin gelişini beklemektedir. Çünkü onlar, meleği tanımamış ve varlığına inanmamışlardır. Lakin onlar, peygamberlerin doğru söylemedikleri inancıyla acele edip daha önceki benzerlerinin yolunu izleyince tıpkı onların karşılaşmış oldukları muamelenin benzeri bir muameleye tabi tutuldular. Bu, Allah'tan bir zulüm de değildi. Çünkü Allah, üzerinde hiçbir hükümdarın hükmü olmaksızın mülkünde tasarrufta bulunur.

وَقَالَ الَّذِينَ اَشْرَكُوا لَوْ شَٓاءَ اللّٰهُ مَا عَبَدْنَا مِنْ دُونِهٖ مِنْ شَيْءٍ نَحْنُ
وَلَٓا اٰبَٓاؤُ۬نَا وَلَا حَرَّمْنَا مِنْ دُونِهٖ مِنْ شَيْءٍ كَذٰلِكَ فَعَلَ الَّذِينَ مِنْ
قَبْلِهِمْ فَهَلْ عَلَى الرُّسُلِ اِلَّا الْبَلَاغُ الْمُبِينُ ﴿٣٥﴾

35- "Allah'a ortak koşanlar, dediler ki: 'Allah dileseydi ne biz ne de atalarımız O'ndan başka hiçbir şeye tapmazdık. O'nun emri

olmadan hiçbir şeyi de haram kılmazdık.' Kendilerinden öncekiler de böyle yapmıştı. Peygamberlere düşen sadece apaçık bir tebliğdir."

Bunların, yalanlama ve alay yoluyla söylediklerinin altında kötü niyetler yatmış, konuşmalarına cehalet ve inkârlarının karanlıkları hakim olmuş ve hallerindeki samimiyetsizlikleri açığa çıkmıştır.

( لَوْ شَآءَ اللّٰهُ مَا عَبَدْنَا مِنْ دُونِهِ مِنْ شَيْءٍ نَحْنُ وَلَٓا اٰبَٓاؤُنَا ) *"Allah dileseydi ne biz ne de atalarımız O'ndan başka hiçbir şeye tapmazdık."*

Onların bu sözü, şu sözlerine benzemektedir:

( اَنُطْعِمُ مَنْ لَوْ يَشَٓاءُ اللّٰهُ اَطْعَمَهُ ) *"Allah'ın, dilemiş olsa, doyurabileceği kimselere mi yedireceğiz!"* (Yâsîn, 36/47)

Allah'ın, onları doyurmayı dilemesi halinde bunun olacağında hiçbir görüş ayrılığı bulunmamaktadır.

وَلَقَدْ بَعَثْنَا فِي كُلِّ اُمَّةٍ رَسُولًا اَنِ اعْبُدُوا اللّٰهَ وَاجْتَنِبُوا الطَّاغُوتَ فَمِنْهُمْ مَنْ هَدَى اللّٰهُ وَمِنْهُمْ مَنْ حَقَّتْ عَلَيْهِ الضَّلَالَةُ فَسِيرُوا فِي الْاَرْضِ فَانْظُرُوا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُكَذِّبِينَ ﴿٣٦﴾

36- "Andolsun, biz her ümmete: 'Allah'a kulluk edin, tâğûttan kaçının' diye peygamber gönderdik. Allah, onlardan kimini doğru yola iletti. Onlardan kimine de sapıklık hak oldu. Şimdi yeryüzünde dolaşın da peygamberleri yalanlayanların sonunun ne olduğunu görün."

Allah, hüccetini açıklamak için hiçbir zamanı dinsiz bırakmamıştır. Fakat ezeli hükmünde insanları gruplara ayırmıştır. Bu çerçevede bir grubu hidayete erdirirken diğer bir grubun önüne perde çekmiş ve kendilerini kör etmiştir.

اِنْ تَحْرِصْ عَلٰى هُدٰيهُمْ فَاِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي مَنْ يُضِلُّ وَمَا لَهُمْ مِنْ نَاصِرِينَ ﴿٣٧﴾

37- "Sen onların doğru yola erişmelerine aşırı istek göstersen de şüphesiz Allah, saptırdığı kimseyi doğru yola iletmez. Onların yardımcıları da yoktur."

Allah, hidayete ermelerini ve rububiyetin gerçeklerini öğrenmelerini irade ettiğinde onları, kulluğun sınırında durmakla yükümlü kılarak şunu demek istemiştir: "Her ne kadar sana olan emrimiz sebebiyle sen, hidayete ermelerine düşkün olsan da şüphe yoktur ki payına dalaleti düşürdüğüm kimse hakkında bu taksimattan başka bir şey gerçekleşmez." Bir yoruma göre de kendisine dalalet gömleği giydirdiğim kimsenin üzerinden bu gömleği ne bir aracı ne de bir şefaat çıkarabilir.

وَاَقْسَمُوا بِاللّٰهِ جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ لَا يَبْعَثُ اللّٰهُ مَنْ يَمُوتُ بَلٰى وَعْدًا عَلَيْهِ حَقًّا وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٣٨﴾

38- "Onlar: 'Allah, ölen bir kimseyi diriltmez' diye var güçleriyle Allah'a yemin ettiler. Hayır, diriltecek! Bu, yerine getirilmesini Allah'ın üzerine aldığı bir vaattir. Fakat insanların çoğu bilmezler."

Yemin, sözü pekiştirir. Lakin yalancının yemini, sözünün güçsüzlüğüne sebep olur. Çünkü o, Allah'ı daha çok inkâr ettikçe kalp de onun sözünden daha çok nefret eder.

لِيُبَيِّنَ لَهُمُ الَّذِي يَخْتَلِفُونَ فِيهِ وَلِيَعْلَمَ الَّذِينَ كَفَرُوٓا اَنَّهُمْ كَانُوا كَاذِبِينَ ﴿٣٩﴾

39- "Diriltecek ki ayrılığa düştükleri şeyi onlara anlatsın ve kâfir olanlar da, kendilerinin yalancı olduklarını bilsinler."

Allah, ahirette gaybı gün ışığına çıkarmak suretiyle dinin getirdiğinin doğru olduğunu açıkladığı zaman, yalanlayanlar daha çok rezil olacak ve bu yolla azapları artacaktır.

اِنَّمَا قَوْلُنَا لِشَيْءٍ اِذَٓا اَرَدْنَاهُ اَنْ نَقُولَ لَهُ كُنْ فَيَكُونُ ﴿٤٠﴾

40- “Biz, bir şeyin olmasını istediğimiz zaman sözümüz sadece ona: ‘Ol’ dememizdir. O da, hemen oluverir.”

Böylece sözünün yarattığı şeyle ilgisini sağlayan bilgi, işitme yoluyla gerçekleşmiş olur. Kimileri de bu sözün Allah’ın irade ettiği şeyi yaratmasının kendisi için zor olmadığı anlamına geldiğini söylemişlerdir. Doğrusu ayet, her iki anlama da gelebilir. Bu itibarla yaratırken, yarattığı şey için bir maddeye muhtaç olmayan Allah, yaratma fiilinin gerçekleşeceği bir zamana da muhtaç değildir.

Bir de ayet, Allah’ın kelamının mahlûk olmadığını göstermektedir. Çünkü eğer mahlûk olsaydı, ona da: “ol” denilmiş olacaktı. Ayrıca “ol” sözüne de başka bir “ol” sözünün denilmiş olması gerekirdi. Bu ise meydana gelen şeylerden her birinin, diğerine bağlı olarak sonsuza dek sürüp gitmesine -teselsüle- yol açmış olur.

وَالَّذٖينَ هَاجَرُوا فِي اللّٰهِ مِنْ بَعْدِ مَا ظُلِمُوا لَنُبَوِّئَنَّهُمْ فِي الدُّنْيَا
حَسَنَةً وَلَاَجْرُ الْاٰخِرَةِ اَكْبَرُ لَوْ كَانُوا يَعْلَمُونَ ﴿٤١﴾

41- “Zulme uğradıktan sonra Allah yolunda hicret edenlere gelince, elbette onları dünyada güzel bir şekilde yerleştiririz. Ahiret mükâfatı ise daha büyüktür. Keşke bilselerdi.”

Kim, kötülüğün olduğu yerlerden Allah rızası için göç ederse, Allah bunun yerine ona, velilerinin yanında öyle bir yer verir ki, vaktinin daha fazla huzurlu geçmesine yardımcı olur. Kim de gaflet yurtlarını terk ederse, Allah ona vuslat manzaralarını mümkün kılar. Kim, mahlûklarla hemhal olmayı bırakır ve devamlı zikrini yapmak suretiyle kalbiyle kendini Allah’a verirse, şu hadiste rivayet edildiği gibi olur: *“Ben, beni zikredenle beraberim.”* Bu gibilerin, başlangıç mertebeleri, cennetliklerin son mertebeleridir. Nitekim hadiste şöyle rivayet edilmiştir: *“Sabreden fakirler, kıyamet günü Allah ile beraberdirler.”*

Bir yoruma göre de kalp, kendisini şehevi arzularına davet etmesi sebebiyle nefsin zulmü altındadır. Bu durumda kalp, söz konusu

arzuları terk ettiği zaman, Allah onu nefsin alanlarına vâris kılar ve sonunda nefis, kalbin istediği taate boyun eğmiş olur. Böylece şehevi arzular sebebiyle, daha önce hatalara ait olan bu alanlar, yerine getirilmesi kolay olduğu için taatin alanları haline gelmiş olurlar.

اَلَّذِينَ صَبَرُوا وَعَلٰى رَبِّهِمْ يَتَوَكَّلُونَ ﴿٤٢﴾

42- "Onlar, sabreden ve yalnız Rablerine tevekkül eden kimselerdir."

Sabır, ilahi takdire uygun tavır takınmak; tevekkül ise güzel ümit yoluyla Allah ile korunmaya çalışmaktır.

Bu konudaki diğer bazı yorumlar da şöyledir:

- O anda sabrettiler, ümitlerini gerçekleştirme yolunda da Allah'a tevekkül ettiler.

- Sabır kaderin acılarını yutabilmek; tevekkül ise sakıncalı durumu defetmede Allah'a güvenmektir.

- Sabır, içirileni yudumlayabilmek; tevekkül ise umduğuna güven duymaktır.

- Onlar, ancak gerçekleştirdikleri tevekkül ile sabretmeye güç yetirirler.

وَمَٓا اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ اِلَّا رِجَالًا نُوحٖٓي اِلَيْهِمْ فَسْـَٔلُوٓا اَهْلَ الذِّكْرِ
اِنْ كُنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ﴿٤٣﴾

43- "Senden önce de ancak kendilerine vahyettiğimiz birtakım erkekleri peygamber olarak gönderdik. Eğer bilmiyorsanız ilim sahiplerine sorun."

Onlar, insanlardan birtakım peygamberler olacağına şaşırdılar. Bu nedenle Allah, bütün peygamberlerin insanlardan olduklarını ve geçmiş kavimlerin içerisinde bunu ikrar eden kimseler bulunduğunu bildirmiştir. Ayette geçen "zikir ehli"nden maksat âlimlerdir. Âlimler de farklıdırlar. Şöyle ki, ahkâm âlimleri, avam tarafından fetva

aranırken kendilerine başvurulur. Bu itibarla emir ve nehiy hükümleri konusunda herhangi bir problem yaşayan kimse, Allah'ın bu hükümleri hakkında fıkıh âlimlerine başvurur. Bir kimse, Allah yolundaki sülûk ilminden bir şey hakkında belirsizlikle karşılaştığı zaman ise ariflere başvurur. Böylece fıkıh âlimi, Allah adına onay verir; arif de talebin adabı, müridliğin hükümleri ve sıhhatinin şartları konusunda Allah ile ilgili olarak konuşur.

بِالْبَيِّنَاتِ وَالزُّبُرِ وَاَنْزَلْنَٓا اِلَيْكَ الذِّكْرَ لِتُبَيِّنَ لِلنَّاسِ مَا نُزِّلَ اِلَيْهِمْ
وَلَعَلَّهُمْ يَتَفَكَّرُونَ ﴿٤٤﴾

44- "O peygamberleri apaçık belgeler ve kitaplarla gönderdik. İnsanlara, kendilerine indirileni açıklaman, onların da üzerinde düşünmeleri için sana bu Kur'an'ı indirdik."

Yani açıklama sana aittir. Bizimle onlar arasındaki vasıta ve vahiy eminimiz sensin.

اَفَاَمِنَ الَّذِينَ مَكَرُوا السَّيِّاٰتِ اَنْ يَخْسِفَ اللّٰهُ بِهِمُ الْاَرْضَ اَوْ يَاْتِيَهُمُ
الْعَذَابُ مِنْ حَيْثُ لَا يَشْعُرُونَ ﴿٤٥﴾ اَوْ يَاْخُذَهُمْ فِي تَقَلُّبِهِمْ فَمَا هُمْ
بِمُعْجِزِينَ ﴿٤٦﴾ اَوْ يَاْخُذَهُمْ عَلٰى تَخَوُّفٍ فَاِنَّ رَبَّكُمْ لَرَؤُفٌ رَحِيمٌ ﴿٤٧﴾

45, 46, 47- "Kötü işler yapmak için tuzak kuranlar, Allah'ın kendilerini yere geçirmesinden veya ansızın bilemeyecekleri bir yerden kendilerine azap gelmesinden emin mi oldular? Yahut onlar, dönüp dolaşırken Allah'ın kendilerini yakalayıvermesinden emin mi oldular? Onlar, Allah'ı aciz bırakacak değildirler. Yahut da onları, korku üzere iken yakalamayacağından güven içinde midirler? Şüphesiz Rabbiniz çok esirgeyicidir, çok merhametlidir."

Kul, bütün hallerinde kader oklarının hedefidir. O halde her nefeste o oklarla vurulmaktan korkma şuuruna sahip olması ve hiçbir zaman Allah'ın mühlet ile imtihan etmesinden emin olmaması

gerekir. Kaldı ki ok uçlarının çoğu, nefisleri ve kalpleri, Allah'ın kendilerini alıştırdığı lütfun kazanımlarına yatkın olan kimselere işler. Ancak bu, şu şiirde söylendiği gibi olur:

*Ey gecenin başlangıcına sevinerek uyuyan kimse!*
*Kuşkusuz olaylar bazen seherlerde kapıyı çalar*

اَوَلَمْ يَرَوْا اِلٰى مَا خَلَقَ اللّٰهُ مِنْ شَيْءٍ يَتَفَيَّؤُا ظِلَالُهُ عَنِ الْيَمٖينِ وَالشَّمَآئِلِ سُجَّدًا لِلّٰهِ وَهُمْ دَاخِرُونَ ﴿٤٨﴾

48- "Allah'ın yarattığı şeyi görmüyorlar mı? Onların gölgeleri Allah'a secde ederek ve tevazu ile boyun eğerek sağa ve sola dönmektedir."

Cisim, eser, taş, toprak veya toz her mahlûk, delil bakımından Allah'a secde; beyan bakımından da birliğine şahitlik eder.

وَلِلّٰهِ يَسْجُدُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ مِنْ دَآبَّةٍ وَالْمَلٰٓئِكَةُ وَهُمْ لَا يَسْتَكْبِرُونَ ﴿٤٩﴾

49- "Göklerde ve yerde bulunan canlılar ve melekler, büyüklük taslamadan Allah'a secde ederler."

Bu, ibadet secdesi değil şahitlik secdesidir. Bu itibarla kimi söz sahipleri birileri lehine şahitlik etmeye yanaşmadıkları zaman şüphesiz onlardan her bir parça, delil ve ifade bakımından zaten şahitlik etmiştir.

يَخَافُونَ رَبَّهُمْ مِنْ فَوْقِهِمْ وَيَفْعَلُونَ مَا يُؤْمَرُونَ ﴿٥٠﴾

50- "Üzerlerinde hakim ve üstün olan Rablerinden korkarlar ve emrolundukları şeyleri yaparlar."

Onlar, Allah'ın başlarının üstünden üzerlerine bir azap indirmesinden korkarlar.

( وَيَفْعَلُونَ مَا يُؤْمَرُونَ ) *"Emrolundukları şeyleri yaparlar."*

Allah'a isyan etmezler ve taatinden vazgeçmezler. Bir yoruma göre de dünya ve ahirette kul için en hayırlı şey korkudur. Çünkü korku, onu hatadan alıkoyar ve taate sevk eder.

وَقَالَ اللّٰهُ لَا تَتَّخِذُوٓا اِلٰهَيْنِ اثْنَيْنِ اِنَّمَا هُوَ اِلٰهٌ وَاحِدٌ فَاِيَّايَ فَارْهَبُونِ ٥١

51- "Allah şöyle dedi: 'İki ilâh edinmeyin! O, ancak tek ilâhtır. O halde yalnız benden korkun.'"

Tek bir yaratıcıyı ispata olan ihtiyaç hakka çağırır. Birden fazla olanda ise (...) eşittir. Bir yoruma göre de birin ispatı zorunlu; ikinin kudreti ise sınırlıdır.

وَلَهُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَلَهُ الدِّينُ وَاصِبًا اَفَغَيْرَ اللّٰهِ تَتَّقُونَ ٥٢

52- "Göklerdeki her şey, yerdeki her şey O'nundur. İtaat de daima O'na olmalıdır. Öyle iken siz Allah'tan başkasından mı korkuyorsunuz?"

İçten, devamlı ve sabit olarak din O'nundur. O halde O'na itaat vacip olup O'ndan başkasından sakınmayın, hevanıza karşı çıkarak dinine itaat edin, yalnızca O'na ibadet edin ve sevinçte de sıkıntıda da davetini kabul edin.

وَمَا بِكُمْ مِنْ نِعْمَةٍ فَمِنَ اللّٰهِ ثُمَّ اِذَا مَسَّكُمُ الضُّرُّ فَاِلَيْهِ تَجْـَٔرُونَ ٥٣

53- "Size ulaşan her nimet, Allah'tandır. Sonra size bir sıkıntı ve zarar dokunduğu zaman, yalnız O'na yalvarır yakarırsınız."

Nimet, kulu Hakk'a yaklaştıran şeydir. Bu arada Allah'ı unutmaya, azgınlığa, gaflete ve isyana sebep olmayan şeye gelince o, sevilmeye daha layıktır.

Bir yoruma göre de kula faydalı olan veya kötülüğe engel olan şey, ister dinî ister dünyevî olsun, bu konudaki iki görüşün

en sahih olanına göre nimettir. O halde kul, her duruma karşılık olarak şükretmekle memurdur. Oysa insanların çoğu ihsan nimetlerine karşılık olarak şükrederler. Her duruma karşılık olarak (وَقَلِيلٌ مِنْ عِبَادِيَ الشَّكُورُ) *"Şükreden kullarım azdır."* (Sebe', 34/13)

Ayetin ifade ettiği husus, hem varlıkta hem de darlıkta, gönülleri başkalarından koparmak; hayrın, şerrin, faydanın ve zararın Allah'tan olduğundan emin olmaktır.

(ثُمَّ اِذَا مَسَّكُمُ الضُّرُّ فَاِلَيْهِ تَجْـَٔرُونَ) *"Sonra size bir sıkıntı ve zarar dokunduğu zaman, yalnız O'na yalvarır yakarırsınız."*

Çünkü O'ndan başka kimseniz yoktur. Bu nedenle mecbur bırakan durumlar kulun üstüne gölge gibi çöktüğü zaman kul uğradığı belayı defetmek için Allah'a sığınır. Sonra Allah, kendisine lütufta bulunup belasını üzerinden kaldırdığı zaman ise kul, başına bir kötülük gelmemiş veya bir kedere maruz kalmamış gibi davranır. Tıpkı şu şiirde söylendiği gibi:

*Giyindiği zaman delikanlı, bir gün çıplak kalmamış sanırsın*
*Ve hiç züğürt yaşamamış sanırsın, mal sahibi olduğu zaman*

ثُمَّ اِذَا كَشَفَ الضُّرَّ عَنْكُمْ اِذَا فَرِيقٌ مِنْكُمْ بِرَبِّهِمْ يُشْرِكُونَ ﴿٥٤﴾

54- "Sonra sizden o sıkıntıyı giderince, bir de bakarsınız içinizden bir kısmı Rablerine ortak koşar."

Hitap geneldir, ancak "sizden" demesinin sebebi söz konusu edilen kimselerin onlardan olmalarıdır.

لِيَكْفُرُوا بِمَٓا اٰتَيْنَاهُمْ فَتَمَتَّعُوا فَسَوْفَ تَعْلَمُونَ ﴿٥٥﴾

55- "Kendilerine verdiğimiz nimetlere karşı nankörlük etmek için böyle yaparlar. Bir süre daha faydalanın bakalım. Yakında bileceksiniz."

Bunda tehdit vardır. Yani onlar, pişmanlığın fayda vermeyeceği bir zamanda pişman olacak ve hiçbir özürlerinin kabul edilmeyeceği

bir zamanda özür dileyeceklerdir. Her kim bir kötülük ekerse, yaptığının cezasından başka bir şey biçmeyecektir.

وَيَجْعَلُونَ لِمَا لَا يَعْلَمُونَ نَصِيبًا مِمَّا رَزَقْنَاهُمْ تَاللّٰهِ لَتُسْئَلُنَّ عَمَّا كُنْتُمْ تَفْتَرُونَ ﴿٥٦﴾

56- "Bir de kendilerine rızık olarak verdiklerimizden bilmedikleri şeylere pay ayırıyorlar. Allah'a andolsun ki uydurmakta olduğunuz şeylerden mutlaka sorguya çekileceksiniz."

Yani onlar, ilmî yeteneği olmayan putlarından ibaret olan bilmedikleri şeylere, rızıklarından pay ayırıyorlar. Bu amaçla; bu bizim, bu da ortak koştuklarımızındır, derler.

(تَاللّٰهِ) "*Allah'a andolsun ki*..." Yemin ederim ki, onlar yaptıklarının cezasını bulacaklardır.

وَيَجْعَلُونَ لِلّٰهِ الْبَنَاتِ سُبْحَانَهُ وَلَهُمْ مَا يَشْتَهُونَ ﴿٥٧﴾

57- "Onlar, kızları Allah'a nisbet ediyorlar -ki O, bundan uzaktır- kendilerine ise canlarının istediğini."

Aşırı cehaletlerinden dolayı Allah'ı, çocuk sahibi olmakla nitelediler. Sonra Allah, kendilerini daha da perişan edince onlar: *"Melekler Allah'ın kızlarıdır"* dediler. Oysa bunlar, kız çocuklarından hoşlanmadıklarından kendilerine yakıştıramadıkları bir şeyi Allah'a yakıştırdılar.

Bu arada nefsinin arzusunu Mevlâ'sının hakkına tercih eden herkes, yergiyi hak etmede bunlara dahildir. Böylece insan, kendisi için bir pay ve amaç taşıyan davranışta bulunduğu zaman kötü nitelikli olur ve seçtiği fiilden dolayı da kınanır. Sonra Allah, çirkin fiilleri ve kız çocuğuna sahip olmaktan hoşlanmama vasıflarından dolayı kendilerini ayıplayarak şöyle buyurmuştur:

وَاِذَا بُشِّرَ اَحَدُهُمْ بِالْاُنْثٰى ظَلَّ وَجْهُهُ مُسْوَدًّا وَهُوَ كَظٖيمٌ ﴿٥٨﴾
يَتَوَارٰى مِنَ الْقَوْمِ مِنْ سُٓوءِ مَا بُشِّرَ بِهٖ اَيُمْسِكُهُ عَلٰى هُونٍ اَمْ يَدُسُّهُ
فِي التُّرَابِ اَلَا سَٓاءَ مَا يَحْكُمُونَ ﴿٥٩﴾

58, 59- "Onlardan biri kız ile müjdelendiği zaman içi öfke ile dolarak yüzü simsiyah kesilir. Kendisine verilen kötü müjde yüzünden halktan gizlenir. Şimdi onu, aşağılanmış olarak yanında mı tutacak yoksa toprağa mı gömecek? Bak, ne kötü hüküm veriyorlar."

Halkı görme arzusu onlara hakim oldu ve şaşkınlığa kapıldılar. Bunun sonucu olarak, evlendirip kocaya teslim ederken yaşadıkları utançtan dolayı kız çocuklarına öfkelenirlerdi. Bunlar ise ayrılık yurtlarında yaşamanın ve hakikati görmekten kopuşun neticeleridir.

( اَيُمْسِكُهُ عَلٰى هُونٍ ) *"Şimdi onu, aşağılanmış olarak yanında tutacak mı?"*

Yani doğan çocuk kız olduğu zaman, zülle katlanarak onu yanında alıkoyacak mı ( اَمْ يَدُسُّهُ فِي التُّرَابِ ) *"yoksa"* ölmesi için *"toprağa mı gömecek?"* İşte durumlarındaki bu acımasızlık, kalplerinin katılığı yüzünden azabı çabuklaştırmak suretiyle olduğundan daha şiddetli hale getirmiştir. Öfkelerinin aşırılığı, hoşnutsuzlukları ve hiçbir günahı olmayan çocuklarına dönük şiddetli kızgınlıkları, onları cehennemin derin çukurlarına düşen cehennemlikler kılmış, vakitleri kedere bulanmış ve kendilerine tasa hakim olmuştur. Kötü vasıftan Allah'a sığınırız.

لِلَّذٖينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِالْاٰخِرَةِ مَثَلُ السَّوْءِ وَلِلّٰهِ الْمَثَلُ الْاَعْلٰى
وَهُوَ الْعَزٖيزُ الْحَكٖيمُ ﴿٦٠﴾ وَلَوْ يُؤَاخِذُ اللّٰهُ النَّاسَ بِظُلْمِهِمْ
مَا تَرَكَ عَلَيْهَا مِنْ دَٓابَّةٍ وَلٰكِنْ يُؤَخِّرُهُمْ اِلٰٓى اَجَلٍ مُسَمًّى
فَاِذَا جَٓاءَ اَجَلُهُمْ لَا يَسْتَاْخِرُونَ سَاعَةً وَلَا يَسْتَقْدِمُونَ ﴿٦١﴾

60, 61- “Kötü sıfatlar, ahirete inanmayanlara aittir. En yüce sıfatlar ise Allah’ındır. O, mutlak güç sahibidir, hüküm ve hikmet sahibidir. Eğer Allah, insanları zulümleri yüzünden hemen cezalandırsaydı, yeryüzünde hiçbir canlı bırakmazdı. Fakat onları belirli bir süreye kadar erteler. Ecelleri geldiği zaman ise ne bir an geri kalabilirler ne de öne geçebilirler.”

Kötü vasıf, Allah’ın birliğini inkâr eden kâfirlere mahsustur. Bu itibarla kötü sıfat onlarındır. Celal ve izzet sıfatları ise Allah’a mahsustur. Kim O’nu ilahlık sıfatıyla tanırsa, her iki dünyada saadeti kemale erer, hemen rahata kavuşur ve sırrı, irfanının bahçelerinde devamlı gezinir, ruhu, O’na dönük vecdin heyecanı içerisinde ebediyen coşar.

Şirkle damgalananlara gelince; onlar, çabuklaştırılmış azaplar ve gerçekleştirilmiş kaygılar içindedirler.

( وَلَوْ يُؤَاخِذُ اللّٰهُ النَّاسَ بِظُلْمِهِمْ ) *“Eğer Allah, insanları zulümleri yüzünden hemen cezalandırsaydı…”*

Yani eğer Allah, onlara hak ettikleriyle acilen muamele etseydi kökleri kazınırdı. Lakin Allah’ın ezeldeki hükmü, onlara mühlet vermek şeklinde tecelli etmiştir. Onlar, yaptıklarının sonuçlarıyla ahirette karşılaşacaklardır.

وَيَجْعَلُونَ لِلّٰهِ مَا يَكْرَهُونَ وَتَصِفُ اَلْسِنَتُهُمُ الْكَذِبَ اَنَّ لَهُمُ
الْحُسْنٰى لَا جَرَمَ اَنَّ لَهُمُ النَّارَ وَاَنَّهُمْ مُفْرَطُونَ ﴿٦٢﴾

62- “Hoşlarına gitmeyen şeyleri Allah’a isnad ederler. En güzel sonuç, kendilerininmiş diye dilleri de yalan uyduruyor. Hiç şüphe yok ki onlara cehennem vardır ve onlar oraya en önde sokulacaklardır.”

Onlar, hayatları kolaylaşınca aldanarak kurtulacaklarını ve umduklarına tam sahip olacaklarını sandılar. Bu nedenle çirkin sıfatları, gözlerinde güzel göründü. Üzerlerinden örtünün kaldırılacağı

gün ise onlar, hasretin azı dişleriyle hayal kırıklığının parmak uçlarını ısıracaklardır. O zaman ne çağrıları duyulur, ne de hiçbirine merhamet edilir.

تَاللّٰهِ لَقَدْ اَرْسَلْنَٓا اِلٰٓى اُمَمٍ مِنْ قَبْلِكَ فَزَيَّنَ لَهُمُ الشَّيْطَانُ اَعْمَالَهُمْ فَهُوَ وَلِيُّهُمُ الْيَوْمَ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيمٌ ﴿٦٣﴾

63- "Allah'a andolsun, senden önceki ümmetlere peygamberler gönderdik. Fakat şeytan, onlara işlerini güzel gösterdi. O, bugün de onların dostudur ve onlar için elem dolu bir azap vardır."

Allah, bu ayeti Hz. Peygamber'e (s.a.v.) teselli olsun diye indirmiştir. Şöyle ki, Allah, ona kendisinden önceki ümmetlerin de tıpkı kendi kavmi gibi dalalet ve cehalet yolunda yürüdüklerini ancak Allah'ın onlardan aciz kalmadığını bildirmiştir. Bir de nasıl ki, şeytan, onun ümmetini şaşırttıysa ve onların dostu ise aynı şekilde o ümmetlerin de dostu idi. Müminlere gelince, onların dostu Allah'tır. Kâfirlerin ise hiçbir dostu yoktur.

وَمَٓا اَنْزَلْنَا عَلَيْكَ الْكِتَابَ اِلَّا لِتُبَيِّنَ لَهُمُ الَّذِي اخْتَلَفُوا فِيهِ وَهُدًى وَرَحْمَةً لِقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ ﴿٦٤﴾

64- "Sana kitabı, ancak ayrılığa düştükleri şeyleri onlara açıklaman için ve iman eden bir topluma doğru yolu gösterici ve rahmet olarak indirdik."

Bizimle dostlarımız arasında vasıta sensin. En yüksek delil ve en yeterli nur da senindir. Sen bizden iletiyorsun ve bizden aldıklarını yerine getiriyorsun. Bu itibarla kim sana uyarsa hidayete erer. Kim de sana karşı çıkarsa kendi helakine çaba harcamış olur.

وَاللّٰهُ اَنْزَلَ مِنَ السَّمَٓاءِ مَٓاءً فَاَحْيَا بِهِ الْاَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَٓا اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِقَوْمٍ يَسْمَعُونَ ﴿٦٥﴾

65- "Allah, gökten su indirdi de onunla yeryüzünü ölümünden sonra diriltti. Şüphesiz bunda dinleyecek bir toplum için bir ibret vardır."

Allah, abidlerin kalplerine muvaffakiyet suyuyla, ariflerin ruhlarına da hakikat suyuyla hayat vermiştir. Böylece o kalpler ve ruhlar, vuslat yaygısı üzerinde huzura ermişlerdir. Tevhid ehlinin sırlarına ise Allah, arınma suyuyla hayat vermiştir. Bu sayede o sırlar, eserlerin köleliğinden azat olmuş ve vuslatın hakikatleriyle baş başa kalmıştır.

وَاِنَّ لَكُمْ فِي الْاَنْعَامِ لَعِبْرَةً نُسْقِيكُمْ مِمَّا فِي بُطُونِهِ مِنْ بَيْنِ فَرْثٍ
وَدَمٍ لَبَنًا خَالِصًا سَآئِغًا لِلشَّارِبِينَ ﴿٦٦﴾

66- "Şüphesiz sağmal hayvanlarda sizin için bir ibret vardır. Onların karınlarındaki fışkı ile kan arasından içenlere, halis ve içimi kolay bir süt içiriyoruz."

Allah, o hayvanları sizin hizmetinize sunmuş ve etlerinden, et yağlarından, derilerinden, kıl ve tüylerinden, sütlerinden, soylarından ve yavrularından faydalanmanıza onları amade kılmıştır. Sonra Allah'ın sütü tertemiz, lezzetli ve faydalı bir şekilde, fışkı ile kanın arasından çıkartmak suretiyle kudretini gözler önüne sermesi hayret vericidir. İşte bu mutlak güç ve sonsuz ilim sahibi Allah'ın takdiridir. Sütü, fışkı ile kan arasında korumaya kadir olan Allah, marifeti de hatanın yol açtığı tasanın türlü şekilleri arasında korumaya kadirdir.

وَمِنْ ثَمَرَاتِ النَّخِيلِ وَالْاَعْنَابِ تَتَّخِذُونَ مِنْهُ سَكَرًا وَرِزْقًا حَسَنًا
اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِقَوْمٍ يَعْقِلُونَ ﴿٦٧﴾

67- "Hurma ağaçlarının meyvelerinden ve üzümlerden hem içki, hem de güzel bir rızık edinirsiniz. Elbette bunda, aklını kullanan bir toplum için bir ibret vardır."

Allah, kendileri için hurma ağaçlarının yaş ve kuru meyvelerinden çeşitli şekillerde yararlanma imkânı yaratmakla kullarına minnette bulunmuştur. Bu arada güzel rızık, helal olan rızıktır.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Güzel rızık, beklenmedik şekilde gelen rızıktır.

- Güzel rızık, içinde hiçbir mahlûkun minneti bulunmayan ve sorumluluk altında bırakmayan rızıktır.

- Güzel rızık, kazananı kazanırken günaha girmeyen rızıktır.

- Güzel rızık, kazananının uğruna Allah'ı unutmadığı rızıktır.

وَاَوْحٰى رَبُّكَ اِلَى النَّحْلِ اَنِ اتَّخِذ۪ي مِنَ الْجِبَالِ بُيُوتًا وَمِنَ الشَّجَرِ
وَمِمَّا يَعْرِشُونَ ﴿٦٨﴾ ثُمَّ كُل۪ي مِنْ كُلِّ الثَّمَرَاتِ فَاسْلُك۪ي سُبُلَ رَبِّكِ
ذُلُلًاۜ يَخْرُجُ مِنْ بُطُونِهَا شَرَابٌ مُخْتَلِفٌ اَلْوَانُهُ ف۪يهِ شِفَٓاءٌ لِلنَّاسِۜ اِنَّ
ف۪ي ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِقَوْمٍ يَتَفَكَّرُونَ ﴿٦٩﴾

68, 69- "Rabbin, bal arısına şöyle ilham etti. 'Dağlardan, ağaçlardan ve insanların yaptıkları çardaklardan (kovanlardan) kendine evler edin. Sonra meyvelerin hepsinden ye de Rabbinin sana kolaylaştırdığı yollarına gir.' Onların karınlarından çeşitli renklerde bal çıkar. Onda insanlar için şifa vardır. Şüphesiz bunda düşünen bir toplum için bir ibret vardır."

Ayette Allah, bal arısına ilham yoluyla vahiy gönderdiğini belirtmek istemiştir. Bal arısı Allah'ın bu emrini gözetip helalden yiyince yiyişi güzel, içinden çıkan da insanlar için şifa olmuştur. Sonra Allah, halka üstünlüğün kıyaslama ve hak ediş yönünden olmadığını öğretmiştir. Çünkü bal arısının boy, görünüş ve süs bakımından hiçbir özelliği bulunmamaktadır. Bununla birlikte ondan insanlar için şifa olan balı yaratmıştır. Oysa şeklinin mükemmelliği, aklı ve zekâsının noksansızlığı ve peygamberler ile velilere verilen özelliklere rağmen Allah, insanlarda apaçık vahşeti de yaratmıştır. Şimdi bu durumda

bal arısının fazileti ne, insanın günahı ne? Bu, aslında yüce Allah'ın tercihinden başka bir şey değildir.

Bir yoruma göre de Allah, değerli olan her şeyi, değersiz bir şeyde saklama prensibi koymuştur. Bu çerçevede ipeği, en zayıf canlı olan kozada, balı kuşların en zayıfı olan bal arısında, inciyi deniz canlılarının içi en boş olan sedefte saklarken, aynı şekilde altın, gümüş ve firuzeyi de taşta saklamıştır. Bunlar gibi Allah kendisine dönük marifeti ve muhabbeti de müminlerin kalbine yerleştirmiştir. Oysa müminlerin içinde günah işleyip hata edenler de vardır.

وَاللّٰهُ خَلَقَكُمْ ثُمَّ يَتَوَفّٰيكُمْ وَمِنْكُمْ مَنْ يُرَدُّ اِلٰٓى اَرْذَلِ الْعُمُرِ لِكَيْ
لَا يَعْلَمَ بَعْدَ عِلْمٍ شَيْـًٔا اِنَّ اللّٰهَ عَلٖيمٌ قَدٖيرٌ ﴿٧٠﴾

70- "Allah, sizi yarattı. Sonra sizi öldürecek. İçinizden kimileri de bilgili olduktan sonra hiçbir şey bilmesin diye ömrünün en düşkün çağına ulaştırılır. Şüphesiz Allah, hakkıyla bilendir. Her şeye hakkıyla gücü yetendir."

Allah, insanı dış ve iç organları, ışık, aydınlık, anlama ve zekâsıyla en güzel yapı ve en ince düzen içerisinde yaratmıştır. Aynı zamanda ona akıl, fikir, ilim, basiret; yanı sıra görüş ve tedbir gibi kendisine özgü kılınan çeşitli üstün meziyetler vermiştir. Sonra ömrünün sonunda onu hayatının en düşkün çağına döndürür ve bu çağda insan, her gün yeni bir elem görür.

Bu konudaki diğer yorumlarda şöyledir:

- İçinizden kimilerinin en düşkün çağa döndürülmesi, insanın muvaffakiyetten sonra muvaffakiyetsizliğe döndürülmesi demektir. Bu kimse, ömrünün başındaki ahvalinde itaatkar iken sonunda asi olur.

- Ömrün en düşkün çağı insanın gençliğinin başında müridliği arzulayıp bir süre Allah'ın yolunu izledikten sonra tembelliğe kapılıp müridlik akdini feshetmesi ve dünyayı aramaya dönüş yapmasıdır. Tarikat ehline göre; bu durum tarikatta döneklikten.

- Ömrün en düşkün çağı, yaşlı kimsenin dünyaya dönük arayış arzusudur.

- Ömrün en düşkün çağı, kişinin riyaseti sevmesidir.

- Ömrün en düşkün çağı, kişinin üzerinde hakların birikmesi ve alacaklı olan hasımları razı edememesidir.

وَاللّٰهُ فَضَّلَ بَعْضَكُمْ عَلٰى بَعْضٍ فِي الرِّزْقِ فَمَا الَّذٖينَ فُضِّلُوا بِرَآدّٖي رِزْقِهِمْ عَلٰى مَا مَلَكَتْ اَيْمَانُهُمْ فَهُمْ فٖيهِ سَوَآءٌ اَفَبِنِعْمَةِ اللّٰهِ يَجْحَدُونَ ﴿٧١﴾

71- "Allah, rızık konusunda kiminizi kiminizden üstün kıldı. Üstün kılınanlar, rızıklarını ellerinin altındakilere vermezler ki rızıkta hep eşit olsunlar. Şimdi Allah'ın nimetini mi inkâr ediyorsunuz?"

Mahlûkların rızıkları farklı farklıdır. Bu çerçevede kimisinin rızkı dar, kimisinin de geniş tutulmuştur. Bu arada bazı rızıklar nefislerin, bazı rızıklar kalplerin, bazı rızıklar ruhların, bazı rızıklar da sırlarındır. Nefislerin rızıkları, bazıları için ibadetlere muvaffak olmak, bazıları içinse günahların yol açtığı muvaffakiyetsizliktir. Kalplerin rızıkları bazıları için sürekli tefekkürde bulunmak suretiyle kalbin huzuru, bazıları içinse gafletin hakim oluşu ve kasvetin devamlılığıdır. Ruhların rızıkları bazıları için katıksız sevgi, bazıları içinse kendileriyle hemcinsleri arasındaki ilgiyle meşgul olmaktır. Böylece bu kimselerin musibeti, kendi benzerlerine olan sevgilerinden kaynaklanmış olur. Sırların rızıkları ise ancak Hakk'ı müşahede etmekle olur. Bu cümleden olmayan kimse sır sahiplerinden değildir.

وَاللّٰهُ جَعَلَ لَكُمْ مِنْ اَنْفُسِكُمْ اَزْوَاجًا وَجَعَلَ لَكُمْ مِنْ اَزْوَاجِكُمْ بَنٖينَ وَحَفَدَةً وَرَزَقَكُمْ مِنَ الطَّيِّبَاتِ اَفَبِالْبَاطِلِ يُؤْمِنُونَ وَبِنِعْمَتِ اللّٰهِ هُمْ يَكْفُرُونَ ﴿٧٢﴾

72- "Allah, size kendi cinsinizden eşler var etti. Eşlerinizden de oğullar ve torunlar verdi ve sizi temiz şeylerden rızıklandırdı. Öyleyken onlar bâtıla inanıyorlar da Allah'ın nimetini inkâr mı ediyorlar?"

Allah, halkı halkla meşgul etmiştir. Çünkü hemcinsler birbirlerine daha yakındırlar. Bu arada Allah, cinsin kalıcı olmasını dileyince, aslın benzerini meydana getirmek için nesep ve nesil türemesinin sebebini hazırladı. Sonra bazılarına oğullar yaratarak minnette bulunurken bazılarını da kız çocuklarıyla imtihan etti. Allah, bunların her birini dilediği gibi ve takdirine bağlı olarak yaptı.

( وَرَزَقَكُمْ مِنَ الطَّيِّبَاتِ اَفَبِالْبَاطِلِ يُؤْمِنُونَ وَبِنِعْمَتِ اللّٰهِ هُمْ يَكْفُرُونَ ) *"Sizi temiz şeylerden rızıklandırdı. Öyleyken onlar bâtıla inanıyorlar da Allah'ın nimetini inkâr mı ediyorlar?"*

Temiz rızık, bir kul için nefsinin güzel bulduğu; diğer bir kul içinse sırrının güzel bulduğu şeydir. Bu çerçevede kimileri yiyeceği ve içeceği güzel bulurken kimileri de halveti ve safiyeti güzel bulur. Bunların yanı sıra daha başka rızıklar da vardır.

( اَفَبِالْبَاطِلِ يُؤْمِنُونَ ) *"Öyleyken onlar bâtıla inanıyorlar da..."*

Bâtıla inanmak, bir şeyin Allah'tan gayrilerinden gerçekleştiğini sanmak ve onlardan geçinmek, kendileriyle bir mahzuru defetmek veya sevilen bir şeyi elde etmek için kalbin onlara bağlanmasıdır.

( وَبِنِعْمَتِ اللّٰهِ هُمْ يَكْفُرُونَ ) *"Allah'ın nimetini inkâr mı ediyorlar?"*

İnkâr ettikleri nimet; Allah'a güvenmek, ferahlığı O'ndan beklemek ve O'na güzelce tevekkül etmektir.

وَيَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ مَا لَا يَمْلِكُ لَهُمْ رِزْقًا مِنَ السَّمٰوَاتِ
وَالْاَرْضِ شَيْـًٔا وَلَا يَسْتَطِيعُونَ ﴿٧٣﴾

73- "Allah'ı bırakıp da kendilerine göklerden ve yerden hiçbir rızık sağlayamayan ve buna gücü de yetmeyen şeylere tapıyorlar."

Kim bir şahsa veya bir sebebe bağlanırsa vaktini kendisine yardımı olmayan şeylerde zayi etmesi bakımından putlara tapanlar gibi olur. O halde hakikatte rızık Allah tarafından takdir edilmiştir.

فَلَا تَضْرِبُوا لِلّٰهِ الْاَمْثَالَ اِنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ وَاَنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ﴿٧٤﴾

74- "Artık Allah'a benzetmeler yapmaya kalkmayın. Çünkü Allah bilir, siz bilmezsiniz."

Zâtında, sıfatlarında ve fiillerinin hükümlerinde hiçbir dengi olmayan Allah'a nasıl olur da benzetmeler yapılır?! Nitekim kim Hakk'a, halka baktığı noktadan bakarsa benzetmenin karanlıklarına düşer ve mabudu tanımaktan geri kalmış olur.

ضَرَبَ اللّٰهُ مَثَلًا عَبْدًا مَمْلُوكًا لَا يَقْدِرُ عَلٰى شَيْءٍ وَمَنْ رَزَقْنَاهُ مِنَّا رِزْقًا حَسَنًا فَهُوَ يُنْفِقُ مِنْهُ سِرًّا وَجَهْرًا هَلْ يَسْتَوُنَ اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ بَلْ اَكْثَرُهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٧٥﴾

75- "Allah, hiçbir şeye gücü yetmeyen ve başkasının malı olan bir köle ile kendisine verdiğimiz güzel rızıktan gizli ve açık olarak Allah yolunda harcayan kimseyi misal verir. Bunlar hiç eşit olur mu? Hamd Allah'a mahsustur, fakat onların çoğu bilmezler."

Allah, kâfiri hiçbir şeye gücü yetmeyen ve dinen hiçbir mülkü olmayan köleye; ihlaslı mümini de nimetler verdiği, taatlere muvaffak kıldığı ve yaptığı hayırlı harcamalara karşılık kendisine sevap ve güzel son sözü verdiği kimseye benzetmiş, sonra ikisinin aynı olmadığını söylemiştir. Zira kendi nefsine dayanan, hemcinslerine bakan ve devamlı yanlışlıklarına değer biçen kimse ile Rabbini idrak edip maddi âleminden ve Allah'tan gayrisinden arınmış, Rabbinin tasarruflarına teslim olmuş ve Allah'tan başka hiçbir güç kaynağı bulunmayan kimse gibi değildir.

وَضَرَبَ اللّٰهُ مَثَلًا رَجُلَيْنِ اَحَدُهُمَٓا اَبْكَمُ لَا يَقْدِرُ عَلٰى شَيْءٍ وَهُوَ
كَلٌّ عَلٰى مَوْلٰيهُ اَيْنَمَا يُوَجِّهْهُ لَا يَاْتِ بِخَيْرٍ هَلْ يَسْتَوِي هُوَ وَمَنْ
يَاْمُرُ بِالْعَدْلِ وَهُوَ عَلٰى صِرَاطٍ مُسْتَق۪يمٍ ﴿٧٦﴾

76- "Allah, iki adamı da misal verdi: Onlardan biri dilsizdir, hiçbir şeye gücü yetmez, efendisine sadece bir yüktür. Nereye gönderse olumlu bir sonuç alamaz. Bu, adaletle emreden ve doğru yol üzere olan kimse ile eşit olur mu?"

Bu örnek de mümin ve kâfir içindir. Bu itibarla kâfir, elinden bir şey gelmeyen ve hiçbir faydalı iş yapmayan cahil gibidir. Dosdoğru yol üzere olan mümin ise kendi gücünden ve kuvvetinden sıyrılarak sadece Allah'ın gücünü ve lütfünü itiraf eder.

وَلِلّٰهِ غَيْبُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَمَٓا اَمْرُ السَّاعَةِ اِلَّا كَلَمْحِ الْبَصَرِ
اَوْ هُوَ اَقْرَبُ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرٌ ﴿٧٧﴾

77- "Göklerin ve yerin gaybı Allah'a aittir. Kıyametin kopması bir göz kırpması gibi veya daha az bir zamandır. Şüphesiz Allah, her şeye hakkıyla gücü yetendir."

Allah, gaybe ait bilgileri kendine özgü kılmış ve onları halka kapalı tutmuştur. Bu çerçevede O, kimilerini dalalet üzere ortaya çıkardıktan sonra velilik sıfatına kavuşturur. Kimilerini de düşmanlık damgasıyla yapılandırdıktan sonra velilik vasfına döndürür. O halde akıbetler örtülü, işlerin sonu belirsiz ve insanlar haklarında yapılmak istenenlerden gafildirler.

وَاللّٰهُ اَخْرَجَكُمْ مِنْ بُطُونِ اُمَّهَاتِكُمْ لَا تَعْلَمُونَ شَيْـًٔا وَجَعَلَ لَكُمُ
السَّمْعَ وَالْاَبْصَارَ وَالْاَفْـِٔدَةَ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿٧٨﴾

78- "Allah, sizi analarınızın karnından siz hiçbir şey bilmez durumda iken çıkardı. Şükredesiniz diye size kulaklar, gözler ve kalpler verdi."

Allah, onlara danışmadan kendilerini yaratmış ve onları muhayyer kılmadan dilediği vasıf üzerine sabit kılmıştır. Onlar, Allah'ın kendilerini saadetle mi yarattığı yoksa mutsuzluk üzere mi yokluktan analarının karnından varlık âlemine çıkardığı şeklindeki ezeli hükmünden habersiz idiler. Onlar, ne kendileri için faydalı olanı bilirler ne de Rablerinin sıfatını tanırlardı. Sonra Allah, ilhamın hükmüyle onlara yol gösterdi ve bu sayede çocuk öncesinde hiçbir öğretme, korkutma, yükümlülük veya baskı olmaksızın annesini emer oldu.

Allah, hitabını duyasınız diye size kulak verdi, yaptıklarını göresiniz diye size göz verdi, hakkını tanıyasınız diye de size kalp verdi. Sonra bu duyu organlarını, onlarla büyük lütfüne şükredesiniz diye verdi.

اَلَمْ يَرَوْا اِلَى الطَّيْرِ مُسَخَّرَاتٍ فِي جَوِّ السَّمَاۤءِ مَا يُمْسِكُهُنَّ اِلَّا اللّٰهُ
اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ ﴿٧٩﴾

79- "Gökyüzünde Allah'ın emrine boyun eğerek uçan kuşları görmüyorlar mı? Onları gökte ancak Allah tutar. Şüphesiz bunda inanan bir toplum için ibretler vardır."

Kuş, havada kanadını gererek tur attığı zaman durur gibi olur ve düşmez. Bu arada Allah'ın, yaratmada tek olduğunu ve hiçbir yaratığın O'nun kudretinin dışına çıkamadığını deliller ortaya koymuştur. Bu da kudretinin kemalini göstermektedir.

وَاللّٰهُ جَعَلَ لَكُمْ مِنْ بُيُوتِكُمْ سَكَنًا وَجَعَلَ لَكُمْ مِنْ جُلُودِ الْاَنْعَامِ
بُيُوتًا تَسْتَخِفُّونَهَا يَوْمَ ظَعْنِكُمْ وَيَوْمَ اِقَامَتِكُمْ وَمِنْ اَصْوَافِهَا
وَاَوْبَارِهَا وَاَشْعَارِهَاۤ اَثَاثًا وَمَتَاعًا اِلٰى حِينٍ ﴿٨٠﴾

80- "Allah, size evlerinizi huzur ve dinlenme yeri yaptı. Hayvanların derilerinden gerek göç gününüzde, gerek ikamet gününüzde kolayca taşıyacağınız evler; onların yünlerinden, yapağılarından

ve kıllarından bir süreye kadar yararlanacağınız ev eşyası ve geçimlikler meydana getirdi."

Nefislerin de kalplerin de bir yurdu vardır. İnsanlar da yerleşik ve yolcu olmak üzere iki kısımdır. Bu itibarla insanlar nefisleriyle olduğu gibi kalpleriyle de farklıdırlar. Mesela mürid veya talip, kalbiyle yolculuk yapmaktadır. Çünkü o, renkten renge girmekte ve dereceden dereceye yükselmektedir. Arif ise mukim ve yerleşiktir. Çünkü o, vuslata ermiş ve yerleşmiştir. Yol da konaklar ve aşamalardan oluşmaktadır. Söz konusu konaklar nefislerle kat edilmezler. Onlar ancak kalplerle kat edilirler. Bir de mürid henüz yola devam etmekte, arif ise vuslata ermiş bulunmaktadır.

وَاللّٰهُ جَعَلَ لَكُمْ مِمَّا خَلَقَ ظِلَالًا وَجَعَلَ لَكُمْ مِنَ الْجِبَالِ اَكْنَانًا
وَجَعَلَ لَكُمْ سَرَابِيلَ تَقِيكُمُ الْحَرَّ وَسَرَابِيلَ تَقِيكُمْ بَأْسَكُمْ كَذٰلِكَ
يُتِمُّ نِعْمَتَهُ عَلَيْكُمْ لَعَلَّكُمْ تُسْلِمُونَ ﴿٨١﴾

81- "Allah, yaratıklarından sizin için gölgeler yaptı ve dağlarda da sizin için barınaklar var etti. Sizi sıcaktan koruyacak elbiseler ve savaşta sizi koruyacak zırhlar verdi. Böylece Allah, Müslüman olasınız diye üzerinizde olan nimetini tamamlıyor."

Zahirde Allah size ağaçlardan, tavanlardan ve benzerlerinden gölgeler meydana getirmiştir. Aynı şekilde Allah, dostları için de inayetinin gölgesinde bir barınak ve kalma yeri var etmiştir. Bir de nasıl ki Allah, zahirlerinizi sizi sıcaktan ve düşmanınızın zararından koruyan elbiseler ve zırhlarla örtmüş ise aynı şekilde sırlarınıza da öyle bir elbise giydirmiştir ki, varlıkta ve darlıkta sizi ona sarmaktadır. Masumiyet elbisesini ise sizi O'na muhalefet etmekten korusun diye size giydirmiştir. Bir de Allah, sizi ibadetine bağlı kalmaya sevk edecek olan muvaffakiyet gölgesiyle gölgelemiş, yakınlığına ve beraberliğine ehil kılacak vuslat elbiseleriyle giydirmiştir.

(كَذٰلِكَ يُتِمُّ نِعْمَتَهُ عَلَيْكُمْ لَعَلَّكُمْ تُسْلِمُونَ) *"Böylece Allah, Müslüman olasınız diye, üzerinizde olan nimetini tamamlıyor."*

Nimetin tamamlanması, akıbetlerinin hayırla sonlanması, din ve dünya işleri için yeterli olması, onları hevânın peşine düşmekten koruması ve Allah'ın rızasını kazandıracak şeyleri tercih edecek şekilde doğru yola sevk etmesi şeklinde olur.

فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّمَا عَلَيْكَ الْبَلَاغُ الْمُبِينُ ﴿٨٢﴾

82- "Ey Muhammed! Eğer yüz çevirirlerse, artık sana düşen açık bir tebliğden ibarettir."

Sen, peygamberliği tebliğ ettiğin zaman, bu yeter. Zira biz hidayete ve dalalete dair hükmü senin uhdene vermedik.

يَعْرِفُونَ نِعْمَتَ اللّٰهِ ثُمَّ يُنْكِرُونَهَا وَاَكْثَرُهُمُ الْكَافِرُونَ ﴿٨٣﴾

83- "Onlar, Allah'ın nimetini bilirler, sonra da inkâr ederler. Onların çoğu kâfirlerdir."

Onlar, önce taate muvaffak olmayı dilerler. Yapınca da onu beğenirler.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Onlar yardım dilerler. Allah dileklerini kabul edince de şükründe kusur işlerler.

- Başlarına bir sıkıntı geldiği zaman Rablerine sığınırlar. Allah kendilerinden o sıkıntıları giderince bu kez içinde bulundukları sıkıntıyı unutarak onları bu duruma düşüren geçmişteki kötü davranışlarına geri dönerler.

- Tövbe ettiklerinde daha önce içinde bulundukları hatalı durumlarının çirkinliğini anlarlar. Tövbelerini bozdukları zaman ise o durumu anlamamış gibi olurlar.

وَيَوْمَ نَبْعَثُ مِنْ كُلِّ اُمَّةٍ شَهِيدًا ثُمَّ لَا يُؤْذَنُ لِلَّذِينَ كَفَرُوا وَلَا هُمْ يُسْتَعْتَبُونَ ﴿٨٤﴾

84- "Kıyamet günü her ümmetten bir şahit göndereceğiz. Sonra inkâr edenlere ne izin verilecek ne de Allah'ın rızasını kazandıracak amelleri işleme istekleri kabul edilecektir."

Haşir günü olduğunda peygamberler, ümmetlerinin durumlarını sorarlar. Bunun üzerine bir delil dile getirene değer verilir. Hiçbir delil ortaya koyamayana ise değer verilmez.

وَاِذَا رَاَ الَّذِينَ ظَلَمُوا الْعَذَابَ فَلَا يُخَفَّفُ عَنْهُمْ وَلَا هُمْ يُنْظَرُونَ ﴿٨٥﴾

85- "O zalimler, azabı gördükleri zaman artık onlardan azap hafifletilmez ve kendilerine mühlet de verilmez."

Yani durumları zorlaştırılır, kolaylaştırılmaz.

وَاِذَا رَاَ الَّذِينَ اَشْرَكُوا شُرَكَاۤءَهُمْ قَالُوا رَبَّنَا هٰۤؤُلَاۤءِ شُرَكَاۤؤُنَا الَّذِينَ
كُنَّا نَدْعُوا مِنْ دُونِكَ فَاَلْقَوْا اِلَيْهِمُ الْقَوْلَ اِنَّكُمْ لَكَاذِبُونَ ﴿٨٦﴾

86- "Allah'a ortak koşanlar, ortaklarını gördüklerinde diyecekler ki: 'Rabbimiz! Bunlar, seni bırakıp kendilerine tapmış olduğumuz ortaklarımızdır.' Koştukları ortaklar da onlara: 'Siz, elbette yalancılarsınız' diye laf atacaklar."

Onlar, beraber yaşadıkları ve kendilerini hataya sevk eden kardeşlerinden intikam almayı temenni ederler. Böylece ortaklarından uzaklaşır, birbirlerini lanetler ve birbirlerinden canları sıkılır.

وَاَلْقَوْا اِلَى اللّٰهِ يَوْمَئِذٍ السَّلَمَ وَضَلَّ عَنْهُمْ مَا كَانُوا يَفْتَرُونَ ﴿٨٧﴾

87- "Onlar, o gün Allah'a teslim olurlar ve uydurdukları şeyler de onları yüzüstü bırakıp kaybolur."

Onlar, Allah'ın emrine ve hükmüne teslim olurlar. O gün, ne bir yakarışlarına bakılır ne de zorluğundan çığlık attıkları herhangi bir sıkıntıları kaldırılır.

اَلَّذِينَ كَفَرُوا وَصَدُّوا عَنْ سَبِيلِ اللّٰهِ زِدْنَاهُمْ عَذَابًا فَوْقَ الْعَذَابِ
بِمَا كَانُوا يُفْسِدُونَ ﴿٨٨﴾

88- "İnkâr eden ve insanları Allah'ın yolundan alıkoyanların, yapmakta oldukları bozgunculuklarına karşılık azaplarının üstüne azap ekleriz."

وَيَوْمَ نَبْعَثُ فِي كُلِّ اُمَّةٍ شَهِيدًا عَلَيْهِمْ مِنْ اَنْفُسِهِمْ وَجِئْنَا بِكَ
شَهِيدًا عَلٰى هٰٓؤُلَٓاءِ وَنَزَّلْنَا عَلَيْكَ الْكِتَابَ تِبْيَانًا لِكُلِّ شَيْءٍ وَهُدًى
وَرَحْمَةً وَبُشْرٰى لِلْمُسْلِمِينَ ﴿٨٩﴾

89- "Her ümmetin kendi içinden üzerlerine bir şahit göndereceğimiz, seni de onların üzerine bir şahit olarak getireceğimiz günü düşün. Sana bu kitabı her şey için bir açıklama, doğru yolu gösteren bir rehber, bir rahmet ve Müslümanlar için bir müjde olarak indirdik."

Kıyamet günü her ümmet peygamberiyle birlikte gelir. Fazilet yönünden bu ümmet gibi hiçbir ümmet, mertebe ve değer bakımından da bizim peygamberimiz (s.a.v.) gibi hiçbir peygamber yoktur.

( وَنَزَّلْنَا عَلَيْكَ الْكِتَابَ ) *"Sana bu kitabı indirdik."*

Yani biz sana Kur'an'ı her şey için bir açıklama olarak indirdik. Onda müminler için şifa vardır ve o, onlar için aydınlıktır. O, kâfirlerin başına bela ve aynı zamanda onlar için sıkıntı ve mutsuzluk sebebidir.

اِنَّ اللّٰهَ يَأْمُرُ بِالْعَدْلِ وَالْاِحْسَانِ وَاِيتَٓائِ ذِي الْقُرْبٰى وَيَنْهٰى عَنِ
الْفَحْشَٓاءِ وَالْمُنْكَرِ وَالْبَغْيِ يَعِظُكُمْ لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُونَ ﴿٩٠﴾

90- "Şüphesiz Allah adaleti, iyilik yapmayı, yakınlara yardım etmeyi emreder. Hayâsızlığı, fenalık ve azgınlığı da yasaklar. O, düşünüp tutasınız diye size öğüt veriyor."

Adalet, doğru ve güzel olan şeydir. O, haksızlık ve zulmün zıddıdır. Allah, insana kendisiyle nefsi, kendisiyle Rabbi ve kendisiyle halk arasında adil olmayı emretmiştir. Kendisiyle nefsi arasındaki adalet onu, helakine sebep olacak şeylerden alıkoymaktır. Allah şöyle buyurur:

(وَنَهَى النَّفْسَ عَنِ الْهَوٰى) *"Ve nefsini arzularından alıkoyarsa..."* (Nâzi'ât, 79/40) Nefsi ile ilgili adaletinin mükemmel oluşu ise tamahının köklerini yakmaktır.

Kendisiyle Rabbi arasındaki adalet, Allah'ın hakkını nefsinin arzusuna tercih etmesi, Mevlâ'sının rızasını dışındakilere öncelemesi, bütün yasaklardan arınması ve bütün emirlere bağlı kalmasıdır.

Kendisiyle halk arasındaki adalet ise olabildiğince hayırhah olmak, az veya çok hiçbir şeyde hıyanet etmemek, her yönüyle insaflı olmak, söz, davranış, niyet veya karar ile gammazlık yapmamaktır.

Bu arada avamın yapacağı iş, olabildiğince insaflı davranmak ve başkalarını incitmeye engel olmaksa, havassın vasfı, hakkını istemeyi bırakmak, iyilikte bulunmak, intikamdan vazgeçmek ve karşılaştığı sıkıntıya göğüs gererek sabretmektir. İyilik yapmak ise öğrenilmesi emredilen bilgi demektir. Yani kendisinin sonradan yaratıldığını, yaratanın ise varlığının, celalinin sıfatlarıyla sabit olduğunu, sonra da dinî konuları öncelik sıralamasına göre bilmektir. Davranışta iyiliğe gelince, onun güzel olanı, Allah'ın emredip yapmamıza izin verdiği ve yapanını övgüye layık gördüğüdür.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- İyilik, sana vacip olan her hakkı yerine getirmendir. Hatta bu hak, mülkiyetin altındaki bir kuşa dahi ait olsa hakkında kusur işlememen gerekir.

- İyilik, üzerindeki hakları ödemen ve kimseden hiçbir hak talebinde bulunmamandır.

- İyilik, bir kimsede bulunan her hakkını terk etmendir. Bunun dışındakiler ise iyilik olmaz. Hadiste şöyle denilmiştir: *"İyilik, Allah'ı görüyormuşsun gibi O'na ibadet etmendir."*

Bu, tasavvuf ehlinin işaret ettiği müşahede halidir.

( وَإِيتَآئِ ذِي الْقُرْبٰى ) *"Yakınlara yardım etmeyi emreder."*

Yani Allah akrabalardan görülen haksızlık, vefasızlık ve kıskançlığa rağmen akrabalık bağının gözetilmesini emreder.

( وَيَنْهٰى عَنِ الْفَحْشَآءِ وَالْمُنْكَرِ وَالْبَغْيِ ) *"Hayâsızlığı, fenalık ve azgınlığı da yasaklar."*

Bunlardan maksat dince yasaklanmış olan bütün çirkinliklerdir.

وَاَوْفُوا بِعَهْدِ اللّٰهِ اِذَا عَاهَدْتُمْ وَلَا تَنْقُضُوا الْاَيْمَانَ بَعْدَ تَوْكِيدِهَا وَقَدْ جَعَلْتُمُ اللّٰهَ عَلَيْكُمْ كَفِيلًا اِنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ مَا تَفْعَلُونَ ﴿٩١﴾

91- "Antlaşma yaptığınız zaman, Allah'a karşı verdiğiniz sözü yerine getirin. Allah'ı kendinize kefil kılarak pekiştirdikten sonra yeminlerinizi bozmayın. Şüphesiz Allah, yaptıklarınızı bilir."

İslam'ı ve imanı kabulde Allah'a verdikleri sözü yerine getirmek, bütün Müslümanlara farz kılınmıştır. Bu nedenle imanı sürdürmek zorundadırlar. Sonra Müslümanlardan her bir topluluğun Allah'a verdiği ve yerine getirmekle yükümlü olduğu özel bir söz vardır. Mesela zahid, yüzünü dünyaya çevirmeyeceğine söz vermiştir. Bu durumda zahid, dünyadan terk ettiklerine dönüş yaptığı zaman sözünü bozmuş ve onu yerine getirmemiş olur. Abid, Allah'a nefsin arzularını, mürid de âdeti terk edeceğine ve her yönüyle Allah'ı tercih edeceğine; arif, kendini bütünüyle Allah'a vereceğine ve gayrisi olan her şeyi terk edeceğine; seven, kendini her yönüyle Allah'a adayacağına; tevhid ehli de kendinden tamamen vazgeçmeye ve her yönden Allah'ı birlemeye söz vermiştir. Mümin ise sözünde kusur işlemekten alıkonulmuş ve onu yerine getirmekle memur kılınmıştır.

وَلَا تَكُونُوا كَالَّتِي نَقَضَتْ غَزْلَهَا مِنْ بَعْدِ قُوَّةٍ اَنْكَاثًا تَتَّخِذُونَ
اَيْمَانَكُمْ دَخَلًا بَيْنَكُمْ اَنْ تَكُونَ اُمَّةٌ هِيَ اَرْبٰى مِنْ اُمَّةٍ اِنَّمَا
يَبْلُوكُمُ اللّٰهُ بِهِ وَلَيُبَيِّنَنَّ لَكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ مَا كُنْتُمْ فِيهِ تَخْتَلِفُونَ ﴿٩٢﴾

92- "Bir topluluk, diğer bir topluluktan daha çoktur diye yeminlerinizi aranızda bir hile ve fesat sebebi yaparak, ipliğini iyice eğirip büktükten sonra tekrar çözüp bozan kadın gibi olmayın. Allah, bununla sizi ancak imtihan eder. Hakkında ayrılığa düştüğünüz şeyleri kıyamet günü size elbette açıklayacaktır."

Sözünü bozan kimse, başta yaptığını son yaptığıyla bozmuş, bu yaptığıyla attığı temeli yıkmış, diktiğini sökmüş ve ipliğini iyice eğirip büktükten sonra tekrar çözüp bozan kadın gibi olur. Bu arada sâlik bir gevşeklik, mürid bir durgunluk, arif bir perdelenmişlik yaşadığında, seven de bir ayrılıkla karşılaştığında bu durumlar onlar için büyük meşakkatler ve feci musibetler olur.

Tıpkı şu şiirde söylendiği gibi:

*Ağlayacağım ben hilale, üzülerek*
*Tamamlanmadan tutulması korkusuyla*

Bu durumda ansızın güneşleri tutulur, zifiri karanlık gecede çıraları söner ve yıldızlarının aydınlığı gökyüzünden kopup darmadağın olur, ünsiyet çiçeklerine ve vuslat baharlarına, içinde şiddetli bir afet barındıran bir kasırga ve acıklı bir azap isabet eder. Çünkü Allah (c.c.), bir kavim hakkında musibet dilediği zaman, şu ayette söylendiği gibi olur:

( وَنُقَلِّبُ اَفْـِٔدَتَهُمْ وَاَبْصَارَهُمْ كَمَا لَمْ يُؤْمِنُوا بِهٖٓ اَوَّلَ مَرَّةٍ ) *"Biz onların kalplerini ve gözlerini ters döndürürüz de ilkin ona iman etmedikleri gibi mucize geldikten sonra da inanmazlar."* (En'âm, 6/110)

Hükümdarların öfkesinin sonuçları acıtıcı ve sultanın yüz çevirme hikâyesi ürkütücüdür.

Tıpkı şu şiirde söylendiği gibi:

*Her yerde güzeldir sabır*
*Ancak sana karşı değil, kuşkusuz kötüdür o*

İşte bu olduğu zaman gözyaşları akar, üst baş yırtılır, yüzler tırmalanır, gebe develer salıverilir -en değerli mallar gözden çıkarılır-, evler harabeye çevrilir, kapılar kararır ve inleyen inler.

Şiir:

*Geldi elçi ve haber verdi yakında göç ettiklerini*
*Döndüler yurtlarına onlar ve aktı göz yaşlarım, boşalarak*

*Bıraktılar içimde bir ateş ve ektiler başımda beyaz saçları*

(اِنَّمَا يَبْلُوكُمُ اللّٰهُ بِهِ وَلَيُبَيِّنَنَّ لَكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ مَا كُنْتُمْ فِيهِ تَخْتَلِفُونَ) *"Allah, bununla sizi ancak imtihan eder. Hakkında ayrılığa düştüğünüz şeyleri kıyamet günü size elbette açıklayacaktır."*

Herkesin musibeti, durumuna uygun şekilde gerçekleşir. Bu itibarla musibeti, içine doğan hisler veya nefsinin arzularını yerine getirememek ya da ahirette değerli varlıklarından mahrum kalmak olan kimse hakkında yapılan musibet nitelemesi mecazidir ve bu, sadece avamın musibetidir. İyilerin musibeti ise bundan başka bir şey olup şu dizelerde söylendiği gibidir:

*Gecelemezse kim, yüreği sevgiyle dolu olarak*
*Bilmez ciğerlerin nasıl paramparça olduğunu*

وَلَوْ شَآءَ اللّٰهُ لَجَعَلَكُمْ اُمَّةً وَاحِدَةً وَلٰكِنْ يُضِلُّ مَنْ يَشَآءُ وَيَهْدِي مَنْ يَشَآءُ وَلَتُسْئَلُنَّ عَمَّا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٩٣﴾

93- "Allah dileseydi, sizi tek bir ümmet yapardı. Fakat O, dilediğini saptırır, dilediğini de doğru yola iletir. Yapmakta olduğunuz şeylerden mutlaka sorguya çekileceksiniz."

Onların başına gelen, mallarında zarara uğramaları veya amellerinde kusur işlemeleri ve yitirdikleri halleri sebebiyle değildir. Hayatıma yemin ederim ki, bunlar bir takım gerekçeler ve sebeplerdir. Hikâyenin asıl sırrı ise şu şiirde söylendiği gibidir.

*Özlemini çekmekteyim ben arzuladığım kimsenin, lakin*
*Dayalı değildir tedbirim azatlı kölelerin görüşüne*

(وَلَوْ شَٓاءَ اللّٰهُ لَجَعَلَكُمْ اُمَّةً وَاحِدَةً) *"Allah dileseydi, sizi tek bir ümmet yapardı."*

Eğer Allah onlara mutluluk dileseydi onlara merhamet eder, kendilerini günahlardan korur ve onlara gaflet yerine zikrin devamını ilham ederdi. Fakat bu konuda ezeli takdir böyle gerçekleşmiştir.

Ne güzel söylemişlerdir:

*Şikayet etti sana kendisine hıyanet edeni*
*Sabır ve tahammül buldukça sende*
*Şaşkındır, yolu bulur dilersen eğer*
*Susuzdur, suya varır dilersen eğer*

وَلَا تَتَّخِذُوٓا اَيْمَانَكُمْ دَخَلًا بَيْنَكُمْ فَتَزِلَّ قَدَمٌ بَعْدَ ثُبُوتِهَا وَتَذُوقُوا
السُّٓوءَ بِمَا صَدَدْتُمْ عَنْ سَبِيلِ اللّٰهِ وَلَكُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ ﴿٩٤﴾

94- "Yeminlerinizi aranızda hile ve fesat sebebi yapmayın. Sağlamca bastıktan sonra, ayaklarınız kayar da Allah yolundan sapmanız sebebiyle kötü azabı tadarsınız. Ahirette de sizin için büyük bir azap vardır."

İmanınızdaki samimiyetsizliğiniz, sizi delilinizle hakikate varmaktan uzaklaştırmıştır. Çünkü siz, kesinlik ve belirginlik sınırında değil, tereddüt sınırında durduğunuz için tereddüdünüz, sizi alıp şirkinizin yurtlarına götürmüştür. Zira Allah'ta şüphe etmek ile O'na ortak koşmak hükümde paraleldir.

وَلَا تَشْتَرُوا بِعَهْدِ اللّٰهِ ثَمَنًا قَلِيلًاۜ اِنَّمَا عِنْدَ اللّٰهِ هُوَ خَيْرٌ لَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٩٥﴾

95- "Allah'a verdiğiniz sözü, az bir karşılığa değişmeyin! Eğer bilirseniz, şüphesiz Allah katında olan, sizin için daha hayırlıdır."

Helalden veya haramdan olsun, yararlanacağınız dünyanızın metaından az bir şeyi, Allah'ın hakkını yerine getirmeye ve ahdine uymaya tercih etmeyiniz. Çünkü imanınıza uymanız şartıyla Allah'ın sizin için cennetlerinde hazırladığı şeyler, dünyada hemen elde etmeye çalıştığınız arzularınızdan daha mükemmel ve daha fazladır.

مَا عِنْدَكُمْ يَنْفَدُ وَمَا عِنْدَ اللّٰهِ بَاقٍۜ وَلَنَجْزِيَنَّ الَّذِينَ صَبَرُوٓا اَجْرَهُمْ بِاَحْسَنِ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿٩٦﴾

96- "Sizin yanınızdaki tükenir, Allah katında olan ise kalıcıdır. Elbette sabredenlere, yapmakta olduklarının en güzeliyle mükâfatlarını vereceğiz."

Sizin yanınızdaki, geçici ve yok olacak bir metadır. Ahirette Allah katındaki sevabınız ise kesilmeyen ve engel olunmayan derli toplu nimetlerdir.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Sizin yanınızdaki veya sizden ya da sizin olanlar, hastalıklı birtakım fiiller ve hallerdir. Allah katındaki ise kalıcı sevap ve büyük bir nimettir.

- Sizden olan bilgileriniz ve sevgileriniz, birbirini izleyen ve sırayla gelen çeşitli tezahürler olup hükümleri bâtıl olmasa da kendileri geçicidir. Oysa Allah'ın size merhamet etmesi, sizi sevmesi ve size karşı sebat göstermesi gibi vasıfları, ezelî ve zamanla sınırlı olmayan sıfatlardır.

- Bizim huzurumuza çıkmaya dair arzunuz, yok olmaya maruz ve sona erme özelliğine sahiptir. Oysa kendimizi vasıflandırdığımız hususlar, sonsuz bir yöneliş ve yok olmayan lütuflardır.

Şiir:

*Uzun sürdü iyilerin bana kavuşma arzusu*
*Oysa ben, daha arzuluyum onlara kavuşmaya*

( وَلَنَجْزِيَنَّ الَّذِينَ صَبَرُوٓا اَجْرَهُمْ بِاَحْسَنِ ) *"Elbette sabredenlere mükâfatlarını vereceğiz."*

Sabrın karşılığı, isteneni kazanmak ve arzu edileni elde etmektir. İsteklerle ilgili akıbetleri ise farklıdır. Bu çerçevede kim Allah yolunda bir zorluğa katlanırsa, Allah tarafından verilecek olan karşılığı ve sevabı büyük olur. Allah şöyle buyurur:

( اِنَّمَا يُوَفَّى الصَّابِرُونَ اَجْرَهُمْ بِغَيْرِ حِسَابٍ ) *"Sabredenlere mükâfatları elbette hesapsız olarak verilir."* (Zümer, 39/10)

Kim de Allah için bir şehvete uymama ve Allah korkusundan dolayı hata işlememe sabrını gösterirse mükâfatı şu ayette söylendiği gibidir:

( اُولٰٓئِكَ يُجْزَوْنَ الْغُرْفَةَ بِمَا صَبَرُوا وَيُلَقَّوْنَ فِيهَا تَحِيَّةً وَسَلَامًا ) *"İşte onlar, sabretmelerine karşılık cennetin yüksek makamlarıyla mükâfatlandırılacaklar ve orada esenlik dileği ve selamla karşılanacaklardır."* (Furkân, 25/75)

Kim Allah tarafından görüldüğünden emin olarak hükmünün cereyan edişi altında sabrederse, şüphesiz Allah şöyle buyurmuştur:

( اِنَّ اللّٰهَ مَعَ الصَّابِرِينَ ) *"Şüphesiz Allah, sabredenlerle beraberdir."* (Bakara, 2/153)

مَنْ عَمِلَ صَالِحًا مِنْ ذَكَرٍ اَوْ اُنْثٰى وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَلَنُحْيِيَنَّهُ حَيٰوةً طَيِّبَةً
وَلَنَجْزِيَنَّهُمْ اَجْرَهُمْ بِاَحْسَنِ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿٩٧﴾

97- "Erkek ve kadın, kim mümin olarak iyi iş işlerse, elbette ona hoş bir hayat yaşatacağız ve onların mükâfatlarını, yapmakta olduklarının en güzeli ile vereceğiz."

İyi iş, kabul edilebilir şeydir. Kabul edilebilir şey ise Allah'ın emrettiği şekilde olan şeydir. Yani kim şimdi iyi iş işlerse elbette biz kıyamet günü ona hoş bir hayat yaşatacağız. Bu itibarla şimdiki safiyet, kıyamette mükâfatın verilmesini sağlar. Bu arada iyi iş -salih amel-, iman olmadan olmaz. Bu nedenle Allah: ( وَهُوَ مُؤْمِنٌ ) "*mümin olarak*" buyurmuştur.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Mümin olmaktan maksat imanının kendi salih ameliyle değil, Allah'ın lütfunun eseri olduğunu tasdik etmektir.

- Mümin olmaktan maksat, amelinin Allah'ın muvaffakiyet vermesi ve onu inşa edip ortaya koymasıyla olduğunu tasdik etmektir.

( فَلَنُحْيِيَنَّهُ حَيوٰةً طَيِّبَةً ) "*Elbette ona hoş bir hayat yaşatacağız.*"

Ayette ( فلنحيينه ) lafzındaki ( فا ) "*fe*" harfi takip içindir. ( ولنجزينه ) lafzındaki ( و ) "*vav*" harfi ise atıf içindir. Birincisi güzel hayatın hemen gerçekleşeceğini, ikincisi de karşılığın daha sonra olacağını ifade etmektedir. Sonra güzel hayatın ne olduğu anlatımla değil tadarak anlaşılır. Bu çerçevede kimileri güzel hayatın taatin tatlılığı olduğunu, kimileri kanaat olduğunu, kimileri hoşnutluk olduğunu, kimileri gizli konuşma olduğunu, kimileri de Allah'a yakınlığın esintisi olduğunu söylemiştir. Aslında bunların hepsi doğrudur ve her birinin mensupları vardır.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Güzel hayat, sevgiliyle beraber olan hayattır.

Şiir:

*En mükemmelinin içerisindeyiz biz sevincin, lakin*
*Sadece sizinle gerçekleşir sevinç*
*Ey sevdiklerim,içinde bulunduğumuz durumun kusuru*
*Biz buradayken sizin bulunmamanızdır.*

- Veliler için güzel hayat, hiçbir ihtiyaçlarının, isteklerinin ve taleplerinin olmamasıdır. Bu arada mürid olup müridliği kaldırılan

kimse ile hiçbir iradesi olmadığı için hiçbir şey istemeyen kimse arasında önemli bir fark vardır. Birinciler, kulluğun şartını yerine getirirler. Diğerleri ise hürriyetin şartına inanırlar.

فَاِذَا قَرَاْتَ الْقُرْاٰنَ فَاسْتَعِذْ بِاللّٰهِ مِنَ الشَّيْطَانِ الرَّجِيمِ ﴿٩٨﴾

98- "Kur'an okuduğun zaman, kovulmuş şeytandan Allah'a sığın."

Herkesin şeytanı kendisini Rabbinden alıkoyan şeydir. Bu çerçevede kime nefsi musallat olur da bir taatini görmek veya bir ibadetini güzel bulmak ya da bir halini dikkate almak şeklinde dahi olsa onu Rabbinden alıkoyarsa, işte o nefis onun şeytanıdır. Yapması gereken ise nefsinin ve kötülük sahibi her şeyin şerrinden Allah'a sığınmaktır.

اِنَّهُ لَيْسَ لَهُ سُلْطَانٌ عَلَى الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَلٰى رَبِّهِمْ يَتَوَكَّلُونَ ﴿٩٩﴾

99- "Gerçek şu ki; şeytanın, inanan ve yalnız Rablerine tevekkül eden kimseler üzerinde bir hakimiyeti yoktur."

Allah, yalnızca kendisi ortaksız olarak yoktan var ve icat etmekte iken şeytanın kul üzerinde nereden hakimiyeti olur!

اِنَّمَا سُلْطَانُهُ عَلَى الَّذِينَ يَتَوَلَّوْنَهُ وَالَّذِينَ هُمْ بِهِ مُشْرِكُونَ ﴿١٠٠﴾

100- "Şeytanın hakimiyeti, sadece onu dost edinenler ve Allah'a ortak koşanlar üzerinedir."

Şeytanın hakimiyeti sadece gafletlerinin, zanlarının ve şüpheli durumlarının örtüsüyle basiretleri kapananlar üzerinedir. Tevhid inancına sahip kimselere gelince onlar, yaratılanların Allah'ın iradesiyle ortaya çıktığını, başlangıçlarının Allah'tan olduğunu, akıbetlerinin ve nihai varışlarının da Allah'a olduğunu görürler.

وَاِذَا بَدَّلْنَٓا اٰيَةً مَكَانَ اٰيَةٍ وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا يُنَزِّلُ قَالُٓوا اِنَّمَٓا اَنْتَ مُفْتَرٍ
بَلْ اَكْثَرُهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿١٠١﴾

101- "Biz, bir ayeti değiştirip yerine başka bir ayet getirdiğimiz zaman -ki Allah, neyi indireceğini gayet iyi bilir- onlar peygambere: 'Sen, ancak uyduruyorsun' derler. Hayır, onların çoğu bilmezler."

Sürelerinin uzaması aşamasında sadece şüpheleri ve inkârları kat kat arttı, yalanlamayla ilgili yöntemlerine devam ettiler. Bu yüzden Hz. Peygamber'i (s.a.v.) tasdik etmedikleri gibi Allah'ın dostu olduğu konusundaki şüpheleri ve tartışmaları daha da artmış oldu.

Şiir:

*Böyledir yılgın insan, kopmak istediği zaman*
*Usanır vuslattan ve: Şöyle oldu böyle oldu, der.*

قُلْ نَزَّلَهُ رُوحُ الْقُدُسِ مِنْ رَبِّكَ بِالْحَقِّ لِيُثَبِّتَ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَهُدًى
وَبُشْرٰى لِلْمُسْلِمِينَ ﴿١٠٢﴾

102- "De ki: 'Ruhu'l-Kudüs, insanların inançlarını sağlamlaştırmak, Müslümanlara doğru yolu göstermek ve onlara bir müjde olmak üzere, Kur'an'ı Rabbinden hak olarak indirdi.'"

( قُلْ نَزَّلَهُ رُوحُ الْقُدُسِ مِنْ رَبِّكَ بِالْحَقِّ ) *"De ki: 'Ruhu'l-Kudüs, Kur'an'ı Rabbinden hak olarak indirdi.'"*

Bu ifade, onların Rableriyle ilgili aşırı cehaletlerine ve Allah'ı tanıma bilgisini elde etme mertebesinden olan uzaklıklarına karşılık verilen bir cevaptır. Onlar, Allah'ı görmede dağınıklık içinde olunca onlara tanıtılırken melekten söz edilerek kendilerine cevap verilmiştir.

وَلَقَدْ نَعْلَمُ اَنَّهُمْ يَقُولُونَ اِنَّمَا يُعَلِّمُهُ بَشَرٌ لِسَانُ الَّذٖي يُلْحِدُونَ اِلَيْهِ
اَعْجَمِيٌّ وَهٰذَا لِسَانٌ عَرَبِيٌّ مُبٖينٌ ﴿١٠٣﴾

103- "Andolsun ki biz, onların: 'Kur'an'ı ona bir insan öğretiyor' dediklerini biliyoruz. İma ettikleri kimsenin dili yabancıdır. Bu Kur'an ise, gayet açık bir Arapçadır."

Hz. Peygamber (s.a.v.), kendisini yalanlamalarından, durumu ve değerinin onlara gizli kalmasından ürkmemiştir. Ahalinin en sıradan bir ferdine durumunun gizli kalması, sultanla oturup kalkan bir kimseye ne zarar verir!

Sonra Allah, onlara karşı delil getirerek:

(لِسَانُ الَّذِي يُلْحِدُونَ اِلَيْهِ اَعْجَمِيٌّ وَهٰذَا لِسَانٌ عَرَبِيٌّ مُبِينٌ) *"İma ettikleri kimsenin dili yabancıdır. Bu Kur'an ise gayet açık bir Arapçadır"* buyurmuştur. Onlar, aşırı cehaletlerinden dolayı bütün yaratıkların fesahat ve belagati bakımından karşı koymaktan aciz kaldığı bu Kur'an'ın, dili yabancı olan biriyle olan görüşmesinin ürünü olarak söylendiğini sandılar.

اِنَّ الَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِاٰيَاتِ اللّٰهِ لَا يَهْدِيهِمُ اللّٰهُ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيمٌ ﴿١٠٤﴾

104- "Allah'ın ayetlerine inanmayanları, Allah elbette doğru yola iletmez. Onlar için elem dolu bir azap vardır."

Ezelde kaderi mutsuzluk olarak çizilen kimse, Allah'ın rahmetine mahzar olmaz. Bir de Allah, dünyasında marifetine erdirmediği kimseyi ahiretinde cennetine erdirmez.

اِنَّمَا يَفْتَرِي الْكَذِبَ الَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِاٰيَاتِ اللّٰهِ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْكَاذِبُونَ ﴿١٠٥﴾

105- "Yalanı ancak Allah'ın ayetlerine inanmayanlar uydurur. İşte onlar, yalancıların ta kendileridir."

Bu, anlatımın ince üsluplarından biridir. Çünkü onlar, Hz. Peygamber'i (s.a.v.), iftira etmekle suçlayınca, Allah, cevapta durumu aydınlatarak şöyle buyurdu: *"İftiracı olan sen değilsin. İftiracı olan, mabudunu yalanlayan ve tevhidini bilmeyendir."*

مَنْ كَفَرَ بِاللّٰهِ مِنْ بَعْدِ اِيمَانِهٖٓ اِلَّا مَنْ اُكْرِهَ وَقَلْبُهُ مُطْمَئِنٌّ بِالْاِيمَانِ وَلٰكِنْ مَنْ شَرَحَ بِالْكُفْرِ صَدْرًا فَعَلَيْهِمْ غَضَبٌ مِنَ اللّٰهِ وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ ﴿١٠٦﴾

106- "Kalbi imanla dolu olduğu halde mecbur bırakılan kimse hariç inandıktan sonra Allah'ı inkâr eden ve böylece göğsünü küfre açanlara Allah'tan gazap iner ve onlar için büyük bir azap vardır."

Allah, kulunun kalben dürüst, bağlılığında içten olduğunu ve halinde bir zarurete maruz kaldığını bildiği zaman onun hakkında hükmünü hafifletir ve zorluğu üzerinden kaldırır. Böylece o kimse mecbur bırakılmadıkça tevhid ehli iken küfür sözü söylemez. Kendisiyle Allah arasında da mazeret hakkına sahip olur. Kalpleriyle Allah'a bağlanan ve kendilerini tamamen Allah'ın yolunu izlemeye verip daha sonra karşılarına birtakım sebepler çıkan ve birtakım mazeretlerle karşılaşan kimseler de böyledir. Mesela, bazı sebeplerle meşgul olmaları veya bazı ilimlere dönüş yapmaları gibi. Bu durum, iradelerinin doğruluğuna zarar vermez, ahitlerini bozdukları anlamına gelmez ve Allah'a yönelmiş olma özelliklerini yok etmez.

( مَنْ شَرَحَ بِالْكُفْرِ صَدْرًا ) "*Göğsünü küfre açan kimseye*" gelince o, kendi isteğiyle dönmüş ve Allah yolunda kaldırdığı ayağı, nefsinin arzusuna uyarak indirmiş, böylece müridlik ahdini bozmuş ve akdini feshetmiştir. Bu haliyle o, rahmet kendisine yetişinceye kadar (...) hak etmektedir.

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمُ اسْتَحَبُّوا الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا عَلَى الْاٰخِرَةِ وَاَنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْكَافِرِينَ ﴿١٠٧﴾

107- "Bu, onların dünya hayatını sevip ahirete tercih etmelerinden ve Allah'ın, kâfirler topluluğunu asla doğru yola iletmeyeceğindendir."

Salik, nefsin arzularını haklara tercih ettiği zaman Allah'tan uzak kalır ve Allah'ın hakkına tercih ettiği şeyde bereket bulamaz.

Şiir:

*Baş başa bıraktık seni istediklerinle*
*Belki onlardan usanır da dönersin*

أُو۬لٰٓئِكَ الَّذ۪ينَ طَبَعَ اللّٰهُ عَلٰى قُلُوبِهِمْ وَسَمْعِهِمْ وَاَبْصَارِهِمْ وَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْغَافِلُونَ ﴿١٠٨﴾

108- "İşte onlar Allah'ın, kalplerini, kulaklarını ve gözlerini mühürlediği kimselerdir. İşte onlar, gafillerin ta kendileridir."

Kişi, gafletine devam ettiği ve sürekli hasret çekmek suretiyle durumunu düzeltmediği zaman kasveti kat kat artar, sahip olduğu kuvvetten yaralanamaz ve Allah'ın şu ayetinde buyurduğu gibi olur:

لَا جَرَمَ اَنَّهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ هُمُ الْخَاسِرُونَ ﴿١٠٩﴾

109- "Hiç şüphesiz onlar, ahirette ziyana uğrayanların ta kendileridir."

Onlar, ahirette mahcup ve uzaklığın züllüyle damgalanmış olurlar.

ثُمَّ اِنَّ رَبَّكَ لِلَّذ۪ينَ هَاجَرُوا مِنْ بَعْدِ مَا فُتِنُوا ثُمَّ جَاهَدُوا وَصَبَرُوٓا اِنَّ رَبَّكَ مِنْ بَعْدِهَا لَغَفُورٌ رَح۪يمٌ ﴿١١٠﴾

110- "Sonra şüphesiz ki Rabbin, eziyete uğratıldıktan sonra hicret eden, sonra Allah yolunda cihad edip sabreden kimselerin yanındadır. Şüphesiz Rabbin, bundan sonra da çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

İşe karar verdiği zaman sabreden, ruhsatların tarafına meyletmeyen ve işlerin en zorunu tercih eden kimseye Allah hakkını lütfeder, yerini yaklaştırır, her halinde onu fazlasına kavuşturur, hemcinsleri zarar ederken o, alışverişinde kâr eder ve tedbiri az da olsa hepsinin önüne geçer.

يَوْمَ تَأْت۪ي كُلُّ نَفْسٍ تُجَادِلُ عَنْ نَفْسِهَا وَتُوَفّٰى كُلُّ نَفْسٍ مَا عَمِلَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ﴿١١١﴾

111- "Herkesin nefsi için mücadele ederek geleceği, kendilerine zulmedilmeksizin herkese yaptığının karşılığının eksiksiz ödeneceği günü düşün."

Yarın herkes kendisiyle meşgul olacak, başkasına ayıracak boş zamanı bulunmayacaktır. Kendisiyle uğraşmayan bir kul ise aziz olacaktır. Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurur: *"Kim, hangi durumdaysa Allah'ın huzuruna o durumla çıkar."* Yarın boş zamanı olan kimse, bugün boş zamanı olandır. Yarın nefsini savunmak durumunda kalacak olan da bugün nefsine önem verendir. Oysa müminin nefsi yoktur. Allah şöyle buyurur:

( اِنَّ اللّٰهَ اشْتَرٰى مِنَ الْمُؤْمِن۪ينَ اَنْفُسَهُمْ ) *"Şüphesiz Allah müminlerden nefislerini satın almıştır."* (Tevbe, 9/111)

Allah, onlardan nefislerini satın alarak kendilerine emanet bırakmıştır. Bu itibarla onların nefislerinde hiçbir hakları bulunmamaktadır. Onlar, sadece onun hakkında Allah'ın emrine riayet ederler.

وَضَرَبَ اللّٰهُ مَثَلًا قَرْيَةً كَانَتْ اٰمِنَةً مُطْمَئِنَّةً يَأْت۪يهَا رِزْقُهَا رَغَدًا مِنْ كُلِّ مَكَانٍ فَكَفَرَتْ بِاَنْعُمِ اللّٰهِ فَاَذَاقَهَا اللّٰهُ لِبَاسَ الْجُوعِ وَالْخَوْفِ بِمَا كَانُوا يَصْنَعُونَ ﴿١١٢﴾

112- "Allah, şöyle bir kenti misal verdi: Orası güven ve huzur içinde idi. Oraya her taraftan bolca rızık gelirdi. Fakat Allah'ın nimetlerine nankörlük ettiler. Bu yüzden yaptıklarına karşılık Allah onlara şiddetli açlık ve korku ıstırabını tattırdı."

Kalpte meşguliyet bulunmaması büyük bir nimettir. Bu nedenle kul, nefse arzuların kapısını açıp şehvetin bozgunculuğuna kapılmak suretiyle bu nimete nankörlük ettiği zaman, Allah kalbinde karışıklık meydana getirir ve daha önce bulduğu zaman safiyetini kendisinden alır. Çünkü nefsin arzuları, kalbin parıltılarının yok olmasına yol açar. Bir rivayette şöyle denilmiştir: *"Şuradan gece geldiği zaman, buradan da gündüz gider."* Kalp de böyledir; Allah'ın kendisine

bahşettiği alışılmış durum ondan koptuğu zaman, şiddetli bir susuzluğa ve yüksek bir ateşe yakalanır.

وَلَقَدْ جَٓاءَهُمْ رَسُولٌ مِنْهُمْ فَكَذَّبُوهُ فَاَخَذَهُمُ الْعَذَابُ وَهُمْ ظَالِمُونَ ﴿١١٣﴾

113- "Andolsun, onlara içlerinden bir peygamber geldi de onu yalanladılar. Böylece zulmederlerken azap onları yakalayıverdi."

Nasıl ki onlara açıktan bir peygamber geldiyse, şüphesiz kendilerine gönül dünyalarından peş peşe işaretler de gelir. Kim uyumla ve nefsi şehvet arzularından azat etmek suretiyle o işaretleri kabul etmezse, farkında olmadığı bir yerden azap onu yakalar.

فَكُلُوا مِمَّا رَزَقَكُمُ اللّٰهُ حَلَالًا طَيِّبًا وَاشْكُرُوا نِعْمَتَ اللّٰهِ اِنْ كُنْتُمْ
اِيَّاهُ تَعْبُدُونَ ﴿١١٤﴾

114- "Artık Allah'ın size helâl ve temiz olarak verdiği rızıklardan yiyin. Eğer yalnız ona ibadet ediyorsanız, Allah'ın nimetine şükredin."

Helal ve temiz rızık, kulun şüpheyi terk etmeyle ilgili adaba uygun olduğuna dair Kur'an deliline dayalı izin şartıyla yiyip içtiğidir. Nimetin gerçek şükrü ise nimeti veren Allah'ı görmede gark olmak suretiyle nimeti görememektir.

اِنَّمَا حَرَّمَ عَلَيْكُمُ الْمَيْتَةَ وَالدَّمَ وَلَحْمَ الْخِنْزِيرِ وَمَٓا اُهِلَّ لِغَيْرِ
اللّٰهِ بِهِ فَمَنِ اضْطُرَّ غَيْرَ بَاغٍ وَلَا عَادٍ فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿١١٥﴾

115- "Allah, size ancak leş, kan, domuz eti ve Allah'tan başkası adına kesileni haram kıldı. Ama kim mecbur olur da istismar etmeksizin ve zaruret ölçüsünü aşmaksızın yemek zorunda kalırsa, şüphesiz ki Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Zaruretlerin, dinî izaha uygun olarak zorunlu kılması halinde haramları yemek mubahtır. Ancak buna özel bazı durumlarda ve

hayatı kurtaracak ölçüde ruhsat verilir. Aynı şekilde hakikatin galip gelen halleriyle kendinden geçen kimse, yerine getirmesi gereken farzı eda edebilecek ölçüde kendine gelmesi gerekir. Ancak, dinî vecibeyi yerine getirmesi için gerekli olan ayık olma zamanları geçtikten sonra fark ve temyiz yurtlarında kalmasına imkân tanınmaz.

Şiir:

*Şayet üst üste kaybolsa da benden*
*Şüphesiz varlığımladır ona dönüşüm*

وَلَا تَقُولُوا لِمَا تَصِفُ اَلْسِنَتُكُمُ الْكَذِبَ هٰذَا حَلَالٌ وَهٰذَا حَرَامٌ لِتَفْتَرُوا عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ اِنَّ الَّذِينَ يَفْتَرُونَ عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ لَا يُفْلِحُونَ ﴿١١٦﴾ مَتَاعٌ قَلِيلٌ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَلِيمٌ ﴿١١٧﴾

116, 117- "Dilleriniz, yalana alışageldiğinden dolayı Allah'a karşı yalan uydurmak için: 'Şu helaldir', 'Şu haramdır' demeyin. Şüphesiz Allah'a karşı yalan uyduranlar, kurtuluşa eremezler. Kazandıkları az bir menfaattir. Halbuki onlar için acıklı bir azap vardır."

Doğruluk, her şeyde yalandan iyidir. Oysa onların itiraz şeklindeki pek çok sözleri, birtakım yalan örnekleridir. Doğru insan, bilerek yalan söylemez ve değersiz bir yalancının sözlerini gündemde tutmaz. Yalancı kimsenin içinde bulunduğu zilletten dolayı değersizliği belirgin bir şekilde görülür ve ahirette kendisi için acıklı bir azap vardır.

وَعَلَى الَّذِينَ هَادُوا حَرَّمْنَا مَا قَصَصْنَا عَلَيْكَ مِنْ قَبْلُ وَمَا ظَلَمْنَاهُمْ وَلٰكِنْ كَانُوا اَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ﴿١١٨﴾

118- "Daha önce sana anlattıklarımızı Yahudî olanlara da haram kılmıştık. Biz onlara zulmetmedik; fakat onlar kendilerine zulmediyorlardı."

Allah, geçmiş kavimlere helali ve haramı açıkladığını beyan etmektedir. Onlardan kimisi kendisine emredileni yerine getirmiş, kimisi de buna aykırı davranmıştır. Onlardan her birine, hak ettiği şekilde muamele edilmiştir. Şöyle ki, kalbiyle itaat edeni Allah kendine yaklaştırmış, baş kaldıranı ise reddedip perdelemiştir.

ثُمَّ اِنَّ رَبَّكَ لِلَّذٖينَ عَمِلُوا السُّوٓءَ بِجَهَالَةٍ ثُمَّ تَابُوا مِنْ بَعْدِ ذٰلِكَ
وَاَصْلَحُوٓا اِنَّ رَبَّكَ مِنْ بَعْدِهَا لَغَفُورٌ رَحٖيمٌ ﴿١١٩﴾

119- "Sonra şüphesiz ki Rabbin, cahillik sebebiyle kötülük yapan, sonra bunun ardından tövbe eden ve durumunu düzeltenlerden yanadır. Şüphesiz Rabbin, bundan sonra da elbette çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Daha önceki çirkin davranışlarından pişmanlık, geçmişte yaptıkları aşırılıklarından da üzüntü duydukları ve içten döktükleri göz yaşları, yanlışlıklarının izlerini sildiği zaman, Allah onlara rahmetle nazar eder. Böylece kendilerini düzelttikleri zaman tövbelerini kabul eder ve niyazda bulundukları zaman onları kurtarır.

اِنَّ اِبْرٰهٖيمَ كَانَ اُمَّةً قَانِتًا لِلّٰهِ حَنٖيفًا وَلَمْ يَكُ مِنَ الْمُشْرِكٖينَ ﴿١٢٠﴾

120- "Şüphesiz İbrahim, Allah'a itaat eden, hakka yönelen bir önder idi. Allah'a ortak koşanlardan değildi."

Bir görüşe göre; Hz. İbrahim (a.s.), tek başına iman ettiğinden ümmetin yerine geçmiştir. Tefsirdeki izaha göre o, bir ümmetin iyilik öğretmeni idi.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Bir ümmette dağınık olarak bulunan güzel hasletler, Hz. İbrahim'de topluca bulunmuştur.

- Hz. İbrahim, gördüğü her şeye: "Bu rabbimdir" dediğinde yaratıklara yaratık olmaları bakımından bakmamış, aksine Hakk'ın

müşahedesinde yok olmuş, bütün evreni Allah ile görmüş, Allah'tan başkalarını anarken de aslında onları anmamıştır. Nitekim Allah'ın: *"Sen hepsinin yerindesin. Bu itibarla senin, Allah'ın hakkını kesintisiz yerine getirmen,hepsinin yerine geçmektedir"* diyerek verdiği karşılık da buna uygun düşmüştür.

"Hanîf" ise dinde istikamet üzere olan veya bütünüyle hakka yönelen kimse demektir.

شَاكِرًا لِاَنْعُمِهِ اِجْتَبٰيهُ وَهَدٰيهُ اِلٰى صِرَاطٍ مُسْتَقٖيمٍ ﴿١٢١﴾

121- "O'nun nimetlerine şükreden bir önderdi. Allah, onu seçmiş ve doğru yola iletmişti."

Gerçek anlamda şükreden, Allah'ın şükründen aciz olduğunu, yaptığı şükrün de Allah'tan olduğunu gören kimsedir. Çünkü bu kimse, kendisini yaratanın, şükrüne muvaffak kılanın, kendisine şükrü nasip edenin ve bütünüyle O'nun için olsun diye, kendisini seçenin Allah olduğuna kesin olarak inanmıştır.

( وَهَدٰيهُ اِلٰى صِرَاطٍ مُسْتَقٖيمٍ ) *"Doğru yola iletmişti."*

Yani Allah'ın kulu olduğuna ve Allah'ın kendisini en büyük insanların makamına yükselttiğine kesin olarak inanmıştı.

وَ اٰتَيْنَاهُ فِي الدُّنْيَا حَسَنَةً وَاِنَّهُ فِي الْاٰخِرَةِ لَمِنَ الصَّالِحٖينَ ﴿١٢٢﴾

122- "Ona dünyada iyilik verdik. Şüphesiz o, ahirette de salihlerdendir."

Allah'ın ona verdiği iyilik, kendisine verdiklerinin kesilmeyecek şekilde devam etmesidir.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Söz konusu iyilik, Allah'ın onu dost edinmesidir.

- Söz konusu iyilik, nebilik ve resullüktür.

- Biz, İbrahim'e öyle bir iyilik verdik ki bu sayede o bütünüyle bizim için oldu ve kendisinde başkasına ait hiçbir şey kalmadı.

ثُمَّ اَوْحَيْنَٓا اِلَيْكَ اَنِ اتَّبِعْ مِلَّةَ اِبْرٰه۪يمَ حَن۪يفًا وَمَا كَانَ مِنَ الْمُشْرِك۪ينَ ﴿١٢٣﴾

123- "Sonra da sana: 'Hakka yönelen İbrahim'in dinine uy. O, Allah'a ortak koşanlardan değildi' diye vahyettik."

İbrahim'in dininden maksat, hak ile var olmak ve maddî benliğin silinip yok olmasıdır. Bu itibarla Hz. Peygamber (s.a.v.), Hz. İbrahim'e (a.s.) uymada Allah'ın emrini yerine getirmiş olmaktadır. Hz. İbrahim'in (a.s.) dini ise; ahlak, cömertlik, fedakârlık ve vefa idi. Bu nedenle Hz. Peygamber (s.a.v.), ona uymuş ve fazlasını yapmıştır. Bu nedenle onun itibarı hepsinden fazla olmuş ve meziyeti apaçık ortaya çıkmıştır.

اِنَّمَا جُعِلَ السَّبْتُ عَلَى الَّذ۪ينَ اخْتَلَفُوا ف۪يهِ وَاِنَّ رَبَّكَ لَيَحْكُمُ بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ ف۪يمَا كَانُوا ف۪يهِ يَخْتَلِفُونَ ﴿١٢٤﴾

124- "Cumartesi gününe saygı, ancak onda görüş ayrılığına düşenlere farz kılındı. Şüphesiz Rabbin, ayrılığa düşmekte oldukları şeyler konusunda kıyamet günü aralarında hüküm verecektir."

Kimileri, cumartesi günü çalışmayı haram kılarken, kimileri de bir başkaldırı olarak onu helal saymışlardır. Bir görüşe göre; Allah onlara cuma gününü uygun gördü, ancak onlar: *"Biz, sadece cumartesi gününü isteriz"* dediler. İşte onun hakkında görüş ayrılığına düşmeleri budur. Bu arada ayetin işaret ettiği husus onların emrin gereğinden sapmaları ve nefislerinden yana tutum takınmalarıdır. Sonra Allah'ın cumartesi ile ilgili hükümlerine de hakkıyla uymadılar ve bu, asi durumuna düşmelerine sebep oldu.

اُدْعُ اِلٰى سَب۪يلِ رَبِّكَ بِالْحِكْمَةِ وَالْمَوْعِظَةِ الْحَسَنَةِ وَجَادِلْهُمْ بِالَّت۪ي هِيَ اَحْسَنُ اِنَّ رَبَّكَ هُوَ اَعْلَمُ بِمَنْ ضَلَّ عَنْ سَب۪يلِه۪ وَهُوَ اَعْلَمُ بِالْمُهْتَد۪ينَ ﴿١٢٥﴾

125- "Rabbinin yoluna hikmetle, güzel öğütle çağır ve onlarla en güzel şekilde mücadele et. Şüphesiz senin Rabbin, kendi yolundan sapanları en iyi bilendir. O, doğru yolda olanları da en iyi bilendir."

Allah'ın yoluna çağırmak, insanları O'na itaat etmeye teşvik etmek ve emrine muhalefette bulunmaktan alıkoymakla olur. Hikmetle çağırmak ise insanlara sözüyle söylediklerine, yaptığıyla aykırı davranmamasıdır. Güzel öğüt de bilgi ve doğruluktan beslenen ve şiddet içermeyen öğüttür.

( وَجَادِلْهُمْ بِالَّتِي هِيَ اَحْسَنُ ) *"Onlarla en güzel şekilde mücadele et."*

Yani en güçlü delil ve en açık yolla mücadele et. Allah şöyle buyurur: ( وَمَٓا اُرِيدُ اَنْ اُخَالِفَكُمْ اِلٰى مَٓا اَنْهٰيكُمْ عَنْهُ ) *"Ben, size yasakladığımı kendim yapmak istemiyorum."* (Hûd, 11/88) Bu itibarla, iyiyi emretmenin şartı, emrettiğin şeyi yapman ve alıkoyduğun şeyden sakınmandır.

وَاِنْ عَاقَبْتُمْ فَعَاقِبُوا بِمِثْلِ مَا عُوقِبْتُمْ بِهِ وَلَئِنْ صَبَرْتُمْ لَهُوَ خَيْرٌ لِلصَّابِرِينَ ﴿١٢٦﴾

126- "Eğer ceza verecekseniz, size yapılanın misliyle cezalandırın. Eğer sabrederseniz, elbette bu, sabredenler için daha hayırlıdır."

Başkalarınca size zulüm edilip intikam almak istediğiniz zaman, din hükmünün izin verdiği sınırı aşmayın.

( وَلَئِنْ صَبَرْتُمْ ) *"Eğer sabrederseniz..."*

Eğer bunu yapıp Allah için hak talebinden vazgeçerseniz, o sizin için daha hayırlıdır. Bu arada insanı, hak talebinden vazgeçiren sebepler değişiktir. Bu çerçevede insanlardan kimisi, yarının sevabını arzuladığı için bundan vazgeçer. Çünkü o sevap daha bol ve daha çoktur. Kimisi Allah'ın, hasımlarından hakkını almaya kefil olacağını umduğu için talepte bulunmayı bırakır. Kimisi Allah'ın, başına geleni bilmesiyle yetindiği için vazgeçer. Kimisinin vazgeçmesi, onurlu ki-

şiliği, kaygılardan arınmış olması ve hasmını ele geçirmesi halinde bağışlamayı sevimli bulması dolayısıyladır.

İnsanlardan kimisi de kendisi için hiçbir hak görmez ve hiç kimsenin bu hakka sahip olduğuna inanmaz. Böylece o, nefsini terk etmesini öngören müridlik akdine bağlı kalır. Buna göre mülkü mubah, kanı da hederdir. Kimisi ise başına musallat olan hasmının yaptığına, kendisinin Allah'ın emrine aykırı olan fiillerinin cezası olarak bakar. Allah şöyle buyurur:

( وَمَٓا اَصَابَكُمْ مِنْ مُصِيبَةٍ فَبِمَا كَسَبَتْ اَيْدِيكُمْ وَيَعْفُوا عَنْ كَثِيرٍ ) *"Başınıza her ne musibet gelirse, kendi yaptıklarınız yüzündendir. O, yine de çoğunu affeder."* (Şûrâ, 42/30) Böylece bu kimsenin günahının bağışlanmasını dilemekle meşgul oluşu, kendisini hasmından hakkını istemekten alıkoyar.

وَاصْبِرْ وَمَا صَبْرُكَ اِلَّا بِاللّٰهِ وَلَا تَحْزَنْ عَلَيْهِمْ وَلَا تَكُ فٖي ضَيْقٍ مِمَّا يَمْكُرُونَ ﴿١٢٧﴾

127- "Sabret! Senin sabrın, ancak Allah'ın yardımıyladır. Onlardan yana üzülme. Tuzak kurmalarından dolayı da sıkıntıya düşme."

Ayetteki sabır emri, yükümlülük ifade eder. ( وَمَا صَبْرُكَ اِلَّا بِاللّٰهِ ) *"Senin sabrın, ancak Allah'ın yardımıyladır"* ifadesi ise bilgilendirmedir. Bir yoruma göre de sabır emri, kulluğa olan kesin inancı, sabrın ancak Allah'ın yardımı ile oluşu da Rab oluşunun ifadesidir.

( وَلَا تَحْزَنْ عَلَيْهِمْ ) *"Onlardan yana üzülme."*

Yani takdiri dikkate al. Buna göre, katımızda önemli kılmadığımız şeyin sende bir etkiye yol açması uygun olmaz. O halde bizim değersiz kıldığımız şeyi sen de küçümse. Bir de sen, yaratanın yalnız biz olduğumuzu bildiğin zaman onların şiddetli düşmanlıklarıyla kalbin daralmaz. Çünkü biz seni korumayı, sana düşmanları sevindirmemeyi ve sana hiçbir yolla zarar vermemelerini garanti etmiş bulunuyoruz.

اِنَّ اللّٰهَ مَعَ الَّذٖينَ اتَّقَوْا وَالَّذٖينَ هُمْ مُحْسِنُونَ ﴿١٢٨﴾

128- "Şüphesiz Allah, kendisine karşı gelmekten sakınanlar ve iyilik yapanlarla beraberdir."

Allah, yardımıyla onlarla beraberdir ve kendilerini iyilikle ve bollukla kuşatmaktadır.

( اتَّقَوْا ) "*Sakınanlar*..."

Bunlar, yardımı başkasından görmekten sakınan, kendi güç ve kuvvetlerinden arınmayı prensip edinen kimselerdir. İyilik yapan ise Allah'ı görüyormuş gibi O'na ibadet eden kimsedir ki, bu müşahede halidir.

سورة الْإِسْرَآءِ

# İSRÂ SÛRESİ

(İsrâ Sûresi 111 âyettir. Mekke'de inmiştir. 26, 32, 33, 57 ve 73- 80 arası sekiz âyetin Medine'de indiği nakledilmiştir. "İsrâ" gece yolculuğu yapmak demektir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

Besmele öyle bir sözdür ki, onu hangi abid işittiyse koruyucu özelliğine muhakkak şükretmiş, hangi sâlik işittiyse muhakkak rahmetini bulmuş, hangi arif ona gerçekten inanmışsa muhakkak kalbi Allah'a yakınlık esintisinin güzel kokusundan feyiz almış ve hangi tevhid ehli onu görmüş ise Allah'tan ayrılık korkusuyla muhakkak kanı damla damla akmıştır.

سُبْحَانَ الَّذ۪ٓي اَسْرٰى بِعَبْدِه۪ لَيْلًا مِنَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ اِلَى الْمَسْجِدِ
الْاَقْصَا الَّذ۪ي بَارَكْنَا حَوْلَهُ لِنُرِيَهُ مِنْ اٰيَاتِنَا اِنَّهُ هُوَ السَّم۪يعُ الْبَص۪يرُ ﴿١﴾

1- "Kendisine ayetlerimizden bir kısmını gösterelim diye kulunu (Muhammed'i) bir gece Mescid-i Haram'dan çevresini bereketli kıldığımız Mescid-i Aksa'ya götüren Allah'ın şanı yücedir. Hiç şüphesiz O, hakkıyla işitendir, hakkıyla görendir."

Allah, bu surenin açılışını zatının övgüsüyle yaparak: ( سُبْحَانَ ) "Allah'ın *şanı yücedir*" buyurmuştur. Allah, üstün hitabıyla zatını tespih etmiş ve kadrinin yüceliğinden dolayı ibadeti hak ettiğini, sıfatlarının yüceliğiyle de eşsiz olduğunu bildirmiştir.

Bir de Allah kulların, Mirac Gecesi Peygamberine (s.a.v.) özgü kıldığı yüksek makamı ve kendisine gösterdiği büyük mucizeleri bilmelerini isteyince,olayın şaşırtıcılığını: ( اَسْرٰى بِعَبْدِهٖ لَيْلًا ) "*Bir gece götürdü*" sözüyle gidermiş, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kendini beğenme riskini de: ( بِعَبْدِهٖ ) "*Kulunu*" sözüyle üzerinden kaldırmıştır. Çünkü ilahlığını ve üstünlüğün kemalini hak ettiğini bilen Allah'ın dilediğini yapmasına şaşılmaz. Bunun yanı sıra, kulluğunu ve kendisiyle ilgili hiçbir şeye malik olmadığını bilen kul da halini beğenmez.

Bu itibarla ayet, şu iki şeye açıklık getirmektedir: Allah'ın, fiilini açıklamasına şaşmamak ve Hz. Peygamber'de (s.a.v.) kendini beğenme vasfının bulunmaması.

Bu konudaki diğer bazı yorumlar da şöyledir:

- Allah, Hz. Mûsâ'ya (a.s.) kelamını aracısız olarak dinlettiğini:

( وَلَمَّا جَٓاءَ مُوسٰى لِمٖيقَاتِنَا ) "*Mûsâ, belirlediğimiz vakitte (Tûr'a) gelince*..." (A'râf, 7/143) buyurarak haber verirken Peygamberimizden: ( اَسْرٰى بِعَبْدِهٖ لَيْلًا ) "*Kulunu bir gece götürdü*" ifadesiyle söz etmiştir. Kendi gelen kimse ise Rabbinin götürdüğü kimse gibi değildir. Zira biri gelirken zorluk çekmekte, diğeri ise taşınarak götürülmektedir. Biri fark sıfatıyla gelmekte, diğeri ise cem' vasfıyla götürülmektedir. Biri mürid, diğeri ise müraddır.

- Allah, mirac olayını geceleyin gözetleyiciler habersiz ve yabancılar yok iken, vakit belirlenmeden ve ön hazırlık yapılmadan meydana getirmiştir. Tıpkı şu dizede söylendiği gibi:

*Habersiz ve uzaktır insanlar içinde bulunduğumuz durumdan*

- Allah, tasdik edecek olanların tasdik edişini ve şaşırıp yalanlayanların veya inkâr edenlerin yalanlamalarını ortaya çıkarmak için miracı geceleyin meydana getirmiştir.

- Hz. Peygamber'in (s.a.v.) ibadeti ve teheccüd namazları geceleyin olduğu için Allah miracı da geceleyin meydana getirdi.

Şiir:

*Daha durudur vuslat gecesi*
*Onun dışındaki aylar ve zamanlardan*

- Allah, (s.a.v.) yeryüzü sakinleri ondan ibadeti öğrensinler diye Hz. Peygamber'i göndermiştir. Sonra melekler ondan ibadetin adâbını öğrensinler diye de kendisini göğe yükseltmiştir. Allah onun vasfı hakkında şöyle buyurmuştur: ( مَا زَاغَ الْبَصَرُ وَمَا طَغٰى ) "*Göz şaşmadı ve aşmadı.*" (Necm, 53/17) Böylece o, sağa sola bakmamış, hiçbir makama ve ikrama tamah etmemiş, her türlü talep ve ihtiyaçtan arınmıştır.

( لِنُرِيَهُ مِنْ اٰيَاتِنَا ) "*Kendisine ayetlerimizden bir kısmını gösterelim diye.*"

Allah'ın Hz. Peygamber'i (s.a.v.) bilgilendirmesi önce ayetlerle, sonra sıfatlarla, sonra da zatının keşfiyle olmuştur. Bir yoruma göre de Allah'ın o gece Hz. Peygamber'e (s.a.v.) gösterdiği ayetlerden biri de celalinde, cemalinde, üstünlüğünde, yüceliğinde, ululuğunda ve ihtişamında hiçbir benzerinin bulunmayışıdır.

Sonra Allah, o gece Hz. Peygamber'e (s.a.v.) yaratıklardan hiçbirinin peygamberliğinde, halinin yüceliğinde ve mertebesinin yüksekliğinde kendisine denk olmadığını anlatan bazı ayetlerini de göstermiştir.

وَاٰتَيْنَا مُوسَى الْكِتَابَ وَجَعَلْنَاهُ هُدًى لِبَنٖٓي اِسْرَآءِيلَ اَلَّا تَتَّخِذُوا
مِنْ دُونٖي وَكٖيلًا ٢

2- "Musâ'ya kitabı verdik ve onu: 'Benden başkasını vekil edinmeyin' diyerek İsrail oğullarına bir rehber yaptık."

Hz. Mûsâ (a.s.) da tıpkı peygamberimiz (s.a.v.) gibi resul olarak gönderilmiştir. Ancak bizim peygamberimiz vahyi daha yeterli

özümsemiştir. Çünkü güneş doğup ışık saçarken gerçeklerinin farkına varan kimseye daha yakın olur.

ذُرِّيَّةَ مَنْ حَمَلْنَا مَعَ نُوحٍ اِنَّهُ كَانَ عَبْدًا شَكُورًا ﴿٣﴾

3- "Ey kendilerini Nûh ile birlikte taşıdığımız kimselerin çocukları! Gerçek şu ki, o çok şükreden bir kuldu."

Ayetteki ( ذرية ) kelimesinin başında, nida harfi olan ( يا ) var sayılmıştır. Buna göre nida ile kullanılan ifadenin takdiri ( ذرية يا ) şeklindedir. Yani, ey Nûh ile birlikte taşıdığımız kimselerin zürriyeti! Şüphesiz o, çok şükreden bir kul idi. Ayette yer alan ( شكور ) kelimesi çok şükreden kimse demektir. Hz. Nûh (a.s.), kavminin arasında dokuz yüz elli yıl kaldı. Hikâyesinde anlatıldığına göre o, her bir (…)de yetmiş kez dövü(lü)yor ve şükrediyordu. Aynı zamanda Hz. Nûh, kavmine karşı da şükrediyordu ve sabrediyordu. Nihayet Allah kendisine iman etmiş olanlar hariç kimsenin artık iman etmeyeceğini vahyetti. Hz. Nûh, kavmine şöyle diyerek beddua ettiğinde de bu kendisine emredilmişti: ( رَبِّ لَا تَذَرْ عَلَى الْاَرْضِ مِنَ الْكَافِرِينَ دَيَّارًا ) *"Ey Rabbim! Yeryüzünde kâfirlerden hiç kimseyi bırakma."* (Nûh, 71/26)

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- "Şekûr" lafzı, Allah'ın kendisini şükrüne muvaffak kılmasına karşılık şükreden, ayrıca nimetlerinden dolayı da şükründen geri durmayan kimse demektir.

- "Şekûr" malıyla, canıyla ve kalbiyle şükreden kimse demektir. O, malını Allah yolunda harcar, biriktirmez. Canını Allah'ın taatinde kullanır ve hiçbir hizmetten geri durmaz. Kalbiyle de her an mutlaka Allah'ı zikreder.

وَقَضَيْنَٓا اِلٰى بَنٖٓي اِسْرَٓاءٖيلَ فِي الْكِتَابِ لَتُفْسِدُنَّ فِي الْاَرْضِ مَرَّتَيْنِ
وَلَتَعْلُنَّ عُلُوًّا كَبٖيرًا ﴿٤﴾

4- "Biz, kitapta İsrail oğullarına: 'Yeryüzünde muhakkak iki defa bozgunculuk yapacaksınız ve büyük bir kibre kapılarak böbürleneceksiniz' diye hükmettik."

Burada hükmetmek, gelecekte yapacakları ve karşılaşacakları şeyleri bildirmek ve işaret yoluyla onlara bunu anlatmak anlamındadır. Amaç, kendilerine bildirilen şeylerle karşılaştıklarında inançlarının artması, aleyhlerindeki delilin daha da bağlayıcı hale gelmesi, inkâr yoluyla emre muhalefetten sakınmaları ve ezelde hükme bağlanan hususların uzak sanılsa da kaçınılmaz olarak gerçekleşeceğini bilmeleridir.

فَاِذَا جَٓاءَ وَعْدُ اُولٰيهُمَا بَعَثْنَا عَلَيْكُمْ عِبَادًا لَنَٓا اُو۫لِي بَاْسٍ شَد۪يدٍ
فَجَاسُوا خِلَالَ الدِّيَارِ وَكَانَ وَعْدًا مَفْعُولًا ﴿٥﴾

5- "Nihayet bu iki bozgunculuktan ilkinin zamanı gelince üzerinize, pek güçlü olan kullarımızı gönderdik. Onlar,evlerinizin arasına kadar sokuldular. Bu, herhalde yerine gelmesi gereken bir va'd idi."

Allah (c.c.), bazı kavimleri, birtakım özel durumlar için hazırlar. Nihayet haklarındaki iradesinin zamanı gelince onlar var olurlar.

ثُمَّ رَدَدْنَا لَكُمُ الْكَرَّةَ عَلَيْهِمْ وَاَمْدَدْنَاكُمْ بِاَمْوَالٍ وَبَن۪ينَ وَجَعَلْنَاكُمْ
اَكْثَرَ نَف۪يرًا ﴿٦﴾

6- "Sonra onlara karşı size tekrar egemenlik verdik. Mallar ve çocuklarla sizi güçlendirdik. Sayınızı daha da çoğalttık."

Bu ayet, kulların amellerini değerlendirenin ve fiillerini düzene koyanın Allah olduğunu göstermektedir. Çünkü düşmanlarına karşı zafer kazanmaları, kespleri cümlesindendir. Allah da: (ثُمَّ رَدَدْنَا لَكُمُ الْكَرَّةَ عَلَيْهِمْ) *"Sonra onlara karşı size tekrar egemenlik verdik"* şeklindeki sözüyle, bunu kendisinin üstlendiğini bildirmektedir.

إِنْ اَحْسَنْتُمْ اَحْسَنْتُمْ لِاَنْفُسِكُمْ وَاِنْ اَسَاْتُمْ فَلَهَا فَاِذَا جَٓاءَ وَعْدُ
الْاٰخِرَةِ لِيَسُٓؤُا وُجُوهَكُمْ وَلِيَدْخُلُوا الْمَسْجِدَ كَمَا دَخَلُوهُ اَوَّلَ مَرَّةٍ
وَلِيُتَبِّرُوا مَا عَلَوْا تَتْبِيرًا ﴿٧﴾

7- "İyilik ederseniz, kendinize iyilik etmiş olursunuz. Kötülük yaparsanız, yine kendinize yapmış olursunuz. İkinci bozgunculuğun zamanı gelince, yüzünüzü kara etsinler, daha önce girdikleri gibi yine mescide girsinler ve ellerine geçirdikleri her şeyi yerle bir etsinler diye (üzerinize yine düşmanlarınızı gönderdik.)"

Eğer iyilik yaparsanız sevabınızı kazanmış olursunuz. Kötülük yaparsanız üzerinize düşmanlık celp etmiş olursunuz. Oysa Allah, kullarının yaptıklarından olumlu veya olumsuz olarak etkilenmeyecek kadar yücedir.

عَسٰى رَبُّكُمْ اَنْ يَرْحَمَكُمْ وَاِنْ عُدْتُمْ عُدْنَا وَجَعَلْنَا جَهَنَّمَ
لِلْكَافِرِينَ حَصِيرًا ﴿٨﴾

8- "Umulur ki Rabbiniz size merhamet eder. Eğer yine eski duruma dönerseniz, biz de cezaya döneriz. Biz, cehennemi kâfirlere bir zindan yapmışızdır."

Ayetteki ( عسى ) "umulur ki" lafzında ümitlendirme vardır. Bu itibarla Allah (c.c.), onları ümit ve korku sınırında tutmuştur. Bu lafız, bağışlanacaklarının ve merhamet edileceklerinin açık ifadesi değildir. Bu lafız, sadece ümit için güçlü bir sebep bulunduğunu ifade eder. Nitekim Allah, lütfuyla size merhamet etmeyi vaat etmiştir.

( وَاِنْ عُدْتُمْ عُدْنَا ) *"Eğer yine eski duruma dönerseniz, biz de cezaya döneriz."*

Yani eğer siz hataya dönerseniz biz de cezaya döneriz. Şayet siz tövbede düzgün durursanız biz de size olan lütfumuzu ve sevabımızı sürdürmeye döneriz.

Bu konudaki diğer bazı yorumlar da şöyledir:

- Eğer siz ahdinizi bozmaya dönerseniz, biz de azabı şiddetlendirmeye döneriz.

- Eğer siz sığınmaya dönerseniz, biz de korumaya döneriz.

- Eğer siz içtenliğe dönerseniz, biz de vefaya döneriz.

- Eğer siz size yakışana dönerseniz, biz de keremimize yakışana döneriz.

( وَجَعَلْنَا جَهَنَّمَ لِلْكَافِرِينَ حَصِيرًا ) *"Biz, cehennemi kâfirlere bir zindan yapmışızdır."*

Çünkü onlar (...). Onlar çok sayıda kimselerdir. İşte bu cehennemdir, bunlar da onda kalan kâfirlerdir.

Ayetteki ( حصيرا ) kelimesi hapishane ve son gidilecek yer demektir. Buna göre mümin, ne kadar günahları olsa da ve bu günahlar büyük de olsa, dünyadan imanı üzere çıkan kimse kaçınılmaz olarak bir gün Allah'ın mağfiretine erer.

اِنَّ هٰذَا الْقُرْاٰنَ يَهْد۪ي لِلَّت۪ي هِيَ اَقْوَمُ وَيُبَشِّرُ الْمُؤْمِن۪ينَ الَّذ۪ينَ يَعْمَلُونَ الصَّالِحَاتِ اَنَّ لَهُمْ اَجْرًا كَب۪يرًاۙ ﴿٩﴾

9- "Şüphesiz bu Kur'an, en doğru yola iletir; iyi davranışlarda bulunan müminlere, kendileri için büyük bir mükâfat olduğunu müjdeler."

Kur'an, hakka ve doğruya iletir. Tıpkı sözlük bakımından daha büyük ve en büyük anlamlarına gelen ( أكبر ) lafzının büyük anlamında kullanılması gibi buradaki en doğru yoldan maksat ise aslında doğru olan yoldur. O halde Kur'an, hakka ve doğruya iletir. İletmede meydana gelen aksama ise delilden değil, delili kullanandan kaynaklanmaktadır. Çünkü bazen delil açık olur, ancak delili kullanma durumunda olan kimse ondan yüz çevirir ve fikir yürütme kuralla-

rını ihlal eder. Böylece kusur delilde değil, onu kullanan kimsenin yetersiz kalışında olur.

Kur'an, bir ışıktır. Onunla aydınlanan kimse cehaletin karanlıklarından kurtulur ve şüphesinin bataklığından çıkar. Fikir gözü hastalıklı olan kimse doğruyu karıştırır. Bir yoruma göre de şaşılığın zararı, körlüğün zararından daha ağırdır. Çünkü kör görmediğini bildiği için kılavuzuna uyar. Oysa şaşı, bir şeyi iki şey sanır. Böylece o, hayal etme ve hesaplama biçimiyle sağlam olanı da şüpheli hale getirir. Aynı şekilde bidatçi de cedel yolunu izleyip uygun biçimde fikir yürütmediği zaman, cehaletinin karanlıklarında kalır ve geçersiz iddiasıyla hasmına saldırmış olur.

*Nasıl gündeme getirirler meseleleri kıyısından tutarak*
*Onları geçersiz kılmak isteyenler, bilmem ömrüne yemin ederim*

وَاَنَّ الَّذٖينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِالْاٰخِرَةِ اَعْتَدْنَا لَهُمْ عَذَابًا اَلٖيمًا ﴿١٠﴾

10- "Ahirete inanmayanlara gelince, onlar için de elemli bir azap hazırlamışızdır."

وَيَدْعُ الْاِنْسَانُ بِالشَّرِّ دُعَٓاءَهُ بِالْخَيْرِ وَكَانَ الْاِنْسَانُ عَجُولًا ﴿١١﴾

11- "İnsan hayra dua eder gibi şerre dua eder. İnsan çok acelecidir."

Duanın adabından biri de kulun sadece ihtiyaç halinde dilekte bulunmasıdır. Sonra bakar, eğer kendisini ilgilendirmeyen bir şey varsa ona değinmez. Çünkü hadiste şöyle buyrulmuştur:

*"Kişinin Müslümanlığının güzelliğinden biri de kendisini ilgilendirmeyen şeyi terk etmesidir."*

Sonra dua edenin adabından biri de Allah'tan ihtiyacını dileyip kabulde bir gecikme gördüğü zaman Allah'ı itham etmemesidir. Bu durumda hayrın, duasının kabul edilmemesinde olduğunu bilmesi gerekir. Kulun, tercihinde aceleci davranması makbul bir şey değildir. En uygunu, sükunet ve Allah'ın (c.c.) hükmüne rıza göstermektir.

Şayet sabra katlanamayıp dilekte bulunacaksa, yine yapması gereken aceleci davranmaması, kısmetinde var olanın kaçmayacağına ve Allah'ın kulu için yaptığı tercihin, kulun kendisi için yaptığı tercihten daha hayırlı olduğuna güvenmesidir.

وَجَعَلْنَا الَّيْلَ وَالنَّهَارَ اٰيَتَيْنِ فَمَحَوْنَٓا اٰيَةَ الَّيْلِ وَجَعَلْنَٓا اٰيَةَ النَّهَارِ مُبْصِرَةً لِتَبْتَغُوا فَضْلًا مِنْ رَبِّكُمْ وَلِتَعْلَمُوا عَدَدَ السِّنِينَ وَالْحِسَابَ وَكُلَّ شَيْءٍ فَصَّلْنَاهُ تَفْصِيلًا ﴿١٢﴾

12- "Biz geceyi ve gündüzü iki alamet yaptık. Rabbinizden lütuf isteyesiniz, yılların sayısını ve hesabını bilesiniz diye gece alametini giderip gündüz alametini aydınlatıcı kıldık. İşte biz, her şeyi açıkça anlattık."

Allah gece ve gündüzü peş peşe ve sırayla gelişleri ile uzayıp kısalmaları bakımından, kudretinin kemaline alamet ve birliğinin zorunlu oluşuna delil kılmıştır. Sonra gece ve gündüzü, ibadeti yerine getirmeye ve ilah oluşunun yüceliğini anlamaya dayalı dosdoğru yolda yürümeye uygun zaman haline getirmiştir. Bu itibarla, ibadetin şartı sürekli ve kesintisiz olmasıdır. Vecibelerin hakkı ise muvaffakiyet ve ayrıcalığa vesile olmaktır. Şayet bazı ibadetlerde aksama veya eda edilmelerinde gecikme meydana gelirse kişi, aksamayı gidermek üzere onları kaza ederek telafi eder.

Bir yoruma göre de gece ve gündüzdeki alamet olma yönlerinden biri de gerekçesiz olarak sadece gündüzün aydınlık kılınması, karanlığın da emekle ortaya konulmuş bir durum olmaksızın geceye tahsis edilmesidir. Nitekim bu ayetteki: ( فَمَحَوْنَٓا اٰيَةَ الَّيْلِ وَجَعَلْنَٓا اٰيَةَ النَّهَارِ مُبْصِرَةً لِتَبْتَغُوا فَضْلًا مِنْ رَبِّكُمْ وَلِتَعْلَمُوا عَدَدَ السِّنِينَ وَالْحِسَابَ ) "*Gece alametini giderip gündüz alametini aydınlatıcı kıldık*" ifadesi de bunu ortaya koymaktadır. Anlatılmak istenen husus, ayın parlaklık ve sönüklükte değişikliğe uğramasıdır. Bu çerçevede ay, iki gece aynı durumda kalmayıp her gece, kendisinde meydana gelen artış veya eksilme ile başka bir görünümde olur.

Güneşe gelince onun durumu, sürekli aynı kalmaktır. İnsanların da vasıfları böyledir. Şöyle ki, temkin sahiplerinin özelliği süreklilik-tir. Renk değiştirenlere yakışan ise halden hale girmektir.

Şiir:

*Senin sevginin hâlâ öyle bir yerindeyim ki*
*Hayrete düşer akıllar henüz varmadan oraya*

وَكُلَّ اِنْسَانٍ اَلْزَمْنَاهُ طَٓائِرَهُ ف۪ي عُنُقِه۪ وَنُخْرِجُ لَهُ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ كِتَابًا يَلْقٰيهُ مَنْشُورًا ﴿١٣﴾

13- "Her insanın amelini boynuna yükledik. Kıyamet günü kendisine, açılmış olarak karşılaşacağı bir kitap çıkaracağız."

Allah, herkesi boynundan geçirdiği amel elbisesiyle yükümlü kılar. Bu çerçevede Allah, saadet ehli için muvaffakiyet bineğini eyerleğip onları kurtuluş alanlarına götürür. Şaki olanları ise Allah, mahcubiyet bineğine bindirip, kurtuluş yoluna doğru hareket etmekten alıkoyar. Böylece bunlar helak çukuruna düşmüş olurlar.

اِقْرَاْ كِتَابَكَ كَفٰى بِنَفْسِكَ الْيَوْمَ عَلَيْكَ حَس۪يبًا ﴿١٤﴾

14- "'Oku kitabını! Bugün hesap sorucu olarak sana nefsin yeter' denilecektir."

Ezelî inayetin desteğini alan kimse, hesaba çekileceği gün muamelelerinde kendisini vebal altına sokacak şeylerden korunur. Hükmüyle müptela kıldığı kimseyi ise Allah, reddedip mühlet verdikten sonra ameliyle baş başa bırakır. Bu kimse, süresini tamamlayıp eceli geldiği zaman Allah ona neleri zayi ve ihmal ettiğini gösterir. O gün Allah, nefsinin durumu hakkında kendisini hakem yapar. O da çirkin davranışlarının gerçeğiyle karşılaşınca ister istemez kendi hakkında Allah'ın azabını hak ettiğine karar verir. Böylece nice hasretler, yudumlar ve nice hayal kırıklarıyla karşılaşır.

Bir yoruma göre de Allah, kimi amel defteriyle hesaba çekerse hesaba çekilirken amel defteri yakasını bırakmaz. Bu nedenle o kimse şöyle der:

*"Ey Rabbim! Beni amel defterimle hesaba çekme. Lakin beni, günahı bağışlayan ve tövbeyi kabul eden olduğun şeklindeki sözüne göre hesaba çek. Bana amel defterime göre muamele etme! Çünkü onda helakım ve mahvoluşum vardır."*

مَنِ اهْتَدٰى فَاِنَّمَا يَهْتَد۪ي لِنَفْسِه۪ۚ وَمَنْ ضَلَّ فَاِنَّمَا يَضِلُّ عَلَيْهَاۜ وَلَا
تَزِرُ وَازِرَةٌ وِزْرَ اُخْرٰىۜ وَمَا كُنَّا مُعَذِّب۪ينَ حَتّٰى نَبْعَثَ رَسُولًا ﴿١٥﴾

15- "Kim, hidayet yolunu seçerse, bunu ancak kendi iyiliği için seçmiş olur. Kim de doğruluktan saparsa, kendi zararına sapmış olur. Hiçbir günahkâr, başkasının günah yükünü üstlenmez. Biz, bir peygamber göndermedikçe kimseye azap edecek değiliz."

Kulun amellerinin sonuçları sadece kendisini bağlar. Eğer ameller taat ise aydınlıkları sahipleri içindir. Şayet hata iseler belaları da işleyenlerine mahsustur. Allah ise ganidir, mukaddestir, birdir ve noksanlıklardan münezzehtir.

( وَلَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِزْرَ اُخْرٰى وَمَا كُنَّا مُعَذِّب۪ينَ حَتّٰى نَبْعَثَ رَسُولًا ) *"Hiçbir günahkâr, başkasının günah yükünü üslenmez. Biz, bir peygamber göndermedikçe kimseye azap edecek değiliz."*

Herkes yaptığından sorumludur. Her nefis, başka bir nefsin günahını değil kendi günahlarını taşır.

( وَمَا كُنَّا مُعَذِّب۪ينَ حَتّٰى نَبْعَثَ رَسُولً ) *"Biz, bir peygamber göndermedikçe kimseye azap edecek değiliz."*

Bu söz, vecibelerin ancak duyulması halinde sorumluluk gerektirdiğini ifade etmektedir.

وَاِذَٓا اَرَدْنَٓا اَنْ نُهْلِكَ قَرْيَةً اَمَرْنَا مُتْرَف۪يهَا فَفَسَقُوا ف۪يهَا فَحَقَّ عَلَيْهَا
الْقَوْلُ فَدَمَّرْنَاهَا تَدْم۪يرًا ﴿١٦﴾

16- "Bir ülkeyi helak etmek istediğimizde, o ülkenin zenginlik sebebiyle şımarmış elebaşlarına emrederiz. Buna rağmen onlar, orada kötülük işlerler. Böylece o ülke, helake müstahak olur. Biz de orayı darmadağın ederiz."

Fesat ehli çoğaldıkları zaman galebe çalarlar. İyilik ehli olanlar ise azalır ve kaybederler. İşte o zaman Allah, halkı belasıyla kuşatır ve onlar hakkında konuşmaları için Allah'ın velilerinden de bir sığınakları olmaz. Aralarında Allah'a niyazda bulunup duası dinlenecek kimse de bulunmaz. Böylece Allah, velilerini aradan çeker ve fesat sahiplerini bırakır. O zaman Allah, halka rahmet ve lütuf nazarıyla bakıncaya kadar bela şiddetlenmeye, sıkıntılar da büyümeye devam eder.

وَكَمْ اَهْلَكْنَا مِنَ الْقُرُونِ مِنْ بَعْدِ نُوحٍ وَكَفٰى بِرَبِّكَ بِذُنُوبِ عِبَادِهٖ خَبِيرًا بَصِيرًا ﴿١٧﴾

17- "Nûh'tan sonra da nice nesilleri helak ettik. Kullarının günahlarını hakkıyla bilen ve gören olarak Rabbin yeter."

Ayette, zalimlerin helakinin geciktiğini ve ellerinin onlara yetişmede yetersiz kaldığını düşünen mazlumlar için teselli vardır. Bu durumda onlar, benzerleri olan geçmişteki ümmetleri, ne denli görkemli binalar yaptıklarını, uzun emeller beslediklerini, sonunda da topluca helak olduklarını düşündükleri zaman, diğerlerinin de yakında aynı yolun yolcusu olacaklarını ve onlarınkine benzer bir imtihandan geçirileceklerini bilmiş olurlar. Ürperti bulutlarının gölgesi üzerlerine düştüğü zaman ise takdiri müşahede etmenin gölgesine sığınarak ürpertiden kurtulurlar, hayatları güzelleşir ve heybet sahibi olurlar.

مَنْ كَانَ يُرِيدُ الْعَاجِلَةَ عَجَّلْنَا لَهُ فِيهَا مَا نَشَٓاءُ لِمَنْ نُرِيدُ ثُمَّ جَعَلْنَا لَهُ جَهَنَّمَ يَصْلٰيهَا مَذْمُومًا مَدْحُورًا ﴿١٨﴾

18- "Kim bu geçici dünyayı isterse orada ona, dilediğimiz kimseye dilediğimiz kadar hemen veririz. Sonra da cehennemi ona mekan

yaparız. O, buraya kınanmış ve Allah'ın rahmetinden kovulmuş olarak girer."

Kim dünyanın gelip geçen değersiz payına razı olursa ahiretin değerli nimetinden geri kalır. Dünya nimetinden de ancak kokusunu alacak kadar nasiplenir. Sonra kalben en büyük ünsiyet ve sükuneti bu nasiple bulur. Sonra dünyalık nimetinden kopartılır ve dünyada biriktirdiği değerli mallarından Allah, kendisine hiçbir şey vermez ve ahirette onu yakınlığından alıkoyar.

Şiir:

*Ey sesi duymaktan gafil kişi!*
*Hemen davranmazsan gidiyor elden*
*Her kim ki nimeti dünyalık olsa*
*Ayırır onu ölüm nimetinden*

وَمَنْ اَرَادَ الْاٰخِرَةَ وَسَعٰى لَهَا سَعْيَهَا وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَاُو۬لٰٓئِكَ كَانَ سَعْيُهُمْ مَشْكُورًا ﴿١٩﴾

19- "Kim de mümin olarak ahireti ister ve ona ulaşmak için gereği gibi çalışırsa, işte bunların çalışmalarının karşılığı verilir."

Ahireti gerçekten isteyenin alameti, ona gereği gibi çalışmasıdır. O halde ahiret isteği onun için çalışmakla birlikte olmadığı zaman sırf bir istekten ibaret kalmış olur ve çalışmasına karşılık verilmez.

( وَهُوَ مُؤْمِنٌ ) "*Mümin olarak.*" Yani, şimdi olduğu gibi sonunda da mümin olarak. Bir yoruma göre de, kurtuluşunun, kendisi sebebiyle değil, Allah'ın lütfuyla olduğuna inanmış olarak ahireti isterse.

( فَاُو۬لٰٓئِكَ كَانَ سَعْيُهُمْ مَشْكُورًا ) "*İşte bunların çalışmalarının karşılığı verilir.*"

Yani çalışmaları kabul edilir. Kabul edilmesiyle birlikte amelde katlanarak çoğalma gerçekleşir. Zira nasıl ki Allah sadakayı artırıyorsa, aynı şekilde kulun ibadetini de çoğaltıp büyütür.

كُلًّا نُمِدُّ هٰٓؤُلَٓاءِ وَهٰٓؤُلَٓاءِ مِنْ عَطَٓاءِ رَبِّكَ وَمَا كَانَ عَطَٓاءُ رَبِّكَ مَحْظُورًا ﴿٢٠﴾

20- "Rabbinin lütfundan her birine; onlara da bunlara da veririz. Rabbinin lütfu yasaklanmış değildir."

Allah herkesi değeri ölçüsünde mükâfatlandırır. Bu çerçevede kimilerine kurtuluş, kimilerine dereceler, kimilerine esenlik, kimilerine saygınlık, kimilerine sevap, kimilerine de Allah'a yakınlık vardır.

اُنْظُرْ كَيْفَ فَضَّلْنَا بَعْضَهُمْ عَلٰى بَعْضٍ وَلَلْاٰخِرَةُ اَكْبَرُ دَرَجَاتٍ وَاَكْبَرُ تَفْضِيلًا ﴿٢١﴾

21- "Bak, nasıl onların kimini kimine üstün kıldık. Elbette ahiretteki dereceler daha büyüktür, üstünlükler daha büyüktür."

Üstünlük birkaç kısımdır. Bu çerçevede Allah, kulları birbirine üstün kılmış ancak bunu amellerinin doğruluğuna göre yapmıştır. Allah, arifleri de birbirine üstün kılmış, ancak bunu hallerinin safiyetine göre yapmıştır. Bu arada amellerin doğruluğu içtenlikle, hallerin safiyeti de kendini Allah'a adamakla olur. Bu itibarla kimileri adımlarının içtenliğiyle, kimileri de gayretlerinin yüksekliğiyle birbirilerine üstün oldular. Ahiretteki üstünlük ise daha büyüktür. Buna göre kulların birbirlerine üstünlükleri derecelerledir. Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur:

*"Şüphesiz siz, yüksek derecelerin sahiplerini, tıpkı gökyüzü ufkunda parlayan yıldızı görür gibi, görürsünüz. Şüphesiz Ebubekir ve Ömer de onlardandır."*

Huzura erenlerin birbirlerine üstünlükleri ise Allah'a yakınlık esintisinden edindikleri ünsiyetin manevî incelikleriyledir. Bu incelikleri ne hiçbir beyan ve ifade anlatabilir ne de hiçbir işaret kavrayabilir. Huzura erenlerden kimisi Allah'ı haftada bir gün görür, kimisi de huzurdan bir an bile kaybolmaz. Bu itibarla onlar Allah'ı

görmede birleşirler, her birine ait payda ise farklılık gösterirler. Bu arada Allah'ı gören herkes O'nu arkadaşını gördüğü gözle görüyor değildir.

Şiir:

*Eğer işitselerdi sevgilinin konuşmasını benim işittiğim gibi*
*Rükûa varıp secdeye kapanırlardı Azze için*

لَا تَجْعَلْ مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ فَتَقْعُدَ مَذْمُومًا مَخْذُولًا ﴿٢٢﴾

22- "Allah ile birlikte başka bir tanrı edinme! Yoksa kınanmış ve yalnızlığa itilmiş olarak kalırsın."

Allah'a ortak koşan kimse Allah tarafından kınanmış, Allah'tan başka ibadet ettiği kimse tarafından da yalnızlığa itilmiş olur.

وَقَضٰى رَبُّكَ اَلَّا تَعْبُدُوٓا اِلَّآ اِيَّاهُ وَبِالْوَالِدَيْنِ اِحْسَانًا اِمَّا يَبْلُغَنَّ عِنْدَكَ الْكِبَرَ اَحَدُهُمَآ اَوْ كِلَاهُمَا فَلَا تَقُلْ لَهُمَآ اُفٍّ وَلَا تَنْهَرْهُمَا وَقُلْ لَهُمَا قَوْلًا كَرِيمًا ﴿٢٣﴾

23- "Rabbin, kendisinden başkasına asla ibadet etmemenizi, anaya babaya iyi davranmanızı kesin olarak emretti. Eğer onlardan biri, ya da her ikisi, senin yanında ihtiyarlık çağına ulaşırsa, sakın onlara: 'öf!' bile deme, onları azarlama, onlara tatlı ve güzel söz söyle."

Allah, sadece kendisine ibadet edilmesini emretmiştir. Bu da, kulun yaptığı ibadette ihlaslı olması ve ibadetiyle mağrur olmaktan kendisini koruyacak olan hakikatin hakimiyetine teslim olmayı kabul etmesiyle gerçekleşir.

Allah, ana ve babaya iyi davranmayı, haklarına riayet etmeyi, işaretlerinin sınırında durmayı, hizmetlerini yerine getirmeyi, hoşnutluklarına, güzel beraberliklerine ve saygınlıklarını gözetmeye

vesile olan davranışlardan ayrılmamayı, emirlerine karşı tembellik belirtilerini ortaya koymamayı ve gönüllerini kazanmayı sağlamaya çaba harcamayı da emretmiştir. Bunlar, hayatlarında yapılması gerekenlerdir. Ölümlerinden sonra ise onlara içten dua etmek, onlar adına sadaka vermek, vasiyetlerini isteklerine uygun şekilde yerine getirmek, dostlarına ve sevenlerine iyi davranmak suretiyle hakları eda edilir.

Bir yoruma göre de Allah kullara kendi hemcinsleri olan ana ve babanın hakkına uymayı emretmiştir. Bu durumda hemcinsinin hakkını gözetmekten aciz kalan kimse Rabbinin hakkını nasıl yerine getirebilir!

وَاخْفِضْ لَهُمَا جَنَاحَ الذُّلِّ مِنَ الرَّحْمَةِ وَقُلْ رَبِّ ارْحَمْهُمَا كَمَا رَبَّيَانِي صَغِيرًا ﴿٢٤﴾

24- "Onlara merhamet ederek tevazu kanadını indir ve de ki: 'Rabbim! Tıpkı beni küçükken koruyup yetiştirdikleri gibi sen de onlara merhamet et.'"

Güzel geçinmek, yumuşak konuşmak, hizmete koşmak, isteklerini hemen yerine getirmek, arzularını aksatmamak, emirlerine karşı sabırlı olmak ve imkan dâhilindeki hiçbir şeyi onlardan esirgememek suretiyle onlara tevazu kanadını indir.

رَبُّكُمْ اَعْلَمُ بِمَا فِي نُفُوسِكُمْ اِنْ تَكُونُوا صَالِحِينَ فَاِنَّهُ كَانَ لِلْاَوَّابِينَ غَفُورًا ﴿٢٥﴾

25- "Rabbiniz, içinizde olanı en iyi bilendir. Eğer siz iyi kişiler olursanız şunu bilin ki Allah, tövbeye yönelenleri çok bağışlayandır."

Allah, bir kulun kalben samimi olduğunu bildiği zaman ona güzel lütuflarıyla yardımcı olur, güzel devamlılıkla ona ikramda bulunur, zor işleri ona kolay kılar, kötülüklerden onu korur ve kitlenin kalplerini ona yönlendirir.

وَاٰتِ ذَا الْقُرْبٰى حَقَّهُ وَالْمِسْكٖينَ وَابْنَ السَّبٖيلِ وَلَا تُبَذِّرْ تَبْذٖيرًا ﴿٢٦﴾

26- “Akrabaya, yoksula ve yolda kalmış yolcuya haklarını ver, fakat saçıp savurma.”

Hak vermek, maldan, candan, sözden ve davranıştan olur. Kim, hakkın gereğine göre davranıp her şeyi, yükümlü olduğu haklar uğruna feda ederse işte Allah'ın, emriyle kendisini yükümlü kıldığı vecibeleri yerine getiren odur.

Ayette yer alan (تَبْذٖيرًا) “tebzîr” ise emrin ve iznin belirlediği sınırı aşmak demektir. Bir susam tanesi kadar dahi olsa nefsin arzusu için olan şey tebzîrdir. Kendi için olan şey de canını feda etmek dahi olsa, kusurdur.

اِنَّ الْمُبَذِّرٖينَ كَانُوٓا اِخْوَانَ الشَّيَاطٖينِ وَكَانَ الشَّيْطَانُ لِرَبِّهٖ كَفُورًا ﴿٢٧﴾

27- “Çünkü saçıp savuranlar, şeytanların kardeşleridir. Şeytan ise Rabbine karşı çok nankörlük etmiştir.”

Onlar şeytanların kardeşleridirler, çünkü nefisleri için harcama yapmışlar, yollarına şeytanlarına ve vesveselerine göre devam etmişlerdir. Bu durum, onları günahlara sürükleyince Allah kendilerini şeytanların kardeşleri diye adlandırmıştır.

وَاِمَّا تُعْرِضَنَّ عَنْهُمُ ابْتِغَٓاءَ رَحْمَةٍ مِنْ رَبِّكَ تَرْجُوهَا فَقُلْ لَهُمْ قَوْلًا مَيْسُورًا ﴿٢٨﴾

28- “Eğer Rabbinden umduğun bir rahmeti istemek için onlardan yüz çevirecek olursan, o zaman onlara yumuşak bir söz söyle.”

Eğer imkânın, senden istedikleri iyiliği yapmana elvermezse ve bu takdirde onlara yeterli bir parayla yardımcı olamıyorsan, kendilerini güzel bir vaat ile yanından geri çevir. Şüphesiz iyilerin vaadi, kötülerin parasından iyidir.

وَلَا تَجْعَلْ يَدَكَ مَغْلُولَةً اِلٰى عُنُقِكَ وَلَا تَبْسُطْهَا كُلَّ الْبَسْطِ فَتَقْعُدَ مَلُومًا مَحْسُورًا ﴿٢٩﴾

29- "Eli sıkı olma. Büsbütün eli açık da olma. Sonra kınanır ve çaresiz kalırsın."

Vermekten geri durma, cimrilik yapmış olursun. Çokça salıvermek suretiyle harcamada israf da yapma ve iki durum arasında orta bir yol izle.

اِنَّ رَبَّكَ يَبْسُطُ الرِّزْقَ لِمَنْ يَشَٓاءُ وَيَقْدِرُ اِنَّهُ كَانَ بِعِبَادِه۪ خَب۪يرًا بَص۪يرًا ﴿٣٠﴾

30- "Şüphesiz Rabbin, dilediğine rızkı bol bol verir ve dilediğine kısar. Çünkü O, gerçekten kullarından haberdardır ve onları görmektedir."

Allah, bolluk verdiği zaman hiçbir yoksulluk kalmaz. Kıstığı zaman da her türlü gücü tüketir.

وَلَا تَقْتُلُٓوا اَوْلَادَكُمْ خَشْيَةَ اِمْلَاقٍ نَحْنُ نَرْزُقُهُمْ وَاِيَّاكُمْ اِنَّ قَتْلَهُمْ كَانَ خِطْـًٔا كَب۪يرًا ﴿٣١﴾

31- "Yoksulluk korkusuyla çocuklarınızı öldürmeyin. Onları da sizi de biz rızıklandırırız. Onları öldürmek, gerçekten büyük bir günahtır."

Kim rızkı verenin Allah olduğunu bilirse, çok da olsalar, kalbindeki aile fertleri kaygısı hafifler. Kim de Allah'ın, yaratmadan önce rızıklarını taksim ettiğini gözden kaçırırsa yanlışlıklarının ıssız çöllerinde çırpınır. Böylece kalbiyle ve bedeniyle bu duruma düşer ancak sonunda takdirin ezelde öngördüğünden başka bir şey olmaz.

وَلَا تَقْرَبُوا الزِّنٰٓى اِنَّهُ كَانَ فَاحِشَةً وَسَٓاءَ سَب۪يلًا ﴿٣٢﴾

32- “Zinaya yaklaşmayın! Çünkü o, son derece çirkin bir iştir ve çok kötü bir yoldur.”

Zina diğer ahlaksız davranışlardan daha fazla ağırlık taşımaktadır. Çünkü o, hakkın dokunulmazlığını zayi, halkın dokunulmazlığını da ihlal etmektedir. Bir sebep de nesebe halel getirmesi, gurur ve öfkenin gereği olarak insanların arasını açmasıdır.

وَلَا تَقْتُلُوا النَّفْسَ الَّتِي حَرَّمَ اللّٰهُ اِلَّا بِالْحَقِّ وَمَنْ قُتِلَ مَظْلُومًا فَقَدْ
جَعَلْنَا لِوَلِيِّهٖ سُلْطَانًا فَلَا يُسْرِفْ فِي الْقَتْلِ اِنَّهُ كَانَ مَنْصُورًا ﴿٣٣﴾

33- “Haklı bir sebep olmadıkça, Allah’ın öldürülmesini haram kıldığı cana kıymayın. Kim, haksız yere öldürülürse, biz onun velisine yetki vermişizdir. Ancak o da, öldürmede meşru ölçüleri aşmasın. Çünkü kendisine yardım edilmiştir.”

Haksız yere başkasının canına kıymak caiz değildir. Kişinin, haksız yere kendi canına kıymaya da hakkı yoktur. Bir de nasıl ki demir ve onun yerine geçecek aletlerle cana kıymak haram ise aynı şekilde kişinin helaki yönünde girişimde bulunmak da haramdır. Bu arada kim, Rabbine muhalefet bataklığını düşerse, kendini helak etmeye çaba harcamış olur.

( وَمَنْ قُتِلَ مَظْلُومًا فَقَدْ جَعَلْنَا لِوَلِيِّهٖ سُلْطَانًا ) *“Kim, haksız yere öldürülürse, biz onun velisine yetki vermişizdir.”*

Yani öldürülenin velisine kısas hakkı konusunda katile hesap sorma yetkisi vermişizdir. Bunun işârî anlamı şudur: Yardım, Allah katındandır. Hakk’ın yardım ettiği kimsenin ise mızrağının ucu kırılmaz ve okları hedefini şaşmaz.

وَلَا تَقْرَبُوا مَالَ الْيَتِيمِ اِلَّا بِالَّتِي هِيَ اَحْسَنُ حَتّٰى يَبْلُغَ اَشُدَّهُ وَاَوْفُوا
بِالْعَهْدِ اِنَّ الْعَهْدَ كَانَ مَسْؤُلًا ﴿٣٤﴾

34- “Rüştüne erişinceye kadar yetimin malına ancak en güzel şekilde yaklaşın, verdiğiniz sözü de yerine getirin. Çünkü söz veren, sözünden sorumludur.”

Yetimin durumuyla ilgilenecek kimsesi olmadığı için Allah yetimle arasında hiçbir bağ olmayan yabancıya, işini üstlenmesini ve durumunu idare etmesini emretmiş ve bu konuda kendisini vasi tayin etmiştir. Böylece çocuk, boş ve telaşsız bir şekilde oturmakta, veli ise zorluğa katlanmaya çalışmaktadır. Bu itibarla Allah'ın veliye olan emri, çocuk için aile fertlerinin yaşamaları halinde kendisine gösterecekleri şefkatten daha faydalıdır.

وَاَوْفُوا الْكَيْلَ اِذَا كِلْتُمْ وَزِنُوا بِالْقِسْطَاسِ الْمُسْتَقٖيمِ ذٰلِكَ خَيْرٌ وَاَحْسَنُ تَاْوٖيلًا ﴿٣٥﴾

35- "Ölçtüğünüzde ölçüyü tam yapın, doğru terazi ile tartın. Bu, daha hayırlı, sonuç bakımından daha güzeldir."

Nasıl cezalandırırsan öyle cezalandırılırsın. Nasıl muamele edersen öyle karşılık görürsün. Başkasına nasıl ölçersen, sana da öyle ölçülür. Nasıl olursanız, size karşı da öyle olunur. Vefa gösterene, vefa gösterirler. Hıyanet edene de hıyanet ederler.

Şiir:

*Kötülük ettik, kötüleştiler, firesiz adalettir bu*
*Adalet etseydik eğer, kurtulurduk sıkıntılardan*

وَلَا تَقْفُ مَا لَيْسَ لَكَ بِهٖ عِلْمٌ اِنَّ السَّمْعَ وَالْبَصَرَ وَالْفُؤَادَ كُلُّ اُولٰٓئِكَ كَانَ عَنْهُ مَسْؤُلًا ﴿٣٦﴾

36- "Hakkında kesin bilgi sahibi olmadığın şeyin peşine düşme. Çünkü kulak, göz ve kalp, bunların hepsi ondan sorumludur."

Zanna dayalı hususlar sende ağır basıp Allah seni kesin doğruya muttali kılmadığı zaman, delilsiz olarak ona muttali olmaya kendini zorlama. Bir de zamanın bir hükmü hakkında problem yaşadığın zaman Allah'a dön. Şayet bu esnada kalbinde delile dayalı

ancak karışık bir izah tarzı belirirse ona dair bilgiyi Allah'a havale et ve olduğun yerde kal.

Bir yoruma göre, ilimden hareketle davranan kimse ile haktan hareketle davranan kimse arasındaki fark şudur: Âlimler, önce bir şeyi bilirler sonra da onu bildiklerini bilirler. Hak ehline gelince, onların üzerlerinde ayrıntısı ile ilgili hiçbir bilgiye sahip olmadıkları ilahî bir tasarruf cereyan eder, ondan sonra keşif yoluyla onun gerekçesinden haberdar olurlar. Hatta bazen dilleriyle gerekçesini bilmedikleri bir şey söylerler ancak söyledikleri şeyin ve dile getirdikleri ilmi gerekçelerin delili sözlerini bitirdikten sonra kalplerinde belirir.

( اِنَّ السَّمْعَ وَالْبَصَرَ ) *"Çünkü kulak, göz..."*

Bu organlar, Allah'ın kuldaki emanetleridir. Daha önce bu konuda, dinî delillere dayalı izaha yer verdik. Her kim bu organları ibadetlerde kullanır ve onları, Allah'ın hükümlerine aykırı işlerde kullanmaktan korursa şüphesiz o, emaneti salimen korumuş, övgüyü ve iyiliği hak etmiştir. Kim de onları aykırı davranışlarla kirletirse, şüphesiz hıyanet ona damgasını vurur ve kınanmayı hak eder.

وَلَا تَمْشِ فِي الْاَرْضِ مَرَحًا اِنَّكَ لَنْ تَخْرِقَ الْاَرْضَ وَلَنْ تَبْلُغَ الْجِبَالَ طُولًا ﴿٣٧﴾

37- "Yeryüzünde böbürlenerek yürüme. Çünkü sen yeri asla yaramazsın, boyca da dağlara asla erişemezsin."

Kendini beğenmişlik, zorbalık, övgü ve kibirlenme bütün bunlar Allah'ı anmaktan kopuşun ve hakkı görmekten perdelenmişliğin sonuçlarıdır. Çünkü Allah, bir şeye tecelli ettiği zaman o şey O'na boyun eğer. Buna dair rivayet de vardır. Huzur halinde ve zikir ile müşahedenin hâkimiyeti altında olan kalbin ise boynu büküktür. Bu durumda heybetin hükmü galip, övgü ve övünme vasıfları ile ayrılık sebepleri gibi hususların tamamı hükümsüzdür.

Bir de kibirlilik vasfından kurtuluş bakımından insanlar birkaç kısımdır. Bu çerçevede ibret sahipleri, bir damla meniden yaratıldıklarını, bedenin taşıdığı ve gözeneklerinden dışarı sızan yiyecek ve içecek artıklarını bildikleri için himmetleri darlık ve aşırı cimrilik yapmaktan münezzeh, kalpleri de dünyalık varlıkların kaygısını taşımaktan uzaktır. İç dünyalarına da onlardan kibirlenmeyi silecek ve üzerlerinden zorbalık elbisesini çıkartacak feyizlerden başka hiçbir şey girmez. Huzur sahipleri içinse hakkın ortaya çıkmasına bağlı olarak nefsin geri plana düşmesinden başka bir şey söz konusu değildir.

كُلُّ ذٰلِكَ كَانَ سَيِّئُهُ عِنْدَ رَبِّكَ مَكْرُوهًا ﴿٣٨﴾

38- "Bütün bu sayılanların kötü olanları, Rabbinin katında sevimsiz şeylerdir."

Ayaklar, müşahede alanlarına varmakla mutlu oldukları ve sırlar yakınlığın esintisinin güzel kokusundan nasiplendikleri zaman vakitler perdelenmişlikten arınır ve hakikat hükümran olur. Böylece o kötü vasıflardan temizlenme gerçekleşmiş olur.

ذٰلِكَ مِمَّآ اَوْحٰٓى اِلَيْكَ رَبُّكَ مِنَ الْحِكْمَةِ وَلَا تَجْعَلْ مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ فَتُلْقٰى فٖي جَهَنَّمَ مَلُومًا مَدْحُورًا ﴿٣٩﴾

39- "Bunlar, Rabbinin sana vahyettiği bazı hikmetlerdir. Allah ile birlikte başka ilâh edinme. Sonra kınanmış ve Allah'ın rahmetinden kovulmuş olarak cehenneme atılırsın."

Allah, Peygamberine: (ذٰلِكَ مِمَّآ اَوْحٰٓى اِلَيْكَ رَبُّكَ مِنَ الْحِكْمَةِ) "*Bunlar, Rabbinin sana vahyettiği bazı hikmetlerdir*" buyurmuştur. Bunlar, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) vahiy ve tebliğ ile gönderilmiştir. Allah, velilerine ise ilham marifetiyle öğretmektedir.

اَفَاَصْفٰيكُمْ رَبُّكُمْ بِالْبَنٖينَ وَاتَّخَذَ مِنَ الْمَلٰٓئِكَةِ اِنَاثًا اِنَّكُمْ لَتَقُولُونَ قَوْلًا عَظٖيمًا ﴿٤٠﴾

40- "Rabbiniz, erkek çocukları size seçip ayırdı da kendisine meleklerden kız çocukları mı edindi? Gerçekten çok büyük bir söz söylüyorsunuz."

Onlar, Allah'ın çocuk sahibi oluşunu caiz gördüler ve böyle düşündüler. Sonra bunu da yeterli görmeyerek nihayetinde kendilerine uygun görmediklerini Allah'a yakıştırdılar. Bu yolla sadece isyanlarında daha da küstahlaştılar, azgınlıklarında daha da aşırı gittiler ve hakkı kabul etmekten daha da uzaklaştılar.

وَلَقَدْ صَرَّفْنَا فِي هٰذَا الْقُرْاٰنِ لِيَذَّكَّرُوا وَمَا يَز۪يدُهُمْ اِلَّا نُفُورًا ﴿٤١﴾

41- "Andolsun biz, onlar düşünüp öğüt alsınlar diye gerçekleri bu Kur'an'da değişik biçimlerde açıkladık. Fakat bu, onların ancak kaçışlarını artırıyor."

قُلْ لَوْ كَانَ مَعَهُٓ اٰلِهَةٌ كَمَا يَقُولُونَ اِذًا لَابْتَغَوْا اِلٰى ذِي الْعَرْشِ
سَب۪يلًا ﴿٤٢﴾

42- "De ki: 'Eğer onların iddia ettiği gibi Allah'la beraber başka ilâhlar olsaydı, o zaman o ilâhlar da arşın sahibine ulaşmak için elbette bir yol ararlardı.'"

Allah, yaratıcının birden fazla olması halinde aralarında zıtlaşma ve birbirlerini engelleme meydana geleceğini, o zaman da sıfatlarında acizliğin geçerli olacağını açıklamaktadır. Oysa bu durum, sonradan var edilmiş olanların özelliklerindendir.

Sonra Allah zâtını ortaktan, destekçiden, yardımcıdan ve emsalden tenzih etmek için şöyle buyurmuştur:

سُبْحَانَهُ وَتَعَالٰى عَمَّا يَقُولُونَ عُلُوًّا كَب۪يرًا ﴿٤٣﴾

43- "Allah, her türlü eksiklikten uzaktır, onların söylediklerinin ötesindedir, yücedir."

تُسَبِّحُ لَهُ السَّمٰوَاتُ السَّبْعُ وَالْاَرْضُ وَمَنْ فِيهِنَّ وَاِنْ مِنْ شَيْءٍ اِلَّا
يُسَبِّحُ بِحَمْدِهِ وَلٰكِنْ لَا تَفْقَهُونَ تَسْبِيحَهُمْ اِنَّهُ كَانَ حَلِيمًا غَفُورًا ﴿٤٤﴾

44- "Yedi gök, yer ve bunların içinde bulunanlar Allah'ı tespih ederler. Her şey O'nu hamd ile tespih eder. Ancak siz, onların tespihlerini anlamazsınız. O, halîmdir, çok bağışlayandır."

Gök ve yer sakinlerinin canlıları, Allah'ı söz ile tespih ederler. Canlıların dışındakiler ise delil bakımından tespih ederler. Madde ve eserlerin her bir parçası, muhakkak O'nun Rab oluşunun delilidir. Lakin onlar, cehaletlerinden ve kavrayıştaki zorluklarından dolayı İlâh'ın bir oluşunu duydukları zaman şaşırırlar ve inkâr ederler.

وَاِذَا قَرَاْتَ الْقُرْاٰنَ جَعَلْنَا بَيْنَكَ وَبَيْنَ الَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِالْاٰخِرَةِ
حِجَابًا مَسْتُورًا ﴿٤٥﴾

45- "Kur'an okuduğunda, seninle ahirete inanmayanların arasına gizli bir perde çekeriz."

Yani biz seni korumamız altına alır, üstüne koruyuculuğumuzun çadırlarını kurar ve hatalı elleri, lütfumuzla senden alıkoyarız.

وَجَعَلْنَا عَلٰى قُلُوبِهِمْ اَكِنَّةً اَنْ يَفْقَهُوهُ وَفِي اٰذَانِهِمْ وَقْرًا وَاِذَا
ذَكَرْتَ رَبَّكَ فِي الْقُرْاٰنِ وَحْدَهُ وَلَّوْا عَلٰٓى اَدْبَارِهِمْ نُفُورًا ﴿٤٦﴾

46- "Kur'an'ı anlamamaları için kalpleri üzerine perdeler, kulaklarına da ağırlık koyarız. Kur'an'da sadece Rabbini andığın zaman, arkalarına dönüp kaçarlar."

Allah, dalaletlerinin yaratıcısı olduğunu açıkça belirtmektedir. Aynı zamanda, kalplerinde kökleşmiş olan aşırı sapıklığı orada sabit kılan da O'dur.

( وَاِذَا ذَكَرْتَ رَبَّكَ فِي الْقُرْاٰنِ وَحْدَهُ ) *"Kur'an'da sadece Rabbini andığın zaman..."*

Onlar, tanrılarını da anmanı isterler. Allah, kalplerini mühürlediği için kendi benzerlerinin sözlerinden başka hiç kimsenin sözünü beğenmezler.

نَحْنُ اَعْلَمُ بِمَا يَسْتَمِعُونَ بِهٖٓ اِذْ يَسْتَمِعُونَ اِلَيْكَ وَاِذْ هُمْ نَجْوٰٓى اِذْ
يَقُولُ الظَّالِمُونَ اِنْ تَتَّبِعُونَ اِلَّا رَجُلًا مَسْحُورًا ﴿٤٧﴾

47- "Onlar, seni dinlerlerken hangi maksatla dinlediklerini, kendi aralarında konuşurlarken de o zalimlerin: 'Siz, ancak büyülenmiş bir adama uyuyorsunuz' dediklerini çok iyi biliyoruz."

Onlar durumları hakkında Hz. Peygamber'i (s.a.v.) şaşırttılar ve görünürde uyumlu olduklarını gösterdiler. Bunun üzerine Allah onları rezil etti; sırlarını açığa çıkardı, çirkinliklerini açıkladı ve iki yüzlülük perdelerini yırttı. Bu itibarla insanın iç dünyasının barındırdığı hususlar yataklardaki yansımaları sebebiyle ister istemez basiret ehline görünür.

اُنْظُرْ كَيْفَ ضَرَبُوا لَكَ الْاَمْثَالَ فَضَلُّوا فَلَا يَسْتَطِيعُونَ سَبِيلًا ﴿٤٨﴾

48- "Bak, senin için ne türlü benzetmeler yaptılar da saptılar. Artık doğru yolu bulamazlar."

Onlar, Hz. Peygamber'i (s.a.v.) aslında kusur olmayan bir hususla ayıplayarak: ( اِذْ يَقُولُ الظَّالِمُونَ اِنْ تَتَّبِعُونَ اِلَّا رَجُلًا مَسْحُورًا ) *"Siz, ancak büyülenmiş bir adama uyuyorsunuz"* (İsra, 17/47) dediler. Yani siz, sihirli bir adama uyuyorsunuz. Şimdi Hz. Peygamber (s.a.v.) beşer cümlesinden olduğu zaman, hangi kusuru olmuş olur? Kaldı ki Allah ona yardım etmeyi üzerine almıştır. Kendisine özellik olarak da bir yapı, şekil, sanat veya kendisinin katkı sağladığı bir şey verilmemiş sadece Allah'ın ezeli lütuf ve rahmeti sayesinde gerçekleşen meziyetlerinden dolayı yüceliği gün ışığına çıkmıştır.

وَقَالُوٓا ءَاِذَا كُنَّا عِظَامًا وَرُفَاتًا ءَاِنَّا لَمَبْعُوثُونَ خَلْقًا جَدِيدًا ﴿٤٩﴾

49- "Dediler ki: 'Biz, bir yığın kemik, bir yığın ufantı olduğumuz zaman mı yeniden bir yaratılışla diriltilecekmişiz? Biz mi?'"

Onlar, Allah'ın kendilerini yarattığını ikrar ettiler. Sonra ise yok olmalarının ardından kendilerini tekrar dirilteceğine dair kudretini inkâr ettiler. Oysa nasıl ki, onlar yokluğun bilinmezliği içinde iken, ne kendileri ne de kendilerine dair hiçbir eser yok iken ve onlar sadece Allah'ın kudret ve iradesinin kapsamı içerisinde iken kendilerini baştan yaratması mümkün olmuş ise aynı şekilde onları tekrar var etmek de kudret ve irade sahibi Allah'ın hakkındandır. İşte böyledir! Kalp gözü hastalandığı zaman kişi, arkadaşını bile anlayabilme basiretini gösteremez.

قُلْ كُونُوا حِجَارَةً اَوْ حَدِيدًا ﴿٥٠﴾ اَوْ خَلْقًا مِمَّا يَكْبُرُ فِي صُدُورِكُمْ فَسَيَقُولُونَ مَنْ يُعِيدُنَا قُلِ الَّذِي فَطَرَكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ فَسَيُنْغِضُونَ اِلَيْكَ رُؤُسَهُمْ وَيَقُولُونَ مَتٰى هُوَ قُلْ عَسٰٓى اَنْ يَكُونَ قَرِيبًا ﴿٥١﴾

50, 51- "De ki: 'İster taş olun, ister demir! Yahut aklınızca diriltilmesi daha da imkânsız olan başka bir varlık olun.' Diyecekler ki: 'Peki bizi hayata tekrar kim döndürecek?' De ki: 'Sizi ilk defa yaratan.' Bunun üzerine başlarını sana sallayacaklar ve: 'Ne zamanmış o?' diyecekler. De ki: 'Yakın olsa gerek!'"

Allah, kudretinin eseri olan hiçbir şeyin, kendisine karşı koyamayacağını bildirmektedir. Çünkü O, ezeli kudret sıfatına sahiptir ve kudreti kapsamlıdır. Bu nedenle, O'nun sıfatında ne sıkıntı ne de refah söz konusudur. O halde ilk yaratma ile tekrar diriltme, O'na göre aynıdır. Ne ondan ne de bundan kendisine yansıyacak bir zorluk yoktur. Çünkü kıdemi, var oluşun O'nu etkilemesine engel olmaktadır.

يَوْمَ يَدْعُوكُمْ فَتَسْتَجِيبُونَ بِحَمْدِهِ وَتَظُنُّونَ اِنْ لَبِثْتُمْ اِلَّا قَلِيلًا ﴿٥٢﴾

52- "Allah'ın sizi çağıracağı gün, kendisine hamd ederek çağrısına uyarsınız ve çok az kaldığınızı sanırsınız."

Allah sizi çağırır, siz de hamd ederek çağrısını kabul edersiniz. Hamd, şükür anlamındadır. Kul ise sadece nimete karşılık olarak şükreder. Bu ayet, aynı zamanda onların kabirlerinde iken de Allah'ın nimeti içinde olduklarını göstermektedir.

وَقُلْ لِعِبَادِي يَقُولُوا الَّتِي هِيَ اَحْسَنُ اِنَّ الشَّيْطَانَ يَنْزَغُ بَيْنَهُمْ اِنَّ
الشَّيْطَانَ كَانَ لِلْاِنْسَانِ عَدُوًّا مُبِينًا ﴿٥٣﴾

53- "Kullarıma söyle, sözün en güzelini söylesinler. Sonra şeytan aralarını bozar. Şüphesiz şeytan, insanın apaçık düşmanıdır."

Güzel söz, söyleyenin söyleme hakkına sahip olduğu sözdür. Burada en güzel, güzelin mübalağası da olabilir. Bu takdirde sözün en güzeli, terki caiz olmayan sözdür.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Sözün en güzeli, söyleyeninin, terkinin cezasından korktuğu sözdür.

- Sözün en güzeli, sevenin, sevgilisine kulluk etmeyi ikrar edişidir.

- Günahkârların en güzel sözü, suçu ikrar etmeleri, ariflerin en güzel sözü ise Allah'ı hakkıyla tanımaktan aciz kaldıklarını itiraf etmeleridir. Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur:

*"Seni her türlü kusurdan tenzih ederim. Hiçbir övgünü sayarak dile getiremem. Sen seni övdüğün gibisin."*

رَبُّكُمْ اَعْلَمُ بِكُمْ اِنْ يَشَأْ يَرْحَمْكُمْ اَوْ اِنْ يَشَأْ يُعَذِّبْكُمْ وَمَٓا
اَرْسَلْنَاكَ عَلَيْهِمْ وَكِيلًا ﴿٥٤﴾

54- "Rabbiniz sizi daha iyi bilir. Dilerse size merhamet eder, dilerse azap eder. Seni de onlara vekil olarak göndermedik."

Allah, herkesin kalbi, bütünüyle Rabbine bağlansın diye, nefsini tanımasının yolunu yüzüne kapatmıştır. Bir de: ( رَبُّكُمْ اَعْلَمُ بِكُمْ ) "*Rabbiniz sizi daha iyi bilir*" buyurarak insanlara işlerinin akıbetini belirsiz kılmıştır. Sonra rahmet sözünü azap sözünün önüne geçirerek: ( اِنْ يَشَأْ يَرْحَمْكُمْ اَوْ اِنْ يَشَأْ يُعَذِّبْكُمْ ) "*Dilerse size merhamet eder, dilerse azap eder*" buyurmuştur. Bu ise ümidin güçlenmesi beklentisine yol açmaktadır.

Öte yandan hem kul hem de Rab ilim ile vasıflandırılmaktadır. Ancak kul o andaki durumunun zahirini bilirken, Rabb'in ilmi, hem o andaki durumuna hem de geleceğine dair olur. Bu nedenle kula vacip olan: *"Allah (c.c.) dilerse ben müminim"* demesidir ki: "*Rabbiniz sizi daha iyi bilir*" sözünün ardından gelen: "*Dilerse size merhamet eder, dilerse azap eder*" sözünün anlamı da budur.

وَرَبُّكَ اَعْلَمُ بِمَنْ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَلَقَدْ فَضَّلْنَا بَعْضَ النَّبِيّٖنَ عَلٰى بَعْضٍ وَاٰتَيْنَا دَاوُ۫دَ زَبُورًا ﴿٥٥﴾

55- "Hem Rabbin, göklerde ve yerde kim varsa daha iyi bilir. Andolsun, peygamberlerin bir kısmını bir kısmına üstün kıldık. Dâvûd'a da Zebûr'u verdik."

Allah bazı peygamberleri, diğer bazılarına nebilikte, derecede, resullükte, manevi işaretlerde ve özelliklerde üstün kılmıştır. Peygamberimizi (s.a.v.) ise peygamberlerin en üstünü kılmıştır. Bu itibarla onlar yıldızlar gibidir. Hz. Peygamber de (s.a.v.), aralarında bir dolunaydır. Onlar dolunaylar gibidir. O da aralarında bir güneştir. Onlar güneştirler. O da güneşler güneşidir.

قُلِ ادْعُوا الَّذٖينَ زَعَمْتُمْ مِنْ دُونِهٖ فَلَا يَمْلِكُونَ كَشْفَ الضُّرِّ عَنْكُمْ وَلَا تَحْوٖيلًا ﴿٥٦﴾

56- "De ki: 'O'nu bırakıp da ilâh diye ileri sürdüklerinizi çağırın! Onlar, başınızdaki sıkıntıyı ne kaldırabilirler ne de değiştirebilirler.'"

Allah'tan başka bir şeye tapmanın size fayda vermediğini, onu terk etmenin de size zarar vermediğini kesin bir şekilde anlamanız için karşınıza çıkan musibetler konusunda Allah'tan başka taptığınız putlardan yardım isteyin. Hadiste de şöyle buyrulmuştur:

*"Kendisini ilgilendirmeyen şeyi terk etmesi, kişinin Müslümanlığının güzelliğindendir."*

أُولٰٓئِكَ الَّذِينَ يَدْعُونَ يَبْتَغُونَ اِلٰى رَبِّهِمُ الْوَسِيلَةَ اَيُّهُمْ اَقْرَبُ
وَيَرْجُونَ رَحْمَتَهُ وَيَخَافُونَ عَذَابَهُ اِنَّ عَذَابَ رَبِّكَ كَانَ مَحْذُورًا ٥٧

57- "Onların yalvardıkları bu varlıklar: 'Hangimiz daha yakın olacağız' diye Rablerine vesile ararlar. O'nun rahmetini umarlar, azabından korkarlar. Çünkü Rabbinin azabı gerçekten korkunçtur."

Yani bu kimselerin taptıkları ve niyazda bulundukları Mesih, Uzeyir ve melekler gibi varlıklar kendilerine bile bir fayda veya zarar verme gücüne sahip değildir. Aynı zamanda onlar, Allah'a vesile ararlar. Yani Allah'ın ihsanını kazanmak ve rahmetine mahzar olmak ümidiyle, ibadetleriyle O'na yaklaşmaya çalışırlar ve azabından korkarlar. O halde onlar, kendi durumları hakkında ümitlerini Allah'a bağlayıp O'ndan korkmakta iken, nasıl olur da üzerinizden musibeti kaldırabilirler?

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Atasözünde: *"Halkın halka bağlılığı, mahpusun mahpusa bağlılığı gibidir."*

- Fakir fakire dayandığı zaman ihtiyacı artmış olur.

- Körün kılavuzu kör olduğu zaman kuyuya beraber düşerler.

Şiir:

*Bir yolda buluştuğu zaman*
*Sayıları yetmiş olan kör adam*
*Ve kılavuz diye birini önde yürüttükleri zaman*
*Düşer hepsi kuyuya*

وَاِنْ مِنْ قَرْيَةٍ اِلَّا نَحْنُ مُهْلِكُوهَا قَبْلَ يَوْمِ الْقِيٰمَةِ اَوْ مُعَذِّبُوهَا عَذَابًا شَدٖيدًا كَانَ ذٰلِكَ فِي الْكِتَابِ مَسْطُورًا ﴿٥٨﴾

58- "Ne kadar memleket varsa hepsini kıyamet gününden önce ya helak edeceğiz ya da şiddetli bir azapla cezalandıracağız. İşte bu, Kitap'ta yazılmış bulunuyor."

Azap birkaç kısımdır: Mesela canlara ve görünenlere gelen acı, kalplere ve sırlara gelen acıya kıyasla hafif kalır. Bu itibarla hakikat ehli kimselerin kalplerinin azabı şiddette yoksul ve darda olan kimselerin başına gelen azaptan daha keskindir.

Sonra Allah (c.c.), prensibini şöyle koymuştur: Bir kimsenin başkası için sağladığı huzur sonuçta onu sağlayana yansır. Bunun aksine olarak bir kimsenin başkasına verdiği huzursuzluk da sonunda onu verene döner. İnsanlara zulmedip onları zarara uğratan kimseyi de Allah, hayatını sıkıntılı hale getirmek ve kendisini herkesin öfkesine maruz bırakmakla anında cezalandırır. Bu kimsenin, kendi ahvali ve uğraşlarıyla ilgili zihni faaliyetleri darmadağın ve bölük pörçük hale gelir. Şayet bu kimse, dünyalık uğraşlardan kurtulmanın rahatlığından ve maneviyatıyla baş başa kalmaktan en ufak bir şey tatsaydı hayatın tadının ne olduğunu anlardı. Ne var ki, bu gibi kimseler nimetlerden mahrum edilmiş ve uğradıkları ilahî intikamı anlamamışlardır.

وَمَا مَنَعَنَٓا اَنْ نُرْسِلَ بِالْاٰيَاتِ اِلَّٓا اَنْ كَذَّبَ بِهَا الْاَوَّلُونَ وَاٰتَيْنَا ثَمُودَ النَّاقَةَ مُبْصِرَةً فَظَلَمُوا بِهَا وَمَا نُرْسِلُ بِالْاٰيَاتِ اِلَّا تَخْوٖيفًا ﴿٥٩﴾

59- "Bizi, mucizeleri göndermekten ancak öncekilerin, onları yalanlamış olması alıkoydu. Semûd kavmine o dişi deveyi açık bir mucize olarak verdik de onlar bu yüzden zalim oldular. Oysa biz, mucizeleri sırf korkutmak için göndeririz."

Allah, prensibini şöyle koymuştur: Allah, bir ümmetin talep ettiği bir mucizeyi ortaya koyduktan sonra ona iman etmeyen bu ümmeti hemen cezalandırır. Bu arada, malum olan ve hükme bağlanan husus, gelecekte iman edecekleri bilinen nesilleri için cezanın, Hz. Peygamber (s.a.v.) zamanındaki kimseleri yok etmemesidir. Bu nedenle Allah, o anda hak ettikleri cezalarını ertelemiştir.

( وَمَا نُرْسِلُ بِالْاٰيَاتِ اِلَّا تَخْوِيفًا ) *"Oysa biz, mucizeleri sırf korkutmak için göndeririz."*

Allah'ın bu şekilde mucizelerle korkutması, güzel muamelesinin gereği cümlesindendir. Şayet korkmazlarsa, cezaya uğrayacaklardır. Sonra Allah, cezalarını ertelemekle bir şeyi kaçırmayacağını bildiği için cezayı ertelemiştir. Kaldı ki Allah, hükmüne ve ilmine uygun olarak dilediğini yapabilir.

وَاِذْ قُلْنَا لَكَ اِنَّ رَبَّكَ اَحَاطَ بِالنَّاسِ وَمَا جَعَلْنَا الرُّءْيَا الَّت۪ٓي اَرَيْنَاكَ اِلَّا فِتْنَةً لِلنَّاسِ وَالشَّجَرَةَ الْمَلْعُونَةَ فِي الْقُرْاٰنِ وَنُخَوِّفُهُمْ فَمَا يَز۪يدُهُمْ اِلَّا طُغْيَانًا كَب۪يرًا ﴿٦٠﴾

60- "Hani sana: 'Muhakkak Rabbin, insanları çepeçevre kuşatmıştır' demiştik. Sana gösterdiğimiz o rüyayı da Kur'an'da lanetlenmiş bulunan o ağacı da sırf insanları sınamak için vesile yaptık. Biz, onları korkutuyoruz. Fakat bu, sadece onların büyük azgınlıklarını artırdı."

Sana verdiğimiz özelliğe iman etmeleri, samimi olanın münafıktan, müminin de inkâr edenden ayırt edilmesi için onlara bir imtihandır ve yükümlülüktür. Bu çerçevede ilahî korumanın ulaştığı kimseler durup sebat göstermiş ve kendilerine söyleneni tasdik edip hakikate ermişlerdir. Kalplerine şüphe karışan ve tevhidin özü iç âlemlerine ulaşmayanlara gelince, tabi tutuldukları imtihanla sadece şaşkınlıkları, sapıklıkları ve akılsızlıkları artmıştır.

وَاِذْ قُلْنَا لِلْمَلٰٓئِكَةِ اسْجُدُوا لِاٰدَمَ فَسَجَدُوٓا اِلَّٓا اِبْلِيسَ قَالَ ءَاَسْجُدُ لِمَنْ خَلَقْتَ طِينًا ﴿٦١﴾

61- "Hani meleklere: 'Âdem'e secde edin' demiştik, onlar da secde etmişlerdi. Yalnız iblis secde etmemiş: 'Hiç ben, çamur halinde yarattığın kimseye secde eder miyim' demişti."

Şaki iblis, kabul etmedi ve: "Senden başkasına, sana secde ettiğim şekilde secde etmem" dedi. Bu, cehaleti sebebiyle idi. Eğer o, Allah'ı tanısaydı emrini tercih eder ve kendisini kuşatan nefsini terk ederdi.

قَالَ اَرَاَيْتَكَ هٰذَا الَّذ۪ي كَرَّمْتَ عَلَيَّ لَئِنْ اَخَّرْتَنِ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَاَحْتَنِكَنَّ ذُرِّيَّتَهُٓ اِلَّا قَل۪يلًا ﴿٦٢﴾

62- "Yine demişti ki: 'Benden üstün tuttuğun kişi bu mu, söyler misin? Andolsun eğer beni kıyamete kadar ertelersen, onun soyunu, pek azı hariç, kontrolüm altına alacağım.'"

Eğer İblis'te marifet ve tevhidden zerre kadar bir şey olsaydı, saptırmak ve yoldan çıkarmakla kendi nefsine karşı cinayet işlemezdi. Lakin Hak, onu o yerde konumlandırmış ve kendisine, hakikat ehlinin kalpleri için açık olan hususu söyletmiştir.

قَالَ اذْهَبْ فَمَنْ تَبِعَكَ مِنْهُمْ فَاِنَّ جَهَنَّمَ جَزَٓاؤُ۬كُمْ جَزَٓاءً مَوْفُورًا ﴿٦٣﴾

63- "Allah şöyle dedi: 'Çekil, git! Onlardan kim sana uyarsa, kuşkusuz cehennem tam bir karşılık olarak hepinizin cezası olacaktır.'"

Bu, en büyük tehdit olup aynı zamanda bu söylenende hiçbir şüphe ve aksamanın söz konusu olmadığına da işaret etmektedir. Şayet Allah, bir kavmin cezasını erteliyorsa bu ihmal değildir mühlet vermektir. İnam ve ikram değil, aslında ceza ve istidractır.

وَاسْتَفْزِزْ مَنِ اسْتَطَعْتَ مِنْهُمْ بِصَوْتِكَ وَاَجْلِبْ عَلَيْهِمْ بِخَيْلِكَ وَرَجِلِكَ وَشَارِكْهُمْ فِي الْاَمْوَالِ وَالْاَوْلَادِ وَعِدْهُمْ وَمَا يَعِدُهُمُ الشَّيْطَانُ اِلَّا غُرُورًا ﴿٦٤﴾

64- "'Haydi onlardan gücünün yettiğinin ayağını çağrınla kaydır. Atlıların ve yayaların ile onların üzerine yürü. Onların mallarına ve evlatlarına ortak ol. Onlara vaatlerde bulun.' Halbuki şeytan, onlara aldatmadan başka bir şey vaat etmez.

( وَاسْتَفْزِزْ مَنِ اسْتَطَعْتَ مِنْهُمْ بِصَوْتِكَ ) *"Haydi onlardan gücünün yettiğinin ayağını çağrınla kaydır."*

Yani yapabildiğini yap. Yaptığının, hiç kimseye etkisi olmayacaktır. Çünkü inşa edip yoktan yaratan Allah'tır. Bu ise en büyük tehdittir.

اِنَّ عِبَادِي لَيْسَ لَكَ عَلَيْهِمْ سُلْطَانٌ وَكَفٰى بِرَبِّكَ وَكِيلًا ﴿٦٥﴾

65- "Şüphesiz kullarıma karşı senin hiçbir delilin olmayacaktır. Vekil olarak Rabbin yeter."

"Sultan" kelimesi delil demektir. Bu arada ayet, kulların genelini ifade etmekte olup şeytanın mazereti, hiç kimseye karşı delil olamaz. Doğrusu delil, sadece Allah'ındır.

Bu konudaki diğer yorumlar ise şöyledir:

- "Sultan" hakimiyet demektir ve İblis'in hiç kimsenin üzerinde hakimiyeti bulunmamaktadır. Çünkü sonradan var olan kudretle güç yetirilen husus, ilahi kudret alanının dışına çıkamaz. Bu itibarla, sonradan var olan şeylerin tamamı, Allah'ın kudretiyle var olurlar. O halde ne İblis'in ne de diğer yaratıklardan hiç birinin etkileyici bir hakimiyeti bulunmamaktadır. Bu yoruma göre de ayet, genellik ifade eder.

- Allah, "kullarım" sözüyle kendisi tarafından korunup merhamet edilen ve gözetilen müminlerin havassını kast etmiştir. Zira

bunlar, devamlı Allah'a sığındıkları için şeytanın vesveseleri kendilerine zarar vermez. Bu nedenledir ki, şeytan, marifet ehlinin kalplerine yaklaştığı zaman marifetlerinin aydınlığıyla yanar.

- Şeytanın müminlerden kaçışı, müminlerin şeytandan kaçışından daha şiddetlidir.

Bu arada Allah'ın kulları arasında başkasına esir olmayanlar, O'nun has kullarıdır. Hevâsına kul olan, tamah duygularının kök saldığı ve her türlü değersiz ve kusurlu arzunun köleleştirdiği kimse ise Allah'ın has kullarından olamaz. Hadiste de şöyle denilmiştir: *"Dirhemin kulu helak olmuştur. Dinarın kulu helak olmuştur."*

- "Kullarım" sözünde geçenlerden maksat, ilahî inayetin gölgesinde gölgelenenler, kendi güç ve kuvvetlerinden sıyrılanlar ile Allah'a olan güzel tevekkül ve sürekli bağlılıklarıyla O'nunla baş başa olmaya çalışanlardır.

رَبُّكُمُ الَّذ۪ي يُزْج۪ي لَكُمُ الْفُلْكَ فِي الْبَحْرِ لِتَبْتَغُوا مِنْ فَضْلِه۪ۜ اِنَّهُ كَانَ بِكُمْ رَح۪يمًا ﴿٦٦﴾

66- "Rabbiniz, lütfundan nasip arayasınız diye sizin için denizde gemiler yürütendir. Şüphesiz O, size karşı çok merhametlidir."

Allah, kendini kullarına yaratması ve nimet vermesiyle tanıtmıştır. Nitekim sonradan var olan cisim, eser, enkaz, toz, toprak her ne var ise şüphesiz O'nun birliğine tanıklık etmekte ve Rab oluşunu göstermektedir.

وَاِذَا مَسَّكُمُ الضُّرُّ فِي الْبَحْرِ ضَلَّ مَنْ تَدْعُونَ اِلَّٓا اِيَّاهُۚ فَلَمَّا نَجّٰيكُمْ اِلَى الْبَرِّ اَعْرَضْتُمْۜ وَكَانَ الْاِنْسَانُ كَفُورًا ﴿٦٧﴾

67- "Denizde size bir sıkıntı dokunduğunda bütün taptıklarınız kaybolur, yalnız Allah kalır. Fakat sizi kurtarıp karaya çıkarınca yüz çevirirsiniz. Zaten insan çok nankördür."

İnsan şu cibilliyet üzerine yaratılmıştır: Başına bir musibet geldiği zaman veya kendisine bir sıkıntı dokunduğu zaman onu defetmek için Allah'a sığınır. O kadar ki öylelerinin, Allah'ın rızasına aykırı davranışlara bir daha dönmeyeceklerine inanılır. Oysa Allah o musibeti yok ettiği ve o sıkıntıyı kaldırdığı zaman sanki daha önce hiçbir sıkıntı yaşamamış gibi tövbe ettikleri hallerine tekrar dönerler.

Şiir:

*Siz nice defalar cahillik yaptınız, sonra biz size halimlikle döndük*
*Dostlar! Daha ne kadar siz cahillik yapacaksınız, biz de halimlik*

اَفَاَمِنْتُمْ اَنْ يَخْسِفَ بِكُمْ جَانِبَ الْبَرِّ اَوْ يُرْسِلَ عَلَيْكُمْ حَاصِبًا ثُمَّ لَا
تَجِدُوا لَكُمْ وَكِيلًا ﴿٦٨﴾ اَمْ اَمِنْتُمْ اَنْ يُعِيدَكُمْ فِيهِ تَارَةً اُخْرٰى فَيُرْسِلَ
عَلَيْكُمْ قَاصِفًا مِنَ الرِّيحِ فَيُغْرِقَكُمْ بِمَا كَفَرْتُمْ ثُمَّ لَا تَجِدُوا لَكُمْ
عَلَيْنَا بِهٖ تَبِيعًا ﴿٦٩﴾

68, 69- "Peki, karada sizi yere geçirmesinden yahut üzerinize taşlar savuran kasırga göndermesinden sonra da kendinize bir vekil bulamamaktan güvende misiniz? Yahut sizi tekrar denize döndürüp üstünüze kasıp kavuran bir fırtına yollayarak nankörlüğünüz sebebiyle sizi boğmasından sonra da bize karşı kendiniz için arka çıkacak bir yardımcı bulamamaktan güvende misiniz?"

Korku, nefeslerin gidiş gelişleriyle beraber cezaları beklemektir. Korkuyu şeyhler böyle dile getirmişlerdir. Bu arada insanların Allah'tan en çok korkanı, O'nu en çok tanıyandır. Cezanın da pek çok çeşitleri vardır. Nice kimseler vardır ki, gecenin başında sevinçli iken sıkıntı içinde sabahlarlar. Aynı şekilde, geceyi yatağında kıvranarak geçiren nice gamlı kimse vardır ki, kendisine noksansız nimetleri haber veren müjdeler gelmiş olarak sabahlar. Bu anlamda şöyle demişlerdir: *"Gecenin ansızın bastırmasından korkan kimsenin gözünü uyku tutmaz. "*

Marifet ehlini de şu dizelerdeki gibi anlatmışlardır:

*Tetikteler tek ayaküstünde, sanki onlar*
*Geçip göçmek isterler*

وَلَقَدْ كَرَّمْنَا بَنِيٓ اٰدَمَ وَحَمَلْنَاهُمْ فِي الْبَرِّ وَالْبَحْرِ وَرَزَقْنَاهُمْ مِنَ الطَّيِّبَاتِ وَفَضَّلْنَاهُمْ عَلٰى كَثٖيرٍ مِمَّنْ خَلَقْنَا تَفْضٖيلًا ﴿٧٠﴾

70- "Andolsun, biz Âdemoğullarını çok değerli kıldık. Onları karada ve denizde taşıdık. Kendilerini en güzel ve temiz şeylerden rızıklandırdık ve onları yarattıklarımızın birçoğundan üstün kıldık."

Âdemoğullarından maksat müminlerdir. Çünkü Allah, kâfirlerin vasfı hakkında şöyle buyurmuştur: ( وَمَنْ يُهِنِ اللّٰهُ فَمَا لَهُ مِنْ مُكْرِمٍ ) "*Allah, kimi değersiz kılarsa, ona değer kazandıracak hiç kimse yoktur.*" (Hac, 22/18)

Ayette geçen "tekrîm" lafzı, çok değerli kılmak demektir. Bu durumda Allah, kâfiri değerden mahrum ettiğine göre çok değerli kılınması ne zaman söz konusu olur?!

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Bu ayette: Allah değerli kılınmanın bir davranışın karşılığı veya bir gerekçeye dayalı ya da değerli kılınmayı zorunlu kılan bir hak ediş sebebiyle olmadığını açıklamak için müminleri veya abidleri ya da içtihat sahiplerini -emek sarf edenleri- değerli kıldığını söylememiş: ( وَلَقَدْ كَرَّمْنَا بَنِيٓ اٰدَمَ ) "*Âdemoğullarını çok değerli kıldık*" demiştir. Şu hususlar da değerli kılınmanın göstergeleridir:

Değerli kılınanlar, diledikleri zaman Allah ile münacat makamında dururlar.

Değerli kılınan kimse, şer'i temizlik bakımından ne durumda olursa olsun Allah'a hitap etmek istediği zaman hitap eder ve O'ndan bir şey dilemek istediği zaman onu diler.

Değerli kılınan kimse, tövbe edip sonra tövbesini bozup sonra tekrar tövbe ettiği zaman tövbesi kabul edilir. Böylece günah ve tövbesi tekrarlandığı zaman, Allah ikinci kez tövbesini kabul eder ve onu bağışlar.

Değerli kılınan kimse, tövbeye başladığı zaman, Allah elinden tutar. Ben günaha dönmem, dediği zaman da Allah, tövbesini bozacağını bildiği halde sözünü kabul eder.

Değerli kılınan kimselerin Allah zahirlerini, çabalarında muvaffakiyet vermekle süslemiş, batınlarını da müşahedeyi gerçekleştirmekle güzelleştirmiştir.

Değerli kılınanlar, istemeden önce Allah onlara verir ve mağfiret dilemeden önce Allah onları bağışlar. Nitekim bir rivayette şöyle denilmiştir: *"Siz benden istemeden önce ben size verdim. Siz, benden mağfiret dilemeden önce ben sizi bağışladım."*

Değerli kılınanların tamamına Allah: ( فَاذْكُرُونِي اَذْكُرْكُمْ ) *"Beni anın, ben de sizi anayım"* (Bakara, 2/152) buyurmuştur. Oysa Allah, bunu ne meleklere ne de cinlere söylemiştir.

Allah, sadece Âdemoğullarını değerli kıldığı gibi, içlerinden Hz. Muhammed'in (s.a.v.) ümmetini de ayrıca özel bir şekilde değerli kılmıştır. Allah'ın şu ayetlerdeki sözleri de bu cümledendir:

( يُحِبُّهُمْ وَيُحِبُّونَهُ ) *"O, onları sever, onlar da O'nu severler."* (Mâide, 5/54)

( رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمْ وَرَضُوا عَنْهُ ) *"Allah, onlardan hoşnut oldu. Onlar da O'ndan hoşnut oldular."* (Mâide, 5/119)

( وَالَّذِينَ اٰمَنُوٓا اَشَدُّ حُبًّا لِلّٰهِ ) *"İman edenlerin Allah'a olan sevgisi ise daha güçlüdür."* (Bakara, 2/165)

Değerli kılınlar hakkında Allah şöyle buyurmuştur:

( وَمَنْ يَعْمَلْ سُوٓءًا اَوْ يَظْلِمْ نَفْسَهُ ثُمَّ يَسْتَغْفِرِ اللّٰهَ يَجِدِ اللّٰهَ غَفُورًا رَحِيمًا ) *"Kim, bir kötülük işler veya kendine zulmeder de sonra Allah'tan mağfiret dilerse, Allah'ı bağışlayıcı ve merhamet edici bulur."* (Nisâ, 4/110)

Değerli kılınanların üstüne yaratanın sevgisinden bir miktar atılır ve sonunda O'nu severler.

Değerli kılınanların bir kısmına dürüstçe adım atmaya dair muvaffakiyet verilmiş, bir kısmına da yüksek himmet gerçeği bahşedilmiştir.

( وَحَمَلْنَاهُمْ فِي الْبَرِّ وَالْبَحْرِ ) *"Onları karada ve denizde taşıdık."*

Allah, denizi onların hizmetine sundu ve bu sayede gemilere bindiler. Karayı da onların hizmetine sunarak kendilerine: ( لَا تَسْجُدُوا لِلشَّمْسِ وَلَا لِلْقَمَرِ ) *"Güneşe de aya da secde etmeyin."* (Fussilet, 41/37) buyurdu.

- Değerli kılınanlardan yere düşen olmaz. Şayet düşerse, elinden tutan birini bulur. Onların karada taşınmalarındaki işaret, Allah'ın kendilerine açıkça ulaştırdığı nimetleredir. Denizle ilgili söz ise Allah'ın, mana âlemlerine yönelik olarak sadece onlara bahşettiği manevi hallere işaret etmektedir.

- Âdemoğulları emaneti taşıyınca biz de onları karada taşıdık. Bu itibarla, bir taşıma diğer bir taşımanın karşılığı, bir taşıma henüz var olmayan insanın davranışı, bir taşıma da ebedi olan Allah'ın fiilidir.

( وَرَزَقْنَاهُمْ مِنَ الطَّيِّبَاتِ ) *"Kendilerini en güzel ve temiz şeylerden rızıklandırdık."*

Güzel ve temiz rızık, rızkı veren Allah'ı anmaya dayalı olandır. Kim ki kalbiyle kendinden geçmemiş ve Rabbinden gafil değil ise her rızkı güzel ve temiz bulur.

Şiir:

*Ey aşığım, mutluyum ben içmekle*
*Acı elma veya acı ağaç özü olsa dahi*

( وَفَضَّلْنَاهُمْ عَلٰى كَثِيرٍ مِمَّنْ خَلَقْنَا تَفْضِيلًا ) *"Ve onları yarattıklarımızın bir çoğundan üstün kıldık."*

Yani bunlar, pek çok kimseye üstün kıldığımız kimselerdir. Burada Allah, bunları üstün kılmadığı kimselerin bulunduğunu kast etmemektedir. Aksine ayetteki bu ifadenin anlamı, Allah'ın o kimseleri yarattığı herkese üstün kıldığı şeklindedir. Bu üstün kılma ise yaradılışla ilgilidir. Sonra Allah, Âdemoğullarını başka bir şeyde; güzel ahlakta birbirine üstün kılmıştır. Böylece Allah Âdemoğullarını, diğer yaratıklardan üstün oldukları yaradılışta birleştirmiş, ahlakta ise onları birbirinden farklı kılmıştır.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Ayetteki: ( وَلَقَدْ كَرَّمْنَا بَنِي اٰدَمَ ) *"Âdemoğullarını çok değerli kıldık"* sözü, lafız bakımından genel olmakla birlikte anlamca özel olup maksat müminlerdir. Böylece müminlerin bazıları bazılarından üstün olurlar. Bu çerçevede Allah, velilerini veliliği hak edecek merteбeye ulaşmayan kimselerden üstün kılmıştır.

- Allah onları, nefislerine istikrara kavuşmuş gözüyle bakmamaları, amellerine ise küçümseyici bir gözle bakmaları sebebiyle üstün kılmıştır.

يَوْمَ نَدْعُوا كُلَّ اُنَاسٍ بِاِمَامِهِمْۚ فَمَنْ اُو۫تِيَ كِتَابَهُ بِيَم۪ينِه۪ فَاُو۬لٰٓئِكَ يَقْرَؤُ۫نَ كِتَابَهُمْ وَلَا يُظْلَمُونَ فَت۪يلًا ﴿٧١﴾

71- "Bütün insanları kendi önderleriyle birlikte çağıracağımız günü hatırla. Her kime kitabı sağından verilirse, işte onlar kitaplarını okurlar ve kıl kadar haksızlığa uğratılmazlar."

Herkesin önderi, uyduğu kimsedir. Fakat kimi önder vardır ki uyanı kendisiyle hidayete erer, kimi önder de vardır ki uyanı kendisiyle kötü duruma düşer.

( فَمَنْ اُو۫تِيَ كِتَابَهُ بِيَم۪ينِه۪ فَاُو۬لٰٓئِكَ يَقْرَؤُ۫نَ كِتَابَهُمْ وَلَا يُظْلَمُونَ فَت۪يلًا ) *"Her kime kitabı sağından verilirse, işte onlar kitaplarını okurlar."*

Onlar, şuurlarının tam ve akıllarının öncü olması sebebiyle kitaplarını okurlar. Kitapları sağından verilmeyenlere gelince, onlar korkularından ve tereddütlerinden dolayı kitaplarını okumazlar.

وَمَنْ كَانَ فِي هٰذِهٖٓ اَعْمٰى فَهُوَ فِي الْاٰخِرَةِ اَعْمٰى وَاَضَلُّ سَبِيلًا ﴿٧٢﴾

72- "Kim, bu dünyada körlük ettiyse ahirette de kördür, yolunu daha da şaşırmıştır."

O kimse, ahirette basiretiyle görmekten kördür. Onun ahiretteki azabı, yanmanın da eklendiği bir ayrılık olduğu için o yolunu daha da şaşırmıştır.

وَاِنْ كَادُوا لَيَفْتِنُونَكَ عَنِ الَّذٖٓي اَوْحَيْنَٓا اِلَيْكَ لِتَفْتَرِيَ عَلَيْنَا غَيْرَهُ
وَاِذًا لَاتَّخَذُوكَ خَلِيلًا ﴿٧٣﴾

73- "Onlar, sana vahyettiğimizden başkasını bize karşı uydurman için az kalsın seni ondan şaşırtacaklardı. İşte o zaman seni dost edinirlerdi."

Biz, senin üstüne masumiyet çadırları kurduk, seni gözetimimizin himayesi altına aldık ve nefsine uymaktan seni koruduk. Bu itibarla, yanlışlık yapman imkânsızdır ve sende iftira vasfının bulunması caiz değildir. Hatta eğer sen bir an bile muhalefete meyletseydin, kadrinin tam ve şanının yüce olması sebebiyle üstüne belanın katmerli sıkıntıları inerdi. Çünkü derecesi daha yüksek olan kimsenin işlemesi halinde günahının etkisi daha şiddetli olur.

وَلَوْلَٓا اَنْ ثَبَّتْنَاكَ لَقَدْ كِدْتَ تَرْكَنُ اِلَيْهِمْ شَيْـًٔا قَلِيلًا ﴿٧٤﴾

74- "Eğer biz sana sebat vermiş olmasaydık, az kalsın onlara biraz meyledecektin."

Eğer biz, seni nefsinle baş başa bırakıp üzerinden masumiyetin gölgesini kaldırsaydık, emrimize muhalefet tarzında caiz olmayan bir şeye yeltenirdin. Lakin biz, sadece seni koruduk. Böylece sana yönelik ilahi himayenin eserleri yetersiz kalmaz, nuru da etrafından kaybolmaz.

إِذًا لَاَذَقْنَاكَ ضِعْفَ الْحَيٰوةِ وَضِعْفَ الْمَمَاتِ ثُمَّ لَا تَجِدُ لَكَ
عَلَيْنَا نَصِيرًا ﴿٧٥﴾

75- "İşte o zaman sana hayatın da ölümün de katmerli acılarını tattırırdık. Sonra bize karşı kendine hiçbir yardımcı bulamazdın."

Büyüklerin düşüşü, yükselişlerine uygun şekilde olur. Dostların sıkıntıları da az dahi olsa, büyük olur.

Şiir:

*Gözümsün sen, lakin hakkı yoktur gözümün*
*Kapaklarını toz ve çapakların üstüne kapamaya*

وَاِنْ كَادُوا لَيَسْتَفِزُّونَكَ مِنَ الْاَرْضِ لِيُخْرِجُوكَ مِنْهَا وَاِذًا لَا يَلْبَثُونَ
خِلَافَكَ اِلَّا قَلِيلًا ﴿٧٦﴾

76- "Seni o yerden sürüp çıkarmak için neredeyse seni sıkıştıracaklardı. Bunu yapabilselerdi, senin ardından orada pek az kalırlardı."

Her kim, aziz ve büyük kimselerin geçip gitmesinden sonra hayatından yararlanacağını zannederse hesabında yanılmış olur. Kaldı ki kıskanç büyük insan olamaz.

Şiir:

*Yorulur kıskanan güneşin aydınlığını*
*Ve ona bir kusur bulmaya çalışan*

Kaldı ki bütün yeryüzü bizim mülkümüzdür. Velilerimizi de ülkelere gidip gelirlerken ve bölge bölge dolaşırlarken çevirir dururuz. Onlar, bizim dergahımızda gider gelir ve bizim diyarımızda döner dururlar. Bu itibarla yerler onlar için aynıdır.

Şiir:

*İster yürü git ister kal, sana vakfedilmiştir sevgim*
*Kalbimdeki yerin koruma altındadır senin için*

سُنَّةَ مَنْ قَدْ اَرْسَلْنَا قَبْلَكَ مِنْ رُسُلِنَا وَلَا تَجِدُ لِسُنَّتِنَا تَحْوِيلًا ﴿٧٧﴾

77- "Senden önce gönderdiğimiz peygamberlerimiz hakkındaki kanun böyledir. Bizim kanunumuzda hiçbir değişme bulamazsın."

Allah, velilerle ilgili prensibini nimet vermek, düşmanlarıyla ilgili prensibini de yüzlerini kara çıkarmak şeklinde onaylamıştır. Hal böyle olunca, ne o prensibi ne de bu prensibi değişir.

اَقِمِ الصَّلٰوةَ لِدُلُوكِ الشَّمْسِ اِلٰى غَسَقِ الَّيْلِ وَقُرْاٰنَ الْفَجْرِ اِنَّ قُرْاٰنَ الْفَجْرِ كَانَ مَشْهُودًا ﴿٧٨﴾

78- "Güneşin zevalinden gecenin karanlığına kadar namazı kıl. Bir de sabah namazını kıl. Çünkü sabah namazı şahitlidir."

Namaz, rızık kapısını çalmaktır. Namaz, münacat makamında durmaktır. Namaz kalbin, kaderin tecellileri içerisinde durmasıdır. Bir yoruma göre de namaz mahremiyet makamında durmaktır. Bu arada Allah, kulun günde birkaç defa huzuruna dönmesi için namaz vakitlerini zamana yaymıştır.

( اِنَّ قُرْاٰنَ الْفَجْرِ كَانَ مَشْهُودًا ) *"Çünkü sabah namazı şahitlidir."*

İlmin izahına göre; gece ve gündüz melekleri bu namazda hazır bulunarak şahitlik ederler. Tasavvuf ehlinin izahına göre ise onu kılmanın vakti olan sabah namazı uykudan ve nefsin tembelliğinden uzaklaştırır. İşte onun bu meziyeti vardır.

وَمِنَ الَّيْلِ فَتَهَجَّدْ بِه۪ نَافِلَةً لَكَ عَسٰٓى اَنْ يَبْعَثَكَ رَبُّكَ مَقَامًا مَحْمُودًا ﴿٧٩﴾

79- "Gecenin bir kısmında da uyanarak sana mahsus fazla bir ibadet olmak üzere, teheccüd namazı kıl ki, Rabbin seni Makam-ı Mahmûd'a ulaştırsın."

Gece birileri içindir: Ya tövbeye yönelip kurtuluşu arayan günahkârlar içindir ya ibadetlerde çaba harcayan ve iyiliklerde yarışanlar içindir ya da insanlar gaflette ve kendini kaybetmiş halde iken sevgiliyle münacat edenler içindir. Bir yoruma göre de gece, şu iki kişiden biri içindir: İtaat ehli ve günahkâr. İtaat ehli amellerinin tedbiriyle, günahkâr da kötü fillerinden özür dilemekle meşgul olur.

Makam-ı Mahmûd ise şuhûd halinde Allah ile konuşmaktır. Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Makam-ı Mahmûd, şuhûdun kendisidir.

- Makam-ı Mahmûd, büyük günah sahiplerine şefaatte bulunmaktır.

- Makam-ı Mahmûd, Allah'ın kıyamette sadece Hz. Peygamber'e (s.a.v.) verdiği ve kimsenin kendisine ortak olmadığı özelliklerdir.

وَقُلْ رَبِّ اَدْخِلْنِي مُدْخَلَ صِدْقٍ وَاَخْرِجْنِي مُخْرَجَ صِدْقٍ وَاجْعَلْ لِي مِنْ لَدُنْكَ سُلْطَانًا نَصِيرًا ﴿٨٠﴾

80- "De ki: 'Rabbim! Doğruluk ve esenlik içinde girmemi sağla. Beni doğruluk ve esenlik içinde çıkar. Katından bana yardımcı bir kuvvet ver.'"

Yani, beni doğruluk üzere koy ve doğruluk üzere çıkar. Doğruluk, senin bir şeylere girişinin başkası için değil, Allah ile ve Allah için; bir şeylerden çıkışının da başkası için değil Allah ile ve Allah için olmasıdır.

( وَاجْعَلْ لِي مِنْ لَدُنْكَ سُلْطَانًا نَصِيرًا ) *"Katından bana yardımcı bir kuvvet ver."*

Bu sayede artık giriş ve çıkışıma bakmamış olurum.

وَقُلْ جَٓاءَ الْحَقُّ وَزَهَقَ الْبَاطِلُ اِنَّ الْبَاطِلَ كَانَ زَهُوقًا ﴿٨١﴾

81- "De ki: 'Hak geldi, bâtıl yok oldu. Şüphesiz bâtıl, yok olmaya mahkûmdur.' "

Allah, burada haktan İslam'ı ve dini, bâtıldan da küfür ve şirki kast etmiştir. Bu arada mutlak hak, hak olan varlıktır. Kayda bağlı hak ise inançta, davranışta ve söyleyişte güzel olan şeydir. Bâtıl da hakkın zıddıdır. Allah'ın hak oluşu ise şu anlamdadır: Şüphesiz O vardır, hak sahibidir ve hakkı haklı çıkarandır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Hak, Allah için olan, bâtıl da Allah'tan başkası için olan şeydir.

- İçe doğan hususlardan hak, Allah'a sevk eden, bâtıl da Allah'tan başkasına sevk eden şeydir.

وَنُنَزِّلُ مِنَ الْقُرْاٰنِ مَا هُوَ شِفَٓاءٌ وَرَحْمَةٌ لِلْمُؤْمِنِينَ وَلَا يَزِيدُ الظَّالِمِينَ اِلَّا خَسَارًا ﴿٨٢﴾

82- "Biz, Kur'an'dan müminler için şifa ve rahmet olacak şeyler indiriyoruz. Zalimlerin ise Kur'an ancak zararını artırır."

Âlimler için Kur'an, bilgisizlik hastalığının, müminler için şirk hastalığının, arifler için yabancılık hastalığının, sevenler için arzu sevdalarının, müridler için de taşkınlık hastalığının şifasıdır.

Şiir:

*Etrafımdadır kitapların, ayrılmaz yatağımdan*
*Ve şifa vardır onlarda sakladığım hastalık için*

( وَلَا يَزِيدُ الظَّالِمِينَ اِلَّا خَسَارًا ) *"Zalimlerin ise Kur'an ancak zararını artırır."*

Hitap aynı hitap ve kitap aynı kitaptır. Lakin o, birileri için rahmet ve şifa, birileri içinse öfke ve mutsuzluktur. O, tevhid nuruyla birilerinin basiretlerini aydınlatmış, böylece onlara şifa olmuş, birilerinin de inkâr örtüsüyle basiretlerini kapatmış ve böylece onlar için mutsuzluk olmuştur.

وَاِذَٓا اَنْعَمْنَا عَلَى الْاِنْسَانِ اَعْرَضَ وَنَا بِجَانِبِهٖ وَاِذَا مَسَّهُ الشَّرُّ كَانَ يَؤُ۫سًا ﴿٨٣﴾

83- "İnsana nimet verdiğimizde yüz çevirip yan çizer. Kendisine şer dokununca da umutsuzluğa düşer."

Biz, korkunun sebeplerini insandan giderdiğimiz, kendisine mühlet ipini uzattığımız ve onun için refahın sebeplerini hazırladığımız zaman, unutmanın yanlışlıklarına maruz kalır ve kendisine isyan faktörleri hâkim olur. Böylece o, şükürden yüz çevirerek uyum makamından uzaklaşır. Bir yoruma göre de insanın bu konudaki yüz çevirmesi; unutması, lütfu Hak'tan değil kendinden bilmesi ve sahip olduğu nimetleri ihlasla yerine getirdiği bir taatten veya katlandığı bir sıkıntıdan dolayı hak ettiğini vehmetmesidir. Bu ise hakikatte şirktir.

قُلْ كُلٌّ يَعْمَلُ عَلٰى شَاكِلَتِهٖ فَرَبُّكُمْ اَعْلَمُ بِمَنْ هُوَ اَهْدٰى سَبِيلًا ﴿٨٤﴾

84- "De ki: 'Herkes, kendi yapısına uygun işler görür. Rabbiniz, en doğru yolda olanı daha iyi bilir.'"

Herkes, içinde ne varsa, onu sızdırır. Bu itibarla tahtlar, insanın iç dünyasını gösterir. Vicdanlarda saklı olan hususlar da insanların iç dünyalarında kendini gösterir. Böylece özü, bulanıklıktan arınmış olan kimseden sadece menkıbelerinin kokusu yayılır. Tıyneti bulanıklık üzere yaratılan kimsenin çevresinde dolaşanlar ise sadece kötülüklerinin kokusunu alırlar.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Zahirdeki hareketler, içteki sırları gösterir ve onları bildirir.

- (...) tohumu, yumuşak fidan bitirmez.

- Hamuru şakilik suyuyla yoğrulan ve cibilliyeti inkârcılık üzere yaratılan kimsenin tabiatı tevhide elvermez, sözü de tevhidi dile getirmez.

وَيَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الرُّوحِ قُلِ الرُّوحُ مِنْ اَمْرِ رَبّ۪ي وَمَٓا اُو۫ت۪يتُمْ مِنَ الْعِلْمِ اِلَّا قَل۪يلًا ﴿٨٥﴾

85- "Sana ruh hakkında soru soruyorlar. De ki: 'Ruh, Rabbimin bileceği bir şeydir. Size pek az ilim verilmiştir.'"

Onlar, Hz. Peygamber'le (s.a.v.) mücadele etmek ve yanlış yaptığını göstermek istediler. Bunun üzerine Allah, ruhun kısımlarını açıklayan bir ifade dile getirmesini emretti. Çünkü "ruh" sözcüğüyle adlandırılan şey ayetteki şu ifadenin kapsamına girer:

( قُلِ الرُّوحُ مِنْ اَمْرِ رَبّ۪ي ) *"De ki: 'Ruh, Rabbimin bileceği bir şeydir.'"*

Bir yoruma göre; kulun ruhu, Allah'ın bedene yerleştirdiği ve manevî haller ile güzel ahlakın merkezi kıldığı manevî bir varlıktır. Nasıl ki göz görmenin, kulak işitmenin, diğer organlar da diğer fonksiyonların merkezi olup bunların toplandığı yer olan insan da gören ve duyan ise aynı şekilde iyi vasıfların merkezi ruh, kötü vasıfların merkezi de nefistir. Ancak iyilik ve kötülüğe dair hüküm ile iyi ve kötü şeklindeki isim, bu vasıfların toplandığı yere verilir.

Hulasa ruh yaratılmış olup Hak, âdetini cesedinde ruh olduğu sürece, kul için hayat yaratmak şeklinde uygulamıştır. Bu arada ruh, herkesin temizliğini ve inceliğini kabul ettiği manevî bir varlıktır. Bir de ruh, cesetlerden binlerce yıl önce yaratılmıştır. Bir yoruma göre de Allah ruha, teklifi kavrama yeteneği vermiştir. Bir de Allah tarafından ona tespihte ve birlikteliklerde safiyet verilmiş ve marifet sahibi kılınmıştır.

( وَمَٓا اُو۫ت۪يتُمْ مِنَ الْعِلْمِ اِلَّا قَل۪يلًا ) *"Size pek az ilim verilmiştir."*

Çünkü kimse, gözleriyle ruhu görmemiştir.

وَلَئِنْ شِئْنَا لَنَذْهَبَنَّ بِالَّذ۪ٓي اَوْحَيْنَٓا اِلَيْكَ ثُمَّ لَا تَجِدُ لَكَ بِه۪ عَلَيْنَا وَك۪يلًا ﴿٨٦﴾

86- "Andolsun dileseydik, biz sana vahyettiğimizi tamamen ortadan kaldırırdık. Sonra bu konuda bize karşı kendine hiçbir yardımcı da bulamazdın."

Allah'ın, sevdikleri ve has kullarıyla ilgili prensibi, onları devamlı kendine muhtaç durumda tutmasıdır. Ta ki bütün hallerinde, hükmünün gerçekleşmesine karşı boyun eğsinler ve onlardaki bir damar bile O'nun tercihine aykırı hareket etmesin. Nitekim Allah, sevgilisi olan Hz. Peygamber'e (s.a.v.) şu sözüyle bu minval üzere hitap etmiştir: ( وَلَئِنْ شِئْنَا لَنَذْهَبَنَّ بِالَّذِي اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ ) "*Andolsun dileseydik, biz sana vahyettiğimizi tamamen ortadan kaldırırdık.*" O halde kim, sadece Allah'a bağlı ise her durumda efendisinin muradını, nefsinin muradının önüne geçirir.

اِلَّا رَحْمَةً مِنْ رَبِّكَ اِنَّ فَضْلَهُ كَانَ عَلَيْكَ كَبِيرًا ﴿٨٧﴾

87- "Ancak Rabbinden bir rahmet olarak böyle yapmadık. Çünkü O'nun sana olan lütfu büyüktür."

Bundan maksat, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) sırrının başkasıyla değil, sadece Allah ile birlikte olmasının devam ettirilmesidir.

قُلْ لَئِنِ اجْتَمَعَتِ الْاِنْسُ وَالْجِنُّ عَلٰٓى اَنْ يَأْتُوا بِمِثْلِ هٰذَا الْقُرْاٰنِ لَا يَأْتُونَ بِمِثْلِهِ وَلَوْ كَانَ بَعْضُهُمْ لِبَعْضٍ ظَهِيرًا ﴿٨٨﴾

88- "De ki: 'Andolsun, insanlar ve cinler bu Kur'an'ın bir benzerini getirmek üzere toplansalar ve birbirlerine de destek olsalar, yine onun benzerini getiremezler.'"

Diğer peygamberlerin mucizeleri hükmen, peygamberimizin mucizesi ise aynen bakidir. Bu mucize, okumakta olduğumuz ve ona ne önünden ne de ardından bâtıl gelemeyen Kur'an'dır.

وَلَقَدْ صَرَّفْنَا لِلنَّاسِ فِي هٰذَا الْقُرْاٰنِ مِنْ كُلِّ مَثَلٍ فَاَبٰٓى اَكْثَرُ النَّاسِ اِلَّا كُفُورًا ﴿٨٩﴾

89- "Andolsun, biz bu Kur'an'da insanlara her türlü misali değişik şekillerde açıkladık. Yine de insanların çoğu, ancak inkârda direttiler."

Dostlar nezdinde dostların kitabından daha faydalı bir şey yoktur. Şöyle ki o, sıkıntı hastalığı için şifa, belanın şiddetlenmesi halinde de sırları için aydınlıktır.

Şiir:

*Etrafımdadır kitapların, ayrılmaz yatağımdan*
*Ve şifa vardır onlarda sakladığım hastalıktan*

وَقَالُوا لَنْ نُؤْمِنَ لَكَ حَتّٰى تَفْجُرَ لَنَا مِنَ الْاَرْضِ يَنْبُوعًا ﴿٩٠﴾
اَوْ تَكُونَ لَكَ جَنَّةٌ مِنْ نَخِيلٍ وَعِنَبٍ فَتُفَجِّرَ الْاَنْهَارَ خِلَالَهَا
تَفْجِيرًا ﴿٩١﴾ اَوْ تُسْقِطَ السَّمَٓاءَ كَمَا زَعَمْتَ عَلَيْنَا كِسَفًا اَوْ
تَأْتِيَ بِاللّٰهِ وَالْمَلٰٓئِكَةِ قَبِيلًا ﴿٩٢﴾ اَوْ يَكُونَ لَكَ بَيْتٌ مِنْ زُخْرُفٍ
اَوْ تَرْقٰى فِي السَّمَٓاءِ وَلَنْ نُؤْمِنَ لِرُقِيِّكَ حَتّٰى تُنَزِّلَ عَلَيْنَا
كِتَابًا نَقْرَؤُهُ قُلْ سُبْحَانَ رَبِّي هَلْ كُنْتُ اِلَّا بَشَرًا رَسُولًا ﴿٩٣﴾

90, 91, 92, 93- "Dediler ki: 'Yerden bize bir pınar fışkırtmadıkça; yahut senin hurmalardan, üzümlerden oluşan bir bahçen olup, aralarından şarıl şarıl akan ırmaklar akıtmadıkça; yahut iddia ettiğin gibi gökyüzünü üzerimize parça parça düşürmedikçe; yahut Allah'ı ve melekleri karşımıza getirmedikçe; yahut altından bir evin olmadıkça ya da göğe çıkmadıkça sana asla inanmayacağız. Bize gökten okuyacağımız bir kitap indirmedikçe göğe çıktığına da inanacak değiliz.' De ki: 'Rabbimi tenzih ederim. Ben, ancak Resûl olarak gönderilen bir beşerim.'"

Gerekçeler ortadan kaldırılıp ihtiyaçlar yok olduktan sonra, bu kez mucizeler önerdiler. Bunu yapmakla da edepsizlik meydanında cirit atıp vuslat ve yakınlıktan mahrum kaldılar. Taleplerinin yerine getirilmesi halinde bile, sadece inkârcılıklarını artırırlardı.

Şiir:

*Sana sevgisini bahşettiği zaman kerem sahibi*
*Örter kabahati ve çıkarır ortaya iyiliği*
*Yılgın kimse de kopmak istediği zaman*
*Usanır vuslattan ve: şöyle şöyle oldu, der*

( قُلْ سُبْحَانَ رَبّ۪ي هَلْ كُنْتُ اِلَّا بَشَرًا رَسُولًا ) *"De ki: 'Rabbimi tenzih ederim. Ben, ancak Resûl olarak gönderilen bir beşerim.'"*

Ey Muhammed! De ki: "Rabbimi tenzih ederim. Benden istediklerinizi ben, kendi katımdan nasıl getirebilirim ki?! Benim kulluktan başka bir vasfım mı vardır? Ben, ancak bir beşerim." Allah şöyle buyurmuştur: ( لَنْ يَسْتَنْكِفَ الْمَس۪يحُ اَنْ يَكُونَ عَبْدًا لِلّٰهِ ) *"Mesîh de Allah'a kul olmaktan asla çekinmez."* (Nisâ, 4/172)

وَمَا مَنَعَ النَّاسَ اَنْ يُؤْمِنُٓوا اِذْ جَٓاءَهُمُ الْهُدٰٓى اِلَّٓا اَنْ قَالُٓوا اَبَعَثَ اللّٰهُ بَشَرًا رَسُولًا ﴿٩٤﴾

94- "İnsanlara hidayet geldikten sonra onların iman etmelerine ancak: "Allah, bir beşeri mi peygamber olarak gönderdi?" demeleri engel olmuştur.

Onlar, şüpheye yer olmayan şeyden hayrete düştüler. Lakin onları buna aşırı cehaletleri sevk etti, yalanlamalarında ve inkârcılıklarında ısrar ettiler.

قُلْ لَوْ كَانَ فِي الْاَرْضِ مَلٰٓئِكَةٌ يَمْشُونَ مُطْمَئِنّ۪ينَ لَنَزَّلْنَا عَلَيْهِمْ مِنَ السَّمَٓاءِ مَلَكًا رَسُولًا ﴿٩٥﴾

95- "De ki: 'Eğer yeryüzünde yerleşip dolaşan melekler olsaydı, elbette onlara gökten bir melek peygamber indirirdik.'"

Bir cins, hemcinsine daha meyilli olur. Bir tip, kendi tipindekine daha çok yakınlık hisseder. Bu nedenle Allah şunu demek istemiştir:

Eğer yeryüzü sakinleri melek olsalardı, onlara gönderdiğimiz peygamberi melek kılardık. Onlar beşer olunca, beşerin beşere peygamber olarak gönderilmesi, ihtimal dışı görülmemelidir.

قُلْ كَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيدًا بَيْنِي وَبَيْنَكُمْ اِنَّهُ كَانَ بِعِبَادِهِ خَبِيرًا بَصِيرًا ﴿٩٦﴾

96- "De ki: 'Sizinle benim aramda şahit olarak Allah yeter. Çünkü O, kullarından hakkıyla haberdardır, onları hakkıyla görendir.'"

Allah, hem hâkim hem de şahit olup hükmü, halkın hükmüne kıyaslanamaz. Yaratılanın ise hem hâkim hem de şahit olması caiz değildir. Bu itibarla, Allah'ın zâtı yaratıkların zâtına, sıfatı da yaratıkların sıfatına benzemez.

وَمَنْ يَهْدِ اللّٰهُ فَهُوَ الْمُهْتَدِ وَمَنْ يُضْلِلْ فَلَنْ تَجِدَ لَهُمْ اَوْلِيَاءَ مِنْ دُونِهِ وَنَحْشُرُهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ عَلٰى وُجُوهِهِمْ عُمْيًا وَبُكْمًا وَصُمًّا مَاْوٰيهُمْ جَهَنَّمُ كُلَّمَا خَبَتْ زِدْنَاهُمْ سَعِيرًا ﴿٩٧﴾

97- "Allah, kimi doğru yola iletirse işte o, doğru yolu bulmuştur. Kimi de saptırırsa, böyleleri için O'nun dışında dostlar bulamazsın. Onları kıyamet günü körler, dilsizler ve sağırlar olarak yüzüstü haşredeceğiz. Varacakları yer cehennemdir. Cehennemin ateşi dindikçe, onlara çılgın ateşi artırırız."

Allah ezelde kime saadet dilemiş ise ebediyette de lütuflarıyla onu kurtuluşa erdirir. Kimi de ezelde şaki bilmişse ebediyette ona düşman damgası vurur. Böylece ne hükmünde dönüşüm, ne de sözünde değişim vardır.

ذٰلِكَ جَزَآؤُهُمْ بِاَنَّهُمْ كَفَرُوا بِاٰيَاتِنَا وَقَالُوا ءَاِذَا كُنَّا عِظَامًا وَرُفَاتًا ءَاِنَّا لَمَبْعُوثُونَ خَلْقًا جَدِيدًا ﴿٩٨﴾

98- "Bu, onların cezasıdır. Çünkü onlar, ayetlerimizi inkâr ettiler ve: 'Biz bir yığın kemik, bir yığın ufantı olduktan sonra mı yeniden bir yaratılışla diriltilecekmişiz, biz mi?!' dediler."

Onlar yalanlamalarında ısrar edince Allah, azaplarını devamlı kılmakla onlara karşılık verdi. Eğer muvaffakiyete mazhar olsalardı, hakikati arama çabasına girerlerdi. Lakin ilahî inayete mazhar olamayınca tevhidden mahrum kaldılar.

اَوَلَمْ يَرَوْا اَنَّ اللّٰهَ الَّذ۪ي خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ قَادِرٌ عَلٰٓى
اَنْ يَخْلُقَ مِثْلَهُمْ وَجَعَلَ لَهُمْ اَجَلًا لَا رَيْبَ ف۪يهِ فَاَبَى الظَّالِمُونَ
اِلَّا كُفُورًا ﴿٩٩﴾

99- “Onlar, gökleri ve yeri yaratan Allah’ın kendileri gibilerini yaratmaya kadir olduğunu göremediler mi? Allah, onlar için hakkında hiçbir şüphe bulunmayan bir ecel belirlemiştir. Fakat zalimler, ancak inkârda direttiler.”

Bu ayetle Allah, kıyasla ispatlama yolunu açmıştır. Bu çerçevede Allah Kur’an’da dinin hükümlerinden delil ve burhan ile desteklemediği hiçbir şey bırakmamıştır. Böylece herkes taklide yeltenmenin, hata ve sapıklığın ta kendisi olduğunu anlamıştır.

قُلْ لَوْ اَنْتُمْ تَمْلِكُونَ خَزَآئِنَ رَحْمَةِ رَبّ۪ٓي اِذًا لَاَمْسَكْتُمْ خَشْيَةَ
الْاِنْفَاقِ وَكَانَ الْاِنْسَانُ قَتُورًا ﴿١٠٠﴾

100- “De ki: ‘Eğer siz, Rabbimin rahmet hazinelerine sahip olsaydınız, o zaman da tükenir korkusuyla cimrilik ederdiniz. Zaten insan çok cimridir.’ ”

Çünkü cimrilik insanın tabiatı, ihtiras da karakteridir. Bilinen (...) yaratılışı bilmez.

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوسٰى تِسْعَ اٰيَاتٍ بَيِّنَاتٍ فَسْـَٔلْ بَن۪ٓي اِسْرَآء۪يلَ اِذْ جَٓاءَهُمْ
فَقَالَ لَهُ فِرْعَوْنُ اِنّ۪ي لَاَظُنُّكَ يَا مُوسٰى مَسْحُورًا ﴿١٠١﴾

101- "Andolsun, biz Mûsâ'ya dokuz mucize verdik. İsrail oğullarına sor: Hani Mûsâ onlara gelmiş ve Firavun da ona: 'Ben, senin kesinlikle büyülendiğini zannediyorum ey Mûsâ!' demişti."

Söz konusu dokuz ayet, Allah'ın Hz. Mûsâ'ya olan kereminin ve sevgisinin alametlerindendir.

قَالَ لَقَدْ عَلِمْتَ مَٓا اَنْزَلَ هٰٓؤُ۬لَٓاءِ اِلَّا رَبُّ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ بَصَٓائِرَ وَاِنّ۪ي لَاَظُنُّكَ يَا فِرْعَوْنُ مَثْبُورًا ﴿١٠٢﴾

102- "Mûsâ ise: 'İyi biliyorsun ki bunları ancak göklerin ve yerin Rabbi apaçık deliller olarak indirmiştir. Ey Firavun! Ben de seni kesinlikle helak olmuş bir kişi olarak görüyorum.' "

Sen, ey Firavun, delil arama yolunu izledin. Böylece bu gibi şeylere dair emrin ancak Allah tarafından olduğunu anladın fakat cehaletin karanlıkları içinde gaflete meylettin.

فَاَرَادَ اَنْ يَسْتَفِزَّهُمْ مِنَ الْاَرْضِ فَاَغْرَقْنَاهُ وَمَنْ مَعَهُ جَم۪يعًا ﴿١٠٣﴾

103- "Bunun üzerine Firavun, o yerden onların kökünü kazımak istedi. Biz de onu ve beraberindekileri hep birden suda boğduk."

Firavun, İsrail oğullarını helak edip köklerini kazımak istedi. Allah da, onlara yardım edip kalmalarını diledi. Böylece mel'unun komplosu değil, Allah'ın dilediği oldu.

وَقُلْنَا مِنْ بَعْدِه۪ لِبَن۪ٓي اِسْرَٓائ۪يلَ اسْكُنُوا الْاَرْضَ فَاِذَا جَٓاءَ وَعْدُ الْاٰخِرَةِ جِئْنَا بِكُمْ لَف۪يفًا ﴿١٠٤﴾

104- "Bunun ardından İsrail oğullarına şöyle dedik: 'Bu topraklarda oturun. Ahiret vaadi gelince hepinizi toplayıp bir araya getireceğiz.'"

Allah, İsrail oğullarına düşmanlarının yerlerini miras kıldı, stoklarına ve meskenlerine sahip olma imkânı verdi, nimetine şükür

etmelerini öğütledi ve isyanda öncekilerin yolunu izlemeleri halinde onların tattıkları azabın bir benzerini tadacaklarını öğretti.

وَبِالْحَقِّ اَنْزَلْنَاهُ وَبِالْحَقِّ نَزَلَ وَمَٓا اَرْسَلْنَاكَ اِلَّا مُبَشِّرًا وَنَذِيرًا ﴿١٠٥﴾
وَقُرْاٰنًا فَرَقْنَاهُ لِتَقْرَاَهُ عَلَى النَّاسِ عَلٰى مُكْثٍ وَنَزَّلْنَاهُ تَنْزِيلًا ﴿١٠٦﴾

105, 106- "Biz, Kur'an'ı hak olarak indirdik, o da hak ile indi. Seni de ancak müjdeci ve uyarıcı olarak gönderdik. Biz Kur'an'ı insanlara dura dura okuyasın diye ayet ayet ayırdık ve onu peyderpey indirdik."

Kur'an haktır, inişi hak iledir, indireni Hak'tır ve kendisine indirildiği kişi haktır. Bu itibarla Kur'an, Hak'tan hakka hak ile inmiştir. Bu arada Hz. Peygamber'e (s.a.v.) ezberlemesini kolaylaştırmak, Rabbinden çok sayıda vahiy almasını sağlamak, her vakitte ve her olay hakkında inmesinin, başkasının yardımcı olduğu şeylerden olmadığına delil olması için Allah, Kur'an'ı parça parça indirmiştir.

قُلْ اٰمِنُوا بِه۪ٓ اَوْ لَا تُؤْمِنُوا اِنَّ الَّذ۪ينَ اُو۫تُوا الْعِلْمَ مِنْ قَبْلِه۪ٓ اِذَا يُتْلٰى
عَلَيْهِمْ يَخِرُّونَ لِلْاَذْقَانِ سُجَّدًا ﴿١٠٧﴾ وَيَقُولُونَ سُبْحَانَ رَبِّنَٓا اِنْ كَانَ
وَعْدُ رَبِّنَا لَمَفْعُولًا ﴿١٠٨﴾

107, 108- "De ki: 'Ona ister inanın ister inanmayın. Şüphesiz daha önce kendilerine ilim verilenler, Kur'an kendilerine okunduğunda derhal yüz üstü secdeye kapanırlar. Rabbimizin şanı yücedir. Rabbimizin vaadi mutlaka gerçekleşecektir' derler."

Eğer inanırsanız, faydası size olur. Şayet inkâr ederseniz, iman eden dostlarımızın imanı, bıraktığınız boşluğu doldurur ve zararı siz görürsünüz. Hiç şüphesiz teveccühümüzün güneşleriyle aydınlattığımız kimselerin marifet nurları parlar. Böylece kendilerine ayetlerimiz okunduğu zaman, kâfirlerin inkârı yerine onlar secde ederler, isyanlarının yerine onlar Kur'an'ı kabul ederler ve kendilerine söylenenleri tasdikle karşılarlar.

وَيَخِرُّونَ لِلْاَذْقَانِ يَبْكُونَ وَيَزِيدُهُمْ خُشُوعًا ﴿١٠٩﴾

109- "Onlar, ağlayarak yüz üstü yere kapanırlar. Bu da onların derin saygısını arttırır."

Kalplerdeki etkisi değişik olur. Bu çerçevede Kur'an'ı dinlemenin âlimlerin kalplerindeki etkisi basiretli hale gelmek, tevhid ehlinin nurlarındaki etkisi ise hayrete düşmek şeklinde olur. Bu arada âlimlerin basiretli hale gelmesi doğru delil kullanma yöntemiyle, tevhid ehlinin hayreti ise cemali ve celali görmekle olur.

Herkesin ağlaması kendi durumuna göre olur. Şöyle ki, tövbe edenin ağlaması, geçmişte işlemiş olduğu hatalarının azabından korkması sebebiyledir. İtaatkar ise taatinde işlediği kusur ve umduğu ilahi nimeti kaçırmamak için ağlamaktadır. Birileri de geçmişlerinin ve geleceklerinin kendileri için belirsiz olmasından ötürü ağlarlar. Bazılarının ağlamasının ise belli bir sebebi bulunmamaktadır. Diğer bazıları da elden kaçırdıkları hakka duydukları özlemden dolayı ağlamaktadırlar. Aslında ağlamak, büyükler nezdinde sağlıksız bir durumdur. Sonuç itibariyle ağlamak, erkeğin zayıf durumda olduğunu gösterir.

Şiir:

*Yaratıldık biz erkekler tahammül ve acı çekmek için*
*Şu hanım şarkıcılarsa yaratıldı ağlamak ve ağıt yakmak için*

قُلِ ادْعُوا اللّٰهَ اَوِ ادْعُوا الرَّحْمٰنَ اَيًّا مَا تَدْعُوا فَلَهُ الْاَسْمَاۤءُ الْحُسْنٰى
وَلَا تَجْهَرْ بِصَلَاتِكَ وَلَا تُخَافِتْ بِهَا وَابْتَغِ بَيْنَ ذٰلِكَ سَبِيلًا ﴿١١٠﴾

110- "De ki: 'İster Allah diye çağırın, ister Rahmân diye çağırın. Hangisiyle çağırırsanız çağırın, nihayet en güzel isimler O'nundur.' Namazında sesini yükseltme, çok da kısma. İkisi ortası bir yol tut."

Allah'ın büyük nimetlerinden biri de sırlarıyla O'nun güzel isimlerini saymak suretiyle, zikrinin bahçelerinde dolaşarak bir bahçeden

diğer bahçeye ve bir ünsiyet yurdundan diğer ünsiyet yurduna tur atmalarıdır. Bir yoruma göre de zenginlerin gidiş gelişleri kendi bahçelerindedir. Velilerin gezintileri ise tespihlerinin manzaraları içindedir. Onlar Allah'ın cemalinin ve celalinin sırlarında beliren keşiflerinde huzur ararlar.

( وَلَا تَجْهَرْ بِصَلَاتِكَ وَلَا تُخَافِتْ بِهَا وَابْتَغِ بَيْنَ ذٰلِكَ سَبِيلًا ) *"Namazında sesini yükseltme, çok da kısma. İkisi ortası bir yol tut."*

Namazların ne tamamında sesini yükselt, ne de tamamında sesini kıs. Bir kısmında sesini yükselt, bir kısmında da yükseltme. Bir yoruma göre de bu, sesini düşmanların duyacağı kadar yükseltmemesi ve dostların duymayacağı kadar kısmaması demektir.

( وَابْتَغِ بَيْنَ ذٰلِكَ سَبِيلًا ) *"İkisi ortası bir yol tut."*

Bu yolla sesin dostlar tarafından işitilip yabancılardan esirgenmiş olur. Bir yoruma göre de bu, gündüz namazında sesini yükseltmemesi, gece namazında ise kısmaması demektir.

وَقُلِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِي لَمْ يَتَّخِذْ وَلَدًا وَلَمْ يَكُنْ لَهُ شَرِيكٌ فِي
الْمُلْكِ وَلَمْ يَكُنْ لَهُ وَلِيٌّ مِنَ الذُّلِّ وَكَبِّرْهُ تَكْبِيرًا ﴿١١١﴾

111- "'Hamd, çocuk edinmeyen, mülkte ortağı olmayan, zillet ve acizliğin gerektirdiği bir yardımcıya ihtiyacı bulunmayan Allah'a mahsustur' de ve O'nu tekbir ile yücelt."

Allah'a, çocuk sahibi olmaktan münezzeh olduğunu, hiçbir ortağının bulunmadığını ve acizlikten ötürü hiçbir yardımcısının olmadığını söyleyerek hamd et. Yani Allah zelil değil ki, yardımcıya muhtaç olsun. Ya da kendisinde bir zillet bulunmuyor ki, onu defedecek bir kimseyi yardımcı edinmiş olsun.

Bu konudaki diğer iki yorum da şöyledir:

- Allah'a büyük nimetine karşılık olarak şükret. Çünkü bunu sana O öğretmiştir.

- Allah'ın dostları vardır lakin onları zilletleri üzere dost edinmez. Çünkü onlar, O'nun ibadetiyle aziz olurlar.

( وَكَبِّرْهُ تَكْبِيرًا ) *"O'nu tekbir ile yücelt."*

Bu senin Allah'a yüceltmenle değil, yine O'nunla eriştiğini bilmen demektir.

سورة الْكَهْفِ

# KEHF SÛRESİ

(Kehf Sûresi, 110 âyettir. Mekke'de inmiştir. Yalnız 28. âyetin Medine'de indiği rivayet edilmiştir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla.**

Kalpler, Ancak Allah'ın adını duyarak mutlu olur. Sırlar, ancak Allah'ın varlığıyla aydınlanır. Ruhlar da ancak Allah'ın celalini görmekle coşar. Besmele'yi dinlemek, kalplerin rahatı ve aydınlığı, ruhların da şifası ve ilacıdır. Besmele, ariflerin azığıdır. Onunla yorgunluk ve sıkıntıları geçer. Bağımsızlıkları ve varlıklarının devamı onunladır.

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِيٓ اَنْزَلَ عَلٰى عَبْدِهِ الْكِتَابَ وَلَمْ يَجْعَلْ لَهُ عِوَجًا ﴿١﴾

1- "Hamd, kuluna Kitab'ı indiren ve onda hiçbir eğrilik yapmayan Allah'a mahsustur."

Burada hamd, şükür anlamında kabul edildiği zaman zaten Kitab'ın indirilmesi, Allah'ın en büyük nimetlerindendir. Dostun kitabı da dost nezdinde en büyük mevkide ve en şerefli yerdedir. Aynı zamanda bu Kitap, Allah'ın inamının kemalindendir. Bu arada şayet Allah, Hz. Peygamber'i (s.a.v.) kulu diye adlandırmış ise bu, onun

üzerindeki en büyük nimetlerindendir. Çünkü Allah, kulu diye adlandırdığı kimseyi, has kullarından kılmış olur.

Bu ayette hamd, övgü anlamında kabul edildiği zaman ise buna dair emir, Allah'a övgüde bulunmak anlamında olur. Bu övgü şöyledir: Emir, nehiy ve dilediğine hükmetme gücüne sahip olan ve bu kitaptaki hükümleri kulları için düzenleyen gerçek mülk sahibi O'dur. Hz. Peygamber'i (s.a.v.) kulu diye adlandırması ise onun, nefsinin arzularından tamamen vazgeçmiş olması ve Allah'ın haklarını yerine getirirken bunu sırf Allah için yapmasından dolayıdır.

قَيِّمًا لِيُنْذِرَ بَاْسًا شَدِيدًا مِنْ لَدُنْهُ وَيُبَشِّرَ الْمُؤْمِنِينَ الَّذِينَ يَعْمَلُونَ
الصَّالِحَاتِ اَنَّ لَهُمْ اَجْرًا حَسَنًا ﴿٢﴾

2- "Dosdoğru olarak kendi katından imansızları şiddetli bir azap ile korkutmak ve salih ameller işleyen müminlere güzel bir ecir olduğunu müjdelemek için yaptı."

( قيّما ) "*dosdoğru olarak*" sözü, Allah'ın onu tutarsızlık ve çelişkiden koruması demektir. Bu itibarla o, Aziz bir Rab'den gelen aziz bir kitaptır. Şiddetli azaba gelince, bunun dünyada olanı ayrılık, ahirette olanı ise yanmaktır. Bir yoruma göre de söz konusu azap Allah'tan uzaklaşmak ve O'nun gazabıyla müptela olmaktır. Ayetin anlamı, "onları şiddetli bir azapla uyarmak için" şeklindedir.

( وَيُبَشِّرَ الْمُؤْمِنِينَ الَّذِينَ يَعْمَلُونَ الصَّالِحَاتِ اَنَّ لَهُمْ اَجْرًا حَسَنًا ) "*Ve salih ameller işleyen müminlere güzel bir ecir olduğunu müjdelemek için.*"

Salih amel, kabule yarayan ameldir. Bu da emredildiği şekilde yerine getirilendir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Salih amel, içtenlik vasfıyla gerçekleşen ve sahibinin onda samimi olduğu ameldir.

- Salih amel sahibinin, karşılığında dünyalık bir mal almak, bir mevki elde etmek, bir liderlik kapmak ve bu anlama gelen şeyler istemediği ameldir.

Ayette bu kimseler için güzel ecir olduğuna dair müjde yer almıştır. Güzel ecir, sahibinin amel bakımından derinlemesine araştırmaya tabi tutulmamasıdır.

Bu konudaki iki yorum da şöyledir:

- Güzel ecir, amelin miktarından fazla olan ecirdir.

- Güzel ecir, sahibine kusurunu hatırlatmayan ve amelindeki kusurları örten ecirdir.

مَاكِثِينَ فِيهِ اَبَدًا ﴿٣﴾

3- "Ebediyen orada kalacaklardır."

Allah'tan gelen bu müjde, o nimetlerin devamlı ve kesintisiz olmasıdır. Ondan daha büyük müjde ise Allah'ın şu sözüdür:

وَيُنْذِرَ الَّذِينَ قَالُوا اتَّخَذَ اللّٰهُ وَلَدًا ﴿٤﴾

4- "Bir de: 'Allah çocuk edindi' diyenleri korkutmak için bunu yapmıştır."

Onların bu çirkin sözleri, Allah'ın birliğine dair cehaletlerinin sonucudur. Onlar, bu cehaleti geçmişlerinden miras edinmişlerdir. Zaten kurdun yavrusu kurt olur.

مَا لَهُمْ بِهِ مِنْ عِلْمٍ وَلَا لِاٰبَآئِهِمْ كَبُرَتْ كَلِمَةً تَخْرُجُ مِنْ اَفْوَاهِهِمْ
اِنْ يَقُولُونَ اِلَّا كَذِبًا ﴿٥﴾

5- "Bu konuda ne kendilerinin ne de atalarının hiçbir bilgisi yoktur. Ne büyük bir söz (bu) ağızlarından çıkan! Onlar, ancak yalan söylüyorlar."

Söyledikleri söz anlamca değersiz olunca, günah bakımından büyük olmuştur. Kim, hakkında kendisine izin verilmeyen şeyi söylerse bu vasfa maruz kalır. Kim de bu konuda zamansız konuşursa, o kimselere katılmış olur.

فَلَعَلَّكَ بَاخِعٌ نَفْسَكَ عَلٰٓى اٰثَارِهِمْ اِنْ لَمْ يُؤْمِنُوا بِهٰذَا الْحَد۪يثِ اَسَفًا ﴿٦﴾

6- "Demek bu söze (Kur'an'a) inanmazlarsa sen, arkalarından üzülerek adeta kendini tüketeceksin."

Hz. Peygamber (s.a.v.) aşırı şefkatinden dolayı, iman etmeye yanaşmamalarına üzülmüştür. Bunun üzerine Allah, görünürde siteme benzeyen bir ifadeyle durumunu hafifletmiştir. Sanki Allah, şöyle demiştir: Bütün bu üzüntü neden? Bizim hesabımızda onların imana yanaşmamalarının bir etkisi bulunmamakta ve bunun dine bir zararı dokunmamaktadır. O halde bunun sana hiçbir zararı yoktur.

Bir yoruma göre de Allah, Hz. Peygamber'i (s.a.v.) ilahi takdirin nasıl gerçekleştiğine tanık kılmış ve her ne kadar dinde yasaklanmışsa da kâfir olmalarının hakikatte Allah'ın muradına uygun olduğunu ona öğretmiştir.

اِنَّا جَعَلْنَا مَا عَلَى الْاَرْضِ ز۪ينَةً لَهَا لِنَبْلُوَهُمْ اَيُّهُمْ اَحْسَنُ عَمَلًا ﴿٧﴾

7- "İnsanların hangisinin daha güzel amel yaptığını deneyelim diye şüphesiz biz yeryüzündeki şeyleri ona bir zinet yaptık."

Yeryüzündeki şeyler, onun gözle görülen zinetleridir. Yeryüzündekilerden bazı kimseler de onun sırlarla bilinen zinetleridir. Bir de vatanlar sakinleri için değer taşır, meskenlerin süsü de sakinleriyledir.

Bu konudaki diğer yorumlar da şöyledir:

- Dünyanın zineti abidlerle, cennetin zineti de marifet ehli iledir.

- Veliler, yeryüzünün zineti ve yeryüzündekilerin güvencesidir.

- Tevhid nurları, tevhid ehlinin sırlarında parıldadığı zaman her tarafı aydınlıklarıyla aydınlatır.

(لِنَبْلُوَهُمْ اَيُّهُمْ اَحْسَنُ عَمَلًا) *"İnsanların hangisinin daha güzel amel yaptığını deneyelim diye."*

İnsanların amelce en güzel olanı, niyetçe en dürüst ve vicdanen en içten olan kimsedir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- İnsanların amelce en güzel olanı, en çok Allah rızası için davranan kimsedir. Çünkü Allah rızası için davranmayana hiçbir sevap yoktur. Bundan daha yükseği daha doğrusu bundan daha iyisi; içlerinden ameli en güzel olan, yaptığını en çok küçümseyen ve ibadetini en fazla değersiz bulan kimsedir. Çünkü bu kimse, amelindeki kusuru ileri derecede görmekte ve Allah'ın, emrinin hakkı gereğince sahip olduğu hakka oranla kendi yaptıklarını yetersiz kabul etmektedir.

- Kişinin en güzel ameli, amellerine küçümseyici ve değersiz gören bir gözle bakmasıdır.

Şiir:

*Yaptığından daha büyük olan şey*
*Küçümsemesidir yaptığı fiili*

Yani, verdikleri ve harcadıklarından ibaret olan fiilinden daha büyük olan şey, verdiklerini ve cömertliklerini az bulmasıdır ve küçümsemesidir.

وَاِنَّا لَجَاعِلُونَ مَا عَلَيْهَا صَعِيدًا جُرُزًا ﴿٨﴾

8- "Biz, elbette yeryüzündeki her şeyi bir kuru toprak haline getireceğiz."

Yeryüzündeki şeylerin şimdilik onun zineti oluşunun değerini, gelecekte Allah'ın, onları yok edeceğine dair haber alıp götürmektedir.

اَمْ حَسِبْتَ اَنَّ اَصْحَابَ الْكَهْفِ وَالرَّقِيمِ كَانُوا مِنْ اٰيَاتِنَا عَجَبًا ﴿٩﴾

9- "Yoksa sen, Ashab-ı Kehf ve Ashab-ı Rakîm'i mi bizim ibret verici delillerimizden sandın?"

Allah, ( مِنْ اٰيَاتِنَا ) "*delillerimizden*" buyurarak onları kendine izafe etmekle, vasıflarından şaşırtıcılığı gidermiştir. Bu itibarla, âdetin Allah tarafından ters yüz edilmesi, garipsenecek ve normal dışı sayılacak bir durum değildir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Onlar, mağarada bir süre kaldıkları için Allah, onları kaldıkları yere izafe ederek *"Ashab-ı Kehf (Mağaralılar)"* demiştir. Tıpkı bunlar gibi, nefislerin yerleri, kalplerin karar kıldıkları merkezleri, himmetlerin de alanları vardır. Kim nerede kalırsa sonsuza dek orada aranır.

- Ayet, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) Ashab-ı Kehf olayına şaşmaması gerektiğine işaret etmektedir. Zira onlar mağarada yıllarca kalırken, Hz. Peygamber'in (s.av.), gecenin bir bölümünde iki yay aralığı yahut daha yakına kadar Allah'ın huzuruna çıkmasındaki durumu daha da hayret vericidir.

اِذْ اَوَى الْفِتْيَةُ اِلَى الْكَهْفِ فَقَالُوا رَبَّنَٓا اٰتِنَا مِنْ لَدُنْكَ رَحْمَةً وَهَيِّئْ لَنَا مِنْ اَمْرِنَا رَشَدًا ﴿١٠﴾

10- "Hani o gençler, mağaraya sığınmışlardı da: 'Ey Rabbimiz! Bize katından bir rahmet ver ve içinde bulunduğumuz şu durumda bize kurtuluş ve doğruluğa ulaşmayı kolaylaştır' demişlerdi."

Görünürde Allah onları mağaraya sığındırmış, ancak manen iltifat ve inayetinin gölgesinde barındırmıştır. Sonra onları beşerî benliklerinden koparıp gölgesini üzerlerinden kaldırmış ve onlar maddî varlıklarından kaybolmuşken üzerlerinde haller icra etmiştir.

Allah, olaylarının başlangıcını şu sözle haber vermiştir:

( فَقَالُوا رَبَّنَٓا اٰتِنَا مِنْ لَدُنْكَ رَحْمَةً وَهَيِّئْ لَنَا مِنْ اَمْرِنَا رَشَدًا ) *"Ey Rabbimiz! Bize katından bir rahmet ver ve içinde bulunduğumuz şu durumda bize kurtuluşu ve doğruluğa ulaşmayı kolaylaştır."*

Yani onlar, kendi güç ve kuvvetlerinden uzak durmaya başladılar ve samimi bir şekilde Allah'a dönüş yaptılar. Bunun üzerine Allah, dualarını kabul ederek sıkıntılarını üzerlerinden defetti ve onları kendi himayesi altında güzel bir barınakta barındırdı.

فَضَرَبْنَا عَلٰٓى اٰذَانِهِمْ فِي الْكَهْفِ سِنٖينَ عَدَدًا ﴿١١﴾

11- "Bunun üzerine biz de nice yıllar onların kulaklarını kapattık."

Biz kendilerinin farkında olma duyusunu onlardan aldık ve kendilerini maddi varlıklarından kopardık. Bunu, kendilerine bahşettiğimiz Allah'ın birliğini görme keşiflerinin hakikatleri içerisinde onları gark ederek ve Allah'ın samed sıfatının devamlılığına muttali kılarak yaptık.

ثُمَّ بَعَثْنَاهُمْ لِنَعْلَمَ اَيُّ الْحِزْبَيْنِ اَحْصٰى لِمَا لَبِثُٓوا اَمَدًا ﴿١٢﴾

12- "Sonra onları uyandırdık ki, iki zümreden hangisinin bekledikleri süreyi daha iyi hesap ettiğini bilelim."

Yani biz onları, uyanıklık hallerine ve temyiz vasıflarına geri döndürdük. Onları, cem vasfıyla ıslah etmek suretiyle, maddî özelliklerinden koparıp mahviyete erdirdikten sonra, ayrılığın tecellileriyle ayağa kaldırdık.

نَحْنُ نَقُصُّ عَلَيْكَ نَبَاَهُمْ بِالْحَقِّ اِنَّهُمْ فِتْيَةٌ اٰمَنُوا بِرَبِّهِمْ وَزِدْنَاهُمْ هُدًى ﴿١٣﴾

13- "Biz, sana onların haberlerini gerçek olarak anlatıyoruz. Şüphesiz onlar, Rablerine inanmış birkaç genç yiğitti. Biz de onların hidayetlerini artırmıştık."

Onlar, benliklerinden koparıldıkları için Allah kıssalarını onlar adına anlatmayı üzerine almıştır. Bu arada maddî benliğini koruyup bütünüyle ortadan kalkmadığı için kendini ve vasıflarını bizzat kendisi

anlatan ile kendinden geçip mahviyete erdiği ve yerine başkası geçtiği için, diğer birinin vasıtasıyla anlatılan arasında büyük fark vardır. Bir yoruma göre de dostların kıssası, dostlardan dinlendiğinden daha yüksek seviyede ve daha muazzam dinlenemez. Nitekim Allah da: ( نَحْنُ نَقُصُّ عَلَيْكَ ) *"Biz, sana anlatıyoruz"* buyurmaktadır.

Şiir:

*Bana anlattın sevgiliyi ey Sa'd! Ve artırdın*
*Özlemimi, şimdi bana daha çok anlat ey Sa'd!*

( اِنَّهُمْ فِتْيَةٌ اٰمَنُوا بِرَبِّهِمْ ) *"Şüphesiz onlar, Rablerine inanmış birkaç genç yiğitti."*

Bu konuda şu iki yorum yapılmıştır:

- Onların genç diye nitelenmeleri, Rablerine ansızın iman etmiş olmalarından dolayıdır. Onlar, kendilerine vuslat sebepleri gelince beklemeksizin iman etmişlerdir.

- Onlar gençtirler, çünkü Allah rızası için ayağa kalkmışlar ve Allah'a ulaşıncaya kadar yerlerinde duramamışlardır.

( وَزِدْنَاهُمْ هُدًى ) *"Biz de onların hidayetlerini artırmıştık."*

Allah huzuruna vardırmakla onlara lütufta bulunmuş sonra nurlarını artırarak onları sırlarında keşif ehli kılmıştır. Böylece Allah onlara önce açıklamayı bahşetmiş sonra da yakîn ile onları bu mertebenin üstüne çıkartmıştır.

وَرَبَطْنَا عَلٰى قُلُوبِهِمْ اِذْ قَامُوا فَقَالُوا رَبُّنَا رَبُّ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ
لَنْ نَدْعُوَا مِنْ دُونِه۪ٓ اِلٰهًا لَقَدْ قُلْنَٓا اِذًا شَطَطًا ﴿١٤﴾

14- "Ayağa kalkıp da şunları dediklerinde biz, kalplerine güç verdik: 'Rabbimiz, göklerin ve yerin Rabbidir. O'ndan başkasına asla ilâh demeyiz. Yoksa andolsun ki, saçma bir söz söylemiş oluruz.'"

Biz, kesin inançlarının artmasıyla kalplerine o kadar güç verdik ki, marifetlerinin gündüzü kemale erdi, takdirlerinin güneşleri

aydınlandı, içlerinde tereddüde yer kalmadı (…) ve kalplerinin huzuru tamamlandı.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah'ın kalplerine güç vermesi, onları başkalarından ilgisiz kılması ve kendilerine bahşettiği basiret nurlarıyla onları düşünmeye muhtaç olmaktan çıkarması demektir.

- Allah'ın, onların kalplerine güç vermesi, o kalplerde gaybın şahitlerine yer vermesi ve bu sayede onlarda tahmine dayalı kaygıların ve şeytanların vesveselerinin ortaya çıkmamasıdır.

( اِذْ قَامُوا فَقَالُوا رَبُّنَا رَبُّ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ ) *"Ayağa kalkıp da: 'Rabbimiz göklerin ve yerin Rabbidir' dediklerinde."*

Onlar, Allah ile Allah için ayağa kalktılar. Allah ile ayağa kalkan ise Allah'tan başkasından kaybolur.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Her kim, Allah ile ayağa kalkarsa, Allah'a ulaşıncaya kadar oturmaz.

- Şehvetler, onları etkilememiş ve bu sayede Allah ile ayağa kalkmaları gerçekleşmiştir.

( لَنْ نَدْعُوَا مِنْ دُونِهٖٓ اِلٰهًا لَقَدْ قُلْنَآ اِذًا شَطَطًا ) *"O'ndan başkasına asla ilâh demeyiz. Yoksa andolsun ki, saçma bir söz söylemiş oluruz."*

Kim bir şeyi sonradan yaratılanlara bağlarsa, Allah'a ortak koşmuş olur. Kim de olayların Allah'tan başkasının eseri olduğunu söylerse şüphesiz o, Allah'tan başka bir ilâh edinmiş olur.

هٰٓؤُلَٓاءِ قَوْمُنَا اتَّخَذُوا مِنْ دُونِهٖٓ اٰلِهَةًۜ لَوْلَا يَأْتُونَ عَلَيْهِمْ بِسُلْطَانٍ بَيِّنٍۜ
فَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًاۜ ﴿١٥﴾

15- "Şunlar, şu kavmimiz, O'ndan başka tanrılar edindiler. Onlar hakkında açık bir delil getirselerdi ya! Artık kim, Allah'a karşı yalan uydurandan daha zalimdir?!"

Onların bir delilleri olmayınca, iddialarındaki yalancılıkları ortaya çıktı. O halde kim, dediklerine tanıklık edecek delilleri bırakıp söylenenleri reddetmekle yetinirse o, inancında sağlam değildir.

( فَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا ) *"Artık kim, Allah'a karşı yalan uydurandan daha zalimdir?!"*

Kim din hakkında akli bir delille desteklenmeyen bir söz söylerse, o iftiracıdır. Kim, samimi çaba ve mücadelesinin ürünü olmayan bir durum kendine atfederse o da iftiracıdır. Bu tarikata göre; sözünde doğru olan kimse, sırrıyla hakkı duyan sonra da onu sözüyle söyleyen kimsedir.

وَاِذِ اعْتَزَلْتُمُوهُمْ وَمَا يَعْبُدُونَ اِلَّا اللّٰهَ فَاْوُٓا اِلَى الْكَهْفِ يَنْشُرْ لَكُمْ رَبُّكُمْ مِنْ رَحْمَتِهٖ وَيُهَيِّئْ لَكُمْ مِنْ اَمْرِكُمْ مِرْفَقًا ﴿١٦﴾

16- "Madem ki onlardan ve Allah'tan başka tapmakta olduklarından yüz çevirip ayrıldınız, o halde mağaraya çekilin ki, Rabbiniz size rahmetini yaysın ve içinde bulunduğunuz durumda yararlanacağınız şeyler hazırlasın."

Allah'tan başkasından yüz çevirip ayrılmak, Allah'a ulaşmayı sağlar. Daha doğrusu Allah'a ulaşmak ancak Allah'tan başkasından yüz çevirip ayrılmakla gerçekleşir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Ashab-ı Kehf, Allah'tan başka tapılan şeylerden yüz çevirip ayrılınca, Allah onları kendi himayesinin kanatları altında barındırmış ve inayetinin mağarasında onlara bir sığınak hazırlamıştır.

- Her kim tedbirinde kendi tercihinden arınır da halleriyle ilgili olarak Allah'a dönüş yapmada samimi olur ve Allah'tan başka kendi benzerlerinden yardım dilemezse bu takdirde Allah onu, lütuflarının koruması altında barındırır, bütün işlerinde kendisine yeter ve noksansız sahiplenmesiyle ona gölgelerinin serinliğinde gölgeleneceği bir yer hazırlar.

وَتَرَى الشَّمْسَ اِذَا طَلَعَتْ تَزَاوَرُ عَنْ كَهْفِهِمْ ذَاتَ الْيَمِينِ وَاِذَا
غَرَبَتْ تَقْرِضُهُمْ ذَاتَ الشِّمَالِ وَهُمْ فِي فَجْوَةٍ مِنْهُ ذٰلِكَ مِنْ اٰيَاتِ
اللّٰهِ مَنْ يَهْدِ اللّٰهُ فَهُوَ الْمُهْتَدِ وَمَنْ يُضْلِلْ فَلَنْ تَجِدَ لَهُ وَلِيًّا مُرْشِدًا ﴿١٧﴾

17- "Güneş doğduğunda onun, mağaralarının sağ tarafına kaydığını, batarken de onlara dokumadan sol tarafa gittiğini görürdün. Kendileri ise mağaranın geniş bir yerinde idiler. Bu, Allah'ın mucizelerindendir. Allah, kimi hidayete erdirirse işte o, doğru yolu bulandır. Kimi de şaşırtırsa, artık ona doğru yolu gösterecek bir dost bulamazsın."

Onlar mağaranın geniş bir yerinde idiler. Fakat rüzgarlar onların üstüne eserken, güneşin ışınları üzerlerine yayılmıyordu. Bir yoruma göre; güneşin ışıkları, onların ışıklarına göre yetersiz ve sönük kalmakta idi.

Şüphesiz güneşin ışığı, yaratıkları aydınlatan bir aydınlık iken, Ashâb-ı Kehf'in marifetlerinin nuru, kendileriyle Hakk'ın tanındığı ışıklardır. Bu nedenle güneşin ışığı, şekilde ortaya çıkan bir ışık iken, onların nuru, mana âleminde beliren bir ışıktır. Bir de güneşin ışığıyla yaratıklar fark edilirken, kendi nurlarıyla onlar Hakk'ı tanırlardı.

( ذٰلِكَ مِنْ اٰيَاتِ اللّٰهِ ) *"Bu, Allah'ın mucizelerindendir."*

Bu ifade, kıssada normal dışı bir durumun olduğunu göstermektedir ki, böylece bu, velilerin kerametleri cümlesinden olmaktadır. Muhtemeldir ki, güneş ışınları onlara ulaştığı zaman üzerlerinden kaymış ve onlara dokunmadan geçip gitmiştir. Bu durum, bir fiilin âdetin normlarını geçersiz kılan bir fiil olabilmesi için vehbî irfan sahiplerinin öngördüklerinden farklıdır. Hal böyle olunca: *"Şüphesiz güneşin ışığı, onların üzerindeki ışıkta kaybolur"* denilmesi gerçeğe uzak bir yorum olmaz.

( مَنْ يَهْدِ اللّٰهُ فَهُوَ الْمُهْتَدِ وَمَنْ يُضْلِلْ فَلَنْ تَجِدَ لَهُ وَلِيًّا مُرْشِدًا ) *"Allah, kimi hidayete erdirirse işte o, doğru yolu bulandır. Kimi de şaşırtırsa artık ona doğru yolu gösterecek bir dost bulamazsın."*

Allah, kimilerini deliller ve burhanlar ile kimilerini de yakînin keşfiyle hidayete erdirir. Bu nedenle birinci gruptakilerin bilgileri, delil kullanmanın ürünü, diğerlerinin irfanları ise gerçek vuslattır. Böylece onlar delile dayanırlar, bunlar ise tıpkı görenler gibi apaçık bilirler.

( وَمَنْ يُضْلِلْ ) *"Allah, kimi de şaşırtırsa..."*

Yani Allah, kimi mahrumiyet damgasıyla damgalarsa, o kimsenin ne irfanı, ne bilgisi, ne de imanı olur.

وَتَحْسَبُهُمْ اَيْقَاظًا وَهُمْ رُقُودٌ وَنُقَلِّبُهُمْ ذَاتَ الْيَمِينِ وَذَاتَ الشِّمَالِ وَكَلْبُهُمْ بَاسِطٌ ذِرَاعَيْهِ بِالْوَصِيدِ لَوِ اطَّلَعْتَ عَلَيْهِمْ لَوَلَّيْتَ مِنْهُمْ فِرَارًا وَلَمُلِئْتَ مِنْهُمْ رُعْبًا ﴿١٨﴾

18- "Uykuda oldukları halde, sen onları uyanık sanırsın. Biz, onları sağa sola çeviriyorduk. Köpekleri de, mağaranın girişinde iki kolunu uzatmış idi. Onları görseydin, mutlaka onlardan yüz çevirip kaçardın ve gördüklerin yüzünden için korku ile dolardı."

Onlar, beşerî benliklerinden alınıp koparılmış ve keşfine mazhar kılındıkları Hakk'ın varlığında yok edilmişlerdir. Bu nedenle, halkın nazarında zahirleri, kendileriymiş gibi görünmektedir. Hakikatte ise başkası onların yerine geçmiş olup onlar keşfine mazhar kılındıkları hakikatlerde yok olmuşlardır.

( وَنُقَلِّبُهُمْ ذَاتَ الْيَمِينِ وَذَاتَ الشِّمَالِ ) *"Biz, onları sağa sola çeviriyorduk."*

Bu ifade, Allah'ın onları güzel barındırdığını haber vermektedir. Bu, annelerin şefkati gibi olmayıp ondan daha mükemmel, babaların merhameti gibi olmayıp ondan daha üstündür. Zaten muvaffakiyet Allah'ın yardımına bağlıdır.

Bir yoruma göre de tevhid ehlinin temel vasfı, Allah'ın, Ashab-ı Kehf'in vasfında ifade buyurduğu şu sözdeki gibidir: ( وَتَحْسَبُهُمْ اَيْقَاظًا وَهُمْ رُقُودٌ )

"*Uykuda oldukları halde, sen onları uyanık sanırsın.*" Buna göre onlar, farkın tezahürleri itibariyle göründükleri gibidirler. Lakin cem gözüyle bakıldığında, sırlarında sahip kılındıkları keşif sebebiyle onlar tekellüfte bulunmaksızın Allah, hallerini üzerlerinde icra etmektedir. Doğrusu onlar, içinde bulundukları durumun farkında olmaksızın, tasarruflarını onlar adına başka birinin -Allah'ın- yerine getirdiğini ispatlamaktadırlar ki, konuşmalarında da durumları aynıdır.

( وَكَلْبُهُمْ بَاسِطٌ ذِرَاعَيْهِ بِالْوَصِيدِ ) "*Köpekleri de mağaranın girişinde iki kolunu uzatmış idi.*"

Allah, onlardan söz ettiği gibi, köpeklerinden de söz etmiştir. Kim ki, birini içten severse o da hem onu hem de ona ait olan şeyi sever.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bir köpek, Allah'ın sevdikleriyle beraber birkaç adım attığı için kıyamete kadar çocuklar, -daha doğrusu Allah mübarek sözüyle: "*Köpekleri de mağaranın girişinde iki kolunu uzatmış idi*" diyeceklerdir. Hal böyleyken, şimdi, gençlik zamanından yaşlılık zamanına kadar velileriyle beraber olan bir Müslüman'ı Allah'ın eli boş çevirmesini düşünebilir misin? Şüphesiz Allah bunu yapmaz.

- Tefsir kitaplarında yer aldığına göre; beraberinde köpek olduğu halde onlara katılan çobana Ashab-ı Kehf: "Bu köpeği geri çevirerek bizden uzaklaştır" dediler. Çoban: "Bunu yapmam mümkün değildir, çünkü onu ben çağırdım" dedi.

- Allah köpeği konuşturdu ve o: "Neden bana vuruyorsunuz?" dedi. "Bizden ayrılıp dönmen için" dediler. Bunun üzerine köpek dedi ki: "Dönmem mümkün değildir, çünkü beni o terbiye etti."

- Bir köpek, elini velilerin eşiğine uzattığı için kıyamet gününe kadar: "*Köpekleri de mağaranın girişinde iki kolunu uzatmış idi*" denilecektir. Acaba bir Müslüman elini elli yıl o eşiğe doğru yükselttiği zaman Allah onu boş çevirir mi? Bu olmayacaktır.

- Köpek onlara arkadaş olunca, necaset vasfı ve değerinin düşük oluşu artık ona zarar vermemiştir.

- Allah, Ashab-ı Kehf'in vasfı hakkında: "*Bazıları: 'Onlar üç kişidirler, dördüncüleri köpekleridir' diyeceklerdir. Yine: 'Beş kişidirler, altıncıları köpekleridir' diyeceklerdir*" (Kehf,18/22) buyururken bu ümmetin vasfı hakkında şöyle buyurmuştur: ( مَا يَكُونُ مِنْ نَجْوٰى ثَلٰثَةٍ اِلَّا هُوَ رَابِعُهُمْ وَلَا خَمْسَةٍ اِلَّا هُوَ سَادِسُهُمْ ) "*Üç kişi gizli konuşmaz ki, dördüncüleri Allah olmasın. Beş kişi gizlice konuşmaz ki, altıncıları O olmasın.*" (Mücâdele, 58/7) Bu iki durum arasında ise büyük bir fark vardır.

- Herkese layık olduğu duruma ve konuma göre muamele edilir. Bu çerçevede Allah velileri anlatırken: "*Biz, onları sağa sola çeviriyorduk*", köpeği anlatırken ise: "*Köpekleri de mağaranın girişinde iki kolunu uzatmış idi*" buyurmuştur.

- Allah, tıpkı kendilerinden söz etmeyi tekrarladığı gibi, köpeklerinden söz etmeyi de tekrarlamıştır.

Hikâyelerinde anlatıldığına göre; köpek onlardan ayrılıp dönmeyince: "Köpek bizden ayrılmazsa, ayak izleriyle izlenmememiz için tek çaremiz, onu taşımamızdır" diyerek onu taşıdılar. Böylece onlar, işin başında köpeğin başına bela iken sonunda binitleri oldular. İşte dostların peşinden giden böyledir. Yine hikâyelerinde deniliyor ki, Allah köpeği onlarla konuşturdu ve köpeğin konuşmasıyla kalplerine güç verdi. Şöyle ki, konuşmasını duymakla inançları artmış oldu.

Köpek: "Neden bana vuruyorsunuz?"

Onlar: "Dönüp gitmen için."

Köpek: "Siz, gelecekte başınıza bir belanın gelmesinden korkarken, benim başıma şimdiden bela olmuş durumdasınız. Sonra başınıza gelmesinden korktuğunuz bela düşmanlardan iken benim belam, veli olan sizlerdendir."

Bir yoruma göre de köpek yerinden ayrılmayınca ve haddini aşmayıp ellerini eşiğin üzerine koyunca velilerle beraber kaldı. İşte hizmetin adabı vuslatı böyle kalıcı kılar.

(لَوِ اطَّلَعْتَ عَلَيْهِمْ لَوَلَّيْتَ مِنْهُمْ فِرَارًا) *"Onları görseydin, mutlaka onlardan yüz çevirip kaçardın."*

Bu hitap, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) olmakla beraber ondan amaçlanan başkalarıdır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Sen, sen olarak onları görseydin, mutlaka onlardan yüz çevirip kaçardın. Fakat eğer onları, Allah'ın kendilerini koruduğu noktadan görseydin, istifini bozmazdın.

- Eğer onları görseydin, yüksek makamından onların makamına inmekten kaçmak üzere onlardan yüz çevirirdin. Zengin kimse, fakirin konumuna düşürüldüğü zaman ondan kaçar ve bununla huzur bulmaz.

(وَلَمُلِئْتَ مِنْهُمْ رُعْبًا) *"Ve gördüklerin yüzünden için korku ile dolardı."*

Bu, sahip olduğun yüksek konumun elinden alınıp onların seninkinden aşağıda olan durumuna düşürülmen şeklinde olurdu.

- Onlardan kaçardın çünkü sen bizden başkasını görmek istemezsin.

وَكَذٰلِكَ بَعَثْنَاهُمْ لِيَتَسَٓاءَلُوا بَيْنَهُمْ قَالَ قَٓائِلٌ مِنْهُمْ كَمْ لَبِثْتُمْ
قَالُوا لَبِثْنَا يَوْمًا اَوْ بَعْضَ يَوْمٍ قَالُوا رَبُّكُمْ اَعْلَمُ بِمَا لَبِثْتُمْ
فَابْعَثُٓوا اَحَدَكُمْ بِوَرِقِكُمْ هٰذِهٖٓ اِلَى الْمَدِينَةِ فَلْيَنْظُرْ اَيُّهَٓا اَزْكٰى
طَعَامًا فَلْيَأْتِكُمْ بِرِزْقٍ مِنْهُ وَلْيَتَلَطَّفْ وَلَا يُشْعِرَنَّ بِكُمْ اَحَدًا ١٩

19- "Böylece biz, birbirlerine sorsunlar diye, onları uyandırdık. İçlerinden biri: 'Ne kadar kaldınız?' dedi. Bazıları: 'Bir gün ya da bir günden az' dediler. Diğerleri de şöyle dediler: 'Ne kadar kaldığınızı Rabbiniz daha iyi bilir. Şimdi siz, birinizi şu gümüş para ile kente gönderin de baksın; hangisinin yiyeceği daha temiz ve lezzetli ise ondan size bir rızık getirsin. Ayrıca çok nazik davransın ve sizi hiçbir kimseye sakın sezdirmesin.' "

Onlar kaldıkları süreyi azımsadılar. Oysa uzun süre kalmışlardı. Fakat kendilerinden habersiz kılınmışlardı ve hallerinin ayrıntısına dair bilgileri bulunmamakta idi.

Şiir:

*Bilmem ben gecemin uzayıp uzamadığını*
*Nasıl bilir ki bunu kavrulmakta olan kimse*
*Eğer verseydim kendimi gecemin uzamasına*
*Ve gözleseydim yıldızları, çiğnemiş olurdum kuralı*

Bir yoruma göre de vuslat günleri uzun da sürse onların nazarında azdır. Eğer süreyi çok bulsalardı, vuslat günleri kısa sürerdi.

Şiir:

*Sarhoşlukla geçmekte sabahın da akşamın da*
*Mutlusun sen, kısadır oysa sevinç günleri*

( قَالُوا رَبُّكُمْ اَعْلَمُ بِمَا لَبِثْتُمْ ) *"Dediler ki: 'Ne kadar kaldığınızı Rabbiniz daha iyi bilir.'"*

Çünkü yerleştiğiniz makamı size tahsis eden O'dur.

( فَابْعَثُوٓا اَحَدَكُمْ بِوَرِقِكُمْ هٰذِهٖٓ اِلَى الْمَدٖينَةِ فَلْيَنْظُرْ اَيُّهَآ اَزْكٰى طَعَامًا فَلْيَأْتِكُمْ بِرِزْقٍ مِنْهُ ) *"Şimdi siz, birinizi şu gümüş para ile kente gönderin de baksın; hangisinin yiyeceği daha temiz ve lezzetli ise ondan size bir rızık getirsin."*

Onlar, kendilerinden habersiz kılındıkları zaman yeme, içme ve nefse ait diğer herhangi bir şeye dair talepleri olmamıştır. Şuurlarına kavuşturulunca durumlarını fark eder etmez yiyecek tedbirine başlamışlardır. Bu da yaratılışın yemeyle başladığının zorunluluğunu göstermektedir.

( وَلْيَتَلَطَّفْ وَلَا يُشْعِرَنَّ بِكُمْ اَحَدًا ) *"Ayrıca çok nazik davransın ve sizi hiçbir kimseye sakın sezdirmesin."*

Onlar, kendi aralarında ahlak güzelliğini ve güzel nezaketi tavsiye ettiler. Yani, kendisinden bir şey satın alacağı kimseye nazik davransın.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Kendilerine yiyecek satın alacak kişiye, onlara en yumuşak ve en temiz şeyi getirmesini tavsiye ettiler. Marifet ehlinden olana da sert ve kaba giyecek ile kalitesiz yiyecek uygun düşmez.

- Nefisle mücadele edenlerin ve riyazet sahiplerinin yiyecek ve giyecekleri sert ve kabadır. Marifet mertebesine ulaşan kimseye ise ancak her türlü yumuşak yiyecek ve giyecek uygun düşer ve o, ancak güzel olanla ünsiyet peyda eder.

اِنَّهُمْ اِنْ يَظْهَرُوا عَلَيْكُمْ يَرْجُمُوكُمْ اَوْ يُعِيدُوكُمْ فِي مِلَّتِهِمْ وَلَنْ
تُفْلِحُوٓا اِذًا اَبَدًا ﴿٢٠﴾

20- "Çünkü onlar, sizi ele geçirirlerse, ya taşlayarak öldürürler yahut kendi dinlerine döndürürler. O zaman da bir daha asla kurtuluşa eremezsiniz."

Onlar, kendi aralarında birbirlerine, sırlarını yabancılardan gizli tutmayı tavsiye ettiler. Allah burada, başkalarının onlardan ve hallerinden haberdar olmaları halinde, öldürmek, dövmek veya yapabildikleri başka her türlü hareketle onlara aşırı derecede karşı çıkacaklarını ve onları kurtuldukları duruma döndürmekten başka bir durumu kabul etmeyeceklerini bildirmektedir, Başkasının da canı yanmadıkça canı yanan kimsenin içi rahat etmez.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Sırları başkalarından korumak, iyilerin şanındandır.

- Kim, düşmanlarına sırrını açarsa, kendi iradesiyle zararını celp etmiş ve kendisini sevindiren şeyi yitirmiş olur.

وَكَذٰلِكَ اَعْثَرْنَا عَلَيْهِمْ لِيَعْلَمُوٓا اَنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّ وَاَنَّ السَّاعَةَ لَا
رَيْبَ فِيهَا اِذْ يَتَنَازَعُونَ بَيْنَهُمْ اَمْرَهُمْ فَقَالُوا ابْنُوا عَلَيْهِمْ بُنْيَانًا رَبُّهُمْ
اَعْلَمُ بِهِمْ قَالَ الَّذِينَ غَلَبُوا عَلٰٓى اَمْرِهِمْ لَنَتَّخِذَنَّ عَلَيْهِمْ مَسْجِدًا ﴿٢١﴾

21- "Böylece biz, insanları onların halinden haberdar ettik ki, Allah'ın vaadinin hak olduğunu ve kıyametin gerçekleşmesinde de hiçbir şüphe olmadığını bilsinler. Hani onlar, aralarında onların durumunu tartışıyorlardı. Bazıları: 'Onların üstüne bir bina yapın, Rableri onların halini daha iyi bilir' dediler. Duruma hakim olanlar ise: 'Üzerlerine mutlaka bir mescit yapacağız' dediler."

Allah, hal ehline Ashab-ı Kehf'in kıssasını açıklarken, onların durumlarını kendilerinden sonra gelenler için ibret kılmıştır. Böylece insanlar, onları gördüler ve mucize olan bu durumu açıkça gördüklerinde, Allah'a iman edenlerin inancı artmış oldu. Sonra Allah onları, üzerinde bulundukları hale döndürdü. Söz konusu halde iken onlar, Hakk'ın iradesi doğrultusunda temyizden alıkonulmuş, ilahî tasarruf altında halden hale girmiş, sahip kılındıkları keşif hali içerisinde güvence altına alınmış ve Hakk'ın varlığında yok edilmişlerdir.

سَيَقُولُونَ ثَلٰثَةٌ رَابِعُهُمْ كَلْبُهُمْ وَيَقُولُونَ خَمْسَةٌ سَادِسُهُمْ كَلْبُهُمْ رَجْمًا بِالْغَيْبِ وَيَقُولُونَ سَبْعَةٌ وَثَامِنُهُمْ كَلْبُهُمْ قُلْ رَبّ۪ٓي اَعْلَمُ بِعِدَّتِهِمْ مَا يَعْلَمُهُمْ اِلَّا قَل۪يلٌ فَلَا تُمَارِ ف۪يهِمْ اِلَّا مِرَٓاءً ظَاهِرًا وَلَا تَسْتَفْتِ ف۪يهِمْ مِنْهُمْ اَحَدًا ﴿٢٢﴾

22- "Bazıları bilmedikleri şey hakkında atıp tutarak: 'Onlar üç kişidirler, dördüncüleri köpekleridir' diyecekler. Yine: 'Beş kişidirler, altıncıları köpekleridir' diyecekler. Şöyle de diyecekler: 'Yedi kişidirler, sekizincileri köpekleridir.' De ki: 'Onların sayısını Rabbim daha iyi bilir. Zaten onları pek az kimse bilir. O halde onlar hakkında Kur'an'daki apaçık tartışmayı aktarmaktan başka tartışmaya girme ve bunlar hakkında onlardan hiçbirine bir şey sorma.'"

Allah insanların bilgilerinin Ashab-ı Kehf'in sayısını bilmeye yetmediğini bildirmektedir. Bu itibarla, Allah'tan başka hiç kimsenin muttali olamadığı iç dünyaları ve kalplerindeki hallere halkın muttali

olması nasıl söz konusu olur! Sayıları insanlara karışık geldi. Oysa sayıları zorunlu olarak bilinir. Onlarsa görülmekle anlaşılmazlar.

Bir yoruma göre de köpek mutlu olmuştur. Çünkü Allah, onları tekrar andıkça köpeği de onlarla birlikte tekrar anmıştır. Onları anlattığında da köpeği aralarında saymıştır.

( قُلْ رَبّ۪ٓي اَعْلَمُ بِعِدَّتِهِمْ مَا يَعْلَمُهُمْ اِلَّا قَل۪يلٌ ) *“Onların sayısını Rabbim daha iyi bilir. Zaten onları pek az kimse bilir.”*

Allah’ın velilerinden oldukları için onları, sadece O’nun has kulları ile halde onlara yakın olanlar bilir. Onlar, ilahi gayret ve barındırmanın sütresi altında saklıdırlar. Onlardan yabancılar haberdar olmaz ve onları pek az kimse bilir. Çünkü Allah, velilerini yabancılardan gizler. Bu nedenle onları, sadece hakikat ehli kimseler bilir. Yabancılar, yakınları tanımaz. Yakınlara ise yakınların durumu karışık gelmez. Nitekim bu sufi taifesinin şeyhleri de benzer şekilde şöyle demişlerdir: “Sufiler bir evin fertleridir, aralarına onlardan başkası giremez.”

( وَلَا تَسْتَفْتِ ف۪يهِمْ مِنْهُمْ اَحَدًا ) *“Ve bunlar hakkında onlardan hiçbirine bir şey sorma.”*

Nasıl ki onların haline uzak olan kimse onları tanımıyorsa, aynı şekilde onları tanımayanların da kendileriyle ilgili hükümlere aklı ermez. O halde halleri hakkında bilgisiz olan kimseye onları sormak doğru olmaz. Kalbinde dostların sevgisine yer olmayan kimsenin dilinde de onları anmaya yer olmaz.

وَلَا تَقُولَنَّ لِشَا۬يْءٍ اِنّ۪ي فَاعِلٌ ذٰلِكَ غَدًا ﴿٢٣﴾ اِلَّٓا اَنْ يَشَٓاءَ اللّٰهُ وَاذْكُرْ
رَبَّكَ اِذَا نَس۪يتَ وَقُلْ عَسٰٓى اَنْ يَهْدِيَنِ رَبّ۪ي لِاَقْرَبَ مِنْ هٰذَا رَشَدًا ﴿٢٤﴾

23, 24- “Hiçbir şey hakkında sakın: ‘Yarın şunu yapacağım’ deme! Ancak: ‘Allah dilerse yapacağım’ de. Unuttuğun zaman Rabbini an ve: ‘Umarım Rabbim beni, bundan daha doğru olana ulaştırır’ de.”

Olup bitenler Allah'ın iradesinden sadır olduğuna göre; kim Allah'ı tanırsa, Allah'tan başkasıyla gerçekleşmeyeceğini bildiği şeyi kendi eseri saymaz.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kim Allah'ı tanırsa, O'nun iradesi yanında kendi tercihi geçersiz olur ve kendisine ait hükümler, Allah'ın hükmünü müşahededede kaybolur.

- Mümin, geleceğinde ibadete sarılmaya kalbiyle karar verir, lakin sırrıyla da kendi güç ve kuvvetinden sıyrılır. Bu arada din, müminden kalbinin ibadetinde ayakta olmasını talep etmekte, Hak da taksimatının icrası altında müminin sırrını, kendisinin sevdiğine bahşettiği nimeti görmenin sınırında tutmaktadır.

( وَاذْكُرْ رَبَّكَ اِذَا نَسِيتَ وَقُلْ عَسٰى اَنْ يَهْدِيَنِ رَبّ۪ي لِاَقْرَبَ مِنْ هٰذَا رَشَدًا ) *"Unuttuğun zaman Rabbini an ve: 'Umarım Rabbim beni, bundan daha doğru olana ulaştırır' de."*

Eğer sende -katkın olmaksızın- unutkanlık belirtileri ortaya çıkarsa, Rabbini anmak suretiyle niyetini, gaflete sebep olan hususlardan arındır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Hakikatte nefsinin seni zikrinin müşahedesinde gark olmaktan alıkoymakta olduğunu unuttuğun zaman Rabbini an.

- Rabbini anmayı unuttuğun zaman, Rabbini an. Çünkü kul, yaptığı zikri gördüğü zaman bu, zikrinde bir afete dönüşür.

- Zikirden nasibini unuttuğun zaman Rabbini an.

- Rabbinden başkasını unuttuğun zaman Rabbini an.

وَلَبِثُوا ف۪ي كَهْفِهِمْ ثَلٰثَ مِائَةٍ سِن۪ينَ وَازْدَادُوا تِسْعًا ﴿٢٥﴾

25- "Onlar, mağaralarında üç yüz yıl kaldılar. Buna dokuz daha eklediler."

Onlar kendilerini fark etmede şuurdan yoksun bırakılmışlardı. Bu nedenle, sürelerinin uzamasını fark edemediler. Bir atasözünde: *"Sevinç günleri kısadır"* denilmiştir. Nitekim sevinç halinde asırlar aylar gibi, sıkıntılarda da aylar asırlar gibidir.

Şiir:

*Sayıyorum geceleri ben peyderpey*
*Oysa saymazdım geceleri ben önceden*

قُلِ اللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا لَبِثُوا لَهُ غَيْبُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ اَبْصِرْ بِهٖ
وَاَسْمِعْ مَا لَهُمْ مِنْ دُونِهٖ مِنْ وَلِيٍّ وَلَا يُشْرِكُ فٖي حُكْمِهٖٓ اَحَدًا ﴿٢٦﴾

26- "De ki: 'Kaldıkları süreyi Allah daha iyi bilir. Göklerin ve yerin gaybını bilmek O'na aittir. O, ne güzel görür! O ne güzel işitir! Onların, O'ndan başka hiçbir dostu da yoktur. O, hükmüne hiçbir kimseyi ortak etmez.'"

Kim, Allah ile meşgul olduğu için günlerini saymazsa, Allah onun kendisi için olan nefeslerini sayar. Allah şöyle buyurmuştur: (وَاَحْصٰى كُلَّ شَيْءٍ عَدَدًا) *"O, her şeyi inceden inceye sayıp dökmüştür."* (Cin, 72/28)

وَاتْلُ مَٓا اُو۫حِيَ اِلَيْكَ مِنْ كِتَابِ رَبِّكَ لَا مُبَدِّلَ لِكَلِمَاتِهٖ وَلَنْ تَجِدَ
مِنْ دُونِهٖ مُلْتَحَدًا ﴿٢٧﴾

27- "Rabbinin kitabından sana vahyedileni oku. O'nun kelimelerini değiştirecek hiçbir kimse yoktur. O'ndan başka asla bir sığınak da bulamazsın."

Üzerinde haller çeşitlendiği zaman, seni haberdar kıldığımız olaylarla teselli bul. Şüphesiz sevenlerin mesajlarında şifa vardır. Çünkü onlar, sevenlerden sevenlere olan hitaplardır.

(لَا مُبَدِّلَ لِكَلِمَاتِهٖ وَلَنْ تَجِدَ مِنْ دُونِهٖ مُلْتَحَدًا) *"O'nun kelimelerini değiştirecek hiçbir kimse yoktur. O'ndan başka asla bir sığınak da bulamazsın."*

Yani Allah'ın hükmünde hiçbir değişiklik olamaz. Bu nedenle Allah kimi uzaklaştırırsa onun için asla kabul yoktur. Kimi de yaklaştırırsa ona vuslat yoktur. Kimi kabul ederse onun için reddedilmek yoktur. Kimi yakın tutarsa onun için engellenmek yoktur.

وَاصْبِرْ نَفْسَكَ مَعَ الَّذِينَ يَدْعُونَ رَبَّهُمْ بِالْغَدٰوةِ وَالْعَشِيِّ يُرِيدُونَ وَجْهَهُ وَلَا تَعْدُ عَيْنَاكَ عَنْهُمْ تُرِيدُ زِينَةَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَلَا تُطِعْ مَنْ اَغْفَلْنَا قَلْبَهُ عَنْ ذِكْرِنَا وَاتَّبَعَ هَوٰيهُ وَكَانَ اَمْرُهُ فُرُطًا ﴿٢٨﴾

28- “Sabah akşam Rablerine, O'nun rızasını dileyerek dua edenlerle birlikte nefsini sabırlı tut. Dünya hayatının zinetini arzu edip de gözlerini onlardan ayırma. Kalbini bizi anmaktan gafil kıldığımız, boş arzularına uymuş ve işi hep aşırılık olmuş kimselere boyun eğme.”

Burada Allah'ın: “Kalbini sabırlı tut” demeyip: “Nefsini sabırlı tut” demesi, Hz. Peygamber'in (s.av.) kalbinin Hak ile birlikte olmasından dolayıdır. Böylece Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) açıktan onlarla beraber olmasını emrederken, sır teatisinde kalbini sadece kendine bağlamıştır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- ( وجهه يريدون ) *“O'nun rızasını dilerler”* sözü, gramer bakımından “hâl” olmak üzere ( مريدين وجهه ) “O'nun rızasını dileyerek” anlamındadır. Bu da Rablerine dualarının sabah akşam devam ettiğine ve iradenin sürekliliğine işaret etmektedir.

- Rablerinin rızasını dilemeleri sebebiyle biz, dünyalarında onları büyük yardımlarımızla, ahiretlerinde de iyiliklerimizle barındırdık.

- Rablerinin rızasını dilemeleri sebebiyle Allah, örtülerini kaldırdı, niteliklerini açığa çıkardı ve onları saklamış olmasının ardından ifşa etti.

Şiir:

*Açtık senin için örtüyü ve dedik ki;*
*"Evet" ve faş ettik örtülü olanı*

- İthamlar ortadan kalkınca bu tam ve sağlam iradeye sahip oldular, her türlü yaratığa dönük irade ve sevgiden kurtuldular.

- Hz. Peygamber'in (s.a.v.) heybetine riayet etmeleri ve Hakk'ın kapısına olan saygıları sebebiyle dilleri, bu cümleyle istekte bulunmada yetersiz kalınca Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.): ( وَاصْبِرْ نَفْسَكَ ) "*Nefsini sabırlı tut*" şeklindeki sözü ve şu sözüyle emir buyurdu:

( وَلَا تَعْدُ عَيْنَاكَ عَنْهُمْ تُرِيدُ زِينَةَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ) "*Dünya hayatının zinetini arzu edip de gözlerini onlardan ayırma*."

Yani gözlerini onların üzerinden kaldırma ve bakışını onlardan ayırma! Bir yoruma göre de onlar kalpleriyle Allah'a bakınca Allah, peygamberine gözlerini üzerlerinden kaldırmamasını emretti. Bu, dünyadaki karşılıktır. Bu emirdeki işaret ise şöyledir: Sanki Allah şöyle buyurdu: *"Bugün onlara bakmanı, kendileri için bize dönük bir vesile ve bugün bize bakamayışlarının telafisi kıldık. O halde sen, bugün onlardan bakışını kesme. Çünkü yarın onları, bize bakmaktan alıkoymayacağız."*

( وَلَا تُطِعْ مَنْ اَغْفَلْنَا قَلْبَهُ عَنْ ذِكْرِنَا وَاتَّبَعَ هَوٰيهُ وَكَانَ اَمْرُهُ فُرُطًا ) "*Kalbini bizi anmaktan gafil kıldığımız, boş arzularına uymuş ve işi hep aşırılık olmuş kimselere boyun eğme.*"

Bunlar, Hz. Peygamber'den (s.a.v.) kendileri için meclisini fakirlerden boşaltmasını ve geldikleri gün onları meclisinden kovmasını istemiş olanlardır. Bu arada, kalplerinin Allah'ı anmaktan gafil kılınması, kendilerini ilgilendirmeyen işlerle meşgul edilmeleri demektir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kalplerinin Allah'ı anmaktan gafil kılınması, nimetle meşgul olup nimetin sahibi olan Allah'ı görmekten habersiz kalacak kadar meşgul kılınmaları demektir.

- Bunlar, Allah'ın, kalplerini ayrılığa sürüklediği kimselerdir. Böylece onlar, retçi duygular içerisinde sabit kılınmış ve Mevlâlarını görmekten engellenmişlerdir.

- Biz, hakikati unutma belasına maruz kalanları, bizi anmaktan gafil kıldık. Bir de onlar ne başlarına gelenlere ne de kaçırdıkları fırsatlara üzülürler.

- Gaflet, zamanı bir farzı veya bir nafileyi yerine getirmekten başka şeylerde harcamaktır.

وَقُلِ الْحَقُّ مِنْ رَبِّكُمْ فَمَنْ شَٓاءَ فَلْيُؤْمِنْ وَمَنْ شَٓاءَ فَلْيَكْفُرْ اِنَّٓا اَعْتَدْنَا لِلظَّالِمِينَ نَارًا اَحَاطَ بِهِمْ سُرَادِقُهَا وَاِنْ يَسْتَغِيثُوا يُغَاثُوا بِمَٓاءٍ كَالْمُهْلِ يَشْوِي الْوُجُوهَ بِئْسَ الشَّرَابُ وَسَٓاءَتْ مُرْتَفَقًا ﴿٢٩﴾

29- "De ki: 'Hak, Rabbinizdendir. Artık dileyen iman etsin, dileyen inkâr etsin.' Biz, zalimlere öyle bir ateş hazırladık ki, onun alevden duvarları kendilerini çepeçevre kuşatmıştır. Susuzluktan feryat edip yardım dilediklerinde maden eriyiği gibi yüzleri yakıp kavuran bir su ile kendilerine yardım edilir. O ne kötü bir içecektir. Cehennem ne korkunç bir yaslanacak yerdir!"

Ey Muhammed! De ki: "Hak olan, size Rabbinizden gelendir ve doğru söz de O'nundur. O halde dileyen iman etsin, dileyen inkâr etsin." Bu, en ağır tehdit ifadesidir. Yani, eğer siz iman ederseniz, imanınızın faydaları sadece sizin olur. Şayet iman etmeyi reddederseniz, bu takdirde de inkârın azabı size mahsus olur. Allah (c.c.) ise üstündür. Bütün varlıklar tevhid ehli oldukları zaman, imanları sebebiyle Allah'a bir katkı yansımaz. Hepsi inkâr ettikleri zaman da küfürlerinden Allah'a bir kusur bulaşmaz.

(اِنَّٓا اَعْتَدْنَا لِلظَّالِمِينَ نَارًا اَحَاطَ بِهِمْ سُرَادِقُهَا وَاِنْ يَسْتَغِيثُوا يُغَاثُوا بِمَٓاءٍ كَالْمُهْلِ يَشْوِي الْوُجُوهَ بِئْسَ الشَّرَابُ وَسَٓاءَتْ مُرْتَفَقًا) *"Biz, zalimlere öyle bir ateş hazırladık ki, onun alevden duvarları kendilerini çepeçevre kuşatmıştır. Susuzluktan feryat edip yardım dilediklerinde maden eriyiği gibi yüzleri*

*yakıp kavuran bir su ile kendilerine yardım edilir. O ne kötü bir içecektir. Cehennem ne korkunç bir yaslanacak yerdir!"*

Onların en büyük azabı, elden kaçırdıkları hakka hasret çekmeye fırsat bulmamaları için Allah'ın onları acıyla uğraştırmasıdır. Zira şayet bunu bilselerdi, belki de Allah onlara merhamet ederdi. Bir de Allah (c.c.), kendisi için itham edilen birini cezalandırmayacak kadar yücedir.

Bir yoruma göre de eğer onlar: ( وَسَآءَتْ مُرْتَفَقًا ) "*Cehennem ne korkunç bir yaslanacak yerdir!"* diyenin kim olduğunu bilselerdi bu, onlar için bir saatlik bir teselli olabilirdi. Ne var ki onlar, bunu söyleyenin kadrini bilmezler. Yoksa bu, onlar için bir nevi mertebe olurdu ki ayetin metni bu anlama gelmeyecek bir inceliktedir.

اِنَّ الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ اِنَّا لَا نُض۪يعُ اَجْرَ مَنْ اَحْسَنَ
عَمَلًا ﴿٣٠﴾ اُو۬لٰٓئِكَ لَهُمْ جَنَّاتُ عَدْنٍ تَجْر۪ي مِنْ تَحْتِهِمُ الْاَنْهَارُ يُحَلَّوْنَ
ف۪يهَا مِنْ اَسَاوِرَ مِنْ ذَهَبٍ وَيَلْبَسُونَ ثِيَابًا خُضْرًا مِنْ سُنْدُسٍ وَاِسْتَبْرَقٍ
مُتَّكِـ۪ٔينَ ف۪يهَا عَلَى الْاَرَٓائِكِ نِعْمَ الثَّوَابُ وَحَسُنَتْ مُرْتَفَقًا ﴿٣١﴾

30, 31- "Gerçek şu ki, iman edip iyi işler yapanlara gelince, elbette biz, iyi iş yapanların ecrini zayi etmeyiz. İşte onlar için içlerinden ırmaklar akan Adn cennetleri vardır. Orada tahtlar üzerine kurularak altın bileziklerle süslenecekler, ince ve kalın ipekten yeşil giysiler giyeceklerdir. O ne güzel karşılıktır! Cennet de ne güzel bir yaslanacak yerdir."

Cennet ehline bahçeleri helal ve güzel olmuştur. Cehennemlikleri ise cehennemin çadırları kuşatmıştır. Bu arada Allah (c.c.), bunları cezalandırmaktan kendisine bir şeyin veya şunlara nimet vermekten kendisine bir faydanın yansımasından münezzehtir. Allah'ın birliği yüce, samediyeti mukaddestir.

Her kimin üstüne bizim yolumuzda bir toz konarsa, o kimsenin üstüne üzüntü tozu düşmez. Kim bize doğru bir adım atarsa,

katımızda bir itibar kazanır. Kim ayağını bize doğru harekete geçirirse, daha önce yaptığı günahlarını bağışlarız. Kim ellerini bize doğru açarsa ona bolca rahatlık veririz. Kim keremimizin eşiğine sığınırsa, onu nimetlerimizin gölgesinde barındırırız. Kim bizim yolumuzda bir ıstırap çekerse, biz lütfumuzun yurdunda kendisine bir istirahat yeri hazırlarız.

(اِنَّا لَا نُضِيعُ اَجْرَ مَنْ اَحْسَنَ عَمَلًا) *"Elbette biz, iyi iş yapanların ecrini zayi etmeyiz."*

İşin en güzeli, içtenlik koşullarıyla çerçevelenmiş olanıdır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- İşi güzel yapan bunu, iyiliğini görme duygusundan arınarak yapar.

- İşi güzel yapan, niyetini her türlü dünyalık nasip ve kısmetten arındıran kimsedir.

- İşi güzel yapmak, ihtiyacın sadece Allah'ın lütfu dahilinde karşılanacağını düşünmektir. Bu çerçevede sen, Allah'a yönelmede, O'nun lütfunu vesile edinmede ve kendi güç ve kuvvetinden sıyrılarak, ilahi kudretinden sana verdiği nimetlere ulaşmada samimi olduğun zaman O'nun güzel iltifatını ve bolca nimetini hak etmiş olursun.

(اُولٰٓئِكَ لَهُمْ جَنَّاتُ عَدْنٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهِمُ الْاَنْهَارُ) *"İşte onlar için içlerinden ırmaklar akan Adn cennetleri vardır."*

Onlar, cennetlik kimseler olup rahat hayat, nasibin getirdiği saadet ve noksansız lütuf içerisindedirler. Vuslatın güzel elbiselerini giyer ve yakınlık tacıyla taçlandırılırlar. Yaygıların üzerinde taşınır, tahtlara kurulur ve ünsiyet reyhanlarından koklarlar. Yakınlık makamında yaşarlar ve kendilerine sevgi şarabından içirilir. Yakınlık eliyle, Hakk'ın onlara bahşettiği şeyleri vasıtasız alırlar ve Allah, onlara kalplerini, bütün yaratıkların sevgisinden temizleyecek tertemiz bir içecek içirir.

(مُتَّكِئِينَ فِيهَا عَلَى الْاَرَآئِكِ نِعْمَ الثَّوَابُ وَحَسُنَتْ مُرْتَفَقًا) *"O ne güzel karşılıktır! Cennet de ne güzel bir yaslanacak yerdir."*

Onların sevabı ne güzel sevap, Rableri ne güzel Rab, evleri ne güzel ev, komşuları ne güzel komşu ve halleri ne güzel haldir!

وَاضْرِبْ لَهُمْ مَثَلًا رَجُلَيْنِ جَعَلْنَا لِاَحَدِهِمَا جَنَّتَيْنِ مِنْ اَعْنَابٍ
وَحَفَفْنَاهُمَا بِنَخْلٍ وَجَعَلْنَا بَيْنَهُمَا زَرْعًا ﴿٣٢﴾ كِلْتَا الْجَنَّتَيْنِ اٰتَتْ
اُكُلَهَا وَلَمْ تَظْلِمْ مِنْهُ شَيْـًٔا وَفَجَّرْنَا خِلَالَهُمَا نَهَرًا ﴿٣٣﴾ وَكَانَ لَهُ
ثَمَرٌ فَقَالَ لِصَاحِبِهِ وَهُوَ يُحَاوِرُهُٓ اَنَا۬ اَكْثَرُ مِنْكَ مَالًا وَاَعَزُّ نَفَرًا ﴿٣٤﴾
وَدَخَلَ جَنَّتَهُ وَهُوَ ظَالِمٌ لِنَفْسِهِ قَالَ مَٓا اَظُنُّ اَنْ تَبِيدَ هٰذِهِٓ اَبَدًا ﴿٣٥﴾
وَمَٓا اَظُنُّ السَّاعَةَ قَٓائِمَةً وَلَئِنْ رُدِدْتُ اِلٰى رَبّ۪ي لَاَجِدَنَّ خَيْرًا مِنْهَا
مُنْقَلَبًا ﴿٣٦﴾ قَالَ لَهُ صَاحِبُهُ وَهُوَ يُحَاوِرُهُٓ اَكَفَرْتَ بِالَّذ۪ي خَلَقَكَ مِنْ
تُرَابٍ ثُمَّ مِنْ نُطْفَةٍ ثُمَّ سَوّٰيكَ رَجُلًا ﴿٣٧﴾ لٰكِنَّا۬ هُوَ اللّٰهُ رَبّ۪ي وَلَٓا
اُشْرِكُ بِرَبّ۪ٓي اَحَدًا ﴿٣٨﴾ وَلَوْلَٓا اِذْ دَخَلْتَ جَنَّتَكَ قُلْتَ مَا شَٓاءَ اللّٰهُ لَا
قُوَّةَ اِلَّا بِاللّٰهِ اِنْ تَرَنِ اَنَا۬ اَقَلَّ مِنْكَ مَالًا وَوَلَدًا ﴿٣٩﴾ فَعَسٰى رَبّ۪ٓي اَنْ
يُؤْتِيَنِ خَيْرًا مِنْ جَنَّتِكَ وَيُرْسِلَ عَلَيْهَا حُسْبَانًا مِنَ السَّمَٓاءِ فَتُصْبِحَ
صَعِيدًا زَلَقًا ﴿٤٠﴾ اَوْ يُصْبِحَ مَٓاؤُ۬هَا غَوْرًا فَلَنْ تَسْتَطِيعَ لَهُ طَلَبًا ﴿٤١﴾

32, 33, 34, 35, 36, 37, 38, 39, 40, 41- “Onlara şu iki adamı örnek ver: Onlardan birine iki üzüm bağı vermiş, bağların çevresini hurmalarla donatmış, ikisinin arasına da bir ekinlik koymuştuk. Her iki bağ da meyvelerini vermiş ve ürünlerinden hiçbir şeyi eksik bırakmamıştı. Bu iki bağın arasından bir de nehir fışkırtmıştık. Derken onun büyük bir serveti oldu. Arkadaşıyla konuşurken ona dedi ki: ‘Benim malım seninkinden daha çok. Adamlardan yana da senden daha üstünüm.’ Derken kendine zulmederek bağına girdi. Şöyle dedi: ‘Bunun sonsuza değin yok olacağını sanmıyorum. Kıyametin kopacağını da sanmıyorum.

Rabbime döndürülsem bile andolsun bundan daha iyi bir sonuç bulurum.' Arkadaşı ona cevap vererek dedi ki: 'Seni topraktan, sonra bir damla döl suyundan yaratan, sonra da seni bir insan şeklinde düzenleyen Allah'ı inkâr mı ediyorsun? Fakat O Allah benim Rabbimdir. Ben, Rabbime hiç kimseyi ortak koşmam. Bağına girdiğinde: 'Maşaallah! Kuvvet yalnız Allah'ındır' deseydin ya! Eğer benim malımı ve çocuklarımı kendininkilerden daha az görüyorsan, belki Rabbim bana, senin bağından daha iyisini verir. Seninkinin üzerine de gökten bir afet indirir de bağ kupkuru ve yalçın bir toprak haline geliverir. Ya da suyu çekiliverir de artık onu arayamazsın bile.'"

Allah, ayetlerde anlattığı şekilde iki bağ verdiği iki adam yarattığını bildirmektedir. Bu iki adamdan biri yaratanına şükretmiş, diğeri ise rızkını veren Allah'ı inkâr etmiştir. Derken inkârcı adam sabah kalktığında bağını afet vurmuştur. Adam şükrü yerine getirmediğinden pişmanlık duydu ve siteme hedef oldu.

Ayetin işârî tefsiri ise şöyledir: Allah, güzel vakit bahşettiği, lütuf sergisi hazırladığı ve geniş imkânlara sahip kıldığı iki adam yaratır. Onlardan biri, güzel mücadele ve dürüst muameleyle başlangıcın makamlarından nihayete yükselmede doğru yolda yürür. Bu mücadele, ona güzel ahlakın meyvelerini sağlar. O da bunları güzel istikametle değerlendirir sonra safiyet hallerinin özelliklerini hakikat olarak yaşar sonra tevhid hakikatlerinin keşfiyle bu hallerden koparılarak karşısına çıkan hakikatlerin varlığında yok edilmek suretiyle bütün benliğinden uzaklaşmış olur.

İkinci adam ise Allah'ın kendisini layık gördüğü güzel başlangıcın değerini anlayamadığından alışkanlıklarına dönüş yapar. Bunun üzerine kötü alışkanlıklarına doğru alçalması sebebiyle durumu tersine döner. Böylece o, tarikattaki seyrinden dönüş yaparak gafletin karanlığına gömülür ve vakti geceye dönüşür. Ayrılık vadilerine savrulur, kovulmuşluk damgasıyla damgalanır, değersizlik şarabı içirilir ve terk edilmişlik ipine dizilir. İşte bu, Hakk'ın kendi vuslatına ehil görmediği, hakikat ve kabul noktasında bağlılıkları için hiçbir temel var etmediği kimselerin cezasıdır.

Şiir:

*Değişti sevgili ve değiştik biz, vay haline o kimsenin ki*
*Selma'ya alternatif aradı, ancak bulamadı*

وَاُحِيطَ بِثَمَرِهِ فَاَصْبَحَ يُقَلِّبُ كَفَّيْهِ عَلٰى مَٓا اَنْفَقَ فِيهَا وَهِيَ خَاوِيَةٌ عَلٰى عُرُوشِهَا وَيَقُولُ يَا لَيْتَنِي لَمْ اُشْرِكْ بِرَبِّي اَحَدًا ﴿٤٢﴾

42- "Derken bütün serveti helak edildi. Çardakları üzerine çökmüş haldeki bağına yaptığı harcamalar karşısında ellerini ovuşturuyor ve şöyle diyordu: 'Keşke Rabbime hiçbir kimseyi ortak koşmasaydım.'"

Kendi arzusunu Allah'ın hakkına tercih eden kimsenin hüsranı ortaya çıktığı zaman, pişmanlık kapısını çalar, ancak bu, ona fayda vermez. Şayet bu kimse, durgunluk yaşadığında, dünyada Allah'ın kerem kapısını çalsaydı, Allah, onun sıkıntı esnasındaki şikayetini giderir ve kendisini zor durumundan kurtarırdı. Ne var ki o, yalnızlığa mahkum edildi ve istidracın hükmüyle işin içinden çıkamaz hale getirildi.

وَلَمْ تَكُنْ لَهُ فِئَةٌ يَنْصُرُونَهُ مِنْ دُونِ اللّٰهِ وَمَا كَانَ مُنْتَصِرًا ﴿٤٣﴾

43- "Onun, Allah'tan başka kendisine yardım edebilecek kimseleri yoktu. Kendi kendini kurtaracak güçte de değildi."

Kim, hükümdarın kendisine kızgın olduğu şeklinde şöhret bulursa, askerden ve halktan hiç kimse yüzüne bakmaz. İşte aynı şekilde Hakk'ın, terk edilmişlik damgasıyla damgaladığı kimseye de ne bir hükümdar ne de bir peygamber miras bırakır ve onu ne bir arkadaş ne de bir dost korur.

هُنَالِكَ الْوَلَايَةُ لِلّٰهِ الْحَقِّ هُوَ خَيْرٌ ثَوَابًا وَخَيْرٌ عُقْبًا ﴿٤٤﴾

44- "İşte bu durumda velayet, yalnızca hak olan Allah'a mahsustur. O'nun mükâfatı da daha hayırlıdır, vereceği sonuç da daha hayırlıdır."

Allah, hükümranlık sıfatına yalnızca kendisi sahip olan hak varlık olup diğer varlıklardan hiçbirini hükümranlığının yüceliğine ortak kılmaz. Bu arada hakikatin sultanı olan Allah'tan en ufak bir şey belirdiği zaman ne hiçbir iddia, ne hiçbir beşerin anlamı ne de bu durumda varlıkların bir ağırlığı ve önemi olur. Gerçekten de olamaz. Doğrusu yaradan, bir ve yegâne karşı konulmaz hâkim olan Allah O'dur.

Bu durumda "vilâyet", yani kudret Allah'a mahsustur. Burada ( وِلاية ) kelimesinin başındaki ( و ) "*vav*" harfi esrelidir.

Bu durumda "velâyet", yani yardım Allah'a mahsustur. Burada ise ( وَلاية ) kelimesinin başındaki ( و ) "*vav*" harfi üstün harekesi taşımaktadır.

وَاضْرِبْ لَهُمْ مَثَلَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا كَمَٓاءٍ اَنْزَلْنَاهُ مِنَ السَّمَٓاءِ فَاخْتَلَطَ بِهٖ نَبَاتُ الْاَرْضِ فَاَصْبَحَ هَشِيمًا تَذْرُوهُ الرِّيَاحُ وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ مُقْتَدِرًا ﴿٤٥﴾

45- "Onlara dünya hayatının örneğini ver: Dünya hayatı gökten indirdiğimiz yağmur gibidir ki, onun sebebiyle yeryüzünün bitkileri boy verip birbirine karışırlar. Fakat bütün bu canlılık sonunda rüzgârın savurduğu kuru bir çer çöpe döner. Allah, her şey üzerinde kudret sahibidir.

Kim, nefsini dünyaya ve güzelliğine alıştırırsa dünya, kendisine dönük emel ve tamahlarıyla onu aldatır sonra zehri içeceğinde, ebucehil karpuzunu balında, serabı da ihtiyaçları içinde kamufle eder. Söz verir, fakat vaatlerini yerine getirmez. Afetleri, faydalarını yok eder. Nimetleri, felaketleriyle karışıktır. Huzuru, huzursuzluğuyla beraberdir. Belası, armağanının içindedir. Onunla mağrur olan, gerçekten yanılmış kimsedir. Gerçek aldanmış kimse de onun hakkında aldanandır.

اَلْمَالُ وَالْبَنُونَ زِينَةُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَالْبَاقِيَاتُ الصَّالِحَاتُ خَيْرٌ عِنْدَ رَبِّكَ ثَوَابًا وَخَيْرٌ اَمَلًا ﴿٤٦﴾

46- "Mallar ve evlatlar, dünya hayatının süsüdür. Baki kalacak salih ameller ise, Rabbinin katında, sevap olarak da ümit olarak da daha hayırlıdır."

Kim mali gücüne dayanır, çocuklarıyla mağrur olur ve gaflet anlarında Mevlâ'sını unutursa, dünyasında kaybeder, ahiretinde de kaçırdığı nimetlerden dolayı pişmanlık duyar.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Gaflet ehlinin dünyadaki süsü, mal ve çocuklardır. Vuslat ehlinin süsü ise ameller ve inançlardır. Bu itibarla birinci kısımdakilerin mertebeleri zahirlerinden dolayı, ikinci kısımdakilerin süsleri ise Allah'a kulluk etmeleri ve Rab oluşunu bilmekle övünmeleri sebebiyledir.

- İçinde nefsin hazzı olan şey, dünya hayatının süsündendir. Buna mevki sahibi olmak ve övülmeyi kabul etmenin yanı sıra farklılıklarına rağmen çeşitli alışılmış ve kanıksanmış durumlar da dahildir.

- İster dünyasında ister ahiretinde olsun içinde insan için pay ve nasip olan şey manen sağlıksızdır.

( وَالْبَاقِيَاتُ الصَّالِحَاتُ خَيْرٌ عِنْدَ رَبِّكَ ثَوَابًا وَخَيْرٌ اَمَلًا ) *"Baki kalacak salih ameller ise Rabbinin katında, sevap olarak da ümit olarak da daha hayırlıdır."*

Adı geçen salih ameller, içtenliğin ve dürüstlüğün tanıklık ettiği amellerdir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Baki kalacak salih ameller, tamahla karışık veya bir gayeyle beraber olmaksızın sırf Allah için olan amellerdir.

- Baki kalacak salih ameller, kulun niteliklerle bezenmesinin sırlarda ortaya çıkması ve güzel kokusunun mana âleminin semasında yayılmasıdır.

- Baki kalacak salih ameller, Allah'a manevî yakınlık yoluyla, sahipleri için ezelde gaybtan takdir edilen amellerdir.

- Baki kalacak salih ameller, sırlarda karar kılmış olup perdelenerek tutulmaya maruz kalmayan tevhid güneşlerinin aydınlığıdır.

وَيَوْمَ نُسَيِّرُ الْجِبَالَ وَتَرَى الْاَرْضَ بَارِزَةً وَحَشَرْنَاهُمْ فَلَمْ نُغَادِرْ
مِنْهُمْ اَحَدًا ﴿٤٧﴾

47- "Dağları yürüteceğimiz ve senin yeryüzünü çırılçıplak göreceğin günü bir hatırla. Biz, onları mahşerde toplarız da içlerinden hiçbirini bırakmayız."

Dağlar tıpkı kıyamet günü yürütüldükleri gibi Hakk'ın, bugün yeri kendileriyle yerinde tutmayı sürdürdüğü abdâlların ölümüyle de yerlerinden sökülürler. Bu nedenle bu büyükler, hakikatte dünyanın denge unsurlarıdır.

( فَلَمْ نُغَادِرْ مِنْهُمْ اَحَدًا ) *"İçlerinden hiçbirini bırakmayız."*

Yani hiç kimse yoktur ki, kendisine ölüm şarabı içirilmiş olmasın. Bugün yeryüzünde haktan ayrılan hiç kimse yoktur ki, onun sisteminden sapmasın. Şu da bir gerçektir ki onların derecelerdeki üstünlükleri, dünya ile hemhal olmaktan sakınmalarına bağlıdır.

وَعُرِضُوا عَلٰى رَبِّكَ صَفًّا لَقَدْ جِئْتُمُونَا كَمَا خَلَقْنَاكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ بَلْ
زَعَمْتُمْ اَلَّنْ نَجْعَلَ لَكُمْ مَوْعِدًا ﴿٤٨﴾

48- "Hepsi, saf saf Rabbinin huzuruna çıkarıldılar. Onlara: 'Andolsun, sizi ilk önce yarattığımız gibi bize geldiniz. Oysa siz, sizin için hesaba çekileceğiniz bir zaman belirlemediğimizi sanmıştınız' denir."

Allah, mahşer günü herkesi kendine has bir konumda tutacak ve herkese ehil gördüğü elbiseyi giydirecektir. Böylece kimisine takva libasını, kimisine hevâ gömleğini, kimisine vecd yeleğini, kimisine muhabbet yeleğini, kimisine şevk giysisini, kimisine de vuslat elbisesini giydirecektir.

Bir yoruma göre de Allah onları, kıyamette bakışlarının odaklandığı şey hariç her vasıftan arındıracak ve çağırıcı, şahıslarına işaretle şöyle seslenecektir: Bu, gelip bulandır. Bu, kabule yanaşmayıp inkâr edendir. Bu, karşı çıkıp ısrar edendir. Bu, kendisine nimet verdiğimiz ve buna şükredendir. Bu, kendisine iyilik yaptığımız ve onu hatırlayandır. Bu, şarabımızı içirdiğimiz, sevgimizi nasip kıldığımız, bize kavuşma şevki verdiğimiz ve gözetip muhafaza edişimizin özellikleriyle buluşturduğumuz kimsedir.

Bu da engellememizle damgaladığımız, yakınlığımızın her türlüsünden mahrum kıldığımız, kendisine ayrılığımızın kemerini taktığımız ve bize uyma muvaffakiyetinden alıkoyduğumuz kimsedir.

Çağırıcı: Bu, bu… diye seslenmeye devam edecektir.

Şiir:

*Ne kadar da utandım evlerinin ortasında durmaktan*
*Ve o, öfkeyle bana: "Kimsin sen be adam?!" derken*

( لَقَدْ جِئْتُمُونَا كَمَا خَلَقْنَاكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ بَلْ زَعَمْتُمْ اَلَّنْ نَجْعَلَ لَكُمْ مَوْعِدًا ) *"Andolsun, sizi ilk önce yarattığımız gibi bize geldiniz. Oysa siz, sizin için hesaba çekileceğiniz bir zaman belirlemediğimizi sanmıştınız."*

Siz bize şefaatçisiz, yardımcısız ve destekçisiz geldiniz. Kimilerine şöyle denecektir: "Selam olsun size… Nasılsınız? İstirahat yerinizi nasıl buldunuz? Bize kavuşmayı ne kadar özlediniz?" Kimilerine de: "Ne yaptınız? Ne kaybettiniz? Neyi önce yaptınız? Neyi sonraya bıraktınız? Neyi açıkladınız? Neyi gizlediniz?" denecektir.

Şiir:

*De bana rahat bir dille:*
*Nasılsın sen ve nicedir halin?*

Bir yoruma göre de onlardan bazıları, sual esnasında cevap vererek kalplerindekileri apaçık bir dille ifade eder ve sevdikleri Allah ile olan hallerini açıklarlar. Diğer bazıları, şaşkınlığa kapılarak deh-

şetten susarlar. Bu nedenle ne hiçbir açıklamaları olur ne de dilleri haklarında konuşabilir. Diğerleri ise şu şiirde söylendiği gibidirler:

*Sekîne: "Kimdir bu?" dedi, ben de dedim ki ona:*
*Ben, düşmanlarından olduğunu ileri sürdükleri kimseyim*

وَوُضِعَ الْكِتَابُ فَتَرَى الْمُجْرِمِينَ مُشْفِقِينَ مِمَّا فِيهِ وَيَقُولُونَ يَا وَيْلَتَنَا مَا لِهٰذَا الْكِتَابِ لَا يُغَادِرُ صَغِيرَةً وَلَا كَبِيرَةً اِلَّٓا اَحْصٰيهَا وَوَجَدُوا مَا عَمِلُوا حَاضِرًا وَلَا يَظْلِمُ رَبُّكَ اَحَدًا ﴿٤٩﴾

49- "Kitap, ortaya konur. Suçluları, kitabın içindekilerden korkuya kapılmış görürsün. 'Eyvah bize! Bu nasıl bir kitaptır ki, küçük, büyük hiçbir şey bırakmadan hepsini sayıp dökmüş' derler. Onlar, bütün yaptıklarını karşılarında bulurlar. Senin Rabbin, hiç kimseye zulmetmez."

Onların karşılaştıkları tablo, Levh-i Mahfuz'dakilerin neshettiği amel defterleri olan kitapta yazılanlar değil, ilk kitap olan Levh-i Mahfuz'da yazılanlardır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Şayet Allah bir kula, meleğin kayıt altına aldığı amel defterinde yer alanlara göre muamele etse, onun yanında pek çok kuluna da kendi kitabında yazılanlara göre muamele edecektir. Hakk'ın kitabındaki rahmet ve şefkate göre muamele edilen kimse ile meleğin, hakkında yazdığı hatalara göre Allah'ın hesap sorduğu kimse arasında ise büyük fark vardır.

- Allah, kıyamet günü onları hesaba çektiği zaman, fiilen günah işlemelerinin üzerinden yıllar geçmiş olmasına rağmen onlara hâlâ hata işlemeye devam ediyorlar gibi gelir.

(وَيَقُولُونَ يَا وَيْلَتَنَا مَا لِهٰذَا الْكِتَابِ لَا يُغَادِرُ صَغِيرَةً وَلَا كَبِيرَةً اِلَّٓا اَحْصٰيهَا وَوَجَدُوا مَا عَمِلُوا حَاضِرًا وَلَا يَظْلِمُ رَبُّكَ اَحَدًا) *"'Eyvah bize! Bu nasıl bir kitaptır ki küçük, büyük hiçbir şey bırakmadan hepsini sayıp dökmüş' derler.*

*Onlar, bütün yaptıklarını karşılarında bulurlar. Senin Rabbin hiç kimseye zulmetmez."*

Amelinde kötülük göreceğini bildiği için kalbini üzüntü kaplar. Bu haliyle o, kusurlu olmasından dolayı mahcubiyet içindedir. Şayet bir iyilik görse dahi, saygısının azlığından ötürü, yine mahcubiyet içindedir. Bu itibarla, doğruluk ehli insanların iyiliklerini gördükleri esnadaki mahcubiyetleri, gaflet ehlinin hatalarına muttali oldukları zaman duydukları mahcubiyetten daha fazladır ve onu gölgede bırakır.

Bir yoruma göre de taat sahipleri daha önce yaptıkları ibadetleri gördükleri zaman akıbetleri sevinç, ferahlama, kalbin hayat bulması ve rahatlıktır. Allah'ın emirlerine aykırı davranışlarda bulunanlar ise geçmişte yaptıkları arasında sadece haddi aşmayı, sözünde durmamayı ve buna benzer hata ve kötü niyetler bulurlar.

وَاِذْ قُلْنَا لِلْمَلٰٓئِكَةِ اسْجُدُوا لِاٰدَمَ فَسَجَدُوٓا اِلَّآ اِبْلِيسَ كَانَ مِنَ الْجِنِّ فَفَسَقَ عَنْ اَمْرِ رَبِّهٖ اَفَتَتَّخِذُونَهُ وَذُرِّيَّتَهُٓ اَوْلِيَآءَ مِنْ دُونٖي وَهُمْ لَكُمْ عَدُوٌّ بِئْسَ لِلظَّالِمٖينَ بَدَلًا ﴿٥٠﴾

50- "Hani biz meleklere: 'Âdem için secde edin' demiştik de İblis hariç, hemen secde etmişlerdi. İblis cinlerden idi de Rabbinin emri dışına çıktı. Şimdi siz, beni bırakıp da İblis'i ve neslini kendinize dostlar mı ediniyorsunuz? Halbuki onlar, sizin için birer düşmandırlar. Bu, zalimler için ne kötü bir bedeldir!"

Allah, Âdem'i sahip kıldığı özelliklerin ufacık bir parçasını meleklere gösterir göstermez yine Allah'ın müyesser kılmasıyla hemen secde ettiler. Mel'unun ise Allah basiretini kapattı ve bu yüzden o, Hz. Âdem'in sadece bedenini gördüğünden Rabbinin emri dışına çıktı. Emrin dışına çıkarken söylediği: (أَنَا۠ خَيْرٌ مِّنْهُ) *"Ben ondan hayırlıyım"* (A'raf, 7/12) sözünde de hiçbir doğruluk payı yoktur. Lakin o, köklü bir bedbahtlığın pençesine düştüğü için hileye sarılmak kendisine fayda vermedi.

( اَفَتَتَّخِذُونَهُ وَذُرِّيَّتَهُٓ اَوْلِيَٓاءَ مِنْ دُونِي وَهُمْ لَكُمْ عَدُوٌّ بِئْسَ لِلظَّالِمِينَ بَدَلًا ) *"Şimdi siz, beni bırakıp da İblis'i ve neslini kendinize dostlar mı ediniyorsunuz? Halbuki onlar sizin için birer düşmandırlar. Bu, zalimler için ne kötü bir bedeldir!"*

Ayette sadece Allah'a bağlanan kimsenin, başkasının peşinden gitmediğine ve başkasından korkmadığına işaret bulunmaktadır.

مَٓا اَشْهَدْتُهُمْ خَلْقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَلَا خَلْقَ اَنْفُسِهِمْ وَمَا كُنْتُ مُتَّخِذَ الْمُضِلّٖينَ عَضُدًا ﴿٥١﴾

51- "Ben onları ne göklerin ve yerin yaratılışına, ne de kendilerinin yaratılışına şahit tuttum. Saptıranları da hiçbir zaman yardımcı edinmiş değilim."

Allah: ( مَٓا اَشْهَدْتُهُمْ خَلْقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَلَا خَلْقَ اَنْفُسِهِمْ ) *"Ben onları ne göklerin ve yerin yaratılışına, ne de kendilerinin yaratılışına şahit tuttum"* sözüyle, gökcisimleri ve diğer tabiat varlıklarıyla ilgili olarak konuşan müneccimleri ve tabipleri yalanlamış ve bu varlıkların, tabiat olaylarının etkisi sonucu var olduğuna dair söylediklerinin, hakikatte hiçbir aslının olmadığını açıklamıştır.

( وَمَا كُنْتُ مُتَّخِذَ الْمُضِلّٖينَ عَضُدًا ) *"Saptıranları da hiçbir zaman yardımcı edinmiş değilim."*

Yani ben, tabiat olaylarını savunan sözleriyle yol açtıkları şüphelerle insanları dinlerinden saptıran kimseler için bir hüccet yaratmadım ve söylediklerini doğrulamak için kendilerine bir burhan da vermedim.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Yaratıkların bilgileri, kendilerini bilmede dahi yetersiz kaldığına göre Allah'ın, ehil kıldığı ölçüde her birine mertebesine göre verdiği sınırlı miktardaki bilgi dışında, nasıl olur da söz konusu bilgileri, samediyetin hakikatlerini ve Allah'ın sıfatlarını hak edişini kuşatabilir!

- Allah, onların bilgilerinin, kendilerine ait bütün vasıf ve haller ile kainattaki her şeyi kavramaya yetmediği gibi buna imkân da bulunmadığını bildirmektedir. Kaldı ki, bilgilerinin yetersiz kaldığı şeylere muttali olmaya ihtiyaçları da yoktur. Zira hiçbir dinî meselenin bununla ilgisi bulunmamaktadır. Bu itibarla ayetteki işaret, onların ilgilerini Allah'a, sıfatlarına ve hükümlerine dair bilgiyi aramaya yöneltmelerine dönüktür. Çünkü dine bağlılığın gereği olarak onların, bu konuları birer hakikat şeklinde bilmeleri gerekir. Zira kula vacip olan, sıfatlar ve ahkam meselelerinin ayrıntıları konusunda kalbinden tereddüdü giderecek bilgilerle mabudunu tanımasıdır.

وَيَوْمَ يَقُولُ نَادُوا شُرَكَٓائِيَ الَّذ۪ينَ زَعَمْتُمْ فَدَعَوْهُمْ فَلَمْ يَسْتَج۪يبُوا
لَهُمْ وَجَعَلْنَا بَيْنَهُمْ مَوْبِقًا ﴿٥٢﴾

52- "Allah'ın: 'Ortağım olduklarını iddia ettiklerinizi çağırın' diyeceği, onların da çağıracakları, fakat kendilerine cevap vermeyecekleri ve bizim de aralarına bir uçurum koyacağımız günü hatırla."

Allah (c.c.) putların ihtiyaçları karşılamadığını, fayda ve zarar veremediğini bilmekte, lakin sonuç itibariyle vehimlerini yok etmek için onlara, bilgilerini zorunlu hale getirecek olan hususu öğretmektedir. Zira onlar, putlara tapmalarının, Allah'a yüceltme tarzında bir nevi yakınlaşma sağladığını vehmetmişlerdi. Nitekim onlar şöyle demişlerdi:

(نَعْبُدُهُمْ اِلَّا لِيُقَرِّبُونَٓا اِلَى اللّٰهِ زُلْفٰى) *"Biz, onlara sadece bizi daha çok Allah'a yaklaştırsınlar diye ibadet ediyoruz."* (Zümer, 39/3)

Putlarının gerçek durumunu öğrendikleri zaman ise samimiyetle pişmanlık duydular ve hayıflanma duygusu onları sarmış oldu ki bu da onlar için cezaların en şiddetlisindendir.

وَرَا الْمُجْرِمُونَ النَّارَ فَظَنُّٓوا اَنَّهُمْ مُوَاقِعُوهَا وَلَمْ يَجِدُوا عَنْهَا
مَصْرِفًا ﴿٥٣﴾

53- "Suçlular, ateşi görünce, onun içine düşeceklerini iyice anlayacaklar ve ondan kurtuluş yolu da bulamayacaklardır."

Vehimler sona erdiği, bilgiler zorunlu hale geldiği, ateş de görüldüğü zaman cehenneme gireceklerine kanaat getirdiler. İşte o sırada onların ne bir özrü dinlenir, ne bir tedbirleri fayda verir, ne haklarında bir aracılık kabul edilir, ne de onlardan bir fidye ve karşılık alınır. Şüphesiz çaresizlik onlarda kök salmıştır ve ümitsizlik hakim olmuştur. En büyük azap da budur.

وَلَقَدْ صَرَّفْنَا فِي هٰذَا الْقُرْاٰنِ لِلنَّاسِ مِنْ كُلِّ مَثَلٍ وَكَانَ الْاِنْسَانُ اَكْثَرَ شَيْءٍ جَدَلًا ﴿٥٤﴾

54- "Andolsun, biz bu Kur'an'da insanlar için her türlü misali değişik şekillerde açıkladık. Fakat insan tartışmaya her şeyden daha çok düşkündür."

Allah, delilleri herkese izah etmiş fakat kimileri yolu şaşırmış ve eğriliğe düşmüşledir.

( وَكَانَ الْاِنْسَانُ اَكْثَرَ شَيْءٍ جَدَلًا ) *"Fakat insan, tartışmaya her şeyden daha çok düşkündür."*

Allah rızası için düşmanlarıyla tartışmak makbul bir şeydir. Allah ile tartışmak ise şirktir. Çünkü bu tartışma, bir kimsenin ilahî takdire karşı çıkabileceğini vehmettiren bir muhalefete yöneltir. Oysa bunu caiz görmek, dinden çıkmaktır. Bu arada mümin için mutluluğun alametlerinden birisi de kendisine amel kapısının açılması ve tartışma kapısının yüzüne kapatılmasıdır.

وَمَا مَنَعَ النَّاسَ اَنْ يُؤْمِنُٓوا اِذْ جَٓاءَهُمُ الْهُدٰى وَيَسْتَغْفِرُوا رَبَّهُمْ اِلَّٓا اَنْ تَاْتِيَهُمْ سُنَّةُ الْاَوَّلِينَ اَوْ يَاْتِيَهُمُ الْعَذَابُ قُبُلًا ﴿٥٥﴾

55- "İnsanlara hidayet geldikten sonra onların inanmalarına ve Rablerinden mağfiret dilemelerine ancak öncekilerin başına

gelenlerin kendi başlarına da gelmesi ya da kendilerine azabın göz göre göre gelmesi engel olmuştur."

Onlar, alışkanlık haline getirdikleri isyana yeltenip emredileni hemen yapmayı terk ettikleri zaman hiçbir özürleri olamadığı gibi onları destekleyip de fiilde kararlılığı gerekli kılan sebebe muhatap olmaktan çıkaran bir muvaffakiyet de yoktur. Bu çerçevede onlar güç yetirmeleri bakımından yapmadıklarını yapmaktan aciz değildirler. Fakat öyle bir durumdadırlar ki, eğer aralarından bir kul kendisine emredileni yapmak isteseydi, bunu yapması mümkün olmayacaktı. O halde bu kimse fiili durumu bakımından yapmadığını yapmaya muktedir de değildir, onu yapmaktan aciz de değildir. Bu duruma bu alanın mensupları *"tahliye durumu"* adını vermişlerdir ki, bu, kudretin ve aczin arasıdır.

وَمَا نُرْسِلُ الْمُرْسَلِينَ اِلَّا مُبَشِّرِينَ وَمُنْذِرِينَ وَيُجَادِلُ الَّذِينَ كَفَرُوا
بِالْبَاطِلِ لِيُدْحِضُوا بِهِ الْحَقَّ وَاتَّخَذُوٓا اٰيَاتِي وَمَٓا اُنْذِرُوا هُزُوًا ﴿٥٦﴾

56- "Biz, peygamberleri ancak müjdeleyiciler ve uyarıcılar olarak gönderiririz. İnkâr edenler ise, hakkı bâtılla çürütmek için mücadele ederler. Ayetlerimizi ve kendilerine yapılan uyarıları alaya alırlar."

Allah, peygamberleri peş peşe göndererek hüccet ve burhanlar ile desteklemiş; insanları uyarmak, korkutmak, mükellefiyetin içinde yüceltmek ve bu mesajın içini hakikatle doldurmakla memur kılmıştır. Lakin kimileri onlara uyarak mutlu olurken, kimileri de onlara karşı çıkarak mutsuz olmuşlardır.

وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنْ ذُكِّرَ بِاٰيَاتِ رَبِّهِ فَاَعْرَضَ عَنْهَا وَنَسِيَ مَا
قَدَّمَتْ يَدَاهُ اِنَّا جَعَلْنَا عَلٰى قُلُوبِهِمْ اَكِنَّةً اَنْ يَفْقَهُوهُ وَفٖٓي
اٰذَانِهِمْ وَقْرًا وَاِنْ تَدْعُهُمْ اِلَى الْهُدٰى فَلَنْ يَهْتَدُوٓا اِذًا اَبَدًا ﴿٥٧﴾

57- "Kim kendisine Rabbinin ayetleri hatırlatılıp da onlardan yüz çeviren ve elleriyle yaptığını unutandan daha zalimdir? Şüphesiz biz onu anlamamaları için kalplerine perdeler gerdik, kulaklarına da ağırlıklar koyduk. Sen onları hidayete çağırsan da artık ebediyen hidayet bulamazlar."

Allah'ın kendisine apaçık gösterdiği mucizelerle veya gördüğü ve bildiği bir durumunun düzeltilmesi, bir işinin görülmesi, bir duasının kabul edilmesi ya da edebe aykırı bir davranışının olması gibi bir sebeple kendisine hatırlatmada bulunulan ve nasihat edilerek ikaz edici şeylerle terbiye edilen; bir taatte bulunduğunda dünyada bast, lezzet ve ünsiyet gibi manevi mükâfatlarla ya da bir işinin görülmesi ve bir durumunun düzeltilmesi gibi maddî mükâfatlarla mükâfatlandırılan, sonra farklı bir durumla karşılaşınca kendisine yapılan iyi muameleyi unutan veya onu hatırlamaya yanaşmayarak daha önce elleriyle yaptığı iyi ve kötü şeyleri unutmuş görünen ve anında bunun sonucuyla karşılaşan kimseden daha zalim biri yoktur. Allah, niteliği bu olan kimseye bahşedilmiş olan nimetlerin bereketleri kendisinden kopup gitsin diye kalbinin üstüne perde, gaflet ve kasvet indirir.

Bir yoruma göre de geçmişte görevini yapmadığı için ceza olarak bir durumla karşılaşınca Rabbini itham eden, karşılaştığı durumdan yakınan ve başına gelen bunca musibetin sebebi olan Allah'ın emir ve yasaklarını unutan kimseden daha zalim kim vardır?!

Şiir:

*Fırsatını zayi eder zayıf görüşlü kimse*
*Sonunda kaçınca bir iş sitem eder kadere*

وَرَبُّكَ الْغَفُورُ ذُوالرَّحْمَةِ لَوْ يُؤَاخِذُهُمْ بِمَا كَسَبُوا لَعَجَّلَ
لَهُمُ الْعَذَابَ بَلْ لَهُمْ مَوْعِدٌ لَنْ يَجِدُوا مِنْ دُونِهِ مَوْئِلًا ﴿٥٨﴾

58- "Rabbin çok bağışlayıcıdır, merhamet sahibidir. Eğer yaptıkları yüzünden onları (dünyada) cezaya çarptırsaydı, elbette azaplarını

çarçabuk verirdi. Hayır, onlar için belirlenmiş bir gün vardır ki, hiç kurtuluş çaresi bulamazlar."

Allah bağışlayıcıdır çünkü merhamet sahibidir. Ezeli rahmeti ise onları bağışlamayı gerekli kılmıştır. Bir yoruma göre de Allah, kullarından günahkâr olanlar için bağışlayıcı, hepsi içinse merhamet sahibi olup tamamının durumlarını düzene koyar.

( لَوْ يُؤَاخِذُهُمْ بِمَا كَسَبُوا لَعَجَّلَ لَهُمُ الْعَذَابَ ) *"Eğer yaptıkları yüzünden onları (dünyada) cezaya çarptırsaydı, elbette azaplarını çarçabuk verirdi."*

Yani onlara, isyanlarıyla hak ettikleri şekilde muamele ederek cezalarını çabuklaştırırdı. Ancak Allah, hikmetine uygun olarak cezalarını erteler. Sonra akıbette iradesi ve hükmünün gereğine göre yapacağını yapar.

وَتِلْكَ الْقُرٰٓى اَهْلَكْنَاهُمْ لَمَّا ظَلَمُوا وَجَعَلْنَا لِمَهْلِكِهِمْ مَوْعِدًا ﴿٥٩﴾

59- "İşte zulmettiklerinde yok ettiğimiz memleketler! Helâk edilmeleri için de belli bir zaman tayin etmiştik."

Onlar nimetlere karşı şükür, sıkıntılara karşı da sabretmeyince cezalarını çabuklaştırdık. Bir yoruma göre de onlar takdiri görmekten gafil olup ilahi rızanın verdiği huzurdan mahrum kalınca kendilerini tedbirlerinin karanlıklarına teslim ettik ve böylece gafletlerinin vadilerinde helak oldular.

وَاِذْ قَالَ مُوسٰى لِفَتٰيهُ لَٓا اَبْرَحُ حَتّٰٓى اَبْلُغَ مَجْمَعَ الْبَحْرَيْنِ اَوْ اَمْضِيَ حُقُبًا ﴿٦٠﴾

60- "Hani Mûsâ, beraberindeki gence şöyle demişti: 'İki denizin birleştiği yere varıncaya kadar durmayacağım ya da uzun zaman gideceğim.'"

Hz. Yûşa'ın Hz. Mûsâ ile arkadaşlığı gerçek olunca, Hz. Yûşa "genç" olmakla isimlendirilmeyi hak etmiş oldu. Bu nedenle Allah:

( وَاِذْ قَالَ مُوسٰى لِفَتٰيهُ ) *"Hani Mûsâ, beraberindeki gence şöyle demişti"* buyurmuştur. Ancak buradaki "genç" özel isim değil, saygınlık ifade eden isimdir.

فَلَمَّا بَلَغَا مَجْمَعَ بَيْنِهِمَا نَسِيَا حُوتَهُمَا فَاتَّخَذَ سَبِيلَهُ فِي الْبَحْرِ سَرَبًا ﴿٦١﴾

61- "Onlar, iki denizin birleştiği yere varınca balıklarını unuttular. Balık denizde yolunu tutup kayıp gitti."

Allah, balığın suya girmesini, Hızır'ın orada bulunduğuna delil kılmıştır. Sonra Allah mucizeyi daha da güçlü kılmak ve beşer tercihinden daha da uzak tutmak için ikisini unutmaya maruz bırakmıştır.

فَلَمَّا جَاوَزَا قَالَ لِفَتٰيهُ اٰتِنَا غَدَآءَنَا لَقَدْ لَقِينَا مِنْ سَفَرِنَا هٰذَا نَصَبًا ﴿٦٢﴾

62- "İkisi, oradan uzaklaştıklarında Mûsâ, beraberindeki gence: 'Kuşluk yemeğimizi getir, bu yolculuğumuzdan dolayı çok yorgun düştük' dedi."

Hz. Mûsâ bu yolculukta tahammüllü idi. Bu, edep dersi alma ve zorluğa katlanma yolculuğu idi. Çünkü o, ilmini artırmak için gitmişti. İlmî arayış hali ise edep dersi alma ve zorluğa katlanma halidir. Bu nedenle Hz. Mûsâ acıkarak: ( لَقَدْ لَقِينَا مِنْ سَفَرِنَا هٰذَا نَصَبًا ) *"Bu yolculuğumuzdan dolayı çok yorgun düştük"* demiştir. Oysa Allah'ın kelamını işitmeyi beklediği süre zarfında oruç tutarken otuz gün sabretmiş ve ne acıkmış ne de zorluk çekmiştir. Çünkü onun bu yolculuğu Allah'a doğru olduğundan yükü üzerinden alınmıştı.

قَالَ اَرَاَيْتَ اِذْ اَوَيْنَآ اِلَى الصَّخْرَةِ فَاِنِّي نَسِيتُ الْحُوتَ وَمَآ اَنْسَانِيهُ
اِلَّا الشَّيْطَانُ اَنْ اَذْكُرَهُ وَاتَّخَذَ سَبِيلَهُ فِي الْبَحْرِ عَجَبًا ﴿٦٣﴾ قَالَ ذٰلِكَ
مَا كُنَّا نَبْغِ فَارْتَدَّا عَلٰٓى اٰثَارِهِمَا قَصَصًا ﴿٦٤﴾

63, 64- "Genç: 'Gördün mü? Kayaya sığındığımız sırada balığı unutmuşum. Doğrusu onu sana söylememi bana ancak şeytan unutturdu.

Balık, şaşılacak bir şekilde denizde yolunu tutup gitmişti' dedi. Mûsâ: 'İşte aradığımız bu idi' dedi. Bunun üzerine tekrar izlerini takip ederek gerisingeri döndüler."

Yerlerine geri dönmeleri gerektiğinden yolculukları uzadı. Sonra Hz. Yûşa: ( وَمَٓا اَنْسَانِيهُ اِلَّا الشَّيْطَانُ اَنْ اَذْكُرَهُ ) "*Doğrusu onu sana söylememi bana ancak şeytan unutturdu*" dedi. Allah, av onun emeğinin ürünü olsun diye bunu kendisine unutturdu. Sonra: ( قَالَ ذٰلِكَ مَا كُنَّا نَبْغِ ) "*İşte aradığımız bu idi*" dedi. Yani aradığımız, pişirilmiş olan balığın suya girmesi idi. Böylece bu durum onun için mucize oldu. Nitekim ikisi balığın suya girdiği yere varınca Hızır'a rastladılar.

فَوَجَدَا عَبْدًا مِنْ عِبَادِنَٓا اٰتَيْنَاهُ رَحْمَةً مِنْ عِنْدِنَا وَعَلَّمْنَاهُ مِنْ لَدُنَّا عِلْمًا ﴿٦٥﴾

65- "Derken kullarımızdan bir kul buldular ki biz ona katımızdan bir rahmet vermiş, kendisine tarafımızdan bir ilim öğretmiştik."

Allah, bir insanı kulu diye adlandırdığı zaman onu havastan kılmış olur. "Kulum" dediği zaman ise onu havassın hası kılmış olur.

( اٰتَيْنَاهُ رَحْمَةً مِنْ عِنْدِنَا ) "*Biz ona katımızdan bir rahmet vermiştik.*"

Yani katımızdan kendisine mahsus kıldığımız o rahmetle tarafımızdan rahmete mazhar kılındı. Böylece Hızır o rahmetle hem rahmet edilen hem de kullarımıza merhamet eden kişi olmaktadır.

( وَعَلَّمْنَاهُ مِنْ لَدُنَّا عِلْمًا ) "*Kendisine tarafımızdan bir ilim öğretmiştik.*"

Bir görüşe göre Allah tarafından olan ilim, arama külfetine katlanmadan ilham yoluyla gerçekleşen ilimdir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Ledün ilmi, Allah'ın kendisiyle has kullarını bilgi sahibi kıldığı ilimdir.

- Ledün ilmi, Allah'ın kendisiyle velilerini, kulları için faydalı olan konularda bilgi sahibi kıldığı ilimdir.

- Ledün ilmi, sahibine faydası dokunmayan, aksine içinde Allah'ın hakkı bulunan konularda kullarına faydalı olan ilimdir.

- Ledün ilmi, sahibinin inkâr etmesi mümkün olmayan ve gördüğü şeyin kesin doğruluğuna delil olan ilimdir. Mesela bu ilmin sahibine aklî delilini sorduğun zaman ona dair delil bulamaz. Bu itibarla en güçlü bilgi, delilden en uzak olanıdır.

قَالَ لَهُ مُوسٰى هَلْ اَتَّبِعُكَ عَلٰٓى اَنْ تُعَلِّمَنِ مِمَّا عُلِّمْتَ رُشْدًا ﴿٦٦﴾

66- "Mûsâ ona: 'Sana öğretilen bilgilerden bana, doğruya iletici bir bilgi öğretmen için sana tabi olayım mı?' dedi."

Hz. Mûsâ, izin isteme yolunu izleyerek hitapta nazik davranmıştır. Sonra arkadaşlığa dönük niyetini şu sözüyle açıklamıştır: (هَلْ اَتَّبِعُكَ عَلٰٓى اَنْ تُعَلِّمَنِ مِمَّا عُلِّمْتَ رُشْدًا) *"Sana öğretilen bilgilerden bana, doğruya iletici bir bilgi öğretmen için sana tabi olayım mı?"*

Bir yoruma göre de Hz. Hızır, kendisine verilen özel ilmi herhangi bir hocadan veya şahıstan öğrenmemiştir. O halde, başkasının kendisine öğretmediği ilmi o başkasına nasıl öğretebilir?

قَالَ اِنَّكَ لَنْ تَسْتَطِيعَ مَعِيَ صَبْرًا ﴿٦٧﴾ وَكَيْفَ تَصْبِرُ عَلٰى مَا لَمْ
تُحِطْ بِهٖ خُبْرًا ﴿٦٨﴾ قَالَ سَتَجِدُنٖٓي اِنْ شَٓاءَ اللّٰهُ صَابِرًا وَلَٓا اَعْصٖي
لَكَ اَمْرًا ﴿٦٩﴾

67, 68, 69- "Adam, şöyle dedi: 'Doğrusu sen, benimle beraberliğe asla sabredemezsin. İç yüzünü kavrayamadığın bir şeye nasıl sabredebilirsin?' Mûsâ: 'İnşaallah beni sabırlı bulacaksın. Hiçbir işte de sana karşı gelmeyeceğim' dedi."

Soru da cevap da duygusal incelikle ifade edilmiştir. Sonra Hz. Hızır, kendini kalben toparlayarak şöyle dedi:

(وَكَيْفَ تَصْبِرُ عَلٰى مَا لَمْ تُحِطْ بِهٖ خُبْرًا) *"İç yüzünü kavrayamadığın bir şeye nasıl sabredebilirsin?"* Hz. Mûsâ da ona:

( قَالَ سَتَجِدُنِيٓ اِنْ شَٓاءَ اللّٰهُ صَابِرًا وَلَٓا اَعْصِي لَكَ اَمْرًا ) *"İnşaallah beni sabırlı bulacaksın. Hiçbir işte de sana karşı gelmeyeceğim"* diyerek cevap verdi. Burada Hz. Mûsâ iki şeye söz vermiş oldu: Bunlardan biri sabır, diğeri de söyleyeceklerinde Hz. Hızır'a karşı gelmemesidir.

Bu arada Hz. Mûsâ sabrı "İnşaallah (Allah dilerse)" diyerek şarta bağladığı için sabredebilmiştir. O kadar ki, Hz. Hızır'ın yaptığı alışılmadık işlerde sabırlı davranarak elini tutmamıştır. Hz. Hızır'a karşı gelmeyeceği şeklindeki ikinci hususu ise Hz. Mûsâ, "İnşaallah" demeden mutlak olarak söylemiştir. Böylece birincisinde Hızır'a muhalefet etmezken, mutlak söylediği ikinci hususta aksama meydana gelmiştir.

قَالَ فَاِنِ اتَّبَعْتَنِي فَلَا تَسْـَٔلْنِي عَنْ شَيْءٍ حَتّٰٓى اُحْدِثَ لَكَ مِنْهُ ذِكْرًا ﴿٧٠﴾

70- "O da şöyle dedi: 'O halde eğer bana tabi olacaksan, ben sana söylemedikçe hiçbir şey hakkında bana soru sormayacaksın.'"

Çünkü müridin şeyhine, öğrencinin hocasına, aminin de müftüye fetva ve hüküm verdiği konularda "hayır" deme hakkı yoktur.

فَانْطَلَقَا حَتّٰٓى اِذَا رَكِبَا فِي السَّفِينَةِ خَرَقَهَا قَالَ اَخَرَقْتَهَا لِتُغْرِقَ
اَهْلَهَا لَقَدْ جِئْتَ شَيْـًٔا اِمْرًا ﴿٧١﴾

71- "Derken yola koyuldular. Nihayet bir gemiye bindiklerinde adam, gemiyi deldi. Mûsâ: 'Sen onu, içindekileri boğmak için mi deldin? Doğrusu şaşılacak bir iş yaptın' dedi."

Gemiye bindiklerinde Hz. Hızır onu deldi. Aslında bu delme işi sahibinin hayatını kurtarmıştı. Çünkü Hızır, gemilere göz diken hükümdarın delinmiş gemiyle ilgilenmemesi için onu delmişti.

( لِتُغْرِقَ اَهْلَهَا ) *"İçindekileri boğmak için."*

Yani bu işin sonu gemidekilerin boğulmasına yol açsın diye mi sen bunu yaptın? Çünkü Hz. Mûsâ, niyetinin doğrudan gemidekileri boğmak olmadığını biliyordu.

قَالَ اَلَمْ اَقُلْ اِنَّكَ لَنْ تَسْتَطِيعَ مَعِيَ صَبْرًا ﴿٧٢﴾

72- "Adam: 'Sen, benimle beraberliğe asla sabredemezsin, demedim mi?' dedi."

Yani sen, bu olaya ilim açısından bakıyorsun. Biz ise onu hüküm bakımından icra ediyoruz.

قَالَ لَا تُؤَاخِذْنِي بِمَا نَسِيتُ وَلَا تُرْهِقْنِي مِنْ اَمْرِي عُسْرًا ﴿٧٣﴾

73- "Mûsâ: 'Unuttuğum için bana çıkışma ve bu işimde bana güçlük çıkarma!' dedi."

Hz. Mûsâ, ondan ilmin gereğine uygun düşeni talep ederek:

( قَالَ لَا تُؤَاخِذْنِي بِمَا نَسِيتُ ) *"Unuttuğum için bana çıkışma"* demiştir. Çünkü unutan kimse sorumlu tutulmaz. Hz. Mûsâ, bu talebini, aynı anda söylediği:

( وَلَا تُرْهِقْنِي مِنْ اَمْرِي عُسْرًا ) *"ve bu işimde bana güçlük çıkarma!"* şeklindeki sözüyle de teyit etmiştir. Bu itibarla, şartları taşıyan kimseye uygun olan yükümlülüktür. Yapma ve yapmama ehliyetine sahip olmayan kimse ise yükümlü kılınamaz. Unutan da onlardan biridir.

فَانْطَلَقَا حَتّٰى اِذَا لَقِيَا غُلَامًا فَقَتَلَهُ قَالَ اَقَتَلْتَ نَفْسًا زَكِيَّةً بِغَيْرِ
نَفْسٍ لَقَدْ جِئْتَ شَيْئًا نُكْرًا ﴿٧٤﴾

74- "Yine yola koyuldular. Nihayet bir erkek çocukla karşılaştıklarında adam onu öldürdü. Mûsâ: 'Bir cana karşılık olmaksızın, suçsuz birini mi öldürdün? Andolsun çok kötü bir iş yaptın!' dedi."

İlmin ahlakına göre Hz. Mûsâ, zahiren bir zulme tanık olduğu için onu engellemesi gerekirdi. Lakin Hz. Hızır'ın haline vakıf olup haram veya mubah bir iş yaptığını öğrendiğinde yapması uygun olan, işine karışmamasıdır. Zira o durumda âdet, ters yüz olmaktadır.

قَالَ اَلَمْ اَقُلْ لَكَ اِنَّكَ لَنْ تَسْتَطِيعَ مَعِيَ صَبْرًا ﴿٧٥﴾

75- "Adam: 'Sana, benimle beraberliğe asla sabredemezsin demedim mi?' dedi."

Hz. Hızır, ilmin icabını bildiği için: (اِنَّكَ لَنْ تَسْتَطِيعَ مَعِيَ صَبْرًا)"*benimle beraberliğe asla sabredemezsin*" sözünü tekrarlamıştır. Keşif makamında ise Hz. Mûsâ, ona bir şart önererek şöyle demiştir:

قَالَ اِنْ سَاَلْتُكَ عَنْ شَيْءٍ بَعْدَهَا فَلَا تُصَاحِبْنِي قَدْ بَلَغْتَ مِنْ لَدُنّ۪ي عُذْرًا ﴿٧٦﴾

76- "Mûsâ: 'Eğer bundan sonra sana bir şey hakkında soru sorarsam, artık benimle arkadaşlık etme. Doğrusu tarafımdan son özre ulaştın' dedi."

Hz. Mûsâ'nın karşı çıkmalarının sayısı üçe ulaştı. Üç ise azlık sınırının sonu, çokluk sınırının da başlangıcıdır. Bu nedenledir ki Hz. Mûsâ bundan sonra müsamaha görmemiştir.

فَانْطَلَقَا حَتّٰٓى اِذَٓا اَتَيَٓا اَهْلَ قَرْيَةٍ اسْتَطْعَمَٓا اَهْلَهَا فَاَبَوْا اَنْ يُضَيِّفُوهُمَا فَوَجَدَا فِيهَا جِدَارًا يُر۪يدُ اَنْ يَنْقَضَّ فَاَقَامَهُ قَالَ لَوْ شِئْتَ لَتَّخَذْتَ عَلَيْهِ اَجْرًا ﴿٧٧﴾

77- "Yine yola koyuldular. Nihayet bir şehir halkına varıp onlardan yiyecek istediler. Halk onları konuk etmek istedi. Derken orada yıkılmaya yüz tutmuş bir duvar gördüler. Adam, hemen o duvarı doğrulttu. Mûsâ: 'İsteseydin bu iş için bir ücret alırdın' dedi."

Onların dininde şehir halkının onlara yemek yedirmesi gerekirdi. Oysa Hz. Mûsâ, onlara karşı koymanın bir faydası olmadığını ve kendilerine ses çıkarmamasının daha iyi olacağını bilmiyordu. Bu esnada Hz. Hızır, duvarlarını doğrultup karşılığında ücret istemeyince, Hz. Mûsâ: "Sen sakıncalı bir iş yaptın" demedi de şöyle dedi: ( لَوْ شِئْتَ لَتَّخَذْتَ عَلَيْهِ اَجْرًا ) *"İsteseydin, bu iş için bir ücret alırdın."* Yani eğer sen, kendin için almasan da bizim için alsaydın. Ücret alman bizim için, onu terk etmenden daha iyi olurdu. Şayet onların hakkına uymak gerekli idiyse, bizim hakkımızı neden ihlal ettin?

Bir yoruma göre de Hz. Mûsâ'nın bu yolculuğu, edep dersi alma yolculuğu olduğu için meşakkate katlanmaya maruz bırakıldı. Yoksa o, Hz. Şuayb'in kızları için hayvanları suvardığı zaman çektiği yorgunluk ve açlık daha çoktu. Ancak o zaman sorumluluk yükü üzerinden alınmışken şimdi yük taşıyordu. Hz. Mûsâ bunu söyleyince Hz. Hızır ona şöyle dedi:

قَالَ هٰذَا فِرَاقُ بَيْنِي وَبَيْنِكَ سَاُنَبِّئُكَ بِتَاْوِيلِ مَا لَمْ تَسْتَطِعْ عَلَيْهِ صَبْرًا ﴿٧٨﴾

78- "Adam: 'İşte bu, birbirimizden ayrılmamız demektir' dedi. 'Şimdi sana, sabredemediğin şeylerin iç yüzünü anlatacağım.'"

Yani bundan sonra aramızda arkadaşlık yoktur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Hz. Hızır dedi ki: Sen bir peygambersin. Ben de seni sadece söylediğinle sorumlu tutuyorum. Çünkü bu şartı sen koydun ve: "Eğer ondan sonra sana bir şey sorarsam artık benimle arkadaşlık etme" dedin. Ben de sadece senin söylediğinle sana muamele ediyorum.

- Hz. Mûsâ soru sormayı bırakmak konusunda onunla beraber olmaya sabredemeyince Hz. Hızır da arkadaşlığı sürdürmek konusunda onunla beraber olmaya katlanamayarak ayrılmayı tercih etti.

- Hz. Mûsâ, yoksullara ait olan gemi ve haksız yere cana kıyma gibi, başkaları için soru sorduğu sürece Hz. Hızır ondan ayrılmadı.

Ancak üçüncü olayda içinde kendi nefsinin payı olan yemek talebi konusunda söz söylemeye yeltenince ayrılıkla müptela kılındı ve Hz. Hızır: ( قَالَ هٰذَا فِرَاقُ بَيْنِي وَبَيْنِكَ ) *"İşte bu, birbirimizden ayrılmamız demektir"* dedi.

- Nasıl ki Hz. Mûsâ daha çok bilgi elde etmek amacıyla Hz. Hızır'la arkadaşlık etmeyi seviyor idiyse, Hz. Hızır da mahlûklardan uzaklaşarak Allah ile baş başa kalmayı tercih ettiği için Hz. Mûsâ'nın arkadaşlığını terk etmek istiyordu.

اَمَّا السَّفِينَةُ فَكَانَتْ لِمَسَاكِينَ يَعْمَلُونَ فِي الْبَحْرِ فَاَرَدْتُ اَنْ اَعِيبَهَا
وَكَانَ وَرَآءَهُمْ مَلِكٌ يَأْخُذُ كُلَّ سَفِينَةٍ غَصْبًا ﴿٧٩﴾

79- "O gemi denizde çalışan bir takım yoksul kimselere ait idi. Onu yaralamak istedim; çünkü onların ilerisinde her gemiyi zorla ele geçiren bir kral vardı."

Hz. Hızır, Hz. Mûsâ'dan ayrılırken kalbinde itiraz türünden bir şey kalmasını istemediği için durumu kendisine izah etmek suretiyle bunu kalbinden giderdi ve gemiyi yaralamak istemesindeki sırrın onu kurtarmak ve sahiplerine kalmasını sağlamak olduğunu kendisine açıkladı. Zira böylece zorba kral gemiye göz dikmeyecekti. Bu itibarla, geminin kusurlu olarak sahiplerine kalması, sağlam olup gasp edilmesinden daha iyi idi.

وَاَمَّا الْغُلَامُ فَكَانَ اَبَوَاهُ مُؤْمِنَيْنِ فَخَشِينَآ اَنْ يُرْهِقَهُمَا طُغْيَانًا
وَكُفْرًا ﴿٨٠﴾ فَاَرَدْنَآ اَنْ يُبْدِلَهُمَا رَبُّهُمَا خَيْرًا مِنْهُ زَكٰوةً وَاَقْرَبَ
رُحْمًا ﴿٨١﴾

80, 81- "Çocuğa gelince, anası babası mümin insanlardı. Onları azgınlık ve küfürle sarsmasından korktuk. Böylece Rablerinin onlara, bu çocuğun yerine daha hayırlı ve daha merhametli bir çocuk vermesini diledik."

Hz. Hızır Hz. Mûsâ'ya, Allah'ın ezeldeki ilmi ve hükmünün, çocuğun sağ kalmasında ebeveyni için fitne, bu halefin değiştirilmesinde ise kendileri için saadet bulunduğu şeklinde kesinlik kazandığını açıklamıştır.

وَاَمَّا الْجِدَارُ فَكَانَ لِغُلَامَيْنِ يَتِيمَيْنِ فِي الْمَدِينَةِ وَكَانَ تَحْتَهُ كَنْزٌ لَهُمَا وَكَانَ اَبُوهُمَا صَالِحًا فَاَرَادَ رَبُّكَ اَنْ يَبْلُغَٓا اَشُدَّهُمَا وَيَسْتَخْرِجَا كَنْزَهُمَا رَحْمَةً مِنْ رَبِّكَ وَمَا فَعَلْتُهُ عَنْ اَمْرِي ذٰلِكَ تَاْوِيلُ مَا لَمْ تَسْطِعْ عَلَيْهِ صَبْرًا ﴿٨٢﴾

82- "Duvar ise şehirdeki iki yetim çocuğa ait idi. Altında onlara ait bir define vardı. Babaları da iyi bir insandı. Rabbin, onların olgunluk çağına ulaşmalarını ve Rabbinden bir rahmet olarak definelerini çıkarmalarını istedi. Bunları ben kendi görüşüme göre yapmadım. İşte senin sabredemediğin şeylerin içyüzü budur."

Duvarı doğrultmaya gelince, bu her iki yetim çocuğun hazinelerinin kendilerine kalmasını sağlamak ve halktan merhamet dilemeyi terk etmeleri içindir.

وَيَسْئَلُونَكَ عَنْ ذِي الْقَرْنَيْنِ قُلْ سَاَتْلُوا عَلَيْكُمْ مِنْهُ ذِكْرًا ﴿٨٣﴾

83- "Bir de sana Zülkarneyn hakkında soru soruyorlar. De ki: 'Size ondan bir anı okuyacağım.'"

اِنَّا مَكَّنَّا لَهُ فِي الْاَرْضِ وَاٰتَيْنَاهُ مِنْ كُلِّ شَيْءٍ سَبَبًا ﴿٨٤﴾

84- "Biz, onu yeryüzünde kudret sahibi kıldık ve kendisine her konuda bir yol verdik."

فَاَتْبَعَ سَبَبًا ﴿٨٥﴾

85- "O da bir yol tuttu."

حَتّٰٓى اِذَا بَلَغَ مَغْرِبَ الشَّمْسِ وَجَدَهَا تَغْرُبُ ف۪ي عَيْنٍ حَمِئَةٍ وَوَجَدَ
عِنْدَهَا قَوْمًا قُلْنَا يَا ذَا الْقَرْنَيْنِ اِمَّٓا اَنْ تُعَذِّبَ وَاِمَّٓا اَنْ تَتَّخِذَ ف۪يهِمْ حُسْنًا ﴿٨٦﴾

86- “Güneşin battığı yere varınca, onu siyah balçıklı bir su gözesinde batar buldu. Orada bir kavim gördü. ‘Ey Zülkarneyn! Ya onları cezalandırırsın ya da haklarında iyilik yolunu tutarsın’ dedik.”

قَالَ اَمَّا مَنْ ظَلَمَ فَسَوْفَ نُعَذِّبُهُ ثُمَّ يُرَدُّ اِلٰى رَبِّه۪ فَيُعَذِّبُهُ عَذَابًا نُكْرًا ﴿٨٧﴾

87- “Zülkarneyn: ‘Her kim zulmederse, biz onu cezalandıracağız. Sonra o, Rabbine döndürülür. O da kendisini görülmedik bir azaba uğratır’ dedi.”

وَاَمَّا مَنْ اٰمَنَ وَعَمِلَ صَالِحًا فَلَهُ جَزَٓاءًۨ الْحُسْنٰىۚ وَسَنَقُولُ لَهُ مِنْ
اَمْرِنَا يُسْرًا ﴿٨٨﴾

88- “Her kim de iman eder ve salih amel işlerse, ona mükâfat olarak daha güzeli var. Üstelik ona emrimizden kolay olanı söyleteceğiz.”

ثُمَّ اَتْبَعَ سَبَبًا ﴿٨٩﴾

89- “Sonra yine bir yol tuttu.”

حَتّٰٓى اِذَا بَلَغَ مَطْلِعَ الشَّمْسِ وَجَدَهَا تَطْلُعُ عَلٰى قَوْمٍ لَمْ نَجْعَلْ
لَهُمْ مِنْ دُونِهَا سِتْرًا ﴿٩٠﴾ كَذٰلِكَ وَقَدْ اَحَطْنَا بِمَا لَدَيْهِ خُبْرًا ﴿٩١﴾
ثُمَّ اَتْبَعَ سَبَبًا ﴿٩٢﴾

90, 91, 92- “Güneşin doğduğu yere ulaşınca, onu kendileriyle güneş arasına örtü koymadığımız bir halk üzerine doğar buldu. İşte böyle. Şüphesiz biz, onun yanındakileri ilmimizle kuşatmışızdır. Sonra yine bir yol tuttu.”

Kimi kavimler, güneşin doğduğu bölgenin sakinleri olup genellikle günleri uzundur. Bazı kavimler de güneşin battığı ve genellikle uzun süre doğmadığı bölgenin sakinleri idiler. İşte insanlar tevhid güneşinin doğuşu bakımından da böyledirler. Onlardan bazılarının durumu, güneşlerinin genellikle doğuş halinde olmasıdır. Bir de huzur onların niteliği, şuhûd onların vasfı, tevhid de onların hakkıdır. Bazıları ise tevhid güneşinden en az nasibe ve en değersiz paya sahiptirler.

حَتّٰٓى اِذَا بَلَغَ بَيْنَ السَّدَّيْنِ وَجَدَ مِنْ دُونِهِمَا قَوْمًا لَا
يَكَادُونَ يَفْقَهُونَ قَوْلًا ﴿٩٣﴾ قَالُوا يَا ذَا الْقَرْنَيْنِ اِنَّ يَاْجُوجَ
وَمَاْجُوجَ مُفْسِدُونَ فِي الْاَرْضِ فَهَلْ نَجْعَلُ لَكَ خَرْجًا
عَلٰٓى اَنْ تَجْعَلَ بَيْنَنَا وَبَيْنَهُمْ سَدًّا ﴿٩٤﴾ قَالَ مَا مَكَّنّ۪ي ف۪يهِ
رَبّ۪ي خَيْرٌ فَاَع۪ينُون۪ي بِقُوَّةٍ اَجْعَلْ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ رَدْمًا ﴿٩٥﴾

93, 94, 95- "İki dağ arasına ulaşınca, bunların önünde neredeyse hiçbir sözü anlamayan bir halk buldu. Dediler ki: 'Ey Zülkarneyn! Ye'cûc ve Me'cûc, yeryüzünde bozgunculuk yapmaktadırlar. Onlarla bizim aramızda bir engel yapman karşılığında sana bir vergi verelim mi?' Zülkarneyn: 'Rabbimin bana verdiği daha hayırlıdır. Şimdi siz, bana gücünüzle yardım edin de sizinle onların arasına sağlam bir engel yapayım' dedi."

Yani onlar, kendi dillerinden başka dil bilmezler ve başkalarını anlamazlardı. Bu nedenle durumlarını anlatmada göz yaşlarına sarıldılar ve Ye'cûc ve Me'cûc konusundaki mazlumiyetlerini Zülkarneyn'e bu yolla arz ederek kendisine ödeyecekleri haraç konusunda ona güvence verdiler. Bunun üzerine Zülkarneyn gücü nispetinde onları koruması gerektiğini düşündüğü için dileklerini kabul ederek arzularını yerine getirdi ve kendisine güvence verdikleri vergiyi onlardan almadı.

اٰتُونِي زُبَرَ الْحَدِيدِ حَتّٰٓى اِذَا سَاوٰى بَيْنَ الصَّدَفَيْنِ قَالَ
انْفُخُوا حَتّٰٓى اِذَا جَعَلَهُ نَارًا قَالَ اٰتُونِٓي اُفْرِغْ عَلَيْهِ قِطْرًا ﴿٩٦﴾

96- "'Bana demir madeni getirin' dedi. İki yamacın arasındaki boşluğu bir hizaya getirince: 'Körükleyin!' dedi. Demiri eritip kor yapınca da: 'Bana erimiş bakır getirin, bunun üzerine boşaltayım' dedi."

Zülkarneyn ihtiyaç duyduğu yardım konusunda: ( اٰتُونِي زُبَرَ الْحَدِيدِ ) "*Bana demir madeni getirin*" diyerek onlardan yardım talep etti. Onlar, Zülkarneyn'in kendilerine söylediğini yapıp demire ateşi körükleyince dağın her iki tarafına set yaptı.

فَمَا اسْطَاعُوٓا اَنْ يَظْهَرُوهُ وَمَا اسْتَطَاعُوا لَهُ نَقْبًا ﴿٩٧﴾

97- "Artık onu ne aşabildiler ne de delebildiler."

قَالَ هٰذَا رَحْمَةٌ مِنْ رَبّ۪ي فَاِذَا جَٓاءَ وَعْدُ رَبّ۪ي جَعَلَهُ دَكَّٓاءَ وَكَانَ
وَعْدُ رَبّ۪ي حَقًّا ﴿٩٨﴾

98- "Zülkarneyn: 'Bu, Rabbimin bir rahmetidir. Rabbimin vaadi gelince, onu yerle bir eder. Rabbimin vaadi gerçektir' dedi."

Sonra Zülkarneyn bu seddin ancak Allah Ye'cûc ve Me'cûc'a çıkış izni verinceye kadar kalacağını ve ilahi takdirde onlar için biçilen zamana kadar kötülüklerinin insanların üzerinden kalkacağını bildirdi. Ondan sonra ise durumları Allah'ın dilediği gibi olur.

وَتَرَكْنَا بَعْضَهُمْ يَوْمَئِذٍ يَمُوجُ ف۪ي بَعْضٍ وَنُفِخَ فِي الصُّورِ
فَجَمَعْنَاهُمْ جَمْعًا ﴿٩٩﴾

99- "O gün biz onları bırakırız. Dalga dalga birbirlerine karışırlar. Sonra sûra üfürülür de onları toptan bir araya getiririz."

Allah (c.c.), onların, setlerinin arkasından çıkmalarının, kıyametin alametlerinden olduğunu belirtmiştir.

وَعَرَضْنَا جَهَنَّمَ يَوْمَئِذٍ لِلْكَافِرِينَ عَرْضًا ﴿١٠٠﴾ اَلَّذِينَ كَانَتْ اَعْيُنُهُمْ فِي غِطَٓاءٍ عَنْ ذِكْرِي وَكَانُوا لَا يَسْتَطِيعُونَ سَمْعًا ﴿١٠١﴾

100, 101- "O gün cehennemi, gözleri zikrime karşı perdeli olan ve onu dinleme zahmetine dahi katlanamayan kâfirlerin karşısına dikeriz."

Onlar, ibret almak ve delil bulmak bakımından kalp gözünü yitirdikleri için kafataslarının gözleriyle bakmışlardır. Bir de muvaffakiyeti kaçırdıkları için kabul kulağına sahip değillerdi. Bu nedenle yükümlülük altında kalmışlar ve bilgilendirmeden yararlanamamışlardır.

( وَكَانُوا لَا يَسْتَطِيعُونَ سَمْعًا ) *"Onu dinleme zahmetine dahi katlanamıyorlardı."*

Çünkü onlar, Allah tarafından dinleme kabiliyetinden mahrum bırakıldıklarından kabul etmeye güç yetiremiyorlardı.

اَفَحَسِبَ الَّذِينَ كَفَرُوٓا اَنْ يَتَّخِذُوا عِبَادِي مِنْ دُونِي اَوْلِيَٓاءَ اِنَّٓا اَعْتَدْنَا جَهَنَّمَ لِلْكَافِرِينَ نُزُلًا ﴿١٠٢﴾

102- "İnkâr edenler, beni bırakıp da kullarımı dost edineceklerini mi sandılar? Biz cehennemi kâfirlere konak olarak hazırladık."

Yani onlar kendi zanlarınca yaptıklarının kendilerine fayda vereceğini vehmettiler ve putlarının yüceltilmeyi hak ettiklerine inandılar. Onlar iyi bir iş yaptıklarını sanarak şöyle dediler: ( نَعْبُدُهُمْ اِلَّا لِيُقَرِّبُونَٓا اِلَى اللّٰهِ زُلْفٰى ) *"Biz onlara sadece, bizi Allah'a daha çok yaklaştırsınlar diye ibadet ediyoruz."* (Zümer, 39/3) Oysa hesap etmedikleri şeyler, Allah katından karşılarına çıkmıştır.

قُلْ هَلْ نُنَبِّئُكُمْ بِالْاَخْسَرِينَ اَعْمَالًا ﴿١٠٣﴾ اَلَّذِينَ ضَلَّ سَعْيُهُمْ فِي
الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَهُمْ يَحْسَبُونَ اَنَّهُمْ يُحْسِنُونَ صُنْعًا ﴿١٠٤﴾

103, 104- "De ki: 'Amelce en çok ziyana uğrayan, iyi iş yaptıklarını sandıkları halde, dünya hayatındaki çabaları kaybolup giden kimseleri size haber verelim mi?'"

Çabaları boşa gitmiş çünkü onlar Allah'tan başkası için çalışmışlardır. Allah'tan başkası için olan ise fayda vermez.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Çabası boşa gidenler, amellerinin yanına riyayı koyanlar, hallerini beğeniyle anlatanlar ve iyiliklerini görerek veya başa kakarak anlamsız kılanlardır.

- Çabası boşa gidenler, amellerini ve yaptıklarını çok görenlerdir.

( وَهُمْ يَحْسَبُونَ اَنَّهُمْ يُحْسِنُونَ صُنْعًا ) *"Oysa onlar, iyi iş yaptıklarını sanıyorlar."*

Onlar, hakikati arayan kimseler olmadıklarından ilimsiz amel ettiler ve bir dayanakları yoktu.

اُو۬لٰٓئِكَ الَّذِينَ كَفَرُوا بِاٰيَاتِ رَبِّهِمْ وَلِقَٓائِه۪ فَحَبِطَتْ اَعْمَالُهُمْ فَلَا
نُق۪يمُ لَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ وَزْنًا ﴿١٠٥﴾

105- "Onlar, Rablerinin ayetlerini ve O'na kavuşacaklarını inkâr eden, böylece amelleri boşa çıkan, o yüzden de kıyamet gününde amelleri için bir terazi kurmayacağımız kimselerdir."

Onlar kör olup hakikati göremediklerinden inkârın karanlığında kaldılar. Böylece farklı vehim ve zanlara kapıldılar, basiret sahibi olamadılar ve kalpleri kesin bir inanç üzere karar kılmadı. Bu nedenle ahirette hiçbir ağırlık ve önemleri yoktur. Bugün onlar hayvanlar gibidirler, yarın da ayakları (...) düşerler.

ذٰلِكَ جَزَٓاؤُ۬هُمْ جَهَنَّمُ بِمَا كَفَرُوا وَاتَّخَذُوٓا اٰيَاتٖي وَرُسُلٖي هُزُوًا ﴿١٠٦﴾

106- "İşte böyle. İnkâr etmeleri, âyetlerimi ve peygamberlerimi alay konusu yapmaları yüzünden onların cezası cehennemdir."

Onlar bugün inkârın cezasını çekerken, yarın da reddedilmişlik cezasını çekeceklerdir. Bugün ayrılık züllünün, yarın da yanmanın acısı içinde olurlar.

اِنَّ الَّذٖينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ كَانَتْ لَهُمْ جَنَّاتُ الْفِرْدَوْسِ نُزُلًاۙ ﴿١٠٧﴾

107- "Şüphesiz, inanıp yararlı işler yapanlara gelince, onlar için Firdevs cennetleri bir konaktır."

Onlar için dünyada gizli cennetler, ahirette ise açıktan cennetler vardır. Bugün vuslat cennetleri, yarın da lütuf cennetleri vardır. Bugün irfan cennetleri, yarın da rıza cennetleri vardır.

خَالِدٖينَ فٖيهَا لَا يَبْغُونَ عَنْهَا حِوَلًا ﴿١٠٨﴾

108- "Orada ebedî kalacaklardır. Oradan ayrılmak istemezler."

Allah bize, yarın onlara lütfedeceği nimetlerin daimi olacağını anlatmaktadır. Bu itibarla onlar nimetlerinden kopmayacak ve durumlarından çıkmayacaklardır. Onlar ebediyen cennette olacaklar ve ondan çıkarılmaları asla söz konusu olmayacaktır. Bir de onlar ebediyen Allah'ı görebilecek ve ondan hiçbir şekilde alıkonulmayacaklardır.

قُلْ لَوْ كَانَ الْبَحْرُ مِدَادًا لِكَلِمَاتِ رَبّٖي لَنَفِدَ الْبَحْرُ قَبْلَ اَنْ تَنْفَدَ كَلِمَاتُ رَبّٖي وَلَوْ جِئْنَا بِمِثْلِهٖ مَدَدًا ﴿١٠٩﴾

109- "De ki: 'Rabbimin sözlerini yazmak için denizler mürekkep olsa ve bir o kadar da ilave etsek, Rabbimin sözleri tükenmeden önce denizler tükenirdi."

Sonsuz oldukları için Allah'ın sözlerinin manaları sayılamaz. Çünkü Allah'ın bildikleri, güç yetirdikleri ve sıfatlarının taalluk ettiği diğer hususlar gibi kadim sıfatının taalluk ettiği şeyler sonsuzdur. Oysa bildikleri çok da olsa mahlûk olan kimse , sonsuz olanın tamamını kavrayamaz.

قُلْ اِنَّمَٓا اَنَا بَشَرٌ مِثْلُكُمْ يُوحٰٓى اِلَيَّ اَنَّمَٓا اِلٰهُكُمْ اِلٰهٌ وَاحِدٌ فَمَنْ كَانَ
يَرْجُوا لِقَٓاءَ رَبِّه۪ فَلْيَعْمَلْ عَمَلًا صَالِحًا وَلَا يُشْرِكْ بِعِبَادَةِ رَبِّه۪ٓ اَحَدًا ﴿١١٠﴾

110- "De ki: 'Ben de ancak sizin gibi bir insanım. Bana: 'Sizin İlâh'ınız ancak bir tek ilâhtır' diye vahyolunuyor. Kim Rabbine kavuşmayı umuyorsa yararlı bir iş yapsın ve Rabbine ibadette kimseyi ortak koşmasın.'"

Şekil ve cins bakımından senin de onların benzeri olduğunu, onlarla arandaki farkın Allah'ın sana peygamberlik vermiş olması, onları ise cehalet içinde bırakmasıdır.

Bir yoruma göre de, de ki: Şekilde ben ve siz denk olsak da benim özelliğim, seçilmiş olmamdır.

( فَمَنْ كَانَ يَرْجُوا لِقَٓاءَ رَبِّه۪ فَلْيَعْمَلْ عَمَلًا صَالِحًا وَلَا يُشْرِكْ بِعِبَادَةِ رَبِّه۪ٓ اَحَدًا ) *"Kim, Rabbine kavuşmayı umuyorsa, yararlı bir iş yapsın ve Rabbine ibadette kimseyi ortak koşmasın."*

Bu ayetteki ummayı, ceza korkusu ve sevap ümidi şeklinde yorumlamak güzel olur. Lakin ummayı zahirî üzere bırakmak daha iyidir. Nitekim müminler bütün olarak Allah'a kavuşmayı umarlar. Allah'ı tanıyan arif ise hem Allah'a kavuşmayı hem de O'na bakmayı umar. Bu arada müminin, varlığıyla Allah'a kavuşma mertebesine ulaştığı salih amel, şiddetli arzusunun acılarına dayanması ve amelinde ihlaslı olmasıdır.

( وَلَا يُشْرِكْ بِعِبَادَةِ رَبِّه۪ٓ اَحَدًا ) *"Rabbine ibadette kimseyi ortak koşmasın."*

Yani amelini görmesin, ibadetini çok bulmasın ve kendi gücü ve kuvvetinden uzak dursun. Bir yoruma göre de burada salih amel, sıratın varlığına, görüleceğine ve vaktinin bekleneceğine inanmak anlamındadır.

سورة مَرْيَم

# MERYEM SÛRESİ

(Meryem Sûresi 98 âyettir. Mekke'de Hz. Muhammed'in peygamber oluşunun 5. yılında, Habeşistan'a hicretten önce inmiştir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

Besmele öyle bir üstün varlığın adıdır ki, O'na tapan cihadını sürdürmüş olur, O'nu arayan yastığına veda etmiş olur, O'nu tanıyan sevdiklerini inkâr etmiş olur ve O, muvaffakiyet verdiği kimseyi kendi sevgisine bağlamış olur. Kim O'nu hatırlarsa, kendi adını unutmuş, kim O'nu görürse akıl ve idrakini yitirmiş -kendinden geçmiş- olur.

Bu, öyle üstün bir varlığın adıdır ki, kalpler O'nun sevgisi üzere yaratılmıştır. Sevgisine bağlı kılmadığı hiçbir kalp, O'na hiçbir tedbirle ulaşamaz. Bu öyle bir isimdir ki, varlıklar ancak onun sahibine ibadet etme vasfına sahip olmuş, özgür kimselerin ruhları da ancak O'nun müşahedesiyle itikafa girmiş olur. Bu, öyle bir üstün varlığın adıdır ki, O'nu tanıyan kimse, anlattıklarının ötesinde olduğunu itiraf eder.

كٓهٰيٰعٓصٓ ﴿١﴾

1- "Kâf, Hâ, Yâ, Ayn Sâd."

Bu ifade, dostları hitabın manalarının sırlarıyla tanıtmaktır. Bunlar öyle birtakım harflerdir ki Allah, onlarla hitap ettiği kimseye, anlamlarını anlama özelliği vermiştir. Şayet seçkin insanların onları işitme ve söyleme istidadı varsa Hz. Peygamber'in (s.a.v.) de onları anlama ve sırlarına vakıf olma istidadı vardır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, "kâf" harfiyle, ezeldeki kaza ve hükmüne uygun olarak inam, intikam, yükseltme ve alçaltma konularında kâfi olanın sadece kendisi olduğuna işaret ermiştir.

- "Kâf" harfi, Allah'ın velileriyle birlikte olduğunu anlatmakta ve vereceği bela ile ilgili görülmez planıyla korkutma anlamını taşımaktadır.

- "Kâf" harfinde, melekler kulların hatalarını yazmadan önce Allah'ın rahmeti ilke edindiğine işaret vardır.

"Hâ" harfi, Allah'ın müminleri irfanına erdirdiğine ve has kullarına hükümranlığının yüceliğine olan liyakatini ve ihsanı gereğince sahip olduğu hakkı tanıttığına işaret etmektedir.

"Yâ" harfi, Allah'ın verdiği sıkıntıların zorluğundan sonra nimetlerinin kolaylığına ve mümin kullarına rahmetle uzanan eline işaret etmektedir.

"Ayn" harfi, Allah'ın kulunun gizlilik, alenilik, darlık, bolluk durumundaki, o andaki ve gelecekteki halleri ile gücünün miktarını ve ihtiyacından doğan hakkını bildiğine işaret etmektedir.

"Sâd" harfi ise Allah'ın sözündeki sadakatine işaret etmektedir.

ذِكْرُ رَحْمَتِ رَبِّكَ عَبْدَهُ زَكَرِيَّا ﴿٢﴾

2- "Bu, Rabbinin Zekeriyya kuluna olan merhametinin anılmasıdır."

Bu anılma, Zekeriyya'nın çocuk sahibi olma isteğinin kabul edilmesi özelliğine sahip kılınması ve hem kendisine hem de bütün aile

fertlerine verilmiş olan Allah'a yakınlık meziyetinin kendisinden sonraki zürriyetlerine de verilmesidir.

اِذْ نَادٰى رَبَّهُ نِدَآءً خَفِيًّا ﴿٣﴾

3- "Hani o, Rabbine gizli bir sesle yalvarmıştı."

Bu gizli yalvarma, durumunun sırrına kimsenin muttali olmaması içindir. Bu amaçla o, yalvarmasını yabancılardan gizlemiştir. Bu arada Hz. Zekeriyya, iyiliklerini görmezden gelmek ve nefsinde kötülük olduğuna inanmak suretiyle, sırrını kendi nefsinden de saklayabilmiştir. Sonra kimsenin haline vakıf olmaması ve düşmanlarının söyledikleriyle alay etmemeleri için sırrını halktan da saklamıştır.

قَالَ رَبِّ اِنِّي وَهَنَ الْعَظْمُ مِنِّي وَاشْتَعَلَ الرَّاْسُ شَيْبًا وَلَمْ اَكُنْ بِدُعَآئِكَ رَبِّ شَقِيًّا ﴿٤﴾

4- "O, şöyle demişti: 'Rabbim! Şüphesiz kemiklerim gevşedi. Saçım sakalım ağardı. Rabbim! Sana yaptığım dualardan hiç umutsuz olmadım.'"

Yani güçsüzlüğüm nedeniyle hizmetinde yetersiz kaldığımdan sevmediğim bir durumla karşılaştım. Yaşım ilerledi, yaşlılıktan sonra da kuvvet söz konusu değildir. Öyleyse bana ibadetinde yerime geçecek bir çocuk bahşet!

( وَلَمْ اَكُنْ بِدُعَآئِكَ رَبِّ شَقِيًّا ) *"Rabbim! Sana yaptığım dualardan hiç umutsuz olmadım."*

Yani ben, sana dua etmekle umutsuz duruma düşmeyeceğimi bildiğim için kabul edeceğine güvenerek senden dilekte bulunuyorum. Çünkü sen, senden dilekte bulunulmasını gerçekten seversin.

Bir yoruma göre de Hz. Zekeriyya şunu demek istemiştir: Şüphesiz sen, beni duamın kabul edilmesine alıştırdın. Geçmiş günlerimde sana dua ettiğimde beni geri çevirmedin.

وَاِنّي خِفْتُ الْمَوَالِيَ مِنْ وَرَآئي وَكَانَتِ امْرَاَتي عَاقِرًا فَهَبْ لي مِنْ
لَدُنْكَ وَلِيًّا ﴿٥﴾ يَرِثُني وَيَرِثُ مِنْ اٰلِ يَعْقُوبَ وَاجْعَلْهُ رَبِّ رَضِيًّا ﴿٦﴾

5, 6- "Gerçek şu ki ben, benden sonra gelecek akrabalarımdan korkuyorum. Karım ise kısırdır. Bana kendi tarafından; bana ve Yâkub hanedanına vâris olacak bir çocuk bağışla ve Rabbim! Onu, hoşnutluğuna ulaşmış bir kimse kıl!"

Gerçek şu ki ben peygamberliğin aile fertlerimin elinden gitmesinden ve kuzenlerime intikal etmesinden korkuyorum. Öyleyse bana, sana ibadet edecek, soyumdan ve aile fertlerimden olacak bir çocuk bahşet!

Bu arada Hz. Zekeriyya, dünya şehveti ve ondan nasiplenmek için değil, sadece Allah'ın hakkını yerine getirmesi için çocuk istemiştir. ( يَرِثُني وَيَرِثُ مِنْ اٰلِ يَعْقُوبَ ) "*Bana ve Yâkub hanedanına vâris olacak bir çocuk*" sözü de Hz. Zekeriyya'nın çocuk istediği gibi çocuğun yaşamasını da istediğine dair delil içermektedir. Bu nedenle o: ( يَرِثُني ) "*Bana vâris olacak bir çocuk*" demiştir. Yani benden sonra yaşayacak ve Yâkub hanedanından peygamberliği ve ilahi mesajın tebliğini miras edinecek bir çocuk istiyorum.

( وَاجْعَلْهُ رَبِّ رَضِيًّا ) "*Rabbim! Onu, hoşnutluğuna ulaşmış bir kimse kıl!*"

( رَضِيّ ) "*radiyyun- hoşnut olunan*" kelimesi, ( فَعِيلٌ ) "*fe'îlun*" vezninde olup ( مَفْعُولٌ ) "*mef'ûlün*" anlamındadır. Yani onu, kendisinden hoşnut olacağın böylece katında hoşnut olunmuş bir kimse kıl! Bu kelimenin ismifailin mübalağası olma ihtimali de vardır. Yani onu, senden hoşnut ve takdirinle hoşnut olacak bir kimse kıl!

يَا زَكَرِيَّٓا اِنَّا نُبَشِّرُكَ بِغُلَامٍ اسْمُهُ يَحْيٰى لَمْ نَجْعَلْ لَهُ مِنْ قَبْلُ سَمِيًّا ﴿٧﴾

7- "Ey Zekeriyya! Haberin olsun ki biz sana Yahya adlı bir oğul müjdeliyoruz. Daha önce onun adını kimseye vermedik."

Yani duanı kabul ettik ve sana adı Yahya olan bir çocuk veriyoruz. Onunla annesinin kısırlığı canlanır, soyun ve anın yaşar. Senin yerine geçmesi yönündeki dileğini de kabul ettik. Böylece evindeki ibadet ve peygamberliğin yeri onunla yaşamış olacaktır.

( لَمْ نَجْعَلْ لَهُ مِنْ قَبْلُ سَمِيًّا ) *"Daha önce onun adını kimseye vermedik."*

İsimde eşinin olmaması, fazilette de eşinin olmadığını gösterir. Yani ondan önce bir adaşı olmadığından faziletinin özeliklerini kendinde toplamada da hiçbir dengi bulunmamaktadır.

Bir yoruma göre de daha önce bir benzerini yaratmadık. Çünkü ondan başka, peygamberlikten önce de peygamberlikten sonra da hiçbir günahı bulunmayan kimse olmamıştır.

قَالَ رَبِّ اَنّٰى يَكُونُ لِي غُلَامٌ وَكَانَتِ امْرَاَتِي عَاقِرًا وَقَدْ بَلَغْتُ مِنَ الْكِبَرِ عِتِيًّا ﴿٨﴾

**8- "Zekeriyya: 'Rabbim! Hanımım kısır ve ben de ihtiyarlığın son noktasına ulaşmış iken benim nasıl çocuğum olur?!' dedi."**

Önce çocuk istedi. Sonra da: "Nasıl çocuğum olur?" dedi. Tefsir ilmindeki izaha göre bunun anlamı şudur: Hz. Zekeriyya'nın çocuk istemesi ile duasının kabul edilmesi arasında uzun bir süre geçmiştir. Sanki o, yaşlılığının başlangıcında çocuk istemiş, ancak duası yaşlılığın son noktasına geldikten sonra kabul edilmiştir. Bu nedenle o: ( اَنّٰى يَكُونُ لِي غُلَامٌ ) *"Benim nasıl çocuğum olur?!"* demiştir.

Bir yoruma göre de o, bu çocuğun kimden olacağını; bu kısır kadından mı, evleneceği başka bir kadından mı yoksa cinsel temasta bulunacağı bir cariyeden mi olacağını öğrenmek istemiştir. Bu itibarla soru, çocuğun olacağı kadının belirlenmesi içindir. Bunun üzerine Allah şöyle buyurmuştur:

قَالَ كَذٰلِكَ قَالَ رَبُّكَ هُوَ عَلَيَّ هَيِّنٌ وَقَدْ خَلَقْتُكَ مِنْ قَبْلُ وَلَمْ تَكُ شَيْئًا ﴿٩﴾

9- "Melek dedi ki: Evet öyle. Ancak Rabbin diyor ki: 'Bu, bana göre kolaydır. Nitekim daha önce hiçbir şey değil iken seni de yarattım.'"

Yani oturmuş âdete göre çocuk talebinin bu zamanda kabul edilmesinde senin için bir mucize ve delil vardır. Böyle bir kadının çocuk doğurması, senin için kavmine karşı bir mucize ve delildir. Böylece çocuk isteğinin kabul edilmesi bir yönüyle mucize, bir yönüyle de huzur ve saygınlık vesilesidir.

( وَقَدْ خَلَقْتُكَ مِنْ قَبْلُ وَلَمْ تَكُ شَيْـًٔا ) *"Nitekim daha önce hiçbir şey değil iken, seni de yarattım."*

Ayet, olmayanın şey olmadığını göstermektedir. Çünkü Allah, kendisinin yaratılmadan önce bir şey olmadığını söylemiştir.

قَالَ رَبِّ اجْعَلْ لِيٓ اٰيَةً قَالَ اٰيَتُكَ اَلَّا تُكَلِّمَ النَّاسَ ثَلٰثَ لَيَالٍ سَوِيًّا ﴿١٠﴾

10- "Zekeriyya: 'Rabbim! Öyleyse bana bir işaret ver' dedi. Allah da: 'Senin işaretin, sapasağlam olduğun halde, insanlarla (üç gün) üç gece konuşmamandır' dedi."

Hz. Zekeriyya, kadının çocuğa hamile kaldığını gösteren bir alamet istemiştir. Yoksa kendisine söylenenin doğruluğuna delil gösterilecek bir alamet demek istememiştir. Bunun üzerine Allah, kendisine şunu bildirmiştir: *"Sana, kabul edilişinin alametini haber veriyorum: Ne kadar çaba harcasan da üç gün onlarla konuşmak için dilin dönmeyecektir. Senin benimle konuşman ve senin zamanında indirilmiş olan semavî kitapları okuman gerekir."*

Bunun üzerine Hz. Zekeriyya onlarla konuşmak istediği zaman dili dönmüyordu. Oysa kitapları okumak veya Allah'ı tespih etmek istediği zaman "Allah" ile beraber dili dönüyordu.

فَخَرَجَ عَلٰى قَوْمِهِ مِنَ الْمِحْرَابِ فَاَوْحٰٓى اِلَيْهِمْ اَنْ سَبِّحُوا بُكْرَةً وَعَشِيًّا ﴿١١﴾

**11- "Derken Zekeriyya, ibadet yerinden halkın karşısına çıktı ve onlara: 'Sabah akşam Allah'ı tespih edin' diye işaret etti."**

Yani Zekeriyya, karşılarına çıkınca işaret yoluyla onlara, kendileriyle konuştuğu dil için dilinin şimdilik dönmediğini anlattı.

يَا يَحْيٰى خُذِ الْكِتَابَ بِقُوَّةٍ وَاٰتَيْنَاهُ الْحُكْمَ صَبِيًّا ﴿١٢﴾ وَحَنَانًا مِنْ لَدُنَّا وَزَكٰوةً وَكَانَ تَقِيًّا ﴿١٣﴾

**12, 13- "'Ey Yahya! Kitaba sımsıkı sarıl' dedik. Biz ona daha çocuk iken hikmet ve katımızdan kalp yumuşaklığı ve ruh temizliği vermiştik. O, Allah'tan sakınan bir kimse idi."**

Yani biz ona dedik ki: Ey Yahya! Kitabı, bizden gelen ve sana özel olarak verdiğimiz bir kuvvetle al. Onu el kuvvetiyle değil, kalbin gücüyle al. Bu ise Allah'ın Yahya'ya özel olarak bahşettiği bir iyiliktir ki o da peygamberliktir. Ayet, Allah tarafından kendisine bir kitap verildiğini ifade etmektedir.

( وَاٰتَيْنَاهُ الْحُكْمَ صَبِيًّا ) *"Biz ona daha çocuk iken hikmet vermiştik."*

Yani ona peygamberlik vermiştik. O henüz çocuk iken Allah onu kavmine peygamber olarak göndermiş ve ona vahiy indirmiştir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Hikmetten maksat, insanlar arasında doğru ve hak ile hükmetmektir.

- Hikmetten maksat, fiili emre uygun olarak muhkem hale getirmektir.

( وَحَنَانًا مِنْ لَدُنَّا وَزَكٰوةً ) *"Ve katımızdan kalp yumuşaklığı ve ruh temizliği vermiştik."*

Yani biz ona katımızdan rahmet, temizlik, çabayla sahip olunan takvada muvaffakiyet ve bahşedilen takvayı hakikat olarak yaşama istidadı verdik. Çünkü takva iki kısımdır: Biri, kulun kendini zorlayıp öğrenerek ulaştığı kazanılmış takva; diğeri de Allah tarafından ortaya konulup bahşedilmiş olan takvadır ki kul, bu takvaya Allah'ın vergisi ve lütfuyla ulaşır.

وَبَرًّا بِوَالِدَيْهِ وَلَمْ يَكُنْ جَبَّارًا عَصِيًّا ﴿١٤﴾

14- "Ana-babasına iyi davranırdı. İsyankâr bir zorba değildi."

Ana ve babasına, beşer sevgisinden dolayı ve insanlık âdetinin gereği olarak değil, Allah bunu kendisine emrettiği için iyi davranırdı. O, Hakk'a baş kaldıran ve Rab oluşunu inkâr eden biri de değildi.

وَسَلَامٌ عَلَيْهِ يَوْمَ وُلِدَ وَيَوْمَ يَمُوتُ وَيَوْمَ يُبْعَثُ حَيًّا ﴿١٥﴾

15- "Doğduğu gün, öleceği gün ve diriltileceği gün ona selam olsun."

Yani tarafımızdan ona kıyamet günü, başta doğduğu gün ve sonunda vefat ettiği gün güvence verilmiştir. Bu güvence, Allah'ın ilahlığın hakikatini devamlı olarak kendisine müşahede ettirmesi sebebiyle onu sapıklık ve eğrilikten korumasıdır. Hz. Yahya'nın durumu kıyamet gününde de böyle olup Allah tarafından kendisine güvence verilmiştir. Bu itibarla o, dünyada hatadan masum kılınmış ve afetten korunmuş, ahirette de bela ve sıkıntıdan muhafaza edilmiştir.

وَاذْكُرْ فِي الْكِتَابِ مَرْيَمَ اِذِ انْتَبَذَتْ مِنْ اَهْلِهَا مَكَانًا شَرْقِيًّا ﴿١٦﴾
فَاتَّخَذَتْ مِنْ دُونِهِمْ حِجَابًا فَاَرْسَلْنَٓا اِلَيْهَا رُوحَنَا فَتَمَثَّلَ لَهَا بَشَرًا
سَوِيًّا ﴿١٧﴾

16, 17- "Kitap'ta Meryem'i de an. Hani ailesinden ayrılarak doğu tarafında bir yere çekilmiş ve onlarla arasında bir perde germişti. Biz, ona Cebrâil'i göndermiştik de ona tam bir insan şeklinde görünmüştü."

Hz. Meryem, kendisini temizleyecek bir amelde bulunmak için ailesinden ayrılarak gözlerinden saklandı. O sırada Hz. Cebrail'i beklemediği bir insan suretinde görünce içinde bir korku hissetti ve elinde onu Allah ile korkutmak ve Allah'a sığınmaktan başka çare yoktu.

قَالَتْ اِنّ۪ٓي اَعُوذُ بِالرَّحْمٰنِ مِنْكَ اِنْ كُنْتَ تَقِيًّا ﴿١٨﴾

18- "Meryem: 'Senden Rahmân'a sığınırım. Eğer Allah'tan sakınan biri isen' dedi."

Hz. Meryem, tanımadığı Hz. Cebrâil'e dedi ki: Eğer sen korkulması ve sakınılması gereken biri isen, yani eğer kötülük yapmak istiyorsan, senden Rahmân'a sığınırım. Bu arada Hz. Meryem: "Allah'a sığınırım" yerine "Rahmân'a sığınırım" derken: "Bana merhamet ederek beni senden koruyacak olan Allah'a sığınırım" demek istemiştir.

Bir yoruma göre de bu sözün anlamı şöyle olabilir: Eğer sen Allah'ı tanıyor ve emrine muhalefet etmekten sakınıyorsan, şüphesiz ben senden Allah'a sığınıyor ve seni O'nun azabından sakındırıyorum.

قَالَ اِنَّمَٓا اَنَا رَسُولُ رَبِّكِ لِاَهَبَ لَكِ غُلَامًا زَكِيًّا ﴿١٩﴾

19- "Cebrâil: 'Ben, ancak Rabbinin elçisiyim. Sana tertemiz bir çocuk bağışlamak için gönderildim' dedi."

Hz. Cebrâil, Hz. Meryem'le kendisini teskin edecek şekilde tanıştı ve ona Hz. İsa'yı müjdelemeyi de sözünün arasına kattı.

قَالَتْ اَنّٰى يَكُونُ ل۪ي غُلَامٌ وَلَمْ يَمْسَسْن۪ي بَشَرٌ وَلَمْ اَكُ بَغِيًّا ﴿٢٠﴾
قَالَ كَذٰلِكِ قَالَ رَبُّكِ هُوَ عَلَيَّ هَيِّنٌ وَلِنَجْعَلَهُٓ اٰيَةً لِلنَّاسِ وَرَحْمَةً
مِنَّا وَكَانَ اَمْرًا مَقْضِيًّا ﴿٢١﴾

20, 21- "Meryem: 'Bana hiçbir insan dokunmadığı ve iffetsiz bir kadın olmadığım halde, benim nasıl çocuğum olabilir?' dedi. Cebrâil: 'Evet, öyle. Rabbin diyor ki: O benim için çok kolaydır. Onu insanlara bir mucize ve katımızdan bir rahmet kılmak için böyle takdir ettik. Bu, zaten ezelde hükme bağlanmış bir iştir' dedi."

Hz. Meryem dedi ki: Ben bir hata ve ahlaksızlık yapmadığım halde nasıl çocuğum olur?! Bunun üzerine Hz. Cebrâil şöyle dedi: Durum sana söylediğim gibidir. Bu, Allah için zor değildir. Çünkü O, bu çocuğu kudretinin kemaline delil kılmaktan daha üstün bir kudrete sahiptir. Bir de bu çocuk, O'nun tarafından iman edenler için rahmet; bazıları için de cehalet sebebi olacaktır.

فَحَمَلَتْهُ فَانْتَبَذَتْ بِهٖ مَكَانًا قَصِيًّا ﴿٢٢﴾

22- "Böylece Meryem, çocuğa gebe kaldı ve onunla uzak bir yere çekildi."

Hamileliği belirginleşince ve insanların bunu kabul edilemez bulacaklarını anlayıp sırrını açacağı güvenilir birini bulamayınca halktan uzak bir yere gitti.

فَاَجَٓاءَهَا الْمَخَاضُ اِلٰى جِذْعِ النَّخْلَةِ قَالَتْ يَا لَيْتَنِي مِتُّ قَبْلَ هٰذَا وَكُنْتُ نَسْيًا مَنْسِيًّا ﴿٢٣﴾

23- "Doğum sancısı, onu bir hurma ağacına yöneltti. 'Keşke bundan önce ölseydim de unutulup gitmiş olsaydım!' dedi."

Doğum sancısı, onu hurma ağacına dayanmaya sevk etti. Doğurmaya başlayıp içine kavminden utanma duygusu girince, çaresizliğini dile getirerek:

(قَالَتْ يَا لَيْتَنِي مِتُّ قَبْلَ هٰذَا) "*Keşke bundan önce ölseydim*" dedi.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Muhtemeldir ki, Hz. Meryem bu sözü, kavminden çekindiği için söylemiştir. Çünkü o, kendisini suçlayarak kınayacaklarını ve ahlaksızlıkla itham edeceklerini anlamıştı.

- Hz. Meryem bu sözü, kavmine acıdığı için ve onun yüzünden başlarına bir azap gelmesin diye söylemiştir.

- Hz. Meryem şöyle demiştir: "*Keşke bundan önce ölseydim*" de benim yüzümden Allah hakkında: "İsa Allah ve Meryem'in oğludur ve Meryem Allah'ın karısıdır" diyen kimseleri duymasaydım. Allah, bu ithamdan çok münezzehtir.

- Keşke bundan önce bana nazik davranıldığı ve başıma gelen şu sıkıntıyla karşılaşmadığım zamanda ölseydim.

- Keşke bundan önce kalbimin henüz hiçbir şeye bağlanmadığı zaman ölseydim.

فَنَادٰيهَا مِنْ تَحْتِهَٓا اَلَّا تَحْزَنٖي قَدْ جَعَلَ رَبُّكِ تَحْتَكِ سَرِيًّا ﴿٢٤﴾

24- "Bunun üzerine Cebrâil, ağacın altından ona şöyle seslendi: 'Üzülme, Rabbin senin alt tarafından bir dere akıttı.'"

Tefsir ilminin izahına göre; altından seslenenden maksat Hz. Cebrâil'dir. Kimisine göre de Hz. İsa'dır. Bu seslenmeden amaçlanan ise Hz. Meryem'in yaşamakta olduğu tedirginliği teskin etmek ve ona Hz. İsa'yı müjdelemektir. Yani Allah sana saygın ve onurlu bir çocuk vermektedir.

وَهُزّٖٓي اِلَيْكِ بِجِذْعِ النَّخْلَةِ تُسَاقِطْ عَلَيْكِ رُطَبًا جَنِيًّا ﴿٢٥﴾

25- "Hurma ağacını kendine doğru silkele ki sana taze hurma dökülsün."

Bu, kuru bir hurma ağacı idi. Allah, anında ondan taze ve koparılabilen hurmayı çıkardı. Bunda ise Hz. Meryem için mucize ve delil vardı. Şöyle ki, böyle bir mucizeyi meydana getirmeye kadir olan Allah, Hz. İsa'yı da babasız yaratmaya kadirdir.

Bu konuda şu yorumlarda yapılmıştır:

- Hz. Meryem, dünyadan soyutlanıp alakasız olduğu zaman, kendisi herhangi bir emek sarf etmekle memur kılınmaksızın, Hz. Zekeriyya yanında rızık bulunduğunu görüyordu. Oysa çocuk alakası ortaya çıkınca, alakanın sıkıntıya ve meşakkate yol açtığının anlaşılması

için, çocuğu yeni doğurduğu zamanki en güçsüz halinde bile, kuru hurma ağacını silkelemesi emredildi.

- Doğrusu Hz. Meryem'in, kendisine kuru hurma ağacını silkelemesi emredilirken bunu yapabilmesi, halindeki içtenliğinin en açık delili olmuştur.

- Hz. Meryem'in bu durumda sorumluluğunu üzerine alacak kimsesi olmayınca, Allah herkesin ihtiyaçları olduğu zaman has kullarını yokluğa terk etmediğini bilmesi için onun rızkına kefil olmuştur.

فَكُلِي وَاشْرَبِي وَقَرِّي عَيْنًا فَاِمَّا تَرَيِنَّ مِنَ الْبَشَرِ اَحَدًا فَقُولِي اِنِّي
نَذَرْتُ لِلرَّحْمٰنِ صَوْمًا فَلَنْ اُكَلِّمَ الْيَوْمَ اِنْسِيًّا ﴿٢٦﴾

26- "Ye, iç, gözün aydın olsun. İnsanlardan birini görecek olursan: 'Şüphesiz ben Rahmân'a susmayı adadım. Bugün hiçbir insan ile konuşmayacağım' de."

Allah, Hz. Meryem'in muhtaç olduğu yiyecek ve içecek vesilelerini yeterince sağlamış, korkusunu dindirmiş ve kalbini rahatlatmıştır.

( فَاِمَّا تَرَيِنَّ مِنَ الْبَشَرِ اَحَدًا ) "*İnsanlardan birini görecek olursan.*"

Onlarla konuşma ve Rahmân'a, halkın yanında susmayı ve onlarla konuşmamayı adadığını kendilerine işaretle anlat.

فَاَتَتْ بِهٖ قَوْمَهَا تَحْمِلُهُ قَالُوا يَا مَرْيَمُ لَقَدْ جِئْتِ شَيْـًٔا فَرِيًّا ﴿٢٧﴾
يَٓا اُخْتَ هٰرُونَ مَا كَانَ اَبُوكِ امْرَاَ سَوْءٍ وَمَا كَانَتْ اُمُّكِ بَغِيًّا ﴿٢٨﴾

27, 28- "Kucağında çocuğuyla halkının yanına geldi Onlar şöyle dediler: 'Ey Meryem! Çok çirkin bir şey yaptın. Ey Harun'un kız kardeşi! Senin baban kötü bir kimse değildi. Annen de iffetsiz değildi.'"

Kavmi, Hz. Meryem'in çocuk doğurduğunu görünce sitemle kendisine dil uzattılar. Durumun zahirine göre de haklıydılar. Bu nedenle

sitem yoluyla kendisine şöyle dediler: "Ey o Meryem ki, biz seni iyilikte, dürüstlüğü ve iyiliğiyle tanınmış olan Harun gibi kabul ederdik. Bu çirkin duruma nereden bulaştın?"

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Hz. Meryem'in kardeşinin adı Harun idi.

- Harun, onlar arasındaki kötü bir adamdı. Bu nedenle: "Ey kötülükte ona benzeyen kadın! Nedir bu çocuk?" dediler.

- Harun, onlar arasında yaşayan salih bir adamdı. Bu nedenle Hz. Meryem'e şöyle dediler: "Ey Harun'un kız kardeşi! Ey bizim hesabımızda ve zannımızda ebeveyninde bir kötülük bulunmayan kimse! Sen nasıl bu iğrenç büyük günahı işledin?"

فَاَشَارَتْ اِلَيْهِ قَالُوا كَيْفَ نُكَلِّمُ مَنْ كَانَ فِي الْمَهْدِ صَبِيًّا ﴿٢٩﴾

29- "Bunun üzerine Meryem çocuğa işaret etti. 'Beşikteki bir çocukla nasıl konuşuruz?' dediler."

Hz. Meryem, zahirde çocuğa; bâtında ise Allah'a işaret etmiştir. Bunun üzerine onlar, hem yakın -zahir işareti- hem de uzak -bâtın işareti- ihtimalden etkilenerek şöyle dediler: "Biz, beşikte uyutulacak durumda olan biriyle nasıl konuşalım?!" Bu sözün olayla bağlantısı vardı ancak onlar Hz. Meryem'in bu işaretini, yaptığını küçümsediğine yorumladılar.

قَالَ اِنِّي عَبْدُ اللّٰهِ اٰتَانِيَ الْكِتَابَ وَجَعَلَنِي نَبِيًّا ﴿٣٠﴾

30- "Bebek şöyle konuştu: 'Şüphesiz ben Allah'ın kuluyum. Bana kitabı verdi ve beni bir peygamber yaptı.'"

Onlar, adı geçen sözü söyleyince Allah Hz. İsa'yı konuşturdu ve bunun sonucunda kendisi: (اِنِّي عَبْدُ اللّٰهِ) "*Şüphesiz ben Allah'ın kuluyum*" dedi. Böylece Hz. İsa'nın, daha önce benzeri söylenmemiş sözüyle Hz. Meryem'in suçsuz ve temiz olduğu ortaya çıkmış oldu.

Bu arada Hz. İsa'nın ağzından: "*Şüphesiz ben Allah'ın kuluyum*" sözünün çıkması, Hıristiyanlara şöyle denilmesi içindir: "Eğer Hz.

İsa, Allah'ın kulu olduğunu doğru söylüyorsa, sizin 'Allah üçün üçüncüsüdür' şeklindeki sözünüz geçersiz olur. Şayet yalan söylüyorsa, o zaman da yalan söyleyen biri, Allah'ın oğlu değil, sadece kulu olabilir. Bu takdirde de o, ne hevâsının kulu ne de Allah dışındaki bir şeyin esiri olmuş olur. Bu itibarla kim Allah'tan başkasının kulluğundan kurtulursa, işte o gerçekte Allah'ın kulu olur."

( اٰتَانِيَ الْكِتَابَ ) *"Bana kitabı verdi."*

Yani Allah, gelecekte bana kitap verecektir. Ya da ezeldeki hükmünde bana kitap verdi.

( وَجَعَلَنِي نَبِيًّا ) *"Ve beni bir peygamber yaptı."*

Allah, lütfuyla beni peygamber yaptı. Ayet, peygamberliğin çok ibadet etmekle hak edildiğini söyleyen görüşü reddetmektedir. Çünkü Hz. İsa bunu doğduğu sırada söylemiştir. Allah'ın kendisini peygamber yaptığını söylediği sırada da henüz bir ibadeti olmamıştı.

وَجَعَلَنِي مُبَارَكًا اَيْنَ مَا كُنْتُۖ وَاَوْصَانِي بِالصَّلٰوةِ وَالزَّكٰوةِ مَا دُمْتُ حَيًّاۖ ﴿٣١﴾

31- "Nerede olursam olayım beni kutlu ve erdemli kıldı ve bana, yaşadığım sürece namazı ve zekâtı emretti."

Yani Allah beni, halkı dinî vecibeleri hakkında irşat eden ve kendilerini helake götürecek olan hatayı işlemekten alıkoyan faydalı bir kimse kıldı. Nitekim onun ışığıyla aydınlanan kurtulur. İşte Hz. İsa'nın halka ulaşan bereketleri bunlardı. Ayrıca; çaresizin imdadına yetişmek, güçsüze yardım etmek, mazluma arka çıkmak, yoksula yardım elini uzatmak, yoldan çıkana yol göstermek, halka iyilik istemek, onlardan sıkıntıyı defetmek ve sıkıntılarını paylaşmak da onun bereketlerindendir.

وَبَرًّا بِوَالِدَتِي وَلَمْ يَجْعَلْنِي جَبَّارًا شَقِيًّا ﴿٣٢﴾

32- "Beni anama saygılı kıldı. Beni azgın bir zorba kılmadı."

Yani beni, nasihate kabiliyeti olmayan biri yapmadı.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Ayetteki ( شقيّا ) *"şakiyyen"* lafzı, kibirli ve zorba demektir.

- Bu lafız, hayatı küfürle sona eren kimse demektir.

وَالسَّلَامُ عَلَيَّ يَوْمَ وُلِدْتُ وَيَوْمَ اَمُوتُ وَيَوْمَ اُبْعَثُ حَيًّا ﴿٣٣﴾

33- "Doğduğum gün, öleceğim gün ve diriltileceğim gün bana selam (esenlik verilmiştir.)"

Hz. İsa: "Bana selam" derken Allah, miraç gecesi peygamberimize (s.a.v.): *"Ey peygamber! Selam, Allah'ın rahmeti ve bereketleri senin üzerine olsun"* buyurmuştur ki, ikisi arasında bir hayli fark vardır.

Bu arada "selam" lafzı selamet demektir. Yani, doğduğum gün Hıristiyanların hakkımda aşırı övgü içeren sözlerinden ve Yahudilerin bana yönelik yergilerinden benim için selamet vardır. Bu itibarla ben, her iki grubun da dediği gibi değilim.

( وَيَوْمَ اَمُوتُ ) *"Öleceğim gün bana selam."*

O gün ben selamette olurum ve bu sayede saadetle vefat ederim.

( وَيَوْمَ اُبْعَثُ حَيًّا ) *"Diriltileceğim gün bana selam."*

Yani, vuslat ehli olmayanların müptela oldukları hallerde benim için selamet vardır.

ذٰلِكَ عِيسَى ابْنُ مَرْيَمَ قَوْلَ الْحَقِّ الَّذِي فِيهِ يَمْتَرُونَ ﴿٣٤﴾

34- "Hakkında şüpheye düştükleri hak söze göre Meryem oğlu İsa işte budur."

Yani Allah'ın haber verdiği şeyleri söyleyen kişi İsa'dır. Şimdi kişi bir sözle ilah olur mu? Bu arada halkın çoğu bu sözü şüpheyle karşılayarak kimileri onu reddederken kimileri de kabul etmiştir. Aralarındaki fark ise hakkı kabuldeki nasipleridir.

( قَوْلَ الْحَقِّ ) *"Hak söze göre."* Yani bu, Allah'ın hak olan sözüne göre olmaktadır. O söz şudur:

مَا كَانَ لِلّٰهِ اَنْ يَتَّخِذَ مِنْ وَلَدٍ سُبْحَانَهُ اِذَا قَضٰٓى اَمْرًا فَاِنَّمَا يَقُولُ لَهُ كُنْ فَيَكُونُ ﴿٣٥﴾

35- "Allah'ın çocuk edinmesi düşünülemez. O, bundan yücedir, uzaktır. Bir işe hükmettiği zaman ona sadece 'ol!' der ve o da oluverir."

Allah'ın gerçekte çocuğunun olması caiz değildir. Çünkü Allah birdir. Oysa çocuk, babasının bir parçasıdır. Bir de Allah'ın eş sahibi olmasının bir sebebi yoktur ki, gerçekte çocuğu olsun. Aynı zamanda Allah'ın bir kimseyi evlat edinmesi de caiz değildir. Çünkü aralarında türdeşlik bulunmamaktadır.

( اِذَا قَضٰٓى اَمْرًا ) *"Bir işe hükmettiği zaman..."*

Allah, bir şey meydana getirdiği zaman onu kudretiyle yaratır ve tekvin emriyle ona hitapta bulunur. Kudretinin taalluk ettiği hiçbir şey de hakikatte O'na karşı çıkamaz.

وَاِنَّ اللّٰهَ رَبِّي وَرَبُّكُمْ فَاعْبُدُوهُ هٰذَا صِرَاطٌ مُسْتَقِيمٌ ﴿٣٦﴾

36- "Şüphesiz Allah, benim de Rabbim, sizin de Rabbinizdir. Öyleyse O'na kulluk edin. Bu, dosdoğru bir yoldur."

Yani Allah bana, bunu bilmenizi, peygamberliğimi tebliğ etmeyi ve koyduğu ibadetlere uymayı emretmiştir.

فَاخْتَلَفَ الْاَحْزَابُ مِنْ بَيْنِهِمْ فَوَيْلٌ لِلَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ مَشْهَدِ يَوْمٍ عَظِيمٍ ﴿٣٧﴾

37- "Hıristiyan gruplar, aralarında ayrılığa düştüler. Büyük bir günü görüp yaşayacakları için vay kâfirlerin haline!"

Hamuru saadet suyuyla yoğrulan kimse dünyasında itaatte bulunur, ahiretinde de telef olmaz. Kim ki, kaderin ezeli taksimatı onu uzaklaştırmışsa, sonraki hizmet kendisini yaklaştıramaz ve bu gibi kimseler bu işin sonucuyla karşılaşırlar.

اَسْمِعْ بِهِمْ وَاَبْصِرْ يَوْمَ يَاْتُونَنَا لٰكِنِ الظَّالِمُونَ الْيَوْمَ فٖي ضَلَالٍ مُبٖينٍ ﴿٣٨﴾

38- "Bize gelecekleri gün, ne iyi işitip ne iyi görecekler! Ama zalimler, bugün apaçık bir sapıklık içindedirler."

Bunları bilmeleri zorunlu hale gelir, halleri ters yüz olur, delil aleyhlerinde güçlenir, ihtiyaçlarına dair sözleri dinlenmez, onlara rahmet taalluk etmediğinden yakınanlarına merhamet edilmez ve çağrılarına kulak verilmez.

وَاَنْذِرْهُمْ يَوْمَ الْحَسْرَةِ اِذْ قُضِيَ الْاَمْرُ وَهُمْ فٖي غَفْلَةٍ وَهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿٣٩﴾

39- "Onları, gaflet içinde bulunup iman etmezlerken işin bitirileceği o pişmanlık günüyle uyar."

Kıyamet ansızın kopar ve onları, bugüne hazırlıksız yakalar. Bu nedenle, kaçırdıkları fırsata pişmanlık duyarlar.

Bir yoruma göre de pişmanlık günü, taksimat günüdür. O zaman henüz yokluğun mahviyeti içinde olan bir kavme ezeli mutsuzluk takdir edilirken, yokluk vasfına sahip diğer birilerine ise ezeli saadet takdir edilmiştir. Ondan sonra saadet takdir edilenlerden hiçbir günah, mutsuzluk takdir edilenlerden de hiçbir uyum hasıl olmamıştır.

اِنَّا نَحْنُ نَرِثُ الْاَرْضَ وَمَنْ عَلَيْهَا وَاِلَيْنَا يُرْجَعُونَ ﴿٤٠﴾

40- "Şüphesiz yeryüzüne ve onun üzerindekilere biz vâris olacağız, biz! Onlar, sadece bize döndürülecekler."

Bununla Allah, bütün insanların canlarını aldığı ve yeryüzünde onlardan kimsenin kalmadığı zamanı kast etmektedir. Yoksa bununla, o zaman daha yeni mülk sahibi olmayı kast etmemektedir. Allah, bugün de hem yerin ve üzerindekilerin hem de kainatın ve içindekilerin malikidir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Hz. Zekeriyya çocuk istediğinde: ( يَرِثُنِي وَيَرِثُ مِنْ اٰلِ يَعْقُوبَ ) *"Bana ve Yâkub hanedanına varis olacak bir çocuk"* (Meryem, 19/6) derken Allah, İsrail oğulları hakkında şöyle buyurmuştur:

( كَذٰلِكَ وَاَوْرَثْنَاهَا بَنِي اِسْرَآءِيلَ ) *"İşte böyle yaptık ve onlara, İsrail oğullarını mirasçı kıldık."* (Şu'arâ, 26/59)

( اِنَّ الْاَرْضَ لِلّٰهِ يُورِثُهَا مَنْ يَشَآءُ مِنْ عِبَادِهِ ) *"Şüphesiz yeryüzü Allah'ındır. Ona, kullarından dilediğini mirasçı kılar."* (A'râf, 7/128)

Sıra bu ümmete gelince Allah: ( اِنَّا نَحْنُ نَرِثُ الْاَرْضَ وَمَنْ عَلَيْهَا ) *"Şüphesiz yeryüzüne ve onun üzerindekilere biz varis olacağız, biz!"* buyurdu. Mirasçısı evlat olan ile mirasçısı bir Allah olan kimse arasında ise büyük fark vardır.

- Mirasçısı Hak olduğu zaman, Müslüman kula ölüm hafif gelir. Nitekim bir insan, diğer bir insanın vasfında dahi şöyle der:

Şiir:

*Şayet yoluna dem edip (ölüp) gitmişse Attâb*
*Ölmemiştir Hâlid gibisinin mirasçı kaldığı kimse*

Bir de Allah şöyle buyurmuştur:

( وَلَا تَحْسَبَنَّ الَّذِينَ قُتِلُوا فِي سَبِيلِ اللّٰهِ اَمْوَاتًا بَلْ اَحْيَآءٌ ) *"Allah yolunda öldürülenleri sakın ölüler sanma! Bilakis onlar diridirler."* (Âl-i İmrân, 3/169)

Neden? Çünkü onların mirasçısı Allah'tır.

وَاذْكُرْ فِي الْكِتَابِ اِبْرٰهِيمَ اِنَّهُ كَانَ صِدِّيقًا نَبِيًّا ﴿٤١﴾

41- "Kitap'ta İbrahim'i de an! Gerçekten o, son derece dürüst bir kimse, bir peygamber idi."

Ayetteki ( صدّيق ) "*Sıddîk*" kelimesi, dürüstlüğüne şaibe bulaşmayan çok dürüst kimse demektir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- O, sözlerinde, davranışlarında ve hallerinde dürüst olan kimse demektir.

- Onun içi, dışıyla çelişmez.

- O, Allah'tan başkasını var eden veya yok eden olarak görmeyen kimsedir.

- O, yükümlü kılındığı şeyleri, bütün olarak ve ayrıntılarıyla kabul eden kimsedir.

- O, bütün hallerde Allah ile beraber dürüstlük sınırı üzerinde (çerçevesinde) duran kimsedir.

اِذْ قَالَ لِاَبِيهِ يَٓا اَبَتِ لِمَ تَعْبُدُ مَا لَا يَسْمَعُ وَلَا يُبْصِرُ وَلَا يُغْنِي
عَنْكَ شَيْئًا ﴿٤٢﴾

42- "Hani babasına şöyle demişti: 'Babacığım! İşitmeyen, görmeyen ve sana bir faydası olmayan şeylere niçin tapıyorsun?'"

Ayet, mabudun, işitme ve görme sıfatlarına noksansız ve kemal üzere sahip olduğunu göstermektedir. Zarar ve fayda verme kudreti konusunda da aynı şey söylenebilir.

Bu arada kul, hakikate döndüğü zaman hiçbir yaratığın kudretinin, yoktan var edip meydana getirmeye yaramadığını anlamış olur. Bu nedenle kim kalbini bir mahlûka bağlar veya var ve yok etmede en ufak bir etkisinin olduğunu vehmederse, şüphesiz o putlara tapanlara benzemiş olur.

يَٓا اَبَتِ اِنّ۪ي قَدْ جَٓاءَن۪ي مِنَ الْعِلْمِ مَا لَمْ يَأْتِكَ فَاتَّبِعْن۪ٓي اَهْدِكَ صِرَاطًا سَوِيًّا ﴿٤٣﴾

43- “Babacığım! Doğrusu, sana gelmeyen bir ilim bana geldi. Bana uy ki, seni doğru yola ileteyim.”

Babası yaşça kendisinden büyük olsa da Hz. İbrahim Hakk'ın kendisiyle beraber olduğundan emin olunca kendisine tabi olmasını istedi ve kurtuluşun hak ehline uymaya bağlı bulunduğunu, helak olmanın da bidatçiliğin ve yanlış yollarda başıboş dolaşmanın sonucu olduğunu açıklamıştır.

يَٓا اَبَتِ لَا تَعْبُدِ الشَّيْطَانَ اِنَّ الشَّيْطَانَ كَانَ لِلرَّحْمٰنِ عَصِيًّا ﴿٤٤﴾

44- “Babacığım! Şeytana tapma! Çünkü şeytan Rahmân'a isyankâr olmuştur.”

Hz. İbrahim, babasını şeytana tapmaktan alıkoymasının gerekçesinin onun Rahman'a isyan etmesi olduğunu açıklamıştır. Böylece, Allah'a isyan eden kimseye itaat etmenin hiçbir halde uygun olmadığı ortaya çıkmış olmaktadır.

Bir yoruma göre de dinin esası, Allah'a isyan eden kimseleri terk etmektir.

يَٓا اَبَتِ اِنّ۪ٓي اَخَافُ اَنْ يَمَسَّكَ عَذَابٌ مِنَ الرَّحْمٰنِ فَتَكُونَ لِلشَّيْطَانِ وَلِيًّا ﴿٤٥﴾

45- “Babacığım! Doğrusu ben, sana, çok esirgeyici Rahmân tarafından bir azabın dokunmasından, böylece şeytana dost olmandan korkuyorum.”

İbrahim Halil, babasından şefkat adına hiçbir şey esirgememiştir. Ancak güzel vaazı ona fayda vermemiş ve nasihatinin çokluğu

onu etkilememiştir. Çünkü takdirin ezeli hükümlerinin uzaklaştırdığı kimseyi sonraki tedbirler kurtaramaz.

قَالَ اَرَاغِبٌ اَنْتَ عَنْ اٰلِهَتِي يَٓا اِبْرٰهِيمُ لَئِنْ لَمْ تَنْتَهِ لَاَرْجُمَنَّكَ
وَاهْجُرْنِي مَلِيًّا ﴿٤٦﴾

46- "Babası: 'Ey İbrahim! Sen benim ilahlarımdan yüz mü çeviriyorsun? Eğer vazgeçmezsen, mutlaka seni taşa tutarım. Uzun bir süre benden uzaklaş!' dedi."

Hz. İbrahim, babasını güzel bir sona özendirirken, babası onu cezayla uyararak şöyle demiştir:

(لَئِنْ لَمْ تَنْتَهِ لَاَرْجُمَنَّكَ وَاهْجُرْنِي مَلِيًّا) *"Eğer vazgeçmezsen, mutlaka seni taşa tutarım. Uzun bir süre benden uzaklaş!"*

Bunun üzerine Hz. İbrahim, basiretin olgunluğuna uygun olarak şöyle dedi:

قَالَ سَلَامٌ عَلَيْكَ سَاَسْتَغْفِرُ لَكَ رَبِّي اِنَّهُ كَانَ بِي حَفِيًّا ﴿٤٧﴾

47- "İbrahim şöyle dedi: 'Esen kal! Senin için Rabbimden af dileyeceğim. Şüphesiz O, beni nimetleriyle kuşatmıştır.'"

Hz. İbrahim bu sözü, henüz imanından ümidini kesmeden önce ve hakkında bir miktar ümidinin devam ettiği zaman söylemiştir. Ancak babasının akıbetinin kötü olacağından emin olunca kendisine şöyle dedi:

وَاَعْتَزِلُكُمْ وَمَا تَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ وَاَدْعُوا رَبِّي عَسٰٓى اَلَّٓا اَكُونَ
بِدُعَٓاءِ رَبِّي شَقِيًّا ﴿٤٨﴾

48- "Sizi ve Allah'tan başka taptıklarınızı terk ediyor ve Rabbime ibadet ediyorum. Rabbime ibadet etmekle de mutsuz olmayacağımı umuyorum."

Asıl anlamı çağırdığınız şeyler demek olan ( ما تدعون ) ifadesi burada "*taptığınız şeyler*" anlamındadır. Asıl anlamı Rabbimi çağırıyorum olan ( و أدعو ربّي ) ifadesi de burada "*Rabbime ibadet ediyorum*" demektir.

فَلَمَّا اعْتَزَلَهُمْ وَمَا يَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ وَهَبْنَا لَهُٓ اِسْحٰقَ وَيَعْقُوبَ وَكُلًّا جَعَلْنَا نَبِيًّا ﴿٤٩﴾

49- "İbrahim, onları da onların taptıklarını da terk edince ona İshak ile Yâkub'u bağışladık ve her birini peygamber yaptık."

Hz. İbrahim aslından ümidini kesince Allah onu kendisine ikram ettiği nesliyle teselli etmiştir. Allah, onun neslinden olanları güzel bir şekilde yetiştirmiş ve onlara peygamberlik ile devamlı doğru sözlü zikirle anılmayı bahşederek şöyle buyurmuştur:

وَوَهَبْنَا لَهُمْ مِنْ رَحْمَتِنَا وَجَعَلْنَا لَهُمْ لِسَانَ صِدْقٍ عَلِيًّا ﴿٥٠﴾

50- "Onlara rahmetimizden bağışta bulunduk. Onlar için yüce bir doğruluk dili var ettik."

وَاذْكُرْ فِي الْكِتَابِ مُوسٰىٓ اِنَّهُ كَانَ مُخْلَصًا وَكَانَ رَسُولًا نَبِيًّا ﴿٥١﴾

51- "Kitap'ta Mûsâ'yı da an. Şüphesiz o, seçkin bir insan idi. Bir resûl, bir nebî idi."

O, sadece Allah'ı gözetiyor ve başkasını hiçbir şekilde dikkate almıyordu. Bu nedenle hiçbir sitem edicinin sitemi onu etkilememiş, dünyalık arzularını uyandırıcı hiçbir tamah duygusu onu tahrik edememiş ve Allah yolunda hiçbir şeyi görmezden gelmemiştir.

وَنَادَيْنَاهُ مِنْ جَانِبِ الطُّورِ الْاَيْمَنِ وَقَرَّبْنَاهُ نَجِيًّا ﴿٥٢﴾

52- "Ona Tûr dağının sağ tarafından seslendik ve kendisi ile gizlice konuşmak için onu kendimize yaklaştırdık."

Gizlice konuşmanın seslenmekten üstün bir meziyeti vardır. Böylece Allah, Hz. Mûsâ için iki vasfı bir araya getirmiştir. İşin başında ona seslenmiş, sonunda da dinleme ve gizlice konuşmayı bahşetmiştir. Böylece Allah ona vakfe yaptırıp seslenmiş ve her iki halde de kendisini gözetmiştir.

( مِنْ جَانِبِ الطُّورِ الْاَيْمَنِ ) *"Tûr dağının sağ tarafından..."*

Sağ tarafta olmak, Hz. Mûsâ ile ilgilidir. Zira Hz. Mûsâ Tûr dağının sağ tarafında idi.

وَوَهَبْنَا لَهُ مِنْ رَحْمَتِنَٓا اَخَاهُ هٰرُونَ نَبِيًّا ﴿٥٣﴾

53- "Rahmetimizden dolayı kardeşi Harun'u bir peygamber olarak kendisine bahşettik."

Hz. Mûsâ'nın özelliklerinden biri de Allah'ın, ona kardeşi Harun'u bir peygamber olarak bahşetmesidir.

وَاذْكُرْ فِي الْكِتَابِ اِسْمٰعِيلَ اِنَّهُ كَانَ صَادِقَ الْوَعْدِ وَكَانَ رَسُولًا نَبِيًّا ﴿٥٤﴾

54- "Kitap'ta İsmail'i an. Şüphesiz o, sözünde duran bir kimse idi. Bir de o bir resûl, bir nebî idi."

O, sözünde duran bir kimse idi, çünkü babasının kendisini boğazlamasına karşı içinden gelerek sabretme sözü vermiş ve fidye ortaya çıkıncaya kadar buna sabretmişti. O, sözüne sadık kalmıştır çünkü ahdini korumuştur.

وَكَانَ يَأْمُرُ اَهْلَهُ بِالصَّلٰوةِ وَالزَّكٰوةِ وَكَانَ عِنْدَ رَبِّه۪ مَرْضِيًّا ﴿٥٥﴾

55- "Aile fertlerine namazı ve zekâtı emrederdi. Rabbinin katında da kendisinden razı olunmuştu."

Hz. İsmail, Allah'ın kendisine emretmesiyle, aile fertlerine namaz ve zekâtı emrederdi. Bu emir, nerede ve nasıl olursa olsun, aile fertlerine emrettiği bedenî ve malî ibadetleri de kapsamaktadır.

( وَكَانَ عِنْدَ رَبِّهٖ مَرْضِيًّا ) *"Rabbinin katında da kendisinden razı olunmuştu."*

Bu, Hz. İsmail'in en şerefli hasleti ve en yüce vasfı idi.

وَاذْكُرْ فِي الْكِتَابِ اِدْرِيسَ اِنَّهُ كَانَ صِدِّيقًا نَبِيًّا ﴿٥٦﴾

56- "Kitap'ta İdris'i de an. Şüphesiz o, dosdoğru bir kimse ve bir peygamber idi."

Ayetteki "Sıddîk" lafzı, doğruluğuna şaibe bulaşmayan çok doğru kimse demektir. O, devamlı Hak için hakkı yerine getirir ve onda Allah'tan başkası için olan bir nefes bile olmaz.

وَرَفَعْنَاهُ مَكَانًا عَلِيًّا ﴿٥٧﴾

57- "Onu yüce bir makama yükselttik."

Onu yetiştirirken öyle büyük bir mertebeye yükselttik ki, hiç kimse o mertebede dengi olmamıştır.

اُولٰٓئِكَ الَّذِينَ اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ مِنَ النَّبِيِّنَ مِنْ ذُرِّيَّةِ اٰدَمَ وَمِمَّنْ حَمَلْنَا مَعَ نُوحٍ وَمِنْ ذُرِّيَّةِ اِبْرٰهِيمَ وَاِسْرَٓاءِيلَ وَمِمَّنْ هَدَيْنَا وَاجْتَبَيْنَا اِذَا تُتْلٰى عَلَيْهِمْ اٰيَاتُ الرَّحْمٰنِ خَرُّوا سُجَّدًا وَبُكِيًّا ﴿٥٨﴾

58- "İşte bunlar, Âdem'in ve Nûh ile beraber bindirdiklerimizin soyundan, İbrahim'in, Yâkub'un ve doğru yola iletip seçtiklerimizin soyundan kendilerine nimet verdiğimiz peygamberlerdir. Kendilerine Rahmân'ın ayetleri okunduğu zaman ağlayarak secdeye kapanırlardı."

Allah, onları cem'in tecellileriyle doğruluk üzere kılmış ve nimetinin kendilerine hallerini tahsis etmesinde, kendilerini ahirette yükselttiği mertebelere ehil kılmasında saklı olduğunu ve lütfuyla onları seçkin kıldığını bildirmiştir.

Bu arada, Allah'ın onlara nimet olarak verdiği özelliklerden biri de kalplerinin inceliğidir. Bu nedenle onlara ayetler okunduğu zaman secde ederler. Allah'ın kendileri için hakikat kıldığı cem'in tecellileri sebebiyle zahirlerinin secdesi, sırlarının secdesine delil olmaktadır. Bu secdenin sahih oluşunun alameti ise Allah'ın onları farkın kendisine muvaffak kılmış olmasıdır. Böylece tefrika sıfatıyla kulluk adabının hakkını yerine getirdiler, cem sıfatıyla da rububiyetin hakikatlerini hakikat bildiler.

فَخَلَفَ مِنْ بَعْدِهِمْ خَلْفٌ اَضَاعُوا الصَّلٰوةَ وَاتَّبَعُوا الشَّهَوَاتِ
فَسَوْفَ يَلْقَوْنَ غَيًّا ﴿٥٩﴾

59- "Onlardan sonra namazı zayi eden, şehvet ve dünyevî tutkularının peşine düşen bir nesil geldi. Onlar, bu tutumlarından ötürü büyük bir azaba çarptırılacaklardır."

Onların yolundan sapıp şeriatın hakkını zayi edenler, vacip olan emri aşanlar, doğru yoldan çıkanlar, dinin kurallarını ihlal edenler ve şehvetlerinin peşine takılanlar yakında hak ettikleri cezayı bulacak ve müstahak oldukları muameleye tabi tutulacaklardır.

اِلَّا مَنْ تَابَ وَاٰمَنَ وَعَمِلَ صَالِحًا فَاُولٰٓئِكَ يَدْخُلُونَ الْجَنَّةَ وَلَا
يُظْلَمُونَ شَيْئًا ﴿٦٠﴾

60- "Ancak tövbe eden, inanan ve salih amel işleyen hariç. İşte onlar, cennete girerler ve onlara hiçbir haksızlık yapılmaz."

İşte onlar, ezeli rahmetin yetiştiği kimseler olup sonsuz nimetlerin içinde kalacaklardır. Allah, sözlerinin yerine getirilmesini sağlamakta, onları derecelerine ulaştırmakta ve kendilerine verdiği sözleri yerine getirmektedir.

جَنَّاتِ عَدْنٍ الَّتِي وَعَدَ الرَّحْمٰنُ عِبَادَهُ بِالْغَيْبِ اِنَّهُ كَانَ وَعْدُهُ مَاْتِيًّا ﴿٦١﴾

61- "Onlar, Rahmân'ın kullarına gıyaben söz verdiği Adn cennetlerine girecekler. Şüphesiz O'nun sözü yerine gelir."

Ayetteki ( مَأْتِيًّا ) "*me'tiyyen*" kelimesi hem "yerine getirilen" hem de "yerine gelen" anlamındadır. Çünkü yerine getirilen şey yerine gelmiş, yerine gelen şey de yerine getirilmiş olur.

لَا يَسْمَعُونَ فِيهَا لَغْوًا اِلَّا سَلَامًا وَلَهُمْ رِزْقُهُمْ فِيهَا بُكْرَةً وَعَشِيًّا ﴿٦٢﴾

62- "Orada boş söz işitmezler. Sadece selamı işitirler. Orada onların sabah akşam rızıkları da vardır."

Çünkü kulakları başkalarını işitmekten korunmaktadır. Onlar, sadece Allah'tan ve Allah ile işitirler. Şayet bu olmazsa o zaman da sadece Allah'ı işitirler.

( وَلَهُمْ رِزْقُهُمْ فِيهَا بُكْرَةً وَعَشِيًّا ) "*Orada onların sabah akşam rızıkları da vardır.*"

Onlar, yanında sabah ve akşam yiyeceği bulunan kimseleri varlıklı ve zenginlerden sayarlardı. Çünkü bunlar fakir oldukları için öğle yemeğini bulurlarsa genellikle akşam yemekleri olmazdı. Şayet akşam yemeğini bulurlarsa, öğle yemeğini nadiren bulurlardı.

Bir yoruma göre; cennetlikler için orada canlarının çektiğinin var olması, cennetteki zaman dilimine göre öğle ve akşam yemeği miktarı anlamındadır. Sonra cennetteki rızıklar değişiktir. Bu çerçevede bedenlerin rızkı yiyecek ve içecekten, ruhların rızkı ise sema ve şuhûddan -Allah'ı görüp işitmekten- ibarettir. Bir de herkes için hak edişi ölçüsünde belli bir pay vardır.

تِلْكَ الْجَنَّةُ الَّتِي نُورِثُ مِنْ عِبَادِنَا مَنْ كَانَ تَقِيًّا ﴿٦٣﴾

63- "İşte bu, kullarımızdan takva sahibi olan kimselere miras kılacağımız cennettir."

O halde cennet, bu ümmetten takva sahibi olanlarındır, onlar için hazırlanmıştır. Rahmet de Müslümanların günahkârları içindir, onlara ayrılmıştır. Cennet Allah'tan bir lütuf, rahmet ise Allah'ın sıfatıdır.

( مِنْ عِبَادِنَا ) *"Kullarımızdan..."*

Allah'ın has kulu, bugün O'nun emrine bağlı olandır.

( مَنْ كَانَ تَقِيًّا ) *"Takva sahibi olan kimselere..."*

Takva sahiplerinden kimileri günahlardan ve muhalefetlerden, kimileri şehvetlerden, kimileri gafletlerden, kimileri de Allah'tan başka her şeyi görmekten sakınırlar.

وَمَا نَتَنَزَّلُ اِلَّا بِاَمْرِ رَبِّكَ لَهُ مَا بَيْنَ اَيْدِينَا وَمَا خَلْفَنَا وَمَا بَيْنَ ذٰلِكَ
وَمَا كَانَ رَبُّكَ نَسِيًّا ﴿٦٤﴾

64- "Biz ancak Rabbinin emriyle ineriz. Önümüzde, arkamızda ve bunlar arasında olan her şey yalnızca O'nundur. Senin Rabbin unutan da değildir."

Şüphesiz melekler (a.s.), ebediyen Allah'ın emriyle inerler. Bu çerçevede bazıları mazlumlara yardım etmek, bazıları çaresizlerin imdadına yetişmek, bazıları inkârcıları yok etmek, bazıları müminlere yardımcı olmak, bazıları da bütün insanların sayılamayacak kadar çok olan başka işleri için inerler. Bir de Allah (c.c.), hiçbir ibadet ehlini korumasız ve inamsız, hiçbir inkârcıyı da mühletsiz ve azapsız bırakmaz.

رَبُّ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا فَاعْبُدْهُ وَاصْطَبِرْ لِعِبَادَتِهٖ هَلْ
تَعْلَمُ لَهُ سَمِيًّا ﴿٦٥﴾

65- "Allah göklerin, yerin ve ikisi arasında bulunan şeylerin Rabbidir. Öyleyse O'na ibadet et ve O'na ibadette son derece sabırlı ol. Hiç O'nun adaşı olan birini biliyor musun?!"

Onları meydana getirmiş olması hasebiyle onların Rabbi, onların maliki ve onlara kadir olması gerekir. Bunlar var olduklarına göre, onları var eden O'dur. Nitekim bir şeyi var etmenin, var edene

ait oluşunun anlamı da o şeyin onun kudreti ve keremi dahilinde olmasıdır.

Bir yoruma göre de Allah güçlü ve büyük kimselerin Rabbi olduğuna göre zayıf ve küçük kimselerin de Rabbidir. Bu arada kölenin değeri de şahsının ve fonksiyonunun pahasıyla değil, maliki ve malikinin kadriyledir.

( فَاعْبُدْهُ ) *"Öyleyse O'na ibadet et!"*

Yani durmanı emrettiği yerde dur, sana düşeni terk et, görüşünden ve tedbirinden vazgeç!

( وَاصْطَبِرْ لِعِبَادَتِهِ ) *"O'na ibadette son derece sabırlı ol!"*

Ayetteki emrin mastarı olan ( اصطبار ) *"İstıbar"* lafzı, son derece sabırlı olmak demektir.

( هَلْ تَعْلَمُ لَهُ سَمِيًّا ) *"Hiç O'nun adaşı olan birini biliyor musun!"*

Yan O'nun bir dengini ve benzerini bilir misin?!

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah'tan başka "Allah" diye adlandırılan başka birini bilir misin!

- Allah, kıdemde bir iken nasıl benzeri olur ki?! Oysa benzerlik, benzerler arasında eşitliği gerektirir. Öyleyse ne fiilen ne de zihnen O'nun hiçbir benzeri yoktur.

وَيَقُولُ الْاِنْسَانُ ءَاِذَا مَا مِتُّ لَسَوْفَ اُخْرَجُ حَيًّا ﴿٦٦﴾ اَوَلَا يَذْكُرُ الْاِنْسَانُ اَنَّا خَلَقْنَاهُ مِنْ قَبْلُ وَلَمْ يَكُ شَيْـًٔا ﴿٦٧﴾

66, 67- "İnsan: "Öldüğümde gerçekten diri olarak çıkarılacak mıyım?' der. İnsan, daha önce hiçbir şey değil iken kendisini yarattığımızı düşünmez mi?!"

Onlar, dirilme olayını sonuna kadar inkâr edince Allah, onlara karşı ilk yaratmayı delil getirerek şöyle buyurdu: Halkı başta

yaratmaya kadir olan Allah, onları diriltmeye de kadirdir. Kaldı ki onlar başta güçsüz nutfeler -su damlaları- halinde idiler. Onlar, henüz dünyaya gelmemişken Allah kendilerini yarattı, dilediği gibi şekillendirdi ve irade ettiği vakit dünyaya gelmiş oldular.

( مِنْ قَبْلُ وَلَمْ يَكُ شَيْئًا ) *"İnsan, daha önce hiçbir şey değil iken..."*

Bu ifadede basiret sahiplerinin, olmayan bir şeyin, yok iken şey olmadığı şeklindeki görüşlerinin doğruluğuna delil vardır.

Bir yoruma göre de Allah onlara soylarını ve yoktan var edildiklerini hatırlatarak her türlü iddialarını hükümsüz kılmıştır.

فَوَرَبِّكَ لَنَحْشُرَنَّهُمْ وَالشَّيَاطِينَ ثُمَّ لَنُحْضِرَنَّهُمْ حَوْلَ جَهَنَّمَ جِثِيًّا ﴿٦٨﴾

68- "Rabbine yemin ederiz ki, muhakkak onları ve şeytanları mahşerde toplayacağız. Sonra şüphesiz onları diz üstü çökmüş olarak cehennemin çevresine getireceğiz."

Onların hepsini toplayacağız ve böylece onlar mahşer meydanında toplanmış olacaklardır. Sonra varacakları yerler değişik olacaktır. Kimileri cehenneme gittikten sonra bazısı bazısından daha aşağıda olan tabakalara inerler. Bu arada cehennem adı hepsinin yerlerinin ortak adıdır. Kimileri de cennete giderler. Cennet de bazısı bazısından daha yüksek olan derece ve mertebelerden ibarettir. Cennet adı da bunların kalacakları yerin tamamını kapsamaktadır.

Bir yoruma göre cennetteki dereceler arasında bulunan fark, cennetlikler ve cehennemlikler arasındaki farktan daha büyüktür.

ثُمَّ لَنَنْزِعَنَّ مِنْ كُلِّ شِيعَةٍ اَيُّهُمْ اَشَدُّ عَلَى الرَّحْمٰنِ عِتِيًّا ﴿٦٩﴾

69- "Sonra her topluluktan hangileri Rahman'a karşı daha çok asi ise şüphesiz onları çekip ayıracağız."

Her kim saptırmada ve sapmada onların önüne geçmiş ise yarın onun azabı ve zincirleri ikiye katlanır.

ثُمَّ لَنَحْنُ اَعْلَمُ بِالَّذ۪ينَ هُمْ اَوْلٰى بِهَا صِلِيًّا ﴿٧٠﴾

70- "Sonra oraya girmeye en çok müstahak olanları biz daha iyi biliriz."

Cehennemin her bir tabakasına ona müstahak olan iner. Bu çerçevede bugün kimin isyanı daha aşırı ise cehennemde de o Allah'a daha uzak, azabı ve perişanlığı daha şiddetli olacaktır.

وَاِنْ مِنْكُمْ اِلَّا وَارِدُهَا كَانَ عَلٰى رَبِّكَ حَتْمًا مَقْضِيًّا ﴿٧١﴾

71- "İçinizden kim varsa muhakkak oraya varacaktır. Rabbin için bu, verilmiş kesin bir hükümdür."

Her biri cehenneme varır. Lakin herkes ancak taşıdığı vebal kadar ondan olumsuz etkilenir ve onda kalır. Buna göre ateşle en şiddetli şekilde alevlenip yananlar, günahlara en çok batanlardır. Kimileri de cehenneme şu rivayette belirtildiği gibi varırlar:

*"Bu kimselerin cehenneme varışı esnasında ateşinin, sütün köpüğü gibi bir köpük tabakası vardır. Onlar oraya ateşi hissetmeden girerler. Onu geçtikleri zaman ise: 'Bize, yol üzerinde cehenneme gireceğimize dair söz verilmemiş miydi?' derler. Bunun üzerine onlara: 'Siz, hissetmeden geçtiniz' denir."*

ثُمَّ نُنَجِّي الَّذ۪ينَ اتَّقَوْا وَنَذَرُ الظَّالِم۪ينَ ف۪يهَا جِثِيًّا ﴿٧٢﴾

72- "Sonra Allah'tan sakınanları kurtarırız. Zalimleri ise diz üstü çökmüş olarak orada bırakırız."

Allah mümin olanların bazısını önce, bazısını da sonra kurtarır. Ancak müminlerden kurtarmadığı kimse kalmaz. Kâfirleri ise cehennemden çıkmaktan ümitsiz kılarak orada bırakır. İşte o zaman belaları şiddetlenir, cehennemin kapıları üzerlerine kapanır ve ümitleri kesilir.

Bir de insanlar, takvalarına göre kurtulurlar. Bu nedenle takva, onlar için çabuk kurtulmayı sağlar. Bu nedenle kimisi önce, kimisi

sonra kurtulurken, kimisi ümidini kesmekte, kimisi de yanmaktadır ki, böyle daha pek çok insan sınıfı ve çeşidi bulunur.

وَاِذَا تُتْلٰى عَلَيْهِمْ اٰيَاتُنَا بَيِّنَاتٍ قَالَ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا لِلَّذ۪ينَ اٰمَنُوٓا اَيُّ الْفَر۪يقَيْنِ خَيْرٌ مَقَامًا وَاَحْسَنُ نَدِيًّا ﴿٧٣﴾

73- "Onlara ayetlerimiz apaçık okunduğu zaman, kâfir olanlar iman edenlere: 'İki topluluktan hangisinin mevkii daha iyi ve meclisi daha güzeldir?' derler."

Yani onlara Kur'an ayetleri okunduğu zaman, bu ayetleri ret, inkâr, isyan ve sapkınlık ile karşılayarak kendilerinin hak üzere olduklarını ileri sürerler ve bu konuda sadece sezgi ve zanna dayanırlar.

وَكَمْ اَهْلَكْنَا قَبْلَهُمْ مِنْ قَرْنٍ هُمْ اَحْسَنُ اَثَاثًا وَرِئْيًا ﴿٧٤﴾

74- "Onlardan önce de biz konfor ve görünüm bakımından daha güzel olan nice nesiller helak ettik!"

Şüphesiz bunlar, tıpkı şüphecilikte onların yollarını izledikleri gibi, kendilerinden öncekilerin yolunu izlemektedirler. Onlar, kötü amellerine karşılık olarak hak ettikleri cezayı da bulacaklardır.

قُلْ مَنْ كَانَ فِي الضَّلَالَةِ فَلْيَمْدُدْ لَهُ الرَّحْمٰنُ مَدًّا حَتّٰٓى اِذَا رَاَوْا مَا يُوعَدُونَ اِمَّا الْعَذَابَ وَاِمَّا السَّاعَةَ فَسَيَعْلَمُونَ مَنْ هُوَ شَرٌّ مَكَانًا وَاَضْعَفُ جُنْدًا ﴿٧٥﴾

75- "De ki: 'Kim sapıklık içinde ise Rahmân ona bolca süre versin. Nihayet kendilerine vaad edileni; azabı veya kıyameti gördükleri zaman, kimin yerinin daha kötü ve askerlerinin daha zayıf olduğunu bileceklerdir.' "

Şüphesiz Allah, bâtıl zanlarına meyledip hallerinin selametine aldanmaları için kâfirlere mühlet verir. Böylece onlar, mühlet

verilmiş olmanın gafleti içinde ve hallerinin selametine aldanmış olarak Allah'ı unuturlar. Sonra ilahî takdir, onları hesaplarının gerektirdiği azapla kuşatır.

( حَتّٰى اِذَا رَاَوْا مَا يُوعَدُونَ اِمَّا الْعَذَابَ وَاِمَّا السَّاعَةَ ) *"Nihayet kendilerine vaad edileni; azabı veya kıyameti gördükleri zaman..."*

Yani ya onlara vaat edilen azap dünyada üzerlerine iner veya daha sonra başlarına kıyamet kopar. İşte o zaman, görmezden geldikleri şiddetli intikamı apaçık görürler. Bir de o zaman neyi kaçırdıklarını ve neye uğradıklarını bileceklerdir.

وَيَزِيدُ اللّٰهُ الَّذِينَ اهْتَدَوْا هُدًى وَالْبَاقِيَاتُ الصَّالِحَاتُ خَيْرٌ عِنْدَ رَبِّكَ ثَوَابًا وَخَيْرٌ مَرَدًّا ﴿٧٦﴾

76- "Allah, hidayete erenlerin hidayetini artırır. Kalıcı salih ameller, Rabbin katında sevap bakımından da sonuç bakımından da daha hayırlıdır."

Yani Allah, onları dolunayın nuruyla, yıldızla aydınlanmaya muhtaç olmaktan çıkarır. Sonra onları, güneşin doğmasından önce şafağın doğmasıyla aydınlatır. Derken irfan gündüzünün ortası olunca, ne bir karanlık ne de bir töhmet kalır.

( وَالْبَاقِيَاتُ الصَّالِحَاتُ خَيْرٌ عِنْدَ رَبِّكَ ثَوَابًا وَخَيْرٌ مَرَدًّا ) *"Kalıcı salih ameller, Rabbin katında sevap bakımından da sonuç bakımından da daha hayırlıdır."*

Rübubiyete şahitlik etmek, içinde ihlâsın dürüstlüğü bulunmayan diğer şeylerden daha hayırlıdır. Bir yoruma göre de kalıcı salih ameller, Allah katında makbul olarak kalan amellerdir.

( خَيْرٌ ) *"Daha hayırlıdır."*

Çünkü makbul olmayı hak etmek, hidayetin artışına vesile olur. Böylece ilmulyakîn aynulyakîne, aynulyakîn de hakkulyakîne dönüşmüş olur.

اَفَرَاَيْتَ الَّذ۪ي كَفَرَ بِاٰيَاتِنَا وَقَالَ لَاُو۫تَيَنَّ مَالًا وَوَلَدًاۜ ﴿٧٧﴾

77- “Sen, ayetlerimizi inkâr edip: ‘Yemin ederim ki muhakkak bana mal ve evlat verilecek’ diyen adamı gördün mü?”

Delili olmaksızın yemin ederek: “Bana mal ve evlat verilecek” diyen ve yemininin doğrulanacağını düşünen o kâfirin kıssasını anlat. Acaba o:

اَطَّلَعَ الْغَيْبَ اَمِ اتَّخَذَ عِنْدَ الرَّحْمٰنِ عَهْدًاۙ ﴿٧٨﴾

78- “Gayba mı muttali oldu yoksa Rahmân katından bir söz mü aldı?!”

Şimdi o, söylediklerini bizden gelen bir bilgilendirmeyle mi söylüyor yoksa Allah’tan bir söz mü aldı? Durum öyle değildir. Öte yandan bu hitabın içerdiği delil şunu gerektirir: Mümin, Allah hakkında güzel bir zanda bulunduğu veya O’ndan çokça şeyler umduğu zaman Allah, umduklarını gerçeğe dönüştürür ve zannını doğru çıkarır. Çünkü mümin Allah’tan söz almıştır. Allah ise sözünü bozmaz.

كَلَّاۜ سَنَكْتُبُ مَا يَقُولُ وَنَمُدُّ لَهُ مِنَ الْعَذَابِ مَدًّاۙ ﴿٧٩﴾

79- “Kesinlikle hayır! Biz, onun söylediklerini yazacağız ve azabını iyice uzatacağız.”

Kesinlikle hayır! Durum onun söylediği gibi değildir. Söylediklerinin gerçekliği de bulunmamaktadır. Aksine biz azaplarını iyice uzatacağız. Yani azapta sürelerini uzatacağız.

وَنَرِثُهُ مَا يَقُولُ وَيَأْت۪ينَا فَرْدًا ﴿٨٠﴾

80- “Onun dediklerine biz varis olacağız ve o, bize yalnız başına gelecektir.”

Onu çocuklarından, maiyetinden, hizmetçilerinden ve kavminden yararlandırmayacağız. O, bize onlardan kopmuş olarak yalnız başına gelecektir.

وَاتَّخَذُوا مِنْ دُونِ اللّٰهِ اٰلِهَةً لِيَكُونُوا لَهُمْ عِزًّا ﴿٨١﴾ كَلَّا سَيَكْفُرُونَ بِعِبَادَتِهِمْ وَيَكُونُونَ عَلَيْهِمْ ضِدًّا ﴿٨٢﴾

81, 82- "Onlar için üstünlük vesilesi olsunlar diye Allah'tan başka ilâhlar edindiler. Hayır! Hayır! Edindikleri ilahlar, ibadetlerini inkâr edecekler ve onlara karşıt olacaklardır."

Onlar, yanlış zanlarıyla putlarının kendilerini koruyacağına, Allah'tan başka taptıklarının ibadetlerinin de Allah katında kendileri için vesile olacağına hükmettiler. Heyhât, heyhât! Bu yanlış hesaplarının hiçbir gerçekliği olamaz. Aksine, kendileri ve putları haşrolundukları zaman putları onlardan kaçacak ve bu putlardan umdukları fayda, kendilerine zarar olarak dönecektir.

Bir yoruma göre de onlar azizliği zelil olacakları yerlerde aradıkları için arayışlarında başarısız oldular ve muratlarından alıkonuldular.

اَلَمْ تَرَ اَنَّٓا اَرْسَلْنَا الشَّيَاطِينَ عَلَى الْكَافِرِينَ تَؤُزُّهُمْ اَزًّا ﴿٨٣﴾

83- "Kâfirlerin üzerine, onları kışkırtıp sıkıntıya sokmak üzere, şeytanlar gönderdiğimizi görmedin mi?!"

( تَؤُزُّهم ) "*Teuzzuhum*" lafzı, onlara sıkıntı verirler, demektir. Bu itibarla şeytanın vesvesesi sıkıntı ve üzüntü olurken, Hakk'ın ilhamı huzur ve gönül rahatlığı olmaktadır. İşte bu ayet, şeytanın vesvesesi ile Hakk'ın ilhamı arasındaki farkın delillerinden biridir.

فَلَا تَعْجَلْ عَلَيْهِمْ اِنَّمَا نَعُدُّ لَهُمْ عَدًّا ﴿٨٤﴾

84- "Öyleyse onlar hakkında acele etme. Biz, onlar için sayıp durmaktayız."

Allah'ın hükmünde nefesler sayılıdır. Bu nedenle, nefeslerini tamamlamayan kimsenin nefesleri sona ermez. Ecel sona erdiği zaman da ondan sonra tedbirler fayda vermez. Sona ermesinden önce ise ecel, sebeplerle ne artar ne de eksilir.

يَوْمَ نَحْشُرُ الْمُتَّقِينَ اِلَى الرَّحْمٰنِ وَفْدًا ﴿٨٥﴾

85- "Takva sahiplerini Rahmân'ın huzurunda heyet halinde toplayacağımız gün."

Bir görüşe göre takva sahipleri, seçkin taatlerine binerek mahşere getirileceklerdir. Onlar farklı farklıdırlar. Kimisi başta gelen ibadetlerine, kimisi himmetlerinin bineklerine, kimisi parıl parıl nurlarına binmiş olarak getirilirken, kimisini ise Hakk, dünyasında taşıdığı gibi ahiretinde de taşıyıp getirmektedir. Hakk'ın taşıdığı kimse ise halkın taşıdığı kimse gibi değildir.

وَنَسُوقُ الْمُجْرِمِينَ اِلٰى جَهَنَّمَ وِرْدًا ﴿٨٦﴾

86- "Günahkârları susuz olarak cehenneme sürdüğümüz (gün)."

Böylece takva sahipleri azizlik vasfıyla, bunlar ise zelillik vasfıyla mahşere sevk edilirler. Böylece Allah, onları sevkin kendisinde ortaklaştırırken anlamlarında birbirinden ayırmaktadır. Nitekim bu iki grup birbirinden tamamen farklıdır.

لَا يَمْلِكُونَ الشَّفَاعَةَ اِلَّا مَنِ اتَّخَذَ عِنْدَ الرَّحْمٰنِ عَهْدًا ﴿٨٧﴾

87- "Rahmân'ın katında söz alan hariç, insanlar şefaat gücüne sahip olmayacaklardır."

Adı geçen söz, Mevlâlarının birliğine şahitlik edeceklerine dair olarak misak günü kendilerinden alınmış olan sözü dünyalarında korumuş olmalarıdır.

وَقَالُوا اتَّخَذَ الرَّحْمٰنُ وَلَدًا ﴿٨٨﴾ لَقَدْ جِئْتُمْ شَيْئًا اِدًّا ﴿٨٩﴾
تَكَادُ السَّمٰوَاتُ يَتَفَطَّرْنَ مِنْهُ وَتَنْشَقُّ الْاَرْضُ وَتَخِرُّ الْجِبَالُ هَدًّا ﴿٩٠﴾
اَنْ دَعَوْا لِلرَّحْمٰنِ وَلَدًا ﴿٩١﴾

88, 89, 90, 91- "Dediler ki: 'Rahmân çocuk edindi.' Hakikaten siz çok çirkin bir şey ortaya attınız. Bundan dolayı neredeyse gökler çatlayacak, yer yarılacak, dağlar yıkılıp düşecektir. Rahmân'a çocuk isnat etmeleri yüzünden."

Sözlerindeki bühtanları ne de büyük! Çirkin hallerindeki cüretleri ne de şiddetli! Lakin Allah'ın "samed" sıfatı, tevhid ehli bir kimsenin tevhidinin güzelliğinden veya inançsız bir kimsenin inançsızlığının kusurundan etkilenmekten münezzehtir. Bu nedenle söyledikleri söz ve yeltendikleri sapıklıkla sadece kendi yüzleri çirkinleşmiştir. Tıpkı diğerlerinin söyledikleriyle de sadece söyleyenin güzelleşmesi gibi. O halde dünyada veya ahirette sadece söyleyene bir karşılık yansır.

وَمَا يَنْبَغِي لِلرَّحْمٰنِ اَنْ يَتَّخِذَ وَلَدًا ﴿٩٢﴾

92- "Oysa çocuk edinmek, Rahmân'a uygun düşmez."

Bir olduğu halde Allah'ın nerede çocuğu olur! Bir de hemcinsinin olması vacip de caiz de olmadığı halde nasıl çocuk doğurur!

اِنْ كُلُّ مَنْ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ اِلَّٓا اٰتِي الرَّحْمٰنِ عَبْدًا ﴿٩٣﴾

93- "Göklerde ve yerde olan herkes, muhakkak Rahmân'ın huzuruna kul olarak gelecektir."

لَقَدْ اَحْصٰيهُمْ وَعَدَّهُمْ عَدًّا ﴿٩٤﴾

94- "Şüphesiz Allah onları (ilmiyle) kuşatmış ve sayıya dökmüştür."

Hiçbir malum O'nun ilminin dışına çıkamaz ve yaratılabilir olan hiçbir mevhum O'nun kudretinden kaçamaz.

وَكُلُّهُمْ اٰتِيهِ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ فَرْدًا ﴿٩٥﴾

95- "Onların hepsi, kıyamet günü O'nun huzuruna tek başına gelecektir."

Hiçbir hizmetçi onlara arkadaşlık etmez, hiçbir maiyet onlara katılmaz. Herkes nefsiyle meşguldür ve başkasından ayrı tek başınadır.

اِنَّ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ سَيَجْعَلُ لَهُمُ الرَّحْمٰنُ وُدًّا ﴿٩٦﴾

96- "İman edip salih amel işleyenler için Rahmân bir sevgi meydana getirecektir."

Allah, halis amellerinin neticesi olarak kalplerinde kendine dönük bir sevgi meydana getirir. Nitekim hadiste şu ifade yer almıştır:

*"Kul, nafilelerle bana yaklaşmaya devam eder. Nihayet o beni sever, ben de onu severim."*

"Bir yoruma göre de Rahmân, onlar için kullarının ve meleklerinin kalplerinde bir sevgi meydana getirir. Bu itibarla, iyilik ve taat ehli kimseler fiilleriyle hak etmeksizin herkes tarafından sevilirler."

فَاِنَّمَا يَسَّرْنَاهُ بِلِسَانِكَ لِتُبَشِّرَ بِهِ الْمُتَّقِينَ وَتُنْذِرَ بِهِ قَوْمًا لُدًّا ﴿٩٧﴾

97- "Biz, onunla sırf takva sahiplerini müjdeleyip inatla karşı çıkan bir topluluğu uyarasın diye Kur'an'ı senin dilinle kolaylaştırdık."

Allah'ın kelamı ve hitabı aynı olduğu halde kimileri için kolaylaştırma, kimileri için de korkutma ve sakındırma vesilesidir. O halde muvaffak kılındığı husus, bu kelam ve hitapla kendisine kolay kılınan kimseye ne mutlu! Bu kelam ve hitap hakkında korkutulan, daha doğrusu yalnız bırakılan kimsenin ise vay haline! İnsanlar, muvaffak kılınanlar ve kılınmayanlar diye ikiye ayrılmışlardır.

وَكَمْ اَهْلَكْنَا قَبْلَهُمْ مِنْ قَرْنٍ هَلْ تُحِسُّ مِنْهُمْ مِنْ اَحَدٍ اَوْ تَسْمَعُ لَهُمْ رِكْزًا ﴿٩٨﴾

98- "Biz, onlardan önce nice nesilleri helak ettik. Onlardan herhangi birini hissediyor veya onların bir fısıltısını bile işitiyor musun?"

Allah onları var edip yaşatmış, dilediği yapı üzere yaratıp bırakmıştır. Ondan sonra dilediğinde onları öldürüp yok etmiştir. Böylece onlar, bütünüyle yok olmuş ve son kişiye varıncaya kadar helak olmuşlardır. O kadar ki onlardan ne büyük ne küçük ne değerli ne de değersiz hiçbir şey kalmamıştır. Kıyamet günü ise en ufak ve değersiz bir şeyden bile sorumlu tutulacaklardır.

سورة طه

# TÂHÂ SÛRESİ

(Tâhâ Sûresi 135 âyettir. Mekke'de inmiştir. 130 ve 131. âyetler Medine'de inmiştir. Adını, ilk âyetini oluşturan iki harften almıştır)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

Besmele, öyle üstün bir varlığın adıdır ki, kim üstünlüğünün yüceliğini hakikaten kavrarsa, kulluğunun katıksız oluşunda şaibeden arınır. O'nun safiyetinin aydınlığına ulaştığı zaman ise kendi vasıflarının alametlerinden vazgeçer.

Öyle üstün bir varlığın adıdır ki, kim O'nu tanırsa himmeti yükselir. Himmeti yükseldiği zaman da her iki dünyaya dair istekleri ortadan kalkar.

Öyle bir isimdir ki, onu bilenin üzüntüsü geçer, kalbi iyileşir. Onun dini Rabbidir, cenneti de Rabbinin sevgisidir.

Öyle üstün bir varlığın adıdır ki, kime kulluğunun etiketini vurursa, onu şehvetlerinin köleliğinden kurtarır ve isteklerinin tutsaklığından azat eder. Böylece ne bir sevgiliye dönük isteği olur ne de hiçbir kaçış -fırsatı kaçırma kaygısı- onu harama teşvik eder.

طٰهٰ ﴿١﴾

1- "Tâ. Hâ."

( طٰ ) *"Tâ"* harfi, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kalbinin Allah'tan başkasından temizlendiğine, ( هٰ ) *"Hâ"* harfi de kalbinin Allah'a giden yolu bulduğuna işaret etmektedir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Sırrını yakınlık makamına oturt! Zira sen, bizden başkasına yol bulamayacaksın.

- Sırrını, bizden başkasını anmaktan alıkoyduk ve sana, bize giden yolu gösterdik.

- Ne mutlu seninle hidayete eren kimseye!

- Seninle hidayete eren kimsenin hayatı ne güzel olur!

مَٓا اَنْزَلْنَا عَلَيْكَ الْقُرْاٰنَ لِتَشْقٰىۙ ﴿٢﴾

2- "Sana Kur'an'ı, mutsuz olasın diye indirmedik."

Yani sana vahyi indirmemizden maksat zorluk çekerek ibadet etmen değildir. Lakin bu, sadece vuslata kapı aralamak ve kurbet makamına hazırlıktır.

Bir yoruma göre de Allah Hz. Peygamber'e (s.a.v.): ( لَا تَمُدَّنَّ عَيْنَيْكَ اِلٰى مَا مَتَّعْنَا بِه۪ٓ اَزْوَاجًا مِنْهُمْ ) *"Onlardan bazı kesimlere verdiğimiz dünya malına sakın göz dikme!"* (Hicr, 15/88) buyurunca o, herhangi bir şekilde yararlanmak için dünyaya yaklaşmaktan uzak durmak ve ondan temiz kalmak amacıyla tek ayak üzerinde durdu. Bunun üzerine kendisine:

*"Her iki ayağınla da yere bas. Katlandığın bunca yorgunluk niye?"* denildi.

Bu söz üzerine Hz. Peygamber (s.a.v.) ibadetini daha fazla yerine getirmeye çalıştı ve ayakları şişinceye kadar ayakta durarak şöyle dedi:

*"Şimdi ben, şükreden bir kul olmayayım mı?"* Yani kendisine ibadet etmem için beni muvaffakiyete ehil kılmasına karşılık.

اِلَّا تَذْكِرَةً لِمَنْ يَخْشٰى ﴿٣﴾

3- “Sadece Allah’tan korkan kimseye bir hatırlatma olsun diye onu indirdik.”

O halde Kur’an, akıl sahipleri için bir aydınlatma, vuslat ehli için de bir hatırlatmadır. Böylece akıl sahipleri onunla aydınlanıp ahiretlerinde iç rahatlığına kavuşmakta, vuslat ehli de onunla zikrederek dünyalarında ünsiyetin huzurunu bulurlar.

تَنْزٖيلًا مِمَّنْ خَلَقَ الْاَرْضَ وَالسَّمٰوَاتِ الْعُلٰى ﴿٤﴾

4- “Kur’an, yeri ve yüksek gökleri yaratan Allah tarafından peyderpey indirilmiştir.”

Allah, yeryüzünü kullar için kalınan yer kılmıştır. Bu arada abidlerin nefisleri ibadetlerinin, ariflerin kalpleri de marifetlerinin karar kıldığı yerlerdir.

اَلرَّحْمٰنُ عَلَى الْعَرْشِ اسْتَوٰى ﴿٥﴾

5- “Rahmân, Arş’a hâkim olmuştur.”

Allah’ın gökteki Arş’ına hâkimiyeti malumdur. Yeryüzündeki arşı ise tevhid ehlinin kalpleridir.

Allah şöyle buyurmuştur: ( وَيَحْمِلُ عَرْشَ رَبِّكَ فَوْقَهُمْ يَوْمَئِذٍ ثَمَانِيَةٌ ) *“O gün Rabbinin arşını bunların da üstünde sekiz taşıyıcı taşır.”* (Hâkkah, 69/17)

Kalplerden ibaret olan arş hakkında ise Allah:

( وَحَمَلْنَاهُمْ فِي الْبَرِّ وَالْبَحْرِ ) *“Onları karada ve denizde taşıdık”* (İsrâ, 17/70) buyurmuştur. Bu arada Rahman, gök arşına hâkim olmuş, kalp arşını ise istila etmiştir. Gök arşı, halkın duasının kıblesi, kalp arşı ise Hakk’ın nazargâhıdır. Bu iki arş arasında ise büyük fark vardır.

لَهُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا وَمَا تَحْتَ الثَّرٰى ﴿٦﴾

6- "Göklerde, yerde, ikisi arasında ve yerin altında olanlar sadece O'nundur."

Her şey mülk olarak O'nundur. Veliler ise O'nun özel ve onurlu kullarıdır. Göklerle yer arasında yoktan var ettiği şeyler sadece O'nundur. Bu itibarla var etme ve yaratma bakımından her şey O'nundur.

وَاِنْ تَجْهَرْ بِالْقَوْلِ فَاِنَّهُ يَعْلَمُ السِّرَّ وَاَخْفٰى ﴿٧﴾

7- "Eğer sen sözü açıktan söylersen şüphesiz O, sırrı da sırdan daha gizli olanı da bilir."

Nefis kalpteki şeylere, kalp de ruhun sırlarına muttali olamaz. Ruh da sırrın hakikatlerine ulaşamaz. Sırdan daha gizli olan ise Hak'tan başka hiç kimsenin muttali olamadığı şeydir. Bir yoruma göre de sırdan daha gizli olanı şeytan bozamaz, melekler yazamaz, onu sadece Allah bilir ve başkaları ona muttali olamaz.

اَللّٰهُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ لَهُ الْاَسْمَٓاءُ الْحُسْنٰى ﴿٨﴾

8- "Allah, kendisinden başka hiçbir ilâh yoktur. En güzel isimler O'na mahsustur."

Allah, akla gelebilen hiçbir yaratığın yoktan var etme yetisine sahip olmadığını belirtmiş ve kıdemi gereğince varlıktaki her şeyin kendisine ait olduğunu ortaya koymuştur.

( لَهُ الْاَسْمَٓاءُ الْحُسْنٰى ) *"En güzel isimler O'na mahsustur."*

Yani sıfatları, zatî ve manevî sıfatlar şeklindeki her iki kısmıyla da O'na mahsustur.

وَهَلْ اَتٰيكَ حَدِيثُ مُوسٰى ﴿٩﴾

9- "Mûsâ'nın haberi sana ulaştı mı?"

Bu sual, istifham kalıbında olmakla beraber ondan maksat takrir ve ispattır. Allah, kitabında şöyle bir prensip uygulamıştır: Hz. Peygamber'den (s.a.v.) söz ettiği yerlerin çoğunda Hz. Mûsâ'nın kıssasını anlatır. Bu çerçevede Hz. Mûsâ'yı onun ardından anlatır.

اِذْ رَاٰ نَارًا فَقَالَ لِاَهْلِهِ امْكُثُوٓا اِنّٓي اٰنَسْتُ نَارًا لَعَلّٓي اٰتيكُمْ مِنْهَا
بِقَبَسٍ اَوْ اَجِدُ عَلَى النَّارِ هُدًى ﴿١٠﴾

10- "Hani bir ateş görmüştü de ailesine: 'Bekleyin! Ben gerçekten bir ateş gördüm. Belki ondan size bir meşale getiririm veya ateşin başında bir rehber bulurum' demişti."

Allah, Hz. Mûsâ'ya ateşi gösterdi ve ateşin peşine düşmek üzere nihayetinde onu ailesinin dışına çıkardı. Zaten amaç da onu aralarından çıkarmaktı. Bu sırada, Hz. Mûsâ yaklaştıkça ateş uzaklaşıyordu. Ayrılırken de aile fertlerine şöyle dedi:

( امْكُثُوٓا اِنّٓي اٰنَسْتُ نَارًا ) *"Bekleyin! Ben gerçekten bir ateş gördüm."*

Bunun üzerine aile fertleri: Bizi nasıl bırakırsın! Oysa vadi canavar yatağıdır, dediler.

Hz. Mûsâ dedi ki: Ben sizden ayrılmıyorum. Belki size bu ateşten bir meşale getiririm.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Hz. Mûsâ ateşi görünce kendisine tedirginlik hakim oldu ve çıkmaktan kendini alıkoyamadı.

Bu kıssada rivayet edildiğine göre; Hz. Mûsâ ateşin yanına gelince başından sonuna kadar yanmakta olan bir ağaç gördü. Bunun üzerine o ateşten biraz almak için bir miktar ot topladı. Fakat sonunda anladı ki birine bir meşale vermek bu ateşin içinden gelmemektedir.

Şiir:

*Dediler ki bize: Biz hilaliz ve ancak*
*Gece yol gidene aydınlık yaparız, okutmayız*

Ey Mûsâ! Bu ateş aydınlık yapar lakin kendinden kimseye bir meşale vermez. Ey Mûsâ! Bu ateş canları değil, kalpleri yakar.

- Hz. Mûsâ, ateşten bir meşale alma çabası içerisinde idi. Bu nedenle, ondan nasıl bir şey alabileceğinin çaresiyle uğraşıyordu. İşte o bu durumdayken ansızın Hak'tan nida duydu.

فَلَمَّآ اَتٰيهَا نُودِيَ يَا مُوسٰى ﴿١١﴾ اِنّ۪ٓي اَنَا رَبُّكَ فَاخْلَعْ نَعْلَيْكَ اِنَّكَ
بِالْوَادِ الْمُقَدَّسِ طُوًى ﴿١٢﴾

11, 12- "Ateşin yanına varınca ona şöyle seslenildi: 'Ey Mûsâ! Şüphesiz ben senin Rabbinim. Hemen ayakkabılarını çıkar. Çünkü sen, kutsal vadi Tuvâ'dasın.'"

Hz. Mûsâ bu çağrıdaki tertip, düzen ve insicamı duyunca onun Allah'ın kelamı ve Hakk'ın hitabı olduğunu anladı.

Bir yoruma göre de Hz. Mûsâ'nın, bunun Allah'ın kelamı olduğunu anlaması, bir nevi akıl yürütmeyle değil, sadece Allah'ın (c.c.) kendisine ilham şeklinde verdiği özel bilgiyle olmuştur.

( فَاخْلَعْ نَعْلَيْكَ ) "*Hemen ayakkabılarını çıkar.*"

Çünkü hükümdarların huzurunda mefruşata ayakkabıyla basılmaz.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Ey Mûsâ! Asanı yere at, ayakkabılarını çıkar, bu gece bizde kal ve ayrılma!

- Ayakkabıların çıkarılmasına dair emirdeki işaret, kalbi her iki dünya ile ilgili sözden boşaltmak ve yalnızlık vasfıyla Hak ile baş başa kalmaktır.

- Ayakkabılarını çıkar, yani her iki türlü -doğru ve yanlış- davranışından da uzaklaş, hallerinin her iki cinsini; yakınlık ve uzaklığı, bağlılık ve ayrılığı, rahatı ve rahatsızlığı, fenâyı ve bekâyı var-

lık alanından sil ve bizim vasfımızla ol. Çünkü sen ancak bizim hakkımızlasın.

Allah, onu hallerinde öyle sabit kıldı ki, adeta o, bütün benliğinden arındırılmış ve maddî özelliklerinden koparılmış gibi oldu.

( اِنَّكَ بِالْوَادِ الْمُقَدَّسِ طُوًى ) *"Çünkü sen, kutsal vadi Tuvâ'dasın."*

Yani sen, arızalardan münezzeh olan vadidesin. Samed sıfatının alanları her türlü kusur, iman ve süsten; bir güzellikle süslenmekten ve bir isyanla kusurlu hale gelmekten yücedir. Çünkü Rab oluşun, her şeyin üstesinden gelen üstünlük parıltıları vardır.

وَاَنَا اخْتَرْتُكَ فَاسْتَمِعْ لِمَا يُوحٰى ﴿١٣﴾

13- "Seni ben seçtim. O halde şimdi vahyedilene kulak ver!"

Seni bilerek seçtim, vehimlerin kirinden ve safiyetini bulandıracak olan her şeyden arındırıp temizledim.

Bir yoruma göre de ben seni seçtikten sonra sen bana aitsin ve benimle varsın. Bir de sen, kendini kaybetmiş olmanın mahviyeti içindesin.

اِنَّن۪ٓي اَنَا اللّٰهُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّٓا اَنَا۬ فَاعْبُدْن۪ي وَاَقِمِ الصَّلٰوةَ لِذِكْر۪ي ﴿١٤﴾

14- "Şüphe yok ki Allah benim. Benden başka hiçbir ilâh yoktur. O halde bana ibadet et ve beni anmak için namaz kıl."

Ben, celal ve cemalimi hak edişim sebebiyle ezelimde kusurlardan, benzerlerden ve şekillerden münezzeh oldum.

Bir yoruma göre: ( لَٓا اِلٰهَ اِلَّٓا اَنَا۬ ) *"Benden başka hiçbir ilâh yoktur"*, yani başkaları benim varlığımda kayıp, enkaz ve kalıntılar da hakkımın sübutu yanında yok hükmündedir.

( فَاعْبُدْن۪ي ) *"O halde bana ibadet et."*

Yani hükmüme tezellül et, emrimi uygula ve hükümranlığımın karşı konulmazlığı karşısında boyun eğ.

( وَاَقِمِ الصَّلٰوةَ لِذِكْر۪ي ) *"Beni anmak için namaz kıl."*

Namazın gerçek uygulayıcısını ve koyucusunu düşünmeden kılmak, kendini beğenmişliğe yol açar. Oysa kul, namazını, onu icra edenin başkası -Allah- olduğunu görme ve bundan emin olma vasfıyla kıldığı zaman bununla namaz, vuslat kapısını açmaya, sır makamında durmaya ve yakınlığın özelliklerini hakikat olarak yaşamaya vesile olur.

اِنَّ السَّاعَةَ اٰتِيَةٌ اَكَادُ اُخْف۪يهَا لِتُجْزٰى كُلُّ نَفْسٍ بِمَا تَسْعٰى ﴿١٥﴾

15- "Kıyamet muhakkak gelecektir. Herkes çabaladığı şeyin karşılığını bulsun diye adeta onu gizliyorum."

Kullara kıyametin yakın olduğunu bildirmenin faydası, tefrikanın gafletlerinden uyanmalarıdır. Bu çerçevede onlar, kalpleriyle huzur halinde olduklarında -zikrin devam ettirilmesi halinde- ahiret için vaat edilen şeylerin çoğu huzur halinde olanlar için dünyada da var olur. Dünya da onlar için ahiret gibidir. Aynı şekilde mutasavvıflar hali kıyamet olarak görmeyi, istikametin alametlerinden saymışlardır.

فَلَا يَصُدَّنَّكَ عَنْهَا مَنْ لَا يُؤْمِنُ بِهَا وَاتَّبَعَ هَوٰيهُ فَتَرْدٰى ﴿١٦﴾

16- "O halde ona inanmayan ve nefsinin arzusuna uyan kimseler, seni ondan alıkoymasın. Sonra helak olursun."

Allah, Hz. Mûsâ'ya güzel uyarıyla ikramda bulunup onu şuhûd vasfıyla huzuruna getirdiği zaman, sıfatlarının göğünden tefrika vadilerinde şaşkın şaşkın dolaşan gaflet ehlinin cehennemine inmesi uygun olmaz.

وَمَا تِلْكَ بِيَم۪ينِكَ يَا مُوسٰى ﴿١٧﴾

17- "Şu sağ elindeki nedir ey Mûsâ?"

Allah, Hz. Mûsâ'ya birden fazla ayette asasını sormuştur. Çünkü Allah, asada ortaya çıkaracağı büyük mucizeyi biliyordu.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah'ın bunu söylemesinin sebebi, Hz. Mûsâ'nın, ilahî hitabı ansızın duyunca makamın heybetine kapılmasıdır. İşte yüceliği karşısında kapıldığı endişeleri yatıştırmak için Allah, onu asa konusuna yönlendirdi ve kendisine ondaki mucizeleri gösterdi.

- Eğer Allah, Hz. Mûsâ'yı heybetin galebe çalan etkileriyle baş başa bıraksaydı, belki de bulunduğu durumu kavramaz ve ona dayanamazdı. Hal böyle oluna Allah kendisine: (وَمَا تِلْكَ بِيَمِينِكَ يَا مُوسٰى) *"Şu sağ elindeki nedir ey Mûsâ?"* dedi.

قَالَ هِيَ عَصَايَۚ اَتَوَكَّؤُا عَلَيْهَا وَاَهُشُّ بِهَا عَلٰى غَنَمِي وَلِيَ فِيهَا مَاٰرِبُ اُخْرٰى ﴿١٨﴾

18- "Mûsâ şöyle dedi: 'O, benim asamdır. Ona dayanırım, onunla davarlarıma yaprak silkelerim. Onda başka maslahatlarım da vardır."

Hz. Mûsâ: "O benim asamdır" dedi ve kendisi için taşıdığı çeşitli faydaları saymaya başladı. Bunun üzerine:

قَالَ اَلْقِهَا يَا مُوسٰى ﴿١٩﴾

19- "Allah: 'Onu yere at ey Mûsâ!' dedi."

Çünkü sen, tevhid inancı sıfatını taşıyor ve Allah'ı birleme makamında duruyorsun. Öyleyse Allah'tan başka dayanacağın bir dayanağının olması ve yardım isteyeceğin ve yararlanacağın bir istinat noktasının bulunması senin için nasıl doğru olabilir?!

Sonra Hz. Mûsâ: (وَلِيَ فِيهَا مَاٰرِبُ اُخْرٰى) *"Onda başka maslahatlarım da vardır"* (Taha,20/18) dedi. Tarikatta -Allah yolunda atılacak- ilk adım, her türlü sebebi terk etmek ve her talepten temizlenmektir.

Hal böyle iken Hz. Mûsâ'nın: "Onunla iş yapıyorum, onunla korunuyorum ve onda başka maslahatlarım da vardır" demesi nasıl doğru olur?

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Hz. Mûsâ asadan yararlanmasıyla ilgili tafsilatı arttırdıkça, Allah ile baş başa kalmanın gereği olarak onu atmaya ve ondan faydalanmaktan temizlenmeye inanması kendisine daha çok güç katıyor ve daha çok yakışıyordu.

- Tevhid, tecrit -kulun kendini Allah'tan başka şeylerden arındırması - demektir. Bunun kişide gerçekleştiğinin alameti ise ondaki bütün aidiyetlerin ortadan kalkmasıdır. Hz. Mûsâ bunları anlatınca asayı yere atması emredildi ve Allah onu hızla sürünen bir yılan yaptı. Hz. Mûsâ kaçtı ve arkasına dönüp onu takip etmedi.

Bu arada Hz. Mûsâ'ya denildi ki:

"Ey Mûsâ! İşte alakanın özelliği budur. Sahibi, sırrına muttali kılındığı zaman ondan kaçar."

- Allah, kendisine kelamını dinleme rahatlığı bahşedince ilahi kelamı dinlemenin zevkine tutuldu ve kendisine sorulana da sorulmayana da cevap vererek: "*Onda başka maslahatlarım da vardır*" dedi ve asadan faydalandığı yönlerini anlattı. Bu yönlerden bazıları, söylediği şu hususlardır:

Ben yalnız iken yalnızlığımı giderir. Karanlık olduğu zaman gecemi aydınlatır. Yolda yorulduğum zaman ona binerim, o da beni taşır. Onunla davarlarıma yaprak silkelerim. Bir de başımdan düşmanımı defeder.

Ondaki en büyük maslahatım ise senin bana: ( وَمَا تِلْكَ بِيَمِينِكَ يَا مُوسٰى ) "*Şu sağ elindeki nedir?*" (Taha,20/17) demiş olmandır. Hangi nimet, hangi maslahat veya hangi fayda bana: "*Şu nedir?*" demenden daha büyük olabilir?

- Hz. Mûsâ, asayla ilgili değişik alametler ve ondan faydalanmanın çeşitli şekillerini saydıktan sonra Allah kendisine şöyle dedi:

Ey Mûsâ! Asada senin haberdar olmadığın bir fayda daha vardır ki, o da onun yılana dönüşmesidir. Bunda ise senin için bir mucize ve doğruluk delili vardır.

- Hz. Mûsâ'nın saydığı asadaki bütün faydalar Allah tarafındandı. Hal böyle olunca o nasıl bunları kendine nispet eder?

Şiir:

*Ey Huld Cenneti! Şayet hediyeler*
*Veriliyorsa sana, senin tarafından verilmiyor*

- Hz. Mûsâ, asayı hareket eden bir yılan olarak görünce şöyle dedi: Bu asadaki her özelliği bilmiştim ancak tek bu özelliği bilememiştim.

فَاَلْقٰيهَا فَاِذَا هِيَ حَيَّةٌ تَسْعٰى ﴿٢٠﴾

20- "Mûsâ da onu hemen attı. Bir de baktı ki o hızla sürünen bir yılandır."

Eşyaların zahirinin düşündürdüklerine itibar olmaz. Zira bazen zahir bir şey düşündürür sonra gelecekte onun hilafı ortaya çıkar. Mesela; Hz. Mûsâ'nın asası yılana dönüşmüştür. Sonra Allah, Hz. Mûsâ'ya: Bundan maksat, asanın senin başına bela ve fitne olması değil, senin için alamet ve mucize olmasıdır" demiştir.

قَالَ خُذْهَا وَلَا تَخَفْ سَنُعٖيدُهَا سٖيرَتَهَا الْاُولٰى ﴿٢١﴾

21- "Allah buyurdu ki: 'Al onu ve Korkma! Onu, ilk haline sokacağız.'"

Allah, asanın halden hale geçmesiyle; bir kez asa, sonra yılan, sonra bir daha asa olması suretiyle, Hz. Mûsâ'ya, kullarını defalarca renkten renge geçme -telvîn- halinde sabit kıldığını göstermiştir. Mesela; tutma, ret, cem, fark vs. gibi.

وَاضْمُمْ يَدَكَ اِلٰى جَنَاحِكَ تَخْرُجْ بَيْضَاءَ مِنْ غَيْرِ سُوٓءٍ اٰيَةً اُخْرٰى ﴿٢٢﴾

22- "Bir de elini koynuna koy ki, diğer bir mucize olmak üzere, kusursuz olarak beyaz çıksın

Allah, Hz. Mûsâ'ya dışarıdan bir mucize gösterdiği gibi kendisinden de bir mucize göstermiştir. Bu mucize, elini koynuna koyduğu zaman alaca hastalığı olmaksızın onu beyaza çevirmesidir.

Allah şöyle buyurmuştur: ( سَنُرِيهِمْ اٰيَاتِنَا فِي الْاٰفَاقِ وَفِيٓ اَنْفُسِهِمْ حَتّٰى يَتَبَيَّنَ لَهُمْ اَنَّهُ الْحَقُّ ) "*Delillerimizi ufuklarda ve nefislerinde onlara göstereceğiz ki Kur'an'ın gerçek olduğunu iyice anlasınlar*." (Fussilet, 41/53)

Bu arada Hz. Mûsâ'nın üzerindeki elbisenin iki yeni bulunmadığı için Allah: "Elini yenine koy" değil de: ( وَاضْمُمْ يَدَكَ اِلٰى جَنَاحِكَ ) "*Elini koynuna koy*" demiştir.

لِنُرِيَكَ مِنْ اٰيَاتِنَا الْكُبْرٰى ﴿٢٣﴾

23- "Ta ki sana en büyük mucizelerimizden bazısını gösterelim."

En büyük mucize, Hz. Mûsâ'nın iç dünyasında bulduğu şuhûd ve vücud ile kulun tekellüf ve tasarrufuyla olmayan, sahibinin zevk yoluyla kavradığı çeşitli hallerdir.

اِذْهَبْ اِلٰى فِرْعَوْنَ اِنَّهُ طَغٰى ﴿٢٤﴾

24- "Firavun'a git, çünkü o azdı."

Allah, Hz. Mûsâ'ya kelamını vasıtasız duyurduktan ve makamını yüceltip ikramını çoğalttıktan sonra iman etmeyeceğini, daveti kabul etmeyeceğini, dinlemeyeceğini ve tanımayacağını bildiği halde Firavun'a gitmesini emretti. Bu nedenle Allah'ın kelamını dinledikten sonra Firavun'a gidip inkârını dinlemek, Hz. Mûsâ'ya zor geldi. Fakat o Allah'ın emrindeki meşakkati, nefsinin muradına tercih etti.

Bir yoruma göre de Allah Firavun'a gitmesini emredince Hz. Mûsâ da Allah'tan nakil hazırlığı ve yüklendiği peygamberliğin tebliğini sağlayacak şeyler diledi. Onun şu sözü de bu cümledendir:

قَالَ رَبِّ اشْرَحْ لِي صَدْرِي ﴿٢٥﴾ وَيَسِّرْ لِيٓ اَمْرِي ﴿٢٦﴾
وَاحْلُلْ عُقْدَةً مِنْ لِسَانِي ﴿٢٧﴾ يَفْقَهُوا قَوْلِي ﴿٢٨﴾

25, 26, 27, 28- "Mûsâ şöyle dedi: 'Rabbim! Gönlüme ferahlık ver. Bana işimi kolaylaştır. Dilimdeki tutukluğu çöz ki sözümü anlasınlar.'"

Bu hazırlıklar, yükümlülüğün şartlarından birinin de emredileni yerine getirebilmek olduğu bilinsin diye istenmiştir.

Bir yoruma göre de Hz. Mûsâ Allah ile konuşmaya başlayınca, O'ndan istediklerinin çokluğu sebebiyle neredeyse susmayacaktı. Bu amaçla:

( قَالَ رَبِّ اشْرَحْ لِي صَدْرِي وَيَسِّرْ لِيٓ اَمْرِي ) "*Rabbim! Gönlüme ferahlık ver. Bana işimi kolaylaştır*..." diye dua etmeye başladı ve ayetler ile isteklerin sonuna kadar sözüne devam etti.

( قَالَ رَبِّ اشْرَحْ لِي صَدْرِي وَيَسِّرْ لِيٓ اَمْرِي ) "*Mûsâ şöyle dedi: 'Rabbim! Gönlüme ferahlık ver. Bana işimi kolaylaştır.'*"

Ta ki ben, seni dinledikten sonra başkalarının kelamını da dinleyebileyim.

( وَاحْلُلْ عُقْدَةً مِنْ لِسَانِي ) "*Dilimdeki tutukluğu çöz.*"

Ta ki başkalarına hitap etmek için dönsün. Bana kuvvet ver ki, vereceğim cevabı kendimle değil, seninle verebileyim.

وَاجْعَلْ لِي وَزِيرًا مِنْ اَهْلِي ﴿٢٩﴾ هٰرُونَ اَخِي ﴿٣٠﴾ اُشْدُدْ بِهٖٓ اَزْرِي ﴿٣١﴾

29, 30, 31- "Bana ailemden birini vezir kıl. Kardeşim Harun'u. Onunla beni güçlendir."

Hz. Mûsâ kardeşinin ona eşlik etmesini istedi. Oysa Allah'ın kelamını dinlemeye gittiği ve Allah'ın: ( وَوٰعَدْنَا مُوسٰى ثَلٰثِينَ لَيْلَةً ) "*Mûsâ'ya otuz gece süre verdik*" (A'râf, 7/142) buyurduğu zaman tek başına idi.

Çünkü halka gitmek, yabancılık hissine yol açar. Bu nedenle üzerindeki meşakkatin yükünü hafifletmesi için kardeşinden arkadaşlık talebinde bulundu.

Bir yoruma göre de sevgi arınmayı, tek başına olmayı ve gayrin sevenle ilişki kuramamasını gerektirir. Bu çerçevede Hz. Mûsâ, Firavun'a giderken kardeşini yanına arkadaş aldı. Oysa mîkâta gittiğinde başkasının ona arkadaşlık etmesi mümkün olmadı. Çünkü bu gidişinden maksat, kendi özel halinde kalması idi.

وَاَشْرِكْهُ ف۪ٓي اَمْر۪ي ﴿٣٢﴾

32- "Onu işime ortak kıl."

كَيْ نُسَبِّحَكَ كَث۪يرًا ﴿٣٣﴾ وَنَذْكُرَكَ كَث۪يرًا ﴿٣٤﴾ اِنَّكَ كُنْتَ بِنَا بَص۪يرًا ﴿٣٥﴾

33, 34, 35- "Seni çok tesbih edelim ve çok analım diye. Çünkü sen bizi hakkıyla görmektesin."

Hz. Mûsâ: (كَيْ نُسَبِّحَكَ كَث۪يرًا وَنَذْكُرَكَ كَث۪يرًا) "*Seni çok tesbih edelim ve çok analım diye*" derken, kardeşinin kendisine iştirak etmesini istemesinin, nefsinin arzusu için değil, Rabbinin hakkı için olduğunu açıklamıştır.

قَالَ قَدْ اُو۫ت۪يتَ سُؤْلَكَ يَا مُوسٰى ﴿٣٦﴾

36- "Allah şöyle dedi: 'Sana isteğin verildi, ey Mûsâ!'"

Sana istediğini verdik. Oysa sen, halinin başlangıcını unutmuş görünüyorsun. O zaman biz seni denizde koruduk, anneni o üzüntüden kurtardık ve seni düşmanın kucağında yetiştirdik. O zaman senin dileğin, tercihin ve duan neredeydi?

Bir de Firavun'un karısının kalbinde sana dönük şefkat var ettik. Seni öyle sevimli kıldık ki, düşmanın bile seni sevip yetiştirdi. O kadar ki, senden dolayı sayısız erkek çocuğu öldürdü. Sana olan mu-

amelesine bu nimetlerle başlayan Allah, aynı zamanda sana isteğini veren ve umduğunu gerçekleştirendir.

وَلَقَدْ مَنَنَّا عَلَيْكَ مَرَّةً اُخْرٰى ﴿٣٧﴾

37- "Andolsun, biz sana bir kere daha iyilikte bulunmuştuk."

اِذْ اَوْحَيْنَٓا اِلٰٓى اُمِّكَ مَا يُوحٰى ﴿٣٨﴾ اَنِ اقْذِفِيهِ فِي التَّابُوتِ فَاقْذِفِيهِ
فِي الْيَمِّ فَلْيُلْقِهِ الْيَمُّ بِالسَّاحِلِ يَأْخُذْهُ عَدُوٌّ لِي وَعَدُوٌّ لَهُ وَاَلْقَيْتُ
عَلَيْكَ مَحَبَّةً مِنّ۪ي وَلِتُصْنَعَ عَلٰى عَيْن۪ي ﴿٣٩﴾

38, 39- "Hani annene ilham edilmesi gereken şeyleri ilham etmiştik: Onu sandığın içine koy ve denize bırak ki, deniz onu kıyıya atsın da kendisini, hem bana düşman hem de ona düşman olan birisi alsın. Sana da (ey Mûsâ), (sevilesin) ve gözetimimde yetiştirilesin diye, tarafımdan bir sevgi bırakmıştım."

O, ilham şeklindeki vahiy idi. Allah, annesinin kalbine Hz. Mûsâ'yı sandığa koymasını ve denize yani Nil nehrine atmasını ilham etti. Nehir de onu sahile attı ve alınıp Firavun'a götürüldü. Derken Firavun'un karısı, Hz. Mûsâ'yı görünce kalbinde sevgisini hissetti. Aynı şekilde sevgisi Firavun'un kalbine de girdi. Fakat karısının kalbi daha yufkaydı. Bu nedenle şu sözüyle ön aldı:

( قُرَّتُ عَيْنٍ لِي وَلَكَ لَا تَقْتُلُوهُ ) *"Bana da sana da göz aydınlığı! Sakın onu öldürmeyin."* (Kasas, 28/9)

Eğer Firavun'un karısı, Hz. Mûsâ'nın onun kalbi gibi Firavun'un kalbinin de bir köşesinde yer işgal ettiğini bilmeseydi: ( قُرَّتُ عَيْنٍ لِي وَلَكَ ) *"Bana da sana da göz aydınlığı!"* demezdi.

( يَأْخُذْهُ عَدُوٌّ لِي وَعَدُوٌّ لَهُ ) *"Kendisini, hem bana düşman hem de ona düşman olan birisi alsın."*

Allah, Hz. Mûsâ'yı düşmanın kucağında yetiştirdi. Oysa bu düşman, onun sebebiyle binlerce erkek çocuğu öldürtmüştü. Lakin canavar íninde vurulur. Bir de herkes dünyaya geldikten sonra belayı yaşarken, Hz. Mûsâ'nın belası dünyaya gelmesinden birkaç yıl önce başlamıştı. Bu çerçevede Firavun, Mûsâ'yı kucağına aldığı gün pek çok erkek çocuğun öldürülmesini emretmişti. Sonra ise mülkünün helaki onun eliyle olsun diye Mûsâ'yı yetiştirdi. Bu olay, bir de kaderlerin sırlarını Allah'tan başka kimsenin bilmediği anlaşılsın diye meydana gelmiştir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Firavun, Mûsâ'nın babası olmadığı halde babası diye adlandırılıyordu. Mûsâ'nın annesine de süt annesi deniliyordu. Oysa öyle değildi. Bu itibarla baba adlandırmasının bir gerçekliği yoktu. Mana ve hakikat bakımından ise birisinin bundan haberi yoktu, diğeri de buna dair bilgiye sahip değildi. İşte sözün ve hikâyenin özü budur.

Bu arada, hikâyede yer aldığına göre Mûsâ Firavun'un kucağına bırakılınca yüzüne tokat attı. Bunun üzerine Firavun: "Bu, düşmanların çocuğudur, öldürülmesi gerekir" dedi. Hanımı dedi ki:

*"O çocuktur, temyizi bulunmamaktadır. Bunun delili de ateşle diğer şeyleri birbirinden ayırmamasıdır."*

Bir de kocasının, dediklerini tasdik etmesini istediği için biraz ateş ve bir miktar mücevher getirtip Mûsâ'nın önüne koydu. Mûsâ, elini mücevherlere doğru uzatmak istedi. Bunun üzerine Hz. Cebrail, elini tutup ateşe doğru götürdü. Mûsâ da eline ateşten bir parça alıp ağzına götürdü ve dili yandı. Deniliyor ki, Hz. Mûsâ'nın dilindeki tutukluk bu yanmadan meydana gelmiştir. Bunun üzerine Firavun'un karısı şöyle dedi:

*"İşte ortaya çıktı ki çocuk temyiz sahibi değildir. Çünkü ateş parçasını ağzına götürdü."*

Mûsâ da bu hareketiyle, Firavun'a attığı tokadın cezasından kurtulmuş oldu.

- Onlar, Mûsâ henüz emzirilen bir çocuk olduğu halde eline ateşi almakla yanmazken, ardından dilinin yandığını gördüler, ancak bunu anlayamadılar. Böylece herkes bu olayın akıl ve tecrübenin ölçülerine göre olmadığını anlamış oldu. Çünkü Allah, istediğini yapar.

( وَاَلْقَيْتُ عَلَيْكَ مَحَبَّةً مِنّي ) *"Sana da (ey Mûsâ), tarafımdan bir sevgi bırakmıştım."*

Yani seni sevdim. Halk arasında birisine sevgi bırakmak, onu sevmek anlamında kullanılmaktadır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Sana da (ey Mûsâ), tarafımdan bir sevgi bırakmıştım. Yani insanların kalbine seni sevmeyi attım. Buna göre Allah bir kulu sevdiği zaman, onu gören herkes sever.

- Mûsâ, gözlerinin güzelliğinden dolayı seviliyordu. Nitekim onu kim görse severdi.

- Sana da (ey Mûsâ), tarafımdan bir sevgi bırakmıştım. Yani, senin kalbinde sevgimi var ettim. Çünkü kulun Allah'ı sevmesi, ancak Hakk'ın bunu kalbinde var etmesiyle olur.

Şiir:

*Bir tuhaftır sevgi işi*
*Verilir sana sebebi olmaksızın*

( وَلِتُصْنَعَ عَلٰى عَيْني ) *"Gözetimimde yetiştirilesin diye."*

Ayetteki ( على عيني ) *"gözümün üzerinde"* sözü, gözetimimde -gözümün önünde- demektir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Başkalarına, seni benden uzaklaştırma imkânı tanımayacağım.

- Seni dışımdaki her şeyden ve konuşmamız dışındaki her konuşmadan korurum.

- Korunmanı hiç kimseye bırakmadık.

اِذْ تَمْشٖٓي اُخْتُكَ فَتَقُولُ هَلْ اَدُلُّكُمْ عَلٰى مَنْ يَكْفُلُهُ فَرَجَعْنَاكَ اِلٰٓى اُمِّكَ كَيْ تَقَرَّ عَيْنُهَا وَلَا تَحْزَنَ وَقَتَلْتَ نَفْسًا فَنَجَّيْنَاكَ مِنَ الْغَمِّ وَفَتَنَّاكَ فُتُونًا فَلَبِثْتَ سِنٖينَ فٖٓي اَهْلِ مَدْيَنَ ثُمَّ جِئْتَ عَلٰى قَدَرٍ يَا مُوسٰى ﴿٤٠﴾

40- "Hani kız kardeşin ve: 'Size onun bakımını üstlenecek kimseyi göstereyim mi' diyordu. Derken, gözü aydın olsun ve üzülmesin diye seni annene döndürdük. Bir de bir cana kıydın da biz seni gamdan kurtardık ve sıkı bir denemeden geçirdik. Medyen halkı içinde yıllarca kaldın. Sonra takdir edilmiş bir zamanda geldin ey Mûsâ!"

Bela ile imtihan, sahibinin gücü ve güçsüzlüğüne göredir. Bu itibarla kişi, daha güçlü oldukça belası daha tam olur. Daha güçsüz olduğu ölçüde de belası daha hafif olur. Nitekim Mûsâ'nın annesi güçsüz olduğu için Allah, bir kaç gün sonra çocuğunu ona geri döndürdü. Hz. Yâkub ise daha güçlü durumda olduğu için Allah, Hz. Yusuf'u ona ancak uzun yıllar sonra geri gönderdi.

( وَقَتَلْتَ نَفْسًا فَنَجَّيْنَاكَ مِنَ الْغَمِّ ) *"Bir de bir cana kıydın da biz seni gamdan kurtardık."*

Allah, Hz. Mûsâ'nın üstüne haksız yere cana kıymak gibi büyük günah şeklinde bir hüküm icra etti sonra bunun kendisine zarar vermediğini açıkladı. O halde dikkate alınmaya değer olan husus, kulun fiilinin az veya çok olması değil, Hakk'ın bir kimse hakkındaki inayeti veya düşmanlığıdır.

Bir yoruma göre de bazen halktan pek çok kimse çeşitli işkencelerle, nice insanlar da binlerce kırbaç yedikleri halde ölmezken, Hz. Mûsâ'nın öldürdüğü adam bir yumruk darbesiyle öldü. Şimdi eğer Allah, bununla Hz. Mûsâ'yı imtihan etmek istemeseydi, o adamın ölümüne sebep olan husus nedir?

Bazı kitaplarda da şöyle denilmiştir: Allah, Hz. Mûsâ'yı bunca makama sahip kılmış ve her defasında kelamını ona başka türlü duyurmuş ve yine her defasında ona: ( وَقَتَلْتَ نَفْسًا ) *"Bir de bir cana kıydın"* demiştir.

( فَنَجَّيْنَاكَ مِنَ الْغَمِّ ) *"Biz seni gamdan kurtardık."*

Sana cem'in ta kendisini gösterdik ve sonunda, tefrika sıfatı gereğince içine girmiş olan gam senden gitti. Böylece biz, sana takdirin gerçekleşmesinin sırrını gösterince seni gamdan kurtarmış olduk.

( وَفَتَنَّاكَ فُتُونًا ) *"Seni sıkı bir denemeden geçirdik."*

Başkasının olmaman için biz seni kendimize özel kıldık.

Bir yoruma göre de sana türlü türlü imtihanlar uygulayarak nihayet seni her tercihten ve iradeden soyutlamış olduk. Sonra o zaman seni hak ettiğin ve seni ehil kıldığımız ilim mertebesine yükselttik.

( فَلَبِثْتَ سِنِينَ فِي اَهْلِ مَدْيَنَ ) *"Medyen halkı içinde yıllarca kaldın."*

İnsanlar arasında sen, Şuayb'ın ücretlisi idin. Sana tevdi ettiklerimizden haberleri yoktu ve onlara göre Şuayb'ın damadı olman yeterli idi.

( ثُمَّ جِئْتَ عَلٰى قَدَرٍ يَا مُوسٰى ) *"Sonra takdir edilmiş bir zamanda geldin ey Mûsâ!"*

Yani biz, Şuayb'ın Medyen'inde olduğun günleri saydık. O sırada, senin şerefini ve sevgini bilen katımızdaki melekler seni beklemekte idiler. Böylece sen takdir edilmiş bir sürede gelmiş oldun.

Bir yoruma göre de varlıkların eceli geldiği zaman onda hiçbir erteleme veya öne alma söz konusu değildir.

Şiir:

*Buluşma ümidi duygusu*
*Yüzerken onun ve benim yüreğimde*
*Bir araya getirdi bizi Allah ve buluştuk*
*Böylece ansızın, zaman gözetmeden*

وَاصْطَنَعْتُكَ لِنَفْسِي ﴿٤١﴾

41- “Ben seni kendim için seçtim.”

Benden başkasına yaramaman için seni kendime özel kıldım. Sen de benim mesajımı ve senden muradımı tebliğ etmekten başka bir şey yapamazsın.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Senin sırrını sadece kendime ait kıldım. Yönelişini de başkasına değil, kendime doğru yaptım ve seninle benim dışımdaki herkesin arasına girdim.

- “Ben seni kendim için seçtim” sözüyle Allah, Hz. Mûsâ'yı herkesten kopardıktan sonra ona: “Firavun'a git” demiştir.

اِذْهَبْ اَنْتَ وَاَخُوكَ بِاٰيَاتِي وَلَا تَنِيَا فِي ذِكْرِي ﴿٤٢﴾ اِذْهَبَآ اِلٰى فِرْعَوْنَ اِنَّهُ طَغٰى ﴿٤٣﴾

42, 43- “Sen ve kardeşin, mucizelerimle gidin ve beni anmakta gevşeklik göstermeyin. Firavun'a gidin. Çünkü o azmıştır.”

Allah, Hz. Mûsâ'yı Firavun'a gönderdiğinde, gitmemek için çeşitli gerekçeler ileri sürmüştür. Şu ayetlerde söyledikleri gibi:

(وَيَضِيقُ صَدْرِي وَلَا يَنْطَلِقُ لِسَانِي) *“Göğsüm daralır, akıcı konuşamam.”* (Şu'arâ, 26/13)

(قَالَ رَبِّ اِنِّي قَتَلْتُ مِنْهُمْ نَفْسًا فَاَخَافُ اَنْ يَقْتُلُونِ) *“Şüphesiz ben onlardan birisini öldürdüm. Onların da beni öldürmelerinden korkuyorum.”* (Kasas, 28/33)

O, bunlardan başka gerekçeler de göstermiş, ancak bu gerekçeler kendisine fayda vermemiştir. Allah da şöyle buyurmuştur: (اِنَّنِي مَعَكُمَآ اَسْمَعُ وَاَرٰى) *“Şüphesiz ben sizinle beraberim. İşitirim ve görürüm.”* (Tâhâ, 20/46)

O zaman Hz. Mûsâ, bunu yeterli buldu ve: "İşte şimdi sen, benimle beraber olduktan sonra tehlikeyi umursamam" dedi.

فَقُولَا لَهُ قَوْلًا لَيِّنًا لَعَلَّهُ يَتَذَكَّرُ اَوْ يَخْشٰى ﴿٤٤﴾

**44- "Ona yumuşak söz söyleyin. Belki öğüt alır veya korkar."**

Allah'ın, Hz. Mûsâ ile Hz. Harun'a, Firavun'a hitap etmede yumuşak davranmalarını emretmesinin sebebi, onun, dine davet ettiklerinin ilki olmasıdır. Kaldı ki, davet esnasında zaten yumuşak davranmak gerekir. Çünkü bu, mühlet hali olduğundan ona düşünecek kadar fırsat tanımak gerekir. Nitekim Allah da (c.c.), Peygamberimiz'e (s.a.v.): ( وَجَادِلْهُمْ بِالَّتِي هِيَ اَحْسَنُ ) *"Onlara karşı en güzel yöntemle mücadele et!"* (Nahl, 16/125) buyurmuştur. Söz konusu yöntem, düşünüp akıl yürütecek kadar onlara mühlet tanımaktır. Aynı şekilde Allah şöyle buyurmuştur: ( قُلْ اِنَّمَٓا اَعِظُكُمْ بِوَاحِدَةٍ اَنْ تَقُومُوا لِلّٰهِ مَثْنٰى وَفُرَادٰى ثُمَّ تَتَفَكَّرُوا مَا بِصَاحِبِكُمْ مِنْ جِنَّةٍ ) *"De ki: Ben, size ancak bir tek şeyi; Allah için ikişer ikişer, teker teker kalkıp düşünmenizi öğütlüyorum. Arkadaşınızda hiçbir delilik yoktur."* (Sebe', 34/46)

Sonra hasımdan başkaldırı ve kabule yanaşmama hali ortaya çıktığı zaman ona sertlik ve şiddet ile karşılık verilir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, bu iki peygambere ihtişam sahibi büyük insanlara hitabı öğretmiştir. Zira Firavun, her ne kadar kâfir de olsa zamanının hükümdarı ve Allah'ın kulları üzerinde yetki sahibidir.

- Düşmanlara hitapta dahi nezaket ve yumuşaklık emredildiğine göre mümine bir şey sorarken acaba nasıl hitap etmek gerekir?

- Bu emir, kabirde her iki meleğin mümine yönelik sorularının kolay olacağına işaret etmektedir.

- Allah, kendisini inkâr edene bile şefkat gösterdiğine göre kim bilir O'nu birleyene şefkati nasıl olur?

- Allah, kâfirlere bile şefkat gösterdiğine göre, kim bilir iyi insanlara şefkati nasıl olur?

- Allah: "Ben" diyene bile şefkat gösterdiğine göre kim bilir "Sen" diyene şefkati nasıl olur!

- Firavun, Hz. Mûsâ'yı güzel yetiştirince Allah, mükâfat olarak ona dünyada şefkat göstermek istedi.

- Bu ayetin tefsiri, Allah'ın başka bir ayette söylediği şu sözüdür:

(فَقُلْ هَلْ لَكَ اِلٰٓى اَنْ تَزَكّٰى) *"Ona de ki: Temizlenmeye var mısın?"* (Nâzi'ât, 79/18)

(لَعَلَّهُ يَتَذَكَّرُ اَوْ يَخْشٰى) *"Belki öğüt alır veya korkar."*

Yani, iman edeceğinden ümitli olun. Bu arada Allah, Firavun'un iman etmeyeceğini bildiği halde peygamberliği tebliğde bir gevşekliğe kapılmamaları için iman etmeyeceğini bu iki peygambere bildirmemiştir.

قَالَا رَبَّنَٓا اِنَّنَا نَخَافُ اَنْ يَفْرُطَ عَلَيْنَٓا اَوْ اَنْ يَطْغٰى ﴿٤٥﴾

45- "Mûsâ ve Harun şöyle dediler: 'Ey Rabbimiz! Şüphesiz biz, onun bize karşı aşırı davranmasından yahut azmasından korkuyoruz.'"

Ayette, insan yaradılışının gereği olan korkudan dolayı sahibine sitem edilemeyeceğine dair delil bulunmaktadır. Çünkü Hz. Mûsâ ve Hz. Harun gibi iki şahsiyet bile "Biz korkuyoruz" demişlerdir.

Sonra Allah (c.c.) korkularını, kendilerine verdiği yardım sözüyle yatıştırmıştır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Onlar, kendi nefislerine acıdıkları için korkmamışlar, lakin şunu demek istemişlerdir: "Biz, onun tarafından başımıza bir şey gelmesinden ve bu yüzden bize olan emrinin yerine gelmemesinden

korkuyoruz." O halde bütün bu korku nefislerinin hazları için değil, Allah'ın hakkı içindir.

- Onlar Firavun'dan değil de Allah'ın onu başlarına musallat kılmasından korktular. Ancak hitapta edepli davrandılar.

قَالَ لَا تَخَافَٓا اِنَّن۪ي مَعَكُمَٓا اَسْمَعُ وَاَرٰى ﴿٤٦﴾

46- "Allah şöyle buyurdu: 'Korkmayın! Şüphesiz ben sizinle beraberim. İşitirim ve görürüm.'"

Bu iki peygamber, Allah'tan: "Şüphesiz ben sizinle beraberim" sözünü almak için: "Biz korkuyoruz" diyerek kendilerine acındırmışlardır. Zaten amaçları da Allah'ın kendilerine: "Şüphesiz ben sizinle beraberim" demesi idi. Yoksa peygamberlik özelliğine sahip kimsede korku ne arar!

Bir yoruma göre de Allah ikisindeki korkuyu: "Şüphesiz ben sizinle beraberim" sözüyle yatıştırmış, bunun üzerine onlar da Firavun'a gitme gücüne sahip olmuşlardır. Çünkü mükellefiyetin şartı, imkan sahibi kılınmaktır.

فَاْتِيَاهُ فَقُولَٓا اِنَّا رَسُولَا رَبِّكَ فَاَرْسِلْ مَعَنَا بَن۪ٓي اِسْرَٓاء۪يلَ وَلَا
تُعَذِّبْهُمْ قَدْ جِئْنَاكَ بِاٰيَةٍ مِنْ رَبِّكَ وَالسَّلَامُ عَلٰى مَنِ اتَّبَعَ الْهُدٰى ﴿٤٧﴾

47- "Ona gidin ve şöyle deyin: 'Şüphesiz biz Rabbinin elçileriyiz. İsrail oğullarını bizimle gönder. Onlara işkence etme. Sana Rabbinden bir mucize getirdik. Selam, hidayete erenlere olsun.'"

Firavun tarafından İsrail oğullarının başlarına gelen bela uzadı. Bunun üzerine belli bir süre sonra da olsa Allah, yardımlarına yetişti. Allah prensibini, zalimi bir süre serbest bırakmak şeklinde koymuştur. Ancak onu yakaladığı zaman, yakalayışı elem verici olur.

( قَدْ جِئْنَاكَ بِاٰيَةٍ مِنْ رَبِّكَ ) *"Sana Rabbinden bir mucize getirdik."*

Bir peygamber için mükellefiyetin şartı, çağrıda bulunduğu peygamberlikteki doğruluğunu gösteren durumun açıkça anlaşılması

için kendisinin delil ve mucize ile imkan sahibi kılınmasıdır. Sonra o delil ve o mucize kavimlerine fayda vermedi, ancak onlarla haklarındaki hüccet pekişmiş oldu. Bu itibarla, kalp gözü körleştiği zaman hüccet basireti nerede fayda verir?

Şu dizeler de bu anlamdadır:

*Bir hasret vardır çok susayanın suya bakışında*
*Kaynaklara giden yoldan alıkonulduğu zaman*

( وَالسَّلَامُ عَلٰى مَنِ اتَّبَعَ الْهُدٰى ) *"Selam, hidayete erenlere olsun."*

Hidayet yoluna ancak Allah'ın kalbini irfan nuruyla aydınlattığı kimse uyar. Kalbinin üzerinde cehalet perdesi bulunan kimseye gelince, o ne zaman hidayete kulak verir ki?!

اِنَّا قَدْ اُوحِيَ اِلَيْنَٓا اَنَّ الْعَذَابَ عَلٰى مَنْ كَذَّبَ وَتَوَلّٰى ﴿٤٨﴾

48- "Şüphesiz bize azabın, yalanlayanlara ve yüz çevirenlere olacağı vahyolundu."

Allah, bir peygamber gönderdiğinde muhakkak kavmini emri terk etmeleri yüzünden azapla uyarmış, emrini korumalarına karşılık da onları sevapla müjdelemiştir. Bu arada azap, dünyadaki azap ve ahiretteki azap şeklinde olur. Ahiretteki azabın ayrıntılarına düşmanlar -kâfirler- muttali kılınmaz. Ahiretteki sevap da aynı şekildedir. Allah şöyle buyurmuştur:

( فَلَا تَعْلَمُ نَفْسٌ مَٓا اُخْفِيَ لَهُمْ مِنْ قُرَّةِ اَعْيُنٍ جَزَٓاءً بِمَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ) *"Hiç kimse, kendileri için saklanan göz aydınlıklarını bilmez."* (Secde, 32/17)

Dünyadaki cezaya gelince bu çeşitlidir. Nitekim bu ceza bir kimseye, yükümlülüklerin makamına uygun olarak yönelir. Bir de cezadaki artış, mertebeyi hak edişteki artışı gösterir. Örneğin, hür ve kölenin şer'i cezadaki durumları gibi. Öte yandan kalbin katı oluşu, ibadete karışan şeyler ve mal ile canlardaki herhangi bir kayıp vs. hususlar da cezanın birer çeşididir.

قَالَ فَمَنْ رَبُّكُمَا يَا مُوسٰى ﴿٤٩﴾ قَالَ رَبُّنَا الَّذِي اَعْطٰى كُلَّ شَيْءٍ
خَلْقَهُ ثُمَّ هَدٰى ﴿٥٠﴾

49, 50- "Firavun: 'O halde ikinizin Rabbi kim ey Mûsâ?' dedi. Mûsâ şöyle dedi: 'Rabbimiz, her şeye yaratılışını veren, sonra onlara yol gösterendir.'"

Ayetin bu ifadesi, tesniye -ikil- şeklindedir. Sonra Firavun: ( فَمَنْ رَبُّكُمَا ) "*O halde ikinizin Rabbi kim?*" demesinin ardından: ( يَا مُوسٰى ) "*ey Mûsâ?*" diyerek yalnızca ona hitap etmiştir. Bu üslup, ayet sonlarının ses uyumu için olabileceği gibi Hz. Mûsâ'nın önde olması sebebiyle Firavun'un özellikle ona seslenmiş olmasından dolayı da olabilir.

Hz. Mûsâ'nın bu soruya cevap verirken Allah'ın fiili hakkında akıl yürüterek: ( رَبُّنَا الَّذِي اَعْطٰى كُلَّ شَيْءٍ خَلْقَهُ ) "*Rabbimiz, her şeye yaratılışını verendir*" demesi, Allah'ı ispata dair delilin fiillerinin ifade ettikleri olduğunun bilinmesi içindir.

قَالَ فَمَا بَالُ الْقُرُونِ الْاُولٰى ﴿٥١﴾ قَالَ عِلْمُهَا عِنْدَ رَبِّي فِي كِتَابٍ
لَا يَضِلُّ رَبِّي وَلَا يَنْسٰى ﴿٥٢﴾

51, 52- "Firavun: 'Ya geçmiş nesillerin hali ne olacak?' dedi. Mûsâ şöyle dedi: 'Onlar hakkındaki bilgi, Rabbimin katında bir kitaptadır. Rabbim yanılmaz ve unutmaz.'"

Ben, ancak Rabbimin bana haber verdiklerini size haber verebilirim. Bu çerçevede O'nun bana öğrettiklerini size öğretir, benden sakladıkları konusunda ise dururum.

اَلَّذِي جَعَلَ لَكُمُ الْاَرْضَ مَهْدًا وَسَلَكَ لَكُمْ فِيهَا سُبُلًا وَاَنْزَلَ
مِنَ السَّمَاءِ مَاءً فَاَخْرَجْنَا بِهِ اَزْوَاجًا مِنْ نَبَاتٍ شَتّٰى ﴿٥٣﴾

53- "'Rabbim, yeryüzünü size beşik yapan, onda size yollar açan ve size gökten yağmur indirendir.' Böylece onunla değişik bitkilerden çiftler çıkardık."

Allah yeryüzünü onların bedenleri için, bedenlerini ibadeti için, kalplerini marifeti için, ruhlarını sevgisi için, sırlarını da müşahedesi için karar kılınan yer yapmıştır.

كُلُوا وَارْعَوْا اَنْعَامَكُمْ اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِاُولِي النُّهٰى ﴿٥٤﴾

54- "Yiyin, hayvanlarınızı yayın. Şüphesiz bunda akıl sahipleri için deliller vardır."

Allah, onlar için geçim sebeplerini hazırlamış ve onlara bakıp rızık verdiği gibi faydalandıkları hayvanlarına da rızık vermiştir. Bir de onlara, ellerinin ulaştığı nimetlerle güçlenmelerini ve sahip oldukları nimetlerin kemale ermesi için imkanları ölçüsünde onlardan faydalanmalarını emretmiştir.

مِنْهَا خَلَقْنَاكُمْ وَفِيهَا نُعِيدُكُمْ وَمِنْهَا نُخْرِجُكُمْ تَارَةً اُخْرٰى ﴿٥٥﴾

55- "Sizi topraktan yarattık, sizi ona döndüreceğiz ve sizi bir kez daha ondan çıkaracağız."

Biz, Âdem'i topraktan yaratıp sizi de onun bedeninden çıkardığımıza göre sizi de aynı şekilde topraktan yaratmış olduk. Bu arada cesetler kalıp, ruhlar da o kalıpların içindeki emanetlerdir. Bir de kalıpların ait olduğu yer toprak, emanetlerin özelliği ise Allah'a yakınlıktır. Bu nedenle Allah, kalıpları lütuflarıyla bezemekte, emanet olan ruhlara da celalinin keşfi ve cemalinin letafetiyle hayat vermektedir. Öte yandan bugün kalıplar, Allah'a ibadetin yaygısı üzerinde itikafa durmakta, emanetler de O'nun kesintisiz marifetiyle vasıflanmaktadır.

وَلَقَدْ اَرَيْنَاهُ اٰيَاتِنَا كُلَّهَا فَكَذَّبَ وَاَبٰى ﴿٥٦﴾

56- "Andolsun, biz Firavun'a bütün mucizelerimizi gösterdik de o bunları yalanladı ve reddetti."

Allah, Firavun'a açıktan emir vermiş, ancak sırrıyla bunu görmekten onu körleştirmiştir. Bu nedenle sözü onda etkili olmamış, azabına dair uyarısından ve ona müyesser kıldığı inamından faydalanmamıştır.

قَالَ اَجِئْتَنَا لِتُخْرِجَنَا مِنْ اَرْضِنَا بِسِحْرِكَ يَا مُوسٰى ﴿٥٧﴾ فَلَنَاْتِيَنَّكَ بِسِحْرٍ مِثْلِهِ فَاجْعَلْ بَيْنَنَا وَبَيْنَكَ مَوْعِدًا لَا نُخْلِفُهُ نَحْنُ وَلَٓا اَنْتَ مَكَانًا سُوًى ﴿٥٨﴾

57, 58- "Firavun dedi ki: 'Sihrinle bizi toprağımızdan çıkarmak için mi bize geldin Ey Mûsâ! Biz de mutlaka sana karşı onun gibi bir sihir yapacağız. Bunun için seninle bizim aramızda uygun bir yerde, senin de bizim de caymayacağımız bir buluşma vakti belirle.'"

Hz. Mûsâ, onları Allah'a çağırdı ve kendilerine ahiret hakkında hitap ederek onları sevapla müjdeledi ve azapla uyardı. Ne var ki onlar, sadece dünyalık bakış açısıyla ona karşılık verdiler. Hz. Mûsâ, onlara yönelik uyarıları artırdıkça, gaflet ve cehaletleri daha da artıyordu.

İşte Hakk'ın, uzaklaştırılmışlıkla damgaladığı kimsenin özelliği budur; ne irfanı ne de söylenenlere imanı olur. Ayrıca o, ne kaçırmakta olduğu fırsatlara üzülür ne de sadedinde olduğu şeyin hakikat olduğunu tasdik eder.

( فَاجْعَلْ بَيْنَنَا وَبَيْنَكَ مَوْعِدًا لَا نُخْلِفُهُ نَحْنُ وَلَٓا اَنْتَ مَكَانًا سُوًى ) *"Bunun için seninle bizim aramızda uygun bir yerde, senin de bizim de caymayacağımız bir buluşma vakti belirle."*

Hakikatle savaşmaya hazırlandılar ve karşı koymak için kolları sıvadılar. Bu nedenle ilahî irade, onları helak etti ve ilahi kudret onları yerle bir etti. Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Karşıladı beni kılıcı çekilmiş olarak*
*Ve dedi bana: Ayıplanacaktır birimiz*

قَالَ مَوْعِدُكُمْ يَوْمُ الزِّينَةِ وَاَنْ يُحْشَرَ النَّاسُ ضُحًى ﴿٥٩﴾

59- "Mûsâ dedi ki: 'Sizinle buluşma vaktimiz bayram günü, insanların toplandığı kuşluk vaktidir.'"

İşte onlar, o gün rezil olmuşlardı.

فَتَوَلّٰى فِرْعَوْنُ فَجَمَعَ كَيْدَهُ ثُمَّ اَتٰى ﴿٦٠﴾

60- "Bunun üzerine Firavun ayrılıp, hilesini kuracak sihirbazlarını topladı, sonra geldi."

Firavun tuzak kurunca ona karşı da tuzak kuruldu, atak yapmak isteyince üstüne gidildi ve hazırlanmaya çağrıda bulununca da zelil kılınarak kendisine azap tattırıldı.

Bu arada Hz. Mûsâ başvurmadığı nasihat ve nezaket bırakmazken, Firavun da başvurmadığı geri zekâlılık ve ahmaklık bırakmadı.

Lakin:

قَالَ لَهُمْ مُوسٰى وَيْلَكُمْ لَا تَفْتَرُوا عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا فَيُسْحِتَكُمْ بِعَذَابٍ
وَقَدْ خَابَ مَنِ افْتَرٰى ﴿٦١﴾ فَتَنَازَعُوٓا اَمْرَهُمْ بَيْنَهُمْ وَاَسَرُّوا النَّجْوٰى ﴿٦٢﴾

61, 62- "Mûsâ onlara şöyle dedi: 'Yazıklar olsun size! Allah'a karşı yalan uydurmayın. Yoksa sizi azap ile yok eder. Allah'a karşı yalan uyduran, mutlaka hüsrana uğramıştır. Bunun üzerine sihirbazlar durumlarını aralarında tartıştılar ve gizli gizli konuştular.'"

Bilin ki Allah birisini cezalandırdığı zaman, hiç kimsenin O'na gücü yetmez. Hz. Mûsâ'nın bu sözü üzerine onlar dediğini iftira, mucizesini de sihir diye itham ederek;

قَالُوٓا اِنْ هٰذَانِ لَسَاحِرَانِ يُرِيدَانِ اَنْ يُخْرِجَاكُمْ مِنْ اَرْضِكُمْ
بِسِحْرِهِمَا وَيَذْهَبَا بِطَرِيقَتِكُمُ الْمُثْلٰى ﴿٦٣﴾ فَاَجْمِعُوا كَيْدَكُمْ ثُمَّ
ائْتُوا صَفًّا وَقَدْ اَفْلَحَ الْيَوْمَ مَنِ اسْتَعْلٰى ﴿٦٤﴾

63, 64- "Dediler ki: 'Şüphesiz bu ikisi, sihirleriyle sizi yurdunuzdan çıkarmak ve en üstün olan dininizi ortadan kaldırmak isteyen birer sihirbazdırlar. O halde hilenizi toparlayın sonra sırayla gelin. Bugün üstün gelen kazanmış olur.'"

O ikisi, davalarında yalancıdırlar. Sizi memleketinizden çıkarmak ve inancınız hakkında sizi şaşırtmak istiyorlar.

قَالُوا يَا مُوسٰى اِمَّٓا اَنْ تُلْقِيَ وَاِمَّٓا اَنْ نَكُونَ اَوَّلَ مَنْ اَلْقٰى ﴿٦٥﴾

65- "Sihirbazlar dediler ki: 'Ey Mûsâ! Ya sen atarsın, ya da ilk atan biz oluruz.'"

Onlar, zaferi kendilerinin kazanacağını sanarak ve sihirbazların onlara yönelik aldatmalarına bel bağlayarak kendilerini dayanıklı gösterdiler. Bu nedenle, vehmettikleri atmaya dayanarak başlama konusunda Hz. Mûsâ'yı serbest bıraktılar.

Bunun üzerine Hz. Mûsâ onlara şöyle dedi:

قَالَ بَلْ اَلْقُوا فَاِذَا حِبَالُهُمْ وَعِصِيُّهُمْ يُخَيَّلُ اِلَيْهِ مِنْ سِحْرِهِمْ
اَنَّهَا تَسْعٰى ﴿٦٦﴾ فَاَوْجَسَ فِي نَفْسِهِ خِيفَةً مُوسٰى ﴿٦٧﴾ قُلْنَا لَا
تَخَفْ اِنَّكَ اَنْتَ الْاَعْلٰى ﴿٦٨﴾ وَاَلْقِ مَا فِي يَمِينِكَ تَلْقَفْ مَا
صَنَعُوا اِنَّمَا صَنَعُوا كَيْدُ سَاحِرٍ وَلَا يُفْلِحُ السَّاحِرُ حَيْثُ اَتٰى ﴿٦٩﴾
فَاُلْقِيَ السَّحَرَةُ سُجَّدًا قَالُٓوا اٰمَنَّا بِرَبِّ هٰرُونَ وَمُوسٰى ﴿٧٠﴾
قَالَ اٰمَنْتُمْ لَهُ قَبْلَ اَنْ اٰذَنَ لَكُمْ اِنَّهُ لَكَبِيرُكُمُ الَّذِي عَلَّمَكُمُ
السِّحْرَ فَلَاُقَطِّعَنَّ اَيْدِيَكُمْ وَاَرْجُلَكُمْ مِنْ خِلَافٍ وَلَاُصَلِّبَنَّكُمْ
فِي جُذُوعِ النَّخْلِ وَلَتَعْلَمُنَّ اَيُّنَٓا اَشَدُّ عَذَابًا وَاَبْقٰى ﴿٧١﴾

66, 67, 68, 69, 70, 71- "Mûsâ: 'Yok, siz atın' dedi. Bir de ne görsün, onların ipleri ve değnekleri, yaptıkları sihirden dolayı kendisine

hızla sürünür görünüyor. Bunun üzerine Mûsâ, içinde bir korku hissetti. Şöyle dedik: 'Korkma! Çünkü sensin en üstün olan. Sağ elindekini at ki onların yaptıklarını yutsun. Şüphesiz yaptıkları, bir sihirbaz hilesidir. Sihirbaz ise, nereye varsa kazanamaz. Sihirbazlar hemen secdeye kapandılar ve: 'Harun ve Mûsâ'nın Rabbine inandık' dediler. Firavun şöyle dedi: 'Demek ben size izin vermeden önce Mûsâ'ya inandınız ha! Şüphe yok, o size sihri öğreten büyüğünüzdür. Şimdi andolsun, ellerinizi ve ayaklarınızı çaprazlama keseceğim ve mutlaka sizi hurma dallarına asacağım. Hangimizin azabı daha şiddetli ve daha kalıcıymış, mutlaka göreceksiniz.'"

Hz. Mûsâ: "Yok, siz atın" dedi. Ancak bu, sihirbazlara sihirde izin vermek demek değildir. Lakin Allah, onların şaşırtmalarını ortaya çıkarmak istemiştir. Derken onlar ipleri yere atmak suretiyle insanlara yılan olduklarını hayal ettirince, Hz. Mûsâ'nın asası onların yaptıklarının tamamını yuttu ve sihirbazlar bunun semavi bir iş olduğunu kesin olarak anladılar. Çünkü beraberlerindeki ağır ipler zayıf kaldı ve yılan, önceden olduğu gibi tekrar asa oldu. Bunun üzerine sihirbazlar, iman etmiş olarak Allah'a secde ettiler. Firavun ve kavmi ise eli boş döndüler. Bu sırada Firavun, sihirbazları öldürmek, asmak ve çeşitli zor cezalar ile tehdit etti. Oysa sihirbazlar daha önce Firavun'un üstünlüğüne yemin ederken, şimdi artık Allah'a yemin eder oldular.

قَالُوا لَنْ نُؤْثِرَكَ عَلٰى مَا جَآءَنَا مِنَ الْبَيِّنَاتِ وَالَّذِي فَطَرَنَا فَاقْضِ
مَٓا اَنْتَ قَاضٍ اِنَّمَا تَقْضِي هٰذِهِ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا ﴿٧٢﴾

72- "Sihirbazlar şöyle dediler: 'Bize gelen apaçık delillere ve bizi yaratana seni asla tercih etmeyeceğiz. Artık sen, vereceğin hükmü ver. Sen, ancak bu dünya hayatında hüküm verirsin.'"

Yani bizi yaratan Allah'a yemin ederiz ki, biz seni bize gelen apaçık delillere tercih etmeyeceğiz. Bu arada onların sırlarında irfan güneşleri doğunca ve üzerlerine inayet nurları yayılınca Hakk'ı (c.c.)

sırlarıyla gördüler. Bunun üzerine tasdike dair beyanı dile getirdiler, gördükleri Rablerine kalpleriyle secde ettiler ve Firavun'un kendilerini uyardığı cezadan çekinmediler. Onlar, bunu Allah'tan bildikleri için belayı tatlı buldular ve sıkıntıya katlandılar. Böylece sabah sihirbaz kâfirler iken seçkin hayırlı müminler olarak akşamladılar.

( فَاقْضِ مَٓا اَنْتَ قَاضٍ ) *"Artık sen, vereceğin hükmü ver."*

Onlar, uzun sürse de ve son derece şiddetli olsa da dünyadaki belanın sona ereceğini anladılar.

اِنَّٓا اٰمَنَّا بِرَبِّنَا لِيَغْفِرَ لَنَا خَطَايَانَا وَمَٓا اَكْرَهْتَنَا عَلَيْهِ مِنَ السِّحْرِ وَاللّٰهُ خَيْرٌ وَاَبْقٰى ﴿٧٣﴾

73- "Şüphesiz ki biz, günahlarımızı ve bize zorla yaptırdığınız sihri affetmesi için Rabbimize inandık. Allah'ın vereceği mükâfat daha hayırlı ve daha kalıcıdır."

Allah'ı tanıyan kimseye göre en önemli şey, Allah'ın, onun hatalarını bağışlamasıdır. Örneğin Hz. Âdem, durumu apaçık ortaya çıkıp başına gelenler gelince şöyle dedi: ( رَبِّ إِنِّي ظَلَمْتُ نَفْسِي ) *"Ya Rabbi! Ben, gerçekten nefsime zulmettim."* (Kasas, 28/16)

Allah, Peygamberimize (s.a.v.) de: ( وَاسْتَغْفِرْ لِذَنْبِكَ ) *"Günahın için mağfiret dile!"* (Ğâfir-Mü'min-, 40/55) buyurmuştur.

Hz. Peygamber (s.a.v.) de şöyle buyurmuştur:

*"Şüphesiz, kalbimi şehvet kaplayınca ben, günde yetmiş kez Allah'tan mağfiret dilerim."*

Bir de Allah, şu sözüyle Hz. Peygamber'e lütufta bulunmuştur:

( لِيَغْفِرَ لَكَ اللّٰهُ مَا تَقَدَّمَ مِنْ ذَنْبِكَ وَمَا تَاَخَّرَ ) *"Ta ki Allah, senin geçmiş ve gelecek günahlarını bağışlasın."* (Fetih, 48/2)

اِنَّهُ مَنْ يَاْتِ رَبَّهُ مُجْرِمًا فَاِنَّ لَهُ جَهَنَّمَ لَا يَمُوتُ فِيهَا وَلَا يَحْيٰى ﴿٧٤﴾

74- "Şüphesiz kim, Rabbine günahkâr olarak varsa, kesinlikle ona cehennem vardır. Orada ne ölür ne de yaşar."

وَمَنْ يَأْتِهِ مُؤْمِنًا قَدْ عَمِلَ الصَّالِحَاتِ فَأُولٰٓئِكَ لَهُمُ الدَّرَجَاتُ الْعُلٰى ﴿٧٥﴾

75- "Kim de salih ameller işlemiş bir mümin olarak O'na varırsa, işte onlar için en yüksek dereceler vardır."

جَنَّاتُ عَدْنٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا وَذٰلِكَ جَزٰٓؤُا مَنْ تَزَكّٰى ﴿٧٦﴾

76- "Bu dereceler, içinden ırmaklar akan, içinde ebediyen kalacakları Adn cennetleridir. İşte bu, günahlardan arınanların mükâfatıdır."

وَلَقَدْ اَوْحَيْنَٓا اِلٰى مُوسٰٓى اَنْ اَسْرِ بِعِبَادِي فَاضْرِبْ لَهُمْ طَرِيقًا فِي الْبَحْرِ يَبَسًا لَا تَخَافُ دَرَكًا وَلَا تَخْشٰى ﴿٧٧﴾ فَاَتْبَعَهُمْ فِرْعَوْنُ بِجُنُودِهِ فَغَشِيَهُمْ مِنَ الْيَمِّ مَا غَشِيَهُمْ ﴿٧٨﴾ وَاَضَلَّ فِرْعَوْنُ قَوْمَهُ وَمَا هَدٰى ﴿٧٩﴾

77, 78, 79- "Mûsâ'ya şunu vahyettik: 'Kullarımı geceleyin yürütüp çıkar. Yakalanmaktan korkmaksızın, endişe etmeksizin onlara denizde kuru bir yol aç.' Bunun üzerine Firavun, askerleriyle birlikte onların peşine düştü de, deniz onları görülmedik bir şekilde kuşatıp yuttu. Firavun, halkını saptırdı, onlara doğru yolu göstermedi."

Hz. Mûsâ, İsrail oğullarını denizden geçirirken Firavun onlara yaklaşıp denizin yarıldığını görünce ve içindeki yolu kuru bulunca, kavmini şu aldatıcı sözüyle ayıpladı: "Deniz, benim ihtişamımla yarıldı. O halde ben, sizin en yüce Rabbinizim." Oysa kıssasında yer aldığı üzere, Firavun askerleriyle birlikte denize girmiş ve nihayet

son neferleri de denize girip en öndeki çıkmak isterken Allah denize emir vermiş ve dalgaları kabarınca, hepsi birlikte boğulmuştur. Bu esnada Firavun ümitsizliğe kapılınca iman etmiş ancak ikrarı kendisine fayda vermemiştir. Şayet daha önce küfürdeki ısrarı olmasaydı, bu ikrar ona fayda verecekti. Bir de kader olarak hakkında kesinleşmiş olan mutsuzluk, ezelde zaten kendisini yakalamıştı.

يَا بَنٖيٓ اِسْرَٓاءٖيلَ قَدْ اَنْجَيْنَاكُمْ مِنْ عَدُوِّكُمْ وَوٰعَدْنَاكُمْ جَانِبَ الطُّورِ
الْاَيْمَنَ وَنَزَّلْنَا عَلَيْكُمُ الْمَنَّ وَالسَّلْوٰى ﴿٨٠﴾

80- “Ey İsrail oğulları! Sizi düşmanınızdan kurtardık, size Tûr’un sağ tarafını va’dettik ve size kudret helvası ile bıldırcın indirdik.”

Allah, onlara nimetlerini hatırlatıp saymakta ve kendilerine bolca verdiği nimetlerinden dolayı taate sarılmalarını ve şükretmelerini onlara emretmektedir. Sonra da onlara, geçmişlerine kudret helvası ve bıldırcın indirerek lütufta bulunduğunu ve çeşitli sıkıntı ve belaları hatırlatmaktadır.

كُلُوا مِنْ طَيِّبَاتِ مَا رَزَقْنَاكُمْ وَلَا تَطْغَوْا فٖيهِ فَيَحِلَّ عَلَيْكُمْ غَضَبٖي
وَمَنْ يَحْلِلْ عَلَيْهِ غَضَبٖي فَقَدْ هَوٰى ﴿٨١﴾

81- “Size rızık olarak verdiğimiz şeylerin helal olanlarından yiyin. Bu konuda aşırı da gitmeyin. Yoksa üzerinize gazabım iner. Kimin üzerine gazabım inerse, muhakkak o helak olmuştur."

Ayetteki ( طيّب ) “*Tayyib*” kelimesi helal olan demektir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Helal rızık, kazananın Allah’a asi olmadığı rızıktır.
- Helal rızık, onu veren Allah’ın müşahedesi altında olan rızıktır.
- Helal rızık, şükrü eda edilen rızıktır.
- Helal rızık, kulun Allah’tan aldığı rızıktır.

Hal böyle olunca cennet ehline ahiretlerinde açıktan verilenler, Allah'ın seçkin kullarına dünyalarında sır olarak verilir.

Allah şöyle buyurmuştur: ( اٰخِذٖينَ مَٓا اٰتٰيهُمْ رَبُّهُمْ ) *"Rablerinin kendilerine verdiğini alarak."* (Zâriyât, 51/16)

Öte yandan rızıklar değişiktir: Kimileri için nefsin hazları, kimileri için kalbin hakları, kimileri için de sırları görmektir. Bu itibarla nefislerin rızkı muvaffakiyet, kalplerin rızkı tasdik, ruhların rızkı ise hakikate ulaşmaktır.

( وَلَا تَطْغَوْا فٖيهِ ) *"Bu konuda aşırı da gitmeyin."*

Aşırı gitmek, helal sınırını aşıp harama bulaşmak suretiyle olur.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Aşırı gitmek, yaşayabilmek için ihtiyaç ve gerekli olandan fazlasına talip olmaktır.

- Aşırı gitmek, gaflet ve nisyan halinde yemektir.

( فَيَحِلَّ عَلَيْكُمْ غَضَبٖي وَمَنْ يَحْلِلْ عَلَيْهِ غَضَبٖي فَقَدْ هَوٰى ) *"Yoksa üzerinize gazabım iner. Kimin üzerine gazabım inerse, muhakkak o helak olmuştur."*

Peş peşe hata işlemekten dolayı üzerinize gazabım iner ve sizi yalnızlığa mahkum eder.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Üzerinize gazabım iner. Çünkü siz, kaçırdığınız fırsatlara üzülme hissinizi kaybetmiş bulunuyorsunuz.

- Üzerinize gazabım, içinde bulunduğunuz halin noksanlığına rıza gösterdiğiniz için iner.

وَاِنّٖي لَغَفَّارٌ لِمَنْ تَابَ وَاٰمَنَ وَعَمِلَ صَالِحًا ثُمَّ اهْتَدٰى ﴿٨٢﴾

82- "Şüphesiz ben, tövbe edip inanan ve salih ameller işleyen, sonra da doğru yol üzere devam eden kimse için çok bağışlayıcıyım."

( غفّار ) "*Ğaffâr*" kelimesi, çok bağışlayıcı olan demektir. Bu nedenle sen tek bir hatadan tövbe ederken O, pek çok günahları bağışlar. Bir de kendisinden başka hiç kimsenin; meleklerin dahi muttali olmadığı sırrı saklaması vardır. Aynı zamanda O, senin ameline benzer amel işleyen kimseyi bağışladığı gibi hakkında iyilik ve nimet arzu ettiğin kimseyi de bağışlar.

Tıpkı şu dizelerde söyledikleri gibi:

*Kabalıklarına rağmen kuşkusuz ben onun Rabbini*
*Ve onunla irtibatlı olan her şeyi vesile edinirim*
*Severim onu ben ve severim o evini ki*
*Yerleşmiştir ona o ve severim ben hane halkını*

( وَاِنّي لَغَفَّارٌ لِمَنْ تَابَ ) "*Şüphesiz ben, tövbe edip inanan kimse için çok bağışlayıcıyım.*"

O halde sadece iman eden kimsenin tövbesi geçerli olur. Buradaki inanandan maksat, şimdi olduğu gibi gelecekte de iman eden kimsedir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- O, kurtuluşunun tövbesi, imanı ve ibadetiyle değil, sadece Allah'ın rahmetiyle olduğuna inanan kimsedir.

- Şüphesiz ben, hatadan tövbe edip inanan, böylece amellerini kendinden bilmeyen, bütün olup bitenlerin Hak'tan olduğuna inanan ve salih amel işleyip farzları aksatmayan ve sünnet ve cemaat yolunda yürüyen kimse için çok bağışlayıcıyım.

- ( ثمّ ) "*Summe-sonra*" kelimesi, zaman aralığını ifade eder. Yani, şimdi iman edip gelecekte doğru yola giren kimse.

- Kim Allah'tan: "Şüphesiz ben" sözünü duyarsa, ondan sonra artık kendisi: "Şüphesiz ben" demez.

- Allah'ın: "Şüphesiz ben" sözünü duymakla meşgul olan kimse, kendisine galebe çalan Allah'a yakınlık aydınlığının ihatası içerisinde kaybolur. ( غفّار ) "*Ğaffâr*" kelimesi gelince de bu ihatanın içinde

mahviyetle yer alır ve arkadaşlarının, akrabalarının ve durumuyla ilgilendiği hiç kimsenin günahlarıyla ilgilenmemiş olur.

- Şüphesiz ben çok bağışlayıcıyım. Yani ben, bir kez tövbe eden için dahi çok bağışlayıcıyım. Böylece Allah, bu kimsenin tövbe etmediği gizli, açık, küçük, büyük, hatırladığı ve hatırlamadığı çeşitli günahlarını da bağışlamış olur.

Bu arada bu kimsenin: "Ben, salih bir amel işledim" demesi uygun düşmez. Aksine o, ameline küçümseyici bir gözle, haline de istikrarsızlık gözüyle bakar.

( ثُمَّ اهْتَدٰى ) *"Sonra da doğru yol üzere devam eden kimse."*

Yani bizimle bize ileten yola devam eden kimse.

وَمَٓا اَعْجَلَكَ عَنْ قَوْمِكَ يَا مُوسٰى ﴿٨٣﴾

83- "Sen, kavminden ne kadar da aceleyle ayrıldın ey Mûsâ!"

Hz. Mûsâ, kavmiyle arkadaşlık yapmak isteyince onları beraberinde çıkardı. Sonra birkaç adım onların önüne geçti ve onlar onun gerisinde kaldılar. Bunun üzerine, kavminin hakkını gözetmek için Hz. Mûsâ'ya bu söz söylenmiştir.

Bir yoruma göre de kimilerine geride kaldıkları için, kimilerine de öne geçtikleri için sitem edilir. Bu iki kesim arasında ise büyük fark vardır.

قَالَ هُمْ اُو۬لَٓاءِ عَلٰٓى اَثَر۪ي وَعَجِلْتُ اِلَيْكَ رَبِّ لِتَرْضٰى ﴿٨٤﴾

84- "Mûsâ dedi ki: 'İşte onlar, hemen arkamdalar. Ey Rabbim! Ben, hoşnut olman için sana acele ile geldim.'"

Yani ben, sana duyduğum özlemden dolayı aceleyle sana geldim. Böylece Allah, Hz. Mûsâ'nın bu konuşmayı yapmasını sağlamıştır. Şayet Allah, onu konuşturmasaydı Hz. Mûsâ bunu anlatmayacaktı.

( هُمْ اُو۬لَٓاءِ عَلٰٓى اَثَر۪ي ) *"İşte onlar, hemen arkamdalar."*

Yani ben, günlerimi boşa harcamak için onları arkada bırakmadım. Lakin ben, hoşnut olman için sana aceleyle geldim. Allah şöyle buyurdu: "Ey Mûsâ! Benim hoşnutluğum, onlarla beraber olmanda ve onları geçmemendedir. Bu itibarla, hoşnutluğumun gerçekleşmesinin anlamı bakımından, arkadaş edindiğin zayıflarla beraber olman, onların önüne geçmenden daha doğrudur."

قَالَ فَاِنَّا قَدْ فَتَنَّا قَوْمَكَ مِنْ بَعْدِكَ وَاَضَلَّهُمُ السَّامِرِيُّ ﴿٨٥﴾

85- "Allah şöyle buyurdu: 'Biz, senden sonra kavmini fitne ile imtihan ettik ve Sâmirî onları yoldan çıkardı.'"

Senin kavmini fitneye düşürdük, bunun üzerine saptılar ve buzağıya taptılar. Böylece Allah bu durumun, O'nun takdiriyle olduğunu bildirmiştir. Aynı zaman bu olay, kaderi inkâr edenleri de yalanlamaktadır.

Bir yoruma göre de Hz. Mûsâ Hakk'ın rızasını ararken, Hak (c.c.), kavminin fitneye düşmesini takdir etmiş ve: ( فَاِنَّا قَدْ فَتَنَّا قَوْمَكَ مِنْ بَعْدِكَ ) "*Biz, senden sonra kavmini fitne ile imtihan ettik*" buyurmuştur. Sonra hüküm Allah'ındır. Bir de Allah'a hiçbir itiraz söz konusu olmadığına göre Hz. Mûsâ'nın, Allah'ın takdirine rıza göstermekten ve dilediğini yapma hakkına sahip olduğunu bilmekten başka çaresi yoktu.

Şiir:

*Beni terk etmek istemekte o, ben ona kavuşmak isterken*
*Böylece terk etmekteyim ben isteğimi, onun isteği için*

( وَاَضَلَّهُمُ السَّامِرِيُّ ) "*Sâmirî, onları yoldan çıkardı.*"

Sâmirî, onları buzağıya tapmaya çağırmakla yoldan çıkardı. Bu ise bir tür aldatmadır. Olan oldu ve haddi aşma apaçık ortaya çıktı.

فَرَجَعَ مُوسٰى اِلٰى قَوْمِهِ غَضْبَانَ اَسِفًا قَالَ يَا قَوْمِ اَلَمْ يَعِدْكُمْ رَبُّكُمْ وَعْدًا حَسَنًا اَفَطَالَ عَلَيْكُمُ الْعَهْدُ اَمْ اَرَدْتُمْ اَنْ يَحِلَّ عَلَيْكُمْ غَضَبٌ مِنْ رَبِّكُمْ فَاَخْلَفْتُمْ مَوْعِدِي ﴿٨٦﴾

86- "Bunun üzerine Mûsâ, öfkeli ve üzgün olarak kavmine döndü ve şöyle dedi: 'Ey kavmim! Rabbiniz size güzel bir vaadde bulunmadı mı? Acaba zaman, size çok uzun mu geldi? Yoksa Rabbinizden üzerinize bir gazap inmesini mi istediniz de bana verdiğiniz söze uymadınız?'"

Hz. Mûsâ, öfkeli ve üzgün olarak kavmine dönerken Peygamberimiz (s.a.v.), miraçtan bast sıfatıyla dönmüş ve Allah'ın kendilerine farz kıldığı namazı ve lütfettiği ibadetle yakınlığı ashabına gizlice bildirmiştir. Bu nedenle iki dönüş arasında büyük fark vardır.

Öte yandan Hz. Mûsâ kavmine öfke ve üzüntü vasfıyla dönmüş ve sitemkâr bir üslupla onlara şöyle hitap etmiştir:

(يَا قَوْمِ اَلَمْ يَعِدْكُمْ رَبُّكُمْ وَعْدًا حَسَنًا اَفَطَالَ عَلَيْكُمُ الْعَهْدُ اَمْ اَرَدْتُمْ اَنْ يَحِلَّ عَلَيْكُمْ غَضَبٌ مِنْ رَبِّكُمْ فَاَخْلَفْتُمْ مَوْعِدِي) *"Ey kavmim! Rabbiniz size güzel bir vaadde bulunmadı mı? Acaba zaman, size çok uzun mu geldi? Yoksa Rabbinizden üzerinize bir gazap inmesini mi istediniz de bana verdiğiniz söze uymadınız?"*

Onlar Hz. Mûsâ'ya verdikleri sözü bozarken, peygamberleri hakkında kötü zanda bulunduklarından, bu durumun yol açtığı uğursuzluğa maruz kaldılar. O kadar ki ahitlerinden saptılar ve akitlerinde şirke düştüler. İşte kişi, akdini yerine getirmediği zaman böyle olur. Çünkü o bu yola koyulmuş olur.

قَالُوا مَٓا اَخْلَفْنَا مَوْعِدَكَ بِمَلْكِنَا وَلٰكِنَّا حُمِّلْنَٓا اَوْزَارًا مِنْ زِينَةِ الْقَوْمِ
فَقَذَفْنَاهَا فَكَذٰلِكَ اَلْقَى السَّامِرِيُّ ﴿٨٧﴾

87- "Onlar dediler ki: 'Sana verdiğimiz sözden kendi isteğimizle caymadık. Lakin biz o kavmin süs eşyasından çok miktarda yüklendik, sonra da onları attık. Aynı şekilde Sâmirî de attı.'"

Dediler ki:

*"Başlangıçta, şu anda yapmış olduklarımızı yapmak niyetinde değildik ve şimdi uğradığımız akıbeti de bilmiyorduk. Kıptilerin taşıdığımız süs eşyasından ise Sâmirî buzağı kalıba döktü."*

İşte dünya malının haram olanı da aynı şekilde uğursuz sonuçtan temizlenemez. Nitekim ganimet ve müşriklerin malları onlara haram olduğundan, Kıptilerden süs eşyası ödünç aldılar ve Kıptilerin elindeki mal, onların eline geçmiş oldu. Bu da buzağıya tapmalarına yol açtı. İşte helâlı gözetmeksizin dünya arayışına dalan kimse de aynı şekilde dinde zayıflama tehlikesi yaşar.

Allah şöyle buyurur: ( اَفَرَاَيْتَ مَنِ اتَّخَذَ اِلٰهَهُ هَوٰيهُ ) *"Hevâsını kendine ilâh edinen kimseyi gördün mü!"* (Câsiye, 45/23)

فَاَخْرَجَ لَهُمْ عِجْلًا جَسَدًا لَهُ خُوَارٌ فَقَالُوا هٰذَٓا اِلٰهُكُمْ وَاِلٰهُ مُوسٰى فَنَسِيَ ﴿٨٨﴾

88- "Derken Sâmirî onlara, böğürme yeteneği olan bir buzağı heykeli meydana getirdi. Bunun üzerine dediler ki: 'Bu, sizin de ilâhınızdır, Mûsâ'nın da ilâhıdır. Fakat Mûsâ onu unuttu.'"

Bu konuda şu iki yorum yapılmıştır:

- Onlar, kendilerine ait birtakım putlara tapan bir kavmin yanından geçince Hz. Mûsâ'ya: *"Tıpkı onların ilahları olduğu gibi bize de bir ilah yap"* dediler. O put da buzağı şeklinde idi. Bu nedenle ona tapmaya olan meyil, kalplerine yerleşmiş idi. Bunun üzerine Sâmirî, buzağıyı o şekil üzere kalıba döktü. Öte yandan bu ayette, şu hususa da işaret vardır: Nefsin gizli arzuları kalbe yerleştiği zaman bu şirk, mücadele aygıtıyla kalpten kazınmadığı sürece sahibinin, onun kötü sonucuyla karşılaşmasından korkulur.

- Hz. Mûsâ, ümmetinin arasından kırk gün dışarı çıkınca kavmi, buzağıya tapmayı kabul etti. Oysa Peygamberimiz (s.a.v.), ümmetinin arasından çıkıp üzerinden çokça yıllar geçtiği halde eğer bir kimse, ümmetinden tevhidde samimi olan birinin yanında teşbihten yana bir söz söylerse o, bu kimsenin bu sözünü kendisinden kurtuluş olmayan büyük bir günah sayacaktır.

Aynı şekilde Hz. Mûsâ'nın ümmetinden kitaplarını korumaları istendi; ancak onu iyice değiştirdiler. Onlarda durum bu iken Allah (c.c.), şu sözüyle bu kitabı -Kur'an'ı- üstün kılmayı garanti etmiştir:

( اِنَّا نَحْنُ نَزَّلْنَا الذِّكْرَ وَاِنَّا لَهُ لَحَافِظُونَ ) *"Şüphesiz Kur'an'ı biz indirdik ve şüphesiz onu koruyan da biziz."* (Hicr, 15/9)

Bir de Allah şöyle buyurmuştur: ( وَدِينِ الْحَقِّ لِيُظْهِرَهُ عَلَى الدِّينِ كُلِّهِ ) *"O hak dini bütün dinlere üstün kılmak için."* (Fetih, 48/28)

اَفَلَا يَرَوْنَ اَلَّا يَرْجِعُ اِلَيْهِمْ قَوْلًا وَلَا يَمْلِكُ لَهُمْ ضَرًّا وَلَا نَفْعًا ﴿٨٩﴾

89- "Onlar bu heykelin, sözlerine karşılık vermediğini, kendilerine bir zarar veya fayda verme gücüne sahip olmadığını görmezler mi?"

Allah bu ayette sözü olmayanın konuşamayacağını, zarar ve fayda verme gücüne sahip olmayanın da ibadeti hak etmeyeceğini açıklamıştır. Allah'ın bu sözü, aynı zamanda ezelde söz yeteneği vermediği, hayır ve şer işleme kudretiyle vasıflandırmadığı kimseye de verilmiş bir cevaptır.

وَلَقَدْ قَالَ لَهُمْ هٰرُونُ مِنْ قَبْلُ يَا قَوْمِ اِنَّمَا فُتِنْتُمْ بِهِ وَاِنَّ رَبَّكُمُ الرَّحْمٰنُ فَاتَّبِعُونِي وَاَطِيعُوٓا اَمْرِي ﴿٩٠﴾

90- "Andolsun Harun daha önce onlara şöyle demişti: 'Siz bununla yalnızca imtihan edildiniz. Doğrusu sizin Rabbiniz ancak Rahmân'dır. Öyleyse bana uyun ve emrime itaat edin."

Onlar, rütbece Hz. Harun'dan üstün olduğu halde, Hz. Mûsâ'nın emrini korumadılar. Bu durum, şuna işaret etmektedir: *"Rütbece daha yüksek olanın emrini korumayan kimse, rütbece daha aşağıda olanın emrini nasıl korur?!"* Bu çerçevede Hakk'ın emrini terk eden kimsenin, şeyhlere ve insanların yiyeceğine saygı göstermesi nasıl umulur? Bu nedenle: *"Fâsık için saygı söz konusu değildir"* denilmiş-

tir. Çünkü o, Hakk'ın hakkını terk ettiğine göre nasıl olur da halkın hakkını korur?

قَالُوا لَنْ نَبْرَحَ عَلَيْهِ عَاكِفِينَ حَتّٰى يَرْجِعَ اِلَيْنَا مُوسٰى ﴿٩١﴾

91- "Dediler ki: 'Mûsâ bize dönünceye kadar buzağıya ibadet etmeye devam edeceğiz.'"

Bu, onların bâtıl gerekçeye sarılmalarının ifadesi idi. Bu sözleriyle onlar, buzağıya tapmayı terk etmeye kararlı olduklarını söylemiş oldular. Çünkü bu yolla Hz. Mûsâ'nın kendilerini tevhide ve Allah'tan başkasına tapmayı terk etmeye çağırdığından emin olurlar. Ne var ki bahaneye sarılan herkes, hüccet olarak kullandığı bâtıla dayanmaktadır.

قَالَ يَا هٰرُونُ مَا مَنَعَكَ اِذْ رَاَيْتَهُمْ ضَلُّوا ﴿٩٢﴾ اَلَّا تَتَّبِعَنِ اَفَعَصَيْتَ اَمْرِي ﴿٩٣﴾

92, 93- "Mûsâ şöyle dedi: 'Ey Harun! Saptıklarını gördüğün zaman, bana uymana ne engel oldu? Yoksa emrime karşı mı geldin?'"

Hz. Mûsâ, kavminin buzağıya taptığını gözleriyle görünce canı sıkıldı. Bu arada Hz. Mûsâ, Sâmirî'nin onları yoldan çıkardığını Allah'tan duymuştu. Çünkü o zaman Allah: ( قَالَ فَاِنَّا قَدْ فَتَنَّا قَوْمَكَ مِنْ بَعْدِكَ ) *"Şüphesiz biz senin kavmini fitneye düşürdük"* buyurmuştu. Fakat eskiden beri: *"Duymakla görmek bir değildir"* denilmiştir. Nitekim durumu gözleriyle görünce, canı sıkıldığı için kardeşine bunu söyledi ve olan oldu. Denilmiştir ki: *"Canı sıkılanın dili çözülür."*

Hz. Mûsâ gördüklerini görünce Hz. Harun, onu nezaket, incelik ve durumu güzel idare etmekle karşılamaya başladı. Aslında işin yabancılaşmaya doğru tırmanmaması için arkadaşlıkta olması gereken budur. Bu amaçla Hz. Harun, şu sözüyle onu hitapta yumuşatmak ve duygularını okşamak istedi:

قَالَ يَبْنَؤُمَّ لَا تَأْخُذْ بِلِحْيَتِي وَلَا بِرَاْسِي اِنِّي خَشِيتُ اَنْ تَقُولَ
فَرَّقْتَ بَيْنَ بَنِي اِسْرَآءِيلَ وَلَمْ تَرْقُبْ قَوْلِي ﴿٩٤﴾

94- "Harun şöyle dedi: 'Ey anamın oğlu! Saçımı sakalımı çekme. Şüphesiz ben, 'İsrail oğullarının arasını açtın, sözüme uymadın' demenden korktum.'"

Sen bana, onlardan ayrılmamamı emrettin. Bu arada denilebilir ki: Eğer Hz. Harun Hz. Mûsâ'ya şunları söyleseydi, söyledikleri yerinde olurdu: "Sen, Firavun'a gitmeye ihtiyaç duyduğun zaman şöyle dedin:

( هُوَ اَفْصَحُ مِنِّي لِسَانًا فَاَرْسِلْهُ مَعِيَ ) *"Kardeşim Harun'un dili benimkinden daha düzgündür. Onu benimle beraber gönder."* (Kasas, 28, 34)

Hakk'ın kelamını duymaya gittiğin zaman da dedin ki:

( اخْلُفْنِي فِي قَوْمِي ) *"Kavmim arasında benim yerime geç."* (A'râf, 7/142)

Böylece beni arkadaş edinmekle yetinmedin, yerine de geçirdin. Sen, onların yaptıklarından uzak olduğumu kesin olarak bildiğin halde saç ve sakalımı çektin. Şimdi sen, içinde bulunduğum durumla tatmin olmadın mı ki, ilave olarak bir de üst üste bana kızdın?!"

Eğer Hz. Harun, bunları söyleseydi yeri idi, fakat o, yumuşak huylu oluşu ve bütün bu olan bitenlerin Rablerinin hükmü olduğunu bilmesi sebebiyle her şeyi rıza ile karşılamıştır.

قَالَ فَمَا خَطْبُكَ يَا سَامِرِيُّ ﴿٩٥﴾

95- "Mûsâ: 'Ya senin derdin neydi ey Sâmirî?' dedi."

Hz. Mûsâ, onların her birine başka türlü sormuştur. Bir de kavmine itapta bulunması, kardeşini sorumlu tutması, nefsinde meydana gelen değişiklik ve kendisine öfkenin hakim olması takdiri değiştirmemiş ve verilen hükmü erteleyememiştir.

قَالَ بَصُرْتُ بِمَا لَمْ يَبْصُرُوا بِه۪ فَقَبَضْتُ قَبْضَةً مِنْ اَثَرِ الرَّسُولِ
فَنَبَذْتُهَا وَكَذٰلِكَ سَوَّلَتْ ل۪ي نَفْس۪ي ﴿٩٦﴾

96- "Sâmirî şöyle dedi: 'Ben, onların görmediği şeyi gördüm. Elçinin izinden bir avuç toprak alıp onu attım. Böyle yapmayı nefsim bana güzel gösterdi.'"

Ben, İsrail oğullarının bilmediklerini bildim. Ben Cebrâîl'i gördüm, bineğinin ayak bastığı yerden avucumla toprak aldım ve bu toprağın, buzağının hayat bulmasına sebep olacağı içime doğduğu için toprağı onun karın boşluğuna attım. Nefsim böyle yapmayı bana güzel gösterdi, ben de onun arzusuna uydum.

Sonra Sâmirî'nin helak olması, kimsenin ilahi takdirin gizli tedbirinden emin olmaması ve şekildeki inceliğe meyletmemesi içindir. Çünkü bu şekli incelik gerçekte tuzak olabilir.

Şiir:

*Güvendim ona, hazırladı bana güvendiğim yerden*
*Bir tuzak, işte böyledir dostlara güvenenin hali*

قَالَ فَاذْهَبْ فَاِنَّ لَكَ فِي الْحَيٰوةِ اَنْ تَقُولَ لَا مِسَاسَ وَاِنَّ لَكَ
مَوْعِدًا لَنْ تُخْلَفَهُ وَانْظُرْ اِلٰٓى اِلٰهِكَ الَّذ۪ي ظَلْتَ عَلَيْهِ عَاكِفًا
لَنُحَرِّقَنَّهُ ثُمَّ لَنَنْسِفَنَّهُ فِي الْيَمِّ نَسْفًا ﴿٩٧﴾

97- "Hz. Mûsâ şöyle dedi: 'Çek git! Artık sen hayatın boyunca: 'Bana dokunmak yok' diyeceksin. Senin için asla kaçamayacağın bir ceza daha var. Hele şu ibadet edip durduğun ilâhına bak! Biz onu elbette yakacağız ve onu muhakkak denize savuracağız.'"

İlahi takdirin etkisi ve yaratmanın Allah'a mahsus oluşu Hz. Mûsâ'ya gizli kalmamıştır. Nitekim o, Allah'a olan hitabında: (اِنْ هِيَ اِلَّا فِتْنَتُكَ) *"Bu, sırf senin imtihanındır"* (A'râf, 7/155) demiştir. Ancak

bununla birlikte o, Allah'ın Sâmirî'nin üstüne azap indirmesi ve hak ettiği cezayı emretmesi için bedduada bulunmamıştır.

Hz. Mûsâ'nın beddua etmemesi şunun bilinmesi içindir: Yoktan yaratma ve var etmedeki hüküm Allah'a mahsus olmakla birlikte, halka itapta bulunmak ve hesap sormak, mükellefiyetin gereği olarak yerinde bir davranıştır. Hakk'ın icra ettikleri ise kul için hüccet veya mazeret değildir.

( وَانْظُرْ اِلٰٓى اِلٰهِكَ الَّذِي ظَلْتَ عَلَيْهِ عَاكِفًا لَنُحَرِّقَنَّهُ ثُمَّ لَنَنْسِفَنَّهُ فِي الْيَمِّ نَسْفًا ) *"Hele şu ibadet edip durduğun ilâhına bak! Biz onu elbette yakacağız ve onu muhakkak denize savuracağız."*

Kalbin Allah'tan başka bağlandığı her şeyi Allah seveniyle birlikte savurur. Bu nedenle yarın Allah, putları kâfirlerle birlikte cehenneme atacaktır. Oysa ların ne bir günahı vardır, ne mükellefiyet altındadırlar, ne de bir bilgi ve haberleri vardır. Onlar sadece birtakım cansız varlıklardır.

اِنَّمَٓا اِلٰهُكُمُ اللّٰهُ الَّذِي لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَۜ وَسِعَ كُلَّ شَيْءٍ عِلْمًا ﴿٩٨﴾

98- "Sizin ilâhınız, ancak kendisinden başka hiçbir ilâh bulunmayan Allah'tır. O, ilmiyle her şeyi kuşatmıştır."

Yani emrinin hakkı gereğince, ibadeti üzerinize vacip olan ilâhınız, kendisinden başka hiçbir ilah olmayan ve celâl sıfatına sahip olan Allah'tır. Kendisine hiçbir malumat saklı kalmayan da Allah'tır. Aynı zamanda O, bilmeyen, güçsüz, yaşamayan, işitmeyen ve görmeyen cansız bir varlık gibi değildir. Ayrıca O'nun bu cansız varlığı ezip yakması da mümkündür.

كَذٰلِكَ نَقُصُّ عَلَيْكَ مِنْ اَنْبَٓاءِ مَا قَدْ سَبَقَۚ وَقَدْ اٰتَيْنَاكَ مِنْ لَدُنَّا ذِكْرًاۚ ﴿٩٩﴾

99- "Sana geçmişin haberlerinden bir kısmını böylece anlatıyoruz. Şüphe yok ki sana katımızdan bir zikir verdik."

Yöntemlerinden bazı şeyleri birbirine karıştırmaman, bu karıştırma sonucunda prensiplerini benimsememen ve bölük pörçük menkıbelerinin sende bir araya gelmemesi için biz, öncekilerin de sonrakilerin de durumlarını sana anlatıyoruz. Fakat şunu bil ki, biz hiç kimseyi senin ulaştığın mertebeye ulaştırmadık ve sana bahşettiklerimizi hiç kimseye bahşetmedik. Katımızdan sana, kimsenin ortak olmadığı bir şeref ve övünç verdik, sana bize olan geçmişteki ahdini hatırlattık ve onların arasından sana olan özel muamelemizi ve değerli yönelişimizi senin için yeniledik.

مَنْ اَعْرَضَ عَنْهُ فَاِنَّهُ يَحْمِلُ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ وِزْرًا ﴿١٠٠﴾

100- “Kim ondan yüz çevirirse şüphesiz ki o, kıyamet gününde ağır bir günah yüklenecektir.”

Ondan yüz çevirenler, yarın günah ve ağır yük yüklenecek olan ortaklardır. Onlar, özel olma mevkiinden uzaklaştılar ve hakikatte onların hiçbir önemleri olmadı. Bu itibarla cezaları, canlarının acı çekmesi ve bedenlerinin yanmasından fazla bir şey olmayacaktır. Allah katında özel olanlara gelince, eğer onlar bir saat dahi O’ndan gafil olsalar ve O’nu bir an bile unutsalardı, hemen başlarının üzerinde bela dolaşırdı. Bu öyle bir ceza olurdu ki herkesin cehennemdeki cezası, onun yanında hafif kalırdı.

خَالِدٖينَ فٖيهِ وَسَٓاءَ لَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ حِمْلًا ﴿١٠١﴾

101- “Onlar, o günahın cezası içinde ebediyen kalacaklardır. Bu ağır yük onlar için ne kötü bir yüktür!”

يَوْمَ يُنْفَخُ فِي الصُّورِ وَنَحْشُرُ الْمُجْرِمٖينَ يَوْمَئِذٍ زُرْقًا ﴿١٠٢﴾

102- “O gün Sûr’a üfürülecek ve biz günahkârları, gözleri gömgök kesilmiş olarak haşredeceğiz.”

Kimileri için kıyamet günü sonraya bırakılmıştır. Kur'an ve hadiste yer aldığına göre bu, Sûr'a üfürüldükten sonradır. Diğer bazılarının kıyameti ise dünyadadır. Bu kıyamette sorgulama, onlara yönelik yükümlülük, peşin perişanlık ve meydana gelen bir azap vardır. Bu itibarla nasıl ki bazıları ahirette bedenleriyle cezalara çarptırılıyorsa, aynı şekilde diğer bazılarının da sırları, bu dünyada cezaya çarptırılır. Bu çerçevede her birine yapılan muamele, diğerine yapılan muameleden farklı olur.

يَتَخَافَتُونَ بَيْنَهُمْ اِنْ لَبِثْتُمْ اِلَّا عَشْرًا ﴿١٠٣﴾ نَحْنُ اَعْلَمُ بِمَا يَقُولُونَ اِذْ
يَقُولُ اَمْثَلُهُمْ طَرِيقَةً اِنْ لَبِثْتُمْ اِلَّا يَوْمًا ﴿١٠٤﴾

103, 104- "Aralarında birbirlerine: 'Dünyada sadece on gün kaldınız' diye gizli gizli konuşacaklar. Aralarında konuşacakları şeyleri biz daha iyi biliriz. O vakit içlerinden en aklı başında olanları: 'Siz sadece bir gün kaldınız' diyecektir."

Kim kendini vakit saymaya ve değişik halleri birbirinden ayırmaya verirse, o belası tam olmayan türdendir ve işi kolaydır. Oysa sözünden mana çıkarılmak istenen kimse, halin niteliğiyle uğraşmaz. Bu nedenle haller ondan haber verir, ona haber sorulmaz.

وَيَسْـَٔلُونَكَ عَنِ الْجِبَالِ فَقُلْ يَنْسِفُهَا رَبّ۪ي نَسْفًا ﴿١٠٥﴾ فَيَذَرُهَا قَاعًا
صَفْصَفًا ﴿١٠٦﴾ لَا تَرٰى ف۪يهَا عِوَجًا وَلَٓا اَمْتًا ﴿١٠٧﴾

105, 106, 107- "Sana dağlar hakkında sorarlar. De ki: 'Rabbim onları ufalayıp savuracak. Böylece yerlerini dümdüz, boş bir alan halinde bırakacaktır. Orada hiçbir tümsek hiçbir çukur göremeyeceksin.'"

Nasıl ki vaat edilen malum kıyamet, dağların durumlarını değiştirip onları atılmış yün haline getiriyorsa, dünyadaki mevcut kıyamet de öyledir. Ancak bu kıyametten sana sadece dağlar gibi sabit olan büyük veliler söz edebilirler. Çünkü Allah, onların üzerinde

kendilerini maddi benliklerinden koparıp akranlarından ayıran haller icra eder. İşte Allah'ın prensibi böyledir.

يَوْمَئِذٍ يَتَّبِعُونَ الدَّاعِيَ لَا عِوَجَ لَهُ وَخَشَعَتِ الْاَصْوَاتُ لِلرَّحْمٰنِ فَلَا تَسْمَعُ اِلَّا هَمْسًا ﴿١٠٨﴾

108- "O gün insanlar davetçiye uyacaklar. Ona karşı yan çizmek yoktur. Rahmân'ın yüceliğinden dolayı sesler kısılmıştır. Bu sebeple fısıltıdan başka bir şey işitmezsin."

Vehimlerin sonu gelir, kavrayışlar durur, akıllar dumura uğrar, ilimler yerle bir olur, bilgiler şaşar, halkın vasfı olan şeyler zayıflar ve hakikat sultanı hâkim olur. İşte o zaman ne cisim ne iz ne işaret ne enkaz ne de toz vardır. Hazır olanlarda dilsizlik, huzurda fenâ gerçekleşmiş ve merasimler ortadan kalkmıştır. Değişmeyen yegâne husus sebattır.

يَوْمَئِذٍ لَا تَنْفَعُ الشَّفَاعَةُ اِلَّا مَنْ اَذِنَ لَهُ الرَّحْمٰنُ وَرَضِيَ لَهُ قَوْلًا ﴿١٠٩﴾

109- "O gün Rahmân'ın izin verdiği ve sözünden razı olduğu kimseden başkasının şefaati fayda vermez."

Ayetin hitabındaki delil, kendisine şefaat izni verilen kimseye şefaatin fayda verdiği şeklindedir. Allah'ın izniyle herhangi bir kimsenin şefaati kabul edildiğine göre, bütün varlıkların en faziletlisi olduğu halde Hz. Peygamber'in (s.a.v.) şefaatinin kabul edilmemesi imkânsızdır. Kaldı ki hem ahirette hem de dünyada seçkin büyük velilerin küçük insanlar hakkındaki şefaatleri de makbuldür. Aynı zamanda Allah, bugün bile şeyhleri müridleri hakkında şefaatçi kılmaktadır.

Bir yoruma göre de kıyamet gününde Hz. Peygamber'in (s.a.v.) itaat ehli kimseler için şefaati derece artışı, günahkârlar içinse hatanın bağışlanması şeklinde olur. Aynı şekilde bugün şeyhlerin müridlere olan şefaatleri de iki kısımdır: Sülûk sahipleri için tahkik ve muvaffakiyetin artışı, yolunu kaybetmiş ve gaflet ehli olanlar içinse

onları bağışlamak şeklindedir. Nitekim şu dizeler de bu anlamda kabul edilmektedir:

*Size gelip ziyaret ederiz sizi hastalandığınız zaman*
*Ve size gelip özür dileriz günah işlediğinizde siz*

Öte yandan eski şeyhlerin durgunluk yaşadıkları zamanlarda müridleriyle olan hikâyeleri bilinmekte olup burada belirtilenlerle benzerlik taşımaktadır. Bir de onların şefaati ancak Allah tarafından manen bildirilmesiyle olur. Bu, aynı zamanda şefaat konusunda şeyhlere verilen bir edep dersidir.

يَعْلَمُ مَا بَيْنَ اَيْدِيهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ وَلَا يُحِيطُونَ بِهٖ عِلْمًا ﴿١١٠﴾

110- "O, insanların geleceklerini de geçmişlerini de bilir. Oysa onların bilgisi O'nu kuşatamaz."

Onların ne geçmiş ne de gelecek hallerinden hiçbir şey Hakk'a saklı kalmaz. Onlar ise bilgileriyle onu kuşatamazlar. Bu arada ( به ) "*onu*" zamiri, hem geçmişteki ve gelecekteki şeye hem de Hakk'a (c.c.) gidebilir. Bu tür ifade kullanım ve değerlendirmeleri selefin yöntemidir. Mesela: "O halkı bilir, fakat ilim onu kuşatamaz" derler. Tıpkı: "Şüphesiz o görülür, fakat kavranamaz" dedikleri gibi.

وَعَنَتِ الْوُجُوهُ لِلْحَيِّ الْقَيُّومِ وَقَدْ خَابَ مَنْ حَمَلَ ظُلْمًا ﴿١١١﴾

111- "Bütün yüzler, diri ve her şeye hakim olan Allah için eğilip boyun bükmüştür. Zulüm yüklenen ise gerçekten perişan olmuştur."

Boyunlar O'nun için bükülmüş, halk O'nun hükmüne teslim olmuş ve zorbalar O'na baş eğmiştir. Kim zulüm işlerse, onun karanlıkları içerisinde kalır. İşte insanın sorumluluğu buna göre artar ve eksilir.

وَمَنْ يَعْمَلْ مِنَ الصَّالِحَاتِ وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَلَا يَخَافُ ظُلْمًا وَلَا هَضْمًا ﴿١١٢﴾

112- “Kim de inanmış olarak salih ameller işlerse o, ne zulme uğramaktan ne de hakkının çiğnenmesinden korkar.”

Salih amel, kabule değer ameldir. Onu yapan da hakikate engel olan arızalardan arınmış kimsedir. Bir yoruma göre de salih amel, sahibinin karşılığında hemen ecir istemediği ameldir.

( وَهُوَ مُؤْمِنٌ ) *“İnanmış olarak.”*

Yani o anda olduğu gibi gelecekte de inanmış olan kimse. Bir yoruma göre de o, Rabbinin mümine, imanına karşılık bir şey vermediğine, lakin bunu lütfuyla yaptığına inanıp tasdik eden kişidir. Bu kimsenin imanı ise Allah’ın verdiği şeyin zorunlu sebebi değil, sadece alametidir.

وَكَذٰلِكَ اَنْزَلْنَاهُ قُرْاٰنًا عَرَبِيًّا وَصَرَّفْنَا فٖيهِ مِنَ الْوَعٖيدِ لَعَلَّهُمْ يَتَّقُونَ
اَوْ يُحْدِثُ لَهُمْ ذِكْرًا ﴿١١٣﴾

113- “İşte biz onu böylece Arapça bir Kur’ân olarak indirdik ve belki sakınırlar veya onlar için bir ibret dersi teşkil eder diye uyarıları bir bir sıraladık.”

Delil üstüne delil getirdik, peygamber üstüne peygamber gönderdik, çeşitli şekillerde anlatarak ve pek çok mucize ortaya koyarak onları sakındırdık.

فَتَعَالَى اللّٰهُ الْمَلِكُ الْحَقُّ وَلَا تَعْجَلْ بِالْقُرْاٰنِ مِنْ قَبْلِ اَنْ يُقْضٰى
اِلَيْكَ وَحْيُهُ وَقُلْ رَبِّ زِدْنٖي عِلْمًا ﴿١١٤﴾

114- “Gerçek hükümdar olan Allah yücedir. Sana vahyedilmesi tamamlanmadan önce Kur’ân’ı okumada acele etme ve: ‘Ey Rabbim! İlmimi artır’ de.”

Allah, eşsiz büyüklüğüyle yücedir. Eşsiz büyüklüğü ise; haşmeti, ululuğu, izzeti ve azameti demektir ki bunların hepsi aynı an-

lama gelmektedir. Bu anlam, Allah'ın celal ve tazim vasıflarını hak etmesidir.

Ayetteki ( ملِك ) "*Melik-hükümdar*" kelimesi, ( مالك ) "*Mâlik*" kelimesinin mübalağasıdır. Mülkün gerçek anlamı ise yalnız başına yaratma gücüne sahip olmaktır.

Ayetteki ( حَق ) "*Hak*" kelimesi, Allah'ın sıfatı olarak "var olan" demektir. Nitekim Hz. Peygamber de aynı anlamda şöyle buyurmuştur: *"Göz -nazar- haktır"*, yani vardır. Ayrıca "hak" kelimesi, hak sahibi ve hakkı ortaya koyan anlamlarına da gelmektedir ki, bunların hepsi doğrudur.

( وَلَا تَعْجَلْ بِالْقُرْاٰنِ مِنْ قَبْلِ اَنْ يُقْضٰى اِلَيْكَ وَحْيُهُ وَقُلْ رَبِّ زِدْنِي عِلْمًا ) "*Sana vahyedilmesi tamamlanmadan önce Kur'ân'ı okumada acele etme ve: 'Ey Rabbim! İlmimi artır' de.*"

Hz. Peygamber (s.a.v.), unutma korkusuyla, ayetleri -hemen okumaya çalışarak- Hz. Cebrail'den almada acele ediyordu. Bunun üzerine Hz. Cebrail, ayetler telkin edilirken rahat olmasını istedi, unutmayacağı konusunda kendisine güvence verdi ve ayetleri onun için koruyanın Allah olduğunu anlattı.

Bu arada ayet, zahire göre hükmederken onu usul kaideleriyle değerlendirmeden önce biraz ihtiyat yapmak gerektiğine işaret etmektedir. Sonra eğer kesin hüküm gerektiren bir delil bulunamazsa hüküm, lafzın genel durumuna uygun olarak icra edilir. Bu, hüküm vermekten kaçınılmasını öngören tevakkuf ehlinin görüşüne aykırı olarak yapılır.

Bu itibarla ayet, meselelerde ihtiyatı gözetmek üzere, temkinli davranmaya ve beklemenin zorunlu olduğuna işaret etmektedir.

( وَقُلْ رَبِّ زِدْنِي عِلْمًا ) "*Ey Rabbim! İlmimi artır*" de.

Beşeriyetin en bilgilisi, Arapların ve acemlerin efendisi ve Hakk'ın kendisine hitaben: ( وَعَلَّمَكَ مَا لَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ ) "*Sana, daha önce bilmediklerini de öğretti*" (Nisâ, 4/113) buyurmak suretiyle, ilmin meziyetlerine sahip olduğuna şahitlik ettiği Hz. Peygamber'e (s.a.v.):

( وَقُلْ رَبِّ زِدْنِي عِلْمًا ) *"Ey Rabbim! İlmimi artır"* de denildiğine göre bundan Hakk'ın velilerine has kıldığı ilimlerin inceliklerinin de sınırı olmadığı anlaşılmaktadır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, ilminin artırılmasına yönelik talebinde Hz. Peygamber'i (s.a.v.) kendine yönlendirmiştir. Oysa Hz. Mûsâ'yı Hz. Hızır'a havale etmişti. O kadar ki Hz. Mûsâ Hz. Hızır'a şöyle demişti:

( هَلْ اَتَّبِعُكَ عَلٰى اَنْ تُعَلِّمَنِ مِمَّا عُلِّمْتَ رُشْدًا ) *"Sana öğretilen bilgilerden bana, doğruya iletici bir bilgi öğretmen için sana tabi olayım mı?"* (Kehf, 18/66)

Bu itibarla şu iki kul arasındaki fark çok büyüktür: Biri, bu konuda yine bir kula havale edilmiş sonra o kul tarafından kendisine şöyle denilmiştir:

( اِنَّكَ لَنْ تَسْتَطِيعَ مَعِيَ صَبْرًا ) *"Doğrusu sen, benimle beraberliğe asla sabredemezsin."* (Kehf, 18/67)

Ancak bütün bu nezaketten sonra işin sonunda Hz. Hızır kendisine şöyle demiştir:

( هٰذَا فِرَاقُ بَيْنِي وَبَيْنِكَ ) *"İşte bu, birbirimizden ayrılmamız demektir."* (Kehf, 28/78)

İlminin artırılması istendiğinde diğer kula ise bunu Rabbinin katından istemesini emrederek şöyle buyurmuştur: *"Ey Muhammed! 'Rabbim! İlmimi artır' de."*

- Hz. Peygamber (s.a.v.): *"İçinizden Allah'ı en iyi tanıyan ve O'ndan en çok korkan benim"* deyince, kulun en şerefli hasletinin iddia makamında değil, ihtiyaç makamında durması ve dua etme vasfına sahip olması olduğunun bilinmesi için Allah kendisine: *"De ki: Rabbim! İlmimi artır"* dedi.

وَلَقَدْ عَهِدْنَٓا اِلٰٓى اٰدَمَ مِنْ قَبْلُ فَنَسِيَ وَلَمْ نَجِدْ لَهُ عَزْمًا ﴿١١٥﴾

115- "Andolsun, bundan önce biz Âdem'e emrettik. O ise bunu unutuverdi. Biz, onda bir kararlık bulmadık."

Biz, emre riayet konusunda Âdem'de yeterli bir güç ve teslimiyet bulmadık. Nihayet o, Allah'ın: ( فَنَسِيَ ) "*Âdem Rabbine isyan etti*" sözüyle asi damgası yedi.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Biz onda muhalefette ısrar etme kararlığı bulmadık.

- Allah'ın emrine muhalefet etmeye dair niyetiyle ilgili onda kararlılık bulmadık. Şayet bu muhalefet olmuşsa o da unutmanın sonucudur. Allah şöyle buyurmak istemektedir: O ise bunu unutuverdi. Emrin bazı yükümlülüklerine uymasının yanı sıra biz onda emre muhalefet konusunda da bir kararlılık bulmadık.

- Allah, rahmetinden ümitsiz olmamaları için Hz. Âdem'in zürriyetine kıssasını, kalplerini yatıştırarak açıklamıştır. Çünkü Hz. Âdem, bu damgayı yemiş ve karşısına bu hata çıkmıştır. Ayetteki ( نَسِيَ ) "*nesiye*" lafzı unutmak anlamındadır. Unutmak ise Hz. Âdem zamanında sorumlu tutulmamanın gerekçesi değildi.

- Allah, unutması sebebiyle Hz. Âdem'e önce itap etmiş sonra da mazeretini ortaya koyarak: ( وَلَمْ نَجِدْ لَهُ عَزْمًا ) "*Biz, onda bir kararlık bulmadık*" buyurmuştur.

وَاِذْ قُلْنَا لِلْمَلٰٓئِكَةِ اسْجُدُوا لِاٰدَمَ فَسَجَدُوٓا اِلَّٓا اِبْلِيسَ اَبٰى ﴿١١٦﴾

116- "Hani meleklere: 'Âdem'e secde edin' demiştik. İblis hariç, melekler hemen secde ettiler. İblis, yanaşmadı."

Secde, bir nevi tevazu ve kadir bilirliktir. Bu arada Hz. Âdem, daha önce taatte ve ibadette bulunmamıştı. Allah, onu yaratarak kendisine bilgi öğrettikten sonra değerini yükseltti, onu cennete taşıdı ve gökyüzünün her tabakasındaki meleklere ona secde etmelerini emretti. Allah bunu, tabi tutulduğu sınava karşılık olarak Hz. Âdem'i onurlandırmak ve melekleri sınamak için yaptı. Aralarından İblis, secde etmek istemediği için ezeldeki kaderin hükmüyle itibardan düştü.

Bu çerçevede şaşırtıcı olan husus, Allah'ın bu gibi olayların bu şekilde cereyan edeceğini bildiğini ancak buna rağmen iradesi ve dileği dışında meydana geldiğini düşünen ve bunu O'nun fiil ve hükümlerindeki hikmet olarak kabul edenlerin gerçeği görmemeleridir. Bunlar, Allah'ın İblis ve zürriyetinin gelecekteki hallerini, Âdemoğullarının çok sayıdaki aykırı davranışlarını ve şeytanın onlara nasıl vesvese vereceğini bildiğini ileri sürdükten sonra şöyle derler:

Hakk, bildiğinin hilafını dilemiş ve gelecekte olacakları bildiği halde, hükmünde hoşnut olmadığı şeyler icra etmiş, sonra İblis'i yaratarak, öyle olmamasını arzu ettiği halde bu isyanlarda bulunmasını mümkün kılmıştır.

Bunlar bu durumun sadece bir hikmet olması hasebiyle, fiiliyatta güzel olduğunu ileri sürmektedirler. Basiretlerini körleştirip tevhidin hakikatini onlar için muamma haline getiren Allah'ın şanı ne kadar da yücedir!

فَقُلْنَا يَٓا اٰدَمُ اِنَّ هٰذَا عَدُوٌّ لَكَ وَلِزَوْجِكَ فَلَا يُخْرِجَنَّكُمَا مِنَ الْجَنَّةِ فَتَشْقٰى ﴿١١٧﴾

117- "Bunun üzerine şöyle dedik: 'Ey Âdem! Şüphesiz bu İblis, sana ve eşine düşmandır. Sakın sizi cennetten çıkarmasın. Sonra mutsuz olursun.'"

Nasihat onlara fayda verecek değildi. Çünkü Allah, onları sakındırdığı hususu haklarında dilemiş ve kendilerini korkuttuğu şeyin karşılarına çıkacağını bilmiş idi.

(فَلَا يُخْرِجَنَّكُمَا مِنَ الْجَنَّةِ فَتَشْقٰى) *"Sakın sizi cennetten çıkarmasın. Sonra mutsuz olursun."*

Allah, mutsuzlukla karşılaşacaklarını biliyordu. Mutsuzluğu sadece Hz. Âdem'e izafe etmesine gelince bu, ya ayet sonlarının ses uyumu için veya mutsuzluğun kadınlara değil sadece erkeklere yüklenmesinden dolayıdır. Zaten kim, düşmanının sözüne kulak verirse pişmanlığı yudumlar ancak bu pişmanlık ona fayda vermez.

اِنَّ لَكَ اَلَّا تَجُوعَ فٖيهَا وَلَا تَعْرٰى ﴿١١٨﴾

118- "Senin için orada acıkmamak ve çıplak kalmamak vardır."

Hz. Âdem'in tasdikinden daha mükemmel bir tasdik, Allah'ın nasihatinden daha çok merhamet içeren bir vaaz ve Hz. Âdem'in inancından daha güçlü bir inanç bulunmamaktadır. Lakin Hz. Âdem, bundan önce herhangi bir mutsuzluk yaşamamıştı. Bu nedenle, emirle karşılaşıp korkutulduğu meşakkat ve ıstırabı tadınca pişmanlık duymuş ve uzun süre ağlamıştır. Ne var ki takdirin gerçekleşmesinden sonra!

وَاَنَّكَ لَا تَظْمَؤُا فٖيهَا وَلَا تَضْحٰى ﴿١١٩﴾

119- "Orada susuzluk da çekmezsin güneşin sıcağında da kalmazsın."

Hz. Âdem, her yönüyle imtiyazlı kılınmış, ancak ezelde takdir edilen hüküm gerçekleşinceye kadar afiyet ve esenliğin kadrini bilememiştir.

Bir yoruma göre de Hz. Âdem, cennette nimetler içinde yaşamış ve dünyada açlık, susuzluk ve her türlü sıkıntı başına gelinceye kadar bunun kadrini bilememiştir.

Öte yandan Hz. Âdem, başına yeni bir bela çeşidi geldiği zaman ağlamaya başlıyor, Hz. Cebrail de gelip şöyle diyordu: "Rabbin sana selam söylüyor ve: 'Neden ağlıyor?' diyor." Hz. Âdem ise Hz. Cebrail'e: "Sen: 'Orada susuzluk da çekmezsin güneşin sıcağında da kalmazsın' demedin mi?" diyerek bu ve buna benzer garanti ve güvence çeşitlerini hatırlatıyordu.

فَوَسْوَسَ اِلَيْهِ الشَّيْطَانُ قَالَ يَٓا اٰدَمُ هَلْ اَدُلُّكَ عَلٰى شَجَرَةِ الْخُلْدِ وَمُلْكٍ لَا يَبْلٰى ﴿١٢٠﴾

120- "Derken şeytan ona vesvese verip şöyle dedi: 'Ey Âdem! Sana sonsuzluk ağacını ve bitip tükenmeyen bir saltanat göstereyim mi?'"

Şeytan Hz. Âdem'e vesvese verdi ve Allah bunu biliyordu. Oysa Hz. Âdem o anda bunun Allah'ın hakkında: ( اِنَّ هٰذَا عَدُوٌّ لَكَ ) "*Şüphesiz bu sana düşmandır*" (Taha, 20/117) buyurduğu kişinin tahriklerinden biri olduğunu hatırlayamadı.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Eğer Allah İblis'e o ağacı göstermese, o da bu yüzden ağacı aynen tanımasa ve onu Hz. Âdem'e gösterecek (...) olmasaydı, bu takdirde kendisini ondan ne alıkoyardı? Ne var ki Allah'ın buna dair ezeli hükmü kesinleşmiş ve iradesi ona taalluk etmişti.

- Ondan sonra şeytan, Hz. Âdem'e göründü ve Hz. Âdem ona: *"Ey şaki! Sen yapacağını yaptın"* dedi. Bunun üzerine İblis de ona: *"Şayet ben senin şeytanın isem, bu takdirde benim şeytanım kimdir?"* dedi.

- Şeytan'a şeytan adının verilmesi, Allah'a itaatten uzak olmasından ötürüdür. O halde Allah'a itaatten uzak olup insanları Allah'a itaatten uzaklaştıran kimse şeytandır. Bu nedenledir ki: *"İnsan şeytanları"* ve: *"İnsan şeytanları, cin şeytanlarından daha kötüdür"* denilir.

- Hz. Âdem sonsuza kadar yaşamayı arzu edince şeytan, vesvesesiyle ona doğru bir yol bulmuş oldu. Bu arada söz konusu ağacın ne olduğu konusunda görüş belirtenler olmuştur. Doğrusu ise onun "*sıkıntıyla imtihan ağacı*" olduğunu söylemektir.

- Eğer cennette o ağaç yaratılmamış olsaydı mertebesinde hiçbir noksanlık bulunmamış olurdu.

- Eğer Allah, Hz. Âdem hakkında olanları dilememiş olsaydı, ağaç Hz. Âdem'in eli yetişemeyecek kadar uzardı. Lakin kıssasında anlatıldığına göre Hz. Âdem, ağaçtan yedikten sonra avret mahallini örtmek için elini uzattığı yapraklarına eli yetişmemiştir.

فَاَكَلَا مِنْهَا فَبَدَتْ لَهُمَا سَوْاٰتُهُمَا وَطَفِقَا يَخْصِفَانِ عَلَيْهِمَا مِنْ
وَرَقِ الْجَنَّةِ وَعَصٰٓى اٰدَمُ رَبَّهُ فَغَوٰى ﴿١٢١﴾

121- "Bunun üzerine Âdem ve Havvâ, o ağaçtan yediler. Bu yüzden avret yerleri kendilerine göründü ve cennet yaprağından

üzerlerini örtmeye başladılar. Âdem, Rabbine isyan etti ve yolunu şaşırdı."

Hz. Âdem ve Hz. Havvâ günah işleyince, vücutlarının görünmesinden utanılan kısmı ortaya çıktı. Ancak bu durumda Allah onlara lütufta bulunarak mutlak bir ifadeyle: *"Bunun üzerine avret yerleri ortaya çıktı"* dememiş, başkalarını onların avret yerlerine muttali kılmamak üzere: ( فَبَدَتْ لَهُمَا سَوْاٰتُهُمَا ) *"Bu yüzden avret yerleri kendilerine göründü"* buyurmuştur.

Bir rivayete göre de onlar, takva elbisesinden arınınca zahir elbiseleri de üzerlerinden kalkmış oldu.

( وَطَفِقَا يَخْصِفَانِ عَلَيْهِمَا مِنْ وَرَقِ الْجَنَّةِ ) *"Ve cennet yaprağından üzerlerini örtmeye başladılar."*

Buna göre mesleklerin ve sanatların ilki terziliktir. Yamaların üst üste dikilmesi ise babamız Hz. Âdem'den fakirlere miras kalmıştır.

Bir yoruma göre Hz. Âdem o gün sabahladığında en doğrusunu Allah'ın bildiği cennetin türlü türlü süslü elbiselerini giyerken, daha akşama varmadan üstüne cennetin yapraklarından örtüyordu. Böylece ta baştan beri Hz. Âdem'den çocuklarına, esenlikten sonra bela miras kalmış olmaktadır.

( وَنَادٰيهُمَا رَبُّهُمَٓا اَلَمْ اَنْهَكُمَا عَنْ تِلْكُمَا الشَّجَرَةِ ) *"Rableri, onlara: 'Ben, sizi o ağaçtan alıkoymadım mı?' diye seslendi."* (A'râf, 7/22)

Bu esnada Hz. Âdem ve Hz. Havvâ, Allah'ın bu hitabına muhatap olunca utandılar. Bu nedenle: *"Kusur işleyen için utanç olarak karşılaşma günü yeter"* denilmiştir.

( رَبَّنَا ظَلَمْنَٓا اَنْفُسَنَا ) *"Dediler ki: 'Ey Rabbimiz! Biz kendimize zulmettik.'"* (A'râf, 7/23) Onlar, savunmacı bir dille konuşmadılar. Aksine: "*Biz kendimize zulmettik*" dediler. Bir de muteber olanın, yaratılanın günahı değil de Rabbin hükmü olduğu bilinsin diye onlar: *"Zulmümüzle hüsrana uğrayanlardan olduk"* demediler de şöyle dediler:

( وَاِنْ لَمْ تَغْفِرْ لَنَا وَتَرْحَمْنَا لَنَكُونَنَّ مِنَ الْخَاسِرِينَ ) *"Eğer sen, bizi bağışlamaz ve bize merhamet etmezsen, şüphesiz biz, hüsrana uğrayanlardan olacağız."* (A'râf, 7/23)

( وَعَصٰٓى اٰدَمُ رَبَّهُ فَغَوٰى ) *"Âdem, Rabbine isyan etti ve yolunu şaşırdı."*

İlk beşer olarak Hz. Âdem isyan damgası yiyince, fetret zamanında henüz ortada bulunmayan çocuklarının, bir hatanın sorumluluğu altına girmemeleri için bu olayın anlatılması onlara nefes aldırmıştır.

Bir yoruma göre de o ağaçtan yemek tek bir şey iken kıssasını çocuklar ezberleyecek ve kıyamet gününe kadar tekrarlayacaklardır.

Bu arada Hz. Âdem, günahların büyüklüğünün, muhalefetin bizatihi çok oluşundan dolayı değil de amire muhalefetten ve kadrinin yüceliğinden dolayı olduğu bilinsin diye Rabbine isyan etmiştir.

ثُمَّ اجْتَبٰيهُ رَبُّهُ فَتَابَ عَلَيْهِ وَهَدٰى ﴿١٢٢﴾

122- "Sonra Rabbi onu seçti, tövbesini kabul etti ve ona doğru yolu gösterdi."

Allah, Hz. Âdem'in isyan etmesinden ve bütün yaptıklarından sonra Rabbinin kendisini seçtiğini bildirmektedir. Bu itibarla onu ta başta gerekçesiz olarak seçkin kılan Allah, hatadan sonra ikinci kez seçerek tövbesini kabul etmiş, günahını bağışlamış ve kendisini doğru yola iletmiştir. Yani Allah Hz. Âdem'i, kendisine giden yola iletmiş böylece o da özür ve mağfiret dilemiştir.

قَالَ اهْبِطَا مِنْهَا جَمِيعًا بَعْضُكُمْ لِبَعْضٍ عَدُوٌّ فَاِمَّا يَأْتِيَنَّكُمْ مِنّ۪ي
هُدًى فَمَنِ اتَّبَعَ هُدَايَ فَلَا يَضِلُّ وَلَا يَشْقٰى ﴿١٢٣﴾

123- "Allah buyurdu ki: 'Hepiniz, birbirine düşman olarak oradan inin. Şayet tarafımdan size bir hidayet gelirse, bu takdirde hidayetime uyan ne yoldan çıkar ne de mutsuz olur.'"

Allah Hz. Âdem, İblis ve yılanın arasına düşmanlık soktu. Bu arada Hz. Âdem ve Hz. Havvâ, isyan damgasıyla cennetten çıktıktan

sonra peş peşe sıkıntılar yaşadılar. Bu sıkıntılar; cennetten ayrılmak, dünyaya girmek, şeytanın düşmanlığı ve şehevi arzularla imtihan edilmek gibi hususlardır.

Sonra Allah şöyle buyurdu:

( فَمَنِ اتَّبَعَ هُدَاىَ فَلَا يَضِلُّ وَلَا يَشْقٰى ) *"Bu takdirde hidayetime uyan ne yoldan çıkar ne de mutsuz olur."*

Bir de nefsinin arzularını terk eden ve düşmanın vesvesesiyle amel etmeyen, her türlü hayra sahip olur ve başına hiçbir sıkıntı gelmez.

وَمَنْ اَعْرَضَ عَنْ ذِكْر۪ي فَاِنَّ لَهُ مَع۪يشَةً ضَنْكًا وَنَحْشُرُهُ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ اَعْمٰى ﴿١٢٤﴾

124- "Kim de beni anmaktan yüz çevirirse, şüphesiz ona dar bir hayat vardır. Kıyamet günü de onu kör olarak haşrederiz."

Kâfir, Allah'ı anmaktan büsbütün yüz çevirdiği zaman onun için dünyada, kabirde ve cehennemde dar bir hayat vardır. Ayrıca küfrün yol açtığı yalnızlık bakımından kalben, işlerin çıkmaza girmesi bakımından da hal ile darlık içinde olur.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Kim ki uyum yoluna girmekten yüz çevirirse, üstüne türlü perişanlıklar yığılır. Kim de Allah'ı kalben sürekli anmaktan yüz çevirirse, kalbin tefrika içinde oluşundan dolayı başına, kendisini her türlü huzurdan yoksun bırakacak şeyler peş peşe gelir. Allah'ın zikriyle ünsiyet bulmaktan yüz çeviren kimseye gelince, onun üzerine kendisini manen yalnızlaştıran, rahatlık ve iç ferahlığının kapılarının kapanmasına yol açan şeytan vesveseleri ve nefsin gizli telkinleri açılır.

- Kim halvette Allah'ın zikrinden yüz çevirirse, Allah zahirde ona öyle kötü bir arkadaş musallat kılar ki kalben kabz hali yaşamasına ve yalnızlığın hakimiyeti altına girmesine yol açar.

قَالَ رَبِّ لِمَ حَشَرْتَن۪ٓي اَعْمٰى وَقَدْ كُنْتُ بَص۪يرًا ﴿١٢٥﴾ قَالَ كَذٰلِكَ اَتَتْكَ اٰيَاتُنَا فَنَس۪يتَهَا وَكَذٰلِكَ الْيَوْمَ تُنْسٰى ﴿١٢٦﴾

125, 126- "O da der ki: 'Rabbim! Dünyada gören bir kimse olduğum halde, neden beni kör olarak haşrettin?' Allah: 'İşte böyle. Bizim de sana ayetlerimiz geldi ve sen onları unuttun. Bugün de aynı şekilde sen unutuluyorsun.'"

Yapılan bir rivayette şöyle denilmiştir:

*"Kim, dünyada hangi halde idiyse, Allah'ın huzuruna o halde çıkar."*

Bu itibarla, kimin dünyada kalbi kör idiyse, o bu durumu üzere haşrolunur. Kim de cehalet üzere yaşarsa, cehalet üzere haşrolunur. Nitekim onlar bu nedenle şöyle derler:

( مَنْ بَعَثَنَا مِنْ مَرْقَدِنَا ) *"Kim bizi diriltip kabrimizden gönderdi?"* (Yâsîn, 36/52)

Bunlar, bilgileri zorunlu hale gelsin diye olmaktadır. Bir de nasıl ki onlar, bugün Allah'ın ayetlerini düşünmeyi terk ediyorlarsa, aynı şekilde yarın da güçsüz hallerine rağmen merhamet edilmeksizin azapta terk edilirler.

وَكَذٰلِكَ نَجْز۪ي مَنْ اَسْرَفَ وَلَمْ يُؤْمِنْ بِاٰيَاتِ رَبِّه۪ وَلَعَذَابُ الْاٰخِرَةِ اَشَدُّ وَاَبْقٰى ﴿١٢٧﴾

127- "Haddi aşan ve Rabbinin ayetlerine iman etmeyenleri işte böyle cezalandırırız. Şüphesiz ahiret azabı, daha şiddetli ve daha kalıcıdır."

Allah herkese haline uygun şekilde karşılık vermeyi prensip edinmiştir. Böylece kişi, önceden kendisi için işlediği amelin akıbetiyle karşılaşacaktır. İyi amelinin karşılığı hayır, kötü amelinin karşılığı ise şer olacaktır.

اَفَلَمْ يَهْدِ لَهُمْ كَمْ اَهْلَكْنَا قَبْلَهُمْ مِنَ الْقُرُونِ يَمْشُونَ فٖي مَسَاكِنِهِمْ اِنَّ فٖي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِاُو۬لِي النُّهٰى ﴿١٢٨﴾

128- "Yurtlarında dolaşıp durdukları, kendilerinden önceki nice nesilleri helak etmiş olmamız, onları doğru yola iletmedi mi? Şüphesiz bunda akıl sahipleri için ibretler vardır."

Yani onlar bakıp düşünmüyorlar mı? Sonra farkına vardıklarında ibret almıyorlar mı? İbret aldıklarında da sakınmıyorlar mı? Yoksa onlar, gafletlerinin meydanlarında yüzüstü debelenip kötü muamelelerinden dönüş yapmıyorlar mı? Haberiniz olsun, yaptıkları kötüdür!

وَلَوْلَا كَلِمَةٌ سَبَقَتْ مِنْ رَبِّكَ لَكَانَ لِزَامًا وَاَجَلٌ مُسَمًّى ﴿١٢٩﴾

129- "Rabbin tarafından daha önce söylenmiş bir hüküm ve belirlenmiş bir süre olmasaydı, onlar da hemen cezalandırılırlardı."

Eğer Allah'ın bu ümmetin azabının erteleneceğine ve bir grup velinin onların zürriyetinden olacağına dair hükmünü ifade eden sözü daha önce söylenmemiş olsaydı, onların cezalarını çabuklaştıracaktı. Lakin tıpkı anlattığı haller gibi onlara belli bir süre mühlet vermiş, ancak onları asla ihmal etmemiştir.

Bu arada bazıları için saadet sözü, diğer bazıları için de mutsuzluk sözü önceden söylenmiş ve bütün varlıklarla ilgili bilgi kesinleşmiş olduğuna göre çaba harcamak, çalışmak, köşeye çekilmek ve gayret sarf etmek gibi hususlar ne fayda verir? Ne var ki olup bitenler de kaderin bir parçasıdır.

فَاصْبِرْ عَلٰى مَا يَقُولُونَ وَسَبِّحْ بِحَمْدِ رَبِّكَ قَبْلَ طُلُوعِ الشَّمْسِ وَقَبْلَ غُرُوبِهَا وَمِنْ اٰنَآئِ الَّيْلِ فَسَبِّحْ وَاَطْرَافَ النَّهَارِ لَعَلَّكَ تَرْضٰى ﴿١٣٠﴾

130- "O halde onların söylediklerine sabret ve güneşin doğuşundan önce de batışından önce de Rabbinin hamdı ile tespihte

bulun. Gece vakitlerinde ve gündüzün uçlarında da tespihte bulun ki hoşnut olasın!"

Eziyeti duymak sıkıntıya yol açtığından Allah, Hz. Peygamber'in (s.a.v.), onların dediklerini duymaktan yaşadığı sıkıntıyı üzerinden kaldırmış ve kendisine şunu emretmiştir: Şayet onların söyledikle-rini duymak seni sıkıntıya sokuyorsa, bizi övdüğün tespihimiz de seni rahatlatır.

( قَبْلَ طُلُوعِ الشَّمْسِ ) *"Güneşin doğuşundan önce."*

Yani günün başında tespih et ki, Allah sana gününü mübarek kılsın ve sabahın huzurlu olsun.

( وَقَبْلَ غُرُوبِهَا ) *"Batışından önce."*

Yani gündüzün sonuna doğru da Allah'ı tespih et ki gecen gü-zel, akşamın da huzurlu olsun.

( اٰنَآئِ الَّيْلِ ) *"Gece vakitlerinde."*

Yani gece saatlerinde tespihte bulun. Çünkü Allah'ın zikrindeki tam safiyet, halvet halinde olur.

( وَاَطْرَافَ النَّهَارِ ) *"Gündüzün uçlarında."*

Yani bütün hallerinde Allah'ın zikrini devam ettir.

وَلَا تَمُدَّنَّ عَيْنَيْكَ اِلٰى مَا مَتَّعْنَا بِهٖٓ اَزْوَاجًا مِنْهُمْ زَهْرَةَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا
لِنَفْتِنَهُمْ فٖيهِ وَرِزْقُ رَبِّكَ خَيْرٌ وَاَبْقٰى ﴿١٣١﴾

131- "Onlardan bazı kesimlere, kendilerini sınamak için dünya ha-yatının süsü olarak verdiğimiz şeylere gözünü dikme. Rabbi-nin rızkı daha hayırlı ve daha kalıcıdır."

İhtiyaç duyulmayan hususlarda fazla görmek, tıpkı fazla konuş-mak gibi hastalıklı bir durumdur. Allah katında itibar ve kadir sahibi olan kimsenin bütün halleri hakkında Hakk'ın gayreti vardır. Çünkü Allah bu kimsenin tutum, davranış ve hallerinden hiçbir şeyi O'nun rızası olmayan yollarda heder etmesinden hoşnut olmaz.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Senden başkasını güzel bulduğu zaman gözlerim*
*Onları terbiye etmesini söylerim göz yaşlarıma*

Bir yoruma göre de Allah Hz. Peygamber'e (s.av.) dünya süsüne var gücüyle bakmaması konusunda edep dersi verince o, dünyadan sakınmak için yeryüzünde tek ayak üzerinde durdu. Ta ki Allah kendisine şöyle diyinceye kadar: "*Tâ. Hâ.*", yani ayağınla yere bas. Tek ayak üzerinde duracak ölçüde harcadığın bütün bu çaba ve bütün bu uzak duruş neye? Her iki ayağınla yere bas.

( زَهْرَةَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ) "*Dünya hayatının süsü olarak.*"

Bu ayette geçen "fitne", Hak'tan alıkoyan, sevgisi kalbe hakim olan, varlığı günah işlemeye cesaret ettiren -teşvik eden- ve yararlanılması, hakkı tanımayıp şımarmaya sebep olan şeydir.

( ورِزْقُ رَبِّكَ خَيْرٌ وَابْقٰى ) "*Rabbinin rızkı daha hayırlı ve daha kalıcıdır.*"

Rahmân'ın hoşnut olduğu az helal, O'nun gazabıyla birlikte olan çok haram ve dünyalıktan hayırlıdır.

Bir yoruma göre de Rabbini görmene vesile olan az varlık, sana Rabbini unutturan çok varlıktan hayırlıdır.

وَاْمُرْ اَهْلَكَ بِالصَّلٰوةِ وَاصْطَبِرْ عَلَيْهَا لَا نَسْـَٔلُكَ رِزْقًا نَحْنُ نَرْزُقُكَ
وَالْعَاقِبَةُ لِلتَّقْوٰى ﴿١٣٢﴾

132- "Aile fertlerine namazı emret, sen de sabırla ona devam et. Senden rızık istemiyoruz. Sana da biz rızık veriyoruz. Güzel akıbet takvaya bağlıdır."

Namaz, rızık kapısının anahtarıdır. Allah, fetihlerin kolaylaştırılması konusunda da ihtiyaç olduğunda kullarını namaza yönlendirmiştir.

Bir yoruma göre de namaz, kalplerin rızkıdır ve kalplerin şifası da ondadır. Nitekim nefsin azığı geri planda kaldığı zaman kalbin azığı güçlenir.

Bu arada Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) aile fertlerine namazı emretmesini, kendisinin de sabırla ona devam etmesini emretmiştir.

Öte yandan, ayetteki ( اصطبار ) "*istıbâr*" kelimesi sabırdan üstün olup, sahibinin acı duymaması aksine yükünün üzerinden alınması ve rahatlık içinde tutulması demektir.

( لَا نَسْئَلُكَ رِزْقًا ) "*Senden rızık istemiyoruz.*"

Yani biz seni kimsenin rızkıyla yükümlü kılmayız. Çünkü halkın etkisi olmaksızın rızkı veren Allah'tır. Bu itibarla, sana ve herkese rızık veren biziz.

( نَحْنُ نَرْزُقُكَ وَالْعَاقِبَةُ لِلتَّقْوٰى ) "*Sana da biz rızık veriyoruz. Güzel akıbet takvaya mahsustur.*"

Burada iki şey söz konusudur: Rızıkların varlığı ve Râzık'ı görmek. Bu çerçevede rızıkların varlığı nefislerin, Râzık'ı görmek de kalplerin güçlenmesine yol açar.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Avam rızıkların varlığıyla, havas da Rezzâk'ı görmekle yetinir.

- Allah: ( نَحْنُ نَرْزُقُكَ ) "*Sana da biz rızık veriyoruz*" buyurmakla, Hz. Peygamber'den (s.av.) rızkların çeşitleri arasında ayırım yapmayı gidermiştir. Çünkü şuhûd mertebesine erişip Allah'ın: ( نَحْنُ ) "*Biz*" sözünün hakikatini kavrayan kimsenin üzerinden, rızıklar arasında ayırım yapma eğilimi kalkar.

- Allah: "Biz" sözü ile fakirlerin, rızkın zaman zaman azalması veya gecikmesinden çektikleri sıkıntıyı hafifletmiştir.

( وَالْعَاقِبَةُ لِلتَّقْوٰى ) "*Güzel akıbet takvaya bağlıdır.*"

Yani güzel son, takva ehline mahsustur.

Bir yoruma göre de "takva"dan maksat, takvalı kimsedir. Zira bazen şahıs -takvalı-, mastar -takva- ile ifade edilebilmektedir.

وَقَالُوا لَوْلَا يَاْتِينَا بِاٰيَةٍ مِنْ رَبِّهِ اَوَلَمْ تَاْتِهِمْ بَيِّنَةُ مَا فِي الصُّحُفِ الْاُولٰى ﴿١٣٣﴾

133- "Dediler ki: 'Bize Rabbinden bir mucize getirse ya!' Önceki kitaplarda bulunanların apaçık delili onlara gelmedi mi?"

Basiretleri kapandı ve Hz. Peygamber'in (s.a.v.) yanında hiçbir delil bulunmadığını ileri sürdüler. Oysa delillerde kusur yoktu; fakat onların basiretlerinde arıza vardı. Hatta eğer Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) önerdikleri her türlü delili bir araya getirir de sonra iman etmelerini dilemeseydi, onların sadece azgınlıkları, küfürleri ve hüsranları artardı. Nitekim bu, geçmişlerinin peygamberlerini yalanlamada izledikleri yoldur.

Bu nedenle Allah şöyle buyurmuştur:

وَلَوْ اَنَّٓا اَهْلَكْنَاهُمْ بِعَذَابٍ مِنْ قَبْلِهِ لَقَالُوا رَبَّنَا لَوْلَٓا اَرْسَلْتَ اِلَيْنَا رَسُولًا فَنَتَّبِعَ اٰيَاتِكَ مِنْ قَبْلِ اَنْ نَذِلَّ وَنَخْزٰى ﴿١٣٤﴾

134- "Eğer biz, onları o Kur'ân'dan önce bir azapla helak etseydik, şöyle diyeceklerdi: 'Ey Rabbimiz! Keşke bize bir peygamber gönderseydin de, zelil ve rüsva olmadan önce ayetlerine uysaydık.'"

Onlara peygamberler göndersek, kendilerini türlü türlü inkâr ve bahanelerle karşılarlar. Bir kere şöyle derler: "Bu peygamber neden beşerdir? Neden Allah onu bir melek olarak göndermedi?" Şayet bir melek gönderseydik, bu kez: "Neden bize bizim gibi bir beşer göndermedi?" derlerdi. Eğer karşılarına bir mucize çıkarsaydık: "Bu, iftira olarak uydurulmuş bir sihirdir" diyeceklerdi. Onları peygambersiz bırakıp hak ettikleri ceza ile kendilerine muamele et-

seydik, bu kez de derlerdi ki: "İman etmemiz için neden bize bir peygamber göndermedi?"

Böylece bahanelerinin sonu gelmez ve halleri, hoşnut olunmayacak hatalardan arınmaz. Zaten vuslata meyletmeyen ve dostluğu arzulamayan kimsenin yolu böyledir.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Böyledir yılgın kişinin durumu, kopmak istediği zaman*
*Usanır vuslattan ve: şöyle şöyle oldu, der*

قُلْ كُلٌّ مُتَرَبِّصٌ فَتَرَبَّصُوا فَسَتَعْلَمُونَ مَنْ اَصْحَابُ الصِّرَاطِ السَّوِيِّ وَمَنِ اهْتَدٰى ﴿١٣٥﴾

135- "De ki: 'Herkes beklemektedir. O halde siz de bekleyin. Yakında bileceksiniz kimin düzgün yolun yolcuları olduğunu ve kimin hidayete erdiğini.' "

Hepsi gelecekte ne olacağını beklemek üzere kesin bir delil elde etmeksizin olabilirlik noktasında durmaktadırlar. Ancak tefrika ehli, gök cisimlerinin hükmüne göre ortaya çıkacak ve tabiat kanunları ile yıldızların ortaya koydukları sonuçları beklerken Müslümanlar, ortaya çıkacak olan ilahî mukadderatı beklerler. Bu itibarla Müslümanlar tevhidin huzuru, kalanlar ise şirkin karanlıkları içindedirler.

سورة الْأَنْبِيَاءِ

# ENBİYÂ SÛRESİ

(Enbiyâ Sûresi, 112 âyettir. Mekke'de inmiştir. Başka konular yanında özellikle bazı peygamberler ve onların kavimleriyle olan mücadelelerinden söz ettiği için sûre bu adı almıştır. "Enbiyâ" kelimesi nebî'nin çoğulu olup peygamberler demektir. Bağımsız bir kitapla gelmeyen ve önceki peygamberin getirdiği şeriata tabi olarak görev üstlenen peygambere nebî dendiği gibi, Hz. Musa, İsa ve Muhammed (a.s.) gibi bağımsız bir kitapla gönderilen peygamberlere "rasûl" denmesi yanında, aynı zamanda "nebî" de denir. Yani her rasûl bir nebîdir, ama her nebî bir rasûl değildir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

## Rahmân ve Rahîm Olan Allah'ın Adıyla

Besmele, öyle aziz bir varlığın adıdır ki, kim taatiyle O'na tevessül ederse, güzel nimetiyle kendisine lütufta bulunur. Eğer kul O'na itaat ederse, lütfuyla onu üstün kılar. Şayet kulluk vazifesini heder ederse, ona mühlet verir. Sonra eğer kul dönüş yaparak itaati kabul ederse, onu anar. Şayet kul isyan edip ayıplarsa, Allah onu örter. Şayet kul, bu tutumdan yakasını kurtarırsa Allah ona merhamet eder. Eğer kibirlenirse, Allah onu helak eder.

Besmele öyle aziz bir varlığın adıdır ki, zahirler ancak O'nun muvaffakiyet vermesinin etkileriyle ışık alır. Sırlar da ancak O'nun hakikati bahşetmesiyle aydınlanır. Abidler, O'nun muvaffakiyetiyle mücahedelerine ulaşmış, arifler O'nun hakikati bahşetmesiyle

müşahedelerinin kemalini bulmuşlardır. Ayrıca abidler, mücahedelerinin tam oluşuyla ahiretteki sevaplarını bulmuş, arifler de müşahedelerinin devamlılığıyla dünyadaki yakınlık makamına ermişlerdir.

اِقْتَرَبَ لِلنَّاسِ حِسَابُهُمْ وَهُمْ فِي غَفْلَةٍ مُعْرِضُونَ ﴿١﴾

1- "İnsanların hesabı yaklaştı. Oysa onlar, gaflet içinde yüz çevirmektedirler."

Onlardan itaat edenlerin, katımızda sevapları büyümüş, asi olanlarının ise bizden azap görmeleri hak olmuştur.

( وَهُمْ فِي غَفْلَةٍ ) *"Gaflet içinde."*

Bir yoruma göre gaflet iki kısımdır: Kimisi, dünyasında ve nefsinin arzularında gark olduğu için hesabından gafil kalır. Kimisi de Mevlâ'sında fenâya erdiği için hesabından habersizdir. Bu itibarla birinci gaflet hicran alameti, ikinci gaflet ise vuslatın vasfıdır. Birinci gruptakiler ancak ölüm baygınlığıyla gafletlerinden uyanırken diğerleri, Hakk'ın varlığında fenâ buldukları için bu yolculuklarından ebediyen dönmezler.

مَا يَأْتِيهِمْ مِنْ ذِكْرٍ مِنْ رَبِّهِمْ مُحْدَثٍ اِلَّا اسْتَمَعُوهُ وَهُمْ يَلْعَبُونَ ﴿٢﴾

2- "Rablerinden kendilerine bir uyarı geldikçe, mutlaka alay ederek onu dinlerler."

Allah, onlara yeni bir peygamber gönderdikçe muhakkak nefretleri arttı, onlara bir hitap indirdikçe muhakkak onu, inkâr ve yalanlamayla geri çevirdiler. Onlara lütfumuzu artırdıkça muhakkak onu şaka sandılar, onlara nimetimizi yeniledikçe muhakkak ceza hak edecekleri işler yaptılar. Böylece kendilerine ikram olarak verdiklerimiz, onları imtihan etmemiz için bir sıkıntıya dönüştü. Bu ise Allah'a karşı kötü ahlak sergileyen ve Allah katında hakkını kaybeden kimsenin vasfıdır.

لَاهِيَةً قُلُوبُهُمْ وَاَسَرُّوا النَّجْوٰى اَلَّذٖينَ ظَلَمُوا هَلْ هٰذَٓا اِلَّا بَشَرٌ مِثْلُكُمْ اَفَتَاْتُونَ السِّحْرَ وَاَنْتُمْ تُبْصِرُونَ ﴿٣﴾

3- "Onlar bunu, kalpleri gafil olarak yaparlar. Zulmedenler de gizlice şunu söylediler: 'Bu da sadece sizin gibi bir beşerdir. Şimdi siz, göz göre göre büyüye mi geleceksiniz?'"

Basiretleri körleşti ve anlayışları kapandı. Bu halleriyle onlar, idraksizlik içinde olup görmezler. Kendilerine gösterilen dosdoğru delillere karşı da örtüler içinde oldukları için bilmezler.

(وَاَسَرُّوا النَّجْوٰى اَلَّذٖينَ ظَلَمُوا) *"Zulmedenler de gizlice şunu söylediler."*

Onlar, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) karşı koyamayınca ve meydan okuduğunda kendilerini hezimete uğratıp delili onlara üstünlük sağlayınca, hakkında tahmine dayalı fikir yürüttüler ve çeşitli zanlarda bulundular. Bu amaçla bazen onu sihirle ilişkili kıldılar, bazen şiir söylemekle nitelediler, bazen de ona delilik ve türlü tülü kusurlar isnat ettiler. Oysa daha önce ondan: "Güvenilir Muhammed" diye söz ederlerdi.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Yaydılar hakkımızda kabilede en çirkin hikâyeyi*
*Ve düşman kesiliverdiler, bizimle barışık iken*

قَالَ رَبّٖي يَعْلَمُ الْقَوْلَ فِي السَّمَٓاءِ وَالْاَرْضِ وَهُوَ السَّمٖيعُ الْعَلٖيمُ ﴿٤﴾

4- "Peygamber, onlara dedi ki: 'Rabbim, yerdeki ve gökteki her sözü bilir. Hakkıyla bilen ve işiten de O'dur.'"

Hakk'ın işittiği sözler değişiktir. Bunların bazısı, onların birbirleriyle konuştukları, bir kısmı da Allah ile konuştuklarıdır. Allah ile konuşanlardan da kimisi dünyayı istemekte, kimisi ahiretin değerli nimetlerini isteyerek dua etmekte, kimisi de ne dünyadan ne de ahiretten hiçbir şey arzulamaksızın Allah'a sena etmektedir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, günahkârların iniltisini, rezil olmamaları için halktan saklı olarak, abidlerin münacatını gece namazı kıldıklarında tespih vasfıyla, sevenlerin yakınmalarını da aşırı sevgiden çığlık attıkları zaman işitmektedir.

- Allah, kendisine münacatta bulunan kimsenin hitabını karşılıklı sır halinde işitmektedir. Aynı şekilde, O'na sırrının diliyle övgü ve senada bulunan kimsenin tesbihini de böyle işitir.

بَلْ قَالُوٓا اَضْغَاثُ اَحْلَامٍ بَلِ افْتَرٰيهُ بَلْ هُوَ شَاعِرٌ فَلْيَأْتِنَا بِاٰيَةٍ كَمَآ اُرْسِلَ الْاَوَّلُونَ ﴿٥﴾

5- "Onlar şöyle dediler: 'Bunlar, karışık rüyalardır. Daha doğrusu onu kendisi uydurmuştur. Aslında o bir şairdir. Değilse, tıpkı önceki peygamberlerin gönderildikleri gibi o da bize bir mucize getirsin.'"

Biz Peygamber'e emri indirdikten sonra onlar, durdukları yerden ona çeşitli şeyler nispet ettiler ve daha önce kendisini niteledikleri özünde ve sözündeki dürüstlük vasfına uygun himmetlerini göremediler.

Tıpkı şu dizede olduğu gibi:

*Bulaştırdı bana hastalığını ve sıyrıldı aradan*

مَآ اٰمَنَتْ قَبْلَهُمْ مِنْ قَرْيَةٍ اَهْلَكْنَاهَا اَفَهُمْ يُؤْمِنُونَ ﴿٦﴾

6- "Onlardan önce helak ettiğimiz hiçbir memleket iman etmedi. Hal böyleyken onlar mı iman edecekler?!"

Allah prensibini, ne o anda ne de daha sonra iman etmeyeceği durumundan belli olan kimseyi cezalandırmak şeklinde koyduğunu bildirmiştir. Hz. Peygamber (s.a.v.) zamanında o kâfir olan kimseler de küfürde daha öncekiler gibidirler. Bunlar hakkında ise Allah, mahrumiyet ve perişanlığa hükmetmiştir.

وَمَٓا اَرْسَلْنَا قَبْلَكَ اِلَّا رِجَالًا نُوحٖٓي اِلَيْهِمْ فَسْـَٔلُوٓا اَهْلَ الذِّكْرِ اِنْ كُنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ﴿٧﴾

7- "Senden önce de biz, sadece kendilerine vahiy indirdiğimiz bazı adamları peygamber olarak gönderdik. Şayet bilmiyorsanız, zikir ehline sorun."

Onlar: "Neden bize melekler indirilmiyor?" deyince Allah, geçmiş zamanlarda ve devirlerde de insanlara beşerden başka herhangi bir peygamber göndermediğini bildirerek onların özelliğinin de Allah'ın kendilerini peygamber olarak göndermesi olduğunu anlatmıştır.

Sonra Allah şöyle buyurdu:

( فَسْـَٔلُوٓا اَهْلَ الذِّكْرِ اِنْ كُنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ) *"Şayet bilmiyorsanız, zikir ehline sorun."*

Hitap herkese olmakla birlikte kast edilen Hz. Peygamber'in (s.a.v.) ümmetidir. Zikir ehli ise bu ümmetin büyüklerinden olan âlimler ve peygamberimize iman edenlerdir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Zikir ehli, Allah'ı anlayan ve O'ndan haber verme makamında olan ilham sahipleri veya Allah'ı güzel anlatan kimselerdir.

- Âlim, muamelat ve ibadetler konusunda Allah'ın dediğine başvurur. Olay çözümsüz kaldığı zaman ise o konudaki içtihadını dile getirir. Bunun şartı mukallit değil, içtihat ehlinden olmasıdır. Bu âlim, nassa aykırı davranmayıp içtihadı, dinin sıhhati kesin olan bir prensibine aykırı olmadığı zaman fetvası kabul edilir.

Hikmet ehli olan kimseye gelince, muamelat konusunda konuştuğu zaman sadece kendisiyle fetva verilebilen -müftâbih- bir görüş için daha önce mücadele etmiş ise sözü kabul edilir. Şayet daha önce böyle bir mücadelesi olmamışsa, bu tarikatın anlayışına göre fetvası, mukallidin şer'î meseleler hakkındaki fetvası gibidir.

Arife gelince, bu tarikatın anlayışına göre; onun şayet varsa sadece kendi vecdinden söz etmesi gerekir. Yoksa fetvası ne kabul edilir ne de dinlenir.

وَمَا جَعَلْنَاهُمْ جَسَدًا لَا يَأْكُلُونَ الطَّعَامَ وَمَا كَانُوا خَالِدِينَ ﴿٨﴾

8- "Biz peygamberleri, yemek yemeyen birer ceset olarak yaratmadık. Onlar, ölümsüz de değillerdi."

Onlar, Hz. Peygamber'i (s.a.v.): "Bu ne biçim peygamber ki yemek yer?" diyerek ayıplayınca Allah, yemek yemenin, büyüklere mahsus özellikle çelişmediğini bildirdi. O halde yemek yemek ile kalplerde ve sırlarda saklı olan marifet şekilleri arasında hiçbir çelişki bulunmamaktadır.

Bir yoruma göre de nefisler kalplerin hallerinden hiç haberdar değilken kalpler de ruhun ve ruhtan üstün ve ondan daha latif olan sırrın yaşadığı hakikatlerden haberdar değildir.

( وَمَا كَانُوا خَالِدِينَ ) *"Onlar, ölümsüz de değillerdi."*

Yani onlar da gelip geçerler. Bugün hiçbir mahlûkun ebedî olması mümkün değildir.

ثُمَّ صَدَقْنَاهُمُ الْوَعْدَ فَاَنْجَيْنَاهُمْ وَمَنْ نَشَآءُ وَاَهْلَكْنَا الْمُسْرِفِينَ ﴿٩﴾

9- "Sonra onlara verdiğimiz sözü yerine getirdik. Böylece kendilerini ve dilediğimiz kimseleri kurtardık. Müsrifleri ise helak ettik."

Gerçekleşmesi zaman alsa da Allah, olacağını bildirdiği bir konuda vaadini gerçekleştirir. Bu arada hak ehline söz verilmiş olan ilahî yardım, ancak din kelimesinin yüceltilmesi, hakka karşı çıkan inkârcıların zelil kılınması, bunun açıklama ve delille gerçekleştirilmesi, delilin gerekçesini izah etmek ve şüphe ehlinin hatasını gün yüzüne çıkarmakla olur.

لَقَدْ اَنْزَلْنَٓا اِلَيْكُمْ كِتَابًا فِيهِ ذِكْرُكُمْ اَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿١٠﴾

**10- "Andolsun, size içinde şeref ve yerinizin olduğu bir kitap indirdik. Hâlâ anlayıp düşünmez misiniz?"**

Allah, kitapla Kur'ân'ı kast etmektedir. İçindeki zikirden maksat da şeref ve yerdir. Bu itibarla kim, ondaki nurla basiret sahibi olmaya çalışırsa dünyasında ve ahiretinde mutlu olur.

وَكَمْ قَصَمْنَا مِنْ قَرْيَةٍ كَانَتْ ظَالِمَةً وَاَنْشَأْنَا بَعْدَهَا قَوْمًا اٰخَرِينَ ﴿١١﴾

**11- "Biz, zalim olan nice memleketi kırıp geçirdik ve onlardan sonra başka kavimler meydana getirdik."**

Şüphesiz Allah zalime bir süre mühlet verir ancak onu kahir ve intikamla yakalar. Nitekim Allah, zalimlerin meskenlerini harap etmeye hükmetmiştir. Bir hadis de şöyledir:

*"Eğer zulüm cennette bir ev olsaydı, şüphesiz yıkıma uğratılırdı."*

Bu nedenle kul nefsine zulmettiği zaman, Allah muvaffakiyetin onda yer edinmesini haram kılar ve onu perişanlığın yurdu haline getirir. Kul, gafletle kalbine zulmettiği zaman da Allah ona, şeytanın vesveselerinden ve günahkârlığın sebeplerinden ibaret olan kötü hisler musallat eder. Azlık ve çoklukta da durum buna kıyaslanır. Yani, ruh harap olduğu zaman hakikatler ve sevgiler onu terk eder, dünyalık gaileler ve tatminler kendisine hakim olur.

فَلَمَّٓا اَحَسُّوا بَأْسَنَٓا اِذَا هُمْ مِنْهَا يَرْكُضُونَ ﴿١٢﴾

**12- "Onlar, azabımızı hissedince, ansızın oradan kaçtıklarını görürsün."**

Onlar, fiillerinin vebalini tadıp hallerinde ıstıraba düşünce pişmanlıkları kendilerine fayda vermedi ve bir daha yürüyerek yerlerine dönemediler. Hainliğin ortaya çıkmasından sonra güven kabul edilmez.

لَا تَرْكُضُوا وَارْجِعُوٓا اِلٰى مَآ اُتْرِفْتُمْ فِيهِ وَمَسَاكِنِكُمْ لَعَلَّكُمْ تُسْـَٔلُونَ ﴿١٣﴾

13- "Kaçmayın! İçinde şımartıldığınız bolluğa ve yurtlarınıza dönün. Çünkü sorguya çekileceksiniz."

Hainliğin kalıcılığı ve bulaşıcılığı vardır. Bu nedenle hainlik meydana geldiği zaman durmadan bulaşır. Gemi de battığı zaman kaptanın elinden ah vah etmekten başka bir şey gelmez. Bunun fayda vermesi ise imkânsızdır.

قَالُوا يَا وَيْلَنَآ اِنَّا كُنَّا ظَالِمِينَ ﴿١٤﴾

14- "Dediler ki: 'Eyvah bizlere! Gerçekten biz zalim kimseler idik.'"

İtirafın bir zamanı vardır. Zamanı geçtiğinde tıpkı şu atasözlerinde denildiği gibi olur:

- İş işten geçti.
- Ok yaydan çıktıktan sonra yayı bırakmanın hiçbir anlamı yoktur.

فَمَا زَالَتْ تِلْكَ دَعْوٰيهُمْ حَتّٰى جَعَلْنَاهُمْ حَصِيدًا خَامِدِينَ ﴿١٥﴾

15- "Biz onları biçilmiş ekine, sönmüş ateşe çevirinceye kadar bu feryatları sürüp gitti."

Şüphesiz kişinin şikâyet ederken dinlenmemesi, ağlamasının fayda vermemesi, yaklaşırken uzaklaştırılması, hastalanırken ziyaret edilmemesi ve özür dilerken özrünün kabul edilmemesi beladandır. Belanın son noktası ise telef olmaktır.

وَمَا خَلَقْنَا السَّمَآءَ وَالْاَرْضَ وَمَا بَيْنَهُمَا لَاعِبِينَ ﴿١٦﴾

16- "Biz yeri, göğü ve arasındakileri oyun olsun diye yaratmadık."

Oyun, doğru olanın dışına çıkan, fiiliyle zevklerin peşine düşen ve ciddiyetsizliğin ipinde sürüklenen kimsenin vasfıdır. Oysa Hakk'ın hakkı, bu cümleden münezzehtir.

لَوْ اَرَدْنَٓا اَنْ نَتَّخِذَ لَهْوًا لَاتَّخَذْنَاهُ مِنْ لَدُنَّا اِنْ كُنَّا فَاعِلٖينَ ﴿١٧﴾

17- "Eğer bir eğlence edinmek isteseydik, onu kendi katımızdan edinirdik. Yapacak olsaydık böyle yapardık."

Allah, insanlara anlama kabiliyetlerine göre hitap etmektedir. Yoksa yanılgıya maruz kalmayanı eğlence tahrik etmez. Hakk da ne yanılgıya maruz kalır ne de ona benzeyen bir dengi vardır.

بَلْ نَقْذِفُ بِالْحَقِّ عَلَى الْبَاطِلِ فَيَدْمَغُهُ فَاِذَا هُوَ زَاهِقٌ وَلَكُمُ الْوَيْلُ مِمَّا تَصِفُونَ ﴿١٨﴾

18- "Aksine biz, hakkı bâtılın üstüne atarız da onu yok eder. Bir de bakarsın yok olup gitmiştir. Allah'a yakıştırdığınız nitelemelerden dolayı vay halinize!"

Biz, hakikat gündüzünü evham gecelerinin üstüne koyarız ve böylece belirsizlik bulutu dağılır, evham sisi kalkar, inanç güneşi ışık verir ve gerçeklerin seması, töhmetlerin bütün tozundan temizlenmiş olur.

وَلَهُ مَنْ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَمَنْ عِنْدَهُ لَا يَسْتَكْبِرُونَ عَنْ عِبَادَتِهٖ وَلَا يَسْتَحْسِرُونَ ﴿١٩﴾

19- "Göklerde ve yerde kim varsa O'nundur. O'nun katındakiler, ne O'na ibadetten çekinirler ne de yorulurlar."

Olan bitenler O'nun mülküdür, kâinat da O'nun hükmü altındadır. Aynı zamanda Allah, birilerinin uymasıyla güzelleşmekten ve birilerinin karşı çıkmasıyla eksilmekten münezzehtir. Kaldı ki

her şey kaderle ortaya çıkmakta ve söz -mukadderat-, ilahi tercihe göre yönlenmektedir.

يُسَبِّحُونَ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ لَا يَفْتُرُونَ ﴿٢٠﴾

20- "Onlar, usanmaksızın gece gündüz tespih ederler."

Kendi iradesiyle Allah'a itaat eden kimse, O'nu doğru sözle -içten- tespih eder. Ayrıca bütün yaratıkların tespihi, yaratılışın delaleti ve apaçık burhanla olmaktadır.

اَمِ اتَّخَذُوٓا اٰلِهَةً مِنَ الْاَرْضِ هُمْ يُنْشِرُونَ ﴿٢١﴾

21- "Yoksa yerden, ölüleri diriltecek birtakım ilahlar mı edindiler?"

Allah, yaratmada ve yoktan var etmede tek olup emsal ve benzerlerden münezzehtir. Bu nedenle O'nun dışında tapılanlar diri değil, ölüdürler. Bir de zorunlu olarak onlar tanınırlar. Hal böyleyken acaba onlar ibret almazlar mı, çekinmezler mi?

لَوْ كَانَ فِيهِمَآ اٰلِهَةٌ اِلَّا اللّٰهُ لَفَسَدَتَا فَسُبْحَانَ اللّٰهِ رَبِّ الْعَرْشِ عَمَّا يَصِفُونَ ﴿٢٢﴾

22- "Eğer yerde ve gökte Allah'tan başka ilahlar olsaydı, ikisinin de düzeni bozulurdu. Demek ki Arş'ın Rabbi olan Allah, onların nitelemelerinden münezzehtir."

Allah, çok el giren hiçbir şeyin düzen içerisinde yürümeyeceğini bildirmektedir. Çünkü aralarında kavga ve anlaşmazlık meydana gelmektedir. Kâinatın işlerindeki tertip yeknesak olduğundan bu, işlerdeki düzenin tek bir tedbir ve hikmet sahibinin takdiriyle meydana geldiğini göstermektedir. Yüksekliğiyle gökyüzünün sistemleri, onları tutacak hiçbir dayanakları bulunmadığı halde düzen içinde yürümektedir. Yeryüzü, gece ve gündüzü düzenli olarak

birbirini izlerken, bütün bölgeleri itibariyle istikrar içerisindedir. Güneş, ay ve gezegenler burçlarda dönüp durmakta, gökyüzü yarılmadan genişlemektedir. İşte bu, aziz ve sonsuz ilim sahibi olan Allah'ın takdirinin bir göstergesi ve birliğinin bir delilidir.

لَا يُسْـَٔلُ عَمَّا يَفْعَلُ وَهُمْ يُسْـَٔلُونَ ﴿٢٣﴾

23- "Allah, yaptığından dolayı sorgulanamaz; fakat onlar sorgulanırlar."

Allah sorgulanamaz; çünkü halk O'nundur. Oysa onlar sorgulanırlar çünkü üzerlerinde O'nun bağlayıcı hakkı vardır.

اَمِ اتَّخَذُوا مِنْ دُونِه۪ٓ اٰلِهَةًۜ قُلْ هَاتُوا بُرْهَانَكُمْۚ هٰذَا ذِكْرُ مَنْ مَعِيَ
وَذِكْرُ مَنْ قَبْل۪يۜ بَلْ اَكْثَرُهُمْ لَا يَعْلَمُونَۙ الْحَقَّ فَهُمْ مُعْرِضُونَ ﴿٢٤﴾

24- "Yoksa Allah'tan başka birtakım ilahlar mı edindiler! De ki: 'Haydi getirin delilinizi! İşte benimle beraber olanların kitabı ve işte benden öncekilerin kitabı. Doğrusu onların çoğu, hakkı bilmedikleri için yüz çevirirler.'"

Ayet, taklitle hükmetmenin geçersizliğini ve hüccet ve delil ortaya koymanın gerekliliğini göstermektedir. Ayet, aynı zamanda mabudun birliğini ve kul için kesbin varlığını ifade etmektedir. Çünkü eğer kulların kesbi olmazsa, onlara sitem ve itapta bulunman gerekçesiz olmaz. Öte yandan her kim kalbini bir mahlûka bağlar veya Allah'tan başkasının bir şey var edeceğini vehmederse, o da Allah'tan başka ilahlar edinenler güruhuna dahil olur. Çünkü ilah, var edebilen kimse demektir.

( هٰذَا ذِكْرُ مَنْ مَعِيَ وَذِكْرُ مَنْ قَبْل۪ي ) *"İşte benimle beraber olanların kitabı ve işte benden öncekilerin kitabı."*

Bu ifade dinin, Hakk'ı bir bilmek ve Rabbi teklik vasfı ve birlik sıfatı üzere bir kabul etmek olduğuna işaret etmektedir.

( بَلْ اَكْثَرُهُمْ لَا يَعْلَمُونَ الْحَقَّ فَهُمْ مُعْرِضُونَ ) *"Doğrusu onların çoğu, hakkı bilmedikleri için yüz çevirirler."*

Bilmemelerinin sebebi, bakıp düşünmekten yüz çevirmeleridir. Şayet düşünme yeteneklerini yerli yerinde kullansalardı, ister istemez ilim sahibi olacaklardı. Bu arada delil getirilmesine dair emir de fikir yürütmenin gerekliliğini ve bütün dinî ilimlerin kesbin ürünü olduğunu göstermektedir.

وَمَٓا اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ مِنْ رَسُولٍ اِلَّا نُوحٖٓي اِلَيْهِ اَنَّهُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّٓا اَنَا فَاعْبُدُونِ ﴿٢٥﴾

25- "Senden önce gönderdiğimiz her peygambere mutlaka şunu vahyettik: 'Benden başka hiçbir ilâh yoktur. O halde bana ibadet edin.'"

Her dinde tevhid aynıdır ve kendisine peygamber gönderilen kimseye ibadet vaciptir. Ancak fiiller, nesih ve değişikliğe maruzdur. Tevhid ve ona ulaşmanın yolunda ise nesih ve değişiklik caiz değildir.

وَقَالُوا اتَّخَذَ الرَّحْمٰنُ وَلَدًا سُبْحَانَهُ بَلْ عِبَادٌ مُكْرَمُونَ ﴿٢٦﴾

26- "Dediler ki: 'Rahmân çocuk edinmiştir.' O, bundan münezzehtir. Doğrusu o melekler, değerli kullardır."

Ayette, dalalet ve bidat ehli kimselerin iddialarının, reddedilmek, iç yüzleri ortaya çıkarılmak ve hata işledikleri noktalara dikkat çekilmek üzere anlatılabileceğine dair ruhsat vardır. Bir de şeytan bir kimseye kendinden bir vesvese verse, bu vesvese girişimi o kimsenin şeytanı terk ettiğine dair delil olur.

لَا يَسْبِقُونَهُ بِالْقَوْلِ وَهُمْ بِاَمْرِهٖ يَعْمَلُونَ ﴿٢٧﴾

27- "Onlar, Allah'tan önce söz söylemezler ve O'nun emriyle amel ederler."

Allah, meleklerin O'nun emrine muhalefetten masum olduklarını ve üzerlerine vacip olan hiçbir konuda kusur işlemediklerini bildirmektedir.

يَعْلَمُ مَا بَيْنَ اَيْدِيهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ وَلَا يَشْفَعُونَ اِلَّا لِمَنِ ارْتَضٰى وَهُمْ مِنْ خَشْيَتِهِ مُشْفِقُونَ ﴿٢٨﴾

28- "Allah, onların önlerindekini de arkalarındakini de bilir. Onlar, O'nun razı olduğu kimselerden başkasına şefaat etmezler ve O'nun korkusundan titrerler."

Allah'ın kadim ilmi, bazı hususları dışarıda bırakıp sadece bazı hususlara taalluk etmez. Aksine O'nun ilmi, ilme konu olan her şeyi kapsar. Bu nedenle ilme konu olan hiçbir şey ilminin dışında kalamaz.

( وَلَا يَشْفَعُونَ اِلَّا لِمَنِ ارْتَضٰى ) *"Onlar, O'nun razı olduğu kimselerden başkasına şefaat etmezler."*

Bu söz onların bazı kimselere şefaat ettiklerini ve Allah'ın, onların şefaatlerini kabul ettiğini ifade etmektedir.

( وَهُمْ مِنْ خَشْيَتِهِ مُشْفِقُونَ ) *"O'nun korkusundan titrerler."*

Onların hiçbir günahları yoktur sonra da korkarlar. O halde ayette, Allah'ın onları cezalandırdığına ve bunun caiz olduğuna dair delil vardır. Şayet Allah'ın suçsuzu cezalandırması caiz olmasaydı, onlar hata işlemediklerini bildikleri için Allah'tan korkmayacaklardı.

وَمَنْ يَقُلْ مِنْهُمْ اِنّ۪ي اِلٰهٌ مِنْ دُونِه۪ فَذٰلِكَ نَجْز۪يهِ جَهَنَّمَ كَذٰلِكَ نَجْزِي الظَّالِم۪ينَ ﴿٢٩﴾

29- "Onlardan her kim: 'Şüphesiz ben de, Allah'tan başka bir ilâhım' derse, biz onu cehennemle cezalandırırız. İşte biz, zalimlere böyle ceza veririz."

Allah, her türlü hatadan yüz çevirdiklerini bildirdikten sonra:

( وَمَنْ يَقُلْ مِنْهُمْ اِنّ۪ٓي اِلٰهٌ مِنْ دُونِه۪ فَذ ) *"Onlardan her kim: 'Şüphesiz ben de Allah'tan başka bir ilâhım' derse"* buyurmuştur. Oysa Allah, bunu söylemeyeceklerini bilmektedir. Lakin Allah, aynı zamanda bunun olması halinde hükmünün ne olacağını da bilmektedir. Bu itibarla Allah, olmayan bir şeyin de olması halinde nasıl olacağını bilir.

اَوَلَمْ يَرَ الَّذ۪ينَ كَفَرُٓوا اَنَّ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ كَانَتَا رَتْقًا فَفَتَقْنَاهُمَا
وَجَعَلْنَا مِنَ الْمَٓاءِ كُلَّ شَيْءٍ حَيٍّ اَفَلَا يُؤْمِنُونَ ﴿٣٠﴾

30- "Kâfir olanlar, gökler ve yer bitişik iken onları ayırdığımızı ve canlı olan her şeyi sudan yarattığımızı görmediler mi! Hâlâ inanmazlar mı?"

Varlıkların yeniden yaratılması, kıyamet ve neşir konusunda içlerine şüphe girince, Allah onlara karşı delil ortaya koymak üzere şöyle buyurmuştur:

*"Onlar, gökleri ve yeri Allah'ın yarattığını ve göğü yükseltip yeri yaydığını bilmediler mi? Şimdi Allah, bunu yapabildiğine göre varlıkları yok ettikten sonra nasıl olur da onları tekrar yaratamaz!"*

( وَجَعَلْنَا مِنَ الْمَٓاءِ كُلَّ شَيْءٍ حَيٍّ اَفَلَا يُؤْمِنُونَ ) *"Canlı olan her şeyi sudan yarattığımızı görmediler mi! Hâlâ inanmazlar mı?"*

Canlı olan her yaratık sudan yaratılmıştır. Çünkü tenasül yoluyla meydana gelen canlı varlığın aslı menidir ki o da su cümlesindendir.

Bu arada canların hayatı, gıda bakımından göğün suyuyla, kalplerin hayatı rahmet suyuyla, sırların hayatı ise tazim suyuyladır. Kimilerinin hayatı ise haya suyuyladır ki onlar çok azdır.

وَجَعَلْنَا فِي الْاَرْضِ رَوَاسِيَ اَنْ تَم۪يدَ بِهِمْ وَجَعَلْنَا ف۪يهَا فِجَاجًا
سُبُلًا لَعَلَّهُمْ يَهْتَدُونَ ﴿٣١﴾

31- "Onları sarsmasın diye yeryüzünde sabit dağlar meydana getirdik. Doğru gitsinler diye de yeryüzünde geniş yollar meydana getirdik."

Yeryüzündeki sabit dağlar velilerdir. Halk onlarla rızıklandırılır, bela onlarla üzerlerinden defedilir ve onlarla halka bolca lütufta bulunulur. Bir de nasıl ki sabit dağlar olmadığı takdirde yeryüzünün kazıkları olmayacaksa, aynı şekilde eğer yeryüzünün manevi kazıkları mesabesindeki şeyhler olmasaydı, halkın başına sıkıntı gelecekti.

( وَجَعَلْنَا فِيهَا فِجَاجًا سُبُلًا لَعَلَّهُمْ يَهْتَدُونَ ) *"Doğru gitsinler diye de yeryüzünde geniş yollar meydana getirdik."*

Nasıl ki yeryüzünde maksatlarına ulaşmaları için izledikleri birtakım yollar varsa aynı şekilde Allah, kendisine giden yolları da müridlerin hidayeti ve sâliklerin yönetilmesiyle ilgili olarak, mürşitlerin dilleri üzerinden yaptığı açıklamalarla izlenir kılmıştır. Aynı zamanda Allah'a olan yolculuklarında kendilerine uymayı, yine onların rehberliğiyle müyesser kılmıştır.

وَجَعَلْنَا السَّمَآءَ سَقْفًا مَحْفُوظًا وَهُمْ عَنْ اٰيَاتِهَا مُعْرِضُونَ ﴿٣٢﴾

32- "Gökyüzünü de korunmuş bir tavan yaptık. Oysa onlar, gökyüzündeki delillerden yüz çevirirler."

Zahirî varlıklar âleminde gökyüzü aydınlık, yeryüzü ise meskundur. Aynı şekilde nefislerin de ibadetlerin meskenleri olan yerleri vardır. Kalplerin semasında aklın yıldızları ve ilmin ayları, tevhid ve irfanın ise güneşleri vardır. Bir de nasıl ki yıldızlar, şeytanlara atılan taşlar kılınmış ise Allah, marifetlerden de şeytanlara atılan silahlar yaratmıştır. Ayrıca nasıl ki insanlar, kâinattaki delillerden yüz çevirip düşünmüyorlarsa aynı şekilde avam da kalplerdeki nurlardan ibaret olan alametlerden gafildirler ve neredeyse onları havastan başka kimse bilmemektedir.

وَهُوَ الَّذِي خَلَقَ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ وَالشَّمْسَ وَالْقَمَرَ كُلٌّ فِي فَلَكٍ يَسْبَحُونَ ﴿٣٣﴾

33- "Geceyi, gündüzü, güneşi ve ayı yaratan da O'dur. Her biri, bir yörüngede yüzmektedir."

Nasıl ki Allah, zahirde geceyi gündüze, gündüzü de geceye katıyorsa, aynı şekilde kabzın gecesini de bastın gündüzüne katmaktadır. Oysa bast, artıp eksilmektedir. Bu itibarla nasıl ki güneş daima burcunda olup artıp eksilmezken, ay bazen kararma bazen de parlama halinde ise aynı şekilde tevhid inancına sahip kimse de temkin sıfatıyla, delili düşünme sınırını aşarak beyanın huzuruna yükselmektedir. Sonra o, gözüyle görür gibi kesin inanca sahiptir. Oysa ilim sahibi, kâh bakış ve düşüncesini yenilemeye döndürülmekte, kâh da gafleti halinde Allah dışındaki varlığın etkisine kapılmaktadır. Bu nedenle o, değişmektedir.

وَمَا جَعَلْنَا لِبَشَرٍ مِنْ قَبْلِكَ الْخُلْدَ اَفَائِنْ مِتَّ فَهُمُ الْخَالِدُونَ ﴿٣٤﴾

34- "Senden önce de hiçbir beşere ölümsüzlük vermedik. Şayet sen ölürsen onlar ölümsüz müdürler?"

Sen, bu dünyada yolcusun, ancak biz seni dünyada tek başına bırakmadık. Bu nedenle Hz. Peygamber (s.a.v.) mağara arkadaşına şöyle dedi:

*"Üçüncüleri Allah olan iki kişi hakkında ne zannedersin?"*

كُلُّ نَفْسٍ ذَآئِقَةُ الْمَوْتِ وَنَبْلُوكُمْ بِالشَّرِّ وَالْخَيْرِ فِتْنَةً وَاِلَيْنَا تُرْجَعُونَ ﴿٣٥﴾

35- "Her can ölümü tadar. Bir imtihan olarak sizi şer ile de hayır ile de sınıyoruz. Ve siz, yalnızca bize dönersiniz."

Ölümde kimileri için afet, kimileri için de rahatlama vardır. Ölüm, birileri için özlem süresinin sona ermesi iken bazıları için de ayrılık kapısıdır. Ölüm, birileri için imtihanlarının gerçekleşmesi, birileri için de sıkıntılarından kurtuluş demektir. Kimileri için bela ve kıyamet, birileri için de şifa ve selamettir.

وَاِذَا رَاٰكَ الَّذِينَ كَفَرُوٓا اِنْ يَتَّخِذُونَكَ اِلَّا هُزُوًا اَهٰذَا الَّذِي يَذْكُرُ اٰلِهَتَكُمْ وَهُمْ بِذِكْرِ الرَّحْمٰنِ هُمْ كَافِرُونَ ﴿٣٦﴾

36- "Kâfir olanlar seni gördükleri zaman: 'Bu mu ilahlarınızı diline dolayan?' diyerek seni sadece alaya alırlar. Oysa Rahmân'ın kitabını inkâr edenler onlardır."

Eğer onlar, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) sahip olduğu özel vasıfları ve Allah'ın onu yükselttiği makamı görselerdi, ona boyun eğer dururlardı. Ne var ki, onlar, onun manevî özelliklerini ve iç dünyasını göremeyip sadece bedenini ve şeklini görmüşlerdir.

خُلِقَ الْاِنْسَانُ مِنْ عَجَلٍ سَاُرِيكُمْ اٰيَاتِي فَلَا تَسْتَعْجِلُونِ ﴿٣٧﴾

37- "İnsan aceleci yaratılmıştır. Size ayetlerimi göstereceğim. Öyleyse bunu benden acele istemeyin."

Acelecilik kötü, hızlı davranmak ise makbuldür. Hızlı davranmak, bir şeyi zamanı gelir gelmez hemen ele almaktır. Oysa acelecilik, bir şeyi vaktinden önce karşılamaktır. Bir de acelecilik, şeytan vesvesesinin sonucu, hızlı davranmak ise muvaffakiyetin gereğidir.

وَيَقُولُونَ مَتٰى هٰذَا الْوَعْدُ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٣٨﴾

38- "Bir de diyorlar ki: 'Eğer doğru söylüyorsanız, bu uyarı ne zaman gerçekleşecektir?'"

Onlar, kendilerine yaptıkları uyarılar konusunda peygamberleri yalanlamayı alışkanlık haline getirdikleri için uyarıda bulundukları hususların acele gerçekleşmesini talep ettiler. Şayet onlar başlarına gelecekleri bilselerdi, hareketsiz kalırlardı. Bu itibarla korku, acele etmelerinin göstergesidir.

لَوْ يَعْلَمُ الَّذِينَ كَفَرُوا حِينَ لَا يَكُفُّونَ عَنْ وُجُوهِهِمُ النَّارَ وَلَا عَنْ ظُهُورِهِمْ وَلَا هُمْ يُنْصَرُونَ ﴿٣٩﴾

39- "Kâfir olanlar, yüzlerinden ve sırtlarından ateşi savamayacakları ve kendilerine yardım edilmeyeceği zamanı bir bilseler!"

Eğer bunu bilselerdi, bugün zanların peşinde sürüklenmekten sakınacak ve şeytanın vaatlerine kanmayacaklardı.

بَلْ تَأْتِيهِمْ بَغْتَةً فَتَبْهَتُهُمْ فَلَا يَسْتَطِيعُونَ رَدَّهَا وَلَا هُمْ يُنْظَرُونَ ﴿٤٠﴾

40- "Doğrusu o ateş azabı, onlara ansızın gelip kendilerini şaşkına çevirecektir. Artık onu ne geri çevirebilirler ne de kendilerine mühlet verilir."

Azap ansızın geldiği zaman daha perişan edici ve daha şiddetli olur. Allah'ın intikamla ilgili prensibi ise onlar nimet ve bağışlara dalmışken, ansızlık fırtınasını kopartmak şeklindedir.

وَلَقَدِ اسْتُهْزِئَ بِرُسُلٍ مِنْ قَبْلِكَ فَحَاقَ بِالَّذِينَ سَخِرُوا مِنْهُمْ مَا كَانُوا بِهِ يَسْتَهْزِؤُنَ ﴿٤١﴾

41- "Andolsun, senden önceki pek çok peygamberle de alay edildi. Bunun üzerine, onlardan alay eden kimseleri, alay konusu yaptıkları şeyler kuşatıverdi."

Bu, Hz. Peygamber (s.a.v.) için bir teselli ve din düşmanlarından kendisine eziyet edenlere karşı zaferin yakın olduğunu anlatmaktır. Yani yakında siz hak ettikleri cezayı göreceksiniz.

قُلْ مَنْ يَكْلَؤُكُمْ بِالَّيْلِ وَالنَّهَارِ مِنَ الرَّحْمٰنِ بَلْ هُمْ عَنْ ذِكْرِ رَبِّهِمْ مُعْرِضُونَ ﴿٤٢﴾

42- "De ki: 'Gece ve gündüz Rahmân'dan sizi kim koruyacak?' Hal böyle iken onlar, Rablerini anmaktan yüz çevirirler."

Bu, mahlûkların araya girmesiyle kurtulamayacaklarına dair haklarında yapılmış bir beyandır. Nitekim onlar, sıkıntılı hallerinde bunu denediler. Hal böyleyken nasıl olur da onlar, hiçbir gücü olmayan kimselerden ve ne faydası ne de zararı olan şeylerden uzaklaşmazlar? Aynı zamanda bu ayette, fayda verme ve şerri defetme şeklindeki iyiliklere olan ihtiyaçlarının Allah tarafından karşılandığına dair olarak müminlere bir hatırlatma vardır. O halde müminlerin yapmaları gereken, Allah'ın kerem ve cömertliği sahasında kalpleriyle devamlı itikafa girmeleridir.

اَمْ لَهُمْ اٰلِهَةٌ تَمْنَعُهُمْ مِنْ دُونِنَا لَا يَسْتَطٖيعُونَ نَصْرَ اَنْفُسِهِمْ وَلَا هُمْ
مِنَّا يُصْحَبُونَ ﴿٤٣﴾

43- "Yoksa bizim dışımızda onları koruyacak ilahlar mı var? O ilâh edindikleri nesneler, kendilerine bile yardım edemezler. Onlar bizden de yardım görmezler."

Allah, cansız varlıklardan zarar ve yarar gelmesinin imkansızlığını onlara anlatmak konusundaki açıklamayı geniş tutmuş ve tekrarlamıştır. Bu arada taptıkları putları da o cansız varlıklar cümlesindendir. Öte yandan bu sözlerin tekrarına karşılık acizlik ve susmaktan başka ellerinden hiçbir şey gelmemiştir.

بَلْ مَتَّعْنَا هٰٓؤُلَٓاءِ وَاٰبَٓاءَهُمْ حَتّٰى طَالَ عَلَيْهِمُ الْعُمُرُ اَفَلَا يَرَوْنَ اَنَّا
نَاْتِي الْاَرْضَ نَنْقُصُهَا مِنْ اَطْرَافِهَا اَفَهُمُ الْغَالِبُونَ ﴿٤٤﴾

44- "Doğrusu biz, onları da atalarını da faydalandırdık. O kadar ki, ömür onlara uzun geldi. Artık görmüyorlar mı ki, biz yeryüzünde tasarrufta bulunup kenarlarından eksiltiyoruz. Bu durumda galip gelenler onlar mıdır?"

Uzun süreli yararlandırma, muvaffakiyetle beraber ve masumiyetle yan yana olmadığı zaman tuzak, istidrac ve cezada artış olur. Zira Allah, acı ve korkularla cezalandırdığı gibi uzun ömür ve mühlet vermekle de cezalandırır.

( اَفَلَا يَرَوْنَ اَنَّا نَاْتِي الْاَرْضَ نَنْقُصُهَا مِنْ اَطْرَافِهَا ) *"Artık görmüyorlar mı ki, biz yeryüzünde tasarrufta bulunup kenarlarından eksiltiyoruz."*

Kasvet, o denli peş peşe gelmektedir ki duruluktan eser kalmaz. Buna bağlı olarak hayal kırıklıkları ardı ardına gelince isyan süreklilik kazanır. Bu da imanın gitmesine yol açan mahrumiyetle sonuçlanır.

Bir yoruma göre de yeryüzü, büyük insanların gitmesiyle eksilir. O zaman reziller kalırken fazilet sahipleri yok olmaya yüz tutarlar. Ayrıca bu ayette yılların geçmesi ve ömrün uzamasıyla kulun, gücünden çok şey yitirdiğine işaret vardır. Çünkü işin sonu, şu dizelerde söylendiği gibi olur:

*Şu gördüklerindir işin sonu*
*Kabir, lahit ve toprak*

Bir de şu dizelerde söylendiği gibi:

*Dürdü gece ve gündüz benden yaydıklarını*
*Ve yıprattı azmimi yayıp dürmeler*
*Görmekteyim her gün eksilmekte olduğumu*
*Oysa kalmaz hiçbir şey eksilerek*

قُلْ اِنَّمَٓا اُنْذِرُكُمْ بِالْوَحْيِ وَلَا يَسْمَعُ الصُّمُّ الدُّعَٓاءَ اِذَا مَا يُنْذَرُونَ ﴿٤٥﴾

45- "De ki: 'Ben sizi ancak vahiyle uyarıyorum.' Ne var ki sağırlar, uyarıldıkları zaman çağrıyı duymazlar."

Yani ben korkulacak hususları, size Allah'ın emriyle bildiririm. Hakkınızda Allah'ın acıklı azabıyla sizi korkutmam bana vahiy edilir. Lakin muvaffakiyeti işitme melekesini yitiren kimseye, kabule dair emrin tekrarı nasıl fayda verir!

وَلَئِنْ مَسَّتْهُمْ نَفْحَةٌ مِنْ عَذَابِ رَبِّكَ لَيَقُولُنَّ يَا وَيْلَنَٓا اِنَّا كُنَّا ظَالِمِينَ ﴿٤٦﴾

46- "And olsun, onlara Rabbinin azabından bir esinti bile dokunsa, muhakkak: 'Eyvah bize! Gerçekten biz zalim kimseler idik' derler."

Yani onlar en ufak bir azaba bile dayanamazlar. Bir de Allah, birine acı vermek istediği zaman destek ve yardıma ihtiyaç duymaz.

وَنَضَعُ الْمَوَازِينَ الْقِسْطَ لِيَوْمِ الْقِيٰمَةِ فَلَا تُظْلَمُ نَفْسٌ شَيْـًٔا وَاِنْ كَانَ مِثْقَالَ حَبَّةٍ مِنْ خَرْدَلٍ اَتَيْنَا بِهَا وَكَفٰى بِنَا حَاسِبِينَ ﴿٤٧﴾

47- "Biz kıyamet günü için adaletli teraziler koyacağız. Böylece kimseye hiçbir haksızlık edilmeyecek. Hardal tanesi ağırlığınca da olsa onu getiririz. Hesap gören olarak da biz yeteriz."

Ameller, ihlas terazisiyle tartılacaktır. Bu nedenle içinde ihlas olmayan amel kabul olunmayacaktır. Haller ise dürüstlük terazisiyle tartılacaktır. Bu nedenle içinde kendini beğenmişlik bulunan haller kabul olunmayacaktır. Nefisler de hakların terazisiyle tartılacaktır. Böylece içinde arzular ve tatmin arayışları olanlar kabul olunmayacaktır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Mazlum zalimden, güçsüz de güçlüden hakkını alacaktır.

- Allah'tan başkası için olan şey, kabule layık olmayacaktır.

- Allah, herkese ameline uygun olanla karşılık verecektir. Bu çerçevede kim, dünyada O'nun kullarına merhamet etmemişse, Allah da ona merhamet etmeyecektir. Kim O'nun kullarına iyilikte bulunmamışsa, Allah'ın ihsanı ona yetişmeyecektir. Kim de başkasına zulmetmişse, kötü fiiline uygun muameleyle karşılık görecektir.

( فَلَا تُظْلَمُ نَفْسٌ شَيْـًٔا ) *"Böylece kimseye hiçbir haksızlık edilmeyecek."*

Yani Allah, mazlumları mükâfatlandırırken zalimlerden intikam alacaktır. Bir de mazlumun zerre ağırlığınca ve tane kadar hakkını bile ödetecektir. Şayet mazlum o miktar hayır işlemişse, bunun karşılığını bulacaktır.

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوسٰى وَهٰرُونَ الْفُرْقَانَ وَضِيَاءً وَذِكْرًا لِلْمُتَّقِينَ ﴿٤٨﴾

48- "Andolsun biz, Mûsâ ve Harun'a takva sahipleri için Furkân'ı, bir aydınlık ve bir öğüt verdik."

Allah'ın peygamberlere verdiği aydınlık, nur, hüccet ve burhandan basiret edinmede, kendi milletlerinden davetlerini kabul edenler de onlara ortak olurlar.

Aynı şekilde bu ümmetin büyükleri de yakîn nuruyla basiret sahibi olmada Hz. Peygamber'e (s.a.v.) ortak olurlar.

( المُتقي ) "*muttakî*", kendisini Allah'tan meşgul edip alıkoyan şeyden sakınan kimsedir. Böylece o, Allah'tan alıkonulmanın sebeplerinden sakınmış olur.

اَلَّذِينَ يَخْشَوْنَ رَبَّهُمْ بِالْغَيْبِ وَهُمْ مِنَ السَّاعَةِ مُشْفِقُونَ ﴿٤٩﴾

49- "O takva sahipleri ki görmeksizin Rablerinden korkarlar. Onlar, kıyametten de korkarlar."

Onlar, bu basiretleri ve görmeksizin Allah'tan korkmayı hak ederken, kendilerinde sırlarıyla düşünme hali, huzur anlarında edebe aykırılık korkusunu hissetme hali ve gaybtan takdirin görünmezlerinden kulu Allah'tan alıkoyacak bir şeyin ortaya çıkmasından çekinme hali gerçekleşir.

Bu arada kıyametten korkmak iki kısımdır: Biri, avama vaat edilen kıyametin kopmasından korkmaktır. Diğeri de bu hallerin sahiplerinin kıyameti olan kıyametin kopmasıdır. Çünkü avamın haşirde alışacakları yakınlık, uzaklık, mahviyet ve ispat gibi durumlar, bu hallerin sahibi kimseler için dünyada mevcuttur.

وَهٰذَا ذِكْرٌ مُبَارَكٌ اَنْزَلْنَاهُ اَفَاَنْتُمْ لَهُ مُنْكِرُونَ ﴿٥٠﴾

50- "Bu Kur'ân da bizim indirdiğimiz mübarek bir öğüttür. Şimdi siz onu inkâr mı ediyorsunuz?"

Allah, Kur'ân'ı mübarek olmakla vasıflandırmıştır. Bu, aynı zamanda Kur'ân'ın devamlılığını da bildirmektir. Çünkü ( مبارك )

“*mübarek*” lafzının kökü olan ( برك ) “*bereke*” devam anlamındadır. Arapların: ( بَرَكَ الطائرُ على الماء ) “*Kuş, suyun üzerinde kalmaya devam etti*” sözünde olduğu gibi.

Bir de bu kitaba ne önünden ne de ardından bâtıl gelemez. Ayrıca Allah’ın kadim kelamının başlangıcı olmadığı için onu ifade eden kitabın da sonu yoktur.

وَلَقَدْ اٰتَيْنَٓا اِبْرٰهِيمَ رُشْدَهُ مِنْ قَبْلُ وَكُنَّا بِه۪ عَالِم۪ينَ ﴿٥١﴾

51- “Andolsun, biz daha önce de İbrahim’e rüştünü verdik. Zaten biz onu biliyorduk.”

Allah, burada rüştten Hz. İbrahim’in öğrenmeye çalıştığı hidayet yolunu kast etmektedir. Nitekim bunun sonucunda o, yok olma ve batma özelliğine sahip olan şeylerin ilah olmasına inanmamıştır. Ancak eğer Allah, başta ona bu marifet özelliğini vermeseydi o bu sonuca varmazdı. Yoksa eğer Hz. İbrahim, mahlûka bakıp fikir yürütmeden önce tevhid nurları onu aydınlatmamış olsaydı, Allah ile yaratıklarını birbirinden nasıl ayırırdı?

Bir yoruma göre de buradaki rüşt, Allah’ın, ruhunu yoktan var etmeden önce hakikatin tecellisi yoluyla ona keşfettirmesidir.

اِذْ قَالَ لِاَب۪يهِ وَقَوْمِه۪ مَا هٰذِهِ التَّمَاث۪يلُ الَّت۪ٓي اَنْتُمْ لَهَا عَاكِفُونَ ﴿٥٢﴾

52- “O, babasına ve kavmine: ‘Nedir bu tapmakta olduğunuz heykeller?’ demişti.”

Hz. İbrahim, gaflet sarhoşluğundan uyanmaları, acımasızlığın karanlığından dönüş yapmaları ve şüphenin darboğazından çıkmaları ümidiyle, babasına ve kavmine açık uyarıyla hitap etmiştir.

Sonra o, onlara hidayet istemek suretiyle Allah’tan kendilerine yardım etmesini dilemiş, ancak iman etmeyeceklerini ve küfürlerinde ısrar edeceklerini anlayınca hepsinden uzaklaşmıştır.

قَالُوا وَجَدْنَٓا اٰبَٓاءَنَا لَهَا عَابِدٖينَ ﴿٥٣﴾ قَالَ لَقَدْ كُنْتُمْ اَنْتُمْ وَاٰبَٓاؤُكُمْ فٖي ضَلَالٍ مُبٖينٍ ﴿٥٤﴾ قَالُوٓا اَجِئْتَنَا بِالْحَقِّ اَمْ اَنْتَ مِنَ اللَّاعِبٖينَ ﴿٥٥﴾

53, 54, 55- "Dediler ki: 'Biz babalarımızı bunlara tapar bulduk.' İbrahim şöyle dedi: 'Andolsun, siz de babalarınız da açık bir sapıklık içindesiniz.' Dediler ki: 'Bize gerçeği mi getirdin yoksa (bizimle) oynayanlardan mısın?'"

Onlar, verdikleri cevapta ancak atalarını taklit ettiklerini söyleyerek tatmin oldular. Bu nedenle Hz. İbrahim'in cevabı, onların ve babalarının sapıklıkta eşit olduklarına hükmetmek şeklinde oldu. Aynı zamanda, selefleri için geçerli olan delil, onlar için de bağlayıcı ve geçerli olmuştur. Bunun üzerine onlar Hz. İbrahim'in, babalarını hatalı göstermesine razı olmadılar ve nihayet:

( قَالُوٓا اَجِئْتَنَا بِالْحَقِّ اَمْ اَنْتَ مِنَ اللَّاعِبٖينَ ) *"Bize gerçeği mi getirdin yoksa (bizimle) oynayanlardan mısın?"* demek suretiyle, kendisinden onları çağırdığı imana dair delil istediler.

قَالَ بَلْ رَبُّكُمْ رَبُّ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ الَّذٖي فَطَرَهُنَّ وَاَنَا عَلٰى ذٰلِكُمْ مِنَ الشَّاهِدٖينَ ﴿٥٦﴾

56- "O da şöyle dedi: 'Aksine Rabbiniz, yarattığı göklerin ve yerin Rabbidir. Ben de buna şahitlik edenlerdenim.'"

Böylece Hz. İbrahim, onları fikir yürütme, delil arama ve aklî delillerden hareketle anlamaya yöneltmiştir. Çünkü yaratıcının ispatı, mucizelerle bilinmez. Mucizeler, peygamberlerin doğru söylediklerine dair bilgiyi sağlar. Bu ise yaratıcıyı tanımanın uzantısıdır.

Sonra onlara, Allah'tan başka ibadet ettikleri şeylerin ibadeti hak etmediklerini açıkladı. Sonra Allah'ın yoktan var etmede tek olduğuna duyduğu kesin güvenden dolayı başına gelecek olan belayı umursamadı. Zira Allah'tan başka ona zarar verecek hiç kimse yoktur.

وَتَاللّٰهِ لَاَكٖيدَنَّ اَصْنَامَكُمْ بَعْدَ اَنْ تُوَلُّوا مُدْبِرٖينَ ﴿٥٧﴾

57- "Allah'a yemin ederim ki, siz çekip gittikten sonra ben, putlarınıza muhakkak bir tuzak kuracağım."

فَجَعَلَهُمْ جُذَاذًا اِلَّا كَبٖيرًا لَهُمْ لَعَلَّهُمْ اِلَيْهِ يَرْجِعُونَ ﴿٥٨﴾

58- "Derken, belki kendisine başvururlar diye içlerinden bir büyüğü bırakarak putları paramparça etti."

Bunun üzerine onlar, kendi aralarında olayı sorgulayarak şöyle dediler:

قَالُوا مَنْ فَعَلَ هٰذَا بِاٰلِهَتِنَٓا اِنَّهُ لَمِنَ الظَّالِمٖينَ ﴿٥٩﴾ قَالُوا سَمِعْنَا فَتًى
يَذْكُرُهُمْ يُقَالُ لَهُٓ اِبْرٰهٖيمُ ﴿٦٠﴾

59, 60- "Dediler ki: 'Tanrılarımıza bunu kim yaptı? Şüphesiz o zalimlerdendir.' Bazıları şöyle dediler: 'İbrahim denilen bir gencin onları diline doladığını duyduk.'"

Yani putları kötülükle anlatmaktadır. Bu işi yapan o olabilir.

قَالُوا فَأْتُوا بِهٖ عَلٰٓى اَعْيُنِ النَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَشْهَدُونَ ﴿٦١﴾ قَالُٓوا ءَاَنْتَ
فَعَلْتَ هٰذَا بِاٰلِهَتِنَا يَٓا اِبْرٰهٖيمُ ﴿٦٢﴾ قَالَ بَلْ فَعَلَهُ كَبٖيرُهُمْ هٰذَا فَسْـَٔلُوهُمْ
اِنْ كَانُوا يَنْطِقُونَ ﴿٦٣﴾

61, 62, 63- "Dediler ki: 'O halde onu insanların karşısına getirin. Belki şahitlik ederler.' 'Tanrılarımıza bunu sen mi yaptın ey İbrahim?' dediler. Dedi ki: 'Hayır, bunu şu büyükleri yapmıştır. Konuşabiliyorlarsa onlara sorun bakalım.'"

O halde ona sorun. Bunun üzerine ona sordular. O da: "Hayır, bunu şu büyükleri yapmıştır" dedi.

Dediler ki: Onun suçluluğunu nasıl anlayabiliriz? O, cansız bir varlık olduğu halde sen bizi nasıl ona havale edersin?

Dedi ki: o halde siz kendinden kötülüğü defedemeyen cansız bir varlığa ibadet etmeyi nasıl caiz görürsünüz?

فَرَجَعُوٓا اِلٰٓى اَنْفُسِهِمْ فَقَالُوٓا اِنَّكُمْ اَنْتُمُ الظَّالِمُونَ ﴿٦٤﴾

64- "Bunun üzerine birbirlerine dönüp: 'Hiç şüphesiz asıl zalimler sizsiniz' dediler."

ثُمَّ نُكِسُوا عَلٰى رُؤُ۫سِهِمْۚ لَقَدْ عَلِمْتَ مَا هٰٓؤُ۬لَٓاءِ يَنْطِقُونَ ﴿٦٥﴾

65- "Sonra eski inanç ve serkeşliklerine dönerek: 'Andolsun, bunların konuşmayacağını sen bilirsin' dediler."

قَالَ اَفَتَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ مَا لَا يَنْفَعُكُمْ شَيْـًٔا وَلَا يَضُرُّكُمْ ﴿٦٦﴾
اُفٍّ لَكُمْ وَلِمَا تَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ اَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿٦٧﴾

66, 67- "İbrahim şöyle dedi: 'Öyleyse siz, Allah'ı bırakıp da size hiçbir fayda ve zarar veremeyen şeylere mi tapıyorsunuz? Yazıklar olsun size de Allah'ı bırakıp taptıklarınıza da. Hiç aklınızı başınıza almaz mısınız?'"

Bunun üzerine Hz. İbrahim: "Bu, kötüden de beter. Bu gibi şeyler, ibadet edilmeyi nasıl hak eder?" dedi.

قَالُوا حَرِّقُوهُ وَانْصُرُوٓا اٰلِهَتَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ فَاعِلِينَ ﴿٦٨﴾

68- "Onlar: 'Eğer yapacaksanız, onu yakın da ilahlarınıza yardım ediniz' dediler."

Delil aleyhlerine ortaya çıkıp hiçbir cevapları olmayınca bu kez içlerine kin ve nefret girdi ve: "Çaremiz, onu feci şekilde öldürmek ve ona, bizi korkuttuğu ateşle muamele etmektir" dediler. Bir de

dediler ki: "Onun için bir bina yapın ve kendisini cehenneme atın." Onlar Hz. İbrahim'i ateşe atınca:

قُلْنَا يَا نَارُ كُونِي بَرْدًا وَسَلَامًا عَلٰى اِبْرٰهِيمَ ﴿٦٩﴾

69- "Dedik ki: 'Ey ateş! İbrahim'e serinlik ve esenlik ol.'"

Eğer Allah Hz. İbrahim'i Nemrut'un ateşinden koruyup onu mancınıktan ateşe atmasına imkan tanımasaydı, zahirde bu, zafere daha yakın olurdu. Lakin Allah'ın, onu ateşin içinde ve ona ateş dokunmayacak şekilde koruması, daha mükemmel bir yardım, mucize ve keramet olmuştur.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Hz. İbrahim pek çok defa: "Ah ah ateşten!" diyordu.

Allah şöyle buyurmuştur: ( اِنَّ اِبْرٰهِيمَ لَاَوَّاهٌ حَلِيمٌ ) "*Şüphesiz İbrahim, çok ah çeken halim biridir.*" (Tevbe, 9/114)

Hz. İbrahim ateşe atılınca ve Allah ateşi ona serinlik yapınca kendisine şöyle denildi: "Bundan sonra artık: 'Ah ah ateşten' deme. Zira Allah'tan başkasına değil, yine Allah'a sığınılır."

Bu arada ayetteki ( سلاماً ) "selam" kelimesi, Hz. İbrahim için selamet -esenlik- demektir. Çünkü kul için selamet söz konusu olduğu zaman ona göre ateş ile serinlik aynıdır.

- Ateşte olanı ateşle yakabilen Allah, onu ateşin içinde korumaya da kadirdir.

Öte yandan Hz. İbrahim'in kalbi, zafer ve yardım dilemede her yönden Allah'tan başkasından temizlenince ve o, herhangi bir şey istemekten her yönden kurtulunca, mancınıktan atılmış olduğu sırada Hz. Cebrail, havada ona göründü ve kendisine: "Herhangi bir ihtiyacın var mı?" dedi.

Bunun üzerine Hz. İbrahim: "Sana ise hayır" dedi.

Bu cevap üzerine Allah, ateşi ona serinlik ve esenlik yaptı. Çünkü o, kalbi gayrilerden temizlenmiş hale gelince nefsinin bela ve arızalardan kurtulmuş olduğunu gördü.

وَاَرَادُوا بِه۪ كَيْدًا فَجَعَلْنَاهُمُ الْاَخْسَر۪ينَ ﴿٧٠﴾

70- "Onlar, Hz. İbrahim'e bir tuzak kurmak istediler. Biz de onları en çok zarar eden kimseler kıldık."

Kim, Allah'ın dostlarına kuyu kazarsa, kazdığı kuyuya düşer. Kim de Allah ile meşgul ise onun intikamını ancak Allah alır.

وَنَجَّيْنَاهُ وَلُوطًا اِلَى الْاَرْضِ الَّت۪ي بَارَكْنَا ف۪يهَا لِلْعَالَم۪ينَ ﴿٧١﴾

71- "Onu ve Lût'u, âlemler için bereketli kıldığımız yere ulaştırarak kurtardık."

Allah'ın peygamberleri ile ilgili prensibi şudur: Onlardan birini kurtardığı zaman sıkıntısını paylaşmış ve meşakkatine katlanmış olan kimseyi de ona ortak kılar.

وَوَهَبْنَا لَهُٓ اِسْحٰقَ وَيَعْقُوبَ نَافِلَةً وَكُلًّا جَعَلْنَا صَالِح۪ينَ ﴿٧٢﴾

72- "Ona İshâk'ı ve fazladan Yâkub'u bahşettik ve hepsini salih insanlar kıldık."

Allah Hz. İbrahim'e, zürriyetinden kendisine ibadet edecek ve O'nu zikredecek kimseler çıkararak lütufta bulunmuştur. Çünkü babalar için tıpkı babaların menkıbelerinin, çocuklar için şeref olması gibi, çocukların övünce layık özellikleri menkıbedir.

وَجَعَلْنَاهُمْ اَئِمَّةً يَهْدُونَ بِاَمْرِنَا وَاَوْحَيْنَٓا اِلَيْهِمْ فِعْلَ الْخَيْرَاتِ وَاِقَامَ الصَّلٰوةِ وَا۪يتَٓاءَ الزَّكٰوةِ وَكَانُوا لَنَا عَابِد۪ينَ ﴿٧٣﴾

73- "Onları, emrimizle doğru yolu gösteren önderler yaptık ve kendilerine hayırlar işlemeyi, namazı dosdoğru kılmayı, zekâtı vermeyi vahyettik. Onlar, sadece bize ibadet eden kimselerdi."

İmam -önder- toplumun önündeki kimse demektir. İmamet mertebesini hak etmek ise ümmetteki iyi hasletleri kendinde toplamasıyla

olur. Zira kim ki değişik iyi hasletler kendisinde toplanmazsa, imamet mertebesini hak etmez.

وَلُوطًا اٰتَيْنَاهُ حُكْمًا وَعِلْمًا وَنَجَّيْنَاهُ مِنَ الْقَرْيَةِ الَّتِي كَانَتْ تَعْمَلُ الْخَبَٓائِثَ اِنَّهُمْ كَانُوا قَوْمَ سَوْءٍ فَاسِقِينَ ﴿٧٤﴾

74- "Biz Lût'a da hüküm ve ilim verdik ve onu çirkin işler yapan memleketten kurtardık. Gerçekten onlar, kötü bir toplum idiler, fâsık idiler."

Allah, onun üzerindeki nimetini kavminin tabi tutulduğu imtihanın bir benzerinden kendisini korumak sonra da onu aralarından çıkararak onlardan kurtulmasını sağlamak suretiyle tamamlamıştır. Böyle Allah, onu hem zahir hem de bâtın itibariyle onlardan ayırmıştır.

وَاَدْخَلْنَاهُ فِي رَحْمَتِنَا اِنَّهُ مِنَ الصَّالِحِينَ ﴿٧٥﴾

75- "Biz onu rahmetimizin içine aldık. Şüphesiz o, salih kimselerden idi."

Allah, Hz. Lût'u rahmetinin içine aldığını açıkladıktan sonra: "Şüphesiz o salih kimselerden idi" buyurmuştur. Allah'ın rahmetinin içine aldığı kimse ise hiç şüphesiz salih idi.

Öte yandan: ( وَاَدْخَلْنَاهُ فِي رَحْمَتِنَا ) "*Biz onu rahmetimizin içine aldık*" sözü cemin ta kendisini bildirirken: ( اِنَّهُ مِنَ الصَّالِحِينَ ) "*Şüphesiz o, salih kimselerden idi*" sözü de farkın ta kendisini anlatmaktadır.

وَنُوحًا اِذْ نَادٰى مِنْ قَبْلُ فَاسْتَجَبْنَا لَهُ فَنَجَّيْنَاهُ وَاَهْلَهُ مِنَ الْكَرْبِ الْعَظِيمِ ﴿٧٦﴾ وَنَصَرْنَاهُ مِنَ الْقَوْمِ الَّذِينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا اِنَّهُمْ كَانُوا قَوْمَ سَوْءٍ فَاَغْرَقْنَاهُمْ اَجْمَعِينَ ﴿٧٧﴾

76, 77- "Nûh'u da hatırla. Hani o daha önce dua etmişti de biz onun duasını kabul ederek kendisini ve ailesini o büyük sıkıntıdan

kurtarmıştık. Ayetlerimizi yalanlayanlara karşı ona yardım etmiştik. Şüphesiz onlar kötü bir toplumdu. Bu yüzden biz de onları topyekûn suda boğduk."

Hz. Nûh, onların en uzun ömürlüsü ve belası en çok olanıydı. Kıssada yer aldığına göre; Hz. Nûh yetmiş kez dövülüyordu. Bu arada herhangi bir ihtiyar adam torununu onun yanına getirip kendisine: "Bu ihtiyarın dediğini kabul etme" diyerek kendisine muhalefet etmesini tavsiye ediyordu. Hz. Nûh da eziyete katlanabiliyor ve onları Allah'a çağırıyordu. Ancak iman etmelerinden ümidini kesip kendisine: ( وَاُوحِيَ اِلٰى نُوحٍ اَنَّهُ لَنْ يُؤْمِنَ مِنْ قَوْمِكَ اِلَّا مَنْ قَدْ اٰمَنَ ) "*Kavminden daha önce iman etmiş olanlardan başka artık hiç kimsenin iman etmeyeceği*" (Hûd, 11/36) vahyedilince onlara beddua ederek şöyle dedi:

( وَقَالَ نُوحٌ رَبِّ لَا تَذَرْ عَلَى الْاَرْضِ مِنَ الْكَافِرِينَ دَيَّارًا ) "*Ey Rabbim! Kâfirlerden hiç kimseyi yeryüzünde bırakma!*" (Nûh, 71/26)

Bunun üzerine Allah: ( وَنُوحًا اِذْ نَادٰى مِنْ قَبْلُ فَاسْتَجَبْنَا لَهُ ) "*Nûh'u da hatırla. Hani o daha önce dua etmişti*" buyurdu. Böylece şirk yok edildi ve ehli boğulmuş oldu.

وَدَاوُ۫دَ وَسُلَيْمٰنَ اِذْ يَحْكُمَانِ فِي الْحَرْثِ اِذْ نَفَشَتْ فِيهِ غَنَمُ الْقَوْمِ
وَكُنَّا لِحُكْمِهِمْ شَاهِدِينَ ﴿٧٨﴾ فَفَهَّمْنَاهَا سُلَيْمٰنَ وَكُلًّا اٰتَيْنَا حُكْمًا
وَعِلْمًا وَسَخَّرْنَا مَعَ دَاوُ۫دَ الْجِبَالَ يُسَبِّحْنَ وَالطَّيْرَ وَكُنَّا فَاعِلِينَ ﴿٧٩﴾

78, 79- "Dâvûd ile Süleyman'ı da hatırla. Hani bir ekin tarlası hakkında hüküm veriyorlardı. Çünkü halkın koyunları o ekine girmişti. Biz de hükümlerine şahit olmuştuk. Biz hüküm vermeyi Süleyman'a kavratmıştık. Zaten her birine hükümranlık ve ilim vermiştik. Dâvûd ile birlikte Allah'ı tespih etmeleri için dağları ve kuşları onun emrine verdik. Bunları yapan biz idik."

İkisinin dereceleri arasında fark olmakla birlikte Allah onları peygamberlik hükmünde ortak kılmıştır. Örneğin bir tek meselede Allah, Hz. Süleyman'a bir özellik ortaya koymuştur. Çünkü Allah:

( فَفَهَّمْنَاهَا سُلَيْمٰنَ ) *"Biz, hüküm vermeyi Süleyman'a kavratmıştık"* sözüyle ona minnette bulunurken, kendisine verdiği hükümdarlık konusunda buna benzer şekilde minnette bulunmamıştır.

Ayrıca bu meselede ihtilaf etseler dahi ihtilafları dinin tali meseleleriyle ilgili olduğu zaman müçtehitlerin onaylanabileceğine dair delil bulunmaktadır. Çünkü Allah: ( وَكُلًّا اٰتَيْنَا حُكْمًا وَعِلْمًا ) *"Zaten her birine hükümranlık ve ilim vermiştik"* buyurmuştur. Bu iki peygamberden sadece birinin tasvip edilip diğerinin hatalı bulunması gerektiği görüşünde olan kimsenin dayanağı ise Allah'ın: : ( فَفَهَّمْنَاهَا سُلَيْمٰنَ ) *"Biz, hüküm vermeyi Süleyman'a kavratmıştık"* sözüdür.

( وَسَخَّرْنَا مَعَ دَاوُدَ الْجِبَالَ يُسَبِّحْنَ وَالطَّيْرَ وَكُنَّا فَاعِلِينَ ) *"Dâvûd ile birlikte, Allah'ı tespih etmeleri için dağları ve kuşları onun emrine verdik. Bunları yapan biz idik."*

Allah, tesbih etmede kendisine yardım etmeleri için dağlara emir vererek onları Hz. Dâvûd'un emrine vermiştir. Nitekim bir rivayette yer aldığına göre, Hz. Dâvûd tesbih ederek geçerken geniş dağlar da ona cevap vererek tesbih ediyordu. Aynı şekilde o tövbe ederken kuşlar da kendisine yardım ediyordu.

وَعَلَّمْنَاهُ صَنْعَةَ لَبُوسٍ لَكُمْ لِتُحْصِنَكُمْ مِنْ بَأْسِكُمْ فَهَلْ اَنْتُمْ شَاكِرُونَ ﴿٨٠﴾

80- "Bir de savaşlarınızda sizi korusun diye Dâvûd'a sizin için zırh yapma sanatını öğrettik. Şimdi siz şükrediyor musunuz?"

Allah, demiri Hz. Dâvûd'un emrine verdi ve elinde onu yumuşattı. Böylece zırhlar dokuyordu. Allah: ( وَاَلَنَّا لَهُ الْحَدِيدَ ) *"Biz ona demiri yumuşattık"* (Sebe', 34/10) buyurmuştur. Bu, savaşlarda oklardan korunması içindir. Allah: ( وَقَدِّرْ فِي السَّرْدِ ) *"İşçilikte ölçüyü tuttur"* (Sebe', 34/11) buyurmuştur. Sanatı muhkem yap ve çivileri sağlam tuttur. Ne var ki kastı olmaksızın Orya'nın karısına baktığında takdirin okları kendisine yönelince, onu tam gözünün ortasından vurmuş ve olan olmuştur.

Hz. Dâvûd, o gün inzivaya çekilerek evin kapısını üstüne kapatmış ve gün selametle geçsin diye namaz kılmaya ve kah Tevrat kah da Zebûr okumaya başlamıştı. Zaten bugünün bir imtihan günü olduğu kendisine vahyedilmiş ve bunun üzerine o, muhafızlara ve kapıcılara, kimseye izin verilmemesi emrini vermişti. İşte bu sırada evin penceresinden güzellikte benzerini görmediği bir kuş düştü. Hz. Dâvûd onu tutmak istedi, ancak kuş onu tutmaya özendirircesine uzaklaştı, fakat uçmadı. Böylece kuş, azar azar geri çekildi ve nihayet evin penceresinden uçup gitti. Hz. Dâvûd, arkasından giderek pencereden ona bakarken Orya'nın karısını görmüş oldu. Bu esnada kadın, Hz. Dâvûd'un bulunduğu evin arkasındaki bir bahçede soyunmuş yıkanıyordu. Bunun üzerine Hz. Dâvûd'un kalbine giren girdi, takdir oku onu gözünün tam ortasından vurdu ve savaşında kendisini koruması için öğrendiği zırh sanatı kendisine fayda vermedi.

وَلِسُلَيْمٰنَ الرِّيحَ عَاصِفَةً تَجْر۪ي بِاَمْرِه۪ٓ اِلَى الْاَرْضِ الَّت۪ي بَارَكْنَا
ف۪يهَاۜ وَكُنَّا بِكُلِّ شَيْءٍ عَالِم۪ينَ ﴿٨١﴾

81- "Süleyman'ın hizmetine de kasırga halinde esen rüzgârı verdik. Rüzgar onun emriyle, bereketli kıldığımız yere doğru eserdi. Biz her şeyi biliriz."

Allah, sabah esişi bir aylık, akşam esişi de bir aylık mesafe olan rüzgârı Hz. Süleyman'ın emrine verdi. Eğer Hz. Süleyman, bu mesafede bir karışlık dahi artış yapmak istese kaderin hükmüne bağlı olduğunu anlaması için bunu yapamazdı. Nitekim ilahî takdiri görmesi, Hz. Süleyman'ın kendisine bahşedilen rüzgârın emrine verilmesi mucizesiyle mağrur olmasına engel oluyordu. Bu arada işaret bakımından Allah, Hz. Süleyman'ın sahip olduğu imkânların gelip geçen rüzgar gibi olduğuna ve onlardan elde bir şey kalmayacağına dikkat çekmiştir.

Kıssasında yer aldığına göre bir gün Hz. Süleyman sahip olduğu imkânlara bakınca üzerinde durduğu rüzgar, yaygısını eğmiştir. Hz. Süleyman rüzgara: "Doğrul!" deyince rüzgar da ona: "Asıl sen

doğrul!" demiştir. Yani senin yaygını eğmem, imkanlara bakmak suretiyle kalbinle eğrilmenden dolayıdır. Bu nedenle sen doğrulduğun zaman ben de doğrulurum.

وَمِنَ الشَّيَاطِينِ مَنْ يَغُوصُونَ لَهُ وَيَعْمَلُونَ عَمَلًا دُونَ ذٰلِكَ وَكُنَّا لَهُمْ حَافِظِينَ ﴿٨٢﴾

82- "Bir de şeytanlardan Süleyman için dalgıçlık eden ve bundan başka işler de yapanlar vardı. Biz, onları gözetim altında tutardık."

Hakikatte bu, sadece az sayıdaki birkaç gün sürmüştür. Sonra Hz. Süleyman, bir gün yerine dönmek isterken ölüm meleği yanına gelerek kendisinden canını istedi. Bunun üzerine Hz. Süleyman: "Yerime dönünceye kadar bana mühlet ver" deyince ölüm meleği: "Ertelemek mümkün değildir" diyerek canını aldı. Bu esnada Hz. Süleyman asasına yaslanmış vaziyette idi ve öylece kaldı. Kıssasında anlatıldığı üzere cinler de bir ağaç kurdu asasını yiyinceye kadar bunu bilemediler. Ancak asası kırılıp yere yıkılınca şeytanlar öldüğünü anladılar ve asa ile ayakta duran kimsenin ölümün pençesine düşeceği gerçeğini kavradılar.

وَاَيُّوبَ اِذْ نَادٰى رَبَّهُ اَنّ۪ي مَسَّنِيَ الضُّرُّ وَاَنْتَ اَرْحَمُ الرَّاحِم۪ينَ ﴿٨٣﴾
فَاسْتَجَبْنَا لَهُ فَكَشَفْنَا مَا بِه۪ مِنْ ضُرٍّ وَاٰتَيْنَاهُ اَهْلَهُ وَمِثْلَهُمْ مَعَهُمْ رَحْمَةً مِنْ عِنْدِنَا وَذِكْرٰى لِلْعَابِد۪ينَ ﴿٨٤﴾

83, 84- "Eyyûb'u da hatırla! Hani Rabbine şöyle niyazda bulunmuştu: 'Başıma bu dert geldi. Sen ise merhametlilerin en merhametlisisin.' Bunun üzerine biz, tarafımızdan bir rahmet ve kulluk edenler için bir hatıra olsun diye duasını kabul ettik, başındaki derdi ortadan kaldırdık ve ona aile fertlerini yanı sıra bir mislini daha verdik."

Yani Eyyûb'un Rabbine niyazda bulunduğu zamanı hatırla. Ona "Eyyûb" adının verilmesi bütün hallerinde; varlıkta ve darlıkta, sıkıntıda ve bollukta Allah'a çokça dönüş yapmasından dolayıdır.

Bu arada Hz. Eyyûb: "Bana merhamet et" dememiş de hitap adabını gözeterek: "Sen ise merhametlilerin en merhametlisisin" demiştir.

Zaten Allah'a bağlılığın alametlerinden biri de musibet anlarında kulun halinin korunmasıdır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah'ın Hz. Eyyûb'dan: ( اَنّي مَسَّنِيَ الضُّرُّ ) "*Başıma bu dert geldi*" dediğini bildirmesi, sabırlı oluşunu ortadan kaldırmamıştır. Çünkü Allah, onun hakkında şöyle buyurmuştur:

( اِنَّا وَجَدْنَاهُ صَابِرًا ) "*Gerçekten biz onu sabırlı bulduk.*" (Sâd, 38/44)

Çünkü hallerinde galip olan sabır idi. Bu nedenle nadir olarak söylediği bir söz, halindeki galip durumu ondan alıp götürmemiştir. Bundaki işaret ise müminin galip olan halinin marifet veya Allah'a iman olduğu şeklindedir. Nitekim müminin bütün vakitlerini meşgul eden ve bir an bile ayrılmadığı husus budur. Nadir bir hatası ise kesintisiz imanının yanında ondaki galip vasfı zorlayamaz.

- Hz. Eyyûb'un: "*Başıma bu dert geldi*" sözü ilahi takdire itiraz değil de aczini dile getirmek şeklinde olduğundan, sabır sıfatıyla çelişmemiştir.

- Allah, ona bu sözü söyletmiş ki, onda bu ümmetin güçsüzleri için bir nefes alma imkanı bulunsun. Böylece onlar sıkıntı halinde feryat ettikleri zaman bu, sabır sıfatıyla çelişmemiş olur.

- Hz. Eyyûb'un bu sözü şikayet şeklinde değil, şükür niyetiyle olmuştur. Hz. Eyyûb şunu demek istemiştir:

*"Başıma, velilerine has kıldığın bu dert geldi. Eğer sen merhametlilerin en merhametlisi olmasaydın, bana bu özelliği vermezdin. Lakin sen, rahmetinle beni buna ehil kıldın."*

- Bu sözü Eyyûb söylememiştir. Lakin bu söz, musibetin onun elinden feryat etmesinden ibarettir. Şöyle ki musibet onun arkadaşlı-

ğına dayanamamış ve onun elinden feryat etmiştir. Yoksa Hz. Eyyûb, musibetten dolayı feryat etmemiştir.

- Bu ifadede istifham hemzesi mukadderdir. Yani: “Sen, merhametlilerin en merhametlisi iken hiç başıma dert gelir mi?” Tıpkı: ( وَتِلْكَ نِعْمَةٌ تَمُنُّهَا عَلَيَّ ) *“Bu, senin başıma kaktığın bir nimettir”* (Şuarâ, 26/22) ayetinin: *“Bu, İsrail oğullarını köleleştirmen, senin başıma kaktığın bir nimet midir?”* anlamında olması gibi.

- Hz. Cebrâil, Hz. Eyyûb’a gelerek: *“Neden susuyorsun?”* demiş, o da: *“Ne yapayım?”* demiştir. Bunun üzerine Hz. Cebrâil: *“Musibetin ve şifan Allah katında aynıdır. O halde Allah’tan afiyet dile”* deyince Hz. Eyyûb: “*Başıma bu dert geldi*” demiştir. Buna karşılık olarak Allah da şöyle buyurmuştur:

( فَكَشَفْنَا مَا بِهِ ) “*Bunun üzerine biz de kendisinde bulunan derdi ortadan kaldırdık.*”

Bu ifadenin başındaki ( فَ ) “*f*” harfi takip anlamındadır. Buna göre sanki Allah: *“Hemen o anda ona afiyet verdik”* buyurmuş olmaktadır. Bir de sanki şöyle buyurmuştur:

*“Ey Eyyûb! Eğer bundan önce de afiyet isteseydin, bu isteğini kabul edecektik.”*

- Bedeninden yiyen bir kurtçuk yere düşmüş ve Hz. Eyyûb onu yerden alıp yerine bırakmıştır. Bunun üzerine kurtçuk, onu öyle bir ısırmıştır ki artık sabrı tükenerek: “*Başıma bu dert geldi*” demiştir. Bu sırada kendisine şöyle denilmiştir:

*“Ey Eyyûb! Sen bizimle sabreder misin? Eğer senin saç tellerinden her birinin altında sabırdan şu kadar çadır kurmamış olsaydım, bir saat bile sabredemezdin.”*

- Hz. Eyyûb’u yiyen kurtçuklar, vücudunun üst tabakalarının hepsini yediler, sadece dili ve kalbi kaldı. Bu sırada bir kurtçuk diline, diğer bir kurtçuk da kalbine tırmanınca şöyle dedi:

*"Başıma bu dert geldi. Bana, kendisiyle senin zikrini yapacağım bir dil ile kendisiyle seni tanıyacağım bir kalpten başka bir şey kalmamıştı. Bana bu da kalmadığı zama, yaşamam ve sabretmem mümkün olmayacaktır."*

- Hz. Eyyûb musibetin gerekçesini anlayamadı. Bu nedenle Allah'ın, başına bu musibeti kendisini temizlemek için mi, edep dersi vermek için mi, cezalandırmak için mi, kendine yakın kılmak için mi, bir özellik olarak mı yoksa arındırmak için mi verdiğini bilemedi. Esasen Allah'ın dostlarıyla olan beraberliği zaten böyledir.

- Hz. Eyyûb'a: "Allah'tan afiyet dile" denilmiş, o da şöyle demiştir:

*"Ben yetmiş yıl nimetler içinde yaşadım. Bu nedenle, yetmiş yıl da musibette geçirinceye kadar bekleyeceğim. Bu süre geçince Allah'tan afiyet dileyeceğim.*

Rivayete göre Allah, musibeti üzerinden kaldırınca Hz. Eyyûb'a: *"Musibet günlerinde karşılaştığın en ağır şey ne idi?"* diye sorulmuş o da: *"Düşmanların alay edip sevinmeleri"* demiştir.

Öte yandan kıssasında yer aldığına göre; Hz. Eyyûb'un öğrencileri kalemlerini kırdılar, ondan yazdıklarını yaktılar ve şöyle dediler:

*"Eğer Allah katında bir merteben olsaydı, başına bunca musibeti getirmezdi."*

Yine rivayete göre yanında eşinden başka hiç kimse kalmamıştı. Eşi, Hz. Yusuf'un zürriyetinden idi. Sadece kendisi Hz. Eyyûb ile beraber kalıp ona hizmet ediyor ve bakıyordu.

- Bu kadının onunla beraber kalmasının sebebi, Hz. Yâkub soyundan olup musibet ehli olması idi.

- Hz Eyyûb'un: "*Başıma bu dert geldi*" demesinin sebebi şudur: Şeytan, karısına gelip: "Eğer hastanın iyileşmesini istiyorsan bana secde et" dedi. Şeytan, kendisine insan kılığında göründüğü için kadın, onun İblis olduğunu bilemedi ve bunu Hz. Eyyûb'a bildirdi. İşte bu sırada Hz. Eyyûb: "*Başıma bu dert geldi*" dedi.

- Hz. Eyyûb'un başına musibet gelince kavmi toplandı ve karısına şöyle dedi:

*"Bu hastayı şehrimizden çıkar. Çünkü biz, hastalığın bulaşıcı olmasından, musibetinin bize zarar vermesinden ve hastalığının bize bulaşmasından korkuyoruz."*

Bunun üzerine karısı onu şehrin kapısına getirince bu kez de dediler ki: *"Onu gördüğümüz zaman bize uğursuzluk getirmesinden endişe ediyoruz. Bu yüzden onu gözlerimizden uzak bir yere götür."*

Hz. Eyyûb'u alıp ıssız bir yere götüren karısı, şehre girip ücretle ekmek pişiriyor ve evlerde çalışıp aldığı ücreti ona götürüyordu. Ancak insanlar, kadının onun karısı olduğunu öğrenince kendisinden tiksinip bir daha onu çalıştırmadılar.

- Karısının saç örgüleri ve kakülü vardı. Hz. Eyyûb, kalkarken saç örgülerine tutunuyordu. Kadın, para bulamayınca saç örgülerini satarak parasıyla Hz. Eyyûb'a getireceği bir ekmek satın aldı. Bunun üzerine şeytan kendisine karısının fuhuş yaptığı, saçının da bu yolda kesildiği şeklinde vesvese verdi. Hz. Eyyûb da sezgisinin doğru çıkması halinde kendisini kırbaçlamaya yemin etti. Bu nedenle o kadının kalbindeki sıkıntı, Hz. Eyyûb'un bedenindeki sıkıntının tamamından daha şiddetli idi.

Bir rivayete göre ise karısı kaybolup şehre girmiş, bu sırada Allah Hz. Eyyûb'a şifa vermiş ve kendisi taze bir delikanlı olmuştur. Nitekim Allah onun kıssasında şöyle buyurmuştur:

(ارْكُضْ بِرِجْلِكَ هٰذَا مُغْتَسَلٌ بَارِدٌ وَشَرَابٌ) *"Ayağını yere vur. İşte yıkanacak ve içecek soğuk bir su."* (Sâd, 38/42)

Karısı dönüp kendisini bulamayınca, onu bir yırtıcı hayvan yediğini ya da bir afete uğradığını sanarak ağlayıp feryat etmeye başladı. İyileştiği için tanımadığı Hz. Eyyûb, kendisine: "Kadın! Neyin var?" dedi. Dedi ki: "Burada bir hastam vardı, onu kaybettim." Bunun üzerine Hz. Eyyûb: "Aradığın o kişi benim" dedi.

Yapılan kimi rivayetlerde ise Hz. Eyyûb başına gelen musibeti, yedi yıl yedi ay yedi gün yedi saat yaşamıştır.

Bir iddiaya göre de İblis karşısına çıkarak: "Eğer iyileşmek istiyorsan, bana bir kez secde et" demiş, bunun üzerine Hz. Eyyûb: "*Başıma bu dert geldi*" demiştir.

- Hz. Eyyûb, hakikati keşfetme makamına erdirilmiş ve beşeri kimliğinden arındırılmış olduğundan musibeti hissetmiyordu. Allah, bir defa bu keşfi kendisinden saklayıp onu beşeri hüviyetine döndürünce: "*Başıma bu dert geldi*" demiştir.

- Allah, Hz. Eyyûb'u bu hale düşürüp kendisine bu sözü söyletmiş ki, kendisinde kulluk vasfı ortaya çıkmış olsun.

- Allah, Hz. Eyyûb'a bu musibeti kendisinden önce yetmiş peygamberin istediğini, ancak bunu kendisi için seçtiğini vahyetti. Bu arada Allah üzerinden musibeti kaldırmak isteyince Hz. Eyyûb: "*Başıma bu dert geldi*" demiştir.

Bir görüşe göre de Hz. Eyyûb'a manevî bir keşif verildiği için musibetin acısını hissetmedi. Bunun üzerine: *"Musibetin acısını hissetmediğim için bana musibetin kendisi dokundu"* demiştir.

Cafer-i Sadık da der ki:

*"Allah, Hz. Eyyûb'dan vahyi kırk gün alıkoyunca: 'Başıma bu dert geldi' demiştir. Çünkü ibadetleri yerine getirmede güçsüzleşmiştir. Bunun üzerine, ibadetini hakkıyla yerine getirebilmesi için gücünü kendisine geri vermiştir."*

- Hz. Eyyûb, hoşnutluğunun artmasını dilemiş ve hoşnutluğundaki zaaf ortadan kaldırılmak suretiyle dileği kabul edilmiştir.

- Hz. Eyyûb'un üzerinde kalmasından yakındığı musibet, esas musibetin bakiyesi idi. Musibeti de bakiyesiyle idi. Nitekim tamamen üzerinden alınınca musibet ortadan kalkmış oldu. Bu nedenle Allah: "*Başındaki derdi ortadan kaldırdık*" buyurmuştur. Aslında başındaki dert nefsi idi. Bu arada Hz. Eyyûb, beşeri benliğinden büsbütün arındırılıp her türlü bakiyeden temizlenince Allah ona esenlik,

afiyet ve ümidi görünürde de verdi. Bu durumda ise musibet, afiyet, varlık ve yokluk eşit hale gelir.

وَاِسْمٰعِيلَ وَاِدْرِيسَ وَذَا الْكِفْلِ كُلٌّ مِنَ الصَّابِرِينَ ﴿٨٥﴾

85- "İsmail'i, İdris'i ve Zülkifl'i de hatırla. Hepsi sabredenlerdi."

Yani bu peygamberleri hatırla. Sonra Allah: (كُلٌّ مِنَ الصَّابِرِينَ) "*Hepsi sabredenlerdi*" buyurduktan sonra şöyle buyurmuştur:

وَاَدْخَلْنَاهُمْ فِي رَحْمَتِنَا اِنَّهُمْ مِنَ الصَّالِحِينَ ﴿٨٦﴾

86- "Onları rahmetimizin içine aldık. Şüphesiz onlar salih kimselerden idiler."

Allah bu ayette hükmü ve manayı açıklamıştır. Hüküm, sabırlı ve salih olmalarıdır. Mana da onları rahmetinin içine almasıdır.

وَذَا النُّونِ اِذْ ذَهَبَ مُغَاضِبًا فَظَنَّ اَنْ لَنْ نَقْدِرَ عَلَيْهِ فَنَادٰى فِي الظُّلُمَاتِ اَنْ لَٓا اِلٰهَ اِلَّٓا اَنْتَ سُبْحَانَكَ اِنِّي كُنْتُ مِنَ الظَّالِمِينَ ﴿٨٧﴾

87- "Zünnûn'u da hatırla. Hani öfkelenerek gitmişti de kendisini hiç sıkıntıya sokmayacağımızı sanmıştı. Derken karanlıklar içinde: 'Senden başka hiçbir ilâh yoktur. Seni noksanlıklardan tenzih ederim. Ben gerçekten zalimlerden oldum' diye dua etti."

Zünnûn, kendisini elçi seçtiği için zamanının hükümdarına öfkelenmiş ve ona: "Neden beni seçtin?" diye sormuştur. O da: "Gerçekten Allah, peygamberime: 'Falanca hükümdara git de Neyneva'ya elçi olarak gönderilmesi için birini seçmesini söyle' diye vahyetti" demiştir. Böylece hükümdar onu seçince bu, kendisine ağır gelmiştir. Çünkü o, peygamberliğin musibetle beraber olduğunu biliyordu. İşte hükümdara olan öfkesi, bundan dolayı olmuştur.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Zünnûn, iman etmeye yanaşmamaları üzerine kavmine öfkelenmiş ve aralarından çıkmıştır.

- Zünnûn, nefsine kızarak, yani nefsinin arzularına şiddetle muhalefet ederek ve muhaliflerinden din düşmanlarına karşı sert çıkarak gitmiştir.

( فَظَنَّ اَنْ لَنْ نَقْدِرَ عَلَيْهِ ) *"Kendisini hiç sıkıntıya sokmayacağımızı sanmıştı."*

Yani Zünnûn, balığın karnını kendisine dar kılmayacağımızı sanmıştı. Ayetteki ( نقدر ) "*nakdira*" lafzı daraltmak anlamında olup aynı kökten gelen ( قدر ) "*kadara*" lafzı da: ( وَاَمَّٓا اِذَا مَا ابْتَلٰيهُ فَقَدَرَ عَلَيْهِ رِزْقَهُ ) "*Ama onu sınayıp rızkını daraltınca*" (Fecr, 89/16) ayetinde bu manada kullanılmıştır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Zünnûn, onu balığın karnında hapsedemeyeceğimizi sandı.

Bir de o, Allah'ın, kavmini cezalandıracağı haberini alınca, aile fertlerini alarak aralarından çıktı.

- Yırtıcı hayvanlar aile fertlerini parçaladılar. Bu esnada bir kaplan, beraberindeki küçük bir oğlunu kaparken deniz dalgası da gelip diğer oğlunu boğdu. Zünnûn gemiye bindi, deniz hareketlenerek dalgaları birbirine çarptı ve gemi batmayla burun buruna geldi. İnsanlar, geminin yükünü hafifletmek ve batmaktan kurtulmasını sağlamak için eşyaları denize atmaya başladılar.

Bunun üzerine Hz. Yûnus, onlara: *"Kurtulmanız için eşyanızı değil, beni denize atın. Çünkü aranızda günahkâr olan benim"* dedi. Gemidekiler, kendisine bakarak dediler ki: *"Sende iyilik alameti görüyoruz ve seni denize atmak içimize sinmiyor."* İşte bu münasebetle Allah ondan bahisle Şöyle buyurmuştur: ( فَسَاهَمَ فَكَانَ مِنَ الْمُدْحَضِينَ ) "*Yûnus, gemidekilerle kura çekmiş ve kaybedenlerden olmuştu.*" (Sâffât, 37/141) Yani onlara kura önerdi ve kura çektiler. Ancak kura onun aleyhine çıktı.

Kıssasında anlatıldığına göre; Hz. Yûnus, geminin kenarına geldiğinde balık ağzını açmış duruyordu. Bunun üzerine diğer tarafa gitti; ancak balık da aynı şekilde o tarafa gitti. Her tarafı dolaşıncaya

kadar böyle gidip gelmeye devam etti. Nihayet musibetin hedefinde kendisinin bulunduğunu anlayınca, denize atladı ve kınanacağı bir davranışta bulunmakta iken balık kendisini yuttu. Yani kınanmasına sebep olacak davranışta bulundu. Allah şöyle buyurmuştur: ( فَالْتَقَمَهُ الْحُوتُ وَهُوَ مُلِيمٌ ) *"Böylece Yûnus, kınanacağı bir davranışta bulunmakta iken balık onu yuttu."* (Saffât, 37/142)

Bu arada Allah balığa şunu vahyetti:

*"Yûnus'un etinden hiçbir şeyi zedeleme ve hiçbir kemiğini kırma. Zira o senin yiyeceğin değil, yanında bir emanettir."*

Kıssasında yer aldığı üzere böylece o kırk gün balığın karnında kaldı. Bir iddiaya göre de onu yutan balığa, denizde dolaşması emredildi. Bu arada Allah, onda denizdekileri anlama yeteneği yarattı. O da buna bakıyordu.

- Hz. Yûnus, sayılı birkaç gün balığa arkadaşlık ettiği için kıyamete kadar ona "Zünnûn (balığın sahibi, arkadaşı)" denilecektir. Bu nispet, ondan alınmamıştır. Hal böyle iken acaba yetmiş yıl Allah'a kulluk edip hayatı boyunca O'nun marifet ve sevgisi kalbinden hiç çıkmayan bir kulun bu özelliğinin ortadan kalkacağı düşünülebilir mi? Allah'ın keremi hakkında bu düşünülemez.

( فَنَادٰى فِي الظُّلُمَاتِ ) *"Karanlıklar içinde dua etti."*

Bir yoruma göre; söz konusu karanlıklar; gece karanlığı, deniz karanlığı ve balığın karnının karanlığıdır. Bu, tefsir ilmine göre olan izahtır. Bir ihtimale göre de adı geçen karanlıklar, Zünnûn'un vaktindeki karışıklık ve halindeki belirsizliktir.

فَاسْتَجَبْنَا لَهُ وَنَجَّيْنَاهُ مِنَ الْغَمِّ وَكَذٰلِكَ نُنْجِي الْمُؤْمِنِينَ ﴿٨٨﴾

88- "Biz de duasını kabul ettik ve kendisini dertten kurtardık. İşte biz müminleri böyle kurtarırız."

Biz onun dileğini, henüz dua etmemişken kabul ettik. Çünkü bu sırada o: ( لَٓا اِلٰهَ اِلَّٓا اَنْتَ سُبْحَانَكَ اِنّ۪ي كُنْتُ مِنَ الظَّالِم۪ينَ ) *"Senden başka hiçbir*

*ilâh yoktur. Seni noksanlıklardan tenzih ederim. Ben, gerçekten zalimlerden oldum"* (Enbiya, 21/87) sözünden başka bir şey söylememişti. Zulmü itiraf ederken de sadece O'ndan mağfiret diliyordu.

Sonra Allah: ( وَنَجَّيْنَاهُ مِنَ الْغَمِّ ) *"Kendisini dertten kurtardık"* buyurmuştur. Yani müminlerden kim bir üzüntüye maruz kalır veya önemli bir durumla karşılaşır da Zünnûn'un söylediğinin benzerini söylerse, onu da tıpkı Zünnûn'u kurtardığımız gibi kurtarırız.

وَزَكَرِيَّٓا اِذْ نَادٰى رَبَّهُ رَبِّ لَا تَذَرْنِي فَرْدًا وَاَنْتَ خَيْرُ الْوَارِثِينَ ﴿٨٩﴾

89- "Zekeriyyâ'yı da hatırla! Hani o Rabbine: 'Rabbim! Beni tek başıma bırakma. Sen vârislerin en hayırlısısın' diye dua etmişti."

Hz. Zekeriyyâ çocuk istedi. Çocuk istemesinin sebebi ise Rabbine kullukta kendisine yardımcı olması, peygamberlikte onun yerine geçmesi ve peygamberlik bereketinin evinden kesilmemesi idi. Bu arada Zekeriyyâ, musibetin çilesini o denli çekmiştir ki, onu testereyle kesmek istediler. Derken bir ağaca sığınınca ağaç onun için yarıldı, o da ağacın içine girdi ve ağaç kapandı. Ancak düşmanları bunun farkına vardılar ve ağacı testereyle kestiler. O da Allah için buna sabretti. Allah'ın şanı ne kadar yücedir!

Ağacın yarılması, onun için mucize ve zahirde kendisini düşmanlarından korumaya dönüktü. Sonra eğer Allah onları kendisinden haberdar etmeseydi, bununla kurtulmuş olacaktı. Galiba eğer onu öldürselerdi, ağacın içinde kaldığı süre boyunca testereyle kesilmekten duyduğu acı kadar acı hissetmeyecekti. Olaydaki hikmet şudur: ağacın yarılması onun için bir mucize idi. Nitekim bu olayda şaşırtıcı bir olağanüstü durum görünce, kesin olan inancı daha da güçlenmiş oldu. Sonra öldürülme şeklinde başına gelen musibet, hakikatte musibet değildir. Nitekim bu işin ehli olanlar şöyle demişlerdir:

*"Velilerin, musibeti tatlı bulmaları, Mevlâ ile münacatta bulunmak içindir."*

فَاسْتَجَبْنَا لَهُ وَوَهَبْنَا لَهُ يَحْيٰى وَاَصْلَحْنَا لَهُ زَوْجَهُ اِنَّهُمْ كَانُوا يُسَارِعُونَ
فِي الْخَيْرَاتِ وَيَدْعُونَنَا رَغَبًا وَرَهَبًا وَكَانُوا لَنَا خَاشِعِينَ ﴿٩٠﴾

90- "Biz de onun duasını kabul ettik ve kendisine Yahya'yı bağışladık. Eşini kendisi için doğuma elverişli kıldık. Onlar, gerçekten hayır işlerinde yarışırlar, umut ve korku içinde bize dua ederlerdi. Onlar, bize karşı boynu bükük idiler."

Çocuğuna Yahya adının verilmesi, annesinin kısırlığının yeniden canlılığa dönüşmesidir.

( وَاَصْلَحْنَا لَهُ زَوْجَهُ ) *"Eşini kendisi için doğuma elverişli kıldık."*

Bundaki amaç, çocukla hepsine lütufta bulunmak ve eşinin eş olma hakkı gözetilerek Zekeriyyâ'nın tek başına çocukla sevinmemesidir. Bu, Allah'ın dostlarına olan keremi konusundaki prensibidir.

Şu dizeler de bu anlamdadır:

*Büyükler kolaylık sağladıklarında hatırlarlar*
*Zor yerde kendilerine dost olmuş olanları*

( اِنَّهُمْ كَانُوا يُسَارِعُونَ فِي الْخَيْرَاتِ وَيَدْعُونَنَا رَغَبًا وَرَهَبًا ) *"Onlar, gerçekten hayır işlerinde yarışırlar, umut ve korku içinde bize dua ederlerdi."*

Bunda bütün müminler için müjde vardır. Çünkü mümin, arzu ve korku hallerinden birini yaşar. Zira eğer arzu olmasaydı bu, ümitsizlik olurdu. Ümitsizlik ise küfürdür. Şayet korku olmasaydı bu da Allah'ın kahrından emin olmak demek olurdu. Oysa emin olmak küfürdür.

( وَكَانُوا لَنَا خَاشِعِينَ ) *"Onlar, bize karşı boynu bükük idiler."*

Huşu, Allah'ın tecellisi esnasında kalbin ürpermesidir. Veliler için bu durum devamlı söz konusudur.

وَالَّتِي اَحْصَنَتْ فَرْجَهَا فَنَفَخْنَا فِيهَا مِنْ رُوحِنَا وَجَعَلْنَاهَا وَابْنَهَا
اٰيَةً لِلْعَالَمِينَ ﴿٩١﴾

91- "Irzını korumuş olan kadını da hatırla. Ona ruhumuzdan üfledik. Onu ve oğlunu âlemlere birer mucize kıldık."

Bu kadından maksat Hz. Meryem'dir. Allah, ahlaksızlık belirtisini ve kötülüğün çirkinliğini ondan gidermişti. Bir yoruma göre de Meryem'e ruhu Hz. Cebrail üflediği halde, Allah'ın: ( فَنَفَخْنَا فِيهَا مِنْ رُوحِنَا ) "*Ona ruhumuzdan üfledik*" buyurması, O'nun emriyle olması sebebiyle üflemenin kendisine izafe edilmesinin uygun düşmesidir. Bu ifadede aynı zamanda vahyin inişi ile ilgili tevil için de delil bulunmaktadır. Çünkü vahyi melek indirdiği halde bu, Allah'ın emriyle olduğu için O'na izafe edilmesi yerindedir. Öte yandan Allah'ın ruhu kendine izafe etmesi tahsis yönüyledir. Tıpkı: "Allah'ın devesi" ve: "Benim evim" tarzındaki ifadelerde olduğu gibi.

( وَجَعَلْنَاهَا وَابْنَهَا اٰيَةً لِلْعَالَمِينَ ) "*Onu ve oğlunu âlemlere birer mucize kıldık.*"

Burada: "İki mucize kıldık" denilmemiş olmasının sebebi, ikisinin durumunun birlikte mucize ve delil olmasıdır. Burada her biri ayrı birer mucize olarak da kast edilmiş olabilir. Çünkü Araplar, buna benzer üsluplar kullanmaktadırlar.

Bu ifade aynı zamanda: "Meryem Allah'tan hamile kaldı" diyenlerin iftirasını da reddetmektedir ki Allah onların dediğinden münezzehtir.

( اٰيَةً لِلْعَالَمِينَ ) "*Âlemlere birer mucize kıldık.*"

Bütün insanlar onlarla hidayete ermiş olmasa da onlar mucize idiler. Nitekim kim onların durumuna bakar ve yerli yerinde düşünürse hidayete erer. Yüz çevirip bakmadığı zaman ise yine de ayet, hakkında kusur işleyenin kusuru sebebiyle hüccet ve delil olmaktan çıkmaz.

اِنَّ هٰذِهٖٓ اُمَّتُكُمْ اُمَّةً وَاحِدَةً وَاَنَا رَبُّكُمْ فَاعْبُدُونِ ﴿٩٢﴾

92- "Şüphesiz bu, tek ümmet olarak sizin ümmetinizdir. Ben de Rabbinizim. O halde sadece bana ibadet edin."

Yani hepiniz O'nun yaratıklarısınız ve hepiniz yoksulluk, zaaf ve ihtiyaç içindesiniz. Ben ise tek olma vasfıyla Rabbinizim ve yaratıcınızım.

وَتَقَطَّعُوٓا اَمْرَهُمْ بَيْنَهُمْ كُلٌّ اِلَيْنَا رَاجِعُونَ ﴿٩٣﴾

93- "İşlerini kendi aralarında parça parça ettiler. Hepsi sadece bize dönecekler."

Görüş ayrılığına ve anlaşmazlığa düştüler, işlerinin düzeni bozuldu ve durumlarında dağınıklık meydana geldi. Böylece musibetler onları kökten yok etmiş oldu.

(كُلٌّ اِلَيْنَا رَاجِعُونَ) *"Hepsi sadece bize dönecekler."*

Onlar, sadece takdirin elinde sevk ve idare edilmekte iken nasıl Allah'a dönmeyecekler ki?!

فَمَنْ يَعْمَلْ مِنَ الصَّالِحَاتِ وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَلَا كُفْرَانَ لِسَعْيِهِ وَاِنَّا لَهُ كَاتِبُونَ ﴿٩٤﴾

94- "O halde kim mümin olarak salih bir amel işlerse, çabası asla karşılıksız bırakılmaz. Şüphesiz biz onu yazmaktayız."

Kim Allah için çaba harcarsa, Allah katında kayba uğramaz. Kim Allah için zorluğa katlanırsa Allah'a hakkı vacip olur. Öte yandan ayette salih amelin müminliğe bağlanmış olması, mümin olmayan kimsenin amelinin salih olamayacağının delilidir. Bu itibarla "mümin olarak" kaydının faydası, bunun gelecekte ve ömrün sonunda da devam etmesini ifade etmektir. Zira bazen sonu saadetle noktalanmayan kimse de salih ameller işler ve o anda kendisi mümin, ameli de imanına uygun olur, ancak sonunda hiçbir sevap kazanmaz. Şayet akıbeti, İslam ve tevhid üzere olursa işte o zaman çabası boşa gitmez.

وَحَرَامٌ عَلٰى قَرْيَةٍ اَهْلَكْنَاهَآ اَنَّهُمْ لَا يَرْجِعُونَ ﴿٩٥﴾

95- "Helak ettiğimiz bir memleket halkının bize dönmemeleri imkânsızdır."

Yani uzun zaman isyan etseler dahi, iman etmeyeceklerini ve sonlarının kötü olacağını bilmediğimiz sürece hiçbir kavmi helak etmeyiz.

حَتّٰٓى اِذَا فُتِحَتْ يَأْجُوجُ وَمَأْجُوجُ وَهُمْ مِنْ كُلِّ حَدَبٍ يَنْسِلُونَ ﴿٩٦﴾

96- "Nihayet Ye'cûc ve Me'cûc'un önü açıldığı zaman her tepeden akın ederler."

Yani haklarındaki ilahî hüküm kesinleşir ve kendileri için biçilen süre tamamlanır. İşte o zaman günleri belirginleşir ve takdirde belli olan süreye kadar insanların onların elinden kurtuluşu gerçekleşmez.

وَاقْتَرَبَ الْوَعْدُ الْحَقُّ فَاِذَا هِيَ شَاخِصَةٌ اَبْصَارُ الَّذِينَ كَفَرُوا يَا وَيْلَنَا قَدْ كُنَّا فِي غَفْلَةٍ مِنْ هٰذَا بَلْ كُنَّا ظَالِمِينَ ﴿٩٧﴾

97- "Gerçek vaad yaklaşınca bir de bakarsın ki inkâr edenlerin gözleri açılıp donakalmıştır. Şöyle derler: 'Eyvah bizlere! Doğrusu biz bundan gafil idik. Hatta biz, zalim kimselermişiz.'"

Kıyamet onları ansızın yakalar. Kıyametin alametleri de beklenmediği bir anda ortaya çıkar. Bu esnada yalancılar günahlarını itiraf ederler ancak bunu mazeretlerinin kabul olunmadığı ve imanlarının kendilerine fayda vermediği bir zamanda yaparlar.

اِنَّكُمْ وَمَا تَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ حَصَبُ جَهَنَّمَ اَنْتُمْ لَهَا وَارِدُونَ ﴿٩٨﴾

98- "Şüphesiz siz ve Allah'tan başka taptığınız şeyler cehennem odunusunuz. Siz cehenneme varacaksınız."

Allah'tan başka taptıklarından maksat, taptıkları putlardır. Ancak kimilerinin taptıkları melekler bunlara dahil değildir. Aynı şekilde,

birileri ona tapmış olsalar da Hz. İsa da bunlara dahil değildir. Çünkü Allah: "*Taptığınız kimseler*" dememiş, ( وَمَا تَعْبُدُونَ ) "*Taptığınız şeyler*" demiştir. Böylece kâfirler cehennemde bir araya getirilirken, putları da onlarla bir araya getirilir. Bu arada putlar cansız varlıklar olup hiçbir günahları olmadığı gibi yanmaları da onların cezası değildir. Aksine bu putların günahsızlığı cihetiyledir. Bu itibarla günah kâfirlerin olup putlar cansız varlıklardan başka bir şey değildir.

لَوْ كَانَ هٰٓؤُلَٓاءِ اٰلِهَةً مَا وَرَدُوهَا وَكُلٌّ فٖيهَا خَالِدُونَ ﴿٩٩﴾

99- "Eğer bunlar ilâh olsalardı, cehenneme varmazlardı. Oysa hepsi orada ebediyen kalıcıdırlar."

Onlar dediler ki: ( مَا نَعْبُدُهُمْ اِلَّا لِيُقَرِّبُونَٓا اِلَى اللّٰهِ زُلْفٰى ) "*Biz, onlara sadece bizi Allah'a daha çok yaklaştırsınlar diye tapıyoruz.*" (Zümer, 39/3)

Böylece onlar, putların cansız varlıklar olduklarını biliyorlardı. Ancak onların Allah katında bir önemi olduğunu ve onlara tapan kimsenin, onlara tapmakla Allah'a yakınlaştığını vehmettiler. Bu nedenle yarın Allah onlara şunu açıklayacaktır: *"Eğer putlar, tapılmayı hak etselerdi ve Allah katında bir öneme sahip olsalardı ateşe atılmayacak ve yakılmayacaklardı."*

لَهُمْ فٖيهَا زَفٖيرٌ وَهُمْ فٖيهَا لَا يَسْمَعُونَ ﴿١٠٠﴾

100- "Onların cehennemde derin bir iç çekişleri vardır. Bir de onlar orada işitmezler."

Onlardan maksat, putlara tapanlardır. "Orada", cehennemde demektir. Derin iç çekişleri de kaçırdıkları fırsata hasret çekmeleri sebebiyledir.

( وَهُمْ فٖيهَا لَا يَسْمَعُونَ ) "*Bir de onlar orada işitmezler.*" Yani onlar azaplarının sona erdiğini kendilerine müjdeleyen hiçbir duyuru işitmeyeceklerdir.

Müslümanların cehennemdeki günahkârları ise bunların ahvalinin aksine, belli bir süre kendilerine azap çektirilse de çok uzun

bir süre sonra da olsa, şüphesiz azaplarının sona erdiğini bir gün onlara müjdeleyecek olan kimsenin sözünü işitirler.

اِنَّ الَّذِينَ سَبَقَتْ لَهُمْ مِنَّا الْحُسْنٰىۙ اُو۬لٰٓئِكَ عَنْهَا مُبْعَدُونَ ﴿١٠١﴾

101- "Kendileri için tarafımızdan en güzel mükâfat hazırlanmış olanlar var ya işte bunlar cehennemden uzaklaştırılmışlardır."

Ayette ifade edilen en güzel mükâfattan maksat, en güzel mükâfata dair ilahi söz ile en güzel mükâfata dair ilahi istek ve iradedir. Çünkü mükâfatın kendisi Allah'ın fiilidir. Bu arada mükâfatın geçmişte hazırlanmış olması, hazırlanan şeyin kadim olduğunu bildirmektedir. Onlar için ezelde var olan ise mutluluğu dile getirmek anlamında, onlara taalluk eden bir sıfat olan sözdür.

(اُو۬لٰٓئِكَ عَنْهَا مُبْعَدُونَ) *"İşte bunlar cehennemden uzaklaştırılmışlardır."*

Yani onlar cehennemin ateşinden uzaklaştırılmış kimselerdir. Bu arada, "uzaklaşmış kimselerdir" denilmemiş olmasının sebebi, bunun kulun kendi uzaklaşması veya yakınlaşmasıyla değil, ilahi takdire ve Allah'ın ezeldeki hükmüne bağlı olarak gerçekleştiğinin bilinmesidir.

لَا يَسْمَعُونَ حَسِيسَهَا وَهُمْ فِي مَا اشْتَهَتْ اَنْفُسُهُمْ خَالِدُونَ ﴿١٠٢﴾

102- "Onlar, cehennemin hışıltısını bile duymazlar. Onlar, canlarının istediği nimetler içinde ebedî olarak kalırlar."

Ayet, o kimselerin hiçbir şekilde cezalandırılmayacaklarını ifade etmektedir. Bu kimselerden maksat da Allah'ın hiçbir günahları olmayan mümin kullarıdır.

(وَهُمْ فِي مَا اشْتَهَتْ اَنْفُسُهُمْ خَالِدُونَ) *"Onlar, canlarının istediği nimetler içinde ebedî olarak kalırlar."*

Onlar orada kalıcı olup ayrılmazlar.

لَا يَحْزُنُهُمُ الْفَزَعُ الْاَكْبَرُ وَتَتَلَقّٰيهُمُ الْمَلٰٓئِكَةُ هٰذَا يَوْمُكُمُ الَّذ۪ي كُنْتُمْ تُوعَدُونَ ﴿١٠٣﴾

**103- "En büyük korku bile onları tasalandırmaz ve melekler onları şu sözle karşılarlar: 'İşte bu, size vaad edilen gününüzdür.'"**

Bir görüşe göre en büyük korku, meleğin şu sözüdür:

( يَوْمَ يَرَوْنَ الْمَلٰٓئِكَةَ لَا بُشْرٰى يَوْمَئِذٍ لِلْمُجْرِمِينَ ) *"O gün günahkârlara hiçbir müjde yoktur."* (Furkân, 25/22)

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- En büyük korku şöyle denildiği zamandır:

( وَامْتَازُوا الْيَوْمَ اَيُّهَا الْمُجْرِمُونَ ) *"Ayrılın bugün ey günahkârlar!"* (Yâsîn, 36/59)

- En büyük korku şöyle denildiği zamandır:

*"Ey cennetlikler! Ölümsüz bir ebedilikle cennette kalın. Ey cehennemlikler! Ölümün olmadığı bir ebedilikle cehennemde kalın."*

- En büyük korku şöyle denildiği zamandır:

( قَالَ اخْسَؤُا فِيهَا وَلَا تُكَلِّمُونِ ) *"Aşağılık içinde kalın orada ve benimle konuşmayın!"* (Mü'minûn, 23/108)

- En büyük korku ayrılıktır.

- En büyük korku, Allah'ın rahmetinden ümitsiz olmak ve bunun bilgisine sahip kılınmaktır.

( وَتَتَلَقّٰيهُمُ الْمَلٰٓئِكَةُ هٰذَا ) *"Melekler onları şu sözle karşılarlar."*

Onlara şöyle denir:

*"İşte bu, size sevap vaad edilmiş olan gününüzdür."*

Bu çerçevede onların bazısını melek karşılar, bazılarına da hitap ve bilgi Allah'tan gelir.

يَوْمَ نَطْوِي السَّمَٓاءَ كَطَيِّ السِّجِلِّ لِلْكُتُبِ كَمَا بَدَاْنَٓا اَوَّلَ خَلْقٍ
نُعِيدُهُ وَعْدًا عَلَيْنَا اِنَّا كُنَّا فَاعِلِينَ ﴿١٠٤﴾

104- "Yazılı kağıt tomarlarının dürülmesi gibi göğü düreceğimiz günü düşün. Başlangıçta ilk yaratmayı nasıl yaptıysak, üzerimize aldığımız bir vaad olarak onu tekrar yapacağız. Biz, bunu muhakkak yapacağız."

Gökyüzü, ancak altında Allah'ın dostları var iken yükseltilmiş bir tavan idi. Yeryüzü de ancak üzerinde Allah'ın dostları var iken bir yatak idi. Derken, halk arasında mevcut, dostların ayrılmasından sonra yurtların harap olması şeklindeki âdete uygun olarak, oralardan dostlar göç edince yurtları harap oldu.

Bir yoruma göre de haklarında günahkârlıkla şahitlik etmemesi için biz, günahkâr Müslümanların amel defterlerinin yükseldiği göğü düreriz. Üzerinde günah işledikleri yeryüzü de haklarında günahkârlıkla şahitlik etmemesi için o yeryüzünden başka bir yeryüzüne çevrilir.

Veya dostlar için kat edecekleri mesafeleri yakın kılmak için göğü düreriz.

وَلَقَدْ كَتَبْنَا فِي الزَّبُورِ مِنْ بَعْدِ الذِّكْرِ اَنَّ الْاَرْضَ يَرِثُهَا عِبَادِيَ
الصَّالِحُونَ ﴿١٠٥﴾

105- "Andolsun, Zikir'den sonra Zebûr'da da şöyle yazmıştık: 'Yere muhakkak benim iyi kullarım vâris olacaktır.'"

Burada Zikir Tevrat'tır. Yazmaktan maksat, haber ve hüküm vermektir. Salihler ise Hz. Muhammed'in (s.a.v.) ümmetidir ki yeryüzüne onlar vâris olacaklardır.

اِنَّ فِي هٰذَا لَبَلَاغًا لِقَوْمٍ عَابِدِينَ ﴿١٠٦﴾

106- "Şüphesiz bunda Allah'a kulluk eden bir toplum için bir mesaj vardır."

وَمَٓا اَرْسَلْنَاكَ اِلَّا رَحْمَةً لِلْعَالَمِينَ ﴿١٠٧﴾

107- “Seni ancak âlemlere rahmet olarak gönderdik.”

Müslüman olanlar seninle kurtulacak, kâfir olanlara gelince sen, aralarında olduğun sürece biz onlara azap çektirmeyeceğiz. İşte bu nedenle sen, bizim tarafımızdan bütün yaratıklara gönderilmiş bir rahmetsin.

قُلْ اِنَّمَا يُوحٰىٓ اِلَيَّ اَنَّمَٓا اِلٰهُكُمْ اِلٰهٌ وَاحِدٌ فَهَلْ اَنْتُمْ مُسْلِمُونَ ﴿١٠٨﴾

108- “De ki: ‘Bana ancak, ilâhınızın bir tek ilâh olduğu vahyolunuyor. Artık Müslüman oluyor musunuz?’”

Allah zatıyla birdir, sıfatlarıyla birdir, fiilleriyle birdir, paydaşsız birdir, benzersiz birdir ve ortaksız birdir.

( فَهَلْ اَنْتُمْ مُسْلِمُونَ ) *“Artık Müslüman oluyor musunuz?”*

İlahlığa layık görmede Allah dışındaki her şeyden arınmak suretiyle, tevhid inancında samimi Müslümanlar oluyor musunuz?

فَاِنْ تَوَلَّوْا فَقُلْ اٰذَنْتُكُمْ عَلٰى سَوَٓاءٍ وَاِنْ اَدْر۪ٓي اَقَر۪يبٌ اَمْ بَع۪يدٌ مَا تُوعَدُونَ ﴿١٠٩﴾

109- “Eğer yüz çevirirlerse de ki: ‘Bana emredileni, size eşit olarak bildirdim. Uyarıldığınız şey, yakın mı yoksa uzak mı bilmiyorum.’”

Eğer onlar, yüz çevirip iman etmezlerse, şöyle de:

*“Şüphesiz ben, sorumluluğum gereğince size bilgi verdim. Lakin değer vermemden dolayı size ilhamda bulunmadım. Böylece delil aleyhinize işlemiş oldu ve hedefi şaşırdınız.”*

( وَاِنْ اَدْر۪ٓي اَقَر۪يبٌ اَمْ بَع۪يدٌ مَا تُوعَدُونَ ) *“Uyarıldığınız şey, yakın mı yoksa uzak mı bilmiyorum.”*

Benim ilmim, gelecekteki hallerinizin ayrıntısını ve kıyamet gününde, hakkında uyarıldığınız korkularınızın gerçekleşeceği vakti

bilmeye yetmemektedir. Lakin Allah, durumlarınızda bir değişiklik yapmak istediği zaman hükmü gecikmez.

إِنَّهُ يَعْلَمُ الْجَهْرَ مِنَ الْقَوْلِ وَيَعْلَمُ مَا تَكْتُمُونَ ﴿١١٠﴾

110- "Şüphesiz Allah, açığa vurulan sözü de bilir, gizlemekte olduğunuzu da bilir."

Sırrınız da, fısıldaşmanız da şimdiki durumunuz da, geleceğiniz de zahiriniz de bâtınınız da Allah'a saklı kalmaz. Bu nedenle O, hak ettiğiniz kadar size karşılık verir, yaptıklarınıza göre sizi hesaba çeker ve mükâfatlandırır.

وَاِنْ اَدْرٖي لَعَلَّهُ فِتْنَةٌ لَكُمْ وَمَتَاعٌ اِلٰى حٖينٍ ﴿١١١﴾

111- "Bilmem! Belki bu, sizin için bir imtihan ve bir vakte kadar yararlanmadır."

Benim ilmim, ancak Allah'ın bana bildirdiğini kapsar. Kaldı ki bana bildirmesi de ne benim ihtiyarımladır ne de benim muradım ve tercihime göre amaçlanmaktadır.

قَالَ رَبِّ احْكُمْ بِالْحَقِّ وَرَبُّنَا الرَّحْمٰنُ الْمُسْتَعَانُ عَلٰى مَا تَصِفُونَ ﴿١١٢﴾

112- "Peygamber şöyle dedi: 'Ey Rabbim! Hak ile hüküm ver. Bizim Rabbimiz, sizin nimetlerinize karşı yardımı istenecek olan Rahmân'dır.'"

Rahmân, rahmeti herkesi kapsayan çok merhamet sahibi demektir. Bir de ne zaman ve nasıl meydana gelirse gelsin, yardım ve zafer de O'ndandır.

سورة الْحَجِّ

# HAC SÛRESİ

(Hac Sûresi 78 âyettir. Mekke'de inmeye başlamış, Medine'de tamamlanmıştır. Hac konusu yer aldığı için sûreye bu ad verilmiştir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla.**

"Bismillah" lafzını işitmek, heybet ve kendinden geçmeyi sağlar. Bu ise onların mahviyet halidir. "er-Rahmân er-Rahîm" sözünü işitmek de ünsiyet ve yakınlığı sağlar. Bu da onların sahv -ayıklık- halidir. Böylece bu ayeti işitirken onların sahv ve mahviyet halleri aynı ipe dizilmiş -aynı anda gerçekleşmiş- olur.

"Bismillah" lafzını işitmek kalplerin sıkılmasına sebep olur ve onların delilik hastalığı da o sırada gerçekleşir. "er-Rahmân er-Rahîm" sözünü işitmek de kalplerin ferahlamasını sağlar. Bu ferahlamayla da manevî hastalıklarının şifası gerçekleşir. Bu itibarla manevî hastalıklarının dönüşü, Allah'ın cemalinin lütfuna, deliliklerinin sebebi de celalinin keşfine bağlıdır.

يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوا رَبَّكُمْ اِنَّ زَلْزَلَةَ السَّاعَةِ شَيْءٌ عَظِيمٌ ﴿١﴾

1- "Ey insanlar! Rabbinize karşı gelmekten sakının. Çünkü kıyamet sarsıntısı çok büyük bir şeydir."

( يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ ) "*Ey insanlar*" sözü alamet çağrısı, "Ey iman edenler" ise keramet çağrısıdır. Allah, surelerdeki hitabını her iki kısımla da başlatmaktadır. Çünkü Allah'ın hitabı iki kısma ayrılmış olup bazen sakındırma sıfatı, bazen de bilinçlendirme sıfatı şeklinde olur.

Takva ise sakıncalı durumlardan korunmak, sakınmak ve uzak durmaktır. Bu arada sakıncalı durumlara uzak durmak farz, mubahlar cümlesinden olsalar dahi fuzuli iş ve uğraşlardan uzak durmak da nafile ibadettir. Bu itibarla birincinin sevabı daha çok, ancak daha sonra -ahirette- verilir. Nafilenin sevabı ise daha az, ancak daha önce -dünyada- verilir.

Bir yoruma göre de Allah, insanları önce ( اتَّقُوا ) "*sakının*" sözüyle korkutmuş, ardından da ( رَبَّكُمْ ) "*Rabbinizden*" demek suretiyle korkularını yatıştırmıştır. Çünkü rububiyeti işitmek, devamlılığı ve güzel sahiplenmeyi gerektirir.

( اِنَّ زَلْزَلَةَ السَّاعَةِ شَيْءٌ عَظِيمٌ ) "*Çünkü kıyamet sarsıntısı çok büyük bir şeydir.*"

Var olmayan sarsıntıyı "şey" diye adlandırmak mecazdır. Her ne kadar "zelzele -sarsıntı-" lafzı, şey olmayı gerektirse de buradaki mecazın delili, yoklukta sarsıntının olmadığı konusundaki görüş birliğidir. Nitekim yokluğun "şey" diye adlandırılması da mecazlı bir sözdür.

يَوْمَ تَرَوْنَهَا تَذْهَلُ كُلُّ مُرْضِعَةٍ عَمَّٓا اَرْضَعَتْ وَتَضَعُ كُلُّ ذَاتِ حَمْلٍ حَمْلَهَا وَتَرَى النَّاسَ سُكَارٰى وَمَا هُمْ بِسُكَارٰى وَلٰكِنَّ عَذَابَ اللّٰهِ شَدِيدٌ ﴿٢﴾

2- "Onu göreceğiniz gün, her emzikli kadın emzirmekte olduğu çocuğundan geçer ve her hamile kadın da karnındaki çocuğunu düşürür. İnsanları sarhoş görürsün. Halbuki onlar sarhoş değillerdir. Ne var ki Allah'ın azabı çok şiddetlidir."

O gün herkesin kendisini yeterince uğraştırıp zamanının tamamını alan bir meşguliyeti vardır.

( وَتَرَى النَّاسَ سُكَارٰى ) *"İnsanları sarhoş görürsün."*

Yani o günün korkusundan dolayı insanların akılları başlarından gitmiş olmaktadır. Kıyamet gününün korkulu halleri baskındır. Aslında onlar, sarhoş gibidirler, ancak gerçekte sarhoş değillerdir. Ne var ki Allah'ın azabı şiddetlidir. Zaten şiddetinden dolayı bu azap, onları şaşkına çevirip halleri üzerinde bırakmamaktadır. Bu arada onlar, sarhoşluklarındaki benzerlikte uyumludurlar, lakin sebepleri farklıdır. Zira kimisinin sarhoşluğu uğradığı korkular nedeniyledir, kimisinin sarhoşluğu da vuslatın özünde fenâ bulmasından dolayıdır.

Aynı şekilde bugün de insanların sarhoşluğu değişiktir. Bu çerçevede kimisinin sarhoşluğu şarap sarhoşluğudur, kimisinin de sarhoşluğu sevgilerin sarhoşluğudur. Bu iki sarhoşluk arasında ise büyük fark vardır. Zira biri gaflet sarhoşluğu, diğeri ise vuslat ehlinin sarhoşluğudur.

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يُجَادِلُ فِي اللّٰهِ بِغَيْرِ عِلْمٍ وَيَتَّبِعُ كُلَّ شَيْطَانٍ مَرِيدٍۙ ٣

3- "İnsanlardan kimi vardır ki, hiçbir bilgisi olmadığı halde, Allah hakkında tartışmaya girer ve her azgın şeytanın ardına düşer."

Hakk'ın düşmanlarına ve din inkârcılarına karşı Allah için mücadele etmek Allah'a yakınlığın sebeplerindendir. Allah hakkında tartışmak, velileriyle münakaşa etmek ve deliller ortaya çıktıktan sonra bâtıl üzere ısrarda bulunmak, mutsuzluğun emarelerindendir. Şeytanın vesveseleri ve saptırmalarıyla olan şeylerin sonu ise cehennemdir.

كُتِبَ عَلَيْهِ اَنَّهُ مَنْ تَوَلَّاهُ فَاَنَّهُ يُضِلُّهُ وَيَهْدِيهِ اِلٰى عَذَابِ السَّعِيرِ ٤

4- "Şeytan hakkında: 'Her kim onu dost edinirse, mutlaka o kimseyi saptırır ve onu cehennem azabına sürükler' diye yazılmıştır."

Kim, gerekçelerinin peşine düşerek şeytana uyarsa, şeytan onu ancak sapıklığa sürükler. Sonra ahirette ona uymaktan uzak durur ve bütün uyanlarına lanet okur. Bu sebeple biz şeytandan, onun saptırmalarından, mutsuzluğun uçurumlarından ve şeytanın uğursuz sürprizlerinden Allah'a sığınırız.

يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ اِنْ كُنْتُمْ فِي رَيْبٍ مِنَ الْبَعْثِ فَاِنَّا خَلَقْنَاكُمْ مِنْ تُرَابٍ
ثُمَّ مِنْ نُطْفَةٍ ثُمَّ مِنْ عَلَقَةٍ ثُمَّ مِنْ مُضْغَةٍ مُخَلَّقَةٍ وَغَيْرِ مُخَلَّقَةٍ لِنُبَيِّنَ
لَكُمْ وَنُقِرُّ فِي الْاَرْحَامِ مَا نَشَٓاءُ اِلٰٓى اَجَلٍ مُسَمًّى ثُمَّ نُخْرِجُكُمْ طِفْلًا
ثُمَّ لِتَبْلُغُٓوا اَشُدَّكُمْ وَمِنْكُمْ مَنْ يُتَوَفّٰى وَمِنْكُمْ مَنْ يُرَدُّ اِلٰٓى اَرْذَلِ
الْعُمُرِ لِكَيْلَا يَعْلَمَ مِنْ بَعْدِ عِلْمٍ شَيْـًٔا وَتَرَى الْاَرْضَ هَامِدَةً فَاِذَٓا
اَنْزَلْنَا عَلَيْهَا الْمَٓاءَ اهْتَزَّتْ وَرَبَتْ وَاَنْبَتَتْ مِنْ كُلِّ زَوْجٍ بَهٖيجٍ ﴿٥﴾

5- "Ey insanlar! Eğer ölümden sonra diriliş konusunda herhangi bir şüphe içindeyseniz hiç şüphesiz biz sizi topraktan, sonra az bir sudan, sonra bir 'alaka'dan, sonra da yaratılışı belli belirsiz 'mudga'dan yarattık ki, size apaçık anlatalım. Dilediğimizi belli bir süreye kadar rahimlerde durduruyoruz. Sonra sizi bir çocuk olarak çıkarıyor sonra da tam gücünüze ulaşmanız için sizi kemale erdiriyoruz. İçinizden ölenler olur. Yine içinizden bir kısmı da ömrün en reziline ulaştırılır ki, bilirken hiçbir şey bilmez hale gelsin. Yeryüzünü de ölü, kupkuru görürsün. Biz, onun üzerine yağmur indirdiğimiz zaman kıpırdar, kabarır ve her türden iç açıcı çift çift bitkiler bitirir."

Allah'ın halkı diriltmesinin mümkün olduğu akıllarına yatmadı ve onu son derece uzak bir ihtimal olarak kabul ettiler. Bunun üzerine Allah, onları sadece delili düşünmekten yüz çevirmeleri sebebiyle yadırgadı ve bu konuda kendilerine karşı, delillerini geçersiz kılan delil ortaya koydu. Bu nedenle kim, O'nun yolunu izlerse, hi-

dayete erer. Kim de sapıklığında ısrar ederse, helakinin uçurumuna yuvarlanır.

Aynı zamanda Allah, diriltmenin mümkün olduğu konusunda onlara karşı, kendilerinin başta kabul ettikleri hususla delil getirmiştir. Bu husus, Allah'ın kendilerini yarattığı ve halden hale geçirdiğidir. Bu çerçevede Allah, onları sudan "alaka"ya, ondan da diğer safhalara geçirmiş ve nihayet gençlik hallerinden ihtiyarlık zamanına, o zamandan da vefat anına taşımıştır.

Allah'ın onlara karşı ortaya koyduğu bir delil de kendilerini tanık kıldığı ilkbaharda ölü toprağı nasıl dirilttiği ve böylece toprağın baharda nasıl tekrar yeşillenip canlandığıdır. Nitekim bu şeylere kadir olan Allah, çürümüş ceset ve ufalanmış kemiklerde hayat yaratmaya da kadirdir.

( وَمِنْكُمْ مَنْ يُرَدُّ اِلٰٓى اَرْذَلِ الْعُمُرِ ) *"Yine içinizden bir kısmı da, ömrün en reziline ulaştırılır."*

Durgunluk zamanı mücahededen sonra, perdelenmişlik hali de müşahedenin ardından olur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Ömrün en rezili, hakları yerine getirdikten sonra nefsin arzuları için çalışmaktır.

- Ömrün en rezili, isyan konaklarında ikamet etmektir.

- Ömrün en rezili, zelilliğin ülkelerinde kalmaktır.

- Ömrün en rezili, zıtlarla hemhal olmaktır.

- Ömrün en rezili, kişinin değersiz yaşamasıdır.

- Ömrün en rezili, kişinin nefsiyle baş başa bırakılmasıdır.

- Ömrün en rezili, Allah dışında bir şeyin olabileceğini sanmanın vadilerinde sersem dolaşmaktır.

- Ömrün en rezili, nefsin tedbirine yaslanıp Hakk'ın takdirini görmekten kör olmaktır.

ذٰلِكَ بِاَنَّ اللّٰهَ هُوَ الْحَقُّ وَاَنَّهُ يُحْيِي الْمَوْتٰى وَاَنَّهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرٌ ﴿٦﴾

6- "Bu böyle. Çünkü Allah, hakkın ta kendisidir. Şüphesiz O, ölüleri diriltir ve O, her şeye hakkıyla kadirdir."

Hak olan Allah'tır. Aynı zamanda O, varlığı mutlak olan Hak'tır. Bir de O, hak sahibi olan anlamında Hak'tır.

(وَاَنَّهُ يُحْيِي الْمَوْتٰى) *"Şüphesiz O, ölüleri diriltir."*

Yani Allah, kışın ıssızlığının vurduğu toprağı ilkbaharda canlandırır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, nefisleri ibadetlere muvaffak kılmakla, kalpleri de müşahedelerin nurlarıyla diriltir.

- Allah, müridlerin hallerine onlara olan güzel yönelişiyle hayat verir.

- Vakitlerin hayatı, emirlere uymak sonra güzel hoşnutluk ve takdirin gerçekleşmesi anındaki sükûnetle olur.

وَاَنَّ السَّاعَةَ اٰتِيَةٌ لَا رَيْبَ ف۪يهَا وَاَنَّ اللّٰهَ يَبْعَثُ مَنْ فِي الْقُبُورِ ﴿٧﴾

7- "Çünkü kıyamet muhakkak gelecektir. Onda hiçbir şüphe yoktur ve şüphesiz Allah, kabirlerdeki kimseleri diriltecektir."

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يُجَادِلُ فِي اللّٰهِ بِغَيْرِ عِلْمٍ وَلَا هُدًى وَلَا كِتَابٍ مُن۪يرٍ ﴿٨﴾

8- "İnsanlardan kimisi de ilimsiz, rehbersiz ve aydınlatıcı bir kitap olmaksızın Allah hakkında tartışma yapar."

Ayetin hitabındaki delil, dinini savunabilmek için tartışma sahibi delil ve hücceti bildiği zaman Allah hakkında tartışma yapmanın caiz olduğunu göstermektedir. Nitekim Allah, Peygamberine (s.a.v.) şöyle buyurmuştur:

( وَجَادِلْهُمْ بِالَّتِي هِيَ اَحْسَنُ ) *"Onlarla en güzel yöntemle tartış."* (Nahl, 16/125)

Bir de hasmın düşüncesini ve onunla ilgili şüpheleri iyi bilmeyen kimsenin kendi şüphesinden kurtulması mümkün değildir. Kendi şüphesinden kurtulma gücüne sahip olmadığı zaman ise hasımlarının güçlü olanlarıyla tartışması uygun düşmez. Bu da usul ilmini öğrenmenin vacip olduğunu göstermekte ve bunu inkâr edene karşı da cevap içermektedir.

ثَانِيَ عِطْفِهِ لِيُضِلَّ عَنْ سَبِيلِ اللّٰهِ لَهُ فِي الدُّنْيَا خِزْيٌ وَنُذِيقُهُ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ عَذَابَ الْحَرِيقِ ﴿٩﴾

9- "Bunu, kibirlenerek insanları Allah'ın yolundan saptırmak için yapar. Ona dünyada rezil olmak vardır. Kıyamet gününde de ona yangın azabını tattıracağız."

Yani bu kimse, kibirlenerek hakkı kabul etmemekte, Allah'ın rızasını tahsilde üstüne düşeni yapmamakta ve yerli yerinde düşünmemektedir. Çünkü eğer bunu yapsaydı, şüphesinden kurtulması kolay olurdu.

( لَهُ فِي الدُّنْيَا خِزْيٌ ) *"Ona dünyada rezil olmak vardır."*

Yani o kimse için dünyada zelillik ve değer kaybı, ahirette de yangın azabı vardır.

ذٰلِكَ بِمَا قَدَّمَتْ يَدَاكَ وَاَنَّ اللّٰهَ لَيْسَ بِظَلَّامٍ لِلْعَبِيدِ ﴿١٠﴾

10- "İşte bu, daha önce kendi elleriyle yaptıkları sebebiyledir. Allah, asla kullarına zulmeden değildir."

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَعْبُدُ اللّٰهَ عَلٰى حَرْفٍ فَاِنْ اَصَابَهُ خَيْرٌ اطْمَاَنَّ بِه۪
وَاِنْ اَصَابَتْهُ فِتْنَةٌ انْقَلَبَ عَلٰى وَجْهِه۪ خَسِرَ الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةَ ذٰلِكَ هُوَ
الْخُسْرَانُ الْمُب۪ينُ ﴿١١﴾

11- "İnsanlardan kimisi de kenarda durarak Allah'a kulluk eder. Eğer kendisine bir hayır dokunursa onunla mutmain olur. Şayet başına bir fitne gelirse, gerisingeri dönüverir. O, dünyayı da kaybetmiştir, ahireti de. İşte apaçık kayıp budur."

Yani samimiyetsiz bir şekilde kenarda durur. Ne uyuma vesile olacak bir kabul edişi ne de uyumsuzluğu açıklayan bir inkârı vardır. Bu nedenle güven, hayır ve yumuşaklık bulduğu zaman onunla mutmain olur ve huzur bulur. Şayet başına bir fitne gelir veya kendisine bir sıkıntı dokunursa o zaman başını öne eğerek geri döner ve gösterdiği uyumu ters yüz eder. Bu vasfa sahip olan kimse ise her iki dünyada da kaybetmiş ve her iki merhalede de başarısız olmuştur.

يَدْعُوا مِنْ دُونِ اللّٰهِ مَا لَا يَضُرُّهُ وَمَا لَا يَنْفَعُهُ ذٰلِكَ هُوَ الضَّلَالُ
الْبَع۪يدُ ﴿١٢﴾ يَدْعُوا لَمَنْ ضَرُّهُٓ اَقْرَبُ مِنْ نَفْعِه۪ لَبِئْسَ الْمَوْلٰى وَلَبِئْسَ
الْعَش۪يرُ ﴿١٣﴾

12, 13- "O, Allah'tan başka, kendisine zarar da vermeyen fayda da vermeyen şeylere tapar. İşte derin sapıklık budur. Zararı gerçekten faydasından daha yakın olana tapar. Taptığı şey, ne kötü yardımcı ve ne kötü yoldaştır."

Yani o, ibadetindeki zarar faydasından daha çok olana tapar. Daha doğrusu, kendisine tapmanın hiçbir halde faydası bulunmamaktadır. Putlara tapmalarındaki kesin zarar, akıllarındaki arızanın ortaya çıkması ve fiillerindeki hatayı insanların görmesidir. Bu ibadette vehmettikleri faydanın ise ne varlığı ne gerçekliği söz konusudur.

( لَبِئْسَ الْمَوْلٰى وَلَبِئْسَ الْعَشِيرُ ) *“Taptığı şey, ne kötü yardımcı ve ne kötü yoldaştır.”*

Yani put, onlar için kötü bir yardımcı, onlar da put için kötü bir kavimdir. Neden olmasın? Onlar, sırf put için ebedi azabın içine düştüler.

اِنَّ اللّٰهَ يُدْخِلُ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ اِنَّ اللّٰهَ يَفْعَلُ مَا يُرِيدُ ﴿١٤﴾

14- “Şüphesiz Allah, iman edip salih ameller işleyen kimseleri, altından nehirler akan cennetlere koyacaktır. Muhakkak Allah, dilediğini yapar.”

( اٰمَنُوا ) *“İman edenler.”*

Yani tasdik edip sonra hakikate erenler. Zira imanın zahiri tasdik, bâtını da hakikate ermektir. Bu ikisine ise kul, ancak muvaffakiyetle ulaşır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- İman, Hakk'ı sırda aramaktır.

- İman, güvene yol açan şeydir. Bu itibarla iman dünyada vacip, ahirette de güven vesilesidir. İmanın peşin sonucu, Müslümanların kılıcından emin olmak, sonraki sonucu ise yoldan çıkmış kâfirlerin beraberliğinden kurtuluştur.

( وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ ) *“Salih ameller işleyen kimseler.”*

Salih amel, kabule değer ve sevap kazanmaya yarayan ameldir. Bu da amelin, imana uygun şekilde gerçekleşmesiyle olur.

Müminlerin gireceği cennetler de sonraya bırakılan cennetler ve peşin cennetler şeklindedir. Sonraya bırakılanlar sevap ve tövbedir. Peşin olanlar ise haller ve yakınlıktır. Allah şöyle buyurur:

( وَلِمَنْ خَافَ مَقَامَ رَبِّهِ جَنَّتَانِ ) *"Rabbinin huzurunda duracağından korkan kimseye iki cennet vardır."* (Rahmân, 55/46)

مَنْ كَانَ يَظُنُّ اَنْ لَنْ يَنْصُرَهُ اللّٰهُ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ فَلْيَمْدُدْ بِسَبَبٍ اِلَى السَّمَاۤءِ ثُمَّ لْيَقْطَعْ فَلْيَنْظُرْ هَلْ يُذْهِبَنَّ كَيْدُهُ مَا يَغِيظُ ﴿١٥﴾

15- "Her kim, Allah'ın dünya ve ahirette asla ona (peygamberine) yardım etmeyeceğini zannediyorsa, tavana bir ip çeksin, sonra kendini assın da bir baksın! Acaba hilesi, öfkelendiği şeyi giderecek mi?"

Yani Allah, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) düşmanlarını zorlamaktadır. Kim Allah'ın sadece Hz. Peygamber'e (s.av.) bahşettiği özellikleri görmekten huzur duymuyorsa, öfkeden kendini asarak öldürsün. Sonra bu da kendisine fayda vermeyecektir.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Hoşnut olmuyorsan eğer gördüklerinle*
*İşte sana ip, al da as kendini onunla*

وَكَذٰلِكَ اَنْزَلْنَاهُ اٰيَاتٍ بَيِّنَاتٍ وَاَنَّ اللّٰهَ يَهْدِي مَنْ يُرِيدُ ﴿١٦﴾

16- "Böylece biz Kur'ân'ı apaçık ayetler halinde indirdik. Şüphesiz Allah dilediğini hidayete erdirir."

( اٰيَاتٍ بَيِّنَاتٍ ) *"Apaçık ayetler."*

Yani Allah, kulları için bazı deliller ve alametler ortaya koymuştur. Söz konusu delil ve alametlerden kimisi aklın gereği, kimisi haber ve naklin gereği, kimisi de muamelat vakitlerindeki tecellilerdir. Bu itibarla kulun, kendi hallerinde gördüğü kilitlenme, şiddetli tıkanma -kabz-, manevî bir kayıp ve türlü imtihanlar, hiç şüphe yok ki, bir vacibi ihlal ettiği veya bir günah işlediği zaman meydana gelir. Bastın artması veya ibadetin tadına varmak veya bazı zor işlerin kolaylaşması ya da inamın yenilenmesi de kulun kimi ibadetleri esnasında gerçekleşir.

Sonra bazen de sırlarda birtakım alametler meydana gelir. Bunlar şu hadiste yer aldığı üzere Hakk'ın hitabı ve O'nunla konuşmaktır:

*"Şüphesiz daha önceki ümmetler içinde Allah'ın konuşturduğu bazı kimseler vardı. Eğer ümmetimde böyle biri varsa o Ömer'dir."*

Sonra bir yoruma göre ayetler açık ve hüccetler parlaktır, ancak hal basiret sahibinde tecelli eder.

اِنَّ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَالَّذِينَ هَادُوا وَالصَّابِئِينَ وَالنَّصَارٰى وَالْمَجُوسَ وَالَّذِينَ اَشْرَكُوا اِنَّ اللّٰهَ يَفْصِلُ بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ شَهِيدٌ ﴿١٧﴾

17- "Şüphesiz iman edenler, Yahudiler, Sâbiîler, Hıristiyanlar, Mecûsiler ve Allah'a ortak koşanlar var ya; Allah kıyamet günü aralarında mutlaka hüküm verecektir. Çünkü Allah, her şeye şahittir."

İnsan sınıfları değişik mertebelere göredir: Dost, düşman, tevhid ehli ve inkârcı. Bunların hepsi, kıyamet günü toplanacaklardır. Sonra Allah, (c.c.), her birisine vaad ettiği şekilde muamele eder. Bu, ya süresiz vuslatla ya da sonsuz hallerle olur. Vakit tek olup onların her biri, kendisine hazırlananlar için gelmekte ve ne için yaratılmışsa ona varmaktadır.

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ يَسْجُدُ لَهُ مَنْ فِي السَّمٰوَاتِ وَمَنْ فِي الْاَرْضِ وَالشَّمْسُ وَالْقَمَرُ وَالنُّجُومُ وَالْجِبَالُ وَالشَّجَرُ وَالدَّوَآبُّ وَكَثِيرٌ مِنَ النَّاسِ وَكَثِيرٌ حَقَّ عَلَيْهِ الْعَذَابُ وَمَنْ يُهِنِ اللّٰهُ فَمَا لَهُ مِنْ مُكْرِمٍ اِنَّ اللّٰهَ يَفْعَلُ مَا يَشَآءُ ﴿١٨﴾

18- "Görmedin mi ki şüphesiz göklerde ve yerde olanlar, güneş, ay, yıldızlar, dağlar, ağaçlar, hayvanlar, insanların birçoğu ve üzerine azap hak olanların birçoğu Allah'a secde etmektedir. Allah,

kimi alçaltırsa ona saygınlık kazandıracak hiçbir kimse yoktur. Şüphesiz Allah, dilediğini yapar."

İrfan ehli Allah'a ibadet secdesiyle secde ederler. İnkâr ehli kimselerin her bir organı da delil ve şahit olma secdesiyle Allah'a secde eder.

Şiir:

*Her şeyde bir ayeti vardır Allah'ın*
*O'nun bir olduğuna delalet eden*

هٰذَانِ خَصْمَانِ اخْتَصَمُوا فِي رَبِّهِمْ فَالَّذِينَ كَفَرُوا قُطِّعَتْ لَهُمْ ثِيَابٌ مِنْ نَارٍ يُصَبُّ مِنْ فَوْقِ رُؤُسِهِمُ الْحَمِيمُ ١٩

19- "İşte iki hasım taraf ki Rableri hakkında tartışmaya girmişlerdir. Bunlardan inkâr edenler için ateşten giysiler biçilmiştir. Başlarının üstünden de kaynar su dökülür."

Kâfir olanların bugün şirk elbisesi bulunmakta olup modeli mahrumiyettir. Sonra modeli terk edilmişlik olan iftira yelekleri vardır. Ahirette ise elbiseleri zift, modeli de hicran olacaktır. Allah şöyle buyurmuştur:

(قَالَ اخْسَؤُا فِيهَا وَلَا تُكَلِّمُونِ) *"Alçalın orada ve benimle konuşmayın."* (Mü'minûn, 23/108)

İman sahiplerine gelince, onların bugün elbiseleri takva olup şu kısımlara ayrılır: Şirkten sakınmak, muhalefetten uzak durmak, gaflete karşı çıkmak, Allah'tan başkasıyla huzur bulmaktan ve onunla mutluluk duymaktan uzak olmak. Ahirette ise elbiseleri ipektir. Ayrıca kimilerinin elbisesi muhabbet yeleğidir, kimilerinin elbisesi de yalnızca Allah ile olmaktır. Diğer bazıları da tecrit sahipleri olup onlar için ne hal ne makam ne mertebe ne de yer söz konusudur. Bunlar garipler olup en yüksek tabakadır ve yaradılışın getirdiği her türlü kölelikten azat olmuş kimselerdir.

يُصْهَرُ بِهٖ مَا فٖي بُطُونِهِمْ وَالْجُلُودُ ﴿٢٠﴾

20- "Onunla karınlarının içindekiler ve derileri eritilir."

وَلَهُمْ مَقَامِعُ مِنْ حَدٖيدٍ ﴿٢١﴾

21- "Onlar için bir de demirden topuzlar vardır."

كُلَّمَٓا اَرَادُوٓا اَنْ يَخْرُجُوا مِنْهَا مِنْ غَمٍّ اُعٖيدُوا فٖيهَا وَذُوقُوا عَذَابَ
الْحَرٖيقِ ﴿٢٢﴾

22- "Her ne zaman cehennemden, o ıstıraptan çıkmak isteseler, oraya geri döndürülürler ve onlara: 'Tadın yangın azabını' denilir."

اِنَّ اللّٰهَ يُدْخِلُ الَّذٖينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ جَنَّاتٍ تَجْرٖي مِنْ
تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ يُحَلَّوْنَ فٖيهَا مِنْ اَسَاوِرَ مِنْ ذَهَبٍ وَلُؤْلُؤًا وَلِبَاسُهُمْ
فٖيهَا حَرٖيرٌ ﴿٢٣﴾

23- "Şüphesiz Allah, iman edip salih ameller işleyenleri içlerinden ırmaklar akan cennetlere koyacak, orada altından bileziklerle, incilerle süsleneceklerdir. Oradaki giysileri ise ipektir."

Süslenmeleri, onları korumak ve hallerini örtmektir. Bu halleriyle onlar cennetin süsüdürler, cennetle süslenmezler.

Şiir:

*Süslediği zaman inci bazı yüzlerin güzelliğini*
*Süs olmakta inci için, senin yüzünün güzelliği*

وَهُدُوٓا اِلَى الطَّيِّبِ مِنَ الْقَوْلِ وَهُدُوٓا اِلٰى صِرَاطِ الْحَمٖيدِ ﴿٢٤﴾

24- "Onlar, hem sözün güzel olanına ulaştırılmışlar hem de övgüye layık olan Allah'ın yoluna iletilmişlerdir."

Güzel söz, samimi kalpten ve duru sırdan çıkıp tevhid ilmine uygun olan sözdür. Zira usul ilminin itiraz etmediği söz budur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Güzel söz, irşad olmak isteyenler için vaaz olan sözdür.

- Güzel söz, müridleri Allah'a irşad etmektir.

- Güzel söz, iyiyi emretmek, kötülükten alıkoymaktır.

- Güzel söz, Müslümanlara dua etmektir.

- Güzel söz, kendisinden korkulan ve umut bağlanan kimsenin yanında söylenen hak sözdür.

- Güzel söz, ihlaslı kalpten söylenen şahadet kelimesidir.

- Güzel söz, söyleyeninin konuşturulurken söylemede mazur görüldüğü sözdür.

- Güzel söz, kulun günah işlemediği halde istiğfarda bulunmasıdır.

- Güzel söz, ( رَبَّنَا ظَلَمْنَآ اَنْفُسَنَا ) "*Rabbimiz! Biz nefislerimize zulmettik*" (A'râf, 7/23) sözünü ikrar etmektir.

- Güzel söz, içinde hiçbir kazancının olmadığı şeyle Müslümanlara dua etmektir.

( صراطُ الحميدِ ) ifadesindeki izafet, Arapların: ( المسجدُالجامعُ ) anlamında ( مسجدُ الجامعِ ) şeklindeki ifadelerinde olduğu gibi mevsufun, sıfatına izafesi kabilindendir. Buna göre; ( الصراط الحميد ) "*övgüye layık yol*", hoşnut olunan yol demek olup bu şeriatın doğruluğuna şahitlik ettiği ve hakikatin karşı çıkmadığı yoldur.

Bir yoruma göre de övgüye layık yol bidat değil kitap ve sünnete tabi olma yoludur.

اِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا وَيَصُدُّونَ عَنْ سَبِيلِ اللّٰهِ وَالْمَسْجِدِ الْحَرَامِ الَّذِي جَعَلْنَاهُ لِلنَّاسِ سَوَآءً الْعَاكِفُ فِيهِ وَالْبَادِ وَمَنْ يُرِدْ فِيهِ بِاِلْحَادٍ بِظُلْمٍ نُذِقْهُ مِنْ عَذَابٍ اَلِيمٍ ﴿٢٥﴾

25- “Kâfir olup Allah yolundan ve içinde yerli veya misafir bütün insanları eşit kıldığımız Mescid-i Haram’dan alıkoyanlar azabı hak etmişledir. Kim de orada zulmederek haktan sapmak isterse, biz ona acı bir azaptan tattırırız.”

Mescid-i Haram’dan alıkoyma, yolun korkulu hale getirilmesi ve sahibinin elinde kalması halinde kendisiyle Mescid-i Haram’a ulaşacağı malın gasp edilmesiyle olur.

( جَعَلْنَاهُ لِلنَّاسِ سَوَآءً الْعَاكِفُ فِيهِ وَالْبَادِ ) *“İçinde yerli veya taşralı bütün insanları eşit kıldığımız.”*

Mescid-i Haram’da yerli veya taşralı olmak değil, sadece öne geçmek dikkate alınır. Uluların huzurunda yönelişler arasında fark yoktur. Bu nedenle kim o alana ulaşırsa artık sıralama ve reddedilme yoktur. Varıştan sonra da engellenmek ve alıkonulmak yoktur. Yolda ise öne geçme ve arkada kalma dikkate alınabilir. Nitekim Allah şöyle buyurmuştur:

( وَلَقَدْ عَلِمْنَا الْمُسْتَقْدِمِينَ مِنْكُمْ وَلَقَدْ عَلِمْنَا الْمُسْتَأْخِرِينَ ) *“Andolsun biz, içinizden önce gelenleri de biliriz sonraya kalanları da biliriz.”* (Hicr, 15/24)

Oysa varışta farklılık ve uyuşmazlık söz konusu değildir. Sonra nefisler bir araya geldiği zaman onları bir tek yer bir araya getirir ancak her birinin kendi başına bir hali bulunur.

وَاِذْ بَوَّاْنَا لِاِبْرٰهِيمَ مَكَانَ الْبَيْتِ اَنْ لَا تُشْرِكْ بِي شَيْـًٔا وَطَهِّرْ بَيْتِيَ
لِلطَّٓائِفِينَ وَالْقَٓائِمِينَ وَالرُّكَّعِ السُّجُودِ ﴿٢٦﴾

26- “Hani biz İbrahim’e Kâbe’nin yerini: ‘Bana hiçbir şeyi ortak koşma ve evimi, tavaf edenler, namaza duranlar, rükû ve secde edenler için temiz tut’ diye hazırlamıştık.”

Biz İbrahim’e Kâbe’nin yerini elverişli hale getirdik, ona Kâbe’yi yapma imkânı verdik, bu konuda kendisine rehberlik edip yol gösterdik ve yardımcı olduk. Şöyle ki Allah, Hz. Nûh tufanı zamanında

Kâbe'yi dördüncü göğe kaldırdı sonra Hz. İbrahim'e onu eski temeli üzerine inşa etmesini emretti.

( اَنْ لَا تُشْرِكْ بِي شَيْئًا ) *"Bana hiçbir şeyi ortak koşma."*

Yani Kabe'yi de onu yapmanı da dikkate alma.

( وَطَهِّرْ بَيْتِيَ ) *"Evimi temiz tut."*

İlim ehline göre; evden maksat Kâbe'dir. İşaretin izahına göre ise kalbini Allah'ın (c.c.) zikri dışındaki bütün şeylerden boşalt demektir. Kimi kitaplarda şu bilgi yer almıştır:

*"Allah, peygamberlerden birine: 'Bana yerleşeceğim bir ev boşalt' diye vahiy indirmiş, o peygamber de: 'İlahi, sen hangi eve sığarsın?' demiştir. Bunun üzerine Allah: O, mümin kulumun kalbidir' diye vahiy indirmiştir."*

Bu arada Allah'ın yerleşmesinden maksat O'nun zikridir. Bu nedenle işaret, müminin kalbini Allah'ın zikri için boşaltmasıdır. Kalbi boşaltmak da birkaç kısım olup ilki onu gafletten boşaltmaktır. Sonra da kalbi Allah dışındaki yaratıklardan herhangi bir şeyi vehmetmekten boşaltmaktır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bazen kimilerinin yükümlülüğü kalbi çalışma düşüncesinden, bazılarının yükümlülüğü de onu hallerde sükunet bulmaktan korumak şeklinde olur.

- *"Evimi temiz tut."* Yani kalbini arayış ve tercihten temizle. Bu temizlik, kulluğun hakikatlerini tam olarak yerine getirmek suretiyle Allah'a kul olman için senin Allah katında dünya ve ahiret ile ilgili bir arzuya sahip olmamandır.

- *"Evimi temiz tut."* Yani bunu ikram arayışı, inam çabası, makam isteği veya tercih ve istikbal vesilesi gibi dünya ve ahiret ile ilgili her arzuyu kalbinden çıkarmak suretiyle yap.

- Kalbini, Hakk'ın tercihine uygun olarak içinde tavaf yapan hallerin tecellisi için temizle. ( وَالْقَآئِمِينَ ) *"Namaza duranlar"* ise işârî

tefsire göre; burhana ihtiyaç bırakmayan durumlardan ibaret irfan tecellileri tarzında kalbe yerleşen şeylerdir.

"Allah'ı görüyormuşsun gibi..." hadisinde yer aldığı üzere namaza duran kimse arayışını izahın gözle görür gibi apaçık olan hakikatleriyle yapar.

( وَالرُّكَّعِ السُّجُودِ ) *"Rükû ve secde edenler için."*

Bunlar peş peşe gelen arzu, sakınma, ümit, korku, kabz ve bast şeklindeki hallerin rükünleridir.

Bu anlamda şöyle demişlerdir:

*Olamam ben sevenler cümlesinden eğer*
*Ev ve makam kılmazsam ona kalbi*
*Sırrı onda dolaştırmaktır benim tavafım*
*Ve rüknümdür o, istilam yapmak istediğim zaman*

( اَنْ لَا تُشْرِكْ بِي شَيْئًا ) *"Bana hiçbir şeyi ortak koşma."*

Kâbe'yi ve onu yapmış olmanı düşünme. Bir yoruma göre de ortak koşmak, Kâbe'nin Rabbini müşahedede gark olmadan Kâbe'yi görmektir.

وَاَذِّنْ فِي النَّاسِ بِالْحَجِّ يَأْتُوكَ رِجَالًا وَعَلٰى كُلِّ ضَامِرٍ يَأْتِينَ مِنْ
كُلِّ فَجٍّ عَمِيقٍ ﴿٢٧﴾

27- "İnsanlar arasında haccı ilan et ki, gerek yaya olarak, gerek uzak yollardan gelen yorgun develer üzerinde sana gelsinler."

Hz. İbrahim haccı ilan edip çağrıda bulundu. Allah onun çağrısını henüz dünyaya gelmemiş olan bütün zürriyetlere duyurdu. Bunun üzerine hac yapacağı halinden belli olan kimseler bu çağrısını kabul ettiler.

Bu arada ayette yayaların, bineklerle gelenlerin önüne alınması, binekle taşınmanın daha çok olması sebebiyledir.

Öte yandan o develer, dostların binekleri oldukları için güzel olma özelliğine sahiptir. Buna yakın anlamda şöyle demişlerdir:

*Şüphesiz üstünde güzelliğinizin belirdiği develer*
*Sevimlidirler ciğerlerimiz parça parça edilse da*

Bir yoruma göre de, ( يَأْتِينَ مِنْ كُلِّ فَجٍّ عَمِيقٍ ) "*uzak yollardan gelen yorgun develer üzerinde*" sözü, övgü ve teşekkür ifadesidir.

Aslında dünyanın bütün mesafesi ne kadardır ki?! Lakin Allah, lütuf ve keremini ortaya koymak için bu övgüyü, o kimselerin fiillerinin kadrine ve yaptıklarının yüceliğine karşılık olarak ifade etmektedir.

لِيَشْهَدُوا مَنَافِعَ لَهُمْ وَيَذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ فِي اَيَّامٍ مَعْلُومَاتٍ عَلٰى مَا رَزَقَهُمْ مِنْ بَهِيمَةِ الْاَنْعَامِ فَكُلُوا مِنْهَا وَاَطْعِمُوا الْبَآئِسَ الْفَقِيرَ ﴿٢٨﴾

28- "Gelsinler ki, kendilerine ait birtakım menfaatlere şahit olsunlar ve Allah'ın kendilerine rızık olarak verdiği hayvanlar üzerine belli günlerde Allah'ın adını ansınlar. Artık onlardan siz de yiyin, yoksula fakire de yedirin."

( لِيَشْهَدُوا مَنَافِعَ لَهُمْ ) "*Gelsinler ki, kendilerine ait birtakım menfaatlere şahit olsunlar.*"

Mal sahiplerinin menfaatleri mallarıdır. Amel sahiplerinin menfaatleri ibadetlerinin verdiği hazdır. Hal sahiplerinin menfaatleri nefislerinin safiyetidir. Tevhid ehlinin menfaatleri ise, Allah'ın, gaybtan ortaya çıkanı onlar için tercih etmesine rıza göstermeleridir.

( وَيَذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ فِي اَيَّامٍ مَعْلُومَاتٍ عَلٰى مَا رَزَقَهُمْ مِنْ بَهِيمَةِ الْاَنْعَامِ ) "*Allah'ın kendilerine rızık olarak verdiği hayvanlar üzerine belli günlerde Allah'ın adını ansınlar.*"

Kimilerinin Allah'ın adını anması, kurbanlarıyla ve bu kurbanlarını kesilmek üzere harem toprağına sevk etmeleriyle Allah'a yakın olmaya çalışmaları esnasında olur. Kimileri de Allah ile Allah için Allah'tan başka her şeyi yok saymak üzere arzu ve tercihlerini ümitsizlik bıçaklarıyla boğazladıkları zaman Allah'ın adını anarlar.

( فَكُلُوا مِنْهَا وَاَطْعِمُوا الْبَٓائِسَ الْفَقٖيرَ ) *"Artık onlardan siz de yiyin, yoksula fakire de yedirin."*

Fakirlerin bereketlerine mazhar olmanız için onları da kestiğiniz vacip olmayan kurbanlarınızın etinden yemeye ortak edin. Ayet, hacca gidenlerin itaat ve tevazu alanına inmelerine, övünçten ve kibirlenmekten uzak durmalarına işaret etmektedir.

ثُمَّ لْيَقْضُوا تَفَثَهُمْ وَلْيُوفُوا نُذُورَهُمْ وَلْيَطَّوَّفُوا بِالْبَيْتِ الْعَتٖيقِ ﴿٢٩﴾

29- "Sonra kirlerini gidersinler, adaklarını yerine getirsinler ve Beyt-i Atik'i tavaf etsinler."

( ثُمَّ لْيَقْضُوا تَفَثَهُمْ وَلْيُوفُوا نُذُورَهُمْ ) *"Sonra kirlerini gidersinler, adaklarını yerine getirsinler."*

İhtiyaçlarını karşılasınlar, ahitlerini gerçekleştirsinler ve kalpleriyle Allah'a verdikleri sözlerle ilgili adaklarını yerine getirsinler. Bu itibarla yaptığı akit tövbe olan kimsenin sözünü yerine getirmesi günaha dönmemektir. Verdiği söz ibadeti kabul etmek olan kimsenin sözünü yerine getirmesinin şartı, kusur işlemeyi terk etmesidir. Sözü, bir daha makam talebinde bulunmamak ve ikram arayışına girmemek olan kimsenin sözünü yerine getirmesi ise acil kısmet isteğine ve haz talebine dönmemek suretiyle genel çerçevede bu yolda dosdoğru yürümesidir.

( وَلْيَطَّوَّفُوا بِالْبَيْتِ الْعَتٖيقِ ) *"Beyt-i Atik'i tavaf etsinler."*

Tavafın işaret ettiği husus, hac yapan kimsenin şahsıyla Kâbe'yi, kalbiyle gök âlemini, sırrıyla da melekût sahalarını tavaf etmesidir.

ذٰلِكَ وَمَنْ يُعَظِّمْ حُرُمَاتِ اللّٰهِ فَهُوَ خَيْرٌ لَهُ عِنْدَ رَبِّهٖ وَاُحِلَّتْ لَكُمُ الْاَنْعَامُ اِلَّا مَا يُتْلٰى عَلَيْكُمْ فَاجْتَنِبُوا الرِّجْسَ مِنَ الْاَوْثَانِ وَاجْتَنِبُوا قَوْلَ الزُّورِ ﴿٣٠﴾

30- "Bu böyle. Kim, Allah'ın hükümlerine saygı gösterirse bu, Rabbi katında kendisi için bir hayırdır. Haramlığı size okunanların dışında bütün hayvanlar size helal kılındı. Artık putlara tapma pisliğinden kaçının, yalan sözden kaçının."

Hükümlere saygı Allah'ın emrine saygıya, emrine saygı da muhalefetini terk etmeye bağlıdır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kim Allah'ın rızasını gözetmeksizin hoşnutluk ararsa Mevlâ'sının rızasına tercih ettiği nefsinin arzusundan hayır görmez ve ister istemez bunun akıbetiyle hızlı bir şekilde karşılaşır.

- Allah'ın hükümlerine saygı, O'na iman hakkında duyarlı olmaktır. Nitekim Allah'ın hükmüne saygılı hiç kimse yoldan çıkmamıştır.

- Hizmeti terk etmek cezaya, hükmü terk etmek de ayrılığa sebep olur.

- Bütün muhalefetler için af imkânı ve ümit yolu vardır. Hükmü terk etmek ise af edilmeme tehlikesi taşımaktadır. Bu, hükmü terk etmenin sabit hale gelmesinin sahibinin dininin ve tevhidinin bozulmasına yol açmasıyla olur.

( وَاُحِلَّتْ لَكُمُ الْاَنْعَامُ اِلَّا مَا يُتْلٰى عَلَيْكُمْ ) *"Haramlığı size okunanların dışında bütün hayvanlar size helal kılındı."*

Mesela; domuz haram kılınanlardandır. Boynuzlanarak öldürülen, dövülerek öldürülen ve tafsilatı dinin nassında yer alanlar da böyledir.

( فَاجْتَنِبُوا الرِّجْسَ مِنَ الْاَوْثَانِ وَاجْتَنِبُوا قَوْلَ الزُّورِ ) *"Artık putlara tapma pisliğinden kaçının, yalan sözden kaçının."*

Buradaki ( مِنَ ) "*min*" harfi, baziyet için değil, cins içindir. Bu arada herkesin nefis arzusu, onun mabududur. Herkesin putu da kendi nefsidir.

( وَاجْتَنِبُوا قَوْلَ الزُّورِ ) *"Yalan sözden kaçının."*

Yalanın bir türü de dilin, kalbin söz ve ifadesinin desteklemediği şeyi söylemesidir. Bir de kim kalbiyle Allah'a söz verdikten sonra onu yerine getirmezse işte bu da yalan söz cümlesinden olur.

حُنَفَآءَ لِلّٰهِ غَيْرَ مُشْرِكِينَ بِهِ وَمَنْ يُشْرِكْ بِاللّٰهِ فَكَاَنَّمَا خَرَّ مِنَ
السَّمَآءِ فَتَخْطَفُهُ الطَّيْرُ اَوْ تَهْوِي بِهِ الرِّيحُ فِي مَكَانٍ سَحِيقٍ ﴿٣١﴾

31- "Allah'a yönelen, O'na ortak koşmayan kimseler olun. Kim, Allah'a ortak koşarsa, sanki gökten düşmüş de kendisini kuşlar kapışıyor veya rüzgar onu uzak bir yere sürüklüyor gibidir."

( الحَنيف ) *"hanîf"* sözcüğü, kalpte, nefiste, açık, gizli, fiillerde, hallerde ve sözlerde bâtıldan uzaklaşıp hakka yönelen kimse demektir.

( وَمَنْ يُشْرِكْ بِاللّٰهِ ) *"Kim, Allah'a ortak koşarsa…"*

Nasıl olmasın ki… O kimse, cehenneme düşmekte ve azap melekleri onu kapışmaktadır.

( اَوْ تَهْوِي بِهِ الرِّيحُ فِي مَكَانٍ سَحِيقٍ ) *"Veya rüzgâr onu uzak bir yere sürüklüyor gibidir."*

Haklarında Allah'ın: ( نَسُوا اللّٰهَ فَنَسِيَهُمْ ) *"Onlar Allah'ı unuttular. Allah da onları unuttu"* (Tevbe, 9/67) buyurduğu kimselerin durumu da yarın aynı şekilde olacaktır.

ذٰلِكَ وَمَنْ يُعَظِّمْ شَعَآئِرَ اللّٰهِ فَاِنَّهَا مِنْ تَقْوَى الْقُلُوبِ ﴿٣٢﴾

32- "Bu böyle. Her kim de Allah'ın nişanelerini yüceltirse şüphesiz ki bu, kalplerin takvasındandır."

Mümin, Allah'ın nişanelerinin özüne ve ayrıntılarına ilmin tanıklığıyla açıktan, ilhamın sezgileriyle de gizliden vakıf olur. Bir de nasıl ki, dinin tanıklığına aykırı davranmak caiz değilse aynı şekilde Hakk'ın ilhamlarının tanıklığına aykırı davranmak da caiz değildir. Çünkü Hakk'ın ilhamı yalan söylemez. Dahası ona vakıf olanın

üstünlüğü söz konusudur. Ayrıca nasıl ki, nefis doğru söylemiyorsa aynı şekilde kalp de yalan söylemez. Kalbe muhalefet edildiği zaman kişi gelecekte kör olur ve hakikat irfanları ondan kesilir. Bu arada ifade ve izah bunu belirleyip tefsir etmede yetersiz kalır. Kalp, mücadeleyi gerçekleştirmekle güç kazanır. Bu durumda nefisler dilsizleşip vesveseleri yok olduğu zaman kalpler mazhar kılındıkları keşifleri dile getirir.

Öte yandan yolu ilim olan ile yolu Hak olan hususlar arasındaki farklardan biri de şudur: Yolu ilim olan hususun sahibi önce bilir sonra tercihte bulunarak amel eder. Hak'tan olan husus ise önce gerçekleşir sonra hakkında gerçekleştiği kişi onun manasını anlamış olur. Bir de hakkında bu husus icra edilen kişi, icra edilen bu hususa mecbur edilmez ve: *"Herhangi bir tercihi yoktur"* denemez. Aksine o, serbest tercih sahibidir; ancak bunun sebebini anlamada güçlük çekmektedir. Burada şaşırtıcı olan husus, ibarenin bunu ifade etmekten uzak gibi olmasıdır.

لَكُمْ فِيهَا مَنَافِعُ اِلٰٓى اَجَلٍ مُسَمًّى ثُمَّ مَحِلُّهَآ اِلَى الْبَيْتِ الْعَتِيقِ ﴿٣٣﴾

33- "Sizin için onlarda belli bir zamana kadar birtakım yararlar vardır. Sonra da kurbanlık olarak varacakları yer Beyt-i Atik'tir."

O nişaneler cümlesinden herkes için değeri ve kapasitesi kadar fayda vardır. Bu çerçevede kimileri için canlarından ve mallarından belaları defetmede, diğer bazıları için bastlarının lezzetlerinde, kimileri için ibadetlerinin tadında, kimileri için de nefeslerinin ünsiyetinde bereketler vardır.

وَلِكُلِّ اُمَّةٍ جَعَلْنَا مَنْسَكًا لِيَذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ عَلٰى مَا رَزَقَهُمْ مِنْ
بَهِيمَةِ الْاَنْعَامِ فَاِلٰهُكُمْ اِلٰهٌ وَاحِدٌ فَلَهُٓ اَسْلِمُوا وَبَشِّرِ الْمُخْبِتِينَ ﴿٣٤﴾

34- "Her ümmet için Allah'ın kendilerine rızık olarak verdiği hayvanlar üzerine ismini ansınlar diye kurban kesmeyi meşru kıldık. İşte sizin ilâhınız bir tek ilâhtır. Şu halde yalnız O'na teslim olun. Alçak gönüllüleri müjdele."

Dinler öngördükleri muamelelerde farklı, içerdikleri marifetlerde ise ittifak halindedirler. Sonra mükellefler farklıdırlar. Şöyle ki, kimileri kendilerine vacip kılınan ve bahşedilen hususlarda sıkı davranmakta, kimileri de yükümlü kılındıkları ve kendilerine vaat edilen hususlarda kolaylık aramaktadırlar.

( لِيَذْكُرُوا اسْمَ اللّٰهِ عَلٰى مَا رَزَقَهُمْ مِنْ بَهِيمَةِ الْاَنْعَامِ ) *"Allah'ın kendilerine rızık olarak verdiği hayvanlar üzerine ismini ansınlar diye."*

Kendilerine rızık olarak verdiği hayvanlar üzerine Allah'ın ismini anmak birkaç kısımdır. Onlardan biri de bu kimselerin, bu hayvanları vermekle Allah'ın kendilerine nimet bahşettiğini bilmeleridir. Bunu bilmeleri şükür bakımındandır. Sonra onlar Allah'ın ismini, kendilerinden kabul edenin ve sevap verenin kendisi olduğunu bilmeye onları muvaffak kılmasına karşılık olarak anarlar.

( فَاِلٰهُكُمْ اِلٰهٌ وَاحِدٌ فَلَهُٓ اَسْلِمُوا وَبَشِّرِ الْمُخْبِتِينَ ) *"İşte sizin ilâhınız bir tek ilâhtır. Şu halde yalnız O'na teslim olun. Alçak gönüllüleri müjdele."*

Yani surat asmadan ve hoşnutsuzluk hissetmeden kalbinizin içinden O'nun hükmüne teslim olun. Bu arada "İslâm" lafzı, ihlas -içtenlik- anlamındadır. İhlas ise amelleri afetlerden -arızalardan- arındırmak, ahlakı bulanıklıklardan arındırmak, sonra hallerin arındırılması, sonra da nefeslerin arındırılmasıdır.

( وَبَشِّرِ الْمُخْبِتِينَ ) *"Alçak gönüllüleri müjdele."*

( إخبات ) *"ihbât -alçak gönüllülük-"*, imkân nisbetinde istikamet şartına bağlı olarak ibadeti devamlı hale getirmektir. Bu arada "ihbât"ın alametlerinden biri de huşuun devamlılığı şartıyla tam anlamıyla boyun eğmektir. Bu ise kişinin iç dünyasının boyun bükmesiyle olur.

اَلَّذِينَ اِذَا ذُكِرَ اللّٰهُ وَجِلَتْ قُلُوبُهُمْ وَالصَّابِرِينَ عَلٰى مَٓا اَصَابَهُمْ
وَالْمُقِيمِي الصَّلٰوةِ وَمِمَّا رَزَقْنَاهُمْ يُنْفِقُونَ ﴿٣٥﴾

35- "Onlar, Allah anıldığı zaman kalpleri ürperen, başlarına gelen musibetlere sabreden, namazı dosdoğru kılan ve kendilerine rızık olarak verdiklerimizden Allah yolunda harcayan kimselerdir."

( الوجَل ) *"vecel -korku-"*, korkmaktan korkmaktır. Allah'ın anılması esnasındaki korku ise birkaç kısımdır: Bunlar, gerçekleşecek olan bir azaptan duyulan korku, akıbetin kötü sona ermesi korkusu, ölüme hazırlık yapmaksızın gaflet üzere dünyadan gitme korkusu, hazırlığı toparlarken ve Allah'ın haberdar olduğunu hatırladığı zaman bazı hususlarda Allah'a karşı mahcup olma korkusu. Çünkü bu kimse sevimli olmayan o işleri yapmıştır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Korku, Hakk'ın kalbe tecelli etmesine göredir. Çünkü kalpler, mütalaa ve tecelli hallerinde korku ve heybet üzere olurlar.

- Bir korku vardır ki, sebeplidir. Bir korku da vardır ki, sebepsizdir. Birincisi kusur işlemekten duyulan korkudur. İkincisi de heybetten sayılır.

- Ayette yer alan korku, tuzak ve istidrac korkusudur. Aslında insanların kalben Allah'a en yakın olanları da en çok bu şekilde O'ndan korkan kimselerdir.

( وَالصَّابِرِينَ عَلٰى مَٓا اَصَابَهُمْ ) *"Başlarına gelen musibetlere sabreden."*

Yani hükmün gerçekleşmesi karşısında hiçbir hoşnutsuzluk hissetmeksizin, hiçbir çıkış temennisinde bulunmaksızın ve hiçbir açılım aramaksızın aksine gönüllü teslimiyetle sönenler.

Bu yoruma göre de başlarına gelen musibetlere sabredenler, Allah ile olan sırlarını koruyan ve halkı kendi hallerine muttali kılmak suretiyle teselli aramayan kimselerdir.

( وَالْمُقٖيمِي الصَّلٰوةِ ) *"Namazı dosdoğru kılanlar."*

Yani musibetleri ağırlaştığı zaman gizlilik makamında durmaya sığınırlar.

Şiir:

*Rahat ve huzur temenni ettikleri zaman insanlar*
*İşitesin diye sana şikayette bulunmayı temenni ettim ben*

( وَمِمَّا رَزَقْنَاهُمْ يُنْفِقُونَ ) *"Kendilerine rızık olarak verdiklerimizden Allah yolunda harcayan kimselerdir."*

Bunlar, muamelede bulunurken mallarından harcarlar. Menzillerde yol alma meselelerinde ise bu harcamayı -fedakârlığı- teslim olmak, nefsi kendilerinden ve kendileriyle olan her şeyi takdire teslim etmek şeklinde yaparlar. Böylece bedenlerini dinin yükümlülüklerine katlanma yolunda, kalplerini de hakikatin gereklerine dair cereyan eden hükümler istikametinde teslimiyet ve sönüklük yolunda harcarlar.

وَالْبُدْنَ جَعَلْنَاهَا لَكُمْ مِنْ شَعَآئِرِ اللّٰهِ لَكُمْ فِيهَا خَيْرٌ فَاذْكُرُوا
اسْمَ اللّٰهِ عَلَيْهَا صَوَآفَّ فَإِذَا وَجَبَتْ جُنُوبُهَا فَكُلُوا مِنْهَا وَاَطْعِمُوا
الْقَانِعَ وَالْمُعْتَرَّ كَذٰلِكَ سَخَّرْنَاهَا لَكُمْ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿٣٦﴾

36- "Kurbanlık büyük baş hayvanları da sizin için Allah'ın dininin nişanelerinden kıldık. Sizin için onlarda hayır vardır. Onlar saf saf sıralanmış dururken üzerlerinde Allah'ın adını anın. Yanları üzerine düşüp canları çıkınca onlardan siz de yiyin. İstemeyen fakire de istemek zorunda kalan fakire de yedirin. Şükredesiniz diye onları böylece sizin hizmetinize verdik."

Hayvanlardan faydalanma çeşitleri pek çoktur. Bu çeşitler onlara binmek, yük yüklemek, sütlerini içmek, tüylerinden yararlanmak, sonra kuvvet ve gösterişlerine rağmen yaradılışlarıyla nasıl insanların hizmetine verildiklerinden, sonra onlara yük yüklendiğinde, binildiğinde, onlardan inildiğinde ve yük indirildiğinde ıhtırılırken nasıl da çocuklara boyun eğdiklerinden ibret almaktan ibarettir.

Diğer özellikleri de yolculuklarda susuzluğa ve az yeme dayanmaları, görünüşlerindeki kabalığa rağmen tabiatlarındaki yumuşaklık ve şarkılar eşliğinde güdülmekle dinlenmeleri vb. hususlardır.

( فَإِذَا وَجَبَتْ جُنُوبُهَا ) *"Yanları üzerine düşüp canları çıkınca."*

Yani boğazlanırken yere düştüklerinde, haya örtüsünü atıp fakirliğini insanlara açıklayan fakir ile sıkıntıda dayanıklı olan ve ihtiyaç konularını saklayan fakire yedirin.

لَنْ يَنَالَ اللّٰهَ لُحُومُهَا وَلَا دِمَٓاؤُهَا وَلٰكِنْ يَنَالُهُ التَّقْوٰى مِنْكُمْ كَذٰلِكَ سَخَّرَهَا لَكُمْ لِتُكَبِّرُوا اللّٰهَ عَلٰى مَا هَدٰيكُمْ وَبَشِّرِ الْمُحْسِنِينَ ﴿٣٧﴾

37- "Onların etleri ve kanları asla Allah'a ulaşmaz. Fakat O'na sizin takvanız ulaşır. Böylece sizi hidayete erdirmesine karşılık Allah'ı büyük tanımanız için onları sizin hizmetinize verdi. İyilik edenleri de müjdele."

İster sırf bedeni olsunlar ister sırf mali olsunlar ister her iki şekille de ilgili bulunsunlar, fiillerin kendilerine bakılmaz. Lakin fiillerin ihlasla birlikte olmasına bakılır. Bu itibarla, organların yaptıklarına niyetlerdeki ihlas eklenip sahiplerinin başkalarını dikkate almalarından arındığı zaman kabule değer olur.

Bir yoruma göre de takva, Hakk'ı eşsizlik sıfatıyla görmektir. Böylece kulun O'na yakınlık çabasına, herhangi birini dikkate alma şaibesi bulaşmamış ve o, ameline karşılık hiçbir insandan bir bedel almamış olur.

( لِتُكَبِّرُوا اللّٰهَ عَلٰى مَا هَدٰيكُمْ ) *"Sizi hidayete erdirmesine karşılık Allah'ı büyük tanımanız için."*

Yani sizi hidayete erdirmiş ve dinin gereğine uygun olarak kulluk vecibesini yerine getirmeye irşat etmiştir.

( وَبَشِّرِ الْمُحْسِنِينَ ) *"İyilik edenleri de müjdele."*

İhsan -iyilik-, hadiste yer aldığı üzere, Allah'ı görüyormuşsun gibi O'na kulluk etmendir. Yapılan iyiliğin yerinde olduğunun göstergesine gelince bu, sahibinin kalben yorulma hissinden kurtulmuş olmasıdır. Böylece o, hiçbir şeyi ağır bulmaz ve hiçbir şeyden yakınmaz.

إِنَّ اللّٰهَ يُدَافِعُ عَنِ الَّذٖينَ اٰمَنُوا اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ كُلَّ خَوَّانٍ كَفُورٍ ﴿٣٨﴾

38- "Şüphesiz Allah, iman edenleri savunur. Gerçekten Allah hiçbir haini, nankörü sevmez."

Allah, şeytanın vesveselerini içlerinden, isyan hislerini kalplerinden ve Allah'ı unutma sebeplerini de ruhlarından defeder.

Hainlik de birkaç kısımdır: Mallarda hainlik ki, bunun ayrıntıları fikhî meseleler içerisinde yer alır. Amellerde hainlik ve hallerde hainlik. Amellerde hainlik riya ve tasannu iledir. Hallerde hainlik ise kendini görme, beğenmişlik ve tatmindir. Bunların en kötüsü beğenmişliktir. Sonra tatmin gelmektedir, en gizlisi de kendini görmektir.

Bir yoruma göre de zahidlerin hainliği, ahirette güzel sona kavuşmak için bu tür bedeller karşılığında dünyadan uzak durmalarıdır. Salihlerin ihlâsı olan bu durum, zahitlerin havassı nezdinde hainliktir. Çünkü bu kimseler, dünyalarını Allah için değil de terk etmelerine karşılık Allah'tan gelecek olan karşılığın varlığından dolayı terk etmektedirler.

Abidlerin hainliği, şehvetlerini terk ettikten sonra ruhsatlara dönüş yapmalarıdır. Eğer bunlar amaçlarında dürüst olsalardı ruhsatların üstüne çıktıktan sonra tekrar onlara inmezlerdi.

Ariflerin hainliği bir makamın varlığına yönelmeleri, Hak'tan bir mevkie, bir ikrama kavuşma ve bir tür yaklaştırılma arayışlarıdır.

Sevenlerin hainliği, varlıklardan çektikleri acıdan bir feraha kavuşma arzusu ve reddedilmişliğin istilasından, arzunun galebe çalmasından veya ayrılık günlerinin uzamasının üzerlerindeki şiddetinden bir çıkış yolu arayışıdır.

Tevhid ehlinin hainliği ise onlarda bir tercih damarının harekete geçmesi ve mahviyetlerinden sonra bir parçacık dahi olsa farkın hükümlerine dönüş yapmalarıdır. Meğer ki onlar kendilerinden geçmişken böyle bir şey onlardan meydana gelmiş olsun.

اُذِنَ لِلَّذِينَ يُقَاتَلُونَ بِاَنَّهُمْ ظُلِمُوا وَاِنَّ اللّٰهَ عَلٰى نَصْرِهِمْ لَقَدِيرٌ ﴿٣٩﴾

39- "Kendilerine savaş açılan Müslümanlara, zulme uğramaları sebebiyle cihad için izin verildi. Şüphe yok ki Allah'ın onlara yardım etmeye gücü yeter."

Düşmanlardan onlara bir sıkıntı veya zahirde zül olan bir şey dokunduğu zaman veya başlarına bir haksızlık geldiği zaman ya da yabancılar tarafından bir istila ve zulme uğradıkları zaman Hak Teâlâ onlar için düşmanlarından intikam alır. Bu nedenle onlar, genellikle teslimiyet ve sükunet sıfatıyla yaşarlar. Kaderlerin ayrıntıları ise onlara husumet besleyenlerin kökünü yok etme ve düşmanlarının feleğini şaşırtma işlevini yerine getirmeye devam etmektedir. Bazı zamanlarda da Allah (c.c.) Müslümanları galiplik sıfatı, kendilerine düşmanlık yapanların alanlarına güzel zaferle inme imkânı vermek ve kendilerini tuzağa düşürüp kimsesiz bırakanların çarkını onların eliyle tamamen tersine çevirmek suretiyle ayakta tutar. Bütün bunlar olup biterken Allah'tan türlü yardımlar gerçekleşmektedir. Hulâsa Allah işine hakimdir.

اَلَّذِينَ اُخْرِجُوا مِنْ دِيَارِهِمْ بِغَيْرِ حَقٍّ اِلَّٓا اَنْ يَقُولُوا رَبُّنَا اللّٰهُ وَلَوْلَا دَفْعُ اللّٰهِ النَّاسَ بَعْضَهُمْ بِبَعْضٍ لَهُدِّمَتْ صَوَامِعُ وَبِيَعٌ وَصَلَوَاتٌ وَمَسَاجِدُ يُذْكَرُ فِيهَا اسْمُ اللّٰهِ كَثِيرًا وَلَيَنْصُرَنَّ اللّٰهُ مَنْ يَنْصُرُهُ اِنَّ اللّٰهَ لَقَوِيٌّ عَزِيزٌ ﴿٤٠﴾

40- "Onlar, haksız yere sırf: 'Rabbimiz Allah'tır' demelerinden dolayı, yurtlarından çıkarılmış kimselerdir. Eğer Allah'ın insanların bir kısmını bir kısmıyla defetmesi olmasaydı, içlerinde Allah'ın adı çok anılan manastırlar, kiliseler, havralar ve mescitler muhakkak yerle bir edilirdi. Şüphesiz ki Allah, kendi dinine yardım

edene mutlaka yardım eder. Şüphesiz ki Allah çok kuvvetlidir, mutlak güç sahibidir."

Mazlum, bir süre sonra da olsa yardım görür. Hak devleti de bâtıl devletine galip gelir. Mazlumun sonu iyidir. Zalimden ise şiddetli imtihanla intikam almak yakındır.

( فَتِلْكَ بُيُوتُهُمْ خَاوِيَةً بِمَا ظَلَمُوا ) *"İşte zulümleri yüzünden harabeye dönmüş evleri!"* (Neml, 27/52)

Bazen nefisten ve kalplere damlayan vesveselerinden bazı velilerde ve menkıbe sahibi kimselerde zulüm gerçekleşir. Temiz haller de kalplerden çıkar ve nefsin vesveseleri onları istila eder. Böylece bu vesveseler içlerinde gafletin yerleşmesi sebebiyle kalpleri bozmaya çalışır. Nihayet hakikatlerin vesilelerinden ve hallerin aydınlıklarından yoksun olmaları sebebiyle kalpler, harap olmaya yüz tutar.

Tıpkı şu beyitte denildiği gibi:

*Bildiririm sana o kalplerin ölümünü ki yağdırdı uzun zaman*
*Onlarda, cömertlik bulutları hikmet denizlerini*

Hal böyle olunca Allah, ikbal askerleriyle rezil vesveseleri yenilgiye uğratır, keşif imdatlarıyla hakikatin askerine yardım eder, yıkılmış olan ahit yenilenir, setr -örtü- gecelerinde saadet güneşleri doğar ve kalpler nefsin karanlığının izlerinden temizlenir.

Tıpkı şu dizede denildiği gibi:

*Yenilenmekte Su'dâ'nın harabeleri Livâ'da*

Derken o kalplerin üstüne inayet rüzgarları esip onlardaki unutkanlık alevi söndüğü zaman Allah onları tecelli yağmuruyla sular, içlerinde bast çiçeklerini yeşertir ve böylece bu kalplerde vuslat gündüzü belirir sonra da tevhid güneşleri doğuncaya kadar yakınlık esintisi meydana gelir.

( وَلَوْلَا دَفْعُ اللهِ النَّاسَ بَعْضَهُمْ بِبَعْضٍ لَهُدِّمَتْ صَوَامِعُ وَبِيَعٌ وَصَلَوَاتٌ وَمَسَاجِدُ يُذْكَرُ فِيهَا اسْمُ اللهِ كَثِيرًا وَلَيَنْصُرَنَّ اللهُ مَنْ يَنْصُرُهُ اِنَّ اللهَ لَقَوِيٌّ عَزِيزٌ ) *"Eğer Allah'ın,*

*insanların bir kısmını bir kısmıyla defetmesi olmasaydı, içlerinde Allah'ın adı çok anılan manastırlar, kiliseler, havralar ve mescitler muhakkak yerle bir edilirdi. Şüphesiz ki Allah, kendi dinine yardım edene mutlaka yardım eder. Şüphesiz ki Allah çok kuvvetlidir, mutlak güç sahibidir."*

Allah, büyüklerin kadri için küçükleri cezalandırmaktan vazgeçer ve iyilere saygı için avamı bağışlar. Bu, ibadet yerlerini temiz tutmak ve irfan kaynaklarını arıtmak için uyguladığı bir prensiptir. O'nun sünnetinde ve güzel âdetinde ise hiçbir değişiklik olmaz.

اَلَّذِينَ اِنْ مَكَّنَّاهُمْ فِي الْاَرْضِ اَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ وَاَمَرُوا
بِالْمَعْرُوفِ وَنَهَوْا عَنِ الْمُنْكَرِ وَلِلّٰهِ عَاقِبَةُ الْاُمُورِ ﴿٤١﴾

41- "Onlar, öyle kimselerdir ki, şayet kendilerine yeryüzünde imkan ve iktidar versek, namazı dosdoğru kılar, zekâtı verir, iyiliği emreder ve kötülüğü yasaklarlar. Bütün işlerin akıbeti ise Allah'a aittir."

Süreleri uzayıp ömürleri elverdiği zaman amellerini nefislerinin arzularını elde etmede ve dünyadan sevdiklerine sahip olmada tüketmezler. Aksine Allah'ın haklarını yerine getirirler.

( اَقَامُوا الصَّلٰوةَ ) *"Namazı dosdoğru kılarlar."*

Zahirde namaz kılarlar, bâtında ise vuslat bağlarını sürdürürler.

Bir yoruma göre de namaz kılmak, onu hakkıyla eda etmektir. Böylece namaz kılan kimse Allah'ın huzurunda kim olduğunu, kime münacatta bulunduğunu, kimin kendisini gözettiğini ve kimin kendisine yakın olduğunu bilir.

( وَاٰتَوُا الزَّكٰوةَ ) *"Zekâtı verirler."*

Onların zengin olanları mallarının zekâtını tam olarak verirler. Fakirleri ise hallerinin zekâtını verirler. Bu çerçevede malların zekâtları her iki yüzde beşi fakirlerin, kalanı da onların olacak

şekildedir. Hallerin zekâtı ise iki yüz nefesten yüz doksan dokuz buçuk nefesin Allah'ın, yarım nefesin de kulun olması şeklindedir. Bu bile bir arızadır.

( وَاَمَرُوا بِالْمَعْرُوفِ وَنَهَوْا عَنِ الْمُنْكَرِ ) *"İyiliği emreder ve kötülüğü yasaklarlar."*

Onlar, iyiliği emredip kötülükten alıkoymaya kendi nefislerinden sonra başkalarından başlarlar. Buna başladıkları zaman kendilerini bırakıp başkalarına yönelmezler.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- İyiliği emretmek, duyuları Allah'ın emrine muhalefetten korumak ve kadrinin yüceliği için O'nunla birlikte nefesleri gözetmektir.

- İyiliği emretmek, önce kendi nefsine iyiliği emretmen sonra bunu bitirdikten sonra nefsini kötülükten alıkoymandır. Kötülüğün bazıları; riya, kendini beğenmek, tatmin ve kendini görmektir.

وَاِنْ يُكَذِّبُوكَ فَقَدْ كَذَّبَتْ قَبْلَهُمْ قَوْمُ نُوحٍ وَعَادٌ وَثَمُودُ ﴿٤٢﴾ وَقَوْمُ
اِبْرٰهٖيمَ وَقَوْمُ لُوطٍ ﴿٤٣﴾ وَاَصْحَابُ مَدْيَنَ وَكُذِّبَ مُوسٰى فَاَمْلَيْتُ
لِلْكَافِرٖينَ ثُمَّ اَخَذْتُهُمْ فَكَيْفَ كَانَ نَكٖيرِ ﴿٤٤﴾

42, 43, 44- "Ey Muhammed! Eğer seni yalanlarlarsa bil ki onlardan önce Nûh, Âd ve Semûd kavimleri de yalanlamışlardı. İbrahim'in kavmi ile Lût'un kavmi ve Medyen halkı da. Mûsâ da yalanlandı ve nihayet o inkârcılara mühlet verdim sonra da onları yakalayıverdim. Beni inkâr etmek nasılmış."

Bu ayetlerde Hz. Peygamber'e (s.a.v.) teselli ve kavminden gördüğü çeşitli belalar ve türlü kötülüklere göğüs germeye sabretmesine dair kesin emir bulunmaktadır.

فَكَاَيِّنْ مِنْ قَرْيَةٍ اَهْلَكْنَاهَا وَهِيَ ظَالِمَةٌ فَهِيَ خَاوِيَةٌ عَلٰى عُرُوشِهَا
وَبِئْرٍ مُعَطَّلَةٍ وَقَصْرٍ مَشٖيدٍ ﴿٤٥﴾

45- “Halkı zulmetmekteyken helak ettiğimiz, böylece duvarları, çökmüş çatılarının üzerine yıkılmış nice memleketler, nice kullanılmaz kuyular, nice muhteşem saraylar vardır.”

Zulüm, zalimin yurtlarının harap olmasına yol açar. Bu çerçevede önce zalimin kalbinden ibaret olan rahatlığının yurtları harap olur. Zalimlere galebe çalan tahammülsüzlükleri, kötü ahlakları ve zulmettikleri kimselerin aşırı öfkeleri gibi hususların tamamı, rahatlıklarının yurtlarının harap olmasındandır. Hakikatte ise bu zulümlerine karşılık olarak uğradıkları ceza cümlesindendir.

Bir yoruma göre de zalimlerin evlerinin yıkılması bazen gecikir, bazen de çabuk gerçekleşir. Zulümlerinin uğursuzluğundan dolayı nefislerinin ibadetten kesilmek suretiyle harap olması, kalplerinin de özellikle namaz vakitlerinde ve halvet anlarında gafletin istilası sebebiyle harap olması geciktirilemez bir peşin cezadır.

( وَبِئْرٍ مُعَطَّلَةٍ وَقَصْرٍ مَشِيدٍ ) *“Nice kullanılmaz kuyular, nice muhteşem saraylar vardır.”*

Kullanılmaz kuyular iç dünyalarında fışkıran pınarlardır. Onlar, bu pınarlarından içiyorlardı. Bu içme, hallerini iradenin galebelerinden ve varlıkların gücünden korurdu. Zulümleriyle vasıflandıkları zaman ise o pınarlar çerçöp doldu ve tıkanmaları sebebiyle suları kesilmiş oldu.

اَفَلَمْ يَسٖيرُوا فِي الْاَرْضِ فَتَكُونَ لَهُمْ قُلُوبٌ يَعْقِلُونَ بِهَٓا اَوْ اٰذَانٌ يَسْمَعُونَ بِهَا فَاِنَّهَا لَا تَعْمَى الْاَبْصَارُ وَلٰكِنْ تَعْمَى الْقُلُوبُ الَّتٖي فِي الصُّدُورِ ﴿٤٦﴾

46- “Yeryüzünde gezip dolaşmadılar mı ki düşünecek kalpleri, işitecek kulakları olsun? Çünkü gerçekte gözler değil, göğüslerdeki kalpler kör olur.”

Yaratılış itibariyle onların kalpleri vardı. Ancak kalplerini güzel vasıfları terk edince bu kalpler gerçekte yok gibi oldular. Sonra

Allah, körlüğün kalp körlüğü olduğunu bildirdi ki sağırlık da böyledir. Bu arada, kalbin işitmek ve görmekle vasıflandırılması yerinde olduğu zaman canlıların çeşitli idrak biçimleri olan diğer vasıflarla vasıflandırılması da yerinde olur. Bu itibarla nasıl ki kalpler yakîn nuruyla görüyorsa ikbal esintisi de sırrın koklama fonksiyonlarıyla idrak edilir.

Bir hadiste şöyle denildiği rivayet edilmiştir:

*"Şüphesiz ben, Rabbinizin nefesini yemen tarafından hissediyorum."*

Allah da Hz. Yâkub'tan naklen şöyle buyurmuştur:

( اِنّ۪ي لَاَجِدُ ر۪يحَ يُوسُفَ ) *"Şüphesiz ben, Yûsuf'un kokusunu hissediyorum."* (Yûsuf, 12/94)

Bu ise, zahirdeki bir koku almakla değil ancak sırların idrakiyle gerçekleşen bir durumdur.

وَيَسْتَعْجِلُونَكَ بِالْعَذَابِ وَلَنْ يُخْلِفَ اللّٰهُ وَعْدَهُ وَاِنَّ يَوْمًا عِنْدَ رَبِّكَ كَاَلْفِ سَنَةٍ مِمَّا تَعُدُّونَ ﴿٤٧﴾

47- "Bir de senden acele azap istiyorlar. Hâlbuki Allah, asla vaadinden caymaz. Şüphesiz Rabbinin nezdinde bir gün, sizin saydığınız bin yıl gibidir."

Tasdik etmeyişleri onları Allah'ın kendilerini uyardığı şeyi kullanmaya sevk etmiştir. Allah şöyle buyurmaktadır:

( يَسْتَعْجِلُ بِهَا الَّذ۪ينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِهَا ) *"Kıyamete inanmayanlar, onun çabuk kopmasını istemektedirler."* (Şûrâ, 42/18)

Eğer inansalardı tasdik edeceklerdi, eğer tasdik etselerdi sükunete ereceklerdi.

( وَاِنَّ يَوْمًا عِنْدَ رَبِّكَ كَاَلْفِ سَنَةٍ مِمَّا تَعُدُّونَ ) *"Şüphesiz Rabbinin nezdinde bir gün, sizin saydığınız bin yıl gibidir."*

Yani Allah katında günler eşittir. Çünkü işler hakkında Allah için acele söz konusu değildir. Bu itibarla O'nun katında bir gün ile bin yıl aynıdır. Zira hakkında zaman işlemeyen, aksine zamanı işleten Allah için zamanın varlığı, yokluğu, azlığı ve çokluğu aynıdır.

وَكَاَيِّنْ مِنْ قَرْيَةٍ اَمْلَيْتُ لَهَا وَهِيَ ظَالِمَةٌ ثُمَّ اَخَذْتُهَا وَاِلَيَّ الْمَصِيرُ ﴿٤٨﴾

48- "Zalim oldukları halde mühlet verdiğim, sonra da kendilerini azabımla yakaladığım nice memleket halkları vardır. Dönüş yalnız banadır."

Mühlet Allah tarafından verilir. Bu mühlet verme, Allah'ın zalimi bir süre zulmünde tutması, tedbirlerini genişletmesi ve süresini uzatmasıdır. Bunun üzerine zalim, takdirin elinden kurtulduğunu vehmeder. Bu ise onun kendi istediği zannıdır. Sonra Allah onu beklemediği yerden yakalar ve kendisine pişmanlık hâkim olur, ancak artık zamanı değildir. Zalim, ilahî takdirde yokluğu kesinleşen hususun kalmasını nasıl sağlayabilir ki?

قُلْ يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ اِنَّمَٓا اَنَا لَكُمْ نَذِيرٌ مُبِينٌ ﴿٤٩﴾

49- "De ki: 'Ey insanlar! Ben, sizin için ancak apaçık bir uyarıcıyım.'"

Ben şeklen size benziyorum ancak iç âlemim bakımından sizden farklıyım. Ben iyiniz için bir müjdeci, kötünüz için de bir uyarıcıyım. Bir de ben size getirdiğim itaat ve iyiliğe dair emir çeşitlerini ortaya koyduğum delillerle teyit etmiş bulunuyorum.

فَالَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ لَهُمْ مَغْفِرَةٌ وَرِزْقٌ كَرِيمٌ ﴿٥٠﴾

50- "Artık iman edip salih ameller işleyenler için bağışlama ve güzel bir rızık vardır."

Bağışlanma konusunda insanlar birkaç kısımdır: Allah, onlardan kimisinin hatasını örter, kendini görüp beğenmekten onu korumak için kimisinin salih amellerini kendisinden saklar, şöhret

fitnesine yakalanmaması için kimisinin de halini örter. Bu anlamda şöyle denilmiştir:

*Yadırgama, sana olan aşkımı inkâr etmemi, çünkü*
*Üstüne salıverilmiş bir örtüdür bu inkâr*

Allah, onlardan kimisini de velilerinin arasında saklar. Bu nedenle kitaplarda şu ifade yer almıştır:

*"Velilerim kaftanımın altındadır. Benden başkası velilerimi göremez."*

( وَرِزْقٌ كَرِيمٌ ) *"Güzel rızık"* ise helal yoldan olandır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Güzel rızık, kulun beklemediği yerden gelen rızıktır.

- Güzel rızık, ihtiyaç duyulan zamanda beklenmeksizin, şefkatle ortaya çıkan rızıktır.

- Güzel rızık, verildiği kimseyi onu Allah'a yakınlık yolunda harcamaya sevk eden rızıktır.

- Güzel rızık, bereketi olan rızıktır.

- Güzel rızık, yorulmadan elde edilen ve mahlûkun minneti olmayan rızıktır.

وَالَّذِينَ سَعَوْا فِي اٰيَاتِنَا مُعَاجِزِينَ اُو۬لٰٓئِكَ اَصْحَابُ الْجَحِيمِ ﴿٥١﴾

51- "Ayetlerimizi geçersiz kılmak için çaba gösterenler var ya işte onlar cehennemlik kimselerdir."

O kimseler için dünyada yalnızlık, rüşt kapılarının kapanması, hayatın daralması ve Allah'tan korkmayan kimselerin merhametsizliğiyle müptela kılınmak vardır.

Ahirette ise onlar için suçları oranında bulacakları acıklı bir azap vardır.

وَمَٓا اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ مِنْ رَسُولٍ وَلَا نَبِيٍّ اِلَّٓا اِذَا تَمَنّٰٓى اَلْقَى الشَّيْطَانُ فٖٓي اُمْنِيَّتِهٖۚ فَيَنْسَخُ اللّٰهُ مَا يُلْقِي الشَّيْطَانُ ثُمَّ يُحْكِمُ اللّٰهُ اٰيَاتِهٖۜ وَاللّٰهُ عَلٖيمٌ حَكٖيمٌۙ ﴿٥٢﴾

52- "Senden önce hiçbir resûl ve nebî göndermedik ki bir şey temenni ettiği zaman şeytan onun bu temennisine dair vesvese vermiş olmasın. Ama Allah, şeytanın vesvesesini giderir. Sonra Allah ayetlerini sağlamlaştırır. Allah, hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Şeytanlar peygamberlere musallat olmaya çalışırlar lakin hallerinde hiçbir hâkimiyet ve etkileri olmaz. Peygamberimiz (s.a.v.) ise peygamberler topluluğunun en üstünüdür.

Şeytandan yoldan çıkarma değil, sadece hayal kurdurma ve karıştırma girişimi de gelebilir. Bu arada Hz. Peygamber'in (s.a.v.), Kur'an'ı okurken ayetlerin bitiminde bazı duruşları vardı. O duruşlar esnasında şeytan bazı sözcükler telaffuz ediyordu. Bu nedenle, durumu bilmeyen kimse o sözcüklerin Hz. Peygamber'in (s.a.v.) lafızlarından olduğunu vehmediyor ve bu durum birileri için fitne oluyordu.

Allah'ın ismet gücüyle desteklediği ve inayetin erdiği kimselere gelince onlar hakikati görmüş ve bu durum onlara zarar vermemiştir.

لِيَجْعَلَ مَا يُلْقِي الشَّيْطَانُ فِتْنَةً لِلَّذٖينَ فٖي قُلُوبِهِمْ مَرَضٌ وَالْقَاسِيَةِ قُلُوبُهُمْۜ وَاِنَّ الظَّالِمٖينَ لَفٖي شِقَاقٍ بَعٖيدٍۙ ﴿٥٣﴾

53- "Allah, şeytanın verdiği bu vesveseyi, kalplerinde hastalık bulunanlar ile kalpleri katı olanlara bir imtihan vesilesi kılmak için böyle yapar. Hiç şüphesiz ki o zalimler, derin bir ayrılık içindedirler."

Allah bir kulu hakkında hayır dilediği zaman hakikat nuruyla ona yardımcı olur ve güzel masumiyetle kendisini destekler. Böylece o, güzel basiretle hak ile bâtılı birbirinden ayırt eder, bu sayede şüphe bulutları üstüne çökmez ve gaflet örtüsü üzerinden kalkar. Nitekim gündüzün kemal noktasında, sabah sisinin güneş ışınlarına hiçbir etkisi olmamaktadır.

İşte şu ayetler de bunu ifade etmektedir:

وَلِيَعْلَمَ الَّذ۪ينَ اُو۫تُوا الْعِلْمَ اَنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَبِّكَ فَيُؤْمِنُوا بِه۪ فَتُخْبِتَ لَهُ قُلُوبُهُمْ وَاِنَّ اللّٰهَ لَهَادِ الَّذ۪ينَ اٰمَنُٓوا اِلٰى صِرَاطٍ مُسْتَق۪يمٍ ﴿٥٤﴾

54- “Bir de kendilerine ilim verilmiş olanlar onun, Rabbinden gelen hak olduğunu bilsinler, böylece ona iman etsinler ve sonuçta da kalpleri ona saygı duysun diye Allah böyle yapar. Hiç şüphe yok ki Allah iman edenleri doğru yola iletir.”

وَلَا يَزَالُ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا ف۪ي مِرْيَةٍ مِنْهُ حَتّٰى تَأْتِيَهُمُ السَّاعَةُ بَغْتَةً اَوْ يَأْتِيَهُمْ عَذَابُ يَوْمٍ عَق۪يمٍ ﴿٥٥﴾

55- “İnkâr edenler, kendilerine kıyamet ansızın gelinceye yahut da onlara kısır bir günün azabı gelip çatıncaya dek o Kur’ân’da bir şüphe içinde kalırlar.”

اَلْمُلْكُ يَوْمَئِذٍ لِلّٰهِ يَحْكُمُ بَيْنَهُمْ فَالَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ ف۪ي جَنَّاتِ النَّع۪يمِ ﴿٥٦﴾

56- “İşte o gün hükümranlık Allah’ındır. O, insanların arasında hükmünü verir. Artık iman edip salih ameller işlemiş olanlar Naîm cennetlerindedirler.”

Allah’ın hükümranlığı bir güne mahsus olmaz, emri vakitle sınırlanmaz ve yüceliği hiçbir ölçüye sığmaz. Lakin o gün iddialar kesilir,

zanlar kalkar ve ihtimaller zayıflar. Bu durumda müminler ve uyum ehli için nimetler, kâfirler ve ayrılık sahipleri için de cezalar vardır.

وَالَّذِينَ كَفَرُوا وَكَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا فَاُولٰٓئِكَ لَهُمْ عَذَابٌ مُهِينٌ ﴿٥٧﴾ وَالَّذِينَ هَاجَرُوا فِي سَبِيلِ اللّٰهِ ثُمَّ قُتِلُوٓا اَوْ مَاتُوا لَيَرْزُقَنَّهُمُ اللّٰهُ رِزْقًا حَسَنًا وَاِنَّ اللّٰهَ لَهُوَ خَيْرُ الرَّازِقِينَ ﴿٥٨﴾

57, 58- "İnkâr edip ayetlerimizi yalanlamış olanlara gelince, onlar için de alçaltıcı bir azap vardır. Allah yolunda hicret edip de sonra öldürülmüş veya ölmüş olanlara gelince, Allah onlara muhakkak güzel bir rızık verecektir. Şüphe yok ki Allah rızık verenlerin en hayırlısıdır."

Kimilerine alçaltıcı azap, kimilerine de apaçık bir lütuf vardır.

( وَالَّذِينَ هَاجَرُوا فِي سَبِيلِ اللّٰهِ ) *"Allah yolunda hicret edip..."*

Kalpler için irfan tatlılığı, ruhlar için sevgilerin elbisesi, sırlar için de şuhûdun devamlılığı vardır.

لَيُدْخِلَنَّهُمْ مُدْخَلًا يَرْضَوْنَهُ وَاِنَّ اللّٰهَ لَعَلِيمٌ حَلِيمٌ ﴿٥٩﴾

59- "Elbette onları, hoşnut olacakları bir yere sokacaktır. Şüphesiz Allah hakkıyla bilendir, halîmdir."

Allah, onları temenni ettiklerinin üstünde bir yere koyacak ve erdirildikleri vasıf üzere bırakacaktır. Bu durum, kemal vasfı üzere ünsiyetin latifelerine ermeleri ve sevincin en yüksek hali üzere bastın icaplarını yerine getirebilmeleri için sahv anlarında gerçekleşir.

ذٰلِكَ وَمَنْ عَاقَبَ بِمِثْلِ مَا عُوقِبَ بِهِ ثُمَّ بُغِيَ عَلَيْهِ لَيَنْصُرَنَّهُ اللّٰهُ اِنَّ اللّٰهَ لَعَفُوٌّ غَفُورٌ ﴿٦٠﴾

60- "Bu böyle. Bir de kim kendine verilen eziyetin dengiyle karşılık verir de sonra yine kendisine zulmedilirse elbette Allah ona

yardım eder. Hiç şüphesiz ki Allah çok affedendir, çok bağışlayandır."

Allah'ın velilere olan yardımı paha biçilmez bir yardımdır. İntikamı tamdır, kökten yok etmesi noksansızdır, düşmanlarını topluca ortadan kaldırır, yardım ettiği kimse tedbire ve hemcinslerinin desteğine ihtiyaç duymaz.

ذٰلِكَ بِاَنَّ اللّٰهَ يُولِجُ الَّيْلَ فِي النَّهَارِ وَيُولِجُ النَّهَارَ فِي الَّيْلِ وَاَنَّ اللّٰهَ سَم۪يعٌ بَص۪يرٌ ﴿٦١﴾

61- "Bu böyle. Çünkü Allah, geceyi gündüzün içine sokar, gündüzü de gecenin içine sokar. Şüphesiz ki Allah hakkıyla işiten, hakkıyla görendir."

Nasıl ki dünyanın ufkunda gece ve gündüz varsa, aynı şekilde sırların da gecesi ve gündüzü vardır. Şöyle ki, tecelli esnasında gündüz, setr esnasında da gece vardır. Sırrın gecesinin ve gündüzünün de artıp eksilmesi vardır. Buna göre kabz miktarınca gecedir, bast miktarınca da gündüzdür. İkisinden biri diğerine göre artar ve eksilir. Bu, arifler için söz konusudur. Hakikat ehli olanlara gelince, başkalarının kabz ve bastı yerine onların ünsiyet ve heybetleri vardır. Bu, onların sahv ve mahv hallerinde var olup ikisinden herhangi biri artar ve eksilir. Onlardan kimisinin de gündüzü devam eder ve üstüne gece gelmez. Bu, sadece ünsiyet ehli kimseler için söz konusudur.

ذٰلِكَ بِاَنَّ اللّٰهَ هُوَ الْحَقُّ وَاَنَّ مَا يَدْعُونَ مِنْ دُونِه۪ هُوَ الْبَاطِلُ وَاَنَّ اللّٰهَ هُوَ الْعَلِيُّ الْكَب۪يرُ ﴿٦٢﴾

62- "Bu böyle. Çünkü Allah hakkın ta kendisidir. O'nu bırakıp da taptıkları ise bâtılın ta kendisidir. Şüphesiz ki Allah yücedir, büyüktür."

Hakikatlerden bir bilgi belirdiği zaman, tecelliye mazhar olan kimse için o bilgi miktarınca fenadan bir parçacık gerçekleşir. Sonra

beliren bilgi artar ve galebe çalar. Tefrikanın eserleri ise eksilerek yok olur. Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur:

*"Buradan gündüz geldiği zaman, şuradan gece gider."*

Bu itibarla kul, Allah'tan başkasını hissetmekten tamamen uzaklaştığı zaman önce varlıkları sadece Hak için görür, sonra onları sadece Hak ile görür, sonra da sadece Hakk'ı görür. Böylece o, Hak'tan başka hiçbir şey hissetmez. Unuttuğu şeyler arasında ise kendisi ve bütün varlık da vardır.

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ اَنْزَلَ مِنَ السَّمَٓاءِ مَٓاءًۘ فَتُصْبِحُ الْاَرْضُ مُخْضَرَّةًۜ اِنَّ اللّٰهَ لَطِيفٌ خَبِيرٌۚ ﴿٦٣﴾

63- "Allah'ın gökten yağmur indirdiğini, böylece yeryüzünün yemyeşil olduğunu görmedin mi? Şüphesiz Allah çok lütufkârdır, hakkıyla haberdardır."

Gök suyu -yağmur- yeri öldükten sonra diriltir. Rahmet suyu hata sahiplerinin hallerini, hatalarını terk etmelerinden sonra, inayet suyu insanların hallerini parlaklıkları yok olduktan sonra, vuslat suyu da kurbet ehlini kurumalarından sonra diriltir.

لَهُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَاِنَّ اللّٰهَ لَهُوَ الْغَنِيُّ الْحَم۪يدُ ﴿٦٤﴾

64- "Göklerdeki her şey ve yerdeki her şey O'nundur. Şüphesiz ki Allah zengindir, elbette övgüye layıktır."

Mülk Allah'a mahsus olup O, her şeyden müstağnidir. Bu itibarla Allah, mülküyle müstağni olmamakta aksine mülkü O'nun yaratmasıyla var olmaktadır. Çünkü madum -henüz yaratılmamış varlık-, O'nun kudreti dahilindedir. Kudret dahilinde olan şey de mülk kapsamındadır. Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Nasıl ki Allah, düşmanlar arasında yer verdiği yabancılardan müstağni ise aynı şekilde büyük şahsiyetlerden ve velilerden de müstağnidir.

- Gani olan Allah, hamd edilmeye layık olduğuna göre bu kendisine şükredilsin diye nimet verdiği anlamına gelmektedir.

- Gani ve hamîd olan Allah, nimet versin veya vermesin, hamdı hak eden varlıktır. Eğer nimet verirse şükür olan hamdı, şayet vermezse övgü olan hamdı hak etmiş olur.

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ سَخَّرَ لَكُمْ مَا فِي الْاَرْضِ وَالْفُلْكَ تَجْر۪ي فِي الْبَحْرِ بِاَمْرِه۪ وَيُمْسِكُ السَّمَٓاءَ اَنْ تَقَعَ عَلَى الْاَرْضِ اِلَّا بِاِذْنِه۪ اِنَّ اللّٰهَ بِالنَّاسِ لَرَؤُ۫فٌ رَح۪يمٌ ﴿٦٥﴾

65- "Görmüyor musun ki Allah, bütün yerdekileri ve emri uyarınca denizde akıp gitmekte olan gemileri sizin hizmetinize vermiştir. İzni olmaksızın yerin üzerine düşmesin diye göğü O tutuyor. Şüphesiz ki Allah, insanlara karşı çok esirgeyici, çok merhametlidir."

Allah, bununla o varlıklardan yararlanmayı insanların hizmetine verdiğini kast etmektedir. Bu çerçevede halkın yararlandığı ve yararlanma imkânına sahip kılındığı şey, kullanma imkânına sahip kılındığı anlamında insanın hizmetine verilmiş şey gibidir. Sonra bu konuda izin gözetilir. Şöyle ki her kim bir şeyden mubahlık, izin, ona davette bulunma ve onu emretme yoluyla yaralanırsa bu, inam ve ikramdır. Kim de aksi istikamette olursa söz konusu yararlanma tuzaktır ve istidracdır.

Gemiye gelince, kula onu yapmasının ve ondan taşıma ve binme gibi çeşitli şekillerde yararlanmasının ilham edilmiş olması, Allah'ın kula olan en büyük iyiliğidir ve merhametindendir. Sonra bir de gemiyle uzak mesafeler almak, uzak yerlere ulaşmak ve ondan çeşitli şekillerde yararlanma imkânı gibi hususlar gerçekleşmektedir. Bunda ise en büyük nimet ve en mükemmel afiyet vardır.

Allah yeryüzünü sallanmayacak şekilde halk için yaşanan yer kılmıştır. Gökyüzünü de düşmeyecek bir bina kılmıştır. Ayrıca burada

karanlıkta yol bulmaya yarayan yıldızlar yaratmıştır. Sonra bu yıldızlar gökyüzünün süsüdür. Bu tabloda ise gönle su serpen ve kesin inancın serinliğini sağlayan deliller vardır.

وَهُوَ الَّذٖٓي اَحْيَاكُمْ ثُمَّ يُمٖيتُكُمْ ثُمَّ يُحْيٖيكُمْ اِنَّ الْاِنْسَانَ لَكَفُورٌ ﴿٦٦﴾

66- "O, size hayat veren sonra sizi öldürecek daha sonra da diriltecek olandır. Şüphesiz insan çok nankördür."

Canların diriltilip öldürülmesi belli sayılarla sınırlıdır. Oysa abidlerin hallerinin diriltilip öldürülmesi sınırsız ve sayısızdır. Şu beyit de bu anlamda söylenmiştir:

*Ölürüm seni hatırladığım zaman sonra dirilirim*
*Böylece nice dirilirim ben sana ve nice ölürüm*

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, lütfunu göstermek suretiyle emelleri diriltir sonra onları üstün gücüne muttali kılmak suretiyle öldürür.

- Bu değişkenlik velilerin avamlarının sıfatıdır. Yüksek fazilet sahibi olanlarının ise hayatı sonsuz ve canlanışı ebedidir. Bir de Allah'ın varlığı, geçici hiçbir varlığa ihtiyaç bırakmazken O'ndan başkası hakikatte nasıl yaşar?

لِكُلِّ اُمَّةٍ جَعَلْنَا مَنْسَكًا هُمْ نَاسِكُوهُ فَلَا يُنَازِعُنَّكَ فِي الْاَمْرِ وَادْعُ
اِلٰى رَبِّكَ اِنَّكَ لَعَلٰى هُدًى مُسْتَقٖيمٍ ﴿٦٧﴾

67- "Biz her ümmet için uygulayacağı bir ibadet yolu verdik. O halde din işinde seninle asla çekişmesinler. Sen Rabbine davet et. Çünkü sen, hiç şüphesiz hakka götüren dosdoğru bir yol üzerindesin."

Allah her topluluk için bağlandığı bir din, her cemaat için de izlediği bir yol var etmiştir. Her makam için sakinler, her yer için de yerleşenler yaratmıştır. Bu çerçevede her birini ehil olduğu şeye

bağlamış ve her birini kendisine ayırdığı yere ulaştırmıştır. Buna göre kulluk yaygılarına abidlerin ayaklarıyla basılır. İçtihat alanları da mükellefiyet sahibi müçtehitlerle mamurdur. Marifet sahiplerinin meclisleri ariflerin bağlılığıyla sıcak, sevenlerin evleri de vecde gelenlerin bulunmasıyla şendir.

( فَلَا يُنَازِعُنَّكَ فِي الْاَمْرِ ) *"O halde din işinde seninle asla çekişmesinler."*

Kaderin tasarruflarına şahit ol, mükellefiyetin gereğiyle amel et ve sana izin verilen kaynakların sınırında dur.

وَاِنْ جَادَلُوكَ فَقُلِ اللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا تَعْمَلُونَ ﴿٦٨﴾

68- "Eğer seninle mücadele ederlerse de ki: 'Allah, yapmakta olduğunuzu daha iyi bilmektedir.'"

Mücadeleye niyetlendikleri zaman onları bize havale et, kendin tercih ettiğin tedbire yaslanma ve kalbinin benzerlerden ve hemcinslerden yardım talep etmeye yönelmesinden sakın. Çünkü onlar boş kalıplar ve anlamsız hayaletlerdir.

اَللّٰهُ يَحْكُمُ بَيْنَكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ فِيمَا كُنْتُمْ فِيهِ تَخْتَلِفُونَ ﴿٦٩﴾

69- "Hakkında ayrılığa düşüp durduğunuz şeyler konusunda kıyamet günü Allah aranızda hüküm verecektir."

Yabancılara ise Allah şöyle buyurur:

( كَفٰى بِنَفْسِكَ الْيَوْمَ عَلَيْكَ حَسِيبًا ) *"Bugün hesap soran olarak sana nefsin yeter."* (İsrâ, 17/14)

Velilere gelince, bazılarının hesabını Allah kolaylaştırır, özel bazılarına da şöyle buyurur: *"Benimle aranızda bir hesap vardır."* Bu nedenle aralarında ne Cibrîl ne Mîkâîl ne hiçbir resûl peygamber ne de hiçbir mukarrab melek hüküm verebilir.

( اَللّٰهُ يَحْكُمُ بَيْنَكُمْ ) *"Allah aranızda hüküm verecektir."*

Allah aralarında hüküm verirken bütün hasımlarına amellerini sorar ve bütün alacaklılarının razı edilmesini emreder.

اَلَمْ تَعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ مَا فِي السَّمَٓاءِ وَالْاَرْضِ اِنَّ ذٰلِكَ فِي كِتَابٍ
اِنَّ ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ يَسِيرٌ ﴿٧٠﴾

70- "Bilmez misin ki kuşkusuz Allah gökte ve yerde ne varsa hepsini bilir. Kuşkusuz bunların hepsi bir kitaptadır. Şüphesiz bu, Allah'a göre çok kolaydır."

Allah sırrı, fısıltıyı ve kulun şiddetle ve kuvvetle muhtaç olduğu şeyi bilir. O, her yönüyle kula daha yakındır, onun için nimetler taşıyabilir, sıkıntısını giderebilir ve yakınmasını dinlemeyebilir. Zira hüküm, şanı yüce Allah'a mahsustur.

وَيَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ مَا لَمْ يُنَزِّلْ بِهِ سُلْطَانًا وَمَا لَيْسَ لَهُمْ بِهِ
عِلْمٌ وَمَا لِلظَّالِمِينَ مِنْ نَصِيرٍ ﴿٧١﴾

71- "Onlar, Allah'ı bırakıp hakkında Allah'ın hiçbir delil indirmediği, kendilerinin de hakkında hiçbir bilgilerinin bulunmadığı şeylere kulluk ederler. Zalimlerin hiçbir yardımcısı yoktur."

Ayet Allah'ın havassından olan kimseye müstakil delil verdiğine, onu izahla desteklediğine ve rehberle aziz kıldığına işaret etmektedir. Rehbersiz olana kahrı uzanır, delilsiz olandan ise nuru ayrılarak başkasına doğru yayılır. Böylece bu kimse, o nurun tamamından uzak kalmış olur.

وَاِذَا تُتْلٰى عَلَيْهِمْ اٰيَاتُنَا بَيِّنَاتٍ تَعْرِفُ فِي وُجُوهِ الَّذِينَ كَفَرُوا
الْمُنْكَرَ يَكَادُونَ يَسْطُونَ بِالَّذِينَ يَتْلُونَ عَلَيْهِمْ اٰيَاتِنَا قُلْ اَفَاُنَبِّئُكُمْ
بِشَرٍّ مِنْ ذٰلِكُمْ اَلنَّارُ وَعَدَهَا اللّٰهُ الَّذِينَ كَفَرُوا وَبِئْسَ الْمَصِيرُ ﴿٧٢﴾

72- "Kendilerine ayetlerimiz açık açık okunduğu zaman o kâfirlerin yüz ifadelerinden inkârlarını anlarsın. Neredeyse kendilerine ayetlerimizi okuyanlara hışımla saldıracaklar. De ki: 'Şimdi size bu durumdan daha beterini haber vereyim mi? Ateşi Allah kâfirlere vaad etti. Ne kötü varış yeridir orası!' "

İlahî hitabı işitmenin, kalplerde sevinç, memnuniyet veya karşı çıkma ve ürküntü gibi etkileri bulunur. Sonra sırların içine işleyen husus dışa yansır. Nitekim ayetler indiğinde kâfirlere okunduğu zaman yüzlerinde kalplerinin içerdiği yalanlama karanlıklarının dumanı beliriyordu. Yüzlerine yansıyan bir göz kırpması bile onların inkârcılığını haber veriyor ve kalplere kopuşlarının haberi yansıyordu.

Sonra Allah o kimselerin karşı karşıya bulundukları acıklı azabın kendilerini görenlere onlardan yansıyan tablodan her yönüyle daha kötü olduğunu bildirmiştir. Şu bir gerçek ki, güzel manzaralar görenleri sevindirir, çirkin manzaralar da bakanlarını ürkütür.

يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ ضُرِبَ مَثَلٌ فَاسْتَمِعُوا لَهُ اِنَّ الَّذٖينَ تَدْعُونَ مِنْ
دُونِ اللّٰهِ لَنْ يَخْلُقُوا ذُبَابًا وَلَوِ اجْتَمَعُوا لَهُ وَاِنْ يَسْلُبْهُمُ الذُّبَابُ
شَيْـًٔا لَا يَسْتَنْقِذُوهُ مِنْهُ ضَعُفَ الطَّالِبُ وَالْمَطْلُوبُ ﴿٧٣﴾

73- "Ey insanlar! Size bir örnek verildi. Şimdi ona iyi kulak verin. Sizin Allah'tan başka taptıklarınız bir sinek dahi yaratamazlar, hepsi bunun için toplansalar dahi. Eğer sinek onlardan bir şey kapsa, bunu ondan kurtaramazlar. İsteyen de âciz, istenen de."

Allah dağınık düşünceleri ve hisleri, onların içine yerleştirmek istediği şeyi işitmeleri için toplanmak konusunda uyarmıştır. Böylece onları bir araya getirip: ( ضُرِبَ مَثَلٌ فَاسْتَمِعُوا لَهُ ) "*Size bir örnek verildi. Şimdi ona iyi kulak verin*" buyurmuştu. Sonra manasını açıklamak üzere şöyle buyurmuştur: Allah'tan başka taptıklarınız ve ilah diye adlandırdıklarınız -ibadeti hak ettiklerini ileri sürdükleriniz-, hepsi

birlikte sineği de daha ufağını da yaratamayacaklardır. Şayet sinek onlardan bir şey kaparsa, mesela yemeklerinin üzerine konarsa, bunu ondan kurtarma gücüne sahip değillerdir. Vasfı bu olan kimselerin ise durumu kötüdür, vasıfları zayıftır ve önemleri azdır.

Bir yoruma göre de bir sineğe bile direnemeyip ona yenilen kimsenin değeri çok düşüktür.

مَا قَدَرُوا اللّٰهَ حَقَّ قَدْرِه۪ۜ اِنَّ اللّٰهَ لَقَوِيٌّ عَز۪يزٌ ﴿٧٤﴾

74- "Allah'ın kadrini gereği gibi bilemediler. Şüphesiz Allah kuvvetlidir, mutlak güç sahibidir."

Allah'ı tanımaları gerektiği gibi tanımadılar ve hakkı olan yüce sıfatlarla vasıflandırmadılar. Kimin inancında Allah'ın vasfında imkansız olan hususu çürütme özelliği yoksa, onun sırrına tevhidin özü işlemiş olmaz. O kimse düşünce tutarsızlığı, zanna dayalı ihtimaller ve zulüm tehlikesi içerisinde olup sapıklığın her bir uçurumuna düşer.

Bir yoruma göre de avamın çabası, Allah korkusundan dolayı çirkin davranışları reddetmeye yöneliktir. Havassın çabası ise inançlarının samediyetin münezzeh olduğu vasıfları çürütmesi yönündedir. Bu iki çaba arasında ise büyük bir fark vardır.

(اِنَّ اللّٰهَ لَقَوِيٌّ عَز۪يزٌ) *"Şüphesiz Allah kuvvetlidir, mutlak güç sahibidir."*

Kuvvetlidir yani tahsil ve akılların kemali bakımından onlardan üstün kimseler yaratma kudretine sahiptir.

Mutlak güç sahibidir yani herkes onun kadrini ancak beşer vasfına uygun şekilde bir miktar irfanla takdir edebilir.

Bir yoruma göre de kim Allah'a giden yolu bulursa o, sadece yetersizlik vasfıyla nitelenir. Ancak herkes vecdine bağlı tutulmakta ve himmetinin sınırında durdurulmaktadır. Oysa Hak (c.c.) mutlak güç sahibidir.

اَللّٰهُ يَصْطَف۪ي مِنَ الْمَلٰٓئِكَةِ رُسُلًا وَمِنَ النَّاسِ اِنَّ اللّٰهَ سَم۪يعٌ بَص۪يرٌ ﴿٧٥﴾

75- "Allah, meleklerden de resûller seçer, insanlardan da. Şüphesiz Allah hakkıyla işitendir, hakkıyla görendir."

Allah (c.c.) tarafından seçilmek ve seçkin kılınmak; kaderin ortaya konulması, güç tahsisi ve menkıbe ile kabiliyetlerde hemcinslerinin önüne geçirilmeleriyle olmaktadır.

Sonra dereceler bakımından bazıları diğer bazılarından üstündür. Bu itibarla fazilet, gönderilen peygamberin yaratılışındaki bir özellikten dolayı değil, onları peygamber olarak gönderen Allah'ın hakkı sebebiyledir.

يَعْلَمُ مَا بَيْنَ اَيْد۪يهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ وَاِلَى اللّٰهِ تُرْجَعُ الْاُمُورُ ﴿٧٦﴾

76- "Onların önlerindekini de arkalarındakini de -yaptıklarını da yapacaklarını da- bilir. Bütün işler hep Allah'a döndürülür."

Allah onların şimdiki ve gelecekteki durumlarını, içlerini, dışlarını, bugünlerini, yarınlarını ve sözlerinde durmamalarını bilir. O halde dönüşleri O'nadır ve tasarrufları O'nun elindedir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا ارْكَعُوا وَاسْجُدُوا وَاعْبُدُوا رَبَّكُمْ وَافْعَلُوا الْخَيْرَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿٧٧﴾

77- "Ey iman edenler! Rükû edin, secde edin, Rabbinize kulluk edin ve hayır işleyin ki kurtuluşa eresiniz."

Rükû, secde ve kulluk etmek; bütün bunlar namaz demektir. Çünkü namaz bunların tamamını kapsamaktadır. Ancak Allah, namazı emrederken müminin kalbini korkudan korumak için bu hususları ayrı ayrı zikretmiştir. Her bir lafız ve manayla birlikte bir nevi hafifletme ve rahatlatma olsun diye Allah onları anlatırken kısımlara ayırmıştır. Nitekim marifet ehlinin kalpleri için her bir lafızda yeni bir rahatlama vardır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, müminler için ibadeti çeşitlendirmiş ve onlara emretmiştir. Sonra o, tek bir ibadettir. Bir de Allah bu ibadete karşılık olarak, basiretlerin bilmekten aciz kaldığı çok sevap vaat etmiştir.

- Allah, sevenlerinin O'nun kelamını işitmeyi sevdiğini bildiği için bunu işittiklerinde ünsiyet üstüne ünsiyetleri ve huzur üstüne huzurları artsın diye ayetin sonuna kadar sözü uzatmıştır. Nitekim dostların hitabının tekrarı, ruhlarının huzuru ve rahatlarının kemalidir.

Bundan sonra Allah: ( وَافْعَلُوا الْخَيْرَ ) *"Hayır işleyin"* buyurarak Allah'a yakınlığın bütün çeşitlerini bu kapsama dahil etmiştir.

وَجَاهِدُوا فِي اللّٰهِ حَقَّ جِهَادِهِ هُوَاجْتَبٰيكُمْ وَمَا جَعَلَ عَلَيْكُمْ فِي الدّ۪ينِ مِنْ حَرَجٍ مِلَّةَ اَب۪يكُمْ اِبْرٰه۪يمَ هُوَ سَمّٰيكُمُ الْمُسْلِم۪ينَ مِنْ قَبْلُ وَف۪ي هٰذَا لِيَكُونَ الرَّسُولُ شَه۪يدًا عَلَيْكُمْ وَتَكُونُوا شُهَدَٓاءَ عَلَى النَّاسِ فَاَق۪يمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ وَاعْتَصِمُوا بِاللّٰهِ هُوَ مَوْلٰيكُمْ فَنِعْمَ الْمَوْلٰى وَنِعْمَ النَّص۪يرُ ﴿٧٨﴾

78- "Allah uğrunda hakkıyla cihad edin. O, sizi seçti ve dinde üzerinize hiçbir güçlük yüklemedi. Babanız İbrahim'in dinine uyun. Allah, Peygamber sizin hakkınızda şahit olsun, siz de insanlar hakkında şahit olasınız diye, sizi hem daha önce hem de bu Kur'ân'da Müslümanlar diye isimlendirdi. Artık namazı dosdoğru kılın, zekâtı verin ve Allah'a sarılın. O, sizin sahibinizdir. O, ne güzel sahip ne güzel yardımcıdır."

( وَجَاهِدُوا فِي اللّٰهِ حَقَّ جِهَادِهِ ) *"Allah uğrunda hakkıyla cihad edin."*

Hakkıyla cihad, kadir, vakit ve nevide emre uygun olandır. Bu nedenle bir kısmında emre aykırılık meydana geldiği zaman o hakkıyla cihad olmaz. Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Mücahede birkaç kısımdır: Nefisle mücahede, kalple mücahede ve malla mücahede. Nefisle mücahede, kulun meşakkatlere katlanmak suretiyle sahip olduğu her türlü imkanı taatte harcaması, ruhsat ve kolaylık kollamamasıdır. Kalple mücahede, onu gaflet ve aykırılıklarda kararlı olmak gibi kötü hislerden korumak, durgunluk içinde ve boş geçen günlerde olup bitenleri hatırlamaktır. Malla mücahede ise harcama, cömertlik ve isarla -başkasının ihtiyacını kendi ihtiyacına tercih etmekle- olur.

- Hakkıyla cihad, en zor olanı tercih etmek ve daha hafif olanda da hak bulunmakla birlikte daha zor olanı daha kolay olana öncelemektir.

- Hakkıyla cihad, kulun bir an bile nefisle mücadele etmekten geri durmamasıdır.

Şiir:

*Şüphesiz kesilmez cihadım ya Rab!*
*Zira Tarsus'un sınır boyudur benim için her toprak*

( هُوَاجْتَبٰيكُمْ ) *"O, sizi seçti."*

Bu ifade şu iki ihtimali içerir:

- Allah'ın sizi seçmesinin hakkından biri de Mevlâ'nızın emrini yüceltmenizdir.

- Sizi seçen O'dur. Eğer O sizi seçmeseydi, siz cihad yapmayacaktınız. Nitekim seni seçtiği içindir ki sana muvaffakiyet verdi ve sen bu sayede cihad yaptın.

Bir yoruma göre de Allah seni yaratmadan önce ne yapacağını bilmiş ancak bu, seni seçmesine engel olmamıştır. Aynı şekilde eğer Allah yaptıklarını görüyorsa bu, O'nu seni affetmekten ve cezalandırmamaktan alıkoymaz.

( وَمَا جَعَلَ عَلَيْكُمْ فِي الدِّينِ ) *"Dinde üzerinize hiçbir güçlük yüklemedi."*

Dinin temeli, kolaylık üstüne atılmıştır. Seni Allah'ın rızasına kavuşturan, sana O'nun çokça lütuf ve ihsanını kazandıran ve seni O'nun acıklı azabı ve imtihanından kurtaran şey, sahip olduğun imkânın tamamını tüketmeyi gerektirmeyen kolay bir husustur. Yani her ne kadar sende bulunmayan şeyi yapmaya muktedir olmakla fiilen vasıflandırılmasan da onu yapmak istediğin zaman şüphesiz buna gücün yeter.

( مِنْ حَرَجٍ مِلَّةَ أَبِيكُمْ اِبْرٰهِيمَ ) *"Babanız İbrahim'in dinine uyun."*

Yani harcamada, cömertlikte, dostlukta ve iyilikte babanız İbrahim'in dinine uyun ve ona bağlı kalın.

( هُوَ سَمّٰيكُمُ الْمُسْلِمِينَ مِنْ قَبْلُ وَفِي هٰذَا لِيَكُونَ الرَّسُولُ شَهِيدًا عَلَيْكُمْ وَتَكُونُوا شُهَدَآءَ عَلَى النَّاسِ ) *"Allah, Peygamber sizin hakkınızda şahit olsun diye, sizi hem daha önce hem de bu Kur'ân'da Müslümanlar diye isimlendirdi."*

Sizi seçen Allah'tır. Aynı zamanda İslam ve irfan sebebiyle sizleri Müslümanlar diye adlandıran da O'dur. Allah, bu adlandırmayı şu sözüyle yapmıştır:

( وَمِنْ ذُرِّيَّتِنَآ اُمَّةً مُسْلِمَةً لَكَ ) *"Soyumuzdan da sana teslim olmuş -Müslüman- bir ümmet kıl."* (Bakara, 2/128)

( وَفِي هٰذَا لِيَكُونَ الرَّسُولُ شَهِيدًا عَلَيْكُمْ ) *"Peygamber hakkınızda şahit olsun diye."*

Allah, Hz. Peygamber'i (s.a.v.) hakkımızda şahitlik etmekle görevlendirmiş ve ona, ümmetine şefaat etmesini emretmiştir. Bu arada Hz. Peygamber (s.a.v.), hakkımızda sadece şefaate yer bırakacak miktarda şahitlik etmektedir.

( وَتَكُونُوا شُهَدَآءَ عَلَى النَّاسِ ) *"Siz de insanlar hakkında şahit olasınız diye."*

Bu şahitliği biz Allah için yerine getiririz. Bu arada bir kimse tarafından kendisi için şahitlik yapılacak olan kimse -eğer değerli ise- şahidinin güvenilirliğine zarar vermesin, aksine şahitlerinin güvenilirliğini sağlamaya çalışsın.

( فَاَقِيمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ وَاعْتَصِمُوا بِاللّٰهِ هُوَ مَوْلٰيكُمْ فَنِعْمَ الْمَوْلٰى وَنِعْمَ النَّصِيرُ ) *"Artık namazı dosdoğru kılın, zekâtı verin ve Allah'a sarılın. O, sizin sahibinizdir. O, ne güzel sahip ne güzel yardımcıdır."*

Tam, devamlı ve güzel istikamet üzere namazı kılın ve zekâtı verin. Allah'a sarılmak, kulun kendi gücünden ve kuvvetinden arınması ve Allah'a ibadeti Allah ile ve Allah için yapmasıdır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah'a sarılmak, Kitap ve sünnete bağlılıktır.

- Allah'a sarılmak, sürekli O'ndan yardım dilemek suretiyle güzel istikamet üzere bulunmaktır.

( فَنِعْمَ الْمَوْلٰى وَنِعْمَ النَّصِيرُ ) *"O, ne güzel sahip ne güzel yardımcıdır."*

( نعم المولى ) *"Ne güzel sahip"* sözü Allah'ın yüceliğini, ( نعم النصير ) *"ne güzel yardımcı"* sözü de rahmetini bildirmektedir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Şayet Allah Hz. Eyyûb ve Hz. Süleyman için: ( نعم العبد ) *"o ne güzel kuldur"* (Sâd, 38/30, 44) buyurmuşsa, bizim için de ( نعم المولى و نعم النصير ) *"O, ne güzel sahip ne güzel yardımcıdır"* buyurmuştur. Bu arada Allah'ın kendini övmesi seni övmekten daha üstün ve daha büyüktür.

- ( نعم المولى ) *"Ne güzel sahip"* sözü şu demektir: Allah, sen O'nu sevmeden, tanımadan, aramadan veya O'na ibadet etmeden önce seni sevmiştir.

( نعم النصير ) *"Ne güzel yardımcı"* sözü ise şu demektir: Sana ait olan her şey, senden ayrılıp gittiği ve kimsenin mezara seninle beraber girmediği zaman, sana O yardım eder. Aynı şekilde sual esnasında ve Sırat'ın yanında da O'ndan başka yardımcın yoktur.

# Dizin


**A**

abdâl 251, 394
abid 157, 159, 160, 192, 216, 220, 273, 307, 342, 366, 461, 526, 528, 618, 619
Abid 286, 525, 603
Âdemoğulları 214, 342, 343, 344, 345, 511
ahkâm âlimleri 264
alaka 431, 468, 580, 581
Arap 169, 255, 508, 547, 568, 590
arif 110, 157, 171, 172, 177, 192, 198, 216, 217, 219, 249, 265, 273, 281, 286, 287, 307, 320, 333, 350, 363, 419, 461, 525, 526, 615, 619
Arif 219, 249, 281, 530, 603
Ashab-ı Kehf 367, 368, 372, 374, 375, 376, 380
âşık 157
avam 136, 198, 206, 240, 264, 285, 288, 539, 546, 606, 618, 622
Avam 521
aynulyakîn 452

**B**

bal arısı 243, 274, 275
Bal arısı 274
balığın karnı 564, 565
bast 168, 192, 198, 201, 208, 226, 402, 496, 540, 593, 598, 605, 614, 615
Bast 586
bela 77, 85, 130, 139, 148, 149, 150, 164, 173, 179, 185, 186, 200, 205, 208, 256, 268, 284, 317, 318, 346, 354, 376, 386, 422, 428, 450, 469, 474, 476, 481, 489, 491, 503, 504, 512, 514, 532, 539, 540, 548, 551, 554, 598, 607
Bela 185, 187, 392, 476, 532
Beyt-i Atik 595, 598
bidat 194, 536, 590
bidatçi 178, 314, 440
Bilal 196

**C**

cedel 314
cehalet 16, 53, 154, 177, 261, 269, 272, 294, 295, 314, 330, 338, 355, 358, 365, 419, 430, 482, 485, 517
Cibrîl 619

**D**

Dünya ehli 172

**E**

el-muhaddesûn (kendileriyle konuşulanlar) 245
evtâd 251
Eyke 235
Eyyûb 557, 558, 559, 560, 561, 562, 627

**F**

fenâ 464, 505, 526, 579
feraset 234, 235
Feraset 234
fetih 186, 187, 244, 520
Fetih 186
fıkıh âlimi 265
fidye 157, 186, 400, 443
Firavun 58, 59, 180, 358, 470, 472, 473, 474, 478, 479, 480, 481, 483, 484, 485, 486, 488, 489, 490, 491, 500
fitne 131, 150, 412, 469, 495, 499, 520, 584, 611, 612
Furkan 214

**G**

gayb 36, 138, 148, 172, 203, 244, 262, 279, 371, 383, 393, 546, 594
Gayb 453
Geri kalanlar 220
güzel rızık 274, 278
Güzel rızık 54, 274, 611

**H**

hakkulyakîn 452
hanîf 597
Hanîf 302
Harun 432, 433, 443, 471, 479, 480, 488, 498, 499, 500, 546

havass 206, 240, 285, 339, 405, 603, 620
Havass 206, 622
hevâ 142, 156, 159, 282, 434
Hevâ 340, 497
hevâ gömleği 394
Hıristiyan 433, 435, 436, 587
Hızır 404, 405, 406, 407, 409, 410, 411, 412, 509
Hicr 211, 235, 460, 498, 591
hikmet 9, 43, 65, 79, 90, 121, 134, 135, 138
Hikmet 529
huzur nuru 217
Hz. Âdem 208, 221, 222, 397, 489, 510, 511, 512, 513, 514, 515
Hz. Cebrail 428, 474, 508, 512, 551, 568
Hz. Dâvûd 555, 556
Hz. Havvâ 514, 515
Hz. İbrahim 44, 45, 46, 47, 48, 177, 200, 201, 202, 204, 205, 227, 229, 230, 231, 235, 301, 303, 440, 441, 442, 547, 548, 550, 551, 552, 592, 593
Hz. İsa 429, 431, 433, 434, 435, 571
Hz. İsmail 47, 443, 444
Hz. Lût 44, 48, 49, 50, 231, 232, 233, 235, 553
Hz. Meryem 428, 429, 430, 431, 432, 433, 568
Hz. Mûsâ 58, 59, 65, 128, 180, 187, 212, 238, 308, 309, 358, 403, 404, 406, 407, 408, 409, 410, 411, 412, 443, 463, 464, 466, 467, 468, 469, 470, 471, 472, 473, 474, 476, 477, 478, 479, 480, 483, 485, 486, 487, 488, 490, 494, 495, 496, 497, 498, 499, 500, 501, 502, 509
Hz. Nûh 25, 28, 29, 30, 31, 32, 33, 34, 35, 36, 187, 310, 554, 591
Hz. Salih'in devesi 235
Hz. Şuayb 235, 410
Hz. Yûnus 564, 565
Hz. Yusuf 476, 560
Hz. Yûşa 403, 405

## İ

iblis 338
İblis 32, 221, 222, 223, 224, 225, 259, 338, 339, 397, 398, 510, 511, 513, 515, 560, 562
içtihat 342, 529
İçtihat 619
İlerleyenler 220
ilmulyakîn 452
imtihan 15, 41, 60, 84, 180, 181, 185, 265, 277, 287, 288, 318, 337, 476, 477, 495, 498, 501, 513, 516, 526, 540, 553, 556, 576, 586, 605, 612, 626
inam 181, 363, 422, 447, 485, 586, 592, 617
İnam 199, 338
inkâr 22, 25, 41, 43, 100, 129, 144, 146, 164, 165, 166, 167, 168, 178, 182, 183, 188, 214, 225, 248, 253, 254, 257, 261, 262, 271, 276, 277, 282, 283, 294, 296, 308, 311, 330, 332, 337, 350, 351, 353, 354, 355, 356, 357, 359, 386, 390, 395, 406, 417, 421, 428, 447, 448, 451, 453, 454, 470, 479, 495, 522, 526, 530, 541, 546, 570, 579, 583, 584, 587, 588, 607, 611, 621
İnkâr 147, 163, 168, 174, 175, 178, 185, 212, 256, 277, 284, 401, 416, 418, 588, 613, 614
irfan 140, 151, 158, 197, 198, 199, 217, 248, 254, 271, 373, 374, 418, 422, 452, 482, 485, 488, 539, 593, 598, 606, 614, 622, 626
İrfan 157, 588
irfan nuru 217, 482
irşad 258, 590
İsrail oğulları 47, 214, 309, 311, 438, 490, 491, 500
İsrail oğullarına 214, 309, 311, 358
İsrail oğullarını 358, 438, 481, 490, 559
İsrail oğullarının 481, 500, 501
istidrac 338, 391, 543, 600, 617

## K

Kâbe 200, 227, 591, 592, 593, 595
kabz 198, 208, 225, 516, 540, 586, 593, 615
kader 83, 162, 183, 244, 264, 265, 295, 348, 402, 437, 474, 491, 495, 510, 518, 534, 556, 623

Kader 215, 604, 619
kahinlik 240
Kalbin secdesi 153
kalple keşif 149
Kalplerin rızıkları 276
keşif 117, 149, 150, 327, 361, 369, 370, 375, 380, 562, 598, 605
Keşif 409
keşif hali 380
kitap ehlinin müminleri 168
kurbet ehli 616
kurtçuk 559
küfür 166, 174, 182, 193, 225, 254, 296, 350, 386, 411, 435, 491, 522, 528, 547, 567

## L

Ledün ilmi 405, 406
Levh-i Mahfuz 172, 396

## M

madum 616
mahv 225, 317, 369, 370, 437, 465, 494, 546, 577, 603, 615
Makam-ı Mahmûd 348, 349
manevî göz 155, 163
marifet ehli 173, 340, 366, 624
Marifet ehli 173, 342, 379
masumiyet 181, 198, 346, 543, 613
Masumiyet 281
Me'cûc 414, 415, 570
Medine 9, 73, 143, 177, 211, 237, 243, 307, 363, 459, 577
Medyen 52, 58, 235, 476, 477, 607
Mekke 9, 73, 143, 177, 200, 211, 237, 240, 243, 307, 363, 421, 459, 525, 577
Mescid-i Haram 307, 591
Mesih 335
Mîkâîl 619
mirac 308, 309
Mirac 308
muhabbet yeleği 394, 588
murakabe 149
musibet 96, 178, 208, 215, 276, 287, 288, 305, 335, 341, 402, 558, 559, 560, 561, 562, 563, 565, 566, 569, 599, 600
Musibet 559, 560, 562
musibetler 287, 335, 569
musibetlere 599, 600
mücahede 525, 526, 581, 625
Mücahede 625
mürid 14, 152, 160, 171, 181, 192, 198, 209, 212, 217, 220, 258, 265, 275, 281, 286, 287, 292, 296, 305, 308, 350, 407, 505, 506, 539, 582, 590
Mürid 160, 161
mürted 161
müşahede 21, 150, 155, 157, 158, 171, 172, 177, 181, 197, 217, 219, 225, 256, 258, 276, 286, 302, 306, 318, 327, 328, 343, 382, 421, 428, 484, 491, 526, 581, 582, 593
müşahede nuru 217
müşrik 166, 245, 497

## N

Nefislerin rızıkları 276
nefsanî arzular 157, 171
Nemrut 551
Neyneva 563

## P

put 154, 200, 201, 253, 269, 335, 399, 416, 454, 497, 502, 543, 549, 570, 571, 585, 596
Put 399, 584
putlar 200, 571
putlara 154, 200, 201, 204, 278, 399, 439, 497, 571, 596

## R

rububiyet 262, 445, 578
Ruhların rızıkları 276
rüşt 547, 611
Rüşt 325

## S-Ş

sadaka 125, 126, 186, 319, 322
sahv 577, 614, 615
sâlik 287, 307, 539
samediyet 387, 398, 622
Sâmirî 495, 496, 497, 499, 500, 501, 502
Semûd 42, 43, 58, 182, 235, 336, 607
Sıddîk 439, 444
Sırların rızıkları 276

sihir 240, 331, 485, 486, 487, 488, 522, 527
sihirbaz 240, 486, 487, 488, 489
Sihirbaz 487
Sûr 503, 504
Süleyman 554, 555, 556, 557, 627
sülûk 265
Sülûk 505
şahitlik secdesi 266
Şekûr 310
şevk giysisi 394
şirk 139, 153, 155, 182, 193, 206, 234, 248, 254, 289, 350, 351, 400, 496, 497, 523, 554, 588
Şirk 271, 588
şuhûd 17, 242, 349, 414, 446, 466, 470, 521, 614

## T

takdir 145, 155, 169, 171, 177, 178, 205, 210, 211, 225, 231, 244, 247, 264, 273, 277, 278, 289, 305, 310, 318, 323, 324, 333, 366, 370, 452, 476, 477, 495, 500, 501, 512, 513, 515, 516, 534, 535, 539, 546, 555, 556, 558, 569, 570, 572, 581, 582, 601, 610, 622
Takdir 30, 155, 244
takva 49, 90, 93, 142, 159, 168, 228, 394, 427, 446, 450, 455, 457, 514, 520, 521, 522, 546, 588, 597, 602
Takva 226, 447, 455, 578
Tarikat ehli 275
tarikatta döneklik 275
teheccüd namazı 348
teheccüd namazları 309
tekrîm 342
tevekkül 33, 54, 55, 72, 114, 164, 184, 185, 193, 202, 251, 264, 277, 293, 340
Tevekkül 184
tevhid ehli 40, 157, 171, 286, 296, 307, 360, 366, 374, 386, 456, 461, 587
Tevhid ehli 244, 249, 273, 594, 603
tevhid nuru 155, 217, 350
Tevrat 65, 214, 556, 574

## U

Uzeyir 335

## V

vecd yeleği 394
vehbî irfan sahipleri 373
velâyet 392
veli 173, 190, 208, 216, 219, 235, 251, 263, 274, 279, 318, 325, 326, 328, 345, 348, 373, 375, 376, 381, 405, 422, 504, 505, 509, 518, 539, 558, 579, 605, 611, 615, 616, 618
Veli 173, 252, 292, 347, 361, 366, 462, 566, 567, 611, 619
vesvese 153, 156, 193, 206, 222, 323, 340, 371, 454, 511, 512, 513, 516, 531, 536, 541, 561, 579, 598, 603, 605, 612
Vesvese 194
vilâyet 392
vird 160, 249
vuslat 17, 35, 124, 151, 152, 159, 181, 228, 242, 263, 273, 281, 287, 294, 309, 354, 355, 370, 374, 376, 378, 384, 390, 394, 418, 435, 460, 461, 466, 523, 526, 579, 587, 605, 606, 616
Vuslat 177, 388, 393

## Y

Yahya 424, 425, 427, 428, 567
yakîn nuru 546, 609
Yakîn nuru 217
Ye'cûc 414, 415, 570

## Z

zahid 157, 159, 170, 286, 603
Zebûr 75, 334, 556, 574
Zekeriyya 422, 423, 424, 425, 426, 427, 431, 438
zikir 163, 213, 251, 264, 327, 442, 502, 529, 531
Zikir 382, 574
zikir ehli 264
Zikir ehli 529
Zülkarneyn 412, 413, 414, 415
Zünnûn 563, 564, 565, 566

# Hadis İndeksi


- "Allah'ın bazı kapları vardır. Onlar kalplerdir." 157
- "Allah'ın dostları, o kimselerdir ki, Allah'ı zikretmek istedikleri zaman (...)" 21
- "Ben, beni zikredenle beraberim." 263
- "Ben nefsimi dünyadan uzaklaştırdım. Böylece taşıyla altını yanımda eşit oldu." 171
- "Dirhemin kulu helak olmuştur. Dinarın kulu helak olmuştur." 340
- "Eğer müminin korkusuyla ümidi tartılsa eşit çıkarlar." 198
- "Eğer zulüm cennette bir ev olsaydı, şüphesiz yıkıma uğratılırdı." 531
- "Ey Bilal! Bizi namazla rahatlat" 196
- "Ey kulum! Ben seni seviyorum. O halde üzerindeki hakkım sebebiyle sen de beni sev!" 180
- "İyilik, Allah'ı görüyormuşsun gibi O'na ibadet etmendir." 286
- "Kalpler, kendilerine iyilik yapanı sevmek üzere yaratılmıştır." 180
- "Kavmin efendisi, onlara hizmet edendir" 239
- "Kim hangi halde ise Allah'ın huzuruna o halde çıkar." 259
- "Kişinin Müslümanlığının güzelliğinden biri de kendisini ilgilendirmeyen şeyi terk etmesidir." 314
- "Kişi, sevdiğiyle beraberdir" 161
- "Kul, nafilelerle bana yaklaşmaya devam eder. Nihayet o beni sever, ben de onu severim." 457
- "Müminin ferasetinden sakının! Çünkü mümin, Allah'ın nuruyla bakar." 13
- "Müminin kalbi, Rahmân'ın parmaklarından iki parmak arasındadır." 227
- "Bu kimselerin cehenneme varışı esnasında ateşinin, sütün köpüğü gibi bir köpük tabakası vardır. Onlar oraya ateşi hissetmeden girerler. Onu geçtikleri zaman ise: 'Bize, yol üzerinde cehenneme gireceğimize dair söz verilmemiş miydi?' derler. Bunun üzerine onlara: 'Siz, hissetmeden geçtiniz' denir." 450
- "Sabreden fakirler, kıyamet günü Allah ile beraberdirler." 263
- "Seni her türlü kusurdan tenzih ederim. Hiçbir övgünü sayarak dile getiremem. Sen seni övdüğün gibisin." 333
- "Siz benden istemeden önce ben size verdim. Siz, benden mağfiret dilemeden önce ben sizi bağışladım." 343
- "Şüphesiz ben, Rabbinizin nefesini yemen tarafından hissediyorum." 609
- "Şüphesiz daha önceki ümmetler içinde Allah'ın konuşturduğu bazı kimseler vardı. Eğer ümmetimde böyle biri varsa o Ömer'dir." 587
- "Şüphesiz o, evine hizmet ederdi ve ailesinin hizmetindeydi." 239
- "Şüphesiz siz, yüksek derecelerin sahiplerini, tıpkı gökyüzü ufkunda parlayan yıldızı görür gibi, görürsünüz. Şüphesiz Ebubekir ve Ömer de onlardandır." 320
- "Yemin ederim ki, seninle bir kimsenin hidayete ermesi, senin için en değerli nimetlerden daha hayırlıdır." 258

ABDULKERİM
EL-KUŞEYRÎ

KUR'AN-I KERİM
TEFSİRİ

# LETÂİFU'L İŞÂRÂT

تفسير صوفي كامل للقرآن الكريم

ilkharf YAYINLARI

بسم الله الرحمن الرحيم

Abdulkerîm el-Kuşeyrî • Letâifu'l-İşârât **KUŞEYRÎ TEFSİRİ**

©İlk Harf Yayınevi, 2013
Kitabın tüm yayın hakları "İlk Harf Yayınevi"ne aittir.

❭ İlk Harf Yayınevi, 18
Tefsir Serisi, 1/4

❭ ISBN
978-605-5457-79-2 (cilt: 4)
978-605-5457-55-6 (takım)

❭ Editör
Ersan Güngör

❭ Tercüme
Prof. Dr. Mehmet Yalar

❭ Sayfa Düzeni
İrfan Güngörür

❭ Kapak Tasarımı
Sercan Arslan

❭ Basım Tarihi
1. Baskı, İstanbul, Şubat 2013

❭ Baskı / Cilt
Şenyıldız Yay. Matbaacılık Ltd. Şti.
Gümüşsuyu Cad. No: 3, K: 2 Topkapı/İstanbul
Tel: 0212 483 47 92 (Sertifika No: 11964)

❭ **İLK HARF YAYINEVİ**
www.ilkharf.com.tr • info@ilkharf.com.tr

❭ **Genel Dağıtım**
Çelik Yayınevi
(Sertifika No, 14710)
Ticarethane Sokak No: 19/A Cağaloğlu - Fatih / İstanbul
Tel: +90 212 511 28 11 - 513 73 19 • Fax: +90 212 511 28 12
www.celikyayinevi.com • info@celikyayinevi.com

Abdulkerîm el-Kuşeyrî

Letâifu'l-İşârât

# Kuşeyrî Tefsiri

## -4-

Tercüme
Prof. Dr. Mehmet Yalar

İlkharf Yayınları

# ÂYETLER FİHRİSTİ


| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| **MÜ'MİNÛN SÛRESİ (s. 9-50)** | |
| 1 | 9 |
| 2 | 9 |
| 3 | 10 |
| 4 | 10 |
| 5 | 11 |
| 6 | 11 |
| 7 | 11 |
| 8 | 11 |
| 9 | 12 |
| 10 | 12 |
| 11 | 12 |
| 12 | 12 |
| 13 | 13 |
| 14 | 13 |
| 15 | 15 |
| 16 | 16 |
| 17 | 16 |
| 18 | 17 |
| 19 | 18 |
| 20 | 18 |
| 21 | 19 |
| 22 | 19 |
| 23 | 20 |
| 24 | 22 |
| 25 | 22 |
| 26 | 22 |
| 27 | 23 |
| 28 | 23 |
| 29 | 23 |
| 30 | 23 |
| 31 | 24 |
| 32 | 24 |
| 33 | 25 |
| 34 | 25 |
| 35 | 25 |
| 36 | 25 |
| 37 | 25 |
| 38 | 25 |
| 39 | 26 |
| 40 | 26 |
| 41 | 26 |
| 42 | 26 |
| 43 | 26 |
| 44 | 26 |
| 45 | 27 |
| 46 | 27 |
| 47 | 27 |
| 48 | 27 |
| 49 | 27 |
| 50 | 27 |
| 51 | 28 |
| 52 | 28 |
| 53 | 28 |
| 54 | 29 |
| 55 | 29 |
| 56 | 29 |
| 57 | 29 |
| 58 | 30 |
| 59 | 30 |
| 60 | 31 |
| 61 | 31 |
| 62 | 31 |
| 63 | 32 |
| 64 | 33 |
| 65 | 33 |
| 66 | 34 |
| 67 | 34 |
| 68 | 34 |
| 69 | 34 |
| 70 | 35 |
| 71 | 35 |
| 72 | 35 |
| 73 | 36 |
| 74 | 36 |
| 75 | 36 |
| 76 | 37 |
| 77 | 37 |
| 78 | 37 |
| 79 | 38 |
| 80 | 38 |
| 81 | 39 |
| 82 | 39 |
| 83 | 39 |
| 84 | 40 |
| 85 | 40 |
| 86 | 40 |
| 87 | 40 |
| 88 | 40 |
| 89 | 40 |
| 90 | 41 |
| 91 | 42 |
| 92 | 42 |
| 93 | 43 |
| 94 | 43 |
| 95 | 43 |
| 96 | 43 |
| 97 | 44 |
| 98 | 44 |
| 99 | 45 |
| 100 | 45 |
| 101 | 45 |
| 102 | 45 |
| 103 | 46 |
| 104 | 46 |
| 105 | 46 |
| 106 | 46 |
| 107 | 46 |
| 108 | 47 |
| 109 | 48 |
| 110 | 48 |
| 111 | 48 |
| 112 | 48 |
| 113 | 48 |
| 114 | 48 |
| 115 | 48 |
| 116 | 49 |
| 117 | 49 |
| 118 | 50 |
| **NÛR SÛRESİ (s. 51-97)** | |
| 1 | 51 |
| 2 | 52 |
| 3 | 54 |
| 4 | 54 |
| 5 | 55 |
| 6 | 55 |
| 7 | 55 |
| 8 | 55 |
| 9 | 55 |
| 10 | 56 |
| 11 | 56 |
| 12 | 58 |
| 13 | 59 |
| 14 | 59 |
| 15 | 59 |
| 16 | 60 |
| 17 | 61 |
| 18 | 61 |
| 19 | 61 |
| 20 | 62 |
| 21 | 62 |
| 22 | 63 |
| 23 | 65 |
| 24 | 65 |
| 25 | 66 |
| 26 | 67 |
| 27 | 68 |
| 28 | 69 |
| 29 | 70 |
| 30 | 70 |
| 31 | 72 |
| 32 | 74 |
| 33 | 75 |
| 34 | 76 |
| 35 | 77 |
| 36 | 81 |
| 37 | 81 |
| 38 | 82 |
| 39 | 83 |
| 40 | 83 |
| 41 | 84 |
| 42 | 84 |
| 43 | 85 |
| 44 | 86 |
| 45 | 86 |
| 46 | 87 |
| 47 | 87 |
| 48 | 87 |
| 49 | 88 |
| 50 | 88 |
| 51 | 88 |
| 52 | 89 |
| 53 | 89 |
| 54 | 90 |
| 55 | 90 |
| 56 | 91 |
| 57 | 92 |
| 58 | 92 |
| 59 | 93 |
| 60 | 93 |
| 61 | 94 |
| 62 | 95 |
| 63 | 96 |
| 64 | 97 |
| **FURKÂN SÛRESİ (s. 99-137)** | |
| 1 | 100 |
| 2 | 100 |
| 3 | 101 |
| 4 | 101 |
| 5 | 101 |
| 6 | 101 |
| 7 | 102 |
| 8 | 102 |
| 9 | 102 |
| 10 | 102 |
| 11 | 104 |
| 12 | 104 |
| 13 | 105 |
| 14 | 105 |
| 15 | 105 |
| 16 | 105 |
| 17 | 106 |
| 18 | 106 |
| 19 | 106 |
| 20 | 107 |
| 21 | 108 |
| 22 | 108 |
| 23 | 109 |
| 24 | 110 |
| 25 | 110 |
| 26 | 110 |
| 27 | 111 |
| 28 | 111 |
| 29 | 111 |
| 30 | 112 |
| 31 | 112 |
| 32 | 113 |
| 33 | 113 |
| 34 | 114 |
| 35 | 114 |
| 36 | 114 |
| 37 | 115 |
| 38 | 115 |
| 39 | 115 |
| 40 | 116 |
| 41 | 116 |
| 42 | 117 |
| 43 | 117 |
| 44 | 117 |
| 45 | 118 |
| 46 | 118 |
| 47 | 119 |
| 48 | 120 |
| 49 | 121 |
| 50 | 121 |
| 51 | 121 |
| 52 | 122 |
| 53 | 122 |
| 54 | 123 |
| 55 | 124 |
| 56 | 124 |
| 57 | 124 |
| 58 | 125 |
| 59 | 128 |
| 60 | 129 |
| 61 | 129 |
| 62 | 130 |
| 63 | 131 |
| 64 | 131 |
| 65 | 132 |
| 66 | 132 |
| 67 | 132 |
| 68 | 133 |
| 69 | 134 |
| 70 | 134 |
| 71 | 135 |
| 72 | 135 |
| 73 | 135 |
| 74 | 135 |
| 75 | 136 |
| 76 | 137 |
| 77 | 137 |
| **ŞUARÂ SÛRESİ (s. 139-180)** | |
| 1 | 139 |
| 2 | 139 |
| 3 | 140 |
| 4 | 141 |
| 5 | 141 |
| 6 | 141 |
| 7 | 142 |
| 8 | 142 |
| 9 | 142 |
| 10 | 143 |
| 11 | 143 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 12 | 143 |
| 13 | 143 |
| 14 | 143 |
| 15 | 143 |
| 16 | 144 |
| 17 | 144 |
| 18 | 144 |
| 19 | 144 |
| 20 | 145 |
| 21 | 145 |
| 22 | 145 |
| 23 | 146 |
| 24 | 146 |
| 25 | 146 |
| 26 | 146 |
| 27 | 147 |
| 28 | 147 |
| 29 | 147 |
| 30 | 147 |
| 31 | 147 |
| 32 | 147 |
| 33 | 147 |
| 34 | 148 |
| 35 | 148 |
| 36 | 148 |
| 37 | 148 |
| 38 | 148 |
| 39 | 148 |
| 40 | 148 |
| 41 | 148 |
| 42 | 149 |
| 43 | 150 |
| 44 | 150 |
| 45 | 150 |
| 46 | 150 |
| 47 | 150 |
| 48 | 150 |
| 49 | 150 |
| 50 | 150 |
| 51 | 150 |
| 52 | 151 |
| 53 | 151 |
| 54 | 151 |
| 55 | 151 |
| 56 | 151 |
| 57 | 151 |
| 58 | 151 |
| 59 | 151 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 60 | 151 |
| 61 | 151 |
| 62 | 151 |
| 63 | 152 |
| 64 | 152 |
| 65 | 152 |
| 66 | 152 |
| 67 | 152 |
| 68 | 152 |
| 69 | 153 |
| 70 | 153 |
| 71 | 153 |
| 72 | 153 |
| 73 | 153 |
| 74 | 153 |
| 75 | 153 |
| 76 | 153 |
| 77 | 153 |
| 78 | 154 |
| 79 | 154 |
| 80 | 155 |
| 81 | 155 |
| 82 | 156 |
| 83 | 156 |
| 84 | 156 |
| 85 | 157 |
| 86 | 157 |
| 87 | 157 |
| 88 | 157 |
| 89 | 157 |
| 90 | 158 |
| 91 | 158 |
| 92 | 158 |
| 93 | 158 |
| 94 | 158 |
| 95 | 158 |
| 96 | 158 |
| 97 | 159 |
| 98 | 159 |
| 99 | 159 |
| 100 | 159 |
| 101 | 159 |
| 102 | 160 |
| 103 | 160 |
| 104 | 161 |
| 105 | 161 |
| 106 | 161 |
| 107 | 161 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 108 | 161 |
| 109 | 161 |
| 110 | 161 |
| 111 | 161 |
| 112 | 162 |
| 113 | 162 |
| 114 | 163 |
| 115 | 163 |
| 116 | 163 |
| 117 | 163 |
| 118 | 163 |
| 119 | 163 |
| 120 | 163 |
| 121 | 163 |
| 122 | 164 |
| 123 | 164 |
| 124 | 164 |
| 125 | 164 |
| 126 | 164 |
| 127 | 164 |
| 128 | 165 |
| 129 | 165 |
| 130 | 165 |
| 131 | 165 |
| 132 | 166 |
| 133 | 166 |
| 134 | 166 |
| 135 | 166 |
| 136 | 166 |
| 137 | 166 |
| 138 | 166 |
| 139 | 166 |
| 140 | 166 |
| 141 | 167 |
| 142 | 167 |
| 143 | 167 |
| 144 | 167 |
| 145 | 167 |
| 146 | 167 |
| 147 | 167 |
| 148 | 167 |
| 149 | 167 |
| 150 | 168 |
| 151 | 168 |
| 152 | 168 |
| 153 | 168 |
| 154 | 168 |
| 155 | 168 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 156 | 168 |
| 157 | 168 |
| 158 | 169 |
| 159 | 169 |
| 160 | 169 |
| 161 | 169 |
| 162 | 169 |
| 163 | 169 |
| 164 | 169 |
| 165 | 170 |
| 166 | 170 |
| 167 | 170 |
| 168 | 170 |
| 169 | 170 |
| 170 | 170 |
| 171 | 170 |
| 172 | 170 |
| 173 | 170 |
| 174 | 171 |
| 175 | 171 |
| 176 | 171 |
| 177 | 171 |
| 178 | 171 |
| 179 | 171 |
| 180 | 171 |
| 181 | 171 |
| 182 | 172 |
| 183 | 172 |
| 184 | 172 |
| 185 | 172 |
| 186 | 172 |
| 187 | 172 |
| 188 | 172 |
| 189 | 172 |
| 190 | 173 |
| 191 | 173 |
| 192 | 173 |
| 193 | 173 |
| 194 | 173 |
| 195 | 173 |
| 196 | 174 |
| 197 | 174 |
| 198 | 174 |
| 199 | 174 |
| 200 | 174 |
| 201 | 175 |
| 202 | 175 |
| 203 | 175 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 204 | 175 |
| 205 | 175 |
| 206 | 175 |
| 207 | 175 |
| 208 | 176 |
| 209 | 176 |
| 210 | 176 |
| 211 | 176 |
| 212 | 176 |
| 213 | 176 |
| 214 | 176 |
| 215 | 177 |
| 216 | 177 |
| 217 | 177 |
| 218 | 178 |
| 219 | 178 |
| 220 | 179 |
| 221 | 179 |
| 222 | 179 |
| 223 | 179 |
| 224 | 179 |
| 225 | 179 |
| 226 | 179 |
| 227 | 180 |
| **NEML SÛRESİ (s. 182-223)** | |
| 1 | 182 |
| 2 | 182 |
| 3 | 182 |
| 4 | 183 |
| 5 | 183 |
| 6 | 183 |
| 7 | 184 |
| 8 | 185 |
| 9 | 185 |
| 10 | 185 |
| 11 | 186 |
| 12 | 187 |
| 13 | 187 |
| 14 | 188 |
| 15 | 188 |
| 16 | 189 |
| 17 | 190 |
| 18 | 190 |
| 19 | 191 |
| 20 | 193 |
| 21 | 194 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 22 | 195 |
| 23 | 195 |
| 24 | 196 |
| 25 | 196 |
| 26 | 196 |
| 27 | 196 |
| 28 | 197 |
| 29 | 197 |
| 30 | 197 |
| 31 | 197 |
| 32 | 199 |
| 33 | 199 |
| 34 | 199 |
| 35 | 200 |
| 36 | 201 |
| 37 | 201 |
| 38 | 202 |
| 39 | 202 |
| 40 | 203 |
| 41 | 204 |
| 42 | 205 |
| 43 | 205 |
| 44 | 205 |
| 45 | 206 |
| 46 | 206 |
| 47 | 206 |
| 48 | 207 |
| 49 | 207 |
| 50 | 207 |
| 51 | 208 |
| 52 | 208 |
| 53 | 208 |
| 54 | 209 |
| 55 | 209 |
| 56 | 209 |
| 57 | 209 |
| 58 | 209 |
| 59 | 209 |
| 60 | 210 |
| 61 | 211 |
| 62 | 212 |
| 63 | 213 |
| 64 | 214 |
| 65 | 215 |
| 66 | 216 |
| 67 | 216 |
| 68 | 216 |
| 69 | 216 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 70 | 216 |
| 71 | 217 |
| 72 | 217 |
| 73 | 217 |
| 74 | 217 |
| 75 | 218 |
| 76 | 218 |
| 77 | 218 |
| 78 | 218 |
| 79 | 219 |
| 80 | 219 |
| 81 | 219 |
| 82 | 220 |
| 83 | 220 |
| 84 | 220 |
| 85 | 220 |
| 86 | 221 |
| 87 | 221 |
| 88 | 222 |
| 89 | 222 |
| 90 | 222 |
| 91 | 223 |
| 92 | 223 |
| 93 | 223 |
| **KASAS SÛRESİ** (s. 225-270) | |
| 1 | 225 |
| 2 | 225 |
| 3 | 226 |
| 4 | 226 |
| 5 | 227 |
| 6 | 227 |
| 7 | 227 |
| 8 | 228 |
| 9 | 229 |
| 10 | 229 |
| 11 | 229 |
| 12 | 230 |
| 13 | 230 |
| 14 | 230 |
| 15 | 231 |
| 16 | 232 |
| 17 | 232 |
| 18 | 232 |
| 19 | 232 |
| 20 | 234 |
| 21 | 234 |
| 22 | 234 |
| 23 | 235 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 24 | 236 |
| 25 | 237 |
| 26 | 239 |
| 27 | 239 |
| 28 | 239 |
| 29 | 241 |
| 30 | 241 |
| 31 | 243 |
| 32 | 245 |
| 33 | 245 |
| 34 | 245 |
| 35 | 245 |
| 36 | 246 |
| 37 | 246 |
| 38 | 246 |
| 39 | 247 |
| 40 | 247 |
| 41 | 247 |
| 42 | 248 |
| 43 | 248 |
| 44 | 248 |
| 45 | 250 |
| 46 | 250 |
| 47 | 251 |
| 48 | 251 |
| 49 | 252 |
| 50 | 252 |
| 51 | 252 |
| 52 | 253 |
| 53 | 253 |
| 54 | 253 |
| 55 | 253 |
| 56 | 254 |
| 57 | 255 |
| 58 | 255 |
| 59 | 256 |
| 60 | 256 |
| 61 | 257 |
| 62 | 257 |
| 63 | 257 |
| 64 | 257 |
| 65 | 258 |
| 66 | 258 |
| 67 | 258 |
| 68 | 258 |
| 69 | 259 |
| 70 | 260 |
| 71 | 260 |
| 72 | 261 |
| 73 | 261 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 74 | 262 |
| 75 | 262 |
| 76 | 263 |
| 77 | 265 |
| 78 | 266 |
| 79 | 266 |
| 80 | 267 |
| 81 | 267 |
| 82 | 267 |
| 83 | 268 |
| 84 | 268 |
| 85 | 269 |
| 86 | 269 |
| 87 | 270 |
| 88 | 270 |
| **ANKEBÛT SÛRESİ** (s. 271-301) | |
| 1 | 271 |
| 2 | 271 |
| 3 | 273 |
| 4 | 273 |
| 5 | 274 |
| 6 | 274 |
| 7 | 275 |
| 8 | 275 |
| 9 | 276 |
| 10 | 276 |
| 11 | 277 |
| 12 | 277 |
| 13 | 277 |
| 14 | 278 |
| 15 | 278 |
| 16 | 279 |
| 17 | 279 |
| 18 | 281 |
| 19 | 281 |
| 20 | 282 |
| 21 | 282 |
| 22 | 283 |
| 23 | 283 |
| 24 | 284 |
| 25 | 284 |
| 26 | 284 |
| 27 | 284 |
| 28 | 285 |
| 29 | 285 |
| 30 | 285 |
| 31 | 286 |
| 32 | 286 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 33 | 287 |
| 34 | 287 |
| 35 | 287 |
| 36 | 288 |
| 37 | 288 |
| 38 | 288 |
| 39 | 288 |
| 40 | 288 |
| 41 | 289 |
| 42 | 289 |
| 43 | 290 |
| 44 | 290 |
| 45 | 290 |
| 46 | 292 |
| 47 | 292 |
| 48 | 293 |
| 49 | 293 |
| 50 | 294 |
| 51 | 294 |
| 52 | 294 |
| 53 | 294 |
| 54 | 295 |
| 55 | 295 |
| 56 | 295 |
| 57 | 296 |
| 58 | 296 |
| 59 | 296 |
| 60 | 297 |
| 61 | 298 |
| 62 | 298 |
| 63 | 298 |
| 64 | 299 |
| 65 | 299 |
| 66 | 300 |
| 67 | 300 |
| 68 | 300 |
| 69 | 300 |
| **RÛM SÛRESİ** (s. 303-329) | |
| 1 | 304 |
| 2 | 304 |
| 3 | 304 |
| 4 | 304 |
| 5 | 304 |
| 6 | 305 |
| 7 | 306 |
| 8 | 306 |
| 9 | 307 |
| 10 | 307 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 11 | 307 |
| 12 | 308 |
| 13 | 308 |
| 14 | 308 |
| 15 | 308 |
| 16 | 309 |
| 17 | 309 |
| 18 | 309 |
| 19 | 310 |
| 20 | 310 |
| 21 | 311 |
| 22 | 311 |
| 23 | 312 |
| 24 | 312 |
| 25 | 313 |
| 26 | 313 |
| 27 | 313 |
| 28 | 314 |
| 29 | 314 |
| 30 | 315 |
| 31 | 316 |
| 32 | 316 |
| 33 | 317 |
| 34 | 317 |
| 35 | 318 |
| 36 | 318 |
| 37 | 318 |
| 38 | 319 |
| 39 | 320 |
| 40 | 320 |
| 41 | 322 |
| 42 | 322 |
| 43 | 323 |
| 44 | 323 |
| 45 | 323 |
| 46 | 324 |
| 47 | 324 |
| 48 | 325 |
| 49 | 325 |
| 50 | 326 |
| 51 | 326 |
| 52 | 327 |
| 53 | 327 |
| 54 | 327 |
| 55 | 328 |
| 56 | 328 |
| 57 | 328 |
| 58 | 329 |
| 59 | 329 |
| 60 | 329 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| **LOKMAN SÛRESİ** (s. 331-346) | |
| 1 | 331 |
| 2 | 331 |
| 3 | 332 |
| 4 | 332 |
| 5 | 333 |
| 6 | 333 |
| 7 | 333 |
| 8 | 334 |
| 9 | 334 |
| 10 | 334 |
| 11 | 335 |
| 12 | 335 |
| 13 | 337 |
| 14 | 337 |
| 15 | 338 |
| 16 | 338 |
| 17 | 339 |
| 18 | 339 |
| 19 | 340 |
| 20 | 340 |
| 21 | 341 |
| 22 | 342 |
| 23 | 342 |
| 24 | 342 |
| 25 | 342 |
| 26 | 342 |
| 27 | 343 |
| 28 | 343 |
| 29 | 344 |
| 30 | 344 |
| 31 | 344 |
| 32 | 345 |
| 33 | 346 |
| 34 | 346 |
| **SECDE SÛRESİ** (s. 347-362) | |
| 1 | 347 |
| 2 | 348 |
| 3 | 348 |
| 4 | 348 |
| 5 | 349 |
| 6 | 350 |
| 7 | 350 |
| 8 | 350 |
| 9 | 351 |
| 10 | 351 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 11 | 351 |
| 12 | 352 |
| 13 | 352 |
| 14 | 353 |
| 15 | 353 |
| 16 | 354 |
| 17 | 356 |
| 18 | 357 |
| 19 | 357 |
| 20 | 358 |
| 21 | 358 |
| 22 | 359 |
| 23 | 359 |
| 24 | 360 |
| 25 | 360 |
| 26 | 360 |
| 27 | 361 |
| 28 | 361 |
| 29 | 361 |
| 30 | 361 |
| **AHZÂB SÛRESİ (s. 363-401)** | |
| 1 | 363 |
| 2 | 364 |
| 3 | 364 |
| 4 | 365 |
| 5 | 366 |
| 6 | 367 |
| 7 | 367 |
| 8 | 368 |
| 9 | 369 |
| 10 | 370 |
| 11 | 370 |
| 12 | 370 |
| 13 | 371 |
| 14 | 371 |
| 15 | 371 |
| 16 | 372 |
| 17 | 372 |
| 18 | 373 |
| 19 | 373 |
| 20 | 374 |
| 21 | 374 |
| 22 | 375 |
| 23 | 375 |
| 24 | 375 |
| 25 | 376 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 26 | 377 |
| 27 | 377 |
| 28 | 377 |
| 29 | 377 |
| 30 | 378 |
| 31 | 378 |
| 32 | 378 |
| 33 | 379 |
| 34 | 379 |
| 35 | 380 |
| 36 | 382 |
| 37 | 382 |
| 38 | 384 |
| 39 | 384 |
| 40 | 385 |
| 41 | 385 |
| 42 | 385 |
| 43 | 386 |
| 44 | 387 |
| 45 | 387 |
| 46 | 387 |
| 47 | 388 |
| 48 | 388 |
| 49 | 388 |
| 50 | 389 |
| 51 | 390 |
| 52 | 390 |
| 53 | 391 |
| 54 | 393 |
| 55 | 393 |
| 56 | 393 |
| 57 | 394 |
| 58 | 394 |
| 59 | 395 |
| 60 | 395 |
| 61 | 395 |
| 62 | 395 |
| 63 | 396 |
| 64 | 396 |
| 65 | 396 |
| 66 | 396 |
| 67 | 397 |
| 68 | 397 |
| 69 | 397 |
| 70 | 398 |
| 71 | 398 |
| 72 | 399 |
| 73 | 401 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| **SEBE' SÛRESİ (s. 403-427)** | |
| 1 | 403 |
| 2 | 404 |
| 3 | 405 |
| 4 | 405 |
| 5 | 406 |
| 6 | 406 |
| 7 | 406 |
| 8 | 406 |
| 9 | 406 |
| 10 | 407 |
| 11 | 407 |
| 12 | 410 |
| 13 | 410 |
| 14 | 411 |
| 15 | 412 |
| 16 | 412 |
| 17 | 413 |
| 18 | 413 |
| 19 | 413 |
| 20 | 414 |
| 21 | 414 |
| 22 | 415 |
| 23 | 415 |
| 24 | 415 |
| 25 | 416 |
| 26 | 416 |
| 27 | 417 |
| 28 | 417 |
| 29 | 418 |
| 30 | 418 |
| 31 | 418 |
| 32 | 419 |
| 33 | 419 |
| 34 | 419 |
| 35 | 420 |
| 36 | 420 |
| 37 | 420 |
| 38 | 421 |
| 39 | 421 |
| 40 | 421 |
| 41 | 421 |
| 42 | 422 |
| 43 | 423 |
| 44 | 423 |
| 45 | 424 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 46 | 424 |
| 47 | 425 |
| 48 | 425 |
| 49 | 425 |
| 50 | 425 |
| 51 | 426 |
| 52 | 426 |
| 53 | 427 |
| 54 | 427 |
| **FÂTIR SÛRESİ (s. 429-459)** | |
| 1 | 429 |
| 2 | 431 |
| 3 | 431 |
| 4 | 432 |
| 5 | 433 |
| 6 | 433 |
| 7 | 434 |
| 8 | 435 |
| 9 | 436 |
| 10 | 437 |
| 11 | 439 |
| 12 | 439 |
| 13 | 440 |
| 14 | 441 |
| 15 | 441 |
| 16 | 443 |
| 17 | 443 |
| 18 | 444 |
| 19 | 445 |
| 20 | 445 |
| 21 | 445 |
| 22 | 445 |
| 23 | 445 |
| 24 | 445 |
| 25 | 446 |
| 26 | 446 |
| 27 | 446 |
| 28 | 447 |
| 29 | 448 |
| 30 | 448 |
| 31 | 449 |
| 32 | 449 |
| 33 | 453 |
| 34 | 453 |
| 35 | 454 |
| 36 | 454 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 37 | 455 |
| 38 | 455 |
| 39 | 456 |
| 40 | 456 |
| 41 | 457 |
| 42 | 457 |
| 43 | 458 |
| 44 | 458 |
| 45 | 459 |
| **YÂSİN SÛRESİ (s. 461-487)** | |
| 1 | 461 |
| 2 | 461 |
| 3 | 462 |
| 4 | 462 |
| 5 | 462 |
| 6 | 462 |
| 7 | 462 |
| 8 | 463 |
| 9 | 463 |
| 10 | 463 |
| 11 | 464 |
| 12 | 464 |
| 13 | 465 |
| 14 | 465 |
| 15 | 466 |
| 16 | 466 |
| 17 | 466 |
| 18 | 466 |
| 19 | 466 |
| 20 | 467 |
| 21 | 467 |
| 22 | 467 |
| 23 | 467 |
| 24 | 468 |
| 25 | 468 |
| 26 | 468 |
| 27 | 468 |
| 28 | 468 |
| 29 | 468 |
| 30 | 469 |
| 31 | 469 |
| 32 | 469 |
| 33 | 469 |
| 34 | 470 |
| 35 | 470 |
| 36 | 470 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 37 | 471 |
| 38 | 472 |
| 39 | 472 |
| 40 | 472 |
| 41 | 473 |
| 42 | 473 |
| 43 | 474 |
| 44 | 474 |
| 45 | 475 |
| 46 | 475 |
| 47 | 475 |
| 48 | 475 |
| 49 | 475 |
| 50 | 475 |
| 51 | 476 |
| 52 | 476 |
| 53 | 476 |
| 54 | 477 |
| 55 | 477 |
| 56 | 478 |
| 57 | 479 |
| 58 | 479 |
| 59 | 480 |
| 60 | 480 |
| 61 | 480 |
| 62 | 481 |
| 63 | 481 |
| 64 | 481 |
| 65 | 481 |
| 66 | 482 |
| 67 | 482 |
| 68 | 482 |
| 69 | 483 |
| 70 | 483 |
| 71 | 483 |
| 72 | 483 |
| 73 | 483 |
| 74 | 484 |
| 75 | 484 |
| 76 | 484 |
| 77 | 485 |
| 78 | 485 |
| 79 | 485 |
| 80 | 485 |
| 81 | 486 |
| 82 | 486 |
| 83 | 487 |

سورة الْمُؤْمِنُونَ

# MÜ’MİNÛN SÛRESİ

(Mü’minûn Sûresi 118 âyettir. Mekke döneminin sonlarında inmiştir. Müminlerin niteliklerinden söz edildiği için, sûre bu adı almıştır.)

بِسْمِ اللهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah’ın adıyla**

( اسم ) *“isim”* lafzı, ( سُمُوّ ) *“sumuvv -yükseklik, yücelik, ululuk-”* kökünden türemiştir. Bu isimle isimlendirilen Allah yücelik hakkına sahiptir. Bu itibarla ismin isim olması, kıdemden yüce olmasından ötürüdür. Hak da kıdem hakkıyla yüce olduğu için haktır.

Bir yoruma göre de kim “Bismillah”ı bilirse himmeti şekil ve görünüşleri aşar. Kim “Bismillah”ı severse hali, mevhum şeylerle yan yana olmaktan arınır.

Bu öyle bir isimdir ki, onu arayan, her iki dünyaya olan ihtiyacını da unutur. Onu tanıyan da kalbiyle sebebini bilmediği şeyler bulur.

قَدْ اَفْلَحَ الْمُؤْمِنُونَ ﴿١﴾ اَلَّذ۪ينَ هُمْ ف۪ي صَلَاتِهِمْ خَاشِعُونَ ﴿٢﴾

1, 2- “Mü’minler gerçekten kurtuluşa ermişlerdir. Onlar ki namazlarında derin saygı içindedirler.”

Allah’a iman eden kimse, amacına ulaşmış ve aradığını bulmuştur. “Felâh” sözcüğü arananı bulmak ve amaca ulaşmak demektir.

İman da hakkın sırda parlaması, tasdikin kalbin özüne işlemesi ve hakikat bilincinin yüreğin derinliğinde yer edinmesidir.

Namazda huşu, heybet sıfatının kemale ermesi, keşfin hükümranlığı altında erimek ve tecellinin galebe çalması esnasında mahviyet yaşamak suretiyle sırrın mahremiyet yaygısı üzerinde baş eğmesidir.

Bir yoruma göre de heybet sıfatı ve huzurun adabına riayet etmek suretiyle mahremiyet yaygısı üzerinde duran kimse Allah'a yakınlığın meyvelerini devşirmiş ve ünsiyetin kemaline ermiştir. Bu arada sevgiliyle buluşmaktan doğan ünsiyet ancak rakibin yok olmasıyla kemale erer. Rakiplerin en şiddetlisi ve yakınlık anlarını en çok sıkıntıya sokanı ise nefistir. Bu nedenle namaz kılanın nefsi beraberinde iken hiçbir rahatı olmaz. Nefsinden ve maddî dünyasından uzaklaştığı zaman nefsinin hastalıklarından etkilenme hissini yitirir, hayatı güzelleşir, nimetleri tamamlanır, kendisine müjdeler tecelli eder ve hayatın tadına varır.

وَالَّذِينَ هُمْ عَنِ اللَّغْوِ مُعْرِضُونَ ﴿٣﴾

3- "Onlar ki faydasız işlerden ve boş sözlerden yüz çevirirler."

Allah'tan alıkoyan şey yanıltıcıdır. Allah için olmayan şey gereksizdir. Allah'tan duyulmayan veya Allah ile beraber düşünülmeyen şey de boştur. Hak'tan gayrisi olan şey küfürdür. Bu türden bir şeyde karar kılmak ise uzaklık ve ayrılıktır.

Bir yoruma göre de yaratıkların Allah'ı yüceltip övmeye dair olmayan sözlerinin tamamı anlamsızdır.

وَالَّذِينَ هُمْ لِلزَّكٰوةِ فَاعِلُونَ ﴿٤﴾

4- "Onlar ki zekâtı öderler."

Zekât artış demektir. Ameli artış için olan kimsenin buna dair alameti, iç dünyasında maddi varlıklarıyla az ilgilenmesidir. Bu arada

kul, kulluk vasfının kemaline ancak maddî varlığından ilgisinin kesilmesiyle erişir.

وَالَّذِينَ هُمْ لِفُرُوجِهِمْ حَافِظُونَ ﴿٥﴾ اِلَّا عَلٰٓى اَزْوَاجِهِمْ اَوْ مَا مَلَكَتْ اَيْمَانُهُمْ فَاِنَّهُمْ غَيْرُ مَلُومِينَ ﴿٦﴾

5, 6- "Onlar ki ırzlarını korurlar. Ancak eşleri ve ellerinin altında bulunan cariyeleri bunun dışındadır. Onlarla ilişkilerinden dolayı kınanmazlar."

İffetlerini Allah'ın hakkını yerine getirecek bir nesil arayışı için korurlar. Bir yoruma göre bu, kişinin amacı iffetli kalmak ve günaha yol açan aykırılıklardan korunmak olduğu zaman böyledir.

فَمَنِ ابْتَغٰى وَرَآءَ ذٰلِكَ فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْعَادُونَ ﴿٧﴾

7- "Kim, bunun ötesine geçmek isterse, işte onlar haddi aşanlardır."

Yani kim hakları tercih etme amacını aşar ve nefsin arzularını yerine getirmeye meylederse şüphesiz o, büyüklerin bulunduğu noktayı aşmış ve tarikatlarına aykırı davranmış olur.

وَالَّذِينَ هُمْ لِاَمَانَاتِهِمْ وَعَهْدِهِمْ رَاعُونَ ﴿٨﴾

8- "Yine onlar ki emanetlerine ve verdikleri sözlere riâyet ederler."

Emanetler değişiktir ve herkesin yanında başka bir emanet vardır. Bu çerçevede bazılarının zahirî vazifeleri vardır, diğer bazılarının da sırlarında latifeleri vardır. Kimilerinin muameleleri, kimilerinin nefisle mücadeleleri, başka birilerinin de vuslatları vardır.

Aynı şekilde ahitleri de farklıdır. Buna göre; kimileri Allah'tan başkasına kulluk etmemeye söz verirken, bazıları da her iki dünyada O'ndan başka bir şey görmemeye söz vermiştir.

وَالَّذِينَ هُمْ عَلٰى صَلَوَاتِهِمْ يُحَافِظُونَ ﴿٩﴾

9- "Onlar ki, namazlarını kılmaya devam ederler."

Namaz vakitleri onları hazırlıksız yakalamaz. Ezan okunurken onlar hep kapıdadırlar. Böylece onlar zahirleriyle ilk safta oldukları gibi sırlarıyla da ilk saftadırlar.

اُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْوَارِثُونَ ﴿١٠﴾ اَلَّذِينَ يَرِثُونَ الْفِرْدَوْسَ هُمْ فِيهَا
خَالِدُونَ ﴿١١﴾

10, 11- "İşte bunlar, vâris olanların ta kendileridir. Onlar, Firdevs cennetlerine vâris olurlar. Onlar, orada ebedî kalacaklardır."

Vârislik nesebe göredir. Vâris sıfatıyla Firdevs'e hak kazanmak ise temeldeki iman bağı ve ibadetlerin faziletinden dolayıdır. Bir de nasıl ki miras hakkında pay miktarları farz ve asabe şeklinde değişik ise ibadetlerde de durum böyledir. Buna göre, onlardan bazıları nefisleriyle Firdevs'te, kalpleriyle de latif hallerdedirler. Sonra onlar hem nefisleriyle hem de kalpleriyle ölümsüzdürler. Nefislerinin meramını terk etmezler ve kalplerinin hallerinden kopmazlar.

وَلَقَدْ خَلَقْنَا الْاِنْسَانَ مِنْ سُلَالَةٍ مِنْ طِينٍ ﴿١٢﴾

12- "Andolsun biz insanı çamurdan süzülmüş bir özden yarattık."

Yaptıklarını beğenmesinler diye Allah onlara asıllarını tanıtmıştır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah neseplerini anlatmıştır ki, hadlerini aşmasınlar ve nefisleri konusunda hata yapmasınlar.

- Allah onları her taraftan getirilen bir çamurdan yaratmıştır. Buna göre; kimisinin çamuru bitek olmayan yerden, kimisinin çok

az bitek olan yerden, kimisinin çamuru da ova veya sarp olan yerdendir. Bu nedenle insanların huyları değişiktir.

- Allah, mazeretlerini herkese ayrıntılı olarak açıklamıştır. Çünkü mahlûk, çamurdan süzülmüş bir özdendir. O halde ondan ne beklenir?

- Allah onları çamurdan süzülmüş bir özden yarattığına göre değerleri topraklarıyla değil, terbiyeleri itibariyledir.

- Allah onları çamurun özünden yaratmış, ancak O'nun marifet kaynağı, sevgi çimenliği ve inayet alanı kendilerine verilmiştir. Allah şöyle buyurmuştur: (يُحِبُّهُمْ وَيُحِبُّونَهُ) *"Allah onları sever, onlar da O'nu severler."* (Mâide, 5/54)

- Allah onları yarattı sonra da halden hale taşıyarak dilediği değişikliklere uğrattı.

ثُمَّ جَعَلْنَاهُ نُطْفَةً فِي قَرَارٍ مَكِينٍ ﴿١٣﴾ ثُمَّ خَلَقْنَا النُّطْفَةَ عَلَقَةً
فَخَلَقْنَا الْعَلَقَةَ مُضْغَةً فَخَلَقْنَا الْمُضْغَةَ عِظَامًا فَكَسَوْنَا الْعِظَامَ
لَحْمًا ثُمَّ اَنْشَاْنَاهُ خَلْقًا اٰخَرَ فَتَبَارَكَ اللّٰهُ اَحْسَنُ الْخَالِقِينَ ﴿١٤﴾

13, 14- "Sonra onu az bir su halinde sağlam bir karargâha yerleştirdik. Sonra bu az suyu 'alaka' haline getirdik. Alakayı da 'mudga' yaptık. Bu 'mudga'yı da kemiklere dönüştürdük ve bu kemiklere de et giydirdik. Nihayet onu bambaşka bir yaratık olarak ortaya çıkardık. Yaratanların en güzeli olan Allah'ın şanı en yücedir."

O, parçaları benzer olan bir damladır. Sonra Allah, onun bazısını et, bazısını kemik, bazısını saç, bazısını tırnak, bazısını sinir, bazısını deri, bazısını beyin, bazısını da damar yapmıştır. Sonra her organa özel bir şekil, her bir parçaya belli bir tarz vermiştir. Sonra insanın sıfatlarını farklı farklı yaratmıştır. Bunlar işitme, görme, düşünme, öfkelenme, kudret, ilim, irade, cesaret, kin, cömertlik ve haddi hesabı olmayan daha başka vasıflardır.

( ثُمَّ اَنْشَاْنَاهُ خَلْقًا اٰخَرَ فَتَبَارَكَ اللّٰهُ اَحْسَنُ الْخَالِقِينَ ) *"Nihayet onu bambaşka bir yaratık olarak ortaya çıkardık. Yaratanların en güzeli olan Allah'ın şanı en yücedir."*

Tefsirlerde yer aldığına göre bu bambaşka yaratık yüzdür. Bu, insanda bir araya gelen hayat ve insana has kılınan işitme, görme, akıl, temyiz ve özellikle bazılarında bulunan aklın genel ilhamındaki meziyetler ile diğer anlama kabiliyetleridir.

Bir yoruma göre de: ( ثُمَّ اَنْشَاْنَاهُ خَلْقًا اٰخَرَ ) *"Nihayet onu bambaşka bir yaratık olarak ortaya çıkardık"*, sözü şu demektir: Allah insanları erginliklerinden sonra kendilerinde ortaya çıkardığı bazı değerli durumlar için hazırlamıştır. Bu çeşitli durumlar insan için tam temyiz gerçekleştikten sonra ortaya çıkar. Bu çerçevede kimilerinin özelliği kulluk süsü, kimilerinin beşer olmanın köleliğinden kurtuluş, kimilerinin de ilahi sıfatlarla hakikati idrak etmektir. Bu kimseler beşerî vasıflardan olan ve onlara damgasını vuran halleri hissetmekten arınmak suretiyle hakikati idrak ederler.

( فَتَبَارَكَ اللّٰهُ اَحْسَنُ الْخَالِقِينَ ) *"Yaratanların en güzeli olan Allah'ın şanı en yücedir."*

Allah göklerin ve yerlerin tamamını, arşı, Kürsî'yi, cenneti ve cehennemi diğer bütün yaratıklarla birlikte yaratmıştır. Sonra bu yaratıkları yarattığını bildirdiğinde arkasından insanları yarattığını bildirdikten sonra zikrettiği övünmeye yer vermemiştir. Bu, Allah'ın yaratıklar arasında insanlara, kendilerine has özellikler ve meziyetler vermiş olmasından dolayıdır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Şayet Allah insana bu ayette: "Sen, yaratıkların en güzelisin" dememişse, şüphesiz başka bir ayette şöyle buyurmuştur:

( لَقَدْ خَلَقْنَا الْاِنْسَانَ فِي اَحْسَنِ تَقْوِيمٍ ) *"Biz, gerçekten insanı en güzel bir biçimde yarattık."* (Tîn, 95/4)

- Şayet insan, dişi ve erkek yaratıkların en güzeli değilse ve Allah, onu bununla övmemişse, şüphesiz O: *"Yaratanların en güzeli olan*

*Allah'ın şanı en yücedir*" sözüyle kendi zatını övmüştür. Allah'ın bu sözle zâtını övmesi ve hakkında senada bulunması, insanı övmekten daha üstün ve daha yüce bir durumdur.

- Allah, insanın vasfını ve yaradılışının başlangıcındaki durumunun aşamalarını henüz kendisi şükredecek dile ve methedecek anlatma yeteneğine sahip değilken anlatınca, onun adına kendine senada bulunarak: "*Yaratanların en güzeli olan Allah'ın şanı en yücedir*" buyurmuştur.

ثُمَّ اِنَّكُمْ بَعْدَ ذٰلِكَ لَمَيِّتُونَ ﴿١٥﴾

15- "Sonra siz bunun ardından muhakkak öleceksiniz."

Şiir:

*Sonunda göreceklerin*
*Kabir, lahit ve topraktır*

Şiir:

*Borçtur bizde hayatımız*
*Ödeşiriz biz ölümden sonra*
*Ödemeliyiz biz borç ettiklerimizi*
*Her borçlu kabul etmekte bunu*

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah: (ثُمَّ اِنَّكُمْ بَعْدَ ذٰلِكَ لَمَيِّتُونَ) "*Sonra siz, bunun ardından muhakkak öleceksiniz*" sözüyle insana ölümünü haber vermiştir. Nitekim gelen her şey yakındır.

- Allah bu sözüyle gafletin gaflet ehli üzerindeki güçlü etkisini kırmış, otoritelerinin kılıcını köreltmiştir. Yani sizler öleceksiniz, cansız varlıklara benzeyeceksiniz. İmkân, kudret, güç ve kuvvetten uzaklaştırılacaksınız ve hiçbir önemi olmayan ölüler arasında sayılacaksınız.

ثُمَّ اِنَّكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ تُبْعَثُونَ ﴿١٦﴾

16- "Sonra yine muhakkak siz, kıyamet gününde diriltileceksiniz."

İşte o zaman hesap ve azap, sual ve itap yan yana gelerek kabul edilen reddedilenden, vuslata erdirilen de terk edilenden ayrılmış olur.

Bu arada kıyamet günü, Allah'ın âlemi kendisiyle korkuttuğu bir gündür. O kadar ki, eğer kıyamete: *"Kimden korkarsın?"* diye sorulsaydı o bile: *"kıyametten"* diyecekti. Bir de kıyamette insanları sarhoş, şaşkın, kendi hallerinden habersiz ve sonlarının hakikatte nereye varacağını bilemez görürsün. Bu durum her biri durumunu, hayrını ve şerrini anlayıncaya kadar devam eder. Sonuçta ya tartısı hayırlarla ağır gelir ya ibadetleri hafif gelir ya da amel defteri boş çıkar. Ölümle kıyamet arasındaki döneme gelince, bu da ya kesintisiz rahatlıklardan ya da aralıksız acıdan ve afetlerden ibarettir.

وَلَقَدْ خَلَقْنَا فَوْقَكُمْ سَبْعَ طَرَآئِقَ وَمَا كُنَّا عَنِ الْخَلْقِ غَافِلِينَ ﴿١٧﴾

17- "Andolsun biz sizin üzerinizde yedi yol yarattık. Biz, yarattıklarımızdan habersiz değiliz."

İdrak edilme özelliğine sahip hiçbir varlık, Allah'a (c.c.) saklı kalamaz ve yaratıklardan hiçbir gizli varlık, O'ndan gizlenemez. Perdeler sadece halkın gözleri ve basiretleri üzerinde olur. Nitekim Allah'ın âdeti, bizde perdelerin gerisindeki şeyleri idrak etme yeteneğini yaratmamak şeklinde cereyan etmektedir. Aynı şekilde kalplere gaflet girdiği zaman onlara zühul hakim olur, basiretleri kapanır ve kavrayışları ortadan kalkar.

Bu arada üzerimizde, görünen ve görünmeyen perdeler vardır. Görünürde gökler, bizimle yüksek makamların arasına giren engellerdir. Bir de kalplerin üzerinde arzu, şehvet, meşgul eden istekler ve yığılmış gafletler gibi perde ve örtüler vardır.

Müridlere gelince, onları durgunluk bulutları gölgelediği ve iradelerinin heyecanı dindiği zaman işte bu, karşılarına çıkan yollardandır.

Zahidlere gelince, onları arzu damarı harekete geçirince zühdlerinin gücü körelir ve sabırlarının dayanakları zayıflar. Bunun üzerine onlar, bazı tevillere yeltenmek suretiyle ruhsatların peşine düşerler. Böylece dünyalık arzuları azar azar geri dönerek sakınma mertebeleri zarar görür ve zühdlerinin temel dayanakları çöker. Bunun başlangıcı ise Allah'ın üzerlerinde yarattığı yollardandır.

Ariflere gelince, sırları hakikatlerin alanlarına yükselirken bazı vakitlerinde bir duraksama kendilerini gölgeleyebilmektedir. Böylece, Allah bu durumu üzerlerinden kaldırmak lütfunda bulununcaya kadar durdurulmuş olurlar. Allah'ın bu lütfu sayesinde bir çıkış yolu bulurlar ve kendilerini engelleyen yollar üzerlerinden kaldırılmış olur.

İşte bütün bu durumlarda Hak (c.c.), halktan gafil değildir ve kulları terk etmemektedir.

وَاَنْزَلْنَا مِنَ السَّمَٓاءِ مَٓاءً بِقَدَرٍ فَاَسْكَنَّاهُ فِي الْاَرْضِ وَاِنَّا عَلٰى
ذَهَابٍ بِهٖ لَقَادِرُونَ ﴿١٨﴾

18- "Biz gökten belli bir ölçüde su indirdik de onu yeryüzünde tuttuk. Bizim onu tamamen gidermeye de muhakkak gücümüz yeter."

Allah gökten yeryüzü tabakalarının hayat sebebi olan yağmur suyunu belli bir miktarda indirdi. Sonra ülkeler sulanmaları bakımından farklıdır: Bir kısmı verimli, bir kısmı da çoraktır. Bu su da bir yıl artar, bir yıl eksilir, bir yıl taşar ve bir yıl kurur.

Aynı şekilde biz, kalplere hayat vermesi için gökten rahmet suyunu indirdik. Kalpler de içmede farklıdırlar: Kimisinin o sudan rızkı geniş tutulmuş, kimisinin de rızkı dar ve kıt kılınmıştır. Vakitlerin de kimisi bolluk vakti, kimisi de kısma vaktidir.

Bir yoruma göre de bir su vardır ki, Allah onunla asilerin kirini, hatalarının izlerini ve tökezlemelerinin pisliklerini giderir. Bir su da vardır ki, kalpleri sular. Allah onunla şaşkınlıklarının susuzluğunu giderir, hallerinin ölü toprağına hayat verir ve böylece kalplerinin bahçelerinde türlü türlü bast ve huzur çiçekleri yeşerir. Diğer bir su da vardır ki, o sevgi şarabıdır. Allah, yakınlıkların sahalarında onu bazı kalplere has kılarak onunla bu kalplerden vasfın haşmetini giderir. Bazı kalpleri de bu suyla teskin ederek temyiz melekesini işlemez hale getirir ve ruhu feda etme cesaretinde bulunmaya sevk eder. Böylece bu kimseler içtikleri zaman coşarlar, coştukları zaman da neyi feda ettiklerini umursamazlar.

فَاَنْشَاْنَا لَكُمْ بِهٖ جَنَّاتٍ مِنْ نَخٖيلٍ وَاَعْنَابٍ لَكُمْ فٖيهَا فَوَاكِهُ كَثٖيرَةٌ وَمِنْهَا تَاْكُلُونَ ﴿١٩﴾

19- "Onunla sizin için hurma bahçeleri ve üzüm bağları meydana getirdik. Bu bağ ve bahçelerde sizin için pek çok meyveler vardır ve siz onlardan yiyorsunuz."

Nasıl ki gök suyuyla Allah susuzluğu giderip bahçelere hayat veriyor, bu bahçelerde çiçekleri çeşitlendiriyor ve ağaçlar meyveler verip nehirler akıyorsa aynı şekilde Allah, irfan suyuyla da kalpleri sulandırmakta ve bu kalpler, çiçek açtıktan sonra yapraklanıp meyve ve gıda vermektedir. Söz konusu meyve ve gıdadan maksat hayatın güzelliği, bastın mükemmelliği, sonra yeterli heybet, ünsiyetin huzuru, tecellinin sonuçları, yakınlığın faydaları ve ibarelerin, izahında yetersiz kaldığı, işaretlerin kuşatamadığı daha başka pek çok şeydir.

وَشَجَرَةً تَخْرُجُ مِنْ طُورِ سَيْنَاۤءَ تَنْبُتُ بِالدُّهْنِ وَصِبْغٍ لِلْاٰكِلٖينَ ﴿٢٠﴾

20- "Yine o su ile Sîna dağında biten bir ağaç yarattık ki hem yağ hem de yiyenlere katık verir."

وَاِنَّ لَكُمْ فِي الْاَنْعَامِ لَعِبْرَةً نُسْقِيكُمْ مِمَّا فِي بُطُونِهَا وَلَكُمْ فِيهَا مَنَافِعُ كَثِيرَةٌ وَمِنْهَا تَأْكُلُونَ ﴿٢١﴾

21- "Hayvanlarda sizin için elbette bir ibret vardır. Onların içlerindeki sütten size içiririz. Onlarda sizin için daha birçok faydalar da vardır ve onlardan yersiniz de."

Ayette anlatılan durumun işaret ettiği husus, geçici bulanıklıkların kayda değer olmadığı ve umursanmayacağıdır. Çünkü saf ve lezzetli süt, hayvanların memelerinden ve bağırsaklarının kapladığı ıssız bir yerden çıkmaktadır. Lakin süt katıksız olup iç organlar bir arada bulunmaktan dolayı onu etkilememiştir. Aynı şekilde safiyetin çoğu bulanıklığın kendisinden kaynaklanmaktadır. Çünkü hakikate ne hak ne de bâtıl taalluk eder. Bir de kim, tevhidin sırrına muttali olursa, bütün varlıkların ortaya çıkışının, ilahi takdirin eseri olduğuna kesin bir şekilde inanmış olur ve böylece temyiz külfetinden kurtulur. Bu nedenle sırlar o esnada safiyet kazanır ve vakit sahibine cefa etmez.

(وَلَكُمْ فِيهَا مَنَافِعُ كَثِيرَةٌ) *"Onlarda sizin için daha bir çok faydalar da vardır."*

Bunlar, hem size mahsus olan hem de sizinle irtibatlı her şeye ulaşan faydalardır.

Şiir:

*Cefalarına rağmen ben onun Rabbine*
*Ve onunla ilgili her şeye tevessül ederim*

وَعَلَيْهَا وَعَلَى الْفُلْكِ تُحْمَلُونَ ﴿٢٢﴾

22- "Onların üzerinde ve gemilerde taşınırsınız."

Allah, onları damlanın denizlerinde malum gemide, kudret denizlerinde ise esenlik ve masumiyet gemisinde korur. Bir de kudret

denizlerinin dalgaları çarpışmakta ve Allah'ın (c.c.), inayet gemisinde korudukları hariç insanlar onlarda boğulmaktadırlar.

Bu arada gemide olanların şiddetli boğulma korkusuna kapıldıkları zamanki durumları Allah'ın şu ayette belirttiği gibidir:

( فَاِذَا رَكِبُوا فِي الْفُلْكِ دَعَوُا اللّٰهَ مُخْلِصِينَ لَهُ الدِّينَ ) *"Gemiye bindikleri zaman, dini Allah'a has kılarak O'na dua ederler."* (Ankebût, 29/65)

Aynı şekilde kim nefsinin helak ve boğulmak üzere olduğunu görür de içten ve devamlı yardım dilemeye sığınırsa o zaman Hak (c.c.), onu takdirin etkilerinden korur.

Bir yoruma göre de yeryüzü, gaflet denizleridir. İnsanların yaşadıkları tefrika sebepleri de helak edici denizler olup insanlar onlarda boğulmuş vaziyettedirler.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Derin bir denizdir insanlar*
*Onlara uzak durmaksa bir gemi*
*Nasihat ettim sana, bak o halde*
*Miskin nefsine!*

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا نُوحًا اِلٰى قَوْمِهٖ فَقَالَ يَا قَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَكُمْ مِنْ
اِلٰهٍ غَيْرُهُ اَفَلَا تَتَّقُونَ ﴿٢٣﴾

23- "Andolsun, biz Nûh'u kendi kavmine peygamber olarak gönderdik de: 'Ey kavmim! Allah'a kulluk edin. Sizin O'ndan başka hiçbir ilahınız yoktur. Allah'a karşı gelmekten hâlâ sakınmaz mısınız?' dedi."

Allah, Hz. Nûh'un kıssasını tekrarlamıştır. Çünkü onda kavminin arasında uzun süre kalışı, onlardan gelen şiddetli sıkıntılara göğüs germesi, uzun hayatı boyunca karşılaştığı zorluklara sabretmesi, sonra Allah'ın, küfründe ısrar edenlerin hepsini helak etmesi gibi büyük alametler vardır. Sonra Allah, kavminden hiç kimseyi bırakmamış ve hepsini helak etmeyi umursamamıştır.

Bu arada kıssalarında anlatıldığına göre; onları tufan yakaladığı zaman kavminden bir erkek çocuğu sahibi bir kadın, çocuğunu havaya kaldırarak tufan seviyesinin üstünde tuttu. Tufan elinin seviyesine çıkınca, helak olmasından korktuğu için çocuğunu kurtarmak amacıyla gücü yettiğince onu başının üstüne yükseltti. Nihayet su ona galip geldi ve kadın çocuğuyla birlikte telef oldu. Bunun üzerine Allah şunu vahyetti:

*"Eğer onlardan bir kişiye merhamet etseydim, o kadına ve çocuğuna merhamet ederdim."*

Bir rivayete göre Hz. Nûh'un adı Yeşkur idi. Ancak çok fazla ağlamasından dolayı Allah kendisine: *"Ey Nûh! Ne zamana kadar feryat edip duracaksın?"* diye vahiy indirerek kendisine Nûh adını verdi.

Bir yoruma göre de Hz. Nûh'un günahı, bir gün bir köpeğin yanından geçerken: *"Bu, ne kadar ürkütücü!"* demesidir. Bunun üzerine Allah ona: *"Sen bundan daha güzelini yarat"* diye vahiy indirdi. Bu olayın ardından Hz. Nûh, o sözünden dolayı hep özür dileyerek ağlıyor, kavmi ise ona deli gözüyle bakıyordu. Onları daha fazla davet ettikçe onlar, davetini kabul etmekten daha da uzaklaşıyorlardı. Onlar hakkında temiz kalpli davrandıkça uzun zaman boyunca katılıkları artarak katmerleşiyordu.

Hz. Nûh gemiyi yapınca tufan belirdi ve aile fertlerini gemiye koydu. Kıssada yer aldığına göre; bu sırada İblis kendisine görünerek: *"Beni de beraberinde gemiye bindir"* dedi. Hz. Nûh bunu kabul etmedi ve şöyle dedi:

*"Ey şaki! Sen, kâfirlerin başı olduğun halde seni gemiye almamı umuyorsan ha!"*

İblis dedi ki:

*"Ey Nûh! Bilmiyor musun ki Allah, kıyamet gününe kadar bana mühlet verdi? Oysa hiç kimse bu gemiden başka bir yerde kurtulamaz."*

Bunun üzerine Allah Hz. Nûh'a: *"Onu gemiye al!"* diye vahiy gönderdi. Bu nedenle İblis, gemide Hz. Nûh ile beraberdi. Oysa oğlunun

gemide onunla beraber yeri yoktu. İşte bu olayda tevhidin özü ve Allah'tan gelen hükmün illete dayalı olmadığı ortaya çıkmaktadır. Çünkü eğer bunun anlamı, oğlunun onun yanında olmamasının nedeninin kâfir oluşu şeklinde olursa bu, İblis'in durumuyla problem teşkil eder. Ancak doğrusu, bu gibi durumların gerekçeye dayanmayan hükümler olduğu ve Allah'ın dilediğini yapabileceğidir. Dilediğini vuslata erdirir, dilediğini de geri çevirir.

فَقَالَ الْمَلَؤُا الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ قَوْمِهِ مَا هٰذَٓا اِلَّا بَشَرٌ مِثْلُكُمْ يُرِيدُ اَنْ يَتَفَضَّلَ عَلَيْكُمْ وَلَوْ شَٓاءَ اللّٰهُ لَاَنْزَلَ مَلٰٓئِكَةً مَا سَمِعْنَا بِهٰذَا فٖٓي اٰبَٓائِنَا الْاَوَّلٖينَ ﴿٢٤﴾

24- "Bunun üzerine kendi kavminden ileri gelenler şöyle dediler: 'Bu, ancak sizin gibi bir beşerdir, size üstünlük taslamak istiyor. Eğer Allah dileseydi, bir melek gönderirdi. Biz, önceki atalarımızdan böyle bir şey duymadık.'"

اِنْ هُوَ اِلَّا رَجُلٌ بِهٖ جِنَّةٌ فَتَرَبَّصُوا بِهٖ حَتّٰى حٖينٍ ﴿٢٥﴾

25- "Bu, ancak cinnet geçirmiş bir adamdır. Öyle ise bir müddet onu gözetleyiniz."

قَالَ رَبِّ انْصُرْنٖي بِمَا كَذَّبُونِ ﴿٢٦﴾

26- "Nûh: 'Rabbim! Beni yalanlamalarına karşı bana yardım et!' dedi."

فَاَوْحَيْنَٓا اِلَيْهِ اَنِ اصْنَعِ الْفُلْكَ بِاَعْيُنِنَا وَوَحْيِنَا فَاِذَا جَٓاءَ اَمْرُنَا وَفَارَ التَّنُّورُ فَاسْلُكْ فٖيهَا مِنْ كُلٍّ زَوْجَيْنِ اثْنَيْنِ وَاَهْلَكَ اِلَّا مَنْ سَبَقَ عَلَيْهِ الْقَوْلُ مِنْهُمْ وَلَا تُخَاطِبْنٖي فِي الَّذٖينَ ظَلَمُوا اِنَّهُمْ مُغْرَقُونَ ﴿٢٧﴾

27- "Bunun üzerine Nûh'a: 'Bizim gözetimimiz altında ve vahyimize göre o gemiyi yap' diye vahyettik. Bizim emrimiz gelip de tandır kaynamaya başlayınca dedik ki: "Her cins canlıdan birer çift, bir de kendileri aleyhinde daha önce hüküm verilmiş olanlardan başka aileni gemiye al ve zulmeden kimseler hakkında bana hiç yalvarma! Şüphesiz onlar suda boğulacaklardır."

فَاِذَا اسْتَوَيْتَ اَنْتَ وَمَنْ مَعَكَ عَلَى الْفُلْكِ فَقُلِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِي نَجّٰينَا مِنَ الْقَوْمِ الظَّالِمِينَ ﴿٢٨﴾

28- "Sen ve beraberindeki kimseler gemiye bindiğiniz zaman: 'Bizi zalim kavmin elinden kurtaran Allah'a hamd olsun' de."

وَقُلْ رَبِّ اَنْزِلْنِي مُنْزَلًا مُبَارَكًا وَاَنْتَ خَيْرُ الْمُنْزِلِينَ ﴿٢٩﴾

29- "Yine de ki: 'Ey Rabbim! Beni bereketli bir yere kondur! Sen, konuk edenlerin hayırlısısın.'"

Bereketli kondurma, Allah ile Allah için, Allah'tan gafil olunmaksızın ve Allah'ın emrine muhalefet etmeksizin Allah'ı müşahede üzere olmasıdır.

Bir yoruma göre de mübarek kondurma, vasfın şuhûduyla kendinden geçmen sonra yakınlık sultanının sana hakim oluşuyla gark olman sonra hiçbir cevher ve eser kalmayacak derecede tecelli nurlarının kuşatmasıyla yok olmandır. İşte bu tam olarak gerçekleşip şu da devam ettiği zaman o, hakikat sahalarına mübarek bir konuş olur. Çünkü artık sen senden hiçbir kalıntı ve eser kalmaksızın bütün benliğinle sensizsin.

اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ وَاِنْ كُنَّا لَمُبْتَلِينَ ﴿٣٠﴾

30- "Şüphesiz bu olayda ibretler vardır. Biz gerçekten kullarımızı imtihan ederiz."

ثُمَّ اَنْشَاْنَا مِنْ بَعْدِهِمْ قَرْنًا اٰخَرٖينَ ﴿٣١﴾

31- "Sonra onların ardından başka bir nesil yarattık."

Yalanlamada nesiller tek yol üzerine birbirlerini izlemişlerdir. Onları yanıltan husus ise mühletin uzunluğu ve Allah'ın kendilerine sunduğu refahlı hayat ile rahata kavuşma imkanıdır. Nitekim onlar hep kendilerini ölçü kabul etmişler ve gözleri, hal ve mertebe bakımından onların üstünde olanlara doğru kalkıp bakmamıştır.

Bu nedenle dediler ki:

*"Biz, çarşı pazarda dolaşan ve bizim gibi çeşitli imkanlardan yararlanan kimseye mi inanacağız? Eğer biz, bizim gibi bir beşere itaat etseydik bizi sapıklık yolunda yürütürdü ve biz, doğru yoldan sapmış olurduk."*

Bunun üzerine Allah, değersizlikte ve başlarına azap indirmede onları aynı muameleye tabi tutmuş ve kendilerine utanç azabını tattırmıştır. Bu arada içlerini tırmalayan en büyük şüphe ve akla uzaklık konusu, haşir ve neşir meselesidir. Onlar mümkün olması ve muhal olmaması bakımından yeniden yaratmanın tıpkı baştaki yaratma gibi olduğuna dair bilgi seviyesine yükselememişlerdir. Aslında Allah, dilediğini hidayete erdirir, dilediğini de saptırır.

Sonra Allah, bu surede önce Hz. Mûsâ'nın, ondan sonra da Hz. İsa'nın kıssasını zikrederek peygamberlerden her birine göz kamaştıran ayetlerini ve apaçık mucizelerini has kılmıştır.

فَاَرْسَلْنَا فٖيهِمْ رَسُولًا مِنْهُمْ اَنِ اعْبُدُوا اللّٰهَ مَا لَكُمْ مِنْ اِلٰهٍ غَيْرُهُ
اَفَلَا تَتَّقُونَ ﴿٣٢﴾

32- "Onlara, kendilerinden: 'Allah'a kulluk edin, sizin ondan başka hiçbir ilahınız yoktur. Hâlâ O'na karşı gelmekten sakınmaz mısınız?' diye öğüt veren bir peygamber gönderdik."

وَقَالَ الْمَلَاُ مِنْ قَوْمِهِ الَّذٖينَ كَفَرُوا وَكَذَّبُوا بِلِقَاۤءِ الْاٰخِرَةِ وَاَتْرَفْنَاهُمْ
فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا مَا هٰذَاۤ اِلَّا بَشَرٌ مِثْلُكُمْ يَاْكُلُ مِمَّا تَاْكُلُونَ مِنْهُ
وَيَشْرَبُ مِمَّا تَشْرَبُونَ ﴿٣٣﴾

33- "O peygamberin kavminden Allah'ı inkâr eden, peygamberi yalanlayan ve bizim dünya hayatında kendilerine bol bol nimet verdiğimiz ileri gelenler şöyle dediler: 'O da ancak sizin gibi bir insandır. Sizin yediğiniz şeylerden yiyor, içtiğiniz şeylerden içiyor.'"

وَلَئِنْ اَطَعْتُمْ بَشَرًا مِثْلَكُمْ اِنَّكُمْ اِذًا لَخَاسِرُونَ ﴿٣٤﴾

34- "Andolsun, kendiniz gibi bir beşere itaat ederseniz mutlaka ziyana uğrarsınız."

اَيَعِدُكُمْ اَنَّكُمْ اِذَا مِتُّمْ وَكُنْتُمْ تُرَابًا وَعِظَامًا اَنَّكُمْ مُخْرَجُونَ ﴿٣٥﴾

35- "O, öldüğünüz, toprak ve kemik haline geldiğiniz zaman sizin tekrar mutlaka çıkarılacağınızı mı vaat ediyor?"

هَيْهَاتَ هَيْهَاتَ لِمَا تُوعَدُونَ ﴿٣٦﴾

36- "Halbuki bu size vaat olunan şey, ne kadar da uzak!"

اِنْ هِيَ اِلَّا حَيَاتُنَا الدُّنْيَا نَمُوتُ وَنَحْيَا وَمَا نَحْنُ بِمَبْعُوثٖينَ ﴿٣٧﴾

37- "Hayat, bu dünya hayatından ibarettir. Ölürüz ve yaşarız. Biz, tekrar diriltilecek değiliz."

اِنْ هُوَ اِلَّا رَجُلٌ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا وَمَا نَحْنُ لَهُ بِمُؤْمِنٖينَ ﴿٣٨﴾

38- "'Bu, Allah'a karşı yalan uyduran bir kimseden başkası değildir' dedi."

قَالَ رَبِّ انْصُرْنِي بِمَا كَذَّبُونِ ﴿٣٩﴾

39- "O peygamber, 'Ey Rabbim! Yalanlamalarına karşı bana yardım et' dedi."

قَالَ عَمَّا قَلِيلٍ لَيُصْبِحُنَّ نَادِمِينَ ﴿٤٠﴾

40- "Allah dedi ki: 'Yakın zamanda mutlaka pişman olacaklardır!'"

فَاَخَذَتْهُمُ الصَّيْحَةُ بِالْحَقِّ فَجَعَلْنَاهُمْ غُثَاءً فَبُعْدًا لِلْقَوْمِ الظَّالِمِينَ ﴿٤١﴾

41- "Derken onları o korkunç ses, kaçınılmaz olarak kıskıvrak yakalayıverdi de kendilerini çerçöp yığını haline getirdik. Zalimler topluluğu, Allah'ın rahmetinden uzak olsun!"

ثُمَّ اَنْشَاْنَا مِنْ بَعْدِهِمْ قُرُونًا اٰخَرِينَ ﴿٤٢﴾

42- "Sonra bunların arkalarından başka nesiller yarattık."

مَا تَسْبِقُ مِنْ اُمَّةٍ اَجَلَهَا وَمَا يَسْتَاْخِرُونَ ﴿٤٣﴾

43- "Hiçbir ümmet, kendi ecelinin önüne geçemez, onu geciktiremez de."

ثُمَّ اَرْسَلْنَا رُسُلَنَا تَتْرَا كُلَّمَا جَاءَ اُمَّةً رَسُولُهَا كَذَّبُوهُ فَاَتْبَعْنَا بَعْضَهُمْ بَعْضًا وَجَعَلْنَاهُمْ اَحَادِيثَ فَبُعْدًا لِقَوْمٍ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿٤٤﴾

44- "Sonra arka arkaya peygamberlerimizi gönderdik. Her ümmete kendi peygamberi geldikçe onu yalanladılar. Biz de onları birbiri ardından helak ettik ve onları birer ibretli hikaye yaptık. Artık inanmayan bir kavim, Allah'ın rahmetinden uzak olsun!"

ثُمَّ اَرْسَلْنَا مُوسٰى وَاَخَاهُ هٰرُونَ بِاٰيَاتِنَا وَسُلْطَانٍ مُبِينٍ ﴿٤٥﴾
اِلٰى فِرْعَوْنَ وَمَلَائِه۪ فَاسْتَكْبَرُوا وَكَانُوا قَوْمًا عَالِينَ ﴿٤٦﴾

45, 46- "Sonra Mûsâ ve kardeşi Hârûn'u mucizelerimizle ve apaçık bir delille Firavun ve ileri gelenlerine peygamber olarak gönderdik de onlar büyüklük tasladılar ve kendilerini büyük görüp böbürlenen bir topluluk oldular."

فَقَالُٓوا اَنُؤْمِنُ لِبَشَرَيْنِ مِثْلِنَا وَقَوْمُهُمَا لَنَا عَابِدُونَ ﴿٤٧﴾

47- "Bu yüzden: 'Kavimleri bize kul köle iken bizim gibi iki insana mı inanacağız' dediler."

فَكَذَّبُوهُمَا فَكَانُوا مِنَ الْمُهْلَكِينَ ﴿٤٨﴾

48- "Böylece ikisini de yalanladılar, bu yüzden de helak edilenlerden oldular."

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوسَى الْكِتَابَ لَعَلَّهُمْ يَهْتَدُونَ ﴿٤٩﴾

49- "Andolsun, hidayete ersinler diye Mûsâ'ya Kitab'ı verdik."

وَجَعَلْنَا ابْنَ مَرْيَمَ وَاُمَّهُٓ اٰيَةً وَاٰوَيْنَاهُمَٓا اِلٰى رَبْوَةٍ ذَاتِ قَرَارٍ
وَمَع۪ينٍ ﴿٥٠﴾

50- "Meryem oğlu İsa'yı ve annesini büyük bir mucize kıldık ve her ikisini de oturmaya elverişli, akarsulu yüksek bir yere yerleştirdik."

يَٓا اَيُّهَا الرُّسُلُ كُلُوا مِنَ الطَّيِّبَاتِ وَاعْمَلُوا صَالِحًا اِنّ۪ي بِمَا
تَعْمَلُونَ عَل۪يمٌ ﴿٥١﴾

51- "Ey peygamberler! Temiz şeylerden yiyiniz ve iyi ameller işleyiniz. Doğrusu ben, sizin yaptığınız şeyleri tamamen bilirim."

Allah'ın size helal ve mubah kıldığı temiz şeylerden yiyin. Bir de onların zamanında dinlerinin verdiği ruhsata uygun olması şartıyla helal olup hakkında temiz olduğu hükmü verilen ve yemelerine mutlak izin verilen yiyeceklerden yiyin. Bu arada onların salih amelleri de aynı şekilde onların zamanında Allah'ın emrine uygun olan fiilleri, inançları ve hallerindeki çeşitli taatlarıdır.

وَاِنَّ هٰذِهٖٓ اُمَّتُكُمْ اُمَّةً وَاحِدَةً وَاَنَا رَبُّكُمْ فَاتَّقُونِ ٥٢

52- "Şüphesiz bu, tek bir din olarak sizin dininizdir. Ben de Rabbinizim. Öyle ise bana karşı gelmekten sakının."

Mabudunuz bir, peygamberiniz bir ve dininiz birdir. Bu itibarla sizler esasta eşitsiniz. O halde yolların eğrilerini izlemeyiniz! Yoksa sapıklık vadilerinde helak olursunuz. Bir de seleflerinize uyunuz ve haleflerinizin bidatçiliklerine uymaktan sakınınız.

( وَاَنَا رَبُّكُمْ فَاتَّقُونِ ) *"Ben de Rabbinizim. Öyle ise bana karşı gelmekten sakının."*

Emrime muhalefet etmekten korkunuz, yüce kadrimi biliniz, takdirin gerçekleşmesinde sırrımı koruyunuz ve kalbinizle devamlı beni anınız. Böylece geleceğinizde affımı bulur ve güzel iyiliğimden yararlanırsınız.

فَتَقَطَّعُوٓا اَمْرَهُمْ بَيْنَهُمْ زُبُرًا كُلُّ حِزْبٍ بِمَا لَدَيْهِمْ فَرِحُونَ ٥٣

53- "İşlerini kendi aralarında parça parça ettiler. Her grup kendinde bulunan ile sevinmektedir."

Kimisi, hakkı üzere dosdoğru, kimisi sapıklığı içerisinde şaşkın, kimisi isyan ve yoldan çıkmışlığında ısrarcı, kimisi iyiliği ve dürüstlüğünde devamlıdır. Her biri, kendi sınırına bağlı bulunmakta ve başlangıçta payına ayrılan durumla yetinmektedir. Her biri, kendi

yolunu izlemekte ve yolunun güzelliğiyle bir hakikat iddia etmektedir. Nitekim tevhid erbabının kalplerinin göğü açık olduğu zaman yolda hiçbir toz duman bulunmaz. Bir de onlar kesin bilgiye sahip oldukları için içlerine hiçbir kuşku ve şüphe düşmez.

Bâtıl ehli ise cehaletlerinin körlüğü, inkarlarının tozu dumanı, taklitlerinin karanlığı ve şüphelerinin sıkıntısı içerisindedirler.

فَذَرْهُمْ فِي غَمْرَتِهِمْ حَتّٰى حٖينٍ ﴿٥٤﴾

54- "Ey Muhammed! Sen onları bir zamana kadar gaflet ve şaşkınlıklarıyla baş başa bırak."

Şüphesiz yakalanmalarının zamanı yakındır. Yakalandıkları zaman ise başlarına inecek olan azap şiddetli olur. Yakında hatalarını doğrularından ayırt edeceklerdir.

اَيَحْسَبُونَ اَنَّمَا نُمِدُّهُمْ بِهٖ مِنْ مَالٍ وَبَنٖينَ ﴿٥٥﴾ نُسَارِعُ لَهُمْ فِي
الْخَيْرَاتِ بَلْ لَا يَشْعُرُونَ ﴿٥٦﴾

55, 56- "Kendilerine bol bol verdiğimiz mal ve evlatla onların iyiliğine koştuğumuzu mu sanıyorlar? Hayır, onlar farkına varmıyorlar!"

Bu anlatılanlar, istidrac ehlinin durumu hakkında olup Allah'ın yollarını şaşırtmak suretiyle kendilerini cezalandırmasını dile getirmektedir. Onlar, serabı görünce şarap sandılar. Allah ballarına zehir kattı da onlar bunu tatlı vehmettiler ve azapla karşılaştıklarında doğru yapmadıklarını anladılar.

اِنَّ الَّذٖينَ هُمْ مِنْ خَشْيَةِ رَبِّهِمْ مُشْفِقُونَ ﴿٥٧﴾

57- "Rablerinin yüceliğinden korkup titreyenler,"

Yücelikten korkmanın alameti, edep kurallarıyla Allah'ın huzurunda dururken iç dünyasının başını öne eğmesi ve kovulmanın

sürprizlerinden sakınmaktır. Onlar, içlerine giren korkudan ve heybet hükümranlığının kendilerini kuşatmasından dolayı bir durum üzere karar kılamazlar.

وَالَّذٖينَ هُمْ بِاٰيَاتِ رَبِّهِمْ يُؤْمِنُونَ ﴿٥٨﴾

58- "Rablerinin ayetlerine inananlar,"

Söz konusu ayetler değişiktir. Bu ayetlerin kimisiyle ülkelerde geçen farklı devirlerin insanları, bu insanların türlü gayretleri, emelleri ve istekleri anlaşılır. Bu nedenle kul, o ayetlere iman edip onları dikkate aldığı zaman, kendini yükümlü gördüğü şeye kanaat getirir.

وَالَّذٖينَ هُمْ بِرَبِّهِمْ لَا يُشْرِكُونَ ﴿٥٩﴾

59- "Rablerine ortak koşmayanlar,"

Onlar, hem açık hem de gizli şirki terk ederler. Gizli şirk, ibadetler esnasında halkı dikkate almak, halkın övgü ve kabulleriyle sevinmek ve halk görmediği zaman kırgınlık ve tembellik yaşamaktır.

Bir yoruma göre de gizli şirk, sevinçlerde ve sıkıntılarda nadir halleri sebeplere havale etmektir. Bir kimsenin: *"Eğer babanın duası olmasaydı sen helak olurdun"* ve: *"Falancanın himmeti olmasaydı sen iflah olmazdın"* ve buna benzer şeyler söylemesi gibi. Nitekim Allah şöyle buyurmuştur:

( وَمَا يُؤْمِنُ اَكْثَرُهُمْ بِاللّٰهِ اِلَّا وَهُمْ مُشْرِكُونَ ) *"Onların çoğu Allah'a ancak ortak koşarak iman ederler."* (Yûsuf, 12/106)

Aynı zamanda şifanın ilaç kullanmakla gerçekleştiğini vehmetmek de böyledir.

O halde kul, yaratıklardan hiçbir şey gelmeyeceğine sırrıyla inanır, böyle bir şeyi vehmetmez ve her şeyin ilahî takdirin eseri olduğuna kesin olarak inanırsa işte o zaman şirkten uzak kalmış olur.

وَالَّذٖينَ يُؤْتُونَ مَٓا اٰتَوْا وَقُلُوبُهُمْ وَجِلَةٌ اَنَّهُمْ اِلٰى رَبِّهِمْ رَاجِعُونَ ﴿٦٠﴾

60- "Rablerine dönecekleri için, verdiklerini kalpleri ürpererek verenler,"

Onlar, hiçbir kusur işlemeksizin veya tembellik yurtlarında kalmaksızın veya ruhsatlarla rahatlamaya meyletmeksizin ibadetlerde ihlaslı olurlar. Sonra onlar, günahlara bulaşmış gibi korkarlar, kendi hallerine küçümseyen ve hor gören bir gözle bakarlar, takdirin sürprizlerinden ve gazabın gereklerinden korkarlar.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Sakınır günahlardan sonra da korkar onlardan*
*Sanırsın ki günahlardır iyilikleri*

اُو۬لٰٓئِكَ يُسَارِعُونَ فِي الْخَيْرَاتِ وَهُمْ لَهَا سَابِقُونَ ﴿٦١﴾

61- "İşte bunlar hayır işlerine koşuşurlar ve o uğurda öne geçerler."

Bu durumda olan bir kimse, ibadetler yolunda ayaklarıyla hızlı yürür, vuslat bakımından himmetleriyle hızlı davranır, hasretleri yudumlama yönünden ise hızla pişmanlık duyar. Bunların hepsi isabetli davranmakta ve her birinin yönelişinden dolayı haline uygun bir nasibi bulunmaktadır.

وَلَا نُكَلِّفُ نَفْسًا اِلَّا وُسْعَهَا وَلَدَيْنَا كِتَابٌ يَنْطِقُ بِالْحَقِّ وَهُمْ لَا
يُظْلَمُونَ ﴿٦٢﴾

62- "Biz hiçbir kimseye gücünün yettiğinden fazla yük yüklemeyiz. Katımızda hakkı söyleyen bir kitap vardır. Onlar, zulme uğratılmazlar."

Dini yükümlülüklerde kolaylık güvencesi verilmiştir. Hakikatin yükümlülükleri ise dedikleri gibi canı feda etmekten başka bir şey değildir. Bu nedenle onları bâtıl sözler ve eğri böğrü yollar meşgul

etmez. Allah, ruhsat ehli ve halde zayıf olanlar için şöyle buyurmuştur:

( وَمَا جَعَلَ عَلَيْكُمْ فِي الدِّينِ مِنْ حَرَجٍ ) *"Allah, dinde üzerinize hiçbir güçlük yüklemedi."* (Hac, 22/78)

Hakikatlerin ehli kimselere gelince Allah, onlar hakkında şöyle buyurmuştur:

( وَاِنْ تُبْدُوا مَا فِيٓ اَنْفُسِكُمْ اَوْ تُخْفُوهُ يُحَاسِبْكُمْ بِهِ اللّٰهُ ) *"İçinizdekini açığa vursanız da gizleseniz de Allah sizi, onunla sorguya çeker."* (Bakara, 2/284)

( وَتَحْسَبُونَهُ هَيِّنًا وَهُوَ عِنْدَ اللّٰهِ عَظِيمٌ ) *"Siz onu önemsiz bir şey sanıyorsunuz. Oysa o, Allah katında büyük bir günahtır."* (Nûr, 24/15)

( وَجَاهِدُوا فِي اللّٰهِ حَقَّ جِهَادِهِ ) *"Allah uğrunda hakkıyla cihad edin."* (Hac, 22/78)

( وَلَدَيْنَا كِتَابٌ يَنْطِقُ بِالْحَقِّ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ) *"Katımızda hakkı söyleyen bir kitap vardır. Onlar, zulme uğratılmazlar."*

Eğer hakikatin yerlerinden gafil kalışları olmasaydı, Allah onları meleğin yazmasıyla korkutmazdı. Ne var ki onlar hakkı görmekten gafil kaldılar ve bu nedenle Allah meleklerin hallerinden haberdar olduklarını ve amellerini üzerlerine yazdıklarını bildirerek onları korkuttu.

بَلْ قُلُوبُهُمْ فِي غَمْرَةٍ مِنْ هٰذَا وَلَهُمْ اَعْمَالٌ مِنْ دُونِ ذٰلِكَ هُمْ لَهَا عَامِلُونَ ﴿٦٣﴾

63- "Ancak kâfirlerin kalpleri bu Kur'an'a karşı bir gaflet içindedir. Onların bundan başka yapa geldikleri birtakım işleri de vardır."

Bu duruma sadece bütün işlerden arınmış, dünya ve ahiretle ilgili hiçbir meşguliyeti olmayan kimse yarar. Dünyasıyla ilgili meşguliyeti olan veya kalbinin üzerinde ahiretinin sözü bulunan kimseye gelince onun, Mevlâ'sının sözünden hiçbir nasibi olmaz. Nitekim hadiste şöyle denilmiştir:

*"İki nimet vardır ki insanların çoğu onlar hakkında yanılırlar: Bunlar sağlık ve boş vakittir."*

Bir yoruma göre de dünya ehli kimseler dünyalarıyla, ahiret ehli kimseler ahiretleriyle, cehennem ehli kimseler de başlarına gelen musibetleriyle meşguldürler. Boş vakti olduğunda, dünya ve ahirette Mevlâ'sından başka bir şeyi olan kimse ise nadirdir. Allah şöyle buyurur:

( اِنَّ اَصْحَابَ الْجَنَّةِ الْيَوْمَ فِي شُغُلٍ فَاكِهُونَ ) *"Şüphesiz cennetlikler o gün nimetlerle meşguldürler."* (Yasin, 36/55)

حَتّٰٓى اِذَٓا اَخَذْنَا مُتْرَفِيهِمْ بِالْعَذَابِ اِذَا هُمْ يَجْأَرُونَ ﴿٦٤﴾

64- "Nihayet refah içinde olanlarını azapla kıskıvrak yakaladığımız zaman bakmışsın ki feryat edip duruyorlar."

Şüphesiz Allah (c.c.) mühlet verir fakat ihmal etmez. Bu nedenle yakaladığı zaman yakalaması çok şiddetli olur. Allah şöyle buyurur:

( اِنَّ بَطْشَ رَبِّكَ لَشَدِيدٌ ) *"Şüphesiz Rabbinin yakalaması çok şiddetlidir."* (Burûc, 85/12)

Böylece Allah büyük günah sahiplerini cevapta yakaladığı zaman, -başlarına intikam geldiğinde- perişanlık içinde geri çevrilirler ve kendilerine şöyle denilir:

لَا تَجْأَرُوا الْيَوْمَ اِنَّكُمْ مِنَّا لَا تُنْصَرُونَ ﴿٦٥﴾

65- "Boşuna feryat edip durmayın bugün. Zira bizden yardım görmeyeceksiniz."

Gaybtan bir hüküm çıktığı zaman artık takdirinin dönüşü yoktur. Bir yoruma göre de cinayetin bulaşıcılığı vardır. Bundan dolayı cani cinayetten geri durduğu zaman bulaşıcılığın hükmü sona ermedikçe bu, ona fayda vermez.

قَدْ كَانَتْ اٰيَاتٖي تُتْلٰى عَلَيْكُمْ فَكُنْتُمْ عَلٰٓى اَعْقَابِكُمْ تَنْكِصُونَ ﴿٦٦﴾
مُسْتَكْبِرٖينَ بِهٖ سَامِرًا تَهْجُرُونَ ﴿٦٧﴾

66, 67- "Çünkü ayetlerim size okunurdu da siz buna karşı büyüklük taslayarak arkanızı döner, geceleyin toplanıp hezeyanlar savururdunuz."

Allah bunu neden yardım görmeyeceklerini dile getirmesi, hüccetin haksızlıklarını kanıtlaması ve şimdi artık rahatsızlığın kesin olarak fayda vermediği, özrün dinlenmediği babında anlatmıştır.

Şiir:

*Yüz çevirdiği zaman nefsim bir şeyden, artık*
*Dünyanın sonuna dek yönelmez ona hiçbir şekilde*

اَفَلَمْ يَدَّبَّرُوا الْقَوْلَ اَمْ جَٓاءَهُمْ مَا لَمْ يَأْتِ اٰبَٓاءَهُمُ الْاَوَّلٖينَ ﴿٦٨﴾

68- "Onlar bu sözü -Kur'ân'ı- hiç düşünmediler mi? Yoksa kendilerine, önceki atalarına gelmeyen bir şey mi geldi?"

Yani eğer onlar dikkatle baksalar ve kendi hallerini doğru düşünceyle değerlendirselerdi derhal basiret sahibi olacaklardı ve kalplerinden belirsizlik ve problemli durum kalkacaktı. Ne var ki onlar, tembellik bineğini yurt edindiler ve gaflet yurtlarında kalakaldılar. Bu nedenle cehaleti alışkanlık haline getirip basiret sahibi olmaktan ümitlerini kestiler.

اَمْ لَمْ يَعْرِفُوا رَسُولَهُمْ فَهُمْ لَهُ مُنْكِرُونَ ﴿٦٩﴾

69- "Ya da onlar henüz kendi peygamberlerini tanımadılar da o yüzden mi onu inkâr ediyorlar?"

Onlar hakikatten gafil kaldılar, bu yüzden yanlışlıkların vadilerinde dolaştılar, hatalı zanlarla savruldular ve yalancı değerlendirmelerin tutsakları oldular. Bunun üzerine Allah, Hz. Peygamber'e

(s.a.v.) durumlarını bildirdi. Onlar, bazen onu yalanlamayla karşıladılar, bazen sihirbazlıkla itham ettiler, bazen diğer insanlar gibi yiyip içmek gibi davranışlarda bulunduğu için onu ayıpladılar, bazen de fakir ve darlık içinde oluşunu kendisi için kusur saydılar. Bunun üzerine Allah, durumlarının dağınıklığı ve düşüncelerinin bölük pörçük oluşu hakkında bilgi verdi.

اَمْ يَقُولُونَ بِهٖ جِنَّةٌ بَلْ جَٓاءَهُمْ بِالْحَقِّ وَاَكْثَرُهُمْ لِلْحَقِّ كَارِهُونَ ﴿٧٠﴾

70- "Yoksa: 'O, cinnet geçirmiş' mi diyorlar? Hayır, o onlara hakkı getirdi. Halbuki onların pek çoğu haktan hoşlanmamaktadırlar."

وَلَوِ اتَّبَعَ الْحَقُّ اَهْوَٓاءَهُمْ لَفَسَدَتِ السَّمٰوَاتُ وَالْاَرْضُ وَمَنْ فٖيهِنَّ
بَلْ اَتَيْنَاهُمْ بِذِكْرِهِمْ فَهُمْ عَنْ ذِكْرِهِمْ مُعْرِضُونَ ﴿٧١﴾

71- "Eğer hak onların arzularına uysaydı, gökler ile yer ve onlarda bulunanlar elbette bozulur giderdi. Hayır, biz onlara şereflerini getirdik. Onlar ise bu şereflerinden yüz çeviriyorlar."

Bu, arzu ve beklentilerinin çelişkili olmasından dolayıdır. Çünkü onlar, istek ve amaçta anlaşmazlık içindedirler. Bunu gerçekleştirmeyi takdir etmek ise pratikte muhaldir. Bu nedenle Allah (c.c.), hükmünü onların amaçlarına göre icra etmesi halinde gökler ve yerin düzeninin bozulacağını, muhkemlik ve sağlamlık sınırının dışına çıkacağını açıklamıştır.

اَمْ تَسْـَٔلُهُمْ خَرْجًا فَخَرَاجُ رَبِّكَ خَيْرٌ وَهُوَ خَيْرُ الرَّازِقٖينَ ﴿٧٢﴾

72- "Ey Muhammed! Yoksa sen onlardan bir vergi mi istiyorsun? Rabbinin vergisi daha hayırlıdır. O, rızık verenlerin en hayırlısıdır."

Yani sen, peygamberliği tebliğ etmeye karşılık olarak onları bir ücret veya bir bedel ödemekle yükümlü kılmıyorsun ki onlara getirdiğin din konusunda töhmet altında kalasın. Yoksa onlardan senin için bir başkanlık akdi yapmalarını isteme ihtimalin mi vardır?

Sonra Allah buyurdu ki: Allah (c.c.) tarafından sana verilen bolca sevap ve güzel son, onlardan gelme ihtimali bulunanları elde etmeye soyunmana ihtiyaç bırakmamaktadır. Zaten bu, nebi ve resullerin prensibi idi. Onlar, Allah için çalıştılar ve Allah'tan başkasından bir ücret istemediler. Bu arada âlimler de peygamberlerin vârisleri olduklarından onların yolu da tamahlarla kirlenmekten ve dinle yemekten sakınmaktır. Çünkü bu, imana zarar veren bir riyakârlıktır. Bu itibarla, amel Allah için olduğu zaman ecir de Allah'tan beklenir. Kaldı ki o, zaten Allah tarafından söz verilmiştir.

وَاِنَّكَ لَتَدْعُوهُمْ اِلٰى صِرَاطٍ مُسْتَق۪يمٍ ﴿٧٣﴾

73- "Şüphesiz sen, onları doğru bir yola çağırıyorsun."

Doğru yol, Rabbi her şeyde ve yaratmada birlik sıfatıyla görmek, hükümden hoşnutsuzluk duymaksızın ve kalbin uyumuyla birlikte yükümlülüğün gereklerine teslim olmaktır.

وَاِنَّ الَّذ۪ينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِالْاٰخِرَةِ عَنِ الصِّرَاطِ لَنَاكِبُونَ ﴿٧٤﴾

74- "Ahirete inanmayanlar ise, ısrarla bu yoldan çıkmaktadırlar."

Onlar kalpleriyle en üstün delilden saptılar ve bu yüzden ayrılık cehennemine düştüler. Yarın da ayakları sırat köprüsünden eğrilip kayacak ve böylece onlar yakıcı ateşin içine düşeceklerdir. Bu halleriyle onlar dünyalarında da ahiretlerinde de yoldan çıkmışlardır.

وَلَوْ رَحِمْنَاهُمْ وَكَشَفْنَا مَا بِهِمْ مِنْ ضُرٍّ لَلَجُّوا في طُغْيَانِهِمْ
يَعْمَهُونَ ﴿٧٥﴾

75- "Biz onlara merhamet edip başlarına gelen sıkıntıyı giderseydik, yine de azgınlıkları içinde bocalayıp dururlardı."

Allah onlar hakkındaki doğru bilgisinden söz etmiştir. Bu doğru bilgi, onlarla ilgili ezeli hükmünden kaynaklanmaktadır. Bu çerçevede

Allah şöyle buyurmaktadır: Eğer biz onları hemen sıkıntıdan kurtarsaydık gelecekte, kendilerinden söz verdikleri imanı yerine getirmezlerdi. Bir Allah, onların kâfir olacaklarını bilmiş ve haklarında kâfir olduklarına dair hüküm vermiştir. Çünkü haklarındaki hükmünün onlara dair bilgisine aykırı olması caiz değildir.

وَلَقَدْ اَخَذْنَاهُمْ بِالْعَذَابِ فَمَا اسْتَكَانُوا لِرَبِّهِمْ وَمَا يَتَضَرَّعُونَ ﴿٧٦﴾

76- "Andolsun, biz onları azapla kıskıvrak yakaladık da yine Rablerine boyun eğmediler ve O'na yalvarıp yakarmadılar."

Biz kendilerini uyarmak için onlara azabın zorluklarını değil de öncüllerini tattırdık. Ancak ne farkına vardılar ne de yaptıklarından vazgeçtiler. Şayet onlar azabı gördüklerinde yalvarma ve yakarmaya sığınsalardı Allah, azabı onlardan çabucak giderecekti. Ne var ki onlar bâtıllarında ısrar ettiler. Bu, Allah olacak bir işi yerine getirsin diye böyle olmuştur.

حَتّٰٓى اِذَا فَتَحْنَا عَلَيْهِمْ بَابًا ذَا عَذَابٍ شَدِيدٍ اِذَا هُمْ فِيهِ مُبْلِسُونَ ﴿٧٧﴾

77- "Sonunda onlara şiddetli bir azap kapısı açtığımız zaman bir de bakarsın onun içinde ümitsizliğe düşüvereceklerdir."

Biz, onların en şiddetli azaplarını büyütünce ona katlanmaktan aciz kaldılar, ansızın yakalandılar ve daha önceki yakarışları kendilerine fayda vermedi. Bunun üzerine kabulden ümit kestiler ve ümitsizlik yurtlarında kalakaldılar.

وَهُوَ الَّذٖٓي اَنْشَاَ لَكُمُ السَّمْعَ وَالْاَبْصَارَ وَالْاَفْـِٔدَةَ قَلٖيلًا مَا
تَشْكُرُونَ ﴿٧٨﴾

78- "Halbuki O, sizin için kulakları, gözleri ve gönülleri yaratandır. Ne kadar az şükrediyorsunuz!"

Allah, onlar için bu organları yaratmakla kendilerine olan büyük lütfunu anlatarak onları şükürle yükümlü kılmıştır. Onların bu organlara dair şükrü ise onları taatte kullanmalarıdır. Bu çerçevede kulağın şükrü sadece Allah ile ve Allah için işitmesi, gözün şükrü sadece Allah ile ve Allah için bakması, kalbin şükrü de Allah'tan başkasını görmemen ve onunla Allah'tan başkasını sevmemendir.

وَهُوَ الَّذِي ذَرَاَكُمْ فِي الْاَرْضِ وَاِلَيْهِ تُحْشَرُونَ ﴿٧٩﴾

79- "O, sizi yeryüzünde yaratıp türetendir. Sadece O'nun huzurunda toplanacaksınız."

Yaratıkların başlangıcı Allah'tandır ve sonunda dönüşleri de O'nadır. Tevhid ise bu anlamlara düzen vermektedir. Böylece anlarsın ki, yaratıkların ortaya çıkışları Allah iledir, mülk olarak Allah'a aittirler, başlangıçta Allah'tandırlar ve sonunda Allah'a varırlar.

وَهُوَ الَّذِي يُحْيِي وَيُمِيتُ وَلَهُ اخْتِلَافُ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ اَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿٨٠﴾

80- "O diriltendir, öldürendir. Gece ile gündüzün birbirini takip etmesi de O'na aittir. Hâlâ aklınızı kullanmıyor musunuz?"

Allah, canları hem diriltir hem de öldürür. Bunun anlamı malumdur. Aynı şekilde Allah, kalpleri de diriltir ve öldürür. Bu çerçevede kalbin ölümü küfür ve inkar ile olur. Kalbin hayatı ise iman ve tevhid iledir. Bir de nasıl ki, kalplerin hayat ve ölümleri varsa aynı şekilde vakitlerin de ölüm ve hayatı vardır. Buna göre vakitlerin hayatı ikbalinin bereketiyledir. Vakitlerin ölümü de yüz çevirmesinin yol açtığı meşakkatledir.

Nitekim şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Ölürüm seni hatırladığımda, dirilirim sonra*
*Böylece nice dirilir ve ölürüm senden dolayı*

( وَلَهُ اخْتِلَافُ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ ) *"Gece ile gündüzün birbirini takip etmesi de O'na aittir."*

Gece ile gündüzün değişkenliğinin tamamı, aydınlık ve karanlığı ile uzunluk ve kısalığında değildir. Aksine sevenlerin geceleri, uzunluk ve kısalık ile huzur ve feryatta değişir. Bu itibarla öyle geceler vardır ki, incilerden daha aydınlıktır. Gündüzlerden de öylesi vardır ki, zifiri karanlık geceden daha şiddetlidir.

Dize:

*Şekilden şekle girmektedir gecelerim, göçenlerden sonra*

Şiir:

*Gecenin karalığından elimde nice delil vardır ki*
*Haber vermekte manizmin yalan söylediğini*
*Şu dizeler de buna yakın anlamdadır:*
*Öyle vuslat geceleri geçti ki sanırsın ki onlar*
*Gerdanlık incileridir taze dilberlerin gerdanlarında*
*Ve izledi onları öyle hicran günleri ki sanırsın ki onlar*
*İhtiyarlığın beyazlarıdır saç örgülerinin siyahlığında*

بَلْ قَالُوا مِثْلَ مَا قَالَ الْاَوَّلُونَ ﴿٨١﴾ قَالُٓوا ءَاِذَا مِتْنَا وَكُنَّا تُرَابًا
وَعِظَامًا ءَاِنَّا لَمَبْعُوثُونَ ﴿٨٢﴾ لَقَدْ وُعِدْنَا نَحْنُ وَاٰبَٓاؤُ۬نَا هٰذَا مِنْ قَبْلُ
اِنْ هٰذَٓا اِلَّٓا اَسَاطِيرُ الْاَوَّلِينَ ﴿٨٣﴾

**81, 82, 83- "Hayır onlar, öncekilerin söyledikleri sözler gibi sözler ettiler. Dediler ki: 'Gerçekten biz ölüp bir toprak ve kemik yığını haline geldikten sonra mı tekrar diriltileceğiz? Andolsun, biz de bizden önce atalarımız da bununla tehdit edildik. Bu, öncekilerin uydurduğu masallardan başka bir şey değildir.'"**

Onlar, yalanlamada seleflerinin yolunu izlediler ve tıpkı onlar gibi inatta aşırı gittiler. Bu yüzden onlar da tıpkı öncekiler gibi helak ve telef olmaya maruz kaldılar.

( لَقَدْ وُعِدْنَا نَحْنُ وَاٰبَٓاؤُ۬نَا هٰذَا مِنْ قَبْلُ ) *"Andolsun, biz de bizden önce atalarımız da bununla tehdit edildik."*

Haşirin ve Allah'ın onlara uyarıda bulunmuş olduğu dirilme ve neşirden sonraki azabın gerçekleşme zamanı uzayınca bu, onların şüphelerini artırdı ve bunu şaşkınlıklarına ve kararsızlıklarına delil yaparak şöyle dediler:

*"Andolsun, biz de atalarımız da bunun benzeriyle tehdit edildik. Sonra bunun gerçekleşeceği yoktur. O halde biz de sadece onlar gibiyiz."*

Bunun üzerine Allah, haşrin mümkün olduğu konusunda onlara karşı kendilerinin de kabul ettiği yaradılışın başlangıcını delil olarak getirdi:

قُلْ لِمَنِ الْاَرْضُ وَمَنْ فٖيهَٓا اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٨٤﴾ سَيَقُولُونَ لِلّٰهِ قُلْ
اَفَلَا تَذَكَّرُونَ ﴿٨٥﴾ قُلْ مَنْ رَبُّ السَّمٰوَاتِ السَّبْعِ وَرَبُّ الْعَرْشِ
الْعَظٖيمِ ﴿٨٦﴾ سَيَقُولُونَ لِلّٰهِ قُلْ اَفَلَا تَتَّقُونَ ﴿٨٧﴾ قُلْ مَنْ بِيَدِهٖ مَلَكُوتُ
كُلِّ شَيْءٍ وَهُوَ يُجٖيرُ وَلَا يُجَارُ عَلَيْهِ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٨٨﴾ سَيَقُولُونَ
لِلّٰهِ قُلْ فَاَنّٰى تُسْحَرُونَ ﴿٨٩﴾

84, 85, 86, 87, 88, 89- "De ki: 'Eğer biliyorsanız söyleyin. Yer ve yerde bulunanlar kime aittir?' 'Allah'ındır' diyecekler. De ki: 'Öyle ise siz hiç düşünüp öğüt almaz mısınız?' De ki: 'Yedi göklerin Rabbi, büyük Arş'ın Rabbi kimdir?' 'Allah'ındır' diyecekler. 'Öyle ise O'na karşı gelmekten sakınmaz mısınız?' de. De ki: 'Eğer biliyorsanız söyleyin. Her şeyin hükümranlığı elinde olan, kendisi koruyan, kendisine karşı korunmak mümkün olmayan kimdir?' Diyecekler ki: 'Allah'ındır.' Sen de şöyle de: 'Öyle ise nasıl büyülenirsiniz?'"

Allah Hz. Peygamber'e (s.a.v.) onlara karşı soruları çeşitlendirmesini emretmiş ve her bir sorunun ardından kendilerinden bahisle

şöyle buyurmuştur: *"Allah'ındır, diyecekler."* Sonra Allah, onların bu sözlerini nakletmekle yetinmemiş, aksine bu sözlerinin tezekkür, anlayış ve bilgiden arınmış olması yüzünden onlara sitemde bulunmak suretiyle şuna dikkat çekmek istemiştir:

*"Bu söz, gerçekte doğru da olsa, bilgi ve inançtan kaynaklanmadığı için işe yaramamaktadır."*

Sonra da Allah, kudretinin kemaline ve şu hususa dikkatlerini çekmiştir:

*"Kadim kudret kapsamı dahilindeki bir şeye taalluk ettiği zaman, onun zıddına da benzerine de taalluk eder."*

Aslında şaşırtıcı olan husus, Allah'ın yüce vasıflarını itiraf ettikten sonra yaşamayan, fayda ve zarar veremeyen cansız varlıklar olan putlara tapmayı caiz görmeleridir.

Bir yoruma göre de Allah önce:( اَفَلَا تَذَكَّرُونَ ) *"Öyle ise siz hiç düşünüp öğüt almaz mısınız?"* diye sorduktan sonra: ( اَفَلَا تَتَّقُونَ ) *"Öyle ise O'na karşı gelmekten sakınmaz mısınız?"* buyurmuştur. Böylece düşünüp öğüt almayı takvanın önüne koymuştur. Çünkü düşünüp öğüt almaları sebebiyle mağfirete ererler. Sonra Allah'ı tanımalarının ardından şüphesiz Allah'a karşı çıkmaktan sakınmaları gerekir.

Bundan sonra da Allah: ( فَاَنّٰى تُسْحَرُونَ ) *"Öyle ise nasıl büyülenirsiniz?"* buyurmuştur. Yani delilin apaçık hale gelmesinden sonra artık hangi şüphe kaldı ki siz Peygambere sihir isnat ediyorsunuz?

بَلْ اَتَيْنَاهُمْ بِالْحَقِّ وَاِنَّهُمْ لَكَاذِبُونَ ﴿٩٠﴾

90- "Doğrusu biz onlara gerçeği getirdik fakat onlar kesinlikle yalancıdırlar."

Allah onların inkârcılıklarında ısrar ettiklerini, serkeşlik ve muhalefetlerine devam ettiklerini açıklamıştır. Gerekçeler yok edildikten sonra zaman artık özür zamanı değildir ve esnek davranmayı caiz kılan bir sebep asla bulunmamaktadır.

مَا اتَّخَذَ اللّٰهُ مِنْ وَلَدٍ وَمَا كَانَ مَعَهُ مِنْ اِلٰهٍ اِذًا لَذَهَبَ كُلُّ اِلٰهٍ بِمَا
خَلَقَ وَلَعَلَا بَعْضُهُمْ عَلٰى بَعْضٍ سُبْحَانَ اللّٰهِ عَمَّا يَصِفُونَ ﴿٩١﴾
عَالِمِ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ فَتَعَالٰى عَمَّا يُشْرِكُونَ ﴿٩٢﴾

91, 92- "Allah, hiçbir çocuk edinmemiştir. O'nunla birlikte başka bir ilah yoktur. Öyle olsaydı, her ilah kendi yarattığını alır götürür ve mutlaka birbirlerine üstün gelmeye çalışırlardı. Gaybı da görülen âlemi de bilen Allah, onların yakıştırdığı nitelemelerden uzaktır. Onların koştukları ortaklardan çok yücedir."

Allah hakkında çocuk edinmek de tıpkı ortak edinmek gibi doğru değildir. Bu her iki durum da imkânsızlık sınırı içindedir. Çünkü çocuk veya ortak, miktarda eşitliği gerektirir. Oysa Allah'ın "samed" sıfatı, O'nun bir benzeri veya hemcinsinin varlığının caiz olmasından münezzehtir.

( اِذًا لَذَهَبَ كُلُّ اِلٰهٍ بِمَا خَلَقَ وَلَعَلَا بَعْضُهُمْ عَلٰى بَعْضٍ سُبْحَانَ اللّٰهِ عَمَّا يَصِفُونَ
عَالِمِ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ فَتَعَالٰى عَمَّا يُشْرِكُونَ ) *"Öyle olsaydı, her ilah kendi yarattığını alır götürür ve mutlaka birbirlerine üstün gelmeye çalışırlardı. Gaybı da görülen âlemi de bilen Allah, onların yakıştırdığı nitelemelerden uzaktır. Onların koştukları ortaklardan çok yücedir."*

İki diye ifade edilen her şeyde düzen ve sağlıklı tertip yok olur. Temanuun delilleri ise usul meseleleri arasında anlatılmıştır.

( سُبْحَانَ اللّٰهِ عَمَّا يَصِفُونَ ) *"Allah, onların yakıştırdığı nitelemelerden uzaktır."*

( سبحان الله ) *"subhanallah"* sözü Allah'ı, onların kendisini nitelendikleri hususlardan takdis ve tenzih etmek içindir.

( عَالِمِ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ ) *"Gaybı da görülen âlemi de bilendir."*

Allah, O'na ortak koşan kimselerin vehimlerinden ve iftira edenlerin zanlarından münezzehtir.

قُلْ رَبِّ اِمَّا تُرِيَنِّي مَا يُوعَدُونَ ﴿٩٣﴾ رَبِّ فَلَا تَجْعَلْنِي فِي الْقَوْمِ الظَّالِمِينَ ﴿٩٤﴾

93, 94- "De ki: 'Ey Rabbim! Eğer onlara yöneltilen uyarıları mutlaka bana göstereceksen beni o zalim milletin içinde bulundurma.'"

Demek istiyor ki, eğer kendisiyle onları uyardığın tehditleri çabuk gerçekleştireceksen, beni onların arasına katma ve onlara ulaştırdığın cezanın benzeri olan kötü bir durumu bana ulaştırma. Ayrıca bu ayette Hakk'ın dilediğini yapabileceğine dair delil bulunmaktadır. Şayet suçsuzu da cezalandırırsa bu, onun için bir zulüm veya kötülük olmaz.

وَاِنَّا عَلٰٓى اَنْ نُرِيَكَ مَا نَعِدُهُمْ لَقَادِرُونَ ﴿٩٥﴾

95- "Bizim onlara yöneltiğimiz tehditleri sana göstermeye elbette gücümüz yeter."

Bu ayet Allah'ın, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) bildiğinin aksini yapma kudretine sahip olmasının sahih olduğunu göstermektedir. Çünkü Allah, kâfirlerin cezasını çabuklaştırmaya kadir olduğunu bildirmiş, sonra ise bunu yapmamıştır. Böylece malumun hilafına dair kudret sahih olmuştur.

اِدْفَعْ بِالَّتِي هِيَ اَحْسَنُ السَّيِّئَةَ نَحْنُ اَعْلَمُ بِمَا يَصِفُونَ ﴿٩٦﴾

96- "Kötülüğü en güzel olan şeyle uzaklaştır. Biz onların yakıştırmakta oldukları şeyleri daha iyi biliriz."

( أَحْسَنُ ) "*ahsanu-en güzel-*" lafzındaki "hemze" mübalağa için olmayabilir. O zaman ayetin manası: "Kötülüğü iyilikle defet" şeklinde olur. Söz konusu "hemze" mübalağa için olduğu zaman ise kötülüğe benzeriyle karşılık vermek caizdir ancak onu affetmek çok daha güzel olur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Cefayı vefa ile isyan ehlinin suçunu da ihsanın hükmüyle defet.

- Allah'ın hakkı olan husus gerçekleştiği zaman nefsinin arzusu olanı defet.

- İyilik yolunu izle ve benzeriyle karşılıkta bulunma yoluna yeltenme.

- En güzel olan, kalbin işaret ettiğidir. Kötü olan da nefsin davet ettiği şeydir.

- En güzel olan şey hakikatin işaretiyle, kötülük ise şeytanın vesvesesiyle olan şeydir.

- En güzel olan, hakikatlerin nurudur. Kötülük ise yaratıkların karanlığıdır.

وَقُلْ رَبِّ اَعُوذُ بِكَ مِنْ هَمَزَاتِ الشَّيَاطِينِ ﴿٩٧﴾ وَاَعُوذُ بِكَ رَبِّ اَنْ يَحْضُرُونِ ﴿٩٨﴾

97, 98- "De ki: 'Ey Rabbim! Şeytanların vesveselerinden sana sığınırım. Ey Rabbim! Onların benim yanımda bulunmalarından da sana sığınırım.'"

Gerçekte sığınma, Allah'tan Allah'a olur. Hz. Peygamber'in (s.a.v.) buyurduğu gibi: *"Ben senden sana sığınırım."*

Ancak Allah, şeytandan daha doğrusu bize musallat kılınmış olan her şeyden O'na sığınmak suretiyle kendisine ibadet etmemizi istemiştir. O zaman Allah, zararımıza olan şeyi prensibi gereğince bize ulaştırır. Yoksa eğer, şeytan az da olsa halkı yoldan çıkarabilseydi kendini hidayet üzere tutardı. Kendini korumaktan aciz olan kimse, başkasını yoldan çıkarmaktan çok daha aciz olur.

حَتّٰٓى اِذَا جَٓاءَ اَحَدَهُمُ الْمَوْتُ قَالَ رَبِّ ارْجِعُونِ ﴿٩٩﴾ لَعَلّٖٓي اَعْمَلُ صَالِحًا فٖيمَا تَرَكْتُ كَلَّاۜ اِنَّهَا كَلِمَةٌ هُوَ قَٓائِلُهَاۜ وَمِنْ وَرَٓائِهِمْ بَرْزَخٌ اِلٰى يَوْمِ يُبْعَثُونَ ﴿١٠٠﴾

99, 100- "Nihayet onlardan birine ölüm gelince: 'Rabbim! Beni dünyaya geri gönderiniz ki,terk ettiğim dünyada salih bir amel işleyeyim' der. Hayır! Bu, sadece onun söylediği bir sözden ibarettir. Onların arkasında tekrar dirilecekleri güne kadar bir perde vardır."

Bela boğazlarını sıktığı zaman, sıkıntı durumlarına hakim olduğu zaman ve kaçış ve kurtuluşun olmadığını anladıkları zaman yalvarıp yakarmaya başlarlar. Oysa amaçlarıyla aralarında dikenli teller vardır. Onlara şöyle denir: *"Neden bundan önce bunun yüzde biri dahi olmadı!?"*

Şiir:

*Dedim ki nefse: Dönmek istiyorsan eğer*
*Dön! Yol kapanmadan önce*

فَإِذَا نُفِخَ فِي الصُّورِ فَلَآ أَنْسَابَ بَيْنَهُمْ يَوْمَئِذٍ وَلَا يَتَسَآءَلُونَ ﴿١٠١﴾

101- "Sûr'a üfürüldüğü zaman o gün ne aralarında soy sop yakınlığı kalacak, ne de birbirlerini arayıp soracaklardır."

O gün soylar fayda vermez, bağlar kopar, pişmanlık fayda vermez ve herkes yaptığının sonucuyla karşılaşır. Bu çerçevede kimin tartıları hayırlarla ağır gelirse güzelliği üzerinde belirir. Kimde de kusurlu kılan hususlar ortaya çıkarsa onun için belanın bin bir çeşidi vardır. Ateş yüzlerini yakar, eserleri haklarında açık deliller olur ve deliller aleyhlerinde geçerlilik kazanır. Bu nedenle dinlenecek hiçbir cevapları, kabul edilecek hiçbir mazeretleri olmaz, azapları üzerlerinden kaldırılmaz ve cezalarının sonu gelmez.

فَمَنْ ثَقُلَتْ مَوَازِينُهُ فَأُولَٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ﴿١٠٢﴾

102- "Artık kimin tartıları ağır gelirse, işte onlar kurtuluşa erenlerin ta kendileridir."

وَمَنْ خَفَّتْ مَوَازِينُهُ فَاُولٰٓئِكَ الَّذِينَ خَسِرُوٓا اَنْفُسَهُمْ فِي جَهَنَّمَ خَالِدُونَ ﴿١٠٣﴾

103- "Kimlerin de tartıları hafif gelirse, işte onlar da kendilerini ziyana uğratanların ta kendileridir. Onlar, cehennemde ebedi kalacaklardır."

تَلْفَحُ وُجُوهَهُمُ النَّارُ وَهُمْ فِيهَا كَالِحُونَ ﴿١٠٤﴾

104- "Ateş, yüzlerini yalar ve onlar orada sırıtır kalırlar."

اَلَمْ تَكُنْ اٰيَاتِي تُتْلٰى عَلَيْكُمْ فَكُنْتُمْ بِهَا تُكَذِّبُونَ ﴿١٠٥﴾

105- "Allah: 'Ayetlerim size okunuyordu da siz, onları yalanlıyordunuz değil mi?' der."

قَالُوا رَبَّنَا غَلَبَتْ عَلَيْنَا شِقْوَتُنَا وَكُنَّا قَوْمًا ضَٓالّ۪ينَ ﴿١٠٦﴾

106- "Onlar da şöyle derler: 'Ey Rabbimiz! Biz, azgınlığımıza yenik düştük ve sapık bir toplum olduk.'"

Onlar ancak ikrarın fayda vermediği ve özür dilemenin kabul olmadığı bir günde hakkı söylediler. Sonra şöyle derler:

رَبَّنَٓا اَخْرِجْنَا مِنْهَا فَاِنْ عُدْنَا فَاِنَّا ظَالِمُونَ ﴿١٠٧﴾

107- "Ey Rabbimiz! Bizi buradan çıkar. Eğer günaha dönersek şüphesiz kendimize zulmetmiş oluruz."

Allah da şöyle buyurur:

*"Eğer dünyaya geri çevrilselerdi, alıkonuldukları günahlara tekrar döneceklerdi."*

Allah, dünyaya geri çevrilmeyeceklerini biliyordu ancak çevrilmeleri halinde durumun nasıl olacağını da biliyordu.

قَالَ اخْسَؤُا فِيهَا وَلَا تُكَلِّمُونِ ﴿١٠٨﴾

108- "Allah buyurur ki: 'Aşağılık içinde kalın orada, artık benimle konuşmayın.'"

O zaman başlarına gelen bela tamamlanır ve meşakkatleri şiddetlenir. Çünkü onlar Allah'ı andıkları sürece ayrılık büsbütün gerçekleşmez. Derken kendileriyle Allah'ın zikri arasına engel konulunca meşakkatleri tamamlanmış olur. Bu, aynı zamanda: ( لَا يَحْزُنُهُمُ الْفَزَعُ الْاَكْبَرُ ) *"En büyük korku bile onları tasalandırmaz"* (Enbiyâ, 21/103) ayeti ile ilgili yapılan yorumlardan da biridir.

Yapılan bir rivayette ise şöyle denilmiştir:

*"Ondan sonra bunlar, dönüp giderken kurt uluması gibi bir ulumaları olur."*

Bazı kimseler de Allah'ın onlara: ( اخْسَؤُا فِيهَا ) *"Aşağılık içinde kalın orada"* demesi sebebiyle kendilerini kıskanarak şöyle derler:

*"Keşke bunu bize söyleseydi! Nasılsa bize bunu söyleyecek olan O değil midir?"*

Derler ki: *"Dostların sitemi, yabancıların övgüsünden daha lezzetlidir."*

Şu dizeler de aynı anlamdadır:

*Duydum ki sövmüşsün bana, söv bakalım!*
*Ağzına düşmedi mi adım? İşte bu yeter bana*

اِنَّهُ كَانَ فَرِيقٌ مِنْ عِبَادِي يَقُولُونَ رَبَّنَا اٰمَنَّا فَاغْفِرْ لَنَا وَارْحَمْنَا
وَاَنْتَ خَيْرُ الرَّاحِمِينَ ﴿١٠٩﴾ فَاتَّخَذْتُمُوهُمْ سِخْرِيًّا حَتّٰى اَنْسَوْكُمْ
ذِكْرِي وَكُنْتُمْ مِنْهُمْ تَضْحَكُونَ ﴿١١٠﴾ اِنِّي جَزَيْتُهُمُ الْيَوْمَ بِمَا صَبَرُوٓا
اَنَّهُمْ هُمُ الْفَٓائِزُونَ ﴿١١١﴾

109, 110, 111- "Kullarımdan: 'Ey Rabbimiz! Biz inandık, bizi bağışla, bize merhamet et, sen merhamet edenlerin en hayırlısısın.' diyen bir grup vardı. Siz ise onlarla alay ediyordunuz. O kadar ki onlar size beni anmayı unutturdu. Onlara hep gülüyordunuz. Sabretmiş olmaları sebebiyle, bugün ben onları mükâfatlandırdım. Şüphesiz onlar, başarıya erenlerin ta kendileridir."

Allah, düşmanlarından velilerinin kalplerini hoşnut kıldığı şeylerle intikam alır ki, Hakk'ın husumeti budur. Allah şöyle buyurur:

*"Velilerimden kimileri, beni açıkça medh ve sena ediyorlardı ve benim övgüme layık vasıflar taşıyorlardı. Bundan dolayı siz onları alay konusu ettiniz. İşte ben de bugün onları mükâfatlandırıp kendilerine karşı olanlardan intikam alıyorum."*

قَالَ كَمْ لَبِثْتُمْ فِي الْاَرْضِ عَدَدَ سِنِينَ ﴿١١٢﴾ قَالُوا لَبِثْنَا يَوْمًا اَوْ بَعْضَ يَوْمٍ فَسْـَٔلِ الْعَٓادِّينَ ﴿١١٣﴾ قَالَ اِنْ لَبِثْتُمْ اِلَّا قَليلًا لَوْ اَنَّكُمْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿١١٤﴾

112, 113, 114- "Allah: 'Yeryüzünde kaç sene kaldınız?' diye sorar. Onlar: 'Bir gün ya da bir günden daha az bir süre kaldık. Hesap tutanlara sor' derler. Allah şöyle der: 'Çok az bir zaman kaldınız. Keşke bunu bilmiş olsaydınız.'"

Varlıkların yıl sayısı çok dahi olsa bazen kendisinden daha yeterli veya daha fazla olana göre yetersiz veya az olur. Yerin altında kaldıkları süre de bu sırada rahatlık içinde olmuş olsalar bile kıyamet günü kavuşacakları rahatlığa kıyasla az gelir. Şayet yerin altında sıkıntılar içinde kalmışlarsa bu takdirde de söz konusu sıkıntılar, kıyamet günü görecekleri o kesintisiz elem dolu azapların yanında cılız kalır.

اَفَحَسِبْتُمْ اَنَّمَا خَلَقْنَاكُمْ عَبَثًا وَاَنَّكُمْ اِلَيْنَا لَا تُرْجَعُونَ ﴿١١٥﴾

115- "Sizi boşuna yarattığımızı ve bize tekrar döndürülmeyeceğinizi mi sandınız?"

( عَبَثٌ ) "*abes*" lafzı eğlence, oyun ve Hak'tan gafil kılan şeyle uğraşmak demektir. Oysa Allah kullara bunu emretmemiş, onları buna davet etmemiş ve bununla görevlendirmemiştir. Davranışında abesle iştigal eden ise davranışı istikamet çizgisinin dışında olan kimsedir. Bu kimse ciddiyetsiz olur, davranışıyla kendini gafletin hükümlerine mahkum eder, hep yanılır ve isteğinde tefrikadan haz duyar. Bütün bunlar ise beşeriyet özelliğine sahip kimselerin sıfatlarındandır. Oysa Allah bunların tamamından münezzeh olma sıfatına sahiptir. Bu nedenle O, ne abes bir şey yapmakta ne de abes olan bir şeyi emretmektedir.

فَتَعَالَى اللّٰهُ الْمَلِكُ الْحَقُّ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ رَبُّ الْعَرْشِ الْكَرِيمِ ﴿١١٦﴾

116- "Gerçek hükümdar olan Allah yücedir. O'ndan başka hiçbir ilah yoktur. O, şerefli ve yüce Arş'ın Rabbidir."

Allah, celalinin sıfatlarıyla birdir. Ezeldeki izzeti ve sıfatlarının yüceliğinde eşsizdir. Bu itibarla O'nun zatı haktır, sıfatları haktır, sözü doğrudur ve hiçbir mahlûkun O'nun üzerinde hakkı olamaz. Kullarına yaptığı iyiliklerin hiçbiri de hak edilmiş değildir.

( لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ رَبُّ الْعَرْشِ الْكَرِيمِ ) "*O'ndan başka hiçbir ilah yoktur. O, şerefli ve yüce Arş'ın Rabbidir.*"

Allah Arş ile güzelleşmemiştir lakin Arş, O'nun kendisini zatına özel bir şekilde izafe etmesiyle aziz olmuştur.

Bu arada ( كريم ) "*kerîm*" lafzı güzel ve iyi demektir. ( كَرَم ) "*kerem*" ise çirkin ve kötü olmamak demektir.

وَمَنْ يَدْعُ مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ لَا بُرْهَانَ لَهُ بِهِ فَاِنَّمَا حِسَابُهُ عِنْدَ رَبِّهِ
اِنَّهُ لَا يُفْلِحُ الْكَافِرُونَ ﴿١١٧﴾

117- "Kim, hakkında hiçbir delil olmadığı halde Allah ile birlikte başka bir ilaha taparsa onun hesabı ancak Rabbi katındadır. Şüphesiz kâfirler asla kurtuluşa eremezler."

Kıyamette hesabı Allah'a aittir. Dünyasında da azabı Allah'tandır. Bu azap, Allah'ın o kimsenin kalbine yerleştirdiği cehalettir. O kadar ki O'nunla beraber başkasına tapmaya razı olmuştur. Onların: ( مَا نَعْبُدُهُمْ اِلَّا لِيُقَرِّبُونَٓا اِلَى اللّٰهِ زُلْفٰى ) *"Biz onlara sadece, bizi Allah'a daha çok yaklaştırsınlar diye ibadet ediyoruz"* (Zümer, 39/3) şeklindeki sözleri ise aklın deliline ve rivayetin ya da naklin tanıklığına dayanmadan ortaya çıkan bir sözdür. Bu yüzden o, sadece bir iftira, bühtan ve delile dayanmayan bir sözdür.

وَقُلْ رَبِّ اغْفِرْ وَارْحَمْ وَاَنْتَ خَيْرُ الرَّاحِمِينَ ﴿١١٨﴾

118- "De ki: 'Rabbim! Bağışla, merhamet et. Çünkü sen, merhamet edenlerin en hayırlısısın!'"

Günahları bağışla, kusurları ört, bağışını bollaştır ve merhamet et ki tefrika ve belalar bize hakim olmasın. Bu arada dua ile istenen rahmet, nimetin çeşitlerindendir. Bir de rahmet ile gerçekleşen nimet de mecazen rahmet diye adlandırılır.

سورة النُّورِ

# NÛR SÛRESİ

(Nur Sûresi 64 âyettir. Medine'de inmiştir. 35. âyette Allah'ın gökleri ve yeri aydınlatan nurundan söz edildiği için, sûre bu adı almıştır. İlk yirmi altı âyet İfk olayı ile ilgili olarak inmiştir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

Besmele öyle bir isimdir ki, ondan ayrılmak ölümün uyarıcısıdır, onunla beraber olmak ise hayatın müjdecisidir. O öyle bir isimdir ki, irfanı ruhun sebebidir. O öyle bir isimdir ki, ruhun rahatlığı onun iyiliğidir. Öyle bir isimdir ki, ikbali ünsiyetin kemalidir. Öyle bir isimdir ki, güzelliği kendinden geçmişlerin kalplerinin imtihanıdır. Öyle bir isimdir ki, kim onu görürse esenliği daim olur. Öyle bir isimdir ki, onu bulanın kıyameti kopar. Öyle bir isimdir ki, ne katında özel mevki edinilir ne de onsuz yapılabilir.

سُورَةٌ اَنْزَلْنَاهَا وَفَرَضْنَاهَا وَاَنْزَلْنَا ف۪يهَٓا اٰيَاتٍ بَيِّنَاتٍ لَعَلَّكُمْ
تَذَكَّرُونَ ﴿١﴾

1- "Bu, bizim indirdiğimiz ve farz kıldığımız bir sûredir. Düşünüp öğüt almanız için onda apaçık ayetler indirdik."

Ey Muhammed! O, senin için şeref olan bir sûredir. Biz onu indirdik. Çünkü kâfirlere karşı kendisiyle meydan okunan en az miktar bir suredir. Bu itibarla her sure, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) mucizesi olması sebebiyle onun için şereftir. Biz,onu açıkladık, onda helal ve haram hükmünü koyduk, onda sizin için hidayet vesilesi, kalpler için de yabancılık hastalığından şifa bulunan hükümler açıkladık.

Biz onda apaçık ayetler, açık deliller ve hüccetler indirdik. O ayetleri düşünesiniz ve onlardaki burhan ve apaçık delillerden ibret alasınız diye.

اَلزَّانِيَةُ وَالزَّانِي فَاجْلِدُوا كُلَّ وَاحِدٍ مِنْهُمَا مِائَةَ جَلْدَةٍ وَلَا تَأْخُذْكُمْ بِهِمَا رَأْفَةٌ فِي دِينِ اللّٰهِ اِنْ كُنْتُمْ تُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَلْيَشْهَدْ عَذَابَهُمَا طَٓائِفَةٌ مِنَ الْمُؤْمِنِينَ ﴿٢﴾

2- "Zina eden kadın ve zina eden erkekten her birine yüzer değnek vurun. Allah'a ve ahiret gününe inanıyorsanız, Allah'ın dini konusunda onlara acıyacağınız tutmasın. Mü'minlerden bir topluluk da onların cezalandırılmasına şahit olsun."

Zina hakkındaki ceza şiddetlidir ve pekiştirilmiştir. Ancak Allah onu ispatlamayı, hükmünü karara bağlamayı ve insanların çoğu hakkında varlığına kesin karar vermeyi zorlaştırmış ve uygulanmasını uzak bir ihtimal haline getirmiştir. Çünkü zina hakkındaki şahitlik, şahit: "Ben, erkeğinkini kadınınkinde gördüm" demediği sürece kabul edilmez. Bu ise kolay olmayan bir durumdur. Şanı yüce Allah, o ahlak dışı fiil hakkındaki cezayı büyütmüş sonra ispatındaki durumu son derece zorlaştırmıştır. Yanı sıra bir kimse, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) bunu itiraf ettiği zaman da Hz. Peygamber ona: *"Onu öpmüş olabilirsin, ona dokunmuş olabilirsin"* demiştir. Sahabelerinden kimisine de: *"Ağzını koklayın"* diye emir vermiştir. Hz. Peygamber (s.a.v.) bütün bunları yaparken onu cezadan kurtarmak istemiş ve adam itirafta ısrar edinceye kadar buna devam etmiştir.

( وَلَا تَاْخُذْكُمْ بِهِمَا رَاْفَةٌ فِي دِينِ اللّٰهِ اِنْ كُنْتُمْ تُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ ) *"Allah'a ve ahiret gününe inanıyorsanız, Allah'ın dini konusunda onlara acıyacağınız tutmasın."*

Allah'ın emrettiğini dinleyip kabulle karşılamak gerekir. Rahmet de dinin gereklerinden olup iyi bir şeydir. Mizaç, alışkanlık ve kötülüğün gereği olan husus ise övgüye değmeyen çirkin bir şeydir. Bu arada Allah dini çiğneyen, emri terk eden, edepsizlik yapan ve muhalefet tavrı takınan kimseye merhamet etmekten alıkoymuştur.

Bir yoruma göre de Allah, bizi onlara merhamet etmekten alıkoymakla birlikte kendisi, o çirkin davranışları sebebiyle onlardan iman nişanesini silmemek suretiyle kendilerine merhamet etmektedir. Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur:

*"Zâni, zina ederken mümin olduğu halde zina etmez."*

Bu durumda eğer Allah'ın merhameti olmasaydı, bu çirkin suç ve günahına rağmen zina edenin üzerinde iman elbisesini bırakmazdı.

( وَلْيَشْهَدْ عَذَابَهُمَا طَٓائِفَةٌ مِنَ الْمُؤْمِنِينَ ) *"Mü'minlerden bir topluluk da onların cezalandırılmasına şahit olsun."*

Yani bu şahitlik cezanın onlara daha ağır gelmesi ve bu fiili alışkanlık haline getirenin daha çok korkutulması içindir. Sonra o duruma tanıklık edenlere düşen vazifelerden biri de böyle bir fiil işlememelerinden dolayı Allah'ın, onlar üzerindeki nimetinin büyüklüğünü ve kendilerini nasıl da bundan koruduğunu düşünüp hatırlamalarıdır. Şayet böyle bir fiil işlemişlerse bu kez de onları örtüp rezil etmediği ve bu günah müptelası olan bu kimsenin durumuna düşürmediği için Allah'ın, üzerlerindeki büyük nimetini hatırlamaları gerekir. Bir de bu duruma şahit olan kimsenin izleyeceği yol, bundan dolayı arkadaşını ayıplamaması ve kendisinin de aynı suça kalkışabileceğine dair ilahî hükmü unutmamasıdır.

اَلزَّانِي لَا يَنْكِحُ اِلَّا زَانِيَةً اَوْ مُشْرِكَةً وَالزَّانِيَةُ لَا يَنْكِحُهَٓا اِلَّا زَانٍ
اَوْ مُشْرِكٌ وَحُرِّمَ ذٰلِكَ عَلَى الْمُؤْمِنِينَ ﴿٣﴾

3- "Zina eden erkek, ancak zina eden veya Allah'a ortak koşan bir kadınla evlenir. Zina eden bir kadınla da ancak zina eden veya Allah'a ortak koşan bir erkek evlenir. Bu, mü'minlere haram kılınmıştır."

İnsanlar türlü türlüdür. Bu nedenle herkes kendi benzeriyle beraber olur ve benzeriyle beraber yaşar.

Şiir:

*Sorma kişiyi, sor arkadaşını*
*Uyar arkadaşına her arkadaş*

Bu nedenle, birbirlerine uzak da olsalar bozgunculuk, bozguncuları bir araya getirir. Memleketleri birbirine uzak da olsa dürüstlük, dürüst olanları bir ve beraber kılar.

وَالَّذِينَ يَرْمُونَ الْمُحْصَنَاتِ ثُمَّ لَمْ يَأْتُوا بِأَرْبَعَةِ شُهَدَآءَ
فَاجْلِدُوهُمْ ثَمَانِينَ جَلْدَةً وَلَا تَقْبَلُوا لَهُمْ شَهَادَةً اَبَدًا وَاُولٰٓئِكَ
هُمُ الْفَاسِقُونَ ﴿٤﴾

4- "Namuslu kadınlara zina isnat edip sonra da dört şahit getiremeyenlere seksen değnek vurun. Artık onların şahitliğini asla kabul etmeyin. İşte bunlar yoldan çıkmış kimselerdir."

Allah, Müslümanların ırzlarını mubah saymamaları ve insanlar üzerindeki iffet örtüsünü yırtmamaları için terbiye edilmelerini ve şahit getirmedikleri zaman kendilerine ceza uygulanmasını emretmiştir.

Sonra Allah şahitlerin sayısını yüksek tutmuş ve söz konusu şahitliğin ancak tam yakarışla kabul edilmesini hükme bağlamıştır. Sonra konuyu:

( وَلَا تَقْبَلُوا لَهُمْ شَهَادَةً اَبَدًا ) "*Artık onların şahitliğini asla kabul etmeyin*" sözüyle tamamlamıştır. Bu arada müsned bir hadiste Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur:

*"Sizden her kim, bu çirkinlerden birini işlerse, Allah'ın örtmesiyle örtünsün. Zira kim, bu yaptığını bize açıklarsa, Allah'ın koyduğu cezayı ona uygularız."*

اِلَّا الَّذ۪ينَ تَابُوا مِنْ بَعْدِ ذٰلِكَ وَاَصْلَحُوا فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَح۪يمٌ ٥

5- "Ancak tövbe edip bundan sonra ıslah olanlar müstesna. Çünkü Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Allah, bu kimsenin şahitliğinin kabulü için samimi tövbesini şart koşmuş, tövbesinin samimi oluşuna da ıslah olmasını delil kılmak üzere: "*Islah olanlar*" buyurmuştur. Islah olmak ise tıpkı daha önce Müslümanların ırzlarına leke sürmekle meşhur olduğu gibi tövbesinin üzerinden bu kez de iyilikle meşhur olacak kadar zaman geçmesidir. Bütün bunlar, Müslümanlara karşı zahirini düzelten kimsenin durumunu sıkı tutmak içindir.

وَالَّذ۪ينَ يَرْمُونَ اَزْوَاجَهُمْ وَلَمْ يَكُنْ لَهُمْ شُهَدَٓاءُ اِلَّٓا اَنْفُسُهُمْ فَشَهَادَةُ
اَحَدِهِمْ اَرْبَعُ شَهَادَاتٍ بِاللّٰهِ اِنَّهُ لَمِنَ الصَّادِق۪ينَ ٦ وَالْخَامِسَةُ اَنَّ
لَعْنَتَ اللّٰهِ عَلَيْهِ اِنْ كَانَ مِنَ الْكَاذِب۪ينَ ٧

6, 7- "Eşlerine zina isnat edip de kendilerinden başka şahitleri olmayanlara gelince, onların her birinin şahitliği; kendisinin doğru söyleyenlerden olduğuna dair Allah adına dört defa yemin ederek şahitlik etmesi, beşinci defada da eğer yalancılardan ise Allah'ın lanetinin kendi üzerine olmasını ifade etmesiyle yerine gelir."

وَيَدْرَؤُا عَنْهَا الْعَذَابَ اَنْ تَشْهَدَ اَرْبَعَ شَهَادَاتٍ بِاللّٰهِ اِنَّهُ لَمِنَ الْكَاذِب۪ينَ
٨ وَالْخَامِسَةَ اَنَّ غَضَبَ اللّٰهِ عَلَيْهَٓا اِنْ كَانَ مِنَ الصَّادِق۪ينَ ٩

8, 9- "Kocasının yalancılardan olduğuna dair Allah'ı dört defa şahit getirmesi, beşinci defada da eğer kocası doğru söyleyenlerden ise Allah'ın gazabının kendi üzerine olmasını dilemesi kadından cezayı kaldırır."

Ailesini ahlak dışı bir davranış üzere gören kimse, başkasından olan bir çocuğu kabul etmeye yol açması sebebiyle, sıkıntılı bir duruma düştüğü için din, başkasından olan bir çocuğu kendi çocuğu olarak kabul etmesini yasaklamıştır. Ayrıca kadının ırzına leke sürerek hakkında ahlak dışı davranışla şahitlikte bulunmak da sakıncalı bir durumdur. Çünkü kusur suçlayanda olabilir. Yani durum kocanın iddiasının hilafına olabilir. İşte bu, kritik bir durum olduğu için Allah, lian -lanet lafzı içeren karşılıklı yemin- hükmünü koydu ki husumeti bitirsin ve ahlak dışı davranışa kalkışanı engellemiş olsun. Böylece bu gibi durumlardan bir çıkış yolu bulunmuş olmaktadır.

Eğer Allah her şeye kadir olmasa idi insanlar arasındaki âdet çerçevesinde böyle bir hükmü kim bulabilirdi?! Eğer kaynağını vahiyden alan, Allah ile başlayıp Allah ile biten semavi bir bilgi ve peygamberlik durumu olmasaydı bu mümkün değildi.

وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهُ وَاَنَّ اللّٰهَ تَوَّابٌ حَكِيمٌ ﴿١٠﴾

10- "Allah'ın size lütfu ve merhameti olmasaydı ve Allah tövbeleri kabul eden, hüküm ve hikmet sahibi olmasaydı, haliniz nice olurdu!"

Eğer öyle olmasaydı, siz bu zor olayın içinde öylece kalırdınız ve bu problemli durumdan çıkış yolu bulamazdınız.

اِنَّ الَّذِينَ جَٓاؤُ بِالْاِفْكِ عُصْبَةٌ مِنْكُمْ لَا تَحْسَبُوهُ شَرًّا لَكُمْ بَلْ هُوَ
خَيْرٌ لَكُمْ لِكُلِّ امْرِئٍ مِنْهُمْ مَا اكْتَسَبَ مِنَ الْاِثْمِ وَالَّذِي تَوَلّٰى كِبْرَهُ
مِنْهُمْ لَهُ عَذَابٌ عَظِيمٌ ﴿١١﴾

11- "O ağır iftirayı uyduranlar, sizin içinizden bir güruhtur. Bu iftirayı kendiniz için kötü bir şey sanmayın. Aksine o sizin için bir hayırdır. Onlardan her biri için işledikleri günahın cezası vardır. İçlerinden o günahın büyüğünü üstlenen için ise ağır bir azap vardır."

Bu, Hz. Aişe ve meydana gelen iftira olayının kıssasıdır.

Allah, sevgi ve dostlukta hiç kimseyi belasız ve sıkıntısız kılmadığını açıklamıştır. Bu çerçevede imtihan, Allah'ın en güçlü ilkelerinden, en büyük delillerinden ve en doğru beyanlarındandır. Aynı şekilde Hz. Peygamber de şöyle buyurmuştur:

*"Kişi, dini miktarınca imtihan edilir"*

*"İnsanların, imtihanı en çetin olanları peygamberlerdir. Sonra onlar da faziletlerine göre sıralanırlar."*

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, has kullarının kalpleri hakkında gayret sahibidir. Bu kalpler birbirlerinde huzur buldukları zaman Allah onlardan her birini arkadaşından ayırıp kendisine çeviren bir hüküm icra eder.

Şiir:

*Bir şeye bağlandığı zaman ruhum, asılır*
*Ona günlerin kıskançlıkları, beni koparmak için*

Hz. Peygamber'e (s.a.v.) de: *"En çok sevdiğin insan hangisidir?"* diye sorulduğunda kendisi: *"Aişe'dir"* buyurmuştur. Böylece O, Hz. Aişe'de huzur bulmuştur.

Kimi rivayetlerde yer aldığına göre Hz. Aişe: *"Ey Allah'ın Resûlü! Gerçekten ben seni ve sana yakın olmayı seviyorum"* deyince Allah, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kalbini ondan kendine çevirmek için iftira olayını ortaya koydu ve Hz. Aişe'nin kalbini de Hz. Peygamber'den (s.a.v.) kendine çevirdi. Çünkü Hz. Aişe'nin suçsuz olduğu ortaya çıkınca Hz. Peygamber'e (s.a.v.) şöyle dedi: *"Senin hamdınla değil, Allah'ın hamdıyla Allah onun üzerinden o sıkıntıyı kaldırdı, şüpheyi giderdi, doğru söylediğini ve günahsız olduğunu ortaya çıkardı."*

- Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur:

*"Müminin ferasetinden sakının. Çünkü mümin Allah'ın nuruyla bakar."*

Şimdi feraset müminin vasfı olduğuna göre ferasete en layık olan kimse Hz. Peygamber (s.a.v.) idi. Buna rağmen Hz. Aişe'nin günahsızlığını feraset yoluyla anlayamadı. O kadar ki, Hz. Aişe'ye: *"Eğer öyle bir hata yaptıysan tövbe et!"* diyordu.

Bunun sebebi de şudur: Allah, bela zamanlarında belayı kâmil manada gerçekleştirmek için dostlarının feraset gözlerini kapatır. Nitekim aynı şekilde Hz. İbrahim de melekleri ayırt edip tanıyamamıştır. Zira onları misafir sanmış ve kendilerine pişirilmiş buzağı ikram etmiştir. Hz. Lût da onlar melek olduklarını anlatıncaya kadar kendilerini tanıyamamıştır.

- Hz. Peygamber (s.a.v.) daha önce Hz. Aişe'ye: *"Ey Humeyra!"* diye hitap ediyordu. İftira olayı gerçekleşip onu ebeveyninin evine gönderip anne ve babası onunla beraber yabancılık hissedince ve Hz. Aişe üzüntüden hastalanınca Hz. Peygamber (s.a.v.), Hz. Ebûbekir'in evinden bir kimseyi gördüğü zaman: *"Eviniz nasıldır? Ne Aişe ne de Humeyra değil"* diyordu. Böylece Hz. Peygamber (s.a.v.), onu görmezden gelmekle kendini iyi hissetmiyordu. Hz. Peygamber'in (s.a.v.) demek istediği direkt olmasa da dolaylı olarak anlaşılıyordu.

Sonra Allah: ( لَا تَحْسَبُوهُ شَرًّا لَكُمْ بَلْ هُوَ خَيْرٌ لَكُمْ لِكُلِّ امْرِئٍ مِنْهُمْ مَا اكْتَسَبَ مِنَ الْاِثْمِ ) *"Bu iftirayı kendiniz için kötü bir şey sanmayın. Aksine o sizin için bir hayırdır. Onlardan her biri için, işledikleri günahın cezası vardır"* buyurmuştur. Bu itibarla herkes, günahı miktarınca kendine has günah yüklenmiştir.

لَوْلَٓا اِذْ سَمِعْتُمُوهُ ظَنَّ الْمُؤْمِنُونَ وَالْمُؤْمِنَاتُ بِاَنْفُسِهِمْ خَيْرًا وَقَالُوا هٰذَٓا اِفْكٌ مُبِينٌ ﴿١٢﴾

12- "Bu iftirayı işittiğiniz zaman, iman eden erkek ve kadınlar, kendileri hakkında iyi zan besleyip de: 'Bu, apaçık bir iftiradır' deselerdi ya!"

Allah, hemen itiraz edip Hz. Aişe hakkında kötülükle dil uzatmaları ve Hz. Peygamber'in hanımlarına dokunmamayı terk etmelerinden dolayı onlara itâbta bulunmuş, sonra da şöyle buyurmuştur:

*"Söylediklerine dair şahitler getirselerdi ya! Şahit bulamadıkları zaman, bari susup dil uzatmasalardı ya!"*

لَوْلَا جَٓاؤُ عَلَيْهِ بِاَرْبَعَةِ شُهَدَٓاءَ فَاِذْ لَمْ يَاْتُوا بِالشُّهَدَٓاءِ فَاُو۬لٰٓئِكَ عِنْدَ
اللّٰهِ هُمُ الْكَاذِبُونَ ﴿١٣﴾

13- "Onlar, bu iddialarına dair dört şahit getirselerdi ya! Madem ki şahit getirmediler işte onlar, Allah katında yalancıların ta kendileridir."

وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهُ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ لَمَسَّكُمْ فِي
مَٓا اَفَضْتُمْ فِيهِ عَذَابٌ عَظِيمٌ ﴿١٤﴾

14- "Eğer size dünya ve ahirette Allah'ın lütfu ve merhameti olmasaydı, içine daldığınız bu iftiradan dolayı size mutlaka büyük bir azap dokunurdu."

Çünkü Allah, suçları her ne kadar büyük de olsa, onlar hakkındaki bilgisine etki etmediğini bildirmektedir. Eğer Allah, kendisi için almadığı intikamı dostları için alıyor olmasaydı belki de iftiracıların durumlarını bu kadar abartılı anlatmayacaktı. Zira yabancıların ve kâfirlerin Allah hakkında söyledikleri muhal şeyleri Allah fazlasıyla cezalandırıp her türlü kötülüğü yok edebildiği halde rızklarını kesmemekte ve nimetlerini engellememektedir. Oysa dostlarının haklarıyla ilgili hususlar, özellikle de Hz. Peygamber'in (s.a.v.) hakkı, Allah katında büyüktür.

اِذْ تَلَقَّوْنَهُ بِاَلْسِنَتِكُمْ وَتَقُولُونَ بِاَفْوَاهِكُمْ مَا لَيْسَ لَكُمْ بِهِ عِلْمٌ
وَتَحْسَبُونَهُ هَيِّنًا وَهُوَ عِنْدَ اللّٰهِ عَظِيمٌ ﴿١٥﴾

15- "Hani, o iftirayı dilden dile dolaştırıyor, hakkında hiçbir bilginiz olmayan şeyleri ağzınıza alıp söylüyor ve bunu önemsiz bir iş sanıyordunuz. Halbuki bu, Allah katında büyük bir günahtır."

Allah, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) ve bütün samimi Müslümanların kalplerini inciten davranışlara kalkıştıkları için abartılı bir şekilde onlardan yakınmıştır.

Sonra şöyle buyurmuştur:

( وَتَحْسَبُونَهُ هَيِّنًا وَهُوَ عِنْدَ اللّٰهِ عَظِيمٌ ) *"Bunu önemsiz bir iş sanıyordunuz. Halbuki bu, Allah katında büyük bir günahtır."*

Müminin izleyeceği yol ise Allah'ın emrine uygun hiçbir taatı veya emrine aykırı hiçbir hatayı küçümsememesidir. Çünkü emri yüceltmek, amiri yüceltmek demektir. Nitekim tahkik ehli kimseler fiilin ne olduğuna bakmazlar lakin fiili kimin emrettiğine bakarlar.

Bir yoruma göre de kulun küçümseyici gözle baktığı az hata, bu yüzden pek çok halleri boşa götürür ve pek çok duru içecek kaynağını bulandırır.

Oysa bazen az bir taat vardır ki, kul onu azımsayabilir, ancak hem onun hem de onunla beraber bir âlemin kurtuluşu ona bağlıdır.

وَلَوْلَٓا اِذْ سَمِعْتُمُوهُ قُلْتُمْ مَا يَكُونُ لَنَٓا اَنْ نَتَكَلَّمَ بِهٰذَا سُبْحَانَكَ
هٰذَا بُهْتَانٌ عَظِيمٌ ﴿١٦﴾

16- "Bu iftirayı işittiğiniz vakit: 'Böyle sözleri ağzımıza almamız bize yaraşmaz. Seni eksikliklerden uzak tutarız Allah'ım! Bu, çok büyük bir iftiradır' deseydiniz ya!"

Gıybeti dinlemek de bir nevi gıybettir. Hatta gıybeti dinleyen kimse, gıybet edenlerin en kötüsüdür. Çünkü, ancak onu dinlemesiyle gıybet sahibinin amacı gerçekleşir. Oysa mümin, Müslümanlar hakkında gerçekte vaki olmayan kötü bir söz işittiği zaman vacip olan, o sözü söyleyenine iade etmesidir. Bu konuda tepki göstermeyip susmak da yeterli değildir. O sözün sahibini en güzel nasihat, en ince öğüt ve yaymaktan hoşlandığı şeye iştirak etmediğini göstererek onu yalnızlaştırıcı bir utandırma ile reddetmek gerekir. Şayet bu kimse söylediğinde ısrar ederse mümkün olan bir cevapla

kendisine karşılık verir. Çünkü gıybeti yapan kimse söylediğinden utanmıyorsa, o zaman dinleyicinin ona cevap vermekten utanması uygun olmaz.

يَعِظُكُمُ اللّٰهُ اَنْ تَعُودُوا لِمِثْلِهٖٓ اَبَدًا اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ﴿١٧﴾

17- "Eğer inanıyorsanız, bu gibi şeylere bir daha ebediyen dönmemeniz için Allah size öğüt veriyor."

Ayetin zahirinden dolayı bu konuyla ilgili olarak ortaya çıkan husus şu ki, bundan sonra kim Hz. Aişe'ye dil uzatırsa artık o mümin değildir. Yemin ederim ki, bunu söyleyen kimse büyük günah işlemiş olur ancak onunla imandan çıkmaz. Yani mümin için uygun olan bu konuda konuşmamasıdır. Bu, bir kimsenin şöyle demesine benzemektedir:

*"Eğer sen benim kardeşim isen sıkıntılı durumumda bana yardımcı ol. Şayet bana yardımcı olmaz isen bunun yüzünden kardeşlikten çıkmazsın."*

Bunun anlamı şudur: Kardeşe uygun düşen, tökezlemesi halinde kardeşine yardımcı olmasıdır. Bunu yapmaması ise nesebi geçersiz kılmaz.

وَيُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمُ الْاٰيَاتِ وَاللّٰهُ عَلِيمٌ حَكِيمٌ ﴿١٨﴾

18- "Allah, size ayetleri açıklıyor. Allah her şeyi hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."

اِنَّ الَّذِينَ يُحِبُّونَ اَنْ تَشِيعَ الْفَاحِشَةُ فِي الَّذِينَ اٰمَنُوا لَهُمْ عَذَابٌ
اَلِيمٌ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ وَاَنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ﴿١٩﴾

19- "İnananların arasında hayasızlığın yayılmasını arzu eden kimseler var ya; onlar için dünyada ve ahirette elem dolu bir azap vardır. Allah bilir, siz bilmezsiniz."

Kötülenmeyi hak etmekte bunlar daha çirkin bir konumdadırlar ve Müslümanların rüsva olmalarını istedikleri için günahları daha şiddetlidir. Oysa dinin esaslarından biri de Müslümanlara arka çıkmak, dindarlara yardım etmek ve bütün müminlere hayır dilemektir. Müslümanlar için fitne arzu eden ise yaratıkların en kötüsüdür. Allah, o haliyle ondan razı olmaz ve tevhidin özüne ermeye onu ehil kılmaz.

وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهُ وَاَنَّ اللّٰهَ رَؤُ۫فٌ رَح۪يمٌ ﴿٢٠﴾

20- "Allah'ın lütfu ve rahmeti sizin üzerinize olmasaydı ve Allah çok esirgeyici ve çok merhametli olmasaydı, haliniz nice olurdu!"

Allah, kötülükleri kendilerinden defetmesinin, O'nun lütfu, rahmeti ve güzel bağışıyla olduğunu herkese açıklamak için:( وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهُ ) *"Allah'ın lütfu ve rahmeti sizin üzerinize olmasaydı..."* sözünü tekrarlamıştır. Nitekim herkes, güzel bağışı görmekte ve ondan dolayı şükretmektedir. Allah'ın, kendisinden kötülüğü güzelce defettiğini görüp bundan dolayı O'na hamdeden kul ise nadirdir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا لَاتَتَّبِعُوا خُطُوَاتِ الشَّيْطَانِ وَمَنْ يَتَّبِعْ خُطُوَاتِ الشَّيْطَانِ فَاِنَّهُ يَأْمُرُ بِالْفَحْشَٓاءِ وَالْمُنْكَرِ وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهُ مَا زَكٰى مِنْكُمْ مِنْ اَحَدٍ اَبَدًا وَلٰكِنَّ اللّٰهَ يُزَكّ۪ي مَنْ يَشَٓاءُ وَاللّٰهُ سَم۪يعٌ عَل۪يمٌ ﴿٢١﴾

21- "Ey iman edenler! Şeytanın adımlarına uymayın. Kim şeytanın adımlarına uyarsa bilsin ki o, hayasızlığı ve kötülüğü emreder. Eğer Allah'ın size lütfu ve merhameti olmasaydı, sizden hiçbiriniz asla temize çıkamazdı. Fakat Allah, dilediği kimseyi tertemiz kılar. Allah hakkıyla işitendir, hakkıyla bilendir."

Kalp, vesveselerden arındığı zaman onda nurların ilhamları ortaya çıkar. Kulun hali, bunun da üstüne çıktığı zaman ilhamlar yok

olur ve kalpte Hakk'ın sözleri belirir. Nitekim Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur: *"Şüphesiz daha önceki ümmetler içinde Allah'ın -ilham vererek- konuşturduğu bazı kimseler vardı. Eğer ümmetimde böyle biri varsa o Ömer'dir."*

Adı geçen sözün aslı Allah'a ait olduğuna göre bu kulla birlikte kalan bir bilgi verme olur ve bunda ihtimal, karışıklık ve rahatsız edici bir durum olmaz. Ancak bu özelliğe sahip olan kimse güvenilir olmalı ve mazhar kılındığı keşfin sırrını açıklamamalıdır.

(وَلَوْلَا فَضْلُ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ وَرَحْمَتُهُ مَا زَكٰى مِنْكُمْ مِنْ اَحَدٍ اَبَدًا وَلٰكِنَّ اللّٰهَ يُزَكّٖي مَنْ يَشَٓاءُ وَاللّٰهُ سَمٖيعٌ عَلٖيمٌ) *"Eğer Allah'ın size lütfu ve merhameti olmasaydı, sizden hiçbiriniz asla temize çıkamazdı. Fakat Allah, dilediği kimseyi tertemiz kılar. Allah, hakkıyla işitendir, hakkıyla bilendir."*

Allah onları bütün hallerinde; hem faydalılıkta hem de kötülükleri defetmede, hem darlıkta hem de varlıkta Hak'tan olanı görmeye yönlendirmiştir. Nitekim arınarak gelişmek de, nimetler de Allah'tandır.

Allah şöyle buyurmuştur:

(وَمَا بِكُمْ مِنْ نِعْمَةٍ فَمِنَ اللّٰهِ) *"Size ulaşan her nimet Allah'tandır."* (Nahl, 16/53)

وَلَا يَأْتَلِ اُولُوا الْفَضْلِ مِنْكُمْ وَالسَّعَةِ اَنْ يُؤْتُٓوا اُولِي الْقُرْبٰى
وَالْمَسَاكٖينَ وَالْمُهَاجِرٖينَ فٖي سَبٖيلِ اللّٰهِ وَلْيَعْفُوا وَلْيَصْفَحُوا اَلَا
تُحِبُّونَ اَنْ يَغْفِرَ اللّٰهُ لَكُمْ وَاللّٰهُ غَفُورٌ رَحٖيمٌ ﴿٢٢﴾

22- "İçinizden varlık ve servet sahibi kimseler yakınlara, düşkünlere ve Allah yolunda hicret edenlere bir şey vermeyeceklerine yemin etmesinler. Onlar affetsinler, vazgeçip iyi muamelede bulunsunlar. Allah'ın, sizi bağışlamasını arzu etmez misiniz? Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Hz. Ebûbekir, Hz. Aişe ile ilgili iftira konusunu derinlikli olarak değerlendirdiğinde kendisinde Mistah'tan intikam alma yönünde bir beşeriyet damarı harekete geçmiştir. Mistah, Hz. Ebûbekir'in yardımlarıyla geçiniyordu. Bu olay üzerine Hz. Ebûbekir bu yardımını keserek bunu Hz. Peygamber'e (s.a.v.) anlattı ve Allah'ın bu konudaki emrini beklemeye başladı. Bunun üzerine Allah: ( أُولُوا الْفَضْلِ مِنْكُمْ ) "*İçinizden varlık ve servet sahibi kimseler*..." diye başlayan bu ayeti indirerek Hz. Ebûbekir'de nefis kaynaklı yargılardan ve beşeri arzulardan bir damarın harekete geçmesine rıza göstermedi. Bunun üzerine Hz. Ebûbekir, Mistah'a daha önce yaptığı yardımı tekrar yapmaya başladı. Bu bağlamda iyilik edene iyilik yapmak, benzeriyle mukabelede bulunmak demektir. Ne kötülük ne de iyilik yapana iyilik yapmak lütuftur. Caniye iyilik yapmak ise yiğitlik ve cömertliktir.

Şu dizeler de bu anlamdadır:

*Yeterli görmediler her türlü hatayı affetmeyi*
*Eline bir şeyler ulaştırıp faydalı oluncaya dek*

( وَلْيَعْفُوا وَلْيَصْفَحُوا ) "*Onlar affetsinler, vazgeçip iyi muamelede bulunsunlar.*"

( عفوٌ ) "*afvun*" ve ( صَفحٌ ) "*safhun*" kelimeleri aynı anlamdadır. Allah bu tekrarı ifadeyi pekiştirmek için yapmıştır.

Bir yoruma göre de ( عفوٌ ) "*afvun*" kelimesi fiilleri, ( صَفحٌ ) "*safhun*" ise, kalplerin cinayetlerini bağışlamak anlamında kullanılır.

( اَلَا تُحِبُّونَ اَنْ يَغْفِرَ اللّٰهُ لَكُمْ وَاللّٰهُ غَفُورٌ رَحِيمٌ ) "*Allah'ın, sizi bağışlamasını arzu etmez misiniz? Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir.*"

Bu, Allah'ın lütfunun kemalindendir. Rivayete göre, Allah bu ayeti indirince Hz. Ebûbekir: *"Aksine, arzu ederim ya Rabbi!"* diyerek Mistah'ı affetmiştir. Zaten Allah, dostlarının kalplerinde başkalarından nefret etmeyi bırakmaz. Var eden sadece Allah iken yaratıklar nasıl nefret edebilirler ki!

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Nice atan olmuştur bana eziyet taşlarını*
*Ona acımak zorunda kalmışım oysa ben*
*Dilerim Allah muttali olur*
*Onların hatasına da yakın kılar beni kendine*

اِنَّ الَّذِينَ يَرْمُونَ الْمُحْصَنَاتِ الْغَافِلَاتِ الْمُؤْمِنَاتِ لُعِنُوا فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ ﴿٢٣﴾

23- "İffetli ve kötülüklerden habersiz mümin kadınlara zina isnat edenler, gerçekten dünyada ve ahirette lanetlenmişlerdir ve onlara büyük bir azap vardır."

Allah, haklarında lanet lafzını zikretmek suretiyle onlara yönelik uyarısını ağırlaştırmıştır. İffetli kadınları da habersizlikle yani kendilerine isnat edilenden habersiz olmakla vasıflandırmıştır. Bu nedenle vasıflandırma yermek amaçlı değildir. Aksine, haklarında söylenenlerden uzak olduklarını açıklamak içindir.

Bu arada zina iftirası atanların dünyada ve ahirette lanetlenmeyi hak etmeleri, hatalarının çirkinliği nedeniyle akıbetlerinin değişeceğini ve böylece dünyadan gayrimüslim olarak çıkacaklarını göstermektedir.

يَوْمَ تَشْهَدُ عَلَيْهِمْ اَلْسِنَتُهُمْ وَاَيْدِيهِمْ وَاَرْجُلُهُمْ بِمَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿٢٤﴾

24- "İşlemiş oldukları günahtan dolayı dillerinin, ellerinin ve ayaklarının kendi aleyhlerine şahitlik edecekleri günde (bu azabı tadacaklardır.)"

Yaptıkları sebebiyle, ellerinde olmaksızın, organları aleyhlerinde şahitlik edecektir. Sonra nasıl ki bazı organları aleyhlerinde şahitlik edecekse, bazı organları da lehlerinde şahitlik edecektir. Mesela

göz: "O, benimle baktı" diye şahitlik edeceği gibi: "Benimle ağladı" diye de şahitlik edecektir ki diğer organlar da böyledir.

Bir yoruma göre de organların kıyametteki şahitliği ertelenmiş bir şahitliktir. Oysa sevgiyle ilgili şahitlikleri bugün peşin yapılmaktadır. Bu şahitlik sevgili göründüğünde yüzün sararması, benzin solması, bedenin zayıflaması, göz yaşlarının akması, kalbin çarpması vb. hususlardır.

يَوْمَئِذٍ يُوَفِّيهِمُ اللّٰهُ دِينَهُمُ الْحَقَّ وَيَعْلَمُونَ اَنَّ اللّٰهَ هُوَ الْحَقُّ الْمُبِينُ ﴿٢٥﴾

25- "O gün Allah, onlara amellerinin gerçek karşılığını tastamam verecek ve onlar Allah'ın apaçık bir gerçek olduğunu bileceklerdir."

Allah, onları hak ettikleri ölçüde mükâfatlandıracaktır. Bu çerçevede abidleri, amellerini tam yapmış olmalarına karşılık cennet ve sevapla, arifleri de hallerinin safiyetine karşılık vuslat ve yakınlıkla mükâfatlandıracaktır. Bu itibarla, abidler için yüksek dereceler, arifler için de paha biçilmez müşahedeler ve kesintisiz münacatla ünsiyet vardır.

( وَيَعْلَمُونَ اَنَّ اللّٰهَ هُوَ الْحَقُّ الْمُبِينُ ) *"Onlar, Allah'ın apaçık bir gerçek olduğunu bileceklerdir."*

Bu durumda bilmek zorunlu hale geldiğinden onlar, nazar ve tezekkürden afiyet bulmakta, kalp de tereddüt ve değişim vasıflarından kurtulup rahatlamaktadır. Çünkü basireti sayesinde onun gözle bakmaya ihtiyacı kalmamaktadır.

Bir yoruma göre de onlar yarın sadece doğru şahitlik yapacaklar. Bu itibarla onlar, hakkı Hak için ve Hak ile birlikte yerine getirecekler. Allah, onlara tevhidin sırlarını ve hakikatlerini açıklayacak, onlar adına hüküm icra edecek ve onları bir daha kendilerine döndürmemek üzere kendilerinden alacaktır.

اَلْخَبِيثَاتُ لِلْخَبِيثِينَ وَالْخَبِيثُونَ لِلْخَبِيثَاتِ وَالطَّيِّبَاتُ لِلطَّيِّبِينَ وَالطَّيِّبُونَ لِلطَّيِّبَاتِ اُو۬لٰٓئِكَ مُبَرَّؤُنَ مِمَّا يَقُولُونَ لَهُمْ مَغْفِرَةٌ وَرِزْقٌ كَرِيمٌ ﴿٢٦﴾

26- "Kötü şeyler, kötü kimselere; kötü kimseler de kötü şeylere layıktır. İyi şeyler iyi kimselere; iyi kimseler de iyi şeylere layıktır. O iyi olanlar, iftiracıların söyledikleri şeylerden uzaktırlar. Onlar için bir bağışlanma ve bolca verilmiş iyi bir rızık vardır."

Yasaklardan ibaret olan kötü ameller, o amelleri isteyerek tercih eden kötü adamlara mahsustur. O tür amellere meyleden kimseler de o amellere layıktırlar. Herkes kendisine layık olanla irtibatlıdır. Bu çerçevede davranış onu yapana yakışmakta, yapan da temizlikte, kirlilikte, değerde ve değersizlilikte, şeref ve savurganlıkta kendi davranışına layık olmaktadır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Nefsin arzuları, emel ve şehvetler, sahiplerine ve bunlar için çalışanlara mahsustur. Bu hususlar için çalışanlar da onlara layıktırlar. İkisinden biri, diğerinden alıkonulmaz. Böylece sıfat mevsufuna, mevsuf da sıfatına bağlı olup biri diğerinden ayrılmaz.

- Kötü şeyler, kötü şahıslara mahsustur. Onlar, ilahî rızaya uzak yerlere razı olanlardır. Nitekim köpeklerin yiyecekleri leşlerdir.

- Haram mallar, onlarla mevki edinen ve çabalarını onlara hasredenlere mahsustur. Bu nedenle, kötü adamlar sadece o mallara meylederler. O mallar da sadece o gibi adamlara yarar.

( وَالطَّيِّبَاتُ لِلطَّيِّبِينَ وَالطَّيِّبُونَ لِلطَّيِّبَاتِ ) *"İyi şeyler iyi kimselere; iyi kimseler de iyi şeylere layıktır."*

Taatlardan ve Allah'a yaklaştıran ibadetlerden ibaret olan iyi ameller, iyi kimselere yakışır. Zaten iyi amelleri tercih edip gerçekleştirenler de bu kimselerdir.

Nefsin arzularından arınmış olarak Hakk'ın hakkı olan hususlardan yola çıkmak suretiyle birliktelikleri gerçekleştirmekten ibaret olan iyi haller ise iyi adamlara mahsustur. Bunlar, himmetleri değersiz ve müptezel olan her şeyin üstüne çıkmış olan ve izzet sahibi Allah'a boyun eğmekle güzelleşmek demek olan üst makamlara yükselmiş nefislere sahip bulunan kimselerdir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Dinin karşı çıkmadığı ve içinde hiçbir mahlûkun minneti bulunmayan helal mallar iyi adamlara layıktır. Bunlar varlığa köle olmaktan kurtulmuş hür kimselerdir.

- Tehlike ateşinden uzaklaştırılmış, beşer ahlakının zaaflarından ve şehvet yurtlarında debelenmekten arınmış iyi kadınlar, Hakk'ın hakkını yerine getiren, halkla şehevi arzuları celp etmek için değil, sadece iffetli kalmak için arkadaşlık eden iyi erkekler içindir.

(لَهُمْ مَغْفِرَةٌ وَرِزْقٌ كَرِيمٌ) *"Onlar için bir bağışlanma ve bolca verilmiş iyi bir rızık vardır."*

Onlar için ahirette mağfiret, dünyada ise bolca verilmiş iyi bir rızık vardır. Bu beklenti, tamaha dayalı arayış, minnet züllü ve yorucu telaş olmaksızın kavuştukları rızıktır.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوا لَا تَدْخُلُوا بُيُوتًا غَيْرَ بُيُوتِكُمْ حَتّٰى تَسْتَاْنِسُوا وَتُسَلِّمُوا عَلٰٓى اَهْلِهَا ذٰلِكُمْ خَيْرٌ لَكُمْ لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُونَ ﴿٢٧﴾

27- "Ey iman edenler! Kendi evlerinizden başka evlere geldiğinizi hissettirip ev sahiplerine selam vermeden girmeyin. Bu davranış, sizin için daha hayırlıdır. Düşünüp anlayasınız diye size böyle öğüt veriliyor."

Havastan olan kimseler, ne menkul mallardan ne de girmeye elverişli meskenlerden kendilerine has hiçbir mülk görmezler. Bu nedenle kim kapılarını çalarsa, onlardan hiç kimseye yönelik engelleme ve yasaklama gerçekleşmez. Kendilerine ait olanla ilgili tavırları

budur. Başkalarına ait şeylere gelince, onlar ne tamahtan kaynaklanan bir beklenti, ne isteme yoluyla ne de hoş görünmek suretiyle bu kimselerin elindeki şeylere ilişmezler. Şayet zamanın şartları böyle bir ihtiyacı ortaya koyarsa bu takdirde Allah, elinde bir şeyi olan kimseyi, bunu söz konusu ihtiyaç sahibine taşıması için tevazu ve yakınlaşma adabı çerçevesinde ona yönlendirir. Veli de o şeyi aziz bir şekilde alır. Bu durum, sadece tarikat erbabının hallerine yakışır.

Şu dizeler de bu manada söylenmiştir:

*Kuşkusuz utanırım ben Allah'tan, göründüğümde*
*Bir devenin bile gerçek sahibi olmayan cimrinin esiri olarak*
*Ve utanırım kötü adamdan devesini istemekten*
*Memleketlerde Rabbimin develeri çok iken*

فَاِنْ لَمْ تَجِدُوا فِيهَٓا اَحَدًا فَلَا تَدْخُلُوهَا حَتّٰى يُؤْذَنَ لَكُمْ وَاِنْ قِيلَ
لَكُمُ ارْجِعُوا فَارْجِعُوا هُوَ اَزْكٰى لَكُمْ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ عَلِيمٌ ﴿٢٨﴾

28- "Eğer evde kimseyi bulamazsanız, size izin verilinceye kadar oraya girmeyin. Eğer size: 'Geri dönün' denirse hemen dönün. Çünkü bu, sizin için daha nezih bir davranıştır. Allah, yaptıklarınızı hakkıyla bilendir."

Bu prensip, Allah'ın emrini ve ev sahibinin mahremiyetini korumayı sağlar. Çünkü bir kimse sahibinin izni olmaksızın eve girerse o esnada evde açık bir avret veya ev sahibinin, başkasının muttali olmasını istemediği bir durumu olabilir. O halde izin istemeksizin yanına girmek uygun olmaz.

(وَاِنْ قِيلَ لَكُمُ ارْجِعُوا فَارْجِعُوا هُوَ اَزْكٰى لَكُمْ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ عَلِيمٌ) *"Eğer size: 'Geri dönün" denirse hemen dönün. Çünkü bu, sizin için daha nezih bir davranıştır. Allah, yaptıklarınızı hakkıyla bilendir.'"*

Eğer size: "Geri dönün" denirse siz de dönün. Çünkü o esnada mazeretler mevcut olabilir. Nitekim mülk sahibi, mülkünün durumunu daha iyi bilir.

لَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ تَدْخُلُوا بُيُوتًا غَيْرَ مَسْكُونَةٍ فِيهَا مَتَاعٌ لَكُمْ
وَاللّٰهُ يَعْلَمُ مَا تُبْدُونَ وَمَا تَكْتُمُونَ ﴿٢٩﴾

29- "İçinde size ait bir şey olan, oturanı bulunmayan evlere girmenizde herhangi bir günah yoktur. Allah, açığa vurduklarınızı da gizlediklerinizi de bilir."

İzin alınmadığı takdirde, sahibinin zarar görmeyeceği şeyden yararlanmak konusunda Allah sorumluluk ve sıkıntıyı ortadan kaldırmıştır. Örneğin, başka bir yol bulamayan ve içinde karşılaması gereken bir ihtiyacı bulunan kimsenin, girmesinde sahibine zarar bulunmadığı zaman bir arazinin içine girmesi gibi. Bu, bir kimsenin mülkünün içinde olmayan duvarın gölgesinden yararlanması veya başkasının duvarında asılı bulunan aynaya bakması gibidir. Ancak bütün bunlar kimilerinin sandığı gibi aklın ölçülerine göre değil dine göre mubah sayılır.

قُلْ لِلْمُؤْمِنِينَ يَغُضُّوا مِنْ اَبْصَارِهِمْ وَيَحْفَظُوا فُرُوجَهُمْ ذٰلِكَ
اَزْكٰى لَهُمْ اِنَّ اللّٰهَ خَبِيرٌ بِمَا يَصْنَعُونَ ﴿٣٠﴾

30- "Mü'min erkeklere söyle, gözlerini haramdan sakınsınlar, ırzlarını korusunlar. Bu davranış, onlar için daha nezihtir. Şüphe yok ki Allah, onların yaptıklarından hakkıyla haberdardır."

Zahirî gözlerini haramlardan, kalplerin gözlerini de kötü düşünceden ve gayb âlemini görünen âlem gibi tasavvur etmekten sakınsınlar. Nitekim: *"Şüphesiz göz, helak olmanın sebebidir"* demişlerdir.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Salıverdiğin zaman gözünü sen öncüsü olarak*
*Kalbinin bir gün, yorar seni manzaralar*

Demişlerdir ki:

*"Kim gözlerini salıverirse, ölümüne yol açmış olur."*

Bir de nesnelere gözle bakmak, kalplerin tefrikasına sebep olur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Düşman iblis şöyle der:

*"Eski yayım ve hedefini şaşmaz okum bakmaktır."*

Nitekim mücahede sahipleri kalplerini kötü hislerden korumak istedikleri zaman gözle görülenlere bakmazlar. Bu, riyazet halleriyle ilgili mücahedeleri konusundaki büyük bir temel kurallarıdır.

- Allah, bakmanın tehlikesinin büyüklüğüne dikkat çekmek için burada haramlara bakmaya dair yasağı, ırzı korumakla bir arada anlatarak:

( وَيَحْفَظُوا فُرُوجَهُمْ ) *"ırzlarını korusunlar"* buyurmuştur. Çünkü nazar, zina fiiline kalkışmaya yol açar.

- Kimileri dünyaya bakmazlar. Onlar zahidlerdir. Kimileri varlığa bakmazlar. Onlar irfan ehli kimselerdir. Kimileri de koruma ve heybet ehli olup kalpleriyle başkalarına bakmadıkları gibi kendilerini şuhûda da ehil görmezler. Sonra Allah (c.c.), onların tercihleri, talepleri ve tekellüfleri olmaksızın kendilerini keşif ehli kılar.

وَقُلْ لِلْمُؤْمِنَاتِ يَغْضُضْنَ مِنْ اَبْصَارِهِنَّ وَيَحْفَظْنَ فُرُوجَهُنَّ
وَلَا يُبْدِينَ زِينَتَهُنَّ اِلَّا مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَلْيَضْرِبْنَ بِخُمُرِهِنَّ عَلٰى
جُيُوبِهِنَّ وَلَا يُبْدِينَ زِينَتَهُنَّ اِلَّا لِبُعُولَتِهِنَّ اَوْ اٰبَائِهِنَّ اَوْ اٰبَاءِ
بُعُولَتِهِنَّ اَوْ اَبْنَائِهِنَّ اَوْ اَبْنَاءِ بُعُولَتِهِنَّ اَوْ اِخْوَانِهِنَّ اَوْ بَنٖٓي اِخْوَانِهِنَّ
اَوْ بَنٖٓي اَخَوَاتِهِنَّ اَوْ نِسَائِهِنَّ اَوْ مَا مَلَكَتْ اَيْمَانُهُنَّ اَوِ التَّابِعٖينَ
غَيْرِ اُو۬لِي الْاِرْبَةِ مِنَ الرِّجَالِ اَوِ الطِّفْلِ الَّذٖينَ لَمْ يَظْهَرُوا عَلٰى
عَوْرَاتِ النِّسَٓاءِ وَلَا يَضْرِبْنَ بِاَرْجُلِهِنَّ لِيُعْلَمَ مَا يُخْفٖينَ مِنْ
زٖينَتِهِنَّ وَتُوبُٓوا اِلَى اللّٰهِ جَمٖيعًا اَيُّهَ الْمُؤْمِنُونَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿٣١﴾

31- "Mü'min kadınlara da söyle, gözlerini haramdan sakınsınlar, ırzlarını korusunlar. Görünen kısımlar müstesna, zinet yerlerini göstermesinler. Başörtülerini ta yakalarının üzerine kadar salsınlar. Zinetlerini kocalarından yahut babalarından yahut üvey oğullarından yahut erkek kardeşlerinden yahut erkek kardeşlerinin oğullarından yahut kız kardeşlerinin oğullarından yahut Müslüman kadınlardan yahut sahip oldukları kölelerden yahut erkekliği kalmamış hizmetçilerden yahut da henüz kadınların mahrem yerlerine vakıf olmayan erkek çocuklardan başkalarına göstermesinler. Gizledikleri zinetler bilinsin diye, ayaklarını yere vurmasınlar. Ey mü'minler, hep birlikte tövbe ediniz ki, kurtuluşa eresiniz."

Kadınlara yönelik yükümlülük, erkeklere yönelik yükümlülük gibidir. Çünkü mükellefiyet her iki cinsi de kapsamaktadır. O halde kadınlara vacip olan, mahzurlu durumları terk etmeleridir. Onlar için mendub ve nafile olan da kalplerini kötü meşguliyet ve hislerden korumalarıdır. Sonra eğer bu durumun üstünde bir seviyeye yükselirlerse o zaman da yapmaları gereken kalpleriyle mabuttan başkasını görmemeye çalışmaktır. Allah da rahmetini dilediğine has kılar.

( وَلَا يُبْدِينَ زِينَتَهُنَّ اِلَّا مَا ظَهَرَ مِنْهَا ) *"Görünen kısımlar müstesna, zinet yerlerini göstermesinler."*

Allah'ın fıkıh meseleleriyle ilgili izaha göre mubah kıldığı hususlar yasaktan müstesnadır. Bunların ötesindekiler konusunda ise mü'min kadınlara vacip olan, kendilerini ahiretteki azaplardan korumak ve Allah'ın kulları için fitne sebebi olmaktan korunmaya çalışmaktır. Allah (c.c.) da nasıl ki velilerini din konusunda kendilerine zarar verecek şeylerden koruyorsa aynı şekilde onları, başkaları için fitneye sebep olan şeylerden de korumaktadır. Şayet halka faydaları ulaşmayacaksa, onlar yüzünden kimseye bir fitne de bulaşmaz.

Özetle, kul için zinet vesilesi olan şeyi göstermek caiz değildir. Böylece nasıl ki kadınların bir avret mahalli varsa ve zinetlerini göstermeleri caiz değilse, aynı şekilde kim sırlarının zineti olan hallerinin safiyetini ve amellerinin temizliğini gösterirse zineti kusura

dönüşür. Meğer ki kendi çabası ve zorlaması olmaksızın bir kimsede bir şey görünmüş olsun. Bu kimse tasarruf ve tekellüfüyle olmayan bir husustan sorumlu tutulmadığı için müstesnadır. Bu itibarla, fıkıhta ayrıntılarıyla belirtildiği üzere mahremleri olan kadınların hükmü yasak kapsamının dışında tutulur.

( اَوِ التَّابِع۪ينَ غَيْرِ اُو۬لِي الْاِرْبَةِ مِنَ الرِّجَالِ اَوِ الطِّفْلِ الَّذ۪ينَ لَمْ يَظْهَرُوا عَلٰى عَوْرَاتِ النِّسَٓاءِ ) *"Yahut erkekliği kalmamış hizmetçilerden yahut da henüz kadınların mahrem yerlerine vakıf olmayan erkek çocuklardan başkalarına göstermesinler."*

Bunların tamamı hakkındaki mubahlık ve yasak konusunda dinin kuralları gözetilir.

( وَتُوبُٓوا اِلَى اللّٰهِ جَم۪يعًا اَيُّهَ الْمُؤْمِنُونَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ) *"Ey mü'minler, hep birlikte tövbe ediniz ki kurtuluşa eresiniz."*

Tövbe, çirkin davranışlardan onların zıddı olan iyi davranışlara dönmektir. Bu arada bütün müminler tövbeyle memurdurlar. Bu çerçevede hatadan tövbe etmek avamın tövbesi, gafletten tövbe etmek de havassın tövbesidir. Ayrıca azaptan sakınmanın sebep olduğu tövbe ve emri gözetmekten dolayı yapılan tövbe de vardır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah tövbeyi herkese emretmiştir. Bu emir günahkarlar için günahtan taata dönüş, itaat ehli için taatı görmekten muvaffakiyeti görmeye dönüş, havassın hası için de muvaffakiyeti görmekten muvaffakiyet vereni görmeye dönüş şeklindedir.

- Allah tövbeyi herkese emretmiştir ki, günahkâr kimse tek başına dönüş yapmaktan utanmasın.

- Kendilerine merhamet etmek üzere zayıflarla birlikte güçlülere de yardım etmek keremin göstergelerindendir.

- Allah'ın: ( لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ) *"kurtuluşa eresiniz"* sözünden anlaşılmaktadır ki kullara tövbeyi emretmesinin sebebi, O'nun bu kimselerin tövbeleri ve taatlarıyla güzelleşmesi değil onların bundan faydalanmasıdır.

- İnsanların tövbeye en çok muhtaç olanı, tövbeye muhtaç olmadığını vehmeden kimsedir.

وَاَنْكِحُوا الْاَيَامٰى مِنْكُمْ وَالصَّالِحِينَ مِنْ عِبَادِكُمْ وَاِمَآئِكُمْ اِنْ يَكُونُوا فُقَرَآءَ يُغْنِهِمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهِ وَاللّٰهُ وَاسِعٌ عَلِيمٌ ﴿٣٢﴾

32- "Sizden bekâr olanları, kölelerinizden ve cariyelerinizden durumu uygun olanları evlendirin. Eğer bunlar yoksul iseler Allah onları lütfuyla zenginleştirir. Allah lütfu geniş olandır, hakkıyla bilendir."

Evlenmekten maksat dinin adabı dairesinde yaşamak olduğu zaman, Allah, nefsin ve tabiatın ihtiyaçlarını bereketleriyle yeterince karşılar. Vacip olan amacın iffetli kalmaya, ardından da Allah'ın hakkını yerine getirecek bir nesil ummaya dönük olmasıdır.

( اِنْ يَكُونُوا فُقَرَآءَ يُغْنِهِمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهِ ) *"Eğer bunlar yoksul iseler, Allah onları lütfuyla zenginleştirir."*

Allah onları önce hemen nefis zenginliğiyle sonra da kalp zenginliğiyle zenginleştirir. Kalp zengini, bir şeye ihtiyaç duymayan kimsedir. Bu nedenle dünyaya ihtiyaç duymamak, dünya ile zengin olmaktan daha mükemmeldir.

Bir yoruma göre de eğer o anda fakir iseler Allah onları gelecekte ve sonunda zenginleştirecektir.

وَلْيَسْتَعْفِفِ الَّذِينَ لَا يَجِدُونَ نِكَاحًا حَتّٰى يُغْنِيَهُمُ اللّٰهُ مِنْ فَضْلِهِ وَالَّذِينَ يَبْتَغُونَ الْكِتَابَ مِمَّا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ فَكَاتِبُوهُمْ اِنْ عَلِمْتُمْ فِيهِمْ خَيْرًا وَاٰتُوهُمْ مِنْ مَالِ اللّٰهِ الَّذِيٓ اٰتٰيكُمْ وَلَا تُكْرِهُوا فَتَيَاتِكُمْ عَلَى الْبِغَآءِ اِنْ اَرَدْنَ تَحَصُّنًا لِتَبْتَغُوا عَرَضَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَمَنْ يُكْرِهْهُنَّ فَاِنَّ اللّٰهَ مِنْ بَعْدِ اِكْرَاهِهِنَّ غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿٣٣﴾

33- "Evlenmeye güçleri yetmeyenler de Allah kendilerini lütfuyla zengin edinceye kadar iffetlerini korusunlar. Sahip olduğunuz kölelerden 'mükâtebe akdi' yapmak isteyenlere gelince, eğer onlarda bir hayır görürseniz, onlarla mükâtebe akdi yapın. Allah'ın size verdiği maldan onlara verin. Dünya hayatının geçici menfaatlerini elde etmek için iffetli olmak isteyen cariyelerinizi fuhşa zorlamayın. Kim onları buna zorlarsa, bilinmelidir ki hiç şüphesiz onların zorlanmasından sonra Allah çok bağışlayıcıdır, çok merhametlidir."

Kim, imkânı ailenin nafakasını karşılamaya yetmezse, o andaki sıkıntıya katlanmak konusunda sabretsin. Zira yakında nefsi, o ihtiyacı ortadan kaldırmasını kabul edecektir. Ya da Allah, onun ummadığı yerden vesileyi kendisine kolaylaştırmak lütfunda bulunacaktır. Zaten iffetli olmaya çalışan kimsenin hali, bu durumlardan birinden boş kalmaz.

( وَالَّذِينَ يَبْتَغُونَ الْكِتَابَ مِمَّا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ فَكَاتِبُوهُمْ اِنْ عَلِمْتُمْ فِيهِمْ خَيْرًا وَاٰتُوهُمْ مِنْ مَالِ اللّٰهِ الَّذِي اٰتٰيكُمْ ) *"Sahip olduğunuz kölelerden 'mükâtebe akdi' yapmak isteyenlere gelince, eğer onlarda bir hayır görürseniz, onlarla mükâtebe akdi yapın. Allah'ın size verdiği maldan onlara verin."*

Yani eğer nefisleriniz dinde kardeşleriniz olan kölelerden köleliği, onlardan beklediğiniz bedeli almaksızın kaldırmaya izin verirse, Allah ile yaptığınız alış verişte zarar etmezsiniz. Yok, eğer siz mutlaka bedel almak isteseniz, onlar da mükâtebe -köleyi, ödeyeceği belli bir bedel karşılığında azat etme- akdi talep ederler ve galip zannınızla mükâtebe bedelini ödeyeceklerini bilirseniz, bu takdirde onlarla mükâtebe akdi yapınız.

Bu akdi yaptıktan sonra amacın gerçekleşmesi için her yönüyle yardımlaşın. Bu yardımlaşma mükâtebe bedelinde indirim yapmak, zekattan onlara pay ayırarak yardımcı olmak ve kendisini rahatlatmak üzere, akit yapılan köleye gücüyle orantılı olarak mühlet tanımak şeklinde olur.

Şimdi biz dininin gereği olarak, zavallı kölenin özgürlüğüne kavuşması için bunca şefkati göstermekle memur olduğumuza göre güzel zanna dayanarak Allah'ın kulunu çokça yakarışı, imkânı ölçüsünde daha önce harcadığı çabayla katlandığı zorluk ve umduğu lütfu sebebiyle, cehennemden azat edeceği şeklindeki ümidin dergahına yükselmesi de yerinde olur.

Sonra hadiste şöyle buyrulmuştur:

*"Üzerinde bir dirhem bile borç kaldığı sürece, mükâtebe akdi yapılan kimse köledir."*

Kul da kalbinin özgürlüğüne kavuşmak için çaba harcar. Ancak üzerinde endişelerden, tercihten ve başkalarından bir şey isteme iradesinden bir kalıntı var olduğu sürece o, gerçekte hür olmayıp kamil manada köledir. Bu itibarla, mükâtebe akdi yapılan kimse de üzerinde bir dirhem bile borç kaldığı sürece köledir.

( وَلَا تُكْرِهُوا فَتَيَاتِكُمْ عَلَى الْبِغَاءِ اِنْ اَرَدْنَ تَحَصُّنًا لِتَبْتَغُوا عَرَضَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَمَنْ يُكْرِهْهُنَّ فَاِنَّ اللّٰهَ مِنْ بَعْدِ اِكْرَاهِهِنَّ غَفُورٌ رَحِيمٌ ) *"Dünya hayatının geçici menfaatlerini elde etmek için iffetli olmak isteyen cariyelerinizi fuhşa zorlamayın. Kim, onları buna zorlarsa, bilinmelidir ki hiç şüphesiz onların zorlanmasından sonra Allah çok bağışlayıcıdır, çok merhametlidir."*

Günahkârı hataya sevk eden, onu tökezlemeye davet eden ve Allah'ın emrine muhalefette kendisine yardımcı olan kimsenin üzerinde azap kat kat artar. Onun günahı da başkalarının günahından daha çoktur. Şayet taat ve ibadette yardımcı olsaydı, durum bunun aksine olurdu.

وَلَقَدْ اَنْزَلْنَٓا اِلَيْكُمْ اٰيَاتٍ مُبَيِّنَاتٍ وَمَثَلًا مِنَ الَّذِينَ خَلَوْا مِنْ قَبْلِكُمْ وَمَوْعِظَةً لِلْمُتَّقِينَ ﴿٣٤﴾

34- "Andolsun, biz size açıklayıcı ayetler, sizden önce gelip geçenlerden bir misal ve Allah'a karşı gelmekten sakınanlar için bir öğüt indirdik."

Allah, delilin yüzü üzerinde tozdan bir eser ve probleme yer bırakmamıştır. Aksine yöntemi açıklamış, lambayı yakmış, yolu ışıklandırmış ve delili belirgin kılmıştır. Bu nedenle kim basiret sahibi olmak isterse başına bir sıkıntı gelmez ve yorgunluk hissetmez.

اَللّٰهُ نُورُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ مَثَلُ نُورِهِ كَمِشْكٰوةٍ فِيهَا مِصْبَاحٌ
اَلْمِصْبَاحُ فِي زُجَاجَةٍ اَلزُّجَاجَةُ كَاَنَّهَا كَوْكَبٌ دُرِّيٌّ يُوقَدُ
مِنْ شَجَرَةٍ مُبَارَكَةٍ زَيْتُونَةٍ لَا شَرْقِيَّةٍ وَلَا غَرْبِيَّةٍ يَكَادُ زَيْتُهَا
يُضِيٓءُ وَلَوْ لَمْ تَمْسَسْهُ نَارٌ نُورٌ عَلٰى نُورٍ يَهْدِي اللّٰهُ لِنُورِهِ مَنْ
يَشَٓاءُ وَيَضْرِبُ اللّٰهُ الْاَمْثَالَ لِلنَّاسِ وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ﴿٣٥﴾

35- “Allah, göklerin ve yerin nurudur. O’nun nurunun temsili şudur: Duvarda bir hücre, içinde bir kandil, kandil de bir cam fanus içinde. Fanus, sanki inci gibi parlayan bir yıldız. Mübarek bir ağaçtan ne doğuya ne de batıya ait zeytin ağacından tutuşturulur. Bu ağacın yağı ateş dokunmasa bile neredeyse aydınlatacaktır. Bu, nur üstüne nurdur. Allah, dilediği kimseyi nuruna iletir. Allah, insanlar için misaller verir. Allah, her şeyi hakkıyla bilendir.”

( اَللّٰهُ نُورُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ ) *“Allah, göklerin ve yerin nurudur.”*

Yani Allah, göklerin ve yerin yol göstericisi olup ikisindeki nur O’ndandır. Bir şey kaynağının adını alabilir. Göklerin ve yerin nuru, O’nun tarafından yaratılmış olmaları bakımından O’ndandır. Bu itibarla göklerin ve yerin düzeni, muhkemliği, tertibi en incelikli bir şekilde yaratılmış olması vasfıyla Allah ile gerçekleşmiştir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Göklerin ve yerin nuru, onların aydınlatıcısı, içlerindeki aydınlık ve zinetin yaratıcısı, içlerinde yerleştirdiği apaçık delillerin mucidi demektir.

- Allah, göğü yıldızlarıyla aydınlatarak: ( وَزَيَّنَّا السَّمَاءَ الدُّنْيَا بِمَصَابِيحَ ) *"Biz, en yakın göğü kandillerle süsledik"* (Fussilet, 41/12) buyurmuştur.

( مَثَلُ نُورِهِ كَمِشْكٰوةٍ ) *"O'nun nurunun temsili şudur: Duvarda bir hücre..."*

Allah bununla O'nu tanımaktan ibaret olan müminin kalbinin nurunu kast etmektedir. Bu çerçevede Allah, müminin göğsünü hücreye, göğsünün içindeki kalbini hücredeki kandile, kalbinden ibaret olan kandili inci gibi parlayan bir yıldıza, kalbinin marifetle aydınlanmasını da lambayı çalıştıran saf yağa benzetmiştir. Sonra Allah o yağı saflık derecesi bakımından neredeyse ateş değmeksizin ışık verecek diye vasıflandırmıştır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, müminin marifeti için yağı örnek vermekle Hz. Muhammed Mustafa'nın (s.a.v.) şeriatını ve hanîf dinini kast etmiştir. Bu itibarla Hz. Peygamber (s.a.v.) kıbleleri batı tarafına dönük olan Yahudi ve kıbleleri doğu tarafına dönük olan Hıristiyan değildi.

( نُورٌ عَلٰى نُورٍ ) *"Bu, nur üstüne nurdur."*

Onlar bir nuru çabalarıyla, fikir yürütmeleriyle ve delil aramalarıyla elde etmişler, bir nuru da Allah'ın lütfuyla bulmuşlardır. Bu, Allah'ın burhanlarına eklediği bir beyan veya beyanlarına eklediği bir ayandır. Böylece o, nur üstüne nurdur.

- Allah bununla Hz. Muhammed'in (s.a.v.) kalbini kast etmiştir. Onun marifetinin nuru ise Hz. İbrahim'den ibaret olan bir ağaçtan yakılmıştır. Bu itibarla Hz. Peygamber (s.a.v.) Hz. İbrahim'in dini üzeredir.

( لَا شَرْقِيَّةٍ ) *"Ne doğuya aittir."*

O, güneşin sabah vurmayıp sadece akşamüstü vurduğu doğuya ait olmadığı gibi güneşin akşamüstü vurmayıp sadece sabah vurduğu batıya da ait değildir. Aksine zeytininin tam olgunlaşması ve yağının mükemmel olması için ona gün boyu güneş vurmaktadır.

Bundaki işaret ise şudur:

Onların kalbindeki korku ümitten ayrı değildir. Yoksa ümitsizliğe yaklaşmış olur. Ümitleri de korkudan ayrı değildir. Yoksa emin olmaya yaklaşır. Aksine korkuyla ümit aynı ağırlıkta olup biri diğerine galip gelmemektedir. Onların heybeti ünsiyetleriyle, kabzları bastlarıyla, sahvları mahviyetleriyle, bekâları fenâlarıyla ve şeriatın kurallarını yerine getirmeleri hakikatin ana unsurlarını yaşamalarıyla yan yana durmaktadır.

( شَجَرَةٍ مُبَارَكَةٍ زَيْتُونَةٍ لَا شَرْقِيَّةٍ وَلَا غَرْبِيَّةٍ ) *“Ne doğuya ne de batıya ait zeytin ağacı.”* Yani onların himmetleri ne doğu tarafında, ne batı tarafında, ne ulvi âlemde, ne süfli âlemde, ne cinnî varlıkta, ne insî varlıkta, ne Arş’ta, ne de Kürsî’de durur. O himmetler varlıklar âleminden çıkmış ancak hakikate ulaşmaya yol bulamamıştır. Çünkü Hak ulaşılıp yakalanmaktan münezzehtir. Böylece bu himmetler Hak’tan ayrı kalmışlar ve Hak ile bütünleşmemişlerdir. Bu ise gariplerin sıfatıdır. Nitekim İslam garip başlamış ve tıpkı başladığı gibi garipleşecektir.

- Kalbin nurunun yol açtığı sonuç tedirginliğin devamıdır. Bu tedirginlik, sahibinin tembellik halinde kalmasına müsaade etmez. O kimse, bu sayede düşüncesini kullanmada gece gündüz yol almaya devam etmektedir. Allah da riyaset sevgisi veya kötülük meyli ya da gevşeklik gibi bir şeyin onu çaba harcamanın tezahürlerinden alıkoymaması için muvaffakiyetin nuruyla kendisine yardım eder. Derken gafletinin sabahı aydınlandığı ve fikir yürütmesi yerini bulduğu zaman kaçınılmaz olarak ilim gerçekleşmiş olur. Sonra muamelesinde gördüğü kabz ve bast dolayısıyla yakîni artmaya devam eder. Keşfin artmasıyla ilgili mükâfat ve mücazat, çabanın artması esnasında gerçekleşir. Vecdin gerçekleşmesi ise virdin yerine getirilmesine bağlıdır.

Ondan sonra muamelenin nuru sonra nefisle mücadelenin nuru ve vuslat gündüzünün aydınlığı gelir. Bu arada tevhid güneşleri parlamakta, sırlarının semasında hiçbir bulut, havasında da hiçbir sis

bulunmamaktadır. Allah şöyle buyurur: ( نُورٌ عَلٰى نُورٍ يَهْدِي اللّٰهُ لِنُورِهِ مَنْ يَشَآءُ ) *"Bu, nur üstüne nurdur. Allah, dilediği kimseyi nuruna iletir."*

- Yükümlülük nuru kalpte gerçekleşir ve sahibini muhasebede bulunmaya sevk eder. Bu esnada o, amel defterine ve geçmişte işlediği günahlara baktığı zaman kendisi için müşahede nuru gerçekleşir. Bunun üzerine nefsine sitem etmeye başlar ve pişmanlık acısı çeker. Böylece kastını devam ettirmek ve durgunluk vakitlerinde içinde bulunduğu durumdan arınmak suretiyle bu merhaleyi aşar. Bu istikamet üzere yol aldığı zaman murakabenin nuruyla keşfe mazhar kılınır. O zaman Allah'ın kendisine muttali olduğunu anlamış olur.

Bundan sonra da sırlarda ortaya çıkan bir takım tezahürlerden ibaret olan muhâdaranın nuru gelir. Ondan sonra sıfatların tecellisiyle keşif halinin nuru gelir. Bundan sonra ise müşahede nuru gelir ki bu aşamada kişinin gecesi gündüze, yıldızları aylara, ayları dolunaylara, dolunayları da güneşlere dönüşür. Bundan sonra sıra tevhid nuruna gelir. O zaman Allah'ı birlemenin özellikleriyle arındırma gerçekleşir. Sonra sıra, hiçbir ifadeye sığmayan ve hiçbir işaretin erişemediği duruma gelir. İşte o zaman ifadeler dilsizdir, şahitler kördür ve başkasını görmek imkansızdır. O zaman şu ayetlerde belirtilen tablo ortaya çıkar:

( اِذَا الشَّمْسُ كُوِّرَتْ وَاِذَا النُّجُومُ انْكَدَرَتْ وَاِذَا الْجِبَالُ سُيِّرَتْ وَاِذَا الْعِشَارُ عُطِّلَتْ ) *"Güneş dürüldüğü zaman, yıldızlar bulanıp söndüğü zaman, dağlar yürütüldüğü zaman, gebe develer salıverildiği zaman."* (Tekvîr, 81/1,2,3,4)

( اِذَا السَّمَآءُ انْشَقَّتْ ) *"Gök yarıldığı zaman."* (İnşikâk, 84/1)

İşte bütün bunlar varlığın kısımlarıdır. Kendileri için yoktan var olan şeyler tekrar yok olmuşlardır. İşlerini sevk ve idare eden başkasıdır. Varlıklarını temsil eden de başkasıdır. Allah'ın ahad sıfatı yüce, samed sıfatı aziz, ebediyeti mukaddes ve ilahlığı münezzehtir.

فِي بُيُوتٍ اَذِنَ اللّٰهُ اَنْ تُرْفَعَ وَيُذْكَرَ فِيهَا اسْمُهُ يُسَبِّحُ لَهُ فِيهَا
بِالْغُدُوِّ وَالْاٰصَالِ ﴿٣٦﴾ رِجَالٌ لَا تُلْهِيهِمْ تِجَارَةٌ وَلَا بَيْعٌ عَنْ

ذِكْرِ اللّٰهِ وَاِقَامِ الصَّلٰوةِ وَاِيتَٓاءِ الزَّكٰوةِ يَخَافُونَ يَوْمًا تَتَقَلَّبُ فِيهِ
الْقُلُوبُ وَالْاَبْصَارُ ﴿٣٧﴾

36, 37- "Allah'ın, yüceltilmesine ve içlerinde adının anılmasına izin verdiği evlerde hiçbir ticaretin ve hiçbir alışverişin kendilerini, Allah'ı anmaktan, namazı kılmaktan, zekâtı vermekten alıkoymadığı birtakım adamlar, buralarda sabah akşam O'nu tesbih ederler. Onlar, kalplerin ve gözlerin dikilip kalacağı bir günden korkarlar."

Camiler Allah'ın evleridir. Allah, kabul etmesi için ihtiyaçların camilerde kendisine arz edilmesine izin vermiştir. Bir de Allah o evlerin kadirlerini, onlar dışındaki bina ve eserlerden üstün kılmıştır. Camiler ibadet evleri, kalpler de irade evleridir. Böylece abid, ibadetiyle Allah'ın sevabına erişirken irade sahibi de iradesiyle Allah'a erişir. Bir yoruma göre de kalpler marifetin evleri, ruhlar sevginin alanları, sırlar da müşahedenin yerleridir.

(يُسَبِّحُ لَهُ فِيهَا بِالْغُدُوِّ وَالْاٰصَالِ) *"Sabah akşam O'nu tesbih ederler."*

Bu ayette Allah : *"Ticaret yapmayan, bir şey satın almayan ve bir şey satmayan adamlar"* dememiş de:(رِجَالٌ لَا تُلْهِيهِمْ تِجَارَةٌ وَلَا بَيْعٌ عَنْ ذِكْرِ اللّٰهِ) *"Hiçbir ticaretin ve hiçbir alışverişin kendilerini, Allah'ı anmaktan alıkoymadığı birtakım adamlar"* buyurmuştur. Şayet bu iki durumu -ticaret ile Allah'ı anmayı- bir araya getirmek mümkün olursa hiçbir sakıncası olmaz. Ancak bu imkansız gibidir. Sadece haklarında olup biten işlerden habersiz kılınan büyük insanlar bundan müstesnadır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Onlar, Hakk'ın haklarını nefsin arzularına tercih eden kimselerdir.

- Onlar, müezzinin: "Hayye 'ala's-salâh" sesini duydukları zaman meşgul oldukları ticareti ve alış verişi terk ederek hakkını eda etmek için ayağa kalkan kimselerdir.

- Onlar, şu ayetin kendilerini hiçbir karşılık ve sebep düşünmeksizin Allah'ın zikrini hakikatte yaşamaktan alıkoymadığı kimselerdir:

(يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا هَلْ اَدُلُّكُمْ عَلٰى تِجَارَةٍ تُنْج۪يكُمْ مِنْ عَذَابٍ اَل۪يمٍ) *"Ey iman edenler! Sizi elem dolu bir azaptan kurtaracak bir ticareti size göstereyim mi?"* (Saff, 61/10)

(يَخَافُونَ يَوْمًا تَتَقَلَّبُ ف۪يهِ الْقُلُوبُ وَالْاَبْصَارُ) *"Onlar, kalplerin ve gözlerin dikilip kalacağı bir günden korkarlar."*

Kimileri için o gün sonraya bırakılmış, kimileri için de öne alınmıştır. Bu, o kimselerin içinde bulundukları duruma göre değişmektedir. Çünkü korkunun gerçek mahiyeti, nefeslerin gidiş gelişleriyle beraber cezaları beklemektir.

لِيَجْزِيَهُمُ اللّٰهُ اَحْسَنَ مَا عَمِلُوا وَيَز۪يدَهُمْ مِنْ فَضْلِه۪ وَاللّٰهُ يَرْزُقُ مَنْ يَشَٓاءُ بِغَيْرِ حِسَابٍ ﴿٣٨﴾

38- "Bütün bunları, Allah kendilerini yaptıklarının en güzeli ile mükâfatlandırsın ve lütfundan onlara daha fazlasını versin diye yaparlar. Oysa Allah, dilediğini hesapsız olarak rızıklandırır."

Kim hesap yapmayı ortadan kaldırırsa, kendisine hesap sorulmasını da beraberinde ortadan kaldırmış olur. Kim de isteklerinin esaretinde ise o gün tartı haktır.

Bu arada rızık ruhların rızıkları itibariyle hesapsızdır. Bedenlerin rızıklarına gelince bunlar sınırlı ve sayılıdır. Çünkü bedenlerin rızıkları arzulardan ibarettir. Aynı zamanda rızıklar nimetlerin varlığı ve türlü ikramlardır. Varlığı sınırlı olan varlıklar ise zorunlu olarak sayıya tabidir. Ruhların, cemali ve celali görmesiyle gerçekleşen keşifleri ise kesintisizdir.

وَالَّذ۪ينَ كَفَرُٓوا اَعْمَالُهُمْ كَسَرَابٍ بِق۪يعَةٍ يَحْسَبُهُ الظَّمْاٰنُ مَٓاءًۜ حَتّٰٓى اِذَا جَٓاءَهُ لَمْ يَجِدْهُ شَيْـًٔا وَوَجَدَ اللّٰهَ عِنْدَهُ فَوَفّٰيهُ حِسَابَهُۜ وَاللّٰهُ سَر۪يعُ الْحِسَابِ ﴿٣٩﴾

39- "Kâfir olanlara gelince onların amelleri ıssız bir çöldeki serap gibidir. Susamış kimse onu su sanır. Yanına geldiğinde hiçbir şey bulamaz. Ancak Allah'ı yanında bulur da Allah onun hesabını tastamam görür. Allah hesabı çabuk görendir."

Allah bir de şöyle buyurmuştur:

( وَهُمْ يَحْسَبُونَ اَنَّهُمْ يُحْسِنُونَ صُنْعًا ) *"Oysa onlar, iyi iş yaptıklarını sanırlar."* (Kehf, 18/104)

( وَيَحْسَبُونَ اَنَّهُمْ عَلٰى شَيْءٍ ) *"Kendilerinin bir şey -hakikat- üzerinde olduklarını sanırlar."* (Mücâdele, 58/18)

Her kim serabı şarap -içecek- diye ümit ederse çok beklemeden onun bir hayal olduğunu anlar. Böylece susuzluk artmakta ve ruh çıkmaya çağırmaktadır.

اَوْ كَظُلُمَاتٍ فِي بَحْرٍ لُجِّيٍّ يَغْشٰيهُ مَوْجٌ مِنْ فَوْقِهِ مَوْجٌ مِنْ فَوْقِهِ سَحَابٌ ظُلُمَاتٌ بَعْضُهَا فَوْقَ بَعْضٍ اِذَٓا اَخْرَجَ يَدَهُ لَمْ يَكَدْ يَرٰيهَا وَمَنْ لَمْ يَجْعَلِ اللّٰهُ لَهُ نُورًا فَمَا لَهُ مِنْ نُورٍ ﴿٤٠﴾

40- "Yahut o kâfirlerin halleri, engin bir denizdeki karanlıklar gibidir. Onu dalga üstüne dalga kaplıyor. Üstünde de bulutlar var. Karanlıklar üstüne karanlıklar. İnsan elini çıkarsa neredeyse onu bile göremez. Allah kime nur vermezse, onun için nur diye bir şey yoktur."

Hesabın karanlıkları, tefrikanın bulutları, inkârın geceleri ve şüphenin karanlık geceleri bir araya geldiği zaman bunların sahibi için ne bir lamba ne yıldızlar ne aylar ne de güneşler vardır. Ona azap üstüne azap vardır.

( وَمَنْ لَمْ يَجْعَلِ اللّٰهُ لَهُ نُورًا فَمَا لَهُ مِنْ نُورٍ ) *"Allah kime nur vermezse, onun için nur diye bir şey yoktur."*

Ezelde bir kula kısmet nuru yazılmadığı ve hiçbir bağ ona yardım etmediği zaman onun çalışması, emeği, çabası ve gayreti

sonuç vermez, kısır kalır ve bereketlerine kavuşmaktan ümitsiz kılar. Başlangıçlar sonuçlara galip gelir. Bu nedenle kabulü sağlayan onun ehli olan kişi değildir. Reddedilmek de onun ehli olan kişi tarafından kesp edilmemiştir. Mutlu olan kimse, Allah'ın ezeli ilmindeki saadetle mutludur. Allah kulun, olacağını bildiği fiillerinin gerçekleşmesini dilemiş, bunun böyle olacağını haber vermiş ve sonra bunu haber verdiği, dilediği ve bildiği şekilde icra etmiştir.

Mutsuzluk konusunda da söylenecek olan budur. O halde Allah'ın fiillerinin bir illeti yoktur ve O'na karşı hiç kimsenin delili geçerli değildir.

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ يُسَبِّحُ لَهُ مَنْ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَالطَّيْرُ صَآفَّاتٍ كُلٌّ قَدْ عَلِمَ صَلَاتَهُ وَتَسْبِيحَهُ وَاللّٰهُ عَلِيمٌ بِمَا يَفْعَلُونَ ﴿٤١﴾

41- "Göklerde ve yeryüzünde bulunan kimselerle, sıra sıra kuşların Allah'ı tesbih ettiğini görmez misin? Her biri, duasını ve tesbihini kesin olarak bilmektedir. Allah, onların yapmakta oldukları şeyleri hakkıyla bilendir."

Tesbih iki kısımdır: Biri söz ve anlatımla tesbih, diğeri de delil ve yaratılış şeklindeki tesbihtir. Yaratılış yoluyla tesbih, her yaratıktan, maddeden ve eserden sadır olan genel bir tesbihtir. Bu da biri hayvanlara, diğeri de akıl sahiplerine mahsus olmak üzere iki kısma ayrılır. Akıl sahiplerine mahsus tesbih de basiretle gerçekleşen tesbih ve basiretsiz gerçekleşen tesbih diye iki kısma ayrılır. Bu çerçevede basiretle birlikte olan tesbih makbul, irfandan yoksun olan tesbih ise merduttur.

وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَاِلَى اللّٰهِ الْمَصِيرُ ﴿٤٢﴾

42- "Göklerin ve yerin hükümranlığı Allah'ındır. Dönüş de ancak Allah'adır."

Ayette yer alan ( مُلْكُ ) "*mülk*" kelimesi, "milk" kelimesinin mübalağasıdır. Milk ise var edebilme kudretidir.

Bu itibarla Allah'ın kudreti kapsamındaki şeyler, var olmadan önce yaratanın mülkiyeti altındadır. Aynı şekilde yokluktan varlığa geçerken de var olmadan önce olduğu gibi Allah'ın mülkiyeti altında olma durumlarına kavuşurlar. Bu itibarla, Allah'ın varlıklar üzerindeki mülkü -hükümranlığı- sonradan var olmaz, yok olmaz ve ondan hiçbir şey işlevsizliğe uğramaz.

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ يُزْجِي سَحَابًا ثُمَّ يُؤَلِّفُ بَيْنَهُ ثُمَّ يَجْعَلُهُ رُكَامًا فَتَرَى الْوَدْقَ يَخْرُجُ مِنْ خِلَالِهِ وَيُنَزِّلُ مِنَ السَّمَاۤءِ مِنْ جِبَالٍ فِيهَا مِنْ بَرَدٍ فَيُصِيبُ بِهِ مَنْ يَشَاۤءُ وَيَصْرِفُهُ عَنْ مَنْ يَشَاۤءُ يَكَادُ سَنَا بَرْقِهِ يَذْهَبُ بِالْاَبْصَارِ ﴿٤٣﴾

43- "Görmez misin ki Allah bulutları sevk eder. Sonra onları kaynaştırıp üst üste yığar. Nihayet yağmurun, onların arasından yağdığını görürsün. O, gökten, oradaki dağ gibi bulutlardan dolu indirir de onu dilediğine isabet ettirir, dilediğinden de geri çevirir. Bu bulutların şimşeğinin parıltısı neredeyse gözleri alacak."

Allah âlimlerin kalplerine kendini, olağanüstü hikmetiyle ilgili sanatının delilleriyle ve kudretinin kemaline, ilim ve hikmetinin kuşatıcı oluşuna, irade ve dileğinin geçerliliğine delil olan hususlarla tanıtmaktadır. Böylece kim dikkatle düşünürse yakînin serinliğine kavuşur. Kim de yüz çevirirse inkarın çukuru ve cehaletin karanlıkları içerisinde kalır.

Denizin buharları, Allah'ın kudreti, yürütmesi ve takdiriyle havaya yükselip bulut olur. Sonra onları yağmur yağdırmak istediği bölgeye yönlendirir sonra bulutların içindeki deniz suyu damla damla yağar. Bu arada deniz suyu buharlaşmadan önce tatlı değilken Allah onu tatlı suya çevirir ve bulut onu güçlü bir biçimde indirerek

her bir yere istenen malum miktarda ulaştırır. Bu su, ne mahlûkların çabasıyla havada tutulur veya indirilir ne de yağmadığı yere tedbirle yağdırılır.

يُقَلِّبُ اللّٰهُ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَعِبْرَةً لِاُو۫لِي الْاَبْصَارِ ﴿٤٤﴾

44- "Allah, geceyi ve gündüzü döndürüp duruyor. Şüphesiz bunda basiret sahibi olanlar için bir ibret vardır."

Aynı şekilde Allah, kendisi dışında kalıntı ve eserlerden ibaret olan bütün varlıkları döndürüp durur. Bu, aziz ve alîm olan Allah'ın takdiridir.

وَاللّٰهُ خَلَقَ كُلَّ دَٓابَّةٍ مِنْ مَٓاءٍ فَمِنْهُمْ مَنْ يَمْشِي عَلٰى بَطْنِه۪ وَمِنْهُمْ
مَنْ يَمْشِي عَلٰى رِجْلَيْنِ وَمِنْهُمْ مَنْ يَمْشِي عَلٰٓى اَرْبَعٍ يَخْلُقُ اللّٰهُ
مَا يَشَٓاءُ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرٌ ﴿٤٥﴾

45- "Allah, bütün canlıları sudan yarattı. İşte bunlardan bir kısmı, karnı üzerinde sürünür, kimi iki ayak üzerinde yürür, kimisi de dört ayak üzerinde yürür. Allah, dilediğini yaratır. Çünkü Allah, her şeye hakkıyla gücü yetendir."

Yani Allah her canlıyı babadan ve anneden çıkan bir sudan yaratmıştır. Sonra suyun parçaları eşittir ve benzerdir. Sonra bu su dış ve iç organlara ayrılır. Bu esnada her organ kendine has bir biçime, görünüşe, şekle ve bünyeye sahip olur. Sonra canlıların tüyleri, yünleri, çift tırnakları, tek tırnakları, pençeleri, boyları ve görünüşleri bakımından durumları birbirinden farklı olur. Sonra o su et, yağ, deri, kemik, diş, beyin, sinir, damar ve kıl gibi kısımlara ayrılır. İşte bu duruma ibret alacak şekilde bakıp düşünmek, basiret secdesine ve tahsil gücüne vesile olur.

لَقَدْ اَنْزَلْنَٓا اٰيَاتٍ مُبَيِّنَاتٍ وَاللّٰهُ يَهْد۪ي مَنْ يَشَٓاءُ اِلٰى صِرَاطٍ
مُسْتَق۪يمٍ ﴿٤٦﴾

46- "Andolsun, biz açıklayıcı ayetler indirdik. Allah, dilediği kimseyi doğru yola iletir."

Ayetler apaçıktır ancak Allah kimilerini onlara hidayet eder, kimilerini de şaşkınlık içinde bırakır. Gözü kapanan kimseye güneşin ve yıldızların doğuşu ne fayda verir? Aynı şekilde basireti kapanan kimseye de ilim ve kavrayışın delilleri ne fayda verir?

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Ne faydası olur dünya ehline gözün*
*Aynı olduğu zaman aydınlık ve karanlıklar onun yanında*

وَيَقُولُونَ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَبِالرَّسُولِ وَاَطَعْنَا ثُمَّ يَتَوَلّٰى فَرِيقٌ مِنْهُمْ مِنْ
بَعْدِ ذٰلِكَ وَمَٓا اُو۬لٰٓئِكَ بِالْمُؤْمِنِينَ ﴿٤٧﴾

47- "Onlar: 'Allah'a ve peygambere inandık ve itaat ettik' derler. Sonra da onların bir kısmı, bunun ardından yüz çevirirler. Hâlbuki onlar inanmış değillerdir."

Zahirde teslim olurlar ve dille ikrarda bulunurlar. Sonra da samimi olan kimse dürüstlüğü üzere kalır.

Oysa Müslümanların kılıcının korkusundan veya kötü bir amacı için bu sözü söyleyen kimse daha sonra arkasını döner ve kâfirlerin tarafına geçer.

وَاِذَا دُعُٓوا اِلَى اللّٰهِ وَرَسُولِه۪ لِيَحْكُمَ بَيْنَهُمْ اِذَا فَرِيقٌ مِنْهُمْ
مُعْرِضُونَ ﴿٤٨﴾

48- "Aralarında hüküm vermesi için Allah'a ve peygambere çağrıldıkları zaman, bir de bakarsın ki içlerinden bir grup yüz çevirmektedir."

Onlar rüsva olmalarının sebebinin niyetleriyle ilgili hüküm olduğunu anladılar. Bu nedenle Hz. Peygamber'in (s.a.v.) husumetinde

adil olduğunu anlayan kimse, hükmünden memnun kalmadı. Aynı şekilde içinde kuşku besleyen de haktan kaçar ve kaçış çabası içinde olur.

وَاِنْ يَكُنْ لَهُمُ الْحَقُّ يَاْتُوٓا اِلَيْهِ مُذْعِنِينَ ﴿٤٩﴾

49- "Ama eğer hak kendi lehlerinde ise boyun eğerek ona gelirler."

Onlar bu durumda nefislerine meylederek boyun eğerler. Yoksa iman ederek hükmünü kabul etmezler. Nitekim sağlık ile hastalık arasında gidip gelen hastanın durumu da böyledir. Bu itibarla münafıklar şüphe ile ilim arasında gidip gelirler. Böylece ne kesin olarak reddederler ne de ilme dayanarak kabul ederler. Bu halleriyle onlar şüphenin vadilerinde helak olurlar. Nitekim şu ayetin ifade ettiği de budur:

اَفِي قُلُوبِهِمْ مَرَضٌ اَمِ ارْتَابُوٓا اَمْ يَخَافُونَ اَنْ يَحِيفَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ وَرَسُولُهُ بَلْ اُولٰٓئِكَ هُمُ الظَّالِمُونَ ﴿٥٠﴾

50- "Kalplerinde bir hastalık mı var yoksa şüpheye ve tereddüde mi düştüler? Yoksa Allah ve Resûlünün kendilerine karşı zulüm ve haksızlık edeceğinden mi korkuyorlar? Hayır, işte onlar asıl zalimlerdir."

Onlar ihtimaller çizgisine girince ancak şüphenin karanlıklarına düştüler. Kalplerinde de kesin inanç olmayınca akıllarına gönül ehli kimseler gelmedi.

اِنَّمَا كَانَ قَوْلَ الْمُؤْمِنِينَ اِذَا دُعُوٓا اِلَى اللّٰهِ وَرَسُولِهِ لِيَحْكُمَ بَيْنَهُمْ اَنْ يَقُولُوا سَمِعْنَا وَاَطَعْنَا وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ﴿٥١﴾

51- "Aralarında hüküm vermek için Allah'a ve Resûlüne davet edildiklerinde müminlerin söyleyeceği söz ancak: 'İşittik ve iman ettik' demeleridir. İşte onlar, kurtuluşa erenlerin ta kendileridir."

İmanları tasdikin gereğine uygun olarak gerçek olanların özelliği, içlerinde taşıdıkları hakikati dışa vurmalarıdır. Kim Allah'ın emrine itaat ile mukabelede bulunur ve hükmünü boyun eğmekle karşılarsa işte hakikatte doğru olanlar, tarikatta yol alanlar ve güvenceyi elde edenler onlardır.

وَمَنْ يُطِعِ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ وَيَخْشَ اللّٰهَ وَيَتَّقْهِ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْفَٓائِزُونَ ﴿٥٢﴾

52- "Kim, Allah'a ve Rasûlüne itaat eder, Allah'tan korkar ve O'na karşı gelmekten sakınırsa, işte onlar başarıyı elde edenlerin ta kendileridir."

وَاَقْسَمُوا بِاللّٰهِ جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ لَئِنْ اَمَرْتَهُمْ لَيَخْرُجُنَّ قُلْ لَا تُقْسِمُوا
طَاعَةٌ مَعْرُوفَةٌ اِنَّ اللّٰهَ خَبِيرٌ بِمَا تَعْمَلُونَ ﴿٥٣﴾

53- "Münafıklar, sen kendilerine emrettiğin takdirde mutlaka savaşa çıkacaklarına dair en ağır bir şekilde Allah'a yemin ettiler. De ki: 'Yemin etmeyin! Sizden istenen, güzelce itaat etmektir. Şüphesiz Allah, yaptıklarınızdan hakkıyla haberdardır.'"

Onlar Allah'a en ağır yemini ettiler ve gelecekte savaşa çıkmayı onlara emretmesi halinde itaat edeceklerine dair kendi adlarına söz verdiler. Bunun üzerine Allah şöyle buyurdu:

*"Yerine getirmeyeceğiniz malum olan bir şeye söz vermeyin. Zira zamanında itaatte bulunmak, söz vererek savsaklamaktan iyidir."*

Sonra Allah şöyle buyurdu:

*"Ey Muhammed! De ki: 'Allah'a ve Resûlüne itaat edin.' Eğer kabul ederlerse, her iki dünyada mutlu olurlar ve kendilerine iyilik ederler. Şayet kabul etmekten yüz çevirirlerse bu takdirde sadece kendilerine zarar verirler. Gelecekte pişmanlık onların olacaktır ve kötü akıbetleriyle yüzleşeceklerdir. Peygamberlere düşen görev ise sadece güzel tebliğde bulunmaktır. Bir de kıyamet günü herkese kitabı -amel defteri- verilecek ve nefsinin hesabına göre muamele görecektir."*

قُلْ اَطِيعُوا اللّٰهَ وَاَطِيعُوا الرَّسُولَ فَاِنْ تَوَلَّوْا فَاِنَّمَا عَلَيْهِ مَا حُمِّلَ
وَعَلَيْكُمْ مَا حُمِّلْتُمْ وَاِنْ تُطِيعُوهُ تَهْتَدُوا وَمَا عَلَى الرَّسُولِ اِلَّا
الْبَلَاغُ الْمُبِينُ ﴿٥٤﴾

54- "De ki: 'Allah'a itaat edin, peygambere itaat edin.' Eğer yüz çevirirseniz bilin ki ona yüklenen sorumluluğu ancak ona ait; size yüklenen görevin sorumluluğu da yalnızca size aittir. Eğer ona itaat ederseniz doğru yola erersiniz. Peygambere düşen, ancak apaçık bir tebliğdir."

وَعَدَ اللّٰهُ الَّذِينَ اٰمَنُوا مِنْكُمْ وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ لَيَسْتَخْلِفَنَّهُمْ فِي
الْاَرْضِ كَمَا اسْتَخْلَفَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ وَلَيُمَكِّنَنَّ لَهُمْ دِينَهُمُ
الَّذِي ارْتَضٰى لَهُمْ وَلَيُبَدِّلَنَّهُمْ مِنْ بَعْدِ خَوْفِهِمْ اَمْنًا يَعْبُدُونَنِي لَا
يُشْرِكُونَ بِي شَيْئًا وَمَنْ كَفَرَ بَعْدَ ذٰلِكَ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْفَاسِقُونَ ﴿٥٥﴾

55- "Allah içinizden iman edip de salih amel işleyenlere kendilerinden önce geçenleri egemen kıldığı gibi onları da yeryüzünde mutlaka egemen kılacağına, onlar için hoşnut ve razı olduğu dinlerini iyice yerleştireceğine, yaşadıkları korkularının ardından kendilerini mutlaka emniyete kavuşturacağına dair vaatte bulunmuştur. Onlar bana kulluk eder ve bana hiçbir şeyi ortak koşmazlar. Artık bundan sonra kimler inkâr ederse işte onlar fâsıkların ta kendileridir."

Allah'ın vaadi haktır ve sözü doğrudur. Ayet aynı zamanda dört büyük halifenin halifeliklerinin yerinde olduğunu da göstermektedir. Çünkü bugüne kadar hiç kimsenin fazilette onların önüne geçemediği icma ile sabit olmuştur. Bu itibarla onların imametleri kesindir ve Allah'ın onlar hakkındaki vaadi yerine gelmiştir. Onlar, Allah tarafından rıza gösterilen dine bağlı kimselerdir. Aynı zamanda onlar, korkularından sonra güvene kavuşmuşlar, Müslümanların

yönetimini üstlenmişler ve İslam'ın sınırlarını en güzel şekilde savunmuşlardır.

Ayette aynı zamanda dinin rükünlerine, İslam'ın dayanaklarına, Allah'ın kullarına nasihatte bulunan ve Allah rızası için hidayete ermek isteyenlere yol gösteren kimseler olan din önderlerine de işaret vardır. Çünkü zalim yöneticiler yüzünden Müslümanların durumunda meydana gelen bozulmanın zararı, dünya ahkamıyla ilgili hususlarla sınırlıdır. Dinin koruyucuları ise âlimlerden oluşan önderlerdir ki bunlar da birkaç sınıftır:

Onlardan bazıları, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) hadisleri ve Kur'an'ın koruyucularıdır. Bunlar, haznedarlar mesabesindedir. Bazıları da inat ehline ve bidat sahiplerine açık delillerle cevap veren usul âlimleridir. Bunlar da İslam'ın bahadırları ve kahramanlarıdır.

Bazıları da şeriat ilimleri konusunda kendilerine baş vurulan fıkıh âlimleridir. Bu ilimlerin başlıcaları ibadetler, muamelat konuları, evlilik ve boşanma meseleleriyle ilgili hükümler, cinayetler ve diyetlerin hükmü, yeminler, nezirler, davalar ve anlaşmazlıklarda hakemlik gibi hususlardır. Bunlar, yönetimde vekiller ve mutasarrıflar mesabesindedir.

Diğer bazıları da marifet ehli ve hakikat sahipleridir. Bunlar, dindeki yerleri bakımından hükümdarın has adamları ve sultanın meclisinin üyeleri gibidirler. İşte din kıyamet gününe kadar farklı sınıflar halindeki bu önderlerle mamur olur.

وَاَقِيمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ وَاَطِيعُوا الرَّسُولَ لَعَلَّكُمْ
تُرْحَمُونَ ﴿٥٦﴾

56- "Namazı dosdoğru kılın, zekâtı verin, Peygambere itaat edin ki size merhamet edilsin."

لَا تَحْسَبَنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا مُعْجِزِينَ فِي الْاَرْضِ وَمَاْوٰيهُمُ النَّارُ
وَلَبِئْسَ الْمَص۪يرُ ﴿٥٧﴾

57- "İnkâr edenlerin, Allah'ı yeryüzünde aciz bırakacaklarını sanma. Onların varacağı yer cehennemdir. Ne kötü varış yeridir o!"

Bâtılın bazen şansı yaver gidebilir. Lakin bu hayali olup kalıcılığı bulunmamakta ve aşırı öfkeden kaynaklanan geçici bir durumdan daha az devam etmektedir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا لِيَسْتَاْذِنْكُمُ الَّذ۪ينَ مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ وَالَّذ۪ينَ
لَمْ يَبْلُغُوا الْحُلُمَ مِنْكُمْ ثَلٰثَ مَرَّاتٍ مِنْ قَبْلِ صَلٰوةِ الْفَجْرِ
وَح۪ينَ تَضَعُونَ ثِيَابَكُمْ مِنَ الظَّه۪يرَةِ وَمِنْ بَعْدِ صَلٰوةِ الْعِشَٓاءِ
ثَلٰثُ عَوْرَاتٍ لَكُمْ لَيْسَ عَلَيْكُمْ وَلَا عَلَيْهِمْ جُنَاحٌ بَعْدَهُنَّ
طَوَّافُونَ عَلَيْكُمْ بَعْضُكُمْ عَلٰى بَعْضٍ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمُ
الْاٰيَاتِ وَاللّٰهُ عَل۪يمٌ حَك۪يمٌ ﴿٥٨﴾

58- "Ey iman edenler! Ellerinizin altında bulunan köleleriniz ve sizden henüz buluğ çağına ermemiş olanlar, günde üç defa; sabah namazından önce, öğleyin elbiselerinizi çıkardığınız vakit ve yatsı namazından sonra sizden izin istesinler. Bu üç vakit, sizin soyunup döküldüğünüz vakitlerdir. Bu vakitler dışında ne size ne onlara bir günah vardır. Birbirinizin yanına girip çıkabilirsiniz. Allah, ayetlerini size işte böylece açıklar. Allah, hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Allah durumu bir yönden daraltmış, bir yönden de genişletmiştir. O, ihtiyatın, din hükümleriyle ilgili güzel bir siyaset tarzının, mahremiyetlerin ve fitne korkularından kurtuluşun dikkate alınmasını emretmiştir. Nitekim çevre koruma altında olduğu zaman korkulardan emin olunur.

وَاِذَا بَلَغَ الْاَطْفَالُ مِنْكُمُ الْحُلُمَ فَلْيَسْتَاْذِنُوا كَمَا اسْتَاْذَنَ الَّذ۪ينَ
مِنْ قَبْلِهِمْ كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمْ اٰيَاتِه۪ وَاللّٰهُ عَل۪يمٌ حَك۪يمٌ ﴿٥٩﴾

59- "Çocuklarınız erginlik çağına geldiklerinde, kendilerinden öncekilerin izin istedikleri gibi izin istesinler. İşte Allah, ayetlerini size böyle açıklar. Allah hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."

وَالْقَوَاعِدُ مِنَ النِّسَآءِ الّٰتِي لَا يَرْجُونَ نِكَاحًا فَلَيْسَ عَلَيْهِنَّ جُنَاحٌ
اَنْ يَضَعْنَ ثِيَابَهُنَّ غَيْرَ مُتَبَرِّجَاتٍ بِزِينَةٍ وَاَنْ يَسْتَعْفِفْنَ خَيْرٌ لَهُنَّ
وَاللّٰهُ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٦٠﴾

60- "Artık evlenme ümidi beslemeyen, hayızdan ve doğumdan kesilmiş yaşlı kadınların zinetlerini göstermeksizin dış elbiselerini çıkarmalarında kendileri için bir günah yoktur. Ama yine sakınmaları onlar için daha hayırlıdır. Allah hakkıyla işitendir, hakkıyla bilendir."

Fitne sebeplerinin ve şehvet hükümranlığının istilasının sırlar üzerinde zararlı etkisi olur. O duygu fırtınası dindiği zaman ise iş kolaylaşır, ruhsatlar mubah kılınır ve fitneden emin olunur.

لَيْسَ عَلَى الْاَعْمٰى حَرَجٌ وَلَا عَلَى الْاَعْرَجِ حَرَجٌ وَلَا عَلَى
الْمَرِيضِ حَرَجٌ وَلَا عَلٰٓى اَنْفُسِكُمْ اَنْ تَاْكُلُوا مِنْ بُيُوتِكُمْ اَوْ
بُيُوتِ اٰبَآئِكُمْ اَوْ بُيُوتِ اُمَّهَاتِكُمْ اَوْ بُيُوتِ اِخْوَانِكُمْ اَوْ بُيُوتِ
اَخَوَاتِكُمْ اَوْ بُيُوتِ اَعْمَامِكُمْ اَوْ بُيُوتِ عَمَّاتِكُمْ اَوْ بُيُوتِ
اَخْوَالِكُمْ اَوْ بُيُوتِ خَالَاتِكُمْ اَوْ مَا مَلَكْتُمْ مَفَاتِحَهُٓ اَوْ صَدِيقِكُمْ
لَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ اَنْ تَاْكُلُوا جَمِيعًا اَوْ اَشْتَاتًا فَاِذَا دَخَلْتُمْ
بُيُوتًا فَسَلِّمُوا عَلٰٓى اَنْفُسِكُمْ تَحِيَّةً مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ مُبَارَكَةً طَيِّبَةً
كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمُ الْاٰيَاتِ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ﴿٦١﴾

61- "Köre güçlük yoktur, topala güçlük yoktur, hastaya da güçlük yoktur. Kendi evlerinizde veya babalarınızın evlerinde veya annelerinizin evlerinde veya erkek kardeşlerinizin evlerinde veya kız kardeşlerinizin evlerinde veya amcalarınızın evlerinde veya halalarınızın evlerinde veya dayılarınızın evlerinde veya teyzelerinizin evlerinde veya anahtarlarına sahip olduğunuz evlerde ya da dostunuzun evlerinde yemek yemenizde de bir sakınca yoktur. Bir arada veya ayrı ayrı olarak yemek yemenizde de bir sakınca yoktur. Evlere girdiğiniz zaman birbirinize, Allah katında mübarek ve hoş bir esenlik dileği olarak selam verin. İşte Allah, düşünesiniz diye ayetleri size böyle açıklar."

Mazeretler söz konusu olduğu zaman imtihan ve tercih kolaylaşır. Yakınlık gerçekleştiği zaman da yalnızlık ortadan kalkar. Yakınlık samimi olduğu zaman, tefrika ve yabancılık yok olur. İşte bu ayetin şahitliğiyle, bu şartlar yok olduğu zaman bolca yararlanmak yerinde olur.

Sonra Allah: ( أَوْ صَدِيقِكُمْ ) "*ya da dostunuzun evinde*" buyurmuştur. Dostlukta dürüst olan kimse azizdir. Onun içi de görünen dışı gibidir. Aziz dost, yüz yüze ayna gibi arkanda da makas gibi olmaz.

Ben de bu mealde şu dizeleri söyledim:

*Kim bulur bana gönlümün dostluğuna güveneceği birini*
*Ahdinden sapmayan göçüp gittiği zaman*
*Neler çekerim ben bir kardeşten ki bahşeder*
*Güzel vefayı sözüyle, parasıyla değil*
*Safiyeti ahlakıyla değil, lafıyla ortaya koyar*
*Ve zehir katar balının tatlılığına gizliden*
*Gösterirken dili gerdanlığının mücevherlerini*
*Kaynatır ruhunu kininin kazanları*
*Allah'ım! Dayanamam ben onunla hemhal olmaya*
*Sana sığınırım ben hasuttan ve tuzağından*

Gerçek dost, bu ve buna benzer hasletlerinden emin olunabilen kimsedir.

( فَاِذَا دَخَلْتُمْ بُيُوتًا فَسَلِّمُوا عَلٰى اَنْفُسِكُمْ تَحِيَّةً مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ مُبَارَكَةً طَيِّبَةً كَذٰلِكَ يُبَيِّنُ اللّٰهُ لَكُمُ الْاٰيَاتِ لَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ) *"Evlere girdiğiniz zaman birbirinize Allah katında mübarek ve hoş bir esenlik dileği olarak selam verin. İşte Allah düşünesiniz diye ayetleri size böyle açıklar."*

Selam, güvence demektir. Müminin yöntemi, bir eve girdiği zaman Allah'ın selamını kendine vermesidir. Yani nefsinin Allah'ın rıza göstermediği bir şeye kalkışmaktan salim kalması için O'ndan güven ve esenlik dilemesidir. Çünkü Allah'ın, üzerindeki koruyucu gölgesini kaldırmaması için müminin bir an bile O'na sığınmakta gevşeklik göstermesi helal olmaz. Allah'ın koruyucu gölgesi, mümini dinde caiz olmayan bir vasıf taşımaktan korumayı sürdürmesi şeklinde olur.

اِنَّمَا الْمُؤْمِنُونَ الَّذِينَ اٰمَنُوا بِاللّٰهِ وَرَسُولِهِ وَاِذَا كَانُوا مَعَهُ عَلٰى اَمْرٍ جَامِعٍ لَمْ يَذْهَبُوا حَتّٰى يَسْتَاْذِنُوهُ اِنَّ الَّذِينَ يَسْتَاْذِنُونَكَ اُو۬لٰٓئِكَ الَّذِينَ يُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَرَسُولِهِ فَاِذَا اسْتَاْذَنُوكَ لِبَعْضِ شَاْنِهِمْ فَاْذَنْ لِمَنْ شِئْتَ مِنْهُمْ وَاسْتَغْفِرْ لَهُمُ اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿٦٢﴾

62- "Mü'minler ancak Allah'a ve peygamberine inanan, onunla beraber toplumu ilgilendiren bir iş üzerindeyken ondan izin almadan çekip gitmeyen kimselerdir. Senden izin isteyenler var ya, işte onlar Allah'a ve Resûlüne iman eden kimselerdir. O halde bazı işlerini görmek için senden izin isterlerse, içlerinden dilediğine izin ver ve onlar için Allah'tan bağışlama dile. Şüphesiz Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Tabi olmanın şartı, tabi olunana uymak ve hiziplere dönüşecek şekilde ayrılığa düşmemektir. Tıpkı Allah'ın şu ayette buyurduğu gibi:

( تَحْسَبُهُمْ جَمِيعًا وَقُلُوبُهُمْ شَتّٰى ) *"Sen, onları toplu sanırsın. Halbuki kalpleri darmadağınıktır."* (Haşr, 59/14)

*"Âlimler ise peygamberlerin vârisleridir."*

Müridlerin şeyhlerine karşı olan durumu da tıpkı ümmetin peygamberlerine karşı olan durumu gibidir. Bu itibarla müridliğin şartı, müridin şeyhinin izni olmadan bir nefes bile alıp vermemesidir. Her kim gizli veya açık, bir nefeste bile şeyhine muhalefet ederse sonucunu istemediği bir şekilde hemen görür. Bu arada şeyhlere gizlice muhalefet etmek, açıktan yapılan muhalefetten çok daha ağırdır. Çünkü bu hıyanete girer. Kim şeyhine muhalefet ederse, doğruluğun kokusunu bile alamaz. Şayet kendisinden böyle bir şey gerçekleşirse süratle özür dilemeli ve kendisinden hasıl olan muhalefeti ve hıyaneti açıklamalıdır. Ta ki şeyhi ona suçunun kefareti olacak yolu göstersin ve hakkında vereceği hükümle cezasını çeksin. Mürid, samimi bir şekilde şeyhine döndüğü zaman ise himmetiyle müridin kusurunu telafi etmek şeyhe vacip olur. Çünkü müridler şeyhlerin uhdesindeki aile fertleri gibidirler. Kusurlarını telafi edecek şekilde kendi hallerinin kuvvetinden müridlere infakta bulunmak şeyhlere farz kılınmıştır.

لَا تَجْعَلُوا دُعَٓاءَ الرَّسُولِ بَيْنَكُمْ كَدُعَٓاءِ بَعْضِكُمْ بَعْضًا قَدْ يَعْلَمُ اللّٰهُ
الَّذٖينَ يَتَسَلَّلُونَ مِنْكُمْ لِوَاذًا فَلْيَحْذَرِ الَّذٖينَ يُخَالِفُونَ عَنْ اَمْرِهٖٓ اَنْ
تُصٖيبَهُمْ فِتْنَةٌ اَوْ يُصٖيبَهُمْ عَذَابٌ اَلٖيمٌ ﴿٦٣﴾

63- "Peygamberin çağırmasını, aranızda birbirinizi çağırmanız gibi tutmayın. İçinizden birbirini siper ederek sıvışıp gidenleri Allah gerçekten bilir. Artık onun emrine muhalefet edenler, başlarına bir belanın gelmesinden veya elem dolu bir azaba uğramaktan sakınsınlar."

Yani hitapta peygamberi yüceltin, hizmetinde edebi koruyun, heybet ve saygıyı gözeterek ona itaati kabul edin.

( فَلْيَحْذَرِ الَّذٖينَ يُخَالِفُونَ عَنْ اَمْرِهٖٓ اَنْ تُصٖيبَهُمْ فِتْنَةٌ اَوْ يُصٖيبَهُمْ عَذَابٌ اَلٖيمٌ ) *"Artık onun emrine muhalefet edenler, başlarına bir belanın gelmesinden veya elem dolu bir azaba uğramaktan sakınsınlar."*

Her iki dünyanın mutluluğu sünnete uymaya bağlıdır. Her iki dünyanın mutsuzluğu da sünnete muhalefettedir. Hz. Peygamber'in (s.a.v.) sünnetine muhalefet eden kimsenin başına gelecek olan en hafif musibet, ona uymaktan mahrum kalmak, daha sonra uymanın imkânsız hale gelmesi ve her iki dünyanın hayâ ve terbiyesinin kalbinden çıkmasıdır.

اَلَآ اِنَّ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ قَدْ يَعْلَمُ مَٓا اَنْتُمْ عَلَيْهِ وَيَوْمَ
يُرْجَعُونَ اِلَيْهِ فَيُنَبِّئُهُمْ بِمَا عَمِلُوا وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ﴿٦٤﴾

64- "Bilmiş olun ki, şüphesiz göklerdeki her şey Allah'ındır. O, içinde bulunduğunuz durumu gerçekten bilir. Allah'a döndürülecekleri ve yaptıklarını Allah'ın onlara vereceği günü hatırla. Allah, her şeyi hakkıyla bilendir."

Şüphesiz bugünün yarını ve kulun yapmakta olduğunun bir hesabı vardır. Kul da küçük veya büyük, iğneden ipliğe ne varsa hepsinden sorumlu tutulacaktır.

سورة الْفُرْقَانِ

# FURKÂN SÛRESİ

(Furkan Sûresi, Mekke döneminin ortalarında inmiş olup, 77 âyettir. 68-70 arası üç âyetin Medine'de indiği rivayet edilmiştir. Adını ilk âyette geçen, "Furkan (hakkı bâtıldan ayıran)" dan almıştır. Furkan; Tevrat ve Kur'an'ın ortak sıfatıdır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle yüce bir varlığın adıdır ki, celaline fiilleri şahitlik etmekte, cemalini lütufları dile getirmekte, varlığını ayetleri göstermekte, sıfatlarını ise eserleri haber vermektedir.

"Bismillah" öyle aziz bir varlığın adıdır ki akıl sahipleri O'nu fiillerinin delaletleriyle, seçkinler de O'nu celalini ve cemalini hak edişiyle tanımışlardır. Cemalinin letafetiyle cömertliğini, celalinin keşfiyle de varlığını anlamışlardır.

"Bismillah" öyle aziz bir varlığın adıdır ki O'na dua edenin duasını kabul eder, O'na tevekkül edene kâfi olur, O'na tevessül edene ikramda bulunur ve kendisini barındırır, O'na şikâyette bulunanın şikâyetini kabul eder, O'ndan dilekte bulunanın da dileğini yerine getirir ve istediğini verir.

تَبَارَكَ الَّذِي نَزَّلَ الْفُرْقَانَ عَلٰى عَبْدِهِ لِيَكُونَ لِلْعَالَمِينَ نَذِيرًا ﴿١﴾

1- "Âlemlere bir uyarıcı olsun diye kuluna Furkân'ı indiren Allah'ın şanı yücedir."

Kuşun su üzerindeki duruşu uzadığı zaman ( بَرَكَ الطيرُ علَى الماءِ ) "*Kuş suyun üzerinde uzun kaldı*" denir. Develerin geceleyin kaldıkları yerlere de ( مَبارِكُ الإبِل ) denir. Ayetteki ( تبارَكَ ) "*tebâreke*" lafzı da ( تفاعَلَ ) "*tefâale*" vezninde bir fiil olup Allah'ın varlığının devamını ve başlangıcı ve nihayeti olmaksızın, sübutunun kadim, vücudunun da kalıcı oluşunu hak ettiğini ifade etmektedir.

Tefsir kitaplarında "tebâreke" lafzı azamet ve yücelik diye açıklanmıştır. Kimilerine göre ise bu lafız, artış ve fayda anlamındaki "bereket" kökünden gelmektedir. Bu durumda devamlılığı varlığını, yüceliği de zatının yüce sıfatını hak ettiğini ifade eder. Bereket veya artış ise O'nun ihsanına ve lütfuna işaret etmektedir.

O halde Allah'a övgünün çeşitleri şu üç şekille sınırlanmıştır: Zatını ve hakkını zikrederek, vasfını ve izzetini zikrederek ve ihsanını ve lütfunu zikrederek O'na senada bulunmak. Buna göre "tebâreke" kelimesi, övgülerinin toplandığı bir sözdür.

( نَزَّلَ الْفُرْقَانَ عَلٰى عَبْدِهِ ) "*Kuluna Furkân'ı indiren Allah.*"

Yani kuluna Kur'ân'ı indirmek suretiyle ona ikramda bulunmuştur. Şöyle ki onu peygamber yaparak üstün kılmış, halka elçi olarak göndermiş, kendisine indirdiği Kur'ân'la mucizesini ve doğruluğunun delilini açıklamış, onu müjdeleyici, uyarıcı ve aydınlatıcı lamba kılmıştır.

اَلَّذي لَهُ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَلَمْ يَتَّخِذْ وَلَدًا وَلَمْ يَكُنْ لَهُ
شَرِيكٌ فِي الْمُلْكِ وَخَلَقَ كُلَّ شَيْءٍ فَقَدَّرَهُ تَقْدِيرًا ﴿٢﴾

2- "O, göklerin ve yeryüzünün mülkü kendisine ait olandır. Çocuk edinmemiştir. Mülkünde hiçbir ortağı da yoktur. O, her şeyi yaratmış ve yarattığı o şeyleri bir ölçüye göre takdir etmiştir."

O, mülkünde birdir ve O'na katkıda bulunacak hiçbir ortağı yoktur. O, celalinde de yalnız olup O'nunla bunu paylaşacak hiçbir benzeri yoktur. Bu itibarla O, bir olup zatında paydaşı, yaratıklarında ortağı ve ne hakkında ne de sıfatlarında benzeri yoktur.

وَاتَّخَذُوا مِنْ دُونِهٖٓ اٰلِهَةً لَا يَخْلُقُونَ شَيْـًٔا وَهُمْ يُخْلَقُونَ وَلَا
يَمْلِكُونَ لِاَنْفُسِهِمْ ضَرًّا وَلَا نَفْعًا وَلَا يَمْلِكُونَ مَوْتًا وَلَا حَيٰوةً
وَلَا نُشُورًا ﴿٣﴾

3- "Onlar Allah'ı bırakıp hiçbir şey yaratmayan ve zaten kendileri yaratılmış olan, üstelik kendilerine faydaları ve zararları dokunmayan, öldürmeye, yaşatmaya ve ölüleri diriltip kabirden çıkarmaya güçleri yetmeyen ilâhlar edindiler."

Onlar, en ufak bir şeye malik olmayan, en basit bir şeyi bile yaratamayan az ya da çok hiçbir şeyi başlarından defedemeyen, onlara fayda veremeyen, hiçbir zorluklarını kolaylaştıramayan ve hiç kimse hakkında ölüm, diriltme ve kabirden çıkarma gücüne sahip olmayan ilahlar edindiler.

وَقَالَ الَّذِينَ كَفَرُوٓا اِنْ هٰذَٓا اِلَّٓا اِفْكٌ افْتَرٰيهُ وَاَعَانَهُ عَلَيْهِ قَوْمٌ
اٰخَرُونَ فَقَدْ جَٓاؤُ۫ ظُلْمًا وَزُورًا ﴿٤﴾ وَقَالُوٓا اَسَاطِيرُ الْاَوَّلِينَ
اكْتَتَبَهَا فَهِيَ تُمْلٰى عَلَيْهِ بُكْرَةً وَاَصِيلًا ﴿٥﴾ قُلْ اَنْزَلَهُ الَّذِي
يَعْلَمُ السِّرَّ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ اِنَّهُ كَانَ غَفُورًا رَحِيمًا ﴿٦﴾

4, 5, 6- "İnkâr edenler: 'Bu Kur'ân, Muhammed'in uydurduğu bir yalandan başka bir şey değildir. Başka bir topluluk da bu konuda ona yardım etmiştir' dediler. Böylece onlar, haksız ve asılsız bir söz uydurdular. 'Bu Kur'ân, başkalarından yazıp aldığı öncekilere ait efsanelerdir. Bunlar, ona sabah akşam okunmaktadır' dediler.

De ki: 'O kitabı, göklerin ve yerin sırrını bilen indirmiştir. Şüphesiz O, bağışlayandır, çok merhamet edendir.'"

Onu kendileri gibi sandılar. Onlar daha önce aciz kaldıkları işlerinde kendi benzerlerinden yardım istediklerinden ve emsalleri için bir şeyler uydurup tatmin olmaya çalıştıklarından Kur'ân ve Hz. Peygamber (s.a.v.) hakkında da delilsiz olarak söz uydurdular. Oysa söylediklerinin hiçbir gerçekliği yoktu. Öncekilerin efsanelerinin ise olup olmadığı bilinmeyen asılsız yalanları vardır. Şayet olmuş ise nasıl ve ne zaman olduğu bilinmemektedir.

Sonra Allah şöyle buyurmuştur:

*"Ey Muhammed! Hiç kimse, göklerdeki ve yerdeki sırrı bilen Allah'ın indirdiği bu kitabın bir benzerini getiremez. Din düşmanlarına bu kitabı getirdiğinden beri onlar yardımlaşmaya uğraşsalar da bunu yapamazlar."*

Onlar çok olmalarına rağmen bu kitaba bir benzerini ortaya koyacak şekilde karşı çıkmaktadırlar. Bu amaçla onu yalanladıklarını ileri sürdüler. Oysa asırlar geçti ve ömürler tükendi, ancak hiç kimse onun gibi bir sure dahi getiremedi. Böylece doğruluğundan şüphe kalktı ve hak olduğunu ikrar etmek zorunlu hale geldi.

وَقَالُوا مَا لِهٰذَا الرَّسُولِ يَأْكُلُ الطَّعَامَ وَيَمْشِي فِي الْاَسْوَاقِ
لَوْلَٓا اُنْزِلَ اِلَيْهِ مَلَكٌ فَيَكُونَ مَعَهُ نَذِيرًا ﴿٧﴾ اَوْ يُلْقٰى اِلَيْهِ كَنْزٌ
اَوْ تَكُونُ لَهُ جَنَّةٌ يَأْكُلُ مِنْهَا وَقَالَ الظَّالِمُونَ اِنْ تَتَّبِعُونَ اِلَّا
رَجُلًا مَسْحُورًا ﴿٨﴾ اُنْظُرْ كَيْفَ ضَرَبُوا لَكَ الْاَمْثَالَ فَضَلُّوا فَلَا
يَسْتَطِيعُونَ سَبِيلًا ﴿٩﴾ تَبَارَكَ الَّذِي اِنْ شَٓاءَ جَعَلَ لَكَ خَيْرًا مِنْ
ذٰلِكَ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ وَيَجْعَلْ لَكَ قُصُورًا ﴿١٠﴾

7, 8, 9, 10- "Dediler ki: 'Bu ne biçim peygamber ki yemek yer, çarşıda pazarda dolaşır. Ona bir melek indirilseydi de bu onunla beraber

bir uyarıcı olsaydı ya! Yahut kendisine bir hazine verilseydi veya ürününden yiyeceği bir bahçesi olsaydı ya!' Zalimler: 'Siz, ancak büyülenmiş bir adama uyuyorsunuz' dediler. Senin hakkında bak nasıl da temsiller getirdiler de saptılar. Artık onlar doğru yolu bulamazlar. Dilerse sana bundan daha güzelini, içinden ırmaklar akan cennetleri verebilecek olan, sana saraylar kurabilecek olan Allah'ın şanı yücedir."

Onlar Hz. Peygamber'e (s.a.v.) karşı koymaktan aciz kalınca bu kez onu çarşıda pazarda dolaşan ve yemek yiyen kendi cinslerinden bir beşer olmakla ayıplamaya başladılar. Ayrıca onu fakir olmakla da ayıpladılar ve şöyle dediler:

*"Allah ona açıkça gülen melekler indirseydi ya! Ona hazineler var edip malı çok olsaydı ya! Kendisine, mazeretlere son verecek ve problemimizi ortadan kaldıracak -onların önerdikleri- bazı mucizeler tahsis edilseydi ya! Oysa bu adam, başkalarının da hissettiği şehevi arzuları hisseden bir beşerden başka bir şey değildir. Öyleyse bize bir delil ortaya koymayacakken, ne özelliği vardır ki ona uymak zorunda olalım!"*

Bunun üzerine Allah, cevap vererek şöyle buyurdu:

*"Hak, onların söylediklerine de birkaç misline de seni malik kılmaya kadirdir. Onların önerdiklerini de, birkaç mislini de ortaya koymak O'nun kudreti dahilindedir. Lakin bir tek mucize ortaya konularak mazeretleri yok edildikten sonra bu tutumu takınmaya hakları yoktur. Kaldı ki nefisleriyle arzuladıkları şeyleri önermeleri takdire karşı tahakkümdür ki buna da hakları yoktur."*

Sonra Allah, söylediklerini tek tek ve birkaç mislini daha ortaya koymuş olsa yine iman etmeyeceklerini açıklamıştır. Çünkü Allah'ın onların mutsuzluklarına dair hükmü ezelde kesinleşmiştir.

(انْظُرْ كَيْفَ ضَرَبُوا لَكَ الْاَمْثَالَ فَضَلُّوا فَلَا يَسْتَطِيعُونَ سَبِيلًا) *"Senin hakkında bak nasıl da temsiller getirdiler de saptılar. Artık onlar doğru yolu bulamazlar."*

Bu ayet, kulun hemen yerine getiremeyeceği bir şeyle de yükümlü kılınmasının caiz olduğuna delildir. Çünkü Allah, doğru yolu bulamayacaklarını bildirdiği halde onlar itap ve yükümlülük altındadırlar.

Allah şöyle buyurur:

بَلْ كَذَّبُوا بِالسَّاعَةِ وَاَعْتَدْنَا لِمَنْ كَذَّبَ بِالسَّاعَةِ سَعِيرًا ﴿١١﴾

11- "Hayır, onlar kıyameti de yalanladılar. Biz ise o kıyameti yalanlayanlara çılgın bir cehennem ateşi hazırlamışızdır."

O halde onlar Allah'ın hükmüne göre kâfirler cümlesindendir. Bir de Allah onlar ve benzerleri için ebedi ceza hazırlamıştır. Bu nedenle ister istemez o azapla imtihan edileceklerdir.

اِذَا رَاَتْهُمْ مِنْ مَكَانٍ بَعِيدٍ سَمِعُوا لَهَا تَغَيُّظًا وَزَفِيرًا ﴿١٢﴾

12- "Bu ateş, onları uzak bir mesafeden görünce onun müthiş kaynamasını ve uğultusunu işitirler."

Böylece cehennem ateşinin ürkütücülüğü onu görüp kendisiyle imtihan edilmeden önce uzak mesafeden görülür. Cennetin esintisi de onu görmeden ve ona girmeden önce hissedilir. Bir de cehennem ateşi kendisiyle yananlardan önce yıllardan beri yakılmaktadır. Cennet de kendisinden yararlananlardan önce yıllardan beri süslenmektedir. Cennet ve cehennemin varlığını, cennetten yararlanan ve cehennemle cezalandırılan sakinlerinin varlığından önce muhal gören yalan söylemiştir. Çünkü sözünün doğruluğunda kuşku bulunmayan Allah, sadece var olan bir şeyde bulunan birtakım vasıflarını anlatarak şöyle buyurmuştur:

وَاِذَآ اُلْقُوا مِنْهَا مَكَانًا ضَيِّقًا مُقَرَّنِينَ دَعَوْا هُنَالِكَ ثُبُورًا ﴿١٣﴾

لَا تَدْعُوا الْيَوْمَ ثُبُورًا وَاحِدًا وَادْعُوا ثُبُورًا كَثِيرًا ﴿١٤﴾

13, 14- "Elleri boyunlarına bağlanmış, çatılmış olarak cehennemin daracık bir yerine atıldıkları zaman orada, yok olup gitmeyi isterler. Kendilerine şöyle denir: 'Bugün bir kere yok olmayı istemeyin, birçok kere yok olmayı isteyin.'"

Cennetin rahatlığı genişliğiyle, cehennemin ürkütücülüğü de darlığıyladır. Böylece Allah, yerlerini de kalplerini de vakitlerini de daraltmaktadır. Şayet hayatları sona erer de cehennemden kurtulsalardı, o takdirde imtihan tamamlanmış olmazdı. Lakin azapları, sonu olmayan elemler ve bitip tünmeyen sıkıntılardır. Onlar, bir çıkış aradıkça kendilerine: *"Sizin sadece azabınızı artırırız"* denir.

قُلْ اَذٰلِكَ خَيْرٌ اَمْ جَنَّةُ الْخُلْدِ الَّت۪ي وُعِدَ الْمُتَّقُونَۜ كَانَتْ لَهُمْ جَزَٓاءً وَمَص۪يرًا ﴿١٥﴾

15- "De ki: 'Bu mu daha hayırlıdır, yoksa Allah'a karşı gelmekten sakınanlara vaat edilen ebedîlik cenneti mi?' Orası onlar için bir mükâfattır ve varılacak bir yerdir."

Takva sahipleri, ebedî olarak kalıcı nimetin içindedirler: Huriler, sevinç, neşe, huzur, reyhan, güzellik, iyilik, yeni lütuf, fazlasıyla kerem, en lezzetli içecek, sevgi badeleri, kalp ferahlığı, iyi hal, kâmil ünsiyet, devamlı coşku, tam mutluluk. Cennette elbiseleri ipek, yatakları sündüs ve atlastır. İsimler dünyadaki isimler, ancak cisimler alışılmışın dışındadır. Sonra onda diledikleri her şey vardır. Onlar ebedî olarak orada kalırlar ve oradan ne ayrılırlar ne de çıkarılırlar.

لَهُمْ ف۪يهَا مَا يَشَٓاؤُ۫نَ خَالِد۪ينَۜ كَانَ عَلٰى رَبِّكَ وَعْدًا مَسْؤُ۫لًا ﴿١٦﴾

16- "Ebedî olarak kalacakları orada onlar için diledikleri her şey vardır. Bu, Rabbinin uhdesine aldığı, istenen bir vaadidir."

Lakin Allah, kalplerinde sadece kendisinin yapacağını bildiği şeylere dair isteği yaratır. Bu nedenle Allah'ın, yapmayacağını bildiği şeye istekleri taalluk etmez. Allah kalplerini o şeyi istemekten alıkoyar.

وَيَوْمَ يَحْشُرُهُمْ وَمَا يَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ فَيَقُولُ ءَاَنْتُمْ اَضْلَلْتُمْ
عِبَادِي هٰٓؤُلَٓاءِ اَمْ هُمْ ضَلُّوا السَّبِيلَ ﴿١٧﴾

17- "Rabbinin, onları ve Allah'ı bırakıp da taptıkları şeyleri bir araya getireceği ve: 'Siz mi saptırdınız benim şu kullarımı, yoksa onlar kendileri mi yoldan saptılar?' diyeceği günü hatırla."

Allah kâfirleri ve onların Allah'tan başka taptıkları putları bir araya getirir. Bu amaçla onları diriltir ve kendilerine: *"Siz mi bunlara size tapmalarını emrettiniz?"*der. Onlar ise bundan teberri ederler. Bu arada bütün bu sorgulamalar onları korkutmak ve durumun büyük vahametini ortaya koymak içindir. Yoksa Allah olanı da olacağı da hakkıyla bilmektedir. Nitekim putlar onlardan teberri ederek onlara yalanlamayla karşılık verirler. Onlar ise kendi hatalarını ve sapıklıklarını dile getirirler. Bunun üzerine cehenneme atılırlar ve vaat edilen azapta ilelebet kalırlar.

قَالُوا سُبْحَانَكَ مَا كَانَ يَنْبَغِي لَنَٓا اَنْ نَتَّخِذَ مِنْ دُونِكَ مِنْ اَوْلِيَٓاءَ
وَلٰكِنْ مَتَّعْتَهُمْ وَاٰبَٓاءَهُمْ حَتّٰى نَسُوا الذِّكْرَ وَكَانُوا قَوْمًا بُورًا ﴿١٨﴾

18- "Onlar şöyle derler: 'Seni eksikliklerden uzak tutarız. Seni bırakıp da başka dostlar edinmek bize yaraşmaz. Fakat sen, onlara ve atalarına o kadar bol nimet verdin ki sonunda seni anmayı unuttular ve helake giden bir toplum oldular.'"

فَقَدْ كَذَّبُوكُمْ بِمَا تَقُولُونَ فَمَا تَسْتَطِيعُونَ صَرْفًا وَلَا نَصْرًا وَمَنْ
يَظْلِمْ مِنْكُمْ نُذِقْهُ عَذَابًا كَبِيرًا ﴿١٩﴾

19- "Putlarınız, söyledikleriniz konusunda sizi yalancı çıkardılar. Artık kendinizden azabı savmaya gücünüz yetmeyecek ve kendinize yardım da edemeyeceksiniz. Sizden kim de zulüm ve haksızlık ederse, ona büyük bir azap tattırırız."

وَمَٓا اَرْسَلْنَا قَبْلَكَ مِنَ الْمُرْسَلِينَ اِلَّٓا اِنَّهُمْ لَيَأْكُلُونَ الطَّعَامَ وَيَمْشُونَ فِي الْاَسْوَاقِ وَجَعَلْنَا بَعْضَكُمْ لِبَعْضٍ فِتْنَةً اَتَصْبِرُونَ وَكَانَ رَبُّكَ بَصِيرًا ﴿٢٠﴾

20- "Senden önce gönderdiğimiz bütün peygamberler de şüphesiz yemek yerler, çarşıda pazarda gezerlerdi. Sizi birbiriniz için imtihan aracı kıldık. Sabredecek misiniz? Rabbin, hakkıyla görendir."

Allah, Hz. Peygamber'e (s.av.), kendisinden önceki peygamberlerin de beşer olduklarını ve onlarda mucizelerin ortaya çıkmasından başka bir özelliklerinin bulunmadığını haber vermektedir. Hulasa faziletler şekille değil manalarladır. Sonra Allah şöyle buyurmuştur:

( وَجَعَلْنَا بَعْضَكُمْ لِبَعْضٍ فِتْنَةً اَتَصْبِرُونَ وَكَانَ رَبُّكَ بَصِيرًا ) *"Sizi birbiriniz için imtihan aracı kıldık. Sabredecek misiniz? Rabbin, hakkıyla görendir."*

Allah bazısını bazısından üstün kılmış ve üstün kılınmayana sabır ve rızayı emrederken üstün kılınana da bu nimetten dolayı şükretmesini emretmiştir. Bazı kimselere belayı tahsis etmiş ve onları bela ehli için imtihan aracı kılmıştır. Bir de bazılarına afiyeti, diğer bazılarına da hastalıkları ve elemleri tahsis etmiştir. Ancak ne nimet verdiklerinin menkıbeleri vardır ne de imtihan ettiklerinin kusurları vardır. O halde bunlar onların suçlarıyla değil Allah'ın hükmüyledir. Onların fiiliyle değil, Allah'ın lütfuyladır. Onların ibadetleriyle değil, Allah'ın iradesiyledir. Onların kötülükleriyle değil, Allah'ın tercihiyledir. Onların günahlarıyla değil, Allah'ın takdirleriyledir. Onlarla değil, Allah iledir.

( اَتَصْبِرُونَ ) *"Sabredecek misiniz?"*

Bu ifade emir anlamındaki bir istifhamdır. Her kime muvaffakiyet müzahir olursa o, sabreder ve şükreder. Terk edilmişliğe maruz kalan ise kabule yanaşmaz ve inkâr eder.

وَقَالَ الَّذِينَ لَا يَرْجُونَ لِقَآءَنَا لَوْلَآ اُنْزِلَ عَلَيْنَا الْمَلٰٓئِكَةُ اَوْ نَرٰى رَبَّنَا لَقَدِ اسْتَكْبَرُوا فٖٓي اَنْفُسِهِمْ وَعَتَوْ عُتُوًّا كَبٖيرًا ﴿٢١﴾

21- "Bize kavuşacaklarını ummayanlar: 'Bize melekler indirilseydi, yahut Rabbimizi görseydik ya!' dediler. Andolsun, onlar benliklerinde büyüklük tasladılar ve büyük bir taşkınlık gösterdiler."

( الَّذِينَ لَا يَرْجُونَ لِقَآءَنَا ) *"Bize kavuşacaklarını ummayanlar"*, kıyamet gününde haşire, neşre ve dünyadan çıkınca Allah'a dönüş yapmaya inanmazlar. Onlar nasıl ki azaptan korkmuyor ve haşiri beklemiyor idilerse aynı şekilde Allah'ın huzuruna çıkacaklarına da iman etmiyorlardı. Bu çerçevede kıyamete ve haşire iman eden kıble ehlinden Allah'ı görmeyi inkâr eden kimse, hakkında haber ve nakil varit olan bir hususu inkâr etmede onlara ortaktır. Çünkü nakli delil, haşirin varlığına dair olarak varit olduğu gibi aynı şekilde iman ehli için Allah'ı görmeye dair olarak da varit olmuştur.

Bu itibarla inanmayanlar bunu, makamı kendilerine ait görmeleri ve onlara melekler indirilmesi ile Rablerini görme taleplerinin kendilerinin hakkı olduğu yönüyle söylemişlerdir. Bu talebin yerine getirilmesi her ne kadar Allah'ın kudreti bakımından caiz ise de Hz. Peygamber'in (s.a.v.) mucizelerinin ortaya çıkmasıyla mazeretleri yok edildikten sonra artık gerekli olmaktan çıkmıştır. Hal böyle olunca dile getirdikleri talep de caiz olmamıştır.

يَوْمَ يَرَوْنَ الْمَلٰٓئِكَةَ لَا بُشْرٰى يَوْمَئِذٍ لِلْمُجْرِمٖينَ وَيَقُولُونَ حِجْرًا مَحْجُورًا ﴿٢٢﴾

22- "Fakat melekleri görecekleri gün, işte o gün suçlulara hiçbir müjde yoktur. 'Eyvah! Biz tamamen alıkonulmuşuz' diyecekler."

İki şey talep ettiler: Melekleri görmek ve Allah'ı görmek. Allah da onların vefat esnasında melekleri göreceklerini, ancak meleklerin onlara: *"Size müjdeler olmasın!"* diyeceklerini haber vermektedir.

( حِجْرًا مَحْجُورًا ) *"Eyvah! Biz, tamamen alıkonulmuşuz."*

Yani onlar Allah'ı görmekten alıkonulmuş ve bu kendilerine haram kılınmıştır. Bu alıkonulmuşluk, sözü edilen ru'yetullah -Allah'ı görmek- ile ilgilidir. Bu yorum, cennetten alıkonulmuşluk şeklindeki yorumdan daha uygundur. Kaldı ki burada cennetten söz edilmiştir. Sonra bu ifadede müminlere görmeye dair müjde vardır. Çünkü onlar melekleri görecek ve melekler onlara cenneti müjdeleyeceklerdir.

Allah şöyle buyurmuştur:

( تَتَنَزَّلُ عَلَيْهِمُ الْمَلٰٓئِكَةُ اَلَّا تَخَافُوا وَلَا تَحْزَنُوا وَاَبْشِرُوا بِالْجَنَّةِ الَّتِي كُنْتُمْ تُوعَدُونَ ) *"Onların üzerine akın akın melekler iner ve: 'Korkmayın, üzülmeyin, size vaat edilmekte olan cennetle sevinin' derler."* (Fussilet, 41/30)

Buna göre nasıl ki kâfirler için cennetle müjdelenmek söz konusu olmayıp müminler için var ise aynı şekilde Allah'ı görmek de kâfirler için bulunmayıp müminler için vardır.

وَقَدِمْنَٓا اِلٰى مَا عَمِلُوا مِنْ عَمَلٍ فَجَعَلْنَاهُ هَبَٓاءً مَنْثُورًا ﴿٢٣﴾

23- "Onların yaptıkları bütün amellere yöneldik ve onları dağılmış zerreciklere çevirdik."

Bu, kâfirlerin musibetidir. Çabaları boşa gitmiş, emekleri sonuçsuz kalmış, ömürleri zayi olmuş, alışverişleri kötü olmuş, ümitleri kesilmiş ve Allah'tan karşılarına hesaplamadıkları bir durum çıkmıştır. Onlarsa iyi bir şey yaptıklarını sanırlar.

Hakikat ve tevhid ehli kimselere gelince, bu ayeti işitmekten kalplerinde tam bir huzura erecekleri bir durum belirmekte, açıklamaktan aciz kaldıkları ve övmeye nutuklarının yetmediği haller meydana gelmektedir. Şöyle ki onlar Allah'ın şu sözünü işitirler:

*"Onların yaptıkları bütün amellere yöneldik ve onları dağılmış zerreciklere çevirdik."*

Bu çerçevede amellerinin kıymeti ortaya çıkmıştır. Nitekim bundan dolayıdır ki Allah: ( وَقَدِمْنَٓا اِلٰى مَا عَمِلُوا مِنْ عَمَلٍ ) *"Onların yaptıkları*

*bütün amellere yöneldik…"* buyurmuştur. Onlar bunu işittikleri zaman zorunlu olarak öyle bir rahatlık hissederler ki bu onları kaygılanmaktan alıkoyar. Çünkü Allah: ( فَجَعَلْنَاهُ هَبَآءً مَنْثُورًا ) "*Onları dağılmış zerreciklere çevirdik*" buyurmuştur. Bir de onlar şöyle derler:

*"Keşke dünya ve ahiret ehli kimselerin amelleri bizim olsaydı da ondan bir zerre bile kabul edilmeseydi ve Allah onun sebebiyle: 'Onların yaptıkları bütün amellere yöneldik…' buyurmuş olsaydı."*

Çünkü onlar halel noktaları ve mahcubiyetin sebepleri olan amellerinden kurtuldukları zaman bunu kendilerine yapılmış en büyük iyiliğe kavuşmak sayarlar.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Döneceğim ben bu yılki haccımdan mahcup olarak*
*Çünkü kabul olunmuyor olmuş bitmiş olanlar*

اَصْحَابُ الْجَنَّةِ يَوْمَئِذٍ خَيْرٌ مُسْتَقَرًّا وَاَحْسَنُ مَقِيلًا ﴿٢٤﴾

24- "O gün cennetliklerin kalacakları yer daha hayırlı, dinlenecekleri yer daha güzeldir."

Cennetlikler ondan hoşnut olanlar, ona kavuşanlar ve onun varlığıyla yetinenlerdir. Böylece yurtları güzel, karar kıldıkları yerler de iyi olmuştur.

وَيَوْمَ تَشَقَّقُ السَّمَآءُ بِالْغَمَامِ وَنُزِّلَ الْمَلٰٓئِكَةُ تَنْزِيلًا ﴿٢٥﴾

25- "O gün gök, bulutlarla yarılıp parçalanacak ve melekler bölük bölük indirilecektir."

اَلْمُلْكُ يَوْمَئِذٍ الْحَقُّ لِلرَّحْمٰنِ وَكَانَ يَوْمًا عَلَى الْكَافِرِينَ عَسِيرًا ﴿٢٦﴾

26- "O gün gerçek hükümranlık Rahmân'ındır ve kâfirlere zorlu bir gün olacaktır."

Yani kıyamet gününün korkunç manzaraları ortaya çıkıp diriltilenler, o günün ahvalini gördükleri zaman işte o gün, mülkün Rahmân'a ait olduğunu kesin olarak anlamış olurlar. Bu arada Allah'ın mülkü o güne mahsus olmayıp sadece onlar bunu o zaman anlamış ve kesin inanca sahip olmuşlardır.

Bir yoruma göre de başkalarının gerekçeleri son bulur ve halkın vehimleri ortadan kalkar. Bu nedenle Allah'ın hiçbir vasfı yenilenmez ancak halkın vasıfları yok olur. İşte o, kâfirler için zor bir gündür. Ayetin ifadesi, o günün müminler için kolay olduğunu göstermektedir. Aksi takdirde fark geçersiz olur. O halde bu günün mutlaka her mümin için kolay olması gerekir.

وَيَوْمَ يَعَضُّ الظَّالِمُ عَلٰى يَدَيْهِ يَقُولُ يَا لَيْتَنِي اتَّخَذْتُ مَعَ
الرَّسُولِ سَبِيلًا ﴿٢٧﴾ يَا وَيْلَتٰى لَيْتَنِي لَمْ اَتَّخِذْ فُلَانًا خَلِيلًا ﴿٢٨﴾

27, 28- "O gün zalim kimse, ellerini ısırıp şöyle diyecektir: 'Ne olurdu ben de peygamberle beraber aynı yolu tutsaydım. Yazıklar olsun bana, keşke falanı dost edinmeseydim.'"

Kâfirler kâfirlerle beraber olmaktan pişmanlık duymaktadırlar. Ayetin ifadesi, müminlerin Allah yolunda arkadaşları ve dostlarıyla birlikte olmaktan sevinçli olmalarını gerektirir. Kâfir ise arkadaşını yoldan çıkarır ve onunla beraber helake düşer. Lakin mümin arkadaşına doğru yolu gösterir ve bu sayede onu sevince ulaştırır.

لَقَدْ اَضَلَّنِي عَنِ الذِّكْرِ بَعْدَ اِذْ جَٓاءَنِي وَكَانَ الشَّيْطَانُ لِلْاِنْسَانِ
خَذُولًا ﴿٢٩﴾

29- "Andolsun, Kur'ân bana geldikten sonra beni ondan o saptırdı. Zaten şeytan insanı yardımcısız bırakıverir."

وَقَالَ الرَّسُولُ يَا رَبِّ اِنَّ قَوْمِي اتَّخَذُوا هٰذَا الْقُرْاٰنَ مَهْجُورًا ﴿٣٠﴾

30- "Peygamber şöyle dedi: 'Ey Rabbim! Kavmim şu Kur'ân'ı terk edilmiş bir şey haline getirdi.'"

Hz. Peygamber (s.a.v.) onlardan Allah'a şikâyette bulunmuştur. Bu ise peygamberlerin sünnetidir. Nitekim Allah Hz. Yakub'tan şöyle dediğini bildirmektedir:

(اِنَّمَٓا اَشْكُوا بَثّ۪ي وَحُزْن۪ٓي اِلَى اللّٰهِ) *"Ben tasamı ve üzüntümü ancak Allah'a arz ederim."* (Yûsuf, 12/86)

Bu itibarla her kim Allah'tan şikayetçi olursa o inkârcıdır. Her kim de Allah'a şikâyette bulunursa o arif ve vecd ehlidir.

Sonra Allah, peygamberlerinden hiçbirini kendi zamanında başına musallat kıldığı düşmandan yoksun bırakmamıştır. Ancak bunun yanında düşmanlarından hiçbirini cezasız da bırakmamış ve o düşmanlara küfürleri ve azgınlıklarına karşılık olarak hak ettikleri cezayı tattırmıştır.

وَكَذٰلِكَ جَعَلْنَا لِكُلِّ نَبِيٍّ عَدُوًّا مِنَ الْمُجْرِم۪ينَۜ وَكَفٰى بِرَبِّكَ هَادِيًا وَنَص۪يرًا ﴿٣١﴾

31- "Biz işte böyle her peygamber için suçlulardan bir düşman yarattık. Yol gösterici ve yardım edici olarak Rabbin yeter."

Rabbin bugün kendisini tanımanın yolunu gösteren olarak, yarın da kendisini görmeye yardımcı olarak yeter.

Bir yoruma göre de müminler için en son imtihan rivayet edilen şu husustur: Kıyamet günü her ümmet taptığı putu görüp ona uyacak ve cehenneme sevk edilip içine atılacaktır. Müminler ise kalırlar ve kendilerine: *"Neden bekliyorsunuz?"* diye sorulacak, onlar da: *"Onlar, mabutlarını gördüler ve kendisine uydular. Biz ise mabudumuzu göremedik"* diyecekler. Bunun üzerine onlara: *"Eğer onu görürseniz tanıyacak mısınız?"* denecek, onlar da: *"Evet"* deyince kendilerine: *"Onu ne ile tanıyacaksınız?"* diye sorulacaktır. Onlar da diyecekler ki: *"Onunla aramızda bir işaret vardır."* Bunun üzerine Allah onlara

bir şahıs görünümünde bir şey gösterir ve o şahıs onlara: *"Ben sizin mabudunuzum"* der. Onlar ise: *"Allah korusun. Biz senden Allah'a sığınırız. Biz sana ibadet etmedik"* derler. Bunun üzerine Allah onlara tecelli eder, onlar da kendisine secde ederler.

وَقَالَ الَّذٖينَ كَفَرُوا لَوْلَا نُزِّلَ عَلَيْهِ الْقُرْاٰنُ جُمْلَةً وَاحِدَةً كَذٰلِكَ
لِنُثَبِّتَ بِهٖ فُؤَادَكَ وَرَتَّلْنَاهُ تَرْتٖيلًا ﴿٣٢﴾

32- "İnkâr edenler: 'Kur'ân, ona bir defada toptan indirilseydi ya!' dediler. Biz, Kur'ân'la senin kalbini pekiştirmek için onu böyle kısım kısım indirdik ve onu ağır ağır okuduk."

Yani biz onu parça parça indirdik ki, onu ezberlemen kolay olsun. Çünkü Hz. Peygamber (s.av.), kitap okuyamayan bir ümmi idi. Bir de eğer Kur'ân defaten indirilmiş olsaydı, Hz. Cebrail'in her an vahiy ile Hz. Peygamber'e (s.a.v.) gelişi, tekrar tekrar gerçekleşmiş olmazdı. Bir de Hz. Cebrail'in çok inmesi, Hz. Peygamber'in kalbinin sükûnete ermesini, huzurunun tam olmasını ve ünsiyetinin devamını daha etkili biçimde sağlıyordu. Nitekim Hz. Cebrail, o zaman meydana gelen olaylar ve ortaya çıkan durumların gerektirdiği şeyleri her zaman getiriyordu. Bu da gelen vahyin mucize oluşunu daha iyi ortaya koyuyor ve Hz. Peygamber'in dışında bir kimse tarafından oluşturulduğu ya da o kimsenin yardımıyla meydana geldiği yönündeki ithamlardan daha çok uzak tutuyordu.

وَلَا يَأْتُونَكَ بِمَثَلٍ اِلَّا جِئْنَاكَ بِالْحَقِّ وَاَحْسَنَ تَفْسٖيرًا ﴿٣٣﴾

33- "Onlar, sana hiçbir misal getirmezler ki, ona karşılık biz, sana gerçeği ve daha güzel açıklamayı getirmiş olmayalım."

Onların delil kullanarak yaptıkları itirazlara verilen bu cevap, onları ilzam edici ve söylediklerinin geçersizliğini açıklayıcı olmuştur. Ancak Allah sünnetini bu tür cevapların Müslümanlar için daha çok şifa ve basiret, kâfirler içinse körlük ve şüphe olması şeklinde icra etmiştir.

Sonra Allah ahiretteki hallerini haber vermek üzere şöyle buyurmuştur:

اَلَّذِينَ يُحْشَرُونَ عَلٰى وُجُوهِهِمْ اِلٰى جَهَنَّمَ اُو۬لٰٓئِكَ شَرٌّ مَكَانًا وَاَضَلُّ سَبِيلًا ﴿٣٤﴾

34- "Yüzüstü cehenneme sürüklenecek olanlar var ya işte onlar konumları itibariyle daha kötü, tuttukları yol itibariyle daha sapıktırlar."

Onlar yüzüstü sürüklenecekler ve bu değersizliklerinin bir göstergesidir. Hadiste de şöyle denilmiştir:

*"Allah, bugün ayakta yürüttüğü kimseleri yarın yüzüstü süründürecektir."*

Allah buna kadirdir ve bu O'nun için imkânsız değildir.

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوسَى الْكِتَابَ وَجَعَلْنَا مَعَهُٓ اَخَاهُ هٰرُونَ وَزِيرًا ﴿٣٥﴾

35- "Andolsun, biz Mûsâ'ya Kitab'ı verdik ve kardeşi Hârûn'u da ona yardımcı kıldık."

Kur'ân'da Hz. Peygamber'den (s.a.v.) söz edilip hemen arkasından Allah'ın Hz. Mûsâ'dan söz etmediği yer çok azdır. Bir de makamının yüksekliğine dikkat çekmek için Kur'ân'da Hz. Mûsâ'nın kıssası birden fazla yerde tekrarlanmıştır. Çünkü özel olarak anılmak nasıl ki anılanın şerefli oluşunu gösteriyorsa, anılmanın tekrarlanması da anlatımda ayrıntıya girmeyi sağlamaktadır. Çünkü aynı kıssa pek çok defa tekrarlandığı zaman belagat bakımından daha mükemmel olur. Özellikle de her defasında ilave bir fayda olduğu zaman.

Sonra Allah, Hz. Mûsâ ve Hz. Hârûn'a şöyle dediğini açıklamıştır:

فَقُلْنَا اذْهَبَٓا اِلَى الْقَوْمِ الَّذِينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا فَدَمَّرْنَاهُمْ تَدْمِيرًا ﴿٣٦﴾

36- "İkisine: 'Âyetlerimizi yalanlayan topluluğa gidin' dedik. Nihayet o kavmi yerle bir ettik."

Yani onlar gittiler, ancak o kavim inkâr etti, biz de onları yerle bir ettik. Yani onları tamamen helak ettik. Bunda Hz. Peygamber (s.a.v.) için kavminden gördüğü türlü belalara karşı bir teselli ve bütün düşmanlarının helak edileceğine dair kendisine verilmiş güzel bir söz vardır.

وَقَوْمَ نُوحٍ لَمَّا كَذَّبُوا الرُّسُلَ اَغْرَقْنَاهُمْ وَجَعَلْنَاهُمْ لِلنَّاسِ اٰيَةً
وَاَعْتَدْنَا لِلظَّالِم۪ينَ عَذَابًا اَل۪يمًا ﴿٣٧﴾

37- "Nûh kavmini de peygamberleri yalanladıkları vakit suda boğduk. Onları insanlara bir ibret yaptık ve zalimlere elem dolu bir azap hazırladık."

Benzerlerinin başına getirdiğimiz gibi onların da başına azap getirdik ve onlara da emsallerine yaptığımız muamele gibi muamelede bulunduk. Sonra Allah, bu ayetlerin ardından Âd'ı, Semûd'u, Ress halkını, ayrıntıya girmeden özetle andığı kimseleri ve fenalıklar işledikleri için Lût kavminin helakine sebep kıldığı hususları zikretmiştir. Bütün bunları Allah, Hz. Peygamber'i (s.a.v.) kalben rahatlatmak, sırrına sükûnet vermek, kendisine düşmanlık yapanları helak edeceğini, kendisine karşı çıkanları yerle bir edeceğini bildirmek ve anlatmak için yapmıştır. Nitekim Allah bunların çoğunu onun hayatında yapmış, geriye kalanını da dünyadan gitmesinden sonra gerçekleştirmiştir.

وَعَادًا وَثَمُودَا۬ وَاَصْحَابَ الرَّسِّ وَقُرُونًا بَيْنَ ذٰلِكَ كَث۪يرًا ﴿٣٨﴾

38- "Âd ve Semûd kavimlerini, Ress halkını ve bunların arasında pek çok nesilleri de helâk ettik."

وَكُلًّا ضَرَبْنَا لَهُ الْاَمْثَالَ وَكُلًّا تَبَّرْنَا تَتْب۪يرًا ﴿٣٩﴾

39- "Bunların her birine misaller getirdik. Hepsini kırıp geçirdik."

وَلَقَدْ اَتَوْا عَلَى الْقَرْيَةِ الَّت۪ٓي اُمْطِرَتْ مَطَرَ السَّوْءِ اَفَلَمْ يَكُونُوا يَرَوْنَهَا بَلْ كَانُوا لَا يَرْجُونَ نُشُورًا ﴿٤٠﴾

40- "Andolsun, senin kavmin bela yağmuruna tutularak yok edilen kente uğramışlardır. Yoksa onu görmüyorlar mıydı? Hayır! Tekrar dirilmeyi ummuyorlardı."

وَاِذَا رَاَوْكَ اِنْ يَتَّخِذُونَكَ اِلَّا هُزُوًاۜ اَهٰذَا الَّذ۪ي بَعَثَ اللّٰهُ رَسُولًا ﴿٤١﴾

41- "Onlar seni görünce ancak eğlenceye alırlar: 'Allah'ın peygamber olarak gönderdiği bu mu?!'"

Eğer Hz. Peygamber (s.a.v.) halini anlatıp başından geçenleri Allah'a şikâyet etseydi, bu kendisi için teselli olurdu. Bu nedenle Allah kendisine haber verip karşılaştıklarını ona anlattığı zaman bu, teselliyi daha iyi sağlıyor ve ünsiyete daha yakın oluyordu. Bu arada sıkıntı çekenlerin en büyük tesellisi, imtihan günlerinde çektiklerini dostlarına anlatmalarıdır.

Tıpkı şu dizelerde dile getirildiği gibi:

*Sever âşık hasta olarak yürümeyi, belki sevgili*
*İşittiği zaman bir şikayetini haberleşir kendisiyle*
*Ve titremekte yüksek mevkilerin arayışında iyilik için*
*Anılsın diye Selma'nın yanında bir gün iyilikleri*

Bir de Allah kavminin, kadrini bilmedikleri için kendisine alaycı ve durumunu küçümseyen bir gözle baktığını bildirmiştir. Allah şöyle buyurur:

( وَتَرٰيهُمْ يَنْظُرُونَ اِلَيْكَ وَهُمْ لَا يُبْصِرُونَ ) *"Sen, onların sana baktıklarını görürsün, halbuki onlar görmezler."* (A'râf, 7/198)

اِنْ كَادَ لَيُضِلُّنَا عَنْ اٰلِهَتِنَا لَوْلَٓا اَنْ صَبَرْنَا عَلَيْهَاۜ وَسَوْفَ يَعْلَمُونَ ح۪ينَ يَرَوْنَ الْعَذَابَ مَنْ اَضَلُّ سَب۪يلًا ﴿٤٢﴾

42- "'Biz, ilahlarımıza sımsıkı sarılmasaydık neredeyse bizi ilahlarımızdan uzaklaştıracaktı' derler. Onlar yakında azabı gördükleri zaman yolca kimin daha sapık olduğunu göreceklerdir."

اَرَاَيْتَ مَنِ اتَّخَذَ اِلٰهَهُ هَوٰيهُ اَفَاَنْتَ تَكُونُ عَلَيْهِ وَكِيلًا ﴿٤٣﴾

43- "Kendi nefsinin arzusunu kendisine ilâh edineni gördün mü? Ona sen mi vekil olacaksın?"

Onlar, nefislerinin arzuladığı putlara tapıyorlardı. Bir putu diğer bir putla değiştiriyorlardı. Kendilerince uygun buldukları duruma göre hareket ediyorlardı. Oysa mümin kendi nefsinin değil Allah'ın hükmüne göre davranır. Böylece de mümin olanla olmayan arasındaki fark ortaya çıkmış olur. Kendince uygun bulduğu duruma göre yaşayan kimse, nefsinin arzusuna tapmış ve Allah'ın bu ayette kötülükle zikrettiği kimselere katılmış olur.

اَمْ تَحْسَبُ اَنَّ اَكْثَرَهُمْ يَسْمَعُونَ اَوْ يَعْقِلُونَ اِنْ هُمْ اِلَّا كَالْاَنْعَامِ
بَلْ هُمْ اَضَلُّ سَبِيلًا ﴿٤٤﴾

44- "Yoksa sen onların çoğunun söz dinleyeceklerini yahut akıllarını kullanacaklarını mı sanıyorsun? Onlar hayvanlar gibidirler, belki yolca onlardan daha da şaşkındırlar."

Onlar, yemek ve içmekten başka hiçbir kaygısı bulunmayan hayvanlar gibidirler. Her kim nefsinin arzularını celp etmek isterse o hayvanlar gibidir. Oysa Allah melekleri yaratarak kişiliklerini akıl üzerine inşa etmiş, hayvanları yaratarak fıtratlarını nefis arzusuna bağlı kılmış, Âdemoğullarını da yaratıp onlarda akıl ve nefsi bir araya getirmiştir. Bu nedenle nefis arzusu aklına galip gelen kimse hayvanlardan daha kötü, aklı nefsinin arzusuna galip gelen kimse ise meleklerden daha iyidir. Şeyhler böyle demişlerdir.

اَلَمْ تَرَ اِلٰى رَبِّكَ كَيْفَ مَدَّ الظِّلَّ وَلَوْ شَٓاءَ لَجَعَلَهُ سَاكِنًا ثُمَّ جَعَلْنَا
الشَّمْسَ عَلَيْهِ دَلِيلًا ﴿٤٥﴾ ثُمَّ قَبَضْنَاهُ اِلَيْنَا قَبْضًا يَسِيرًا ﴿٤٦﴾

45, 46- "Rabbinin gölgeyi nasıl uzattığını görmez misin? İsteseydi onu sabit kılardı. Sonra biz güneşi gölgeye delil kıldık. Sonra onu kendimize yavaş yavaş çektik."

Rivayete göre Hz. Peygamber (s.a.v.) seferlerinden birinde öğlen vakti beraberinde kalabalık bir topluluk olduğu halde bir ağacın gölgesi altında konaklamış, bunun üzerine Allah o ağacın gölgesini sayıları çok olan o topluluğun hepsini kapsayacak şekilde uzatmış ve bu ayeti bu münasebetle indirmiştir. Olay, Hz. Peygamber'in (s.av.) mucizelerinden bir olmuştur.

Bir izaha göre de Allah, günün başlangıcında güneş doğmadan önce yeryüzünün tamamını gölge kılar. Sonra güneş doğup ışınları yeryüzüne yayıldığı zaman her şahsın bir gölgesi olur ve güneş ışını gölge olan yere vurmaz. Sonra gölge, zeval vaktine kadar eksilmeye devam eder, sonra zeval vaktinde uzamaya başlar. Bu da Allah'ın kudretinin göstergelerindendir. Çünkü Allah, âdetini gölgeyi ve aydınlığı yaratmak şeklinde icra etmiştir.

( وَلَوْ شَٓاءَ لَجَعَلَهُ سَاكِنًا ) "*İsteseydi onu sabit kılardı.*" Yani onu daim kılardı.

( ثُمَّ قَبَضْنَاهُ اِلَيْنَا قَبْضًا يَسِيرًا ) "*Sonra onu kendimize yavaş yavaş çektik.*" Yani bunu güneş yükselip gölge eksilirken yaptık.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Rabbinin, velilerinin halleri üstüne nasıl da inayet gölgesini uzattığını görmez misin? Bu çerçevede kimileri himayenin gölgesinde, kimileri riayetin gölgesinde, fakirler kifayetin gölgesinde, zenginler ise şikayetten rahatlamış -kurtulmuş- olmanın gölgesindedirler.

Bir gölge vardır ki, ismet gölgesidir. Bir gölge de vardır ki, rahmet gölgesidir. Bu çerçevede ismet gölgesi önce peygamberlere sonra velilere mahsustur. Rahmet ise önce müminlere sonra dünyadaki bütün yaratıklara aittir.

- Allah'ın Hz. Peygamber'e (s.a.v.) önce:( اَلَمْ تَرَ اِلٰى رَبِّكَ ) "*Rabbini görmez misin?*", sonra: ( كَيْفَ مَدَّ الظِّلَّ ) "*Nasıl da gölgeyi uzatmıştır*"

demesi, onun açık olan durumunu örtmek ve durumunu düşmandan saklamak konusundaki sünneti icra etmek içindir. Nitekim Allah Hz. Mûsâ'ya: ( لَنْ تَرٰينِي ) *"Beni göremeyeceksin"* (A'râf, 7/143) buyururken Hz. Peygamber'e (s.av.):

( اَلَمْ تَرَ اِلٰى رَبِّكَ ) *"Rabbini görmez misin?"* buyurmuştur. Bu iki durum arasında ise büyük bir fark vardır.

- Allah, Hz. Peygamber'in kalbini:( اَلَمْ تَرَ اِلٰى رَبِّكَ ) *"Rabbini görmez misin?"* sözüyle ihya etmiş, nihayetinde ise: ( كَيْفَ مَدَّ الظِّلَّ ) *"Nasıl da gölgeyi uzatmıştır"* buyurmuştur. Böylece Allah, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) istiklalini o gölgeye dair sözü işitinceye kadar: ( اَلَمْ تَرَ اِلٰى رَبِّكَ ) *"Rabbini görmez misin?"* sözüne bağlı kılmıştır.

- Allah, Hz. Peygamber'i (s.a.v.) önce: ( اَلَمْ تَرَ اِلٰى رَبِّكَ ) *"Rabbini görmez misin?"* sözüyle fenâ makamına, ardından da: ( كَيْفَ مَدَّ الظِّلَّ ) *"Nasıl da gölgeyi uzatmıştır"* sözüyle bekâ makamına erdirmiştir. Zaten Allah'ın kullarıyla ilgili prensibi budur. Onları fenâ ve bekâ makamları arasında götürüp getirir.

وَهُوَ الَّذ۪ي جَعَلَ لَكُمُ الَّيْلَ لِبَاسًا وَالنَّوْمَ سُبَاتًا وَجَعَلَ النَّهَارَ نُشُورًا ﴿٤٧﴾

47- "Geceyi size bir örtü, uykuyu istirahat zamanı ve gündüzü de hareket ve çalışma vakti yapan O'dur."

Allah, geceyi kimileri için hareketsizlik vakti, kimileri için de rahatsızlık vakti kılmıştır. Bu çerçevede gaflet ehli kimseler gecelerinde hareketsiz olurlar. Sevenler ise eğer vuslat huzuru içinde iseler gecelerini uykusuz geçirirler. Ünsiyetlerinin mükemmel oluşu sebebiyle gözlerine uyku girmez. Şayet ayrılığın acısı içerisinde iseler bu kez de tedirginliklerinin zirvede olmasından dolayı gözlerine uyku girmez.

Bu itibarla uykusuzluk, ya sevincin kemalinden veya kaygıların hücumundan dolayı sevenlere mahsus bir vasıftır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah uykuyu, sevenler için uyanıklık halinde gerçekleşmesi mümkün olmayan tecellilerin vakti kılmıştır. Buna göre onlar, Rablerini uykuda gördükleri zaman uykuyu uykusuzluğa tercih ederler.

Şu iki beyitte denildiği gibi:

*Kuşkusuz uyumak istemekteyim hiç uykusuz değilken ben*
*Belki senden bir hayal karşılaşır hayalimle diye*

---------------------------------------------

*Kalbimin sevincini uykumda gördüm*
*Sevdim bu nedenle uyuklayıp uyumayı*

- Uyku, gaflet ehli için azaptır, nefsiyle mücadele edenler içinse rahmettir. Çünkü Allah (c.c.), kendilerine bir rahmet olarak ve mücadelenin yorgunluğundan dinlenmeye çekilmeleri için zorunlu bir şekilde onlara uyku verir.

وَهُوَ الَّذِيٓ اَرْسَلَ الرِّيَاحَ بُشْرًا بَيْنَ يَدَيْ رَحْمَتِهٖ وَاَنْزَلْنَا مِنَ
السَّمَٓاءِ مَٓاءً طَهُورًا ﴿٤٨﴾

48- "Rahmetinin önünde rüzgârları müjdeci olarak gönderen O'dur. Gökten de tertemiz bir su indirdik."

Allah, kerem rüzgârlarını gönderir ve bu rüzgârlar, ihtiyaç sahiplerinin kalplerinin üstüne eserek onları Allah'ın nimetlerini aramaya sevk eder. Dostluk rüzgârlarını da gönderir ve bu rüzgârlar, havassın kalplerinin üstüne eserek onları bütün iradelerden temizler. Böylece o kalpler, Allah için Allah ile yetinirler. Korku rüzgarlarını da günahkarların kalplerinin üstüne göndererek onları pişmanlığa sevk eder ve ısrardan temizler. Böylece onlar tövbeye dönmüş olurlar. Özlem rüzgarlarını ise sevenlerin kalplerinin üstüne salarak onları başka şeylerle sükûnet bulmaktan alıkoyar ve aşk duyguları hariç her şeyden temizler. Çünkü aşk duyguları ancak keşf ve tecelli ile sükûnet bulur.

- Kalp, Allah'a yakınlık esintisini soluduğu zaman celal âleminde sersemleşir ve her türlü şekilcilik ve alışkanlıktan sıyrılmış olur.

لِنُحْيِيَ بِهِ بَلْدَةً مَيْتًا وَنُسْقِيَهُ مِمَّا خَلَقْنَٓا اَنْعَامًا وَاَنَاسِيَّ كَث۪يرًا ﴿٤٩﴾
وَلَقَدْ صَرَّفْنَاهُ بَيْنَهُمْ لِيَذَّكَّرُوا فَاَبٰٓى اَكْثَرُ النَّاسِ اِلَّا كُفُورًا ﴿٥٠﴾

49, 50- "Ölü toprağı canlandıralım, yarattıklarımızdan birçok hayvanları ve insanları sulayalım diye. Andolsun, biz bunu insanlar arasında, düşünüp ibret alsınlar diye tekrar tekrar açıkladık. Fakat insanların çoğu nankörlükte direttiler."

Allah gökten yağmur suyu indirerek onunla ağaçlıklar ve bahçeleri canlandırmış, çiçekleri yeşertmiştir. Gökten rahmet suyunu da indirerek onunla günahkarlar bulaştıkları manevî kirleri ve kirlendikleri günahları yıkadılar.

( الطَهُور ) "*Tahûr*" kelimesi, temiz ve temizleyici olan demektir. Bu arada haya suyu, ariflerin kalplerini başka şeylerle sükûnet bulmaya meyletmekten ve zaman zaman içine sızan gafletlerden temizler. Riayet suyu ile de Allah özlem çekenlerin kalplerini ihya eder. Bu durum, o kalplerin mazhar olduğu tecelli nurlarıyla gerçekleşir. O kadar ki, onlardan özlemin yol açtığı susuzluk gider ve onlarda istiklal huzuru meydana gelir. Bu suyla Allah, aynı zamanda şehvetlerin peşine düşmekle ölmüş olan bazı nefisleri de dirilterek ibadetleri yerine getirmeye geri çevirir.

وَلَوْ شِئْنَا لَبَعَثْنَا ف۪ي كُلِّ قَرْيَةٍ نَذ۪يرًا ﴿٥١﴾

51- "Dileseydik her memlekete bir uyarıcı gönderirdik."

Allah, Peygamberimize şu özellikleri vermiştir:

- Onu bütün varlıklardan üstün kılması,
- Onu herkese peygamber olarak göndermesi,
- Dininin ebediyete kadar hükümsüz kılınmaması

Bu ayette ise Allah: ( وَلَوْ شِئْنَا لَبَعَثْنَا فِي كُلِّ قَرْيَةٍ نَذِيرًا ) *"Dileseydik her memlekete bir uyarıcı gönderirdik"* buyurmak suretiyle ona en ince bir işaretle edep dersi vermiştir. Bu, tıpkı Allah'ın şu ayetteki sözü gibidir:

( وَلَئِنْ شِئْنَا لَنَذْهَبَنَّ بِالَّذِي اَوْحَيْنَآ اِلَيْكَ ) *"Andolsun, dileseydik biz sana vahyettiğimizi tamamen ortadan kaldırırdık."* (İsrâ, 17/86)

Burada Allah'ın amacı, has kullarının ebediyete kadar maddi gailelerden korunmalarıdır.

Kıssasında yer aldığına göre Hz. Mûsâ bir zamanlar kendisine çok soru sorulmasından ötürü sıkılmış, bunun üzerine Allah bir gecede İsrail oğullarından bin nebiye vahiy göndererek onları resul yapmıştır. İnsanlar da Hz. Mûsâ'nın etrafından dağılarak onların etrafında toplanmışlardır. Bu gelişme üzerine Hz. Mûsâ'nın kalbi daralmış ve: *"Ya Rabbi! Ben bu duruma dayanamıyorum"* demiştir. Onun bu yakarışı sonucu Allah o resullerin canını almıştır.

فَلَا تُطِعِ الْكَافِرِينَ وَجَاهِدْهُمْ بِهِ جِهَادًا كَبِيرًا ﴿٥٢﴾

52- "Öyle ise kâfirlere itaat etme, onlara karşı bu Kur'ân'la büyük bir mücadele ver."

Sen, bizden başkasına meyledip ilgi göstermeksizin hakkımızı yerine getir. O zaman biz de her yönden seni koruruz ve hiçbir şekilde inayetimizin gölgesini üzerinden kaldırmayız.

وَهُوَ الَّذِي مَرَجَ الْبَحْرَيْنِ هٰذَا عَذْبٌ فُرَاتٌ وَهٰذَا مِلْحٌ اُجَاجٌ وَجَعَلَ بَيْنَهُمَا بَرْزَخًا وَحِجْرًا مَحْجُورًا ﴿٥٣﴾

53- "Birinin suyu lezzetli ve tatlı, diğerininki tuzlu ve acı olan iki denizi salıverip aralarına da görünmez bir perde ve karışmalarını önleyici bir engel koyan O'dur."

Tuzlu suda tatlılık, tatlı suda da tuzluluk yoktur. Oysa özü bakımından ikisi aynıdır. Ancak Allah, kudretiyle onları nitelik bakımından

farklı kılmıştır. Aynı şekilde Allah kalpleri yaratırken bir kısmı yakîn ve irfan kaynağı, bir kısmı da şek ve küfran yeri olmuştur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, müminlerin kalplerine korkuyu ve ümidi yerleştirmiştir. Öyle ki ne korku ümide, ne de ümit korkuya galip gelir.

- Allah, kalpleri iki vasıf üzerine yaratmıştır: Müminin kalbini aydınlık, kâfirin kalbini de siyah ve karanlık yaratmıştır. Biri, iman nuruyla süslenmiş, diğeri de inkâr karanlığıyla damgalanmıştır.

- Avamın kalpleri, isteklerin ve nefsin arzularının esiridir. Havassın kalpleri ise isteklerden azat olmuş ve nefsin arzularına köle olmaktan arınmıştır.

وَهُوَ الَّذِي خَلَقَ مِنَ الْمَآءِ بَشَرًا فَجَعَلَهُ نَسَبًا وَصِهْرًا وَكَانَ رَبُّكَ قَدِيرًا ﴿٥٤﴾

54- "Sudan bir insan yaratıp ondan soy sop ve hısımlık meydana getiren O'dur. Rabbin, her şeye hakkıyla gücü yetendir."

Yaratıklar, yaratılışın aslı ve özü bakımından benzerdirler. Nitelik ve biçim bakımından ise zıttırlar ve değişiktirler. Şöyle ki kâfirlerin nefisleri binekleri olup onları cehenneme sürerler. Müminlerin de nefisleri binekleri olup onları cennete taşırlar. Yaratıkların bir kısmı da beşerdir. Ancak her beşer, beşer gibi değildir. Kimisi düşmandır ve bütün çabasını Allah'a karşı çıkmada harcar. Ayrıca o, hep nefsinin ihtiras ve arzusuna göre yaşar, nefisle mücadeleye katlanamaz, çirkinliğin ve değersizliğin sınırının üstüne çıkamaz. Kimisi de velidir, Allah'a itaatte gevşeklik göstermez ve gayret sarf etmekten geri durmaz. Böylece o, mabudu sayesinde azizliğinin zirvesindedir.

Bu ikisinin arasında da insanların çeşitli mezhepleri ve meşrepleri vardır. Kimisi Allah'ın şu ayette buyurduğu gibi olmaktadır:

وَيَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ مَا لَا يَنْفَعُهُمْ وَلَا يَضُرُّهُمْ وَكَانَ الْكَافِرُ عَلٰى رَبِّهٖ ظَهِيرًا ﴿٥٥﴾

55- "Onlar, Allah'ı bırakıp kendilerine ne faydası ne de zararı dokunan şeylere kulluk ederler. Kâfir, Rabbine karşı şeytana arka çıkandır."

Bu kimse, oyulmuş ahşapla, yapma taşla ve bakırdan edinilenle yetinir. Oysa bunların hepsi aklı olmayan, işitmeyen, zarar ve fayda vermeyen cansız varlıklardır.

Mümine gelince, onun vasıflarından biri de yüksek de olsa Arş'a bakmaması ve sayısız menkıbeleri dahi olsa hiçbir mahlûka kalbiyle boyun eğmemesidir.

وَمَٓا اَرْسَلْنَاكَ اِلَّا مُبَشِّرًا وَنَذِيرًا ﴿٥٦﴾

56- "Biz, seni ancak bir müjdeci ve bir uyarıcı olarak gönderdik."

Seni tarafımızdan uyarmak ve müjdelemekle memur kılınan, tebliğci sıfatıyla kendisini tuttuğumuz yerde duran, insanlardan hiçbir ücret istemeyen ve onlardan bir şey elde etmede gözü olmayan bir resul olarak gönderdik.

قُلْ مَٓا اَسْـَٔلُكُمْ عَلَيْهِ مِنْ اَجْرٍ اِلَّا مَنْ شَٓاءَ اَنْ يَتَّخِذَ اِلٰى رَبِّهٖ سَبِيلًا ﴿٥٧﴾

57- "De ki: 'Ben, buna karşılık sizden dileyen bir kimsenin, Rabbine giden yolu tutmasından başka herhangi bir ücret istemiyorum.'"

( إلاّ ) "*illâ*" münkati istisna edatıdır. Çünkü onların Rablerine giden yolu aramaları, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) onlardan aldığı bir ücret sebebiyle değildir. Böylece Hz. Peygamber (s.a.v.) Allah'a yönelen kimse için müjdeleyici, yüz çeviren içinse uyarıcıdır.

وَتَوَكَّلْ عَلَى الْحَيِّ الَّذِي لَا يَمُوتُ وَسَبِّحْ بِحَمْدِهِ وَكَفٰى بِهٖ
بِذُنُوبِ عِبَادِهٖ خَبِيرًا ﴿٥٨﴾

58- "Sen, o ölümsüz ve daima diri olan Allah'a tevekkül et. O'nu her türlü övgüyle yücelterek tesbih et. Kullarının günahlarından hakkıyla haberdar olarak O yeter."

Tevekkül, işleri Allah'a bırakmaktır. Tevekkülün mahiyeti ve özü ise kulun, bütün olan bitenlerin Allah'tan hasıl olduğunu ve O'ndan başka hiç kimsenin, var etmeye kadir olmadığını bilmesidir.

Kul, ihtiyaç duyduğu bir hususta bunu bildiği zaman -muradının, ancak Allah tarafından yükseleceğini bildiği zaman- kendisi için tevekkülün aslı gerçekleşmiş olur. Tevekkülün bu miktarı farz olup imanın şartlarındandır. Çünkü Allah şöyle buyurmuştur:

( وَعَلَى اللّٰهِ فَتَوَكَّلُوٓا اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ) *"Eğer mümin iseniz Allah'a tevekkül edin."* (Mâide, 5/23)

Bu miktardan fazla olan ise ki bu, kalbin yatışması ve tedirginlik ve sıkıntısının yok olmasıdır, tevekkülün kemalî bakımından ona dahil olan hallerdir.

Bu böylece sabit olunca, yetinme ve sükûnet bakımından insanlar birkaç kısımdır ve bu kısımlardan her bir derecenin iştikak veya ıstılah bakımından bir ismi vardır.

Buna göre tevekküldeki ilk mertebe, kulun elindekiyle yetinmesi, ondan fazlasını istememesi ve kalbinin, fazlasını istemekten kurtulup rahatlamış olmasıdır. Bu hale kanaat adı verilmektedir. Bu halin sahibi, vardığı yerde durur, kendisi için gerçekleşen miktarla yetinir ve fazlasını istemez. Sonra her birinin yetinmesi, azlık ve çokluk bakımından değişir. Bu kimselerin kalplerinin rahatı, hırstan ve fazlalık talebinden kurtuluştadır.

Bundan sonra kalbin sükûneti, sebeplerin var olmaması durumuna bağlıdır. Böylece kul her şeyden soyutlanmış ve iradesinde

Allah'a tevekkül etmiş olur. Bu durumdakiler mertebeleri bakımından birbirlerinden farklıdırlar. Biri, Allah'ın vaadiyle yetinir. Çünkü Allah, ona verdiği güvenceyi yerine getirmiştir. Bu nedenle o, sebepler olmadığı takdirde Rabbinin vaadine itimadı olduğundan kalbiyle sükûnete ermiş olur. İşte bu da tevekkül diye adlandırılır. Buna binaen deniliyor ki: Tevekkül, Rabbin güvencesiyle kalbin sükûnete ermesi veya geçim arayışında içinin rahat olması veya parası olmadığı zaman Allah'ın vaadiyle yetinmesidir.

Tevekkülün bundan daha ince olan anlamı ise kulun Allah'ın, onun halini bildiğini bilmekle yetinmesidir. Böylece o, Allah'ın emirleriyle meşgul olur, taati istikametinde amel eder ve vaat ettiğini yerine getirip getirmediğini gözetlemez. Aksine işini Allah'a havale eder. Bu ise Allah'a teslim olmaktır.

Bunun üstünde de tefvîz vardır. Bu, kulun işini Allah'a havale ederek hiçbir durumda Mevlâ'sından talepte bulunmaması, tercih yapmaması ve onun nazarında sebeplerin varlığıyla yokluğunun eşit olmasıdır. Böylece kul, Allah'ın kendisini yükümlü kıldığı hususlarla meşgul olur, kendi durumunu düşünmez ve Mevlâ'sının mülkiyetinde olduğunu bilir. Nitekim efendinin köle üzerindeki hakkı, kölenin kendi üzerindeki hakkından daha önceliklidir.

Kul, bu halin de üstüne çıktığı zaman engellenmede huzur bulur ve karşısına çıkan reddedilişi memnuniyetle karşılar. Bu da rıza mertebesidir. Bu durumda kul içi, rızanın öyle birtakım faydaları ve latifeleri gerçekleşir ki bir alt mertebede olan kimse için amacın gerçekleşmesinde bile bu tatlılık meydana gelmez.

Bundan sonra muvafakat gelir. Bu, kulun engellenmede huzur bulmayıp bunun yerine her türlü arzuyu ve sebebin varlığını veya yokluğunu unutmak suretiyle, Allah'a yakınlığın esintisinde ünsiyetin fazlalıklarını bulmasıdır. Böylece nasıl ki ibadetin tadı, rızanın serinliği yanında küçük görünüyorsa -rıza ehli bunu perde sayarlar- Allah ile ünsiyet bulanlar da her türlü varlık ve yokluğu unutarak ve varlık ile yokluk hallerine ilgisiz kalarak engellenmenin lezzetine doğru alçalmayı ve rızanın latifeleriyle yetinmeyi, halde noksanlık sayarlar.

Sonra hakikat sultanının hakimiyetinden sonra kul, beşerî benliğinden büsbütün kopartılır. Bu halden ibaret olan husus ise sönmüşlük, tükeniş, varlık, kökten yok edilmek, fenâ ve buna benzer şeylerin meydana gelmesidir. Bu da tevhidin ta kendisidir. O zaman ne ünsiyet ne heybet ne lezzet ne rahatlık ne yalnızlık ne de afet vardır. Bu, tevekkül ehlinin mertebe sıralanmasının izahıdır. Bunun dışında ise meşrepleri değişik tevekkül ehlinin hallerinden yerlerinin farklılığına uygun olarak farklı şekillerde söz edilebilir.

Bu çerçevede şu yorumlar yapılabilir:

- Tevekkülün şartı, tevekkül ehlinin, kucağında bulunduğu anne onu emzirmediği sürece elinden hiçbir şey gelmeyen beşikteki çocuk gibi olmasıdır.

- Tevekkül, arayışın yok olması, tamahın ortadan kalkması ve kalbin bekleme yorgunluğundan boşalmasıdır.

- Tevekkül, değişik şekillerde tecelli eden kaderlerin sınırında durmaktır.

- Kalp, takdirin gerçekleşeceğinden emin olduğu zaman çalışıp kazanmak ona zarar vermez ve tevekkülüne halel getirmez.

- Tevekkül ehlinin avamı kendilerine bir şey verildiği zaman şükrederler. Bir şeyden alıkonuldukları zaman ise sabrederler. Havasları ise kendilerine bir şey verildiği zaman isar -başkalarını kendilerine tercih- ederler. Alıkonuldukları zaman da şükrederler.

- Allah velilere, -tevekkül ettikleri zaman- bekledikleri veya beklemedikleri yerden sebebi müyesser kılarak cömertlik yapar. Seçkinlere de ihtiyaçlarını ortadan kaldırarak cömertlik eder. İhtiyaç söz konusu olmadığında ise ne zaman talep söz konusu olur!

- Dünyalık sebeplerle ilgili tevekkülün bir sınırı vardır. Kulun ahiret işlerini yoluna koyması konusunda Allah'a tevekkül etmeye gelince, bu çok daha kapalı ve çok daha gizlidir. Bu itibarla dünyalık sebepler konusunda yapılması gereken husus, çoğunlukla onları aramaktan geri durmak ve ancak zaruret halinde hareket etmektir.

Ahiret işlerinde ve taatla ilgi konularda gerekli olan ise girişim ve gayret içinde olmak, kabuğuna çekilmemek, tembelliğin ve başarısızlık eğiliminin dışında kalmaktır.

İbadetlerde tembellik yapma vasfına sahip olan ve hasımları hoşnut edip vecibelerin hakkını yerine getirmek konusunda meydana getirdiği aksaklıkları telafi etmede ağır davranan sonra da kendi içinden Allah'a tevekkül ettiğine ve Allah'ın kendisini affedeceğine inanan kimse ise zan altındadır, hali hastalıklıdır, tuzağa düşmüştür ve istidraca uğramıştır.

Doğru olan, bu kimsenin çaba harcaması ve elinden gelen her şeyi yapması, bunu yaptıktan sonra da ibadetine güvenmemesi, hal ve hareketlerine yaslanmaması, sırrıyla kendi güç ve kuvvetinden sıyrılmasıdır. Sonra Rabbi hakkında güzel zanda bulunur. Ancak Rabbi hakkında güzel zanda bulunmakla birlikte korkusundan arınması uygun olmaz. Meğer ki kalbine hakim olan hakikatlerin keşifleri, o anda onu akıbetleri düşünmekten alıkoymuş olsun. Çünkü bu durum gerçekleştiği zaman vakit galip gelir. Nitekim Arapların: *"Vakit kılıçtır"* şeklindeki sözlerinin anlamlarından biri de budur.

اَلَّذٖي خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ وَمَا بَيْنَهُمَا فٖي سِتَّةِ اَيَّامٍ ثُمَّ
اسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ اَلرَّحْمٰنُ فَسْـَٔلْ بِهٖ خَبٖيرًا ﴿٥٩﴾

59- "Gökleri ve yeryüzünü ve ikisi arasındakileri altı gün içinde yaratan, sonra da Arş'a kurulan Rahmân'dır. Sen, bunu haberdar olana sor."

Varlıklar âlemi, Allah ile düzene girmiştir. Arş da varlıklar âlemi cümlesindendir. Bu arada Allah'ın güzelliği, yaratıklarından herhangi bir şeyi ortaya çıkarmasıyla olmamıştır. Bu nedenle Arş'ın üstüne çıkması, kahrı ve kudreti itibariyledir. Arş'a kurulması -istivası- ise parçalarına ve şekline düzen vermek suretiyle Arş'a has kıldığı bir fiille olmuştur.

وَإِذَا قِيلَ لَهُمُ اسْجُدُوا لِلرَّحْمٰنِ قَالُوا وَمَا الرَّحْمٰنُ أَنَسْجُدُ لِمَا
تَأْمُرُنَا وَزَادَهُمْ نُفُورًا ﴿٦٠﴾

60- "Onlara: 'Rahman'a secde edin' denildiğinde: 'Rahmân da nedir? Senin bize emrettiğine mi secde edeceğiz?' derler ve bu, onların nefretini artırır."

Allah, lütuf ve keremiyle kimilerine yöneldi ve onlar bu sayede O'nu buldular. Yüceliği ve azizliğiyle de birilerinden yüz çevirdi ve bu yüzden O'nu inkâr ettiler. Allah onları uzaklık karakteri üzere yaratarak hamurlarını mutsuzluk ve yüz çevirme suyuyla yoğurmuştur. Onları ortaya çıkarınca da kendilerine cehalet ve inkâr yeleğini giydirdi.

تَبَارَكَ الَّذِي جَعَلَ فِي السَّمَاءِ بُرُوجًا وَجَعَلَ فِيهَا سِرَاجًا وَقَمَرًا
مُنِيرًا ﴿٦١﴾

61- "Göğe burçlar yerleştiren, orada bir ışık kaynağı ve aydınlatıcı bir ay yaratanın şanı çok yücedir."

Allah, en yakın göğü kandillerle donatmış, onda burçlar yaratmış, onda yıldızlar serpiştirmiş, onun etrafını ve çevresini çatlaktan ve düzensizlikten korumuş, feleklerini kudretiyle döndürmüş ve dilediği şekilde durmasını devamlı kılmıştır.

Bir de nasıl ki Allah gökte burçlar yerleştirmişse, aynı şekilde velilerinin ve seçkin kullarının kalplerinin semasında da burçlar yerleştirmiştir. Şöyle ki göğün burçları sayılı, kalbin burçları ise ilahi müşahede altındadır.

Ayrıca göğün burçları güneşi, ayı ve yıldızlarıdır. Kalplerin burçları ise nurlarının, güneşlerinin ve yıldızlarının doğdukları yerlerdir. Bu arada kalplere ait yıldızlar akıl, anlama, basiret, ilim gibi hususlardır. Kalplerin ayı da marifettir. Göğün ayında eksilme ve kaybolma hali vardır. Bazı zamanlarda ise kemal vasfıyla dolunay

olur. Oysa marifet ayının parlaklığı ebedi olup eksilip kaybolması söz konusu değildir.

Şu dizeler de bu mealde söylenmiştir:

*Bırak ayları saklansın veya aydınlatsın*
*Onun bir dolunayı var ki boyun büker ona dolunaylar*

Kalplerin güneşine gelince o tevhiddir. Bu arada göğün güneşi batar, ancak kalplerin güneşi ne kaybolur ne de batar.

Nitekim bu anlamda şöyle denilmiştir:

*Batar geceleyin gündüz güneşi*
*Oysa batmaz kalplerin güneşi*

Bir de denebilir ki, gündüz güneşi geceleyin batar. Oysa kalplerin güneşinin aydınlık ve doğuştaki üstünlüğü geceleyin daha mükemmeldir.

وَهُوَ الَّذِي جَعَلَ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ خِلْفَةً لِمَنْ اَرَادَ اَنْ يَذَّكَّرَ اَوْ اَرَادَ
شُكُورًا ﴿٦٢﴾

62- "Öğüt almak isteyen ve çok şükredici olmayı dileyen kimseler için geceyi ve gündüzü birbiri ardınca getiren O'dur."

Vakitler mütecanistir. Birbirlerine olan üstünlüğü ise bir kısmındaki ibadetin daha faziletli ve sevabının daha çok olması anlamındadır. Bu arada gece gündüzün ardından, gündüz de gecenin ardından gelmektedir. Bu çerçevede her kim gece ibadetinde bir halel ile karşılaşırsa gündüz vakti huzura ermesi o halelin telafisi olur. Şayet gündüzün ibadetinde bir halel meydana gelirse bu kez geceleyin huzura erdiği zaman bu noksanını tamamlamış olur.

وَعِبَادُ الرَّحْمٰنِ الَّذِينَ يَمْشُونَ عَلَى الْاَرْضِ هَوْنًا وَاِذَا خَاطَبَهُمُ
الْجَاهِلُونَ قَالُوا سَلَامًا ﴿٦٣﴾

63- "Rahmân'ın kulları, yeryüzünde tevazu ve huşu içinde yürüyen kimselerdir. Cahiller onlara laf attıkları zaman: 'Selam' der geçerler."

İbadetlere muvaffak olanlar Rahmân'ın rahmetini hak edenlerdir. Böylece onlar sadece O'nun rahmetiyle ibadete muvaffakiyet mertebesine ulaşmışlardır. İşte hakikatin izahı böyledir. Öte yandan onlar, ibadetleriyle Allah'ın cennetine ermişlerdir. Şeriatın anlattığı da budur. Ayetteki ( هَوْنًا ) kelimesi, tevazu ve huşu içinde demektir.

Bir yoruma göre de tevazuun şartı ve sınırı, kulun kendi ahvalinden hiçbir şeyi güzel bulmamasıdır. O kadar ki, şöyle demişlerdir:

*"Bu kimse ayağına baktığı zaman ayakkabısının bağcığını bile güzel bulmaz."*

İşte bu ölçüye göre kendi amelleriyle tatmin olmaz ve kendi ahvaline bakmaz.

( وَاِذَا خَاطَبَهُمُ الْجَاهِلُونَ قَالُوا سَلَامًا ) *"Cahiller onlara laf attıkları zaman: 'Selam' der geçerler."*

Bir görüşe göre selamdan maksat, uygun ve yerinde konuşmaktır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Onları kötüleyerek kendilerine hitap edene övgüyle cevap verirler.

- Hallerini bilmeyenler, onları tan edenler ve ayıplayanlar, kendilerine hitap ettikleri zaman bunu şefkat, güzel ahlak ve güzel söz ile karşılarlar.

- Onlar, kendilerine cefa edenlere mukabil cefadan güven içinde olduklarını bildirirler.

وَالَّذِينَ يَبِيتُونَ لِرَبِّهِمْ سُجَّدًا وَقِيَامًا ﴿٦٤﴾

64- "Onlar, Rablerine secde ederek ve kıyamda durarak geceleyenlerdir."

Onlar, Rablerine secde ederek gecelerler ve vecd içinde sabahlarlar. Bu itibarla sabahlarının vecdi, ruhlarının secdelerinin meyveleridir. Bir hadiste de şöyle denilmiştir:

*"Geceleyin namazı çok olan kimsenin gündüz yüzü güzel olur."*

Yani Allah katında yüzünün suyu büyür. En güzel şey de secde ile güzelleştirilen zahir ve vecd ile süslenen batındır.

Bir yoruma göre de onlar vecdin adabını yerine getirmek üzere secde sıfatını taşırlar.

وَالَّذِينَ يَقُولُونَ رَبَّنَا اصْرِفْ عَنَّا عَذَابَ جَهَنَّمَ اِنَّ عَذَابَهَا كَانَ
غَرَامًا ﴿٦٥﴾ اِنَّهَا سَٓاءَتْ مُسْتَقَرًّا وَمُقَامًا ﴿٦٦﴾

65, 66- "Onlar şöyle diyenlerdir: 'Ey Rabbimiz! Bizden cehennem azabını uzaklaştır, gerçekten onun azabı sürekli bir helaktir. Gerçekten ne kötü bir durak ve ne kötü bir konaktır orası!'"

Onlar son derece çaba harcarlar, ellerinden geleni sonuna kadar yaparlar, dilekte bulundukları zaman ise günahkarmış gibi davranırlar, özür dilemek durumunda olanların tutumunu takınırlar ve aklanmaya dönük bir üslupla hitap ederler.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Girmek istemedim yanına ben*
*Zelil kul yerine geçinceye kadar*

وَالَّذِينَ اِذَٓا اَنْفَقُوا لَمْ يُسْرِفُوا وَلَمْ يَقْتُرُوا وَكَانَ بَيْنَ ذٰلِكَ قَوَامًا ﴿٦٧﴾

67- "Onlar, harcadıklarında ne israf ne de cimrilik edenlerdir. Onların harcamaları, bu ikisi arası dengeli bir harcamadır."

İsraf, hevâ ve nefsin payı yolunda harcama yapmaktır. Allah için yapılan harcamada ise israf yoktur. Cimrilik de malı Allah yolunda harcamaktan esirgemektir. Bu arada nefsi, şehvetlerin peşine

düşmekten alıkoymak ve azla yetinmeye alıştırmak için onu darda tutmaya gelince bu, kötü sayılan cimrilikten değildir.

وَالَّذِينَ لَا يَدْعُونَ مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ وَلَا يَقْتُلُونَ النَّفْسَ الَّتِي حَرَّمَ اللّٰهُ اِلَّا بِالْحَقِّ وَلَا يَزْنُونَ وَمَنْ يَفْعَلْ ذٰلِكَ يَلْقَ اَثَامًا ﴿٦٨﴾

68- "Onlar, Allah ile beraber başka bir ilâha kulluk etmeyen, haksız yere, Allah'ın haram kıldığı cana kıymayan ve zina etmeyen kimselerdir. Kim, bunları yaparsa ağır azaba uğrar."

Zahire göre başka ilaha kulluk etmekten maksat, taş ve tahtalardan yontularak yapılan putlara ibadettir. Öte yandan nasıl ki nefisler ve bedenler bu vasfa sahip olabiliyorsa, aynı şekilde iyilikleri ve zararları başkalarından vehmetmek de şirktir.

( وَلَا يَقْتُلُونَ النَّفْسَ الَّتِي حَرَّمَ اللّٰهُ اِلَّا بِالْحَقِّ ) *"Allah'ın haram kıldığı cana kıymayan... kimselerdir."*

Öldürülmesi kula haram kılınan nefislerden biri de kendi zavallı nefsidir. Allah şöyle buyurmuştur:

( وَلَا تَقْتُلُوٓا اَنْفُسَكُمْ ) *"Nefislerinizi öldürmeyin."* (Nisâ, 4/29)

Nefsi haksız yere öldürmek ise ahirette helakine sebep olacak şeylerin peşine düşmesine imkan tanımaktır. Çünkü kul, bir şeyden alıkonulmadığı zaman onunla memurdur.

Sonra bu hitabın ortaya koyduğu delil, nefsin haklı yere öldürülmesini öngörmektedir. Bu da arzularına karşı çıkma bıçağıyla onu boğazlamaktır. Zira insanın kurtuluşu ancak içindeki nefsi öldürmekle gerçekleşir.

( وَمَنْ يَفْعَلْ ذٰلِكَ يَلْقَ اَثَامًا ) *"Kim bunları yaparsa ağır azaba uğrar."*

Kıyamet günü onlar için azap, ayrılık hasretleri ve yanmanın yol açtığı ahlar ile katmerleşir. Kimileri içinse bugün alabildiğine yalnız kalmak, hicran kaygısı ve sürekli mahrumiyetle azap kat kat

artırılır. Daha doğrusu kimin ahirette azabı kat kat ise dünyada da azabı kat kat olur.

Nitekim bir hadis şöyledir:

*Kim ne durumdaysa, Allah'ın huzuruna onunla çıkar."*

يُضَاعَفْ لَهُ الْعَذَابُ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ وَيَخْلُدْ فٖيهٖ مُهَانًا ﴿٦٩﴾

69- "Kıyamet günü onun azabı kat kat artırılır ve horlanmış olarak orada ebedî kalır."

اِلَّا مَنْ تَابَ وَاٰمَنَ وَعَمِلَ عَمَلًا صَالِحًا فَاُو۬لٰٓئِكَ يُبَدِّلُ اللّٰهُ
سَيِّاٰتِهِمْ حَسَنَاتٍ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُورًا رَحٖيمًا ﴿٧٠﴾

70- "Ancak tövbe edip de iman eden ve salih amel işleyenler başka. Allah, işte onların kötülüklerini iyiliklere çevirir. Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Günahtan hemen tövbe edip gelecekte iman eden kimse hariç.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kurtuluşunun kendi tövbesiyle değil, Allah'ın lütfuyla olduğuna inanan ve tövbesini bozmayan, salih amel işleyen kimse.

- Şayet tövbesini bozarsa salih bir amel işler yani tövbesini yeniler. İşte bu kimselerin kötülüklerini Allah iyiliklere çevirir ve onlar için terk edilmişlik yerine muvaffakiyet halk eder.

- Allah onların kötülüklerini iyiliklere çevirir ve tövbelerine karşılık kendilerine sevap verir.

- Allah hatalarının yol açtığı zilleti siler ve onun yerine iyilik ve güzellikler var eder.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Ve hoşnut olmadılar hata sahibini sadece bağışlamakla*
*Eline bir şeyler verip kendisine faydalı oluncaya kadar*

وَمَنْ تَابَ وَعَمِلَ صَالِحًا فَاِنَّهُ يَتُوبُ اِلَى اللّٰهِ مَتَابًا ﴿٧١﴾

71- "Kim de tövbe eder ve salih amel işlerse işte o, Allah'a tövbesi kabul edilmiş olarak döner."

وَالَّذِينَ لَا يَشْهَدُونَ الزُّورَ وَاِذَا مَرُّوا بِاللَّغْوِ مَرُّوا كِرَامًا ﴿٧٢﴾
وَالَّذِينَ اِذَا ذُكِّرُوا بِاٰيَاتِ رَبِّهِمْ لَمْ يَخِرُّوا عَلَيْهَا صُمًّا وَعُمْيَانًا ﴿٧٣﴾

72, 73- "Onlar yalana şahitlik etmeyen, faydasız boş bir şeyle karşılaştıkları zaman vakar ve hoşgörü ile geçip gidenlerdir. Onlar, kendilerine Rablerinin ayetleri hatırlatıldığı zaman onlara kör ve sağır kesilmezler."

Bunlar, dürüstlüğün merkezinde karar kılmakta olup gece gündüz sözleri ve fiilleri ile buradan ayrılmazlar. Hata sahiplerinin ve itaatsizlik meskenlerinin yanından geçtikleri zaman kararlı, yüz çevirerek ve o halin sahiplerinin yanında durmaksızın geçerler. Bir yoruma göre de ayet, Mekke'ye girdiklerinde içinde putlara taptıkları evlerin kapılarının önünden onurlu bir şekilde, onlara bakmaksızın veya ilgi göstermeksizin geçen ve buna karşılık olarak Allah'ın teşekkürde bulunduğu kimseler hakkında inmiştir.

Sonra Allah, onların vasfı hakkında şöyle buyurmuştur:

( وَالَّذِينَ اِذَا ذُكِّرُوا بِاٰيَاتِ رَبِّهِمْ لَمْ يَخِرُّوا عَلَيْهَا صُمًّا وَعُمْيَانًا ) *"Onlar, kendilerine Rablerinin ayetleri hatırlatıldığı zaman onlara kör ve sağır kesilmezler."*

Aksine bu kimseler o ayetleri düşünme, teemmül ve akıl yürütme ile karşılarlar.

وَالَّذِينَ يَقُولُونَ رَبَّنَا هَبْ لَنَا مِنْ اَزْوَاجِنَا وَذُرِّيَّاتِنَا قُرَّةَ اَعْيُنٍ
وَاجْعَلْنَا لِلْمُتَّقِينَ اِمَامًا ﴿٧٤﴾

74- "Onlar: 'Ey Rabbimiz! Eşlerimizi ve çocuklarımızı bize göz aydınlığı kıl ve bizi Allah'a karşı gelmekten sakınanlara önder eyle' diyenlerdir."

Göz nuru, ruhun kendisiyle yaşadığı kimsedir. Bu kimse ise ancak Allah'ın hakkını yerine getirdiği zaman böyle olur. Bir yoruma göre de göz nuru, Allah'a itaati kucaklayan ve emrine karşı çıkmayı terk eden kimsedir.

( وَاجْعَلْنَا لِلْمُتَّقِينَ اِمَامًا ) *"Bizi Allah'a karşı gelmekten sakınanlara önder eyle."*

Önder, kendisine uyulan ve bidate bulaşmayan kimsedir. Bir yoruma göre de Allah, önderlik mertebesini hatırlayıp onu bir nevi tazarru ile dileyen ve o konuda kendi tercihlerini ileri sürmeyen kimseleri övmüştür. Bu itibarla önderlik iddia ile değil, dua iledir. Bu nedenledir ki onlar:( وَاجْعَلْنَا لِلْمُتَّقِينَ اِمَامًا ) *"Bizi Allah'a karşı gelmekten sakınanlara önder eyle"* demişlerdir.

اُولٰٓئِكَ يُجْزَوْنَ الْغُرْفَةَ بِمَا صَبَرُوا وَيُلَقَّوْنَ فِيهَا تَحِيَّةً وَسَلَامًا ﴿٧٥﴾

75- "İşte onlar, sabretmelerine karşılık cennetin yüksek makamlarıyla mükâfatlandırılacaklar ve orada esenlik dileği ve selamla karşılanacaklardır."

Allah (c.c.), lütfundan çok şey verir ve onu az sayar. Kulun ibadetinden ise az olanı kabul eder ve onu çok ve büyük sayar. Allah, kullarına cenneti, sarayları ve hurileri verirken bu nimetleri "bir avuç" anlamına gelen ( غُرْفة ) *"ğurfe"* kelimesiyle ifade ederken, kuldan küçük bir iyiliği bile kabul ederek bunu:( فَرَاغَ اِلٰٓى اَهْلِه۪ فَجَٓاءَ بِعِجْلٍ سَم۪ينٍ ) *"Semiz bir buzağı getirdi"* (Zâriyat, 51/26) sözüyle ifade eder.

( وَيُلَقَّوْنَ فِيهَا تَحِيَّةً وَسَلَامًا ) *"Orada esenlik dileği ve selamla karşılanacaklardır."*

Onlar Allah'ın kendilerine olan selamını vasıtasız olarak işitirler. Bir de nakil külfeti olmaksızın ve mesafe kat etmeye katlanmaksızın O'nu görmeleri için Allah onlara tecelli eder.

Bir yoruma göre de: ( هَلْ جَزَٓاءُ الْاِحْسَانِ اِلَّا الْاِحْسَانُ ) *"İyiliğin karşılığı ancak iyiliktir"* (Rahmân, 55/60) ayeti şu demektir: Kul, bugün

ibadeti yerine getirmek için Allah'ın evine gelir ve camilere gider. Yarın ise Allah, mesafe kat etmelerine ihtiyaç bırakmaksızın kullarını mükâfatlandıracaktır. Böylece onlar aziz bir şekilde kaldıkları yerdeki tahtları üzerinde Allah'ın kelamını işitir ve Allah'a bakarlar.

( بِمَا صَبَرُوا ) *"Sabretmelerine karşılık..."*

Yani onlar, alıkonuldukları şeylere ve kendi tercihlerini terk edip Allah'ın takdirine güzelce razı olmak suretiyle Allah'ın haklarında icra ettiği hükümlere sabrettiler.

خَالِدِينَ فِيهَا حَسُنَتْ مُسْتَقَرًّا وَمُقَامًا ﴿٧٦﴾

76- "Orada ebedî kalırlar. Orası ne güzel bir durak ve ne güzel bir konaktır."

Onlar, kalıcı olup yerlerini terk etmezler. Durumları bakımından kaldıkları ve yaşadıkları yer çok güzeldir.

قُلْ مَا يَعْبَؤُا بِكُمْ رَبِّي لَوْلَا دُعَآؤُكُمْ فَقَدْ كَذَّبْتُمْ فَسَوْفَ يَكُونُ
لِزَامًا ﴿٧٧﴾

77- "De ki: 'Putları çağırmanız olmasa, Rabbim sizi ne diye umursasın! Siz yalanladınız. Öyle ise azap yakanızı bırakmayacak.'"

Eğer putlara tapmasaydınız ve onları tapılmaya layık diye çağırıp ilah olarak adlandırmasaydınız, ne diye Allah sizi cehennemde ebedî kılsın.

Bir yoruma göre de niyazda bulunanlar olarak sizin yakarış ve duanız olmasa, Allah belanızı devamlı kılacaktı. Lakin siz, boyun eğip dua etmeye başlayınca ve niyazda bulununca Allah, size merhamet etti ve üzerinizden sıkıntıyı kaldırdı.

سورة الشُّعَرَاء

# ŞUARÂ SÛRESİ

(Şuarâ Sûresi 227 âyettir. Mekke'de inmiştir. 97 ve 224-227 arası âyetlerin Medine'de indiği rivayet edilmiştir. Şuarâ, şâirler demek olup, 224. âyette şâirlerden söz edildiği için bu adı almıştır. Burada, Kur'an'ın bir şâir ürünü olduğu iddiası çürütülür).

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle aziz bir varlığın adıdır ki, O, zahidin dünyasını terk etmesinden, abidin nefsinin arzusuna karşı çıkmasından ve amaç sahibinin dünyalık amacına son vermesinden hoşnut olur. Arifin de Mevlâ'sından başka bir şeyde huzur bulmasına rıza göstermez. Şayet arif maddi olan her şeyin büsbütün dışına çıkar ve kendisinde hiçbir kalıntısı kalmamak üzere her malumdan sıyrılırsa, bir parçacık bir şeyler bulabilir. Yok eğer maddi bir şeye bağlılık gösterir de en ufağı da dahil bulanıklıklardan arınmazsa şüphesiz hadiste şöyle buyrulmuştur:

*"Mükâtebe akdi yapılan köle, üzerinde efendisinin bir dirhem dahi alacağı kaldığı sürece köledir."*

طٰسٓمٓ ﴿١﴾ تِلْكَ اٰيَاتُ الْكِتَابِ الْمُب۪ينِ ﴿٢﴾

1, 2- "Tâ Sîn Mîm. Bunlar, apaçık Kitâb'ın âyetleridir."

Biz selefin mukattaa harflerle ilgili görüş ayrılığını daha önce anlattık. Bu çerçevede kimilerine göre "Tâ" harfi Allah'ın izzetinin temiz, yüceliğinin mukaddes oluşunun işareti, "Sîn" harfi gücünün yüksekliğinin işaret ve delili, "Mîm" harfi de ezelî celalinin asaletine işarettir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- "Tâ" harfi Tûbâ ağacına, "Sîn" harfi Sidretulmuntehâ'ya, "Mîm" harfi de Hz. Muhammed'e (s.a.v.) işarettir. Yani Muhammed, İsrâ gecesi Tûbâ ağacını görme mertebesinin üstüne çıkarak sonunda Sidretulmuntehâ'ya ulaştı. Böylece o, dünyada ve ahirette hiçbir mahlûkun yanında durmadı.

- "Tâ" harfi vuslat ehli kimselerin ruhun kemalini bulmakla Allah'a yakınlık yaygısı üzerinde coşmaları demektir. "Sîn" harfi ariflerin Allah'ın varlığıyla yetinmek suretiyle keşfine mazhar kılındıkları birliğinin bekâsından duydukları sevinçtir. "Mîm" harfi de Allah hakkında tercih kullanmayı terk etmek ve Hakk'ın kendilerini tercih etmesinden güzel hoşnutluk duymak suretiyle O'na uymalarına işarettir.

- "Tâ" harfi, geçim sebeplerinin yokluğu halinde bile fakirlerin kalplerinin iyi olduğuna işarettir. Çünkü onların geçimi, rızık veren Allah'ın varlığını tanımaları sayesinde kemal üzeredir. Oysa avamın kalpleri, yardım ve rızıkların varlığıyla iyi olur.

- "Tâ" harfi tevhid ehlinin sırlarının temizliğine, "Sîn" harfi kalplerinin, herhangi bir mahlûkla sükûnet bulmaktan kurtulduğuna, "Mîm" harfi de Allah'ın bu yolla onlar üzerindeki nimetine işarettir.

لَعَلَّكَ بَاخِعٌ نَفْسَكَ اَلَّا يَكُونُوا مُؤْمِنِينَ ﴿٣﴾

3- "Ey Muhammed! Mümin olmuyorlar diye neredeyse kendini helâk edeceksin."

Yani bunu yapman, iman etmelerine olan düşkünlüğün ve iman etmeye yanaşmamalarından duyduğun korku sebebiyledir. O kadar ki sen imanı terk etmelerinden duyduğun üzüntüden dolayı kendini

öldürmeye yakınsın. Şimdi ey Muhammed! Senin bunda hiçbir sorumluluğun yoktur. Çünkü bizim hükmümüzde hiçbir değişiklik söz konusu değildir. Nitekim biz kimin şakiliğine hükmedersek o iman etmez. Sana da sadece tebliğ etmek düşer. Bu durumda iman ederlerse ne mutlu! Aksi takdirde onların hepsi kıyamet günü hak ettiklerini göreceklerdir.

اِنْ نَشَاْ نُنَزِّلْ عَلَيْهِمْ مِنَ السَّمَٓاءِ اٰيَةً فَظَلَّتْ اَعْنَاقُهُمْ لَهَا خَاضِع۪ينَ ﴿٤﴾

4- "Biz dilersek onlara gökten bir mucize indiririz de ona boyun eğmek zorunda kalırlar."

Allah, bu ayette kullarından muradını tahsil etme gücüne sahip olduğunu bildirmektedir. Bu itibarla Allah onları iman etmek zorunda bırakmaya kadirdir. Çünkü muradı tahsil etmede yetersiz kalmak, ilahlık vasfında noksanlığa ve kusura sebep olur.

وَمَا يَأْت۪يهِمْ مِنْ ذِكْرٍ مِنَ الرَّحْمٰنِ مُحْدَثٍ اِلَّا كَانُوا عَنْهُ مُعْرِض۪ينَ ﴿٥﴾

5- "Rahmân'dan kendilerine gelen her yeni öğütten mutlaka yüz çevirirler."

Yani biz onlara dini her yenilediğimizde ve her peygamber gönderdiğimizde muhakkak Allah'ın burhanını düşünmekten yüz çevirirler ve onu tekziple karşılarlar. Oysa eğer onlar peygamberlerin mucizelerini inceden inceye düşünselerdi, onların doğruluklarını açıkça anlayacaklardı. Ne var ki ezeli hükümde kendileri için takdir edilen utanç, onları imandan ve tasdikten alıkoymaktadır.

فَقَدْ كَذَّبُوا فَسَيَأْت۪يهِمْ اَنْبٰٓؤُا مَا كَانُوا بِه۪ يَسْتَهْزِؤُ۫نَ ﴿٦﴾

6- "Onlar Allah'ın ayetlerini yalanladılar; fakat alay edegeldikleri şeylerin haberleri başlarına gelecektir."

Onlar ayetleri yalanladılar ve bunda ısrar ettiler. Bu nedenle ilerde amellerinin akıbeti onlara şiddetli azap getirecektir. Böylece onlar şirklerinin vebalini tadacaklardır.

اَوَلَمْ يَرَوْا اِلَى الْاَرْضِ كَمْ اَنْبَتْنَا فِيهَا مِنْ كُلِّ زَوْجٍ كَرِيمٍ ۝٧
اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَةً وَمَا كَانَ اَكْثَرُهُمْ مُؤْمِنِينَ ۝٨ وَاِنَّ رَبَّكَ لَهُوَ
الْعَزِيزُ الرَّحِيمُ ۝٩

7, 8, 9- "Yeryüzüne bakmazlar mı? Orada her türden nice güzel ve yararlı bitkiler bitirdik. Şüphesiz bunlarda bir delil vardır ama onların çoğu inanmamaktadırlar. Şüphesiz senin Rabbin elbette mutlak güç sahibidir, çok merhametlidir."

İlkbaharda yerden biten bitki çeşitlerinin haddi hesabı yoktur. Sonra onlardan her birinin kendine has özel bir rengi, tadı ve kokusunun olması da cabası. Bir de her birinin özel bir şekli, yapısı, çiçeği ve yaprağı vardır. O kadar ki onlar hakkında ifadeler ve işaretler yetersiz kalmaktadır. İşte bunda basiretini kullanan, akıl yürüten ve düşünen bir kimse için pek çok ayetler vardır.

( وَاِنَّ رَبَّكَ لَهُوَ الْعَزِيزُ ) *"Şüphesiz senin Rabbin, elbette mutlak güç sahibidir."*

O, yenilmesi mümkün olmayan mutlak galiptir, kendisine güç yetirilemeyen üstün kudret sahibidir ve mecbur edilemeyen dokunulmazdır.

( الرَّحِيمُ ) *"Çok merhametlidir."*

Kullarına ihsanda bulunur ve velilerinin -dostlarının- saadetini diler.

وَاِذْ نَادٰى رَبُّكَ مُوسٰٓى اَنِ ائْتِ الْقَوْمَ الظَّالِمِينَ ۝١٠ قَوْمَ فِرْعَوْنَ
اَلَا يَتَّقُونَ ۝١١

10, 11- "Hani Rabbin Mûsâ'ya: 'Zalimler topluluğuna, Firavun'un kavmine git! Başlarına geleceklerden hâlâ korkmuyorlar mı?' diye seslenmişti.

Allah, Hz. Mûsâ'ya kendisini Allah'a davet etmek için Firavun'a gitmesini emredince o, Firavun'un husumetinin şiddetli olduğunu anladı. Firavun, nefsine mağrur olduğundan ne yaptığını umursamazdı. Hz. Mûsâ, Allah'ın emrine karşı koymak veya muhalefet etmek için değil de bu görevden muaf tutulması ve vazgeçilmesi için bahaneler ileri sürmeye başladı. Ancak sonunda buna dair emrin kesin, hakkındaki hükmün de kaçınılmaz olduğunu anladı.

قَالَ رَبِّ اِنّٖٓي اَخَافُ اَنْ يُكَذِّبُونِ ﴿١٢﴾ وَيَضٖيقُ صَدْرٖي وَلَا
يَنْطَلِقُ لِسَانٖي فَاَرْسِلْ اِلٰى هٰرُونَ ﴿١٣﴾ وَلَهُمْ عَلَيَّ ذَنْبٌ فَاَخَافُ
اَنْ يَقْتُلُونِ ﴿١٤﴾

12, 13, 14- "Mûsâ şöyle dedi: 'Ey Rabbim! Muhakkak ki ben, beni yalanlamalarından korkuyorum. Göğsüm daralır, akıcı konuşamam. Onun için Hârûn'a da peygamberlik ver. Bir de onlara karşı ben suçlu durumundayım. Bu yüzden onların beni öldürmelerinden korkarım.'"

Hz. Mûsâ, Rabbinden kendisini Hz. Hârûn ile birlikte göndermesini ve Hz. Hârûn'u peygamberlikte kendisine ortak kılmasını diledi. Bir de bir adam öldürdüğünü ve Firavun'un kanunlarına göre kısas cezası bulunduğunu anlatarak şöyle dedi:

( فَاَخَافُ اَنْ يَقْتُلُونِ ) *"Bu yüzden onların, beni öldürmelerinden korkarım."*

Nihayet Allah, kendisine şöyle buyurdu:

قَالَ كَلَّا فَاذْهَبَا بِاٰيَاتِنَٓا اِنَّا مَعَكُمْ مُسْتَمِعُونَ ﴿١٥﴾

15- "Allah dedi ki: 'Hayır, korkma! Mucizelerimizle gidin. Çünkü biz sizinle beraberiz, işitmekteyiz.'"

( كَلاَّ ) *"kellâ"* lafzı engelleme ve uyarı harfidir. Yani, hayır bu senin sandığın gibi olmayacaktır. O halde bunun böyle olmasını caiz görmekten sakın ve bundan başka bir ihtimal için toparlan. Şüphesiz ben yardım, güç, yeterlilik ve rahmet ile ikinizle beraberim. Zafer ve hakimiyet başkasının değil, ikinizin olacaktır. Zaten ben, sizin söylediğinizi ve size söyleneni işitir, onların gördükleri ile sizin gördüklerinizi de görürüm.

فَاْتِيَا فِرْعَوْنَ فَقُولَٓا اِنَّا رَسُولُ رَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿١٦﴾ اَنْ اَرْسِلْ مَعَنَا
بَنِيٓ اِسْرَٓاءِيلَ ﴿١٧﴾

16, 17- "Firavun'a gidin ve: 'Şüphesiz biz âlemlerin Rabbinin elçisiyiz. İsrailoğullarını bizimle beraber gönder' deyin."

Kıssasında yer verildiğine göre Hz. Mûsâ ve Hz. Hârûn tam bir yıl Firavun'un kapısına gidip geldiler ancak ona ulaşacak bir yol bulamadılar. Sonra bir yılın ardından Allah'ın mesajını kendisine tebliğ ettiler. Firavun onlara yalanlamayla karşılık verdi ve böylece kıssa olduğu gibi cereyan etti. Bu arada Firavun, Hz. Mûsâ'yı görünce şöyle dedi:

قَالَ اَلَمْ نُرَبِّكَ فِينَا وَلِيدًا وَلَبِثْتَ فِينَا مِنْ عُمُرِكَ سِنِينَ ﴿١٨﴾
وَفَعَلْتَ فَعْلَتَكَ الَّتِي فَعَلْتَ وَاَنْتَ مِنَ الْكَافِرِينَ ﴿١٩﴾

18, 19- "Firavun şöyle dedi: 'Seni biz, küçük bir çocuk olarak alıp aramızda büyütmedik mi? Sen ömrünün nice yıllarını aramızda geçirdin. Bir de sen o yaptığın işi yaptın (adam öldürdün). Sen, nankörlerdensin.'"

Buna karşılık Hz. Mûsâ'nın, bunu ikrar ve itiraf etmekten başka hiçbir cevabı olmadı.

قَالَ فَعَلْتُهَٓا اِذًا وَاَنَا مِنَ الضَّٓالِّينَ ﴿٢٠﴾ فَفَرَرْتُ مِنْكُمْ لَمَّا خِفْتُكُمْ
فَوَهَبَ لِي رَبِّي حُكْمًا وَجَعَلَنِي مِنَ الْمُرْسَلِينَ ﴿٢١﴾

**20, 21- "Mûsâ şöyle dedi: 'Ben, onu o vakit kendimi kaybetmiş bir halde iken yaptım. Sizden korktuğum için de hemen aranızdan kaçtım. Derken Rabbim bana hüküm ve hikmet bahşetti de beni peygamberlerden kıldı.'"**

Hz. Mûsâ dedi ki: Bütün bunlar oldu ve ben sizden korkunca aranızdan kaçtım. Bunun üzerine Allah, bana peygamberlik lütfetti ve beni size peygamber olarak gönderdi.

Bir yoruma göre de Hz. Mûsâ, Firavun'un onu yetiştirdiğini ve görünürde kendisine yaptığı iyiliği inkâr etmedi. Ancak Allah bir şey emrettiği zaman emrine uymanın vacip olduğunu açıkladı. Lakin şayet mahlûkların verdiği terbiye bile bir hakka sebep oluyorsa kulun, Allah'ın verdiği terbiyenin kadrini yüceltmesi daha uygun olur.

( فَفَرَرْتُ مِنْكُمْ لَمَّا خِفْتُكُمْ ) *"Sizden korktuğum için de hemen aranızdan kaçtım."*

Bu ifadenin zahirine göre yorumlanması ve Hz. Mûsâ'nın canı için onlardan korkmuş olması caizdir. Nitekim güç yetirilemediği zaman kaçmak, hiç kimseye göre kötülenecek bir şey değildir.

Bir yoruma göre de şirkinizin uğursuzluğu sebebiyle ben başınıza bir azabın gelmesinden korkunca kaçtım. Ya da Hz. Mûsâ, Firavun'un şu sözünden kaçmıştır:

( مَا عَلِمْتُ لَكُمْ مِنْ اِلٰهٍ غَيْرِي ) *"Sizin benden başka bir ilahınız olduğunu bilmiyorum."* (Kasas, 28/38)

وَتِلْكَ نِعْمَةٌ تَمُنُّهَا عَلَيَّ اَنْ عَبَّدْتَ بَنٖيٓ اِسْرَٓاءٖيلَ ﴿٢٢﴾

**22- "O nimet diye başıma kaktığın ise aslında İsrailoğullarını kendine köle etmendir."**

Firavun, Hz. Mûsâ'ya yaptığı çeşitli iyilikleri sayarken bunların arasında İsrailoğulları arasında kendisini sağ bırakmasını ve öldürülmekten korumasını da zikretti. Bunun üzerine Hz. Mûsâ şöyle dedi:

*"Bu, başıma kaktığın bir nimet midir? İsrailoğullarını köle edinmen nimet sayılır mı? Kuşkusuz bu nimet değildir ve onda başa kakılacak bir durum da yoktur."*

قَالَ فِرْعَوْنُ وَمَا رَبُّ الْعَالَمٖينَ ﴿٢٣﴾

23- "Firavun: 'Âlemlerin Rabbi de nedir?' dedi."

Melun, cahilliğine göre bakmış ve soruyu sapıklığına yakışır şekilde: "Nedir?" diye sormuştur. Oysa "ne?" sorusu akıl sahibi olmayan varlıklar için kullanılır. O da bu amaçla: ( وَمَا رَبُّ الْعَالَمٖينَ ) *"Âlemlerin Rabbi de nedir?"* demiştir.

Lakin Hz. Mûsâ onun kullandığı tabirden ve tabirinin anlamından yüz çevirmiş ve Allah'ı anlatmada doğru olanı dile getirerek şöyle demiştir:

قَالَ رَبُّ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا اِنْ كُنْتُمْ مُوقِنٖينَ ﴿٢٤﴾

24- "Mûsâ: 'O, göklerin, yerin ve her ikisi arasında bulunan her şeyin Rabbidir. Eğer gerçekten inanırsanız bu böyledir.'"

Böylece Hz. Mûsâ, Allah'ın sıfatını kendisinin göklerde ve yerde bulunan her şeyin ilahı olduğu şeklinde anlatmıştır. Firavun ise buna şaşarak şöyle demiştir:

قَالَ لِمَنْ حَوْلَهُۤ اَلَا تَسْتَمِعُونَ ﴿٢٥﴾ قَالَ رَبُّكُمْ وَرَبُّ اٰبَٓائِكُمُ الْاَوَّلٖينَ ﴿٢٦﴾

25, 26- "Firavun etrafındakilere: 'Dinlemez misiniz?' dedi. Mûsâ: 'O, sizin de Rabbiniz, geçmiş atalarınızın da Rabbidir' dedi."

Hz. Mûsâ: ( رَبُّكُمْ وَرَبُّ اٰبَٓائِكُمُ الْاَوَّلٖينَ ) *"O, sizin de Rabbiniz, geçmiş atalarınızın da Rabbidir"* deyince Firavun, düzgün konuşma üslubundan saptı ve saçmalamaya başlayarak şöyle dedi:

قَالَ اِنَّ رَسُولَكُمُ الَّذٖٓي اُرْسِلَ اِلَيْكُمْ لَمَجْنُونٌ ﴿٢٧﴾

27- "Firavun: 'Bu size gönderilen peygamberiniz, şüphesiz delidir' dedi."

Çünkü Hz. Mûsâ, kendisinden başka bir ilahın varlığını ileri sürüyordu. Bir de Hz. Mûsâ'nın ne yaptıklarının hiçbirinde ne de şahsıyla ilgili bir hususta delilik vasfı bulunmuyordu. Ayrıca Hz. Mûsâ, Firavun'un saçmalamasına karşılık da vermeyerek şöyle dedi:

قَالَ رَبُّ الْمَشْرِقِ وَالْمَغْرِبِ وَمَا بَيْنَهُمَا اِنْ كُنْتُمْ تَعْقِلُونَ ﴿٢٨﴾

28- "Mûsâ: 'O, doğunun da batının da ve ikisi arasındaki her şeyin de Rabbidir. Eğer düşünüyorsanız bu böyledir' dedi."

Yani eğer siz, akıl ve temyiz sahibi kimselerden iseniz bu böyledir. Bunun üzerine Firavun şöyle dedi:

قَالَ لَئِنِ اتَّخَذْتَ اِلٰهًا غَيْرٖي لَاَجْعَلَنَّكَ مِنَ الْمَسْجُونٖينَ ﴿٢٩﴾

29- "Firavun: 'Eğer benden başka bir ilah edinirsen, andolsun seni zindana atılanlardan ederim' dedi."

Firavun: "Benden başka ilah edinirsen şöyle yaparım böyle yaparım" demeye devam etti ve aralarında birden fazla yerde zikri ve izahı geçen şeyler cereyan etti.

قَالَ اَوَلَوْ جِئْتُكَ بِشَيْءٍ مُبٖينٍ ﴿٣٠﴾ قَالَ فَاْتِ بِهٖٓ اِنْ كُنْتَ مِنَ
الصَّادِقٖينَ ﴿٣١﴾ فَاَلْقٰى عَصَاهُ فَاِذَا هِيَ ثُعْبَانٌ مُبٖينٌ ﴿٣٢﴾ وَنَزَعَ يَدَهُ
فَاِذَا هِيَ بَيْضَٓاءُ لِلنَّاظِرٖينَ ﴿٣٣﴾

30, 31, 32, 33- "Mûsâ: 'Sana apaçık bir delil getirmiş olsam da mı?' dedi. Firavun: 'Doğru söyleyenlerden isen, haydi getir onu' dedi. Bunun üzerine Mûsâ asasını attı, bir de ne görsünler asa açıkça

kocaman bir yılan olmuş. Elini koynundan çıkardı, bir de ne görsünler, bakanlara bembeyaz olmuş."

Sonra Hz. Mûsâ asayı atmak ve onu neredeyse Firavun'un konağını içindekilerle birlikte yutacak kocaman bir yılana çevirmek suretiyle mucizesini ortaya koydu. Bunun üzerine Firavun yerinden fırlayarak kaçtı ve korkudan titreyerek tahtının altında saklandı. İmajı lekelendi, iddiasında rezil oldu ve gerçek durumu ortaya çıktı. Hz. Mûsâ'ya sığındı ve ondan yardım istedi. Hz. Mûsâ da yılanı aldı ve Allah onu tekrar asaya çevirdi.

قَالَ لِلْمَلَاِ حَوْلَهُٓ اِنَّ هٰذَا لَسَاحِرٌ عَلِيمٌ ﴿٣٤﴾ يُرِيدُ اَنْ يُخْرِجَكُمْ
مِنْ اَرْضِكُمْ بِسِحْرِهِ فَمَاذَا تَاْمُرُونَ ﴿٣٥﴾ قَالُوٓا اَرْجِهْ وَاَخَاهُ وَابْعَثْ
فِي الْمَدَٓائِنِ حَاشِرِينَ ﴿٣٦﴾ يَاْتُوكَ بِكُلِّ سَحَّارٍ عَلِيمٍ ﴿٣٧﴾ فَجُمِعَ
السَّحَرَةُ لِمِيقَاتِ يَوْمٍ مَعْلُومٍ ﴿٣٨﴾ وَقِيلَ لِلنَّاسِ هَلْ اَنْتُمْ مُجْتَمِعُونَ
﴿٣٩﴾ لَعَلَّنَا نَتَّبِعُ السَّحَرَةَ اِنْ كَانُوا هُمُ الْغَالِبِينَ ﴿٤٠﴾ فَلَمَّا جَٓاءَ
السَّحَرَةُ قَالُوا لِفِرْعَوْنَ اَئِنَّ لَنَا لَاَجْرًا اِنْ كُنَّا نَحْنُ الْغَالِبِينَ ﴿٤١﴾

34, 35, 36, 37, 38, 39, 40, 41- "Firavun, çevresindeki ileri gelenlere dedi ki: 'Şüphesiz bu, bilgin bir sihirbazdır. Yaptığı sihirle sizi yurdunuzdan çıkarmak istiyor. Ne dersiniz?' Dediler ki: 'Onu ve kardeşini alıkoy. Şehirlere de toplayıcı adamlar gönder. Sana bütün usta sihirbazları getirsinler. Umarız, üstün gelirlerse sihirbazlara uyarız.' Sihirbazlar gelince Firavun'a: 'Eğer biz üstün gelirsek, gerçekten bize bir ücret var mı?' dediler."

Hz. Mûsâ yanından ayrılınca Firavun'u şakiliği tuttu, küfrün uğursuzluğuna yakalandı ve mahrumiyet kendisine hakim oldu. Bunun üzerine kavmini topladı ve Hz. Mûsâ'nın durumunu onlarla konuştu. Hep birlikte Hz. Mûsâ'nın kendilerine sihir yaptığında ittifak ettiler. O mucizenin ortaya çıkmasından sonra bile Firavun sapıklığına geri döndü.

Tıpkı şu beyitte söylendiği gibi:

*Geri döner cahilliğine, tövbe ettiği zaman*
*Tıpkı hastanın hastalığının nüksetmesi gibi*

Sonra Firavun sihirbazları toplayarak kendilerinden yardım istedi. Sihirbazlar toplanınca: "Bizim bir ücretimiz olmalı!" diyerek çaplarının düşüklüğünü dile getirmiş oldular. Bunun üzerine Firavun onların ücretlerini taahhüt etti. Bu arada başkası için ücretle çalışan kimse, ameli Allah için olan kimse gibi olamaz. Aynı zamanda ücret garantisi ve rüşvet vermekten başka bir yolla yardımcısı olmayan kimse de kısa zamanda yalnızlığa mahkum olacaktır.

قَالَ نَعَمْ وَاِنَّكُمْ اِذًا لَمِنَ الْمُقَرَّبِينَ ﴿٤٢﴾

42- "Firavun: 'Evet, hem o takdirde mutlaka bana yakın kimselerden olacaksınız' dedi."

Firavun: "*Hem o takdirde mutlaka bana yakın kimselerden olacaksınız*" dedi. Oysa kim yakınlığı bir mahlûkun yanında ararsa ulaştığı zül, bu yakınlaşmadan umduğu saygınlıktan fazla olur. Bir de Allah'a yakın olanlar, kıyamet günü huzuruna ilk varanlardır. Bu itibarla onlar vuslata erenlerin ilkleridir. Allah'a yakın olanlar O'nun huzuruna varırken diğer insanlar gaflet halinde, halk da perdelenmişliğin esaretinde olur.

قَالَ لَهُمْ مُوسٰى اَلْقُوا مَٓا اَنْتُمْ مُلْقُونَ ﴿٤٣﴾ فَاَلْقَوْا حِبَالَهُمْ وَعِصِيَّهُمْ
وَقَالُوا بِعِزَّةِ فِرْعَوْنَ اِنَّا لَنَحْنُ الْغَالِبُونَ ﴿٤٤﴾ فَاَلْقٰى مُوسٰى عَصَاهُ
فَاِذَا هِيَ تَلْقَفُ مَا يَأْفِكُونَ ﴿٤٥﴾ فَاُلْقِيَ السَّحَرَةُ سَاجِدِينَ ﴿٤٦﴾ قَالُٓوا
اٰمَنَّا بِرَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿٤٧﴾ رَبِّ مُوسٰى وَهٰرُونَ ﴿٤٨﴾ قَالَ اٰمَنْتُمْ لَهُ قَبْلَ
اَنْ اٰذَنَ لَكُمْ اِنَّهُ لَكَبِيرُكُمُ الَّذِي عَلَّمَكُمُ السِّحْرَ فَلَسَوْفَ تَعْلَمُونَ
لَاُقَطِّعَنَّ اَيْدِيَكُمْ وَاَرْجُلَكُمْ مِنْ خِلَافٍ وَلَاُصَلِّبَنَّكُمْ اَجْمَعِينَ ﴿٤٩﴾

43, 44, 45, 46, 47, 48, 49- "Mûsâ onlara: 'Hadi ortaya atacağınız şeyi atın' dedi. Bunun üzerine onlar iplerini ve değneklerini attılar ve: 'Firavun'un gücüyle elbette biz üstün geleceğiz' dediler. Mûsâ da asasını attı. Bir de ne görsünler, asa onların düzdükleri sihir takımlarını yutuyor. Bunun üzerine sihirbazlar derhal secdeye kapandılar. 'Âlemlerin Rabbine inandık' dediler. 'Mûsâ'nın ve Hârûn'un Rabbine.' Firavun dedi ki: 'Ben, size izin vermeden ona inandınız ha! Mutlaka o, size sihri öğreten büyüğünüzdür. Yakında bilip göreceksiniz siz! Andolsun, ellerinizi ve ayaklarınızı çaprazlama keseceğim ve hepinizi asacağım.'"

Sonra insanlar toplanıp sihirbazlar çarpık sihirlerini sahneleyince Hz. Mûsâ'nın asası onların ortaya koyduklarının hepsini yuttu ve tekrar asa oldu. Aynı zamanda sihirbazların getirdikleri yük ağırlığındaki urganların kendisi de yok oldu. Sihirbazlar, Firavun'un kendilerini öldürmek, çarmıha germek ve kesmekle tehdit etmesini umursamayarak secdeye kapandılar. Böylece sabahladıklarında Firavun'un gücüyle yemin ederken, daha akşama varmadan şöyle diyorlardı:

( لَنْ نُؤْثِرَكَ عَلٰى مَا جَٓاءَنَا مِنَ الْبَيِّنَاتِ ) *"Bize gelen apaçık delillere seni asla tercih etmeyeceğiz."* (Tâhâ, 20/72)

قَالُوا لَا ضَيْرَ اِنَّٓا اِلٰى رَبِّنَا مُنْقَلِبُونَ ﴿٥٠﴾ اِنَّا نَطْمَعُ اَنْ يَغْفِرَ لَنَا رَبُّنَا خَطَايَانَٓا اَنْ كُنَّٓا اَوَّلَ الْمُؤْمِنِينَ ﴿٥١﴾

50, 51- "Sihirbazlar da şöyle dediler: 'Zararı yok, mutlaka Rabbimize döneceğiz. İlk inananlar biz olduğumuz için şüphesiz Rabbimizin hatalarımızı bağışlayacağını umuyoruz.'"

Sonra sihirbazlar, muvaffakiyete mazhar olup Allah'a iman edince, en önemli işleri geçmiş günahları için Allah'tan mağfiret dilemek olmuştur. Zaten velilerin çabalarının nihai amacı, Allah'a sığınmak ve O'nun azabından korunmaktır. Bu itibarla velilerin Allah'ı en çok tanıyanları, O'ndan en çok korkanlarıdır.

وَاَوْحَيْنَٓا اِلٰى مُوسٰٓى اَنْ اَسْرِ بِعِبَادٖٓي اِنَّكُمْ مُتَّبَعُونَ ﴿٥٢﴾ فَاَرْسَلَ
فِرْعَوْنُ فِي الْمَدَٓائِنِ حَاشِرٖينَ ﴿٥٣﴾ اِنَّ هٰٓؤُلَٓاءِ لَشِرْذِمَةٌ قَلٖيلُونَ ﴿٥٤﴾
وَاِنَّهُمْ لَنَا لَغَٓائِظُونَ ﴿٥٥﴾ وَاِنَّا لَجَمٖيعٌ حَاذِرُونَ ﴿٥٦﴾ فَاَخْرَجْنَاهُمْ مِنْ
جَنَّاتٍ وَعُيُونٍ ﴿٥٧﴾ وَكُنُوزٍ وَمَقَامٍ كَرٖيمٍ ﴿٥٨﴾ كَذٰلِكَ وَاَوْرَثْنَاهَا بَنٖٓي
اِسْرَٓاءٖيلَ ﴿٥٩﴾ فَاَتْبَعُوهُمْ مُشْرِقٖينَ ﴿٦٠﴾

52, 53, 54, 55, 56, 57, 58, 59, 60- “Biz Mûsâ’ya: ‘Kullarımı geceleyin yola çıkar. Muhakkak ki takip edileceksiniz’ diye vahyettik. Firavun da şehirlere toplayıcılar gönderdi. Dedi ki: ‘Bunlar, pek az ve önemsiz bir topluluktur. Şüphesiz onlar bize öfke duyuyorlar. Ama biz, uyanık ve tedbirli bir topluluğuz.’ Biz de Firavun’un kavmini bahçelerden, pınar başlarından, servetlerden ve iyi bir konumdan çıkardık. İşte böyle yaptık ve onlara İsrailoğullarını mirasçı kıldık. Firavun ve adamları gün doğarken onları takibe koyuldular.”

Bu arada Allah Hz. Mûsâ’ya, İsrailoğullarını Mısır’dan çıkarmasını emredince ve Firavun topluluğuyla birlikte peşlerine düşüp Hz. Mûsâ’nın arkadaşları yakalanacaklarını söyleyince durum şöyle oldu:

فَلَمَّا تَرَٓاءَ الْجَمْعَانِ قَالَ اَصْحَابُ مُوسٰٓى اِنَّا لَمُدْرَكُونَ ﴿٦١﴾
قَالَ كَلَّا اِنَّ مَعِيَ رَبّٖي سَيَهْدٖينِ ﴿٦٢﴾

61, 62- “İki topluluk birbirini görünce Mûsâ’nın arkadaşları: ‘Eyvah yakalandık!’ dediler. Mûsâ dedi ki: ‘Hayır! Rabbim şüphesiz benimledir, bana yol gösterecektir.’”

Durum Hz. Mûsâ’nın söylediği gibi oldu. Çünkü Allah, İsrailoğullarına yol gösterip onları kurtardı ve Firavun’u ve kavmini suda boğarak uzaklaştırdı. Nitekim Allah (c.c.) şöyle buyurmuştur:

(وَاعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُتَّق۪ينَ) *"Bilin ki Allah takva sahipleriyle beraberdir."* (Tevbe, 9/36)

Allah, onları her beladan kurtarır ve her nimeti özellikle kendilerine bahşeder.

فَاَوْحَيْنَٓا اِلٰى مُوسٰٓى اَنِ اضْرِبْ بِعَصَاكَ الْبَحْرَ فَانْفَلَقَ فَكَانَ كُلُّ فِرْقٍ كَالطَّوْدِ الْعَظ۪يمِ ﴿٦٣﴾

63- "Bunun üzerine Mûsâ'ya: 'Asan ile denize vur' diye vahyettik. Deniz derhal yarıldı. Her parçası koca bir dağ gibiydi."

وَاَزْلَفْنَا ثَمَّ الْاٰخَر۪ينَ ﴿٦٤﴾

64- "Ötekileri de oraya yaklaştırdık."

وَاَنْجَيْنَا مُوسٰى وَمَنْ مَعَهُٓ اَجْمَع۪ينَ ﴿٦٥﴾

65- "Mûsâ'yı ve beraberindekilerin hepsini kurtardık."

ثُمَّ اَغْرَقْنَا الْاٰخَر۪ينَ ﴿٦٦﴾

66- "Sonra ötekileri suda boğduk."

اِنَّ ف۪ي ذٰلِكَ لَاٰيَةًۜ وَمَا كَانَ اَكْثَرُهُمْ مُؤْمِن۪ينَ ﴿٦٧﴾

67- "Bunda şüphesiz bir ibret vardır. Ama pek çokları iman etmiş değillerdi."

وَاِنَّ رَبَّكَ لَهُوَ الْعَز۪يزُ الرَّح۪يمُ ﴿٦٨﴾

68- "Şüphesiz ki senin Rabbin elbette mutlak güç sahibidir."

وَاتْلُ عَلَيْهِمْ نَبَاَ اِبْرٰهٖيمَۘ ﴿٦٩﴾ اِذْ قَالَ لِاَبٖيهِ وَقَوْمِهٖ مَا تَعْبُدُونَ ﴿٧٠﴾
قَالُوا نَعْبُدُ اَصْنَامًا فَنَظَلُّ لَهَا عَاكِفٖينَ ﴿٧١﴾ قَالَ هَلْ يَسْمَعُونَكُمْ اِذْ
تَدْعُونَ ﴿٧٢﴾ اَوْ يَنْفَعُونَكُمْ اَوْ يَضُرُّونَ ﴿٧٣﴾ قَالُوا بَلْ وَجَدْنَٓا اٰبَٓاءَنَا
كَذٰلِكَ يَفْعَلُونَ ﴿٧٤﴾

69, 70, 71, 72, 73, 74- "Ey Muhammed! Onlara İbrahim'in haberini de oku. Hani o, babasına ve kavmine: 'Neye tapıyorsunuz?' demişti. 'Putlara tapıyoruz ve onlara tapmaya devam edeceğiz' demişlerdi. İbrahim dedi ki: 'Onlara yalvardığınızda sizi işitiyorlar mı? Yahut size fayda veya zararları dokunur mu?' Dediler ki: 'Hayır, ama biz babalarımızı böyle yaparken bulduk' dediler."

Hz. İbrahim, babasına ve kavmine sitem etmiş ve kendisiyle onları ayıpladığı konuda delil getirmelerini isteyerek şöyle demiştir:

*"Neden siz duymayan, görmeyen, fayda ve zarar vermeyen, hissetmeyen ve bilinci olmayan şeylere tapıyorsunuz?"*

Buna karşılık onlar, cevap konusunda sadece geçmişlerini taklit edişlerine başvurarak: *"Biz, geçmişlerimizi bu durum üzere bulduk"* dediler. Bunun üzerine Hz. İbrahim kendilerine karşı sağlam delil getirdikten ve çirkin davranışlarını anlattıktan sonra Mevlâ'sının övgüsünü ve vasfının ayrıntılarını dile getirmiştir.

قَالَ اَفَرَاَيْتُمْ مَا كُنْتُمْ تَعْبُدُونَ ﴿٧٥﴾ اَنْتُمْ وَاٰبَٓاؤُ۬كُمُ الْاَقْدَمُونَ ﴿٧٦﴾
فَاِنَّهُمْ عَدُوٌّ لٖٓي اِلَّا رَبَّ الْعَالَمٖينَ ﴿٧٧﴾

75, 76, 77- "İbrahim şöyle dedi: 'Sizin ve geçmiş atalarınızın taptığı şeyleri gördünüz mü? Şüphesiz onlar benim düşmanımdır. Ancak âlemlerin Rabbi hariç.'"

Hz. İbrahim onları en az ifadeyle anlatmıştır. Kendisi ( أعداء ) *"düşmanlar"* kelimesini kullanmamış ve: ( فَاِنَّهُمْ عَدُوٌّ لٖي ) *"Şüphesiz*

*onlar benim düşmanlarımdır*" dememiş, aksine hem tekil hem de çoğul anlamda kullanılabilen ( عَدُوٌّ ) "*düşman*" kelimesini kullanarak: "*Şüphesiz onlar benim düşmanımdır*" demiştir.

Sonra: ( اِلَّا رَبَّ الْعَالَمِينَ ) "*Ancak âlemlerin Rabbi hariç*" demiştir. Buradaki istisna, munkatı –müstenâ ile müstesnânminhin türdeş olmadığı- istisnadır. Sanki Hz. İbrahim, Allah'ı anmaya geçiş yapmak için ince bir üslupla onları anmayı bir kenara bırakmaktadır. Sonra neredeyse artık susmayacak ölçüde Allah'ın vasfını izah etmeye başlamıştır. Çünkü o, sözüne: O ki... O ki... O ki... şeklinde devam etmiştir. Nitekim sevginin alametlerinden biri de sevgiliyi çokça anmak ve ondan başkasını anmaktan yüz çevirmektir. Bu itibarla, sevenlerin eğlentisi sevgililerinin bahçelerinde dönüp dolaşmakla gerçekleşir. Zahidler virdlerini sayarlar. İhtiyaç sahipleri ihtiyaçlarını sayarak dualarını uzun tutarlar. Sevenler de sevgililerini uzun uzadıya överler.

اَلَّذِي خَلَقَنِي فَهُوَ يَهْدِينِ ﴿٧٨﴾

78- "O ki beni yarattı ve bana doğru yolu göstermektedir."

Aslında Hz. İbrahim doğru yolu bulmuştu. Ancak o, anlattığı doğru yoldan gelecekteki vakti kast etmektedir. Yani Allah bana kendisine giden doğru yolu, kendisiyle göstermektedir. Çünkü ben, O'nun varlığında tükenmiş bulunuyorum ve kendimden haberim yoktur.

İnsanlar kendi nefislerinde gark oldukları zaman, kendilerinden yola çıkarak mabutlarına giden yolu bulamazlar. Bu durumda onlar yerine Allah kendisine giden yolu onlara gösterir. Nihayetinde onlar, Allah'ın varlığında tükenmiş olurlar, kendi vasıflarını yitirirler ve kendilerine ait marifetler, yetersiz ve zayıf kalır. Bunun üzerine Allah kendisine giden yolu onlara gösterir.

وَالَّذِي هُوَ يُطْعِمُنِي وَيَسْقِينِ ﴿٧٩﴾

79- "O ki bana yedirmekte ve içirmektedir."

Hz. İbrahim belli bir yiyeceğe veya alışılmış bir içeceğe işaret etmemiştir. Lakin o, başkaları kendi yiyecekleriyle yetinirken, Allah'ı tanımakla yetindiğine işaret etmiştir. Bir de o, başkalarının kendi içecekleriyle yetinmelerinin yerine geçecek olan ilahî muhabbet şarabına işaret etmiştir.

وَاِذَا مَرِضْتُ فَهُوَ يَشْفٖينِ ﴿٨٠﴾

80- "Hastalandığım zaman da O, bana şifa verir."

Hz. İbrahim, hitapta edebi korumak için: "O, beni hasta ettiği zaman" dememiştir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Bu, belli bir hastalık değildi. Lakin Hz. İbrahim, burada hasta görünmeyi kast etmiştir. Tıpkı sevenlerin, ziyaret edilmek ümidiyle hasta numarası yapmaları gibi.

Şiir:

*Gammazlar alıkoyuyorsa seni ziyaretimden eğer*
*Bari hasta ziyareti bahanesiyle gir yanıma*

Şiir:

*Hasta gibi yürümek ister âşık, belki sevgili*
*Bir şikâyetini duyduğunda onunla haberleşir diye*

- Hz. İbrahim'in işaret ettiği şifa, Allah'ın kendisine Hz. Cebrail'i göndermesi ve Cebrail'in ona: *"Mevlân sana diyor ki: Dün akşam nasıldın?"* demesidir.

وَالَّذٖي يُمٖيتُنٖي ثُمَّ يُحْيٖينِ ﴿٨١﴾

81- "O ki, benim canımı alacak ve sonra beni diriltecektir."

Hz. İbrahim ölümü hastalığın üstünde bir mertebe olduğu için Allah'a izafe etmiştir. Çünkü peygamberler, ruhlarıyla Allah'a kavuştuklarından onlar için ölüm bir ganimet ve nimettir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, büyüklüğünü göstermek istediği vakit benden yüz çevirmek suretiyle canımı alır. Lütfu esnasında da bana yönelmek suretiyle beni diriltir.

- Allah canımı alarak benimle irtibatımı keser ve beni kendisiyle diriltir.

وَالَّذ۪ٓي اَطْمَعُ اَنْ يَغْفِرَ ل۪ي خَط۪ٓيـَٔت۪ي يَوْمَ الدّ۪ينِ ﴿٨٢﴾

82- "O ki hesap günü hatalarımı bağışlayacağını umarım."

Dostların hatası kendi sıkıntılarını görmeleri, başlarındaki bela şiddetlendiğinde zorluk çekmeleri ve kapıldıkları arzunun acısından yakınmalarıdır.

Şiir:

*Beğendiğim güzelliklerim dönüştüğü zaman*
*Günahlarıma, söyle bana nasıl özür dileyeceğimi!*

رَبِّ هَبْ ل۪ي حُكْمًا وَاَلْحِقْن۪ي بِالصَّالِح۪ينَ ﴿٨٣﴾

83- "Ey Rabbim! Bana bir hüküm bahşet ve beni salih kimseler arasına kat."

Bana nefsime hakim olmayı bahşet. Çünkü nefsine hakimiyeti olmayan kimse, başkasına da hâkim olamaz.

Beni salih kimseler arasına kat ki senin hakkından başka bir şeyle yetinme arayışına girmemek üzere hakkını yerine getireyim.

وَاجْعَلْ ل۪ي لِسَانَ صِدْقٍ فِي الْاٰخِر۪ينَ ﴿٨٤﴾

84- "Sonra gelecekler arasında beni doğrulukla anılanlardan kıl."

Tefsirlere göre doğrulukla anılmaktan maksat, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) dilinden güzel bir övgüyle anılmaktır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Seni ancak seninle anayım ve seni ancak seninle tanıyayım.

- Seni nimetlerini açıklayarak anayım ve seni canım alındıktan sonra ebediyete kadar sonsuz bir zikir ile anayım.

- Beni, seni anlatanların dilinden andır.

وَاجْعَلْنِي مِنْ وَرَثَةِ جَنَّةِ النَّعِيمِ ﴿٨٥﴾

85- "Beni, Naîm cennetinin vârislerinden eyle."

وَاغْفِرْ لِأَبِي اِنَّهُ كَانَ مِنَ الضَّآلِّينَ ﴿٨٦﴾

86- "Babamı da bağışla. Çünkü o, gerçekten yolunu şaşıranlardandı."

Âlimlerin izahına göre; Hz. İbrahim, bunu babasının imanından ümidini kestikten sonra söylemiştir. İşârî tefsire göre ise Hz. İbrahim bunu, bastın galebe çalışları vaktinde söylemiştir ki, onların bu gibi durumları hoşgörüyle karşılanır.

Bu arada hiçbir şeyde kulun duasını kabul etmek Allah'a vacip değildir. Duası kabul edilmediği zaman bu tür hitapları dile getirmede kul için teselli vardır. Ne var ki herkes bu noktaya varmamaktadır.

وَلَا تُخْزِنِي يَوْمَ يُبْعَثُونَ ﴿٨٧﴾

87- "İnsanların diriltilecekleri gün beni utandırma."

Yani bana hasletimi hatırlatarak beni utandırma. Çünkü gönül erbabı ve özellik sahiplerine göre kuldan olanı görmenin cezası daha ağırdır.

يَوْمَ لَا يَنْفَعُ مَالٌ وَلَا بَنُونَ ﴿٨٨﴾ اِلَّا مَنْ اَتَى اللّٰهَ بِقَلْبٍ سَلِيمٍ ﴿٨٩﴾

88, 89- "O gün ki ne mal fayda verir ne oğullar. Allah'a arınmış bir kalp ile gelen hariç."

Bir görüşe göre arınmış kalp, ısırılan kalp demektir. Diğer bir görüşe göre de arınmış kalp, sapıklıktan, sonra bidatten, sonra gafletten, sonra gıybetten, sonra perdelenmişlikten, sonra kucaklaşmaktan, sonra birlikte oturmaktan, sonra da bakmaktan arınan kalptir. Bütün bunlar kalbin arızaları olup büyük insanlar onlardan arınmış, küçükler ise onlarla imtihan edilmişlerdir.

Bir yoruma göre de arınmış kalp, kendi iradesinden arınan kalptir.

وَاُزْلِفَتِ الْجَنَّةُ لِلْمُتَّق۪ينَ ﴿٩٠﴾ وَبُرِّزَتِ الْجَح۪يمُ لِلْغَاو۪ينَ ﴿٩١﴾

90, 91- "Cennet, takva sahiplerine yaklaştırılır. Cehennem de azgınlara apaçık gösterilir."

وَق۪يلَ لَهُمْ اَيْنَ مَا كُنْتُمْ تَعْبُدُونَ ﴿٩٢﴾ مِنْ دُونِ اللّٰهِ هَلْ يَنْصُرُونَكُمْ اَوْ يَنْتَصِرُونَ ﴿٩٣﴾

92, 93- "Onlara şöyle denilir: 'Allah'ı bırakıp da tapmakta olduklarınız nerede? Size yardım ediyorlar mı veya kendilerini kurtarabiliyorlar mı?'"

فَكُبْكِبُوا ف۪يهَا هُمْ وَالْغَاوُنَ ﴿٩٤﴾ وَجُنُودُ اِبْل۪يسَ اَجْمَعُونَ ﴿٩٥﴾

94, 95- "Artık onlar ve o azgınlar ile İblis'in askerleri hepsi birden cehenneme atılırlar."

قَالُوا وَهُمْ ف۪يهَا يَخْتَصِمُونَ ﴿٩٦﴾

96- "Orada onlar taptıklarıyla çekişerek şöyle derler:"

O vakit cennet yaklaştırılır. Ayetteki fiiller geçmiş zaman kipiyle kullanılmıştır. Çünkü gelecek olan şey yakındır. Nitekim cennet varlık olarak zaten hazırlanmıştır. Bir de nasıl ki cehennem zincirlerle

mahşere çekiliyorsa, aynı şekilde cennetin de takva sahiplerine yaklaştırılması akla uzak değildir.

( وَبُرِّزَتِ الْجَحِيمُ لِلْغَاوِينَ ) *"Cehennem de azgınlara apaçık gösterilir."* (Şu'ara, 26/91)

Yani ortaya çıkartılır. Böylece delil inkârcıların aleyhine pekiştirilmiş olur ve onlar cehenneme takdim edilirler. Bir de kötülerin yerleri onlara gösterilir, hep birlikte cehennemin içine atılırlar ve günahlarını itiraf etmeye başlarlar. Bu itiraflardan biri de söyledikleri bildirilen şu hususlardır:

تَاللّٰهِ اِنْ كُنَّا لَفٖي ضَلَالٍ مُبٖينٍ ﴿٩٧﴾ اِذْ نُسَوّٖيكُمْ بِرَبِّ الْعَالَمٖينَ ﴿٩٨﴾

97, 98- "Allah'a andolsun! Biz gerçekten apaçık sapıklık içindeymişiz. Çünkü sizi, âlemlerin Rabbi ile bir tutuyorduk."

Onların: ( اِذْ نُسَوّٖيكُمْ بِرَبِّ الْعَالَمٖينَ ) *"Çünkü sizi, âlemlerin Rabbi ile bir tutuyorduk"* şeklindeki itiraflarından daha çirkin bir rezalet ve kendilerinde ondan daha iğrenç bir kusur bulunmaz. Çünkü şirkin en çirkin türü, küfrün en iğrenç çeşidi ve hallerinin en kötüsü, mabudun sıfatı hakkında benzetmede bulunmaktır.

وَمَٓا اَضَلَّنَٓا اِلَّا الْمُجْرِمُونَ ﴿٩٩﴾

99- "Bizi ancak suçlular saptırdı."

فَمَا لَنَا مِنْ شَافِعٖينَ ﴿١٠٠﴾ وَلَا صَدٖيقٍ حَمٖيمٍ ﴿١٠١﴾

100, 101- "İşte bu yüzden bizim şefaatçilerimiz de yok, candan bir dostumuz da yok."

Bazı rivayetlerde yer aldığına göre kıyamet günü herhangi bir kul gelerek hesaba çekilir ve iyilikleri ile kötülükleri eşit çıkar. Bu durumda o, hasımlarının kabul edeceği tek bir iyiliğe muhtaç olur ve Allah kendisine şöyle der:

*"Eğer bu tek bir iyiliğin olursa seni cennete koyarım. Şimdi bak ve insanlardan bunu iste de belki biri sana bir iyilik verir ."*

Bunun üzerine iki taraf arasında kalan o kul, gelip önce babasından sonra anasından sonra da arkadaş ve dostlarından talepte bulunur ve bunu konuda her biriyle konuşur. Kimse onun talebini kabul etmez ve herkes ona: *"Ben de bugün tek bir iyiliğe muhtacım"* der. Bunun üzerine adam, yerine döner ve Allah kendisine: *"Ne getirdin?"* diye sorar. Adam: *"Ya Rabbi! Kimse bana iyiliklerinden bir iyilik vermedi"* der. Bunun üzerine Allah: *"Senin vefalı bir dostun olmadı mı?"* der. Bu soru üzerine kul hatırlar ve der ki: *"Falanca adam benim dostumdu."* Allah, kuluna o dosta giden yolu gösterir. Kul, o dosta gelerek kendisiyle bu konuda konuşur. Bunun üzerine söz konusu dost: *"Evet, benim bugün Allah'ın kabul ettiği pek çok ibadetim vardır. Onlardan sana verdim"* der. Talebinin kabul edilmesi üzerine bu kul, oradan yola çıkarak yerine gelir ve Rabbine bunu bildirir. Bunun üzerine Allah buyurur ki:

*"Ben, bunu o dostundan kabul ettim, onun hakkından da bir şey kısmadım ve hem seni hem de onu bağışladım."*

İşte: ( فَمَا لَنَا مِنْ شَافِعِينَ وَلَا صَدِيقٍ حَمِيمٍ ) *"İşte bu yüzden bizim şefaatçilerimiz de yok, candan bir dostumuz da yok"* sözünün anlamı budur.

فَلَوْ اَنَّ لَنَا كَرَّةً فَنَكُونَ مِنَ الْمُؤْمِنِينَ ﴿١٠٢﴾

102- "Keşke bir dönüşümüz olsa da inananlardan olsak."

اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَةً وَمَا كَانَ اَكْثَرُهُمْ مُؤْمِنِينَ ﴿١٠٣﴾

103- "Elbet bunda bir ibret vardır. Onların çoğu iman etmiş değillerdi."

وَاِنَّ رَبَّكَ لَهُوَ الْعَزِيزُ الرَّحِيمُ ﴿١٠٤﴾

104- "Şüphesiz senin Rabbindir mutlak güç sahibi ve çok merhametli olan."

كَذَّبَتْ قَوْمُ نُوحٍ الْمُرْسَل۪ينَ ﴿١٠٥﴾

105- "Nûh'un kavmi de peygamberleri yalanladı."

اِذْ قَالَ لَهُمْ اَخُوهُمْ نُوحٌ اَلَا تَتَّقُونَ ﴿١٠٦﴾

106- "Hani kardeşleri Nûh, onlara şöyle demişti: 'Allah'a karşı gelmekten sakınmaz mısınız?'"

اِنّ۪ي لَكُمْ رَسُولٌ اَم۪ينٌ ﴿١٠٧﴾

107- "Şüphesiz ben, size gönderilmiş güvenilir bir peygamberim."

فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَط۪يعُونِ ﴿١٠٨﴾

108- "Artık Allah'a karşı gelmekten sakının ve bana itaat edin."

وَمَٓا اَسْـَٔلُكُمْ عَلَيْهِ مِنْ اَجْرٍ اِنْ اَجْرِيَ اِلَّا عَلٰى رَبِّ الْعَالَم۪ينَ ﴿١٠٩﴾

109- "Buna karşılık sizden hiçbir ücret istemiyorum. Benim ücretim, ancak Âlemlerin Rabbi olan Allah'a aittir."

فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَط۪يعُونِ ﴿١١٠﴾

110- "O halde Allah'a karşı gelmekten sakının ve bana itaat edin."

Allah bu ayetlerde Hz. Nûh'un hikâyesini, kavminden gördüklerini ve şöyle dediklerini anlatmıştır:

قَالُٓوا اَنُؤْمِنُ لَكَ وَاتَّبَعَكَ الْاَرْذَلُونَ ﴿١١١﴾

111- "Dediler ki: 'Sana hep aşağılık kimseler uymuşken, biz hiç sana inanır mıyız?'"

Kuşkusuz her peygamberin taraftarları hep güçsüzlerdir. Ancak onlar, Allah'ın hükmüne göre öndeki en değerli kimselerdir. Hz. Peygamber (s.a.v.): *"Bana, ancak güçsüzlerinizle yardım edildi"* buyurmuştur.

Nitekim Hz. Nûh'un kavmi küfürde ısrar edip kibre kapılınca Allah onları gark etti. Allah aynı şeyi bu suredeki ayetlerde yer alan Âd, Semûd, Lût kavmi ve Medyen halkına da yapmıştır. Onların her biri peygamberlerine yalanlamayla karşılık vermiş, bu nedenle Allah hepsinin yerini yurdunu başına yıkmış ve haklarındaki güzel prensibi gereğince peygamberine yardım etmiştir.

Bu arada Allah, her bir peygamberin kıssasını anlattıktan sonra ardından:

(وَاِنَّ رَبَّكَ لَهُوَ الْعَزِيزُ الرَّحِيمُ) *"Şüphesiz senin Rabbindir mutlak güç sahibi ve çok merhametli olan"* buyurmuştur.

Bu ifadede geçen "Azîz (mutlak güç sahibi)" lafzı, köklerini sökmeye kadir olan, "Rahîm (çok merhametli olan)" lafzı da mühlet vermek suretiyle cezalarını erteleyen ve çirkin fiillerine rağmen rızıklarını kesmeyen demektir.

Allah Azîz olup onların çirkin amelleriyle kendisine zarar dokunmaz. Şayet hepsi O'na itaatte ittifak etseler, bu kez de fiilleriyle güzellik kazanmaz.

قَالَ وَمَا عِلْمِي بِمَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١١٢﴾

112- "Nûh şöyle dedi: 'Onların yaptıklarına dair benim ne bilgim olabilir?'"

اِنْ حِسَابُهُمْ اِلَّا عَلٰى رَبِّي لَوْ تَشْعُرُونَ ﴿١١٣﴾

113- "Onların hesaplarını görmek ancak Rabbime aittir. Bir anlayabilseniz!"

وَمَٓا اَنَا بِطَارِدِ الْمُؤْمِن۪ينَۚ ﴿١١٤﴾

114- “Ben inananları kovacak değilim.”

اِنْ اَنَا اِلَّا نَذ۪يرٌ مُب۪ينٌۜ ﴿١١٥﴾

115- “Ben, ancak apaçık bir uyarıcıyım.”

قَالُوا لَئِنْ لَمْ تَنْتَهِ يَا نُوحُ لَتَكُونَنَّ مِنَ الْمَرْجُوم۪ينَۜ ﴿١١٦﴾

116- “Dediler ki: ‘Ey Nûh! Vazgeçmezsen mutlaka taşlananlardan olacaksın.’”

قَالَ رَبِّ اِنَّ قَوْم۪ي كَذَّبُونِۚ ﴿١١٧﴾

117- “Nûh şöyle dedi: ‘Ey Rabbim! Kavmim beni yalanladı.’”

فَافْتَحْ بَيْن۪ي وَبَيْنَهُمْ فَتْحًا وَنَجِّن۪ي وَمَنْ مَعِيَ مِنَ الْمُؤْمِن۪ينَ ﴿١١٨﴾

118- “Artık onlarla benim aramda sen hükmet. Beni ve benimle birlikte olan müminleri kurtar.”

فَاَنْجَيْنَاهُ وَمَنْ مَعَهُ فِي الْفُلْكِ الْمَشْحُونِۚ ﴿١١٩﴾

119- “Derken biz onu ve beraberindekileri dolu geminin içinde taşıyıp kurtardık.”

ثُمَّ اَغْرَقْنَا بَعْدُ الْبَاق۪ينَۜ ﴿١٢٠﴾

120- “Sonra da geride kalanları suda boğduk.”

اِنَّ ف۪ي ذٰلِكَ لَاٰيَةًۜ وَمَا كَانَ اَكْثَرُهُمْ مُؤْمِن۪ينَ ﴿١٢١﴾

121- “Şüphesiz bunda bir ibret vardır. Onların çoğu ise iman etmiş değillerdir.”

وَاِنَّ رَبَّكَ لَهُوَ الْعَزِيزُ الرَّحِيمُ ﴿١٢٢﴾

122- "Şüphesiz senin Rabbindir mutlak güç sahibi ve çok merhametli olan."

كَذَّبَتْ عَادٌ الْمُرْسَلِينَ ﴿١٢٣﴾

123- "Âd kavmi de peygamberleri yalanladı."

اِذْ قَالَ لَهُمْ اَخُوهُمْ هُودٌ اَلَا تَتَّقُونَ ﴿١٢٤﴾

124- "Hani kardeşleri Hûd, onlara şöyle demişti: 'Allah'a karşı gelmekten sakınmaz mısınız?'"

اِنّ۪ي لَكُمْ رَسُولٌ اَم۪ينٌ ﴿١٢٥﴾

125- "Şüphesiz ben, size gönderilmiş güvenilir bir peygamberim."

فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَط۪يعُونِ ﴿١٢٦﴾

126- "Öyle ise Allah'a karşı gelmekten sakının ve bana itaat edin."

وَمَٓا اَسْـَٔلُكُمْ عَلَيْهِ مِنْ اَجْرٍ اِنْ اَجْرِيَ اِلَّا عَلٰى رَبِّ الْعَالَم۪ينَ ﴿١٢٧﴾

127- "Buna karşılık sizden hiçbir ücret istemiyorum. Benim ücretim ancak âlemlerin Rabbi olan Allah'a aittir."

Allah peygamberlerin her birinden şöyle dediğini haber vermiştir:

( وَمَٓا اَسْـَٔلُكُمْ عَلَيْهِ مِنْ اَجْرٍ ) *"Buna karşılık sizden hiçbir ücret istemiyorum."*

Amaç herkesin, Allah için çalışan kimsenin Allah'tan başkasından ücret istemesinin uygun düşmediğini bilmesidir. Bunda aynı

zamanda peygamberlerin vârisleri olan âlimler için de peygamberlerinin adabına uymalarına, ilimlerini yayarken insanlardan bir şey talep etmemelerine ve onlara dönük öğretimlerine karşılık kendilerinden himaye beklememelerine dair bir uyarı vardır.

Ayette âlimlere şu hatırlatma da vardır: Kim dini yaymaya dair anlatımlara ve Müslümanlara ettiği vaazlara karşılık katkı beklerse Allah, kendisinden dinlediklerini insanlar için mübarek kılmaz. Aynı zamanda âlimler için de insanlardan aldıklarında bereket olmaz. Onlar, dinlerini az bir dünya metaıyla satmış olurlar. Sonra onlar için bunda hiçbir bereket de yoktur. Çünkü onunla Allah'ın rızasını aramazlar. Onlar, Allah'ın gazabına uğrayacaklardır.

اَتَبْنُونَ بِكُلِّ رِيعٍ اٰيَةً تَعْبَثُونَ ﴿١٢٨﴾

128- "Siz her yüksek yere bir alamet bina yapıp boş şeylerle mi eğleniyorsunuz?"

وَتَتَّخِذُونَ مَصَانِعَ لَعَلَّكُمْ تَخْلُدُونَ ﴿١٢٩﴾

129- "İçlerinde ebediyen yaşamak ümidiyle sağlam yapılar mı ediniyorsunuz?"

وَاِذَا بَطَشْتُمْ بَطَشْتُمْ جَبَّارِينَ ﴿١٣٠﴾

130- "Tutup yakaladığınız zaman zorbaca yakalarsınız."

فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَطِيعُونِ ﴿١٣١﴾

131- "Artık Allah'a karşı gelmekten sakının ve bana itaat edin."

وَاتَّقُوا الَّذ۪ٓي اَمَدَّكُمْ بِمَا تَعْلَمُونَ ﴿١٣٢﴾ اَمَدَّكُمْ بِاَنْعَامٍ وَبَن۪ينَ ﴿١٣٣﴾
وَجَنَّاتٍ وَعُيُونٍ ﴿١٣٤﴾

132, 133, 134- "Bildiğiniz her şeyi veren, size hayvanlar, oğullar, bahçeler ve pınarlar veren Allah'a karşı gelmekten sakının."

اِنّ۪ٓي اَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمٍ عَظ۪يمٍ ﴿١٣٥﴾

135- "Çünkü ben, sizin adınıza büyük bir günün azabından korkuyorum."

قَالُوا سَوَٓاءٌ عَلَيْنَٓا اَوَعَظْتَ اَمْ لَمْ تَكُنْ مِنَ الْوَاعِظ۪ينَ ﴿١٣٦﴾

136- "Dediler ki: 'Sen ister öğüt ver, ister öğüt verenlerden olma, bize göre birdir.'"

اِنْ هٰذَٓا اِلَّا خُلُقُ الْاَوَّل۪ينَ ﴿١٣٧﴾

137- "Bu, öncekilerin geleneklerinden başka bir şey değildir."

وَمَا نَحْنُ بِمُعَذَّب۪ينَ ﴿١٣٨﴾

138- "Biz azaba uğratılacak da değiliz."

فَكَذَّبُوهُ فَاَهْلَكْنَاهُمْ اِنَّ ف۪ي ذٰلِكَ لَاٰيَةًۜ وَمَا كَانَ اَكْثَرُهُمْ مُؤْمِن۪ينَ ﴿١٣٩﴾

139- "Böylece onlar Hûd'u yalanladılar. Biz de bu yüzden onları helâk ettik. Şüphesiz bunda bir ibret vardır. Onların çoğu ise iman etmiş değillerdir."

وَاِنَّ رَبَّكَ لَهُوَ الْعَز۪يزُ الرَّح۪يمُ ﴿١٤٠﴾

140- "Şüphesiz senin Rabbindir mutlak güç sahibi ve çok merhametli olan."

كَذَّبَتْ ثَمُودُ الْمُرْسَلِينَ ﴿١٤١﴾

141- "Semûd kavmi de peygamberleri yalanladı."

اِذْ قَالَ لَهُمْ اَخُوهُمْ صَالِحٌ اَلَا تَتَّقُونَ ﴿١٤٢﴾

142- "Hani kardeşleri Salih, onlara şöyle demişti: 'Allah'a karşı gelmekten sakınmaz mısınız?'"

اِنّ۪ي لَكُمْ رَسُولٌ اَم۪ينٌ ﴿١٤٣﴾

143- "Ben, size gönderilmiş güvenilir bir peygamberim."

فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَط۪يعُونِ ﴿١٤٤﴾

144- "Öyle ise Allah'a karşı gelmekten sakının ve bana itaat edin."

وَمَٓا اَسْـَٔلُكُمْ عَلَيْهِ مِنْ اَجْرٍ اِنْ اَجْرِيَ اِلَّا عَلٰى رَبِّ الْعَالَم۪ينَ ﴿١٤٥﴾

145- "Buna karşılık sizden hiçbir ücret istemiyorum. Benim ücretim ancak âlemlerin Rabbi olan Allah'a aittir."

اَتُتْرَكُونَ ف۪ي مَا هٰهُنَٓا اٰمِن۪ينَ ﴿١٤٦﴾ ف۪ي جَنَّاتٍ وَعُيُونٍ ﴿١٤٧﴾ وَزُرُوعٍ
وَنَخْلٍ طَلْعُهَا هَض۪يمٌ ﴿١٤٨﴾

146, 147, 148- "Siz buradaki bahçelerde, pınar başlarında, ekinlerde, meyveleri olgunlaşmış hurmalıklarda güven içinde bırakılacak mısınız?"

وَتَنْحِتُونَ مِنَ الْجِبَالِ بُيُوتًا فَارِه۪ينَ ﴿١٤٩﴾

149- "Bir de dağlardan ustalıkla evler yontuyorsunuz."

فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَطِيعُونِ ﴿١٥٠﴾

150- "Artık Allah'a karşı gelmekten sakının ve bana itaat edin."

وَلَا تُطِيعُوٓا اَمْرَ الْمُسْرِفِينَ ﴿١٥١﴾ اَلَّذِينَ يُفْسِدُونَ فِي الْاَرْضِ وَلَا يُصْلِحُونَ ﴿١٥٢﴾

151, 152- "Yeryüzünde ıslaha çalışmayıp fesat çıkaran haddi aşmışların emrine itaat etmeyin."

قَالُوٓا اِنَّمَآ اَنْتَ مِنَ الْمُسَحَّرِينَ ﴿١٥٣﴾

153- "Dediler ki: 'Sen ancak büyülenmişlerdensin.'"

مَآ اَنْتَ اِلَّا بَشَرٌ مِثْلُنَا فَاْتِ بِاٰيَةٍ اِنْ كُنْتَ مِنَ الصَّادِقِينَ ﴿١٥٤﴾

154- "Sen de ancak bizim gibi bir beşersin. Eğer doğru yolu söyleyenlerden isen haydi bize bir mucize getir."

قَالَ هٰذِهِ نَاقَةٌ لَهَا شِرْبٌ وَلَكُمْ شِرْبُ يَوْمٍ مَعْلُومٍ ﴿١٥٥﴾

155- "Salih şöyle dedi: 'İşte bir dişi deve! Onun su içme hakkı var. Sizin de belli bir gün su içme hakkınız vardır.'"

وَلَا تَمَسُّوهَا بِسُوٓءٍ فَيَاْخُذَكُمْ عَذَابُ يَوْمٍ عَظِيمٍ ﴿١٥٦﴾

156- "Sakın ona bir kötülük dokundurmayın. Yoksa büyük bir günün azabı sizi yakalar."

فَعَقَرُوهَا فَاَصْبَحُوا نَادِمِينَ ﴿١٥٧﴾

157- "Derken onu kestiler fakat pişman oldular."

فَاَخَذَهُمُ الْعَذَابُ اِنَّ فٖي ذٰلِكَ لَاٰيَةً وَمَا كَانَ اَكْثَرُهُمْ مُؤْمِنٖينَ ﴿١٥٨﴾

158- "Böylece onları azap yakaladı. Şüphesiz bunda bir ibret vardır. Onların çoğu ise iman etmiş değillerdir."

وَاِنَّ رَبَّكَ لَهُوَ الْعَزٖيزُ الرَّحٖيمُ ﴿١٥٩﴾

159- "Şüphesiz senin Rabbindir mutlak güç sahibi ve çok merhametli olan."

كَذَّبَتْ قَوْمُ لُوطٍ الْمُرْسَلٖينَ ﴿١٦٠﴾

160- "Lût'un kavmi de peygamberleri yalanladı."

اِذْ قَالَ لَهُمْ اَخُوهُمْ لُوطٌ اَلَا تَتَّقُونَ ﴿١٦١﴾

161- "Hani kardeşleri Lût, onlara şöyle demişti: 'Allah'a karşı gelmekten sakınmaz mısınız?'"

اِنّٖي لَكُمْ رَسُولٌ اَمٖينٌ ﴿١٦٢﴾

162- "Şüphesiz ben size gönderilmiş güvenilir bir peygamberim."

فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَطٖيعُونِ ﴿١٦٣﴾

163- "Artık Allah'a karşı gelmekten sakının ve bana itaat edin."

وَمَٓا اَسْـَٔلُكُمْ عَلَيْهِ مِنْ اَجْرٍ اِنْ اَجْرِيَ اِلَّا عَلٰى رَبِّ الْعَالَمٖينَ ﴿١٦٤﴾

164- "Buna karşılık sizden hiçbir ücret istemiyorum. Benim ücretim ancak âlemlerin Rabbi olan Allah'a aittir."

اَتَأْتُونَ الذُّكْرَانَ مِنَ الْعَالَمِينَ ﴿١٦٥﴾ وَتَذَرُونَ مَا خَلَقَ لَكُمْ رَبُّكُمْ مِنْ اَزْوَاجِكُمْ بَلْ اَنْتُمْ قَوْمٌ عَادُونَ ﴿١٦٦﴾

165, 166- "Rabbiniz sizin için yarattığı eşlerinizi bırakıyor da insanlar arasından erkeklere mi yanaşıyorsunuz? Siz, gerçekten haddi aşan bir topluluksunuz."

قَالُوا لَئِنْ لَمْ تَنْتَهِ يَا لُوطُ لَتَكُونَنَّ مِنَ الْمُخْرَجِينَ ﴿١٦٧﴾

167- "Dediler ki: 'Ey Lût! Vazgeçmezsen, mutlaka çıkarılanlardan olursun.'"

قَالَ اِنّ۪ي لِعَمَلِكُمْ مِنَ الْقَالِينَ ﴿١٦٨﴾

168- "Lût şöyle dedi: 'Şüphesiz ben, sizin yaptığınız bu çirkin işe kızanlardanım.'"

رَبِّ نَجِّن۪ي وَاَهْل۪ي مِمَّا يَعْمَلُونَ ﴿١٦٩﴾

169- "Ey Rabbim! Beni ve ailemi onların yaptıkları çirkin işten kurtar."

فَنَجَّيْنَاهُ وَاَهْلَهُ اَجْمَع۪ينَ ﴿١٧٠﴾ اِلَّا عَجُوزًا فِي الْغَابِر۪ينَ ﴿١٧١﴾

170, 171- "Bunun üzerine biz de onu ve geri kalanlar arasındaki yaşlı bir kadın hariç, bütün ailesini kurtardık."

ثُمَّ دَمَّرْنَا الْاٰخَر۪ينَ ﴿١٧٢﴾

172- "Sonra diğerlerini helâk ettik."

وَاَمْطَرْنَا عَلَيْهِمْ مَطَرًا فَسَٓاءَ مَطَرُ الْمُنْذَر۪ينَ ﴿١٧٣﴾

173- "Onların üzerine bir yağmur yağdırdık. Uyarılanların yağmuru ne kadar da kötü idi!"

اِنَّ فٖي ذٰلِكَ لَاٰيَةًۜ وَمَا كَانَ اَكْثَرُهُمْ مُؤْمِنٖينَ ﴿١٧٤﴾

174- "Şüphesiz bunda büyük bir ibret vardır. Onların çoğu ise iman etmiş değillerdir."

وَاِنَّ رَبَّكَ لَهُوَ الْعَزٖيزُ الرَّحٖيمُ ﴿١٧٥﴾

175- "Şüphesiz senin Rabbindir mutlak güç sahibi ve çok merhametli olan."

كَذَّبَ اَصْحَابُ لْـَٔيْكَةِ الْمُرْسَلٖينَۚ ﴿١٧٦﴾

176- "Eyke halkı da peygamberleri yalanladı."

اِذْ قَالَ لَهُمْ شُعَيْبٌ اَلَا تَتَّقُونَۚ ﴿١٧٧﴾

177- "Hani Şuayb, onlara şöyle demişti: 'Allah'a karşı gelmekten sakınmaz mısınız?'"

اِنّٖي لَكُمْ رَسُولٌ اَمٖينٌۙ ﴿١٧٨﴾

178- "Şüphesiz ben size gönderilmiş güvenilir bir peygamberim."

فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَطٖيعُونِۚ ﴿١٧٩﴾

179- "Artık, Allah'a karşı gelmekten sakının ve bana itaat edin."

وَمَٓا اَسْـَٔلُكُمْ عَلَيْهِ مِنْ اَجْرٍۚ اِنْ اَجْرِيَ اِلَّا عَلٰى رَبِّ الْعَالَمٖينَۜ ﴿١٨٠﴾

180- "Buna karşılık sizden hiçbir ücret istemiyorum. Benim ücretim, ancak âlemlerin Rabbi olan Allah'a aittir."

اَوْفُوا الْكَيْلَ وَلَا تَكُونُوا مِنَ الْمُخْسِرٖينَۚ ﴿١٨١﴾

181- "Ölçüyü tam yapın. Eksik verenlerden olmayın."

وَزِنُوا بِالْقِسْطَاسِ الْمُسْتَقِيمِ ﴿١٨٢﴾

182- "Doğru terazi ile tartın."

وَلَا تَبْخَسُوا النَّاسَ اَشْيَآءَهُمْ وَلَا تَعْثَوْا فِي الْاَرْضِ مُفْسِدِينَ ﴿١٨٣﴾

183- "İnsanların mallarını ve haklarını eksiltmeyin. Yeryüzünde bozgunculuk yaparak karışıklık çıkarmayın."

وَاتَّقُوا الَّذِي خَلَقَكُمْ وَالْجِبِلَّةَ الْاَوَّلِينَ ﴿١٨٤﴾

184- "Sizi ve öncekileri yaratana karşı gelmekten sakının."

قَالُوٓا اِنَّمَآ اَنْتَ مِنَ الْمُسَحَّرِينَ ﴿١٨٥﴾

185- "Onlar şöyle dediler: 'Sen ancak büyülenmişlerdensin.'"

وَمَآ اَنْتَ اِلَّا بَشَرٌ مِثْلُنَا وَاِنْ نَظُنُّكَ لَمِنَ الْكَاذِبِينَ ﴿١٨٦﴾

186- "Sen sadece bizim gibi bir insansın. Biz, senin yalancılardan olduğunu sanıyoruz."

فَاَسْقِطْ عَلَيْنَا كِسَفًا مِنَ السَّمَآءِ اِنْ كُنْتَ مِنَ الصَّادِقِينَ ﴿١٨٧﴾

187- "Eğer doğru söyleyenlerden isen haydi gökten üzerimize bir parça düşür."

قَالَ رَبِّي اَعْلَمُ بِمَا تَعْمَلُونَ ﴿١٨٨﴾

188- "Şuayb: 'Rabbim, yaptıklarınızı en iyi bilendir' dedi."

فَكَذَّبُوهُ فَاَخَذَهُمْ عَذَابُ يَوْمِ الظُّلَّةِ اِنَّهُ كَانَ عَذَابَ يَوْمٍ عَظِيمٍ ﴿١٨٩﴾

189- "Onlar Şuayb'ı yalanladılar. Derken gölge gününün azabı onları yakaladı."

اِنَّ فٖي ذٰلِكَ لَاٰيَةًۜ وَمَا كَانَ اَكْثَرُهُمْ مُؤْمِنٖينَ ﴿١٩٠﴾

190- "Şüphesiz bunda bir ibret vardır. Onların çoğu ise iman etmiş değillerdir."

وَاِنَّ رَبَّكَ لَهُوَ الْعَزٖيزُ الرَّحٖيمُ ﴿١٩١﴾

191- "Şüphesiz senin Rabbindir mutlak güç sahibi ve çok merhametli olan."

وَاِنَّهُ لَتَنْزٖيلُ رَبِّ الْعَالَمٖينَۜ ﴿١٩٢﴾ نَزَلَ بِهِ الرُّوحُ الْاَمٖينُۙ ﴿١٩٣﴾
عَلٰى قَلْبِكَ لِتَكُونَ مِنَ الْمُنْذِرٖينَۙ ﴿١٩٤﴾ بِلِسَانٍ عَرَبِيٍّ مُبٖينٍ ﴿١٩٥﴾

192, 193, 194, 195- "Şüphesiz bu Kur'ân, âlemlerin Rabbinin indirmesidir. Uyarıcılardan olasın diye onu güvenilir Ruh, senin kalbine apaçık Arapça bir dil ile indirmiştir."

Allah'ın aziz kelamı, gerçekte Hz. Cebrail elçiliğiyle Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kalbine indirilmiştir. Bu arada kelam, Allah'tan ayrılmış ve başkasına bitişmiş değildir. Bir de kelam mecazî değil, gerçek anlamda indirilmiştir. Bu şu demektir: Hz. Cebrail gökte idi. Bu esnada Allah'tan kelamı işitti, ezberledi, indi ve Hz. Peygamber'e (s.a.v.) tebliğ etti. Hz. Cebrail bazen Hz. Peygamber'i (s.a.v.) kendisine vahiy indiğinde kendinden geçmiş bir hale sokuyor sonra da bu vahyi kalbine işliyordu. Bazen de melek, Hz. Peygamber'e (s.av.) şeklen görünüyor ve ona vahyi duyuruyordu. Hz. Peygamber de onu ezberliyor ve tebliğ ediyordu. Bu arada Allah kendisine vahyi, unutmayacağı bir şekilde okutacağına dair ona garanti vermişti. Böylece Allah, onun kalbinde ezberlemeyi sağlıyor ve telaffuzu esnasında okumasını kolaylaştırıyordu. Bir de Hz. Peygamber, bu vahyin bir benzerini getirmeleri konusunda meydan okuduğu halde insanların hepsi ona karşı koymaktan aciz kalınca onun, Allah katından olduğuna dair doğruluğu anlaşılmış oldu.

وَاِنَّهُ لَفِي زُبُرِ الْاَوَّلِينَ ﴿١٩٦﴾

196- "Şüphesiz bu, öncekilerin kitaplarında da vardı."

اَوَلَمْ يَكُنْ لَهُمْ اٰيَةً اَنْ يَعْلَمَهُ عُلَمٰٓؤُا بَنِيٓ اِسْرَآءِيلَ ﴿١٩٧﴾

197- "İsrailoğulları bilginlerinin onu bilmesi, Mekke müşrikleri için bir delil değil midir?"

Bu kitaptaki bütün rivayetler, kıssalar ve Allah'ın yüceliğine layık sıfatları hakkındaki bilgiler ondan önce Allah tarafından indirilen kitaplarda yer alanlara uygundur. Bu nedenle onlar, kendisine ne denli muhalefet ederlerse etsinler şüphesiz o, Allah'ın şu sözünde buyurduğu gibidir:

( لَا يَأْتِيهِ الْبَاطِلُ مِنْ بَيْنِ يَدَيْهِ وَلَا مِنْ خَلْفِهِ ) *"Ona ne önünden ne de ardından bâtıl gelmez."* (Fussilet, 41/42)

وَلَوْ نَزَّلْنَاهُ عَلٰى بَعْضِ الْاَعْجَمِينَ ﴿١٩٨﴾ فَقَرَاَهُ عَلَيْهِمْ مَا كَانُوا بِهِ مُؤْمِنِينَ ﴿١٩٩﴾

198, 199- "Biz onu Arapça bilmeyenlerden birine indirseydik ve o da bunu kendilerine okusaydı, yine buna inanmazlardı."

كَذٰلِكَ سَلَكْنَاهُ فِي قُلُوبِ الْمُجْرِمِينَ ﴿٢٠٠﴾

200- "İşte böylece biz onu, suçluların kalbine soktuk."

Sonra Allah eğer bu kitabı kendi dillerinden başka bir dille indirseydi, onu anlamayacaklarını ve: *"Eğer bu kitap bizim dilimizle olsaydı, onu anlar ve ona iman ederdik"* diyeceklerini bildirmiştir. Böylece Allah, bu bahaneyi ellerinden almış ve aleyhlerindeki delili güçlendirmiştir.

لَا يُؤْمِنُونَ بِهِ حَتّٰى يَرَوُا الْعَذَابَ الْاَل۪يمَ ﴿٢٠١﴾ فَيَأْتِيَهُمْ بَغْتَةً وَهُمْ
لَا يَشْعُرُونَ ﴿٢٠٢﴾ فَيَقُولُوا هَلْ نَحْنُ مُنْظَرُونَ ﴿٢٠٣﴾

201, 202, 203- "Onlar farkında olmadan ansızın kendilerine gelecek olan elem dolu azabı görüp de. 'Bize mühlet verilmez mi?' demedikçe, ona inanmazlar."

اَفَبِعَذَابِنَا يَسْتَعْجِلُونَ ﴿٢٠٤﴾

204- "Yoksa azabımızın çabuklaşmasını mı istiyorlar?"

Sonra Allah, onlar hakkındaki doğru bilgisinden ve şaki kimseler olduklarına dair ezeli hükmünden söz etmiştir. Bu hüküm, onların kıyamette ne imanın ne de pişmanlığın kendilerine fayda vermeyeceği bir zamanda azabı görünceye kadar Allah'a iman etmeyecekleridir.

اَفَرَاَيْتَ اِنْ مَتَّعْنَاهُمْ سِن۪ينَ ﴿٢٠٥﴾

205- "Ey Muhammed! Ne dersin; biz onları yıllarca yararlandırsak,"

ثُمَّ جَٓاءَهُمْ مَا كَانُوا يُوعَدُونَ ﴿٢٠٦﴾

206- "Sonra da kendilerine tehdit edildikleri şey gelse, halleri nice olurdu."

مَٓا اَغْنٰى عَنْهُمْ مَا كَانُوا يُمَتَّعُونَ ﴿٢٠٧﴾

207- "Dünyada yararlandıkları şeyler, onlara fayda sağlamazdı."

Eğer biz onlar için süreyi esnetip –onlar gaflet halinde iken- kendilerine çok zamanlar boyunca mühlet verirsek, bu durumda azap onları ansızın yakaladığında bu kendilerine ne fayda vermiş olacaktı?

وَمَٓا اَهْلَكْنَا مِنْ قَرْيَةٍ اِلَّا لَهَا مُنْذِرُونَ ﴿٢٠٨﴾

208- "Biz, hiçbir memleketi uyarıcıları olmadıkça helâk etmedik."

ذِكْرٰى وَمَا كُنَّا ظَالِمِينَ ﴿٢٠٩﴾

209- "Bu, bir hatırlatmadır. Biz zalim değiliz."

Sonra Allah, hiçbir memleket halkını, kendilerine uyarıcı gelip apaçık delilleri açıklamadığı sürece helâk etmediğini, küfürleri üzerine ısrar ettikleri zaman ise onları cezalandırdığını haber vermektedir.

وَمَا تَنَزَّلَتْ بِهِ الشَّيَاطِينُ ﴿٢١٠﴾

210- "O Kur'ân'ı şeytanlar indirmemiştir."

وَمَا يَنْبَغِي لَهُمْ وَمَا يَسْتَطِيعُونَ ﴿٢١١﴾

211- "Zaten bu onların harcı değildir, buna güçleri de yetmez."

اِنَّهُمْ عَنِ السَّمْعِ لَمَعْزُولُونَ ﴿٢١٢﴾

212- "Onlar, vahyi işitmekten uzaklaştırılmışlardır."

Onlar idrak mertebesinde işittiler; ancak kavrama yeteneğini yitirdikleri için davet edildikleri dini kabul etmediler. O zaman da Allah'tan kötü sonu hak ettiler.

فَلَا تَدْعُ مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ فَتَكُونَ مِنَ الْمُعَذَّبِينَ ﴿٢١٣﴾

213- "Öyle ise sakın Allah ile beraber başka bir ilaha yalvarma. Sonra azaba uğratılanlardan olursun."

وَاَنْذِرْ عَشِيرَتَكَ الْاَقْرَبِينَ ﴿٢١٤﴾

214- "Önce en yakın akrabalarını uyar."

Bu yolla Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) akrabalarının ona olan yakınlığının kendilerine fayda vermediğini, iman etmezlerse haklarındaki şefaatinin de kabul edilmeyeceğini anlatmıştır. Zira bu iş nesep bakımından değildir. İşte Hz. Nûh! Oğlu kâfir olunca onun peygamberliği kendisine fayda vermedi. Bir de işte Hz. Muhammed (s.a.v.)! Akrabalarının pek çoğu ona karşı en şiddetli düşmanlığı yapan insanların başında idiler. Bu nedenle akrabalıkları, onlara fayda vermedi.

وَاخْفِضْ جَنَاحَكَ لِمَنِ اتَّبَعَكَ مِنَ الْمُؤْمِنِينَ ﴿٢١٥﴾

215- "Müminlerden sana uyanlara kanatlarını indir."

Onlara karşı yumuşak davran, arkadaşlıkta onlara yakın dur, işledikleri kusurları af ile ört, kötü hallerine tahammül göster, onlarla güzel ahlak ile geçin, onların hepsine katlan ve hepsine merhamet et. Eğer hastalanırlarsa onları ziyaret et, seni mahrum ederlerse sen onlara ver, sana haksızlık ederlerse onları bağışla, benim hakkımda kusur işlerlerse onları affet, kendilerine şefaatte bulun ve mağfiret dile.

فَاِنْ عَصَوْكَ فَقُلْ اِنّ۪ي بَر۪ٓيءٌ مِمَّا تَعْمَلُونَ ﴿٢١٦﴾

216- "Eğer sana karşı gelirlerse: 'Şüphesiz ben, sizin yaptığınız şeylerden uzağım' de."

Sen, onların yaptıkları gibi yapma, haklarında ceza uygulamanı emrettiğimiz hususlar dışında hesaplarını bize bırak. Ceza konusunda ise bunu uygulamana engel olacak acıma duygusuna kapılma.

وَتَوَكَّلْ عَلَى الْعَز۪يزِ الرَّح۪يمِ ﴿٢١٧﴾

217- "Aziz ve Rahîm olan Allah'a tevekkül et."

Bize bağlan, bize sığın, bizimle bize tevessül et ve daima bizimle var ol. Şöyle ki söylediğin zaman bizimle söyle, harekete

geçtiğin zaman bizimle harekete geç ve bizim avucumuzun içinde olan kalbinle gör ki, gerçekten bizimle ve bizim için olduğun hakikatine eresin.

Aziz olan Allah'a tevekkül et ki, O'na olan tevekkülün sebebiyle her iki dünyada aziz olasın. Çünkü aziz kimse, Aziz olan Allah'a güvenendir.

Rahîm, kendisine yaklaşmaya çalışanı yaklaştıran ve kendisiyle kendinse tevessül eden kimseye bolca iyilik yapandır.

اَلَّذِي يَرٰيكَ حِينَ تَقُومُ ﴿٢١٨﴾

218- "O ki, namaza kalktığında seni görür."

Bu ayetle Allah, Hz. Peygamber'i (s.a.v.) halkı görmekten koparmıştır. Çünkü Hak tarafından görüldüğünü bilen kimse, kendi hallerinin inceliklerini ve işlerinin gizliliklerini Hak ile birlikte gözetir.

وَتَقَلُّبَكَ فِي السَّاجِدِينَ ﴿٢١٩﴾

219- "O, secde edenler arasında dolaşmanı da görür."

Allah, kendisini gördüğünü bildirmekle Hz. Peygamber'e (s.av.) ibadetin zorluklarını kolay kılmıştır. Nitekim Mevlâ'sı tarafından görüldüğünü bilen bir kimse için hiçbir zorluk söz konusu değildir. Bir de yere sağlam çakılı duran dağları göz kapağının kenarıyla taşımak bile Rabbini gören kimseye kolay gelir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Secde edenlerden maksat, Hz. Peygamber'in sahabeleridir. Bu itibarla Hz. Peygamber'in (s.a.v.) sahabeleri yıldızlar, o da aralarında bir dolunaydır. Veya onlar dolunaylardır, o da aralarında güneştir. Ya da onlar güneşlerdir, o da aralarında güneşler güneşidir.

- Hz. Peygamber'in (s.a.v.) aralarında dolaştığı secde edenlerden maksat, Allah'ı tanıyıp O'na secde etmiş olan Müslüman atalarıdır, Allah'ı tanımayanları değildir.

إِنَّهُ هُوَ السَّمِيعُ الْعَلِيمُ ﴿٢٢٠﴾

220- “Şüphesiz O, hakkıyla işitendir, hakkıyla bilendir.”

Sevenlerin iniltisini işiten ve ariflerin iniltisini bilendir.

Günahkârların iniltisini işiten ve itaat ehlinin hallerini bilendir.

هَلْ اُنَبِّئُكُمْ عَلٰى مَنْ تَنَزَّلُ الشَّيَاطِينُ ﴿٢٢١﴾ تَنَزَّلُ عَلٰى كُلِّ اَفَّاكٍ
اَثِيمٍ ﴿٢٢٢﴾ يُلْقُونَ السَّمْعَ وَاَكْثَرُهُمْ كَاذِبُونَ ﴿٢٢٣﴾

221, 222, 223- “Şeytanların kime ineceğini size haber vereyim mi? Onlar, her günahkâr yalancıya inerler. Bunlar da şeytanlara kulak verirler. Onların çoğu ise yalancıdır.”

Allah burada şeytanların, kâfirlere ve kâhinlere inerek bâtıl vesveseleriyle onlara ilham verdiklerini açıklamıştır.

وَالشُّعَرَٓاءُ يَتَّبِعُهُمُ الْغَاوُنَ ﴿٢٢٤﴾

224- “Şairlere ise haddi aşan azgınlar uyarlar.”

اَلَمْ تَرَ اَنَّهُمْ فِي كُلِّ وَادٍ يَهِيمُونَ ﴿٢٢٥﴾

225- “Görmez misin ki onlar, her vadide şaşkın şaşkın dolaşırlar.”

وَاَنَّهُمْ يَقُولُونَ مَا لَا يَفْعَلُونَ ﴿٢٢٦﴾

226- “Ve yapmadıkları şeyleri söylerler.”

Allah, vahyi ve meleklerin O’nun tarafından getirdiklerini anlatınca şeytanın kendi dostlarına verdiği vesveseyi de anlattı ve bâtılda şaşkın şaşkın dolaşan, insanların ırzlarına dil uzatan, teşbihlerde istikamet çizgisinin dışına çıkan, yerine getirmedikleri sözler veren ve yalan yolunu izleyen şairleri de onlara dahil etti.

اِلَّا الَّذٖينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ وَذَكَرُوا اللّٰهَ كَثٖيرًا وَانْتَصَرُوا مِنْ بَعْدِ مَا ظُلِمُوا وَسَيَعْلَمُ الَّذٖينَ ظَلَمُوٓا اَيَّ مُنْقَلَبٍ يَنْقَلِبُونَ ﴿٢٢٧﴾

227- "Ancak iman edip salih amel işleyen, Allah'ı çok anan ve haksızlığa uğratıldıktan sonra öçlerini alanlar hariç. Zulmedenler, hangi akıbete uğrayacaklarını göreceklerdir."

Bu kimsenin şiiri, bu tür hastalıklı ve kötü özellikler taşımamaktadır. Bu tür bir şiir, tıpkı şu sözde söylendiği gibidir:

*"Şiir bir sözdür. Güzel olanı güzel söz gibi, çirkin olanı da çirkin söz gibidir."*

( وَسَيَعْلَمُ الَّذٖينَ ظَلَمُوٓا اَيَّ مُنْقَلَبٍ يَنْقَلِبُونَ ) *"Zulmedenler, hangi akıbete uğrayacaklarını göreceklerdir."*

Zulmedenler yaptıklarının kötülüğünü anlayacaklardır, geçmişte yaptıklarından pişmanlık duyacaklardır ve yalanladıklarını tasdik edeceklerdir.

سورة النَّمْلِ

# NEML SÛRESİ

(Neml Sûresi 93 âyettir. Mekke döneminin ortalarında inmiştir. Adını 18. âyetteki "Neml (karınca)"den almıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir Azîz'in adıdır ki, günahkâr kimse, günahlarının hafifletilmesi talebiyle O'na yönelirken günahı bağışlanır. "Bismillah" öyle bir Kerîm'in adıdır ki, abid, ibadetinin sevabı iki katına çıkarılmasını talep etmek için O'na yöneldiğinde ecri bolca verilmiş olur. "Bismillah" öyle bir Celîl'in adıdır ki veli, şereflenme arayışı için O'nu kast etmiş ve çabası şükranla karşılanmıştır. "Bismillah" öyle bir Azîz'in adıdır ki, eğer muhtaç durumdaki insan, karşısına çıkarsa ilahi mutlak güç onu yok eder ve ilahî hükümranlık onu helâke sürükler. Böylece o, hiç adı sanı okunmayan bir şeymiş gibi olur. Allah'ın birlik sıfatı yücedir. O halde ona nasıl ulaşılabilir? Allah'ın samed sıfatı mukaddestir. O halde ona kim vakıf olabilir?

( كَلَّٓا اِنَّهُ تَذْكِرَةٌ فَمَنْ شَٓاءَ ذَكَرَهُ ) *"Hayır, düşündükleri gibi değil! Şüphesiz o bir uyarıdır. Artık kim dilerse ondan öğüt alır."* (Müddessir, 74/54, 55)

Şiir:

*Bizim vuslatımıza el uzatan niceleri*
*Eremediler hiçbir nasibe*

طٰسٓ تِلْكَ اٰيَاتُ الْقُرْاٰنِ وَكِتَابٍ مُبِينٍ ﴿١﴾

1- "Tâ. Sîn. Bunlar Kur'ân'ın, apaçık bir kitabın ayetleridir."

Kutsiyetimin temizliği ve izzetimin yüceliğiyle ben, lütfumu umanı hayal kırıklığına uğratmam. İyiliğimin varlığı sayesinde dostlarımın gönlü rahat olur ve zâtımı görmekle seçkinlerimin sırları kaybolur. Bana yönelenlerin talebi, lütfumla karşılanır ve çalışanların çabasına, şefkatimle teşekkür edilir.

( تِلْكَ اٰيَاتُ الْقُرْاٰنِ وَكِتَابٍ مُبِينٍ ) *"Bunlar Kur'ân'ın, apaçık bir kitabın ayetleridir."*

Bunlar, keremimizin ifadeleri, lütfumuzun göstergeleri ve iyiliğimizin delilleridir. Dostlarımıza vaadimizin doğruluğunu açıklarız. Seçkinlerimiz için de ahdimizi korumayı gerçekleştiririz.

هُدًى وَبُشْرٰى لِلْمُؤْمِنِينَ ﴿٢﴾

2- "Kur'ân, müminler için bir hidayet rehberi ve bir müjdedir."

Bu ayetler ve bu kitap, kendilerine iman hakikatini nasip kıldığımız kimseler için açıklamadır, şifadır, nurdur, aydınlıktır, müjdedir ve rehberdir.

اَلَّذِينَ يُقِيمُونَ الصَّلٰوةَ وَيُؤْتُونَ الزَّكٰوةَ وَهُمْ بِالْاٰخِرَةِ هُمْ يُوقِنُونَ ﴿٣﴾

3- "Onlar ki namazı dosdoğru kılarlar, zekâtı verirler ve ahirete kesin olarak inanırlar."

Allah ile bağlarını sürdürürler, münacatın adabında istikamet üzere olurlar. Müslümanların hakları konusunda en güzel noktada durarak ve aralarındaki güçsüzleri en güzel şekilde temsil ederek mallarının, hallerinin, hareketlerinin ve duruşlarının zekâtını öderler.

إِنَّ الَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِالْاٰخِرَةِ زَيَّنَّا لَهُمْ اَعْمَالَهُمْ فَهُمْ يَعْمَهُونَ ﴿٤﴾

4- "Şüphesiz, ahiret hayatına inanmayanların işlerini biz kendilerine güzel göstermişizdir de o yüzden bocalayıp dururlar."

Gözlerinin üstüne perde çektiğimiz için onlar artık görmezler. Onları, yolları göremez kıldığımız için onlar, en ideal yoldan dönerler. İşte dalaletleri içinde bocalayanlar ve şaşkınlıkları içinde alçalanlar onlardır.

أُولٰٓئِكَ الَّذِينَ لَهُمْ سُوٓءُ الْعَذَابِ وَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ هُمُ
الْاَخْسَرُونَ ﴿٥﴾

5- "Onlar, azabın en kötüsü kendilerine has olan kimselerdir. Onlar, ahirette en çok ziyana uğrayanlardır."

Azabın en kötüsü, kişinin acıları hissetmesi, teselli vereni tanımak suretiyle teselli bulamaması ve belayı taşıması, ancak belasını veren Allah'ı göremediği için yükünün ağırlığının ve azabının üzerinden kaldırılmamasıdır. Bu durum kâfirler içindir.

Müminlere gelince, Allah'a yönelik güzel ümitleri, sonra Allah'a yakarmaları, sonra bela halinde Allah'ın onlara hafifletme lütfetmesi, sonra -hadiste yer aldığı üzere- cehennemden çıkarılıncaya kadar yaşadıkları bayılıp ayılma, ahirette azaplarını hafifletecektir.

وَاِنَّكَ لَتُلَقَّى الْقُرْاٰنَ مِنْ لَدُنْ حَكِيمٍ عَلِيمٍ ﴿٦﴾

6- "Şüphesiz bu Kur'ân sana, hüküm ve hikmet sahibi, hakkıyla bilen Allah tarafından verilmektedir."

Yani seni kötülüklerden, düşmanlardan ve çeşitli belalardan koruyan, sana Kur'an'ı indirmek suretiyle ikramda bulunan Allah'tır.

اِذْ قَالَ مُوسٰى لِاَهْلِه۪ٓ اِنّ۪ٓي اٰنَسْتُ نَارًاۜ سَاٰت۪يكُمْ مِنْهَا بِخَبَرٍ اَوْ اٰت۪يكُمْ بِشِهَابٍ قَبَسٍ لَعَلَّكُمْ تَصْطَلُونَ ﴿٧﴾

7- "Hani Mûsâ, ailesine: 'Ben bir ateş gördüm. Ondan size bir haber yahut ısınasınız diye bir kor ateş getireceğim' demişti."

Hz. Mûsâ, Mısır'a gitmek üzere ailesini Şuayb Medyen'inden yola çıkardı. Derken gece karanlık bastı, karısını doğum sancıları tuttu, soğuk rüzgarlar esti, ateş yanmadı, Hz. Mûsâ sıkıntıya girdi, vakit belirsizleşti, gücü dağıldı ve gaile, kalbine hakim oldu. Sonra uzaktan bir ateş gördü ve bunun üzerine ailesine: *"Bekleyin, ben bir ateş gördüm"* dedi.

Kıssasında yer aldığına göre, Hz. Mûsâ'nın koyunları dağıldı. Zira onun, eşyasını taşıyan sığırları vardı ve bu sırada kaçıp dağıldılar. Bunun üzerine karısı: *"Nasıl bizi bırakıp gidiyorsun? Oysa vadi, yırtıcı hayvan yatağıdır"* dedi. Hz. Mûsâ ise şöyle dedi:

*"Bekleyin! Çünkü ben, sizin için gidip bu ateşin durumunu öğrenmeye çalışıyorum. Belki size ondan bir kor veya alevli bir ateş ya da bu ateşin yanında konaklamış ve kendilerinden yardım isteyip yararlanacağımız birilerinden bir haber getiririm."*

Bu arada Hz. Mûsâ'nın gözünde bu ateş yakın görünmüştü. Bu nedenle, ona doğru yürüdükçe ateş uzaklaşıyordu. Nihayet ateşe yaklaştığında orada başından sonuna kadar tamamı alev alev parlayan taze ve yeşil bir ağaç gördü. O aydınlatan bir ateşti. Bunun üzerine Hz. Mûsâ, biraz çalı çırpı toplayarak ondan bir miktar ateş almak istedi. İşte o anda, bidat ehlinden muhalif kimselerin vehmettikleri gibi ağaçtan değil, Allah'tan gelen çağrıyı işitti. Bu çerçevede Hz. Mûsâ'nın o gece Allah'ın kelamını işittiğine dair görüş birliği hasıl olmuştur. Şayet çağrı ağaçtan gelmiş olsaydı, bu takdirde o kelamı konuşan da ağaç olurdu. Nitekim bu konudaki görüş birliğinden dolayı biz: *"Çağrı, ağaçtan değildi"* dedik. Yoksa biz, Allah'ın ağaçta çağrı yaratmasını ve bu yaratmanın, O'nu tanıtmaya vesile

olmasını caiz görmekteyiz. Ancak o takdirde bu çağrıyı ağaç dile getirmiş olur.

Bu arada Allah'ın Hz. Mûsâ'ya kelamını, kendisi için yarattığı bir işittirme biçimiyle işittirmiş olması, yanı sıra ağaçta da bir kelam yaratmış olması mümkün olması bakımından inkâr edilmez. Nitekim bu, akıl yoluyla da mümkündür.

فَلَمَّا جَٓاءَهَا نُودِيَ اَنْ بُورِكَ مَنْ فِي النَّارِ وَمَنْ حَوْلَهَا وَسُبْحَانَ
اللّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿٨﴾

8- "Mûsâ, ateşin yanına varınca ona şöyle seslenildi: 'Ateşin başındaki de çevresindekiler de kutlu olsun. Âlemlerin Rabbi olan Allah, eksikliklerden uzaktır.'"

Yani ateşin peşinde olan da ateşin etrafında olanlar da mübarek olsun. Mübarek kılınmak ise bereketli olmak veya bereketlenmek anlamındadır. Bereket kelimesi ise hayırda artış ve büyüme demektir. Bu arada Allah'ın (c.c.) berekete dair bu duası, onu kolaylaştırması ve gerçekleştirmesinin ifadesidir.

يَا مُوسٰٓى اِنَّهُٓ اَنَا اللّٰهُ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿٩﴾

9- "Ey Mûsâ! Gerçek şu ki ben mutlak güç sahibi, hüküm ve hikmet sahibi olan Allah'ım."

Sana hitap eden, celalime layık olmada mutlak güç sahibi ve bütün fiillerimde hüküm ve hikmet sahibi olan ben Allah'ım.

وَاَلْقِ عَصَاكَ فَلَمَّا رَاٰهَا تَهْتَزُّ كَاَنَّهَا جَٓانٌّ وَلّٰى مُدْبِرًا وَلَمْ يُعَقِّبْ يَا
مُوسٰى لَا تَخَفْ اِنّ۪ي لَا يَخَافُ لَدَيَّ الْمُرْسَلُونَ ﴿١٠﴾

10- "Değneğini at. Değneği yılanmış gibi hareket eder görünce, dönüp ardına bakmadan kaçtı. (Allah şöyle buyurdu): 'Ey Mûsâ, korkma! Benim katımda peygamberler korkmazlar.'"

Diğer bir ayette Allah, Hz. Mûsâ'ya soru sorduğunu ve takrir yoluyla kendisine şöyle dediğini açıklamıştır: ( وَمَا تِلْكَ بِيَمِينِكَ يَا مُوسٰى ) *"Nedir o sağ elindeki ey Mûsâ?"* (Tâhâ, 20/17) Hz. Mûsâ da: ( هِيَ عَصَايَ ) *"O, benim değneğimdir"* (Tâhâ, 20/18) diye cevap verdi ve kendisi için değnekte bulunan bazı ihtiyaçları ve faydaları dile getirdi. Bunun üzerine Allah:( قَالَ اَلْقِهَا يَا مُوسٰى ) *"Değneğini at"* (Tâhâ, 20/19) buyurdu. Çünkü Allah, değnek yoluyla Hz. Mûsâ'ya kendisinde noksansız kesin imanı meydana getirecek büyük mucizeyi göstermek istedi.

Hz. Mûsâ değneği atınca Allah onu yılana çevirdi. Onu önce küçük, sonra da büyük bir yılan yaptı. Bunun üzerine Hz. Mûsâ, içinde korku hissetti ve arkasını dönerek kaçtı. Bu arada Hz. Mûsâ'nın korkusu, Allah'ın yılanı başına musallat kılmasından ötürü idi. Çünkü Allah'ın, dilediği kimseyi dilediği şeyle cezalandırdığını biliyordu.

( يَا مُوسٰى لَا تَخَفْ اِنِّي لَا يَخَافُ لَدَيَّ الْمُرْسَلُونَ ) *"Ey Mûsâ, korkma! Benim katımda peygamberler korkmazlar."*

Yani korkmak, onlara uygun düşmez.

اِلَّا مَنْ ظَلَمَ ثُمَّ بَدَّلَ حُسْنًا بَعْدَ سُوٓءٍ فَاِنِّي غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿١١﴾

11- "Ancak kim zulmeder de sonra kötülüğün yerine iyilik yaparsa bilsin ki şüphesiz ben çok bağışlayıcıyım, çok merhamet edenim."

Bu ayet, peygamberlerin devamlı olmamak şartıyla ve peygamberliği tebliğ ile ilgili olmayan konularda günah işleyebileceklerini göstermektedir. Günah işlemelerini caiz görmeyenler ise bu ayetin peygamberlik öncesi durumlarına dair olduğunu savunmaktadırlar.

Hz. Mûsâ, değneğin yılana dönüştüğünü görünce, bu keşfi kendisine Allah'ın gösterdiğini anladı.

Bu konuda şu soru sorulabilir: *"Hz. Mûsâ, işittiği sözün Allah'ın kelamı olduğunu nasıl bildi?"*

Bu sorunun cevabı şöyledir: *"Bunu kendisine Allah öğretmiştir."* Kaldı ki bu, Hz. Mûsâ'da mevcut zorunlu bir bilgi olabileceği gibi

sonradan edinilmiş bir bilgi de olabilir. Öte yandan Hz. Mûsâ'nın: *"Şüphesiz ben Allah'ım"* şeklindeki sözün Allah'a ait doğru bir söz olduğunu bilmesini sağlayan delil, o anda kendisinde ortaya çıkan, değneğin yılana çevrilmesi ve elini bembeyaz çıkarması şeklindeki mucizeler olmuştur.

وَاَدْخِلْ يَدَكَ ف۪ي جَيْبِكَ تَخْرُجْ بَيْضَٓاءَ مِنْ غَيْرِ سُوٓءٍ ف۪ي تِسْعِ اٰيَاتٍ
اِلٰى فِرْعَوْنَ وَقَوْمِه۪ اِنَّهُمْ كَانُوا قَوْمًا فَاسِق۪ينَ ﴿١٢﴾

12- "Elini koynuna sok. Firavun'a ve onun kavmine gönderilen dokuz mucizeden biri olarak kusursuz bembeyaz çıksın. Çünkü onlar yoldan çıkmış bir kavimdir."

Kusursuzdan maksat, alaca hastalığı olmaksızın çıkmasıdır. Kıssasında yer aldığına göre Hz. Mûsâ, kalbinin, hanımının söylediğiyle meşgul olduğunu, o gece başına gelen rahatsız edici halleri ve ateşi aramasını anlatınca Allah şöyle buyurdu:

*"Senin yerine işi üstlenerek hanımını ve eşyanı koruma altına aldık; koyunlarını ve sığırlarını bir araya getirdik ve hanımın salimen sende kaldı."*

فَلَمَّا جَٓاءَتْهُمْ اٰيَاتُنَا مُبْصِرَةً قَالُوا هٰذَا سِحْرٌ مُب۪ينٌ ﴿١٣﴾

13- "Nitekim ayetlerimiz kendilerine gerçeği gösterecek biçimde gelince: 'Bu, apaçık bir sihirdir' dediler."

Allah, peygamberlerinden birinde bir mucize ortaya koyduğu zaman muhakkak o mucize, açıklıkta öyle bir özelliğe sahipti ki eğer insanlar ona doğru baksalardı, bilgiyi elde etme imkanına ve gönül huzuruna kavuşacaklardı. Ancak onlar, hakkında akıl yürütmekten yüz çevirmek suretiyle o mucizenin bir kısmıyla ilgili olarak kusur işlediler, bir kısmını da anladılar, ancak ona inkârla karşılık verdiler. Allah şöyle buyurur:

وَجَحَدُوا بِهَا وَاسْتَيْقَنَتْهَآ اَنْفُسُهُمْ ظُلْمًا وَعُلُوًّا فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُفْسِدِينَ ﴿١٤﴾

14- "Kendileri de bunların hak olduklarını kesin olarak bildikleri halde, sırf zalimliklerinden ve büyüklük taslamalarından dolayı onları inkâr ettiler. Ama bozguncuların sonunun nasıl olduğuna bir bak."

Nasıl ki kâfirden inkâr sadır oluyorsa, aynı şekilde günahkar kişi de bazı günahları işlerken öyle bir hal yaşar ki o esnada yaptığı işin caiz olmadığını kesin olarak bilir. Aynı anda kalbine, kendisini o günahtan alıkoyan hisler ile o günaha sevk eden hisler peş peşe gelirken o, bu günahı ne görmezlikten gelmekte ne de unutmaktadır. Sonra o günahı, mutluluk duymaksızın ve şehvetine uyarak işlemeye kalkar. Günahların bu çeşidi ise en fazla uğursuz, azabı en şiddetli ve mağfiretten en uzak olanıdır.

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا دَاوُدَ وَسُلَيْمٰنَ عِلْمًا وَقَالَا الْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِي فَضَّلَنَا عَلٰى كَثِيرٍ مِنْ عِبَادِهِ الْمُؤْمِنِينَ ﴿١٥﴾

15- "Andolsun, biz Dâvûd'a ve Süleyman'a ilim verdik. Onlar: 'Hamd, bizi mümin kullarının birçoğundan üstün kılan Allah'a mahsustur' dediler."

Bu hitabın hükmüne göre; Allah, o ikisine kimsenin kendilerine ortak olmadığı bir ilim çeşidi vermiştir. Çünkü Allah, bu ilmi onlara tahsis edildiği şeklinde anlatmıştır. Bu arada söz konusu ilmin, dinî ilimlerden olduğunda şüphe yoktur.

Bu konuda şu ihtimaller de vardır:

- Allah, kendilerine yaptığı fazla izahla bu iki peygamberi o ilme dair burhan getirmeye ve şüpheye konu edilebilen akıl yürütme yoluyla doğruluğunu kanıtlamaya muhtaç olmaktan çıkartmıştır.

- Bu iki peygamberin, ümmetlerinin ahvaliyle ilgili bilgileri, onların gizledikleri şeylere muttali olmak şeklinde olmuştur. Böylece bunu anlatmaları ikisi için mucize olmuştur.

- Bu ilim, Hz. Süleyman'ın: *"Bize kuş dili öğretildi"* sözünde ifade edilen husustur.

- İkisinin Allah'a dair ilmi, kendilerine fazla izah yoluyla verilmiştir.

Öte yandan bu ayette, ilimle gerçekleşen üstünlüğün, ilim dışındaki sıfatlarla gerçekleşmediğine dair delil bulunmaktadır. Bu nedenle Allah bu iki peygamberin, kendilerine verdiği büyük nimete karşılık O'na şükrettiklerini bildirmiştir.

وَوَرِثَ سُلَيْمٰنُ دَاوُ۫دَ وَقَالَ يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ عُلِّمْنَا مَنْطِقَ الطَّيْرِ وَاُو۫تٖينَا
مِنْ كُلِّ شَيْءٍۜ اِنَّ هٰذَا لَهُوَ الْفَضْلُ الْمُبٖينُ ﴿١٦﴾

16- "Süleyman Dâvûd'a vâris oldu ve: 'Ey insanlar! Bize kuş dili öğretildi ve bize her şey verildi. Şüphesiz bu, apaçık bir lütuftur' dedi."

Hz. Süleyman, hem peygamberlikte hem de yerine geçmede babasına vâris olmuştur.

( عُلِّمْنَا مَنْطِقَ الطَّيْرِ ) *"Bize kuş dili öğretildi."*

Bu, onun bir mucizesi olup peygamberliğinden söz ederken, doğru söylediğini bu mucizeden dolayı anlamaları için onu kavmine göstermiştir. Kaldı ki basiret sahibi olan ve kalben Allah ile huzur bulan kimse, her şeyi Allah ile ve Allah'tan bilir. Bir de bu kimseye, bu gerçeği kavratacak keşif verilir. Böylece sanki o, sonsuz bir şekilde her şeyden Allah'ı tanıtıcı bilgiler işitir. Nitekim bu durum peygamberlerde bulunmakta ve onlardan rivayet edilmektedir. Bir de nasıl ki -alışkanlık sebebiyle- davul çalmak, sesi duyulduğunda kendisiyle göç ve konaklama vakti bilinen bir delil ise aynı şekilde Allah da huzur ehline özel bilgilendirme çeşitleri bahşetmektedir.

Bunlar, sesleri işitmekten ve görülen varlıkların değişik hallerini görmekten ibarettir.

Tıpkı şu beyitte söylendiği gibi:

*Bir görüşü olduğu zaman kişinin*
*Bulunur her şeyde bir ibret onun için*

وَحُشِرَ لِسُلَيْمٰنَ جُنُودُهُ مِنَ الْجِنِّ وَالْاِنْسِ وَالطَّيْرِ فَهُمْ يُوزَعُونَ ﴿١٧﴾

17- "Süleyman'ın cinlerden, insanlardan ve kuşlardan meydana gelen orduları onun önünde toplandı. Hep birlikte düzenli olarak sevk ediliyorlardı."

Allah, cinleri ve kuşları Hz. Süleyman'ın emrine verdi. Bu nedenle cinler yükümlü idiler. Kuşlar da emrine verilmişti ancak onlar da prensiplere tabi idi. Aynı şekilde onun zamanındaki hayvanlar da böyleydi. Hatta Hz. Süleyman karıncalarla bile konuşmayı biliyor ve onlara hükmünü uyguluyordu.

حَتّٰٓى اِذَٓا اَتَوْا عَلٰى وَادِ النَّمْلِ قَالَتْ نَمْلَةٌ يَٓا اَيُّهَا النَّمْلُ ادْخُلُوا
مَسَاكِنَكُمْ لَا يَحْطِمَنَّكُمْ سُلَيْمٰنُ وَجُنُودُهُ وَهُمْ لَا يَشْعُرُونَ ﴿١٨﴾

18- "Nihayet karınca vadisine geldikleri vakit bir karınca: 'Ey karıncalar yuvalarınıza girin, Süleyman ve ordusu farkına varmadan sizi ezmesinler' dedi."

Rivayete göre; Haz. Süleyman, kavmine: *"Yuvalarınıza girin"* diyen karınca beyini huzuruna getirterek ona: *"Benim günahsız olduğumu ve askerlerimin sizi ezmelerine imkan tanımayacağımı bilmiyor musun?"* demiş, o da bunu bilmediğini kendisine bildirmiştir. Çünkü karıncanın, Hz. Süleyman'ın günahsız olduğunu bilmesi zorunlu değildir. Şayet karınca beyi: *"Belki de bu size mubah kılınmıştır"* deseydi bu da caiz olurdu.

Diğer bir rivayete göre de o karınca, Hz. Süleyman'a şöyle dedi:

*"Ben, kavmimi dünyaya mesafeli durmaya yönlendiriyorum. Sizi görmeleri halinde dünyaya arzu duymalarından korktum. Bu nedenle, zühtleri konusunda kafalarının karışmaması için yuvalarına girmelerini emrettim."*

Eğer bu rivayet doğru ise onda, büyüklerin, maiyetlerinde olanları yönetmelerinin vacip olduğuna dair delil vardır. Ayette ise gerçekleşmesinden korkulan bir durumdan sakınmanın güzelliğine ve bunun, nefsin âdetinin ve fıtratlarında mevcut olan temyizin gereği olduğuna dair delil bulunmaktadır.

Bir rivayete göre de o karınca ile Hz. Süleyman arasında şu diyalog geçmiştir:

Karınca: *"Allah, kerametten sana ne verdi?"*

Hz. Süleyman: *"Rüzgârı emrime verdi."*

Karınca: *"Sen, bunun, sana verilen şeylerden elinde -gelip geçen- rüzgardan başka bir şeyin bulunmadığına işaret olduğunu bilmiyor musun?"*

İşte böylece yüce Allah, bunu küçük karıncanın dilinden açıklamıştır.

فَتَبَسَّمَ ضَاحِكًا مِنْ قَوْلِهَا وَقَالَ رَبِّ اَوْزِعْنِيٓ اَنْ اَشْكُرَ نِعْمَتَكَ
الَّتِيٓ اَنْعَمْتَ عَلَيَّ وَعَلٰى وَالِدَيَّ وَاَنْ اَعْمَلَ صَالِحًا تَرْضٰيهُ
وَاَدْخِلْنِي بِرَحْمَتِكَ فِي عِبَادِكَ الصَّالِحِينَ ﴿١٩﴾

19- "Süleyman, onun bu sözüne tebessümle güldü ve dedi ki: 'Ey Rabbim! Beni; bana ve ana-babama verdiğin nimetlere şükretmeye ve razı olacağın salih ameller işlemeye sevk et ve beni rahmetinle salih kullarının arasına kat!'"

( فَتَبَسَّمَ ضَاحِكًا مِنْ قَوْلِهَا ) *"Süleyman, onun bu sözüne tebessümle güldü."*

Hükümdarlar, siyasetin hükmünü gözettikleri için nadiren tebessüm ederler. Bu da onların tebessüme sebep olan hususa rıza gösterdiklerini ve onu güzel bulduklarını gösterir. Bu çerçevede Hz. Süleyman, karıncaların büyüğünün, kendi maiyetini iyi yönetmesini güzel bulmuştur.

Kıssasında yer aldığına göre; Hz. Süleyman ne kadar olduklarını görmek için o karıncadan askerlerini, önünden geçirmesini emretmiş, o da bunu yapmıştır. Bu askerler, ayakta durup ibret almak üzere onlara bakan Hz. Süleyman'ın önünden bir ay boyunca bölük bölük geçmiş, ancak sonları gelmemiştir. Bunun üzerine Hz. Süleyman, yoluna devam etmiştir.

Yine kıssasında yer aldığına göre, karıncaların büyüğü, cüssesinin iriliğinde katır gibiydi ve bir hortumu vardı. Doğrusunu ise en iyi Allah bilir.

( رَبِّ اَوْزِعْنِي اَنْ اَشْكُرَ نِعْمَتَكَ الَّتِي اَنْعَمْتَ عَلَيَّ وَعَلٰى وَالِدَيَّ وَاَنْ اَعْمَلَ صَالِحًا تَرْضٰيهُ ) *"Ey Rabbim! Beni; bana ve ana-babama verdiğin nimetlere şükretmeye ve razı olacağın salih ameller işlemeye sevk et."*

Bunda, Hz. Süleyman'ın karıncalara ibret nazarıyla baktığına ve bunu kendisine Allah'ın öğrettiğini gördüğüne dair delil vardır. Allah'ın buna dikkatini çekmiş olması da şükrü vacip olan nimetleri cümlesindendir.

Bu arada ( وَعَلٰى وَالِدَيَّ ) *"ve ana-babama"* sözünde şuna dair delil vardır: Şükredenin Allah'a olan şükrü, sadece kendisine verdiği nimetlere mahsus değildir. Aksine kula vacip olan, hem özel hem de genel nimetlerine karşılık Allah'a şükretmesidir.

( وَاَدْخِلْنِي بِرَحْمَتِكَ فِي عِبَادِكَ الصَّالِحِينَ ) *"Beni rahmetinle salih kulların arasına kat."*

Bu duasıyla Hz. Süleyman, akıbetinin güzel olmasını dilemiştir. Çünkü Allah'ın salih kulu, sonu saadetle biten kimsedir.

وَتَفَقَّدَ الطَّيْرَ فَقَالَ مَا لِيَ لَٓا اَرَى الْهُدْهُدَ اَمْ كَانَ مِنَ الْغَٓائِبِينَ ﴿٢٠﴾

20- "Süleyman kuşlara göz atıp yokladı ve şöyle dedi: 'Hüthüt'ü niçin göremiyorum? Yoksa kayıplara mı karıştı?'"

Hz. Süleyman, bu kuşu huzuruna çağırttı. Onu göremeyince de gecikmesinin ve görünmemesinin sebebini öğrenmek istedi. Bu olay, Hz. Süleyman'ın, yönetiminde uyanık davrandığını, milletinin ve maiyetindekilerin işlerini güzel yönettiğini ve onlara karşı sorumluluğunu yerine iyi getirdiğini göstermektedir. Zira kuşların en ufaklarından biri olan bir kuşun tek bir saat kaybolması bile gözünden kaçmamıştır. Bu, Hz. Süleyman'ın bu olayıyla ilgili olarak yapılan en güzel yorumdur. Sonra Hz. Süleyman, bir mazeretinin olmaması halinde, söz konusu kuşu ağır bir cezayla tehdit etmiştir. Bu da ülkesiyle ilgili siyaseti ve adaletinin mükemmel olduğunu gösterir.

Kimilerine göre de Hz. Süleyman, Hüthüt'ün özel bir ilhamla derinlerdeki suyu bildiğini biliyordu. Bu arada su bulunmayan bir yerde konakladığı için Hz. Süleyman, onlara suyun yerlerini göstersin diye Hüthüt'ü istemiştir ki, bu mümkündür. Çünkü hüthütlerin sayısı çok olup bir tanesinin kaybolmasından bir aksama meydana gelmez. Allah daha iyi bilir ya, meğer ki o bir tane, suyun yerlerini ve derin kaynaklarını bilme özelliğine sahip olmuş olsun.

Rivayete göre İbn Abbas'a bu konu sorularak şöyle denilmiştir:

*"Eğer Hüthüt, yerin altındaki suyu görüyor ve biliyorsa, toprak altında gizlenen tuzağı nasıl göremiyor?"*

İbn Abbas da şöyle demiştir: *"Kader geldiği zaman, göz körleşir."*

Bir yoruma göre de kuşlar, Hz. Süleyman'ın başı üzerinde saf tutarak kanatlarıyla güneşin yayılmasını ve ışınlarını engelliyorlardı. Bu esnada güneş ışını yere vurdu. Hz. Süleyman oraya bakınca Hüthüt'ün yerini boş buldu ve böylece kaybolduğunu anladı. Bu da mümkün olup anlattığımız üzere Hz. Süleyman'ın duyarlılığını ve dikkatindeki mükemmelliği gösterir.

لَأُعَذِّبَنَّهُ عَذَابًا شَدِيدًا اَوْ لَاَاذْبَحَنَّهُ اَوْ لَيَاْتِيَنِّي بِسُلْطَانٍ مُبِينٍ ﴿٢١﴾

21- "Bana apaçık bir delil getirmedikçe kesinlikle onu ağır bir şekilde cezalandıracağım ya da kafasını keseceğim."

Bu ayette suçun miktarına bakıldığına, cüssenin küçüklüğü veya büyüklüğüne itibar edilmediğine ve onun zamanında, kuşların yükümlülük kapsamında olduğuna dair delil vardır. Şimdi de kesin olarak bilinmemekle birlikte, kuşların bir hükme tabi olmaları ve kendilerine Allah'tan bir ilham ve ilam gelmesi uzak bir ihtimal değildir.

Bu arada adı geçen ağır cezanın kesin bir biçimde belirlenmesi mümkün olmayıp bu, ancak cevaz ve ihtimal yoluyla belirlenebilir.

İşte bu yolla, konu hakkında söylenen her şey ihtimal dahilinde olur.

Şu da söylenebilir: *"Eğer bir şey hakkında nakil varsa ona uyulur."*

Bu ceza konusunda şu görüşler de ileri sürülmüştür:

- Bu ceza, tüyleri yolunarak güneşe atılmasıdır.

- Bu ceza, dostundan kopartılmasıdır.

- Bu ceza, vaktinin düzenini bozmaktır.

- Bu ceza, onu akranının hizmetiyle yükümlü kılmaktır.

Aslında bu konuda en uygun olan, şöyle şöyle ağır cezalardan söz etmek ve başka ihtimalleri dışlayıp belirli kesin bir cezaya karar vermemektir.

Mesela, ağır cezalardan bazıları şunlardır:

- Kişinin, hizmetin lezzetinden alıkonularak meşakkatin acısını çekmesi,

- Güzel ilahi himayenin kendisinden kesilmesi ve kendi gücüne ve nefsine havale edilmesi,

- Talep hırsıyla imtihan edilmesi, sonra maksudu ve matlubuyla arasına engel konulması,

- Mazeret adının arkasına sığınma arzusu ve bu arzunun daha sonra ortadan kalkmaması,

- Kanaatkârlıktan yoksun bırakılması,

- Olan bitene rıza göstermemesi,

- Yaratıkları zihinde tutması ve halktan birilerini hesaba katması,

- Değersiz insanlara ihtiyaç duyması,

- İlahî takdiri görmekten gafil kalarak dilencilik züllüne katlanması,

- Karşıt kimselerle arkadaşlık etmesi ve onlarla hemhal olmaya müptela olması,

- İnancının zayıf, sabrının az olması,

- Doğru yolu şaşırması,

- Bâtılı hak sanması,

- Hakkı, bâtıl şeklinde görerek ikisini birbirine karıştırması,

- Güç yetiremeyeceği şeylerle yükümlü kılınması,

- Gurbette yoksul kalması.

فَمَكَثَ غَيْرَ بَعِيدٍ فَقَالَ اَحَطْتُ بِمَا لَمْ تُحِطْ بِهِ وَجِئْتُكَ مِنْ سَبَاٍ
بِنَبَاٍ يَقِينٍ ﴿٢٢﴾ اِنّ۪ي وَجَدْتُ امْرَاَةً تَمْلِكُهُمْ وَاُو۫تِيَتْ مِنْ كُلِّ شَيْءٍ
وَلَهَا عَرْشٌ عَظ۪يمٌ ﴿٢٣﴾

22, 23- "Derken Hüthüt çok beklemeden çıkageldi ve (Süleyman'a) şöyle dedi: 'Senin bilmediğin bir şey öğrendim. Sebe'den sana sağlam bir haber getirdim. Ben, Sebe halkına hükümdarlık eden, kendisine her şeyden bolca verilmiş ve büyük bir tahtı olan bir kadın gördüm.'"

Sonra Hüthüt, Belkıs olayını, kendisinin onların kraliçesi olduğunu ve sıraladığı malını, mülkünü ve büyük tahtını anlattı. Bu anlatılanlardan dolayı Hz. Süleyman'da bir değişiklik meydana gelmedi

ve hükümdarların, başkalarının mülküne göz dikmek şeklindeki âdetlerinde olduğu gibi bu duyduklarına dönük tamah, kendisini tahrik etmedi. Ancak Hüthüt:

وَجَدْتُهَا وَقَوْمَهَا يَسْجُدُونَ لِلشَّمْسِ مِنْ دُونِ اللّٰهِ وَزَيَّنَ لَهُمُ الشَّيْطَانُ اَعْمَالَهُمْ فَصَدَّهُمْ عَنِ السَّبِيلِ فَهُمْ لَا يَهْتَدُونَ ﴿٢٤﴾ اَلَّا يَسْجُدُوا لِلّٰهِ الَّذِي يُخْرِجُ الْخَبْءَ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَيَعْلَمُ مَا تُخْفُونَ وَمَا تُعْلِنُونَ ﴿٢٥﴾ اَللّٰهُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ رَبُّ الْعَرْشِ الْعَظِيمِ ﴿٢٦﴾

24, 25, 26- "Onun ve kavminin, Allah'ı bırakıp güneşe taptıklarını gördüm. Şeytan, yaptıklarını onlara süslü göstermiş ve böylece onları yoldan çıkartmış. Bu yüzden de onlar, doğru yolu bulamıyorlar. Göklerde ve yerde gizli olanı ortaya çıkaran, sizin gizlediğiniz ve açığa vurduğunuz şeyleri bilen Allah'a secde etmesinler diye. Allah, kendisinden başka hiçbir ilah bulunmayandır, büyük Arş'ın Rabbidir."

deyince Hz. Süleyman hiddetlendi ve Allah için öfkelenerek:

قَالَ سَنَنْظُرُ اَصَدَقْتَ اَمْ كُنْتَ مِنَ الْكَاذِبِينَ ﴿٢٧﴾

27- "Hüthüt'e şöyle dedi: 'Doğru mu söylüyorsun yoksa yalancılardan mısın, göreceğiz.'"

Bu ayette, tek kişi rivayetinin -haber-i vahidin- kesin bilgi sağlamadığına, bu nedenle onda cevaz -olabilirlik- noktasında durmak gerektiğine dair delil vardır. Ayetin ifade ettiği bir diğer husus da bu rivayetin bir kenara atılamayacağı, aksine doğru mu yalan mı olduğunun araştırılması gerektiğidir.

Hz. Süleyman, Hüthüt'ün bu özrünü öğrenince onu cezalandırmaktan ve yaptığı tehditten vazgeçti. Zaten yöneticinin yöntemi de

budur. Çünkü yöneticinin adaleti onu, yönetimindekilerden intikam almaktan alıkoyar. Bir de o, suçlu gibi gördüğü kimsenin samimiyetle dilediği özrünü kabul eder.

اِذْهَبْ بِكِتَابِي هٰذَا فَاَلْقِهْ اِلَيْهِمْ ثُمَّ تَوَلَّ عَنْهُمْ فَانْظُرْ مَاذَا
يَرْجِعُونَ ﴿٢٨﴾

28- “Benim şu mektubumu götür onlara at, sonra da yanlarından ayrıl ve ne sonuca varacaklarına bak.”

Ayette insanın, hükümdarların huzurunda her sözü söylemesinin uygun olmadığına işaret vardır. Çünkü o, bununla kendini sıkıntıya sokar. Nitekim Hz. Süleyman’ın emrinde pek çok hizmetçi, maiyet ve emrini yerine getiren kimseler vardı. Ancak o, bu yükümlülüğü yerine getirmede Hüthüt’ten başkasını kullanmamıştır. Çünkü söyleyeceğini söyleyen odur. Bu nedenle o, söylediği sözün sorumluluğunu yerine getirmek zorunda kalmıştır.

Bir yoruma göre de Hüthüt, hükümdarına doğru haber getirince bu, kendisine bir kazanım sağladı ve bu çerçevede o, şeklen zayıf olmasına rağmen, elçiliğe ve mesaj iletmeye ehil görüldü. Bunun üzerine Hüthüt, gitti ve tıpkı kendisine emredildiği gibi mektubu Belkıs’a bırakarak, ne yapacaklarını ve kendisine ne gibi bir cevap verileceğini beklemek üzere bir kenara çekildi.

قَالَتْ يَٓا اَيُّهَا الْمَلَؤُا اِنّ۪ٓي اُلْقِيَ اِلَيَّ كِتَابٌ كَر۪يمٌ ﴿٢٩﴾ اِنَّهُ مِنْ
سُلَيْمٰنَ وَاِنَّهُ بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ ﴿٣٠﴾ اَلَّا تَعْلُوا عَلَيَّ
وَأْتُون۪ي مُسْلِم۪ينَ ﴿٣١﴾

29, 30, 31- “Belkıs dedi ki: ‘Ey ileri gelenler! Bana değerli bir mektup atıldı. Mektup, Süleyman’dan gelmiştir. O, Rahmân ve Rahîm olan Allah’ın adıyla başlamakta ve içinde: ‘Bana karşı büyüklük taslamayın ve teslimiyet göstererek bana gelin’ denilmektedir.’”

( كِتَابٌ كَرِيمٌ ) *"Değerli bir mektup."*

Ayette yer alan "Kerîm" lafzının mastarı olan "kerem", değersiz olmamak demektir.

Bu mektup hakkında şu görüşler ileri sürülmüştür:

- Mektup, mühürlü oluğu için değerli diye nitelenmiştir.

- Elçi, kuş olduğu için mektup değerlidir. Çünkü Belkıs, kuşların emrine verildiği kimsenin çok büyük öneme sahip olduğunu anlamıştır.

- Mektup, besmeleyle başladığı için değerlidir.

- Mektup değerlidir, çünkü Hz. Süleyman, onda önce kendi adını yazmış ve: "Bu mektup, Süleyman'dan falanca kraliçeye" dememiştir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Söz konusu mektupta Hz. Süleyman'ın, kraliçenin mülküne göz diktiğine dair bir söz yer almamış, aksine Allah'a davet eden şu söz yer almıştır: ( اَلَّا تَعْلُوا عَلَيَّ وَاْتُونِي مُسْلِمِينَ ) *"Bana karşı büyüklük taslamayın ve teslimiyet göstererek bana gelin."*

- Mektup, Belkıs'ın kalbini derinden etkilemiş ve kendisi yenik düşürmüştür. Bu nedenle o, herhangi bir cevap vermeksizin:

( اِنِّي اُلْقِيَ اِلَيَّ كِتَابٌ كَرِيمٌ ) *"Bana değerli bir mektup atıldı"* demiştir. Bu vesileyle Belkıs, mektubun değerini anlayınca gösterdiği saygı sayesinde hükümdarlığı elinde kalmış ve kendisine İslam ve Hz. Süleyman'ın arkadaşlığı nasip kılınmıştır.

- Mektup, içindeki besmeleden dolayı değerli olduğuna göre, değerli olan namaz da besmelesiz olmayan namaz demektir. Namaz besmelesiz olduğu zaman ise durum aksine olur.

قَالَتْ يَٓا اَيُّهَا الْمَلَؤُا اَفْتُونِي فِي اَمْرِي مَا كُنْتُ قَاطِعَةً اَمْرًا حَتّٰى تَشْهَدُونِ ﴿٣٢﴾

32- "Belkıs dedi ki: 'Ey ileri gelenler! Durumum hakkında bana görüş bildirin. Sizler yanımda bulunmadıkça hiçbir işe kesin olarak karar vermem.'"

Belkıs, büyük işlerde durumun gerektirdiği gibi istişarede bulunmaya başladı. Çünkü kendi görüşünü dayatması hükümdara yakışmaz ve yanında görüş ve basiret sahibi bir topluluğun bulunması gerekir.

قَالُوا نَحْنُ اُولُوا قُوَّةٍ وَاُولُوا بَاْسٍ شَديدٍ وَالْاَمْرُ اِلَيْكِ فَانْظُرِي مَاذَا تَاْمُرِينَ ﴿٣٣﴾

33- "Dediler ki: 'Biz güçlü kimseleriz ve çetin savaşçılarız. Emir senin. Ne emredeceğini düşün.'"

Onlar, edebin gereğine uygun cevap vererek şöyle dediler:

*"Bizim yapacağımız şey, ancak imkânımız dahilindeki çabayı harcamak ve iyi niyet ortaya koymaktır. Bize düşen sorumluluk da ancak emre uymak, işi yürütmek ve uygulanmasını sana bırakmaktır."*

قَالَتْ اِنَّ الْمُلُوكَ اِذَا دَخَلُوا قَرْيَةً اَفْسَدُوهَا وَجَعَلُوٓا اَعِزَّةَ اَهْلِهَٓا اَذِلَّةً وَكَذٰلِكَ يَفْعَلُونَ ﴿٣٤﴾

34- "Belkıs şöyle dedi: 'Krallar bir memlekete girdiler mi, orayı harap ederler ve halkının ileri gelenlerini zelil hale getirirler. İşte onlar da böyle yaparlar.'"

Bu konuda şu iki yorum yapılmıştır:

- ( وَكَذٰلِكَ يَفْعَلُونَ ) "*İşte onlar da böyle yaparlar*" sözü, Belkıs'ın söylediklerinin bir parçasıdır.

- Hükümdarların, bir ülkeye girdiklerinde niteliğini değiştirdikleri, bilinen bir husustur. Sonra bakılır: Eğer o ülkeye giren hükümdar adil ise zulüm prensibini ortadan kaldırarak adalet prensibini

yerleştirir. Şayet zalim ise güzel olanı ortadan kaldırarak bâtılı yerleştirir. Bu bilinen bir husustur. Çünkü ülkelerin yıkımı, kötü yöneticiler sebebiyledir. Bu durumda alçak ve kalitesiz insanlar, değerli insanlara hakim olurlar.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Ey o devlet ki yoktur sende*
*Yüksek değerlerden bir zerre bile*
*Yok ol! Zira değilsin sen*
*İyilerin başına beladan başka*

Oysa dünyanın mamur olması, ayak takımının boynunu kıran ve saygın insanları alçakların esaretinden kurtaran doğru yöneticilerledir. Nitekim yayı, onu iyi kullanan alır. Adalet güneşi de şeref burcunda doğar. Aynı şekilde marifet ve iyi vasıflar kulun kalbine girdiği zaman o kalpten şehvetleri, kuruntuları ve kin, haset, cimrilik, beceriksizlik ve daha başka kötü vasıfları çıkartarak yerine kula düzen veren ve noksansız saadet sağlayan yüksek haller ve hoşnut eden vasıflar yerleştirir. Bir kalbe nefsin pespayelikleri ve kötü hasletler hakim olduğu zaman ondan mamurluğunu giderir, canlılığını yok eder. Böylece hakikatlerin merkezleri harap olur ve güzel vasıfların yerleştiği yerler yok olmaya yüz tutar. İşte o zaman bela büyür ve sıkıntılar üst üste yığılır.

وَاِنّ۪ي مُرْسِلَةٌ اِلَيْهِمْ بِهَدِيَّةٍ فَنَاظِرَةٌ بِمَ يَرْجِعُ الْمُرْسَلُونَ ﴿٣٥﴾

35- "Ben, onlara bir hediye gönderip elçilerin ne haber ile döneceklerine bakacağım."

Kıssasında yer aldığına göre; Belkıs, Hz. Süleyman'a bazı hediyeler gönderdi. Bu hediyelerin arasında bir külçe gümüş ile bir külçe altın da vardı. Allah da Hz. Süleyman'a bunu bildirdi ve bu mealde ona vahiy indirdi. Hz. Süleyman, cinlere evinin önündeki alanda bir saray yapmalarını emretti. Sarayı baştan aşağı gümüş ve altından yapılmış kerpiçlerle döşemelerini, döşemenin üzerinde hayvanların

durdurularak tersleri ve diğer izlerinin temizlenmemesini, ayrıca girişinde iki kerpiç yerinin boş bırakılmasını söyledi.

Derken Belkıs'ın elçileri, sarılı olarak yanlarında bulunan o iki külçeyle birlikte geldiler. Durumu görüp sarayın yolu gözlerine ilişince, yanlarındaki külçeler gözlerinde küçüldü, onları Hz. Süleyman'a takdim etmekten utandılar ve yanlarındaki hediyelerden nasıl kurtulacaklarını düşünmeye daldılar. O esnada iki kerpiçlik yeri boş görünce yanlarındaki külçelerin oradan çalındığını sandılar ve: "Eğer bu külçeleri gösterirsek onları, bu boşluktan çalmakla suçlanırız" diyerek onları o boş yere koyduktan sonra Hz. Süleyman'ın yanına girdiler.

فَلَمَّا جَآءَ سُلَيْمٰنَ قَالَ اَتُمِدُّونَنِ بِمَالٍ فَمَآ اٰتٰينِيَ اللّٰهُ خَيْرٌ مِمَّآ اٰتٰيكُمْ بَلْ اَنْتُمْ بِهَدِيَّتِكُمْ تَفْرَحُونَ ﴿٣٦﴾

36- "Elçilerin sözcüsü, Hz. Süleyman'ın huzuruna gelince Süleyman ona şöyle dedi: 'Siz beni mal ile mi desteklemek istiyorsunuz? Oysa Allah'ın bana verdiği, size verdiğinden daha hayırlıdır. Doğrusu hediyenizle ancak siz sevinirsiniz.'"

Siz, bana mal mı hediye ediyorsunuz? Hiç benim gibi biri bu tür davranışlarla yönlendirilmek istenir mi? Şüphesiz siz ve benzerleriniz gördüğünüz muamelenin benzeriyle muamele edersiniz. Dön onlara!

اِرْجِعْ اِلَيْهِمْ فَلَنَأْتِيَنَّهُمْ بِجُنُودٍ لَا قِبَلَ لَهُمْ بِهَا وَلَنُخْرِجَنَّهُمْ مِنْهَآ اَذِلَّةً وَهُمْ صَاغِرُونَ ﴿٣٧﴾

37- "Sen onlara dön. Andolsun, biz onlara karşı koyamayacakları ordularla gelir ve onları oradan aşağılanmış ve küçük düşürülmüş olarak çıkarırız."

Onla, Belkıs'a dönüp gördüklerini ve duyduklarını ona anlatınca Belkıs, teslim olup boyun eğmekten başka çaresi olmadığını

anladı ve Hz. Süleyman'ın hizmetine gitmeye karar verdi. Allah, Hz. Süleyman'a bunu ve Belkıs'ın teslim olmuş olarak yola çıktığını vahyetti. Bunun üzerine Hz. Süleyman: *"Hanginiz bana onun tahtını getirebilir?"* dedi.

قَالَ يَٓا اَيُّهَا الْمَلَؤُا اَيُّكُمْ يَأْتِينِي بِعَرْشِهَا قَبْلَ اَنْ يَأْتُونِي مُسْلِمِينَ ﴿٣٨﴾ قَالَ عِفْرِيتٌ مِنَ الْجِنِّ اَنَا اٰتِيكَ بِهِ قَبْلَ اَنْ تَقُومَ مِنْ مَقَامِكَ وَاِنِّي عَلَيْهِ لَقَوِيٌّ اَمِينٌ ﴿٣٩﴾

38, 39- "Süleyman: 'Ey ileri gelenler! Onlar bana teslim olmadan önce hanginiz bana Belkıs'ın tahtını getirebilir?' dedi. Cinlerden bir ifrit dedi ki: 'Sen yerinden kalkmadan ben onu sana getiririm ve şüphesiz ben, buna güç yetirecek güvenilir biriyim.'"

Allah, Hz. Süleyman'ın hükümdarlık alanını geniş kılmıştı. Onun yönetiminde cinler, insanlar ve şeytanlar bulunuyordu. Cinler hizmete verilerek, insanlar itaat ederek, şeytanlar da çeşitli kısımlarıyla onun yönetimi altında idi. Bu arada Hz. Süleyman: ( اَيُّكُمْ يَأْتِينِي بِعَرْشِهَا ) *"Hanginiz bana Belkıs'ın tahtını getirebilir?"* deyince cinlerin en güçlülerinden olan bir ifrit şöyle dedi:

( اَنَا اٰتِيكَ بِهِ قَبْلَ اَنْ تَقُومَ مِنْ مَقَامِكَ وَاِنِّي عَلَيْهِ لَقَوِيٌّ اَمِينٌ ) *"Sen yerinden kalkmadan ben onu sana getiririm ve şüphesiz ben, buna güç yetirecek güvenilir biriyim."*

Ancak bu ifrit, sözü kendi gücüne dayandırdığından Hz. Süleyman, onun bu sözüne ilgi göstermedi.

قَالَ الَّذِي عِنْدَهُ عِلْمٌ مِنَ الْكِتَابِ اَنَا اٰتِيكَ بِهِ قَبْلَ اَنْ يَرْتَدَّ اِلَيْكَ طَرْفُكَ فَلَمَّا رَاٰهُ مُسْتَقِرًّا عِنْدَهُ قَالَ هٰذَا مِنْ فَضْلِ رَبِّي لِيَبْلُوَنِي ءَاَشْكُرُ اَمْ اَكْفُرُ وَمَنْ شَكَرَ فَاِنَّمَا يَشْكُرُ لِنَفْسِهِ وَمَنْ كَفَرَ فَاِنَّ رَبِّي غَنِيٌّ كَرِيمٌ ﴿٤٠﴾

40- "Kitaptan bilgisi olan biri: 'Ben onu, sen gözünü kapayıp açmadan önce sana getiririm' dedi. Süleyman, tahtı yanında yerleşmiş halde görünce şöyle dedi: 'Bu, şükür mü yoksa nankörlük mü edeceğim diye beni denemek için, Rabbimin bana bir lütfudur. Kim şükrederse ancak kendisi için şükretmiş olur. Kim de nankörlük ederse, Rabbim her bakımdan sınırsız zengindir, cömerttir.'"

( الَّذِي عِنْدَهُ عِلْمٌ مِنَ الْكِتَابِ ) *"Kitaptan bilgisi olan biri."*

Bir görüşe göre bu, keramet sahibi olan Asaf'tır. Velilerin kerametleri ise peygamberlerin mucizeleri kapsamındadır. Çünkü eğer peygamber, peygamberliği konusunda doğru sözlü olmazsa, onu tasdik edip ümmetinin cümlesinden olan kimsede keramet ortaya çıkmaz.

Bu arada bilinmektedir ki, tahtı bu süratle getirmek, beşer gücü dahilinde değildir ve ancak Allah'ın kudretinin özellikleriyle gerçekleşmektedir. Öte yandan uzak mesafenin bir lahza içinde alınması, ancak şu iki yoldan biriyle mümkün görülebilir: Ya Allah, taht ile Hz. Süleyman'ın yeri arasındaki mesafeyi yakınlaştırmış ya da tahtı önce yok etmiş, ardından Hz. Süleyman'ın yanında onu ikinci kez var etmiştir. Bunlardan hangisi olursa olsun, tahtın getirilmesi ancak Allah tarafından gerçekleştirilmiştir. Bu itibarla, kitaptan bilgisi olan kişi Allah'a dua etmiş, Allah da duasını kabul ederek tahtı getirtmiştir. Bir de Hz. Süleyman, Allah'ın emri üzerine tahtın şeklini değiştirmiş; üstünü alt, altını üst yapmış ve onu, öncekinden farklı bir şekilde monte ettirmiştir.

Hz. Süleyman, bunu görünce Allah'a şükretmeye, nimetlerinin büyüklüğünü itiraf etmeye, utanmaya, tevazu göstermeye başlamış ve şöyle demiştir:

*"Bu, Rabbimin bana bir lütfudur. Ne bunu hak edişimden ne de benden başka birinin gücünden değildir. Doğrusu ben, Rabbimin nimetine hamd ediyorum. Çünkü O, kavmimin içinde ve ümmetimden, katında itibar sahibi olan ve duasını kabul ettiği birini ortaya çıkarmıştır."*

Bu arada âlimlerin tarifine göre; şükrün hakikati, nimeti verenin nimetini teslimiyet yoluyla itiraf etmektir. Anacak en güzel olanı şöyle denilmesidir: *"Şükür, ihsanda bulunanı, ihsanını dile getirerek övmektir."*

Böylece bu tanımın kapsamına, Allah'ın kuluna olan şükrü de dahil olmuş olur. Çünkü Allah'ın kula şükrü, kulun iyiliğini zikrederek onu övmesidir. Kulun Allah'a şükrü de ihsanını dile getirerek O'nu övmesidir. Ancak Hakk'ın ihsanı, nimet vermesi iken kulun iyiliği, Allah'a itaatte ve hizmette bulunması ve iyi davranışlarıdır.

Muamele ve işaret beyanının ehline göre ise şükür, nimeti hizmet yolunda harcamaktır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Şükür, Allah'ın nimetini O'na isyanda kullanmamaktır.

- Şükür, tatmini nimette bulmayıp onu vereni görmektir.

- Şükür, şükürden aciz kalmayı görmektir.

- En büyük şükür, şükre muvaffak olmaya şükretmektir.

- Şükür, iki kısımdır: Biri, avamın, artışı görmeye karşılık olan şükrüdür. Bu konuda Allah şöyle buyurmuştur:

(لَئِنْ شَكَرْتُمْ لَأَزِيدَنَّكُمْ) *"Andolsun, eğer şükrederseniz elbette size nimetimi artırırım."* (İbrahim, 14/7)

Diğeri olan havassın şükrü ise artış isteğinden arınmış ve karşılık elde etme arayışına bulaşmamış olan şükürdür.

- Gerçek şükür, nimetleri kayıt altına almak ve bağlamak demektir. Çünkü nimetlerin kalıcılığı ve sürekliliği şükür iledir.

قَالَ نَكِّرُوا لَهَا عَرْشَهَا نَنْظُرْ اَتَهْتَد۪ٓي اَمْ تَكُونُ مِنَ الَّذ۪ينَ لَا
يَهْتَدُونَ ﴿٤١﴾

41- "Süleyman: 'Tahtını tanınmaz hale getirin. Bakalım tanıyacak mı, yoksa tanımayacaklardan mı olacak?' dedi."

Hz. Süleyman, Belkıs'ı imtihan etmek ve aklının derecesini ölçmek istedi. Bu amaçla da tahtının değiştirilmesini emretti. Böylece Belkıs, tahtını görünce:

فَلَمَّا جَٓاءَتْ قٖيلَ اَهٰكَذَا عَرْشُكِ قَالَتْ كَاَنَّهُ هُوَ وَاُو۫تٖينَا الْعِلْمَ مِنْ
قَبْلِهَا وَكُنَّا مُسْلِمٖينَ ﴿٤٢﴾

42- "Belkıs gelince: 'Senin tahtın böyle mi?' denildi. O da şöyle dedi: 'Sanki o. Fakat zaten daha önce bize bilgi verilmişti ve biz, teslimiyet göstermiştik.'"

Bunun üzerine Hz. Süleyman, Belkıs'ın bu cevabını, aklının kemaline delil olarak değerlendirdi. Nitekim olay, âdete aykırı ve Belkıs'ın nazarında Hz. Süleyman'ın peygamberliğinin doğruluğuna delil ve alamet olduğu için kendisi Müslüman oldu.

وَصَدَّهَا مَا كَانَتْ تَعْبُدُ مِنْ دُونِ اللّٰهِ اِنَّهَا كَانَتْ مِنْ قَوْمٍ كَافِرٖينَ
﴿٤٣﴾ قٖيلَ لَهَا ادْخُلٖي الصَّرْحَ فَلَمَّا رَاَتْهُ حَسِبَتْهُ لُجَّةً وَكَشَفَتْ عَنْ
سَاقَيْهَا قَالَ اِنَّهُ صَرْحٌ مُمَرَّدٌ مِنْ قَوَارٖيرَ قَالَتْ رَبِّ اِنّٖي ظَلَمْتُ
نَفْسٖي وَاَسْلَمْتُ مَعَ سُلَيْمٰنَ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمٖينَ ﴿٤٤﴾

43, 44- "Daha önce Allah'tan başka taptığı şeyler, ona engel olmuştu. Çünkü o, inkâr eden bir kavimden idi. Ona: 'Köşke gir' denildi. Köşkü görünce onu, derin bir su sandı ve eteklerini topladı. Süleyman ona: 'Bu, billurdan döşenmiş bir köşktür' dedi."

Bu, Belkıs için başka bir imtihan idi. Şöyle ki Hz. Süleyman cinlere, camdan şeffaf ve parlak büyük bir tabak gibi bir şey yapmalarını emrederek onu, içinde çok ve derin bir su bulunan bir havuzun üstüne koydu. Camın altından su görülüyor, ancak cam ve su birbirinden ayırt edilemiyordu. Bu sırada, o havuza dalması emredildi ve bunun üzerine eteklerini topladı. Çünkü Hz. Süleyman'a,

Belkıs'ın cin soyundan olduğu ve ayaklarının hayvan toynağı gibi olduğu söylenmişti. Aslında bunu, Belkıs hakkında uydurmuşlardı. Belkıs ise suya daldığını sanınca eteklerini topladı. Böylece Hz. Süleyman, ayaklarının sağlıklı olduğunu görmüş oldu. Bir de Belkıs'a: (اِنَّهُ صَرْحٌ مُمَرَّدٌ مِنْ قَوَارِيرَ) *"Bu, billurdan döşenmiş bir köşktür"* denildiği için bu, onun bu kanaate varmasına sebep oldu. Derken Belkıs iman etti ve Hz. Süleyman kendisiyle evlendi.

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَٓا اِلٰى ثَمُودَ اَخَاهُمْ صَالِحًا اَنِ اعْبُدُوا اللّٰهَ فَاِذَا هُمْ فَرِيقَانِ يَخْتَصِمُونَ ﴿٤٥﴾

45- "Andolsun, biz: 'Allah'a kulluk edin' diye Semûd kavmine, kardeşleri Salih'i peygamber olarak göndermiştik. Bir de ne görsün, onlar birbiriyle çekişen iki grup olmuşlar."

قَالَ يَا قَوْمِ لِمَ تَسْتَعْجِلُونَ بِالسَّيِّئَةِ قَبْلَ الْحَسَنَةِ لَوْلَا تَسْتَغْفِرُونَ اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُونَ ﴿٤٦﴾

46- "Salih onlara: 'Ey kavmim! Niçin iyilikten önce kötülüğün acele gelmesini istiyorsunuz? Merhamet edilmeniz için Allah'tan bağışlanma dileseniz ya!' dedi."

قَالُوا اطَّيَّرْنَا بِكَ وَبِمَنْ مَعَكَ قَالَ طَٓائِرُكُمْ عِنْدَ اللّٰهِ بَلْ اَنْتُمْ قَوْمٌ تُفْتَنُونَ ﴿٤٧﴾

47- "Onlar: 'Sen ve beraberindekiler yüzünden uğursuzluğa uğradık' dediler. Salih: 'Sizin uğursuzluğunuzun sebebi Allah katındadır. Aslında siz imtihan edilmekte olan bir kavimsiniz' dedi."

وَكَانَ فِي الْمَدِينَةِ تِسْعَةُ رَهْطٍ يُفْسِدُونَ فِي الْاَرْضِ وَلَا يُصْلِحُونَ ﴿٤٨﴾

48- “Şehirde dokuz kişilik bir çete vardı. Bunlar, yeryüzünde bozgunculuk yapıyorlar ve ıslaha çalışmıyorlardı.”

قَالُوا تَقَاسَمُوا بِاللّٰهِ لَنُبَيِّتَنَّهُ وَاَهْلَهُ ثُمَّ لَنَقُولَنَّ لِوَلِيِّهِ مَا شَهِدْنَا
مَهْلِكَ اَهْلِهِ وَاِنَّا لَصَادِقُونَ ﴿٤٩﴾

49- “Aralarında Allah adına ant içerek şöyle dediler: ‘Mutlaka onu ve ailesini geceleyin öldüreceğiz sonra da velisine: ‘Biz, onun ailesinin öldürülüşüne şahit olmadık. Biz, kesinlikle doğru söyleyenleriz’ diyeceğiz.’”

Allah, bu ayetlerde Semûd kıssasını, peygamberleri olan Hz. Salih’in kıssasını, kendisiyle onlar arasında meydana gelen yalanlamayı, ondan mucize istemelerini, deve ve kesilmesi olayını ve devede kendileri için en büyük mucizeyi taşıyan fiili gördükten sonra ondan sıkılmalarını açıklamaya şu ayete kadar devam etmiştir:

وَمَكَرُوا مَكْرًا وَمَكَرْنَا مَكْرًا وَهُمْ لَا يَشْعُرُونَ ﴿٥٠﴾

50- “Onlar, bir tuzak kurdular. Farkında değillerken Allah da bir tuzak kurdu.”

Onların tuzak kurması görünürde Hz. Salih’e uyduklarını gösterirken deveyi gizlice boğazlamaları, suçu onu işlemeyenin üstüne atmaları ve bunu kendilerinin tercih etmediğini söylemeleridir.

Allah’ın tuzak kurması ise bu tuzaklarına karşılık kendilerine vermek istediği cezayı onlardan saklaması sonra ansızın cezalarını uygulamasıdır. Bu itibarla Allah’ın tuzak kurması, onları korumayacak şekilde kendi tuzaklarıyla baş başa bırakması, bunu onların gözünde süslü kılması ve onlara sevdirmesidir. Eğer Allah dileseydi onları korurdu. Allah’ın acı veren bir tuzağı da iyilikle meşhur olmaları, ancak sırda haklarında zannedilen iyiliğin aksini yapmalarıdır. Ahiret pazarında ise bu karşılıklı tuzak kurma durumu söz konusu değildir.

فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ مَكْرِهِمْ اَنَّا دَمَّرْنَاهُمْ وَقَوْمَهُمْ اَجْمَعِينَ ﴿٥١﴾

51- "Bak, onların tuzaklarının sonucu nasıl oldu: Biz onları ve kavimlerini topluca helâk ettik."

Allah onları helâk etti ve onlardan tek bir kişi bile bırakmadı.

فَتِلْكَ بُيُوتُهُمْ خَاوِيَةً بِمَا ظَلَمُوا اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ ﴿٥٢﴾

52- "İşte zulümleri yüzünden harabeye dönmüş evleri! Şüphesiz bunda, bilen bir kavim için bir ibret vardır."

Bir hadiste: *"Eğer zulüm, cennette bir ev olsaydı, Allah ona yıkımı musallat ederdi."*

Bu itibarla nefisler, hatalarıyla zulüm ettikleri zaman, zilletin uğursuzluğuna uğramakla yıkılırlar. Bunun sonucunda o nefislerin sahipleri, tembelliği âdet edinir, başarısızlıkta karar kılar, muvaffakiyetten mahrum bırakılır, üzerlerine yalnızlık, katı kalplilik, basiret körlüğü ve şeriatı yüceltme duygusunun kalpten silinmesi gibi hususlar peş peşe gelir. Gönül ehli kimseler de nefislerine gafletle zulmedip o gafleti kalplerinden atmaya çalışmadıkları zaman kalpleri yıkılır. O kadar ki, daha önce yumuşak iken katılaşır ve dupduru iken kurur.

Bu nedenle nefislerin harap oluşu şehvet ve hata ile kalplerin harap oluşu gaflet ve kasvet ile ruhların harap oluşu perdelenmişlik ve durgunluk ile sırların harap oluşu da kayboluş ve yalnızlık iledir.

وَاَنْجَيْنَا الَّذِينَ اٰمَنُوا وَكَانُوا يَتَّقُونَ ﴿٥٣﴾

53- "İman edip Allah'a karşı gelmekten sakınmakta olanları ise kurtardık."

وَلُوطًا اِذْ قَالَ لِقَوْمِهٖٓ اَتَأْتُونَ الْفَاحِشَةَ وَاَنْتُمْ تُبْصِرُونَ ﴿٥٤﴾ اَئِنَّكُمْ
لَتَأْتُونَ الرِّجَالَ شَهْوَةً مِنْ دُونِ النِّسَاءِ بَلْ اَنْتُمْ قَوْمٌ تَجْهَلُونَ ﴿٥٥﴾

54, 55- "Lût'u da Peygamber olarak gönderdik. Hani o, kavmine şöyle demişti: 'Göz göre göre o çirkin işi mi yapıyorsunuz? Siz kadınları bırakıp şehvetle erkeklere mi ilişiyorsunuz? Doğrusu siz, ne yaptığınızı bilmez bir toplumsunuz.'"

Allah, burada Hz. Lût ve ümmetinin kıssasını, üzerinde ısrar ettikleri ahlaksızlığı, Allah'ın başlarına getirdiği azabı, kavmine uyan karısının başına azap getirmesini, aralarından Hz. Lût'u kurtarmasını ve onları helâk etmek için gönderilen meleklerin durumunu anlatmıştır.

فَمَا كَانَ جَوَابَ قَوْمِه۪ٓ اِلَّٓا اَنْ قَالُوٓا اَخْرِجُوٓا اٰلَ لُوطٍ مِنْ قَرْيَتِكُمْ
اِنَّهُمْ اُنَاسٌ يَتَطَهَّرُونَ ﴿٥٦﴾

56- "Bunun üzerine kavminin cevabı, ancak şöyle demek oldu: 'Lût'un ailesini memleketinizden çıkarın. Çünkü onlar temiz kalmak isteyen insanlarmış!'"

فَاَنْجَيْنَاهُ وَاَهْلَهُٓ اِلَّا امْرَاَتَهُ قَدَّرْنَاهَا مِنَ الْغَابِر۪ينَ ﴿٥٧﴾

57- "Biz de onu ve ailesini kurtardık. Ancak karısı hariç. Onun geride kalıp helâk olmasını takdir ettik."

وَاَمْطَرْنَا عَلَيْهِمْ مَطَرًا فَسَٓاءَ مَطَرُ الْمُنْذَر۪ينَ ﴿٥٨﴾

58- "Onların üzerine çetin bir yağmur yağdırdık. Uyarılanların yağmuru ne kötüydü!"

قُلِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ وَسَلَامٌ عَلٰى عِبَادِهِ الَّذ۪ينَ اصْطَفٰىۜ آٰللّٰهُ خَيْرٌ اَمَّا
يُشْرِكُونَ ﴿٥٩﴾

59- "De ki: 'Hamd Allah'a mahsustur. Selam, onun seçtiği kullarına olsun.' Allah mı daha hayırlıdır yoksa onların ortak koştukları mı?"

Allah'ın, kendileri henüz yokluk âleminde saklı, ancak ilminin kapsamı ve kudretinin alanı içerisinde olup yokluk âleminde mevcut varlıklar haline gelmemiş ve faydalı hiçbir amel yapmamış iken, ezelde selam söylediği kimseler onlardır. Allah, onları varlıkta ortaya çıkarınca bu selamla onlara selam söyledi. Ahirette de onlara bu selamı işittirecektir. Aynı zamanda bugün şekten ve şüphelerden, her türlü bidatten, çeşitli acılardan, türlü türlü hatalardan ve halellerden, sonra kaybolmuşluktan, perdelenmişlikten ve Allah'a yakınlığın devamına ters düşen hususlardan kurtulmuş olanlar da Allah'ın selam söylediği bu kimselerdir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah bu kimseleri yaratıp ortaya çıkarmadan önce seçmiş, sonra hidayete erdirmiş, sonra barındırmış ve kendilerine selam söylemiştir. Onlara selam söyledikten sonra ise kendilerini sevgisiyle buluşturmuştur.

- Allah, onları kesin iman nuruyla, vuslat tezyinatıyla ve noksansız hayatla seçkin kılmıştır.

اَمَّنْ خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ وَاَنْزَلَ لَكُمْ مِنَ السَّمَٓاءِ مَٓاءًۚ فَاَنْبَتْنَا
بِهٖ حَدَٓائِقَ ذَاتَ بَهْجَةٍۚ مَا كَانَ لَكُمْ اَنْ تُنْبِتُوا شَجَرَهَاۜ ءَاِلٰهٌ مَعَ اللّٰهِۜ
بَلْ هُمْ قَوْمٌ يَعْدِلُونَ ﴿٦٠﴾

60- "Yahut gökleri ve yeri yaratan ve size gökten yağmur indirip onunla ağaçlarını, sizin yetiştiremeyeceğiniz gönül alıcı güzel bahçeler meydana getiren mi? Allah ile birlikte başka ilah mı var!? Hayır, onlar Allah'a eş tutan bir kavimdir."

Bu çerçevede zahirin semereleri nefislerin gıdasıdır. Batının ve sırların semereleri ise kalplerin aydınlığıdır. Bir de nasıl ki ilkbahar vaktinde kışın ıssızlığından bir şey kalmıyorsa, aynı şekilde onların kalplerinde ve vakitlerinde de kaybolmuşluk, perdelenmişlik, nefret ve töhmetten en ufak bir şey kalmaz.

اَمَّنْ جَعَلَ الْاَرْضَ قَرَارًا وَجَعَلَ خِلَالَهَٓا اَنْهَارًا وَجَعَلَ لَهَا رَوَاسِيَ وَجَعَلَ بَيْنَ الْبَحْرَيْنِ حَاجِزًا ءَاِلٰهٌ مَعَ اللّٰهِ بَلْ اَكْثَرُهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٦١﴾

61- "Yahut yeryüzünü karar kılma yeri yapan, içinde nehriler akıtan, onun için oturaklı dağlar yapan ve iki denizin arasına bir engel koyan mı? Allah ile birlikte başka bir ilah mı var! Doğrusu onların çoğu bilmiyor."

Abidlerin nefisleri ibadetlerinin, ariflerin kalpleri marifetlerinin, vecd ehlinin ruhları sevgilerinin, tevhid ehlinin sırları da müşahedelerinin karar yerleridir. Onların sırlarında vuslatın nurları ve yakınlığın pınarları vardır. O pınarlarla özlemlerinin susuzluğu ile ıstırap ve yanışlarının heyecanı yatışır.

Yeryüzünün oturaklı dağları; korku, ümit, arzu ve sakınmadır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Oturaklı dağlar kesin inanç ve tevekküldür.

- Yeryüzündeki oturaklı dağlar; abdallar, veliler ve evtâdlar olup Allah, onlarla yeryüzünün düzenini sürdürür ve onların bereketleriyle yeryüzünün ehlinden belayı def eder.

- Oturaklı dağlar, doğru yolu bulmak isteyenlere Allah'a giden yolu gösteren önderlerdir.

( وَجَعَلَ بَيْنَ الْبَحْرَيْنِ حَاجِزًا ) *"Ve iki denizin arasına bir engel koyan."*

Allah, biri diğerine galebe çalmasın diye kalp ile nefsin arasına engel koymuştur.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, kulluk ve hükümleri ile hakikat ve hükümlerinin arasına bir engel koymuştur. Zira eğer kulluk galebe çalsa bu, hakikati

inkâr olur. Şayet hakikat kulluğa galebe çalarsa bu kez de din rafa kaldırılmış olur.

- Müridlerin dilleri, Allah'ın zikrinin karar kıldığı yerdir. Kulakları, kavramaya ulaştıran idrakin yeridir. Gözler de ibret almanın yeridir.

اَمَّنْ يُجِيبُ الْمُضْطَرَّ اِذَا دَعَاهُ وَيَكْشِفُ السُّوٓءَ وَيَجْعَلُكُمْ خُلَفَٓاءَ الْاَرْضِ ءَاِلٰهٌ مَعَ اللّٰهِ قَل۪يلًا مَا تَذَكَّرُونَ ﴿٦٢﴾

62- "Yahut kendisine dua ettiği zaman, zorda kalmışa cevap veren ve başa gelen kötülüğü kaldıran, sizi yeryüzünün halifeleri kılan mı? Allah ile birlikte başka ilah mı var? Ne kadar az düşünüyorsunuz!"

Allah, bu ayette duaya cevap vermeyi ve kötülüğü kaldırmayı birbirinden ayırmıştır. Bu çerçevede, duaya cevap vermek söz ile kötülüğü kaldırmak ise güç ile olur. Cevap vermek kelam ile kötülüğü kaldırmak ise inam ile olur. Bir de zorda kalmışın duasının önünde hiçbir perde yoktur. Mazlumun bedduası da böyledir. Lakin her şeyin bir zamanı vardır.

Bir yoruma göre de cinayetin bir gerçekleşme şekli vardır. Bu çerçevede, cinayet işlemede tercih gücüne sahip olan kimsenin, hakkında tercih gücüne sahip olduğu halde işlediği suçun gerçekleşmesi esnasında buna mecbur olduğunu iddia etmesi kabul edilemez. Ne var ki insanların çoğu buna mecbur olduklarını vehmederler. Bu mecburiyet, tercih gücüne sahip iken o kimselerden cinayet gerçekleşmesidir.

Bu arada kul, kendinde bir güç ve tedbir vehmettiği ve kendi için dayanacağı bir sebep gördüğü sürece mecbur değildir. Nitekim mecbur kimse kendini, denizde boğulan veya yolunu şaşırmış olan kimse gibi görür. Bu kimse, dizginini efendisinin elinde görür. Bu haliyle o, yıkayıcının elindeki ölü gibi olup kendisinde kurtuluş hakkı

görmemektedir. Çünkü o, kendisinin gazaba uğramış kimselerden olduğuna ve adının sadece şakilik defterinde okunacağına inanır.

Öte yandan zorda kalmış kimsenin, kendisine dua etmesi konusunda bir kimseden yardım istemesi uygun olmaz. Çünkü Allah, kendisine dua edecek olanın değil, kendisinin duasını kabul etmeye söz vermiştir.

Sonra nasıl ki Allah, zorda kalmış kimsenin duasını kabul edeceğine ve kötülüğü ortadan kaldıracağına söz vermişse, şu sözü de vermiştir:

( وَيَجْعَلُكُمْ خُلَفَاۤءَ الْاَرْضِ ءَاِلٰهٌ مَعَ اللّٰهِ قَلِيلًا مَا تَذَكَّرُونَ ) *"Sizi yeryüzünün halifeleri kılan mı? Allah ile birlikte başka bir ilah mı var? Ne kadar az düşünüyorsunuz!"*

Şüphesiz güçlükle beraber bir kolaylık vardır. Burada Allah: "Güçlük giderilir" dememiş, lakin: "Güçlükle beraber bir kolaylık vardır" buyurmuştur. Bu çerçevede kolaylığın gündüzü, güçlüğün gecesinden sonra gerçekleşir.

Sonra: ( ءَاِلٰهٌ مَعَ اللّٰهِ قَلِيلًا مَا تَذَكَّرُونَ ) *"Allah ile birlikte başka ilah mı var? Ne kadar az düşünüyorsunuz!"*

Çünkü kul, güçlüğü yok olup sıkıntısı ortadan kaldırıldığı zaman, daha önce içinde bulunduğu durumu unutur.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Bir gün bile çıplak kalmamış gibi davranır delikanlı, giyindiği zaman*
*Ve hiç züğürt yaşamamış gibi davranır, mal sahibi olduğu zaman*

اَمَّنْ يَهْدِيكُمْ فِي ظُلُمَاتِ الْبَرِّ وَالْبَحْرِ وَمَنْ يُرْسِلُ الرِّيَاحَ بُشْرًا
بَيْنَ يَدَيْ رَحْمَتِهِ ءَاِلٰهٌ مَعَ اللّٰهِ تَعَالَى اللّٰهُ عَمَّا يُشْرِكُونَ ﴿٦٣﴾

63- "Yahut karanın ve denizin karanlıklarında size yolunuzu gösteren ve rahmetinin önünden rüzgarları bir müjdeci olarak gönderen mi? Allah ile birlikte başka bir ilah mı var? Allah, onların ortak koştuklarından yücedir."

Doğru olan şekil belirsizleştiğinde, çelişkili duygular içindeki sahibini karanlıkta bıraktığında ve akli delillerle bazı duyguları diğer bazılarına tercih ederken bu tedbirin yabancılığı, çok ihtimallilik hallerinin karanlıkları ve şaşkınlık sebebiyle durum sıkıntılı hale geldiğinde, tedbiri bir kenara bırakmak, takdirin hükmüne teslim olmak, aklî ihtimallerin karanlıklarından çıkıp takdiri görmenin gereklerine uymak, işi Hakk'ın tercihine bırakmak ve ezelde cereyan eden kader ve kısmete teslim olmak için acaba sizi kim doğru olana irşat edecektir?

( وَمَنْ يُرْسِلُ الرِّيَاحَ بُشْرًا بَيْنَ يَدَىْ رَحْمَتِهِ ءَاِلٰهٌ مَعَ اللّٰهِ تَعَالَى اللّٰهُ عَمَّا يُشْرِكُونَ ) *"Ve rahmetinin önünden rüzgârları bir müjdeci olarak gönderen mi? Allah ile birlikte başka bir ilah mı var? Allah, onların ortak koştuklarından yücedir."*

Kimdir lütfunun rüzgârlarını tercihinin nurları önünde gönderip senin tercihinin izlerini silen ve çabucak sana güzelce yeten? Bir yoruma göre de Allah tevekkül rüzgârlarını gönderip onunla kalpleri tercihin izlerinden ve tedbirin kirlerinden temizler sonra hoşnutluğun güneşlerini doğurur. Böylece kalbin huzurlu halinde ilahi yeterliliğin serinliği, umulanın üzerinde gerçekleşir. Allah ile birlikte başka bir ilah mı var?

( اللّٰهُ عَمَّا يُشْرِكُونَ ) *"Allah, onların ortak koştuklarından yücedir."*

Buradaki ortak koşma, olan bitenleri sebeplere bağlamak anlamındadır.

اَمَّنْ يَبْدَؤُا الْخَلْقَ ثُمَّ يُعِيدُهُ وَمَنْ يَرْزُقُكُمْ مِنَ السَّمَاۤءِ وَالْاَرْضِ
ءَاِلٰهٌ مَعَ اللّٰهِ قُلْ هَاتُوا بُرْهَانَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٦٤﴾

64- "Yoksa başlangıçta yaratan, sonra yaratmayı tekrarlayan ve sizi yerden ve gökten rızıklandıran mı? Allah ile birlikte başka bir ilah mı var? De ki: 'Eğer doğru söyleyenler iseniz kesin delilinizi getirin.'"

Allah, ezeldeki hükmüne uygun olarak kudretiyle ortaya çıkaracağını çıkarır, hükmünü de iradesinin kapsamına giren, hakkında sözü kesinleşen, ezeldeki kaza ve kaderinde karara bağlanan şeye tahsis eder. Derken, ortaya çıkardığı ve hükmünü tahsis ettiği şeylerin bazısı yok olup ortadan kalktığı zaman, acaba kim onu ilk baştaki gibi tekrar yaratabilir? Kim rızkı daraltıp genişletebilir? Kim, bazı vakitlerde bazı şahıslara kabz hali, diğer bir vakitte de başka kimselere bast hali yaşatabilir? Acaba bu, Allah'tan başka bir kimsenin kudreti dahilinde midir?

Eğer böyle bir şey vehmediyorsanız hakkındaki delilinizi açıklayın. Bundan aciz olduğunuza göre neden tasdik edip tevhidi ikrar etmediniz?

قُلْ لَا يَعْلَمُ مَنْ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ الْغَيْبَ اِلَّا اللّٰهُ وَمَا يَشْعُرُونَ اَيَّانَ يُبْعَثُونَ ﴿٦٥﴾

65- "De ki: 'Göktekiler ve yerdekiler gaybı bilemezler ancak Allah bilir. Onlar öldükten sonra ne zaman diriltileceklerinin de farkında değildirler.'"

Gayb, hiç kimsenin muttali olamadığı ve halkın, hakkında delilinin bulunmadığı şeydir. O, sadece Allah'ın bildiği ve halkın bilgilerinin yetersiz kaldığı şeydir. Sonra Allah, hakkındaki bilgiyi birilerine mahsus kılmak istediği şeyin bilgisini sadece o kimselere verir.

( وَمَا يَشْعُرُونَ اَيَّانَ يُبْعَثُونَ ) *"Onlar öldükten sonra ne zaman diriltileceklerinin de farkında değildirler."*

Çünkü Allah, kıyamete dair bilgiyi herkesten gizlemiştir.

بَلِ ادَّارَكَ عِلْمُهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ بَلْ هُمْ فِي شَكٍّ مِنْهَا بَلْ هُمْ مِنْهَا عَمُونَ ﴿٦٦﴾

66- "Ahiret hakkında bilgi, onlara peş peşe gelmiştir. Fakat onlar, bu konuda şüphe içindedirler. Daha doğrusu onlar, ahiretten yana kördürler."

Özetle onlar, kıyamet günü hakkında şüphe etmektedirler. Onu kesin bir dille ret ve inkâr etmiyorlar. Zaten kalp hastası olan herkesin durumu böyledir. Onun ne gerçekte bir hayatı vardır ne de o, ümitsizliğinden kurtulur. Çünkü o, öldükten sonra dirilmek hakkında kuşku içindedir ve ikinci hayatı akla uzak bulmaktadır.

وَقَالَ الَّذِينَ كَفَرُوٓا ءَاِذَا كُنَّا تُرَابًا وَاٰبَآؤُنَآ اَئِنَّا لَمُخْرَجُونَ ﴿٦٧﴾ لَقَدْ وُعِدْنَا هٰذَا نَحْنُ وَاٰبَآؤُنَا مِنْ قَبْلُ اِنْ هٰذَآ اِلَّآ اَسَاطِيرُ الْاَوَّلِينَ ﴿٦٨﴾

67, 68- "İnkâr edenler dediler ki: 'Biz ve babalarımız toprak olmuş iken mi, gerçekten bizler mi diriltilip çıkarılacağız? Andolsun, biz de bizden önce babalarımız da bununla tehdit edilmiştik. Bu, öncekilerin masallarından başka bir şey değildir.'"

Babalarımız da daha önce bu sözle uyarıldı ve bu onlar için gerçekleşmedi. Biz de ancak onlar gibiyiz.

قُلْ سِيرُوا فِي الْاَرْضِ فَانْظُرُوا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُجْرِمِينَ ﴿٦٩﴾

69- "De ki: 'Yeryüzünde dolaşın da suçluların sonunun nasıl olduğuna bir bakın.'"

وَلَا تَحْزَنْ عَلَيْهِمْ وَلَا تَكُنْ فِي ضَيْقٍ مِمَّا يَمْكُرُونَ ﴿٧٠﴾

70- "Onlardan yana üzülme. Kurdukları tuzaklardan ötürü de sıkıntıya düşme."

Bir de onlar: *"Kıyamet ne zaman?"* diye soruyorlardı.

وَيَقُولُونَ مَتٰى هٰذَا الْوَعْدُ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٧١﴾

71- "Onlar: 'Eğer doğru söyleyenler iseniz, bu tehdit ne zaman gerçekleşecek?' diyorlar."

Bunun üzerine Allah buyurdu ki:

*"Şüphesiz yakında bunun zamanı kendilerini yakalayacaktır."*

قُلْ عَسٰٓى اَنْ يَكُونَ رَدِفَ لَكُمْ بَعْضُ الَّذٖي تَسْتَعْجِلُونَ ﴿٧٢﴾

72- "De ki: 'Belki de acele gelmesini istediğiniz şeyin bir kısmı size çok yaklaşmıştır.'"

وَاِنَّ رَبَّكَ لَذُو فَضْلٍ عَلَى النَّاسِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَشْكُرُونَ ﴿٧٣﴾

73- "Şüphesiz senin Rabbin insanlara karşı lütuf sahibidir. Ancak onların çoğu şükretmezler."

Çünkü onlar, sıkıntılarıyla nimetlerini birbirinden ayırt edememektedirler. Nitekim Allah'ın nimeti ile meşakkatini birbirinden ayırt edenler nadirdir. Bu çerçevede kulun bilgisi, lehine olanı anlamaya yetmediği zaman o, hakkında bela içeren şeyi sevip hayır sanabilir. Aynı zamanda pek çok şey de vardır ki kul, onu nimet sanıp karşılığında şükreder ve devamını ister. Oysa o kul için tahammül gerektiren ve üzerinden defedilmesi konusunda Allah'a niyazda bulunulması gereken bir meşakkattir. İnsan, pek çok şeyi bunun aksine de olduğundan farklı zannedebilir.

وَاِنَّ رَبَّكَ لَيَعْلَمُ مَا تُكِنُّ صُدُورُهُمْ وَمَا يُعْلِنُونَ ﴿٧٤﴾

74- "Şüphesiz senin Rabbin, onların kalplerinin gizlediği şeyleri de açığa çıkardıklarını da mutlaka bilir."

Allah, onların durumlarını karıştırmaz. Onlardan kimisi, içi dışı bir olan dürüst insandır ve Allah onu bilir. Kimisi, içi dışına uymayan münafık biri olup durumu hakkında insanların kafasını karıştırır. Oysa Allah onu bilmektedir. Kimisi de içi dışı inkârda bir olup Allah onu da bilir. Aynı zamanda Allah, her birine ilahi bilgisi istikametinde

muamele eder. Nasıl olmaz ki? Kulun kaderini çizen ve mevcut durumu hakkında hüküm ve taksimatını icra eden Allah'tır.

وَمَا مِنْ غَٓائِبَةٍ فِي السَّمَٓاءِ وَالْاَرْضِ اِلَّا فِي كِتَابٍ مُبِينٍ ﴿٧٥﴾

75- "Gökte ve yerde gizli hiçbir şey yoktur ki apaçık bir Kitap'ta olmasın."

Her ne varsa mutlaka onun Levh-i Mehfuz'da hükmü tespit edilmiş, hakkında ilahi irade kesinleşmiş ve Allah'ın ilmi onu kapsamıştır.

اِنَّ هٰذَا الْقُرْاٰنَ يَقُصُّ عَلٰى بَنِي اِسْرَٓاءِيلَ اَكْثَرَ الَّذِي هُمْ فِيهِ يَخْتَلِفُونَ ﴿٧٦﴾ وَاِنَّهُ لَهُدًى وَرَحْمَةٌ لِلْمُؤْمِنِينَ ﴿٧٧﴾

76, 77- "Şüphesiz bu Kur'an, İsrailoğullarına, üzerinde ayrılığa düştükleri şeylerin çoğunu açıklar. Şüphesiz o, elbette müminler için bir hidayet ve bir rahmettir."

Ne var ki onlar bir kısmını gizlerler, bir kısmını açıklarlar ve nefislerinin arzusuyla beraber döner dururlar.

Bu ayette, bu ümmetin bir özelliği olarak Allah'ın, kitaplarını koruduğu ve dinlerini tağyirden ve tebdilden esirgediği yer almıştır. Bu ise az sayıda insanın karşılığında şükrettiği büyük bir nimettir. Bu çerçevede Kur'ân, müminler için hidayettir ve rahmettir. Yoksa o, doğru sözlü peygamberimizin, tahrif ve tebdil ettiklerini haber verdiği kitapları gibi değildir.

اِنَّ رَبَّكَ يَقْضِي بَيْنَهُمْ بِحُكْمِهِ وَهُوَ الْعَزِيزُ الْعَلِيمُ ﴿٧٨﴾

78- "Şüphesiz senin Rabbin, onların arasında hükmünü verecektir. O mutlak güç sahibidir, hakkıyla bilendir."

Allah, müminleri aziz kılan mutlak güç sahibidir. Herkesin hak ettiği büyük sevabı ve acıtıcı azabı hakkıyla bilendir.

فَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ اِنَّكَ عَلَى الْحَقِّ الْمُب۪ينِ ﴿٧٩﴾

79- "Öyleyse Allah'a tevekkül et. Çünkü sen, apaçık bir hak üzere bulunuyorsun."

Yani sen O'nun farzını yerine getirmeye çalış, yardımı, rızkı, yeterliliği ve inayeti ile ilgili vaadinin doğruluğuna güven. Zahiren onların yaptığı ve eziyeti sana ulaşanlar seni korkutmasın. Çünkü bunların tamamı mahzurlu ise bizim musallat kılmamızla, şayet sevimli ise o da bizim hazırlamamızla ve kolaylaştırmamızla olmaktadır. Bir de sen, hak ve doğruluğun aydınlığı üzeresin. Onlar ise kuşku ve şirkin karanlığı içindedirler.

اِنَّكَ لَا تُسْمِعُ الْمَوْتٰى وَلَا تُسْمِعُ الصُّمَّ الدُّعَٓاءَ اِذَا وَلَّوْا مُدْبِر۪ينَ ﴿٨٠﴾

80- "Şüphesiz sen ölülere duyuramazsın. Arkalarına dönüp kaçarlarken sağırlara da çağrıyı duyuramazsın."

Bunlar Allah'ın, kalplerini şirkle öldürdüğü ve onları hakkı duymaktan sağırlaştırdığı kişiler oldukları için onları doğruya iletmek veya kuşkunun esaretinden kurtarmak senin gücün dahilinde değildir.

وَمَٓا اَنْتَ بِهَادِي الْعُمْيِ عَنْ ضَلَالَتِهِمْ اِنْ تُسْمِعُ اِلَّا مَنْ يُؤْمِنُ
بِاٰيَاتِنَا فَهُمْ مُسْلِمُونَ ﴿٨١﴾

81- "Körleri sapıklıklarından vazgeçirip doğru yola getiremezsin. Ancak ayetlerimize inanıp da Müslüman olmuş olanlara duyurabilirsin."

Sen onlara, çağrı ve rehberlik bakımından doğru yolu gösterirsin. Ancak sen, kalpten bâtılı gidermek ve onu irfana meylettirmek bakımından hiç kimseyi hidayete erdiremezsin. Çünkü gidermek ve meylettirmek, senin gücünle değildir.

Sen, ancak ayetlerimize iman eden kimseye duyurursun. Bu itibarla seni ancak muvaffakiyet ve yola irşat etmek bakımından mutlu kıldığımız kimse duyar.

وَاِذَا وَقَعَ الْقَوْلُ عَلَيْهِمْ اَخْرَجْنَا لَهُمْ دَٓابَّةً مِنَ الْاَرْضِ تُكَلِّمُهُمْ اَنَّ النَّاسَ كَانُوا بِاٰيَاتِنَا لَا يُوقِنُونَ ﴿٨٢﴾

82- "Kıyamete dair o söz başlarına gelince, onlar için yerden kendilerine bir dâbbe -canlı yaratık- çıkarırız. O, onlara insanların ayetlerimize kesin olarak inanmadıklarını söyler."

Kıyametin kopuşuna dair vaat gerçekleşeceği zaman biz, onun alametlerini, yerden çıkarılan canlı yaratığın -dâbbetu'l-arz'ın- sözü ve onun dışındaki olaylarla açıklarız.

وَيَوْمَ نَحْشُرُ مِنْ كُلِّ اُمَّةٍ فَوْجًا مِمَّنْ يُكَذِّبُ بِاٰيَاتِنَا فَهُمْ يُوزَعُونَ ﴿٨٣﴾

83- "Her ümmetten ayetlerimizi yalanlayanlardan bir grubu toplayacağımız ve bunların sevk edilecekleri günü hatırla."

Bu olduğu zaman iman fayda vermez ve özür kabul edilmez.

حَتّٰٓى اِذَا جَٓاؤُ۫ قَالَ اَكَذَّبْتُمْ بِاٰيَاتٖي وَلَمْ تُحٖيطُوا بِهَا عِلْمًا اَمَّاذَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٨٤﴾

84- "Hesap yerine geldiklerinde Allah şöyle der: 'Siz benim ayetlerimi, onları ilmen kavramamışken yalanladınız, öyle mi! Yoksa ne yapıyordunuz ki?!'"

وَوَقَعَ الْقَوْلُ عَلَيْهِمْ بِمَا ظَلَمُوا فَهُمْ لَا يَنْطِقُونَ ﴿٨٥﴾

85- "Sözü edilen azap, zulümlerinden dolayı tepelerine iner de artık konuşamazlar."

Sonra Allah, gece ve gündüzü ve peş peşe gelişlerini tekrar anlatmıştır:

اَلَمْ يَرَوْا اَنَّا جَعَلْنَا الَّيْلَ لِيَسْكُنُوا فِيهِ وَالنَّهَارَ مُبْصِرًا اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ ﴿٨٦﴾

86- "Onlar görmüyorlar mı ki biz geceyi içinde rahat etsinler diye, gündüzü de gösterici olarak yarattık. Şüphesiz bunda, inanan bir toplum için elbette deliller vardır."

Yani gece hareketsiz oluşlarının zamanı, gündüz de geçimlerini arama zamanı olsun diye.

وَيَوْمَ يُنْفَخُ فِي الصُّورِ فَفَزِعَ مَنْ فِي السَّمٰوَاتِ وَمَنْ فِي الْاَرْضِ اِلَّا مَنْ شَٓاءَ اللّٰهُ وَكُلٌّ اَتَوْهُ دَاخِرِينَ ﴿٨٧﴾

87- "Sûr'a üfürüleceği ve Allah'ın dilediği kimselerden başka göklerdeki herkesin, yerdeki herkesin korkuya kapılacağı günü hatırla. Hepsi de boyunlarını bükerek O'na gelirler."

Bu ayette Allah, Sûr'a üfürülecek günün, canların alındığı ve bedenlerden çıkarıldığı gün olduğunu haber vermiştir. Bu çerçevede ruhların kimisi yüksek makamlara yükselir, kimisi de cehenneme gider. Yükselen ruhlar, cennette dolaşan, geceleyin Arş'ın altında asılı bulunan kandillerde yuvalanıp özellikleri tesbih, huzur ve rahatlık olan kuşların kursaklarındadırlar. Ruhların bir kısmı için Allah'ı görmek de vardır. Bu makamlar dünyadaki durumlarından dolayı hak ettikleri ölçüdedir.

Kâfirlerin ruhlarına gelince onlar, suçları ölçüsünde cehennemde cezalandırılırlar.

وَتَرَى الْجِبَالَ تَحْسَبُهَا جَامِدَةً وَهِيَ تَمُرُّ مَرَّالسَّحَابِ صُنْعَ اللّٰهِ الَّذِي اَتْقَنَ كُلَّ شَيْءٍ اِنَّهُ خَبِيرٌ بِمَا تَفْعَلُونَ ﴿٨٨﴾

88- “Dağları görürsün, onları hareketsiz sanırsın. Halbuki onlar, bulutların geçişi gibi hareket ederler. Bunu, her şeyi sağlam ve yerli yerince yapan Allah yapmıştır. Şüphesiz O, yaptıklarınızdan hakkıyla haberdardır.”

Bugün temkin sahiplerinden pek çok insan vardır ki, onlar nefisleriyle sakindirler, sırlarıyla ise mana âleminde seyahat ederler. Bir görüşe göre bugün işaret onlaradır. Tıpkı şu sözde söylendiği gibi:

*“Arif, ayrı bir varlıktır. O, zahiriyle insanlarla beraber, sırlarıyla ise bütün halktan ayrı olan bir varlıktır.”*

مَنْ جَٓاءَ بِالْحَسَنَةِ فَلَهُ خَيْرٌ مِنْهَا وَهُمْ مِنْ فَزَعٍ يَوْمَئِذٍ اٰمِنُونَ ﴿٨٩﴾
وَمَنْ جَٓاءَ بِالسَّيِّئَةِ فَكُبَّتْ وُجُوهُهُمْ فِي النَّارِ هَلْ تُجْزَوْنَ اِلَّا مَا
كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٩٠﴾

89, 90- “Kim iyilikle gelirse, ona ondan daha hayırlısı vardır. Onlar, o gün korkudan emindirler. Kimler de kötülükle gelirse yüzüstü ateşe atılırlar. Onlara: ‘Ancak yaptıklarınızın karşılığını görüyorsunuz’ denir.”

Buradaki “hayırlı” tabiri mübalağa için olabilir. Çünkü bu kimsenin ahirette kazandığı sevap, kendisinin işlediği ibadetlerden daha hayırlıdır. Diğer bir ihtimal de iyilikle gelen kimse için o iyilikten daha hayırlı bir nasip veya daha hayırlı bir akıbet ya da daha hayırlı bir sevap olmasıdır. İyilik yapanlar, aynı zamanda kıyamet gününün paniğinden de güven içinde olurlar. Kötülük işleyenlere gelince, nasıl ki onların durumu bu gün itaat ehlinin aksine ise, aynı şekilde yarın ahirette de haklarındaki hüküm aksine olur.

اِنَّمَٓا اُمِرْتُ اَنْ اَعْبُدَ رَبَّ هٰذِهِ الْبَلْدَةِ الَّذِي حَرَّمَهَا وَلَهُ كُلُّ شَيْءٍ
وَاُمِرْتُ اَنْ اَكُونَ مِنَ الْمُسْلِمِينَ ﴿٩١﴾ وَاَنْ اَتْلُوَا الْقُرْاٰنَ فَمَنِ اهْتَدٰى
فَاِنَّمَا يَهْتَدِي لِنَفْسِهٖ وَمَنْ ضَلَّ فَقُلْ اِنَّمَٓا اَنَا۬ مِنَ الْمُنْذِرِينَ ﴿٩٢﴾

91, 92- "De ki: 'Bana ancak bu beldenin (Mekke'nin); onu mukaddes kılan ve her şey kendisine ait olan Rabbine kulluk yapmam emredildi. Yine bana, Müslümanlardan olmam ve Kur'ân'ı okumam emredildi.' Artık kim doğru yola girerse yalnız kendisi için girer. Yalnız kendisi için girer. Kim de doğru yoldan saparsa, de ki: 'Ben, ancak uyarıcılardanım.'"

Hz. Peygamber (s.a.v.), Allah'ın kendisine hanîf dini, hem gizli hem açık şirkten teberri etmeyi ve dosdoğru yoldan ayrılmamayı emrettiğini, ayrıca Allah'ın, kendisine tabi olup onu tasdik edenin güvenliğini ve hakkını güvence altına aldığını bildirmiştir.

وَقُلِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ سَيُرِيكُمْ اٰيَاتِهِ فَتَعْرِفُونَهَا وَمَا رَبُّكَ بِغَافِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ﴿٩٣﴾

93- "De ki: 'Hamd Allah'a mahsustur. O, ayetlerini size gösterecek, siz de onları tanıyacaksınız. Rabbin, yaptıklarınızdan habersiz değildir.'"

Allah, yakında size ayetlerini gösterecektir. O halde, ne mutlu vefatından önce dönüş yapan kimseye! Vakit geçip fırsat kaçtıktan sonra dönüş yapanın ise vay haline!

سورة الْقَصَصِ

# KASAS SÛRESİ

(Kasas Sûresi 88 âyettir. Mekke'de son inen sûrelerdendir. 85. âyeti Hicret sırasında, 52-55. âyetleri ise Medine'de inmiştir. Adını 25. âyetteki "kasas (olay, öykü, hikâye)" kelimesinden almıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle Azîz bir varlığın adıdır ki kim lütfuna mazhar olursa, dünyasında da ahiretinde de işini kolaylaştırır. "Bismillah" öyle Azîz bir varlığın adıdır ki kim O'na kavuşmayı özlerse, yolunda karşılaştığı sıkıntıyı tatlı bulur. Kim de dünyasında veya ahiretinde O'nun dışında bir munis ararsa, durumu şu ayette belirtildiği gibi olur:

( ضَلَّ مَنْ تَدْعُونَ اِلَّٓا اِيَّاهُ ) *"Bütün taptıklarınız kaybolur, yalnız Allah kalır."* (İsrâ, 17/67)

طٰسٓمٓ ﴿١﴾ تِلْكَ اٰيَاتُ الْكِتَابِ الْمُب۪ينِ ﴿٢﴾

1, 2- "Tâ. Sîn. Mîm. Bunlar, apaçık kitabın ayetleridir."

"Tâ" harfi, abidlerin nefislerinin Allah'tan gayrisine ibadet etmekten, ariflerin kalplerinin Allah'tan gayrisini yüceltmekten, vecd ehlinin ruhlarının Allah'tan gayrisini sevmekten, tevhid ehlinin sırlarının

da Allah'tan gayrisini görmekten temizlendiğine işaret etmektedir. "Sîn" harfi, Allah'ın günahkârlarla olan kurtuluş sırrına, itaat ehliyle olan dereceler sırrına ve sevenlerle olan münacatın devamlılığı sırrına işaret etmektedir. "Mîm" harfi de bütün müminler üzerinde bulunan vakitlerin yeterliliği ve iyilikler yolunda sebat şeklindeki minnetine işaret etmektedir.

نَتْلُوا عَلَيْكَ مِنْ نَبَاِ مُوسٰى وَفِرْعَوْنَ بِالْحَقِّ لِقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ ﴿٣﴾

3- "İman eden bir kavim için Mûsâ ile Firavun'un haberlerinden bir kısmını sana gerçek olarak anlatacağız."

Sevgilinin kıssasını sevgiliden dinlemek, kalbin teselli bulmasını, kederin gitmesini, sırrın güzelleşmesini ve yüreğin serinlemesini sağlar. Bu arada Allah, Hz. Mûsâ'nın kıssasını, durumunun önemine ve kadrinin büyüklüğüne binaen tekrarlamıştır. Tekrarın diğer sebepleri ise Kur'ân belagatını daha çok açıklamak ve tekrarın olduğu her yerde daha önce anlatılanlara ilave hususlar ifade etmektir.

اِنَّ فِرْعَوْنَ عَلَا فِي الْاَرْضِ وَجَعَلَ اَهْلَهَا شِيَعًا يَسْتَضْعِفُ طَٓائِفَةً مِنْهُمْ يُذَبِّحُ اَبْنَٓاءَهُمْ وَيَسْتَحْيٖ نِسَٓاءَهُمْ اِنَّهُ كَانَ مِنَ الْمُفْسِدٖينَ ﴿٤﴾

4- "Şüphe yok ki Firavun, yeryüzünde büyüklük taslamış ve ora halkını sınıflara ayırmıştı. Onlardan bir kesimi eziyor, oğullarını boğazlıyor, kadınlarını ise sağ bırakıyordu. Şüphesiz o, bozgunculardandı."

Firavun, haksız yere kibirlenince Allah, onu hak ile küçülttü. Hakkı olmaksızın despotluk taslayınca Allah, onu hak ettiği şekilde zelil kıldı. Bir de Firavun, o yöre halkını güçsüz bulduktan sonra oğullarını boğazlamak ve kadınlarını sağ bırakmak üzere sınıflara ayırdı, (...) olanları yok etti ve bozgunculuk yaptıklarına karar verdi. Allah da onları telef etmeye, öylece bırakmaya rıza göstermedi.

وَنُر۪يدُ اَنْ نَمُنَّ عَلَى الَّذ۪ينَ اسْتُضْعِفُوا فِي الْاَرْضِ وَنَجْعَلَهُمْ
اَئِمَّةً وَنَجْعَلَهُمُ الْوَارِث۪ينَ ﴿٥﴾ وَنُمَكِّنَ لَهُمْ فِي الْاَرْضِ وَنُرِيَ
فِرْعَوْنَ وَهَامَانَ وَجُنُودَهُمَا مِنْهُمْ مَا كَانُوا يَحْذَرُونَ ﴿٦﴾

5, 6- "Biz ise istiyorduk ki yeryüzünde ezilmekte olanlara lütufta bulunalım, onları önderler yapalım ve onları vârisler kılalım. Yeryüzünde onları kudret sahibi kılalım ve onların eliyle Firavun'a, Hâmân'a ve ordularına, çekinegeldikleri şeyleri gösterelim."

Biz, güçsüz bulunanları onların elinden kurtarmak, halkın kendileriyle hidayete erdiği, insanların doğru yolu izlemeyi öğrendiği önderler yapmak ve ömürlerini bereketli kılmak suretiyle, kendilerine lütufta bulunmak istiyoruz. Böylece onlar, kendilerine düşmanlık yapanların ömürlerine vâris olur, yerleri ve yurtları onlara geçer. Bu itibarla onlar, yolu izlenen ve nurlarıyla hidayete erişilen rehberler, ileri gelenler, efendiler ve önderlerdir.

( وَنُمَكِّنَ لَهُمْ فِي الْاَرْضِ ) *"Yeryüzünde onları kudret sahibi kılalım."*

Onlardan korkuyu gideriyoruz, onlara kapasite ve güç veriyoruz, ecelde süre tanıyoruz. Firavun, Hâmân ve kavimlerine ise hükümdarlıklarının bu kimselerin eliyle yok olacağı şeklindeki korkularını ve halka göre geciktiriyor olsa da Allah'ın mükâfatı ve cezayı verdiğini gösteriyoruz.

وَاَوْحَيْنَٓا اِلٰٓى اُمِّ مُوسٰٓى اَنْ اَرْضِع۪يهِ فَاِذَا خِفْتِ عَلَيْهِ فَاَلْق۪يهِ
فِي الْيَمِّ وَلَا تَخَاف۪ي وَلَا تَحْزَن۪ي اِنَّا رَٓادُّوهُ اِلَيْكِ وَجَاعِلُوهُ مِنَ
الْمُرْسَل۪ينَ ﴿٧﴾

7- "Mûsâ'nın annesine: 'Onu emzir, başına bir şey gelmesinden korktuğun zaman onu denize (Nil'e) bırak, korkma, üzülme. Çünkü biz, onu sana döndüreceğiz ve onu peygamberlerden kılacağız' diye ilham ettik."

Yani biz bunu, onun kalbine attık ve ilham anlamında kendisine vahyettik. O da bu duyguya kapıldı ve kendisine verilen tercih hakkına sahip olarak bunu gerçekleştirdi.

Annesi, Hz. Mûsâ'yı doğurduğunda öldürülmesinden korkuyordu. Çünkü Firavun o gün, İsrailoğullarının dünyaya gelen pek çok erkek çocuklarını öldürttü. Bunu da rüyasında görüp hükümdarlığını ortadan kaldıracağı şeklinde yorumlanan İsrailoğullarına mensup çocuğu öldürmek ümidiyle yaptı. İşte bunun üzerine Allah, Hz. Mûsâ'nın annesinin kalbine bunu yapmasını ilham etti.

Sonra kaderin üstesinden gelinemeyeceği anlaşılsın diye Firavun o gün Mûsâ'yı kucağında yetiştirdi.

Annesi, Hz. Mûsâ'yı bir sandığa koyup Mısır'ın Nil nehrine attı. Derken su, sandığı Firavun'un kenarında oturmakta olduğu bir su birikintisine getirdi. Bunun üzerine sandığı alıp Firavun'un yanına getirdiler ve kapağını açtılar. Firavun, Mûsâ'yı görünce onu görmek, kalbini derinden etkiledi. Aynı şekilde Mûsâ'nın sevgisi, Firavun'un karısının kalbinde de yer etti. Allah şöyle buyurur: ( وَاَلْقَيْتُ عَلَيْكَ مَحَبَّةً مِنّي ) "*Sana da ey Mûsâ, kendimden bir sevgi verdim.*" (Tâhâ, 20/39)

Çünkü Allah, Hz. Mûsâ'nın gözlerinde bir güzellik yaratmıştı. Bu nedenle onu gören kimse, onu sevmekten kendini alamıyordu.

فَالْتَقَطَهُٓ اٰلُ فِرْعَوْنَ لِيَكُونَ لَهُمْ عَدُوًّا وَحَزَنًا اِنَّ فِرْعَوْنَ وَهَامَانَ
وَجُنُودَهُمَا كَانُوا خَاطِئِينَ ﴿٨﴾

8- "Nihayet Firavun'un ailesi, kendilerine düşman ve üzüntü kaynağı olacak olan o çocuğu bulup aldı. Şüphesiz Firavun, Hâmân ve onların askerleri hata yapıyorlardı."

Allah, Hz. Mûsâ'nın Firavun ve taraftarlarına düşman olduğunu bildirmiştir. Firavun'un karısı ise şöyle demiştir:

وَقَالَتِ امْرَاَتُ فِرْعَوْنَ قُرَّتُ عَيْنٍ لِي وَلَكَ لَا تَقْتُلُوهُ عَسٰٓى اَنْ
يَنْفَعَنَٓا اَوْ نَتَّخِذَهُ وَلَدًا وَهُمْ لَا يَشْعُرُونَ ﴿٩﴾

9- "Firavun'un karısı şöyle dedi: 'Bana da sana da göz aydınlığı! Sakın onu öldürmeyin! Belki bize faydası dokunur ya da onu evlat ediniriz.' Oysaki onlar, olacakların farkında değillerdi."

Firavun ve karısının çocuğu yoktu. Fakat Mûsâ'nın durumunun nereye varacağının bilincinde değillerdi.

وَاَصْبَحَ فُؤَادُ اُمِّ مُوسٰى فَارِغًا اِنْ كَادَتْ لَتُبْدٖي بِهٖ لَوْلَٓا اَنْ رَبَطْنَا
عَلٰى قَلْبِهَا لِتَكُونَ مِنَ الْمُؤْمِنٖينَ ﴿١٠﴾

10- "Mûsâ'nın anasının kalbi bomboş kaldı. Eğer biz, inancını koruması için kalbine güç vermeseydik, neredeyse bunu açıklayacaktı."

Annesi, Hz. Mûsâ'yı suya atınca Allah, kalbini teskin ederek ona güç verdi ve kendisine sabır ilham etti. Bu arada kalbi boş kaldı ve beşeri bir zaaf olarak neredeyse durumu açıklıyordu. Ancak Allah, kalbine güç verdi.

وَقَالَتْ لِاُخْتِهٖ قُصّٖيهِ فَبَصُرَتْ بِهٖ عَنْ جُنُبٍ وَهُمْ لَا يَشْعُرُونَ ﴿١١﴾

11- "Annesi, Mûsâ'nın kız kardeşine: 'Onu takip et' dedi. O da Mûsâ'yı, onlar farkına varmadan uzaktan gözledi."

Annesi, Mûsâ'nın kız kardeşine, kendisini izlemesini ve sonunun ne olacağına bakmasını emretti. Bu esnada Firavun'un adamları onu bulup sevgisi kalplerinde kök salınca, onu emzirecek birini aradılar.

وَحَرَّمْنَا عَلَيْهِ الْمَرَاضِعَ مِنْ قَبْلُ فَقَالَتْ هَلْ اَدُلُّكُمْ عَلٰٓى اَهْلِ
بَيْتٍ يَكْفُلُونَهُ لَكُمْ وَهُمْ لَهُ نَاصِحُونَ ﴿١٢﴾ فَرَدَدْنَاهُ اِلٰٓى اُمِّهٖ كَيْ
تَقَرَّ عَيْنُهَا وَلَا تَحْزَنَ وَلِتَعْلَمَ اَنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا
يَعْلَمُونَ ﴿١٣﴾

12, 13- "Biz, daha önce onun sütanalarının sütünü emmemesini sağladık. Kız kardeşi: 'Size onun bakımını sizin adınıza üstlenecek ve ona içtenlik ve şefkatle davranacak bir aile göstereyim mi?' dedi. Böylece biz, anasının gözü aydın olsun ve üzülmesin, Allah'ın vaadinin hak olduğunu bilsin diye onu anasına geri döndürdük. Fakat onların pek çoğu bunu bilmezler."

Mûsâ, kucağına verildiği kadınlardan hiçbirinin memesini kabul etmeye yanaşmadı. Gel gör ki, sabahleyin onu nasıl öldüreceklerinin derdinde olan kimseler, akşama çıkarken onu nasıl besleyeceklerinin çabası içerisine girmişlerdi.

Bu arada Mûsâ'nın durumu onları yorgun düşürünce kız kardeşi onlara: *"Size onun bakımını, sizin adınıza üstlenecek bir aile göstereyim mi?"* dedi. Onlar da kendisine acıdıkları için kız kardeşinin tavsiyesini kabul ederek: *"Evet"* dediler ve Mûsâ'yı annesine geri verdiler. Annesi, memesini Mûsâ'nın ağzına verince onu emdi. Onlar da buna sevindiler. Bu sırada onlar, Hz. Mûsâ'nın annesini sütana diye adlandırıyorlardı ancak bu, annesine zarar vermedi. Firavun'dan da onun babası diye söz ediyorlardı, ancak bu da ona fayda vermedi.

Öte yandan annesi, Mûsâ'yı alınca Allah'ın onun zannını doğru çıkardığını anladı, kalbi sıkıntıdan kurtuldu ve Firavun'un başına gelenler gelmiş oldu.

وَلَمَّا بَلَغَ اَشُدَّهُ وَاسْتَوٰىٓ اٰتَيْنَاهُ حُكْمًا وَعِلْمًا وَكَذٰلِكَ نَجْزِي الْمُحْسِنِينَ ﴿١٤﴾

14- "Mûsâ, olgunluk çağına ulaşıp gelişimini tamamlayınca, biz ona ilim ve hikmet verdik. Biz, iyilik edenleri işte böyle mükâfatlandırırız."

Hz. Mûsâ'nın yaşı kemale erip aklı tamamlanınca ve hasletlerindeki olgunluk kıvamını bulunca ( اٰتَيْنَاهُ حُكْمًا ) *"biz ona hikmet verdik."* Yani tahsilini tamamlattık ve ilmini artırdık. İşte bizim büyükler ve peygamberler ile ilgili prensibimiz böyle yerleşmiştir.

وَدَخَلَ الْمَدٖينَةَ عَلٰى حٖينِ غَفْلَةٍ مِنْ اَهْلِهَا فَوَجَدَ فٖيهَا رَجُلَيْنِ يَقْتَتِلَانِ هٰذَا مِنْ شٖيعَتِهٖ وَهٰذَا مِنْ عَدُوِّهٖ فَاسْتَغَاثَهُ الَّذٖي مِنْ شٖيعَتِهٖ عَلَى الَّذٖي مِنْ عَدُوِّهٖ فَوَكَزَهُ مُوسٰى فَقَضٰى عَلَيْهِ قَالَ هٰذَا مِنْ عَمَلِ الشَّيْطَانِ اِنَّهُ عَدُوٌّ مُضِلٌّ مُبٖينٌ ﴿١٥﴾

15- "Mûsâ, halkın habersiz olduğu bir sırada şehre girdi. Orada biri, kendi tarafından, diğeri düşmanı tarafından kavga eden iki adam gördü. Kendi tarafından olan, düşmanına karşı ondan yardım istedi. Mûsâ da ona bir yumruk indirip onu öldürdü. Mûsâ: 'Bu, şeytanın işidir. O, gerçekten apaçık bir saptırıcı düşmandır' dedi."

İddiaya göre Hz. Mûsâ şehre gün ortasında insanların dağıldığı bir zamanda girmiş ve biri kendi taraftarlarından ve kendi dinine bağlı bir İsrailli, diğeri de ikisine muhalif bir Kıptî olan iki adamın kavga ettiğini gördü. İsrailli olan adam, Kıptî'ye karşı Hz. Mûsâ'dan yardım istedi. Bunun üzerine Hz. Mûsâ, Kıptî'yi İsrailli'den defetmek için ona bir yumruk attı ve adam, bu yumrukla öldü. Oysa Hz. Mûsâ, onu öldürmek istememişti. Bunun üzerine Hz. Mûsâ şöyle dedi:

(هٰذَا مِنْ عَمَلِ الشَّيْطَانِ اِنَّهُ عَدُوٌّ مُضِلٌّ مُبٖينٌ) *"Bu, şeytanın işidir. O, gerçekten apaçık bir saptırıcı düşmandır."*

Bu çerçevede Hz. Mûsâ, adamı bu yaptığından daha kolay bir yolla defetmek istemiştir. Bir de öldürme fiilini şeytana nispet etmemiş, lakin adamı sertlikle defetmesini, kendisini öfkelenmeye sevk ettiği gerekçesiyle şeytana nispet etmiştir.

İşte böylece Allah, bir şeyi irade ettiği zaman muradının gerçekleşmesi için bazı sebepler icra eder. Bu arada eğer Allah, Hz. Mûsâ'yı imtihan etmek istemeseydi, böyle bir yumrukla adamın canını almazdı. Nitekim bazen bir kimse, çok miktarda dayak ve kırbaç yediği halde ölmez. Bu itibarla Kıptî adamın bir yumrukla ölmesi, Allah'ın hükmünün ve iradesinin yerine getirilmesidir.

قَالَ رَبِّ اِنّ۪ي ظَلَمْتُ نَفْس۪ي فَاغْفِرْ ل۪ي فَغَفَرَ لَهُ اِنَّهُ هُوَ الْغَفُورُ الرَّح۪يمُ ﴿١٦﴾

16- "Mûsâ: 'Rabbim! Şüphesiz ben nefsime zulmettim. Beni affet' dedi. Allah da onu affetti. Şüphesiz O, çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Hz. Mûsâ, elinden çıkan olaydan tövbe etti, Rabbinden mağfiret diledi ve Allah, onu bağışladığını kendisine bildirdi. Bağışlandıktan sonra ise itap söz konusu değildir.

قَالَ رَبِّ بِمَٓا اَنْعَمْتَ عَلَيَّ فَلَنْ اَكُونَ ظَه۪يرًا لِلْمُجْرِم۪ينَ ﴿١٧﴾

17- "'Rabbim! Bana verdiğin nimetle asla suçlulara arka çıkmayacağım' dedi."

Hz. Mûsâ dedi ki:

*"Rabbim! Bana lütufta bulunduğun tövbe muvaffakiyeti sebebiyle ben daha önce işlediğim hatanın bir benzerini, bundan sonra bir daha işlemeyeceğim."*

فَاَصْبَحَ فِي الْمَد۪ينَةِ خَٓائِفًا يَتَرَقَّبُ فَاِذَا الَّذِي اسْتَنْصَرَهُ بِالْاَمْسِ يَسْتَصْرِخُهُ قَالَ لَهُ مُوسٰٓى اِنَّكَ لَغَوِيٌّ مُب۪ينٌ ﴿١٨﴾ فَلَمَّٓا اَنْ اَرَادَ اَنْ يَبْطِشَ بِالَّذ۪ي هُوَ عَدُوٌّ لَهُمَا قَالَ يَا مُوسٰٓى اَتُر۪يدُ اَنْ تَقْتُلَن۪ي كَمَا قَتَلْتَ نَفْسًا بِالْاَمْسِ اِنْ تُر۪يدُ اِلَّٓا اَنْ تَكُونَ جَبَّارًا فِي الْاَرْضِ وَمَا تُر۪يدُ اَنْ تَكُونَ مِنَ الْمُصْلِح۪ينَ ﴿١٩﴾

18, 19- "Mûsâ, korkup etrafı gözetleyerek şehirde sabahladı. Bir de ne görsün, dün kendisinden yardım isteyen, yine feryat ederek ondan yardım istiyordu. Mûsâ da ona: 'Belli ki sen, azgın bir kimsesin' dedi. Mûsâ, ikisinin de düşmanı olan adamı yakalamak

isteyince adam: ‘Ey Mûsâ! Dün birini öldürdüğün gibi beni de öldürmek mi istiyorsun. Sen ancak yeryüzünde bir zorba olmak istiyorsun, arabulucu olmak istemiyorsun.’”

Hz. Mûsâ, kendi hayatı için Firavun’dan korkarak şehirde sabahladı. Çünkü Firavun, adaletle hükmettiğini ileri sürüyordu. Bir de Hz. Mûsâ, Firavun’un, kendisini Kıptî’yi taammüden ve kasten öldürmekle suçlamasından korktu. Bu nedenle o, Firavun’un olay hakkında bilgisinin olup olmadığını ve zamanında bunun kendisine haber verilip verilmediğini gözetliyordu.

Bu konuda şu görüşler de ileri sürülmüştür:

- Hz. Mûsâ, işlediği hatadan dolayı Allah’tan korkarak şehirde sabahlamıştır.

- Hz. Mûsâ, kavminin başına azabın inmesinden korkarak sabahlamıştır.

- Hz. Mûsâ, Allah’ın kendisine yardım etmesini gözetliyordu.

Bir yoruma göre de Hz. Mûsâ, kendisiyle yalnızlığını gidereceği bir munisin yolunu gözlüyordu.

Bir de baktı ki, dün kendisinden yardım isteyen adam, başka bir insanla kavga ediyor ve kendisine yardım etmesi için ondan yardım istiyor. Hz. Mûsâ, adamına yardım etmek isterken adamın hasmı şöyle dedi:

*“Ey Mûsâ! Dün birini öldürdüğün gibi beni de mi öldürmek istiyorsun?”*

Bir görüşe göre o adam, dün adamı öldürenin Hz. Mûsâ olduğunu bilmiyordu. Lakin Hz. Mûsâ, onu kendi adamından alıkoymak isteyince adam, bundan hareketle, dün o adamı öldürenin Hz. Mûsâ olduğunu söyledi. Adam bunu söyleyince de dün adamı öldürenin Hz. Mûsâ olduğu insanların diline düştü. Bunun üzerine Hz. Mûsâ, o adama karışmadı.

وَجَٓاءَ رَجُلٌ مِنْ اَقْصَا الْمَدٖينَةِ يَسْعٰى قَالَ يَا مُوسٰٓى اِنَّ الْمَلَاَ
يَاْتَمِرُونَ بِكَ لِيَقْتُلُوكَ فَاخْرُجْ اِنّٖي لَكَ مِنَ النَّاصِحٖينَ ٢٠

20- "Şehrin öbür ucundan koşarak bir adam geldi. 'Ey Mûsâ! İleri gelenler seni öldürmek için aralarında senin durumunu görüşüyorlar. Şehirden hemen çık! Şüphesiz ben, senin iyiliğini isteyenlerdenim' dedi."

Hz. Mûsâ'nın tanıdıklarından bir İsrailli koşarak geldi ve şöyle dedi: *"Adamlar seni öldürmek istiyorlar. Ben, onların tedbirinden haberdarım. Onlar, durumunu Firavun'a bildirmek istemektedirler. O halde sen, bu memleketten çık. Ben, senin iyiliğini isteyenlerdenim."*

فَخَرَجَ مِنْهَا خَٓائِفًا يَتَرَقَّبُ قَالَ رَبِّ نَجِّنِي مِنَ الْقَوْمِ الظَّالِمِينَ ﴿٢١﴾

21- "Mûsâ, korku içinde onları gözetleyerek şehirden çıktı ve: 'Ey Rabbim! Beni bu zalim kavimden kurtar' dedi."

Hz. Mûsâ, peşine düşerler korkusuyla Mısır'dan çıktı. Bunu, onların kendisini yakalama arayışlarını gözetleyerek yaptı. Bir görüşe göre de Hz. Mûsâ, Allah'tan yeterli koruma ve yardım bekleyerek şehirden çıktı ve Allah'a şöyle dua etti:

( نَجِّنِي مِنَ الْقَوْمِ الظَّالِمِينَ ) *"Beni bu zalim kavimden kurtar."*

وَلَمَّا تَوَجَّهَ تِلْقَٓاءَ مَدْيَنَ قَالَ عَسٰى رَبّ۪ٓي اَنْ يَهْدِيَنِي سَوَٓاءَ السَّب۪يلِ ﴿٢٢﴾

22- "Medyen'e doğru yöneldiğinde: 'Umarım Rabbim beni doğru yola iletir' dedi."

Hz. Mûsâ, Medyen istikametine burayı veya başka bir yeri kast etmeksizin yönelmiştir. Doğrusu o, fetihlere doğru çıkmış ve Rabbinin onu, kendisi için hayırlı olana hidayet etmesini bekleyerek O'na kalbiyle yönelmiş ve bu amaçla şöyle demiştir:

( عَسٰى رَبّ۪ٓي اَنْ يَهْدِيَنِي سَوَٓاءَ السَّب۪يلِ ) *"Umarım Rabbim, beni, benim için en doğru olan yola iletir."*

وَلَمَّا وَرَدَ مَٓاءَ مَدْيَنَ وَجَدَ عَلَيْهِ اُمَّةً مِنَ النَّاسِ يَسْقُونَ وَوَجَدَ
مِنْ دُونِهِمُ امْرَاَتَيْنِ تَذُودَانِ قَالَ مَا خَطْبُكُمَا قَالَتَا لَا نَسْق۪ي حَتّٰى
يُصْدِرَ الرِّعَٓاءُ وَاَبُونَا شَيْخٌ كَب۪يرٌ ﴿٢٣﴾

23- “Medyen suyuna varınca, suyun başında hayvanlarını sulamakta olan bazı insanlar gördü. Bunların yanında da koyunlarını suya salmamak için iki kız gördü. Mûsâ onlara: ‘Koyunlarınızı burada tutmaktaki maksadınız ne?’ dedi. Onlar: ‘Çobanlar sulayıp çekilinceye kadar biz koyunlarımızı sulayamayız. Babamız ise çok yaşlı bir adamdır’ dediler.”

Hz. Mûsâ, Şuayb’ın Medyen’ine ulaştığında gün ortasıydı. Onların, su ihtiyaçlarını karşıladıkları bir kuyuları vardı. Hayvancılıkla uğraştıkları için suyunu havuzlara boşaltarak koyunlarını suluyorlardı.

Şuayb Peygamberin (a.s.) çok ağlamaktan gözleri kapanmıştı. Kıssasında yer aldığına göre o ağlamış ve gözleri kapanmıştı. Sonra Allah, gözlerini açtı. O tekrar ağlayarak gözlerini kaybetti. Allah yine gözlerini açtı; fakat o, gözleri gidinceye kadar tekrar ağladı. Bunun üzerine Allah, kendisine şunu vahyetti:

*“Ey Şuayb! Neden ağlıyorsun? Eğer ağlaman cehennem korkusundan ise, şüphesiz ben sana güvence verdim. Şayet cennet içinse onu zaten sana vermiş bulunuyorum.”*

Hz. Şuayb şöyle dedi:

*“Ey Rabbim! Ben, sadece sana duyduğum özlemden dolayı ağlıyorum.”*

Bunun üzerine Allah kendisine şu vahyi indirdi:

*“İşte bunun için doğrudan konuştuğum peygamberimi on yıl hizmetine verdim.”*

Bu arada Hz. Şuayb’ın koyunları vardı; ancak ücretli çobanı yoktu. Çobanlar yerine koyunlarını iki kızı güdüyordu. Ancak kızların, kuyudan su çekmeye güçleri yetmiyordu. Oysa çobanlar suyu alıyorlardı. Onlar işlerini bitirdikten sonra eğer havuzda sudan bir şey kalırsa Hz. Şuayb’ın kızları da onu alıyorlardı.

Derken Hz. Mûsâ, o günü orada geçirip bu durumu ve iki kızın, koyunlarını sudan alıkoyduklarını görünce kalben onlara acıdı ve: *“Koyunlarınızı burada tutmaktaki maksadınız ne?”* dedi. Dediler

ki: *"Çobanlar sulayıp çekilinceye kadar biz koyunlarımızı sulayamayız. Babamız ise, çok yaşlı bir adamdır. Aynı zamanda ücretli çobanımız da yoktur."*

فَسَقٰى لَهُمَا ثُمَّ تَوَلّٰٓى اِلَى الظِّلِّ فَقَالَ رَبِّ اِنّ۪ي لِمَٓا اَنْزَلْتَ اِلَيَّ مِنْ خَيْرٍ فَق۪يرٌ ﴿٢٤﴾

24- "Bunun üzerine Mûsâ onların koyunlarını suladı. Sonra gölgeye çekilip: 'Rabbim! Bana göndereceğin her hayra muhtacım' dedi."

Çobanlar çekip gidince Hz. Mûsâ, hayvanlarını suladı. Ondan sonra da bir duvarın gölgesine çekildi. Bu arada Hz. Mûsâ, yolculuğu esnasında acıkmış, yolculuğa ve gurbete hiç alışmamıştı. Onun aynı zamanda parası da yoktu. Bunun üzerine Allah'a dua şöyle etti:

( فَقَالَ رَبِّ اِنّ۪ي لِمَٓا اَنْزَلْتَ اِلَيَّ مِنْ خَيْرٍ فَق۪يرٌ ) *"Rabbim! Bana göndereceğin her hayra muhtacım"* dedi.

Bu konuda şu iki görüş ileri sürülmüştür:

- Hz. Mûsâ, bu dua ile açlığını giderecek bir güç talep etti.

- Hz. Mûsâ, kendisiyle bağımsız olacağı bir hal talep etti.

En güzel görüş ise şöyle denmesidir:

*"Hz. Mûsâ, acıktı ve asgari açlığını gidereceği bir kırıntı talep etti."*

Bu arada bilgi, kulun az veya çok muhtaç olduğu şeyi Allah'tan istemesini sağlar. Hz. Şuayb'ın kızları dönüp gidince Hz. Şuayb, eliyle dokunmak için çölün açıklarına yaya yolunun üzerine çıktı. Bu sefer fazlalığın izini buldu ve kızlarına sebebini sordu. Bunun üzerine kızlar, ona kıssayı ve Hz. Mûsâ'dan duydukları: *"Rabbim! Bana göndereceğin her hayra muhtacım"* şeklindeki duasını anlattılar. Bunun duyması üzerine Hz. Şuayb: *"Öyleyse o açtır"* diyerek kendisini çağırması için kızlarından birini gönderdi.

فَجَٓاءَتْهُ اِحْدٰيهُمَا تَمْش۪ي عَلَى اسْتِحْيَٓاءٍ قَالَتْ اِنَّ اَب۪ي يَدْعُوكَ
لِيَجْزِيَكَ اَجْرَ مَا سَقَيْتَ لَنَا فَلَمَّا جَٓاءَهُ وَقَصَّ عَلَيْهِ الْقَصَصَ قَالَ
لَا تَخَفْ نَجَوْتَ مِنَ الْقَوْمِ الظَّالِم۪ينَ ﴿٢٥﴾

25- "Nihayet kızlardan biri, utana utana yürüyerek ona geldi, dedi ki: 'Bizim için koyunlarımızı sulamanın ücretini vermek üzere babam seni çağırıyor.' Mûsâ, onun yanına gelip başından geçenleri ona anlatınca Şuayb: 'Korkma! O zalim kavimden kurtuldun' dedi."

Bir görüşe göre; kızın utanması, ona mahrem olmayan biriyle konuşuyor olmasından dolayıdır. Diğer bir görüşe göre ise kız Hz. Mûsâ'yı misafirliğe çağırdığı için utanarak konuştu. Çünkü cömert insan, misafirlikten utanır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Hz. Mûsâ, kendisine iyilik edip hiçbir karşılık beklemese de ona karşılık vermeyince Hz. Şuayb'ın içi rahat etmemiştir.

( فَلَمَّا جَٓاءَهُ وَقَصَّ عَلَيْهِ الْقَصَصَ ) *"Mûsâ, onun yanına gelip başından geçenleri ona anlatınca..."*

Allah, burada: *"Mûsâ, onun yanına gelince kendisine sofrayı takdim etti"* buyurmamış, aksine: *"başından geçenleri ona anlatınca..."* buyurmuştur. Bu ise, onun kıssasının bir uzantısıdır.

- Hz. Mûsâ, zahiriyle Medyen suyuna uğramış, kalbiyle ise ünsiyet ve huzurun kaynaklarına varmıştır. Kaynaklar ise değişiktir. Bu çerçevede kalbin kaynakları, huzura varma keşifleriyle gerçekleşen bast bahçeleridir. Böylece bunlar, çeşitli lütuflarla coşarlar. Ruhların kaynakları ise tecellileridir. Bunlar da müşahede nurlarıyla keşfe mazhar kılınarak nefsi hissetmekten tamamen koparlar. Sırların kaynakları da tevhid alanlarıdır. Bu aşamada velayet Allah'ındır. Artık ne nefis ne his ne kalp ne de ünsiyet söz konusudur. Bu, samediyette tükenmek ve büsbütün fenâya ermektir.

- Yabancılık ve mahrem olmaktan uzaklık, Hz. Mûsâ'nın kızlarla konuşmaktan çekinmesine ve onlara soru sormaktan yüz çevirip suskun kalmasına yol açıyordu. Lakin iki kız arasındaki benzerlik ve sırdaki uyum, Hz. Mûsâ'nın konuşmasına yol açmış ve sonuçta onlara kıssalarını sormuştur.

Tıpkı şu beyitte söylendiği gibi:

*Yabancıyız ikimiz de burada ey hanım komşumuz!*
*Her yabancı ise diğer yabancıya yakındır*

- Hz. Mûsâ, iki kıza durumlarını sorup onlar da güçsüzlüklerini ona anlatınca, durumlarıyla ilgilenmesi gerekti. Bu, güçsüzlerin durumunu araştırıp ihtiyaç yönlerine muttali olan kimsenin şikayetlerini gidermesi gerektiğinin bilinmesi için yapılmıştır.

- Hz. Mûsâ'nın tabi tutulduğu imtihanın kemalini gösteren hususlardan biri şudur: Hz. Mûsâ, o insanların yanına geldiğinde aç idi. Şefkatin gereği ise ona bir şeyler yedirmeleri idi. Lakin Allah, kalpleri ondan geri çevirdi ve onu, vaktin kırk adamın yaptığı işi yapması şeklindeki hükmü karşıladı. Çünkü onun, kuyunun ağzından yalnız başına kaldırdığı kayayı kırk adam yerinden kaldırıyordu. Böylece o, kırk adamın yaptığı işi yapınca gölgeye sığındı ve şöyle dedi:

*"Eğer sen, çektiğim bunca çileden sonra bana bir şeyler yedirirsen bu da senin lütfundandır."*

Hz. Mûsâ, bunu inbisat -açılım- halinin diliyle söylemiştir ki bundan daha tatlı hiçbir dil yoktur. Bu arada yakınmada prensip, onun kuldan olmaksızın Allah'a yapılmasıdır. Daha doğrusu Allah'tan Allah'a olmasıdır.

- Hz. Mûsâ, ünsiyetin gölgesine, bastın huzuruna ve sırrın, varlığın hakikatiyle baş başa kalıp yetinmesine sığındı.

- Hz. Mûsâ dedi ki: *"Rabbim! Bana göndereceğin her hayra muhtacım. O halde muhtaçlığımı artır. Çünkü sana muhtaç olmam, senden yardım dilememi sağlamaktadır."*

قَالَتْ اِحْدٰيهُمَا يَٓا اَبَتِ اسْتَأْجِرْهُ اِنَّ خَيْرَ مَنِ اسْتَأْجَرْتَ الْقَوِيُّ
الْاَم۪ينُ ﴿٢٦﴾

26- "Kızlardan biri: 'Babacığım, onu ücretle tut. Herhalde ücretle tuttuklarının en hayırlısı, güçlü ve güvenilir olan bu adam olacaktır' dedi."

Hz. Şuayb'ın bir ücretliye ihtiyacı vardı. Ancak kalben kimseden tatmin olmuyordu. Derken Hz. Mûsâ'yı görüp kızından, onu güçlü ve güvenilir olmakla nitelediğini duyunca şunu sordu: *"Güçlü olduğunu anladım da güvenilir olduğunu nasıl anladın?"*

Bunun üzerine kızı şöyle dedi: *"Ben, onun önünde yürüyordum. O ise, gözüne ilişmeyeyim diye yolda beni arkasına geçirerek: 'Arkamda yürü ve bana yol göster' dedi."*

Bunun üzerine Hz. Şuayb şöyle dedi:

قَالَ اِنّ۪ٓي اُر۪يدُ اَنْ اُنْكِحَكَ اِحْدَى ابْنَتَيَّ هَاتَيْنِ عَلٰٓى اَنْ تَأْجُرَن۪ي ثَمَانِيَ
حِجَجٍ فَاِنْ اَتْمَمْتَ عَشْرًا فَمِنْ عِنْدِكَ وَمَٓا اُر۪يدُ اَنْ اَشُقَّ عَلَيْكَ
سَتَجِدُن۪ٓي اِنْ شَٓاءَ اللّٰهُ مِنَ الصَّالِح۪ينَ ﴿٢٧﴾ قَالَ ذٰلِكَ بَيْن۪ي وَبَيْنَكَ اَيَّمَا
الْاَجَلَيْنِ قَضَيْتُ فَلَا عُدْوَانَ عَلَيَّ وَاللّٰهُ عَلٰى مَا نَقُولُ وَك۪يلٌ ﴿٢٨﴾

27, 28- "Şuayb dedi ki: 'Ben, sekiz yıl bana çalışmana karşılık, şu iki kızımdan birisini sana nikâhlamak istiyorum. Eğer sen, bunu on yıla tamamlarsan, o da senden olur. Ben, seni zora koşmak da istemiyorum. İnşaallah beni salih kimselerden bulacaksın.' Mûsâ dedi ki: 'Bu, seninle benim aramda bir iş. İki süreden hangisini tamamlarsam, bana karşı bir husumet yok. Allah, söylediklerimize vekildir.'"

Bunun üzerine Hz. Mûsâ da bunu arzuladı ve mehir olmak üzere Hz. Şuayb'a on yıl çalışarak kızıyla evlendi.

Kıssasında yer aldığına göre Hz. Şuayb, Hz. Mûsâ'ya: *"Şu eve gir ve içindeki değneklerden birini çıkar"* dedi. O esnada ev karanlıktı. Hz. Mûsâ, eve girdi ve Allah'ın kendisinde mucize meydana getirdiği o değneği çıkardı.

Bir yoruma göre de söz konusu değnek Hz. Âdem'e aitti ve peygamberden peygambere intikal etmek suretiyle Hz. Şuayb'ın eline geçmişti. Zira iddiaya göre; Hz. Âdem, yeryüzüne inince oradaki yırtıcı hayvanlar üzerine saldırdılar. Bunun üzerine Allah, kendisine bu değneği indirdi ve Hz. Cibril, bu değnekle yırtıcı hayvanları üzerinden savmasını söyledi. Peygamberler de birbiri ardından o değneği miras aldılar.

Bu arada Hz. Mûsâ, o değneği evden çıkarınca, Hz. Şuayb kendisine: *"Onu eve geri götür, oraya at ve başka bir değnek çıkar"* dedi. Hz. Mûsâ bunu defalarca yaptı, ancak her defasında sadece o değnek çıktı. Bu böyle tekrarlanınca Hz. Şuayb, Hz. Mûsâ'nın özel bir durumu olduğunu anlayarak değneği kendisine verdi.

Kıssasında yer aldığına göre Hz. Mûsâ, ilk gün koyunlarını güttü ve Hz. Şuayb kendisine şöyle dedi:

*"Yolun, ikiye ayrılmakta olup birinin üzerinde çok miktarda ot vardır. Sen koyunları güderken onu izleme çünkü orada büyük bir yılan vardır. Sen diğer tarafı izle."*

Hz. Mûsâ, yol ayırımına varınca koyunları dağılarak kendisini dinlemedi ve otu çok olan tarafta otladı. Hz. Mûsâ da onların peşinden gitti ve uyumuş oldu. Uyandığında ise yılanın öldürülmüş olduğunu gördü. Çünkü değnek onu öldürmüştü. Eve döndüğünde Hz. Şuayb'a bunu anlattı, o da buna sevindi. İşte böylece Hz. Mûsâ, değneğinde pek çok mucizeler görüyordu. Nitekim bu nedenledir ki o: *"Benim onda başka maslahatlarım da vardır"* demiştir.

فَلَمَّا قَضٰى مُوسَى الْاَجَلَ وَسَارَ بِاَهْلِهٖٓ اٰنَسَ مِنْ جَانِبِ الطُّورِ نَارًا
قَالَ لِاَهْلِهِ امْكُثُوٓا اِنّيٓ اٰنَسْتُ نَارًا لَعَلّيٓ اٰتيكُمْ مِنْهَا بِخَبَرٍ اَوْ جَذْوَةٍ
مِنَ النَّارِ لَعَلَّكُمْ تَصْطَلُونَ ﴿٢٩﴾

29- "Mûsâ, süreyi tamamlayıp ailesiyle yola çıkınca Tûr tarafında bir ateş gördü ve ailesine: 'Siz burada kalın, ben bir ateş gördüm. Umarım oradan size bir haber ya da ısınmanız için ateşten bir kor getiririm' dedi."

On yıl geçti ve Hz. Mûsâ Mısır'a doğru yola çıkmak istedi. Bu amaçla Hz. Şuayb'ın kızını yanına alarak ailesiyle birlikte Mısır'a doğru yol almaya başladı. Bu esnada ailesi onun rehberliğinde, o da Allah'ın rehberliğinde yürüyordu. Derken karısının doğum emareleri belirince, Hz. Mûsâ bu duruma katlanmada zorluk çekmeye başladı. Onlar bu vaziyetteyken Hz. Mûsâ, Tûr tarafından ansızın bir ateş gördü. Bu arada görme anlamında ( آنَسَ ) "*ânese*" fiilinin kullanılmış olması, kendisine bir nevi ünsiyet verecek bir görmeye işaret gibidir.

Bir de Allah, bir durum irade ettiği zaman, hükmünü o duruma uygun icra eder. Nitekim eğer o durum meydana gelmeseydi, Hz. Mûsâ ateşi görerek ona doğru yola çıkmazdı. Aslında Hz. Mûsâ, işin başında o sırada karşısına çıkan durumların, belaların birer parçası olduğunu sanmıştı. Oysa hakikatte bu, peygamberliği gerçekleştirmenin sebebi idi. Bu itibarla eğer halkın erişemediği takdirin sırları olmasaydı, Hz. Mûsâ ailesine: ( امْكُثُوٓا اِنّٖيٓ اٰنَسْتُ نَارًا لَعَلّٖيٓ اٰتٖيكُمْ مِنْهَا بِخَبَرٍ ) "*Siz burada kalın, ben bir ateş gördüm. Umarım oradan size bir haber getiririm*" demezdi.

Bir yoruma göre de Allah, Hz. Mûsâ'ya önce ateşi, sonra nuru göstermiştir. Ancak daha sonra olanlar olurken ateş de nur da amaç olmaktan çıkmıştır. Burada bütün mesele, Hz. Mûsâ'nın:( اِنّٖيٓ اَنَا اللّٰهُ رَبُّ الْعَالَمٖينَ ) "*Şüphesiz ben, evet ben, âlemlerin Rabbi olan Allah'ım!*"(Kasas, 28/30) nidasını duymasıdır.

فَلَمَّآ اَتٰيهَا نُودِيَ مِنْ شَاطِئِ الْوَادِ الْاَيْمَنِ فِي الْبُقْعَةِ الْمُبَارَكَةِ مِنَ الشَّجَرَةِ اَنْ يَا مُوسٰٓى اِنّٖيٓ اَنَا اللّٰهُ رَبُّ الْعَالَمٖينَ ﴿٣٠﴾

30- "Mûsâ, ateşin yanına gelince, o mübarek yerdeki vadinin sağ tarafındaki ağaçtan şöyle seslenildi: 'Ey Mûsâ! Şüphesiz ben, evet ben, âlemlerin Rabbi olan Allah'ım!'"

Bu hitapla Allah, Hz. Mûsâ'nın ayak izinin belirginliğini ihtimaller içerisinde gizlemiştir. Zira önce: "Vadinin sağ tarafında", sonra: "Mübarek yerde", sonra da: "Ağaçtan" buyurmuştur.

O yer, mübarek olmaya ne de layıktır! Zira Hz. Mûsâ, orada vasıtasız olarak Mevlâ'sının hitabını işitmiştir. Zaten âlemdeki yerlerin en değerlisi, sevgililerin buluştukları yerdir.

Şiir:

*Arzularım ben yurdu rahatsız etmeksizin beni*
*Onu sevmek, kaldı ki senin yurdundandır o*

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Nice ayaklar senin için yer tepmiş de o ayakların sahipleri orada bir şey işitmemişlerdir. Nice gecelerin karanlığı o yerin üstüne çökmüş de o ateşten bir alev ortaya çıkmamıştır.

- Ağaçtan ağaca büyük fark vardır. Âdem'in ağacının yanında onun meşakkati ve imtihanı ortaya çıkmıştır. Hz. Mûsâ'nın ağacının yanında ise onun peygamberliği ve elçiliği başlamıştır.

- O ağacın türü hakkında ayrıntılı açıklama yapılmamıştır. Aynı zamanda ne tür bir meyve verdiği de bilinmemektedir. Doğrusu o, vuslat ağacı olup meyvesi Allah'a yakınlıktır. Kökü sevgi toprağında olup dalları arınmışlık semasında yükselmektedir. Yaprakları Allah'a yakınlığın, çiçekleri ise huzur ve güzelliğin esintisiyle açmaktadır.

Hz. Mûsâ, ilahî nidayı duyunca durumu değişti. Bu bağlamda kıssasında yer aldığına göre o, bu esnada bayıldı ve Allah, kendisini ünsiyet yelpazeleriyle rahatlatmaları için ona melekler gönderdi. Bu durum, işin başında meydana geldi. Zaten işin başındaki kimseye şefkatle davranılır. Diğer seferde Hz. Mûsâ yine bayıldı. Bu esnada ayıldığında melekler kendisine: *"Ey hayızın oğlu! Senin gibi biri, Allah'ı görmeyi talep eder mi?"* diyorlardı. İşte sevgiyle ilgili söz ve kıssa böyledir. Başlangıcı lütuf, sonu ise şiddettir. Başında oyalayıcı, sonunda ise öldürücüdür.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Dolaşınca içki*
*Hazırlatır idam sergisini ve kılıcı*
*Aynı şekilde şarap içen de*
*Beraber olur yazın ejderha ile*

وَاَنْ اَلْقِ عَصَاكَ فَلَمَّا رَاٰهَا تَهْتَزُّ كَاَنَّهَا جَآنٌّ وَلّٰى مُدْبِرًا وَلَمْ
يُعَقِّبْ يَا مُوسٰى اَقْبِلْ وَلَا تَخَفْ اِنَّكَ مِنَ الْاٰمِنِينَ ﴿٣١﴾

31- "'Değneğini yere at.' Mûsâ, onu bir yılanmış gibi süratle hareket eder görünce arkasına bakmadan dönüp kaçtı. 'Ey Mûsâ! Beri gel, korkma. Çünkü sen, güvenlikte olanlardansın.'"

Ey Mûsâ! Pabuçlarını çıkar, değneğini yere at ve bu gece bizde kal. Şüphesiz sen yol yorgunusun. Bu sözler her ne kadar nakilde ve rivayetlerde yer almasa da duruma uygun olan budur.

Ey Mûsâ! Sen yolda nasıldın? Yokuşları nasıl çıktın? Yol istikametini nasıl belirledin? Doğuya nasıl yöneldin? Batıya nasıl yöneldin? Ey Mûsâ! Yolda sen yalnız değildin. Biz ki her şeyi sayıya dökmüşüz, senin adımlarını da saydık. Ey Mûsâ! Sen yoruldun. O halde dinlen. Sen geldikten sonra da ayrılma. İşte kul da yarın kıyamette mesafe alıp cennetten bir yer edindiği zaman böyle olacaktır. Bu çerçevede kimileri cennete girdikleri zaman konaklarına dönerler, sonra buluşma günü getirilirler. Bazıları da yoldan yakınlık makamına geçerler. Nitekim köle veya hizmetçi de hükümdarının ülkesine girdiği zaman böyledir. İşe önce yüksek eşikten başlar, sonra evine döner. Bugün bizim durumumuz da böyledir. Mahlûk ile konuşmadan önce Allah'a hitap etmek suretiyle, güne başlamamız için hiçbir şeyle uğraşmamalıyız. Hizmet sergisinde, yani namazda hazır bulunuruz. Daha doğrusu Allah'a yakınlık sergisinde hazır oluruz. Allah şöyle buyurmuştur:

( وَاسْجُدْ وَاقْتَرِبْ ) *"Secde et ve Allah'a yaklaş!"* (Alak, 96/19)

Bu itibarla, namaz kılan kimse, Rabbine münacatta bulunmaktadır. Eğer namaz kılan kimse kime münacatta bulunduğunu bilse dönmez. Yani namazından çıkmaz ve namazdan çıkmak demek olan selamda sağa sola dönmez.

( فَلَمَّا رَاٰهَا تَهْتَزُّ كَاَنَّهَا جَآنٌّ وَلّٰى مُدْبِرًا وَلَمْ يُعَقِّبْ يَا مُوسٰٓى اَقْبِلْ وَلَا تَخَفْ اِنَّكَ مِنَ الْاٰمِنِينَ ) *"Mûsâ, onu bir yılanmış gibi süratle hareket eder görünce, arkasına bakmadan dönüp kaçtı. 'Ey Mûsâ! Beri gel, korkma. Çünkü sen, güvenlikte olanlardansın.'"*

Değnek yılana dönüşünce Hz. Mûsâ, arkasına bakmadan dönüp kaçtı. Oysa bu duruma uygun düşen, şöyle demesiydi:

*"Bu, başlangıcı bir yılanın başa musallat kılınması olan bir olaydır. Başlangıcına kim güç yetirebilir ki!"*

Kaçması üzerine Hz. Mûsâ'ya şöyle denildi:

*"Ey Mûsâ! Değneği yılana çevirebilen Allah, sana ondan kurtuluşu da yaratabilir. Ey Mûsâ! Beri gel, korkma. Çünkü sen, güvenlikte olanlardansın. Bunun hedefi sen değilsin. Ben bunu sadece yılanı düşmanının başına musallat kılayım diye ortaya koyuyorum. Bu, kavmine olan mucizen ve düşmanlarına karşı olan peygamberlik alametindir."*

Bir yoruma göre de bizim peygamberimiz ile Hz. Mûsâ arasında büyük fark vardır. Hz. Mûsâ, ilahî hitabı dinlemekten dönerken düşmanının başına musallat kıldığı bir yılan getirdi. Bizim Peygamberimiz (s.a.v.) ise geceleyin göğe çıkarılıp, ümmetine münacattan ibaret olan namazı tevdi etmek için kendisine bazı şeyler vahiy edildikten ve: *"Ey peygamber, selam, Allah'ın rahmeti ve bereketleri senin üzerine olsun"* denildikten sonra o şöyle dedi: *"Selam, bizim ve Allah'ın salih kullarının üzerine olsun."*

اُسْلُكْ يَدَكَ فِي جَيْبِكَ تَخْرُجْ بَيْضَآءَ مِنْ غَيْرِ سُوٓءٍ وَاضْمُمْ اِلَيْكَ جَنَاحَكَ مِنَ الرَّهْبِ فَذَانِكَ بُرْهَانَانِ مِنْ رَبِّكَ اِلٰى فِرْعَوْنَ وَمَلَا۬ئِهِ اِنَّهُمْ كَانُوا قَوْمًا فَاسِقِينَ ﴿٣٢﴾

32- “Elini koynuna sok. Bir hastalık sebebiyle olmaksızın, bembeyaz bir halde çıksın. Korkudan açılan kolunu kendine çek. İşte bunlar, Firavun ve ileri gelen adamlarına Rabbin tarafından iki delildir. Çünkü onlar, fasık bir kavimdirler.”

Hz. Mûsâ’ya: ( اُسْلُكْ يَدَكَ فِي جَيْبِكَ ) *“Eline koynuna koy”* denildi, çünkü üzerindeki elbisenin yeni yoktu. Bu emirde, muradına ve maksuduna ermek için kişinin kolları sıvaması, çaba harcaması ve elini yeninden çıkarması gerektiğine işaret vardır. Bir de Allah Hz. Mûsâ’ya şöyle buyurmuştur:

*“Elini koynuna sok. Bembeyaz bir halde çıksın. Değneğini yere at. Sen onunla vurmadan ve onu kullanmadan biz onu yılana çevirelim. Ey Mûsâ! İş bizimle yürümekte, seninle değil. Bir de ben varım, sen değil.”*

( وَاضْمُمْ اِلَيْكَ جَنَاحَكَ مِنَ الرَّهْبِ فَذَانِكَ بُرْهَانَانِ مِنْ رَبِّكَ ) *“Korkudan açılan kolunu kendine çek. İşte bunlar, Rabbin tarafından iki delildir.”*

Ey Mûsâ! Boyun eğmen halinde sen beni bulursun. Kendi güç ve kuvvetinden arınmanla da bana kavuşursun.

قَالَ رَبِّ اِنِّي قَتَلْتُ مِنْهُمْ نَفْسًا فَاَخَافُ اَنْ يَقْتُلُونِ ﴿٣٣﴾ وَاَخِي
هٰرُونُ هُوَ اَفْصَحُ مِنِّي لِسَانًا فَاَرْسِلْهُ مَعِيَ رِدْءًا يُصَدِّقُنِي اِنِّي
اَخَافُ اَنْ يُكَذِّبُونِ ﴿٣٤﴾ قَالَ سَنَشُدُّ عَضُدَكَ بِاَخِيكَ وَنَجْعَلُ لَكُمَا
سُلْطَانًا فَلَا يَصِلُونَ اِلَيْكُمَا بِاٰيَاتِنَا اَنْتُمَا وَمَنِ اتَّبَعَكُمَا الْغَالِبُونَ ﴿٣٥﴾

33, 34, 35- “Mûsâ şöyle dedi: ‘Ey Rabbim! Şüphesiz ben, onlardan birisini öldürdüm. Onların da beni öldürmelerinden korkuyorum. Kardeşim Hârûn’un dili benimkinden daha düzgündür. Onu da benimle birlikte, beni doğrulayan bir yardımcı olarak gönder. Çünkü ben, onların beni yalanlamalarından korkuyorum.’ Allah şöyle buyurdu: ‘Seni kardeşinle destekleyeceğiz ve size bir iktidar vereceğiz de ayetlerimiz sayesinde size ulaşamayacaklar. Siz ve size uyanlar, galip gelecek olanlardır.’”

Hz. Mûsâ, tebliğ meşakkatinden ve sıkıntı çekmekten muaf tutulabilmek ümidiyle her türlü bahaneye sığındı. Çünkü o, peygamberlikte meşakkat bulunduğunu biliyordu. Ancak yükümlü kılındığı görevler konusunda ruhsat ve muafiyet elde edemedi. Kardeşini kendisine yardımcı kılma isteğini ise Allah kabul etti ve ikisine yardım güvencesi verdi.

فَلَمَّا جَٓاءَهُمْ مُوسٰى بِاٰيَاتِنَا بَيِّنَاتٍ قَالُوا مَا هٰذَٓا اِلَّا سِحْرٌ مُفْتَرًى وَمَا سَمِعْنَا بِهٰذَا فٖٓي اٰبَٓائِنَا الْاَوَّلٖينَ ﴿٣٦﴾ وَقَالَ مُوسٰى رَبّٖٓي اَعْلَمُ بِمَنْ جَٓاءَ بِالْهُدٰى مِنْ عِنْدِهٖ وَمَنْ تَكُونُ لَهُ عَاقِبَةُ الدَّارِ اِنَّهُ لَا يُفْلِحُ الظَّالِمُونَ ﴿٣٧﴾

36, 37- "Mûsâ, onlara delillerimizi apaçık olarak getirince onlar: 'Bu, ancak uydurulmuş bir sihirdir. Biz, geçmiş atalarımızın zamanında böyle bir şeyin varlığını duymadık' dediler. Mûsâ da şöyle dedi: 'Katından kimin hidayet getirdiğini ve bu yurdun sonucunun kimin olacağını Rabbim daha iyi bilir. Doğrusu zalimler, kurtuluşa eremezler.'"

Sonra ikisi, Firavun'a gelince, Firavun onlara yalanlama ve inkârla karşılık verdi ve kendilerini, yanlış yapmak, yalan söylemek ve sihirbazlıkla itham etti. Onlar ise kendisine delille cevap vererek onu sağduyuya davet ettiler. Ne var ki o, inkârdan başka hiçbir şeye yanaşmadı.

وَقَالَ فِرْعَوْنُ يَٓا اَيُّهَا الْمَلَاُ مَا عَلِمْتُ لَكُمْ مِنْ اِلٰهٍ غَيْرٖي فَاَوْقِدْ لٖي يَا هَامَانُ عَلَى الطّٖينِ فَاجْعَلْ لٖي صَرْحًا لَعَلّٖٓي اَطَّلِعُ اِلٰٓى اِلٰهِ مُوسٰى وَاِنّٖي لَاَظُنُّهُ مِنَ الْكَاذِبٖينَ ﴿٣٨﴾

38- "Firavun dedi ki: 'Ey ileri gelenler! Sizin benden başka bir ilahınız olduğunu bilmiyorum. Ey Hâmân! Benim için bir ateş yakıp

tuğla pişir de bana bir kule yap! Belki Mûsâ'nın ilahına çıkar bakarım. Şüphesiz ben, onun mutlaka yalancılardan olduğunu sanıyorum.'"

Firavun, tek başına ilah olduğunu iddia ederek sapıklığında putlarını Allah'a ortak koşan puta tapıcılardan daha da ileri gitti. Sonra da Hâmân'a şöyle dedi:

( عَلَى الطِّينِ فَاجْعَلْ لِي صَرْحًا لَعَلِّي اَطَّلِعُ اِلٰى اِلٰهِ مُوسٰى ) *"Bana bir kule yap! Belki Mûsâ'nın ilahına çıkar bakarım."*

İşte bu talep, Firavun'un sapıklığının fazlalığından ileri geliyordu. Zira o, mabudun üst tarafta olduğunu ve O'na ulaşılabileceğini sanmıştı. Yemin ederim ki, eğer Allah bir tarafta olsaydı, O'na ulaşmak mümkün ve caiz görülebilirdi.

وَاسْتَكْبَرَ هُوَ وَجُنُودُهُ فِي الْاَرْضِ بِغَيْرِ الْحَقِّ وَظَنُّوا اَنَّهُمْ اِلَيْنَا لَا
يُرْجَعُونَ ﴿٣٩﴾ فَاَخَذْنَاهُ وَجُنُودَهُ فَنَبَذْنَاهُمْ فِي الْيَمِّ فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ
عَاقِبَةُ الظَّالِمِينَ ﴿٤٠﴾

39, 40- "O ve askerleri yeryüzünde haksız yere büyüklük tasladılar ve gerçekten bize döndürülmeyeceklerini sandılar. Biz de onu ve askerlerini yakaladık ve onları denize attık. Zalimlerin sonunun nasıl olduğuna bak!"

Firavun, inkârcılığının ve inatçılığının devam etmesinden başka hiçbir şeye yanaşmadı. Bunun üzerine Allah, tıpkı kalbini küfrün denizinde boğduğu gibi onu da denizde boğdu.

وَجَعَلْنَاهُمْ اَئِمَّةً يَدْعُونَ اِلَى النَّارِ وَيَوْمَ الْقِيٰمَةِ لَا يُنْصَرُونَ ﴿٤١﴾

41- "Biz onları, ateşe çağıran öncüler kıldık. Kıyamet günü de kendilerine yardım edilmeyecektir."

Allah, onları şereflerinden dolayı öncü kılmamıştır. Lakin telef olmalarına sebep olsun diye onları kimsesizlikte ve değersizlikte

her ümmetin önüne geçirmiştir. Ancak onlar, sadece sapıklığa öncülük ettiler, halka sadece muhal olanın yolunu gösterdiler, sadece kötü durumu elde ettiler ve sadece vebalin utancını tattılar. Kendilerine uyanların üzerine kalplerinin karanlıklarından akıttılar ve bu yüzden amaçlarının değersiz oluşuyla rezil oldular.

وَاَتْبَعْنَاهُمْ فِي هٰذِهِ الدُّنْيَا لَعْنَةً وَيَوْمَ الْقِيٰمَةِ هُمْ مِنَ الْمَقْبُوحِينَ ﴿٤٢﴾

42- "Bu dünyada onları lanete uğrattık. Kıyamet gününde de onlar, iğrenç kılınmış kimselerden olacaklardır."

Onlar, dünyada Allah'ı tanımaktan, ahirette de O'nun mağfiretinden uzaklaştırılmışlardır. Böylece onlar, bir kovulmadan diğerine, utançtan uzaklığa ve ayrılıktan yanmaya doğru yuvarlanıp durdular.

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوسَى الْكِتَابَ مِنْ بَعْدِ مَٓا اَهْلَكْنَا الْقُرُونَ الْاُولٰى بَصَٓائِرَ لِلنَّاسِ وَهُدًى وَرَحْمَةً لَعَلَّهُمْ يَتَذَكَّرُونَ ﴿٤٣﴾

43- "Andolsun, ilk nesilleri yok ettikten sonra Mûsâ'ya düşünüp ibret alsınlar diye insanların kalp gözünü açan deliller ve bir hidayet rehberi, bir rahmet olarak Kitab'ı verdik."

Evler, ancak yabancılardan boşaldığı zaman güzel olur. Meskenlerin en güzelleri de süsü, rakiplerin yokluğu ve kayboluşu olanlardır. Bu çerçevede Allah, Firavun ve kavmini helâk edip mallarını ve yurtlarını İsrailoğullarına miras kıldığı ve bütün o varlıklardan onların izlerini sildiği zaman, İsrailoğullarının hayatı güzelleşti ve üzerlerine saadet güneşleri doğmuş oldu.

وَمَا كُنْتَ بِجَانِبِ الْغَرْبِيِّ اِذْ قَضَيْنَٓا اِلٰى مُوسَى الْاَمْرَ وَمَا كُنْتَ مِنَ الشَّاهِدِينَ ﴿٤٤﴾

44- "Ey Muhammed! Mûsâ'ya o emri verdiğimiz zaman sen vadinin batı tarafında değildin. O olayı görenlerden de değildin."

Sen hazır değildin ki, bunu müşahedeyle bilesin. Lakin onlar, haklarında verdiğin bilgilerin, kitaplarının seni yalanlamayacağı biçimde olduğunu gördüler. Zorunlu olarak senin durumunu, nasıl bunu kimseden öğrenmediğini ve bir kitaptan okumadığını anladılar. Çünkü sen ümmisin, güzel okumuyorsun. O halde olaydan haber vermen, sadece onu sana bizim öğretmemiz ve seni buna muttali kılmamızladır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

-( وَمَا كُنْتَ بِجَانِبِ الْغَرْبِيِّ ) *"Sen, batı tarafında değildin."* Yani biz, Mûsâ'ya seslenip kendisiyle konuştuğumuz ve sen ile ümmetin hakkında ona hitap ettiğimiz zaman sen, Tur tarafında değildin. Orada olmamanız ise duruma zarar vermez. Benim sizin için olmam, sizin kendiniz için olmanızdan hayırlıdır.

- Allah, Mûsâ'ya hitap edip onunla konuşunca Mûsâ O'na şunu sordu: *"Ben, Tevrat'ta şu şu vasıflara sahip bir ümmet görüyorum. Kimdir onlar?"* Ayrıca pek çok vasıf daha sordu. Bu soruların hepsine: *"O, Ahmed'in ümmetidir"* diye cevap veriliyordu. Bunun üzerine Hz. Mûsâ, bizimle buluşmayı arzulamış, ancak Allah kendisine şöyle buyurmuştur:

*"Şüphesiz bugün onların ortaya çıkış zamanı değildir. Eğer istersen sana onların konuşmasını duyururum."*

Bunun üzerine Hz. Mûsâ, konuşmamızı duymak istedi ve bize seslenerek: *"Ey Ahmed'in ümmeti!"* dedi. Onun bu sesleniși üzerine ümmetin bütün fertleri, babalarının sulplarından cevap verdiler. Böylece Hz. Mûsâ, onların konuşmalarını duydu, lakin onlara yetişmedi.

Bu arada fakir, zenginden bir şey istediği zaman onun isteğini kabul eden zengin, ona bir iyilikte bulunmadan kendisini geri çevirmekten hoşnut olmaz. İbn Abbas'tan yapılan bir rivayette ise Allah'ın şöyle buyurduğu yer almıştır:

*"Ey Muhammed ümmeti! Siz bana dua etmeden ben sizi kabul ettim. Siz benden istemeden önce ben size bahşettim. Siz benden mağfiret dilemeden önce ben sizi bağışladım. Siz benden merhamet talebinde bulunmadan önce ben size merhamet ettim."*

وَلٰكِنَّٓا اَنْشَاْنَا قُرُونًا فَتَطَاوَلَ عَلَيْهِمُ الْعُمُرُۚ وَمَا كُنْتَ ثَاوِيًا فٖٓي اَهْلِ مَدْيَنَ تَتْلُوا عَلَيْهِمْ اٰيَاتِنَاۙ وَلٰكِنَّا كُنَّا مُرْسِلٖينَ ﴿٤٥﴾

45- "Fakat biz, birçok nesiller meydana getirdik. Üzerlerinden uzun çağlar geçti. Sen, Medyen halkı arasında yaşıyor değildin, ayetlerimizi onlardan okuyup öğreniyor da değildin. Fakat gönderen biz idik."

Hz. Mûsâ'nın onlara okuduğu ayetlerden bazısı da peygamberimizi güzellikle anlatmaktan, ümmetini de güzelce övmekten ibaret idi. Bu itibarla biz, varlık olarak sonradan var edilmiş ve yaratılmış bulunuyoruz. Ayetlerde zikredilmemiz ise Allah'ın başlangıcı olmayan kelamına konu teşkil etmemizdir. Bir de biz yokluk âleminde somut varlıklar ve nesneler değildik; ancak Allah'ın kudretinin, ilminin ve iradesinin kapsamında idik. Biz ezelî hitapta, samedî kelamda ve ebedî sözde zikredildik.

وَمَا كُنْتَ بِجَانِبِ الطُّورِ اِذْ نَادَيْنَا وَلٰكِنْ رَحْمَةً مِنْ رَبِّكَ لِتُنْذِرَ قَوْمًا مَٓا اَتٰيهُمْ مِنْ نَذٖيرٍ مِنْ قَبْلِكَ لَعَلَّهُمْ يَتَذَكَّرُونَ ﴿٤٦﴾

46- "Yine biz, Mûsâ'ya seslendiğimiz zaman Tûr'un yan tarafında da değildin. Fakat Rabbinden bir rahmet olarak senden önce kendilerine hiçbir uyarıcı gelmeyen bir kavmi düşünüp öğüt alsınlar diye uyarman için o haberleri sana bildiriyoruz."

Mûsâ'nın kendi ümmetine istediği şeyleri senin ümmetine de verdik. Bir de nasıl ki, biz varlık âleminde meydanda olan Hz. Mûsâ'ya seslendi isek, aynı şekilde yokluk âleminde saklı olan size de seslendik.

Şiir:

*Bana karşı, bulunmadığım durumda olduğun gibi ol*

وَلَوْلَٓا اَنْ تُص۪يبَهُمْ مُص۪يبَةٌ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْد۪يهِمْ فَيَقُولُوا رَبَّنَا لَوْلَٓا
اَرْسَلْتَ اِلَيْنَا رَسُولًا فَنَتَّبِعَ اٰيَاتِكَ وَنَكُونَ مِنَ الْمُؤْمِن۪ينَ ﴿٤٧﴾ فَلَمَّا
جَٓاءَهُمُ الْحَقُّ مِنْ عِنْدِنَا قَالُوا لَوْلَٓا اُو۫تِيَ مِثْلَ مَٓا اُو۫تِيَ مُوسٰى اَوَلَمْ
يَكْفُرُوا بِمَٓا اُو۫تِيَ مُوسٰى مِنْ قَبْلُ قَالُوا سِحْرَانِ تَظَاهَرَا وَقَالُٓوا اِنَّا
بِكُلٍّ كَافِرُونَ ﴿٤٨﴾

47, 48- "Kendi yaptıkları sebebiyle başlarına bir musibet gelip de: 'Ey Rabbimiz! Bize bir peygamber gönderseydin de ayetlerine uysaydık ve müminlerden olsaydık' diyecek olmasalardı, seni peygamber olarak göndermezdik. Onlara katımızdan gerçek gelince: 'Mûsâ'ya verilenlerin benzeri niçin buna da verilmedi' dediler. Onlar, daha önce Mûsâ'ya verilenleri inkâr etmemişler miydi? Onlar: 'İki sihirbaz birbirlerine destek olur' dediler. 'Biz, hepsini inkâr ediyoruz' dediler."

Onlar, fetret zamanında, kendisiyle hidayete ermeleri için, Allah'ın kendilerine bir peygamber göndermesini temenni ettiler, kendilerinden iman ve kabul sözü verdiler. Onlara peygamber gelince de onu yalanladılar ve şöyle dediler:

*"Ona da belirginlikte Mûsâ'nın mucizeleri gibi özel mucizeler verilseydi ya!"*

Oysa bu dilekte bulunmaları, onlar için bir hata, gereksiz bir öneri ve gerekçeleri ellerinden alındıktan sonra yeltendikleri bir tahakküm idi.

Şiir:

*Böyledir yılgın, kopmak istediği zaman*
*Usanır vuslattan ve: şöyle şöyle oldu, der*

Sonra Allah şöyle buyurdu:

*"Mûsâ'yı ve kardeşini de nasıl inkâr edip sihirbazlıkla itham ettiklerini hatırlamıyor musunuz?!"*

قُلْ فَأْتُوا بِكِتَابٍ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ هُوَ اَهْدٰى مِنْهُمَآ اَتَّبِعْهُ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٤٩﴾

49- "De ki: 'Eğer doğru söyleyenler iseniz, Allah katından, doğruya bu ikisinden -Tevrat ve Kur'ân'dan- daha çok ulaştıran bir kitap getirin de ben ona uyayım.'"

Allah buyurur ki:

*"Eğer bu kitabın Allah katından olduğunda şüphe ediyorsanız, onun gibi bir kitap getirin ve ortaklarınızdan yardım isteyin."*

Hz. Peygamber (s.a.v.) zamanından günümüze kadar kimse onun bir benzerini getirememiştir. Kıyamete kadar da onun gibi bir kitap getiremeyeceklerdir.

فَاِنْ لَمْ يَسْتَجِيبُوا لَكَ فَاعْلَمْ اَنَّمَا يَتَّبِعُونَ اَهْوَآءَهُمْ وَمَنْ اَضَلُّ مِمَّنِ اتَّبَعَ هَوٰيهُ بِغَيْرِ هُدًى مِنَ اللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظَّالِمِينَ ﴿٥٠﴾

50- "Eğer sana cevap veremezlerse bil ki onlar, sadece kendi nefislerinin arzularına uymaktadırlar. Allah'tan bir yol gösterme olmaksızın kendi nefsinin arzusuna uyandan daha sapık kim vardır! Şüphesiz Allah zalimler topluluğunu hidayete erdirmez."

وَلَقَدْ وَصَّلْنَا لَهُمُ الْقَوْلَ لَعَلَّهُمْ يَتَذَكَّرُونَ ﴿٥١﴾

51- "Andolsun, düşünüp öğüt alsınlar diye o sözü onlara peş peşe ulaştırdık."

Bir peygamberi diğer bir peygamberin ardından getirdik. Bir kitabı da diğer bir kitabın ardından getirdik. Ne var ki, bunun üzerine onların ancak küfürleri, helâkleri, inkârları ve inatları arttı. Bu nedenle ne hakka döndüler ne de istikamete yöneldiler.

اَلَّذ۪ينَ اٰتَيْنَاهُمُ الْكِتَابَ مِنْ قَبْلِه۪ هُمْ بِه۪ يُؤْمِنُونَ ﴿٥٢﴾

52- "Bu Kur'ân'dan önce kendilerine kitap verdiklerimiz var ya işte onlar ona da inanırlar."

Basiretlerini hidayet nuruyla aydınlattığımız kimseler, inayetin yardımına uygun olarak tasdik ettiler. Hakikati göremeyecek şekilde kör ettiğimiz ve muvaffakiyetin latifelerinin yardımcı olmadığı kimse ise sapıklığında debelenmiştir ve dalaletine dalmıştır.

وَاِذَا يُتْلٰى عَلَيْهِمْ قَالُٓوا اٰمَنَّا بِه۪ٓ اِنَّهُ الْحَقُّ مِنْ رَبِّنَٓا اِنَّا كُنَّا مِنْ قَبْلِه۪
مُسْلِم۪ينَ ﴿٥٣﴾ اُو۬لٰٓئِكَ يُؤْتَوْنَ اَجْرَهُمْ مَرَّتَيْنِ بِمَا صَبَرُوا وَيَدْرَؤُ۫نَ
بِالْحَسَنَةِ السَّيِّئَةَ وَمِمَّا رَزَقْنَاهُمْ يُنْفِقُونَ ﴿٥٤﴾

53, 54- "Kur'ân, kendilerine okunduğu zaman: 'Ona inandık, şüphesiz o, Rabbimizden gelen gerçektir. Şüphesiz biz ondan önce de Müslüman'dık' derler. İşte onların, sabredip kötülüğü iyilikle savmaları ve kendilerine rızık olarak verdiklerimizden Allah yolunda harcamaları karşılığında mükâfatları kendilerine iki kez verilecektir."

Onlar, davetimizi duydukları zaman onu tasdikle karşılarlar ve güzel teslimiyetle boyun eğerler. Böylece emirlere ve yasaklara karşı sabretmeleri sebebiyle, şüphesiz onlara dünyalarında ve ahiretlerinde ecirleri iki kez verilir. Bu ecir, bir defa sevap olarak ahirette, bir defa da Allah'a yakınlığın latifeleri olarak dünyada verilecektir.

وَاِذَا سَمِعُوا اللَّغْوَ اَعْرَضُوا عَنْهُ وَقَالُوا لَنَٓا اَعْمَالُنَا وَلَكُمْ اَعْمَالُكُمْ
سَلَامٌ عَلَيْكُمْ لَا نَبْتَغِي الْجَاهِل۪ينَ ﴿٥٥﴾

55- "Onlar lağvı işittikleri vakit ondan yüz çevirirler ve: 'Bizim işlerimiz bize, sizin işleriniz de size. Selam olsun size. Biz, cahilleri istemeyiz' derler."

( اللغو ) "*Lağv*", Allah'tan gafil kılan şeydir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- ( اللغو ) "*Lağv*", Allah katında bir vesile sağlamayan şeydir.
- ( اللغو ) "*Lağv*", Hak için Hak ile olmayan şeydir.
- ( اللغو ) "*Lağv*", gafil kalpten sadır olan şeydir.
- ( اللغو ) "*Lağv*", işitilmesi yanılgıya yol açan şeydir.

اِنَّكَ لَا تَهْدِي مَنْ اَحْبَبْتَ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ يَهْدِي مَنْ يَشَٓاءُ وَهُوَ اَعْلَمُ بِالْمُهْتَدِينَ ﴿٥٦﴾

56- "Şüphesiz sen, sevdiğin kimseyi hidayete erdiremezsin. Fakat Allah, dilediği kimseyi hidayete erdirir. O, hidayete erecekleri daha iyi bilir."

Hakikatte hidayet, kalbi bâtıldan hakka yönlendirmektir. Bu ise Allah'ın kudretinin özelliklerindendir. Bir de hidayet, mecazen hakka davet anlamında da kullanılmaktadır. Bu, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) vasfı bakımından caiz, hatta vaciptir. Allah şöyle buyurmuştur: ( وَاِنَّكَ لَتَهْدِيٓ اِلٰى صِرَاطٍ مُسْتَقِيمٍ ) "*Şüphesiz sen, dosdoğru bir yola hidayet edersin.*" (Şûrâ, 42/52)

Bir yoruma göre de sen peygamberlik şerefine, resullük makamına, elçilik güzelliğine, makam-ı mahmuda ve başına varılacak Kevser havuzuna sahipsin. Bir de sen, Âdemoğullarının efendisisin. Lakin sevdiğin kimseyi hidayete erdiremezsin. Bu itibarla, Rab olmanın özellikleri, beşer olma vasfına sahip kimseye uygun düşmez.

وَقَالُوٓا اِنْ نَتَّبِعِ الْهُدٰى مَعَكَ نُتَخَطَّفْ مِنْ اَرْضِنَا اَوَلَمْ نُمَكِّنْ لَهُمْ حَرَمًا اٰمِنًا يُجْبٰٓى اِلَيْهِ ثَمَرَاتُ كُلِّ شَيْءٍ رِزْقًا مِنْ لَدُنَّا وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٥٧﴾

57- "Onlar: 'Sizinle beraber doğru yolu tutarsak, kendi yurdumuzdan koparılıp çıkarılırız' dediler. Biz, onları tarafımızdan bir rızık olarak, her türlü meyvelerin ve mahsullerin kendisinde toplandığı, saygın ve güvenlikli bir yere yerleştirmedik mi? Fakat onların çoğu bilmezler."

Dediler ki seni tasdik edersek ve sana inanırsak, canımız için Bedevî Araplardan korkarız. Çünkü kendilerine güç yetiremediğimiz halde onlar bize karşı ittifak halindedirler. Bunun üzerine Allah şöyle buyurdu:

*"Onlardan nasıl korkarsınız? Oysa Allah'ın, düşmanlarınıza karşı size zafer verdiğini görüyorsunuz. Bir de biz, Kâbe'nizin yüceliğine hükmettik ve Mekke'yi dünyanın dört bir yanından her türlü meyvenin taşındığı yer kıldık."*

Bir yoruma göre de kim Allah'ın hakkını yerine getirirse, Allah kainatı bütün halinde onun hizmetine verir. Kim Allah için kendi sırrıyla uğraşır, Allah'ın hakkını yerine getirir ve vakitlerini tamamen Allah'a ibadette harcarsa, himmetiyle Allah'ın memleketinde tasarrufta bulunma imkânına kavuşturulur. Bu çerçevede halk, onun hizmetine verilir ve vakit emrine amade olur. Allah da onun günlerini ve işlerini üzerine alarak zannını gerçek kılar ve hakkını zayi etmez.

Allah'a itaat etmeyen ise dalaletinin vadilerinde helâk olur, utancının ıssız çöllerinde şaşkına döner ve hevâsının vebalini itiraf eder.

وَكَمْ اَهْلَكْنَا مِنْ قَرْيَةٍ بَطِرَتْ مَعِيشَتَهَا فَتِلْكَ مَسَاكِنُهُمْ لَمْ تُسْكَنْ
مِنْ بَعْدِهِمْ اِلَّا قَل۪يلًا وَكُنَّا نَحْنُ الْوَارِث۪ينَ ﴿٥٨﴾

58- "Biz, nimetler içinde şımaran nice memleket halkını helâk etmişizdir. İşte kendilerinden sonra içlerinde pek az oturulmuş yurtları! Onlara biz vâris olduk biz!"

Onlar, nimetlerinin kadrini bilemediler, hallerinin selametine ve işlerinin düzenli oluşuna şükretmediler. Bu yüzden nankörlük

vadilerinde şaşkına dönerek yüzüstü süründüler, ardından küçülmüşlük vadilerinde çeneleri üstüne yere çakıldılar ve Allah, onlara kibirlerinin maskesini kıran zül badelerinden tattırdı. Bu nedenle yerleri onlardan boşalmış, tavanları üzerlerine yıkılmış haldedir. Harabe kargaları ise orada ağıt yakmaktadır.

وَمَا كَانَ رَبُّكَ مُهْلِكَ الْقُرٰى حَتّٰى يَبْعَثَ فٖٓي اُمِّهَا رَسُولًا يَتْلُوا عَلَيْهِمْ اٰيَاتِنَا وَمَا كُنَّا مُهْلِكِي الْقُرٰٓى اِلَّا وَاَهْلُهَا ظَالِمُونَ ﴿٥٩﴾

59- "Rabbin, ülkelerin merkezî yerlerine, kendilerine ayetlerimizi okuyan bir peygamber göndermedikçe oraları helâk edici değildir. Zaten biz, halkları zalim olmadıkça memleketleri helâk etmeyiz."

(وَمَا كَانَ رَبُّكَ مُهْلِكَ الْقُرٰى حَتّٰى يَبْعَثَ فٖٓي اُمِّهَا رَسُولًا يَتْلُوا عَلَيْهِمْ اٰيَاتِنَا) *"Rabbin, ülkelerin merkezî yerlerine, bir peygamber göndermedikçe oraları helâk edici değildir."*

Bu peygamber, insanlara yükümlülüğü emreder, tekvin emriyle de onları dilediğinden haberdar eder. Allah da uyarı için peygamberler gönderir ancak kudretiyle insanları yollarını göremez kılabilir. Delili hiçbir kuşkuya yer bırakmayacak açıklıkta ortaya koyar ancak kaderin hükmüyle sadece ezelde saadetine karar verilen kimseyi hidayet erdirir.

وَمَٓا اُو۫تٖيتُمْ مِنْ شَيْءٍ فَمَتَاعُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَزٖينَتُهَا وَمَا عِنْدَ اللّٰهِ خَيْرٌ وَاَبْقٰى اَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿٦٠﴾

60- "Size verilen her şey, dünya hayatının geçimliği ve süsüdür. Allah katındaki ise daha hayırlı ve daha kalıcıdır. Hâlâ aklınızı kullanmıyor musunuz?"

Dünya tatlı ve yeşildir. Lakin o hakikatte acı ve çürüktür. Bu itibarla sevinci, onun duru olduğunu vehmettirir ancak duruluğunun arkasında bulanıklık vardır. Allah katındaki ise daha hayırlı ve daha kalıcıdır.

اَفَمَنْ وَعَدْنَاهُ وَعْدًا حَسَنًا فَهُوَ لَاقِيهِ كَمَنْ مَتَّعْنَاهُ مَتَاعَ الْحَيٰوةِ
الدُّنْيَا ثُمَّ هُوَ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ مِنَ الْمُحْضَرِينَ ﴿٦١﴾

61- "Kendisinde güzel bir vaadde bulunduğumuz ve o vaad edilen şeye kavuşacak olan kimse, dünya hayatının geçimliklerinden yararlandırdığımız sonra da kıyamet günü huzura getirilecek kimse gibi midir?"

Dünya öyle bir şeydir ki, balının tadını Ebucehil karpuzunun zehirleri izler ve ondan içmenin yol açtığı kayıp, ona duyulan ihtiyacın inceliğine galip gelir. Bir de kendisine ahiretinin nimetlerini bulmakla ikramda bulunulan kimse, dünyasının cehennemine düşmekle müptela olan kimse gibi değildir.

وَيَوْمَ يُنَادِيهِمْ فَيَقُولُ اَيْنَ شُرَكَائِيَ الَّذِينَ كُنْتُمْ تَزْعُمُونَ ﴿٦٢﴾

62- "Allah'ın onlara seslenerek: 'Hani benim var olduğunu iddia ettiğiniz ortaklarım?' diyeceği günü hatırla!"

Bu seslenme, korkutmak ve insanları yoldan çıkaranların oyununu bozmak anlamında olur. Yoksa bırakın doğrusunu da onların nerede cevap verme imkânları olur?! Kaldı ki kendilerini dilediği hale sokan da onlara bunu soran da Allah'tır. Nitekim her fiil ancak O'nun fiiline bağlı olarak ortaya çıkmış ve olan her şey, O'nun koyduğu temel prensipten kaynaklanmıştır.

قَالَ الَّذِينَ حَقَّ عَلَيْهِمُ الْقَوْلُ رَبَّنَا هٰٓؤُلَٓاءِ الَّذِينَ اَغْوَيْنَا اَغْوَيْنَاهُمْ
كَمَا غَوَيْنَا تَبَرَّاْنَٓا اِلَيْكَ مَا كَانُوٓا اِيَّانَا يَعْبُدُونَ ﴿٦٣﴾ وَقِيلَ ادْعُوا
شُرَكَٓاءَكُمْ فَدَعَوْهُمْ فَلَمْ يَسْتَجِيبُوا لَهُمْ وَرَاَوُا الْعَذَابَ لَوْ اَنَّهُمْ
كَانُوا يَهْتَدُونَ ﴿٦٤﴾

63, 64- "Haklarında azap hükmü gerçekleşenler: 'Ey Rabbimiz! İşte şunlar, bizim azdırdıklarımızdır. Kendimiz azdığımız gibi onları

da azdırdık. Şimdi de onlardan uzaklaşıp sana döndük. Zaten onlar bize tapmıyorlardı' diyeceklerdir. Onlara: 'Haydi ortaklarınızı çağırın!' denir. Onlar da çağırırlar; fakat ortakları onlara cevap veremez. Azabı görürler. Keşke onlar, doğru yola gelselerdi."

Onların bazıları, diğer bazılarından uzaklaştıkları için Allah putların tapılmaya layık olmadığını ve hiçbir kimsenin zerre kadar ve en ufak bir yok etme, var etme, icad etme ve sonradan meydana getirme gücüne sahip olmadığını açıklamıştır. Hayır hayır! İddialarının aksine, bir ve karşı konulmaz olan O'dur.

وَيَوْمَ يُنَادِيهِمْ فَيَقُولُ مَاذَٓا اَجَبْتُمُ الْمُرْسَلِينَ ﴿٦٥﴾

65- "Allah'ın onlara seslenerek: 'Peygamberlere ne cevap verdiniz?' diyeceği günü hatırla!"

Allah, onlara heybetli soru sorar. Bu nedenle onların ne temyiz melekesi, ne akıl gücü ne de cevap imkânı kalır. Allah şöyle buyurur:

فَعَمِيَتْ عَلَيْهِمُ الْاَنْبَٓاءُ يَوْمَئِذٍ فَهُمْ لَا يَتَسَٓاءَلُونَ ﴿٦٦﴾

66- "O gün onlara karşı bütün haberler kapanmıştır. Artık birbirlerine de soramazlar."

Onlara şaşkınlık hakim olup büsbütün dehşete kapılmaları sebebiyle artık kendileri için hiçbir konuşma, hiçbir akıl, hiçbir temyiz ve hiçbir anlama söz konusu değildir.

فَاَمَّا مَنْ تَابَ وَاٰمَنَ وَعَمِلَ صَالِحًا فَعَسٰٓى اَنْ يَكُونَ مِنَ الْمُفْلِحِينَ ﴿٦٧﴾ وَرَبُّكَ يَخْلُقُ مَا يَشَٓاءُ وَيَخْتَارُ مَا كَانَ لَهُمُ الْخِيَرَةُ سُبْحَانَ اللّٰهِ وَتَعَالٰى عَمَّا يُشْرِكُونَ ﴿٦٨﴾

67, 68- "Ama tövbe edip iman eden ve salih amel işleyen kimsenin kurtuluşa erenlerden olması umulur. Rabbin, dilediğini yaratır

ve seçer. Onların ise seçim hakkı yoktur. Allah, onların ortak koştuklarından uzaktır ve yücedir."

Allah, yaratıklarının içinden dilediği şeyi ve kimseyi seçer. Kendisine hiçbir yaratığın mukadderatı teslim edilmeyen kimsenin ise seçmeyle ne ilgisi olur?

Seçmek, Allah için mutlak gücün sağladığı ve onun gereği olan bir haktır. Çünkü eğer Allah iradesini ve seçimini uygulamazsa, o zaman mutlak güç vasfına sahip olmamış olur. Nitekim muradını gerçekleştiremeyen kimse, ancak zelil olur. Bu itibarla seçim, Hak için mutlak güç vasfıdır. Halk içinse seçim noksanlık, bela ve kusur vasfıdır. Bu nedenle kulun seçimi hayrına değildir. Çünkü bu, kendisinin hak etmediği bir sıfattır. Layık olmadığı sıfatı taşımaya kalkışan kimse ise gerçekte rezil olur.

Şiir:

*Nice yüksek vasıflar vardır ki, başkası onları iddia ettiği zaman*
*Hırsızların cinayetinin cezası lazım gelir kendisine*

Çamur parçası olan insan Hakk'ın sıfatı olan şeyi iddia ettiği zaman aptallığını ortaya koymuş olur. O halde insan nerede seçim nerede?! Köle nerede mülk nerede?! Hükümdarların tasarrufundaki kölelerin başa geçmekle ne ilgisi var?!

وَرَبُّكَ يَعْلَمُ مَا تُكِنُّ صُدُورُهُمْ وَمَا يُعْلِنُونَ ﴿٦٩﴾

69- "Rabbin, onların sinelerinin gizlediğini de açığa vurduklarını da bilir."

Neden olmasın ki?! Zaten Allah şöyle buyurmuştur:

(اَلَا يَعْلَمُ مَنْ خَلَقَ وَهُوَ اللَّطِيفُ الْخَبِيرُ) *"Yaratan bilmez mi? O, en gizli şeyleri bilir, her şeyden hakkıyla haberdardır."* (Mülk, 67/14)

Bu itibarla hiçbir malumun dışında kalmadığı ilim, lemyezel olan Allah'ın sıfatıdır. Örneksiz olarak yoktan var edebilme kudretine de sadece lemyezel olan Allah sahiptir.

وَهُوَ اللّٰهُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ لَهُ الْحَمْدُ فِي الْاُو۫لٰى وَالْاٰخِرَةِ وَلَهُ الْحُكْمُ وَاِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ﴿٧٠﴾

70- "O, Allah'tır. O'ndan başka hiçbir ilah yoktur. Dünyada da ahirette de hamd O'na mahsustur. Hüküm yalnızca O'nundur. Kesinlikle O'na döndürüleceksiniz."

( لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ ) *"O'ndan başka hiçbir ilah yoktur."*

Yalnızca ve tek başına O, heybetinin mutlak gücüne ve Rab olmanın yüceliğine sahiptir. O'na denk hiçbir benzeri ve O'na benzeyen hiçbir dengi yoktur.

( لَهُ الْحَمْدُ ) *"Hamd O'na mahsustur."*

Bu hamd, verdiklerine karşılık olarak O'nun hakkıdır. Şükür de nimetinin karşılığı olarak O'na mahsustur. O halde dünyada hamda layık olan Allah'tır. Ahirette de şükrü hak eden Allah'tır. Böylece hükümranlık Allah'a ait olduğu için ihsan da O'ndandır. Rahmet Allah'ın olduğu için nimet de Allah'tandır. Kudret Allah'a mahsus olduğu için yardım da Allah'tandır.

قُلْ اَرَاَيْتُمْ اِنْ جَعَلَ اللّٰهُ عَلَيْكُمُ الَّيْلَ سَرْمَدًا اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ مَنْ اِلٰهٌ غَيْرُ اللّٰهِ يَأْت۪يكُمْ بِضِيَٓاءٍ اَفَلَا تَسْمَعُونَ ﴿٧١﴾

71- "De ki: 'Ne dersiniz? Allah, üzerinize geceyi kıyamete kadar sürekli kılsa, Allah'tan başka hangi ilah size bir aydınlık getirir? Hâlâ duymayacak mısınız?'"

Eğer durgunluk geceleri devam ederse, tövbe gündüzünü Allah'tan başka kim getirebilir?!

Eğer talep geceleri devam ederse, varlık sabahını Allah'tan başka kim getirebilir?

Eğer kabz geceleri devam ederse, bast sabahını Allah'tan başka kim getirebilir?

Eğer ayrılık gecesi devam ederse, vuslat sabahını Allah'tan başka kim getirebilir?

قُلْ اَرَاَيْتُمْ اِنْ جَعَلَ اللّٰهُ عَلَيْكُمُ النَّهَارَ سَرْمَدًا اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ مَنْ اِلٰهٌ غَيْرُ اللّٰهِ يَاْتٖيكُمْ بِلَيْلٍ تَسْكُنُونَ فٖيهِ اَفَلَا تُبْصِرُونَ ﴿٧٢﴾

72- "De ki: 'Ne dersiniz? Allah, üzerinize gündüzü kıyamete kadar sürekli kılsa, Allah'tan başka hangi ilah size içinde dinleneceğiniz bir gece getirebilir? Hâlâ görmeyecek misiniz?'"

Eğer gündüzünüz vuslatta devam ederse gammazların neşenizi bozmaya yönelik hangi yolu olur?

Eğer dünyalık hayatınızın gündüzü ve nefsinizin arzularıyla meşgul olduğunuz vakit devam ederse, içinde Allah ile huzur bulacağınız ve meşguliyetlerinizden kurtulup Allah ile baş başa kalmakla dinleneceğiniz geceyi size Allah'tan başka hangi ilah getirebilir?

وَمِنْ رَحْمَتِهٖ جَعَلَ لَكُمُ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ لِتَسْكُنُوا فٖيهِ وَلِتَبْتَغُوا مِنْ فَضْلِهٖ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿٧٣﴾

73- "Allah, rahmetinden ötürü geceyi içinde dinlenesiniz, gündüzü de lütfundan isteyesiniz ve şükredesiniz diye sizin için yarattı."

Vakitler, içlerinde meydana gelen fiillerin ve hallerin zarflarıdır. Bu çerçevede zaman zarfları mütecanistir. Farklılık ise onlarda meydana gelenlerin kendisinden kaynaklanmaktadır. Mesela; vuslat ehlinin geceleri, gecelerin efendileridir. Ayrılık ehlinin geceleri de gecelerin en kötüleridir. Bir de yakınlık ehlinin geceleri ve gündüzleri kısadır. Ayrılık ehlinin ise geceleri uzundur. Aslında onların gecelerinde ve gündüzlerinde geçen bütün vakitleri böyledir.

Şair şöyle der:

*Geceler uzundur uzaklaştığın zaman*
*Oysa kısa görürüm onları yakınlaştığın zaman*

Diğer bir şair de şöyle der:

*Gece en uzun zamandır onu kaybettiğim zaman*
*Oysa gece en kısa zamandır onu bulduğum zaman*
*Üçüncü bir şair ise şöyle der:*
*Gün uzuyor onda sana rastlamadığımda*
*Oysa kısadır içinde buluştuğumuz yıl*

وَيَوْمَ يُنَادِيهِمْ فَيَقُولُ اَيْنَ شُرَكَٓائِيَ الَّذِينَ كُنْتُمْ تَزْعُمُونَ ﴿٧٤﴾ وَنَزَعْنَا مِنْ كُلِّ اُمَّةٍ شَهِيدًا فَقُلْنَا هَاتُوا بُرْهَانَكُمْ فَعَلِمُوٓا اَنَّ الْحَقَّ لِلّٰهِ وَضَلَّ عَنْهُمْ مَا كَانُوا يَفْتَرُونَ ﴿٧٥﴾

74, 75- "Allah'ın, onlara seslenerek. 'Hani benim, var olduğunu iddia ettiğiniz ortaklarım?' diyeceği günü hatırla. Her ümmetten bir şahit çıkarırız ve: 'Kesin delilinizi getirin' deriz. Onlar da gerçeğin Allah'a ait olduğunu bilirler. Uydurdukları şeyler -putlar- ise kendilerini bırakıp kaybolmuşlardır."

Hayır hayır! Onların hiçbir delili, kendilerini mazur gösterecek hiçbir cevap, onlara merhamet edecek hiçbir şefaatçi ve kendilerine yardım edecek hiçbir yardımcı yoktur.

Dalaletleri ün salmış ve cehaletleri herkesçe bilinir olmuştur. Böylece ebedi azapları sürüp gitmiş ve sonsuz vebal onları kuşatmıştır.

اِنَّ قَارُونَ كَانَ مِنْ قَوْمِ مُوسٰى فَبَغٰى عَلَيْهِمْ وَاٰتَيْنَاهُ مِنَ الْكُنُوزِ مَٓا اِنَّ مَفَاتِحَهُ لَتَنُٓوأُ بِالْعُصْبَةِ اُولِي الْقُوَّةِ اِذْ قَالَ لَهُ قَوْمُهُ لَا تَفْرَحْ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْفَرِحِينَ ﴿٧٦﴾

76- "Şüphesiz Karûn, Mûsâ'nın kavmindendi. Onlara karşı azgınlık etti. Biz ona, anahtarları bile güçlü bir topluluğa ağır gelecek hazineler verdik. Hani, kavmi kendisine şöyle demişti: 'Böbürlenme! Çünkü Allah, böbürlenip şımaranları sevmez.'"

Kıssalarda yer aldığına göre Karûn, Hz. Mûsâ'nın amcasının oğlu ve İsrailoğullarının en çok ibadet edeni idi. İnsanlardan uzaklaşıp manastırında tek başına kendini ibadete vermişti. Derken İblis, bir insan kılığında karşısına çıkarak görünürde manastırında kendisiyle beraber ibadet etmeye başladı. O kadar ki Karûn, ibadetinin çokluğuna şaşırdı. Bunu anlayan İblis bir gün kendisine şöyle dedi:

*"Biz bir işe yaramıyoruz. Bize, zorunlu ihtiyacımız olan bir şey versinler diye gözümüz insanların elindedir."*

Bunun üzerine Karûn: *"O halde ne yapmamız gerekir?"* deyince İblis: *"Haftada bir gün pazara inerek çalışır ve kazandığımız meblağı hafta içinde harcarız."* dedi. Karûn İblis'in bu önerisini kabul etti. Böylece haftada bir gün pazara iniyorlardı.

Sonra İblis, kendisine: *"Ben de sen de bir işe yaramıyoruz"* dedi.

Karûn: *"Ne yapmamız gerekir?"* dedi.

Bu kez İblis dedi ki:

*"Haftada bir gün kendimiz için kazanırız, bir gün de kazanıp kazancımızı sadaka olarak veririz."*

Karûn, bu önerisini de kabul etti.

Sonra İblis başka bir gün yine ona: *"Biz, bir işe yaramıyoruz"* dedi.

Karûn: *"Bu kez ne var?"* deyince İblis şöyle dedi:

*"Hastalanır veya bir meşguliyetimiz çıkarsa, bir günlük bile azığımız olmaz."*

Karûn: *"Ne yapalım?"* dedi.

İblis dedi ki:

*"Haftada üç gün çalışıp kazanırız. Bir gün masraf için, bir gün sadaka için, bir gün de tasarruf için."*

Karûn bunu da kabul etti. İblis, artık dünya sevgisinin Karûn'un kalbinde yer ettiğini anlayınca kendisine veda ederek: *"Ben, senden ayrılıyorum. Sen bu durumuna devam et"* dedi. Böylece Karûn'un durumu ve malıyla ilgili olarak yaşanan gelişmeler meydana gelmiş oldu. Dünya sevgisi, onu dünya malını toplamaya; dünya malını toplamak da onu dünya sevgisine sevk etti. Ayrıca dünya sevgisi, kendisini insanlara haksızlık etmeye de sevk etti ve malının çokluğu helâkine sebep oldu. Bu esnada defalarca dünya varlığıyla sevinmemesi ve dünya metaıyla eğlenmeyi terk etmesi kendisine tavsiye edildi. Ancak o, dalaletten başka hiçbir şeye yanaşmadı.

Bir yoruma göre de Allah, Hz. Mûsâ'nın bedduasıyla kendisini yerin dibine batırdı. Şöyle ki Hz. Mûsâ: *"Ey yer, al onu!"* diyordu. Bu esnada Karûn yerin dibine batırılırken akrabalık hakkına sığınarak Hz. Mûsâ'dan yardım istiyor, ancak Hz. Mûsâ her defasında: *"Ey yer, al onu!"* diyordu.

Bu arada Allah'ın Hz. Mûsâ'ya vahyettikleri arasında şu ifade de yer almıştır:

*"Karûn, akrabalık hakkıyla sana seslenirken sen: 'Ey yer, al onu!' diyordun. Ben ise: 'Ey kul bana seslen! Çünkü ben, sana Mûsâ'dan daha yakınım" diyordum. Lakin o, bunu demedi."*

Yine kıssasında yer aldığına göre Karûn, yerin dibine her gün belli bir miktar ilaveyle batırılıyordu. Bu bağlamda Allah, Hz. Yûnus'u balığın karnında hapsettiğinde, Hz. Yûnus'un canı sıkılmasın diye balığa denizlerde dolaşmasını emretti. Nihayet Karûn'un yanına vardı ve Karûn, kendisine Hz. Mûsâ'yı ve halini sordu. İşte bu olaydan dolayı, Karûn yerin dibine batarken Allah görevli meleğe şunu vahyetti:

*"Amcasının oğlunu sormuş ve akrabalık bağını gözetmiş olmasına hürmeten onu daha fazla yerin dibine batırma."*

وَابْتَغِ فِيمَٓا اٰتٰيكَ اللّٰهُ الدَّارَ الْاٰخِرَةَ وَلَا تَنْسَ نَصٖيبَكَ مِنَ الدُّنْيَا
وَاَحْسِنْ كَمَٓا اَحْسَنَ اللّٰهُ اِلَيْكَ وَلَا تَبْغِ الْفَسَادَ فِي الْاَرْضِ اِنَّ اللّٰهَ
لَا يُحِبُّ الْمُفْسِدٖينَ ﴿٧٧﴾

77- "Allah'ın sana verdiği şeylerde ahiret yurdunu ara. Dünyadan da nasibini unutma. Allah'ın sana iyilik yaptığı gibi sen de iyilik yap ve yeryüzünde bozgunculuk isteme. Çünkü Allah, bozguncuları sevmez."

Kabulden mahrum edilen kimseye yapılan nasihat, çorak toprağa atılan tohum gibidir. Bu nedenledir ki ona yaptıkları nasihat kendisine fayda vermemiş ve onda kabule götüren bir yol bulunmamıştır.

( وَلَا تَنْسَ نَصٖيبَكَ مِنَ الدُّنْيَا ) *"Dünyadan da nasibini unutma."*

Dünyadan nasipten maksat, onu toplamak veya engellemek değildir. Dünyadan elde edilecek nasip, sonunda pişmanlığa yol açmayacak ve ahirette azaba sebep olmayacak şekilde faydalı olan şeydir.

Bir yoruma göre de dünyadan elde edilecek nasip, nefis ile Allah'a itaate, kalp ile O'nu tanımaya, dil ile O'nu anmaya, sır ile de O'nu görmeye sevk eden şeydir.

( وَاَحْسِنْ كَمَٓا اَحْسَنَ اللّٰهُ اِلَيْكَ ) *"Allah'ın sana iyilik yaptığı gibi sen de iyilik yap."*

Ancak Allah'a iman ederse bir kimseden iyilik gerçekleşir. Çünkü kâfirin hiçbir iyiliği yoktur. Bu arada ayet Allah'ın, kâfir üzerinde dünyalık nimetlerinin bulunduğunu göstermektedir.

Öte yandan bu ayette emredilen iyilik, nimeti taat ve hizmet yollarında harcamak ve ona küfranla değil, şükranla karşılık vermektir.

Bir yoruma göre de iyilik, kendisinin hak ettiğini sanmadan Allah'ın lütfunu görmektir.

قَالَ اِنَّمَٓا اُو۫تيتُهُ عَلٰى عِلْمٍ عِنْد۪ي اَوَلَمْ يَعْلَمْ اَنَّ اللّٰهَ قَدْ اَهْلَكَ مِنْ قَبْلِه۪ مِنَ الْقُرُونِ مَنْ هُوَ اَشَدُّ مِنْهُ قُوَّةً وَاَكْثَرُ جَمْعًا وَلَا يُسْـَٔلُ عَنْ ذُنُوبِهِمُ الْمُجْرِمُونَ ﴿٧٨﴾

78- "Karûn: 'Bunlar bana bendeki bilgiden dolayı verilmiştir' dedi. O, Allah'ın, kendisinden önceki nesillerden, ondan daha kuvvetli ve daha çok mal biriktirmiş kimseleri helâk etmiş olduğunu bilmiyor muydu? Suçlulukları kesinleşmiş olanlara günahları konusunda soru sorulmaz."

Nefsini gören herkes, mutlaka kendini beğenmesiyle helâk olmuştur.

Bir yoruma göre de öldürücü zehir ve ışık veren lambayı söndüren şey, nefse olumlu gözle bakmak ve kişinin olumlu veya olumsuz bir şeyin kendisinin eseri olduğunu sanmasıdır.

فَخَرَجَ عَلٰى قَوْمِه۪ ف۪ي ز۪ينَتِه۪ قَالَ الَّذ۪ينَ يُر۪يدُونَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا يَا لَيْتَ لَنَا مِثْلَ مَٓا اُو۫تِيَ قَارُونُ اِنَّهُ لَذُو حَظٍّ عَظ۪يمٍ ﴿٧٩﴾

79- "Karûn, zineti içinde kavminin karşısına çıktı. Dünya hayatını arzu edenler: 'Keşke Karûn'a verilen gibi bizim de olsaydı. Şüphesiz o, büyük bir servet sahibidir' dediler."

Dünya sevgisinde Karûn gibi olanlardan onu gören, Allah'ın ona verdiğinin bir benzerini kendisine de vermesini temenni etti. Gafletinin sarhoşluğundan ayılan ve basiretinin nuruyla uyanan kimselerin tutumu ise şu ayetteki gibi olmuştur:

وَقَالَ الَّذ۪ينَ اُو۫تُوا الْعِلْمَ وَيْلَكُمْ ثَوَابُ اللّٰهِ خَيْرٌ لِمَنْ اٰمَنَ وَعَمِلَ صَالِحًا وَلَا يُلَقّٰيهَٓا اِلَّا الصَّابِرُونَ ﴿٨٠﴾

80- "Kendilerine ilim verilmiş olanlar ise: 'Yazıklar olsun size! İman edip de iyi işler yapanlara Allah'ın vereceği mükâfat daha hayırlıdır. Ona da ancak sabredenler kavuşturulur' dediler."

فَخَسَفْنَا بِهٖ وَبِدَارِهِ الْاَرْضَ فَمَا كَانَ لَهُ مِنْ فِئَةٍ يَنْصُرُونَهُ مِنْ دُونِ
اللّٰهِ وَمَا كَانَ مِنَ الْمُنْتَصِرِينَ ﴿٨١﴾

81- "Sonunda onu da sarayını da yerin dibine batırdık. Allah'a karşı ona yardım edebilecek adamları da yoktu. Kendisini savunup kurtarabileceklerden de değildi."

Olanlar olduktan ve biz, onu ve sarayını yerin dibine batırdıktan sonra bunlar şöyle dediler:

وَاَصْبَحَ الَّذِينَ تَمَنَّوْا مَكَانَهُ بِالْاَمْسِ يَقُولُونَ وَيْكَاَنَّ اللّٰهَ يَبْسُطُ
الرِّزْقَ لِمَنْ يَشَٓاءُ مِنْ عِبَادِهٖ وَيَقْدِرُ لَوْلَٓا اَنْ مَنَّ اللّٰهُ عَلَيْنَا لَخَسَفَ
بِنَا وَيْكَاَنَّهُ لَا يُفْلِحُ الْكَافِرُونَ ﴿٨٢﴾

82- "Daha dün onun yerinde olmayı arzu edenler: 'Vay! Demek ki Allah, kullarından dilediği kimselere rızkı bol verir ve kısarmış. Allah bize lütfetmiş olmasaydı, bizi de yerin dibine geçirirdi. Demek ki kâfirler iflah olmayacak' demeye başladılar."

Allah, bize lütufta bulundu da biz, onun bataklık olan yoluna sürüklenmedik ve izinden gitmedik. Yoksa helâk olacaktık. Onun yerinde olmayı temenni edenler ise pişmanlık duydular. Allah'ın taksimatına razı olanlar ise kurtuldular. Dünyada kurtuldular ve bu kurtuluş, ahirette saadetleri ortaya çıkıncaya kadar devam edecektir.

تِلْكَ الدَّارُ الْاٰخِرَةُ نَجْعَلُهَا لِلَّذِينَ لَا يُرِيدُونَ عُلُوًّا فِي الْاَرْضِ
وَلَا فَسَادًا وَالْعَاقِبَةُ لِلْمُتَّقِينَ ﴿٨٣﴾

83- "İşte ahiret yurdu. Biz, onu yeryüzünde büyüklük taslamayan ve bozgunculuk çıkarmayanlara has kılarız. Sonuç, takva sahiplerinindir."

Bir görüşe göre dünyada büyüklük taslamak, yeryüzünde senden daha kötü birinin bulunduğunu sanmandır. Bozgunculuk çıkarmak ise bir nefeslik veya bir adımlık dahi olsa nefsinin arzusu ve nasibin için hareket etmendir. Bu durum, büyük şahsiyetler içindir. Küçüklere ve avama gelince, onlar bakımından ahiret yurdunu Allah yeryüzünde Firavun gibi büyüklük taslamayan ve Karûn gibi bozgunculuk çıkarmayanlara has kılar.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Zahidler, yeryüzünde büyüklük taslamazlar. Arifler de ahirette ve cennette büyüklük istemezler.

- O ahiret yurdu, abidler ve zahidler içindir. Bu hazır rahmet de ihtiyaç ve tevazu sahibi kimseler içindir.

مَنْ جَٓاءَ بِالْحَسَنَةِ فَلَهُ خَيْرٌ مِنْهَا وَمَنْ جَٓاءَ بِالسَّيِّئَةِ فَلَا يُجْزَى
الَّذِينَ عَمِلُوا السَّيِّـَٔاتِ اِلَّا مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿٨٤﴾

84- "Kim bir iyilik yaparsa, ona bundan daha hayırlısı vardır. Kim de bir kötülük işlerse, bilsin ki kötülük işleyenler ancak yapmakta olduklarının cezasına çarptırılırlar."

İyiliğin sevabı katlanarak artar. Kötülükte asıl olan ise karşılığının hafifletilmesidir.

Bu arada mümin, büyük günahlara sahip olsa da imanı ve marifetinden ibaret olan iyiliklerinin yanında kötülükleri cılız kalır.

اِنَّ الَّذِي فَرَضَ عَلَيْكَ الْقُرْاٰنَ لَرَٓادُّكَ اِلٰى مَعَادٍ قُلْ رَبّ۪ٓي اَعْلَمُ مَنْ
جَٓاءَ بِالْهُدٰى وَمَنْ هُوَ ف۪ي ضَلَالٍ مُب۪ينٍ ﴿٨٥﴾

85- "Kur'ân'ı sana farz kılan Allah, şüphesiz seni, dönülecek bir yere döndürecektir. De ki: 'Rabbim hidayetle geleni ve apaçık bir sapıklık içinde olanı daha iyi bilir.'"

( لَرَآدُّكَ اِلٰى مَعَادٍ ) *"Seni, dönülecek bir yere döndürecektir."*

Zahire göre bu yer Mekke'dir. Nitekim Hz. Peygamber çokça: *"Vatan! Vatan!"* diyordu. Bunun üzerine Allah, onun dileğini gerçekleştirdi. Sır ve işaret bakımından ise ayetin yorumu şöyledir: Şüphesiz Allah sana Kur'ân'ı farz kıldı. Yani Kur'ân okumayı sana müyesser kıldı. Dönülecek yer ise ruhunun, yakınlığın acılarından ve hakkı gözetmekten aldığın yaradan önce sahip olduğu vasıftır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Seni, tebliğde bulunmak ve şeriatı yaymak suretiyle ayrılık vasıflarıyla görevlendiren Allah, Hak ile hakikate ermek ve halktan kopup fenaya varmak suretiyle de cemin ta kendisine döndürecektir.

- Kulluğun göstergeleriyle seni sabit kıldığı makamda konumlandıran Allah, seni hakikatin varlığında yok etmek suretiyle kendinden geçeceğin fena makamına döndürecektir.

وَمَا كُنْتَ تَرْجُوٓا اَنْ يُلْقٰٓى اِلَيْكَ الْكِتَابُ اِلَّا رَحْمَةً مِنْ رَبِّكَ فَلَا
تَكُونَنَّ ظَهِيرًا لِلْكَافِرِينَ ﴿٨٦﴾

86- "Sen, bu kitabın sana verileceğini ummuyordun. Ancak o, Rabbinden bir rahmet olarak sana verildi. Öyle ise kâfirlere sakın arka çıkma!"

Sen, peygamberlik makamını, resullük şerefini, hitabımıza ehil olacağını ve sende ortaya çıkardığımız vecd hallerini ve tevhid hakikatlerini ummuyordun.

وَلَا يَصُدُّنَّكَ عَنْ اٰيَاتِ اللّٰهِ بَعْدَ اِذْ اُنْزِلَتْ اِلَيْكَ وَادْعُ اِلٰى رَبِّكَ
وَلَا تَكُونَنَّ مِنَ الْمُشْرِكِينَ ﴿٨٧﴾

87- "Allah'ın ayetleri sana indirildikten sonra sakın seni onlardan çevirmesinler. Rabbine çağır ve sakın Allah'a ortak koşanlardan olma!"

Ayetler sana indikten sonra erime, şuhûd, idrak ve vücut hükmüyle bulduklarını seni onlardan çevirmesin ve ihtimalleri caiz görme töhmeti ile âlimlerin ileri sürdükleri akli hükümlere dair soruları senin içine girmesin. Zira gün ışığında görülen şeyin lambanın ışığında gizli kalması onun yokluğunu göstermez.

وَلَا تَدْعُ مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ كُلُّ شَيْءٍ هَالِكٌ اِلَّا وَجْهَهُ لَهُ الْحُكْمُ وَاِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ﴿٨٨﴾

88- "Sen, Allah ile beraber başka bir ilaha ibadet etme! O'ndan başka hiçbir ilah yoktur. O'nun zatından başka her şey yok olacaktır. Hüküm yalnızca O'nundur ve kesinlikle O'na döndürüleceksiniz."

Allah rızası ve Allah'a yakınlaşmak için olan hariç, her amel geçersizdir.

Allah'tan başka her hayat sahibi ölür. Burada "helâk (yok olmak)" lafzı ölmek anlamındadır. Allah: ( اِنِ امْرُؤٌا هَلَكَ ) "*Eğer bir kimse helâk olursa*" (Nisâ, 4/176), yani ölürse buyurmuştur. Bu itibarla her şey ölmeye ve yok olmaya elverişli hazırlanmıştır. Allah'ın zatından başka da hiçbir şey kalmayacaktır. Ayette yer alan ( وجه ) "*vech-yüz*", Allah'ın zatından bağımsız olmayan bir sıfatıdır. Bu itibarla Allah'ın vechi kalıcı olduğuna göre vechinin kalıcılığının şartlarından biri de zatının kalıcı olmasıdır. Çünkü sıfat, ancak bir mevcut ile var olabilir. Allah da ancak kendisi için vacip olan zatî sıfatlarının varlığıyla kalıcı olur. O halde vechinin kalıcı olması, aynı zamanda zatının ve sıfatlarının da kalıcı olması demektir.

Öte yandan burada özellikle "vech"in zikredilmiş olmasının hikmeti, Allah'ın vechinin vacip oluşunun akıl ile değil, sadece haber ve nakille bilinebilir olmasıdır. Bu nedenle Allah özellikle "vech"i zikretmiştir. Çünkü vechin kalıcı olması, Hakk'ın sıfatlarıyla kalıcı olması demektir.

سورة الْعَنْكَبُوتِ

# ANKEBÛT SÛRESİ

(Ankebut Sûresi 69 âyettir. 1-11 arası âyetler Medine'de, diğerleri Mekke'de inmiştir. Ankebut "örümcek" demektir. 41. âyette, küfür ehlinin işleri, örümcek ağına benzetildiği için, sûre bu adı almıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir isimdir ki abidlere makam sağlamayı vaat eder. Onu dinlemek ise vecd ehline peşin teselli sağlar. O, öyle bir isimdir ki onu zikreden, ahiretinde sevaba nail olur. Onu içten dinleyen ise dünyasında Allah'a yakınlık payesini kazanır.

الٓمٓ ﴿١﴾ اَحَسِبَ النَّاسُ اَنْ يُتْرَكُٓوا اَنْ يَقُولُٓوا اٰمَنَّا وَهُمْ لَا
يُفْتَنُونَ ﴿٢﴾

**1, 2- "Elif. Lâm. Mîm. İnsanlar, 'inandık' demekle imtihan edilmeden bırakılacaklarını mı zannederler?"**

(ا) "*Elif*", zenginlik ve her şeyin kendisine muhtaç olması bakımından Allah'ın, kendisi dışındaki her şeyden bağımsız ve bir olmasına işarettir. Tıpkı bütün harflerin bitiştiği fakat hiçbir harfe bitişmeyen "elif" harfi gibi.

( لٓ ) "*Lâm*", şu anlama işaret eder: Hiçbir harf yoktur ki, sonunda bir şekilde eğrilik bulunmasın. Bir de "lâm", "elif" harfine en çok benzeyen harftir. Bu çerçevede o, "elif" gibi dik boyludur. İkisi arasındaki fark, "elif"in hiçbir harfe bitişmemesi, "lâm"ın ise başka harflere bitişmesidir. Ayrıca şüphe yok ki harfler arasında "elif" ve "lâm" dışında iki harften oluşan bir harf bulunmamaktadır. Bu birleşik harf, "eliflâm" diye adlandırılır ve "لا" şeklinde yazılır.

( مٓ ) "*Mîm*" harfine gelince, o "min (den)" harfine işaret etmektedir. Bu itibarla yaratmak Rab'den, hizmet de kuldandır. Ayrıca güç ve lütuf da Rab'dendir.

( اَحَسِبَ النَّاسُ اَنْ يُتْرَكُوٓا ) "*İnsanlar bırakılacaklarını mı zannederler?*"

Onlar imtihana tabi tutulmadan sırf imana dair iddialarıyla bırakılacaklarını mı sanırlar? Oysa bu olmayacaktır. Zira herkesin değeri, imtihanıyladır. Şöyle ki kimin mana değeri artarsa, imtihanının değeri de artmış olur. Bu itibarla nefisler, bir imtihanla yükümlüdürler. Bu imtihan, nefisleri tembelliklerden kurtarmak ve en güzel çalışmaya dönüştürmek suretiyle yükümlülük altında tutmaktır. Kalpler de bir imtihanla yükümlüdürler. Bu imtihan, kalpler, tevhide dair delil aramak ve ilimle hakikate ulaşmak suretiyle, arayışa ve doğru düşünceye sahip olmakla yükümlü kılmaktır. Ruhların da bir imtihanı vardır. Bu imtihan Allah'tan başka herkesin sevgisinden arınmak, her türlü sebepten bağımsız olmak ve yaratıklardan herhangi biriyle huzur bulmaktan tamamen uzaklaşmaktır. Sırlar da bir imtihanla yükümlüdürler. Bu imtihan, içinde tükeninceye kadar tecellinin sonuçlarına tahammül etmek suretiyle keşfin tezahürleri içerisinde itikafa girmektir.

Bir yoruma göre de avamın imtihanı, akıl yürütme ve delil arama günlerindedir. Havassın imtihanı ise müşahede anlarında vuslatın adabını korumayla ilgilidir. Bu arada imtihanların en ağır olanı, Hak şahidinin galebe çaldığı vakitlerde kişinin tuzağa düşüp kendini Hak sanmaması için tevhidin varlığını korumasıdır. Bu durumda kişi, kendinin Hak'tan olduğunu ve Hakk'ın kendisi olduğunun söylenemeyeceğini bilmez. Bu inceliğin farkına varanlar ise pek azdır.

وَلَقَدْ فَتَنَّا الَّذ۪ينَ مِنْ قَبْلِهِمْ فَلَيَعْلَمَنَّ اللّٰهُ الَّذ۪ينَ صَدَقُوا وَلَيَعْلَمَنَّ الْكَاذِب۪ينَ ٣

3- "Andolsun, biz onlardan öncekileri de imtihan etmiştik. Allah doğru söyleyenleri de mutlaka bilir, yalancıları da mutlaka bilir."

Allah, kullarının imtihanlardaki sabırlarını veya onun zıttı olan sabırsızlıklarını, bollukta da şükürlerini veya onun zıttı olan nankörlük ve haksızlıklarını meydana çıkarmak için onları imtihansız ve sıkıntısız bırakmaz. İmtihanları bakımından da insanlar çeşitlere ayrılırlar: Onlardan kimisi sıkıntı halinde sabreder, nimet halinde de şükreder. Bu, sadıkların vasfıdır. Kimisi sıkıntıda feryat eder, sabretmez, nimette de şükretmez. İşte bu kimse, yalancılardandır. Onlardan kimisi de nimetten faydalanmak, sıkıntıda huzur aramak, darlık ve meşakkati tatlı bulmak suretiyle bolluk halinde başkasını kendine tercih eder. Bu kimse de onların mertebece en büyüğüdür.

اَمْ حَسِبَ الَّذ۪ينَ يَعْمَلُونَ السَّيِّاٰتِ اَنْ يَسْبِقُونَا سَٓاءَ مَا يَحْكُمُونَ ٤

4- "Yoksa kötülük yapanlar, bizden kaçıp kurtulacaklarını mı sandılar? Ne kötü hükmediyorlar!"

Onlar aykırı işler yaptıktan sonra kendileriyle ilgili olarak kurtuluş hükmü verirler. Hükümleri kötüdür. Takva elbisesini üzerinden atan kimse, ne zaman azaptan kurtulur?

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Onlar haşir, neşir, hesap sormak ve yükümlüğün bulunmadığını sandılar.

- Onlar, bugün kendilerine mühlet vermemizle aldandılar, bizden kurtulduklarını vehmettiler ve güvene kavuştuklarını sandılar.

- Kötü işler yaparken mutlu bir kadere sahip olduklarını ve bunun, hükmümüzü erteleyeceğini sandılar. Elbette ki öyle değildir. Zira kaderinde mutluluk yazdığımız kimse mutsuz olmayacaktır. Kaderinde mutsuzluğa hükmedilen kimsenin durumu da asla değişmez.

مَنْ كَانَ يَرْجُوا لِقَٓاءَ اللّٰهِ فَاِنَّ اَجَلَ اللّٰهِ لَاٰتٍ وَهُوَ السَّم۪يعُ الْعَل۪يمُ ﴿٥﴾

5- "Her kim Allah'a kavuşmayı umarsa bilsin ki Allah'ın tayin ettiği o vakit elbette gelecektir. O, hakkıyla işitendir, hakkıyla bilendir."

Kim Allah'ın hesap günündeki azabından korkarsa, bugün korku ehli olanlara tarafımızdan söz verilen güvene haşir günü kavuşur. Kim kıyamet günü sevap umarsa, geçmişte yaptığı amelin sevabını görecektir. Kim de ömrünü bize kavuşmak ümidiyle harcamışsa, bize bakmasına müsaade edeceğiz ve o, kaybolmuşluktan ve ayrılıktan kurtulacaktır.

( وَهُوَ السَّم۪يعُ ) *"O, hakkıyla işitendir."*

Onu arzulayanların iniltilerini iştir.

( الْعَل۪يمُ ) *"Hakkıyla bilendir."*

Kendinden geçmiş sevenlerin özlemlerini bilir.

وَمَنْ جَاهَدَ فَاِنَّمَا يُجَاهِدُ لِنَفْسِه۪ اِنَّ اللّٰهَ لَغَنِيٌّ عَنِ الْعَالَم۪ينَ ﴿٦﴾

6- "Her kim cihad ederse, ancak kendisi için cihad etmiş olur. Şüphesiz Allah âlemlere muhtaç değildir."

Kim iyilik yaparsa, o kendi kurtuluşunu aramış ve durumunun mutluluğunu gerçekleştirmiş olur. Kim de kötülük yaparsa, kendi cezasını celp etmiş ve çabasının mutsuzluğunu elde etmiş olur.

Bir yoruma göre de itaat ehlinin sevabı kendilerine döndürülür, asilerin azabı da kendilerine mahsus kılınır. Hak ise mutlak güç sahibi olup emrine itaat edilmekle süslenmiş olmaz. Emrine aykırı davranılmakla da kendisinde bir kusur meydana gelmez.

وَالَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ لَنُكَفِّرَنَّ عَنْهُمْ سَيِّـَٔاتِهِمْ وَلَنَجْزِيَنَّهُمْ
اَحْسَنَ الَّذ۪ي كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿٦﴾

7- "İman edip de salih amel işleyenlerin kötülüklerini elbette örteceğiz. Onları, işlediklerinin daha güzeliyle mükâfatlandıracağız."

Kim bize doğru bir adım atarsa, bizden bir makam kazanır. Kim de bizim yolumuzda bir şehveti terk ederse, bizden safiyet bulur. Bu itibarla onların hayırdan payları hazırdır ve hatalı davranışları bağışlanmıştır. Biz prensibimizi böyle koymuşuzdur. Aynı zamanda bu, hükmümüzün ve kararımızın kapsamı dahilindedir.

وَوَصَّيْنَا الْاِنْسَانَ بِوَالِدَيْهِ حُسْنًا وَاِنْ جَاهَدَاكَ لِتُشْرِكَ بِي مَا لَيْسَ
لَكَ بِهِ عِلْمٌ فَلَا تُطِعْهُمَا اِلَيَّ مَرْجِعُكُمْ فَاُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٨﴾

8- "Biz, insana ana-babasına iyilik etmesini emrettik. Şayet onlar seni, hakkında hiçbir bilgin olmayan şeyi bana ortak koşman için zorlarlarsa, bu takdirde onlara itaat etme. Dönüşünüz ancak bana olacaktır ve ben, yapmakta olduklarınızı size haber vereceğim."

Allah, terbiye hakkının büyüklüğüne dikkat çekmek için kullara, ebeveyn hakkına uymayı emretmiştir. Bu arada ebeveynin verdiği terbiye sınırlı güzellikte olmakla birlikte onlara uymayı gerektirdiğine göre, acaba Allah'ın hakkına uymak, kula olan kapsamlı iyiliği ve daha önce de daha sonra da kendisine tahsis ettiği kadim nimeti hakkında ne zannetmek gerekir?

(وَاِنْ جَاهَدَاكَ لِتُشْرِكَ بِي مَا لَيْسَ لَكَ بِهِ عِلْمٌ فَلَا تُطِعْهُمَا اِلَيَّ مَرْجِعُكُمْ فَاُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ) *"Şayet onlar seni, hakkında hiçbir bilgin olmayan şeyi bana ortak koşman için zorlarlarsa, bu takdirde onlara itaat etme. Dönüşünüz ancak bana olacaktır ve ben, yapmakta olduklarınızı size haber vereceğim."*

Eğer ana-baban, Allah'a ortak koşman konusunda seninle mücadele ederlerse, sakın onlara uymayasın! Lakin onlara incelikle cevap ver ve şefkatle karşı çık.

وَالَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ لَنُدْخِلَنَّهُمْ فِي الصَّالِحِينَ ﴿٩﴾

9- "İman edip de salih amel işleyenler var ya, biz onları mutlaka salihler arasına sokacağız."

Yani şüphesiz biz, onları daha önce salih ameller işleyenlere katacağız. Çünkü sünnetimizden malum olan bir husus da benzeri benzerine katmak ve hakkında benzerine uygulanan hükmü uygulamaktır.

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَقُولُ اٰمَنَّا بِاللّٰهِ فَاِذَٓا اُو۫ذِيَ فِي اللّٰهِ جَعَلَ فِتْنَةَ النَّاسِ كَعَذَابِ اللّٰهِ وَلَئِنْ جَٓاءَ نَصْرٌ مِنْ رَبِّكَ لَيَقُولُنَّ اِنَّا كُنَّا مَعَكُمْ اَوَلَيْسَ اللّٰهُ بِاَعْلَمَ بِمَا ف۪ي صُدُورِ الْعَالَم۪ينَ ﴿١٠﴾

10- "İnsanlardan öyleleri vardır ki: 'Allah'a inandık' derler. Ama Allah uğrunda bir ezaya uğratılınca, insanlardan gördükleri baskı ve işkenceyi Allah'ın azabı gibi tutarlar. Andolsun, Rabbinden bir yardım gelecek olsa, mutlaka: 'Biz de sizinle beraberdik' derler. Allah herkesin kalbinde olanı en iyi bilen değil midir?"

Sıkıntılar insanların cevherlerini meydana çıkarır, aynı zamanda kadir ve kıymetlerini de gösterir. Herkesin kadri ve kıymeti, sıkıntısı sırasında meydana çıkar. Bu çerçevede sıkıntısı, dünyalık bir fırsatı kaçırmaktan ve dünyadan nasibinin eksilmesinden veya bir yakınının ölmesinden ya da halktan sevdiği bir kimseyi yitirmekten kaynaklanan kimsenin kadri düşüktür ve insanlar arasında benzerleri pek çoktur. Sıkıntısı, Allah yolunda ve Allah için olan kimsenin ise kadri büyüktür ve benzerleri azdır. Bunlar sayıca azlardır ancak değer ve önemce büyüktürler. Ayrıca imtihana dayanabilmeleri oranında insanların cevherleri ortaya çıkar ve nefisleri pislikten arınır.

Bir de mümin, tıpkı üstüne her türlü pisliğin atıldığı toprağın her türlü yeşilliği ve ferahlatıcı unsuru bitirmesi gibi, rahatsız edici şeyleri önleyen, halkın zorluklarına katlanabilen, yakınıp acısını ortaya koymaksızın sıkıntıları yutan ve dışarıya sızdırmayan kimsedir.

وَلَيَعْلَمَنَّ اللّٰهُ الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَلَيَعْلَمَنَّ الْمُنَافِق۪ينَ ﴿١١﴾

11- "Allah, elbette kendisine iman edenleri de bilir ve elbette münafıkları da bilir."

Şiir:

*Çarpıştığı zaman gözyaşları yanaklarda*
*Anlaşılır ağlayanla ağlar numarası yapan*

وَقَالَ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا لِلَّذ۪ينَ اٰمَنُوا اتَّبِعُوا سَب۪يلَنَا وَلْنَحْمِلْ خَطَايَاكُمْ
وَمَا هُمْ بِحَامِل۪ينَ مِنْ خَطَايَاهُمْ مِنْ شَيْءٍ اِنَّهُمْ لَكَاذِبُونَ ﴿١٢﴾

12- "Kâfir olanlar iman edenlere: 'Yolumuza uyun da sizin günahlarınızı yüklenelim' derler. Halbuki onların günahlarından hiçbir şey yüklenecek değillerdir. Şüphesiz onlar kesinlikle yalancılardır."

Onlar yerine getirmedikleri güvenceler verdiler ve verdikleri sözlerde durmadılar. Bu nedenle onların hiçbir günahını yüklenmediler. Aksine kendi yüklerini ağırlaştırdılar. Böylece hem kendi yaptıklarının vebalini taşıdılar hem de muhataplarından istediklerinin vebaliyle yükümlü kılındılar. Bu da azaplarını iki misline çıkardı ve onların tarafından hiç kimse rahata ermedi. Müslümanlara verdikleri sözler de yerine gelmeyecek içi boş sözlerden başka bir şey değildir.

وَلَيَحْمِلُنَّ اَثْقَالَهُمْ وَاَثْقَالًا مَعَ اَثْقَالِهِمْ وَلَيُسْـَٔلُنَّ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ عَمَّا
كَانُوا يَفْتَرُونَ ﴿١٣﴾

13- "Andolsun, onlar mutlaka kendi yüklerini ve kendi yükleriyle beraber nice ağır yükleri yükleneceklerdir. Uydurmakta oldukları şeylerden de kıyamet günü şüphesiz sorguya çekileceklerdir."

Bunlara, iddia sahipleri ve hak ehli gibi görünmeye çalışanlar da ekleneceklerdir.

Şiir:

*Kim kendisinde bulunandan başka bir şeyle süslenirse*
*İmtihan, skandala çevirir onun iddiasını*

Allah da şöyle buyurur:

( قُلْ هَاتُوا بُرْهَانَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ) *"De ki: Eğer doğru söylüyorsanız delilinizi getirin."* ( Bakara, 2/111)

Oysa onlar nerede delil getirmek nerede!

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا نُوحًا اِلٰى قَوْمِهِ فَلَبِثَ فِيهِمْ اَلْفَ سَنَةٍ اِلَّا خَمْسِينَ عَامًا فَاَخَذَهُمُ الطُّوفَانُ وَهُمْ ظَالِمُونَ ﴿١٤﴾ فَاَنْجَيْنَاهُ وَاَصْحَابَ السَّفِينَةِ وَجَعَلْنَاهَا اٰيَةً لِلْعَالَمِينَ ﴿١٥﴾

14, 15- "Andolsun, biz Nûh'u kendi kavmine peygamber olarak gönderdik. O da dokuz yüz elli yıl onların arasında kaldı. Neticede onlar, zulümlerini sürdürürlerken tûfan kendilerini yakalayıverdi. Biz de onu ve gemide bulunanları kurtardık ve bunu âlemlere bir ibret kıldık."

Hz. Nûh'un aralarında uzun süre kalması, sadece onun durumu hakkındaki şüphelerini, hali ile ilgili cehaletlerini ve doğruluğu konusundaki tereddütlerini artırdı. Oysa Hz. Nûh, sadece onlara dönük nasihatlerini artırdı ve Allah yolundaki sabrı arttı. Bu arada Allah, onun kavminden daha önce iman etmiş olan o küçük grup dışında kimsenin iman etmeyeceğini kendisine bildirerek gemi edinmesini emretti, kâfirleri gark ederek onlardan tek bir kişi bırakmadı ve sözünü yerine getirerek kuluna yardım etti. Bu itibarla, dinine yardım etmesi konusunda prensibinde hiçbir değişiklik söz konusu değildir.

وَاِبْرٰه۪يمَ اِذْ قَالَ لِقَوْمِهِ اعْبُدُوا اللّٰهَ وَاتَّقُوهُ ذٰلِكُمْ خَيْرٌ لَكُمْ اِنْ
كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿١٦﴾

16- "İbrahim'i de peygamber olarak gönderdik. Hani o, kavmine şöyle demişti: 'Allah'a kulluk edin, O'na karşı gelmekten sakının. Eğer bilirseniz bu, sizin için daha hayırlıdır.' "

Allah, burada Hz. İbrahim'i kavmine karşı nasıl delil getirip onları sağduyuya çağırdığını, kendilerinin ise inkârlarında ısrar ederek taptıkları putlar hakkında taassup gösterdiklerini, Hz. İbrahim'e tuzak kurduklarını, ancak bu tuzaklarının Allah tarafından başlarına yıkılarak kendileri için bir tuzağa ve istidraca çevrildiğini tekrar anlatmıştır. Bu bağlamda Hz. İbrahim'in nasihati onlarda etkili olmamış ve vaazı kendilerinde bir menfez bulamamıştır.

اِنَّمَا تَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ اَوْثَانًا وَتَخْلُقُونَ اِفْكًا اِنَّ الَّذ۪ينَ تَعْبُدُونَ
مِنْ دُونِ اللّٰهِ لَا يَمْلِكُونَ لَكُمْ رِزْقًا فَابْتَغُوا عِنْدَ اللّٰهِ الرِّزْقَ وَاعْبُدُوهُ
وَاشْكُرُوا لَهُ اِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ﴿١٧﴾

17- "Siz, Allah'ı bırakarak ancak putlara tapıyorsunuz ve yalan uyduruyorsunuz. Allah'ı bırakarak taptıklarınızın size hiçbir rızık vermeye güçleri yetmez. Öyle ise rızkı Allah'ın katında arayın. O'na kulluk edin ve O'na şükredin. Siz, yalnız O'na döndürüleceksiniz."

Şu ikisinden hangisinin daha çirkin olduğu bilinmez: Bu cansız varlıklara tapmadaki davranışlarınız mı yoksa onlar hakkında iddia ettiğiniz yalan sözleriniz mi? Oysa onlar, ne size bir fayda verebilirler ne de sizden bir zarar defedebilirler. Onlar, size dönük ne bir iyiliğe ne de bir kötülüğe maliktirler. Aynı zamanda onlar, size şu veya bu şekilde dokunma gücüne de sahip değildirler.

Allah, bir de onların bu söz ve davranışlarında dünyalık arzularını düşünmekten ve rızıklar aramaktan boş olmadıklarını açıklayarak şöyle buyurmuştur:

( فَابْتَغُوا عِنْدَ اللّٰهِ الرِّزْقَ وَاعْبُدُوهُ ) *"Öyle ise rızkı Allah'ın katında arayın. O'na kulluk edin."*

Bunu, dünya ve ahiret iyiliğine kavuşmanız için yapın.

Bu arada, Allah'tan rızık istemek, namaz kılmayı sürdürmek anlamındadır. Çünkü namaz, rızık kapısının açılmasını istemek demektir. Allah şöyle buyurmuştur:

( وَاْمُرْ اَهْلَكَ بِالصَّلٰوةِ وَاصْطَبِرْ عَلَيْهَا لَا نَسْـَٔلُكَ رِزْقًا ) *"Aile fertlerine namazı emret, kendin de ona devam et. Senden rızık istemiyoruz."* (Tâhâ, 20/132)

Bir yoruma göre de rızık aramak, ihtiyaç noktasını görmekle olur. İşte o zaman rızık elde etmek konusundaki arayış, Allah'a yönelmiş olur.

Öte yandan ayette rızık arayışı, ibadete dair emrin önüne alınmıştır. Çünkü kul yeterli rızka sahip olmadan ibadeti yerine getiremez. Nitekim o, ancak kuvvet ile ibadeti yerine getirebilir. Kuvveti ise ancak rızıkla bulur.

Şiir:

*Kişi aramadığı zaman kendine bir geçim*
*Onun cezası olur karşılaştığı zorluklar*

( وَاشْكُرُوا لَهُ ) *"Ve O'na şükredin."*

Çünkü Allah, rızık işinizi üzerine aldı ve bu sayede siz, kendinizi O'nun ibadetine verebildiniz.

وَاِنْ تُكَذِّبُوا فَقَدْ كَذَّبَ اُمَمٌ مِنْ قَبْلِكُمْ وَمَا عَلَى الرَّسُولِ اِلَّا الْبَلَاغُ الْمُبِينُ ﴿١٨﴾

18- "Eğer siz yalanlarsanız, biliniz ki sizden önce geçen bir takım ümmetler de yalanlamışlardı. Peygambere düşen, apaçık tebliğden başka bir şey değildir."

Yalanlamanın vebali, yalanlayana aittir. Açıklayıcı olması için herhangi bir noksanlık bırakmayacak şekilde peygamberliği tebliğ ettikten sonra, peygamberin üzerinde hiçbir sorumluluk kalmaz. Aksi halde yükümlülüğün gereğini yerine getirmemiş olur.

Bu arada, yalanlayanların başına gelen cezada onlardan sonrakilere ibret olması gereken şeyler vardır.

اَوَلَمْ يَرَوْا كَيْفَ يُبْدِئُ اللّٰهُ الْخَلْقَ ثُمَّ يُع۪يدُهُ اِنَّ ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ يَس۪يرٌ ١٩

19- "Onlar, Allah'ın, başlangıçta yaratmayı nasıl yaptığını, sonra onu nasıl tekrarladığını görmüyorlar mı? Şüphesiz bu, Allah'a göre kolaydır."

Hakkında içlerine şüphe düşen husus, halkın öldükten sonra diriltilmesi idi. Bu nedenle Allah, mevsimler sona erdikten sonra tıpkı bir önceki yılda oldukları gibi onları tekrar geri getirmeyi kendilerine göstermek suretiyle onlara karşı delil getirdi. Bir de bünyenin dağılmasından sonra mükelleflerin vücut parçalarını bir araya getirmenin de tıpkı mevsimleri geri getirmek gibi olduğunu açıkladı. Bu itibarla nasıl ki mevsimleri geri getirmek O'nun kudreti dahilinde olup yadırganmıyorsa, halkı diriltmek de böyledir.

Ayrıca, nasıl ki yılın mevsimleri içerisinde herkes arasında müşterek olan genel durumlarda ve müminlerin özel hallerinde kulların durumları, nefsin şehvetlerinin hakimiyeti, sonra bu hakimiyetin yok olup yerini kesintisiz ibadetlerin alması, sonra durgunluğun meydana gelmesi ve ilk duruma dönüş, sonra da tövbeyle kendine gelmek şeklinde tekrarlanıyorsa, aynı şekilde onların da halleri tekrarlanır.

Gönül ehli kimselerin halleri de kabz ve bast, sonra heybet ve ünsiyet, sonra tecelli ve setr, sonra bekâ ve fenâ, sonra da sekr ve sahv ile buna benzer pek çok şekilde birbirini izler.

Nitekim şu ayet de bu anlamdadır:

قُلْ سِيرُوا فِي الْاَرْضِ فَانْظُرُوا كَيْفَ بَدَاَ الْخَلْقَ ثُمَّ اللّٰهُ يُنْشِئُ النَّشْاَةَ الْاٰخِرَةَ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرٌ ﴿٢٠﴾

20- "De ki: 'Yeryüzünde dolaşın da Allah'ın başlangıçta yaratmayı nasıl yaptığına bakın. Sonra Allah, sonraki yaratmayı da yapacaktır. Şüphesiz Allah'ın gücü her şeye hakkıyla yeter.'"

Şu dizeler de hallerin tekrarlanması anlamındadır:

*İçinde su akmış her nehre*
*Dönecektir bir gün su*

يُعَذِّبُ مَنْ يَشَٓاءُ وَيَرْحَمُ مَنْ يَشَٓاءُ وَاِلَيْهِ تُقْلَبُونَ ﴿٢١﴾

21- "O, dilediğine azap eder, dilediğine de merhamet eder. Ancak O'na döndürüleceksiniz."

Allah'ın kullarına verdiği cezaların cinslerinin ve kullarını suçladığı günahların türlerinin haddi hesabı yoktur. Bu cümleden olarak O, dilediğini yalnızlıkla cezalandırır, dilediğine de imanı nasip kılmakla merhamet eder. Dilediğini, inkâr ve inat sebebiyle cezalandırır, dilediğine de tevhid ve vecdlerle merhamet eder. Dilediğini hırsı sebebiyle cezalandırır, dilediğine de kanaati sebebiyle merhamet eder. Dilediğini iradesinin dağınıklığı sebebiyle cezalandırır, dilediğine de himmetini cem etmek suretiyle merhamet eder. Dilediğini tedbirin karanlığına atmakla cezalandırır, dilediğine de takdirin gerçekleşmesini göstermek suretiyle merhamet eder. Dilediğini, nefsini tercih etmesi sebebiyle cezalandırır, dilediğine de Rabbinin hükmüne rıza göstermesi sebebiyle merhamet eder. Dilediğini, O'ndan yüz çevirdiği için cezalandırır, dilediğine de O'na yöneldiği için merhamet eder.

Dilediğini, nefsiyle baş başa bırakmakla cezalandırır, dilediğine de güzelce sahip çıkmakla merhamet eder. Dilediğini, dünyayı sevmek ve ondan alıkonulmakla cezalandırır, dilediğine de dünyayı sevdirmemek ve bolca vermekle merhamet eder. Dilediğini, âdete tutkun kılmakla cezalandırır, dilediğine de, kendisini ibadete bağlı kılmakla merhamet eder. Buna benzer pek çok durum daha vardır.

وَمَٓا اَنْتُمْ بِمُعْجِزٖينَ فِي الْاَرْضِ وَلَا فِي السَّمَٓاءِ وَمَا لَكُمْ مِنْ دُونِ
اللّٰهِ مِنْ وَلِيٍّ وَلَا نَصٖيرٍ ﴿٢٢﴾

22- “Siz yerde de gökte de Allah’ı aciz bırakacak değilsiniz. Sizin Allah’tan başka ne bir dostunuz ne de bir yardımcınız vardır.”

İster inkâr etsinler isterse de tevhidde bulunsunlar ve ister bize yönelsinler isterse de yüz çevirsinler, biz hepsini elimizde çevirir ve takdirin hükümlerini onlara uygularız.

وَالَّذٖينَ كَفَرُوا بِاٰيَاتِ اللّٰهِ وَلِقَٓائِهٖٓ اُو۬لٰٓئِكَ يَئِسُوا مِنْ رَحْمَتٖي وَاُو۬لٰٓئِكَ
لَهُمْ عَذَابٌ اَلٖيمٌ ﴿٢٣﴾

23- “Allah’ın ayetlerini ve O’na kavuşmayı inkâr edenler var ya, işte onlar benim merhametimden ümit kesmişlerdir. İşte onlar için elem dolu bir azap vardır.”

Onların Allah’ın rahmetinden ümidi kesmek suretiyle cezaları çabuklaşmıştır. Bundan daha ağır bir ceza da bulunmamaktadır.

فَمَا كَانَ جَوَابَ قَوْمِهٖٓ اِلَّٓا اَنْ قَالُوا اقْتُلُوهُ اَوْ حَرِّقُوهُ فَاَنْجٰيهُ اللّٰهُ مِنَ
النَّارِ اِنَّ فٖي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ ﴿٢٤﴾ وَقَالَ اِنَّمَا اتَّخَذْتُمْ مِنْ دُونِ
اللّٰهِ اَوْثَانًا مَوَدَّةَ بَيْنِكُمْ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ثُمَّ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ يَكْفُرُ بَعْضُكُمْ
بِبَعْضٍ وَيَلْعَنُ بَعْضُكُمْ بَعْضًا وَمَاْوٰيكُمُ النَّارُ وَمَا لَكُمْ مِنْ نَاصِرٖينَ ﴿٢٥﴾

24, 25- "İbrahim'in kavminin cevabı: 'Onu öldürün veya yakın' demekten ibaret oldu. Allah da, onu ateşten kurtardı. Şüphesiz bunda inanan bir toplum için ibretler vardır. İbrahim onlara dedi ki: 'Sırf aranızda dünya hayatına mahsus bir sevgi uğruna Allah'ı bırakıp birtakım putlar edindiniz. Sonra kıyamet gününde kiminiz kiminizi inkâr edip tanımayacak, kiminiz de kiminize lanet edecektir. Barınağınız cehennem olacaktır. Yardımcılarınız da olmayacaktır.'"

Onlar, Hz. İbrahim'e cevap vermekten aciz kalıp cevap vermede muvaffakiyete mazhar olamayınca bu kez tehdit, uyarı, dirayetsizlik ve azarlama ile ona muhalefet etmeye başladılar. Ancak Allah, onların tuzağını onun üzerinden geri çevirdi, komplolarını engelledi, delilini kanıtladı, herkese onların aczini gösterdi ve sonları bakımından hak edecekleri lanet, kovulma ve her türlü değersizlik ile rezaletin başlarına geleceğini bildirdi.

فَاٰمَنَ لَهُ لُوطٌ وَقَالَ اِنّ۪ي مُهَاجِرٌ اِلٰى رَبّ۪ي اِنَّهُ هُوَ الْعَز۪يزُ الْحَك۪يمُ ٢٦

26- "Bunun üzerine Lût ona iman etti. İbrahim: 'Ben, Rabbime hicret edeceğim. Şüphesiz O, mutlak güç sahibidir, hüküm ve hikmet sahibidir' dedi."

Hicret, ancak kalben tam anlamıyla Allah dışındaki şeylerden uzak durmakla gerçek olur. Bu arada nefisle hicret, havassın hicreti olan kalp ile hicrete göre daha kolaydır. Hicret ise tefrikanın alanlarından cemin alanlarına çıkmaktır. Öte yandan tefrikanın alanlarında kalmak ile cemin alanlarında bulunmayı bir araya getirmek, birbiriyle çelişir.

وَوَهَبْنَا لَهُٓ اِسْحٰقَ وَيَعْقُوبَ وَجَعَلْنَا ف۪ي ذُرِّيَّتِهِ النُّبُوَّةَ وَالْكِتَابَ
وَاٰتَيْنَاهُ اَجْرَهُ فِي الدُّنْيَا وَاِنَّهُ فِي الْاٰخِرَةِ لَمِنَ الصَّالِح۪ينَ ٢٧

27- "Ona İshak'ı ve Yakub'u bahşettik. Onun soyundan gelenlere peygamberlik ve kitap verdik. Ayrıca ona dünyada mükâfatını da verdik. Şüphesiz o, ahirette de salih kimselerdendi."

Hz. İbrahim'in kavmi davetini kabul etmeyip kendisi onlara yönelik nasihatte çaba harcayıp her türlü şefkati gösterince, Allah onun muradını neslinde gerçekleştirmek üzere kendisine çocuklar bahşetti, onları mübarek kıldı, zürriyetine kitap ve peygamberlik verdi ve onları iyilikler için seçti. O kadar ki amelleri kabule, halleri iyiliklere yönelmeye, nefisleri O'nun ibadetini yerine getirmeye, sırları O'nu müşahede etmeye, kalpleri de O'nu tanımaya elverişli oldu.

( وَاِنَّهُ فِي الْاٰخِرَةِ لَمِنَ الصَّالِحِينَ ) *"Şüphesiz o, ahirette de salih kimselerdendi."*

O, ahirette de Allah'a yakın olmaya ve O'nun yakınlığına tahsis edilmeye layık kimselerden idi.

وَلُوطًا اِذْ قَالَ لِقَوْمِهٖٓ اِنَّكُمْ لَتَأْتُونَ الْفَاحِشَةَ مَا سَبَقَكُمْ بِهَا مِنْ
اَحَدٍ مِنَ الْعَالَمِينَ ﴿٢٨﴾ اَئِنَّكُمْ لَتَأْتُونَ الرِّجَالَ وَتَقْطَعُونَ السَّبِيلَ
وَتَأْتُونَ فِي نَادِيكُمُ الْمُنْكَرَ فَمَا كَانَ جَوَابَ قَوْمِهٖٓ اِلَّٓا اَنْ قَالُوا ائْتِنَا
بِعَذَابِ اللّٰهِ اِنْ كُنْتَ مِنَ الصَّادِقِينَ ﴿٢٩﴾ قَالَ رَبِّ انْصُرْنِي عَلَى
الْقَوْمِ الْمُفْسِدِينَ ﴿٣٠﴾

28, 29, 30- "Lût'u da peygamber olarak gönderdik. Hani o, kavmine şöyle demişti: 'Gerçekten siz, sizden önce dünyada hiçbir toplumun yapmadığı bir hayasızlığı işliyorsunuz. Siz hâlâ erkeklere yanaşacak, yol kesecek ve toplantılarınızda edepsizlik yapacak mısınız?' Kavminin cevabı: 'Eğer doğru söyleyenlerden isen, haydi Allah'ın azabını getir bize' demekten ibaret oldu. Lût: 'Ey Rabbim! Şu bozguncu kavme karşı bana yardım et' dedi."

Hz. Lût, iğrenç hasletlerinden dolayı ve Allah'a karşı alışkanlık haline getirdikleri pervasızca hareketleri, iyiliği heder etmeleri, yanı sıra sapkınları sapkınlıklarında serbest bırakmak, engellememek, insanların çirkin davranışlarına muttali olmalarından sakınmamak şeklinde özetlenebilecek olan hatalar yapmaları sebebiyle

onlara sitem etti. Diğer bazı hataları da; yaşlılar ve büyüklere saygılarının az olması, tövbeyi savsaklamaları ve hatayla övünmeleridir.

Onların cevabı ise sadece azabın çabuklaştırılması talebinden ibaret oldu. Bunun üzerine başlarına onları da onlara ortak olanları da helâk eden azap geldi.

وَلَمَّا جَٓاءَتْ رُسُلُنَٓا اِبْرٰهٖيمَ بِالْبُشْرٰى قَالُٓوا اِنَّا مُهْلِكُٓوا اَهْلِ هٰذِهِ الْقَرْيَةِ اِنَّ اَهْلَهَا كَانُوا ظَالِمٖينَ ﴿٣١﴾ قَالَ اِنَّ فٖيهَا لُوطًا قَالُوا نَحْنُ اَعْلَمُ بِمَنْ فٖيهَا لَنُنَجِّيَنَّهُ وَاَهْلَهُٓ اِلَّا امْرَاَتَهُ كَانَتْ مِنَ الْغَابِرٖينَ ﴿٣٢﴾

31, 32- "Elçilerimiz (melekler), İbrahim'e müjdeyi getirdiklerinde: 'Biz, bu memleketin halkını helâk edeceğiz, çünkü oranın ahalisi zalim kimselerdir' dediler. İbrahim: 'Ama orada Lût var' dedi. Onlar: 'Orada kimin bulunduğunu biz daha iyi biliriz. Biz, onu ve ailesini elbette kurtaracağız. Ancak karısı hariç. O, geri kalıp helâk edilenlerden olacaktır.'"

Hz. İbrahim, meleklerin durumlarını anlayamadı ve onları misafir sandı. Bu nedenle, misafire ikram prensibine uygun olarak onlara pişirilmiş bir buzağı takdim etme külfetine girdi. Melekler, Lût kavmini helâk etmeye dair amaçlarını kendisine bildirince Hz. İbrahim, Hz. Lût hakkında konuştu. Nihayet melekler: *"Biz, onu kurtaracağız"* dediler. Bu olay, Allah'ın, dilemesi halinde suçsuz da olsa Hz. Lût'u helâk etmesinin zulüm olmadığına dair delildir. Çünkü eğer Allah'ın bunu yapması çirkin olsaydı, bu husus yeterli bilgisine rağmen Hz. İbrahim için hakkında mücadele edecek ölçüde belirsiz kalmazdı. Doğrusu Allah,cezalandırmak istediğini cezalandırabilir, afiyet vermek istediğine de afiyet verebilir.

وَلَمَّٓا اَنْ جَٓاءَتْ رُسُلُنَا لُوطًا سٖيٓءَ بِهِمْ وَضَاقَ بِهِمْ ذَرْعًا وَقَالُوا لَا تَخَفْ وَلَا تَحْزَنْ اِنَّا مُنَجُّوكَ وَاَهْلَكَ اِلَّا امْرَاَتَكَ كَانَتْ مِنَ الْغَابِرٖينَ ﴿٣٣﴾

33- "Elçilerimiz Lût'a geldiklerinde Lût, onlar yüzünden tasalandı, onlar hakkında çaresizlik içine düştü. Elçiler ona: 'Korkma, üzülme. Biz, seni ve aileni kurtaracağız. Ancak karın hariç. O, geride kalıp helâk edilenlerden olacaktır.'"

Hz. Lût, onları görünce, melek olduklarını bilmediği için kendileri sebebiyle içi daraldı. Kavminin onlara yapacağı kötülükten korktu. Bu yüzden içinin daralması Allah rızası içindi. Derken onlar, melek olduklarını ve kavminin, kendilerine ulaşamayacaklarını ona bildirdiler. İşte o zaman kalbi rahatladı ve iç daralması geçti.

Bir yoruma göre de, kulun beladan kurtulmaya en yakın olduğu an, belanın ağırlaştığı zamandır. İşte bela o esnada yok olur. Çünkü kul, o sırada zaruret halindedir. Allah da, zaruret içinde olanlara kabulün yakın olduğunu söz vermiştir. Nitekim Hz. Lût da o gece aynı durumdaydı. Onlardan tasalanmış, sonra fazla beklemeden sıkıntısından kurtuluşa ermişti.

اِنَّا مُنْزِلُونَ عَلٰٓى اَهْلِ هٰذِهِ الْقَرْيَةِ رِجْزًا مِنَ السَّمَٓاءِ بِمَا كَانُوا
يَفْسُقُونَ ﴿٣٤﴾

34- "Şüphesiz biz, bu memleketin halkı üzerine, fasıklık ettiklerinden dolayı gökten bir azap indireceğiz."

وَلَقَدْ تَرَكْنَا مِنْهَٓا اٰيَةً بَيِّنَةً لِقَوْمٍ يَعْقِلُونَ ﴿٣٥﴾

35- "Andolsun biz, aklını kullanacak bir kavim için o memleketten ibret alınacak apaçık bir delil bıraktık."

Her kim ibret almak isterse, şüphesiz onun için o memleketin kıssasında bir ibret vardır.

وَاِلٰى مَدْيَنَ اَخَاهُمْ شُعَيْبًا فَقَالَ يَا قَوْمِ اعْبُدُوا اللّٰهَ وَارْجُوا الْيَوْمَ
الْاٰخِرَ وَلَا تَعْثَوْا فِي الْاَرْضِ مُفْسِدِينَ ﴿٣٦﴾

36- "Medyen'e de kardeşleri Şuayb'ı peygamber olarak gönderdik. Şuayb: 'Ey kavmim! Allah'a kulluk edin. Ahiret gününe ümit besleyin ve yeryüzünde bozgunculuk yaparak karışıklık çıkarmayın' dedi."

فَكَذَّبُوهُ فَاَخَذَتْهُمُ الرَّجْفَةُ فَاَصْبَحُوا فٖي دَارِهِمْ جَاثِمٖينَ ﴿٣٧﴾

37- "Kavmi, onu yalanladı. Bunun üzerine kendilerini o malum sarsıntı yakaladı da yurtlarında diz üstü çökekaldılar."

وَعَادًا وَثَمُودَا۬ وَقَدْ تَبَيَّنَ لَكُمْ مِنْ مَسَاكِنِهِمْ وَزَيَّنَ لَهُمُ الشَّيْطَانُ
اَعْمَالَهُمْ فَصَدَّهُمْ عَنِ السَّبٖيلِ وَكَانُوا مُسْتَبْصِرٖينَ ﴿٣٨﴾

38- "Âd ve Semûd kavimlerini de helâk ettik. Bu, onların yurtlarından size besbelli olmuştur. Şeytan onlara işlerini süslemiş ve onları doğru yoldan alıkoymuştur. Halbuki onlar, gözü açık kimselerdi."

وَقَارُونَ وَفِرْعَوْنَ وَهَامَانَ وَلَقَدْ جَٓاءَهُمْ مُوسٰى بِالْبَيِّنَاتِ
فَاسْتَكْبَرُوا فِي الْاَرْضِ وَمَا كَانُوا سَابِقٖينَ ﴿٣٩﴾

39- "Karûn'u, Firavun'u ve Hâmân'ı da helak ettik. Andolsun, Mûsâ kendilerine apaçık mucizeler getirmişti de yeryüzünde büyüklük taslamışlardı. Oysa bizi geçip kurtulamazlardı."

فَكُلًّا اَخَذْنَا بِذَنْبِهٖ فَمِنْهُمْ مَنْ اَرْسَلْنَا عَلَيْهِ حَاصِبًا وَمِنْهُمْ مَنْ
اَخَذَتْهُ الصَّيْحَةُ وَمِنْهُمْ مَنْ خَسَفْنَا بِهِ الْاَرْضَ وَمِنْهُمْ مَنْ اَغْرَقْنَا
وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيَظْلِمَهُمْ وَلٰكِنْ كَانُٓوا اَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ﴿٤٠﴾

40- "Bunların her birini kendi günahları yüzünden yakaladık. Onlardan taş yağmuruna tuttuklarımız var. Onlardan o korkunç sesin yakaladığı kimseler var. Onlardan yerin dibine geçirdiklerimiz

var. Onlardan suda boğduklarımız var. Allah, onlara zulmediyor değildi, fakat onlar kendilerine zulmediyorlardı."

Allah, bu ayetlerde Hz. Şuayb, Âd, Semûd, Firavun ve Karûn kıssalarını anlatmıştır. Bunların hepsi de, birbirlerinin minvali üzerine hareket etmiş, yekdiğerinin yolunu izlemiş, nasihati kabul etmemiş ve peygamberlerine muhalefeti umursamamışlardır. Sonra Allah, zayıflara yardım edip zalimleri kahretmekle ilgili prensibini uygulamak üzere onların hepsini helâk etmiştir.

مَثَلُ الَّذِينَ اتَّخَذُوا مِنْ دُونِ اللّٰهِ اَوْلِيَٓاءَ كَمَثَلِ الْعَنْكَبُوتِ اِتَّخَذَتْ
بَيْتًا وَاِنَّ اَوْهَنَ الْبُيُوتِ لَبَيْتُ الْعَنْكَبُوتِ لَوْ كَانُوا يَعْلَمُونَ ﴿٤١﴾

41- "Allah'tan başkalarını dost edinenlerin durumu, kendine bir ev edinen örümceğin durumu gibidir. Evlerin en dayanıksızı ise şüphesiz örümcek evidir. Keşke bilselerdi."

Örümcek, kendine bir ev edinir, ancak evini daha fazla ördükçe ondan çıkmayı daha da uzak hale getirir. Bu nedenle o ev yapmakta, ancak kendi aleyhine yapmaktadır. İşte kâfir de aynen böyledir, çabalar, fakat kendine karşı cinayet işler.

Bu arada örümcek ağı, çoğunlukla duvarların köşelerinde olur. Kâfir de öyledir, işi takiyyeye ve saklanmaya dayalıdır. Oysa mümin açık muameleli olup durumunu saklamaz ve belirsiz bırakmaz.

Öte yandan örümcek ağı evlerin en zayıfıdır. Çünkü o temelsiz, duvarsız ve tavansız olup en hafif bir itişte ayakta duramaz. Kâfir de aynı şekilde olup durumunun hiçbir aslı ve binasının hiçbir esası yoktur. Bir şey görür ancak hayal ile görür. Hakikatte ise bir şey görmez.

اِنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ مَا يَدْعُونَ مِنْ دُونِه۪ مِنْ شَيْءٍ وَهُوَ الْعَز۪يزُ الْحَك۪يمُ ﴿٤٢﴾

42- "Şüphesiz Allah, onların, kendini bırakıp da başka ne tür şeylere taptıklarını biliyor. O, mutlak güç sahibidir, hüküm ve hikmet sahibidir."

وَتِلْكَ الْاَمْثَالُ نَضْرِبُهَا لِلنَّاسِ وَمَا يَعْقِلُهَٓا اِلَّا الْعَالِمُونَ ﴿٤٣﴾

43- "İşte bu temsilleri biz insanlar için getiriyoruz. Onları ancak bilginler düşünüp anlarlar."

Temsilleri dinlemeye herkes katılır. Lakin kalbi nefret eden, hali nankörlük olan, tembelliğe alışmış ve başarısızlık yurtlarında yer edinmiş kimse onlara kulak vermez.

خَلَقَ اللّٰهُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ اِنَّ فٖي ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِلْمُؤْمِنٖينَ ﴿٤٤﴾

44- "Allah, gökleri ve yeri hak ile yaratmıştır. İşte bunda inananlar için bir ibret vardır."

Yani Allah, onları hak söz ve hak emir ile yaratmıştır.

اُتْلُ مَٓا اُوحِيَ اِلَيْكَ مِنَ الْكِتَابِ وَاَقِمِ الصَّلٰوةَ اِنَّ الصَّلٰوةَ تَنْهٰى
عَنِ الْفَحْشَٓاءِ وَالْمُنْكَرِ وَلَذِكْرُ اللّٰهِ اَكْبَرُ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ مَا تَصْنَعُونَ ﴿٤٥﴾

45- "Kitaptan sana vahyolunanı oku, namazı da dosdoğru kıl. Çünkü namaz, insanı hayasızlıktan ve kötülükten alıkoyar. Allah'ı anmak, elbette daha büyüktür. Allah, yaptıklarınızı bilir."

Yani hayasızlık ve kötülükten vazgeçmek, müminin özelliği ve izlediği yoldandır. Yani mümine uygun düşen, hayasızlık ve kötülükten vazgeçmektir. Tıpkı Allah'ın şu ayette söylediği gibi:

( وَعَلَى اللّٰهِ فَتَوَكَّلُوٓا اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنٖينَ ) *"Eğer müminler iseniz, yalnızca Allah'a tevekkül edin."* (Mâide, 5/23)

Yani mümine uygun olan, Allah'a tevekkül etmesidir. Bu çerçevede eğer bir kimsenin tevekkül etmediği varsayılsa, bu durum onu imandan çıkarmaz. Aynı şekilde hayâsızlıktan ve kötülükten vazgeçmeyen kimsenin de namazı, namaz olmaktan çıkmaz.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Doğrusu gerçek namaz, sahibini hayâsızlıktan ve kötülükten alıkoyan namazdır. Eğer kul bunlardan vazgeçmezse, bu takdirde namaz müminin kalbine hayâsızlığı ve kötülüğü engelleyici duyguların doğması anlamında alıkoyucu olur. Ne var ki kul hayâsızlıkta ve kötülükte ısrar ederek o duygulara uymamaktadır.

- Doğrusu gerçek namaz, sahibini hayâsızlıktan ve kötülükten alıkoyan namazdır. Şayet bu gerçekleşirse mesele yoktur. Aksi halde kılınan, namazın gerçeği değil, şeklidir.

- Ayetteki "fahşâ (hayâsızlık)" dünya, "münker (kötülük)" de nefis demektir.

- Ayetteki "fahşâ (hayâsızlık)" günahlar, "münker (kötülük)" de nefsin arzuları demektir.

- Ayetteki "fahşâ (hayasızlık)" ameller, "münker (kötülük)" de amellerle kurtuluş zannı demektir. Bir görüşe göre de "münker" amellere karşılık beklemek ve insanların onları övmesine sevinmektir.

- Ayetteki "fahşâ (hayasızlık)" amelleri görmek, "münker (kötülük)" de onlara karşılık beklemektir.

( وَلَذِكْرُ اللّٰهِ اَكْبَرُ ) *"Allah'ı anmak elbette daha büyüktür."*

Allah'ın anması, yaratıkların anmasından daha büyüktür. Çünkü Allah'ın anması kadim, yaratıkların anması ise sonradandır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kulun Allah'ı anması, başka şeyleri anmasından daha büyüktür. Çünkü Allah'ı anması ibadettir, başkalarını anması ise ibadet olmaz.

- Allah'ın seni anması, senin O'nu anmandan daha büyüktür.

- Allah'ın seni saadet ile anması, senin O'nu ibadetle anmandan daha büyüktür.

- Allah'ı anmak, beraberinde yalnızlığa yer kalmayacak kadar büyüktür.

- Allah'ı anmak, beraberinde mahlûkun anılmasına yer bırakmayacak kadar büyüktür.

- Allah'ı anmak, hatadan eser bırakmayacak kadar büyüktür.

- Allah'ı anmak, yaratıklardan hiçbiri onsuz yaşayamayacak kadar büyüktür.

- Allah'ı anmak, beraberinde hayâsızlığın ve kötülüğün hakimiyetine yer bırakmayacak kadar büyüktür. Allah'ın anılması hürmetine O'nu anan kimsenin hataları bağışlanır ve kusurları örtülür.

وَلَا تُجَادِلُوٓا اَهْلَ الْكِتَابِ اِلَّا بِالَّت۪ي هِيَ اَحْسَنُ اِلَّا الَّذ۪ينَ ظَلَمُوا مِنْهُمْ وَقُولُوٓا اٰمَنَّا بِالَّذ۪ٓي اُنْزِلَ اِلَيْنَا وَاُنْزِلَ اِلَيْكُمْ وَاِلٰهُنَا وَاِلٰهُكُمْ وَاحِدٌ وَنَحْنُ لَهُ مُسْلِمُونَ ﴿٤٦﴾

46- "İçlerinden zulmedenler hariç, Kitap ehli ile ancak en güzel bir yolla mücadele edin ve şöyle deyin: 'Biz, bize indirilene de size indirilene de inandık. Bizim ilâhımız ve sizin ilâhınız birdir. Biz, sadece O'na teslim olmuş kimseleriz.'"

Senin, hasma açıklamada bulunman, hitabında yumuşaklık ve hakkı kabulde insaf olması gerekir. Bir de doğruluğuna inanılan şeyin delil ile desteklenmesine inanmak ve nefsin arzusuyla bir şeye meyletmeyi terk etmek gerekir.

وَكَذٰلِكَ اَنْزَلْنَٓا اِلَيْكَ الْكِتَابَ فَالَّذ۪ينَ اٰتَيْنَاهُمُ الْكِتَابَ يُؤْمِنُونَ بِه۪ وَمِنْ هٰٓؤُ۬لَٓاءِ مَنْ يُؤْمِنُ بِه۪ وَمَا يَجْحَدُ بِاٰيَاتِنَٓا اِلَّا الْكَافِرُونَ ﴿٤٧﴾

47- "İşte böylece biz sana kitabı indirdik. Kendilerine kitap verdiklerimiz ona inanırlar. Şunlardan da ona inananlar vardır. Bizim ayetlerimizi ancak kâfirler inkâr ederler."

Yani onlar türlü türlüdür. Kimisi inayet ile baktığımız rahmet ehlidir. Kimisi de mutsuzlukla damgaladığımız bir yoksundur.

وَمَا كُنْتَ تَتْلُوا مِنْ قَبْلِهِ مِنْ كِتَابٍ وَلَا تَخُطُّهُ بِيَمِينِكَ اِذًا لَارْتَابَ
الْمُبْطِلُونَ ﴿٤٨﴾

48- "Sen, şu Kur'ân'dan önce hiçbir kitap okumuyor ve onu sağ elinle yazmıyordun. Şayet okuyup yazsaydın, o takdirde bâtıl peşinde koşanlar şüpheye düşerlerdi."

Yani kalbin malumattan arınmış ve sırrın şekilciliklerden temizlenmişti. Bu nedenle Kur'ân, tabiatın bulaşmadığı, emeğin karışmadığı ve beşeri tekellüfün yer almadığı bir şekilde seni buldu. Böylece senin kalbin ve sırrın her bilgiden ve biçimden boşalınca hitabımız ve anlatışımız, beraberlerinde bizden olmayan bir şey olmaksızın sana geldi.

بَلْ هُوَ اٰيَاتٌ بَيِّنَاتٌ فٖي صُدُورِ الَّذٖينَ اُوتُوا الْعِلْمَ وَمَا يَجْحَدُ
بِاٰيَاتِنَآ اِلَّا الظَّالِمُونَ ﴿٤٩﴾

49- "Hayır, o kendilerine ilim verilenlerin kalplerindeki apaçık ayetlerdir. Bizim ayetlerimizi ancak zalimler inkâr eder."

Allah'ı bilen havas âlimlerden olanların kalpleri gaybın hazineleridir. Allah, hakkının burhanlarını, sırrının apaçık işaretlerini, tevhidinin delillerini ve Rab oluşunun şahitlerini oraya yerleştirmiştir. Bu itibarla hakikatlerin ana kaynağı onların kalpleridir. Her şey de merkezinde ve yerinde aranır. Örneğin, inci sedefte aranır. Çünkü o, onun meskenidir. Güneş burçlarda aranır. Çünkü onlar, onun doğuş yeridir. Bal da arıda aranır. Çünkü o, onun yuvasıdır. Aynı şekilde marifet de Allah'ın has kullarının kalplerinde aranır. Çünkü bu kalpler, Allah'ı tanımanın kaynağıdır. Tevhidin aslı da o kalplerde aranır.

وَقَالُوا لَوْلَآ اُنْزِلَ عَلَيْهِ اٰيَاتٌ مِنْ رَبِّهٖ قُلْ اِنَّمَا الْاٰيَاتُ عِنْدَ اللّٰهِ
وَاِنَّمَآ اَنَا نَذٖيرٌ مُبٖينٌ ﴿٥٠﴾ اَوَلَمْ يَكْفِهِمْ اَنَّآ اَنْزَلْنَا عَلَيْكَ الْكِتَابَ
يُتْلٰى عَلَيْهِمْ اِنَّ فٖي ذٰلِكَ لَرَحْمَةً وَذِكْرٰى لِقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ ﴿٥١﴾

50, 51- "Dediler ki: 'Ona Rabbinden mucizeler indirilseydi ya!' De ki: 'Mucizeler ancak Allah katındadır ve ben ancak apaçık bir uyarıcıyım.' Kendilerine okunan kitabı sana indirmiş olmamız onlara yetmedi mi? Şüphesiz bunda inanan bir kavim için bir merhamet ve bir öğüt vardır."

Ey Muhammed! Senin durumunu anlayamadıkları için deliller ortaya koymanı isteyerek şöyle dediler:

( لَوْلَٓا اُنْزِلَ عَلَيْهِ اٰيَاتٌ مِنْ رَبِّه ) *"Ona Rabbinden mucizeler indirilseydi ya!"*

Acaba sana apaçık gösterdiğimiz yol ve delil onlara yetmedi mi? Bu onlara okunuyor ve onlar, ne ona karşı koyabiliyorlar ne de onun gibi bir şey getirebiliyorlar. İşte inkârın ve inatçılığın son sınırı budur.

قُلْ كَفٰى بِاللّٰهِ بَيْن۪ي وَبَيْنَكُمْ شَه۪يدًا يَعْلَمُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَالَّذ۪ينَ اٰمَنُوا بِالْبَاطِلِ وَكَفَرُوا بِاللّٰهِ اُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْخَاسِرُونَ ﴿٥٢﴾

52- "De ki: 'Benimle sizin aranızda şahit olarak Allah yeter. O, göklerde ve yerde olanları bilir. Bâtıla inanıp Allah'ı inkâr edenler var ya, işte onlar asıl ziyana uğrayanlardır.'"

Ben hak üzereyim ve Allah bunu bilir. Siz de hak üzere değilsiniz ve Allah bunu da bilir.

وَيَسْتَعْجِلُونَكَ بِالْعَذَابِ وَلَوْلَٓا اَجَلٌ مُسَمًّى لَجَٓاءَهُمُ الْعَذَابُ وَلَيَأْتِيَنَّهُمْ بَغْتَةً وَهُمْ لَا يَشْعُرُونَ ﴿٥٣﴾

53- "Senden azabın çabucak gelmesini istiyorlar. Eğer belirlenmiş bir süre olmasaydı, azap onlara mutlaka gelirdi. Onlar farkında değillerken elbette kendilerine ansızın gelecektir."

Eğer ben, her şey için bir süre belirlemiş olmasaydım, onlara bu azabı çabuklaştıracaktım. Kaldı ki o azap -geleceği zaman- elbette onlara ansızın gelecektir.

يَسْتَعْجِلُونَكَ بِالْعَذَابِ وَاِنَّ جَهَنَّمَ لَمُحِيطَةٌ بِالْكَافِرِينَ ﴿٥٤﴾
يَوْمَ يَغْشٰيهُمُ الْعَذَابُ مِنْ فَوْقِهِمْ وَمِنْ تَحْتِ اَرْجُلِهِمْ وَيَقُولُ
ذُوقُوا مَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٥٥﴾

**54, 55- "Senden azabın çabucak gelmesini istiyorlar. Oysa azap kâfirleri, üstlerinden ve ayaklarının altından bürüyeceği gün, şüphesiz cehennem onları mutlaka kuşatmış olacaktır. Allah onlara: 'Yapmakta olduklarınızın cezasını tadın' diyecektir."**

Cehennemde onları azap çadırları kuşattığı zaman bağıramayacaklardır. Aynı şekilde bugün azabın kuşattığı kimse de böyle olup üstünden lanet, altından çöküş, etrafından ise perişanlıkla kuşatılır. Ayrıca terk edilmişlik elbisesi giydirilir, mahrumiyet dağıyla dağlanır, ümitsizlik şarabı içirilir, hayal kırıklığı tacıyla taçlandırılır, öfke zinciriyle bağlanır ve düşmanlık kelepçesine vurulur. Böylece bu gibiler, içinde yanacakları cehenneme bedenleriyle atılıncaya kadar dünyada hükmen ayrılık cehenneminde yüzdürülürler.

يَا عِبَادِيَ الَّذِينَ اٰمَنُوٓا اِنَّ اَرْضِي وَاسِعَةٌ فَاِيَّايَ فَاعْبُدُونِ ﴿٥٦﴾

**56- "Ey iman eden kullarım! Şüphesiz ki benim arzım (yarattığım yeryüzü) geniştir. O halde sadece bana kulluk edin."**

Dünya, hiçbir irade sahibine dar gelmeyecek kadar geniş bir yerdir. Bu itibarla, herhangi bir sebeple meydana gelen beli bir durumdan veya insanlardan gelen bir kabulden veya bir mertebeden veya bir ilgiden veya bir yakından veya bir beladan ya da zararlı herhangi bir durumdan dolayı bir yerde kalamadığı zaman çaresi, o yerden göç edip başka bir yere taşınmasıdır.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Cefaya uğradığım zaman bana yakışmış olur*
*Akşamladığım yerde sabahlamaz görünmek*

Aynı şekilde arif de bir yer haline uymadığı zaman o yerden başka yerlere taşınır.

كُلُّ نَفْسٍ ذَٓائِقَةُ الْمَوْتِ ثُمَّ اِلَيْنَا تُرْجَعُونَ ﴿٥٧﴾

57- "Her can ölümü tadacaktır. Sonra bize döndürüleceksiniz."

Durum böyle olunca rahatlamak, işlerin kolaylaştırılmasına bağlı olur. Bu nedenle müminin yolu, hazırlıklı olarak kendini dünyadan çıkmaya alıştırmaktır. Sonra ecel gelmediği zaman acele etmez. Geldiği zaman ise onu ağır bulmaz ve vaktin hükmüne boyun eğer.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Öl, derse eğer bana, ölürüm ben memnuniyetle*
*Ve: 'Hoş geldin, merhaba' derim ölüm elçisine*

وَالَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ لَنُبَوِّئَنَّهُمْ مِنَ الْجَنَّةِ غُرَفًا
تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا نِعْمَ اَجْرُ الْعَامِلِينَ ﴿٥٨﴾

58- "İman edip salih amel işleyenler var ya, onları, içinden ırmaklar akan ve içinde ebedi kalacakları cennet köşklerine yerleştireceğiz. Çalışanların mükâfatı ne güzeldir!"

Onlar, bugün marifetlerinin odalarında, vuslatlarının tahtları üzerinde büyüklüklerinin tacıyla taçlandırılmışlardır. Kendilerine vecd badeleri içirilmektedir ve Allah'a yakınlık cennetlerinde vaatlerini yerine getirirler.

اَلَّذِينَ صَبَرُوا وَعَلٰى رَبِّهِمْ يَتَوَكَّلُونَ ﴿٥٩﴾

59- "Onlar, sabreden ve yalnız Rablerine tevekkül eden kimselerdir."

Sabır, düşünceyi aradan çıkarmak şartıyla Allah ile beraber durmaktır.

Sabır, vefâ noktalarında durmaktır.

Sabır, nefsi zevklerinden koparmaktır.

Sabır, yüz ekşitmeden takdirin acılarını yudumlamaktır.

Sabır, Hak ile beraberliği sağlayan bir vasıftır. Ne paha biçilmez bir vasıf!

Sabrın başlangıcı, tekellüf ile sabırlı olmaya çalışmaktır. Sonra kolaylıkla sabretmek, sonra rahatlıkla karışık bir şekilde sabretmek, sonra rıza vasfıyla hakikate ermek şeklinde gelişir. Böylece sabır konusunda kul, daha önce yükü taşıyan iken taşınan durumuna gelmiş olur.

Tevekkül ise sevinerek beklemektir.

Tevekkül, sırrın Allah'ta huzur bulmasıdır.

Tevekkül, tevekkülün hakikatiyle baş başa kalıp yetinmektir. Böylece kişi, başkalarının kendisinden kopmasıyla sıkılmaz.

Tevekkül, kalbin, Rabbin gayrisinden yüz çevirmesidir.

وَكَاَيِّنْ مِنْ دَآبَّةٍ لَا تَحْمِلُ رِزْقَهَا اَللّٰهُ يَرْزُقُهَا وَاِيَّاكُمْ وَهُوَ السَّمٖيعُ
الْعَلٖيمُ ٦٠

60- "Nice canlılar vardır ki rızıklarını taşımazlar. Onları da sizi de Allah rızıklandırır. O, hakkıyla işitendir, hakkıyla bilendir."

( لَا تَحْمِلُ رِزْقَهَا ) "*Rızıklarını taşımazlar*." Yani onu biriktirmezler. Bu nedenle kim rızkını kesesinde veya depolarında biriktirmezse, Allah onun yorgunluk çekmesine gerek kalmaksızın, rızkını verir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Rızkını taşımayan canlılardan maksat, kuşlar ve yırtıcı hayvanlardır. Çünkü onların hazırlığa dayalı belirli bir rızıkları yoktur. Aynı zamanda azıklarının stok edildiği bir evleri, depo görevlileri ve sorumluları da yoktur. Onları da sizi de Allah rızıklandırır.

- Allah'ın insanı yaşatmak ve canını almamak yönündeki iradesi, kendisinin, yaşamak için çaba harcamasından daha güçlü, daha

mükemmel ve daha büyüktür. O halde insanın, hayatı için gösterdiği özen, yaratanının, onun hayatı için aldığı tedbirden daha mükemmel ve daha büyük olamaz.

وَلَئِنْ سَاَلْتَهُمْ مَنْ خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ وَسَخَّرَ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ لَيَقُولُنَّ اللّٰهُ فَاَنّٰى يُؤْفَكُونَ ﴿٦١﴾

61- “Andolsun, eğer onlara: ‘Gökleri ve yeri kim yarattı, güneşi ve ayı hizmetinize kim verdi?’ diye soracak olsan mutlaka: ‘Allah’ diyeceklerdir. O halde nasıl döndürülüyorlar?”

Onlara yaratan sorulduğu zaman, Allah’ı ikrar ederler. Kendilerine, rızkı veren hakkında sorulduğu zaman ise Allah olduğu konusunda karar kılmazlar. Bu da açık bir çelişkidir.

اَللّٰهُ يَبْسُطُ الرِّزْقَ لِمَنْ يَشَٓاءُ مِنْ عِبَادِه۪ وَيَقْدِرُ لَهُ اِنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَل۪يمٌ ﴿٦٢﴾

62- “Allah, kullarından dilediğine bol verir ve kısar. Şüphesiz Allah, her şeyi hakkıyla bilendir.”

Rızık iki kısımdır: Birincisi, zahiri ihtiyaçların rızkıdır. Yiyecek ve içecek bu kısımdandır. İkincisi, sırların rızkıdır. Sözlü tekellüfün sınırlayamayacağı şekilde manalar ile yetinmek de bu kısımdandır. İnsanlar arasında da kimisi rızıklandırılır ve refah içinde yaşatılır. Kimisi de rızıklandırılır, ancak rızkı dar tutulur.

وَلَئِنْ سَاَلْتَهُمْ مَنْ نَزَّلَ مِنَ السَّمَٓاءِ مَٓاءً فَاَحْيَا بِهِ الْاَرْضَ مِنْ بَعْدِ مَوْتِهَا لَيَقُولُنَّ اللّٰهُ قُلِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ بَلْ اَكْثَرُهُمْ لَا يَعْقِلُونَ ﴿٦٣﴾

63- “Andolsun, eğer onlara: ‘Gökten yağmuru kim indirip de onunla yeryüzünü ölümünden sonra diriltti?’ diye soracak olsan, mutlaka: ‘Allah’ diyeceklerdir. De ki: ‘Hamd Allah’a mahsustur.’ Fakat onların çoğu, akıllarını kullanmazlar.”

Nasıl ki onlar yeryüzünün ölümden sonraki hayatının Allah tarafından yağmurla olduğunu biliyorlarsa, aynı şekilde canların da öldükten sonra -neşr ve diriliş esnasındaki- hayatının, Allah'ın kudretiyle olduğunu bilsinler. Bir de nasıl ki bunu biliyorlarsa, vakitlerin hayatının nefretlerinden sonra, kalplerin hayatının da durgunluklarından sonra, Allah'ın rahmet suyuyla olduğunu bilsinler.

وَمَا هٰذِهِ الْحَيٰوةُ الدُّنْيَٓا اِلَّا لَهْوٌ وَلَعِبٌ وَاِنَّ الدَّارَ الْاٰخِرَةَ لَهِيَ
الْحَيَوَانُ لَوْ كَانُوا يَعْلَمُونَ ﴿٦٤﴾

64- "Bu dünya hayatı ancak bir eğlence ve oyundan ibarettir. Ahiret yurduna gelince, işte gerçek hayat odur. Keşke bilselerdi!"

Dünya rüya gibidir. Ondan çıkış esnasında ise uykudan uyanma gerçekleşir. Ahirete gelince orada kamil manada hayat ve yalnızlıktan tam ve devamlı bir kurtuluş vardır.

فَاِذَا رَكِبُوا فِي الْفُلْكِ دَعَوُا اللّٰهَ مُخْلِصِينَ لَهُ الدِّينَ فَلَمَّا نَجّٰيهُمْ
اِلَى الْبَرِّ اِذَا هُمْ يُشْرِكُونَ ﴿٦٥﴾

65- "Gemiye bindikleri zaman dini Allah'a has kılarak O'na dua ederler. Onları kurtarıp karaya çıkardığı zaman ise, bir de bakarsın ki, Allah'a ortak koşuyorlar."

İhlas, kalbi her şeyden boşaltmak, ihlasın ancak Allah (c.c.) ile olacağına güvenmek ve iyiliklerde de kötülüklerde de hiçbir durumu büyük görmediğinden emin olmaktır. İşte o zaman onlar, dini Allah'a has kılarak O'na dua ederler. İnsanların üzerine sıkıntılar peş peşe gelip ümit kesildiği zaman onlar niyazda bulunarak Allah'a boyun eğerler. Üzerlerinden sıkıntıları kaldırdığı zaman ise onlar gaflete dönerek daha önce içinde bulundukları durumu unuturlar.

Tıpkı şu beyitte söylendiği gibi:

*Geri döner cahilliğine, tövbe ettiği zaman*
*Tıpkı hastanın hastalığının nüksetmesi gibi*

لِيَكْفُرُوا بِمَٓا اٰتَيْنَاهُمْ وَلِيَتَمَتَّعُوا فَسَوْفَ يَعْلَمُونَ ﴿٦٦﴾

66- "Kendilerine verdiğimiz nimetlere nankörlük etsinler ve bir süre daha faydalansınlar bakalım! İleride bilecekler."

اَوَلَمْ يَرَوْا اَنَّا جَعَلْنَا حَرَمًا اٰمِنًا وَيُتَخَطَّفُ النَّاسُ مِنْ حَوْلِهِمْ
اَفَبِالْبَاطِلِ يُؤْمِنُونَ وَبِنِعْمَةِ اللّٰهِ يَكْفُرُونَ ﴿٦٧﴾

67- "Çevrelerindeki insanlar kapılıp götürülürken bizim, onların yurtlarını saygın ve güvenlikli bir yer kıldığımızı görmediler mi? Onlar hâlâ bâtıla inanıyorlar da Allah'ın nimetini inkâr mı ediyorlar?"

Allah, üzerlerinden sıkıntıları defetmek ve Harem'i güvenli kılmakla minnette bulunmuş, onlara yaptığı büyük iyiliği sonra da bunun şükründen yüz çevirmelerini kendilerine hatırlatmıştır.

وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا اَوْ كَذَّبَ بِالْحَقِّ لَمَّا جَٓاءَهُ
اَلَيْسَ فِي جَهَنَّمَ مَثْوًى لِلْكَافِرِينَ ﴿٦٨﴾

68- "Allah'a karşı yalan uyduran yahut kendisine geldiğinde gerçeği yalanlayandan daha zalim kimdir? Cehennemde kâfirler için bir yer mi yok?"

Yani, Allah'a yalan iftirasında bulunan, doğruluktan yüz çeviren, bühtanı tercih eden ve hakikati gözeterek davranmayan kimseden daha katı bir hiçbir zalim yoktur.

وَالَّذِينَ جَاهَدُوا فِينَا لَنَهْدِيَنَّهُمْ سُبُلَنَا وَاِنَّ اللّٰهَ لَمَعَ الْمُحْسِنِينَ ﴿٦٩﴾

69- "Bizim uğrumuzda cihad edenler var ya, biz onları mutlaka yollarımıza ileteceğiz. Şüphesiz Allah, mutlaka iyilik yapanlarla beraberdir."

Zahirlerini cihadlarıyla süsleyenlerin sırları, müşahedelerle güzelleşir. Zahirlerini vazifelerle meşgul edenlerin sırlarına biz latifeleri ulaştırırız. Namazlarıyla bizim için yorgunluk çekenleri de vuslatla coşturarak mükâfatlandırırız.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah yolunda cihad önce haramları, sonra şüpheli şeyleri, sonra fazlalıkları terk etmekle, sonra da alakaları kesmek ve bütün vakitlerde meşguliyetlerden arınmakla olur.

- Cihad, duyuları Allah için korumak ve Allah ile beraber nefesleri saymakla olur.

سورة الرُّومِ

# RÛM SÛRESİ

(Rum Sûresi 60 âyettir. 17 âyet dışında, diğerleri Mekke'de inmiştir. İlk âyetlerde İranlılarla, Doğu Roma İmparatorluğu (Bizans) arasında yapılan bir savaştan söz edildiği için sûre bu adı almıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle aziz bir varlığın adıdır ki, cömertliği günahkârların şefaatçisidir, kasıtları itham edilenlerin imtihanıdır, ahitleri tevhid ehlinin aydınlığıdır, zikri mahzunların tesellisidir, şükrü de imtihan edilenlerin şiarıdır.

O, öyle aziz bir varlığın ismidir ki, giysisi büyüklüğüdür. O, öyle bir üstün kudret sahibinin ismidir ki, yüceliği güzelliği, güzelliği de yüceliğidir.

Abidler için O'nun lütfu yeter, vecd ehli için de kalıcılığı yeter.

الٓمٓ ﴿١﴾ غُلِبَتِ الرُّومُ ﴿٢﴾ فِيٓ اَدْنَى الْاَرْضِ وَهُمْ مِنْ بَعْدِ غَلَبِهِمْ
سَيَغْلِبُونَ ﴿٣﴾ فِي بِضْعِ سِنِينَ لِلّٰهِ الْاَمْرُ مِنْ قَبْلُ وَمِنْ بَعْدُ وَيَوْمَئِذٍ
يَفْرَحُ الْمُؤْمِنُونَ ﴿٤﴾ بِنَصْرِ اللّٰهِ يَنْصُرُ مَنْ يَشَآءُ وَهُوَ الْعَزِيزُ الرَّحِيمُ ﴿٥﴾

1, 2, 3, 4, 5- "Elif. Lâm. Mîm. Rumlar, yakın bir yerde yenilgiye uğratıldılar. Onlar, yenilgilerinden sonra birkaç yıl içinde galip geleceklerdir. Önce de sonra da emir Allah'ındır. O gün Allah'ın zafer vermesiyle müminler sevinecektir. Allah, dilediğine yardım eder. O, mutlak güç sahibidir, çok merhametlidir."

"Elif" harfindeki işaret, Allah'ın yüceliğini tanıyan kimsenin O'nun arkadaşlığına alıştığına, büyüklüğünü tanıyan kimsenin de O'nun imtihanına alıştığına yöneliktir.

"Lâm" harfindeki işaret, Allah'ın sevgisini tadan kimsenin O'nun kapısına bağlandığına, cemalini gören kimsenin de O'nun dergâhına bağlandığına yöneliktir.

"Mîm" harfindeki işaret de Allah'a hizmeti yerine getiren kimsenin O'na yakınlaşma imkânına sahip kılınacağına ve sahipliğine kesin olarak inanan kimsenin, O'nun vefası üzerine öleceğine yöneliktir.

( غُلِبَتِ الرُّومُ ) *"Rumlar yenilgiye uğratıldılar."*

Her ne kadar küfür, Rumlarla İranlıları birleştirse de yine de Müslümanlar, Rumların zaferiyle sevindiler. Rumlar, bazı peygamberlere iman etme özelliğine sahip oldukları için Allah onlara şükranda bulunmuş ve haklarında ayet indirmiştir. Rumlar için durum böyle ise sevinmesi de, üzülmesi ve dertlenmesi de Allah'ın dini için olan kimsenin durumu ne kadar güzel olur!

( مِنْ قَبْلُ ) *"Önce de."*

Bu tabir, mutlak zikredildiği zaman ezelden beri anlamında olur.

( وَمِنْ بَعْدُ ) *"Sonra da."*

Bu da mutlak söylendiği zaman, ebediliği ifade eder. Bu itibarla, ( مِنْ قَبْلُ وَمِنْ بَعْدُ ) *"önce de sonra da"* sözünün anlamı: *"Ezelî emir de ebedî emir de Allah'a mahsustur"* şeklindedir. Çünkü ezelî olan Rab ve ebedî olan büyük, Allah'tır. İrfan gününde de gufran gününde de emir Allah'a mahsustur. Gerçekte zaman mefhumunun olmadığı

takdir anında da hiçbir yardımcının olmadığı nimet esnasında da emir Allah'a mahsustur.

Bir yoruma göre de bu ifadenin anlamı şudur: Önce de emir benimdir. Nitekim ben, ne yaptığınızı bilirim. Bu nedenle kimse, beni irfanınızı gerçekleştirmekten alıkoyamaz. Sonra da emir benimdir. Nitekim ben, ne yaptığınızı görürüm. Bu nedenle kimse sizi bağışlamaktan beni alıkoyamaz.

Bir görüşe göre ise önce de emir, sevginizi gerçekleştirmek suretiyle Allah'ındır. Sonra da emir ahdinizi yerine getirmek suretiyle Allah'ındır.

Şiir.

*Kabalıklarına rağmen, yemin ederim onun Rabbine*
*Ve onunla ilgili olup onu vesile edinen her şeye*

( وَيَوْمَئِذٍ يَفْرَحُ الْمُؤْمِنُونَ ) *"O gün Allah'ın zafer vermesiyle müminler sevinecektir."*

Şiir:

*Sırların titretildiği gündür bugün, ancak*
*Gerçek titretilme, huzura varış gündür*

Bugün tasalanma, yarın sevinç vardır. Bugün gözyaşı, yarın mutluluk vardır. Bugün esef, yarın lütuf vardır. Bugün ağlamak, yarın huzura varmak vardır.

وَعْدَ اللّٰهِ لَا يُخْلِفُ اللّٰهُ وَعْدَهُ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ ٦

6- "Allah, bir vaatte bulunmuştur. Allah, vaadinden dönmez. Fakat insanların çoğu bilmezler."

Kerem sahibi Allah, vaadini bozmaz. Kaldı ki doğruluk O'nun sıfatıdır. Müminler şöyle derler: Söz alınan gün bizden itaat etmeye dair söz, Allah'tan ise o gün cennete dair söz gerçekleşmiştir. Şayet

bizim vaadimizde bir aksama meydana gelse de O'nun vaadinde bir kusur gerçekleşmez.

يَعْلَمُونَ ظَاهِرًا مِنَ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَهُمْ عَنِ الْاٰخِرَةِ هُمْ غَافِلُونَ ﴿٧﴾

7- "Onlar, dünya hayatının ancak dış yönünü bilirler. Ahiret konusunda ise tamamen gaflettedirler."

Dünya ile meşguliyette gark oluşları ve kalplerini dünyaya alabildiğine bağlamış olmaları, onları, ahreti bilmekten alıkoymuştur. Oysa herkesin kıymeti, Allah'a dair bilgisi oranındadır. Nitekim Hz. Ali'den şöyle dediği rivayet edilmiştir:

*"Dünya ehli kimseler, ahiretten gafildirler. Ahiret ilmiyle meşgul olanlar ise aynı şekilde ahiretin varlığıyla Allah'tan gafildirler."*

اَوَلَمْ يَتَفَكَّرُوا فٖٓي اَنْفُسِهِمْ مَا خَلَقَ اللّٰهُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ وَمَا بَيْنَهُمَٓا اِلَّا بِالْحَقِّ وَاَجَلٍ مُسَمًّى وَاِنَّ كَثٖيرًا مِنَ النَّاسِ بِلِقَٓائِ رَبِّهِمْ لَكَافِرُونَ ﴿٨﴾

8- "Onlar kendi nefisleri hakkında hiç düşünmediler mi? Hem Allah, gökler ile yeri ve ikisi arasındakileri ancak hak ve hikmete uygun olarak ve belirli bir süre için yaratmıştır. Şüphesiz insanların birçoğu, Rablerine kavuşacaklarını inkâr ediyorlar."

Hakkıyla ve yerinde bakan kimsede bu bakış, zorunlu olarak bilgi meydana getirir. Bu çerçevede kesin inanç nuruyla gayba ait olanları görmeye çalışıp gelecek hakkında kendisine verilen doğru vaadi bildiği zaman tereddüt ve ihtimallerin külfetinden kurtulmuş olur. O halde zihni açık olan kimsenin yolu, huzurunun kemalini sağlayacak olan hususta kusur işlemeye yeltenmemesidir.

اَوَلَمْ يَسٖيرُوا فِي الْاَرْضِ فَيَنْظُرُوا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الَّذٖينَ مِنْ قَبْلِهِمْ كَانُوٓا اَشَدَّ مِنْهُمْ قُوَّةً وَاَثَارُوا الْاَرْضَ وَعَمَرُوهَٓا اَكْثَرَ مِمَّا

عَمَرُوهَا وَجَٓاءَتْهُمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنَاتِ فَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيَظْلِمَهُمْ وَلٰكِنْ
كَانُوٓا اَنْفُسَهُمْ يَظْلِمُونَ ﴿٩﴾

9- "Onlar, yeryüzünde dolaşıp kendilerinden öncekilerin sonunun nasıl olduğuna bakmadılar mı? Onlar, kendilerinden daha kuvvetli idiler. Yeryüzünü sürüp işlemişler ve orayı kendilerinin imar ettiğinden daha çok imar etmişlerdi. Onlara da peygamberleri apaçık deliller getirmişlerdi. Allah onlara asla zulmediyor değildi. Fakat onlar, kendilerine zulmediyorlardı."

Nefislerin yeryüzünün dört bir yanında dolaşması, ibadetleri yerine getirmek içindir. Kalplerin seyri, fikirle bütün yaratıkları dolaşmaktır. Bu dolaşmanın amacı, iç huzurunu sağlayan ilimlerin hakikatlerini elde etmektir. Sonra o ilimler derece derecedir. Ruhların seyri, melekût çadırlarını aşmak vasfıyla gaybın meydanlarındadır. Onun son hedefi ise şuhûd makamına ermek ve hakikat sultanının hâkimiyetidir. Sırların seyri de baştanbaşa varlıkların üstüne çıkmak, önce sıfatlarla hakikate ulaşmak, sonra Hakk'ın gayrisi olan şeylerden büsbütün kopmaktır.

ثُمَّ كَانَ عَاقِبَةَ الَّذٖينَ اَسَٓاؤُا السُّوٓاٰى اَنْ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِ اللّٰهِ وَكَانُوا
بِهَا يَسْتَهْزِؤُ۫نَ ﴿١٠﴾

10- "Sonra Allah'ın ayetlerini yalanladıkları ve onlarla alay etmekte oldukları için kötülük işleyenin sonu daha da kötü oldu."

Diken eken gül biçemez, ot eken de meyve devşiremez. Sapkınlık yolunu izleyen ise rüşt alanına ayak basamaz.

اَللّٰهُ يَبْدَؤُا الْخَلْقَ ثُمَّ يُعٖيدُهُ ثُمَّ اِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ﴿١١﴾

11- "Allah, başlangıçta yaratmayı yapar, sonra onu tekrar eder. Sonra da yalnız O'na döndürüleceksiniz."

Allah, dilediği şekil üzere yaratmaya başlar. Sonra dilediği zaman, dilediği şekil üzere tekrar yaratır.

وَيَوْمَ تَقُومُ السَّاعَةُ يُبْلِسُ الْمُجْرِمُونَ ﴿١٢﴾

12- "Kıyametin kopacağı günde, suçlular hayal kırıklığı içinde ümitsizliğe düşeceklerdir."

Ciğerlerini paramparça edip sıkıntılarını doruğa çıkaran husus, dünyada inkâr ettiklerini açıkça görmeleri sonra da durumu kesin bildikten sonra buna eklenen ümitsizliktir.

وَلَمْ يَكُنْ لَهُمْ مِنْ شُرَكَائِهِمْ شُفَعَؤُا وَكَانُوا بِشُرَكَائِهِمْ كَافِرِينَ ﴿١٣﴾

13- "Onların, Allah'a koştukları ortaklardan kendileri için şefaatçiler de olmayacaktır. Artık onlar, ortak koştukları şeyleri de inkâr ederler."

Onlara birbirlerine karşı düşmanlık duygusu hakim olur.

وَيَوْمَ تَقُومُ السَّاعَةُ يَوْمَئِذٍ يَتَفَرَّقُونَ ﴿١٤﴾

14- "Kıyametin kopacağı gün, işte o gün müminler ve kâfirler birbirinden ayrılacaklardır."

Onlardan bir grup vuslat ehli, bir grup da firkat ehlidir. Bir grup cennet ve nimet için, bir grup da azap ve meşakkat içindir. Bir grup cehennemde, bir grup sevinç içindedir. Bir grup sevapta, bir grup azaptadır. Bir grup ayrılıkta, bir grup kavuşumdadır.

فَاَمَّا الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ فَهُمْ فِي رَوْضَةٍ يُحْبَرُونَ ﴿١٥﴾

15- "İman edip salih ameller işleyenlere gelince, işte onlar, cennet bahçelerinde sevindirilirler."

İşte onlar, bahçeler ve ağaçlıklar içindedirler.

وَاَمَّا الَّذ۪ينَ كَفَرُوا وَكَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا وَلِقَٓائِ الْاٰخِرَةِ فَاُو۬لٰٓئِكَ فِي
الْعَذَابِ مُحْضَرُونَ ﴿١٦﴾

16- "İnkâr edip ayetlerimizi ve ahirete kavuşmayı yalanlayanlara gelince işte onlar, azabın içine atılacaklardır."

İşte onlar yok oluş ve helak içindedirler.

فَسُبْحَانَ اللّٰهِ ح۪ينَ تُمْسُونَ وَح۪ينَ تُصْبِحُونَ ﴿١٧﴾ وَلَهُ الْحَمْدُ فِي
السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَعَشِيًّا وَح۪ينَ تُظْهِرُونَ ﴿١٨﴾

17, 18- "Öyle ise akşama girdiğinizde, sabaha kavuştuğunuzda Allah'ı tesbih edin. Göklerde ve yerde hamd O'na mahsustur. Gündüzün sonunda ve öğle vaktine girdiğinizde Allah'ı tesbih edin."

Sabahı Allah için olan kimsenin günü mübarek kılınır. Akşamı Allah için olan kimsenin de gecesi mübarek kılınır.

Şiir.

*Akşamında buluşacağımız sabah kuşkusuz*
*Sevgili bir sabahtır garibin kalbinde*

Sabahı Allah'a ibadet ile başlayan ve akşamı Allah'ın taatıyla sona eren kul ile sabahı Allah'ı müşahede ile başlayan ve akşamı O'nun paha biçilmez yakınlığıyla başlayan kul arasında büyük bir fark vardır.

Bir yoruma göre de ayet, bu vakitlerde Allah'ı tesbih etmeye dair emri, beş vakit namazı ve Allah'ın, velilerinden yirmi dört saatte beş defa ahdi yenilemelerine dair dileğini içermektedir. Böylece kul, münacat makamında durarak iki namaz arasında maruz kaldığı hataları telafi etmiş olur.

يُخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ وَيُخْرِجُ الْمَيِّتَ مِنَ الْحَيِّ وَيُحْيِ الْاَرْضَ
بَعْدَ مَوْتِهَا وَكَذٰلِكَ تُخْرَجُونَ ﴿١٩﴾

19- "Allah, diriyi ölüden çıkarır, ölüyü de diriden çıkarır. Ölümünden sonra yeryüzünü diriltir. Siz de, işte böyle çıkarılacaksınız."

( يُخْرِجُ الْحَيَّ مِنَ الْمَيِّتِ ) *"Allah, diriyi ölüden çıkarır."*

Kuşu yumurtadan, canlıyı da meniden çıkarır.

( وَيُخْرِجُ الْمَيِّتَ مِنَ الْحَيِّ ) *"Ölüyü de diriden çıkarır."*

Yumurtayı kuştan, meniyi de canlıdan çıkarır.

Bir de Allah mümini kâfirden, kâfiri de müminden çıkarır.

Ayrıca, vakitlerin arasından bazı vakitleri ortaya çıkarır. Örneğin, bast vakitlerinin arasından kabzı, kabz vakitlerinin arasından da bastı ortaya çıkarması gibi.

( وَيُحْيِي الْاَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا ) *"Ölümünden sonra yeryüzünü diriltir."*

Onu yağmurla diriltir ve kışın ıssızlığından sonra ilkbaharı getirir. İşte Allah, kıyamet günü halkı da ölümden sonra aynı şekilde diriltir.

وَمِنْ اٰيَاتِه۪ٓ اَنْ خَلَقَكُمْ مِنْ تُرَابٍ ثُمَّ اِذَٓا اَنْتُمْ بَشَرٌ تَنْتَشِرُونَ ﴿٢٠﴾

20- "Sizi topraktan yaratması, O'nun delillerindendir. Sonra bir de gördünüz ki siz beşer olmuş yayılıyorsunuz."

Allah, Hz. Âdem'i topraktan yarattı. Sonra Hz. Âdem'den de zürriyeti yarattı. Böylece bu ayette Allah, hallerini beğenmemeleri için onlara neseplerini hatırlatmıştır.

Bir yoruma göre de insanın aslı topraktır, ancak dikkate alınan husus toprak değil, terbiyedir. Değer de yaratıkların özüne değil, yaptıklarına verilir. Bu arada Allah, seçme iradesini ortaya koydu ve Kâbe'yi seçti. Bu nedenle Kâbe, cennetten üstündür. Cennet cevherler ve yakutlardır, Kâbe ise taştır. Ancak Allah'ın seçtiği Kâbe'dir. Bu seçilen de taştır. Bir de Allah, insanı seçmiştir. Bu seçilen de topraktır. Gani olan Allah ise zatı itibariyle ganidir. O, kendisi dışındaki her türlü biçimden ve eserden ganidir.

وَمِنْ اٰيَاتِه۪ٓ اَنْ خَلَقَ لَكُمْ مِنْ اَنْفُسِكُمْ اَزْوَاجًا لِتَسْكُنُٓوا اِلَيْهَا وَجَعَلَ
بَيْنَكُمْ مَوَدَّةً وَرَحْمَةًۜ اِنَّ ف۪ي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يَتَفَكَّرُونَ ﴿٢١﴾

21- "Kendileri ile huzur bulasınız diye sizin için türünüzden eşler yaratması ve aranızda bir sevgi ve merhamet var etmesi de O'nun delillerindendir. Şüphesiz bunda düşünen bir toplum için elbette ibretler vardır."

Allah, herkesi benzeriyle uyumlu ve ona bağlı kılmıştır. Her birinin huzurunu diğeriyle var etmiştir. Ancak bu durum, bedenler ve şekiller içindir. Ruhların bedenlerle olan beraberliği ise isteyerek değil, istemeyerek olmaktadır. Sırlara gelince onlar, azatlı olup enkazlarla yan yana durmaz ve heveslerle kirlenmez.

وَمِنْ اٰيَاتِه۪ خَلْقُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَاخْتِلَافُ اَلْسِنَتِكُمْ وَاَلْوَانِكُمْۜ
اِنَّ ف۪ي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِلْعَالِم۪ينَ ﴿٢٢﴾

22- "Göklerin ve yerin yaratılması, dillerinizin ve renklerinizin farklı olması da O'nun delillerindendir. Şüphesiz bunda bilenler için elbette ibretler vardır."

Allah gökleri yüksekliğiyle, yeri de yakınlığıyla birlikte yaratmıştır. Göklerin varlığı, yıldızları ve gökcisimleri topluluklarıyladır, yerin de varlığı bölgeleri ve etrafıyladır. Göklerin varlığı güneşleri ve aylarıyla, yerin de varlığı, suyu ve toprağıyladır.

Allah'ın delillerinden biri de yeryüzü sakinlerinin dillerinin ve gök sakinleri olan meleklerin tesbihlerinin farklı oluşudur. Bir de bu varlıklardan her birine, kendine has bir hükmün verilmiş olması, onların aklı başında olan kimselerin düşüncelerine, hepsinin, mutlak güç sahibi olan ve her şeyi hakkıyla bilen Allah'ın takdirinin eseri olduğunu fısıldadığına ve kendileri hakkında bunu haykırdığına dair adil bir şahit ve doğru bir delildir.

وَمِنْ اٰيَاتِهِ مَنَامُكُمْ بِالَّيْلِ وَالنَّهَارِ وَابْتِغَٓاؤُكُمْ مِنْ فَضْلِهِ اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يَسْمَعُونَ ﴿٢٣﴾

23- "Geceleyin uyumanız ve gündüzün, O'nun lütfundan istemeniz de O'nun delillerindendir. Şüphesiz bunda işiten bir toplum için ibretler vardır."

Sahibinin tercihi olmaksızın uykunun galebe çalması ve kendi gücüyle elde etmeksizin uyanması, insanın öleceğini ve ondan sonra neşir vaktinde diriltileceğini göstermektedir. Sonra insan, uyku halinde kendisini sevindiren şeyler de üzen şeyler de görür ve pek çok farklı durumlar yaşar. İşte ölünün de kabirdeki durumu böyledir. Ancak kulun kabirdeki durumunun nasıl olduğunu, karşılaştığı hayır, şer, faydalı ve zararlı hususları en iyi Allah bilir.

وَمِنْ اٰيَاتِهِ يُرِيكُمُ الْبَرْقَ خَوْفًا وَطَمَعًا وَيُنَزِّلُ مِنَ السَّمَٓاءِ مَٓاءً فَيُحْيِي بِهِ الْاَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يَعْقِلُونَ ﴿٢٤﴾

24- "Korku ve ümit kaynağı olarak şimşeği size göstermesi, gökten yağmur indirip onunla yeryüzünü ölümünden sonra diriltmesi, O'nun delillerindendir. Şüphesiz bunda aklını kullanan bir toplum için elbette ibretler vardır."

Durumlarla ilgili olarak Allah, kalplere ümit ve beklenti atar sonra durumları değişir. Bu çerçevede kullardan kimisinin maksudu gerçekleşir, diğer kimisinin ise muradı gerçekleşmez.

Bir de manevi haller şimşekler gibidir. Derler ki bu haller şöyle sıralanır: Levâih (beliren haller), sonra levâmi' (parıldayan haller), sonra tavâli' (doğan haller), sonra şevârik (ışıldayan haller), sonra mutû'u'n-nehâr (gün ortası gibi aydınlık haller). Bu bağlamda levâih ilimlerin başlangıcındaki hallerdir. Levâmi' anlamayla ilgili, tavâli' marifetlerle ilgili, şevârik de tevhidle ilgili olan hallerdir.

وَمِنْ اٰيَاتِه۪ٓ اَنْ تَقُومَ السَّمَٓاءُ وَالْاَرْضُ بِاَمْرِه۪ ثُمَّ اِذَا دَعَاكُمْ دَعْوَةً مِنَ
الْاَرْضِ اِذَٓا اَنْتُمْ تَخْرُجُونَ ﴿٢٥﴾

25- "Emriyle göğün ve yerin durması da O'nun delillerindendir. Sonra sizi yerden bir çağırdı mı, bir de bakarsınız ki çıkıyorsunuz."

Allah bu devirleri yok eder, bu evreleri değiştirir ve bu halleri başka hallere dönüştürür. Bu, canları almak sonra diriltmek ve tekrar hayata döndürmek şeklinde olur. Ondan önce ise varlık âleminde ortaya çıkarmak vardır. Ayrıca kabir, sonra neşir, kabirde sitemle sorgulama, sonra da neşrin ardından hesaba çekmek söz konusudur.

وَلَهُ مَنْ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ كُلٌّ لَهُ قَانِتُونَ ﴿٢٦﴾

26- "Göklerde ve yerde kim varsa yalnızca O'na aittir. Hepsi, O'na boyun eğmektedirler."

Bu, mülk olarak Allah'ındır. Bu şeyler, başlangıçta O'nun eserleridir. İcat bakımından O'nunla var olmuşlardır ve dönüşleri O'na olacaktır.

وَهُوَ الَّذ۪ي يَبْدَؤُا الْخَلْقَ ثُمَّ يُع۪يدُهُ وَهُوَ اَهْوَنُ عَلَيْهِ وَلَهُ الْمَثَلُ
الْاَعْلٰى فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَهُوَ الْعَز۪يزُ الْحَك۪يمُ ﴿٢٧﴾

27- "Başlangıçta yaratan, sonra yaratmayı tekrarlayacak olan O'dur. Bu, O'nun için daha kolaydır. Göklerde ve yerde en yüce ve eşsiz sıfatlar O'nundur. O, mutlak güç sahibidir, hüküm ve hikmet sahibidir."

( وَهُوَ اَهْوَنُ عَلَيْهِ ) *"Bu, O'nun için daha kolaydır."*

Bu kolaylık, sizin zannınıza ve değerlendirmenize göredir. Zira hakikatte Allah hakkında kolaylık ve zorluk caiz değildir.

( وَلَهُ الْمَثَلُ الْاَعْلٰى ) *"En yüce ve eşsiz sıfatlar O'nundur."*

Varlıkta kıdem hakkı gereğince, cömertlikte kerem sıfatıyla, kudrette şümul vasfıyla, yardımda kemal vasfıyla, ilimde kuşatıcı oluşuyla, hükümde gerçekleşmesinin zorunluluğuyla, iradede büluğ vasfıyla, icrada nüfuz hükmüyle, güç yetirmede izzet ve celalin kendisiyle, melekûtta ise şeref ve cemal sıfatları itibariyle en yüce sıfat Allah'a mahsustur.

ضَرَبَ لَكُمْ مَثَلًا مِنْ اَنْفُسِكُمْ هَلْ لَكُمْ مِنْ مَا مَلَكَتْ اَيْمَانُكُمْ مِنْ شُرَكَاءَ فِي مَا رَزَقْنَاكُمْ فَاَنْتُمْ فِيهِ سَوَاءٌ تَخَافُونَهُمْ كَخِيفَتِكُمْ اَنْفُسَكُمْ كَذٰلِكَ نُفَصِّلُ الْاٰيَاتِ لِقَوْمٍ يَعْقِلُونَ ﴿٢٨﴾

28- "Allah, size kendinizden şöyle bir örnek getirdi: Kölelerinizden verdiğimiz rızıklarda sizinle eşit haklara sahip olan ve birbirinizden çekindiğiniz gibi kendilerinden çekindiğiniz ortaklarınız var mı? Düşünen bir topluluk için ayetleri böyle ayrı ayrı açıklıyoruz."

Yani her yönüyle birbirinizin benzeri olduğunuz halde, dinin hükmü gereğince malikleri bulunduğunuz bazı köleleriniz olduğu zaman onlarla eşit olmaya rıza göstermezsiniz. Öyleyse lemyezel (ezelî) ve layezâl (ebedî) olan Allah hakkında ne dersiniz?

Acaba kullarının, O'nun vasfında kendisine eşit olmaları caiz midir? Mülkiyetindeki kimsenin de O'nun ortağı olması caiz midir? Allah bundan bütünüyle yücedir ve münezzehtir.

بَلِ اتَّبَعَ الَّذِينَ ظَلَمُوٓا اَهْوَآءَهُمْ بِغَيْرِ عِلْمٍ فَمَنْ يَهْدِي مَنْ اَضَلَّ اللّٰهُ وَمَا لَهُمْ مِنْ نَاصِرِينَ ﴿٢٩﴾

29- "Fakat zulmedenler, bilgisizce nefislerinin arzularına uydular. Allah'ın saptırdığı kimseleri kim doğru yola iletir? Onların hiçbir yardımcıları yoktur."

Zulmün en ağırı, nefsin arzularına uymaktır. Çünkü o şirke yakındır. Allah şöyle buyurmuştur:

( اَفَرَاَيْتَ مَنِ اتَّخَذَ اِلٰهَهُ هَوٰيهُ ) *"Nefsinin arzusunu ilâh edinen kimseyi gördün mü?"* (Câsiye, 45/23)

Bu itibarla, kim nefsinin arzusuna uyarsa o, Mevlâ'sının rızasına aykırı davranmış olur. Zira o, bir şeyi uygun olmayan yere koyması sebebiyle zalim olmuştur. Tıpkı asinin, günahı ibadetin yerine koyması sebebiyle zalim olması gibi. Aynı şekilde bu da Mevlâ'sının rızasına uymak yerine nefsinin arzusuna uyması sebebiyle zulümde daim olmuştur.

فَاَقِمْ وَجْهَكَ لِلدّ۪ينِ حَن۪يفًا فِطْرَةَ اللّٰهِ الَّت۪ي فَطَرَ النَّاسَ عَلَيْهَا لَا تَبْد۪يلَ لِخَلْقِ اللّٰهِ ذٰلِكَ الدّ۪ينُ الْقَيِّمُ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٣٠﴾

30- "Hakka yönelen bir kimse olarak yüzünü dine çevir. Allah'ın, insanları üzerinde yarattığı fıtrata sımsıkı tutun. Allah'ın yaratmasında hiçbir değiştirme yoktur. İşte bu, dosdoğru dindir. Fakat insanların çoğu bilmezler."

Allah'a olan yönelişini samimi kıl. Allah'a olan ahdini koru, duruşlarında, hareketlerinde ve bütün tasarruflarında amelini yalnızca Allah için kıl.

( حَن۪يفًا ) *"Hanîf (hakka yönelen kimse) olarak."*

Yani dininde istikamet üzere olan, Allah'a meyleden, O'nun gayrisinden yüz çeviren kimse olarak.

( فِطْرَةَ اللّٰهِ الَّت۪ي فَطَرَ النَّاسَ عَلَيْهَا ) *"Allah'ın, insanları üzerinde yarattığı fıtrata sımsıkı tutun."*

Yani Allah, onlardan fiil, kesp, şirk ve küfür meydan gelmeden önce kendilerini fıtrat üzere sabit kılmıştır. O zaman nasıl ki onlardan henüz iman ve iyilik meydana gelmediyse, aynı şekilde henüz küfür ve isyan da meydana gelmemiştir. Bu durumu bil, sonra sana emredileni yap ve alıkonulduklarından sakın.

Bu tevile göre ayetteki: ( فِطْرَةَ اللّٰهِ الَّت۪ي فَطَرَ النَّاسَ عَلَيْهَا ) *"Allah'ın, insanları üzerinde yarattığı fıtrat"* sözünün anlamı şudur: Yani bil ki

Allah'ın, insanları üzerinde yarattığı fıtrat, kendi fiillerinden arınmaları, her ne kadar bu da Allah'ın takdiriyle ise de sonra kespleriyle (kazandıklarıyla) vasıflanmalarıdır.

Buna göre, ( فطرة ) lafzı, söylediğimiz gibi, ( اعلم ) fiiliyle mansuptur.

Şanı yüce Allah herkesi, yaşayacağını bildiği mutluluk veya mutsuzluk üzere yaratmıştır. Allah'ın hükmü ve varlıkları üzerinde yarattığı fıtrat prensibi içinse hiçbir değişiklik söz konusu değildir. Bu çerçevede Allah, mutlu olacağını bildiği kimsenin mutluluğunu irade etmiş, mutluluğundan söz etmiş ve ilahi hükmünde onu mutlu olarak yaratmıştır. Mutsuz olacağını bildiği kimsenin de mutsuz olmasını dilemiş, mutsuzluğundan söz etmiş ve ilahi hükmünde onu mutsuz olarak yaratmıştır. Allah'ın hükmü içinse hiçbir değişiklik söz konusu değildir. İşte dosdoğru din ve doğru olan hak budur.

مُنِيبِينَ اِلَيْهِ وَاتَّقُوهُ وَاَقِيمُوا الصَّلٰوةَ وَلَا تَكُونُوا مِنَ الْمُشْرِكِينَ ﴿٣١﴾

31- "Allah'a yönelmiş kimseler olarak yüzünüzü hak dine çevirin, O'na karşı gelmekten sakının, namazı dosdoğru kılın ve müşriklerden olmayın."

Yani geride hiçbir şey kalmaksızın büsbütün Allah'a dönmüş, O'na uymakla vasıflanmış, her yönüyle ona karşı gelmekten arınmış, günahın küçüğünden, büyüğünden, azından ve çoğundan sakınmış, O'na uymanın kolayını da zorunu da tercih etmiş ve namazı zahiri erkanıyla, sünnetleriyle, adabıyla kılan ve manevi faziletlerine riayet ettiğinden emin olan kimseler olarak kendisine yönelin.

مِنَ الَّذِينَ فَرَّقُوا دِينَهُمْ وَكَانُوا شِيَعًا كُلُّ حِزْبٍ بِمَا لَدَيْهِمْ فَرِحُونَ ﴿٣٢﴾

32- "Dinlerini darmadağınık edip grup grup olan kimselerden olmayın. Her bir grup, kendi katındaki ile sevinip böbürlenmektedir."

Onlar, dünyalarında gaflet sarhoşluğu ile cehalet ve fetret inadı içerisinde kaldıklarından zanlarına meylettiler, vehimlerinin

bineğini vatan edindiler, başkalarının kesesinden geçindiler ve bir temele dayandıklarını sandılar. Oysa vakitlerinin sisi kalktığında ve inkârcılıklarının bulutları dağıldığında sevinçleri kedere dönüşür, dalalet içinde olduklarına kesin bir şekilde inanırlar ve sadece cehaletin yurtlarında kalıverirler.

وَاِذَا مَسَّ النَّاسَ ضُرٌّ دَعَوْا رَبَّهُمْ مُنِيبِينَ اِلَيْهِ ثُمَّ اِذَٓا اَذَاقَهُمْ مِنْهُ رَحْمَةً اِذَا فَرِيقٌ مِنْهُمْ بِرَبِّهِمْ يُشْرِكُونَ ﴿٣٣﴾

33- "İnsanlara bir zarar dokunduğu zaman, Rablerine yönelerek O'na dua ederler. Sonra Allah, onlara kendinden bir rahmet tattırınca da bir bakarsın ki içlerinden bir grup, Rablerine ortak koşuyorlar."

Onları sıkıntı gölgeleyip kendilerine fitne ulaştığı ve bela dokunduğu zaman, hep birlikte yardım dileyerek, lütfuna sığınarak ve sıkıntılarının giderilmesini isteyerek Allah'a dönerler.

Allah, başlarına gelenleri üzerlerinden kaldırarak onlara iyilik ettiği ve uğradıkları musibet konusunda kendilerine lütuf nazarıyla baktığı zaman, bir de bakarsın ki onların hepsi değil, aralarından bir grup Rablerine ortak koşarlar, nankörlükteki çirkin âdetlerine geri dönerler ve Allah'ın ihsanına nisyanla karşılık verirler. İşte bunların ne bir ahdi ne bir vefası ne de sevgilerinde bir safiyet vardır.

لِيَكْفُرُوا بِمَٓا اٰتَيْنَاهُمْ فَتَمَتَّعُوا فَسَوْفَ تَعْلَمُونَ ﴿٣٤﴾

34- "Kendilerine verdiğimiz nimetleri inkâr etsinler bakalım! Haydi yararlanın, ama yakında bileceksiniz!"

Yani yakın zamanda, daha önce uğradıkları musibetin bir benzeri başlarına gelecektir. Sonra yakarmaya dönüş yaparlar ve başta içinde bulundukları hal olan boyun bükmeye başlarlar. Oysa Allah şikayetlerini giderip kendilerine afiyet verdiği zaman hatalarının başına dönerler.

اَمْ اَنْزَلْنَا عَلَيْهِمْ سُلْطَانًا فَهُوَ يَتَكَلَّمُ بِمَا كَانُوا بِهٖ يُشْرِكُونَ ﴿٣٥﴾

35- "Yoksa biz kendilerine bir delil mi indirdik de o, Allah'a ortak koşmaları konusunda konuşuyor."

Allah bu ayette, onların yollarını temelsiz inşa ettiklerini, uydurdukları hususlarda nefislerinin arzularına uyduklarını ve inanç tarzlarını Allah'tan gelen dinin, delilin ve izahın dışındaki şeyler üzerine kurduklarını açıklamıştır.

وَاِذَٓا اَذَقْنَا النَّاسَ رَحْمَةً فَرِحُوا بِهَا وَاِنْ تُصِبْهُمْ سَيِّئَةٌ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيهِمْ اِذَا هُمْ يَقْنَطُونَ ﴿٣٦﴾

36- "İnsanlara bir rahmet tattırdığımız zaman ona sevinirler. Eğer kendi işledikleri şeyler sebebiyle başlarına bir kötülük gelirse, bir de bakarsın ki ümitsizliğe düşerler."

Hallerindeki tezahürler onları yönlendirir. Bu tezahür, nimet şeklinden olduğu zaman sevince, sıkıntı şeklinde olduğu zaman ise ümitsizlik ve karamsarlığa yönelirler. Oysa büyüklerin vasfı böyle değildir.

Allah şöyle buyurmuştur:

(لِكَيْلَا تَأْسَوْا عَلٰى مَا فَاتَكُمْ وَلَا تَفْرَحُوا بِمَٓا اٰتٰيكُمْ وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ كُلَّ مُخْتَالٍ فَخُورٍ) *"Elinizden çıkana üzülmeyesiniz ve Allah'ın size verdiği nimetlerle şımarmayasınız diye böyle yaptık."* (Hadîd, 57/23)

اَوَلَمْ يَرَوْا اَنَّ اللّٰهَ يَبْسُطُ الرِّزْقَ لِمَنْ يَشَٓاءُ وَيَقْدِرُ اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ ﴿٣٧﴾

37- "Allah'ın, rızkı dilediğine bol verdiğini ve dilediğinden kıstığını görmediler mi? Bunda inanan bir toplum için elbette ibretler vardır."

Ayetteki işaret, kulun kalbini Allah'tan başkasına bağlamamasına yöneliktir. Çünkü insanları üzen şey ancak Allah ile yok olur. Onları sevindiren şey de ancak Allah ile var olur. Bu itibarla onlara sevinç ve ünsiyet veren bastın varlığı da üzüntü ve ürküntü veren kabzın meydana gelişi de Allah'tandır. O halde yapılması gereken, sırların alanından ayrılmamak ve başkalarını düşünmeyi bırakmaktır.

فَاٰتِ ذَا الْقُرْبٰى حَقَّهُ وَالْمِسْكِينَ وَابْنَ السَّبِيلِ ذٰلِكَ خَيْرٌ لِلَّذٖينَ
يُرٖيدُونَ وَجْهَ اللّٰهِ وَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ﴿٣٨﴾

38- "Öyle ise akrabaya, yoksula ve yolcuya hakkını ver. Bu, Allah'ın hoşnutluğunu kazanmak isteyenler için daha hayırlıdır. İşte onlar, kurtuluşa erenlerdir."

Yakınlık, nesep yakınlığı ve din yakınlığı olmak üzere iki kısımdır. Din yakınlığı daha etkili ve desteklenmeye daha layıktır. Bu arada kişi, ibadetle meşgul olup geçim talebine zaman ayırmadığında, onun durumunu yakından bilen ve vaktinden haberdar olan kimselerin, imkânları ölçüsünde ibadetinde ve kalbinin her türlü hastalıktan temizlenmesi konusunda kendisine yardımcı olacak şekilde işlerini üstlenmeleri gerekir. Bu itibarla kişinin kalbine riayet etmekle meşgul olması, hakkını daha öncelikli ve aranıp halinin sorulmasını daha gerekli kılar.

(ذٰلِكَ خَيْرٌ لِلَّذٖينَ يُرٖيدُونَ وَجْهَ اللّٰهِ) *"Bu, Allah'ın hoşnutluğunu kazanmak isteyenler için daha hayırlıdır."*

Mürid, Allah'ın hakkını nefsin hazzına tercih eden kimsedir. Bu nedenle müridin Allah'ın hatırını tercih etmesi, nefsinin haliyle ilgilenmesinden daha mükemmel bir davranıştır. O halde akrabalara ve yoksullara iyilik yapmaya gayret sarf etmesi kendine, aile fertlerine ve önemsediği özel yakınlarına bakmasından önce gelir.

وَمَٓا اٰتَيْتُمْ مِنْ رِبًا لِيَرْبُوَا فٖٓي اَمْوَالِ النَّاسِ فَلَا يَرْبُوا عِنْدَ اللّٰهِ وَمَٓا
اٰتَيْتُمْ مِنْ زَكٰوةٍ تُرٖيدُونَ وَجْهَ اللّٰهِ فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْمُضْعِفُونَ ﴿٣٩﴾

39- "İnsanların malları içinde artsın diye faizle her ne verirseniz, Allah katında artmaz. Ama Allah'ın hoşnutluğunu isteyerek her ne zekât verirseniz, işte bunu yapanlar sevaplarını kat kat arttıranlardır."

Zekât vermekle Allah rızası gözetilmeli ve fakir kişi, kendisine yapılan iyilik karşılığında çalıştırılmamalıdır. Dahası, sadakanın en faziletlisi her türlü maddi karşılıktan arınarak Allah rızası için olsun diye buğzeden akrabaya verilen sadakadır. İşte Allah'ın, ecirlerini kat kat arttırdığı kimseler bunlardır. Bunlar, nefislerine aykırı davranarak onu yenerler ve Allah tarafından verilen karşılığı kazanırlar.

Sonra zekât, temizlik demektir. Malın temizlenmesi ise zekâtın veriliş şekli, malın çeşitleri ve vasıfları ile ilgili dini izah ile malumdur.

Bir de bedenin zekâtı, kalbin zekâtı ve sırrın zekâtı vardır ki bunların hepsini yerine getirmek gerekir.

اَللّٰهُ الَّذِي خَلَقَكُمْ ثُمَّ رَزَقَكُمْ ثُمَّ يُمِيتُكُمْ ثُمَّ يُحْيِيكُمْ هَلْ مِنْ شُرَكَآئِكُمْ مَنْ يَفْعَلُ مِنْ ذٰلِكُمْ مِنْ شَيْءٍ سُبْحَانَهُ وَتَعَالٰى عَمَّا يُشْرِكُونَ ﴿٤٠﴾

40- "Sizi yaratan, sonra size rızık veren, sonra sizi öldürecek ve daha sonra da diriltecek olan Allah'tır. Allah'a koştuğunuz ortaklardan bunlardan herhangi bir şeyi yapan var mı? O, onların ortak koştuklarından uzaktır, yücedir."

Ayetteki "ثُمَّ" kelimesi, aradan zaman geçmesini ifade eden bir harftir. Aynı zamanda bunda, Allah'ın insanı yaratmış olmasının, zorunlu olarak ona rızık vermesini gerektirmediğine işaret vardır. Allah, insanı ilk başta yarattığında o, en zayıf halde idi. Bu halde bile insan hiçbir rızka muhtaç olmaksızın Allah onu var edip kendisine hayat verdi. Bu arada insan, annesinin karnından çıkıncaya kadar ya o, anne karnındaki bir cenin olup yiyecek ve içeceği yok

iken bile Allah kendisini rızka muhtaç kılmamış ya da eğer söylenen: "Cenin, hayız kanıyla beslenir" sözü doğru ise ona yetecek kadar rızık vermiştir.

Allah, insanı annesinin karnından çıkardığı zaman ise bilinen şekilde ve malum vakitte ona rızık verir. Bu çerçevede insan için önce anne sütünden, sonra da çeşitli gıdalardan ibaret olan yeme ve içme vesilelerini hazırlar. Daha sonra da Allah, iman ve irfanı kalplerin ve sırların, taatlar ve ibadetleri muvaffakiyetin, zikir ve diğer hususları da dilin rızıkları olarak verir.

( ثُمَّ يُمِيتُكُمْ ) *"Sonra sizi öldürecek."*

Allah, bunu şehvetlerinizin ortadan kalkmasıyla yapar. Bir de sizi maddi hayatınızın tezahürlerinden koparmak suretiyle öldürecektir.

( ثُمَّ يُحْيِيكُمْ ) *"Daha sonra da sizi diriltecek."*

Allah, sizi kalplerinizin hayatıyla sonra da Rabbinizle diriltmek suretiyle diriltecektir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır.

- Rızıkların kimisi imkânların varlığından, kimisi de rızkı veren Allah'ı görmekten ibarettir.

- İnsanın kendi yaratılışını değiştirebilme imkânı bulunmamaktadır. Aynı şekilde rızkını daraltabilecek gücü de yoktur. Bu nedenle rızkının geniş olması, insanın kendi meziyetleriyle değil, Allah'ın (c.c.) lütfu sayesindedir. Rızkının dar olması da insanın kendi kusurları sebebiyle değil, Allah'ın (c.c.) hükmüyledir.

( هَلْ مِنْ شُرَكَٓائِكُمْ مَنْ يَفْعَلُ مِنْ ذٰلِكُمْ مِنْ شَيْءٍ ) *"Allah'a koştuğunuz ortaklardan, bunlardan herhangi bir şeyi yapan var mı?"*

Sizin ortaya koyduğunuz putlardan veya sandığınız diğer varlıklardan ibaret ortaklarınızdan, bunlardan herhangi bir şeyi yapan var mı?

( سُبْحَانَهُ وَتَعَالٰى عَمَّا يُشْرِكُونَ ) *"O, onların ortak koştuklarından uzaktır, yücedir."*

Allah, bunlardan münezzeh ve mukaddestir.

ظَهَرَ الْفَسَادُ فِي الْبَرِّ وَالْبَحْرِ بِمَا كَسَبَتْ اَيْدِي النَّاسِ لِيُذِيقَهُمْ بَعْضَ الَّذِي عَمِلُوا لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُونَ ﴿٤١﴾

41- "İnsanların kendi işledikleri sebebiyle karada ve denizde bozulma ortaya çıkmıştır. Dönmeleri için Allah, yaptıklarının bazı sonuçlarını onlara tattıracaktır."

"Kara" nefse, "deniz" de kalbe işarettir. Karanın bozulması, haram yemek ve günahlar işlemekle olur. Denizin bozulması ise gafletten ve kötü karar, haset, kin, kötülük ve fasıklık iradesi gibi kötü vasıflar ile diğer hususlardan kaynaklanır.

Bu arada aykırı davranışlarda ısrar, kalbin bozulmasının en büyüğüdür. Tıpkı hayırlı işleri yapmadan önceki yapma karlılığının, bu işlerin en büyüğü olduğu gibi.

Öte yandan haksız teviller, bir çaba harcamadan ruhsatlara yeltenmek ve Allah'tan utanmayarak iddialara dalmak da bozulmanın cümlesindendir.

(لِيُذِيقَهُمْ بَعْضَ الَّذِي عَمِلُوا لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُونَ) *"Dönmeleri için Allah, yaptıklarının bazı sonuçlarını onlara tattıracaktır."*

Onların söz konusu bazı yaptıkları, dini yüceltme duygusunun kalpten çıkması ve kaçırdıkları hakka üzülmemeleridir.

قُلْ سِيرُوا فِي الْاَرْضِ فَانْظُرُوا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الَّذِينَ مِنْ قَبْلُ كَانَ اَكْثَرُهُمْ مُشْرِكِينَ ﴿٤٢﴾

42- "De ki: 'Yeryüzünde dolaşın da önceki milletlerin sonlarının nasıl olduğuna bakın.' Onların çoğu Allah'a ortak koşan kimselerdi."

İbret almak üzere dolaşın ve düşünerek hakkı arayın.

Sizden önceki benzerlerinizin durumunun nasıl olduğuna bakın. Bütün hallerde hükmünüzü onların haline kıyaslayın.

( كَانَ اَكْثَرُهُمْ مُشْرِكٖينَ ) *"Onların çoğu, Allah'a ortak koşan kimselerdi."*

Sayıca en çok olanlar, müşrikler idi. Lakin hakikatte ağırlık ve değer bakımından onların en azı idiler.

فَاَقِمْ وَجْهَكَ لِلدّٖينِ الْقَيِّمِ مِنْ قَبْلِ اَنْ يَاْتِيَ يَوْمٌ لَا مَرَدَّ لَهُ مِنَ اللّٰهِ يَوْمَئِذٍ يَصَّدَّعُونَ ﴿٤٣﴾

43- "Allah tarafından geri çevrilmesi olmayan bir gün gelmeden önce yüzünü dosdoğru dine çevir. O gün insanlar bölük bölük ayrılacaklardır."

Bidat yoluyla işe despotça el koyarak değil, uymak ve tabi olmak suretiyle, niyetini ve samimi kararlılığını dosdoğru din için halis kıl. Zira her kim, edepte vaktinin imamını örnek almaz ve zikirleri vaktinin zikir erbabından öğrenmezse, onun uğrayacağı zarar kazancından daha fazla, eksiği de faydasından daha kapsamlı olur.

مَنْ كَفَرَ فَعَلَيْهِ كُفْرُهُ وَمَنْ عَمِلَ صَالِحًا فَلِاَنْفُسِهِمْ يَمْهَدُونَ ﴿٤٤﴾

44- "Kim inkâr ederse inkârı kendi aleyhinedir. Kimler de salih amel işlerse, ancak kendileri için hazırlık yaparlar."

لِيَجْزِيَ الَّذٖينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ مِنْ فَضْلِهٖ اِنَّهُ لَا يُحِبُّ الْكَافِرٖينَ ﴿٤٥﴾

45- "Bu hazırlığı Allah'ın, iman edip salih amel işleyenleri kendi lütfundan mükâfatlandırması için yaparlar. Şüphesiz O, inkâr edenleri sevmez."

وَمِنْ اٰيَاتِهٖٓ اَنْ يُرْسِلَ الرِّيَاحَ مُبَشِّرَاتٍ وَلِيُذٖيقَكُمْ مِنْ رَحْمَتِهٖ وَلِتَجْرِيَ الْفُلْكُ بِاَمْرِهٖ وَلِتَبْتَغُوا مِنْ فَضْلِهٖ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿٤٦﴾

46- "Rüzgârları, yağmurun müjdecileri olarak göndermesi, Allah'ın delillerindendir. O, bunu, size rahmetinden tattırmak, emriyle gemilerin yol alması, O'nun lütfundan rızkınızı aramanız ve şükretmeniz için yapar."

Allah, ümit rüzgârlarını kulların kalplerinin üzerine gönderir ve bu rüzgârlar, kalplerinden korku tozlarını ve ümitsizlik çer çöplerini süpürür. Sonra da o kalplerin üzerine muvaffakiyet yağmurlarını yağdırarak onları, çaba harcama makamına taşır ve kendilerine zindelik veren güçlerle ikramda bulunur. Bast rüzgârlarını velilerin ruhları üzerine göndererek onları kabzın ıssızlığından temizler ve kendilerinde vuslat iradesini yayar. Tevhid rüzgârlarını da gönderir ve bu rüzgârlar, seçkinlerin sırları üstüne eserek onları meşakkatin izlerinden temizler ve kendilerine vuslatın devamını müjdeler. İşte bu, kulun Allah ile huzura ermesidir, lakin kendinden geçtikten sonra.

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ رُسُلًا اِلٰى قَوْمِهِمْ فَجَآؤُهُمْ بِالْبَيِّنَاتِ
فَانْتَقَمْنَا مِنَ الَّذ۪ينَ اَجْرَمُوا وَكَانَ حَقًّا عَلَيْنَا نَصْرُ الْمُؤْمِن۪ينَ ٤٧

47- "Andolsun, senden önce biz, nice peygamberleri kendi kavimlerine gönderdik. Peygamberler onlara apaçık mucizeler getirdiler. Biz de suç işleyenlerden intikam aldık. Müminlere yardım etmek ise üzerimizde bir haktır."

Senden önce kullarımıza birtakım peygamberler gönderdik. Bunun üzerine kim onları tasdik ile karşıladıysa hakikatin özüne erdi. Kim de inkâr ile onlara karşı çıktı ise kendilerine ebedî azabı tattırdık. Böylece suç işleyenlerden intikam aldık, ummadıkları yerden onları yakaladık, umdukları konusunda onları şaşkına çevirdik, güzel bulup istifade ettikleri nimetleri başlarına yıktık ve boğazlarını sıktık. Böylece onlar, kurdukları tuzağa düşmüş oldular.

( وَكَانَ حَقًّا عَلَيْنَا نَصْرُ الْمُؤْمِن۪ينَ ) *"Müminlere yardım etmek ise üzerimizde bir haktır."*

Biz, bunu onlara düşmanlarını kovalatmak suretiyle yaparız. Kısa bir bekleyişten sonra biz, müminleri düşmanlarının tepesine bindirdik, yurtlarını harabeye çevirdik, binalarını yıktık, ocaklarını söndürdük, ülkelerini atıl hale getirdik ve yıkıcı üstünlükle izlerini sildik. Böylece güneşleri tutulmuş oldu ve üstün tedbirimiz hepsini yerin dibine batırdı.

اَللّٰهُ الَّذ۪ي يُرْسِلُ الرِّيَاحَ فَتُث۪يرُ سَحَابًا فَيَبْسُطُهُ فِي السَّمَٓاءِ كَيْفَ
يَشَٓاءُ وَيَجْعَلُهُ كِسَفًا فَتَرَى الْوَدْقَ يَخْرُجُ مِنْ خِلَالِه۪ۚ فَاِذَٓا اَصَابَ بِه۪
مَنْ يَشَٓاءُ مِنْ عِبَادِه۪ٓ اِذَا هُمْ يَسْتَبْشِرُونَۚ ﴿٤٨﴾

48- "Rüzgârları gönderen, Allah'tır. Onlar da bulutları harekete geçirir. Allah, onları dilediği gibi yayar ve yoğunlaştırır. Nihayet yağmurun, onların arasından çıktığını görürsün. Onu kullarından dilediklerine uğrattığı zaman bir de bakarsın sevinirler."

Allah, şefkat ve cömertliğinin rüzgârlarını, vuslat ve kereminin müjdeleyicileri olarak gönderir. Sonra lütfuyla, kullarının sırları üzerine gaybının cömertliğini yağdırır, utangaçlık yaygısını yakınlığının sahalarından kaldırır, heybetinin kubbelerini keşfinin meydanlarında diker, kullarının üstüne ünsiyetinin çiçeklerini serper, sonra kutsiyetinin hakikatleriyle onlara tecelli ederek kendi eliyle kendilerine aşkının şarabını içirir. Kullarını vasıflarından arındırdıktan sonra ise onları kendileriyle değil, kendisiyle uyandırır. Ne var ki ibareler bunu dile getirmekten aciz, işaretler de onun karşısında siliktir.

وَاِنْ كَانُوا مِنْ قَبْلِ اَنْ يُنَزَّلَ عَلَيْهِمْ مِنْ قَبْلِه۪ لَمُبْلِس۪ينَ ﴿٤٩﴾

49- "Oysa onlar, daha önce kendilerine yağmur yağdırılmadan evvel kesin bir ümitsizliğe kapılmışlardı."

فَانْظُرْ اِلٰٓى اٰثَارِ رَحْمَتِ اللّٰهِ كَيْفَ يُحْيِي الْاَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَاۜ اِنَّ ذٰلِكَ
لَمُحْيِي الْمَوْتٰىۚ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرٌ ﴿٥٠﴾

50- "Allah'ın rahmetinin eserlerine bak! Yeryüzünü ölümünden sonra nasıl diriltiyor. Şüphe yok ki O, ölüleri de elbette diriltecektir. O, her şeye hakkıyla gücü yetendir."

Yağmurlar geldiğinde Allah, yeryüzünün ekinlerini ve meyvelerini çıkarmak için çiçekleriyle ona hayat verir. Nefislere de geçimsizliklerinden sonra hayat vererek onları durgunluklarından sonra hayırlara muvaffak kılar. Böylece samimi gelişleriyle dostların yurtları mamur olur, günlerinin bereketleriyle yaratıkların üzerinden belalar kalkar ve huzura varışların nuruyla Allah kalpleri, gafletlerinin ardından diriltir. Böylece kalpler, güzel riayet ederek zikri tekrar devam ettirirler ve gönül ehlinin ışığıyla, irade sahiplerinden darda olanlar hidayete ererler. Ayrıca Allah, ruhları da perdelenmişlikten sonra müşahedelerin nurlarıyla diriltir. Bunun üzerine güneşleri saadet burcundan doğar ve üzerlerine akan fazlaca feyizler esintisi, hepsinin sırlarının koklama duyularıyla temasa geçer ve herkes bundan nasibini alır. Allah, bazı hallerde durgunluk yaşayan sırları da diriltir ve böylece gayriliğin eserleri büsbütün ortadan kalkar, yurtta hiçbir sakin, sakinlerinden de eserler kalmamış olur. Hakikatlerin hükümranlıkları karşısında yaratıkların sıfatlarından hiçbir zerre varlık gösteremez. İşte orada velayet Allah'a mahsustur. Artık su ve damla hükmünü yitirmiş, beşeri şekil ve tezahürler yok olup gitmiştir.

وَلَئِنْ اَرْسَلْنَا ر۪يحًا فَرَاَوْهُ مُصْفَرًّا لَظَلُّوا مِنْ بَعْدِه۪ يَكْفُرُونَ ﴿٥١﴾

51- "Andolsun, eğer bir rüzgâr göndersek de o ekini sararmış görseler, ardından mutlaka nankörlük etmeye başlarlar."

Basiret, idrak yeteneğini kaybettiği zaman bütün vakitlerde körlük devam eder. Aynı şekilde hakkında mutsuzluk kesinleşen kimse, cenneti mesken edinmiş olsa bile bu mutsuzluk onu kendine çeker.

فَاِنَّكَ لَا تُسْمِعُ الْمَوْتٰى وَلَا تُسْمِعُ الصُّمَّ الدُّعَٓاءَ اِذَا وَلَّوْا مُدْبِر۪ينَ
﴿٥٢﴾ وَمَٓا اَنْتَ بِهَادِ الْعُمْيِ عَنْ ضَلَالَتِهِمْ اِنْ تُسْمِعُ اِلَّا مَنْ يُؤْمِنُ
بِاٰيَاتِنَا فَهُمْ مُسْلِمُونَ ﴿٥٣﴾

52, 53- "Şüphesiz sen, ölülere işittiremezsin. Dönüp gittikleri zaman çağrıyı sağırlara da işittiremezsin. Sen, körleri de sapkınlıklarından çıkarıp doğru yola iletemezsin. Sen çağrını ancak ayetlerimize inanıp Müslüman olan kimselere işittirebilirsin."

Asıl hayatı kaybeden kimse, nazarlık ve muskalar ile yaşayamaz. Bir de iç dünyada hakikati duymayacak sağırlık bulunduğu zaman zahiri kulağa en güçlü delil dahi fayda vermez. Ayrıca nasıl ki Hz. Peygamber (s.a.v.), çağrıyı sağırlara işittiremiyorsa, aynı şekilde körleri dalaletlerinden hidayete erdirmesi de mümkün değildir.

اَللّٰهُ الَّذ۪ي خَلَقَكُمْ مِنْ ضَعْفٍ ثُمَّ جَعَلَ مِنْ بَعْدِ ضَعْفٍ قُوَّةً ثُمَّ جَعَلَ
مِنْ بَعْدِ قُوَّةٍ ضَعْفًا وَشَيْبَةً يَخْلُقُ مَا يَشَٓاءُ وَهُوَ الْعَل۪يمُ الْقَد۪يرُ ﴿٥٤﴾

54- "Sizi güçsüz olarak yaratan, sonra güçsüzlüğün ardından bir güç veren, sonra gücün ardından bir güçsüzlük ve yaşlılık veren, Allah'tır. O, dilediğini yaratır. O, hakkıyla bilendir, gerçek kudret sahibidir."

Allah, insanları küçüklük ve çocukluk zaafı üzere ortaya çıkarmıştır. Sonra gençliğin kuvveti, sonra da ihtiyarlığın güçsüzlüğü ortaya çıkmıştır. Sonra ise:

Şiir.

*İşin sonu şu gördüğün*
*Kabir, lahit ve topraktır*

İşte böylece Allah, onları işin başında, başlangıcın güçlük vasfı üzerine ve talepteki kararsızlık ve şaşkınlık sıfatı içerisinde, sonra vuslatın kuvveti ardından tevhidin zaafı içerisinde ortaya çıkarır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Önce aklın güçsüzlüğü vardır. Çünkü aklın varlığı, burhan ve teamül şartına bağlıdır. Sonra beyanın kuvveti, irfan halinde ortaya çıkar. Çünkü o, var olma erkiyle meydana gelir. Sonra bunun ardından

sönmüşlüğün güçsüzlüğü gelir. Çünkü sönmek, varlığın ardından gelir ve onunla beraber hiçbir eser kalmaz.

- ( اَللّٰهُ الَّذِي خَلَقَكُمْ مِنْ ضَعْفٍ ) *"Sizi güçsüz olarak yarattı."* Yani sizi, ihtiyaç bakımından güçsüz bir halde yarattı. Sonra onun ardından var olma gücü, sonra da miskinlik güçsüzlüğü ortaya çıktı.

Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur:

*"Allah'ım! Beni miskin olarak yaşat, miskin olarak canımı al ve beni miskinler zümresinde haşret!"*

وَيَوْمَ تَقُومُ السَّاعَةُ يُقْسِمُ الْمُجْرِمُونَ مَا لَبِثُوا غَيْرَ سَاعَةٍ كَذٰلِكَ كَانُوا يُؤْفَكُونَ ﴿٥٥﴾ وَقَالَ الَّذِينَ اُو۫تُوا الْعِلْمَ وَالْاِيمَانَ لَقَدْ لَبِثْتُمْ فِي كِتَابِ اللّٰهِ اِلٰى يَوْمِ الْبَعْثِ فَهٰذَا يَوْمُ الْبَعْثِ وَلٰكِنَّكُمْ كُنْتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ﴿٥٦﴾ فَيَوْمَئِذٍ لَا يَنْفَعُ الَّذِينَ ظَلَمُوا مَعْذِرَتُهُمْ وَلَا هُمْ يُسْتَعْتَبُونَ ﴿٥٧﴾

55, 56, 57- "Kıyametin kopacağı gün suçlular, bir andan fazla kalmadıklarına yemin ederler. Onlar, işte böyle döndürülüyorlardı. Kendilerine ilim ve iman verilmiş olanlar ise onlara şöyle diyeceklerdir: 'Andolsun siz, Allah'ın yazısına göre, yeniden dirilme gününe kadar kaldınız. İşte bu, yeniden dirilme günüdür. Fakat siz bilmiyordunuz.' O gün zulmedenlere mazeretleri fayda sağlamaz, Allah'ı razı edecek amelleri işleme istekleri de kabul edilmez."

Bu, ancak şu iki durumdan birinden dolayı olmuştur: Ya onlar ölü oldukları için ki ölü hiçbir hisse sahip değildir. Ya da onlar, karşılaştıkları kabir azabını o gün gördüklerine kıyasla az bulmuşlardır. Bir de hakikat ehli kimseler onlara, yerin altında uzun süre kaldıklarından söz ederler. O söyledikleri ise cehaletleri gereğince ortaya koydukları inkârcılıkları cümlesindendir. Sonra ne mazeretleri dinlenir ne de sıkıntıları defedilir.

وَلَقَدْ ضَرَبْنَا لِلنَّاسِ فٖي هٰذَا الْقُرْاٰنِ مِنْ كُلِّ مَثَلٍ وَلَئِنْ جِئْتَهُمْ بِاٰيَةٍ
لَيَقُولَنَّ الَّذٖينَ كَفَرُوٓا اِنْ اَنْتُمْ اِلَّا مُبْطِلُونَ ﴿٥٨﴾

58- "Andolsun, biz bu Kur'ân'da insanlara her türlü misali verdik. Andolsun, eğer sen onlara bir ayet getirsen, inkâr edenler mutlaka: 'Siz ancak asılsız şeyler uyduranlarsınız' derler."

كَذٰلِكَ يَطْبَعُ اللّٰهُ عَلٰى قُلُوبِ الَّذٖينَ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٥٩﴾

59- "Allah, bilmeyenlerin kalplerini işte böyle mühürler."

Sonra Allah, bunun ardından surenin sonunda ısrarlarından, sapıklıklarına battıklarından ve ömürlerinin sonuna kadar kaderden nasiplerinin bu olduğundan söz etmiştir. Sonra da Allah sûreyi Hz. Peygamber'e (s.a.v.) onların sevinçlerine ve sıkıntılarına katlanmasını emrettiği şu ayetle sonlandırmıştır:

فَاصْبِرْ اِنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّ وَلَا يَسْتَخِفَّنَّكَ الَّذٖينَ لَا يُوقِنُونَ ﴿٦٠﴾

60- "Sabret. Şüphesiz Allah'ın vaadi gerçektir. Kesin imana sahip olmayanlar, sakın seni gevşekliğe sürüklemesinler."

سورة لُقْمَان

# LOKMAN SÛRESİ

(Sûre 34 âyettir. Mekke'de inmiştir. 27-29.
âyetlerin Medine'de indiği nakledilmiştir )

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir sözdür ki, onu işiten kimse, bir benzerini daha işitemeyeceğini itiraf eder. Onu tanıyan da artık ondan başkasını duymak istemez. "Bismillah" öyle bir sözdür ki onu işitenin hikâyesi güzelleşir, her yönüyle sıkıntısı ortadan kalkar, dünyada ve ahirette nimetlerden nasibi tam olur ve ahirete arzu duymaksızın, dünyası ile arasına mesafe koyar. Çünkü ahiret büyük olsa da Mevlâ'sının dışında bir şeydir. "Bismillah" öyle bir sözdür ki onu işiten kimse, evinin avlusunu bile onarmak istemez ve vefada çabuk olmaktan sakınmaz.

الٓمٓ ﴿١﴾ تِلْكَ اٰيَاتُ الْكِتَابِ الْحَك۪يمِ ﴿٢﴾

**1, 2- "Elif. Lâm. Mîm. Bunlar, hikmet dolu Kitab'ın ayetleridir."**

"Elif" harfi Allah'ın nimetlerine, "Lâm" harfi O'nun lütuf ve vergisine, "Mîm" harfi de O'nun yüceliğine ve üstünlüğüne işaret etmektedir. Bu çerçevede Allah, nimetleriyle dostlarının kalplerinden inkârı

kaldırır. Lütfu ve vergisiyle seçkin kullarının sırlarında sevgiyi yerleştirir. Yüceliği ve üstünlüğüyle de büyüklük vasfı sebebiyle bütün yaratıklarından müstağnidir.

هُدًى وَرَحْمَةً لِلْمُحْسِنِينَ ﴿٣﴾ اَلَّذِينَ يُقِيمُونَ الصَّلٰوةَ وَيُؤْتُونَ الزَّكٰوةَ وَهُمْ بِالْاٰخِرَةِ هُمْ يُوقِنُونَ ﴿٤﴾

3, 4- "O Kitap, iyilik yapanlara bir hidayet ve rahmet olarak indirilmiştir. Onlar, namazı dosdoğru kılan ve zekâtı veren kimselerdir. Onlar ahirete de kesin olarak inanırlar."

O Kitap, Allah'ı tanıyan ve O'na bakıyormuş gibi ibadetini dosdoğru yerine getiren iyilik sahibi kimseler için hidayet, beyan, rahmet ve burhandır. Bu arada iyilik yapanın şartı yakın, uzak, itaat ehli veya günahkâr olsun, Allah'ın kullarına iyilik yapmasıdır.

(اَلَّذِينَ يُقِيمُونَ الصَّلٰوةَ وَيُؤْتُونَ الزَّكٰوةَ) *"Onlar, namazı dosdoğru kılan ve zekâtı veren kimselerdir."*

Onlar namazın setr-i avret, öncesinde temizlik, kıbleye yönelmek, vaktin girdiğini bilmek ve temiz bir yerde durmak gibi zahiri şartlarını yerine getirirken aynı zamanda sırrı gailelerden temizlemek ve batını kusurlardan arındırmak suretiyle ona dair setr-i avret gibi manevi şartları da yerine getirirler. Çünkü her ne olursa olsun Allah onu görür. O halde eğer Allah'ın, senin kusurlarını görmesini istemiyorsan, meydana gelmemeleri için onlardan sakın.

Bu arada manen temiz bir yerde durmak, kalbin hakikati bilmeden hiçbir iddianın olmadığı ve durma izni verilen sınırda durmasıdır. Allah da zaten haddinin yanında duran -haddini bilen- kimseye merhamet eder. Vaktin girdiğini bilmek ise boyun bükme ve teslimiyet vaktini bilip bu vakit ile sevinç ve bast vaktini birbirinden ayırt etmektir. Ayrıca, ruhen kıbleye yönelmek ve yer veya yöre kaydı koymaksızın kalbi Allah'a bağlamak gerekir.

اُولٰٓئِكَ عَلٰى هُدًى مِنْ رَبِّهِمْ وَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ﴿٥﴾

5- “İşte onlar, Rablerinden gelen bir hidayet üzeredirler ve işte onlar, kurtuluşa erenlerin ta kendileridir.”

Dünyada ve ahirette doğru yolu bulup kurtuluşa erenler, namazlarının şartını ve ibadetlerinin adabının hakkını yerine getirenlerdir.

وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يَشْتَرِي لَهْوَ الْحَدِيثِ لِيُضِلَّ عَنْ سَبِيلِ اللّٰهِ بِغَيْرِ
عِلْمٍ وَيَتَّخِذَهَا هُزُوًا اُولٰٓئِكَ لَهُمْ عَذَابٌ مُهِينٌ ﴿٦﴾

6- “İnsanlardan öylesi vardır ki, bilgisizce Allah yolundan saptırmak ve o yolu eğlenceye almak için eğlencelik asılsız ve faydasız sözleri satın alır. İşte onlar için aşağılayıcı bir azap vardır.,

( هُزُوًا ) “*Eğlencelik söz*”, Allah’ın zikrinden alıkoyan ve işitilmesi, Allah ile kul arasında perde olan sözdür. Bir yoruma göre de bu, kalben yanılmaya yol açan zahirin boş sözleridir. Bunlar bâtıla dalmak ve kişinin kendisini ilgilendirmeyen işlerle uğraşmasıdır.

وَاِذَا تُتْلٰى عَلَيْهِ اٰيَاتُنَا وَلّٰى مُسْتَكْبِرًا كَاَنْ لَمْ يَسْمَعْهَا كَاَنَّ ف۪ٓي اُذُنَيْهِ
وَقْرًا فَبَشِّرْهُ بِعَذَابٍ اَل۪يمٍ ﴿٧﴾

7- “Ona ayetlerimiz okunduğu zaman onları hiç işitmemiş gibi kulağında bir ağırlık var da büyüklenerek arkasını döner. Bu nedenle ona elem dolu bir azabı müjdele.”

İlgisi bakımından ayrılık içinde, kalbiyle de dağınık olan kimsede, vaazın çokluğu ancak nefret ve uzaklaşmayı artırır. Bu yüzden duyması yok hükmündedir. Ona edilen vaaz da heba olur ve boşa gider.

Şu beyitte söylendiği gibi:

*Sitem ettiğim zaman yılgına ben, sadece*
*Çizmiş olurum kalemimle suyun üstünde bazı harfler*

إِنَّ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ لَهُمْ جَنَّاتُ النَّعِيمِ ﴿٨﴾
خَالِدِينَ فِيهَا وَعْدَ اللّٰهِ حَقًّا وَهُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿٩﴾

8, 9- "Şüphesiz iman edip salih amel işleyenler için içlerinden ebedî kalacakları Naîm cennetleri vardır. Allah, gerçek bir vaatte bulunmuştur. O, mutlak güç sahibidir, hüküm ve hikmet sahibidir."

( اٰمَنُوا ) *"İman ettiler."*

Yani tasdik ettiler.

( وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ ) *"Salih ameller işlediler."*

Yani hakikate erdiler. Bu çerçevede hakikate erme vasfına sahip olmaları, tasdiklerine dayanmaktadır. Böylece kurtulup selamete erdiler. Bu itibarla onlar, rahatlıkları içerisinde yaşamaktalar, daimdirler, oradan ayrılmazlar.

خَلَقَ السَّمٰوَاتِ بِغَيْرِ عَمَدٍ تَرَوْنَهَا وَاَلْقٰى فِي الْاَرْضِ رَوَاسِيَ اَنْ تَمِيدَ بِكُمْ وَبَثَّ فِيهَا مِنْ كُلِّ دَٓابَّةٍ وَاَنْزَلْنَا مِنَ السَّمَٓاءِ مَٓاءً فَاَنْبَتْنَا فِيهَا مِنْ كُلِّ زَوْجٍ كَرِيمٍ ﴿١٠﴾

10- "Allah, gökleri görebileceğiniz direkler olmaksızın yarattı. Yeryüzüne de sizi sarsmasın diye sabit dağlar yerleştirdi ve orada her türlü canlıyı yaydı. Gökten de bir su indirip yeryüzünde her faydalı çift bitkiden bitirdik."

Allah, göğü sütun olmaksızın kendi kudretiyle havada tutmuş ve onu, dayanaksız veya kazıklara bağlanmaksızın korumuştur. Doğrusu bu, Allah'ın hükmü, takdiri, iradesi ve tedbiriyle olmuştur.

( وَاَلْقٰى فِي الْاَرْضِ رَوَاسِيَ اَنْ تَمِيدَ بِكُمْ ) *"Yeryüzüne de sizi sarsmasın diye sabit dağlar yerleştirdi."*

Bunlar, zahirde dağlardır ancak hakikatte halkın yardımcıları olan abdallar ve evtadlardır. Allah, bunlarla yaratıkları korumakta

ve yakın olan kimselerden de uzak olan kimselerden de belayı onlarla defetmektedir.

( وَاَنْزَلْنَا مِنَ السَّمَآءِ مَآءً ) *"Gökten de bir su indirdik."*

Zahirin göğünden yağmur yeşilliğin bahçelerine yağarken, batının göğünden yakınlık ve huzur ehlinin bahçelerine yağar.

هٰذَا خَلْقُ اللّٰهِ فَاَرُونِي مَاذَا خَلَقَ الَّذِينَ مِنْ دُونِهِ بَلِ الظَّالِمُونَ فِي ضَلَالٍ مُبِينٍ ﴿١١﴾

11- "İşte Allah'ın yarattıkları! Haydi, Allah'ı bırakıp da taptıklarınızın yarattığını bana gösterin. Hayır, zalimler açık bir sapıklık içindedirler."

İşte yüceliğinde mutlak güç sahibi olan Allah'ın yarattıkları! Şimdi siz de Allah'tan başka taptıklarınızın yerde ve gökte ne yarattığını bana gösterin.

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا لُقْمٰنَ الْحِكْمَةَ اَنِ اشْكُرْ لِلّٰهِ وَمَنْ يَشْكُرْ فَاِنَّمَا يَشْكُرُ لِنَفْسِهِ وَمَنْ كَفَرَ فَاِنَّ اللّٰهَ غَنِيٌّ حَمِيدٌ ﴿١٢﴾

12- "Andolsun, biz Lokman'a 'Allah'a şükret' diye hikmet verdik. Kim şükrederse ancak kendisi için şükretmiş olur. Kim de nankörlük ederse bilsin ki Allah zengindir, övülmeye layıktır."

"Hikmet" akılda, akitte ve konuşmada doğruyu yakalamaktır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Hikmet, nefsin himmeti bakımından değil de Hakk'ın muvaffakiyeti bakımından doğru yolu izlemektir.

- Hikmet, nefsin arzusunun hâkimiyeti altında olmamaktır.

- Hikmet, hüküm kendisine mahsus olan Allah'ın hükmüyle var olmaktır.

- Hikmet, ayağını yorganından fazla uzatmaman için haddini bilmendir.

- Hikmet, karşı koyamayacağını bildiğin kimseye karşı koymamandır.

( اَنِ اشْكُرْ لِلّٰهِ ) "*Allah'a şükret*" diye.

Hakiki şükür, Rabbin lütufkâr muamelelerini görmek suretiyle kalp gözünün açılmasıdır. Bu itibarla "şekere (şükretti)" kelimesi, "hayvan dişini gösterdi" ifadesinde kullanılan "keşere (diş gösterdi)" fiilinin ters çevrilmiş şeklidir. Bu çevrede tıpkı "cezebe" ve "cebeze" fiillerinde olduğu gibi "şekere" ve "keşere" fiilleri de benzer anlamlarda kullanılır.

Şükür konusunda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Şükür, Allah'ın şükründen aciz olduğunu kesin olarak bilmendir.

- Şükür, nimette tam lezzet bulmayı sağlayan şeydir.

- Şükür, kalbin sevinçle dolmasından dile yansıyan bir fazlalıktır. Böylece dil, şükredilenin övgüsüyle hareket etmiş olur.

- Şükür, her zengin kişinin vasfıdır. Tıpkı nankörlüğün de her kötü kimsenin vasfı olduğu gibi.

- Şükür, artış kapısını çalmaktır.

- Şükür, inamı kayıt altına almaktır.

- Şükür, kalbi içtenliğe sahip kimsenin, lütufların sayfasını dağıtmak suretiyle, yazdırdığı bir hikâyedir.

( وَمَنْ شَكَرَ فَاِنَّمَا يَشْكُرُ لِنَفْسِه۪ ) "*Kim şükrederse ancak kendisi için şükretmiş olur.*" (Neml, 27/40) Çünkü kişi, nefsinin ıslahı ve kısmeti için çaba harcar.

وَاِذْ قَالَ لُقْمٰنُ لِابْنِه۪ وَهُوَ يَعِظُهُ يَا بُنَيَّ لَا تُشْرِكْ بِاللّٰهِ اِنَّ الشِّرْكَ لَظُلْمٌ عَظ۪يمٌ ﴿١٣﴾

13- "Hani Lokman, oğluna öğüt vererek şöyle demişti: 'Yavrum! Allah'a ortak koşma! Çünkü ortak koşmak, elbette büyük bir zulümdür.'"

Şirk açık ve gizli olmak üzere iki kısma ayrılır: Açık şirk, putlara tapmaktır. Gizli şirk de yaratıklardan herhangi bir şeyi hesaba katmaktır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Şirk, gaybı görmekle birlikte Allah'tan başkasını var saymaktır.

- Şirk, kalbe zulmetmektir. Günahlar ise nefse zulmetmektir. Nefse yapılan bağışlanabilir. Oysa kalplere yönelik zulmün bağışlanmasının hiçbir yolu yoktur.

وَوَصَّيْنَا الْاِنْسَانَ بِوَالِدَيْهِ حَمَلَتْهُ اُمُّهُ وَهْنًا عَلٰى وَهْنٍ وَفِصَالُهُ فِي
عَامَيْنِ اَنِ اشْكُرْ لِي وَلِوَالِدَيْكَ اِلَيَّ الْمَصِيرُ ﴿١٤﴾

14- "İnsana da anne ve babasına iyi davranmasını emrettik. Annesi, onu her gün biraz daha güçsüz düşerek karnında taşımıştır. Onun sütten kesilmesi de, iki yıl içinde olur. İnsana şöyle emrettik: 'Bana ve anne babana şükret. Dönüş banadır.'"

Allah, kendisine ve ebeveyne şükretmeyi vacip kılmıştır. Bu arada ebeveyne yapılması gereken şükrün, onlara sürekli itaatla gerçekleştiğine ve bu şükürde sözlü övgülerini dile getirmekle yetinilemeyeceğine dair icma olduğundan, Hakk'ın şükründe de içinde akla uygunluk bulunmadığı sürece, sadece söz ile yetinilemeyeceği anlaşılmış olmaktadır. Akla uygunluk ise ibadete sarılmak ve nimeti hatada harcamayıp taat yolunda kullanmakla olur. Bu itibarla Hakk'a şükür yüceltmeyle, ebeveyne şükür de nafaka ve saygıyla gerçekleşir.

وَاِنْ جَاهَدَاكَ عَلٰى اَنْ تُشْرِكَ بِي مَا لَيْسَ لَكَ بِهِ عِلْمٌ فَلَا تُطِعْهُمَا
وَصَاحِبْهُمَا فِي الدُّنْيَا مَعْرُوفًا وَاتَّبِعْ سَبِيلَ مَنْ اَنَابَ اِلَيَّ ثُمَّ اِلَيَّ
مَرْجِعُكُمْ فَاُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿١٥﴾

15- “Eğer (ana-baban), hakkında hiçbir bilgi sahibi olmadığın bir şeyi bana ortak koşmak için seninle uğraşırlarsa, onlara itaat etme. Fakat dünyada onlarla iyi geçin. Bana yönelenlerin yoluna uy. Sonra dönüşünüz ancak banadır. Ben de size yapmakta olduğunuz şeyleri haber vereceğim.”

Eğer anne ve baban, Allah'a bir şeyi ortak koşman veya Allah'ın emrine göre hata olan bir şeye çaba harcaman için seni zorlarlarsa, onlara itaat etme. Lakin onlarla tatlı sert bir üslupla güzel geçin. Sakıncası olmayan konularda zahirini onların emrine ver. Sırrınla ise yalnızca Allah'ı gözet.

( وَاتَّبِعْ سَبِيلَ مَنْ اَنَابَ اِلَيَّ ) *“Bana yönelenlerin yoluna uy.”*

Allah'a yönelen kimse, nefisten hiçbir eser kalmaksızın O'na hakkıyla dönüş yapan kimsedir.

يَا بُنَيَّ اِنَّهَآ اِنْ تَكُ مِثْقَالَ حَبَّةٍ مِنْ خَرْدَلٍ فَتَكُنْ فِي صَخْرَةٍ اَوْ فِي
السَّمٰوَاتِ اَوْ فِي الْاَرْضِ يَاْتِ بِهَا اللّٰهُ اِنَّ اللّٰهَ لَطِيفٌ خَبِيرٌ ﴿١٦﴾

16- “Yavrum! Şüphesiz yapılan iş bir hardal tanesi ağırlığında olsa ve bir kayanın içinde yahut göklerde ya da yerin içinde bile olsa Allah onu çıkarır getirir. Çünkü Allah en gizli şeyleri bilendir, hakkıyla haberdar olandır.”

Zerre kadar veya ondan daha az bir şey olup kısmette yazıldığı zaman hiç şüphesiz o, kısmet sahibine ulaşır.

( اِنَّ اللّٰهَ لَطِيفٌ خَبِيرٌ ) *“Allah, en gizli şeyleri bilendir, hakkıyla haberdar olandır.”*

Allah, işlerin ince ve gizli olanlarını bilir.

يَا بُنَيَّ اَقِمِ الصَّلٰوةَ وَاْمُرْ بِالْمَعْرُوفِ وَانْهَ عَنِ الْمُنْكَرِ وَاصْبِرْ عَلٰى
مَآ اَصَابَكَ اِنَّ ذٰلِكَ مِنْ عَزْمِ الْاُمُورِ ﴿١٧﴾

17- “Yavrum! Namazı dosdoğru kıl. İyiliği emret. Kötülükten alıkoy. Başına gelen musibetlere karşı sabırlı ol. Çünkü bunlar, kesin olarak emredilmiş işlerdendir.”

İyiliği emir, söz ile olur. Ancak en mükemmeli, alıkonulduğun şeylerden nefsinle imtina etmen ve başkalarına emrettiğin şeylerle meşgul olup onlarla vasıflanmandır. Nefsine hâkimiyeti olmayanın başkasına da hükmü geçmez.

Öte yandan emredilmesi vacip olan iyilik, kulu Allah’a ulaştıran şeydir. Alıkonulması gereken kötülük de kulu Allah’tan meşgul eden şeydir.

( وَاصْبِرْ عَلٰى مَٓا اَصَابَكَ ) *“Başına gelen musibetlere karşı sabırlı ol.”*

Bu ifadeyle, Allah’ın hakkını yerine getiren kimsenin Allah yolunda imtihana tabi tutulacağına dikkat çekilmektedir. İşte bu kimsenin izleyeceği yol, Allah için sabretmesidir. Çünkü Allah için sabreden kimse, Allah katında zararlı çıkmaz.

وَلَا تُصَعِّرْ خَدَّكَ لِلنَّاسِ وَلَا تَمْشِ فِي الْاَرْضِ مَرَحًا اِنَّ اللّٰهَ لَا
يُحِبُّ كُلَّ مُخْتَالٍ فَخُورٍ ﴿١٨﴾

18- “Küçümseyerek surat asıp insanlardan yüz çevirme ve yeryüzünde böbürlenerek yürüme. Çünkü Allah, hiçbir kibirleneni, övüneni sevmez.”

Yani insanlara karşı kibirlenme ve onlara, nisbet ve Mevlâ’n tarafından gözetim altında tutulduğundan emin olmak bakımından bak. Nitekim her kim Mevlâ’sının kendisine baktığını bilirse, kibirlenip tepeden bakmaz, aksine tevazu göstererek güçsüz görünmeye çalışır.

وَاقْصِدْ فِي مَشْيِكَ وَاغْضُضْ مِنْ صَوْتِكَ اِنَّ اَنْكَرَ الْاَصْوَاتِ
لَصَوْتُ الْحَمِيرِ ﴿١٩﴾

19- "Yürüyüşünde doğal ol. Sesini alçalt. Çünkü seslerin en çirkini, şüphesiz eşeklerin sesidir."

Maddi varlıklarından ilgini büsbütün kes, gücünden tamamen sıyrıl, güç ve kuvvetin ile arana set çek ve sana hâkim olan sırrının keşiflerinden soluklan. Gafletinin sarhoşluğundan uyanman için sesini kimin işittiğine bak.

( اِنَّ اَنْكَرَ الْاَصْوَاتِ لَصَوْتُ الْحَمِيرِ ) *"Çünkü seslerin en çirkini, şüphesiz eşeklerin sesidir."*

İşaret yorumuna göre sesi en çirkin olan, marifet dilinde Hak'tan izinsiz konuşan kimsedir. Kimilerine göre ise o, zamansız konuşan sofidir.

Bir yoruma göre de eşek ancak şeytanı gördüğü zaman anırdığı için sesi en çirkin ses olmuştur.

اَلَمْ تَرَوْا اَنَّ اللّٰهَ سَخَّرَ لَكُمْ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَاَسْبَغَ عَلَيْكُمْ نِعَمَهُ ظَاهِرَةً وَبَاطِنَةً وَمِنَ النَّاسِ مَنْ يُجَادِلُ فِي اللّٰهِ بِغَيْرِ عِلْمٍ وَلَا هُدًى وَلَا كِتَابٍ مُنِيرٍ ﴿٢٠﴾

20- "Göklerde ve yerde ne varsa hepsini Allah'ın, sizin hizmetinize verdiğini ve açıkça yahut gizlice üzerinizdeki nimetlerini tamamladığını görmediniz mi? Yine de insanlar arasında, hiçbir bilgisi, yol göstericisi ve aydınlatıcı bir kitabı olmadan Allah hakkında tartışıp duranlar vardır."

O şeylerin her birinde Allah sizin için bir fayda var etmiştir. Örneğin gökyüzünü sizin için tavan olsun diye, yeryüzünü sizin için döşek olsun diye, güneşi sizin için lamba olsun diye, ayı onunla yılların sayısını ve hesabı bilesiniz diye, yıldızları da onlarla yolunuzu bulasınız diye yaratmıştır.

( وَاَسْبَغَ عَلَيْكُمْ نِعَمَهُ ظَاهِرَةً وَبَاطِنَةً ) *"Ve açıkça yahut gizlice üzerinizdeki nimetlerini tamamladığını görmediniz mi?"*

Ayetteki ( أَسْبَغَ ) lafzı, ihtiyaç miktarından fazla olan ve onunla birlikte daha fazlasına ihtiyaç duyulmayan şeyi ifade eder.

Açık ve gizli nimetlerle ilgili olarak âlimler çok şey konuşmuşlardır. Bu çerçevede açık olan, nimetin varlığıdır. Gizli olan da nimeti vereni görmektir. Açık olan, dünyalık nimetlerdir. Gizli olan da dini nimetlerdir. Açık olan, güzel yaratılıştır. Gizli olan da güzel ahlaktır. Açık olan, hatasız bir nefistir. Gizli olan da gafletsiz bir kalptir. Açık olan, Allah'ın maddi vergisidir. Gizli olan da rızasıdır. Açık olan, mallar ve artışlarıyla ilgilidir. Gizli olan da, haller ve safiyetleriyle ilgilidir. Açık olan, nimettir. Gizli olan da masumiyettir. Açık olan, ibadetlerde muvaffakiyettir. Gizli olan da ibadetlerin kabul edilmesidir. Açık olan, yaratılışın uyumlu oluşudur. Gizli olan da ahlakın arınmışlığıdır. Açık olan, salihlerin arkadaşlığıdır. Gizli olan da saygınlıklarının korunmasıdır. Açık olan, dünyaya mesafeli durmaktır. Gizli olan da dünya ve ahiret yerine Mevlâ ile yetinmektir. Açık olan, zühttür. Gizli olan da vecddir. Açık olan, nefisle mücadelede muvaffak olmaktır. Gizli olan da müşahedenin gerçekleşmesidir. Açık olan, nefsin vazifeleridir. Gizli olan da kalbin latifeleridir. Açık olan, halkı bırakıp nefsinle uğraşmandır. Gizli olan da nefsini bırakıp Rabbinle meşgul olmandır. Açık olan, Allah'ı aramaktır. Gizli olan da Allah'ın varlığıdır. Açık olan, Allah'a ulaşmandır. Gizli olan da O'nunla beraber kalmandır.

وَاِذَا قٖيلَ لَهُمُ اتَّبِعُوا مَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ قَالُوا بَلْ نَتَّبِعُ مَا وَجَدْنَا عَلَيْهِ
اٰبَٓاءَنَا اَوَلَوْ كَانَ الشَّيْطَانُ يَدْعُوهُمْ اِلٰى عَذَابِ السَّعٖيرِ ﴿٢١﴾

21- "Kendilerine: 'Allah'ın indirdiğine uyun' denildiği zaman: 'Hayır, biz babalarımızı üzerinde bulduğumuz şeye uyarız' derler. Şeytan kendilerini cehennem azabına çağırıyor olsa da mı?!"

Onlar kendilerini de benzerlerini de aşamadılar ve hallerinin dönüştürücüsü olan Allah'a giden yolu bulamadılar. Oysa maneviyatı yükselen ve niyeti sırf Allah rızası için olan kimse, en sağlam kulpa sarılmış ve en ideal yolu izlemiş olur.

وَمَنْ يُسْلِمْ وَجْهَهُٓ اِلَى اللّٰهِ وَهُوَ مُحْسِنٌ فَقَدِ اسْتَمْسَكَ بِالْعُرْوَةِ
الْوُثْقٰى وَاِلَى اللّٰهِ عَاقِبَةُ الْاُمُورِ ﴿٢٢﴾

22- "Kim iyilik yaparak kendini Allah'a teslim ederse, şüphesiz en sağlam kulpa tutunmuştur. İşlerin sonu da Allah'a varır."

Şu ayetlerde konu edilen kimselerin durumu ise bunun aksinedir:

وَمَنْ كَفَرَ فَلَا يَحْزُنْكَ كُفْرُهُ اِلَيْنَا مَرْجِعُهُمْ فَنُنَبِّئُهُمْ بِمَا عَمِلُوا
اِنَّ اللّٰهَ عَلِيمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ ﴿٢٣﴾ نُمَتِّعُهُمْ قَلِيلًا ثُمَّ نَضْطَرُّهُمْ اِلٰى
عَذَابٍ غَلِيظٍ ﴿٢٤﴾ وَلَئِنْ سَاَلْتَهُمْ مَنْ خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ
لَيَقُولُنَّ اللّٰهُ قُلِ الْحَمْدُ لِلّٰهِ بَلْ اَكْثَرُهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٢٥﴾

23, 24, 25- "Kim inkâr ederse, onun inkârı seni üzmesin. Onların dönüşleri ancak bizedir. Biz de onlara yaptıklarını haber veririz. Allah, göğüslerin içindekini hakkıyla bilendir. Biz, onları biraz yararlandırırız. Sonra da onları ağır bir azaba sürükleriz. Andolsun, eğer onlara: 'Gökleri ve yeri kim yarattı?' diye sorsan mutlaka: 'Allah' derler. De ki: 'Hamd Allah'a mahsustur.' Fakat onların çoğu bilmezler."

Onların dönüşü bizedir, cezaları bizdendir ve hesapları bize aittir. Şayet onlara yaratanlarını sorarsan, Allah olduğunu ikrar ederler. Lakin sapıklıklarına dönüş yaptıkları zaman söylediklerini bozarlar ve inkârda ısrar ederler.

لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْغَنِيُّ الْحَمِيدُ ﴿٢٦﴾

26- "Göklerde ve yerde ne varsa Allah'ındır. Şüphesiz Allah, her bakımdan sınırsız zengin olandır, övülmeye layık olandır."

Göklerdeki ve yerdeki şeyler, mülk olarak Allah'ındır. O, hükmünü onlar hakkında hakka uygun olarak icra eder. Dönüşleri de kesin olarak O'nadır.

وَلَوْ اَنَّ مَا فِي الْاَرْضِ مِنْ شَجَرَةٍ اَقْلَامٌ وَالْبَحْرُ يَمُدُّهُ مِنْ
بَعْدِهِ سَبْعَةُ اَبْحُرٍ مَا نَفِدَتْ كَلِمَاتُ اللّٰهِ اِنَّ اللّٰهَ عَزِيزٌ حَكِيمٌ ﴿٢٧﴾

27- "Eğer yeryüzündeki ağaçlar kalem, deniz de mürekkep olsa, arkasından yedi deniz daha ona katılsa, Allah'ın sözleri yine de tükenmez. Şüphesiz Allah mutlak güç sahibidir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Eğer yeryüzündeki kalemler ağaç, denizler de mürekkep olup onlara yetecek miktarda kâğıtlar harcansa, katipler de kalemler kırılıncaya kadar kendilerini zorlasalar, denizler tükenip kağıtların tamamı kullanılsa ve katiplerin ömrü bitse yine de seninle olan konuşmamızın ve sana duyurduğumuz hitabımızın manaları tükenmez. Çünkü sen, ilelebet bizimle berabersin. Ebedi olan vasıf ise sona ermez.

Bir yoruma göre de şayet senin onlara dönük çok sözün olsa da şüphesiz sizdeki tükenir; fakat Allah katındaki kalıcıdır.

Şiir:

*Sitem için tuttuğum dosyalar var bende*
*Açılacak bir gün onlar ve uzayacak sitem*

مَا خَلْقُكُمْ وَلَا بَعْثُكُمْ اِلَّا كَنَفْسٍ وَاحِدَةٍ اِنَّ اللّٰهَ سَمِيعٌ بَصِيرٌ ﴿٢٨﴾

28- "Sizin yaratılmanız ve öldükten sonra tekrar diriltilmeniz, ancak bir tek canı yaratmak ve diriltmek gibidir. Şüphesiz Allah, hakkıyla işitendir, hakkıyla görendir."

Allah katında, az ya da çok şey yaratmak aynıdır. Bu itibarla O, ne çok olandan sıkıntı ve zorluk çeker, ne de az olandan rahatlık ve kolaylık hisseder.

(اِنَّمَٓا اَمْرُهُٓ اِذَٓا اَرَادَ شَيْـًٔا اَنْ يَقُولَ لَهُ كُنْ فَيَكُونُ) *“Bir şeyi dilediği zaman, O'nun emri, o şeye ancak 'Ol!' demektir. O da hemen oluverir.”* (Yasîn, 36/82)

Allah, bunu sözüyle söyler ancak onu bir çaba harcamaksızın, imkân tüketmeksizin, bir iç çağrışım olmaksızın ve bir amaç belirmeksizin, kudretiyle oluşturur.

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ يُولِجُ الَّيْلَ فِي النَّهَارِ وَيُولِجُ النَّهَارَ فِي الَّيْلِ وَسَخَّرَ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ كُلٌّ يَجْرٖٓي اِلٰٓى اَجَلٍ مُسَمًّى وَاَنَّ اللّٰهَ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبٖيرٌ ﴿٢٩﴾

29- “Görmez misin mi ki Allah geceyi gündüze, gündüzü de geceye katmaktadır. Güneşi ve ayı da buyruğu altına almıştır. Her biri, belli bir zamana kadar akar gider. Şüphesiz Allah, yaptıklarınızdan hakkıyla haberdardır.”

ذٰلِكَ بِاَنَّ اللّٰهَ هُوَ الْحَقُّ وَاَنَّ مَا يَدْعُونَ مِنْ دُونِهِ الْبَاطِلُ وَاَنَّ اللّٰهَ هُوَ الْعَلِيُّ الْكَبٖيرُ ﴿٣٠﴾

30- “Bu böyledir. Çünkü Allah hakkın ta kendisidir. O'nu bırakıp da taptıkları ise bâtıldır. Şüphesiz Allah yücedir, büyüktür.”

Allah hakkın ta kendisidir. O, hakkı gerçekleştiren varlıktır. Onların Allah'tan başka taptıkları ise bâtıldır. Bâtıl ise yokluktan meydana gelmiş ve yok olabilme özelliği taşımaktadır.

اَلَمْ تَرَ اَنَّ الْفُلْكَ تَجْرٖي فِي الْبَحْرِ بِنِعْمَتِ اللّٰهِ لِيُرِيَكُمْ مِنْ اٰيَاتِهٖ اِنَّ فٖي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِكُلِّ صَبَّارٍ شَكُورٍ ﴿٣١﴾

31- “Görmedin mi ki, gemiler Allah'ın nimetiyle denizde akıp gitmektedir. Allah, bunu ayetlerinden bir kısmını size göstermek

için yapmaktadır. Şüphesiz ki bunda hakkıyla sabreden, hakkıyla şükreden herkes için ibretler vardır."

Zahirde onların selameti gemidedir, batında ise varlık âlemindeki yaratıklara karşı güven içinde olmalarıdır. Kurtuluşları da kudret denizlerindeki masumiyet gemilerindedir.

( اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِكُلِّ صَبَّارٍ شَكُورٍ ) *"Şüphesiz ki bunda hakkıyla sabreden, hakkıyla şükreden herkes için ibretler vardır."*

Belalardan kaçmayarak onlara karşı duran, başına gelen ilahi takdirin bela ve lütuf cinsinden tasarruflarına karşı şükreden herkes için ibretler vardır.

وَاِذَا غَشِيَهُمْ مَوْجٌ كَالظُّلَلِ دَعَوُا اللّٰهَ مُخْلِصِينَ لَهُ الدِّينَ فَلَمَّا نَجّٰيهُمْ
اِلَى الْبَرِّ فَمِنْهُمْ مُقْتَصِدٌ وَمَا يَجْحَدُ بِاٰيَاتِنَا اِلَّا كُلُّ خَتَّارٍ كَفُورٍ ﴿٣٢﴾

32- "Onları bir dalga gölgelikler gibi kapladığında, dini Allah'a has kılarak O'na yalvarırlar. Allah, onları kurtarıp karaya çıkarınca, onlardan bir kısmı orta yolu tutar. Bizim ayetlerimizi ise ancak son derece kaypak, son derece nankör olanlar inkâr eder."

Takdir denizlerinin dalgaları onların üzerinde çarpıştığı zaman, o denizlerin kendilerini güvenli sahile atmasını temenni ettiler. Oysa Allah, temennilerini gerçekleştirmek lütfunda bulunduğu zaman, onlar hatalarının başına döndüler.

Şiir:

*Siz nice cahillikler yaptınız, sonra biz halimliğimizle döndük*
*Dostlar! Daha ne kadar siz cahillik yapacaksınız da biz halim olacağız*

يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ اتَّقُوا رَبَّكُمْ وَاخْشَوْا يَوْمًا لَا يَجْزِي وَالِدٌ عَنْ وَلَدِهِۘ
وَلَا مَوْلُودٌ هُوَ جَازٍ عَنْ وَالِدِهِ شَيْـًٔا اِنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّ فَلَا تَغُرَّنَّكُمُ
الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا وَلَا يَغُرَّنَّكُمْ بِاللّٰهِ الْغَرُورُ ﴿٣٣﴾

33- "Ey insanlar! Rabbinize karşı gelmekten sakının. Hiçbir babanın, çocuğuna hiçbir yarar sağlayamayacağı, hiçbir çocuğun da babasına hiçbir yarar sağlayamayacağı günden korkun. Şüphesiz Allah'ın vaadi gerçektir. Sakın dünya hayatı sizi aldatmasın. O aldatıcı şeytan da sizi aldatmasın."

Allah, onları bazen yaptıklarıyla korkutarak: ( وَاخْشَوْا يَوْمًا ) "...*günden korkun*" buyururken, bazen onları sıfatlarıyla korkutarak: "*O, Allah'ın gördüğünü bilmedi mi?*" buyurmakta, bazen de zatıyla korkutarak: "*Allah, sizi kendisinden sakındırır*" buyurmaktadır.

اِنَّ اللّٰهَ عِنْدَهُ عِلْمُ السَّاعَةِ وَيُنَزِّلُ الْغَيْثَ وَيَعْلَمُ مَا فِي الْاَرْحَامِ
وَمَا تَدْرِي نَفْسٌ مَاذَا تَكْسِبُ غَدًا وَمَا تَدْرِي نَفْسٌ بِاَيِّ اَرْضٍ
تَمُوتُ اِنَّ اللّٰهَ عَلِيمٌ خَبِيرٌ ﴿٣٤﴾

34- "Kıyametin ne zaman kopacağı bilgisi şüphesiz yalnızca Allah katındadır. O, yağmuru indirir, rahimlerdekini bilir. Hiç kimse yarın ne kazanacağını bilemez. Hiç kimse nerede öleceğini de bilemez. Şüphesiz Allah hakkıyla bilendir, hakkıyla haberdar olandır."

Kıyamet bilgisine yalnızca Allah sahiptir. Bir de Allah, rahimdekilerin erkeğini, dişisini, mutsuzunu, mutlusunu, güzelini ve çirkinini bilir. Yağmuru ne zaman yağdıracağını, kaç damla yağdıracağını ve nerede yağdıracağını da bilir.

( وَمَا تَدْرِي نَفْسٌ مَاذَا تَكْسِبُ غَدًا وَمَا تَدْرِي نَفْسٌ بِاَيِّ اَرْضٍ تَمُوتُ اِنَّ اللّٰهَ عَلِيمٌ خَبِيرٌ ) "*Hiç kimse, yarın ne kazanacağını bilemez. Hiç kimse, nerede öleceğini de bilemez. Şüphesiz Allah hakkıyla bilendir, hakkıyla haberdar olandır.*"

Hiçbir nefis yarın işleyeceği iyilik ve kötülüğü, uyum ve uyumsuzluğu bilmez. Hiçbir nefis nerede öleceğini, muradına erip eremeyeceğini de bilmez.

سورة السَّجْدَةِ

# SECDE SÛRESİ

(Secde Sûresi 30 âyettir. Mekke'de inmiştir. 18-20. âyetlerin Medine'de indiği nakledilmiştir. Sûre adını 15. secde âyetinden almıştır)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir sözdür ki onu işitmek günahkâr, itaatkâr, seçkin veya sıradan herkesin ilkbaharıdır. Her kim onu teslimiyet kulağıyla dinlerse, tatlı uykuyu terk etmiş olur. Kim onu sevgi kulağıyla dinlerse, lezzetli yiyeceği ve içeceği terk etmiş olur.

الٓمٓ ﴿١﴾

1- "Elif. Lâm. Mîm."

"Elif" harfi, sevenlerin Allah'ın yakınlığına alışıp onsuz edemediklerine ve ariflerin O'nu yüceltmeye alışıp başkasında ünsiyet bulamadıklarına işarettir.

"Lâm" harfindeki işaret, Allah'ın, sevdikleri için sakladığı buluşmasına yöneliktir. Bu durumda Allah, sevdiklerinin, O'na bağlılığa devam mı ettiklerini yoksa O'na karşı vefada kusur mu işlediklerini umursamaz.

"Mîm" harfindeki işaret ise Allah'ın velilerinin, kendi muratlarını O'nun muradı için terk ettiklerine ve bu nedenle Allah'ın, onları bütün kullarına tercih ettiğine yöneliktir.

تَنْزِيلُ الْكِتَابِ لَا رَيْبَ فِيهِ مِنْ رَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿٢﴾

2- "Kendisinde hiçbir şüphe bulunmayan bu Kitab'ın indirilişi âlemlerin Rabbi tarafındandır."

Dostlarla buluşmak imkânsız hale geldiği zaman, dostlar nezdindeki en değerli şey, dostların yazıp gönderdikleridir. Ben, sevdiklerime Kitab'ımı indirdim, peygamberlik mesajı, onlara hitabımı taşıdı. Bu arada itabım, kulaklarına gelse de onlara zarar vermez. Zira onlar, azabımdan güven içindedirler.

اَمْ يَقُولُونَ افْتَرٰيهُ بَلْ هُوَ الْحَقُّ مِنْ رَبِّكَ لِتُنْذِرَ قَوْمًا مَٓا اَتٰيهُمْ مِنْ نَذِيرٍ مِنْ قَبْلِكَ لَعَلَّهُمْ يَهْتَدُونَ ﴿٣﴾

3- "Yoksa: 'Onu Muhammed uydurdu mu' diyorlar? Hayır o, kendilerine senden önce hiçbir uyarıcı gelmemiş olan bir kavmi uyarman için, doğru yolu bulsunlar diye Rabbin tarafından indirilmiş gerçektir."

Bizden size gelen, gerçektir. Şayet düşmanlar bu gerçeği karıştırmışlarsa o, size zarar vermez ve sizin için hiçbir sakıncası yoktur. Çünkü sevgilinin sevgiliyle olan sohbetinin en lezzetlisi, rakibin yokluğu halinde yapılandır.

اَللّٰهُ الَّذِي خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ وَمَا بَيْنَهُمَا فِي سِتَّةِ اَيَّامٍ ثُمَّ اسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ مَا لَكُمْ مِنْ دُونِهِ مِنْ وَلِيٍّ وَلَا شَفِيعٍ اَفَلَا تَتَذَكَّرُونَ ﴿٤﴾

4- "Allah gökleri ve yeri, ikisi arasındakileri altı gün içinde yaratan, sonra da Arş'a kurulandır. Sizin için O'ndan başka hiçbir dost, hiçbir şefaatçi yoktur. Hâlâ düşünüp öğüt almayacak mısınız?"

Allah o günleri, gün mefhumu dışındaki bir yaratma biçimiyle yaratmıştır. Bu itibarla, Allah'ın bir yaratığı vakit dâhilinde yaratması, o yaratığın şartlarından veya zaruretlerinden değildir. Çünkü vakit de vaktin dışında yaratılmıştır. Bir de nasıl ki yaratık olarak bir şey, vakte muhtaç değilse, aynı şekilde vakit de vakitten müstağnidir.

( ثُمَّ اسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ ) *"Sonra da Arş'a kurulandır."*

Arş ile ilgili bu söz hakkında ancak şu söylenebilir: Allah, Arş'a kuruldu, lakin kadimin sınırı yoktur. O, Arş'a kuruldu, lakin kendisi için zâtıyla yakınlık veya uzaklık caiz değildir. O, Arş'a kuruldu, lakin eğer Arş'ın hayatı olsaydı, o vuslatın birazcığına bile her şeyden daha çok susamış olurdu. Ne var ki Arş cansızdır. Cansızın ise ne muradı olabilir?! Allah Arş'a kuruldu, lakin O, ebedî ve benzersizdir, birdir ve sınırsızdır.

( مَا لَكُمْ مِنْ دُونِهٖ مِنْ وَلِيٍّ وَلَا شَفِيعٍ ) *"Sizin için O'ndan başka hiçbir dost, hiçbir şefaatçi yoktur."*

Allah, hakkınızda hayır dilemediği zaman O'nun iradesi dışında size gölge yapacak hiçbir gök ve O'nun rızası olmadan sizi taşıyacak hiçbir yer yoktur. Hiç kimse mücevheratla size yardım edemez. Allah, dünyadaki ve ahiretteki durumunuzla ilgilenmediği zaman size bakacak hiç kimse olamaz.

يُدَبِّرُ الْاَمْرَ مِنَ السَّمَٓاءِ اِلَى الْاَرْضِ ثُمَّ يَعْرُجُ اِلَيْهِ فِي يَوْمٍ كَانَ
مِقْدَارُهُٓ اَلْفَ سَنَةٍ مِمَّا تَعُدُّونَ ﴿٥﴾

**5- "Gökten yere kadar bütün işleri Allah yürütür. Sonra bu işler, süresi sizin hesabınızla bin yıl olan bir günde O'na yükselir."**

Allah halka, konuşmalarında alışkanlık haline getirdikleri gerçekler hakkında, onların anlama kabiliyetleri ve kapasiteleri ölçüsünde hitap etmiştir.

ذٰلِكَ عَالِمُ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ الْعَزِيزُ الرَّحِيمُ ﴿٦﴾

6- "İşte Allah, gaybı da görünen âlemi de bilendir, mutlak güç sahibidir, çok merhametlidir."

Allah, mutlak gücüyle itaatkârlarla beraberdir, günahkârlara karşı merhamet sahibidir.

Allah, itaatkârların hızını kesmek için onlara karşı mutlak güç sahibidir. Hatalarını ortadan kaldırmak için de Allah günahkârlara karşı merhamet sahibidir.

الَّذٖيٓ اَحْسَنَ كُلَّ شَيْءٍ خَلَقَهُ وَبَدَاَ خَلْقَ الْاِنْسَانِ مِنْ طٖينٍ ﴿٧﴾
ثُمَّ جَعَلَ نَسْلَهُ مِنْ سُلَالَةٍ مِنْ مَٓاءٍ مَهٖينٍ ﴿٨﴾

7, 8- "O ki, yarattığı her şeyi güzel yaptı. İnsanı yaratmaya da çamurdan başladı. Sonra onun neslini bir öz sudan, değersiz bir sudan yarattı."

Allah, herkesi güzel bir görünüşte yarattı. Bu çerçevede Arş, kırmızı bir yakuttur. Melekler, ikili, üçlü ve dörtlü kanatlara sahiptir. Cibril de meleklerin tavusudur. Rivayette yer aldığı üzere, iri siyah gözlü huriler, güzellikleri ve şekilleriyle vardır. Cennetler de rivayetlerde ve Kur'ân'ın açık ifadesinde yer aldığı gibidir. Sıra insana gelince Allah onun hakkında şöyle buyurmuştur: "*İnsanı yaratmaya da çamurdan başladı. Sonra onun neslini bir öz sudan, değersiz bir sudan yarattı.*"

Bütün bunlar olup biterken durum, şu dizelerde söylendiği gibidir:

*Nice güzellik gördüm ben, lakin*
*Tercihim sen oldun bütün yaratıklardan*

Allah, insanı çamurdan yarattı; ancak O, insanları, insanlar da O'nu severler. Allah insanı çamurdan yarattı, ancak insanlara hitaben şöyle buyurdu: ( فَاذْكُرُونٖيٓ اَذْكُرْكُمْ ) "*Siz beni anın ki ben de sizi anayım.*" (Bakar, 2/152)

Allah insanı çamurdan yarattı; ancak O, insanlardan hoşnut oldu, insanlar da O'ndan hoşnut oldular.

ثُمَّ سَوّٰيهُ وَنَفَخَ فٖيهِ مِنْ رُوحِهٖ وَجَعَلَ لَكُمُ السَّمْعَ وَالْاَبْصَارَ وَالْاَفْـِٔدَةَ قَلٖيلًا مَا تَشْكُرُونَ ﴿٩﴾

9- "Sonra onu şekillendirip ona ruhundan üfledi. Sizin için işitme, görme ve idrak duygularını yarattı. Ne kadar az şükrediyorsunuz!"

وَقَالُٓوا ءَاِذَا ضَلَلْنَا فِي الْاَرْضِ ءَاِنَّا لَفٖي خَلْقٍ جَدٖيدٍ بَلْ هُمْ بِلِقَٓاءِ رَبِّهِمْ كَافِرُونَ ﴿١٠﴾

10- "Onlar dediler ki: 'Biz, toprakta yok olduktan sonra mı, biz mi yeniden yaratılacakmışız?' Hayır, onlar Rablerine kavuşmayı inkâr etmektedirler."

Eğer onların zerre kadar irfandan nasipleri, en ufak bir arzuları ve sevgiden bir esintileri olsaydı, Allah'a dönüşün mümkün olduğunu inkâr etmek konusunda bu denli taassup göstermezlerdi. Ne var ki Allah şöyle buyurmuştur: (بَلْ هُمْ بِلِقَٓاءِ رَبِّهِمْ كَافِرُونَ) *"Hayır, onlar Rablerine kavuşmayı inkâr etmektedirler."*

قُلْ يَتَوَفّٰيكُمْ مَلَكُ الْمَوْتِ الَّذٖي وُكِّلَ بِكُمْ ثُمَّ اِلٰى رَبِّكُمْ تُرْجَعُونَ ﴿١١﴾

11- "De ki: 'Sizin için görevlendirilen ölüm meleği canınızı alacak, sonra Rabbinize döndürüleceksiniz.'"

Eğer insanların kalplerinin gafilliği olmasaydı, Allah canlarının alınmasını ölüm meleğine havale etmezdi. Çünkü ölüm meleğinin gerçekte hiç kimse üzerinde ne bir etkisi vardır ne de onun nefsinde bir tasarrufu bulunur. Gerçekleşen vefat olayı ise Allah'ın kudretinin özelliklerindendir. Ancak insanlar Rablerinin hakikatlerini görmekten

gafil kaldıkları için Allah onlara anlayabilecekleri ölçüde hitap etmiş ve kalplerini gayrilere bağlamıştır. Nitekim herkese gücü veya güçsüzlüğü ölçüsünde taşıyabileceğiyle hitap edilir.

وَلَوْ تَرٰٓى اِذِ الْمُجْرِمُونَ نَاكِسُوا رُؤُ۫سِهِمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ رَبَّنَٓا اَبْصَرْنَا وَسَمِعْنَا فَارْجِعْنَا نَعْمَلْ صَالِحًا اِنَّا مُوقِنُونَ ﴿١٢﴾

12- "Suçlular, Rablerinin huzurunda boyunlarını büküp: 'Rabbimiz! Gerçeği gördük ve işittik. Artık şimdi bizi döndür ki, salih amel işleyelim. Biz, artık kesin olarak inanmaktayız' dedikleri vakit onları bir görsen!"

Onlar dehşete kapıldılar ve kendilerine mahcubiyet hâkim oldu. Bunun üzerine hiçbir özrün kabul edilmediği bir zamanda özür dilediler ve hiçbir itirafın geçerli olmadığı bir zamanda itirafta bulundular.

وَلَوْ شِئْنَا لَاٰتَيْنَا كُلَّ نَفْسٍ هُدٰيهَا وَلٰكِنْ حَقَّ الْقَوْلُ مِنّ۪ي لَاَمْلَئَنَّ جَهَنَّمَ مِنَ الْجِنَّةِ وَالنَّاسِ اَجْمَع۪ينَ ﴿١٣﴾

13- "Eğer dileseydik, herkese hidayetini verirdik. Fakat benim: 'Andolsun, cehennemi hem cinlerden hem de insanlardan dolduracağım' sözüm gerçekleşecektir."

Eğer dileseydik herkes için akıl yürütme yolunu kolaylaştırır ve herkes için muvaffakiyeti devam ettirirdik. Ne var ki, ilahî irade, bazı kimselerin yoldan çıkarılmasını, bazı kimselerin de Allah'a yaklaştırılmasını gerektirdi. Tıpkı cennetin bazı sakinlerinin olmasını dilediğimiz gibi diledik ki, cehennemin de bazı sakinleri olsun. Bir de biz cenneti yarattığımız gün, bazı kimselerin orada oturacağını, cehennemi yarattığımız gün de bazı kimselerin oraya yerleşeceğini bilmiştik. İlmimiz dâhilindeki şeyin gerçekleşmemesini irade etmemiz ise muhaldir. Şayet gerçekleşmeseydi, o takdirde sözü edilen şey ilim olmazdı. O, ilim olmasaydı, biz de ilah olmazdık. İlah olmamayı irade etmemiz ise muhaldir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır.

- Sevdiği kendisine musallat olmayan kimsenin mülkünde hoşlanmadığı şey gerçekleşmez.

- Be hey zavallı! Sen ömrünü emek harcayarak ve çile çekerek tükettin. Günlerini de çaba ve ümit içerisinde geçirdin. Sıfatını değiştirdin ve çok çaba harcadın. Acaba şimdi benim hükmüm konusunda ne yapacaksın, onu nasıl değiştireceksin? İradem hakkında ne yapacaksın, hangi güçle onu geri çevireceksin?

Şu dizeleri de bu anlamda söylemişledir:

*Sana şikâyet etti çektiği acıyı*
*Sensiz dayanamayan kimse*
*Şaşkındır, sen istersen yolu bulur*
*Susuzdur, sen istersen suya varır*

فَذُوقُوا بِمَا نَسِيتُمْ لِقَٓاءَ يَوْمِكُمْ هٰذَا اِنَّا نَسِينَاكُمْ وَذُوقُوا عَذَابَ
الْخُلْدِ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿١٤﴾

14- "O halde bugününüze kavuşmayı unutmanıza karşılık azabı tadın. Biz de sizi unuttuk. Yapmakta olduklarınıza karşılık ebedî azabı tadın."

Günahkârlığınla hak ettiğin perişanlığı çek ve daha önce yaptığın nankörlük sebebiyle utanç yurdunda ebedî olarak kal.

اِنَّمَا يُؤْمِنُ بِاٰيَاتِنَا الَّذِينَ اِذَا ذُكِّرُوا بِهَا خَرُّوا سُجَّدًا وَسَبَّحُوا بِحَمْدِ
رَبِّهِمْ وَهُمْ لَا يَسْتَكْبِرُونَ ﴿١٥﴾

15- "Bizim ayetlerimize ancak, kendilerine bu ayetlerle öğüt verildiği zaman secdeye kapanan, kibirlenmeksizin Rablerine hamd ederek tesbih edenler inanırlar."

Doğrulama ve yalanlama iki çelişiktir. Çelişikler ise bir araya gelmez. Yalanlama, inkâr ve kibirlenmedir. Doğrulama ise secdeye

kapanmak ve hakikate ermektir. Bu nedenle kim bu ikisinden biriyle vasıflanırsa, diğeri kendisinde yok olur.

( سُجَّدًا ) *"Secdeye kapanan."*

Onlar zahirleriyle mihrapta secde ederken, sırlarında teslimiyet zemini ve huşu seccadesi üzerinde, çürümüşlük vasfı ve sönmüşlük hükmüyle secdeye kapandılar.

Bir yoruma göre de rahatlığının kemalini ve ünsiyetinin hakikatini ancak mabudunun huzurunda boyun bükmekte bulan, ahiretinin cehennemini nimetlerine, mutsuzluğunu da şifasına tercih etmeyen kimse nasıl olur da kibirlenir?!

تَتَجَافٰى جُنُوبُهُمْ عَنِ الْمَضَاجِعِ يَدْعُونَ رَبَّهُمْ خَوْفًا وَطَمَعًا
وَمِمَّا رَزَقْنَاهُمْ يُنْفِقُونَ ﴿١٦﴾

16- "Onlar korkarak ve ümit ederek Rablerine ibadet etmek için yataklarından kalkarlar. Kendilerine rızık olarak verdiğimiz şeylerden de Allah için harcarlar."

Onlar zahirde ibadet, çile ve teheccüdün hakkını yerine getirmek için yataktan kalkarlar. Bâtında ise kalpleri, hallerle kucaklaşmaktan, nefsin kadrini görmekten ve makam vehmine kapılmaktan uzaklaşır. Çünkü bütün bunlar hakikatin önünde birer perdedir. Aynı zamanda bu, kul için öldürücü zehir olduğu için onlar amellerine yaslanmazlar, hallerini görmezler, alışkanlıklarından ayrılırlar ve bildiklerini Allah yolunda terk ederler.

Bu arada gece, sevenlerin zamanıdır. Allah şöyle buyurmuştur:

( لِتَسْكُنُوا فِيهِ ) *"İçinde dinlenesiniz diye."* (Yûnus, 10/67)

Yani sevgilinizin sözünden başka her türlü uğraştan ve sözden uzaklaşıp dinlenesiniz diye. Gündüz ise dünya ehlinin zamanıdır. Allah şöyle buyurmuştur:

( وَجَعَلْنَا النَّهَارَ مَعَاشًا ) *"Gündüzü de geçim zamanı kıldık."* (Nebe', 78/11)

Allah, bu gibi kimselere şöyle buyurmuştur:

( فَاِذَا قُضِيَتِ الصَّلٰوةُ فَانْتَشِرُوا فِي الْاَرْضِ ) *"Namaz kılınınca artık yeryüzüne dağılın."* (Cum'a, 62/10)

Siz, Cuma namazının iki rekâtında bize münacatta bulunduktan sonra ticarethanelerinize dönün ve mesleğinizle uğraşın.

Dostlara gelince, onlar için gece ya buluşma coşkusu ya da ayrılık kızgınlığı içinde geçer. Eğer onlar yakınlık ünsiyeti içinde olurlarsa geceleri bir lahzadan daha kısa olur.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Ziyaret etti beni arzuladığım, uzaklaşmadan sonra*
*Yenilenmiş bir vuslat ve sevgiyle*
*Öyle bir gecede ki, buluşacak iki tarafı neredeyse*
*Kısalıktan, sözleşme gecesidir o*

Bir de şu dizelerde söylendiği gibi:

*Zamanın gecelerinin süsü olan bir gece*
*Buluştum sevgilinin dolunay gibi yüzüyle dolunayda*
*Belirmeden henüz şafak ve fecir*
*Çekti gitti o, zamanın bakiresi olarak*

Vakit, ayrılığın çilesini çekme ve kederle baş başa kalma vakti olduğu zaman ise o durumdaki kimselerin gecesi uzun olur.

Tıpkı şu dizelerde söyledikleri gibi:

*Nice sabahsız geceyi senin uğrunda*
*Tükettim ben, elim koynumda kalarak*
*Yaşlara boğuldu gözlerim*
*Koymuşken ben yanağımı elimin parmak uçlarına*

( تَتَجَافٰى جُنُوبُهُمْ عَنِ الْمَضَاجِعِ يَدْعُونَ رَبَّهُمْ خَوْفًا وَطَمَعًا ) *"Onlar, korkarak ve ümit ederek Rablerine ibadet etmek için yataklarından kalkarlar."*

Bazıları azap korkusu ve sevap ümidiyle, bazıları ayrılık korkusu ve buluşma ümidiyle, bazıları da komplo korkusu ve vuslat ümidiyle yakarırlar.

Onlar, kendilerine tahsis ettiğimiz şahitle gelirler. Bu durumda eğer biz hallerini bulanıklıklardan temizlersek, kutsal hallerle huzura varırlar. Yok eğer vakitlerini afetlerle kirletirsek, o zaman da kirli hallere tanıklık ederler.

( وَمِمَّا رَزَقْنَاهُمْ يُنْفِقُونَ ) *"Kendilerine rızık olarak verdiğimiz şeylerden de Allah için harcarlar."*

Bu çerçevede köle, ancak efendisinin yanında bıraktığı malda ticaret yapar.

Şiir:

*Ruhunu feda eder sana özlem çeken âşık, şayet olsa onun*
*Ruhundan daha değerli bir şeyi, feda eder sana onu da*

فَلَا تَعْلَمُ نَفْسٌ مَٓا اُخْفِيَ لَهُمْ مِنْ قُرَّةِ اَعْيُنٍۚ جَزَٓاءً بِمَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٧﴾

17- "Hiç kimse yapmakta olduklarına karşılık olarak, onlar için saklanan göz aydınlıklarını bilemez."

İnsanın gözü, sadece sevdiği kimseyi veya şeyi görmekle aydınlanır. O halde kalbini sorgulaması ve halini kollaması gerekir. Yarın da durum böyledir. İnsan da bu durum üzere haşir olunur. Bir rivayette şöyle denilmiştir:

*"Kim bir hal üzere olursa, o hal ile Allah'ın huzuruna çıkar."*

Sonra Allah'ın, hiç kimsenin bilmeyeceğini söylediği şeyi vasıflandırmak muhaldir. Meğer ki: "O, çok kıymetli bir durumdur ve yüce bir sıfattır" denilmiş olsun.

اَفَمَنْ كَانَ مُؤْمِنًا كَمَنْ كَانَ فَاسِقًاۜ لَا يَسْتَوُ۫نَ ﴿١٨﴾

**18- "Hiç mümin olan, fasık gibi olur mu? Bunlar, eşit olmazlar."**

Vuslat halinde olup mutlu bir şekilde yürüyen kimse, ayrılık zilleti içerisinde vebalinin sıkıntısını çeken kimse gibi olur mu?

Yakınlığın huzur ve esintisi içerisinde olan kimse, azap korkusu içerisinde külfet sıkıntısı çeken kimse gibi olur mu?

Allah'ın, kendisine olan iltifatının huzuru içerisinde olan kimse, Allah'ın kendisinden yüz çevirmesinin sıkıntısı içerisinde olan kimse gibi midir?

Allah ile beraber kalan kimse, Allah'tan uzak kalan kimse gibi midir?

İrfanın gündüzü ve ihsanın aydınlığı içerisinde olan kimse, nankörlüğün geceleri ve isyanın ıssızlığı içerisinde olan kimse gibi midir?

Burhan nuruyla desteklenen ve üstüne irfan güneşleri doğan kimse, hayal kırıklığına mahkûm edilmiş ve mahrumiyetle damgalanmış kimse gibi midir? Ne bir olurlar ne de bir araya gelirler.

اَمَّا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ فَلَهُمْ جَنَّاتُ الْمَاْوٰى نُزُلًا
بِمَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٩﴾

**19- "İman edip salih amel işleyenlere gelince, onlar için yapmakta olduklarına karşılık bir mükâfat olarak Me'vâ cennetleri vardır."**

( اَمَّا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا ) "*İman edenler.*"

Bunlar tasdik edenlerdir.

( وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ ) "*Salih amel işleyenler.*"

Gerçekleştirdikleri iyi işler sebebiyle onlar için güzel hal, iyi son ve bolca nimet vardır. Çok çalışıp inkârda bulunan ve muamelelerinde kötü davranıp fesat çıkaranlara gelince, onların akıbeti rezil olmak, değerden düşmek ve türlü türlü sıkıntılardır. Onlar sıkıntılarından kurtulmak istedikçe, içinde daha çok debelenip dururlar. Kurtuluşu umdukça onlara ümitsizlik yudumlatılır ve arttırılır.

وَاَمَّا الَّذ۪ينَ فَسَقُوا فَمَاْوٰيهُمُ النَّارُ كُلَّمَٓا اَرَادُٓوا اَنْ يَخْرُجُوا مِنْهَٓا اُع۪يدُوا ف۪يهَا وَق۪يلَ لَهُمْ ذُوقُوا عَذَابَ النَّارِ الَّذ۪ي كُنْتُمْ بِه۪ تُكَذِّبُونَ ﴿٢٠﴾

20- "Fasıklık edenlere gelince, onların barınağı ateştir. Oradan her çıkmak istediklerinde oraya döndürülürler ve onlara: 'Yalanlamakta olduğunuz ateş azabını tadın' denir."

وَلَنُذ۪يقَنَّهُمْ مِنَ الْعَذَابِ الْاَدْنٰى دُونَ الْعَذَابِ الْاَكْبَرِ لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُونَ ﴿٢١﴾

21- "Andolsun, dönsünler diye biz onlara en büyük azaptan önce yakın azabı elbette tattıracağız."

Bazılarının yakın azabı, dünya sıkıntılarıdır. En büyük azapları ise ahiret azabıdır.

Bazılarının yakın azabı, ibadetleri konusunda kapıldıkları tembelliktir. En büyük azapları ise kalplerinde meydana gelen kasvettir.

Bazılarının yakın azabı, sülûklarında uğradıkları bir duraksamadır. En büyük azapları ise manzaralarından perdelenme haline maruz kalmalarıdır.

Şiir:

*Edep verdin bana kalbini benden çevirmekle*
*Şimdi bak bana artık, bana güzel edep verdin*

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Yakın azap, zillet içerisinde hayal kırıklığıdır. En büyük azap da vuslat içinde hicrandır.

- Yakın azap, pınarlarının duruluktan sonra bulanmasıdır.

Şu dizelerde söylendiği gibi:

*Bir zamanlar benimle onun arası*
*Misk ve gül amber kokusunun arası gibi idi*

- En büyük azapları, sonu belirsiz kaybolmuşluk günlerinin uzamasıdır.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Uzadı ayrılığımız ey Nur! O kadar ki,*
*Sanki örümcek ağ örmüş üstüne*

وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنْ ذُكِّرَ بِاٰيَاتِ رَبِّهٖ ثُمَّ اَعْرَضَ عَنْهَا اِنَّا مِنَ الْمُجْرِمِينَ مُنْتَقِمُونَ ﴿٢٢﴾

22- "Kim Rabbinin ayetleri kendisine hatırlatıldıktan sonra onlardan yüz çevirenden daha zalimdir? Şüphesiz ki biz suçlulardan intikam alacağız."

Kul, çeşitli azarlamalarla uyarılıp uyumun sınırlarını terk ettiği için türlü türlü terbiye şekilleriyle harekete geçirildiği halde sonunda fiilinden vazgeçmeyip rahatlığının uzun sürmesine aldandığı, Allah'ın azabının tezahürlerinden ve sırrının gizliliklerinden kendini güven içinde gördüğü zaman Allah, onu ansızın öyle yakalayıverir ki artık o, yakalayışından bir çıkış yolu bulamaz.

Allah, şöyle buyurmuştur.

( لَا تَجْـَٔرُوا الْيَوْمَ اِنَّكُمْ مِنَّا لَا تُنْصَرُونَ ) *"Bugün boşuna feryat edip durmayın. Zira bizden yardım görmeyeceksiniz."* (Mü'minûn, 23/65)

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوسَى الْكِتَابَ فَلَا تَكُنْ فِي مِرْيَةٍ مِنْ لِقَٓائِهٖ وَجَعَلْنَاهُ هُدًى لِبَنِيٓ اِسْرَٓاءِيلَ ﴿٢٣﴾

23- "Andolsun, biz Mûsâ'ya Kitab'ı vermiştik. Sen de kitaba kavuşma konusunda sakın şüphe içinde olma. Onu, İsrailoğullarına bir yol gösterici kılmıştık."

O halde sen, Mûsâ'nın yarın bizim huzurumuza çıkacağından ve bizi göreceğinden şüphe içinde olma.

( وَجَعَلْنَاهُ هُدًى لِبَنِي اِسْرَآءِيل ) *"Onu, İsrailoğullarına bir yol gösterici kılmıştık."*

Hz. Peygamber (s.a.v.) ise âlemler için rahmet kılınmıştır.

وَجَعَلْنَا مِنْهُمْ اَئِمَّةً يَهْدُونَ بِاَمْرِنَا لَمَّا صَبَرُوا وَكَانُوا بِاٰيَاتِنَا يُوقِنُونَ ﴿٢٤﴾

24- "Sabredip ayetlerimize kesin olarak inandıkları zaman, içlerinden emrimizle doğru yola ileten önderler çıkardık."

Onlar talebimize karşı sabredince bizim varlığımızla mutlu oldular. Kavuştukları lütuflarımız, onlara uyanlara da sirayet etti ve güneşlerinin ışıltıları, bütün mensuplarının üzerine yayıldı. Bu durumlarıyla onlar halkın yol göstericileri, dinde öncüleri ve doğru yolu bulmak isteyenlerin yıldızlarıdır.

اِنَّ رَبَّكَ هُوَ يَفْصِلُ بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيمَةِ فِيمَا كَانُوا فِيهِ يَخْتَلِفُونَ ﴿٢٥﴾

25- "Şüphesiz Rabbin kıyamet günü, üzerinde ayrılığa düşmekte oldukları şeyler konusunda onlar arasında hüküm verecektir."

Allah, onlar arasında hüküm verecektir. O zaman da reddedilen ile kabul edilen, terk edilen ile vuslata eren, hoşnut olunan ile yoldan sapan ve düşman ile dost birbirinden ayrılacaktır. Bu nedenle nice güzellik orada devam eder ve nice ruh o esnada erir.

اَوَلَمْ يَهْدِ لَهُمْ كَمْ اَهْلَكْنَا مِنْ قَبْلِهِمْ مِنَ الْقُرُونِ يَمْشُونَ فِي مَسَاكِنِهِمْ اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ اَفَلَا يَسْمَعُونَ ﴿٢٦﴾

26- "Yurtlarında gezip dolaştıkları nice nesilleri helak etmiş olmamız, onlar için yol gösterici olmadı mı? Şüphesiz bunda ibretler vardır. Hâlâ duymayacaklar mı?"

Onlar, daha önce mutluluk içinde iken ibret haline gelen, sevinç içinde iken helak olan bazı kavimlerin evlerinden ibret almadılar

mı? Onların bütün evleri ve ziyaretgâhları başkalarının oldu. Çeşitli malları kendilerine benzeyenlere geçti. Onların gölgesinde oturdular ve geçmişte kalan benzerlerinden ibret almadılar.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Bir nimet vardı bir kavmin üzerinde, ayrıldı sonra*
*Zaten böyledir nimet ve ihsan, var olduğundan beri*

اَوَلَمْ يَرَوْا اَنَّا نَسُوقُ الْمَٓاءَ اِلَى الْاَرْضِ الْجُرُزِ فَنُخْرِجُ بِه۪ زَرْعًا
تَأْكُلُ مِنْهُ اَنْعَامُهُمْ وَاَنْفُسُهُمْ اَفَلَا يُبْصِرُونَ ﴿٢٧﴾

27- “Görmediler mi ki biz yağmuru kupkuru yere gönderip onunla hayvanlarının ve kendilerinin yiyeceği ekinler çıkarırız. Hâlâ görmeyecekler mi?”

Ayetteki işaret şöyledir: Onların vuslat bahçeleri, ağaçları kuruduktan ve alışılmış olan durum ortadan kalktıktan sonra sulanır. Böylece bahçelerinin ağaçları sarardıktan sonra, mevcut durumuyla meydana geldiği ilk durumu andırarak yapraklanır.

وَيَقُولُونَ مَتٰى هٰذَا الْفَتْحُ اِنْ كُنْتُمْ صَادِق۪ينَ ﴿٢٨﴾ قُلْ يَوْمَ الْفَتْحِ لَا
يَنْفَعُ الَّذ۪ينَ كَفَرُٓوا ا۪يمَانُهُمْ وَلَا هُمْ يُنْظَرُونَ ﴿٢٩﴾

28, 29- “‘Eğer doğru söyleyenler iseniz, şu fetih ne zamanmış?’ diyorlar. De ki: ‘Fetih günü, inkâr edenlere iman etmeleri fayda vermeyecektir. Onlara göz de açtırılmayacaktır.’”

Onlar, buluşma gününü akla uzak bulup inkâr ettiler. Bunun üzerine Allah, buluşmayı gördükleri zaman onlar için ancak hasret ve sıkıntı bulunduğunu bildirdi.

فَاَعْرِضْ عَنْهُمْ وَانْتَظِرْ اِنَّهُمْ مُنْتَظِرُونَ ﴿٣٠﴾

30- “Şimdi sen onlardan yüz çevir ve bekle. Şüphesiz onlar da bekliyorlar.”

Sen bizimle meşgul olmak, bize yönelmek ve kendini tamamen bize vermek suretiyle onlardan yüz çevir.

( وَانْتَظِرْ ) *"Ve bekle."*

Vuslatımızın artılarını ve lütfümüzün kazançlarını bekle.

( اِنَّهُمْ مُنْتَظِرُونَ ) *"Şüphesiz onlar da bekliyorlar."*

Onlar, gazabımızın baskın tezahürlerini ve tedbirimizin gizliliklerini bekliyorlar. Yakında herkes beklediğini hazır bulacaktır.

سورة الْأَحْزَابِ

# AHZÂB SÛRESİ

(Ahzâb Sûresi 73 âyettir. Medine'de 5-7. hicret yılları arasında inmiştir. Ahzâb, hizbin çoğulu olup; düşman toplulukları, gruplar, partiler demektir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

Besmele'nin varlığını görmek sana telef içinde telef olmayı, cömertliğinin varlığı da sana şeref içinde şeref sağlar. Bu durumda telef olman halinde senin halefin O olur. Şeref edinmen halinde ise her lütfa kavuşursun.

يَٓا اَيُّهَا النَّبِيُّ اتَّقِ اللّٰهَ وَلَا تُطِعِ الْكَافِر۪ينَ وَالْمُنَافِق۪ينَ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَل۪يمًا حَك۪يمًاۙ ﴿١﴾

1- "Ey Peygamber! Allah'a karşı gelmekten sakın. Kâfirlere ve münafıklara itaat etme. Şüphesiz Allah hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Ey durumu bakımından şerefli kılınan, tarafımızdan kadri yüceltilen ve mertebesi yükseltilen! Ey yakınlıkların en yücesi ile rütbelerin en yükseğine terfi ettirilen! Ey bizden haber veren, sırlarımızın emini olan, hitabımızı bizden dostlarımıza tebliğ eden! Bizimle

beraber bir başkasını görmek veya bizden başka bir şeyde huzur bulmak veya bizden başkasını ispatlamak veya dışımızdaki varlıklardan en ufak bir şey vehmetmek konusunda Allah'tan sakın.

Bir de onlara acımak ve senden istedikleri bir şey konusunda onlara uyman halinde bize iman edeceklerini ummak suretiyle,( وَلَا تُطِعِ الْكَافِرِينَ ) *"kâfirlere itaat etme."*

Takva, Allah'ın dostlarının kalpleri üzerinde bir denetçi olup nefeslerinde, duruşlarında ve hareketlerinde onları O'ndan başkasına bakmaktan veya O'nunla birlikte başkasını ispatlamaktan alıkoyar. Bu başkasını, Allah'ın kudretini kabule hazır, O'nun iradesiyle dönüştürülen ve üzerinde O'nun hükmünün geçerli olduğu varlık olarak görme durumları hariç.

Takva, seni caiz olmayan işlerden alıkoyan ve sevdiğin şeye doğru yürüten bir dizgindir. O, seni emrolunduğun şeye sevk eden bir kırbaçtır. O, seni Allah'ın hakkını yerine getirmeye yönelten bir sabitedir. O, seni düşmanlarının sana ulaşmasından koruyan bir koruyucudur. O, seni hata hastalığından kurtaran bir reçetedir.

Takva, Allah'ın kerem sahalarına ulaşma vesilesi ve cömertlik alanına ulaşmada kullanılan bir araçtır.

وَاتَّبِعْ مَا يُوحٰۤى اِلَيْكَ مِنْ رَبِّكَ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرًا ﴿٢﴾

2- "Rabbinden sana vahyolunana uy. Şüphesiz Allah, yaptıklarınızdan hakkıyla haberdardır."

Tabi ol, bidat uydurma. Sana emrettiklerimize uy, kendi tercihinle, bizim senin için tercih ettiğimiz yolun dışında bir yola girme, tembellik yurtlarında kalıp durma ve gevşeklik tarafına meyletme. Bizim için ol, kendin için olma. Kendinle değil, bizimle ayağa kalk.

وَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيلًا ﴿٣﴾

3- "Allah'a tevekkül et! Vekil olarak Allah yeter."

Kendi postundan sıyrıl, bize olan dönüşünde samimi ol, bizimle hesaplaşmayı bırak, bizden ayrılmaktan kork ve bizimle hitabında kusur işleme.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Tevekkül, önce hakikate ermek, sonra ahlak edinmek, sonra emin olmak, sonra da iyi görünmeye çalışmaktır. İnançta hakikate ermek, şeriatı uygulamayı ahlak edinmek, ilahî takdirden emin olmak ve güzel kullukla Allah'ın huzurunda iyi görünmeye çalışmak.

- Tevekkül hakikate erme, sonra bağlanma, sonra da ahlak edinmedir. Allah ile hakikate ermek, Allah'a bağlılık, sonra da Allah'ın emirlerini ahlak edinmek.

- Tevekkül kalbin, yoklukta ve varlıkta aynı kalmasıdır.

مَا جَعَلَ اللّٰهُ لِرَجُلٍ مِنْ قَلْبَيْنِ فِي جَوْفِهِ وَمَا جَعَلَ اَزْوَاجَكُمُ
الّٰٓـئِ تُظَاهِرُونَ مِنْهُنَّ اُمَّهَاتِكُمْ وَمَا جَعَلَ اَدْعِيَآءَكُمْ اَبْنَآءَكُمْ ذٰلِكُمْ
قَوْلُكُمْ بِاَفْوَاهِكُمْ وَاللّٰهُ يَقُولُ الْحَقَّ وَهُوَ يَهْدِي السَّبِيلَ ﴿٤﴾

4- "Allah, hiçbir adamın içine iki kalp koymamıştır. Kendilerine zıhar yaptığınız eşlerinizi de anneleriniz yapmamıştır. Yine evlatlıklarınızı da öz çocuklarınız kılmamıştır. Bu, sizin ağızlarınızla söylediğiniz sözünüzdür. Allah ise gerçeği söyler ve doğru yola iletir."

Kalp, bir şeyle meşgul olduğu zaman onun dışındakilerden engellenmiş olur. Bu nedenle, yokluktan olan şeylerle meşgul olan kimse, kıdem sahibi Allah'tan kopmuş olur. Kalbiyle, kıdem sıfatına sahip olan Allah ile meşgul olan kimse ise yokluktan olan şeylerle uğraşmaktan alıkonulmuş olur. Nitekim gece ile gündüz bir araya gelemez, gayb ile gayr da buluşamaz.

(وَمَا جَعَلَ اَزْوَاجَكُمُ الّٰٓـئِ تُظَاهِرُونَ مِنْهُنَّ اُمَّهَاتِكُمْ وَمَا جَعَلَ اَدْعِيَآءَكُمْ اَبْنَآءَكُمْ ذٰلِكُمْ قَوْلُكُمْ بِاَفْوَاهِكُمْ) *"Kendilerine zıhar yaptığınız eşlerinizi de anneleriniz*

*yapmamıştır. Yine evlatlıklarınızı da öz çocuklarınız kılmamıştır. Bu, sizin ağızlarınızla söylediğiniz sözünüzdür."*

Haklarında zıhar yemini ettiğiniz kadınlar, anneleriniz değildir. Evlatlık edindiğiniz kimseler de çocuklarınız değildir. Bir de yeltendiğiniz iftira ve bize nispet ettiğiniz görüşleriniz, size iade edilmiş ve sizden kabul edilmemiştir. Eğer izahtan sonra bu tutumdan geri durursanız kurtulursunuz. Şayet size durum bildirildikten sonra da devam ederseniz sıkıntıya girersiniz.

اُدْعُوهُمْ لِاٰبَٓائِهِمْ هُوَ اَقْسَطُ عِنْدَ اللّٰهِ فَاِنْ لَمْ تَعْلَمُوٓا اٰبَاءَهُمْ
فَاِخْوَانُكُمْ فِي الدّ۪ينِ وَمَوَال۪يكُمْ وَلَيْسَ عَلَيْكُمْ جُنَاحٌ ف۪يمَٓا اَخْطَاْتُمْ
بِه۪ وَلٰكِنْ مَا تَعَمَّدَتْ قُلُوبُكُمْ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُورًا رَح۪يمًا ٥

5- "Onları babalarına nispet ederek çağırın. Bu, Allah katında daha adaletlidir. Eğer babalarını bilmiyorsanız, onlar sizin din kardeşleriniz ve dostlarınızdır. Hata ile yaptığınız bir işte size hiçbir günah yoktur. Fakat kasten yaptığınız şeylerde size günah vardır. Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Onların neseplerini gözetin. Şayet nesepten başka bir şey dilerseniz, o zaman da sizleri din kardeşliği bir araya getirir. Nitekim din ve karakter yakınlığı, nesep yakınlığından daha iyidir.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Babadan amcadan gelen yakınlığı vardır, dediler*
*Dedim ki: İhvan-ı safâ daha yakındırlar birbirlerine*
*Karakter, ilim ve ülfetle nesep bağı kurarız aralarında*
*Kökende nesepleri birbirine uzak olsa da*

اَلنَّبِيُّ اَوْلٰى بِالْمُؤْمِن۪ينَ مِنْ اَنْفُسِهِمْ وَاَزْوَاجُهُٓ اُمَّهَاتُهُمْ وَاُو۬لُوا الْاَرْحَامِ
بَعْضُهُمْ اَوْلٰى بِبَعْضٍ ف۪ي كِتَابِ اللّٰهِ مِنَ الْمُؤْمِن۪ينَ وَالْمُهَاجِر۪ينَ اِلَّٓا
اَنْ تَفْعَلُوٓا اِلٰٓى اَوْلِيَٓائِكُمْ مَعْرُوفًا كَانَ ذٰلِكَ فِي الْكِتَابِ مَسْطُورًا ٦

6- "Peygamber, müminlere kendi canlarından daha önce gelir. Onun eşleri de müminlerin analarıdır. Aralarında akrabalık bağı olanlar, Allah'ın kitabına göre birbirleri için müminlerden ve muhacirlerden daha önceliklidirler. Ancak dostlarınıza bir iyilik yapmanız başka. Bu, kitapta yazılıdır."

Bu ayet, şuna işaret etmektedir: Allah'ın prensibini kendi nefsi arzuna öncelemen, amaç edindiğin şeyin değil, O'nun işaretinin yanında durman, seninle aralarında nesep bağı bulunan kimseleri, değer verdiğin kimselere ve sana bağlı olanlara tercih etmen.

Sana yabancı olanlar, bir kenarda dursunlar. İlişkin en yakın olanlarla olsun. Akrabalık bağı da evlerin yakınlığı ve peş peşe ziyaretlerle değil; fakat kalplerin uyumlu olması ve hem iyi hem de kötü durumlarda yardımcı olmakla gerçekleşir.

Şiir:

*Aynı yerdedir ruhlarımız, düşmüş iken*
*Bedenlerimiz Şam veya Horasan'a*

وَاِذْ اَخَذْنَا مِنَ النَّبِيّٖنَ مٖيثَاقَهُمْ وَمِنْكَ وَمِنْ نُوحٍ وَاِبْرٰهٖيمَ وَمُوسٰى
وَعٖيسَى ابْنِ مَرْيَمَ وَاَخَذْنَا مِنْهُمْ مٖيثَاقًا غَلٖيظًا ﴿٧﴾

7- "Hani biz peygamberlerden sağlam söz almıştık. Senden, Nûh'tan, İbrahim, Mûsâ ve Meryem oğlu İsa'dan da. Evet, biz onlardan sapasağlam bir söz almıştık."

Allah, peygamberlerden sözü, zürriyeti Hz. Âdem'in sulbundan çıkardığı zaman almıştır. Bu, hem ilk hem de herkesi kapsayan bir söz almadır. Sonra her bir peygamber gönderildiğinde ve her bir nebi nübüvvet aldığında Allah, Hz. Cebrail'in dilinden tekrar ondan söz almıştır. Ayrıca Allah (c.c.), peygamberimize bir özellik vererek ona kelamını miraç gecesi vasıtasız işittirmiştir. Aynı şekilde Allah, Hz. Mûsâ'dan vasıtasız olarak söz almıştır. Ancak peygamberimizin fazladan bir hali vardır. Şöyle ki ona ilahî hitabı işitmenin yanı sıra Allah'ı görme keşfi de verilmiştir.

Sonra Allah, kalpleri ve sırlarıyla ibadet eden kimselerden, kendilerine has kıldığı hitabıyla söz almıştır. Bu itibarla, nebiler, veliler ve büyük insanların her biri için Allah'ın kendilerini ehil kıldığı şekilde bir söz alma vardır. Nitekim Hz. Peygamber (s.av.), şöyle buyurmuştur:

*"Geçmiş ümmetlerde Allah tarafından konuşturulan kimseler vardı. Eğer benim ümmetimde öyle biri varsa, o Ömer'dir."*

Bu arada Hz. Ömer'den başkaları da pek çok özellikte ona ortaktırlar. Aslında bu, kendileriyle Rableri arasında gerçekleşen bir şeydir.

لِيَسْئَلَ الصَّادِقِينَ عَنْ صِدْقِهِمْ وَاَعَدَّ لِلْكَافِرِينَ عَذَابًا اَلِيمًا ﴿٨﴾

8- "Bu, Allah'ın doğru kimseleri doğruluklarından hesaba çekmesi içindir. Kâfirlere de elem dolu bir azap hazırlamıştır."

Allah onlara azarlamak için değil onurlandırmak için, sitem için değil kabul için soru soracaktır. Bu arada doğruluk, kişinin ahvalinde şaibe, itikadında şüphe ve amellerinde kusur olmamasıdır. Bir yoruma göre de muamelede doğruluğun alametlerinden biri de ihlâsın, hiçbir mahlûku görmeksizin var olmasıdır. Hallerde doğruluk ise işin içine kendini beğenmişlik girmeksizin, onları arındırmaktır.

Sözlerde doğruluk da onların, kişinin nefsiyle arasında geçenlerden etkilenmemesidir. İnsanlar arasında olup bitenlerde doğruluk, yanıltmalardan uzak durmaya çalışmaktır. Allah ile kul arasında doğruluğa gelince bu, kulun, kendi gücünden ve kuvvetinden sıyrılmayı devam ettirmesi, Allah'tan yardım dilemeyi sürdürmesi ve O'na olan ahdini devamlı korumasıdır.

Tevekkülde doğruluk, kaybedince rahatsız olmamak, bulunca da sevinmemektir.

İyiliği emir konusunda doğruluk, yağcılığın azından da çoğundan da sakınmak, bir korku veya tamah sebebiyle bunu terk etme-

men, saçtıklarından içmen, emrettiklerinle vasıflanman ve başkalarını alıkoyduğun şeylerden nefsini de alıkoymandır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Doğruluk, herkesin sana ulaşabilmesi, söylediğin ve ortaya koyduğun şeylerde sana güvenilmesidir.

- Doğruluk, tevillere yeltenmemendir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوا اذْكُرُوا نِعْمَةَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ جَٓاءَتْكُمْ جُنُودٌ فَاَرْسَلْنَا
عَلَيْهِمْ رٖيحًا وَجُنُودًا لَمْ تَرَوْهَا وَكَانَ اللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصٖيرًا ﴿٩﴾

9- "Ey iman edenler! Allah'ın size olan nimetini hatırlayın. Hani ordular, üzerinize gelmişti de biz onların üzerine bir rüzgar ve göremediğiniz ordular göndermiştik. Allah, yaptıklarınızı hakkıyla görmektedir."

Allah'ın nimetini hatırlamak, onu şükürle karşılamak şeklinde olur. Eğer sen, Allah'ın geçmişte senin üzerinden kaldırdıklarını hatırlasaydın, şu anda belaya katlanmak sana kolay gelecekti. Bir de eğer geçmişte sana verdiklerini hatırlasaydın, gelecekte umduğun şeyleri sana ulaştıracağı konusunda güven, kalbine yaklaşacaktı.

Bu arada Allah'ın, onlara hatırlattığı hususlardan biri de şu ifadede yer alan husustur:

(اِذْ جَٓاءَتْكُمْ جُنُودٌ) *"Hani ordular, üzerinize gelmişti."*

Allah, kulun üzerinden nice belayı geri çevirmiştir de kul, onun farkında olmamıştır. Kulun amaçladığı nice işten de onu alıkoymuştur da kul, onu bilmemiştir. Allah, kulun canhıraş bir şekilde istediği nice şeyi de engellemiştir. Zira Allah, bu işin müyesser kılınmasında kulun helakinin bulunduğunu bilmekte ve bu nedenle ona rahmet olsun diye kulu ondan alıkoymaktadır. Oysa kul, ithamda bulunmakta ve buna canı sıkılmaktadır.

اِذْ جَٓاؤُ۫كُمْ مِنْ فَوْقِكُمْ وَمِنْ اَسْفَلَ مِنْكُمْ وَاِذْ زَاغَتِ الْاَبْصَارُ
وَبَلَغَتِ الْقُلُوبُ الْحَنَاجِرَ وَتَظُنُّونَ بِاللّٰهِ الظُّنُونَا ﴿١٠﴾

10- "Hani onlar size hem üst tarafınızdan hem de alt tarafınızdan gelmişlerdi. Hani gözler kaymış ve yürekler ağızlara gelmişti. Siz de, Allah'a karşı çeşitli zanlarda bulunuyordunuz."

Onları bela çadırları ve düşman askeri kuşatmıştı. Onlar ise, yıkıma teslim olmuş, yürekleri ağızlarına gelmiş, türlü türlü zanlarda bulunmuş, içlerine derin şüpheler girmiş ve kalplerinde yaygın kuşku belirmişti.

هُنَالِكَ ابْتُلِيَ الْمُؤْمِنُونَ وَزُلْزِلُوا زِلْزَالًا شَديدًا ﴿١١﴾

11- "İşte orada müminler denendiler ve şiddetli bir şekilde sarsıldılar."

Sonra Allah, onlardan bütün o sıkıntıları giderdi, şiddetini üzerlerinden kaldırdı. Böylece o sıkıntıların bulutları üzerlerinden açıldı, üzüntüler kalplerinden dağıldı ve huzurlarının pınarları fışkırdı.

وَاِذْ يَقُولُ الْمُنَافِقُونَ وَالَّذِينَ في قُلُوبِهِمْ مَرَضٌ مَا وَعَدَنَا اللّٰهُ
وَرَسُولُهُٓ اِلَّا غُرُورًا ﴿١٢﴾

12- "Hani münafıklar ve kalplerinde hastalık olanlar: 'Allah ve Resulü bize, ancak aldatmak için vaatte bulunmuşlar' diyorlardı."

Münafıklar, kalplerindeki münafıklıktan dolayı konuşmaya fırsat buldukları anda açıkça yalanladılar.

وَاِذْ قَالَتْ طَٓائِفَةٌ مِنْهُمْ يَٓا اَهْلَ يَثْرِبَ لَا مُقَامَ لَكُمْ فَارْجِعُوا
وَيَسْتَاْذِنُ فَريقٌ مِنْهُمُ النَّبِيَّ يَقُولُونَ اِنَّ بُيُوتَنَا عَوْرَةٌ وَمَا هِيَ بِعَوْرَةٍ
اِنْ يُريدُونَ اِلَّا فِرَارًا ﴿١٣﴾

13- "Hani onlardan bir grup,: 'Ey Yesrib halkı! Sizin burada durmak imkânınız yok. Hadi geri dönün' demişti. Onlardan bir başka grup da: 'Evlerimiz saldırıya açık' diyerek Peygamberden izin istiyorlardı. Oysa evleri açık değildi. Onlar, sadece kaçmak istiyorlardı."

Şeytan, kendilerine düşmanın zafer kazanmak üzere olduğunu telkin edince onlar kendi aralarında birbirlerine kaçmayı tavsiye ettiler. (وَيَسْتَاْذِنُ فَرِيقٌ مِنْهُمُ النَّبِيَّ يَقُولُونَ اِنَّ بُيُوتَنَا عَوْرَةٌ) *"Onlardan bir başka grup da: 'Evlerimiz saldırıya açık' diyerek Peygamberden izin istiyorlardı."*

Bunlar, evlerinin saldırıya açık oluşunu ve geride bıraktıklarının zayi olacağını gerekçe gösteriyorlardı. Ancak onlar, mazeret olarak ortaya koydukları konusunda yalan söylüyorlardı. Aslında onları bu davranışa sevk eden hususlar, korkaklıkları ve inançlarının azlığından başka bir şey değildi.

وَلَوْ دُخِلَتْ عَلَيْهِمْ مِنْ اَقْطَارِهَا ثُمَّ سُئِلُوا الْفِتْنَةَ لَاٰتَوْهَا وَمَا تَلَبَّثُوا
بِهَٓا اِلَّا يَسِيرًا ﴿١٤﴾

14- "Eğer Medine'nin her tarafından üzerlerine gelinse ve orada karışıklık çıkarmaları istenseydi, onu mutlaka yaparlardı. O konuda fazla gecikmezlerdi."

وَلَقَدْ كَانُوا عَاهَدُوا اللّٰهَ مِنْ قَبْلُ لَا يُوَلُّونَ الْاَدْبَارَ وَكَانَ عَهْدُ اللّٰهِ
مَسْؤُلًا ﴿١٥﴾

15- "Andolsun ki onlar daha önce geri dönüp kaçmayacaklarına dair Allah'a söz vermişlerdi. Allah'a verilen söz ise sorumluluk gerektirir."

Ne var ki durum kesinlik kazanıp işin ciddiyeti ortaya çıkınca samimiyet testini geçemediler ve verdikleri sözden sorumlu tutulup

geçmişte işledikleri günahların cezasını çekeceklerini hatırlayamadılar.

قُلْ لَنْ يَنْفَعَكُمُ الْفِرَارُ اِنْ فَرَرْتُمْ مِنَ الْمَوْتِ اَوِ الْقَتْلِ وَاِذًا لَا تُمَتَّعُونَ اِلَّا قَلِيلًا ﴿١٦﴾

16- "De ki: 'Eğer siz, ölümden veya öldürülmekten kaçıyorsanız, kaçmak size asla fayda vermeyecektir. O takdirde bile pek az yararlandırılırsınız.'"

Çünkü eceller ne ertelenebilir ne de öne alınabilir. Durum, şu sözde söylendiği gibidir:

*"Olacak olandan kaçan kimse, kovalayanın elinde evirilip çevrilir."*

( وَاِذًا لَا تُمَتَّعُونَ اِلَّا قَلِيلًا ) *"O takdirde bile pek az yararlandırılırsınız."*

Çünkü kulun Allah'tan esirgediği mal, mevki, değerli varlık veya yakını kendisine mübarek kılınmaz, onu koruyamaz ve ondan kendisine imrendirici bir şey kazandırılmaz.

قُلْ مَنْ ذَا الَّذِي يَعْصِمُكُمْ مِنَ اللّٰهِ اِنْ اَرَادَ بِكُمْ سُوٓءًا اَوْ اَرَادَ بِكُمْ رَحْمَةً وَلَا يَجِدُونَ لَهُمْ مِنْ دُونِ اللّٰهِ وَلِيًّا وَلَا نَصِيرًا ﴿١٧﴾

17- "De ki: 'Eğer Allah size bir kötülük dilese, sizi Allah'tan koruyacak kimdir? Yahut size bir rahmet dilese, buna engel olacak kimdir?' Onlar, kendilerine Allah'tan başka hiçbir dost ve hiçbir yardımcı bulamazlar."

Allah'tan başka kim size umulanı gerçekleştirebilir? Yine O'ndan başka kim üzerinizden bir düşmanı geri çevirebilir?

قَدْ يَعْلَمُ اللّٰهُ الْمُعَوِّقِينَ مِنْكُمْ وَالْقَٓائِلِينَ لِاِخْوَانِهِمْ هَلُمَّ اِلَيْنَا وَلَا يَأْتُونَ الْبَأْسَ اِلَّا قَلِيلًا ﴿١٨﴾

18- “Şüphesiz Allah, içinizden savaştan alıkoyanları ve kardeşlerine: ‘Bize gelin’ diyenleri biliyor. Zaten bunların pek azı savaşa gelir.”

Hz. Peygamber’e (s.a.v.) canlarıyla yardımcı olmaya yanaşmayan ve başkalarını bundan alıkoyanlar onlardır. Amaçları ise sayılarını çoğaltmak ve hilelerini gizlemektir. Bunu yaparken onlar Allah’ın, peygamberini kendilerinden haberdar edeceğini bilmiyorlardı. Sonra Allah, onların vasıflarını anlatmak üzere şöyle buyurmuştur:

اَشِحَّةً عَلَيْكُمْ فَاِذَا جَٓاءَ الْخَوْفُ رَاَيْتَهُمْ يَنْظُرُونَ اِلَيْكَ تَدُورُ اَعْيُنُهُمْ
كَالَّذ۪ي يُغْشٰى عَلَيْهِ مِنَ الْمَوْتِ فَاِذَا ذَهَبَ الْخَوْفُ سَلَقُوكُمْ بِاَلْسِنَةٍ
حِدَادٍ اَشِحَّةً عَلَى الْخَيْرِ اُو۬لٰٓئِكَ لَمْ يُؤْمِنُوا فَاَحْبَطَ اللّٰهُ اَعْمَالَهُمْ
وَكَانَ ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ يَس۪يرًا ﴿١٩﴾

19- “Onlar, size karşı cimri davranırlar. Korku geldiğinde ise üzerine ölüm baygınlığı çökmüş kimse gibi gözleri dönerek sana baktıklarını görürsün. Korku gelince de ganimete karşı aşırı düşkünlük göstererek sizi sivri dillerle incitirler. İşte onlar iman etmediler. Allah da onların amellerini boşa çıkardı. Bu, Allah’a kolaydır.”

Korku geldiği zaman korkudan akılları işlemez hale gelir, basiretleri dumura uğrar ve yardım konusunda bütün organları iş görmez olur. Korku geçtikten sonra ise onlar sözlerini süslerler, kandırma girişimlerini öne çıkarırlar ve alçaklıklarının yol açtığı kinleri konusunda hileye başvururlar. İşte bu kimselerin vasıfları bunlardır. Kalplerine iman girmemiş ve onlar, ortaya koydukları iddia ve teslimiyet konusunda doğruyu söylememişlerdir.

يَحْسَبُونَ الْاَحْزَابَ لَمْ يَذْهَبُوا وَاِنْ يَاْتِ الْاَحْزَابُ يَوَدُّوا لَوْ اَنَّهُمْ
بَادُونَ فِي الْاَعْرَابِ يَسْـَٔلُونَ عَنْ اَنْبَٓائِكُمْ وَلَوْ كَانُوا ف۪يكُمْ مَا قَاتَلُٓوا
اِلَّا قَل۪يلًا ﴿٢٠﴾

20- "Düşman birliklerinin gitmediğini sanıyorlar. Düşman birlikleri gelecek olsa isterler ki bedevîlerin arasında bulunsunlar da size dair haberleri sorsunlar. İçinizde bulunsalardı da pek az savaşırlardı."

Onlar, düşman birliklerinin gitmediğini sanıyorlar ve dönmelerinden korkuyorlar. Bir de onların izlerine rastladıkları zaman, kendi gölgelerinden bile paniğe kapılırlar. Şayet düşman size saldırsa, onlar ancak kılıçlarının ve mızraklarının arkasına saklanırlar.

لَقَدْ كَانَ لَكُمْ فِي رَسُولِ اللّٰهِ اُسْوَةٌ حَسَنَةٌ لِمَنْ كَانَ يَرْجُوا اللّٰهَ
وَالْيَوْمَ الْاٰخِرَ وَذَكَرَ اللّٰهَ كَثِيرًا ﴿٢١﴾

21- "Andolsun, Allah'ın Resulünde sizin için; Allah'a ve ahiret gününe kavuşmayı uman, Allah'ı çok zikreden kimseler için güzel bir örnek vardır."

Ayetteki ( كان ) lafzı zait olup ayetin anlamı şudur: Sizin için Allah'ın elçisinde güzel bir örnek vardır. Sadece onu örnek alırsınız ve sizin için çizdiği yolda ona uymanız gerekir. Bu arada Hz. Peygamber'in (s.a.v.) söz ve davranışları, tahsis edici bir delil ortaya çıkıncaya kadar vaciplik ifade eder. Onun hallerine gelince, hiç kimsenin onları gözlemlemesi mümkün değildir. Şayet bu hallerden biri onun haber vermesi veya söz ve davranışlarının ifade edişiyle ortaya çıkarsa, bu durumda eğer bu hal kendisi tarafından kazanılmışsa, zahirde vaciplik ifade etmesi bakımından, sözleri ve davranışları hükmünde kabul edilir. Yok eğer bu hal, onun tarafından kazanılmamışsa o zaman da bu, kendisine ait bir peygamberlik özelliği olur ve ona mukabelede bulunmaya çalışmak kimseye uygun düşmez. Çünkü Hz. Peygamber'in (s.av.) yüksek mertebesi kendisine mahsustur.

وَلَمَّا رَاَ الْمُؤْمِنُونَ الْاَحْزَابَ قَالُوا هٰذَا مَا وَعَدَنَا اللّٰهُ وَرَسُولُهُ
وَصَدَقَ اللّٰهُ وَرَسُولُهُ وَمَا زَادَهُمْ اِلَّٓا اِيمَانًا وَتَسْلِيمًا ﴿٢٢﴾

22- “Müminler, düşman birliklerini görünce: ‘İşte bu, Allah’ın ve Resulünün bize vaat ettiği şeydir. Allah ve Resulü ise doğru söylemişlerdir’ dediler. Bu, onların ancak imanlarını ve teslimiyetlerini artırmıştır.”

Nasıl ki münafıklar düşmanları gördüklerinde inançları sarsıldıysa, müminler ve kesin inanç ehli olanların da güvenleri, düşmanlara karşı cesaretleri, Allah’ın hükmüne olan teslimiyetleri ve O’ndan aldıkları güç arttı.

مِنَ الْمُؤْمِنِينَ رِجَالٌ صَدَقُوا مَا عَاهَدُوا اللّٰهَ عَلَيْهِ فَمِنْهُمْ مَنْ قَضٰى
نَحْبَهُ وَمِنْهُمْ مَنْ يَنْتَظِرُ وَمَا بَدَّلُوا تَبْدِيلًا ﴿٢٣﴾

23- “Müminlerden öyle adamlar vardır ki Allah’a verdikleri söze sadık kaldılar. İçlerinden bir kısmı, verdikleri sözü yerine getirdi. Bir kısmı da beklemektedir. Verdikleri sözü asla değiştirmediler.”

Allah, girişimleriyle yaptıklarını şükrana değer bulmuş, savaşı gördükleri esnadaki kesin inançlarını övmüş, mertebelerinin özelliğini ortaya koymak ve emsalleri arasından kendilerini, hal ve makam yüksekliğiyle, ayırt etmek için onları “adamlar” diye adlandırmıştır. Nitekim onlardan bazıları, doğruluğu üzere dünyadan gitmiş, bazıları da Allah’ın hayat ve ölüm hakkındaki hükmünü beklemektedir. Bir de onlar, ahitlerinden sapmadılar ve hadlerine riayet etmek konusunda hileye yeltenmediler.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Doğruluk, açık ve gizli halin aynı olmasıdır.
- Doğruluk, iş ciddiyet kazandığında sebat göstermektir.

لِيَجْزِيَ اللّٰهُ الصَّادِقِينَ بِصِدْقِهِمْ وَيُعَذِّبَ الْمُنَافِقِينَ اِنْ شَٓاءَ اَوْ
يَتُوبَ عَلَيْهِمْ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ غَفُورًا رَحِيمًا ﴿٢٤﴾

24- “Bunun böyle olması, Allah’ın doğru kimseleri doğrulukları sebebiyle mükâfatlandırması, dilerse münafıklara azap etmesi yahut

onların tövbesini kabul etmesi içindir. Şüphesiz Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Allah, doğru kimseleri dünyada, düşmana karşı güç ve zafer vermekle, bayraklarını yükseklerde dalgalandırmakla, ahirette ise güzel sevapla, Allah'a samimi dönüşle, daimi nimetler içinde ebediyen kalmakla ve kendilerini onurlandırıp yücelterek emsallerinin önüne geçirmekle mükâfatlandırır.

( وَيُعَذِّبَ الْمُنَافِقِينَ اِنْ شَٓاءَ اَوْ يَتُوبَ عَلَيْهِمْ ) *"Dilerse münafıklara azap etmesi yahut onların tövbesini kabul etmesi içindir."*

Allah, bunu ezeli ilminde geçtiği ve iradesinin kapsamına girdiği şekilde yapar.

Bir yoruma göre de Allah, münafığı cezalandırmaya kesin karar vermeyip bu konuda ümit verici ifadede bulunduğuna göre, mümini ümidinde hayal kırıklığına uğratmamasını beklemek de gayet doğaldır.

وَرَدَّ اللّٰهُ الَّذِينَ كَفَرُوا بِغَيْظِهِمْ لَمْ يَنَالُوا خَيْرًا وَكَفَى اللّٰهُ الْمُؤْمِنِينَ الْقِتَالَ وَكَانَ اللّٰهُ قَوِيًّا عَزِيزًا ﴿٢٥﴾

25- "Allah, inkâr edenleri hiçbir hayra ulaşmaksızın kin ve öfkeleriyle geri çevirdi. Allah, savaşta müminlere kâfi geldi. Allah kuvvetlidir, mutlak güç sahibidir."

Allah, düşmanları Müslümanların durumuna sevindirmemiş, düşmanların tuzaklarından Müslümanlara bir kötülük ulaştırmamış, onların tuzaklarını kendi boyunlarına geçirmiş, köklerini sökmüş ve bununla, doğru olup olmadıklarının özüne açıklık getirmiştir. Aralarından şükrü hak edene şükranını ifade etmiş, kötülenmeyi hak eden sahtekârlarını da rüsva etmiştir.

وَاَنْزَلَ الَّذِينَ ظَاهَرُوهُمْ مِنْ اَهْلِ الْكِتَابِ مِنْ صَيَاصِيهِمْ وَقَذَفَ فِي قُلُوبِهِمُ الرُّعْبَ فَرِيقًا تَقْتُلُونَ وَتَاْسِرُونَ فَرِيقًا ﴿٢٦﴾

26- "Allah, kitap ehlinden olup müşriklere yardım edenleri kalelerinden indirdi ve kalplerine büyük bir korku saldı. Siz, onların bir kısmını öldürüyor, bir kısmını da esir ediyordunuz."

Allah, iyilik yaptığı zaman tam yapar. Şifa verdiği zaman yeterli verir. Bir şeyi yerine getirdiği zaman da tam olarak yerine getirir. İşte bu çerçevede Müslümanlara, düşmanlara karşı zafer vermiş, sığınaklarını onlara miras kılmış, aziz geçinenlerini zelil kılmış, her yönüyle onları üzerlerinden defetmiş, onlara düşmanları öldürme, esir etme, mallarına el koyma ve zürriyetlerini ganimet alma gücü vermiştir.

وَاَوْرَثَكُمْ اَرْضَهُمْ وَدِيَارَهُمْ وَاَمْوَالَهُمْ وَاَرْضًا لَمْ تَطَؤُ۫هَا وَكَانَ اللّٰهُ
عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرًا ﴿٢٧﴾

27- "Allah, sizi onların topraklarına, yurtlarına, mallarına ve henüz ayak basmadığınız topraklara vâris kıldı. Allah, her şeye hakkıyla gücü yetendir."

يَٓا اَيُّهَا النَّبِيُّ قُلْ لِاَزْوَاجِكَ اِنْ كُنْتُنَّ تُرِدْنَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا
وَز۪ينَتَهَا فَتَعَالَيْنَ اُمَتِّعْكُنَّ وَاُسَرِّحْكُنَّ سَرَاحًا جَم۪يلًا ﴿٢٨﴾ وَاِنْ
كُنْتُنَّ تُرِدْنَ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ وَالدَّارَ الْاٰخِرَةَ فَاِنَّ اللّٰهَ اَعَدَّ لِلْمُحْسِنَاتِ
مِنْكُنَّ اَجْرًا عَظ۪يمًا ﴿٢٩﴾

28, 29- "Ey Peygamber! Hanımlarına de ki: 'Eğer dünya hayatını ve onun süsünü istiyorsanız gelin, size boşanma bedellerinizi vereyim ve sizi güzelce bırakayım. Eğer Allah'ı, Resulünü ve ahiret yurdunu istiyorsanız, bilin ki Allah, içinizden iyilik yapanlara büyük bir mükâfat hazırlamıştır.'"

Allah, hiçbir erkek ve kadın müminin kalbinin Hz. Peygamber (s.a.v.) nedeniyle meşgul olmasını veya bir kimsenin incinip

yorulmasına sebep olmasını istememiştir. Bu çerçevede Hz. Peygamber (s.a.v.), hanımlarını muhayyer kıldı ve Allah, müminlerin anası Hz. Aişe'ye (r.a.) muvaffakiyet verdi. O kadar ki o, kalbinin içtenliği, dininin ve kesin inancının kemaliyle, asalet ve terbiyesinden beklendiği şekilde, Allah'ı ve Resulünü istediğini bildirdi. Diğer hanımlar da onun yolunu izleyip kararlarını onun minvali üzere oluşturdular.

يَا نِسَآءَ النَّبِيِّ مَنْ يَأْتِ مِنْكُنَّ بِفَاحِشَةٍ مُبَيِّنَةٍ يُضَاعَفْ لَهَا الْعَذَابُ ضِعْفَيْنِ وَكَانَ ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ يَسِيرًا ﴿٣٠﴾

30- "Ey Peygamberin hanımları! İçinizden kim apaçık bir çirkinlik yaparsa, onun cezası iki kat verilir. Bu, Allah'a göre kolaydır."

Suça uygulanan cezanın artırılması, faziletin alametlerindendir. Bu nedenledir ki, hür insanların cezaları kölelerin cezalarından fazladır. Cezanın azaltılması ise noksanlığın alametlerindendir. Nitekim Hz. Peygamber'in (s.a.v.) hanımlarının mertebesi, bütün kadınların mertebesinden üstün olduğu için Allah, suçlarının cezalarını da ibadetlerinin sevabını da iki katına çıkarmış ve şöyle buyurmuştur:

وَمَنْ يَقْنُتْ مِنْكُنَّ لِلّٰهِ وَرَسُولِهِ وَتَعْمَلْ صَالِحًا نُؤْتِهَآ اَجْرَهَا مَرَّتَيْنِ وَاَعْتَدْنَا لَهَا رِزْقًا كَرِيمًا ﴿٣١﴾

31- "İçinizden kim Allah'a ve Resulüne itaat eder ve salih bir amel işlerse, ona mükâfatını iki kat veririz. Biz, ona bereketli bir rızık hazırlamışızdır."

Sonra da şöyle buyurmuştur:

يَا نِسَآءَ النَّبِيِّ لَسْتُنَّ كَاَحَدٍ مِنَ النِّسَآءِ اِنِ اتَّقَيْتُنَّ فَلَا تَخْضَعْنَ بِالْقَوْلِ فَيَطْمَعَ الَّذِي فِي قَلْبِهِ مَرَضٌ وَقُلْنَ قَوْلًا مَعْرُوفًا ﴿٣٢﴾

32- "Ey Peygamberin hanımları! Siz kadınların herhangi biri gibi değilsiniz. Eğer Allah'a karşı gelmekten sakınıyorsanız sözü

yumuşak bir eda ile söylemeyin ki kalbinde hastalık olan kimse, ümide kapılmasın. Bir de güzel söz söyleyin."

Allah, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) hanımlarını seviyesizlik yapmaktan alıkoymuş ve kendilerine Hz. Peygamber'in (s.a.v.) saygınlığına riayet edip münafıkların, yumuşak üsluplarına ümit bağlamalarından korunmalarını emretmiştir.

وَقَرْنَ فٖي بُيُوتِكُنَّ وَلَا تَبَرَّجْنَ تَبَرُّجَ الْجَاهِلِيَّةِ الْاُو۫لٰى وَاَقِمْنَ
الصَّلٰوةَ وَاٰتٖينَ الزَّكٰوةَ وَاَطِعْنَ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ اِنَّمَا يُرٖيدُ اللّٰهُ لِيُذْهِبَ
عَنْكُمُ الرِّجْسَ اَهْلَ الْبَيْتِ وَيُطَهِّرَكُمْ تَطْهٖيرًا ﴿٣٣﴾

33- "Evinizde oturun. Önceki cahiliye dönemi kadınlarının açılıp saçıldığı gibi, siz de açılıp saçılmayın. Namazı kılın, zekâtı verin. Allah'a ve Resulüne itaat edin. Ey Peygamberin ev halkı! Allah, sizden ancak günah kirini gidermek ve sizi tertemiz yapmak istiyor."

Ayetteki ( رجْس ) "*Rics-kir*", çirkin davranışlar ve kötü ahlak demektir. Bu itibarla çirkin davranışlar, açık, gizli, küçük veya büyük, iğrenç hal ve hareketlerdir. Kötü ahlak da cimrilik, ihtiras ve akrabalık bağını koparmak gibi nefsin arzuları ve bidatlerdir. Oysa Allah, onlar için cömertlik, diğergamlık, akrabalık bağını gözetmek gibi güzel ahlak prensiplerini dilemekte, onları muvaffakiyet, masumiyet ve doğrulukta daim, günah ve kusurlardan tertemiz kılmak istemektedir.

وَاذْكُرْنَ مَا يُتْلٰى فٖي بُيُوتِكُنَّ مِنْ اٰيَاتِ اللّٰهِ وَالْحِكْمَةِ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ
لَطٖيفًا خَبٖيرًا ﴿٣٤﴾

34- "Siz Allah'ın, evlerinizde okunan ayetlerini ve hikmeti hatırlayın. Şüphesiz Allah, en gizli şeyi bilendir, ondan hakkıyla haberdardır."

Ey Peygamberin hanımları! Büyük nimeti ve evlerinizde cereyan eden vahyin inişi, meleklerin gelişi, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) saygınlığı, ufuklarda parlayan nur, evrenin üzerine yayılan güneşin ışığı gibi yüce durumların her birini hatırlayın da bu nimeti bilin ve bu saygınlığa riayet edin.

اِنَّ الْمُسْلِمِينَ وَالْمُسْلِمَاتِ وَالْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنَاتِ وَالْقَانِتِينَ
وَالْقَانِتَاتِ وَالصَّادِقِينَ وَالصَّادِقَاتِ وَالصَّابِرِينَ وَالصَّابِرَاتِ
وَالْخَاشِعِينَ وَالْخَاشِعَاتِ وَالْمُتَصَدِّقِينَ وَالْمُتَصَدِّقَاتِ وَالصَّٓائِمِينَ
وَالصَّٓائِمَاتِ وَالْحَافِظِينَ فُرُوجَهُمْ وَالْحَافِظَاتِ وَالذَّاكِرِينَ
اللّٰهَ كَثِيرًا وَالذَّاكِرَاتِ اَعَدَّ اللّٰهُ لَهُمْ مَغْفِرَةً وَاَجْرًا عَظِيمًا ﴿٣٥﴾

35- "Şüphesiz Müslüman erkeklerle Müslüman kadınlar, mümin erkeklerle mümin kadınlar, itaatkâr erkeklerle itaatkâr kadınlar, doğru erkeklerle doğru kadınlar, sabreden erkeklerle sabreden kadınlar, Allah'a karşı huşu içinde olan erkekler, Allah'a karşı huşu içinde olan kadınlar, sadaka veren erkeklerle sadaka veren kadınlar, oruç tutan erkeklerle oruç tutan kadınlar, namuslarını koruyan erkeklerle namuslarını koruyan kadınlar, Allah'ı çokça anan erkeklerle çokça anan kadınlar var ya, işte onlar için Allah, bağışlama ve büyük bir mükâfat hazırlamıştır."

İslam teslimiyet, ihlaslı olmak, çaba harcamak ve tahammül etmektir.

( وَالْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنَاتِ ) *"Mümin erkeklerle mümin kadınlar."*

İman, tasdik etmek demek olup ibadetlerin toplandığı yerdir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- İman tasdik etmek ve hakikate ermektir.

- İman, hakikatin kalpte esmesidir.

- İman kalbin hayatıdır. Bu da, önce akıl ile olur. Kimileri için bu hayat ilimle, diğer bazıları için Allah'ı anlamakla, diğer bazıları için

tevhidle, diğer bazıları için de marifet iledir. Diğer bazılarına göre ise imanları, kalplerinin Allah ile hayat bulmasıdır.

( وَالْقَانِتِينَ وَالْقَانِتَاتِ ) *"İtaatkâr erkeklerle itaatkâr kadınlar."*

"Kunût (itaatkârlık)", ibadetin uzun sürmesidir.

( وَالصَّادِقِينَ وَالصَّادِقَاتِ ) *"Doğru erkeklerle doğru kadınlar."*

Bunlar ahitlerinde, akitlerinde ve hadlerine riayet etmede dürüst olan kimselerdir.

( وَالصَّابِرِينَ وَالصَّابِرَاتِ ) *"Sabreden erkeklerle sabreden kadınlar."*

Bunlar güzel ahlaklar üzerine, kötü durumlara karşı ve kaderin sürprizleri gerçekleştiğinde sabrederler.

( وَالْخَاشِعِينَ وَالْخَاشِعَاتِ ) *"Allah'a karşı huşu içinde olan erkekler, Allah'a karşı huşu içinde olan kadınlar."*

Huşu, sırrın, hakikatin apaçık tezahürleri karşısında boyun eğmesidir.

( وَالْمُتَصَدِّقِينَ وَالْمُتَصَدِّقَاتِ ) *"Sadaka veren erkeklerle sadaka veren kadınlar."*

Bunlar, kendilerine zarar veren veya haklarında konuşan hiç kimseyle husumetleri kalmayacak şekilde malları ve canlarıyla sadaka verenlerdir.

( وَالصَّآئِمِينَ وَالصَّآئِمَاتِ ) *"Oruç tutan erkeklerle oruç tutan kadınlar."*

Bunlar, şeriatta ve tarikatta caiz olmayan şeylerden sakınan kimselerdir.

( وَالْحَافِظِينَ فُرُوجَهُمْ وَالْحَافِظَاتِ ) *"Namuslarını koruyan erkeklerle namuslarını koruyan kadınlar."*

Bunlar, zahirde namuslarını haramdan, işârî olarak ise bütün günahlardan koruyanlardır.

( وَالذَّاكِرِينَ اللّٰهَ كَثِيرًا وَالذَّاكِرَاتِ ) *"Allah'ı çokça anan erkeklerle çokça anan kadınlar."*

Bunlar gevşemeksizin ve unutkanlığa maruz kalmaksızın, dilleriyle, kalpleriyle ve bütün hallerinde Allah'ı anan kimselerdir.

( اَعَدَّ اللّٰهُ لَهُمْ مَغْفِرَةً وَاَجْرًا عَظِيمًا ) *"İşte onlar için Allah, bağışlama ve büyük bir mükâfat hazırlamıştır."*

Böylece onlar için güzel mükâfat ve bolca ahiret sevabı vardır.

وَمَا كَانَ لِمُؤْمِنٍ وَلَا مُؤْمِنَةٍ اِذَا قَضَى اللّٰهُ وَرَسُولُهُٓ اَمْرًا اَنْ يَكُونَ لَهُمُ الْخِيَرَةُ مِنْ اَمْرِهِمْ وَمَنْ يَعْصِ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ فَقَدْ ضَلَّ ضَلَالًا مُبِينًا ﴿٣٦﴾

36- "Allah ve Resulü, bir iş hakkında hüküm verdikleri zaman hiçbir mümin erkek ve hiçbir mümin kadın için kendi işleri konusunda tercih kullanma hakkı yoktur. Kim Allah'a ve Resulüne karşı gelirse, şüphesiz ki o, apaçık bir şekilde sapmıştır."

Allah'a, emri konusunda iftira etmek, hükmünde kendisine itirazda bulunmak ve işaretine uymayı terk etmek, şirk kapısını çalmak demektir. Bu nedenle kim şirkten hemen sakınmazsa onun uçurumuna düşer.

وَاِذْ تَقُولُ لِلَّذٖٓي اَنْعَمَ اللّٰهُ عَلَيْهِ وَاَنْعَمْتَ عَلَيْهِ اَمْسِكْ عَلَيْكَ زَوْجَكَ وَاتَّقِ اللّٰهَ وَتُخْفٖي فٖي نَفْسِكَ مَا اللّٰهُ مُبْدٖيهِ وَتَخْشَى النَّاسَ وَاللّٰهُ اَحَقُّ اَنْ تَخْشٰيهُ فَلَمَّا قَضٰى زَيْدٌ مِنْهَا وَطَرًا زَوَّجْنَاكَهَا لِكَيْ لَا يَكُونَ عَلَى الْمُؤْمِنٖينَ حَرَجٌ فٖٓي اَزْوَاجِ اَدْعِيَٓائِهِمْ اِذَا قَضَوْا مِنْهُنَّ وَطَرًا وَكَانَ اَمْرُ اللّٰهِ مَفْعُولًا ﴿٣٧﴾

37- "Hani sen, Allah'ın kendisine nimet verdiği, senin de iyilikte bulunduğun kimseye: 'Eşini nikâhında tut ve Allah'tan sakın!' diyordun. İçinde, Allah'ın ortaya çıkaracağı bir şeyi gizliyor ve insanlardan çekiniyordun. Oysa kendisinden çekinmene Allah daha layıktı. Zeyd, eşinden yana isteğini yerine getirince, onu seninle evlendirdik ki eşlerinden yana isteklerini yerine getirdiklerinde,

evlatlıklarının eşleriyle evlenmeleri konusunda müminlere bir zorluk olmasın. Allah'ın emri, mutlaka yerine getirilmiştir."

Allah, sahabelerin arasından sadece kendisini ismiyle zikretmek suretiyle, Zeyd'e inamda bulunmuştur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, Zeyd'e, kendisine ilgi göstermen ve onu evlatlık edinmenle nimet verdi.

- Allah, Zeyd'e, kendisini azat etmenle nimet verdi.

- Allah, Zeyd'e, iman ve marifetle nimet verdi.

Sen de ona, kendisini azat etmek ve evlatlık edinmekle iyilikte bulundun.

( اَمْسِكْ عَلَيْكَ زَوْجَكَ ) "*Eşini nikâhında tut.*"

Bunu, işin sonuçta nereye varacağını bilmekle birlikte, şeriatın hükmünü yerine getirmek için yap. Çünkü Allah seni buna muttali kıldı ve sen ona: ( وَاتَّقِ اللّٰهَ ) "*Allah'tan sakın!*" dedin.

( وَتُخْفِي فِي نَفْسِكَ مَا اللّٰهُ مُبْدِيهِ ) "*İçinde, Allah'ın ortaya çıkaracağı bir şeyi gizliyordun.*"

Yani sen, Allah'ın, gelecekte olacak olan şeyleri sana bildirdiğini onlara açıklamadın.

( وَتُخْفِي فِي نَفْسِكَ ) "*İçinde gizliyordun.*"

Sen, haram olmayacak bir şekilde, kadına olan meylini ve sevgini içinde gizliyordun.

( وَتَخْشَى النَّاسَ ) "*İnsanlardan çekiniyordun.*"

Yani insanların, Zeyd'in kıssası sebebiyle fitneye düşmelerinden korkuyordun. Bu korku da senin onlara olan şefkatinden ve merhametinden dolayı idi.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Sen insanlardan utanıyordun. Oysa Allah, utanmana daha layıktır.

- Sen, insanların bu durumu işitmeye ve ona tahammül etmeye güç yetiremeyeceklerinden korkuyordun. Çünkü içlerine, güçlerini yok edecek bir şey düşebilir.

( فَلَمَّا قَضٰى زَيْدٌ مِنْهَا وَطَرًا زَوَّجْنَاكَهَا ) *"Zeyd, eşinden yana isteğini yerine getirince, onu seninle evlendirdik."*

Bunu yaptık ki sana zorluk çıkmasın. Müminlere de evlatlıklarının eşleriyle evlenmeleri konusunda bir zorluk çıkmasın. Çünkü bu evlilik, ancak öz evlat olan oğlun eşi hakkında haramdır.

مَا كَانَ عَلَى النَّبِيِّ مِنْ حَرَجٍ فِيمَا فَرَضَ اللّٰهُ لَهُ سُنَّةَ اللّٰهِ فِي الَّذِينَ خَلَوْا مِنْ قَبْلُ وَكَانَ اَمْرُ اللّٰهِ قَدَرًا مَقْدُورًا ﴿٣٨﴾

38- "Allah'ın kendisine farz kıldığı şeyleri yerine getirmesi konusunda peygambere bir vebal yoktur. Daha önce gelip geçen peygamberler hakkında da Allah'ın kanunu böyledir. Allah'ın emri kesinleşmiş bir hükümdür."

Allah'ın emrine muhalefet edilemez, karşı çıkılamaz, ret ve inkâr edilemez. Bu arada masum oluğu için Hz. Peygamber'e (s.a.v.) hiçbir şekilde zorluk çıkmamıştır.

اَلَّذِينَ يُبَلِّغُونَ رِسَالَاتِ اللّٰهِ وَيَخْشَوْنَهُ وَلَا يَخْشَوْنَ اَحَدًا اِلَّا اللّٰهَ وَكَفٰى بِاللّٰهِ حَسِيبًا ﴿٣٩﴾

39- "Daha önce gelip geçen o peygamberler, Allah'ın vahiylerini tebliğ eden, Allah'tan korkan, başka hiç kimseden korkmayan kimselerdir. Allah, hesap görücü olarak yeter."

( وَيَخْشَوْنَهُ ) *"Allah'tan korkan kimselerdir."*

Çünkü onlar, Allah'ın takdiri olmaksızın hiç kimseye bir zarar dokunmayacağını, başlarına sakıncalı ve hoşlanılmayan bir durumun

gelmeyeceğini bilirler. Bu nedenle onlar sadece Allah'tan korkarlar. Zira biliyorlar ki Allah'tan başka hiç kimsenin bir şeyi yoktur.

مَا كَانَ مُحَمَّدٌ اَبَٓا اَحَدٍ مِنْ رِجَالِكُمْ وَلٰكِنْ رَسُولَ اللّٰهِ وَخَاتَمَ النَّبِيّنَ وَكَانَ اللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمًا ﴿٤٠﴾

40- "Muhammed, sizin erkeklerinizden hiçbirinin babası değildir. Fakat o, Allah'ın Resulü ve nebîlerin sonuncusudur. Allah, her şeyi hakkıyla bilendir."

O, bir çocuğa izafe edilmiş değildir. Bu nedenle size karşı baba şefkatine sahiptir. Ancak o, babanız değildir. Bir yoruma göre de Hz. Peygamber'in (s.a.v.) nesebi açıkça bilindiği halde, o nesebiyle değil, Allah'a olan nisbetiyle tanınır. Mesela hakkında çok az: "Abdullah'ın oğlu Muhammed" denilirken, ebediyete kadar hep: "Muhammed, Allah'ın resulüdür" denecektir. Nitekim imanın şiarı ve tevhid kelimesi, "Lâ ilâhe illallâh (Allah'tan başka hiçbir ilâh yoktur)" sözünden sonra: "Muhammedun resûlullâh (Muhammed Allah'ın resulüdür)" sözüdür.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا اذْكُرُوا اللّٰهَ ذِكْرًا كَثِيرًا ﴿٤١﴾ وَسَبِّحُوهُ بُكْرَةً وَاَصِيلًا ﴿٤٢﴾

41, 42- "Ey iman edenler! Allah'ı çokça zikredin. O'nu sabah akşam tesbih edin."

Bu ifadelerdeki işaret, "Allah'ı sevin" şeklindedir. Çünkü Hz. Peygamber şöyle buyurmuştur:

*"Kim, bir şeyi severse onu çokça zikreder."*

O halde "Allah" demek ve Allah'ı zikrettikten sonra da unutmamak gerekir.

Bir yoruma göre de Allah'ı kalplerinizle zikredin. Çünkü devam etmesi mümkün olan zikir, kalbin zikridir. Dil ile zikre gelince, onun ebedî olarak devam ettirilmesi imkânsız gibidir.

( وَسَبِّحُوهُ بُكْرَةً وَاَصِيلًا ) *"O'nu sabah akşam tesbih edin."*

Tesbih de zikir kabilindendir. Ancak kişide yılgınlık meydana gelmemesi için Allah onu iki lafızla ifade etmiştir.

هُوَ الَّذِي يُصَلِّي عَلَيْكُمْ وَمَلٰٓئِكَتُهُ لِيُخْرِجَكُمْ مِنَ الظُّلُمَاتِ اِلَى النُّورِ وَكَانَ بِالْمُؤْمِنِينَ رَحِيمًا ﴿٤٣﴾

43- "Sizi karanlıklardan aydınlığa çıkarmak için size merhamet eden, melekleri de sizin için bağışlanma dileyen O'dur. Allah, müminlere çok merhamet edendir."

"Salât" lafzı, aslı itibariyle dua demektir. Bu çerçevede Allah'ın bizimle ilgili salâtı ve duası, bizi kendine yakınlaştırması şeklinde olur. Meleklerin, O'nun nezdinde bize yönelik salât ve duaları ise günahkâra mağfiret, itaatkâra da ihsan dilemeleri şeklinde olur.

Bir yoruma göre de Allah'tan olan salât, rahmet anlamındadır. Meleklerden ise şefaat demektir.

( لِيُخْرِجَكُمْ مِنَ الظُّلُمَاتِ اِلَى النُّورِ ) *"Sizi karanlıklardan aydınlığa çıkarmak için."*

Küfrün karanlıklarından imanın nuruna çıkarmak için.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Sizi karanlıklardan aydınlığa çıkarmak için. Yani sizi, vuslat esintisiyle sapıklıktan korumak için.

- Sizi, tedbirin karanlıklarından takdiri görme fezasına çıkarmak için.

- Sizi, nefislerinizin karanlıklarından kalplerinizdeki basiret nurlarına çıkarmak için.

- Sizi, tefrikanın sebeplerinden muvaffakiyetin özünü görme ve cemin vasıflarını hakikatte yaşama mertebesine çıkarmak için.

- Sizi, şirkten korumak ve imanın delilleriyle sabit kılmak için.

تَحِيَّتُهُمْ يَوْمَ يَلْقَوْنَهُ سَلَامٌ وَاَعَدَّ لَهُمْ اَجْرًا كَرِيمًا ﴿٤٤﴾

44- "Allah'a kavuşacakları gün, müminlere yönelik esenlik dileği 'selam'dır. Allah, onlara çok değerli bir mükâfat hazırlamıştır."

Selam görmeyle birlikte, kavuşma da selam ile birlikte anıldığı zaman bu, sadece gözle görmek anlamında olur. Bu arada selam da hükümdarların, şanlarının ve rütbelerinin yüceliğini dile getirmek için hitaplarında kullandıkları bir açış ifadesidir. Bu itibarla Allah'ın selamı gerçekleşecek ve hitabı işitilecektir. Bu da ancak gözle görülerek olacaktır.

( اَجْرًا كَرِيمًا ) *"Çok değerli bir mükâfat."*

"Kerem", değersiz olmamak, "kerim" ise güzel demektir.

İşaret anlamı ise şöyledir: Az amele karşılık olarak da ecirleri boldur. Çünkü cömert olan, alış veriş yaparken rakamların detayına takılıp kalmaz. Bu ise insan henüz gayb âleminde iken ezelde kendisine yapılan ihsanı tanıtmak demektir.

يَٓا اَيُّهَا النَّبِيُّ اِنَّٓا اَرْسَلْنَاكَ شَاهِدًا وَمُبَشِّرًا وَنَذِيرًا ﴿٤٥﴾ وَدَاعِيًا اِلَى
اللّٰهِ بِاِذْنِهِ وَسِرَاجًا مُنِيرًا ﴿٤٦﴾

45, 46- "Ey Peygamber! Biz seni bir şahit, bir müjdeleyici, bir uyarıcı, Allah'ın izniyle kendi yoluna davet eden bir çağırıcı ve aydınlatıcı bir kandil olarak gönderdik."

Ey tarafımızdan şereflendirilen Peygamber! Biz seni birliğimize tanıklık eden, bize uymayı müjdeleyen, emrimize muhalefetten sakındıran, insanlara bizden korkacakları konuları öğreten ve bizimle bize davet eden bir şahit, insanların kendisiyle aydınlanacakları bir kandil ve ışınları, seni tasdik edip sana inanan herkesin üzerine yayılan bir güneş olarak gönderdik. Bu itibarla bize, ancak sana uyup hizmet eden ve seni tasdik edip öne geçiren kimse ulaşır.

وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِينَ بِاَنَّ لَهُمْ مِنَ اللّٰهِ فَضْلًا كَبِيرًا ﴿٤٧﴾

47- "Müminlere, kendileri için Allah'tan büyük bir lütuf olduğunu müjdele."

Müminlere, onlarla beraber olan lütfumuzu, rahmetimize ereceklerini ve onlara ihsanda bulunacağımızı müjdele. Her kim, sana olan imanının bereketi kendisini etkilemezse, bizim katımızda hiçbir değeri yoktur.

وَلَا تُطِعِ الْكَافِرِينَ وَالْمُنَافِقِينَ وَدَعْ اَذٰيهُمْ وَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ
وَكَفٰى بِاللّٰهِ وَكِيلًا ﴿٤٨﴾

48- "Kâfirlere ve münafıklara itaat etme! Onların eziyetlerine aldırma ve Allah'a tevekkül et. Vekil olarak Allah yeter."

Kendisinden yüz çevirdiğimiz ve kendisiyle başkalarını dalalete götürdüğümüz küfür, münafıklık, bidat ve ayrılık ehli kimselere uyma ve sürekli kendisine bağlanmak suretiyle Allah'a tevekkül et. Nitekim vekil olarak Allah yeter.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوٓا اِذَا نَكَحْتُمُ الْمُؤْمِنَاتِ ثُمَّ طَلَّقْتُمُوهُنَّ مِنْ
قَبْلِ اَنْ تَمَسُّوهُنَّ فَمَا لَكُمْ عَلَيْهِنَّ مِنْ عِدَّةٍ تَعْتَدُّونَهَا فَمَتِّعُوهُنَّ
وَسَرِّحُوهُنَّ سَرَاحًا جَمِيلًا ﴿٤٩﴾

49- "Ey iman edenler! Mümin kadınları nikâhlayıp sonra onlara dokunmadan kendilerini boşadığınızda, onlar üzerinde sizin sayacağınız bir iddet hakkınız yoktur. Bu durumda onlara bir miktar bağışta bulunun ve kendilerini güzel bir şekilde serbest bırakın."

Onlardan ayrılmayı tercih ettiğiniz zaman, kendileri ayrılığa alışıncaya kadar, ilk ayrılık günlerinde sizlerden onlara bir hatıra olması için kendilerine bir miktar bağışta bulunun.

( وَسَرِّحُوهُنَّ سَرَاحًا جَمِيلًا ) *"Kendilerini güzel bir şekilde serbest bırakın."*

Ayrılıktan sonra onları sadece hayırla anın ve onlarla beraber geride bıraktığınız bir şeyi de kendilerinden geri almayın. Böylece onlara, ayrılık hali ile mali zararı birlikte yaşatmayın.

يَٓا اَيُّهَا النَّبِيُّ اِنَّٓا اَحْلَلْنَا لَكَ اَزْوَاجَكَ الّٰتِي اٰتَيْتَ اُجُورَهُنَّ وَمَا
مَلَكَتْ يَمِينُكَ مِمَّٓا اَفَٓاءَ اللّٰهُ عَلَيْكَ وَبَنَاتِ عَمِّكَ وَبَنَاتِ عَمَّاتِكَ
وَبَنَاتِ خَالِكَ وَبَنَاتِ خَالَاتِكَ الّٰتِي هَاجَرْنَ مَعَكَ وَامْرَاَةً مُؤْمِنَةً اِنْ
وَهَبَتْ نَفْسَهَا لِلنَّبِيِّ اِنْ اَرَادَ النَّبِيُّ اَنْ يَسْتَنْكِحَهَا خَالِصَةً لَكَ مِنْ
دُونِ الْمُؤْمِنِينَ قَدْ عَلِمْنَا مَا فَرَضْنَا عَلَيْهِمْ فٖٓي اَزْوَاجِهِمْ وَمَا مَلَكَتْ
اَيْمَانُهُمْ لِكَيْلَا يَكُونَ عَلَيْكَ حَرَجٌ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُورًا رَحِيمًا ﴿٥٠﴾

50- "Ey Peygamber! Biz sana mehirlerini verdiğin eşlerini, Allah'ın sana ganimet olarak verdiklerinden elinin altında bulunan kadınları, seninle beraber hicret eden, amcanın kızlarını, halalarının kızlarını, dayının kızlarını ve teyzelerinin kızlarını sana helal kıldık. Ayrıca, diğer müminlere değil de sana has olmak üzere, mehirsiz olarak kendini Peygambere bağışlayan, peygamberin de kendisini nikâhlamak istediği herhangi bir mümin kadını da sana helal kıldık. Müminlere, eşleri ve sahip oldukları cariyeleri hakkında, farz kıldığımız şeyleri elbette bilmekteyiz. Bütün bunlar, sana herhangi bir zorluk olmaması içindir. Allah çok bağışlayıcıdır, çok merhamet edicidir."

Nikâh konusunda durumu senin için geniş tuttuk. Kaç kişiyle evlenmek istersen. Çünkü sen, hanımlar arasında eşitlik gözetmeme, haklarına riayet etmeme ve onlara haksızlık etme kusurunu işlememek konusunda güvenilirsin. Ayrıca evlilik konusundaki genişlik, hür ile köle arasında olduğu gibi fazileti ifade eder.

تُرْجِي مَنْ تَشَآءُ مِنْهُنَّ وَتُؤْوِي اِلَيْكَ مَنْ تَشَآءُ وَمَنِ ابْتَغَيْتَ مِمَّنْ عَزَلْتَ فَلَا جُنَاحَ عَلَيْكَ ذٰلِكَ اَدْنٰى اَنْ تَقَرَّ اَعْيُنُهُنَّ وَلَا يَحْزَنَّ وَيَرْضَيْنَ بِمَآ اٰتَيْتَهُنَّ كُلُّهُنَّ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ مَا في قُلُوبِكُمْ وَكَانَ اللّٰهُ عَليمًا حَليمًا ﴿٥١﴾

51- "Ey Muhammed! Hanımlarından dilediğini geri bırakırsın, dilediğini yanına alırsın. Uzak durduklarından dilediklerini yanına almanda da sana bir günah yoktur. Bu, onların gözlerinin aydın olması, üzülmemeleri ve hepsinin de kendilerine verdiğine razı olmaları için daha uygundur. Allah, kalplerinizdekini bilir. Allah, hakkıyla bilendir, halimdir.

(مَنْ تَشَآءُ مِنْهُنَّ) *"Hanımlarından dilediğini."*

Arzuladığın şekle ve ortaya çıkan tercihine uygun olarak bunu yapabilirsin. Bu konuda senin için ne bir sakınca ne de bir günah söz konusudur.

لَا يَحِلُّ لَكَ النِّسَآءُ مِنْ بَعْدُ وَلَآ اَنْ تَبَدَّلَ بِهِنَّ مِنْ اَزْوَاجٍ وَلَوْ اَعْجَبَكَ حُسْنُهُنَّ اِلَّا مَا مَلَكَتْ يَمينُكَ وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ رَقيبًا ﴿٥٢﴾

52- "Bundan sonra güzellikleri hoşuna gitse bile başka kadınlarla evlenmek, eşlerini boşayıp başka eşler almak sana helal değildir. Ancak sahip olduğun cariyeler başka. Şüphesiz Allah, her şeyi gözetleyendir."

Sen, onları seçince Allah, onlar için bir saygınlık ortay koyarak: (لَا يَحِلُّ لَكَ النِّسَآءُ مِنْ بَعْدُ) *"Bundan sonra başka kadınlarla evlenmek, sana helal değildir"* buyurdu. Bu itibarla nasıl ki onlar seni tercih ettilerse, sen de gönüllerini hoş etmek ve kendinle aralarında bir nevi denklik kurmak için artık başka bir kadını onlara tercih etme.

Bu da Allah'ın keremini ifade etmektedir. Nitekim hakkı korumak, bir iyiliktir ve borçtur.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا لَا تَدْخُلُوا بُيُوتَ النَّبِيِّ اِلَّٓا اَنْ يُؤْذَنَ
لَكُمْ اِلٰى طَعَامٍ غَيْرَ نَاظِر۪ينَ اِنٰيهُ وَلٰكِنْ اِذَا دُع۪يتُمْ فَادْخُلُوا
فَاِذَا طَعِمْتُمْ فَانْتَشِرُوا وَلَا مُسْتَاْنِس۪ينَ لِحَد۪يثٍ اِنَّ ذٰلِكُمْ كَانَ
يُؤْذِي النَّبِيَّ فَيَسْتَحْي۪ي مِنْكُمْ وَاللّٰهُ لَا يَسْتَحْي۪ي مِنَ الْحَقِّ وَاِذَا
سَاَلْتُمُوهُنَّ مَتَاعًا فَسْـَٔلُوهُنَّ مِنْ وَرَٓاءِ حِجَابٍ ذٰلِكُمْ اَطْهَرُ
لِقُلُوبِكُمْ وَقُلُوبِهِنَّ وَمَا كَانَ لَكُمْ اَنْ تُؤْذُوا رَسُولَ اللّٰهِ وَلَٓا اَنْ
تَنْكِحُٓوا اَزْوَاجَهُ مِنْ بَعْدِه۪ٓ اَبَدًا اِنَّ ذٰلِكُمْ كَانَ عِنْدَ اللّٰهِ عَظ۪يمًا ﴿٥٣﴾

53- "Ey iman edenler! Yemek için çağrılmaksızın ve yemeğin pişmesini beklemeksizin Peygamberin evlerine girmeyin, çağrıldığınız zaman girin. Yemeği yiyince de hemen dağılın. Sohbet için beklemeyin. Çünkü bu davranışınız Peygamberi rahatsız etmekte fakat o, sizden de çekinmektedir. Allah ise gerçeği söylemekten çekinmez. Peygamberin hanımlarından bir şey istediğiniz zaman perde arkasından isteyin. Böyle davranmanız, hem sizin kalpleriniz hem de onların kalpleri için daha temizdir. Allah'ın Resulüne rahatsızlık vermeniz ve kendisinden sonra hanımlarını nikâhlamanız ebediyen söz konusu olamaz. Çünkü bu, Allah katında büyük bir günahtır."

Allah, onlara izin isterken edebi korumalarını, vakte riayet etmelerini ve saygının gerekliliğini emretmiştir. Bu çerçevede, size izin verildiği zaman edebe uygun olarak ve o huzurun hükümlerini koruyarak girin. İhtiyaçlarınız bittiği zaman da hemen çıkın ve kendinizden habersiz kalmayın. Bir de Peygamberin güzel ahlakı, sizi edebi korumaktan alıkoymasın ve aşırı çekingenliği sizi, onu rahatsız etmeye sevk etmesin.

( فَاِذَا طَعِمْتُمْ فَانْتَشِرُوا وَلَا مُسْتَاْنِسِينَ لِحَدِيثٍ اِنَّ ذٰلِكُمْ كَانَ يُؤْذِي النَّبِيَّ فَيَسْتَحْيِي مِنْكُمْ ) *"Yemeği yiyince de hemen dağılın. Sohbet için beklemeyin. Çünkü bu davranışınız, Peygamberi rahatsız etmekte, fakat o, sizden de çekinmektedir."*

Hz. Peygamber'in ahlak güzelliği, onunla samimi olmalarına yol açmıştır. Bu durum, Allah bu ayeti indirinceye kadar devam etmiştir.

( وَاِذَا سَاَلْتُمُوهُنَّ مَتَاعًا فَسْـَٔلُوهُنَّ مِنْ وَرَآءِ حِجَابٍ ذٰلِكُمْ اَطْهَرُ لِقُلُوبِكُمْ وَقُلُوبِهِنَّ ) *"Peygamberin hanımlarından bir şey istediğiniz zaman perde arkasından isteyin. Böyle davranmanız, hem sizin kalpleriniz hem de onların kalpleri için daha temizdir."*

Allah, onları alışılmış olan âdetten koparıp şeriatın iyi kabul ettiği davranışa ve farz olan ibadete taşımış, sahabelerden de olsalar, beşerin beşer olduğunu açıklayarak: ( ذٰلِكُمْ اَطْهَرُ لِقُلُوبِكُمْ وَقُلُوبِهِنَّ ) *"Böyle davranmanız, hem sizin kalpleriniz hem de onların kalpleri için daha temizdir"* buyurmuştur.

O halde hiç kimsenin, nefsinden emin olmaması gerekir. Nitekim bu nedenledir ki şeriatta, aralarında mahremlik bulunmayan bir erkekle bir kadının yalnız kalmamasına dair emir sıkı tutulmaktadır.

( وَمَا كَانَ لَكُمْ اَنْ تُؤْذُوا رَسُولَ اللّٰهِ وَلَآ اَنْ تَنْكِحُوٓا اَزْوَاجَهُ مِنْ بَعْدِهٓ اَبَدًا اِنَّ ذٰلِكُمْ كَانَ عِنْدَ اللّٰهِ عَظِيمًا ) *"Allah'ın Resulüne rahatsızlık vermeniz ve kendisinden sonra hanımlarını nikâhlamanız ebediyen söz konusu olamaz. Çünkü bu, Allah katında büyük bir günahtır."*

Bu, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) özelliklerindendir. Öte yandan bunda, böyle bir şeyi düşünen kimse için bir nevi ruhsat bulunmaktadır. Bu nedenle, onlara meyli olan kimse, Hz. Peygamber'in vefatından sonra, onlardan başkasıyla ilgilenmeye çalışır. Bununla birlikte bu gibi nefsi arzulardan sakınmak daha olgun ve değeri daha yüksek bir davranış olur.

اِنْ تُبْدُوا شَيْـًٔا اَوْ تُخْفُوهُ فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمًا ٥٤

54- “Siz bir şeyi açığa vursanız da gizleseniz de, biliniz ki Allah her şeyi hakkıyla bilendir.”

Kalbi Allah’tan yana korumak ve vakitlerin devamınca kendisiyle Allah arasında doğru bir şekilde emre riayet etmek, ancak huzur ehli kimselerden havassın yapabileceği işlerdir.

لَا جُنَاحَ عَلَيْهِنَّ فِي اٰبَآئِهِنَّ وَلَٓا اَبْنَآئِهِنَّ وَلَٓا اِخْوَانِهِنَّ وَلَٓا اَبْنَآءِ اِخْوَانِهِنَّ وَلَٓا اَبْنَآءِ اَخَوَاتِهِنَّ وَلَا نِسَآئِهِنَّ وَلَا مَا مَلَكَتْ اَيْمَانُهُنَّ وَاتَّقِينَ اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ شَهِيدًا ﴿٥٥﴾

55- “Peygamberin hanımlarına, babalarından, oğullarından, erkek kardeşlerinden, erkek kardeşlerinin oğullarından, kız kardeşlerinin oğullarından, mümin kadınlardan ve sahip oldukları cariyelerden ötürü bir günah yoktur. Ey Peygamber hanımları! Allah’a karşı gelmekten sakının. Şüphesiz Allah, her şeye hakkıyla şahittir.”

Örtü ayeti inince Hz. Peygamber’in (s.a.v.) hanımları ile diğer kadınlar ve erkekler, örtünme konusunda zorlandılar. Bunun üzerine Allah, ayette adı geçenlerin, fıkıhtaki tafsilata göre; kadınlara bakması ve kadınların onları görmesi konusunda ruhsat olmak üzere, bu ayeti indirdi.

اِنَّ اللّٰهَ وَمَلٰٓئِكَتَهُ يُصَلُّونَ عَلَى النَّبِيِّ يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا صَلُّوا عَلَيْهِ وَسَلِّمُوا تَسْلِيمًا ﴿٥٦﴾

56- “Şüphesiz Allah ve melekleri, Peygambere salât ediyorlar. Ey iman edenler! Siz de ona salât edin, selam edin.”

Allah, Hz. Peygamber’in (s.a.v.) ümmet üzerinde şefaat ile bir nimetinin olduğu gibi, ümmetin de onun katında bir hizmetinin olmasını irade buyurarak onlara, Hz. Peygamber’e salât etmelerini em-

retti. Sonra Allah, Hz. Peygamber adına ümmeti mükâfatlandırdı. Bu amaçla Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur.

*"Kim, bana bir kez salât ederse, Allah ona on kez salât eder."*

Bir de bunda kulun, hiçbir zaman Allah'ın fazla lütfundan müstağni olmadığına işaret vardır. Çünkü Hz. Peygamber'in (s.a.v.) rütbesinden yüksek hiçbir rütbe bulunmadığı halde o, ümmetinin kendisine daha fazla salavat getirmesine ihtiyaç duymuştur.

اِنَّ الَّذِينَ يُؤْذُونَ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ لَعَنَهُمُ اللّٰهُ فِي الدُّنْيَا وَالْاٰخِرَةِ وَاَعَدَّ لَهُمْ عَذَابًا مُهِينًا ٥٧ وَالَّذِينَ يُؤْذُونَ الْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنَاتِ بِغَيْرِ مَا اكْتَسَبُوا فَقَدِ احْتَمَلُوا بُهْتَانًا وَاِثْمًا مُبِينًا ٥٨

57, 58- "Şüphesiz Allah ve Resulünü incitenlere, Allah dünyada ve ahirette lanet etmiş ve onlara, aşağılayıcı bir azap hazırlamıştır. Mümin erkekleri ve mümin kadınları işlemedikleri şeyler yüzünden incitenler, bir iftira ve apaçık bir günah yüklenmişlerdir."

Onlar, azaba müstahak oldukları günahlarla Allah'ı ve Resulünü incitirler. Bunlar, Allah'ın velilerini de incitirler. Bu arada Allah: (مَنْ يُطِعِ الرَّسُولَ فَقَدْ اَطَاعَ اللّٰهَ) *"Kim, Peygambere itaat ederse, şüphesiz o, Allah'a itaat etmiştir"* (Nisa, 4/80) buyurduğuna göre, aynı şekilde kim, Allah'ın Peygamberini, diğer peygamberleri ve müminleri incitirse şüphesiz o, Allah'ı incitmiş olur. Yani bu ayetle adı geçenlerin özel durumları ve rütbelerinin ispatı ifade edilmiştir.

Sonra Allah, mümin erkekleri ve mümin kadınları incitenleri ve onların azaplarını anlatarak Hz. Peygamber'i (s.a.v.) incitmeyi, Allah'ı incitmekle yan yana zikrettikten sonra, müminleri incitmekten söz etmiştir. Bu da müminlerin mertebesinin, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) mertebesinin altında olduğunu göstermektedir.

يَٓا اَيُّهَا النَّبِيُّ قُلْ لِاَزْوَاجِكَ وَبَنَاتِكَ وَنِسَٓاءِ الْمُؤْمِنِينَ يُدْنِينَ عَلَيْهِنَّ
مِنْ جَلَابِيبِهِنَّ ذٰلِكَ اَدْنٰٓى اَنْ يُعْرَفْنَ فَلَا يُؤْذَيْنَ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُورًا
رَحِيمًا ﴿٥٩﴾

59- "Ey Peygamber! Hanımlarına, kızlarına ve müminlerin kadınlarına söyle, bedenlerini örtecek elbiselerini giysinler. Bu, onların tanınıp incitilmemelerine de daha uygundur. Şüphesiz Allah çok bağışlayıcıdır, çok merhamet edicidir."

Bu ifadeler, saygınlığı korumak ve mertebeyi ispatlamak konusunda kadınlara yönelik bir uyarı, bir koruma ve korunup iffetli kalmalarına dair bir emirdir.

Allah, bu ayetlerle birlikte münafıkları, Medine'de kötü haberler yaymayı alışkanlık haline getirip Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kalbini meşgul etmeleri konusunda tehdit ettiği şu ayetleri indirmiştir:

لَئِنْ لَمْ يَنْتَهِ الْمُنَافِقُونَ وَالَّذِينَ فِي قُلُوبِهِمْ مَرَضٌ وَالْمُرْجِفُونَ
فِي الْمَدِينَةِ لَنُغْرِيَنَّكَ بِهِمْ ثُمَّ لَا يُجَاوِرُونَكَ فِيهَٓا اِلَّا قَلِيلًا ﴿٦٠﴾
مَلْعُونِينَ اَيْنَ مَا ثُقِفُوٓا اُخِذُوا وَقُتِّلُوا تَقْتِيلًا ﴿٦١﴾ سُنَّةَ اللّٰهِ فِي الَّذِينَ
خَلَوْا مِنْ قَبْلُ وَلَنْ تَجِدَ لِسُنَّةِ اللّٰهِ تَبْدِيلًا ﴿٦٢﴾

60, 61, 62- "Andolsun, eğer münafıklar, kalplerinde bir hastalık bulunanlar ve Medine'de kötü haberler yayıp ortalığı karıştıranlar vazgeçmezlerse elbette seni, onların üzerine gitmeye teşvik edeceğiz. Onlar da orada lanete uğramış kimseler olarak seninle pek az süre komşu kalacaklardır. Nerede bulunurlarsa yakalanırlar ve yaman bir şekilde öldürülürler. Daha önce gelip geçenler hakkında da Allah'ın kanunu böyledir. Allah'ın kanununda asla değişme bulamazsın."

Eğer onlar, kötü haberler yayıp ortalığı karıştırmaktan ve benzeri şeylerden vazgeçmezlerse hiç şüphesiz biz, daha önceki kâfirlere uyguladığımız imha prensibimizi onlara da uygularız.

Sonra Allah, onların, kıyametin kopmasını sormalarından, bunu yalanlamalarından, sonra ona hazırlık yapmadan çabuk kopmasını istemelerinden söz etmiştir. Daha sonra da Allah, onlara vereceğini bildiği cezanın ağırlığını ve işledikleri kusurlardan dolayı uğrayacakları pişmanlığı haber vermiştir.

يَسْـَٔلُكَ النَّاسُ عَنِ السَّاعَةِ قُلْ اِنَّمَا عِلْمُهَا عِنْدَ اللّٰهِ وَمَا يُدْرِيكَ لَعَلَّ السَّاعَةَ تَكُونُ قَرِيبًا ﴿٦٣﴾

63- "İnsanlar sana kıyametin vaktini soruyorlar. De ki: 'Onun ilmi ancak Allah katındadır.' Ne bilirsin, belki de kıyamet yakında gerçekleşir."

اِنَّ اللّٰهَ لَعَنَ الْكَافِرِينَ وَاَعَدَّ لَهُمْ سَعِيرًا ﴿٦٤﴾

64- "Şüphesiz Allah, kâfirlere lanet etmiş ve onlara alevli bir ateş hazırlamıştır."

خَالِدِينَ فِيهَٓا اَبَدًا لَا يَجِدُونَ وَلِيًّا وَلَا نَصِيرًا ﴿٦٥﴾

65- "Onlar, orada ebedî olarak kalacaklardır. Hiçbir dost, hiçbir yardımcı bulamayacaklardır."

يَوْمَ تُقَلَّبُ وُجُوهُهُمْ فِي النَّارِ يَقُولُونَ يَا لَيْتَنَٓا اَطَعْنَا اللّٰهَ وَاَطَعْنَا الرَّسُولَا ﴿٦٦﴾

66- "Yüzlerinin ateşte bir yandan bir yana döndürüleceği gün: 'Keşke Allah'a ve Resulüne itaat etseydik' diyecekler."

وَقَالُوا رَبَّنَٓا اِنَّٓا اَطَعْنَا سَادَتَنَا وَكُبَرَٓاءَنَا فَاَضَلُّونَا السَّب۪يلَا ﴿٦٧﴾

67- "Yine şöyle diyecekler: 'Ey Rabbimiz! Biz önderlerimize ve büyüklerimize itaat ettik de bizi yoldan saptırdılar.'"

رَبَّنَٓا اٰتِهِمْ ضِعْفَيْنِ مِنَ الْعَذَابِ وَالْعَنْهُمْ لَعْنًا كَب۪يرًا ﴿٦٨﴾

68- "Ey Rabbimiz! Onlara iki kat azap ver ve onları büyük bir lanete uğrat."

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا لَا تَكُونُوا كَالَّذ۪ينَ اٰذَوْا مُوسٰى فَبَرَّاَهُ اللّٰهُ مِمَّا
قَالُوا وَكَانَ عِنْدَ اللّٰهِ وَج۪يهًا ﴿٦٩﴾

69- "Ey iman edenler! Siz, Mûsâ'ya eziyet eden kimseler gibi olmayın. Nihayet Allah onu onların dediklerinden temize çıkarmıştı. Mûsâ, Allah katında itibarlı bir kimse idi."

Onlar, Hz. Mûsâ'nın husyelerinde şişkinlik olduğunu ileri sürmüş ve kendisini, yaratılıştan kusurlu olmakla ayıplamışlardı. Oysa o, utangaç bir adam olduğundan ve yıkandığı zaman elbiselerini çıkarıp soyunmadığından hakkında bunu zannetmişlerdi. Derken bir gün Hz. Mûsâ, yıkanmak için halvete çekildi ve elbiselerini bir taşın üstüne koydu. Bu esnada Allah, taşı elbiseleriyle birlikte harekete geçirdi ve Hz. Mûsâ arkasından koştu. Nihayet İsrailoğullarının arasına kadar geldi ve onlar, kendisinin yaradılıştan sağlam olduğunu görünce taş durdu. Hz. Mûsâ da elbiselerini alıp giydi. İşte: (فَبَرَّاَهُ اللّٰهُ مِمَّا قَالُوا وَكَانَ عِنْدَ اللّٰهِ وَج۪يهًا) *"Nihayet Allah onu onların dediklerinden temize çıkarmıştı. Mûsâ, Allah katında itibarlı bir kimse idi"* sözünün anlamı budur. Hz. Mûsâ, Allah katında değer ve mertebe bakımından itibarlı idi. Bu arada faydalı itibar, insanların yanındaki değil, Allah katındaki itibardır. İnsanların kabulünün ise itibar edilecek hiçbir tarafı ve hiçbir önemi yoktur. Özellikle de avamın kabulüne

itibar edilemez. Çünkü onlar, bir hiç uğruna kabul ederler ve bir hiç yüzünden reddederler.

Şiir:

*Efendim! Eğer kovuluyorsam ben senin yanından*
*Gözler üstünde taşınmaktayım ben başkalarınca*

Şiir:

*Eğer az isem ben kötüleriniz arasında*
*Kuşkusuz çoğum ben seçkinleriniz arasında*

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَقُولُوا قَوْلًا سَدٖيدًا ﴿٧٠﴾ يُصْلِحْ لَكُمْ اَعْمَالَكُمْ وَيَغْفِرْ لَكُمْ ذُنُوبَكُمْ وَمَنْ يُطِعِ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ فَقَدْ فَازَ فَوْزًا عَظٖيمًا ﴿٧١﴾

70, 71- "Ey iman edenler! Allah'a karşı gelmekten sakının ve doğru söz söyleyin ki, Allah sizin amellerinizi düzeltsin ve günahlarınızı bağışlasın. Kim, Allah'a ve Resulüne itaat ederse, muhakkak büyük bir başarıya ulaşmıştır."

Doğru söz, ihlâs kelimesidir. İhlâs kelimesi ise yürekten bir samimiyetle söylenen kelime-i şahadettir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Sözlerin doğruluğu davranışların doğruluğudur. Bu arada Allah, sizin için işi kolaylaştırmıştır. Bu çerçevede her kim, şirki terk ettiğine dair tanıklık olan kelime-i şahadeti kabul edip içtenlikle söylerse, Allah onun dünyadaki amellerini halelden arındırır ve ahirette hatalarını bağışlar. Yani onun için dünya ve ahiret saadeti gerçekleşir.

- Allah "amelleriniz" sözcüğünü çoğul olarak ve gufrandan önce zikretmiştir. Çünkü önemsediğin meşguliyetlerin senin için yeterli olmasa dahi, Allah senin halini ve amellerini düzeltmediği sürece, ahretine dair söze zaman ayıramazsın.

اِنَّا عَرَضْنَا الْاَمَانَةَ عَلَى السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَالْجِبَالِ فَاَبَيْنَ اَنْ يَحْمِلْنَهَا وَاَشْفَقْنَ مِنْهَا وَحَمَلَهَا الْاِنْسَانُ اِنَّهُ كَانَ ظَلُومًا جَهُولًا ﴿٧٢﴾

72- "Şüphesiz biz emaneti göklere, yere ve dağlara teklif ettik de onlar onu yüklenmek istemediler, ondan çekindiler. Onu insan yüklendi. Çünkü o çok zalimdir, çok cahildir."

Burada ( أَهْلَ ) "*sakinler*" kelimesi takdir edilmiştir. Yani: "Biz emaneti göklerin, yerin ve dağların sakinlerine teklif ettik."

Bir görüşe göre de Allah, göklere, yere ve dağlara hayat ve akıl verdi. Tıpkı şu ayette söylendiği gibi:

( فَقَالَ لَهَا وَلِلْاَرْضِ ائْتِيَا طَوْعًا اَوْ كَرْهًا ) "*Allah, göğe ve yere: 'İsteyerek veya istemeyerek gelin' dedi.*" (Fussilet, 41/11)

( فَاَبَيْنَ اَنْ يَحْمِلْنَهَا ) "*Onlar onu yüklenmek istemediler.*"

Yani emanete hıyanet etmek istemediler.

( وَحَمَلَهَا الْاِنْسَانُ ) "*Onu insan yüklendi.*"

Yani insan emanete hıyanet etti. Bir de emanete hıyanet edenler, bu hıyanette derece derecedirler. Buna göre kâfirler, marifetten ibaret olan emanetin aslına hıyanet ettiler ve kâfir oldular. Onların dışındakiler de günahlarla hıyanet ettiler. Bunların da bazıları daha şiddetli, bazıları da daha hafiftir. Herkes, hıyaneti miktarınca günah yüklenmiştir.

Bir yoruma göre de onlar emaneti kibirlenmeden dolayı değil, çekindikleri için kabul etmeyip bağışlanmalarını istediler. Allah da onları bağışlayıp emaneti taşımaktan muaf tuttu.

( وَحَمَلَهَا الْاِنْسَانُ ) "*Onu insan yüklendi.*"

İnsan onu kabul etti. Sonra da insanlar o emanete hakkıyla riayet etmediler. Herkes belli bir ölçüde riayet etti.

( اِنَّهُ كَانَ ظَلُومًا جَهُولًا ) "*Çünkü o, çok zalimdir, çok cahildir.*"

İnsan, emaneti dünyada taşımanın ağırlığını ve ahirette yol açacağı azabı bilmiyordu. Kimilerinin görüşüne göre ise Allah, emaneti göklere ve yere de teklif etti, insana da teklif etti. Bunun üzerine gökler ve yer af dilerken, insanlar af da dilemediler, emanete riayet de etmediler.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Emanet, vaciplerin hem usul kem de füruunu yerine getirmektir.

- Emanet, inançta tevhid ve sınırları korumaya çaba harcamaktır.

- Hz. Âdem ve çocukları emaneti yüklenince Allah şöyle buyurdu:

( وَحَمَلْنَاهُمْ فِي الْبَرِّ وَالْبَحْرِ ) *"Biz, onları karada ve denizde taşıdık."* (İsrâ, 17/70)

Zaten iyiliğin karşılığı da ancak iyiliktir.

- İnsan emaneti kendi nefsiyle değil, Allah ile yüklendi.

- İnsan, göklerin ve yerin bile çekindiği emanetten çekinmemekle nefsine zulmetmiştir. Zulüm ise bir şeyi yerli yerine koymamaktır.

- Allah, Rab olma ve yücelik vasfıyla göklere ve yere keşif verdi ve onlar emanetten çekindiler. Allah, Hz. Âdem ve zürriyetine ise lütuf vasfıyla keşif verdi ve onlar, emaneti kabul edip yüklendiler. Bu arada kul, bekabillâh halinde gökleri ve yeri, kirpiklerinin bir kılıyla dahi taşıyabilir.

- Gökler ve yer, gövdeler ve binalar içerdiğinden emaneti yüklenmekten çekindiler. Zira yükümlülüğü ancak kalpler taşır. Nitekim Hz. Âdem, mana sahibi olduğu için emanetin yükümlülüğünü üzerine aldı.

Şiir:

*Taşıdım ben hükmün dağlarını üzerimde, oysaki ben*
*Gömleği dahi taşıyamayacak kadar aciz ve zayıfım*

- Allah, emaneti halka teklif edince Hz. Âdem himmetini ona bağladı ve bu himmetiyle bütün yaratıkları ondan geri çevirdi. Böylece diğer yaratıklar, istemeyip çekinince insan, ister istemez onu yüklenmiş oldu.

لِيُعَذِّبَ اللّٰهُ الْمُنَافِقِينَ وَالْمُنَافِقَاتِ وَالْمُشْرِكِينَ وَالْمُشْرِكَاتِ
وَيَتُوبَ اللّٰهُ عَلَى الْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنَاتِ وَكَانَ اللّٰهُ غَفُورًا رَحِيمًا ﴿٧٣﴾

73- "Allah, münafık erkeklere ve münafık kadınlara, Allah'a ortak koşan erkeklere ve Allah'a ortak koşan kadınlara azap etmek, mümin erkeklerin ve mümin kadınların da tövbelerini kabul etmek için insana emaneti yüklemiştir. Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

( لِيُعَذِّبَ ) lafzındaki ( لِ ) harfi, sayrûret ve akıbet anlamındadır. Yani bu işin sonu, münafık erkekler ve münafık kadınlar ile müşrik erkekler ve müşrik kadınların azap çekmesi şeklinde olmuştur. Oysa Allah, günahlarını bağışlamak ve azaplarından vazgeçmek suretiyle, mümin erkeklerin ve mümin kadınların tövbelerini kabul eder.

Sûre bitti.

Denebilir ki: Münafık erkekler ve münafık kadınlar, müşrik erkekler ve müşrik kadınlar ile mümin erkekler ve mümin kadınların günahkârları burada anlatıldı. O halde abidler ve onlardan söz etmek nerede?

Fakat onlar, adı geçenler arasında yer alırlar. Bu çerçevede onlar, müşrikler ve münafıklar arasında değil de ister istemez Allah'ın tövbelerini kabul ettiği günahkârlar arasındadırlar.

Öyle ise ey günahkâr! Sen, abidlerin, seni aralarından çıkarmalarından çekiniyordun. Şimdi Allah'ın, bu hitabında nasıl da seni onların arasına dâhil ettiğini gör!

سورة سَبَإٍ

# SEBE' SÛRESİ

(Sebe' sûresi 54 âyetir. Mekke'de inmiştir. Yalnız 6. âyeti Medine'de inmiştir. Sûre adını, 15. âyette geçen, Yemen'de bir bölge veya kabile adı olan Sebe' den almıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", çelen, galebe çalan, kapan ve bahşeden bir sözdür. Kalpleri çeler, ancak her kalbi değil. Akıllara galebe çalar, ancak her akla değil. Ruhları kapar, ancak dostlardan kapar. Huzur bahşeder ancak bunu talep sahiplerinden özel bir topluluk için yapar.

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذ۪ي لَهُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَلَهُ الْحَمْدُ
فِي الْاٰخِرَةِ وَهُوَ الْحَك۪يمُ الْخَب۪يرُ ﴿١﴾

1- "Hamd, göklerdeki ve yerdeki her şey kendisinin olan Allah'a mahsustur. Hamd, ahirette de O'na mahsustur. O, hüküm ve hikmet sahibidir. Her şeyden hakkıyla haberdardır."

Allah, sûrenin açılışını zatını överek yapmıştır. Kendini övmesi ise celalini, izzet ve cemal sıfatlarını hak ettiğini bildirmek demektir. Bu itibarla Allah, ezelde zatını övendir, övgüye layıktır, birdir, mevcuttur, mabuttur ve taleplerin maksududur.

( اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِي لَهُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ ) *"Hamd, göklerdeki ve yerdeki her şey kendisinin olan Allah'a mahsustur."*

Hükümdarlık ortaklıkla olmaz. Bu itibarla, her ne kadar mahlûk için kullanılsa da gerçekte Allah'tan başka hiçbir hükümdar yoktur. Nitekim zenciye "Kâfûr" adı verilse de rengi değişmez.

( وَلَهُ الْحَمْدُ فِي الْاٰخِرَةِ ) *"Hamd, ahirette de O'na mahsustur."*

Bu hamd O'na, azat edip nimete boğduğu kimseler tarafından yapılır.

( وَهُوَ الْحَكِيمُ ) *"O, hüküm ve hikmet sahibidir."*

Allah hükmünü ve hikmetini bir topluluğu cennette, bir topluluğu da cehennemde ebedi tutmak suretiyle icra eder.

يَعْلَمُ مَا يَلِجُ فِي الْاَرْضِ وَمَا يَخْرُجُ مِنْهَا وَمَا يَنْزِلُ مِنَ السَّمَاۤءِ
وَمَا يَعْرُجُ فِيهَا وَهُوَ الرَّحِيمُ الْغَفُورُ ﴿٢﴾

2- "Allah yere gireni, yerden çıkanı, gökten ineni ve oraya yükseleni bilir. O, çok merhamet edicidir, çok bağışlayıcıdır."

( يَعْلَمُ مَا يَلِجُ فِي الْاَرْضِ ) *"Allah yere gireni bilir."*

Yerin altındaki taneleri, altına inen suyu, üstüne atılan şeyleri ve onda defnedilen insanları bilir.

( وَمَا يَخْرُجُ مِنْهَا ) *"Yerden çıkanı."*

Yerden çıkan bitkileri, çiçekleri ve diriltilecek olan ölüleri bilir.

( وَمَا يَنْزِلُ مِنَ السَّمَاۤءِ ) *"Gökten ineni."*

Gökten inen yağmur damlalarını, melekleri, bereketi, rızkı ve hükmü bilir.

( وَمَا يَعْرُجُ فِيهَا ) *"Oraya yükseleni."*

Göğe yükselen amel defterlerini, insanların ihtiyaçlarını ve velilerin himmetlerini bilir.

Aynı zamanda Allah, kullarına ( وَهُوَ الرَّحِيمُ ) *"çok merhamet eden"* ve Müslümanlardan günahkâr olanların hepsini ( الْغَفُورُ ) *"çok bağışlayandır."*

وَقَالَ الَّذِينَ كَفَرُوا لَا تَأْتِينَا السَّاعَةُ قُلْ بَلٰى وَرَبّٖي لَتَأْتِيَنَّكُمْ عَالِمِ الْغَيْبِ لَا يَعْزُبُ عَنْهُ مِثْقَالُ ذَرَّةٍ فِي السَّمٰوَاتِ وَلَا فِي الْاَرْضِ وَلَٓا اَصْغَرُ مِنْ ذٰلِكَ وَلَٓا اَكْبَرُ اِلَّا فِي كِتَابٍ مُبِينٍ ﴿٣﴾

3- "Kâfir olanlar: 'Kıyamet bize gelmeyecektir' dediler. De ki: 'Hayır, öyle değil, gaybı bilen Rabbime andolsun ki kıyamet size mutlaka gelecektir. Ne göklerde ne de yede zerre ağırlığında bir şey bile O'ndan gizli kalmaz. Bundan daha küçük ve daha büyük ne varsa, hepsi apaçık bir kitaptadır.'"

Allah, onların kıyameti yalanlamalarını, bunu akla uzak bulmalarını ve onlara verdiği cevabı Kur'ân'da tekrarlamıştır. Bir de Allah, onları ezelde bildiğini ve hiçbir malumatın, O'nun ilminin dışına çıkamayacağını bildirerek her şeyi bildiğini ve ilminin her şeyi kapsadığını ispatlamıştır. Çünkü eğer O'nun ilmi olmasaydı bu, O'nun için bir noksanlık olurdu. Bir de eğer bir tek malum bile ilminin dışına çıksaydı, kudretinde noksanlık meydana gelmiş olurdu. Oysa her ne şekilde olursa olsun, O'nun sıfatında noksanlık caiz değildir.

لِيَجْزِيَ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ اُو۬لٰٓئِكَ لَهُمْ مَغْفِرَةٌ وَرِزْقٌ كَرِيمٌ ﴿٤﴾

4- "Allah'ın, iman edip salih amel işleyenleri mükâfatlandırması için her şey o kitapta tespit edilmiştir. İşte onlar için bir bağışlanma ve bereketli bir rızık vardır."

وَالَّذِينَ سَعَوْ فٖي اٰيَاتِنَا مُعَاجِزٖينَ اُو۬لٰٓئِكَ لَهُمْ عَذَابٌ مِنْ رِجْزٍ اَلٖيمٌ ﴿٥﴾

5- "Ayetlerimizi geçersiz kılmak için yarışırcasına çaba harcayanlar var ya, işte onlar için elem dolu, çok kötü bir azap vardır."

وَيَرَى الَّذِينَ اُوتُوا الْعِلْمَ الَّذِيٓ اُنْزِلَ اِلَيْكَ مِنْ رَبِّكَ هُوَ الْحَقَّ
وَيَهْدِيٓ اِلٰى صِرَاطِ الْعَزِيزِ الْحَمِيدِ ﴿٦﴾

6- "Kendilerine ilim verilenler, Rabbinden sana indirilen Kur'ân'ın gerçek olduğunu ve onun mutlak güç sahibi ve övgüye layık Allah'ın yoluna ilettiğini görürler."

وَقَالَ الَّذِينَ كَفَرُوا هَلْ نَدُلُّكُمْ عَلٰى رَجُلٍ يُنَبِّئُكُمْ اِذَا مُزِّقْتُمْ كُلَّ
مُمَزَّقٍ اِنَّكُمْ لَفِي خَلْقٍ جَدِيدٍ ﴿٧﴾

7- "Kâfir olanlar bir de şöyle dediler. 'Çürüyüp ufalandıktan sonra sizin yeniden diriltileceğinizi söyleyen bir adamı size gösterelim mi?'"

اَفْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا اَمْ بِهِ جِنَّةٌ بَلِ الَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِالْاٰخِرَةِ فِي
الْعَذَابِ وَالضَّلَالِ الْبَعِيدِ ﴿٨﴾

8- "Allah'a karşı yalan mı uydurdu yoksa onda delilik mi var? Hayır, öyle değil. Ahirete inanmayanlar, azap ve derin sapıklık içindedirler."

اَفَلَمْ يَرَوْا اِلٰى مَا بَيْنَ اَيْدِيهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ مِنَ السَّمَٓاءِ وَالْاَرْضِ اِنْ
نَشَاْ نَخْسِفْ بِهِمُ الْاَرْضَ اَوْ نُسْقِطْ عَلَيْهِمْ كِسَفًا مِنَ السَّمَٓاءِ اِنَّ
فِي ذٰلِكَ لَاٰيَةً لِكُلِّ عَبْدٍ مُنِيبٍ ﴿٩﴾

9- "Onlar, önlerindeki ve arkalarındaki göğe ve yere bakmadılar mı? Eğer dilersek onları yere geçirir veya gökten üzerlerine parçalar düşürürüz. Bunda, Rabbine yönelen her kul için bir ibret vardır."

Allah, insanlardan iyilik sahibi olanları kesintisiz nimetlerle mükâfatlandırır. Onlardan kâfir olanlara ise yine kesintisiz cezalarla karşılık verir.

Kendisine ilim verilenler, senin getirdiğin kitabı hak ve doğru olarak görürler. Kâfir olanlar ise birbirlerine şöyle dediler: "Biz, senin bu sözünü ettiğin neşir, hesap ve öldükten sonra dirilmenin yalan olduğunu ya da sende bir delilik bulunduğunu düşünüyoruz." Sonra Allah, onlara karşı kâinatta icra ettiği yaratma ve yoktan var etme prensibiyle, adı geçen hususların mümkün olduğuna dair delili getirdi ancak bu, sadece onların inkârını artırdı ve ona yalnızca inatla karşılık verdiler.

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا دَاوُ۫دَ مِنَّا فَضْلًا يَا جِبَالُ اَوِّب۪ي مَعَهُ وَالطَّيْرَ وَاَلَنَّا لَهُ
الْحَد۪يدَ ﴿١٠﴾ اَنِ اعْمَلْ سَابِغَاتٍ وَقَدِّرْ فِي السَّرْدِ وَاعْمَلُوا صَالِحًا
اِنّ۪ي بِمَا تَعْمَلُونَ بَص۪يرٌ ﴿١١﴾

10, 11- "Andolsun, Davûd'a tarafımızdan bir lütuf verdik: 'Ey dağlar! Kuşların eşliğinde onunla birlikte tesbih edin' dedik ve: 'Zırhlar yap, işçilikte de ölçüyü tuttur' diye demiri ona yumuşattık. 'Salih amel işleyin. Çünkü ben, sizin yaptıklarınızı görürüm' diye vahyettik."

"Davûd" kelimesi Arapça olmayan bir isimdir. Bir görüşe göre de ona bu ismin verilmiş olmasının sebebi, kendi yarasını tedavi etmiş olmasıdır. Kıssasında yer aldığına göre, Hz. Davûd, bir münacatında şöyle dedi:

*"Ya Rab! Ben Tevrat'ta senin, velilerine ve peygamberlerine verdiğin mertebeleri gördüm. O halde onları bana da ver."*

Bunun üzerine Allah: *"Ben, onları bela ile imtihan ettim. Onlar da buna sabrettiler"* buyurdu.

Hz. Davûd dedi ki: *"Senin imtihanına ben de sabredeceğim. O halde onlara verdiklerini bana da ver."*

Allah da onu bela ile imtihan etti. O da buna dayandı ve Allah, onlara verdiklerini kendisine de vermiş oldu.

( وَلَقَدْ اٰتَيْنَا دَاوُدَ مِنَّا فَضْلًا ) *"Andolsun, Davûd'a tarafımızdan bir lütuf verdik."*

Söz konusu lütfun ne olduğu konusunda farklı yorumlar yapılmıştır. Kimisine göre Allah bu lütuftan hemen ardından kuşlara ve dağlara yönelik olarak: ( يَا جِبَالُ اَوِّبِي مَعَهُ وَالطَّيْرَ ) *"Ey dağlar! Kuşların eşliğinde onunla birlikte tesbih edin"* şeklinde zikrettiği hususu kast etmiştir. Bu ifadeyle Allah Hz. Davûd'u, hüzün ve ağlaması vaktinde ferahlatmıştır. Kimisine göre de bu lütuf, Hz. Davûd'un başına gelen olayda aklanmak ve özür dilemek suretiyle Allah'a dönüş yapmasıdır.

Bu konuda yapılan diğer bazı yorumlar da şöyledir:

- Bu lütuf, Hz. Davûd'un, sıkıntısının kaynağını ve Allah'tan başkasının onu düzeltemeyeceğini görmesidir.

- Bu lütuf, Hz. Davûd'un Zebûr'u güzel sesle okumasıdır. O kadar ki onu duyan kimse, peşine düşmeyi arzu ederdi.

- Bu lütuf, Hz. Davûd'un tatlı bir sesle münacatta bulunmasıdır.

- Bu lütuf, Hz. Davûd'un ona tabi olan ümmetine güzel ahlak ile muamele etmesidir.

- Bu lütuf, Hz. Davûd'un ümmeti arasında adaletle hükmetmeye muvaffak kılınmasıdır.

( يَا جِبَالُ اَوِّبِي مَعَهُ وَالطَّيْرَ ) "Ey dağlar! Kuşların eşliğinde onunla birlikte tesbih edin."

Allah, dağlara ve kuşlara Hz. Davûd'a cevap vermelerini emretti. O kadar ki Hz. Davûd, haline ağlamak üzere dağlara ve çöllere çıkıyordu.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır.

- Allah, Hz. Davûd'a: *"O hata senin için hayırlı oldu"* diye vahiy indirdi. Hz. Davûd: *"Nasıl?"* diye sorunca Allah şöyle buyurdu:

*"Sen, bu hatadan önce bana, itaatkârların geldiği gibi geliyordun. Oysa şimdi sen, bana günahkârların geldiği gibi geliyorsun. Ey Davûd! Şüphesiz günahkârların iniltisi bana, abidlerin feryadından daha sevimlidir."*

- Hz. Davûd, dindeki gayretinden ve salâbetinden dolayı: *"Allah'ım, hata edenleri bağışlama"* diyordu. Başına gelenler gelince de bu kez şöyle demeye başladı:

*"Allah'ım, günahkârları bağışla da belki aralarında Davûd'u da bağışlarsın."*

- Allah, Hz. Davûd'un tövbesini kabul edip meclisinde insanlar, cinler ve kuşlar toplanınca ve o, daha önce âdeti olduğu üzere sesini yükseltip damağında nağme yapınca kuşlar dağıldılar ve: *"Ses Davûd'un sesidir, ancak hal o hal değildir"* dediler. Bunun üzerine Allah kendisine şu vahyi indirdi: *"Bu hal, o hatanın ıssızlığıdır. Daha önceki hal ise taatın ünsiyeti idi."*

Bu nedenle Hz. Davûd ağlıyor, feryat ediyor ve bağırıyor, kuşlar ve dağlar da beraberinde aynı şeyi yapıyordu.

- Her bağıranın bağırışı anlamlı değildir. Anlam dağlar ve kuşlarla değil, Hz. Davûd ile beraberdi.

( وَاَلَنَّا لَهُ الْحَد۪يدَ اَنِ اعْمَلْ سَابِغَاتٍ وَقَدِّرْ فِي السَّرْدِ وَاعْمَلُوا صَالِحًا ) *"Zırhlar yap, işçilikte de ölçüyü tuttur, diye demiri ona yumuşattık. Salih amel işleyin."*

Allah, Hz. Davûd için demiri yumuşattı ve bunu kendisine mucize kıldı. Bir de kendisi için kazanç kaynağı olsun ve ümmetinden yararlanırken onlardan maddi beklentilerini kessin diye Allah, bu demirciliği ona geniş rızık vesilesi yaptı. Bundan amaç Allah'ın, Hz. Davûd'a uymalarını kendileri için mübarek kılması idi.

وَلِسُلَيْمٰنَ الرّ۪يحَ غُدُوُّهَا شَهْرٌ وَرَوَاحُهَا شَهْرٌ وَاَسَلْنَا لَهُ عَيْنَ الْقِطْرِ
وَمِنَ الْجِنِّ مَنْ يَعْمَلُ بَيْنَ يَدَيْهِ بِاِذْنِ رَبِّه۪ وَمَنْ يَزِغْ مِنْهُمْ عَنْ اَمْرِنَا
نُذِقْهُ مِنْ عَذَابِ السَّع۪يرِ ﴿١٢﴾

12- "Süleyman'ın emrine de sabah esişi bir ay, akşam esişi de bir aylık yol olan rüzgârı verdik. Erimiş bakır ocağını da ona sel gibi akıttık. Cinlerden de Rabbinin izniyle onun önünde çalışanlar vardı. İçlerinde kim bizim emrimizden çıkarsa, ona alevli ateş azabını tattırırız."

Yani biz Süleyman'a rüzgârı verdik. Yani onun hizmetine verdik. Böylece rüzgâr, onun sergisini sabah bir aylık mesafede, akşam da bir aylık mesafede taşıyordu.

Bu arada kıssasında yer aldığına göre; Hz. Süleyman bir gün mülküne baktı. Bunun üzerine rüzgâr sergisini eğdi. Bunu gören Hz. Süleyman rüzgâra: *"Düzgün dur"* dedi. Rüzgâr dedi ki: *"Asıl sen düzgün dur. Zira sen, kalbinle düzgün durduğun sürece ben de seninle düzgün duruyordum. Ancak sen eğri durunca ben de eğri durdum."*

( وَاَسَلْنَا لَهُ عَيْنَ الْقِطْرِ وَمِنَ الْجِنِّ مَنْ يَعْمَلُ بَيْنَ يَدَيْهِ بِاِذْنِ رَبِّهِ وَمَنْ يَزِغْ مِنْهُمْ عَنْ اَمْرِنَا نُذِقْهُ مِنْ عَذَابِ السَّعِيرِ ) *"Erimiş bakır ocağını da ona sel gibi akıttık. Cinlerden de Rabbinin izniyle onun önünde çalışanlar vardı. İçlerinde kim bizim emrimizden çıkarsa, ona alevli ateş azabını tattırırız."*

Yani biz bunu Süleyman'a verdik. Böylece şeytanlar -cinler- onun hizmetine verilmişlerdi. Allah'ın zikrettiği şeylerden onun istediklerini yapıyorlardı.

يَعْمَلُونَ لَهُ مَا يَشَآءُ مِنْ مَحَارِيبَ وَتَمَاثِيلَ وَجِفَانٍ كَالْجَوَابِ وَقُدُورٍ رَاسِيَاتٍ اِعْمَلُوٓا اٰلَ دَاوُدَ شُكْرًا وَقَليلٌ مِنْ عِبَادِيَ الشَّكُورُ ﴿١٣﴾

13- "Cinler, Süleyman için dilediği biçimde kaleler, heykeller, havuz gibi çanaklar ve sabit kazanlar yapıyorlardı. Ey Davûd ailesi, şükredin! Kullarımdan şükredenler pek azdır."

Yani ey Davûd ailesi, şükür için çalışın. Buna göre ( شكراً ) kelimesi, mefulün leh olduğu için mansuptur. Bu arada daha önce şükre dair bir miktar izah geçti. "Şekûr" lafzı ise çok şükreden kimse demektir. Şükürde asıl olan da artıştır. "Şekîra" lafzı da ağaçların altında

onlardan yeşeren bitkinin adıdır. Ayrıca kendisine verilen yemle beklenenin üzerinde semiren hayvana da "Şekûr hayvan" denir. O halde "şekûr" insan, nimete karşı emsallerinden ve benzerlerinden daha fazla şükreden kimsedir. Nitekim insanlar, bolluk karşılığında Allah'a şükrederken, "şekûr" kimse bela halinde O'na şükreder.

Öte yandan şâkir vermesine karşılık, şekûr ise vermemesine karşılık olarak Allah'a şükreden kimse demektir. Vermemesine dahi şükrettiğine göre, vermesine karşılık kim bilir nasıl şükreder!

Bir de şekûr kalbi, dili, organları ve malıyla şükrederken, şâkir bunların sadece bazısıyla şükreder.

( وَقَلِيلٌ مِنْ عِبَادِيَ الشَّكُورُ ) "*Kullarımdan şükredenler pek azdır*" sözüyle ilgili bir yorum da şöyledir: Nimeti benden alıp sebeplere bağlamayan insan pek azdır. Bu kimse vasıtalara değil, bana şükreder. Çoğunlukta olanlar ise nimeti Allah'tan alırlar, rızkı O'ndan bulurlar, sonra da Allah'tan başkasının minnetini çekerler ve O'ndan başkasına şükrederler.

فَلَمَّا قَضَيْنَا عَلَيْهِ الْمَوْتَ مَا دَلَّهُمْ عَلٰى مَوْتِه۪ٓ اِلَّا دَٓابَّةُ الْاَرْضِ تَاْكُلُ مِنْسَاَتَهُۚ فَلَمَّا خَرَّ تَبَيَّنَتِ الْجِنُّ اَنْ لَوْ كَانُوا يَعْلَمُونَ الْغَيْبَ مَا لَبِثُوا فِي الْعَذَابِ الْمُه۪ينِ ﴿١٤﴾

14- "Süleyman'ın ölümüne hükmettiğimiz zaman, onun ölümünü onlara ancak değneğini yemekte olan bir kurt gösterdi. Süleyman'ın cesedi yıkılınca cinler anladılar ki eğer gaybı bilmiş olsalardı, aşağılayıcı azap içinde kalmamış olacaklardı."

Hz. Süleyman, canı alındığında asasına yaslanmış durumdaydı ve bir süre öylece kaldı. Bu esnada cinler, hizmetine verilmiş olup onun kendilerine verdiği emirleri yerine getiriyorlar, onlar için hazırladığı plan çerçevesinde tasarrufta bulunuyor ve kendilerini alıkoyduğu şeyleri yapmıyorlardı. Onlar bu sırada onun sağ olduğunu sanıyorlardı. Sonra ağaç kurdu, asasını yiyip de Hz. Süleyman yere

yığılınca ancak o zaman cinler, onun öldüğünü anlamış oldular. Bunun üzerine onlar çirkin işlerine dönüş yaptılar ve hizmete verilmiş olma durumları ortadan kalkmış oldu. İşte hükümdarlığı başkasına dayalı olan ve asaya tutunan hükümdarın durumu böyledir. Çünkü asa düştüğü zaman, o da onun düşüşüyle düşer. Aynı şekilde başkasıyla ayakta duran da onun yok olmasıyla yok olur.

لَقَدْ كَانَ لِسَبَإٍ فِي مَسْكَنِهِمْ اٰيَةٌ جَنَّتَانِ عَنْ يَمِينٍ وَشِمَالٍ كُلُوا مِنْ رِزْقِ رَبِّكُمْ وَاشْكُرُوا لَهُ بَلْدَةٌ طَيِّبَةٌ وَرَبٌّ غَفُورٌ ﴿١٥﴾

15- "Andolsun, Sebe' halkı için kendi yurtlarında bir ibret vardı. Biri sağda, biri solda iki bahçe bulunuyordu. Onlara şöyle denilmişti: 'Rabbinizin rızkından yiyin ve O'na şükredin. Beldeniz güzel bir belde, Rabbiniz de çok bağışlayıcı bir Rabdir.'"

Onlar bolluk içinde yaşıyor, huzurlu ve refah bir halde bulunuyorlardı. Bu nedenle afiyet üzerine sabretmeleri, nimete karşı da şükretmeleri emredildi. Bu kolay bir emirdir, ancak onlar uymaktan yüz çevirdiler, nimete karşı nankörlük ettiler ve şükrü zayi ettiler. Böylece onlar emri değiştirdiler ve halleri değiştirilmiş oldu.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Değişti sevgili ve değiştik biz, yazıklar olsun o kimseye ki*
*Selma'ya bir alternatif aradı ve bulamadı*

فَاَعْرَضُوا فَاَرْسَلْنَا عَلَيْهِمْ سَيْلَ الْعَرِمِ وَبَدَّلْنَاهُمْ بِجَنَّتَيْهِمْ جَنَّتَيْنِ ذَوَاتَيْ اُكُلٍ خَمْطٍ وَاَثْلٍ وَشَيْءٍ مِنْ سِدْرٍ قَلِيلٍ ﴿١٦﴾

16- "Fakat onlar yüz çevirdiler. Biz de üzerlerine Arim selini gönderdik. Onların bahçelerini ekşi meyveli ağaçlar, acı ılgın ve biraz da sedir ağacı bulunan iki bahçeye çevirdik."

İşte böylece insanlardan kimisi bolluk halinde, muvaffakiyetin vuslatı içerisinde, kalbi coşkulu, vakti müsait olduğu halde bir hata

işler veya bir edepsizlik yapar ya da bir şehvete uyarak içinde bulunduğu durumun kadrini bilmez. Bunun üzerine durumu değişir. O zaman da ne vakit ne hal ne coşku ne de vuslat kalır. Daha önce geceleri bile aydınlık iken gündüzü de kararmış olur.

Tıpkı söylediğimiz şu dizelerde olduğu gibi:

*Beğenmeye devam ettim kendimi zamanda ve halde*
*O kadar ki emin oldum zamanın oyunundan*
*O kadar yüz çevirmeye uğradım ki ben*
*Nihayet kalmadı gördüklerimden bir zerre*

ذٰلِكَ جَزَيْنَاهُمْ بِمَا كَفَرُوا وَهَلْ نُجَازِيٓ اِلَّا الْكَفُورَ ﴿١٧﴾

17- "Nimetlere karşı nankörlük etmeleri sebebiyle onları işte böyle cezalandırdık. Biz ancak nankörleri cezalandırırız."

Onlara, ancak müstahak olduklarıyla muamele edilmiş, ancak yaptıkları ahmaklığın cezası tattırılmıştır. Bir de onlar, ancak kendi kazdıkları çukura düşmüş ve kendi yaptıkları kılıçla öldürülmüşlerdir.

وَجَعَلْنَا بَيْنَهُمْ وَبَيْنَ الْقُرَى الَّتِي بَارَكْنَا فِيهَا قُرًى ظَاهِرَةً وَقَدَّرْنَا
فِيهَا السَّيْرَ سِيرُوا فِيهَا لَيَالِيَ وَاَيَّامًا اٰمِنِينَ ﴿١٨﴾

18- "Sebe' halkı ile bereketlendirdiğimiz kentler arasında, görülen kentler oluşturduk. Oralarda gidiş gelişi belirledik ve onlara şöyle dedik: 'Oralarda gece gündüz güvenlik içinde dolaşın.'"

Onların durumu isyanlarını sürdürmekten, sapıklık ve azgınlıklarında ısrar etmekten başka bir şey değildi.

فَقَالُوا رَبَّنَا بَاعِدْ بَيْنَ اَسْفَارِنَا وَظَلَمُوٓا اَنْفُسَهُمْ فَجَعَلْنَاهُمْ اَحَادِيثَ
وَمَزَّقْنَاهُمْ كُلَّ مُمَزَّقٍ اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِكُلِّ صَبَّارٍ شَكُورٍ ﴿١٩﴾

19- "Onlar ise: 'Ey Rabbimiz! Yolculuğumuzun konakları arasını uzaklaştır' dediler ve kendilerine zulmettiler. Biz de onları ibret

kıssalarına çevirdik ve kendilerini darmadağın ettik. Şüphesiz ki bunda çok sabreden, çok şükreden herkes için ibretler vardır."

Biz onları darmadağın ettik. O kadar ki insanlar onları dile getirilen atasözleri haline getirerek şöyle dediler:

*"Onlar, Sebe' halkı gibi yok olup gittiler."*
*"Onlar, Sebe' halkı gibi darmadağın oldular."*

Onların kıssasında afiyete çok sabreden ve nimete karşı çok şükreden herkes için ibretler vardır.

وَلَقَدْ صَدَّقَ عَلَيْهِمْ اِبْلِيسُ ظَنَّهُ فَاتَّبَعُوهُ اِلَّا فَرِيقًا مِنَ الْمُؤْمِنِينَ
﴿٢٠﴾ وَمَا كَانَ لَهُ عَلَيْهِمْ مِنْ سُلْطَانٍ اِلَّا لِنَعْلَمَ مَنْ يُؤْمِنُ بِالْاٰخِرَةِ
مِمَّنْ هُوَ مِنْهَا فِي شَكٍّ وَرَبُّكَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ حَفِيظٌ ﴿٢١﴾

20, 21- "Şeytan, onlar hakkındaki zannını doğru çıkardı. İnananlardan bir grup dışında hepsi ona uydular. Oysa şeytanın onlar üzerinde hiçbir hâkimiyeti yoktu. Ancak ahirete inananları, onun hakkında şüphe içinde bulunanlardan ayırt edelim diye ona bu fırsatı verdik. Senin Rabbin, her şey üzerinde hakiki bir koruyucudur."

Şeytan, kendi hakkında hiçbir yetkiye sahip olmadığı halde onlar hakkındaki zannını doğru çıkardı. Bu çerçevede iblis, cinlerden ve insanlardan kendi taraftarlarına musallat kılınmış ancak hiçbir saptırma onunla gerçekleşmez. Eğer başkasına zarar verebilseydi, kendini hidayet üzere tutma imkânı olurdu. Allah şöyle buyurmuştur:

( اِنَّ عِبَادِي لَيْسَ لَكَ عَلَيْهِمْ سُلْطَانٌ ) *"Şüphesiz kullarım üzerinde senin hiçbir hâkimiyetin yoktur."* (İsrâ, 17/65)

( وَرَبُّكَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ حَفِيظٌ ) *"Senin Rabbin, her şey üzerinde hakiki bir koruyucudur."*

Dilediğini hidayete erdirir, dilediğini de dalalete düşürür. Sonra Allah kendisinin, mülkünde tek, ilahlıkta bir, zıtlardan ve benzerlerden

münezzeh olduğunu, onlarınsa ne dünyada ne de ahirette zerre ağırlığı kadar ve bir habbe miktarınca bile bir şeye sahip olmadıklarını, onlardan bir yardımcı, bir ortak ve bir destekleyici bulunmadığını, meleklerin heybet sıfatıyla korktuklarını, Allah'ın onları konumlandırdığı yerde durduklarını, O'nun ibadetinden yorulmadıklarını ve günah işlemediklerini bildirmiştir.

قُلِ ادْعُوا الَّذٖينَ زَعَمْتُمْ مِنْ دُونِ اللّٰهِ لَا يَمْلِكُونَ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ فِي السَّمٰوَاتِ وَلَا فِي الْاَرْضِ وَمَا لَهُمْ فٖيهِمَا مِنْ شِرْكٍ وَمَا لَهُ مِنْهُمْ مِنْ ظَهٖيرٍ ﴿٢٢﴾

22- "De ki: 'Allah'ı bırakıp da ilâh olduklarını iddia ettiklerinizi çağırın. Göklerde ve yerde zerre kadar bir şeye sahip değillerdir. Onların yerde ve gökte hiçbir ortaklıkları yoktur. Allah'ın onlardan bir yardımcısı da yoktur.'"

وَلَا تَنْفَعُ الشَّفَاعَةُ عِنْدَهُٓ اِلَّا لِمَنْ اَذِنَ لَهُ حَتّٰٓى اِذَا فُزِّعَ عَنْ قُلُوبِهِمْ قَالُوا مَاذَا قَالَ رَبُّكُمْ قَالُوا الْحَقَّ وَهُوَ الْعَلِيُّ الْكَبٖيرُ ﴿٢٣﴾

23- "Allah katında O'nun izin verdiği kimseden başkasının şefaati yarar sağlamaz. Kalplerinden korku giderilince birbirlerine: 'Rabbiniz ne söyledi?' diye sorarlar. Onlar da: 'Gerçeği' diye cevap verirler. O, yücedir, büyüktür."

قُلْ مَنْ يَرْزُقُكُمْ مِنَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ قُلِ اللّٰهُ وَاِنَّٓا اَوْ اِيَّاكُمْ لَعَلٰى هُدًى اَوْ فٖي ضَلَالٍ مُبٖينٍ ﴿٢٤﴾

24- "De ki: 'Size göklerden ve yerden kim rızık verir?' De ki: 'Allah. O halde ya biz bir hidayet veya apaçık bir sapıklık üzereyiz ya da siz!'"

Müşrik olmakla birlikte hiç kimse Allah'ın, rızık konusundaki tasarrufunu bir başkasına havale ettiğini söylememiştir. Bu itibarla, nasıl ki rızık ve yaratma konularında Allah'ın hiçbir ortağı yoksa aynı şekilde ibadet ve yüceltilmeye layık olması konularında da hiçbir ortağı yoktur.

قُلْ لَا تُسْـَٔلُونَ عَمَّٓا اَجْرَمْنَا وَلَا نُسْـَٔلُ عَمَّا تَعْمَلُونَ ﴿٢٥﴾ قُلْ يَجْمَعُ بَيْنَنَا رَبُّنَا ثُمَّ يَفْتَحُ بَيْنَنَا بِالْحَقِّ وَهُوَ الْفَتَّاحُ الْعَلِيمُ ﴿٢٦﴾

25, 26- "De ki: 'Bizim işlediğimiz suçlardan siz sorumlu tutulmazsınız. Sizin işlediklerinizden de biz sorumlu tutulmayız.' De ki: 'Rabbimiz hepimizi kıyamet günü bir araya toplayacak, sonra da aramızda hak ile hüküm verecektir. O, gerçeği apaçık ortaya koyan, hakkıyla bilendir.'"

Ne siz, bizim işlediğimiz suçlardan sorumlu tutulursunuz ne de biz, sizin suç işlemenizden sorumlu tutuluruz. Toplanma -kıyamet- günü ise Allah, herkesi amelleri üzere toplayacak ve her birini kendi durumundan sorumlu tutacaktır. O, hiç kimseyi başkasının amelinden sorumlu tutmayacak, her birine kendi amel defteri verilecek ve Allah, her birinden kendi hesabını isteyecektir.

Bu arada Allah prensibini, kullarını bir araya toplayıp onlara, toplantı halinde yaptığı muamelenin, ayrılıkları halinde yaptığı muameleden farklı olduğu şeklinde koymuştur.

Bu itibarla dinde bir araya gelmenin büyük bir etkisi olduğu gibi, cemaatle namazın da özel bir etkisi vardır. Ayrıca Allah, Hz. Peygamber'den (s.a.v.) ayrılanlara itapta bulunurken, sadece izin alarak ayrılanları övmüştür.

Öte yandan şeyhler de bir araya gelme halinde fazla şeyler bekleyerek:

(قُلْ يَجْمَعُ بَيْنَنَا رَبُّنَا ثُمَّ يَفْتَحُ بَيْنَنَا بِالْحَقِّ) *"Rabbimiz hepimizi kıyamet günü bir araya toplayacak, sonra da aramızda hak ile hüküm verecektir"* ayetinde huzur bulurlar.

قُلْ اَرُونِيَ الَّذ۪ينَ اَلْحَقْتُمْ بِه۪ شُرَكَٓاءَ كَلَّا بَلْ هُوَ اللّٰهُ الْعَز۪يزُ الْحَك۪يمُ ﴿٢٧﴾

27- "De ki: 'Allah'a ortak tuttuklarınızı bana gösterin! Hayır! Aksine O, mutlak güç sahibi, hüküm ve hikmet sahibi Allah'tır.'"

Onlar, dalalete saplandıkları için "lebbeyke"lerinde şöyle derlerdi:

*"Çağrını kabul ettim. Senin hiçbir ortağın yoktur. O senindir. Sen onun da sahibisin, onun sahip olduğu şeylerin de sahibisin."*

Ancak onlar putların anlamayan, gücü olmayan, işitmeyen ve görmeyen cansız varlıklar olduklarından emin olunca ibadete layık oldukları konusunda şüpheye düştüler. Bu nedenle, kendilerinden delil istendiğinde delil söylemiyorlardı ancak geçmişlerini taklit ediyorlardı. Bu ise büyük bir sapıklık ve apaçık bir hüsrandır.

وَمَٓا اَرْسَلْنَاكَ اِلَّا كَٓافَّةً لِلنَّاسِ بَش۪يرًا وَنَذ۪يرًا وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٢٨﴾

28- "Biz, seni ancak bütün insanlara müjdeleyici ve uyarıcı olarak gönderdik. Fakat insanların çoğu bilmezler."

Biz seni mucizelerle desteklenmiş, bütün sıfatlarla şereflendirilmiş, yerdekilerin ve göktekilerin efendisi, iman ehline görünen, zahiren seni görseler bile inkâr ehlinin basiretlerinden saklı kalan bir peygamber olarak gönderdik.

Allah, şöyle buyurmuştur:

(وَتَرٰيهُمْ يَنْظُرُونَ اِلَيْكَ وَهُمْ لَا يُبْصِرُونَ) *"Sen, onların sana baktıklarını görürsün. Halbuki onlar görmezler."* (A'râf, 7/198)

وَيَقُولُونَ مَتٰى هٰذَا الْوَعْدُ اِنْ كُنْتُمْ صَادِق۪ينَ ﴿٢٩﴾ قُلْ لَكُمْ م۪يعَادُ يَوْمٍ لَا تَسْتَاْخِرُونَ عَنْهُ سَاعَةً وَلَا تَسْتَقْدِمُونَ ﴿٣٠﴾

29, 30- "'Eğer doğru söyleyenler iseniz, bu uyarı ne zaman gerçekleşecek?' diyorlar. De ki: 'Sizin için belirlenen bir gün vardır ki ondan ne bir saat geri kalabilirsiniz ne de ileri geçebilirsiniz.'"

Onlar, bunu çok söyledikleri için Allah da onu kendilerinden naklen tekrarlamıştır. Bu soruya verilen cevap ise şudur:

*"Şüphesiz sizin için belirlenmiş bir gün vardır. Belirlenen bu günde ise si, ne bir saat gecikebilirsiniz ne de öne geçebilirsiniz."*

وَقَالَ الَّذِينَ كَفَرُوا لَنْ نُؤْمِنَ بِهٰذَا الْقُرْاٰنِ وَلَا بِالَّذِي بَيْنَ يَدَيْهِ وَلَوْ تَرٰۤى اِذِ الظَّالِمُونَ مَوْقُوفُونَ عِنْدَ رَبِّهِمْ يَرْجِعُ بَعْضُهُمْ اِلٰى بَعْضٍ الْقَوْلَ يَقُولُ الَّذِينَ اسْتُضْعِفُوا لِلَّذِينَ اسْتَكْبَرُوا لَوْلَآ اَنْتُمْ لَكُنَّا مُؤْمِنِينَ ﴿٣١﴾

31- "İnkâr edenler: 'Biz bu Kur'ân'a da ondan önceki kitaplara da asla inanmayız' dediler. Zalimler, Rablerinin huzurunda durdurulduklara zaman, hallerini bir görsen! Birbirlerine laf çevirip dururlar. Zayıf ve güçsüz görülenler, büyüklük taslayanlara: 'Siz olmasaydınız, biz mutlaka iman eden kimseler olurduk' derler."

O gün onları görsen, korkunç bir manzara görmüş olursun. Birbirlerine laf çevirirler ve suçu birbirlerinin üstüne atarlar. Güçsüz görülenler, büyüklük taslayanlara: *"Bizi siz saptırdınız"* derken, büyük taslayanlar da bunu inkâr ederek: *"Aksine, siz bize uydunuz"* derler. İşte bozgunculukta dost olan hata sahipleri böyledir. Allah şöyle buyurmuştur:

( اَلْاَخِلَّاۤءُ يَوْمَئِذٍ بَعْضُهُمْ لِبَعْضٍ عَدُوٌّ اِلَّا الْمُتَّقِينَ ) *"O gün, Allah'a karşı gelmekten sakınanlar dışında, dostlar birbirine düşman olurlar."* (Zuhruf, 43/67)

Aynı şekilde organlar da yarın birbirleri aleyhine şahitlik edecektir. Mesela el, herkese: "Ben aldım", göz de: "Ben gördüm" diyecektir. Sonuç itibariyle ihtilaf azaptır. Her kim günahlarla amel ederse, Allah

onun karşısına kendisine ondan daha çok itaat edeni çıkarır. Ne var ki onlar bunu bilmezler. Eğer bilselerdi, ibret alırlardı. Eğer ibret alsalardı, tövbe eder ve muvaffak kılınırlardı. Fakat bunun böyle olması, Allah'ın olacağı kesin olan bir işi karara bağlaması içindir.

قَالَ الَّذِينَ اسْتَكْبَرُوا لِلَّذِينَ اسْتُضْعِفُوٓا اَنَحْنُ صَدَدْنَاكُمْ عَنِ الْهُدٰى بَعْدَ اِذْ جَٓاءَكُمْ بَلْ كُنْتُمْ مُجْرِمِينَ ﴿٣٢﴾

32- "Büyüklük taslayanlar, zayıf ve güçsüz görülenlere: 'Size hidayet geldikten sonra, biz mi sizi ondan alıkoyduk? Hayır, suçlu olanlar sizlerdiniz' derler."

وَقَالَ الَّذِينَ اسْتُضْعِفُوا لِلَّذِينَ اسْتَكْبَرُوا بَلْ مَكْرُ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ اِذْ تَاْمُرُونَنَٓا اَنْ نَكْفُرَ بِاللّٰهِ وَنَجْعَلَ لَهُٓ اَنْدَادًا وَاَسَرُّوا النَّدَامَةَ لَمَّا رَاَوُا الْعَذَابَ وَجَعَلْنَا الْاَغْلَالَ فٖٓي اَعْنَاقِ الَّذِينَ كَفَرُوا هَلْ يُجْزَوْنَ اِلَّا مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿٣٣﴾

33- "Zayıf ve güçsüz görülenler, büyüklük taslayanlara: 'Hayır, bizi hidayetten saptıran, gece ve gündüz kurduğunuz tuzaklardır. Çünkü siz bize, Allah'ı inkâr etmemizi ve O'na eşler koşmamızı emrediyordunuz' derler. Azabı görünce de içten içe pişmanlık duyarlar. Biz de kâfir olanların boyunlarına demir halkalar geçiririz. Onlar, ancak yapmakta olduklarının cezasını göreceklerdir."

وَمَٓا اَرْسَلْنَا فٖي قَرْيَةٍ مِنْ نَذٖيرٍ اِلَّا قَالَ مُتْرَفُوهَٓا اِنَّا بِمَٓا اُرْسِلْتُمْ بِهٖ كَافِرُونَ ﴿٣٤﴾

34- "Biz, hangi memlekete bir uyarıcı göndermişsek, oranın şımarık zenginleri: 'Biz, sizinle gönderileni inkâr ediyoruz' demişlerdir."

Yani onlar, peygamberlerimize yalanlamayla karşılık verdiler. Peygamberlerimiz ise sabrettiler. Şayet o kâfirler iman etselerdi, ne zararları olurdu! Nitekim peygamberler, onların kurtuluşu için gönderildiler, düzelmeleri için çağrı ve tebliğde bulundular. Eğer onlar, peygamberlere uysalardı mutlu olacaklardı. Ne var ki kısmetler ezelde takdir edilmiş, hükümler de kesinlik kazanmıştır. Allah da işine hâkimdir.

وَقَالُوا نَحْنُ اَكْثَرُ اَمْوَالًا وَاَوْلَادًا وَمَا نَحْنُ بِمُعَذَّبِينَ ﴿٣٥﴾

35- "Yine onlar: 'Bizim mallarımız ve çocuklarımız daha çoktur. Bize azap edilmeyecektir' demişlerdi."

Bu iş, malların ve çocukların çok olmasıyla değildir. Bu işin kaynağı, kimileri için açık tutulan, kimileri içinse kapatılan basiretlerdir.

قُلْ اِنَّ رَبِّي يَبْسُطُ الرِّزْقَ لِمَنْ يَشَآءُ وَيَقْدِرُ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٣٦﴾

36- "De ki: 'Şüphesiz Rabbim, rızkı dilediğine bol verir ve dilediğine kısar. Fakat insanların çoğu bilmezler.'"

وَمَآ اَمْوَالُكُمْ وَلَآ اَوْلَادُكُمْ بِالَّتِي تُقَرِّبُكُمْ عِنْدَنَا زُلْفٰىٓ اِلَّا مَنْ اٰمَنَ وَعَمِلَ صَالِحًا فَاُو۬لٰٓئِكَ لَهُمْ جَزَآءُ الضِّعْفِ بِمَا عَمِلُوا وَهُمْ فِي الْغُرُفَاتِ اٰمِنُونَ ﴿٣٧﴾

37- "Ne mallarınız ne de çocuklarınız, sizi bizim katımıza daha çok yaklaştıran şeylerdir. Ancak iman edip salih amel işleyenler başka. İşte onlar için işlediklerine karşılık kat kat mükâfat vardır. Onlar, cennet köşklerinde güven içindedirler."

Allah katında yakınlık mal ve çocuklar ile değil, salih ameller, duru haller arınmış nefesler, dahası ezeli inayet, onu izleyen hidayet ve gerçek ilahi himaye iledir. İşte bu kimseler için kat kat mükâfat

vardır. Onlara, kendilerinden önceki ümmetlere verilenin iki misli mükâfat verilir.

Onlar, cennet köşklerinde duruluğun bulanmasından ve cennetten çıkarılmaktan güven içindedirler.

وَالَّذِينَ يَسْعَوْنَ فِيۤ اٰيَاتِنَا مُعَاجِزِينَ اُولٰٓئِكَ فِي الْعَذَابِ مُحْضَرُونَ ﴿٣٨﴾

38- "Ayetlerimizi geçersiz kılmak için yarışanlar var ya, işte onlar azap için hazır bulundurulacaklar."

Velilere saygı göstermeyen ve gizli hallerinde Allah'ın hakkına riayet etmeyenler onlardır. Bu halleriyle onlar, Allah'ın velilerine itirazda bulunma azabı ve bunun uğursuzluğu sebebiyle, Allah'ın haram kıldığı şeylere bulaşma azabı, sonra da Allah'ın gözünden düşme azabı içindedirler.

قُلْ اِنَّ رَبّ۪ي يَبْسُطُ الرِّزْقَ لِمَنْ يَشَٓاءُ مِنْ عِبَادِه۪ وَيَقْدِرُ لَهُ وَمَٓا اَنْفَقْتُمْ مِنْ شَيْءٍ فَهُوَ يُخْلِفُهُ وَهُوَ خَيْرُ الرَّازِق۪ينَ ﴿٣٩﴾

39- "De ki: 'Şüphesiz Rabbim, rızkı kullarından dilediğine bol bol verir ve dilediğinden kısar. Allah yolunda her ne harcarsanız, Allah onun yerine başkasını verir. O, rızık verenlerin en hayırlısıdır.'"

Dünyada boşluğu dolduran hususlardan biri de yokluğa ve yitirmişliğe rıza göstermektir. Aynı zamanda bu, varlığa sevinmekten daha mükemmeldir. O hususlardan biri de halvette Allah ile ünsiyet bulmaktır. Bu da ancak arınmakla beraber gerçekleşir.

وَيَوْمَ يَحْشُرُهُمْ جَم۪يعًا ثُمَّ يَقُولُ لِلْمَلٰٓئِكَةِ اَهٰٓؤُ۬لَٓاءِ اِيَّاكُمْ كَانُوا يَعْبُدُونَ ﴿٤٠﴾ قَالُوا سُبْحَانَكَ اَنْتَ وَلِيُّنَا مِنْ دُونِهِمْ بَلْ كَانُوا يَعْبُدُونَ الْجِنَّ اَكْثَرُهُمْ بِهِمْ مُؤْمِنُونَ ﴿٤١﴾

40, 41- "Allah'ın, onları hep birden toplayacağı, sonra da meleklere: 'Bunlar mı size ibadet ediyorlardı?' diyeceği günü bir hatırla.

Melekler derler ki: 'Seni eksikliklerden uzak tutarız. Onlar değil, sen bizim dostumuzsun. Hayır, onlar cinlere ibadet ediyorlardı. Onların çoğu, cinlere inanıyorlardı.'"

Bazı kimseler meleklere taparlardı. Bu nedenle Allah, melekleri onlarla imtihana tabi tutar, onlar da o kimselerden uzak olduklarını söyleyip Allah'ı tenzih ve tesbih ederler. Böylece bu kimseler rezil olurlar. Sorgu esnasındaki rezil oluşları ise azabın şiddetindendir. Kimi rivayetlerde ise şu ifade yer almıştır:

*"Yarın -kıyamet günü- Allah'ın sorguya çektiği kimseler, uğradıkları utançtan: 'Ey Rabbimiz! Bizi dilediğin azap çeşitleriyle cezalandır, ancak bu sorguyla azap çektirme' diyecekler."*

فَالْيَوْمَ لَا يَمْلِكُ بَعْضُكُمْ لِبَعْضٍ نَفْعًا وَلَا ضَرًّا وَنَقُولُ لِلَّذِينَ ظَلَمُوا ذُوقُوا عَذَابَ النَّارِ الَّتِي كُنْتُمْ بِهَا تُكَذِّبُونَ ﴿٤٢﴾

42- "İşte bugün, birbirinize ne fayda ne de zarar verebilirsiniz. Zulmedenlere: 'Yalanlamakta olduğunuz cehennem azabını tadın' deriz."

Bundaki işaret şudur: Kim ki kalbi başkasına bağlanır ve halinin tedbirle ve benzerlerinden yardım istemekle düzeleceğini zannederse, işte bu kimselerin kalplerinden Allah merhameti söküp alır, onları terk eder ve hallerinin düzenini bozar. Böylece ne benzerlerinden kendilerine bir yardım ulaşır, ne işlerinde akıllarından basiret üretebilirler ne de Allah'a dönüş yaparlar. Dönseler bile Allah onlara merhamet etmez, dönüşlerini kabul etmez ve onlara: *"Bu azaba müstahak olmanıza yol açan durumunuzun vebalini tadın!"* der.

وَاِذَا تُتْلٰى عَلَيْهِمْ اٰيَاتُنَا بَيِّنَاتٍ قَالُوا مَا هٰذَٓا اِلَّا رَجُلٌ يُرِيدُ اَنْ يَصُدَّكُمْ عَمَّا كَانَ يَعْبُدُ اٰبَٓاؤُكُمْ وَقَالُوا مَا هٰذَٓا اِلَّٓا اِفْكٌ مُفْتَرًى وَقَالَ الَّذِينَ كَفَرُوا لِلْحَقِّ لَمَّا جَٓاءَهُمْ اِنْ هٰذَٓا اِلَّا سِحْرٌ مُبِينٌ ﴿٤٣﴾

43- "Ayetlerimiz apaçık bir şekilde onlara okunduğu zaman: 'Bu, sadece atalarınızın tapmakta olduğu şeylerden sizi alıkoymak isteyen bir adamdır' dediler. Bir de: 'Bu Kur'ân, uydurulmuş bir yalandır' dediler. Yine hak, kendilerine geldiğinde onu inkâr edenler: 'Bu, ancak apaçık bir büyüdür' dediler."

Hikmet erbabı ve bu tarikatta önder olan veliler, insanlara Allah'a giden yolu gösterdikleri zaman, gaflet ehli ve dünyaya düşkün bazı sözde nasihatçi kötü kardeşler, herhangi bir müride şöyle der:

*"Ne bu? Bütün bunlara kimin gücü yeter! Galiba sen tarikatı tamamlamayacaksın. Yaşadığın sürece dünya kaçınılmazdır."*

Bu zavallı mürid, o sözde nasihati kabul edip yoldan sapıncaya kadar kendisine bu ve buna benzer şeyler söylenmeye devam eder. Bazen bu telkin, müridin kötü duygularından da kaynaklanabilir. Böylece helak olup dalalete düşer.

وَمَٓا اٰتَيْنَاهُمْ مِنْ كُتُبٍ يَدْرُسُونَهَا وَمَٓا اَرْسَلْنَٓا اِلَيْهِمْ قَبْلَكَ مِنْ نَذِيرٍ ﴿٤٤﴾

44- "Oysa biz, onlara okuyup inceleyecekleri kitaplar vermedik. Onlara senden önce hiçbir uyarıcı da göndermedik."

Bu ayet, gaflet ehline işaret etmektedir. Onlar, herhangi bir ilhama ya da Allah'ın takdirine ve verdiği anlayışa dayanmaksızın, âdetleri olduğu üzere, kalplerindeki tefrikanın ürünü olarak nefislerinin kendilerine dayattığı kafa karıştırıcı şeyler ve içlerine doğan duygularla, olup bitenler konusunda gönül ehli kimselere muhalefet ederler.

Vaktin lisanı olan hakikat ehli kimseler ise bir şey söyledikleri veya bir söz sarf ettikleri zaman, eğer ona dair burhan getirmekle yükümlü kılınırlarsa, bunu yapmaları mümkün olmaz. Çünkü feraset veya ilhamla konuşan ya da konuşturulan kimselerin, sözlerine dair delil ortaya koyma imkânları olmaz. Gaflet sahiplerinin ise buna dair inançları yoktur. Bu nedenle onlar, bu türden bir şey duydukları zaman ona karşı çıkarlar ve o yüzden helak olurlar. Bu durumda

adı geçen büyük şahsiyetlerin izleyecekleri yol susmaktır. Sonra zaman onlara cevap verecektir.

وَكَذَّبَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ وَمَا بَلَغُوا مِعْشَارَ مَٓا اٰتَيْنَاهُمْ فَكَذَّبُوا رُسُلِي فَكَيْفَ كَانَ نَكِيرِ ﴿٤٥﴾

45- "Onlardan öncekiler de yalanlamışlardı. Halbuki bunlar, onlara verdiğimiz şeylerin onda birine bile ulaşamamışlardır. Elçilerimi yalanladılar. Peki, beni inkâr etmenin sonucu nasıl oldu!"

قُلْ اِنَّمَٓا اَعِظُكُمْ بِوَاحِدَةٍ اَنْ تَقُومُوا لِلّٰهِ مَثْنٰى وَفُرَادٰى ثُمَّ تَتَفَكَّرُوا مَا بِصَاحِبِكُمْ مِنْ جِنَّةٍ اِنْ هُوَ اِلَّا نَذِيرٌ لَكُمْ بَيْنَ يَدَيْ عَذَابٍ شَدِيدٍ ﴿٤٦﴾

46- "De ki: 'Ben, size ancak bir tek şeyi, Allah için ikişer ikişer, teker teker kalkıp düşünmenizi öğütlüyorum. Arkadaşınız Muhammed'de cinnetten eser yoktur. O, şiddetli bir azaptan önce sizin için ancak bir uyarıcıdır.'"

Allah buyuruyor ki: Nefsiniz, size Peygamberi yalanlamayı telkin ettiği zaman, acaba onda kendisine isnat ettiğiniz şeylerin izleri var mıdır, diye iyi düşünün! Bu, Allah'ın Resulü Muhammed'dir. O sihirbazdır, dediniz. Acaba sihrin onun hallerindeki, fiillerindeki ve sözlerindeki izleri nerede? Şair olduğunu da söylediniz. Eğer öyleyse onun sözü, şiirin kısımlarından hangisidir? Onun deli olduğunu söylediniz. Acaba onda, deliliğin hangi emaresi ortaya çıktı?

Şimdi siz bunları ispatlamaktan aciz kaldığınıza göre, onun doğru söylediğini hâlâ anlamadınız mı?

قُلْ مَا سَاَلْتُكُمْ مِنْ اَجْرٍ فَهُوَ لَكُمْ اِنْ اَجْرِيَ اِلَّا عَلَى اللّٰهِ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ شَهِيدٌ ﴿٤٧﴾

47- "De ki: 'Sizden herhangi bir ücret istemişsem, o sizin olsun. Benim ücretim, ancak Allah'a aittir. O, her şeye hakkıyla şahittir.'"

قُلْ اِنَّ رَبّ۪ي يَقْذِفُ بِالْحَقِّ عَلَّامُ الْغُيُوبِ ﴿٤٨﴾

48- "De ki: 'Şüphesiz Rabbim gerçeği ortaya koyar. O, gaybları hakkıyla bilendir.'"

Allah, hakkı gaflet ehlinin bâtılı üstüne atar ve bu sayede onların tedbirleri yok olur ve acizlikleri ortaya çıkar. Hakkı, ona karşı çıkanların hallerinin üstüne de atar ve bunun sonucunda onların cüretkârlıkları tarihe karışır ve günahlarının uğursuzluğu, onları her taraftan kuşatır.

Bir de Allah, mana ehli kimseler hazır bulundukları zaman, hakkı iddia sahiplerinin karanlıkları üstüne atar, böylece kızgınlıklarını söndürerek onları hemen rüsva eder. Aynı zamanda onları noksanlıklarıyla da rüsva eder.

قُلْ جَٓاءَ الْحَقُّ وَمَا يُبْدِئُ الْبَاطِلُ وَمَا يُع۪يدُ ﴿٤٩﴾

49- "De ki: 'Hak geldi. Artık bâtıl, yeni bir şey ortaya çıkaramaz, eskiyi de geri getiremez.'"

Gün geçtikçe bâtıl sadece daha çok yok olup gider. Hak ise gün geçtikçe daha çok güçlenir ve ortaya çıkar.

قُلْ اِنْ ضَلَلْتُ فَاِنَّمَٓا اَضِلُّ عَلٰى نَفْس۪ي وَاِنِ اهْتَدَيْتُ فَبِمَا يُوح۪ٓي اِلَيَّ رَبّ۪ي اِنَّهُ سَم۪يعٌ قَر۪يبٌ ﴿٥٠﴾

50- "De ki. 'Eğer ben sapmış isem, ancak kendi aleyhime sapmış olurum. Eğer hidayete ermişsem, bu da Rabbimin bana vahyettiği sayesindedir. Şüphesiz O, hakkıyla işitendir, kuluna çok yakındır.'"

Eğer ben hidayete erdiysem, kendi çabamla değil, Rabbimle erdim. Şayet sizin yanınızda ben dalalet ehlinden isem, bu durumda

dalaletimin vebali bana aittir ve bu size zarar vermez. O halde siz, kendinize bakın. Nereye düştünüz? Şayet bana itaat ederseniz, size ne zararı olur? Ne şimdi zarar edersiniz, ne gerçekte yorulursunuz ne de itibarınız eksilir. Size putlarınızın noksanlıkları hakkında bildirdiklerimi ise ister istemez siz bilirsiniz. O halde neden gerçeği göremiyorsunuz ve kendinize bakmıyorsunuz?

وَلَوْ تَرٰى اِذْ فَزِعُوا فَلَا فَوْتَ وَاُخِذُوا مِنْ مَكَانٍ قَرِيبٍ ﴿٥١﴾

51- "Sen onları dehşetli bir korkuya kapılıp da kaçıp kurtulamayacakları ve yakın bir yerden yakalanacakları zaman bir görsen!"

Yani eğer sen bunu görseydin, korkunç bir manzara ve büyük bir şey görmüş olurdun. Allah mühlet verdikten sonra onları yakaladığı zaman bu, köklerini sökmekten başka bir şey için değildir.

وَقَالُوا اٰمَنَّا بِهٖ وَاَنّٰى لَهُمُ التَّنَاوُشُ مِنْ مَكَانٍ بَعِيدٍ ﴿٥٢﴾

52- "'Ona inandık' derler, ama onlar için artık uzak bir yerden iman elde etmek nasıl mümkün olur?

Kapılar kapanmış iken tövbe ettikleri zaman, vasıtalar paramparça olmuş iken pişmanlık duydukları zaman, artık hasret ve pişmanlıktan başka bir şey söz konusu olmaz. Ne var ki o zaman da artık pişmanlık zamanı değildir.

Aynı şekilde kim, tembelliğinin ayrıntılarını hafife alıp gafletinden uyanmazsa, bir defaya mahsus hatasından vazgeçilip bağışlanır. Eğer ardından kasvet kendisine hâkim olur da edepsizliği, gaflet sınırını aşar ve miktarı çoğalırsa, Allah onu reddeder ve kendisini perdelenme karşılar. Ondan sonra da ne bir duası kabul edilir ne de ağlamasına acınır.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Serbest bırak gözleri, senden sonra ağlamak için*
*Zira dönüşü yok safa günlerinin*

وَقَدْ كَفَرُوا بِهِ مِنْ قَبْلُ وَيَقْذِفُونَ بِالْغَيْبِ مِنْ مَكَانٍ بَعِيدٍ ﴿٥٣﴾

53- "Oysa daha önce onu inkâr etmişlerdi ve uzak bir yerden gayb hakkında atıp tutuyorlardı."

وَحِيلَ بَيْنَهُمْ وَبَيْنَ مَا يَشْتَهُونَ كَمَا فُعِلَ بِاَشْيَاعِهِمْ مِنْ قَبْلُ اِنَّهُمْ كَانُوا فِي شَكٍّ مُرِيبٍ ﴿٥٤﴾

54- "Tıpkı daha önce benzerlerine yapıldığı gibi, kendileriyle arzuladıkları arasına bir engel konmuştur. Çünkü onlar, derin bir şüphe içindeydiler."

Onlar, sonunda tövbeyi arzu ederler; ancak vakit geçmiş olur. Hasım da Allah'ı hoşnut kılmak ister; fakat o vakit bunu dile getirmekten utanır ve dili tutulur. Bu nedenle de o, kalbindekini açıklayamaz. Ayrıca kendisiyle daha önce yaptıkları arasında büyük bir uzaklık olmasını arzular ve itaat etmeyi temenni eder, ancak kuvveti ona yardımcı olmaz. Dünyadan çıkmadan önce de sadece tek bir nefesinin olmasını diler, fakat bu gerçekleşmez.

سورة فَاطِرٍ

# FÂTIR SÛRESİ

(Fâtır Sûresi, Mekke'de inen ilk sûrelerden olup 45 âyettir. Adını, ilk âyette geçen "Fâtır (örneksiz, benzersiz yaratıcı)" dan almıştır. Buna Melâike Sûresi de denir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir sözdür ki, onu işitmek yeterliliği müşahede eden kimse için huzur sağlarken, beyan vasfına sahip olan kimse için de nakış sağlar. Bu itibarla huzur, ihsanın varlığından, nakış da sultanı görmekten meydana gelir. İkisi de doğruyu bulmuştur. Her biri için de haktan bir nasip vardır.

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ فَاطِرِ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ جَاعِلِ الْمَلٰٓئِكَةِ رُسُلًا اُو۫ل۪ٓي
اَجْنِحَةٍ مَثْنٰى وَثُلٰثَ وَرُبَاعَ يَز۪يدُ فِي الْخَلْقِ مَا يَشَٓاءُ اِنَّ اللّٰهَ عَلٰى
كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرٌ ﴿١﴾

1- "Hamd, gökleri ve yeri yaratan, melekleri ikişer, üçer, dörder kanatlı elçiler yapan Allah'a mahsustur. O, yaratmada dilediğini artırır. Şüphesiz Allah'ın gücü her şeye hakkıyla yeter."

( جَاعِلِ الْمَلٰٓئِكَةِ رُسُلًا اُو۬ل۪ٓي اَجْنِحَةٍ مَثْنٰى وَثُلٰثَ وَرُبَاعَ...) *"Melekleri ikişer, üçer, dörder kanatlı elçiler yapan..."*

Allah, kendini kullarına fiilleriyle tanıtmış ve o fiillere itibar etmekle kendilerini görevlendirmiştir. Bu çerçevede o fiillerin bazılarını biz görerek öğreniriz. Örneğin gökler, yer ve diğerleri gibi. Onlardan bazısına iman etmenin yolu da akıl delili değil, haber ve nakildir. Melekler de bunlardandır. Nitekim meleklerin görünüş ve kanatlarının şekli, üçlü veya dörtlü kanatlarıyla nasıl uçtukları zihinde gerçekleşmez. Fakat sonuç itibariyle biz, Allah'ın kudretinin kemalini ve sözünün doğruluğunu öğreniriz.

( يَز۪يدُ فِي الْخَلْقِ مَا يَشَٓاءُ ) *"O, yaratmada dilediğini artırır."*

Bu konuda şu görüş ve yorumlar dile getirilmiştir:

- Artırılan şey güzel ahlaktır.
- Artırılan şey güzel sestir.
- Artırılan şey gözlerin güzelliğidir.
- Artırılan şey zekice yapılan tercihtir.
- Artırılan şey konuşmada fesahattir.
- Artırılan şey Allah'ı anlamaktır.
- Artırılan şey cömertliktir.
- Artırılan şey takdire rıza göstermektir.
- Artırılan şey himmetin yüksek oluşudur.
- Artırılan şey tevazudur.
- Artırılan şey fakirlikte iffetli olmaktır.
- Artırılan şey fiziki zarifliktir.
- Artırılan şey gönüllere sevimli gelmektir.
- Artırılan şey ruh hafifliğidir.
- Artırılan şey, kalbin kötülüklerden temiz olmasıdır.
- Artırılan şey, delil düşünmeden Allah'ı tanımaktır.
- Artırılan şey, Allah'a özlem duymaktır.

- Artırılan şey, bütün yaratıklara şefkat göstermektir.

- Artırılan şey, kalplerin sonradan yaratılan her şeyden özgür olmasıdır.

- Artırılan şey, kişinin, her iki dünyada da kendisi için bir şey istememesidir.

مَا يَفْتَحِ اللّٰهُ لِلنَّاسِ مِنْ رَحْمَةٍ فَلَا مُمْسِكَ لَهَا وَمَا يُمْسِكْ فَلَا
مُرْسِلَ لَهُ مِنْ بَعْدِهِ وَهُوَ الْعَز۪يزُ الْحَك۪يمُ ﴿٢﴾

2- "Allah, insanlar için ne rahmet açarsa, artık onu tutacak yoktur. Neyi de tutarsa, bundan sonra onu gönderecek yoktur. O, mutlak güç sahibidir. Hüküm ve hikmet sahibidir."

Rızkı geniş tutulan bir kimsenin rızkını Allah'tan başka kimse daraltamaz.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Ariflerin kalplerinde işleyen hakikat nurlarını hiçbir bulut örtemez ve hiçbir aydınlık yenemez.

- Allah'ın velilerinin kalplerinde kalıcı olan kesin inancı hiçbir şey ortadan kaldıramaz. Düşmanların kalplerine karşı kapatılan zikir kapılarını da Allah'tan başka hiç kimse açamaz.

- Allah'ın, velilerinin kalpleri ve halleriyle beraber kıldığı muvaffakiyeti hiç kimse engelleyemez. Çıkmazlar ve zorlukların içine attığı düşmanlardan esirgediklerini ise O'ndan başka hiç kimse müyesser kılamaz.

يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ اذْكُرُوا نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ هَلْ مِنْ خَالِقٍ غَيْرُ اللّٰهِ
يَرْزُقُكُمْ مِنَ السَّمَٓاءِ وَالْاَرْضِ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ فَاَنّٰى تُؤْفَكُونَ ﴿٣﴾

3- "Ey insanlar! Allah'ın size olan nimetini hatırlayın. Allah'tan başka size göklerden ve yerden rızık veren bir yaratıcı var mı? O'ndan

başka hiçbir ilah yoktur. O halde nasıl oluyor da haktan döndürülüyorsunuz!"

Kim nimeti anarsa o ibadet sahibidir ve fazla sevaba kavuşur. Fakat fazladan fazlaya fark vardır. Biri, Allah'ın her iki dünyadaki vergisidir. Diğeri de O'nun huzuruna çıkmaktır. Bugün müşahede sırdaş olmaktır. Yarın da açıktan açığa gözle görmektir.

Öte yandan nimet de iki kısımdır: Biri, Allah'ın kuldan defettiği sıkıntılardır. Diğeri de kuluna verdiği faydalı şeylerdir. Bu itibarla kulun, Allah'ın kendisinden defettiği sıkıntıları anması, masumiyetin devamını sağlar. Kendisine verdiği faydalı şeyleri anması da nimetin kemale ermesine vesile olur.

( هَلْ مِنْ خَالِقٍ غَيْرُ اللّٰهِ يَرْزُقُكُمْ مِنَ السَّمَٓاءِ وَالْاَرْضِ ) *"Allah'tan başka size göklerden ve yerden rızık veren bir yaratıcı var mı?"*

Allah'ı bu yolla tanıtmanın faydası şudur: Kul, Allah'tan başka kendisine rızık veren kimsenin bulunmadığını bildiği zaman, herhangi bir şeyi talep etmede kalbini O'ndan başkasına bağlamaz ve yararlanmada hiçbir yaratığa boyun bükmez. Bir de nasıl ki rızkını herhangi bir yaratıktan bilmezse, aynı zamanda bunu kendinden de bilmez. Böylece o, kendi tedbir ve çaresinin karanlıklarından ve kendi emsal ve benzerlerinden bir şey vehmetmekten kurtulmuş olur. Bir de ilahî takdiri gördüğü için huzura erer ve kuşkusuz tevekkülünde ve işi Allah'a havale etmede ihlâslı olur.

وَاِنْ يُكَذِّبُوكَ فَقَدْ كُذِّبَتْ رُسُلٌ مِنْ قَبْلِكَ وَاِلَى اللّٰهِ تُرْجَعُ الْاُمُورُ ﴿٤﴾

4- "Eğer seni yalanlıyorlarsa bil ki senden önce de nice peygamberler yalanlanmıştır. Bütün işler ancak Allah'a döndürülür."

Bu, Hz. Peygamber (s.a.v.) için bir teselli ve sabırlı olmasını kolaylaştırmadır. Zira o, diğer peygamberlerin de kendisinin karşılaştığı yalanlamayla karşılaştıklarını, sabrettiklerini ve Allah'ın onları korumada yeterli olduğunu bildiği zaman, kendisi de onların yolunu izleyecek, onlara uyacak ve Allah'ın onları korumada olduğu gibi, kendisini korumada da yeterli olduğunu bilecektir.

Bu ayette, ayrıca hikmet ve gönül erbabının avama ve yabancılara karşı tutumlarına da işaret vardır. Çünkü onlar, avamdan ve bu tarikata yabancı olanlardan sadece az sayıda kimseyi kabul ederler. Oysa hakikat erbabı olan kimseler, kendi hallerini avam ve tarikat yabancılarından saklamadıkları sürece, onlardan sonsuza dek eziyet görürler.

Öte yandan avam, bu tarikata zahid karilerden ve bu esasları inkâr eden âlimlerden daha yakındırlar.

يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ اِنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّ فَلَا تَغُرَّنَّكُمُ الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا وَلَا يَغُرَّنَّكُمْ بِاللّٰهِ الْغَرُورُ ﴿٥﴾

5- “Ey insanlar! Şüphesiz Allah’ın vaadi gerçektir. Sakın dünya hayatı sizi aldatmasın. Sakın çok aldatıcı şeytan, Allah hakkında sizi aldatmasın.”

Allah’ın, olacağını haber verdiği her şey hakkındaki vaadi gerçektir. Bu çerçevede kıyamet hakkındaki vaadi gerçektir. Kendisine itaat edenlere, işlerini taahhüt edeceğine ve selamete ereceklerine dair vaadi gerçektir. Ahirette itaat ehli kimselere kereminin olacağına dair vaadi ile günahkârlar için pişmanlığın olacağına dair vaadi de gerçektir.

Böylece kul, bunu bildiği zaman ölüm için hazırlık yapar ve rızkı önemsememiş olur. Allah da işinde onun için yeterli olur. Bu vaade güvendiği için kul, daha çok itaat etmede aktifleşir ve uyarıdan korktuğu için muhalefetlere bulaşmaz.

اِنَّ الشَّيْطَانَ لَكُمْ عَدُوٌّ فَاتَّخِذُوهُ عَدُوًّا اِنَّمَا يَدْعُوا حِزْبَهُ لِيَكُونُوا مِنْ اَصْحَابِ السَّعِيرِ ﴿٦﴾

6- “Şüphesiz şeytan, sizin için bir düşmandır. Öyle ise siz de onu düşman tanıyın. O, kendi taraftarlarını ancak alevli ateşe girecek kimselerden olmaya çağırır.”

Şeytana düşmanlık, devamlı ona karşı çıkmakla olur. Çünkü insanlardan kimisi, sözle ona düşmanlık yaparken, davranışıyla ona uymaktadır. Oysa sen, sadece devamlı Allah'tan yardım dilemekle ona düşmanlık etmeye güç yetirebilirsin. Bu yardım dileme ise içten yardım talebiyle olur. Bir de şeytan sana olan düşmanlığında gevşeklik etmez. O halde bir an bile Mevlâ'ndan gafil kalma. Aksi halde düşmanın sana meydan okur. Çünkü o, sonsuza dek sana karşı hazırlıklıdır.

( اِنَّمَا يَدْعُوا حِزْبَهُ لِيَكُونُوا مِنْ اَصْحَابِ السَّعِيرِ ) *"O, kendi taraftarlarını ancak alevli ateşe girecek kimselerden olmaya çağırır."*

Onun taraftarları, Allah'tan yüz çevirip O'ndan başkasıyla meşgul olanlardır. Bu hitabın ifade ettiği husus şudur: Şüphesiz şeytan, sizin düşmanınızdır. O halde ona buğzedin ve kendisini düşman bilin. Ben ise sizin dostunuzum ve sevgilinizim. O halde beni seviniz ve sevgili olarak kabul ediniz.

اَلَّذِينَ كَفَرُوا لَهُمْ عَذَابٌ شَدِيدٌ وَالَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ
لَهُمْ مَغْفِرَةٌ وَاَجْرٌ كَبِيرٌ ﴿٧﴾

7- "Kâfir olanlar için çetin bir azap vardır. İman edip salih ameller işleyenler için ise bir bağışlanma ve büyük bir ecir vardır."

Kâfir olanlar için biri dünyada, diğeri de ahirette olmak üzere iki azap vardır. Dünyada olan azap, kalplerinin tefrikası, basiretlerinin kapalılığı ve niyetlerinin iğrençliğidir. O kadar ki onlar, putun kendi mabutları olmasına rıza gösterirler. Ahiret azabına gelince onun zorluğu, aşağı yukarı hiçbir Müslüman'a gizli kalmamaktadır.

( وَالَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ ) *"İman edip salih ameller işleyenlere"* gelince onlar için mağfiret, yani bugün günahlarının örtülmesi vardır. Eğer öyle olmasaydı, rezil olacaklardı. Eğer öyle olmasaydı, helak olacaklardı.

( وَاَجْرٌ كَبِيرٌ ) *"Büyük bir ecir vardır."*

Büyük ecir, bugün ibadet kolaylığı, marifetin devamlılığı ve kalbin erdiği kesin inançtaki artışlar ve hallerin özellikleridir. Ahirette ise bu, isteğin gerçekleştirilmesi ve umulandan fazlasına kavuşmaktır.

اَفَمَنْ زُيِّنَ لَهُ سُوٓءُ عَمَلِه۪ فَرَاٰهُ حَسَنًا فَاِنَّ اللّٰهَ يُضِلُّ مَنْ يَشَٓاءُ وَيَهْد۪ي مَنْ يَشَٓاءُ فَلَا تَذْهَبْ نَفْسُكَ عَلَيْهِمْ حَسَرَاتٍ اِنَّ اللّٰهَ عَل۪يمٌ بِمَا يَصْنَعُونَ ﴿٨﴾

8- “Kötü ameli kendisine süslü gösterilip de onu güzel gören kimse, ameli iyi olan kimse gibi mi olacaktır? Şüphesiz Allah dilediğini saptırır, dilediğini hidayete erdirir. Onlar için duyduğun üzüntüler yüzünden kendini helak etme! Şüphesiz ki Allah, onların yaptıklarını hakkıyla bilendir.”

Ayetin anlamı şudur: Acaba kötü ameli kendisine süslü gösterilip de onu güzel gören kimse, böyle olmayan kimse gibi midir? İkisi bir değildir.

( اَفَمَنْ زُيِّنَ لَهُ سُوٓءُ عَمَلِه۪ فَرَاٰهُ حَسَنًا ) *“Kötü ameli kendisine süslü gösterilen”* sözü ise şu demektir: Kâfir, amelinin güzel olduğunu vehmeder. Nitekim Allah şöyle buyurur:

( وَهُمْ يَحْسَبُونَ اَنَّهُمْ يُحْسِنُونَ صُنْعًا ) *“Oysa onlar, güzel iş yaptıklarını sanırlar.”* (Kehf, 18/104)

Sonra dünyayı arzulayan kimse, helalini ve haramını bir araya getirir. Dünya malını biriktirerek ne o malın zevalini ne de dünyalıklar kemale ermeden kendisinin dünyadan göçeceğini düşünür. İşte böylece kötü ameli ona süslü gösterilmiş olur. Nitekim şehvetlerine tabi olup cennetteki ebedi rahatlıklarını bir saate karşılık satan kimsenin kötü ameli, kendisine süslü gösterilmiş demektir. Aynı zamanda, yaratıklardan bir şeyi Rabbine tercih eden kimse de şüphesiz onlardandır.

Ayrıca, kurtuluşunu ve cennetteki derecelerini bulup bunların yeterli olduğunu sanan kimsenin de kötü ameli kendisine süslü

gösterilmiş olur. Çünkü o da, münacatın zevkini göz ardı etmiş olmaktadır. Bir de arzularıyla hemhal olup Allah'ın haklarını tercih etmeyen kimsenin de kötü ameli şüphesiz kendisine süslü gösterilmiş, o da onu güzel görmüştür.

( فَلَا تَذْهَبْ نَفْسُكَ عَلَيْهِمْ حَسَرَاتٍ ) *"Onlar için duyduğun üzüntüler yüzünden kendini helak etme!"*

Yani sen, takdirin hak olduğunu bilip onların Allah'ın gözünden düştüğünü anladığın, açıkça kendilerine çağrıda bulunduğun ve nasihat ettiğin zaman, bunu kabul etmeleri sana ait değildir. Bu nedenle sen, kalbinde bir meşakkat ve sıkıntı oluşturma.

وَاللّٰهُ الَّذ۪ٓي اَرْسَلَ الرِّيَاحَ فَتُث۪يرُ سَحَابًا فَسُقْنَاهُ اِلٰى بَلَدٍ مَيِّتٍ فَاَحْيَيْنَا بِهِ الْاَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا كَذٰلِكَ النُّشُورُ ﴿٩﴾

9- "Allah, rüzgârları gönderendir. Onlar da bulutları hareket ettirir. Biz de bulutları ölü bir toprağa sürer ve onunla, ölümünden sonra yeryüzünü diriltiriz. İşte ölümden sonra diriliş de böyledir."

Allah prensibini, yeryüzünü tedricen canlandırmak suretiyle lütfunu göstermek şeklinde koymuştur. Bu çerçevede önce rüzgârları gönderir, sonra bulutu getirir, sonra o bulutu, dilediği gibi özellik bahşedeceği yere yöneltir ve dilediği şekilde orada yağmur yağdırır. İşte aynı şekilde Allah, bir kulun kalbini, ona verdiği manevi güç ve üzerine yağdırdığı inayetinin yağmurları ile ihya etmek istediği zaman önce ümit rüzgârlarını göndererek onlar aracılığıyla iradenin gizli yönlerini rahatsız ettikten sonra aynı iradede heyecan bulutları ve rahatsızlık acısı inşa eder. Sonra kalpte bast ve huzur çiçeklerini yeşerten bir yağmur lütfeder. Böylece o kalbin sahibinin hayatı güzelleşir ve nihayet ünsiyetin latifeleri tamamlanmış olur.

مَنْ كَانَ يُر۪يدُ الْعِزَّةَ فَلِلّٰهِ الْعِزَّةُ جَم۪يعًا اِلَيْهِ يَصْعَدُ الْكَلِمُ الطَّيِّبُ وَالْعَمَلُ الصَّالِحُ يَرْفَعُهُ وَالَّذ۪ينَ يَمْكُرُونَ السَّيِّـَٔاتِ لَهُمْ عَذَابٌ شَد۪يدٌ وَمَكْرُ اُو۬لٰٓئِكَ هُوَ يَبُورُ ﴿١٠﴾

10- "Her kim izzet istiyorsa, izzet bütünüyle Allah'a aittir. Güzel sözler ancak O'na yükselir. Salih ameli de Allah yükseltir. Kötülükleri tuzak yapanlar var ya onlar için çetin bir azap vardır. İşte onların tuzağı boşa çıkar."

Her kim izzet istiyorsa bilsin ki izzet bütünüyle Allah'a mahsustur. O halde izzetten mahlûka ait bir şey yoktur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır.

- Her kim, kendisi için izzet istiyorsa, bilsin ki izzet bütünüyle Allah'a mahsustur. O halde kendisi de izzeti Allah'tan dilesin. Bir başka ayette ise Allah, izzeti hem kendisi hem peygamberi hem de müminler için ortaya koymuştur. Oysa burada: ( فَلِلّٰهِ الْعِزَّةُ جَمِيعًا ) "*İzzet bütünüyle Allah'a aittir*" buyurmuştur. Bu iki durum şöyle bağdaştırılabilir: Rab olma izzeti sıfat olarak Allah'a mahsustur. Peygamber ve müminlerin izzeti ise Allah tarafından onlara lütuf olarak verilmiştir. O halde izzet, bütünüyle Allah'a mahsustur. Bu arada Allah'ın izzeti, kudreti demektir.

- İzzet sahibi, karşı konulmaz mutlak galip demektir.

Böylece birinci yoruma göre; izzet, Allah'ın fiilinin sıfatlarından, ikinci yoruma göre ise zatının sıfatlarındandır.

- İzzet sahibi, kendisine ulaşılamayan demektir. Bu anlam, Arapların, "üzerinde ayakta durulamayan toprak" anlamında kullandıkları ( أَرْضٌ عَزازٌ ) deyiminden gelmektedir. Böylece izzetin manası, Allah'ın yüce hükümranlığına dayanmış olur.

- İzzet sahibi, benzeri bulunmayan demektir. Bu anlam da, Arapların, "elde yiyecek bulunmaması" anlamında kullandıkları ( عَزَّ الطعامُ في اليد ) deyiminden gelmektedir. Böylece izzetin manası, Allah'ın, şeref ve yücelik sıfatlarına layık olmasına dayanmış olur.

( اِلَيْهِ يَصْعَدُ الْكَلِمُ الطَّيِّبُ ) "*Güzel sözler, ancak O'na yükselir.*"

Güzel söz, güzel inançtan doğan sözdür. Yani içtenlikle söylenen kelime-i şahadettir. Allah buradaki yükselmeden kabul edilecek

şekildeki yükselmeyi kast etmiştir. Çünkü gerçekte yükselme, çıkmak anlamındadır. Çıkmak ise kelam sıfatında caiz değildir.

( وَالْعَمَلُ الصَّالِحُ يَرْفَعُهُ ) *"Salih ameli de Allah yükseltir."*

Yani Allah, salih ameli kabul eder.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Salih amel, güzel sözleri yükseltir.
- Güzel sözler, sünnete uygun olandır.
- Güzel söz, izin ve tevkifin, sıhhatine şahitlik ettiği sözdür.
- Güzel söz, kalbin, Rabbin layık olduğu yüceliğe dair övgüyü dile getirmesidir.
- Güzel söz, Müslümanlar için dua olan sözdür.
- Güzel söz, sadece Allah'ın hakkı için olan ve kulun hiçbir payının olmadığı sözdür.
- Güzel söz, kendinden geçmişken kula söyletilen sözdür.
- Güzel söz, aklanmanın beyanı ve mağfiret dileme sözüdür.

Salih amel konusunda ise şu iki yorum yapılmıştır:

- Salih amel, kabule şayan ameldir.
- Salih amel, kusurlu olmayan ve karşılık istenmeyen ameldir.

( وَالَّذِينَ يَمْكُرُونَ السَّيِّئَاتِ لَهُمْ عَذَابٌ شَدِيدٌ وَمَكْرُ اُولٰٓئِكَ هُوَ يَبُورُ ) *"Kötülükleri tuzak yapanlar var ya, onlar için çetin bir azap vardır. İşte onların tuzağı boşa çıkar."*

Yani Allah, tuzaklarını üzerlerine çevirir. Bu çerçevede onların, kendileri için hayır sandığını Allah onlar için sıkıntıya çevirir. Bir yoruma göre de bu, Allah'ın, onları koruyabildiği halde, kendilerini tuzaklarıyla baş başa bırakmasıdır. Allah'ın onları korumaması ise onların şiddetli azabıdır.

وَاللّٰهُ خَلَقَكُمْ مِنْ تُرَابٍ ثُمَّ مِنْ نُطْفَةٍ ثُمَّ جَعَلَكُمْ اَزْوَاجًا وَمَا
تَحْمِلُ مِنْ اُنْثٰى وَلَا تَضَعُ اِلَّا بِعِلْمِهِ وَمَا يُعَمَّرُ مِنْ مُعَمَّرٍ وَلَا
يُنْقَصُ مِنْ عُمُرِهٖٓ اِلَّا فٖي كِتَابٍ اِنَّ ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ يَسٖيرٌ ١١

11- "Allah, sizi önce topraktan, sonra da az bir sudan yarattı. Sonra sizi eşler yaptı. Allah'ın ilmine dayanmadan hiçbir dişi, ne hamile kalır ne de doğurur. Herhangi bir kimseye uzun ömür verilmez yahut ömrü kısaltılmaz ki bu bir kitapta olmasın. Şüphesiz bu, Allah'a kolaydır."

Kendi hallerini beğenmemeleri için Allah, neseplerini anlatmıştır. Sonra çamurdan edinilen şey çabuk değişir ve uzun süre kalmada gücü azdır. Fakat suyla düzeltilebilir. Çünkü yapısı, suyla düzelmektedir. Bu çerçevede Allah insana, kerem suyuyla lütufta bulunduğu zaman, günahlarla kırılmasından sonra onu tekrar düzeltir.

Bir de insanları ilk başta yaratırken hiçbir halleri kendisine gizli kalmayan Allah, şayet günah işleyeceklerini bildiği kimseleri yaratmayı umursadıysa, günah işlediğini gördüğü kimseyi bağışlamayı umursamaz.

وَمَا يَسْتَوِي الْبَحْرَانِ هٰذَا عَذْبٌ فُرَاتٌ سَآئِغٌ شَرَابُهُ وَهٰذَا مِلْحٌ
اُجَاجٌ وَمِنْ كُلٍّ تَاْكُلُونَ لَحْمًا طَرِيًّا وَتَسْتَخْرِجُونَ حِلْيَةً تَلْبَسُونَهَا
وَتَرَى الْفُلْكَ فِيهِ مَوَاخِرَ لِتَبْتَغُوا مِنْ فَضْلِهِ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿١٢﴾

12- "İki deniz aynı olmaz. Şu tatlıdır, susuzluğu giderir, içimi kolaydır. Şu ise tuzludur, acıdır. Bununla beraber her birinden taze et yersiniz ve takınacağınız süs eşyası çıkarırsınız. Allah'ın lütfundan istemeniz ve şükretmeniz için gemilerin orada suyu yara yara gittiğini görürsün."

Şu iki durum aynı değildir: Biri Allah'a yönelmektir, O'nun taatıyla meşgul olmaktır ve sadece O'nu tanımaktır. Diğeri ise Allah'tan yüz çevirmektir, ibadetinden sıkılmaktır, taksimat ve tasarrufunda O'na itirazda bulunmaktır. Biri, vuslatının sebebidir. Diğeri de O'nu terk etmenin ve O'ndan ayrılmanın sebebidir. Bu iki halin her birinde o halin ehli olanlar yaşamakta ve vakitlerini geçirmektedirler. Bu arada her iki vakit de aynı değildir. Biri basttır ve sahibi huzur içindedir. Diğeri ise kabzdır ve sahibi feryat etmektedir. Biri

korkudur ve sahibi yıkım yaşamaktadır. Diğeri ise ümittir ve sahibi rahatlık içindedir. Biri farktır ve sahibi kulluk vasfıyladır. Diğeri ise cemdir ve sahibi rububiyetin şuhûdu içindedir.

( وَمِنْ كُلٍّ تَاْكُلُونَ لَحْمًا طَرِيًّا وَتَسْتَخْرِجُونَ حِلْيَةً تَلْبَسُونَهَا ) *"Bununla beraber her birinden taze et yersiniz ve takınacağınız süs eşyası çıkarırsınız."*

Böylece her biri, kendi hali içinde Rabbine yakınlaşır ve kapısında süsünü takınır. Bu, o kulun coşkudan veya savaştan, şereften veya teleften dolayı takındığı süsüdür.

يُولِجُ الَّيْلَ فِي النَّهَارِ وَيُولِجُ النَّهَارَ فِي الَّيْلِ وَسَخَّرَ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ كُلٌّ يَجْرِي لِاَجَلٍ مُسَمًّى ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمْ لَهُ الْمُلْكُ وَالَّذِينَ تَدْعُونَ مِنْ دُونِهِ مَا يَمْلِكُونَ مِنْ قِطْمِيرٍ ﴿١٣﴾

13- "Allah geceyi gündüze katar, gündüzü de geceye katar. Güneşi ve ayı da koyduğu kanunlara boyun eğdirmiştir. Her biri belirli bir vakte kadar akıp gitmektedir. İşte bu, Allah'tır, Rabbinizdir. Mülk, yalnızca O'nundur. Allah'ı bırakıp da ibadet ettikleriniz, bir çekirdek zarına bile hükmedemezler."

Bazen nefis kalbi yenmekte, bazen de kalp nefsi yenmektedir. Kabz ve bast da böyledir. Bazen berabere kalırlar, bazen kabz bastı yener, bazen de bast kabzı mağlup eder. Aynı zamanda sahv ve sekr ile fenâ ve bekâ da böyledir.

Bir de Allah, tevhid güneşlerini ve marifet aylarını, kalplerde ortaya çıkarmak istediği şeylere uygun olarak emre amade kılmıştır.

( ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمْ لَهُ الْمُلْكُ ) *"İşte bu, Allah'tır, Rabbinizdir. Mülk, yalnızca O'nundur."*

Şimdi Allah'tan başka ibadet ettiklerinize ait en ufak bir olumsuz veya olumlu şey gösterin. Bunu yapmanız mümkün olmadığına göre, neden ikrar edip sadece Allah'a ibadet etmediniz ve putlardan kopmadınız?

اِنْ تَدْعُوهُمْ لَا يَسْمَعُوا دُعَآءَكُمْ وَلَوْ سَمِعُوا مَا اسْتَجَابُوا لَكُمْ
وَيَوْمَ الْقِيمَةِ يَكْفُرُونَ بِشِرْكِكُمْ وَلَا يُنَبِّئُكَ مِثْلُ خَبِيرٍ ﴿١٤﴾

14- "Eğer onları çağırırsanız, çağrınızı duymazlar. Duysalar bile, çağrınıza karşılık veremezler. Kıyamet günü de sizin ortak koştuğunuzu inkâr ederler. Bunları sana hiç kimse, hakkıyla haberdar olan Allah gibi haber veremez."

Eğer siz putlarınızdan yardım isterseniz, size yardım etmezler. Eğer onları çağırırsanız çağrınızı duymazlar. Duydukları var sayılsa bile size karşılık veremezler. Çünkü onlar kendilerine fayda veremezler. O halde başkalarına nasıl fayda verecekler?

( وَيَوْمَ الْقِيمَةِ يَكْفُرُونَ بِشِرْكِكُمْ ) *"Kıyamet günü de sizin ortak koştuğunuzu inkâr ederler."*

Onlar, ancak o vakit iman ederler, lakin teklif kalktıktan sonra iman kendilerine fayda vermez.

يَآ اَيُّهَا النَّاسُ اَنْتُمُ الْفُقَرَآءُ اِلَى اللّٰهِ وَاللّٰهُ هُوَ الْغَنِيُّ الْحَمِيدُ ﴿١٥﴾

15- "Ey insanlar! Siz, Allah'a muhtaçsınız. Allah ise her bakımdan sınırsız zengin olandır, övülmeye hakkıyla layık olandır."

Muhtaç olmak iki kısımdır: Biri yaratılış bakımından muhtaçlık, diğeri de sıfat bakımından muhtaçlıktır. Yaratılış bakımından muhtaçlık herkesi kapsar. Çünkü her yaratık, yoktan var olduğu için yaratanına muhtaçtır. Bu itibarla, Allah'ın kendisini ortaya çıkarıp inşa etmesi için her yaratık, O'na muhtaçtır. Sonra bunun ardından yaşaması halinde de kendisini devam ettirip koruması için yine Allah'a muhtaçtır. O halde Allah (c.c.) zengindir, kul ise muhtaçtır. Kul, benliğiyle muhtaçtır, Allah da zatıyla zengindir.

Sıfat bakımından muhtaç olmaya gelince bu, fakirlik demek olup arınmayla gerçekleşir. Bu çerçevede avamın fakirliği maldan arınmaktır. Havassın fakirliği de fakir sayılabilmeleri için manevi arızalardan arınmalarıdır.

Diğer bir yönden muhtaçlık birkaç kısımdır. Bunlar, Allah'a muhtaç olmak, Allah'tan olan malum veya prensip şeklinde bir şeye ve bunlardan başka şeylere muhtaç olmaktır. Bu arada bir şeye muhtaç olan kimsenin ihtiyacı, o şeyin bulunmasıyla ortadan kalkar. Mesela Allah'a muhtaç olan kimse, Allah ile zengin olur. Aynı zamanda, Allah'a muhtaç olmanın özünde, Allah ile müstağni olmak vardır. Bu itibarla, Allah'a muhtaç olan kimse, yine Allah ile müstağni olur. Allah ile müstağni olan kimse de Allah'a muhtaçtır.

Bir de fakirliğin şerefi, tevazu ve bağlılıkla birlikte olmasıdır. Nitekim zenginliğin afetlerinden biri de kibirlenmeyle iç içe olmasıdır. Oysa kulun şerefi, fakirliğindedir. Aynı şekilde züllü de kendini zengin sanmasındadır.

Şiir:

*Büküldüğü zaman boyunlar yakınlaşmak için*
*Bizden sana, züllerindedir şan ve şerefleri*

Bu arada Allah'ın, ihtiyaç noktalarını sahibinden saklaması, kötü fakirliğin örneklerindendir. Allah'ın, ihtiyaç noktalarını sahibine göstermesi ise iyi fakirliğin örneklerindendir.

İhlaslı fakirin şartlarından biri hem hiçbir şeye sahip olmaması hem de her şeye sahip olmasıdır.

Bir yoruma göre; dürüst fakir hiçbir şeyin kendisine sahip olamadığı kimsedir.

Dürüst fakirin adabından biri de kırılmanın kemal noktasında teşekkürü ortaya koymasıdır. Fakirliğin adabından bir diğeri de mananın kemale ermesi, iddianın ise yok olmasıdır.

Bir yoruma göre de fakirliğin adabı, belaya karşılık şükretmek ve şikâyetten uzak durmaktır.

İyi fakirliğin hakikati de sırrın hastalıklardan arınması ve kalpte sadece Allah'a yer vermektir.

Bir yoruma göre de iyi fakirlik, Allah'tan gelen hiçbir şeyden hiçbir şekilde rahatsızlık duymaksızın, vaktin bütününde O'nunla iyi yaşamaktır.

( وَاللّٰهُ هُوَ الْغَنِيُّ الْحَم۪يدُ ) *"Allah ise her bakımdan sınırsız zengin olandır, övülmeye hakkıyla layık olandır."*

Bu ifadenin işaret ettiği husus, Allah'ın övülünceye kadar lütufta bulunmaya devam etmesidir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Zengin kimse, birisine zenginliğini gösterdiği zaman bunu ya övünmek veya kibirlenmek ya da birine iyilik yapmak için yapar. Allah'ın yüceliği ise bundan münezzehtir.

- Allah, bizi küçük düşürmek için bize: "Siz fakirsiniz" buyurmamıştır. Çünkü O'nun yüceliği bundan münezzehtir. Doğrusu Allah, kendisinin zengin, bizlerin ise fakir olduğunu söylediği zaman amacı, bize lütufta bulunduğunu ifade etmektir.

- Sen, Allah'ın sıfatı olan zenginliğe layık olmayı kendin için iddia etmediğin zaman O, seni zengin edecek şeyi sana ulaştırır ve sana, yettiğinden fazlasını verir.

اِنْ يَشَاْ يُذْهِبْكُمْ وَيَاْتِ بِخَلْقٍ جَد۪يدٍۚ ﴿١٦﴾ وَمَا ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ بِعَز۪يزٍ ﴿١٧﴾

16, 17- "Eğer Allah dilerse, sizi giderir ve yeni bir halk getirir. Bu, Allah'a göre zor bir şey değildir."

Allah, kendisinin insandan müstağni olduğunu insana öğretmiş, ona ihtiyaç noktasını ve O'na mutlak surette muhtaç olduğunu göstermiştir. Bu itibarla Allah'ın bundan yegâne amacı, insana lütufta bulunmak ve kendisini inamının barınağında barındırmaktır.

وَلَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِزْرَ اُخْرٰىۜ وَاِنْ تَدْعُ مُثْقَلَةٌ اِلٰى حِمْلِهَا لَا يُحْمَلْ
مِنْهُ شَيْءٌ وَلَوْ كَانَ ذَا قُرْبٰىۜ اِنَّمَا تُنْذِرُ الَّذ۪ينَ يَخْشَوْنَ رَبَّهُمْ
بِالْغَيْبِ وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَۜ وَمَنْ تَزَكّٰى فَاِنَّمَا يَتَزَكّٰى لِنَفْسِه۪ۜ وَاِلَى
اللّٰهِ الْمَص۪يرُ ﴿١٨﴾

18- "Hiçbir günahkâr, başka bir günahkârın yükünü yüklenmez. Günah yükü ağır olan kimse, bir başkasını, günahını yüklenmeye çağırırsa, ondan hiçbir şey yüklenilmez, çağırdığı kimse yakını da olsa. Sen ancak, görmedikleri halde Rablerinden için için korkanları ve namaz kılanları uyarırsın. Kim arınırsa ancak kendisi için arınmış olur. Dönüş ancak Allah'adır."

Herkes kendi yaptığından sorumludur. Herkes, kendi amel defteri üzerinden sorgulanır. Herkesin Allah ile bir durumu vardır. Allah'ın da herkesle bir durumu vardır. Bu arada bazı ibadetlerde vekalet geçerlidir, ancak marifetlerde vekalet geçerli değildir. Bu çerçevede eğer sapıklığa batmış günahkâr bir kul, farz bir namazı kaçırırsa, bu durumda bin veli bile o namazı onun yerine kaza ederse ve bin seçkin kul, o bir tek farzın bir rekatı yerine bin rekat kaza ederse yine ondan kabul edilmez. Meğer ki kendisi, o namazı kaza etmiş olsun.

( قَالَ مَعَاذَ اللّٰهِ اَنْ نَاْخُذَ اِلَّا مَنْ وَجَدْنَا مَتَاعَنَا عِنْدَهُٓ ) *"Malımızı yanında bulduğumuz kimseden başkasını (sorumlu) tutmaktan Allah'a sığınırız."* (Yûsuf, 12/79)

Bu itibarla senin muhatap olduğun sitem, başkası için geçerli olmaz. Seninle yapılan konuşmayı da başkası duymaz.

Şiir:

*İster git ister kal, sana özgüdür sevgim*
*Kalbimdeki yerin de senin için korunmaktadır*

( اِنَّمَا تُنْذِرُ الَّذِينَ يَخْشَوْنَ رَبَّهُمْ بِالْغَيْبِ وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَمَنْ تَزَكّٰى فَاِنَّمَا يَتَزَكّٰى لِنَفْسِه۪ وَاِلَى اللّٰهِ الْمَص۪يرُ ) *"Sen ancak, görmedikleri halde Rablerinden için için korkanları ve namaz kılanları uyarırsın. Kim arınırsa ancak kendisi için arınmış olur. Dönüş ancak Allah'adır."*

( إنذار ) *"inzâr-uyarı"* korkulması gereken bir hususu bildirmektir. ( خشية ) "haşyet" korku demektir. Buna göre ayetin anlamı şöyledir: Korkutma, ancak korkuyla hemhal olan kimseye fayda verir. Gökyüzündeki kuş bile kendi benzerlerinin arasına iner.

وَمَا يَسْتَوِي الْاَعْمٰى وَالْبَصٖيرُ ﴿١٩﴾ وَلَا الظُّلُمَاتُ وَلَا النُّورُ ﴿٢٠﴾
وَلَا الظِّلُّ وَلَا الْحَرُورُ ﴿٢١﴾ وَمَا يَسْتَوِي الْاَحْيَٓاءُ وَلَا الْاَمْوَاتُ اِنَّ
اللّٰهَ يُسْمِعُ مَنْ يَشَٓاءُ وَمَٓا اَنْتَ بِمُسْمِعٍ مَنْ فِي الْقُبُورِ ﴿٢٢﴾

19, 20, 21, 22- "Kör ile gören bir olmaz. Karanlıklar ile aydınlık bir olmaz. Gölge ile sıcaklık bir olmaz. Diriler ile ölüler de bir olmaz. Allah, dilediğine işittirir. Sen, kabirde bulunanlara işittirecek değilsin."

Nasıl ki kör ile gören aynı değilse, karanlıklar ile aydınlık, gölge ile sıcaklık ve diriler ile ölüler de aynı değildir. Aynı şekilde bize bağlanan ile bizi bırakıp başka şeylerle meşgul olan, bize cezp edilen ile bizimle arasına perde çekilen, ezelde seçkin kıldığımız ile ezelin hükmüyle mutsuz kıldığımız ve kendisine hakkımızı gösterdiğimiz ile kalbini zikrimizden gafil kıldığımız kimse de aynı değildir.

Şiir.

*Dostlar! Çok farklıdır vefalı ile sözünde durmayan*
*Asla bir değildir seven ile buğzeden*

اِنْ اَنْتَ اِلَّا نَذٖيرٌ ﴿٢٣﴾ اِنَّٓا اَرْسَلْنَاكَ بِالْحَقِّ بَشٖيرًا وَنَذٖيرًا وَاِنْ مِنْ
اُمَّةٍ اِلَّا خَلَا فٖيهَا نَذٖيرٌ ﴿٢٤﴾

23, 24- "Sen ancak bir uyarıcısın. Şüphesiz biz seni müjdeleyici ve uyarıcı olarak hak ile gönderdik. Hiçbir ümmet yoktur ki aralarında bir uyarıcı gelip geçmiş olmasın."

Yani senden öncekilerden hiçbir ümmet yoktur ki biz kendilerine bir uyarıcı göndermiş olmayalım. Senin zamanında ise biz, seni bütün ümmetlere hak ile gönderdik.

( اِنَّٓا اَرْسَلْنَاكَ بِالْحَقِّ بَشٖيرًا وَنَذٖيرًا ) *"Şüphesiz biz seni müjdeleyici ve uyarıcı olarak hak ile gönderdik."*

Ayet, şu açıklamayı içermektedir: Allah, hiçbir zamanı ve kavmi dinsiz bırakmamıştır. Hz. Peygamber (s.a.v.) zamanında ise Allah, sadece onu bütün yaratıklara peygamber olarak göndermiş, sonra da kendisini teselli etmek amacıyla şöyle buyurmuştur:

وَاِنْ يُكَذِّبُوكَ فَقَدْ كَذَّبَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ جَٓاءَتْهُمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنَاتِ وَبِالزُّبُرِ وَبِالْكِتَابِ الْمُنِيرِ ﴿٢٥﴾

25- "Eğer seni yalanlıyorlarsa bil ki, onlardan öncekiler de peygamberlerini yalanlamışlardı. Oysa peygamberleri onlara apaçık delilleri, sahifeleri ve aydınlatıcı kitabı getirmişlerdi."

Yani şayet onlar yalanlamayla sana karşılık veriyorlarsa bu, onların her peygambere karşı olan prensipleridir. Eğer onlar, sapıklıktaki âdetlerinde ısrar ederlerse sen, Allah'ın intikam almaya ve perişan etmeye dair prensibinde hiçbir değişiklik bulamayacaksın.

ثُمَّ اَخَذْتُ الَّذِينَ كَفَرُوا فَكَيْفَ كَانَ نَكِيرِ ﴿٢٦﴾

26- "Sonra ben, kâfir olanları yakaladım. Beni inkâr etmenin sonucu nasıl oldu!"

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ اَنْزَلَ مِنَ السَّمَٓاءِ مَٓاءً فَاَخْرَجْنَا بِهِ ثَمَرَاتٍ مُخْتَلِفًا اَلْوَانُهَا وَمِنَ الْجِبَالِ جُدَدٌ بِيضٌ وَحُمْرٌ مُخْتَلِفٌ اَلْوَانُهَا وَغَرَابِيبُ سُودٌ ﴿٢٧﴾

27- "Görmüyor musun ki Allah gökten su indirdi. Biz, onunla türlü türlü ürünler çıkardık. Dağlardan da beyaz, kırmızı çeşitli renklerde yollar ve simsiyah taşlar var."

Allah bu ayette ve benzeri ayetlerde, fiilin biçim ve özelliklere sahip olarak meydana gelmesinin, failin kastına dair delil ve burhanlardan olduğunu açıklamıştır. Fiilin titiz ve muhkem bir şekilde

yapılmasında ise onu yapanın ilmine ve hakkında bilgi verdiğine dair şahit bulunmaktadır.

وَمِنَ النَّاسِ وَالدَّوَآبِّ وَالْاَنْعَامِ مُخْتَلِفٌ اَلْوَانُهُ كَذٰلِكَ اِنَّمَا يَخْشَى اللّٰهَ مِنْ عِبَادِهِ الْعُلَمٰٓؤُا اِنَّ اللّٰهَ عَزِيزٌ غَفُورٌ ﴿٢٨﴾

28- "İnsanlardan, yeryüzünde hareket eden diğer canlılardan ve hayvanlardan yine böyle çeşitli renklerde olanlar vardır. Kulları içinden ancak âlim olanlar Allah'tan korkarlar. Şüphesiz Allah mutlak güç sahibidir, çok bağışlayıcıdır."

( وَمِنَ النَّاسِ وَالدَّوَآبِّ وَالْاَنْعَامِ مُخْتَلِفٌ اَلْوَانُهُ كَذٰلِكَ ) *"İnsanlardan, yeryüzünde hareket eden diğer canlılardan ve hayvanlardan yine böyle çeşitli renklerde olanlar vardır."*

Daha doğrusu bütün yaratıklar hemcins, fakat farklı renklerdedirler. Bu da onları celal sıfatıyla yaratan Allah'ın varlığının delilidir.

( اِنَّمَا يَخْشَى اللّٰهَ مِنْ عِبَادِهِ الْعُلَمٰٓؤُا ) *"Kulları içinden ancak âlim olanlar Allah'tan korkarlar."*

( إنّما ) *"innemâ-ancak"* kelimesi, bir yönüyle tahdit, yani tahsis ve kasır yerine geçen tahkik -pekiştirme- anlamını ifade eder. Bu itibarla Allah'a dair ilmi olmayan kimsenin O'ndan korkusu olmaz.

Bu arada "haşyet" ve "rehbet" kelimeleri arasındaki fark şudur: "Rehbet", sahibinin kaçmasına yol açan korkudur. Böylece o, kaçmaya devam eder. "Haşyet" ise gerçekleştiği zaman sahibinin dizginini çeker ve böylece o, Allah ile beraber kalır. Bu nedenle sonuç itibariyle "haşyet", "rehbet"e tercih edilmiştir.

Öte yandan korku, imanın gereğidir. Nitekim Allah, şöyle buyurmuştur:

( وَخَافُونِ اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ) *"Benden korkun, eğer mümin kimseler iseniz."* (Âl-i İmrân, 3/175)

Netice itibariyle haşyet ilmin gereğidir. Heybet de marifeti sağlar.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Âlimlerin korkusu, Allah'ın hakkını eda etmede kusur işlemelerinden dolayıdır.

- Bu korku Allah'ın, durumlarına muttali olmasından utanmaları sebebiyledir.

- Bu korku, kendilerinden edep dışı bir davranışın, bir saygısızlığın ve ağızlarından bir laf kaçırmak veya evlâ olanı terk etme ruhsatını tercih etmek şeklindeki zamansız bir açılımın meydana gelmesinden duydukları endişe sebebiyledir.

اِنَّ الَّذِينَ يَتْلُونَ كِتَابَ اللّٰهِ وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاَنْفَقُوا مِمَّا رَزَقْنَاهُمْ
سِرًّا وَعَلَانِيَةً يَرْجُونَ تِجَارَةً لَنْ تَبُورَ ﴿٢٩﴾

29- "Şüphesiz Allah'ın kitabını okuyanlar, namazı kılanlar ve kendilerine rızık olarak verdiğimiz şeylerden, gizlice ve açıktan Allah yolunda harcayanlar, asla zarar etmeyecek bir ticaret umabilirler."

Bütün vakitlerini, Allah'ın zikrini ve hakkını yerine getirmek, çeşitli ibadetler ve Allah'a yakınlaştıran iyi işlerle geçiren kimseler için Allah'a yaklaştırıcı en yüce değer ve en mükemmel memnuniyet payı vardır. Durumları bunun tersine olanlar ise kazançları da bunun aksine olur. Onlar, aziz velilerdir. Bunlar da zelil düşmanlardır.

لِيُوَفِّيَهُمْ اُجُورَهُمْ وَيَزِيدَهُمْ مِنْ فَضْلِهِ اِنَّهُ غَفُورٌ شَكُورٌ ﴿٣٠﴾

30- "Allah, kendilerine mükâfatlarını tam olarak versin ve kendi lütfundan daha da artırsın diye böyle yaparlar. Şüphesiz O, çok bağışlayandır, şükrün karşılığını verendir."

وَالَّذِي اَوْحَيْنَا اِلَيْكَ مِنَ الْكِتَابِ هُوَ الْحَقُّ مُصَدِّقًا لِمَا بَيْنَ يَدَيْهِ
اِنَّ اللّٰهَ بِعِبَادِهِ لَخَبِيرٌ بَصِيرٌ ﴿٣١﴾

31- "Sana vahyettiğimiz kitap, kendinden öncekini tasdik eden hak kitaptır. Şüphesiz Allah, hakkıyla haberdardır. Onları hakkıyla görür."

Seni seçmemiz, seni özel kılmamız ve her şeye tercih ettiğimize dair olarak sana verdiğimiz bilgi, sana anlattığımız şekildedir.

Şiir.

*Başka dost istemem senin yerine*
*Sözüme güven, güvenilir kimselerdir iyiler*

ثُمَّ اَوْرَثْنَا الْكِتَابَ الَّذِينَ اصْطَفَيْنَا مِنْ عِبَادِنَا فَمِنْهُمْ ظَالِمٌ
لِنَفْسِهِ وَمِنْهُمْ مُقْتَصِدٌ وَمِنْهُمْ سَابِقٌ بِالْخَيْرَاتِ بِاِذْنِ اللّٰهِ ذٰلِكَ
هُوَ الْفَضْلُ الْكَبِيرُ ﴿٣٢﴾

32- "Sonra biz o kitabı kullarımızdan seçtiğimiz kimselere miras olarak verdik. Onlardan kendine zulmedenler vardır. Onlardan ortada olanlar vardır. Yine onlardan Allah'ın izniyle hayırlı işlerde öne geçenler vardır. İşte bu, büyük lütuftur."

( اَوْرَثْنَا ) "*Miras olarak verdik.*"

Yani biz, kitabı -Kur'ân'ı- kullarımız arasından seçtiğimiz kimselere verdik. Burada Allah, vermeyi mecazen "miras" lafzıyla zikretmiştir. Ayetteki ( اصطفينا ) "*istafeynâ*" lafzı, seçtik anlamındadır. Sonra da Allah, seçtiği o kimselerin kısımlarını zikretmiştir.

Bir hadiste rivayet edildiğine göre bu ayet inince Hz. Peygamber (s.a.v.) üç kez şöyle buyurdu:

*"Kâbe'nin Rabbine yemin ederim ki bu, benim ümmetimdir"*

Bu arada ayette işaret yönünden bazı vecihler olup onlardan biri de şudur: Allah, bu lütfunu miras lafzıyla ifade edince, miras evlilik bağıyla sahih nesep gerektirir. O halde bu bağa sahip olmayan kimse için ne nesep ne de miras söz konusudur.

Öte yandan nesebin Allah'ın lütfu, sebebin de kulun fiili olduğu ileri sürülmüş olsa da burada nesep marifet, bağ da taattir. Bu da bir vecihtir. Şöyle de denilebilir: Nesep, Allah'ın ta baştan beri kulunu seçmiş olmasıdır. Sebep de ardından ona ihsanda bulunmasıdır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Nesep ehli kimseler, daha güçlü ve daha yakın gibi kısımlara ayrılır. İstihkakta da durum böyledir.

- Bütün mülk edinme şekillerinde kulun, satış gibi bir fiilinin olması gerekir. Hibe yoluyla mülk edinmek ise ancak kabul ve taksimat yoluyla gerçekleşebilir. Hak ediş de ancak hazır bulunmak, çaba harcamak ve benzeri durumlarla olur. Vasiyet ise sadece kabul ile hak edilir. Zekâtta da sehim sahiplerinin kabulü gerekir. Oysa mirasta vârisin herhangi bir katkısı ve fiili bulunmadığı gibi nesep de onun fiilleri cümlesinden değildir.

- Miras, farz sahibi ve asabe olmak üzere iki şekilde hak edilir. Bu arada asabe olmak, farz sahibi olmaktan daha güçlüdür. Çünkü bazen malın tamamını hak edebilir. Sonra mirasın taksimatına, farz sahipleriyle başlanır, sonra onlardan arta kalan kısım, asabeler içindir.

(فَمِنْهُمْ ظَالِمٌ لِنَفْسِهِ وَمِنْهُمْ مُقْتَصِدٌ وَمِنْهُمْ سَابِقٌ بِالْخَيْرَاتِ بِإِذْنِ اللهِ) *"Onlardan kendine zulmedenler vardır. Onlardan ortada olanlar vardır. Yine onlardan Allah'ın izniyle hayırlı işlerde öne geçenler vardır."*

Alimler, zulmeden konusunda çeşitli yorumlar dile getirmişlerdir. Bu çerçevede onlardan kimisi, zulmedenin daha üstün olduğunu söylemiştir. Bu görüşte olanlara göre bu, nefsine yüklediği ibadetin çokluğundan dolayı ona zulmeden kimsedir.

Çoğunluk ise en üstün olanın, öne geçen olduğu görüşündedir. Onlara göre, ayetin anlatımındaki sıralama önceliği, mertebece önceliği gerektirmez. Nitekim bunun pek çok benzerleri bulunmaktadır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, zulmedenin yanına "nefsine" karinesini, öne geçenin yanına da "Allah'ın izniyle" karinesini koymuştur. Buna göre zalimin bir

hatası vardı. Öne geçenin de bir atağı vardı. Hal böyle olunca Allah, "nefsine" sözüyle zulmedenin hatasını kaldırmış, "Allah'ın izniyle" sözüyle de öne geçenin atağını frenlemiştir.

Sanki Allah şöyle demiş olmaktadır:

Ey zalim! Kaldır başını! Sen zulmettin, ama nefsine zulmettin. Ey öne geçen! Sen de başını önüne eğ! Öne geçtin, ancak Allah'ın izniyle öne geçtin.

- Allah, aziz sıfatıyla bir zalim gördüğü zaman onun boynunu kırar. Kerim sıfatıyla da bir mazlum gördüğü zaman onun elinden tutar. Sanki şöyle demiş oluyor: Ey Zalim! Şayet zalim oluşun kahredilmeni gerektiriyorsa, mazlum olman da elinden tutmayı gerektirir.

- Zalim, hataları galip gelen kimsedir. Ortada olan, halleri dengeli olan kimsedir. Öne geçen de iyilikleri fazla olan kimsedir.

- Zalim, dünyasında zahid olan kimsedir. Ortada olan, ahiretini arzulayan kimsedir. Öne geçen de Mevlâ'sını her iki dünyaya tercih eden kimsedir.

- Zalim, aklının yıldızı beliren kimsedir. Ortada olan, ilminin dolunayı doğan kimsedir. Öne geçen de marifetinin güneşi ışıyan kimsedir.

- Zalim, Allah'ı arayandır. Ortada olan, Allah'ı bulandır. Öne geçen de Allah ile beraber kalandır.

- Zalim, günahı terk edendir. Ortada olan, gafleti terk edendir. Öne geçen de alakayı terk edendir.

- Zalim, malıyla cömertlik edendir. Ortada olan, nefsiyle cimrilik yapmayandır. Öne geçen de canıyla cömertlik edendir.

- Zalim, ilmelyakîn sahibi olandır. Ortada olan, aynelyakîn sahibi olandır. Öne geçen de hakkalyakîn sahibi olandır.

- Zalim, sevgi sahibi olandır. Ortada olan, dostluk sahibi olandır. Öne geçen de muhabbet sahibi olandır.

- Zalim, haramı terk eder. Ortada olan, şüpheyi terk eder. Öne geçen de ihtiyaç fazlasını terk eder.

- Zalim, cömertlik sahibidir. Ortada olan, eli açıktır. Öne geçen de başkasını kendine tercih eder.

- Zalim, ümit sahibidir. Ortada olan, bast sahibidir. Öne geçen de ünsiyet sahibidir.

- Zalim, korku sahibidir. Ortada olan, haşyet sahibidir. Öne geçen de heybet sahibidir.

- Zalime mağfiret vardır. Ortada olana, merhamet ve rıza vardır. Öne geçene de yakınlık ve sevgi vardır.

- Zalim, dünyaya sahiptir. Ortada olan, ahirete taliptir. Öne geçen de Mevlâ'ya taliptir.

- Zalim, kurtuluşa taliptir. Ortada olan, derecelere taliptir. Öne geçen de münacata sahiptir.

- Zalim, azaptan emin olmuştur. Ortada olan, sevap kazanmıştır. Öne geçen de Allah'a kesin yakınlık elde etmiştir.

- Zalim, hırs kırbacıyla dövülmekte, arzu kılıcıyla öldürülmekte ve hasret kapısında uzanmaktadır. Ortada olan, pişmanlık kırbacıyla dövülmekte, esef kılıcıyla öldürülmekte ve cömertlik kapısında uzanmaktadır. Öne geçen de mevcudiyet kırbacıyla dövülmekte, muhabbet kılıcıyla öldürülmekte ve arzu kapısında uzanmaktadır.

- Zalim, tevekkül sahibidir. Ortada olan teslimiyet sahibidir. Öne geçen de her şeyini Allah'a bırakmaktadır.

- Zalim, mevcudiyet sahibidir. Ortada olan, vecd sahibidir. Öne geçen de vücut sahibidir.

- Zalim, huzur sahibidir. Ortada olan, keşif sahibidir. Öne geçen de müşahede sahibidir.

- Zalim, Allah'ı dünya günleri kadar her cumada bir kez görür. Ortada olan O'nu her gün bir kez görür. Öne geçen ise O'ndan hiç engellenmez.

- Zalim, Allah'ın, lütfundan ibaret olan fiiline cezp edilir. Ortada olan, Allah'ın izzet sıfatıyla keşfe mazhar kılınır. Öne geçen de Allah'ın varlığından ibaret olan hakkında yok edilir.

( ذٰلِكَ هُوَ الْفَضْلُ الْكَبِيرُ ) *"İşte bu, büyük lütuftur."*

Çünkü Allah zalimi, öne geçen ile birlikte zikretmiştir.

جَنَّاتُ عَدْنٍ يَدْخُلُونَهَا يُحَلَّوْنَ فِيهَا مِنْ اَسَاوِرَ مِنْ ذَهَبٍ وَلُؤْلُؤًا
وَلِبَاسُهُمْ فِيهَا حَرِيرٌ ﴿٣٣﴾

33- "Onlar, Adn cennetlerine girerler. Orada altın bilezikler ve incilerle süslenirler. Oradaki elbiseleri de ipektir."

Allah, burada onların cennete girmelerinin hak etmeleri sebebiyle değil, aksine Allah'ın lütfuyla olduğuna dikkat çekmiştir. Lütufta ise ayırım yoktur.

وَقَالُوا الْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذِي اَذْهَبَ عَنَّا الْحَزَنَ اِنَّ رَبَّنَا لَغَفُورٌ شَكُورٌ ﴿٣٤﴾

34- "Şöyle derler: 'Hamd, bizden hüznü gideren Allah'a mahsustur. Şüphesiz Rabbimiz çok bağışlayandır, şükrün karşılığını verendir.'"

Onlar, hoşnutluğun hakikatlerini birer gerçek olarak yaşadılar. Bu arada üzüntü halinin "hüzün" diye adlandırılması, vaktin, üzüntü sahibinin üzerinde ağırlaşması sebebiyledir. Cennette ise hüzün bulunmamaktadır. Oradaki durum, sadece hoşnutluktan ve sevinçten ibarettir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- O üzüntü, akıbet korkusunun üzüntüsüdür.

- O üzüntü, edep dışılığın meydana geleceği korkusuyla, riayetin devam etmesidir.

- O üzüntü, nefsin siyasetidir.

( اِنَّ رَبَّنَا لَغَفُورٌ ) *"Şüphesiz Rabbimiz çok bağışlayandır."*

Allah, günahkârları bağışlayandır.

( شَكُورٌ ) *"Şükrün karşılığını verendir."*

İtaat edenlerin şükrüne karşılık verendir.

Bu arada Allah, hallerinin zayıflığından dolayı günahkârlara acıdığı için onları öne almıştır.

اَلَّذِيٓ اَحَلَّنَا دَارَ الْمُقَامَةِ مِنْ فَضْلِهٖ لَا يَمَسُّنَا فِيهَا نَصَبٌ وَلَا يَمَسُّنَا فِيهَا لُغُوبٌ ﴿٣٥﴾

35- "O, lütfuyla bizi kalınacak yurda yerleştirendir. Bize orada bir yorgunluk dokunmaz. Bize orada usanç gelmez."

( دَارَ الْمُقَامَةِ ) *"Kalınacak yurt."*

Bu, ikamet yurdu demek olup orada yaşayanlar, oradan ayrılmak istemezler ve oradan çıkmayı temenni etmezler.

( لَا يَمَسُّنَا فِيهَا نَصَبٌ وَلَا يَمَسُّنَا فِيهَا لُغُوبٌ ) *"Bize orada bir yorgunluk dokunmaz. Bize orada usanç gelmez."*

Onlar, orada Mevlâ'larını görmek istedikleri zaman mesafe kat etmeye muhtaç olmazlar. Aksine odalarında kalarak orada selama ve esenliğe kavuşurlar. Mevlâ'yı gördükleri zaman ise gözlerini herhangi bir tarafa çevirmeye veya bakışlarını bir noktaya dikmeye muhtaç olmazlar. Onlar, Mevlâ'yı bulundukları vaziyet üzere, keyfiyetsiz olarak görürler.

وَالَّذِينَ كَفَرُوا لَهُمْ نَارُ جَهَنَّمَ لَا يُقْضٰى عَلَيْهِمْ فَيَمُوتُوا وَلَا يُخَفَّفُ عَنْهُمْ مِنْ عَذَابِهَا كَذٰلِكَ نَجْزِي كُلَّ كَفُورٍ ﴿٣٦﴾

36- "İnkâr edenler için ise cehennem ateşi vardır. Öldürülmezler ki ölsünler. Kendilerinden cehennem azabı da hafifletilmez. İşte biz, her nankörü böyle cezalandırırız."

Onlar için ne yararlanacakları bir hayat ne de kendisiyle rahatlayacakları bir ölüm vardır. Onlar, azap ve mahcubiyet içinde kalırlar. Azapları yavaşlamaz ve üzerlerinden ceza kaldırılmaz.

وَهُمْ يَصْطَرِخُونَ فِيهَا رَبَّنَٓا اَخْرِجْنَا نَعْمَلْ صَالِحًا غَيْرَ الَّذ۪ي كُنَّا
نَعْمَلُ اَوَلَمْ نُعَمِّرْكُمْ مَا يَتَذَكَّرُ ف۪يهِ مَنْ تَذَكَّرَ وَجَٓاءَكُمُ النَّذ۪يرُ فَذُوقُوا
فَمَا لِلظَّالِم۪ينَ مِنْ نَص۪يرٍ ﴿٣٧﴾

37- "Onlar cehennemde: 'Ey Rabbimiz! Bizi buradan çıkar ki dünyada iken işlemekte olduğumuzdan başka ameller, salih ameller işleyelim' diye bağrışırlar. 'Sizi, düşünüp öğüt alacak kimsenin, düşünüp öğüt alabileceği kadar yaşatmadık mı? Size uyarıcı da geldi. Öyle ise tadın azabı! Çünkü zalimler için hiçbir yardımcı yoktur.'"

Onlar şöyle derler: "Ey Rabbimiz! Bizi buradan çıkar ki dünyada iken işlemekte olduğumuzdan başka ameller, salih ameller işleyelim." Bunun üzerine onlara: "Sizi, düşünüp öğüt alacak kimsenin, düşünüp öğüt alabileceği kadar yaşatmadık mı?" denir.

Siz yaşlanmadan önce size uyarıcı gelmedi mi?

Bir yoruma göre de onlara: "Siz, verilen mühlet süresini, düşünmede harcamadınız mı?" denir.

( وَجَٓاءَكُمُ النَّذ۪يرُ ) *"Size uyarıcı da geldi."*

Peygamberler geldi.

Uyarıcı konusunda şu yorumlar da yapılmıştır.

- Uyarıcı, ihtiyarlığın güçsüzlüğüdür.

- Uyarıcı, dişlerin dökülmesidir.

- Uyarıcı, belin kamburlaşmasıdır.

اِنَّ اللّٰهَ عَالِمُ غَيْبِ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ اِنَّهُ عَل۪يمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ ﴿٣٨﴾

38- "Şüphesiz Allah, göklerin ve yerin gaybını bilendir. Şüphesiz O, göğüslerin özünü hakkıyla bilendir."

Yani Allah, ihlas sahiplerinin ihlasını, doğruların doğruluğunu, münafıkların münafıklığını ve kâfirlerin inkârını bilir. Allah, insanlara kötülük yapmak isteyenleri de, Allah hakkında güzel zanda bulunanları da bilir.

هُوَ الَّذِي جَعَلَكُمْ خَلَٓائِفَ فِي الْاَرْضِ فَمَنْ كَفَرَ فَعَلَيْهِ كُفْرُهُ وَلَا يَزِيدُ الْكَافِرِينَ كُفْرُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ اِلَّا مَقْتًا وَلَا يَزِيدُ الْكَافِرِينَ كُفْرُهُمْ اِلَّا خَسَارًا ﴿٣٩﴾

39- "O, sizi yeryüzünde halifeler kılandır. Artık kim inkâr ederse inkârı kendi aleyhinedir. İnkârcıların inkârı, Rableri katında ancak uğrayacakları gazabı artırır. İnkârcıların inkârı, ancak ziyanlarını artırır."

Her asrın halkı, kendilerinden öncekilerin halefleridir. Bu haleflerin kimisi, seleflerinin yükünü taşırlar, kimileri de rezil ve aşağılık kimselerdir. Bu arada fazilet sahiplerinin zamanı kendileri için sıkıntı iken, rezil kimseler de kendi zamanları için sıkıntıdırlar.

Şiir:

*Bir gün ki bütün zamanlara değer ondan dolayı*
*Selam verdi yarın ve dönüp baktı dün*

قُلْ اَرَاَيْتُمْ شُرَكَٓاءَكُمُ الَّذِينَ تَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ اَرُونِي مَاذَا خَلَقُوا مِنَ الْاَرْضِ اَمْ لَهُمْ شِرْكٌ فِي السَّمٰوَاتِ اَمْ اٰتَيْنَاهُمْ كِتَابًا فَهُمْ عَلٰى بَيِّنَتٍ مِنْهُ بَلْ اِنْ يَعِدُ الظَّالِمُونَ بَعْضُهُمْ بَعْضًا اِلَّا غُرُورًا ﴿٤٠﴾

40- "De ki: 'Allah'ı bırakıp da taptığınız ortaklarınızı gördünüz mü? Gösterin bana, onlar yerden ne yaratmışlardır?' Yoksa onların göklerde bir ortaklıkları mı var? Yoksa kendilerine bir kitap verdik de o kitaptan açık bir delile mi sahip bulunuyorlar? Hayır, zalimler birbirlerine, aldatmadan başka bir şey vaat etmezler."

Allah, görüşlerinin akılsızca olduğunu ortaya koymak için putlarının çaresizliğini onlara göstermeyi ve tanrı edindikleri putların yetersizliğini tekrarlamıştır. Bir de Allah, dikkatlerini çirkin davranışlarına ve fiillerine, gayretlerinin değersizliğine ve akıllarının eksikliğine çekmek istemiştir.

Sonra da Allah onlara, yükümlü kılındıkları hususlardan hiçbir şeyi yerine getirmediklerini ve kendilerine sorulanlara doğru bir cevap veremediklerini bildirmiştir.

اِنَّ اللّٰهَ يُمْسِكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ اَنْ تَزُولَا وَلَئِنْ زَالَتَٓا اِنْ
اَمْسَكَهُمَا مِنْ اَحَدٍ مِنْ بَعْدِهٖ اِنَّهُ كَانَ حَلِيمًا غَفُورًا ﴿٤١﴾

41- "Şüphesiz Allah gökleri ve yeri, yok olup gitmesinler diye tutuyor. Andolsun, eğer onlar yok olur giderlerse, O'ndan başka hiç kimse onları tutamaz. Şüphesiz O, halîmdir, çok bağışlayandır."

Allah, gökleri ve yeri kudretiyle tutmuş, hikmetiyle muhkem yaratmış, iradesiyle onlara düzen vermiş ve hükmüne uygun olarak sakinlerini yaratmıştır. Bunları yaparken ne göklerin ve yerin bırakılması ve yok edilmesinde O'na katkıda bulunan bir benzeri ne de düzen içinde var olmalarında, O'nunla bunu paylaşan bir ortağı vardır.

وَاَقْسَمُوا بِاللّٰهِ جَهْدَ اَيْمَانِهِمْ لَئِنْ جَٓاءَهُمْ نَذِيرٌ لَيَكُونُنَّ اَهْدٰى مِنْ
اِحْدَى الْاُمَمِ فَلَمَّا جَٓاءَهُمْ نَذِيرٌ مَا زَادَهُمْ اِلَّا نُفُورًا ﴿٤٢﴾

42- "Müşrikler, eğer kendilerine bir uyarıcı gelirse, ümmetlerden herhangi birinden daha çok doğru yol üzere olacaklarına dair en güçlü şekilde Allah'a yemin etmişlerdi. Fakat onlara bir uyarıcı gelince, bu ancak onların nefretlerini artırdı."

Söylediklerinin hiçbir gerçekliği bulunmamaktadır. Sözlerinin ve taahhütlerinin de hiçbir güvenilirliği yoktur. Kendilerinden verdikleri söz açık bir yalan, vehmettirdikleri vefaları da bir aldatmadır.

Mürid de müridlik faaliyetleri esnasında böyledir; nefsi onu kuruntulara sevk eder. Bu çerçevede nefsi, hali bakımından onun önüne geçmiş olan kimselerin önünde, kendisinin Allah'a söz verdiğini ve O'nunla olan akdini pekiştirdiğini göstermeye çalışır. Oysa şehveti kendisini ısırıp şeytan da, onu yalancı çıkarmak istediği zaman, tuzağıyla kendisini yere yıkar, sapıklığının çukuruna ve nefsini kuruntusuna geri döndürür. Böylece yüzü kararır ve Allah katındaki itibarı yok olup gider.

اِسْتِكْبَارًا فِي الْاَرْضِ وَمَكْرَ السَّيِّئِ وَلَا يَحِيقُ الْمَكْرُ السَّيِّئُ اِلَّا بِاَهْلِهِ فَهَلْ يَنْظُرُونَ اِلَّا سُنَّتَ الْاَوَّلِينَ فَلَنْ تَجِدَ لِسُنَّتِ اللّٰهِ تَبْدِيلًا وَلَنْ تَجِدَ لِسُنَّتِ اللّٰهِ تَحْوِيلًا ﴿٤٣﴾

43- "Yeryüzünde büyüklük taslamak ve kötü tuzak kurmak için böyle davranıyorlar. Oysa kötü tuzak, ancak sahibini kuşatır. Onlar, ancak öncekilere uygulanan kanunu bekliyorlar. Sen, Allah'ın kanununda hiçbir sapma bulamazsın."

اَوَلَمْ يَسِيرُوا فِي الْاَرْضِ فَيَنْظُرُوا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ وَكَانُوٓا اَشَدَّ مِنْهُمْ قُوَّةً وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُعْجِزَهُ مِنْ شَيْءٍ فِي السَّمٰوَاتِ وَلَا فِي الْاَرْضِ اِنَّهُ كَانَ عَلِيمًا قَدِيرًا ﴿٤٤﴾

44- "Yeryüzünde dolaşıp kendilerinden öncekilerin sonunun nasıl olduğuna bakmadılar mı? Oysa onlar, kendilerinden daha kuvvetli idiler. Göklerdeki ve yerdeki hiçbir şey, Allah'ı aciz bırakacak değildir. Şüphesiz o, hakkıyla bilendir, gerçek kudret sahibidir."

Hulasa Allah'ın hiçbir dostu hayal kırıklığına uğramamış, hiçbir düşmanı da kazançlı çıkmamıştır. Niyeti çarpık olan kimse hakikate ermez aksine kendi tuzağına düşer. Bir de Allah (c.c.), düşmanlarını yerle bir eder. Dostlarına olan büyük lütfunu ise alabildiğine genişletir.

وَلَوْ يُؤَاخِذُ اللّٰهُ النَّاسَ بِمَا كَسَبُوا مَا تَرَكَ عَلٰى ظَهْرِهَا مِنْ دَٓابَّةٍ
وَلٰكِنْ يُؤَخِّرُهُمْ اِلٰٓى اَجَلٍ مُسَمًّى فَاِذَا جَٓاءَ اَجَلُهُمْ فَاِنَّ اللّٰهَ كَانَ
بِعِبَادِهٖ بَصِيرًا ﴿٤٥﴾

45- "Eğer Allah, insanları kazandıkları yüzünden hemen cezalandıracak olsaydı, yerküre üzerinde hiçbir canlı bırakmazdı. Fakat Allah onları belirli bir süreye kadar erteliyor. Nihayet vakitleri gelince gerekeni yapar. Çünkü Allah, kullarını görmektedir."

Eğer Allah, onların hak ettikleri sevap ve azabı çabuklaştırsaydı, az olan ömürleri ve kısa olan günleri buna yetmezdi. Bu nedenle sevabı ve azabı haşir gününe ertelemiştir. Çünkü o gün uzundur. Allah da her şeye kadirdir, kullarının işlerinden haberdardır ve onları görendir.

سورة يٰسٓ

# YÂSİN SÛRESİ

(Yâsin Sûresi Mekke'de inmiş olup, 83 âyettir.
Yalnız 45. âyet Medine'de inmiştir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" Allah'ın, hitabını kendisiyle açtığı bir ayettir. Her kim onu bilirse, Allah onun sevabını artırır. Kim onu tanırsa, Allah onun iyiliklerinin sonuçlarını çoğaltır. Kim de onun kadrini büyük tutarsa, Allah onun dönüşünü güzel kılar.

يٰسٓ ﴿١﴾ وَالْقُرْاٰنِ الْحَكِيمِ ﴿٢﴾

1, 2- "Yâ Sîn. Hikmet dolu Kur'ân'a andolsun."

"*Yâ Sîn*" lafzı konusunda şu iki yorum yapılmıştır:

- Bunun anlamı: "Ey büyük insan!" demektir.

- "Yâ" harfi, Allah'ın, kullarından iman sözü aldığı güne, "Sîn" harfi de Allah'ın sevdikleriyle olan sırrına işaret etmektedir. Buna göre ifade edilmek istenen şudur: Kullarımdan iman sözü aldığım güne, sevdiklerimle olan sırrıma ve hikmet dolu Kur'ân'a yemin ederim ki:

إِنَّكَ لَمِنَ الْمُرْسَلِينَ ﴿٣﴾ عَلٰى صِرَاطٍ مُسْتَقِيمٍ ﴿٤﴾

3, 4- "Sen elbette dosdoğru bir yol üzere gönderilenlerdensin."

Yani ey Muhammed! Şüphesiz sen peygamber olarak gönderilenlerdensin ve şüphesiz sen, dosdoğru bir yol üzeresin.

تَنْزِيلَ الْعَزِيزِ الرَّحِيمِ ﴿٥﴾

5- "Kur'ân, mutlak güç sahibi, çok merhametli Allah tarafından indirilmiştir."

Yani bu kitap, aziz ve rahim olan Allah'ın indirdiğidir. Aziz, itaatkârların itaatine muhtaç olmayan ve yüce, rahim de mümin kullarına lütufta bulunan demektir.

لِتُنْذِرَ قَوْمًا مَٓا اُنْذِرَ اٰبَٓاؤُ۬هُمْ فَهُمْ غَافِلُونَ ﴿٦﴾

6- "Onu, ataları uyarılmamış, bu yüzden de gaflet içinde olan bir kavmi uyarman için indirmiştir."

Yani biz, fetret döneminde ortaya çıkan, selefleri de bu vasıf üzere yok olup giden bir kavmi kendisiyle uyarman için sana bu Kur'ân'ı tahsis ettik ve hak ile bâtılı birbirinden ayıran bu kitabı sana indirdik.

لَقَدْ حَقَّ الْقَوْلُ عَلٰٓى اَكْثَرِهِمْ فَهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿٧﴾

7- "Andolsun, onların çoğu üzerine o söz hak olmuştur. Artık onlar iman etmezler."

Yani azaba dair söz, onların çoğu üzerine hak olmuştur. Çünkü onlar, inkârlarında ısrar ettiler ve cehaletlerine daldılar. Bu nedenle onlardan anlaşılan husus ve haklarında verilen hüküm iman etmeyecekleridir.

اِنَّا جَعَلْنَا فٖيٓ اَعْنَاقِهِمْ اَغْلَالًا فَهِيَ اِلَى الْاَذْقَانِ فَهُمْ مُقْمَحُونَ ﴿٨﴾

8- "Onların boyunlarına demir halkalar geçirdik, o halkalar çenelerine dayanmıştır. Bu sebeple kafaları yukarıya kalkık durumdadır."

Biz onları alçalacakları ve aşağılanacakları bir konuma doğru sürükleyeceğiz ve kendilerine durumlarının vebalini tattıracağız.

وَجَعَلْنَا مِنْ بَيْنِ اَيْدٖيهِمْ سَدًّا وَمِنْ خَلْفِهِمْ سَدًّا فَاَغْشَيْنَاهُمْ فَهُمْ لَا يُبْصِرُونَ ﴿٩﴾

9- "Biz onların önlerine bir set, arkalarına da bir set çekip gözlerini perdeledik. Artık görmezler."

Yani biz bugün onları dalaletin denizlerinde boğduk ve cehaletin çadırlarıyla kuşatma altına aldık. Ahirette ise onları ateşte boğup prangalara vuracağız, zincir ve kelepçelerle de kendilerini darlık içine düşüreceğiz.

( فَاَغْشَيْنَاهُمْ ) *"Gözlerini perdeledik."*

Biz bugün onları, delili göremez kıldık. Ahirette de onları amaca ulaştıran yolu şaşırır hale getireceğiz. Böylece onlar alçalmış olarak cehennemin çukurlarında tökezlerler, terk edilmiş, kovulmuş ve lanetlenmiş olarak da yakıcı azaplarında kalırlar. Kendisiyle azap çektikleri ateşi onlardan alıkoymayacağız. Şikayetleri konusunda onlara acımayacağız. Küfrün mahrumiyeti onlar için uzun sürmüş, mutsuzluğun çadırları onları kuşatmış ve ayrılık damgası onlara yapışmış olacaktır.

وَسَوَٓاءٌ عَلَيْهِمْ ءَاَنْذَرْتَهُمْ اَمْ لَمْ تُنْذِرْهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿١٠﴾

10- "Onları uyarsan da uyarmasan da onlar için birdir, inanmazlar."

Hakk'ın terk ettiğini kimse vuslata erdiremez, Hakk'ın geri çevirdiğini kimse kabul edemez, ilahî iradenin yıktığı ve kaderin mahkum ettiği kimseye de nasihat fayda vermez.

إِنَّمَا تُنْذِرُ مَنِ اتَّبَعَ الذِّكْرَ وَخَشِيَ الرَّحْمٰنَ بِالْغَيْبِ فَبَشِّرْهُ بِمَغْفِرَةٍ وَاَجْرٍ كَرِيمٍ ﴿١١﴾

11- "Sen ancak zikre uyanı ve görmediği halde Rahmân'dan korkan kimseyi uyarırsın. İşte onu bir bağışlanma ve güzel bir ecirle müjdele."

Yani senin uyarmandan sadece zikre uyan kimse faydalanır. Çünkü senin uyarın, her ne kadar her konuda ve herkes için ise de şüphesiz kâfir olanlar sapıklıklarında ısrar etmektedirler. Dikkat edin, yaptıklarının çirkinliğini bilmeseler de onların verdikleri hüküm çok kötüdür. Zikre uyanlar, basiret sahibi olanlar, senden duydukları şeylerden faydalananlar ve onlarla amel edenlere gelince şüphesiz onlar kendilerini müjdelemeni hak etmişlerdir. O halde sen de onları müjdele ve vereceğin haberin içeriğiyle yüzlerinde sevinç belirecek şekilde onlara haber ver.

( فَبَشِّرْهُ بِمَغْفِرَةٍ وَاَجْرٍ كَرِيمٍ ) *"Güzel bir ecirle müjdele."*

Yani amellerinde halel olsa da sen onları, amellerine karşılık olarak büyük ve bol bir ecirle müjdele.

إِنَّا نَحْنُ نُحْيِ الْمَوْتٰى وَنَكْتُبُ مَا قَدَّمُوا وَاٰثَارَهُمْ وَكُلَّ شَيْءٍ اَحْصَيْنَاهُ فٖي إِمَامٍ مُبِينٍ ﴿١٢﴾

12- "Şüphesiz biz ölüleri mutlaka diriltiriz. Onların daha önce yaptıklarını ve bıraktıkları eserlerini yazarız. Biz her şeyi apaçık bir kitapta bir bir kaydetmişizdir."

Kasvetle ölen kimi kalpleri, üzerlerine yağdırmakta olduğumuz ikbal ve yakınlık yağmuruyla diriltiriz. Onların daha önce yaptıklarını yazarız. Bir de eserlerini yani camilere giderken attıkları adımları, bizimle münacat makamında duruşlarını, gözyaşlarının yanakları üzerinde süzülüşünü ve nefeslerinin yükselişini yazarız.

( وَكُلَّ شَيْءٍ اَحْصَيْنَاهُ فِي اِمَامٍ مُبِينٍ ) *"Biz, her şeyi apaçık bir kitapta bir bir kaydetmişizdir."*

Ayrıntısını Levh-i Mahfuz'da kaydettik. Ancak biz bunu, o ayrıntıyı unutacağımız için yapmadık. Biz ki her şeyi sayıya dökmüşüz, nasıl olur da unuturuz? Fakat biz, sevdiklerimizin eserlerini kitabımızda saklı olan bilgilerin arasında kaydetmek istedik.

وَاضْرِبْ لَهُمْ مَثَلًا اَصْحَابَ الْقَرْيَةِ اِذْ جَٓاءَهَا الْمُرْسَلُونَ ﴿١٣﴾

13- "Onlara, o memleket halkını örnek ver. Hani oraya elçiler gelmişti."

Zamanları gelmiş geçmiş, yaşadıkları anlar ve durumları unutulmuştur. Fakat biz, vakitleri geçtikten sonra da onların hallerini hatırlar, yok olup geçmiş insanların, sevdiklerimiz arasında ve dostlarımızın dillerinde zikrinin geçmemesine rıza göstermeyiz. Şu mahlûka bakın ki yine bir mahlûkun vasfında şöyle der:

Şiir.

*Unuttuğu zaman insanlar kardeşlerini*
*Ve hıyanet ettiği zaman dostluğa dostları*
*Var bende kayıp dostlarım için*
*Başlığı senin zikrin olan sayfalar*

اِذْ اَرْسَلْنَٓا اِلَيْهِمُ اثْنَيْنِ فَكَذَّبُوهُمَا فَعَزَّزْنَا بِثَالِثٍ فَقَالُٓوا اِنَّٓا اِلَيْكُمْ مُرْسَلُونَ ﴿١٤﴾

14- "Hani biz onlara iki elçi göndermiştik de onları yalanlamışlardı. Biz de, onlara üçüncü bir elçi ile destek vermiştik. Onlar: 'Şüphesiz biz, size gönderilmiş elçileriz' dediler."

قَالُوا مَٓا اَنْتُمْ اِلَّا بَشَرٌ مِثْلُنَا وَمَٓا اَنْزَلَ الرَّحْمٰنُ مِنْ شَيْءٍ اِنْ اَنْتُمْ اِلَّا
تَكْذِبُونَ ﴿١٥﴾ قَالُوا رَبُّنَا يَعْلَمُ اِنَّٓا اِلَيْكُمْ لَمُرْسَلُونَ ﴿١٦﴾ وَمَا عَلَيْنَٓا
اِلَّا الْبَلَاغُ الْمُبِينُ ﴿١٧﴾

15, 16, 17- "Onlar şöyle dediler: 'Siz de ancak bizim gibi insansınız. Rahmân hiçbir şey indirmemiştir. Siz sadece yalan söylüyorsunuz.' Elçiler de dediler ki: 'Bizim gerçekten size gönderilmiş elçiler olduğumuzu Rabbimiz biliyor. Bize düşen, sadece apaçık bir tebliğdir.'"

Elçiler: *"Bizim gerçekten size gönderilmiş elçiler olduğumuzu Rabbimiz biliyor. Biz ise, bize emredilen tebliğ ve uyarıdan başka bir şey bilmeyiz"* dediler.

قَالُوٓا اِنَّا تَطَيَّرْنَا بِكُمْ لَئِنْ لَمْ تَنْتَهُوا لَنَرْجُمَنَّكُمْ وَلَيَمَسَّنَّكُمْ مِنَّا
عَذَابٌ اَلِيمٌ ﴿١٨﴾

18- "Onlar da şöyle dediler: 'Şüphesiz biz sizin yüzünüzden uğursuzluğa uğradık. Eğer vazgeçmezseniz, sizi mutlaka taşlarız ve bizim tarafımızdan size elem dolu bir azap dokunur.'"

Mutlaka sizi taşlarız, şöyle yaparız böyle ederiz. Bunun üzerine peygamberler onlara şu cevabı verdiler: *"Sizler, cehaletiniz ve inkârınız sebebiyle mutlaka uyarıldığınız hususlarla karşılaşacaksınız."*

قَالُوا طَٓائِرُكُمْ مَعَكُمْ اَئِنْ ذُكِّرْتُمْ بَلْ اَنْتُمْ قَوْمٌ مُسْرِفُونَ ﴿١٩﴾

19- "Elçiler de: 'Uğursuzluğunuz kendinizdendir. Size öğüt verildiği için mi? Hayır, siz aşırı giden bir kavimsiniz' dediler."

وَجَٓاءَ مِنْ اَقْصَا الْمَدِينَةِ رَجُلٌ يَسْعٰى قَالَ يَا قَوْمِ اتَّبِعُوا الْمُرْسَلِينَ
﴿٢٠﴾ اِتَّبِعُوا مَنْ لَا يَسْئَلُكُمْ اَجْرًا وَهُمْ مُهْتَدُونَ ﴿٢١﴾

20, 21- "Şehrin öbür ucundan bir adam koşarak geldi ve şöyle dedi: 'Ey kavmim! Bu elçilere uyun. Sizden hiçbir ücret istemeyen kimselere uyun. Onlar hidayete erdirilmiş kimselerdir.'"

Kıssasında yer aldığına göre; o adam bir köyden gelmişti. Ancak Allah, o köyü şehir diye adlandırarak: "Şehrin öbür ucundan" buyurmuştur. Bu arada o yerin en uzak ve en yakın ucu arasında fazla bir aralık yoktu. Ancak Allah, kulundan hoşnut olduğu zaman, onun az miktardaki amelini çok saymayı, bahşettiği çok miktardaki ilâhî lütfünü ise az saymayı prensip edinmiştir.

( اِتَّبِعُوا مَنْ لَا يَسْـَٔلُكُمْ اَجْرًا ) *"Sizden hiçbir ücret istemeyen kimselere uyun."*

Böylece o adam, vaazı iletti ve nasihati içtenlikle yaptı. Ne var ki durum, şu dizelerde dedikleri gibi oldu:

*Nice nasihatler serdettim eserleriniz hakkında*
*Oysa bazen nefretten bile faydalanır nasihati kabul eden*

O adam halinde samimi, kavminden gördüklerine karşı sabırlı davranıp tövbeye dönünce Allah, onu güzel lütuflarıyla buluşturdu ve ikbalinin himayesinde barındırdı. O da Rabbinin kendisine söz verdiği lütuflarını buldu.

وَمَا لِيَ لَٓا اَعْبُدُ الَّذ۪ي فَطَرَن۪ي وَاِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ﴿٢٢﴾

22- "Hem ben, ne diye beni yaratana kulluk etmeyeyim. Oysa siz de yalnızca O'na döndürüleceksiniz."

ءَاَتَّخِذُ مِنْ دُونِه۪ٓ اٰلِهَةً اِنْ يُرِدْنِ الرَّحْمٰنُ بِضُرٍّ لَا تُغْنِ عَنّ۪ي شَفَاعَتُهُمْ
شَيْـًٔا وَلَا يُنْقِذُونِ ﴿٢٣﴾

23- "O'nu bırakıp da başka ilahlar mı edineyim? Eğer Rahmân bana bir zarar vermek isterse, onların şefaati bana hiçbir fayda sağlamaz ve beni kurtaramazlar."

إِنّ۪ٓي اِذًا لَف۪ي ضَلَالٍ مُب۪ينٍ ﴿٢٤﴾

24- "O takdirde ben mutlaka açık bir sapıklık içinde olurum."

اِنّ۪ٓي اٰمَنْتُ بِرَبِّكُمْ فَاسْمَعُونِ ﴿٢٥﴾

25- "Şüphesiz ben, sizin Rabbinize inandım. O halde gelin beni dinleyin."

ق۪يلَ ادْخُلِ الْجَنَّةَ قَالَ يَا لَيْتَ قَوْم۪ي يَعْلَمُونَ ﴿٢٦﴾ بِمَا غَفَرَ ل۪ي رَبّ۪ي وَجَعَلَن۪ي مِنَ الْمُكْرَم۪ينَ ﴿٢٧﴾

26, 27- "Ona: 'Cennete gir' denildi. O da: 'Keşke kavmim, Rabbimin beni bağışladığını ve beni ikram edilenlerden kıldığını bilseydi' dedi."

O adam, kavminin halini bilmesini temenni etti. Allah da onun temennisini kabul ederek halinden haber verdi, onunla ilgili olarak hitabını indirdi ve kavmi bunu öğrenmiş oldu. Onun bunu temenni edip istemesinin yegâne sebebi ise onlara olan şefkati idi. Ta ki onlar da onun yaptığı gibi yapsınlar ve bulduğu gibi bulsunlar.

وَمَٓا اَنْزَلْنَا عَلٰى قَوْمِه۪ مِنْ بَعْدِه۪ مِنْ جُنْدٍ مِنَ السَّمَٓاءِ وَمَا كُنَّا مُنْزِل۪ينَ ﴿٢٨﴾ اِنْ كَانَتْ اِلَّا صَيْحَةً وَاحِدَةً فَاِذَا هُمْ خَامِدُونَ ﴿٢٩﴾

28, 29- "Kendisinden sonra kavmi üzerine gökten hiçbir ordu indirmedik. İndirecek de değildik. Sadece korkunç bir ses oldu. Bir anda sönüp gittiler."

Olan, onları cezalandırmaya dair kararımızdan ve içinde bulundukları esenliği belaya çevirmekten başka bir şey değildi.

يَا حَسْرَةً عَلَى الْعِبَادِ مَا يَأْتِيهِمْ مِنْ رَسُولٍ اِلَّا كَانُوا بِهِ يَسْتَهْزِؤُنَ ٣٠

30- “Yazık o kullara! Kendilerine bir peygamber gelmezdi ki, onunla alay ediyor olmasınlar.”

Şayet bugün hasret çekmedilerse, şüphesiz yarın onlar için hasret çekecekleri yer vardır. Sebebi ise tek yol olarak peygamberleri yalanlama ve onlara karşı çıkma yolunu izlemeleri ve Allah’ın velilerine düşmanlık yapmalarıdır.

اَلَمْ يَرَوْا كَمْ اَهْلَكْنَا قَبْلَهُمْ مِنَ الْقُرُونِ اَنَّهُمْ اِلَيْهِمْ لَا يَرْجِعُونَ ٣١
وَاِنْ كُلٌّ لَمَّا جَمِيعٌ لَدَيْنَا مُحْضَرُونَ ٣٢

31, 32- “Kendilerinden önce nice nesilleri helak ettiğimizi, onların artık kendilerine dönmeyeceklerini görmediler mi? Onların hepsi de mutlaka toplanıp huzurumuza çıkarılacaklardır.”

Onlar, kendilerinden önceki dönemlerin kavimlerine neler yaptığımızı ve geçmiş milletlere yaptığımız muameleyi görmediler mi? Böylece onlara hiç kimse dönmedi. Onların hepsi ilahi kudretin tasarrufu altındaydı. Bir de onlardan hiçbiri bizden kaçamadığı gibi hiçbirinin bize karşı bir yardımcısı ve destekleyicisi de yoktu, hükmümüzün dışına çıkmak da söz konusu değildi.

وَاٰيَةٌ لَهُمُ الْاَرْضُ الْمَيْتَةُ اَحْيَيْنَاهَا وَاَخْرَجْنَا مِنْهَا حَبًّا فَمِنْهُ يَأْكُلُونَ ٣٣

33- “Ölü toprak onlar için bir delildir. Biz onu diriltir ve ondan taneler çıkarırız da onlardan yerler.”

Öldükten sonra dirilmek, onların en büyük şüphelerinden biri olup ona dair inkârları artınca Allah, diriliş konusunu tekrarlamıştır. Bu çerçevede Allah pek çok ayette yeri bitkiyle diriltmeyi örnek olarak vermiştir.

Bu arada, usul ilimlerini inkâr edip hakkında Kitap'ta delil bulunmadığını söyleyenlere hayret edilir. Kur'ân'daki ayetlerin çoğu delil aramanın yoluna ve akli delillerin sağlamlaştırılmasına teşvik ederken nasıl olur da bu problem olur! Ne var ki Allah nuruna sadece dilediğini hidayet eder. Eğer onlar kendileri hakkında insaflı davranıp ellerindeki en önemli şeyle meşgul olsalardı, dinin esaslarını zayi etmezlerdi. Fakat onlar taklide rıza gösterdiler ve fürû ilimlerinde imamet ve önderlik mertebesine sahip olduklarını iddia ettiler.

Şu dizeler de bu mealde söylenmiştir:

*Ey imamet makamında önderliğe soyunan kişi*
*Fıkıh meselelerinde, yazdırarak ve okutarak*
*Gözden kaçırdın muhkem kılacağın tevhid delillerini*
*Yaptın ilim binasının ayrıntısını ancak temel atmadın*

وَجَعَلْنَا فِيهَا جَنَّاتٍ مِنْ نَخِيلٍ وَاَعْنَابٍ وَفَجَّرْنَا فِيهَا مِنَ الْعُيُونِ ﴿٣٤﴾

34- "Biz orada hurmalıklar, üzüm bağları var ettik ve içlerinde pınarlar fışkırttık."

لِيَاْكُلُوا مِنْ ثَمَرِهِ وَمَا عَمِلَتْهُ اَيْدِيهِمْ اَفَلَا يَشْكُرُونَ ﴿٣٥﴾

35- "Meyvelerinden yesinler diye. Bunları, onların elleri yapmış değildir. Hâlâ şükretmeyecekler mi?"

سُبْحَانَ الَّذِي خَلَقَ الْاَزْوَاجَ كُلَّهَا مِمَّا تُنْبِتُ الْاَرْضُ وَمِنْ اَنْفُسِهِمْ
وَمِمَّا لَا يَعْلَمُونَ ﴿٣٦﴾

36- "Yerin bitirdiği şeylerden, insanların kendilerinden ve bilemedikleri şeylerden bütün çiftleri yaratanın şanı yücedir."

Bu ayet, Allah'ın harika sanatını düşünmeye dikkat çekerek şunu demektedir: Parçaları ve organları bakımından benzer şekillere sahip bitkilerden, kendilerinden ve ayrıntılarını bilemedikleri diğer şeylerden ibaret olan eşyayı yaratan Allah'ın şanı yücedir.

Onlar Allah'ın, o eşyanın tatları, kokuları, biçimleri ve görünüşleri, ağaçların da yaprakları, çeşitli dalları, gövdeleri, türlü türlü çiçekleri, meyvelerinin dağınık ve toplu olmadaki şekil farklılığı bakımından vasıflarını nasıl meydana getirdiğini de bilmezler.

Bilmediklerinden bazıları da şunlardır:

Sıcaklık, soğukluk, rutubet ve kuraklıktan ibaret olup kimilerinin "tabâyi" -tabiatlar- diye adlandırdıkları âdetin işleyişine uygun olarak adı geçen eşyadan elde edilen faydalar, Allah'ın ilaçların kullanılmasını müteakip yarattığı olaylar arasındaki farklılık, yiyeceklerin yenmesinden vücutta meydana gelen tesirler, sonra da iç ve dış organların şekilleri arasındaki farklılık.

Bu çerçevede vakitler mütecanistir, zamanlar benzerdir, cevherler arasında da şekil benzerliği vardır. Hal böyleyken hükümler değişiktir. Eğer sahip olduğu özellikten dolayı her bir şeye belli bir hüküm tahsis edilmemiş olsa bile bu hükmün dışındaki bir hükmün tahsis edilmesi ondan daha iyi olmazdı. Bir de Allah'ın, marifetin bereketiyle basiret gözlerini güçlendirdiği, vakitlerinde muvaffakiyet verdiği, muhakemesini tam kıldığı ve karşısına bir engel çıkmayan kimsenin meseleler hakkındaki hücceti ne kadar güçlü, izlediği yol da ne kadar açık olur! Aslında bunlar, Allah'ın dilediği kimseler hakkında dilediği şekilde, ezelde kesinleşmiş kısmetlerdir.

وَاٰيَةٌ لَهُمُ الَّيْلُ نَسْلَخُ مِنْهُ النَّهَارَ فَاِذَا هُمْ مُظْلِمُونَ ﴿٣٧﴾

37- "Gece de onlar için bir delildir. Gündüzü ondan çıkarırız. Bir de bakarsın karanlık içinde kalmışlardır."

Biz gündüzün aydınlığını, gecenin onun üstüne kapanmasıyla iptal ederiz. Gecenin karanlığını da gündüzün üstüne gelmesiyle gideririz. Bunun gibi hareketliliğin gündüzü de durgunluk gecelerinin üstüne gelir ve doğru yolu göremeyen kimsenin asasına Allah'ın kerem eliyle kılavuzluk ederek onu doğru yola hidayet eder.

وَالشَّمْسُ تَجْر۪ي لِمُسْتَقَرٍّ لَهَاۜ ذٰلِكَ تَقْد۪يرُ الْعَز۪يزِ الْعَل۪يمِۜ ﴿٣٨﴾

38- "Güneş de kendi yörüngesinde akıp gitmektedir. Bu, aziz ve her şeyi hakkıyla bilen Allah'ın takdiridir."

Güneş, yılın mevsimlerine göre değişmeyen belli bir düzen içerisinde hareket etmekte olup onun her gün yeni bir doğuş noktası ve yeni bir batış noktası vardır. Bütün bunlar da aziz ve her şeyi hakkıyla bilen Allah'ın takdiri ile olup bitmektedir.

وَالْقَمَرَ قَدَّرْنَاهُ مَنَازِلَ حَتّٰى عَادَ كَالْعُرْجُونِ الْقَد۪يمِ ﴿٣٩﴾ لَا الشَّمْسُ يَنْبَغ۪ي لَهَٓا اَنْ تُدْرِكَ الْقَمَرَ وَلَا الَّيْلُ سَابِقُ النَّهَارِۜ وَكُلٌّ ف۪ي فَلَكٍ يَسْبَحُونَ ﴿٤٠﴾

39, 40- "Ayın dolaşımı için de konaklar belirledik. Nihayet o, eğrilmiş kuru hurma dalı gibi olur. Ne güneş aya yetişebilir, ne de gece gündüzü geçebilir. Her biri, bir yörüngede yüzmektedir."

Ayetlerdeki işaret şudur: Kul, talep zamanlarında ince hallidir, güçsüzdür, kıt kavrayışlıdır. Sonra basireti artıncaya kadar düşünür. İşte o, ay gibi olgun hale gelir, sonra eksilmeye başlar ve güneşe azar azar yaklaşır. Güneşe yaklaştıkça kendisinde eksilme meydana gelir. Nihayet zayıflar, kaybolur ve görülmez. Sonra güneşten uzaklaşır ve uzaklaşa uzaklaşa sonunda dolunaya dönüşür. Onu bu yönde kim dönüştürüyor? Bu, aziz ve her şeyi hakkıyla bilen Allah'ın takdiridir.

Bu arada arif de marifetinin aydınlığı bakımından güneş gibidir, temkin sahibidir, renkten renge girmez. Saadetinin burcundan daima ışık saçar, ne tutulmaya maruz kalır ne de bulut onu örter.

Öte yandan yer değiştirirken halleri renkten renge giren kul da ay gibidir. Bu çerçevede o, bast halinde olur ve vuslat sınırına kadar terakki eder. Sonra durgunluğa maruz bırakılarak yaşadığı safa halinden kabza düşer. Böylece eksilmeye başlar ve kalbi vaktinden koparılıncaya kadar eksilmeye devam eder. Sonra Allah (c.c.) lütufta bulunarak durgunluğundan dönüş yapmaya ve sarhoşluğundan ayılmaya onu muvaffak kılar. Bunun üzerine o, vuslata yaklaşıp kemal sıfatına nail kılınıncaya kadar hali arınmaya devam eder. Sonra bunun ardından eksilip yok olmaya başlar. İşte kulun hali, ezeldeki kadere uygun olarak dünyadan göçünceye kadar bu minval üzere devam eder.

Tıpkı şu dizelerde söyledikleri gibi:

*Şikâyet etmezdim ben bedenim üzerindeki*
*Kadere bağlı çok renklilikten*
*Bir de şöyle demişlerdir:*
*Her gün şunu söyler durursunuz:*
*"Bundan başkası sana daha güzel yakışır"*

وَاٰيَةٌ لَهُمْ اَنَّا حَمَلْنَا ذُرِّيَّتَهُمْ فِي الْفُلْكِ الْمَشْحُونِ ﴿٤١﴾ وَخَلَقْنَا لَهُمْ
مِنْ مِثْلِه۪ مَا يَرْكَبُونَ ﴿٤٢﴾

**41, 42- "Onların soylarını dolu gemide taşımamız da onlar için bir delildir. Biz onlar için o gemi gibi binecekleri nice şeyler yarattık."**

Buradaki işaret, çeşitli değişiklik ve etkilerle dalgaları çarpıştığı zaman, takdir denizlerindeki esenlik gemisi içerisinde halkı taşımaya dönüktür. Nitekim nice kul vardır ki gece gündüz meşguliyetinde gark olmuş olup işlerinin çokluğundan, çalışmalarında ve malını toplamada çektiği yorgunluktan dolayı bir an bile dinlenemez.

Bu durum, onu kendi akıbetini ve varacağı sonu unutmaya, çocukları ve aile fertleriyle olan meşguliyetinin fikrini ve kalbini istila etmesine sürüklemiştir. Çabası da onu vebal altında bırakmaktan başka işe yaramamaktadır.

Nice kul da vardır ki hevâsının denizinde boğulmuştur. Böylece arzusu, onu belasına ve değersiz amacına katlanmaya sevk etmiştir. Sonra o, asla o amacın sonuna ulaşamayacaktır. O, dünyasını da ahiretini de yitirmiş ve Mevlâ'sından uzak kalmıştır. Bu gibilerden sayılamayacak kadar çok kimse vardır. Kimin aklına dayanarak düşünüp ibret aldığı da gizli değildir. Allah, bir kulu inayet gemisinde koruduğu zaman ise yalnızca onu değersiz işlere köle olmaktan kurtarır ve zahiriyle O'nun hakkını yerine getirmekle meşgul eder. Sırlarında da bütün kalbiyle Rabbi ile beraber olmakla kendisine ikramda bulunur ve onu, hakkında: *"Ben, beni anan kimsenin meclis arkadaşıyım"* sözünün söylenebileceği makama yükseltir. Sen vasfı bu olan kimsenin mertebesinin yüksekliği hakkında istediğini söyle, hiçbir sakıncası yoktur.

وَاِنْ نَشَاْ نُغْرِقْهُمْ فَلَا صَرِيخَ لَهُمْ وَلَا هُمْ يُنْقَذُونَ ﴿٤٣﴾ اِلَّا رَحْمَةً
مِنَّا وَمَتَاعًا اِلٰى حِينٍ ﴿٤٤﴾

43, 44- "Biz istesek onları suda boğarız da kendileri için ne imdat çağrısı yapan olur ne de kurtarılırlar. Ancak tarafımızdan bir rahmet olarak ve bir süreye kadar daha yaşasınlar diye kurtarılırlar."

Eğer Allah'ın cömertliği ve lütfu olmasa onların başına da benzerlerinin başına gelen bela gelecekti. Ancak lütuflarının güzelliğiyle Allah onları bütün hallerde korur.

وَاِذَا قِيلَ لَهُمُ اتَّقُوا مَا بَيْنَ اَيْدِيكُمْ وَمَا خَلْفَكُمْ لَعَلَّكُمْ
تُرْحَمُونَ ﴿٤٥﴾ وَمَا تَاْتِيهِمْ مِنْ اٰيَةٍ مِنْ اٰيَاتِ رَبِّهِمْ اِلَّا كَانُوا
عَنْهَا مُعْرِضِينَ ﴿٤٦﴾ وَاِذَا قِيلَ لَهُمْ اَنْفِقُوا مِمَّا رَزَقَكُمُ اللّٰهُ قَالَ
الَّذِينَ كَفَرُوا لِلَّذِينَ اٰمَنُوا اَنُطْعِمُ مَنْ لَوْ يَشَآءُ اللّٰهُ اَطْعَمَهُ اِنْ
اَنْتُمْ اِلَّا فِي ضَلَالٍ مُبِينٍ ﴿٤٧﴾

45, 46, 47- “Onlara: ‘Önünüzde ve arkanızda olan şeylerden sakının ki size merhamet edilsin’ denildiğinde yüz çevirirler. Onlara Rablerinin ayetlerinden bir ayet gelmez ki ondan yüz çeviriyor olmasınlar. Onlara: ‘Allah’ın sizi rızıklandırdığı şeylerden Allah yolunda harcayın’ denildiği zaman kâfir olanlar iman edenlere: ‘Allah’ın, dilemiş olsa, doyurabileceği kimselere mi yedireceğiz?’ derler.”

Bu hususlar, Allah’ın utanç vadilerinde bıraktığı, mahrumiyet damgasıyla damgaladığı, kulaklarını rüştü duyamaz kıldığı ve terk edilmişlikle orta yolu izlemekten alıkoyduğu kimselerin vasıflarıdır. Bu nedenle onlar, kendilerine alıkoyma ile ilgili hangi ayet geldiyse mutlaka onu yüz çevirmeyle karşıladılar ve inkıbazları süresince ondan ibret almaktan uzak durdular. Bir de Allah yolunda harcama yapmaları ve yedirmeleri emredildiği zaman Allah’ın varlıklara rızık verdiğini ve dilerse inamla onlara bakacağını bahane ederek o emre karşı çıktılar.

وَيَقُولُونَ مَتٰى هٰذَا الْوَعْدُ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقٖينَ ﴿٤٨﴾ مَا يَنْظُرُونَ اِلَّا
صَيْحَةً وَاحِدَةً تَأْخُذُهُمْ وَهُمْ يَخِصِّمُونَ ﴿٤٩﴾ فَلَا يَسْتَطٖيعُونَ
تَوْصِيَةً وَلَٓا اِلٰٓى اَهْلِهِمْ يَرْجِعُونَ ﴿٥٠﴾

48, 49, 50- “‘Eğer doğru söyleyenler iseniz bu tehdit ne zaman gelecek?’ diyorlar. Onlar, ancak çekişip dururlarken kendilerini yakalayacak korkunç bir ses bekliyorlar. Artık ne bir tavsiyede bulunabilirler ne de ailelerine dönebilirler.’”

Onlar, kıyametin çabuk gelmesini istiyorlar ve kopuşunun geciktiğini ileri sürüyorlar. Ancak onlar bunu, kendilerini şüphelerinden rahatlatacak bir tasdikten ya da kendilerini sapıklıklarından alıkoyacak bir korkudan dolayı değil, aksine peygamberlerin çağrısını yalanlamak, peygamberliğin doğruluğunu inkâr etmek ve neşr ile haşri akla uzak gördükleri için yapıyorlar. Kıyamet günü onlar azap

için huzura getirileceklerdir. Ne bu azap üzerlerinden kaldırılacak ne de kendilerine yardım edilecektir.

وَنُفِخَ فِي الصُّورِ فَإِذَا هُمْ مِنَ الْاَجْدَاثِ إِلٰى رَبِّهِمْ يَنْسِلُونَ ﴿٥١﴾
قَالُوا يَا وَيْلَنَا مَنْ بَعَثَنَا مِنْ مَرْقَدِنَا هٰذَا مَا وَعَدَ الرَّحْمٰنُ وَصَدَقَ
الْمُرْسَلُونَ ﴿٥٢﴾

51, 52- "Sûra üfürülür. Bir de bakarsın, kabirlerden çıkmış, Rablerine doğru akın akın gitmektedirler. Şöyle derler: 'Vay başımıza gelene! Kim bizi diriltip mezarımızdan çıkardı? Bu, Rahmân'ın vaat ettiği şeydir. Peygamberler doğru söylemişler.'"

Onlar kahrından ölürler, cebren mahşere getirilirler, emirle yüzleşirler ve kendilerine ne fayda ne de zarar verebilirler.

( قَالُوا يَا وَيْلَنَا مَنْ بَعَثَنَا مِنْ مَرْقَدِنَا ) *"Şöyle derler: 'Vay başımız gelene! Kim bizi diriltip mezarımızdan çıkardı?'"*

Onlar cehalet üzere ölürler, Rablerini tanımazlar ve dünyadaki hallerine benzer bir hal üzere diriltilirler. Onlar dirilteni tanımazlar ve kabirlerinde içinde bulundukları şiddetli azabı, karşılaşacakları yeni acılara kıyasla uyku sayarlar. Onlar yatak olarak, yara bere içinde bırakan ayrılık ile büyük ve devasa yanmanın içine düşecekler. Ne bir serinlik ne de bir içecek tadarlar. Sadece kaynar su ve irin tadarlar. Onlar hak ederek bu muameleye tabi tutulurlar.

Allah şöyle buyurmaktadır:

إِنْ كَانَتْ إِلَّا صَيْحَةً وَاحِدَةً فَإِذَاهُمْ جَمِيعٌ لَدَيْنَا مُحْضَرُونَ ﴿٥٣﴾

53- "Sadece korkunç bir ses olur. Bir de bakarsın, hepsi birden toplanıp huzurumuza çıkarılmışlardır."

فَالْيَوْمَ لَا تُظْلَمُ نَفْسٌ شَيْئًا وَلَا تُجْزَوْنَ اِلَّا مَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٥٤﴾

54- "O gün kimseye hiç mi hiç zulmedilmez. Size ancak işlemekte olduğunuz şeylerin karşılığı verilir."

اِنَّ اَصْحَابَ الْجَنَّةِ الْيَوْمَ فِي شُغُلٍ فَاكِهُونَ ﴿٥٥﴾

55- "Şüphesiz cennetlikler, o gün ganimetlerle meşguldürler, zevk sürerler."

Kul ancak en çok dile getirdiği ve kalbini dört bir yandan kuşatan şeyle anılır. Mesela dünya ehli, onun tutsağı olan kimsedir. Cennet ehli kimseler de onu arayanlar, onun için çaba harcayanlar ve ona kavuşmak için çalışanlardır. Nitekim Allah, onların söz ve hallerinden haber vererek şöyle buyurmuştur:

( لِمِثْلِ هٰذَا فَلْيَعْمَلِ الْعَامِلُونَ ) *"Çalışanlar, böylesi için çalışsınlar."* (Saffât, 37/61)

Bu arada bu haller cennetlikler için büyük ise de büyük şahsiyetlerin hallerine kıyasla yetersiz kalmaktadır. Hz. Peygamber (s.a.v.): *"Cennetliklerin çoğu saf insanlardır"* buyurmuştur. Kim dünyada iken dünyadan azat olmuş ise cennette iken de cennetten azat olması uzak bir ihtimal değildir. Allah ise rahmetini dilediğine has kılar.

Bir görüşe göre de Allah, bu sözü meşguliyeti olmayan bazı kimselere hitaben söyler ve onlara şöyle buyurur:

( اِنَّ اَصْحَابَ الْجَنَّةِ الْيَوْمَ فِي شُغُلٍ فَاكِهُونَ ) *"Şüphesiz cennetlikler, o gün ganimetlerle meşguldürler, zevk sürerler."*

Onlar huzur ve yakınlık ehli kimseler olup cennet, kendilerini yakınlığın ünsiyetinden, vuslatın rahatlıklarından ve Allah'ı görmek için boş durmaktan alıkoymaz.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Eğer onlar kimden alıkonulduklarını bilselerdi, meşguliyetleriyle mutlu olmazlardı.

- Allah ancak cennetliklere hitaben: *"Şüphesiz cennetlikler..."* diye buyurmaktadır. Sanki Allah onları yüceltmek için kendilerine yüz yüze hitap etmektedir. Tıpkı şeyhe hitaben: "Sen şöyle yaparsın" anlamında: "Şeyh şöyle yapar" denilmesi gibi.

- Allah bu sözü henüz ne cehenneme ne de cennete girmiş mahşer meydanındaki bazı günahkâr kimselere hitaben söylemekte ve şöyle buyurmaktadır:

*"Ey kulum! Cehennemlikler, korkuları ve içinde bulundukları hallerinin zorluğundan dolayı sana zaman ayıramazlar. Cennetlikler de bugün meşgul olup senden habersizdirler. Çünkü onlar, zevklerinin ve benzerleriyle beraber buldukları nimetlerinin içindedirler. Bu nedenle bugün bizden başka hiç kimsen yoktur."*

- Onların meşguliyetleri, Mevlâ'larını görmeye hazırlanmalarıdır. Bu da, meşguliyetlerin en mükemmelidir. Bunlar ünsiyet veren, rahatlatan, yorucu ve ürkütücü olmayan meşguliyetlerdir.

- Allah için hak veya bâtıl söz konusu olmaz. Bu nedenle cennetliklerin, bedenleriyle aile fertleriyle meşgul olmaları ile Mevlâ'larını görmeleri arasında bir çelişki yoktur. Tıpkı onların bugün hem meşgul olmaları hem de hallerine devam etmeleri gibi. Çünkü Allah hangi halde olduklarını bilir. Bu nedenle arzularını yerine getirmeleri, marifetlerine zarar vermez.

- Allah, onların nefislerini şehvetleriyle meşgul etmiştir ki en çetin rakip olan nefse hissettirmeden sırları sadece Allah'ı görebilsin. Nitekim rakip yokken sevgiliyi görmekten daha üstün bir şey yoktur.

هُمْ وَاَزْوَاجُهُمْ فِي ظِلَالٍ عَلَى الْاَرَٓائِكِ مُتَّكِؤُنَ ﴿٥٦﴾

56- "Onlar ve eşleri, gölgelerde koltuklara yaslanmaktadırlar."

Bir görüşe göre eşlerinden maksat, hal ve makamda onlara benzer olanlardır. Şu ayette olduğu gibi:

( اُحْشُرُوا الَّذِينَ ظَلَمُوا وَاَزْوَاجَهُمْ ) *"Zulmedenleri ve eşlerini toplayın."* (Saffât, 37/22)

Bir görüşe göre de eşlerinden maksat, en çok sevdikleri hanımlarıdır.

لَهُمْ فِيهَا فَاكِهَةٌ وَلَهُمْ مَا يَدَّعُونَ ﴿٥٧﴾

57- "Onlar için orada meyveler vardır. Onlar için diledikleri her şey vardır."

Meyvelerden maksat, nefislerinin nasibidir. Bir yoruma göre de ayetteki işaret, nefsin arzularına değil, vaktin rahatlıklarınadır.

Ayetteki "iddia ettikleri şey" sözü, "diledikleri şey" anlamındadır. Bir yoruma göre de talepleri kabul edilir. Oysa dava -talep- haksız yere yapıldığı zaman malul olur.

سَلَامٌ قَوْلًا مِنْ رَبٍّ رَحِيمٍ ﴿٥٨﴾

58- "Çok merhametli Rabden bir söz olarak kendilerine selam vardır."

Onlar, Allah'ın kelamını ve selamını vasıtasız işitirler. O selamın bir elçinin dilinden olmadığının bilinmesi için Allah, bu hususu "Rabden bir söz olarak" ifadesiyle pekiştirmiştir.

( مِنْ رَبٍّ رَحِيمٍ ) *"Çok merhametli Rabden."*

O durumda merhamet, üzerlerindeki nimetin tamamlanması için kendilerine selam verilirken Allah'ı görmelerinin nasip kılınmasıdır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- O vakitte merhamet, dehşete kapılmamaları ve şaşkınlığa uğramamaları için selamı işittikleri ve huzura çıktıkları hallerde Allah'ın onları arındırmasıdır.

- Allah, günahkâr müminler rahat bir nefes alsınlar ve ümit yolları açık olsun diye ( مِنْ رَبٍّ رَحِيمٍ ) "*çok merhametli Rabden*" buyurmuştur. Çünkü merhamete günahkâr kimse muhtaç olur.

- Allah bunu, kulun selama kendi fiili ve hak edişiyle değil, ancak Rabbinin merhametiyle kavuştuğunu bilmesi için söylemiştir.

وَامْتَازُوا الْيَوْمَ اَيُّهَا الْمُجْرِمُونَ ﴿٥٩﴾

59- "Ey suçlular! Ayrılın bugün!"

Rakibin ortada bulunmaması en mükemmel nimet, düşmanın uzaklaştırılması da en büyük lütuf ve ihsandır. Bu itibarla dostlar, Allah'a yakınlığın kabulü içinde, düşmanlar da azap ve perdelenmişlik içindedirler.

اَلَمْ اَعْهَدْ اِلَيْكُمْ يَا بَنِيٓ اٰدَمَ اَنْ لَا تَعْبُدُوا الشَّيْطَانَ اِنَّهُ لَكُمْ عَدُوٌّ مُبِينٌ ﴿٦٠﴾ وَاَنِ اعْبُدُونِي هٰذَا صِرَاطٌ مُسْتَقِيمٌ ﴿٦١﴾

60, 61- "Ey Âdemoğulları! Ben size: 'Şeytana kulluk etmeyin. Çünkü o, sizin için apaçık bir düşmandır. Bana kulluk edin. İşte bu, dosdoğru yoldur' diye emretmedim mi?"

Eğer bu söz bir mahlûktan diğer bir mahlûka yönelik olsaydı, bir nevi özür dilemek olurdu. Yani ben size nasihatte bulundum, öğüt verdim ve bundan sizi sakındırdım. Bir de size defalarca söz ulaştırdım ve hatırlatmada bulundum. Ne var ki siz, öğüdümü kabul etmediniz ve emrimle amel etmediniz. Böylece siz muhalefet ettiniz ve nefislerinize zulmettiniz. Aynı zamanda sizinle ilgili ezeli hükmümüz de böyle gerçekleşmiştir.

وَلَقَدْ اَضَلَّ مِنْكُمْ جِبِلًّا كَث۪يرًا اَفَلَمْ تَكُونُوا تَعْقِلُونَ ﴿٦٢﴾

62- “Andolsun, o sizden pek çok nesli saptırmıştı. Hiç düşünmüyor muydunuz?”

هٰذِه۪ جَهَنَّمُ الَّت۪ي كُنْتُمْ تُوعَدُونَ ﴿٦٣﴾

63- “İşte bu, hakkında uyarıldığınız cehennemdir.”

اِصْلَوْهَا الْيَوْمَ بِمَا كُنْتُمْ تَكْفُرُونَ ﴿٦٤﴾

64- “İnkâr ettiğinizden dolayı girin oraya!”

اَلْيَوْمَ نَخْتِمُ عَلٰٓى اَفْوَاهِهِمْ وَتُكَلِّمُنَٓا اَيْد۪يهِمْ وَتَشْهَدُ اَرْجُلُهُمْ بِمَا
كَانُوا يَكْسِبُونَ ﴿٦٥﴾

65- “O gün biz onların ağızlarını mühürleriz. Elleri bize konuşur, ayakları da yaptıklarına şahitlik eder.”

Bugün Allah, insan bedeninin organlarını birbiriyle uyumlu kılmıştır. Yarın ise Allah bu âdeti bozacaktır. Böylece organlar birbirlerine karşı çıkacak, aralarında husumet ve kavga meydana gelecektir. Bu çerçevede kâfirlerin organlarının, aleyhlerindeki şahitlikleri onları mahveder. Müminlerden günahkâr olanlara gelince, onların bazı organları günah işlediklerine dair şahitlik edebilmekte, ancak bazı organları da onlar lehine iyilikle şahitlik etmektedir.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Benimle aranda Allah’ın huzuru vardır ey zalim!*
*Ve adil, cömert ve insaf sahibi hükümdar vardır*

Senetleri sağlam bazı rivayetlerde şöyle denilmiştir:

*"Bir kulun organları, hata işlediğine dair olarak aleyhinde şahitlik eder. Bunun üzerine göz kapağındaki kirpikler uçuşmaya başlayarak lehine şahitlik yapmak için izin ister. Allah: 'Ey kulumun göz kapağının kirpiği! Konuş ve kulumu savun!' buyurur. Bunun üzerine kirpikleri, kulun Allah korkusundan ağladığına şahitlik ederler ve kul bağışlanarak hakkında: 'Bu, bir kılın şahitliğiyle Allah'ın azat ettiği kişidir' diye duyur yapılır."*

وَلَوْ نَشَآءُ لَطَمَسْنَا عَلٰٓى اَعْيُنِهِمْ فَاسْتَبَقُوا الصِّرَاطَ فَاَنّٰى يُبْصِرُونَ ﴿٦٦﴾

66- "Eğer dileseydik, onların gözlerini büsbütün kör ederdik de yola koyulmak için didişirlerdi. Fakat nasıl görecekler ki?!"

وَلَوْ نَشَآءُ لَمَسَخْنَاهُمْ عَلٰى مَكَانَتِهِمْ فَمَا اسْتَطَاعُوا مُضِيًّا وَلَا يَرْجِعُونَ ﴿٦٧﴾

67- "Yine eğer dileseydik, onları oldukları yerde başka yaratıklara dönüştürürdük de ne ileri gidebilirler ne de geri dönebilirlerdi."

وَمَنْ نُعَمِّرْهُ نُنَكِّسْهُ فِي الْخَلْقِ اَفَلَا يَعْقِلُونَ ﴿٦٨﴾

68- "Kime uzun ömür verirsek, onu yaratılış itibariyle tersine çeviririz. Hâlâ düşünmeyecekler mi?!"

İnsanın gençliği ve gücü tam olarak kıvamını bulduğu zaman, Allah onu tersine çevirir. Böylece nasıl ki daha önce gücü artıyor idiyse, bu kez de yaş bakımından ömrün en reziline ulaşıncaya dek eksilmeye başlar. Böylece güçsüzlükte çocukluk haline benzer bir duruma düşer. Sonra eksilmenin ardından bir şey kalmaz.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Dürdü zaman benden açıp yaydığı ömrü*
*Ve eskitti yeniliğimi ikide bir açılıp dürülmek*
*Görmekteyim her gün eksildiğimi*
*Eksilmeyle birlikteyse kalmaz bir şey*

Bu durum haller ve manalar için değil, sadece bedenler ve bünyeler içindir. Çünkü beden, bunama sınırına kadar artış halindedir. Bu sınırda ise fikri ve aklı bozulmaya başlar. Hakikat ehli kimselere gelince onların şakakları ağarır, ancak sevgi ve maneviyatları henüz gençliğinin başında ve yeniliğinin tazeliği içindedir.

وَمَا عَلَّمْنَاهُ الشِّعْرَ وَمَا يَنْبَغِي لَهُ اِنْ هُوَ اِلَّا ذِكْرٌ وَقُرْاٰنٌ مُبِينٌ ﴿٦٩﴾

69- “Biz, o peygambere şiir öğretmedik. Bu, ona yakışmaz da. O, ancak bir öğüt ve apaçık bir Kur’ân’dır.”

Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kelamı, şiir vezinlerinin dışında idi. Onlara getirdiği Kur’ân da ne şiirin çeşitlerinden ne de hatiplerin üsluplarına göre idi.

Onlar, Kur’ân konusunda şaşırdılar. Basiretlerine de tevhid sürmesi çekilmemiş idi. Bu nedenle hakikatleri göremediler.

لِيُنْذِرَ مَنْ كَانَ حَيًّا وَيَحِقَّ الْقَوْلُ عَلَى الْكَافِرِينَ ﴿٧٠﴾

70- “Diri olanları uyarması ve kâfirler hakkındaki o sözün gerçekleşmesi için Kur’ân’ı indirdik.”

اَوَلَمْ يَرَوْا اَنَّا خَلَقْنَا لَهُمْ مِمَّا عَمِلَتْ اَيْدِينَٓا اَنْعَامًا فَهُمْ لَهَا مَالِكُونَ
﴿٧١﴾ وَذَلَّلْنَاهَا لَهُمْ فَمِنْهَا رَكُوبُهُمْ وَمِنْهَا يَاْكُلُونَ ﴿٧٢﴾ وَلَهُمْ فِيهَا
مَنَافِعُ وَمَشَارِبُ اَفَلَا يَشْكُرُونَ ﴿٧٣﴾

71, 72, 73- “Görmediler mi ki biz onlar için ellerimizin eseri olan hayvanlar yarattık da onlar, bu hayvanlara sahip oluyorlar. Biz, o hayvanları kendilerine boyun eğdirdik. Onlardan bir kısmı binekleridir, bir kısmını da yerler. Onlar için bu hayvanlarda yararlar ve içecekler vardır. Hâlâ şükretmeyecekler mi?!”

Allah, çeşitli şekillerde faydalandıkları hayvanları hizmetlerine vermek suretiyle onlar üzerindeki büyük minnetini ve ellerindeki güzel nimetini anlatmıştır.

Bu arada (مِمَّا عَمِلَتْ اَيْد۪ينَا) "*ellerimizin eseri olan*" tabiri mecaz içermektedir. Yani yaptıklarımızdan ve yarattıklarımızdan. Onlar binmek, etlerini ve yağlarını yemek, sütlerini içmek, yük yüklemek, yol almak suretiyle hayvanlardan faydalandıkları gibi, ayrıca yünlerinden, tüylerinden, kıllarından ve bir kısmının kemiklerinden de faydalanırlar. Bu nedenle Allah, onları bu nimetlere karşı şükretmekle yükümlü kılmış ve şükürlerinde kusur işlemekle vasıflandırmıştır.

Sonra Allah, onların bunca ihsanla çeşitleriyle birlikte -mahlûklara karşı yapılması halinde bile şikâyet konusu olacak olan- şu ayetlerde belirtilen hususları yaptıklarını açıklamıştır:

وَاتَّخَذُوا مِنْ دُونِ اللّٰهِ اٰلِهَةً لَعَلَّهُمْ يُنْصَرُونَ ﴿٧٤﴾ لَا يَسْتَط۪يعُونَ نَصْرَهُمْ وَهُمْ لَهُمْ جُنْدٌ مُحْضَرُونَ ﴿٧٥﴾

74, 75- "Belki kendilerine yardım edilir diye, Allah'ı bırakıp da ilâhlar edindiler. Onlar, ilâhlar için hazır asker oldukları halde, ilâhlar onlara yardım edemezler."

Onlar, kendi benzerlerini tanrı edinmekle yetindiler. Sonra Allah şöyle buyurarak Hz. Peygamber'i (s.a.v.) teselli etmiştir:

فَلَا يَحْزُنْكَ قَوْلُهُمْ اِنَّا نَعْلَمُ مَا يُسِرُّونَ وَمَا يُعْلِنُونَ ﴿٧٦﴾

76- "Artık onların sözü seni üzmesin. Çünkü biz, onların gizlediklerini de açığa vurduklarını da biliyoruz."

Kul, Allah'ın müşahedesi altında olduğunu bildiği zaman çektiği sıkıntılar kendisine hafif gelir. Özellikle de bu sıkıntılar Allah yolunda çekildiği zaman.

اَوَلَمْ يَرَ الْاِنْسَانُ اَنَّا خَلَقْنَاهُ مِنْ نُطْفَةٍ فَاِذَا هُوَ خَصِيمٌ مُبِينٌ ﴿٧٧﴾

77- "İnsan, bizim kendisini meniden yarattığımızı görmedi mi ki kalkmış apaçık bir düşman kesilmektedir."

Yani biz insanların eklemlerini bağladık, dağınık bedenlerini toparladık, organlarına şekil verdik, bedenlerinin parçalarını yerleştirdik, onlara akıl ve temyiz yeteneği verdik. Sonra insan, ( فَاِذَا هُوَ خَصِيمٌ مُبِينٌ) "*apaçık bir düşman kesilmektedir.*" Konuşurken bize düşmanlık etmekte, kendi iddialarını doğru kabul ederek hükümlerimizde bize itiraz etmektedir.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Atış öğretiyorken ben ona her gün*
*Bana yaptı atışı pazıları güçlenince*

وَضَرَبَ لَنَا مَثَلًا وَنَسِيَ خَلْقَهُ قَالَ مَنْ يُحْيِ الْعِظَامَ وَهِيَ
رَمِيمٌ ﴿٧٨﴾ قُلْ يُحْيِيهَا الَّذِي اَنْشَاَهَا اَوَّلَ مَرَّةٍ وَهُوَ بِكُلِّ خَلْقٍ
عَلِيمٌ ﴿٧٩﴾ اَلَّذِي جَعَلَ لَكُمْ مِنَ الشَّجَرِ الْاَخْضَرِ نَارًا فَاِذَا اَنْتُمْ
مِنْهُ تُوقِدُونَ ﴿٨٠﴾

78, 79, 80- "Bir de kendi yaratılışını unutarak bize bir örnek gösterdi. Dedi ki: 'Çürümüşlerken kemikleri kim diriltecek?' De ki: 'Onları ilk defa var eden diriltecektir. O, her yaratılmışı hakkıyla bilendir.' O, sizin için yeşil ağaçtan ateş yaratandır. Şimdi siz, ondan yakıp duruyorsunuz."

Allah, onlar için akıl yürütme zeminini hazırlamış ve tekrar diriltmenin baştan yaratma anlamında olduğunu söylemiştir. O halde sonunda tekrar diriltmenin caiz oluşunda ne problem kalır. Bir de

"marh" ve "afâr" ağaçlarının yeşil dallarında ateş yaratmaya kadir olan Allah, çürümüş kemikte de hayat yaratmaya kadirdir.

Sonra Allah, daha fazla açıklama yapmak üzere şöyle buyurmuştur:

Bir şeyin benzerini yapabilmek, o şeyi yapabilmek gibidir. Çünkü ikisi her yönden aynıdır. Ayrıca nasıl ki Allah, insanı meniden, kuşu da yumurtadan yaratıp onlara hayat veriyorsa, aynı şekilde canları da ölümlerinden sonra mahşer alanında diriltir. Öte yandan nasıl ki küfür ehlinin nefislerini hevâ ve azgınlıkla öldürüyorsa aynı şekilde iman ehli için de kalpleri diriltmektedir.

اَوَلَيْسَ الَّذ۪ي خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ بِقَادِرٍ عَلٰٓى اَنْ يَخْلُقَ مِثْلَهُمْ بَلٰى وَهُوَ الْخَلَّاقُ الْعَل۪يمُ ﴿٨١﴾

81- "Gökleri ve yeri yaratan Allah'ın, onların benzerini yaratmaya gücü yetmez mi? Evet yeter. O, hakkıyla yaratandır, hakkıyla bilendir."

اِنَّمَٓا اَمْرُهُٓ اِذَٓا اَرَادَ شَيْـًٔا اَنْ يَقُولَ لَهُ كُنْ فَيَكُونُ ﴿٨٢﴾

82- "Bir şeyi dilediği zaman, O'nun emri o şeye ancak: 'Ol!' demektir. O da hemen oluverir."

Allah, bir şeyi dilediği zaman ona: "Ol!" der. O da O'nun yaratması ve kudretiyle oluverir. Bir de Allah, sözünün, yaratılacak olan şeye, sıfatında olması gerektiği gibi taalluk ettiğini bildirmiştir. Zaten Allah katında çokluğu bakımından çok olanı, azlığı bakımından da az olanı yaratmak farksızdır.

فَسُبْحَانَ الَّذِي بِيَدِهِ مَلَكُوتُ كُلِّ شَيْءٍ وَاِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ﴿٨٣﴾

83- "Her şeyin hükümranlığı elinde olan Allah'ın şanı yücedir. Siz yalnız O'na döndürüleceksiniz."

Yani her şeyin ortaya çıkması, ancak O'nun kudretiyledir. Bu nedenle az veya çok, her şey O'nun yoktan var etmesi ve inşasıyla meydana gelir. Aynı şekilde her şey sadece O'nun kalıcı kılmasıyla kalmaya devam eder. Bu itibarla, meydana getirdiği şeyin ortaya çıkması da O'ndandır, yarattığı şeyin varışı da O'nadır.

# Dizin


**A**

abdal 211, 334

abid 66, 81, 139, 181, 211, 225, 268, 271, 303, 401, 409

Âd 115, 162, 164, 288, 289

Âdemoğulları 117, 254, 480

afâr 486

akrabalık 177, 264, 367, 379

alaka 13, 301, 451

Allah'ın vaadi 90, 126, 329, 346, 433

Arap 128, 255, 407, 437

arif 66, 112, 121, 139, 140, 211, 225, 296, 347, 472

Arif 17, 139, 222, 268, 431

Arş 14, 40, 49, 79, 124, 128, 196, 221, 348, 349, 350

asa 147, 148, 150, 411, 412, 472

aşk 120, 325

avam 73, 123, 127, 140, 268, 272, 397, 433, 441

aynelyakîn 451

**B**

bast 18, 79, 157, 215, 237, 261, 282, 310, 319, 324, 332, 436, 439, 440, 452, 473

Bâtıl ehli 29

bekâ 79, 119, 140, 282, 440

bekabillâh 400

Belkıs 195, 197, 198, 199, 200, 201, 202, 205, 206

bidat 28, 91, 136, 158, 184, 364, 388

**C**

cimrilik 132, 133, 200, 379, 451

cömertlik 13, 64, 127, 314, 364, 379, 430, 451, 452

çamur 12, 13, 259, 350, 351, 439

**Ç**

çile 238, 353, 354, 355

**D**

dâbbetu'l-arz 220

değnek 52, 54, 186, 240
diğergamlık 379
dilencilik 195

**E**

evlilik 91, 384, 389, 449
evtâd 211
ezel 36, 49, 83, 84, 103, 140, 141, 175, 214, 215, 256, 304, 387, 403, 405, 420, 445, 471, 480

**F**

fahşâ 291
fasıklık 287, 322
Felâh 9
fenâ 79, 119, 127, 237, 282, 440
Firavun 27, 143, 144, 145, 146, 147, 148, 149, 150, 151, 187, 226, 227, 228, 229, 230, 233, 234, 245, 246, 247, 248, 268, 288, 289
fitne 62, 72, 92, 93, 317, 383

**G**

gaflet ehli 15, 119, 120, 423, 425
gayb 33, 42, 70, 215, 293, 307, 325, 337, 365, 387, 405, 427
gıybet 60, 61, 158
Gizli şirk 30, 337

**H**

Hakikat 109
hakkalyakîn 451
Hâmân 227, 228, 246, 247, 288
hanîf 78, 223, 315
Harem 300
haşr 40, 328, 475
haşyet 444, 447, 452
havas 68, 73, 79, 120, 123, 127, 284, 293, 393, 441
heybet 10, 18, 30, 71, 79, 96, 127, 258, 260, 282, 325, 415, 447, 452
Hıristiyan 78
Horasan 367
huşu 10, 131, 354, 380, 381
hür 68, 76, 378, 389
Hüthüt 193, 195, 196, 197
Hz. Âdem 240, 310, 367, 400, 401
Hz. Aişe 57, 58, 61, 64, 378
Hz. Ali 306
Hz. Cebrail 113, 155, 173, 240, 367
Hz. Davûd 407, 408, 409
Hz. Ebûbekir 58, 64
Hz. Hârûn 114, 143, 144
Hz. İbrahim 58, 78, 153, 154, 155, 157, 279, 284, 285, 286
Hz. İsa 24
Hz. Lût 58, 209, 285, 286, 287
Hz. Muhammed 78, 140, 177
Hz. Mûsâ 24, 114, 119, 122, 143, 144, 145, 146, 147, 148, 150, 151, 184, 185, 186, 187, 226, 228, 229, 230, 231, 232, 233, 234, 235, 236, 237, 238, 239, 240, 241, 242, 244, 245, 246, 249, 250, 263, 264, 367, 397
Hz. Nûh 20, 21, 161, 162, 177, 278
Hz. Ömer 368

Hz. Peygamber 34, 40, 43, 44, 52, 53, 54, 57, 58, 59, 60, 63, 64, 78, 87, 91, 97, 102, 103, 107, 108, 112, 113, 114, 115, 116, 118, 119, 124, 156, 162, 173, 177, 178, 223, 252, 254, 269, 327, 328, 329, 360, 368, 373, 374, 377, 378, 379, 380, 384, 385, 392, 393, 394, 395, 416, 432, 446, 449, 477, 483, 484
Hz. Salih 207
Hz. Süleyman 189, 190, 191, 192, 193, 195, 196, 197, 198, 200, 201, 202, 203, 205, 206, 410, 411
Hz. Şuayb 235, 236, 237, 239, 240, 241, 289
Hz. Yakub 112
Hz. Yûnus 264

**İ**

İbn Abbas 193, 249
icma 90, 337
iftira 42, 50, 56, 57, 58, 59, 60, 64, 65, 67, 300, 366, 382, 394
ilmelyakîn 451
inam 212, 336, 383, 443, 475
isar 127
ismet gölgesi 118
İsraf 132
İsrailoğulları 145, 146, 151, 174, 218, 248, 263, 360, 397
istidrac 29, 128, 279

**K**

Kâbe 255, 310, 449
kabz 79, 215, 261, 282, 310, 319, 324, 439, 440, 473
kalp ile hicret 284
Karûn 263, 264, 266, 268, 288, 289
kaza ve kader 215
keşf 10, 63, 79, 80, 99, 120, 140, 186, 237, 272, 325, 367, 452
Kevser 254
Kıptî 231, 233
köle 14, 27, 68, 72, 74, 75, 76, 92, 123, 126, 139, 145, 146, 243, 259, 314, 356, 378, 389, 474
kuş dili 189
Kürsî 14, 79

**L**

layezâl 314
lemyezel 259, 314
Levâih 312
levâmi’ 312
Levh-i Mehfuz 218
Lût 58, 115, 162, 169, 170, 209, 284, 285, 286, 287

**M**

mahviyet 10, 79
makam-ı mahmud 254
manevî kir 121
marh 486
marifet 13, 78, 81, 91, 129, 130, 200, 211, 268, 293, 296, 312, 340, 381, 383, 399, 435, 440, 444, 447, 450, 451, 471, 472, 478

Medine 51, 99, 139, 225, 271, 331, 347, 363, 371, 395, 403, 461
Medyen 162, 184, 234, 235, 237, 250, 288
Mekke 9, 99, 135, 139, 174, 181, 223, 225, 255, 269, 271, 303, 331, 347, 403, 429, 461
mendub 72
Mısır 151, 184, 228, 234, 241
Mistah 64
mubah 28, 54, 70, 72, 73, 93, 190
mudga 13
muhâdara 80
mutû'u'n-nehâr 312
mücahede 71
mükâtebe 75, 76, 139
münker 291
Mürid 17, 96, 212, 319, 423, 458
müşahede 23, 66, 80, 81, 129, 211, 237, 249, 272, 285, 301, 309, 326, 341, 429, 432, 452, 484

**N**

nafile 72
nefisle hicret 284
neşr 108, 299, 475
nikâh 239, 383, 389, 392
Nil 227, 228

**P**

put 41, 106, 112, 117, 133, 135, 137, 247, 258, 279, 321, 417, 426, 434, 440, 441, 457

**R**

rehbet 447
Ress 115
ru'yetullah 109
rüşt 307, 475

**S**

sahv 79, 282, 440
Sebe' 195, 403, 412, 413, 414
seçkinler 99, 127, 182, 324, 398
sekr 282, 440
Semûd 115, 162, 167, 206, 207, 288, 289
setr 282, 332
setr-i avret 332
Sidretulmuntehâ 140
Sihirbazlar 148, 149, 150
Sûr 45, 221
süfli âlem 79
sülûk 358

**Ş**

Şam 367
şek 123
Şekûr 410, 411
şeriat ilimleri 91
şevârik 312
şirk 30, 133, 142, 159, 219, 223, 314, 315, 337, 382, 398
şuhûd 23, 71, 270, 307

**T**

takiyye 289
takva 41, 105, 152, 158, 159, 268, 273, 364
talep 71

tamah 36, 68, 69, 127, 196, 368
tavâli’ 312
teberri 106, 223
tecelli 10, 18, 23, 80, 113, 120, 121, 127, 136, 237, 272, 282, 325
tefrika 20, 49, 50, 71, 83, 94, 284, 423, 434
teheccüd 354
tevazu 69, 131, 203, 268, 339, 430, 442
tevekkül 99, 125, 126, 127, 128, 177, 178, 211, 214, 219, 290, 296, 297, 364, 365, 368, 388, 432, 452
tevhid ehli 109, 140, 211, 225, 303
tevhid erbabı 29
Tevrat 99, 249, 252, 407
Tûbâ 140
tufan 21
Tûr 241, 250

**U**

ulvi âlem 79

**Ü**

ünsiyet 10, 18, 51, 66, 79, 105, 113, 116, 119, 126, 127, 237, 241, 242, 282, 319, 325, 347, 355, 409, 421, 436, 452, 477, 478

**V**

vacip 60, 72, 74, 96, 145, 157, 191, 192, 254, 270, 337, 339, 374, 400
vecd 79, 112, 132, 211, 225, 269, 271, 282, 296, 303, 341, 452
vecd ehli 112, 211, 271, 303
vekalet 444
veli 48, 69, 72, 118, 123, 127, 129, 142, 150, 181, 211, 309, 324, 348, 368, 404, 407, 421, 423, 431, 444, 448, 469
vesvese 44, 62, 179
vird 79, 154
vuslat 11, 16, 22, 31, 39, 66, 79, 119, 140, 149, 181, 210, 211, 242, 251, 261, 272, 296, 301, 308, 324, 325, 327, 349, 355, 356, 357, 358, 360, 361, 362, 386, 413, 439, 464, 473, 477

**Y**

Yahudi 78
yakîn 79, 85, 123
Yeşkur 21
yılan 148, 186, 240, 244, 245

**Z**

zahid 17, 71, 139, 154, 268, 433, 451
zariflik 430
Zebûr 408
zeval vakti 118
Zeyd 382, 383, 384
zıhar 365, 366
zühd 17

# Hadis İndeksi


- “Âlimler ise peygamberlerin vârisleridir.” 96
- “Allah, bugün ayakta yürüttüğü kimseleri yarın yüzüstü süründürecektir.” 114
- “Bana, ancak güçsüzlerinizle yardım edildi.” 162
- “Cennetliklerin çoğu saf insanlardır.” 477
- “Ey Muhammed ümmeti! Siz bana dua etmeden ben sizi kabul ettim. Siz benden istemeden önce ben size bahşettim. Siz benden mağfiret dilemeden önce ben sizi bağışladım. Siz benden merhamet talebinde bulunmadan önce ben size merhamet ettim.” 249
- “İnsanların, imtihanı en çetin olanları peygamberlerdir. Sonra onlar da faziletlerine göre sıralanırlar.” 57
- “Kim, bana bir kez salât ederse, Allah ona on kez salât eder.” 394
- “Kişi, dini miktarınca imtihan edilir” 57
- “Müminin ferasetinden sakının. Çünkü mümin Allah’ın nuruyla bakar.” 57
- “Sizden her kim, bu çirkinlerden birini işlerse, Allah’ın örtmesiyle örtünsün. Zira kim, bu yaptığını bize açıklarsa, Allah’ın koyduğu cezayı ona uygularız.” 55
- “Şüphesiz daha önceki ümmetler içinde Allah’ın -ilham vererek- konuşturduğu bazı kimseler vardı. Eğer ümmetimde böyle biri varsa o Ömer’dir.” 63
- "Bir kulun organları, hata işlediğine dair olarak aleyhinde şahitlik eder. Bunun üzerine göz kapağındaki kirpikler uçuşmaya başlayarak lehine şahitlik yapmak için izin ister. Allah: ‘Ey kulumun göz kapağının kirpiği! Konuş ve kulumu savun!’ buyurur. Bunun üzerine kirpikleri, kulun Allah korkusundan ağladığına şahitlik ederler ve kul bağışlanarak hakkında: ‘Bu, bir kılın şahitliğiyle Allah’ın azat ettiği kişidir’ diye duyuru yapılır." 482

ABDULKERİM
EL-KUŞEYRÎ

KUR'AN-I KERİM
TEFSİRİ

# LETÂİFU'L İŞÂRÂT

تفسير صوفي كامل للقرآن الكريم

ilkharf

بسم الله الرحمن الرحيم

Abdulkerîm el-Kuşeyrî • Letâifu'l-İşârât **KUŞEYRÎ TEFSİRİ**

©İlk Harf Yayınevi, 2013
Kitabın tüm yayın hakları "İlk Harf Yayınevi"ne aittir.

❯ İlk Harf Yayınevi, 18
Tefsir Serisi, 1/5

❯ ISBN
978-605-5457-80-8 (cilt: 5)
978-605-5457-55-6 (takım)

❯ Editör
Ersan Güngör

❯ Tercüme
Prof. Dr. Mehmet Yalar

❯ Sayfa Düzeni
İrfan Güngörür

❯ Kapak Tasarımı
Sercan Arslan

❯ Basım Tarihi
1. Baskı, İstanbul, Ağustos 2013

❯ Baskı / Cilt
Şenyıldız Yay. Matbaacılık Ltd. Şti.
Gümüşsuyu Cad. No: 3, K: 2 Topkapı/İstanbul
Tel: 0212 483 47 92 (Sertifika No: 11964)

❯ **İLK HARF YAYINEVİ**
www.ilkharf.com.tr • info@ilkharf.com.tr

❯ **Genel Dağıtım**
Çelik Yayınevi
(Sertifika No, 14710)
Ticarethane Sokak No: 19 /A Cağaloğlu - Fatih / İstanbul
Tel: +90 212 511 28 11 - 513 73 19 • Fax: +90 212 511 28 12
www.celikyayinevi.com • info@celikyayinevi.com

Abdulkerîm el-Kuşeyrî

Letâifu'l-İşârât

# Kuşeyrî Tefsiri

## -5-

Tercüme
Prof. Dr. Mehmet Yalar

İlkharf
YAYINLARI

# ÂYETLER FİHRİSTİ


| Âyet No | Sayfa No | Âyet No | Sayfa No | Âyet No | Sayfa No | Âyet No | Sayfa No | Âyet No | Sayfa No | Âyet No | Sayfa No |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| SÂFFÂT SÛRESİ (s. 9-44) | | 42 | 18 | 86 | 25 | 130 | 35 | 174 | 42 | 33 | 58 |
| | | 43 | 18 | 87 | 25 | 131 | 35 | 175 | 42 | 34 | 59 |
| | | 44 | 18 | 88 | 26 | 132 | 35 | 176 | 43 | 35 | 61 |
| 1 | 9 | 45 | 19 | 89 | 26 | 133 | 35 | 177 | 43 | 36 | 62 |
| 2 | 9 | 46 | 19 | 90 | 26 | 134 | 36 | 178 | 43 | 37 | 62 |
| 3 | 10 | 47 | 19 | 91 | 26 | 135 | 36 | 179 | 43 | 38 | 62 |
| 4 | 10 | 48 | 19 | 92 | 27 | 136 | 36 | 180 | 43 | 39 | 62 |
| 5 | 10 | 49 | 19 | 93 | 27 | 137 | 36 | 181 | 43 | 40 | 63 |
| 6 | 11 | 50 | 19 | 94 | 27 | 138 | 36 | 182 | 43 | 41 | 63 |
| 7 | 11 | 51 | 19 | 95 | 27 | 139 | 36 | SÂD SÛRESİ (s. 45-74) | | 42 | 64 |
| 8 | 11 | 52 | 20 | 96 | 27 | 140 | 36 | | | 43 | 64 |
| 9 | 11 | 53 | 20 | 97 | 27 | 141 | 36 | | | 44 | 64 |
| 10 | 11 | 54 | 20 | 98 | 27 | 142 | 37 | 1 | 45 | 45 | 66 |
| 11 | 12 | 55 | 20 | 99 | 28 | 143 | 37 | 2 | 46 | 46 | 66 |
| 12 | 12 | 56 | 20 | 100 | 29 | 144 | 37 | 3 | 46 | 47 | 66 |
| 13 | 12 | 57 | 20 | 101 | 29 | 145 | 37 | 4 | 46 | 48 | 66 |
| 14 | 12 | 58 | 21 | 102 | 29 | 146 | 37 | 5 | 46 | 49 | 67 |
| 15 | 12 | 59 | 21 | 103 | 31 | 147 | 37 | 6 | 47 | 50 | 67 |
| 16 | 13 | 60 | 21 | 104 | 31 | 148 | 37 | 7 | 47 | 51 | 67 |
| 17 | 13 | 61 | 21 | 105 | 31 | 149 | 39 | 8 | 47 | 52 | 67 |
| 18 | 13 | 62 | 21 | 106 | 32 | 150 | 39 | 9 | 48 | 53 | 67 |
| 19 | 13 | 63 | 22 | 107 | 32 | 151 | 39 | 10 | 48 | 54 | 68 |
| 20 | 13 | 64 | 22 | 108 | 32 | 152 | 39 | 11 | 48 | 55 | 68 |
| 21 | 13 | 65 | 22 | 109 | 32 | 153 | 39 | 12 | 48 | 56 | 68 |
| 22 | 14 | 66 | 22 | 110 | 32 | 154 | 39 | 13 | 48 | 57 | 68 |
| 23 | 14 | 67 | 22 | 111 | 33 | 155 | 39 | 14 | 49 | 58 | 68 |
| 24 | 14 | 68 | 22 | 112 | 33 | 156 | 40 | 15 | 49 | 59 | 68 |
| 25 | 15 | 69 | 22 | 113 | 33 | 157 | 40 | 16 | 49 | 60 | 69 |
| 26 | 15 | 70 | 23 | 114 | 33 | 158 | 40 | 17 | 49 | 61 | 69 |
| 27 | 15 | 71 | 23 | 115 | 33 | 159 | 40 | 18 | 50 | 62 | 69 |
| 28 | 15 | 72 | 23 | 116 | 33 | 160 | 40 | 19 | 50 | 63 | 69 |
| 29 | 15 | 73 | 23 | 117 | 33 | 161 | 41 | 20 | 51 | 64 | 70 |
| 30 | 16 | 74 | 23 | 118 | 34 | 162 | 41 | 21 | 52 | 65 | 70 |
| 31 | 16 | 75 | 23 | 119 | 34 | 163 | 41 | 22 | 54 | 66 | 70 |
| 32 | 16 | 76 | 23 | 120 | 34 | 164 | 41 | 23 | 54 | 67 | 70 |
| 33 | 16 | 77 | 24 | 121 | 34 | 165 | 41 | 24 | 54 | 68 | 70 |
| 34 | 16 | 78 | 24 | 122 | 34 | 166 | 41 | 25 | 55 | 69 | 70 |
| 35 | 16 | 79 | 24 | 123 | 34 | 167 | 41 | 26 | 56 | 70 | 70 |
| 36 | 17 | 80 | 24 | 124 | 34 | 168 | 41 | 27 | 56 | 71 | 71 |
| 37 | 17 | 81 | 24 | 125 | 35 | 169 | 41 | 28 | 57 | 72 | 72 |
| 38 | 17 | 82 | 24 | 126 | 35 | 170 | 42 | 29 | 57 | 73 | 72 |
| 39 | 17 | 83 | 25 | 127 | 35 | 171 | 42 | 30 | 57 | 74 | 72 |
| 40 | 17 | 84 | 25 | 128 | 35 | 172 | 42 | 31 | 58 | 75 | 72 |
| 41 | 18 | 85 | 25 | 129 | 35 | 173 | 42 | 32 | 58 | 76 | 72 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 77 | 73 |
| 78 | 73 |
| 79 | 73 |
| 80 | 73 |
| 81 | 73 |
| 82 | 73 |
| 83 | 73 |
| 84 | 74 |
| 85 | 74 |
| 86 | 74 |
| 87 | 74 |
| 88 | 74 |
| **ZÜMER SÛRESİ (s. 75-112)** | |
| 1 | 75 |
| 2 | 76 |
| 3 | 76 |
| 4 | 78 |
| 5 | 78 |
| 6 | 79 |
| 7 | 81 |
| 8 | 82 |
| 9 | 83 |
| 10 | 84 |
| 11 | 85 |
| 12 | 85 |
| 13 | 85 |
| 14 | 85 |
| 15 | 85 |
| 16 | 86 |
| 17 | 86 |
| 18 | 87 |
| 19 | 88 |
| 20 | 88 |
| 21 | 89 |
| 22 | 89 |
| 23 | 91 |
| 24 | 92 |
| 25 | 92 |
| 26 | 93 |
| 27 | 93 |
| 28 | 93 |
| 29 | 93 |
| 30 | 94 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 31 | 94 |
| 32 | 95 |
| 33 | 96 |
| 34 | 96 |
| 35 | 96 |
| 36 | 97 |
| 37 | 97 |
| 38 | 97 |
| 39 | 98 |
| 40 | 98 |
| 41 | 98 |
| 42 | 99 |
| 43 | 99 |
| 44 | 100 |
| 45 | 100 |
| 46 | 100 |
| 47 | 101 |
| 48 | 102 |
| 49 | 102 |
| 50 | 102 |
| 51 | 102 |
| 52 | 103 |
| 53 | 103 |
| 54 | 104 |
| 55 | 105 |
| 56 | 105 |
| 57 | 105 |
| 58 | 105 |
| 59 | 105 |
| 60 | 106 |
| 61 | 106 |
| 62 | 106 |
| 63 | 107 |
| 64 | 107 |
| 65 | 107 |
| 66 | 107 |
| 67 | 108 |
| 68 | 108 |
| 69 | 109 |
| 70 | 109 |
| 71 | 110 |
| 72 | 110 |
| 73 | 110 |
| 74 | 111 |
| 75 | 112 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| **MÜ'MİN (ĞÂFİR) SÛRESİ (s. 113-147)** | |
| 1 | 113 |
| 2 | 114 |
| 3 | 114 |
| 4 | 115 |
| 5 | 116 |
| 6 | 116 |
| 7 | 117 |
| 8 | 117 |
| 9 | 117 |
| 10 | 118 |
| 11 | 118 |
| 12 | 119 |
| 13 | 119 |
| 14 | 120 |
| 15 | 121 |
| 16 | 122 |
| 17 | 122 |
| 18 | 123 |
| 19 | 124 |
| 20 | 125 |
| 21 | 125 |
| 22 | 126 |
| 23 | 126 |
| 24 | 126 |
| 25 | 127 |
| 26 | 127 |
| 27 | 127 |
| 28 | 128 |
| 29 | 128 |
| 30 | 129 |
| 31 | 129 |
| 32 | 129 |
| 33 | 129 |
| 34 | 129 |
| 35 | 130 |
| 36 | 130 |
| 37 | 130 |
| 38 | 131 |
| 39 | 131 |
| 40 | 131 |
| 41 | 132 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 42 | 132 |
| 43 | 132 |
| 44 | 133 |
| 45 | 133 |
| 46 | 133 |
| 47 | 134 |
| 48 | 134 |
| 49 | 134 |
| 50 | 135 |
| 51 | 135 |
| 52 | 135 |
| 53 | 136 |
| 54 | 136 |
| 55 | 136 |
| 56 | 137 |
| 57 | 137 |
| 58 | 138 |
| 59 | 138 |
| 60 | 138 |
| 61 | 140 |
| 62 | 140 |
| 63 | 140 |
| 64 | 141 |
| 65 | 142 |
| 66 | 142 |
| 67 | 143 |
| 68 | 143 |
| 69 | 143 |
| 70 | 143 |
| 71 | 144 |
| 72 | 144 |
| 73 | 144 |
| 74 | 144 |
| 75 | 144 |
| 76 | 144 |
| 77 | 145 |
| 78 | 145 |
| 79 | 146 |
| 80 | 146 |
| 81 | 146 |
| 82 | 147 |
| 83 | 147 |
| 84 | 147 |
| 85 | 147 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| **FUSSİLET SÛRESİ (s. 149-177)** | |
| 1 | 149 |
| 2 | 149 |
| 3 | 149 |
| 4 | 150 |
| 5 | 150 |
| 6 | 151 |
| 7 | 151 |
| 8 | 151 |
| 9 | 152 |
| 10 | 152 |
| 11 | 153 |
| 12 | 154 |
| 13 | 154 |
| 14 | 154 |
| 15 | 155 |
| 16 | 155 |
| 17 | 155 |
| 18 | 155 |
| 19 | 156 |
| 20 | 156 |
| 21 | 156 |
| 22 | 157 |
| 23 | 157 |
| 24 | 158 |
| 25 | 158 |
| 26 | 159 |
| 27 | 159 |
| 28 | 159 |
| 29 | 160 |
| 30 | 160 |
| 31 | 163 |
| 32 | 163 |
| 33 | 165 |
| 34 | 166 |
| 35 | 166 |
| 36 | 166 |
| 37 | 167 |
| 38 | 168 |
| 39 | 168 |
| 40 | 169 |
| 41 | 170 |
| 42 | 170 |
| 43 | 171 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 44 | 171 |
| 45 | 172 |
| 46 | 173 |
| 47 | 173 |
| 48 | 174 |
| 49 | 174 |
| 50 | 174 |
| 51 | 175 |
| 52 | 176 |
| 53 | 176 |
| 54 | 176 |
| **ŞÛRÂ SÛRESİ (s. 179-208)** | |
| 1 | 179 |
| 2 | 179 |
| 3 | 179 |
| 4 | 180 |
| 5 | 180 |
| 6 | 181 |
| 7 | 182 |
| 8 | 183 |
| 9 | 183 |
| 10 | 183 |
| 11 | 184 |
| 12 | 185 |
| 13 | 186 |
| 14 | 187 |
| 15 | 187 |
| 16 | 188 |
| 17 | 189 |
| 18 | 189 |
| 19 | 189 |
| 20 | 191 |
| 21 | 191 |
| 22 | 192 |
| 23 | 193 |
| 24 | 194 |
| 25 | 195 |
| 26 | 196 |
| 27 | 197 |
| 28 | 198 |
| 29 | 198 |
| 30 | 199 |
| 31 | 200 |
| 32 | 200 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 33 | 201 |
| 34 | 201 |
| 35 | 201 |
| 36 | 201 |
| 37 | 201 |
| 38 | 202 |
| 39 | 202 |
| 40 | 203 |
| 41 | 203 |
| 42 | 203 |
| 43 | 204 |
| 44 | 204 |
| 45 | 205 |
| 46 | 205 |
| 47 | 205 |
| 48 | 206 |
| 49 | 207 |
| 50 | 207 |
| 51 | 207 |
| 52 | 208 |
| 53 | 208 |
| **ZUHRUF SÛRESİ (s. 209-235)** | |
| 1 | 209 |
| 2 | 209 |
| 3 | 209 |
| 4 | 210 |
| 5 | 210 |
| 6 | 211 |
| 7 | 211 |
| 8 | 211 |
| 9 | 211 |
| 10 | 211 |
| 11 | 212 |
| 12 | 212 |
| 13 | 213 |
| 14 | 213 |
| 15 | 214 |
| 16 | 214 |
| 17 | 214 |
| 18 | 214 |
| 19 | 214 |
| 20 | 215 |
| 21 | 215 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 22 | 215 |
| 23 | 215 |
| 24 | 216 |
| 25 | 216 |
| 26 | 216 |
| 27 | 216 |
| 28 | 216 |
| 29 | 217 |
| 30 | 217 |
| 31 | 217 |
| 32 | 217 |
| 33 | 219 |
| 34 | 219 |
| 35 | 219 |
| 36 | 219 |
| 37 | 220 |
| 38 | 220 |
| 39 | 221 |
| 40 | 221 |
| 41 | 221 |
| 42 | 221 |
| 43 | 221 |
| 44 | 222 |
| 45 | 222 |
| 46 | 223 |
| 47 | 223 |
| 48 | 223 |
| 49 | 223 |
| 50 | 223 |
| 51 | 224 |
| 52 | 224 |
| 53 | 224 |
| 54 | 224 |
| 55 | 225 |
| 56 | 225 |
| 57 | 225 |
| 58 | 226 |
| 59 | 227 |
| 60 | 227 |
| 61 | 227 |
| 62 | 227 |
| 63 | 228 |
| 64 | 228 |
| 65 | 228 |
| 66 | 228 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 67 | 229 |
| 68 | 229 |
| 69 | 230 |
| 70 | 230 |
| 71 | 230 |
| 72 | 231 |
| 73 | 231 |
| 74 | 231 |
| 75 | 231 |
| 76 | 232 |
| 77 | 232 |
| 78 | 232 |
| 79 | 232 |
| 80 | 233 |
| 81 | 233 |
| 82 | 233 |
| 83 | 234 |
| 84 | 234 |
| 85 | 234 |
| 86 | 235 |
| 87 | 235 |
| 88 | 235 |
| 89 | 235 |
| **DUHÂN SÛRESİ (s. 237-249)** | |
| 1 | 237 |
| 2 | 237 |
| 3 | 238 |
| 4 | 238 |
| 5 | 239 |
| 6 | 239 |
| 7 | 239 |
| 8 | 240 |
| 9 | 240 |
| 10 | 240 |
| 11 | 241 |
| 12 | 241 |
| 13 | 241 |
| 14 | 242 |
| 15 | 242 |
| 16 | 242 |
| 17 | 242 |
| 18 | 242 |
| 19 | 242 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 20 | 243 |
| 21 | 243 |
| 22 | 243 |
| 23 | 243 |
| 24 | 243 |
| 25 | 243 |
| 26 | 243 |
| 27 | 243 |
| 28 | 244 |
| 29 | 244 |
| 30 | 244 |
| 31 | 244 |
| 32 | 244 |
| 33 | 245 |
| 34 | 245 |
| 35 | 245 |
| 36 | 245 |
| 37 | 246 |
| 38 | 246 |
| 39 | 246 |
| 40 | 246 |
| 41 | 246 |
| 42 | 246 |
| 43 | 247 |
| 44 | 247 |
| 45 | 247 |
| 46 | 247 |
| 47 | 247 |
| 48 | 247 |
| 49 | 247 |
| 50 | 247 |
| 51 | 247 |
| 52 | 247 |
| 53 | 247 |
| 54 | 248 |
| 55 | 248 |
| 56 | 248 |
| 57 | 249 |
| 58 | 249 |
| 59 | 249 |
| **CÂSİYE SÛRESİ (s. 251-262)** | |
| 1 | 251 |
| 2 | 251 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 3 | 252 |
| 4 | 252 |
| 5 | 252 |
| 6 | 253 |
| 7 | 253 |
| 8 | 253 |
| 9 | 253 |
| 10 | 254 |
| 11 | 254 |
| 12 | 254 |
| 13 | 255 |
| 14 | 255 |
| 15 | 256 |
| 16 | 256 |
| 17 | 256 |
| 18 | 257 |
| 19 | 257 |
| 20 | 257 |
| 21 | 258 |
| 22 | 258 |
| 23 | 259 |
| 24 | 259 |
| 25 | 260 |
| 26 | 260 |
| 27 | 260 |
| 28 | 261 |
| 29 | 261 |
| 30 | 261 |
| 31 | 261 |
| 32 | 261 |
| 33 | 261 |
| 34 | 261 |
| 35 | 261 |
| 36 | 261 |
| 37 | 261 |
| **AHKÂF SÛRESİ (s. 263-276)** | |
| 1 | 263 |
| 2 | 263 |
| 3 | 264 |
| 4 | 264 |
| 5 | 265 |
| 6 | 265 |
| 7 | 265 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 8 | 265 |
| 9 | 265 |
| 10 | 266 |
| 11 | 266 |
| 12 | 267 |
| 13 | 267 |
| 14 | 268 |
| 15 | 268 |
| 16 | 269 |
| 17 | 270 |
| 18 | 270 |
| 19 | 270 |
| 20 | 270 |
| 21 | 271 |
| 22 | 271 |
| 23 | 271 |
| 24 | 272 |
| 25 | 272 |
| 26 | 272 |
| 27 | 273 |
| 28 | 273 |
| 29 | 273 |
| 30 | 274 |
| 31 | 274 |
| 32 | 274 |
| 33 | 275 |
| 34 | 275 |
| 35 | 275 |
| **MUHAMMED SÛRESİ (s. 277-295)** | |
| 1 | 277 |
| 2 | 277 |
| 3 | 278 |
| 4 | 279 |
| 5 | 280 |
| 6 | 280 |
| 7 | 280 |
| 8 | 280 |
| 9 | 280 |
| 10 | 281 |
| 11 | 281 |
| 12 | 282 |
| 13 | 282 |
| 14 | 283 |
| 15 | 283 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 16 | 284 |
| 17 | 285 |
| 18 | 285 |
| 19 | 285 |
| 20 | 287 |
| 21 | 288 |
| 22 | 288 |
| 23 | 289 |
| 24 | 289 |
| 25 | 289 |
| 26 | 290 |
| 27 | 290 |
| 28 | 290 |
| 29 | 290 |
| 30 | 291 |
| 31 | 291 |
| 32 | 291 |
| 33 | 292 |
| 34 | 292 |
| 35 | 292 |
| 36 | 293 |
| 37 | 293 |
| 38 | 294 |
| **FETİH SÛRESİ (s. 297-321)** | |
| 1 | 297 |
| 2 | 298 |
| 3 | 299 |
| 4 | 299 |
| 5 | 300 |
| 6 | 301 |
| 7 | 301 |
| 8 | 302 |
| 9 | 302 |
| 10 | 303 |
| 11 | 305 |
| 12 | 306 |
| 13 | 307 |
| 14 | 307 |
| 15 | 307 |
| 16 | 308 |
| 17 | 309 |
| 18 | 310 |
| 19 | 310 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 20 | 311 |
| 21 | 312 |
| 22 | 313 |
| 23 | 313 |
| 24 | 313 |
| 25 | 314 |
| 26 | 316 |
| 27 | 317 |
| 28 | 318 |
| 29 | 319 |
| **HUCURÂT SÛRESİ (s. 323-334)** | |
| 1 | 323 |
| 2 | 324 |
| 3 | 325 |
| 4 | 325 |
| 5 | 325 |
| 6 | 326 |
| 7 | 326 |
| 8 | 327 |
| 9 | 327 |
| 10 | 328 |
| 11 | 329 |
| 12 | 330 |
| 13 | 331 |
| 14 | 332 |
| 15 | 333 |
| 16 | 333 |
| 17 | 334 |
| 18 | 334 |
| **KÂF SÛRESİ (s. 335-350)** | |
| 1 | 335 |
| 2 | 336 |
| 3 | 336 |
| 4 | 337 |
| 5 | 337 |
| 6 | 337 |
| 7 | 338 |
| 8 | 338 |
| 9 | 338 |
| 10 | 339 |
| 11 | 339 |
| 12 | 339 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 13 | 339 |
| 14 | 339 |
| 15 | 340 |
| 16 | 340 |
| 17 | 340 |
| 18 | 341 |
| 19 | 341 |
| 20 | 342 |
| 21 | 342 |
| 22 | 342 |
| 23 | 342 |
| 24 | 343 |
| 25 | 343 |
| 26 | 343 |
| 27 | 343 |
| 28 | 344 |
| 29 | 344 |
| 30 | 344 |
| 31 | 345 |
| 32 | 345 |
| 33 | 346 |
| 34 | 346 |
| 35 | 347 |
| 36 | 347 |
| 37 | 347 |
| 38 | 349 |
| 39 | 349 |
| 40 | 349 |
| 41 | 349 |
| 42 | 349 |
| 43 | 350 |
| 44 | 350 |
| 45 | 350 |
| **ZÂRİYÂT SÛRESİ (s. 351-366)** | |
| 1 | 351 |
| 2 | 351 |
| 3 | 351 |
| 4 | 351 |
| 5 | 351 |
| 6 | 351 |
| 7 | 353 |
| 8 | 353 |
| 9 | 353 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 10 | 354 |
| 11 | 354 |
| 12 | 354 |
| 13 | 354 |
| 14 | 354 |
| 15 | 355 |
| 16 | 355 |
| 17 | 355 |
| 18 | 355 |
| 19 | 356 |
| 20 | 357 |
| 21 | 357 |
| 22 | 358 |
| 23 | 358 |
| 24 | 359 |
| 25 | 360 |
| 26 | 360 |
| 27 | 360 |
| 28 | 360 |
| 29 | 361 |
| 30 | 361 |
| 31 | 361 |
| 32 | 362 |
| 33 | 362 |
| 24 | 362 |
| 35 | 362 |
| 36 | 362 |
| 37 | 362 |
| 38 | 362 |
| 39 | 362 |
| 40 | 362 |
| 41 | 362 |
| 42 | 363 |
| 43 | 363 |
| 44 | 363 |
| 45 | 363 |
| 46 | 363 |
| 47 | 363 |
| 48 | 363 |
| 49 | 364 |
| 50 | 364 |
| 51 | 365 |
| 52 | 365 |
| 53 | 365 |
| 54 | 365 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 55 | 365 |
| 56 | 366 |
| 57 | 366 |
| 58 | 366 |
| 59 | 366 |
| 60 | 366 |
| **TÛR SÛRESİ (s. 367-378)** | |
| 1 | 367 |
| 2 | 367 |
| 3 | 367 |
| 4 | 368 |
| 5 | 369 |
| 6 | 369 |
| 7 | 369 |
| 8 | 369 |
| 9 | 369 |
| 10 | 369 |
| 11 | 370 |
| 12 | 370 |
| 13 | 370 |
| 14 | 370 |
| 15 | 370 |
| 16 | 370 |
| 17 | 371 |
| 18 | 371 |
| 19 | 371 |
| 20 | 371 |
| 21 | 371 |
| 22 | 372 |
| 23 | 372 |
| 24 | 373 |
| 25 | 373 |
| 26 | 373 |
| 27 | 373 |
| 28 | 373 |
| 29 | 374 |
| 30 | 374 |
| 31 | 374 |
| 32 | 375 |
| 33 | 375 |
| 34 | 375 |
| 35 | 375 |
| 36 | 375 |
| 37 | 375 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 38 | 375 |
| 39 | 376 |
| 40 | 376 |
| 41 | 376 |
| 42 | 376 |
| 43 | 376 |
| 44 | 377 |
| 45 | 377 |
| 46 | 377 |
| 47 | 377 |
| 48 | 378 |
| 49 | 378 |
| **NECM SÛRESİ (s. 379-396)** | |
| 1 | 379 |
| 2 | 379 |
| 3 | 380 |
| 4 | 380 |
| 5 | 381 |
| 6 | 381 |
| 7 | 381 |
| 8 | 381 |
| 9 | 381 |
| 10 | 382 |
| 11 | 383 |
| 12 | 383 |
| 13 | 383 |
| 14 | 383 |
| 15 | 383 |
| 16 | 384 |
| 17 | 384 |
| 18 | 384 |
| 19 | 385 |
| 20 | 385 |
| 21 | 385 |
| 22 | 385 |
| 23 | 385 |
| 24 | 386 |
| 25 | 386 |
| 26 | 387 |
| 27 | 387 |
| 28 | 387 |
| 29 | 387 |
| 30 | 387 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 31 | 388 |
| 32 | 388 |
| 33 | 390 |
| 34 | 390 |
| 35 | 390 |
| 36 | 390 |
| 37 | 390 |
| 38 | 390 |
| 39 | 390 |
| 40 | 390 |
| 41 | 391 |
| 42 | 391 |
| 43 | 392 |
| 44 | 392 |
| 45 | 393 |
| 46 | 393 |
| 47 | 393 |
| 48 | 393 |
| 49 | 394 |
| 50 | 394 |
| 51 | 394 |
| 52 | 394 |
| 53 | 394 |
| 54 | 394 |
| 55 | 395 |
| 56 | 395 |
| 57 | 395 |
| 58 | 395 |
| 59 | 395 |
| 60 | 395 |
| 61 | 396 |
| 62 | 396 |
| **KAMER SÛRESİ (s. 397-410)** | |
| 1 | 397 |
| 2 | 398 |
| 3 | 398 |
| 4 | 399 |
| 5 | 399 |
| 6 | 399 |
| 7 | 399 |
| 8 | 400 |
| 9 | 400 |
| 10 | 400 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 11 | 400 |
| 12 | 400 |
| 13 | 401 |
| 14 | 401 |
| 15 | 402 |
| 16 | 402 |
| 17 | 403 |
| 18 | 403 |
| 19 | 403 |
| 20 | 403 |
| 21 | 404 |
| 22 | 404 |
| 23 | 404 |
| 24 | 404 |
| 25 | 404 |
| 26 | 404 |
| 27 | 404 |
| 28 | 404 |
| 29 | 404 |
| 30 | 404 |
| 31 | 404 |
| 32 | 405 |
| 33 | 405 |
| 34 | 405 |
| 35 | 405 |
| 36 | 406 |
| 37 | 406 |
| 38 | 406 |
| 39 | 406 |
| 40 | 407 |
| 41 | 407 |
| 42 | 407 |
| 43 | 407 |
| 44 | 407 |
| 45 | 407 |
| 46 | 407 |
| 47 | 408 |
| 48 | 408 |
| 49 | 408 |
| 50 | 408 |
| 51 | 409 |
| 52 | 409 |
| 53 | 409 |
| 54 | 410 |
| 55 | 410 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| **RAHMÂN SÛRESİ (s. 411-432)** | |
| 1 | 411 |
| 2 | 411 |
| 3 | 413 |
| 4 | 413 |
| 5 | 414 |
| 6 | 414 |
| 7 | 414 |
| 8 | 415 |
| 9 | 415 |
| 10 | 415 |
| 11 | 415 |
| 12 | 415 |
| 13 | 416 |
| 14 | 417 |
| 15 | 417 |
| 16 | 417 |
| 17 | 418 |
| 18 | 418 |
| 19 | 418 |
| 20 | 418 |
| 21 | 418 |
| 22 | 418 |
| 23 | 419 |
| 24 | 419 |
| 25 | 419 |
| 26 | 420 |
| 27 | 420 |
| 28 | 420 |
| 29 | 420 |
| 30 | 421 |
| 31 | 422 |
| 32 | 422 |
| 33 | 422 |
| 34 | 422 |
| 35 | 422 |
| 36 | 423 |
| 37 | 423 |
| 38 | 423 |
| 39 | 423 |
| 40 | 424 |
| 41 | 424 |
| 42 | 424 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 43 | 424 |
| 44 | 424 |
| 45 | 424 |
| 46 | 425 |
| 47 | 425 |
| 48 | 425 |
| 49 | 425 |
| 50 | 426 |
| 51 | 426 |
| 52 | 426 |
| 53 | 426 |
| 54 | 426 |
| 55 | 427 |
| 56 | 427 |
| 57 | 428 |
| 58 | 428 |
| 59 | 428 |
| 60 | 428 |
| 61 | 429 |
| 62 | 429 |
| 63 | 430 |
| 64 | 430 |
| 65 | 430 |
| 66 | 430 |
| 67 | 430 |
| 68 | 430 |
| 69 | 431 |
| 70 | 431 |
| 71 | 431 |
| 72 | 431 |
| 73 | 431 |
| 74 | 432 |
| 75 | 432 |
| 76 | 432 |
| 77 | 432 |
| 78 | 432 |
| **VÂKI'A SÛRESİ (s. 433-454)** | |
| 1 | 433 |
| 2 | 433 |
| 3 | 434 |
| 4 | 434 |
| 5 | 434 |
| 6 | 434 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 7 | 435 |
| 8 | 435 |
| 9 | 435 |
| 10 | 435 |
| 11 | 436 |
| 12 | 436 |
| 13 | 437 |
| 14 | 437 |
| 15 | 437 |
| 16 | 437 |
| 17 | 438 |
| 18 | 438 |
| 19 | 438 |
| 20 | 438 |
| 21 | 438 |
| 22 | 438 |
| 23 | 438 |
| 24 | 439 |
| 25 | 439 |
| 26 | 439 |
| 27 | 439 |
| 28 | 439 |
| 29 | 439 |
| 30 | 439 |
| 31 | 439 |
| 32 | 440 |
| 33 | 440 |
| 34 | 440 |
| 35 | 440 |
| 36 | 440 |
| 37 | 440 |
| 38 | 440 |
| 39 | 441 |
| 40 | 441 |
| 41 | 441 |
| 42 | 441 |
| 43 | 441 |
| 44 | 441 |
| 45 | 441 |
| 46 | 442 |
| 47 | 442 |
| 48 | 442 |
| 49 | 442 |
| 50 | 442 |
| 51 | 442 |

| Âyet No | Sayfa No |
|---|---|
| 52 | 442 |
| 53 | 443 |
| 54 | 443 |
| 55 | 443 |
| 56 | 443 |
| 57 | 443 |
| 58 | 444 |
| 59 | 444 |
| 60 | 445 |
| 61 | 445 |
| 62 | 446 |
| 63 | 446 |
| 64 | 446 |
| 65 | 446 |
| 66 | 446 |
| 67 | 446 |
| 68 | 447 |
| 69 | 447 |
| 70 | 447 |
| 71 | 447 |
| 72 | 447 |
| 73 | 448 |
| 74 | 448 |
| 75 | 449 |
| 76 | 449 |
| 77 | 449 |
| 78 | 449 |
| 79 | 449 |
| 80 | 450 |
| 81 | 450 |
| 82 | 450 |
| 83 | 451 |
| 84 | 451 |
| 85 | 451 |
| 86 | 451 |
| 87 | 451 |
| 88 | 452 |
| 89 | 452 |
| 90 | 453 |
| 91 | 453 |
| 92 | 453 |
| 93 | 453 |
| 94 | 453 |
| 95 | 453 |
| 96 | 454 |

سورة الصّآفّاتِ

# SÂFFÂT SÛRESİ

(Sâffât Sûresi 182 âyet olup, Mekke döneminin ortalarında inmiştir. Adını saf tutmuş meleklerden söz eden ilk âyetten almıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir sözdür ki, bir kalbe hakim olduğu zaman her iki dünyaya olan ihtiyacını ortadan kaldırır, sonra buna bağlı olarak yok oluşunu gerekli kılar sonra da himmetiyle talebini onurlandırır.

وَالصَّآفَّاتِ صَفًّا ﴿١﴾

1- "Andolsun, saf bağlayıp duranlara."

Allah bu sûreyi saf bağlayıp duranlara ettiği yeminle açmıştır. Bunlar gökte, havada ve yerlerinde saf tutan melekler olup Allah'ın onlara emrettiği yerde kalırlar ve emri kabul ederler. Allah'ı tesbih ve takdis ederler ve kendilerine olan emrini yerine getirmek suretiyle O'na itaat ederler.

فَالزَّاجِرَاتِ زَجْرًا ﴿٢﴾

2- "Haykırarak sevk edenlere."

Allah bu ayette geçenleri, "fâ" harfiyle bir önceki ayette geçenlere atıf yapmıştır. Bunlar, bulutları sevk eden meleklerdir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Bu melekler, insanları günahlardan alıkoyarlar.
- Bunlar, yasaklardan alıkoyan duygulardır.

فَالتَّالِيَاتِ ذِكْرًا ﴿٣﴾

3- "Zikri okuyanlara."

Bir yoruma göre; saf bağlayıp duranlar gökyüzünde saf duran kuşlardır. Zikri okuyanlar ise Allah'ın kitabını ve vahyi peygamberlere okuyan meleklerdir.

اِنَّ اِلٰهَكُمْ لَوَاحِدٌ ﴿٤﴾

4- "Sizin ilâhınız, gerçekten bir tek ilâhtır."

Üzerine yemin edilen husus budur. Burada Allah, mülkünde tek olduğunu bildirmiştir. Çünkü onlar tek bir varlığın âlemin bütün ahvalini yönetmesine şaşırmışlardı. Bu arada Allah'ın tek olmasının anlamı, sahip olduğu hakta ortaksız tek varlık olması, varlığında benzerden mukaddes ve mülkünde şerikten münezzeh olmasıdır.

رَبُّ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا وَرَبُّ الْمَشَارِقِ ﴿٥﴾

5- "O, göklerin, yerin ve ikisi arasındakilerin Rabbidir. Doğuların da Rabbidir."

Allah göklerin, yerin ve ikisi arasındakilerin maliki ve yaratıcısıdır. Kulların kazandıkları da buna dahildir.

( وَرَبُّ الْمَشَارِقِ ) *"Doğuların da Rabbidir."*

Doğulardan maksat yıldızların, güneşin ve ayın doğdukları yerler ile kalplerin güneşleri, ayları ve yıldızlarıyla doğdukları yerlerdir.

إِنَّا زَيَّنَّا السَّمَاءَ الدُّنْيَا بِزِينَةٍ الْكَوَاكِبِ ﴿٦﴾
وَحِفْظًا مِنْ كُلِّ شَيْطَانٍ مَارِدٍ ﴿٧﴾

6, 7- "Biz, en yakın göğü ziynetlerle, yıldızlarla donattık. Onu itaatten çıkan her şeytandan koruduk."

Allah en yakın göğü yıldızlarla süslerken, velilerinin kalplerini marifet ve hallerin yıldızları ile süslemiştir. Gökleri de yıldızları şeytanlara atılan taşlar yaparak korumuştur. Aynı şekilde kalpleri de tevhid nurlarıyla süslemiştir. Bu nedenle şeytan onlara yaklaştığı zaman, marifetlerinin yıldızlarıyla onları taşlar.

لَا يَسَّمَّعُونَ اِلَى الْمَلَإِ الْاَعْلٰى وَيُقْذَفُونَ مِنْ كُلِّ جَانِبٍ ﴿٨﴾

8- "Onlar, yüce topluluğu dinleyemezler ve her taraftan taşa tutulurlar."

دُحُورًا وَلَهُمْ عَذَابٌ وَاصِبٌ ﴿٩﴾

9- "Kovulmaları için. Onlara sürekli bir azap da vardır."

اِلَّا مَنْ خَطِفَ الْخَطْفَةَ فَاَتْبَعَهُ شِهَابٌ ثَاقِبٌ ﴿١٠﴾

10- "Ancak onlardan söz kapan olur. Onu da delip geçen bir alev izler."

İşte böylece şeytan, velilerden bir fırsat ele geçirip onlara vesveselerinden bir şey bulaştırmak istediği zaman, veliler Allah'ı hatırlayıverirler ve hemen gerçeği görüp O'na dönüş yaparlar.

Allah şöyle buyurmuştur:

(اِنَّ الَّذِينَ اتَّقَوْا اِذَا مَسَّهُمْ طَٓائِفٌ مِنَ الشَّيْطَانِ تَذَكَّرُوا فَاِذَا هُمْ مُبْصِرُونَ) *"Şüphe yok ki, Allah'a karşı gelmekten sakınanlar, kendilerine şeytandan bir vesvese dokunduğu zaman, derhal Allah'ı hatırlarlar."* (A'râf, 7/201)

فَاسْتَفْتِهِمْ اَهُمْ اَشَدُّ خَلْقًا اَمْ مَنْ خَلَقْنَا اِنَّا خَلَقْنَاهُمْ مِنْ طِينٍ
لَازِبٍ ﴿١١﴾

11- "Şimdi sen onlara sor: 'Kendilerini yaratmak mı daha zor, yoksa yarattığımız diğer şeyleri yaratmak mı?' Şüphesiz biz, onları yapışkan bir çamurdan yarattık."

Allah, onlara acizliklerini ve her haldeki güçsüzlüklerini öğretmiş, sonra da kendilerine neseplerinin yapışkan bir çamurdan olduğunu hatırlatmıştır.

بَلْ عَجِبْتَ وَيَسْخَرُونَ ﴿١٢﴾

12- "Doğrusu sen şaştın, onlar ise alayediyorlar."

Şaşmanın mahiyeti, benzerinin meydana gelmesi âdet haline gelmeyen bir durumdan dolayı nefsin değişikliğe uğramasıdır. Bu arada ayet, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) hitaben ( عجبتَ ) *"cibte-sen şaştın"* şeklinde okunabildiği gibi, ( عجبتُ ) *"acibtu-ben şaştım"* şeklinde de okunabilir. Bu durumda sanki Allah kendinden söz ederek bunu, söz konusu şeyi miktar bakımından büyük bulmak veya çok yermek ya da çok övmek anlamında söylemiştir.

رَاَوْا اٰيَةً يَسْتَسْخِرُونَ ﴿١٤﴾
هٰذَٓا اِلَّا سِحْرٌ مُبِينٌ ﴿١٥﴾

13, 14, 15- "Kendilerine hatırlatma yapıldığı zaman öğüt almıyorlar. Bir mucize gördükleri zaman onu alaya alıyorlar. 'Bu, bir büyüden başka bir şey değildir' diyorlar."

Onlara Allah'ın ayetleri hatırlatıldığı zaman, o ayetlere iman etmekten onları düşünmekten yüz çevirerek şöyle derler:

( وَقَالُوٓا اِنْ هٰذَٓا اِلَّا سِحْرٌ مُبِينٌ ) *"Muhammed'in getirdiği bu şey, açık bir sihirden başka bir şey değildir."*

ءَاِذَا مِتْنَا وَكُنَّا تُرَابًا وَعِظَامًا ءَاِنَّا لَمَبْعُوثُونَ ﴿١٦﴾
اَوَاٰبَٓاؤُ۬نَا الْاَوَّلُونَ ﴿١٧﴾

16, 17- "Gerçekten biz bir toprak ve kemik yığını haline geldikten sonra mı, biz mi tekrar diriltileceğiz? Yoksa önceden gelip geçmiş atalarımız da mı?"

Dediler ki: *"Biz, ölüp parçalarımız dağıldığı ve çürük kemikler haline geldiğimiz zaman mı diriltileceğiz? Yoksa gelip geçmiş atalarımız da mı aynı şekilde diriltilecekler?"*

Onlar bunu, akla uzak bulmak şeklinde söylediler. Bu itibarla onların marifetleri yitiktir, basiretleri kapalıdır ve kalpleri tevhidden alıkonulmuştur.

قُلْ نَعَمْ وَاَنْتُمْ دَاخِرُونَ ﴿١٨﴾ فَاِنَّمَا هِيَ زَجْرَةٌ وَاحِدَةٌ فَاِذَا هُمْ
يَنْظُرُونَ ﴿١٩﴾

18, 19- "De ki: 'Evet, hem de siz aşağılanmış kimseler olarak diriltileceksiniz. O, ancak şiddetli bir sesten ibarettir. Bir de bakarsın ki onlar, hazır beklemektedirler.'"

Ey Muhammed! Onlara de ki: "Evet. Hem de sizi aşağılanmış kimseler olarak diriltecek ve tek bir sevk ile sizi toplayacaktır. Bunu da hepinizin başına kıyameti kopardıktan sonra yapacaktır."

وَقَالُوا يَا وَيْلَنَا هٰذَا يَوْمُ الدِّينِ ﴿٢٠﴾ هٰذَا يَوْمُ الْفَصْلِ الَّذِي كُنْتُمْ
بِهٖ تُكَذِّبُونَ ﴿٢١﴾

20, 21- "Şöyle diyecekler: 'Vay başımıza gelene! Bu, beklenen ceza günüdür.' Onlara: 'İşte bu, yalanlamakta olduğunuz hüküm ve ayırım günüdür' denilir."

Onlar, kendilerine helak ile beddua edeceklerdir. Onlara şöyle denecektir: "İşte bu, yalanlamakta olduğunuz hüküm ve ayırım günüdür. İşte bugün onu gördünüz."

اُحْشُرُوا الَّذِينَ ظَلَمُوا وَاَزْوَاجَهُمْ وَمَا كَانُوا يَعْبُدُونَ ﴿٢٢﴾ مِنْ دُونِ اللّٰهِ فَاهْدُوهُمْ اِلٰى صِرَاطِ الْجَحِيمِ ﴿٢٣﴾ وَقِفُوهُمْ اِنَّهُمْ مَسْؤُلُونَ ﴿٢٤﴾

22, 23, 24- "Allah, meleklere şöyle emreder: 'Zulmedenleri, eşlerini ve Allah'ı bırakıp da tapınakta olduklarını toplayın. Onları cehennemin yoluna koyun ve onları tutuklayın. Çünkü onlar, sorguya çekileceklerdir.'"

Allah, eşlerinden gerçek eşlerini, benzerlerini, onlar gibi davrananları ve az ya da çok onlara zulümlerinde yardımcı onları kast etmektedir. Bu tarikatta da aynı şekilde her kim tembel bir kimseye tembelliğinde veya hatalı bir kimseye hatasında yardımcı olursa, cezasında ve kovulmayı ve hakareti hak etmede ona ortak olur.

( وَقِفُوهُمْ اِنَّهُمْ مَسْؤُلُونَ ) *"Onları tutuklayın. Çünkü onlar, sorguya çekileceklerdir."*

Sorgu makamı zor bir makamdır. Kimilerini melek, kimilerini de hükümdar -Allah- sorguya çeker. Meleklerin sorguya çektikleri, sergilenip açıklanmaya elverişli salih amelleri olan kimselerdir. Kimilerinin de amelleri açıklanmaya elverişli değildir. Onlar da iki kısımdır: Havass olanları Allah, hem dünyada hem de ahirette halkın kendilerine muttali olmasından saklar. Kimileri de vardır ki onlar hata sahipleridir. Ancak Allah onlara merhamet eder ve kendilerini rüsva etmez. Sonra bu kimseler bazı hallerinde heybet, bazı hallerinde de bast ve yakınlık sıfatına sahiptirler.

Bir rivayette şöyle denilmiştir:

*"Allah, kimilerini eliyle saklayarak kendisine: 'Yarın Rabbini anacaksın' der."*

İşte bunlar, gerçekte hususiyet sahibi kimselerdir. Ötekiler, yabancılar ve kâfirlere gelince kendilerine şöyle denir:

[كَفٰى بِنَفْسِكَ الْيَوْمَ عَلَيْكَ حَسِيبًا] *"Bugün hesap soran olarak nefsin sana yeter."* [İsrâ, 17/14]

Onlar amel defterlerini okudukları zaman kendilerine: *"Bunu kim yaptı ve cezası nedir?"* denir. Onlar da: *"Cezası cehennemdir"* deyince bu kez onlara şöyle denir: *"Kendi kararınızla girin cehenneme!"*

Sonra paniğin kendilerine hakim olduğu bazı hallerde de onlara şöyle denir:

مَا لَكُمْ لَا تَنَاصَرُونَ ﴿٢٥﴾ بَلْ هُمُ الْيَوْمَ مُسْتَسْلِمُونَ ﴿٢٦﴾
وَاَقْبَلَ بَعْضُهُمْ عَلٰى بَعْضٍ يَتَسَٓاءَلُونَ ﴿٢٧﴾

25, 26, 27- "Onlara: 'Ne diye yardımlaşmıyorsunuz?' denir. Doğrusu onlar, bugün teslim olmuş kimselerdir. Birbirlerine yönelip çekişirler."

Onlar, günahı birbirlerine yüklüyorlar. Her biri diğerinden uzak durmaya çalışır. Nihayet Allah, onlar hakkında rezil ve aşağılık olduklarına dair hükmünü vererek kendilerini lanette ve uzaklaştırılmada birleştirir.

قَالُٓوا اِنَّكُمْ كُنْتُمْ تَأْتُونَنَا عَنِ الْيَمِينِ ﴿٢٨﴾

28- "Şöyle derler: 'Siz bize sağdan gelirdiniz. Bize haktan yana görünürdünüz.'"

قَالُوا بَلْ لَمْ تَكُونُوا مُؤْمِنِينَ ﴿٢٩﴾

29- "Diğerleri de onlara şöyle derler: 'Hayır, siz zaten mümin kimseler değildiniz.'"

وَمَا كَانَ لَنَا عَلَيْكُمْ مِنْ سُلْطَانٍ بَلْ كُنْتُمْ قَوْمًا طَاغِينَ ﴿٣٠﴾

30- "Bizim sizin üzerinizde hiçbir hâkimiyetimiz yoktu. Hatta siz azgın bir kavimdiniz."

فَحَقَّ عَلَيْنَا قَوْلُ رَبِّنَا اِنَّا لَذَٓائِقُونَ ﴿٣١﴾

31- "Artık Rabbimizin sözü bizim hakkımızda gerçekleşti. Biz, onu mutlaka tadacağız."

فَاَغْوَيْنَاكُمْ اِنَّا كُنَّا غَاوِينَ ﴿٣٢﴾

32- "Evet, biz sizi saptırdık. Çünkü biz de sapkın kimselerdik."

فَاِنَّهُمْ يَوْمَئِذٍ فِي الْعَذَابِ مُشْتَرِكُونَ ﴿٣٣﴾ اِنَّا كَذٰلِكَ نَفْعَلُ بِالْمُجْرِمِينَ ﴿٣٤﴾

33, 34- "Artık onlar, o gün azapta ortaktırlar. İşte biz suçlulara böyle yaparız."

Onlar azapta ortaktırlar, ancak nasipleri birbirlerinden farklı olur. Tıpkı hatalarda ortak olup hatalarının miktarları değiştiği gibi.

اِنَّهُمْ كَانُوٓا اِذَا قِيلَ لَهُمْ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ يَسْتَكْبِرُونَ ﴿٣٥﴾

35- "Çünkü onlar, kendilerine: 'Allah'tan başka hiçbir ilâh yoktur' denildiği zaman inanmayıp büyüklük taslıyorlardı."

Kalpleriyle perdelenmiş olmaları, onları azaplarının çukuruna düşürmüştür. Çünkü onlar, kibirlenerek Allah'ın Rab oluşunu ikrar etmeye yanaşmadılar. Eğer Allah'ı tanısalardı, O'na kul olmakla övüneceklerdi. Allah şöyle buyurur:

( اِنَّ الَّذِينَ عِنْدَ رَبِّكَ لَا يَسْتَكْبِرُونَ عَنْ عِبَادَتِهِ ) *"Şüphesiz Rabbin katındakiler, O'na ibadet etmekten kibirlenmezler."* (A'râf, 7/206)

Bir de şöyle buyurur:

(لَنْ يَسْتَنْكِفَ الْمَسِيحُ اَنْ يَكُونَ عَبْدًا لِلّٰهِ وَلَا الْمَلٰٓئِكَةُ الْمُقَرَّبُونَ) *"Mesih de Allah'a yakın melekler de, Allah'a kul olmaktan asla çekinmezler."* (Nisâ, 4/172)

Çünkü Allah'ı tanıyan kimse için O'na ibadet etmekten başka hiçbir şeyde lezzet bulunmamaktadır.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Çıkar ortaya sevgide efendilerin üstünlüğü*
*Zelil olmalıyım öyleyse ben onun için kullar gibi*

وَيَقُولُونَ اَئِنَّا لَتَارِكُوا اٰلِهَتِنَا لِشَاعِرٍ مَجْنُونٍ ﴿٣٦﴾ بَلْ جَاءَ بِالْحَقِّ وَصَدَّقَ الْمُرْسَلِينَ ﴿٣٧﴾ اِنَّكُمْ لَذَٓائِقُوا الْعَذَابِ الْاَل۪يمِ ﴿٣٨﴾

36, 37, 38- "'Biz, deli bir şair için ilâhlarımızı mı terk edeceğiz?' diyorlardı. Hayır, öyle değil, o hakkı getirmiş, önceki peygamberleri de tasdik etmiştir. Şüphesiz siz mutlaka elem dolu azabı tadacaksınız."

Onlar Allah'ı, celaline yakışmayan şeylerle nitelemekten utanmayınca, peygamberleri hakkında da kötü şeyler dile getirmeyi umursamadılar.

وَمَا تُجْزَوْنَ اِلَّا مَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٣٩﴾ اِلَّا عِبَادَ اللّٰهِ الْمُخْلَص۪ينَ ﴿٤٠﴾

39, 40- "Siz, ancak işlediklerinizin karşılığı ile cezalandırılırsınız. Ancak Allah'ın ihlas sahibi kulları başka."

Son ayetteki istisna, (اِنَّكُمْ لَذَٓائِقُوا الْعَذَابِ الْاَل۪يمِ) *"Şüphesiz siz mutlaka elem dolu azabı tadacaksınız"* (Saffat, 37/38) ayetiyle ilgilidir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- İhlas, yalnızca Allah'a kulluk etmektir. Ameline riya bulaşan kimse ise ihlas sahibi değildir.

- İhlas, ameli malılûkları düşünmekten arındırmaktır. Hadiste şöyle buyrulmuştur: *"Ey Muaz! Amelini ihlasla yerine getir, azı sana yeter."*

- İhlas, şahısları görmemektir.

- İhlas, ihtisas yerine bakmaktır.

- İhlas, nefsine eksik gözle bakmandır.

أُولَٰئِكَ لَهُمْ رِزْقٌ مَعْلُومٌ ﴿٤١﴾

41- "İşte onlar için belli bir rızık, vardır."

Onların, belli vakitler için malum rızıkları vardır. Bu arada Hz. Peygamber (s.a.v.) zamanında belli bir rızkı olan kimse, bolluk içindeki kimselerden olurdu. Bu da cennetliklerin vasfıdır. Bu çerçevede onların ahirette bedenlerine ve sırlarına ait olmak üzere belli bir rızkı vardır. Bu arada zenginlerin nefisleri için belli bir rızıkları vardır. Fakirlerin ise kalpleri ve sırları için belli bir rızıkları vardır.

فَوَاكِهُ وَهُمْ مُكْرَمُونَ ﴿٤٢﴾

42- "Onlar için meyveler vardır. Onlar, ikram gören kimselerdir."

Bu ikramdan biri, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) her vakit Allah tarafından onlara gelmesidir. Aynı şekilde bugün de Allah'ın hitabı her vakit ve her durum hakkında havassın kalplerine gelmektedir.

فِي جَنَّاتِ النَّعِيمِ ﴿٤٣﴾ عَلَىٰ سُرُرٍ مُتَقَابِلِينَ ﴿٤٤﴾

43, 44- "Onlar, Naîm cennetlerindedirler. Koltuklar üzerinde karşılıklı olarak otururlar."

Onlar, birbirlerinden ünsiyet elde ederler ve birbirleriyle buluşmakta huzur bulurlar.

يُطَافُ عَلَيْهِمْ بِكَأْسٍ مِنْ مَعِينٍ ﴿٤٥﴾ بَيْضَاءَ لَذَّةٍ لِلشَّارِبِينَ ﴿٤٦﴾

45, 46- "Onların etrafında cennet pınarından doldurulmuş, berrak ve içenlere lezzet veren kadehler dolaştırılır."

Bu, onlara coşku veren bir içecektir. Orada ıssızlık yoktur. O içecek de onlar sarhoşluk değil, huzur verir. Çünkü Allah şöyle buyurmaktadır:

لَا فِيهَا غَوْلٌ وَلَا هُمْ عَنْهَا يُنْزَفُونَ ﴿٤٧﴾

47- "Onda baş döndürme özelliği yoktur. Onlar onu içmekle sarhoş da olmazlar."

Akıllarına zarar vermez, saygınlıklarını yok etmez ve heybetlerini üzerlerinden kaldırmaz. Böylece kimileri örtülmüşlük sıfatıyla içerler, kimileri de Allah'a yakınlık sıfatı üzere iken kendilerine huzurda içirilir.

وَعِنْدَهُمْ قَاصِرَاتُ الطَّرْفِ عِينٌ ﴿٤٨﴾ كَأَنَّهُنَّ بَيْضٌ مَكْنُونٌ ﴿٤٩﴾

48, 49- "Yanlarında bakışlarını yalnızca kendilerine çevirmiş iri gözlü eşler vardır. Sanki onlar saklanmış yumurtalardır."

Onlar, veliden başkasına bakmazlar. Sonra veli de onlara bazen bakar. Velilerden kimisi de onlara bakmaz.

Şiir:

*Leyla'nın delisi olurken biz, başkasının delisi oldu o*
*Bizim delimiz olurken bir diğeri, istemeyiz biz onu*

فَأَقْبَلَ بَعْضُهُمْ عَلَى بَعْضٍ يَتَسَاءَلُونَ ﴿٥٠﴾

50- "Derken birbirlerine yönelip sorarlar."

قَالَ قَائِلٌ مِنْهُمْ إِنِّي كَانَ لِي قَرِينٌ ﴿٥١﴾

51- "İçlerinden biri der ki: 'Benim bir arkadaşım vardı.'"

يَقُولُ اَئِنَّكَ لَمِنَ الْمُصَدِّقِينَ ﴿٥٢﴾

52- "'Sen de, tekrar dirilmeyi tasdik edenlerden misin?' derdi."

ءَاِذَا مِتْنَا وَكُنَّا تُرَابًا وَعِظَامًا ءَاِنَّا لَمَدِينُونَ ﴿٥٣﴾

53- "Gerçekten biz, ölüp bir toprak ve kemikyığını haline geldikten sonra mı, biz mi hesaba çekileceğiz?"

قَالَ هَلْ اَنْتُمْ مُطَّلِعُونَ ﴿٥٤﴾

54- "Konuşan o kimse, yanındakilere: 'Bakar mısınız, hali ne oldu?' der."

فَاطَّلَعَ فَرَاٰهُ فِي سَوَٓاءِ الْجَحِيمِ ﴿٥٥﴾

55- "Kendisi de bakar ve onu cehennemin ortasında görür."

Onlar, kendi aralarında tartışarak tanıdıklarından Allah'a iman etmeyen kimseyi ve müminlerin iman ettiği hususları dile getirirler. Böylece onlar cehennemde yanarken Allah, onlara bu durumdan haberdar olmayı yaratır.

قَالَ تَاللّٰهِ اِنْ كِدْتَ لَتُرْدِينِ ﴿٥٦﴾ وَلَوْلَا نِعْمَةُ رَبِّي لَكُنْتُ مِنَ الْمُحْضَرِينَ ﴿٥٧﴾

56, 57- "Ona şöyle der: 'Allah'a andolsun, neredeyse beni de helak edecektin. Rabbimin nimeti olmasaydı, mutlaka ben de cehenneme konulanlardan olmuştum.'"

Veli hakkı söylemiş ancak açıkça tevhidin kendisini dile getirmemiştir. Çünkü o, lütfu vasıta kılmıştır. En iyisi: "Eğer Rabbim olmasaydı, mutlaka ben de cehenneme konulanlardan olmuştum" demesidir.

اَفَمَا نَحْنُ بِمَيِّت۪ينَۙ ﴿٥٨﴾

58- "Nasıl, biz ölmeyecek miymişiz?"

اِلَّا مَوْتَتَنَا الْاُو۫لٰى وَمَا نَحْنُ بِمُعَذَّب۪ينَ ﴿٥٩﴾

59- "İlk ölümümüzden başka. Bize azap edilmeyecek miymiş?"

اِنَّ هٰذَا لَهُوَ الْفَوْزُ الْعَظ۪يمُ ﴿٦٠﴾ لِمِثْلِ هٰذَا فَلْيَعْمَلِ الْعَامِلُونَ ﴿٦١﴾

60, 61- "Şüphesiz bu, büyük bir başarıdır. Çalışanlar, böylesi için çalışsınlar."

Bu ayetlerle ilgili olarak şu yorumlar yapılmıştır:

- Doğrusu, bunu kendilerine melekler söylüyor.

- Allah, cennetteki makamlarını kendilerine gösterdiği zaman, onlara: ( فَلْيَعْمَلِ الْعَامِلُونَ ) *"Çalışanlar, böylesi için çalışsınlar"* buyurur.

- Cennet göründüğü zaman abid bunu söyler veya ona bu söylenir. Çünkü hakikatlerden ve vuslatın müjdelerinden en ufak bir kırıntı veya Allah'a yakınlığın esintisinden bir zerre bile ortaya çıktığı zaman, söz sahiplerinin şunu söylemesine değer:

*"Böylesi bir hal için canlar feda edilir."*

Şiir:

*Selma gibisi uğruna canına kıyar insan*
*Selma'dan yana hep ümitsiz olsa bile*

Bu konuya ibareler dar gelir, işaretler yetersiz kalır.

اَذٰلِكَ خَيْرٌ نُزُلًا اَمْ شَجَرَةُ الزَّقُّومِ ﴿٦٢﴾

62- "Ziyafet olarak bu mu daha hayırlı, yoksa zakkum ağacı mı?"

إِنَّا جَعَلْنَاهَا فِتْنَةً لِلظَّالِمِينَ ﴿٦٣﴾

63- "Şüphesiz biz, onu zalimler için bir imtihan aracı kıldık."

إِنَّهَا شَجَرَةٌ تَخْرُجُ فِي أَصْلِ الْجَحِيمِ ﴿٦٤﴾

64- "O, cehennemin dibinde biten bir ağaçtır."

طَلْعُهَا كَأَنَّهُ رُؤُسُ الشَّيَاطِينِ ﴿٦٥﴾

65- "Onun meyveleri sanki şeytanların kafalarıdır."

فَإِنَّهُمْ لَاٰكِلُونَ مِنْهَا فَمَالِؤُنَ مِنْهَا الْبُطُونَ ﴿٦٦﴾

66- "Cehennemlikler, ondan yiyecekler ve onunla karınlarını dolduracaklardır."

ثُمَّ إِنَّ لَهُمْ عَلَيْهَا لَشَوْبًا مِنْ حَمِيمٍ ﴿٦٧﴾

67- "Sonra onlar için bunun üstüne kaynar sudan karışık bir içecek vardır."

ثُمَّ إِنَّ مَرْجِعَهُمْ لَإِلَى الْجَحِيمِ ﴿٦٨﴾

68- "Sonra onların dönüşleri mutlaka cehennemedir."

Bu ayetlerde Allah, düşmanların rezil oluşlarını ve yaşadıkları zül vasfı ile içinde bulundukları cehennem azabını anlatmıştır. Bu vasıf ve azap kapsamında onlar, acı ve kokusu kötü dikenli bitkiden yer ve şeytanların şekli gibi çirkin olan zakkumdan içerler. Sonra onların dönüşleri mutlaka cehennemedir.

إِنَّهُمْ أَلْفَوْا اٰبَاءَهُمْ ضَالِّينَ ﴿٦٩﴾

69- "Çünkü onlar, babalarını sapık kimseler olarak buldular."

فَهُمْ عَلٰٓى اٰثَارِهِمْ يُهْرَعُونَ ﴿٧٠﴾

70- "Kendileri de onların izinden koşa koşa gitmektedirler."

وَلَقَدْ ضَلَّ قَبْلَهُمْ اَكْثَرُ الْاَوَّلٖينَ ﴿٧١﴾

71- "Andolsun, onlardan önce evvelkilerin çoğu da sapmıştı."

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا فٖيهِمْ مُنْذِرٖينَ ﴿٧٢﴾

72- "Andolsun, biz onlara da uyarıcılar göndermiştik."

فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الْمُنْذَرٖينَ ﴿٧٣﴾

73- "Bak, uyarılanların sonu nasıl oldu!"

اِلَّا عِبَادَ اللّٰهِ الْمُخْلَصٖينَ ﴿٧٤﴾

74- "Ancak Allah'ın ihlaslı kulları başka."

وَلَقَدْ نَادٰينَا نُوحٌ فَلَنِعْمَ الْمُجٖيبُونَ ﴿٧٥﴾ وَنَجَّيْنَاهُ وَاَهْلَهُ مِنَ
الْكَرْبِ الْعَظٖيمِ ﴿٧٦﴾

75, 76- "Andolsun, Nûh bize dua edip seslenmişti. Biz ne güzel cevap vereniz. Onu ve ailesini o büyük sıkıntıdan kurtardık."

Kavmi onu yalanlayıp söylediği sözümüzü dinlemediklerinde onlardan kendisine eziyet dokununca, Nûh bize döndü. Bunun üzerine o da bize hitap etti biz de ona hitap ettik. O da bizimle konuştu biz de onunla konuştuk. O da bize seslendi biz de ona seslendik. O da bizim içindi biz de onun içindik. O emirlerimizi kabul etti. Biz de onun niyazını kabul ettik. O bizim için güzel bir kabul eden idi. Biz de onun için güzel kabul edenler idik.

(مِنَ الْكَرْبِ الْعَظِيمِ) *"O büyük sıkıntıdan."*

Hz. Nûh'un sıkıntısı ile ailesinin sıkıntısı arasında büyük fark vardır.

Şiir:

*Ağlamazlar kardeşim gibi lakin*
*Örnek alarak teselli ederim nefsi onun adına*

وَجَعَلْنَا ذُرِّيَّتَهُ هُمُ الْبَاقِينَ ﴿٧٧﴾

77- "Onun neslini yeryüzünde kalanlar kıldık."

Gemide onunla beraber olanlar üremedikleri için bütün insanlar Hz. Nûh'un çocuklarındandır.

وَتَرَكْنَا عَلَيْهِ فِي الْآخِرِينَ ﴿٧٨﴾

78- "Sonradan gelenler arasında ona güzel bir ad bıraktık."

Yani insanlar kıyamete kadar ondan söz edeceklerdir.

سَلَامٌ عَلَى نُوحٍ فِي الْعَالَمِينَ ﴿٧٩﴾

79- "Âlemler içinde Nûh'a selam olsun."

إِنَّا كَذَلِكَ نَجْزِي الْمُحْسِنِينَ ﴿٨٠﴾

80- "İşte biz, iyilik yapanları böyle mükâfatlandırırız."

إِنَّهُ مِنْ عِبَادِنَا الْمُؤْمِنِينَ ﴿٨١﴾

81- "Çünkü o, bizim mümin kullarımızdandı."

ثُمَّ أَغْرَقْنَا الْآخَرِينَ ﴿٨٢﴾

82- "Sonra biz, diğerlerini suda boğduk."

وَاِنَّ مِنْ شِيعَتِه۪ لَاِبْرٰه۪يمَۢ ﴿٨٣﴾ اِذْ جَٓاءَ رَبَّهُ بِقَلْبٍ سَل۪يمٍ ﴿٨٤﴾

83, 84- "Şüphesiz İbrahim de onun taraftarlarından idi. Hani o, Rabbine temiz bir kalple gelmişti."

Yani, şeriatlarının detaylarında farklı olsalar dahi, Hz. İbrahim de tevhidde Hz. Nûh'un taraftarlarından idi.

(بِقَلْبٍ سَل۪يمٍ) *"Temiz bir kalp."*

Temiz kalp, hiçbir aksaklığı olmayan kalptir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Temiz kalp, sevginin yaraladığı kalptir.

- Temiz kalp, başkalarını sevmekten temizlenmiş kalptir.

- Temiz kalp, nefsinin arzularından ve iradesinden temizlenmiş kimsenin kalbidir.

- Temiz kalp, hükmünde ve tercihinde Allah'a teslim olmuş kimsenin kalbidir.

اِذْ قَالَ لِاَب۪يهِ وَقَوْمِه۪ مَاذَا تَعْبُدُونَ ﴿٨٥﴾

85- "Hani, babasına ve kavmine şöyle demişti: 'Siz neye tapıyorsunuz?'"

Hz. İbrahim bunu, onları reddetmek ve yaptıkları yanlışın yerine dikkatlerini çekmek üzere sormuştur.

اَئِفْكاً اٰلِهَةً دُونَ اللّٰهِ تُر۪يدُونَ ﴿٨٦﴾

86- "Allah'ı bırakıp da birtakım uydurma ilâhlar mı istiyorsunuz?"

فَمَا ظَنُّكُمْ بِرَبِّ الْعَالَم۪ينَ ﴿٨٧﴾

87- "O halde âlemlerin Rabbi hakkında görüşünüz nedir?"

Siz, O'ndan başkasına ibadet etmiş olarak huzuruna çıktığınız zaman O'na ne diyeceksiniz? Bugün kendisinden olsanız da önünüzdeki amellerinizden dolayı mahcubiyet makamında haliniz nasıl olur?

فَنَظَرَ نَظْرَةً فِي النُّجُومِ ﴿٨٨﴾ فَقَالَ اِنّ۪ي سَق۪يمٌ ﴿٨٩﴾

**88, 89-** "İbrahim, yıldızlara baktı ve: 'Ben hastayım' dedi."

Bir görüşe göre Allah, Hz. İbrahim'in yıldızlara baktığını söylemek istediği için ayetteki ( في ) harfini, ( إلى ) anlamında kullanmıştır.

( اِنّ۪ي سَق۪يمٌ ) *"Ben hastayım."*

Hz. İbrahim'e belli bir vakitte humma nöbeti geliyordu. Bu nedenle: "Humma nöbetimin gelmesinden dolayı hastalanacağım vakit yaklaştı" dedi. Sanki o, bayramlarına gittiklerinde içinde sakladığı putları kırma planını yürütmek üzere kavminden geri kalmak için bunu gerekçe kılmıştır.

Bir iddiaya göre ise yıldızlara inanmak konusunda kendilerine uyduğunu kavmine göstermek istemiştir. Çünkü onlar yıldızlara inanıyorlardı. İşte bu sebeple Hz. İbrahim onlardan geri kalmıştı.

Öte yandan bu esnada Hz. İbrahim peygamberlik zamanında idi. Bu nedenle Allah'ın, yıldızların hareketleri sırasında, serbest iradesiyle bazı fiilleri yarattığını vahiy yoluyla ona öğretmiş olması, uzak bir ihtimal değildir.

فَتَوَلَّوْا عَنْهُ مُدْبِر۪ينَ ﴿٩٠﴾

**90-** "Bunun üzerine arkalarını dönüp ondan uzaklaştılar."

فَرَاغَ اِلٰٓى اٰلِهَتِهِمْ فَقَالَ اَلَا تَأْكُلُونَ ﴿٩١﴾

**91-** "İbrahim onların putlarının tarafına gizlice gitti ve şöyle dedi: 'Yemez misiniz?'"

مَا لَكُمْ لَا تَنْطِقُونَ ﴿٩٢﴾

92- "Ne diye konuşmuyorsunuz?"

فَرَاغَ عَلَيْهِمْ ضَرْبًا بِالْيَمِينِ ﴿٩٣﴾

93- "Derken üzerlerine yürüyüp onlara güçlü bir darbe indirdi."

فَاَقْبَلُوٓا اِلَيْهِ يَزِفُّونَ ﴿٩٤﴾

94- "Kavmi koşarak ona doğru geldi."

قَالَ اَتَعْبُدُونَ مَا تَنْحِتُونَ ﴿٩٥﴾

95- "İbrahim şöyle dedi: 'Yonttuğunuz putlara mı tapıyorsunuz?'"

وَاللّٰهُ خَلَقَكُمْ وَمَا تَعْمَلُونَ ﴿٩٦﴾

96- "Oysa Allah, sizi de yaptığınız şeyleri de yaratmıştır."

Sonra onlar bayramlarına gidince Hz. İbrahim putlarını kırdı. Onlar da döndüklerinde söyleyeceklerini söylediler. Hz. İbrahim de onlara vermesi gereken cevapları verdi ve söz şuraya geldi:

قَالُوا ابْنُوا لَهُ بُنْيَانًا فَاَلْقُوهُ فِي الْجَحِيمِ ﴿٩٧﴾
فَاَرَادُوا بِهِ كَيْدًا فَجَعَلْنَاهُمُ الْاَسْفَلِينَ ﴿٩٨﴾

97, 98- "Kavmi: 'Onun için bir bina yapın ve onu ateşe atın' dedi. Böylece ona bir tuzak kurmak istediler. Biz de onları en alçak kimseler kıldık."

Allah onların tuzaklarını boyunlarına geçirdi. Bu arada Hz. İbrahim, mancınıktan atılmış olarak havada iken Hz. Cibril görünerek kendisini ona tanıttı ve: "Bir ihtiyacın var mı?" dedi. Bunun üzerine Hz. İbrahim: "Sanâ ise hayır" diye cevap verdi.

وَقَالَ اِنّ۪ي ذَاهِبٌ اِلٰى رَبّ۪ي سَيَهْد۪ينِ ﴿٩٩﴾

**99-** "İbrahim, şöyle dedi: 'Ben, Rabbime gideceğim. O, bana yol gösterecektir.'"

Bu konuda şu yorumlar yapılmıştır:

- Hz. İbrahim özel bir hidayet talep etmiştir. Çünkü kendisi zaten hidayet sahibiydi. Zira eğer hidayeti olmasaydı, Rabbine gitmezdi. Bir ihtimale göre de o anda hidayet sahibi idi, ancak gelecek için de hidayet istedi yani hidayette artış talep etti.

- Hz. İbrahim, huzurda edebe riayet şeklindeki hidayeti talep etti.

- Hz. İbrahim, kendi nefsine doğru hidayet talep etmiştir. Çünkü O, kalbini ve nefsini Allah'ta yitirmiştir. Bu nedenle de o, şunu demek istemiştir: "Allah, O'na kulluk hakkını yerine getirmem için beni, bana doğru hidayet edecektir." Çünkü cemin hakikatlerinde tükenen kimsenin ibadeti yerine getirmesi, ancak tefrika ve temyiz haline döndürülmesiyle sahih olur.

Ayetteki ( اِنّ۪ي ذَاهِبٌ اِلٰى رَبّ۪ي ) "*Rabbime gideceğim*" sözü, Rabbime ibadet edilen yere gideceğim anlamındadır.

Bir yoruma göre de Allah, Hz. İbrahim'den söz ederken onun: ( اِنّ۪ي ذَاهِبٌ اِلٰى رَبّ۪ي ) "*Ben, Rabbime gideceğim*" şeklindeki sözünü anlatmıştır. Hz. Mûsâ'dan: ( وَلَمَّا جَٓاءَ مُوسٰى لِم۪يقَاتِنَا ) "*Mûsâ, mikâtımız için gelince*" (A'raf, 7/143) buyurarak söz etmiş ve böylece onun sözünü değil, sıfatını anlatmıştır. Peygamberimizin sıfatı hakkında ise: ( سُبْحَانَ الَّذ۪ٓي اَسْرٰى بِعَبْدِه۪ لَيْلًا مِنَ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ اِلَى الْمَسْجِدِ الْاَقْصَا ) "*Kulunu bir gece Mescid-i Haram'dan götüren Allah'ın şanı yücedir*" (İsra, 17/1) buyurmuştur.

Bir de bu makamlar arasında büyük fark vardır. Bu çerçevede Hz. İbrahim fark makamında, Hz. Mûsâ cemi makamında, bizim Peygamberimiz de cemin cemi makamında olmuştur.

رَبِّ هَبْ لِي مِنَ الصَّالِحِينَ ﴿١٠٠﴾ فَبَشَّرْنَاهُ بِغُلَامٍ حَلِيمٍ ﴿١٠١﴾

100, 101- "'Ey Rabbim! Bana salihlerden olacak bir çocuk bağışla.' Biz de ona uysal bir oğul müjdeledik."

Allah, Hz. İbrahim'in çocuğu hakkında "halim-uysal" demekle onun, katlanılmasında halim olmayı gerektiren bela ile karşılaşacağına dikkat çekmiştir.

فَلَمَّا بَلَغَ مَعَهُ السَّعْيَ قَالَ يَا بُنَيَّ اِنّ۪ٓي اَرٰى فِي الْمَنَامِ اَنّ۪ٓي اَذْبَحُكَ فَانْظُرْ مَاذَا تَرٰىۜ قَالَ يَٓا اَبَتِ افْعَلْ مَا تُؤْمَرُۘ سَتَجِدُن۪ٓي اِنْ شَٓاءَ اللّٰهُ مِنَ الصَّابِر۪ينَ ﴿١٠٢﴾

102- "Çocuk, kendisiyle birlikte koşup yürüyecek yaşa gelince, İbrahim ona: 'Yavrum! Ben, rüyamda seni boğazladığımı gördüm. Düşün bakalım, ne dersin?' dedi. O da: 'Babacığım, sana emredilen şeyi yap. İnşaallah beni sabredenlerden bulacaksın' dedi."

( فَلَمَّا بَلَغَ مَعَهُ السَّعْيَ ) *"Çocuk, kendisiyle birlikte koşup yürüyecek yaşa gelince."*

Bu ifade, kalbi çocuğa alıştırmanın vaktine işarettir. Hz. İbrahim, terviye gecesi rüyasında oğlu İsmail'i boğazlamakla emrolunacağını gördü. Bu gecenin terviye gecesi diye adlandırılması, Hz. İbrahim'in gün boyunca, bunun hak olup olmadığı konusunda düşünmüş olmasından ötürüdür. Sonra o, ertesi gece de aynı rüyayı görünce rüyasının hak olduğunu anladı ve böylece o güne arefe günü adı verildi.

Bu esnada Hz. İsmail on üç yaşında idi. Bu rüya konusunda ise şu yorumlar yapılmıştır:

- Hz. İbrahim: "Oğlunu boğazla" şeklindeki bu rüyayı üç kez gördü. Bunun üzerine Hz. İsmail'e şöyle dedi:

( قَالَ يَا بُنَيَّ اِنّ۪ٓي اَرٰى فِي الْمَنَامِ اَنّ۪ٓي اَذْبَحُكَ فَانْظُرْ مَاذَا تَرٰى ) *"Yavrum! Ben, rüyamda seni boğazladığımı gördüm. Düşün bakalım, ne dersin?"* Hz.

İsmail de: ( قَالَ يَٓا اَبَتِ افْعَلْ مَا تُؤْمَرُ ) *"Babacığım, sana emredilen şeyi yap"* dedi. Yani bu konuda rüya muamelesi yapma. Çünkü rüya doğru olabileceği gibi bir tevili de olabilir. Eğer bu bir emir ise onun gereğini yap. Şayet bir tevili varsa o zaman temkinli davran. Çünkü oğlunu boğazlama imkanın her vakit vardır. Fakat onu telafi etmen mümkün değildir.

- Aslında Hz. İsmail şöyle dedi:

*"Rüyadan söz etmeyi bırak da onu emir anlamında kabul et. Bir de emri vücub anlamında, vücubu da acil anlamında kabul et ve bunu aksatma!"*

- Hz. İsmail, babasına şunu demek istedi:

*"Eğer senin kalbin, oğlunu Allah için boğazlamaktan yana rahat ise benim de kalbim, babamın beni Allah için boğazlamasından yana rahat olur."*

- Hz. İsmail, babasına şunu demek istedi:

*"Sen, Allah'ın dostu olduğun halde uyuyorsun. Bilmiyor musun ki dost dostu bırakıp uyuduğu zaman, oğlunu boğazlaması emredilir. Babacığım! Senin uykuyla ne işin var?"*

Kıssasında rivayet edildiğine göre Hz. İbrahim, Hz. İsmail'i bir gün yağız bir ata binmiş olarak görmüş, onu güzel bulmuş, kendisine kalbiyle bakmış ve bu yüzden onu boğazlaması emredilmiştir. Ancak onu kalbinden çıkarıp boğazlamayı kabul edince fedakârlığı ortaya çıkmış ve kendisine şöyle denilmiştir:

*"Bu olaydan maksat, kalbinin, ondan boşalması idi."*

Yine kıssasında rivayet edildiğine göre; Hz. İsmail, boğazlama acısını hissettiğinde çırpınıp itaba müstahak olmaması için babasına ellerini ve ayaklarını sıkı bağlamasını söyledi. Sonra Hz. İbrahim, onu boğazlamaya karar verdiğinde bu kez Hz. İsmail kendisine şöyle dedi:

*"Bağlarımı çöz ki bana: 'Sen, bana elleri bağlı olarak mı geldin?' denilmesin. Hiç şüphesiz ben kıpırdamayacağım."*

Şiir:

*Zehir içirilse bana sevgilinin eliyle*
*Hoş olurdu onun elinden zehir*

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- İkisinden hangisinin sıkıntısı daha şiddetli olmuştur? Hz. İsmail'in sıkıntısının, daha şiddetli olduğu ileri sürülmüştür. Çünkü boğazlanması babasının elinden olmuştur. Oysa o, babasının elinden sadece güzel terbiye görmeye alışmıştır. Bir de babasından bunu beklemediği için onun sıkıntısı daha şiddetli olmuştur.

- Aksine, Hz. İbrahim'in sıkıntısı daha şiddetli idi. Çünkü o, oğlunu kendi eliyle boğazlayıp ondan sonra yaşamak durumunda kalıyordu.

( سَتَجِدُنِيٓ اِنْ شَٓاءَ اللّٰهُ مِنَ الصَّابِرِينَ ) *"İnşaallah beni sabredenlerden bulacaksın."* Böylece Hz. İsmail iddiada bulunmamış, aksine istisna lafzını kullanarak edebini takınmıştır.

Bir yoruma göre de eğer Hz. İsmail, şöyle deseydi yeriydi:

*"Ya bu incelikle 'yavrum!' deme yahut da 'şüphesiz ben, seni boğazlayacağım' deme. Çünkü bu ikisini bir araya getirmek tuhaftır."*

فَلَمَّٓا اَسْلَمَا وَتَلَّهُ لِلْجَبِينِ ﴿١٠٣﴾ وَنَادَيْنَاهُ اَنْ يَٓا اِبْرٰهِيمُ ﴿١٠٤﴾
قَدْ صَدَّقْتَ الرُّءْيَا اِنَّا كَذٰلِكَ نَجْزِي الْمُحْسِنِينَ ﴿١٠٥﴾

**103, 104, 105- "Nihayet her ikisi de boyun eğip İbrahim de onu yüz üstü yere yatırınca ona şöyle seslendik: 'Gördüğün rüyanın hükmünü yerine getirdin. Şüphesiz biz, iyilik yapanları böyle mükâfatlandırırız.'"**

Tefsirlerde şöyle denilmiştir: Hz. İbrahim, bıçağı Hz. İsmail'in boğazının üzerinden geçiriyor ancak bıçak kesmiyordu. Bunun üzerine Hz. İbrahim ne yapacağını şaşırınca kendisine şöyle seslenildi:

*"Ey İbrahim! Bundan maksat, ikinizin teslimiyeti idi."*

Bir yoruma göre de Allah, imtihan halinde ikisine yapılmak istenenlere dair bilgiyi onlardan sakladı. İmtihanın anlamını yitirmemesi için Allah, ancak sıkıntının vakti geçtikten sonra onları duruma muttali kıldı. Zaten imtihan esnasında durum böyle olur. İlk anda yollar kapanır. Nitekim ifk olayında Hz. Peygamber'in (s.a.v.) durumu da böyle olmuştur. Hz. Eyyûb'un durumu da aynı idi. İşin mahiyeti, sıkıntı sona yaklaşıp yok olduktan sonra anlaşılır. Aksi halde orta yerde bir imtihan söz konusu olmayacaktır. Musibet halinde ise sıkıntının sarhoşluğuyla birlikte, mahiyetin üstü de örtülür. Bunlar, durumun anlaşılmaz ve kapalı olmasıyla gerçekleşir. Zira eğer durum sahibine açıklanırsa, o zaman imtihan gerçekleşmemiş olur.

إِنَّ هٰذَا لَهُوَ الْبَلٰٓؤُا الْمُب۪ينُ ﴿١٠٦﴾ وَفَدَيْنَاهُ بِذِبْحٍ عَظ۪يمٍ ﴿١٠٧﴾

106, 107- "Şüphesiz bu, apaçık bir imtihandır. Biz, İbrahim'e büyük bir kurbanlık vererek İsmail'i kurtardık."

Bir iddiaya göre; boğazlanacak olan çocuğun kurbanlığı ondan kırk yıl önce cennette yetiştiriliyordu.

Bu arada insanlar imtihan bakımından birkaç kısımdır: Şöyle ki, kimine göre imtihan zordur. Bu, avamın vasfıdır. Kimi imtihanda tatlı bulunur. Bu da musibetlerini tatlı bulan kimselerin vasfıdır. Onlar, öldürülecekleri zamana kadar ümitlerini kesmemiş gibidirler.

وَتَرَكْنَا عَلَيْهِ فِي الْاٰخِر۪ينَ ﴿١٠٨﴾

108- "Sonradan gelenler arasında ona güzel bir ad bıraktık."

سَلَامٌ عَلٰٓى اِبْرٰه۪يمَ ﴿١٠٩﴾

109- "İbrahim'e selam olsun."

كَذٰلِكَ نَجْزِي الْمُحْسِن۪ينَ ﴿١١٠﴾

110- "İyilik yapanları işte böyle mükâfatlandırırız."

إِنَّهُ مِنْ عِبَادِنَا الْمُؤْمِنِينَ ﴿١١١﴾

111- "Çünkü o, mümin kullarımızdandı."

وَبَشَّرْنَاهُ بِاِسْحٰقَ نَبِيًّا مِنَ الصَّالِحِينَ ﴿١١٢﴾ وَبَارَكْنَا عَلَيْهِ وَعَلٰى
اِسْحٰقَ وَمِنْ ذُرِّيَّتِهِمَا مُحْسِنٌ وَظَالِمٌ لِنَفْسِهِ مُبِينٌ ﴿١١٣﴾

112, 113- "Biz, onu salihlerden bir peygamber olarak İshak ile de müjdeledik. Onu da İshak'ı da uğurlu kıldık. Her ikisinin nesillerinden iyilik yapanlar da vardı, kendine apaçık zulmedenler de."

Bütün bunlar, imtihandan sonra gerçekleşmiştir. Nitekim Allah şöyle buyurmuştur:

(إِنَّ مَعَ الْعُسْرِ يُسْرًا) *"Gerçekten zorlukla beraber rahatlık vardır."* (İnşirâh, 94/6)

وَلَقَدْ مَنَنَّا عَلٰى مُوسٰى وَهٰرُونَ ﴿١١٤﴾ وَنَجَّيْنَاهُمَا وَقَوْمَهُمَا مِنَ
الْكَرْبِ الْعَظِيمِ ﴿١١٥﴾ وَنَصَرْنَاهُمْ فَكَانُوا هُمُ الْغَالِبِينَ ﴿١١٦﴾

114, 115, 116- "Andolsun, biz Mûsâ'ya ve Hârûn'a da lütufta bulunduk. Onları ve kavimlerini o büyük sıkıntıdan kurtardık. Onlara yardım ettik de onlar galip gelenler oldular."

Allah onlara peygamberlik, Firavun'dan ve kavminden kurtuluş ve onlara karşı zafer vermekle lütufta bulunmuştur.

وَاٰتَيْنَاهُمَا الْكِتَابَ الْمُسْتَبِينَ ﴿١١٧﴾

117- "Biz, onlara açıklayıcı kitabı verdik."

Yani onlara Tevrat'ı verdik.

وَهَدَيْنَاهُمَا الصِّرَاطَ الْمُسْتَقِيمَ ﴿١١٨﴾

118- "Onları doğru yola ilettik."

Onlar bu doğru yolu, kendi güç ve kuvvetlerinden uzaklaşmak ve tevhidin ta kendisini görmekle buldular.

وَتَرَكْنَا عَلَيْهِمَا فِي الْاٰخِرِينَ ﴿١١٩﴾

119- "Sonradan gelenler arasında onlara güzel birer ad bıraktık."

سَلَامٌ عَلٰى مُوسٰى وَهٰرُونَ ﴿١٢٠﴾

120- "Mûsâ'ya ve Hârûn'a selam olsun."

اِنَّا كَذٰلِكَ نَجْزِي الْمُحْسِنِينَ ﴿١٢١﴾

121- "Şüphesiz biz, iyilik yapanları böyle mükâfatlandırırız."

اِنَّهُمَا مِنْ عِبَادِنَا الْمُؤْمِنِينَ ﴿١٢٢﴾

122- "Çünkü onlar, mümin kullarımızdan idiler."

وَاِنَّ اِلْيَاسَ لَمِنَ الْمُرْسَلِينَ ﴿١٢٣﴾

123- "Şüphesiz İlyâs da peygamberlerden idi."

Bir görüşe göre; İlyâs, Hz. İdris'tir. Diğer bir iddiaya göre ise o, başka bir peygamber olup Suriye'de idi. Halkın putlarının adı Ba'l, şehirleri ise Baalbek idi. İlyâs kavmini uyardı; ancak onu yalanladılar. Onlara nasihatte bulundu; fakat onu tasdik etmediler ve bunun üzerine Allah kavmini helak etti.

اِذْ قَالَ لِقَوْمِهٖٓ اَلَا تَتَّقُونَ ﴿١٢٤﴾

124- "Hani kavmine şöyle demişti: 'Allah'a karşı gelmekten sakınmaz mısınız?'"

اَتَدْعُونَ بَعْلًا وَتَذَرُونَ اَحْسَنَ الْخَالِقِينَ ﴿١٢٥﴾
اَللّٰهَ رَبَّكُمْ وَرَبَّ اٰبَائِكُمُ الْاَوَّلِينَ ﴿١٢٦﴾

125, 126- "Yaratıcıların en güzelini, sizin ve geçmiş atalarınızın Rabbi olan Allah'ı bırakarak Ba'l'e mi tapıyorsunuz?"

فَكَذَّبُوهُ فَاِنَّهُمْ لَمُحْضَرُونَ ﴿١٢٧﴾

127- "Onu yalanladılar. Bu sebeple onlar cehenneme götürülecek-lerdir."

اِلَّا عِبَادَ اللّٰهِ الْمُخْلَصِينَ ﴿١٢٨﴾

128- "Ancak Allah'ın ihlaslı kulları başka."

وَتَرَكْنَا عَلَيْهِ فِي الْاٰخِرِينَ ﴿١٢٩﴾

129- "Sonradan gelenler içerisinde ona güzel bir ad bıraktık."

سَلَامٌ عَلٰٓى اِلْ يَاسِينَ ﴿١٣٠﴾

130- "İlyâs'a selam olsun."

اِنَّا كَذٰلِكَ نَجْزِي الْمُحْسِنِينَ ﴿١٣١﴾

131- "Şüphesiz biz iyilik yapanları böyle mükâfatlandırırız."

اِنَّهُ مِنْ عِبَادِنَا الْمُؤْمِنِينَ ﴿١٣٢﴾

132- "Çünkü o, bizim mümin kullarımızdandı."

وَاِنَّ لُوطًا لَمِنَ الْمُرْسَلِينَ ﴿١٣٣﴾

133- "Şüphesiz Lût da peygamberlerdendi."

Hz. Lût'un kıssası ve Allah'ın, kavminin günahına iştirak eden ve bu yüzden tıpkı onlar gibi azaba müstahak olan karısı hariç, aile fertlerini nasıl kurtardığı, daha önce geçti.

إِذْ نَجَّيْنَاهُ وَاَهْلَهُٓ اَجْمَعِينَۙ ﴿١٣٤﴾

134- "Hani biz onu ve bütün ailesini kurtarmıştık."

اِلَّا عَجُوزًا فِي الْغَابِرِينَ ﴿١٣٥﴾

135- "Geride kalanlar arasındaki yaşlı bir kadın (eşi) hariç."

ثُمَّ دَمَّرْنَا الْاٰخَرِينَ ﴿١٣٦﴾

136- "Sonra da diğerlerini yok ettik."

وَاِنَّكُمْ لَتَمُرُّونَ عَلَيْهِمْ مُصْبِحِينَۙ ﴿١٣٧﴾ وَبِالَّيْلِ اَفَلَا تَعْقِلُونَ ﴿١٣٨﴾

137, 138- "Şüphesiz sizler, sabah akşam onların yurtlarına uğrayıp duruyorsunuz. Hâlâ düşünmeyecek misiniz?!"

وَاِنَّ يُونُسَ لَمِنَ الْمُرْسَلِينَ ﴿١٣٩﴾

139- "Şüphesiz Yûnus da peygamberlerdendi."

O, işin başında peygamberlikten muaf tutulmasını istiyordu; ancak muaf tutulmadı. Sonra başına gelenler geldi. Çok zaman geçmeden kendini balığın karnında karanlığın içinde buldu.

اِذْ اَبَقَ اِلَى الْفُلْكِ الْمَشْحُونِ ﴿١٤٠﴾

140- "Hani o, kaçıp yüklü gemiye binmişti."

فَسَاهَمَ فَكَانَ مِنَ الْمُدْحَضِينَ ﴿١٤١﴾

141- "Gemidekilerle kur'a çekmiş ve kaybedenlerden olmuştu."

فَالْتَقَمَهُ الْحُوتُ وَهُوَ مُلِيمٌ ﴿١٤٢﴾

142- "Böylece, Yûnus kendini kınayıp dururken balık onu yuttu."

Yani o, kınanacak durumda iken bu oldu. Bu arada Allah (c.c.) hükmünde haksızlık etmekten münezzehtir. Çünkü yaratıklar, O'nun yarattıklarıdır. Sonra Allah, onun ibadetten doğan hakkına riayet etmiş ve hakkını eda etmek konusunda daha önceki iyiliklerini koruyarak şöyle buyurmuştur:

فَلَوْلَٓا اَنَّهُ كَانَ مِنَ الْمُسَبِّح۪ينَ ﴿١٤٣﴾ لَلَبِثَ ف۪ي بَطْنِه۪ٓ اِلٰى يَوْمِ يُبْعَثُونَ ﴿١٤٤﴾

143, 144- "Eğer o, Allah'ı tesbih edip yüceltenlerden olmasaydı, mutlaka insanların diriltileceği güne kadar balığın karnında kalırdı."

Çünkü bizimle ilgili güzel taahhüt, imandandır. İman da bizim ihsanımızın cümlesindendir. "*Böylece mümin, Allah'tan güzel bir ahlak almıştır.*" Hadis böyle varit olmuştur.

فَنَبَذْنَاهُ بِالْعَرَٓاءِ وَهُوَ سَق۪يمٌ ﴿١٤٥﴾

145- "Derken biz onu hasta bir halde sahile attık."

Onun hastalığı, balığın karnında vakit geçirmiş olmasının etkisiyle kendisinde meydana gelen halsizlikten ibarettir.

وَاَنْبَتْنَا عَلَيْهِ شَجَرَةً مِنْ يَقْط۪ينٍ ﴿١٤٦﴾ وَاَرْسَلْنَاهُ اِلٰى مِائَةِ اَلْفٍ اَوْ
يَز۪يدُونَ ﴿١٤٧﴾ فَاٰمَنُوا فَمَتَّعْنَاهُمْ اِلٰى ح۪ينٍ ﴿١٤٨﴾

146, 147, 148- "Biz, onun üzerine geniş yapraklı bir ağaç bitirdik. Biz, onu yüz bin yahut daha fazla insana peygamber olarak gönderdik. Nihayet onlar iman ettiler. Biz de onları bir süreye kadar geçindirdik."

Bu ağacı, ona gölge yapsın diye yeşerttik. Çünkü o, çölde idi ve güneş ona zarar veriyordu. Bir de Allah, onun emrine yavrulu bir dişi ceylan verdi. Bu ceylan gelip kendisini sütünden emziriyordu. Böylece sanki Allah, onu çocukluk haline geri döndürmüştü. Sonra Allah, ona merhamet etti ve kendisi kavminin arasına döndü. Onlar da ona değer verip iman ettiler. Bu esnada Allah, onların üzerinden azabı kaldırmıştı. Çünkü Hz. Yûnus aralarından çıkıp kendileri azabın başlangıçlarının üzerlerine çöktüğünü görünce, pişmanlık duyarak Allah'a niyazda bulundular. İşte bunun üzerine Allah üzerlerinden azabı kaldırdı, onlar da iman ettiler. Bu sırada onlar şöyle diyorlardı:

*"Eğer biz Yûnus'u görseydik, ona değer verir ve onu yüceltirdik."*

Bunun üzerine Hz. Yûnus, balığın karnından kurtulduktan sonra onlara geri döndü. Kavmi de onu karşılayarak saygın bir halde memleketlerine aldılar.

Bir yoruma göre de günah ve cürüm kavmine aitti. Nitekim azapla uyarılanlar da onlardı. Hz. Yûnus'a gelince o, günah işlememiş, bir harama bulaşmamış ve aralarından çıkmıştı. Bir de Allah üzerlerinden azabı kaldırmış ve onlar kurtulmuşlardı. Hz. Yûnus ise çekeceğini çekti. Hatta o, büyük sıkıntıları, balığın karnından kurtulduktan sonra çekti. Allah'ın takdirinin sırrı ne de hayret verici bir şeydir! Şöyle ki kıssasında yer aldığına göre Allah, Hz. Yûnus'a kurtulduktan sonra şunu vahyetti:

*"Falanca çömlekçiye, bu yılın tamamında yaptığı testileri kırmasını söyle."*

Hz. Yûnus dedi ki:

*"Ey Rabbim! Şüphesiz o çömlekçi, bu işi gerçekleştirmeye bir süre harcamıştır. Bu nedenle ben, ona bütün testileri kırmasını nasıl söyleyeceğim?*

Bunun üzerine Allah, Hz. Yûnus'a şöyle buyurdu:

*"Ey Yûnus! Sen, bir yıllık çalışmayı telef edecek olan bir çömlekçiye kalben acıyorsun. Ancak benden, kullarımdan yüz bin kişiyi helak etmemi istiyorsun. Ey Yûnus! Onları sen yaratmadın. Eğer onları sen yaratmış olsaydın, mutlaka kendilerine merhamet edecektin."*

فَاسْتَفْتِهِمْ اَلِرَبِّكَ الْبَنَاتُ وَلَهُمُ الْبَنُونَ ﴿١٤٩﴾

149- "Ey Muhammed! Şimdi onlara sor: 'Kız çocukları Rabbinin de erkek çocukları onların mı?'"

اَمْ خَلَقْنَا الْمَلٰٓئِكَةَ اِنَاثًا وَهُمْ شَاهِدُونَ ﴿١٥٠﴾

150- "Yoksa biz, melekleri dişi olarak yaratmışız da onlar şahit mi bulunuyorlarmış?"

اَلَآ اِنَّهُمْ مِنْ اِفْكِهِمْ لَيَقُولُونَ ﴿١٥١﴾ وَلَدَ اللّٰهُ وَاِنَّهُمْ لَكَاذِبُونَ ﴿١٥٢﴾

151, 152- "İyi bilin ki onlar, kendi uydurmaları olarak: 'Allah, çocuk sahibi oldu' diyorlar. Onlar, elbette yalan söylüyorlar."

اَصْطَفَى الْبَنَاتِ عَلَى الْبَنِينَ ﴿١٥٣﴾

153- "Yoksa Allah, kızları erkeklere tercih mi etti?"

مَا لَكُمْ كَيْفَ تَحْكُمُونَ ﴿١٥٤﴾

154- "Neyiniz var? Nasıl hüküm veriyorsunuz?"

اَفَلَا تَذَكَّرُونَ ﴿١٥٥﴾

155- "Hiç düşünmüyor musunuz?"

أَمْ لَكُمْ سُلْطَانٌ مُبِينٌ ﴿١٥٦﴾

156- "Yoksa sizin apaçık bir deliliniz mi var?"

فَأْتُوا بِكِتَابِكُمْ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿١٥٧﴾

157- "Eğer doğru söyleyen kimseler iseniz getirin kitabınızı!"

Onlar meleklerin sıfatı hakkında, Allah'ın kızları olduğunu söyleyince, Allah da bu sözlerinin çirkinliğini açıklayarak şöyle buyurdu:

*"Sor onlara! Bunu nerden söylediler? Hangi delile dayanarak iddia ettiklerine hükmettiler? İçlerine hangi şüphe girdi?"*

Sonra onlar kız çocuklarından yüz çeviriyor ve erkek çocukları onlara tercih ediyorlardı. Bir de küfürlerine ve çirkin sözlerine ilave olarak onlar, kendileri için yüz çevirdikleri bir hususla kadim olan Allah'ı vasıflandırdılar.

وَجَعَلُوا بَيْنَهُ وَبَيْنَ الْجِنَّةِ نَسَبًا وَلَقَدْ عَلِمَتِ الْجِنَّةُ اِنَّهُمْ لَمُحْضَرُونَ ﴿١٥٨﴾

158- "Allah ile cinler arasında da nesep bağı kurdular. Oysa cinler de kendilerinin, Allah'ın huzuruna getirileceklerini bilirler."

سُبْحَانَ اللّٰهِ عَمَّا يَصِفُونَ ﴿١٥٩﴾

159- "Allah, onların nitelendirdiği şeylerden uzaktır, yücedir."

اِلَّا عِبَادَ اللّٰهِ الْمُخْلَصِينَ ﴿١٦٠﴾

160- "Ancak Allah'ın ihlaslı kulları bunlar gibi değildir."

فَاِنَّكُمْ وَمَا تَعْبُدُونَ ﴿١٦١﴾ مَٓا اَنْتُمْ عَلَيْهِ بِفَاتِنِينَ ﴿١٦٢﴾ اِلَّا مَنْ هُوَ
صَالِ الْجَحِيمِ ﴿١٦٣﴾

161, 162, 163- "Ne siz ve ne de taptıklarınız, cehenneme girecekler- den başkasını kandırıp Allah'ın yolundan saptırabilirsiniz."

Yani siz, insanlardan ancak benim hükmümle yoldan çıkardığım kimseleri saptırabilirsiniz. O halde onlar sizin saptırmanızla değil, Allah'ın hükmüyle sapmışlardır.

وَمَا مِنَّٓا اِلَّا لَهُ مَقَامٌ مَعْلُومٌ ﴿١٦٤﴾

164- "Bizim her birimizin, bilinen bir makamı vardır."

Meleklerin bilinen bir makamı vardır. Makamlarını geçemez ve hadlerini aşamazlar. Velilerin de kendileriyle Allah arasında saklı bir makamları olup Allah, kimseyi o makama muttali kılmaz. Peygamberlerin ise açık mucizelerle desteklenen meşhur bir makamı vardır. Çünkü onlar halkın önderleridir. Bu nedenle onların durumu açıklığa, velilerin durumu da saklı olmaya dayalıdır.

وَاِنَّا لَنَحْنُ الصَّٓافُّونَ ﴿١٦٥﴾

165- "Şüphesiz biz, saf duranlarız."

وَاِنَّا لَنَحْنُ الْمُسَبِّحُونَ ﴿١٦٦﴾

166- "Şüphesiz biz, Allah'ı tesbih edenleriz."

وَاِنْ كَانُوا لَيَقُولُونَ ﴿١٦٧﴾ لَوْ اَنَّ عِنْدَنَا ذِكْرًا مِنَ الْاَوَّلِينَ ﴿١٦٨﴾
لَكُنَّا عِبَادَ اللّٰهِ الْمُخْلَصِينَ ﴿١٦٩﴾

167, 168, 169- "Müşrikler, şunu da söylüyorlardı: 'Eğer yanımızda öncekilere verilen kitaplardan bir kitap olsaydı elbette biz ihlaslı kullar olurduk.'"

فَكَفَرُوا بِهِ فَسَوْفَ يَعْلَمُونَ ﴿١٧٠﴾

170- “Fakat kitabı inkâr ettiler. Yakında bilecekler.”

وَلَقَدْ سَبَقَتْ كَلِمَتُنَا لِعِبَادِنَا الْمُرْسَلِينَ ﴿١٧١﴾

171- “Andolsun, peygamber olarak gönderilen kullarımız hakkında şu sözümüz geçmişti.”

Yani mutlu olacaklarına dair sözümüz geçmiş, veli olacaklarına ve korunacaklarına dair hükmümüz de önceden gerçekleşmişti. Bu itibarla onlar tarafımızdan yardım edilen kimselerdir.

إِنَّهُمْ لَهُمُ الْمَنْصُورُونَ ﴿١٧٢﴾ وَإِنَّ جُنْدَنَا لَهُمُ الْغَالِبُونَ ﴿١٧٣﴾

172, 173- “Onlara mutlaka yardım edilecektir. Şüphesiz ordularımız galip gelecektir.”

Allah'ın yardım ettiği kimse yenilmez, Allah'ın kahrettiği kimse de yenemez.

Bir de Allah'ın, dinini yaymak için hazır kıldığı, hakka yardım etmek ve onu açıklamak için ayakta tuttuğu askerini zelil kılmak isteyen kimse, çenesi üstüne yere kapanır ve helakinin ipinde sürüklenir.

فَتَوَلَّ عَنْهُمْ حَتّٰى حِينٍ ﴿١٧٤﴾ وَأَبْصِرْهُمْ فَسَوْفَ يُبْصِرُونَ ﴿١٧٥﴾

174, 175- “O halde bir süreye kadar onlardan yüz çevir. Gözetle onları, yakında onlar da görecekler.”

Ey Muhammed! Ecelleri ve halleri sona erinceye kadar onlardan yüz çevir ve günlerinin bitmesini bekle. Çünkü yakın zamanda onlardan söz edilmez olacaktır.

اَفَبِعَذَابِنَا يَسْتَعْجِلُونَ ﴿١٧٦﴾

176- "Yoksa onlar, azabınızı acele mi istiyorlar?"

Allah bunu, onların kıyametin kopmasını temenni etmeleriyle ilgili olarak söylemiştir. Onlar bunu, aşırı cehaletlerinden ve tasdiklerinin az oluşundan dolayı acele istiyorlardı.

فَاِذَا نَزَلَ بِسَاحَتِهِمْ فَسَٓاءَ صَبَاحُ الْمُنْذَرِينَ ﴿١٧٧﴾

177- "Fakat azabınız onların yurtlarına indiğinde, o uyarılmış olanların sabahı ne kötü olur!"

Derken sahalarına azap inip bölgelerine bela yerleşince sabahları ne kötü olur! O halde onlardan yüz çevir. Zira sakındıkları şey, yakında gerçekleşecektir.

وَتَوَلَّ عَنْهُمْ حَتّٰى حِينٍ ﴿١٧٨﴾

178- "Ey Muhammed! Bir süreye kadar onlardan yüz çevir."

وَاَبْصِرْ فَسَوْفَ يُبْصِرُونَ ﴿١٧٩﴾

179- "Gör! Onlar da yakında görecekler."

سُبْحَانَ رَبِّكَ رَبِّ الْعِزَّةِ عَمَّا يَصِفُونَ ﴿١٨٠﴾ وَسَلَامٌ عَلَى
الْمُرْسَلِينَ ﴿١٨١﴾ وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿١٨٢﴾

180, 181, 182- "Senin Rabbin, izzet sahibi olan Rab, onların nitelendirdiği şeylerden uzaktır, yücedir. Peygamberlere selam olsun. Hamd, âlemlerin Rabbi olan Allah'a mahsustur."

( سُبْحَانَ رَبِّكَ ) *"Rabbin yücedir."*

Bu söz, Allah'ı takdis etmek için söylenir. Peygamberlerimize selam olsun.

( وَالْحَمْدُ لِلّٰهِ ) *"Hamd, Allah'a mahsustur."*

Yani üzen şeye karşı da sevindiren şeye karşı da fayda veren şeye karşı da zarar veren şeye karşı da hamd edilmeye layık olan Allah'tır.

سورة صٓ

# SÂD SÛRESİ

(Sâd Sûresi 88 âyet olup, Mekke'de inmiştir.
Adını başındaki "Sâd"dan almıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir Aziz'in ismidir ki, bilgiler O'nu idrak etmede yetersiz kalır. O, öyle bir Celil'in ismidir ki ilimler, O'nu ihata etme arzusundan duyduğu mahcubiyet örtüsüne bürünür. O, öyle bir Kerîm'in ismidir ki, ihtiyaçlar, cömertliğinin genişliği yanında küçük kalır. O, öyle bir Rahîm'in ismidir ki, kullarının günah damlaları, O'nun rahmet dalgalarının çarpışması içerisinde kaybolur.

صٓ وَالْقُرْاٰنِ ذِي الذِّكْرِ ﴿١﴾

1- "Sâd. O şerefli Kur'ân'a andolsun."

"Sâd" harfi, Allah'ın Sadık, Sabur, Samed ve Sani' isimlerinin anahtarıdır. Allah, bu şeylere ve Kur'ân'a yemin etmiştir. Yeminin cevabı ise şu ayettir: ( اِنَّ ذٰلِكَ لَحَقٌّ تَخَاصُمُ اَهْلِ النَّارِ ) *"Şüphesiz bu, cehennemliklerin birbirleriyle çekişmesi kesin bir gerçektir."* (Sâd, 38/64)

Bir yoruma göre de Allah, sevdiklerinin katıksız sevgisine ve zikre yani şeref sahibi Kur'ân'a yemin etmiştir. Kur'ân'ın şerefi, onun mahluk olmamasıdır.

بَلِ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا ف۪ي عِزَّةٍ وَشِقَاقٍ ﴿٢﴾

2- "Fakat inkâr edenler, bir büyüklenme ve ayrılık içindedirler."

Açık bir direnç ve düşmanlık içindedirler. Bir de delilleri araştırmaktan ve şahitlerin sırrından yüz çevirmektedirler.

كَمْ اَهْلَكْنَا مِنْ قَبْلِهِمْ مِنْ قَرْنٍ فَنَادَوْا وَلَاتَ ح۪ينَ مَنَاصٍ ﴿٣﴾

3- "Biz, onlardan önce nice nesilleri helak ettik. Onlar da feryat ettiler ama artık kurtuluş zamanı değildi."

Musibet bastırdığı zaman onlar yardım dileyerek yok oldular. Bu durumda artık yakınmayı gidermenin ve dileği kabul etmenin vakti geçmişti.

وَعَجِبُوٓا اَنْ جَٓاءَهُمْ مُنْذِرٌ مِنْهُمْ وَقَالَ الْكَافِرُونَ هٰذَا سَاحِرٌ كَذَّابٌ ﴿٤﴾

4- "Kâfirler, kendilerine içlerinden bir uyarıcının gelmesine şaştılar ve şöyle dediler: 'Bu, yalancı bir sihirbazdır.'"

Onlar, kendilerine içlerinden bir uyarıcının gelmesine şaştılar, fakat yontulmuş taş ve tahtaların ilâh olmasına şaşmadılar. Bu da açık bir çelişkidir. Bu arada onlar, peygamberlerinin durumu hakkında hayrete düşünce, onlara sihirbazlık isnat ettiler ve haklarında çeşitli iddialarda bulundular.

اَجَعَلَ الْاٰلِهَةَ اِلٰهًا وَاحِدًا اِنَّ هٰذَا لَشَيْءٌ عُجَابٌ ﴿٥﴾

5- "İlâhları bir tek ilâh mı yaptı? Gerçekten bu, çok tuhaf bir şey!"

Tevhidin özü kalplerine değmedi ve birden fazla ilâhı caiz görerek tevhidden uzaklaştılar. Nerde kaldı ki tevhidi ispat ve hüküm şeklinde kabul etsinler. Böylece onlar ne ilâhı tanıdılar ne de ilâhlığın anlamını bildiler. Çünkü ilâhlık, yoktan var edebilme

kudretine sahip olmaktır. Bu arada iki ilâhın, yoktan var edebilme gücüne sahip olmasının var sayılması doğru değildir. Çünkü bu takdirde ikisi arasında temanuun -yekdiğerini engellemesinin- var ve caiz olması gerekir. Sonra bu, ikisinin de kemaline engel olur. Vasıfları bakımından kamil olmamaları halinde ise ilah olamazlar. Bu konuda kemal vasfının altına düştüğü kesinleşen her şey ise bâtıl olup bir kenara atılır.

وَانْطَلَقَ الْمَلَأُ مِنْهُمْ اَنِ امْشُوا وَاصْبِرُوا عَلٰٓى اٰلِهَتِكُمْ اِنَّ هٰذَا
لَشَيْءٌ يُرَادُ ﴿٦﴾

6- "İçlerinden ileri gelenler; kalkıp giderek şöyle dediler: 'Gidin, ilâhlarınıza tapmaya devam edin. İşte bu, istenen şeydir.'"

Kâfirler; ilâhlarına tapmak konusunda birbirlerine sabrı tavsiye ettiklerine göre, müminler mabutlarına ibadet etmek ve dinlerinde istikamet üzere olmak konusunda sabırlı olmaya daha layıktırlar.

مَا سَمِعْنَا بِهٰذَا فِي الْمِلَّةِ الْاٰخِرَةِ اِنْ هٰذَٓا اِلَّا اخْتِلَاقٌ ﴿٧﴾

7- "Biz, bunu son dinde duymadık. Bu, ancak bir uydurmadır."

Onlar, kötülüğe, alışkanlığa ve geçmişlerini bağlı buldukları dalalete meyledip taklit ve tembelliğe alıştılar.

ءَاُنْزِلَ عَلَيْهِ الذِّكْرُ مِنْ بَيْنِنَا بَلْ هُمْ فِي شَكٍّ مِنْ ذِكْرِي بَلْ لَمَّا
يَذُوقُوا عَذَابِ ﴿٨﴾

8- "'O zikir, içimizden ona mı indirildi?' Hayır, onlar benim zikrimden şüphe içindedirler. Hayır, henüz azabımı tatmadılar."

Yani eğer dinlerinde basiret sahibi olsalardı, aşırı gittikleri inkârlarına kalkışmazlardı. Bir de eğer biz onların afiyetini devam ettirmeseydik, kendilerini tamamen tuğyana veremezlerdi.

أَمْ عِنْدَهُمْ خَزَآئِنُ رَحْمَةِ رَبِّكَ الْعَزِيزِ الْوَهَّابِ ﴿٩﴾ أَمْ لَهُمْ مُلْكُ
السَّمٰوَاتِ وَالْأَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا فَلْيَرْتَقُوا فِي الْأَسْبَابِ ﴿١٠﴾

9, 10- "Yoksa mutlak güç sahibi ve çok bağışlayan Rabbinin rahmet hazineleri onların yanında mıdır? Yoksa göklerin, yerin ve ikisi arasındakilerin hükümranlığı onların mıdır? Öyle ise sebeplere sarılarak yükselsinler."

Yani karşı çıkan, kavga eden, yalanlayan ve delil ileri süren o kâfirlerin yanında bu şeylerden biri mi vardır? Yoksa onlar bu şeylerden birini yapma gücüne sahiptirler de istediklerini yapıyor, istediklerine veriyor veya gökyüzüne yükselip dilediklerine vahiy mi getiriyorlar?

جُنْدٌ مَا هُنَالِكَ مَهْزُومٌ مِنَ الْأَحْزَابِ ﴿١١﴾

11- "Onlar, çeşitli gruplardan oluşmuş ve şuracıkta bozguna uğrayacak derme çatma bir ordudur."

Doğrusu onlar gruplara ayrılmış hiziplerden oluşan bir ordudur. Hepsi aciz kimseler olup buna güçleri yetmeyecek ve yenileceklerdir. Allah onları, amaçlarına ulaşmamada yenik kimselere benzetmiştir. Çünkü bu kâfirlerin ne elinde bir delil ne de bir güçleri vardır. Putlarının da ne fayda ve zarar verme imkanı, ne de kendilerini savunma güçleri vardır.

كَذَّبَتْ قَبْلَهُمْ قَوْمُ نُوحٍ وَعَادٌ وَفِرْعَوْنُ ذُو الْأَوْتَادِ ﴿١٢﴾
وَثَمُودُ وَقَوْمُ لُوطٍ وَأَصْحَابُ لْئَيْكَةِ أُولٰٓئِكَ الْأَحْزَابُ ﴿١٣﴾

12, 13- "Onlardan önce de Nûh kavmi, Âd kavmi, kazıklar sahibi firavun, Semûd kavmi, Lût kavmi ve Eyke halkı da Peygamberleri yalanlamışlardı. İşte onlar da böyle gruplardı."

Allah, o kavimleri burada topluca, başka yerlerde ise ayrı ayrı anlatmıştır. Her bir yerdeki anlatım tarzının ise fesahat ve her yönüyle ifade etmek bakımından ilave bir faydası vardır. Sonra Allah şöyle buyurmuştur:

اِنْ كُلٌّ اِلَّا كَذَّبَ الرُّسُلَ فَحَقَّ عِقَابِ ﴿١٤﴾

14- "Her biri, peygamberleri yalanladı da onları cezalandırmam hak oldu."

Yani, onlardan kim varsa mutlaka peygamberleri yalanlamış, bu sebeple onu cezalandırmak hak, kendisi de azaba müstahak olmuştur. Sonra Allah şöyle buyurmuştur:

وَمَا يَنْظُرُ هٰۤؤُ۬لَٓاءِ اِلَّا صَيْحَةً وَاحِدَةً مَا لَهَا مِنْ فَوَاقٍ ﴿١٥﴾

15- "Bunlar da ancak asla geri kalmayacak korkunç bir ses bekliyorlar."

Yani onlar ancak kıyameti bekliyorlar. Kıyamet ise tek bir sesten başka bir şey değildir. Kıyamet koptuğu zaman da artık durmaz.

وَقَالُوا رَبَّنَا عَجِّلْ لَنَا قِطَّنَا قَبْلَ يَوْمِ الْحِسَابِ ﴿١٦﴾

16- "Müşrikler şöyle dediler: 'Ey Rabbimiz! Hesap gününden önce payımızı hemen ver!'"

اِصْبِرْ عَلٰى مَا يَقُولُونَ وَاذْكُرْ عَبْدَنَا دَاوُ۫دَ ذَا الْاَيْدِۚ اِنَّهُۤ اَوَّابٌ ﴿١٧﴾

17- "Ey Muhammed! Onların söylediklerine karşı sabret. Güçlü kulumuz Davûd'u hatırla. O, Allah'a çok yönelen bir kimse idi."

Ey Muhammed! Onların söylediklerine karşı sabret. Çünkü süreleri uzun olmayacak, biz de senin, eziyetlerine katlanmandaki süreni uzun tutmayacağız. Yakında Allah, yardımını indirecek ve sana olan vaadini hakikat olarak doğru çıkaracaktır.

( وَاذْكُرْ عَبْدَنَا دَاوُدَ ذَا الْأَيْدِ اِنَّهُ اَوَّابٌ ) *"Güçlü kulumuz Davûd'u hatırla. O, Allah'a çok yönelen bir kimse idi."*

Ayetteki ( ذا الأيد ) lafzı, güç sahibi demektir. Ancak Hz. Davûd'un gücü, nefis gücü değil, fiil gücü idi. O, bir gün oruç tutuyor, bir gün de iftar ediyordu. Bu da en zor oruçtur. Bu arada Hz. Davûd, hem nefsi hem kalbi hem de himmetiyle Allah'ın dininde güçlü idi. Ayetteki ( أوّاب ) kelimesi, Allah'a çok dönüş yapan ve yönelen demektir.

اِنَّا سَخَّرْنَا الْجِبَالَ مَعَهُ يُسَبِّحْنَ بِالْعَشِيِّ وَالْاِشْرَاقِ ﴿١٨﴾ وَالطَّيْرَ مَحْشُورَةً كُلٌّ لَهُ اَوَّابٌ ﴿١٩﴾

18, 19- "Kendisiyle birlikte sabah akşam tesbih etsinler diye biz, dağları ve toplanıp gelen kuşları Davûd'un emrine verdik. Onların her biri, Allah'a yönelmişlerdi."

Hz. Davûd da tesbih ediyordu, dağlar da tesbih ediyorlardı. Bu arada Hz. Davûd kendisine verilen özel keramet ve mucize yoluyla, dağların tesbihini anlıyordu.

Aynı şekilde kuşlar da onun için toplanıp Allah'ı tesbih ediyorlardı. Hz. Davûd kuşların tesbihini de biliyordu. Aslında kim onun halini bir hakikat olarak yaşarsa, yakınındaki her şey ona yardım eder ve hemcinsi olmayan da onun hükmüne bağlı olur.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Kuşluk vaktinde öten, üzüntülü,*
*Ve dalda çığıran nice güvercin*
*Hatırladı bir dostu ve güzel bir dönemi*
*Ve ağladı özlemden de harekete geçirdi üzüntümü*
*Böylece bazen benim ağlamam onu uykusuz bırakır*
*Bazen de onun ağlaması beni uykusuz bırakırdı*
*Bazen o şikâyet eder ben onu anlamam*
*Bazen de ben şikâyet ederim o beni anlamaz.*
*Ancak ben, üzüntüsüyle tanırım onu*
*O da, üzüntümle tanır beni*

وَشَدَدْنَا مُلْكَهُ وَاٰتَيْنَاهُ الْحِكْمَةَ وَفَصْلَ الْخِطَابِ ﴿٢٠﴾

20- "Biz, Davûd'un mülkünü güçlendirdik. Ona hikmet ve hak ile batılı ayıran söz yeteneği verdik."

Yani biz, onun mülkünü yardımcılarıyla güçlendirdik. Tefsir bilgisine göre, Hz. Davûd'un mülkünü her gece otuz üç bin adam koruyordu.

(وَشَدَدْنَا مُلْكَهُ وَاٰتَيْنَاهُ الْحِكْمَةَ وَفَصْلَ الْخِطَابِ) *"Biz, Davûd'un mülkünü güçlendirdik. Ona hikmet ve hak ile batılı ayıran söz yeteneği verdik."*

Yani biz onun mülkünü, kendisine yardım etmemiz ve belayı üzerinden defetmemizle güçlendirdik.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Biz, onun mülkünü hükümde adil olması ve maiyetine karşı güzel ahlaklı olmasıyla güçlendirdik.

- Biz, onun mülkünü zalimlerin elini tutmakla güçlendirdik.

- Biz, onun mülkünü güçsüzlerin duasıyla güçlendirdik.

- Biz, onun mülkünü, yardımı bizden bilmesi ve kendi gücünden ve kuvvetinden uzak durmasıyla güçlendirdik.

- Biz, onun mülkünü, kendisine mülkünü düzene sokacak tedbirlerin yolunu gösteren iyi niyet sahibi vezirlerle güçlendirdik.

- Biz, onun mülkünü dikkatli oluşu ve güzel siyasetiyle güçlendirdik.

- Biz, onun mülkünü herkesten hakkı kabul etmesiyle güçlendirdik.

(وَاٰتَيْنَاهُ الْحِكْمَةَ وَفَصْلَ الْخِطَابِ) *"Ona hikmet ve hak ile batılı ayıran söz yeteneği verdik."*

Yani biz ona rüştü, doğruyu anlamayı ve isabeti verdik.

Söz konusu hikmetle ilgili olarak şu yorumlar da yapılmıştır:

- Biz ona kendini bilmeyi ve ümmetini nasıl yöneteceğinin bilgisini verdik.

- Biz ona işlerde ve hikmette sebat ile görüş ve düşüncede sağlamlık verdik.

- Biz ona iyilerin arkadaşlığını ve kötülerden uzak durmayı verdik.

( وَفَصْلَ الْخِطَابِ ) *"Hak ile batılı ayıran söz"* ise hak ile hükmetmektir. Bir iddiaya göre o söz şudur:

*"Şahit iddia sahibine, yemin de iddiayı reddedene düşer."*

Bir yoruma göre de bu, hasımlar arasında karar vermektir.

وَهَلْ اَتٰيكَ نَبَؤُا الْخَصْمِ اِذْ تَسَوَّرُوا الْمِحْرَابَ ﴿٢١﴾

21- "Sana davacıların haberi geldi mi? Hani onlar, duvarı aşarak mabede girmişlerdi."

Allah, Hz. Davûd'a gökyüzünden adam kılığında iki melek gönderdi. Onlar, Orya'nın karısıyla evlenmek suretiyle işlediği, ancak yapmaması daha uygun olan hataya dikkatini çekmek için onun hakemliğine başvurdular. Bu izah, peygamberlerin bütün günahlardan münezzeh olduğu görüşünde olanlara göredir.

Küçük günahları işlemelerini caiz gören kimseye göre ise bu evlilik, o cümledendir. Bu arada adı geçen iki hasım, kadınlardan kinaye olarak koyun adını kullanmışlardır.

Hz. Davûd, Allah'a şöyle demişti:

*"Ben, Tevrat'ta, peygamberlere mertebeler verdiğini görüyorum. O halde bana da o mertebeleri ver."*

Allah kendisine: *"Onlar, kendilerini imtihana tabi tuttuğum konularda sabrettiler"* dedi.

Bunun üzerine Hz. Davûd, derecelere kavuşmak hırsıyla kendisini imtihan etmesi halinde sabredeceğine dair söz verdi. Allah, ona kendisini imtihana tabi tutacağı günü bildirdi. Bunun üzerine Hz. Davûd, o günü ibadet gününe çevirerek evinde halvete çekildi, korumalarına kimsenin içeri girerek kendisini rahatsız etmemesini

emretti, kapıyı üstüne kapattı ve ibadet amacıyla bir süre namaz kılmaya, bir süre de Tevrat okumaya başladı. Bu arada o, üstüne evin kapısını kapattı ancak gökyüzünün kapısını kapatması mümkün olmadı. Bir görüşe göre sayıları otuz bin, bir görüşe göre de dört bin olan korumalarına insanları başından savmalarını emretti. Ancak onlar, kaderin hükmünü üzerinden defedemediler. Nitekim hikmet erbabı şöyle demişlerdir:

*"Kaderden kaçan kimse, peşinde olanın elinde evirilip çevrilir."*

Hz. Davûd'un evinde ışığın girdiği bir baca vardı. Bu esnada altından yapılmış küçük bir kuş içeri girdi ve onun yakınına düştü. Hz. Davûd'un da küçük bir oğlu vardı. Bu nedenle o kuşu oğluna vermek için tutmak istedi. Ancak kuş ondan uzaklaştı. Tefsirlerde ise şu bilgi yer almıştır: O İblis'ti ve bir kuş şekline girmişti. Bunun üzerine Hz. Davûd onun peşinden gitti. Kuş yavaş yavaş uzaklaşırken Hz. Davûd da onun peşinden gidiyordu. Nihayet kuş bacadan çıkıp gitti. Hz. Davûd arkasından bakarken Orya'nın çıplak bir halde yıkanmakta olan karısı gözüne ilişti. Bunun üzerine kadından kalbine bir şeyler düştü ve olayına bu sebep oldu.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Çocuğu sebebiyle özenli olamamış ve nihayetinde başına gelenler gelmiştir. Bunda da basiret sahipleri için bir ibret vardır.

- Orya o kadınla henüz evlenmemişti. Ancak onunla nişanlanmış ve kadın kendisiyle evlenmeyi kabul etmişti. Hz. Davûd da Orya'nın nişanlılığı üstüne kadını istemiş oldu.

- Kadın, Orya'nın karısı idi ve Hz. Davûd kadından feragat etmesini istedi. Orya, onun emri üzerine kadından feragat etti ve bunun üzerine Hz. Davûd onunla evlendi.

- Hz. Davûd Orya'yı düşmanlarla savaşmaya gönderdi. Orya savaşta öldürüldü ve Hz. Davûd kadınla evlendi.

Derken o iki melek duvarı aşarak mabede girince, bir görüşe göre de mabedin üst tarafından girince olay şöyle gelişti:

إِذْ دَخَلُوا عَلٰى دَاوُدَ فَفَزِعَ مِنْهُمْ قَالُوا لَا تَخَفْ خَصْمَانِ بَغٰى
بَعْضُنَا عَلٰى بَعْضٍ فَاحْكُمْ بَيْنَنَا بِالْحَقِّ وَلَا تُشْطِطْ وَاهْدِنَٓا اِلٰى
سَوَٓاءِ الصِّرَاطِ ﴿٢٢﴾

22- "Hani Davûd'un yanına girmişlerdi de Davûd onlardan korkmuştu. Onlar: 'Korkma! Biz, iki davacı grubuz. Birimiz, diğerine haksızlık etmiştir. Aramızda adaletle hükmet. Zulmetme ve bizi hak yola ilet' dediler."

Biz birbirimize zulmeden iki hasımız. Bu nedenle aramızda adaletle hükmet.

اِنَّ هٰذَٓا اَخ۪ي لَهُ تِسْعٌ وَتِسْعُونَ نَعْجَةً وَلِيَ نَعْجَةٌ وَاحِدَةٌ فَقَالَ
اَكْفِلْنِيهَا وَعَزَّنِي فِي الْخِطَابِ ﴿٢٣﴾

23- "İçlerinden biri şöyle dedi: 'Bu, benim kardeşimdir. Onun doksan dokuz koyunu var. Benim ise bir tek koyunum var. Böyle iken: 'Onu da bana ver' dedi ve tartışmada beni bastırdı.'"

Yani o koyundan vazgeç ki ona ben sahip olayım. O, tartışmada da beni yendi.

Bunun üzerine Hz. Davûd, şöyle dedi:

قَالَ لَقَدْ ظَلَمَكَ بِسُؤَالِ نَعْجَتِكَ اِلٰى نِعَاجِهِ وَاِنَّ كَث۪يرًا مِنَ
الْخُلَطَٓاءِ لَيَبْغ۪ي بَعْضُهُمْ عَلٰى بَعْضٍ اِلَّا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا
الصَّالِحَاتِ وَقَل۪يلٌ مَا هُمْ وَظَنَّ دَاوُدُ اَنَّمَا فَتَنَّاهُ فَاسْتَغْفَرَ رَبَّهُ
وَخَرَّ رَاكِعًا وَاَنَابَ ﴿٢٤﴾

24- "Davûd dedi ki: 'Andolsun, senin koyununu kendi koyunlarına katmak istemek suretiyle sana zulmetmiştir. Esasen ortakların

pek çoğu, birbirlerine haksızlık eder. Ancak iman edip salih ameller işleyenler hariç. Onlar da pek azdır.' Davûd, bizim kendisini imtihan ettiğimizi anladı. Derken Rabbinden bağışlama diledi, eğilerek secdeye kapandı ve Allah'a yöneldi.

Davûd dedi ki: 'Andolsun, senin koyununu kendi koyunlarına katmak istemek suretiyle sana zulmetmiştir.'"

Bunun üzerine o iki hasımdan biri, diğer arkadaşının yüzüne bakarak güldü ve önünden gökyüzüne yükseldi. Böylece Hz. Davûd, bunun kendisi için bir uyarı ve geçmiş hatası konusunda bir itap olduğunu anladı ve vaat edilen fitnenin kendisine geldiğine inandı.

( فَاسْتَغْفَرَ رَبَّهُ وَخَرَّ رَاكِعًا وَاَنَابَ ) *"Derken Rabbinden bağışlama diledi, eğilerek secdeye kapandı ve Allah'a yöneldi."*

Yalvarmaya başladı. Bu arada tefsirde şu bilgi yer almıştır: Hz. Davûd, kendisine farz kılınan namaz sebebiyle yaptığı secdeler hariç, kırk gün başını secdeden kaldırmamak üzere secde etti. O kadar ağladı ki gözyaşlarından bitkiler yeşerdi. O süre zarfında yemedi ve içmedi. En sonunda Allah, bağışlandığını ona vahyetti. Bunun üzerine o: *"Dava konusu nasıl olacak?"* deyince Allah: *"Şüphesiz ben, seni ondan kurtardım"* buyurdu.

فَغَفَرْنَا لَهُ ذٰلِكَ وَاِنَّ لَهُ عِنْدَنَا لَزُلْفٰى وَحُسْنَ مَاٰبٍ ﴿٢٥﴾

25- "Biz de bunu ona bağışladık. Şüphesiz katımızda onun için bir yakınlık ve dönüp geleceği güzel bir yer vardır."

Şüphesiz onun, katımızda bir yakınlığı ve güzel bir dönüşü vardır. Bir iddiaya göre Hz. Davûd suyu ancak gözyaşlarıyla karışık olarak içerdi.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Hz. Davûd, imtihanın başlarında tövbe, ağlama, yalvarma ve boyun bükmeye sığınınca Allah'tan mağfiret ve bağışlanmayı buldu. İşte böylece her kim sıkıntıların başlarında Allah'a dönüş yaparsa

Allah, başına gelen musibeti üzerinden defetmeye yeter. Aynı şekilde üzerindeki sıkıntının uzamasına karşı son ana kadar sabreden de böyledir.

- Kendisinden üzüntü duyman seni Rabbine ulaştıran hata, onu beğenmen, seni Rabbinden uzaklaştıran ibadetten senin için daha faydalıdır.

يَا دَاوُدُ إِنَّا جَعَلْنَاكَ خَلِيفَةً فِي الْأَرْضِ فَاحْكُمْ بَيْنَ النَّاسِ بِالْحَقِّ وَلَا تَتَّبِعِ الْهَوٰى فَيُضِلَّكَ عَنْ سَبِيلِ اللّٰهِ إِنَّ الَّذِينَ يَضِلُّونَ عَنْ سَبِيلِ اللّٰهِ لَهُمْ عَذَابٌ شَدِيدٌ بِمَا نَسُوا يَوْمَ الْحِسَابِ ﴿٢٦﴾

26- "Ona dedik ki: 'Ey Davûd! Gerçekten biz seni yeryüzünde halife yaptık. İnsanlar arasında yeryüzünde hak ile hüküm ver. Nefis arzusuna uyma. Yoksa seni Allah'ın yolundan saptırır. Allah'ın yolundan sapanlar için hesap gününü unutmaları sebebiyle şiddetli bir azap vardır.'"

( إِنَّا جَعَلْنَاكَ خَلِيفَةً فِي الْأَرْضِ ) *"Biz seni yer yüzünde halife yaptık."*

Yani senden önceki peygamberlerden sonra seni halife yaptık. Bir görüşe göre de yani kullarım arasında hak ile hükmetmen için seni tarafımdan bir hükümdar kıldım. Bir de Allah ona, kulun en büyük cinayetinin ve en çirkin hatasının, nefsinin arzusuna uymak olduğunu hatırlatmak için hükümde nefsinin arzusuna uymamasını tavsiye etti.

Allah bu kıssayı anlatınca ardından şöyle buyurdu:

وَمَا خَلَقْنَا السَّمَٓاءَ وَالْأَرْضَ وَمَا بَيْنَهُمَا بَاطِلًا ذٰلِكَ ظَنُّ الَّذِينَ كَفَرُوا فَوَيْلٌ لِلَّذِينَ كَفَرُوا مِنَ النَّارِ ﴿٢٧﴾

27- "Biz göğü, yeri ve ikisi arasındakileri boş yere yaratmadık. O, inkâr edenlerin zannıdır. Cehennem ateşinden dolayı vay inkâr edenlerin haline!"

Yani bunları yaratırken anlamsız bir iş yapmadım. Aksine ben, bunu yapma hakkına sahiptim ve onda haklı idim.

Bir yoruma göre de ben göğü ve yeri bâtıl için değil, aksine onlara hakkı emretmek için yarattım.

اَمْ نَجْعَلُ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ كَالْمُفْسِدِينَ فِي الْاَرْضِ
اَمْ نَجْعَلُ الْمُتَّقِينَ كَالْفُجَّارِ ﴿٢٨﴾

28- "Yoksa biz, iman edip salih ameller işleyenleri, yeryüzünde fesat çıkaranlar gibi mi tutacağız?"

Sonra Allah, bozgunculuk yapanları, iyilik yapanlarla asla bir tutmayacağını bildirmiş sonra da şöyle buyurmuştur:

كِتَابٌ اَنْزَلْنَاهُ اِلَيْكَ مُبَارَكٌ لِيَدَّبَّرُوا اٰيَاتِهِ وَلِيَتَذَكَّرَ اُولُوا الْاَلْبَابِ ﴿٢٩﴾

29- "Bu, ayetlerini düşünsünler ve akıl sahipleri öğüt alsınlar diye sana indirdiğimiz mübarek bir kitaptır."

Mübarek kitap Kur'ân'dır. "Mübarek" kelimesi ise faydası büyük olan demektir. Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır.

- "Mübarek" daim, kalıcı ve hiçbir kitabın neshedemediği kitap demektir. Bu kelime, Arapların: ( بَرَكَ الطيرُ على الماء ) *"Kuş, suyun üzerinde kalmaya devam etti"* sözünde olduğu gibi ( بَرَكَ ) *"devam etti"* kökünden gelmektedir.

- Bu kitap, ona inanan ve onu tasdik eden kimse için mübarektir.

Sonra Allah, bereketin ona dikkatle bakmaya ve manalarını düşünmeye bağlı olduğunu açıklamıştır.

وَوَهَبْنَا لِدَاوُدَ سُلَيْمٰنَ نِعْمَ الْعَبْدُ اِنَّهُ اَوَّابٌ ﴿٣٠﴾

30- "Davûd'a Süleyman'ı bağışladık. O, ne güzel kuldu! Şüphesiz o, Allah'a çok yönelen bir kimse idi."

( نِعْمَ الْعَبْدُ ) *"O, ne güzel kuldu!"*

Çünkü o, Allah'a çok yönelen ve bütün hallerde; nimette şükürle, sıkıntıda ise sabırla O'na dönüş yapan biri idi.

إِذْ عُرِضَ عَلَيْهِ بِالْعَشِيِّ الصَّافِنَاتُ الْجِيَادُ ﴿٣١﴾

31- "Hani ona akşamüstü, bir ayağını tırnağı üstüne dikip üç ayağının üzerinde duran çalımlı ve soylu atlar sunulmuştu."

Ayetteki ( صَّافِنَاتُ ) *"sâfinât"* kelimesi, *"sâfinetun"* kelimesinin çoğulu olup ayakta duran demektir. Tefsirlerdeki izaha göre ise bu, üç ayak üzerinde duran at demektir. Çünkü o, ön ayaklarından birini tırnağı üstüne diker. Yine tefsirlerde yer aldığına göre Hz. Süleyman, Şam halkına karşı savaşmış ve burayı onlardan almıştı. Bir iddiaya göre ise Hz. Süleyman, burayı babası Hz. Davûd'dan miras almıştı. Hz. Davûd da onu Amâlikalılardan almıştı. Diğer bir iddiaya göre de bu atlar denizden çıkmış ve kanatları vardı.

Bazı tefsirlerdeki bilgiye göre Hz. Süleyman'a yirmi bin at sunuldu ve bu atlar, onu Allah için yaptığı bazı zikirlerinden alıkoydu.

( بِالْعَشِيِّ ) *"Akşamüstü."*

Bu, gündüzün sonunda demektir. Bir iddiaya göre ise bu, ikindi namazı vakti idi.

فَقَالَ اِنِّي اَحْبَبْتُ حُبَّ الْخَيْرِ عَنْ ذِكْرِ رَبِّي حَتّٰى تَوَارَتْ
بِالْحِجَابِ ﴿٣٢﴾ رُدُّوهَا عَلَيَّ فَطَفِقَ مَسْحًا بِالسُّوقِ وَالْاَعْنَاقِ ﴿٣٣﴾

32, 33- "Süleyman: 'Gerçekten ben malı, Rabbimi anmamı sağladığından dolayı çok severim' dedi. Nihayet gözden kaybolup gittikleri zaman: 'Onları bana geri getirin' dedi. Atlar gelince de bacaklarını ve boyunlarını okşamaya başladı."

Bu konuda şu görüşler ileri sürülmüştür:

- Hz. Süleyman, namazını bitirdikten sonra atlarına verdiği değerden dolayı bacaklarını ve boyunlarını kendi eliyle okşuyordu.

- Atların diz arkasındaki kirişlerini kesti. (Onları boğazlamak isterken kaçmasınlar diye).

- Atları dağlayarak işaretledikten sonra onları Allah yolunda salıverdi.

Bunlardan ne olmuşsa hepsi, onun dinine göre caizdi.

( فَقَالَ اِنّ۪ٓي اَحْبَبْتُ حُبَّ الْخَيْرِ عَنْ ذِكْرِ رَبّ۪يۚ ) *"Süleyman: 'Gerçekten ben malı, Rabbimi anmamı sağladığından dolayı çok severim' dedi."*

Yani ben mal sevgisinden dolayı yere yapıştım. Bir yoruma göre de Hz. Süleyman bu atları Allah yolunda salıverince Allah onların yerine rüzgarı onun emrine verdi. Bu ise daha büyük bir nimettir. Böylece her kim Allah için bir şey terk ederse, Allah katında zararlı çıkmaz.

وَلَقَدْ فَتَنَّا سُلَيْمٰنَ وَاَلْقَيْنَا عَلٰى كُرْسِيِّه۪ جَسَدًا ثُمَّ اَنَابَ ﴿٣٤﴾

34- "Andolsun, biz Süleyman'ı imtihan ettik. Tahtının üstüne bir ceset bıraktık. Sonra tövbe edip bize yöneldi."

Bu imtihan konusunda tefsir âlimleri farklı görüşler ileri sürmüşlerdir. Bu görüşlerden biri şudur:

Hz. Süleyman'ın yüz karısı vardı. Bir ara "İnşaallah" demeden dedi ki: "Yemin ederim, ben bunların hepsini dolaşacağım ve böylece onların her birinden bir erkek çocuğu dünyaya gelip Allah yolunda savaşacaktır." Ancak "İnşaallah" demediği için karılarından hiçbiri çocuk doğurmadı. Sadece biri, çocuğun bir bölümünü -düşük- doğurdu ve bunu getirip Hz. Süleyman'ın tahtının üstüne attı. Bunun üzerine Hz. Süleyman, "İnşaallah" dememiş olmaktan dolayı Allah'tan mağfiret diledi. Aslında Hz. Süleyman'ın bunu söylememiş olması, evla olanı terk etmesi idi.

Bir iddiaya göre de Hz. Süleyman'ın bir oğlu vardı. Cinler onun, babasından sonra yaşayıp kendisine vâris olmasından korktukları

için onu öldürmek istediler. Bunun üzerine, cinler kendisine ulaşmasınlar diye Hz. Süleyman oğlunu havada rüzgâra emanet etti ve çocuk öldü. Rüzgâr da onu babasının tahtının üstüne attı. İşte söz konusu imtihan, Hz. Süleyman'ın, cinlerden olan korkusu ve çocuğunu havaya teslim etmesi sebebiyle meydana geldi. Oysa ona yakışan, tevekkül etmesi ve rüzgârdan yardım almaması idi.

Tefsirlerde de şu iddiaya yer verilmiştir:

Hz. Süleyman, yendiği bir kralın ganimet aldığı karısı olan bir kadınla evlendi. Bunun üzerine kadın kendisine dedi ki: "Mümkünse bana izin versen de babamın, bakmakla teselli bulacağım, bir heykelini edinsem." Bunun üzerine Hz. Süleyman ona izin verdi. Kadın da kırk gün boyunca cariyeleriyle birlikte o heykeli yüceltip ona secde ediyor ve gizlice tapıyordu. Bu yüzden Hz. Süleyman cezalandırılmış oldu.

Başka bir iddiaya göre ise imtihanının sebebi şudur:

Hz. Süleyman'ın, diğer bütün hanımlarından daha çok sevdiği bir karısı vardı. Helâya girmek istediği zaman yüzüğünü çıkarıp ona teslim ediyordu. Kadın da helânın kapısında bekliyordu. Hz. Süleyman çıkınca yüzüğü kendisinden geri alıyordu. Derken bir gün adı "Salır" olan bir cin Hz. Süleyman'ın kılığına girmiş olarak geldi ve karısına: "Yüzüğü bana ver" dedi. Kadın da yüzüğü ona verdi. Bu cin, yüzüğü taktı ve kadınlarında tasarrufta bulunmak hariç, onun işlerini yürütmek üzere Hz. Süleyman'ın tahtına oturdu. Çünkü Allah, o cini onun karılarından menetmişti. Bu arada Hz. Süleyman, helâdan çıkıp kadından yüzüğü isteyince, kadın: "Şu bir saat içinde onu sana verdim" dedi. Bunun üzerine Hz. Süleyman, imtihan edildiğine kanaat getirdi. Bu esnada insanlara, kendisinin Süleyman olduğunu söylediği zaman, ona inanmıyorlardı. Bunun üzerine çıkıp deniz sahiline kaçtı ve pek çok sıkıntılarla karşılaştı. Azık bulabilmek için de ücretle balıkçıların balıklarını taşıdı.

Derken İsrailoğulları, o cini itham edip hükmünü yadırgayıp Tevrat'ı önüne koyunca cin kaçarak yüzüğü denize attı ve havalanıp

uçtu. Bu arada Allah, Hz. Süleyman'a mülkünün geri verilmesine müsaade edince bir balık yüzüğü yuttu ve balıkçıların ağına düştü. Balıkçılar da o balığı ücretine karşılık olarak Hz. Süleyman'a verdiler. Hz. Süleyman, balığın karnını yarıp yüzüğünü bulunca onu taktı, balıkçılar da karşısında yere kapandılar ve kendisi mülkünün tahtına geri döndü.

قَالَ رَبِّ اغْفِرْ لِي وَهَبْ لِي مُلْكًا لَا يَنْبَغِي لِاَحَدٍ مِنْ بَعْدِي اِنَّكَ اَنْتَ الْوَهَّابُ ﴿٣٥﴾

35- "Süleyman: 'Ey Rabbim! Beni bağışla. Bana, benden sonra kimseye layık olmayacak bir mülk bahşet. Şüphesiz sen, çok bahşedicisin' dedi."

Yani bana öyle bir mülk ver ki bundan önce elimden alındığı gibi bundan sonra onu kimse elimden almasın.

Bir görüşe göre Hz. Süleyman, böyle bir mülkün sadece kendisine verilmesini kavmine karşı mucizesi olsun diye istemiştir.

Diğer bir görüşe göre de Hz. Süleyman, kendisinden sonra kimsenin mülk istemesinin uygun olmayacağını, aksine kendisi için tercihte bulunması konusunda işini Allah'a bırakması gerektiğini söylemek istemiştir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Hz. Süleyman, peygamberleri kast etmeyerek, kendisinden sonra bu mülkün herhangi bir hükümdara uygun olmayacağını söylemiştir. Bir de o, mülkü dünyaya olan meylinden dolayı değil, sadece insanları yönetmek, aralarında adaletle hükmetmek ve Allah'ın hakkını yerine getirmek için istemiştir. Bu istek, tıpkı Hz. Yûsuf'un şu sözü gibidir:

( قَالَ اجْعَلْنِي عَلٰى خَزَآئِنِ الْاَرْضِ اِنِّي حَفِيظٌ عَلِيمٌ ) *"Beni, ülkenin hazinelerine bakmakla görevlendir. Çünkü ben iyi koruyucu ve bilgili bir kişiyim."* (Yûsuf, 12/55)

- Hz. Süleyman, zahir mülkü talep etmemiş, bununla sadece kendi nefsine malik olmayı kast etmiştir. Çünkü gerçekte hükümdar, nefsine malik olan kimsedir. Nitekim nefsine malik olan kimse hevâsının peşine düşmez.

- Hz. Süleyman bununla, Rabbi ile beraber başkasını görmemek için O'nu müşahede etmede halinin kemale ermesini kast etmiştir.

- Hz. Süleyman, aslında beraberinde tercih kalmayan kanaati istemiştir.

- Hz. Süleyman, Peygamberimizin (s.a.v.) sırrının, dünyaya da dünya mülküne de bakmamak olduğunu bildiği için: ( لَا يَنْبَغِي لِاَحَدٍ مِنْ بَعْدِي ) "*Benden sonra kimseye layık olmayacak*" demiştir. Yoksa Hz. Peygamber'e (s.a.v.) karşı dünya ile cimrilik yapmak için değil, aksine onun dünya mülküne bakmayacağını bildiği için bunu söylemiştir.

فَسَخَّرْنَا لَهُ الرِّيحَ تَجْرِي بِاَمْرِهِ رُخَاءً حَيْثُ اَصَابَ ﴿٣٦﴾

36- "Biz de rüzgârı onun buyruğuna verdik. Rüzgâr, onun emriyle dilediği yere hafif hafif eserdi."

Allah, Hz. Süleyman'ın çabasını şükranla karşılayarak atlar yerine rüzgârı emrine vermiştir. Böylece o, bineğini beslemede yem ve masraflara ihtiyaç duymuyordu.

وَالشَّيَاطِينَ كُلَّ بَنَّاءٍ وَغَوَّاصٍ ﴿٣٧﴾ وَاٰخَرِينَ مُقَرَّنِينَ فِي الْاَصْفَادِ ﴿٣٨﴾ هٰذَا عَطَاؤُنَا فَامْنُنْ اَوْ اَمْسِكْ بِغَيْرِ حِسَابٍ ﴿٣٩﴾

37, 38, 39- "Bina ustası olan ve dalgıçlık yapan her bir şeytanı, bukağılara bağlı olarak diğerlerini de onun emrine verdik. 'İşte bu, bizim ihsanımızdır. Artık sen de hesapsızca ver yahut verme' dedik."

Tıpkı şeytanları onun emrine verdiğimiz gibi.

Sonra Allah: (هٰذَا عَطَٓاؤُنَا) *"İşte bu bizim vergimizdir"* buyurdu. Yani, ver ya da verme ve koru. Senden hesap sorulmaz.

Bu arada fertler ve tek tek kişiler, muayyen şahıslar bazında bilmeseler de veliler için havada yürümek ve az bir sürede uzun mesafeleri kat etmek, bu ümmette varlığı kesin olarak bilinen hususlardandır. Bir de bu durumun, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) şerefinden dolayı hizmetçileri için bile ortaya çıkmış olması, onun makamının daha şerefli olduğunu göstermektedir.

وَاِنَّ لَهُ عِنْدَنَا لَزُلْفٰى وَحُسْنَ مَاٰبٍ ﴿٤٠﴾

40- "Şüphesiz katımızda onun için bir yakınlık ve dönüp geleceği güzel bir yer vardır."

وَاذْكُرْ عَبْدَنَٓا اَيُّوبَۢ اِذْ نَادٰى رَبَّهُٓ اَنّ۪ي مَسَّنِيَ الشَّيْطَانُ بِنُصْبٍ وَعَذَابٍ ﴿٤١﴾

41- "Kulumuz Eyyûb'u da an. Hani o, Rabbine: 'Şeytan, bana bir yorgunluk ve azap dokundurdu' diye seslenmişti."

Yani şeytan bunu, başına gelmiş olan musibeti kendisine hatırlatmak suretiyle, verdiği vesveseyle yapıyordu. Bir görüşe göre de söz konusu yorgunluk ve azap, şeytanın, onun karısına şu sözü söylemesi üzerine meydana gelmişti:

*"Bana secde et ki, elinizden alınmış olan şeyleri size geri vereyim."*

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Hz. Eyyûb'un musibete uğramasının sebebi, kendisinden yardım isteyen bir mazluma yardım etmemesidir. Yardım etmeyince musibete maruz bırakılmıştır.

- Bir gün insanları misafir etti. Bir fakirin oğlu gelince onu içeri girmekten alıkoydu.

- Kâfir bir hükümdara karşı savaşıyordu. Fakat bu hükümdarın tasarrufu altında onun bazı koyunları vardı. O da koyunları için savaşta ona suiistimalde bulundu.

- İblis onu kıskandı ve Allah'a hitaben: *"Eğer beni ona musallat edersen sana şükretmeyecektir"* dedi.

- Hz. Eyyûb'un aynı mektepte yedi kızı ve üç oğlu vardı. Şeytan, direği çekti ve ev üzerlerine yıkıldı.

- Hz. Eyyûb, on sekiz yıl musibette kalmıştır. Bir iddiaya göre bu süre kırk yıldır. Bir iddiaya göre de yedi yıl yedi ay yedi gün yedi saattir.

ارْكُضْ بِرِجْلِكَ هٰذَا مُغْتَسَلٌ بَارِدٌ وَشَرَابٌ ﴿٤٢﴾ وَوَهَبْنَا لَهُ أَهْلَهُ
وَمِثْلَهُمْ مَعَهُمْ رَحْمَةً مِنَّا وَذِكْرٰى لِأُولِي الْأَلْبَابِ ﴿٤٣﴾

42, 43- "Biz de ona: 'Ayağını yere vur! İşte yıkanacak ve içecek soğuk bir su' dedik. Biz, ona tarafımızdan bir rahmet ve akıl sahiplerine bir öğüt olmak üzere ailesini ve onlarla birlikte bir o kadarını bahşettik."

Allah, üzerinden belayı kaldırmak istediğinde ona: ( ارْكُضْ بِرِجْلِكَ ) *"Ayağını yere vur!"* buyurdu. O da ayağını yere vurdu ve bir soğuk su pınarı ortaya çıktı. Hz. Eyyûb onunla yıkandı ve cemali ve kemali geri döndü. Bir iddiaya göre ilki sıcak bir pınar, ikincisi ise soğuk idi. Hz. Eyyûb yıkandı ve Allah ona etini, saçını ve derisini iade etti, çocuklarını ve aile fertlerini de tekrar diriltti. Bir görüşe göre ise Allah onları kendisine ahirette cennette iade edecektir.

وَخُذْ بِيَدِكَ ضِغْثًا فَاضْرِبْ بِهِ وَلَا تَحْنَثْ إِنَّا وَجَدْنَاهُ صَابِرًا نِعْمَ
الْعَبْدُ إِنَّهُ أَوَّابٌ ﴿٤٤﴾

44- "Şöyle dedik: 'Eline bir demet sap al ve onunla vur, yeminini bozma.' Gerçekten biz, Eyyûb'u sabreden bir kimse olarak bulduk. O, ne güzel bir kuldu! O, Allah'a çok yönelen bir kimse idi."

Ayetteki ( الضغث ) kelimesi değnek demeti demektir. Bir iddiaya göre demette yüz adet değnek vardı. Yeminini bozmuş olmaması için onlarla bir defa topluca karısına vurması emredildi. Çünkü o, karısının hata işlediğinin doğru çıkması halinde, kendisine yüz değnek vurmaya yemin etmişti. İşte bunun üzerine Allah, kadının iffetli olması ve Hz. Eyyûb'un hizmetinde sabır göstermesi sebebiyle onu mükâfatlandırdı.

Hz. Eyyûb'un yeminin sebebi ise şudur: İblis, karısına: *"Bana secde et"* deyince kadın, bunu Hz. Eyyûb'a bildirdi. Bunun üzerine Hz. Eyyûp, karısının İblis'ten bunu duymasına ve doğru söylediğini sanmasına öfkelendi. Bir iddiaya göre karısı, saç örgülerini, kendisine götüreceği iki ekmeğe karşılık olarak satmış, o da bunda bir şüphe vehmetmişti. Hz. Eyyûp, ayağa kalkmak istediği zaman karısının saç örgülerine tutunuyordu. Bir iddiaya göre de Hz. Eyyûp, karısının bir durumundan şüpheye düşmüş ve bu nedenle şifa bulduktan sonra kendisini döveceğine yemin etmişti.

( اِنَّا وَجَدْنَاهُ صَابِرًا ) *"Gerçekten biz, Eyyûb'u sabreden bir kimse olarak bulduk."*

Sabır, ilahi takdire itiraz etmemendir.

Sabır konusunda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Sabır, ilahi hükmün altında durmaktır.
- Sabır, musibetten zevk almak, onu zor değil, tatlı bulmaktır.
- Sabır, Allah ile beraber güzel edeple durmaktır.

Bu arada onun: ( اَنّ۪ي مَسَّنِيَ الضُّرُّ ) *"Bana sıkıntı dokundu"* (Enbiya, 21/83) şeklindeki sözü de sabırsız olduğunu göstermez. Çünkü bu söz, hem şikâyet şeklinde olmamış hem de sadece bir kez söylenmiştir. Nitekim o, çok zaman beklemiş ve: ( اَنّ۪ي مَسَّنِيَ الضُّرُّ ) *"Bana sıkıntı dokundu"* dememiştir. Öyleyse hüküm galibe göredir.

( نِعْمَ الْعَبْدُ اِنَّهُ اَوَّابٌ ) *"O, ne güzel bir kuldu! O, Allah'a çok yönelen bir kimse idi."*

Musibet Hz. Eyyûb'u, musibeti veren Allah'tan alıkoymamıştır. O güzel bir kuldu çünkü musibetten girdiği şekilde çıktı.

وَاذْكُرْ عِبَادَنَٓا اِبْرٰه۪يمَ وَاِسْحٰقَ وَيَعْقُوبَ اُو۬لِي الْاَيْد۪ي وَالْاَبْصَارِ
﴿٤٥﴾ اِنَّٓا اَخْلَصْنَاهُمْ بِخَالِصَةٍ ذِكْرَى الدَّارِ ﴿٤٦﴾

45,46- "Güçlü ve basiretli kullarınız İbrahim'i, İshak'ı ve Yakub'u da an. Şüphesiz biz, onları ahiret yurdunu düşünme özelliği ile ihlaslı kimseler kıldık."

Ayetteki ( أولي الأيدي ) tabiri güç sahipleri, ( الأبصار ) lafzı da basiretler demektir.

( اِنَّٓا اَخْلَصْنَاهُمْ بِخَالِصَةٍ ذِكْرَى الدَّارِ ) *"Şüphesiz biz, onları ahiret yurdunu düşünme özelliği ile ihlaslı kimseler kıldık."*

Yani biz, onları halis bir faziletle ihlas sahibi kıldık. O fazilet, cennet ve cehennemi anmaktır. Yahut da biz onları, insanları cennete ve cehennemden kaçmaya davet etmeleri sebebiyle ihlaslı kıldık.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- İhlaslı olmaları, kalplerinin her iki dünyayı da anmaktan arınmış olması sebebiyledir. Böylece amelleri, bir mükâfat düşüncesine dayanmamaktadır.

- Onlar, bizim için kalpleriyle yer yurt anmaktan arındılar.

وَاِنَّهُمْ عِنْدَنَا لَمِنَ الْمُصْطَفَيْنَ الْاَخْيَارِ ﴿٤٧﴾

47- "Şüphesiz onlar, katımızda hayırlı seçkin kimselerdendir."

وَاذْكُرْ اِسْمٰع۪يلَ وَالْيَسَعَ وَذَا الْكِفْلِ وَكُلٌّ مِنَ الْاَخْيَارِ ﴿٤٨﴾

48- "İsmail, el-Yesa' ve Zulkifl'i de an. Onların her biri, iyi kimselerdi."

*"Zulkifl'i de an."*

İddiaya göre o, kendi zamanında ölmüş olan salih bir adamın ameline Allah için kefil olmuştu. Bir iddiaya göre de zalim bir

yöneticilerinden kaçan İsrailoğullarından yüz kişiye kefil olmuştu. Nafakalarını da kendisi sağlıyordu. Bir yoruma göre ise el-Yesa' ve Zulkifl kardeştirler.

هٰذَا ذِكْرٌ وَاِنَّ لِلْمُتَّقِينَ لَحُسْنَ مَاٰبٍۙ ﴿٤٩﴾

49- "Bu, bir öğüttür. Takva sahipleri için elbette güzel bir dönüş yeri vardır."

Yani bu Kur'ân'da daha önce olup bitenler, peygamberler ve kıssalar anlatılmaktadır.

Bir yoruma göre de yani Kur'ân senin için şereftir çünkü o senin doğru söylediğini gösteren bir mucizedir. Bir de günahlardan sakınanlar için güzel bir varış yeri vardır.

جَنَّاتِ عَدْنٍ مُفَتَّحَةً لَهُمُ الْاَبْوَابُۚ ﴿٥٠﴾ مُتَّكِـٔينَ فٖيهَا يَدْعُونَ فٖيهَا
بِفَاكِهَةٍ كَثٖيرَةٍ وَشَرَابٍ ﴿٥١﴾ وَعِنْدَهُمْ قَاصِرَاتُ الطَّرْفِ اَتْرَابٌ ﴿٥٢﴾

50, 51, 52- "Bu yer, kapıları kendileri için ardına kadar açılmış olarak, Adn cennetleridir. Onlar, orada koltuklara yaslanmış olarak pek çok meyveler ve içecekler isterler. Yanlarında gözlerini kendilerinden ayırmayan yaşıt eşler vardır."

Yani onlar cennete geldikleri zaman ne perdelenmişlik züllüne ne de izin isteme külfetine maruz kalırlar. Melekler onları sevinç ve tazimle karşılarlar. Onlar, cennette tahtlarının üzerinde yaslanmış olarak ve arzuladıkları şekilde, çokça meyve ve içecek isteyerek yaşarlar. Ayrıca yanlarında kocalarından başkasına bakmayan iri gözlü, güzellik ve şekilde doğuştan aynı olan huriler vardır.

هٰذَا مَا تُوعَدُونَ لِيَوْمِ الْحِسَابِ ﴿٥٣﴾

53- "İşte bunlar, hesap günü için size vaat edilenlerdir."

إِنَّ هٰذَا لَرِزْقُنَا مَا لَهُ مِنْ نَفَادٍ ﴿٥٤﴾

54- "İşte bu, bizim verdiğimiz rızıktır."

هٰذَا وَإِنَّ لِلطَّاغِينَ لَشَرَّ مَآبٍ ﴿٥٥﴾
جَهَنَّمَ يَصْلَوْنَهَا فَبِئْسَ الْمِهَادُ ﴿٥٦﴾

55, 56- "İşte böyle. Şüphesiz azgınlar için elbette kötü bir dönüş yeri, cehennem vardır. Onlar, oraya girerler. Orası ne kötü bir yataktır."

Onlar için kötü bir dönüş ve varış yeri vardır. Bu yer, girecekleri ve içinde azap çektirilerek kalacakları cehennemdir. O ne kadar da kötü bir yerdir.

هٰذَا فَلْيَذُوقُوهُ حَمِيمٌ وَغَسَّاقٌ ﴿٥٧﴾

57- "İşte azap, onu tatsınlar; bir kaynar su ve bir irin!"

Ayetteki ( حميم ) kelimesi sıcak su demektir. ( غسّاق ) ise cehennemliklerden çıkan sıvıdır. Bir yoruma göre de o, cehennemin zemherisidir.

وَاٰخَرُ مِنْ شَكْلِهِ أَزْوَاجٌ ﴿٥٨﴾

58- "O azaba benzer çeşit çeşit başka azaplar da vardır."

Yani o azabın benzeri başka azap çeşitleri de vardır.

هٰذَا فَوْجٌ مُقْتَحِمٌ مَعَكُمْ لَا مَرْحَبًا بِهِمْ إِنَّهُمْ صَالُوا النَّارِ ﴿٥٩﴾

59- "Bu, sizinle beraber cehenneme tıkılacak bir gruptur. Onlara rahat ve huzur olmasın! Şüphesiz onlar, cehenneme gireceklerdir."

Bunlar, sizinle beraber cehenneme girecek bir gruptur. Onlar size uyanlardır. Bu arada uyanlar, uyulanlara şöyle derler:

*"Siz hoş gelmediniz! Verdiğiniz emirle bunu önümüze siz sürdünüz. Biz de size uyduk."*

قَالُوا بَلْ اَنْتُمْ لَا مَرْحَبًا بِكُمْ اَنْتُمْ قَدَّمْتُمُوهُ لَنَا فَبِئْسَ الْقَرَارُ ﴿٦٠﴾

60- "O grup da: 'Hayır, size rahat ve huzur olmasın! Bu cehennemi bizim önümüze siz sürdünüz. Orası ne kötü kalma yeridir!' der."

Uyanlar uyulanlara bir de;

قَالُوا رَبَّنَا مَنْ قَدَّمَ لَنَا هٰذَا فَزِدْهُ عَذَابًا ضِعْفًا فِي النَّارِ ﴿٦١﴾

61- "Şöyle derler: 'Ey Rabbimiz! Bunu bizim önümüze kim sürdüyse, cehennemde onun azabını bir kat daha artır.'"

Bunun üzerine onlara şöyle denir: *"Hepiniz cehennemdesiniz. Azabınız da hiç hafiflemeyecektir."*

وَقَالُوا مَا لَنَا لَا نَرٰى رِجَالًا كُنَّا نَعُدُّهُمْ مِنَ الْاَشْرَارِ ﴿٦٢﴾
اَتَّخَذْنَاهُمْ سِخْرِيًّا اَمْ زَاغَتْ عَنْهُمُ الْاَبْصَارُ ﴿٦٣﴾

62, 63- "Yine şöyle derler: 'Dünyada kendilerini kötü saydığımız adamları acaba neden göremiyoruz? Biz onları alaya mı almış olduk yoksa gözlerimizden mi kaçtılar?'"

Kâfirler, cehenneme girdiklerinde şöyle derler:

*"Bize ne oluyor da dünyada kötü ve güçsüz saydığımız birtakım adamları göremiyoruz? Biz, onları burada göremiyoruz. Acaba onlar burada değiller midir yoksa gözümüzden mi kaçtılar?"*

Bunu Ebûcehil ve arkadaşları, Hz. Bilal ve diğer güçsüz müminleri kast ederek söyleyeceklerdir. Bunun üzerine onlara, sordukları kimselerin cennette oldukları anlatılacak ve böylece hasretleri daha da artmış olacaktır.

إِنَّ ذٰلِكَ لَحَقٌّ تَخَاصُمُ اَهْلِ النَّارِ ﴿٦٤﴾

64- "Şüphesiz bu, cehennemliklerin birbirleriyle çekişmesi kesin bir gerçektir."

Yani cehennemliklerin, cehennemde birbirlerine davacı olmaları kesin bir gerçektir.

قُلْ اِنَّمَٓا اَنَا مُنْذِرٌ وَمَا مِنْ اِلٰهٍ اِلَّا اللّٰهُ الْوَاحِدُ الْقَهَّارُ ﴿٦٥﴾
رَبُّ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا الْعَزِيزُ الْغَفَّارُ ﴿٦٦﴾

65, 66- "De ki: 'Ben ancak bir uyarıcıyım. Her şey üzerinde mutlak otorite sahibi olan bir Allah'tan başka hiçbir ilâh yoktur. O, göklerin, yerin ve ikisi arasındakilerin Rabbidir, mutlak güç sahibidir, çok bağışlayandır.'"

Ey Muhammed! De ki: "Ben ancak Rabbimin mesajını tebliğ eden bir uyarıcıyım, bir korkutucuyum. Zaten hiçbir ortağı olmayan bir Allah'tan başka da hiçbir ilâh yoktur."

قُلْ هُوَ نَبَؤٌا عَظِيمٌ ﴿٦٧﴾ اَنْتُمْ عَنْهُ مُعْرِضُونَ ﴿٦٨﴾ مَا كَانَ لِيَ مِنْ
عِلْمٍ بِالْمَلَاِ الْاَعْلٰى اِذْ يَخْتَصِمُونَ ﴿٦٩﴾ اِنْ يُوحٰى اِلَيَّ اِلَّٓا اَنَّمَٓا اَنَا
نَذِيرٌ مُبِينٌ ﴿٧٠﴾

67, 68, 69, 70- "De ki: 'Bu Kur'ân, büyükbir haberdir. Siz ise ondan yüz çeviriyorsunuz. Aralarında tartıştıkları sırada yüce topluluğa dair benim hiçbir bilgim yoktu. Bana ancak benim sadece bir uyarıcı olduğum vahyediliyor.'"

Yani benim size kıyamet, haşir, cennet ve cehennem hakkında getirdiğim haberler ile peygamberliğim ve doğruluğum ile ilgili olarak size bildirdiklerim büyük bir haberdir. Oysa siz ondan yüz çevirdiniz.

Ayrıca eğer Allah bana bildirmeseydi, benim yüce topluluk ve tartışmaları hakkında hiçbir bilgim yoktu. Eğer Allah bilgi vermeseydi, onu ben bilmiş değildim. Söz konusu yüce topluluk ise en yüksek gökte bulunan bir melekler topluluğudur. Tartışmaları da Hz. Âdem hakkında olmuştur. Çünkü onlar: *"Sen, yeryüzünde fesat çıkaracak birini mi yaratıyorsun?"* demişlerdi.

Bu arada hadiste şu rivayet yapılmıştır:

*"Hz. Cibril, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) bu tartışmayı sormuş, o da bilmediğini söylemiştir. Bunun üzerine Hz. Cibril: 'Bu tartışma, kefaretler ve dereceler hakkında olmuştur. Söz konusu kefaretler, soğuk sabahlarda bol su kullanarak abdest almak ve cemaatlere doğru adım atmaktır. Derecelere gelince onlar selamı yaymak, yemek yedirmek ve insanlar uyumakta iken gece namaz kılmaktır' dedi."*

Bu tartışmada melekler, sadece bu ibadetlerin ecri ve faziletinin miktarı konusunda ihtilaf etmişlerdir. Bu çerçevede onlar, içtihat edip bir ibadetin diğerinden daha faziletli olduğunu söylerler. Yoksa onlar temelde inkârda bulunmazlar.

İşte bu, bana ancak vahyedilir. Ben de apaçık bir uyarıcıyım.

اِذْ قَالَ رَبُّكَ لِلْمَلٰٓئِكَةِ اِنّ۪ي خَالِقٌ بَشَرًا مِنْ ط۪ينٍ ﴿٧١﴾

71- "Hani, Rabbin meleklere şöyle demişti: 'Muhakkak ben çamurdan bir insan yaratacağım.'"

Allah'ın bunu meleklere bildirmesi ancak Hz. Âdem'in durumunun büyük önemini gösterir. Çünkü Allah her iki dünyayı, cenneti, cehennemi, Arş'ı, Kürsü'yü ve melekleri yaratırken hiçbirinin sıfatı hakkında, Hz. Âdem ve çocuklarının sıfatı hakkında söylediklerini söylememiş ve Hz. Âdem'den başka hiç kimseye ve hiçbir şeye secde edilmesini emretmemiştir. Allah'ın yüceliğine bakın ki yaratıklarının en değerlisini, toprak ve çamurdan ibaret olan en zelil ve en değersiz şeyden yaratmıştır.

فَاِذَا سَوَّيْتُهُ وَنَفَخْتُ فِيهِ مِنْ رُوحِي فَقَعُوا لَهُ سَاجِدِينَ ﴿٧٢﴾ فَسَجَدَ الْمَلٰٓئِكَةُ كُلُّهُمْ اَجْمَعُونَ ﴿٧٣﴾ اِلَّٓا اِبْلِيسَ اِسْتَكْبَرَ وَكَانَ مِنَ الْكَافِرِينَ ﴿٧٤﴾

72, 73, 74- "'Onu şekillendirip içine ruhumdan üflediğim zaman onun için secdeye varın.' Bunun üzerine bütün melekler topluca secde ettiler. İblis hariç. O, büyüklük tasladı ve kâfirlerden oldu."

Hz. Âdem'in ruhu her ne kadar malıluk ise de yalnızca o zikredildiği için diğer ruhlara göre bir şerefi vardır. Bu arada Allah, yaradılışını tamamlayıp onu ruhla birleştirince kendisini özellikli olmanın nurlarıyla yüceltti. Bunun üzerine heybeti meleklerin üstüne düştü ve bunun üzerine Allah'ın emrinden dolayı ona secde ettiler. İblis'in ise asiliği ortaya çıktı ve secdeye yanaşmaması sebebiyle lanetlik oldu.

قَالَ يَٓا اِبْلِيسُ مَا مَنَعَكَ اَنْ تَسْجُدَ لِمَا خَلَقْتُ بِيَدَيَّ اَسْتَكْبَرْتَ اَمْ كُنْتَ مِنَ الْعَالِينَ ﴿٧٥﴾ قَالَ اَنَا خَيْرٌ مِنْهُ خَلَقْتَنِي مِنْ نَارٍ وَخَلَقْتَهُ مِنْ طِينٍ ﴿٧٦﴾

75, 76- "Allah: 'Ey İblis! Ellerimle yarattığıma secde etmekten seni ne alıkoydu? Büyüklük mü tasladın yoksa üstünlerden mi oldun?' dedi. İblis dedi ki: 'Ben ondan daha hayırlıyım. Beni ateşten yarattın, onu ise çamurdan yarattın.'"

İblis bu noktadan hareketle yanlışa düştü. Sandı ki üstünlük yapı ve köken bakımındadır. Üstünlüğün yaratılış bakımından değil, kısmet bakımından olduğunu ise bilemedi.

Bir yoruma göre de Allah'ın (c.c.) Hz. Âdem'e verdiği özellikler başkalarında yoktu. İşte böylece özellik onda ortaya çıkmış oluyordu.

قَالَ فَاخْرُجْ مِنْهَا فَاِنَّكَ رَج۪يمٌۚ ﴿٧٧﴾ وَاِنَّ عَلَيْكَ لَعْنَت۪ٓي اِلٰى يَوْمِ
الدّ۪ينِ ﴿٧٨﴾

77, 78- "Allah şöyle dedi: 'Öyleyse çık oradan! Çünkü sen kovuldun. Şüphesiz benim lanetim, hesap ve ceza gününe kadar senin üzerinedir.'"

Allah dedi ki: Cennetten de içinde bulunduğun şekilden de üzerinde bulunduğun halden de çık.

( فَاِنَّكَ رَج۪يمٌ ) *"Çünkü sen kovuldun."*

Tarafımdan senin üzerine lanet atıldı, gökyüzünden sana yakıcı ışıklar fırlatıldı ve kendilerine dokunman halinde velilerimin kalplerinden de sana recim taşları atılacaktır.

قَالَ رَبِّ فَاَنْظِرْن۪ٓي اِلٰى يَوْمِ يُبْعَثُونَ ﴿٧٩﴾ قَالَ فَاِنَّكَ مِنَ
الْمُنْظَر۪ينَۙ ﴿٨٠﴾ اِلٰى يَوْمِ الْوَقْتِ الْمَعْلُومِ ﴿٨١﴾

79, 80, 81- "İblis: 'Ey Rabbim! Öyle ise bana insanların diriltilecekleri güne kadar mühlet ver' dedi. Allah şöyle dedi: 'Sen, o bilinen vakte kadar mühlet verilenlerdensin.'"

İblis'in mutsuzluğunu tam kılan hususlardan biri de kendi diliyle bunu söylemesi ve iradesinin, mühlet talep etmesine dönük olmasıdır. Böylece kendisi azabının sebebini kıyamete kadar artırmış oldu. Allah da ona mühlet vererek isteğini kabul etti. Çünkü İblis, kendi diliyle mutsuzluğunun tam olmasını istemiştir.

قَالَ فَبِعِزَّتِكَ لَاُغْوِيَنَّهُمْ اَجْمَع۪ينَۙ ﴿٨٢﴾ اِلَّا عِبَادَكَ مِنْهُمُ
الْمُخْلَص۪ينَ ﴿٨٣﴾

82, 83- "İblis: 'Senin izzetine andolsun ki içlerinden ihlaslı kulların hariç, elbette onların hepsini azdıracağım' dedi."

Eğer İblis, Allah'ın izzetini bilseydi, O'nun izzetiyle O'na karşı çıkacağına yemin etmezdi.

Bir yoruma göre de Allah'a hitap ederken O'na karşı çıkmada ısrar ve buna yemin etmeye cesaret etmesi, laneti hak etmesi bakımından Hz. Âdem'e secde etmeye yanaşmamasından daha çirkindir.

قَالَ فَالْحَقُّ وَالْحَقَّ اَقُولُ ﴿٨٤﴾ لَاَمْلَئَنَّ جَهَنَّمَ مِنْكَ وَمِمَّنْ تَبِعَكَ
مِنْهُمْ اَجْمَعِينَ ﴿٨٥﴾

**84, 85-** "Allah şöyle dedi: 'İşte bu gerçektir. Ben de gerçeği söylüyorum. Andolsun, cehennemi seninle ve onlardan sana uyanların hepsiyle dolduracağım.'"

Allah, bu sûreyi, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) olan şu hitabıyla tamamlamıştır.

قُلْ مَا اَسْـَٔلُكُمْ عَلَيْهِ مِنْ اَجْرٍ وَمَا اَنَا مِنَ الْمُتَكَلِّفِينَ ﴿٨٦﴾ اِنْ هُوَ
اِلَّا ذِكْرٌ لِلْعَالَمِينَ ﴿٨٧﴾ وَلَتَعْلَمُنَّ نَبَاَهُ بَعْدَ حِينٍ ﴿٨٨﴾

**86, 87, 88-** "De ki: 'Bundan dolayı sizden hiçbir ücret istemiyorum. Ben, kendiliğinden yükümlülük altına girenlerden değilim. O, âlemler için ancak bir öğüttür. Onun haberlerinin doğruluğunu bir süre sonra mutlaka öğreneceksiniz.'"

Ben, ne kendiliğimden ne de kendi tercihimle size gelmedim. Ben, size ancak peygamber olarak gönderildim.

( اِنْ هُوَ اِلَّا ذِكْرٌ لِلْعَالَمِينَ ) *"O, âlemler için ancak bir öğüttür."*

Yani Kur'ân, sizin için bir öğüttür.

( وَلَتَعْلَمُنَّ نَبَاَهُ بَعْدَ حِينٍ ) *"Onun haberlerinin doğruluğunu bir süre sonra mutlaka öğreneceksiniz."*

Nitekim onun doğruluğu, şeriatı devam ettikten sonra anlaşıldı. Çünkü böyle bir şey, bâtıl olduğu zaman devam etmez.

سورة الزُّمَرِ

# ZÜMER SÛRESİ

(Sûre 75 âyet olup, Mekke döneminin ortalarında inmiştir. 52-54. âyetler Medine'de inmiştir. Zümer; zümreler, gruplar, cemaatler demektir. Sûre 71. âyette küfür ehlinin, 73. âyette ise inananların cennete "zümreler -gruplar" halinde gireceğinden söz edildiği için bu adı almıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" kalplere şifa, ruhlara aydınlık, sırlara da yücelik sağlayan bir sözdür.

O, öyle bir sözdür ki onu bilerek dinleyen kimsenin basireti kat kat artar. Sonra bu sözün manevî özellikleri tanıtılabilir olmakla sınırlanamaz. Kim onu vecd kulağıyla dinlerse idrak melekleri acze düşer, sırları da keşiflerin yoğunluğuyla ifşa olur.

تَنْزِيلُ الْكِتَابِ مِنَ اللّٰهِ الْعَزِيزِ الْحَكِيمِ ﴿١﴾

1- "Kitab'ın indirilmesi, mutlak güç sahibi hüküm ve hikmet sahibi Allah tarafındandır."

Yani bu, aziz bir Rab tarafından aziz bir emirle aziz bir meleğin dili üzerinden aziz bir ümmetin durumu hakkında aziz bir kula inen aziz bir kitaptır. Bir de Hz. Peygamber'in (s.a.v.) onu ilk sevgiliden getirmiş olmasında, dostların kalpleri için sevinç dallarının

çürümesinden sonra ferahlama ve fasıllarının okunması esnasında rahatlama vardır.

Öte yandan Hz. Mûsâ'nın kitabı, kendisinin bu kitabı okuduğu levhalarda yer alırken bizim peygamberimizin kitabını Cibril-i emin O'nun kalbi üzerine indirmiştir. Rabbinin kitabı, levhalarında yazılı olan peygamberile Rabbinin hitabı kalbinde korunan peygamber arasında ise büyük bir fark vardır. Aynı şekilde ümmeti de farklı olur.

Allah şöyle buyurmuştur:

(بَلْ هُوَ اٰيَاتٌ بَيِّنَاتٌ فِي صُدُورِ الَّذِينَ اُوتُوا الْعِلْمَ) *"Doğrusu o, kendilerine ilim verilenlerin kalplerindeki apaçık ayetlerdir."* (Ankebût, 29/49)

اِنَّٓا اَنْزَلْنَٓا اِلَيْكَ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ فَاعْبُدِ اللّٰهَ مُخْلِصًا لَهُ الدِّينَ ﴿٢﴾

2- "Şüphesiz biz, o Kitab'ı sana hak olarak indirdik. Öyle ise sen de dini Allah'a has kılarak O'na kulluk et."

Yani biz sana Kur'ân'ı hak din ve hak şeriat ile indirdik. Ben de onu indirirken hakkı gözetirim.

Bu arada halis ibadet, emri son derece huşu üzere kabul etmektir. Bu ibadet nefis, kalp ve ruh ile gerçekleşir. Bu çerçevede nefisle olan ibadette ihlas, onu eksik yapmaktan uzak durmaktır. Kalp ile olan ibadette ihlas, şahısları görmemektir. Ruhla olan ibadette ihlas ise ayrıcalıklı olma isteğinden arınmaktır.

اَلَا لِلّٰهِ الدِّينُ الْخَالِصُ وَالَّذِينَ اتَّخَذُوا مِنْ دُونِه۪ٓ اَوْلِيَٓاءَ مَا نَعْبُدُهُمْ اِلَّا لِيُقَرِّبُونَٓا اِلَى اللّٰهِ زُلْفٰى اِنَّ اللّٰهَ يَحْكُمُ بَيْنَهُمْ ف۪ي مَا هُمْ ف۪يهِ يَخْتَلِفُونَ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْد۪ي مَنْ هُوَ كَاذِبٌ كَفَّارٌ ﴿٣﴾

3- "İyi bilin ki halis din, yalnız Allah'ındır. O'nu bırakıp da başka dostlar edinenler: 'Biz onlara sadece bizi Allah'a daha çok yaklaştırsınlar diye ibadet ediyoruz' diyorlar. Şüphesiz Allah, ayrılığa düştükleri şeyler konusunda aralarında hüküm verecektir. Şüphesiz Allah, yalancı ve nankör olanları doğru yola iletmez."

Halis din, tamamı Allah için olan dindir. Bu nedenle içinde kulun bir nasibi olan din ihlastan uzaktır. Meğer ki bu nasip Allah'ın emriyle olmuş olsun. Çünkü Allah kuluna, ibadetine karşılık olarak ecir beklemesini emrettiği zaman, Allah'ın emrettiği ecri beklemekle itaati kulu ihlaslı olmaktan çıkarmaz. Yoksa dünyada hiç kimse, ihlaslı olamazdı.

(وَالَّذِينَ اتَّخَذُوا مِنْ دُونِهِ اَوْلِيَاءَ) *"O'nu bırakıp da başka dostlar edinenler..."*

Yani putlara tapanlar: dediler ki:

(مَا نَعْبُدُهُمْ اِلَّا لِيُقَرِّبُونَا اِلَى اللّٰهِ زُلْفٰى) *"Biz onlara sadece bizi Allah'a daha çok yaklaştırsınlar diye ibadet ediyoruz."*

Onlar, ne bu Allah tarafındandır ne O'nun emriyledir ne de izniyledir; demeyip aksine bunun kendilerinden olduğuna hükmettiler. Bu nedenle Allah, onlara cevap verdi. Bunda ise kulun, vaktin hükmü gerektirmeden kendi çabasıyla yaptığı ibadetlerin, Allah'a söz verip yerine getirmediği akitlerin nefse uymak olduğuna işaret vardır.

Nitekim Allah şöyle buyurmuştur:

(وَرَهْبَانِيَّةً ابْتَدَعُوهَا مَا كَتَبْنَاهَا عَلَيْهِمْ اِلَّا ابْتِغَاءَ رِضْوَانِ اللّٰهِ فَمَا رَعَوْهَا
حَقَّ رِعَايَتِهَا فَاٰتَيْنَا الَّذِينَ اٰمَنُوا مِنْهُمْ اَجْرَهُمْ)

*"İcat ettikleri ruhbanlığa gelince, biz onu onlara farz kılmamıştık. Allah'ın rızasını kazanmak için onu kendileri icat etmişlerdi. Fakat ona da gereği gibi uymadılar."* (Hadîd, 57/27)

Sen, onu bugün Allah'ın dinine, ahirette de O'nun vereceği sevaba iletemezsin. Bu ifadedeki işaret ise Allah'ın huzurunda durup hesap vermekten başka bir şeyi dikkate alan ve samimi olmadığı bir şey iddia eden kimseyi Allah'ın, doğruyu bulacağı yola asla iletmeyeceğine yöneliktir. Bu kimsenin cezası ise benliği ve zevkiyle hakikatini yaşamadan iddia etmeye kalkıştığı şeyden Allah'ın onu mahrum etmesidir.

لَوْ اَرَادَ اللّٰهُ اَنْ يَتَّخِذَ وَلَدًا لَاصْطَفٰى مِمَّا يَخْلُقُ مَا يَشَٓاءُ سُبْحَانَهُ هُوَ اللّٰهُ الْوَاحِدُ الْقَهَّارُ ﴿٤﴾

4- "Eğer Allah bir çocuk edinmek isteseydi, yarattıklarından dilediğini seçerdi. O, bundan uzaktır, yücedir. O, bir ve her şey üzerinde mutlak otorite sahibi olan Allah'tır."

Onlar: "Mesih, Allah'ın oğludur" ve "Uzeyr, Allah'ın çocuğudur" dedikleri için Allah, onlara akılları ve inançları çerçevesinde hitap ederek şöyle buyurmuştur:

*"Eğer Allah, evlatlık veya değer için çocuk edinseydi, onu, yemekten, içmekten ve yaratıkların vasıflarından münezzeh olan meleklerden seçerdi."*

Sonra Allah, zatını çocuk edinmekten tenzih etmek için böyle bir şeyden mukaddes olduğunu bildirerek: ( سُبْحَانَهُ هُوَ اللّٰهُ الْوَاحِدُ الْقَهَّارُ ) "O, *bundan uzaktır, yücedir. O, bir ve her şey üzerinde mutlak otorite sahibi olan Allah'tır*" buyurmuştur. Allah, hakikatte çocuk sahibi olamaz. Zira çocuk sahibi olmak, mahiyeti bakımından O'nun sıfatında muhaldir. Allah, evlatlık alarak da çocuk sahibi olamaz. Zira O, cinsiyet ve mahallerden münezzehtir. Bunu yapmak istemesi halinde çocuğu meleklerden seçeceğini söylemesi ise onu ihtimal dışı göstermek içindir.

Tıpkı şu ayette olduğu gibi:

( لَوْ كَانَ فِيهِمَٓا اٰلِهَةٌ اِلَّا اللّٰهُ لَفَسَدَتَا ) *"Eğer gökte ve yerde Allah'tan başka ilâhlar olsaydı, kesinlikle ikisinin de düzeni bozulurdu."* (Enbiyâ, 21/22)

خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ يُكَوِّرُ الَّيْلَ عَلَى النَّهَارِ وَيُكَوِّرُ النَّهَارَ عَلَى الَّيْلِ وَسَخَّرَ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ كُلٌّ يَجْرِي لِاَجَلٍ مُسَمًّى اَلَا هُوَ الْعَزِيزُ الْغَفَّارُ ﴿٥﴾

5- "Gökleri ve yeri hak ile yarattı. Geceyi gündüzün üzerine örtüyor, gündüzü de gecenin üzerine örtüyor. Güneşi ve ayı da koyduğu

kanunlara boyun eğdirmiştir. Bunların her biri, belli zamana kadar akıp gitmektedir. İyi bilin ki O, mutlak güç sahibidir ve çok bağışlayandır."

( خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ ) *"Gökleri ve yeri hak ile yarattı."*

Yani Allah, gökleri ve yeri yarattı ve onları yaratmada hakkı gözetti.

( يُكَوِّرُ الَّيْلَ عَلَى النَّهَارِ وَيُكَوِّرُ النَّهَارَ عَلَى الَّيْلِ وَسَخَّرَ الشَّمْسَ وَالْقَمَرَ كُلٌّ يَجْرِي لِاَجَلٍ مُسَمًّى ) *"Geceyi gündüzün üzerine örtüyor, gündüzü de gecenin üzerine örtüyor. Güneşi ve ayı da koyduğu kanunlara boyun eğdirmiştir. Bunların her biri, belli zamana kadar akıp gitmektedir."*

Allah, eksilip artmada geceyi gündüze, gündüzü de geceye katar. Güneşi ve ayı da kanunlara bağlı kılmıştır. Bu arada kulun hallerinin kabz ve bast, cem ve fark, alma ve ret, sahv ve sekr; akıl yıldızları, ilim ayları, marifet güneşleri, tevhid gündüzü, şek ve inkâr geceleri, vuslat gündüzü, hicran ve ayrılık geceleri bakımından değişmesi, nasıl değiştikleri, artmaları ve eksilmeleri daha önce geçti.

( اَلَا هُوَ الْعَزِيزُ الْغَفَّارُ ) *"İyi bilin ki O, mutlak güç sahibidir ve çok bağışlayandır."*

Allah, sevenlere karşı gücünü gösteren ve günahkârları çokça bağışlayandır.

خَلَقَكُمْ مِنْ نَفْسٍ وَاحِدَةٍ ثُمَّ جَعَلَ مِنْهَا زَوْجَهَا وَاَنْزَلَ لَكُمْ مِنَ الْاَنْعَامِ ثَمَانِيَةَ اَزْوَاجٍ يَخْلُقُكُمْ فِي بُطُونِ اُمَّهَاتِكُمْ خَلْقًا مِنْ بَعْدِ خَلْقٍ فِي ظُلُمَاتٍ ثَلٰثٍ ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمْ لَهُ الْمُلْكُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ فَاَنّٰى تُصْرَفُونَ ﴿٦﴾

6- "O, sizi bir tek nefisten yarattı. Sonra ondan eşini var etti. Sizin için hayvanlardan sekiz eş yarattı. Sizi, annelerinizin karnında bir yaratılıştan öbürüne geçirerek üç karanlık içinde oluşturuyor.

İşte Rabbiniz olan Allah budur. Mülk, yalnız O'nundur. O'ndan başka hiçbir ilâh yoktur. O halde nasıl oluyor da haktan döndürülüyorsunuz?"

( خَلَقَكُمْ مِنْ نَفْسٍ وَاحِدَةٍ ثُمَّ جَعَلَ مِنْهَا زَوْجَهَا ) *"O, sizi bir tek nefisten yarattı. Sonra ondan eşini var etti."*

Yani Âdem ile Havva'yı yarattı.

( وَاَنْزَلَ لَكُمْ مِنَ الْاَنْعَامِ ثَمَانِيَةَ اَزْوَاجٍ ) *"Sizin için hayvanlardan sekiz eş yarattı."*

Yani sizin için sekiz eş yarattı. Bu çerçevede develerden iki, sığırlardan iki, koyunlardan iki ve diğer dört ayaklılardan iki eş yarattı.

( يَخْلُقُكُمْ فِي بُطُونِ اُمَّهَاتِكُمْ خَلْقًا مِنْ بَعْدِ خَلْقٍ فِي ظُلُمَاتٍ ثَلٰثٍ ) *"Sizi annelerinizin karnında bir yaratılıştan öbürüne geçirerek oluşturuyor."*

Yani sizi şekillendiriyor ve hallerinizi birbirine ekliyor.

( فِي ظُلُمَاتٍ ثَلٰثٍ ) *"Üç karanlık içinde."*

Bunlar karın karınlığı, rahim karanlığı ve plasenta karanlığıdır.

Allah burada insanlara neseplerini, hallerini beğenmemeleri için hatırlatmıştır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, insanı iki damladan parçaları benzer, organ biçimleri ise değişik karışımlar halinde nasıl yarattığına dair hikmet dolu fiillerinin eserlerini açıklamıştır. Organların bir kısmını ilim, kudret, hayat ve kalplerin hallerinden olan diğer iyi sıfatların yerleri olarak kanunlara bağlarken, bir kısmını da işitme, görme, koklama ve diğer duyuların yerleri olarak kanunlara bağlamıştır.

- Bütün bunlar, Allah'ın kendileriyle bize inamda bulunduğu nimetler olup O'na sevgimizi celp etmek için onları bize hatırlatmıştır. Zira nefisler ve aynı şekilde kalpler, kendilerine iyilikte bulunanı sevme tabiatına sahip olarak yaratılmıştır.

( ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمْ ) *"İşte Rabbiniz olan Allah budur."*

Yani bütün bu şekillerde size ihsanda bulunan, Rabbinizdir. Yani sizi ben yarattım, size ben rızık verdim, sizi ben şekillendirip şekillerinizi güzel yaptım ve size bolca nimetlerimi ben verdim, güzel ikramımı size tahsis ettim, cemal ve celalimin nelere layık olduğunu size ben öğrettim, tevhidime sizi ben hidayet ettim ve sınırlarıma riayet etmekle sizi ben yükümlü kıldım. Hal böyleyken size ne oluyor da büsbütün bana bağlanmıyorsunuz? Size söz verdiklerini benden ummuyorsunuz. Size ne oluyor da vaktinde kalplerinizle bana bakmıyorsunuz?

اِنْ تَكْفُرُوا فَاِنَّ اللّٰهَ غَنِيٌّ عَنْكُمْ وَلَا يَرْضٰى لِعِبَادِهِ الْكُفْرَ وَاِنْ
تَشْكُرُوا يَرْضَهُ لَكُمْ وَلَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِزْرَ اُخْرٰى ثُمَّ اِلٰى رَبِّكُمْ
مَرْجِعُكُمْ فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ اِنَّهُ عَلِيمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ ﴿٧﴾

7- "Eğer inkâr ederseniz şüphesiz ki Allah, sizin iman etmenize muhtaç değildir. Ama kullarının inkâr etmesine razı olmaz. Eğer şükrederseniz, sizin için buna razı olur. Hiçbir günahkâr, başka bir günahkârın yükünü yüklenmez. Sonra dönüşünüz ancak Rabbinizedir. O da, size yaptıklarınızı haber verir. Çünkü O, kalplerde olan her şeyi hakkıyla bilir."

Eğer siz yüz çevirip hakkı kabule yanaşmazsanız ve inkârcılığınıza devam ederseniz, bizim de size ihtiyacımız yoktur. Çünkü biz size ihtiyaç duymayacak durumdayız. Ancak bizden kopmanıza, sizin için rıza göstermiyoruz.

Ey miskin! Eğer sen benim için değilsen, şu bir gerçek ki benim sana ihtiyacım yoktur. Şayet ben, senin için olmazsam bu takdirde sen kim olursun? Kim senin için olur? Kim sana iyilik yapar? Kim sana bakar? Kim sana merhamet eder? Kim senin yaralarına merhem sürer?

Kim seninle ilgilenir? Bensiz kaldığın zaman kiminle teselli bulacaksın? Kim sana altın miskallerle bile bir ekmek satar?

Ey kulum! Ben, senin benim için olmamana rıza göstermem. Oysa sen, benim için olmamana rıza gösteriyorsun. Ey az vefalı! Ey cinayeti çok! Eğer sen, bana itaat edersen, sana karşılığını veririm. Eğer sen beni anarsan ben de seni anarım. Eğer sen, benim için bir adım atarsan, ben gökleri ve yerleri senin mükâfatınla doldururum.

Şiir:

*Eğer ziyaretin gerçek olduğunu bilseydik*
*Yere sererdik yanakları hoşnut olman için*

وَاِذَا مَسَّ الْاِنْسَانَ ضُرٌّ دَعَا رَبَّهُ مُنٖيبًا اِلَيْهِ ثُمَّ اِذَا خَوَّلَهُ نِعْمَةً
مِنْهُ نَسِيَ مَا كَانَ يَدْعُٓوا اِلَيْهِ مِنْ قَبْلُ وَجَعَلَ لِلّٰهِ اَنْدَادًا لِيُضِلَّ
عَنْ سَبٖيلِهٖ قُلْ تَمَتَّعْ بِكُفْرِكَ قَلٖيلًا اِنَّكَ مِنْ اَصْحَابِ النَّارِ ﴿٨﴾

8- "İnsana bir zarar dokunduğu zaman, Rabbine yönelerek O'na yalvarır. Sonra kendi katından ona bir nimet verdiği zaman, daha önce ona yalvardığını unutur ve Allah'ın yolundan saptırmak için O'na eşler koşar. De ki: 'Küfrünle az bir süre yaşayıp geçin! Şüphesiz sen, cehennemliklerdensin.'"

İnsana bir zarar dokunduğu zaman zelil olur ve boyun eğer, Allah'ın yakınlığına sığınır ve O'nun huzurunda yalvarıp yakarır: Allah, zararı ondan giderip işinde ona yettiği ve işini yoluna koyduğu zaman ise o, daha önce O'na yaptığı duayı unutur, kendisine şerikler koşar ve böylece nankörlüğünün başına dönerek büyük günahlarına batar ve mabuduna ortak koşar. İşte Allah'ın rahmetinden uzak olası bu kimsenin vasfı budur. Bir de o, mutlaka azap ve utançla yüzleşecektir.

اَمَّنْ هُوَ قَانِتٌ اٰنَٓاءَ الَّيْلِ سَاجِدًا وَقَٓائِمًا يَحْذَرُ الْاٰخِرَةَ وَيَرْجُوا
رَحْمَةَ رَبِّهٖ قُلْ هَلْ يَسْتَوِي الَّذٖينَ يَعْلَمُونَ وَالَّذٖينَ لَا يَعْلَمُونَ اِنَّمَا
يَتَذَكَّرُ اُو۬لُوا الْاَلْبَابِ ﴿٩﴾

9- "Yoksa geceleyin secde ederek ve kıyamda durarak ibadet eden, ahiretten çekinen ve Rabbinin rahmetini dileyen kimse, o inkârcı gibi midir? De ki: 'Hiç bilenlerle bilmeyenler bir olur mu?' Doğrusu ancak akıl sahipleri bunları hakkıyla düşünür."

Ayetteki ( قانتا ) lafzının mastarı olan *"kunût"*, ayakta durmak demektir. Bir görüşe göre de uzun süre ayakta durmak demektir. ( قانتا ) lafzıyla kast edilen ise, gece ve gündüz vakitlerinde, yani bütün vakitlerde ibadetin haklarını yerine getiren kimsedir. Ayetin başındaki *"hemze"* ise istifham içindir. Yani, gece ve gündüz vakitlerinde ibadet için uzun süre ayakta kalan kimse, böyle olmayan kimse gibi midir? Bu şekilde ibadet yapan kimse, adı geçen kâfir gibi midir? Yani öyle değildir.

Bir yoruma göre de *"kunût"*, tembelliğe kapılmadan ve aksatmadan hizmetin adabını hem zahirde hem de batında yerine getirmektir.

( يَحْذَرُ ) *"Çekinen."*

Ahirette vaat edilen azaptan çekinen.

( وَيَرْجُوا ) *"Dileyen."*

Vaat edilen sevabı uman.

Ayetteki çekinmekten amaç ise korkmaktır.

( قُلْ هَلْ يَسْتَوِي الَّذِينَ يَعْلَمُونَ وَالَّذِينَ لَا يَعْلَمُونَ اِنَّمَا يَتَذَكَّرُ اُولُوا الْاَلْبَابِ ) *"De ki: 'Hiç bilenlerle bilmeyenler bir olur mu?' Doğrusu ancak akıl sahipleri bunları hakkıyla düşünür."*

Yani bu ikisi eşit midir? Biri faziletlerin zirvesinde iken diğeri rezilliklerin kötülüğü içindedir.

( الَّذِينَ يَعْلَمُونَ ) *"Bilenler."*

Mahlukun vasfı olarak ilim iki kısımdır: Biri, kul tarafından elde edilmiş ve kazanılmıştır. Diğeri de Rab tarafından bahşedilmiştir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Biri oluşturulan ilimdir, diğeri de vazedilen ilimdir.

- Biri burhan ilmidir, diğeri de beyan ilmidir. Bu çerçevede, ilham şeklinde gerçekleşen hariç, dini ilimlerin hepsi burhan ilimleridir.

قُلْ يَا عِبَادِ الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا اتَّقُوا رَبَّكُمْۜ لِلَّذ۪ينَ اَحْسَنُوا ف۪ي هٰذِهِ الدُّنْيَا حَسَنَةٌۜ وَاَرْضُ اللّٰهِ وَاسِعَةٌۜ اِنَّمَا يُوَفَّى الصَّابِرُونَ اَجْرَهُمْ بِغَيْرِ حِسَابٍ ﴿١٠﴾

10- "Bizim adımıza de ki: 'Ey iman eden kullarım! Rabbinize karşı gelmekten sakının. Bu dünyada iyilik yapanlar için ahirette bir iyilik vardır. Allah'ın yeryüzü geniştir. Sabredenlere mükâfatları elbette hesapsız olarak verilir.'"

Rabbinize itaat edin ve emrine muhalefet etmekten sakının.

( لِلَّذ۪ينَ اَحْسَنُوا ف۪ي هٰذِهِ الدُّنْيَا حَسَنَةٌ ) *"Bu dünyada iyilik yapanlar için ahirette bir iyilik vardır."*

Söz konusu iyilik, ibadetleri yerine getirmek şeklinde olur. İyilik yapmak ise, bu amaçla her türlü imkânı kullanmaktır.

( وَاَرْضُ اللّٰهِ وَاسِعَةٌ ) *"Allah'ın yeryüzü geniştir."*

Yani düşmanların verdiği eziyeti gerekçe kılmayın. Çünkü eğer bir yer size dar gelirse, bir kavmin düşmanlığını ve sizi engellemelerini gerekçe kılmanıza kulak verilmez. Zira Allah'ın toprağı geniştir. Bu nedenle oradan, ibadetinizi tam olarak yapabileceğiniz başka bir yere çıkın.

( اِنَّمَا يُوَفَّى الصَّابِرُونَ اَجْرَهُمْ بِغَيْرِ حِسَابٍ ) *"Sabredenlere mükâfatları elbette hesapsız olarak verilir."*

Sabır, nefsi hoşlanmadığı şeye hapsetmektir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Sabır, rahatsızlık hissetmeden ve surat asmadan ilâhî takdirin acılarını yudumlamaktır.

- Sabır, musibet oklarına hedef olmayı kabul etmektir.

قُلْ اِنّ۪ٓي اُمِرْتُ اَنْ اَعْبُدَ اللّٰهَ مُخْلِصًا لَهُ الدّ۪ينَ ﴿١١﴾ وَاُمِرْتُ لِاَنْ اَكُونَ اَوَّلَ الْمُسْلِم۪ينَ ﴿١٢﴾

**11, 12-** "De ki: 'Şüphesiz bana, dini Allah'a has kılarak O'na ibadet etmem emredildi. Bana Müslümanların ilki olmam emredildi.'"

İhlasın anlamına dair izah daha önce geçti. Hadiste ise şöyle denilmiştir:

*"Allah: 'İhlas, Allah ile kulu arasındaki bir sırdır' der."*

Bir yoruma göre de şeytan, ihlası bozamaz. Her iki melek de ona muttali olmazlar.

(اُمِرْتُ اَنْ اَعْبُدَ اللّٰهَ) *"Allah'a ibadet etmem emredildi."*

Zamanımda ve şeriatımda Müslümanların ilki olmam emredildi. İslam ise her yönüyle Allah'a itaat etmek demektir.

قُلْ اِنّ۪ٓي اَخَافُ اِنْ عَصَيْتُ رَبّ۪ي عَذَابَ يَوْمٍ عَظ۪يمٍ ﴿١٣﴾

**13-** "De ki: 'Eğer ben Rabbime isyan edersem, şüphesiz büyük bir günün azabından korkarım.'"

Ben o gün gerçekleşecek olan çeşitli azaplardan korkarım.

قُلِ اللّٰهَ اَعْبُدُ مُخْلِصًا لَهُ د۪ين۪ي ﴿١٤﴾ فَاعْبُدُوا مَا شِئْتُمْ مِنْ دُونِه۪ قُلْ اِنَّ الْخَاسِر۪ينَ الَّذ۪ينَ خَسِرُٓوا اَنْفُسَهُمْ وَاَهْل۪يهِمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ اَلَا ذٰلِكَ هُوَ الْخُسْرَانُ الْمُب۪ينُ ﴿١٥﴾

**14, 15-** "De ki: 'Ben, dinimi Allah'a has kılarak sadece O'na ibadet ediyorum. Siz de Allah'tan başka dilediğiniz şeylere ibadet edin.' De ki: 'Şüphesiz hüsrana uğrayanlar, kıyamet gününde kendilerini ve ailelerini hüsrana uğratanlardır. İyi bilin ki bu, apaçık hüsranın ta kendisidir.'"

Bu, uyarı ve tehdidin son sınırıdır. Sonra Allah bunun, hüsranın son sınırı olduğunu açıklamıştır. Bu son sınır ise utanç ve rezalettir. Gerçek anlamda hüsrana uğrayan ise nefsin arzularına uymak suretiyle dünyasını, Rabb'in yasaklarını işlemek suretiyle ahiretini, gördüğü şeylerde Allah'tan utanmayarak da Allah'ını kaybeden kimsedir.

لَهُمْ مِنْ فَوْقِهِمْ ظُلَلٌ مِنَ النَّارِ وَمِنْ تَحْتِهِمْ ظُلَلٌ ذٰلِكَ يُخَوِّفُ اللّٰهُ بِهٖ عِبَادَهُ يَا عِبَادِ فَاتَّقُونِ ﴿١٦﴾

16- "Onlar için üstlerinde ateşten katmanlar, altlarında ateşten katmanlar vardır. İşte Allah, kullarını bununla korkutur. Ey kullarım! Bana karşı gelmekten sakının."

Cehennemin çadırı onları kuşatmıştır. Böylece onlar, oradan çıkmayacaklar ve azapları hafifletilmeyecektir. Tıpkı bugün inançlarının cehenneminde oldukları gibi perdelenmeleri devam edip gider ve azaplarının sonu da gelmez.

(ذٰلِكَ يُخَوِّفُ اللّٰهُ بِهٖ عِبَادَهُ) *"İşte Allah, kullarını bununla korkutur."*

Eğer sen bugün korkarsan, o günün korkusundan korunmuş olursun. Aksi halde önünde çetin bir badire vardır.

وَالَّذٖينَ اجْتَنَبُوا الطَّاغُوتَ اَنْ يَعْبُدُوهَا وَاَنَابُوٓا اِلَى اللّٰهِ لَهُمُ الْبُشْرٰى فَبَشِّرْ عِبَادِ ﴿١٧﴾

17- "Tâğût'tan, ona kulluk etmekten kaçınan ve içtenlikle Allah'a yönelenler için müjde vardır. O halde kullarımı müjdele!"

Herkesin tâğûtu kendi nefsidir. Tâğûttan da ancak nefsinin arzusuna karşı çıkan ve Mevlâ'sının rızasını kucaklayan kimse sakınabilir. Nefse ibadet, onun arzusuna uymaktır. Nefsinin arzusuna uymayan ve nefsin telkininden sakınan kimselerin sayısı ise pek azdır.

(وَاَنَابُوٓا اِلَى اللّٰهِ) *"Allah'a yönelenler."*

Yani her şeyde Allah'a dönüş yapanlar.

اَلَّذٖينَ يَسْتَمِعُونَ الْقَوْلَ فَيَتَّبِعُونَ اَحْسَنَهُ اُو۬لٰٓئِكَ الَّذٖينَ هَدٰيهُمُ اللّٰهُ
وَاُو۬لٰٓئِكَ هُمْ اُو۬لُوا الْاَلْبَابِ ﴿١٨﴾

18- "Sözü dinleyip de onun en güzeline uyanlar var ya, işte onlar Allah'ın hidayete erdirdiği kimselerdir. İşte onlar, akıl sahiplerinin ta kendileridir."

( اَلَّذٖينَ يَسْتَمِعُونَ الْقَوْلَ فَيَتَّبِعُونَ اَحْسَنَهُ ) *"Sözü dinleyip de onun en güzeline uyanlar."*

Bu söz, her şeyi dinlemeyi ancak en güzel olana uymayı ifade etmektedir. Ayetteki ( أحسنه ) lafzı konusunda iki görüş bulunmaktadır: Bunlardan biri, bu lafzın "güzel" anlamında olması ve dolayısıyla başındaki hemzenin mübalağa için olmamasıdır. Tıpkı ( أعزّ ) lafzının ( عزيز ) anlamında kullanılarak ( ملكٌ أعزُ ) tabirinin en güçlü değil, güçlü hükümdar anlamında kullanılması gibi. İkinci görüş ise bu lafzın mübalağa için olup "en güzel" anlamında olması şeklindedir. Bu çerçevede güzel sözden maksat, niteliği bakımından halkın dinlemeye mezun olduğu ve mezun oluşları, ilmin tanıklığıyla bilinen sözdür. Sözün en güzeli ise en iyi ve en doğru olanıdır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- En güzel söz, başkası için değil sadece Allah için olan sözdür.
- En güzel söz, Allah'ı sadece Allah için anmaktır.
- Allah'ı tanıyan kimse, sadece Allah ile işitir.

- Kulun içinden kendisine seslenen bazı çağırıcıları vardır. Bunlar nefsin fısıltıları, şeytanın vesveseleri ve meleğin ilhamlarıdır. Hakk'ın hitabı ise kalbe işlenir. Bu çerçevede şeytanın vesveseleri günahlara çağırır. Nefsin fısıltıları, eşyanın nefisten sabit olduğuna ve her şeyde bir payı bulunduğuna çağırır. Meleğin ilhamları da ibadetlere ve Allah'a yaklaştırıcı davranışlara çağırır. Hakk'ın hitabı ise tevhidin hakikatlerine dairdir.

(أُولٰئِكَ الَّذِينَ هَدٰيهُمُ اللّٰهُ وَأُولٰئِكَ هُمْ أُولُو الْأَلْبَابِ) *"İşte onlar Allah'ın hidayete erdirdiği kimselerdir. İşte onlar, akıl sahiplerinin ta kendileridir."*

İşte Allah'ın tevhidine ilettiği kimseler bunlardır. Akılları kilitli - basiretleri kapalı- olmayanlar da bunlardır.

اَفَمَنْ حَقَّ عَلَيْهِ كَلِمَةُ الْعَذَابِ اَفَاَنْتَ تُنْقِذُ مَنْ فِي النَّارِ ﴿١٩﴾

19- "Hakkında azap sözü gerçekleşenler, hiç onlar gibi olur mu? Cehennemlikleri sen mi kurtaracaksın?"

Hakkında azap sözü gerçekleşenler iki gruptur: Bir grup hakkında cehennemde olacağına dair azap sözü gerçekleşmiştir. Bir grup hakkında da azap sözü, bugün perdelenmiş olmak suretiyle gerçekleşmiştir. Bu itibarla onlar, kalplerinin perdelenmişliğinden kurtulamazlar ve iman ehlinden olsalar dahi onlar bu tarikata inanmazlar.

لٰكِنِ الَّذِينَ اتَّقَوْا رَبَّهُمْ لَهُمْ غُرَفٌ مِنْ فَوْقِهَا غُرَفٌ مَبْنِيَّةٌ تَجْرِي
مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ وَعْدَ اللّٰهِ لَا يُخْلِفُ اللّٰهُ الْمِيعَادَ ﴿٢٠﴾

20- "Fakat Rabbine karşı gelmekten sakınanlar için cennette üst üste yapılmış ve altlarından ırmaklar akan köşkler vardır. Allah, gerçek bir vaatte bulunmuştur. Allah, vaadinden dönmez."

Allah, itaatkârlara cenneti vaat etmiştir. Şüphesiz Allah, vaadini bozmaz. Tövbe edenlere de bağışlama sözü vermiştir. Şüphesiz onları da bağışlayacaktır. Müridlere de vecd ve vuslat sözü vermiştir. Onlarda da bir tembellik meydana gelmediği zaman, şüphesiz sözünü yerine getirecektir.

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ اَنْزَلَ مِنَ السَّمَاءِ مَاءً فَسَلَكَهُ يَنَابِيعَ فِي الْاَرْضِ ثُمَّ
يُخْرِجُ بِهِ زَرْعًا مُخْتَلِفًا اَلْوَانُهُ ثُمَّ يَهِيجُ فَتَرٰيهُ مُصْفَرًّا ثُمَّ يَجْعَلُهُ
حُطَامًا اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَذِكْرٰى لِاُولِي الْاَلْبَابِ ﴿٢١﴾

21- "Görmedin mi, Allah gökten su indirdi de onu yeryüzündeki kaynaklara ulaştırdı. Sonra onunla, renkleri çeşit çeşit ekinler çıkarıyor. Sonra ekinler kuruyor da onları sapsarı kesilmiş görüyorsun. Sonra da Allah onları kurumuş çerçöp haline getirir. Şüphesiz ki bunda akıl sahipleri için bir öğüt vardır."

Bu ayette Allah gökten yağmur indirerek onunla ekinler çıkardığını ve bu ekinlerin yemyeşil olduğunu sonra kurumaya başladığını sonra da çerçöp haline geldiğini anlatmaktadır. Bundaki işaret ise insana yöneliktir. O da önce çocuk olması, sonra gençlik çağına gelmesi, sonra orta yaşlı olması, sonra yaşlanması, sonra da çürümesidir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Ekin kurumaya başlamadıkça ondan tane alınmaz. Bu itibarla ondan maksat tanedir. Aynı şekilde insanın da nefsinden vuslat gerçekleşmedikçe ne bir kadri ne de bir kıymeti olur.

- Müminin aklının gücüyle birlikte olması, onu ilminden faydalandırır. Bu durum, kendisinden basiretinin nurlarına sahip olmasını mümkün kılan bir kemal ortaya çıkıncaya devam eder. Sonra marifetlerin sultanından bir layiha belirdiği zaman o nurlar gölgede kalır. Sonra tevhid nurları ortaya çıkınca da adı geçenlerin tamamı yok olur.

Şiir:

*Derken sabah belirince yok etti aydınlığı*
*Işıklarıyla, o yıldızların ışıklarını*

اَفَمَنْ شَرَحَ اللّٰهُ صَدْرَهُ لِلْاِسْلَامِ فَهُوَ عَلٰى نُورٍ مِنْ رَبِّهٖ فَوَيْلٌ لِلْقَاسِيَةِ قُلُوبُهُمْ مِنْ ذِكْرِ اللّٰهِ اُو۬لٰٓئِكَ فٖي ضَلَالٍ مُبٖينٍ ﴿٢٢﴾

22- "Allah'ın, göğsünü İslam'a açtığı, böylece Rabbinden bir nur üzere bulunan kimse, kalbi imana kapalı kimse gibi midir? Allah'ın zikrine karşı kalpleri katı olanların vay haline! İşte onlar, açık bir sapıklık içindedirler."

Bu hitabın cevabı mahzuftur. Yani Allah'ın, kalbini imana açtığı kimse, böyle olmayan kimse gibi midir? Bu ayet inince Hz. Peygamber'e (s.a.v.), onda sözü edilen açma hakkında soruldu. Bunun üzerine o şöyle buyurdu:

*"Bu, Allah'ın kalbe attığı bir nurdur."*

Dediler ki:

*"Onun bir belirtisi var mıdır?"*

Hz. Peygamber şöyle buyurdu:

*"Evet, aldanma yurdundan uzak durup ebediyet yurduna yönelmek ve ölüm gelmeden önce ona hazırlanmaktır."*

Bu arada Allah tarafından olan nur, ilmin yıldızlarıyla gerçekleşen layihalar nuru, sonra anlamanın beyanıyla gerçekleşen lamialar nuru, sonra yakinin artmasıyla gerçekleşen huzura varışın nuru, sonra sıfatların tecellisiyle olan mükâşefe nuru, sonra zâtın ortaya çıkmasıyla meydana gelen müşahede nuru, sonra da tevhidin hakikatleriyle gerçekleşen samediyet nurlarıdır. İşte bu olduğunda artık ne bulmak ne de kaybetmek vardır. Ne uzaklık ne de yakınlık vardır. Hayır, onların dediği gibi değildir. Aksine O, bir ve her şey üzerinde mutlak otorite sahibi olan Allah'tır.

(لِلْقَاسِيَةِ قُلُوبُهُمْ مِنْ ذِكْرِ اللّٰهِ اُولٰٓئِكَ ف۪ي ضَلَالٍ مُب۪ينٍ) *"Allah'ın zikrine karşı kalpleri katı olanların vay haline! İşte onlar, açık bir sapıklık içindedirler."*

Yani kalpleri katı olanların kalplerine marifet habercileri uğramamıştır. Bu nedenle o kalpler, inkâr yabancılığı üzere kalmıştır. Onlar, kalıcı dalalet ve daimi cehalet içindedirler.

اَللّٰهُ نَزَّلَ اَحْسَنَ الْحَد۪يثِ كِتَابًا مُتَشَابِهًا مَثَانِيَ تَقْشَعِرُّ مِنْهُ جُلُودُ
الَّذ۪ينَ يَخْشَوْنَ رَبَّهُمْ ثُمَّ تَل۪ينُ جُلُودُهُمْ وَقُلُوبُهُمْ اِلٰى ذِكْرِ اللّٰهِ ذٰلِكَ
هُدَى اللّٰهِ يَهْد۪ي بِه۪ مَنْ يَشَٓاءُ وَمَنْ يُضْلِلِ اللّٰهُ فَمَا لَهُ مِنْ هَادٍ ﴿٢٣﴾

23- "Allah sözün en güzelini, ayetleri birbirine benzeyen ve tekrarlanan bir kitap olarak indirmiştir. Rablerinden korkanların tüyleri ondan dolayı ürperir. Sonra derileri de kalpleri de Allah'ın zikrine karşı yumuşar. İşte bu kitap, Allah'ın hidayet rehberidir. Onunla dilediğini hidayete erdirir. Allah, kimi saptırırsa artık onun için hiçbir yol gösterici yoktur."

( اَحْسَنَ الْحَد۪يثِ ) *"Sözün en güzeli."*

Çünkü bu söz mahluk değildir.

( كِتَابًا مُتَشَابِهًا ) *"Ayetleri birbirine benzeyen."*

Bu benzerlik, mucize olmak ve belagat bakımındandır.

( مَثَانِيَ ) *"Ve tekrarlanan."*

Bu ayetlerde hüküm tekrarlanır fakat tekrar okunmakla usandırmaz. Bu, iki tür tekrar içerir. Biri, Allah'ın hükümranlığı ve ihsanının tekrarıdır. Diğeri de cennetin ve cehennemin vasıfları ile vaat ve uyarının tekrarıdır.

( تَقْشَعِرُّ مِنْهُ جُلُودُ الَّذ۪ينَ يَخْشَوْنَ رَبَّهُمْ ) *"Rablerinden korkanların tüyleri ondan dolayı ürperir."*

Bu ürperme, uyarı ayetlerini işittikleri zaman meydana gelir.

( ثُمَّ تَل۪ينُ جُلُودُهُمْ وَقُلُوبُهُمْ اِلٰى ذِكْرِ اللّٰهِ ) *"Sonra derileri de kalpleri de Allah'ın zikrine karşı yumuşar."*

Bu da vaat ayetlerini duydukları zaman meydana gelir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Tüyleri ve derileri, korku ve ümit ile ürperir ve yumuşar.
- Tüyleri ve derileri, kabz ve bast ile ürperir ve yumuşar.
- Tüyleri ve derileri, heybet ve ünsiyet ile ürperir ve yumuşar.
- Tüyleri ve derileri, tecelli ve gizlenme ile ürperir ve yumuşar.

أَفَمَنْ يَتَّقِي بِوَجْهِهِ سُوٓءَ الْعَذَابِ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ وَقِيلَ لِلظَّالِمِينَ ذُوقُوا مَا كُنْتُمْ تَكْسِبُونَ ﴿٢٤﴾

24- "Kıyamet günü kötü azaba karşı yüzüyle korunan kimse, o gün azaptan emin olan kimse gibi midir? Zalimlere: 'Kazandıklarınızı tadın!' denir."

Yani kötü azaptan yüzüyle korunan kimse, böyle olmayan kimse gibi midir? Bir görüşe göre de kâfir, cehennem ateşiyle ilk olarak yüzüyle karşılaşır. Çünkü o, cehenneme yüz üstü atılır. Mümine gelince o, bundan korunur. Mümine tazelik, sevinç ve saygınlık kazandırılır. Bu nedenle o, güler yüzlü ve sevinçlidir.

كَذَّبَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ فَاَتٰيهُمُ الْعَذَابُ مِنْ حَيْثُ لَا يَشْعُرُونَ ﴿٢٥﴾

25- "Onlardan öncekiler de yalanladılar ve azap kendilerine, farkına varamadıkları bir yerden geldi."

Tıpkı en mükemmel sevincin de aniden olanı olduğu gibi azabın en şiddetlisi de ansızın olanıdır.

Bu arada hicran ve ayrılığın da ansızın ve beklenmedik şekilde olanı vardır. Bu, yüreği daha çok yakar ve kalbe daha şiddetli ve acılı etkide bulunur.

Biz de şu dizeleri bu manada söyledik:

*Huzur içindeyken dünya geceyi iyi geçirdin sen*
*Oysa sabahlarken bir gün sen, değişmişti zaman*

Etkisi bakımından sevincin en mükemmeli ve en büyüğü ansızın olanıdır.

Şiir:

*Buluşma ümidi duygusu*
*Yüzmekte iken onun ve benim yüreğimde*
*Kavuşturdu Allah bizi ve buluştuk*
*Böylece, tesadüfen sözleşmeksizin*

فَاَذَاقَهُمُ اللّٰهُ الْخِزْيَ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَلَعَذَابُ الْاٰخِرَةِ اَكْبَرُ لَوْ كَانُوا يَعْلَمُونَ ﴿٢٦﴾

26- "Böylece Allah, dünya hayatında onlara zilleti tattırdı. Elbette ki ahiret azabı daha büyüktür. Keşke bilselerdi."

وَلَقَدْ ضَرَبْنَا لِلنَّاسِ فِي هٰذَا الْقُرْاٰنِ مِنْ كُلِّ مَثَلٍ لَعَلَّهُمْ يَتَذَكَّرُونَ ﴿٢٧﴾ قُرْاٰنًا عَرَبِيًّا غَيْرَ ذِي عِوَجٍ لَعَلَّهُمْ يَتَّقُونَ ﴿٢٨﴾

27, 28- "Andolsun, öğüt alsınlar diye biz bu Kur'ân'da insanlar için her türlü misali verdik. Biz onu, Allah'a karşı gelmekten sakınsınlar diye hiçbir eğriliği bulunmayan Arapça bir Kur'ân olarak indirdik."

Yani biz, onlara ayetleri açıkladık ve kendilerini eşyanın hakikatlerine muttali kıldık.

( غَيْرَ ذِي عِوَجٍ ) *"Hiçbir eğriliği bulunmayan."*

Bu nedenle bâtıl ona, ne önünden ne de arkasından gelebilir.

ضَرَبَ اللّٰهُ مَثَلًا رَجُلًا فِيهِ شُرَكَاءُ مُتَشَاكِسُونَ وَرَجُلًا سَلَمًا لِرَجُلٍ هَلْ يَسْتَوِيَانِ مَثَلًا اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ بَلْ اَكْثَرُهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٢٩﴾

29- "Allah, birbiriyle çekişen ortak sahipleri bulunan bir adam ile yalnızca bir kişiye ait olan bir adamı örnek verdi. Bu iki adamın durumu hiç bir olur mu? Hamd, Allah'a mahsustur. Doğrusu, onların çoğu bilmezler."

Allah, kâfirin ve mabutlarının durumuna, anlaşamayan bazı kimselerin ortak oldukları bir köleyi örnek vermiştir.

( رَجُلًا فِيهِ شُرَكَاءُ مُتَشَاكِسُونَ وَرَجُلًا سَلَمًا لِرَجُلٍ ) *"Birbiriyle çekişen ortak sahipleri bulunan bir adam."*

Şöyle ki put hakkında birden fazla topluluk iddiada bulunur. Biri: "Onu ben yaptım" der. Diğeri: "Onu ben kullandım" der. Üçüncü bir grup da: "Ona ben taptım" der.

Oysa mümin sadece Allah'a (c.c.) kulluk eden ve sadece bir kişiye ait olan yani anlaşmazlık ve ihtilaf konusu olmaktan kurtulmuş olan köleye benzer.

Bir yoruma göre de birbiriyle çekişen ortak sahipleri bulunan bir adamdan maksat, dünya meşguliyetlerinin, farklı yerlere çektiği kimsedir. Çocuk meşguliyeti, aile meşguliyeti ve bunun dışındaki değişik meşguliyetler ve dağınıklığa yol açan duygular gibi.

Oysa mümin, sadece Allah'a kulluk eder ve ne hiç kimsenin onda bir payı bulunur ne de dünya ile bir bağlantısı söz konusu olur. Çünkü onun ne dünyadan bir şeyi vardır ne de Rıdvan'ın onunla bir işi olur. Çünkü onun kendisiyle şımaracağı ibadetleri yoktur. Özetle o, sadece Allah içindir. Nitekim Allah Hz. Mûsâ'ya da şöyle buyurdu:

(وَاصْطَنَعْتُكَ لِنَفْسِي) *"Ben, seni kendim için seçtim."* (Tâhâ, 20/41)

Yani başkasına yaramaman için seni kendim için bıraktım.

(اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ بَلْ اَكْثَرُهُمْ لَا يَعْلَمُونَ) *"Hamd, Allah'a mahsustur. Doğrusu, onların çoğu bilmezler."*

Övgü Allah'a mahsustur. Celal sıfatlarına layık olan da O'dur.

اِنَّكَ مَيِّتٌ وَاِنَّهُمْ مَيِّتُونَ ﴿٣٠﴾ ثُمَّ اِنَّكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ عِنْدَ رَبِّكُمْ
تَخْتَصِمُونَ ﴿٣١﴾

30, 31- "Şüphesiz sen de öleceksin, onlar da öleceklerdir. Sonra şüphesiz siz, kıyamet günü Rabbinizin huzurunda muhakeme edileceksiniz."

Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) onun ölüm haberini, Müslümanlara da onların ölüm haberini bildirmiştir. Bunun üzerine hepsi

günahlarından ürktüler. Bu arada adete göre üç günden sonra taziyet yoktur: Kim nefsinin günahlarından ve çeşitli kaygılarından arınmazsa, fena makamından hiçbir koku alamaz. Kalbi, nefsinin dediklerinden ve bütün olarak varlıktan boşaldığı zaman, işte o vakit Rabbinden hayır görür. Bu durum ise ancak onlar tamamen kendilerinden geçtikten sonra gerçekleşir.

Şiir:

*Size mektubum, ölümümden bir gece sonra olacaktır*
*Ancak bilemiyorum ölümümden sonra nasıl yazacağımı*

فَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنْ كَذَبَ عَلَى اللّٰهِ وَكَذَّبَ بِالصِّدْقِ اِذْ جَٓاءَهُ اَلَيْسَ
فٖي جَهَنَّمَ مَثْوًى لِلْكَافِرٖينَ ﴿٣٢﴾

32- "Kim, Allah'a karşı yalan uyduran ve kendisine geldiğinde doğruyu yalanlayandan daha zalimdir? Cehennemde kâfirler için kalacak bir yer mi yok?"

Bu ayetteki işaret, ulaşamadığı şeyler ima eden ve hiç birisini tatmadığı şeylerin kendisinde var olduğunu iddia eden kimseye yöneliktir. Allah şöyle buyurmuştur:

(وَيَوْمَ الْقِيٰمَةِ تَرَى الَّذٖينَ كَذَبُوا عَلَى اللّٰهِ وُجُوهُهُمْ مُسْوَدَّةٌ) *"Kıyamet günü Allah'a karşı yalan söyleyenleri görürsün, yüzleri kapkara kesilmiştir."* (Zümer, 39/60)

Bir yoruma göre de işaret öyle olmayıp ayette konu edilen bu kimseler kâfirlerdir: İddia ettiği mertebeye ulaşmamış olan iddiacı ise Allah'a karşı değil de kendi nefsine karşı yalan uydurmaktadır. Çünkü o, nefsi için, tatmadığı ve görmediği bazı haller iddia etmektedir. Hakikati idrak etmeyip Allah'a karşı yalan uyduran kimse ise inkârcıdır ve Allah'ın (c.c.) sıfatı hakkında, kendisinin münezzeh ve yüce olduğu şeyler söyleyen bidatçidir.

وَالَّذِي جَاءَ بِالصِّدْقِ وَصَدَّقَ بِهِ أُولَئِكَ هُمُ الْمُتَّقُونَ ﴿٣٣﴾
لَهُمْ مَا يَشَاؤُنَ عِنْدَ رَبِّهِمْ ذَلِكَ جَزَؤُا الْمُحْسِنِينَ ﴿٣٤﴾

33, 34- "Doğruyu getiren ve onu tasdik edenler var ya, işte kötülükten sakınanlar onlardır. Onlar için Rableri katında diledikleri her şey vardır. İşte bu, iyilik yapanların mükâfatıdır."

Doğruyu getirenden maksat, fiillerinde ihlas bakımından, hallerinde doğruluk bakımından, sırlarında ise hakikat bakımından doğruyu getiren kimsedir.

( ذَلِكَ جَزَؤُا الْمُحْسِنِينَ ) *"İşte bu, iyilik yapanların mükâfatıdır."*

Hadiste yer aldığı üzere ihsan -iyilik yapmak-, "Allah'ı görüyormuşsun gibi O'na ibadet etmendir". Bu çerçevede, bugün müşahedesi devamlı olan kimsenin yarın da görmesi devamlı olacaktır. Bugün müşahedesi devamlı olmayanın ise yarın da görmesi devamlı olmayacaktır.

لِيُكَفِّرَ اللّٰهُ عَنْهُمْ اَسْوَاَ الَّذِي عَمِلُوا وَيَجْزِيَهُمْ اَجْرَهُمْ بِاَحْسَنِ
الَّذِي كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿٣٥﴾

35- "Allah, işlediklerinin en kötüsünü örtmek ve onlara, yaptıklarının en güzeli ile karşılık vermek için onları böyle mükâfatlandıracaktır."

Mümin olmayan kimse, bu topluluktan değildir. Beraberinde iman olan kimseye gelince, onun işlediği en kötü günahı örtüldüğü zaman, amellerinin en kötüleri büyük günahlarıdır. Eğer o büyük günahlar bağışlanırsa, bu takdirde Allah, o gibi kimseleri amellerinin en güzeli ile mükâfatlandıracaktır. Müminin amellerinin en güzeli ise iman ve marifettir. Bu durumda eğer iman geçici ise, sevabı da geçici, şayet iman devamlı ise sevabı da devamlı olur. Sonra amellerin en güzelinin karşılığı, sevabın en güzelidir. Sevabın en güzeli ise Allah'ı görmektir. O halde Allah'ı görmenin devamlı olması gerekir. Bu, güçlü bir akıl yürütmedir.

اَلَيْسَ اللّٰهُ بِكَافٍ عَبْدَهُ وَيُخَوِّفُونَكَ بِالَّذ۪ينَ مِنْ دُونِه۪ وَمَنْ يُضْلِلِ اللّٰهُ فَمَا لَهُ مِنْ هَادٍ ﴿٣٦﴾

36- "Allah, kuluna yetmez mi? Seni Allah'tan başkalarıyla korkutmaya çalışıyorlar. Allah kimi saptırırsa artık onun için bir yol gösterici yoktur."

Ayetin başındaki cümle, takrir amaçlı bir istifham cümlesidir. Bu çerçevede Allah, bugün imanını düzeltmek ve ondan şirki alıkoymak suretiyle irfanında kulu için yeterlidir. Yarın da Allah, ondan azabı ertelemek suretiyle kuluna yeterli olacaktır. O halde Allah'ın yeterliliği tam, esenliği de geneldir.

وَمَنْ يَهْدِ اللّٰهُ فَمَا لَهُ مِنْ مُضِلٍّ اَلَيْسَ اللّٰهُ بِعَز۪يزٍ ذِي انْتِقَامٍ ﴿٣٧﴾

37- "Allah, kimi de hidayete erdirirse artık onu saptıracak hiç kimse yoktur. Allah mutlak güç sahibi ve intikam alıcı değil midir?"

وَلَئِنْ سَاَلْتَهُمْ مَنْ خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ لَيَقُولُنَّ اللّٰهُ قُلْ اَفَرَاَيْتُمْ مَا تَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ اِنْ اَرَادَنِيَ اللّٰهُ بِضُرٍّ هَلْ هُنَّ كَاشِفَاتُ ضُرِّه۪ٓ اَوْ اَرَادَن۪ي بِرَحْمَةٍ هَلْ هُنَّ مُمْسِكَاتُ رَحْمَتِه۪ قُلْ حَسْبِيَ اللّٰهُ عَلَيْهِ يَتَوَكَّلُ الْمُتَوَكِّلُونَ ﴿٣٨﴾

38- "Andolsun, eğer onlara: 'Gökleri ve yeri kim yarattı?' diye sorsan, elbette: 'Allah' derler. De ki: 'Peki söyleyin bakalım! Allah'ı bırakıp da ibadet ettikleriniz var ya, eğer Allah bana herhangi bir zarar dokundurmak isterse, onlar Allah'ın dokundurduğu zararı kaldırabilirler mi? Yahut Allah bana bir rahmet dilese, onlar O'nun rahmetini engelleyebilirler mi?' De ki: 'Allah bana yeter. Tevekkül edenler ancak O'na tevekkül ederler.'"

Allah, sıfatlarının yüceliğini ve sahip olduğu celalinin liyakatini onlara ikrar ettirdi, onlar da bunu ikrar ettiler. Sonra da onları, kendisi dışında taptıkları putların sıfatlarını anlatmakla yükümlü kıldı. Fakat onlar, putların vasfı hakkında cansız olduklarından ve hayat, ilim, kudret ve yaratma imkânından uzak bulunduklarından başka bir şey söyleyemediler. Bunun üzerine Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle der:

*"Siz bu şeyleri Allah'a nasıl ortak koştunuz? O'nun sıfatı hakkında bu gibi şeyleri söylemekten utanmadınız mı?"*

Ey Muhammed! De ki: *"Allah bana yeter. Tevekkül ehli olanlar, sadece O'na tevekkül ederler. Celaliyle tek olan, dilediği her şeye kadir ve dilediği nimetle bana lütufta bulunan Allah bana yeter."*

قُلْ يَا قَوْمِ اعْمَلُوا عَلٰى مَكَانَتِكُمْ اِنِّي عَامِلٌ فَسَوْفَ تَعْلَمُونَ ﴿٣٩﴾
مَنْ يَأْتِيهِ عَذَابٌ يُخْزِيهِ وَيَحِلُّ عَلَيْهِ عَذَابٌ مُقِيمٌ ﴿٤٠﴾

39, 40- "De ki: 'Ey kavmim! Elinizden geleni yapın. Ben de yapacağım. Kişiyi rezil edici azabın kime geleceğini ve sürekli azabın kimin başına ineceğini yakında bileceksiniz.'"

İlerde bizim kârlı çıktığımız, sizin de zararlı çıktığınız, bizim arttığımız, sizin de eksildiğiniz ortaya çıkacaktır. İlerde biz size hesap soracağız ve sizin hiçbir cevabınız olmayacaktır. Biz size azap uygulayacağız ve sizin hiçbir şefaatçiniz olmayacaktır. Biz dünyanızı başınıza yıkacağız ve hiçbir sesiniz çıkmayacaktır.

اِنَّٓا اَنْزَلْنَا عَلَيْكَ الْكِتَابَ لِلنَّاسِ بِالْحَقِّ فَمَنِ اهْتَدٰى فَلِنَفْسِهِ وَمَنْ
ضَلَّ فَاِنَّمَا يَضِلُّ عَلَيْهَا وَمَٓا اَنْتَ عَلَيْهِمْ بِوَكِيلٍ ﴿٤١﴾

41- "Biz sana Kitab'ı, insanlar için hak olarak indirdik. Kim doğru yola girerse, kendisi için girmiş olur. Kim de saparsa ancak kendi aleyhine sapar. Sen onlara vekil değilsin."

Kim iyilik yaparsa, kazandığı iyiliği kendi nefsine yapmış olur. Kim de kötülük yaparsa, celp ettiği musibet yine kendi nefsine yöneliktir. Bir de Allah, kendisine yönelen kimsenin ibadetiyle güzelleşmekten ve yüz çeviren kimsenin hatasıyla eksilmekten ganidir.

اَللّٰهُ يَتَوَفَّى الْاَنْفُسَ حِينَ مَوْتِهَا وَالَّت۪ي لَمْ تَمُتْ ف۪ي مَنَامِهَا
فَيُمْسِكُ الَّت۪ي قَضٰى عَلَيْهَا الْمَوْتَ وَيُرْسِلُ الْاُخْرٰٓى اِلٰٓى اَجَلٍ
مُسَمًّىۜ اِنَّ ف۪ي ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يَتَفَكَّرُونَ ﴿٤٢﴾

42- "Allah, ölen insanların ruhlarını öldüklerinde, ölmeyenlerinkini de uykularında alır. Ölümüne hükmettiklerinin ruhlarını tutar, diğerlerini belli bir süreye kadar bırakır. Şüphesiz, düşünen bir toplum için bunda ibretler vardır."

Allah, ruhları ölümleri esnasında alır. Ölmeyen nefisleri de uykuları halinde alır. Böylece o nefisler uyudukları zaman, Allah ruhlarını alır. Ruhların ölüm halinde alınması, bedendeki latîfe olan ruhun çıkarılması şeklinde olur. Bu esnada Allah, his ve idrak yerlerinde şuur ve ilim yerine gaflet ve kendinden geçmeyi yaratır. Sonra Allah, ölüm esnasında ruhları aldığı zaman, organlarda hayat yerine ölümü yaratır. Ölüm ise his ve ilimle çelişir. Allah, uykudan sonra ruhları bedenlere geri çevirdiği zaman, sezme yetisinin yerinde idraki yaratır. Böylece insan, uyanmış olur. Bu arada, Allah'ın uyku halinde ruhları aldığına dair olarak rivayetler varit olmuştur. Ruhların bu şekilde alınması ise derece derecedir. Çünkü taharet üzere alınan ruh, Arş'a yükseltilerek Allah'a secde eder. Bu ruh, marifetlere mazhar kılınır ve kendisiyle hitaplarda bulunulur. En doğrusunu ise Allah bilir.

اَمِ اتَّخَذُوا مِنْ دُونِ اللّٰهِ شُفَعَٓاءَۜ قُلْ اَوَلَوْ كَانُوا لَا يَمْلِكُونَ شَيْـًٔا
وَلَا يَعْقِلُونَ ﴿٤٣﴾

43- "Yoksa Allah'tan başka şefaatçiler mi edindiler? De ki: 'Hiçbir şeye güçleri yetmese ve düşünemiyor olsalar da mı?'"

Yani onlar, Allah tarafında gelen bir bilgi veya haber olmaksızın, kendi iddialarınca ve hükümlerine göre Allah'tan başka şefaatçiler edinseler de mi böyle olur? Çünkü Allah, kendisi izin verdiği zaman hariç, hiç kimseden şefaat kabul etmeyecektir. Onların söyledikleri ise Allah'a yapılmış iftiradan başka bir şey değildir.

قُلْ لِلّٰهِ الشَّفَاعَةُ جَمِيعًا لَهُ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ ثُمَّ اِلَيْهِ
تُرْجَعُونَ ﴿٤٤﴾

44- "De ki: 'Şefaat tümüyle Allah'a aittir. Göklerin ve yerin hükümranlığı O'nundur. Sonra yalnız O'na döndürüleceksiniz.'"

وَاِذَا ذُكِرَ اللّٰهُ وَحْدَهُ اشْمَاَزَّتْ قُلُوبُ الَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِالْاٰخِرَةِ
وَاِذَا ذُكِرَ الَّذِينَ مِنْ دُونِهِ اِذَا هُمْ يَسْتَبْشِرُونَ ﴿٤٥﴾

45- "Allah, bir tek ilâh olarak anıldığı zaman, ahirete inanmayanların kalpleri daralır. Allah'tan başkaları anıldığında ise sevindiklerini görürsün."

İnkâr edenlerin kalpleri daralır ve nefisleri tevhidde tatmin bulmaz. Oysa Allah'tan başkaları anıldığı zaman onu dinlemekte ünsiyet bulurlar.

قُلِ اللّٰهُمَّ فَاطِرَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ عَالِمَ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ اَنْتَ
تَحْكُمُ بَيْنَ عِبَادِكَ فِيمَا كَانُوا فِيهِ يَخْتَلِفُونَ ﴿٤٦﴾

46- "De ki: 'Ey göklerin ve yerin yaratıcısı olan, gaybı da görünen âlemi de bilen Allah'ım! Ayrılığa düştükleri şeyler konusunda kulların arasında sen hüküm verirsin.'"

Allah, bu ayette Hz. Peygamber'e (s.a.v.) O'nu nasıl öveceğini öğretmiştir. Bu ayet, gösterilmesi gereken teslimiyet ve boynu bü-

küklüğe, bağışlanma ve lütuf dilenmeye, güzel tevekkülle sığınmayı gerçekleştirmeye dair beyana işareti de içermektedir.

Sonra Allah, onların ahiretteki hallerinden haber vermek üzere şöyle buyurmuştur:

وَلَوْ اَنَّ لِلَّذِينَ ظَلَمُوا مَا فِي الْاَرْضِ جَمِيعًا وَمِثْلَهُ مَعَهُ لَافْتَدَوْا بِهِ مِنْ سُوءِ الْعَذَابِ يَوْمَ الْقِيمَةِ وَبَدَا لَهُمْ مِنَ اللّٰهِ مَا لَمْ يَكُونُوا يَحْتَسِبُونَ ﴿٤٧﴾

47- "Eğer yeryüzünde bulunan her şey, tümüyle ve onlarla beraber bir o kadarı da zulmedenlerin olsa, kıyamet günü kötü azaptan kurtulmak için elbette onları verirlerdi. Artık hiç hesap etmedikleri şeyler Allah tarafından karşılarına çıkmıştır."

Onu verirlerdi ancak bu, onlardan kabul edilmeyecekti. Oysa eğer bugün bir miskal ağırlığınca verseler, onlardan kabul edilecektir. Nitekim eğer ahirette kan ağlasalar, ağlamalarına merhamet edilmeyecektir. Lakin bugün bir tek damla gözyaşıyla çok sayıda günah defterleri silinir.

(وَبَدَا لَهُمْ مِنَ اللّٰهِ مَا لَمْ يَكُونُوا يَحْتَسِبُونَ) *"Artık hiç hesap etmedikleri şeyler Allah tarafından karşılarına çıkmıştır."*

Dikkat sahibi kimseler için bu ayetlerde hasretler vardır.

Bazı rivayetlerde yer aldığına göre günah sahibi Müslümanlardan bir topluluğun cehenneme gönderilmesi emredilir. Cehennemin yanına vardıklarında Malik onlara şöyle der:

*"Siz kimsiziniz? Sizden önce gelen cehennemliklerin yüzleri kara, gözleri mavi idi. Oysa siz böyle değilsiniz."*

Onlar da şöyle derler:

*"Biz seninle karşılaşacağımızı beklemiyorduk. Biz, başka bir şey bekliyorduk."*

Allah da şöyle buyurur:

( وَبَدَا لَهُمْ مِنَ اللّٰهِ مَا لَمْ يَكُونُوا يَحْتَسِبُونَ ) *"Artık hiç hesap etmedikleri şeyler Allah tarafından karşılarına çıkmıştır."*

وَبَدَا لَهُمْ سَيِّـَٔاتُ مَا كَسَبُوا وَحَاقَ بِهِمْ مَا كَانُوا بِهٖ يَسْتَهْزِؤُ۫نَ ﴿٤٨﴾

**48-** "Dünyada kazandıkları şeylerin kötülükleri karşılarına çıkmış, alay etmekte oldukları şey onları kuşatmıştır."

Onları, alay etmelerinin vebalı ve tuzaklarının cezası kuşatmıştır.

فَاِذَا مَسَّ الْاِنْسَانَ ضُرٌّ دَعَانَا ثُمَّ اِذَا خَوَّلْنَاهُ نِعْمَةً مِنَّا قَالَ اِنَّمَٓا
اُو۫تٖيتُهُ عَلٰى عِلْمٍ بَلْ هِيَ فِتْنَةٌ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٤٩﴾
قَدْ قَالَهَا الَّذٖينَ مِنْ قَبْلِهِمْ فَمَٓا اَغْنٰى عَنْهُمْ مَا كَانُوا يَكْسِبُونَ ﴿٥٠﴾
فَاَصَابَهُمْ سَيِّـَٔاتُ مَا كَسَبُوا وَالَّذٖينَ ظَلَمُوا مِنْ هٰٓؤُلَٓاءِ سَيُصٖيبُهُمْ
سَيِّـَٔاتُ مَا كَسَبُوا وَمَا هُمْ بِمُعْجِزٖينَ ﴿٥١﴾

**49, 50, 51-** "İnsana bir zarar dokunduğunda bize yalvarır. Sonra ona tarafımızdan bir nimet verdiğimizde: 'Bu, bana ancak bilgim sayesinde verilmiştir' der. Hayır, o bir imtihandır. Fakat onların çoğu bilmezler. Bunu, kendilerinden öncekiler de söylemişti, ama kazandıkları şeyler onlara hiçbir yarar sağlamamıştı. Nihayet kazandıkları şeylerin kötülükleri onlara isabet etmişti. Onlardan zulmedenler var ya, kazandıkları şeylerin kötülükleri onlara isabet edecektir. Onlar, Allah'ı aciz bırakacak değillerdir."

Zarar halinde liyakat, güç ve kuvvet iddiasından uzak durmaya çalışırlar. Üzerlerinden musibet kaldırıldığı zaman ise tekrar yanlışlıklarına düşerek: "Bize bu, liyakatimizden dolayı verilmiştir" derler. Allah da şöyle buyurur: ( بَلْ هِيَ فِتْنَةٌ ) *"Hayır, o bir imtihandır."* Fakat onlar bilememişlerdir. Sonra Allah, onlardan öncekilerin de

böyle söyleyip zannettiklerini fakat sadece yanlışlıklarıyla karşılaştıklarını ve başlarına söylediklerinin uğursuzluğunun geldiğini bildirmiştir. İşte bunların başına da onların başına gelenlerin bir benzeri gelecektir.

اَوَلَمْ يَعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ يَبْسُطُ الرِّزْقَ لِمَنْ يَشَٓاءُ وَيَقْدِرُ اِنَّ فٖي ذٰلِكَ
لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يُؤْمِنُونَ ﴿٥٢﴾

**52- "Bilmediler mi ki Allah rızkı dilediğine bol bol verir ve dilediğine kısar. Şüphesiz bunda, inanan bir toplum için elbette ibretler vardır."**

Onlar Allah'ın, rızık konusunda insanların durumlarını nasıl da farklı kıldığını görmediler mi? Bu çerçevede kimisinin rızkı geniş tutulmuş, kimisinin de dar tutulmuştur. Oysa rızıklarının azaltılıp çoğaltılmasından hiçbir şey onlardan birinin elinde değildir.

قُلْ يَا عِبَادِيَ الَّذٖينَ اَسْرَفُوا عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ لَا تَقْنَطُوا مِنْ رَحْمَةِ اللّٰهِ
اِنَّ اللّٰهَ يَغْفِرُ الذُّنُوبَ جَمٖيعًا اِنَّهُ هُوَ الْغَفُورُ الرَّحٖيمُ ﴿٥٣﴾

**53- "De ki: 'Ey kendilerinin aleyhine aşırı giden kullarım! Allah'ın rahmetinden ümidinizi kesmeyin. Şüphesiz Allah, bütün günahları affeder. Çünkü O, çok bağışlayandır, çok merhamet edendir.'"**

Muhatapların "Ey kullarım" lafzıyla çağrılmaları bir övgüdür. "Aşırı gidenler" olarak nitelenmeleri ise yergidir. Bu çerçevede Allah: "Ey kullarım!" dediğinde itaatkârlar, ayette kast edilenlerin kendileri olduğunu umarak başlarını kaldırdılar. Günahkârlar ise başlarını önlerine eğerek şöyle dediler: *"Biz kim oluyoruz ki, Allah bizim için bunu söylesin."* Derken Allah: "Aşırı gidenler" buyurunca durum değişmiş oldu. Bunun üzerine başlarını eğmiş olanlar canlandılar ve zilletleri geçti. Başlarını kaldıranlar ise bu kez başlarını önlerine koydular ve ihtişamları sona erdi.

Sonra Allah, "Kendilerinin aleyhine" sözüyle ümitlerini güçlendirerek kısmetteki tuhaflığı gidermiş oldu. Yani şayet sen aşırı gitmiş isen, kendi aleyhine aşırı gitmişsindir.

( لَا تَقْنَطُوا مِنْ رَحْمَةِ اللهِ ) *"Allah'ın rahmetinden ümidinizi kesmeyin."*

Sen, kapımıza geliş gidişi kestikten sonra da kalbini bizden koparma.

( اِنَّ اللهَ يَغْفِرُ الذُّنُوبَ جَمِيعًا ) *"Şüphesiz Allah, bütün günahları affeder."*

( الذنوب ) *"günahlar"* lafzındaki *"el"* takısı istiğrak ve umum içindir. *"Zunûb"* lafzı *"zenb"* lafzının çoğuludur. ( جميعا ) *"hepsini"* lafzı ise tekit için gelmiştir. Sanki Allah şöyle demiş olmaktadır: "Ben, hiçbir günahı bırakmayacak şekilde bağışlarım."

Bir yoruma göre de Allah şöyle demiş olmaktadır:

*"Şayet sizin çok ve yaygın günahlarınız varsa, benim de sizin hakkınızda kadim bir inayetim vardır."*

وَاَنِيبُوا اِلٰى رَبِّكُمْ وَاَسْلِمُوا لَهُ مِنْ قَبْلِ اَنْ يَأْتِيَكُمُ الْعَذَابُ ثُمَّ لَا تُنْصَرُونَ ﴿٥٤﴾

54- "Azap size gelmeden önce Rabbinize dönün ve O'na teslim olun. Sonra size yardım edilmez."

İnabet, bütünüyle dönüş yapmak demektir. Bir görüşe göre de inabet ve tövbe arasındaki fark şudur: Tövbe eden kimse, azap korkusundan dönüş yapar. İnabet sahibi ise Allah'ın kereminden utandığı için döner.

( وَاَسْلِمُوا لَهُ ) *"O'na teslim olun."*

İbadetinizde ihlaslı olun. İnabetten sonraki teslim olma hali kişinin, kurtuluşunu kendi inabetinden değil de Allah'ın lütfünden bilmesidir. Zira kul, kendi inabetiyle Allah'ın lütfüne ulaşmamakta aksine Allah'ın lütfuyla inabetine ulaşmaktadır.

( مِنْ قَبْلِ اَنْ يَأْتِيَكُمُ الْعَذَابُ ) *"Azap size gelmeden önce."*

Ayrılıktan önce. Bir yoruma göre de bu, kişinin insanların tanıklığıyla dönüş vaktini kaçırması ve sonra ondan dönüş yapmamasıdır.

وَاتَّبِعُوٓا اَحْسَنَ مَٓا اُنْزِلَ اِلَيْكُمْ مِنْ رَبِّكُمْ مِنْ قَبْلِ اَنْ يَاْتِيَكُمُ
الْعَذَابُ بَغْتَةً وَاَنْتُمْ لَا تَشْعُرُونَ ﴿٥٥﴾ اَنْ تَقُولَ نَفْسٌ يَا حَسْرَتٰى
عَلٰى مَا فَرَّطْتُ فٖي جَنْبِ اللّٰهِ وَاِنْ كُنْتُ لَمِنَ السَّاخِرٖينَ ﴿٥٦﴾
اَوْ تَقُولَ لَوْ اَنَّ اللّٰهَ هَدٰينٖي لَكُنْتُ مِنَ الْمُتَّقٖينَ ﴿٥٧﴾ اَوْ تَقُولَ
حٖينَ تَرَى الْعَذَابَ لَوْ اَنَّ لٖي كَرَّةً فَاَكُونَ مِنَ الْمُحْسِنٖينَ ﴿٥٨﴾

55, 56, 57, 58- "Farkında olmadan azap size ansızın gelmeden önce, Rabbinizden size indirilenin en güzeline uyun ki, kişi: 'Allah'ın yanında, işlediğim kusurlardan dolayı vay halime! Gerçekten ben, alay edenlerden idim' demesin. Yahut: 'Allah beni doğru yola iletseydi, elbette O'na karşı gelmekten sakınanlardan olurdum' demesin. Yahut azabı gördüğünde: 'Keşke benim için dünyaya bir dönüş daha olsa da iyilik yapanlardan olsam' demesin."

Bir yoruma göre bu durum, benzerlerinin halleri itibariyle kendilerini geçtiğini görüp geçmişteki kusurlarını hatırlayan bazı topluluklar hakkındadır. Bunlar, bir de benzerlerinin muvaffak oldukları mertebeleri görünce hasret dişleriyle hayal kırıklığının parmak uçlarını ısırırlar. Yahut bu durumdaki kimse: *"Eğer Allah, bana hidayet verseydi, ben şöyle olurdum"* der. Bir diğeri de şöyle der: *"Keşke benim için bir kez daha dünyaya dönüş olsaydı da ben şöyle olsaydım."*

Buna karşılık Allah (c.c.) şöyle buyurur:

بَلٰى قَدْ جَٓاءَتْكَ اٰيَاتٖي فَكَذَّبْتَ بِهَا وَاسْتَكْبَرْتَ وَكُنْتَ مِنَ
الْكَافِرٖينَ ﴿٥٩﴾

59- "Hayır, öyle değil. Ayetlerim sana geldi de sen onları yalanladın, büyüklük tasladın ve kâfirlerden oldun."

O halde suçuna karşılık olarak hak ettiğin azabı tat bakalım!

وَيَوْمَ الْقِيٰمَةِ تَرَى الَّذِينَ كَذَبُوا عَلَى اللّٰهِ وُجُوهُهُمْ مُسْوَدَّةٌ اَلَيْسَ فِي جَهَنَّمَ مَثْوًى لِلْمُتَكَبِّرِينَ ﴿٦٠﴾

60- "Kıyamet günü Allah'a karşı yalan söyleyenleri görürsün, yüzleri kapkara kesilmiştir. Büyüklük taslayanlar için cehennemde bir yer mi yok?"

Bunlar, bazı haller iddia edip onlarla ilgili olarak doğru söylemeyen ve sevgiyi izhar edip onu hakikatte yaşamayan kimselerdir. İşte bu yolla rezil olmaları, onlar için yeter.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Aşk iddiasında bulununca ben: "Yalan söylüyorsun" dedi*
*Niçin organlarını giyinik olarak görüyorum?*
*Aşk söz konusu olamaz sen ağlayarak gözyaşı dökmedikçe*
*Ve çağırıcıya cevap veremeyecek ölçüde dilin tutulmadıkça*

وَيُنَجِّي اللّٰهُ الَّذِينَ اتَّقَوْا بِمَفَازَتِهِمْ لَا يَمَسُّهُمُ السُّوٓءُ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿٦١﴾

61- "Allah, kendisine karşı gelmekten sakınanları, başarıları sebebiyle kurtarır. Onlara kötülük dokunmaz. Onlar üzülmezler de."

Allah, bu kimseleri bugün muhalefetlerden koruduğu gibi yarın da cezalardan koruyacaktır. Böylece takva sahipleri, her iki dünyanın saadetini de kazanmışlardır. Onlar için bugün masumiyet, yarın da nimet vardır. Bugün inayet, yarın da himaye ve kifayet vardır.

اَللّٰهُ خَالِقُ كُلِّ شَيْءٍ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ وَكِيلٌ ﴿٦٢﴾

62- "Allah, her şeyin yaratıcısıdır. O, her şeye vekildir."

Kulların çalışıp kazandıkları, bu yaratılanlar kapsamındadır. Allah'ın kelamı ise o kapsamda değildir. Çünkü hitap eden Allah ve sıfatları, hitabın kapsamında yer almazlar.

لَهُ مَقَالِيدُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَالَّذِينَ كَفَرُوا بِاٰيَاتِ اللّٰهِ اُولٰٓئِكَ هُمُ الْخَاسِرُونَ ﴿٦٣﴾

63- "Göklerin ve yerin anahtarları O'nundur. Allah'ın ayetlerini inkâr edenler var ya, işte onlar, ziyana uğrayanların ta kendileridir."

Ayetteki ( مَقاليد ) kelimesi, anahtarlar anlamındadır. Anahtarların Allah'ın olmasından maksat ise O'nun, kudreti altındaki her şeye kadir olduğudur. Bu nedenle O, meydana getirmek istediğini meydana getirir.

قُلْ اَفَغَيْرَ اللّٰهِ تَاْمُرُونّٖٓي اَعْبُدُ اَيُّهَا الْجَاهِلُونَ ﴿٦٤﴾

64- "De ki: 'Ey cahiller! Siz bana, Allah'tan başkasına ibadet etmemi mi emrediyorsunuz?'"

Yani nasıl olur da siz benim Allah'tan başkasına ibadet etmemi ümit edersiniz? Oysa beni tevhidi üzere yetiştiren, tek olduğu inancıyla besleyen ve bana sevgisinin şarabını içiren O'dur.

وَلَقَدْ اُو۫حِيَ اِلَيْكَ وَاِلَى الَّذِينَ مِنْ قَبْلِكَۚ لَئِنْ اَشْرَكْتَ لَيَحْبَطَنَّ عَمَلُكَ وَلَتَكُونَنَّ مِنَ الْخَاسِر۪ينَ ﴿٦٥﴾ بَلِ اللّٰهَ فَاعْبُدْ وَكُنْ مِنَ الشَّاكِر۪ينَ ﴿٦٦﴾

65, 66- "Andolsun, sana ve senden önceki peygamberlere şöyle vahyedildi: 'Eğer Allah'a ortak koşarsan, elbette amelin boşa gider ve elbette ziyana uğrayanlardan olursun.' Hayır, yalnız Allah'a ibadet et ve şükredenlerden ol."

Eğer benden başkasını görürsen ve yoktan var etmede benimle beraber başkasına yer verirsen, amelini boşa götürmüş ve çabanı hükümsüz kılmış olursun. Aksine ey Muhammed! Sadece Allah'a ibadet et ve benim, şükreden kullarımın cümlesinden ol.

وَمَا قَدَرُوا اللّٰهَ حَقَّ قَدْرِهِ وَالْاَرْضُ جَمِيعًا قَبْضَتُهُ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ وَالسَّمٰوَاتُ مَطْوِيَّاتٌ بِيَمِينِهِ سُبْحَانَهُ وَتَعَالٰى عَمَّا يُشْرِكُونَ ﴿٦٧﴾

67- "Allah'ın kadrini gereği gibi bilemediler. Yeryüzü kıyamet gününde bütünüyle O'nun elindedir. Gökler de O'nun kudretiyle dürülmüştür. O, onların ortak koştuklarından uzaktır, yücedir."

Onlar Allah'ı hakkıyla tanıyamadılar, hakkıyla vasıflandıramadılar ve hakkıyla yüceltemediler. Bu itibarla her kim, Allah'ı yaratıklara benzetir veya tatile -Allah'ın zâtının ve sıfatlarının bazı konularda işlevsiz olduğuna- meylederse, en iyi ve en güzel yoldan sapmış olur. Onlar, Allah'ı organlarla vasıflandırdılar ve sıfatında cüzler vehmettiler. Bu nedenle Allah'ın kadrini gereği gibi bilemediler. Oysa halk, O'nun kudret elindedir. Gökler, O'nun sağıyla dürülmüştür. O'nun sağı ise kudretidir. Bir de Allah, gökleri yok edip düreceğine yemin ettiği için şüphesiz O, buna kadirdir.

(سُبْحَانَهُ وَتَعَالٰى عَمَّا يُشْرِكُونَ) *"O, onların ortak koştuklarından uzaktır, yücedir."*

Bu ifade, Allah'ı vasıflandırırken koştukları ortaklardan O'nu tenzih etmek içindir.

وَنُفِخَ فِي الصُّورِ فَصَعِقَ مَنْ فِي السَّمٰوَاتِ وَمَنْ فِي الْاَرْضِ اِلَّا مَنْ شَٓاءَ اللّٰهُ ثُمَّ نُفِخَ فِيهِ اُخْرٰى فَاِذَا هُمْ قِيَامٌ يَنْظُرُونَ ﴿٦٨﴾

68- "Sûra üflenir ve Allah'ın dilediği kimseler dışında göklerdeki herkes ve yerdeki herkes ölür. Sonra ona bir daha üflenir, bir de bakarsın onlar kalkmış bekliyorlar."

Birinci üflemede ölürsünüz. İkinci üflemede ise dirilip toplanırsınız. Bu arada her iki üfleme mütecanistir. Fakat Allah, bir üfleme esnasında ruhların çıkmasını, diğerinde ise nefislerin hayatını yaratır. Allah bunu, üflemenin bizatihi bir şey yapamadığı aksine mutlak otorite sahibi olan kendisinin, kudretiyle dilediğini yarattığı bilinsin diye yapmaktadır.

وَاَشْرَقَتِ الْاَرْضُ بِنُورِ رَبِّهَا وَوُضِعَ الْكِتَابُ وَجِيٓءَ بِالنَّبِيّٖنَ
وَالشُّهَدَٓاءِ وَقُضِيَ بَيْنَهُمْ بِالْحَقِّ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ﴿٦٩﴾

69- "Yeryüzü Rabbinin nuruyla aydınlanır. Amel defteri ortaya konulur. Peygamberler ve şahitler getirilir ve haksızlığa uğratılmaksızın aralarında adaletle hüküm verilir."

Allah, kıyamette bir nur yaratır ve kıyamet günü onunla aydınlık olur. Bu durum, güneş dürüldüğü ve yıldızlar bulanıp söndüğü zaman gerçekleşir. Ancak bu nur ve aydınlıkla bazıları aydınlanırken diğer bazıları aydınlanmazlar. Kâfirler karanlıklarda kalırlar; müminlerin ise nurları önlerinde yürür.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Bugün de aydınlık var, yarın da aydınlık var. Bugün huzura ermesiyle kalbin aydınlığı, yarın da Rabbinin nuruyla yeryüzünün aydınlığı söz konusudur.

- Yarın müminler için sahiplenmenin nurları, bugün de arifler için tecellinin nurları söz konusudur.

وَوُفِّيَتْ كُلُّ نَفْسٍ مَا عَمِلَتْ وَهُوَ اَعْلَمُ بِمَا يَفْعَلُونَ ﴿٧٠﴾

70- "Herkese yaptığının karşılığı tam olarak verilir. Allah onların yaptıklarını en iyi bilendir."

Eğer yaptığı iyilik ise karşılığı da iyilik olur. Eğer yaptığı iyilik değilse, karşılığı da iyilik olmaz.

وَسِيقَ الَّذِينَ كَفَرُوٓا اِلٰى جَهَنَّمَ زُمَرًا حَتّٰىٓ اِذَا جَٓاؤُ۫هَا فُتِحَتْ اَبْوَابُهَا
وَقَالَ لَهُمْ خَزَنَتُهَٓا اَلَمْ يَأْتِكُمْ رُسُلٌ مِنْكُمْ يَتْلُونَ عَلَيْكُمْ اٰيَاتِ
رَبِّكُمْ وَيُنْذِرُونَكُمْ لِقَٓاءَ يَوْمِكُمْ هٰذَا قَالُوا بَلٰى وَلٰكِنْ حَقَّتْ كَلِمَةُ
الْعَذَابِ عَلَى الْكَافِرِينَ ﴿٧١﴾ قِيلَ ادْخُلُوٓا اَبْوَابَ جَهَنَّمَ خَالِدِينَ
فِيهَا فَبِئْسَ مَثْوَى الْمُتَكَبِّرِينَ ﴿٧٢﴾

71, 72- "Kâfir olanlar, grup grup cehenneme sevk edilirler. Cehenneme vardıklarında oranın kapıları açılır ve cehennem bekçileri onlara şöyle derler: 'Size içinizden, Rabbinizin ayetlerini size okuyan ve bu gününüze kavuşacağınıza dair sizi uyaran peygamberler gelmedi mi?' Onlar da: 'Evet geldi' derler. Fakat inkârcılar hakkında azap sözü gerçekleşmiştir. Onlara şöyle denir: 'İçinde ebedî kalmak üzere, cehennemin kapılarından girin. Büyüklük taslayanların kalacağı yer ne kötüdür!'"

Kâfirler cehenneme zorla sevk edilirler. Müminler ise cennete şefkatle sevk edilirler. Bu çerçevede her iki grup sevkte ortaktırlar. Ancak sevkten sevke büyük fark vardır.

Derken kâfirler geldiklerinde cehennemle görevli melekler, onları azar, itap ve kınamayla karşılarlar. Bu nedenle onlara değer verilmez, saygı gösterilmez, karşılama yapılmaz ve hatırları sorulmaz. Aksine onlar için utanç, rezillik ve her cins ve türden azap vardır.

وَسِيقَ الَّذِينَ اتَّقَوْا رَبَّهُمْ اِلَى الْجَنَّةِ زُمَرًا حَتّٰىٓ اِذَا جَٓاؤُ۫هَا وَفُتِحَتْ
اَبْوَابُهَا وَقَالَ لَهُمْ خَزَنَتُهَا سَلَامٌ عَلَيْكُمْ طِبْتُمْ فَادْخُلُوهَا خَالِدِينَ ﴿٧٣﴾

73- "Rablerine karşı gelmekten sakınanlar da grup grup cennete sevk edilirler. Cennete vardıklarında oranın kapıları açılır ve cennet bekçileri onlara şöyle der: 'Size selam olsun. Tertemiz oldunuz. Haydi, ebedî kalmak üzere buraya girin.'"

Bu bir sevktir fakat yorulmasız ve sıkıntısız bir sevktir. Bu bir sevktir, fakat huzurlu ve coşkulu bir sevktir.

Ayetteki ( زُمَرًا ) kelimesi, gruplar halinde demektir. Bunlar, cennetliklerin avamı olan kimselerdir. Bunların üstünde şu ayette belirtilenler vardır:

( يَوْمَ نَحْشُرُ الْمُتَّقِينَ اِلَى الرَّحْمٰنِ وَفْدًا ) *"Takva sahiplerini Rahmân'ın huzurunda toplayacağımız günü düşün."* (Meryem, 19/85)

Onların üstünde de Allah'ın, haklarında şöyle buyurduğu kimseler bulunur:

( وَاُزْلِفَتِ الْجَنَّةُ لِلْمُتَّقِينَ غَيْرَ بَعِيدٍ ) *"Cennet, takva sahiplerine uzak olmayacak şekilde yaklaştırılacak."* (Kâf, 50/31)

Cennete sevk edilen kimse ile cennet kendisine yaklaştırılan kimse arasında büyük fark vardır. Birinci grup, zalimlerdir. İkinci grup orta yolculardır. Diğerleri de öne geçenlerdir.

( حَتّٰى اِذَا جَٓاؤُ۫هَا وَفُتِحَتْ اَبْوَابُهَا ) *"Cennete vardıklarında oranın kapıları açılır."*

Onlar cennetin yanına vardıkları zaman, bekleme sıkıntısı çekmemeleri için kapılar açılmış durumda olur.

Bir yoruma göre de söz konusu olan cennet ise cennetlik olan kimsenin oraya doğru hemen yola çıkması ve sevk edilmeye ihtiyaç bırakmaması gerekir. Bunlar, cennete çok fazla arzulu kimseler olmayabilir. Bu nedenle onlara, sevkle birlikte yolda: "Tertemiz oldunuz" denir. Yani onlar cennete zorla değil de şefkatle sevk edilirler.

وَقَالُوا الْحَمْدُ لِلّٰهِ الَّذٖي صَدَقَنَا وَعْدَهُ وَاَوْرَثَنَا الْاَرْضَ نَتَبَوَّاُ مِنَ
الْجَنَّةِ حَيْثُ نَشَٓاءُ فَنِعْمَ اَجْرُ الْعَامِلٖينَ ﴿٧٤﴾

74- "Onlar şöyle derler: 'Hamd, bize olan vaadini gerçekleştiren ve bizi, cennetten dilediğimiz yere konmak üzere bu yurda vâris kılan Allah'a mahsustur. Salih amel işleyenlerin mükâfatı ne güzelmiş!'"

Bize olan vaadini, bizi cennete koymak ve nimeti kemale erdirmek suretiyle yerine getirdi.

( وَاَوْرَثَنَا الْاَرْضَ ) *"Buyurda vâris kılan."*

Yani bizi cennet yurduna vâris kılan.

Cennetten dilediğimiz yere konuyoruz. Bunlar özel bir topluluktur. Cennetin odalarına yerleşenler ise başka topluluklardır.

وَتَرَى الْمَلٰٓئِكَةَ حَآفِّينَ مِنْ حَوْلِ الْعَرْشِ يُسَبِّحُونَ بِحَمْدِ رَبِّهِمْ
وَقُضِيَ بَيْنَهُمْ بِالْحَقِّ وَقِيلَ الْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿٧٥﴾

75- "Melekleri de Rablerini hamd ile tesbih edip yücelterek Arş'ın etrafını kuşatmış halde görürsün. Artık kulların arasında adaletle hüküm verilmiş ve: 'Hamd, âlemlerin Rabbi olan Allah'a mahsustur' denilmiştir."

Melekler, bütün vakitlerde Rablerini hamd ile tesbih ederler. Bu, Arş'ın etrafında olan meleklerin amelidir. Cennetlikler ve cehennemlikler arasında adaletle hüküm verilmiştir. Cehennemlikler için alçalış basamakları, cennetlikler içinse dereceler vardır. Onlar için bu ve buna benzer türlü haller mevcuttur. Aynı zamanda melekler arsında da makamları konusunda, Allah'ın, ibadetleriyle ilgili iradesine uygun olarak hüküm verilmiştir.

سورة الْمُؤْمِنِ

# MÜ'MİN (ĞÂFİR) SÛRESİ

(Mü'min Sûresi 85 âyettir. Mekke'de inmiştir. 56 ve 57. âyetler Medine'de inmiştir. Adını Firavun ailesinden, inanan bir kişinin Firavun'a karşı duruşunu anlatan 28-45. âyetlerden almıştır. Üçüncü âyette geçen "gâfir" sıfatı da sûrenin ikinci adı olmuştur.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir kelimedir ki, kim onunla hakikati yaşarsa Allah'tan mazhar olacağı kazanç şerefli olacak, O'nun katında halleri durulaşacak, Allah onun nefsinin üzerine lütuflar örtüsü örtecek, kalbine ikbalin celalini giydirecek, cemalin lütfunun huzurunu yalnız onun ruhuna bahşedecek ve celal vasfının keşfini onun sırrına özgü kılacaktır.

حٰمٓ ﴿١﴾

**1- "Hâ Mîm."**

Yani olacak olan şey, gerçekleşti veya yaklaştı.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- (ح) harfi, Allah'ın halim oluşuna, (م) harfi de O'nun izzetine işarettir. Yani bana iman edenleri ben, halimliğim ve izzetimle cehennemde ebedî kılmıyorum.

- Bu harfler Allah'ın isimlerinin anahtarlarıdır.

تَنْزِيلُ الْكِتَابِ مِنَ اللّٰهِ الْعَزِيزِ الْعَلِيمِ ﴿٢﴾

2- "Bu kitabın indirilmesi, mutlak güç sahibi ve hakkıyla bilen Allah tarafındandır."

( الْعَزِيزِ ) *"Mutlak güç sahibi."*

Yani velilerini aziz kılan Allah.

( الْعَلِيمِ ) *"Hakkıyla bilen."*

Yani onların daha önce ve daha sonra yaptıkları şeyleri hakkıyla bilen Allah. Bu arada Allah'ın, onların daha önce yaptıklarını bilmesi O'nu hükmünden alıkoymaz.

غَافِرِ الذَّنْبِ وَقَابِلِ التَّوْبِ شَدِيدِ الْعِقَابِ ذِي الطَّوْلِ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ اِلَيْهِ الْمَص۪يرُ ﴿٣﴾

3- "Günahı bağışlayan, tövbeyi kabul eden, azabı ağır olan ve lütuf sahibi olan Allah. O'ndan başka ilâh yoktur. Dönüş, ancak O'nadır."

Başlığı Allah'ın, kullarının tövbesini kabul edişi olan bu kitap, günahkârın kalbi kırık olduğunu bilmiş ve bu nedenle hakkını önceleyip adını tövbenin önüne geçirmek suretiyle ondan kırıklığı gidermiştir. Böylece günahkârların nefislerini ve kalplerini ümit sağlayan şu iki isimle teskin etmiştir:

( غَافِرِ الذَّنْبِ وَقَابِلِ التَّوْبِ ) *"Günahı bağışlayan, tövbeyi kabul eden."*

Bu iki ismin ardından: ( شَدِيدِ الْعِقَابِ ذِي ) *"Azabı ağır olan"* buyurduktan sonra bunu tatmin edici bulmamış ve ardından: ( ذِي الطَّوْلِ ) *"Lütuf sahibi olan"* buyurmuştur. Böylece: ( شَدِيدِ الْعِقَابِ ذِي ) *"Azabı ağır olan"* sözünün karşısında: ( ذِي الطَّوْلِ ) *"Lütuf sahibi olan"* sözü durmaktadır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Günahta ısrar eden ve cürüm işleyen kimsenin günahını bağışlayan, ikrar edip pişmanlık duyan kimsenin tövbesini kabul eden, inkâr ve inat eden kimse için azabı ağır olan, O'nu tanıyıp birleyen kimseye karşı ise lütuf sahibi olan Allah.

- Zalimlerin günahını bağışlayan, orta yolu izleyenlerin tövbesini kabul eden, müşrikler için azabı ağır olan ve öne geçenler için lütuf sahibi olan Allah.

- Allah'ın prensibi şöyledir: Kullarını bir isim veya bir lafızla korkuttuğu zaman, kendilerini iki isim veya iki vasıfla müjdelemek suretiyle gönüllerini alır.

( اِلَيْهِ الْمَصِيرُ ) *"Dönüş, ancak O'nadır."*

Dönüş ancak O'na olduğu zaman O'na gidiş de güzel olur.

مَا يُجَادِلُ فٖۤي اٰيَاتِ اللّٰهِ اِلَّا الَّذٖينَ كَفَرُوا فَلَا يَغْرُرْكَ تَقَلُّبُهُمْ فِي الْبِلَادِ ﴿٤﴾

4- "Allah'ın ayetleri hakkında kâfir olanlardan başkası tartışmaya girişmez. Onların şehirlerde gezip dolaşmaları seni aldatmasın."

Delil ortaya çıkıp beyan belirginleştiği zaman açık zihinler, kabul ve imana teslim olur.

Küfür ehline gelince, onların inkârda ısrarları vardır. Şirklerinin uğursuzluğu da kendileriyle insafın arasında engel oluşturur. Allah'ın velilerine saygı göstermeyen, onları inkârda ısrar eden, kalpleriyle onlara itirazda bulunan, kerametleri ve Allah'ın, kullarına has kıldığı alametleri inkâr konusunda tartışmaya girişenler de böyledir. Bunlar tercihleri ve noksanlıkları arasında ayırım yapamamaktadırlar ve ilerde çok rezil olacaklardır.

كَذَّبَتْ قَبْلَهُمْ قَوْمُ نُوحٍ وَالْاَحْزَابُ مِنْ بَعْدِهِمْ وَهَمَّتْ كُلُّ اُمَّةٍ بِرَسُولِهِمْ لِيَأْخُذُوهُ وَجَادَلُوا بِالْبَاطِلِ لِيُدْحِضُوا بِهِ الْحَقَّ فَاَخَذْتُهُمْ فَكَيْفَ كَانَ عِقَابِ ﴿٥﴾

5- "Onlardan önce Nûh'un kavmi ve onlardan sonra gelen topluluklar da yalanlamıştı. Her ümmet, kendi peygamberini yakalayıp cezalandırmaya azmetmişti. Hakkı yok etmek için bâtıl şeyler ileri sürerek tartışmışlardı. Bu yüzden onları kıskıvrak yakaladım. Benim cezalandırmam nasılmış, gördüler!"

Kâfirlerden daha önce yok olup gidenlerin prensibi de aynı şekilde peygamberleri yalanlamak idi. Fakat Allah (c.c.), onlardan intikam aldı ve onları küfürleri üzere helak etti.

Bu arada bu tarikatı inkâr eden kimse de onu inkâr etmeyi din olarak benimsemekte, bu yolla Allah'a yaklaşmaya çalışmakta ve Allah'ın velilerine dil uzatmayı, O'nun ihsanının ve iyiliklerinin cümlesinden saymaktadır. Lakin Allah, dünyada onları içinde bulundukları durumla baş başa bırakmak ve kalplerini bu manevî değerlerden alıkoyup mahrum kılmak suretiyle cezalandırır.

وَكَذٰلِكَ حَقَّتْ كَلِمَتُ رَبِّكَ عَلَى الَّذِينَ كَفَرُوا اَنَّهُمْ اَصْحَابُ النَّارِ ﴿٦﴾

6- "Böylece Rabbinin, kâfir olanlar hakkındaki: 'Onlar cehennemliklerdir' sözü gerçekleşmiş oldu."

Allah'ın bir kul hakkındaki hükmü mutsuzlukşeklinde kesinleştiği zaman, kendisine aktarılan nasihatlerin çokluğu ona fayda vermez. Zaten işi konusunda Allah'a karşı konulamaz. Her kim ki mutsuzluğun eline esir düşerse, hiçbir çaba ve gayret kendisini onun elinden kurtaramaz.

اَلَّذٖينَ يَحْمِلُونَ الْعَرْشَ وَمَنْ حَوْلَهُ يُسَبِّحُونَ بِحَمْدِ رَبِّهِمْ وَيُؤْمِنُونَ
بِهٖ وَيَسْتَغْفِرُونَ لِلَّذٖينَ اٰمَنُوا رَبَّنَا وَسِعْتَ كُلَّ شَيْءٍ رَحْمَةً وَعِلْمًا
فَاغْفِرْ لِلَّذٖينَ تَابُوا وَاتَّبَعُوا سَبٖيلَكَ وَقِهِمْ عَذَابَ الْجَحٖيمِ ﴿٧﴾

7- "Arş'ı taşıyanlar ve onun çevresinde bulunanlar, Rablerine hamd ederek tesbihte bulunurlar, O'na inanırlar ve inananlar için şöyle bağışlanma dilerler: 'Ey Rabbimiz! Senin rahmetin ve ilmin her şeyi kuşatmıştır. O halde tövbe eden ve senin yoluna uyanları bağışla ve onları cehennem azabından koru.'"

Arş'ı taşıyanlar, meleklerin önde gelenlerinden olup Arş'ın etrafında bulunan meleklerdir. Bunlar, Allah'ı tesbih etmekle sonra da günahkârlara mağfiret dilemekle memurdurlar. Çünkü mağfiret günah için dilenir; tövbe de günahtan dolayı gerçekleşir. Ayrıca bu ayette ve sonrasında yer aldığı üzere bu melekler günahkârlar için dua etmeye çalışırlar. Bu çerçevede onlara kurtuluş, sonra derecelerinin yükseltilmesi duası yaparlar ve bütün bu konularda işi Allah'ın rahmetine havale ederler.

رَبَّنَا وَاَدْخِلْهُمْ جَنَّاتِ عَدْنٍ الَّتٖي وَعَدْتَهُمْ وَمَنْ صَلَحَ مِنْ اٰبَٓائِهِمْ
وَاَزْوَاجِهِمْ وَذُرِّيَّاتِهِمْ اِنَّكَ اَنْتَ الْعَزٖيزُ الْحَكٖيمُ ﴿٨﴾

8- "Ey Rabbimiz! Onları da, onların babalarından, eşlerinden ve soylarından iyi olanları da kendilerine vaat ettiğin Adn cennetlerine koy. Şüphesiz sen mutlak güç sahibisin, hüküm ve hikmet sahibisin."

وَقِهِمُ السَّيِّـَٔاتِ وَمَنْ تَقِ السَّيِّـَٔاتِ يَوْمَئِذٍ فَقَدْ رَحِمْتَهُ وَذٰلِكَ هُوَ
الْفَوْزُ الْعَظٖيمُ ﴿٩﴾

9- "Onları kötülüklerden koru. Sen, o gün kimi kötülüklerden korursan, ona rahmet etmiş olursun. İşte bu, büyük başarıdır."

( وَمَنْ تَقِ السَّيِّئَاتِ يَوْمَئِذٍ فَقَدْ رَحِمْتَهُ ) *"Sen, o gün kimi kötülüklerden korursan, ona rahmet etmiş olursun."*

Bu itibarla eğer Allah, yaratıklarının en rezilleri olan şeytanları başına musallat etmiş ise şüphesiz buna karşılık da yaratıklarından ve yakın meleklerden en faziletlileri şefaatle görevli kılmıştır.

إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا يُنَادَوْنَ لَمَقْتُ اللّٰهِ اَكْبَرُ مِنْ مَقْتِكُمْ اَنْفُسَكُمْ اِذْ تُدْعَوْنَ اِلَى الْاِيمَانِ فَتَكْفُرُونَ ﴿١٠﴾

10- "Kâfir olanlar var ya, muhakkak onlara: 'Allah'ın size gazabı, sizin kendinize olan gazabınızdan daha büyüktür. Çünkü siz, imana çağrıldığınızda inkâr ederdiniz' diye seslenilir."

Allah'ın onlara ulaştırdığı cezaların en şiddetlisi, O'nun öfke ve gazabının eserleridir. Onları hayret içinde bıraktığı nimetlerinin en büyükleri ise onlardan olan hoşnutluğunun eserleridir. Bu çerçevede kâfir, ahirette Rabbinin gazabına uğradığını anladığı zaman, kalbine bundan daha zor gelen bir şey olmaz. Çünkü o, hiçbir ağlamanın kendisine fayda veremeyeceğini, hiçbir çileli çabanın onun içinde bulunduğu durumu kendisinden giderip defedemeyeceğini, hiçbir yakarışının dinlenmeyeceğini ve hiçbir tedbir ümidinin bulunmadığını anlamış durumdadır.

قَالُوا رَبَّنَٓا اَمَتَّنَا اثْنَتَيْنِ وَاَحْيَيْتَنَا اثْنَتَيْنِ فَاعْتَرَفْنَا بِذُنُوبِنَا فَهَلْ اِلٰى خُرُوجٍ مِنْ سَبِيلٍ ﴿١١﴾

11- "Onlar da şöyle derler: 'Ey Rabbimiz! Bizi iki defa öldürdün, iki defa da diriltin. Günahlarımızı kabulleniyoruz. Şimdi bir çıkış yolu var mı?'"

İlk öldürme, dünyadaki öldürmedir. Sonra Allah, onları kabirde diriltir. Sonra da onları öldürür. İşte bu da ikinci öldürmedir. İlk diriltme kabirdedir, ikincisi de kıyametteki neşr esnasındadır.

( فَاعْتَرَفْنَا بِذُنُوبِنَا ) *"Günahlarımızı kabulleniyoruz."*

Onlar günahlarını itiraf ettiler ancak bunu, itirafın kendilerine fayda vermediği bir zamanda yaptılar.

( فَهَلْ اِلٰى خُرُوجٍ مِنْ سَبِيلٍ ) *"Şimdi bir çıkış yolu var mı?"*

Yani içinde bulunduğumuz azaptan bir çıkış yolu var mıdır? Onlar bunu, pişmanlık ve itirafın kendilerine fayda vermediği bir anda yaptılar.

Bunun üzerine onlara şöyle denilir:

ذٰلِكُمْ بِاَنَّهُٓ اِذَا دُعِيَ اللّٰهُ وَحْدَهُ كَفَرْتُمْ وَاِنْ يُشْرَكْ بِهٖ تُؤْمِنُوا فَالْحُكْمُ لِلّٰهِ الْعَلِيِّ الْكَبِيرِ ﴿١٢﴾

12- "Bu, sizin tevhid çerçevesinde Allah'a çağrıldığınızda inkâr etmeniz, O'na ortak koşulduğunda ise inanmanız sebebiyledir. Artık hüküm, yüce ve büyük Allah'ındır."

Yani siz, kâfir oldukları için müşrikleri tasdik ediyorsunuz. Bu arada, bunların öldürülmeleri sınırlıdır. Muhabbet ehline gelince, onların her vakit bir hayatları ve ölümleri vardır.

Şiir:

*Ölürüm ben seni yitirdiğimde, sonra dirilirim*
*Böylece nice dirilirim senden dolayı ve nice ölürüm*

Çünkü Allah (c.c.), kullarından havas olanları fenâ ile bekâ, hayat ile ölüm ve mahviyet ile ispat arasında sonsuza dek götürüp getirir.

هُوَ الَّذ۪ي يُر۪يكُمْ اٰيَاتِه۪ وَيُنَزِّلُ لَكُمْ مِنَ السَّمَٓاءِ رِزْقًا وَمَا يَتَذَكَّرُ اِلَّا مَنْ يُن۪يبُ ﴿١٣﴾

13- "O, size ayetlerini gösteren, sizin için gökten bir rızık indirendir. Ancak O'na yönelen, düşünüp ibret alır."

Allah, onlara lütufla yaptığı muamelede lütfunun alametlerini, kendilerini mazhar kıldığı keşiflerde kahrının alametlerini, günahlarından kurtuldukları zaman affının alametlerini, tevessül ettikleri zaman cömertliğinin alametlerini, heybete kapılıp kendilerinden geçtikleri zaman celalinin alametlerini, dönüş yapıp daveti kabul ettikleri zaman da cemalinin alametlerini gösterir.

( وَيُنَزِّلُ لَكُمْ مِنَ السَّمَاءِ رِزْقًا ) *"Sizin için gökten bir rızık indirendir."*

Harcanan çabada muvaffakiyet demek olan rızkı bedenleriniz için, müşahedelerin gerçekleştirilmesi demek olan rızkı kalpleriniz için, türlü türlü vuslat ve artışlar demek olan rızkı da sırlarınız için indirir.

( وَمَا يَتَذَكَّرُ اِلَّا مَنْ يُنِيبُ ) *"Ancak O'na yönelen, düşünüp ibret alır."*

Yani ancak adetten ibadete, şüpheden kesin inanca, halktan Hakk'a, cehaletten ilime ve yabancılıktan irfana dönüş yapan kimse düşünüp ibret alır.

فَادْعُوا اللّٰهَ مُخْلِصِينَ لَهُ الدِّينَ وَلَوْ كَرِهَ الْكَافِرُونَ ﴿١٤﴾

14- "O halde kâfirlerin hoşuna gitmese de siz dini Allah'a has kılarak O'na ibadet edin."

Kime dua ettiğini bilmen için duanın şartı, marifetin öncülüğünde olmasıdır. Sonra senin için gerekli olup ihtiyaç duyduğun şeyler için dua edersin. Sonra sen farkında olmaksızın Allah'ın, istediğini sana verip vermediğine bakarsın. Bu arada yapılması gereken, Allah'ın emrine muhalefet içeren bir şey istememen, değersiz dünyalık şeyler istemekten uzak durman ve Mevlâ'nın senin için tercih ettiği şeye rıza göstermendir.

Bu arada duada ihlaslı olmanın esaslarından bazıları şunlardır:

- Kabulü sadece Allah'tan bilmen,
- Allah'ın lütfu olmaksızın kendinde hiçbir liyakat görmemen,
- Dileğinde amacının gerçekleşmemesi halinde de Rabbinin, hakkı olan ibadetinden geri durmaman. Çünkü dua ibadetin beynidir.

- Başlangıcı senin için suç olmayan şeye zorunlu ihtiyaç halinde olman, zorunluluk içinde oluşunun da cinayetinin sirayetinden dolayı olması.

رَفِيعُ الدَّرَجَاتِ ذُو الْعَرْشِ يُلْقِي الرُّوحَ مِنْ اَمْرِهِ عَلٰى مَنْ يَشَٓاءُ مِنْ عِبَادِهِ لِيُنْذِرَ يَوْمَ التَّلَاقِ ﴿١٥﴾

15- "O, dereceleri hakkıyla yükseltendir, Arş'ın sahibidir. Buluşma günü hakkında insanları uyarmak için iradesiyle ilgili ruhu kullarından dilediğine kendi indirir."

Allah, dereceleri günahkârlar için kurtuluşla, itaatkârlar için sevaplarla, seçkinler ve veliler için kerametlerle, ihtiyaç sahipleri için kifayetlerle, arifler için bütün irade çeşitlerini kullanmakla yükseltir.

Bir yoruma göre de itaatkârların dereceleri cennette görünen halleriyle, ariflerin dereceleri de dünyada kalpleriyledir. Böylece Allah, ariflerin derecelerini, her iki dünyaya da bakmayacak ve onlarda ünsiyet aramayacak ölçüde yükseltir. Sevenlere gelince Allah, onların derecelerini dünyada ve ahirette sevdiklerinin rızası dışında bir şey istemeyecek ölçüde yükseltir.

(ذُو الْعَرْشِ) *"Arş'ın sahibidir."*

Allah, yüce mülkün -hükümranlığın- sahibidir. Bir yoruma göre de Arş duanın kıblesidir. Allah, onu yaratıkların en yükseği ve cüsse bakımından en büyüğü olarak yaratmıştır.

(يُلْقِي الرُّوحَ مِنْ اَمْرِهِ عَلٰى مَنْ يَشَٓاءُ مِنْ عِبَادِهِ) *"İradesiyle ilgili ruhu kullarından dilediğine kendi indirir."*

Bir ruh vardır ki bedenlerinin aydınlığı onunladır. O, akıllarının sultanıdır. Bir ruh vardır ki kalplerinin aydınlığı onunladır. O, ilimlerinin şifasıdır. Bir ruh vardır ki ruhlarının aydınlığı onunladır. O, ruhun da ruhu olup sahiplerinin bekası Allah iledir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bir ruh vardır ki ilham ruhudur. Bir ruh vardır ki ilam -bildirim- ruhudur. Bir ruh da vardır ki ikram ruhudur.

- Nebilik -nübüvvet- ruhu, resullük -risalet- ruhu, velilik -velayet- ruhu ve ariflik -marifet- ruhu.

- Bir ruh vardır ki halkın bekası onunladır. Bir ruh da vardır ki hakkın aydınlığı onunladır.

يَوْمَ هُمْ بَارِزُونَ لَا يَخْفٰى عَلَى اللّٰهِ مِنْهُمْ شَيْءٌ لِمَنِ الْمُلْكُ الْيَوْمَ لِلّٰهِ الْوَاحِدِ الْقَهَّارِ ﴿١٦﴾

16- "O gün onlar, ortaya çıkarlar. Onların hiçbir şeyi Allah'a gizli kalmaz. Bugün mülk kimindir? Tek olan, her şeyi kudret ve hâkimiyeti altında tutan Allah'ındır."

Allah, olan mevcudu da olmayan yitiği de, daha önce olanı da, olmakta olanı da, olmasının caiz olmadığını bildiği olmayacakları da, olması caiz olanın olması halinde nasıl olacağını da bilir.

(لِمَنِ الْمُلْكُ الْيَوْمَ لِلّٰهِ الْوَاحِدِ الْقَهَّارِ) *"Bugün mülk kimindir? Tek olan, her şeyi kudret ve hâkimiyeti altında tutan Allah'ındır."*

Allah'ın mülkü bir günle de kayıtlı değildir, bir vakte de mahsus değildir. Lakin halkın bugünkü iddialarının hiçbir aslı yoktur. Çünkü yarın o davalar son bulacak ve vehimler ortadan kalkacaktır.

اَلْيَوْمَ تُجْزٰى كُلُّ نَفْسٍ بِمَا كَسَبَتْ لَا ظُلْمَ الْيَوْمَ اِنَّ اللّٰهَ سَرِيعُ الْحِسَابِ ﴿١٧﴾

17- "Bugün herkese kazandığının karşılığı verilir. Bugün asla zulüm yoktur. Şüphesiz Allah hesabı çabuk görendir."

Allah amellerine cennetlerle, hallerine hoşnutlukla, nefeslerine O'na yakınlıkla, sevgilerine de O'nu görmeyle karşılık verir.

Allah, günahkârlara da tövbelerinden dolayı gufranla, ağlamalarından dolayı da aydınlık ve şifa ile karşılık verir.

( لَا ظُلْمَ الْيَوْمَ ) *"Bugün asla zulüm yoktur."*

Yani Allah'ın zulüm yapabileceğini varsaymak muhaldir. Allah, yaptığı her şeyi yapma hakkına sahiptir.

( اِنَّ اللّٰهَ سَرِيعُ الْحِسَابِ ) *"Şüphesiz Allah, hesabı çabuk görendir."*

Allah, kullarıyla olan muamelesinde hesabı çabuk görmekte olup bir durum, O'nu başka bir durumdan alıkoyamaz. Velileriyle olan muamelesinde de hal bakımından hesabı çabuk görerek onları büyük küçük, iğneden ipliğe her şeyden sorumlu tutar.

وَاَنْذِرْهُمْ يَوْمَ الْاٰزِفَةِ اِذِ الْقُلُوبُ لَدَى الْحَنَاجِرِ كَاظِمِينَ مَا
لِلظَّالِمِينَ مِنْ حَمِيمٍ وَلَا شَفِيعٍ يُطَاعُ ﴿١٨﴾

**18- "Yaklaşmakta olan gün konusunda onları uyar. O gün yürekler gam ve tasa ile dolu, gırtlaklara dayanmıştır. Zalimlerin ne sıcak bir dostu ne de sözü dinlenir bir şefaatçisi vardır."**

Herkesin kıyameti, belirlenmiş olan zamanda olacaktır. Sevenlerin kıyameti ise peşindir. Bu çerçevede onların her nefeste cezadan, azaptan, sevaptan uzaklaşmadan, yakınlaşmadan ve hesaplarında olmayan hususlardan ibaret bir kıyameti vardır. Organlar, haklarında şahitlik eder. Bu çerçevede gözyaşı şahitlik eder, kalp çarpması konuşur, zayıflama haber verir, beniz açıklar, kul örter fakat bela ortaya çıkar.

Şiir:

*Ey tecelli ettiğinde şeklim değişen*
*Hakkımızda tasdik eder gibi sandıkları her şeyden dolayı*

Şiir:

*Dört şahidim vardır onu sevdiğime dair*
*Her meselede iki iken şahit sayısı*
*Vücudumun erimesi, mafsallarımın titremesi*
*Kalbimin çarpması ve dilimin tutulması*

Göç yaklaştığı zaman yürekleri ağızlarına gelir. Göç duyurusu yapılıp yükler bağlandığı zaman ise gözleri yaşlarla dolup taşar.

يَعْلَمُ خَائِنَةَ الْأَعْيُنِ وَمَا تُخْفِي الصُّدُورُ ﴿١٩﴾

19- "Allah, gözlerin hain bakışını ve kalplerin gizlediğini bilir."

Bu çerçevede, sevenlerin gözlerinin hain bakışı, bir şeyi güzel bulmalarıdır. Şu dizeler bu nedenle söylenmiştir:

*Ey göz nuru! Sor gözlerime aydınlanmış mıdır?*
*Güzel bir manzarayla, sen gözümden kaybolduğundan beri*

Şu dizeleri de bu nedenle söylemişlerdir:

*Güzel bulduğu zaman gözlerim sizden başkasını*
*Onu cezalandırmasını söylerim uykusuzluğa*

Gözlerinin hainliğinden bir de münacatvakitlerinde onları uyuklama ve uykunun tutmasıdır. Nitekim Hz. Davûd'un kıssasında şu ifade yer almıştır:

*"Beni sevdiğini iddia eden, yalan söylemiştir. Zira onu gece kapladığında beni bırakıp uyur."*

Ariflerin gözlerinin hainliği, gözlerinin gördüklerinden kalpleriyle haberdar olmalarıdır.

Tevhid ehlinin gözlerinin hainliği, kendi nefislerine değil de dünya ve ahirette kaçırılan bir mahluka karşı duydukları üzüntüden dolayı ondan bir damla gözyaşının çıkmasıdır.

Sevenlerin gözlerinin hainliği, her ne şekilde olursa olsun, sevgiliden başkasına bakmaktır. Nitekim bir rivayette şöyle denilmiştir:

*"Bir şeyi sevmen, seni kör ve sağır eder."*

(يَعْلَمُ خَائِنَةَ الْأَعْيُنِ وَمَا تُخْفِي الصُّدُورُ) *"Kalplerin gizlediğini bilir."*

Allah ondan haberdardır.

وَاللّٰهُ يَقْضِي بِالْحَقِّ وَالَّذِينَ يَدْعُونَ مِنْ دُونِهِ لَا يَقْضُونَ بِشَيْءٍ اِنَّ
اللّٰهَ هُوَ السَّمِيعُ الْبَصِيرُ ﴿٢٠﴾

20- "Allah, hak ile hükmeder. Allah'tan başka taptıkları ise hiçbir hüküm veremezler. Şüphesiz Allah, hakkıyla işitendir, hakkıyla görendir."

Allah, yabancılar hakkında uzaklaşmaya, vuslat içinse sevgiye hükmeder. Huzuruna varılacağı gün de yüz çevirmeye çalışmış olanların azline hükmedecektir. Bir de yarın ölüm, cennet ile cehennem arasında güzel bir koç görünümünde boğazlandığı zaman, ayrılığın da sevenlerin dosdoğru yolu üzerinde çirkin bir şahıs görünümünde boğazlanıp, huzur ehlinin kendisine bakması için ibret dallarına asılmasında hiçbir tuhaflık olmaz.

اَوَلَمْ يَسِيرُوا فِي الْاَرْضِ فَيَنْظُرُوا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الَّذِينَ كَانُوا
مِنْ قَبْلِهِمْ كَانُوا هُمْ اَشَدَّ مِنْهُمْ قُوَّةً وَاٰثَارًا فِي الْاَرْضِ فَاَخَذَهُمُ
اللّٰهُ بِذُنُوبِهِمْ وَمَا كَانَ لَهُمْ مِنَ اللّٰهِ مِنْ وَاقٍ ﴿٢١﴾

21- "Onlar, yeryüzünde dolaşıp kendilerinden öncekilerin akıbetlerinin nasıl olduğuna bakmadılar mı? Onlar, kendilerinden daha güçlü ve yeryüzündeki eserleri daha üstündü. Böyle iken Allah, günahları sebebiyle onları yakaladı. Onları Allah'ın azabından koruyacak hiç kimse olmadı."

Onlar, nefisleriyle yeryüzünün dört bir yanında yürüyüp ondan ibret almaları ve kendisine mesafeli durmaları için doğu ve batı bölgelerini dolaşmadılar mı? Onlar, tecellinin nurlarını görüp onlarla basiret sahibi olmaları için fikir turu yapmak suretiyle kalpleriyle gayb âleminde dolaşmadılar mı? Onlar, hakikatlerin hükümranlığı altında tükenmek ve uzak ya da yakın bütün yaratıklardan kurtulmak için sırlarıyla samediyet alanlarında dolaşmadılar mı?

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ كَانَتْ تَاْتٖيهِمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنَاتِ فَكَفَرُوا فَاَخَذَهُمُ اللّٰهُ اِنَّهُ قَوِيٌّ شَدٖيدُ الْعِقَابِ ﴿٢٢﴾

22- "Bunun sebebi şu idi: Peygamberleri onlara apaçık mucizeler getiriyorlardı da onlar inkâr ediyorlardı. Bu yüzden Allah da onları yakalayıverdi. Şüphesiz O, güçlüdür, cezası da çok şiddetlidir."

Eğer sülûk ehlinden bir mürid, maksuduna ulaşmazsa, bilsin ki perdelenmesinin sebebi, bazı vakitlerinde kimi şeyhlerine karşı kalbinde meydana gelen itirazdır. Çünkü şeyhler, müridler için elçiler mesabesindedirler. Bir rivayette: *"Kavmi içinde şeyh, ümmeti içindeki peygamber gibidir"* denilmiştir.

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا مُوسٰى بِاٰيَاتِنَا وَسُلْطَانٍ مُبٖينٍ ﴿٢٣﴾ اِلٰى فِرْعَوْنَ وَهَامَانَ وَقَارُونَ فَقَالُوا سَاحِرٌ كَذَّابٌ ﴿٢٤﴾

23, 24- "Andolsun ki biz, Mûsâ'yı mucizelerimizle ve apaçık bir delille Firavun'a, Hâmân'a ve Kârûn'a gönderdik. Onlar ise: 'Bu, çok yalancı bir sihirbazdır' dediler."

Kendi zamanında Hz. Mûsâ, Allah'ın en değerli yaratığı idi. Allah'ın en değersiz, hükmünde en rezil ve küfründe en şiddetli yaratığı ise Firavun idi. Nitekim ondan başka hiç kimse şunu dememiştir:

(مَا عَلِمْتُ لَكُمْ مِنْ اِلٰهٍ غَيْرٖي) *"Sizin benden başka bir ilâhınız olduğunu bilmiyorum."* (Kasas, 28/38)

Böylece Allah, en has kulunu en değersiz kuluna gönderdi. Bunun üzerine Firavun, Hz. Mûsâ'yı yalanlamayla karşıladı, ona sihirbazlık isnadında bulundu ve kendisini azarlamanın her çeşidiyle azarladı. Sonra Allah, onu hemen cezalandırmayarak mutsuzluğuna ulaştırıncaya kadar kendisine mühlet verdi. Şüphesiz Allah, kullarına karşı halimdir.

فَلَمَّا جَآءَهُمْ بِالْحَقِّ مِنْ عِنْدِنَا قَالُوا اقْتُلُوٓا اَبْنَآءَ الَّذِينَ اٰمَنُوا مَعَهُ
وَاسْتَحْيُوا نِسَآءَهُمْ وَمَا كَيْدُ الْكَافِرِينَ اِلَّا فِي ضَلَالٍ ﴿٢٥﴾

25- "Mûsâ, onlara tarafımızdan gerçeği getirince: 'Onlarla beraber iman edenlerin oğullarını öldürün, kadınlarını sağ bırakın' dediler. Fakat kâfirlerin tuzağı hep boşa çıknıştır."

Firavun, Hz. Mûsâ'yı ve kavmini helak etmeye karar vererek bu konuda askerlerinden, atlılarından ve yayalarından yararlandı. Ancak Allah'ın buyurduğu gibi: (وَمَا كَيْدُ الْكَافِرِينَ اِلَّا فِي ضَلَالٍ) *"Kâfirlerin tuzağı hep boşa çıkmıştır."*

Çünkü bir kimse, Allah'ın velilerinden birine bir çukur kazdığı zaman, ona kazıcısından başkası düşmez. Allah, prensibini böyle koymuştur.

وَقَالَ فِرْعَوْنُ ذَرُونِي اَقْتُلْ مُوسٰى وَلْيَدْعُ رَبَّهُ اِنِّي اَخَافُ اَنْ يُبَدِّلَ
دِينَكُمْ اَوْ اَنْ يُظْهِرَ فِي الْاَرْضِ الْفَسَادَ ﴿٢٦﴾ وَقَالَ مُوسٰى اِنِّي
عُذْتُ بِرَبِّي وَرَبِّكُمْ مِنْ كُلِّ مُتَكَبِّرٍ لَا يُؤْمِنُ بِيَوْمِ الْحِسَابِ ﴿٢٧﴾

26, 27- "Firavun dedi ki: 'Bırakın beni, Mûsâ'yı öldüreyim. Rabbini çağırsın. Çünkü ben onun, dininizi değiştirmesinden yahut yeryüzünde bozgunculuk çıkarmasından korkuyorum.' Mûsâ da: 'Ben, hesap gününe inanmayan her kibirliden, benim de Rabbim sizin de rabbiniz olan Allah'a sığınırım' dedi."

(وَلْيَدْعُ رَبَّهُ) *"Rabbini çağırsın."*

Yani Rabbinden yardım istesin. Bir de ben, dininizi değiştirmesinden ve yeryüzünde bozgunculuk çıkarmasından korkuyorum. Oysa gerçekte bozgunculuk çıkaran Firavun idi. Bu konuda Firavun'un durumu, şu atasözünde söylendiği gibidir:

*"Hastalığını benim üstüme atıp işin içinden sıyrılıverdi."*

Ancak Firavun Hz. Mûsâ'ya tuzak kurdu. Tuzak kuran ise tuzağının sonucundan kurtulamaz.

Bunun üzerine Hz. Mûsâ, Rabbinin yardımına sığındı. Bu arada Firavun ve avenelerine cevap vermesi için Allah'a ve Hz. Mûsâ'ya iman eden, ancak imanını Firavun ve kavminden saklayan mümin bir adam görevlendirildi.

وَقَالَ رَجُلٌ مُؤْمِنٌ مِنْ اٰلِ فِرْعَوْنَ يَكْتُمُ اِيمَانَهُٓ اَتَقْتُلُونَ رَجُلًا اَنْ يَقُولَ رَبِّيَ اللّٰهُ وَقَدْ جَٓاءَكُمْ بِالْبَيِّنَاتِ مِنْ رَبِّكُمْ وَاِنْ يَكُ كَاذِبًا فَعَلَيْهِ كَذِبُهُ وَاِنْ يَكُ صَادِقًا يُصِبْكُمْ بَعْضُ الَّذ۪ي يَعِدُكُمْ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْد۪ي مَنْ هُوَ مُسْرِفٌ كَذَّابٌ ﴿٢٨﴾

28- "Firavun ailesinden, imanını gizlemekte olan mümin bir adam şöyle dedi: 'Rabbim Allah'tır dediği için bir adamı öldürecek misiniz? Halbuki o, size Rabbinizden apaçık mucizeler getirdi. Eğer yalancı ise yalanı kendi aleyhinedir. Eğer doğru söylüyorsa, hakkında sizi uyardığı şeylerin bir kısmı başınıza gelecektir. Şüphesiz Allah, aşırı giden, çok yalan söyleyen kimseyi doğru yola iletmez.'"

يَا قَوْمِ لَكُمُ الْمُلْكُ الْيَوْمَ ظَاهِر۪ينَ فِي الْاَرْضِ فَمَنْ يَنْصُرُنَا مِنْ بَأْسِ اللّٰهِ اِنْ جَٓاءَنَا قَالَ فِرْعَوْنُ مَٓا اُر۪يكُمْ اِلَّا مَٓا اَرٰى وَمَٓا اَهْد۪يكُمْ اِلَّا سَب۪يلَ الرَّشَادِ ﴿٢٩﴾

29- "'Ey kavmim! Bugün yeryüzüne hâkim kimseler olarak iktidar ve saltanat sizindir. Ama başımıza geldiğinde bizi, Allah'ın azabından kim kurtarır?' Firavun dedi ki: 'Ben, size ancak kendi görüşümü bildiriyorum ve sizi ancak doğru yola iletiyorum' dedi."

وَقَالَ الَّذِيٓ اٰمَنَ يَا قَوْمِ اِنّٖيٓ اَخَافُ عَلَيْكُمْ مِثْلَ يَوْمِ الْاَحْزَابِۙ ﴿٣٠﴾
مِثْلَ دَاْبِ قَوْمِ نُوحٍ وَعَادٍ وَثَمُودَ وَالَّذٖينَ مِنْ بَعْدِهِمْۜ وَمَا اللّٰهُ يُرٖيدُ
ظُلْمًا لِلْعِبَادِ ﴿٣١﴾

30, 31- "İman etmiş olan adam dedi ki: 'Ey kavmim! Şüphesiz ben, Nûh kavmi, Âd kavmi, Semûd kavmi ve onlardan sonra gelen toplulukların başına gelen olayların sizin de başınıza gelmesinden korkuyorum. Allah, kullarına asla zulmetmek istemez.'"

وَيَا قَوْمِ اِنّٖيٓ اَخَافُ عَلَيْكُمْ يَوْمَ التَّنَادِۙ ﴿٣٢﴾ يَوْمَ تُوَلُّونَ مُدْبِرٖينَۚ مَا
لَكُمْ مِنَ اللّٰهِ مِنْ عَاصِمٍۚ وَمَنْ يُضْلِلِ اللّٰهُ فَمَا لَهُ مِنْ هَادٍ ﴿٣٣﴾

32, 33- "Ey kavmim! Gerçekten sizin için, o bağrışıp çağrışma gününden, arkanıza dönüp kaçmaya çalışacağınız günden korkuyorum. O gün sizi Allah'ın azabından kurtaracak kimse yoktur. Allah, kimi saptırırsa artık onu doğru yola iletecek de yoktur."

Mümin adam, onlara nasihat edip kendilerine karşı deliller getirdi, ancak nasihat da söz de onları etkilemedi. O mümin, Firavun ailesine ne kadar çok söz ve nasihat tekrarlayıp durdu da onu dinlemediler. Durumları, tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi oldu:

*Nice nasihatler sevk ettim arkanızdan ben*
*Oysa öfkeden de yararlanır bazen, nasihati alan*

وَلَقَدْ جَٓاءَكُمْ يُوسُفُ مِنْ قَبْلُ بِالْبَيِّنَاتِ فَمَا زِلْتُمْ فٖي شَكٍّ مِمَّا
جَٓاءَكُمْ بِهٖۜ حَتّٰٓى اِذَا هَلَكَ قُلْتُمْ لَنْ يَبْعَثَ اللّٰهُ مِنْ بَعْدِهٖ رَسُولًاۜ
كَذٰلِكَ يُضِلُّ اللّٰهُ مَنْ هُوَ مُسْرِفٌ مُرْتَابٌۚ ﴿٣٤﴾

34- "Andolsun, daha önce Yûsuf da size apaçık deliller getirmişti de onun size getirdikleri hakkında şüphe edip durmuştunuz. Daha

sonra o ölünce de: 'Allah, ondan sonra asla peygamber göndermez' demiştiniz. İşte Allah, aşırı giden şüpheci kimseleri böyle saptırır."

Allah, onların yalanlamalarının da tıpkı atalarının ve geçmişlerinin daha önceki yalanlamaları gibi olduğunu ve daha önce onları helak ettiği gibi bunlara da aynısını yapacağını açıklamıştır.

اَلَّذِينَ يُجَادِلُونَ فِي اٰيَاتِ اللّٰهِ بِغَيْرِ سُلْطَانٍ اَتٰيهُمْ كَبُرَ مَقْتًا عِنْدَ اللّٰهِ وَعِنْدَ الَّذِينَ اٰمَنُوا كَذٰلِكَ يَطْبَعُ اللّٰهُ عَلٰى كُلِّ قَلْبِ مُتَكَبِّرٍ جَبَّارٍ ﴿٣٥﴾

35- "Onlar, kendilerine gelmiş hiçbir delil olmaksızın, Allah'ın ayetleri hakkında tartışan kimselerdir. Bu ise, Allah katında ve iman edenler katında büyük öfke ve gazap gerektiren bir iştir. Allah, her kibirli zorbanın kalbini işte böyle mühürler."

وَقَالَ فِرْعَوْنُ يَا هَامَانُ ابْنِ لِي صَرْحًا لَعَلِّي اَبْلُغُ الْاَسْبَابَ ﴿٣٦﴾ اَسْبَابَ السَّمٰوَاتِ فَاَطَّلِعَ اِلٰى اِلٰهِ مُوسٰى وَاِنِّي لَاَظُنُّهُ كَاذِبًا وَكَذٰلِكَ زُيِّنَ لِفِرْعَوْنَ سُوٓءُ عَمَلِهِ وَصُدَّ عَنِ السَّبِيلِ وَمَا كَيْدُ فِرْعَوْنَ اِلَّا فِي تَبَابٍ ﴿٣٧﴾

36, 37- "Firavun dedi ki: 'Ey Hâmân! Bana yüksek bir kule yap, belki yollara, göklerin yollarına erişirim de Mûsâ'nın ilâhını görürüm. Çünkü ben, onun yalancı olduğuna inanıyorum.' Böylece Firavun'a yaptığı kötü iş süslü gösterildi ve doğru yoldan saptırıldı. Firavun'un tuzağı tamamen sonuçsuz kaldı."

Ayette "esbâb" şeklindeki çoğulu yer alan "sebeb" kelimesi, kendisiyle herhangi bir şeye ulaşılan şey -araç- demektir. Yani belki ben göğe ulaşırım da Mûsâ'nın ilâhını görürüm. Bu arada, mabudun gökte olduğunu söyleyenler ile kâfir arasında bundan başka hiçbir benzerlik bulunmasa dahi, o kimselerin mezheplerinin temelsizliği için yeterdi. Nitekim Firavun, mabudun gökte olduğunu

vehmederken yanlış yapmıştır. Şayet mabut gökte olsaydı, Firavun talebinde doğru yapmış olurdu.

( وَكَذٰلِكَ زُيِّنَ لِفِرْعَوْنَ سُوٓءُ عَمَلِهٖ وَصُدَّ عَنِ السَّبِيلِ وَمَا كَيْدُ فِرْعَوْنَ اِلَّا فٖي تَبَابٍ ) "Böylece Firavun'a yaptığı kötü iş süslü gösterildi ve doğru yoldan saptırıldı. Firavun'un tuzağı tamamen sonuçsuz kaldı."

Allah, burada Firavun'un, mabudun gökte olduğuna inanmasının yanlış olduğunu ve kendisinin bundan dolayı Allah'ın yolundan geri çevrildiğini bildirmiştir.

وَقَالَ الَّذٖيٓ اٰمَنَ يَا قَوْمِ اتَّبِعُونِ اَهْدِكُمْ سَبٖيلَ الرَّشَادِ ﴿٣٨﴾ يَا قَوْمِ اِنَّمَا هٰذِهِ الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا مَتَاعٌ وَاِنَّ الْاٰخِرَةَ هِيَ دَارُ الْقَرَارِ ﴿٣٩﴾

38, 39- "O inanan kimse dedi ki: 'Ey kavmim! Bana uyun ki sizi doğru yola ileteyim. Ey kavmim! Şüphesiz bu dünya hayatı ancak bir metadır. Ahiret ise ebedî kalınacak yerdir.'"

O mümin, onları davet etmekte, onlar da inkâr ve inatlarında ısrar ettiler.

مَنْ عَمِلَ سَيِّئَةً فَلَا يُجْزٰٓى اِلَّا مِثْلَهَا وَمَنْ عَمِلَ صَالِحًا مِنْ ذَكَرٍ اَوْ اُنْثٰى وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَاُولٰٓئِكَ يَدْخُلُونَ الْجَنَّةَ يُرْزَقُونَ فٖيهَا بِغَيْرِ حِسَابٍ ﴿٤٠﴾

40- "Kim bir kötülük yaparsa ancak onun benzeriyle karşılık görür. Kadın veya erkek, kim mümin olarak salih bir amel işlerse, işte onlar cennete girecek ve orada kendilerine hesapsız olarak rızık verilecektir."

( فَلَا يُجْزٰٓى اِلَّا مِثْلَهَا ) "Ancak onun benzeriyle karşılık görür."

Bu benzerlik, nitelikte değil miktardadır. Çünkü kulun yaptığı kötülüktür. Oysa Allah tarafından ona verilen karşılık kötülük değil, iyiliktir. ( وَهُوَ مُؤْمِنٌ ) *"Mümin olarak."*

Yani bu dünya hayatında mümin olarak. Çünkü bu hayatta mümin olmayan kimseden salih amel gerçekleşmez.

( مُؤْمِنٌ فَاُو۬لٰٓئِكَ يَدْخُلُونَ الْجَنَّةَ يُرْزَقُونَ ف۪يهَا بِغَيْرِ حِسَابٍ ) *"İşte onlar cennete girecek ve orada kendilerine hesapsız olarak rızık verilecektir."*

Yani onlara ebedî ve sonsuz bir rızık verilecektir. Onlar cennetten de akıbetteki durumlarından da çıkarılmayacaklardır.

وَيَا قَوْمِ مَا ل۪ٓي اَدْعُوكُمْ اِلَى النَّجٰوةِ وَتَدْعُونَن۪ٓي اِلَى النَّارِ ﴿٤١﴾

41- "Ey kavmim! Bu ne hal? Ben, sizi kurtuluşa çağırıyorum, siz ise beni ateşe çağırıyorsunuz."

Bunların tamamı, Firavun ailesinin mümin olan adamının sözlerindendir. O bunları kavmine karşı delil olarak söylüyor, delille haksızlıklarını ortaya koyuyor.

تَدْعُونَن۪ي لِاَكْفُرَ بِاللّٰهِ وَاُشْرِكَ بِه۪ مَا لَيْسَ ل۪ي بِه۪ عِلْمٌ وَاَنَا اَدْعُوكُمْ اِلَى الْعَز۪يزِ الْغَفَّارِ ﴿٤٢﴾

42- "Siz beni Allah'ı inkâr etmeye ve hakkında hiçbir bilgim olmayan şeyleri O'na ortak koşmaya çağırıyorsunuz. Ben ise sizi mutlak güç sahibine, çok bağışlayana çağırıyorum."

Siz beni, sözünüzün doğruluğuna dair hiçbir bilgim olmaksızın Allah'ı inkâr etmeye ve O'na ortak koşmaya çağırıyorsunuz. Oysa ben sizi Allah'a ve O'nun, burhanla izah ettiği ve hakkında beyanda bulunulan hususa davet ediyorum.

لَا جَرَمَ اَنَّمَا تَدْعُونَن۪ٓي اِلَيْهِ لَيْسَ لَهُ دَعْوَةٌ فِي الدُّنْيَا وَلَا فِي الْاٰخِرَةِ وَاَنَّ مَرَدَّنَٓا اِلَى اللّٰهِ وَاَنَّ الْمُسْرِف۪ينَ هُمْ اَصْحَابُ النَّارِ ﴿٤٣﴾

43- "Şüphe yok ki sizin beni tapmaya çağırdığınız şeyin ne dünya ne de ahiret konusunda hiçbir çağrısı yoktur. Kuşkusuz dönüşümüz

Allah'adır. Şüphesiz aşırı gidenler, cehennemliklerin ta kendileridir."

Şüphe yok ki sizin beni davet ettiğiniz şey batıldır. Şöyle ki o putların ne hayatı ne ilmi ne de kudreti vardır. Onlar, fayda ve zarar da veremezler. Bir de biz, doğru sözlü oldukları, mucizelerle ortaya çıkanların sözüyle, yalan konuştuğunuzu öğrenmiş bulunuyoruz.

فَسَتَذْكُرُونَ مَٓا اَقُولُ لَكُمْۜ وَاُفَوِّضُ اَمْرٖيٓ اِلَى اللّٰهِۜ اِنَّ اللّٰهَ بَصٖيرٌ بِالْعِبَادِ ﴿٤٤﴾

44- "Size söylediklerimi hatırlayacaksınız. Ben, işimi Allah'a havale ediyorum. Şüphesiz Allah, kullarını hakkıyla görendir."

Ben, işimi Allah'a havale ediyorum, O'na tevekkül ediyorum ve ne sizden ne de entrikanızdan korkuyorum.

فَوَقٰيهُ اللّٰهُ سَيِّـَٔاتِ مَا مَكَرُوا وَحَاقَ بِاٰلِ فِرْعَوْنَ سُٓوءُ الْعَذَابِۚ ﴿٤٥﴾ اَلنَّارُ يُعْرَضُونَ عَلَيْهَا غُدُوًّا وَعَشِيًّاۚ وَيَوْمَ تَقُومُ السَّاعَةُ اَدْخِلُٓوا اٰلَ فِرْعَوْنَ اَشَدَّ الْعَذَابِ ﴿٤٦﴾

45, 46- "Allah, onu onların hilelerinin kötülüklerinden korudu. Firavun ailesini ise azabın en kötüsü kuşattı. Onlar, sabah akşam o ateşe sunulurlar. Kıyametin kopacağı günde de: 'Firavun ailesini azabın en şiddetlisine sokun' denilecektir."

Ayet, kabir azabına delil teşkil etmektedir.

Bir yoruma göre de kâfirlerin ruhları bazı siyah kuşların kursaklarında olup cehenneme girecekleri kıyamet gününe kadar sabah akşam ateşe sunulurlar.

( اَدْخِلُٓوا اٰلَ فِرْعَوْنَ اَشَدَّ الْعَذَابِ ) *"Firavun ailesini azabın en şiddetlisine sokun."*

( ادْخُلوا ) *"udhulû-giriniz"* kıraatine göre, yani ey Firavun ailesi! Azabın en şiddetlisine girin. Bu takdirde ( آلَ ) *"âl"* lafzının mansupluğu, muzaf münada olmasından dolayıdır. Bir kıraate göre de ifal babından emir olmak üzere, ( أَدْخلوا ) *"edhilû-koyunuz"* şeklinde okunmaktadır.

( اَشَدَّ الْعَذَابِ ) *"Azabın en şiddetlisi."*

Yani en zor olanı. Cehennemde kâfirler için en zor olan azap, cehennemden çıkmaktan ümitsiz olmalarıdır. Günahkâr müminlere gelince, onların cehennemdeki en şiddetli azapları bugünün, müminlerin Allah'ın huzuruna çıktığı gün olduğunu öğrendikleri zamandır. Onlar bunu öğrendikleri zaman o gün, onların azap günlerinin en şiddetlisi olur.

وَاِذْ يَتَحَٓاجُّونَ فِي النَّارِ فَيَقُولُ الضُّعَفٰٓؤُا لِلَّذِينَ اسْتَكْبَرُوٓا اِنَّا كُنَّا لَكُمْ تَبَعًا فَهَلْ اَنْتُمْ مُغْنُونَ عَنَّا نَصِيبًا مِنَ النَّارِ ﴿٤٧﴾ قَالَ الَّذِينَ اسْتَكْبَرُوٓا اِنَّا كُلٌّ فِيهَٓا اِنَّ اللّٰهَ قَدْ حَكَمَ بَيْنَ الْعِبَادِ ﴿٤٨﴾

47, 48- "Ateşin içinde birbirleriyle tartışırlarken zayıf olanlar, büyüklük taslayanlara: 'Biz, size uymuş kimselerdik. Şimdi şu ateşin bir kısmını üzerimizden kaldırabilir misiniz?' derler. Büyüklük taslayanlar ise şöyle derler: 'Biz, hepimiz ateşin içindeyiz. Şüphesiz Allah, kullar arasında hükmünü vermiştir.'"

Bu da yabancılığın belirtilerindendir. Çünkü onlar, kendileriyle Rablerinin arasına vasıta koyuyorlar. Sonra Allah, onlara şefaat dilememeleri için, meleklerin kalplerinden merhameti alır.

وَقَالَ الَّذِينَ فِي النَّارِ لِخَزَنَةِ جَهَنَّمَ ادْعُوا رَبَّكُمْ يُخَفِّفْ عَنَّا يَوْمًا مِنَ الْعَذَابِ ﴿٤٩﴾

49- "Ateşte olanlar, cehennem bekçilerine: 'Rabbinize yalvarın da bari bir gün bizden azabı hafifletsin' derler."

قَالُوٓا اَوَلَمْ تَكُ تَاْتِيكُمْ رُسُلُكُمْ بِالْبَيِّنَاتِ قَالُوا بَلٰى قَالُوا فَادْعُوا
وَمَا دُعٰٓؤُا الْكَافِرِينَ اِلَّا فٖي ضَلَالٍ ﴿٥٠﴾

50- "Cehennem bekçileri derler ki: 'Size peygamberleriniz açık mucizeler getirmemiş miydi?' Onlar: 'Evet, getirmişlerdi' derler. Bekçiler: 'Öyleyse kendiniz yalvarın' derler. Şüphesiz kâfirlerin duası boşunadır."

اِنَّا لَنَنْصُرُ رُسُلَنَا وَالَّذٖينَ اٰمَنُوا فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَيَوْمَ يَقُومُ الْاَشْهَادُ ﴿٥١﴾

51- "Şüphesiz ki peygamberlerimize ve iman edenlere dünya hayatında ve şahitlerin şahitlik edecekleri günde yardım ederiz."

Zaferin de aksinin de hayrın da şerrin de Allah'tan olduğunu bilmeleri ve buna şahitlik etmeleri için biz onlara mucizeler ve çeşitli bilgiler vermekle yardım ediyoruz.

Bir yoruma göre de biz, gizli bir tedbir ve görülmeyen bir lütufla, bekledikleri ve beklemedikleri şekilde düşmanlarına karşı onlara yardım ederiz. Biz, onlara dünyada bilgiyle ve kâinatın Allah'ın eseri olduğuna dair kesin inançla, ahirette de buna şahitlik etmeleri ve tesirin Allah'tan olduğunu zorunlu olarak bilmeleriyle yardım ederiz. Bu arada yardımın son noktası, yardım edenin, yardım ettiği kimsenin düşmanını öldürmesidir. Böylece düşmanının ölümünü istediği zaman, hakikatte hiçbir düşmanın bulunmadığını, yaratıkların da haklarında kudretin hükümleri cereyan eden ruhsuz cesetler olduğunu kesin bir şekilde anlamış olur. İşte bu nedenledir ki velinin Allah'tan başka ne bir düşmanı ne de bir dostu vardır.

Allah şöyle buyurmuştur:

( اَللّٰهُ وَلِيُّ الَّذٖينَ اٰمَنُوا ) *"Allah, iman edenlerin dostudur."* (Bakara, 2/257)

يَوْمَ لَا يَنْفَعُ الظَّالِمٖينَ مَعْذِرَتُهُمْ وَلَهُمُ اللَّعْنَةُ وَلَهُمْ سُوٓءُ الدَّارِ ﴿٥٢﴾

52- "O gün, zalimlere mazeretleri fayda vermez. Lanet de onlaradır, kötü yurt da onlaradır."

Bu hitabın ifade ettiği delil şudur: Günahlardan arınmaları, müminlere fayda verir. Bir de onlar için Allah'tan rahmet ve güzel yurt vardır. Bu dünyadan ise ancak az bir şey kalmış olur.

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوسَى الْهُدٰى وَاَوْرَثْنَا بَنٖٓي اِسْرَٓاءٖيلَ الْكِتَابَ ﴿٥٣﴾
هُدًى وَذِكْرٰى لِاُو۬لِي الْاَلْبَابِ ﴿٥٤﴾

53, 54- "Andolsun, biz Mûsâ'ya hidayet verdik. İsrailoğullarına da akıl sahipleri için bir öğüt ve doğruluk rehberi olarak o kitabı miras bıraktık."

Daha önce Hz. Mûsâ'nın kıssasında bu konuda bir miktar açıklama geçmişti.

فَاصْبِرْ اِنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّ وَاسْتَغْفِرْ لِذَنْبِكَ وَسَبِّحْ بِحَمْدِ رَبِّكَ بِالْعَشِيِّ وَالْاِبْكَارِ ﴿٥٥﴾

55- "Sabret. Allah'ın vaadi şüphesiz gerçektir. Günahının bağışlanmasını iste. Akşam sabah Rabbinin hamdıyla tesbih et."

Allah tarafından vaat edilen husus ile ilgili sabır, iman ve tasdike göre olur. Bu itibarla kimin tasdiki ve inancı daha tam ve daha güçlü ise onun sabrı da daha tam ve daha yeterli olur.

( اِنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّ ) *"Allah'ın vaadi şüphesiz gerçektir."*

Her ne kadar kul, Allah'ın (c.c.), lütfunu geciktirdiğini vehmetse de O, lütufta bulunur.

Bir yoruma göre sabır iki kısımdır: Bunlardan biri afiyete karşı sabır, diğeri de belaya karşı sabırdır. Afiyete karşı sabır ise belaya karşı sabırdan daha zordur. Nitekim büyük adamların sabrı afiyete karşıdır ki bu, sabrın en mükemmelidir.

( وَاسْتَغْفِرْ لِذَنْبِكَ ) *"Günahının bağışlanmasını iste."*

Bunda, Hz. Peygamber'in birtakım günahlarının olduğuna ve mağfiret dilemesinin tamamının ümmeti için olmadığına dair delil vardır. Çünkü Allah, başka bir yerde şöyle buyurmuştur:

( وَاسْتَغْفِرْ لِذَنْبِكَ وَلِلْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنَاتِ ) *"Hem kendi günahın için hem de mümin erkekler ve mümin kadınlar için mağfiret dile."* (Muhammed, 47/19)

Burada ise Allah, müminlerden söz etmemiştir. Bu arada Hz. Peygamber'in günahını, peygamberlik öncesindeki günaha hamletmek de mümkündür. Çünkü kul hatadan tövbe ettikten sonra da hatırladıkça ondan mağfiret dilemesinin vacip olması mümkündür. Çünkü tövbenin aslı gibi, yenilenmesi de vaciptir.

اِنَّ الَّذِينَ يُجَادِلُونَ فِي اٰيَاتِ اللّٰهِ بِغَيْرِ سُلْطَانٍ اَتٰيهُمْ اِنْ فِي صُدُورِهِمْ اِلَّا كِبْرٌ مَا هُمْ بِبَالِغِيهِ فَاسْتَعِذْ بِاللّٰهِ اِنَّهُ هُوَ السَّمِيعُ الْبَصِيرُ ﴿٥٦﴾

56- "Allah'ın ayetleri hakkında kendilerine gelmiş bir delilleri olmaksızın tartışanlar var ya, onların kalplerinde ancak bir büyüklük taslama vardır. Onlar, tasladıkları büyüklüğe asla ulaşmazlar. Sen Allah'a sığın. Şüphesiz O, hakkıyla işitendir, hakkıyla görendir."

Ayetteki ( بغير سلطان ) sözü, delilsiz demektir.

( اِنْ فِي صُدُورِهِمْ اِلَّا كِبْرٌ ) *"Onların kalplerinde ancak bir büyüklük taslama vardır."*

Yani onların kalplerinde, kendilerini hakka boyun eğmekten alıkoyan kibirden başka bir şey yoktur. Onlar, bu kibir yüzünden bir de Allah'tan uzak kalırlar ve muratlarına ermezler.

لَخَلْقُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ اَكْبَرُ مِنْ خَلْقِ النَّاسِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٥٧﴾

57- "Elbette göklerin ve yerin yaratılması, insanların yaratılmasından daha büyük bir şeydir. Fakat insanların çoğu bilmezler."

Yani göklerin ve yerin yaratılması, onların çürümüş kemik haline geldikten sonra diriltilip bir daha yaratılmasından daha büyük bir iştir. Aslında onlar, göklerin ve yerin yaratıldığını kabul ediyor, ancak öldükten sonra diriltilmeyi inkâr ediyorlardı.

وَمَا يَسْتَوِي الْاَعْمٰى وَالْبَص۪يرُ وَالَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ
وَلَا الْمُس۪ٓيءُ قَل۪يلًا مَا تَتَذَكَّرُونَ ﴿٥٨﴾

58- "Kör ile gören, iman edip salih ameller işleyenler ile kötülük yapan bir değildir. Siz, pek az düşünüyorsunuz."

Allah şunu demek istemiştir: Mümin ile kâfir, şehvetine bağlı olan ile safiyetiyle bast içinde olan, Allah'a yakınlığın meczubu olan ile Allah'ın azabıyla perdelenen, Allah'ı müşahede mertebesine yükseltilen ile maddî varlığının sınırları içinde bırakılan ve mutluluktan nasip sahibi kılınan ile mutsuzluğundan dolayı reddedilen kimse bir değildir.

اِنَّ السَّاعَةَ لَاٰتِيَةٌ لَا رَيْبَ ف۪يهَا وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿٥٩﴾

59- "Kıyamet günü mutlaka gelecektir. Bunda hiç şüphe yoktur. Fakat insanların çoğu buna inanmazlar."

Araya zaman girse de şüphesiz hesap vakti gelecektir.

وَقَالَ رَبُّكُمُ ادْعُون۪ٓي اَسْتَجِبْ لَكُمْ اِنَّ الَّذ۪ينَ يَسْتَكْبِرُونَ عَنْ
عِبَادَت۪ي سَيَدْخُلُونَ جَهَنَّمَ دَاخِر۪ينَ ﴿٦٠﴾

60- "Rabbiniz şöyle dedi: 'Bana dua edin, duanızı kabul edeyim. Kibirlenerek bana ibadet etmekten yüz çevirenler, aşağılanmış bir halde cehenneme gireceklerdir.'"

Yani bana dua edin, ben de dilersem duanızı kabul edeyim. Çünkü Allah, başka bir ayette şöyle buyurmuştur:

( إِيَّاهُ تَدْعُونَ فَيَكْشِفُ مَا تَدْعُونَ إِلَيْهِ إِنْ شَآءَ ) *"O da dilerse hakkında dua ettiğiniz sıkıntıyı giderir."* (En'âm, 6/41)

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bana, duanın şartını yerine getirerek dua edin. Duanın şartı da helalden yemektir. Zira deniliyor ki: *"Duanın anahtarı ihtiyaç, vesilesi de helal lokmadır."*

- Her kim dua ederse, Allah onun duasını ya istediği şekilde ya da onun için, istediği şeyden daha hayırlı olan başka bir şeyle kabul eder.

- Kâfir, Allah'a dua etmez. Çünkü o, Allah'ın şerikine dua eder. Oysa Allah'ın hiçbir şeriki yoktur.

- Bu hitabın müminlere yönelik olduğu sabit olduğuna göre, hangi mümin Allah'a dua edip O'ndan bir şey isterse, mutlaka Allah dünyada istediğini verir. Ahirete gelince Allah, o konuda kendisine şöyle der:

*"Şu, senin dünyada istediğin şeydir. Ben ise, onu senin için bugüne sakladım."*

O kadar ki kul, dünyada kendisine hiçbir şey verilmemiş olması temennisinde bulunur.

- Siz, ibadetlerle bana dua edin, ben de sevap ve derecelerle onu kabul edeyim.

- Siz, gafletsiz olarak bana dua edin, ben de mühletsiz olarak sizden onu kabul edeyim.

- Siz, hatalarınızdan temizlenerek bana dua edin, ben de lütfederek sizden kabul edeyim.

- Siz, gücünüze göre bana dua edin, ben de ihtiyacınızı gidererek sizden kabul edeyim.

- Siz, istekte bulunarak bana dua edin, ben de keremim ve nimetlerimle sizden kabul edeyim.

( إِنَّ الَّذِينَ يَسْتَكْبِرُونَ عَنْ عِبَادَتِي ) *"Kibirlenerek bana ibadet etmekten yüz çevirenler."*

Yani kibirlenerek bana dua etmekten yüz çevirenler, aşağılanmış bir halde cehenneme gireceklerdir.

اَللّٰهُ الَّذِي جَعَلَ لَكُمُ الَّيْلَ لِتَسْكُنُوا فِيهِ وَالنَّهَارَ مُبْصِرًا اِنَّ اللّٰهَ لَذُو فَضْلٍ عَلَى النَّاسِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا يَشْكُرُونَ ﴿٦١﴾ ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمْ خَالِقُ كُلِّ شَيْءٍ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ فَاَنّٰى تُؤْفَكُونَ ﴿٦٢﴾ كَذٰلِكَ يُؤْفَكُ الَّذِينَ كَانُوا بِاٰيَاتِ اللّٰهِ يَجْحَدُونَ ﴿٦٣﴾

61, 62, 63- "Allah, içinde rahat edesiniz diye geceyi ve gösterici olarak da gündüzü yaratandır. Şüphesiz Allah, insanlara karşı sonsuz iyilik sahibidir fakat insanların çoğu şükretmezler. İşte her şeyin yaratıcısı olan Rabbiniz Allah! O'ndan başka hiçbir ilâh yoktur. Durum bu iken nasıl oluyor da döndürülüyorsunuz? Allah'ın ayetlerini inkâr etmekte olanlar, işte böyle döndürülürler."

İnsanların gece rahat etmeleri birkaç kısımdır: Gaflet ehli olanlar gafletleriyle, muhabbet ehli olanlar da muhabbetleriyle rahat ederler. Gafletin rahatlığı ile vuslatın rahatlığı arasında ise büyük fark vardır.

Bir de kimileri kendi benzerleriyle rahat ederken, kimileri de bast ve bağımsızlık halinde oldukları için amellerinin tadıyla rahat ederler. Kimileri ise ne gecelerinde ne de gündüzlerinde rahat ederler. Bunlar, iştiyak sahipleri olup sürekli yanma halindedirler.

( ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمْ خَالِقُ كُلِّ شَيْءٍ ) *"İşte her şeyin yaratıcısı olan Rabbiniz Allah!"*

O Rabbiniz ki rahatınızı kendisiyle beraber olmaya bağlı, rahatsızlığınızı kendisinden dolayı, iştiyakınızı kendisine yönelik, muhabbetinizi kendi zâtına mahsus, bağlılığınızı da kendisine dönük kılmıştır.

اَللّٰهُ الَّذ۪ي جَعَلَ لَكُمُ الْاَرْضَ قَرَارًا وَالسَّمَٓاءَ بِنَٓاءً وَصَوَّرَكُمْ فَاَحْسَنَ
صُوَرَكُمْ وَرَزَقَكُمْ مِنَ الطَّيِّبَاتِ ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبُّكُمْ فَتَبَارَكَ اللّٰهُ رَبُّ
الْعَالَم۪ينَ ﴿٦٤﴾

64- "Allah, yeryüzünü sizin için karar kılma yeri, göğü de bina yapan, size şekil verip de şekillerinizi güzel kılan ve sizi temiz şeylerle rızıklandırandır. İşte Rabbiniz Allah! Âlemlerin Rabbi Allah ne yücedir!"

( وَصَوَّرَكُمْ فَاَحْسَنَ صُوَرَكُمْ ) *"Size şekil verip de şekillerinizi güzel kılan."*

Allah Arş'ı, Kürsü'yü, gökleri, yerleri ve bütün yaratıkları yaratmış, ancak haklarında bu hitabı söylememiş, sadece bizim için: ( وَصَوَّرَكُمْ فَاَحْسَنَ صُوَرَكُمْ ) *"Size şekil verip de şekillerinizi güzel kılan"* buyurmuştur. Bu arada güzel, insanların güzel bulduğu değil aksine sevgilinin güzel bulduğu şeydir.

Şiir:

*Düşüremedi seni gammazlar hiçbir rütbeden*
*Benim katımda ve sana zarar veremedi hiçbir gıybetçi*
*Sanki bilmeksizin övdüler onlar*
*Seni katımda, ayıpladıkları hususlarla*

Allah, ne güneşlerin yükseklikleri hakkında ne de ayların aydınlıkları hakkında: ( وَصَوَّرَكُمْ فَاَحْسَنَ صُوَرَكُمْ ) *"Size şekil verip de şekillerinizi güzel kılan"* buyurmuştur.

Ancak bize gelince hem bunu söylemiş hem de şöyle buyurmuştur:

( لَقَدْ خَلَقْنَا الْاِنْسَانَ ف۪ٓي اَحْسَنِ تَقْو۪يمٍ ) *"Biz, gerçekten insanı en güzel biçimde yarattık."* (Tîn, 95/4)

Bir yoruma göre de gammazlar bizim katımızda şekillerinizi çirkin gösterdiler, hatta melekler bile amel defterlerinize işlediğiniz çirkin günahları yazdılar. Mevlâ'nız ise amel defterinizden hataları

silmek ve onların yerine güzellikleri yerleştirmek suretiyle, şekillerinizi güzel kıldı.

Allah, şöyle buyurmuştur.

( يَمْحُوا اللّٰهُ مَا يَشَٓاءُ وَيُثْبِتُ ) *"Allah, dilediğini siler, dilediğini de sabit kılıp bırakır."* (Ra'd, 13/39)

( فَاُولٰٓئِكَ يُبَدِّلُ اللّٰهُ سَيِّاٰتِهِمْ حَسَنَاتٍ ) *"Allah, işte onların kötülüklerini iyiliklere çevirir."* (Furkân, 25/70)

( وَرَزَقَكُمْ مِنَ الطَّيِّبَاتِ ) *"Sizi temiz şeylerle rızıklandırandır."*

Temiz şey, nefsin temiz bulduğu değil, temiz şey sadece kalbin temiz bulduğudur. Nitekim şükreden fakir için yavan ekmek, nankör zenginin helvasından daha temizdir.

Bir de nefislerin rızkı yiyecek ve içecektir, kalplerin rızkı ise ibadetlerin lezzetleridir.

هُوَ الْحَيُّ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ فَادْعُوهُ مُخْلِصِينَ لَهُ الدِّينَ اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿٦٥﴾

65- "O diridir. O'ndan başka hiçbir ilâh yoktur. O halde sadece Allah'a itaat ederek O'na ibadet edin. Hamd, âlemlerin Rabbine mahsustur."

O, ölmeyecek olan ve lütfu boşa gitmeyen diridir. O halde size rızık vereceği bir dille O'na dua edin. Zira bu, O'ndan kaçamaz.

قُلْ اِنّ۪ي نُه۪يتُ اَنْ اَعْبُدَ الَّذ۪ينَ تَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ لَمَّا جَٓاءَنِيَ الْبَيِّنَاتُ مِنْ رَبّ۪ي وَاُمِرْتُ اَنْ اُسْلِمَ لِرَبِّ الْعَالَم۪ينَ ﴿٦٦﴾

66- "De ki: 'Ben, Rabbimden bana apaçık deliller gelince Allah'ı bırakıp da taptıklarınıza tapmam bana yasaklandı ve bana âlemlerin Rabbine teslim olmam emredildi.'"

Ey Muhammed! De ki: Sizin Allah'tan başka taptıklarınıza ibadet etmek bana yasaklandı. Yani ben, sizin taptıklarınıza ibadet etmekten uzak durmak, sizin uğraştığınız hususlardan yüz çevirmek ve beni yaratıp peygamberlik özelliğine mazhar kılan Allah'a teslim olmakla emredildim.

هُوَ الَّذ۪ي خَلَقَكُمْ مِنْ تُرَابٍ ثُمَّ مِنْ نُطْفَةٍ ثُمَّ مِنْ عَلَقَةٍ ثُمَّ
يُخْرِجُكُمْ طِفْلًا ثُمَّ لِتَبْلُغُٓوا اَشُدَّكُمْ ثُمَّ لِتَكُونُوا شُيُوخًا وَمِنْكُمْ
مَنْ يُتَوَفّٰى مِنْ قَبْلُ وَلِتَبْلُغُٓوا اَجَلًا مُسَمًّى وَلَعَلَّكُمْ تَعْقِلُونَ ﴿٦٧﴾
هُوَ الَّذ۪ي يُحْـي وَيُم۪يتُ فَاِذَا قَضٰٓى اَمْرًا فَاِنَّمَا يَقُولُ لَهُ كُنْ فَيَكُونُ ﴿٦٨﴾

67, 68- "O, sizi önce topraktan, sonra az bir sudan, sonra 'alaka'dan yaratan, sonra sizi ana rahminden çocuk olarak çıkaran, sonra olgunluk çağına ulaşmanız, sonra da ihtiyarlamanız için sizi yaşatandır. İçinizden önceden ölenler de vardır. Allah bunları belli bir zamana erişmeniz ve düşünüp akıl erdirmeniz için yapar. Yaşatan ve öldüren O'dur. Bir şeye karar verdiğinde, ona sadece: 'Ol!' der, o da oluverir."

Böylece Allah insanı, topraktan damlaya, damladan alakaya, sonra annelerinizin karınlarından dünyanızda ortaya çıkmanıza, sonra çocukluk halinizden gençliğe, sonra da yaşlılığa doğru evrelerden geçirir.

Aynı zamanda dirilten, öldüren, sonra öbür dünyada dirilten de O'dur.

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذ۪ينَ يُجَادِلُونَ ف۪ٓي اٰيَاتِ اللّٰهِ اَنّٰى يُصْرَفُونَ ﴿٦٩﴾
اَلَّذ۪ينَ كَذَّبُوا بِالْكِتَابِ وَبِمَٓا اَرْسَلْنَا بِه۪ رُسُلَنَا فَسَوْفَ يَعْلَمُونَ ﴿٧٠﴾

69, 70- "Allah'ın ayetleri hakkında tartışanları görmedin mi? Nasıl da döndürülüyorlar! Onlar kitabı ve elçilerimize gönderdiklerimizi yalanlayanlardır. Onlar bilecekler."

Onlar, Allah'ın ayetleri hakkında afallayıp dururlar. Bu çerçevede ne getirecekleri bir delil vardır ne de üzerlerinden bir azap defedebilirler. Bilgilerinin kendilerine fayda vermeyeceği bir zamanda bilecekler ve özürlerinin dinlenmeyeceği bir anda özür dileyeceklerdir. Bunlar, şu durumda olacaktır:

اِذِ الْاَغْلَالُ فٖٓي اَعْنَاقِهِمْ وَالسَّلَاسِلُ يُسْحَبُونَۙ ﴿٧١﴾ فِي الْحَمٖيمِ ثُمَّ فِي النَّارِ يُسْجَرُونَۚ ﴿٧٢﴾ ثُمَّ قٖيلَ لَهُمْ اَيْنَ مَا كُنْتُمْ تُشْرِكُونَۙ ﴿٧٣﴾ مِنْ دُونِ اللّٰهِۜ قَالُوا ضَلُّوا عَنَّا بَلْ لَمْ نَكُنْ نَدْعُوا مِنْ قَبْلُ شَيْـٔاًۜ كَذٰلِكَ يُضِلُّ اللّٰهُ الْكَافِرٖينَ ﴿٧٤﴾ ذٰلِكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَفْرَحُونَ فِي الْاَرْضِ بِغَيْرِ الْحَقِّ وَبِمَا كُنْتُمْ تَمْرَحُونَۚ ﴿٧٥﴾ اُدْخُلُٓوا اَبْوَابَ جَهَنَّمَ خَالِدٖينَ فٖيهَاۚ فَبِئْسَ مَثْوَى الْمُتَكَبِّرٖينَ ﴿٧٦﴾

71, 72, 73, 74, 75, 76- "O zaman onlar, boyunlarında demir halkalar ve zincirler olduğu halde kaynar suda sürüklenecekler, sonra da ateşte yakılacaklardır. Sonra onlara: 'Allah'ı bırakıp da ortak koştuklarınız nerede?' denilir. Onlar da: 'Bizden uzaklaştılar. Hayır, demek ki biz, önceleri hiçbir şeye tapmıyormuşuz' derler. İşte Allah, inkârcıları böyle saptırır. Bu, sizin yeryüzünde haksız yere şımarmanızdan ve böbürlenmenizden ötürüdür. Onlara şöyle denir: 'Ebedî kalmak üzere, cehennem kapılarından girin. Büyüklük taslayanların yeri ne kötüdür!'

Onlar boyunlarında demir halkalar olduğu halde cehennemde sürünecekler, sonra da kendilerine çeşitli azaplar tattırılacaktır. Bu esnada küfürlerini ve günahlarını itiraf ettiklerinde kendilerine: *"İçinde ebedî kalmak üzere, cehennemin kapılarından girin"* denir. Onların yerleri ve akıbetleri ne kötüdür! Gidişleri de kötüdür.

فَاصْبِرْ اِنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّ فَاِمَّا نُرِيَنَّكَ بَعْضَ الَّذ۪ي نَعِدُهُمْ اَوْ نَتَوَفَّيَنَّكَ فَاِلَيْنَا يُرْجَعُونَ ﴿٧٧﴾

77- "Sen sabret! Şüphesiz Allah'ın verdiği söz gerçektir. Onları uyardığımız azabın bir kısmını sana göstersek de seni vefat ettirsek de sonunda onlar bize döndürüleceklerdir."

Sen, kalbinle onlardan boşal! Sonra onlara neler yapılacağına bak ve batıllarının ortalıkta dolaşmasının hiçbir kalıcılığının olmadığına kesin olarak inan. Şayet kendilerini uyardığımız hususların bir kısmını görürsen, zaten mesele yoktur. Aksi halde yine sen, bu hususlarla daha sonra karşı karşıya kalacakları konusunda şüphe içinde olma. Sonra Allah, Hz. Peygamber'i teselli etmeyi, ona sabır telkin etmeyi ve kendisini bilgilendirmeyi yenilemeyi şu sözleriyle pekiştirmiştir:

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا رُسُلًا مِنْ قَبْلِكَ مِنْهُمْ مَنْ قَصَصْنَا عَلَيْكَ وَمِنْهُمْ مَنْ لَمْ نَقْصُصْ عَلَيْكَ وَمَا كَانَ لِرَسُولٍ اَنْ يَأْتِيَ بِاٰيَةٍ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ فَاِذَا جَٓاءَ اَمْرُ اللّٰهِ قُضِيَ بِالْحَقِّ وَخَسِرَ هُنَالِكَ الْمُبْطِلُونَ ﴿٧٨﴾

78- "Andolsun, senden önce de peygamberler gönderdik. Onlardan sana anlattıklarımız da var, anlatmadıklarımız da var. Hiçbir peygamber Allah'ın izni olmadan bir mucize getiremez. Allah'ın emri gelince de hak yerine getirilir. İşte o zaman bunu bâtıl sayanlar, hüsrana uğrarlar."

Biz sana bazılarının kıssalarını anlattık, diğer bazılarının kıssaları hakkında ise sana bilgi vermedik.

Bir de biz dilediğimiz zaman dilediğimiz şeyi onun üzerinde göstermedikçe bir tek mucize bile getirmek, hiç kimsenin gücü dâhilinde değildir. İşte aynı şekilde eğer onlar senden bir mucize isterlerse, hiç şüphesiz biz, mazeretlerini ortadan kaldıracak şekilde senin üzerinde mucizeler gösterdik, işin doğruluğunu açıkladık. Onların önerdiklerine gelince, biz dilersek gösterir, dilersek terk ederiz.

اَللّٰهُ الَّذ۪ي جَعَلَ لَكُمُ الْاَنْعَامَ لِتَرْكَبُوا مِنْهَا وَمِنْهَا تَاْكُلُونَ ﴿٧٩﴾ وَلَكُمْ
ف۪يهَا مَنَافِعُ وَلِتَبْلُغُوا عَلَيْهَا حَاجَةً ف۪ي صُدُورِكُمْ وَعَلَيْهَا وَعَلَى
الْفُلْكِ تُحْمَلُونَ ﴿٨٠﴾ وَيُر۪يكُمْ اٰيَاتِه۪ فَاَيَّ اٰيَاتِ اللّٰهِ تُنْكِرُونَ ﴿٨١﴾

79, 80,81- "Allah, bir kısmına binesiniz, bir kısmını da yiyesiniz diye sizin için hayvanları yaratandır. Onlarda sizin için daha birçok faydalar da vardır. Gönüllerinizdeki ihtiyaçlara kendileri üzerinden ulaşasınız diye onları yaratmıştır. Onlarla ve gemilerle taşınırsınız. Allah, size ayetlerini gösteriyor. Allah'ın hangi ayetlerini inkâr edersiniz?"

Allah onlara, hayvanları emirlerine vermek suretiyle yaptığı büyük inamı hatırlatarak şöyle buyurmuştur: Allah binmek, yük yüklemek ve çalıştırmak suretiyle onlardan yararlanmanız, etlerini ve yağlarını yemeniz, yünlerinden, tüylerinden ve kıllarından istifade etmeniz ve üzerlerinde uzak mesafeler almanız için hayvanları sizin için yarattı. Böylece siz, hayvanların üzerinde ve gemilerde bir yerden bir yere geçiyorsunuz. Bunu size müyesser kılan ise benim. Onlardan faydalanmayı size ilham eden de benim. O halde bu konuda emin olun ve O'nu tanıyın.

اَفَلَمْ يَس۪يرُوا فِي الْاَرْضِ فَيَنْظُرُوا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الَّذ۪ينَ مِنْ
قَبْلِهِمْ كَانُوا اَكْثَرَ مِنْهُمْ وَاَشَدَّ قُوَّةً وَاٰثَارًا فِي الْاَرْضِ فَمَا اَغْنٰى
عَنْهُمْ مَا كَانُوا يَكْسِبُونَ ﴿٨٢﴾ فَلَمَّا جَاءَتْهُمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنَاتِ
فَرِحُوا بِمَا عِنْدَهُمْ مِنَ الْعِلْمِ وَحَاقَ بِهِمْ مَا كَانُوا بِه۪ يَسْتَهْزِؤُنَ
﴿٨٣﴾ فَلَمَّا رَاَوْا بَاْسَنَا قَالُوا اٰمَنَّا بِاللّٰهِ وَحْدَهُ وَكَفَرْنَا بِمَا كُنَّا بِه۪
مُشْرِك۪ينَ ﴿٨٤﴾ فَلَمْ يَكُ يَنْفَعُهُمْ ا۪يمَانُهُمْ لَمَّا رَاَوْا بَاْسَنَا سُنَّتَ
اللّٰهِ الَّت۪ي قَدْ خَلَتْ ف۪ي عِبَادِه۪ وَخَسِرَ هُنَالِكَ الْكَافِرُونَ ﴿٨٥﴾

82, 83, 84, 85- "Onlar, yeryüzünde dolaşıp kendilerinden önce gelenlerin akıbetlerinin nasıl olduğuna bakmadılar mı? Onlar, kendilerinden daha çok, daha güçlü ve onların yeryüzündeki eserleri daha üstündü. Fakat kazanmakta oldukları şeyler, onlara bir fayda vermemişti. Peygamberleri onlara apaçık deliller getirince, sahip oldukları bilgi ile şımardılar. Sonunda alaya almakta oldukları şey, kendilerini sarıverdi. Azabımızı gördükleri zaman: 'Yalnız Allah'a inandık, O'na ortak koşmakta olduğumuz şeyleri inkâr ettik' dediler. Fakat azabımızı gördükleri zaman, inanmaları kendilerine fayda vermedi. Bu, Allah'ın kulları hakkında eskiden beri yürürlükte olan kanunudur. İşte orada inkârcılar hüsrana uğradılar."

Allah, onlara kendilerinden öncekilerden ibret almalarını emretmiştir. Öncekiler daha güçlü idiler, malları daha çok ve ömürleri daha uzun idi. Derken onlar emellerinin iplerinde sürüklendiler. Bu nedenle de gururlarının çukuruna düştüler. Allah da, onlar hakkındaki muradından geri durmadı. Bir de onlar, kendilerine verdiğimiz mühlet süresi zarfında esenlik içinde olmalarına aldandılar. Sonra biz, onları ansızın azapla yakalayıverdik. Onlar ise kendileri hakkındaki muradı konusunda Allah'ı aciz bırakamadılar.

Böylece onlar, azabın şiddetini görüp hayal kırıklığı ve ümitsizliğin züllüne düşünce, yeni baştan dünyaya döndürülmeyi temenni ettiler. Bunun üzerine Allah, onlar, bu temennilerini boşa çıkarmakla karşılık vererek kendilerini, daha önce helak ettiği şirk ve gazap ehli kimselerin arasına kattı.

سورة فُصِّلَتْ

# FUSSİLET SÛRESİ

(Fussilet Sûresi 54 âyettir. Mekke'de inmiştir. Sûre adını 3 ve 44. âyetlerden almıştır. Buna, Secde, Hâ-mîm, Mesâbîh ve Akvât Sûresi de denir. Beyhakî'nin Şuabu'l-İmân'da naklettiğine göre, Resûlullah (s.a.s) Tebâreke (Mülk) ve Hâ-mîm Secde Sûrelerini okumadan uyumazdı. )

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

Bismillah'ı bilen kurtuluşa ermiştir. Bismillah'tan mahrum kalan ise kaybetmiştir. Kim ki dili Bismillah'a eşlik ederse, kalbi Bismillah'a eşlik ederse, bizi Bismillah'ın zikriyle koruyan Allah katında Bismillah ona şefaatçi olarak yeter.

حٰمٓ ﴿١﴾ تَنْزِيلٌ مِنَ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ ﴿٢﴾

1, 2- "Hâ Mîm. Bu Kur'ân, Rahmân ve Rahîm olan Allah tarafından indirilmiştir."

Hakkıma, hayatıma, sıfatlarım ve zatımdaki yüceliğime yemin ederim ki bu, Rahmân ve Rahîm olan Allah tarafından indirilmiştir.

كِتَابٌ فُصِّلَتْ اٰيَاتُهُ قُرْاٰنًا عَرَبِيًّا لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ ﴿٣﴾

3- "Bu, bilen bir tolum için Arapça bir Kur'ân olarak ayetleri genişçe açıklanmış bir kitaptır."

Onun ayetleri ve anlatmak istedikleri açıklanmıştır.

( قُرْاٰنًا عَرَبِيًّا لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ ) *"Bilen bir tolum için Arapça bir Kur'ân olarak."*

Delil herkes için ortaya konulmuş, ancak onunla basiret sahip olmak yüz çeviren inkârcılara değil, bilenlere mahsustur.

بَشِيرًا وَنَذِيرًا فَاَعْرَضَ اَكْثَرُهُمْ فَهُمْ لَا يَسْمَعُونَ ﴿٤﴾

4- "Müjdeleyici ve uyarıcı olarak gönderilmiştir. Fakat onların çoğu yüz çevirmiştir. Artık onlar işitmezler."

O, seçtiklerimiz ve seçkin kıldıklarımız için müjdeleyici olarak gönderilmiştir.

O, yolumuzdan saptırdığımız ve ayetlerimizi görmeye karşı körleştirdiğimiz kimseler için uyarıcı olarak gönderilmiştir.

( فَاَعْرَضَ اَكْثَرُهُمْ ) *"Fakat onların çoğu yüz çevirmiştir."*

Biz onları çağırırken ondan yüz çevirdiler. Bu itibarla onlar haklarında irade ettiğimiz noktada sabit kılınmışlardır. Biz de onları o vasıf üzere bilmişizdir.

وَقَالُوا قُلُوبُنَا فِي اَكِنَّةٍ مِمَّا تَدْعُونَا اِلَيْهِ وَفِي اٰذَانِنَا وَقْرٌ وَمِنْ بَيْنِنَا وَبَيْنِكَ حِجَابٌ فَاعْمَلْ اِنَّنَا عَامِلُونَ ﴿٥﴾

5- "Dediler ki: 'Bizi çağırdığın şeye karşı kalplerimiz örtüler içerisindedir. Kulaklarımızda bir ağırlık, seninle bizim aramızda da bir perde vardır. O halde sen istediğini yap. Şüphesiz biz de istediğimizi yapacağız.'"

Onlar bunu, aşağılamak ve alaya almak için söylediler. Eğer bunu basiret ürünü olarak söyleselerdi, o zaman bu onlar için tevhid anlamına gelirdi. Hal böyle olunca onlar, kalbin tasdikinden yoksun oldukları için Allah'ın gazabına uğradılar.

قُلْ اِنَّمَٓا اَنَا بَشَرٌ مِثْلُكُمْ يُوحٰٓى اِلَيَّ اَنَّمَٓا اِلٰهُكُمْ اِلٰهٌ وَاحِدٌ فَاسْتَقٖيمُٓوا اِلَيْهِ وَاسْتَغْفِرُوهُۜ وَوَيْلٌ لِلْمُشْرِكٖينَۙ ﴿٦﴾ اَلَّذٖينَ لَا يُؤْتُونَ الزَّكٰوةَ وَهُمْ بِالْاٰخِرَةِ هُمْ كَافِرُونَ ﴿٧﴾

6, 7- "De ki: 'Ben de ancaksizin gibi bir insanım. Fakat bana, ilâhınızın yalnızca bir tek ilâh olduğu vahyediliyor. Artık O'na yönelin ve O'ndan bağışlanma dileyin. Allah'a ortak koşanların vay haline!' Onlar zekâtı vermeyen kimselerdir. Onlar ahreti de inkâr ederler."

Ben şekil, yapı, beden ve yaratılış bakımından ancak sizin gibi bir beşerim. Benimle sizin aranızdaki fark ise ilâhınızın sadece bir tek ilâh olduğunun bana vahyediliyor olmasıdır. Bu itibarla özellik benim tarafımdan değil, Allah tarafındandır. Bu arada ben aranızda bir ömür kaldım ve siz beni uzunca bir zaman gördünüz. Bu süre zarfında benden ne doğru olmayan bir harekete rastladınız ne de sözlerimde bir yalan şaibesi buldunuz. Size yönelik emrim ise Allah'a kullukta dürüst olmanız ve emrine teslim olmanızdan ibarettir. Bunu kabul edene ne mutlu! Küfürde ısrar edip ayıplayanın ise vay haline!

اِنَّ الَّذٖينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ لَهُمْ اَجْرٌ غَيْرُ مَمْنُونٍ ﴿٨﴾

8- "Şüphesiz iman edip salih ameller işleyenler var ya, onlar için kesintisiz bir mükâfat vardır."

( اٰمَنُوا ) *"İman edenler"*, müşahedeedenler demektir. ( وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ ) Salih ameller işleyenler ise kulluk halinden ayrılmayanlar demektir.

( اٰمَنُوا ) *"İman edenler"*, huzuru görenler demektir. ( وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ ) *"Salih ameller işleyenler"* ise kapıda duranlar demektir.

( اٰمَنُوا ) *"İman edenler"*, huzura varanlar demektir. ( وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ ) *"Salih ameller işleyenler"* ise huzura vardıktan sonra dönüp ayrılmayanlar demektir.

( لَهُمْ اَجْرٌ غَيْرُ مَمْنُونٍ ) *"Onlar için kesintisiz bir mükâfat vardır."*

Onlar için eksilmeyen bir mükâfat vardır. Buna göre nefislerin mükâfatı cennet, kalplerin mükâfatı Allah ile hoşnut olmak, ruhların mükâfatı Allah ile ünsiyet bulmak, sırların mükâfatı da Allah'ı devamlı müşahede etmektir.

قُلْ اَئِنَّكُمْ لَتَكْفُرُونَ بِالَّذ۪ي خَلَقَ الْاَرْضَ ف۪ي يَوْمَيْنِ وَتَجْعَلُونَ لَهُٓ اَنْدَادًا ذٰلِكَ رَبُّ الْعَالَم۪ينَ ﴿٩﴾

9- "De ki: 'Siz mi yeri iki günde yaratanı inkâr ediyor ve O'na ortaklar koşuyorsunuz? O, âlemlerin Rabbidir.'"

Allah zamanı, öncesinde zaman yok ikenyarattı. Mekânı da öncesinde mekân yok iken yarattı. Bu itibarla, hiçbir mekân ve hiçbir zaman yok iken Hak (c.c.) var idi. Bu nedenle O, mekânın erişemediği ve zamanın kuşatamadığı bir azizdir.

( وَتَجْعَلُونَ لَهُٓ اَنْدَادًا ) *"O'na ortaklar koşuyorsunuz."*

Daha önce yok iken sonradan var olan şey, nasıl olur da hep var olmuş ve hep var olacak olan Allah'a ortak olabilir? O, âlemlerin Rabbidir.

وَجَعَلَ ف۪يهَا رَوَاسِيَ مِنْ فَوْقِهَا وَبَارَكَ ف۪يهَا وَقَدَّرَ ف۪يهَٓا اَقْوَاتَهَا ف۪ٓي اَرْبَعَةِ اَيَّامٍ سَوَٓاءً لِلسَّٓائِل۪ينَ ﴿١٠﴾

10- "O, dört gün içinde yeryüzünde yükselen sabit dağlar yarattı, orada bereket meydana getirdi ve orada rızık arayanların ihtiyaçlarına uygun olarak rızıklar takdir etti."

Dağlar, yeryüzünün görünürdeki dayanaklarıdır. Yeryüzünün hakikatteki dayanakları ve sabit dağları ise velilerdir.

( وَبَارَكَ ف۪يهَا ) *"Orada bereket meydana getirdi."*

Bereket artış demektir. Böylece yağmur, onlara velilerin bereketleriyle gelir, belalar da, velilerin bereketleriyle üzerlerinden kalkar.

( وَقَدَّرَ فِيهَٓا اَقْوَاتَهَا ) *"Orada rızıklar takdiretti."*

Bir de bu rızıkları tat, görünüş ve miktar bakımından değişik kıldı. Kalplerin ve sırların rızıkları ise daha önce anlatıldığı gibidir.

ثُمَّ اسْتَوٰٓى اِلَى السَّمَٓاءِ وَهِيَ دُخَانٌ فَقَالَ لَهَا وَلِلْاَرْضِ ائْتِيَا طَوْعًا اَوْ كَرْهًاۜ قَالَتَٓا اَتَيْنَا طَٓائِعِينَ ﴿١١﴾

11- "Sonra duman halinde bulunan göğe yöneldi. Ona ve yeryüzüne: 'İsteyerek veya istemeyerek gelin' dedi. İkisi de: 'İsteyerek geldik' dediler."

Ayetteki ( اسْتَوٰى ) lafzı, kast etti *"yöneldi, yapmak istedi"* demektir. Bir görüşe göre de mahiyetini sadece kendisinin bildiği bir fiil icra etti. Bir yoruma göre ise dört bir yanına düzen verdi ve içine yıldızlarını ve çiçeklerini yerleştirdi.

( فَقَالَ لَهَا وَلِلْاَرْضِ ائْتِيَا طَوْعًا اَوْ كَرْهًاۜ قَالَتَٓا اَتَيْنَا طَٓائِعِينَ ) *"Ona ve yeryüzüne: 'İsteyerek veya istemeyerek gelin' dedi. İkisi de: 'İsteyerek geldik' dediler."*

Bu ifade, mecazi bir örnek tarzında söylenmiştir. Yani yarattıklarının hiçbiri O'na zor gelmez. Bu nedenle yaratıklarından dilediği her şey O'nundur. Bir iddiaya göre ise ifadede mecaz bulunmayıp aksine Allah, onlara hayat ve akıl vererek kendilerini konuşturdu. Onlar da bunu söylediler. Bir de Allah, ibadet ehlinin nefislerini taati ve ibadeti için zemin; kalplerini de ilminin yıldızları ve marifetinin güneşleri için uzay kılmıştır.

Öte yandan nefislerin dayanakları korku, ümit, arzu ve kaygıdır. Kalplerde ise irfanın aydınlığı, tevhidin güneşleri ve ilimlerin, akılların ve nefislerin yıldızları vardır. Bir de kalpler Allah'ın elinde olup onları hükümlerinden dilediğine uygun olarak dönüştürür.

فَقَضٰيهُنَّ سَبْعَ سَمٰوَاتٍ فِي يَوْمَيْنِ وَاَوْحٰى فِي كُلِّ سَمَٓاءٍ اَمْرَهَا
وَزَيَّنَّا السَّمَٓاءَ الدُّنْيَا بِمَصَابِيحَ وَحِفْظًا ذٰلِكَ تَقْدِيرُ الْعَزِيزِ الْعَلِيمِ ﴿١٢﴾

12- "Böylece onları iki günde yedi gök olarak yarattı ve her göğe kendi işini bildirdi. En yakın göğü kandillerle süsledik ve onu koruduk. İşte bu, mutlak güç sahibi ve hakkıyla bilen Allah'ın takdiridir."

Allah en yakın göğü kandillerle, yeryüzünü de sevdiklerinin kalplerinden ibaret olan kandillerle süslemiştir. Bu nedenle gök ehli, geceleyin velilerin kalplerine baktıkları zaman bu, onların gönül ferahlığı olur. Aynı şekilde yeryüzü sakinleri de göğe baktıkları zaman yıldızları görmekle ünsiyet bulurlar.

فَاِنْ اَعْرَضُوا فَقُلْ اَنْذَرْتُكُمْ صَاعِقَةً مِثْلَ صَاعِقَةِ عَادٍ وَثَمُودَ ﴿١٣﴾

13- "Eğer yüz çevirirlerse, onlara de ki: 'Ben sizi, Âd ve Semûd kavimlerini çarpan yıldırım gibi bir yıldırıma karşı uyardım.'"

Yani seni yalanlayanlara şunu bildir: Sizin birtakım selefleriniz vardır. Eğer siz de inatta onların yolunu izler ve bu ısrardan başka bir şeye yanaşmazsanız, sizi de o benzerlerinize katarız.

اِذْ جَٓاءَتْهُمُ الرُّسُلُ مِنْ بَيْنِ اَيْدِيهِمْ وَمِنْ خَلْفِهِمْ اَلَّا تَعْبُدُوٓا اِلَّا اللّٰهَ
قَالُوا لَوْ شَٓاءَ رَبُّنَا لَاَنْزَلَ مَلٰٓئِكَةً فَاِنَّا بِمَٓا اُرْسِلْتُمْ بِهِ كَافِرُونَ ﴿١٤﴾

14- "Hani onlara peygamberler, önlerinden ve arkalarından gelmiş: 'Allah'tan başkasına ibadet etmeyin' demişler, onlar da: 'Eğer Rabbimiz dileseydi, melekleri indirirdi. Bu sebeple biz, sizinle gönderilenleri inkâr ediyoruz' demişlerdi."

فَاَمَّا عَادٌ فَاسْتَكْبَرُوا فِي الْاَرْضِ بِغَيْرِ الْحَقِّ وَقَالُوا مَنْ اَشَدُّ مِنَّا
قُوَّةً اَوَلَمْ يَرَوْا اَنَّ اللّٰهَ الَّذِي خَلَقَهُمْ هُوَ اَشَدُّ مِنْهُمْ قُوَّةً وَكَانُوا
بِاٰيَاتِنَا يَجْحَدُونَ ﴿١٥﴾

15- "Âd kavmi ise yeryüzünde haksız olarak büyüklük taslamış: 'Bizden daha güçlü kim var?' demişlerdi. Onlar, kendilerini yaratan Allah'ın onlardan daha güçlü olduğunu görmediler mi? Onlar ayetlerimizi inkâr ediyorlardı."

Onlar, nefislerinin gücüne dayandılar, ancak güçleri onlara hıyanet etti ve iyice musibetlerinin pençesine düştüler.

فَاَرْسَلْنَا عَلَيْهِمْ رِيحًا صَرْصَرًا فِي اَيَّامٍ نَحِسَاتٍ لِنُذِيقَهُمْ عَذَابَ
الْخِزْيِ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَلَعَذَابُ الْاٰخِرَةِ اَخْزٰى وَهُمْ لَا يُنْصَرُونَ ﴿١٦﴾

16- "Biz de onlara dünya hayatında zillet azabını tattırmak için o mutsuz kara günlerde üzerlerine dondurucu bir rüzgâr gönderdik. Ahiret azabı elbette daha rezil edicidir. Onlara yardım da edilmez."

Bu azap, onlardan hiçbirini bırakmamıştır.

وَاَمَّا ثَمُودُ فَهَدَيْنَاهُمْ فَاسْتَحَبُّوا الْعَمٰى عَلَى الْهُدٰى فَاَخَذَتْهُمْ
صَاعِقَةُ الْعَذَابِ الْهُونِ بِمَا كَانُوا يَكْسِبُونَ ﴿١٧﴾

17- "Semûd kavmine gelince, biz onlara doğru yolu göstermiştik. Fakat onlar, körlüğü hidayete tercih etmişler ve yaptıklarına karşılık, alçaltıcı azap yıldırımı onları çarpmıştı."

Bir görüşe göre onlar, başlangıçta inanıp tasdik ettiler. Ancak daha sonra dinden dönüp yalanladıkları için Allah, köklerini sökmede onları da diğer kardeşlerinin yerine koydu.

وَنَجَّيْنَا الَّذِينَ اٰمَنُوا وَكَانُوا يَتَّقُونَ ﴿١٨﴾

18- "İman eden ve Allah'a karşı gelmekten sakınanları ise kurtardık."

Allah, onlardan kimilerini ateşi görmeden kurtarır. Bu nedenle onlar farkına bile varmadan köprüyü geçerler. Bir topluluk da göz kamaştıran şimşek gibi geçer. Bunlar, mertebece en yüksek olanlarıdır. Bir topluluk da hızla koşan kimse gibi geçer. Bunlar da büyüklerdendir. Bir topluluk da köprünün üzerinden düşer ve melekler onları tekrar köprünün üstüne çıkarırlar. Kimileri de bir şeyler olduktan sonra geçerler. Bu çerçevede kimileri cehenneme girdikten sonra bazılarını ateş ayak bileklerine kadar, sonra dizlerine kadar, sonra bellerine kadar yakalar. Derken ateş kalbe ulaşınca Allah ateşe: *"Onun kalbini yakma, çünkü o benim uğrumda yanmıştır"* der. Kimileri de yanmaktan derileri dökülüp kömür veya kül haline geldikten sonra cehennemden çıkarlar.

وَيَوْمَ يُحْشَرُ اَعْدَآءُ اللّٰهِ اِلَى النَّارِ فَهُمْ يُوزَعُونَ ﴿١٩﴾

19- "Allah'ın düşmanlarının toplanıp yığın yığın cehenneme sevk edilecekleri günü hatırla."

حَتّٰٓى اِذَا مَا جَٓاؤُ۫هَا شَهِدَ عَلَيْهِمْ سَمْعُهُمْ وَاَبْصَارُهُمْ
وَجُلُودُهُمْ بِمَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿٢٠﴾

20- "Nihayet cehenneme vardıklarında kulakları, gözleri ve derileri, yapmış oldukları işler hakkında kendileri aleyhine şahitlik ederler."

وَقَالُوا لِجُلُودِهِمْ لِمَ شَهِدْتُمْ عَلَيْنَا قَالُوٓا اَنْطَقَنَا اللّٰهُ الَّذٖٓي
اَنْطَقَ كُلَّ شَيْءٍ وَهُوَ خَلَقَكُمْ اَوَّلَ مَرَّةٍ وَاِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ﴿٢١﴾

21- "Onlar derilerine: 'Niçin aleyhimize şahitlik ettiniz?' derler. Derileri de der ki: 'Bizi her şeyi konuşturan Allah konuşturdu. İlk defa sizi O yaratmıştı ve yine yalnızca O'na döndürülüyorsunuz.'"

وَمَا كُنْتُمْ تَسْتَتِرُونَ اَنْ يَشْهَدَ عَلَيْكُمْ سَمْعُكُمْ وَلَٓا اَبْصَارُكُمْ وَلَا
جُلُودُكُمْ وَلٰكِنْ ظَنَنْتُمْ اَنَّ اللّٰهَ لَا يَعْلَمُ كَثِيرًا مِمَّا تَعْمَلُونَ ﴿٢٢﴾

22- "Siz kulaklarınızın, gözlerinizin ve derilerinizin, aleyhinize şahitlik etmesinden sakınmıyordunuz. Lâkin yaptıklarınızın çoğunu Allah'ın bilmediğini sanıyordunuz."

وَذٰلِكُمْ ظَنُّكُمُ الَّذٖي ظَنَنْتُمْ بِرَبِّكُمْ اَرْدٰيكُمْ فَاَصْبَحْتُمْ مِنَ
الْخَاسِرٖينَ ﴿٢٣﴾

23- "İşte bu, sizin Rabbiniz hakkında beslediğiniz zannınızdır. O, sizi mahvetti de ziyana uğrayanlardan oldunuz."

**Vücutlarının parçaları, aleyhlerine şahitlik ettiler.** Ancak Allah'ın, organlarını konuşturacağı hesaplarında yoktu. Oysa her şeyi konuşturan O'dur. Bir de kendilerini karşılayacak olan acıklı akıbet, akıllarına bile gelmemişti.

( وَذٰلِكُمْ ظَنُّكُمْ ) *"Bu, sizin zannınızdır."*

İşte işi hep lafta bırakan, kendine makam biçen ve kendisinin, memleketinin önde geleni olduğuna hükmeden kimsenin de durumu böyledir. Bu nedenle onun sözü ancak halinden elde edilen burhan ve delil ile dinlenir. Eğer hali sözüne aykırı olursa, ondan sonra kendisine güvenilmeyecektir.

Bu arada Allah hakkındaki zan güzel olduğu zaman, ömrüme yemin ederim ki o zan, hakikat ile karşılanacaktır. Yok eğer bu zan aldanmanın sonucu ve dinde izin verilmeyen türden ise o takdirde şüphesiz sahibini helak edecektir.

فَاِنْ يَصْبِرُوا فَالنَّارُ مَثْوًى لَهُمْ وَاِنْ يَسْتَعْتِبُوا فَمَا هُمْ مِنَ
الْمُعْتَبٖينَ ﴿٢٤﴾

24- "Şimdi eğer dayanabilirlerse artık cehennem onların yeridir. Eğer Allah'ın rızasını kazandıracak amelleri işlemeye izin isteseler, onlara izin verilmez."

Eğer onlar çöküşün meydana geldiği yere karşı sabrederlerse, cehenneme yuvarlanacaklardır. Şayet Allah'ın buyurduğu gibi, O'nun rızasını kazandıracak ameller işlemeye izin isterlerse, onlara izin verilmez.

وَقَيَّضْنَا لَهُمْ قُرَنَاءَ فَزَيَّنُوا لَهُمْ مَا بَيْنَ اَيْدِيهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْ وَحَقَّ عَلَيْهِمُ الْقَوْلُ فِي اُمَمٍ قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِمْ مِنَ الْجِنِّ وَالْاِنْسِ اِنَّهُمْ كَانُوا خَاسِرِينَ ﴿٢٥﴾

25- "Biz, onların başına birtakım arkadaşlar sardık da bu arkadaşlar, onlara geçmişlerini ve geleceklerini süslü gösterdiler. Böylece kendilerinden önce gelip geçmiş olan cin ve insan toplulukları ile ilgili o söz, onlar için de gerçekleşti. Çünkü onlar, ziyana uğrayanlardı."

Allah, bir kul hakkında iyilik dilediği zaman ona ibadetlerde kendisine yardım edecek, onu ibadetlere yöneltecek ve davet edecek arkadaşlar verir. Onlar, kötü arkadaşlar oldukları zaman ise kendisini Allah'ın rızasına aykırı şeylere yöneltir ve çağırırlar. Bu arkadaşlardan biri de şeytandır. Çünkü o, insanın başına musallat kılınmış olup Allah'ın rızasına aykırı şeylerle ona vesvese vermekle görevlidir. Ondan daha kötüsü ise nefistir. Çünkü nefis çok kötü arkadaştır. Nitekim o, bugün kulu helakine sebep olacak şeylere çağırmakta, yarın ise hata işlediğine dair olarak aleyhine şahitlik edecektir. Bu arada nefis, -ki en kötü arkadaş kişinin kendi nefsidir- şeytanlar ve insan şeytanlarının hepsi, insanlara önlerinde duran geleceğe dönük uzun emelleri, geride bıraktıkları hataları unutmayı, tövbeyi ertelemeyi ve ibadetleri aksatmayı süslü gösterir.

وَقَالَ الَّذِينَ كَفَرُوا لَا تَسْمَعُوا لِهٰذَا الْقُرْاٰنِ وَالْغَوْا فِيهِ لَعَلَّكُمْ تَغْلِبُونَ ﴿٢٦﴾

26- "Kâfir olanlar dediler ki: 'Bu Kur'ân'ı dinlemeyin. Baskın çıkmak için o okunurken yaygara koparın.'"

Onların kalplerini inkâr istila etti ve düşmanlıkta ısrar onlarda devam etti. Bu nedenle onlar her türlü hileye başvurdular ve bu Kur'ân'ı dinlememek konusunda, kendi aralarında karşılıklı tavsiyede bulundular. Çünkü Kur'ân, kalplere galebe çalar, akılları çeler ve dinleyen herkes, ona meyleder.

Dediler ki: *"Muhammed, Kur'ân okumaya başladığı zaman, yanılgı ve hataya düşmesi için, okuyuşu esnasında fazlaca yaygara koparın."*

Onlar, Kur'ân'ı dinleyip ona iman edenin kalbi imanla nurlandırılan, kavrayışla desteklenen, zaferle güçlendirilen ve sırrıyla gaybdan işitme keşfine mazhar kılınan kimse olduğunu bilemediler. Oysa cehaletinin karanlıkları içinde kalan kimsenin kalbine iman girmez ve işitme, sırrına temas etmez.

فَلَنُذِيقَنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا عَذَابًا شَدِيدًا وَلَنَجْزِيَنَّهُمْ اَسْوَاَ الَّذِي كَانُوا
يَعْمَلُونَ ﴿٢٧﴾

27- "Kâfirlere mutlaka şiddetli bir azap tattıracağız ve onları yaptıklarının en kötüsü ile cezalandıracağız."

Allah, onları bugün, ayrılık demek olan mahrumiyetle, yarın da yanmak demek olan cehennemde ebediyen bırakmakla cezalandıracaktır.

ذٰلِكَ جَزَٓاءُ اَعْدَٓاءِ اللّٰهِ النَّارُ لَهُمْ فِيهَا دَارُ الْخُلْدِ جَزَٓاءً بِمَا كَانُوا
بِاٰيَاتِنَا يَجْحَدُونَ ﴿٢٨﴾

28- "İşte böyle, Allah düşmanlarının cezası ateştir. Ayetlerimizi inkâr etmelerinin cezası olarak orada onlar için ebedîlik yurdu vardır."

Onlar için cehennemde kesintisiz olarak ve sonu gelmeksizin utanç ve aşağılanma vardır.

وَقَالَ الَّذٖينَ كَفَرُوا رَبَّنَٓا اَرِنَا الَّذَيْنِ اَضَلَّانَا مِنَ الْجِنِّ وَالْاِنْسِ نَجْعَلْهُمَا تَحْتَ اَقْدَامِنَا لِيَكُونَا مِنَ الْاَسْفَلٖينَ ﴿٢٩﴾

29- "Kâfir olanlar şöyle derler. 'Rabbimiz! Cinlerden ve insanlardan bizi saptıranları bize göster de onları ayaklarımızın altına alalım ki en aşağılıklardan olsunlar.'"

Cinlerden saptıran İblis'tir, insanlardan da Hz. Âdem'in oğlu Kâbîl'dir. Çünkü o, günahı prensip haline getiren ilk kişidir.

( نَجْعَلْهُمَا تَحْتَ اَقْدَامِنَا ) *"Onları ayaklarımızın altına alalım."*

Bu dilek ve temenni de azaplarında artış demektir. Çünkü onlar, bu dilek ve temenniyle incinmektedirler. Bu esnada onlar, bundan kendilerine bir fayda gelmeyeceğini bilmektedirler. Zira hiçbir şey hakkındaki talepleri kabul edilmeyecek ve azap onlardan engellenmeyecektir.

Onlar hakkında bu bilginin verilmesi, aralarında kopuş ve uzaklaşmanın meydana geldiğini ifade etmektedir. Zira onlar, birbirlerinden kopup uzaklaşmaktadır. Bu, aynı zamanda vakitsiz pişmanlıktan hiçbir faydanın gelmeyeceğini de ifade etmektedir.

اِنَّ الَّذٖينَ قَالُوا رَبُّنَا اللّٰهُ ثُمَّ اسْتَقَامُوا تَتَنَزَّلُ عَلَيْهِمُ الْمَلٰٓئِكَةُ اَلَّا تَخَافُوا وَلَا تَحْزَنُوا وَاَبْشِرُوا بِالْجَنَّةِ الَّتٖي كُنْتُمْ تُوعَدُونَ ﴿٣٠﴾

30- "Şüphesiz: 'Rabbimiz Allah'tır' deyip de sonra dosdoğru olanlar var ya, onların üzerine melekler akın akın iner ve derler ki: 'Korkmayın, üzülmeyin, dünyada iken size vaat edilmekte olan cennetle sevinin!'"

( ثُمَّ اسْتَقَامُوا ) *"Sonra dosdoğru olanlar."*

Bu ifadedeki ( ثُمَّ ) *"sonra"* lafzı, zaman aralığı gerektiren bir harf olmakla birlikte sözü edilen kimselerin: ( رَبُّنَا اللّٰهُ ) *"Rabbimiz Allah'tır"* sözünü söyledikleri anda istikamet üzere olmadıklarını ifade etmez. Aksine bunun anlamı, o kimselerin o anda istikamet üzere oldukları sonra gelecekte de dosdoğru kimseler oldukları şeklindedir. Şöyle ki onlar dünyadan çıktıkları vakte kadar imanlarını sürdürmüşlerdir. Bu vakit ise mükellef oluşlarının son anıdır.

Bir yoruma göre de onlar bu sözü önce Allah'ın davetini kabul etmek üzere söyledikten sonra delilin gereği olarak basiret sahibi oldular, böylece taklit vasfı üzere kalmadılar ve beraberinde hal safiyetinin olmadığı sözle yetinmediler.

( اسْتَقَامُوا ) *"Dosdoğru olanlar."*

Dosdoğru olmak, hiçbirini ihlal etmeksizin imanın şartlarına topluca bağlı olmada sebat göstermek demektir.

Bir yoruma göre de onlar iki kısımdır:

Kimileri, tevhid ve marifetin esasları konusunda dosdoğru olurlar. Bu, bütün müminlerin vasfıdır.

Kimileri de günah işlemeksizin furû -detay hükümler- konusunda dosdoğru olanlardır. Bunlar ise farklı farklıdır.

( وَاَبْشِرُوا بِالْجَنَّةِ ) *"Cennetle sevinin."*

Bu müjdenin verildiği kimseler, tevhid konusunda dosdoğru olan ve Allah'a ortak koşmayan herkestir. Bu kimse için cehennemde ebediyen kalmayacağına dair güvence vardır. Bir yoruma göre de istikametin aslına sahip olan kimse, cehennemde ebediyen kalmaktan güven içinde olur. İstikametin kemaline sahip olan kimse ise hiçbir kötü duruma maruz kalmaksızın uyarıdan emin olur. Sonra istikamet de onların hallerine göredir. Bu çerçevede kimisi ahdinde, kimisi akdinde, kimisi çabasında ve haddini bilmede, kimisi de akdinde, çabasında, haddinde, sevgisinde ve dostluğunda istikamet sahibi olur. Bu sonuncusu, istikamet sahiplerinin en tam olanıdır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır.

- Bunlar, şuhûdun devamı ve kalbin yalnızca Allah ile beraber olması konusunda dosdoğru olan kimselerdir.

- Bunlar, akdin safiyeti, sonra ahdin yerine getirilmesi, sonra da vecdin devamı yoluyla kastın doğruluğu konusunda dosdoğru olan kimselerdir.

- Bunlar sözleriyle, sonra amelleriyle, sonra o andaki ve gelecekteki hallerinin safiyetiyle dosdoğru olan kimselerdir.

- Bunlar, Allah'ın ibadetine devam eden, O'nu tanımada dosdoğru olan, sevgisinde kendinden geçen ve hizmetinin şartlarını yerine getiren kimselerdir.

- Zahidin istikameti, dünyaya tekrar yönelmemesi ve insanlar arasındaki itibarının onu Allah'tan alıkoymamasıdır. Arifin istikameti, her iki dünyada da marifetine nefis arzusu şaibesinin bulaşmaması ve onu Mevlâ'sından alıkoymamasıdır. Abidin istikameti, tembelliğine, şehvetine uymaya dönüş yapmaması ve kalbine riya ve yapmacıklığın girmemesidir. Sevenin istikameti ise sevgilisinden bir beklentisinin olmaması, aksine vergisi yerine bekasıyla, cömertliğinin gereği yerine de izzeti ve varlığının devamıyla yetinmesidir.

(اَلَّا تَخَافُوا وَلَا تَحْزَنُوا) *"Korkmayın, üzülmeyin."*

Korku, ancak gelecek zamanda istenmeyen bir durumun meydana gelmesi veya istenen bir hususun kaçırılmasıyla ilgili olur. Bu kapsamda melekler onlara, her isteklerinin gerçekleşeceğini ve hiçbir sakıncalı durumun meydana gelmeyeceğini müjdelerler. Üzüntü ise vaktin serkeşliğinden gelir. Kim ki olan bitene rıza gösterirse hayatında onun için hiçbir üzüntü olmaz. Melekler de onlara hallerinde hiçbir aksiliğin olmadığını, onların ancak huzur ve rahatlık içinde olduklarını müjdelerler.

(وَاَبْشِرُوا بِالْجَنَّةِ) *"Cennetle sevinin."*

Yani geleceğin güzelliğiyle ve Allah'ın vaat ettiği güzel sevapla sevinin.

Bu arada, velilere melek aracılığıyla vaat edilen husus, Allah'ın lütfuyla bugün has kulları için mevcuttur. Bu nedenle onlardan hiçbirinin gelecekteki haliyle ilgili bir endişesi olmaz. Aksine o, vaktin hükmüyle uyumlu olur. Böyle olduğu için onun bir korkusu olmaz. Çünkü daha önce söylediğimiz gibi korku, gelecek ile ilgili bir kaygıdan kaynaklanır. Bu kaygı ya arzulanan bir hususun ortadan kalkması veya istenmeyen bir durumun meydana gelmesi şeklinde olur. Oysa rıza vasfına sahip kimsenin ne halinde ne de vaktinde hiçbir terslik olmaz.

Şu da söylenebilir:

Azaptan korkmayın, arkada bıraktığınız imkanlardan dolayı üzülmeyin ve gelecekteki güzel sevapla sevinin.

Bu konuda şu yorumlarda yapılmıştır:

- Veliliğin elinizden alınmasından korkmayın, geçmişte işlediğiniz cinayetten dolayı üzülmeyin ve başlangıçtaki güzel inayetle sevinin.

- Geçmişte yaptıklarınızdan korkmayın, arkada bıraktıklarınıza üzülmeyin ve kendisi için zorlandığınız cennetle sevinin.

- Zilletten korkmayın, geçmişte işlediğiniz hatadan dolayı üzülmeyin ve vuslatın devamlılığına sevinin.

نَحْنُ اَوْلِيَٓاؤُ۬كُمْ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا وَفِي الْاٰخِرَةِۚ وَلَكُمْ فِيهَا مَا تَشْتَهٖٓي
اَنْفُسُكُمْ وَلَكُمْ فِيهَا مَا تَدَّعُونَۜ ﴿٣١﴾ نُزُلًا مِنْ غَفُورٍ رَح۪يمٍ ﴿٣٢﴾

31, 32- "Biz, dünya hayatında da ahirette de dostlarınızız. Çok bağışlayan ve çok merhametli olan Allah'tan bir ağırlama olarak, orada sizin için canlarınızın çektiği her şey var. İstediğiniz her şey orada sizin için var."

Allah'tan olan dostluk, sevgi ve yardımı anlamındadır. Ayrıca bu hitabın, onlara inen melekler tarafından olması ihtimali de vardır. Bir ihtimal de bunun, Allah'tan olan hitabın bir başlangıcı olmasıdır.

Bu arada yardım sevgiden kaynaklanır. Bu nedenle eğer ezeli sevgi olmasaydı, o anda yardım olmazdı.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Biz dünya hayatında marifeti gerçekleştirmekle, ahirette de mağfireti meydana getirmekle sizin dostlarınızız.

- Biz, dünya hayatında inayetle, ahirette de güzelce yeterli olmak ve korumakla sizin dostlarınızız.

- Biz, dünya hayatında müşahedeyle, ahirette de gözle görmekle dostlarınızız.

- Dünyada kazaya rıza göstermekle, ahirette ebedilik yurdunda buluşmakla; dünyada imanla, ahirette gufranla; dünyada sevgiyle, ahirette yakınlıkla sizin dostlarınızız.

( وَلَكُمْ فِيهَا ) *"Orada sizin için."*

Yani cennette sizin için ( وَلَكُمْ فِيهَا مَا تَشْتَهِي اَنْفُسُكُمْ ) *"canlarınızın çektiği her şey vardır."* Dostluk peşindir. Arzuları gerçekleştirmek ise bir vaattir -veresiyedir-. Bu nedenle peşinle uğraşan kimse, vaatle -veresiyeyle- az uğraşır.

( وَلَكُمْ فِيهَا مَا تَدَّعُونَ ) *"İstediğiniz her şey orada sizin için var."*

Yani sizin için orada istediğiniz ve size bahşetmesi için Allah'a dua ettiğiniz her şey vardır.

( نُزُلًا مِنْ غَفُورٍ رَحِيمٍ ) *"Allah'tan bir ağırlama olarak."*

Yani bir lütuf, bir bahşetme ve ebediyete kadar devam edecek olan türlü türlü lütuflar ve sevapların bir peşinatı olarak.

( مِنْ غَفُورٍ رَحِيمٍ ) *"Çok bağışlayan ve çok merhametli olan Allah'tan."*

Bu ifadede günahkârların ümitleri için açık kapı bırakılmıştır. Çünkü mağfirete muhtaç olanlar onlardır. Nitekim eğer Allah'ın rahmeti olmasaydı onlar, O'nun mağfiretine ulaşamazlardı.

وَمَنْ اَحْسَنُ قَوْلًا مِمَّنْ دَعَٓا اِلَى اللّٰهِ وَعَمِلَ صَالِحًا وَقَالَ اِنَّن۪ي
مِنَ الْمُسْلِم۪ينَ ﴿٣٣﴾

33- "Allah'a çağıran, salih amel işleyen ve: 'Kuşkusuz ben Müslümanlardanım' diyenden daha güzel sözlü kimdir?"

Yani ondan daha güzel sözlü hiç kimse yoktur. Bu kimseden maksat Hz. Peygamber'dir (s.a.v.). Ayrıca bütün peygamberlerin amaçlanmış olma ihtimali de vardır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Onlar müminlerdir.

- Onlar, insanları Allah'a çağıran önderlerdir.

- Onlar müezzinlerdir.

- Allah'a davet eden, insanları, Allah ile yetinip O'ndan karşılık talep etmekten vazgeçmeye çağıran, işini Allah'a havale eden ve Allah'tan yine Allah'ın taksimatına rıza gösteren kimsedir.

(وَعَمِلَ صَالِحًا) *"Salih amel işleyen."*

Yani insanları Allah'a çağırdığı gibi aynı zamanda onları çağırdığı şeyleri yapan.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Salih amel işleyenler Allah yolunu tanıyan, sonra Allah yolunu izleyen, sonra da insanları Allah yoluna çağıranlardır.

- Doğrusu onlar, Allah yolunu izleyenlerdir. Böylece, Allah'ın yolunu izlemeleri ve mücadeleleriyle Allah'a giden yolu tanıyan, sonra O'na giden yolu tanıdıktan sonra halkı O'na çağıranlardır.

(وَقَالَ اِنَّن۪ي مِنَ الْمُسْلِم۪ينَ) *"'Kuşkusuz ben Müslümanlardanım' diyen."*

Allah'ın hükmüne teslim olanlar, O'nun kaza ve kaderine razı olanlardır.

وَلَا تَسْتَوِي الْحَسَنَةُ وَلَا السَّيِّئَةُ اِدْفَعْ بِالَّتِي هِيَ اَحْسَنُ فَاِذَا الَّذِي
بَيْنَكَ وَبَيْنَهُ عَدَاوَةٌ كَاَنَّهُ وَلِيٌّ حَمِيمٌ ﴿٣٤﴾

34- "İyilikle kötülük bir olmaz. Kötülüğü en güzel bir şekilde sav. Bir de bakarsın ki, seninle arasında düşmanlık bulunan kimse, sanki sıcak bir dost oluvermiştir."

Sen, kötülüğü en güzel olan hasletle yani karşılık vermeyi bırakmak, hatadan vazgeçip onu bağışlamak ve intikamı terk etmekle sav.

(فَاِذَا الَّذِي بَيْنَكَ وَبَيْنَهُ عَدَاوَةٌ كَاَنَّهُ وَلِيٌّ حَمِيمٌ) *"Bir de bakarsın ki, seninle arasında düşmanlık bulunan kimse, sanki sıcak bir dost oluvermiştir."*

O kimse içten bir dost olmamış da artık sıcak dosta benzer hale gelmiştir. Aslında bu, Allah ile olan beraberliğinin hakkına dair hizmet konusundaki güzel edep cümlesindendir. Böylece sen, Allah için kullarıyla iyi geçinmiş olursun.

Halk ile olan beraberliğin konusundaki güzel ahlak prensiplerinden biri de nefsin için intikam almaman ve hasmını bağışlamandır.

وَمَا يُلَقّٰيهَٓا اِلَّا الَّذِينَ صَبَرُوا وَمَا يُلَقّٰيهَٓا اِلَّا ذُو حَظٍّ عَظِيمٍ ﴿٣٥﴾

35- "Bu güzel davranışa ancak sabredenler kavuşturulur. Buna ancak büyük payı olanlar kavuşturulur."

Bu ahlak prensibinin hakkını ancak sabır başarısı lütfedilen ve huyların basitliklerinden ahlakın yüksekliklerine yükseltilen kimse yerine getirebilir. Derecelerin en güzeline de ancak zorluklara göğüs germeye sabreden kimse ulaşır.

وَاِمَّا يَنْزَغَنَّكَ مِنَ الشَّيْطَانِ نَزْغٌ فَاسْتَعِذْ بِاللّٰهِ اِنَّهُ هُوَ السَّمِيعُ
الْعَلِيمُ ﴿٣٦﴾

36- "Eğer şeytandan gelen kötü bir düşünce seni dürtecek olursa, hemen Allah'a sığın. Çünkü O, hakkıyla işitendir, hakkıyla bilendir."

Şeytanın kötü tahrikleri kalbine bitiştiği zaman hemen Rabbini zikret ve herhangi bir adımdan önce O'na dön. Çünkü eğer sen şeytanın ilk fısıltısına karşı koymazsan bu, düşünceye dönüşür. Ondan sonra da şeytanın çağrıda bulunduğu şeye yönelik karar gerçekleşir. Bunu önlemediğin zaman hata meydana gelir. Güzel dönüşle onu önlemediğin zaman da bu, fâsıklığa dönüşür. Zamanın ilerlemesiyle de sen her türlü felaketin tehlikesini yaşarsın.

Öte yandan kul, şeytanın tahriklerinden ancak Allah'tan içtenlikle yardım dilemek ve yardımına içtenlikle sığınmakla kurtulabilir. Bu yolla o, aynı zamanda şeytandan da kurtulmuş olur. Nitekim Allah şöyle buyurmuştur:

( إِنَّ عِبَادِي لَيْسَ لَكَ عَلَيْهِمْ سُلْطَانٌ ) *"Şüphesiz kullarım üzerinde senin hiçbir hâkimiyetin yoktur."* (İsrâ, 17/65)

Bu itibarla kul, kendi güç ve kuvvetinden daha fazla uzak durdukça ve Allah'a yakarışı, O'ndan yardım dilemesi ve O'na sığınmasıyla, O'nun huzurunda ihlas sahibi oldukça, Allah da onu daha çok korur ve şeytanı üzerinden defeder.

وَمِنْ اٰيَاتِهِ الَّيْلُ وَالنَّهَارُ وَالشَّمْسُ وَالْقَمَرُ لَا تَسْجُدُوا لِلشَّمْسِ
وَلَا لِلْقَمَرِ وَاسْجُدُوا لِلّٰهِ الَّذ۪ي خَلَقَهُنَّ اِنْ كُنْتُمْ اِيَّاهُ تَعْبُدُونَ ﴿٣٧﴾

37- "Gece, gündüz, güneş ve ay, Allah'ın varlığının delillerindendir. Güneşe ve aya secde etmeyin. Eğer gerçekten Allah'a kulluk ediyorsanız, onları yaratan Allah'a secde edin."

Allah ayetleri açıklamış, delilleri ortaya koymuş ve vuslatı amaçlayan kimsenin bahanesini ortadan kaldırmıştır. Bu arada gece ile gündüzün birbirini izlemesi ve güneş ile ayın dönmesi, Allah'ın kudretinin göstergelerinden ve tevhidinin ifadelerindendir.

( لَا تَسْجُدُوا لِلشَّمْسِ وَلَا لِلْقَمَرِ ) *"Güneşe ve aya secde etmeyin."*

Güneşe yüksekliğine bakarak, aya da aydınlığına bakarak secde etmeyin.

( وَاسْجُدُوا لِلّٰهِ ) *"Allah'a secde edin."*

Allah, O'ndan başkasına secde etmene rıza göstermez.

Bir de güneş her ne kadar yüksek de olsa, ay da her ne kadar güzel de olsa, biz onları senin için yarattık. O halde onlara değil, bize secde et.

Bir yoruma göre de Allah melekleri yaratmış, ancak ibadetlerinin çokluğuna ve taatte önde olmalarına rağmen kendilerine: "Âdem'e secde edin!" buyurmuştur. Onlardan biri buna yanaşmadığı anda da ilelebet lanetlik kılınmıştır. Oysa Allah, asi ve günahkâr Âdemoğullarına: ( لَا تَسْجُدُوا لِلشَّمْسِ وَلَا لِلْقَمَرِ ) *"Güneşe ve aya secde etmeyin"* buyurmuştur. O halde iki kesim arasında büyük fark vardır.

Öte yandan Allah (c.c.), yüzünü güneşten ve aydan korumanı emrederken sen, değersiz her arzu için ayağınla herkese gidiyor ve yüzünle herkesin yanına giriyorsun.

فَاِنِ اسْتَكْبَرُوا فَالَّذ۪ينَ عِنْدَ رَبِّكَ يُسَبِّحُونَ لَهُ بِالَّيْلِ وَالنَّهَارِ وَهُمْ لَا يَسْـَٔمُونَ ﴿٣٨﴾

38- "Eğer onlar büyüklük taslarlarsa bilsinler ki Rabbinin yanında bulunanlar, gece gündüz hiç usanmadan O'nu tesbih ederler."

Yani eğer kâfirler, yükseklik taslarlarsa hiçbir zararı yoktur. Çünkü Allah hiç kimseye muhtaç değildir. Sonra ahiret sakinleri olan melekler, Allah'a gece gündüz ibadet ettikleri halde O'nun ibadetinden usanmazlar.

وَمِنْ اٰيَاتِه۪ٓ اَنَّكَ تَرَى الْاَرْضَ خَاشِعَةً فَاِذَٓا اَنْزَلْنَا عَلَيْهَا الْمَٓاءَ اهْتَزَّتْ وَرَبَتْ اِنَّ الَّذ۪ٓي اَحْيَاهَا لَمُحْيِ الْمَوْتٰى اِنَّهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرٌ ﴿٣٩﴾

39- "Allah'ın varlığının delillerinden biri de şudur: Sen, yeryüzünü boynu bükük görürsün. Onun üzerine yağmuru indirdiğimiz zaman kıpırdar kabarır. Şüphesiz ki, onu dirilten, elbette ölüleri de diriltir. Şüphesiz O, her şeye gücü hakkıyla yetendir."

Yeryüzü kışın çorak ve kurak olur. Derken üstüne yağmur yağdığı zaman bitkiyle kıpırdar ve yeşillenir. Aynı şekilde kalpler de işledikleri günahların bilincine vardıkları için boynu bükük durdukları zaman Allah (c.c.) onlara yönelir. Bunun üzerine onlarda pişmanlığın bereketleri ortaya çıkar ve günah sahiplerinin, samimi yönelişte işlediği kusuru bağışlar. Aynı şekilde kul, muamelelerinde bir tembellik veya ibadetlerinden bir kopuş yaşar da sonra Allah onu, kendisine lütfettiği kendine gelme bilincine büründürdüğü zaman, kalbinde uyum nurları ortaya çıkar. Böylece kul, alışılmış olan makamına geri döner, rüştü tekrar tazelenip canlanır ve uyum ağacı, çoraklığa maruz kaldıktan sonra inayet suyuyla sulanmış olur.

Aynı şekilde irfan ehlinde bir duraksama belirir veya kendilerinden bir anlık sadır olan bir edep dışılığın sonucunda bir perdelenmişlik meydana gelir de sonra Allah, onlara lütuf nazarıyla baktığı zaman, ünsiyetlerinin bahçeleri kıpırdar, yakınlıklarının manzaraları yeşillenir ve duraksamalarının toplulukları hezimete uğrar.

(إِنَّ الَّذِي أَحْيَاهَا لَمُحْيِ الْمَوْتَى إِنَّهُ عَلَى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ) *"Şüphesiz ki onu dirilten, elbette ölüleri de diriltir. Şüphesiz O, her şeye gücü hakkıyla yetendir."*

Yeryüzünü ölümünden sonar dirilten Allah, canları da haşir ve neşir yoluyla diriltmeye kadirdir. Aynı şekilde O, kalpleri de duraksama ve perdelenmeden sonra, inayet nuruyla diriltmeye kadirdir.

إِنَّ الَّذِينَ يُلْحِدُونَ فِي آيَاتِنَا لَا يَخْفَوْنَ عَلَيْنَا أَفَمَنْ يُلْقَى فِي النَّارِ خَيْرٌ أَمْ مَنْ يَأْتِي آمِنًا يَوْمَ الْقِيَامَةِ اعْمَلُوا مَا شِئْتُمْ إِنَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ﴿٤٠﴾

40- "Ayetlerimiz konusunda doğruluktan sapanlar, bize gizli kalmaz. O halde kıyamet gününde ateşe atılan mı yoksa güven içinde gelen kimse mi daha iyidir? Dilediğinizi yapın. Şüphesiz O, yaptıklarınızı hakkıyla görmektedir."

Onlar, hakettikleri cezayı bulacaklardır. O halde istediklerini yapsınlar. Çünkü sadece kendi kötülükleri için çalışmış ve kendi ayaklarıyla sadece helaldlerine doğru yürümüş olurlar.

إِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا بِالذِّكْرِ لَمَّا جَاءَهُمْ وَإِنَّهُ لَكِتَابٌ عَزِيزٌ ﴿٤١﴾

41- "Kur'ân kendilerine geldiğinde onu inkâr edenler, mutlaka cezalarını göreceklerdir. Şüphesiz o, aziz bir kitaptır."

Ayetteki ( لَمَّا ) edatının cevabı mahzuf olup anlamı şöyledir:

*"Bizden koparlar ve aşağılık duruma düşerek ilelebet mutsuz olurlar."*

( وَإِنَّهُ لَكِتَابٌ عَزِيزٌ ) *"Şüphesiz o, çok değerli ve sağlam bir kitaptır."*

O, hiçbir benzeri olmayan aziz bir kitaptır. Nitekim onlar, onun bir benzerini getirmekten aciz kaldılar. O, bidatçiler ve kâfirlerin şüphelerine galebe çalan aziz bir kitaptır.

O, hiç kimsenin karşı koyamadığı aziz bir kitaptır. Bu anlam, ( عزيز ) lafzıyla aynı kökten gelen ( عَزاز ) sözcüğünün yer aldığı, Arapların: ( أرض عزاز ) *"sağlam yapılı toprak"* şeklindeki sözlerinden anlaşılmaktadır.

O, aziz bir kitaptır. Çünkü o, aziz bir Rabbin, aziz bir melek elçiliğiyle aziz bir peygambere ve aziz bir ümmete gönderdiği sözüdür.

O, müminler nezdinde aziz bir kitaptır. Çünkü o, sevgililerinin kitabıdır. Sevgilinin sevgiliye kitabı ise aziz olur.

لَا يَأْتِيهِ الْبَاطِلُ مِنْ بَيْنِ يَدَيْهِ وَلَا مِنْ خَلْفِهِ تَنْزِيلٌ مِنْ حَكِيمٍ حَمِيدٍ ﴿٤٢﴾

42- "Ona ne önünden ne de ardından bâtıl gelmez. O, hüküm ve hikmet sahibi, övülmeye layık olan Allah tarafından indirilmiştir."

Yani ne ondan önce gelen kitaplardan ne ondan sonra gelecek olanlardan hiçbir diğer kitap, onu nakzedemez. Yani ondan sonra hiçbir kitap yoktur ve onun neshi söz konusu değildir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Anlamı lafzını geçersiz kılmaz, lafzı da anlamına aykırı olmaz.

- Kimse onun bir benzerini getiremez.

مَا يُقَالُ لَكَ اِلَّا مَا قَدْ قِيلَ لِلرُّسُلِ مِنْ قَبْلِكَ اِنَّ رَبَّكَ لَذُو مَغْفِرَةٍ وَذُو عِقَابٍ اَلِيمٍ ﴿٤٣﴾

43- "Sana ancak senden önceki peygamberlere söylenenler söylenmektedir. Hiç şüphesiz senin Rabbin hem bağışlama sahibidir hem de elem dolu bir azap sahibidir."

Tevhidin esasları dinlere göre değişmez. Bu nedenle hükümler itibariyle dinlerin özü birdir. Bu öz, Allah'ın emirlerine uymak ve yasaklarından sakınmaktır. Sonra Allah, her kitapta şunu bilmelerini söylemiş ve bunu her ümmet için bir hüküm olarak koymuştur:

*"Allah, itaatkârlara sevap verir, kâfirler için de şiddetli bir azap sahibidir."*

وَلَوْ جَعَلْنَاهُ قُرْاٰنًا اَعْجَمِيًّا لَقَالُوا لَوْلَا فُصِّلَتْ اٰيَاتُهُ ءَاَعْجَمِيٌّ وَعَرَبِيٌّ قُلْ هُوَ لِلَّذِينَ اٰمَنُوا هُدًى وَشِفَاۤءٌ وَالَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ فِي اٰذَانِهِمْ وَقْرٌ وَهُوَ عَلَيْهِمْ عَمًى اُولٰۤئِكَ يُنَادَوْنَ مِنْ مَكَانٍ بَعِيدٍ ﴿٤٤﴾

44- "Eğer biz onu başka dilde bir Kur'ân yapsaydık, onlar mutlaka: 'Onun ayetleri genişçe açıklanmalı değil miydi? Başka dilde bir kitap ve Arap bir peygamber öyle mi?' derlerdi. De ki: 'O, inananlar için bir hidayet ve şifadır. İnanmayanların kulaklarında bir ağırlık vardır ve Kur'ân onlara kapalı ve anlaşılmaz gelir. Onlara uzak bir yerden sesleniliyor.'"

Allah, çağrının doğruluğunu ve şeriatın geçerliliğini öğrenmek isteyen kimse için bahaneyi ortadan kaldırdığını bildirmiştir. Sonra kitabı müminler için şifa, kâfirler içinse mutsuzluk sebebi olmakla vasıflandırmıştır.

O, âlimler için şifadır. Çünkü onlar onunla düşünme yorgunluğundan ve duyguların şaşkınlığından kurtulup rahatlamışlardır.

O, müridlerin göğüslerinin darlığı için şifadır. Çünkü onu okumaktan hoşlanırlar, onu düşünmekten de zevk alırlar.

O, bütün varlıkların inceliğini içerdiğinden dolayı, sevenlerin kalpleri için arzunun karasevdalarından şifadır.

Üzerlerine hakikat nurlarının ve yüce Rabbin hitabının eserlerinin peş peşe inmesi sebebiyle O, ariflerin kalpleri için şifadır.

( وَالَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ فِي آذَانِهِمْ وَقْرٌ وَهُوَ عَلَيْهِمْ عَمًى ) *"İnanmayanların kulaklarında bir ağırlık vardır ve Kur'ân onlara kapalı ve anlaşılmaz gelir."*

Onlar, Allah'tan gelen kitabı kalpleriyle işitmez ve kabul etmezler. Onlar, inkârın ve cehaletin karanlıkları içinde kaldılar.

( أُولَٰئِكَ يُنَادَوْنَ مِنْ مَكَانٍ بَعِيدٍ ) *"Kur'ân onlara kapalı ve anlaşılmaz gelir."*

Günler geçtikçe onların sadece dalaletleri artar.

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا مُوسَى الْكِتَابَ فَاخْتُلِفَ فِيهِ وَلَوْلَا كَلِمَةٌ سَبَقَتْ مِنْ رَبِّكَ لَقُضِيَ بَيْنَهُمْ وَاِنَّهُمْ لَفِي شَكٍّ مِنْهُ مُرِيبٍ ﴿٤٥﴾

45- "Andolsun! Biz, Mûsâ'ya Kitâb'ı vermiştik de onda ayrılığa düşmüşlerdi. Eğer Rabbinden bir söz geçmiş olmasaydı, aralarında derhal hüküm verilirdi. Şüphesiz onlar, Kur'ân hakkında derin bir şüphe içindedirler."

Biz Mûsâ'ya Tevrat'ı verdik ve onu kavmine peygamber olarak gönderdik. Onlarsa durumu hakkında ihtilafa düştüler. Bu çerçevede,

sırrını tevhid nuruyla parlattığımız kimse onu tasdik etti. Apaçık olan konularına karşı körleştirdiğimiz ise onu yalanlama ve inkârla karşıladı.

( وَلَوْلَا كَلِمَةٌ سَبَقَتْ مِنْ رَبِّكَ ) *"Eğer Rabbinden bir söz geçmiş olmasaydı."*

Bu, cehennemdeki azaplarının kıyametin kopmasından sonra olacağına dair verilmiş olan sözdür. Eğer bu söz olmasaydı, biz köklerini hemen sökecek ve azaplarını o anda tattıracaktık.

مَنْ عَمِلَ صَالِحًا فَلِنَفْسِهٖ وَمَنْ اَسَٓاءَ فَعَلَيْهَا وَمَا رَبُّكَ بِظَلَّامٍ لِلْعَبِيدِ ﴿٤٦﴾

46- "Kim, iyi bir iş yaparsa kendi lehinedir. Kim de kötülük yaparsa kendi aleyhinedir. Rabbin kullara zulmedici değildir."

( فَلِنَفْسِهٖ ) *"Kendi lehinedir."*

Çünkü faydası onadır. Kim de kötü bir iş yaparsa o, sadece kendine zulmetmiş ve kötülük yapnuş olur. Çünkü bunun zararını çekecek ve kötülüğüyle yüzleşecek olan kendisidir.

اِلَيْهِ يُرَدُّ عِلْمُ السَّاعَةِ وَمَا تَخْرُجُ مِنْ ثَمَرَاتٍ مِنْ اَكْمَامِهَا وَمَا
تَحْمِلُ مِنْ اُنْثٰى وَلَا تَضَعُ اِلَّا بِعِلْمِهٖ وَيَوْمَ يُنَادِيهِمْ اَيْنَ شُرَكَٓائِي
قَالُوٓا اٰذَنَّاكَ مَا مِنَّا مِنْ شَهِيدٍ ﴿٤٧﴾

47- "Kıyametin ne zaman kopacağına ilişkin bilgi O'na havale edilir. Meyveler tomurcuklarından ancak O'nun bilgisi altında çıkar, dişi ancak O'nun bilgisi altında hamile kalır ve doğurur. Allah, onlara: 'Nerede bana ortak koştuklarınız?' diye seslendiği gün şöyle derler: 'Sana arz ederiz ki içimizden onları gören hiçbir kimse yok.'"

Onlar acele edip: "Kendisiyle bizi uyardığı bu kıyamet ne zaman kopacak?" deyince Allah şöyle buyurdu: "Şüphesiz kıyamet bilgisine sadece Allah sahip olduğu için onu kendisinden başkası bilmez." Bu

itibarla, nasıl ki hiç kimse ağaçlardan ne tür meyvelerin çıkacağını, kadınların rahimlerinin erkeklik, dişilik ve diğer yaratılış özellikleri bakımından ne tür çocuklar taşıdığını ve hayvanların doğuracağı yavruları bilmiyorsa -ki bu gibi şeyleri ancak Allah bilir- aynı şekilde hiç kimse kıyametin ne zaman kopacağını da bilmez.

( وَيَوْمَ يُنَادِيهِمْ اَيْنَ شُرَكَائِي ) *"Allah, onlara: 'Nerede bana ortak koştuklarınız?' diye seslendiği gün."*

Onlar, koştukları ortaklardan uzak durmaya çalışırlar ancak bunu çok pişmanlık duymalarının ve çok ağlamalarının kendilerine fayda vermediği bir zamanda yaparlar.

وَضَلَّ عَنْهُمْ مَا كَانُوا يَدْعُونَ مِنْ قَبْلُ وَظَنُّوا مَا لَهُمْ مِنْ مَحِيصٍ ﴿٤٨﴾

48- "Daha önce yalvardıkları tanrılar, onları yüz üstü bırakıp uzaklaşmıştır. Kendileri için kaçacak bir yer olmadığını anlamışlardır."

لَا يَسْئَمُ الْاِنْسَانُ مِنْ دُعَاءِ الْخَيْرِ وَاِنْ مَسَّهُ الشَّرُّ فَيَؤُسٌ قَنُوطٌ ﴿٤٩﴾

49- "İnsan, hayır istemekten usanmaz. Fakat başına bir kötülük gelince umutsuzluğa düşer, yıkılır."

İnsan, menfaat ve esenlik dilemekten usanmaz. Oysa ona bir kötülük dokunursa, ümitsizliğe kapılır ve o kötülüğün ortadan kalkacağını ümit etmez. Çünkü o, Rabbini tanımamakta ve O'na dönüş yapmada kalbinin yolu kapanmış bulunmaktadır.

وَلَئِنْ اَذَقْنَاهُ رَحْمَةً مِنَّا مِنْ بَعْدِ ضَرَّاءَ مَسَّتْهُ لَيَقُولَنَّ هٰذَا لِي وَمَا اَظُنُّ السَّاعَةَ قَائِمَةً وَلَئِنْ رُجِعْتُ اِلٰى رَبِّي اِنَّ لِي عِنْدَهُ لَلْحُسْنٰى فَلَنُنَبِّئَنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا بِمَا عَمِلُوا وَلَنُذِيقَنَّهُمْ مِنْ عَذَابٍ غَلِيظٍ ﴿٥٠﴾

50- "Andolsun! Başına gelen bir zarardan sonra kendisine tarafımızdan bir rahmet tattırsak, mutlaka: 'Bu, benim hakkımdır,

kıyametin kopacağını da sanmıyorum. Andolsun, Rabbime döndürülsem, şüphesiz O'nun yanında benim için daha güzel şeyler vardır' der. Andolsun, biz inkâr edenlere, yaptıklarını mutlaka haber vereceğiz ve andolsun, onlara mutlaka ağır azaptan tattıracağız."

Eğer biz insanın üzerinden belayı kaldırır veya kendisini ümitlendirirsek, o bunun kendisine ait bir hak veya bir tesadüf olduğunu ileri sürecek ve bunun, bizim lütfumuz ve hükmümüz olduğuna inanmayacaktır.

İnsan bir de şöyle der: "Eğer benim için haşir ve neşir olsaydı, Allah'tan bana lütuf ve iyilik gelecekti." Oysa o, yarın durumu anlayacak ve kendisinin vehmettiği gibi olmadığını öğrenecektir. Ancak bu, hak ettiği azabı kendisine tattırdığımız zaman olacaktır.

وَاِذَٓا اَنْعَمْنَا عَلَى الْاِنْسَانِ اَعْرَضَ وَنَاٰ بِجَانِبِهٖۚ وَاِذَا مَسَّهُ الشَّرُّ فَذُو
دُعَٓاءٍ عَرِيضٍ ﴿٥١﴾

51- "İnsana nimet verdiğimizde yüz çevirir ve yan çizer. Başına bir kötülük gelince de yalvarmaya koyulur."

İnsan, musibet ile lütfu birbirinden ayırt etmez. Nitekim onun, lütuf sandığı şeylerin pek çoğu imtihandır ve istidraçtır. O da bunun devam etmesini istemektedir. Aslında lütuf, beladan kurtuluş ve bahşetme olan şeylerin pek çoğunu ise musibetten sandığı için ondan nefret eder ve hoşlanmaz.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Biz, insana nimet verdiğimiz zaman, onunla birlikte haksızlığa yeltenir. Kendisini imtihana tabi tuttuğumuz zaman ise onu rahatsızlıkla karşılar.

- Biz, insana nimet verdiğimiz zaman, kendini beğenir, övünerek kibre kapılır, Rabbine şükretmez, lütfunu anmaz ve O'na ibadet makamından uzaklaşır.

Oysa bize muhtaç olmadığını gösteren kimse, istikametini şaşırır. Bu arada kendisine kötülük dokunduğu zaman çok dua eder, bolca yalvarır, ısrarla niyazda bulunur ve sürekli sıkıntının üzerinden kaldırılmasını talep eder.

Sonra sıkıntıyı üzerinden kaldırdığımız zaman da tekrar haddini aşmaya, karşı çıkmaya ve inkârdaki kötü yoluna geri döner.

قُلْ اَرَاَيْتُمْ اِنْ كَانَ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ ثُمَّ كَفَرْتُمْ بِهٖ مَنْ اَضَلُّ مِمَّنْ هُوَ فِي شِقَاقٍ بَعِيدٍ ﴿٥٢﴾ سَنُرِيهِمْ اٰيَاتِنَا فِي الْاٰفَاقِ وَفِي اَنْفُسِهِمْ حَتّٰى يَتَبَيَّنَ لَهُمْ اَنَّهُ الْحَقُّ اَوَلَمْ يَكْفِ بِرَبِّكَ اَنَّهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ شَهِيدٌ ﴿٥٣﴾ اَلَآ اِنَّهُمْ فِي مِرْيَةٍ مِنْ لِقَآءِ رَبِّهِمْ اَلَآ اِنَّهُ بِكُلِّ شَيْءٍ مُحِيطٌ ﴿٥٤﴾

52, 53, 54- "De ki: 'Ne dersiniz? Eğer o Kur'ân, Allah katından olup da siz de onu inkâr etmişseniz, o zaman derin bir ayrılık içinde bulunan kimseden daha sapkın kim olabilir? Varlığımızın delillerini ufuklarda ve kendi nefislerinde onlara göstereceğiz ki, o Kur'ân'ın gerçek olduğu onlara iyice belli olsun. Rabbinin her şeye şahit olması yetmez mi? İyi bilin ki, onlar Rablerine kavuşma konusunda şüphe içindedirler. İyi bilin ki, O, her şeyi kuşatandır.'"

( سَنُرِيهِمْ ) *"Onlara göstereceğiz."*

( سَنُرِيهِم ) *"onlara göstereceğiz"* ifadesindeki ( سَ ) harfi, gelecek anlamındadır. Yani Allah delillerden, kâinatın ahvalinde meydana gelen olaylardan ve başlarına gelen değişik işlerden onlara öyle şeyler gösterecek ki bu dinin hak olduğu, bu kitabın hak olduğu, Hz. Muhammed'in (s.a.v.) hak olduğu ve bu delilleri, olayları ve işleri icra ve inşa edenin Allah olduğu onlara belli olacaktır.

O delillerden bazıları da kâfirleri kahretmektir, İslam'ın yükselişidir ve düşmanların zayıflamasıdır.

Bir yoruma göre, ufuklardaki o delillerden biri de varlıkların özlerinin, hemcins olmada uyumlu olmasıyla birlikte hükümlerinin

değişik olmasıdır. İşte bütün bunlar, evrenin sonradan yaratıldığının ve yaratılan evrenin, Allah'ın sıfatlarını gerekli kıldığının delilleridir.

( وَفٖيٓ اَنْفُسِهِمْ ) *"Kendi nefislerinde."*

Kendi nefislerinde de yaratılmışlığın alametlerinden ve vasıfların değişmesinden kavrayabilecekleri şeyler vardır.

Bir yoruma göre de, ufuklarda ilim adamları için, nefislerinde de marifet ehli için, günah işlemeleri halinde görecekleri azabın, ibadette ihlaslı oldukları zaman ise kazanacakları sevabın delilleri vardır.

Aynı şekilde onlarda meydana gelen kabz, bast, cem, fark, hacb ve cezb gibi değişik haller ile muamelelerinde ve mücadelelerinde zorunlu olarak gördükleri şeyler de böyledir.

( اَوَلَمْ يَكْفِ بِرَبِّكَ اَنَّهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ شَهٖيدٌ ) *"Rabbinin her şeye şahit olması yetmez mi?"*

Allah kâfidir -yeterlidir-. Lakin onlar; yani kâfirler, kıyamet günü Rablerinin huzuruna çıkma konusunda şüphe içindedirler. Bu ifadedeki işaret ise şöyledir: Avam, huzur ehlinin, sırrın tariflerinden ibaret keşiflerinin olabilirliği konusunda şüphe içindedir.

( اِنَّهُ بِكُلِّ شَيْءٍ مُحٖيطٌ ) *"İyi bilin ki, O, her şeyi kuşatandır."*

Allah hakkıyla bilendir, hiçbir şey kendisine gizli kalmaz.

سورة الشّورى

# ŞÛRÂ SÛRESİ

(Şûra Sûresi 53 âyettir. Mekke'de inmiştir.
23-26. âyetler Medine'de inmiştir. Sûre adını 38. âyetten alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

Asilerin tesellisi, Allah'ın rahmetini işitmededir. Abidlerin kısmeti, Allah'ın nimetini ummalarındadır. Fakirlerin rahatı, Allah'ın taksimatına rıza göstermelerindedir. Her birinin, kendi halinden bir nasibi vardır ve her biri, nefes alıp verdiği noktada isabet etmektedir.

حٰمٓ ﴿١﴾ عٓسٓقٓ ﴿٢﴾

1, 2- "Hâ Mîm. 'Ayn Sîn Kâf."

"Hâ" harfi Allah'ın "Halîm", "Hâfız" ve "Hakîm" isimlerinin; "Mîm" O'nun "Melik", "Mâcid", "Mecîd", "Mennân", "Mü'min" ve "Muheymin" isimlerinin; "Ayn" O'nun "'Âlim", "'Adl" ve "'Âlî" isimlerinin; "Sîn" O'nun "Seyyid", "Semî'" ve "Serî'u'l-hisâb" isimlerinin; "Kâf" da, O'nun "Kâdir", "Kâhir", "Karîb", "Kadîr" ve "Kuddûs" isimlerinin anahtarıdır.

كَذٰلِكَ يُوح۪ٓي اِلَيْكَ وَاِلَى الَّذ۪ينَ مِنْ قَبْلِكَۙ اللّٰهُ الْعَز۪يزُ الْحَك۪يمُ ﴿٣﴾

3- "Mutlak güç sahibi, hüküm ve hikmet sahibi olan Allah, sana ve senden öncekilere işte böyle vahyeder."

Allah, tıpkı senden öncekilere olduğu gibi sana da aziz ve hakîm olan kendisinin vahiy indirdiği konusunda bu isimlere ve harflere yemin etmiştir. Nasıl ki aziz ve hakîm olan Allah onlara vahiy indirdi ise aynı şekilde sana da aziz ve hakîm olan Allah vahiy indirmektedir.

لَهُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَهُوَ الْعَلِيُّ الْعَظِيمُ ﴿٤﴾

4- "Göklerde ve yerde ne varsa hepsi O'nundur. O, yücedir, büyüktür."

Göklerde ve yerde ne varsa hepsi, mülk olarak O'nundur.

( وَهُوَ الْعَلِيُّ الْعَظِيمُ ) *"O, yücedir, büyüktür."*

Allah'ın yüceliği ve büyüklüğü, üstünlüğün gerektirdiği vasıflara olan liyakatidir. Yani üstünlük ve yücelik sıfatlarıyla var olmasının vacip oluşudur.

تَكَادُ السَّمٰوَاتُ يَتَفَطَّرْنَ مِنْ فَوْقِهِنَّ وَالْمَلٰٓئِكَةُ يُسَبِّحُونَ بِحَمْدِ رَبِّهِمْ وَيَسْتَغْفِرُونَ لِمَنْ فِي الْاَرْضِ اَلَٓا اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْغَفُورُ الرَّحِيمُ ﴿٥﴾

5- "Neredeyse gökler üstlerinden çatlayacaklar. Melekler ise Rablerini hamd ile tesbih ederler ve yeryüzündekiler için bağışlanma dilerler. İyi bilin ki Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Yani neredeyse gökler, üstlerindekinin yüceliğinden çatlayacaklar. Üstlerindeki ise Allah'tır. Buradaki üstlük, mertebe bakımından üstlüktür. Göklerin bu durumu, Allah'tan olan aşırı korkularındandır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Bu durum, göklerin üzerindeki meleklerin çok olmalarından dolayı meydana getirdikleri ağırlık sebebiyledir. Bir hadiste şöyle denilmiştir:

*"Gök, şiddetle feryat etmiştir. Feryat etmek de hakkıdır. Göklerde bir ayak izi kadar yer yoktur ki üzerinde ayakta ibadete duran veya rükûa varan ya da secdeye kapanan biri olmasın."*

- Bu ifade, Arapların adeti üzeredir. Onlar, bir şeyi anlattıkları zaman: *"Neredeyse gökler ondan dolayı çatlayacaktı"* derler. Burada ise müşriklerin sözlerinin çirkinliği ve Allah'a karşı cüretkâr davranmaları ve Arapların: *"Neredeyse gökler çatlayacaktı"* şeklindeki sözlerinin büyüklüğü sebebiyle bu üslup kullanılmıştır. Allah şöyle buyurmuştur:

(لَقَدْ جِئْتُمْ شَيْـًٔا اِدًّا ﴿٨٩﴾ تَكَادُ السَّمٰوَاتُ يَتَفَطَّرْنَ مِنْهُ وَتَنْشَقُّ الْاَرْضُ وَتَخِرُّ
الْجِبَالُ هَدًّا ﴿٩٠﴾ اَنْ دَعَوْا لِلرَّحْمٰنِ وَلَدًا ﴿٩١﴾)

*"Andolsun, siz çok çirkin bir şey ortaya attınız. Rahman'a çocuk isnat etmelerinden dolayı neredeyse gökler parçalanacak, yer yarılacak, dağlar yıkılıp çökecektir."* (Meryem, 19/89, 90, 91)

Bu yoruma göre (يَتَفَطَّرْنَ مِنْ فَوْقِهِنَّ) *"üstlerinden çatlayacaklar"* ifadesi, göklerin aşağısına kadar demektir. Yani neredeyse hepsi çatlayacaktı.

Bu arada, Hz. Âdem'in çocukları bu vasıf üzere olmakla birlikte melekler, yorulmaksızın Rablerinin hamdıyla tesbihte bulunur ve yeryüzündekilere bağışlanma dilerler.

Sonra Allah şöyle buyurmuştur:

(اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْغَفُورُ الرَّح۪يمُ) *"İyi bilin ki Allah, çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."*

Yani günahlarının çokluğuna rağmen Allah, onları bağışlar. Bir de kâfirler, şirkleri sebebiyle bu büyük günahı işlerken Allah (c.c.), ahirette onlara azap vermek istemekle birlikte, kendilerine dünyada verdiği rızkı ve faydayı kesmez.

وَالَّذ۪ينَ اتَّخَذُوا مِنْ دُونِه۪ٓ اَوْلِيَٓاءَ اللّٰهُ حَف۪يظٌ عَلَيْهِمْ وَمَٓا اَنْتَ عَلَيْهِمْ
بِوَك۪يلٍ ﴿٦﴾

6- "Allah'tan başka dostlar edinenlere gelince Allah, onları daima gözetlemektedir. Sen, onlara vekil değilsin."

Müşrikler, Allah'ı bırakıp şeytanları dost edindiler. Bunu, kendilerine verdikleri vesveselerde şeytanlara uymak suretiyle yaptılar. Oysa onların durumu Allah'a gizli değildir ve hak ettikleriyle kendilerini cezalandıracaktır. Ey Muhammed! Sen başlarına musallat kılınmış da değilsin.

İşaret yönünden izahı ise şöyledir: Her kim, nefsinin arzusuna uymakla amel eder, Allah'ın koyduğu bir sınırı terk eder veya O'na verdiği bir sözü bozarsa, işte o, şeytanları dost edinmiş olur. Allah da bunu bilir, onun durumu Allah'a gizli kalmaz ve hesabı Allah'a ait olur; isterse onu cezalandırır, isterse de onu bağışlar.

وَكَذٰلِكَ اَوْحَيْنَٓا اِلَيْكَ قُرْاٰنًا عَرَبِيًّا لِتُنْذِرَ اُمَّ الْقُرٰى وَمَنْ حَوْلَهَا وَتُنْذِرَ
يَوْمَ الْجَمْعِ لَا رَيْبَ فِيهِ فَرِيقٌ فِي الْجَنَّةِ وَفَرِيقٌ فِي السَّعِيرِ ٧

7- "Böylece biz sana Arapça bir Kur'ân vahyettik ki şehirlerin anası olan Mekke'de ve çevresinde bulunanları uyarasın. Hakkında asla şüphe olmayan toplanma günüyle onları uyarasın. Bir grup cennette, bir grup ise cehennemdedir."

Kendisiyle Mekkelileri ve çevresindekileri korkutman için sana Arap diliyle okunan bir kitap indirdik. Bu arada bütün dünya Kabe ve Mekke'yi çevrelemektedir. Çünkü o, yeryüzünün göbeğidir.

( وَتُنْذِرَ يَوْمَ الْجَمْعِ ) *"Toplanma günüyle onları uyarasın."*

Onları kıyamet günüyle uyarasın diye. Uyarı, korkulması gereken hususu bildirmek demektir. Bütün yaratıkların toplanacağı, kişiyle amelinin, cesetle ruhunun, kişiyle hayır ve şerdeki durumunun bir araya getirileceği gün olan toplanma günün gerçekleşeceğinde hiçbir şüphe yoktur. İşte o gün bir grup cennete gönderilir, bir grup da cehenneme düşer. Bir de nasıl ki bugün onlar iki grup olup bir grup ibadetlerin rahatlığı ve lezzeti içinde iken diğer bir grup da şirkin karanlığı ve inkârın azabı içinde ise, aynı şekilde yarın da bir grup Allah ile buluşma ehli iken bir grup da mutsuzluk ve musibet ehlidir.

وَلَوْ شَٓاءَ اللّٰهُ لَجَعَلَهُمْ اُمَّةً وَاحِدَةً وَلٰكِنْ يُدْخِلُ مَنْ يَشَٓاءُ ف۪ي رَحْمَتِه۪ وَالظَّالِمُونَ مَا لَهُمْ مِنْ وَلِيٍّ وَلَا نَص۪يرٍ ﴿٨﴾ اَمِ اتَّخَذُوا مِنْ دُونِه۪ٓ اَوْلِيَٓاءَ فَاللّٰهُ هُوَ الْوَلِيُّ وَهُوَ يُحْيِ الْمَوْتٰى وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرٌ ﴿٩﴾

8, 9- "Allah dileseydi, onları bir tek ümmet yapardı. Fakat O, dilediğini rahmetine dâhil eder. Zalimlerin ise bir dost ve yardımcısı yoktur. Yoksa onlar, Allah'tan başka dostlar mı edindiler? Halbuki gerçek dost Allah'tır. O, ölüleri diriltir. O, her şeye hakkıyla gücü yetendir."

Eğer Allah onların hepsini hidayet ve doğru yol üzere bir araya getirmek istese hiçbir engel bulunmazdı. O zaman da bu, onlar için hiçbir süs teşkil etmez. Eğer onların hepsini fesat ve inat üzere bir araya getirmek istese bunu da önleyecek hiçbir şey olmazdı. O zaman da onlar için bundan dolayı bir kusur olmazdı. Allah, onları iradesine uygun olarak değişik yarattığına göre onları hiçbir şekilde umursamaz. Şüphesiz O, karşı konulmaz ve emir almaz bir tek ilâh olup iyilik, kötülük, fayda ve zarar ne varsa bütün işlerin sahibidir. Bugün de yarın da canları ve kalpleri diriltecek ve öldürecek olan O'dur. Aynı zamanda O'nun her şeye gücü yeter.

وَمَا اخْتَلَفْتُمْ ف۪يهِ مِنْ شَيْءٍ فَحُكْمُهُٓ اِلَى اللّٰهِ ذٰلِكُمُ اللّٰهُ رَبّ۪ي عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَاِلَيْهِ اُن۪يبُ ﴿١٠﴾

10- "Hakkında ayrılığa düştüğünüz herhangi bir şeyin hükmü Allah'a aittir. İşte bu, Rabbim Allah'tır. Yalnız O'na tevekkül ettim ve ancak O'na yönelirim."

(فَحُكْمُهُٓ اِلَى اللّٰهِ) *"Hükmü Allah'a aittir."*

Yani hükmü Allah'ın kitabına, Peygamberinin (s.a.v.) sünnetine, ümmetin icmaına ve kıyasın delillerine dayanır. Zaten itibar

edilecek olanlar bunlardır. Bu yönüyle onlar, şeriatın kanunu olup hepsi Allah'ın kitabından kaynaklanmaktadır. Çünkü bu, bütünün geçerliliğini gösteren yegâne delil kitaptır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Doğru bir sonuca ulaşamadığınız ve duygularınız çeliştiği zaman artık kendi tedbirinizi bırakın, ilahi takdiri görmenin gölgesine sığının ve O'nun müyesser kılmasının hükmüne göre yapmanız uygun olanı bekleyin.

- Kalpleriniz, hissiyatınızla meşgul olup hakkınızdaki hükmün mutluluk mu öngördüğünü yoksa adınızın mutsuzlukla mı geçtiğini bilmediğiniz zaman, o konuda işi Allah'a havale edin ve akıbetleriniz hakkında bilgi sahibi olmanız mümkün olmayan şeyleri düşünmeksizin, o anda Allah'ın emriyle meşgul olun.

فَاطِرُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ جَعَلَ لَكُمْ مِنْ اَنْفُسِكُمْ اَزْوَاجًا وَمِنَ الْاَنْعَامِ
اَزْوَاجًا يَذْرَؤُكُمْ فِيهِ لَيْسَ كَمِثْلِهِ شَيْءٌ وَهُوَ السَّمِيعُ الْبَصِيرُ ﴿١١﴾

11- "O, gökleri ve yeri yaratandır. Size kendinizden eşler, hayvanlardan da eşler yaratmıştır. Bu şekilde sizi üretiyor. O'nun benzeri hiçbir şey yoktur. O, hakkıyla işitendir, hakkıyla görendir."

Allah size kendinizden eşler, yani benzerler yaratmıştır. Mesela, Hz. Havva'yı Hz. Âdem'den yarattı. Üremenin devamı için bütün canlıları da hemcins yarattı.

( يَذْرَؤُكُمْ ) lafzı, yaratılışınızı çoğaltıyor -üreyip çoğalmanızı sağlıyor- demektir. ( فيه ) lafzındaki *"hâ"* zamiri de karna gitmektedir. Yani Allah, karında üreyip çoğalmanızı sağlıyor. Ayrıca bir görüşe göre söz konusu zamir rahme, diğer bir görüşe göre de evlendirmeye gider.

( لَيْسَ كَمِثْلِهِ شَيْءٌ ) *"O'nun benzeri hiçbir şey yoktur."*

Çünkü gökleri ve yeri yaratan O'dur. Bir de ne O'na benzeyen hiçbir benzer ne de hiçbir varlığın O'nunla şekil benzerliği söz konusudur.

Bu arada ( كمثله ) *"O'nun benzeri gibi"* ifadesindeki *"kâf"* harfi zait olup cümlenin anlamı: "O'nun benzeri hiçbir şey yoktur" şeklindedir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- İfadede zait olan, ( مثل ) *"benzer"* lafzı olup cümlenin anlamı: "O'nun gibi hiçbir şey yoktur" şeklindedir.

- Anlamı: "O'nun hiçbir benzeri yoktur" şeklindedir. Çünkü eğer Allah'ın bir benzeri olsaydı, benzeri gibi bir şey de olurdu. Bu şey ise kendisidir. Hal böyle olunca: ( لَيْسَ كَمِثْلِهِ شَيْءٌ ) *"O'nun benzeri (gibi) hiçbir şey yoktur"* ifadesinin anlamı: "O'nun hiçbir benzeri yoktur" şeklinde olur. Nitekim Allah'ın ne zatında ne sıfatlarında ne de hükümlerinde hiçbir benzeri yoktur.

Kimileri, Allah'ın zatını yaratıklara benzetme -teşbih- hatasına düşerek O'nu sınır, son ve bir yerde bulunma gibi hususlarla vasıflandırmışlardır. Onlardan daha çirkin görüş sahibi olanlar ise Allah'ı organ sahibi olmakla vasıflandıranlardır. Böylece bunlar; Allah'ın görmesinin göze bağlı, işitmesinin bir organa bağlı, kudretinin de ele bağlı olduğunu ve daha başka şeyler sanmışlardır.

Kimileri de Allah'ın hükmünü kullarının hükmüyle kıyaslayarak: "Yaratıklar için çirkin olan şey, Allah için de çirkindir. Yaratıklar için güzel olan şey, Allah için de güzeldir" demişlerdir. Bütün bunlar, teşbih ehli kimselerdir. Oysa Allah teşbihe değil, tenzihe layıktır. Allah'ın layık olduğu şey tahdit değil, tevhiddir; ta'til ve temsil -işlevsizlik ve benzerlik- değil, tahsildir -oldurmaktır-.

لَهُ مَقَال۪يدُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِۚ يَبْسُطُ الرِّزْقَ لِمَنْ يَشَٓاءُ وَيَقْدِرُۜ اِنَّهُ
بِكُلِّ شَيْءٍ عَل۪يمٌ ﴿١٢﴾

12- "Göklerin ve yerin anahtarları O'nundur. Dilediğine rızkı bol verir ve dilediğine kısar. Şüphesiz O, her şeyi hakkıyla bilendir."

( مَقاليد ) kelimesi anahtarlar demektir. Anahtarlar ise hazineler için söz konusudur. Allah'ın hazineleri de O'nun kudreti kapsamındaki şeylerdir. Nasıl ki varlıkların değişik madenleri varsa, aynı şekilde kalpler de ahvalin cevherlerinin madenleridir. Bu çerçevede bazı kalpler marifetin madenleri, bazıları sevginin madenleri iken, bazıları şevk için, bazıları için de ünsiyet içindir. Kalplerin tevhid, eşsizlik, heybet ve rıza gibi başka halleri de vardır. Anahtarların Allah'a ait olduğuna dair bilgilendirmenin faydası ise kulun halk ile ilgili düşüncelerine son verip dilediğine rızkı bol veren ve dilediğine kısan, her şeyi hakkıyla bilen Allah'tan istediği şeylerin arayışına girmesidir. Allah, nefislerin ve kalplerin rızıklarını dilediği, hükmettiği ve bildiği gibi genişletir ve daraltır.

شَرَعَ لَكُمْ مِنَ الدّ۪ينِ مَا وَصّٰى بِه۪ نُوحًا وَالَّذ۪ٓي اَوْحَيْنَٓا اِلَيْكَ وَمَا وَصَّيْنَا بِه۪ٓ اِبْرٰه۪يمَ وَمُوسٰى وَع۪يسٰٓى اَنْ اَق۪يمُوا الدّ۪ينَ وَلَا تَتَفَرَّقُوا ف۪يهِ كَبُرَ عَلَى الْمُشْرِك۪ينَ مَا تَدْعُوهُمْ اِلَيْهِ اَللّٰهُ يَجْتَب۪ٓي اِلَيْهِ مَنْ يَشَٓاءُ وَيَهْد۪ٓي اِلَيْهِ مَنْ يُن۪يبُ ﴿١٣﴾

13- "'Dini dosdoğru tutun ve onda ayrılığa düşmeyin' diye Nûh'a emrettiğini, sana vahyettiğini, İbrahim'e, Mûsâ'ya ve İsa'ya emrettiğini size de din kıldı. Fakat senin kendilerini çağırdığın şey, Allah'a ortak koşanlara ağır geldi. Allah, ona dilediğini seçer. İçtenlikle kendine yönelenleri de ona ulaştırır."

Ayetteki ( شَرَعَ ) lafzı, açıklamak ve ortaya çıkarmak demektir. Dinden maksat da onun esaslarıdır. Çünkü bu esaslar, bütün semavi dinlerde aynıdır. Furûa gelince bunlar değişmektedir. Bu itibarla ayet, bütün semavî dinlerde hükümleri aynı olan meseleleri ifade etmektedir.

Sonra Allah bunu: ( شَرَعَ لَكُمْ مِنَ الدّ۪ينِ مَا وَصّٰى بِه۪ ) "*Dini dosdoğru tutun ve onda ayrılığa düşmeyin*" diye, şeklindeki sözüyle açıklamıştır.

Kıssada yer aldığına göre, insanların kendi kızları ve kız kardeşleriyle evlenmeleri, Hz. Nûh zamanında haram kılınmıştır:

وَمَا تَفَرَّقُوٓا اِلَّا مِنْ بَعْدِ مَا جَٓاءَهُمُ الْعِلْمُ بَغْيًا بَيْنَهُمْ وَلَوْلَا كَلِمَةٌ سَبَقَتْ مِنْ رَبِّكَ اِلٰٓى اَجَلٍ مُسَمًّى لَقُضِيَ بَيْنَهُمْ وَاِنَّ الَّذٖينَ اُورِثُوا الْكِتَابَ مِنْ بَعْدِهِمْ لَفٖي شَكٍّ مِنْهُ مُرٖيبٍ ﴿١٤﴾

14- "Onlar, ancak kendilerine bilgi geldikten sonra aralarındaki kıskançlık yüzünden ayrılığa düştüler. Eğer Rabbinden belli bir süreye kadar bir erteleme sözü geçmiş olmasaydı, aralarında hemen hüküm verilirdi. Onlardan sonra kitaba mirasçı kılınanlar da onun hakkında derin bir şüphe içindedirler."

Yani onlar, hiçbir mazeret ve şüphenin olmadığı zamanda, açıklamanın belirginleşmesi ve burhanın ortaya çıkmasından sonra da bâtıllarında ısrar ettiler.

(وَلَوْلَا كَلِمَةٌ سَبَقَتْ مِنْ رَبِّكَ) *"Eğer Rabbinden bir söz geçmiş olmasaydı."*

Bu söz, Allah'ın, azabı kıyamet gününe kadar ertelemeye hükmetmesidir. Yoksa temenni ettiklerini onlara hemen verecekti.

فَلِذٰلِكَ فَادْعُ وَاسْتَقِمْ كَمَٓا اُمِرْتَ وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَٓاءَهُمْ وَقُلْ اٰمَنْتُ بِمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ مِنْ كِتَابٍ وَاُمِرْتُ لِاَعْدِلَ بَيْنَكُمْ اَللّٰهُ رَبُّنَا وَرَبُّكُمْ لَنَٓا اَعْمَالُنَا وَلَكُمْ اَعْمَالُكُمْ لَا حُجَّةَ بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمْ اَللّٰهُ يَجْمَعُ بَيْنَنَا وَاِلَيْهِ الْمَصٖيرُ ﴿١٥﴾

15- "İşte bundan dolayı sen çağrıda bulun ve sana emredildiği gibi dosdoğru ol. Onların hevâ ve heveslerine uyma ve şöyle de: 'Ben, Allah'ın indirdiği her kitaba inandım ve aranızda adaleti gerçekleştirmekle emrolundum. Allah, bizim de Rabbimiz sizin de

Rabbinizdir. Bizim işlediklerimiz bize, sizin işledikleriniz sizedir. Bizimle sizin aranızda tartışılacak bir şey yoktur. Allah, hepimizi bir araya toplayacaktır. Dönüş de ancak O'nadır.'"

Yani sen, bu Kur'ân'a ve bu Hanîf dine davet et, dua ve ibadette dosdoğru ol. Allah, bütün halka dosdoğru olmayı emretmiştir. Hz. Peygamber'e ise özel olarak doğruluktan ayrılmamayı emretmiştir.

Bir yoruma göre de, (استقامة) lafzının başındaki *"elif"*, *"sin"* ve *"tâ"* harfleri, istek ve arzu anlamındadır. Yani seni dosdoğru kılmamı bendeniste, (وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَٓاءَهُمْ وَقُلْ اٰمَنْتُ بِمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ مِنْ كِتَابٍ وَاُمِرْتُ لِاَعْدِلَ بَيْنَكُمْ) *"onların hevâ ve heveslerine uyma ve şöyle de: 'Ben, Allah'ın indirdiği her kitaba inandım ve aranızda adaleti gerçekleştirmekle emrolundum.'"* Bana, hüküm vermede adil olmam ve Allah'ın, herkesin ilâhı olduğunu, yarın herkesi ameliyle sorgulayacağını, yaratıklarına karşı delilinin bulunduğunu ve insanların Mevlâ'larına muhtaç olduklarını bildirmem emredildi.

وَالَّذِينَ يُحَاجُّونَ فِي اللّٰهِ مِنْ بَعْدِ مَا اسْتُجِيبَ لَهُ حُجَّتُهُمْ دَاحِضَةٌ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَعَلَيْهِمْ غَضَبٌ وَلَهُمْ عَذَابٌ شَدِيدٌ ﴿١٦﴾

16- "Bedduası kabul edildikten sonra Allah hakkında tartışmaya girenlerin delilleri, Rableri katında hükümsüzdür. Onlara bir gazap vardır. Onlar için çetin bir azap vardır."

Hz. Peygamber'in (s.a.v.) Bedir günü müşriklere yaptığı beddua kabul edildikten sonra onlar, Allah hakkında tartışmaya giriyorlar. O kâfirlerin delili, Rableri katında geçersizdir. Çünkü onlar, bâtılı delil göstermektedirler. Aynı zamanda onlar, Allah'tan laneti ve azabı hak etmektedirler.

اَللّٰهُ الَّذِيٓ اَنْزَلَ الْكِتَابَ بِالْحَقِّ وَالْمِيزَانَ وَمَا يُدْرِيكَ لَعَلَّ السَّاعَةَ قَرِيبٌ ﴿١٧﴾

17- "Kitabı ve mizanı hak olarak indiren Allah'tır. Sen nerden bileceksin, belki de kıyamet saati yakındır."

Allah kitabı indirmiş, hükmü mizanla yani hak ile indirmiştir.

Bir yoruma göre de Allah onlara, nesneleri mizanla tartmalarını ve durumlar hakkında adalete uymalarını ilham etmiştir.

( وَمَا يُدْرِيكَ لَعَلَّ السَّاعَةَ قَرِيبٌ ) *"Sen nerden bileceksin, belki de kıyamet saati yakındır."*

Burada Allah onları tûl-i emelden -uzun emel/doyumsuzluktan- alıkoymakta ve ecelin baskın gelişini beklemeye dikkatlerini çekmektedir.

يَسْتَعْجِلُ بِهَا الَّذِينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِهَا وَالَّذِينَ اٰمَنُوا مُشْفِقُونَ مِنْهَا وَيَعْلَمُونَ اَنَّهَا الْحَقُّ اَلَآ اِنَّ الَّذِينَ يُمَارُونَ فِي السَّاعَةِ لَفِي ضَلَالٍ بَعِيدٍ ﴿١٨﴾

18- "Kıyamete inanmayanlar, onun çabuk kopmasını isterler. İnananlar ise ondan korkarlar ve onun gerçek olduğunu bilirler. İyi bilin ki kıyamet günü hakkında tartışanlar, derin bir sapıklık içindedirler."

Müminler, öldükten sonra dirilmeye ve ahiretin ondan sonraki hükümlerine inanırlar. İşlerini de Allah'a havale ederler. İmtihana çekilmekten sakındıkları için ölümü temenni etmezler. Fakat ölüm geldiği zaman ondan nefret etmezler ve ona hazırlıklı olurlar.

اَللّٰهُ لَطِيفٌ بِعِبَادِهِ يَرْزُقُ مَنْ يَشَاءُ وَهُوَ الْقَوِيُّ الْعَزِيزُ ﴿١٩﴾

19- "Allah, kullarına lütufkârdır, dilediğini rızıklandırır. O, kuvvetlidir, mutlak güç sahibidir."

Ayetteki ( لطيف ) lafzı, işlerin ince ve kapalı olanlarını bilen demektir. Aynı zamanda bu lafız, lütufkâr ve ihsan sahibi olan da demektir.

Bu anlamların ikisi de Allah'ın vasfında geçerlidir. Hakikatte ise lütuf, ibadet yapabilme gücüdür. Bir de bugün Allah'ın kula ihsanda bulunmasına sebep olan şey, O'ndan kula olan bir lütuftur.

Allah'ın vasfında lütuf, en fazla dini konularda ihsanda bulunması anlamında kullanılır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, abidlere: (لَطِيفٌ بِعِبَادِهِ) *"Kullarına lütufkârdır"* sözüyle hitap etmiştir. Yani Allah, onların ince riya ve tasannu gibi gizli hallerini bilir. Kendi hallerini ve amellerini beğenmemeleri için Allah, abidlere böyle hitap etmiştir. Günahkârlara lütufkâr sözüyle hitap etmesi ise O'nun ihsanından ümit kesmemeleri içindir.

- Allah'ın zenginlere "lütufkâr" sözüyle hitap etmesi, bir nevi tevile yeltenerek, meşru olmayan yoldan mal toplamaları konusundaki muamelelerinin inceliklerini bildiğini bilmeleri içindir. Allah fakirlere de ihsan sahibi olup dilediğine rızık verdiği anlamında, "lütufkâr" sözüyle hitap etmiştir.

- Allah'ın "Allah" sözünü işitmek heybet ve korkuya yol açmakta, "lütufkâr" sözünü işitmek ise sükûnet ve rahatlamayı sağlamaktadır. Bu itibarla "Allah" sözünü işitmek korkmalarına yol açmış, "lütufkâr" sözünü işitmek de onlara ümit vermiştir.

- "Lütufkâr", hem yeterli miktarda hem de kulun ihtiyacının üzerinde verendir.

- Allah'ın kula olan bir lütfu da O'nun lütufkâr olduğunu bilmesidir. Nitekim Allah'ın lütfu olmasaydı, kul, O'nun lütufkâr olduğunu bilmeyecekti.

- Allah'ın bir lütfu da kula yeteceğinden fazla vermesi ve onu, gücünün altında yükümlü kılmasıdır.

- Kula olan bir lütfu da akıbetini kendisi için belirsiz kılmasıdır. Çünkü eğer kul, akıbetinin mutluluk olduğunu bilseydi, ona yaslanacak ve amelini azaltacaktı. Şayet akıbetinin mutsuzluk olduğunu bilseydi, bu kez de ümidini yitirir ve amelini terk ederdi. Hal böyle olunca Allah, kulun vaktinde çok ibadet yapmasını dilemiştir.

- Kula olan bir lütfu da yaklaştığında ürküntüye kapılmaması için ecelini kendisinden saklamasıdır.

- Allah'ın kula olan bir lütfu da cennetteki hayatının tadı kaçmasın diye, dünyada yaptığı hataları kendisine unutturmasıdır.

- "Lütufkâr", sırları nurlandıran, kalbine yerleştirdiği gizli halleri kulu için koruyan ve kulun açık veya gizli olarak işlediği günahları bağışlayandır.

مَنْ كَانَ يُرِيدُ حَرْثَ الْاٰخِرَةِ نَزِدْ لَهُ فِي حَرْثِهِ وَمَنْ كَانَ يُرِيدُ
حَرْثَ الدُّنْيَا نُؤْتِهِ مِنْهَا وَمَا لَهُ فِي الْاٰخِرَةِ مِنْ نَصِيبٍ ﴿٢٠﴾

20- "Kim, ahiret kazancını isterse onun kazancını artırırız. Kim de dünya kazancını isterse, ona da istediğinden veririz; fakat onun ahirette hiçbir nasibi yoktur."

( مَنْ كَانَ يُرِيدُ حَرْثَ الْاٰخِرَةِ ) *"Kim, ahiret kazancını isterse."*

Dünyada ibadetlerdeki muvaffakiyetini, marifetlerde ve hallerin safiyetinde de hakikatteki payını artırırız. Ahirette ise onun sevabını, yakınlığını, kurtuluş yollarını ve çeşitli derecelerini artıracağız.

( وَمَنْ كَانَ يُرِيدُ حَرْثَ الدُّنْيَا ) *"Kim de dünya kazancını isterse."*

Kim dünya ile yetinerek bunu yaparsa, dünyadan istediğini kendisine veririz ancak onun ahirette hiçbir nasibi yoktur.

اَمْ لَهُمْ شُرَكٰٓؤُا شَرَعُوا لَهُمْ مِنَ الدِّينِ مَا لَمْ يَأْذَنْ بِهِ اللّٰهُ وَلَوْلَا
كَلِمَةُ الْفَصْلِ لَقُضِيَ بَيْنَهُمْ وَاِنَّ الظَّالِمِينَ لَهُمْ عَذَابٌ اَلِيمٌ ﴿٢١﴾

21- "Yoksa, Allah'ın izin vermediği bir dini kendilerine tutulacak yol kılan ortakları mı var? Eğer erteleme sözü olmasaydı, derhal aralarında hüküm verilirdi. Şüphesiz, zalimler için acı veren bir azap vardır."

( مَا لَمْ يَأْذَنْ بِهِ اللّٰهُ ) *"Allah'ın izin vermediği."*

Yani bu, Allah'ın emrettiği hususlardan değildir. Aksine o, sadece onların bir iftirasından ibarettir.

( وَلَوْلَا كَلِمَةُ الْفَصْلِ ) *"Eğer erteleme sözü olmasaydı."*

Yani eğer azabın kıyamete erteleneceğine dair olarak ezelde verilen hüküm olmasaydı.

تَرَى الظَّالِمِينَ مُشْفِقِينَ مِمَّا كَسَبُوا وَهُوَ وَاقِعٌ بِهِمْ وَالَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ فِي رَوْضَاتِ الْجَنَّاتِ لَهُمْ مَا يَشَاۤؤُنَ عِنْدَ رَبِّهِمْ ذٰلِكَ هُوَ الْفَضْلُ الْكَبِيرُ ﴿٢٢﴾

22- "Sen, zalimlerin yaptıkları şeyler tepelerine inerken bu yüzden korku ile titrediklerini göreceksin. İman edip salih ameller işleyenler ise cennet bahçelerindedirler. Onlar için Rableri katında diledikleri her şey vardır. İşte büyük lütuf budur."

Cürüm fiili gerçekleştiği zaman, Allah çoğunlukla onları herhangi bir vakte kadar cezalandırmaz. Ancak eninde sonunda onları cezalandırır. Bazen bu durum, gönül ehli bazı kimseler hakkında gerçekleşince onlar bundan üzüntü duyar ve bunun, Allah tarafından kendilerine verilmiş ve başlarına gelen peşin bir ceza olduğunu bilirler. Kâfirlere gelince onlar, yarın amel defterlerini okuduklarında, başlarına gelen azaptan korkup yüz çevireceklerdir. Çünkü azap, ister istemez başlarına gelecektir.

( وَالَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ فِي رَوْضَاتِ الْجَنَّاتِ ) *"İman edip salih ameller işleyenler ise, cennet bahçelerindedirler."*

Dünyada vuslat cennetleri, taat ve ibadetin lezzeti ve halvet vakitlerinde ünsiyetin güzelliği vardır. Ahirette ise onlar cennetin bahçelerindedirler.

( لَهُمْ مَا يَشَاۤؤُنَ عِنْدَ رَبِّهِمْ ) *"Onlar için Rableri katında diledikleri her şey vardır."*

Eğer onlar, lütfun devam etmesini isterlerse, onlar için devam eder. Şayet keşfin tamamını isterlerse bu kez onlar için o gerçekleşir. İşte büyük lütuf budur.

ذٰلِكَ الَّذ۪ي يُبَشِّرُ اللّٰهُ عِبَادَهُ الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِۜ قُلْ لَٓا اَسْـَٔلُكُمْ عَلَيْهِ اَجْرًا اِلَّا الْمَوَدَّةَ فِي الْقُرْبٰىۜ وَمَنْ يَقْتَرِفْ حَسَنَةً نَزِدْ لَهُ ف۪يهَا حُسْنًاۜ اِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ شَكُورٌ ﴿٢٣﴾

**23- "İşte Allah'ın iman eden ve salih ameller işleyen kullarına müjdelediği budur. De ki: 'Ben, buna karşılık sizden, yakınlık çerçevesindeki sevgiden başka bir ücret istemiyorum.' Kim, bir iyilik işlerse, onun iyiliğini artırırız. Şüphesiz Allah bağışlayandır, şükrün karşılığını verendir."**

(ذٰلِكَ الَّذ۪ي يُبَشِّرُ اللّٰهُ عِبَادَهُ الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ) *"İşte Allah'ın iman eden ve salih ameller işleyen kullarına müjdelediği budur."*

Allah'ın kullarına müjdelediği cennetin vasıfları, güzel nimetleri, O'nun söz verdiği sevap ve benzeri hususlar, daha önce Kur'ân'da farklı yerlerde geçti.

(قُلْ لَٓا اَسْـَٔلُكُمْ عَلَيْهِ اَجْرًا اِلَّا الْمَوَدَّةَ فِي الْقُرْبٰى) *"De ki: 'Ben, buna karşılık sizden, yakınlık çerçevesindeki sevgiden başka bir ücret istemiyorum.'"*

Ey Muhammed! De ki: Ben, buna karşılık sizden bir ücret istemiyorum. Kim birisine iyi bir müjde verirse, ona karşılık ücret talep eder. Oysa Allah, peygamberinin dilinden müminlere, sahip oldukları ebedi lütufları müjdelediği halde hiçbir ücret istememiştir. Bu itibarla Allah bir karşılık talep etmemektedir. Aynı şekilde peygamberi de bir ücret talep etmemektedir. Çünkü mümin, Allah'tan güzel bir ahlak edinmiştir. Hal böyle olunca Hz. Peygamber (s.a.v.), nasıl olur da müminlerden ücret ister ki? Kaldı ki, Hz. Peygamber (s.a.v.), kendisine iman eden herkese şefaat eder. Allah da O'na iman eden herkese sevap verir.

( إِلَّا الْمَوَدَّةَ فِي الْقُرْبٰى ) *"Yakınlık çerçevesindeki sevgiden başka."*

Yani sevgini yakınlık çerçevesinde ortaya koyarsın ve böylece taatiyle Allah'a yakın olmaya çalışan herkesi seversin.

( وَمَنْ يَقْتَرِفْ حَسَنَةً نَزِدْ لَهُ فِيهَا حُسْنًا اِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ شَكُورٌ ) *"Kim bir iyilik işlerse, onun iyiliğini artırırız. Şüphesiz Allah bağışlayandır, şükrün karşılığını verendir."*

Kıyamette sevabın katlanması, bire karşılık on ilâyedi yüze kadardır. İşte artış budur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Artış, dünyada fazlaca muvaffak olmaktır.

- Kul çabasını artırdığı zaman, biz de artışla lütfünde bulunuruz. Bu artış ise müşahedenin gerçekleştirilmesidir.

- Kim vecibelerin sevabını kazanırsa, biz de onun için lütufların güzelliğini artırırız.

- Söz konusu artışa kul kendi çabasıyla erişemez. O, beşer gücü dâhilinde olmayan hususlardandır.

اَمْ يَقُولُونَ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا فَاِنْ يَشَاِ اللّٰهُ يَخْتِمْ عَلٰى قَلْبِكَ
وَيَمْحُ اللّٰهُ الْبَاطِلَ وَيُحِقُّ الْحَقَّ بِكَلِمَاتِهِ اِنَّهُ عَلِيمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ ٢٤

24- "Yoksa: 'Yalan uydurup Allah'a iftira etti' mi diyorlar. Eğer Allah dilerse, senin kalbini mühürler. Allah batılı yok eder, sözleriyle hakkı gerçekleştirir. Şüphesiz O, kalplerde olanları bilendir."

Yani eğer sen onu uydurursan, Allah kalbini mühürler. Fakat sen, Rabbin hakkındayalan söylemedin. Bu arada ayetin anlamı şudur: "Allah, kulları hakkında dilediği şekilde tasarrufta bulunur. Bu tasarruf, uzaklaştırma ve yakınlaştırma şeklinde olur."

وَهُوَ الَّذِي يَقْبَلُ التَّوْبَةَ عَنْ عِبَادِهِ وَيَعْفُوا عَنِ السَّيِّئَاتِ وَيَعْلَمُ مَا تَفْعَلُونَ ﴿٢٥﴾

25- "Kullarından tövbeyi kabul eden, kötülükleri bağışlayan ve yaptıklarınızı bilen O'dur."

( وَيَعْفُوا عَنِ السَّيِّئَاتِ ) *"Kötülükleri bağışlayan."*

( السيئات ) lafzının başındaki ( الْ ) takısı, genel kullanımda cins anlamında olmakla birlikte burada ahd -belirli kötülükleri ifade etmek- içindir. Yani Allah, dinde adı geçen tövbenin, kabulleri için yeterli olduğu kötülükleri bağışlar. Çünkü Allah, dilediği zaman o kötülükleri bağışlar.

( وَيَعْلَمُ مَا تَفْعَلُونَ ) *"Yaptıklarınızı bilen."*

Allah, işlediğiniz değişik amelleri bilir.

Ayetteki ( الَّذِي ) lafzı, anlamları ancak sıla ile tamamlanan mevsûl isimlerdendir. Bu üslupla Allah, zatına yönelik övgü yoluyla kendini kullarına, kulun tövbesini kabul ettiğini söyleyerek tanıtmıştır. Böylece hata her ne kadar kul için kötü vasfa sebep olsa da tövbenin kabulü, Allah için övgüye layık isim sağlamaktadır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- ( عِبَادِهِ ) *"Kulları"* lafzı, özellik ifade eden bir isimdir. Çünkü Allah onları kendi zatına izafe etmiştir. O kadar ki şeyhlerden pek çok kimse, belki Allah kendisine: "Kulum" der diye, kendisini öncekilerin ve sonrakilerin hesabı kadar hesaba çekmesini temenni etmiştir. Fakat dilediklerini söyledikleri şey, ayetin: ( وَهُوَ الَّذِي يَقْبَلُ التَّوْبَةَ عَنْ عِبَادِهِ ) *"Kullarından tövbeyi kabul eden"* ifadesinde mevcuttur. O halde şeyhlerin bu temennide bulunmaları kendilerine uygun düşmemektedir. Yapmaları gereken, bu noktaya ulaşmaları için tövbe etmeleridir.

- Söz konusu olan, kötülükleri bağışlamak olunca Allah, kötülükleri çoğul ve dolaysız ifade etmek üzere: ( وَيَعْفُوا عَنِ السَّيِّئَاتِ )

"*Kötülükleri bağışlayan*" buyurmuştur. Sonra tehdit söz konusu olunca Allah bunu dolaylı olarak ifade ederek: ( وَيَعْلَمُ مَا تَفْعَلُونَ ) "*Yaptıklarınızı bilen*" buyurmuştur. Burada Allah: "Hatanı bilir" dememiş, aksine: "Yaptıklarınızı bilir" buyurmuştur. Yaptıklarının kapsamına ise hem taat hem de hata girer.

وَيَسْتَجِيبُ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ وَيَزِيدُهُمْ مِنْ فَضْلِهِ
وَالْكَافِرُونَ لَهُمْ عَذَابٌ شَدِيدٌ ﴿٢٦﴾

26- "Allah, iman edip salih ameller işleyenlerin dualarına karşılık verir. Lütfundan onlara fazlasını da verir. Kâfirler için ise çetin bir azap vardır."

Yani Allah, lütfundan onlara fazlasını ahiretteki büyük sevapla verir.

( وَيَزِيدُهُمْ مِنْ فَضْلِهِ ) "*Lütfundan onlara fazlasını da verir.*"

Ehl-i sünnet tefsir âlimlerine göre fazlasından maksat, ruyetullahtır -Allah'ı görmektir-.

Bu arada Allah, tövbeyi ve ehlini, vasıflarıyla günahkârları, sonra da iman edip salih ameller işleyen itaatkârları zikretmiştir. Söz, Allah'ı görmek demek olan fazlasına gelince Allah çoğul lafzıyla: ( وَيَزِيدُهُمْ مِنْ فَضْلِهِ ) "*Onlara fazlasını da verir*" buyurmuştur. Nitekim zamirler, kendilerinden önce geçen isimleri izlediğinde onların hepsine giderler. Buna göre ayetin anlamı şöyledir: İbadetlerin karşılığında dereceler vardır. Bu derecelerin fazlalığı ve noksanlığı, ibadetlerdeki fazlalık ve noksanlık kadardır. Allah'ı görmeye gelince onun yolu fazlalık ve lütuftur. Lütufta ise ayırım bulunmaz.

Bir rivayete göre de Allah, tövbe edenlerin tövbelerinin kabul edileceğini, tövbe etmeyenin de hatasının bağışlanacağını, itaatkârlara ise cennetin verileceğini anlatınca, birilerinin aklına: "O halde bu cehennem kimler içindir?" sorusu gelmiş olabileceğinden, şöyle buyurmuştur:

( وَالْكَافِرُونَ لَهُمْ عَذَابٌ شَدِيدٌ ) *"Kâfirler için ise çetin bir azap vardır."*

Buna göre müminlerden günahkâr olanlar için azap vardır. Ancak kâfirler için şiddetli azap vardır. Çünkü hitabın ortaya koyduğu delil, bu iki hususu gerektirmektedir; müminler için azap olduğunu ancak şiddetli olmadığını, kâfirlerin azabının ise şiddetli olduğunu iktiza etmektedir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Şayet kul, cehennem korkusu veya cennet arzusuyla tövbe etmese dahi, sırf Allah (c.c.) kabul etsin diye tövbe etmesi gerekirdi.

- Günahkârın ebediyen kalbi kırık olur. Bu nedenle o, Allah'ın itaatkârların ibadetlerini kabul ettiğini öğrendiği zaman, kendisinin müyesser kılınmış bir ibadetinin olmasını temenni eder. Bunun üzerine Allah şöyle buyurur:

*"Ey kulum! Her ne kadar senin kabule şayan bir ibadetin yoksa da tövben vardır. Eğer onunla gelirsen, kabule şayan olur."*

وَلَوْ بَسَطَ اللّٰهُ الرِّزْقَ لِعِبَادِهٖ لَبَغَوْا فِي الْاَرْضِ وَلٰكِنْ يُنَزِّلُ بِقَدَرٍ مَا
يَشَٓاءُ اِنَّهُ بِعِبَادِهٖ خَبِيرٌ بَصِيرٌ ﴿٢٧﴾

27- "Allah, kullarına rızkı bol bol verseydi, yeryüzünde mutlaka azgınlık ederlerdi. Fakat O, rızkı dilediği ölçüde indirir. Şüphesiz O, kullarından hakkıyla haberdardır ve onları hakkıyla görendir."

Zahirde bu hitap, insanların karşılıklı konuşmalarındaki özür dilemeye benzemektedir. Oysa anlamı şudur:

*"Ey fakir! Ben, dünyada rızkını geniş tutmadım. Çünkü dünyayı sana taksim ettiğim -kısmetini bol verdiğim- takdirde, azgınlık edeceğini ve yeryüzünde bozgunculuk yapmaya çalışacağını biliyordum."*

Bir yoruma göre de ( لكن ) kelimesi istidrak içindir. Buna göre ayetin anlamı şudur:

*"Ben, rızkını dilediğin kadar genişletmedim. Hepsini de senden esirgemedim. Çünkü ben onu dilediğim kadar indiririm."*

وَهُوَ الَّذِي يُنَزِّلُ الْغَيْثَ مِنْ بَعْدِ مَا قَنَطُوا وَيَنْشُرُ رَحْمَتَهُ وَهُوَ
الْوَلِيُّ الْحَمِيدُ ﴿٢٨﴾

**28-** "O, insanlar umutlarını kestikten sonra yağmuru indiren, rahmetini her tarafa yayandır. O, dost olandır, övülmeye layık olandır."

Allah (c.c.) kalpleri diriltendir. Böylece nasıl ki O, insanlar umutlarını kestikten sonra yağmuru indiriyor ve rahmetini yayıyorsa; yeryüzü çoraklığa yakalandıktan, yağmurun yağması geciktikten, insanlar yağmurun gelmesinden ümidini kestikten ve vakit geçme noktasına geldikten sonra Allah, lütfuyla yağmuru indiriyor ve sakinlerinin ümitsizliğinden sonra yeryüzüne hayat veriyor. İşte kul da böyledir. Vaktinin dalı çürüdüğü, sevgisinin duruluğu bulandığı, ünsiyetinin güneşi tutulduğu, huzurdan ve yakınlıkların alanlarından uzaklaştığı zaman, belki de Allah ona rahmetiyle bakarak sırrının üzerine rahmet yağmurlarını indirir ve ünsiyetinin meydanlarında taze gül bitirir, o da tekrar canlanmış olur.

Şiir:

*Şayet ürküttüyse beni yüz çevirmen*
*Belki döner tekrar günlerim*
*Belki de Livâ'da verdiğin söz*
*Hayat bulur, sözler dirilirler bazen*
*Nitekim dal da kurur bazen*
*Bazen de görürsün onu, yemyeşil sallanırken*

وَمِنْ اٰيَاتِهِ خَلْقُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَثَّ ف۪يهِمَا مِنْ دَٓابَّةٍ وَهُوَ
عَلٰى جَمْعِهِمْ اِذَا يَشَٓاءُ قَد۪يرٌ ﴿٢٩﴾

**29-** "Gökleri,yeri ve bu ikisi içinde yaydığı canlıları yaratması, O'nun varlığının delillerindendir. O, dilediği zaman, onları bir araya getirmeye de gücü yetendir."

Allah, yaratıkların her birinde O'nun, celalinde bir, yücelik ve cemal sıfatları itibariyle de eşsiz olduğuna dair bir delil yaratmıştır.

( وَهُوَ عَلٰى جَمْعِهِمْ اِذَا يَشَٓاءُ قَدٖيرٌ ) *"O, dilediği zaman, onları biraraya getirmeye de gücü yetendir."*

Bu ifadeden çıkan işaret şudur: Velilerinin, kalpleriyle birbirlerine ısınmaları Allah'ın (c.c.) gayretine dokunur. Bu nedenle onları ebediyen dağıtır. Nitekim gönül ehlinden herhangi bir topluluğun aynı yerde karar kılması ancak nadiren görülebilir. Bu da kısa bir süre için olur.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Savurdu felek yiğitleri, hatta sanırsın ki onlar*
*Gökyüzünün dört bir yanına düşmüş yıldızlardır*

Bazı zamanlarda ise Allah, onlara lütufta bulunmakta ve bu sayede memleketleri birbirine yakın olmakta ve zahiren aralarında toplantı ve buluşma gerçekleşmektedir. Böylece o vakit Allah (c.c.), bir araya gelmelerinde âlemin hayatı için bereketler bulunduğunu lütfuyla dikkate almış olmaktadır.

Bu durum, nadir olmakla beraber Allah dilediği zaman onları bir araya getirmeye kadirdir.

وَمَٓا اَصَابَكُمْ مِنْ مُصٖيبَةٍ فَبِمَا كَسَبَتْ اَيْدٖيكُمْ وَيَعْفُوا عَنْ كَثٖيرٍ ﴿٣٠﴾

30- "Başınıza her ne musibet gelirse, kendi yaptıklarınız yüzündendir. O, yine de çoğunu affeder."

Kul, bu ayeti hakikatte özümsediği zaman, bu takdirde eğer başına en ufak bir sıkıntı veya kendisini üzen bir durum gelir de o, bunun kendisinden meydana gelen bir edep dışılığın karşılığı ve cezası olduğunu bilirse, mahcubiyeti sebebiyle yaptığından utanacak ve bu, insanları görmekten kendisini alıkoyacaktır. O zaman insanlardan intikam almaya veya onlara karşılık vermeye ya da beddua etmeye çalışmayacaktır. Aksine, işlediği kötü fiili telafi etme arzusu,

halkın içinden başına musallat olan kimselerden nefsi için intikam alma girişiminden onu alıkoyacaktır. Bunu da o, işin tamamını Allah'a bırakarak yapacaktır.

Bir yoruma göre de kulun başına gelen belalar çoğalıp peş peşe geldiği zaman o, kötü fiillerini düşünsün. Ne kadar çok kötü şey yapmıştır ki bolca affa rağmen yaptıklarının cezası bu meblağa ulaşmıştır! İşte böyle düşündüğü zaman, günah ve isyanlarının çokluğunu bildiği için üzüntü ve tasası artacaktır.

وَمَٓا اَنْتُمْ بِمُعْجِزٖينَ فِي الْاَرْضِ وَمَا لَكُمْ مِنْ دُونِ اللّٰهِ مِنْ وَلِيٍّ
وَلَا نَصٖيرٍ ﴿٣١﴾

31- "Yeryüzünde O'nu âciz bırakamazsınız. Sizin için Allah'tan başka hiçbir dost ve yardımcı yoktur."

وَمِنْ اٰيَاتِهِ الْجَوَارِ فِي الْبَحْرِ كَالْاَعْلَامِ ﴿٣٢﴾

32- "Denizde dağlar gibi yüzen gemiler, O'nun varlığının delillerindendir."

Allah, denizde dağlar gibi yüzenlerden gemileri kast etmiştir. Allah, rüzgârı gönderip bu gemileri bazen yürütür, bazen de durdurur. Kast ettiği bir husus da bu esnada insanlara gösterdiği helak veya esenliktir. Bu yolla Allah, onları daima düşünmeye ve dikkatli olmaya teşvik etmektedir. Ayetin işaret ettiği husus ise Allah'ın insanları, vaktin durgunluğu esnasında değişik hedeflerden alıkoymak ve esenlik içerisinde korumaya almaktır. Bu nedenle yapılması gereken, her durumda şükretmektir. Şükür içten olduğu zaman ise bolca fazla sevaba vesile olur.

اِنْ يَشَاْ يُسْكِنِ الرّٖيحَ فَيَظْلَلْنَ رَوَاكِدَ عَلٰى ظَهْرِهٖ اِنَّ فٖي ذٰلِكَ
لَاٰيَاتٍ لِكُلِّ صَبَّارٍ شَكُورٍ ﴿٣٣﴾

33- "O, dilerse rüzgârı durdurur da onlar, denizin üstünde durakalırlar. Elbette bunda çok sabreden, çok şükreden herkes için ibretler vardır."

اَوْ يُوبِقْهُنَّ بِمَا كَسَبُوا وَيَعْفُ عَنْ كَث۪يرٍ ﴿٣٤﴾

34- "Yahut yaptıklarından dolayı onları helak eder, birçoğunu da affeder."

وَيَعْلَمَ الَّذ۪ينَ يُجَادِلُونَ ف۪ٓي اٰيَاتِنَاۜ مَا لَهُمْ مِنْ مَح۪يصٍ ﴿٣٥﴾

35- "Allah böyle yapar ki, ayetlerimiz hakkında tartışanlar, kendileri için kaçacak bir yer olmadığını bilsinler."

فَمَٓا اُو۫ت۪يتُمْ مِنْ شَيْءٍ فَمَتَاعُ الْحَيٰوةِ الدُّنْيَاۚ وَمَا عِنْدَ اللّٰهِ خَيْرٌ وَاَبْقٰى
لِلَّذ۪ينَ اٰمَنُوا وَعَلٰى رَبِّهِمْ يَتَوَكَّلُونَۚ ﴿٣٦﴾

36- "Size her ne verilmişse, bu dünya hayatının geçimliğidir. Allah'ın yanında bulunanlar ise iman edip Rablerine tevekkül edenler için daha hayırlı ve daha kalıcıdır."

Yani dünyadaki rahatlıklar pürüzsüz ve kusursuz olmaz. Nitekim rahatlıkların bir kısmı zaman zaman gerçekleşse de onlar, çabuk yok olur gider.

( وَمَا عِنْدَ اللّٰهِ ) "*Allah'ın yanında bulunan*" vaat edilmiş sevap, bu az mevcuttan ( خَيْرٌ ) "*daha hayırlıdır.*"

وَالَّذ۪ينَ يَجْتَنِبُونَ كَبَٓائِرَ الْاِثْمِ وَالْفَوَاحِشَ وَاِذَا مَا غَضِبُوا هُمْ
يَغْفِرُونَۚ ﴿٣٧﴾

37- "Onlar ki, büyük günahlardan ve çirkin işlerden kaçınırlar ve öfkelendikleri zaman bağışlarlar."

( كَبَٓائِرَ الْاِثْمِ ) *"Büyük günahlar"* şirktir.

( الْفَوَاحِشَ ) *"Çirkin işler"* de şirkin dışındaki hatalardır. Onlar, bu hataları terk ettikleri zaman Allah'ın gazabına uğramazlar, aksine nefislerinin serkeşliği durur. Çünkü onlar, bütün hallerde Rablerine tevekkül ederler.

وَالَّذٖينَ اسْتَجَابُوا لِرَبِّهِمْ وَاَقَامُوا الصَّلٰوةَ وَاَمْرُهُمْ شُورٰى بَيْنَهُمْ وَمِمَّا رَزَقْنَاهُمْ يُنْفِقُونَ ﴿٣٨﴾

38- "Onlar ki, Rablerinin çağrısını kabul ederler, namazı dosdoğru kılarlar, işleri aralarında şura iledir ve kendilerine verdiğimiz rızıktan Allah yolunda harcarlar."

( اسْتَجَابُوا لِرَبِّهِمْ ) *"Rablerinin çağrısını kabul ederler."*

Bu çağrı, Allah'ın onları davet ettiği ve kendilerine emrettiği çeşitli ibadetlerle ilgilidir. İşte bunlar için güzel sevap ve iyi son vardır.

Rabbinin davetini kabul eden, her nefesi Rabbinin rızasına uyum üzere kalan ve nefsinden hiçbir şey arta kalmayan kimsedir.

( وَاَمْرُهُمْ شُورٰى بَيْنَهُمْ ) *"İşleri aralarında şura iledir."*

Hiç kimse kendi görüşünü dayatmaz. Çünkü o, durumunu ve görüşünü daima eleştirir. Sonra bir şeye kesin karar verdiği zaman Allah'a tevekkül eder.

وَالَّذٖينَ اِذَٓا اَصَابَهُمُ الْبَغْيُ هُمْ يَنْتَصِرُونَ ﴿٣٩﴾

39- "Onlar ki zulme uğradıkları zaman galip gelirler."

( بَغْي ) zulüm demektir. Böylece onlardan herhangi bir kimse, uğradığı zulmün kendi nefsinden geldiğini bildiği için nefsinden ibaret olan zalimi mağlup eder. Şöyle ki dizginini çekerek muhalefetler meydanında cirit atmaktan onu alıkoyar.

وَجَزٰٓؤُا سَيِّئَةٍ سَيِّئَةٌ مِثْلُهَا فَمَنْ عَفَا وَاَصْلَحَ فَاَجْرُهُ عَلَى اللّٰهِ اِنَّهُ لَا
يُحِبُّ الظَّالِمِينَ ﴿٤٠﴾

40- "Bir kötülüğün karşılığı, onun gibi bir kötülüktür. Ama kim affeder ve arayı düzeltirse, onun mükâfatı Allah'a aittir. Şüphesiz O, zalimleri sevmez."

Yani karşılık vermede veya intikam almada, caninin size karşı işlediği cinayetin sınırını aşmayın.

(فَمَنْ عَفَا وَاَصْلَحَ فَاَجْرُهُ عَلَى اللّٰهِ) *"Ama kim affeder ve arayı düzeltirse, onun mükâfatı Allah'a aittir."*

Kim caniyi bağışlar ve Allah ile arasını düzeltirse, Allah da onunla insanların arasını düzeltir.

(فَاَجْرُهُ عَلَى اللّٰهِ) *"Onun mükâfatı Allah'a aittir."*

Allah'tan, Allah'ın uhdesinde ve Allah katında kul için mevcut olan şeyler, kulun kendi tercihiyle yaptığı şeylerden daha hayırlıdır.

وَلَمَنِ انْتَصَرَ بَعْدَ ظُلْمِهِ فَاُو۬لٰٓئِكَ مَا عَلَيْهِمْ مِنْ سَبِيلٍ ﴿٤١﴾ اِنَّمَا
السَّبِيلُ عَلَى الَّذِينَ يَظْلِمُونَ النَّاسَ وَيَبْغُونَ فِي الْاَرْضِ بِغَيْرِ
الْحَقِّ اُو۬لٰٓئِكَ لَهُمْ عَذَابٌ اَلِيمٌ ﴿٤٢﴾

41, 42- "Zulme uğradıktan sonra kendini savunup hakkını alan kimseye karşı bir yol yoktur. Ceza yolu, ancak insanlara zulmedenler ve yeryüzünde haksız yere taşkınlık edenlere karşıdır. İşte onlar için acı veren bir azap vardır."

Allah, kullarının tamamının nefsin hükümlerinden kurtulamayacağını ve güzel ahlak prensiplerine sahip olamayacağını bildiğinden, affedip bağışlamaları kendileri için daha iyi olmakla birlikte, adalet yoluyla karşılık vermelerine ruhsat tanımıştır.

(إِنَّمَا السَّبِيلُ عَلَى الَّذِينَ يَظْلِمُونَ النَّاسَ وَيَبْغُونَ فِي الْأَرْضِ بِغَيْرِ الْحَقِّ) *"Ceza yolu, ancak insanlara zulmedenler ve yeryüzünde haksız yere taşkınlık edenlere karşıdır."*

Bu yol, haddi aşan ve yapmasına izin verilmeyen davranışta bulunan kimseyi azarlamaktan ibarettir. İşte bu kimseler için acıklı bir azap vardır.

وَلَمَنْ صَبَرَ وَغَفَرَ اِنَّ ذٰلِكَ لَمِنْ عَزْمِ الْاُمُورِ ﴿٤٣﴾

43- "Her kim sabreder ve bağışlarsa işte bu, elbette azimle yapılacak işlerdendir."

Yani şikâyette bulunmaksızın belaya karşı sabreden, hasımdan vazgeçmek suretiyle onu bağışlayan ve onun aleyhinde nefsinin bir davası kalmayan, aksine hasımını hem dünyada hem de ahirette her türlü davadan ibra eden kimsenin yaptığı bu iş, azimle yapılacak işlerdendir.

وَمَنْ يُضْلِلِ اللّٰهُ فَمَا لَهُ مِنْ وَلِيٍّ مِنْ بَعْدِهٖ وَتَرَى الظَّالِمِينَ لَمَّا رَاَوُا الْعَذَابَ يَقُولُونَ هَلْ اِلٰى مَرَدٍّ مِنْ سَبِيلٍ ﴿٤٤﴾

44- "Allah kimi saptırırsa, artık bundan sonra onun hiçbir dostu yoktur. Azabı gördüklerinde zalimlerin: 'Dünyaya dönmek için bir yol var mı?' dediklerini görürsün."

Allah'ın saptırdığı, gözlerini ve basiretlerini körleştirdiği, azaplarının sıkıntısına düşürdüğü ve Rablerinin hükmüne rıza göstermenin serinliğinden yoksun bıraktığı kimseler için Allah'tan başka bir dost ve O'nun azabını kendilerinden alıkoyacak hiç kimse yoktur. Bir de görürsün ki onlar, azabı gördükleri zaman ondan kurtulmak isterler ancak kurtuluşa eremezler.

وَتَرٰيهُمْ يُعْرَضُونَ عَلَيْهَا خَاشِع۪ينَ مِنَ الذُّلِّ يَنْظُرُونَ مِنْ طَرْفٍ
خَفِيٍّ وَقَالَ الَّذ۪ينَ اٰمَنُوٓا اِنَّ الْخَاسِر۪ينَ الَّذ۪ينَ خَسِرُوٓا اَنْفُسَهُمْ
وَاَهْل۪يهِمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ اَلَٓا اِنَّ الظَّالِم۪ينَ ف۪ي عَذَابٍ مُق۪يمٍ ﴿٤٥﴾
وَمَا كَانَ لَهُمْ مِنْ اَوْلِيَٓاءَ يَنْصُرُونَهُمْ مِنْ دُونِ اللّٰهِ وَمَنْ يُضْلِلِ
اللّٰهُ فَمَا لَهُ مِنْ سَب۪يلٍ ﴿٤٦﴾

45, 46- "Ateşe sunulurken onların zilletten başlarını öne eğmiş, göz ucuyla gizli gizli baktıklarını görürsün. İnananlar da: 'İşte asıl ziyana uğrayanlar, kıyamet günü kendilerini ve ailelerini ziyana sokanlardır' diyecekler. İyi bilin ki, zalimler sürekli bir azap içindedirler. Onların Allah'tan başka kendilerine yardım edecek dostları da yoktur. Allah, kimi saptırırsa artık onun için hiçbir çıkar yol yoktur."

Bir de zelillikten boynu bükük bir halde cehenneme iletildiklerini görürsün. Bu durumda onlara ne bir pişmanlık fayda verir ne de çağrıları işitilir. Müminler de onlara yaptıkları hatırlatmalarla kendilerini ayıplarlar. Ancak onlar işitmezler. Böylece bugün ne onlara yardım edecek bir yardımcı ne de merhamet edecek bir merhamet sahibi vardır.

اِسْتَج۪يبُوا لِرَبِّكُمْ مِنْ قَبْلِ اَنْ يَأْتِيَ يَوْمٌ لَا مَرَدَّ لَهُ مِنَ اللّٰهِ مَا لَكُمْ
مِنْ مَلْجَاٍ يَوْمَئِذٍ وَمَا لَكُمْ مِنْ نَك۪يرٍ ﴿٤٧﴾

47- "Allah'tan geri çevrilmesi imkânsız olan bir gün gelmeden önce Rabbinizin çağrısına uyun. O gün, sizin için ne sığınacak bir yer vardır ne de inkâr edebilirsiniz."

Allah'ın çağrısına uymak, O'na verilen sözü yerine getirmek, hakkına riayet etmek, muhalefetinden muvafakatine dönüş yapmak ve her vakit hükmüne teslim olmak demektir. Bugün, çağrısına uymaya

giden yol da açıktır. Oysa yakında ve ansızın kalbe karşı kapı kapatılacak ve kalp, bir anda yakalanıverecektir.

فَاِنْ اَعْرَضُوا فَمَٓا اَرْسَلْنَاكَ عَلَيْهِمْ حَفِيظًاۜ اِنْ عَلَيْكَ اِلَّا الْبَلَاغُۜ وَاِنَّٓا اِذَٓا اَذَقْنَا الْاِنْسَانَ مِنَّا رَحْمَةً فَرِحَ بِهَاۚ وَاِنْ تُصِبْهُمْ سَيِّئَةٌ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْد۪يهِمْ فَاِنَّ الْاِنْسَانَ كَفُورٌ ﴿٤٨﴾

48- "Eğer yüz çevirirlerse, biz seni onlara bekçi göndermedik. Sana düşen, sadece tebliğdir. Gerçekten biz insana katımızdan bir rahmet tattırdığımızda ona sevinir, ama elleriyle yaptıkları işler yüzünden onlara bir kötülük dokunursa, o zaman da insan pek nankördür."

( فَاِنْ اَعْرَضُوا فَمَٓا اَرْسَلْنَاكَ عَلَيْهِمْ حَفِيظًا ) *"Eğer yüz çevirirlerse, biz seni onlara bekçi göndermedik. Sana düşen, sadece tebliğdir."*

Eğer çağrıya uymaktan yüz çevirirlerse, sana düşen sadece peygamberliği tebliğ etmektir. Sonra biz onlara ne muamele yapacağımızı biliriz.

( وَاِنَّٓا اِذَٓا اَذَقْنَا الْاِنْسَانَ مِنَّا رَحْمَةً فَرِحَ بِهَا وَاِنْ تُصِبْهُمْ سَيِّئَةٌ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْد۪يهِمْ فَاِنَّ الْاِنْسَانَ كَفُورٌ )

*"Gerçekten biz insana katımızdan bir rahmet tattırdığımızda ona sevinir, ama elleriyle yaptıkları işler yüzünden onlara bir kötülük dokunursa o zaman da insan pek nankördür."*

Biz, insana katımızdan bir refah ve nimet verdiğimiz zaman o, bu duruma sevinerek ona inkârla karşılık verir, içinde bulunduğu afiyete tamamıyla muhalefet etme noktasına varır ve esenliği muhalefete vesile kılar. Şayet başına bir fitne ve bela gelir de kendisine bir musibet ve felaket dokunursa, o takdirde de kendisi nimetlerimize karşı nankör davranır ve ayetlerimizi inkâr eder.

لِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ يَخْلُقُ مَا يَشَٓاءُ يَهَبُ لِمَنْ يَشَٓاءُ اِنَاثًا
وَيَهَبُ لِمَنْ يَشَٓاءُ الذُّكُورَ ﴿٤٩﴾ اَوْ يُزَوِّجُهُمْ ذُكْرَانًا وَاِنَاثًا وَيَجْعَلُ
مَنْ يَشَٓاءُ عَقِيمًا اِنَّهُ عَلِيمٌ قَدِيرٌ ﴿٥٠﴾

49, 50- "Göklerin ve yerin mülkü Allah'ındır. O, dilediğini yaratır. Dilediğine kız çocukları, dilediğine de erkek çocukları verir. Yahut o çocukları erkekler, dişiler olmak üzere çift verir, dilediği kimseyi kısır yapar. Şüphesiz O, her şeyi hakkıyla bilendir, hakkıyla gücü yetendir."

Allah dilediğine erkek çocukları, dilediğine kız çocukları, dilediğine de cenin bahşeder. Kimisini de kısır kılar. Bu itibarla takdirinde O'na hiçbir itiraz ve tercihinde hiçbir uydurma olamaz. Zira O, kullarına kullarından daha çok sahip çıkar.

وَمَا كَانَ لِبَشَرٍ اَنْ يُكَلِّمَهُ اللّٰهُ اِلَّا وَحْيًا اَوْ مِنْ وَرَٓائِ حِجَابٍ اَوْ
يُرْسِلَ رَسُولًا فَيُوحِيَ بِاِذْنِهِ مَا يَشَٓاءُ اِنَّهُ عَلِيٌّ حَكِيمٌ ﴿٥١﴾

51- "Allah, bir insanla ancak vahiy yoluyla yahut perde arkasından konuşur. Yahut da bir elçi gönderip, izniyle ona dilediğini vahyeder. Şüphesiz O yücedir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Hükümranlık hakkı ile Allah, dilediğini yapabilir, kullarından dilediğine dilediğini verebilir, fakat prensibini ve hükmünü, sadece bu ayette yer alanları yapmak şeklinde koymuştur. Bu çerçevede O, hiç kimseyle vahiyden veya perde arkasından başka bir yolla konuşmamıştır. Yani bu konuşma, kendisiyle konuşulan kimse Allah'ı görmeksizin, gerçekleşir. O halde perdelenen Rab değil, kuldur. Perde ise görmenin yerine onun zıddının yaratılmasıdır. Allah, perde arkasında olmaktan yücedir. Çünkü bu, üstü örtülebilen sınırlı cisimlerin vasfıdır.

Şüphesiz O, şanında ve kadrinde yüce, fiillerinde de hüküm ve hikmet sahibidir.

وَكَذٰلِكَ اَوْحَيْنَٓا اِلَيْكَ رُوحًا مِنْ اَمْرِنَا مَا كُنْتَ تَدْر۪ي مَا الْكِتَابُ وَلَا الْا۪يمَانُ وَلٰكِنْ جَعَلْنَاهُ نُورًا نَهْد۪ي بِه۪ مَنْ نَشَٓاءُ مِنْ عِبَادِنَا وَاِنَّكَ لَتَهْد۪ٓي اِلٰى صِرَاطٍ مُسْتَق۪يمٍ ﴿٥٢﴾ صِرَاطِ اللّٰهِ الَّذ۪ي لَهُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ اَلَٓا اِلَى اللّٰهِ تَص۪يرُ الْاُمُورُ ﴿٥٣﴾

52, 53- "İşte sana da emrimizle bir ruh vahyettik. Sen kitap nedir, iman nedir bilmezdin. Fakat biz onu, kullarımızdan dilediğimizi kendisiyle doğru yola eriştireceğimiz bir nur yaptık. Şüphesiz ki sen, doğru bir yola iletiyorsun; göklerdeki ve yerdeki her şeyin sahibi olan Allah'ın yoluna. İyi bilin ki bütün işler sonunda Allah'a döner."

Yani bu da tıpkı emrimizle sana bir ruh, yani Kur'ân'ı göndermemiz gibidir. Allah, Kur'ân'ı ruh diye adlandırmıştır. Çünkü kim ona iman ederse, kalbi onunla diri olur.

Bir yoruma göre, ( رُوحًا مِنْ اَمْرِنَا ) *"emrimizle bir ruhtan"* sözündeki ruhtan maksat Hz. Cibril'dir (a.s.). nitekim Hz. Cibril, Rûhu'l-Kudüs diye adlandırılır.

( مَا كُنْتَ تَدْر۪ي مَا الْكِتَابُ ) *"Sen kitap nedir bilmezdin."*

Sen, bundan önce Kur'ân'ın ne olduğunu bilmezdin.

( وَلَا الْا۪يمَانُ ) *"İman da nedir bilmezdin."*

Yani bu dini prensiplerin tafsilatını bilmezdin.

( وَلٰكِنْ جَعَلْنَاهُ نُورًا ) *"Fakat biz onu"*, yani Kur'ân'ı *"bir nur yaptık."*

O nurla biz, mümin kullarımızdan dilediğimizi hidayete erdiririz.

( اَلَٓا اِلَى اللّٰهِ تَص۪يرُ الْاُمُورُ ) *"İyi bilin ki, bütün işler sonunda Allah'a döner."*

Çünkü işlerin başlangıcı O'ndandır.

سورة الزُّخْرُوفِ

# ZUHRUF SÛRESİ

(Zuhruf Sûresi 89 âyettir. 54. âyet dışında Mekke'de inmiştir. Adını 35. âyetteki "Zuhruf" tan almıştır. Zuhruf; her çeşit süs, yaldızlı süs, özellikle altın ve gümüş anlamlarına gelir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

## Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla

"Bismillah" öyle bir azizin adıdır ki, O'nun cömertlik ve keremine güvenen kimse, yüksek gayretlerini başkasına bağlamaz ve kendisinden iyilik talep etmek üzere, hiçbir mahlukun eşiğinde ayağıyla durmaz. O, öyle bir azizin adıdır ki lütfunun sırlarına alıştırdığı kimse, başkasından bir şey talep etmek uğruna zilleti kabul etmez ve ne kötü ne de iyi bir durumu için başkasına başvurmaz.

حٰمٓ ﴿١﴾ وَالْكِتَابِ الْمُبِينِ ﴿٢﴾ اِنَّا جَعَلْنَاهُ قُرْءٰنًا عَرَبِيًّا لَعَلَّكُمْ
تَعْقِلُونَ ﴿٣﴾

**1, 2, 3- "Hâ Mîm. Apaçık Kitab'a andolsun ki iyice anlayasınız diye biz, onu Arapça bir Kur'ân yaptık."**

(ح) harfi Allah'ın hayatını, (م) harfi de O'nun yüceliğini ifade eder. Bu, bir yemin olup manası şudur: Hayatıma, yüceliğime ve bu

Kur'ân'a yemin ederim ki kullarıma olan merhametime dair anlattığım, gerçektir ve doğrudur. Bir de biz bu kitabı, manasını kolay anlamanız için Arapça bir Kur'ân yaptık.

وَاِنَّهُ فِي اُمِّ الْكِتَابِ لَدَيْنَا لَعَلِيٌّ حَكِيمٌ ﴿٤﴾

4- "Şüphesiz o, katımızdaki ana kitapta mevcuttur, çok yücedir, hikmetlerle doludur."

( وَاِنَّهُ فِي اُمِّ الْكِتَابِ ) "*O, katımızdaki ana kitapta mevcuttur.*"

Yani o, Levh-i Mahfuz'da yazılıdır.

( لَدَيْنَا لَعَلِيٌّ حَكِيمٌ ) "*Çok yücedir, hikmetlerle doludur.*"

Onun kadri yüce, vasfı da hikmetlerle doludur. Onda hiçbir değişiklik de söz konusu değildir.

اَفَنَضْرِبُ عَنْكُمُ الذِّكْرَ صَفْحًا اَنْ كُنْتُمْ قَوْمًا مُسْرِفِينَ ﴿٥﴾

5- "Haddi aşan bir topluluk oldunuz diye vazgeçip Zikir'le sizi uyarmaktan geri mi duralım?"

Yani biz bunu yapmayız. Böylece soru cümlesinin anlamı şöyle olur: Şimdi siz, bize karşı çıkmada aşırı gittiniz diye hitabımızı ve bilgilendirmemizi sizden keselim mi? Hayır! Hiç şüphesiz biz, muhalefet ettiniz diye teklifi kaldırmayacağız. Aşırı gitmeniz halinde de sizinle konuşmayı keserek sizi terk etmeyeceğiz.

Bunda şu ince işaret de vardır: Bugün Allah, isyanına devam eden ve işlerinin çoğunda haddi aşan kimseden konuşmasını kesmez. O halde imanında kusur işlemeyen ve irfanında bir halel meydana gelmeyen kimse, günaha bulaşmış olsa da Allah'ın, kendisinden mağfiretini esirgememesine daha layıktır.

وَكَمْ اَرْسَلْنَا مِنْ نَبِيٍّ فِي الْاَوَّلِينَ ﴿٦﴾ وَمَا يَأْتِيهِمْ مِنْ نَبِيٍّ اِلَّا
كَانُوا بِهِ يَسْتَهْزِؤُنَ ﴿٧﴾

6, 7- "Halbuki daha önceki toplumlara da nice peygamberler göndermiştik. Onlar da kendilerine gelen her peygamberle mutlaka alay ediyorlardı."

Onlar, kendilerine gelen hiçbir peygamberi tasdikle karşılamadılar. Aksine büyük çoğunluk onu yalanlayıp inkâr etti ve sapıklığında ısrarcı oldu.

فَاَهْلَكْنَٓا اَشَدَّ مِنْهُمْ بَطْشًا وَمَضٰى مَثَلُ الْاَوَّلٖينَ ﴿٨﴾

8- "Biz, onlardan daha çetinlerini de helak ettik. Öncekilerin örneği geçti."

Yani onlardan hiçbiri bizi aciz bırakamadı, biz de onlardan hiçbirini cezasız bırakmadık ve kötülük yapanlardan intikam aldık.

وَلَئِنْ سَاَلْتَهُمْ مَنْ خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ لَيَقُولُنَّ خَلَقَهُنَّ
الْعَزٖيزُ الْعَلٖيمُۙ ﴿٩﴾

9- "Andolsun, onlara: 'Gökleri ve yeri kim yarattı?' diye sorsan, mutlaka: 'Onları mutlak güç sahibi, hakkıyla bilen Allah yarattı' diyeceklerdir.

Onlar, kendilerini, gökleri ve yeri Allah'ın yarattığını itiraf ediyorlardı. Onlar, sadece peygamberlere dair söylenen ile öldükten sonra dirilme ve bunun mümkün olabileceğine ilişkin sözü inkâr ediyorlardı.

اَلَّذٖي جَعَلَ لَكُمُ الْاَرْضَ مَهْدًا وَجَعَلَ لَكُمْ فٖيهَا سُبُلًا لَعَلَّكُمْ
تَهْتَدُونَۚ ﴿١٠﴾

10- "O, yeryüzünü size beşik yapan ve gideceğiniz yere ulaşasınız diye sizin için orada yollar var edendir."

Nasıl ki Allah, yeri onların bedenleri için karar kılınacak yer yapmış ise aynı şekilde bedenlerini de ruhları için karar kılınacak yer yapmıştır. Bu itibarla, yaratıklar yeryüzünün sakinleridir. Süreleri -nefislerin yeryüzünde kalış süresi-bitince de Allah, onun yıkılmasına hükmeder. Aynı şekilde ruhlar da bedenleri bütünüyle terk ettikleri zaman Allah, onların bozulmasına hükmeder.

وَالَّذِي نَزَّلَ مِنَ السَّمَآءِ مَآءً بِقَدَرٍ فَأَنْشَرْنَا بِهِ بَلْدَةً مَيْتًا كَذٰلِكَ
تُخْرَجُونَ ﴿١١﴾

11- "O, gökten bir ölçüye göre yağmur indirendir. Biz, onunla ölü araziyi canlandırdık. İşte siz de, böyle diriltileceksiniz."

Yani nasıl ki Allah, yeryüzünü yağmurla canlandırıyorsa aynı şekilde kalplere de güzel nazarla hayat verir.

وَالَّذِي خَلَقَ الْأَزْوَاجَ كُلَّهَا وَجَعَلَ لَكُمْ مِنَ الْفُلْكِ وَالْأَنْعَامِ مَا
تَرْكَبُونَ ﴿١٢﴾

12- "O, bütün çiftleri yaratan ve sizin için bindiğiniz gemiler ve hayvanlar yaratandır."

(وَالَّذِي خَلَقَ الْأَزْوَاجَ كُلَّهَا) *"O, bütün çiftleri yaratandır."*

Yani yaratıklarının çeşitlerini yaratan O'dur.

(كُلَّهَا وَجَعَلَ لَكُمْ مِنَ الْفُلْكِ وَالْأَنْعَامِ مَا تَرْكَبُونَ) *"Sizin için bindiğiniz gemiler ve hayvanlar yaratandır."*

Aynı şekilde Allah, bütün halleri de cinslere ayırmıştır. Bu hallerin kimisi iyilik arzusu, kimisi Allah'ın kendisiyle sizi uyardığı cezalardan korkmak, kimisi sizi hataları terk etmeye sevk eden korku, kimisi de sevap ümidiyle sizi ibadetleri yapmaya yönelten ümit şeklinde olup daha başka türlü vasıflar da vardır.

لِتَسْتَوُا عَلٰى ظُهُورِه۪ ثُمَّ تَذْكُرُوا نِعْمَةَ رَبِّكُمْ اِذَا اسْتَوَيْتُمْ عَلَيْهِ
وَتَقُولُوا سُبْحَانَ الَّذ۪ي سَخَّرَ لَنَا هٰذَا وَمَا كُنَّا لَهُ مُقْرِن۪ينَۙ ﴿١٣﴾
وَاِنَّٓا اِلٰى رَبِّنَا لَمُنْقَلِبُونَ ﴿١٤﴾

**13, 14- "Allah, bunları üzerlerine kurulmanız, sonra da kurulduğunuzda Rabbinizin nimetini hatırlamanız ve: 'Bunu hizmetimize veren Allah'ın şanı yücedir. Bunlara bizim gücümüz yetmezdi. Şüphesiz biz Rabbimize döneceğiz' demeniz için yarattı."**

( لِتَسْتَوُا عَلٰى ظُهُورِه۪ ) *"Üzerlerine kurulmanız için."*

Yani gemilerin ve hayvanların üzerine kurulmanız için.

( ثُمَّ تَذْكُرُوا نِعْمَةَ رَبِّكُمْ اِذَا اسْتَوَيْتُمْ عَلَيْهِ وَتَقُولُوا سُبْحَانَ الَّذ۪ي سَخَّرَ لَنَا هٰذَا وَمَا كُنَّا لَهُ مُقْرِن۪ينَ ۞ وَاِنَّٓا اِلٰى رَبِّنَا لَمُنْقَلِبُونَ )

*"Sonra da kurulduğunuzda Rabbinizin nimetini hatırlamanız ve: 'Bunu hizmetimize veren Allah'ın şanı yücedir. Buna bizim gücümüz yetmezdi. Şüphesiz biz Rabbimize döneceğiz' demeniz için yarattı."*

( مُقْرِن۪ينَ ) lafzı, itaat ettirenler -güç yetirenler- demektir. Bu arada nasıl ki Allah denizde gemileri ve binmek için hayvanları hizmetlerine vermiş ve bununla onlara büyük nimette bulunmuşsa, aynı şekilde müminler için de muvaffakiyet bineğini kolay kılmış, böylece de kendilerini onun üzerinde itaat makamına taşımıştır. Müridler için de Allah, müridlik bineğini kolaylaştırmış ve kendilerini onun üzerinde cömertlik meydanlarına taşımıştır. Arifler içinse Allah, himmetlerin bineğini kolaylaştırmış, böylece onlar da izzet meydanında konaklamışlardır. Aslında herkesin ana durağı da burasıdır. Çünkü hiçbir mahlukun himmeti, izzet çadırlarını yaramamıştır. Bu mahluk, ister Allah'a en yakın bir melek, ister aynı zamanda resul olan bir nebi veya çok değerli bir veli olsun fark etmez. Zira izzetin üstünlüğü karşısında her mahlukyok olur ve sonradan var edilen her şey onun gerisinde durur.

وَجَعَلُوا لَهُ مِنْ عِبَادِهِ جُزْءًا اِنَّ الْاِنْسَانَ لَكَفُورٌ مُبِينٌ ﴿١٥﴾

15- "Böyle iken kullarından bir kısmını O'nun parçası saydılar. Şüphesiz insan apaçık bir nankördür."

Melekler Allah'ın kızlarıdır, diyenler onlardır. Böylece onlar, Allah'ın yaratıkları cümlesinden olan kızları özellikle O'nun bir parçası kıldılar. Bu sözlerinden dolayı Allah onları perişan ve kahretsin.

Bunun üzerine Allah onlara şöyle cevap verdi:

اَمِ اتَّخَذَ مِمَّا يَخْلُقُ بَنَاتٍ وَاَصْفٰيكُمْ بِالْبَنِينَ ﴿١٦﴾ وَاِذَا بُشِّرَ اَحَدُهُمْ بِمَا
ضَرَبَ لِلرَّحْمٰنِ مَثَلًا ظَلَّ وَجْهُهُ مُسْوَدًّا وَهُوَ كَظِيمٌ ﴿١٧﴾ اَوَمَنْ يُنَشَّؤُا
فِي الْحِلْيَةِ وَهُوَ فِي الْخِصَامِ غَيْرُ مُبِينٍ ﴿١٨﴾ وَجَعَلُوا الْمَلٰٓئِكَةَ الَّذِينَ هُمْ
عِبَادُ الرَّحْمٰنِ اِنَاثًا اَشَهِدُوا خَلْقَهُمْ سَتُكْتَبُ شَهَادَتُهُمْ وَيُسْـَٔلُونَ ﴿١٩﴾

16, 17, 18, 19- "Yoksa Allah, yarattıklarından kendisine kızlar edindi de oğulları size mi seçip ayırdı? Onlardan biri, Rahmân'a örnek kıldığı (kız çocuğu) ile müjdelendiği zaman, öfkesinden yüzü simsiyah kesilir. Süs içerisinde yetiştirilen ve tartışmada açıklayamayanı mı Allah'a isnat ediyorlar?! Onlar, Rahmân'ın kulları olan melekleri de dişi saydılar. Onların yaratılışına şahit mi oldular? Onların şahitlikleri yazılacak ve sorgulanacaktır."

Allah onlara bunu, azarlama yoluyla söylemiş ve söylediklerinden dolayı kendilerini ayıplamıştır. Zira -kendi iddialarına göre- nasıl olur da Allah, oğulları onlar için tercih eder, kızları da kendine ayırır. Bu nedenle onların bu sözünde sapıklık vardır. Çünkü onlar, kadim olan Allah'ın çocuğu olduğuna hükmetmişlerdir. Bunda aynı zamanda cehalet de vardır. Zira onlar, Allah'ın kızları, kendilerinin ise oğulları olduğuna hükmetmişlerdir. Bir de onlar, kız çocuklarına yanaşmazlar. Sonra kız çocuklarında hangi kusur var ki?! Sonra yaratılışlarını görmedikleri halde meleklerin dişi olduklarına nasıl hükmederler?!

İşte bütün bunlar, onların işledikleri hata ve günahlardır.

وَقَالُوا لَوْ شَٓاءَ الرَّحْمٰنُ مَا عَبَدْنَاهُمْ مَا لَهُمْ بِذٰلِكَ مِنْ عِلْمٍ اِنْ هُمْ اِلَّا يَخْرُصُونَ ﴿٢٠﴾

20- "Dediler ki: 'Eğer Rahmân dileseydi, biz onlara kulluk etmezdik.' Bu konuda hiçbir bilgileri yoktur. Onlar, sadece yalan söylüyorlar."

Onlar bunu, imanları ve ihlaslarından dolayı değil, aksine sırf alay etmek için söylediler. Bu nedenle Allah: ( مَا لَهُمْ بِذٰلِكَ مِنْ عِلْمٍ ) "*Bu konuda hiçbir bilgileri yoktur*" buyurdu. Eğer bunu bilseler ve tasdik ederek söyleselerdi, bu sözleri kusurlu olmazdı.

اَمْ اٰتَيْنَاهُمْ كِتَابًا مِنْ قَبْلِه۪ فَهُمْ بِه۪ مُسْتَمْسِكُونَ ﴿٢١﴾

21- "Yoksa bundan önce onlara bir kitap verdik de ona mı sarılıyorlar?"

Yani öyle değildir. O kadar ki, Allah, onların bilgiye ulaştırmayan bir taklide yeltendiklerini bildirmek üzere şöyle buyurmuştur:

بَلْ قَالُٓوا اِنَّا وَجَدْنَٓا اٰبَٓاءَنَا عَلٰٓى اُمَّةٍ وَاِنَّا عَلٰٓى اٰثَارِهِمْ مُهْتَدُونَ ﴿٢٢﴾

22- "Hayır! Onlar, sadece: 'Şüphesiz biz babalarınızı bir din üzerinde bulduk ve biz, onların izlerinden gitmekteyiz' dediler."

İşte bu nedenle biz onlara uyuyoruz.

Sonra Allah şöyle buyurmuştur:

وَكَذٰلِكَ مَٓا اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ ف۪ي قَرْيَةٍ مِنْ نَذ۪يرٍ اِلَّا قَالَ مُتْرَفُوهَٓا اِنَّا وَجَدْنَٓا اٰبَٓاءَنَا عَلٰٓى اُمَّةٍ وَاِنَّا عَلٰٓى اٰثَارِهِمْ مُقْتَدُونَ ﴿٢٣﴾

23- "İşte böyle, biz senden önce hiçbir memlekete bir uyarıcı göndermedik ki, oranın şımarık zenginleri: 'Şüphe yok ki biz babalarımızı

bir din üzerinde bulduk. Biz de elbette onların izlerinden gitmekteyiz' demiş olmasınlar."

Onlar, seleflerini taklit etmede ve onların alışkanlık haline getirdikleri hayat tarzına ve adete yaslanmada bunların yolunu izlediler.

قَالَ اَوَلَوْ جِئْتُكُمْ بِاَهْدٰى مِمَّا وَجَدْتُمْ عَلَيْهِ اٰبَٓاءَكُمْ قَالُوٓا اِنَّا بِمَٓا
اُرْسِلْتُمْ بِهٖ كَافِرُونَ ﴿٢٤﴾ فَانْتَقَمْنَا مِنْهُمْ فَانْظُرْ كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ
الْمُكَذِّب۪ينَ ﴿٢٥﴾

24, 25- "Uyarıcı dedi ki: 'Ben size, babalarınızı üzerinde bulduğunuz dinden daha doğrusunu getirmiş olsam da mı?' Onlar: 'Biz kesinlikle sizinle gönderilen şeyi inkâr ediyoruz' dediler. Biz de onlardan intikam aldık. Yalanlayanların sonu, bak nasıl oldu!"

Uyarıcının sözü onları etkilemedi, vaazı onlara fayda vermedi ve yalanlamalarında ısrar ettiler. Bunun üzerine Allah (c.c.), onlardan öncekilere yaptığı gibi onlardan da intikam aldı.

وَاِذْ قَالَ اِبْرٰه۪يمُ لِاَب۪يهِ وَقَوْمِه۪ٓ اِنَّن۪ي بَرَٓاءٌ مِمَّا تَعْبُدُونَ ﴿٢٦﴾ اِلَّا الَّذ۪ي
فَطَرَن۪ي فَاِنَّهُ سَيَهْد۪ينِ ﴿٢٧﴾ وَجَعَلَهَا كَلِمَةً بَاقِيَةً ف۪ي عَقِبِه۪ لَعَلَّهُمْ
يَرْجِعُونَ ﴿٢٨﴾

26, 27, 28- "Hani İbrahim, babasına ve kavmine şöyle demişti: 'Şüphesiz ben, taptıklarınıza uzağım. Ben ancak O, beni yaratana taparım. Şüphesiz O, beni doğru yola iletecektir.' İbrahim bunu, belki dönerler diye ardından gelecekler arasında kalıcı bir söz yaptı."

Allah, şunu bildirmektedir: Hz. İbrahim, babasını ve kavmini Allah'a ve tevhid inancına çağırınca, onu yalanlamaktan başka hiçbir şeyi kabul etmediler. Bunun üzerine Hz. İbrahim, onların hepsinden uzaklaştı ve tevhid kelimesini neslinde ve kavminde kalıcı kıldı.

بَلْ مَتَّعْتُ هٰٓؤُ۬لَٓاءِ وَاٰبَٓاءَهُمْ حَتّٰى جَٓاءَهُمُ الْحَقُّ وَرَسُولٌ مُب۪ينٌ ﴿٢٩﴾

29- "Doğrusu onları ve atalarını, kendilerine hak olan Kur'ân ve onu açıklayan bir peygamber gelinceye kadar yararlandırdım."

Biz, onlara verdiğimiz mühletin dizginini bir süre salıverdik. Sonra sonları, kendilerinden intikam almamız ve hepsini yerle bir etmemiz şeklinde oldu.

وَلَمَّا جَٓاءَهُمُ الْحَقُّ قَالُوا هٰذَا سِحْرٌ وَاِنَّا بِه۪ كَافِرُونَ ﴿٣٠﴾

30- "Fakat kendilerine hak gelince: 'Bu bir büyüdür, biz onu kesinlikle inkâr ediyoruz' dediler."

وَقَالُوا لَوْلَا نُزِّلَ هٰذَا الْقُرْاٰنُ عَلٰى رَجُلٍ مِنَ الْقَرْيَتَيْنِ عَظ۪يمٍ ﴿٣١﴾

31- "'Bu Kur'ân, iki şehrin birinden bir büyük adama indirilseydi ya!' dediler."

Bu adam, ya Ebû Mes'ûd es-Sakafî veya Ebûcehil'dir. Bu söz ise onların aşırı cehaletlerinden dolayıdır.

اَهُمْ يَقْسِمُونَ رَحْمَةَ رَبِّكَؕ نَحْنُ قَسَمْنَا بَيْنَهُمْ مَع۪يشَتَهُمْ فِي الْحَيٰوةِ
الدُّنْيَا وَرَفَعْنَا بَعْضَهُمْ فَوْقَ بَعْضٍ دَرَجَاتٍ لِيَتَّخِذَ بَعْضُهُمْ بَعْضًا
سُخْرِيًّاؕ وَرَحْمَتُ رَبِّكَ خَيْرٌ مِمَّا يَجْمَعُونَ ﴿٣٢﴾

32- "Rabbinin rahmetini onlar mı bölüştürüyorlar? Dünya hayatında onların geçimliklerini aralarında biz paylaştırdık. Birbirlerine iş gördürmeleri için kimini kimine derece derece üstün kıldık. Rabbinin rahmeti, onların biriktirdikleri şeylerden daha hayırlıdır."

Ey Muhammed! Rabbinin, peygamberlik özelliğinin verilmesi konusundaki rahmetini onlar mı bölüştürüyor? Allah'ın (c.c.) tercihi,

onların hevâsına göre mi oluyor? Verdikleri hüküm ne kadar da kötüdür!

( نَحْنُ قَسَمْنَا بَيْنَهُمْ مَعِيشَتَهُمْ فِي الْحَيٰوةِ الدُّنْيَا ) *"Dünya hayatında onların geçimliklerini aralarında biz paylaştırdık."*

Böylece biz, dünya hayatındaki taksimatı onlara ait kılmadık. Hal böyleyken nasıl olur da biz, peygamberlikle ilgili taksimatı onlara bırakırız?

Ayetteki işaret ise şöyledir: Allah (c.c.), mutluluk ve mutsuzluğun taksimatını kimseye bırakmamıştır. Reddedilen, Allah'ın hükmü, kararı ve takdiriyle reddettiği kimsedir. Kullarının içerisinden makbul olan da Allah'ın bir illet veya sebep olmaksızın, hakkında iradesini izhar edip kabul ettiği kimsedir. Bir de ret veya kabul, kazanılmış bir durumdan ötürü de değildir.

Sonra Allah, kısmet olarak bazı kullarına nimet ve zenginliği, bazılarına da azlık ve fakirliği vermiştir. Ayrıca Allah, onlardan her birine kendisiyle huzur bulacağı ve başkasına ihtiyaç duymayacağı birer sükûnet kaynağı vermiştir. Bu çerçevede zenginler için nimetin ve bolca kısmetlerin varlığı söz konusudur. Bundan dolayı onlar şükredip sevindiler. Fakirler için de nimeti veren ve taksimatı yapan Allah'ı görmek vardır. Onlar da bundan dolayı hamd edip övündüler. Zenginler, nimeti bulup ihtiyaçtan kurtuldular ve meşguliyet sahibi oldular. Fakirler ise, Allah'ın: "Biz..." sözünü işittiler ve onunla meşgul oldular.

Bir hadiste de Hz. Peygamber'in (s.a.v.), Ensâr'a şöyle dediği rivayet edilmiştir:

*"İnsanların zenginlikle, sizlerin de peygamberle ailelerinize dönmesinden hoşnut olmaz mısınız?"*

( لِيَتَّخِذَ ) *"Birbirlerine iş gördürmeleri için."*

Eğer güç ve imkânlar eşit olsaydı, hayat duracak ve herkes kendi halinde kalacaktı. Bu nedenle Allah, bazılarına refah ve mal sahibi olma özelliğini, bazılarına da fakirlik ve zayıf halli olma özelliğini

vermiştir. Böylece fakir olan, ihtiyacını karşılamada ücretini almak üzere zengin için çalışmaya muhtaç olmuş ve bu sayede hem zenginin hem de fakirin işi düzelmiştir.

وَلَوْلَٓا اَنْ يَكُونَ النَّاسُ اُمَّةً وَاحِدَةً لَجَعَلْنَا لِمَنْ يَكْفُرُ بِالرَّحْمٰنِ
لِبُيُوتِهِمْ سُقُفًا مِنْ فِضَّةٍ وَمَعَارِجَ عَلَيْهَا يَظْهَرُونَۙ ﴿٣٣﴾ وَلِبُيُوتِهِمْ
اَبْوَابًا وَسُرُرًا عَلَيْهَا يَتَّكِؤُ۫نَۙ ﴿٣٤﴾ وَزُخْرُفًاۜ وَاِنْ كُلُّ ذٰلِكَ لَمَّا مَتَاعُ
الْحَيٰوةِ الدُّنْيَاۜ وَالْاٰخِرَةُ عِنْدَ رَبِّكَ لِلْمُتَّق۪ينَ ﴿٣٥﴾

33, 34, 35- "Eğer bütün insanlar, bir tek ümmet olacak olmasalardı, Rahmân'ı inkâr edenlerin evlerine gümüşten tavanlar ve üzerine çıkacakları merdivenler yapardık. Evlerine kapılar ve üzerine yaslanacakları koltuklar ve altın süslemeler yapardık. Bütün bunlar sadece dünya hayatının geçimliğidir. Rabbinin katında ahiret ise ona karşı gelmekten sakınanlarındır."

Yani bizim katımızda dünyanın hiçbir önemi yoktur. O kadar ki bizden uzak kalan kimsenin üzerine bütün dünyayı döksek bu, onun musibetinin telafisi olamaz. Bir de eğer müminlerin kalplerinin bozulma riski olmasaydı, onların evlerine gümüşten tavanlar, merdivenler ve aynı zamanda buna benzer diğer şeyler yapacaktık.

Şayet bunu yapsaydık, bu verdiklerimizin de bir önemi olmazdı. Çünkü dünyanın baştanbaşa bizim katımızda bir önemi yoktur.

وَمَنْ يَعْشُ عَنْ ذِكْرِ الرَّحْمٰنِ نُقَيِّضْ لَهُ شَيْطَانًا فَهُوَ لَهُ قَر۪ينٌ ﴿٣٦﴾

36- "Kim Rahmân'ın Zikr'ini görmezlikten gelirse, biz onun başına bir şeytan sararız. Artık o, onun ayrılmaz dostudur."

Kim Allah ile yalnız kalmanın kadrini bilmez de O'nun zikrinden sapar ve kendini kötü duygulara kaptırırsa, Allah kendisini O'ndan alıkoyacak birisini onun başına sarar. İşte bu, halvetin adabını ihlal eden kimsenin cezasıdır. Oysa kul, yalnızlığında Rabbiyle meşgul

olduğu zaman bu esnada karşısına onu Rabbinden alıkoyacak bir kimse çıksa bile Allah bir şekilde bu kulunu o kimsenin üzerinden geri çevirir. Aynı zamanda o kimsenin, bu kulu Allah'tan alıkoyan şeylerle diyalog kurmada kullandığı araçları da etkisiz kılar.

Bir yoruma göre de en zor şeytan senin nefsindir. Bir de kul kalbinin boş oluşunun önemini bilmez de şehvetine uyar ve nefsine bu kapıyı açarsa, hevâsının elinde esir olur. Bu esaretten ise ancak bir süre sonra kurtulabilir.

وَاِنَّهُمْ لَيَصُدُّونَهُمْ عَنِ السَّبِيلِ وَيَحْسَبُونَ اَنَّهُمْ مُهْتَدُونَ ﴿٣٧﴾ حَتّٰى
اِذَا جَٓاءَنَا قَالَ يَا لَيْتَ بَيْن۪ي وَبَيْنَكَ بُعْدَ الْمَشْرِقَيْنِ فَبِئْسَ الْقَر۪ينُ ﴿٣٨﴾

37, 38- "Şüphesiz bu şeytanlar onları doğru yoldan saptırırlar. Onlar ise, doğru yolda olduklarını sanırlar. Sonunda bize geldiğinde, arkadaşına: 'Keşke benimle senin aranda doğu ile batı arası kadar uzaklık olsaydı! Ne kötü arkadaşmışsın!' der."

Nefsi kendisine bir iş empoze eden kimse, doğru yolda olduğunu vehmeder. Sonra da arkadaşını kendi batılı konusunda ona uymaya sevk eder ve hak üzere olduğunu ileri sürer. Bu tutumuyla o, hem kendine hem de başkasına zarar vermiş olur. Sonra yarın örtü kalktığı zaman arkadaşı onun hıyanetini anlar ve arkadaşlığından pişmanlık duyarak şöyle der:

( يَا وَيْلَتٰى لَيْتَن۪ي لَمْ اَتَّخِذْ فُلَانًا خَل۪يلًا ) *"Yazıklar olsun bana! Keşke ben, falanı dost edinmeseydim."* (Furkân, 25/28)

( يَا لَيْتَ بَيْن۪ي وَبَيْنَكَ بُعْدَ الْمَشْرِقَيْنِ فَبِئْسَ الْقَر۪ينُ ) *"Keşke benimle senin aranda doğu ile batı arası kadar uzaklık olsaydı!"*

Fakat vakit geçmiş olduğundan bu pişmanlık o zaman fayda vermeyecektir.

Bu nedenle Allah şöyle buyurmuştur:

وَلَنْ يَنْفَعَكُمُ الْيَوْمَ اِذْ ظَلَمْتُمْ اَنَّكُمْ فِي الْعَذَابِ مُشْتَرِكُونَ ﴿٣٩﴾

39- "Onlara: 'Bu temenniniz, bugün size asla fayda vermez. Çünkü zulmettiniz. Hepiniz azapta ortaksınız' denir."

اَفَاَنْتَ تُسْمِعُ الصُّمَّ اَوْ تَهْدِي الْعُمْيَ وَمَنْ كَانَ فِي ضَلَالٍ مُبِينٍ ﴿٤٠﴾

40- "Sağırlara sen mi duyuracaksın? Yahut körleri ve apaçık bir sapıklık içinde olanları sen mi doğru yola ileteceksin?"

Buradaki soru, olumsuzluk anlamı içermektedir. Yani basiretini kapattığımız, yolunu şaşırttığımız ve duyup anlama kanallarına mutsuzluk ve yoksunluk kurşunu döktüğümüz kimseyi doğru yola iletmen mümkün değildir. Hal böyleyken ona duyurman nasıl mümkün olur?

فَاِمَّا نَذْهَبَنَّ بِكَ فَاِنَّا مِنْهُمْ مُنْتَقِمُونَ ﴿٤١﴾

41- "Ya biz seni alır götürürüz de onlardan intikam alırız."

Yani eğer ömrün sona erer de kendilerini uyardığımız hususları görmek sana nasip olmazsa, bu takdirde sen sözümüzün doğruluğunda bir yalan şaibesi olduğunu sanma! Çünkü sana bildirdiklerimiz, şüphesiz gerçekleşecektir.

اَوْ نُرِيَنَّكَ الَّذِي وَعَدْنَاهُمْ فَاِنَّا عَلَيْهِمْ مُقْتَدِرُونَ ﴿٤٢﴾

42- "Yahut da onlara yaptığımız tehdidi sana gösteririz ki bizim onlara gücümüz yeter."

Allah, Hz. Peygamber'i (s.a.v.) korku ve ümit sınırında tutmuş ve gaybı sadece Allah'ın bilmesini caiz görme vasfına sahip kılmıştır. Aynı şekilde amaç, Allah'ın emrine kıyasla herkesin takdirin merceği altında olmasıdır. Nitekim Allah dilediğini yapar.

فَاسْتَمْسِكْ بِالَّذِي اُوحِيَ اِلَيْكَ اِنَّكَ عَلٰى صِرَاطٍ مُسْتَقِيمٍ ﴿٤٣﴾

43- "Öyle ise sana vahyedilene sımsıkı sarıl. Şüphesiz sen, doğru bir yol üzeresin."

Aksatmadan çaba harca, tembelliğe kapılmaksızın Allah'a tevekkül et, emredildiğin yerde dur ve dosdoğru yol üzere olduğundan emin ol.

وَاِنَّهُ لَذِكْرٌ لَكَ وَلِقَوْمِكَ وَسَوْفَ تُسْـَٔلُونَ ﴿٤٤﴾

44- "Şüphesiz bu Kur'ân, sana ve kavmine bir öğüt ve bir şereftir. Ondan hesaba çekileceksiniz."

Yani bu Kur'ân, senin için bir zikir yani bir şeref, güzel bir şöhret ve bir mevki edinmeyi hak ediştir.

وَسْـَٔلْ مَنْ اَرْسَلْنَا مِنْ قَبْلِكَ مِنْ رُسُلِنَا اَجَعَلْنَا مِنْ دُونِ الرَّحْمٰنِ
اٰلِهَةً يُعْبَدُونَ ﴿٤٥﴾

45- "Senden önce gönderdiğimiz elçilerimize sor: 'Rahman'dan başka kulluk edilecek ilâhlar var etmiş miyiz?'"

Allah, İsrâ gecesi peygamberlerin ruhlarını topladı ve Hz. Peygamber'e (s.a.v.) şöyle denildi:

*"Sor onlara: Biz kimseye, bizden başkasına ibadet etmeyi emrettik mi?"*

Bunun üzerine Hz. Peygamber (s.a.v.), şüphe etmedi ve sormadı.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Hitap, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) olmakla birlikte amaç onun dışındaki kimselerdir. Bunda kim şüphe edebilir ki?

- Bundan amaç, o peygamberlerin kavimlerine sormasıdır. Çünkü onlar: Allah sana bunu emretmedi, dedikleri zaman bu hitap, onlara karşı getirilen delilin daha da kesin olmasını sağlar.

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا مُوسٰى بِاٰيَاتِنَٓا اِلٰى فِرْعَوْنَ وَمَلَا۬ئِه۪ فَقَالَ اِنّ۪ي رَسُولُ
رَبِّ الْعَالَم۪ينَ ﴿٤٦﴾ فَلَمَّا جَٓاءَهُمْ بِاٰيَاتِنَٓا اِذَا هُمْ مِنْهَا يَضْحَكُونَ ﴿٤٧﴾

وَمَا نُرِيهِمْ مِنْ اٰيَةٍ اِلَّا هِيَ اَكْبَرُ مِنْ اُخْتِهَا وَاَخَذْنَاهُمْ بِالْعَذَابِ
لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُونَ ﴿٤٨﴾ وَقَالُوا يَٓا اَيُّهَ السَّاحِرُ ادْعُ لَنَا رَبَّكَ بِمَا
عَهِدَ عِنْدَكَ اِنَّنَا لَمُهْتَدُونَ ﴿٤٩﴾ فَلَمَّا كَشَفْنَا عَنْهُمُ الْعَذَابَ اِذَا
هُمْ يَنْكُثُونَ ﴿٥٠﴾

**46, 47, 48,49, 50-** "Andolsun biz Mûsâ'yı mucizelerimizle Firavun'a ve ileri gelen adamlarına göndermiştik de o: 'Şüphesiz ben, âlemlerin Rabbinin elçisiyim' demişti. Mûsâ, mucizelerimizi kendilerine getirince bir de bakmışsın, o mucizelere gülüyorlar. Onlara gösterdiğimiz her bir mucize, önceki benzerinden daha büyüktü. Doğru yola dönsünler diye onları azaba uğrattık. Dediler ki: 'Ey büyücü! Sana verdiği söze dayanarak bizim için Rabbine dua et. Çünkü biz artık doğru yola gireceğiz.' Fakat biz onlardan azabı kaldırınca bir de bakmışsın sözlerinden dönüyorlar."

Allah, Hz. Mûsâ'nın kıssasını Kur'ân'da birkaç defa tekrarlamış, burada ise özetle yinelemiştir. Biz Mûsâ'yı Firavun ve Kıptilerden ibaret olan kavmine delillerimizle gönderdik, açık ve karşı konulmaz bir hüccetle gönderdik ve mucizelerle gönderdik. Ancak o, alaya alma, gülme ve yalanlamayla karşılandı. Bir de Allah, Hz. Mûsâ'ya hangi mucizeyi verdiyse, muhakkak bir öncekinden daha açık olduğu halde onlar, mutlaka kendisini öncekinden daha acımasız olan bir haksızlıkla karşıladılar. Durumdan canları yanınca da şöyle dediler:

*"Ey büyücü! Bizim için Rabbine dua et de sana iman etmemiz için üzerimizden bu musibeti kaldırsın."*

Bunun üzerine Hz. Mûsâ dua etti, Allah da musibeti üzerlerinden kaldırdı. Ancak musibet kalkınca onlar küfürlerine geri döndüler ve sözlerini bozdular.

وَنَادٰى فِرْعَوْنُ فٖي قَوْمِهٖ قَالَ يَا قَوْمِ اَلَيْسَ لٖي مُلْكُ مِصْرَ وَهٰذِهِ الْاَنْهَارُ تَجْرٖي مِنْ تَحْتٖيۚ اَفَلَا تُبْصِرُونَ ﴿٥١﴾

51- "Firavun, kavmine seslenerek dedi ki: 'Ey kavmim! Mısır hükümdarlığı benim değil mi? Şu nehirler de benim altımdan akıyor. Hâlâ görmüyor musunuz?'"

Firavun, Mısır hükümdarlığı ve Nil'in kendi emriyle akmasıyla övünerek güç gösterisi yapmıştır. Allah'tan başka bir şeyle övünen bir kimsenin ölüm ve helakinin o şey yüzünden olacağının bilinmesi için bu övünme onun helakine sebep olmuştur.

اَمْ اَنَا۬ خَيْرٌ مِنْ هٰذَا الَّذٖي هُوَ مَهٖينٌۙ وَلَا يَكَادُ يُبٖينُ ﴿٥٢﴾

52- "Yoksa ben şu zavallı, neredeyse maksadını anlatamayacak durumda olan bu adamdan daha hayırlı değil miyim?"

Firavun, Hz. Mûsâ'yı ve konuşmasını küçümsemiş ve onu ayıplamıştır. Bunun üzerine Allah, Hz. Mûsâ'yı başına musallat kılmış ve helaki onun eliyle olmuştur. Böylece bir kimse diğer bir kimseyi küçümserse muhakkak Allah, küçümseyenin başına küçümsediği kimseyi musallat kılar.

فَلَوْلَٓا اُلْقِيَ عَلَيْهِ اَسْوِرَةٌ مِنْ ذَهَبٍ اَوْ جَٓاءَ مَعَهُ الْمَلٰٓئِكَةُ مُقْتَرِنٖينَ ﴿٥٣﴾

53- "Ona altın bilezikler atılmalı yahut onunla beraber bulunmak üzere, melekler gelmeli değil miydi?"

فَاسْتَخَفَّ قَوْمَهُ فَاَطَاعُوهُۜ اِنَّهُمْ كَانُوا قَوْمًا فَاسِقٖينَ ﴿٥٤﴾

54- "Firavun kavmini küçük düşürdü. Onlar da kendisine itaat ettiler. Çünkü onlar, yoldan çıkmış bir toplumdu."

Onlar, korkudan dolayı Firavun'a itaat ettiler. Korkudan dolayı olan itaat ise içten olmaz. İtaat ancak arzudan kaynaklandığı zaman içten olur.

فَلَمَّٓا اٰسَفُونَا انْتَقَمْنَا مِنْهُمْ فَاَغْرَقْنَاهُمْ اَجْمَع۪ينَۙ ﴿٥٥﴾

55- "Onlar bizi bu şekilde öfkelendirince biz de onlardan intikam aldık, hepsini suda boğduk."

( آسَفُونَا ) lafzı, bizi öfkelendirdiler demektir. Ancak Allah bundan şunu kast etmiştir: "Onlar, dostlarımızı öfkelendirdiler. Biz de bundan dolayı onlardan intikam aldık." Bu ifade, cem hali konusunda bir esas teşkil eder. Şöyle ki Allah, Firavun ve kavminin, O'nun dostlarını öfkelendirmelerini kendi zatına izafe etmiştir. Bir kudsi hadiste de Allah'ın şöyle dediği rivayet edilmiştir:

*"Ben hastalandım, fakat sen beni ziyaret etmedin."*

Öte yandan Allah, Hz. İbrahim'in kıssasında: ( يَأْتُوكَ رِجَالًا وَعَلٰى كُلِّ ضَامِرٍ ) *"Yaya olarak sana gelirler."* (Hac, 22/27) buyururken peygamberimizin (s.a.v.) kıssasında şöyle buyurmuştur:

( مَنْ يُطِعِ الرَّسُولَ فَقَدْ اَطَاعَ اللّٰهَ ) *"Kim peygambere itaat ederse şüphesiz o, Allah'a itaat etmiş olur."* (Nisâ, 4/80)

فَجَعَلْنَاهُمْ سَلَفًا وَمَثَلًا لِلْاٰخِر۪ينَ ﴿٥٦﴾

56- "Onları, sonradan gelecek inkârcılara geçmiş bir ibret ve bir örnek kıldık."

وَلَمَّا ضُرِبَ ابْنُ مَرْيَمَ مَثَلًا اِذَا قَوْمُكَ مِنْهُ يَصِدُّونَ ﴿٥٧﴾

57- "Meryem oğlu İsa, bir örnek olarak anlatılınca bir de ne göresin, senin kavmin hemen şamata etmeye başlar."

Hz. İsa, şu ayetle örnek olarak anlatılmıştır:

( إِنَّ مَثَلَ عِيسٰى عِنْدَ اللّٰهِ كَمَثَلِ اٰدَمَ ) *"Şüphesiz Allah katında İsa'nın durumu, Âdem'in durumu gibidir."* (Âl-i İmrân, 3/59)

Allah, tıpkı Hz. Âdem'i anasız ve babasız yarattığı gibi Hz. İsa'yı da babasız yaratmıştır. Ancak onlar, bunu inkâr ettiler.

Bir iddiaya göre ise Hz. İsa'nın örnek olarak anlatıldığı ayet şudur:

( اِنَّكُمْ وَمَا تَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ حَصَبُ جَهَنَّمَ ) *"Şüphesiz siz ve Allah'tan başka kulluk ettikleriniz cehennem odunusunuz."* (Enbiyâ, 21, 98)

Bunun üzerine onlar: "Biz İsa, Uzeyr ve meleklerle birlikte cehennemde olmaya razıyız" dediler. Ancak bu ayette Hz. İsa, Hz. Uzeyr ve meleklerin anlatıldığı bir yer yoktur. Çünkü ayette Allah: "Kulluk ettiğiniz şeyler" demiş, "kulluk ettiğiniz kimseler" dememiştir.

وَقَالُوٓا ءَاٰلِهَتُنَا خَيْرٌ اَمْ هُوَ مَا ضَرَبُوهُ لَكَ اِلَّا جَدَلًا بَلْ هُمْ قَوْمٌ خَصِمُونَ ﴿٥٨﴾

58- "'Bizim tanrılarımız mı hayırlı yoksa İsa mı?' dediler. Bunu, sadece seninle tartışmak için ortaya attılar. Şüphesiz onlar, kavgacı bir toplumdur."

Onlar, sadece tartışmak için sana bunu örnek verdiler. Şöyle ki onlar, şunu demeye getirdiler: "Eğer Muhammed: 'Sizin tanrılarınız hayırlıdır' derse, tanrıların mabut olduğunu kabul etmiş olacaktır. Şayet: 'İsa, tanrılarınızdan daha hayırlıdır' derse, o zaman İsa'nın kulluk edilmeye layık olduğunu ikrar etmiş olacaktır. Yok eğer: 'Onlardan hiçbiri hayırlı değildir' derse, bu takdirde de Hz. İsa'nın mabutluğunu reddetmiş olacaktır." Onlar, bu sözle Hz. Peygamber'le (s.a.v.) tartışmak istediler. Yoksa bunu sormaları, faydalanmak için değildi. Hz. Peygamber'in (s.a.v.) cevabı ise Hz. İsa'nın, onların tanrılarından daha hayırlı olduğu, fakat kulluk edilme hakkına sahip olmadığı şeklinde oldu. Çünkü putlardan daha hayırlı olan her şey, Allah'tan başka ibadet edilme hakkına sahip değildir. İşte böylece

Allah (c.c.), Peygamberine (s.a.v.) onların tartışmacı kimseler olduğunu ve delillerinin, Rableri katında geçersiz olduğunu açıklamış olmaktadır.

إِنْ هُوَ إِلَّا عَبْدٌ أَنْعَمْنَا عَلَيْهِ وَجَعَلْنَاهُ مَثَلًا لِبَنِي إِسْرَآئِيلَ ﴿٥٩﴾

59- "İsa, sadece kendisine nimet verdiğimiz ve İsrailoğullarına örnek kıldığımız bir kuldur."

O halde Hz. İsa, kendisine peygamberlikle inamda bulunduğumuz bir kuldan başka bir şey değildir.

وَلَوْ نَشَآءُ لَجَعَلْنَا مِنْكُمْ مَلٰٓئِكَةً فِي الْأَرْضِ يَخْلُفُونَ ﴿٦٠﴾

60- "Eğer dileseydik, içinizde yeryüzünde sizin yerinize geçecek melekler yaratırdık."

Eğer dileseydik, sizin yerinize yeryüzü sakinleri olmaları için gökten melekler indirirdik.

وَإِنَّهُ لَعِلْمٌ لِلسَّاعَةِ فَلَا تَمْتَرُنَّ بِهَا وَاتَّبِعُونِ هٰذَا صِرَاطٌ مُسْتَقِيمٌ ﴿٦١﴾

61- "Şüphesiz o, kıyametin bir bilgisidir. Artık onun hakkında asla şüphe etmeyin ve bana uyun. Bu, doğru bir yoldur."

( وَإِنَّهُ لَعِلْمٌ لِلسَّاعَةِ ) *"Şüphesiz o, kıyametin bir bilgisidir."*

Kıyametin bilgisinden maksat Hz. İsa'dır. Allah, onu gökten indirdiği zaman o, kıyametin alametidir.

( فَلَا تَمْتَرُنَّ بِهَا ) *"Artık onun hakkında asla şüphe etmeyin."*

Hz. İsa'nın kıyametten önce ineceği konusunda şüphe etmeyin.

وَلَا يَصُدَّنَّكُمُ الشَّيْطَانُ إِنَّهُ لَكُمْ عَدُوٌّ مُبِينٌ ﴿٦٢﴾

62- "Sakın şeytan sizi yoldan çevirmesin. Çünkü o, size apaçık bir düşmandır."

Şeytan sizi kıyamete iman etmekten ve benim rehberliğimde imana uymaktan alıkoymasın.

وَلَمَّا جَٓاءَ عِيسٰى بِالْبَيِّنَاتِ قَالَ قَدْ جِئْتُكُمْ بِالْحِكْمَةِ وَلِاُبَيِّنَ لَكُمْ بَعْضَ الَّذ۪ي تَخْتَلِفُونَ ف۪يهِۚ فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَط۪يعُونِ ﴿٦٣﴾

63- "İsa, apaçık mucizeleri getirdiği zaman şöyle demişti: 'Ben, size hikmeti getirdim ve hakkında ayrılığa düştüğünüz şeylerden bir kısmını size açıklamak için geldim. Öyle ise Allah'akarşı gelmekten sakının ve bana itaat edin.'"

Bu ayette Allah, ilk defa Hz. İsa'nın gelişinden söz etmektedir. Şöyle ki o, kavmine apaçık dini hükümler getirdi ve kendilerini Allah'ın dinine davet etti. Fakat onlar, kendisine karşı olan tutumlarında hiziplere ayrıldılar. Onu inkâr edenler ise şüphesiz azaba müstahaktırlar.

اِنَّ اللّٰهَ هُوَ رَبّ۪ي وَرَبُّكُمْ فَاعْبُدُوهُۜ هٰذَا صِرَاطٌ مُسْتَق۪يمٌ ﴿٦٤﴾

64- "Şüphesiz Allah benim de Rabbim, sizin de Rabbinizdir. Öyleyse ona kulluk edin. İşte bu, doğru bir yoldur."

فَاخْتَلَفَ الْاَحْزَابُ مِنْ بَيْنِهِمْۚ فَوَيْلٌ لِلَّذ۪ينَ ظَلَمُوا مِنْ عَذَابِ يَوْمٍ اَل۪يمٍ ﴿٦٥﴾

65- "Ama aralarından çıkan gruplar ayrılığa düştüler. Elem dolu bir günün azabından vay o zulmedenlerin haline!"

هَلْ يَنْظُرُونَ اِلَّا السَّاعَةَ اَنْ تَأْتِيَهُمْ بَغْتَةً وَهُمْ لَا يَشْعُرُونَ ﴿٦٦﴾

66- "Onlar, ancak kıyamet gününün kendilerine ansızın gelmesini beklemektedirler. Halbuki bunun farkında değillerdir."

اَلْاَخِلَّٓاءُ يَوْمَئِذٍ بَعْضُهُمْ لِبَعْضٍ عَدُوٌّ اِلَّا الْمُتَّق۪ينَ ﴿٦٧﴾

67- "O gün Allah'a karşı gelmekten sakınanlar dışında, dostlar birbirine düşman olurlar."

Allah'tan başkası için olan şeyin sonu yok olmaktır. Nefsin arzusuna göre arkadaş olan dostlar ise birbirlerine düşman olurlar; birbirlerinden uzaklaşırlar ve böylece hiçbirinin diğerine faydası olmaz.

Allah yolunda dost olanlara gelince, onlar birbirlerine şefaat ederler ve birbirlerinin durumu hakkında konuşurlar. İşte bunlar, Allah'ın: ( اِلَّا الْمُتَّق۪ينَ ) *"Allah'a karşı gelmekten sakınanlar dışında"* sözüyle istisna ettiği takva sahipleridir.

Bu arada, Allah yolunda dost olmanın şartı, dünyalık işlerde **birbirlerini kullanmamaları ve birbirlerinden yararlanmamalarıdır.** Ta ki arkadaşlıkları, dünyadaki bir nasip için değil, sırf Allah için olmuş olsun. Aynı zamanda birbirlerini kabul etmeleri de Allah için olsun ve aralarında yağcılık meydana gelmesin. Bir de onlardan her biri, diğerini Allah'ın yolunu benimsediğini gördüğü oranda benimser. Şayet onun, Allah'ın rıza göstermediği bir şey yaptığını öğrenirse arkadaşının bu davranışına rıza göstermez. Ancak arkadaşı o davranışı terk ettiği zaman, o da tekrar onu dost edinir. Aksi halde, günahkârlığı konusunda kendisine yardım etmesi uygun olmaz. Aynı zamanda kalbiyle de ondan sakınması ve dünyalık bir gaye veya bir beklenti ya da bir karşılık için yanında durmaması gerekir.

يَا عِبَادِ لَا خَوْفٌ عَلَيْكُمُ الْيَوْمَ وَلَٓا اَنْتُمْ تَحْزَنُونَۚ ﴿٦٨﴾

68- "Ey kullarım! Bugün size korku yoktur, siz üzülmeyeceksiniz de."

Yarın onlara şöyle denilecektir:

*"Ey kullarım! Bugün cem ehlinin karşılaştıkları korkulardan hiçbiri sizin için yoktur. Aynı zamanda sizler, aksattığınız amellerden dolayı da üzülmeyeceksiniz."*

Günahlara gelince biz onları bağışladık. Korkuların hakkından biz geldik ve başkalarının üzerinizdeki haklarını biz ödedik. O esnada çağırıcı: "Bu hitap, herkesi ümitlendirir" dediğinde onlar: "Biz, Allah'ın kullarıyız" derler. Derken Allah şöyle buyurunca:

اَلَّذ۪ينَ اٰمَنُوا بِاٰيَاتِنَا وَكَانُوا مُسْلِم۪ينَۚ ﴿٦٩﴾

69- "O kullarım ki iman ettiler ve Müslüman idiler."

Kâfirler ümitsiz oldular, Müslümanların ise ümidi güçlenmiş oldu.

اُدْخُلُوا الْجَنَّةَ اَنْتُمْ وَاَزْوَاجُكُمْ تُحْبَرُونَ ﴿٧٠﴾

70- "Siz ve eşleriniz sevinç içinde cennete giriniz."

Cennet bahçelerinde sevinçli olursunuz ve rahat içinde yaşarsınız.

Bir yoruma göre de semâın lezzetinden sevinç içinde olursunuz.

يُطَافُ عَلَيْهِمْ بِصِحَافٍ مِنْ ذَهَبٍ وَاَكْوَابٍۚ وَف۪يهَا مَا تَشْتَه۪يهِ
الْاَنْفُسُ وَتَلَذُّ الْاَعْيُنُۚ وَاَنْتُمْ ف۪يهَا خَالِدُونَۚ ﴿٧١﴾

71- "Onlar için altın tepsiler ve kadehler dolaştırılır. Canlarının istediği ve gözlerinin hoşlandığı her şey oradadır. Siz orada ebedî olarak kalacaksınız."

İbadet ehli kimseler için cennette canlarının istediği şeyler vardır. Çünkü onlar, dünyada nefse karşı olan mücadeleleri gereğince açlık ve susuzluk çektiler, çeşitli zorluklara katlandılar. Bu nedenle cennette çeşitli sevaplarla mükâfatlandırılırlar.

Marifet ve muhabbet ehli kimselere gelince, onlar için gözlerinin lezzet bulacağı Allah'a bakmak vardır. Çünkü onlar, kalpleriyle uzun süre aşırı özlem çektiler ve şiddetli susuzlukları sebebiyle yanma hali yaşadılar.

وَتِلْكَ الْجَنَّةُ الَّتِي أُورِثْتُمُوهَا بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٧٢﴾

72- "İşte bu, yapmakta olduklarınıza karşılık size miras verilen cennettir."

Hitap itaatkârlara olmak üzere, yarın onlara şöyle denilir: "Siz, ey amellerinizde ihlas sahibi, ahvalinizde de dürüst olan kimseler!"

لَكُمْ فِيهَا فَاكِهَةٌ كَثِيرَةٌ مِنْهَا تَأْكُلُونَ ﴿٧٣﴾

73- "Orada sizin için bol bol meyve var, onlardan yersiniz."

Çok miktardaki meyveden yer ve ünsiyet içinde kabul edilirsiniz.

إِنَّ الْمُجْرِمِينَ فِي عَذَابِ جَهَنَّمَ خَالِدُونَ ﴿٧٤﴾

74- "Şüphesiz suçlular cehennem azabında devamlı kalacaklardır."

Bunlar, müşrik kâfirler olup cehennemde ebediyen kalacak kimselerdir. Azapları da ne gevşetilir ne de hafifletilir. Tevhid ehline gelince, onlardan bazıları cehennemde olabilir ancak bunlar cehennemde ebedî olarak kalmayacaklardır. Ayrıca ayetteki hitabın ortaya koyduğu delil de bunların azabının hafifletileceğini ifade etmektedir. Sahih bir hadiste şöyle denilmiştir:

*"Allah onları cehennemden çıkarıncaya kadar ölüm halinde tutar. Ölü ise hissetmez ve acı duymaz."*

لَا يُفَتَّرُ عَنْهُمْ وَهُمْ فِيهِ مُبْلِسُونَ ﴿٧٥﴾

75- "Azapları hafifletilmeyecektir. Onlar, azap içinde ümitsizdirler."

( إبلاس ) lafzı, hayal kırıklığı ve ümitsizlik demektir. Bu, aynı zamanda müminler için cehennemde ümitsizliğin bulunmadığını göstermektedir. Onlar; musibetlerini yaşasalar da ümitli olma vasıflarını korurlar, hesapları bitinceye kadar günlerini sayarlar.

Şeyhler de şöyle demişlerdir:

*"Müminin cehennemdeki hali, bir bakıma kalbi için dünyadaki halinden daha rahattır. Zira bugün helak olma korkusu, yarın ise kurtuluş inancı vardır."*

Şiir:

*Esenliğin kusuru, sahibinin*
*Bel kırıcı şeyler beklemesidir*
*Musibetin faziletiyse ehlinin beklemesidir*
*Ümidin ardından feleğin dostluğunu*

وَمَا ظَلَمْنَاهُمْ وَلٰكِنْ كَانُوا هُمُ الظَّالِمِينَ ﴿٧٦﴾

76- "Biz onlara zulmetmedik. Fakat onlar kendileri zalim idiler."

Her ne kadar Allah (c.c.), bundan münezzeh ise de bu hitap, zulümden dilenen özür sözüne benzemektedir.

وَنَادَوْا يَا مَالِكُ لِيَقْضِ عَلَيْنَا رَبُّكَ قَالَ اِنَّكُمْ مَاكِثُونَ ﴿٧٧﴾
لَقَدْ جِئْنَاكُمْ بِالْحَقِّ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَكُمْ لِلْحَقِّ كَارِهُونَ ﴿٧٨﴾

77, 78- "Şöyle seslenirler: 'Ey Malik! Rabbin bizim işimizi bitirsin.' O da: 'Siz hep böyle kalacaksınız' der. Andolsun, size hakkı getirdik. Fakat çoğunuz, haktan hoşlanmayanlarsınız."

Eğer onlar: "Ey Malik!" yerine: "Ey Melik!" deselerdi, dilekleri kabul edilmeye daha yakın olurdu. Fakat yabancılık, onlarla bu sözün arasına engel olarak girmiştir. Bu nedenle onlara verilen cevap: *"Siz cehennemde kalıcısınız. Size nasihat edildi, fakat ondan yararlanmadınız ve sözü zamanında kabul etmediniz"* şeklinde olmuştur. Nitekim onların çoğu haktan hoşlanmazlardı.

اَمْ اَبْرَمُوا اَمْرًا فَاِنَّا مُبْرِمُونَ ﴿٧٩﴾

79- "Yoksa bir işe kesin karar mı verdiler? Şüphesiz biz de kararlıyız."

Doğrusu işleri başlarına yıkılmakta, bu yüzden aldıkları hiçbir tedbir onların lehine yürümemekte ve hiçbir işleri, varsaydıkları gibi gelişmemektedir. Bu durum ise yaratanın ispatına dair en açık bir delildir.

اَمْ يَحْسَبُونَ اَنَّا لَا نَسْمَعُ سِرَّهُمْ وَنَجْوٰيهُمْ بَلٰى وَرُسُلُنَا لَدَيْهِمْ يَكْتُبُونَ ﴿٨٠﴾

80- "Yoksa onların sırlarını ve gizli konuşmalarını duymadığımızı mı sanıyorlar? Hayır, öyle değil, yanlarındaki elçilerimiz yazmaktadırlar."

Allah'ın onları, meleklerin kendilerini duyması ve amellerini adlarına yazmalarıyla korkutmasının yegâne sebebi, O'ndan gafil olmalarıdır. Eğer Allah'tan haberleri olsaydı Allah, onları kendisinden başkasıyla korkutmazdı. Bir de yaptıklarının adına yazıldığını ve buna göre sorumlu tutulacağını bilen kimsenin sorulmasından korktuğu şeylere bulaşması azalır.

قُلْ اِنْ كَانَ لِلرَّحْمٰنِ وَلَدٌ فَاَنَا اَوَّلُ الْعَابِدِينَ ﴿٨١﴾

81- "De ki: 'Eğer Rahmân'ın bir çocuğu olsaydı, ona kulluk edenlerin ilki ben olurdum.'"

Yani eğer sizin içinizde, hükmünüzde ve inancınızda, Rahmân'ın bir çocuğu olduğu var ise ben bu sözden yüz çevirenlerin ilkiyim.

سُبْحَانَ رَبِّ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ رَبِّ الْعَرْشِ عَمَّا يَصِفُونَ ﴿٨٢﴾

82- "Göklerin ve yerin Rabbi, Arş'ın da Rabbi olan Allah, onların nitelemelerinden uzaktır."

Allah, onların söylediklerinden büsbütün münezzeh ve mukaddestir. Bir de bu ve bunun gibi ayetlerde bidat ehline cevap vermek ve görüşlerini kötüleyip iddialarının geçersizliğini bildirmek

amacıyla onların, mabudun vasfı ile ilgili söyledikleri hatalı sözlerini nakletmenin caiz olduğuna dair delil vardır.

فَذَرْهُمْ يَخُوضُوا وَيَلْعَبُوا حَتّٰى يُلَاقُوا يَوْمَهُمُ الَّذ۪ي يُوعَدُونَ ﴿٨٣﴾

83- "Bırak onları, uyarıldıkları güne kavuşana kadar dalsınlar ve oynayadursunlar."

Çünkü onların durumu hesap dışı kalmaz ve onlar kesin olarak aşağılanmalarıyla yüzleşeceklerdir.

Ayrıca bunda kulun, esenliğinin uzunluğuna aldanmaması gerektiğine dair delil vardır. Çünkü akıbetlerden emin olunamaz.

وَهُوَ الَّذ۪ي فِي السَّمَٓاءِ اِلٰهٌ وَفِي الْاَرْضِ اِلٰهٌ وَهُوَ الْحَك۪يمُ الْعَل۪يمُ ﴿٨٤﴾

84- "O, gökte de ilâh olandır, yerde de ilâh olandır. O, hüküm ve hikmet sahibidir, hakkıyla bilendir."

Göklerde mabut Allah'tır. Yeryüzünde ihtiyaçların talebi için maksut olan da Allah'tır. Göktekiler, Allah'tan başkasına ibadet etmezler. Yerdekilerin ihtiyaçlarını da Allah'tan başkası karşılamaz. Allah, günahkârlara mühlet vermede hikmet sahibidir, kullarının hallerini hakkıyla bilendir.

وَتَبَارَكَ الَّذ۪ي لَهُ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا وَعِنْدَهُ عِلْمُ السَّاعَةِۚ وَاِلَيْهِ تُرْجَعُونَ ﴿٨٥﴾

85- "Göklerin, yerin ve ikisi arasındaki her şeyin hükümranlığı kendisine ait olan Allah yücedir. Kıyametin bilgisi de yalnız O'nun katındadır ve yalnızca O'na döndürüleceksiniz."

Göklerin ve yerin mülkü kendisine ait olan Allah yücedir, uludur, mukaddestir ve münezzehtir. Gökler ve yer O'nun kudretiyle ortaya çıkar. Yoksa O, onların ortaya çıkmasıyla övünmez.

وَلَا يَمْلِكُ الَّذِينَ يَدْعُونَ مِنْ دُونِهِ الشَّفَاعَةَ اِلَّا مَنْ شَهِدَ بِالْحَقِّ
وَهُمْ يَعْلَمُونَ ﴿٨٦﴾

86- "O'nu bırakıp taptıkları şeyler, şefaat edemezler. Ancak bilerek hakka şahitlik edenler şefaat edebilirler."

Yani bugün tevhide şahitlik eden için yarın Allah, şefaat hakkı ortaya koyacaktır. Bir de ayette, yarın bütün Müslümanların şefaatlerinin makbul olacağına dair delil vardır.

وَلَئِنْ سَاَلْتَهُمْ مَنْ خَلَقَهُمْ لَيَقُولُنَّ اللّٰهُ فَاَنّٰى يُؤْفَكُونَ ﴿٨٧﴾

87- "Andolsun, onlara kendilerini kimin yarattığını sorsan elbette: 'Allah' derler. Öyleyken nasıl döndürülüyorlar?"

Öyleyken nasıl ibret alınıyorlar? Nasıl büyüklük taslayıp Allah'ın ibadetinden yüz çeviriyorlar?

وَقِيلِهِ يَا رَبِّ اِنَّ هٰٓؤُلَٓاءِ قَوْمٌ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿٨٨﴾ فَاصْفَحْ عَنْهُمْ وَقُلْ
سَلَامٌ فَسَوْفَ يَعْلَمُونَ ﴿٨٩﴾

88, 89- "Onun: 'Ya Rabbi!' demesine andolsun ki şüphesiz bunlar iman etmeyen bir kavimdir. Şimdilik sen onları hoş gör ve: 'Size selam olsun' de. Yakında bilecekler."

Yani o, kıyametin bilgisini de, "Ya Rabbi" demesini de bilir.

( فَاصْفَحْ عَنْهُمْ ) *"Şimdilik sen onları hoş gör."*

Yani onlara mühlet ver ve kendilerine şöyle de:

*"Benden size selam olsun. Ancak siz, hak ettiklerinizin cezasını öğreneceksiniz."*

سورة الدُّخَانِ

# DUHÂN SÛRESİ

(Duhan Sûresi 59 âyettir. Mekke'de inmiştir.
Adını 10. âyetteki "Duhân (duman)" dan almıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir sözdür ki onu zikreden, dünyada ve ahirette güzelliğine kavuşur. Onu tanıyan da uğruna canını feda eder.

O, öyle bir sözdür ki bir kalbe hâkim olduğu zaman onu her türlü meşguliyetten alıkoyar. Öyle bir sözdür ki bir kul devamlı onu söylediği zaman, kendisini her türlü korkudan emin kılar.

حٰمٓ ۚ ﴿١﴾ وَالْكِتَابِ الْمُب۪ينِ ۙ ﴿٢﴾

**1, 2- "Hâ Mîm. Apaçık kitaba andolsun."**

(ح) harfi, Allah'ın hakkına, (م) harfi de O'nun muhabbetine işaret etmektedir. Anlamı ise şudur: Kullarıma olan hakkıma ve muhabbetime ve kendilerine gönderdiğim aziz kitabıma andolsun ki ben marifetimin ehli olanları ayrılığımla cezalandırmayacağım.

إِنَّٓا اَنْزَلْنَاهُ ف۪ي لَيْلَةٍ مُبَارَكَةٍ اِنَّا كُنَّا مُنْذِر۪ينَ ﴿٣﴾ ف۪يهَا يُفْرَقُ كُلُّ اَمْرٍ حَك۪يمٍ ﴿٤﴾

3, 4- "Şüphesiz biz onu mübarek bir gecede indirdik. Muhakkak biz insanları uyarmaktayız. Katımızdan bir emirle her hikmetli iş, o gecede ayırt edilir."

( ف۪ي لَيْلَةٍ مُبَارَكَةٍ ) *"Mübarek bir gecede."*

Bir görüşe göre o, kadir gecesidir. Bir görüşe göre de o, şaban ayının on beşinci gecesidir. Bu gece, senet gecesidir. Allah, Kur'ân'ı her yıl Levh-i Mahfuz'dan dünya göğüne, Hz. Cibril'in Hz. Peygamber'e (s.a.v.) getirdiği miktarda indirmiştir.

Bu arada Allah, bu geceye ( لَيْلَةٍ مُبَارَكَةٍ ) *"mübarek gece"* adını vermiştir. Çünkü o, vuslatın başlangıç gecesidir. En bereketli gece ise kulun kalbiyle hazır olduğu ve Rabbini müşahede ettiği gecedir. Kul, o gece vuslat nurlarının huzuru içinde yaşar ve onda Allah'a yakınlığın esintisini bulur. Ancak bu grubun, gecelerindeki halleri değişiktir. Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Zulmetmem ben geceye, iddia da etmem*
*Gecenin yıldızlarının yok olmadığını*
*Gecem sevgilinin dilediği gibidir; kısadır cömertlik yaptığı zaman*
*Cimrilik yaptığı zamansa uzundur gecem*

( ف۪يهَا يُفْرَقُ كُلُّ اَمْرٍ حَك۪يمٍ ) *"Katımızdan bir emirle her hikmetli iş, o gecede ayırt edilir."*

Yılın tamamında meydana gelecek olan her türlü hayır ve şer, sıkıntılar ve nimetler, zafer ve hezimet ile bolluk ve kıtlık olayı bu gece içerisinde Levh-i Mahfuz'dan yazılır. Bu arada sofiler grubunun da verimlilik, çoraklık, vuslat, ayrılık, uyum, uyumsuzluk, muvaffakiyet, hayal kırıklığı, kabz ve bast gibi halleri vardır. Bu çerçevede nice kul vardır ki hakkında uzaklık ve mutsuzluğa dair hüküm ve karar inerken, bir başka kul hakkında ise hüküm, destek ve vefaya dair inmektedir.

اَمْرًا مِنْ عِنْدِنَا اِنَّا كُنَّا مُرْسِل۪ينَ ﴿٥﴾ رَحْمَةً مِنْ رَبِّكَ اِنَّهُ هُوَ السَّم۪يعُ الْعَل۪يمُ ﴿٦﴾

**5, 6-** "Bu hüküm katımızdan bir emirle olur. Rabbinden bir rahmet olarak biz peygamberler göndermekteyiz. Şüphesiz hakkıyla işiten ve hakkıyla bilen O'dur."

(رَحْمَةً مِنْ رَبِّكَ) *"Rabbinden bir rahmet olarak."*

Bu rahmet, Hz. Peygamber'dir (s.a.v.). Çünkü o, şöyle buyurmuştur:

*"Ben, armağan edilmiş bir rahmetim."*

(اِنَّا كُنَّا مُرْسِل۪ينَ) *"Biz peygamberler göndermekteyiz."*

Bir yoruma göre, biz peygamberleri bir rahmet olarak dostlarımızın nefislerine muvaffakiyetle, kalplerine de tahkikle göndermekteyiz.

(اِنَّهُ هُوَ السَّم۪يعُ الْعَل۪يمُ) *"Şüphesiz hakkıyla işiten ve hakkıyla bilen O'dur."*

O, iştiyak sahiplerinin iniltisini işitmekte ve sevenlerin özlemini bilmektedir.

رَبِّ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا اِنْ كُنْتُمْ مُوقِن۪ينَ ﴿٧﴾

**7-** "Eğer kesin olarak inanıyorsanız O, göklerin, yerin ve ikisi arasındakilerin Rabbidir."

Allah, hem göklerin ve yerin hem de ikisi arasındakilerin malikidir. Bu ikisi arasındakilerin kapsamına kulların kespleri de girmektedir. Allah'ın bu şeylerin maliki olması, onlara kadir olması anlamındadır. Allah'ın kudreti kapsamındaki bir şey meydana geldiği zaman bu, o şeyin Allah'ın fiilinin eseri olduğunu gösterir. Çünkü filin anlamı, kudret kapsamındaki bir şeyin meydana gelmesidir.

لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَ يُحْيٖ وَيُمٖيتُ رَبُّكُمْ وَرَبُّ اٰبَٓائِكُمُ الْاَوَّلٖينَ ﴿٨﴾

8- "O'ndan başka hiçbir ilâh yoktur. Diriltir ve öldürür. O, sizin de Rabbiniz, daha önceki atalarınızın da Rabbidir."

Bu ayette onların, cehaletleri sebebiyle var dedikleri şeylerin yokluğu, inkârlarıyla yok dedikleri şeylerin de varlığı ifade edilmiştir.

( رَبُّكُمْ وَرَبُّ اٰبَٓائِكُمُ الْاَوَّلٖينَ ) *"O, sizin de Rabbiniz, daha önceki atalarınızın da Rabbidir."*

Aslınızı da neslinizi de yetiştiren -terbiye eden- O'dur.

بَلْ هُمْ فٖي شَكٍّ يَلْعَبُونَ ﴿٩﴾

9- "Fakat onlar, şüphe içinde eğlenip duruyorlar."

Eğlenmek, düzensiz gerçekleşen fiildir. Buna ( لَعب ) "la'ib" denilmesi, özel bir düzene bağlı olmaksızın akan salyaya ( لُعاب ) benzetilmesinden dolayıdır. Böylece Allah, münafığı eğlenmekle vasıflandırmıştır. Çünkü o, inancındaki kuşkusu sonucu tereddüt ve şaşkınlık içindedir.

فَارْتَقِبْ يَوْمَ تَاْتِي السَّمَٓاءُ بِدُخَانٍ مُبٖينٍ ﴿١٠﴾

10- "Göğün açık bir duman getireceği günü bekle."

Bu duman, kıyametin alametlerindendir. Çünkü ondan önce meydana gelir.

Bunların -sofilerin- kıyameti ise dünyada gerçekleşir. Bu çerçevede onların, göğün açık bir duman getireceği günü, dostların kaybolduğu ve açık olan kapıların; dostlarla ünsiyet bulma kapılarının kapandığı gündür.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Ne dünya tarafi kolay ne kuşluk vakti*
*Açık ve ne de hayat suyu serindir*

يَغْشَى النَّاسَ هٰذَا عَذَابٌ اَلِيمٌ ﴿١١﴾

11- "O duman insanları bürür. Bu acı veren bir azaptır."

Bunların -sofilerin- azabı ise genellikle süreklidir. Bu, tatlı bulunan bir azaptır. Diğer insanlar:

رَبَّنَا اكْشِفْ عَنَّا الْعَذَابَ اِنَّا مُؤْمِنُونَ ﴿١٢﴾

12- "Ey Rabbimiz! Bu azabı üzerimizden kaldır. Çünkü biz artık inanıyoruz."

Derken bunlar, yaratıkların aksine azabın artırılmasını talep ederler.

Onların şairi bu konuda şöyle der:

*Ulaştım ben amaçlarımın tamamına*
*Azaptan duyduğum zevkin dışında*

Böylece halk belanın kaldırılmasını talep ederken sofiler onu isteyerek şöyle derler:

Şiir:

*Sensin bela, o halde nasıl dilerim kaldırılmasını ben!*
*Doğrusu gerçek bela, belamı yitirdiğim zamandır*

اَنّٰى لَهُمُ الذِّكْرٰى وَقَدْ جَٓاءَهُمْ رَسُولٌ مُبِينٌ ﴿١٣﴾

13- "Nerede onlarda öğüt almak?! Oysa kendilerine gerçeği açıklayan bir peygamber gelmişti."

Eğer onlar, Hak'tan kalplerine inen ilhamlara aykırı davranırlarsa, anında, tahammüllerini aşan ve kendilerine yardımcı olmayan bir ceza ile cezalandırılırlar. Bu esnada yardım dilediklerinde ise kendilerine şöyle denilir: *"Nerde sizde öğüt almak?! Oysa size, kalplerinize inen bir elçi gelmişti de siz karşı çıkmıştınız."*

ثُمَّ تَوَلَّوْا عَنْهُ وَقَالُوا مُعَلَّمٌ مَجْنُونٌ ﴿١٤﴾

14- "Sonra ondan yüz çevirdiler ve: 'Bu, öğretilmiş bir deli!' dediler."

اِنَّا كَاشِفُوا الْعَذَابِ قَلِيلًا اِنَّكُمْ عَائِدُونَ ﴿١٥﴾ يَوْمَ نَبْطِشُ الْبَطْشَةَ الْكُبْرٰى اِنَّا مُنْتَقِمُونَ ﴿١٦﴾

15, 16- "Biz bu azabı kısa bir süre kaldıracağız, siz de yine eski halinize döneceksiniz. Onları en şiddetli yakalayışla yakalayacağımız gün, şüphesiz biz intikamı alırız."

Şöyle ki sizde upuzun bir üzüntü meydana getiririz ve siz intikamımızın gölgesinde dinlenecek bir yer bulamazsınız.

وَلَقَدْ فَتَنَّا قَبْلَهُمْ قَوْمَ فِرْعَوْنَ وَجَاءَهُمْ رَسُولٌ كَرِيمٌ ﴿١٧﴾ اَنْ اَدُّوا اِلَيَّ عِبَادَ اللّٰهِ اِنّ۪ي لَكُمْ رَسُولٌ اَم۪ينٌ ﴿١٨﴾

17, 18- "Andolsun, onlardan önce Firavun kavmini sınamıştık. Onlara değerli bir peygamber gelmişti. O, şöyle demişti: 'Allah'ın kullarını bana teslim edin. Çünkü ben, güvenilir bir peygamberim.'"

İnkârlarında ısrar etmelerinin ve inatlarının nefretinden doğru yola dönüş yapmamalarının ardından Allah, onları sınadı.

( وَجَاءَهُمْ رَسُولٌ كَرِيمٌ ) *"Onlara değerli bir peygamber gelmişti."*

Bu peygamber, onlardan İsrailoğullarından zulmü kaldırmalarını ve basiret sahibi olmalarını istiyordu. Bir de o, Allah için seferber olmalarını istedi ve Allah tarafından gelen delili ortaya koydu.

وَاَنْ لَا تَعْلُوا عَلَى اللّٰهِ اِنّ۪ي اٰت۪يكُمْ بِسُلْطَانٍ مُب۪ينٍ ﴿١٩﴾

19- "Allah'a karşı ululuk taslamayın. Çünkü ben size apaçık bir delil getiriyorum."

وَاِنّ۪ي عُذْتُ بِرَبّ۪ي وَرَبِّكُمْ اَنْ تَرْجُمُونِۘ ﴿٢٠﴾

20- "Şüphesiz ki ben, beni taşlamanızdan, benim de Rabbim, sizin de Rabbiniz olan Allah'a sığındım."

وَاِنْ لَمْ تُؤْمِنُوا ل۪ي فَاعْتَزِلُونِ ﴿٢١﴾

21- "Buna inanmadınızsa benden uzak durun."

فَدَعَا رَبَّهُٓ اَنَّ هٰٓؤُ۬لَٓاءِ قَوْمٌ مُجْرِمُونَ ﴿٢٢﴾

22- "Ardından Mûsâ, Rabbine: 'Bunlar, günahkâr bir toplumdur' diye seslendi."

فَاَسْرِ بِعِبَاد۪ي لَيْلًا اِنَّكُمْ مُتَّبَعُونَۙ ﴿٢٣﴾ وَاتْرُكِ الْبَحْرَ رَهْوًاۜ اِنَّهُمْ
جُنْدٌ مُغْرَقُونَ ﴿٢٤﴾

23, 24 - "Allah da şöyle dedi: 'O halde kullarını geceleyin yola çıkar. Çünkü takip edileceksiniz. Denizi açık halde bırak. Çünkü onlar, boğulacak bir ordudur.'"

Allah, Hz. Mûsâ'ya mümin kullarını gece yola çıkarmasını emretti, kurtarılacaklarını ve düşmanlarının boğulacak bir ordu olduğunu kendilerine bildirdi.

كَمْ تَرَكُوا مِنْ جَنَّاتٍ وَعُيُونٍۙ ﴿٢٥﴾ وَزُرُوعٍ وَمَقَامٍ كَر۪يمٍۙ ﴿٢٦﴾
وَنَعْمَةٍ كَانُوا ف۪يهَا فَاكِه۪ينَۙ ﴿٢٧﴾

25, 26, 27- "Onlar, geride nice bahçeler, nice pınarlar bıraktılar. Nice ekinler, nice güzel konaklar! Zevk ve sefasını sürdükleri nice nimetler!"

Onların geride bıraktıkları hallerini -mallarını-, değerli eşyalarını ve terk ettikleri geçim araç gereçlerini ellerinden aldık.

كَذٰلِكَ وَاَوْرَثْنَاهَا قَوْمًا اٰخَرِينَ ﴿٢٨﴾

28- "İşte böyle! Onları başka bir topluma miras bıraktık."

Başka bir toplumu onların ev ve yurtlarında iskân ettik.

فَمَا بَكَتْ عَلَيْهِمُ السَّمَٓاءُ وَالْاَرْضُ وَمَا كَانُوا مُنْظَرِينَ ﴿٢٩﴾

29- "Gök ve yer, onların ardından ağlamadı ve onlara mühlet de verilmedi."

Onların dünyada kendileri sebebiyle bir hareketsizin harekete geçeceği veya hareket halindeki bir şeyin duracağı bir değerleri ve önemleri yoktu. Bu itibarla ne yeşil, onlar sebebiyle kurudu, ne de yeryüzü yokluklarından dolayı yeşillendi. Onlardan ne bir cisim ne de bir iz kaldı. Hiçbir kulumuzun kalbinde de onlardan yana bir emare belirmedi. Nasıl olur da gök, daha önce kendisiyle sevinmediği kimsenin yokluğuna ağlar?! Oysa mümin, bunun aksine göğü amelinin kendisine yükselmesiyle sevindirir. Bu nedenle gök, onun yokluğu halinde ağlar.

وَلَقَدْ نَجَّيْنَا بَنٖٓي اِسْرَٓاءٖيلَ مِنَ الْعَذَابِ الْمُهٖينِ ﴿٣٠﴾ مِنْ فِرْعَوْنَ
اِنَّهُ كَانَ عَالِيًا مِنَ الْمُسْرِفٖينَ ﴿٣١﴾ وَلَقَدِ اخْتَرْنَاهُمْ عَلٰى عِلْمٍ عَلَى
الْعَالَمٖينَ ﴿٣٢﴾

30, 31, 32- "Andolsun, İsrailoğullarını o alçaltıcı azaptan; Firavundan kurtardık. Çünkü o, haddi aşanlardan bir zorba idi. Andolsun, biz onları, bilerek âlemlere üstün kıldık."

Allah, onları kurtardı. Düşmanlarını ise hidayetten mahrum kılıp helak etti.

(وَلَقَدْ نَجَّيْنَا...) *"Andolsun, biz onları ... üstün kıldık."*

Yani biz, onların işledikleri günahlarını bildik. Bu nedenle biz, kendi tercihimizle, fiillerinin ve günahlarıyla kirlenmiş olmalarının düşürdüğü değerlerini yükselttik.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Biz, onların hallerini; emrimizi her şeye tercih ettiklerini bilerek onları üstün kıldık.

- Bizim hakkımızdaki günahlarının çokluğuyla birlikte, kalben bizi sevdiklerini bilerek onları üstün kıldık.

- Kendilerine emanet ettiğimiz sırlarımızı ve onları keşfine mazhar kıldığımız hakkımızın hakikatlerini bilerek onları üstün kıldık.

وَاٰتَيْنَاهُمْ مِنَ الْاٰيَاتِ مَا فٖيهِ بَلٰٓؤٌا مُبٖينٌ ﴿٣٣﴾

33- "Onlara, içinde açık bir imtihan bulunan mucizeler verdik."

Bu imtihan, Allah'ın, insanı bolluk halinde şükürle, üzüntü ve zorluk halinde de sabırla yükümlü kılmasıdır.

اِنَّ هٰٓؤُلَٓاءِ لَيَقُولُونَ ﴿٣٤﴾ اِنْ هِيَ اِلَّا مَوْتَتُنَا الْاُو۫لٰى وَمَا نَحْنُ بِمُنْشَرٖينَ ﴿٣٥﴾ فَاْتُوا بِاٰبَٓائِنَٓا اِنْ كُنْتُمْ صَادِقٖينَ ﴿٣٦﴾

34, 35, 36- "Bunlar diyorlar ki: 'İlk ölümümüzden başka bir ölüm yoktur. Biz, diriltilecek değiliz. Eğer doğru söyleyenler iseniz, atalarımızı getirin.'"

Ebûcehil, onlar için bir kişiyi diriltmesini Hz. Peygamber'e (s.a.v.) şu amaçla önermişti: "Doğru söyleyip söylemediğini bize haber vermesi için." Bunun üzerine Allah, müşriklerin bu öneriyi, delilin aleyhlerinde kesinleşmesinden ve mazeretlerini geçersiz kılan durumun ortaya çıkarılmasından sonra yaptıklarını bildirdi ve ardından şöyle buyurdu:

أَهُمْ خَيْرٌ أَمْ قَوْمُ تُبَّعٍ وَالَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ أَهْلَكْنَاهُمْ إِنَّهُمْ كَانُوا
مُجْرِمِينَ ﴿٣٧﴾ وَمَا خَلَقْنَا السَّمٰوَاتِ وَالْأَرْضَ وَمَا بَيْنَهُمَا لَاعِبِينَ
﴿٣٨﴾ مَا خَلَقْنَاهُمَا إِلَّا بِالْحَقِّ وَلٰكِنَّ أَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٣٩﴾

37, 38, 39- "Bunlar mı daha hayırlı yoksa Tübba' kavmi ile onlardan öncekiler mi? Onları helak ettik. Çünkü onlar, suçlu kimselerdi. Biz gökleri, yeri ve bunlar arasında bulunanları, eğlenmek için yaratmadık. Biz, onları ancak hak ve hikmete uygun olarak yarattık. Ama onların çoğu bilmiyorlar."

Tübba' Yemen kralıdır. O, Müslüman idi ve kavmi sayıca çoktu. Ancak sayıca çok olmalarına ve kuvvetleri tam yerinde olmasına rağmen Allah (c.c.), kavmini helak etti.

(وَمَا خَلَقْنَا السَّمٰوَاتِ وَالْأَرْضَ وَمَا بَيْنَهُمَا لَاعِبِينَ) *"Biz gökleri, yeri ve bunlar arasında bulunanları, eğlenmek için yaratmadık."*

Biz gökleri ve yeri ancak hak ile hak olan hükümle ve hak olan emirle yarattık. O halde ben, onları yaratmada hak sahibiyim. Yani benim onları yaratmaya hakkım vardı.

إِنَّ يَوْمَ الْفَصْلِ مِيقَاتُهُمْ أَجْمَعِينَ ﴿٤٠﴾ يَوْمَ لَا يُغْنِي مَوْلًى عَنْ
مَوْلًى شَيْئًا وَلَا هُمْ يُنْصَرُونَ ﴿٤١﴾ إِلَّا مَنْ رَحِمَ اللّٰهُ إِنَّهُ هُوَ الْعَزِيزُ
الرَّحِيمُ ﴿٤٢﴾

40, 41, 42- "Şüphesiz hüküm günü, hepsinin bir arada buluşacağı zamandır. O gün dostun dosta hiçbir faydası olmaz. Kendilerine yardım da edilmez. Yalnız Allah'ın merhamet ettiği kimseler bunların dışındadır. Şüphesiz O, mutlak güç sahibidir, çok merhamet edendir."

O gün hiçbir yardımcının diğer yardımcıya, hiçbir sıcak dostun diğer sıcak dosta ve hiçbir akrabanın diğer akrabaya hiçbir faydası olmaz. Allah'ın, lütuf ve nimetiyle merhamet ettiği kimseler hariç.

اِنَّ شَجَرَةَ الزَّقُّومِ ﴿٤٣﴾ طَعَامُ الْاَث۪يمِ ﴿٤٤﴾
كَالْمُهْلِ يَغْل۪ي فِي الْبُطُونِ ﴿٤٥﴾ كَغَلْيِ الْحَم۪يمِ ﴿٤٦﴾

43, 44, 45, 46- "Şüphesiz zakkum ağacı, günahkârların yiyeceğidir. O, maden eriyiği gibidir. Kaynar suyun kaynaması gibi karınlarda kaynar."

( أثيم ) lafzı, günahlar işleyen kimse demektir. ( مُهْل ) lafzı da bakır eriyiği demektir. ( حميم ) ise sıcak su demektir.

خُذُوهُ فَاعْتِلُوهُ اِلٰى سَوَٓاءِ الْجَح۪يمِ ﴿٤٧﴾
ثُمَّ صُبُّوا فَوْقَ رَأْسِه۪ مِنْ عَذَابِ الْحَم۪يمِ ﴿٤٨﴾

47,48- "Tutun onu, cehenneme sürükleyin. Sonra başının üstüne kaynar su azabından dökün."

Onu cehennemin ortasına sürükleyin. Bir de ona şöyle denilir:

ذُقْ اِنَّكَ اَنْتَ الْعَز۪يزُ الْكَر۪يمُ ﴿٤٩﴾

49- "Tat bakalım! Hani sen güçlüydün, şerefliydin!"

Sen kavmin nezdinde böylesin ancak bizim katımızda zelilsin ve aşağılıksın.

اِنَّ هٰذَا مَا كُنْتُمْ بِه۪ تَمْتَرُونَ ﴿٥٠﴾

50- "İşte bu, şüphelenip durduğunuz şeydir."

اِنَّ الْمُتَّق۪ينَ ف۪ي مَقَامٍ اَم۪ينٍ ﴿٥١﴾ ف۪ي جَنَّاتٍ وَعُيُونٍ ﴿٥٢﴾ يَلْبَسُونَ
مِنْ سُنْدُسٍ وَاِسْتَبْرَقٍ مُتَقَابِل۪ينَ ﴿٥٣﴾

51, 52, 53- "Allah'a karşı gelmekten sakınanlar ise güvenli bir yerdedirler. Bahçelerdedirler ve pınar başlarındadırlar. İnce ipekten ve parlak atlastan elbiseler giyinerek karşılıklı otururlar."

Onlar, her yönüyle sıkıntılardan güven içindedirler. Elbiseleri ipektendir. Yatakları ise ince ipekten ve parlak atlastandır.

( مُتَقَابِلِينَ ) *"Karşılıklı otururlar."*

Onlar, yerlerinden ayrılmazlar ve oradan ayrılmak da istemezler.

كَذٰلِكَ وَزَوَّجْنَاهُمْ بِحُورٍ عِينٍ ﴿٥٤﴾

54- "İşte böyle. Ayrıca onları iri siyah gözlü hurilerle evlendirmişizdir."

Hurilerle sohbet etmek onlara mubah kılınmıştır. Ancak cennette evlilik akdi ve boşama olmayacaktır. Veliye de bu lütuflardan yararlanma imkânı bu vasıflarla verilecektir. Sonra birileri, bu imkânların arasından alınıp götürülebilir. Böylece onlar, bunların tamamından kurtulmuş olurlar. Nasıl ki onlar dünyada gailelerden koparılmışlarsa ahirette de iri siyah gözlü huriler onların beraberliğini umarlar ancak Allah onları her şeyden koparır.

Dünyada Allah, zahidi dünyadan korur. Cennette de Allah, arifi cennetten korur.

يَدْعُونَ فِيهَا بِكُلِّ فَاكِهَةٍ اٰمِنِينَ ﴿٥٥﴾

55- "Orada güven içinde her türlü meyveyi isterler."

لَا يَذُوقُونَ فِيهَا الْمَوْتَ اِلَّا الْمَوْتَةَ الْاُولٰى وَوَقٰيهُمْ عَذَابَ الْجَحِيمِ ﴿٥٦﴾

56- "Orada ilk ölümden başka bir ölüm tatmazlar. Allah, onları cehennem azabından korumuştur."

İlk ölüm, dünyada canlarının alınmasıdır. Ahirette ise Allah onları lütfuyla azaptan korur. Bu da meramı elde etmek ve istenenin başarılması demektir.

فَضْلًا مِنْ رَبِّكَ ذٰلِكَ هُوَ الْفَوْزُ الْعَظِيمُ ﴿٥٧﴾

57- "Bunlar, Rabbinden bir lütuf olarak verilmiştir. İşte bu, büyük başarıdır."

فَاِنَّمَا يَسَّرْنَاهُ بِلِسَانِكَ لَعَلَّهُمْ يَتَذَكَّرُونَ ﴿٥٨﴾ فَارْتَقِبْ اِنَّهُمْ
مُرْتَقِبُونَ ﴿٥٩﴾

58, 59- "Biz onu (Kur'ân'ı) senin dilinle kolaylaştırdık ki düşünüp öğüt alsınlar. Artık sen bekle, onlar da beklemektedirler."

Ey Muhammed! Yakınların onu düşünüp öğüt alsınlar. Sen de işlerin sonunu bekle, şaşırtıcı şeyler göreceksin. Onlar da beklemektedirler fakat sadece hoşlanmadıkları şeyler göreceklerdir.

سورة الْجَاثِيَةِ

# CÂSİYE SÛRESİ

(Câsiye Sûresi 37 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını 28. âyette geçen "Câsiye (diz çökerek duran)" kelimesinden almıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

Allah'ın adıyla, yani ordusundan yardım istemek durumunda olmayan Hükümdar'ın adıyla, hayatı için hiçbir şeye tutunmayan Birr'in adıyla, giysisi büyüklüğü olan en üstün otoritenin adıyla, yüceliğinin izzetiyle vasıflanan mutlak Galib'in adıyla.

Allah'ın adıyla, yani hiçbir sürenin varlığını kuşatamadığı ebedî, yüce, bir olan ve kendisi dışında ne kaçacak ne de sığınılacak kimse bulunmayan Kerim ve Samed'in adıyla.

حٰمٓ ﴿١﴾ تَنْزِيلُ الْكِتَابِ مِنَ اللّٰهِ الْعَزِيزِ الْحَكِيمِ ﴿٢﴾

1, 2- "Hâ Mîm. Kitab'ın indirilişi, mutlak güç sahibi, hüküm ve hikmet sahibi Allah tarafındandır."

Yüceliğinde mutlak güç sahibi, fiillerinde de hüküm ve hikmet sahibi. Ezelden beri mutlak güç sahibi, sahiplenme sıfatıyla kuluna olan lütfunda hüküm ve hikmet sahibi.

إِنَّ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ لَاٰيَاتٍ لِلْمُؤْمِنِينَ ﴿٣﴾

3- "Şüphesiz göklerde ve yerde, inananlar için nice deliller vardır."

Rab oluşun göstergeleri belirgin, ilâhlığın delilleri de açıktır. Bu nedenle kim gaflet sarhoşluğundan uyanır ve sırrını ibret yerlerinde yerleştirirse hiç kuşkusuz vuslatın hakikatlerinden nasibini alır.

وَفِي خَلْقِكُمْ وَمَا يَبُثُّ مِنْ دَٓابَّةٍ اٰيَاتٌ لِقَوْمٍ يُوقِنُونَ ﴿٤﴾

4- "Sizin yaratılışınızda ve Allah'ın yaydığı her bir canlıda da kesin olarak inanan bir toplum için elbette nice deliller vardır."

Kul, kendi boy ve endamının düzgünlüğüne, aklinin kemaline ve temyizinin tam oluşuna, organları ve ihtiyaçları bakımından sahip olduğu özelliklere dikkatle baktıktan sonra kendi dışındaki canlıları, parçaları ve organları bakımından düşündüğünde, sonra canlı yaratıklar arasından Âdemoğullarının kavrayış, akıl, temyiz, ilim, iman ve irfan özelliklerine sahip oluşu ve bu topluluğun içinden safiyet ehli kimselerin, çeşitli ihsanlar çerçevesindeki pek çok özellikleri üzerinde durduğunda, kendilerine özgü menkıbelerinin ve sadece onlarda bulunan faziletlerin varlığını anlayacaktır. Böylece o, Allah'ın onları değerli kıldığına ve yaratıkların pek çoğuna öncelediğine kesin bir şekilde inanmış olacaktır.

وَاخْتِلَافِ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ وَمَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ مِنَ السَّمَٓاءِ مِنْ رِزْقٍ فَاَحْيَا بِهِ الْاَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا وَتَصْرِيفِ الرِّيَاحِ اٰيَاتٌ لِقَوْمٍ يَعْقِلُونَ ﴿٥﴾

5- "Geceyle gündüzün birbiri ardınca gelişinde, Allah'ın gökten rızık indirip onunla yeryüzünü ölümünden sonra diriltmesinde, rüzgarları evirip çevirmesinde aklını kullanan bir toplum için deliller vardır."

Allah dinî ilimleri, doğruluğu delillerle ortaya konulmuş ve gerçeklikleri göstergelerle kanıtlanmış kazanımlar kılmıştır. Bu nedenle

kim onlarla basiret sahibi olmazsa, ayakları dosdoğru yoldan -ya da sırat köprüsünden- kayar ve cehennem azabının içine düşer. Bu haliyle o, bugün şaşkınlık ve taklidin karanlığı içinde, ahirette de söz verilen ebedî azapta olur.

تِلْكَ اٰيَاتُ اللّٰهِ نَتْلُوهَا عَلَيْكَ بِالْحَقِّ فَبِاَيِّ حَد۪يثٍ بَعْدَ اللّٰهِ وَاٰيَاتِه۪
يُؤْمِنُونَ ﴿٦﴾

6- "İşte bunlar Allah'ın ayetleridir. Onları sana gerçek olarak okuyoruz. Artık Allah'tan ve O'nun ayetlerinden sonra hangi söze inanacaklar?"

O ayetlere iman etmeyen kimse artık hangi söze iman eder, ondan sonra hangi esastan yararlanır ve hangi hakikat denizinden bir şey elde eder? Heyhat! Bu konuda belirsizliğe asla yer kalmamıştır.

وَيْلٌ لِكُلِّ اَفَّاكٍ اَث۪يمٍ ﴿٧﴾ يَسْمَعُ اٰيَاتِ اللّٰهِ تُتْلٰى عَلَيْهِ ثُمَّ يُصِرُّ
مُسْتَكْبِرًا كَاَنْ لَمْ يَسْمَعْهَا فَبَشِّرْهُ بِعَذَابٍ اَل۪يمٍ ﴿٨﴾

7, 8- "Her günahkâr yalancının vay haline! Kendisine Allah'ın ayetlerinin okunduğunu işitir de sonra büyüklük taslayarak sanki onları hiç duymamış gibi direnir. İşte onu acı bir azap ile müjdele."

Her suskun aslında konuşur. Söz söylemez ve kelam etmez ancak hüküm konusunda delille konuşur. Bu nedenle kim anlamak üzere dinler ve tevhid nuruyla basiret sahibi olmak isterse, her iki dünyanın da azığını kazanır ve güzel makam sahiplerinin saygınlığına talip olur. Kim de gafletin hükmüyle kulak tıkarsa, cehalet çukuruna düşer ve terk edilmişlik dağıyla damgalanır.

وَاِذَا عَلِمَ مِنْ اٰيَاتِنَا شَيْـًٔا اتَّخَذَهَا هُزُوًا اُو۬لٰٓئِكَ لَهُمْ عَذَابٌ مُه۪ينٌ ﴿٩﴾

9- "Ayetlerimizden bir şey öğrenince onu alaya alır. Onlar için alçaltıcı bir azap vardır."

Öğrendiği şeyi inatla karşılar ve onu, ayetin murat edilen vecihlerinden, isnad yoluyla sıhhatini ortaya koymadan, kendi anladığı şekilde tevil eder. İşte bunlar için alçaltıcı yani zelil kılan bir azap vardır. Bazen de kul, kalbin içlerinden gelip hakkında hiç kuşku duymayacağı ve yaşadığı durum hakkında içine bir kuşku düşürmeyen bilgilerle keşfe mazhar kılınır. Bu durumda kul, bu bilgileri küçümsediği zaman, perdelenmişlik züllü ve firkat perişanlığının içine düşer.

مِنْ وَرَآئِهِمْ جَهَنَّمُ وَلَا يُغْنِي عَنْهُمْ مَا كَسَبُوا شَيْئًا وَلَا مَا اتَّخَذُوا
مِنْ دُونِ اللّٰهِ اَوْلِيَآءَ وَلَهُمْ عَذَابٌ عَظِيمٌ ﴿١٠﴾

10- "Arkalarında da cehennem vardır. Dünyada kazandıkları ve Allah'tan başka edindikleri dostlar, onlara hiçbir fayda vermez. Onlar için elbette büyük bir azap vardır."

Bu fetret esnasında ve bu meşakkat vaktinde onlardan kabul edilecek hiçbir özür ve onlardan dinlenecek hiçbir söz yoktur. Onlar için kesintisiz bir azap vardır. Bir de onlar, üzerinde bulundukları -yaşadıkları- keşfe döndürülmezler.

Şiir:

*Yol ver gözlerime ağlasınlar senden sonra*
*Zira dönüşü yok artık sefa günlerinin*

هٰذَا هُدًى وَالَّذِينَ كَفَرُوا بِاٰيَاتِ رَبِّهِمْ لَهُمْ عَذَابٌ مِنْ رِجْزٍ اَلِيمٌ ﴿١١﴾

11- "İşte bu Kur'ân bir hidayettir. Rablerinin ayetlerini inkâr edenlere ise en kötüsünden acı bir azap vardır."

اَللّٰهُ الَّذِي سَخَّرَ لَكُمُ الْبَحْرَ لِتَجْرِيَ الْفُلْكُ فِيهِ بِاَمْرِهِ وَلِتَبْتَغُوا مِنْ
فَضْلِهِ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿١٢﴾

12- "Allah, içinde gemilerin emriyle akıp gitmesi, O'nun lütfunu aramanız ve şükretmeniz için denizi sizin hizmetinize verendir."

Onlar, denize açıldıklarında gemi kurtulabilir de batabilir de. Aynı şekilde kul da takdirin denizlerinde Allah'a bağlılık gemisi içindedir. Onu, inayetin rüzgârları yürütmekte ve tevekkül yelkenleri yükseltilmiş bulunmaktadır. Yanı sıra, kesin inanç denizindeki yollar açıktır ve esenlik rüzgârları estikçe gemi kurtulur. Şayet fitnenin afetleri eserse, işte o zaman kaptanın elinde hiçbir şey kalmaz ve takdir edilenler galebe çalar. Bir de gemi sakinlerinin hemencecik yürekleri ağızlarına gelir.

وَسَخَّرَ لَكُمْ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ جَم۪يعًا مِنْهُۜ اِنَّ ف۪ي
ذٰلِكَ لَاٰيَاتٍ لِقَوْمٍ يَتَفَكَّرُونَ ﴿١٣﴾

13- "Göklerdeki ve yerdeki her şeyi kendi katından sizin hizmetinize verendir. Elbette bunda, düşünen bir toplum için deliller vardır."

( جَم۪يعًا مِنْهُ ) *"Her şeyi kendi katından."*

Göklerden ve yerden elde edilecek bütün fayda çeşitleri, hepsi Allah'tandır (c.c.). Şöyle ki görülebilen maddî şeylerden her ne varsa, mutlaka insan bir şekilde ondan yararlanır. Onların tamamı ise Allah'tandır (c.c). Mesela gök onlar için bir bina, yer de onlar için bir beşiktir. vs. Bu arada, senin hizmetine verilen şeyin seni boyunduruk altına alması, bir tür aldanmışlıktır. Bir de kul her şeyi düşünmelidir. Eğer gökteki ve yerdeki şeylerin birinde bir halel olsaydı, acaba neler olabilirdi! Mesela eğer güneş olmasaydı, gündüzün iş yapmak nasıl mümkün olurdu? Gece olmasaydı, geceleyin nasıl durulabilirdi? Ay olmasaydı, hesap ve süreler nasıl bilinirdi. Bu ve buna benzer yaratıkların hepsi böyledir:

قُلْ لِلَّذ۪ينَ اٰمَنُوا يَغْفِرُوا لِلَّذ۪ينَ لَا يَرْجُونَ اَيَّامَ اللّٰهِ لِيَجْزِيَ قَوْمًا
بِمَا كَانُوا يَكْسِبُونَ ﴿١٤﴾

14- "İman edenlere söyle! Allah'ın günlerinin geleceğini ummayanları bağışlasınlar ki Allah herhangi bir topluma yaptığının karşılığını versin."

Allah onları güzel ahlak, iyi geçinme, cehaleti bağışlama ve beşer olmanın zaafları ile hırsın gereklerinden arınmakla yükümlü kılmış ve hiç kimsenin, O'nun bilgisi dışında kalmayacağını açıklamıştır. Bu nedenle kim Allah'ın, velilerini nasıl koruduğunu ve düşmanlarını nasıl yok ettiğini bilmek istiyorsa, akıbetlerinin nasıl olduğunu bilmesi için az sayıdaki birkaç gün sabretsin.

مَنْ عَمِلَ صَالِحًا فَلِنَفْسِهٖ وَمَنْ اَسَٓاءَ فَعَلَيْهَا ثُمَّ اِلٰى رَبِّكُمْ تُرْجَعُونَ ﴿١٥﴾

15- "Kim salih bir amel işlerse, kendi lehine işlemiş olur. Kim de kötülük yaparsa, kendi aleyhine yapmış olur. Sonra Rabbinize döndürüleceksiniz."

Kim salih bir amel işlerse, onun için mübarek olur. Kim de bir kötülük yaparsa, onun belasını çeker. Sonra dönüşü Mevlâ'sına olur.

وَلَقَدْ اٰتَيْنَا بَنٖٓي اِسْرَٓاءٖيلَ الْكِتَابَ وَالْحُكْمَ وَالنُّبُوَّةَ وَرَزَقْنَاهُمْ مِنَ الطَّيِّبَاتِ وَفَضَّلْنَاهُمْ عَلَى الْعَالَمٖينَ ﴿١٦﴾ وَاٰتَيْنَاهُمْ بَيِّنَاتٍ مِنَ الْاَمْرِ فَمَا اخْتَلَفُٓوا اِلَّا مِنْ بَعْدِ مَا جَٓاءَهُمُ الْعِلْمُ بَغْيًا بَيْنَهُمْ اِنَّ رَبَّكَ يَقْضٖي بَيْنَهُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ فٖيمَا كَانُوا فٖيهِ يَخْتَلِفُونَ ﴿١٧﴾

16, 17- "Andolsun, biz İsrailoğullarına kitap, hükümranlık ve peygamberlik verdik. Onları güzel ve temiz yiyeceklerle rızıklandırdık ve onları âlemlere üstün kıldık. Onlara, din işi konusunda açık deliller verdik. Ama onlar, ancak kendilerine bilgi geldikten sonra aralarındaki hasetten dolayı ayrılığa düştüler. Şüphesiz Rabbin, hakkında ayrılığa düştükleri şeyler konusunda kıyamet günü, aralarında hüküm verecektir."

Allah, pek çok yerde Hz. Mûsâ ve İsrailoğullarından söz etmiştir. Onları bazı yerlerde özetle, bazı yerlerde de ayrıntılı olarak anlatmıştır. Burada ise özetle zikretmiştir. Sonra peşinden Hz. Peygamber'den (s.a.v.) söz ederek şöyle buyurmuştur:

ثُمَّ جَعَلْنَاكَ عَلٰى شَرِيعَةٍ مِنَ الْاَمْرِ فَاتَّبِعْهَا وَلَا تَتَّبِعْ اَهْوَٓاءَ الَّذِينَ لَا يَعْلَمُونَ ﴿١٨﴾

18- "Sonra da seni din işi konusunda açık bir yola koyduk. Sen ona uy, bilmeyenlerin hevâ ve hevesine uyma."

Biz, bazı lütufları sana özgü kıldık. O halde onları bil. Bir de sana bazı yollar açtık. O halde o yolları izle. Ayrıca senin için bazı hakikatler ortaya koyduk. O halde onları aşma ve başkasına uymaya yeltenme.

اِنَّهُمْ لَنْ يُغْنُوا عَنْكَ مِنَ اللّٰهِ شَيْـًٔا وَاِنَّ الظَّالِمِينَ بَعْضُهُمْ اَوْلِيَٓاءُ بَعْضٍ وَاللّٰهُ وَلِيُّ الْمُتَّقِينَ ﴿١٩﴾

19- "Çünkü onlar, Allah'a karşı sana asla bir fayda sağlayamazlar. Şüphesiz zalimler, birbirinin dostlarıdır. Allah ise takva sahiplerinin dostudur."

Eğer Allah senin hakkında bir nimet dilerse, hiç kimse ona engel olamaz. Şayet senin hakkında bir imtihan dilerse, onu da hiç kimse üzerinden geri çeviremez. O halde fikrinle hiçbir mahluka bağlanma, kalbinle hiçbir şeye yönelme, Rabbine güven ve O'na tevekkül et.

هٰذَا بَصَٓائِرُ لِلنَّاسِ وَهُدًى وَرَحْمَةٌ لِقَوْمٍ يُوقِنُونَ ﴿٢٠﴾

20- "Bu Kur'ân, insanlar için kalp gözleri, kesin olarak inanan bir toplum için de bir hidayet ve bir rahmettir."

Basiret nurları parıldadığı zaman onun sayesinde ihtimal şaibesi deşifre olur.

İnsanların bakışı da birkaç mertebeye ayrılır: Bu çerçevede kimisi yıldızlarının nuruyla bakar. Bu, akıl sahibidir. Kimisi ferasetinin nuruyla bakar. Bu da zan sahibi olup ona kalbin parıltısı güç verir. Ancak o, sırrın gerisindedir. Kimisi ilimden doğan kesin inanç,

burhanın hükmü ve düşüncenin şartıyla bakar. Kimisi imanın ta kendisi ve uymak vasfıyla bakar. Kimisi de basiretin nuruyla bakar. Bu kimse, gündüzü yaşamakta olup güneşi doğmuş, göğü ise açık ve bulutsuzdur.

أَمْ حَسِبَ الَّذِينَ اجْتَرَحُوا السَّيِّئَاتِ أَنْ نَجْعَلَهُمْ كَالَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ سَوَاءً مَحْيَاهُمْ وَمَمَاتُهُمْ سَاءَ مَا يَحْكُمُونَ ﴿٢١﴾

21- "Yoksa kötülük işleyenler, kendilerini, inanıp salih amel işleyenler gibi kılacağımızı, hayatlarının ve ölümlerinin bir olacağını mı sanıyorlar? Ne kötü hüküm veriyorlar!"

Alçaklığın en aşağı seviyesine indirdiğimiz kimse, gücün en üst mertebesine yükselttiğimiz kimse gibi midir?

Elinden tutup merhamet ettiğimiz kimse, perişanlığın ezdiği ve lanetlik kıldığımız kimse gibi midir?

Vaktin bastını, halin ünsiyetini, lütfun ruhunu bahşettiğimiz ve nihayetinde özel kılıp yükselttiğimiz, sonra da yaklaştırdığımız kimse çabasını, bütün gücünü kullanmayı ve gözyaşını dökmeyi bırakıp kalbi yanmayan, bu yüzden de kendine getirmediğimiz kimse gibi midir?

وَخَلَقَ اللّٰهُ السَّمٰوَاتِ وَالْأَرْضَ بِالْحَقِّ وَلِتُجْزٰى كُلُّ نَفْسٍ بِمَا كَسَبَتْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ﴿٢٢﴾

22- "Allah gökleri ve yeri, hak ve hikmete uygun olarak, herkese kazandığının karşılığı verilsin diye yaratmıştır. Onlara zulmedilmez."

أَفَرَأَيْتَ مَنِ اتَّخَذَ إِلٰهَهُ هَوٰيهُ وَأَضَلَّهُ اللّٰهُ عَلٰى عِلْمٍ وَخَتَمَ عَلٰى سَمْعِهِ وَقَلْبِهِ وَجَعَلَ عَلٰى بَصَرِهِ غِشَاوَةً فَمَنْ يَهْدِيهِ مِنْ بَعْدِ اللّٰهِ أَفَلَا تَذَكَّرُونَ ﴿٢٣﴾

23- "Nefsinin arzusunu ilâh edinen, Allah'ın, halini bildiği için saptırdığı, kulağını ve kalbini mühürlediği, gözüne de perde çektiği kimseyi gördün mü? Şimdi onu Allah'tan başka kim hidayete erdirebilir? Hâlâ düşünüp ibret almayacak mısınız?"

Uyma yolunu izlemeyen, riyazetin hükümlerini tam olarak yerine getirmeyen, nefsinin arzusundan büsbütün sıyrılmayan ve önder bir imanın terbiye etmediği kimse, her türlü çukurda sürüklenir, her türlü dalaletin içinde sersemce dolaşır ve her yolu şaşırır. Kaybı, kazancından daha çoktur. İşte bu gibi kimseler derin bir sapıklık içindedirler. İbadetleri de nefislerinin işleyişine uygun gördükleri şekilde yaparlar. Dizginleri nefsi arzularının elindedir. Onlar hile ehli kimselerdir. Onlar istidraca uğratılmışlar, ancak farkına varmıyorlar.

وَقَالُوا مَا هِيَ اِلَّا حَيَاتُنَا الدُّنْيَا نَمُوتُ وَنَحْيَا وَمَا يُهْلِكُنَآ اِلَّا الدَّهْرُ
وَمَا لَهُمْ بِذٰلِكَ مِنْ عِلْمٍ اِنْ هُمْ اِلَّا يَظُنُّونَ ﴿٢٤﴾

24- "Dediler ki: 'Dünya hayatımızdan başka hayat yoktur. Ölürüz ve yaşarız. Bizi ancak zaman yok eder.' Bu hususta onların bir bilgisi yoktur. Onlar, sadece zanda bulunuyorlar."

Onlar, haleflerini ve seleflerini üzerinde buldukları durumdan ibret almadılar, hayatlarını ve ömürlerini hayvanlıkta harcadılar, kalplerini düşünme külfetinden muaf tuttular. Bu nedenle ne ilimle basiret sahibi olmaya çalıştılar ne de hakikatten yararlandılar. Sermayeleri zandır ve gafildirler.

وَاِذَا تُتْلٰى عَلَيْهِمْ اٰيَاتُنَا بَيِّنَاتٍ مَا كَانَ حُجَّتَهُمْ اِلَّآ اَنْ قَالُوا
ائْتُوا بِاٰبَآئِنَآ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٢٥﴾ قُلِ اللّٰهُ يُحْيِيكُمْ ثُمَّ يُمِيتُكُمْ
ثُمَّ يَجْمَعُكُمْ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ لَا رَيْبَ فِيهِ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَ النَّاسِ لَا
يَعْلَمُونَ ﴿٢٦﴾ وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَيَوْمَ تَقُومُ السَّاعَةُ
يَوْمَئِذٍ يَخْسَرُ الْمُبْطِلُونَ ﴿٢٧﴾

25, 26, 27- "Onlara ayetlerimiz açıkça okunduğu zaman onların delilleri ancak: 'Doğru söyleyenler iseniz, babalarımızı getirin' demek oldu. De ki: 'Allah sizi yaşatıyor, sonra sizi öldürecek, sonra da kendisinde şüphe olmayan kıyamet gününde sizi bir araya getirecek, ama insanların çoğu bilmezler.' Göklerin ve yerin hükümranlığı Allah'ındır. Kıyamet kopacağı gün, işte o gün batıla sapanlar hüsrana uğrayacaklardır."

Onlar, ölülerinin diriltilmesini istediler. Onlar, akla uzak gördükleri şeyi göreceklerdir.

Sonra Allah, göklerin ve yerin hükümranlığının kendisine ait olduğunu ve kıyameti kopardığı zaman bâtılı savunanların toplanacaklarını haber vermiştir. Hesaplaşma günü geldiği zaman ise durum şöyle olur:

وَتَرٰى كُلَّ اُمَّةٍ جَاثِيَةً كُلُّ اُمَّةٍ تُدْعٰى اِلٰى كِتَابِهَا اَلْيَوْمَ تُجْزَوْنَ مَا
كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٢٨﴾ هٰذَا كِتَابُنَا يَنْطِقُ عَلَيْكُمْ بِالْحَقِّ اِنَّا كُنَّا نَسْتَنْسِخُ مَا
كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٢٩﴾ فَاَمَّا الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ فَيُدْخِلُهُمْ
رَبُّهُمْ فِي رَحْمَتِهِ ذٰلِكَ هُوَ الْفَوْزُ الْمُبِينُ ﴿٣٠﴾ وَاَمَّا الَّذِينَ كَفَرُوا
اَفَلَمْ تَكُنْ اٰيَاتِي تُتْلٰى عَلَيْكُمْ فَاسْتَكْبَرْتُمْ وَكُنْتُمْ قَوْمًا مُجْرِمِينَ
﴿٣١﴾ وَاِذَا قِيلَ اِنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّ وَالسَّاعَةُ لَا رَيْبَ فِيهَا قُلْتُمْ مَا
نَدْرِي مَا السَّاعَةُ اِنْ نَظُنُّ اِلَّا ظَنًّا وَمَا نَحْنُ بِمُسْتَيْقِنِينَ ﴿٣٢﴾ وَبَدَا
لَهُمْ سَيِّئَاتُ مَا عَمِلُوا وَحَاقَ بِهِمْ مَا كَانُوا بِهِ يَسْتَهْزِؤُنَ ﴿٣٣﴾ وَقِيلَ
اَلْيَوْمَ نَنْسٰيكُمْ كَمَا نَسِيتُمْ لِقَاءَ يَوْمِكُمْ هٰذَا وَمَاْوٰيكُمُ النَّارُ وَمَا لَكُمْ
مِنْ نَاصِرِينَ ﴿٣٤﴾ ذٰلِكُمْ بِاَنَّكُمُ اتَّخَذْتُمْ اٰيَاتِ اللّٰهِ هُزُوًا وَغَرَّتْكُمُ
الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا فَالْيَوْمَ لَا يُخْرَجُونَ مِنْهَا وَلَا هُمْ يُسْتَعْتَبُونَ ﴿٣٥﴾

28, 29, 30, 31, 32, 33, 34, 35- "O gün her ümmeti diz çökmüş görürsün. Her ümmet kendi kitabına çağrılır. (Onlara şöyle denilir): 'Bugün size, yaptıklarınızın karşılığı verilecektir.' İşte kitabımız, size karşı gerçeği söylüyor. Çünkü biz, yapmakta olduklarınızı kaydediyorduk. İman edip salih ameller işleyenlere gelince, Rableri onları rahmetinin içine alacaktır. İşte apaçık kazanç budur. İnkâr edenlere gelince, onlara şöyle denir: 'Ayetlerim size okunmuştu da sizler büyüklük taslanış ve günahkâr bir kavim olmuş değil miydiniz?' 'Şüphesiz Allah'ın vaadi gerçektir, kıyamet hakkında hiçbir şüphe yoktur" dendiği zaman ise: 'Kıyametin ne olduğunu bilmiyoruz, sadece zannediyoruz. Biz, bu konuda kesin kanaat sahibi değiliz' demiştiniz. Yaptıklarının kötülükleri karşılarına dikilmiş ve alay edip durdukları şey, kendilerini kuşatıvermiştir. Onlara şöyle denir: 'Bugüne kavuşacağınızı unuttuğunuz gibi, bugün biz de sizi unutuyoruz. Barınağınız cehennemdir. Yardımcılarınız da yoktur. Bunun sebebi, Allah'ın ayetlerini alaya almanız ve dünya hayatının sizi aldatmasıdır.' Artık bugün cehennemden çıkarılmazlar ve Allah'ın rızasını kazandıracak amelleri işleme istekleri kabul edilmez.

Herkes, kendi hesabından sorumludur. Bu çerçevede, iman edenler kazanırlar ve büyürler. Kâfir olanlar ise helak ve yok olup giderler. Onlara şöyle denilir:

*"Siz misiniz kendilerine ahiretlerinden söz edildiği zaman, Mevlâ'larını yalanlayanlar? O halde, tıpkı sizin bizi unuttuğunuz gibi biz de sizi unuturuz, barınağınız da cehennemdir."*

فَلِلّٰهِ الْحَمْدُ رَبِّ السَّمٰوَاتِ وَرَبِّ الْاَرْضِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿٣٦﴾
وَلَهُ الْكِبْرِيَٓاءُ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَهُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿٣٧﴾

36, 37- "Hamd, göklerin Rabbi ve yerin Rabbi, âlemlerin Rabbi olan Allah'a mahsustur. Göklerde ve yerde ululuk O'na aittir. O, mutlak güç sahibidir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Ortaya koyduklarına, inşa ettiklerine, yaşattıklarına, yok ettiklerine, uyguladıklarına ve yürüttüklerine karşılık hamd Allah'a mahsustur. Çünkü hüküm Allah'ındır, ululuk Allah'ındır, büyüklük Allah'ındır, yücelik Allah'ındır, üstünlük ve güzellik Allah'ındır.

سورة الأحقاف

# AHKÂF SÛRESİ

(Ahkâf Sûresi 35 âyettir. Mekke'de inmiştir. 10, 15 ve 35. âyetler Medine'de inmiştir. Adını 21. âyette geçen "Ahkâf (kum tepeleri)" tan almıştır. Sûrede yer verilen Ad kavmi Yemen'de rüzgârların oluşturduğu kum tepeleri arasında yaşadığı için bu adla anılmıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" gönülleri çelen, akıllara galebe çalan, itaatkârlara lütufta bulunan ve arifleri kapıp götüren bir sözdür. Bu itibarla Allah'ın lütfettiği kimselere lütfu vardır. Allah'ın alıp götürdüğü kimselerden, yok ettiklerinin yerini de yine kendisi doldurur.

حٰمٓ ﴿١﴾ تَنْز۪يلُ الْكِتَابِ مِنَ اللّٰهِ الْعَز۪يزِ الْحَك۪يمِ ﴿٢﴾

**1, 2- "Hâ Mîm. Kitab'ın indirilişi, mutlak güç sahibi, hüküm ve hikmet sahibi Allah tarafındandır."**

Ben, inayetimin ehli kimselerin kalplerini koruyarak, tevhide aykırı şeyleri caiz görme duygularını onlardan geri çevirdim ve bu kalpleri hakikat nuruyla kesin inanç noktalarında sabit kıldım. Böylece onlarda burhanın göstergeleri apaçık ortaya çıktı. Bunun üzerine biz, o göstergelere ihsanın latifelerini ekledik ve vuslat pınarına

kavuşmaları kemale erdi. Bir de o kalpleri, yakınlık alanlarında ünsiyet esintisiyle besledik.

( عَزِيزٌ ) lafzı, kendilerine kitap indirmek suretiyle müminleri güçlü kılan Allah demektir.

( حَكِيمٌ ) de kitabını değiştirilmeye karşı muhkem kılan Allah demektir.

مَا خَلَقْنَا السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ وَمَا بَيْنَهُمَٓا اِلَّا بِالْحَقِّ وَاَجَلٍ مُسَمًّىۜ
وَالَّذِينَ كَفَرُوا عَمَّٓا اُنْذِرُوا مُعْرِضُونَ ﴿٣﴾

3- "Biz gökleri, yeri ve ikisi arasında bulunanları, hak ve hikmete uygun olarak ve belirli bir süre için yarattık. Kâfir olanlar ise uyarıldıkları şeylerden yüz çevirmektedirler."

Kâfirler, uyarı noktasından yüz çevirip ısrar sınırında kalmaktadırlar.

قُلْ اَرَاَيْتُمْ مَا تَدْعُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ اَرُونِي مَاذَا خَلَقُوا مِنَ الْاَرْضِ
اَمْ لَهُمْ شِرْكٌ فِي السَّمٰوَاتِۜ اِيتُونِي بِكِتَابٍ مِنْ قَبْلِ هٰذَٓا اَوْ اَثَارَةٍ
مِنْ عِلْمٍ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٤﴾

4- "De ki: 'Allah'ı bırakıp da taptıklarınızı gördünüz mü? Bana gösterin, yeryüzünden neyi yaratmışlardır? Yoksa göklerin yaratılışında onların bir ortaklığı mı var? Eğer doğru söyleyenler iseniz bundan önceki bir kitap yahut bir bilgi kalıntısı olsun, getirin bana!'"

Gösterin bana! Hükümranlıkta veya fayda ve zarar verebilmede hangi etkileri vardır? Eğer bir deliliniz varsa onu ortaya koyun veya göstereceğiniz bir şey varsa onu açıklayın. Şimdi siz bundan aciz kaldığınıza göre neden sapıklığınızdan dönüp vazgeçmediniz?

وَمَنْ اَضَلُّ مِمَّنْ يَدْعُوا مِنْ دُونِ اللّٰهِ مَنْ لَا يَسْتَجِيبُ لَهُٓ اِلٰى يَوْمِ
الْقِيٰمَةِ وَهُمْ عَنْ دُعَٓائِهِمْ غَافِلُونَ ﴿٥﴾

5- "Kim Allah'ı bırakıp da kıyamet gününe kadar kendisine cevap veremeyecek şeylere tapandan daha sapıktır? Oysa onlar, bunların tapınmalarından habersizdirler."

Ne hayatı olan ne de fayda ve zarar vermede varlık gösterebilen cansız bir şeye tapan kimseden daha sapık kim vardır?!

وَاِذَا حُشِرَ النَّاسُ كَانُوا لَهُمْ اَعْدَآءً وَكَانُوا بِعِبَادَتِهِمْ كَافِرِينَ ﴿٦﴾

6- "İnsanlar toplandığında o taptıkları, kendilerine düşman oluverir. Onların ibadetlerini de inkâr ederler."

İnsanlar hesap için toplandıkları zaman putlar ile tapanları arasında düşmanlık meydana gelir.

وَاِذَا تُتْلٰى عَلَيْهِمْ اٰيَاتُنَا بَيِّنَاتٍ قَالَ الَّذِينَ كَفَرُوا لِلْحَقِّ لَمَّا
جَٓاءَهُمْ هٰذَا سِحْرٌ مُبِينٌ ﴿٧﴾ اَمْ يَقُولُونَ افْتَرٰيهُ قُلْ اِنِ افْتَرَيْتُهُ
فَلَا تَمْلِكُونَ لِي مِنَ اللّٰهِ شَيْـًٔا هُوَ اَعْلَمُ بِمَا تُفِيضُونَ فِيهِ كَفٰى
بِهِ شَهِيدًا بَيْنِي وَبَيْنَكُمْ وَهُوَ الْغَفُورُ الرَّحِيمُ ﴿٨﴾ قُلْ مَا كُنْتُ
بِدْعًا مِنَ الرُّسُلِ وَمَٓا اَدْرِي مَا يُفْعَلُ بِي وَلَا بِكُمْ اِنْ اَتَّبِعُ اِلَّا
مَا يُوحٰٓى اِلَيَّ وَمَٓا اَنَا اِلَّا نَذِيرٌ مُبِينٌ ﴿٩﴾

7, 8, 9- "Ayetlerimi, onlara açıkça okunduğu zaman, o kâfir olanlar kendilerine geldiğinde hak için, düşünmeden: 'Bu, apaçık bir büyüdür' dediler. Yoksa: 'Onu uydurdu mu' diyorlar? De ki: 'Eğer ben onu uydurmuşsam, Allah'tan gelecek olana karşı siz benim için hiçbir şey yapamazsınız. O, sizin, hakkında yaygara kopardığınız şeyi daha iyi bilir. Benimle sizin aranızda şahit olarak Allah yeter. O, çok bağışlayandır, çok merhamet edendir.' De ki: 'Ben, türedi bir peygamber değilim. Bana ve size ne yapılacağını da bilmem. Ben, sadece bana vahyedilene uyarım. Ben, sadece apaçık bir uyarıcıyım.'"

Peygamberlerimize sihirbazlık, sonra da iftira ve komploculuk isnat ettiler. Ey Muhammed! De ki: "Benimle sizin aranızda şahit olarak Allah yeter. Siz, O'na ortak koştunuz. Ben ise içtenlikle O'nun birliğine iman ettim. Bir de ben, türedi bir peygamber değilim. Nitekim ben gönderilen ilk peygamber olmadığım gibi, diğer peygamberlerin getirdikleri tevhid esaslarından başka bir şeyle de gönderilmiş değilim. Ben, sadece size tevhidde içtenliği, kullukta dürüstlüğü ve güzel ahlaka çağırmayı emrettim."

(وَمَٓا اَدْر۪ي مَا يُفْعَلُ ب۪ي وَلَا بِكُمْۜ اِنْ اَتَّبِعُ اِلَّا مَا يُوحٰٓى اِلَيَّ وَمَٓا اَنَا۬ اِلَّا نَذ۪يرٌ مُب۪ينٌ) *"Bana ve size ne yapılacağını da bilmem. Ben, sadece bana vahyedilene uyarım. Ben, sadece apaçık bir uyarıcıyım."*

(لِيَغْفِرَ لَكَ اللّٰهُ مَا تَقَدَّمَ مِنْ ذَنْبِكَ وَمَا تَاَخَّرَ) Bu durum, şu ayetin inmesinden önce idi: *"Ta ki Allah, senin geçmiş ve gelecek günahlarını bağışlasın."* (Fetih, 48/2)

Ayrıca: "Suçsuza acı çektirmek akıl bakımından çirkindir" diyen kaderiyeciler ve bidatçilerin görüşlerinin geçersizliğine dair olarak ayette delil vardır. Çünkü eğer bu caiz olmasaydı, Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle diyor olacaktı:

*"Ben, Allah'ın peygamberi ve masum olduğumu kesin olarak biliyorum. O halde ister istemez Allah beni bağışlayacaktır."*

Oysa emrin Allah'ın emri olduğu, hükmün O'nun hükmü olduğu ve kullarına dilediğini yapabileceği bilinsin diye Hz. Peygamber (s.a.v.): *"Bana ve size ne yapılacağını da bilmem"* buyurmuştur.

قُلْ اَرَاَيْتُمْ اِنْ كَانَ مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ وَكَفَرْتُمْ بِه۪ وَشَهِدَ شَاهِدٌ مِنْ بَن۪ٓي
اِسْرَٓاء۪يلَ عَلٰى مِثْلِه۪ فَاٰمَنَ وَاسْتَكْبَرْتُمْۜ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ
الظَّالِم۪ينَ ﴿١٠﴾ وَقَالَ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا لِلَّذ۪ينَ اٰمَنُوا لَوْ كَانَ خَيْرًا مَا
سَبَقُونَٓا اِلَيْهِۜ وَاِذْ لَمْ يَهْتَدُوا بِه۪ فَسَيَقُولُونَ هٰذَٓا اِفْكٌ قَد۪يمٌ ﴿١١﴾

10, 11- "De ki: 'Ne dersiniz? Şayet bu, Allah katından ise ve siz onu inkâr etmişseniz, İsrailoğullarından bir şahit de bunun benzerine

şahitlik edip inandığı halde, siz yine de büyüklük taslamışsanız haksızlık etmiş olmaz mısınız? Şüphesiz Allah, zalimler topluluğunu doğru yola iletmez.' Kâfir olanlar, iman edenler için: 'Eğer o Kur'ân iyi bir şey olsaydı, onlar onu kabulde bizi geçmezlerdi' dediler. Onunla doğru yolu bulamadıkları için: 'Bu, eski bir uydurmadır' diyecekler."

Hz. Peygamber (s.a.v.), onların hiçbir halde mazeretlerinin bulunmadığını, Allah'ın azabından güven içinde olamayacaklarını ve kendilerince güven duydukları delillerinin gerçekte geçersiz olduğunu açıkça anladı. Bir de kâfirlerin şöyle dediği kendisine bildirildi:

"Eğer Muhammed'in söylediği bu haşir ve neşir hak olsaydı, bizim Allah katındaki mertebemiz kimsenin mertebesinden geri olmazdı ve biz, liyakatte herkesin önünde olurduk." Ancak bu iddialarına delil bulamayınca ayetin şu ifadesinde yer aldığı gibi söylediler:

(فَسَيَقُولُونَ هٰذَٓا اِفْكٌ قَدِيمٌ) *"'Bu, eski bir uydurmadır' diyecekler."*

Oysa Allah, peygamberlerini (a.s.) göndermiş, onlara kitaplar indirmiş, her kitapta ve her peygamberin dilinden, Muhammed'i peygamber olarak göndereceğini açıklamıştır. Lakin Peygamberimizin (s.a.v.) döneminde yaşayanlar bunu sakladılar ve onu kıskandılar.

وَمِنْ قَبْلِه۪ كِتَابُ مُوسٰٓى اِمَامًا وَرَحْمَةًۜ وَهٰذَا كِتَابٌ مُصَدِّقٌ لِسَانًا عَرَبِيًّا لِيُنْذِرَ الَّذ۪ينَ ظَلَمُواۗ وَبُشْرٰى لِلْمُحْسِن۪ينَ ﴿١٢﴾

12- "Bundan önce bir rehber ve bir rahmet olarak Mûsâ'nın kitabı da vardı. Bu ise onu doğrulayan ve zulmedenleri uyarmak, iyilik yapanlara müjde olmak üzere Arap diliyle indirilmiş bir kitaptır."

اِنَّ الَّذ۪ينَ قَالُوا رَبُّنَا اللّٰهُ ثُمَّ اسْتَقَامُوا فَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَۚ ﴿١٣﴾

13- "'Şüphesiz Rabbimiz Allah'tır' deyip sonra da dosdoğru olanlara hiçbir korku yoktur. Onlar üzülmeyecekler de."

İstikametin -dosdoğru olmanın- tefsiri daha önce geçti. Bir de her kim iman ve istikamet üzere dünyadan çıkarsa, her türlü değeri kazanır ve bolca esenliğe kavuşur.

Bir görüşe göre de ( استقامة ) lafzındaki ( س ) harfi talep anlamında olup müstakim de kendisini hak üzere tutması ve doğruluk üzere sabit kılması konusunda Allah'a niyazda bulunan kimsedir.

أُولَٰئِكَ أَصْحَابُ الْجَنَّةِ خَالِدِينَ فِيهَا جَزَاءً بِمَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ١٤

14- "Onlar cennetliklerdir. Yapmakta olduklarına karşılık orada sürekli kalacaklardır."

وَوَصَّيْنَا الْإِنْسَانَ بِوَالِدَيْهِ إِحْسَانًا حَمَلَتْهُ أُمُّهُ كُرْهًا وَوَضَعَتْهُ كُرْهًا
وَحَمْلُهُ وَفِصَالُهُ ثَلَاثُونَ شَهْرًا حَتَّىٰ إِذَا بَلَغَ أَشُدَّهُ وَبَلَغَ أَرْبَعِينَ
سَنَةً قَالَ رَبِّ أَوْزِعْنِي أَنْ أَشْكُرَ نِعْمَتَكَ الَّتِي أَنْعَمْتَ عَلَيَّ وَعَلَىٰ
وَالِدَيَّ وَأَنْ أَعْمَلَ صَالِحًا تَرْضَاهُ وَأَصْلِحْ لِي فِي ذُرِّيَّتِي إِنِّي تُبْتُ
إِلَيْكَ وَإِنِّي مِنَ الْمُسْلِمِينَ ١٥

15- "Biz insana anne babasına iyi davranmayı emrettik. Annesi onu ne zahmetle karnında taşıdı ve ne zahmetle doğurdu. Onun taşınması ve sütten kesilme süresi otuz aydır. Nihayet olgunluk çağına gelip kırk yaşına varınca şöyle der: 'Bana ve anne babama verdiğin nimetlere şükretmemi, senin razı olacağın salih amel işlememi bana ilham et. Neslimi de salih kimseler yap. Şüphesiz ben sana döndüm. Muhakkak ki ben sana teslim olanlardanım.'"

Allah, insana ebeveyninin hakkına saygıyla riayet etmesini emretmiştir. Çünkü onların onun üzerinde terbiye ve inam hakkı vardır. Bir de insan, cinsinden olduğu kimseye güzelce saygı göstermediği zaman efendisine güzel ilgi göstermekten daha da uzak olur. ●

kadar ki eğer bu konuda Hz. Peygamber'in (s.a.v.) şu sözünden başka bir şey bulunmasaydı bile yine bu yeter olurdu:

*"Rabbin hoşnutluğu, ebeveynin hoşnutluğundan gelir. O'nun öfkesi de onların öfkesindendir."*

Bu arada babanın hakkına riayet, saygı bakımındandır. Annenin hakkına riayet de şefkat ve ikram bakımındandır. Aynı zamanda Allah, ebeveyne iyilik karşılığında ibadetin kabul olacağına şu ifadesiyle söz vermiştir:

أُولَٰئِكَ الَّذِينَ نَتَقَبَّلُ عَنْهُمْ أَحْسَنَ مَا عَمِلُوا وَنَتَجَاوَزُ عَنْ سَيِّئَاتِهِمْ فِي أَصْحَابِ الْجَنَّةِ وَعْدَ الصِّدْقِ الَّذِي كَانُوا يُوعَدُونَ ﴿١٦﴾

**16-** "İşte yaptıklarının iyisini kabul edeceğimiz ve günahlarını bağışlayacağımız bu kimseler cennetlikler arasındadırlar. Bu, onlara öteden beri yapıla gelen doğru bir vaattir."

Buna göre ibadetin kabul edilmesi ve hatanın bağışlanması, ebeveyne iyi davranma şartına bağlıdır. Bir de Allah, ebeveyn hakkında of deme vasfını taşıyan kimseyi kötülemiştir. Bunda, of demenin ötesindeki herhangi bir şiddete ve bu yolu izleyenin hüsran ehlinden olacağına dolayısıyla imanının noksanlığına dair uyarı vardır.

Ebeveynin hakkına riayet konusunda kulun izleyeceği yol, Allah ile arasını düzeltmesidir. O zaman genel olarak başkalarıyla, özel olarak da aile fertleriyle arası da düzelmiş olur.

Evladın, ebeveynin hakkına riayet konusundaki en kötü vasfı ise ömürlerinin uzunluğundan rahatsızlık duyması ve koruduğu haklarından incinmesidir. Oysa yakında asıl ölür ve nesil kalır. Neslin de aslın peşinden gitmesi kaçınılmazdır.

Nitekim şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Ağır ol! Yeterlidir zaman*
*Ayırmak için, bekle o halde zamanı*

وَالَّذ۪ي قَالَ لِوَالِدَيْهِ اُفٍّ لَكُمَٓا اَتَعِدَانِن۪ٓي اَنْ اُخْرَجَ وَقَدْ خَلَتِ الْقُرُونُ مِنْ قَبْل۪يۚ وَهُمَا يَسْتَغ۪يثَانِ اللّٰهَ وَيْلَكَ اٰمِنْۗ اِنَّ وَعْدَ اللّٰهِ حَقٌّۚ فَيَقُولُ مَا هٰذَٓا اِلَّٓا اَسَاط۪يرُ الْاَوَّل۪ينَ ﴿١٧﴾

17- "Anne ve babasına: 'Öf size! Benden önce nice nesiller gelip geçmiş iken beni tekrar diriltilecek olmakla mı tehdit ediyorsunuz?' diyen kimseye, onlar Allah'a sığınarak: 'Yazıklar olsun sana! İman et, Allah'ın vaadi gerçektir' diyorlar. O da: 'Bu, eskilerin masallarından başka bir şey değildir' diyordu."

اُو۬لٰٓئِكَ الَّذ۪ينَ حَقَّ عَلَيْهِمُ الْقَوْلُ ف۪ٓي اُمَمٍ قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلِهِمْ مِنَ الْجِنِّ وَالْاِنْسِۜ اِنَّهُمْ كَانُوا خَاسِر۪ينَ ﴿١٨﴾

18- "İşte onlar, kendilerinden önce cinlerden ve insanlardan gelip geçmiş topluluklar içinde, haklarında o sözün gerçekleştiği kimselerdir. Şüphesiz onlar, ziyana uğrayanlardır."

وَلِكُلٍّ دَرَجَاتٌ مِمَّا عَمِلُواۚ وَلِيُوَفِّيَهُمْ اَعْمَالَهُمْ وَهُمْ لَا يُظْلَمُونَ ﴿١٩﴾

19- "Herkesin yaptıklarına göre dereceleri vardır. Bu, Allah'ın onlara yaptıklarının karşılığını tastamam vermesi içindir. Asla kendilerine haksızlık yapılmaz."

وَيَوْمَ يُعْرَضُ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا عَلَى النَّارِۜ اَذْهَبْتُمْ طَيِّبَاتِكُمْ ف۪ي حَيَاتِكُمُ الدُّنْيَا وَاسْتَمْتَعْتُمْ بِهَاۚ فَالْيَوْمَ تُجْزَوْنَ عَذَابَ الْهُونِ بِمَا كُنْتُمْ تَسْتَكْبِرُونَ فِي الْاَرْضِ بِغَيْرِ الْحَقِّ وَبِمَا كُنْتُمْ تَفْسُقُونَ ﴿٢٠﴾

20- "Kâfir olanlara, cehenneme götürüldükleri gün şöyle denir: 'Dünyadaki hayatınızda güzelliklerinizi bitirdiniz, onların zevkini sürdünüz. Bugün ise yeryüzünde haksız yere büyüklük

taslamanızdan ve yoldan çıkmanızdan dolayı alçaltıcı bir azapla cezalandırılacaksınız.'"

Kulun yolu, hiçbir halde mabudunu unutmaması, O'nun, üzüntüsünde, sevincinde ve hem rahatlığı hem de sıkıntısı halindeki münacatında kendisiyle beraber olduğunu hatırlamasıdır. Bu arada eğer kendisi için ünsiyet gerçekleşip ümit ve bast kendisine galip geldikten sonra kalbine kabz hücum eder ve korkuya kapılırsa, bu takdirde Rabbine hitap etsin ki kendilerine şöyle denenler cümlesinden olmasın: *"Dünyadaki hayatınızda güzelliklerinizi bitirdiniz."*

وَاذْكُرْ اَخَا عَادٍۜ اِذْ اَنْذَرَ قَوْمَهُ بِالْاَحْقَافِ وَقَدْ خَلَتِ النُّذُرُ مِنْ بَيْنِ يَدَيْهِ
وَمِنْ خَلْفِه۪ٓ اَلَّا تَعْبُدُوٓا اِلَّا اللّٰهَۜ اِنّ۪ٓي اَخَافُ عَلَيْكُمْ عَذَابَ يَوْمٍ عَظ۪يمٍ ﴿٢١﴾

21- "Kendisinden önce ve sonra uyarıcılar gelip geçmiş olan Âd kavminin kardeşini (Hûd'u) hatırla. Hani Ahkâf'taki kavmini: 'Ancak Allah'a ibadet edin. Çünkü ben, sizin adınıza büyük bir günün azabından korkuyorum' diye uyarmıştı."

Allah, Hz. Hûd ve onun kavmi olan Âd kıssası ile aralarında geçen konuşmaları, onlara yönelen itabı ve kendilerini acı bir azap ile yakalamasını ayrıntılı olarak bildirmiştir.

قَالُوٓا اَجِئْتَنَا لِتَأْفِكَنَا عَنْ اٰلِهَتِنَاۚ فَأْتِنَا بِمَا تَعِدُنَٓا اِنْ كُنْتَ مِنَ الصَّادِق۪ينَ ﴿٢٢﴾

22- "Onlar ise: 'Sen, bizi ilâhlarınızdan alıkoymak için mi geldin? Doğru söyleyenlerden isen bizi uyardığın şeyi başımıza getir' dediler."

قَالَ اِنَّمَا الْعِلْمُ عِنْدَ اللّٰهِۘ وَاُبَلِّغُكُمْ مَٓا اُرْسِلْتُ بِه۪ وَلٰكِنّ۪ٓي اَرٰيكُمْ قَوْمًا
تَجْهَلُونَ ﴿٢٣﴾

23- "Hûd: 'Bilgi ancak Allah katındadır. Ben, size benimle gönderileni tebliğ ediyorum. Fakat ben, sizi cahillik eden bir kavim olarak görüyorum' dedi."

فَلَمَّا رَاَوْهُ عَارِضًا مُسْتَقْبِلَ اَوْدِيَتِهِمْ قَالُوا هٰذَا عَارِضٌ مُمْطِرُنَا بَلْ هُوَ مَا اسْتَعْجَلْتُمْ بِهٖ رِيحٌ فٖيهَا عَذَابٌ اَلٖيمٌ ﴿٢٤﴾

24- "O azabı, vadilerine doğru yayılan bir bulut olarak gördüklerinde: 'Bu, bize yağmur getiren bir buluttur' dediler. Hûd: 'Hayır, o sizin acele gelmesini istediğiniz şeydir. İçinde acı azabın bulunduğu bir rüzgârdır' dedi."

تُدَمِّرُ كُلَّ شَيْءٍ بِاَمْرِ رَبِّهَا فَاَصْبَحُوا لَا يُرٰٓى اِلَّا مَسَاكِنُهُمْ كَذٰلِكَ نَجْزِي الْقَوْمَ الْمُجْرِمٖينَ ﴿٢٥﴾

25- "'O, Rabbimin emriyle her şeyi yerle bir eder.' Derken evlerinden başka hiçbir şeyleri görünmez hale geldiler. İşte biz, suç işleyen toplumu böyle cezalandırırız."

وَلَقَدْ مَكَّنَّاهُمْ فٖيمَٓا اِنْ مَكَّنَّاكُمْ فٖيهِ وَجَعَلْنَا لَهُمْ سَمْعًا وَاَبْصَارًا وَاَفْـِٔدَةًۘ فَمَٓا اَغْنٰى عَنْهُمْ سَمْعُهُمْ وَلَٓا اَبْصَارُهُمْ وَلَٓا اَفْـِٔدَتُهُمْ مِنْ شَيْءٍ اِذْ كَانُوا يَجْحَدُونَ بِاٰيَاتِ اللّٰهِ وَحَاقَ بِهِمْ مَا كَانُوا بِهٖ يَسْتَهْزِؤُنَ ﴿٢٦﴾

26- "Andolsun, size vermediğimiz imkân ve iktidarı onlara vermiştik. Kendilerine kulaklar, gözler ve kalpler vermiştik. Fakat kulakları, gözleri ve kalpleri kendilerine bir yarar sağlamadı. Çünkü Allah'ın ayetlerini inkâr ediyorlardı. Alaya aldıkları şey, onları kuşattı.

Ne var ki onlara verdiklerimiz kendilerine fayda vermedi. Onları nasıl helak ettiğimize bir bakın.

وَلَقَدْ اَهْلَكْنَا مَا حَوْلَكُمْ مِنَ الْقُرٰى وَصَرَّفْنَا الْاٰيَاتِ لَعَلَّهُمْ يَرْجِعُونَ ﴿٢٧﴾

27- "Andolsun, biz çevrenizdeki memleketleri de yok ettik. Dönsünler diye ayetleri tekrar tekrar açıkladık."

فَلَوْلَا نَصَرَهُمُ الَّذِينَ اتَّخَذُوا مِنْ دُونِ اللّٰهِ قُرْبَانًا اٰلِهَةً بَلْ ضَلُّوا
عَنْهُمْ وَذٰلِكَ اِفْكُهُمْ وَمَا كَانُوا يَفْتَرُونَ ﴿٢٨﴾

28- "Allah'ı bırakıp O'na yakınlık sağlamaları için, edindikleri ilâhlar kendilerine yardım etseydi ya! Aksine onları yüzüstü bırakarak uzaklaşıp kayboldular. Bu, onların yalanı ve uydurmakta oldukları şeydir."

وَاِذْ صَرَفْنَٓا اِلَيْكَ نَفَرًا مِنَ الْجِنِّ يَسْتَمِعُونَ الْقُرْاٰنَ فَلَمَّا حَضَرُوهُ
قَالُوٓا اَنْصِتُوا فَلَمَّا قُضِيَ وَلَّوْا اِلٰى قَوْمِهِمْ مُنْذِرِينَ ﴿٢٩﴾

29- "Hani Kur'ân'ı dinlemek üzere, cinlerden bir grubu sana yöneltmiştik. Onlar, onun huzuruna gelince birbirlerine: 'Susun!' dediler. Kur'ân'ın okunması bitince de uyarıcı olarak kavimlerine döndüler."

Hz. Peygamber (s.a.v.), insanlara olduğu gibi,cinlere de peygamber olarak gönderilmişti. Nitekim bir topluluk, cin gecesinde ona gelip kendisine iman ettiler ve kavimlerine dönüp onlara bunu haber verdiler, onlardan da bir grup iman etti. Bu nedenle bugün, cinler arasında müminler de vardır, kâfirler de vardır.

( فَلَمَّا حَضَرُوهُ قَالُوٓا اَنْصِتُوا ) "Onlar, onun huzuruna gelince birbirlerine: 'Susun!' dediler."

Kapıda ve huzurda yüksek sesle konuşmak gıybettir. Bu nedenle cinler, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) hizmet makamına vardıklarında edepli olmayı kendi aralarında birbirlerine tavsiye ettiler. Onun huzuruna vardıklarında ise: "Susun!" dediler. Bu itibarla huzur ehlinin vasfı tevazu, sükûn, heybet ve vakardır. Taşkınlık ve yılgınlık ise gıybeti veya dikkat azlığını ya da ıttıla noksanlığını gösterir.

( فَلَمَّا قُضِيَ ) *"Kur'ân'ın okunması bitince."*

Yani vahiy bitince.

( وَلَّوْا اِلٰى قَوْمِهِمْ مُنْذِرِينَ ) *"Uyarıcı olarak kavimlerine döndüler"* ve görüp duyduklarını onlara haber verdiler.

قَالُوا يَا قَوْمَنَآ اِنَّا سَمِعْنَا كِتَابًا اُنْزِلَ مِنْ بَعْدِ مُوسٰى مُصَدِّقًا لِمَا بَيْنَ يَدَيْهِ يَهْدِيٓ اِلَى الْحَقِّ وَاِلٰى طَرِيقٍ مُسْتَقِيمٍ ﴿٣٠﴾

30- "Dediler ki: 'Ey kavmimiz! Şüphesiz biz, Mûsâ'dan sonra indirilen, kendinden önceki kitapları doğrulayan, gerçeğe ve doğru yola ileten bir kitap dinledik.'"

يَا قَوْمَنَآ اَجِيبُوا دَاعِيَ اللّٰهِ وَاٰمِنُوا بِهٖ يَغْفِرْ لَكُمْ مِنْ ذُنُوبِكُمْ وَيُجِرْكُمْ مِنْ عَذَابٍ اَلِيمٍ ﴿٣١﴾

31- "Ey kavmimiz! Allah'ın davetçisine uyun, ona iman edin ki günahlarınızı bağışlasın ve sizi acı bir azaptan kurtarsın."

Bir yoruma göre icabet iki kısımdır: Biri Allah'a icabet etmek, diğeri de davetçiye icabet etmektir. Davetçiye icabet, Hz. Peygamber (s.a.v.) olan vasıtayı görmekle olur. Allah'a icabet ise mesaj kendisine elçinin dilinden ulaştığı zaman açıktan olurken, bilgiler kalbe inen ilhamlardan meydana geldiği zaman da sır ile olur. Bu nedenle kimisi nefsiyle, kimisi kalbiyle, kimisi ruhuyla, kimisi de sırrıyla icabet eder. Kim de davetçinin onu davetedişi karşısında geri durup hemen icabet etmezse, kendisine hitap edilen konuda terk edilir.

وَمَنْ لَا يُجِبْ دَاعِيَ اللّٰهِ فَلَيْسَ بِمُعْجِزٍ فِي الْاَرْضِ وَلَيْسَ لَهُ مِنْ دُونِهٖٓ اَوْلِيَآءُ اُولٰٓئِكَ فِي ضَلَالٍ مُبِينٍ ﴿٣٢﴾

32- "Kim Allah'ın davetçisine icabet etmezse, yeryüzünde Allah'ı aciz bırakacak değildir. Kendisi için Allah'tan başka dostlar da bulunmaz. İşte onlar, apaçık bir sapıklık içindedirler."

اَوَلَمْ يَرَوْا اَنَّ اللّٰهَ الَّذ۪ي خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ وَلَمْ يَعْيَ بِخَلْقِهِنَّ
بِقَادِرٍ عَلٰٓى اَنْ يُحْيِيَ الْمَوْتٰى بَلٰٓى اِنَّهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرٌ ﴿٣٣﴾

33- "Gökleri ve yeri yaratan ve onları yaratmaktan yorulmayan Allah'ın ölüleri diriltmeye gücünün yeteceğini görmediler mi? Evet şüphesiz O, her şeye hakkıyla gücü yetendir."

Buradaki görmek, bilmek anlamındadır.

( وَلَمْ يَعْيَ ) *"Yorulmayan"*, aciz ve güçsüz olmayan demektir.

وَيَوْمَ يُعْرَضُ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا عَلَى النَّارِ اَلَيْسَ هٰذَا بِالْحَقِّ قَالُوا بَلٰى
وَرَبِّنَا قَالَ فَذُوقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنْتُمْ تَكْفُرُونَ ﴿٣٤﴾

34- "Kâfir olanlara, cehenneme götürüldükleri gün: 'Bu, gerçek değil miymiş?' denir. Onlar: 'Evet, Rabbimize andolsun ki gerçekmiş' derler. Allah: 'Öyle ise inkâr etmekte olduğunuzdan dolayı azabı tadın' der."

Sonra delilin bağlayıcılığını pekiştirmek üzere kendilerine şöyle denir:

*"'Bu, gerçek değil miymiş?' denir. Onlar: 'Evet, Rabbimize andolsun ki, gerçekmiş' derler. Allah: 'Öyle ise inkâr etmekte olduğunuzdan dolayı azabı tadın' der."*

Bu ceza, küfrünüzün karşılığı olarak size verilmiştir.

فَاصْبِرْ كَمَا صَبَرَ اُو۬لُوا الْعَزْمِ مِنَ الرُّسُلِ وَلَا تَسْتَعْجِلْ لَهُمْ
كَاَنَّهُمْ يَوْمَ يَرَوْنَ مَا يُوعَدُونَ لَمْ يَلْبَثُوٓا اِلَّا سَاعَةً مِنْ نَهَارٍ بَلَاغٌ
فَهَلْ يُهْلَكُ اِلَّا الْقَوْمُ الْفَاسِقُونَ ﴿٣٥﴾

35- "O halde, yüksek azim sahibi peygamberlerin sabrettiği gibi sabret. Onlar için acele etme. Onlar, hakkında uyarıldıkları azabı

gördükleri gün, sanki dünyada gündüzün bir anından başka kalmadıklarını sanırlar. Bu, bir duyurudur. Ancak yoldan çıkmış olan topluluk helak edilir."

Onlar ciddiyet, sabır ve kararlılık sahibi peygamberlerdir. Tefsirde bunların Hz. Nûh, Hz. İbrahim, Hz. Mûsâ, Hz. İsa ve Hz. Muhammed (s.a.v.) olduğu yer almıştır. Bu konuda şu iki görüş de ileri sürülmüştür:

- Hz. Hûd, Hz. Salih, Hz. Şuayb ve Hz. Muhammed (s.a.v.).

- Hz. Yakub, Hz. Eyyûb ve Hz. Yûnus da onlardandır.

Sabır ise Allah'ın hükmü için durmak, sıkıntı ve zorluk hissetmeksizin sebat göstermektir.

(كَاَنَّهُمْ يَوْمَ يَرَوْنَ مَا يُوعَدُونَ لَمْ يَلْبَثُوٓا اِلَّا سَاعَةً مِنْ نَهَارٍ) *"Onlar, hakkında uyarıldıkları azabı gördükleri gün, sanki dünyada gündüzün bir anından başka kalmadıklarını sanırlar."*

Bir yoruma göre bu süre, insanların yaratılışının başlangıcından ecellerinin sona erdiği ana kadarki süredir. Ancak bu süre, ezele kıyasla bir an gibidir, hatta daha azdır. Çünkü ezelin ne başlangıcı ne de sonu vardır. O halde, ister hayır ister şer olsun, bir anda gerçekleşen şeyin ne önemi vardır?

سورة مُحَمَّدٍ

# MUHAMMED SÛRESİ

(Muhammed Sûresi 38 âyettir. Medine'de inmiştir. Yalnız 13. âyet hicret sırasında yolda inmiştir. Adını, 2. âyetteki "Muhammed" isminden almıştır. Bir adı da, "Kıtal" sûresidir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحٖيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

Kim "Bismillah"ı anarsa mertebesi büyür. Kim "Bismillah"ı tanırsa hali durulur. Kim "Bismillah"ı severse hikâyesi karmaşık hale gelir. Kim "Bismillah" ile arkadaşlık ederse egosu yok olur ve kendisi büsbütün tükenir.

اَلَّذٖينَ كَفَرُوا وَصَدُّوا عَنْ سَبٖيلِ اللّٰهِ اَضَلَّ اَعْمَالَهُمْ ﴿١﴾ وَالَّذٖينَ
اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ وَاٰمَنُوا بِمَا نُزِّلَ عَلٰى مُحَمَّدٍ وَهُوَ الْحَقُّ
مِنْ رَبِّهِمْ كَفَّرَ عَنْهُمْ سَيِّـَٔاتِهِمْ وَاَصْلَحَ بَالَهُمْ ﴿٢﴾

**1, 2-** "Kâfir olanlar ve Allah yolundan alıkoyanlar var ya, işte Allah onların amellerini boşa çıkarmıştır. İman edip salih ameller işleyenlerin ve Muhammed'e indirilene -ki o, Rablerinden gelen haktır- iman edenlerin ise Allah günahlarını örtmüş ve hallerini düzeltmiştir."

( اَلَّذٖينَ كَفَرُوا ) *"Kâfir olanlar."*

Kabule yanaşmayan ve Allah yolundan alıkoyup engellenen kimseler, Allah yolunu kabul etmedikleri için perdelenmeye ve kaybolmaya müstahak oldular.

( اَضَلَّ اَعْمَالَهُمْ ) *"Amellerini boşa çıkarmıştır."*

Yani Allah, amellerini sonuçsuz kılmıştır.

( وَاٰمَنُوا بِمَا نُزِّلَ عَلٰى مُحَمَّدٍ... ) *"Muhammed'e indirilene -ki o, Rablerinden gelen haktır- iman edenlerin ise..."*

Allah hallerini düzeltmiştir. Böylece küfür amelleri boşa çıkarmakta, iman ise ebediyen cehennemde kalmayı ortadan kaldırmaktadır.

Bir yoruma göre de Allah'ın taatiyle uğraşan ve O'na muhalif hiçbir şey yapmayan kimselerin şüphesiz biz Allah ile meşgul olmalarını yeterli kılarız.

ذٰلِكَ بِاَنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا اتَّبَعُوا الْبَاطِلَ وَاَنَّ الَّذِينَ اٰمَنُوا اتَّبَعُوا
الْحَقَّ مِنْ رَبِّهِمْ كَذٰلِكَ يَضْرِبُ اللّٰهُ لِلنَّاسِ اَمْثَالَهُمْ ﴿٣﴾

3- "Bu, kâfir olanların batıla uymaları ve iman edenlerin Rablerinden gelen gerçeğe uymalarından dolayıdır. İşte Allah, onların örnek teşkil edecek durumlarını insanlara böyle anlatır."

Yani Allah, bazılarının örneklerini iyiliklerinden dolayı, bazılarının da kötülüklerinden dolayı anlatır.

Bu arada hakka uymak, sünnete uygun davranmak, Allah'ın haklarını gözetmek, O'nun rızasını tercih etmek ve taatini yerine getirmekle olur. Batıla uymak da bidatçilik, nefsin arzusuyla amel etmek, onları tercih etmek ve günah işlemekle olur.

فَاِذَا لَقِيتُمُ الَّذِينَ كَفَرُوا فَضَرْبَ الرِّقَابِ حَتّٰٓى اِذَٓا اَثْخَنْتُمُوهُمْ
فَشُدُّوا الْوَثَاقَ فَاِمَّا مَنًّا بَعْدُ وَاِمَّا فِدَٓاءً حَتّٰى تَضَعَ الْحَرْبُ
اَوْزَارَهَا ذٰلِكَ وَلَوْ يَشَٓاءُ اللّٰهُ لَانْتَصَرَ مِنْهُمْ وَلٰكِنْ لِيَبْلُوَا بَعْضَكُمْ
بِبَعْضٍ وَالَّذِينَ قُتِلُوا فِي سَبِيلِ اللّٰهِ فَلَنْ يُضِلَّ اَعْمَالَهُمْ ﴿٤﴾

4- "Savaşta, kâfir olanlarla karşılaştığınız zaman boyunlarını vurun. Nihayet onları çökertip etkisiz hale getirdiğinizde bağı sıkı bağlayın. Artık bundan sonra esirleri ya karşılıksız ya da fidye karşılığı salıverin. Savaş sona erinceye kadar hüküm budur. Eğer Allah dileseydi, onlardan öç alırdı. Fakat sizi birbirinizle denemek için böyle yapıyor. Allah yolunda öldürülenlere gelince, Allah onların amellerini asla boşa çıkarmayacaktır."

Düşmana karşı zafer gerçekleştiği zaman onları bağışlamak ve onları sıkıştırmada abartılı davranmayı terk etmek pişmanlığa sebep olur ve fırsatı boşa götürür. Nitekim yapılması gereken canlarını almak, köklerini sökmek ve ağaçlarını kökünden koparmaktır.

Aynı şekilde kul nefsine hâkim olduğu zaman, saltanatının dağılmasından sonra hayatından eser bırakması uygun olmaz. Nitekim her kim nefsin üstüne parmak koyarsa nefis onda zehrini yayar.

( فَاِمَّا مَنًّا بَعْدُ وَاِمَّا فِدَٓاءً ) *"Artık bundan sonra esirleri ya karşılıksız ya da fidye karşılığı salıverin."*

Bu durum, Müslümanlar onda bir iyimserlik veya bir fayda umdukları zaman söz konusu olur. Örneğin kâfirlerin, Müslümanlardan bir topluluğu salıvermesi veya alınan fidye sebebiyle ve benzeri durumlar gibi. O zaman karar; devlet başkanının görüşüne havale edilir.

Nefse karşı mücadele etmenin durumu da böyledir. Şöyle ki bir saatlik şekerleme veya bir günlük oruç tutmama nefsi dinlendirir ve gelecekteki işlerinde sarf edeceği çaba konusunda ona güç kazandırır. Bu ise müridin şeyhinden veya dönemin fetva otoritesinden ya da nefsiyle mücadele edenin ferasetinden tasvip gördüğü oranda arzulanan bir durumdur.

( وَالَّذٖينَ قُتِلُوا فٖي سَبٖيلِ اللّٰهِ فَلَنْ يُضِلَّ اَعْمَالَهُمْ ) *"Allah yolunda öldürülenlere gelince, Allah onların amellerini asla boşa çıkarmayacaktır."*

Bir kimse hak yolunda öldürüldüğü zaman Allah, öldürülenin varislerini onun sahiplenmesinden daha güzel sahiplenir. Aynı

şekilde, öldürülenin derecelerini yükseltir ve böylece sevabını büyüterek varacağı mevkiini saygın kılar.

سَيَهْدِيهِمْ وَيُصْلِحُ بَالَهُمْ ﴿٥﴾

5- "Onları doğruya ve güzele erdirecek ve durumlarını düzeltecektir."

وَيُدْخِلُهُمُ الْجَنَّةَ عَرَّفَهَا لَهُمْ ﴿٦﴾

6- "Onları, kendilerine tanıttığı cennete koyacaktır."

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوٓا اِنْ تَنْصُرُوا اللّٰهَ يَنْصُرْكُمْ وَيُثَبِّتْ اَقْدَامَكُمْ ﴿٧﴾

7- "Ey iman edenler! Eğer siz Allah'a yardım ederseniz, O da size yardım eder ve ayaklarınızı sağlam bastırır."

Kulun Allah'a yardımı, delili izah edip açıklamak suretiyle O'nun dinine yardım etmesidir.

Allah'ın kula yardım etmesi ise O'nun sözünü yükseltmesi, çabasının ve gayretinin bereketleriyle din düşmanlarını bastırması sebebiyle olur.

( وَيُثَبِّتْ اَقْدَامَكُمْ ) *"Ve ayaklarınızı sağlam bastırır."*

Allah, bunu din düşmanlarının baskını karşısında yenilgiye uğramaması için kulun muvaffakiyetini sürdürmek suretiyle yapar.

وَالَّذٖينَ كَفَرُوا فَتَعْسًا لَهُمْ وَاَضَلَّ اَعْمَالَهُمْ ﴿٨﴾ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ كَرِهُوا
مَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ فَاَحْبَطَ اَعْمَالَهُمْ ﴿٩﴾

8, 9- "Kâfir olanlara gelince,yıkım onlara! Allah, onların işlerini boşa çıkarmıştır. Bu, Allah'ın indirdiğini beğenmemeleri, bu sebeple de Allah'ın onların amellerini boşa çıkarmasındandır."

Ayetteki ( تَعْساً لَهُمْ ) sözü lanet, kovulma, engellenme ve uzaklık onlara, demektir.

( وَاَضَلَّ اَعْمَالَهُمْ ) Allah, onların işlerini boşa çıkarmıştır.

Onları deşifre etmiş, sırlarını müminlere göstermiş ve ateşlerini söndürmüştür.

اَفَلَمْ يَسِيرُوا فِي الْاَرْضِ فَيَنْظُرُوا كَيْفَ كَانَ عَاقِبَةُ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ دَمَّرَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ وَلِلْكَافِرِينَ اَمْثَالُهَا ﴿١٠﴾

10- "Onlar, yeryüzünde dolaşıp kendilerinden öncekilerin sonlarının nasıl olduğuna bakmadılar mı? Allah, onları yerle bir etmiştir. Kâfirlere de bu akıbetin benzerleri vardır."

Bir de Allah'ın onları nasıl helak edip yok ettiğine bakmadılar mı?

ذٰلِكَ بِاَنَّ اللّٰهَ مَوْلَى الَّذِينَ اٰمَنُوا وَاَنَّ الْكَافِرِينَ لَا مَوْلٰى لَهُمْ ﴿١١﴾

11- "Bu, Allah'ın, iman edenlerin yardımcısı olması, kâfir olanların ise hiçbir yardımcısı bulunmamasından dolayıdır."

Buradaki ( مَوْلٰى ) kelimesi yardımcı anlamındadır. Bu itibarla Allah, iman edenlerin yardımcısıdır. Kâfirlerin ise hiçbir yardımcısı yoktur. Ya da ( مَوْلٰى ) kelimesi, düşmanlığın zıttı olan ( مُوالاة ) kökünden gelmekte olup seven anlamındadır. Buna göre Allah, iman edenlerin Mevlâ'sı yani sevenidir. Kâfirlere gelince, Allah onları sevmez.

Başka bir ayette ise Allah şöyle buyurmaktadır:

( وَالَّذِينَ كَفَرُوا اَوْلِيَاؤُهُمُ الطَّاغُوتُ ) *"Kâfirlerin dostları ise tâğuttur."* (Bakara, 2/257)

Burada şu yorum da yapılabilir: Bu, Kur'ân'daki en çok ümit veren ayettir. Sebebi ise Allah'ın: "Allah zahidlerin, abidlerin, vird ve çaba sahiplerinin yardımcısıdır" demeyip: "Allah, iman edenlerin yardımcısıdır" demesidir. Bu itibarla mümin günahkâr da olsa, iman edenler cümlesindendir.

إِنَّ اللّٰهَ يُدْخِلُ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ وَالَّذِينَ كَفَرُوا يَتَمَتَّعُونَ وَيَأْكُلُونَ كَمَا تَأْكُلُ الْاَنْعَامُ وَالنَّارُ مَثْوًى لَهُمْ ﴿١٢﴾

12- "Şüphesiz Allah, iman edip salih ameller işleyenleri içinden ırmaklar akan cennetlere koyacaktır. Kâfir olanlar ise dünya zevklerinden yararlanırlar ve hayvanların yediği gibi yerler. Onların kalacakları yer ateştir."

Bu ayetin ilk cümlesiyle ilgili izah daha önce geçti.

(وَالَّذِينَ كَفَرُوا يَتَمَتَّعُونَ وَيَأْكُلُونَ كَمَا تَأْكُلُ الْاَنْعَامُ وَالنَّارُ مَثْوًى لَهُمْ) *"Kâfir olanlar ise, dünya zevklerinden yararlanırlar ve hayvanların yediği gibi yerler. Onların kalacakları yer ateştir."*

Hayvanlar ayırım gözetmeksizin herhangi bir yerden yerler. Aynı şekilde kâfirin de helal ile haram arasında ayırımı yoktur. Tıpkı bunun gibi, hayvanların yemek için belli bir zamanları da yoktur. Aksine onlar her zaman beslenip yerler. Kâfir de böyledir. Bir hadiste: *"Şüphesiz kâfir, yedi bağırsakta yer"* denilmiştir. Mümine gelince o, az ile yetinir. Tıpkı şu hadislerde yer aldığı gibi:

*"Eğer mutlaka bir şeyler yenecekse, bu takdirde üçte bir yiyecek, üçte bir içecek, üçte bir de nefes için olmalıdır."*

*"Âdem oğlu, karnından daha kötü bir kap doldurmamıştır."*

Bir yoruma göre de hayvanlar gafletle yerler. Bu nedenle kim yerken Rabbini unutursa, onun yemesi hayvanların yemesi gibidir.

وَكَاَيِّنْ مِنْ قَرْيَةٍ هِيَ اَشَدُّ قُوَّةً مِنْ قَرْيَتِكَ الَّتِي اَخْرَجَتْكَ اَهْلَكْنَاهُمْ فَلَا نَاصِرَ لَهُمْ ﴿١٣﴾

13- "Seni çıkaran kendi memleket halkından daha güçlü nice memleket halkları vardır ki, biz onları helak ettik. Onların hiçbir yardımcısı da olmadı."

( أَهْلَكْنَاهُمْ ) *"Biz onları helak ettik."*

Allah, bu helak ettikleriyle daha önceki dönemlerde ve yüzyıllarda helak ettiği kavimleri kast etmektedir.

اَفَمَنْ كَانَ عَلٰى بَيِّنَةٍ مِنْ رَبِّهٖ كَمَنْ زُيِّنَ لَهُ سُوٓءُ عَمَلِهٖ وَاتَّبَعُوٓا
اَهْوَٓاءَهُمْ ﴿١٤﴾

14- "Rabbinin katından açık bir belgesi olan kimse, kötü işleri kendisine güzel gösterilen ve nefislerinin arzularına uyan kimseler gibi midir?"

Ayetteki ( بَيِّنَة ) lafzı, aydınlık ve delil demektir. Nitekim basiret sahibi olmak da açık hedefe yönelmekle gerçekleşir. Bu çerçevede âlimler burhanlarının, arifler de beyanlarının aydınlığındadırlar. Şöyle ki âlimler usul delillerinin hükümleriyle görürler. Arifler de ilham ve vuslat hükmüyle basiret sahibi olurlar.

مَثَلُ الْجَنَّةِ الَّت۪ي وُعِدَ الْمُتَّقُونَ ف۪يهَٓا اَنْهَارٌ مِنْ مَٓاءٍ غَيْرِ اٰسِنٍ وَاَنْهَارٌ
مِنْ لَبَنٍ لَمْ يَتَغَيَّرْ طَعْمُهُ وَاَنْهَارٌ مِنْ خَمْرٍ لَذَّةٍ لِلشَّارِب۪ينَ وَاَنْهَارٌ
مِنْ عَسَلٍ مُصَفًّى وَلَهُمْ ف۪يهَا مِنْ كُلِّ الثَّمَرَاتِ وَمَغْفِرَةٌ مِنْ رَبِّهِمْ
كَمَنْ هُوَ خَالِدٌ فِي النَّارِ وَسُقُوا مَٓاءً حَم۪يمًا فَقَطَّعَ اَمْعَٓاءَهُمْ ﴿١٥﴾

15- "Takva sahiplerine söz verilen cennetin durumu şöyledir: Orada bozulmayan su ırmakları, tadı değişmeyen süt ırmakları, içenlere zevk veren şarap ırmakları ve süzme bal ırmakları vardır. Orada onlar için meyvelerin her çeşidi vardır. Rablerinden de bağışlama vardır. Bu cennetliklerin durumu, ateşte temelli kalacak olan ve bağırsaklarını parça parça edecek kaynar su içirilen kimselerin durumu gibi olur mu?"

Bugün velilerin durumu da böyledir. Onlar için vefa şarabı, sonra safa şarabı, sonra bağlılık şarabı, sonra da Allah ile buluşma halinde

bir şarap vardır. Bir de bu şaraplardan her birinin bir işlevi vardır. Şarabın sahibinin de bir sarhoşluğu bir de ayılması vardır. Bu çerçevede, vefa şarabı içen kimse, dostlarıyla beraber olmadığı günlerde kimseye bakmaz.

Şiir:

*Sevinç vermemiştir içime, ayrılık seni uzaklıklaştırdıktan beri*
*Ne bir dost ne bir bade ne de bir tasarruf sahibi*

Safa şarabını içen kimse, her türlü şaibeden arınır. Bu sayede ahdinde hiçbir bulanıklık bulunmaz ve o, her vakit nefsinden arınmış, arzularından boşalmış olur. Ne dünya ne de ahirette hiçbir meşguliyet ve ihtiyacı olmaksızın üstüne düşeni yerine getirir.

Bağlılık şarabı içen kimsede karar yok olur ve ne gece ne de gündüz bir an bile sırrıyla kaybolmaz.

Buluşma halinde içen kimse ise bekasıyla sürekli ünsiyet üzere olur. Böylece bekasıyla birlikte Allah vergisinden artık başka bir şey talep etmez. Çünkü o, Allah'ın büyüklüğünün hükümranlıkları esnasında O'nun yüceliğinde tükenmiş olur.

وَمِنْهُمْ مَنْ يَسْتَمِعُ اِلَيْكَ حَتّٰٓى اِذَا خَرَجُوا مِنْ عِنْدِكَ قَالُوا لِلَّذٖينَ اُوتُوا الْعِلْمَ مَاذَا قَالَ اٰنِفًا اُو۬لٰٓئِكَ الَّذٖينَ طَبَعَ اللّٰهُ عَلٰى قُلُوبِهِمْ وَاتَّبَعُٓوا اَهْوَٓاءَهُمْ ﴿١٦﴾

16- "Onlardan seni dinleyenler vardır. Fakat senin yanından çıktıkları zaman, kendilerine bilgi verilmiş olanlara: 'Az önce ne söyledi?' derler. İşte bunlar, Allah'ın, kalplerini mühürlediği ve nefislerinin arzularına uyan kimselerdir."

Bunlar, Allah'ın indirdiğinden hoşlanmayanlardır. Çünkü o, rezil olmalarına yol açmaktadır.

وَالَّذٖينَ اهْتَدَوْا زَادَهُمْ هُدًى وَاٰتٰيهُمْ تَقْوٰيهُمْ ﴿١٧﴾

**17-** "Hidayete erenlere gelince, Allah onların hidayetini artırır. Onların, Allah'a karşı gelmekten sakınmalarını sağlar."

Onlar, nefse karşı verdikleri türlü mücadelelerle hidayete erdiler ve Allah, müşahedelerin nurlarıyla hidayetlerini artırdı.

Onlar, burhanı düşünmekle hidayete erdiler ve Allah, beyanın huzuruyla hidayetlerini artırdı.

Onlar; ilmelyakîn -kesin bilgi- ile hidayete erdiler ve Allah, hakkalyakîn -kesin hak- ile hidayetlerini artırdı.

Onlar, münacat adabıyla hidayete erdiler ve Allah, kurtuluş ve derecelerini yükseltmekle hidayetlerini artırdı.

Onlar, içinde hakkı barındırana ulaşıp hak olduğu konusunda ihtilafa düşmediler ve Allah, hak yol üzere dosdoğru yürümekle hidayetlerini artırdı.

فَهَلْ يَنْظُرُونَ اِلَّا السَّاعَةَ اَنْ تَأْتِيَهُمْ بَغْتَةً فَقَدْ جَٓاءَ اَشْرَاطُهَا فَاَنّٰى
لَهُمْ اِذَا جَٓاءَتْهُمْ ذِكْرٰيهُمْ ﴿١٨﴾ فَاعْلَمْ اَنَّهُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاسْتَغْفِرْ
لِذَنْبِكَ وَلِلْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنَاتِ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ مُتَقَلَّبَكُمْ وَمَثْوٰيكُمْ ﴿١٩﴾

**18, 19-** "Onlar, kıyametin kendilerine ansızın gelmesinden başka bir şey beklemiyorlar. Muhakkak onun alametleri gelmiştir. Kıyamet kendilerine gelip çatınca öğüt almaları kendilerine ne fayda verecek? Bil ki Allah'tan başka hiçbir ilah yoktur. Hem kendinin hem de mümin erkek ve mümin kadınların günahlarının bağışlanmasını dile. Allah, gezip dolaştığınız yeri de içinde kalacağınız yeri de bilir."

Hz. Peygamber (s.a.v.), Allah'tan başka hiçbir ilah olmadığını biliyordu. Bu nedenle Allah, ona bunda sebat etmesini emretti. Hz. Peygamber (s.a.v.): *"Ben Allah'ı en iyi bileninizim ve O'ndan en çok korkanınızım"* buyurmuştur.

Bir yoruma göre, Hz. Peygamber'e (s.a.v.): "*Bil ki...*" denildiği halde kendisi nasıl: "*Bildim*" demedi? Oysa Hz. İbrahim'e: "*Teslim ol!*"

denildiğinde O: *"Teslim oldum"* (إِذْ قَالَ لَهُ رَبُّهُ أَسْلِمْ قَالَ أَسْلَمْتُ لِرَبِّ الْعَالَمِينَ) (Bakara, 2/131) dedi. Buna şöyle cevap verilir: Hz. İbrahim: *"Teslim oldum"* deyince imtihana tabi tutuldu. Oysa Hz. Peygamber: *"Bildim"* demedi ve kendisine afiyet bahşedildi. Bir de Hz. İbrahim'den sonra sırrını açığa çıkaran bir din geldiği halde bizim peygamberimizden sonra bir din gelmemiştir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, bizim peygamberimizden: (آمَنَ الرَّسُولُ) *"Peygamber iman etti"* (Bakara, 2/ 285) ifadesiyle söz etmiştir. İman ise bilmek demektir. Kaldı ki, Allah'ın kendisinden söz etmiş olması, onun: "Bildim" diyerek kendinden söz etmesinden daha mükemmeldir.

- Fazla bilgiye ihtiyaç duyduğunda Hz. Hızır'a havale edilen Hz. Mûsâ ile Allah'ın kendisine: (وَقُلْ رَبِّ زِدْنِي عِلْمًا) *"De ki: Ey Rabbim! Bilgimi artır"* (Tâhâ, 20/114) buyurduğu Peygamberimiz arasında önemli bir fark vardır. Bilgisinin artırılması konusunda bir kula havale edilen ile bilgi artışını Hak'tan talep etmesi emredilen arasında ne de çok fark vardır!

- Allah Hz. Peygamber'e: (فَاعْلَمْ أَنَّهُ لَآ إِلٰهَ إِلَّا اللّٰهُ) *"Bil ki Allah'tan başka hiçbir ilah yoktur"* dediğinde, halktan kopup O'na yönelmesini, sonra kendi şahsından da kopup yine Allah'a yönelmesini emrediyordu. Bu arada kul bu sözü, adet olduğu üzere ve hakikatten gafil kalarak, yani nisyan sıfatıyla söylediği zaman sözünün pek bir değeri olmaz. Bu, tıpkı şaşkınlık esnasında söylenmiş bir söz gibi olup değeri bulunmamaktadır. Oysa kul, bu sözü içtenlikle ve anlamını hatırlayıp hakikatini kavrayarak söylediğinde eğer bunu kendi nefsine dayanarak söylüyorsa o, tefrika noktasındadır. Hakikat erbabı nezdinde ise bu, gizli şirk türündendir. Şayet kul, bunu hakkıyla söylemiş ise işte o ihlastır. Hal böyle olunca kul, önce Rabbini delil ve hüccet ile bilir. Bu çerçevede kulun nefsini bilmesi kesbi olup bu aynı zamanda asılların aslıdır -ana ilkedir-. Nitekim akıl yürütmeye dayalı her bilgi de bu asla dayanır. Sonra beyanın ve delillerin artmasıyla kulun bilgisinin gücü de artar. Nefsine dair bilgisi ise

Allah'ın zikrinin kalbe galebe çalması sebebiyle eksilir. Derken kul, müşahede ve hakikat hükümranlığının kendisini istila etmesi haline ulaştığı zaman, bu durumda bilgisi zorunlu hale gelir ve nefsine dair hissedişi azalır. O kadar ki nefsine dair bilgisi, akıl yürütmeyle elde edilen bilgi gibi olur ve artık kendisi, nefsinden habersiz veya nefsini unutmuş gibidir.

- Denizin kenarında bulunan kimseye, denizi görmekten kapıldığı duygu hâkim olur. Denize açıldığı zaman ise bu durum güçlenir. Nihayet denizde boğulduğu vakit içinde boğulup helak olduğu sudan başka hiçbir şeyi hissetmez.

( وَاسْتَغْفِرْ لِذَنْبِكَ ) *"Günahının bağışlanmasını dile."*

Yani sen bildiğini bildiğin zaman, bundan dolayı günahının bağışlanmasını dile. Çünkü kadrinin yüceliğine binaen Allah'ı kendisinden başkası bilemez.

وَيَقُولُ الَّذِينَ اٰمَنُوا لَوْلَا نُزِّلَتْ سُورَةٌ فَاِذَٓا اُنْزِلَتْ سُورَةٌ مُحْكَمَةٌ
وَذُكِرَ فِيهَا الْقِتَالُ رَاَيْتَ الَّذِينَ فِي قُلُوبِهِمْ مَرَضٌ يَنْظُرُونَ اِلَيْكَ
نَظَرَ الْمَغْشِيِّ عَلَيْهِ مِنَ الْمَوْتِ فَاَوْلٰى لَهُمْ ﴿٢٠﴾

20- "İman edenler: 'Keşke bir sûre indirilse' derler. Fakat hükmü apaçık bir sûre indirilip de onda savaştan söz edilince kalplerinde hastalık olanların ölüm baygınlığına girmiş kimsenin bakışı gibi sana baktıklarını görürsün. O da, onlara pek yakındır."

Vahyin gecikmesi sebebiyle Müslümanların kalpleri daralıyor ve vahyin süratle inmesini temenni ediyorlardı. Bunun üzerine Allah şöyle buyurdu:

( فَاِذَٓا اُنْزِلَتْ سُورَةٌ مُحْكَمَةٌ وَذُكِرَ فِيهَا الْقِتَالُ رَاَيْتَ ) *"Fakat hükmü apaçık bir sûre indirilip de onda savaştan söz edilince"* savaş kendilerine zor geldiği için münafıkların bundan hoşlanmadıklarını *"görürsün."* O zaman rezil oluyor ve Hz. Peygamber'e (s.a.v.) gayet nefretle bakıyorlardı.

(فَاَوْلٰى لَهُمْ) *"O da, onlara pek yakındır."*

Bu bir tehdittir.

طَاعَةٌ وَقَوْلٌ مَعْرُوفٌ فَاِذَا عَزَمَ الْاَمْرُ فَلَوْ صَدَقُوا اللّٰهَ لَكَانَ خَيْرًا لَهُمْ ﴿٢١﴾

21- "İtaat ve güzel bir söz, onlar için daha hayırlıdır. İş ciddileşince Allah'a verdikleri söze bağlı kalsalardı, elbette kendileri için daha iyi olurdu."

(طَاعَةٌ وَقَوْلٌ مَعْرُوفٌ) *"İtaat ve güzel bir söz."*

O güzel söz, "Keşke bir sûre indirilse" sözüdür.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Onlar için en iyi olan, Allah'a ve resulüne itaat etmeleri ve kendilerine emredilen cihadı kabule dair güzel bir sözdür.

- İtaat ve güzel bir söz, onlar için daha hayırlıdır.

(فَاِذَا عَزَمَ الْاَمْرُ فَلَوْ صَدَقُوا اللّٰهَ لَكَانَ خَيْرًا لَهُمْ) *"İş ciddileşince Allah'a verdikleri söze bağlı kalsalardı, elbette kendileri için daha iyi olurdu."*

İş ciddileşip savaş farz kılındığı zaman doğruluk ve kabul, onlar için yalanlarından, münafıklık yapmalarından ve cihattan geri durmalarından daha hayırlıdır.

فَهَلْ عَسَيْتُمْ اِنْ تَوَلَّيْتُمْ اَنْ تُفْسِدُوا فِي الْاَرْضِ وَتُقَطِّعُوٓا اَرْحَامَكُمْ ﴿٢٢﴾

22- "Demek, yüz çevirdiğinizde yeryüzünde bozgunculuk çıkaracak ve akrabalık bağlarını koparacaksınız, öyle mi?"

Yani eğer siz, Hz. Muhammed'e iman etmekten yüz çevirip daha önce bulunduğunuz duruma dönerseniz, belki de yeryüzünde bozgunculuk çıkarır, yasaklanmış kanlar akıtır, akrabalık bağlarınızı koparır ve cahiliye durumunuza geri dönersiniz.

أُولٰٓئِكَ الَّذِينَ لَعَنَهُمُ اللّٰهُ فَاَصَمَّهُمْ وَاَعْمٰٓى اَبْصَارَهُمْ ﴿٢٣﴾

23- "İşte bunlar Allah'ın lanetleyip kulaklarını sağır, gözlerini kör ettiği kimselerdir."

Allah onları, hakkı işitip kalpleriyle kabul etmeye karşı sağır kılınuş ve basiretlerini kör etmiştir.

اَفَلَا يَتَدَبَّرُونَ الْقُرْاٰنَ اَمْ عَلٰى قُلُوبٍ اَقْفَالُهَا ﴿٢٤﴾

24- "Onlar Kur'ân'ı düşünmüyorlar mı? Yoksa kalplerin üzerinde kilitleri mi var?"

Yani eğer Kur'ân'ı düşünürlerse, bu, onları irfana götürür ve şaşkınlığın karanlığından kurtarır.

( اَمْ عَلٰى قُلُوبٍ اَقْفَالُهَا ) *"Yoksa kalplerin üzerinde kilitleri mi var?'*

Allah, kâfirlerin kalplerine kilit vurmuştur. Bu nedenle engelleyici uyarı bu kalplere girmemekte ve ilmin ışınları üzerlerinde yayılmamaktadır. Böylece hitabı anlamak, onlar için gerçekleşmemektedir. Nitekim kapı kilitli olduğu zaman nasıl ki ne içine bir şey giriyor ne de içinden bir şey çıkıyorsa, aynı şekilde kâfirlerin kalpleri de kilitli olup ne içindeki küfür çıkmakta ne de çağrıldıkları iman içine girmektedir.

Bir de şirk ve küfür ehlinin basiretleri kapanmış, sırları örtülmüş ve hakikat yolundan şaşırtılmışlardır.

اِنَّ الَّذِينَ ارْتَدُّوا عَلٰٓى اَدْبَارِهِمْ مِنْ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُمُ الْهُدَى
الشَّيْطَانُ سَوَّلَ لَهُمْ وَاَمْلٰى لَهُمْ ﴿٢٥﴾

25- "Kendileri için hidayet yolu belli olduktan sonra gerisingeri dönenleri şeytan aldatıp peşinden sürüklemiş ve kendilerini boş ümitlere düşürmüştür."

Bir kimse ki kalbinin şafağı aydınlanır ve tevhid nuru kendisinde parıldar da sonra iman gündüzünün güneşi yükselmeden

gününün güneşi tutulur, irfanının gündüzü kararır, şüphesinin gecesi zifiri karanlığa bürünür ve aklının yıldızları batarsa, işte bu takdirde onun karanlıklarından söz edebilirsin ve bunda hiçbir sakınca da yoktur.

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَالُوا لِلَّذ۪ينَ كَرِهُوا مَا نَزَّلَ اللّٰهُ سَنُط۪يعُكُمْ ف۪ي بَعْضِ
الْاَمْرِ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ اِسْرَارَهُمْ ﴿٢٦﴾ فَكَيْفَ اِذَا تَوَفَّتْهُمُ الْمَلٰٓئِكَةُ
يَضْرِبُونَ وُجُوهَهُمْ وَاَدْبَارَهُمْ ﴿٢٧﴾

26, 27- "Bu, münafıkların, Allah'ın indirdiğini beğenmeyen kimselere: 'Bazı işlerde size itaat edeceğiz' demelerindendir. Melekler, onların yüzlerine ve sırtlarına vurarak canlarını alırken halleri nasıl olacak?"

Bu, o gibi kimselerin münafıklarla işbirliği yapıp yardımlaşmalarının cezasıdır. Melekler canlarını alınca da acıları peş peşe gelir ve ondan sonra cezalarının sonu gelmez.

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمُ اتَّبَعُوا مَٓا اَسْخَطَ اللّٰهَ وَكَرِهُوا رِضْوَانَهُ فَاَحْبَطَ اَعْمَالَهُمْ ﴿٢٨﴾

28- "Bu, Allah'ı gazaplandıran şeylere uydukları ve O'nun hoşnut olduğu şeyleri beğenmedikleri içindir. Allah da onların amellerini boşa çıkarmıştır."

اَمْ حَسِبَ الَّذ۪ينَ ف۪ي قُلُوبِهِمْ مَرَضٌ اَنْ لَنْ يُخْرِجَ اللّٰهُ اَضْغَانَهُمْ ﴿٢٩﴾

29- "Yoksa kalplerinde hastalık olanlar Allah'ın, kinlerini ortaya çıkarmayacağını mı sandılar?"

Durum onların sandıkları gibi değildir. Aksine Allah, onları rezil eder ve karıştırıcılıklarını meydana çıkarır. Nitekim Hz. Peygamber (s.a.v.), onları bildirmiş ve ileri gelenlerini tanıtmıştır.

وَلَوْ نَشَٓاءُ لَاَرَيْنَاكَهُمْ فَلَعَرَفْتَهُمْ بِس۪يمٰيهُمْ وَلَتَعْرِفَنَّهُمْ ف۪ي لَحْنِ
الْقَوْلِ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ اَعْمَالَكُمْ ﴿٣٠﴾

30- "Biz dileseydik onları sana gösterirdik de sen onları yüzlerinden tanırdın. Andolsun, sen onları konuşma tarzlarından da tanırsın. Allah, yaptıklarınızı bilir."

Yani sen, onları konuşmalarının anlamından da tanırsın. Nitekim sırlar, içtekini gösterirken kalplere işleyenin de eseri yüzlerde belirir.

Şiir:

*Değilim ben ayırt edemeyen kimselerden*
*Alçaklığı saygınlıktan*
*Sevginin de öfkenin de*
*Belirtisi var yüzde*

Bir de mümin feraset nuruyla, arif de hakikat nuruyla bakar. Muvahhit ise Allah'ın nuruyla baktığından hiçbir şey kendisinden saklı kalmaz.

Bir yoruma göre de sıddîkların basiretleri kapalı değildir. Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur:

*"Mescid'e çıkan bütün kapıları iptal edin, Ebûbekir'in kapısı hariç."*

وَلَنَبْلُوَنَّكُمْ حَتّٰى نَعْلَمَ الْمُجَاهِدٖينَ مِنْكُمْ وَالصَّابِرٖينَ وَنَبْلُوَا
اَخْبَارَكُمْ ﴿٣١﴾ اِنَّ الَّذٖينَ كَفَرُوا وَصَدُّوا عَنْ سَبٖيلِ اللّٰهِ وَشَاۤقُّوا
الرَّسُولَ مِنْ بَعْدِ مَا تَبَيَّنَ لَهُمُ الْهُدٰى لَنْ يَضُرُّوا اللّٰهَ شَيْـًٔا
وَسَيُحْبِطُ اَعْمَالَهُمْ ﴿٣٢﴾

31, 32- "Andolsun, içinizden cihad edenleri ve sabredenleri belirleyinceye ve durumlarınızı ortaya koyuncaya kadar sizi deneyeceğiz. Kâfir olanlar, Allah yolundan alıkoyanlar ve kendilerine hidayet yolu belli olduktan sonra peygambere karşı gelenler, hiçbir şekilde Allah'a zarar veremezler. Allah, onların amellerini boşa çıkaracaktır."

İnsanların cevherleri deneme ve sınamayla ortaya çıkar. Böylece ihlaslı olan ortaya çıkar, sahtekar olan rezil, münafik ise deşifre olur. Bu nedenle, iman edip ihlaslı olanlar kurtulurlar. Kâfir olup münafıklıkyapanlar ise alçaklığın içine düşerler, zelil kılınırlar ve mutsuzlukla damgalanıp koparılırlar.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوٓا اَط۪يعُوا اللّٰهَ وَاَط۪يعُوا الرَّسُولَ وَلَا تُبْطِلُوٓا اَعْمَالَكُمْ ﴿٣٣﴾

33- "Ey iman edenler! Allah'a itaat edin, Peygamber'e itaat edin. Amellerinizi boşa çıkarmayın."

Amellerinizi riya ve kendinizi beğenip görmekle boşa çıkarmayın.

Amellerinizi, onlara yaslanarak boşa çıkarmayın. Amellerinizi karşılık beklemek suretiyle boşa çıkarmayın.

Amellerinizi, Allah'ın lütfu dışında, kendileriyle bir şeye hak kazandığınızı sanarak boşa çıkarmayın.

اِنَّ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا وَصَدُّوا عَنْ سَب۪يلِ اللّٰهِ ثُمَّ مَاتُوا وَهُمْ كُفَّارٌ فَلَنْ يَغْفِرَ اللّٰهُ لَهُمْ ﴿٣٤﴾

34- "Kâfir olan, Allah yolundan alıkoyan, sonra da kâfir olarak ölenler var ya, Allah onları asla bağışlamayacaktır."

فَلَا تَهِنُوا وَتَدْعُوٓا اِلَى السَّلْمِ وَاَنْتُمُ الْاَعْلَوْنَ وَاللّٰهُ مَعَكُمْ وَلَنْ يَتِرَكُمْ اَعْمَالَكُمْ ﴿٣٥﴾

35- "Sakın zaaf göstermeyin, üstün olduğunuz halde barışa çağırmayın. Allah, sizinle beraberdir. Sizin amellerinizi de asla eksiltmeyecektir."

Yani siz delil itibariyle üstün iken kâfirlerle barışa meyletmeyin. Siz Allah'ın yardımı sebebiyle üstünsünüz.

( وَاللّٰهُ مَعَكُمْ ) *"Allah, sizinle beraberdir."*

Yani yardımıyla sizinle beraberdir. Bir yoruma göre de kalplerinizle zaaf göstermeyin ve Allah'a dayanın. Çünkü O sizinle beraber olduğuna göre, sizinle ilgili hiçbir şey O'na gizli kalmaz. Bu itibarla O, devamlı sizi görmektedir. Her kim, efendisinin kendisini gördüğünü bilirse, O'nun görmesiyle meşgul olurken her meşakkate katlanır.

( وَلَنْ يَتِرَكُمْ اَعْمَالَكُمْ ) *"Sizin amellerinizi de asla eksiltmeyecektir."*

Yani Allah, amellerinizin ecrini eksiltmeyecektir.

اِنَّمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا لَعِبٌ وَلَهْوٌ وَاِنْ تُؤْمِنُوا وَتَتَّقُوا يُؤْتِكُمْ اُجُورَكُمْ
وَلَا يَسْـَٔلْكُمْ اَمْوَالَكُمْ ﴿٣٦﴾

36- "Şüphesiz dünya hayatı ancak bir oyun ve eğlencedir. Eğer iman eder ve takva üzere olursanız, Allah size mükâfatınızı verir ve sizden mallarınızı istemez."

Şirk ve günahlardan sakının ki, Allah, size ecirlerinizi noksansız olarak versin.

Bir de Allah, mallarınızdan sadece zekât miktarı olan az bir şeyden başkasını sizden istemez.

اِنْ يَسْـَٔلْكُمُوهَا فَيُحْفِكُمْ تَبْخَلُوا وَيُخْرِجْ اَضْغَانَكُمْ ﴿٣٧﴾

37- "Eğer onları sizden isteyip de sizi zorlasaydı cimrilik ederdiniz, O da kinlerinizi ortaya çıkarırdı."

( إحفاء ) kelimesi, istemekte ısrarcı olmaktır. Ancak Allah bunu sadece nefsinin ihtirasından korunmayan kimse için söylemektedir. Kardeşler ve kalbin özgürlüğü bakımından mertebeleri yükselmiş

olanlara ise bir zerrenin tahsili konusunda bile müsamaha gösterilmez. Ayrıca onlar canı feda etmek ve sorumluluklarına bağlı kalmakla yükümlü kılınırlar.

هَٓا اَنْتُمْ هٰٓؤُلَٓاءِ تُدْعَوْنَ لِتُنْفِقُوا ف۪ي سَب۪يلِ اللّٰهِ فَمِنْكُمْ مَنْ يَبْخَلُ
وَمَنْ يَبْخَلْ فَاِنَّمَا يَبْخَلُ عَنْ نَفْسِه۪ وَاللّٰهُ الْغَنِيُّ وَاَنْتُمُ الْفُقَرَٓاءُ وَاِنْ
تَتَوَلَّوْا يَسْتَبْدِلْ قَوْمًا غَيْرَكُمْ ثُمَّ لَا يَكُونُٓوا اَمْثَالَكُمْ ﴿٣٨﴾

38- "İşte siz Allah yolunda harcamaya çağrılıyorsunuz. Ama içinizden cimrilik yapanlar var. Kim cimrilik yaparsa ancak kendi zararına cimrilik yapmış olur. Allah her bakımdan sınırsız zengindir, siz ise fakirsiniz. Eğer O'ndan yüz çevirecek olursanız, yerinize başka bir toplum getirir de onlar sizin gibi olmazlar."

Cimrilik, vacip olanı engellemektir. Kişi cimrilik yaptığı zaman, ancak kendi zararına cimrilik yapmış olur. Çünkü eğer kendisi onu yapmasaydı, zenginlik sahibi olacaktı. Böyle zannedilir.

( وَاللّٰهُ الْغَنِيُّ وَاَنْتُمُ الْفُقَرَٓاءُ ) *"Allah, her bakımdan sınırsız zengindir, siz ise fakirsiniz."*

Bir görüşe göre Allah zâtı ile zengindir. İkinci bir görüşe göre ise sıfatıyla zengindir. Zenginliği ise irade ettiklerinin kayıtlanmamasıdır. Kula gelince o, şahsı itibariyle fakirdir, çünkü yaratılışının başlangıcından sona kadar Mevlâ'sından müstağni olamaz. O, her zaman Mevlâ'sına muhtaçtır.

Bu arada dürüst fakir, Allah'a olan ihtiyacını görendir. Nitekim fakirin dürüstlüğü, Allah'a olan ihtiyacını görmesine bağlıdır. Bir de Allah'a muhtaç olan kimse, Allah ile müstağni olur. Allah'tan başkasına muhtaç olan kimse ise züllün ve perişanlığın içine düşer.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, sizin itaatinize muhtaç değildir. Siz ise O'nun rahmetine muhtaçsınız.

- Allah zengindir, size muhtaç değildir. Siz ise fakirsiniz. Çünkü O'nun yerine geçecek bir alternatifiniz yoktur.

(وَاِنْ تَتَوَلَّوْا يَسْتَبْدِلْ قَوْمًا غَيْرَكُمْ ثُمَّ لَا يَكُونُوٓا اَمْثَالَكُمْ) *"Eğer O'ndan yüz çevirecek olursanız, yerinize başka bir toplum getirir de onlar sizin gibi olmazlar."*

Allah, sizin yerinize itaatte sizden daha güçlü, vefada sizden daha dürüst olan başka bir toplum getirir. Nitekim O, benzerlerinizi yaratmaya kadirdir. Sonra o kimseler, günah işlemede, yüz çevirmede, şükür ve vefayı terk etmede sizin gibi olmayacaklar, aksine sizden daha hayırlı olacaklardır.

سورة الْفَتْحِ

# FETİH SÛRESİ

(Fetih Sûresi 29 âyettir. Hicretin 6. yılında Hudeybiye'den dönerken Mekke ile Medine arasında inmiştir. İçinde, bir kaç yerde fetihten söz edildiği için sûre bu adı almıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", Allah'ın ezelde ve ebetteki yüceliğine işaret etmektedir. Bu arada ezeldeki yüceliği, kıdemi gereğince başlangıcının olmamasıdır. Ebetteki yüceliği ise yokluğunun muhal oluşu sebebiyle sonunun olmamasıdır. Bu itibarla Allah'ın yüceliğini tanımak, kul için de yücelik sağlar.

اِنَّا فَتَحْنَا لَكَ فَتْحًا مُبِينًا ﴿١﴾

**1- "Şüphesiz biz sana apaçık bir fetih verdik."**

Senin lehine apaçık bir karar verdik ve senin için İslam dinini güçlendirmeye, düşmanlarına karşı da zafer vermeye hükümettik. Bir de İslam'ın prensiplerini açıklamak suretiyle senden önce başkalarının kalben kapalı buldukları hususları açarak sana ikramda bulunduk. Allah, Hz. Peygamber'in kalbine bu ve bundan başka fetihler bahşetmiştir.

Bu ayet Mekke'nin fethi hakkında inmiştir. Kimisine göre de Hudeybiye fethi hakkında inmiştir.

Bir yoruma göre de biz seni İslam'ın prensiplerine hidayet ettik ve din işlerini sana kolay kıldık.

لِيَغْفِرَ لَكَ اللّٰهُ مَا تَقَدَّمَ مِنْ ذَنْبِكَ وَمَا تَاَخَّرَ وَيُتِمَّ نِعْمَتَهُ عَلَيْكَ وَيَهْدِيَكَ صِرَاطًا مُسْتَقِيمًا ﴿٢﴾

2- "Ta ki Allah, senin geçmiş ve gelecek günahlarını bağışlasın, sana olan nimetini tamamlasın ve seni doğru yola iletsin."

Söz konu günahların her iki kısmı da; geçmiş olanı da gelecek olanı da peygamberlikten önce olmuştur.

Bir yoruma göre de senin hatırın için Âdem'in geçmiş günahı ile ümmetinin gelecekteki günahlarını bağışlasın diye.

Buradaki günah, evla olanın terki anlamında ele alındığı zaman ise, peygamberlikten önce veya sonra olsun, şüphesiz bu türden olan hususların tamamı Hz. Peygamber (s.a.v.) için bağışlanmıştır.

Nitekim bu ayet inince Hz. Peygamber'e: "Sana mübarek olsun" dediler. Bunun üzerine Allah şu ayeti indirdi:

( لِيُدْخِلَ الْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنَاتِ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا وَيُكَفِّرَ عَنْهُمْ سَيِّاٰتِهِمْ )

*"Bunlar, Allah'ın, iman eden erkek ve kadınları, içlerinden ırmaklar akan, içinde temelli kalacakları cennetlere koyması ve kötülüklerini örtmesi içindir."* (Fetih, 48/5)

Bir de: *"İyilerin iyilikleri, Allah'a çok yakın olanlar için kötülük mesabesindedir"* denilmektedir.

( وَيُتِمَّ نِعْمَتَهُ عَلَيْكَ ) *"Sana olan nimetini tamamlasın."*

Sana olan nimetini peygamberlik, akıbetin yeterince güzel oluşu, dini yaymak, ümmetine şefaat etmek, yarın Allah'ı görmek, dinini diğer dinlere üstün kılmak, Âdemoğullarının efendisi olmak, senin

hayatınla yemin etmek, Allah'ı görme özelliği, miraç gecesi Allah'ın kelamın duymak, seni bütün milletlere peygamber olarak göndermek ve diğer menkıbelerinle tamamlasın diye.

( وَيَهْدِيَكَ صِرَاطًا مُسْتَقِيمًا ) *"Ve seni doğru yola iletsin."*

Sana doğru yolda sebat versin, hidayetini kat kat artırsın ve seninle halkı hakka iletsin diye.

Bir yoruma göre de nefsinin arzusunu terk etmen suretiyle seni dosdoğru yola iletsin diye.

وَيَنْصُرَكَ اللّٰهُ نَصْرًا عَز۪يزًا ﴿٣﴾

3- "Ve Allah sana şanlı bir zaferle yardım etsin diye."

İçinde zül bulunmayan, kimsenin seni yenemeyeceği ve galip olacağın bir zaferle sana yardım etsin diye.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Hevâna ve nefsine karşı sana yardım etsin diye. Bir de güzel ahlakın ve kavminden çektiğin eziyet sebebiyle sana yardım etsin diye.

- Şanlı bir zaferle, yani seni ve sana iman edenleri aziz kılan bir zaferle.

Böylece bu ayet, Allah'ın Hz. Peygamber'e (s.a.v.) ikramda bulunduğu ve kendisine özgü kıldığı, nefse ve düşmana karşı fetih ve zafer, başkalarının aşamadığı hususları müyesser kılmak, bağışlanma, nimet, hidayet ve yardım gibi çeşitli lütufları kapsamıştır. Kaldı ki bu şeylerin her birinin de büyük özellikleri vardır.

هُوَ الَّذ۪ٓي اَنْزَلَ السَّك۪ينَةَ ف۪ي قُلُوبِ الْمُؤْمِن۪ينَ لِيَزْدَادُٓوا ا۪يمَانًا مَعَ
ا۪يمَانِهِمْۜ وَلِلّٰهِ جُنُودُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِۜ وَكَانَ اللّٰهُ عَل۪يمًا حَك۪يمًاۙ ﴿٤﴾

4- "İman edenlerin imanlarını kat kat artırmaları için kalplerine huzur ve güven indiren O'dur. Göklerin ve yerin orduları Allah'ındır. Allah hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."

( سَكِينَة ), kalbin huzur ve güven bulduğu basiretler ve delillerdir. Böylece kalp, onun varlığıyla düşünce sınırından kesin inancın verdiği huzur ve gönül esenliğine yükselir. Bu durumda ilimler zorunlu hale gelir. "Sekîne" lafzının bu anlama gelmesi havas içindir. Müslümanların avamı içinse sekîneden maksat, sükûn, tatmin ve kesin inançtır.

Bir yoruma göre de, kalbin kesin inanç bakımından bazı vasıfları marifetler, basiretler ve sekînedir.

Tefsirlerde ise "sekîne", serin esen rüzgâr şeklinde yer almıştır. Dediklerine göre onun insan yüzü gibi bir yüzü vardır. Bir iddiaya göre de iki kanadı bulunmaktadır.

( لِيَزْدَادُوٓا إِيمَانًا مَعَ إِيمَانِهِمْ ) *"İmanlarını kat kat artırmaları için."*

Yani kesin inançlarını ve sükûnlarını kat kat artırmaları için. Bu çerçevede aynelyakînin ayları, ilmelyakînin yıldızları üstüne doğar. Sonra hakkalyakînin güneşi de aynelyakînin dolunayı üstüne doğar.

لِيُدْخِلَ الْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنَاتِ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ
خَالِدِينَ فِيهَا وَيُكَفِّرَ عَنْهُمْ سَيِّئَاتِهِمْ وَكَانَ ذٰلِكَ عِنْدَ اللّٰهِ فَوْزًا
عَظِيمًا ﴿٥﴾

5- "Bütün bunlar, Allah'ın iman eden erkek ve kadınları içlerinden ırmaklar akan, içinde temelli kalacakları cennetlere koyması ve kötülüklerini örtmesi içindir. İşte bu, Allah katında büyük bir kurtuluştur."

Allah onların günahlarını örter ve onlardan siler. Bu ise büyük bir kurtuluş ve amacı elde etmektir.

Bu arada herkesin istediği, umduğu, arzuladığı ve amaçladığı farklıdır. Allah ise hepsine amacına kavuşmayı vaat etmiştir.

وَيُعَذِّبَ الْمُنَافِقِينَ وَالْمُنَافِقَاتِ وَالْمُشْرِكِينَ وَالْمُشْرِكَاتِ الظَّآنِّينَ
بِاللّٰهِ ظَنَّ السَّوْءِ عَلَيْهِمْ دَآئِرَةُ السَّوْءِ وَغَضِبَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ وَلَعَنَهُمْ
وَاَعَدَّ لَهُمْ جَهَنَّمَ وَسَآءَتْ مَصِيرًا ﴿٦﴾

6- "Bir de Allah'ın, hakkında kötü zanda bulunan münafık erkeklere ve münafık kadınlara, Allah'a ortak koşan erkeklere ve Allah'a ortak koşan kadınlara azap etmesi içindir. Kötülük girdabı onların başına olsun! Allah onlara gazap etmiş, onları lanetlemiş ve kendilerine cehennemi hazırlanıştır. Orası ne kötü bir varış yeridir!"

Allah, onları ahirette azapları ve kötü cezalarıyla cezalandırır.

(ظَنَّ السَّوْءِ) *"Kötü zan."*

Kötü zan, izin verilmeyen zandır. Onlar, Allah'ın, dinine ve peygamberine (s.a.v.) yardım etmeyeceğini zannettiler.

(عَلَيْهِمْ دَآئِرَةُ السَّوْءِ) *"Kötülük girdabı onların başına olsun!"*

Kötü son onları kuşatır ve yok eder.

(وَلَعَنَهُمْ) *"Onları lanetlemiş."*

Onları lütfundan uzaklaştırmış, onlar hakkında sözü ve kendileriyle ilgili ezeli takdiri kesinleşmiştir.

وَلِلّٰهِ جُنُودُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيزًا حَكِيمًا ﴿٧﴾

7- "Göklerin ve yerin orduları Allah'ındır. Allah, mutlak güç sahibidir, hüküm ve hikmet sahibidir."

(جُنُودُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ) *"Göklerin ve yerin orduları."*

Bir görüşe göre bu ordular, Allah'ın birliğine delil olan bütün kalplerdir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Adı geçen ordular, göklerin ve yerin mülkü ile bu mülkte yer alıp Allah'ın düşmanlarını yenen güçlerdir.

- Bu ordular, Allah'ın dinin yardımcılarıdır.

- Allah'ın bir şeye musallat kıldığı şey, O'nun ordularındandır. İster onu darlıkta ve bollukta velisine, ister rahatlıkta ve musibette düşmanına musallat kılsın.

إِنَّا أَرْسَلْنَاكَ شَاهِدًا وَمُبَشِّرًا وَنَذِيرًا ﴿٨﴾

**8- "Şüphesiz biz seni bir şahit, bir müjdeci ve bir uyarıcı olarak gönderdik."**

( إِنَّا أَرْسَلْنَاكَ شَاهِدًا ) "*Seni*" kıyamet günü ümmetin hakkında "*bir şahit olarak gönderdik.*"

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Seni peygamberler ve kitaplar hakkında şahit olarak gönderdik.

- Seni birliğimiz ve Rab oluşumuz hakkında şahit olarak gönderdik.

- Seni ümmetin için birliğimiz hakkında şahit olarak gönderdik.

( وَمُبَشِّرًا ) "*Bir müjdeci olarak gönderdik.*"

Seni onlara, bizden gelecek sevabı müjdeleyen bir müjdeci olarak gönderdik.

( وَنَذِيرًا ) "*Ve bir uyarıcı olarak gönderdik.*"

Biz seni halk için bir uyarıcı, günahlardan ve aykırılıklardan alıkoyucu ve sakındırıcı olarak gönderdik.

Bir yoruma göre de seni tarafımızdan bir şahit, emrimizle bir müjdeleyici ve katımızdan bizim için ve bizden bir uyarıcı olarak gönderdik.

لِتُؤْمِنُوا بِاللّٰهِ وَرَسُولِهِ وَتُعَزِّرُوهُ وَتُوَقِّرُوهُ وَتُسَبِّحُوهُ بُكْرَةً وَاَصِيلًا ﴿٩﴾

**9- "Allah'a ve Peygamberine inanasınız, ona yardım edesiniz, ona saygı gösteresiniz ve sabah akşam Allah'ı tesbih edesiniz diye."**

Ayetteki "inanasınız diye" anlamındaki ( لِتُؤْمِنُوا ) lafzı, daha önce müminlerin bahsi geçtiği için müminler "inansınlar diye" anlamına gelen ( لِيُؤْمِنُوا ) şeklinde de okunmuştur. Yani müminler; Allah'a ve Peygamberine inansınlar ve Peygamberine yardım edip saygı göstersinler, yani onu yüceltsinler diye.

( وَتُسَبِّحُوهُ ) *"Allah'ı tesbih edesiniz diye."*

Yani sabah akşam Allah'ı tesbih ve tenzih edesiniz diye.

Ayet, muhatap sıygasıyla; "ey Allah'a ve Peygamberine iman edenler! İnanasınız ve ona yardım edesiniz diye" anlamında ( لِتُؤْمِنُوا ) şeklinde de okunmuştur. Bu arada peygambere yardım etmek, her yönüyle onu nefsine tercih etmen ve onun hükmünü kendi hükmüne öncelemen demektir. Ona saygı göstermek ise sünnetine uymak ve onun Allah'ın bütün yaratıklarının efendisi olduğunu bilmekle olur.

اِنَّ الَّذ۪ينَ يُبَايِعُونَكَ اِنَّمَا يُبَايِعُونَ اللّٰهَ يَدُ اللّٰهِ فَوْقَ اَيْد۪يهِمْ فَمَنْ نَكَثَ فَاِنَّمَا يَنْكُثُ عَلٰى نَفْسِه۪ وَمَنْ اَوْفٰى بِمَا عَاهَدَ عَلَيْهُ اللّٰهَ فَسَيُؤْت۪يهِ اَجْرًا عَظ۪يمًا ﴿١٠﴾

10- "Sana biat edenler, ancak Allah'a biat etmiş olurlar. Allah'ın eli, onların elinin üzerindedir. Verdiği sözden dönen, kendi aleyhine dönmüş olur. Allah'a verdiği sözü yerine getirene Allah büyük bir mükâfat verecektir."

Bu biat, Hudeybiye'de bir sakız ağacının altında yapılan Rıdvân Biatı'dır.

Şöyle ki Hz. Peygamber (s.a.v.) Hz. Osman'ı, kendileriyle konuşması için Kureyşlilere gönderdi, ancak onlar kendisinin öldürüldüğü dedikodusunu yaydılar. Bu sırada Urve b. Mes'ûd Hz. Peygamber'e (s.a.v.) gelerek şöyle dedi:

*"Sen, bu ayaktakımı insanları, kendi elinle kendini perişan etmek için mi getirdin? Oysa Kureyşliler sana karşı savaşmak için hazırlanmış*

*bulunmaktadırlar. Bir de ben, arkadaşlarının, silahın sıcaklığını hissettikleri zaman etrafından dağıldıklarını görür gibiyim."*

Bunun üzerine Hz. Ebûbekir: *"Sen, Hz. Peygamber'i (s.a.v.) teslim edeceğimizi mi zannediyorsun?"* dedi.

Bu konuşmaların ardından Hz. Peygamber (s.a.v.), arkadaşlarından savaşacaklarına ve kaçmayacaklarına dair biat aldı.

İşte bu biat üzerine Allah: (إِنَّ الَّذِينَ يُبَايِعُونَكَ إِنَّمَا يُبَايِعُونَ اللهَ) *"Sana biatedenler, ancak Allah'a biatetmiş olurlar"* ayetini indirdi. Yani onlardan aldığın söz Allah'a verilmiş bir sözüdür.

(يَدُ اللهِ فَوْقَ اَيْدِيهِمْ) *"Allah'ın eli, onların elinin üzerindedir."*

Yani onlara muvaffakiyet ve hidayet vermede Allah'ın eli, onların sana biat ettiklerinde vefa ile uzattıkları ellerinin üstündedir.

Bir yoruma göre de Allah'ın, dinine ve peygamberine yardım etmedeki kudreti ve gücü, onların Allah'ın dinine ve peygamberine olan yardımlarının üzerindedir.

Öte yandan bu ayette cem, açıkça dile getirilmiştir: Tıpkı şu ayette olduğu gibi:

(وَمَا رَمَيْتَ اِذْ رَمَيْتَ وَلٰكِنَّ اللهَ رَمٰى) *"Attığın zaman da sen atmadın, fakat Allah attı."* (Enfâl, 8/17)

(فَمَنْ نَكَثَ فَاِنَّمَا يَنْكُثُ عَلٰى نَفْسِهِ) *"Verdiği sözden dönen, kendi aleyhine dönmüş olur."*

Yani verdiği sözden dönmesinin azabı kendisine döner.

(وَمَنْ اَوْفٰى بِمَا عَاهَدَ عَلَيْهُ اللهَ فَسَيُؤْتِيهِ اَجْرًا عَظِيمًا) *"Allah'a verdiği sözü yerine getirene, Allah büyük bir mükâfat verecektir."*

Yani kim Allah'a verdiği sözü tam olarak yerine getirirse, Allah ona büyük bir mükâfat verecektir.

Bir de kul, ihlas vasfına sahip olup Allah'a karşı kesin inancı çerçevesinde davranır ve kalbinde bir şahidi bulunursa, vahiy bilgilerine ait emarelerin ortaya çıkardığı vasıtalar, onu sırları bakımından

mahviyet içine sokar. O zaman hüküm de bir olan şanı yüce Allah'a (c.c.) ait olur.

سَيَقُولُ لَكَ الْمُخَلَّفُونَ مِنَ الْاَعْرَابِ شَغَلَتْنَٓا اَمْوَالُنَا وَاَهْلُونَا
فَاسْتَغْفِرْ لَنَا يَقُولُونَ بِاَلْسِنَتِهِمْ مَا لَيْسَ فٖي قُلُوبِهِمْ قُلْ فَمَنْ يَمْلِكُ
لَكُمْ مِنَ اللّٰهِ شَيْـًٔا اِنْ اَرَادَ بِكُمْ ضَرًّا اَوْ اَرَادَ بِكُمْ نَفْعًا بَلْ كَانَ اللّٰهُ
بِمَا تَعْمَلُونَ خَبٖيرًا ﴿١١﴾

11- "Bedevîlerin geri bırakılanları sana: 'Bizi, mallarımız ve ailelerimiz alıkoydu. Allah'tan bizim için af dile' diyecekler. Onlar, kalplerinde olmayanı dilleriyle söylerler. De ki: 'Allah, sizin bir zarara uğramanızı dilerse veya bir yarar elde etmenizi dilerse, O'na karşı kimin bir şeye gücü yeter? Hayır, Allah yaptıklarınızdan haberdardır.'"

Hz. Peygamber (s.a.v.), Hudeybiye'ye gitmek isteyince, bedevî Araplardan bir topluluk ona katılmadı. İddiaya göre, katılmayanlar Eslem, Cuheyne, Gıfâr, Muzeyne ve Eşca' kabilelerinden oluşuyordu. Bunlar şöyle dediler:

*"Bizi mallarımız ve ailelerimiz alıkoydu. İşimize bakacak kimsemiz de yoktur."*

Bir de dediler ki: *"Bekleyin bakalım, ne olacak? Kureyşlilere göre bunlar sayıca azdırlar."*

Ancak Hz. Peygamber (s.a.v.) geri dönünce bunlar, işlerine bakacak kimselerinin olmadığı şeklinde özür dilemek üzere kendisine geldiler ve: ( فَاسْتَغْفِرْ لَنَا ) *"Allah'tan bizim için af dile"* dediler.

Bunun üzerine Allah, Hz. Peygamber'i (s.a.v.) onların yalancılıklarına, münafıklıklarına, bunu içten söylemediklerine ve onlar için af dilemesiyle dilememesi arasında fark bulunmadığına muttali kıldı. Çünkü onlar, kalplerinde olmayanı ağızlarıyla söylerler.

(قُلْ فَمَنْ يَمْلِكُ لَكُمْ مِنَ اللّٰهِ شَيْئًا اِنْ اَرَادَ بِكُمْ ضَرًّا اَوْ اَرَادَ بِكُمْ نَفْعًا بَلْ كَانَ اللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرًا)

*"De ki: 'Allah, sizin bir zarara uğramanızı dilerse veya bir yarar elde etmenizi dilerse, O'na karşı kimin bir şeye gücü yeter? Hayır, Allah yaptıklarınızdan haberdardır.'"*

Allah, onları rezil etmiştir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Kulu Allah'tan alıkoyan şey, ona uğursuzluk getirir.

- Riyakârın özrü ile münafığın tövbesi gerçek değildir.

بَلْ ظَنَنْتُمْ اَنْ لَنْ يَنْقَلِبَ الرَّسُولُ وَالْمُؤْمِنُونَ اِلٰٓى اَهْلِيهِمْ اَبَدًا وَزُيِّنَ ذٰلِكَ فٖي قُلُوبِكُمْ وَظَنَنْتُمْ ظَنَّ السَّوْءِ وَكُنْتُمْ قَوْمًا بُورًا ﴿١٢﴾

12- "Siz aslında peygamberin ve müminlerin bir daha ailelerine geri dönmeyeceklerini sanmıştınız. Bu, sizin gönüllerinize güzel gösterildi kötü zanda bulundunuz ve helâki hak eden bir kavim oldunuz."

Siz, Hz. Peygamber (s.a.v.) ve müminlerin, bu yolculuktan ailelerine asla geri dönmeyeceklerini sandınız ve kuruntular, dönmemelerini ve Allah'ın kendilerine yardım etmeyeceğini size güzel gösterdi.

(وَكُنْتُمْ قَوْمًا بُورًا) *"Ve helâki hak eden bir kavim oldunuz."*

Siz, helâke ve fesada uğrayan bir kavim oldunuz.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Düşman eliyle tuzak kuramadığı zaman, imkânının yetersiz kaldığı şeyler temenni eder. Bu ise her aciz kimsenin vasfı ve her kötü kimsenin niteliğidir. Sonra muradının gerçekleşmemesi için Allah, onun dileğini aleyhine çevirir.

(وَلَا يَحٖيقُ الْمَكْرُ السَّيِّئُ اِلَّا بِاَهْلِهٖ) *"Oysa kötü tuzak ancak sahibini kuşatır."* (Fâtır, 35/43)

- Allah'ın bâtıl ehli kimseye verdiği ağır cezalardan biri de aşırı cehaletinden dolayı temenni ettiği bir şeyi tasavvur edip kendini ona alıştırmasıdır. Allah, onun kalbine bu temenniyi atar ki nefsi ona bu temenninin gerçekleşecek gibi olduğunu düşündürsün. Sonra Allah o kimseyi bu temenninin imkânsız oluşuyla cezalandırır.

وَمَنْ لَمْ يُؤْمِنْ بِاللّٰهِ وَرَسُولِهٖ فَاِنَّٓا اَعْتَدْنَا لِلْكَافِرِينَ سَعِيرًا ﴿١٣﴾

13- "Kim, Allah'a ve Peygamber'e iman etmezse bilsin ki şüphesiz biz, kâfirler için alevli bir ateş hazırladık."

Gelecek olan şey yakındır. Bir de Allah, zalimlerin dizginini salıverir sonra da O'nun azabından kurtulamazlar. Hakikatte onların yaptıklarını da haklarında icra eden kendisi iken, O'nun azabından nasıl kurtulabilirler ki?

وَلِلّٰهِ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ يَغْفِرُ لِمَنْ يَشَٓاءُ وَيُعَذِّبُ مَنْ يَشَٓاءُ
وَكَانَ اللّٰهُ غَفُورًا رَحِيمًا ﴿١٤﴾

14- "Göklerin ve yerin hükümranlığı Allah'ındır. O, dilediğini bağışlar, dilediğine ceza verir. Allah, çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Allah bağışlar ve kendisine: "Yapma!" diyecek bir ortağı da bulunmamaktadır. Dilediğine ceza verir ve ortada fiiline mani olup kendisine: "Yapma!" diyecek bir kimse de yoktur.

سَيَقُولُ الْمُخَلَّفُونَ اِذَا انْطَلَقْتُمْ اِلٰى مَغَانِمَ لِتَأْخُذُوهَا ذَرُونَا نَتَّبِعْكُمْ
يُرِيدُونَ اَنْ يُبَدِّلُوا كَلَامَ اللّٰهِ قُلْ لَنْ تَتَّبِعُونَا كَذٰلِكُمْ قَالَ اللّٰهُ مِنْ
قَبْلُ فَسَيَقُولُونَ بَلْ تَحْسُدُونَنَا بَلْ كَانُوا لَا يَفْقَهُونَ اِلَّا قَلِيلًا ﴿١٥﴾

15- "Savaştan geri bırakılanlar; siz ganimetleri almaya giderken: 'Bırakın, biz de sizinle gelelim' diyeceklerdir. Onlar, Allah'ın sözünü

değiştirmek isterler. De ki: 'Siz, bizimle asla gelmeyeceksiniz. Allah, önceden böyle buyurmuştur.' Onlar: 'Bizi kıskanıyorsunuz' diyeceklerdir. Hayır, onlar pek az anlarlar."

Bu olay şöyle olmuştur: Hz. Peygamber (s.a.v.) ve müminler Hudeybiye'den dönünce Allah onlara Hayber'i ve orada Hz. Peygamber'in (s.a.v.) düşmanlarına karşı zafer kazanacağını vaat etti. Bunun üzerine Hz. Peygamber (s.a.v.), sefere çıkmaya niyetlenince, Hudeybiye seferine katılmayan bu adamlar, Hayber seferinde ganimet olduğunu bildikleri için arkasından gitmek istediler. Bunun üzerine Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurdu:

*"Sadece Hudeybiye'ye çıkmış olanlar benimle Hayber'e çıkacaklardır. Allah da onların bizimle beraber çıkmamalarına hükmetmiştir."*

Hudeybiye seferine katılmayanlar, bunun üzerine şöyle dediler:

*"Müminler, bizi çekemedikleri için bunu söylüyorlar. Yoksa bu, Allah'ın sözünden değildir."*

İşte bunu söylemeleri üzerine Allah onları yalancı çıkarmak ve Hz. Peygamber'in (s.a.v.) onları arkadaş olarak yanına almaması şeklindeki hükmünü açıklamak için bunu indirdi. Nitekim onlar tamah ehli kimselerdir. Akıbetleri de muratlarına ermemek, zelil olarak geri çevrilmek ve rezil olmak şeklinde olmuştur.

قُلْ لِلْمُخَلَّفِينَ مِنَ الْاَعْرَابِ سَتُدْعَوْنَ اِلٰى قَوْمٍ اُو۬لٖي بَأْسٍ شَدٖيدٍ تُقَاتِلُونَهُمْ اَوْ يُسْلِمُونَ فَاِنْ تُطٖيعُوا يُؤْتِكُمُ اللّٰهُ اَجْرًا حَسَنًا وَاِنْ تَتَوَلَّوْا كَمَا تَوَلَّيْتُمْ مِنْ قَبْلُ يُعَذِّبْكُمْ عَذَابًا اَلٖيمًا ﴿١٦﴾

16- "Bedevilerin seferden geri kalmış olanlarına de ki: 'Siz, güçlü kuvvetli bir kavme karşı teslim oluncaya kadar savaşmaya çağrılacaksınız. Eğer itaat ederseniz, Allah size güzel bir mükâfat verir. Ama önceden döndüğünüz gibi yine dönerseniz, Allah sizi acıklı bir azaba uğratır.'"

Tefsirlerde, bu kimselerin Yemameliler, yani Museylime'nin taraftarları oldukları bilgisi yer almıştır. Nitekim Hz. Ebûbekir onları çağırmış ve kendileriyle savaşmıştır. Bu itibarla ayet, onun imametine delil teşkil eder. Bir görüşe de onlar İranlılardır. Hz. Ömer de bunları çağırmış ve kendileriyle savaşmıştır. Buna göre de ayet, onun imametine delil oluşturur. Hz. Ömer'in imametinin sahih oluşu ise Hz. Ebûbekir'in imametinin de sahih olduğunu gösterir.

(أُولِي بَأْسٍ شَدِيدٍ) *"Güçlü kuvvetli."*

Yani güç sahibi kimseler. Eğer siz itaat ederseniz sevap kazanacaksınız. Şayet geri kalırsanız azaba müstahak olursunuz. Bu arada ayet, başlangıçtaki durumu hoşnut kılmayan kulun daha sonra iyiliğe doğru değişim yaşamasının caiz olduğunu göstermektedir. Tıpkı bunların durumunda olduğu gibi.

Şiir:

*Bozulduğu zaman insan iyiliğinden sonra*
*Tekrar iyileşmesini ümit et sen... Belki o*

لَيْسَ عَلَى الْاَعْمٰى حَرَجٌ وَلَا عَلَى الْاَعْرَجِ حَرَجٌ وَلَا عَلَى
الْمَرِيضِ حَرَجٌ وَمَنْ يُطِعِ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ يُدْخِلْهُ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ
تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ وَمَنْ يَتَوَلَّ يُعَذِّبْهُ عَذَابًا اَلِيمًا ﴿١٧﴾

17- "Köre güçlük yoktur, topala güçlük yoktur, hastaya güçlük yoktur. Kim, Allah'a ve Peygamberine itaat ederse Allah onu, içlerinden ırmaklar akan cennetlere koyar. Kim de yüz çevirirse, onu acıklı bir azaba uğratır."

Bunlar mazeret sahipleridir. Allah, müşriklere karşı savaşa katılmaktan geri kalmanın sorumluluğunu onların üzerinden kaldırmıştır. Nefse karşı mücadelede bir mazereti olan da böyledir. Çünkü Allah, azimetlerinin yerine getirilmesi gibi ruhsatlarının yerine getirilmesini de sever.

لَقَدْ رَضِيَ اللّٰهُ عَنِ الْمُؤْمِنِينَ اِذْ يُبَايِعُونَكَ تَحْتَ الشَّجَرَةِ فَعَلِمَ مَا فِي قُلُوبِهِمْ فَاَنْزَلَ السَّكِينَةَ عَلَيْهِمْ وَاَثَابَهُمْ فَتْحًا قَرِيبًا ﴿١٨﴾ وَمَغَانِمَ كَثِيرَةً يَأْخُذُونَهَا وَكَانَ اللّٰهُ عَزِيزًا حَكِيمًا ﴿١٩﴾

18, 19- "Şüphesiz Allah, ağaç altında sana biat ederlerken müminlerden hoşnut olmuştur. Kalplerinde olanı bilmiş, onlara huzur, güven duygusu vermiş ve onlara yakın bir fetih ve elde edecekleri birçok ganimetler nasip etmiştir. Allah mutlak güç sahibidir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Bu Rıdvân Biatı'dır. Hudeybiye'de ağacın altında yapılan bu biate, Allah'ın: ( لَقَدْ رَضِيَ اللّٰهُ عَنِ الْمُؤْمِنِينَ اِذْ يُبَايِعُونَكَ تَحْتَ الشَّجَرَةِ ) *"Şüphesiz Allah, ağaç altında sana biat ederlerken müminlerden hoşnut olmuştur"* sözünden dolayı "Rıdvân -hoşnutluk- Biatı" adı verilmiştir.

Bu seferde Müslümanlar bin beş yüz kişi idiler. Ancak bir görüşe göre üç yüz, diğer bir görüşe göre ise dört yüz kişi idiler. Bu seferde Müslümanlar Mekke'ye girmek istemişlerdi ancak müşrikler bunu haber alınca, Hz. Peygamber (s.a.v.) savaş için çıkmadığı halde, kendilerini Mescid-i Haram'dan alıkoymak üzere karşılarına dikildiler. Müşrikler, bu amaçla Hz. Peygamber'e (s.a.v.) gittiler, ancak daha sonra, bu yıl dönmesi ve gelecek yıl Mekke'de üç gün kalıp çıkması konusunda kendisiyle anlaşmaya vardılar. Bu arada, Hz. Peygamber (s.a.v.), rüyasında Mescid-i Haram'a güven içerisinde girdiklerini görmüş ve bunu sahabilerine müjdelemişti. Ancak müşrikler onları alıkoyunca kalplerine bir şeyler geldi ve bazılarının içine töhmet duygusu tekrar doğdu. O kadar ki Hz. Ebûbekir: "O, bu yıl gireceğimizi söylemedi" demek zorunda kaldı. Ancak ayetin inmesiyle kalpleri sükûnete kavuştu. Çünkü Allah, kalplerindeki tedirginlik ve kuşkulanmayı bilmişti. Bu nedenle de kalplerine sükûnet indirdi ve kendilerine kesin inançla sebat verdi.

( وَاَثَابَهُمْ فَتْحًا قَرِيبًا وَمَغَانِمَ كَثِيرَةً يَأْخُذُونَهَا ) *"Ve onlara yakın bir fetih ve elde edecekleri birçok ganimetler nasip etmiştir."*

Bu, az bir süre sonra gerçekleşen Hayber fethi ve Müslümanların Hayber'den elde ettikleri ganimetlerdir. Bir görüşe göre de kıyamet gününe kadar elde edecekleri şeylerdir.

Öte yandan ayette şuna dair delil de vardır: Bazen insanın içine şüpheye düşürücü hisler doğabilir. Fakat bunların hiçbir geçerliliği yoktur. Çünkü Allah, bir kul hakkında hayır dilediği zaman tevhid kalbinden ayrılmaz ve hakikat onun sırrıyla birlikte olur. Bu sayede şeytanın hilesi ona zarar vermez. Nitekim Allah şöyle buyurur:

( إِنَّ الَّذِينَ اتَّقَوْا إِذَا مَسَّهُمْ طَٓائِفٌ مِنَ الشَّيْطَانِ تَذَكَّرُوا فَإِذَا هُمْ مُبْصِرُونَ ) *"Şüphe yok ki Allah'a karşı gelmekten sakınanlar, kendilerine şeytandan bir vesvese dokunduğu zaman iyice düşünüp hemen gerçeği görürler."* (A'râf, 7/201)

وَعَدَكُمُ اللّٰهُ مَغَانِمَ كَث۪يرَةً تَأْخُذُونَهَا فَعَجَّلَ لَكُمْ هٰذِه۪ وَكَفَّ اَيْدِيَ النَّاسِ عَنْكُمْ وَلِتَكُونَ اٰيَةً لِلْمُؤْمِن۪ينَ وَيَهْدِيَكُمْ صِرَاطًا مُسْتَق۪يمًاۙ ﴿٢٠﴾

20- "Allah, size elde edeceğiniz birçok ganimetler vaat etmiştir. Şimdilik bunu size hemen vermiş ve insanların ellerini sizden çekmiştir. Ta ki bunlar, müminler için bir delil olsun, sizi de doğru bir yola iletsin."

( وَعَدَكُمُ اللّٰهُ مَغَانِمَ كَث۪يرَةً تَأْخُذُونَهَا ) *"Allah, size elde edeceğiniz birçok ganimetler vaat etmiştir."*

Bu ganimetlerin kapsamına Müslümanların kıyamet gününe kadar elde edecekleri ganimetler de girmektedir.

( فَعَجَّلَ لَكُمْ هٰذِه۪ ) *"Şimdilik bunu size hemen vermiş."*

Bundan maksat Hayber ganimetleridir. Bir görüşe göre de Hudeybiye Anlaşması'dır.

( وَكَفَّ اَيْدِيَ النَّاسِ عَنْكُمْ ) *"Ve insanların ellerini sizden çekmiştir."*

Müslümanlar Medine'den çıkınca Allah, onları ve ailelerini korudu. Çıkmalarından sonra Yahudilerin Medine'de harekete geçmeleri

esnasında da Allah, Müslümanların bölgesini korudu. Böylece Allah, Yahudileri Müslümanlardan alıkoymuş oldu.

Bir yoruma göre de Allah Hudeybiye'de insanların ellerini çekti.

(وَلِتَكُونَ اٰيَةً لِلْمُؤْمِنِينَ) *"Ta ki bunlar, müminler için bir delil olsun."*

Ta ki bunlar müminler için bir işaret ve Allah'ın kendilerini koruduğuna dair delil olarak kullanacakları bir alamet olsun.

(وَيَهْدِيَكُمْ صِرَاطًا مُسْتَقِيمًا) *"Sizi de"* Allah'a tevekkül edip O'na güvenmede *"doğru bir yola iletsin."*

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah'ın, insanların ellerini kuldan çekmesi, geçimini insanlardan sağlamaya muhtaç olmaması için ona beklemediği yerden rızık vermesidir.

- Allah'ın, kulun üzerinden zalimlerin ellerini kaldırmasıdır.

- Aile fertlerinin çokluğu ve büyük harcamaları sebebiyle taşıdığı yükümlülüğün, tevil ruhsatına dayanarak helal olmayan şeyleri almak suretiyle dinini tehlikeye atmasına yol açmamasıdır.

وَاُخْرٰى لَمْ تَقْدِرُوا عَلَيْهَا قَدْ اَحَاطَ اللّٰهُ بِهَا وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرًا ﴿٢١﴾

21- "Henüz elde edemediğiniz, fakat Allah'ın, ilmiyle kuşattığı başka kazançlar da vardır. Allah, her şeye hakkıyla gücü yetendir."

Bir görüşe göre bu kazançlar Roma ve İran fetihleri, diğer bir görüşe göre de Mekke fethidir.

(وَكَانَ اللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرًا) *"Allah, her şeye hakkıyla gücü yetendir."*

O halde kalbinizi O'ndan başkasına bağlamayın.

وَلَوْ قَاتَلَكُمُ الَّذِينَ كَفَرُوا لَوَلَّوُا الْاَدْبَارَ ثُمَّ لَا يَجِدُونَ وَلِيًّا وَلَا نَصِيرًا ﴿٢٢﴾

22- "Eğer kâfir olanlar sizinle savaşsalardı, arkalarını dönüp kaçarlar, sonra da ne bir dost ne de bir yardımcı bulabilirlerdi."

Yani eğer Hayberliler, Esed, Gatafân ve diğer kabileler sizinle savaşsalardı, yenilgiye uğrayacak ve Allah'tan başka bir yardımcı bulamayacaklardı.

سُنَّةَ اللّٰهِ الَّت۪ي قَدْ خَلَتْ مِنْ قَبْلُ وَلَنْ تَجِدَ لِسُنَّةِ اللّٰهِ تَبْد۪يلًا ﴿٢٣﴾

23- "Allah'ın öteden beri işleyip duran kanunu budur. Allah'ın kanununda ise asla bir değişiklik bulamazsın."

Yani Allah'ın kanunu, onların perişan olması şeklindedir. Allah'ın kanununda ise asla bir değişiklik bulamazsın.

وَهُوَ الَّذ۪ي كَفَّ اَيْدِيَهُمْ عَنْكُمْ وَاَيْدِيَكُمْ عَنْهُمْ بِبَطْنِ مَكَّةَ مِنْ بَعْدِ اَنْ اَظْفَرَكُمْ عَلَيْهِمْ وَكَانَ اللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَص۪يرًا ﴿٢٤﴾

24- "Mekke'nin göbeğinde sizi onlara karşı üstün kıldıktan sonra onların ellerini sizden, sizin ellerinizi de onlardan çeken O'dur. Allah, yaptıklarınızı hakkıyla görmektedir."

Bu konuda şu görüşlere yer verilmiştir:

- Mekkelilerden yetmiş kişi, silahlı olarak Ten'îm Dağı'ndan Hz. Peygamber'e doğru inişe geçerek onu öldürmek istediler. Ancak Müslümanlar onları savaşsız yakaladılar ve öldürmediler. Bunun üzerine onların durumu hakkında bu ayet indi.

- Hz. Peygamber hiçbir güvence sözü vermeden müşriklerden on iki kişiyi yakaladı ve karşılıksız olarak salıverdi.

- Bunlar, Müslümanları engellemek için çıkan Hudeybiyelilerdir. Onlarla Müslümanlar arasında karşılıklı taşlamalar meydana gelmiş ve Müslümanlar, onları evlerine sığınmak zorunda bırakmışlardı. İşte bunun üzerine Allah, onlara nimetini hatırlatmak üzere bu ayeti indirdi. Zira Allah, Müslümanların güçsüzlüğünden dolayı değil, güçlerini ortaya koyarak ellerini birbirlerinden çekmiştir. Bu çerçevede kâfirler korkudan ellerini çekerken, Müslümanlar Allah tarafından alıkonulmuşlardır. Çünkü Allah, o kâfirlerin mümin nesillerinin dünyaya gelmesini dilemiş veya aralarından bazı kimselerin iman edeceğini bilmiştir.

Ayetteki işaret ise şöyledir: İnsanların senden emin olması da senin onlardan emin olman da güzel ganimettir ve kıymetli nimetlerdendir. Allah, velilerine de bunu yapar. Bu çerçevede ne kimsenin onlardan bir alacağı, ne de onların kimseden bir alacağı, bir hesabı, bir davası, kimseyle bir sulhu, kimseye bir sitemi ve kimseyle bir dostluğu ya da düşmanlığı vardır. İşte Hak ile var olan kimse böyledir.

Şiir:

*Kalmadı benim bir muhalifi an(lat)maya zamanım*
*Ve kalmadı benim bir muvafıkı anacak kalbim*

هُمُ الَّذ۪ينَ كَفَرُوا وَصَدُّوكُمْ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ وَالْهَدْيَ مَعْكُوفًا
اَنْ يَبْلُغَ مَحِلَّهُ وَلَوْلَا رِجَالٌ مُؤْمِنُونَ وَنِسَٓاءٌ مُؤْمِنَاتٌ لَمْ تَعْلَمُوهُمْ
اَنْ تَطَؤُ۫هُمْ فَتُص۪يبَكُمْ مِنْهُمْ مَعَرَّةٌ بِغَيْرِ عِلْمٍ لِيُدْخِلَ اللّٰهُ ف۪ي رَحْمَتِه۪
مَنْ يَشَٓاءُ لَوْ تَزَيَّلُوا لَعَذَّبْنَا الَّذ۪ينَ كَفَرُوا مِنْهُمْ عَذَابًا اَل۪يمًا ﴿٢٥﴾

25- "Kâfir olanlar ve sizi Mescid-i Haram'ı ziyaretten ve bekletilen kurbanlıkları yerlerine ulaşmaktan alıkoyanlar onlardır. Eğer, oradaki henüz tanımadığınız mümin erkeklerle mümin kadınları bilmeyerek ezmeniz ve böylece onlardan dolayı üzüntüye kapılmanız olmasaydı, Allah Mekke'ye girmenize izin verirdi. Allah, dilediğini rahmetine dâhil etmek için böyle yapmıştır. Eğer

**müminlerle kâfirler birbirinden ayrılmış olsalardı, onlardan kâfir olanları acıklı bir azaba uğratırdık."**

Hudeybiye yılı inkârda bulunup sizi Mescid-i Haram'dan alıkoyanlar onlardır.

( وَالْهَدْيَ مَعْكُوفًا اَنْ يَبْلُغَ مَحِلَّهُ ) *"Ve bekletilen kurbanlıkları yerlerine ulaşmaktan alıkoyanlar onlardır."*

Yani onlar, kurbanlıkları kesim yerine ulaşmaktan alıkoydular. Bu itibarla ( مَعْكُوفًا ) lafzı, ( الهَدْيَ ) lafzının hali olup bekletilmekte olan kurbanlık demektir.

O yıl Hz. Peygamber (s.a.v.), kurbanlık olarak yetmiş deve götürmüştü.

( وَلَوْلَا رِجَالٌ مُؤْمِنُونَ وَنِسَآءٌ مُؤْمِنَاتٌ لَمْ تَعْلَمُوهُمْ اَنْ تَطَؤُهُمْ فَتُصِيبَكُمْ مِنْهُمْ مَعَرَّةٌ بِغَيْرِ عِلْمٍ لِيُدْخِلَ اللّٰهُ فِي رَحْمَتِهِ مَنْ يَشَآءُ )

*"Eğer, oradaki henüz tanımadığınız mümin erkeklerle mümin kadınları bilmeyerek ezmeniz ve böylece onlardan dolayı üzüntüye kapılmanız olmasaydı, Allah Mekke'ye girmenize izin verirdi. Allah, dilediğini rahmetine dâhil etmek için böyle yapmıştır."*

Yani eğer tanımadığınız mümin erkeklerle mümin kadınlara bilmeden zarar verecek olmasaydınız, biz sizi kâfirlerin başına musallat kılar ve onlara karşı size zafer verirdik. Bu açıklamada kula bazı hususların kapalılık ve zorluk taşıyabileceği, bu nedenle insan kalbinin daralabileceği öğretilmektedir. Bunda da ilahi bir sır vardır. Kaldı ki kul bilmediği halde onun iyiliğine gerçekleşen kimi işler de yok değildir.

Şiir:

*Defalarca kuşatmıştır seni hoşlanmadıkların*
*Allah'tır senin için hayırlı olan, sen ise hoşnutsuz*

اِذْ جَعَلَ الَّذِينَ كَفَرُوا فِي قُلُوبِهِمُ الْحَمِيَّةَ حَمِيَّةَ الْجَاهِلِيَّةِ فَاَنْزَلَ
اللّٰهُ سَكِينَتَهُ عَلٰى رَسُولِهِ وَعَلَى الْمُؤْمِنِينَ وَاَلْزَمَهُمْ كَلِمَةَ التَّقْوٰى
وَكَانُوا اَحَقَّ بِهَا وَاَهْلَهَا وَكَانَ اللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمًا ﴿٢٦﴾

26- "Hani kâfir olanlar kalplerine taassubu; cahiliye taassubunu yerleştirmişlerdi. Allah ise Peygamberine ve müminlere huzur ve güvenini indirmiş ve onların takva sözünü tutmalarını sağlamıştı. Zaten onlar, buna daha lâyık ve ehil idiler. Allah, her şeyi hakkıyla bilmektedir."

Yani kalplerine gururu yerleştirdiler. Yani cahiliye gururu, Hudeybiye yılı onları, sizi Mescid-i Haram'dan alıkoymaya sevk etti. Bunun üzerine Allah, müminlerin kalplerine sükûnetini indirdi. Çünkü kâfirlere, muhalefet ve savaş ile karşılık vermediler, durdular ve durumu yumuşaklıkla karşıladılar.

( وَاَلْزَمَهُمْ كَلِمَةَ التَّقْوٰى ) *"Ve onların takva sözünü tutmalarını sağlamıştı."*

Takva sözü, samimi bir kalpten çıkan kelime-i tevhiddir. Bu itibarla şirkten sakınma, takva sözüyle birlikte gerçekleşir.

( وَكَانُوٓا اَحَقَّ بِهَا وَاَهْلَهَا ) *"Zaten onlar, buna daha lâyık ve ehil idiler."*

Bu, Allah'ın ezeldeki hükmüne ve kadim ilmine göredir.

( وَكَانَ اللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمًا ) *"Allah, her şeyi hakkıyla bilmektedir."*

Bir yoruma göre, ayetteki takva sözünü tutma yükümlülüğü zorlama ve şiddet yükümlülüğü değil, ikram ve lütuf yükümlülüğüdür. Cebir yükümlülüğü değil, hayır ve iyilik yükümlülüğüdür.

Şiir:

*Vuslatımıza avuçlarını açan nice kimseler*
*Kavuşamadılar hiçbir nasibe*

Takva sözü konusunda ise şu yorumlar yapılmıştır:

- Takva sözü, kendi aralarında Allah'ın hakkını korumayı birbirlerine tavsiye etmeleridir.

- Takva sözü, senin bir ihtiyacın olduğunda onu Allah'tan istemen ve insanlara açıklamamandır.

- Takva sözü, seni arzulardan korumasını Allah'tan dilemendir.

لَقَدْ صَدَقَ اللّٰهُ رَسُولَهُ الرُّءْيَا بِالْحَقِّ لَتَدْخُلُنَّ الْمَسْجِدَ الْحَرَامَ اِنْ
شَٓاءَ اللّٰهُ اٰمِنِينَ مُحَلِّقِينَ رُؤُسَكُمْ وَمُقَصِّرِينَ لَا تَخَافُونَ فَعَلِمَ مَا
لَمْ تَعْلَمُوا فَجَعَلَ مِنْ دُونِ ذٰلِكَ فَتْحًا قَرِيبًا ﴿٢٧﴾

27- "Andolsun, Allah, Peygamberinin rüyasını doğru çıkardı. Allah dilerse, siz güven içinde başlarınızı kazıtmış veya saçlarınızı kısaltmış olarak korkmadan Mescid-i Haram'a gireceksiniz. Allah, sizin bilmediğinizi bildi ve size bundan başka yakın bir fetih daha verdi."

Yani Allah, Hz. Peygamber'i (s.a.v.) rüyası konusunda tasdik etti, yalancı çıkarmadı. Mekke'ye güven içerisinde başlarını kazıtarak veya saçlarını kısaltarak girecekleri şeklinde kendisine gösterdiği rüyayı doğruladı. Aynı şekilde Hz. Peygamber (s.a.v.), Hudeybiye'ye çıkıp ashabına haber verdiği rüyayı da Allah kendisine böyle göstermişti. Bu haber üzerine ashabı, kendilerini o yıl Mekke'ye girmeye adapte ettiler. Ancak Hudeybiye'de olanlar olunca, bazı Müslümanların kalplerine bir şeyler düştü. O kadar ki, kendilerine Mekke'ye girişlerinin bu yıl olmadığı söylendi. Sonra Allah, ertesi yıl girmelerine izin verdi. İşte bunun üzerine Allah şunu indirdi:

(لَقَدْ صَدَقَ اللّٰهُ رَسُولَهُ الرُّءْيَا بِالْحَقِّ) *"Andolsun Allah, Peygamberinin rüyasını doğru çıkardı."*

İşte bu gelişme Allah'ın, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) gösterdiği rüyanın hakikate dönüşmesi oldu. Bu itibarla Hz. Peygamber'in (s.a.v.) rüyası haktır. Çünkü peygamberlerin rüyası haktır.

Aynı zamanda bunda Müslümanlar için bir tür imtihan da vardı.

(فَعَلِمَ مَا لَمْ تَعْلَمُوا) *"Allah, sizin bilmediğinizi bildi."*

Allah, Mekke'ye girişin gecikmesinde var olduğunu bilmediğiniz hikmeti bildi.

Bu arada: (إِنْ شَآءَ اللّٰهُ) *"Allah dilerse"* sözü, "Allah dilediği için" anlamındadır. Tıpkı: (إِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ) *"Eğer müminler iseniz"* sözünün "çünkü siz müminlersiniz" anlamında olduğu gibi.

Bu konuda şu görüşler de ileri sürülmüştür:

- Allah bunu, onların da konuşmalarında önce "Allah dilerse" demeyi bir edep prensibi haline getirmeye dikkatlerini çekmek için söylemiştir.

- Allah'ın dilemesinin öne alınması, güven içinde veya güvensiz girişlerini kapsamaktadır.

- Allah'ın dilemesinin öne alınması, hepsinin de bazısının da girişini kapsamaktadır. Çünkü giriş bir yıl sonra olmuş ve bu esnada onların bir kısmı ölmüştür.

هُوَ الَّذِيٓ اَرْسَلَ رَسُولَهُ بِالْهُدٰى وَدِينِ الْحَقِّ لِيُظْهِرَهُ عَلَى الدِّينِ كُلِّهِ وَكَفٰى بِاللّٰهِ شَهِيدًا ﴿٢٨﴾

28- "Peygamberini hidayet ve hak din ile gönderen O'dur. Allah, o hak dini bütün dinlere üstün kılmak için böyle yaptı. Şahit olarak Allah yeter."

Allah, Peygamberi Muhammed'i (s.a.v.), onu din adına ne varsa hepsine üstün kılmak için Hanîf din ve İslam şeriatı ile gönderdi. Nitekim hangi kavmin bir dini varsa, muhakkak Müslümanların elinde ondan bir sır vardır. Bir de o dine karşı deliller ve mucizelerle güç ve galebe İslam'ındır.

Bu konuda şu görüşler de ileri sürülmüştür:

- Allah'ın, bu dini Hz. İsa'nın inişi esnasında üstün kılması için.

- Kıyamette, İslam'ın bütün dinlere üstün geldiği zaman.

- Onu, delil ve hüccetle bütün dinlere üstün kılması için.

مُحَمَّدٌ رَسُولُ اللّٰهِ وَالَّذٖينَ مَعَهُٓ اَشِدَّٓاءُ عَلَى الْكُفَّارِ رُحَمَٓاءُ بَيْنَهُمْ
تَرٰيهُمْ رُكَّعًا سُجَّدًا يَبْتَغُونَ فَضْلًا مِنَ اللّٰهِ وَرِضْوَانًا سٖيمَاهُمْ فٖي
وُجُوهِهِمْ مِنْ اَثَرِ السُّجُودِ ذٰلِكَ مَثَلُهُمْ فِي التَّوْرٰيةِ وَمَثَلُهُمْ فِي
الْاِنْجٖيلِ كَزَرْعٍ اَخْرَجَ شَطْـَٔهُ فَاٰزَرَهُ فَاسْتَغْلَظَ فَاسْتَوٰى عَلٰى سُوقِهٖ
يُعْجِبُ الزُّرَّاعَ لِيَغٖيظَ بِهِمُ الْكُفَّارَ وَعَدَ اللّٰهُ الَّذٖينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا
الصَّالِحَاتِ مِنْهُمْ مَغْفِرَةً وَاَجْرًا عَظٖيمًا ﴿٢٩﴾

29- "Muhammed, Allah'ın Resûlüdür. Onunla beraber olanlar, kâfirlere karşı çetindirler, birbirlerine karşı ise merhametlidirler. Onların, rükû ve secde halinde Allah'tan lütuf ve hoşnutluk istediklerini görürsün. Onların secde eseri olan alametleri, yüzlerindedir. İşte bu, onların Tevrat'ta ve İncil'de anlatılan durumlarıdır. Onlar, filizini çıkarmış, onu kuvvetlendirmiş, kalınlaşmış, gövdesi üzerine dikilmiş, ziraatçıların hoşuna giden bir ekin gibidirler. Allah, kendileri sebebiyle kâfirleri öfkelendirmek için onları böyle sağlam ve dirençli kılar. Allah, içlerinden iman edip salih amel işleyenlere bir bağışlama ve büyük bir mükâfat vaat etmiştir."

( أشدّاء ) lafzı, şedidin çoğuludur. Yani kâfirlere karşı onlarda bir salâbet vardır.

( رُحَماء ) lafzı da rahîm lafzının çoğuludur. Bu ifadeyle Allah, mü'minleri, kendi aralarında merhamet ve sevgi sahibi olmakla vasıflandırmıştır.

( تَرٰيهُمْ رُكَّعًا سُجَّدًا يَبْتَغُونَ فَضْلًا مِنَ اللّٰهِ وَرِضْوَانًا ) *"Onların, rükû ve secde halinde Allah'tan lütuf ve hoşnutluk istediklerini görürsün."*

Sen onları, rükû ve secde halinde Allah'tan lütuf ve hoşnutluk dilerken görürsün.

( سٖيمَاهُمْ فٖي وُجُوهِهِمْ مِنْ اَثَرِ السُّجُودِ ) *"Onların secde eseri olan alametleri, yüzlerindedir."*

Yani salihlerin üzerinde mevcut huşu alameti yüzlerindedir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bu durum, kıyamette bazı yüzlerin ak olduğu gün olacaktır. Bir de onlar yarın el ve ayakları nurlu kimseler olacaklardır. Nitekim Hz. Peygamber (s.a.v.), şöyle buyurmuştur:

*"Kimin geceleyin namazı çok olursa, gündüz vakti yüzü güzel olur."*

Tefsirlerdeki yoruma göre beraberindeki Hz. Ebûbekir, kâfirlere karşı çetin olan Hz. Ömer, birbirlerine karşı merhametli olan Hz. Osman, rükû ve secde halinde Allah'tan lütuf ve hoşnutluk isteyen de Hz. Ali'dir.

Bir görüşe göre de ayet genel olup bütün müminleri kapsamaktadır.

{ ذٰلِكَ مَثَلُهُمْ فِي التَّوْرٰيةِ وَمَثَلُهُمْ فِي الْاِنْجِيلِ كَزَرْعٍ اَخْرَجَ شَطْـَٔهُ فَاٰزَرَهُ
فَاسْتَغْلَظَ فَاسْتَوٰى عَلٰى سُوقِهِ يُعْجِبُ الزُّرَّاعَ لِيَغِيظَ بِهِمُ الْكُفَّارَ }

*"İşte bu, onların Tevrat'ta ve İncil'de anlatılan durumlarıdır. Onlar, filizini çıkarmış, onu kuvvetlendirmiş, kalınlaşmış, gövdesi üzerine dikilmiş, ziraatçıların hoşuna giden bir ekin gibidirler. Allah, kendileri sebebiyle kâfirleri öfkelendirmek için onları böyle sağlam ve dirençli kılar."*

Bu, onların Tevrat'taki durumudur. İncil'deki durumları ise, filizini çıkaran ekin gibidir. Ekin kenarlarda küçük filizlerini çıkardığı zaman, Arapçada bu, ( أَشْطأَ الزَّرْعُ ) sözüyle ifade edilir. ( آزَرَهُ ) lafzı, onu destekleyip güçlendirmiş demektir. ( اسْتَغْلَظَ ) lafzı ise kalınlaşmış ve gövdesi üzerine dikilmiş, demektir. Küçükler, büyüklere destek olmuş ve sonunda beraber gövdeleri üzerine dikilmişlerdir. Bu ekin, Müslümanlar sebebiyle kâfirleri öfkelendirmek için ziraatçıları hoşnut kılmaktadır. Allah, Hz. Peygamber'i (s.a.v.), bir tek demet olarak etrafındaki filizleri çıkarıp güçlenen ekine benzetmiştir. Aynı şekilde Hz. Peygamber de (s.a.v.), dinini etrafındaki Müslümanlarla güçlendirmede yalnız idi.

Bu durumda ayette işaret edilenlerin sahabiler olduğu şeklindeki yoruma göre, onlara buğzeden kimse kâfir olur. Çünkü Allah: ( لِيَغِيظَ بِهِمُ الْكُفَّارَ ) *"Kendileri sebebiyle kâfirleri öfkelendirmek için"* buyurmuştur. Yani Allah, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) sahabileri sebebiyle kâfirleri öfkelendirir. Ayette işaret edilenlerin genel olarak Müslümanlar olduğu şeklindeki yoruma göre ise bunda icma ile ilgili delil vardır. Çünkü Allah, icma sebebiyle kâfirleri öfkelendirdiği için, icmaa karşı çıkan da kâfirdir.

( وَعَدَ اللّٰهُ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ مِنْهُمْ مَغْفِرَةً وَاَجْرًا عَظِيمًا ) *"Allah, içlerinden iman edip salih amel işleyenlere bir bağışlama ve büyük bir mükâfat vaat etmiştir."*

Allah erkek ve kadın müminlere, günahların bağışlanacağını ve cennette büyük bir ecir vaat etmiştir. Bu itibarla "onlardan" tabiri, ya herkesi kapsamaktadır ya da onlardan Allah'ın, ömrünün sonunda iman takdir ettiği kimseleri ifade etmektedir.

سورة الْحُجُرَاتِ

# HUCURÂT SÛRESİ

(Hucurât Sûresi 18 âyettir."Elçiler Yılı" denen 9. hicret yılında inmiştir. Adını 4. âyetteki "hucurât (odalar)"tan almıştır. Fetih Sûresiyle müminlerin zafere ulaştıkları ve güçlü bir toplum oluşturdukları ortaya konulmuş, bu sûre ile de, müminlerin gerek Hz. Peygamber'le ve gerekse birbirleriyle olan ilişkileri ve kimi görgü kuralları, inananların birbiriyle kardeş oluşu, iki İslâm toplumunun çarpışması, gıybet, lakap takma, üstünlüğün takva ile olacağı gibi konular yer almıştır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir Kerim'in adıdır ki, kim O'na yönelip hatalarından arınırsa, kurtuluşunu sağlamakla ona lütufta bulunur. Kim de ibadetleriyle O'na tevessül ederse, vereceği derecelerle ona iyilikte bulunur.

"Bismillah", öyle bir Aziz'in adıdır ki, kim O'na münacatta bulunarak kendisine yaklaşmaya çalışırsa, O da lütuflarını bahşederek ona karşılık verir. Kim de imanıyla sevgisini kazanmaya çalışırsa, O da celalinin ve cemalinin keşfiyle kendisine yönelir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا لَا تُقَدِّمُوا بَيْنَ يَدَيِ اللّٰهِ وَرَسُولِه۪ وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنَّ
اللّٰهَ سَم۪يعٌ عَل۪يمٌ ﴿١﴾

1- "Ey iman edenler! Allah'ın ve Peygamberinin önüne geçmeyin. Allah'a karşı gelmekten sakının. Şüphesiz Allah hakkıyla işitendir, hakkıyla bilendir."

( يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا ) *"Ey iman edenler!"*

Bu ifade, muhatabının şerefli oluşuna dair bir tanıklıktır.

( لَا تُقَدِّمُوا بَيْنَ يَدَيِ ) *"Önüne geçmeyin."*

Bu,yükümlülükleri kabullenmeye dair bir emirdir. Allah, şerefli kılarak ikramda bulunmayı, yükümlülüklerle bağlı tutmanın önüne geçirmiştir. Yani, hükmünüzle Allah'ın ve Peygamberinin önüne geçmeyin. Yani, Allah'ı ve Peygamberini dikkate almadan hiçbir hususu karara bağlamayın. Yani kendiliğinizden bir şey yapmayın.

Bir yoruma göre de durdurulduğunuz yerde durun, size emredileni yapın ve kendi başına hareket edip bidatçilik yapanlar değil, Allah'a ve Peygamberine uyanlar olun.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا لَا تَرْفَعُٓوا اَصْوَاتَكُمْ فَوْقَ صَوْتِ النَّبِيِّ وَلَا تَجْهَرُوا لَهُ بِالْقَوْلِ كَجَهْرِ بَعْضِكُمْ لِبَعْضٍ اَنْ تَحْبَطَ اَعْمَالُكُمْ وَاَنْتُمْ لَا تَشْعُرُونَ ﴿٢﴾

2- "Ey iman edenler! Seslerinizi Peygamberin sesinin üstüne yükseltmeyin. Birbirinize bağırdığınız gibi Peygambere yüksek sesle bağırmayın. Yoksa siz farkına varmadan amelleriniz boşa gider."

Allah, bu ayette onlara Hz. Peygamber'in (s.a.v.) saygınlığını korumalarını, hizmetinde ve arkadaşlığında edebi gözetmelerini ve ona, kendi emsallerine baktıkları gözle bakmamalarını emretmiştir. Bir de şayet Hz. Peygamber (s.a.v.), ahlakıyla onlara karşı yumuşak davranıyorsa, kendileri de bundan cesaret alarak ona karşı fazla açılmamalı ve onlarla ahlakı çerçevesinde münasebet kurmasına karşılık hadlerini aşmamalıdırlar.

Bir yoruma göre de o, sizinle söze başlamadıkça siz onunla konuşmaya başlamayın.

اِنَّ الَّذٖينَ يَغُضُّونَ اَصْوَاتَهُمْ عِنْدَ رَسُولِ اللّٰهِ اُولٰٓئِكَ الَّذٖينَ امْتَحَنَ
اللّٰهُ قُلُوبَهُمْ لِلتَّقْوٰى لَهُمْ مَغْفِرَةٌ وَاَجْرٌ عَظٖيمٌ ﴿٣﴾

3- "Allah'ın elçisinin huzurunda seslerini kısanlar, Allah'ın, gönüllerini takva konusunda sınadığı kimselerdir. Onlar için bir bağışlanma ve büyük bir mükâfat vardır."

Hz. Peygamber'in huzurunda bulunma heybetinden üzerlerine huzur ve güven inenler onlardır. Allah'ın, içinden şehevî arzuların sevgisini söküp atmak suretiyle kalplerini takva konusunda sınadığı kimseler de onlardır. O halde kötü ahlaktan sakının ve edebi gözetin.

Bir yoruma göre de onlar beşer adetlerinden sıyrılan kimselerdir.

اِنَّ الَّذٖينَ يُنَادُونَكَ مِنْ وَرَٓاءِ الْحُجُرَاتِ اَكْثَرُهُمْ لَا يَعْقِلُونَ ﴿٤﴾
وَلَوْ اَنَّهُمْ صَبَرُوا حَتّٰى تَخْرُجَ اِلَيْهِمْ لَكَانَ خَيْرًا لَهُمْ وَاللّٰهُ غَفُورٌ
رَحٖيمٌ ﴿٥﴾

4, 5- "Odaların arkalarından sana bağıranların çoğu, aklı ermeyen kimselerdir. Onlar, sen yanlarına çıkıncaya kadar sabretselerdi, elbette kendileri için daha iyi olurdu. Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Yani eğer senin değerini bilselerdi, sana saygı göstermeyi terk etmez ve heybetine bağlı kalırlardı.

Bir de eğer onlar, sen yanlarına çıkıncaya kadar sabredip acele etmeselerdi ve öğle uykusu vakti çağırmalarıyla seni uyandırmasalardı, onlar için daha hayırlı olurdu.

Onun değerini bilen sahabelerine gelince, hadiste de yer aldığı üzere, onlardan herhangi biri Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kapısını adeta tırnağıyla tıklardı.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوٓا اِنْ جَٓاءَكُمْ فَاسِقٌ بِنَبَاٍ فَتَبَيَّنُوٓا اَنْ تُصٖيبُوا قَوْمًا بِجَهَالَةٍ فَتُصْبِحُوا عَلٰى مَا فَعَلْتُمْ نَادِمٖينَ ﴿٦﴾

6- "Ey iman edenler! Size bir fâsık bir haber getirirse, bilmeyerek bir topluluğa zarar verip yaptığınıza pişman olmamak için o haberin doğruluğunu araştırın."

Bu ayet, doğruluğu ortaya çıkıncaya kadar fâsıkın haberine güvenmemek gerektiğini göstermektedir. Bir de ayette iftiracı, laf taşıyan ve insanları gıybet eden kimsenin sözüne kulak vermemeye işaret vardır.

Ayrıca ayet, adil olduğu zaman tek kişinin rivayetinin geçerli olduğunu ifade etmektedir.

Bu arada fâsık, itaatin dışına çıkan kimse demektir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Fâsık, vakar sınırının dışına çıkan kimsedir.

- Fâsık, haya örtüsünü atan kimsedir.

وَاعْلَمُوٓا اَنَّ فٖيكُمْ رَسُولَ اللّٰهِ لَوْ يُطٖيعُكُمْ فٖي كَثٖيرٍ مِنَ الْاَمْرِ لَعَنِتُّمْ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ حَبَّبَ اِلَيْكُمُ الْاٖيمَانَ وَزَيَّنَهُ فٖي قُلُوبِكُمْ وَكَرَّهَ اِلَيْكُمُ الْكُفْرَ وَالْفُسُوقَ وَالْعِصْيَانَ اُولٰٓئِكَ هُمُ الرَّاشِدُونَ ﴿٧﴾

7- "Bilin ki aranızda Allah'ın elçisi bulunmaktadır. Eğer o, birçok işlerde size uysaydı, sıkıntıya düşerdiniz. Fakat Allah, size imanı sevdirmiş ve onu gönüllerinize güzel göstermiş, inkârı, fâsıklığı ve karşı çıkmayı da size çirkin göstermiştir. İşte bunlar, doğru yolda olanların ta kendileridir."

Yani eğer Allah'ın elçisi Muhammed (s.a.v.), kendisinden istediğiniz şeylerin pek çoğunda size uysaydı, siz sıkıntıya düşerdiniz. Söz konusu sıkıntı ise bozulmadır. Şayet o, durumun vuzuha

kavuşmasından önce birisinin sözünü kabul etseydi, bundan dolayı başınıza bir sıkıntı gelirdi. Kaldı ki Peygamber, siz ve din için maslahat görmediği zaman işlerin çoğunda size uymaz.

( وَلٰكِنَّ اللّٰهَ حَبَّبَ اِلَيْكُمُ الْاِيمَانَ ) *"Fakat Allah, size imanı sevdirmiş."*

Allah İslam'ı, taati ve tevhidi size sevdirmiş ve onları kalplerinize güzel göstermiştir.

( وَكَرَّهَ اِلَيْكُمُ الْكُفْرَ وَالْفُسُوقَ وَالْعِصْيَانَ ) *"İnkârı, fâsıklığı ve karşı çıkmayı da size çirkin göstermiştir."*

Bu, anlatım üslubunu çeşitlendirmenin örneklerindendir.

Aynı zamanda ayette hak ehlinin, kader konusundaki görüşlerinin sıhhatine ve müminlere, kâfirlerin ortak olmadıkları birtakım lütufların tahsis edildiğine dair delil de vardır. Nitekim eğer Allah, taatlerin sebeplerini hazırlamasaydı, ibadetlerde tefrit ve taksirat meydana gelirdi.

فَضْلًا مِنَ اللّٰهِ وَنِعْمَةً وَاللّٰهُ عَلِيمٌ حَكِيمٌ ﴿٨﴾

8- "Allah, kendi katından bir lütuf ve nimet olarak böyle yaptı. Allah, hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Yani Allah, bunu size kendi katından bir lütuf ve rahmet olarak yaptı.

وَاِنْ طَٓائِفَتَانِ مِنَ الْمُؤْمِنِينَ اقْتَتَلُوا فَاَصْلِحُوا بَيْنَهُمَا فَاِنْ بَغَتْ اِحْدٰيهُمَا عَلَى الْاُخْرٰى فَقَاتِلُوا الَّتِي تَبْغِي حَتّٰى تَفِيٓءَ اِلٰٓى اَمْرِ اللّٰهِ فَاِنْ فَٓاءَتْ فَاَصْلِحُوا بَيْنَهُمَا بِالْعَدْلِ وَاَقْسِطُوا اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُقْسِطِينَ ﴿٩﴾

9- "Eğer müminlerden iki grup birbirleriyle savaşırlarsa, aralarını düzeltin. Eğer biri ötekine karşı haddi aşarsa, Allah'ın buyruğuna

dönünceye kadar haddi aşan tarafa karşı savaşın. Eğer dönerse, artık aralarını adaletle düzeltin ve adaletli davranın. Çünkü Allah, adaletli davrananları sever."

Bu ayet, müminin fâsıklığı sebebiyle -ki fâsıklık küfürden aşağıdır- imandan çıkmadığını göstermektedir. Çünkü savaştıkları zaman, adı geçen iki gruptan biri kaçınılmaz olarak fâsıktır.

Birde ayet: (فَاِنْ بَغَتْ اِحْدٰيهُمَا عَلَى الْاُخْرٰى فَقَاتِلُوا الَّت۪ي تَبْغ۪ي حَتّٰى تَف۪ٓيءَ اِلٰٓى اَمْرِ اللّٰهِ) "*Eğer biri ötekine karşı haddi aşarsa, Allah'ın buyruğuna dönünceye kadar haddi aşan tarafa karşı savaşın*" ifadesiyle mazluma yardım etmenin vacip olduğunu ifade etmektedir.

Ayetteki işaret ise şöyledir:

Nefis, kendisini şehevi arzularına çağırmak ve bozgunculuğuyla meşgul olmakla kalbe zulmettiği zaman kalbin, onu mücadelenin kılıçlarıyla yaralayıp yeninceye kadar kendisiyle savaşması gerekir. Şayet nefis, boyun eğmeyi kabul ederse, bu takdirde bağışlanır. Çünkü Allah'ın kapısına taşıyan binek odur.

اِنَّمَا الْمُؤْمِنُونَ اِخْوَةٌ فَاَصْلِحُوا بَيْنَ اَخَوَيْكُمْ وَاتَّقُوا اللّٰهَ لَعَلَّكُمْ تُرْحَمُونَ ﴿١٠﴾

10- "Müminler, ancak kardeştirler: Öyleyse kardeşlerinizin arasını düzeltin. Allah'a karşı gelmekten sakının ki size merhamet edilsin."

İki hasım arasında barışı gerçekleştirmek, dinin en güçlü azimetlerindendir -bağlayıcı prensiplerindendir-. Bu vacip olduğuna göre, şüphesiz laf taşıyan, arayı bozmaya çalışan ve arayı bozmaya kaynaklık eden kimsenin günahının büyüklüğünü de gösterir.

Bir yoruma göre arayı düzeltmek, ancak kalbin Allah ile olan münasebetini düzeltmekle gerçekleşir. Çünkü Allah, kulun arayı düzeltmek konusundaki samimi gayretini bildiği zaman o serkeşliğin vebalini üzerinden kaldırır.

Kardeşliğin şartına gelince, din kardeşliğinin bir hakkı da kardeşini senden yardım istemeye muhtaç kılmaman ve hallerini araştırmada, ihtiyacının ne olduğunu bilmeyecek ve dolayısıyla senden dilenmeye muhtaç olacak ölçüde kusur işlememendir.

Din kardeşinin bir hakkı da onu senden özür dilemeye mecbur etmemen, aksine mazeretini kolayca anlamandır. Şayet mazeretini anlamada güçlük çekersen, özrünün sana gizli kalması konusunda dönüp kendi nefsine sitem edersin.

Bir hakkı da günah işlediği zaman onun adına tövbe etmen ve hastalandığı zaman kendisini ziyaret etmendir. Sana bir şey önerdiği zaman da onu, delil ve gerekçe ortaya koymakla yükümlü kılma.

Tıpkı şu beyitte söylendiği gibi:

*Yardım istendiği zaman kendilerinden, sormazlar yardıma çağırana*
*Hangi savaş için veya hangi yer için diye*

Onun diğer bir hakkı da eski emektarlığını koruman ve huzurunda, gıyabında, sağlığı ve ölümü halinde, kendisine bağlı aile fertleri konusunda hakkını gözetmendir.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Bir dost ki, şayet insaflı değilse sen insaflı olursun*
*Yutarsın onun için en acı iki şeyi, bir de nazik ol!*
*Eğer sana: Kalk derse, tekellüfle değil, rızayla bunu iş edinirsin*

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا لَا يَسْخَرْ قَوْمٌ مِنْ قَوْمٍ عَسٰٓى اَنْ يَكُونُوا خَيْرًا
مِنْهُمْ وَلَا نِسَٓاءٌ مِنْ نِسَٓاءٍ عَسٰٓى اَنْ يَكُنَّ خَيْرًا مِنْهُنَّۚ وَلَا تَلْمِزُٓوا
اَنْفُسَكُمْ وَلَا تَنَابَزُوا بِالْاَلْقَابِۜ بِئْسَ الِاسْمُ الْفُسُوقُ بَعْدَ الْا۪يمَانِۚ
وَمَنْ لَمْ يَتُبْ فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الظَّالِمُونَ ﴿١١﴾

11- "Ey iman edenler! Bir topluluk bir diğerini alaya almasın. Belki onlar, kendilerinden daha iyidirler. Kadınlar da diğer kadınları

alaya almasın. Belki onlar, kendilerinden daha iyidirler. Birbirinizi karalamayın, birbirinizi kötü lakaplarla çağırmayın. İmandan sonra fâsıklık ne kötü bir namdır! Kim de tövbe etmezse, işte onlar zalimlerin ta kendileridir."

Allah (c.c.), insanlarla alayetmeyi, gıybeti, hakları küçümsemeyi ve saygısızlığı yasaklamıştır.

( وَلَا تَلْمِزُوٓا اَنْفُسَكُمْ ) *"Birbirinizi karalamayın."*

Yani birbirinizi ayıplamayın. Bu ayetteki ifade, tıpkı:

( وَلَا تَقْتُلُوٓا اَنْفُسَكُمْ ) *"Birbirinizi öldürmeyin"* (Nisâ, 4/29) ayetindeki ifade gibidir.

Bir rivayete göre de bir kimse diğerini küçümserse küçümsenen, küçümseyene mutlaka musallat kılınır. Bir de insanların zahir hallerine itibar edilmemesi gerekir. Çünkü hazineler harabelerde bulunur. Allah da velilerini hiçlik perdesi altında saklar. Nitekim hadiste şöyle buyrulmuştur:

*"Üstü başı dağınık, toz içinde ve önemsenmeyen nice kimse vardır ki eğer Allah adına yemin etse, Allah onun yeminini yerine getirir."*

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا اجْتَنِبُوا كَث۪يرًا مِنَ الظَّنِّۘ اِنَّ بَعْضَ الظَّنِّ اِثْمٌ وَلَا تَجَسَّسُوا وَلَا يَغْتَبْ بَعْضُكُمْ بَعْضًاۜ اَيُحِبُّ اَحَدُكُمْ اَنْ يَأْكُلَ لَحْمَ اَخ۪يهِ مَيْتًا فَكَرِهْتُمُوهُۜ وَاتَّقُوا اللّٰهَۜ اِنَّ اللّٰهَ تَوَّابٌ رَح۪يمٌ ﴿١٢﴾

12- "Ey iman edenler! Zannın birçoğundan sakının. Çünkü zannın bir kısmı günahtır. Birbirinizin kusurlarını ve mahremiyetlerini araştırmayın. Birbirinizi gıybet etmeyin. Herhangi biriniz, ölü kardeşinin etini yemekten hoşlanır mı? İşte bundan tiksindiniz. Allah'a karşı gelmekten sakının. Şüphesiz Allah, tövbeyi çok kabul edendir."

Nefis doğru söylemez, kalp de yalan söylemez. Nefis ile kalbi birbirinden ayırt etmek ise zordur. Az da olsa üzerinde nefsin

arzularından bir şeyler kalan kimsenin, kalbin beyanını iddia etmeye hakkı yoktur. Aksine üzerinde nefsinden bir şey kaldığı sürece o, nefsiyle baş başadır ve başkasında gördüğü her kusur için kendi nefsini suçlaması gerekir. İşte müminlerin emîri Hz. Ömer, hutbe okurken şöyle der:

*"İnsanların tamamı Ömer'den daha bilgilidir... Bir kadın, Ömer'den daha bilgilidir."*

( وَلَا تَجَسَّسُوا ) *"Birbirinizin kusurlarını ve mahremiyetlerini araştırmayın."*

Arif, hakkı görmekten halkı görmeye zaman bulamaz. Hal böyleyken nasıl olur da o, insanların halleri hakkında tecessüs etmeye zaman bulabilir? Bir de o, nefsine zaman ayıramazken, başkasına nasıl zaman ayırır.

( وَلَا يَغْتَبْ بَعْضُكُمْ بَعْضًا ) *"Birbirinizi gıybet etmeyin."*

Halkı gıybet etmek, ancak ve ancak haktan kopuştan meydana gelir.

( اَيُحِبُّ اَحَدُكُمْ اَنْ يَاْكُلَ لَحْمَ اَخِيهِ مَيْتًا ) *"Herhangi biriniz, ölü kardeşinin etini yemekten hoşlanır mı?"*

Tefsirde, bundan maksadın gıybet olduğu yer almıştır. Nitekim ayetin zahiri de bunu ifade etmektedir. Kâfirlerin en kalitesizi ve en az değerlisi, leş yiyendir. Ne var ki yanında kimseyi gıybet etmeyeni görmen de nadirdir.

يَٓا اَيُّهَا النَّاسُ اِنَّا خَلَقْنَاكُمْ مِنْ ذَكَرٍ وَاُنْثٰى وَجَعَلْنَاكُمْ شُعُوبًا
وَقَبَٓائِلَ لِتَعَارَفُوا اِنَّ اَكْرَمَكُمْ عِنْدَ اللّٰهِ اَتْقٰيكُمْ اِنَّ اللّٰهَ عَلٖيمٌ خَبٖيرٌ ﴿١٣﴾

13- "Ey insanlar! Şüphe yok ki biz sizi bir erkek ve bir dişiden yarattık ve birbirinizi tanımanız için sizi boylara ve kabilelere ayırdık. Allah katında en değerli olanınız, O'na karşı gelmekten en çok sakınanınızdır. Şüphesiz Allah, hakkıyla bilendir, hakkıyla haberdar olandır."

Biz, hepinizi Âdem ile Havva'dan yarattık. Sonra da sizi çoğalıp birbirinizle rekabet edesiniz diye değil, tanışasınız diye halklara ve kabilelere ayırdık. Nitekim kökler toprak, meni damlası ve kan pıhtısı olduğuna göre karşılıklı övünme neyle olur? Şekil verilmiş kara balçıkla mı? Yoksa sağlam bir yerdeki meni damlasıyla mı? Yoksa bildiğin zahirinin barındırdığı özelliklerle mi?

Şiir:

*Kuşkusuz bizi gösterir eserlerimiz*
*Bakın öyleyse bizden sonra eserlere*

Yoksa riyayla karışık fiillerinle mi? Ya da kendini beğenmişlikle beraber olan hallerinle mi? Veya hıyanetle dolu muamelelerinle mi?

( اِنَّ اَكْرَمَكُمْ عِنْدَ اللّٰهِ اَتْقٰيكُمْ ) *"Allah katında en değerli olanınız, O'na karşı gelmekten en çok sakınanınızdır."*

Yani kendi nefsinden en çok uzak olanınızdır. Bu itibarla takva nefisten, onun tamahkârlıklarından ve arzularından kurtulmaktır. O halde kulların Allah katında en değerli olanı, nefsine en uzak, Allah'a (c.c.) ise en yakın olan kimsedir.

قَالَتِ الْاَعْرَابُ اٰمَنَّاۜ قُلْ لَمْ تُؤْمِنُوا وَلٰكِنْ قُولُٓوا اَسْلَمْنَا وَلَمَّا يَدْخُلِ الْاِيمَانُ فٖي قُلُوبِكُمْۜ وَاِنْ تُطٖيعُوا اللّٰهَ وَرَسُولَهُ لَا يَلِتْكُمْ مِنْ اَعْمَالِكُمْ شَيْـًٔاۜ اِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَحٖيمٌ ﴿١٤﴾

14- "Bedeviler: 'İman ettik' dediler. De ki: 'İman etmediniz. Fakat 'boyun eğdik' deyin. Henüz iman kalplerine girmedi. Eğer Allah'a ve Peygamberine itaat ederseniz, yaptıklarınızdan hiçbir şeyi eksiltmez. Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir.'"

İman, kalbin hayatıdır. Kalp de ancak nefsi boğazladıktan sonra yaşar. Nefis ise ölmez, fakat kaybolur. Onun ortada olması halinde iyilik gerçekleşmez. Bir de zahirde teslim olmak, Müslüman olmak

demektir. Ancak zahirde teslim olan herkes, sırrı bakımından içten değildir:

( وَلَمَّا يَدْخُلِ الْاِيمَانُ فِي قُلُوبِكُمْ ) "Henüz iman kalplerine girmedi."

Bu ifadede, imanın yerinin kalp olduğuna dair delil vardır. Nitekim Allah münafıkları anlatırken de: "Kalplerinde hastalık vardır" buyurmuştur. Kalbin hastalığı ile iman ise birbirine zıt iki husustur.

اِنَّمَا الْمُؤْمِنُونَ الَّذِينَ اٰمَنُوا بِاللّٰهِ وَرَسُولِهِ ثُمَّ لَمْ يَرْتَابُوا وَجَاهَدُوا بِاَمْوَالِهِمْ وَاَنْفُسِهِمْ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ اُولٰٓئِكَ هُمُ الصَّادِقُونَ ﴿١٥﴾

15- "İman edenler ancak Allah'a ve Peygambere inanan, sonra şüpheye düşmeyen, Allah yolunda mallarıyla ve canlarıyla cihad edenlerdir. İşte onlar, doğru kimselerin ta kendileridir."

Allah, imanı anlattığı bazı özelliklerin bulunması şartına bağlamış ve bunları "ancak" lafzıyla vurgulamıştır. Bu lafız ise aksinin geçersizliğini gerektiren kesinliği ifade eder. Bu itibarla kim Allah'ın iman için gerekli kıldığı bu şartların dışına çıkarsa, söylediği reddedilir.

Bir de iman, kul için güven sağlar. Bu nedenle iman, güven sağlamadığı sürece onun sahibi güvenden başka bir duruma daha layık olur.

قُلْ اَتُعَلِّمُونَ اللّٰهَ بِدِينِكُمْ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ﴿١٦﴾

16- "De ki: 'Siz Allah'a dininizi mi öğretiyorsunuz? Oysa Allah, göklerdeki ve yerdeki her şeyi bilir. Allah, her şeyi hakkıyla bilendir.'"

Bu ayet, dini meselelerde akıl yürütmemenin vacip kabul edildiğini ifade etmektedir. Bu çerçevede isimler Allah'tan öğrenilir, hükümler O'ndan talep edilir ve O'nun emirlerine uyulur.

يَمُنُّونَ عَلَيْكَ اَنْ اَسْلَمُوا قُلْ لَا تَمُنُّوا عَلَيَّ اِسْلَامَكُمْ بَلِ اللّٰهُ
يَمُنُّ عَلَيْكُمْ اَنْ هَدٰيكُمْ لِلْاِيمَانِ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿١٧﴾

17- "Müslüman olmalarını bir lütufmuş gibi sana hatırlatıyorlar. De ki: 'Müslüman olmanızı bana bir lütuf gibi hatırlatıp durmayın. Tam tersine eğer doğru kimselerseniz, sizi imana erdirmesinden dolayı, Allah size lütufta bulunmuş oluyor.'"

Kim kendi amellerine ve hallerine baktığında onları kendinden bilirse, bu şirk olur. Yok eğer onları kendisi için bir tuzak olarak görürse o zaman da kul, şirk veya tuzak olan bir şeyi minnet vesilesi kılar?

Bir de minneti kabul etmek zorunda olan kimse, başkasına minnette bulunma hakkını kendinde nasıl görür? Hayatıma yemin ederim ki bu skandaldır. Doğrusu minnet Allah'a mahsus olup nimetin sahibi de kendisidir. Bir de nimet ancak kul, hallerinde sadık olduğu zaman, nimet olur. Kul, vasıflarından birinde malul olduğu zaman ise bu, sahibi için nimet değil, meşakkat olur.

Öte yandan minnet, mahlûklardan olduğu zaman yapılan iyiliği bulandırır. Oysa Allah tarafından olduğu zaman nimet de ancak minnet ile güzelleşir.

اِنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ غَيْبَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَاللّٰهُ بَصِيرٌ بِمَا تَعْمَلُونَ ﴿١٨﴾

18- "Şüphesiz Allah, göklerin ve yerin gaybını bilir. Allah, yaptıklarınızı hakkıyla görendir."

Bu noktada bırakılan kimsenin hayatı sıkıntılı hale gelir. Çünkü o, burada kendisiyle ilgili gaybın ne olduğunu bilmez.

Şu dizeler de bu anlamdadır:

*Ağlıyorum ben, bilir misin nedir beni ağlatan?*
*Ağlıyorum, beni bırakacağından korktuğum için*
*Ve bağımı koparıp beni terk edeceğinden*

سورة قٓ

# KÂF SÛRESİ

(Kâf Sûresi 45 âyettir. Mekke'de inmiştir. 38. âyet Medine'de inmiştir. Adını başındaki "kaf" harfinden almıştır. Hz. Peygamber'in bu sûreyi sabah namazında, kimi zaman sabah namazının ilk rekâtında okuduğu ve bayram namazında ise, "İkterabeti's-sâah." sûresi ile birlikte okuduğu rivâyet edilmiştir (bk. Müslim, Salât, 165, 169, Îydeyn, 14, 15; Ebu Dâvud, Salât, 246). Allah Resûlü'nün her Cuma minberde hitap ettiği zaman bu sûreyi okuduğu nakledilmiştir (Müslim, Cum'a, 50, 52; Nesaî, İftitah, 43). Bu sûrede; ölümden sonra dirilme olayı anlatılır. Müşriklerin bunu inkârları ve karşı deliller yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", merhamet ettiği kimsenin durumunu düzelten, yüceliğiyle uzaklaştırıp kahrettiği ve mahrum kıldığı kimseye karşı üstün güç sahibi olan bir isimdir.

"Bismillah", abidlerin tasannuunun gizliliklerini bilen lütuf sahibi ve günahkârların büyük günahlarını bağışlayandır.

قٓ وَالْقُرْاٰنِ الْمَج۪يدِ ﴿١﴾

1- "Kâf. Şerefli Kur'ân'a andolsun."

Kâf harfi, Allah'ın "Kavî (güç sahibi)", "Kâdir (kudret sahibi)", "Kadîr (kudret sahibi)" ve "Karîb (yakın)" isimlerinin anahtarıdır.

Allah, bu isimlere ve şerefli Kur'ân'a yemin etmiştir. Kasemin cevabı ise mahzuf olup anlamı: "Muhakkak siz, kıyamet günü diriltilip haşre gönderileceksiniz" şeklindedir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Kasemin cevabı: "Şüphesiz biz, toprağın onlardan neler eksilttiğini bilmekteyiz. Yanımızda o bilgileri koruyan bir kitap vardır" sözüdür. Yani andolsun biz bilmekteyiz. Bu arada söz uzadığı için, kasemin cevabındaki "lâm" hazfedilmiştir.

- Kasemin cevabı: "Benim katımda söz değiştirilmez" sözüdür.

بَلْ عَجِبُوٓا اَنْ جَٓاءَهُمْ مُنْذِرٌ مِنْهُمْ فَقَالَ الْكَافِرُونَ هٰذَا شَيْءٌ عَجِيبٌ ﴿٢﴾

2- "Kâfirler, aralarından bir uyarıcının gelmesine şaştılar ve şöyle dediler: 'Bu, tuhaf bir şeydir.'"

( مُنْذِرٌ مِنْهُمْ ) *"Aralarından bir uyarıcı."*

Bu uyarıcı, Hz. Muhammed'dir (s.a.v.).

Şaşkınlık ise hakkında daha önce bilgi bulunmayan olağan dışı bir durumu, nefsin akla uzak görmesinin bir tür ifadesidir.

Bu arada onların öldükten sonra dirilmeyi inkâr etmelerine ve bunu akla uzak bulmalarına dair açıklama daha önce geçti.

ءَاِذَا مِتْنَا وَكُنَّا تُرَابًا ذٰلِكَ رَجْعٌ بَعِيدٌ ﴿٣﴾

3- "Öldüğümüz ve toprak olduğumuz zaman mı dirilecekmişiz? Bu, akla uzak bir dönüştür."

Yani bize göre öldükten sonra dirilmemiz akla uzak bir durumdur. Bunun üzerine Allah şöyle buyurdu:

قَدْ عَلِمْنَا مَا تَنْقُصُ الْاَرْضُ مِنْهُمْ وَعِنْدَنَا كِتَابٌ حَفِيظٌ ﴿٤﴾

4- "Şüphesiz biz, toprağın onlardan neleri eksilttiğini bilmekteyiz. Yanımızda o bilgileri koruyan bir kitap vardır."

Bunda kul için teselli vardır. Çünkü o, toprağa gömülüp arkadaşları yanından ayrıldıkları ve vefatı sebebiyle dostları muzdarip oldukları zaman, kendisi kabrinin kenarında iken kim onu arar ve kim ona kefil olur? Onlarda da kendisinden bir anıdan başka bir şey bulunmaz. Ayrıca onlardan hiçbiri, zavallının, çukurunda neler çektiğini de bilmez. İşte bu nedenle Allah:

[ قَدْ عَلِمْنَا مَا تَنْقُصُ الْاَرْضُ ] *"Şüphesiz biz, toprağın onlardan neleri eksilttiğini bilmekteyiz"* buyurmaktadır. Muhtemelen Allah meleklere şunu bildirmektedir: "Dünyadan çıkardığım kulum ile onu arzulayanlar arasında ne kaldı? Şunlar dağılan parçaları, şunlar çürüyen kemikleri, şunlar da parça parça olan organlarıdır."

[ مِنْهُمْ وَعِنْدَنَا كِتَابٌ حَفِيظٌ ] *"Yanımızda o bilgileri koruyan bir kitap vardır."*

Bu kitap, Levh-i Mahfuz'dur. Biz, unutmaksızın halkın durumlarının ayrıntısını orada kaydettik ve kulun hatırlamaya ihtiyaç duyduğu her şeyi onda açıkladık.

بَلْ كَذَّبُوا بِالْحَقِّ لَمَّا جَٓاءَهُمْ فَهُمْ فٖي اَمْرٍ مَرٖيجٍ ﴿٥﴾

5- "Hatta gerçek kendilerine gelince onu yalanladılar. Artık onlar, kararsız bir haldedirler."

Yani onlar karışık bir durumdadırlar. Şöyle ki onlar şaşkınlıklarının karanlıklarında gidip gelmekte ve şüphelerinde kararsızlık yaşamaktadırlar.

اَفَلَمْ يَنْظُرُٓوا اِلَى السَّمَٓاءِ فَوْقَهُمْ كَيْفَ بَنَيْنَاهَا وَزَيَّنَّاهَا وَمَا لَهَا مِنْ فُرُوجٍ ﴿٦﴾

6- "Üstlerindeki göğe bakmazlar mı? Onu nasıl bina ettik, nasıl donattık! Onda hiçbir düzensizlik ve eksiklik yoktur."

Onlar ibret almadılar mı? Üzerlerinde yükselttiğimiz göğü delil olarak kullanmazlar mı? Biz, onu yükseltip düzene koyduk. Onda yıldızlar yerleştirip bu yıldızlarla onu süsledik. Onda güneşini ve ayını döndürdük. Kendisini yerli yerine oturttuğumuzu ve ondaki eseri çeşitlendirdiğimizi görmediler mi?

وَالْاَرْضَ مَدَدْنَاهَا وَاَلْقَيْنَا فِيهَا رَوَاسِيَ وَاَنْبَتْنَا فِيهَا مِنْ كُلِّ زَوْجٍ بَهِيجٍ ﴿٧﴾

7- "Yeryüzünü de yaydık ve orada sabit dağlar yerleştirdik. Orada her türden iç açıcı çift bitkiler bitirdik."

Yeryüzünü yaydık ve böylece onu kendileri için bir beşik yaptık. Dağları da yeryüzü için kazıklar kıldık. Bir de yeryüzünde ağaçlar ve çiçekler bitirdik.

تَبْصِرَةً وَذِكْرٰى لِكُلِّ عَبْدٍ مُنِيبٍ ﴿٨﴾

8- "Bütün bunlar, içtenlikle Allah'a yönelen her kulun gönül gözünü açmak ve ona öğüt ve ibret vermek içindir."

Bütün bunlar, bize yönelen ve fiillerimizi görmekten sıfatlarımızı görmeye, sıfatlarımızı görmekten de hakkımızı ve zâtımızı görmeye dönen herkese alamet ve delil olması içindir.

وَنَزَّلْنَا مِنَ السَّمَٓاءِ مَٓاءً مُبَارَكًا فَاَنْبَتْنَا بِهِ جَنَّاتٍ وَحَبَّ الْحَص۪يدِ ﴿٩﴾

9- "Gökten de bereketli bir su indirip onunla bahçeler ve biçilecek taneler bitirdik."

Gökten bereketli, çok faydalı ve artan bir su indirip onunla bahçeler ve biçilecek taneler bitirdik. Ayetteki "biçilenin taneleri" anlamındaki ( حَبُّ الحَصِيدِ ) tabirinden maksat biçilecek tanelerdir. Tıpkı "cemaati içinde toplayan mescit" anlamına gelen ( مَسْجِدُ الْجامِعِ ) tabirinde olduğu gibi.

Parçalar mütecanistir lakin tatlar, kokular, renkler, biçimler ve miktarlar ile ilgili nitelikleri değişiktir:

وَالنَّخْلَ بَاسِقَاتٍ لَهَا طَلْعٌ نَضِيدٌ ﴿١٠﴾ رِزْقًا لِلْعِبَادِ وَاَحْيَيْنَا بِهِ بَلْدَةً
مَيْتًا كَذٰلِكَ الْخُرُوجُ ﴿١١﴾

10, 11- "Kullar için rızık olsun diye birbirine girmiş, kat kat tomurcukları olan yüksek hurma ağaçları yetiştirdik ve o suyla ölü bir beldeye hayat verdik. İşte kabirlerden çıkış da böyledir."

Hurma ağaçları uzun boyludur, onların tomurcukların çokluğundan veya içlerindeki meyvelerden dolayı üst üste duran tomurcukları vardır. Biz nasıl da elma ve armut gibi bazı meyveleri birbirinden ayrı, üzüm ve hurma gibi bazılarını da toplu kılmışız! Bütün bunları da kendilerinden faydalanmaları için kullara rızık haline getirmişiz.

( وَاَحْيَيْنَا بِهِ بَلْدَةً مَيْتًا كَذٰلِكَ الْخُرُوجُ ) *"O suyla ölü bir beldeye hayat verdik. İşte kabirlerden çıkış da böyledir."*

Nasıl ki biz, bu suyu bitkileri kuruyan bir beldeye sevk ettiysek ve nasıl ki biz bütün bu şeyleri yaptıysak -ki buna gücümüz yeter- aynı şekilde sizi de haşirde ve neşirde bir araya getiririz. Bu itibarla, sizin diriltilmeniz akla bundan daha uzak değildir.

كَذَّبَتْ قَبْلَهُمْ قَوْمُ نُوحٍ وَاَصْحَابُ الرَّسِّ وَثَمُودُ ﴿١٢﴾ وَعَادٌ وَفِرْعَوْنُ
وَاِخْوَانُ لُوطٍ ﴿١٣﴾ وَاَصْحَابُ الْاَيْكَةِ وَقَوْمُ تُبَّعٍ كُلٌّ كَذَّبَ الرُّسُلَ
فَحَقَّ وَعِيدِ ﴿١٤﴾

12, 13, 14- "Onlardan önce Nûh kavmi, Ress halkı ve Semûd kavmi, Âd ve Firavun, Lût'un kardeşleri, Eykeliler, Tübba'ın kavmi de yalanlamıştı. Bütün bunlar, peygamberleri yalanladılar. Böylece kendilerini uyardığım şey gerçekleşti."

Biz, adı geçen bu kimselere karşı acze düşmedik. Bu ifadede onlar için tehdit, Hz. Peygamber (s.a.v.) içinse teselli vardır.

اَفَعَيِينَا بِالْخَلْقِ الْاَوَّلِ بَلْ هُمْ في لَبْسٍ مِنْ خَلْقٍ جَديدٍ ﴿١٥﴾

15- "İlk yaratmada acizlik mi gösterdik? Doğrusu onlar, yeniden yaratılış konusunda şüphe içindedirler."

Yani biz ilk yaratılıştan aciz kalmadık. O halde, tekrardan ibaret olan ikinci yaratılıştan nasıl aciz kalırız?! Hiçbir şeyin yapılması bizim için zor olmamış ve hiçbir şeyden yorulmamışızdır. Öyleyse diriltme işi nasıl bize zor gelir? Yani öyle değildir.

وَلَقَدْ خَلَقْنَا الْاِنْسَانَ وَنَعْلَمُ مَا تُوَسْوِسُ بِهٖ نَفْسُهُ وَنَحْنُ اَقْرَبُ اِلَيْهِ مِنْ حَبْلِ الْوَر۪يدِ ﴿١٦﴾

16- "Andolsun, insanı biz yarattık ve nefsinin ona verdiği vesveseyi de biz biliriz. Aynı zamanda biz, ona şah damarından daha yakınız."

Biz, nefsinin kendisine verdiği ve yerine getirilmesini istediği halka karşı tasannu, kötü ahlak ve kin gibi arzular şeklindeki vesveselerini ve kalpte ve vakitte karışıklık meydana getiren diğer afetlerini biliriz.

( وَنَحْنُ اَقْرَبُ اِلَيْهِ مِنْ حَبْلِ الْوَر۪يدِ ) *"Aynı zamanda biz, ona şah damarından daha yakınız."*

Şah damarı insanın, nefsine en yakın parçasıdır. Bu yakınlıktan maksat, Allah'ın ilmi, kudreti, onların dediklerini işittiği ve durumlarından hiçbir şeyin kendisine belirsiz kalmadığıdır. Bir de bu ayette bir topluluk için heybet, panik ve korku; diğer bir topluluk için de huzur, sükûn ve kalp ünsiyeti vardır.

اِذْ يَتَلَقَّى الْمُتَلَقِّيَانِ عَنِ الْيَم۪ينِ وَعَنِ الشِّمَالِ قَع۪يدٌ ﴿١٧﴾

17- "Üstelik biri insanın sağ tarafında, biri sol tarafında oturmuş iki alıcı melek de onun yaptıklarını alıp kaydetmektedir."

Allah onları, meleklerin kendilerini görmesi, amellerini yazan meleklerin hazır bulunması ve amellerini onların üzerine yazmasıyla korkutmuştur. Bu itibarla amelleri yazan iki melek, herkesle beraber oturur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kul oturduğu zaman o iki melekten biri sağ tarafından iyiliklerini, diğeri de sol tarafında günahlarını yazar. Kul ayağa kalktığı zaman biri başının, diğeri de ayaklarının yanında, yürüdüğü zaman ise biri önünde, diğeri de arkasında olur.

- Her bir insan için geceleyin iki, gündüz vakti de iki melek bulunur.

- Doğrusu bugün iyilikleri yazan melek, yarın başka biriyle değişir. Kötülüğü ve günahı dün yazan melek, taatini görmek için yarın da taati yazar.

- Aslında günahları yazan iki melektir. Senin günahlarının sadece az bir kısmı bilinsin ve günahlara dair bilgi aralarında dağılsın diye, onlar her gün farklı iki kişi ve her gece farklı iki kişi olur.

مَا يَلْفِظُ مِنْ قَوْلٍ اِلَّا لَدَيْهِ رَق۪يبٌ عَت۪يدٌ ﴿١٨﴾

18- "İnsan hiçbir söz söylemez ki onun yanında yaptıklarını gözetleyen ve kaydeden hazır bir melek bulunsun."

وَجَٓاءَتْ سَكْرَةُ الْمَوْتِ بِالْحَقِّ ذٰلِكَ مَا كُنْتَ مِنْهُ تَح۪يدُ ﴿١٩﴾

19- "Ölüm sarhoşluğu bir hakikat olarak insana gelir de ona: 'İşte bu, senin öteden beri kaçıp durduğun şeydir' denir."

Can, dünyadan çıkmak üzere olduğu zaman insanların halleri değişik olur. Bu çerçevede kimisinin o zaman korkusu artar ve kendi halini ancak canı çıktıktan sonra anlar. Kimisinin de canı çıkmadan önce durumu kendisine gösterilir ve korkusu yatışır, aklı korunur, huzuru ve bilinci tam olur. Böylece o, zorlanmadan ve suratı

asılmadan ruhunu sakince teslim eder. Kimilerinin de durumları başka başka olur.

Bu anlamda şöyle denilmiştir:

*Kalbim aşkla doluyken ölürsem eğer*
*Zaten aşk hastalığıyla ölür onurlu kimseler*

وَنُفِخَ فِي الصُّورِ ذٰلِكَ يَوْمُ الْوَعِيدِ ﴿٢٠﴾ وَجَٓاءَتْ كُلُّ نَفْسٍ مَعَهَا سَٓائِقٌ وَشَهِيدٌ ﴿٢١﴾

20, 21- "Sûr'a üfürülecek. İşte bu, uyarının gerçekleşeceği gündür. Herkes beraberinde bir sevk edici, bir de şahitlik edici melek ile gelir."

Bir sevk edici, onu ya cennete ya da cehenneme sevk eder. Bir şahit de yaptığı iyilik ve kötülük hakkında şahitlik eder.

لَقَدْ كُنْتَ فِي غَفْلَةٍ مِنْ هٰذَا فَكَشَفْنَا عَنْكَ غِطَٓاءَكَ فَبَصَرُكَ الْيَوْمَ حَدِيدٌ ﴿٢٢﴾

22- "Andolsun ki sen bundan gaflette idin. Şimdi gaflet perdeni kaldırdık. Bugün artık gözün keskindir."

Bugün müminlerin gözü keskindir, doğru yolda olduklarını görürler ve kötülüklerinden sakınırlar. Yarın kâfire de: ( فَبَصَرُكَ الْيَوْمَ حَدِيدٌ ) "*Bugün artık gözün keskindir*" denir. Yani işte sen, içinde bulunduğun yalanlama halini öğrendin. Bu nedenle bugün senden hiçbir konuşma dinlenmez ve üzerinden azap kaldırılmaz.

وَقَالَ قَرِينُهُ هٰذَا مَا لَدَيَّ عَتِيدٌ ﴿٢٣﴾

23- "Beraberindeki melek şöyle der: 'İşte bu yanımdaki hazır.'"

Onların hallerinden gizli olan ne varsa hepsi anlatılır. Eğer iyilik ise ondan dolayı mükâfatlandırılırlar. Şayet iyiliğin dışında bir şeyse

ondan dolayı hesaba çekilerek ya Allah'ın rahmetiyle bağışlanır ve kurtulurlar ya da suçları miktarınca cezalandırılırlar.

أَلْقِيَا فِي جَهَنَّمَ كُلَّ كَفَّارٍ عَنِيدٍ ﴿٢٤﴾ مَنَّاعٍ لِلْخَيْرِ مُعْتَدٍ مُرِيبٍ ﴿٢٥﴾

24, 25- "Atın cehenneme inatçı, hayrı hep engelleyen, haddi aşan şüpheci her kâfiri!"

Farz kılınan zekâtı engelleyen.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- O, suyunun ve otunun fazlalığını Müslümanlardan engeller.

- O, insanları iyilik ve güzellikten alıkoyar ve insanları onlardan uzak tutmak için bu iki husus hakkında kötü konuşur.

- İyiliği engelleyen kimse, kötülüğün yardımcısıdır.

- O, hakkında: "Hayra engel olurlar" denilen kimsedir.

(مُرِيبٍ) *"Şüpheci."*

Yani o, samimi olmadığı için insanları kendi durumu hakkında şüpheye düşürür, münafık olduğu için de durumu hakkında insanların kafasını karıştırır.

الَّذِي جَعَلَ مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ فَاَلْقِيَاهُ فِي الْعَذَابِ الشَّدِيدِ ﴿٢٦﴾

26- "Allah ile beraber başka bir ilâh edinen o kimseyi atın şiddetli azabın içine!"

قَالَ قَرِينُهُ رَبَّنَا مَا اَطْغَيْتُهُ وَلٰكِنْ كَانَ فِي ضَلَالٍ بَعِيدٍ ﴿٢٧﴾

27- "Arkadaşı der ki: 'Ey Rabbimiz! Onu ben azdırmadım, fakat kendisi derin bir sapıklık içinde idi.'"

Amelleri yazan meleklerden, onunla görevli olan melek: "Ben, hatasını yazmada acele etmedim. Ben ancak o, hatayı işledikten sonra yazdım" der. Bu, o kâfirin: "Ben bunu yapmadım. Melek bunu

hakkımda yazmada acele etti" demesi esnasında gerçekleşir. Kâfirin bu sözü üzerine melek: "Ey Rabbimiz! Ben onun hakkında acele etmedim" der.

Bir yoruma göre de kâfirle bu tartışmaya giren, ona arkadaş kılınmış olan şeytandır. İkisi, cehennemde karşılaştıklarında şeytan şöyle der: "Ben, onu küfrüne zorlamadım lakin o, kendisine verdiğim vesveseyi kendi tercihiyle yaptı."

قَالَ لَا تَخْتَصِمُوا لَدَيَّ وَقَدْ قَدَّمْتُ اِلَيْكُمْ بِالْوَعِيدِ ﴿٢٨﴾ مَا يُبَدَّلُ الْقَوْلُ لَدَيَّ وَمَٓا اَنَا بِظَلَّامٍ لِلْعَبِيدِ ﴿٢٩﴾

28, 29- "Allah şöyle der: 'Benim huzurumda çekişmeyin. Çünkü ben, bu uyarıyı size önceden yaptım. Benim katımda söz değiştirilmez ve ben, kullara zulmedici değilim.'"

Ben size doğru yolda yürümeyi emredip sapıklığı yasaklamışken, bugün benim huzurumda çekişmeyin.

يَوْمَ نَقُولُ لِجَهَنَّمَ هَلِ امْتَلَأْتِ وَتَقُولُ هَلْ مِنْ مَزِيدٍ ﴿٣٠﴾

30- "O gün cehenneme: 'Doldun mu?' deriz. O da: 'Daha var mı?' der."

Burada cehennemin söz söylemesi mecazidir. Çünkü eğer cehennem cevap verebilen varlıklardan olsaydı, bunu söyleyecekti. Doğrusu cehennemin bunu söylemesi için Allah ona hayat verir.

(هَلْ مِنْ مَزِيدٍ) *"Daha var mı?"*

Bu ifade, durumu ağırlaştırmak ve kâfirlerden daha fazla kimseyi cehenneme atmak anlamında kullanılmıştır.

Bir yoruma göre de cehennemin: "Daha var mı?" demesi, içinde fazla kimsenin bulunmadığı anlamındadır: Tıpkı Mekke'nin fethedildiği gün kendisine: "Evine dönecek misin?" diye sorulan Hz. Peygamber'in (s.a.v.): "Akîl bize ev mi bıraktı ki?!" buyurması gibi. Yani Akîl bize ev bırakmadı. Çünkü Allah, cehennemi kâfirler ve

günahkârlarla doldurur. Ancak müminlerden olan günahkârlar çıkarılınca, kâfirlerin öfkesi o kadar artar ki cehennem onlarla dolar.

وَاُزْلِفَتِ الْجَنَّةُ لِلْمُتَّق۪ينَ غَيْرَ بَع۪يدٍ ﴿٣١﴾

31- "Cennet takva sahiplerine, uzak olmayacak şekilde yaklaştırılır."

Bu konuda şu yorumlar yapılmıştır:

- Cennet, takva sahiplerine yaklaştırılır. Aynı zamanda cehennem de zincirlerle suçlulara doğru mahşere çekilir.

- Cennetin yaklaştırılması, takva sahiplerinin cennete taşınmasının kolay olması demektir. Bunlar havassın havassıdır.

- Takva sahipleri üç kısımdır: Bir kısmı cennete yaya olarak sevk edilir. Bunlar, haklarında Allah'ın: (وَس۪يقَ الَّذ۪ينَ اتَّقَوْا رَبَّهُمْ اِلَى الْجَنَّةِ زُمَرًا) *"Rablerine karşı gelmekten sakınanlar, gruplar halinde cennete sevk edilirler."* (Zümer, 39/73) buyurduğu müminlerin avamından kimselerdir. Bazıları da kendileri için hayvan kılığına sokulan iyi amellerine binerek sevk edilirler. Bunlar da Allah'ın kendileri hakkında şöyle buyurduğu havastan kimselerdir: (يَوْمَ نَحْشُرُ الْمُتَّق۪ينَ اِلَى الرَّحْمٰنِ وَفْدًا) *"Takva sahiplerini, merhamet sahibi Allah'ın huzurunda heyet halinde topladığımız gün."* (Meryem, 19/85) Hassın hası olanlara gelince, onlar Allah'ın haklarında: *"Cennet takva sahiplerine yaklaştırılır"* buyurduğu kimselerdir. Yani cennet onlara yaklaştırılır.

(غَيْرَ بَع۪يدٍ) *"Uzak olmayacak şekilde"* sözü ise (اُزْلِفَتِ) *"yaklaştırılır"* sözünün tekididir.

Bir yoruma göre de bu ifade, gönüllerini almak için: *"Günahkârlardan da uzak olmayacak şekilde"* demektir.

هٰذَا مَا تُوعَدُونَ لِكُلِّ اَوَّابٍ حَف۪يظٍ ﴿٣٢﴾

32- "İşte bu, size vaat edilmekte olan şeydir. O, Allah'a dönüş yapan ve emrini gözeten herkes içindir."

Ayetteki ( أَوَّاب ) lafzı, bütün hallerinde Allah'a dönüş yapan kimse demektir.

( حَفِيظ ) lafzı da vakitlerini muhafaza eden kimse demektir. Bir yoruma göre de Allah yolunda duygularını, Allah ile beraber de nefeslerini kontrol eden kimse demektir.

مَنْ خَشِيَ الرَّحْمٰنَ بِالْغَيْبِ وَجَآءَ بِقَلْبٍ مُنِيبٍ ﴿٣٣﴾

33- "O ki, görmediği halde Rahmân'dan korkar ve O'na yönelmiş bir kalp ile gelir."

Allah'tan korkmak, ayrılıktan korkmak demektir. Bu arada Allah'tan korkmak, ünsiyetle beraber olur. Bu nedenle Allah: "Cebbâr'dan korkar" veya: "Kahhâr'dan korkar" dememiştir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah'tan korkmak, O'nun dilediğini yaptığını ve yaptığından sual olunmadığını bilmeyi gerektirir.

- Haşyet, korkudan daha ince olup heybete yakın gibidir.

( وَجَآءَ ) *"O'na gelir."*

Günahkârların da, onda bir ümidinin olması için burada Allah: "O'na itaat eden bir nefisle" dememiş de: "O'na yönelmiş bir kalp ile" buyurmuştur. Çünkü günahkârlar da her ne kadar nefisleriyle kusur işleyip içten bir yönelişe sahip olmasalar da kalpleriyle üzülürler ve samimiyetle pişmanlık duyarlar.

اُدْخُلُوهَا بِسَلَامٍ ذٰلِكَ يَوْمُ الْخُلُودِ ﴿٣٤﴾

34- "Oraya esenlikle girin. İşte bu ebedilik günüdür."

Yani onlara şöyle denir: "Her türlü afetten kurtulmuş olarak ve hoşnutluğun varlığıyla beraber cennete girin. Allah da asla size karşı öfkelenmeyecektir."

Öte yandan melek onlardan kimisine: "Cennete esenlikle girin" derken kimisine de. "Cennette sizin için her dilediğiniz vardır" der.

Nitekim Allah da şöyle buyurmuştur:

لَهُمْ مَا يَشَٓاؤُ۫نَ فِيهَا وَلَدَيْنَا مَزِيدٌ ﴿٣٥﴾

35- "Orada kendileri için diledikleri her şey vardır. Katımızda daha fazlası da vardır."

Allah burada: "Onlar için istedikleri vardır" dememiş de: "Onlar için diledikleri vardır" demiştir. Çünkü içlerine doğan her arzu anında gerçekleşir. Onlar bugün "Allah'ın dilediği olur" dediklerine göre hiç şüphesiz yarın da Allah'tan onlara iyilik olacaktır. Zaten iyiliğin karşılığı da sadece iyiliktir.

( وَلَدَيْنَا مَزِيدٌ ) *"Katımızda daha fazlası da vardır."*

Söz konusu fazlasının, Allah'ı görmek ve O'na bakmak olduğu konusunda tefsir âlimleri ittifak halindedirler. Kimileri de bunun cennette sevabın artırılması olduğunu söylemişlerdir ki iki görüş arasında çelişki bulunmamaktadır.

وَكَمْ اَهْلَكْنَا قَبْلَهُمْ مِنْ قَرْنٍ هُمْ اَشَدُّ مِنْهُمْ بَطْشًا فَنَقَّبُوا فِي الْبِلَادِ
هَلْ مِنْ مَحِيصٍ ﴿٣٦﴾

36- "Biz onlardan önce, kendilerinden daha zorlu nice nesilleri helak ettik de ülke ülke dolaşıp kaçacak delik aradılar. Kaçacak bir yer mi var?"

Yani sizden önce gelip geçmiş olanlardan ibret alınız. Onlar, sapıklıklarına dalıp onda ısrar ettiler ve ondan vazgeçmediler. Bunun üzerine biz de onları helak ettik ve kendilerinden bir kişi bile bırakmadık.

اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَذِكْرٰى لِمَنْ كَانَ لَهُ قَلْبٌ اَوْ اَلْقَى السَّمْعَ وَهُوَ شَهِيدٌ ﴿٣٧﴾

37- "Şüphesiz bunda, aklı olan yahut hazır bulunup kulak veren kimseler için bir öğüt vardır."

Ayette geçen ( قَلْبٌ ) "kalp" lafzı akıl anlamında olup "kalbi olan" tabiri, aklı olan demektir. Bir görüşe göre de bu "hazır bir kalp" demektir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Ayetteki kalpten maksat, iyiliğe yönelen kalptir.

- Maksat, sık sık değişmeyen kalptir.

( اَوْ اَلْقَى السَّمْعَ ) *"Yahut hazır bulunup kulak veren."*

Yani halk tarafından zahirine yapılan çağrıya ve Hak'tan sırrına dönük olan çağrıya kulak veren kimse.

Bu konuda şu yorum da yapılmıştır:

- Gafletten sarhoş olmamış uyanık bir kalbe sahip olan kimse.

- Allah ile beraber olan nefeslerini sayan bir kalp.

- Uyum nuruyla diri olan bir kalp.

- İbret almaktan ve basiretli olmaya çalışmaktan yüz çevirmeyen bir kalp.

- Hadiste de yer aldığı üzere kalp, Rahmân'ın parmaklarından iki parmağın arasındadır. Yani iki nimeti arasındadır. Bu iki nimet, Allah'ın kuldan defettiği bela ve kendisini faydalandırdığı nimetlerdir. Bu itibarla Allah'ın, kötü vasıfları engellediği ve iyi vasıflara bağlı kıldığı her kalptir ki onun hakkında Allah: ( اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَذِكْرٰى لِمَنْ كَانَ لَهُ قَلْبٌ ) *"Şüphesiz bunda, kalbi olan kimseler için bir öğüt vardır"* buyurmuştur.

Hadiste de şöyle buyrulmuştur.

*"Şüphesiz Allah'ın birtakım kapları vardır. Bu kaplar kalplerdir. Kalplerin Allah'a en yakın olanı ise, ince ve duru olandır."*

Hz. Peygamber (s.a.v.) kalpleri kaplara benzetmiştir. Bu çerçevede kâfirin kalbi ters yüz edilmiş olup içine bir şey girmez. Münafığın kalbi kırık kaptır. Üstten içine konulan şey altından çıkar. Müminin kalbi ise sağlam bir kap olup iman içine girer ve kalır. Ancak bu kalpler de değişiktir. Şöyle ki kimisi etkilenmeler ve çeşitli kusurlar ile kirlenmiştir. Bu nedenle içine konulan içecekte ondan bir

iz kalır ve bu içecek onunla kirlenir. Bir kalp de vardır ki bulanıklıklardan arınmıştır. İşte bu, değeri en yüksek olan kalptir.

وَلَقَدْ خَلَقْنَا السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ وَمَا بَيْنَهُمَا فِي سِتَّةِ اَيَّامٍ وَمَا مَسَّنَا مِنْ لُغُوبٍ ﴿٣٨﴾

38- "Andolsun, gökleri, yeri ve ikisi arasında bulunanları altı günde yarattık. Bize bir yorgunluk da dokunmadı."

Allah'a yorgunluk nasıl dokunabilir ki?! O, zatında sonradan hiçbir şey meydana gelmeyen Samed'dir.

فَاصْبِرْ عَلٰى مَا يَقُولُونَ وَسَبِّحْ بِحَمْدِ رَبِّكَ قَبْلَ طُلُوعِ الشَّمْسِ وَقَبْلَ الْغُرُوبِ ﴿٣٩﴾

39- "O halde onların söylediklerine sabret ve güneşin doğuşundan önce de batışından önce de Rabbini hamd ile tesbih et."

Eğer kulakların, benim hakkımda söyledikleri ve sıfatımın münezzeh olduğu şeylerden rahatsız olursa söylediklerine karşı sabret ve bizi tesbih etmek suretiyle bundan sıyrılıp rahatlamaya çalış.

وَمِنَ الَّيْلِ فَسَبِّحْهُ وَاَدْبَارَ السُّجُودِ ﴿٤٠﴾

40- "Gecenin bir kısmında ve secdelerin ardından da O'nu tesbih et."

Zira gece halvet vaktidir. Halvette arınma ise daha mükemmel ve daha pürüzsüz olur.

وَاسْتَمِعْ يَوْمَ يُنَادِ الْمُنَادِ مِنْ مَكَانٍ قَرِيبٍ ﴿٤١﴾ يَوْمَ يَسْمَعُونَ الصَّيْحَةَ بِالْحَقِّ ذٰلِكَ يَوْمُ الْخُرُوجِ ﴿٤٢﴾

41, 42- "Çağırıcının yakın bir yerden sesleneceği gün o sese kulak ver. O gün insanlar, hakka çağıran o korkunç sesi işiteceklerdir. İşte bu, kabirlerden çıkış günüdür."

Tıpkı aralarında devamlı gizli konuşmanın olduğu gibi üzerlerine Allah'tan çağrı inecektir. Bu arada üzerlerine inen çağrı ani olur ve onu yapmada kulun hiçbir tercihi olmaz.

إِنَّا نَحْنُ نُحْيِ وَنُمِيتُ وَإِلَيْنَا الْمَصِيرُ ﴿٤٣﴾

43- "Şüphesiz biz diriltir ve öldürürüz. Dönüş de ancak bizedir."

Hepsinin dönüşü ve son varışı bizedir.

يَوْمَ تَشَقَّقُ الْاَرْضُ عَنْهُمْ سِرَاعًا ذٰلِكَ حَشْرٌ عَلَيْنَا يَسِيرٌ ﴿٤٤﴾

44- "O gün yer, onların üzerinden süratle yarılıp açılır. Bu, bize kolay gelen bir toplamadır."

Bu, bize göre kolaydır. İster onları topluca ister tek tek yaratalım, fark etmez. Allah şöyle buyurur:

(مَا خَلْقُكُمْ وَلَا بَعْثُكُمْ اِلَّا كَنَفْسٍ وَاحِدَةٍ) *"Sizi yaratmak ve diriltmek, ancak bir tek canı yaratmak ve diriltmek gibidir."* (Lokmân, 31/28)

نَحْنُ اَعْلَمُ بِمَا يَقُولُونَ وَمَٓا اَنْتَ عَلَيْهِمْ بِجَبَّارٍ فَذَكِّرْ بِالْقُرْاٰنِ مَنْ يَخَافُ وَعِيدِ ﴿٤٥﴾

45- "Biz, onların ne dediklerini çok iyi biliyoruz. Sen, onlara karşı bir zorba değilsin. O halde sen, benim uyarımdan korkan kimselere Kur'ân ile öğüt ver."

Sen, başlarında kendilerini zorlayan bir zorba değilsin.

Korkutma uyarı ve hatırlatma ise ancak korkanları etkiler. Korkmayana gelince, onun hakkında korkutma başarıya ulaşmaz. Nitekim gökteki kuş da emsallerinin arasına iner.

سورة الذّاريَاتِ

# ZÂRİYÂT SÛRESİ

(Zâriyât Sûresi 60 âyettir. Mekke'de ilk inen sûrelerdendir. Adını ilk âyette geçen "Zâriyât (Savurup kaldıran rüzgârlar)"tan almıştır. Sûrede genel olarak; insanların duygu ve düşüncelerine hitap, tek Allah inancı, âhireti tanıtma, ibretli tabiat olayları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle değerli bir sözdür ki kim onu söylerse dili değer kazanır. Kim de onu bilirse, onun beraberliğiyle kalbi titrer. "Bismillah", akıllara galebe çalan ve sevenlerin ruhlarını ele geçiren bir kelimedir.

وَالذَّارِيَاتِ ذَرْوًاۙ ﴿١﴾ فَالْحَامِلَاتِ وِقْرًاۙ ﴿٢﴾ فَالْجَارِيَاتِ يُسْرًاۙ
﴿٣﴾ فَالْمُقَسِّمَاتِ اَمْرًاۙ ﴿٤﴾ اِنَّمَا تُوعَدُونَ لَصَادِقٌۙ ﴿٥﴾ وَاِنَّ الدّ۪ينَ
لَوَاقِعٌ ﴿٦﴾

1, 2, 3, 4, 5, 6- "Tozutup savuranlara, ağırlık taşıyanlara, kolaylıkla akanlara, iş bölüştürenlere andolsun ki size vaat olunan şey elbette doğrudur. Hesap ve ceza mutlaka gerçekleşecektir."

( وَالذَّارِيَاتِ ذَرْوًا ) *"Tozutup savuranlara."*

Yani taşıyıcı rüzgârlara. Ağırlıktan maksat da buluttur. Akanlar gemilerdir. İş bölüştürenler ise meleklerdir. Yani ben, bu şeylerin Rabbine ve bunlara güç yetirmesine yemin ederim. Yeminin cevabı ise: (إِنَّمَا تُوعَدُونَ لَصَادِقٌ) *"Size vaat olunan şey elbette doğrudur"* sözüdür. Bu şeylerdeki işaret ise şudur: Söz konusu rüzgarlardan bazıları da iştiyak sahiplerinin iniltisini izzet sahalarına taşıyan feryat rüzgarlarıdır. Bu taşıma sonucunda yakınlık esintisi, muhabbet ehli kimselerin sırlarının koklama alanına ulaşır. O zaman da onlar, acı ve ızdırabın tutsaklığından kurtulup rahata kavuşmuş olurlar.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Sizin esintinizi arıyorum ben rüzgarlarda*
*Eserek sizin toprağınızdan geldiklerinde*
*Ve istiyorum onlardan, selamı size taşımayı*
*Şayet iletirlerse bir gün, alıver sen de onu*

Bulutlardan da kimisi kayboluş sitemini yağdırır, uzaklık ve ayrılık habercilerini işareteder. İşte onlara böyle bir şey belirdiği zaman, onu basiretlerinin nuruyla görür ve bunun üzerine ondan korunmak için Allah'a dua etmeye ve yakarışla dilekte bulunmaya başlarlar.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Gördüğümde ona ait bir hicran bulutunun*
*Bize doğru geldiğini*
*Ve yağmursuzlarının bile ayrılıkla dolup taştığını*
*Derim ki: Üstüme değil, etrafıma düş ey ayrılık!*

Bir de nasıl ki gemici geminin esenliği arzusuyla yoksul bazı kimseleri ücretsiz taşıyorsa, aynı şekilde muhabbet ehli kimseler de geminin etrafında dalgalar çarpıştığında inayet gemisiyle kudret denizlerinde taşınmayı umarlar.

Bir de meleklerden bazıları vuslat ehlini aramak veya musibet ehline teselli vermek veya bu taife ile ilgili çeşitli durumlar için inerler. Böylece bu kimseler, o meleklere yanlarında ayrılıkları ve vuslatları hakkında bir haberin olup olmadığını sorarlar.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Rabbiniz hakkı için dostlar durun yanımda*
*Sorayım size hallerini, bana sorun siz de*

( إِنَّمَا تُوعَدُونَ لَصَادِقٌ وَإِنَّ الدِّينَ لَوَاقِعٌ )

*"Size vaat olunan şey elbette doğrudur. Hesap ve ceza mutlaka gerçekleşecektir."*

Allah (c.c.), itaatkârlara cennet, tövbe edenlere rahmet, velilere yakınlık, ariflere vuslat sözü verirken, musibet ehli kimselere de şu sözüyle vaatte bulunmuştur: ( أُولَٰئِكَ عَلَيْهِمْ صَلَوَاتٌ مِنْ رَبِّهِمْ وَرَحْمَةٌ ) *"İşte Rableri katından rahmet ve merhamet onlaradır."* (Bakara, 2/157)

Bu arada onlar, güzel vaadin ağır gerçekleşmesine karşı direnirken Allah da kulları hakkında çok şefkat sahibidir:

وَالسَّمَاءِ ذَاتِ الْحُبُكِ ﴿٧﴾ إِنَّكُمْ لَفِي قَوْلٍ مُخْتَلِفٍ ﴿٨﴾ يُؤْفَكُ عَنْهُ مَنْ أُفِكَ ﴿٩﴾

**7, 8, 9- "Yollara sahip göğe andolsun ki, muhakkak siz çelişkili söz söylüyorsunuz. Ondan çevrilen çevrilir."**

Yani güzel yollara sahip göğe andolsun. Bu, ikinci yemin olup cevabı: ( إِنَّكُمْ لَفِي قَوْلٍ مُخْتَلِفٍ ) *"Muhakkak siz çelişkili söz söylüyorsunuz"* ifadesidir. Yani onların bu çelişkili sözleri, Hz. Muhammed'in (s.a.v.) durumu hakkındadır. Şöyle ki biri: "O büyücüdür", bir diğeri: "Delidir", bir üçüncüsü de: "Şairdir" demektedir. Onlar daha başka şeyler de söylemektedirler.

Ayetteki işaret ise irfan güneşi, muhabbet ayı ve yakınlık yıldızlarıyla süslü olan tevhid göğüne yemin etmeye yöneliktir. Şüphesiz siz, bu tarikat konusunda çelişkili söz söylüyorsunuz. Şöyle ki kimisi tarikatı inkâr eden münkirdir. Kimisi, şeriatın hakkını yerine getirmede yetersiz kaldıklarını sanarak tarikat ehline itiraz etmektedir. Kimisi de haksızlık ederek kulluğun dar sınırlarının dışına

çıkmamakta ve Allah'ın velilerine yüce manevî haller tahsis ettiği konusunda bir şey bilmemektedir.

Şiir:

*Sürükledi insanlar hakkımızda zan eteklerini*
*Ve söyledi insanlar hakkımızda farklı sözler*
*Kimisi hamiyetinize iftira eden yalancıdır*
*Kimisi de doğru söylediğini bilmeyen doğru sözlüdür*

( يُؤْفَكُ عَنْهُ مَنْ اُفِكَ ) *"Ondan çevrilen çevrilir."*

Şöyle ki onlar insanları Hz. Peygamber'den (s.a.v.) alıkoyarak: "Şüphesiz o delidir" diyorlardı.

قُتِلَ الْخَرَّاصُونَ ﴿١٠﴾ اَلَّذِينَ هُمْ فِي غَمْرَةٍ سَاهُونَ ﴿١١﴾

**10, 11-** "Cehalet içinde gaflete dalmış olan yalancılar kahrolsun!"

Sapıklık bataklığı ve cehalet karanlığı içinde gaflete ve eğlenceye dalmış olan yalancılara lanet olsun.

يَسْـَٔلُونَ اَيَّانَ يَوْمُ الدِّينِ ﴿١٢﴾ يَوْمَ هُمْ عَلَى النَّارِ يُفْتَنُونَ ﴿١٣﴾
ذُوقُوا فِتْنَتَكُمْ هٰذَا الَّذِي كُنْتُمْ بِهِ تَسْتَعْجِلُونَ ﴿١٤﴾

**12, 13, 14-** "'Ceza günü ne zaman?' diye sorarlar. Ateş üzerinde azaba uğratılacakları gün: 'Azabınızı tadın! İşte acele isteyip durduğunuz şey budur.'"

Onlar, kıyamet gününün ne zaman olduğunu sorarlar. Onun hakkında acele ederler. Onlar, kıyameti yalanladıkları için nefisleri ondan yana tatmin olmamaktadır. Oysa ateş üzerinde yakılıp cezalandırıldıkları gün kendilerine şöyle denilir: "Çekin cezanızı! İşte acele gerçekleşmesini istediğiniz budur."

Ayetlerdeki işaret ise içlerine giren riya sebebiyle amellerinde yalan söyleyenlere, içlerine doğan kendini beğenmişlikten dolayı hallerinde yalan söyleyenlere ve iddia ettikleri haller konusunda Allah

hakkında yalan söyleyenlere yöneliktir. Kahrolsunlar ve onlara lanet olsun. Bir de onlar, doğruluğun kokusunu almaktan dahi mahrum edilmek suretiyle çarpıtmalarının cezasını bulacaklardır.

اِنَّ الْمُتَّق۪ينَ ف۪ي جَنَّاتٍ وَعُيُونٍ ﴿١٥﴾ اٰخِذ۪ينَ مَٓا اٰتٰيهُمْ رَبُّهُمْ اِنَّهُمْ كَانُوا قَبْلَ ذٰلِكَ مُحْسِن۪ينَ ﴿١٦﴾

15, 16- "Şüphesiz takva sahipleri, Rablerinin kendilerine verdiği şeyleri alarak cennetlerde ve pınar başlarında bulunurlar. Şüphesiz onlar, bundan önce iyilik yapan kimselerdi."

Onlar, dünyalarında vuslatlarının, ahiretlerinde de lütuflarının cennetlerindedirler. Bu itibarla yarın dereceler ve kurtuluş, bugün de yakınlıklar ve yakarıştır. Öyleyse ahirette olan nefislerinin payıdır, dünyada olan da Rablerinin hakkıdır. Onlar bugün Rablerinin kendilerine verdiğini alırlar. Onlar, Allah'tan nasiplerini şükür ve hamd eliyle alırlar. Yarın da Rablerinin, kendilerine cennette verdiği türlü türlü nimetleri alırlar.

Bir de her kim bugün nasibini iman ve sorumluluk duygusu bakımından vasıtasız olarak ve ikram ve mahrumiyetle ilgili taksimatı düşünmeksizin alırsa yarın da onu, Allah'ın huzuruna çıkıp O'nu gördüğünde vasıtasız olarak cennette alacaktır.

(اِنَّهُمْ كَانُوا قَبْلَ ذٰلِكَ مُحْسِن۪ينَ) *"Şüphesiz onlar, bundan önce iyilik yapan kimselerdi."*

Öyleydiler ancak bugün koptular. Lakin biz onları geri çevirdikten sonra var olup ortaya çıktılar. Bu itibarla onlar, şu hadiste söylendiği gibidirler:

*"Allah'ı görüyormuşsun gibi O'na ibadet et."*

كَانُوا قَل۪يلًا مِنَ الَّيْلِ مَا يَهْجَعُونَ ﴿١٧﴾ وَبِالْاَسْحَارِ هُمْ يَسْتَغْفِرُونَ ﴿١٨﴾

17, 18- "Geceleri pek az uyurlardı. Seherlerde bağışlama dilerlerdi."

Yani ya onlar, tıpkı Allah'ın: (وَقَلِيلٌ مِنْ عِبَادِيَ الشَّكُورُ) *"Kullarımdan şükür edenler azdır"* (Sebe, 34/13) şeklindeki sözünde olduğu gibi, az sayıda idiler ve sadece geceleyin uyurlardı veya gece uykuları az idi yahut da geceleyin az uyumuyorlardı.

(وَبِالْأَسْحَارِ هُمْ يَسْتَغْفِرُونَ) *"Seherlerde bağışlama dilerlerdi."*

Allah, haklarında şunu haber vermektedir: Onlar, gece namazına kalkıp dua etmekle birlikte seher vakitlerinde kendilerini günahkârların yerine koyup değerlerini küçümsemek ve yaptıklarını değersiz bulmak için mağfiret dilerler.

Dostlar için gece yakarış ünsiyetinde, günahkârlar için de kurtuluş arayışında geçer. Uykusuzlukları da daima gecelerindedir. Bu uykusuzluk, ya aşırı üzüntü ve şiddetli özlem ya da arzu ve ayrılıktan dolayıdır.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Nice sabahsız geceleri senin uğrunda*
*Tükettim ben elim böğrümde kalarak*
*Doldu gözlerim yaşlarla*
*Yanağımı parmak uçlarımın üstüne koyarken*

Ya da bu uykusuzluk, ünsiyetin kemali ve ruhun güzelliğinden dolayıdır.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Bereket versin Allah o kısa hayata ki*
*Geçti sersemlik zamanında çocukluk ve utanmazlıkla*
*Anlatır geceleri bakışların kapanmasını*
*Gözlerime, açılırken tekrar kapakları*

وَفِي أَمْوَالِهِمْ حَقٌّ لِلسَّائِلِ وَالْمَحْرُومِ ﴿١٩﴾

19- "Mallarında, isteyen ve mahrum olanlar için bir hak vardır."

İsteyen, ihtiyacını karşılamak için dilenen kimsedir. Mahrum ise iffetli davranandır. Bir yoruma göre de mahrum, dilenmeyi terk

etmek suretiyle nefsini mahrum eden kimsedir. Ayette sözü edilen bu kimseler, fıkıh ilmine uygun olması şartıyla verirler. Mürüvvet sahiplerine göre ise mallarında hakkı bulunmayan, hakkı bulunandan daha önceliklidir. Fetret ehline gelince, onların malı yoktur ki yükümlülüğe muhatap olsunlar. Çünkü onlar, halleri bakımından karşılarına çıkarılan her fırsat konusunda başkalarını tercih ederler.

وَفِي الْاَرْضِ اٰيَاتٌ لِلْمُوقِنٖينَ ﴿٢٠﴾

20- "Kesin olarak inananlar için yeryüzünde birçok alametler vardır."

Nasıl ki yeryüzü her şeyi taşıyorsa aynı şekilde arif de herkese katlanır. Kim ki bir kimseyi yük kabul eder veya birisini görmekten rahatsız olursa bu, hakikatten kopmuş olmasından ve halka tefrika gözüyle bakmasından dolayıdır. Oysa hakikat ehli kimseler bu sıfatla vasıflanmazlar.

Yeryüzündeki alametlerden biri de her türlü pisliğin ve süprüntünün onun üzerine atılıyor olması ancak bununla birlikte her türlü çiçeği bitirmesidir. Aynı şekilde arif de kendisine çektirilen her türlü cefayı sineye çeker. Dışarıya ise sadece her türlü yüksek ahlakı ve temiz karakteri yansıtır. Yeryüzündeki alametlerden biri de tuzlu toprağının elverişsiz olduğu için terk edilmesi ve ekilip biçilmemesidir. İşte bu tarikata inanmayan da aynı şekilde ihmal edilir. Onu bu sıfatla karşılamak ise tuzlu toprağa tohum ekmek gibidir.

وَفٖي اَنْفُسِكُمْ اَفَلَا تُبْصِرُونَ ﴿٢١﴾

21- "Kendi nefislerinizde de birçok alametler vardır. Hâlâ görmüyor musunuz?"

Yani kendi nefislerinizde de alametler vardır. Bu alametlerden biri gayretlerindeki ve sıfatlarındaki yüzsüzlükleridir. Biri de kendilerinden ve kendileriyle olduğuna inandıkları şeylerle ilgili geniş iddialardır. Bir diğeri de en ufak veya (en büyük?) bir şeyin kendileriyle veya kendilerinden olduğunu ileri sürmeleri esnasındaki hastalıklı halleridir.

وَفِي السَّمَاءِ رِزْقُكُمْ وَمَا تُوعَدُونَ ﴿٢٢﴾

**22- "Gökte de rızkınız ve size vaat olunan şeyler vardır."**

Yani rızkınızın taksimatı göktedir. Bu çerçevede rızıklarla görevli melekler gökten inerler.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Buradaki gök yağmurdur. Zira tahıl ve meralar yağmurla yeşerir.

- Rızıklarınız göğün Rabbine aittir. Çünkü rızıkları O güvence altına almıştır.

- "Gökte de rızkınız vardır" sözünde durak yapılır, sonra: "Size vaat olunan şeyler" sözüne başlanır.

فَوَرَبِّ السَّمَاءِ وَالْأَرْضِ إِنَّهُ لَحَقٌّ مِثْلَ مَا أَنَّكُمْ تَنْطِقُونَ ﴿٢٣﴾

**23- "Göğün ve yerin Rabbine andolsun ki o vaat sizin konuşmanız gibi gerçektir."**

Yani şüphesiz öldükten sonra dirilmek ve neşir haktır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Şüphesiz Muhammed'e, dinime ve onun size getirdiği hükümlere olan yardımım tıpkı sizin konuşmanız gibi haktır.

- Bu, tıpkı senin burada oluşun gibi haktır.

- Yani Allah rızkınızı veren olup bu söz, tıpkı size: Rabbiniz kim? Sizi yaratan kim? diye sorulduğu zaman, Allah'tır demeniz gibi haktır. Böylece nasıl ki siz: Yaratan Allah'tır, diyorsanız ve bu da hak ise aynı şekilde rızkı Allah'ın verdiğini söylemek de haktır.

- Nasıl ki senin konuşmanı senden başkası yapamıyorsa aynı şekilde rızkını da senden başkası yiyemez.

- Bu ayetteki fayda ve işaret şudur: Allah, seni yükümlü kıldığı şeylerle meşgul olman ve ulaşamadığın şeylerin peşine düşüp

didinmemen için senin rızkını göğe havale etmiştir. Göğe çıkmanın ise hiçbir yolu yoktur.

- Rızkınız göktedir ve ameliniz göğe yükseltilmektedir. O halde eğer sen, rızkının üstüne inmesini istiyorsan, amelini göğe yükselt. Bu nedenle: "Namaz, rızık kapısını çalmaktır" demişlerdir. Allah da şöyle buyurmuştur:

( وَأْمُرْ اَهْلَكَ بِالصَّلٰوةِ وَاصْطَبِرْ عَلَيْهَا لَا نَسْـَٔلُكَ رِزْقًا ) *"Ailene namazı emret ve kendin de ona devam et. Senden rızık istemiyoruz."* (Tâhâ, 20/132)

هَلْ اَتٰيكَ حَدٖيثُ ضَيْفِ اِبْرٰهٖيمَ الْمُكْرَمٖينَ ﴿٢٤﴾

24- "İbrahim'in ağırlanan misafirlerinin haberi sana geldi mi?"

Tefsirlerde, bu ayetin inmesinden önce Hz. Peygamber'e (s.a.v.) onların haberinin gelmediği ileri sürülmüştür.

Bu konuda şu iddialar da dile getirilmiştir:

- Onların sayısı on iki melekten ibarettir.

- Onlar, Hz. Cibril ve beraberindeki yedi kişidir.

- Onlar, üç kişi idiler.

( الْمُكْرَمٖينَ ) "Ağırlanan misafirler."

Bu misafirlerin ağırlanan misafirler olarak nitelenmeleri konusunda şu görüşler ileri sürülmüştür:

- Çünkü Hz. İbrahim onlara hizmette bulunmuştur.

- Hz. İbrahim, güler yüzlülüğü ve gelişlerine sevinmesiyle onları ağılamıştır.

- Hz. İbrahim, onlar için bir tekellüfte bulunmamış ve onlardan özür dilememiştir. Bu ise misafiri ağırlamak demektir. Çünkü böylece mihmandar, misafire bir minnette bulunmamış, dolayısıyla misafir de bu minnete katlanmak durumunda kalmamıştır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, onları ağırlanan misafirler diye adlandırmış çünkü iyiler nezdinde davetsiz misafir de saygındır.

- İyilerin misafirleri sadece ağırlanmaya değer kimseler olur.

- Bu, Allah katında değerli olan misafirler demektir.

إِذْ دَخَلُوا عَلَيْهِ فَقَالُوا سَلَامًا قَالَ سَلَامٌ قَوْمٌ مُنْكَرُونَ ﴿٢٥﴾

25- "Hani, onlar İbrahim'in yanına varmışlar ve: 'Selam olsun sana' demişlerdi. İbrahim: 'Size de selam olsun. Yabancı bir topluluk' demişti."

Onlar: "Bizden sana selam olsun" deyince Hz. İbrahim de: "Benden de size selam olsun" dedi.

Meleklerin "selam" sözü, sana güvence veriyoruz, demektir. Çünkü selam, güven anlamındadır.

( قَوْمٌ مُنْكَرُونَ ) *"Yabancı bir topluluk."*

Yani siz, alışılmadık bir topluluksunuz. Çünkü Hz. İbrahim, misafirler arasında onlar gibisini tanımıyordu. Bir yoruma göre de Hz. İbrahim, yabancı bir topluluk olduklarını söylemiştir.

فَرَاغَ إِلَى أَهْلِهِ فَجَاءَ بِعِجْلٍ سَمِينٍ ﴿٢٦﴾ فَقَرَّبَهُ إِلَيْهِمْ قَالَ أَلَا تَأْكُلُونَ ﴿٢٧﴾

26, 27- "Hemen ailesinin yanına giderek pişirilmiş semiz bir buzağı getirdi. Onu önlerine koydu. 'Yemez misiniz?' dedi."

( فَجَاءَ بِعِجْلٍ سَمِينٍ ) *"Pişirilmiş semiz bir buzağı getirdi."*

O buzağıyı pişirip önlerine koydu ve: "Yemez misiniz?" dedi. Onlar onu yemeğe yanaşmayınca:

فَأَوْجَسَ مِنْهُمْ خِيفَةً قَالُوا لَا تَخَفْ وَبَشَّرُوهُ بِغُلَامٍ عَلِيمٍ ﴿٢٨﴾

28- "Onlardan İbrahim'in içine bir korku düştü. Onlar: 'Korkma' dediler ve ona bilgin bir erkek çocuğu müjdelediler."

Hz. İbrahim, onları hırsız sandı. Bunun üzerine onlar kendisine: "Korkma" dediler.

( وَبَشَّرُوهُ بِغُلَامٍ عَلِيمٍ ) *"Ve ona bilgin bir erkek çocuğu müjdelediler."*

Yani çocuğu ve bu çocuğun bilgin bir kişi oluncaya kadar yaşayacağını müjdelediler. Bu arada ( عَلِيم ) lafzı, ( عِلْم ) mastarından mübalağa sıygasıdır. Bir de kişi ancak büyüdükten sonra "bilgin" olur.

فَاَقْبَلَتِ امْرَاَتُهُ ف۪ي صَرَّةٍ فَصَكَّتْ وَجْهَهَا وَقَالَتْ عَجُوزٌ عَق۪يمٌ ﴿٢٩﴾

29- "Bunun üzerine karısı bir çığlık atarak geldi. Eliyle yüzüne vurarak: 'Ben, kısır bir kocakarıyım' dedi."

( صَرَّة ) lafzı, şiddetli bağırma demektir. Karısı, tıpkı kadınların yaptığı gibi eliyle yüzüne vurdu ve: Ben kısır bir kocakarıyım, dedi. Bir iddiaya göre kendisi o gün doksan sekiz yaşında, Hz. İbrahim de doksan dokuz yaşında idi.

قَالُوا كَذٰلِكِ قَالَ رَبُّكِ اِنَّهُ هُوَ الْحَك۪يمُ الْعَل۪يمُ ﴿٣٠﴾

30- "Onlar dediler ki: 'Rabbin böyle buyurdu. Şüphesiz O, hüküm ve hikmet sahibidir, hakkıyla bilendir.'"

Yani biz sana, Rabbinin bize söylediği gibi söylüyoruz. Bir de bize, Allah'ın, fiillerinde hikmet sahibi ve hiçbir şey kendisine gizli kalmayan sonsuz ilim sahibi olduğunu sana bildirmemiz emredildi.

قَالَ فَمَا خَطْبُكُمْ اَيُّهَا الْمُرْسَلُونَ ﴿٣١﴾

31- "İbrahim onlara: 'O halde asıl işiniz nedir ey elçiler?' dedi."

Neyiniz var? Meseleniz ne? Neyle gönderildiniz?

قَالُوا اِنَّا اُرْسِلْنَا اِلٰى قَوْمٍ مُجْرِم۪ينَ ﴿٣٢﴾ لِنُرْسِلَ عَلَيْهِمْ حِجَارَةً مِنْ
ط۪ينٍ ﴿٣٣﴾ مُسَوَّمَةً عِنْدَ رَبِّكَ لِلْمُسْرِف۪ينَ ﴿٣٤﴾ فَاَخْرَجْنَا مَنْ كَانَ ف۪يهَا
مِنَ الْمُؤْمِن۪ينَ ﴿٣٥﴾ فَمَا وَجَدْنَا ف۪يهَا غَيْرَ بَيْتٍ مِنَ الْمُسْلِم۪ينَ ﴿٣٦﴾

32, 33, 24, 35, 36- "Onlar şöyle dediler: 'Biz suçlu bir kavme, üzerlerine çamurdan, pişirilmiş ve Rabbinin katında haddi aşanlar için belirlenmiş taşlar yağdırmak için gönderildik. Orada bulunan müminleri çıkardık. Zaten orada bir ev halkından başka Müslüman bulamadık.'"

Onlar Lût kavmidir. Biz orada Lût ve ona iman edenlerden başka kimse bulamadık.

وَتَرَكْنَا فِيهَا آيَةً لِلَّذِينَ يَخَافُونَ الْعَذَابَ الْأَلِيمَ ﴿٣٧﴾

37- "Orada, acıklı azaptan korkacaklar için bir ibret bıraktık."

Biz orada, katı yüreklilerin değil, korkanların ibret alacakları bir alamet bıraktık.

وَفِي مُوسَى إِذْ أَرْسَلْنَاهُ إِلَى فِرْعَوْنَ بِسُلْطَانٍ مُبِينٍ ﴿٣٨﴾

38- "Mûsâ kıssasında da ibret vardır. Hani biz onu açık bir delil ile Firavun'a göndermiştik."

Yani açık ve göz kamaştırıcı bir delil ile gönderdik.

فَتَوَلَّى بِرُكْنِهِ وَقَالَ سَاحِرٌ أَوْ مَجْنُونٌ ﴿٣٩﴾

39- "O ise kuvvetine güvenerek yüz çevirdi ve: 'Bu, bir büyücü veya delidir' dedi."

فَأَخَذْنَاهُ وَجُنُودَهُ فَنَبَذْنَاهُمْ فِي الْيَمِّ وَهُوَ مُلِيمٌ ﴿٤٠﴾

40- "Bunun üzerine biz de kendisini ve ordularını yakalayıp denize attık. O ise kendini kınıyordu."

وَفِي عَادٍ إِذْ أَرْسَلْنَا عَلَيْهِمُ الرِّيحَ الْعَقِيمَ ﴿٤١﴾

41- "Âd kavminde de ibretler vardır. Hani onların üzerine köklerini kesen rüzgârı göndermiştik."

مَا تَذَرُ مِنْ شَيْءٍ اَتَتْ عَلَيْهِ اِلَّا جَعَلَتْهُ كَالرَّمِيمِ ﴿٤٢﴾

42- "Üzerine uğradığı hiçbir şey bırakmıyor, mutlaka onu kül ediyordu."

وَفِي ثَمُودَ اِذْ قِيلَ لَهُمْ تَمَتَّعُوا حَتّٰى حِينٍ ﴿٤٣﴾

43- "Semûd kavminde de ibretler vardır. Hani onlara: 'Bir süreye kadar faydalanın bakalım' denmişti."

فَعَتَوْا عَنْ اَمْرِ رَبِّهِمْ فَاَخَذَتْهُمُ الصَّاعِقَةُ وَهُمْ يَنْظُرُونَ ﴿٤٤﴾

44- "Derken Rablerinin emrinden uzaklaşıp azmışlardı. Bu yüzden, bakınıp dururken kendilerini yıldırım çarpıvermişti."

فَمَا اسْتَطَاعُوا مِنْ قِيَامٍ وَمَا كَانُوا مُنْتَصِرِينَ ﴿٤٥﴾

45- "Artık ne yerlerinden kalkmaya güçleri yetti ne de başkasından yardım görebildiler."

وَقَوْمَ نُوحٍ مِنْ قَبْلُ اِنَّهُمْ كَانُوا قَوْمًا فَاسِقِينَ ﴿٤٦﴾

46- "Bunlardan önce de Nûh kavmini helak etmiştik. Çünkü onlar, fâsık bir toplum idiler."

وَالسَّمَٓاءَ بَنَيْنَاهَا بِاَيْدٍ وَاِنَّا لَمُوسِعُونَ ﴿٤٧﴾

47- "Göğü kudretimizle biz kurduk ve biz onu genişletmekteyiz."

Yani biz, gök ile yer arasında bir genişlik meydana getirdik. Biz, o genişliği artırma gücüne de sahibiz.

وَالْاَرْضَ فَرَشْنَاهَا فَنِعْمَ الْمَاهِدُونَ ﴿٤٨﴾

48- "Yeri de biz döşedik. Biz, ne güzel döşeyiciyiz!"

Yani biz, yeri sizin için döşek yaptık. Sonra Allah, zatını överek şöyle buyurmuştur: ( فَنِعْمَ الْمَاهِدُونَ ) *"Biz, ne güzel döşeyiciyiz!"*

Allah, bütün bunlarla kudretinin kemalini, lütuf ve rahmetinin tam oluşunu göstermiştir.

وَمِنْ كُلِّ شَيْءٍ خَلَقْنَا زَوْجَيْنِ لَعَلَّكُمْ تَذَكَّرُونَ ﴿٤٩﴾

49- "Düşünüp ibret alasınız diye her şeyden iki eş yarattık."

Yani canlılarda erkek ve dişi gibi iki sınıf, cansızlarda da hareket, durgunluk, siyahlık, beyazlık ve zıtların diğer sınıfları gibi sınıflar yarattık.

فَفِرُّوا اِلَى اللّٰهِ اِنّ۪ي لَكُمْ مِنْهُ نَذ۪يرٌ مُب۪ينٌ ﴿٥٠﴾

50- "O halde Allah'a koşun. Şüphesiz ben size O'nun katından gönderilmiş açık bir uyarıcıyım."

Yani Allah'a dönüş yapın. Bu arada insan iki halden birini yaşamaktadır: Ya bir şeye arzu duyma ya da ondan kaçma halini yaşar. Ya korku ya da ümit halini yaşar. Ya menfaati celp ya da zararı def halini yaşar. Her iki halde de kaçışının Allah'a doğru olması gerekir. Çünkü fayda veren de zarar veren de Allah'tır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır.

- Allah'a kaçışı sahici olan kimsenin Allah ile beraberliği de sahici olur.

- Kulun cehaletten ilme doğru, hevâdan takvaya, şüpheden kesin inanca ve şeytandan Allah'a kaçması gerekir.

- Kulun, Allah'ın imtihanı olan fiilinden yeterliliği olan fiiline, Allah'ın öfke sıfatından rahmet sıfatına, Allah'ın zatından yine O'nun zatına kaçması gerekir. Çünkü Allah şöyle buyurmuştur:

( وَيُحَذِّرُكُمُ اللّٰهُ نَفْسَهُ ) *"Allah sizi kendinden sakındırır."* (Âl-i İmrân, 3/28)

( فَفِرُّوا اِلَى اللّٰهِ ) *"O halde Allah'a koşun."*

وَلَا تَجْعَلُوا مَعَ اللّٰهِ اِلٰهًا اٰخَرَ اِنّ۪ي لَكُمْ مِنْهُ نَذ۪يرٌ مُب۪ينٌ ﴿٥١﴾

51- "Allah ile beraber başka bir ilâh edinmeyin. Gerçekten ben size, Allah tarafından gönderilmiş açık bir uyarıcıyım."

Ona ortak koşarsanız sizi O'nun acıklı azabından korkuturum. Çünkü O, kendisine ortak koşulmasını bağışlamaz.

كَذٰلِكَ مَٓا اَتَى الَّذ۪ينَ مِنْ قَبْلِهِمْ مِنْ رَسُولٍ اِلَّا قَالُوا سَاحِرٌ اَوْ
مَجْنُونٌ ﴿٥٢﴾ اَتَوَاصَوْا بِه۪ۚ بَلْ هُمْ قَوْمٌ طَاغُونَ ﴿٥٣﴾

52, 53- "İşte böyle! Onlardan öncekilere hiçbir peygamber gelmemişti ki: 'O, bir büyücüdür' yahut: 'Bir delidir' demiş olmasınlar. Onlar bunu birbirlerine tavsiye mi ettiler? Hayır; onlar azgın bir topluluktur."

Sonra Allah, peygamberleri yalanlama konusundaki adetlerinin böyle olduğunu açıklamıştır: Adeta bunu aralarında birbirlerine tavsiye etmiş gibidirler.

فَتَوَلَّ عَنْهُمْ فَمَٓا اَنْتَ بِمَلُومٍ ﴿٥٤﴾

54- "Onun için onlardan yüz çevir. Artık kınanacak değilsin."

O halde onlardan yüz çevir. Zira onların kötü davranışlarından sana bir sitem yönelecek değildir.

وَذَكِّرْ فَاِنَّ الذِّكْرٰى تَنْفَعُ الْمُؤْمِن۪ينَ ﴿٥٥﴾

55- "Sen yine de öğüt ver. Çünkü öğüt müminlere fayda verir."

Günahkârlara azabımı hatırlat ki, emrime muhalefetten dönüş yapsınlar. İtaatkârlara da sevabımı hatırlat ki, taat ve ibadetlerini artırsınlar. Ayrıca ariflere üzerlerinden defettiğim belamı, zenginlere onlara bahşettiğim iyilik ve lütfumu, fakirlere de dünyayı üzerlerinden çevirmiş olmamı ve kendileri için hazırladığım buluşmamı hatırlat.

وَمَا خَلَقْتُ الْجِنَّ وَالْاِنْسَ اِلَّا لِيَعْبُدُونِ ﴿٥٦﴾ مَٓا اُر۪يدُ مِنْهُمْ مِنْ رِزْقٍ
وَمَٓا اُر۪يدُ اَنْ يُطْعِمُونِ ﴿٥٧﴾ اِنَّ اللّٰهَ هُوَ الرَّزَّاقُ ذُو الْقُوَّةِ الْمَت۪ينُ ﴿٥٨﴾

56, 57, 58- "Ben cinleri ve insanları, ancak bana kulluk etsinler diye yarattım. Ben, onlardan bir rızık istemiyorum. Bana yedirmelerini de istemiyorum. Şüphesiz Allah rızık verendir, güçlüdür, çok kuvvetlidir."

Ezeli takdirimle seçtiğim, bugün güzel iltifatımı tahsis ettiğim ve bol nimetlerimi vaat ettiğim kimseleri ancak bana kulluk etsinler diye yarattım.

Ezeli takdirimle gazabıma uğrattığım, kendilerini yükümlü kıldığım ibadetlerim konusunda bugün perişanlığa mahkum ettiğim ve ilahlığımın hükmü ve hükümranlığımın zorunluluğuyla kendileri için cehennemi yarattığım kimseleri de ancak azabım, cezalarım ve kendilerine hazırladığım zincir ve prangalarım için yarattım.

Ben, onlardan kullarımdan kimseye yiyecek veya rızık vermelerini istemiyorum. Çünkü rızkı veren benim. Bana da yiyecek vermelerini istemiyorum. Çünkü ben, sarsılmaz kuvvetin sahibi olan Allah'ım.

فَاِنَّ لِلَّذ۪ينَ ظَلَمُوا ذَنُوبًا مِثْلَ ذَنُوبِ اَصْحَابِهِمْ فَلَا يَسْتَعْجِلُونِ ﴿٥٩﴾

59- "Şüphesiz zulmedenlerin de arkadaşlarının azap payı gibi payları vardır. Artık azabımı acele istemesinler."

Onların da tıpkı kendilerinden önce gelip geçmiş olan arkadaşlarının payı gibi azaptan bir payı vardır. O halde azabı çabuk istemek niye? Kaldı ki azaptan kurtulamayacaklardır.

فَوَيْلٌ لِلَّذ۪ينَ كَفَرُوا مِنْ يَوْمِهِمُ الَّذ۪ي يُوعَدُونَ ﴿٦٠﴾

60- "Uyarıldıkları günlerinden dolayı vay o kâfir olanların haline!"

O, kıyamet günüdür.

سورة الطّورِ

# TÛR SÛRESİ

(Tûr Sûresi 49 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk ayette geçen Sina dağı (Tur)'dan almıştır. Sûrede; ahiret inancı, Allah'ın üstün gücü, kıyametin dehşeti, küfür ehlinin karşılaşacağı azap, Allah'tan sakınanların ödülü gibi konular yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir kelimedir ki, bir arifin kalbine hâkim olur olmaz Allah'ın celalinin keşfiyle muhakkak aklını başından alır ve canı sıkılan bir kimsenin kalbine hâkim olur olmaz Allah'ın lütufları sayesinde muhakkak onu saygın kılar. Bu itibarla o, kalpleri tutsak eden bir kelimedir, lakin her kalbi değil. O, kederleri giderir, lakin her kederi değil.

وَالطُّورِ ﴿١﴾ وَكِتَابٍ مَسْطُورٍ ﴿٢﴾ فِي رَقٍّ مَنْشُورٍ ﴿٣﴾

**1, 2, 3- "Tûr'a ve yayılmış ince deri sayfalara düzenle yazılmış kitaba."**

Allah, surenin girişindeki bu şeylere yemin etmiştir. Yeminin cevabı ise: ( إِنَّ عَذَابَ رَبِّكَ لَوَاقِعٌ ) *"Şüphesiz Rabbinin azabı gerçekleşecektir"* (Tur, 52/7) ayetidir. Tûr, üzerinde Hz. Mûsâ ile konuşulan dağdır. Çünkü o, ilahi hitabın işitilmesi esnasında dostların ayak bastığı

yerdir. Bir de o, Hz. Mûsâ'nın Hz. Muhammed ve ümmetinin bahsini duyduğu yerdir: O kadar ki Allah, biz daha atalarımızın sulbünde iken bize seslenerek: "Siz benden istemeden önce ben size verdim" buyurdu.

(وَكِتَابٍ مَسْطُورٍ) *"Düzenle yazılmış kitaba."*

Mushaflarda ve Levh-i Mahfuz'da yazılmış kitaba. Bir görüşe göre gökteki yazıcı melekler, olanları ve olacakları o kitaptan okurlar.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bu kitap, Allah'ın, kullarına merhamet etmeyi üzerine aldığına dair yazdığıdır.

- Bu kitap, Allah'ın: "Rahmetim, gazabımın önüne geçmiştir" şeklindeki sözüdür.

- Bu kitap, Allah'ın şu sözüdür:

(وَلَقَدْ كَتَبْنَا فِي الزَّبُورِ مِنْ بَعْدِ الذِّكْرِ اَنَّ الْاَرْضَ يَرِثُهَا عِبَادِيَ الصَّالِحُونَ) *"Andolsun Zikir'den sonra Zebûr'da da: 'Yeryüzüne muhakkak benim iyi kullarım vâris olacaktır' diye yazmıştık."* (Enbiyâ, 21/105)

- Bu, kulların amellerinin yazıldığı ve kıyamet günü kullarının sağ veya sol ellerine verilecek olan amel defteridir.

(فِي رَقٍّ مَنْشُورٍ) *"Yayılmış ince deri sayfalara."*

Bunlar, sözünü ettiğimiz kitabın yazıldığı sayfalardır.

وَالْبَيْتِ الْمَعْمُورِ ٤

## 4- "Beyt-i Ma'mûr'a."

Bu, dördüncü göktedir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Beyt-i Ma'mûr, arif abidlerin Allah sevgisi ve marifetiyle mamur kalpleridir.

- O, ibadet ehlinin ibadetyerleri ve halvet meclisleridir.

Bir iddiaya göre de Kâbe'dir.

وَالسَّقْفِ الْمَرْفُوعِ ﴿٥﴾

5- "Yükseltilmiş tavana."

Bu tavan göktür. Bir görüşe göre de bu, melekût alemindeki himmetlerinin göğüdür.

وَالْبَحْرِ الْمَسْجُورِ ﴿٦﴾ اِنَّ عَذَابَ رَبِّكَ لَوَاقِعٌ ﴿٧﴾

6, 7- "Ve kabaran denize andolsun ki şüphesiz Rabbinin azabı gerçekleşecektir."

Dolu denizlere.

Allah, azabının muhakkak gerçekleşeceğine dair olarak bu şeylere yemin etmiştir. O'nun zahirdeki azabı, kendisiyle günahkâr kullarını uyardığı şeydir. Batında ise huzurdan sonra perdelenmek, keşiften sonra örtülmek ve kabulden sonra reddedilmektir.

مَا لَهُ مِنْ دَافِعٍ ﴿٨﴾

8- "Onu geri çevirecek hiçbir şey yoktur."

Allah bir kulu reddettiği zaman, reddine dair hükmü kesinleştirir.

Şiir:

*Yüz çevirdiği zaman bir şeyden nefsim*
*Yönelecek değildir ona başka şekilde asla*

يَوْمَ تَمُورُ السَّمَآءُ مَوْرًا ﴿٩﴾ وَتَسِيرُ الْجِبَالُ سَيْرًا ﴿١٠﴾

9, 10- "O gün gök, şiddetle sallanıp çalkalanır. Dağlar yürüdükçe yürür."

Yani gök, içindekilerle beraber döner. Dağlar da, yerlerinden hareket ederek ha bire yürür.

فَوَيْلٌ يَوْمَئِذٍ لِلْمُكَذِّبِينَ ﴿١١﴾ اَلَّذِينَ هُمْ فِي خَوْضٍ يَلْعَبُونَ ﴿١٢﴾

11, 12- "İşte o gün içine daldıkları dünya zevki içinde eğlenip oyalanan yalanlayıcıların vay haline!"

( وَيْلٌ ) *"veyl"* kelimesi, Arapların helake düşen kimse için kullandıkları bir kelimedir.

( اَلَّذِينَ هُمْ فِي خَوْضٍ يَلْعَبُونَ ) *"Daldıkları dünya zevki içinde eğlenip oyalanırlar."*

Yalanlama bâtılına dalarlar.

يَوْمَ يُدَعُّونَ اِلٰى نَارِ جَهَنَّمَ دَعًّا ﴿١٣﴾ هٰذِهِ النَّارُ الَّتِي كُنْتُمْ بِهَا تُكَذِّبُونَ ﴿١٤﴾ اَفَسِحْرٌ هٰذَٓا اَمْ اَنْتُمْ لَا تُبْصِرُونَ ﴿١٥﴾

13, 14, 15- "Cehennem ateşine itilip atılacakları gün onlara: 'İşte bu, yalanlamakta olduğunuz ateştir' denilir. Bu Kur'ân mı bir büyü imiş yoksa siz mi göremiyormuşsunuz?"

Güçlü bir biçimde cehenneme atılacakları o gün kendilerine: "İşte yalanlamakta olduğunuz ateş budur" denir. Sonra onlara: "Bu, söylediğiniz gibi sihir kabilinden midir yoksa gözlerinize perde mi çekilmiştir?" diye sorulur.

اِصْلَوْهَا فَاصْبِرُوٓا اَوْ لَا تَصْبِرُوا سَوَٓاءٌ عَلَيْكُمْ اِنَّمَا تُجْزَوْنَ مَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿١٦﴾

16- "Girin oraya. İster dayanın ister dayanmayın, sizin için birdir. Size ancak yapmakta olduğunuzun karşılığı verilir."

Cezaya işin sonunda sabretmenin hiçbir kıymeti yoktur. Çünkü azapları, onlar için cezadır.

اِنَّ الْمُتَّقِينَ فِي جَنَّاتٍ وَنَعِيمٍ ﴿١٧﴾ فَاكِهِينَ بِمَٓا اٰتٰيهُمْ رَبُّهُمْ وَوَقٰيهُمْ رَبُّهُمْ عَذَابَ الْجَحِيمِ ﴿١٨﴾

17, 18- "Şüphesiz takva sahipleri, Rablerinin kendilerine verdiği şeylerle zevk ve mutluluk duyarak cennetlerde ve nimetler içinde bulunurlar. Rableri, onları cehennem azabından korumuştur."

Takva sahipleri, hem dünyada hem de ahirette cennetler ve nimetler içindedirler.

( فاكِهِينَ ) lafzı, Allah'ın kendilerine verdiği şeyleri beğenerek demektir. Bir yoruma göre de bu lafız, meyve sahipleri anlamındadır. Tıpkı Arapların ( تامِرٌ ) lafzını, hurma sahibi adam, ( لابِنٌ ) lafzını da süt sahibi adam anlamında kullandıkları gibi.

كُلُوا وَاشْرَبُوا هَنٖيئًا بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ١٩

19- "Dünya'da yapmakta olduklarınıza karşılık afiyetle yiyin, için."

Bu, bir topluluk için tadı ve lezzetiyle afiyet olur: Bir topluluğa da Allah ile ilgili sözlerinin işitilmesi afiyet olur. Bir topluluk da Allah'ın huzurunda iken bu, kendilerine afiyet ve yumuşak olur.

مُتَّكِـٖٔينَ عَلٰى سُرُرٍ مَصْفُوفَةٍ وَزَوَّجْنَاهُمْ بِحُورٍ عٖينٍ ٢٠

20- "Sıra sıra dizilmiş koltuklara yaslanmış olarak. Biz, onları iri gözlü hurilerle evlendirmişizdir."

Onlar sevinç ve mutluluk içinde ve ünsiyetten zengin bir nasibe sahiptirler.

وَالَّذٖينَ اٰمَنُوا وَاتَّبَعَتْهُمْ ذُرِّيَّتُهُمْ بِاٖيمَانٍ اَلْحَقْنَا بِهِمْ ذُرِّيَّتَهُمْ وَمَٓا
اَلَتْنَاهُمْ مِنْ عَمَلِهِمْ مِنْ شَيْءٍ كُلُّ امْرِئٍ بِمَا كَسَبَ رَهٖينٌ ٢١

21- "İman eden ve nesilleri de iman konusunda kendilerinin yoluna uyanlar var ya, biz onların nesillerini kendilerine kattık. Bununla beraber onların amellerinden hiçbir şey eksiltmeyiz. Herkes, kazandığı karşılığında rehindir."

Allah, nesillerini de kendilerine katarak sevinçlerini kemale erdirir. Çünkü kalbin, kendileriyle meşgul olduğu aile fertleri, çocuklar ve nesilden ayrı olarak nimet sahibi olmak, hayatın mutsuzluğuna yol açar.

Aynı şekilde dost, yakın, veli ve hizmetçi gibi velinin kalbinin meşgul olduğu herkes de böyledir. Allah, Hz. Yûsuf kıssasında: (وَأْتُونِي بِأَهْلِكُمْ أَجْمَعِينَ) *"Bana aile fertlerinizin hepsini getirin"* (Yusuf, 12/93) buyurmuştur.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Onun cefalarına rağmen kuşkusuz ben onun Rabbine*
*Ve onunla ilgili ve bağlantılı her şeye yemin ederim ki,*
*Seviyorum onu ve seviyorum o evini ki,*
*Onda konaklamıştır o ve seviyorum ben ev halkını*

(وَمَآ اَلَتْنَاهُمْ مِنْ عَمَلِهِمْ مِنْ شَيْءٍ) *"Bununla beraber onların amellerinden hiçbir şey eksiltmeyiz."*

Yani biz, onların ecirlerinden bir şey eksiltmeyiz. Aksine ecirlerini yeterli ve bolca veririz. Zaten başlangıçta da biz verdik ve verdiğimize ilavede bulunduk.

(كُلُّ امْرِئٍ بِمَا كَسَبَ رَهِينٌ) *"Herkes, kazandığı karşılığında rehindir."*

Herkes kendi yaptığıyla yükümlüdür. Allah, kulun ecrini geciktirmeksizin, tam olarak verir. Şayet ameli günah olursa, bugün örtüldüğü gibi o gün de çoğu bağışlanır.

وَاَمْدَدْنَاهُمْ بِفَاكِهَةٍ وَلَحْمٍ مِمَّا يَشْتَهُونَ ﴿٢٢﴾ يَتَنَازَعُونَ فِيهَا كَاْسًا لَا لَغْوٌ فِيهَا وَلَا تَاْثِيمٌ ﴿٢٣﴾

22, 23- "Onlara canlarının istediği meyve ve etten bol bol verdik. Orada boş söz söyletmeyen, günah işletmeyen dolu bir kadehi elden ele dolaştırırlar."

Yani onlar arasında, dünyada içkiciler arasında cereyan ettiği gibi bâtıl cereyan etmez ve onları günaha sokmaz. İçtikleri de akıllarını

başlarından almaz ki aralarında kendilerini edep ve istikamet haddinin dışına çıkaracak şeyler cereyan etsin.

Onların meclisleri nasıl bu vasıfta olmaz ki? Onlara içiren belli olup aynı zamanda kendileri O'nun tarafından müşahede edilip görülmektedir.

وَيَطُوفُ عَلَيْهِمْ غِلْمَانٌ لَهُمْ كَاَنَّهُمْ لُؤْلُؤٌ مَكْنُونٌ ﴿٢٤﴾

24- "Hizmetlerine verilmiş, kabuğunda saklı inci gibi gençler etraflarında dönüp dolaşırlar."

Kendilerini gark eden durumdan dolayı onlar, yurtlarından da yurtlarında bulunan kimselerden koparılmışlardır. Bu çerçevede şarap onlara ünsiyet verir, fakat hemcinsleriyle değil. Bir de bugün kulun, hayatı boyunca hapiste iken, başkalarının sözünü dinlememeye ve aziz bir evlat ya da şefkatli bir kardeş dahi olsa, mahluklardan hiçbirini görmemeye bir saatlik zamanı olduğu vakit, kabul ve cennet ehlinden olması halinde, üstten alta çevrileceği ve yarın mutsuzlukla damgalanacağı sanılmamalıdır.

Kul, dünyada yaşadığı gurbette pek çok sıkıntılar çekerken, evine döndüğü zaman ne denilmesi gerekir? Acaba yolculuğunda olduğu gibi mi kalır yoksa yolculukta çektiğinden başka sıkıntılar mı çeker ve yaşadığı üzüntülerden başka üzüntüler mi yaşar?

وَاَقْبَلَ بَعْضُهُمْ عَلٰى بَعْضٍ يَتَسَٓاءَلُونَ ﴿٢٥﴾ قَالُوٓا اِنَّا كُنَّا قَبْلُ ف۪ٓي
اَهْلِنَا مُشْفِق۪ينَ ﴿٢٦﴾ فَمَنَّ اللّٰهُ عَلَيْنَا وَوَقٰينَا عَذَابَ السَّمُومِ ﴿٢٧﴾ اِنَّا
كُنَّا مِنْ قَبْلُ نَدْعُوهُ اِنَّهُ هُوَ الْبَرُّ الرَّح۪يمُ ﴿٢٨﴾

25, 26, 27, 28- "Birbirlerine dönüp sorarlar. Derler ki: 'Şüphesiz daha önce biz, ailemiz içinde yaşarken korkardık. Allah da bize lütufta bulundu ve bizi, iliklere işleyen cehennem azabından korudu. Gerçekten biz, bundan önce O'na yalvarıyorduk. Şüphesiz O, iyilik edendir, çok merhametlidir.'"

Eğer onlar: "Allah bize lütufta bulundu" demeselerdi, korktuklarını görmüş olacaklardı. Fakat Allah (c.c.), kendilerine yaptığı lütfu göstermek suretiyle, onları korktuklarını görmekten alıkoydu.

Nihayet onlar da şöyle dediler:

(فَمَنَّ اللّٰهُ عَلَيْنَا وَوَقٰينَا عَذَابَ السَّمُومِ اِنَّا كُنَّا مِنْ قَبْلُ نَدْعُوهُ اِنَّهُ هُوَ الْبَرُّ الرَّح۪يمُ) *"Allah da bize lütufta bulundu ve bizi, iliklere işleyen cehennem azabından korudu. Gerçekten biz, bundan önce O'na yalvarıyorduk. Şüphesiz O, iyilik edendir, çok merhametlidir."*

فَذَكِّرْ فَمَٓا اَنْتَ بِنِعْمَتِ رَبِّكَ بِكَاهِنٍ وَلَا مَجْنُونٍ ﴿٢٩﴾

29- "O halde sen öğüt ver. Rabbinin nimeti sayesinde, sen ne bir kâhinsin ne de bir deli."

Yani onlar, sende bir kâhinlik ve delilik bulunmadığını bilirler. Ancak bunu sadece akılsızlıklarından dolayı söylediler. Zira akılsız insan, kötülediği kimseye, kendisinde bulunmadığını bildiği hususlarla dil uzatır.

اَمْ يَقُولُونَ شَاعِرٌ نَتَرَبَّصُ بِه۪ رَيْبَ الْمَنُونِ ﴿٣٠﴾ قُلْ تَرَبَّصُوا فَاِنّ۪ي مَعَكُمْ مِنَ الْمُتَرَبِّص۪ينَ ﴿٣١﴾

30, 31- "Yoksa onlar: 'O bir şairdir. Onun, zamanın felaketlerine uğramasını bekliyoruz' mu diyorlar? Onlara de ki: 'Bekleyin. Ben de sizinle beraber bekleyenlerdenim.'"

Biz onun hakkında, gelecek günlerin gebe olduğu olayları bekliyoruz. Çünkü böyle bir durum devam etmez ve kendisinden önceki kâhin ve şairlerin ölmesi gibi o da ölecektir. Bir yoruma göre de onlar: "Şüphesiz onun babası genç yaşta öldü" diyerek onun da tıpkı babasının öldüğü gibi öleceğini ümit ettiler. Bunun üzerine Allah şöyle buyurdu:

(قُلْ تَرَبَّصُوا...) *"Onlara de ki: 'Bekleyin..."*

Şüphesiz biz de bekliyoruz. Tefsirlerde yer aldığına göre onların tamamı öldüler. İşte bu nedenle kimsenin, bir diğerinin ölmesini beklemesi uygun olmaz. Nitekim davranışı bu olan kimse, çoğunlukla bu temennisinin gerçekleştiğini görmeden önce ölür.

اَمْ تَأْمُرُهُمْ اَحْلَامُهُمْ بِهٰذَٓا اَمْ هُمْ قَوْمٌ طَاغُونَ ﴿٣٢﴾

32- "Bunu kendilerine akılları mı emrediyor? Yoksa onlar azgın bir topluluk mudur?"

Acaba akılları mı kendilerine bunu emrediyor yoksa sapıklıklarında haddi aşmaları ve azgınlıkları mı onları buna sevk ediyor?

اَمْ يَقُولُونَ تَقَوَّلَهُ بَلْ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿٣٣﴾ فَلْيَأْتُوا بِحَدٖيثٍ مِثْلِهٖٓ اِنْ كَانُوا
صَادِقٖينَ ﴿٣٤﴾

33, 34- "Yoksa: 'O Kur'ân'ı kendisi uydurup söyledi' mi diyorlar? Hayır, onlar iman etmiyorlar. Eğer doğru söyleyenler iseler, haydi onun gibi bir söz getirsinler!"

Onlar, senin bu sözü kendinden söylediğini iddia ettiklerine göre, eğer sana yaptıkları isnatta doğru söyleyen kimseler iseler öyleyse onun gibi bir söz getirsinler.

اَمْ خُلِقُوا مِنْ غَيْرِ شَيْءٍ اَمْ هُمُ الْخَالِقُونَ ﴿٣٥﴾ اَمْ خَلَقُوا السَّمٰوَاتِ
وَالْاَرْضَ بَلْ لَا يُوقِنُونَ ﴿٣٦﴾ اَمْ عِنْدَهُمْ خَزَٓائِنُ رَبِّكَ اَمْ هُمُ
الْمُصَيْطِرُونَ ﴿٣٧﴾ اَمْ لَهُمْ سُلَّمٌ يَسْتَمِعُونَ فٖيهِ فَلْيَأْتِ مُسْتَمِعُهُمْ
بِسُلْطَانٍ مُبٖينٍ ﴿٣٨﴾

35, 36, 37, 38- "Acaba onlar, herhangi bir yaratıcı olmadan mı yaratıldılar? Yoksa kendileri mi yaratıcıdırlar? Yoksa gökleri ve yeri onlar mı yarattılar? Hayır; onlar kesin olarak inanmıyorlar. Yoksa

Rabbinin hazineleri onların yanında mıdır? Ya da her şeye hâkim olan kendileri midir? Yoksa onların, kendisi vasıtasıyla dinleyecekleri bir merdivenleri mi vardır? Eğer öyleyse, dinleyenleri açık bir delil getirsin!"

Hayır! Asla durum böyle değildir. Aksine Allah yaratan, onlar da yaratılandırlar. Yoksa onlar mıdır gökleri ve yeri yaratan? Veya Rabbinin hazineleri, yani verdiği rızıkların ve kudretiyle tasarrufta bulunduğu şeylerin hazineleri onların yanında mıdır? Ya da insanların başına geçip onlara hâkim olanlar onlar mıdır? Yahut bir merdivenleri var da onunla yükselip göklerde olan biteni mi dinliyorlar? Eğer öyleyse, dinleyicileri açık bir delil getirsin.

اَمْ لَهُ الْبَنَاتُ وَلَكُمُ الْبَنُونَ ﴿٣٩﴾ اَمْ تَسْـَٔلُهُمْ اَجْرًا فَهُمْ مِنْ مَغْرَمٍ مُثْقَلُونَ ﴿٤٠﴾ اَمْ عِنْدَهُمُ الْغَيْبُ فَهُمْ يَكْتُبُونَ ﴿٤١﴾ اَمْ يُرِيدُونَ كَيْدًاۜ فَالَّذِينَ كَفَرُوا هُمُ الْمَكِيدُونَ ﴿٤٢﴾ اَمْ لَهُمْ اِلٰهٌ غَيْرُ اللّٰهِ سُبْحَانَ اللّٰهِ عَمَّا يُشْرِكُونَ ﴿٤٣﴾

39, 40, 41, 42, 43- "Yoksa kız çocukları O'nun da erkek çocukları sizin mi? Yoksa sen onlardan bir ücret istiyorsun da onlar, borçtan ağır bir yükün altında mı kalmışlardır. Yoksa gayb ilmi onların yanında da ondan mı yazıyorlar? Yoksa bir tuzak mı kurmak istiyorlar? Asıl tuzağa düşecekler, kâfir olanlardır. Yoksa onların Allah'tan başka bir ilahı mı var? Allah, onların ortak koştuklarından uzaktır."

Yoksa sen, peygamberliği tebliğ etmeye karşılık bir ücret istiyorsun da bundan dolayı onlar kendilerini sana uymaktan uzaklaştıran ağır bir borç ve mali sorumluluk altında mı bulunuyorlar? Yoksa kendilerinde gayb ilmi var da onlar onu mu yazıyorlar? Veya onlar, sana karşı bir tuzak mı kurmak istiyorlar? Oysa tuzağa düşecek olanlar, kâfir olan kimselerdir. Ya da onların Allah'tan başka bir ilahları var da O'nun yaptıklarına benzer bir şey mi yapıyor? Allah bundan münezzehtir.

وَاِنْ يَرَوْا كِسْفًا مِنَ السَّمَٓاءِ سَاقِطًا يَقُولُوا سَحَابٌ مَرْكُومٌ ﴿٤٤﴾

44- "Gökten düşmekte olan parçalar görseler: 'Bunlar, üst üste yığılmış bulutlardır' derler."

Yani eğer onlar, üzerlerine gökten bir parça düştüğünü görseler: "Şüphesiz o, bir kısmı diğer bir kısmının üstüne yığılmış bir buluttur" derler. Yani onlar ne denli büyük alametler görürlerse görsünler iman etmezler. Hatta eğer onlara gökten, gözleriyle görecekleri şekilde bir kapı dahi açsak, onlar şöyle derlerdi: "Bizim gözlerimiz boyandı. Yoksa bu, gözle görülen bir şey değildir."

فَذَرْهُمْ حَتّٰى يُلَاقُوا يَوْمَهُمُ الَّذ۪ي ف۪يهِ يُصْعَقُونَ ﴿٤٥﴾ يَوْمَ لَا يُغْن۪ي
عَنْهُمْ كَيْدُهُمْ شَيْـًٔا وَلَا هُمْ يُنْصَرُونَ ﴿٤٦﴾

45, 46- "Artık sen, çarpılacakları günlerine kavuşuncaya kadar onları kendi hallerine bırak. O gün, tuzakları kendilerine hiçbir fayda vermeyecektir ve kendilerine yardım da edilmeyecektir."

Yani ölecekleri günlerine kavuşuncaya kadar sen onlardan yüz çevir. O gün, tuzakları kendilerine hiçbir fayda vermeyecek ve azabımızdan alıkonulmayacaklardır.

وَاِنَّ لِلَّذ۪ينَ ظَلَمُوا عَذَابًا دُونَ ذٰلِكَ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٤٧﴾

47- "Şüphesiz zulmedenlere, bundan başka bir azap daha var. Fakat onların çoğu bilmezler."

Kıyamet günü dışında bir de onlar için Bedir günü ve diğer günlerde, öldürülüp esir alınma azabı ve uğradıkları perişanlık da vardır.

(وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُونَ) *"Fakat onların çoğu bilmezler."*

Yani Allah'ın, dininin yardımcısı olduğunu bilmezler.

وَاصْبِرْ لِحُكْمِ رَبِّكَ فَإِنَّكَ بِأَعْيُنِنَا وَسَبِّحْ بِحَمْدِ رَبِّكَ حِينَ تَقُومُ ﴿٤٨﴾

48- "Rabbinin hükmüne sabret. Çünkü sen, gözlerimizin önündesin. Kalktığında Rabbini hamd ile tesbih et."

Sen tarafımızdan görülmektesin ve korumamız altındasın.

(فَإِنَّكَ بِأَعْيُنِنَا) *"Çünkü sen, gözlerimizin önündesin."*

Bu ifade, sabretmede sıkıntı çekmekte olan Hz. Peygamber'in bu sıkıntısını hafifletmek içindir.

(وَسَبِّحْ بِحَمْدِ رَبِّكَ حِينَ تَقُومُ) *"Kalktığında Rabbini hamd ile tesbih et."*

Yani sana farz kılınmış olan namaza kalktığında.

وَمِنَ الَّيْلِ فَسَبِّحْهُ وَاِدْبَارَ النُّجُومِ ﴿٤٩﴾

49- "Gecenin bir kısmında ve yıldızların batışı sırasında O'nu tesbih et."

Bir görüşe göre bu, akşam namazı, yatsı namazı ve iki rekatlık sabah namazı demektir.

Bu ayette Allah'ın, Hz. Peygamber'e (s.a.v.), kendisini her vakitte anmasını ve hiçbir vaktinin O'nu anmaktan boş kalmamasını emrettiğine dair delil ve işaret vardır.

Bu arada Allah'ın hükmüne sabretmek zordur. Ancak kişi, Allah'ın kendisinden haberdar olduğunu bildiği zaman bu, kendisine kolay ve hafif gelir.

سورة النَّجْمِ

# NECM SÛRESİ

(Necm Sûresi 62 âyettir. Mekke'de inmiştir. 32. âyet Medine'de inmiştir. Adını ilk âyetteki "Necm (Yıldız)"den almıştır. İlk, secdeli sûre olup, Hz. Peygamber onu Harem-i Şerif'te okurken secde edince, orada hazır bulunan müşrikler de secde etmişlerdi (bk. Buhârî, Tefsîr, 4; Elmalılı, Tefsir, VII, 284, 285). Sûrede genel olarak; Mekke müşriklerinin iddialarının asılsız oluşu, putların güçsüzlüğü, Hz. Peygamber'in kendiliğinden konuşmadığı gibi konular yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" bildikleri hakkında halim olan, gördüklerini örtüp bağışlayan ve ceza vermeye gücü yeten bir Halim ve Rahîm'in adıdır. O, görür ve gizler, bilir ve ifşa etmez.

وَالنَّجْمِ اِذَا هَوٰى ﴿١﴾ مَا ضَلَّ صَاحِبُكُمْ وَمَا غَوٰى ﴿٢﴾

1, 2- "Battığı zaman yıldıza andolsun ki, arkadaşınız (Muhammed) sapmadı ve azmadı."

Alçalıp battığı zaman ülker yıldızına andolsun.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- O, her türlü yıldız demek olup Allah kendisine yemin etmiştir.

- Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) inen Kur'ân'ın bölümlerine yemin etmiştir.

- Onlar, şeytanlara atılan yıldızlardır.

- Allah, miraçtan dönüşü esnasında Hz. Peygamber'e (s.a.v.) yemin etmiştir.

- Allah, ariflerin kalplerinin aydınlığına ve arayıcılarının akıllarının yıldızlarına yemin etmiştir.

Yeminin cevabı ise: ( مَا ضَلَّ صَاحِبُكُمْ وَمَا غَوٰى ) *"Arkadaşınız (Muhammed) sapmadı ve azmadı"* sözüdür.

Yani o, tevhidden asla sapmadı ve azmadı. Azmak, rüştün zıddıdır. Bu ifadede aynı zamanda Hz. Peygamber'e (s.a.v.) verilmiş bir özellik de bulunmaktadır. Çünkü Allah, kendisine yapılan isnat konusunda onu savunmuştur. Nitekim bu ifade, Allah'ın Hz. Nûh'a söylediğinden ve söylemesine izin verilen şu sözden farklıdır:

( قَالَ يَا قَوْمِ لَيْسَ بِي ضَلَالَةٌ ) *"Ey kavmim! Bende herhangi bir sapıklık yok."* (A'râf, 7/61)

Hz. Hûd da şöyle dedi: ( قَالَ يَا قَوْمِ لَيْسَ بِي سَفَاهَةٌ ) *"Ey kavmim! Bende akıl kıtlığı yok."* (A'râf, 7/67)

O, daha başka şeyler de söylemişti. Hz. Mûsâ ise Firavun'a şöyle dedi:

( وَاِنّ۪ي لَاَظُنُّكَ يَا فِرْعَوْنُ مَثْبُورًا ) *"Ey Firavun! Ben de, seni kesinlikle helak olmuş bir kişi olarak görüyorum."* (İsrâ, 17/102)

Oysa Allah, bizim peygamberimiz için: ( مَا ضَلَّ صَاحِبُكُمْ وَمَا غَوٰى ) *"Arkadaşınız (Muhammed) sapmadı ve azmadı"* buyurmuştur. Yani arkadaşınız sapmadı ve bir an bile şuhûddan gafil kalmadı.

وَمَا يَنْطِقُ عَنِ الْهَوٰى ﴿٣﴾ اِنْ هُوَ اِلَّا وَحْيٌ يُوحٰى ﴿٤﴾

**3,4- "O, nefis arzusu ile konuşmaz. Kur'ân da ancak kendisine indirilen bir vahiydir."**

Yani o, nefsin arzusunu dile getirmez. Bu Kur'ân da indirilmiş vahiyden başka bir şey değildir. Bunda da Hz. Peygamber'e (s.a.v.), Allah'ın kendisi için şahitlik yapması özelliğinin verildiği ifade edilmiştir. Çünkü Allah Hz. Davûd'a şöyle buyurmuştu:

(فَاحْكُمْ بَيْنَ النَّاسِ بِالْحَقِّ وَلَا تَتَّبِعِ الْهَوٰى) *" O halde insanlar arasında hak ile hüküm ver ve nefis arzusuna uyma!"* (Sâd, 38/26)

Oysa Allah, peygamberimizin vasfında: (وَمَا يَنْطِقُ عَنِ الْهَوٰى) *"O, nefis arzusu ile konuşmaz"* buyurmuştur. Hz. Peygamber (s.a.v.), mahremiyet makamında iken nasıl olur da nefis arzusu ile konuşur? Zahirde de o, takva dizginiyle dizginlenmiştir. Sırlar aleminde ise o, Mevlâ'nın koruması altında, beşeriyetin artıklarından arındırılmış, Allah'ın birliğini temaşa etme makamına yükseltilmiş, samediyetin celaliyle keşfe mazhar kılınmış ve beşeri benliğinden büsbütün kopartılmış olup kendisinden, hak ile hak için olmanın bakiyesinden başka bir şey kalmamıştır.

Şimdi bu vasfa sahip olan kimse, nefsin arzusuyla nasıl konuşur?

عَلَّمَهُ شَدِيدُ الْقُوٰى ﴿٥﴾ ذُو مِرَّةٍ فَاسْتَوٰى ﴿٦﴾ وَهُوَ بِالْاُفُقِ الْاَعْلٰى ﴿٧﴾

5, 6, 7- "Kur'ân'ı ona, üstün güçlere sahip muhteşem görünümlü kişi öğretti. O, en yüksek ufukta bulunuyorken doğruldu."

Öğreten, üstün güç sahibi ve yüksek ufuktaki kişi Hz. Cibril'dir.

ثُمَّ دَنَا فَتَدَلّٰى ﴿٨﴾ فَكَانَ قَابَ قَوْسَيْنِ اَوْ اَدْنٰى ﴿٩﴾

8, 9- "Sonra yaklaştı. Derken sarkıp daha da yakın oldu. Böylece iki yay aralığı kadar veya daha yakın oldu."

Hz. Cibril, Hz. Muhammed'e (s.a.v.) yaklaştı. Hemen ardından da sarktı. Yani yukarıdan Hz. Muhammed'in yanına indi. Bir görüşe göre

"sarktı" lafzı, fazla yaklaşmayı, aslında Hz. Muhammed'in, Allah'ın bir lütfu olarak Rabbine yaklaştığını ve sarkmanın burada secde anlamında olduğunu ifade etmektedir.

Bir yoruma göre de Hz. Muhammed (s.a.v.), kendisine tevdi edilen marifet latifeleri ve artışlarıyla Rabbine yaklaşmış, kalbinin sükûnete ermesiyle de onun aşağısına sarkmıştır.

( فَكَانَ قَابَ قَوْسَيْنِ اَوْ اَدْنٰى ) *"Böylece iki yay aralığı kadar veya daha yakın oldu."*

Böylece asıl görünümünde iken Hz. Cibril ile Hz. Muhammed (s.a.v.) arasındaki mesafe iki yay aralığı kadar veya daha yakın idi. Bir yoruma göre, Arapların adetlerinden biri de şu idi: Aralarında ülfeti gerçekleştirmek istedikleri zaman onlardan biri, aralarındaki dostluk sözleşmesini ifade etmek üzere, yayını diğer arkadaşının yayına yapıştırırdı. Allah da bu hitabı onların geleneğine uygun olarak indirdi. Sonra Allah, bu yakınlığı yükselterek: ( اَوْ اَدْنٰى ) *"Veya daha yakın oldu"* buyurdu. Yani, hatta daha yakın oldu.

فَاَوْحٰى اِلٰى عَبْدِهٖ مَٓا اَوْحٰى ﴿١٠﴾

10- "Böylece Allah kuluna vahyedeceğini vahyetti."

Yani Allah Hz. Muhammed'e (s.a.v.) vahyedeceğini vahyetti.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah ona, kimsenin muttali olamadığı yükler yükledi.

- Allah ona şöyle dedi: "Seni yetim bulup barındırmadım mı? Seni, yolunu kaybetmiş olarak bulup yola iletmedim mi? Seni ihtiyaç içinde bulup zengin etmedim mi? Senin göğsünü açıp genişletmedim mi?

- Allah ona havuzu ve Kevser'i müjdelemiştir.

- Allah ona şunu vahyetmiştir: "Cennet, sen girinceye kadar peygamberlere, ümmetin de girinceye kadar diğer ümmetlere haram kılınmıştır." Bu konuda söylenecek en uygun söz ise şudur: "Bu konuda

söylediklerinin tamamı güzeldir. Bunun dışında, kimsenin muttali olmadığı diğer bütün şeyler de o gece sadece onundu. Çünkü Allah onu yükselteceği yere yükseltmiş, buluşturacağı şeylerle buluşturmuş, öncesinde ve sonrasında hiçbir yakınlığın olmadığı yere yaklaştırmış, artık gayrin olmadığı bir noktada benliğinden koparmış, kendisini mahviyete erdirdiği aynı noktada sahve kavuşturmuş ve aralarındaki sırra kimse muttali olmaksızın, ona söyleyeceğini söylemişti."

مَا كَذَبَ الْفُؤَادُ مَا رَاٰى ﴿١١﴾

11- "Kalp, gözün gördüğünü yalanlamadı."

Hz. Muhammed'in (s.a.v.) kalbi, gözüyle gördüğü mucizeleri yalanlamadı. Bu konu şu yorum da yapılmaktadır: Kendisi o gece Rabbini, O'nu görmeden önce bildiği vasıf üzere buldu.

اَفَتُمَارُونَهُ عَلٰى مَا يَرٰى ﴿١٢﴾

12- "Şimdi siz, gördüğü şey hakkında onunla tartışıyor musunuz?"

Şimdi siz, gördükleri konusunda onunla tartışıyor musunuz?

وَلَقَدْ رَاٰهُ نَزْلَةً اُخْرٰى ﴿١٣﴾ عِنْدَ سِدْرَةِ الْمُنْتَهٰى ﴿١٤﴾ عِنْدَهَا جَنَّةُ
الْمَاْوٰى ﴿١٥﴾

13, 14, 15- "Andolsun ki o, Cebrâil'i bir başka inişte daha görmüştü. Sidretu'l-muntehâ'nın yanında. Me'vâ cenneti onun yanındadır."

Yani Hz. Muhammed (s.a.v.) Sidretu'l-muntehâ'nın yanında iken Cibril, Allah'ı bir daha gördü. Bu arada Sidretu'l-muntehâ, cennette bir ağaç olup meleklerin vardıkları son noktadır. Bir görüşe göre de bu, şehit ruhlarının vardığı yerdir. Bir yoruma göre ise burası, yaratıkların ruhlarının vardığı yer olup ötesini Allah'tan başkası bilemez. Onun yanında da cennetlerden bir cennet olan Me'vâ cenneti vardır.

إِذْ يَغْشَى السِّدْرَةَ مَا يَغْشَى ﴿١٦﴾

16- "O zaman, Sidre'yi kaplayan kaplamıştı."

Sidre'yi, en iyi Allah'ın bildiği melekler kaplamıştı. Bir rivayette de Sidre'yi yeşil bir kuş topluluğu kaplamıştır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Sidre'yi altından birtakım kelebekler kaplamıştır.

- Hz. Peygamber'e (s.a.v.) Bakara Sûresi'nin son ayetleri onun yanında verilmiş ve ümmetinden Allah'a bir şey ortak koşmadan ölen kimse bağışlanmıştır.

مَا زَاغَ الْبَصَرُ وَمَا طَغَى ﴿١٧﴾

17- "Göz şaşmadı ve aşmadı."

Hz. Peygamber (s.a.v.), kendisine mubah kılınan, mucizelere gözleriyle bakmaktan ve delillerinden ibret almaktan şaşmadı. Böylece haddini aşmadı, aksine huzurdaki edep şartlarına uydu.

لَقَدْ رَأَى مِنْ اٰيَاتِ رَبِّهِ الْكُبْرَى ﴿١٨﴾

18- "Andolsun o, Rabbinin en büyük alametlerinden bir kısmını gördü."

Yani Rabbinin alametlerinden en büyük olan alameti gördü. Buna göre ayetteki ( الْكُبْرَى ) lafzından önce ( الآيَة ) lafzı mahzuftur. Söz konusu en büyük alamet ise Hz. Peygamberin (s.a.v.) o gece gördüğü alamettir.

Bir yoruma göre de bu alamet, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) sahv vasfıyla Rabbi ile buluşma halinde kalması ve O'nu görünceye kadar Rabbinin kendisini korumasıdır.

اَفَرَاَيْتُمُ اللَّاتَ وَالْعُزّٰى ﴿١٩﴾ وَمَنٰوةَ الثَّالِثَةَ الْاُخْرٰى ﴿٢٠﴾ اَلَكُمُ الذَّكَرُ
وَلَهُ الْاُنْثٰى ﴿٢١﴾ تِلْكَ اِذًا قِسْمَةٌ ضِيزٰى ﴿٢٢﴾

19, 20, 21, 22- "Lât ve Uzzâ'ya ve diğer üçüncüsü Menat'a ne dersiniz? Erkek size de dişi O'na mı? Öyle ise bu, çok insafsızca bir paylaştırmadır."

Bunlar, Arapların taptıkları bazı putlardır. Şöyle ki Lât Sakîf kabilesinin putudur. Uzzâ, Gatafân kabilesinin bir ağacıdır. Menât da Huzeyl ve Huzaa kabilelerinin bir kayasıdır.

Yani, bize anlatın bakalım, Allah dışında tapmakta olduğuz şu putların, bizim Muhammed (s.a.v.) için hazırladığımız mertebeler ve özellikleri, kendilerine sığınanlara hazırlayacak güçleri var mıdır?

Sonra Allah, onları azarlayarak şöyle buyurmuştur: Görüyor musunuz nasıl da siz, erkek çocukları kendiniz için seçip kız çocuklarını Allah'a nispet ediyorsunuz? O zaman bu, eksik bir taksimattır.

اِنْ هِيَ اِلَّٓا اَسْمَٓاءٌ سَمَّيْتُمُوهَٓا اَنْتُمْ وَاٰبَٓاؤُكُمْ مَٓا اَنْزَلَ اللّٰهُ بِهَا مِنْ
سُلْطَانٍ اِنْ يَتَّبِعُونَ اِلَّا الظَّنَّ وَمَا تَهْوَى الْاَنْفُسُ وَلَقَدْ جَٓاءَهُمْ
مِنْ رَبِّهِمُ الْهُدٰى ﴿٢٣﴾

23- "Onlar, ancak sizin ve atalarınızın taktığınız isimleridir. Allah, onlar hakkında hiçbir delil indirmemiştir. Onlar, yalnız zanna ve nefislerin arzusuna tâbi olurlar. Andolsun ki kendilerine Rableri katından yol gösterici gelmiştir."

Allah size bunu emretmeksizin ve ona dair izin vermeksizin siz bu isimleri uydurdunuz. Bu itibarla siz zanna uymaktasınız.

( وَاِنَّ الظَّنَّ لَا يُغْنِي مِنَ الْحَقِّ شَيْـًٔا ) *"Oysa şüphesiz zan, hakikat namına hiçbir şey ifade etmez."* (Necm, 53/28)

( وَلَقَدْ جَٓاءَهُمْ مِنْ رَبِّهِمُ الْهُدٰى ) *"Andolsun ki, kendilerine Rableri katından yol gösterici gelmiştir."*

Ancak onlar, ondan yüz çevirdiler. Bir de nasıl ki kâfirlerin zannı, bilgisizliklerine, şaşkınlıklarına ve yanlış hüküm vermelerine yol açmışsa, aynı şekilde bu tarikatta da kim, zan vasıfları üzere kalırsa, hakikatten hiçbir şey elde edemez. O halde bu konuda kesinlik ve hakikatten başka bir şey söz konusu olamaz. Nitekim kesinlik ve hakikat ehlinin gündüzü olgunlaşmış, güneşleri doğmuş ve bilgilerinin çoğu zorunlu hale gelmiştir.

Allah hakkındaki güzel zanna gelince o bu kabilden değildir. Aynı şekilde kişinin, kendi akıbetini kestirememesi de Allah'ın zâtı, sıfatları ve hükümleri hakkındaki bu hastalıklı zan cümlesinden değildir.

اَمْ لِلْاِنْسَانِ مَا تَمَنّٰىۘ ﴿٢٤﴾

24- "Yoksa insan, her temenni ettiği şeye sahip mi olacaktır?"

Yani insan için her temenni ettiği şey gerçekleşmez. Çünkü o hayatın uzun olmasını, refahı, bolluk içinde yaşamayı ve sonu olmayan şeyler temenni eder. Fakat hiç kimse buna bütünüyle kavuşamaz.

Bir yoruma göre de insanın, muradının her konuda zorunluluk mertebesine yükselmesi, herhangi bir kulun da muradının her konuda zorunluluk haline gelmesi yaratıkların vasıflarından değildir. Aksine bu, dilediğini yapma kudretine sahip olan Allah'a mahsustur.

فَلِلّٰهِ الْاٰخِرَةُ وَالْاُو۫لٰى ﴿٢٥﴾

25- "Oysa ahiret de dünya da Allah'ındır."

Ahiret ve dünya, hem yaratık hem de mülk olarak Allah'ındır. Bu itibarla noksansız mülkiyet hakkına sahip yegâne hükümdar ve malik O'dur. Yaratıklara gelince, hiçbiri noksansız olamaz.

وَكَمْ مِنْ مَلَكٍ فِي السَّمٰوَاتِ لَا تُغْن۪ي شَفَاعَتُهُمْ شَيْـًٔا اِلَّا مِنْ بَعْدِ اَنْ يَأْذَنَ اللّٰهُ لِمَنْ يَشَٓاءُ وَيَرْضٰى ﴿٢٦﴾

**26- "Göklerde nice melekler vardır ki onların şefaatleri ancak Allah'ın izniyle, dilediği ve hoşnut olduğu kimselere yarar sağlar."**

Bu, onlara verilmiş bir cevaptır. Çünkü onlar: "Kuşkusuz melekler, bizim Allah katındaki şefaatçilerimizdir" dediler.

اِنَّ الَّذٖينَ لَا يُؤْمِنُونَ بِالْاٰخِرَةِ لَيُسَمُّونَ الْمَلٰٓئِكَةَ تَسْمِيَةَ الْاُنْثٰى ﴿٢٧﴾
وَمَا لَهُمْ بِهٖ مِنْ عِلْمٍ اِنْ يَتَّبِعُونَ اِلَّا الظَّنَّ وَاِنَّ الظَّنَّ لَا يُغْنٖي مِنَ
الْحَقِّ شَيْـًٔا ﴿٢٨﴾

**27, 28- "Şüphesiz ahirete iman etmeyenler, meleklere dişi isimleri veriyorlar. Halbuki onların bu hususta hiçbir bilgileri yoktur. Onlar, sadece zanna uyuyorlar. Şüphesiz zan, hakikat namına hiçbir şey ifade etmez."**

Bu adlandırma onlara aittir. Aslında onlar, bu adlandırmada ilim ve tahkike de uymamaktadırlar. Aksine bunu zanna dayalı olarak yapıyorlar. Zan ise hiçbir şey ifade etmemektedir.

فَاَعْرِضْ عَنْ مَنْ تَوَلّٰى عَنْ ذِكْرِنَا وَلَمْ يُرِدْ اِلَّا الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا ﴿٢٩﴾
ذٰلِكَ مَبْلَغُهُمْ مِنَ الْعِلْمِ اِنَّ رَبَّكَ هُوَ اَعْلَمُ بِمَنْ ضَلَّ عَنْ سَبٖيلِهٖ
وَهُوَ اَعْلَمُ بِمَنِ اهْتَدٰى ﴿٣٠﴾

**29, 30- "Öyleyse bizim zikrimizden yüz çeviren ve dünya hayatından başka bir şey istemeyen kimselerden yüz çevir. İşte onların ilimden ulaşabildikleri nokta! Şüphesiz senin Rabbin, yolundan sapanı daha iyi bilir. O, hidayete ereni de daha iyi bilir."**

Yani, Kur'ân'dan, ona iman etmekten ve manalarını düşünmekten yüz çevirip dünya hayatından başka bir şey istemeyen kimseden yüz çevir. Onların ilimden ulaşabildikleri seviye budur. Dünyadan hoşnut olmaları ise ahiret konusunu bilmemelerinden dolayıdır. Şüphesiz Rabbin, dalalete düşeni de hidayete ereni de bilir. Aynı zamanda O, her bir kimseye de hak ettiği cezayı verir.

وَلِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ لِيَجْزِيَ الَّذٖينَ اَسَٓاؤُ۫ا بِمَا
عَمِلُوا وَيَجْزِيَ الَّذٖينَ اَحْسَنُوا بِالْحُسْنٰى ﴿٣١﴾

31- "Göklerdeki her şey ve yerdeki her şey Allah'ındır. Bu, kötülük edenleri yaptıklarıyla cezalandırması, iyilik edenleri de daha güzeliyle mülâfatlandırması içindir."

Allah, kötülük yapanlara cezalarla karşılık verir. İyilik yapanları ise daha güzeliyle mülâfatlandırır.

اَلَّذٖينَ يَجْتَنِبُونَ كَبَٓائِرَ الْاِثْمِ وَالْفَوَاحِشَ اِلَّا اللَّمَمَ اِنَّ رَبَّكَ وَاسِعُ
الْمَغْفِرَةِ هُوَ اَعْلَمُ بِكُمْ اِذْ اَنْشَاَكُمْ مِنَ الْاَرْضِ وَاِذْ اَنْتُمْ اَجِنَّةٌ فٖي
بُطُونِ اُمَّهَاتِكُمْ فَلَا تُزَكُّٓوا اَنْفُسَكُمْ هُوَ اَعْلَمُ بِمَنِ اتَّقٰى ﴿٣٢﴾

32- "Onlar, ufak tefek kusurları dışında, büyük günahlardan ve çirkin işlerden uzak duran kimselerdir. Şüphesiz Rabbin, bağışlaması çok geniş olandır. Sizi topraktan yarattığında da, analarınızın karnında ceninler iken de en iyi bilendir. Bunun için kendinizi temize çıkarmayın. Çünkü O, kötülükten sakınanı en iyi bilendir."

Allah'ın emrine aykırı oldukları için bütün günahlar büyüktür. Ancak bazısı bazısından daha büyüktür. Bu arada şirkten daha büyük hiçbir günah yoktur. "الفواحش" lafzı ise günahlar demektir.

( اِلَّا اللَّمَمَ ) *"Ufak tefek kusurları dışında."*

Ayetteki ( اللَّمَم ) *"lemem- ufak tefek kusur"* lafzı konusunda tefsir alimleri söz söylemiş ve şöyle demişlerdir: "Bu, munkatı istisnadır. "Lemem" ise ne günah demektir ne de Allah'ın emrine aykırı hususlar cümlesindendir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır.

- Lemem, Allah'ın emrine aykırı şeyler cümlesindendir, ancak şüpheli olduğundan Allah onu bağışlayacağını bildirmiştir.

- Lemem, kişinin bu hatayı yaptıktan sonra tövbe ile onu bırakmasıdır.

- Seleften kimisi de şöyle demiştir: Lemem, kişinin bir defa zina yapıp sonra ona dönmemesidir. Sahibinin bir daha işlemediği içki, hırsızlık ve diğer günahlar da böyledir.

- Lemem, kişinin günaha niyetlendikten sonra onu işlememesidir.

- Lemem, yabancı kadına bakmaktır.

- Lemem, şer'i ceza gerektirmeyen ve namazlarla silinebilen günahlardır.

En sıhhatli görüş ise, bunun ayette munkatı istisna olması ve günahlar cümlesinden olmamasıdır.

( إِذْ أَنْشَأَكُمْ مِنَ الْأَرْضِ ) *"Sizi topraktan yarattığında."*

Yani Hz. Âdem'i yarattığın zaman.

Bir yoruma göre kendini temize çıkarmak kişinin, Allah'tan perdelenmiş olduğunun alametlerindendir. Çünkü gayeye doğru cezp edilen ve Rabbini müşahedede gark olan kimse, kendini temize çıkarmaz.

( هُوَ أَعْلَمُ بِمَنِ اتَّقٰى ) *"Çünkü O, kötülükten sakınanı en iyi bilendir."*

Çünkü O, sizi sizden daha iyi bilmektedir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Kim ki yeryüzünde kendisinden daha kötü biri olduğuna inanırsa o, kibirlenmiş kimsedir.

- Müslüman, her Müslüman'ı kendinden daha iyi görecek durumda olmalıdır. Bu çerçevede eğer bir yaşlı görürse: "Onun ibadeti benimkinden fazladır ve o, benden daha iyidir" der. Şayet bir genç görürse, şöyle der: "O, benden daha iyidir. Çünkü onun günahları benimkinden azdır."

اَفَرَاَيْتَ الَّذ۪ي تَوَلّٰى ﴿٣٣﴾ وَاَعْطٰى قَل۪يلًا وَاَكْدٰى ﴿٣٤﴾

33, 34- "Şimdi yüz çevireni ve pek az verip de kaskatı cimrileşeni gördün mü?"

Yani haktan yüz çevirip az sadaka vereni gördün mü? (أَكْدٰى) lafzı, kişinin, verdiğini kesmesi demektir.

اَعِنْدَهُ عِلْمُ الْغَيْبِ فَهُوَ يَرٰى ﴿٣٥﴾

35- "Gaybın ilmi kendi yanındadır da o görüyor mu?"

(فَهُوَ يَرٰى) *"O görüyor mu?"*

Yani o, bunun doğruluğunu mu biliyor? Bir yoruma göre bu, cihada az bir miktar yardım ettikten sonra bu yardımı kesen münafıktır.

(اَعِنْدَهُ عِلْمُ الْغَيْبِ) *"Gaybın ilmi kendi yanındadır mıdır?"*

Böylece o, ahiretteki halini mi görmektedir?

اَمْ لَمْ يُنَبَّاْ بِمَا ف۪ي صُحُفِ مُوسٰى ﴿٣٦﴾ وَاِبْرٰه۪يمَ الَّذ۪ي وَفّٰى ﴿٣٧﴾

36, 37- "Yoksa Mûsâ'nın ve yükümlülüklerini noksansız yerine getiren İbrahim'in sahifelerinde yer alanlar kendisine haber verilmedi mi?"

Yoksa Hz. Mûsâ'nın ve vefa gösteren yani şahsı, malı ve çocuklarıyla ilgili olarak yükümlü kılındığı hususları bütünüyle yerine getiren Hz. İbrahim'in sabifelerinde yer alanlar, bu kâfire haber verilmedi mi?

اَلَّا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِزْرَ اُخْرٰى ﴿٣٨﴾ وَاَنْ لَيْسَ لِلْاِنْسَانِ اِلَّا مَا سَعٰى ﴿٣٩﴾
وَاَنَّ سَعْيَهُ سَوْفَ يُرٰى ﴿٤٠﴾

38, 39, 40- "Hiçbir günahkâr, başkasının günah yükünü yüklenmez. İnsan için ancak çalıştığı vardır. Şüphesiz onun çalışması ileride görülecektir."

İnsanlar çabaları bakımından farklıdırlar. Şöyle ki çabası dünya arayışına dönük olanın pazarlığı zararla sonuçlanmış olur. Çabası cennet arayışına yönelik olan kimsenin pazarlığı karla sonuçlanmış olur. Çabası nefsini terbiye etmeye yönelik olan kimse, Allah'ın rızasına kavuşur. Çabası müridliğe dönük olan kimsenin ise Allah çabasını kabul eder, sonra da ona kendisine giden yolu gösterir.

Günahkâr olan kimseye gelince, onun da çabası bağışlanma arayışına ve kalbin, amel defterinin kararmasından duyduğu pişmanlığa yönelik olduğu zaman, gelecekte Allah'tan sevap, yakınlık ve değer bulacaktır.

Çabası Allah ile beraber olan nefeslerini saymaya dönük olup kusur işlemeye devam etmeyen ve hiçbir emri aksatmayan kimse ise hem dünyada hem de ahirette kabule mazhar olarak çabasının karşılığını görecektir. Sonra Allah, bu mealde kendisine vasıtasız olarak kelamını duyuracağı şu hitapla lütufta bulunacaktır:

*"Kulum! Senin çaban kabul edilmiştir ve günahın bağışlanmıştır."*

ثُمَّ يُجْزٰيهُ الْجَزَٓاءَ الْاَوْفٰى ﴿٤١﴾

41- "Sonra çalışmasının karşılığı kendisine tastamam verilecektir."

Bu en büyük, en yüce, kesilmeyen ve engellenmeyen karşılıktır.

وَاَنَّ اِلٰى رَبِّكَ الْمُنْتَهٰى ﴿٤٢﴾

42- "Şüphesiz en son varış Rabbinedir."

Dönüş ve son varış O'nadır. Bu itibarla eşya, yaratılış bakımından O'ndan başlamakta, sonu bakımından da O'na varmaktadır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Söz Allah'a vardığında susunuz.

- Kul, Allah'ı tanıma mertebesine ulaştığı zaman, artık onun ötesinde bir mal, bir kazanç veya bazı beklenti ve durumların

gerçekleşmesi gibi, kulların nasipleri olup Allah'ın kendi muradına göre icra ettiği birtakım lütuflardan başka bir şey yoktur.

وَاَنَّهُ هُوَ اَضْحَكَ وَاَبْكٰىۙ ﴿٤٣﴾

43- "Şüphesiz O, güldürür ve ağlatır."

Burada Allah, insanlar arasında adet haline gelmiş olan gülme ve ağlamayı kast etmiş olup bunları yaratan ve icra eden O'dur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, yeri bitkiyle güldürür, göğü de yağmurla ağlatır.

- Allah, cennet ehlini cennetle güldürür, cehennem ehlini de ateşle ağlatır.

- Allah, mümini ahirette güldürüp dünyada ağlatır. Kâfiri de dünyada güldürüp ahirette ağlatır.

- Allah, onları zahirde güldürür, kalpleriyle de ağlatır.

- Allah, ahirette mümini bağışlamasıyla güldürür, kâfiri de aşağılamasıyla ağlatır.

- Allah, ariflerin kalplerini rıza ile güldürür, gözlerini de ayrılık korkusuyla ağlatır.

- Allah, arifleri rahmetiyle güldürür, düşmanları da gazabıyla ağlatır.

وَاَنَّهُ هُوَ اَمَاتَ وَاَحْيَاۙ ﴿٤٤﴾

44- "Şüphesiz O, öldürür ve diriltir."

Allah, insanı dünyada öldürür, kabirde diriltir. Bu itibarla kabir ya rahat ya da azabı hissetmek içindir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, insanı dünyada öldürür, haşirde diriltir.

- Allah, zahidlerin nefislerini mücadeleyle öldürür, ariflerin kalplerini de müşahedeyle diriltir.

- Allah, onların nefislerini muamelelerle öldürür, kalplerini de vuslatla diriltir.

- Allah, kalpleri heybetle öldürür, ünsiyetle de diriltir.

- Allah kalpleri gizlenmeyle öldürür, tecelli ile de diriltir.

- Allah, kalpleri O'ndan yüz çevirmekle öldürür, O'na yönelmekle de diriltir.

- Allah kalpleri tâatla diriltir, günahla da öldürür.

وَاَنَّهُ خَلَقَ الزَّوْجَيْنِ الذَّكَرَ وَالْاُنْثٰى ﴿٤٥﴾ مِنْ نُطْفَةٍ اِذَا تُمْنٰى ﴿٤٦﴾

**45, 46- "Şüphesiz O, iki eşi; erkeği ve dişiyi, rahme atıldığında nutfeden yaratmıştır."**

Allah'ın, onları iki eş diye adlandırması, nutfeden yaratıldıklarında çift olmalarından ötürüdür.

وَاَنَّ عَلَيْهِ النَّشْاَةَ الْاُخْرٰى ﴿٤٧﴾

**47- "Şüphesiz tekrar diriltmek de O'na aittir."**

وَاَنَّهُ هُوَ اَغْنٰى وَاَقْنٰى ﴿٤٨﴾

**48- "Şüphesiz O, başkalarına muhtaç olmaktan kurtardı ve varlık sahibi kıldı."**

Yani Allah zenginlik verdi ve malı çoğalttı. Bir görüşe göre de insanı mala muhtaç kıldı. Bu takdirde ayet: "Şüphesiz zenginlik ve fakirliği O yarattı" anlamındadır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Yani Allah insanı, kendisine verdiği şeylerle hoşnut kıldı.

- Allah insanı, kanaat sahibi ve hoşnut kıldı.

وَاَنَّهُ هُوَ رَبُّ الشِّعْرٰى ﴿٤٩﴾

49- "Şüphesiz Şi'râ yıldızının Rabbi de O'dur."

Şi'râ, şiddetli sıcakta ikizler burcundan sonra doğan bir yıldız olup Huzaa kabilesi ona tapıyordu. Bu nedenle Allah, kendisinin bu mabutlarının da Rabbi olduğunu bildirmiştir.

وَاَنَّهُٓ اَهْلَكَ عَادًا الْاُو۫لٰى ﴿٥٠﴾ وَثَمُودَا۬ فَمَٓا اَبْقٰى ﴿٥١﴾ وَقَوْمَ نُوحٍ مِنْ
قَبْلُ اِنَّهُمْ كَانُوا هُمْ اَظْلَمَ وَاَطْغٰى ﴿٥١﴾

50, 51, 52- "Şüphesiz O, önce gelen Âd kavmini ve Semûd kavmini helak etti ve hiç kimseyi bırakmadı. Daha önce de Nûh'un kavmini helak etmişti. Şüphesiz onlar, daha zalim ve daha azgın kimselerdi."

Daha önce gelen Âd kavmi, Hz. Hûd'un kavmidir. Diğer Âd ise, direkleri olan İrem şehrinin sahipleridir. Aynı zamanda Semûd'u da helak edip onlardan kimse bırakmadı. Onlardan önce de, ömürlerinin uzun ve bedenlerinin daha güçlü olması sebebiyle diğerlerinden daha zalim ve daha azgın olan Nûh kavmini helak etti.

وَالْمُؤْتَفِكَةَ اَهْوٰى ﴿٥٣﴾ فَغَشّٰيهَا مَا غَشّٰى ﴿٥٤﴾

53, 54- "O, alt üst olmuş şehirleri de kaldırıp yere çarptı ve onların başına getireceği azabı getirdi."

Yani yerine dibine batırılan şehirleri böyle yaptı. Bunlar, Lût kavminin şehirleri olup Hz. Cibril onları ters yüz etmiş, böylece alt üst olmuşlardır. Yani Allah, o şehirleri kökünden kopardıktan sonra yere indirdi, sonra da onları ters yüz edip yere çarptı. Böylece onların başına getireceği azabı getirmiş oldu.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكَ تَتَمَارٰى ﴿٥٥﴾

55- "O halde Rabbinin nimetlerinin hangisinden şüphe ediyorsun?"

Ey insan! O halde sen, Rabbinin nimetlerinin hangisinden şüpheye düşüyorsun? Bu arada Allah, bunu onlara olan lütuflarını ve iyiliğini sıraladıktan sonra ifade etmiştir.

هٰذَا نَذ۪يرٌ مِنَ النُّذُرِ الْاُو۫لٰى ﴿٥٦﴾

56- "Bu da önceki uyarıcılardan bir uyarıcıdır."

Bu uyarıcı Muhammed (s.a.v.) olup biz, diğer peygamberleri gönderdiğimiz gibi onu da bir uyarıcı olarak gönderdik.

اَزِفَتِ الْاٰزِفَةُ ﴿٥٧﴾ لَيْسَ لَهَا مِنْ دُونِ اللّٰهِ كَاشِفَةٌ ﴿٥٨﴾

57, 58- "Yaklaşmakta olan yaklaştı. Onu, Allah'tan başka açacak yoktur."

Yani Kıyamet yaklaştı. Allah'tan başka da onu koparmaya hiç kimsenin gücü yetmez. Allah onu kopardığı zaman ise Allah'tan başka onu geri çevirip açığa çıkarmaya kimsenin gücü yetmez.

Bir yoruma göre de bu taifenin kıyameti bugün koptuğu zaman, Allah'tan başka onu açığa çıkaracak kimse yoktur. Onların kıyameti ise günde birkaç defa kopmaktadır. Bu kıyamet hicran, uzaklık ve ayrılıkla kopar.

اَفَمِنْ هٰذَا الْحَد۪يثِ تَعْجَبُونَ ﴿٥٩﴾ وَتَضْحَكُونَ وَلَا تَبْكُونَ ﴿٦٠﴾

59, 60- "Şimdi siz, bu söze mi şaşıyorsunuz? Gülüyorsunuz da ağlamıyorsunuz."

Şimdi siz, bu Kur'ân'a mı şaşıp şüphe içinde oluyor ve alay ediyorsunuz?

وَاَنْتُمْ سَامِدُونَ ﴿٦١﴾

61- "Bir de siz, gaflet içinde oyalanıyorsunuz."

Yani eğleniyorsunuz.

فَاسْجُدُوا لِلّٰهِ وَاعْبُدُوا ﴿٦٢﴾

62- "Haydi Allah'a secde edin ve O'na kulluk edin."

Hadi Allah'a secde edin ve O'ndan başkasına kulluk etmeyin.

سورة القمر

# KAMER SÛRESİ

(Kamer Sûresi 55 âyettir. Mekke'de inmiştir. 32, 44-46. âyetlerin Medine'de indiği rivayet edilmiştir. İlk âyette ayın yarılmasından söz edildiği için, sûreye "Kamer (Ay)" adı verilmiştir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", Allah'ın, kendisiyle kalpleri ve gözleri aydınlattığı bir kelime olup onu bilmekle ruhların ve sırların sevinci gerçekleşir. Aynı zamanda bu kelime Allah'ın, vasıflarına liyakati olan celalini ifade eder. O, Allah'ın lütuflarının son sınırı olan sıfatını ifade eder.

اِقْتَرَبَتِ السَّاعَةُ وَانْشَقَّ الْقَمَرُ ﴿١﴾

1- "Kıyamet yaklaştı ve ay yarıldı."

Tefsir âlimleri ayın, Hz. Peygamber (s.a.v.) döneminde yarıldığı konusunda görüş birliği içindedirler. İbn Mes'ûd: *"Ben, Haira'yı ayın iki parçası arasında gördüm"* demiş ve bu konuda kendisine muhalefet eden kimse olmamıştır. Nitekim Enes, İbn Ömer, Huzeyfe, İbn Abbâs ve Cubeyr b. Mut'im; bütün bunlar bu hadisi rivayet etmişlerdir. Bu olayda iki yönden mucize vardır: Biri, bunu görenlerin olmasıdır. İkincisi, bunun birilerine de gizli kalmasıdır. Çünkü normal

olarak böyle bir olay gizli kalmaz. Bu nedenle gizli kalması olağanüstü bir durumdur.

Bu arada Mekkeliler de bunu gördüler ve: "Şüphesiz Muhammed, aya büyü yapmış" dediler.

( اِقْتَرَبَتِ السَّاعَةُ ) *"Kıyamet yaklaştı."*

Yani, geçen zamana oranla kıyamete sadece az bir zaman kaldı.

وَاِنْ يَرَوْا اٰيَةً يُعْرِضُوا وَيَقُولُوا سِحْرٌ مُسْتَمِرٌّ ﴿٢﴾ وَكَذَّبُوا وَاتَّبَعُٓوا اَهْوَٓاءَهُمْ وَكُلُّ اَمْرٍ مُسْتَقِرٌّ ﴿٣﴾

2, 3- "Onlar, bir mucize görseler yüz çevirirler ve: 'Süregelen bir sihirdir' derler. Peygamberi yalanladılar, nefislerinin arzularına uydular. Halbuki her iş gerçekleşecektir."

Yani Mekke halkı, bir mucize gördükleri zaman ona bakmaktan yüz çevirirlerdi. Oysa eğer baksalardı, zorunlu olarak bilgi sahibi olacaklardı.

( سِحْرٌ مُسْتَمِرٌّ ) *"Süregelen bir sihirdir."*

Yani o devamlı, güçlü ve ağır bir büyüdür. Bir yoruma göre de onlar: "Bu, kalıcı süresi olmayan geçici bir büyüdür" dediler.

( وَكَذَّبُوا وَاتَّبَعُٓوا اَهْوَٓاءَهُمْ ) *"Peygamberi yalanladılar, nefislerinin arzularına uydular."*

Yalanlama ve nefsin arzusuna uymak, birbirine yakın iki husustur. Bu nedenle nefsin arzusuna uymak gerçekleştiği zaman, onun uğursuzluğundan yalanlama da gerçekleşir. Çünkü Allah, nefsinin arzusuna uyanın kalbini şaşırtır ve sonunda o, doğruyu görmemiş olur. Allah'ın rızasına uymak ise tasdikle yan yanadır. Çünkü hakka uymanın bereketiyle Allah basiret gözünü açar ve böylece tasdik gerçekleşmiş olur.

Bir de hakkında taksimat ve takdir kesinleşen her husus, zorunlu olarak kendisiyle ilgili takdire ve taksime göre gerçekleşir.

( وَكُلُّ اَمْرٍ مُسْتَقِرٌّ ) *"Halbuki her iş gerçekleşecektir."*

Müminin ameli gerçekleşir ve ona cenneti sağlar. Kâfirin de ameli gerçekleşir ve cezalandırılır.

وَلَقَدْ جَٓاءَهُمْ مِنَ الْاَنْبَٓاءِ مَا فِيهِ مُزْدَجَرٌ ﴿٤﴾ حِكْمَةٌ بَالِغَةٌ فَمَا تُغْنِ النُّذُرُ ﴿٥﴾

4, 5- "Andolsun, onlara içinde caydırıcı uyarıların bulunduğu haberler geldi. Bu haberler, zirveye ulaşmış birer hikmettir. Fakat uyarılar fayda vermiyor."

Onlara, kendilerinden önceki peygamberlerin, ümmetlerin ve zamanların caydırıcı nitelikte haberleri geldi. Lakin Allah (c.c.), gözlerinin üzerine cehalet perdelerini indirdi de onlar, rüşt noktalarını göremediler.

( حِكْمَةٌ بَالِغَةٌ ) *"Bu haberler, zirveye ulaşmış birer hikmettir."*

Ayetteki ( حِكْمَة بالِغَة ) tabiri, ( ما فِيهِ مُزْدَجَرٌ ) ifadesindeki ( ما ) lafzının bedelidir.

Zirveye ulaşmış birer hikmet, hakkında fikir yürüten için doğru, açık ve besbelli olan hikmettir.

( فَمَا تُغْنِ النُّذُرُ ) *"Fakat uyarılar fayda vermiyor."*

Haklarında ezeli takdir mutsuzluk şeklinde gerçekleşmiş iken uyarıcının uyarısı ne fayda verir!

فَتَوَلَّ عَنْهُمْ يَوْمَ يَدْعُ الدَّاعِ اِلٰى شَيْءٍ نُكُرٍ ﴿٦﴾ خُشَّعًا اَبْصَارُهُمْ يَخْرُجُونَ مِنَ الْاَجْدَاثِ كَاَنَّهُمْ جَرَادٌ مُنْتَشِرٌ ﴿٧﴾

6, 7- "O halde sen de onlardan yüz çevir. Onlar, o davetçinin bilinmedik bir şeye çağırdığı gün, gözleri düşmüş bir halde dağılmış çekirgeler gibi kabirlerden çıkarlar."

( فَتَوَلَّ عَنْهُمْ ) *"O halde sen de onlardan yüz çevir."*

Cümlenin tamamlandığı yer burasıdır. Bu yüz çevirme emri, savaş emrinden öncedir. Sonra söze: ( يَوْمَ يَدْعُ الدَّاعِ اِلٰى شَيْءٍ نُكُرٍ ) *"Onlar, o davetçinin bilinmedik bir şeye çağırdığı gün"* ifadesiyle yeniden başlanmıştır. Bu sözün tamlayıcısı ise: ( يَخْرُجُونَ مِنَ الْاَجْدَاثِ ) *"Kabirlerden çıkarlar"* ifadesidir. Günden maksat ise kıyamet günüdür.

( نُكُرٍ ) lafzından maksat, korkunçluğu ve dehşeti sebebiyle nefret ettikleri şeydir. Bu şey ise öldükten sonra dirilmek ve haşirdir.

( خُشَّعًا ) lafzı ise hal olmak üzere mansuptur. Yani onlar, bulundukları kabirlerden gözleri korkarak çıkarlar.

( كَاَنَّهُمْ جَرَادٌ مُنْتَشِرٌ ) *"Onlar, dağılmış çekirgeler gibidirler."*

Onlar, çok ve dağınık olmalarından dolayı çekirgeler gibidirler.

مُهْطِعِينَ اِلَى الدَّاعِ يَقُولُ الْكَافِرُونَ هٰذَا يَوْمٌ عَسِرٌ ﴿٨﴾

8- "Davetçiye doğru koşarlarken kâfirler: 'Bu, zor bir gün' derler."

Çağırıcıya sürekli bakarlar. Çağırıcı ise Hz. İsrâfil'dir.

( يَقُولُ الْكَافِرُونَ هٰذَا يَوْمٌ عَسِرٌ ) *"Kâfirler: 'Bu, zor bir gün' derler."*

Çünkü o gün sıkıntılar peş peşe gelir.

كَذَّبَتْ قَبْلَهُمْ قَوْمُ نُوحٍ فَكَذَّبُوا عَبْدَنَا وَقَالُوا مَجْنُونٌ وَازْدُجِرَ ﴿٩﴾
فَدَعَا رَبَّهُۥٓ اَنِّي مَغْلُوبٌ فَانْتَصِرْ ﴿١٠﴾ فَفَتَحْنَٓا اَبْوَابَ السَّمَٓاءِ بِمَٓاءٍ
مُنْهَمِرٍ ﴿١١﴾ وَفَجَّرْنَا الْاَرْضَ عُيُونًا فَالْتَقَى الْمَٓاءُ عَلٰٓى اَمْرٍ قَدْ قُدِرَ ﴿١٢﴾

9, 10, 11, 12- "Onlardan önce Nûh'un kavmi de yalanlamıştı. Onlar, kulumuzu yalanlayıp: 'Bu, bir delidir' dediler ve kulumuz alıkonuldu. O da Rabbine: 'Ey Rabbim! Ben yenilgiye uğradım, yardım et' diye dua etti. Biz de göğün kapılarını dökülürcesine yağan bir yağmurla açtık. Yeryüzünü pınar pınar fışkırttık. Derken sular takdir edilmiş bir iş için birleşti."

Hz. Nûh'un kavmi, peygamberlerini yalanladılar ve: "Şüphesiz o delidir" diyerek onu azarlayıp kendisine sövdüler.

Bir iddiaya göre ( اُزْدُجِرَ ) lafzı, aklı başından uçtu demektir. Yani Hz. Nûh'un kavmi, ona bunu söylediler.

Bunun üzerine Hz. Nûh Rabbine dua ederek : ( اَنِّي مَغْلُوبٌ ) *"Ben yenilgiye uğradım"* dedi. Yani ben, kavmimin bana tasallut etmesi sebebiyle yenilgiye uğradım. O halde Hz. Nûh, delille yenilmedi. Çünkü delil onların aleyhinde idi. Bu nedenle Hz. Nûh: "Allah'ım! Onlardan intikam al!" dedi.

Biz de göğün kapılarını dökülürcesine yağan bir yağmurla açtık ve su ile pınarlar yardık. Böylece gök suyu ile yer suyu, Levh-i Mahfuz'da takdir edilmiş bir iş için birleşti ve onların helak edilmesine karar verildi.

Tefsirlerde yer verildiğine göre yerden çıkan su çekildi. Gökten inen su ise bugünkü buhardır.

وَحَمَلْنَاهُ عَلٰى ذَاتِ اَلْوَاحٍ وَدُسُرٍ ﴿١٣﴾

13- "Biz Nûh'u çivilerle perçinli levhalardan oluşan gemiye bindirdik."

Yani biz Nûh'u levhaları ve çivileri olan gemiye bindirdik.

تَجْرِي بِاَعْيُنِنَا جَزَٓاءً لِمَنْ كَانَ كُفِرَ ﴿١٤﴾

14- "Gemi, inkâr edilen kimseye bir mükâfat olarak gözümüz önünde yüzüyordu."

Yani gözetimimiz altında yüzüyordu. Bir görüşe göre de bizim dostlarımızla yüzüyordu.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Gemi, onu korumakla görevlendirdiğimiz meleklerimizin gözleri önünde yüzüyordu.

- Gemi, yeryüzünden fışkırttığımız suyun pınarlarıyla yüzüyordu.

( جَزَٓاءً لِمَنْ كَانَ كُفِرَ ) *"İnkâr edilen kimseye bir mükâfat olarak."*

Yani Hz. Nûh'u inkâr edenlere ceza olarak.

وَلَقَدْ تَرَكْنَاهَٓا اٰيَةً فَهَلْ مِنْ مُدَّكِرٍ ﴿١٥﴾

15- "Andolsun, biz onu bir ibret olarak bıraktık. Var mı düşünüp öğüt alan?"

Biz, geminin durumunu ondan ibret alacak olan herkes için apaçık bir alamet kıldık.

( فَهَلْ مِنْ مُدَّكِرٍ ) *"Var mı düşünüp öğüt alan?"*

Yani içinizde var mı ibret alacak olan? Allah, onlara gemiden ibret almalarını emretmiştir.

فَكَيْفَ كَانَ عَذَابِي وَنُذُرِ ﴿١٦﴾

16- "Benim azabım ve uyarılarım nasılmış?"

Allah bunu, emrinin büyüklüğünü ifade etmek üzere söylemiştir.

Nitekim O, Hz. Nûh kıssasını en fasih bir açıklama, en veciz bir ifade ve en mükemmel bir mana ile anlatmıştır. Bu arada Hz. Nûh, peygamberler içerisinde ömrü en uzun ve belası en şiddetli peygamber idi.

Sonra Allah, Hz. Nûh'u kurtarınca kavminin helak olmasından sonra ona ve çocuklarına faydalı uzun ömür verdi. Bu nedenle yeryüzünde bulunan herkes, Hz. Nûh'un çocuklarındandır. Bu örnekte ayrıca din ehlinin ümidini güçlendiren bir özellik vardır. Onlar, Allah'ın dini uğrunda bir sıkıntıyla karşılaştıkları zaman şüphesiz Allah, yakın zamanda düşmanlarını helak eder ve kendilerini onların yerlerine ve yurtlarına hâkim, onlara ait şeylere de vâris kılar.

Hz. Mûsâ'nın Firavun ve kavmiyle olan kıssası da böyledir. Bu arada Allah'ın, dalalet ehlinin tamamıyla ilgili prensibi, kendisine düşman olanları yok ettikten sonra dostlarını aziz kılmaktır.

وَلَقَدْ يَسَّرْنَا الْقُرْاٰنَ لِلذِّكْرِ فَهَلْ مِنْ مُدَّكِرٍ ﴿١٧﴾

17- "Andolsun biz, Kur'ân'ı düşünüp öğüt almak için kolaylaştırdık. Var mı düşünüp öğüt alan?"

Biz, onun insanların diliyle okunmasını, kimilerinin kalplerine bilinmesini, kimilerinin kalplerine anlaşılmasını, kimilerinin kalplerine de ezberlenmesini kolaylaştırdık. Bunların tamamı Kur'ân ehlidir. Yine onların tamamı, Allah ehli ve O'nun has kullarıdır.

Bir yoruma göre de Allah, bazılarının ruhlarını henüz bedenlerine koymadan önce Kur'ân'la keşfe mazhar kılmıştır.

Şimdi bizimle insan arasında gerçekleşen bu ahdi düşünüp öğüt alan var mı?

كَذَّبَتْ عَادٌ فَكَيْفَ كَانَ عَذَابِي وَنُذُرِ ﴿١٨﴾ اِنَّٓا اَرْسَلْنَا عَلَيْهِمْ رِيحًا
صَرْصَرًا فِي يَوْمِ نَحْسٍ مُسْتَمِرٍّ ﴿١٩﴾ تَنْزِعُ النَّاسَ كَاَنَّهُمْ اَعْجَازُ
نَخْلٍ مُنْقَعِرٍ ﴿٢٠﴾

18, 19, 20- "Âd kavmi de yalanladı. Azabım ve uyarılarım nasılmış? Biz, onların üstüne uğursuzluğu sürekli bir günde gürültülü ve dondurucu bir rüzgâr gönderdik. İnsanları köklerinden sökülmüş hurma kütükleri gibi kaldırıp atıyordu."

Onlar Hz. Hûd'u yalanladılar. Bunun üzerine biz de üzerlerine gürültülü ve dondurucu yani soğuk, şiddetli esen ve sesi duyulan bir rüzgâr gönderdik.

( فِي يَوْمِ نَحْسٍ مُسْتَمِرٍّ ) *"Uğursuzluğu sürekli bir günde."*

Yani biz bu rüzgârı üzerlerine, içinde azaplarının devam ettiği uğursuz bir günde gönderdik. Bu durum, onlarda sekiz gün yedi

gece devam etti. Bir iddiaya göre de uğursuzluğu sürekli olan bu günün rüzgârları, insanları kazdıkları çukurlardan söküp atıyordu. O kadar ki onlar, kesik hurma ağaçlarının kütükleri gibi oldular. Diğer bir iddiaya göre ise rüzgâr kafalarını omuzlarının arasından koparıyor, sonra da başları kesilmiş hurma ağaçlarının gövdeleri gibi onları fırlatıp atıyordu.

فَكَيْفَ كَانَ عَذَابِي وَنُذُرِ ٢١

21- "Azabım ve uyarılarım nasılmış?"

وَلَقَدْ يَسَّرْنَا الْقُرْاٰنَ لِلذِّكْرِ فَهَلْ مِنْ مُدَّكِرٍ ٢٢

22- "Andolsun biz, Kur'ân'ı düşünüp öğüt almak için kolaylaştırdık. Var mı düşünüp öğüt alan?"

Onun okunup ezberlenmesini kolaylaştırdık. Bu nedenle Kur'ân'dan başka Allah'ın hiçbir kitabı açıktan okunmamaktadır.

كَذَّبَتْ ثَمُودُ بِالنُّذُرِ ٢٣ فَقَالُوٓا اَبَشَرًا مِنَّا وَاحِدًا نَتَّبِعُهُٓ اِنَّٓا
اِذًا لَفِي ضَلَالٍ وَسُعُرٍ ٢٤ ءَاُلْقِيَ الذِّكْرُ عَلَيْهِ مِنْ بَيْنِنَا بَلْ
هُوَ كَذَّابٌ اَشِرٌ ٢٥ سَيَعْلَمُونَ غَدًا مَنِ الْكَذَّابُ الْاَشِرُ ٢٦
اِنَّا مُرْسِلُوا النَّاقَةِ فِتْنَةً لَهُمْ فَارْتَقِبْهُمْ وَاصْطَبِرْ ٢٧ وَنَبِّئْهُمْ
اَنَّ الْمَٓاءَ قِسْمَةٌ بَيْنَهُمْ كُلُّ شِرْبٍ مُحْتَضَرٌ ٢٨ فَنَادَوْا
صَاحِبَهُمْ فَتَعَاطٰى فَعَقَرَ ٢٩ فَكَيْفَ كَانَ عَذَابِي وَنُذُرِ ٣٠
اِنَّٓا اَرْسَلْنَا عَلَيْهِمْ صَيْحَةً وَاحِدَةً فَكَانُوا كَهَشِيمِ الْمُحْتَظِرِ ٣١

23, 24, 25, 26, 27, 28, 29, 30, 31- "Semûd kavmi de uyarıcıları yalanlamış ve şöyle demişlerdi: 'İçimizden bir insana mı uyacağız? Asıl o takdirde biz apaçık bir sapıklık ve delilik içine düşmüş

oluruz. Bizim aramızdan vahiy ona mı verildi? Hayır o, yalancının, şımarığın biridir.' Onlar, yarın bilecekler kimmiş yalancı, kimmiş şımarık! Şüphesiz biz, onlara bir imtihan olmak üzere o dişi deveyi göndereceğiz. Şimdi onları gözetle ve sabret. Onlara, suyun kendileri arasında paylaştırıldığını bildir. Her su nöbetinde sahibi hazır bulunsun. Derken arkadaşlarını çağırdılar. O da işe koyuldu ve deveyi kesti. Fakat azabım ve uyarılarım nasılmış! Şüphesiz biz, onların üzerine tek bir korkunç ses gönderdik de onlar, ağıldaki hayvanların çiğneyip ufaladıkları kuru çöpler gibi oldular."

Onlar Hz. Salih'in kavmidir. Bu konudaki ve onların deveyi kesmeleri olayıyla ilgili açıklama daha önce geçti. Nihayet Allah, onların üzerine, helake yol açan bir ses gönderdi ve kendilerini kuru bitkiye çevirdi.

( الْمُحْتَظِرِ ) lafzı, ağıla konulan veya ağılda bulunan demektir.

وَلَقَدْ يَسَّرْنَا الْقُرْاٰنَ لِلذِّكْرِ فَهَلْ مِنْ مُدَّكِرٍ ﴿٣٢﴾

32- "Andolsun biz, Kur'ân'ı düşünüp öğüt almak için kolaylaştırdık. Var mı düşünüp öğüt alan?"

كَذَّبَتْ قَوْمُ لُوطٍ بِالنُّذُرِ ﴿٣٣﴾

33- "Lût kavmi de uyarıcıları yalanladı."

اِنَّٓا اَرْسَلْنَا عَلَيْهِمْ حَاصِبًا اِلَّٓا اٰلَ لُوطٍ نَجَّيْنَاهُمْ بِسَحَرٍ ﴿٣٤﴾ نِعْمَةً
مِنْ عِنْدِنَا كَذٰلِكَ نَجْزِي مَنْ شَكَرَ ﴿٣٥﴾

34, 35- "Şüphesiz biz de üzerlerine taşlar savuran bir rüzgâr gönderdik. Yalnız Lût'un ailesi başka. Katımızdan bir nimet olarak bir seher vakti onları kurtardık. Şükredenleri işte böyle mükâfatlandırırız."

Biz de onların üzerine kendilerine atılan taşlar gönderdik.

(كَذٰلِكَ نَجْزِي مَنْ شَكَرَ) *"Şükredenleri işte böyle mükâfatlandırırız."*

Yani biz, onların kurtuluşunu düşmanlarının helakine bağlı kıldık. İşte biz, şükreden kimseyi böyle mükâfatlandırırız. Nimetimize karşılık şükreden kimseye biz böyle muamele ederiz. Bir de musibetlerin defedilmesi şeklindeki nimetlerine karşı yapılan şükür, menfaat nimetlerine karşı yapılan şükürden daha tamdır. Bunu da sadece muvaffak kılınmış zeki kimse bilir.

وَلَقَدْ اَنْذَرَهُمْ بَطْشَتَنَا فَتَمَارَوْا بِالنُّذُرِ ﴿٣٦﴾

36- "Andolsun, Lût onları bizim şiddetli azabımızla uyardı. Fakat onlar, bu uyarıları kuşkuyla karşıladılar."

وَلَقَدْ رَاوَدُوهُ عَنْ ضَيْفِهِ فَطَمَسْنَا اَعْيُنَهُمْ فَذُوقُوا عَذَابِي وَنُذُرِ ﴿٣٧﴾

37- "Andolsun onlar, onun misafirlerinden nefislerindeki kötü arzuları tatmin etmek istediler. Biz de onların gözlerini silme kör ettik. 'Haydi, azabımı ve uyarılarımı tadın!' dedik."

Hz. Cibril gelip kanadını gözlerine sürünce kör oldular ve nasıl çıkacaklarını bilemediler. İşte böylece Allah, dostları ile ilgili prensibini, düşmanlarının kalplerini işlemez hale getirmek şeklinde koymuştur ki dostlarına nasıl eziyet ettiklerini ve onları kendilerinin tuzağından nasıl kurtardığını anlamamış olsunlar.

وَلَقَدْ صَبَّحَهُمْ بُكْرَةً عَذَابٌ مُسْتَقِرٌّ ﴿٣٨﴾

38- "Andolsun, onlara sabahleyin erkenden kalıcı bir azap geldi."

فَذُوقُوا عَذَابِي وَنُذُرِ ﴿٣٩﴾

39- "'Haydi azabımı ve uyarılarımı tadın' dedik."

وَلَقَدْ يَسَّرْنَا الْقُرْاٰنَ لِلذِّكْرِ فَهَلْ مِنْ مُدَّكِرٍ ﴿٤٠﴾

40- "Andolsun biz, Kur'ân'ı düşünüp öğüt almak için kolaylaştırdık. Var mı düşünüp öğüt alan?"

وَلَقَدْ جَٓاءَ اٰلَ فِرْعَوْنَ النُّذُرُ ﴿٤١﴾

41- "And olsun, Firavun'un ailesine de uyarıcılar gelmişti."

كَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا كُلِّهَا فَاَخَذْنَاهُمْ اَخْذَ عَز۪يزٍ مُقْتَدِرٍ ﴿٤٢﴾

42- "Bütün ayetlerimizi yalanladılar. Biz de onları mutlak güç ve iktidar sahibinin yakalaması gibi yakaladık."

اَكُفَّارُكُمْ خَيْرٌ مِنْ اُو۬لٰٓئِكُمْ اَمْ لَكُمْ بَرَٓاءَةٌ فِي الزُّبُرِ ﴿٤٣﴾

43- "Sizin kâfirleriniz onlardan daha mı hayırlı? Yoksa sizin için kitaplarda bir berat mı var?"

اَمْ يَقُولُونَ نَحْنُ جَم۪يعٌ مُنْتَصِرٌ ﴿٤٤﴾

44- "Yoksa onlar: 'Biz yardımlaşan bir topluluğuz mu' diyorlar?"

سَيُهْزَمُ الْجَمْعُ وَيُوَلُّونَ الدُّبُرَ ﴿٤٥﴾

45- "O topluluk, yakında bozguna uğrayacak ve arkalarını dönüp kaçacaklardır."

Allah, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) düşmanlarının başına bunu getireceğini haber vermiş ve bunu Bedir günü gerçekleştirmiştir. Böylece bu olay, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) mucizelerinden olmuştur.

بَلِ السَّاعَةُ مَوْعِدُهُمْ وَالسَّاعَةُ اَدْهٰى وَاَمَرُّ ﴿٤٦﴾

46- "Hayır, kıyamet onlara vaat edilen vakittir. Bir de kıyamet, daha büyük musibet ve daha acıdır."

إِنَّ الْمُجْرِمِينَ فِي ضَلَالٍ وَسُعُرٍ ﴿٤٧﴾

47- "Şüphesiz suçlular, sapıklık ve ateşler içindedirler."

يَوْمَ يُسْحَبُونَ فِي النَّارِ عَلَى وُجُوهِهِمْ ذُوقُوا مَسَّ سَقَرَ ﴿٤٨﴾

48- "Yüzüstü ateşe sürüklendikleri gün, kendilerine: 'Cehennemin dokunuşunu tadın!' denilecek."

Yüzüstü sürüklenmeleri, zelil kılındıklarının belirtisidir. Bu, bir kez dahi olsa yine büyük bir musibet olurdu. Şimdi o, ebedi ve sonsuz olduğuna göre acaba nasıl olur!

Bir de nasıl ki züllün belirtisi onların yüzlerinde ortaya çıkıyorsa, müminlerin aziz ve saygın kılınmalarının belirtisi de yine yüzlerinde ortaya çıkar. Nitekim Allah şöyle buyurmuştur.

( وُجُوهٌ يَوْمَئِذٍ نَاضِرَةٌ ) "*O gün birtakım yüzler aydındır.*" (Kıyâme, 75/22)

( تَعْرِفُ فِي وُجُوهِهِمْ نَضْرَةَ النَّعِيمِ ) "*O gün yüzlerinde nimetlerin sevincini görürsün.*" (Mutaffifîn, 83/24)

إِنَّا كُلَّ شَيْءٍ خَلَقْنَاهُ بِقَدَرٍ ﴿٤٩﴾

49- "Şüphesiz biz, her şeyi bir ölçüye göre yarattık."

Yani Levh-i Mahfuz'da yazılı olan ölçüye göre yarattık.

Bir yoruma göre de biz onu bildiğimiz, dilediğimiz ve bildirdiğimiz ölçüde yarattık.

وَمَا أَمْرُنَا إِلَّا وَاحِدَةٌ كَلَمْحٍ بِالْبَصَرِ ﴿٥٠﴾

50- "Emrimiz ancak bir tek emirdir. Göz kırpması gibidir."

Yani biz bir şey yaratmak istediğimiz zaman o, bize zor ve imkânsız gelmez. Ona: "Ol!" deriz, o da bizim kudretimizle hemen

oluverir. Bu durum, "ol" sözünün, bir şeyin yaratılışı esnasında yeniden söylenmesini gerektirmez. Lakin Allah'ın ezeldeki bu sözünün, kendisine ayrılan zamanda fiilen yaratılan şeye yönelik olarak da söylenmiş bir emir sözü olduğunu kabul etmeyi gerektirir.

(كَلَمْحٍ بِالْبَصَرِ) *"Göz kırpması gibidir."*

Yani nasıl ki sizdeki bu göz kırpma miktarı, sizin için bir zorluk teşkil etmiyorsa, bizim katımızda da durum aynıdır. Bir şey yaratmak istediğimiz zaman, ister az ister çok ister küçük ve ister büyük olsun, bize bir zorluk teşkil etmez.

وَلَقَدْ اَهْلَكْنَٓا اَشْيَاعَكُمْ فَهَلْ مِنْ مُدَّكِرٍ ﴿٥١﴾

51- "Andolsun, biz sizin gibileri hep helak ettik. Fakat var mı düşünüp öğüt alan?"

Yani biz, sizden önceki devirleri helak ettik. Onların da hepsi, tıpkı sizin gibi Âdemoğullarından idi.

وَكُلُّ شَيْءٍ فَعَلُوهُ فِي الزُّبُرِ ﴿٥٢﴾

52- "İşledikleri her şey ise, kitaplarda kayıtlıdır."

Her şey, kişi onu yapmadan önce Levh-i Mahfûz'da yazılıdır. Ayrıca bu, meleklerin sayfasında da yazılı olup bu amel defteri küçük, büyük hiçbir şey bırakmamış, hepsini sayıp dökmüştür.

وَكُلُّ صَغِيرٍ وَكَبِيرٍ مُسْتَطَرٌ ﴿٥٣﴾

53- "Küçük, büyük her şey satır satır yazılmıştır."

Yaratıklardan küçük, büyük her şeyi ölüm çürütür.

Bir yoruma göre de küçük ve büyük amellerin hepsi Levh-i Mahfûz'da ve meleklerin kayıt kütüğünde yazılıdır.

Bu arada, meleklerin yazdıkları hakkında insanlara bilgi vermek, korkutma amaçlıdır. Maksat, kulun hesaba çekilip sorumlu tutulacağını bildiği zaman hata işlemeye cesaret etmemesidir.

إِنَّ الْمُتَّقِينَ فِي جَنَّاتٍ وَنَهَرٍ ﴿٥٤﴾ فِي مَقْعَدِ صِدْقٍ عِنْدَ مَلِيكٍ
مُقْتَدِرٍ ﴿٥٥﴾

**54, 55- "Şüphesiz takva sahipleri, cennetlerde ırmak başlarındadırlar. Muktedir bir hükümdarın katında, doğruluk meclisindedirler."**

Onların bahçeleri ve nehirleri vardır. Çoğulun (takva sahiplerinin) karşısına çoğul (cennetler ve nehirler) konulduğu zaman, tekillerin (her bir takva sahibinin) karşısına da tekiller (birer cennet ve nehir) konulmuş olur.

Bu itibarla bu hitabın zahiri, takva sahiplerinden her birinin birer cenneti ve nehrinin olmasını gerektirir.

( عِنْدَ مَلِيكٍ مُقْتَدِرٍ ) *"Muktedir bir hükümdarın katında."*

Burada katında olmaktan maksat, O'na yakın olmaktır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Doğruluk meclisinden maksat doğruluğun yeridir. İbadetinde doğru olan ise arzuları gözetmeye ve karşılıkları kollamaya dayalı ibadet yapmayan kimsedir.

- Kim karşılıkları beklerse, arzular onu rezil eder. Kullukta dürüst davranan ise aşağılık amaçlardan kurtulmuş olur.

- Kim dünya ile meşgul olursa, dünya onu ahiretten alıkoyar. Kim de cennet nimetleri onu esir alırsa, hakikati yerine getirmekten alıkonulmuş olur. Hakikati yerine getiren kimsenin ise bütün kâinattan ilgisi kesilmiş olur.

سورة الرَّحْمٰنِ

# RAHMÂN SÛRESİ

(Rahmân Sûresi 78 âyettir. Mekke'de inmiştir. 32. âyeti Medine'de inmiştir. Adını, ilk âyetteki "Rahmân (Çok merhametli)" dan almıştır. Sûre, müşriklerin "Rahmân" nedir?, "Kur'an'ı ona ancak bir insan öğretiyor." (Nahl, 16/103) sözleri üzerine inmiştir. Burada insan ve cin topluluğu muhatap alınarak, rahmet sıfatından meydana gelen nimetler sayılır. Kara ve denizlerdeki nimetler yanında, göklere çıkmanın da mümkün olduğuna vurgu yapılır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

## Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla

(بِسْمِ اللّٰهِ) *"Allah'ın adıyla."*

Bu, Allah'ın izzet ve yüceliğini anlatmaktadır.

(رَّحْمَنِ ارَّحِيم) *"Rahmân ve Rahîm."*

Bu da Allah'ın lütuf ve rahmetini haber vermektedir.

Böylece Allah'ın yüceliğini görmekle ruhların sevinci kemale erer. Rahmetinin varlığıyla da maddî nimetler gerçekleşir. Nitekim eğer O'nun yüceliği olmasaydı, hiçbir abid Rahmân'a ibadet etmeyecekti. Şayet rahmeti olmasaydı, hiç kimse Rahmân'ı sevmeyecekti.

اَلرَّحْمٰنُۙ ﴿١﴾ عَلَّمَ الْقُرْاٰنَۜ ﴿٢﴾

1, 2- "Rahmân, Kur'ân'ı öğretti."

Yani tevhid ehlinin tanıdığı, kâfirlerin ise inkâr ettiği Rahmân'dır Kur'ân'ı öğreten.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Onlara Kur'ân'ı tanıtıp öğreten, kendilerine merhamet eden, kendilerini şirkten koruyan, kendilerine imanla iyilikte bulunan ve kendilerini takva sözüne bağlı kılan Rahmân'dır.

- Kur'ân'ı kullarına yalnızca Allah öğretmiştir.

- Allah, prensibini şöyle koymuştur: O, Peygamberimize (s.a.v.) bir şey verdiği zaman ümmetini de onların vasıflarına yakışır şekilde bu şeye ortak kılar. İşte bu nedenle Allah Hz. Peygamber'e (s.a.v.): ( وَعَلَّمَكَ مَا لَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ ) *"Daha önce bilmediğin şeyleri sana öğretti"* (Nisâ, 4/113) buyurunca ümmetine de: ( اَلرَّحْمٰنُ عَلَّمَ الْقُرْاٰنَ ) *"Rahmân Kur'ân'ı öğretti"* buyurmuştur.

- Allah, Hz. Âdem'e bütün isimleri öğrettikten sonra ona, bu isimleri meleklere sunmasını emretti. Hz. Âdem de bunu meleklere anlattı. Allah: "Ey Âdem! Onlara bunların isimlerini haber ver" buyurdu.

Bu arada Hz. Peygamber (s.a.v.) de Müslümanlara Kur'ân'ı öğreterek şöyle buyurdu:

*"Hiçbir namaz Fatihasız olmaz. Namaz kılan ise, Rabbine münacatta bulunmaktadır."*

Allah, Hz. Âdem'e: *"Sana öğrettiklerimi meleklere anlat"* derken bize: *"Ey kulum! Sana öğrettiklerimle bana münacatta bulun"* buyurmuştur. Nitekim bazen hizmetçilerin çocuklarına, babalarına gösterilmeyen nezaket gösterilir.

- Allah, Hz. Âdem'e yaratıkların isimlerini öğretince kendisine: *"Bunu meleklere anlat"* buyurdu. Bize de kelamını ve isimlerini öğreterek şöyle buyurdu: *"Bana kelamımı okuyun ve onunla bana hitap edin!"*

- Allah, ruhları cesetlerle birleştirmeden önce onlara vasıtasız olarak Kur'ân'ı öğretti. Nitekim çocuklara da onlar henüz küçük iken

Kur'ân öğretilir. Allah bize de henüz ruhlarımız kimseyi tanımadan ve biz kimseden bir şey duymadan isimlerini öğretti.

Şiir:

*Yakaladı beni sevdası ben sevdayı tanımadan önce*
*Boş buldu kalbimi ve yerleşti içine*

- Allah içinde bize Kur'ân öğretirken geçen günler mübarek olsun.

- Allah, rahmetiyle onlara Kur'ân öğretti. Böylece onlar, O'nun rahmetiyle Kur'ân'a ulaştılar, yoksa Kur'ân okumakla O'nun rahmetine ulaşıyor değillerdir.

خَلَقَ الْاِنْسَانَ ﴿٣﴾ عَلَّمَهُ الْبَيَانَ ﴿٤﴾

## 3, 4- "İnsanı yarattı. Ona açıklamayı öğretti."

Burada insandan maksat insanların cinsidir. Allah, onlara açıklamayı öğretti. Böylece onlar farklılaştılar. Yani açıklama özelliğiyle bütün canlılardan ayrıldılar. Bir de Allah her topluma kendisiyle konuşup birbirlerine hitap ettikleri dillerini öğretti. Beyan, kendisiyle manaların ortaya çıktığı şeydir. Beyan kavramının izahı ise usul meseleleri arasında yer almaktadır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Mekke halkı: "Muhammed'e sadece bir beşer öğretiyor" deyince Allah, onlara cevap vererek: "Aksine ona Allah öğretti" buyurdu. Bu görüşe göre ayette geçen insan Hz. Muhammed'dir (s.a.v.). Bir görüşe göre de Hz. Âdem'dir.

- İnsana genel olarak verilen açıklama özelliğiyle o, benzerleri ve hemcinslerinden ibaret olan başkalarıyla nasıl konuşacağını bilir. İman ve marifet ehline gelince, onların beyanı Mevlâlarıyla nasıl konuşacaklarını bilmeleridir.

Öte yandan kulların Allah ile olan beyanları da değişiktir. Bu çerçevede kimileri dilleriyle, kimileri nefesleriyle, kimileri de gözyaşlarıyla Allah'a hitap eder.

Şiir:

*Tercüman olur hislerine, gencin gözyaşları*
*Ve açığa çıkarır özlemleri sakladıklarını*

Kimileri de, iniltileri ve özlemleriyle Allah'a hitap ederler.

Şiir:
*De bana nefeslerin dilleriyle: Sen nasılsın ve nasıldır halin?*

اَلشَّمْسُ وَالْقَمَرُ بِحُسْبَانٍ ﴿٥﴾

5- "Güneş ve ay bir hesaba göre hareket etmektedir."

Yani güneşin ve ayın işleyişi belli bir çerçeve içinde gerçekleşmektedir. Bu çerçeve, gece ve gündüzün uzaması, ayın büyüyüp küçülmesiyle ilgili hesaptır. Aynı zamanda aylar, günler ve yıllar da bu ikisinin hareketleriyle bilinir. Aynı şekilde güneş ve ayın da miadı dolduğunda bir hesapları vardır. Bu çerçevede güneş dürülür, ay da sönüp kararır.

Bunun gibi, Allah'ın hikmeti dâhilinde, marifetlerin güneşinin ve ilimlerin aylarının da kalplerin ve sırların zirvesinde doğmasının belli bir hesabı vardır. Allah, o marifetleri ve ilimleri ezeldeki hükmüne göre yürütür.

وَالنَّجْمُ وَالشَّجَرُ يَسْجُدَانِ ﴿٦﴾

6- "Bitkiler ve ağaçlar secde ederler."

Bir yoruma göre, ( نَجْم ) gövdesiz bitki, ( شَجَر ) ise gövdesi olan ağaçtır. Bir yoruma göre de doğan yıldızlar ve sabit olan ağaçlar, celale liyakat sıfatıyla, yaratanın varlığına delalet eden secdeyi yaparlar.

وَالسَّمَآءَ رَفَعَهَا وَوَضَعَ الْمِيزَانَ ﴿٧﴾

7- "Allah, göğü yükseltti ve ölçüyü koydu."

Allah göğü yükseltti, onu mükemmel ve sağlam bir şekilde kurdu, yıldızları onda yaydı ve yürüttü, yanlarını düzensizlikten korudu, doğularını ve batılarını dilediği şekil üzere sabit kıldı. İnsanların arasında da aralarındaki muamelelerde adaleti gözetmeleri için ölçüyü yarattı.

Bir yoruma göre de ölçüden maksat adalettir.

اَلَّا تَطْغَوْا فِي الْمِيزَانِ ﴿٨﴾

8- "Ölçüde haddi aşmayınız diye."

Bütün işlerde; insanların haklarında ve Allah'ın haklarında adaleti koruyun. Böylece her şeyde adalet gözetilir, haksızlık ve haddi aşmak ise terk edilir. Bu çerçevede amellerde ihlas, hallerde doğruluk, nefeslerde ise hakikatler, içi dışı bir olmak ve yaranmayı, aldatmayı, komplo kurmayı, şirkin inceliklerini, münafıklığın gizliliklerini ve cinayetlerin kapalılıklarını terk etmek gözetilir.

وَاَقِيمُوا الْوَزْنَ بِالْقِسْطِ وَلَا تُخْسِرُوا الْمِيزَانَ ﴿٩﴾

9- "Tartıyı adaletle yapın, teraziyi eksik tutmayın."

Size ölçülmesini istediğiniz ölçüyle ve eksik ölçülmeden yiyecek ve içeceğinizi elde etmeyi umduğunuz şekilde ölçüp tartmayı gerçekleştirin.

وَالْاَرْضَ وَضَعَهَا لِلْاَنَامِ ﴿١٠﴾ فِيهَا فَاكِهَةٌ وَالنَّخْلُ ذَاتُ الْاَكْمَامِ ﴿١١﴾
وَالْحَبُّ ذُو الْعَصْفِ وَالرَّيْحَانُ ﴿١٢﴾

10, 11, 12- "Allah, yeri yaratıklar için var etti. Orada meyveler ve salkımlı hurma ağaçları vardır. Yapraklı taneler, hoş kokulu bitkiler vardır."

Allah, yeryüzünü yaratıp varlıklar için döşek ve barınak kıldı.

Bir yoruma göre de Allah, yeryüzünü suyun üzerine bırakarak etrafını yaydı, ağaçlarını ve çiçeklerini bitirdi, nehirlerini akıttı, gecesini karanlık, gündüzünü de aydınlık kıldı.

( فِيهَا فَاكِهَةٌ ) *"Orada meyveler... vardır."*

Yani onda renkleri, tatları, kokuları, faydaları, zararları, sıcaklıkları ve soğuklukları, taneleri, ağaçları, yaprakları ve çiçekleri bakımından değişik meyve çeşitleri bulunur.

( وَالنَّخْلُ ذَاتُ الْاَكْمَامِ ) *"Ve salkımlı hurma ağaçları vardır."*

Hurma ağaçlarının yenleri, lifleri ve onları örten yapraklarıdır.

( وَالْحَبُّ ) *"Taneler."*

Buğday, arpa, mercimek ve daha başka taneler vardır.

( ذُو الْعَصْفِ ) *"Yapraklı."*

( عَصْف ) lafzı, ekinin yaprağı demektir.

( وَالرَّيْحَانُ ) *"Hoş kokulu bitkiler vardır."*

( رَيْحان ) *"reyhan"* lafzı, güzel kokulu bitki demektir. Bir yoruma göre de rızık demektir. Çünkü Araplar: "Biz, Allah'ın reyhanını (rızkını) aramak üzere çıktık" derler.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿١٣﴾

13- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

O halde Rabbinizin hangi nimetlerini inkâr ediyorsunuz? ( آلاء ) lafzı, nimetler demektir.

Bu arada hitaptaki ikil ifade, cinlerin ve insanların mükellefleri içindir.

Bir yoruma göre de bu hitap tarzı, şu tür ifadelerde Arapların adetlerindendir: Ey dostlarım anlamında "ey iki dostum" ve durunuz anlamında "ikiniz durunuz" ve onu kovunuz anlamında "ikiniz onu kovunuz."

خَلَقَ الْاِنْسَانَ مِنْ صَلْصَالٍ كَالْفَخَّارِ ﴿١٤﴾

14- "Allah, insanı pişmiş çamur gibi bir balçıktan yarattı."

İnsandan amaç Hz. Âdem'dir. Balçık ise hareket ettirildiği zaman pişmiş çamur gibi ses çıkaran kuru çamurdur.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Kumla karışık çamur demektir.

- Değişime uğrayıp kokan demektir. Çünkü Araplar, ( صلّ ) ve ( أصلّ ) lafızlarını değişime uğramak anlamında kullanmaktadırlar.

وَخَلَقَ الْجَآنَّ مِنْ مَارِجٍ مِنْ نَارٍ ﴿١٥﴾

15- "Cini de yalın bir ateşten yarattı."

( مارِجٌ ) lafzı, cehennem vadisindeki karışık alev demektir.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿١٦﴾

16- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

Daha önce de geçtiği üzere Allah, cin ve insan türünden olan yaratıklara hatırlatmada bulunmaktadır. Bir de Allah bu ayeti, nimetleri ayrıntılı olarak tek tek ifade etmek üzere birkaç yerde tekrarlamıştır.

Hz. Âdem'in çamurdan yaratılmış olmasının nimet oluşu, Allah'ın, onu çamurdan yarattıktan sonra (peygamberlik) mertebesine yükseltmesi gerekçesiyledir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Hallerimizi beğenmememiz için Allah, Hz. Âdem'e de bize de kökenimizi hatırlatmıştır.

- Hz. Âdem'in, haddini aşmaması için Allah kendisine gücünü bildirmiştir.

رَبُّ الْمَشْرِقَيْنِ وَرَبُّ الْمَغْرِبَيْنِ ﴿١٧﴾ فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿١٨﴾

17, 18- "O, iki doğunun ve iki batının Rabbidir. O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

İki doğu, yaz doğusu ile kış doğusudur. Aynı şekilde iki batı da bu iki mevsimin batısıdır.

Bunun nimet oluşunun gerekçesi ise halkın onlardan tam yararlanabilmesi için bu iki mevsimin doğu ve batılarının aynı düzen içinde yürümesidir.

Bir yoruma göre de bunlar kalbin doğusu ve batısıdır. Kalbin doğuları ve batıları ise bir kısmının izahı daha önce geçen nurlar ve basiretlerdir.

مَرَجَ الْبَحْرَيْنِ يَلْتَقِيَانِ ﴿١٩﴾ بَيْنَهُمَا بَرْزَخٌ لَا يَبْغِيَانِ ﴿٢٠﴾

19, 20- "İki denizi birbirine kavuşmak üzere, salıvermiştir. Aralarında bir engel vardır. Birbirine geçip karışmazlar."

( بَرْزَخٌ ) lafzı, iki denizden birinin diğerine üstün gelmemesi için Allah'ın kudretiyle var olan bir engel demektir. İki denizden maksat ise tatlı su denizi ile tuzlu su denizidir.

Bir yoruma göre de bu iki deniz insanlara karşı azgınlaşıp onları boğmaz.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٢١﴾

21- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

يَخْرُجُ مِنْهُمَا اللُّؤْلُؤُ وَالْمَرْجَانُ ﴿٢٢﴾

22- "İkisinden de inci ve mercan çıkar."

( اللُّؤْلُؤُ ) *"Lü'lü"* büyük inci, mercan ise küçük incidir. Kimisine göre de mercan, nesil demektir. Ayetin işaret yorumu ise şöyledir:

Allah, kalplerde iki deniz yaratmıştır. Bunlardan biri korku denizi, diğeri ise ümit denizidir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bu iki deniz kabz ve basttır.

- Bu iki deniz heybet ve ünsiyettir. Kalplerden saf haller ve peş peşe gelen latifeler demek olan inci ve cevherler çıkar.

- İki deniz, nefse ve kalbe işarettir. Bu çerçevede kalp tatlı deniz, nefis de tuzlu denizdir. Kalbin denizinden pahalı her cevher ve latif her hal çıkar. Nefisten de her kötü ahlak çıkar. İnci ise iki denizden birinden çıkar. İkincisinden de kalptekilerce hiçbir değer verilmeyen timsahtan başka bir şey olmaz.

(بَيْنَهُمَا بَرْزَخٌ لَا يَبْغِيَانِ) *"Aralarında bir engel vardır. Birbirine geçip karışmazlar."*

Allah, bu iki denizden her birini diğerinden korur ve böylece birbirine geçip karışmazlar.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٢٣﴾

**23- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"**

وَلَهُ الْجَوَارِ الْمُنْشَاٰتُ فِي الْبَحْرِ كَالْاَعْلَامِ ﴿٢٤﴾

**24- "Denizde akıp giden dağlar gibi yüksek gemiler de O'nundur."**

(أعْلام) lafzı, dağlar demektir. Yani denizde inşa edilip meydana getirilen bu gemiler, yüksek dağlar gibidir.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٢٥﴾

**25- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"**

كُلُّ مَنْ عَلَيْهَا فَانٍ ﴿٢٦﴾ وَيَبْقٰى وَجْهُ رَبِّكَ ذُو الْجَلَالِ وَالْاِكْرَامِ ﴿٢٧﴾

26, 27- "Yeryüzünde bulunan her canlı yok olacaktır. Ancak yücelik ve ikram sahibi Rabbinin yüzü (zâtı) baki kalacaktır."

İmkan prensibi bakımından yeryüzündeki her canlı yok hükmündedir. Nakli delil bakımından ise dünya ve üzerindekiler yok olacak, ancak yücelik ve ikram sahibi Rabbinin zatı baki kalacaktır. Bu arada ayette yer alan ( وَجْه ) *"yüz"*, Allah'ın bir sıfatı olup akıl, onun kesinliğini değil, mümkün oluşunu öngörmektedir. Nakli delil ise kesin olduğu yönünde varit olmuştur.

Bir yoruma göre de yüzün baki kalışı, zâtın baki kalışı demektir. Çünkü sıfat, kendi başına var olamaz. Sıfatın şartı, ister istemez zât ile kaim olmasıdır. Özellikle yüzün zikredilmiş olmasının hikmeti ise onun dışındakilerin akılla bilinebilir olması, kendisinin ise akılla değil, sadece nakil ve rivayetlerle bilinebilmesidir.

( وَيَبْقٰى ) *"Baki kalacaktır."*

Allah'ın baki kalışında, her türlü kaybın telafisi ve Müslümanlar için başlarına gelen musibetler ve kaçırdıkları fırsatlar konusunda bir teselli vardır.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٢٨﴾

28- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

يَسْـَٔلُهُ مَنْ فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ كُلَّ يَوْمٍ هُوَ فِي شَأْنٍ ﴿٢٩﴾

29- "Göklerde ve yerde bulunan herkes, O'ndan ister. O, her an yeni bir tasarruftadır."

Göklerdekiler, hep bağışlanmayı talep ederler. Yeryüzündekiler de O'ndan rızık ve bağışlanma dilerler. Yani hiç kimse O'nsuz

edemez. Bu arada göklerde ve yerde O'ndan istemeyenler de vardır. Bunlar, haklarında şöyle söylenenlerdir:

*"Kim ki zikrim, onu benden istemekten alıkoyarsa kendisine, isteyenlere verdiklerimin en iyisini veririm."*

Bir yoruma göre de göklerdeki ve yeryüzündekilerin hepsi, Allah'tan göklerde ve yerde bulunan şeylerden istemezler. Lakin onların durumu, şu beyitte söylendiği gibidir.

*Vardır sevenler arasında öyle bir sır ki örtemez onu*
*Hiçbir söz ve anlatamaz onu halka hiçbir kalem*

(هُوَ فِي شَأْنٍ) *"O, her an yeni bir tasarruftadır."*

Bu tasarruf diriltmek, öldürmek, birilerine kabz, birilerine bast hali vermek ve bunun dışında yaratıkların çeşitli sınıfları ve onlar hakkında sıfatların değişmesi uygulamasıdır.

Ayette ayrıca Yahudilere cevap da vardır. Çünkü onlar: "Allah, cumartesi dinlenmekte ve bir şey yapmamaktadır" demişlerdi. Bunun üzerine Allah, kendisinin her an bir tasarrufta bulunduğunu bildirdi. Nitekim eğer Allah, kâinatı bir an bile korumasız bırakırsa, kâinat çöker ve işlemez hale gelir. Allah'ın tasarrufundan biri de günah bağışlamak, kusur örtmek, üzüntü gidermek, gönül almak, bir kulu uzaklaştırıp başka bir kulu yakınlaştırmak ve daha başka türlü fiiller icra etmektir. Ayrıca Allah'ın, kullarına her saat yeni bir iyiliği ve kuluyla arasında gözlerden uzak bir sırrı vardır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, her an mukadderatı vakitlerine sevk etme tasarrufu içindedir.

- Allah, her an kapalı bir durumu açığa çıkarma, açık bir durumu örtme, görünmeyeni görünür kılma ve görüneni görünmez kılma tasarrufu içindedir.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٣٠﴾

30- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

سَنَفْرُغُ لَكُمْ اَيُّهَا الثَّقَلَانِ ﴿٣١﴾

31- "Sizin de hesabınızı göreceğiz ey cinler ve insanlar!"

Yani kıyamet günü hesabınıza bakacağız. Ancak Allah için meşguliyet söz konusu olmayıp O, bundan yücedir. Yani sizin hesabınıza yöneleceğiz.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٣٢﴾

32- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

يَا مَعْشَرَ الْجِنِّ وَالْاِنْسِ اِنِ اسْتَطَعْتُمْ اَنْ تَنْفُذُوا مِنْ اَقْطَارِ السَّمٰوَاتِ
وَالْاَرْضِ فَانْفُذُوا لَا تَنْفُذُونَ اِلَّا بِسُلْطَانٍ ﴿٣٣﴾

33- "Ey cin ve insan toplulukları! Göklerin ve yerin uçlarından bucaklarından geçip gitmeye gücünüz yeterse geçip gidin. Büyük bir güç olmadıkça geçip gidemezsiniz."

Göklerin ve yerin uçları ve bucakları kenarlarıdır. Yani eğer siz Allah'ın mülkünün dışına çıkabiliyorsanız varın çıkınız.

Sonra Allah şöyle buyurdu:

(لَا تَنْفُذُونَ اِلَّا بِسُلْطَانٍ) *"Büyük bir güç olmadıkça geçip gidemezsiniz."*

Yani nereye varırsanız varın mutlaka orada benim hükümranlığım vardır. Hangi tarafa geçip giderseniz gidin, mutlaka orada karşınızda bir delil bulunur.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٣٤﴾

34- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

يُرْسَلُ عَلَيْكُمَا شُوَاظٌ مِنْ نَارٍ وَنُحَاسٌ فَلَا تَنْتَصِرَانِ ﴿٣٥﴾

35- "Üstünüze ateşten yalın bir alevle bakır eriyiği gönderilir de kendinizi koruyamazsınız."

Yani karşı koyamazsınız.

( شُواظ ) lafzı, ateşin dumansız alevi demektir. ( نُحاس ) ise bakır eriyiği demektir.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٣٦﴾

36- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

فَاِذَا انْشَقَّتِ السَّمَٓاءُ فَكَانَتْ وَرْدَةً كَالدِّهَانِ ﴿٣٧﴾

37- "Gök yarılıp da yanıp kızaran yağ gibi, kırmızı gül haline geldiği zaman."

Gök birbirinden ayrılıp kırmızı gül rengini alır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Göğün içinde kızaran yağlar gibi kırmızı yerler vardır. Bu arada ( دِهانٌ ) lafzı, ( دُهْن ) lafzını çoğuludur. Yani yağın çökeltisi gibi.

- Nasıl ki ilkbahar gelince gülün rengi önce sarıya çalıyor da gül olgunlaşınca kırmızılaşıyor, sonra da soluyorsa göğün durumu da böyledir, kıyamet günü renkten renge girer.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٣٨﴾

38- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

فَيَوْمَئِذٍ لَا يُسْـَٔلُ عَنْ ذَنْبِه۪ٓ اِنْسٌ وَلَا جَٓانٌّ ﴿٣٩﴾

39- "İşte o gün ne insana ne cine günahı sorulmayacak."

Yani, kıyametin bazı hallerinde onlara sorulur, bazı hallerinde de sorulmaz. Zira kıyamet günü uzundur.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- O gün onların birtakım alametleri olduğu için kâfirler için yüz karalığı ve göz maviliği, Müslümanlar için de yüz aklığı ve daha başka

alametler vardır. Böylece melekler, kim olduklarını sormaya ihtiyaç duymamış olurlar. Çünkü onlar herkesi simasından tanırlar.

- Onlara, lehlerinde olan değil, aleyhlerinde olan soru sorulur.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٤٠﴾

40- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

يُعْرَفُ الْمُجْرِمُونَ بِسِيمٰيهُمْ فَيُؤْخَذُ بِالنَّوَاصِي وَالْاَقْدَامِ ﴿٤١﴾

41- "Suçlular simalarından tanınır da perçemlerinden ve ayaklarından yakalanırlar."

Müminlerin el, ayak ve yüzleri bembeyazdır. Kâfirler ise kara yüzlü ve mavi gözlüdürler. Böylece melekler onları tanır ve perçemlerinden yakalayıp kendilerini kah perçemleriyle kah da ayaklarıyla yerde sürükler, sonra da cehenneme atarlar.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٤٢﴾

42- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

هٰذِهٖ جَهَنَّمُ الَّت۪ي يُكَذِّبُ بِهَا الْمُجْرِمُونَ ﴿٤٣﴾ يَطُوفُونَ بَيْنَهَا وَبَيْنَ
حَم۪يمٍ اٰنٍ ﴿٤٤﴾

43, 44- "İşte bu, suçluların yalanladıkları cehennemdir. Onlar, cehennem ateşi ile yüksek derecede kaynar su arasında gider gelirler."

Onlara: "İşte bu, sizin yalanladığınız cehennemdir" denir.

( حَم۪يمٌ ) lafzı, sıcak su, ( آنٍ ) lafzı da son derece kaynamış demektir.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٤٥﴾

45- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

وَلِمَنْ خَافَ مَقَامَ رَبِّهٖ جَنَّتَانِۚ ﴿٤٦﴾

46- "Rabbinin huzurunda duracağından korkan kimseye iki cennet vardır."

Bu konuda şu iki yorum yapılmıştır:

- Rabbinin kendisine yakın ve durumundan haberdar olmasından korkan kimseye iki cennet vardır.

- Yarın Allah'ın huzurunda durmaktan korkan kimseye iki cennet vardır. Burada iki cennet denilmiş olması, Arapların tekil anlamında tesniye -ikil- üslubunu kullanmaları kabilindendir. Ey dostum, anlamındaki ( خَلِيلَيَّ ) "ey iki dostum!" ve benzeri örneklerde olduğu gibi.

Bir iddiaya göre de bu, gerçek iki cennet anlamındadır. Bu iki cennetten biri, dünyadaki ibadetin lezzeti ve vaktin huzuru, diğeri de ahiretteki sevap cennetidir. Sonra bu kimseler tıpkı ahirette derecelerine göre farklı olacakları gibi dünya cennetlerinde de halleri ölçüsünde farklı olurlar.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِۚ ﴿٤٧﴾

47- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

ذَوَاتَٓا اَفْنَانٍۚ ﴿٤٨﴾ فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٤٩﴾

48, 49- "İki cennet de, çeşit çeşit ağaçlarla bezenmiştir. O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

Bu ayetler, her iki cennetin de ahirette olduğunu göstermektedir. ( أفنانٌ ) lafzı, ( فنَنٌ ) lafzının çoğulu olup dallar demektir.

Bir yoruma göre de bu iki cennet, nefsin ve gözün arzuladığı her bir nimetin çeşitlerini içermektedir. Bu takdirde ( أفنانٌ ) lafzı, çeşit anlamındaki ( فنٌّ ) lafzının çoğulu olur.

فِيهِمَا عَيْنَانِ تَجْرِيَانِ ﴿٥٠﴾

50- "İçlerinde akan iki pınar vardır."

Bu ikisinden biri Tesnîm, diğeri ise Selsebîl'dir.

Bir yoruma göre de yarın bu iki pınar, bugün iki gözü yaş akıtan kimse için akacaktır.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٥١﴾

51- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

فِيهِمَا مِنْ كُلِّ فَاكِهَةٍ زَوْجَانِ ﴿٥٢﴾

52- "İkisinde de her meyveden çift çift vardır."

İki çiftten maksat, iki kısım ve iki çeşittir. Örneğin yaş hurma ile kuru hurma ve taze üzüm ile kuru üzüm gibi.

Bir yoruma göre de her meyve, son derece güzel ve kalitelidir.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٥٣﴾

53- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

مُتَّكِـِٔينَ عَلٰى فُرُشٍ بَطَٓائِنُهَا مِنْ اِسْتَبْرَقٍ وَجَنَا الْجَنَّتَيْنِ دَانٍ ﴿٥٤﴾

54- "Onlar, astarları ipekten olan döşeklere yaslanırlar. Bu iki cennetin meyvelerinin devşirilmesi yakındır."

Astarları ipekten ise acaba yüzleri nasıldır? Astarlar yere bakan taraftır. (إِسْتَبْرَق) lafzı, kalın ipek demektir. Bu arada Allah, insanlara anlayışları ölçüsünde hitapta bulunmuştur. Çünkü söylendiğine göre cennette dünyadakine benzer hiçbir şey yoktur. Ancak insanlara olan hitap, anlama kapasiteleri ölçüsündedir.

(وَجَنَا الْجَنَّتَيْنِ دَانٍ) *"Bu iki cennetin meyvelerinin devşirilmesi yakındır."*

Yani cennetlikler, istedikleri zaman devşirilecek olan meyveleri onların ağızlarına yaklaşır ve onlar bu meyveleri herhangi bir zorluk çekmeden yerler. Senedi sağlam bir rivayet şöyledir:

*"Kim: 'Allah noksanlıklardan münezzehtir. Hamd, Allah'a mahsustur. Allah'tan başka hiçbir ilah yoktur ve Allah en büyüktür' derse Allah, kendisi için cennette, kökü altın, dalları inci, meyveleri ise bakirelerin memeleri gibi olup tereyağından daha yumuşak ve baldan daha tatlı olan bir ağaç diker. Bu kimse, ondan bir şey aldıkça, o yine eski haline döner."*

İşte: ( وَجَنَا الْجَنَّتَيْنِ دَانٍ ) *"Bu iki cennetin meyvelerinin devşirilmesi yakındır"* sözü bu demektir.

Bir yoruma göre de o meyvelere hem ayaktaki, hem oturan hem de yatan kimse ulaşır.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٥٥﴾

55- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

فِيهِنَّ قَاصِرَاتُ الطَّرْفِ لَمْ يَطْمِثْهُنَّ اِنْسٌ قَبْلَهُمْ وَلَا جَٓانٌّ ﴿٥٦﴾

56- "Oralarda bakışlarını sadece eşlerine çevirmiş dilberler vardır. Onlara eşlerinden önce ne bir insan ne de bir cin dokunmuştur."

Yani cennette, gözlerini kocaları dışındaki kimselerden alıkoyan huriler vardır.

Şimdi eşler, gözlerini kocaları dışındaki kimselerden alıkoyduklarına göre kula da en uygun olan, Allah'ın huzuruna çıkmayı umduğu zaman, gözlerini mubah olmayandan alıkoyup kapamasıdır. Hatta O'nun huzuruna çıkıncaya kadar gözlerini her şeyden alıkoymasıdır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Velilerden kimisi, şehvetlerinden arınması ve himmetinin, yaratıkların seviyesinin üstüne çıkması sebebiyle onlara bakmak kendisine mubah kılındığı halde hurilere bakmaz.

Şiir:

*Leyla'ya sevdalanırken biz, başkasına sevdalandı o*
*Bizim sevdalımızdır istemediğimiz bir başkası da*

- Huriler, eli harama ve şüpheli şeylere, gözleri de şüpheli şeylere uzanmayan kimseler içindir.

( لَمْ يَطْمِثْهُنَّ اِنْسٌ قَبْلَهُمْ وَلَا جَآنٌّ ) *"Onlara eşlerinden önce ne bir insan ne de bir cin dokunmuştur."*

Veliden başkası onlara eşlik etmemiş, onlar da veliden başkasını benimsememişlerdir. Bir rivayette: *"Cennet, üç kişiyi arzular"* denilmiştir.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٥٧﴾

57- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

كَاَنَّهُنَّ الْيَاقُوتُ وَالْمَرْجَانُ ﴿٥٨﴾

58- "Sanki onlar, yakut ve mercandırlar."

Yani onlar, yakut duruluğunda ve mercan rengindedirler.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٥٩﴾

59- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

هَلْ جَزَٓاءُ الْاِحْسَانِ اِلَّا الْاِحْسَانُ ﴿٦٠﴾

60- "İyiliğin karşılığı yalnız iyiliktir."

Bir rivayete göre birinci iyilik Allah'tan, ikincisi ise kuldandır. Yani bizim yardımla kendisine iyilik yaptığımız kimsenin vereceği karşılık, bize güzel hizmette bulunmaktan başka bir şey değildir. Sahip çıkmakla iyilikte bulunduğumuz kimsenin vereceği karşılık da sadece bize güzel vefa göstermesidir.

Ancak birinci iyilik kuldan, ikinci iyilik ise Allah'tan da olabilir. Yani taat bakımından iyilik yapan kimsenin alacağı karşılık, sadece kabul ve sevapla kendisine iyilik yapılmasıdır. Hizmeti bakımından iyilik yapan kimsenin alacağı karşılık da kendisine nimetle iyilik yapılmasından başka bir şey değildir.

Her iki iyilik de Allah'tan olabilir. Yani başta kendisine iyilikte bulunduğumuz kimsenin mükâfatı, sonda da kendisine iyilik etmemizden başka bir şey değildir. Kendisine lütufla muameleye başladığımız kimsenin mükâfatı, ona olan lütfumuzu artırmaktan başka bir şey değildir.

Her iyilik de kuldan olabilir. Yani bize iman eden kimsenin alacağı karşılık, gelecekte de imanı üzere sebat göstermekten başka bir şey değildir. Bizimle vefa akdi yapmış olan kimsenin alacağı karşılık, akdin gereğini ayrıntılı olarak yerine getirmekten başka bir şey değildir.

Bir yoruma göre ise kendi nefsinden uzaklaşan kimsenin alacağı karşılık, onu kendimize yaklaştırmaktan başka bir şey değildir.

Nefsiyle ilişiği kalmayan kimsenin göreceği karşılık, bizimle var olmaktan başka bir şey değildir.

Bize doğru bir adım atan kimsenin göreceği karşılık, her bir adıma karşılık onu bin adımla mükâfatlandırmaktan başka bir şey değildir.

Bizim için gözünü haramdan koruyan kimsenin göreceği karşılık, huzurumuza çıkarmakla kendisine ikramda bulunmaktan başka bir şey değildir.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٦١﴾

61- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

وَمِنْ دُونِهِمَا جَنَّتَانِ ﴿٦٢﴾

62- "Bu iki cennetten başka iki cennet daha vardır."

Bunlar, adı geçen iki cennetin dışındaki iki cennettir. Bunlar, başka iki cennettir. Bu ayette maksat, bu iki cennetin, fazilet bakımından diğer iki cennetten aşağı olduğunu söylemek değildir. Fakat maksat, o iki cennetten başka iki cennetin de varlığını ifade etmektir.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٦٣﴾

63- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

مُدْهَٓامَّتَانِ ﴿٦٤﴾

64- "O iki cennet, koyu yeşil renktedir."

Yani o iki cennet, siyaha çalan yeşilliktedir. Zira ( دُهْمَة ) kelimesi siyahlık demek olup fiili ( اِدْهَامَّ ), müzekker ismi ( مُدْهَامٌّ ), müennes için ( مُدْهَامَّة ), müennesin tesniyesi içinse ( مُدْهَامَّتَان ) şeklindedir.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٦٥﴾

65- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

فِيهِمَا عَيْنَانِ نَضَّاخَتَانِ ﴿٦٦﴾

66- "İçlerinde kaynayan iki pınar vardır."

( نَضْخٌ ) lafzı, pınardan su fışkırması demektir.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٦٧﴾

67- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

فِيهِمَا فَاكِهَةٌ وَنَخْلٌ وَرُمَّانٌ ﴿٦٥﴾

68- "İçlerinde her türlü meyve, hurma ve nar vardır."

Nimetlerin isimleri benzerdir fakat mahiyetleri benzer değildir.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٦٩﴾

69- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

فِيهِنَّ خَيْرَاتٌ حِسَانٌ ﴿٧٠﴾

70- "Onlarda huyu güzel, yüzü güzel huriler vardır."

Yani o cennetlerde iyi ahlaklı ve güzel yüzlü huriler vardır.

Çoğul olup tekili ( خَيِّرَةٌ ) olan ( خَيِّرَاتٌ ) lafzı, daha sonra şeddesiz hale getirilerek ( خَيْرَاتٌ ) olmuştur.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٧١﴾

71- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

حُورٌ مَقْصُورَاتٌ فِي الْخِيَامِ ﴿٧٢﴾ فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٧٣﴾

72, 73- "Onlar, çadırlara kapanmış hurilerdir. O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

Onlar, kocalarına mahsustur. Onlar, organları hatalardan, kalbi gafletlerden, sırrı da şekillerle, hastalıklı kimselerle, benzerlerle ve emsallerle hemhal olmaktan uzak tutulan kimseye aittir.

Bazı tefsirlerde yer aldığına göre söz konusu çadır, bir fersah karelik iç alanı olan bin kapılı bir incidir.

Bir yoruma göre de hurilerin nefisleri, kalpleri ve gözleri kocalarına mahsus kılınmıştır.

Bir rivayete göre onlar: *"Biz nimet ehliyiz sıkıntı çekmeyiz. Biz ölümsüzüz yok olmayız. Biz hoşnuduz öfkelenmeyiz"* derler.

Hz. Aişe'den yapılan bir rivayette ise şöyle denilmiştir:

*"Mümin hanımlar, hurilere şöyle cevap verirler: Biz namaz kılanlarız. Oysa siz namaz kılmadınız. Biz oruç tutanlarız. Oysa siz oruç*

*tutmadınız. Biz sadaka verenleriz. Oysa siz sadaka vermediniz."* Hz. Aişe der ki: *"Allah'ın şu sözü mümin hanımları mağlup eder"*:

لَمْ يَطْمِثْهُنَّ اِنْسٌ قَبْلَهُمْ وَلَا جَآنٌّ ﴿٧٤﴾

74- "Onlara, eşlerinden önce ne bir insan ne bir cin dokunmuştur."

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٧٥﴾

75- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

مُتَّكِـٔينَ عَلٰى رَفْرَفٍ خُضْرٍ وَعَبْقَرِيٍّ حِسَانٍ ﴿٧٦﴾

76- "Onlar, yeşil yastıklara ve güzel yaygılara yaslanırlar."

Bu konuda şu görüşler dile getirilmiştir:

- Bunlar, cennet bahçeleridir.
- Bunlar meclislerdir.
- Bunlar, gösterişli yaygılar ve yastıklar olup renkleri yeşildir.

( عَبْقَرِيّ ) lafzı, Araplara göre her türlü işlemeli elbiseye denir.

فَبِاَيِّ اٰلَٓاءِ رَبِّكُمَا تُكَذِّبَانِ ﴿٧٧﴾

77- "O halde Rabbinizin hangi nimetlerini yalanlıyorsunuz?"

تَبَارَكَ اسْمُ رَبِّكَ ذِي الْجَلَالِ وَالْاِكْرَامِ ﴿٧٨﴾

78- "Büyüklük ve ikram sahibi Rabbinin adı yücedir."

Bunun tefsiri daha önce geçti.

سورة الْوَاقِعَةِ

# VÂKI'A SÛRESİ

(Vâkıa Sûresi 96 âyettir. Mekke'de inmiştir. 81 ve 82. âyetler Medine'de inmiştir. Adını ilk âyette geçen "Vâkıa (Kıyamet)"dan almıştır. İbn Mes'ud ve İbn Abbas'tan gelen bir hadis: *"Kim, Vâkıa Sûresi'ni her gece okursa, ona ebediyen yoksulluk isabet etmez."* (Feyzü'l-Kadîr, VI, 201. (7942). Sûrede genel olarak; kıyâmet, tek Allah inancı, ahiret, Kur'an mesajı, hârika cennet ve nimetleri tasvirleri ile cehennemliklerin kötü sonu yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", öyle bir üstün güç sahibinin adıdır ki şanıyla ilgilenen kimseyi ihsanıyla huzuruna getirir. Eğer kul, günah işlemeye devam etmede ısrarcı olursa Allah, hükümranlığın kahrıyla tercihini elinden alır. Eğer bu boyun eğişe bağlı kalmazsa Allah onu belaya maruz bırakır. Bunun üzerine o, mecburen boyun eğmeyi kabul eder.

"Bismillah" aziz, ezeli, üstün güç sahibi, her şey kendisine muhtaç, kahredici, bir, müminlerin dostu, günahkârlara lütufta bulunan, cemalinin dengi bulunmayan, celalinde adaşı olmayan, ancak müminlerin günahkârlarına dost olan Allah'ın adıdır.

اِذَا وَقَعَتِ الْوَاقِعَةُ ﴿١﴾ لَيْسَ لِوَقْعَتِهَا كَاذِبَةٌ ﴿٢﴾

1, 2- "Kıyamet koptuğu zaman, onun kopuşunu yalanlayacak kimse olmayacaktır."

Kıyamet koptuğu zaman hiçbir şey onu geri çeviremeyecektir.

( كَاذِبَة ) lafzı, burada "afiyet" ve "akıbet" lafızları gibi mastardır. Yani kıyamet haktır, onu hiçbir şey geri çeviremeyecektir ve kopması konusunda herhangi bir yalan bulunmamaktadır.

Bir yoruma göre de kıyamet koptuğu zaman, kim doğruluk ve istikamet yollarını izlerse selamete erer ve keramete kavuşur. Kim de istikamet yolundan saparsa, pişmanlık ve sorumluluk altına girer. Aynı zamanda, kıyametin kopuşu esnasında dürüst olan kimse, ikiyüzlü kimseden ayırt edilmiş olur.

Şiir:

*Karıştığı zaman birbirine gözyaşları yanaklarda*
*Ayırt edilir ağlayanla ağlama numarası yapan*

خَافِضَةٌ رَافِعَةٌ ﴿٣﴾

3- "O, alçaltıcıdır, yükselticidir."

O, bedbahtları alçaltır, uyanları ise yükseltir.

O, iddia sahiplerini alçaltır, mana erbabını ise yükseltir.

O, nefisleri alçaltır, kalpleri ise yükseltir.

O, şehvet ehlini alçaltır, safvet ehlini ise yükseltir.

O, inkâr edeni alçaltır, tevhidde bulunanı ise yükseltir.

اِذَا رُجَّتِ الْاَرْضُ رَجًّا ﴿٤﴾

4- "Yer şiddetle sarsıldığı,"

Şiddetle hareket ettirildiği zaman,

وَبُسَّتِ الْجِبَالُ بَسًّا ﴿٥﴾ فَكَانَتْ هَبَٓاءً مُنْبَثًّا ﴿٦﴾

5, 6- "Dağlar parçalanıp toz duman olduğu,"

Parça parça edilip ışık huzmesinin içindeki zerrecikler haline geldiği,

وَكُنْتُمْ اَزْوَاجًا ثَلٰثَةً ۝٧ فَاَصْحَابُ الْمَيْمَنَةِ مَٓا اَصْحَابُ الْمَيْمَنَةِ ۝٨ وَاَصْحَابُ الْمَشْـَٔمَةِ مَٓا اَصْحَابُ الْمَشْـَٔمَةِ ۝٩ وَالسَّابِقُونَ السَّابِقُونَ ۝١٠

7, 8, 9, 10- "Ve siz, üç sınıf olduğunuz zaman, mutluluğa erenler var ya, ne mutlu kimselerdir! Kötülüğe batanlar da ne mutsuz kimselerdir! İyilikte öne geçenler ise, sevapta da öne geçenlerdir."

( مَٓا اَصْحَابُ الْمَيْمَنَةِ ) *"Ne mutlu kimselerdir!"*

Bu ifade, durumlarını önemsemek ve kadirlerini yüceltmek içindir. Onlar uğur, bereket ve sevap ehli kimselerdir.

( مَٓا اَصْحَابُ الْمَشْـَٔمَةِ ) *"Ne mutsuz kimselerdir!"*

Bu ifade de onları ağır bir şekilde yermek içindir. Onlar, kendilerine kötülük yapanlardır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Mutluluğa erenler, tenasül ettikleri gün Hz. Âdem'in sağında olanlar, kötülüğe batanlar ise onun solunda olanlardır.

- Bunlar, amel defterleri sağ ellerine verilenler ile sol eline verilenlerdir.

- Onlar, sağ tarafa doğru cennete götürülenler ile sol tarafa doğru cehenneme götürülenlerdir.

( وَالسَّابِقُونَ السَّابِقُونَ ) *"İyilikte öne geçenler ise, sevapta da öne geçenlerdir."*

Bunlar üçüncü kısım olup iyi hasletler ve güzel meziyetlerde öne geçenlerdir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bunlar, hicrette öne geçenlerdir.

- Beş vakit namazda öne geçenlerdir.

- İçtenlikle adım atmada öne geçenlerdir.

- Yüksek himmetleriyle öne geçenlerdir.

- Her türlü iyilikte öne geçenlerdir.

- Günahlardan tövbe etmede acele edip öne geçenlerdir. Böylece onlar, içtenlikle adım atmada acele etmeseler de pişmanlıkta acele etmiş olurlar.

- Bunlar, Allah'ın ezelde kendileri için en güzel mükâfat hazırladığı ve böylece Allah'ın daha önce takdir ettiği güzel mükâfata önce kavuşanlardır.

أُولَٰئِكَ الْمُقَرَّبُونَ ﴿١١﴾

11- "İşte onlar, yaklaştırılmış kimselerdir."

Burada "yaklaşmaya çalışmış kimseler" değil de "yaklaştırılmış kimseler" denilmiştir. Bu ise cemin ta kendisidir. Böylece herkes, onların, yaklaşmaya çalışmalarıyla değil de Rablerinin yaklaştırmasıyla öne geçtiğini anlamış olmaktadır.

فِي جَنَّاتِ النَّعِيمِ ﴿١٢﴾

12- "Onlar, Na'îm cennetlerindedirler."

Yani onlar cennettedirler.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Onlar, yaklaştırılmışlar, ancak cennete yaklaştırılmamışlardır. Zira cennette olup sonra cennete yaklaştırılmış olmaları imkânsızdır. Onlar, cennetten başka bir şeye yaklaştırılmışlardır. Onlar, yakınlık makamına yaklaştırılmışlardır. Ne makamı? Makam yok ki! Yaklaştırılmışlar, ancak mesafe bakımından değil, keramet bakımından yaklaştırılmışlardır. Nefisleri cennete, kalpleri ise Hakk'a yaklaştırılmıştır.

Kalpleri marifet makamına, ruhları da şuhûd sahalarına yaklaştırılmıştır. Bu itibarla **Allah** azizdir ve ortada ne yakınlık ne uzaklık ne ayrılık ne de beraberlik vardır.

- Onlar yaklaştırılmışlar, ancak paylarına ve nasiplerine yaklaştırılmışlardır. Bir de halleri durulmuş olsa bile Allah ötenin ötesindedir.

ثُلَّةٌ مِنَ الْاَوَّلِينَ ﴿١٣﴾ وَقَلِيلٌ مِنَ الْاٰخِرِينَ ﴿١٤﴾

13, 14- "Onlardan bir topluluk öncekilerden, azı da sonrakilerdendir."

( ثُلَّة ) lafzı, topluluk demektir.

Bu konuda şu iki yorum yapılmıştır:

- Bir topluluk, kendi peygamberlerini gören öncekilerdendir. Azı da Peygamberimizi (s.a.v.) gören diğerlerindendir.

- Bir topluluk öncekilerden, yani geçmiş kavimlerden, azı da sonrakilerden, yani ümmettendir.

عَلٰى سُرُرٍ مَوْضُونَةٍ ﴿١٥﴾

15- "Onlar, mücevherlerle işlenmiş tahtlar üzerindedir."

Yani o tahtlar, zırhın altınla işlenmesi gibi işlenmiştir. Tefsirlerde yer aldığına göre her bir tahtın uzunluğu üç yüz arşındır. Sahibi, üzerinde oturmak istediği zaman alçalır, üzerinde doğrulmak istediği zaman ise yükselir.

مُتَّكِـِٔينَ عَلَيْهَا مُتَقَابِلِينَ ﴿١٦﴾

16- "Karşılıklı olarak üzerinde yaslanırlar."

Yani birbirlerinin arkasını görmezler. Allah, onları samimi dostluk ve güzel ahlak ile vasıflandırmıştır.

يَطُوفُ عَلَيْهِمْ وِلْدَانٌ مُخَلَّدُونَ ﴿١٧﴾

17- "Onların etrafında ölümsüz genç hizmetçiler dolaşır."

Onlar yerlerinde kalıp ayrılmazken, etraflarında hep aynı yaşta ve yaşlanmayan genç hizmetçiler dolaşır.

Bir görüşe göre de bunlar, küpeli genç hizmetçilerdir.

بِأَكْوَابٍ وَأَبَارِيقَ وَكَأْسٍ مِنْ مَعِينٍ ﴿١٨﴾ لَا يُصَدَّعُونَ عَنْهَا وَلَا
يُنْزِفُونَ ﴿١٩﴾

18, 19- "Cennet pınarından doldurulmuş testiler, ibrikler ve kadehlerle. Bu şaraptan ne başları ağrır ne de sarhoş olurlar."

( أَكْوابٌ ) lafzı, ( كُوبٌ ) lafzının çoğulu olup kulpsuz ve hortumsuz kaplar -kadehler- demektir. ( أَبارِيق ) lafzı da ( إِبْرِيق ) lafzının çoğulu olup kadehin aksine kulplu ve hortumludur (ibrik).

Bunu içmelerinden dolayı başları da ağrımaz sarhoş da olmazlar.

وَفَاكِهَةٍ مِمَّا يَتَخَيَّرُونَ ﴿٢٠﴾

20- "Bir de beğendiklerinden meyveler,"

Aynı zamanda onlar için beğendiklerinden meyveler de vardır.

وَلَحْمِ طَيْرٍ مِمَّا يَشْتَهُونَ ﴿٢١﴾

21- "Canlarının çektiğinden kuş etleri,"

وَحُورٌ عِينٌ ﴿٢٢﴾ كَأَمْثَالِ اللُّؤْلُؤِ الْمَكْنُونِ ﴿٢٣﴾

22, 23- "Ve saklı inciler gibi iri gözlü huriler de vardır."

Yani koruma altındaki inciler gibi.

جَزَٓاءً بِمَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿٢٤﴾

24- "Bütün bunlar, işledikleri amellere karşılık olarak verilir."

لَا يَسْمَعُونَ فِيهَا لَغْوًا وَلَا تَأْثِيمًا ﴿٢٥﴾ اِلَّا قِيلًا سَلَامًا سَلَامًا ﴿٢٦﴾

25, 26- "Orada ne boş bir söz ne de günaha sokan bir şey işitirler. Sadece 'selam!', 'selam!' sözünü işitirler."

( لَغْوٌ ) lafzı, boş söz demektir. ( تَأْثِيمٌ ) lafzı da günah ve hezeyan demektir. Onlar sadece selam, selam şeklindeki sözü işitirler. Burada "selam", sözün sıfatıdır.

وَاَصْحَابُ الْيَمِينِ مَٓا اَصْحَابُ الْيَمِينِ ﴿٢٧﴾ فِي سِدْرٍ مَخْضُودٍ ﴿٢٨﴾

27, 28- "Sağdakiler; ne mutlu o sağdakilere! Dikensiz sidr ağacı altındadırlar."

( مَخْضُوض ) lafzı, dikensiz demektir.

وَطَلْحٍ مَنْضُودٍ ﴿٢٩﴾

29- "Meyveleri üst üste yığılmış muz ağaçları (altındadırlar)."

( طَلْحٌ ) lafzı, muz ağacı demektir. Bu ağaçların meyveleri üst üste yığılmıştır.

وَظِلٍّ مَمْدُودٍ ﴿٣٠﴾

30- "Yayılmış sürekli bir gölgededirler."

Gün ağarması ile güneşin doğuşu arasındaki gölge gibi. Kimisine göre de bu, sürekli gölge demektir.

وَمَٓاءٍ مَسْكُوبٍ ﴿٣١﴾

31- "Çağlayan bir suyun başındadırlar."

Akıp kendilerini yormayan bir suyun başındadırlar.

وَفَاكِهَةٍ كَثِيرَةٍ ﴿٣٢﴾ لَا مَقْطُوعَةٍ وَلَا مَمْنُوعَةٍ ﴿٣٣﴾

32, 33- "Tükenmeyen ve yasaklanmayan çok miktarda meyveler içindedirler."

وَفُرُشٍ مَرْفُوعَةٍ ﴿٣٤﴾

34- "Ve yüksek döşekler üzerindedirler."

Bu döşekler onlar için yükseltilmiştir. Kimisine göre de döşeklerden maksat kadınlardır.

إِنَّا أَنْشَأْنَاهُنَّ إِنْشَاءً ﴿٣٥﴾ فَجَعَلْنَاهُنَّ أَبْكَارًا ﴿٣٦﴾

35, 36- "Gerçekten biz onları yepyeni bir yaratılışta yarattık ve onları bakireler kıldık."

Yani biz hurileri böyle yarattık ve bakireler kıldık.

عُرُبًا أَتْرَابًا ﴿٣٧﴾

37- "Onları eşlerine düşkün ve yaşıt kıldık."

( عُرُبٌ ) lafzı, ( عَرُوبٌ ) lafzının çoğulu olup kocasına işve ve cilve yapan kadın demektir.

Bir yoruma göre de, kocalarınca iştahla arzulanan kadınlar demektir.

( أَتْرَابٌ ) lafzı da ( تِرْبٌ ) lafzının çoğulu olup hurilerinyaşıt olduğunu ifade etmektedir.

لِأَصْحَابِ الْيَمِينِ ﴿٣٨﴾

38- "Sağdakiler için."

Yani biz hurileri sağdakiler için yarattık.

ثُلَّةٌ مِنَ الْاَوَّلٖينَ ﴿٣٩﴾ وَثُلَّةٌ مِنَ الْاٰخِرٖينَ ﴿٤٠﴾

39, 40- "Bir topluluk öncekilerdendir. Bir topluluk da sonrakilerdendir."

Yani bir topluluk, bu ümmetin ilklerindendir. Bir topluluk da bu ümmetin sonradan gelenlerindendir.

وَاَصْحَابُ الشِّمَالِ مَٓا اَصْحَابُ الشِّمَالِ ﴿٤١﴾ فٖي سَمُومٍ وَحَمٖيمٍ ﴿٤٢﴾

41, 42- "Soldakiler; ne yazık o soldakilere! Onlar; iliklere işleyen bir ateş ve bir kaynar su içindedirler."

( سَمُومٌ ) lafzı, cehennemin kokusu ve sıcaklığı demektir. ( حَميم ) de sıcak su demektir.

وَظِلٍّ مِنْ يَحْمُومٍ ﴿٤٣﴾

43- "Siyah dumandan bir gölge içindedirler."

( يَحْمُومٌ ) lafzı, siyah duman demektir.

لَا بَارِدٍ وَلَا كَرٖيمٍ ﴿٤٤﴾

44- "Ne serin ne de yararlı bir gölge."

Serin değil, yani onda hiçbir rahatlık bulunmamaktadır. Yararlı da değildir. Yani onlar için güzel değildir. Zira onda hiçbir fayda yoktur.

اِنَّهُمْ كَانُوا قَبْلَ ذٰلِكَ مُتْرَفٖينَ ﴿٤٥﴾

45- "Çünkü onlar; bundan önce sefahete dalmış varlıklı kimselerdi."

Yani onlar, dünyada imkân sahibi kılınmış kimselerdi.

وَكَانُوا يُصِرُّونَ عَلَى الْحِنْثِ الْعَظِيمِ ﴿٤٦﴾

46- "Büyük günah üzerinde ısrar ediyorlardı."

وَكَانُوا يَقُولُونَ اَئِذَا مِتْنَا وَكُنَّا تُرَابًا وَعِظَامًا ءَاِنَّا لَمَبْعُوثُونَ ﴿٤٧﴾

47- "Bir de diyorlardı ki: 'Biz ölüp toprak ve kemik yığını haline geldikten sonra mı, biz mi diriltilecekmişiz?'"

Yani onlar, öldükten sonra dirilmeyi yalanlıyorlardı.

اَوَ اٰبَاؤُنَا الْاَوَّلُونَ ﴿٤٨﴾

48- "Evvelki atalarımız da mı?"

قُلْ اِنَّ الْاَوَّلِينَ وَالْاٰخِرِينَ ﴿٤٩﴾

49- "De ki: 'Öncekiler de sonrakiler de,"

لَمَجْمُوعُونَ اِلٰى مِيقَاتِ يَوْمٍ مَعْلُومٍ ﴿٥٠﴾

50- "Mutlaka belli bir günün belli bir vaktinde toplanacaklardır."

Sonra onlara şöyle denir:

ثُمَّ اِنَّكُمْ اَيُّهَا الضَّٓالُّونَ الْمُكَذِّبُونَ ﴿٥١﴾

51- "Sonra siz ey haktan sapan yalanlayıcılar!"

Yani ey bugünü yalanlayanlar!

لَاٰكِلُونَ مِنْ شَجَرٍ مِنْ زَقُّومٍ ﴿٥٢﴾

52- "Mutlaka bir ağaçtan; zakkum ağacından yiyeceksiniz."

Tefsirlerde yer aldığına göre zakkum, cehennemin derinliklerindeki bir ağaçtır. Kâfir cehenneme atıldığı zaman ancak kırk yıl sonra ona ulaşır.

فَمَالِؤُنَ مِنْهَا الْبُطُونَ ﴿٥٣﴾

53- "Karınlarınızı ondan dolduracaksınız."

فَشَارِبُونَ عَلَيْهِ مِنَ الْحَمِيمِ ﴿٥٤﴾

54- "Üstüne de kaynar sudan içeceksiniz."

Bu, kendisiyle mutlu olmayacağınız bir içecektir.

فَشَارِبُونَ شُرْبَ الْهِيمِ ﴿٥٥﴾

55- "Susamış develerin içtiği gibi içeceksiniz."

( هِيم ) lafzı, susamış develer demektir. Kimisine göre ise bu lafızdan maksat, üstüne dökülen her şeyin dibe çöküp kuruduğu kumdur.

هٰذَا نُزُلُهُمْ يَوْمَ الدِّينِ ﴿٥٦﴾

56- "İşte bu, ceza günü onlara verilecek ziyafettir."

Bu, kıyamet günüdür.

نَحْنُ خَلَقْنَاكُمْ فَلَوْلَا تُصَدِّقُونَ ﴿٥٧﴾

57- "Sizi biz yarattık. Hâlâ tasdik etmiyor musunuz?"

Ey Mekke halkı! Sizi biz yarattık. O halde kurtulmanız için tasdik etseydiniz ya! Azarlanıyorsunuz ve size itap ediliyor. Oysa siz bugün özür diliyorsunuz. Ancak bu, size fayda vermeyecek ve sizden hiçbir şey dinlenmeyecektir.

Öte yandan o gün, azaplarının en şiddetlisi, canlarının acılarından ve organlarının ağrılarından, Allah hakkında kaçırdıkları fırsatlara hasret çekmeye zaman bulamamalarıdır.

Bir yoruma göre de o gün bu taifenin kalplerine en fazla ağır gelen musibet, yarın acılarıyla boğuşmaları sebebiyle bu tarikte feyiz kaynaklarından yeterince yararlanamamaktan dolayı üzülmeye fırsat bulamamaları korkusudur. Nitekim bu, arkadaşlar için daha büyüğü olmayan en büyük sıkıntıdır. Bir de gönül ehli kimseler bu gün Allah'a niyazda bulunarak şöyle derler:

*"Bizi ünsiyetin manzaralarından mahrum ettin. Bari bizi, kaçırdığımız fırsatlara hasret çekmekten alıkoyacak birtakım zevkler veya senden bulamadığımız şeylere üzülmekten alıkoyacak birtakım acılarla meşgul etme."*

اَفَرَاَيْتُمْ مَا تُمْنُونَ ﴿٥٨﴾ ءَاَنْتُمْ تَخْلُقُونَهُٓ اَمْ نَحْنُ الْخَالِقُونَ ﴿٥٩﴾

58, 59- "Attığınız o meniye ne dersiniz? Onu siz mi yaratıyorsunuz? Yoksa yaratan biz miyiz?"

Kişinin meniyi boşaltması anlamında ( مَنٰى ) ve ( أَمْنَى ) denir. Yani, siz, cinsel ilişkide bulunup boşaldığınızda döllenme gerçekleştiği zaman acaba o çocuğu siz mi yaratıyorsunuz yoksa yaratan biz miyiz? Bu arada buradaki yaratma, biçimlendirmek anlamındadır. Yani çocuğu siz mi biçimlendirip organlarını birbirine ekliyorsunuz yoksa biz mi?

Aslında onlar ilk yaratmayı kabul ediyorlardı. İşte bu nedenle Allah ilk yaratmayı, inkâr ettikleri öldükten sonra dirilmenin mümkün olduğuna delil kılmıştır. Aynı zamanda bu ayet, yaratıcının ispatı konusundaki esas delildir. Çünkü insan yaratılışının aslı iki damladandır. Bu damlalardan biri meni olup babanın belinden, diğeri de ananın göğüs kafesinden çıkar. Bu iki damla, rahimde birleşir ve böylece çocuk meydana gelmiş olur. Bu arada, birbirine karışan iki su, insanın organları olan şu kemik, sinirler, damarlar, deri, kıl ve saire organlara ayrılır. Sonra Allah, bunlardan dış organları ve iç parçaları

bu şekillerde birleştirir. Böylece her bir organa özel bir şekil verilir. Kemiklere de özel bir tarzda şekil verilir vs.

Bu arada, çocuğun meydana gelmesi konusunda şu ihtimallerden biri kaçınılmazdır: Çocuğu ya ebeveyn yapmış olurlar ki bu varsayım imkânsızdır. Çünkü ilim ve güçleri buna yetmemektedir. Nitekim bazen çocuk istedikleri halde çocukları olmamakta, bazen de çocuk istemedikleri halde çocukları olmaktadır. Nutfe veya damlanın kendisinin kendine bu şekli vermiş olmasını varsaymak da imkânsızdır. Çünkü o damla henüz ölüdür ve hiçbir bilgiye ve güce sahip değildir. Yahut da bu, yaratıcısız meydana gelmiştir. Bunun mümkün olmaması ise zorunlu olarak bilinir. O halde tek doğru olarak, çocuğu meydana getirenin kadim, hükümran ve hakkıyla bilen yaratıcı Allah olduğu kalır.

نَحْنُ قَدَّرْنَا بَيْنَكُمُ الْمَوْتَ وَمَا نَحْنُ بِمَسْبُوقِينَ ﴿٦٠﴾ عَلٰٓى اَنْ نُبَدِّلَ
اَمْثَالَكُمْ وَنُنْشِئَكُمْ فٖي مَا لَا تَعْلَمُونَ ﴿٦١﴾

**60, 61- "Sizin yerinize benzerlerinizi getirmek ve sizi bilemeyeceğiniz bir şekilde yeniden yaratmak üzere aranızda ölümü biz takdir ettik. Biz, önüne geçilenler değiliz."**

Ölüm Allah'ın dilediği zaman olur. Sizden kimisi çocukken, kiminiz genç yaşta, kiminiz de yaşlanarak ölür. Bir de ölüm, değişik hastalıklar ve farklı sebeplerle değişik zamanlarda gerçekleşir.

( وَمَا نَحْنُ بِمَسْبُوقِينَ ) *"Biz önüne geçilenler değiliz."*

Takdirimizde önümüze geçilemez ki bir şeyi kaçırmış olalım. Bir de biz, benzerlerinizi yaratmaktan ve bildiğiniz şekillerinizi değiştirmekten aciz değiliz. Eğer biz yapınızı bozmak ve şekillerinizi değiştirmek istersek, hiç kimse bizi bundan alıkoyamaz.

Bir yoruma göre de sizi bilmediğiniz mutluluk ve mutsuzluk hükmü içinde yeniden yaratacağız.

وَلَقَدْ عَلِمْتُمُ النَّشْاَةَ الْاُو۫لٰى فَلَوْلَا تَذَكَّرُونَ ﴿٦٢﴾

62- "Andolsun, birinci yaratılışınızı biliyorsunuz. O halde düşünsenizya!"

Yani siz ilk yaratılışı ikrar ettiniz. Tekrar yaratılmanın mümkün olduğunu bilmeniz için düşünsenize. Çünkü ikinci yaratılış da birinci yaratılış gibidir.

اَفَرَاَيْتُمْ مَا تَحْرُثُونَ ﴿٦٣﴾ ءَاَنْتُمْ تَزْرَعُونَهُٓ اَمْ نَحْنُ الزَّارِعُونَ ﴿٦٤﴾

63,64- "Ektiğiniz tohuma ne dersiniz? Onu siz mi bitiriyorsunuz yoksa bitiren biz miyiz?"

Yani yere tohum attığınız zaman, onu siz mi yeşertiyorsunuz yoksa yeşerten biz miyiz?

İşte ekini yeşertip bir danenin kendisinden yeşeren ağacın kabuğuna, gövdesine, dallarına, yapraklarına ve meyvelerine ayrılması konusundaki hikmetler böyledir.

لَوْ نَشَٓاءُ لَجَعَلْنَاهُ حُطَامًا فَظَلْتُمْ تَفَكَّهُونَ ﴿٦٥﴾

65- "Dileseydik, onu kuru bir çöp yapardık da şaşkınlık içinde şöyle geveleyip dururdunuz:"

Eğer isteseydik, onu yeşilliğinden sonra kuru bir çöp haline getirirdik de siz şaşırıp kalırdınız ve onun için yorulup harcama yapmaktan pişmanlık duyar, sonra da şöyle derdiniz:

اِنَّا لَمُغْرَمُونَ ﴿٦٦﴾ بَلْ نَحْنُ مَحْرُومُونَ ﴿٦٧﴾

66, 67- "Muhakkak biz borç yükü altındayız. Daha doğrusu yoksunuz."

Yani muhakkak biz, ekin için yaptığımız harcamanın borcuyla yükümlüyüz. Bu, bizim borcumuz haline geldi. Bu itibarla borçlu, harcaması karşılık bulmayan kimsedir.

( بَلْ نَحْنُ مَحْرُومُونَ ) *"Daha doğrusu yoksunuz."*

Daha doğrusu biz, rızkımız zayi olduktan sonra yoksunuz.

اَفَرَاَيْتُمُ الْمَٓاءَ الَّذ۪ي تَشْرَبُونَۜ ﴿٦٨﴾ ءَاَنْتُمْ اَنْزَلْتُمُوهُ مِنَ الْمُزْنِ اَمْ
نَحْنُ الْمُنْزِلُونَ ﴿٦٩﴾ لَوْ نَشَٓاءُ جَعَلْنَاهُ اُجَاجًا فَلَوْلَا تَشْكُرُونَ ﴿٧٠﴾

68, 69, 70- "İçtiğiniz suya ne dersiniz? Buluttan onu siz mi indirdiniz yoksa indiren biz miyiz? Dileseydik onu tuzlu bir su yapardık. O halde şükretseniz ya!"

Buluttan onu siz mi indiriniz yoksa biz mi onu istediğimiz zaman istediğimiz yere istediğimiz gibi istediğimiz kimsenin ve istediğimiz şeyin üzerine indiririz? Onu vakit, miktar, keyfiyet, azlık ve çoklukta farklı kılan biziz.

Eğer biz dileseydik onu tuzlu bir su yapardık. Hal böyleyken Allah'ın, sizin için yarattığı bu şeylerden faydalanmanızı mümkün kılması konusunda size olan büyük nimetine şükretmez misiniz?

اَفَرَاَيْتُمُ النَّارَ الَّت۪ي تُورُونَۜ ﴿٧١﴾ ءَاَنْتُمْ اَنْشَاْتُمْ شَجَرَتَهَٓا اَمْ نَحْنُ
الْمُنْشِؤُنَ ﴿٧٢﴾

71, 72- "Tutuşturduğunuz ateşe ne dersiniz? Onun ağacını siz mi yarattınız yoksa biz miyiz yaratan?"

Çakmağın çakıp yanması anlamında ( وَرَى-يَرِي ) denir. Çakan çakmak anlamında da ( وارِ ) şeklindeki ismi faili kullanılır. Ateşi tutuşturmak anlamında ise ( أَوْرَى، يُورِي ) denir.

Yani siz çakmağı çaktığınız zaman gördünüz mü ateşin nasıl çıktığını? Şimdi onu siz mi yaratıyorsunuz? Onun ağacını -çakmağı tutuşturmada kullanılan marh ve afar ağaçlarını- siz mi yarattınız yoksa biz miyiz yaratan?

نَحْنُ جَعَلْنَاهَا تَذْكِرَةً وَمَتَاعًا لِلْمُقْوِينَ ﴿٧٣﴾

73- "Biz, onu bir ibret ve ıssız yerlerde yaşayanlara bir yarar kaynağı kıldık."

(نَحْنُ جَعَلْنَاهَا تَذْكِرَةً) *"Biz, onu bir ibret kıldık."*

Yani o, delil olarak kullanılabilir.

(وَمَتَاعًا لِلْمُقْوِينَ) *"Ve ıssız yerlerde yaşayanlara bir yarar kaynağı kıldık."*

Bir kimsenin ıssız bir yere yerleşmesi anlamında (أَقْوَى) fiili kullanılır.

Yani bu ateş, bir hatırlatma olup insan, onunla Allah'ın kendisini uyardığı ahiretteki cehennem ateşini hatırlar. Söz konusu çakmak ateşi, aynı zamanda yolcunun, yolculuk esnasında çeşitli şekillerde yararlandığı bir yarar kaynağıdır.

فَسَبِّحْ بِاسْمِ رَبِّكَ الْعَظِيمِ ﴿٧٤﴾

74- "O halde yüce Rabbinin adını tesbih et."

Yani düşüncenle aklının denizlerinde yüz ve tevhid gücüyle o denizlere dalış yap, ilim cevherlerini kazanırsın. Sakın şu veya bu sebeple dalış yapmada kusur işlemeyesin! Yine sakın içine şüpheler girmesin. Yoksa dininden ve inancından ibaret olan sermayen telef olur. Eğer böyle yapmazsan, şüpheler denizinde boğulur ve yolunu şaşırırsın.

Bu arada Allah'ın (c.c.) sırladığı bu ayetler, akıl yürütme metodunu izlemeye zemin hazırlamaktadır. Nitekim hadiste de şöyle denilmiştir:

*"Bir saat düşünmek bir yıllık ibadetten hayırlıdır."*

Allah da bu ayetle, fikir yürütmenin zorunlu oluşuna dikkat çekmiştir.

فَلَٓا اُقْسِمُ بِمَوَاقِعِ النُّجُومِ ﴿٧٥﴾ وَاِنَّهُ لَقَسَمٌ لَوْ تَعْلَمُونَ عَظِيمٌ ﴿٧٦﴾ اِنَّهُ لَقُرْاٰنٌ كَرِيمٌ ﴿٧٧﴾ فِي كِتَابٍ مَكْنُونٍ ﴿٧٨﴾ لَا يَمَسُّهُٓ اِلَّا الْمُطَهَّرُونَ ﴿٧٩﴾

**75, 76, 77, 78, 79-** "Yıldızların yerlerine yemin ederim ki -eğer bilirseniz, gerçekten bu, büyük bir yemindir- o, elbette değerli bir Kur'ân'dır. Korunmuş bir kitaptadır. Ona ancak tertemiz olanlar dokunabilir."

Bir görüşe göre bunlar, gök yıldızlarının yerleridir. Bir yoruma göre de, bunlar Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kalbi üzerindeki Kur'ân bölümlerinin yerleridir.

(اِنَّهُ لَقُرْاٰنٌ كَرِيمٌ) *"O, elbette değerli bir Kur'ân'dır."*

Değerli olmak, değersiz olmamaktır. Yani Kur'ân mahlûk değildir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- O, değerli bir Kur'ân'dır çünkü güzel ahlakı göstermektedir.

- O, değerli bir Kur'ân'dır çünkü kerem sahibi Allah'tan değerli bir meleğin diliyle değerli bir peygambere gelmiştir.

(فِي كِتَابٍ مَكْنُونٍ) *"Korunmuş bir kitaptadır."*

Bir yoruma göre korunmuş kitap Levh-i Mahfuz, bir yoruma göre de mushaflardır. Kur'ân değiştirilmekten korunmuştur.

(لَا يَمَسُّهُٓ اِلَّا الْمُطَهَّرُونَ) *"Ona ancak tertemiz olanlar dokunabilir."*

Bunlar, kirlerden, kusurlardan ve günahlardan tertemiz olan kimselerdir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bu ayet, emir anlamındaki haberî bir ifadedir. Yani mushafa, şirkten ve abdestsizlikten temizlenmiş kimseden başkasının dokunması uygun olmaz.

- Onun tadını ve bereketini, ona iman eden kimseden başkası bulamaz.

- Ona, ancaktevhid ehli kimseler yaklaşır. Kâfirlere gelince onlar, Kur'ân'ı duymaktan hoşlanmadıkları için ona yaklaşmazlar. Bu arada ayet, nefislerini günahlardan ve kötü ahlaktan temizleyenler anlamına gelen ( الْمُطَهِّرون ) şeklinde de okunmuştur.

- Onun hayrına ancak kaderin çizildiği gün mutsuzluktan temizlenen kimse dokunabilir.

- Onun latifelerini ancak sırrını kâinattan tertemiz kılan kimse anlar.

- Bunlar, sırlarını Allah'tan başkasından temizleyenlerdir.

- Kur'ân'a ancak ona saygı gösteren ve hakkını yerine getirenler dokunabilir.

- Kur'ân'a ancak mutluluk suyuyla, sonra rahmet suyuyla temizlenenler dokunabilir.

تَنْزِيلٌ مِنْ رَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿٨٠﴾

**80- "O, âlemlerin Rabbinden indirilmiştir."**

Yani O'nun tarafından indirilmiştir.

أَفَبِهٰذَا الْحَدِيثِ أَنْتُمْ مُدْهِنُونَ ﴿٨١﴾ وَتَجْعَلُونَ رِزْقَكُمْ أَنَّكُمْ
تُكَذِّبُونَ ﴿٨٢﴾

**81,82- "Şimdi siz, bu sözü mü küçümsüyorsunuz? Allah'ın verdiği rızkı, O'nu yalanlayarak mı şükrediyorsunuz?"**

Siz bu Kur'ân'a karşı mı iki yüzlülük yapıyor ve onu mu yalanlıyorsunuz?

( وَتَجْعَلُونَ رِزْقَكُمْ أَنَّكُمْ تُكَذِّبُونَ ) *"Allah'ın verdiği rızka, O'nu yalanlayarak mı şükrediyorsunuz?"*

Yağmura kavuştukları zaman onlar: "Falanca yıldız sayesinde yağmura kavuştuk" derlerdi. Allah buyuruyor ki: Siz, Allah'ın yağmurla

size nimet vermesine, ona karşı nankörlük yapmakla mı karşılık veriyor ve Allah'tan bir nimet olan yağmurun, yıldızlardan olduğunu mu sanıyorsunuz?

Bir yoruma göre de siz Kur'ân'dan payınızı ve nasibinizi onu yalanlamaktan ibaret mi kılıyorsunuz?

فَلَوْلَٓا اِذَا بَلَغَتِ الْحُلْقُومَ ﴿٨٣﴾ وَاَنْتُمْ حٖينَئِذٍ تَنْظُرُونَ ﴿٨٤﴾ وَنَحْنُ
اَقْرَبُ اِلَيْهِ مِنْكُمْ وَلٰكِنْ لَا تُبْصِرُونَ ﴿٨٥﴾

83, 84, 85- "Can boğaza geldiğinde onu geri döndürsenize! Oysa siz, o zaman bakıp durursunuz. Oysa biz, ona sizden daha yakınız. Fakat siz göremezsiniz."

Allah, ölünün velilerine hitap ederek şöyle buyurmaktadır:

*"Siz, bu hastaya bakarken ruhu boğaza geldiğinde Allah'a dönüş yapıp O'nunla hakikate erseydiniz ya! Zira biz, ilim, görme ve kudretle ona, sizden daha yakınız. Fakat siz göremiyorsunuz."*

Bir yoruma göre de, kulun Allah'a en yakın olduğu zaman, O'nun zikrinin ve şuhûdunun kendisine tam olarak hâkim olduğu andır. İşte bu durumda kulun başkasını hissetmesi ortadan kalkar. Nitekim kulun, sırrında Allah'tan başkasını görmeyecek şekilde hakikate ermesi ancak nefsi de dâhil, başkalarını bilmemesi ve hissetmemesi ölçüsünde gerçekleşir.

Bu itibarla yakınlık ve uzaklık şu demektir: Kul, sahv anlarını yaşamakta ve henüz kendinden koparılmamış bulunmaktadır. Kendinden koparıldığı zaman ise artık o, Hak'tan başkası değildir (Hak'tan başkasının varlığı söz konusu değildir). Çünkü o zaman ne yakınlık ne de uzaklık vardır.

فَلَوْلَٓا اِنْ كُنْتُمْ غَيْرَ مَدٖينٖينَ ﴿٨٦﴾ تَرْجِعُونَهَٓا اِنْ كُنْتُمْ صَادِقٖينَ ﴿٨٧﴾

86, 87- "Eğer hesaba çekilmeyecekseniz ve doğru söyleyenler iseniz, onu geri döndürsenize!"

Ölüm meselesi konusunda sizin elinizden hiçbir şey gelmez.

( تَرْجِعُونَهَآ ) *"Onu geri döndürsenize!"*

Yani ruhu cesede geri döndürsenize!

( اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ) *"Doğru söyleyenler iseniz."*

Yani ölümden sonra dirilme olmadığı konusunda doğru söyleyenler iseniz.

فَاَمَّآ اِنْ كَانَ مِنَ الْمُقَرَّبِينَ ﴿٨٨﴾ فَرَوْحٌ وَرَيْحَانٌ وَجَنَّتُ نَعِيمٍ ﴿٨٩﴾

**88, 89- "Fakat ölü, Allah'a yakın kılınmış kimselerden ise ona rahatlık, güzel rızık ve Na'îm cenneti vardır."**

Allah'a yakın kılınmış olanlar, Allah'ın, lütfüyle yakın kıldığı kimselerdir. Bu itibarla onlar için ( فَرَوْحٌ وَرَيْحَانٌ ) *"rahatlık ve güzel rızık"* vardır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- "Revh" istirahat, "Reyhan" da rızıktır.

- "Revh" kabirde, "Reyhan" da cennette olur.

- Herhangi bir mümin, kendisine cennet reyhanlarından biri verilinceye kadar dünyadan çıkmaz. Böylece can vermeden önce onu koklar. Bu itibarla, rahatlık ölüm esnasında, reyhan da ahirettedir. Bir görüşe göre Hz. Peygamber (s.a.v.), "revh (rahatlık)" lafzını "ruh" olarak okuyordu. Yani, onlar için cennette sürekli bir hayat vardır.

- Rahatlık kalpleri için, reyhan nefisleri için, cennet de bedenleri içindir.

- Rahatlık dünyada, reyhan cennette, Na'îm cenneti de ahirettedir.

- Rahatlık ve reyhan dünyada, Na'îm cenneti de ahirette verilir.

- Rahatlık abidler için, reyhan arifler için, Na'îm cenneti de müminlerin avamı içindir.

- Rahatlık yakınlığın esintisi, reyhan bastın kemali, Na'îm cenneti de münacat makamındadır.

- Rahatlık Allah'ı görmek, reyhan O'nun sesini vasıtasız duymak, Na'îm cenneti de bunun devam edip kesilmemesidir.

وَاَمَّٓا اِنْ كَانَ مِنْ اَصْحَابِ الْيَمِينِ ﴿٩٠﴾ فَسَلَامٌ لَكَ مِنْ اَصْحَابِ الْيَمِينِ ﴿٩١﴾

**90, 91- "Eğer o, sağdakilerden ise kendisine: 'Selam sana ahiret mutluluğuna ermişlerden!' denir."**

Yani iyi olduklarını sana bildiriyoruz.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Sen, sevdiğin esenliği onlarda göreceksin.

- Onlar konusunda sana güvence veriyoruz. Onlara esenlik vardır. Sen kalbini onlarla meşgul etme.

- Ey insan! Selam olsun sana! Şüphesiz sağdakilerdensin. Veya ey sağdakilerden olan insan!

وَاَمَّٓا اِنْ كَانَ مِنَ الْمُكَذِّبِينَ الضَّٓالِّينَ ﴿٩٢﴾ فَنُزُلٌ مِنْ حَمِيمٍ ﴿٩٣﴾ وَتَصْلِيَةُ جَحِيمٍ ﴿٩٤﴾

**92, 93, 94- "Ama sapan yalanlayıcılardan ise, işte ona da kaynar sudan bir ziyafet vardır. Bir de cehenneme atılmak vardır."**

Eğer o, Allah'ı yalanlayanlardan ve Allah'ın dininden sapanlardan ise onun için cennette kalmak vardır.

اِنَّ هٰذَا لَهُوَ حَقُّ الْيَقِينِ ﴿٩٥﴾

**95- "Şüphesiz bu, kesin gerçektir."**

İşte bu, gerçekleşmesi kaçınılmaz olan kesin gerçektir.

فَسَبِّحْ بِاسْمِ رَبِّكَ الْعَظِيمِ ﴿٩٦﴾

96- "Öyleyse yüce Rabbinin adını tesbih et."

Yani Allah'ı, hakkında caiz olmayan vasıflardan tenzih et.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah için namaz kıl.

- Senin ümmetini dalaletten korumasına ve senin sünnetine uymada onlara muvaffakiyet vermesine karşılık Allah'a şükret.

# Dizin


**A**

abid 21, 411
Âd 48, 129, 154, 155, 271, 339, 362, 394, 403
Âdemoğulları 168
ahd 195
Akîl 344
âlim 172, 283
alma ve ret 79
Amâlikalılar 58
Arap 57, 171, 182, 267
arefe günü 29
arif 283
Arif 109, 121, 162, 213, 283, 331, 452
ariflik 122
Arş 71, 99, 112, 117, 121, 141, 233
aynelyakîn 300
ayrılık 46, 79, 159, 176, 238, 284, 352, 392, 437

**B**

Baalbek 34
Ba'l 34, 35
Balçık 417
bast 14, 79, 91, 138, 140, 177, 238, 271, 421
bedevî 305
Bedir 188, 377, 407
bekâ 119
Beyt-i Ma'mûr 368
burhan 84, 157, 283

**C**

cem ve fark 79
cezb 177
cimrilik 62, 293, 294
cin 40, 59, 60, 273, 422
Cinler 59
Cubeyr b. Mut'im 397
Cuheyne 305

**E**

Ebûcehil 69, 217, 245

Ebû Mes'ûd es-Sakafî 217
Ehl-i sünnet 196
el-Yesa' 66, 67
Enes 397
Ensâr 218
Esed 313
Eslem 305
Eşca' 305
eşsizlik 186

**F**

fark 24, 28, 76, 79, 104, 110, 111, 140, 151, 168, 177, 213, 286, 305, 350
fenâ 119
Firavun 33, 113, 126, 127, 128, 129, 130, 131, 132, 133, 134, 223, 224, 225, 242, 339, 362, 380, 403, 407

**G**

Gatafân 313, 385
gayb 125, 159, 376
Gıfâr 305
gıybet 323, 326, 330, 331

**H**

hacb 177
hakkalyakîn 285
halvet 192, 349, 368
Hanîf 188, 318
Havass 14
Hayber 308, 311
Hayber fethi 311
Hayberliler 313
hevâ 187, 188, 218, 257
heybet 14, 91, 186, 190, 273, 340, 419
hicran 79, 92, 352, 395
Hudeybiye 297, 298, 303, 305, 308, 310, 312, 315, 316, 317
Hudeybiye Anlaşması 311
Hudeybiye fethi 298
Humma 26
huriler 67, 248, 427, 431, 438
Huzaa 385, 394
Huzeyfe 397
Huzeyl 385
Hz. Âdem 71, 72, 74, 160, 181, 184, 226, 389, 412, 413, 417, 435
Hz. Aişe 431, 432
Hz. Ali 320
Hz. Bilal 69
Hz. Cibril 27, 71, 208, 238, 359, 381, 382, 394, 406
Hz. Davûd 50, 51, 52, 53, 54, 55, 58, 124, 381
Hz. Ebûbekir 291, 304, 309, 310, 320
Hz. Eyyûb 32, 63, 64, 65, 276
Hz. Havva 184
Hz. Hızır 286
Hz. Hûd 271, 276, 380, 394, 403
Hz. İbrahim 25, 26, 27, 28, 29, 30, 31, 216, 225, 276, 285, 286, 359, 360, 361, 390
Hz. İdris 34
Hz. İsa 225, 226, 227, 228, 276, 318

Hz. İsmail 29, 30, 31
Hz. İsrâfil 400
Hz. Lût 36
Hz. Mûsâ 28, 76, 94, 126, 127, 128, 136, 223, 224, 243, 256,276, 286, 367, 368, 380, 390, 403
Hz. Nûh 24, 25, 187, 276, 380, 401, 402
Hz. Osman 303, 320
Hz. Ömer 309, 320, 331
Hz. Salih 276, 405
Hz. Süleyman 58, 59, 60, 61, 62
Hz. Şuayb 276
Hz. Yakub 276
Hz. Yûnus 38, 276
Hz. Yûsuf 61, 372

**İ**

İbn Abbâs 397
İbn Mes'ûd 397
İbn Ömer 397
İhlas 17, 18, 85
ilmelyakîn 285
İlyâs 34, 35
inabet 104
İncil 319, 320
İran 312
İranlılar 309
İsrâ 15, 167, 222, 380
İsrailoğulları 60
istidrac 259
istidraç 175

**K**

Kâbîl 160
kabir 118, 133, 392
kabz 79, 91, 177, 238, 271, 419, 421
Kevser 382
Kıpti 223
kıyas 183
kovulma 280
Kureyşliler 303
kuru çamur 417
Kürsü 71, 141

**L**

lakap takma 323
lamialar 90
lanet 73, 280, 354, 355
Lât 385
Lemem 388, 389
Levh-i Mahfuz 210, 238, 337, 368, 401, 408, 449

**M**

mahviyet 119, 305
Malik 101, 232
marifet 11, 79, 90, 122, 177, 382, 413, 437
masumiyet 106
Medine 75, 113, 179, 263, 277, 297, 311, 335, 379, 397, 411, 433
Mekkeliler 182, 398
Mekke'nin fethi 298, 312
melekût alemi 369
Menât 385
Mescid-i Haram 28, 310, 314, 315, 316, 317
Mesih 17, 78

Me'vâ cenneti 383
Mısır 224
Muhabbet ehli 119
Museylime 309
Muzeyne 305
mükâşefe 90
münafik 290, 292, 301, 343

**N**

Na'îm cenneti 452, 453
neşr 118
Nil 224
nutfe 393
nübüvvet 122

**O**

oruç 50, 279, 431

**P**

pişmiş çamur 417
put 94

**R**

resullük 122
Rıdvân Biatı 303, 310
rıza 81, 82, 120, 162, 163, 164, 165, 168, 179, 186, 204, 229, 392
risalet 122
riya 17, 162, 190, 292, 354
Roma 312
Rûhu'l-Kudüs 208
ruyetullah 196

**S**

safvet ehli 434
sahabi 321
sahv 79, 383, 384, 451
Sakîf 385
samediyet 90, 125, 381
Sanâ 27
sekîne 300
sekr 79
sıddîklar 291
Sidretu'l-muntehâ 383
sofi 238, 241
sülûk 126

**Ş**

Şam 58
şehvet ehli 434
şek 79
şeyh 126
Şi'râ 394
Şirk 293
şuhûd 162, 437

**T**

tâğût 86
tahdit 185
takdis 9, 44
takva 106, 111, 229, 257, 293, 316, 323, 325, 332, 345, 355, 371, 381, 410, 412
ta>til 185
tecelli 91, 123, 393
temsil 185
Ten'îm Dağı 313
tenzih 78, 108, 185, 303, 454
terviye gecesi 29

tesbih 9, 37, 41, 50, 112, 117, 136, 168, 180, 302, 303, 349, 378, 448, 454
teşbih 185
tevekkül 60, 97, 98, 133, 183, 201, 202, 222, 255, 257, 312
Tevrat 33, 52, 53, 60, 172, 319, 320
tûl-i emel 189
Tûr 367
Tübba‘ 246

**U**

Urve b. Mes’ûd 303
Uzeyr 78, 226
Uzzâ 385

**V**

vecd 75, 88
velayet 122
Veli 20, 41
velilik 122
vird 281
vuslat 79, 88, 89, 120, 125, 192, 238, 263, 283, 352, 353

**Y**

yakınlık 14, 19, 55, 63, 90, 193, 194, 264, 273, 352, 353, 391, 436, 437, 451
Yemameliler 309
Yemen 246, 263

**Z**

zahid 248, 281
zan 157, 257, 259, 301, 354, 385, 386, 387
zekât 293, 343
Zulkifl 66, 67

# Hadis İndeksi


- "Âdem oğlu, karnından daha kötü bir kap doldurmamıştır." 282
- "Allah'ı görüyormuşsun gibi O'na ibadet et." 355
- "Allah: 'İhlas, Allah ile kulu arasındaki bir sırdır' der." 85
- "Allah onları cehennemden çıkarıncaya kadar ölüm halinde tutar. Ölü ise hissetmez ve acı duymaz." 231
- "Ben hastalandım, fakat sen beni ziyaret etmedin." 225
- "Bir saat düşünmek bir yıllık ibadetten hayırlıdır." 448
- "Böylece mümin, Allah'tan güzel bir ahlak almıştır." 37
- "Eğer mutlaka bir şeyler yenecekse, bu takdirde üçte bir yiyecek, üçte bir içecek, üçte bir de nefes için olmalıdır." 282
- "Ey Muaz! Amelini ihlasla yerine getir, azı sana yeter." 18
- "Gök, şiddetle feryat etmiştir. Feryat etmek de hakkıdır. Göklerde bir ayak izi kadar yer yoktur ki üzerinde ayakta ibadete duran veya rükûa varan ya da secdeye kapanan biri olmasın." 180
- "Hz. Cibril, Hz. Peygamber>e (s.a.v.) bu tartışmayı sormuş, o da bilmediğini söylemiştir. Bunun üzerine Hz. Cibril: 'Bu tartışma, kefaretler ve dereceler hakkında olmuştur. Söz konusu kefaretler, soğuk sabahlarda bol su kullanarak abdest almak ve cemaatlere doğru adım atmaktır. Derece-

lere gelince onlar selamı yaymak, yemek yedirmek ve insanlar uyumakta iken gece namaz kılmaktır' dedi." 71

- "İnsanların zenginlikle, sizlerin de peygamberle ailelerinize dönmesinden hoşnut olmaz mısınız?" 218
- "Kim, Vâkıa Sûresi'ni her gece okursa, ona ebediyen yoksulluk isabet etmez." 433
- "Mümin hanımlar, hurilere şöyle cevap verirler: Biz namaz kılanlarız. Oysa siz namaz kılmadınız. Biz oruç tutanlarız. Oysa siz oruç tutmadınız. Biz sadaka verenleriz. Oysa siz sadaka vermediniz." 431
- "Şüphesiz Allah'ın birtakım kapları vardır. Bu kaplar kalplerdir. Kalplerin Allah'a en yakın olanı ise, ince ve duru olandır." 348
- "Şüphesiz kâfir, yedi bağırsakta yer." 282
- "Üstü başı dağınık, toz içinde ve önemsenmeyen nice kimse vardır ki eğer Allah adına yemin etse, Allah onun yeminini yerine getirir." 330

ABDULKERİM

EL-KUŞEYRÎ

KUR'AN-I KERİM

TEFSİRİ

# LETÂİFU'L İŞÂRÂT

تفسير صوفي كامل للقرآن الكريم

ilkharf YAYINLARI

بسم الله الرحمن الرحيم

©İlk Harf Yayınevi, 2013
Kitabın tüm yayın hakları "İlk Harf Yayınevi"ne aittir.

İlk Harf Yayınevi, 18
Tefsir Serisi, 1/6

ISBN
978-605-5457-81-5 (cilt: 6)
978-605-5457-55-6 (takım)

Editör
Ersan Güngör

Tercüme
Prof. Dr. Mehmet Yalar

Sayfa Düzeni
İrfan Güngörür

Kapak Tasarımı
Sercan Arslan

Basım Tarihi
1. Baskı, İstanbul, Ağustos 2013

Baskı / Cilt
Şenyıldız Yay. Matbaacılık Ltd. Şti.
Gümüşsuyu Cad. No: 3, K: 2 Topkapı/İstanbul
Tel: 0212 483 47 92 (Sertifika No: 11964)

**İLK HARF YAYINEVİ**
www.ilkharf.com.tr • info@ilkharf.com.tr

**Genel Dağıtım**
Çelik Yayınevi
(Sertifika No, 14710)
Ticarethane Sokak No: 19/A Cağaloğlu - Fatih / İstanbul
Tel: +90 212 511 28 11 - 513 73 19 • Fax: +90 212 511 28 12
www.celikyayinevi.com • info@celikyayinevi.com

Abdulkerîm el-Kuşeyrî • Letâifu'l-İşârât **KUŞEYRÎ TEFSİRİ**

Abdulkerîm el-Kuşeyrî

Letâifu'l-İşârât

# Kuşeyrî Tefsiri

## -6-

Tercüme
Prof. Dr. Mehmet Yalar

İlkharf Yayınları

# ÂYETLER FİHRİSTİ


| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| **HADÎD SÛRESİ (s. 9-31)** | |
| 1 | 9 |
| 2 | 10 |
| 3 | 11 |
| 4 | 13 |
| 5 | 14 |
| 6 | 14 |
| 7 | 14 |
| 8 | 15 |
| 9 | 15 |
| 10 | 16 |
| 11 | 17 |
| 12 | 17 |
| 13 | 18 |
| 14 | 19 |
| 15 | 20 |
| 16 | 20 |
| 17 | 21 |
| 18 | 22 |
| 19 | 22 |
| 20 | 23 |
| 21 | 24 |
| 22 | 25 |
| 23 | 26 |
| 24 | 27 |
| 25 | 28 |
| 26 | 29 |
| 27 | 29 |
| 28 | 30 |
| 29 | 30 |
| **MÜCÂDELE SÛRESİ (s. 33-44)** | |
| 1 | 34 |
| 2 | 35 |
| 3 | 35 |
| 4 | 36 |
| 5 | 36 |
| 6 | 37 |
| 7 | 37 |
| 8 | 39 |
| 9 | 39 |
| 10 | 40 |
| 11 | 40 |
| 12 | 41 |
| 13 | 41 |
| 14 | 42 |
| 15 | 42 |
| 16 | 42 |
| 17 | 42 |
| 18 | 43 |
| 19 | 43 |
| 20 | 43 |
| 21 | 44 |
| 22 | 44 |
| **HAŞR SÛRESİ (s. 45-61)** | |
| 1 | 45 |
| 2 | 46 |
| 3 | 48 |
| 4 | 48 |
| 5 | 49 |
| 6 | 49 |
| 7 | 50 |
| 8 | 51 |
| 9 | 51 |
| 10 | 53 |
| 11 | 54 |
| 12 | 54 |
| 13 | 55 |
| 14 | 55 |
| 15 | 56 |
| 16 | 56 |
| 17 | 57 |
| 18 | 57 |
| 19 | 58 |
| 20 | 58 |
| 21 | 58 |
| 22 | 59 |
| 23 | 60 |
| 24 | 61 |
| **MÜMTAHİNE SÛRESİ (s. 63-71)** | |
| 1 | 64 |
| 2 | 65 |
| 3 | 65 |
| 4 | 66 |
| 5 | 67 |
| 6 | 68 |
| 7 | 68 |
| 8 | 68 |
| 9 | 68 |
| 10 | 69 |
| 11 | 70 |
| 12 | 70 |
| 13 | 71 |
| **SAFF SÛRESİ (s. 73-80)** | |
| 1 | 73 |
| 2 | 74 |
| 3 | 74 |
| 4 | 74 |
| 5 | 75 |
| 6 | 75 |
| 7 | 76 |
| 8 | 76 |
| 9 | 77 |
| 10 | 77 |
| 11 | 77 |
| 12 | 78 |
| 13 | 79 |
| 14 | 79 |
| **CUM'A SÛRESİ (s. 81-87)** | |
| 1 | 81 |
| 2 | 82 |
| 3 | 83 |
| 4 | 83 |
| 5 | 84 |
| 6 | 85 |
| 7 | 85 |
| 8 | 85 |
| 9 | 85 |
| 10 | 86 |
| 11 | 86 |
| **MÜNÂFİKÛN SÛRESİ (s. 89-95)** | |
| 1 | 90 |
| 2 | 90 |
| 3 | 91 |
| 4 | 91 |
| 5 | 92 |
| 6 | 92 |
| 7 | 92 |
| 8 | 93 |
| 9 | 94 |
| 10 | 94 |
| 11 | 95 |
| **TEĞÂBÜN SÛRESİ (s. 97-104)** | |
| 1 | 97 |
| 2 | 98 |
| 3 | 98 |
| 4 | 99 |
| 5 | 99 |
| 6 | 100 |
| 7 | 100 |
| 8 | 101 |
| 9 | 101 |
| 10 | 101 |
| 11 | 102 |
| 12 | 102 |
| 13 | 102 |
| 14 | 103 |
| 15 | 103 |
| 16 | 103 |
| 17 | 104 |
| 18 | 104 |
| **TALÂK SÛRESİ (s. 105-112)** | |
| 1 | 105 |
| 2 | 107 |
| 3 | 107 |
| 4 | 108 |
| 5 | 109 |
| 6 | 109 |
| 7 | 110 |
| 8 | 111 |
| 9 | 111 |
| 10 | 111 |
| 11 | 111 |
| 12 | 112 |
| **TAHRÎM SÛRESİ (s. 113-122)** | |
| 1 | 113 |
| 2 | 115 |
| 3 | 116 |
| 4 | 116 |
| 5 | 117 |
| 6 | 117 |
| 7 | 118 |
| 8 | 119 |
| 9 | 120 |
| 10 | 120 |
| 11 | 121 |
| 12 | 121 |
| **MÜLK SÛRESİ (s. 123-132)** | |
| 1 | 124 |
| 2 | 124 |
| 3 | 124 |
| 4 | 125 |
| 5 | 125 |
| 6 | 126 |
| 7 | 126 |
| 8 | 126 |
| 9 | 127 |
| 10 | 127 |
| 11 | 127 |
| 12 | 127 |
| 13 | 128 |
| 14 | 128 |
| 15 | 128 |
| 16 | 129 |
| 17 | 129 |
| 18 | 129 |
| 19 | 129 |
| 20 | 130 |
| 21 | 130 |
| 22 | 130 |
| 23 | 130 |
| 24 | 131 |
| 25 | 131 |
| 26 | 131 |
| 27 | 131 |
| 28 | 131 |
| 29 | 132 |
| 30 | 132 |
| **KALEM SÛRESİ (s. 133-146)** | |
| 1 | 133 |
| 2 | 134 |
| 3 | 134 |
| 4 | 135 |
| 5 | 136 |
| 6 | 136 |
| 7 | 136 |
| 8 | 136 |
| 9 | 136 |
| 10 | 137 |
| 11 | 137 |
| 12 | 137 |
| 13 | 137 |
| 14 | 137 |
| 15 | 138 |
| 16 | 138 |
| 17 | 138 |
| 18 | 138 |
| 19 | 139 |
| 20 | 139 |
| 21 | 139 |
| 22 | 139 |
| 23 | 139 |
| 24 | 139 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| 25 | 139 |
| 26 | 140 |
| 27 | 140 |
| 28 | 140 |
| 29 | 140 |
| 30 | 140 |
| 31 | 140 |
| 32 | 141 |
| 33 | 141 |
| 34 | 141 |
| 35 | 142 |
| 36 | 142 |
| 37 | 142 |
| 38 | 142 |
| 39 | 142 |
| 40 | 142 |
| 41 | 142 |
| 42 | 143 |
| 43 | 143 |
| 44 | 143 |
| 45 | 144 |
| 46 | 144 |
| 47 | 144 |
| 48 | 145 |
| 49 | 145 |
| 50 | 145 |
| 51 | 145 |
| 52 | 146 |
| **HÂKKA SÛRESİ (s. 147-156)** | |
| 1 | 147 |
| 2 | 147 |
| 3 | 148 |
| 4 | 148 |
| 5 | 149 |
| 6 | 149 |
| 7 | 149 |
| 8 | 149 |
| 9 | 149 |
| 10 | 149 |
| 11 | 149 |
| 12 | 150 |
| 13 | 150 |
| 14 | 150 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| 15 | 150 |
| 16 | 150 |
| 17 | 150 |
| 18 | 150 |
| 19 | 151 |
| 20 | 151 |
| 21 | 151 |
| 22 | 151 |
| 23 | 152 |
| 24 | 152 |
| 25 | 152 |
| 26 | 152 |
| 27 | 152 |
| 28 | 152 |
| 29 | 153 |
| 30 | 153 |
| 31 | 153 |
| 32 | 153 |
| 33 | 153 |
| 34 | 153 |
| 35 | 153 |
| 36 | 153 |
| 37 | 153 |
| 38 | 154 |
| 39 | 154 |
| 40 | 154 |
| 41 | 154 |
| 42 | 154 |
| 43 | 154 |
| 44 | 154 |
| 45 | 154 |
| 46 | 154 |
| 47 | 154 |
| 48 | 155 |
| 49 | 155 |
| 50 | 155 |
| 51 | 155 |
| 52 | 156 |
| **MA'ÂRİC SÛRESİ (s. 157-166)** | |
| 1 | 157 |
| 2 | 158 |
| 3 | 158 |
| 4 | 158 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| 5 | 158 |
| 6 | 159 |
| 7 | 159 |
| 8 | 159 |
| 9 | 159 |
| 10 | 159 |
| 11 | 160 |
| 12 | 160 |
| 13 | 160 |
| 14 | 160 |
| 15 | 160 |
| 16 | 160 |
| 17 | 160 |
| 18 | 160 |
| 19 | 161 |
| 20 | 161 |
| 21 | 161 |
| 22 | 161 |
| 23 | 161 |
| 24 | 162 |
| 25 | 162 |
| 26 | 162 |
| 27 | 162 |
| 28 | 162 |
| 29 | 163 |
| 30 | 163 |
| 31 | 163 |
| 32 | 163 |
| 33 | 163 |
| 34 | 164 |
| 35 | 164 |
| 36 | 164 |
| 37 | 164 |
| 38 | 164 |
| 39 | 164 |
| 40 | 165 |
| 41 | 165 |
| 42 | 165 |
| 43 | 165 |
| 44 | 165 |
| **NÛH SÛRESİ (s. 167-172)** | |
| 1 | 167 |
| 2 | 168 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| 3 | 168 |
| 4 | 168 |
| 5 | 169 |
| 6 | 169 |
| 7 | 169 |
| 8 | 169 |
| 9 | 169 |
| 10 | 169 |
| 11 | 169 |
| 12 | 169 |
| 13 | 170 |
| 14 | 170 |
| 15 | 170 |
| 16 | 170 |
| 17 | 171 |
| 18 | 171 |
| 19 | 171 |
| 20 | 171 |
| 21 | 171 |
| 22 | 171 |
| 23 | 171 |
| 24 | 172 |
| 25 | 172 |
| 26 | 172 |
| 27 | 172 |
| 28 | 172 |
| **CİN SÛRESİ (s. 173-180)** | |
| 1 | 173 |
| 2 | 173 |
| 3 | 174 |
| 4 | 174 |
| 5 | 175 |
| 6 | 175 |
| 7 | 175 |
| 8 | 175 |
| 9 | 176 |
| 10 | 176 |
| 11 | 176 |
| 12 | 176 |
| 13 | 176 |
| 14 | 177 |
| 15 | 177 |
| 16 | 177 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| 17 | 177 |
| 18 | 177 |
| 19 | 178 |
| 20 | 178 |
| 21 | 178 |
| 22 | 178 |
| 23 | 179 |
| 24 | 179 |
| 25 | 179 |
| 26 | 179 |
| 27 | 179 |
| 28 | 179 |
| **MÜZZEMMİL SÛRESİ (s. 181-188)** | |
| 1 | 181 |
| 2 | 181 |
| 3 | 182 |
| 4 | 182 |
| 5 | 183 |
| 6 | 183 |
| 7 | 184 |
| 8 | 184 |
| 9 | 184 |
| 10 | 185 |
| 11 | 185 |
| 12 | 185 |
| 13 | 185 |
| 14 | 185 |
| 15 | 186 |
| 16 | 186 |
| 17 | 186 |
| 18 | 186 |
| 19 | 186 |
| 20 | 187 |
| **MÜDDESSİR SÛRESİ (s. 189-199)** | |
| 1 | 189 |
| 2 | 189 |
| 3 | 190 |
| 4 | 190 |
| 5 | 190 |
| 6 | 191 |
| 7 | 191 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| 8 | 191 |
| 9 | 191 |
| 10 | 191 |
| 11 | 191 |
| 12 | 192 |
| 13 | 192 |
| 14 | 192 |
| 15 | 192 |
| 16 | 192 |
| 17 | 192 |
| 18 | 193 |
| 19 | 193 |
| 20 | 193 |
| 21 | 193 |
| 22 | 193 |
| 23 | 193 |
| 24 | 193 |
| 25 | 193 |
| 26 | 193 |
| 27 | 194 |
| 28 | 194 |
| 29 | 194 |
| 30 | 194 |
| 31 | 194 |
| 32 | 195 |
| 33 | 195 |
| 34 | 195 |
| 35 | 195 |
| 36 | 196 |
| 37 | 196 |
| 38 | 196 |
| 39 | 197 |
| 40 | 197 |
| 41 | 197 |
| 42 | 197 |
| 43 | 197 |
| 44 | 197 |
| 45 | 197 |
| 46 | 197 |
| 47 | 197 |
| 48 | 198 |
| 49 | 198 |
| 50 | 198 |
| 51 | 198 |
| 52 | 198 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| 53 | 198 |
| 54 | 198 |
| 55 | 198 |
| 56 | 199 |
| **KIYÂMET SÛRESİ (s. 201-209)** | |
| 1 | 201 |
| 2 | 201 |
| 3 | 202 |
| 4 | 202 |
| 5 | 202 |
| 6 | 203 |
| 7 | 203 |
| 8 | 203 |
| 9 | 203 |
| 10 | 203 |
| 11 | 204 |
| 12 | 204 |
| 13 | 204 |
| 14 | 204 |
| 15 | 204 |
| 16 | 205 |
| 17 | 205 |
| 18 | 205 |
| 19 | 205 |
| 20 | 205 |
| 21 | 205 |
| 22 | 205 |
| 23 | 205 |
| 24 | 206 |
| 25 | 206 |
| 26 | 207 |
| 27 | 207 |
| 28 | 207 |
| 29 | 207 |
| 30 | 207 |
| 31 | 208 |
| 32 | 208 |
| 33 | 208 |
| 34 | 208 |
| 35 | 208 |
| 36 | 208 |
| 37 | 209 |
| 38 | 209 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| 39 | 209 |
| 40 | 209 |
| **İNSÂN SÛRESİ (s. 211-222)** | |
| 1 | 211 |
| 2 | 212 |
| 3 | 212 |
| 4 | 213 |
| 5 | 213 |
| 6 | 214 |
| 7 | 214 |
| 8 | 214 |
| 9 | 215 |
| 10 | 215 |
| 11 | 215 |
| 12 | 216 |
| 13 | 216 |
| 14 | 216 |
| 15 | 216 |
| 16 | 217 |
| 17 | 217 |
| 18 | 217 |
| 19 | 217 |
| 20 | 218 |
| 21 | 218 |
| 22 | 220 |
| 23 | 221 |
| 24 | 221 |
| 25 | 221 |
| 26 | 221 |
| 27 | 221 |
| 28 | 222 |
| 29 | 222 |
| 30 | 222 |
| 31 | 222 |
| **MÜRSELÂT SÛRESİ (s. 223-232)** | |
| 1 | 223 |
| 2 | 224 |
| 3 | 224 |
| 4 | 224 |
| 5 | 224 |
| 6 | 224 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| 7 | 224 |
| 8 | 225 |
| 9 | 225 |
| 10 | 225 |
| 11 | 225 |
| 12 | 225 |
| 13 | 225 |
| 14 | 225 |
| 15 | 225 |
| 16 | 226 |
| 17 | 226 |
| 18 | 226 |
| 19 | 226 |
| 20 | 226 |
| 21 | 227 |
| 22 | 227 |
| 23 | 227 |
| 24 | 228 |
| 25 | 228 |
| 26 | 228 |
| 27 | 228 |
| 28 | 228 |
| 29 | 228 |
| 30 | 229 |
| 31 | 229 |
| 32 | 229 |
| 33 | 229 |
| 34 | 229 |
| 35 | 229 |
| 36 | 229 |
| 37 | 230 |
| 38 | 230 |
| 39 | 230 |
| 40 | 230 |
| 41 | 230 |
| 42 | 231 |
| 43 | 231 |
| 44 | 231 |
| 45 | 231 |
| 46 | 231 |
| 47 | 231 |
| 48 | 232 |
| 49 | 232 |
| 50 | 232 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| **NEBE' SÛRESİ (s. 233-241)** | |
| 1 | 233 |
| 2 | 233 |
| 3 | 233 |
| 4 | 234 |
| 5 | 234 |
| 6 | 234 |
| 7 | 234 |
| 8 | 234 |
| 9 | 235 |
| 10 | 235 |
| 11 | 235 |
| 12 | 235 |
| 13 | 235 |
| 14 | 235 |
| 15 | 236 |
| 16 | 236 |
| 17 | 236 |
| 18 | 236 |
| 19 | 236 |
| 20 | 237 |
| 21 | 237 |
| 22 | 237 |
| 23 | 237 |
| 24 | 237 |
| 25 | 237 |
| 26 | 237 |
| 27 | 238 |
| 28 | 238 |
| 29 | 238 |
| 30 | 239 |
| 31 | 239 |
| 32 | 239 |
| 33 | 239 |
| 34 | 239 |
| 35 | 240 |
| 36 | 240 |
| 37 | 240 |
| 38 | 240 |
| 39 | 241 |
| 40 | 241 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| **NÂZİ'ÂT SÛRESİ (s. 243-252)** | |
| 1 | 243 |
| 2 | 244 |
| 3 | 244 |
| 4 | 244 |
| 5 | 245 |
| 6 | 245 |
| 7 | 245 |
| 8 | 245 |
| 9 | 245 |
| 10 | 246 |
| 11 | 246 |
| 12 | 246 |
| 13 | 246 |
| 14 | 246 |
| 15 | 247 |
| 16 | 247 |
| 17 | 247 |
| 18 | 247 |
| 19 | 247 |
| 20 | 248 |
| 21 | 248 |
| 22 | 248 |
| 23 | 248 |
| 24 | 248 |
| 25 | 248 |
| 26 | 249 |
| 27 | 249 |
| 28 | 249 |
| 29 | 249 |
| 30 | 249 |
| 31 | 249 |
| 32 | 250 |
| 33 | 250 |
| 34 | 250 |
| 35 | 250 |
| 36 | 250 |
| 37 | 250 |
| 38 | 250 |
| 39 | 250 |
| 40 | 251 |
| 41 | 251 |
| 42 | 251 |
| 43 | 251 |
| 44 | 251 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| 45 | 251 |
| 46 | 252 |
| **ABESE SÛRESİ (s. 253-260)** | |
| 1 | 253 |
| 2 | 253 |
| 3 | 254 |
| 4 | 254 |
| 5 | 254 |
| 6 | 254 |
| 7 | 255 |
| 8 | 255 |
| 9 | 255 |
| 10 | 255 |
| 11 | 255 |
| 12 | 255 |
| 13 | 256 |
| 14 | 256 |
| 15 | 256 |
| 16 | 256 |
| 17 | 256 |
| 18 | 256 |
| 19 | 256 |
| 20 | 257 |
| 21 | 257 |
| 22 | 257 |
| 23 | 257 |
| 24 | 258 |
| 25 | 258 |
| 26 | 258 |
| 27 | 258 |
| 28 | 258 |
| 29 | 258 |
| 30 | 258 |
| 31 | 258 |
| 32 | 258 |
| 33 | 259 |
| 34 | 259 |
| 35 | 259 |
| 36 | 259 |
| 37 | 259 |
| 38 | 259 |
| 39 | 259 |
| 40 | 260 |
| 41 | 260 |
| 42 | 260 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| **TEKVÎR SÛRESİ (s. 261266)** | |
| 1 | 261 |
| 2 | 261 |
| 3 | 262 |
| 4 | 262 |
| 5 | 262 |
| 6 | 262 |
| 7 | 262 |
| 8 | 263 |
| 9 | 263 |
| 10 | 263 |
| 11 | 263 |
| 12 | 263 |
| 13 | 263 |
| 14 | 263 |
| 15 | 264 |
| 16 | 264 |
| 17 | 264 |
| 18 | 264 |
| 19 | 264 |
| 20 | 265 |
| 21 | 265 |
| 22 | 265 |
| 23 | 265 |
| 24 | 265 |
| 25 | 265 |
| 26 | 266 |
| 27 | 266 |
| 28 | 266 |
| 29 | 266 |
| **İNFİTÂR SÛRESİ (s. 267-270)** | |
| 1 | 267 |
| 2 | 267 |
| 3 | 267 |
| 4 | 268 |
| 5 | 268 |
| 6 | 268 |
| 7 | 269 |
| 8 | 269 |
| 9 | 269 |
| 10 | 269 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| 11 | 269 |
| 12 | 269 |
| 13 | 269 |
| 14 | 269 |
| 15 | 270 |
| 16 | 270 |
| 17 | 270 |
| 18 | 270 |
| 19 | 270 |
| **MUTAFFİFÎN SÛRESİ (s. 271-278)** | |
| 1 | 271 |
| 2 | 271 |
| 3 | 271 |
| 4 | 272 |
| 5 | 272 |
| 6 | 272 |
| 7 | 273 |
| 8 | 273 |
| 9 | 273 |
| 10 | 274 |
| 11 | 274 |
| 12 | 274 |
| 13 | 274 |
| 14 | 274 |
| 15 | 274 |
| 16 | 275 |
| 17 | 275 |
| 18 | 275 |
| 19 | 275 |
| 20 | 275 |
| 21 | 275 |
| 22 | 275 |
| 23 | 276 |
| 24 | 276 |
| 25 | 277 |
| 26 | 277 |
| 27 | 277 |
| 28 | 277 |
| 29 | 278 |
| 30 | 278 |
| 31 | 278 |
| 32 | 278 |
| 33 | 278 |
| 34 | 278 |
| 35 | 278 |
| 36 | 278 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| **İNŞİKÂK SÛRESİ (s. 279-284)** | |
| 1 | 279 |
| 2 | 279 |
| 3 | 280 |
| 4 | 280 |
| 5 | 280 |
| 6 | 280 |
| 7 | 280 |
| 8 | 280 |
| 9 | 281 |
| 10 | 281 |
| 11 | 281 |
| 12 | 282 |
| 13 | 282 |
| 14 | 282 |
| 15 | 282 |
| 16 | 282 |
| 17 | 282 |
| 18 | 282 |
| 19 | 283 |
| 20 | 283 |
| 21 | 284 |
| 22 | 284 |
| 23 | 284 |
| 24 | 284 |
| 25 | 284 |
| **BURÛC SÛRESİ (s. 285-290)** | |
| 1 | 285 |
| 2 | 285 |
| 3 | 286 |
| 4 | 287 |
| 5 | 287 |
| 6 | 287 |
| 7 | 287 |
| 8 | 287 |
| 9 | 287 |
| 10 | 287 |
| 11 | 288 |
| 12 | 288 |
| 13 | 288 |
| 14 | 289 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| 15 | 289 |
| 16 | 289 |
| 17 | 289 |
| 18 | 289 |
| 19 | 290 |
| 20 | 290 |
| 21 | 290 |
| 22 | 290 |
| **TÂRIK SÛRESİ (s. 291-294)** | |
| 1 | 291 |
| 2 | 291 |
| 3 | 292 |
| 4 | 292 |
| 5 | 292 |
| 6 | 292 |
| 7 | 292 |
| 8 | 292 |
| 9 | 293 |
| 10 | 293 |
| 11 | 293 |
| 12 | 293 |
| 13 | 293 |
| 14 | 293 |
| 15 | 294 |
| 16 | 294 |
| 17 | 294 |
| **A'LÂ SÛRESİ (s. 295-299)** | |
| 1 | 295 |
| 2 | 295 |
| 3 | 296 |
| 4 | 296 |
| 5 | 297 |
| 6 | 297 |
| 7 | 297 |
| 8 | 297 |
| 9 | 297 |
| 10 | 298 |
| 11 | 298 |
| 12 | 298 |
| 13 | 298 |
| 14 | 298 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| 15 | 298 |
| 16 | 298 |
| 17 | 299 |
| 18 | 299 |
| 19 | 299 |
| **ĞÂŞİYE SÛRESİ (s. 301-306)** | |
| 1 | 301 |
| 2 | 302 |
| 3 | 302 |
| 4 | 302 |
| 5 | 302 |
| 6 | 302 |
| 7 | 302 |
| 8 | 303 |
| 9 | 303 |
| 10 | 303 |
| 11 | 303 |
| 12 | 303 |
| 13 | 304 |
| 14 | 304 |
| 15 | 304 |
| 16 | 304 |
| 17 | 304 |
| 18 | 305 |
| 19 | 305 |
| 20 | 305 |
| 21 | 305 |
| 22 | 305 |
| 23 | 305 |
| 24 | 305 |
| 25 | 306 |
| 26 | 306 |
| **FECR SÛRESİ (s. 307-312)** | |
| 1 | 307 |
| 2 | 307 |
| 3 | 308 |
| 4 | 309 |
| 5 | 309 |
| 6 | 309 |
| 7 | 309 |
| 8 | 309 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| 9 | 309 |
| 10 | 309 |
| 11 | 309 |
| 12 | 309 |
| 13 | 309 |
| 14 | 310 |
| 15 | 310 |
| 16 | 310 |
| 17 | 310 |
| 18 | 310 |
| 19 | 310 |
| 20 | 311 |
| 21 | 311 |
| 22 | 311 |
| 23 | 311 |
| 24 | 311 |
| 25 | 311 |
| 26 | 312 |
| 27 | 312 |
| 28 | 312 |
| 29 | 312 |
| 30 | 312 |
| **BELED SÛRESİ (s. 313-317)** | |
| 1 | 313 |
| 2 | 314 |
| 3 | 314 |
| 4 | 314 |
| 5 | 314 |
| 6 | 315 |
| 7 | 315 |
| 8 | 315 |
| 9 | 315 |
| 10 | 315 |
| 11 | 315 |
| 12 | 315 |
| 13 | 315 |
| 14 | 315 |
| 15 | 315 |
| 16 | 315 |
| 17 | 316 |
| 18 | 316 |
| 19 | 316 |
| 20 | 316 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| **ŞEMS SÛRESİ (s. 319-323)** | |
| 1 | 319 |
| 2 | 319 |
| 3 | 320 |
| 4 | 320 |
| 5 | 320 |
| 6 | 320 |
| 7 | 320 |
| 8 | 320 |
| 9 | 321 |
| 10 | 321 |
| 11 | 321 |
| 12 | 322 |
| 13 | 322 |
| 14 | 322 |
| 15 | 323 |
| **LEYL SÛRESİ (s. 325-329)** | |
| 1 | 325 |
| 2 | 326 |
| 3 | 326 |
| 4 | 326 |
| 5 | 327 |
| 6 | 327 |
| 7 | 327 |
| 8 | 327 |
| 9 | 327 |
| 10 | 327 |
| 11 | 328 |
| 12 | 328 |
| 13 | 328 |
| 14 | 328 |
| 15 | 328 |
| 16 | 329 |
| 17 | 329 |
| 18 | 329 |
| 19 | 329 |
| 20 | 329 |
| 21 | 329 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| **DUHÂ SÛRESİ (s. 331-335)** | |
| 1 | 331 |
| 2 | 332 |
| 3 | 332 |
| 4 | 333 |
| 5 | 333 |
| 6 | 333 |
| 7 | 333 |
| 8 | 334 |
| 9 | 335 |
| 10 | 335 |
| 11 | 335 |
| **İNŞİRÂH SÛRESİ (s. 337-339)** | |
| 1 | 337 |
| 2 | 338 |
| 3 | 338 |
| 4 | 338 |
| 5 | 338 |
| 6 | 338 |
| 7 | 339 |
| 8 | 339 |
| **TÎN SÛRESİ (s. 341-343)** | |
| 1 | 341 |
| 2 | 342 |
| 3 | 342 |
| 4 | 342 |
| 5 | 342 |
| 6 | 343 |
| 7 | 343 |
| 8 | 343 |
| **ALAK SÛRESİ (s. 345-348)** | |
| 1 | 345 |
| 2 | 346 |
| 3 | 346 |
| 4 | 346 |
| 5 | 346 |
| 6 | 346 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| 7 | 346 |
| 8 | 347 |
| 9 | 347 |
| 10 | 347 |
| 11 | 347 |
| 12 | 347 |
| 13 | 347 |
| 14 | 347 |
| 15 | 348 |
| 16 | 348 |
| 17 | 348 |
| 18 | 348 |
| 19 | 348 |
| **KADİR SÛRESİ (s. 349-351)** | |
| 1 | 349 |
| 2 | 350 |
| 3 | 350 |
| 4 | 350 |
| 5 | 350 |
| **BEYYİNE SÛRESİ (s. 353-356)** | |
| 1 | 353 |
| 2 | 354 |
| 3 | 354 |
| 4 | 354 |
| 5 | 354 |
| 6 | 355 |
| 7 | 355 |
| 8 | 355 |
| **ZİLZÂL SÛRESİ (s. 357-368)** | |
| 1 | 357 |
| 2 | 357 |
| 3 | 357 |
| 4 | 358 |
| 5 | 358 |
| 6 | 358 |
| 7 | 358 |
| 8 | 358 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| **ÂDİYÂT SÛRESİ (s. 359-362)** | |
| 1 | 359 |
| 2 | 360 |
| 3 | 360 |
| 4 | 360 |
| 5 | 360 |
| 6 | 361 |
| 7 | 361 |
| 8 | 361 |
| 9 | 361 |
| 10 | 362 |
| 11 | 362 |
| **KÂRİ'A SÛRESİ (s. 363-365)** | |
| 1 | 363 |
| 2 | 363 |
| 3 | 364 |
| 4 | 364 |
| 5 | 364 |
| 6 | 364 |
| 7 | 364 |
| 8 | 365 |
| 9 | 365 |
| 10 | 365 |
| 11 | 365 |
| **TEKÂSÜR SÛRESİ (s. 367-368)** | |
| 1 | 367 |
| 2 | 367 |
| 3 | 368 |
| 4 | 368 |
| 5 | 368 |
| 6 | 368 |
| 7 | 368 |
| 8 | 368 |
| **ASR SÛRESİ (s. 369-370)** | |
| 1 | 369 |
| 2 | 369 |
| 3 | 370 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| **HÜMEZE SÛRESİ (s. 371-373)** | |
| 1 | 371 |
| 2 | 372 |
| 2 | 372 |
| 4 | 372 |
| 5 | 372 |
| 6 | 372 |
| 7 | 372 |
| 8 | 372 |
| 9 | 373 |
| **FÎL SÛRESİ (s. 375-378)** | |
| 1 | 375 |
| 2 | 377 |
| 3 | 377 |
| 4 | 377 |
| 5 | 377 |
| **KUREYŞ SÛRESİ (s. 379-381)** | |
| 1 | 379 |
| 2 | 379 |
| 3 | 380 |
| 4 | 380 |
| **MÂÛN SÛRESİ (s. 383-384)** | |
| 1 | 383 |
| 2 | 383 |
| 3 | 384 |
| 4 | 384 |
| 5 | 384 |
| 6 | 384 |
| 7 | 384 |
| **KEVSER SÛRESİ (s. 385-386)** | |
| 1 | 385 |
| 2 | 386 |
| 3 | 386 |

| ÂYET NO | SAYFA NO |
|---|---|
| **KÂFİRÛN SÛRESİ (s. 387-388)** | |
| 1 | 387 |
| 2 | 387 |
| 3 | 388 |
| 4 | 388 |
| 5 | 388 |
| 6 | 388 |
| **NASR SÛRESİ (s. 389-390)** | |
| 1 | 389 |
| 2 | 389 |
| 3 | 390 |
| **TEBBET SÛRESİ (s. 391-392)** | |
| 1 | 391 |
| 2 | 391 |
| 3 | 392 |
| 4 | 392 |
| 5 | 392 |
| **İHLÂS SÛRESİ (s. 393-396)** | |
| 1 | 394 |
| 2 | 394 |
| 3 | 394 |
| 4 | 394 |
| **FELAK SÛRESİ (s. 397-399)** | |
| 1 | 398 |
| 2 | 398 |
| 3 | 398 |
| 4 | 398 |
| 5 | 398 |
| **NÂS SÛRESİ (s. 401-403)** | |
| 1 | 401 |
| 2 | 401 |
| 3 | 402 |
| 4 | 402 |
| 5 | 402 |
| 6 | 402 |

سورة الْحَدِيدِ

# HADÎD SÛRESİ

(Hadîd Sûresi, 29 âyettir. Medine'de indiğini söyleyenler varsa da çoğunluğa göre Mekke'de inmiştir. Ancak İbn Atıyye'ye göre sûre içinde Medenî âyetler de vardır. 25. âyette demirden (Hadîd) ve öneminden söz edildiği için, sûre bu adı almıştır. Sûrede; İslâm toplumunun eğitimi, Allah'ın kimi sıfatları, Allah yolunda harcama, karz, mü'minleri ve münafıkları ve uyarı, iyi ve kötü amelin sonu, adalet ve bunun için güçlü olma, Nuh, İbrahim ve İsa (a.s.) kıssası gibi konular yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

Besmeleyi işitmek, Allah'ın, kendisiyle dostlarının kalplerini suladığı bir içecektir. Onlar, onu içtiklerinde coşarlar. Coştukları zaman ise bast halini yaşarlar, sonra Allah'ın hakkını görmeye mazhar olurlar, O'na yakın olmanın esintisiyle ünsiyet bulurlar, kendilerini hissettiklerinde ise kaybolurlar. Bu durumda akılları Allah'ın lütfuyla kuşatılır, kalpleri de O'nun keşfinde yok edilir.

سَبَّحَ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَهُوَ الْعَز۪يزُ الْحَك۪يمُ ﴿١﴾

1- "Göklerdeki ve yerdeki her şey Allah'ı tesbih etmektedir. O azîzdir, hakîmdir."

Tesbih, kutsamak ve tenzih etmek demektir. Aynı zamanda bu, sırların, yüceltme denizlerinde yüzmesi anlamına da gelir. Böylece

sırlar, tevhid mücevherlerini elde ederek onları iman gerdanlıklarına dizer ve vuslat gerdanlıklarında süs unsuru yaparlar.

Göklerdeki ve yerdeki şeylerden maksat ise göklerde ve yerde isteyerek veya istemeyerek Allah'a secde eden kimselerdir. İsteyerek secde edenler, taat ve ibadet tesbihiyle secde ederler. İstemeyerek yapanlar ise alamet ve delil olmaları bakımından tesbih ederler.

Aynı zamanda "şey" anlamındaki ( ما ) lafzının zâhiri de dikkate alınabilir. Bu takdirde ayetin anlamı şöyle olur: Cisim veya eser olsun hiçbir yaratık yoktur ki yaratanın varlığına, celalinin ispatına ve yüceliğinin vasıflarını hak ettiğine delil olmasın.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Göklerdeki ve yerdeki şeyler, Allah'ı tesbih etmektedir. Onların her biri, kapıda beklemekte olup talebi görmektedir. Lakin Allah (c.c.) azizdir.

- İnkârcı veya secde eden kim varsa, mutlaka bir olan aziz Allah'ın tasarrufundadır. Zira onları, ancak kendilerini yaratan yönetmektedir. Onlardan kimisi itaatkâr olup Allah onu, itaatinin kuşağıyla donatmıştır. Bu ise O'nun lütfudur. Kimisi de isyankâr olup Allah onu çaresizlik zinciriyle bağlamıştır. Bu da O'nun adaletidir.

( وَهُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ) *"O, azîzdir, hakîmdir."*

Azîz, vuslatı arayanı üstün kılan demektir. Daha doğrusu her türlü vuslattan münezzeh olandır. Bu itibarla vuslata eren kimse, sadece kendisine uygun düşecek şekilde kendi payına, nasibine ve vasfına ermiş olur.

لَهُ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ يُحْي وَيُمِيتُ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرٌ ﴿٢﴾

2- "Göklerin ve yerin mülkü yalnızca O'nundur. Diriltir ve öldürür. O, her şeye hakkıyla gücü yetendir."

"Mülk" lafzı, yoktan var etme gücü demek olan "milk" lafzının mübalağasıdır. Allah'tan başka hiçbir mülk sahibi yoktur. Allah'tan başka varlıklar için mülk sahibi tabiri kullanıldığı zaman bu, mecazi anlamda olur. Bu çerçevede insanların mülkü ile ilgili hükümler dinde geçerlidir. Ancak mülk tabirinin bu hükümlerdeki kullanımı mecaz üzeredir. Tıpkı yolculukta suyun bulunmaması halinde teyemmüm lafzının, mecazen toprak kullanma anlamına gelmesi gibi. Bu çerçevede teyemmümle ilgili dini hükümler geçerlidir, ancak teyemmüm lafzının bu konudaki kullanımı mecazidir.

( يُحْيِي وَيُمِيتُ ) *"Diriltir ve öldürür."*

Allah nefisleri diriltir ve öldürür. Kalpleri de O'na yönelmeleriyle diriltir, O'ndan yüz çevirmeleriyle de öldürür. Bir yoruma göre de Allah, nefisleri nazarı ve lütfuyla diriltir, kahrı ve izzetiyle de öldürür.

هُوَ الْاَوَّلُ وَالْاٰخِرُ وَالظَّاهِرُ وَالْبَاطِنُۚ وَهُوَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلٖيمٌ ٣

3- "O, ilk ve sondur. Zâhir ve bâtındır. O, her şeyi hakkıyla bilendir."

Allah, kıdem sıfatını hak ettiği için ilk, hakkında yokluk sıfatı muhal olduğu için de sondur.

Allah, yücelik ve ululukla zâhir, ilim ve hikmetle de bâtındır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah ilk olduğu için varlığının başlangıcı yoktur. Son olduğu için de varlığı için hiçbir kesinti söz konusu değildir. Zâhir olduğu için izzetinin yüceliğinde hiçbir gizlilik yoktur. Bâtın olduğu için de hakkına yetişmek mümkün değildir.

- İlktir, başlangıçsızdır. Sondur, sonsuzdur. Zâhirdir, hiçbir gizliliği yoktur. Yücelik sıfatı ve ululuk izzetiyle bâtındır.

- Allah inayetle ilk, hidayetle son, riayetle zâhir, velayetle bâtındır.

- Yaratmakla ilk, rızık vermekle son, yaratmakla zâhir, öldürmek ve yok etmekle de bâtındır. Allah şöyle buyurmuştur:

( اَللّٰهُ الَّذٖي خَلَقَكُمْ ثُمَّ رَزَقَكُمْ ثُمَّ يُمٖيتُكُمْ ثُمَّ يُحْيٖيكُمْ ) *"Allah sizi yaratan, sonra size rızık veren, sonra sizi öldürecek ve daha sonra da sizi diriltecek olandır."* (Rûm, 30/40)

- İlk olması zamanla, son olması vakitle, zâhir olması yakınlıkla, bâtın olması da perdelenmeyle değildir.

- Vuslat ile ilk, dostluk ile son, deliller ile zâhir, her türlü benzerlikten uzak olmakla da batındır.

- Tarif ile ilk, teklif ile son, teşrif ile zâhir, tahfif ile de batındır.

- İlam ile ilk, ilzam ile son, inam ile zâhir, ikram ile de batındır.

- Seni seçkin kılmakla ilk, sana hidayet vermekle son, seni kollamakla zâhir, sana yetmekle de batındır.

- Kim ki Allah'ın "İlk" adı kendisine hâkim olursa, onun düşüncesi ezeldeki geçmişiyle ilgili olur: Mevlâ'sı ona ne isim verdi? Ezeli hükmünde hakkında neye hükmetti? Mutluluğuna mı yoksa mutsuzluğuna mı? Kim de Allah'ın "Son" ismi kalbine hâkim olursa, onun düşüncesi şu hususlarla meşgul olur: Allah sonunu nasıl yapar? Akıbeti nereye varır? Dünyadan tevhid üzere mi çıkar? Yoksa Allah korusun, yarın barınağı cehennemde mi olacak? Kim ki Allah'ın "Zâhir" ismi kalbine hâkim olursa o, dünyada olup biten iyilikte muvaffakiyet, imanın gerçekleşmesi, güzelce yetmek ve iyilikle gözetmek gibi nimetlerin şükrüyle meşgul olur. Kim de kalbine Allah'ın "Bâtın" ismi hâkim olursa düşüncesi, kendi durumu hakkında yaşadığı belirsizlikle meşgul olur. Böylece kararsız kalır ve Rabbinin ona yönelik muamelesinin lütuf mu yoksa istidrac tuzağı mı olacağını bilemez.

- İlk olan Allah, kullarının yaptıklarını bilmiş, ancak bilmesi onları anlatmasına engel olmamıştır. Son olan Allah, kullarının yaptıklarını görmüş, ancak bu, onları bağışlamasına engel olmamıştır. Zâhir olan Allah'a onların durumlarından hiçbir şey saklı kalmaz ve hiçbir iyiliği de onlardan esirgemez. Bâtın olan Allah, onların bilmedikleri hüsranlarını ve noksanlıklarını bilir ve çeşitli sıkıntıları ve üzüntülerini onlardan defeder.

هُوَ الَّذ۪ي خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ ف۪ي سِتَّةِ اَيَّامٍ ثُمَّ اسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ يَعْلَمُ مَا يَلِجُ فِي الْاَرْضِ وَمَا يَخْرُجُ مِنْهَا وَمَا يَنْزِلُ مِنَ السَّمَٓاءِ وَمَا يَعْرُجُ ف۪يهَا وَهُوَ مَعَكُمْ اَيْنَ مَا كُنْتُمْ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَص۪يرٌ ﴿٤﴾

4- "O, gökleri ve yeri altı günde yaratan, sonra Arş'a kurulandır. Yere gireni, ondan çıkanı, gökten ineni, oraya yükseleni bilir. Nerede olsanız O sizinle beraberdir. Allah bütün yaptıklarınızı hakkıyla görendir."

( هُوَ الَّذ۪ي خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ ف۪ي سِتَّةِ اَيَّامٍ ثُمَّ اسْتَوٰى عَلَى الْعَرْشِ ) *"O, gökleri ve yeri altı günde yaratan, sonra Arş'a kurulandır."*

Bu konudaki açıklama daha önce geçti.

( يَعْلَمُ مَا يَلِجُ فِي الْاَرْضِ وَمَا يَخْرُجُ مِنْهَا ) *"Yere gireni, ondan çıkanı bilir."*

Yani yere giren damlaları, hazineleri, tohumları, onda gömülen ölüleri ve ondan çıkan bitkileri, fışkıran pınarları ve çıkartılan madenleri bilir.

Bir yoruma göre de kul gömüldüğü zaman, Allah kalbindeki ihlâslı tevhidini, çeşitli üzüntü ve hüsranlarını, şüphesini ve inkârını, iyi ve kötü vasıflarını ve size saklı kalan buna benzer şeyleri bilir.

( وَمَا يَنْزِلُ مِنَ السَّمَٓاءِ ) *"Gökten ineni,"*

Yağmuru ve rızıkları veya meleklerin getirdiği hüküm ve vahyi bilir.

Bir yoruma göre de gökten Allah'ın velilerinin kalpleri üzerine inen lütufları, keşifleri ve çeşitli değerli halleri bilir.

( وَمَا يَعْرُجُ ف۪يهَا ) *"Oraya yükseleni bilir."*

Yani oraya yükselen melekleri, kulların ibadetlerini, halkın dualarını, mükelleflerin amel defterlerini ve müminlerin ruhlarını bilir.

Bir yoruma göre de oraya yükselen velilerin nefeslerini ve hasretlerini, çıktıkları zaman bilir.

( وَهُوَ مَعَكُمْ اَيْنَ مَا كُنْتُمْ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ) *"Nerede olsanız, O sizinle beraberdir. Allah, bütün yaptıklarınızı hakkıyla görendir."*

O, ilim ve kudretle sizinle beraberdir.

لَهُ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَاِلَى اللّٰهِ تُرْجَعُ الْاُمُورُ ٥

5- "Göklerin ve yerin hükümranlığı O'nundur. Bütün işler ancak O'na döndürülür."

يُولِجُ الَّيْلَ فِي النَّهَارِ وَيُولِجُ النَّهَارَ فِي الَّيْلِ وَهُوَ عَلِيمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ ٦

6- "Geceyi gündüze katar, gündüzü de geceye katar. O, kalplerde olanı bilir."

Bunun anlamı daha önce geçti.

اٰمِنُوا بِاللّٰهِ وَرَسُولِهِ وَاَنْفِقُوا مِمَّا جَعَلَكُمْ مُسْتَخْلَفِينَ فِيهِ فَالَّذِينَ اٰمَنُوا مِنْكُمْ وَاَنْفَقُوا لَهُمْ اَجْرٌ كَبِيرٌ ٧

7- "Allah'a ve Resûlü'ne iman edin. Sizi, üzerinde tasarrufa yetkili kıldığı şeylerden harcayın. İçinizden iman edip de Allah rızası için harcayan kimselere büyük mükâfat vardır."

Allah'ı ve Resûlü'nü tasdik edin ve mülkiyetinize verip size ait kılmak suretiyle sizi üzerinde tasarrufa yetkili kıldığı şeylerden sadaka verin. İman edip kendilerine emredildiği şekilde sadaka verenler için büyük bir sevap vardır. Çünkü elde olanlar, yok olmaya maruzdur. O halde mutlu kimse, ahirette halini mamur kılmak için

dünyasında malını önceden gönderendir. Mutsuz kimse de ahirette kendisi için veballi sona dönüşecek yolda yürüyendir.

وَمَا لَكُمْ لَا تُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَالرَّسُولُ يَدْعُوكُمْ لِتُؤْمِنُوا بِرَبِّكُمْ وَقَدْ
اَخَذَ مِيثَاقَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ مُؤْمِنِينَ ﴿٨﴾

8- “Peygamber sizi, Rabbinize iman etmeye çağırdığı halde, size ne oluyor da Allah’a iman etmiyorsunuz? Halbuki O, sizden sağlam bir söz de almıştı. Eğer iman eden kimseler iseniz.”

Allah’a, Peygamberine ve size getirdiği haşir ve neşre iman etmenizin size ne zararı olur? Kaldı ki size delili açıkça göstermek suretiyle bahaneyi de ortadan kaldırmıştır. Bir de henüz dünyaya gelmemiş bir zürriyet halinde olduğunuz vakit sizden söz almış ve dinin hükmü ile bunu size vacip kılmıştı.

هُوَ الَّذِي يُنَزِّلُ عَلٰى عَبْدِهٖٓ اٰيَاتٍ بَيِّنَاتٍ لِيُخْرِجَكُمْ مِنَ الظُّلُمَاتِ
اِلَى النُّورِ وَاِنَّ اللّٰهَ بِكُمْ لَرَؤُفٌ رَحِيمٌ ﴿٩﴾

9- “Sizi karanlıklardan aydınlığa çıkarmak için kuluna apaçık ayetler indiren O’dur. Şüphesiz Allah size karşı çok şefkatli, çok merhametlidir.”

Sizi cehaletin karanlıklarından ilmin aydınlığına, şüphenin karanlıklarından da kesin inanç aydınlığına çıkarmak için.

Aynı şekilde Allah, sırrın keşifleri ve marifete vesile olan faydalı ve hayırlı şeylerle, kendilerine nefislerinde de birtakım mucizeler göstermektedir. Böylece onları, tedbirin karanlıklarından işi Allah’a havale etme fezasının genişliğine ve mukadderatın türlü şekillerdeki tecellisini görmeye çıkarmaktadır.

Aynı şekilde nefis, ruhsatlara ve hafif olana uymaya meyletmek istediği ve en zor olanın yükümlülüğünü taşımadığı zaman, bu durumda eğer hakikatin davetine hemen koşarsa kalbinde, kendisiyle nefsin vesveselerinin karanlığını bileceği nuru bulur.

وَمَا لَكُمْ اَلَّا تُنْفِقُوا فِي سَبِيلِ اللّٰهِ وَلِلّٰهِ مِيرَاثُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ لَا يَسْتَوِي مِنْكُمْ مَنْ اَنْفَقَ مِنْ قَبْلِ الْفَتْحِ وَقَاتَلَ اُولٰٓئِكَ اَعْظَمُ دَرَجَةً مِنَ الَّذِينَ اَنْفَقُوا مِنْ بَعْدُ وَقَاتَلُوا وَكُلًّا وَعَدَ اللّٰهُ الْحُسْنٰى وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرٌ ﴿١٠﴾

10- "Size ne oluyor da Allah yolunda harcama yapmıyorsunuz? Oysa göklerin ve yerin mirası Allah'ındır. İçinizden, fetihten önce harcama yapan ve savaşanlar, diğerleriyle aynı değildir. Onların derecesi, sonradan harcama yapan ve savaşanlardan daha yüksektir. Bununla beraber Allah, onların hepsine en güzel olanı vaat etmiştir. Allah, yaptıklarınızdan haberdardır."

Elinizde bulunan şeylerin mirası Allah'ındır. Bir de bunlar, yakında başkalarına geçecek ve mallarınızın rekabet gücüyle kalıcı olamayacaksınız. Bu yolla Allah onları sadaka vermeye, taata koşmaya ve emele meyletmeyi bırakmaya teşvik etmiştir.

( لَا يَسْتَوِي مِنْكُمْ مَنْ اَنْفَقَ مِنْ قَبْلِ الْفَتْحِ وَقَاتَلَ اُولٰٓئِكَ اَعْظَمُ دَرَجَةً مِنَ الَّذِينَ اَنْفَقُوا مِنْ بَعْدُ وَقَاتَلُوا وَكُلًّا وَعَدَ اللّٰهُ الْحُسْنٰى وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرٌ )

*"İçinizden, fetihten önce harcama yapan ve savaşanlar, diğerleriyle aynı değildir. Onların derecesi, sonradan harcama yapan ve savaşanlardan daha yüksektir. Bununla beraber Allah, onların hepsine en güzel olanı vaat etmiştir. Allah, yaptıklarınızdan haberdardır."*

İçinizden, Mekke ve Hudeybiye fetihlerinden önce Allah yolunda harcama yapanlar ile daha sonra harcama yapanlar eşit değildir. Aksine onların sevabı bunlarınkinden daha büyüktür ve dereceleri daha yüksektir. Çünkü insanların bu harcamaya olan ihtiyaçları daha fazla, bu harcamayı yapmak da yapanları için çok daha zor idi.

Sonra Allah: ( وَكُلًّا وَعَدَ اللّٰهُ الْحُسْنٰى ) *"Bununla beraber Allah, onların hepsine en güzel olanı vaat etmiştir"* buyurmuştur. Ancak öncelik fazileti onlarındır.

Nitekim şu dizeler de bunun için söylenmiştir:

*Öne geç öne geç sözle ve fiille*
*Sakın geride kalmanın üzüntüsünden*

مَنْ ذَا الَّذِي يُقْرِضُ اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا فَيُضَاعِفَهُ لَهُ وَلَهُٓ اَجْرٌ كَرِيمٌ ﴿١١﴾

11- "Kim Allah'a güzel bir borç verecek olursa, Allah da onun karşılığını kat kat verir. Ayrıca onun çok değerli bir mükâfatı da vardır."

Borçtan maksat sadakadır. Allah'ın bunu bu şekilde zikretmesi, gönüllerini almak içindir. Böylece sadaka veren kimse borç verirken sanki borç isteyene vermek için malından bir şey ayıran kimse gibidir. Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Burada borç vermek, güzel bir davranışta bulunmak demektir. İyi niyetli borçtan da Allah, helalinden ve gönüllü verilen borcu kast etmiştir. Yanı sıra sahibi, borç vermede ihlâslı olur, ona riya bulaştırmaz ve fakirin başına kakmaz, vadenin uzaması onu bunaltmaz ve borca karşılık pek çok beklentisi olmaz.

- Bu, Allah için borç verip her iki dünyanın sevgisini de kalbinden söküp atmandır. Hadiste şöyle denilmiştir:

*"Sadakanın en hayırlısı, varlık halinde gerçekleşendir."*

Bir de kim bir şeyden kurtulmazsa ondan kopması zordur.

يَوْمَ تَرَى الْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنَاتِ يَسْعٰى نُورُهُمْ بَيْنَ اَيْدِيهِمْ وَبِاَيْمَانِهِمْ بُشْرٰيكُمُ الْيَوْمَ جَنَّاتٌ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا ذٰلِكَ هُوَ الْفَوْزُ الْعَظِيمُ ﴿١٢﴾

12- "Mümin erkeklerle mümin kadınların nurlarının, önlerinde ve sağlarında koştuğunu göreceğin gün kendilerine şöyle denir: 'Bugün size müjdelenen şey, içlerinden ırmaklar akan ve ebedî kalacağınız cennetlerdir.' İşte büyük kurtuluş budur."

O, mümin erkeklere ve mümin kadınlara, salih amelleri ölçüsünde verilen bir nurdur. Bir de o nurun, içinde yürüdükleri bazı ışın saçıntıları vardır. Bu esnada nur da önlerinde hızlıca hareket edip her taraflarını kuşatır.

Bir yoruma göre de sağ ellerinde amel defterleri olduğu halde onları görürsün.

(بُشْرٰيكُمُ الْيَوْمَ جَنَّاتٌ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِدِينَ فِيهَا) *"Bugün size müjdelenen şey, içlerinden ırmaklar akan ve ebedî kalacağınız cennetlerdir."*

Yani bugün Allah'tan size gelen müjde, cennetlerdir. Bir de nasıl ki mahşerde onlar için bu nur varsa, bugün de onlar için kalplerinde ve içlerinde, bütün hallerinde içinde yürüdükleri ve kendisiyle yollarını buldukları bir nur vardır. Hz. Peygamber (s.av.) şöyle buyurmuştur:

*"Mümin, Allah'ın nuruyla bakar."*

Allah da buyur ki:

(فَهُوَ عَلٰى نُورٍ مِنْ رَبِّهِ) *"O, Rabbinden bir nur üzeredir."* (Zümer, 39/22)

Bazen o nur, bu kimselere yakın olanın üzerine de yayılır. Bazen de bu nurdan bir şeyler, kalplerin üzerine istemeden de düşebilir. Nitekim bu özellik, Allah'ın velileri için kaçınılmazdır.

يَوْمَ يَقُولُ الْمُنَافِقُونَ وَالْمُنَافِقَاتُ لِلَّذِينَ اٰمَنُوا انْظُرُونَا نَقْتَبِسْ مِنْ نُورِكُمْ قِيلَ ارْجِعُوا وَرَٓاءَكُمْ فَالْتَمِسُوا نُورًا فَضُرِبَ بَيْنَهُمْ بِسُورٍ لَهُ بَابٌ بَاطِنُهُ فِيهِ الرَّحْمَةُ وَظَاهِرُهُ مِنْ قِبَلِهِ الْعَذَابُ ﴿١٣﴾

13- "Münafık erkeklerle münafık kadınların, iman edenlere: 'Bize bakın ki, sizin ışığınızdan biz de aydınlanalım' diyecekleri gün kendilerine: 'Arkanıza dönün de bir ışık arayın' denilecektir. Derken aralarına, içinde rahmet, dış tarafında ise azap bulunan kapılı bir sur çekilir."

Sizin ışığınızdan bir parça almamız için bizi bekleyin de size katılalım. Zira kendilerine amel defterleri verilirken, müminler de münafıklar da nur içindedirler. Derken yürümeye başlayınca münafıkların önündeki ışık söndü ve müminler öne geçtiler. İşte bunun üzerine münafıklar müminlere: "Bizi bekleyin ki sizin ışığınızdan bir parça alalım" derler.

Müminler de şöyle derler:

( ارْجِعُوا وَرَآءَكُمْ فَالْتَمِسُوا نُورًا ) *"Arkanıza dönün de bir ışık arayın."*

Yani dünyaya dönün ve samimi olun. Maksat, dünyada münafık olduklarını onlara anlatmaktır.

Bir yoruma göre de ezelin hükmüne dönün ve bunu kaderinizde arayın. Bu, isteklerinin gerçekleşmesini uzak gösteren deyim nitelikli bir sözdür.

( فَضُرِبَ بَيْنَهُمْ بِسُورٍ لَهُ بَابٌ بَاطِنُهُ فِيهِ الرَّحْمَةُ وَظَاهِرُهُ مِنْ قِبَلِهِ الْعَذَابُ ) *"Derken aralarına, içinde rahmet, dış tarafında ise azap bulunan kapılı bir sur çekilir."*

Bu sur, Araf ehlinin dağı olup müminlerle münafıkları birbirinden ayırır. Bu surun müminlere bakan yüzünde rahmet, diğer yüzünde ise azap vardır.

يُنَادُونَهُمْ اَلَمْ نَكُنْ مَعَكُمْ قَالُوا بَلٰى وَلٰكِنَّكُمْ فَتَنْتُمْ اَنْفُسَكُمْ
وَتَرَبَّصْتُمْ وَارْتَبْتُمْ وَغَرَّتْكُمُ الْاَمَانِيُّ حَتّٰى جَآءَ اَمْرُ اللّٰهِ وَغَرَّكُمْ
بِاللّٰهِ الْغَرُورُ ١٤

14- "Münafıklar, müminlere şöyle seslenirler. 'Biz de sizinle beraber değil miydik?' Müminler de derler ki. 'Evet, fakat siz kendi başınızı belaya soktunuz. Başımıza musibetler gelmesini gözlediniz, şüphe ettiniz. Allah'ın emri gelinceye kadar kuruntular sizi aldattı. O çok aldatıcı şeytan, Allah hakkında da sizi aldattı.'"

Biz dünyada imanın hükümlerinde; evlilik ve beşeri münasebetlerde sizinle beraber değil miydik? Müminler dediler ki: “Evet, fakat siz kendi başınızı belaya soktunuz.”

(وَتَرَبَّصْتُمْ وَارْتَبْتُمْ وَغَرَّتْكُمُ الْاَمَانِيُّ حَتّٰى جَٓاءَ اَمْرُ اللّٰهِ وَغَرَّكُمْ بِاللّٰهِ الْغَرُورُ) *“Başımıza musibetler gelmesini gözlediniz, şüphe ettiniz. Allah'ın emri gelinceye kadar kuruntular sizi aldattı. O çok aldatıcı şeytan, Allah hakkında da sizi aldattı.”*

İhlâstan geri durdunuz, şüphe ettiniz, şeytan sizi aldattı ve dünyaya meylettiniz.

فَالْيَوْمَ لَا يُؤْخَذُ مِنْكُمْ فِدْيَةٌ وَلَا مِنَ الَّذِينَ كَفَرُوا مَاْوٰيكُمُ النَّارُ هِيَ مَوْلٰيكُمْ وَبِئْسَ الْمَصِيرُ ﴿١٥﴾

15- “Bugün artık ne sizden ne de inkâr edenlerden bir fidye alınır. Barınağınız ateştir. Size yaraşan odur. Orası, gidilecek ne kötü yerdir!”

Cehennem sizin barınağınız, son varacağınız ve yuvarlanacağınız yerdir. Aynı zamanda size yaraşan da odur. Orası gidilecek ne kötü yerdir!

Bir yoruma göre de zâhirde uyumlu olmakla, gönüllerde ve sırlardaki muhalefet saklanamaz. Sırlar da sınandıklarında gizli kalmaz.

اَلَمْ يَاْنِ لِلَّذِينَ اٰمَنُٓوا اَنْ تَخْشَعَ قُلُوبُهُمْ لِذِكْرِ اللّٰهِ وَمَا نَزَلَ مِنَ الْحَقِّ وَلَا يَكُونُوا كَالَّذِينَ اُو۫تُوا الْكِتَابَ مِنْ قَبْلُ فَطَالَ عَلَيْهِمُ الْاَمَدُ فَقَسَتْ قُلُوبُهُمْ وَكَث۪يرٌ مِنْهُمْ فَاسِقُونَ ﴿١٦﴾

16- “İman edenlerin, Allah'ı zikretmekten ve inen haktan dolayı kalplerinin saygı ile ürpermesinin zamanı gelmedi mi? Daha önce kendilerine kitap verilip de üzerinden uzun zaman geçen, böylece kalpleri katılaşanlar gibi olmasınlar. Onlardan birçoğu fâsık kimselerdir.”

İman edenlerin, kalplerinin kibirden arınmasının ve Allah'ın zikri, Kur'ân ve ondaki ibretlerden dolayı yumuşamasının ve daha önce kendilerine kitap indirilenler gibi olmamalarının zamanı gelmedi mi? Allah, kitap verilenlerle Yahudileri kast etmiştir. Nitekim onların çoğu fâsık ve kâfir kimselerdir.

Uzun zamanın geçmesiyle de Allah, Hz. Mûsâ ile Peygamberimiz (s.a.v.) arasında geçen dönemi kast etmiştir. Bir rivayette yer aldığına göre, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) ashabı, bir yılgınlığa kapıldıkları zaman: "Keşke bize biraz konuşsaydın" derlerdi. Bunun üzerine Allah: ( اَللّٰهُ نَزَّلَ اَحْسَنَ الْحَدِيثِ ) *"Allah, sözün en güzelini indirdi..."* (Zümer, 39/23) ayetini indirdi. Bir süre sonra bu kez: " Keşke bize bir şeyler anlatsaydın" dediler. Bunun üzerine Allah: ( نَحْنُ نَقُصُّ عَلَيْكَ نَبَاَهُمْ بِالْحَقِّ ) *"Biz sana onların haberlerini gerçek olarak anlatıyoruz"* (Kehf, 18/13) ayetini indirdi. Bir süre sonra da: "Keşke bize uyarı ve nasihatte bulunsaydın" dediler. İşte bunun üzerine de Allah bu sureyi indirdi. Bir de bu ayette, iman edenlerin bu işi ağırdan aldıklarına dair bir nevi işaret vardır.

Öte yandan kalbin katılığı, şehvete uymakla gerçekleşir. Şehvet ve safiyet ise bir araya gelemez. Bu nedenle, şehvet meydana geldiği zaman safiyet ortadan kalkar. Kasvetin sebebi ise kalbin, Rabbi gözetmekten sapmasıdır. Bir yoruma göre de kasvetin sebebinin başlangıcı bir duygudur. Eğer giderilmezse düşünceye dönüşür. Bu da giderilmezse karara dönüşür. Bu da giderilmezse muhalefet gerçekleşir. Bunun da önüne geçilmezse kasvete dönüşür. Sonra da kasvet, tabiat ve kötü huy haline gelir.

اِعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ يُحْيِي الْاَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا قَدْ بَيَّنَّا لَكُمُ الْاٰيَاتِ لَعَلَّكُمْ
تَعْقِلُونَ ﴿١٧﴾

17- "Bilin ki Allah, yeryüzünü ölümünden sonra diriltmektedir. Düşünesiniz diye gerçekten size ayetleri açıkladık."

Allah, ölü kalpleri de onlardan yüz çevirdikten sonra güzel sahiplenmesiyle diriltir.

اِنَّ الْمُصَّدِّقِينَ وَالْمُصَّدِّقَاتِ وَاَقْرَضُوا اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا يُضَاعَفُ لَهُمْ وَلَهُمْ اَجْرٌ كَرِيمٌ ﴿١٨﴾

18- "Şüphesiz sadaka veren erkeklerle sadaka veren kadınlar ve Allah'a güzel bir borç verenler var ya, onlara kat kat ödenir. Ayrıca onlara çok değerli bir mükâfat da vardır."

Yani sadaka veren erkekler ile sadaka veren kadınlar için.

( وَاَقْرَضُوا اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا ) *"Allah'a güzel bir borç verenler."*

Yani nafile ibadetlerde bunu yapanlar.

( يُضَاعَفُ لَهُمْ ) *"Onlara kat kat ödenir."*

Yani iyilikleri kat kat artırılır. İyilik, on katıyladır. Bu, Allah'ın dilediği kadar artar.

( وَلَهُمْ اَجْرٌ كَرِيمٌ ) *"Ayrıca onlara çok değerli bir mükâfat da vardır."*

Büyük ve güzel bir sevap vardır. Bu arada değerli sevap, müminin ibadeti az da olsa Allah'ın ondan en büyük mükâfatı esirgememesidir.

وَالَّذِينَ اٰمَنُوا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهٖٓ اُولٰٓئِكَ هُمُ الصِّدِّيقُونَ وَالشُّهَدَآءُ عِنْدَ رَبِّهِمْ لَهُمْ اَجْرُهُمْ وَنُورُهُمْ وَالَّذِينَ كَفَرُوا وَكَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَآ اُولٰٓئِكَ اَصْحَابُ الْجَحِيمِ ﴿١٩﴾

19- "Allah'a ve Peygamberine iman edenler var ya, işte onlar Rableri katında sözü özü doğru kimseler ve şehitlerdir. Onların mükâfatları ve nurları vardır. İnkâr edip ayetlerimizi yalanlayanlara gelince, onlar da cehennemliklerdir."

( صِدِّيقُون ) *"sözü özü doğru kimseler"* lafzı, ( صِدْق ) mastarından mübalağa sıygasıdır.

( شُهَداء ) ise, Allah yolunda şehit olanlardır. Bu itibarla müminler, sıddîklar ve şehitler mertebesinde olup onların cennette mükâfatları, kıyamette de nurları vardır.

Bu arada sıddîk, içi dışı bir olan kimsedir.

Bir yoruma göre de o, emri en zor anlamıyla kabul eden, ruhsatlara yeltenmeyen ve tevillere meyletmeyen kimsedir.

Şehitler ise kalpleriyle vuslat makamlarını gören ve sırlarıyla yakınlık makamlarında kalan kimselerdir.

Nurları ise Allah'ın, basiretlerine tevhidin nurlarını sürme olarak çektiği kimselerdir.

اِعْلَمُوٓا اَنَّمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَا لَعِبٌ وَلَهْوٌ وَزِينَةٌ وَتَفَاخُرٌ بَيْنَكُمْ
وَتَكَاثُرٌ فِي الْاَمْوَالِ وَالْاَوْلَادِ كَمَثَلِ غَيْثٍ اَعْجَبَ الْكُفَّارَ نَبَاتُهُ ثُمَّ
يَهِيجُ فَتَرٰيهُ مُصْفَرًّا ثُمَّ يَكُونُ حُطَامًا وَفِي الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ شَدِيدٌ
وَمَغْفِرَةٌ مِنَ اللّٰهِ وَرِضْوَانٌ وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَٓا اِلَّا مَتَاعُ الْغُرُورِ ﴿٢٠﴾

20- "Bilin ki dünya hayatı ancak bir oyun, bir eğlence, bir süs, aranızda karşılıklı bir övünme, çok mal ve evlat sahibi olma yarışından ibarettir. Tıpkı şöyle: Bir yağmur ki, bitirdiği bitki çiftçilerin hoşuna gider. Sonra kurumaya yüz tutar da sen onu sararmış olarak görürsün. Sonra da çer çöp olur. Ahirette ise çetin bir azap ve Allah'ın mağfiret ve rızası vardır. Dünya hayatı, aldanış metaından başka bir şey değildir."

Dünya hayatı zevale maruzdur, kalıcı ve devam edici değildir. Aynı zamanda o, Allah'tan alıkoymakta, tamah ettirmekte ve doyurmamaktadır. Bir de tıpkı çocuk oyunu gibi, istikamet prensibiyle yürümemektedir. Bu haliyle o, doğru olandan ve hakkı görme arayışından

gafil kılmaktadır. Bir de dünya hayatı, karşılıklı bir övünme ve çok mal ve evlat sahibi olma yarışından ibarettir.

( كَمَثَلِ غَيْثٍ اَعْجَبَ الْكُفَّارَ نَبَاتُهُ ثُمَّ يَهِيجُ فَتَرٰيهُ مُصْفَرًّا ثُمَّ يَكُونُ حُطَامًا ) *"Tıpkı şöyle: Bir yağmur ki, bitirdiği bitki çiftçilerin hoşuna gider. Sonra kurumaya yüz tutar da sen onu sararmış olarak görürsün. Sonra da çer çöp olur."*

( كُفَّار ) lafzı, çiftçiler demektir.

Bitki gayet güzeldir. Ancak sonra depreşip kurumaya başladığını görürsün. Sonra da çer çöp oluncaya kadar kurumaya devam eder.

( وَفِي الْاٰخِرَةِ عَذَابٌ شَدِيدٌ ) *"Ahirette ise çetin bir azap vardır."*

Bu, azap ehli olan kâfirler içindir.

( وَمَغْفِرَةٌ مِنَ اللّٰهِ وَرِضْوَانٌ ) *"Ve Allah'ın mağfiret ve rızası vardır."*

Bu da, ona ehil olan müminler içindir.

( وَمَا الْحَيٰوةُ الدُّنْيَآ اِلَّا مَتَاعُ الْغُرُورِ ) *"Dünya hayatı, aldanma metaından başka bir şey değildir."*

Dünya değersizdir. Ondan değersiz olan ise talibidir. Ondan da az önemli olan, onun için itişip kakışandır. Aslında dünya bir leştir. Leşin talibinin ise hiçbir önemi yoktur. Dünya ehlinin en değersizi de onunla cimrilik yapandır. Zaten kulu ahiretten alıkoyan da bu kötü dünyadır.

سَابِقُوٓا اِلٰى مَغْفِرَةٍ مِنْ رَبِّكُمْ وَجَنَّةٍ عَرْضُهَا كَعَرْضِ السَّمَآءِ وَالْاَرْضِ اُعِدَّتْ لِلَّذِينَ اٰمَنُوا بِاللّٰهِ وَرُسُلِهِ ذٰلِكَ فَضْلُ اللّٰهِ يُؤْتِيهِ مَنْ يَشَآءُ وَاللّٰهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظِيمِ ﴿٢١﴾

21- "Rabbinizden bir bağışlanmaya ve genişliği, gökle yerin genişliği gibi olan, Allah'a ve Peygamberine iman edenler için hazırlanan cennete yarışırcasına koşun. İşte bu, Allah'ın lütfudur. Onu dilediğine verir. Allah, büyük lütuf sahibidir."

Yani sizin için Rabbinizden bir mağfiret sağlayacak olan bir amele doğru yarış halinde koşun. O amel tövbedir.

( سَابِقُوا اِلٰى مَغْفِرَةٍ مِنْ رَبِّكُمْ وَجَنَّةٍ عَرْضُهَا كَعَرْضِ السَّمَاءِ وَالْاَرْضِ اُعِدَّتْ لِلَّذ۪ينَ اٰمَنُوا بِاللّٰهِ وَرُسُلِه۪ )

*"Ve genişliği, gökle yerin genişliği gibi olan... cennete yarışırcasına koşun."*

Allah, cennetin genişliğinden söz etmiş, ancak uzunluğundan söz etmemiştir. Uzunluk da genişliği dengeleyecek ölçüdedir.

( اُعِدَّتْ لِلَّذ۪ينَ اٰمَنُوا بِاللّٰهِ وَرُسُلِه۪ ) *"Allah'a ve Peygamberine iman edenler için hazırlanan."*

Bu ifadede, cennetin mahlûk olduğuna -sonradan yaratıldığına- dair delil vardır.

( ذٰلِكَ فَضْلُ اللّٰهِ يُؤْت۪يهِ مَنْ يَشَاءُ وَاللّٰهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظ۪يمِ ) *"İşte bu, Allah'ın lütfüudur. Onu dilediğine verir. Allah, büyük lütuf sahibidir."*

Bu ifadede: *"Cennet, ibadetlerle hak edilir ve kulları cennete kavuşturmak, Allah'a vaciptir"* diyenlere cevap vardır. Çünkü lütuf, vacip olmaz.

Bir yoruma göre de müminlerin sırları, bu hitabı duyunca ruhlar hemen harekete geçerek organlardan acele etmelerini istedi. Organlar da bu yükümlülüğü kabul edip Allah'ın hakkını gözetmekle sevindiler. Çünkü onlar, bu çağrının Allah (c.c.) tarafından olduğunu bildiler.

مَٓا اَصَابَ مِنْ مُص۪يبَةٍ فِي الْاَرْضِ وَلَا ف۪ٓي اَنْفُسِكُمْ اِلَّا ف۪ي كِتَابٍ مِنْ قَبْلِ اَنْ نَبْرَاَهَا اِنَّ ذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ يَس۪يرٌۚ ﴿٢٢﴾

22- "Yeryüzünde ve kendi nefislerinizde uğradığınız hiçbir musibet yoktur ki biz onu yaratmadan önce bir kitapta yazılmış olmasın. Şüphesiz bu, Allah'a göre kolaydır."

Musibet, gerçekleşen ve meydana gelen bir olgudur. Bu nedenle Allah buyuruyor ki: Yeryüzünde ve nefislerinizde her ne meydana geliyorsa, mutlaka o, ezeli ilmin öngördüğü ve hakkında hükmün kesinleştiği şekilde Levh-i Mahfûz'da kaydedilmiştir. Böylece biz, onu yaratmadan önce Levh-i Mahfûz'da kaydetmiş bulunuyoruz.

Bu itibarla, yeryüzünde meydana gelen verim, verimsizlik, bolluk, darlık, sapma ve istikamet ile nefislerde meydana gelen üzüntü, sevinç, hayat veya ölüm, bütün bunlar gerçekleşmeden uzun zaman önce Levh-i Mahfûz'da kaydedilmiştir.

Öte yandan ( مِنْ قَبْلِ اَنْ نَبْرَاَهَا ) "*biz onu yaratmadan önce*" sözünde kulların kesplerinin Allah tarafından yaratıldığına dair delil vardır. Kulun, mazhar olduğu kalbin bast, huzur ve benzeri tecellilerinin Allah tarafından olduğunu bilmesinde ise kendisi için en büyük sevinç ve en mükemmel ünsiyet vardır. Çünkü o, bunun, gıyabında hatta kendisi henüz yokluk hazinesinde iken kendisine verilmiş bir özellik olduğunu anlamıştır.

Şu dizeler bu nedenle söylenmiştir:

*Varolsun o dostluğun ki eğer o olmasaydı*
*Olmazdı kalbim aşk ateşinin merkezi*

لِكَيْلَا تَأْسَوْا عَلٰى مَا فَاتَكُمْ وَلَا تَفْرَحُوا بِمَآ اٰتٰيكُمْ وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ كُلَّ مُخْتَالٍ فَخُورٍ ﴿٢٣﴾

23- "Elinizden çıkana üzülmeyesiniz ve Allah'ın size verdiği nimetlere sevinmeyesiniz diye. Allah, kendini beğenip övünen hiçbir kimseyi sevmez."

Allah'ın onlara verdiği nimetlere sevinmemek, nefsin köleliğinden azat olmuş kimselerin vasıflarındandır. Bu nedenle yiğitlerin değeri, değişip değişmedikleriyle ortaya çıkar. Bu çerçevede kim istemeyip maruz kaldığı cefa, kötülük ve sıkıntı karşısında değişmezse, işte o kâmildir. Kim de üzücü durumlarla değişmediği gibi, sevindirici

durumlarla da değişmez ve yokluğa üzülmediği gibi varlığa da sevinmezse işte o, vaktinin efendisidir.

Bir yoruma göre de kişiyi tanımak istediğin zaman, onu gelişmeler esnasında ara. Zira değişmek, nefsin herhangi bir şekilde var olmaya devam ettiğinin alametidir.

( وَاللّٰهُ لَا يُحِبُّ كُلَّ مُخْتَالٍ فَخُورٍ ) *"Allah, kendini beğenip övünen hiçbir kimseyi sevmez."*

Bu itibarla, kendini beğenmek, nefsin var olmaya devam ettiğinin ve beğenildiğinin alametlerindendir. Övünmek de övünülen şeyi beğenmekten kaynaklanır.

اَلَّذِينَ يَبْخَلُونَ وَيَأْمُرُونَ النَّاسَ بِالْبُخْلِ وَمَنْ يَتَوَلَّ فَاِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْغَنِيُّ الْحَمِيدُ ﴿٢٤﴾

24- "Onlar cimrilik edip insanlara da cimriliği emreden kimselerdir. Kim yüz çevirirse bilsin ki şüphesiz Allah ganidir, övülmeye layıktır."

Onlar, Hz. Peygamberin (s.a.v.) vasfını saklamak suretiyle cimrilik ettiler ve taraftarlarına da bunu emrettiler. Onlar, sözlerinin dinlenmediğini ve riyasetlerinin geçersiz hale geldiğini görünce bunu yaptılar. ( وَمَنْ ) *"Kim"*, imandan veya sadaka vermekten, ( يَتَوَلَّ فَاِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْغَنِيُّ الْحَمِيدُ ) *"yüz çevirirse, bilsin ki, şüphesiz Allah ganidir, övülmeye layıktır."*

Bu arada ilim ehlinin izahına göre cimrilik, vacip olanı menetmektir. Bu taifenin izahına gelince, onlar: "Cimrilik, varlıkları değerli bulmaktır. Cimri de ancak kendisinden istendiği zaman veren kimsedir" demişlerdir. Bir görüşe göre de kim yüzüğünün üzerine adını yazdırırsa, o cimridir.

لَقَدْ اَرْسَلْنَا رُسُلَنَا بِالْبَيِّنَاتِ وَاَنْزَلْنَا مَعَهُمُ الْكِتَابَ وَالْمِيزَانَ لِيَقُومَ النَّاسُ بِالْقِسْطِ وَاَنْزَلْنَا الْحَدِيدَ فِيهِ بَاْسٌ شَدِيدٌ وَمَنَافِعُ لِلنَّاسِ وَلِيَعْلَمَ اللّٰهُ مَنْ يَنْصُرُهُ وَرُسُلَهُ بِالْغَيْبِ اِنَّ اللّٰهَ قَوِيٌّ عَزِيزٌ ﴿٢٥﴾

25- "Andolsun, biz elçilerimizi açık mucizelerle gönderdik ve beraberlerinde kitabı ve mizanı indirdik ki insanlar adaleti yerine getirsinler. Kendisinde müthiş bir güç ve insanlar için birçok faydalar bulunan demiri de indirdik. Allah da, kendisine ve peygamberlerine, gayba inanarak yardım edenleri bilsin. Şüphesiz Allah, güç ve üstünlük sahibidir."

Yani biz, peygamberleri apaçık delil ve burhanlarla gönderdik, en iyi delile uymak için bahaneyi ortadan kaldırdık ve hidayete uymayı tercih edene yolu kolaylaştırdık. Bir de onlarla birlikte Allah katından gönderilmiş kitaplar indirdik.

( وَاَنْزَلْنَا مَعَهُمُ الْكِتَابَ وَالْمِيزَانَ ) *"Ve mizanı indirdik."*

Yani biz, Kur'ân ile hükmetmeyi ve insanlar arasında adalet ve eşitliği gözetmeyi indirdik.

( لِيَقُومَ النَّاسُ بِالْقِسْطِ ) *"İnsanlar adaleti yerine getirsinler diye."*

Böylece kimse kimseye zulmetmemiş olur.

( وَاَنْزَلْنَا الْحَدِيدَ فِيهِ بَاْسٌ شَدِيدٌ وَمَنَافِعُ لِلنَّاسِ وَلِيَعْلَمَ اللّٰهُ مَنْ يَنْصُرُهُ وَرُسُلَهُ بِالْغَيْبِ ) *"Kendisinde müthiş bir güç ve insanlar için birçok faydalar bulunan demiri de indirdik. Allah da, kendisine ve peygamberlerine, gayba inanarak yardım edenleri bilsin."*

( وَاَنْزَلْنَا الْحَدِيدَ ) *"Demiri indirdik."*

Yani onu yarattık. Bu arada Allah'a yardım etmek, O'nun dinine yardım etmek demektir. Peygambere yardım etmek ise onun sünnetine uymakla olur.

( اِنَّ اللّٰهَ قَوِيٌّ عَزِيزٌ ) *"Şüphesiz Allah, güç ve üstünlük sahibidir."*

Allah, hiçbir şerikin kendisine karşı çıkamayacağı ve hiçbir hükümdarın hükümdarlıkta kendisine benzer olamayacağı kadar güçlü ve hiçbir yardımcıya muhtaç olmayacak kadar üstünlük sahibidir.

وَلَقَدْ اَرْسَلْنَا نُوحًا وَاِبْرٰهِيمَ وَجَعَلْنَا فٖي ذُرِّيَّتِهِمَا النُّبُوَّةَ وَالْكِتَابَ
فَمِنْهُمْ مُهْتَدٍ وَكَثٖيرٌ مِنْهُمْ فَاسِقُونَ ﴿٢٦﴾

26- "Andolsun biz, Nûh'u ve İbrahim'i peygamber olarak gönderdik. Peygamberliği ve kitabı onların soylarına da verdik. Onlardan kimi hidayete ermiştir. İçlerinden birçoğu da fâsık kimselerdir."

Yani biz önce Nûh'u, ardından da İbrahim'i gönderdik ve onların nesline de peygamberlik ve kitap verdik.

( فَمِنْهُمْ مُهْتَدٍ ) *"Onlardan kimi hidayete ermiştir."*

Yani davete icabet etmiştir.

( وَكَثٖيرٌ مِنْهُمْ فَاسِقُونَ ) *"İçlerinden birçoğu da fâsık kimselerdir."*

Yani itaatin dışına çıkmışlardır.

ثُمَّ قَفَّيْنَا عَلٰى اٰثَارِهِمْ بِرُسُلِنَا وَقَفَّيْنَا بِعٖيسَى ابْنِ مَرْيَمَ وَاٰتَيْنَاهُ
الْاِنْجٖيلَ وَجَعَلْنَا فٖي قُلُوبِ الَّذٖينَ اتَّبَعُوهُ رَاْفَةً وَرَحْمَةً وَرَهْبَانِيَّةً
ابْتَدَعُوهَا مَا كَتَبْنَاهَا عَلَيْهِمْ اِلَّا ابْتِغَٓاءَ رِضْوَانِ اللّٰهِ فَمَا رَعَوْهَا حَقَّ
رِعَايَتِهَا فَاٰتَيْنَا الَّذٖينَ اٰمَنُوا مِنْهُمْ اَجْرَهُمْ وَكَثٖيرٌ مِنْهُمْ فَاسِقُونَ ﴿٢٧﴾

27- "Sonra bunların peşinden ard arda peygamberlerimizi gönderdik. Onların arkasından da Meryem oğlu İsa'yı gönderdik. Ona İncil'i verdik ve kendisine uyanların kalplerine şefkat ve merhamet duygusu koyduk. İcat ettikleri ruhbanlığa gelince, biz onu onlara farz kılmamıştık. Allah'ın rızasını kazanmak için onu kendileri icat etmişlerdi. Fakat ona da gereği gibi uymadılar. Biz de içlerinden iman edenlere mükâfatlarını verdik. Fakat onlardan birçoğu da, fâsık kimselerdir."

Yani onlardan sonra Meryem oğlu İsa'yı gönderdik.

( وَرَهْبَانِيَّةً ابْتَدَعُوهَا مَا كَتَبْنَاهَا عَلَيْهِمْ ) *"İcat ettikleri ruhbanlığa gelince, biz onu onlara farz kılmamıştık."*

Allah, ruhbanlığı onlara kendisinin emretmediğini, aksine onu kendilerinin icat ettiğini açıklamıştır.

( اِلَّا ابْتِغَآءَ رِضْوَانِ اللّٰهِ ) *"Allah'ın rızasını kazanmak için onu kendileri icat etmişlerdi."*

Hakkımıza riayet etmeye dair olarak bu sözü bize verenler, sadece kendileridir.

يَآ اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَاٰمِنُوا بِرَسُولِهٖ يُؤْتِكُمْ كِفْلَيْنِ مِنْ رَحْمَتِهٖ
وَيَجْعَلْ لَكُمْ نُورًا تَمْشُونَ بِهٖ وَيَغْفِرْ لَكُمْ وَاللّٰهُ غَفُورٌ رَحٖيمٌ ﴿٢٨﴾

28- "Ey iman edenler! Allah'a karşı gelmekten sakının ve Peygamberine iman edin ki, size rahmetinden iki pay versin, size kendisiyle yürüyeceğiniz bir nur versin ve sizi bağışlasın. Allah çok bağışlayıcıdır, çok merhamet edicidir."

Bu ayet, kitap ehlinden Müslüman olan bir topluluk hakkında inmiştir.

( كِفْلَيْنِ ) lafzı, iki pay demektir. Biri, Allah'a iman etmeye karşılık verilen paydır, diğeri de peygamberleri tasdik edip onlara iman etmelerinin karşılığı olan paydır.

لِئَلَّا يَعْلَمَ اَهْلُ الْكِتَابِ اَلَّا يَقْدِرُونَ عَلٰى شَيْءٍ مِنْ فَضْلِ اللّٰهِ
وَاَنَّ الْفَضْلَ بِيَدِ اللّٰهِ يُؤْتٖيهِ مَنْ يَشَآءُ وَاللّٰهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظٖيمِ ﴿٢٩﴾

29- "Bunları açıkladık ki kitap ehli, Allah'ın lütfundan hiçbir şeyi kendilerine has kılmaya güçlerinin yetmeyeceğini ve lütfun, Allah'ın elinde olduğunu, onu dilediği kimseye vereceğini bilsinler. Allah, büyük lütuf sahibidir."

Ayetin başında yer alan ( لِئَلاَّ ) lafzındaki ( لا ) harfi zaittir. Yani kitap ehli, Allah'ın lütfundan hiçbir şeyi kendilerine has kılmaya güçlerinin yetmeyeceğini bilsinler. Çünkü lütuf Allah'ın elindedir. Bu arada buradaki "el", kudret anlamındadır. Bu itibarla lütuf, Allah'ın kudretiyle gerçekleşir.

Bundaki işaret ise şöyledir: Allah'a karşı edebi korumak suretiyle O'ndan sakının. Size bahşettiği vakitlerinizi elinizden almak şeklindeki cezasından emin olmayınız. Bir de size tattırdığı muhabbetinin ünsiyetini değiştirmesi konusunda, takdirinin ani baskınlarından sakının. Elçilere ve peygamberlere tabi olun ve tabi olmayı koruyun ki Allah size lütfünden ismet ve nimet şeklinde iki pay versin. İsmet, O'ndan kopmaktan korunmuş olmak, nimet de O'nunla baki kalmaktır.

Bir yoruma göre de Allah size iki pay verir: O'nu aramadaki muvaffakiyetten bir pay, varlığında hakikate kavuşmaktan da bir pay verir.

سورة الْمُجَادَلَةِ

# MÜCADELE SÛRESİ

(Mücâdele Sûresi 22 âyettir. Medine'de hicretin 4 veya 5. yılında inmiştir. Atâ'ya göre ilk on âyeti Medine'de, geri kalanı Mekke'de inmiştir. Adını, ilk âyette geçen, bir kadının Hz. Peygamber'le zıhar konusundaki tartışma ve mücadelesinden almıştır. "Mücâdele (Tartışma yapma)" ve "Mücâdile (Tartışan kadın)" şeklinde iki türlü kullanımı vardır. Sûrede; genel olarak; zıhar ve keffâreti, Allah'ın her şeyi bilmesi, gizli konuşma, toplulukta oturup kalkma âdabı, Allah düşmanını dost edinmemek, Allah'ın belirlediği sınırın dışında sınır belirleme, şeytanın yanıltması gibi konular yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir sözdür ki onu tanıyan vuslatına nail olmasa bile onun talebinde ruhunu feda eder. O, öyle bir sözdür ki kim onu talep ederse, kabulünün yerine onu talep etmekle yetinir. O, öyle karşı konulmaz bir sözdür ki herkese bakmaz. Öyle karşı konulmaz bir sözdür ki ondan başka bir sığınak bulunamaz. Öyle bir sözdür ki sevenlerin belası da şifası da onunladır.

قَدْ سَمِعَ اللّٰهُ قَوْلَ الَّت۪ي تُجَادِلُكَ ف۪ي زَوْجِهَا وَتَشْتَك۪ٓي اِلَى اللّٰهِ
وَاللّٰهُ يَسْمَعُ تَحَاوُرَكُمَاۜ اِنَّ اللّٰهَ سَم۪يعٌ بَص۪يرٌ ١

1- "Allah, kocası hakkında seninle tartışan ve Allah'a şikâyette bulunan kadının sözünü işitmiştir. Allah, ikinizin konuşmasını işitmektedir. Şüphesiz Allah hakkıyla işitendir, hakkıyla bilendir."

Kadın, Allah'a olan şikâyetinde doğru söyleyip mağduriyetinin Allah'tan başkası tarafından ortaya çıkarılmasından ümidini kesince Allah, onun hakkında (قَدْ سَمِعَ اللّٰهُ) *"Allah... işitmiştir"* diye başlayan bu sureyi indirmiş oldu.

Kadın, Allah'a niyazda bulundu, meselesini Allah'a arz etti ve sıkıntısını Allah'ın huzurunda açtı. Bunun üzerine Allah, kendisine baktı ve: (قَدْ سَمِعَ اللّٰهُ) *"Allah... işitmiştir"* buyurdu.

Bir yoruma göre de bu sure, zıhar meselesinde kıyamete kadar Müslümanlar için bir ferahlık ve ruhsat olmuştur. Bir de sure, âlimler, Allah'a sığınan hiç kimsenin kaybetmeyeceğini bilsinler diye inmiştir.

Hadiste de bu kadının Hz. Peygamber'e (s.a.v.) şöyle dediği yer almıştır:

*"Ey Allah'ın Resulü! Evs benimle, genç, zengin, ailesi olan ve çok mal sahibi bir kadın olarak evlendi. Derken yaşım büyüyüp malım gidip ailem dağılınca, ettiği zıhar yeminiyle beni annesi konumuna geçirdi. Ancak ben de o da pişmanlık duyduk. Bir de benim ondan küçük çocuklarım vardır. O çocukları kendisine teslim edersem heder olurlar. Şayet onları ben alırsam, bu kez de aç kalırlar."*

Bunun üzerine Hz. Peygamber (s.a.v.): *"Durumun hakkında bana bir şey emredilmedi"* buyurdu.

Bir rivayete göre ise Hz. Peygamber (sa.v.): *"Kocandan kesin bir şekilde boşandın"* buyurmuştur.

Bunun üzerine kadın, Allah zıharın hükmünü indirinceye kadar Hz. Peygamber'e (s.a.v.) gidip gelmeye ve şikâyette bulunmaya devam etti.

اَلَّذِينَ يُظَاهِرُونَ مِنْكُمْ مِنْ نِسَآئِهِمْ مَا هُنَّ اُمَّهَاتِهِمْ اِنْ اُمَّهَاتُهُمْ اِلَّا الّٰٓئِ وَلَدْنَهُمْ وَاِنَّهُمْ لَيَقُولُونَ مُنْكَرًا مِنَ الْقَوْلِ وَزُورًا وَاِنَّ اللّٰهَ لَعَفُوٌّ غَفُورٌ ﴿٢﴾

2- "İçinizden kadınlarına zıhar yapanlar bilsinler ki, o kadınlar onların anaları değildir. Onların anaları ancak kendilerini doğuran kadınlardır. Şüphesiz onlar, hoş karşılanmayan yalan bir söz söylüyorlar. Şüphesiz Allah çok affedicidir, çok bağışlayıcıdır."

Şirk ehlinin adetine uygun olarak kadınlarına: "Sen, bana anamın sırtı gibisin" diyenlerin sözü, hakkında Allah'ın hüküm vermediği bir şeydir. Bir de bu söz, gerçekte doğru değildir, hakkında dini bir hüküm bulunmamaktadır ve o, sadece katıksız bir yalandır.

Böylece herkes, gerçeklerin saptırmayla güç kazanmadığını anlamış oldu. Bir de sebep, doğru olmadığı zaman tekrar ile sabit olmaz. Nitekim kadın, Hz. Peygamber'den (s.a.v.): *"Kocandan kesin bir şekilde boşandın"* cevabını duyduğunda durup sabretmesi gerekirdi. Lakin zaruret onu konuşturdu ve tekrara sevk etti. Bundan da bir mesele meydana geldi. Mesele şudur: Pek çok şey hakkında ilim, zâhiren hüküm verir. Sonra zaruret, sahibi için o hükmü değiştirir.

وَالَّذِينَ يُظَاهِرُونَ مِنْ نِسَآئِهِمْ ثُمَّ يَعُودُونَ لِمَا قَالُوا فَتَحْرِيرُ رَقَبَةٍ مِنْ قَبْلِ اَنْ يَتَمَآسَّا ذٰلِكُمْ تُوعَظُونَ بِهِ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرٌ ﴿٣﴾

3- "Zıhar yaparak kadınlarından ayrılan sonra da söylediklerinden dönecek olanlar, eşleriyle birbirine dokunmadan önce bir köle azat etmelidirler. İşte bu hüküm ile size öğüt veriliyor. Allah, yaptıklarınızdan hakkıyla haberdardır."

Zıharın her ne kadar hakikatte bir temeli, ifadede bir doğruluğu veya dini bir delili olmasa da durumu Hz. Peygamber'e (s.a.v.) arz edildikten ve Hz. Peygamber (s.a.v.), bir şeyler işaret edip hakkında

hükmünü söyledikten sonra Allah onu, dininin hükmüne dair izahtan mahrum bırakmadı. Böylece Allah, hakkında durumu her yönden düzenleyen hükmü koydu.

Bu çerçevede durumun Hz. Peygamber'e (s.a.v.) kadar intikal edip huzurunda dava konusu olması, haksız olana yaptığının sorumluluğunu yüklemiş ve kadına hakkını iade etmiştir. Bu da meselenin bütün olarak çerçevesinin çizilmesine vesile olmuştur. İşte böylece zor olan her şeyin sonu yok olmaktır. Uzun da olsa her gece aydınlanmayla son bulur.

فَمَنْ لَمْ يَجِدْ فَصِيَامُ شَهْرَيْنِ مُتَتَابِعَيْنِ مِنْ قَبْلِ اَنْ يَتَمَآسَّا فَمَنْ لَمْ يَسْتَطِعْ فَاِطْعَامُ سِتّٖينَ مِسْكٖينًا ذٰلِكَ لِتُؤْمِنُوا بِاللّٰهِ وَرَسُولِهٖ وَتِلْكَ حُدُودُ اللّٰهِ وَلِلْكَافِرٖينَ عَذَابٌ اَلٖيمٌ ﴿٤﴾

4- "Kim bulamazsa, eşine dokunmadan önce ard arda iki ay oruç tutmalıdır. Kimin de buna gücü yetmezse, altmış fakiri doyurmalıdır. Bunlar, Allah'a ve Resulüne hakkıyla iman etmeniz içindir. İşte bunlar Allah'ın sınırlarıdır. Kâfirler için elem dolu bir azap vardır."

اِنَّ الَّذٖينَ يُحَآدُّونَ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ كُبِتُوا كَمَا كُبِتَ الَّذٖينَ مِنْ قَبْلِهِمْ وَقَدْ اَنْزَلْنَآ اٰيَاتٍ بَيِّنَاتٍ وَلِلْكَافِرٖينَ عَذَابٌ مُهٖينٌ ﴿٥﴾

5- "Allah'a ve Resulüne düşmanlık edenler, kendilerinden öncekilerin alçaltıldığı gibi alçaltılacaklardır. Oysa biz apaçık ayetler indirdik. Kâfirler için alçaltıcı bir azap vardır."

Allah'ın emrine aykırı davranıp Peygamberine (s.a.v.) itaati terk edenler, zelil ve perişan kılındılar. Tıpkı kendilerinden önceki kâfirler ve günahkârların zelil kılındıkları gibi.

Bu arada Allah zaten prensibini, suç işleyenlerden intikam almak şeklinde koymuştur. Bu nedenle kim, Hz. Peygamber'in (s.a.v.)

bir sünnetini aksatırsa ve dininde bir bidat meydana getirirse, o da bu çizgiye girer ve bu züllün içine düşer.

يَوْمَ يَبْعَثُهُمُ اللّٰهُ جَمِيعًا فَيُنَبِّئُهُمْ بِمَا عَمِلُوا اَحْصٰيهُ اللّٰهُ وَنَسُوهُ وَاللّٰهُ
عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ شَهِيدٌ ﴿٦﴾

6- "Allah'ın onları topluca diriltip yaptıklarını kendilerine haber vereceği günü hatırla. Allah, onları bir bir saymıştır. Onlarsa bunu unutmuşlardır. Allah, her şeye şahittir."

Bir yoruma göre, kıyamet günü bir kimse amelinden hesaba çekildiği zaman yaptıkları gözünün önüne getirilip kendisine hatırlatılır. O kadar ki o durumda kendisi, suçlu konumunda ayakta dikilmiş gibi olur. Böylece öyle bir mahcubiyet ve pişmanlık yaşar ki onun yanında her tülü cezayı unutur.

İşte bu nedenledir ki Müslüman'ın yolu, Mevlâ'sının emrine aykırılığın semtine bile uğramamasıdır. Şayet kader tecelli eder de kendisi bir kusur işlerse, hiç olmazsa hatasının farkında olsun ve güzel niyaz ile Allah'a tazarruda bulunsun.

اَلَمْ تَرَ اَنَّ اللّٰهَ يَعْلَمُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ مَا يَكُونُ مِنْ
نَجْوٰى ثَلٰثَةٍ اِلَّا هُوَ رَابِعُهُمْ وَلَا خَمْسَةٍ اِلَّا هُوَ سَادِسُهُمْ وَلَٓا اَدْنٰى
مِنْ ذٰلِكَ وَلَٓا اَكْثَرَ اِلَّا هُوَ مَعَهُمْ اَيْنَ مَا كَانُوا ثُمَّ يُنَبِّئُهُمْ بِمَا عَمِلُوا
يَوْمَ الْقِيٰمَةِ اِنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ﴿٧﴾

7- "Göklerdeki ve yerdeki her şeyi Allah'ın bildiğini görmüyor musun? Üç kişi gizlice konuşmaz ki dördüncüleri O olmasın. Beş kişi gizlice konuşmaz ki altıncıları O olmasın. Bundan daha az yahut daha çok da olsalar, nerede olurlarsa olsunlar, O mutlaka onlarla beraberdir. Sonra Kıyamet günü, yaptıklarını onlara haber verecektir. Çünkü Allah her şeyi bilir."

Allah'ın (c.c.) beraberliği, her ne kadar genelde bilgi ve rivayetle, özelde de lütuf ve yardımla olsa da bu hitabın marifet ehlinin kalplerinde büyük bir etkisi vardır. Ayrıca durum, onları bu hitabı işitme macerasında şiddetli acı duyma, üzüntü ve şaşkınlık noktasına taşıyıncaya kadar rahat bir hayatları vardır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Ashab-ı Kehf'in mertebesi, diğer insanlara göre her ne kadar büyük ve özel ise de Allah onlar hakkında şöyle buyurmuştur:

( سَيَقُولُونَ ثَلٰثَةٌ رَابِعُهُمْ كَلْبُهُمْ ) *"Onlar üç kişidir, dördüncüleri de köpekleridir, diyecekler."* (Kehf, 18/22)

Bu ayete gelince Allah:

( مَا يَكُونُ مِنْ نَجْوٰى ثَلٰثَةٍ اِلَّا هُوَ رَابِعُهُمْ وَلَا خَمْسَةٍ اِلَّا هُوَ سَادِسُهُمْ ) *"Üç kişi gizlice konuşmaz ki, dördüncüleri O olmasın. Beş kişi gizlice konuşmaz ki, altıncıları O olmasın"* buyurdu. Bu çerçevede dördüncüsü köpeği olan kimse ile dördüncüsü Rabbi olan kimse arasında büyük bir fark vardır.

- Tevhid ehli kimseler ve akılcı usulcüler: "Allah birdir, ancak bu, sayı yoluyla değildir" derken Allah:

( مَا يَكُونُ مِنْ نَجْوٰى ثَلٰثَةٍ اِلَّا هُوَ رَابِعُهُمْ وَلَا خَمْسَةٍ اِلَّا هُوَ سَادِسُهُمْ ) *"Üç kişi gizlice konuşmaz ki, dördüncüleri O olmasın. Beş kişi gizlice konuşmaz ki, altıncıları O olmasın"* buyurmaktadır.

- Sen nerede olursan, ben seninle beraberim. Sen, camide olursan ben seninle beraberim. Sen, sedirde de olursan ben seninle beraberim. Eğer âlimler, tevile başvurmak ister ve vecd sahiplerinin kalplerini karıştırırlarsa sakıncası yoktur, zira ben onlarla beraberim.

Eğer sen camiye gelirsen ben, bolca nimet vermek suretiyle seninle beraberim. Lakin bu beraberlik söz vermek şeklindedir. Eğer sedire gelirsen, ben rahmetle ve mağfiret örtüsünü üzerine indirmekle seninle beraberim. Bunu da peşin yaparım.

Şiir:

*Farzet ki uzaklaşıp bana karşı geldin*
*Lütfumun dışına da çıkabilir misin?*

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذٖينَ نُهُوا عَنِ النَّجْوٰى ثُمَّ يَعُودُونَ لِمَا نُهُوا عَنْهُ
وَيَتَنَاجَوْنَ بِالْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ وَمَعْصِيَتِ الرَّسُولِ وَاِذَا جَٓاؤُكَ حَيَّوْكَ
بِمَا لَمْ يُحَيِّكَ بِهِ اللّٰهُ وَيَقُولُونَ فٖٓي اَنْفُسِهِمْ لَوْلَا يُعَذِّبُنَا اللّٰهُ بِمَا
نَقُولُ حَسْبُهُمْ جَهَنَّمُ يَصْلَوْنَهَا فَبِئْسَ الْمَصٖيرُ ﴿٨﴾

8- "Gizlice konuşmaktan menedilip de menedildikleri şeyi işleyen ve günah, düşmanlık ve peygambere isyanı konuşanları görmedin mi? Sana geldiklerinde Allah'ın seni selamlamadığı selamla selamlıyorlar. İçlerinden de: 'Söylediklerimizden dolayı Allah bize azap etse ya!' diyorlar. Cehennem onlara yeter. Oraya girecekler. Ne kötü varış yeridir orası!"

Onlar kendi aralarında yaptıkları gizli konuşmalarla Müslümanların kalplerini incittiler. Bir de gizli konuşmalarında hiçbir fayda olmayıp bundan tek amaçları, müminlerin kalplerini meşgul etmektir. Onlar bundan alıkonulduklarında ondan vazgeçmemiş ve bunda ısrar ederek sakınmamışlardır. Bu nedenle Allah, o davranışlarına karşılık kendilerini uyarmıştır. Azapları ise meleklerin onlar hakkında kendi aralarında işaretleşmeleridir. Onlar, bunu görünce zanları darmadağın olur ve kalplerinin dağınıklığa uğramasıyla azap çekerler. Sonra durumu anlamaları, sadece üzüntülerini kat kat artırır.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُٓوا اِذَا تَنَاجَيْتُمْ فَلَا تَتَنَاجَوْا بِالْاِثْمِ وَالْعُدْوَانِ
وَمَعْصِيَتِ الرَّسُولِ وَتَنَاجَوْا بِالْبِرِّ وَالتَّقْوٰى وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذٖٓي اِلَيْهِ
تُحْشَرُونَ ﴿٩﴾

9- "Ey iman edenler! Siz baş başa gizli konuştuğunuz zaman günah, düşmanlık ve peygambere isyanı konuşmayın. İyilik ve takvayı

konuşun ve huzuruna toplanacağınız Allah'a karşı gelmekten sakının."

Onların bunu yapmasının çirkin ve tehlikesinin büyük olmasının sebebi, arayı bozucu özellik taşımasıdır. Oysa işlerin en hayırlısı, arayı düzelten şeydir. İşlerin en kötüsü de arayı açan şeydir.

اِنَّمَا النَّجْوٰى مِنَ الشَّيْطَانِ لِيَحْزُنَ الَّذٖينَ اٰمَنُوا وَلَيْسَ بِضَٓارِّهِمْ
شَيْئًا اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُونَ ﴿١٠﴾

10- "O kötü fısıltılar iman edenleri üzmek için ancak şeytandan kaynaklanmaktadır. Oysa şeytan, Allah'ın izni olmadıkça müminlere hiçbir zarar verebilecek değildir. Öyle ise müminler ancak Allah'a tevekkül etsinler."

Fısıltı, müminleri üzmek için şeytanın süslemesindendir. Oysa müşahede galip, kalpler hazır, tevekkül doğru, yerinden bakış da isabetli olduğu zaman, bu tür durumların hiçbir etkisi olmaz ve bu, sadece zayıflara mahsus olur.

يَٓا اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوٓا اِذَا قٖيلَ لَكُمْ تَفَسَّحُوا فِي الْمَجَالِسِ فَافْسَحُوا
يَفْسَحِ اللّٰهُ لَكُمْ وَاِذَا قٖيلَ انْشُزُوا فَانْشُزُوا يَرْفَعِ اللّٰهُ الَّذٖينَ اٰمَنُوا
مِنْكُمْ وَالَّذٖينَ اُو۫تُوا الْعِلْمَ دَرَجَاتٍ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبٖيرٌ ﴿١١﴾

11- "Ey iman edenler! Size: 'Meclislerde yer açın' denildiği zaman yer açın ki Allah da size genişlik versin. Size: 'Kalkın' denildiği zaman da kalkın ki Allah içinizden inananların ve kendilerine ilim verilenlerin derecelerini yükseltsin. Allah, yaptıklarınızdan hakkıyla haberdardır."

Allah, onlara olan noksansız rahmeti ve şefkati sebebiyle kendilerine adet olan hususlarda; meclislerde yer açmada, izdiham ve kalabalık halinde de düzeni korumada, kendi aralarında edep güzelliğine riayet etmeyi öğretmiştir. Dinin esaslarını yerine getirip

rükünlerini gerçekleştirdikten sonra Allah'ın ince işleri emrettiği kimseler ne kadar da değerlidirler!

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوٓا اِذَا نَاجَيْتُمُ الرَّسُولَ فَقَدِّمُوا بَيْنَ يَدَيْ نَجْوٰيكُمْ صَدَقَةً ذٰلِكَ خَيْرٌ لَكُمْ وَاَطْهَرُ فَاِنْ لَمْ تَجِدُوا فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَح۪يمٌ ﴿١٢﴾

12- "Ey iman edenler! Peygamber ile baş başa konuşacağınız zaman, baş başa konuşmanızdan önce bir sadaka verin. Bu, sizin için daha hayırlı ve daha temizdir. Şayet verecek sadaka bulamazsanız bilin ki Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Hz. Peygamber (s.a.v.) ile baş başa konuşmaya dair izin, mal verme şartına bağlanınca onlar konuşmaya yanaşmadılar ve onu bıraktılar. Böylece ahlak cevherleri ve kişilerin manevî temizlikleri ortaya çıkmış oldu. Allah şöyle buyurmuştur:

(وَلَا يَسْـَٔلْكُمْ اَمْوَالَكُمْ اِنْ يَسْـَٔلْكُمُوهَا فَيُحْفِكُمْ تَبْخَلُوا وَيُخْرِجْ اَضْغَانَكُمْ) *"Allah, sizden mallarınızı istemez. Eğer onları sizden isteyip de sizi zorlasaydı, cimrilik ederdiniz, O da, kinlerinizi ortaya çıkarırdı."* (Muhammed, 47/36, 37)

ءَاَشْفَقْتُمْ اَنْ تُقَدِّمُوا بَيْنَ يَدَيْ نَجْوٰيكُمْ صَدَقَاتٍ فَاِذْ لَمْ تَفْعَلُوا وَتَابَ اللّٰهُ عَلَيْكُمْ فَاَق۪يمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ وَاَط۪يعُوا اللّٰهَ وَرَسُولَهُ وَاللّٰهُ خَب۪يرٌ بِمَا تَعْمَلُونَ ﴿١٣﴾

13- "Baş başa konuşmanızdan önce sadakalar vermekten çekindiniz mi? Bunu yapmadığınıza ve Allah da sizi affettiğine göre artık namazı kılın, zekâtı verin, Allah'a ve Resulüne itaat edin. Allah, bütün yaptıklarınızdan hakkıyla haberdardır."

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذٖينَ تَوَلَّوْا قَوْمًا غَضِبَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ مَا هُمْ مِنْكُمْ وَلَا مِنْهُمْ وَيَحْلِفُونَ عَلَى الْكَذِبِ وَهُمْ يَعْلَمُونَ ﴿١٤﴾

14- "Allah'ın kendilerine gazap ettiği bir topluluğu dost edinenleri görmez misin? Onlar ne sizdendirler ne de onlardan. Onlar bile bile yalan yere yemin ederler."

Kim gazaba uğrayan kimseyle uyum içinde olursa gazap sahibinin gazabına müstahak olmaya kendini ortak eder. Kim de Allah tarafından gazap edilmiş birini dost edinirse, Allah'ın gazabına müstahak olur. Bu ise alçaklık ve zarar olarak yeter.

اَعَدَّ اللّٰهُ لَهُمْ عَذَابًا شَدٖيدًا اِنَّهُمْ سَٓاءَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿١٥﴾ اِتَّخَذُوٓا اَيْمَانَهُمْ جُنَّةً فَصَدُّوا عَنْ سَبٖيلِ اللّٰهِ فَلَهُمْ عَذَابٌ مُهٖينٌ ﴿١٦﴾

15, 16- "Allah, onlara çetin bir azap hazırlamıştır. Gerçekten onların yaptıkları şey, ne kötüdür! Onlar, yeminlerini kalkan yapıp insanları Allah'ın dininden alıkoydular. Bunun için onlara alçaltıcı bir azap vardır."

Bu, münafıkların vasfıdır.

( اِتَّخَذُوٓا اَيْمَانَهُمْ جُنَّةً ) *"Onlar, yeminlerini kalkan yaptılar."*

Yani onu bir korunak ve örtü yaptılar. Bu arada kim, dünyasının elinde kalması için ibadetinin kalkanıyla saklanırsa, hiç şüphesiz takdirin okları o farkında olmadan, arkasından kendisini ifşa eder. Böylece ne dini kalır ne de dünyası kurtulur. Nitekim Allah, şöyle buyurmuştur:

لَنْ تُغْنِيَ عَنْهُمْ اَمْوَالُهُمْ وَلَٓا اَوْلَادُهُمْ مِنَ اللّٰهِ شَيْـًٔا اُولٰٓئِكَ اَصْحَابُ النَّارِ هُمْ فٖيهَا خَالِدُونَ ﴿١٧﴾

17- "Onların ne malları ne de evlatları Allah'a karşı kendilerine hiçbir fayda sağlamayacaktır. Onlar cehennemliklerdir. Onlar, orada ebedi kalacaklardır."

يَوْمَ يَبْعَثُهُمُ اللّٰهُ جَم۪يعًا فَيَحْلِفُونَ لَهُ كَمَا يَحْلِفُونَ لَكُمْ وَيَحْسَبُونَ
اَنَّهُمْ عَلٰى شَيْءٍۜ اَلَٓا اِنَّهُمْ هُمُ الْكَاذِبُونَ ﴿١٨﴾

18- "Allah'ın onları topluca dirilteceği, onların da bir iş üzerinde olduklarını sanarak size yemin ettikleri gibi Allah'a da yemin edecekleri günü düşün! İyi bilin ki onlar yalancıların ta kendileridir."

Onların en büyük azabı, halk ile yaptıkları işlerin, Allah ile olan muamelede de aynen yürüyeceğini sanmalarıdır. Böylece aşırı yabancılık ve sonsuz cehalet, onları burunları üstünde pişmanlık uçurumuna sürüklemiş olur.

اِسْتَحْوَذَ عَلَيْهِمُ الشَّيْطَانُ فَاَنْسٰيهُمْ ذِكْرَ اللّٰهِۜ اُو۬لٰٓئِكَ حِزْبُ الشَّيْطَانِۜ
اَلَٓا اِنَّ حِزْبَ الشَّيْطَانِ هُمُ الْخَاسِرُونَ ﴿١٩﴾

19- "Şeytan onları hâkimiyeti altına alıp kendilerine Allah'ı anmayı unutturmuştur. İşte onlar, şeytanın tarafında olanlardır. İyi bilin ki, şeytanın tarafında olanlar, ziyana uğrayanların ta kendileridir."

Şeytan bir kula hâkim olduğu zaman Allah'ı anmayı kendisine unutturur. Nefis de bir insana hâkim olduğu zaman ona Allah'ı unutturur. Hiç şüphe yok ki şeytanın partisi kaybetmiştir. Ondan da fazla kaybeden ise en büyük düşmanı olan nefsine yardım eden kimsedir. Meğer ki nefsinin kötülüğünden kurtulmak ümidiyle onu yenmeye çaba harcamış olsun.

اِنَّ الَّذ۪ينَ يُحَٓادُّونَ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ اُو۬لٰٓئِكَ فِي الْاَذَلّ۪ينَ ﴿٢٠﴾

20- "Allah'a ve peygamberine düşmanlık yapanlar, işte onlar en zelil kimselerin arasındadırlar."

Mutsuzluğunun savurduğu kimseyi, kuvveti ayağa kaldıramaz. Takdirin belini büktüğü kimseyi tedbir koruyamaz. Dini aşağılayan kimse de en zelil kimselerin yoluna girer.

كَتَبَ اللّٰهُ لَاَغْلِبَنَّ اَنَا وَرُسُلٖي اِنَّ اللّٰهَ قَوِيٌّ عَزٖيزٌ ﴿٢١﴾

21- "Allah: 'Şüphesiz ben ve peygamberlerim galip geleceğiz' diye yazmıştır. Şüphe yok ki Allah çok güçlüdür, mutlak galiptir."

Elinden tedbirden başka bir şey gelmeyen kimse, takdire karşı nasıl direnebilir?

لَا تَجِدُ قَوْمًا يُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ يُوَٓادُّونَ مَنْ حَٓادَّ اللّٰهَ
وَرَسُولَهُ وَلَوْ كَانُٓوا اٰبَٓاءَهُمْ اَوْ اَبْنَٓاءَهُمْ اَوْ اِخْوَانَهُمْ اَوْ عَشٖيرَتَهُمْ
اُو۬لٰٓئِكَ كَتَبَ فٖي قُلُوبِهِمُ الْاٖيمَانَ وَاَيَّدَهُمْ بِرُوحٍ مِنْهُ وَيُدْخِلُهُمْ
جَنَّاتٍ تَجْرٖي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِدٖينَ فٖيهَا رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمْ
وَرَضُوا عَنْهُ اُو۬لٰٓئِكَ حِزْبُ اللّٰهِ اَلَٓا اِنَّ حِزْبَ اللّٰهِ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ﴿٢٢﴾

22- "Allah'a ve ahiret gününe iman eden hiçbir topluluğun babaları, oğulları, kardeşleri yahut da kendi aşiretleri olsalar bile, Allah'a ve peygamberine düşman olan kimselere sevgi beslediğini göremezsin. İşte Allah, onların kalplerine imanı yazmış ve onları kendi katından bir ruh ile desteklemiştir. Onları, içlerinden ırmaklar akan ve içlerinde ebedi kalacakları cennetlere koyacaktır. Allah onlardan razı olmuş, onlar da Allah'tan razı olmuşlardır. İşte onlar, Allah'ın tarafında olanlardır. İyi bilin ki kurtuluşa erecekler de sadece Allah'ın tarafında olanlardır."

Kim, dininden sapan kimseye meylederse veya ahdinde haktan sapan kimseye yaranmaya çalışırsa, Allah tevhid nurunu kalbinden söküp atar. Böylece o, hainliğiyle inancına zulmetmekte ve yakında durumunun vebalini tatmış olacaktır.

(اُو۬لٰٓئِكَ كَتَبَ فٖي قُلُوبِهِمُ الْاٖيمَانَ وَاَيَّدَهُمْ بِرُوحٍ مِنْهُ) *"İşte Allah, onların kalplerine imanı yazmış ve onları kendi katından bir ruh ile desteklemiştir."* Allah, dostlarının kalplerinde imanı yaratıp yerleştirmiştir. Bir yoruma göre de Allah onların kalplerini kendi adıyla bezemiştir. Bir kavmin sırlarının, nakışlı işlemesi Allah'ın adı olan donanımı, ne kadar da değerlidir!

سورة الْحَشْرِ

# HAŞR SÛRESİ

(Haşr Sûresi 24 âyettir. Medine'de 4. hicret yılında inmiştir. 2-17. âyetlerde Yahudi kabilelerinden, Nadir oğullarının Medine'den sürgün edilmeleri anlatıldığı için, sûre "Haşr (Sürgün)" adını almıştır. Sûrede; Allah'ı tesbih ve tenzih, Nadîroğulları sürgünü, fey' ganimeti, mü'minlerin birbirine duası, münafıkların iç yüzü, şeytanın yanıltması, cennet ve cehennem halkının karşılaştırılması, iyi amel yapma ve Allah'ın sıfatları konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", öyle bir Aziz'in ismidir ki bütün kâinat O'nu aramakta iken O azizdir.

Güneşler, aylar, yıldızlar, gece, gündüz ve Allah'ın yarattığı bütün özler ve izler, kendileri hakkında şöyle seslenirler: Biz O'nun kullarıyız. Biz, hep var olan Allah'ın kullarıyız. Biz, hep var olanı istiyoruz.

سَبَّحَ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَهُوَ الْعَز۪يزُ
الْحَك۪يمُ ﴿١﴾

1- "Göklerdeki ve yerdeki her şey Allah'ı tespih etmektedir. O, üstündür, hüküm sahibidir."

Allah, kendini yarattığı her şeyden takdis ve tenzih etmiştir. Bu çerçevede O, yarattığı ne varsa hepsini kendi birliğine delil, ilahlığını tanımak isteyen kimse için de yol ve yöntem kılmıştır.

Allah, her şeyi muhkem yaratmıştır. Bu da, O'nun ilminin ve hikmetinin delilidir. Bir de her şeye düzen vermiştir. Bu ise, O'nun istek ve iradesine şahitlik etmektedir.

( وَهُوَ الْعَزِيزُ ) *"O üstündür."*

Bu itibarla O'na denk olacak hiçbir benzeri ve hükümranlıkta kendisiyle çekişecek ve benzer olacak hiçbir ortağı yoktur.

( الْحَكِيمُ ) *"Hüküm sahibidir."*

O, hükmünde hiçbir kusur bulunmayan ve hiçbir itabın yönelmediği hüküm sahibidir.

هُوَ الَّذِيٓ اَخْرَجَ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ اَهْلِ الْكِتَابِ مِنْ دِيَارِهِمْ لِاَوَّلِ الْحَشْرِ مَا ظَنَنْتُمْ اَنْ يَخْرُجُوا وَظَنُّوٓا اَنَّهُمْ مَانِعَتُهُمْ حُصُونُهُمْ مِنَ اللّٰهِ فَاَتٰيهُمُ اللّٰهُ مِنْ حَيْثُ لَمْ يَحْتَسِبُوا وَقَذَفَ فٖي قُلُوبِهِمُ الرُّعْبَ يُخْرِبُونَ بُيُوتَهُمْ بِاَيْدٖيهِمْ وَاَيْدِي الْمُؤْمِنٖينَ فَاعْتَبِرُوا يَٓا اُو۬لِي الْاَبْصَارِ ﴿٢﴾

2- "O, kitap ehlinden inkâr edenleri ilk toplu sürgünde yurtlarından çıkarandır. Siz onların çıkacaklarını sanmamıştınız. Onlar da kalelerinin, kendilerini Allah'tan koruyacağını sanmışlardı. Ama Allah'ın emri onlara ummadıkları yerden geldi. O, yüreklerine korku düşürdü. Öyle ki evlerini hem kendi elleriyle hem de müminlerin elleriyle yıkıyorlardı. O halde ibret alın, ey basiret sahipleri!"

Bunlar, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) aleyhinde olmayacaklarına dair söz vermiş olan Nadîroğullarıdır. Sonra Uhud Savaşı'nın ardından sözlerini bozarak Ebû Sufyân ve Mekkeliler ile anlaştılar. Allah da bunu peygamberine haber verdi. Bunun üzerine Hz. Peygamber

(s.a.v.), Muhammed b. Mesleme'yi onlara gönderdi. Bu zât onlara, zekât tahsili konusunda Hz. Peygamber'den (s.a.v.) şikâyetçi olduğu izlenimi verdi ve onların reisi olan Ka'b b. el-Eşref'i planlı bir şekilde öldürdü. Ayrıca Hz. Peygamber (s.a.v.) onlara karşı savaş açtı ve kendilerini sağlam kalelerinden çıkararak Suriye taraflarına sürdü. Oysa sayıca çok olmaları ve kalelerinin sağlamlığı sebebiyle Müslümanlar, onlara karşı zafer beklemiyorlardı.

Onlar, çıkabilmek için gedikler açmak üzere kendi elleriyle evlerini yıkıyor, gedikleri kapatmak için de ağaçlarını kesiyorlardı. Bu nedenle kendilerine ilk sürgünlüler adı verildi. Çünkü onlar, ilk defa Arap yarımadasından çıkartılıp Suriye'ye sürülen kimselerdi.

( فَاعْتَبِرُوا يَٓا اُو۬لِي الْاَبْصَارِ ) *"O halde ibret alın, ey basiret sahipleri!"*

Müslümanlar az olmalarına rağmen nasıl da Allah onlara, çok oldukları halde Yahudilere karşı zafer verdi! Başlarına felaket geldiği zaman, nasıl da kaleleri onları koruyamadı. Bir de Allah, bir düşmanı kahretmek istediği zaman, aslanını dişi deveye çevirir (Burnunu yere sürter). Bu olayın ibretlik yönlerinden biri de ayetin şu ifadesindeki husustur: ( مَا ظَنَنْتُمْ اَنْ يَخْرُجُوا ) *"Siz onların çıkacaklarını sanmamıştınız."* O kadar ki onlar çok güçlü oldukları için bu konuda içinize şüphe düşmüştü. Böylece Allah onları, kendilerini beğenmekten korudu.

Bu olayın ibret alınacak yönlerinden bir diğeri de Allah'ın şu sözüyle buyurduğu husustur:( وَظَنُّٓوا اَنَّهُمْ مَانِعَتُهُمْ حُصُونُهُمْ مِنَ اللّٰهِ ) *"Onlar da kalelerinin, kendilerini Allah'tan koruyacağını sanmışlardı."*

Oysa durum sandıkları gibi olmadı. Zira kim mahluktan güç almak isterse bu, onu güçsüzlüğü ve zilletiyle baş başa bırakır.

Buna dair canlı delillerden biri de kalplerine salınan korkudur. Sonra evlerini kendi elleriyle yıkmaları, güçsüz hallerinin alametidir. Müminlerin elleriyle yıkılması ise hallerinin güçlü olmasından dolayıdır. Nitekim bu nedenle müminler onları yendiler, yurtlarını ele geçirdiler ve kendilerini sürdüler.

İşte bütün bu olup bitenlerin, ibret almaya vesile olması gerekir. Kaldı ki ibret almak, dinin temel prensiplerinden biridir. Birde kim başkasından ibret almazsa, başkası ondan ibret alır (kendisi ibretlik olur).

Bir yoruma göre de onlar evlerini kendi elleriyle, kalplerini nefislerinin şehvetlerine uymakla, dinlerini de ona karıştırdıkları bidatlerle yıkarlar.

وَلَوْلَٓا اَنْ كَتَبَ اللّٰهُ عَلَيْهِمُ الْجَلَٓاءَ لَعَذَّبَهُمْ فِي الدُّنْيَا وَلَهُمْ فِي الْاٰخِرَةِ عَذَابُ النَّارِ ﴿٣﴾

3- "Eğer Allah, onlar hakkında sürgüne hükmetmemiş olsaydı, muhakkak kendilerine dünyada azap çektirecekti. Ahirette de onlar için cehennem azabı vardır."

Eğer Allah, haklarında çıkmaya hükmetmemiş olsaydı, öldürülüp köklerinin sökülmesiyle onlara azap çektirecekti. Sonra ahirette de onlar için cehennem azabı vardır.

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ شَٓاقُّوا اللّٰهَ وَرَسُولَهُ وَمَنْ يُشَٓاقِّ اللّٰهَ فَاِنَّ اللّٰهَ شَدِيدُ الْعِقَابِ ﴿٤﴾

4- "Bu, onların Allah'a ve peygamberine karşı gelmeleri sebebiyledir. Kim Allah'a karşı gelirse, bilsin ki Allah'ın azabı şiddetlidir."

Bu, onların Allah'ın emrine muhalefet etmeleri sebebiyledir. ( مُشاقّة ) lafzı, kişinin taraf değiştirmesi demektir. Bu itibarla günahkâr kimse, itaatkârlardan ayrılıp günahkârların tarafına geçtiği zaman Allah'a karşı olan tarafa geçmiş olur. Allah'a karşı çıkan kimse içinse cehennem azabı vardır.

مَا قَطَعْتُمْ مِنْ لِينَةٍ اَوْ تَرَكْتُمُوهَا قَٓائِمَةً عَلٰٓى اُصُولِهَا فَبِاِذْنِ اللّٰهِ وَلِيُخْزِيَ الْفَاسِقِينَ ﴿٥﴾

5- "Hurma ağaçlarından kestiğiniz veya kökleri üzerinde öylece bıraktığınız ne varsa hepsi Allah'ın izniyledir ve fâsıkları perişan etmesi içindir."

Buradaki hurma ağaçlarından maksat, acve ve bernî türleri dışındaki hurma ağaçlarının her çeşididir.

Hz. Peygamber (s.a.v.), Nadîroğullarına ait bazı hurma ağaçlarının kesilmesini emredince Yahudiler: "Bunun faydası nedir?" dediler. Bu soruya Müslümanlar cevap veremediler. Bunun üzerine Allah, bunun kendisinin izniyle olduğunu açıklamak için bu ayeti indirdi ve böylece konuşmalar son buldu. Bir de bu olayda, şeriatın gerekçeye dayanmadığına, şer'i emir geldiği zaman, gerekçelendirmenin geçersiz hale geldiğine ve dillerin "niçin" sorusuyla sorgulamayı bırakıp sustuğuna dair delil vardır. İtiraz veya çirkin bulma düşüncesi ise irfan sınırının dışına çıkmaktır.

Şeyhler de şöyle demişlerdir:

*"Kim üstadına ve şeyhine: 'Niçin?' derse, iflah olmaz. Her mürid ki kalbinde bunun gibi duygular dolaşır, ondan bir şey çıkmaz."*

Kalbi gerekçe bulma arayışından arınmayan, olan biteni güzelce kabul etmeyen, sırrına ve kalbine görünen gaybı güzel bulmayan kimsenin de Allah ile hiçbir bağı yoktur.

وَمَٓا اَفَٓاءَ اللّٰهُ عَلٰى رَسُولِه۪ مِنْهُمْ فَمَٓا اَوْجَفْتُمْ عَلَيْهِ مِنْ خَيْلٍ وَلَا رِكَابٍ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ يُسَلِّطُ رُسُلَهُ عَلٰى مَنْ يَشَٓاءُ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرٌ ﴿٦﴾

6- "Allah'ın, onlardan peygamberine savaşsız kazandırdığı mallar için siz at ya da deve koşturmuş değilsiniz. Fakat Allah, peygamberlerini dilediği kimselerin üzerine salıp onlara üstün kılar. Allah'ın her şeye gücü yeter."

Allah bununla Nadîroğullarının mallarını kast etmektedir. Çünkü bunlar, ganimetten değil, fey' cümlesinden idi. Fey' ise savaşmaksızın,

at ve deve koşturmaksızın kâfirlerin Müslümanlara geçen mallarıdır. Öldükleri zaman hazineye geçen malları da bu kapsama girmektedir. Ganimet ise savaşmak, at ve deve koşturmak suretiyle olandır. Bu arada Hz. Peygamber (s.a.v.), adı geçenlerin mallarını sadece fakir muhacirlere vermiş, uygun gördüğü miktarda da kendine ayırmıştır. Ensar buna gönülden razı olmuş, Allah da onları mükâfatlandırmıştır. Çünkü kalbin karşılık ve mülk beklentilerinden kurtulup özgürleşmesi, büyüklerin özelliğidir. Kaygıların tutsak ettiği ve nefsinin ihtirası içinde kalan kimse ise sıkıntı içerisinde olur. O, aynı zamanda insanlarla olan dostluğu, muamelesi ve alışverişinde daima kendi kazanımlarını temin etmenin yollarını arar. İşte bu kimse için, bu tarikatın zevklerinden hiçbir şey yoktur. Oysa safa ehlinin üzerinde bu şeylerden hiçbir eser kalmamıştır. Üzerinde onlardan bir şey kalan kimseye gelince o, şekilci ve sıradandır, hakikat ehli bir sofi değildir.

مَٓا اَفَٓاءَ اللّٰهُ عَلٰى رَسُولِه۪ مِنْ اَهْلِ الْقُرٰى فَلِلّٰهِ وَلِلرَّسُولِ وَلِذِي الْقُرْبٰى وَالْيَتَامٰى وَالْمَسَاك۪ينِ وَابْنِ السَّب۪يلِ كَيْ لَا يَكُونَ دُولَةً بَيْنَ الْاَغْنِيَٓاءِ مِنْكُمْ وَمَٓا اٰتٰيكُمُ الرَّسُولُ فَخُذُوهُ وَمَا نَهٰيكُمْ عَنْهُ فَانْتَهُوا وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ شَد۪يدُ الْعِقَابِ ﴿٧﴾

7- "Allah'ın, memleketlerin ahalisinden, peygamberine savaşsız kazandırdığı mallar, Allah'a, peygambere, onun yakınlarına, yetimlere, yoksullara ve yolda kalmışlara aittir. Bu, o malların, içinizde yalnız zenginler arasında dolaşan bir servet haline gelmemesi içindir. Peygamber, size ne verdiyse onu alın, neyi de size yasak ettiyse ondan vazgeçin. Allah'a karşı gelmekten sakının. Şüphesiz Allah'ın azabı çetindir."

Bu ayet, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) uymanın vacip ve onun yoluna ve hayat tarzına bağlılığın gerekli olduğuna dair ana delillerden biridir. Ayrıntısı ise ilmin konusudur.

Bu arada kulun yapması gereken, içine doğan hisleri ve karşılaştığı keşif hallerini ilimle test etmesidir. Bu durumda Kitap ve sünnetin kabul etmediği husus sapıklıktır.

لِلْفُقَرَٓاءِ الْمُهَاجِرِينَ الَّذِينَ اُخْرِجُوا مِنْ دِيَارِهِمْ وَاَمْوَالِهِمْ يَبْتَغُونَ فَضْلًا مِنَ اللّٰهِ وَرِضْوَانًا وَيَنْصُرُونَ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ اُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الصَّادِقُونَ ﴿٨﴾

8- "Bu mallar, özellikle Allah'tan bir lütuf ve hoşnutluk ararken ve Allah'ın dinine ve peygamberine yardım ederken yurtlarından ve mallarından uzaklaştırılan fakir muhacirlerindir. İşte onlar, doğru kimselerin ta kendileridir."

Yani bu mallar, sayıları yüz civarında olan bu fakir muhacirlere aittir.

(يَبْتَغُونَ فَضْلًا مِنَ اللّٰهِ وَرِضْوَانًا) *"Allah'tan bir lütuf ve hoşnutluk ararken."*

Lütuftan maksat rızık, hoşnutluk da ahiretteki sevaptır.

Onlar, Allah'ın dinine yardım ederler.

(اُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الصَّادِقُونَ) *"İşte onlar, doğru kimselerin ta kendileridir."*

Dürüst fakir, her türlü bağ ve alakayı keserek vakitlerini Allah'ın ibadetine ayıran, kalbiyle Allah'tan başka hiçbir şeye meyletmeyen ve hakkındaki hükmüne rıza göstererek Allah ile beraber olandır.

وَالَّذِينَ تَبَوَّؤُا الدَّارَ وَالْاِيمَانَ مِنْ قَبْلِهِمْ يُحِبُّونَ مَنْ هَاجَرَ اِلَيْهِمْ وَلَا يَجِدُونَ فِي صُدُورِهِمْ حَاجَةً مِمَّٓا اُو۫تُوا وَيُؤْثِرُونَ عَلٰٓى اَنْفُسِهِمْ وَلَوْ كَانَ بِهِمْ خَصَاصَةٌ وَمَنْ يُوقَ شُحَّ نَفْسِهِ فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ﴿٩﴾

9- "Onlardan önce o yurda yerleşmiş ve imanı özümsemiş olanlar, kendilerine doğru hicret edenleri severler. Onlara verilenlerden

dolayı içlerinde bir rahatsızlık duymazlar. Kendileri son derece ihtiyaç içinde bulunsalar bile onları kendilerine tercih ederler. Kim nefsinin cimriliğinden korunursa, işte kurtuluşa erenler onlardır."

Bu ayet ensar hakkında inmiştir.

( تَبَوَّؤُا الدَّارَ ) *"Yurda yerleşmiş olanlar."*

Yani Medine'ye Muhacirlerden önce yerleşmiş olanlar.

Mekke halkından ( يُحِبُّونَ مَنْ هَاجَرَ اِلَيْهِمْ ) *"kendilerine doğru hicret edenleri severler."*

( وَلَا يَجِدُونَ فِي صُدُورِهِمْ حَاجَةً ) *"İçlerinde bir rahatsızlık duymazlar."*

Onlar, muhacirlere tahsis edilen mallardan dolayı rahatsızlık duymazlar, bundan dolayı onlara haset etmezler, hatta ihtiyaçları veya hallerinde bir sıkıntı olsa bile Allah'ın, o malları muhacirlere tahsis etmeye dair hükmüne kalpleriyle itirazda bulunmazlar.

( وَمَنْ يُوقَ شُحَّ نَفْسِهِ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ) *"Kim, nefsinin cimriliğinden korunursa, işte kurtuluşa erenler onlardır."*

Bir görüşe göre ayet, kendisine bir koyun kellesi verilen, bunun üzerine onu başkasına vermek için yedi ev dolaşan ve nihayette birincisine ulaşan Ensar'dan bir adam hakkında inmiştir.

Bir görüşe göre de ayet, Ensar'dan misafiri gelen bir adam hakkında inmiştir. Bu adam, yemeği misafirinin önüne koyduktan sonra kendisinin de yemekten yediğini sanması için lambayı söndürmüş ve böylece onu kendine ve aile fertlerine tercih etmiştir. Bunun üzerine Allah, onun hakkında bu ayeti indirmiştir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Cömert, evi misafirleri ve kardeşleri için yapandır. Cimri de onu kendisi için yapandır.

- Allah: "Kim, nefsinin cimriliğinden sakınırsa" değil de: "Kim, nefsinin cimriliğinden korunursa" buyurmuştur.

- İsâr sahibi -başkasını kendine tercih eden kimse-, kendisi aç iken tok olanı kendine tercih edendir.

- Kim şahıslar arasında ayırım yaparsa, o ayırım yapmadan hepsini kendine tercih edinceye kadar isâr sahibi değildir.

- İsâr, insanların elindekini onlara ait, senin eline geçeni ise hakkında izin beklediğin bir ödünç ve emanetten başka bir şey olmadığını görmendir.

- Kim, kendine bir mülk görürse o, isâr ehlinden değildir.

- Abid, dünyası hakkında başkasını tercih eder. Arif ise cennet konusunda başkasını tercih eder.

Bir de Allah'tan kendisi için ne dünyada bir mevki ve mal ne cennette nimetlerden bir şey ne de yine O'ndan zerre kadar ikbal, vuslat ve diğer haller istemeyen kimse nadirdir, güçlüdür ve kıymetlidir.

Aynı şekilde fakirin özelliği de her türlü ihtiyacın gündemden düşmesiyle gerçekleşir.

وَالَّذِينَ جَٓاؤُ مِنْ بَعْدِهِمْ يَقُولُونَ رَبَّنَا اغْفِرْ لَنَا وَلِاِخْوَانِنَا الَّذِينَ
سَبَقُونَا بِالْاِيمَانِ وَلَا تَجْعَلْ فِي قُلُوبِنَا غِلًّا لِلَّذِينَ اٰمَنُوا رَبَّنَٓا اِنَّكَ
رَؤُفٌ رَحِيمٌ ﴿١٠﴾

10- "Onlardan sonra gelenler ise, şöyle derler: 'Ey Rabbimiz! Bizi ve bizden önce iman etmiş olan kardeşlerimizi bağışla. Kalplerimizde iman edenlere karşı hiçbir kin meydana getirme. Ey Rabbimiz! Şüphesiz sen çok esirgeyicisin, çok merhametlisin.'"

Yani onlardan sonra hicret edenler, sonra da bunların ardından kıyamete kadar hicret edecek olan müminlerin nesilleri. Bütün bunlar, kendilerinden önce gelip geçmiş olan önceki müminlere rahmet okurlar, bütün Müslümanlar hakkında şefkat yolunu izlerler, onlar için mağfiret dilerler ve Müslümanlardan tek bir kişi

hakkında bile kalplerinde kin meydana getirmesinden Allah'a sığınırlar. Bütün Müslümanlar hakkında şefkati olmayan kimsenin ise dinden nasibi yoktur.

اَلَمْ تَرَ اِلَى الَّذِينَ نَافَقُوا يَقُولُونَ لِاِخْوَانِهِمُ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ اَهْلِ الْكِتَابِ لَئِنْ اُخْرِجْتُمْ لَنَخْرُجَنَّ مَعَكُمْ وَلَا نُطِيعُ فِيكُمْ اَحَدًا اَبَدًا وَاِنْ قُوتِلْتُمْ لَنَنْصُرَنَّكُمْ وَاللّٰهُ يَشْهَدُ اِنَّهُمْ لَكَاذِبُونَ ﴿١١﴾

11- "Münafıklık yapanların, kitap ehlinden kâfir olan dostlarına: 'Yemin ederiz ki eğer siz çıkarılırsanız, muhakkak biz de sizinle beraber çıkarız. Sizin hakkınızda kimseye boyun eğmeyiz. Eğer size karşı savaş açılırsa size mutlaka yardım ederiz' dediklerini görmedin mi? Oysa Allah, onların kesinlikle yalancı olduklarına şahitlik eder."

Allah, bunlarla Medine münafıklarını kast etmektedir. Münafıklar, Nadîroğulları ve Kureyzaoğullarını destekleyerek onlarla, her yönden ittifak içinde olacaklarına dair anlaşma yaptılar. Bunun üzerine Allah, onların söyledikleri ve anlaşma yaptıkları gibi olmadıklarını, birbirlerine yardımcı olamayacaklarını, aksine birbirlerini yalnız bırakacaklarını bildirdi. Münafıklar, bazı savaşlarda onlara yardım etseler dahi kendilerine karşı cihat edenlerin karşısında yenilgiye uğradıklarını görünce kendilerini yalnız bırakırlar.

لَئِنْ اُخْرِجُوا لَا يَخْرُجُونَ مَعَهُمْ وَلَئِنْ قُوتِلُوا لَا يَنْصُرُونَهُمْ وَلَئِنْ نَصَرُوهُمْ لَيُوَلُّنَّ الْاَدْبَارَ ثُمَّ لَا يُنْصَرُونَ ﴿١٢﴾

12- "Andolsun, eğer dostları, Medine'den çıkarılırlarsa, onlarla beraber çıkmazlar. Kendilerine karşı savaşılırsa, onlara yardım etmezler. Yardım edecek olsalar bile mutlaka arkalarını dönüp kaçarlar, sonra kendilerine yardım da edilmez."

لَاَنْتُمْ اَشَدُّ رَهْبَةً فِي صُدُورِهِمْ مِنَ اللّٰهِ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَا
يَفْقَهُونَ ﴿١٣﴾

13- "Onların, kalplerinde size karşı duydukları korku, Allah'a karşı duydukları korkudan daha baskındır. Bu, onların anlamaz bir toplum olmaları sebebiyledir."

Allah (c.c.), onların kalplerinde Müslümanlardan duydukları korkunun, Allah'tan olan korkularından daha şiddetli olduğunu bildirmektedir. Bunun sebebi, inançlarının azlığı ve kalpleriyle Allah'tan yüz çevirmeleridir.

لَا يُقَاتِلُونَكُمْ جَمِيعًا اِلَّا فِي قُرًى مُحَصَّنَةٍ اَوْ مِنْ وَرَٓاءِ جُدُرٍ
بَاْسُهُمْ بَيْنَهُمْ شَدِيدٌ تَحْسَبُهُمْ جَمِيعًا وَقُلُوبُهُمْ شَتّٰى ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ
قَوْمٌ لَا يَعْقِلُونَ ﴿١٤﴾

14- "Onlar, müstahkem kaleler içinde veya duvarlar arkasında olmadan sizinle toplu halde savaşmazlar. Kendi aralarındaki çekişmeleri şiddetlidir. Sen, onları toplu sanırsın. Halbuki kalpleri darmadağınıktır. Bu, onların akılları ermez bir topluluk olmalarındandır."

Allah, onların hileye başvurmadan veya duvarların arkasına sığınmadan Müslümanlara karşı savaşmaya cesaret edemediklerini ve sadece kendi aralarındaki çekişmelerinin şiddetli olduğunu bildirmektedir. Yani birbirleriyle savaştıkları zaman şiddetlidirler. Size karşı ise öyle değildirler.

(تَحْسَبُهُمْ جَمِيعًا وَقُلُوبُهُمْ شَتّٰى ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَا يَعْقِلُونَ) *"Sen, onları toplu sanırsın. Halbuki kalpleri darmadağınıktır. Bu, onların akılları ermez bir topluluk olmalarındandır."*

Kalpler, karşılıklı nefret ve ihtilaf halinde iken nefislerin birlik olması, her türlü kötülüğün esası, her türlü perişanlığın sebebi ve düşmanın cesaret bulmasının gereğidir.

Kalplerin ittifakı, ortak gayret ve aynı niyeti taşımak ise her türlü zafere ve saadete vesile olur. Ancak bu durum, düşmanlar için asla gerçekleşmez. Bu nedenle onlarda her türlü karışık durumdan ve dağınıklıktan başka bir şey bulunmaz.

كَمَثَلِ الَّذ۪ينَ مِنْ قَبْلِهِمْ قَر۪يبًا ذَاقُوا وَبَالَ اَمْرِهِمْ وَلَهُمْ عَذَابٌ اَل۪يمٌ ﴿١٥﴾

15- "Onların durumu, kendilerinden az öncekilerin durumu gibidir. Onlar, yaptıklarının cezasını tatmışlardır. Onlara elem dolu bir azap vardır."

Kureyzaoğullarının durumu, Nadîroğullarının durumu gibidir. Nadîr kabilesi, yaptıklarının cezasını Kureyza kabilesinden bir yıl önce çektiler. Kureyza da onlardan sonra yaptıklarının cezasını çekti.

كَمَثَلِ الشَّيْطَانِ اِذْ قَالَ لِلْاِنْسَانِ اكْفُرْ فَلَمَّا كَفَرَ قَالَ اِنّ۪ي بَر۪يٓءٌ مِنْكَ اِنّ۪ٓي اَخَافُ اللّٰهَ رَبَّ الْعَالَم۪ينَ ﴿١٦﴾

16- "Münafıkların durumu, tıpkı şeytanın durumu gibidir. Çünkü şeytan, insana: 'İnkâr et!' der. İnsan, inkâr edince de: 'Şüphesiz ben, senden uzağım. Çünkü ben, âlemlerin Rabbi olan Allah'tan korkarım' der."

Yani bu münafıkların Nadîr ile karşılıklı yardımlaşma konusundaki durumu, insanlara bunu diyen şeytanın durumu gibidir.

Aynı şekilde fetret, hata ve iddia sahiplerinin durumu da böyledir. Aralarında farklılık olsa dahi, bu konuda bunların hepsi aynı derecede olup Allah yolundaki arkadaşlıkları fayda vermez. Allah şöyle buyurmaktadır:

( اَلْاَخِلَّٓاءُ يَوْمَئِذٍ بَعْضُهُمْ لِبَعْضٍ عَدُوٌّ اِلَّا الْمُتَّق۪ينَ ) *"Takva sahipleri hariç, o gün, dostlar birbirine düşmandır."* (Zuhruf, 43/67)

Bugün ise herkes, kendi benzerine ülfet eder. Şöyle ki, iddia sahibi iddia sahibine, mana sahibi de mana sahibine ülfette bulunur.

فَكَانَ عَاقِبَتَهُمَٓا اَنَّهُمَا فِي النَّارِ خَالِدَيْنِ فِيهَا وَذٰلِكَ جَزٰٓؤُا الظَّالِمِينَ ﴿١٧﴾

17- "Nihayet ikisinin de akıbeti, ebediyen ateşte kalmaları olmuştur. İşte zalimlerin cezası budur."

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا اتَّقُوا اللّٰهَ وَلْتَنْظُرْ نَفْسٌ مَا قَدَّمَتْ لِغَدٍ وَاتَّقُوا اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ خَبِيرٌ بِمَا تَعْمَلُونَ ﴿١٨﴾

18- "Ey iman edenler! Allah'a karşı gelmekten sakının ve herkes yarın için önceden ne göndermiş olduğuna baksın. Allah'a karşı gelmekten sakının. Şüphesiz Allah, yaptıklarınızdan haberdardır."

Birinci takva, dünyada azabı anmaya ve iyi ile kötü ameli düşünmeye dayalıdır.

İkinci takva da murakabe ve muhasebe takvasıdır. Nitekim kimin amelleri konusunda muhasebesi, halleri konusunda da murakabesi yoksa yakında rüsva olacaktır.

Bu arada, yarınına bakan kimsenin alameti, gününü güzel değerlendirmesidir. Bu ise ancak dününde ne yaptığını düşündüğü zaman gerçekleşir. İnsanlar, bu konuda birkaç kısımdır: Bir kısım, acaba ezelde kendisi için ne taksim edilmiştir diye dününü düşünür. Bir kısım, neyle karşılaşır diye yarınını düşünür. Üçüncü bir kısım da yükümlü olduğu hususları yerine getirdiği vaktiyle baş başadır. Bu nedenle o, madde âleminden sıyrılmış, Rabbinin vuslatına ermiş, zikrettiği varlıkta fena bulmuştur. Ne geçmişinin ne de geleceğinin arayışı içindedir. Bu itibarla vakti değerlendirmek, onu vaktinden alıkoymaktadır.

وَلَا تَكُونُوا كَالَّذِينَ نَسُوا اللّٰهَ فَاَنْسٰيهُمْ اَنْفُسَهُمْ اُولٰٓئِكَ هُمُ الْفَاسِقُونَ ﴿١٩﴾

19- "Allah'ı unutan ve bu yüzden Allah'ın da kendilerine kendilerini unutturduğu kimseler gibi olmayın. İşte onlar, fâsık kimselerin ta kendileridir."

Onlar, Allah'a itaat etmeyi terk ettikleri için Allah da onları azap içinde bırakmıştır. Bu azap, onlar tövbe edinceye kadar kimsesiz bırakılmalarıdır. Onlar fâsıkların ta kendileridir.

لَا يَسْتَوٖٓي اَصْحَابُ النَّارِ وَاَصْحَابُ الْجَنَّةِ اَصْحَابُ الْجَنَّةِ هُمُ الْفَٓائِزُونَ ﴿٢٠﴾

20- "Cehennemliklerle cennetlikler bir olmaz. Cennetlikler, kurtuluşa erenlerin ta kendileridir."

Gaflet ehli kimseler ile vuslat ehli kimseler eşit olamazlar.

Her afetin temeli ise Rabbi unutmaktır. Nitekim eğer unutmak olmasaydı, günah işlemek meydana gelmezdi. Bir de kendi durumunu unutan kimse, tövbesini yerine getirmeye çaba harcamaz ve vaktin kendisini yükümlü kıldığı ibadetini savsaklar.

لَوْ اَنْزَلْنَا هٰذَا الْقُرْاٰنَ عَلٰى جَبَلٍ لَرَاَيْتَهُ خَاشِعًا مُتَصَدِّعًا مِنْ خَشْيَةِ اللّٰهِ وَتِلْكَ الْاَمْثَالُ نَضْرِبُهَا لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَفَكَّرُونَ ﴿٢١﴾

21- "Eğer biz bu Kur'ân'ı bir dağa indirseydik, elbette sen, onu Allah korkusundan başını eğerek parça parça olmuş görürdün. Biz o misalleri insanlara düşünsünler diye veriyoruz. "

Yani eğer dağın aklı, düşünme ve sır yeteneği olsaydı, biz de ona bu Kur'ân'ı indirseydik, kabul edecek ve boyun eğecekti. Bu

ifade, darb-ı mesel -misal verme- kabilinden de olabilir. Tıpkı şu ayette olduğu gibi:

( تَكَادُ السَّمٰوَاتُ يَتَفَطَّرْنَ مِنْهُ ) *"Çirkin iddialarından dolayı neredeyse gökler parçalanacaktı."* (Meryem, 19/90)

Nitekim ayetin şu son kısmı da bunu göstermektedir:

( وَتِلْكَ الْاَمْثَالُ نَضْرِبُهَا لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَفَكَّرُونَ ) *"Biz o misalleri insanlara düşünsünler diye veriyoruz."*

Akıllarını kullanıp hidayete ermeleri için. Yani biz, onlara bunu emrettik. Maksat, Kur'ân'ı dinlerken kalplerinin ne denli katı olduğunu açıklamaktır.

Bir yoruma göre de bu hitap onlara sitem için değil, aksine övgü ve kendilerine güç tahsis ettiğine dair açıklama olması içindir. Bu amaçla Allah şunu demek istemiştir: Eğer biz, bu Kur'ân'ı bir dağa indirseydik, o buna güç yetiremeyip eğilecekti. Oysa ben bunlara bu gücü tahsis ettim ve o sayede hitabımı dinlemeye güç yetirebildiler.

هُوَ اللّٰهُ الَّذ۪ي لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَۚ عَالِمُ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِۚ هُوَ الرَّحْمٰنُ الرَّح۪يمُ ﴿٢٢﴾

22- "O, kendisinden başka hiçbir ilâh olmayan Allah'tır. Gaybı da, görünen âlemi de, bilendir. O, Rahmân'dır, Rahîm'dir."

Gayb, ne zorunlu olarak ne de bilgilerden yola çıkarak kıyasla bilinen şeydir. Bir yoruma göre de gayb, Allah'ın, ona dair bilgiyi kendine mahsus kıldığı ve hiç kimseye ona ulaşma imkânı vermediği şeydir.

( وَالشَّهَادَةِ ) "*Görünen âlem*" ise halkın bildiği şeydir. Hulasa hiçbir malum, O'nun ilminden kaçamaz.

هُوَ اللّٰهُ الَّذ۪ي لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَۚ اَلْمَلِكُ الْقُدُّوسُ السَّلَامُ الْمُؤْمِنُ
الْمُهَيْمِنُ الْعَز۪يزُ الْجَبَّارُ الْمُتَكَبِّرُۜ سُبْحَانَ اللّٰهِ عَمَّا يُشْرِكُونَ ﴿٢٣﴾

23- "O, kendisinden başka hiçbir ilâh bulunmayan Allah'tır. O, mülkün gerçek sahibi, kutsal, barış ve esenliğin kaynağı, güvenlik veren, gözetip koruyan, mutlak güç sahibi, düzeltip ıslah eden, dilediğini yaptıran ve büyüklükte eşsiz olan Allah'tır. Allah, onların ortak koştuklarından uzaktır."

( اَلْمَلِكُ ) "*Melik*" lafzı, icat etme kudretine sahip demektir. ( الْقُدُّوسُ ) "*Kuddûs*", kusur ve noksanlıktan münezzeh demektir.

( السَّلَامُ ) "*Selâm*" da noksanlıklardan salim, dostlarını selamlayan ve müminlerin, azabından güvende oldukları Allah demektir.

( الْمُؤْمِنُ ) "*Mü'min*", kulunu tevhid inancında tasdik edip kendisine: *"Doğru söyledin ey kulum!"* diyendir. Bu lafız, bir de bildiriminde kendini tasdik eden yani doğru söylediğini bilen demektir. Ayrıca, vaadini tasdik eden ve kullarına, kendilerini azabından emin kılacağını bildiren anlamlarına da gelir.

( الْمُهَيْمِنُ ) "*Müheymin*", şahit ve güvenilir demektir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Bu lafız, "emn" kökünden "müfey'il" vezninde "müeymin" olup hemzesi "hâ" harfine dönüşmüştür. Bu itibarla bu lafız, "eman" kökünden gelir.

- Bu lafız, mümin -güven veren- anlamındadır.

( الْعَز۪يزُ ) "*Aziz*" lafzı, mağlup edilemeyen galip, hiçbir benzeri olmayan, celâl vasıflarına layık olan demektir. Ayrıca kullarını aziz kılan ve hiç kimsenin güç yetiremediği güç sahibi anlamlarına da gelir.

( الْجَبَّارُ ) "*Cebbâr*" lafzı, ellerin ulaşamadığı veya kullarının işlerini düzelten anlamındadır. Bu anlam, kırığı sarmak demek olan ( جَبَرَ الْكَسْرَ ) deyiminden gelmektedir. Ya da bu lafız, muradını

yaratıklarından dilediği gibi tahsil etme gücüne sahip olan anlamındadır. Bu anlam, bir kimseyi işe mecbur etmek demek olan ( جَبَرْتُهُ عَلَى الأَمْرِ وَ أَجْبَرْتُهُ ) deyiminden gelmektedir.

( الْمُتَكَبِّرُ ) "*Mütekebbir*" lafzı ise kusurlardan münezzeh demektir.

هُوَ اللّٰهُ الْخَالِقُ الْبَارِئُ الْمُصَوِّرُ لَهُ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى يُسَبِّحُ لَهُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَهُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿٢٤﴾

24- "O, yaratan, yoktan var eden, şekil veren Allah'tır. Güzel isimler O'nundur. Göklerdeki ve yerdeki her şey, O'nu tesbih eder. O, galiptir, hikmet sahibidir."

Özleri de izleri de yoktan var eden O'dur.

( لَهُ الْاَسْمَآءُ الْحُسْنٰى ) "*Güzel isimler O'nundur.*"

Güzel isim vericiler O'nundur.

( وَهُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ) "*O, galiptir, hikmet sahibidir.*"

( الْعَزِيزُ ) "*Aziz*" ve ( الْحَكِيمُ ) "*Hakîm*" lafızlarının anlamları daha önce geçti. Bu arada biz bu isimlerin anlamlarıyla ilgili ayrıntılı açıklamaya "el-Beyân ve'l-edilleh fî ma'ânî esmâillâhi ta'âlâ" adlı eserimizde yer vermiş bulunmaktayız.

سورة الْمُمْتَحِنَةِ

# MÜMTAHİNE SÛRESİ

(Mümtehine Sûresi 13 âyettir. 7. Hicret yılında Medine'de inmiştir. Sûre, adını 10. âyetin içeriğinden almıştır. Sûreye, Mümtehine, Mümtehane (İmtihan edilen kadın), İmtihan veya Meveddet (Sevgi) Sûresi adları da verilmiştir. Hudeybiye Antlaşması'na göre, Kureyş'ten, Müslümanların yanına kaçanlar olursa bunların Mekke'ye geri verilmesi gerekiyordu. Ancak antlaşmaya, kadınlar için açık bir hüküm konulmamıştı. Hz. Peygamber antlaşmayı kadınların lehine yorumlayarak, bu konuda sûrenin onuncu âyetini esas aldı. Buna göre, Mekke'den kaçıp gelen kadınlar imtihan edilecek, inanmış iseler geri verilmeyeceklerdi.

Sûrede başlıca; Allah için sevme, Allah için kızma, Allah'ın düşmanı olanları dost edinmeme, casusluk, İbrahim (a.s) kıssası, göç eden kadınların denenmesi, mehir, kadınların yedi konuda söz verip biat etmesi konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", öyle bir hükümdarın ismidir ki hükümdarlığının aslı hiçbir geçici olguya dayanmamakta ve onu miras alacağı hiçbir nesli bulunmamaktadır. Öyle bir hükümdar ki, hiçbir ordudan ve araç gereçten yardım istemez ve hiçbir topluluktan ve sayıdan güç almaz. O, bütün yaratıkların hükümdarıdır, ancak bazı kimseleri, onlardan faydalanmak için değil, aksine onlara faydalı olmak için seçmiş, diğer bazılarını da engelleyip alçaltmak suretiyle reddetmiştir.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا لَا تَتَّخِذُوا عَدُوِّي وَعَدُوَّكُمْ اَوْلِيَٓاءَ تُلْقُونَ
اِلَيْهِمْ بِالْمَوَدَّةِ وَقَدْ كَفَرُوا بِمَا جَٓاءَكُمْ مِنَ الْحَقِّ يُخْرِجُونَ
الرَّسُولَ وَاِيَّاكُمْ اَنْ تُؤْمِنُوا بِاللّٰهِ رَبِّكُمْ اِنْ كُنْتُمْ خَرَجْتُمْ جِهَادًا
فِي سَبِيلِي وَابْتِغَٓاءَ مَرْضَاتِي تُسِرُّونَ اِلَيْهِمْ بِالْمَوَدَّةِ وَاَنَا اَعْلَمُ بِمَٓا
اَخْفَيْتُمْ وَمَٓا اَعْلَنْتُمْ وَمَنْ يَفْعَلْهُ مِنْكُمْ فَقَدْ ضَلَّ سَوَٓاءَ السَّبِيلِ ﴿١﴾

1- "Ey iman edenler! Benim de düşmanım sizin de düşmanınız olanları dost edinmeyin. Siz onlara sevgi gösteriyorsunuz. Halbuki onlar, size gelen hakkı inkâr ettiler. Rabbiniz olan Allah'a inandınız diye peygamberi ve sizi yurdunuzdan çıkarıyorlar. Eğer benim yolumda cihat etmek ve rızamı kazanmak üzere çıktıysanız. Onlara gizlice sevgi besliyorsunuz. Oysa ben, sizin gizlediğinizi de açığa vurduğunuzu da bilirim. Sizden kim bunu yaparsa, mutlaka doğru yoldan sapmış olur."

Hz. Peygamber (s.a.v.) şöyle buyurmuştur:

*"Senin en azılı düşmanın, içindeki nefsindir."*

Allah da, Hz. Davûd'a şunu vahyetmiştir:

*"Nefsine düşmanlık et. Çünkü hükümranlıkta ondan başka benimle çekişen hiç kimse yoktur."*

Bu nedenle kim nefsine düşmanlık ederse, şüphesiz Allah'ın hakkını yerine getirmiş olur. Kim de nefsine düşmanlık etmezse, bu leke ona yapışır. Bir de imanın aslı, Allah yolunda bağlılık ve düşmanlıktır. Kim kâfirlere veya İslam dairesinden çıkanlara meylederse, onların tarafına geçmiş olur.

( وَاَنَا اَعْلَمُ بِمَٓا اَخْفَيْتُمْ وَمَٓا اَعْلَنْتُمْ ) *"Oysa ben, sizin gizlediğinizi de açığa vurduğunuzu da bilirim."*

Ben, sizin saklı tuttuğunuz samimiyetsizliğin inceliklerini ve riyanın gizliliklerini biliyorum.

Ben, açığa vurduğunuz insanlar için süslenmeyi de bilirim.

Hatayı sır olarak saklamanızı ve açığa vurduğunuz taat ve iyiliği bilirim.

Gizlediğiniz hainliği ve açığa vurduğunuz güvenilirliği bilirim.

Gizlediğiniz insanları aldatmayı, yanıltmayı ve açığa vurduğunuz insanların rezil oluşunu bilirim.

Gizlediğiniz günah işlemeyi ve açığa vurduğunuz iyiliği emretmeyi bilirim.

Gizlediğiniz benden sakınmamayı ve haberdar oluşumu az umursamayı ve açığa vurduğunuz insanlara bilgi ve öğüt vermeyi bilirim.

( وَمَنْ يَفْعَلْهُ مِنْكُمْ فَقَدْ ضَلَّ سَوَٓاءَ السَّبِيلِ ) *"Sizden kim bunu yaparsa, mutlaka doğru yoldan sapmış olur."*

Şüphesiz din yolundan sapmış ve küfre düşmüş olur.

اِنْ يَثْقَفُوكُمْ يَكُونُوا لَكُمْ اَعْدَٓاءً وَيَبْسُطُوٓا اِلَيْكُمْ اَيْدِيَهُمْ وَاَلْسِنَتَهُمْ
بِالسُّوٓءِ وَوَدُّوا لَوْ تَكْفُرُونَ ﴿٢﴾ لَنْ تَنْفَعَكُمْ اَرْحَامُكُمْ وَلَٓا
اَوْلَادُكُمْ يَوْمَ الْقِيٰمَةِ يَفْصِلُ بَيْنَكُمْ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ﴿٣﴾

2, 3- "Şayet onlar sizi ele geçirirlerse size düşman olurlar, size ellerini ve dillerini kötülükle uzatırlar ve kâfir olmanızı arzu ederler. Yakınlarınız ve çocuklarınız, size asla fayda vermeyecektir. Kıyamet günü Allah aranızı ayıracaktır. Allah, yaptıklarınızı hakkıyla görendir."

Eğer onlar sizinle karşılaşır ve sizi ele geçirirlerse, size düşman olurlar, ellerinin kötülüğünden ve dillerinin zem ve çirkin söylemlerinden kurtulamazsınız.

( وَوَدُّوا لَوْ تَكْفُرُونَ ) *"Kâfir olmanızı arzu ederler."*

Bir de ne onlara sevimli görünmeye ve yakın olmaya çalışmanız ne de onlarla aranızdaki akrabalık bağı size fayda verecektir. Sonra da ahiret azabı sizi yakalayacaktır. İşte muhalefet eden kimsenin özelliği budur. Oysa kendisine bir sözle yaranmaya çalışsalar bile kişinin, akrabalarına çok fazla özlem duyması veya yumuşak bir davranış gösterseler bile aldatmalarına kanması uygun olmaz.

قَدْ كَانَتْ لَكُمْ اُسْوَةٌ حَسَنَةٌ فٖٓي اِبْرٰهٖيمَ وَالَّذٖينَ مَعَهُ اِذْ قَالُوا
لِقَوْمِهِمْ اِنَّا بُرَآٰؤُ۬ا مِنْكُمْ وَمِمَّا تَعْبُدُونَ مِنْ دُونِ اللّٰهِ كَفَرْنَا بِكُمْ
وَبَدَا بَيْنَنَا وَبَيْنَكُمُ الْعَدَاوَةُ وَالْبَغْضَٓاءُ اَبَدًا حَتّٰى تُؤْمِنُوا بِاللّٰهِ
وَحْدَهُٓ اِلَّا قَوْلَ اِبْرٰهٖيمَ لِاَبٖيهِ لَاَسْتَغْفِرَنَّ لَكَ وَمَٓا اَمْلِكُ لَكَ مِنَ
اللّٰهِ مِنْ شَيْءٍ رَبَّنَا عَلَيْكَ تَوَكَّلْنَا وَاِلَيْكَ اَنَبْنَا وَاِلَيْكَ الْمَصٖيرُ ﴿٤﴾

4- "İbrahim'de ve onunla beraber olanlarda, sizin için güzel bir örnek vardır. Hani onlar kavimlerine: 'Biz, sizden ve Allah'ı bırakıp taptıklarınızdan uzağız. Sizi tanımıyoruz. Siz, bir tek Allah'a iman edinceye kadar sizinle bizim aramızda sürekli bir düşmanlık ve nefret belirmiştir' demişlerdi. Yalnız İbrahim'in, babasına: 'Andolsun, senin için mağfiret dileyeceğim. Fakat Allah'tan sana gelecek herhangi bir şeyi önlemeye gücüm yetmez' sözü başka. Onlar şöyle dediler. 'Ey Rabbimiz! Ancak sana tevekkül ettik, içtenlikle yalnız sana yöneldik. Dönüş de ancak sanadır.'"

Yani size, İbrahim'e ve kendisinden önceki peygamberlere güzelce uymak düşer. Çünkü onlar, kendi kavimlerinden olan kâfirlerden uzak durmuşlardı. Ancak İbrahim'in, kâfir olduğu halde babası için mağfiret dilemesi hariç, o halde onlara uyunuz. Öyleyse bu konuda ona uymayın ve kâfirler için mağfiret dilemeyin.

Bu arada Hz. İbrahim, kendisine iman etme sözü vermesinden dolayı babası için mağfiret diliyordu. Nitekim iman etmeyeceği ortaya çıkınca Hz. İbrahim, ondan uzak durdu.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Babası münafıktı, fakat Hz. İbrahim kendisi için mağfiret dilerken bunu bilmiyordu.

- Hz. İbrahim'in o vakit Allah'ın, kâfirleri bağışlamayacağını bilmeme ihtimali de vardır.

Bu ayetteki fayda ise Allah'ın, kendilerinden öncekileri, peygamberlerini yalanladıklarında helak ettiğini, onların buna sabrettiklerini, dolayısıyla kendilerinin de sabrı prensip edinmeleri gerektiğini Hz. Peygamber (s.a.v.) ve müminlere anlatmak suretiyle, durum hakkında kalplerini rahatlatmasıdır.

( رَبَّنَا عَلَيْكَ تَوَكَّلْنَا وَاِلَيْكَ اَنَبْنَا وَاِلَيْكَ الْمَصِيرُ ) *"Ey Rabbimiz! Ancak sana tevekkül ettik, içtenlikle yalnız sana yöneldik. Dönüş de ancak sanadır."*

Allah, onların bunu söylediğini bildirmektedir. Bu ifadenin anlamı:( رَبَّنَا عَلَيْكَ تَوَكَّلْنَا ) *"Ey Rabbimiz! Ancak sana tevekkül ettik..."* deyin, şeklinde de olabilir. Bu arada tevekkül ve inabenin anlamına dair açıklama daha önce geçti.

رَبَّنَا لَا تَجْعَلْنَا فِتْنَةً لِلَّذِينَ كَفَرُوا وَاغْفِرْ لَنَا رَبَّنَا اِنَّكَ اَنْتَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿٥﴾

5- "Ey Rabbimiz! Bizi, kâfir olanların zulmüne uğratma. Bizi bağışla. Ey Rabbimiz! Şüphesiz yegâne galip ve hikmet sahibi, ancak sensin."

Ey Rabbimiz! Bizi onların eline düşürme ve bize karşı onlara güç verme. Bu ayetteki işaret, Hz. İbrahim'in cömertlik, güzel ahlak, ihlas, doğruluk, sabır ve Allah'ın bize anlattığı her hasletiyle ilgili prensibine yöneliktir.

لَقَدْ كَانَ لَكُمْ فِيهِمْ اُسْوَةٌ حَسَنَةٌ لِمَنْ كَانَ يَرْجُوا اللّٰهَ وَالْيَوْمَ الْاٰخِرَ وَمَنْ يَتَوَلَّ فَاِنَّ اللّٰهَ هُوَ الْغَنِيُّ الْحَمِيدُ ﴿٦﴾

6- "Andolsun, onlarda sizin için, Allah'ı ve ahiret gününü arzu edenler için güzel bir örnek vardır. Kim yüz çevirirse bilsin ki Allah her bakımdan sınırsız zengindir, övülmeye layıktır."

عَسَى اللّٰهُ اَنْ يَجْعَلَ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَ الَّذ۪ينَ عَادَيْتُمْ مِنْهُمْ مَوَدَّةً وَاللّٰهُ قَد۪يرٌ وَاللّٰهُ غَفُورٌ رَح۪يمٌ ﴿٧﴾

7- "Ola ki Allah sizinle, içlerinden düşman olduğunuz kimseler arasına bir sevgi koyar. Allah, hakkıyla gücü yetendir. Allah çok bağışlayandır, çok merhametlidir."

Allah,( عَسَى ) "*ola ki*" sözüyle müminleri olabilirlik sınırında tutarak söz konusu sevginin ne kesin olacağına hükmetmiş ne de hakkında ümitsizliğe düşürmüştür. Sonra onlara, bu kimselere kalben düşmanlık ve dostluk etmede orta yolu emretmiş ve işin, O'nun takdirine ve kudretine göre gerçekleşeceğini, her şeyin O'nun kendileri için irade ettiği doğrultuda cereyan edeceğini kendilerine anlatmıştır. Ayrıca Allah, düşmanlarından bazılarının Mekke fethi sırasında iman etmesi, pek çoğunun Müslüman olması ve kendileriyle Müslümanlar arasında güçlü bir sevginin meydana gelmesiyle, verilen bu ümidin doğruluğunu ortaya koymuştur.

لَا يَنْهٰيكُمُ اللّٰهُ عَنِ الَّذ۪ينَ لَمْ يُقَاتِلُوكُمْ فِي الدّ۪ينِ وَلَمْ يُخْرِجُوكُمْ مِنْ دِيَارِكُمْ اَنْ تَبَرُّوهُمْ وَتُقْسِطُٓوا اِلَيْهِمْ اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الْمُقْسِط۪ينَ ﴿٨﴾ اِنَّمَا يَنْهٰيكُمُ اللّٰهُ عَنِ الَّذ۪ينَ قَاتَلُوكُمْ فِي الدّ۪ينِ وَاَخْرَجُوكُمْ مِنْ دِيَارِكُمْ وَظَاهَرُوا عَلٰٓى اِخْرَاجِكُمْ اَنْ تَوَلَّوْهُمْ وَمَنْ يَتَوَلَّهُمْ فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الظَّالِمُونَ ﴿٩﴾

8, 9- "Allah sizi, din konusunda sizinle savaşmamış, sizi yurtlarınızdan da çıkarmamış kimselere iyilik etmekten, onlara adil davranmaktan alıkoymaz. Şüphesiz Allah, adil davrananları sever.

Allah sizi ancak sizinle din konusunda savaşan, sizi yurtlarınızdan çıkaran ve çıkarılmanız için destek verenleri dost edinmekten alıkoyar. Kim onları dost edinirse, işte onlar zalimlerin ta kendileridir."

Allah, müminlere, düşmanlarına karşı tıpkı kendilerinin yaptıkları gibi, şiddetle düşmanlık yapmalarını emretmiştir. Aralarında bulunanlardan güzel ahlak sahibi olan veya Müslümanlara bir şekilde faydası veya şefkati olanlara gelince Allah, bu kimselere karşı yumuşak davranmalarını emretmiştir. Nitekim Müellefe-i kulûb, bu grup için bir örnektir. Çünkü Allah, bütün işlerde şefkati emreder.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوٓا اِذَا جَٓاءَكُمُ الْمُؤْمِنَاتُ مُهَاجِرَاتٍ فَامْتَحِنُوهُنَّ
اَللّٰهُ اَعْلَمُ بِا۪يمَانِهِنَّ فَاِنْ عَلِمْتُمُوهُنَّ مُؤْمِنَاتٍ فَلَا تَرْجِعُوهُنَّ
اِلَى الْكُفَّارِ لَا هُنَّ حِلٌّ لَهُمْ وَلَا هُمْ يَحِلُّونَ لَهُنَّ وَاٰتُوهُمْ مَٓا
اَنْفَقُوا وَلَا جُنَاحَ عَلَيْكُمْ اَنْ تَنْكِحُوهُنَّ اِذَٓا اٰتَيْتُمُوهُنَّ اُجُورَهُنَّ
وَلَا تُمْسِكُوا بِعِصَمِ الْكَوَافِرِ وَسْـَٔلُوا مَٓا اَنْفَقْتُمْ وَلْيَسْـَٔلُوا مَٓا
اَنْفَقُوا ذٰلِكُمْ حُكْمُ اللّٰهِ يَحْكُمُ بَيْنَكُمْ وَاللّٰهُ عَل۪يمٌ حَك۪يمٌ ﴿١٠﴾

10- "Ey iman edenler! Mümin kadınlar, muhacir olarak size geldiklerinde onları imtihan edin. Allah, onların imanlarını daha iyi bilir. Eğer siz, onların iman etmiş kadınlar olduklarını anlarsanız, onları kâfirlere geri göndermeyin. Çünkü Müslüman kadınlar, kâfirlere helal değildir. Kâfirler de Müslüman hanımlara helal olmazlar. Kocalarının harcadıklarını geri verin. Mehirlerini verdiğiniz takdirde, bu kadınlarla evlenmenizde size bir günah yoktur. Kâfir kadınları nikâhınızda tutmayın, onlara harcadığınızı isteyin. Kâfirler de harcadıklarını istesinler. Bu, Allah'ın hükmüdür. O, aranızda hüküm verir. Allah hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Hz. Peygamber (s.a.v.), kadınları yeminle imtihan ederdi. Onlar da sadece Allah için çıktıklarına, kocalarına kızdıkları veya gözleri malda olduğu için çıkmadıklarına yemin ederlerdi.

Hulasa imtihan, tanımaya götüren yoldur. İnsanların cevherleri de tecrübeyle ortaya çıkar. Her kim, tecrübesiz olarak bir işe girişirse, pişmanlık zehrini yudumlar.

( وَلَا تُمْسِكُوا بِعِصَمِ الْكَوَافِرِ ) *"Kâfir kadınları nikâhınızda tutmayın."*

Hakka muhalefet eden kimseye az veya çok, hiçbir şeyde uymayın.

وَاِنْ فَاتَكُمْ شَيْءٌ مِنْ اَزْوَاجِكُمْ اِلَى الْكُفَّارِ فَعَاقَبْتُمْ فَاٰتُوا الَّذِينَ
ذَهَبَتْ اَزْوَاجُهُمْ مِثْلَ مَٓا اَنْفَقُوا وَاتَّقُوا اللّٰهَ الَّذِٓي اَنْتُمْ بِهِ مُؤْمِنُونَ ﴿١١﴾

11- "Eğer eşlerinizden biri kâfirlere kaçar, siz de onlara galip gelirseniz, eşleri gitmiş olanlara harcadıkları kadar verin ve iman ettiğiniz Allah'a karşı gelmekten sakının."

يَٓا اَيُّهَا النَّبِيُّ اِذَا جَٓاءَكَ الْمُؤْمِنَاتُ يُبَايِعْنَكَ عَلٰٓى اَنْ لَا يُشْرِكْنَ بِاللّٰهِ
شَيْـًٔا وَلَا يَسْرِقْنَ وَلَا يَزْنِينَ وَلَا يَقْتُلْنَ اَوْلَادَهُنَّ وَلَا يَاْتِينَ بِبُهْتَانٍ
يَفْتَرِينَهُ بَيْنَ اَيْدِيهِنَّ وَاَرْجُلِهِنَّ وَلَا يَعْصِينَكَ فِي مَعْرُوفٍ فَبَايِعْهُنَّ
وَاسْتَغْفِرْ لَهُنَّ اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَحِيمٌ ﴿١٢﴾

12- "Ey Peygamber! Mümin kadınlar, Allah'a hiçbir şeyi ortak koşmamak, hırsızlık yapmamak, zina etmemek, çocuklarını öldürmemek, elleriyle ayakları arasında bir iftira uydurup getirmemek, hiçbir iyi işte sana karşı gelmemek konusunda sana biat etmek üzere geldikleri zaman, biatlerini kabul et ve onlar için Allah'tan mağfiret dile. Şüphesiz Allah, çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Kadınlar, İslam üzerine sana biat etmeye geldikleri zaman, şu hususları onlardan iste ve şart koş:

Allah'a ortak koşmamak, hırsızlık yapmamak, zina etmemek, çocuklarını öldürmemek, nesep isnadında iftirayı bırakmak ve hiçbir iyilikte sana karşı çıkmamak. Böylece onlara emrettiğin hususlarda sana muhalefet etmemiş olurlar. Bu hususlara, musibet esnasında yüksek sesle ağıt yakıp başlarını üstlerini yırtmayı, saçlarını yolmayı, yüzlerini tırmalamayı, güzelliklerini sergilemeyi ve süslerini göstermeyi terk etmek ve özetle, dinin emir ve yasaklarından olan diğer şeyler de girer.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا لَا تَتَوَلَّوْا قَوْمًا غَضِبَ اللّٰهُ عَلَيْهِمْ قَدْ يَئِسُوا مِنَ
الْاٰخِرَةِ كَمَا يَئِسَ الْكُفَّارُ مِنْ اَصْحَابِ الْقُبُورِ ﴿١٣﴾

13- "Ey iman edenler! Kendilerine Allah'ın gazap ettiği bir kavmi dost edinmeyin. Onlar, kabirlerdeki kâfirlerin ümit kestikleri gibi, ahiretten ümit kesmişlerdir."

Allah'ın gazap ettiği kimseler kâfirlerdir. Bunlar, tıpkı kabirlerdekilerin, kötü sonlarını gördükten sonra dünyaya geri dönmekten ümit kestikleri gibi ahiretten ümit kesmişlerdir.

Bir yoruma göre de tıpkı kâfirlerin, yaratıkların kıyamette diriltilmeyeceklerine inandıklarında ümitlerini kestikleri gibi.

سورة الصَّفِّ

# SAFF SÛRESİ

(Saf Sûresi 14 âyettir. Medine'de inmiştir. Sûre bu adı, 4. âyette "Saf (saf saf durup savaşanlar)" sözcüğünden almıştır. Sûrede başlıca; Allah'ı tesbih ve tenzih, yapmayacağı sözü söylememe, iman, mal ve canla Allah yolunda savaşmak, Mûsâ ve İsa (a.s) kıssaları, Havariler konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", öyle bir sözdür ki, Allah, onun irfanına kimi muvaffak kılarsa, diliyle onu söylemeden duramaz. Sonra kalbiyle onun sahibine ulaşıncaya dek gevşeklik göstermez. O, başlangıçta bu ismin sahibi olan Allah'ın hükümranlığını anlamak için burhanını düşünür. Sonra Allah, ona olan ihsanını artırır ve nihayet o, Allah hakkında O'nu görürmüş gibi hakikate erer.

سَبَّحَ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ وَهُوَ الْعَز۪يزُ الْحَك۪يمُ ﴿١﴾

1- "Göklerdeki ve yerdeki her şey, Allah'ı tesbih eder. O, mutlak güç sahibidir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Kim, tesbihinin katıksız olmasını istiyorsa, kalbini nefsinin izlerinden temizlesin. Kim de cennetteki hayatının tertemiz olmasını istiyorsa, nefsini günahının kirlerinden temizlesin.

يَا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا لِمَ تَقُولُونَ مَا لَا تَفْعَلُونَ ﴿٢﴾ كَبُرَ مَقْتًا عِنْدَ اللّٰهِ
اَنْ تَقُولُوا مَا لَا تَفْعَلُونَ ﴿٣﴾

2, 3- "Ey iman edenler! Yapmayacağınız şeyleri niçin söylüyorsunuz? Yapmayacağınız şeyleri söylemeniz, Allah katında büyük gazap gerektiren bir iştir."

Tefsirlerde yer aldığına göre onlar: "Eğer Allah'ın rızasını sağlayan şeyi bilseydik, her türlü çabayı gerektirse bile onu yapardık" dediler. Sonra Uhud Savaşı olunca, sebat göstermediler. İşte bunun üzerine bu ayet, itaba dair olarak inmiş oldu.

Hulasa, sözünde durmamak herkese karşı çirkindir ancak Allah'a karşı daha çirkindir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Her nefeste Allah'a muhtaç olunan noktaları görmeden tahammül gösterisi yapmak, iddia ile gerçekleşenden de mahrum kalındığını gösterir. Nitekim Allah, güç ve kuvvet iddiasından uzak durmayı sever.

- Allah: ( كَبُرَ مَقْتًا عِنْدَ اللّٰهِ اَنْ تَقُولُوا مَا لَا تَفْعَلُونَ ) "*Yapmayacağınız şeyleri söylemeniz, Allah katında büyük gazap gerektiren bir iştir*" buyurmakla, bu hataya karşı yaptığı uyarı gibi bir uyarıyı, hiçbir hataya karşı yapmamıştır.

اِنَّ اللّٰهَ يُحِبُّ الَّذِينَ يُقَاتِلُونَ فِي سَبِيلِهِ صَفًّا كَاَنَّهُمْ بُنْيَانٌ
مَرْصُوصٌ ﴿٤﴾

4- "Şüphesiz Allah, kendi yolunda, kenetlenmiş bir bina gibi saf bağlayarak savaşanları sever."

Sevgi, öncelik tanımayı; sevgilinin muradını nefsinin muradına, sevgilinin sevdiğini de nefsinin sevdiğine öncelemeni gerektirir. Bu çerçevede Allah, kulun, kendisinin anlattığı şekilde savaşmasını

sevdiğine göre her kim, Allah'ın sevdiği şeyi, nefsinin sevdiğine -yani güvende olmasına- tercih etmezse, Rabbine olan sevgisini bitirmiş olur. Rabbinin sevgisinden boş kalan kimse ise öbür tarafta hüsrana düşmüş olur.

وَاِذْ قَالَ مُوسٰى لِقَوْمِه۪ يَا قَوْمِ لِمَ تُؤْذُونَن۪ي وَقَدْ تَعْلَمُونَ اَنّ۪ي رَسُولُ اللّٰهِ اِلَيْكُمْ فَلَمَّا زَاغُٓوا اَزَاغَ اللّٰهُ قُلُوبَهُمْ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْفَاسِق۪ينَ ﴿٥﴾

5- "Hani Mûsâ kavmine: 'Ey kavmim! Allah'ın, size gönderdiği peygamberi olduğumu bildiğiniz halde niçin beni incitiyorsunuz?' demişti. Onlar yoldan sapınca, Allah da kalplerini saptırmıştı. Allah, fâsıklar topluluğunu hidayete erdirmez."

Onlar, haddi aşmak suretiyle yoldan sapınca, Allah da verdikleri sözü bozmalarıyla kalplerini saptırdı.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Onlar, rüşt yolundan sapınca, Allah da kalplerini yüz çevirmek, reddetmek ve sevgiden uzaklaşmak suretiyle saptırdı.

- Onlar, zâhirleriyle yoldan sapınca Allah da sırlarını saptırdı.

- Onlar, kapı hizmetinden sapınca, Allah da kalplerini, dergâha olan şiddetli arzudan saptırdı.

- Onlar, ibadetten sapınca, Allah da kalplerini iradeden -müridlikten- saptırdı.

وَاِذْ قَالَ ع۪يسَى ابْنُ مَرْيَمَ يَا بَن۪ٓي اِسْرَٓاء۪يلَ اِنّ۪ي رَسُولُ اللّٰهِ اِلَيْكُمْ مُصَدِّقًا لِمَا بَيْنَ يَدَيَّ مِنَ التَّوْرٰيةِ وَمُبَشِّرًا بِرَسُولٍ يَأْت۪ي مِنْ بَعْدِي اسْمُهُٓ اَحْمَدُ فَلَمَّا جَٓاءَهُمْ بِالْبَيِّنَاتِ قَالُوا هٰذَا سِحْرٌ مُب۪ينٌ ﴿٦﴾

6- "Hani, Meryem oğlu İsâ: 'Ey İsrailoğulları! Şüphesiz ben, Allah'ın size benden önce gelen Tevrat'ı doğrulayıcı ve benden sonra

gelecek Ahmed adında bir peygamberi müjdeleyici peygamberiyim' demişti. Fakat o, kendilerine apaçık mucizeler getirince: 'Bu, apaçık bir sihirdir' dediler."

Her peygamber, kendi kavmine bizim peygamberimizi (s.a.v.) müjdelemiştir. Bu arada Allah'ın burada sadece Hz. İsa'dan söz etmiş olması, onun, peygamberimizden önceki son peygamber olması sebebiyledir. Böylece Allah, Hz. Peygamber'e dair müjdenin, birbiri ardından gelen bütün peygamberleri kapsadığını ve nihayet Hz. İsa'da son bulduğunu açıklamıştır.

وَمَنْ اَظْلَمُ مِمَّنِ افْتَرٰى عَلَى اللّٰهِ الْكَذِبَ وَهُوَ يُدْعٰٓى اِلَى الْاِسْلَامِ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظَّالِمِينَ ﴿٧﴾

7- "İslâm'a çağrıldığı halde, Allah'a karşı yalan uydurandan daha zalim kim olabilir? Allah, zalimler topluluğunu hidayete erdirmez."

يُرِيدُونَ لِيُطْفِؤُا نُورَ اللّٰهِ بِاَفْوَاهِهِمْ وَاللّٰهُ مُتِمُّ نُورِهِ وَلَوْ كَرِهَ الْكَافِرُونَ ﴿٨﴾

8- "Onlar, ağızlarıyla Allah'ın nurunu söndürmek istiyorlar. Halbuki kâfirler istemeseler de Allah, nurunu tamamlayacaktır."

Kim ki, Allah'ın nurunun zayıflamasının yollarını arar veya sönmesini amaçlarsa, o kendi tuzağına düşer ve tedbiri başına yıkılır. ( يُرِيدُونَ اَنْ يُطْفِؤُا نُورَ اللّٰهِ بِاَفْوَاهِهِمْ وَيَاْبَى اللّٰهُ اِلَّٓا اَنْ يُتِمَّ نُورَهُ وَلَوْ كَرِهَ الْكَافِرُونَ ) *"Allah, nurunu tamamlamaktan başka bir şeye razı olmaz."* (Tevbe, 9/32)

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Allah'ın bir sırrı var yüceliğinde, oysa*
*Sadece bir tür hezeyandandır düşmanların söylediği*

Allah şöyle demiş olmaktadır:

Kim entrikasıyla İslam'ın nurunu söndürmek isterse o, tıpkı üflemesiyle güneşin ışığını söndürmeye kalkışan kimse gibi olur. Bu ise imkânsızdır.

هُوَ الَّذ۪ٓي اَرْسَلَ رَسُولَهُ بِالْهُدٰى وَد۪ينِ الْحَقِّ لِيُظْهِرَهُ عَلَى الدّ۪ينِ
كُلِّه۪ وَلَوْ كَرِهَ الْمُشْرِكُونَ ﴿٩﴾

9- "Müşrikler hoşlanmasa da O, dinini bütün dinlere üstün kılmak için, peygamberlerini hidayet ve hak din ile gönderendir."

Kavmi ona yardım etmekten geri durunca ve düşmanları onu yalanlamaya, gördükleri doğruluğunu inkâr etmeye kalkışınca Allah, onun için ümmetinden yardımcılar ortaya çıkardı. Bunlar, kabilelerin öncüleri, en faziletli bireyler, en erdemli büyükler ve menkıbelere sahip kimselerdi. Böylece onlar, canlarını ona ve dinine feda ettiler, değerli varlıklarından hiçbir şeyi ona tercih etmediler ve onu canlarıyla korudular. Allah da (c.c.), dinine yardımcı olmaları için, verdiği muvaffakiyetle onlara yardım etti. Onlar Allah'ın, hamurlarını saadet suyuyla yoğurduğu, ruhlarını tevhid nurundan yarattığı ve kıyamet günü emsallerine efendi olmaya ehil kıldığı bir topluluktur.

Şüphesiz Allah peygamberini, dinini izah etmek, hakkı açıklamak, tevhidini ilan etmek ve bütün çabasını O'na çağırmada harcamak üzere gönderdi. O da nasihatiyle imana yabancı birtakım kalpleri uyardı ve tebliğinin nuruyla kör gözleri görür kıldı.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا هَلْ اَدُلُّكُمْ عَلٰى تِجَارَةٍ تُنْج۪يكُمْ مِنْ عَذَابٍ
اَل۪يمٍ ﴿١٠﴾ تُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَرَسُولِه۪ وَتُجَاهِدُونَ ف۪ي سَب۪يلِ اللّٰهِ بِاَمْوَالِكُمْ
وَاَنْفُسِكُمْ ذٰلِكُمْ خَيْرٌ لَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿١١﴾

10, 11- "Ey iman edenler! Sizi elem dolu bir azaptan kurtaracak bir ticareti size göstereyim mi? Allah'a ve peygamberine iman eder,

mallarınızla ve canlarınızla Allah yolunda cihat edersiniz. Eğer bilirseniz, bu sizin için çok hayırlıdır."

Allah, imanı ve cihadı ticaret diye adlandırmıştır. Çünkü ticarette kâr, zarar ve tüccardan kaynaklanan bir tür kazanç edinme çabası vardır. İşte aynı şekilde iman ve cihatta da cenneti kazanmak vardır. Kul da bu yolda çaba harcar. Durum, bunun tersine olduğu zaman ise cenneti kaybetmek vardır.

( تُؤْمِنُونَ بِاللّٰهِ وَرَسُولِهِ ) *"Allah'a ve peygamberine iman edersiniz."*

Yani cihadınız, imanınız ve çabanız bu yolda olur. Aynı zamanda o, sizin için daha hayırlıdır.

Sonra Allah, o ticaretten doğacak olan kârın ne olduğunu açıklamak üzere şöyle buyurmuştur:

يَغْفِرْ لَكُمْ ذُنُوبَكُمْ وَيُدْخِلْكُمْ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ
وَمَسَاكِنَ طَيِّبَةً فِي جَنَّاتِ عَدْنٍ ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظِيمُ ﴿١٢﴾

12- "İşte bu takdirde Allah sizin günahlarınızı bağışlar, sizi içinden ırmaklar akan cennetlere ve Adn cennetlerindeki güzel meskenlere koyar. İşte en büyük kurtuluş budur."

Ayette Allah, en önemli şey olan mağfireti önce anlatmıştır. Sonra kalpler, azaptan kurtulunca şöyle buyurmuştur:

( وَيُدْخِلْكُمْ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ ) *"Sizi, içinden ırmaklar akan cennetlere koyar."*

Cenneti ve nimetlerini anlattıktan sonra da: ( وَمَسَاكِنَ طَيِّبَةً فِي جَنَّاتِ عَدْنٍ ) *"Adn cennetlerindeki güzel meskenlere koyar"* buyurmuştur. Acaba o meskenler ne ile güzelleşir? Onlar, ancak Hakk'ı (c.c.) görmekle güzelleşir.

Şu dizeler de bu nedenle söylenmiştir:

*Komşular! Ne de ıssızdır ev sizden sonra!*
*Bizler buradayken siz bulunmadığınız zaman*
*Sevincin en mükemmeli içindeyiz biz, lakin*
*Ancak sizinle tamamlanır sevinç*
*Dostlarım! İçinde bulunduğumuz durumun kusuru*
*Biz buradayken sizin bulunmamanızdır*

وَاُخْرٰى تُحِبُّونَهَا نَصْرٌ مِنَ اللّٰهِ وَفَتْحٌ قَرِيبٌ وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِينَ ﴿١٣﴾

13- "Seveceğiniz başka bir kazanç daha var: Allah'tan bir yardım ve yakın bir fetih. Müminlere bunları müjdele."

Yani sizin için sevdiğiniz başka bir nimet daha vardır. O, Allah'tan bir yardımdır. Bu yardım ise bugün imanı korumak ve istikamet yolu üzere ayakları sabit kılmaktır. Yarın da kıyametin sırat köprüsü üzerinde ayakta durabilmektir.

( وَفَتْحٌ قَرِيبٌ ) *"Ve yakın bir fetih."*

Bu, Allah'ı görmek ve O'na yakın olmaktır. Bir yoruma göre de bu fetih, ilelebet var olmaktır.

( وَبَشِّرِ الْمُؤْمِنِينَ ) *"Müminlere bunları müjdele."*

Müminlere, bu vuslatta senden ayrı olmayacaklarını müjdele.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا كُونُوٓا اَنْصَارَ اللّٰهِ كَمَا قَالَ عِيسَى ابْنُ مَرْيَمَ
لِلْحَوَارِيِّنَ مَنْ اَنْصَارِيٓ اِلَى اللّٰهِ قَالَ الْحَوَارِيُّونَ نَحْنُ اَنْصَارُ اللّٰهِ
فَاٰمَنَتْ طَٓائِفَةٌ مِنْ بَنِيٓ اِسْرَٓاءِيلَ وَكَفَرَتْ طَٓائِفَةٌ فَاَيَّدْنَا الَّذِينَ اٰمَنُوا
عَلٰى عَدُوِّهِمْ فَاَصْبَحُوا ظَاهِرِينَ ﴿١٤﴾

14- "Ey iman edenler! Allah'ın yardımcıları olun. Nitekim Meryem oğlu İsa da Havârîlere: 'Allah'a giden yolda benim yardımcılarım kimdir?' demişti. Havârîler de: 'Allah'ın yardımcıları biziz'

demişlerdi. Bunun üzerine İsrailoğullarından bir grup iman etmiş, bir grup da inkâr etmişti. Sonunda biz, iman edenleri düşmanlarına karşı destekledik. Böylece üstün geldiler."

Tıpkı Hz. İsa, kendilerinden yardım istediğinde Havarilerin ona yardımcı oldukları gibi Allah'ın peygamberine ve dinine yardımcı olun. O halde Muhammed sizden yardım istediği zaman, siz de ona yardım edin.

Sonra Allah, İsrailoğullarından bir grubun Hz. İsa'ya iman edip ikram gördüklerini, bir grubun da inkâr edip zelil kılındıklarını ve düşmanlarına karşı dostlarına zafer verdiğini bildirmiştir. Amaç Allah'ın, düşmanlarına karşı dostlarına zafer verdiğini Hz. Peygamber'in (s.a.v.) bilmesidir.

سورة الْجُمُعَةِ

# CUM'A SÛRESİ

(Cuma Sûresi, 11 âyettir. Medine'de inmiştir. 9. âyetinde Cuma namazına gitmeyi emrettiği için bu adı almıştır. Sûrede; Allah'ı tesbih ve tenzih, Hz. Peygamber'in görevi, Yahudilerin Tevrat'la amel etmemeleri, yeniden dirilme, Cuma namazı ve ticaret konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", öyle bir Aziz'in ismidir ki O'nun cemal sıfatıyla bir kulun kalbine tecelli ettiği zaman fikirleri, cömertliğinin yaygısı üzerinde cem olur ve O'ndan başkasıyla farkı yaşamaz.

Allah, kimin sırrına celalinin sıfatıyla tecelli ederse o, bütünüyle yok olur, O'nun varlığında tükenir ve bu nedenle ne dünyasının güzelliklerinin ne de ahiretinin büyük nimetlerinin farkında olur. Oysa Allah ona nice nimetler vermiş ve nice iyiliklerde bulunmuştur! Şu atasözü de onların benzerleriyle ilgilidir:

*"Taştı dere ve kapladı su yatağını"*

يُسَبِّحُ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ الْمَلِكِ الْقُدُّوسِ الْعَز۪يزِ
الْحَك۪يمِ ﴿١﴾

1- "Göklerdeki ve yerdeki her şey, mülkün sahibi, çok kutsal, azîz ve hakîm olan Allah'ı tesbih eder."

Hakikat ehlinin sırları, Hakk'ın tevhid denizlerinde yüzer. Denizleri ise sahilsizdir. Bu nedenle onlar, o denizlere girdikten sonra ne çıkmak ne de ayrılmak vardır. Böylece ellerine tevhid mücevherleri geçer ve Allah'ın huzuruna çıkacakları gün giymek için irfan tacını onlarla süslerler.

( الْمَلِكِ الْقُدُّوسِ الْعَزِيزِ الْحَكِيمِ ) *"Mülkün sahibi, çok kutsal, azîz ve hakîm olan Allah."*

( الْمَلِكِ ) "*Melik*" lafzı, mutlak üstünlüğe sahip yegâne hükümdar demektir.

( الْقُدُّوسِ ) "*Kuddûs*" lafzı, kavranmak ve erişilmekten münezzeh demektir. Bu itibarla yaratıkların elinde, Allah'ın yücelik sıfatıyla hakikatleri bilmekten ve O'nun fiillerini görmeyi düşünmekten başka hiçbir şey yoktur. Benliğinin hakikatine vakıf olmaya gelince, O'nun samed oluşu, muttali olunmaktan veya görülmesi halinde O'nu kavramayı ummaktan ya da bilgiyle kuşatılabilir olmaktan münezzehtir. O halde olabilecek tek şey, O'nu dil ile ifade etmek ve Hakk'ı olabildiğince görme halidir.

Şiir:

*Dediler ki bize sevgililer: Hilaliz biz ve ancak*
*Gece yol gidene aydınlık yaparız, konuk etmeyiz*

هُوَ الَّذِي بَعَثَ فِي الْأُمِّيِّنَ رَسُولًا مِنْهُمْ يَتْلُوا عَلَيْهِمْ اٰيَاتِهِ وَيُزَكِّيهِمْ وَيُعَلِّمُهُمُ الْكِتَابَ وَالْحِكْمَةَ وَاِنْ كَانُوا مِنْ قَبْلُ لَفِي ضَلَالٍ مُبِينٍ ﴿٢﴾

2- "Ümmilere içlerinden, kendilerine ayetlerini okuyan, onları temizleyen, onlara kitabı ve hikmeti öğreten bir peygamber gönderen O'dur. Şüphesiz onlar, daha önce apaçık bir sapıklık içinde idiler."

Allah, Hz. Peygamber'i (s.a.v.) her türlü öğrenme külfetinden ve arayış vasfından arındırmıştır. Sonra da onu kendilerine peygamber

olarak göndermiş ve kendisinde, hepsine üstünlük sağladığı vasıflar ortaya çıkarmıştır.

Bu çerçevede nasıl ki Allah, başlangıçta onu anasından ve babasından yetim bıraktıktan sonra mükemmeliyetin ifadesi olmak üzere, lütfuyla kendisine sahip çıkmışsa, aynı şekilde onu öğrenme külfetinden de uzak tutmuştur. Ancak Allah şöyle buyurmuştur:

( وَعَلَّمَكَ مَا لَمْ تَكُنْ تَعْلَمُ ) *"Allah, sana daha önce bilmediklerini öğretti."* (Nisâ, 4/113)

( مَا كُنْتَ تَدْرِي مَا الْكِتَابُ وَلَا الْاِيمَانُ وَلٰكِنْ جَعَلْنَاهُ نُورًا ) *"Sen, kitap nedir, iman nedir, bilmezdin. Fakat biz onu bir nur kıldık."* (Şûrâ, 42/52)

Beşeriyetin izleri kendisinden silinsin ve hakikatlerin nurları üzerinde parlasın diye Allah, ona izzet elbisesini ve keramet tacını giydirip güzelce sahip çıkmayı bahşetti.

وَاٰخَرِينَ مِنْهُمْ لَمَّا يَلْحَقُوا بِهِمْ وَهُوَ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿٣﴾

3- "Allah onu, onlardan henüz kendilerine katılmayan başkalarına da göndermiştir. O azîzdir, hakîmdir."

Yani Allah, onu ümmilere ve onlardan diğer bazılarına peygamber olarak göndermiştir. Bu diğer bazıları, acemler ve kıyamet gününe kadar gelecek olanlardır. Bu itibarla Hz. Peygamber (s.a.v.), bütün insanlara peygamber olarak gönderilmiştir.

ذٰلِكَ فَضْلُ اللّٰهِ يُؤْتِيهِ مَنْ يَشَٓاءُ وَاللّٰهُ ذُو الْفَضْلِ الْعَظِيمِ ﴿٤﴾

4- "İşte bu, Allah'ın lütfudur. Onu dilediğine verir. Allah, büyük lütuf sahibidir."

Burada Allah, lütuftan peygamberliği amaçlamakta, onu dilediğine vermektedir. Aynı zamanda bu ayette, şu iki iddiaya karşı cevap da vardır:

- İbadetinin çokluğu sebebiyle peygamberlik, Hz. Peygamber (s.a.v.) tarafından kazanılan bir haktır.

- Peygamberlik, peygamberlerin yaratılıştan gelen bir özelliğidir.

Lütuf, kazanılmış bir hak olmayan şeydir. Zira kazanılan hak lütuf değil, farzdır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Burada "Allah'ın lütfu" , iman etmeleri için verilen muvaffakiyettir.

- Bu lütuf, Allah ile ünsiyet bulmaktır. Nitekim kul, ünsiyet bulduğu zaman her şeyi unutur.

- Allah, lütfu kendi dileğine havale ettiği için ona hak kazanmanın sebeplerini bütünüyle kesip atmıştır.

مَثَلُ الَّذِينَ حُمِّلُوا التَّوْرٰيةَ ثُمَّ لَمْ يَحْمِلُوهَا كَمَثَلِ الْحِمَارِ يَحْمِلُ اَسْفَارًا بِئْسَ مَثَلُ الْقَوْمِ الَّذِينَ كَذَّبُوا بِاٰيَاتِ اللّٰهِ وَاللّٰهُ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الظَّالِمِينَ ﴿٥﴾

5- "Tevrat'la yükümlü tutulup da onunla amel etmeyenlerin durumu, ciltlerle kitap taşıyan eşeğin durumu gibidir. Allah'ın ayetlerini inkâr eden topluluğun hali ne kötüdür! Allah, zalimler topluluğunu hidayete erdirmez."

Ayetteki ( لَمْ يَحْمِلُوهَا ) "*onu taşımayanlar*" ifadesi, onunla amel etmeyenler demektir.

İşaret bakımından, hangi anlamda olursa olsun, taklitçilikle damgalanmış olanlar da uyarı kapsamında bu kimselere dâhildirler. Bu taklitçilik, ister usul ilminde, ister metodu akli delilleri kullanmak olan ilimlerde, isterse de yöntemi, nefisle savaşmak olan bu tarikatta olsun fark etmez.

قُلْ يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ هَادُوٓا اِنْ زَعَمْتُمْ اَنَّكُمْ اَوْلِيَٓاءُ لِلّٰهِ مِنْ دُونِ النَّاسِ فَتَمَنَّوُا الْمَوْتَ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٦﴾ وَلَا يَتَمَنَّوْنَهُٓ اَبَدًا بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيهِمْ وَاللّٰهُ عَلِيمٌ بِالظَّالِمِينَ ﴿٧﴾

6, 7- "De ki: 'Ey Yahudi olanlar! Bütün insanlar değil de yalnız kendinizin Allah'ın dostları olduğunu iddia ediyorsanız, bunda da samimi iseniz, hadi ölümü isteyin. Ama onlar, daha evvel yaptıklarından dolayı asla ölümü istemezler. Allah, zalimleri hakkıyla bilir.'"

Bu, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) mucizeleri cümlesindendir. Bu çerçevede onların kalplerini, ölüm temennisinden bu süreye çevirmek, Hz. Peygamber'in doğruluğunu göstermiştir.

Bir yoruma göre de sevginin alametlerinden biri de sevgiliye özlem duymaktır. Bu nedenle seven kişi, sevgiliye sadece ölümle ulaşabildiği zaman, ister istemez ölümü temenni etmesi şarttır. Oysa Allah, onların ölümü asla temenni etmeyeceklerini bildirmiş ve durum, bildirdiği gibi olmuştur.

قُلْ اِنَّ الْمَوْتَ الَّذ۪ي تَفِرُّونَ مِنْهُ فَاِنَّهُ مُلَاق۪يكُمْ ثُمَّ تُرَدُّونَ اِلٰى عَالِمِ
الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ فَيُنَبِّئُكُمْ بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٨﴾

8- "De ki: 'Kendisinden kaçtığınız ölüm, muhakkak sizi bulacaktır. Sonra gaybı da görünen âlemi de bilen Allah'a döndürüleceksiniz de O, yapmakta olduklarınızı size haber verecektir.'"

Ölüm kesindir ve karara bağlanmıştır. Hadiste şöyle denilmiştir:

*"Kim, Allah'ın huzuruna varmaktan hoşlanmazsa, Allah da onunla buluşmaktan hoşlanmaz."*

Bu arada ölüm bir köprüdür. Maksat ise Allah katındadır. Kim iffetli yaşamazsa, bari zarif olarak ölsün.

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوٓا اِذَا نُودِيَ لِلصَّلٰوةِ مِنْ يَوْمِ الْجُمُعَةِ فَاسْعَوْا
اِلٰى ذِكْرِ اللّٰهِ وَذَرُوا الْبَيْعَۜ ذٰلِكُمْ خَيْرٌ لَكُمْ اِنْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٩﴾

9- "Ey iman edenler! Cuma günü namaz için çağrı yapıldığı zaman, hemen Allah'ın zikrine koşun ve alışverişi bırakın. Eğer bilirseniz bu, sizin için daha hayırlıdır."

Allah, Cuma günü cuma namazına çağrı yapıldığı zaman, ona koşmayı vacip kılmış ve alışverişi terk etmeyi emretmiştir. Tefsir âlimlerinden bazıları, terki zâhirine, yani halk ile muameleyi terke etmeye hamletmiştir. Onlardan kimisi de onu hem bu manaya hem de diğer bir manaya hamletmiştir. Bu ikinci mana, dünya varlıklarını düşünmekle meşgul olmayı ve emri kucaklamak dışındaki bütün gayeleri terk etmektir. Bu çerçevede onlardan kimisi, Allah'ın zikrine koşarken kimisi de Allah'a koşar. Daha doğrusu onlar, Allah'ın zikrine açıktan açığa, Allah'a da gizliden gizliye koşarlar.

فَاِذَا قُضِيَتِ الصَّلٰوةُ فَانْتَشِرُوا فِي الْاَرْضِ وَابْتَغُوا مِنْ فَضْلِ اللّٰهِ
وَاذْكُرُوا اللّٰهَ كَثِيرًا لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿١٠﴾

10- "Namaz kılınınca artık yeryüzüne dağılın ve Allah'ın lütfundan nasibinizi arayın. Allah'ı çok zikredin ki kurtuluşa eresiniz."

Namazdan ancak, dönüş yapacağı bir cemi veya kast edip meşgul olacağı bir meşguliyeti olan kimse döner. Lakin hiçbir meşguliyeti ve barınağı olmayan kimse nereye dönecek? Aynı zamanda ancak bir ihtiyaç ve amacı olan kimseye hitaben: (وَابْتَغُوا مِنْ فَضْلِ اللّٰهِ) "*Allah'ın lütfundan nasibinizi arayın*" denir. İsteklerden geri duran ve talep hastalığından kurtarılmış olan kimseye gelince onun, istemediği ve kölesi olmadığı şeyle ne ilgisi var?

وَاِذَا رَاَوْا تِجَارَةً اَوْ لَهْوًا انْفَضُّوا اِلَيْهَا وَتَرَكُوكَ قَائِمًا قُلْ مَا عِنْدَ
اللّٰهِ خَيْرٌ مِنَ اللَّهْوِ وَمِنَ التِّجَارَةِ وَاللّٰهُ خَيْرُ الرَّازِقِينَ ﴿١١﴾

11- "Onlar, bir ticaret ve bir eğlence gördükleri zaman, hemen dağılıp ona koşarlar ve seni ayakta bırakırlar. De ki: "Allah'ın yanında bulunan, eğlence ve ticaretten daha hayırlıdır. Allah, rızık verenlerin en hayırlısıdır."

Eşyaya yönelik kaygılara esir olan kimse, bir eğlencenin sürüklediği veya bir yanılgının yönlendirdiği her davetçinin davetini kabul

eder. Hakikat hükümranlığının hâkim olduğu kimse ise, huzurdan sapmaz ve şuhud halinde sağa sola bakmaz.

( قُلْ مَا عِنْدَ اللّٰهِ خَيْرٌ مِنَ اللَّهْوِ وَمِنَ التِّجَارَةِ ) *"De ki: 'Allah'ın yanında bulunan, eğlence ve ticaretten daha hayırlıdır.'"*

Allah katında abidlere ve zahidlere yarın için söz verilen şeyler, onların dünyada peşin olarak elde ettiklerinden daha hayırlıdır. Bir de Allah katında arifler için peşin bulunan kalbin tecellileri ve hakikatin sürprizleri, bu yola yeni girmiş olan kimsenin, dünyada ve ahirette umduklarından daha hayırlıdır.

سورة الْمُنَافِقُونَ

# MÜNÂFİKÛN SÛRESİ

(Münâfikûn Sûresi 11 âyettir. Medine'de inmiştir. Sûrede başlıca; münafıklarnn tanıtılması, onlar için bağışlanma isteme yasağı, ölüm gelince pişmanlığın yarar sağlamaması gibi konular yer alır.

Zeyd İbn Erkam (r.a.), bir gazvede (münafıkların reisi) Abdullah İbn Übeyy ile birlikte bulunmuştu. Zeyd şöyle demiştir: Ben orada Abdullah'ı şöyle derken işittim: "Rasûlullah'ın yanındaki kimselere, maddî destekte bulunmazsanız, çevresindekiler dağılıp giderler. Biz onun yanına dönünce, şüphesiz azîz olan, zelil olanı oradan sürgün edecektir." Bunu Hz. Ömer'e anlattım, o da Nebî (s.a.s)'e haber vermiş. Beni çağırdı, ona da anlattım. Rasûlullah, Abdullah'a ve arkadaşlarına elçi gönderip çağırdı. Söylediklerini inkâr edip yemin ettiler. Rasûlullah (s.a.s) beni yalanladı ve onu onayladı. Ben, benzerine rastlamadığım ölçüde üzüntüye kapıldım, eve kapandım. Amcam dedi ki, "Sen, Allah elçisinin seni yalanlamasını ve sana kızmasını istemedin. Bu konuda iyi niyetlisin." Arkasından Allah, Münâfikûn Sûresi'ni indirdi. Beni çağırdı, sûreyi okudu ve "Ey Zeyd! Hiç kuşku yok ki, Allah seni doğruladı." buyurdu. (Buhârî, Tefsir, 63/1). Başka bir rivayette sûrenin başından sekizinci âyetin sonuna kadar indiği ve Nebî (s.a.s)'in bunları okuyarak, "Allah seni doğruladı." buyurduğu belirtilir (Buhârî, Tefsir, 63/2).)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir isimdir ki kim onunla hakikate ererse, önce sözlerinde, sonra davranışlarında, sonra ahlakında, sonra ahvalinde, sonra da nefeslerinde dürüst olur. Bu çerçevede, sözünde dürüst

olması delilsiz konuşmaması, davranışında dürüst olması bidatin kendisine hâkimiyetinin olmaması, ahlakta dürüst olması Allah'ın herkese olan iyiliğini eksik görmemesi, ahvalde dürüst olması da keşif ve beyan üzere olmasıdır. Nefeslerde dürüst olması ise,ancak Allah'ı gözüyle görüyormuş gibi bir varlık üzere nefes alıp vermesidir.

اِذَا جَآءَكَ الْمُنَافِقُونَ قَالُوا نَشْهَدُ اِنَّكَ لَرَسُولُ اللّٰهِ وَاللّٰهُ يَعْلَمُ اِنَّكَ لَرَسُولُهُ وَاللّٰهُ يَشْهَدُ اِنَّ الْمُنَافِقِينَ لَكَاذِبُونَ ﴿١﴾

1- "Münafıklar sana geldiklerinde: 'Senin, elbette Allah'ın peygamberi olduğuna şahitlik ederiz' derler. Allah senin, elbette O'nun peygamberi olduğunu bilir. Allah, o münafıkların kesinlikle yalancı olduklarına da şahitlik eder."

Allah münafıkları, söyleyip zâhiren dile getirdikleri hususlarda yalanlamıştır. Ancak onlar, basiretle şahitlik etmediler ve inanarak seni doğrulamadılar. Bu nedenle onlar, şahitlikte yalan söylemediler. Fakat yalancılıkları, sana içtenlikle bağlı olduklarını ve seni doğruladıklarını söylemelerindedir. Böylece durum çirkin olunca, sözün doğru olması fayda vermez.

Bir yoruma göre de iman güven sağlayan şeydir. Nitekim iman, günahkâr olduğu zaman mümine, onu cehennemin en üst tabakasından en alt tabakasına taşıyan günah hariç, azabın çoğundan da azından da kurtulmayı sağlar.

اِتَّخَذُوٓا اَيْمَانَهُمْ جُنَّةً فَصَدُّوا عَنْ سَبِيلِ اللّٰهِ اِنَّهُمْ سَٓاءَ مَا كَانُوا يَعْمَلُونَ ﴿٢﴾

2- "Yeminlerini kalkan yaptılar da insanları Allah'ın yolundan çevirdiler. Gerçekten onların yaptıkları şey ne kötüdür!"

Onlar, ikrarlarıyla saklanmaya çalıştılar ancak münafıklıkları sebebiyle örtüleri üzerlerinden kalktı ve rezil olup durumlarının vebalini tattılar.

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ اٰمَنُوا ثُمَّ كَفَرُوا فَطُبِعَ عَلٰى قُلُوبِهِمْ فَهُمْ لَا يَفْقَهُونَ ﴿٣﴾

3- "Bu, onların önce iman edip sonra kâfir olmaları sebebiyledir. Bu yüzden kalpleri mühürlendi. Artık onlar anlamazlar."

Önce kabul nuruyla aydınlandılar ancak saadet ışığı üzerlerine yayılmadığı için nurları mahrumiyet kahrıyla sönmüş oldu ve mutsuzluklarına dair hüküm gereğince, ezeli taksimatın karanlıklarında kaldılar.

وَاِذَا رَاَيْتَهُمْ تُعْجِبُكَ اَجْسَامُهُمْ وَاِنْ يَقُولُوا تَسْمَعْ لِقَوْلِهِمْ كَاَنَّهُمْ خُشُبٌ مُسَنَّدَةٌ يَحْسَبُونَ كُلَّ صَيْحَةٍ عَلَيْهِمْ هُمُ الْعَدُوُّ فَاحْذَرْهُمْ قَاتَلَهُمُ اللّٰهُ اَنّٰى يُؤْفَكُونَ ﴿٤﴾

4- "Onları gördüğün zaman kalıpları hoşuna gider. Konuşurlarsa, sözlerini dinlersin. Onlar, sanki duvara dayanmış keresteler gibidir. Her gürültüyü kendi aleyhlerine sanırlar. Düşman onlardır. Onlardan sakın! Allah, onları kahretsin! Nasıl da haktan çevriliyorlar!"

Yani onlar, birtakım cesetler ve kalıplar olup özlerinde akıl ve hakikatler yoktur. Nitekim boş cevizin de dış görünüşü süslüdür ancak o, çocukların oyuncağıdır.

( يَحْسَبُونَ كُلَّ صَيْحَةٍ عَلَيْهِمْ ) *"Her gürültüyü kendi aleyhlerine sanırlar."*

Bu, korkak olmalarından dolayıdır. Çünkü onlar, Rablerinden güç almazlar, başkalarıyla da ihtiyaçtan kurtulmazlar.

( هُمُ الْعَدُوُّ فَاحْذَرْهُمْ ) *"Düşman onlardır. Onlardan sakın!"*

Ey Muhammed! Onlar sana düşmandır. O halde onlardan sakın. Sevgi ve yakınlık gösterisi yapmak suretiyle sözü uzatmaları da seni yanıltmasın.

وَاِذَا قٖيلَ لَهُمْ تَعَالَوْا يَسْتَغْفِرْ لَكُمْ رَسُولُ اللّٰهِ لَوَّوْا رُؤُسَهُمْ وَرَاَيْتَهُمْ يَصُدُّونَ وَهُمْ مُسْتَكْبِرُونَ ﴿٥﴾

5- "Onlara: 'Gelin, Allah'ın peygamberi sizin için mağfiret dilesin' denildiği zaman başlarını çevirirler ve sen, onların büyüklük taslayarak uzaklaştıklarını görürsün."

Kendilerine söylenenleri, kibirlenerek ve onlar için mağfiret dilemene muhtaç olmadıklarını göstererek dinlediler. O halde sen de onları bırak. Zira nasihatin onlara bir faydası yoktur. Onları, sarhoşluklarından da ancak uğrayacakları azabın sıcaklığı uyandıracaktır. Onların tarafında ısrar oldukça durumları şöyle olur:

سَوَٓاءٌ عَلَيْهِمْ اَسْتَغْفَرْتَ لَهُمْ اَمْ لَمْ تَسْتَغْفِرْ لَهُمْ لَنْ يَغْفِرَ اللّٰهُ لَهُمْ اِنَّ اللّٰهَ لَا يَهْدِي الْقَوْمَ الْفَاسِقٖينَ ﴿٦﴾

6- "Onlar için mağfiret dilesen de dilemesen de onlara göre birdir. Allah, onları asla bağışlamayacaktır. Çünkü Allah, fâsıklar topluluğunu hidayete erdirmez."

Bu konudaki bilgi daha önce geçti.

هُمُ الَّذٖينَ يَقُولُونَ لَا تُنْفِقُوا عَلٰى مَنْ عِنْدَ رَسُولِ اللّٰهِ حَتّٰى يَنْفَضُّوا وَلِلّٰهِ خَزَٓائِنُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَلٰكِنَّ الْمُنَافِقٖينَ لَا يَفْقَهُونَ ﴿٧﴾

7- "Onlar: 'Allah Resûlü'nün yanında bulunanlara bir şey vermeyin ki dağılıp gitsinler' diyenlerdir. Oysa göklerin ve yerin hazineleri Allah'ındır. Fakat münafıklar bunu anlamazlar."

Anlaşılan şu ki onlar, hep sebeplere bağlıdırlar, takdiri görmekten perdelenmişler, günlerin sevk ve idaresiyle ilgili hakikati bilmezler. Bu nedenle Allah onları, kalplerine işleyen Hz. Peygamber'in (s.a.v.) nurunun sönmesi ve müminlerin birliğinin dağılması duygusuyla

konuşturdu. Bu yüzden onlar, kendi aralarında şu sözlerle birbirlerine tavsiyede bulundular: ( لَا تُنْفِقُوا عَلٰى مَنْ عِنْدَ رَسُولِ اللّٰهِ ) *"Allah Resûlü'nün yanında bulunanlara bir şey vermeyin."*

Allah da şöyle buyurdu:

( وَلِلّٰهِ خَزَٓائِنُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ ) *"Oysa göklerin ve yerin hazineleri Allah'ındır."*

Bir de ey Muhammed! Senin istiklalin -ihtiyaçtan kurtulman-, rızık verilenlerle değil, rızkı veren Allah iledir. Bu itibarla sizi koruyan da O'dur.

يَقُولُونَ لَئِنْ رَجَعْنَٓا اِلَى الْمَدٖينَةِ لَيُخْرِجَنَّ الْاَعَزُّ مِنْهَا الْاَذَلَّ وَلِلّٰهِ الْعِزَّةُ وَلِرَسُولِهٖ وَلِلْمُؤْمِنٖينَ وَلٰكِنَّ الْمُنَافِقٖينَ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٨﴾

8- "Onlar: 'Andolsun, eğer Medine'ye dönersek, üstün olan, zayıf olanı mutlaka oradan çıkaracaktır' diyorlardı. Oysa asıl üstünlük, ancak Allah'ın, peygamberinin ve müminlerindir. Fakat münafıklar bunu bilmezler."

Münafıklar, üstün olan ile zayıf olanı belirlemede hataya düşmüşlerdir. Bu nedenle onlar, üstün olanların münafıklar, zayıf olanların da Müslümanlar olduğunu sanmışlardır. Fakat durum, bunun tersinedir. Hal böyle olunca şüphesiz Hz. Peygamber (s.a.v.) ve Müslümanlar Allah'ın: ( وَلِلّٰهِ الْعِزَّةُ وَلِرَسُولِهٖ وَلِلْمُؤْمِنٖينَ ) *"Oysa asıl üstünlük, ancak Allah'ın, peygamberinin ve müminlerindir"* sözüyle galip olmuş, münafıklar da zelil kılınmışlardır. İlah olmanın üstünlüğü Allah'a, peygamberlik üstünlüğü Hz. Peygamber'e (s.a.v.), bağlılık üstünlüğü de müminlere mahsustur. Gerçekte ise bunun tamamı Allah'a aittir. Bu çerçevede kadim üstünlüğü O'nun sıfatıdır. Hz. Peygamber'in (s.a.v.) ve müminlerin üstünlüğü ise fiil, minnet ve lütuf olarak O'na aittir. O halde üstünlük bütünüyle Allah'a mahsustur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Nasıl ki Allah'ın üstünlüğünün zevali yoksa aynı şekilde peygamberlerin üstünlüğü peygamberlikten azledilmemeleri, müminlerin üstünlüğü de hiçbirinin ebedi olarak cehennemde kalmamasıdır.

- İmanı hakiki olan kimsenin zevali yoktur.

- Üstünlüğünün kaynağı Allah olan kimse Allah'tan başkasıyla durum değişikliğine maruz kalmaz.

- Üstünlük sadece Allah'a itaatte, zül de sadece Allah'a karşı gelmede bulunur. Bunun dışında kalan ne varsa hiçbirinin aslı yoktur.

يَآ اَيُّهَا الَّذٖينَ اٰمَنُوا لَا تُلْهِكُمْ اَمْوَالُكُمْ وَلَآ اَوْلَادُكُمْ عَنْ ذِكْرِ اللّٰهِ
وَمَنْ يَفْعَلْ ذٰلِكَ فَاُولٰٓئِكَ هُمُ الْخَاسِرُونَ ﴿٩﴾

9- "Ey iman edenler! Mallarınız ve çocuklarınız sizi Allah'ı anmaktan alıkoymasın. Kim bunu yaparsa, işte kaybedenler onlardır."

Dininize ait işleri mallarınız ve çocuklarınız sebebiyle heder etmeyin. Aksine Allah'ın hakkını tercih edip onunla uğraşın ki O, dünyanız ve çocuklarınızla ilgili işlerinizi güvence altına alsın. Böylece sen Allah için olduğun zaman, Allah da senin için olur.

Bir yoruma göre de Allah'ın hakkı, seni yerine getirmekle yükümlü kıldığı hususlardandır. Senin hakkını ise Allah yerine getirmeyi garanti etmiştir. O halde senin için garanti edilenle değil, yükümlü kılındığınla meşgul ol.

وَاَنْفِقُوا مِمَّا رَزَقْنَاكُمْ مِنْ قَبْلِ اَنْ يَاْتِيَ اَحَدَكُمُ الْمَوْتُ فَيَقُولَ رَبِّ
لَوْلَآ اَخَّرْتَنٖيٓ اِلٰٓى اَجَلٍ قَرٖيبٍ فَاَصَّدَّقَ وَاَكُنْ مِنَ الصَّالِحٖينَ ﴿١٠﴾

10- "Birinize ölüm gelip de kendisi: 'Rabbim! Beni yakın bir süreye kadar ertelesen de sadaka verip iyilerden olsam!' demeden önce size rızık olarak verdiklerimizden Allah yolunda harcayın."

Vakitlerinizin esenlik içinde geçmesine aldanmayın, ecellerinizin ani gelişlerini bekleyiniz, önünüzdeki göçe hazırlanın ve savsaklama zemininde kalıp durmayın.

وَلَنْ يُؤَخِّرَ اللّٰهُ نَفْسًا اِذَا جَٓاءَ اَجَلُهَا وَاللّٰهُ خَبِيرٌ بِمَا تَعْمَلُونَ ﴿١١﴾

11- "Allah, eceli geldiğinde hiç kimseyi ertelemez. Allah, yaptıklarınızdan haberdardır."

سورة التَّغَابُنِ

# TEĞÂBÜN SÛRESİ

(Tegâbün Sûresi 18 âyettir. Medine'de inmiştir. Adını 9. âyette geçen "Tegâbün (Aldanma)"dan almıştır. Sûrede başlıca; Allah'ı tesbih, Allah'ın gizli açık her şeyi bilmesi, kıyamet gününün "aldanma günü" olması, iyilerin ve kötülerin sonu, mal ve çocukların sınav aracı olması ve karz konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", öyle paha biçilmez bir sözdür ki onu dile getiren kimse, gıybette heder edilmeyen ve başkalarını konuşmada kullanılmayan değerli bir dile ihtiyaç duyar. Onu bilen kimse ise her bir tarafında bir karışıklığın ve her bir köşesinde bir arzunun olmadığı değerli bir kalbe ihtiyaç duyar.

يُسَبِّحُ لِلّٰهِ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَمَا فِي الْاَرْضِ لَهُ الْمُلْكُ وَلَهُ الْحَمْدُ
وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَد۪يرٌ ﴿١﴾

1- "Göklerdeki ve yerdeki her şey, Allah'ı tesbih eder. Mülk O'nundur, hamd O'nadır. O, her şeye kadirdir."

Yaratıkların hepsi, topluca Allah'ı tesbih ederler. Fakat kendisinde inkâr sağırlığı bulunan kimse onların tesbihini duymaz.

Bir yoruma göre de sonradan sağır olan kimsenin sağırlığının bir tür tedaviyle geçmesi umulur. Sağır olarak doğan kimseye gelince, onun duymasını sağlamanın hiçbir çaresi yoktur. Nitekim Allah şöyle buyurmuştur:

( فَإِنَّكَ لَا تُسْمِعُ الْمَوْتٰى ) *"Şüphesiz sen, ölülere işittiremezsin."* (Rûm, 30/52)

( وَلَوْ عَلِمَ اللّٰهُ فِيهِمْ خَيْرًا لَأَسْمَعَهُمْ ) *"Eğer Allah onlarda bir hayır olduğunu bilseydi, elbette onlara işittirirdi."* (Enfâl, 8/23)

هُوَ الَّذِي خَلَقَكُمْ فَمِنْكُمْ كَافِرٌ وَمِنْكُمْ مُؤْمِنٌ وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ بَصِيرٌ ﴿٢﴾

2- "Sizi yaratan O'dur. Böyle iken sizden kimisi kâfir, kiminiz de mümindir. Allah, yaptıklarınızı görür."

Sizden kimisi Allah'ın ezeli hükmünde kâfirdir. Allah, onu kâfir diye adlandırmış, kâfir olacağını bilmiş ve hakkında küfür irade etmiştir. Onlar aynen öyle de olmuşlardır. Sizden kimisi de O'nun ezeli hükmünde mümindir. Allah, onu mümin diye adlandırmış, iman edeceğini ezelde bilmiş, onu mümin olarak yaratmış ve mümin olmasını dilemiştir. Allah, yaptıklarınızı görür.

خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ وَصَوَّرَكُمْ فَاَحْسَنَ صُوَرَكُمْ وَاِلَيْهِ الْمَصِيرُ ﴿٣﴾

3- "Allah, gökleri ve yeri hak ile yarattı. Size şekil verdi ve şekillerinizi güzel yaptı. Dönüş de sadece O'nadır."

( خَلَقَ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضَ بِالْحَقِّ ) *"Allah, gökleri ve yeri hak ile yarattı."*

Yani O, yaratmasında haklıdır.

( وَصَوَّرَكُمْ فَاَحْسَنَ صُوَرَكُمْ ) *"Size şekil verdi ve şekillerinizi güzel yaptı."*

Allah, bize hitaben söylediği bu sözü hiçbir mahlûka söylememiştir. O, zâhire de bâtına da şekil vermiştir. Bu çerçevede zâhir kudretinin şahidi, batın da yakınlığının celalinin şahididir.

يَعْلَمُ مَا فِي السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَيَعْلَمُ مَا تُسِرُّونَ وَمَا تُعْلِنُونَ
وَاللّٰهُ عَلِيمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ ﴿٤﴾

4- "Allah, göklerde ve yerde olanları bilir. Gizlediklerinizi ve açığa vurduklarınızı da bilir. Allah, kalplerin içini bilir."

Amacınıza dönük tedbirlerinizi kısa tutun. Zira ona ulaşmada bilgileriniz yetersiz kalır. Bunu da ben bilirim, siz değil. Öyle ise benden isteyin. Zira ben onu daha iyi bilirim ve ona benim gücüm daha yeter.

( وَيَعْلَمُ مَا تُسِرُّونَ وَمَا تُعْلِنُونَ ) *"Gizlediklerinizi ve açığa vurduklarınızı da bilir."*

Bir yoruma göre, gizlediklerinizi bildiğine göre, riyanın inceliğinden ve kalbin içinde gizli olandan sakının. Açıkladıklarınızı da bildiğine göre, dışınızın içinize aykırı olmasından sakının.

Bir de ( مَا تُسِرُّونَ ) *"Gizledikleriniz"* tabirinde kul ile Rabbi arasında gözetim bulunmasına dair emir vardır.

( وَمَا تُعْلِنُونَ ) *"Açığa vurduklarınız"* tabirinde de halk ile muamele ve hesaplaşmada dürüst olmaya dair emir vardır.

اَلَمْ يَاْتِكُمْ نَبَؤُا الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ قَبْلُ فَذَاقُوا وَبَالَ اَمْرِهِمْ وَلَهُمْ
عَذَابٌ اَلِيمٌ ﴿٥﴾

5- "Daha önce kâfir olup da durumlarının vebalini tadanların haberi size gelmedi mi? Onlar için acıklı bir azap da vardır."

Bundan amaç, geçmişten ibret almaktır. Kim, ibret almazsa ümidin uçurumuna yuvarlanır. Sonra da ancak iş işten geçtikten sonra kendine gelir.

ذٰلِكَ بِاَنَّهُ كَانَتْ تَاْتِيهِمْ رُسُلُهُمْ بِالْبَيِّنَاتِ فَقَالُوٓا اَبَشَرٌ يَهْدُونَنَا
فَكَفَرُوا وَتَوَلَّوْا وَاسْتَغْنَى اللّٰهُ وَاللّٰهُ غَنِيٌّ حَمِيدٌ ﴿٦﴾

6- "Bu, peygamberlerinin kendilerine mucizeler getirmesi üzerine: 'Bir beşer mi bize yol gösterecekmiş?' demeleri sebebiyledir. Böylece inkâr edip yüz çevirdiler. Allah da muhtaç olmadığını gösterdi. Allah, zengindir, hamde layıktır."

Onlar, durumu yaratılış bakımından gördükleri için şaşkınlığın değişik hallerini yaşadılar. Oysa eğer hakikat gözüyle baksalardı, boş işlerin tefrikasından kurtulur ve takdiri görmek suretiyle değişken hallerin değişmesinden rahatlamış olurlardı.

زَعَمَ الَّذِينَ كَفَرُوٓا اَنْ لَنْ يُبْعَثُوا قُلْ بَلٰى وَرَبِّي لَتُبْعَثُنَّ ثُمَّ لَتُنَبَّؤُنَّ
بِمَا عَمِلْتُمْ وَذٰلِكَ عَلَى اللّٰهِ يَسِيرٌ ﴿٧﴾

7- "İnkâr edenler, kesinlikle diriltilmeyeceklerini ileri sürdüler. De ki: 'Hiç de öyle değil. Rabbime andolsun ki mutlaka diriltileceksiniz. Sonra da yaptıklarınız, elbette size haber verilecektir. Bu, Allah'a kolaydır.'"

Ölüm, nefsin ölümü ve kalbin ölümü olmak üzere iki türlüdür. Bu çerçevede kıyamet günü insanlar, nefsin ölümünden diriltilirler. Kalbin ölümüne gelince, bu taifenin ihlâs sahiplerinden pek çoğuna göre ondan diriliş yoktur. Allah da onlardan haber vererek şöyle buyurmuştur:

( قَالُوا يَا وَيْلَنَا مَنْ بَعَثَنَا مِنْ مَرْقَدِنَا ) *"Vay başımıza gelene! Kim bizi diriltip mezarımızdan çıkardı?"* (Yâsîn, 36/52)

Eğer Allah'ı tanısalardı, bunu söylemezlerdi. Bu itibarla bilgileri zorunlu hale gelinceye kadar kalplerinin ölümü sürüp gider. O halde bu vakit, kalplerinin ölü olduğu vakittir.

فَاٰمِنُوا بِاللّٰهِ وَرَسُولِه۪ وَالنُّورِ الَّذ۪ٓي اَنْزَلْنَا وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَب۪يرٌ ﴿٨﴾

8- "Artık siz, Allah'a, peygamberine ve indirdiğimiz nura iman edin. Allah, yaptıklarınızdan haberdardır."

( وَالنُّورِ الَّذ۪ٓي اَنْزَلْنَا ) *"İndirdiğimiz nura iman edin."*

Bu nur Kur'ân'dır. Bu Allah'ın, dostlarının kalplerine indirdiği huzur ve çeşitli lütuflar da olabilir.

يَوْمَ يَجْمَعُكُمْ لِيَوْمِ الْجَمْعِ ذٰلِكَ يَوْمُ التَّغَابُنِ وَمَنْ يُؤْمِنْ بِاللّٰهِ وَيَعْمَلْ صَالِحًا يُكَفِّرْ عَنْهُ سَيِّاٰتِه۪ وَيُدْخِلْهُ جَنَّاتٍ تَجْر۪ي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِد۪ينَ ف۪يهَٓا اَبَدًا ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْعَظ۪يمُ ﴿٩﴾

9- "Toplanma vakti için Allah'ın sizi toplayacağı günü düşün. O, aldanış günüdür. Kim Allah'a iman eder ve salih amel işlerse, Allah onun kötülüklerini örter ve onu, içinden ırmaklar akan, ebedi kalacakları cennetlere koyar. İşte büyük kurtuluş budur."

O gün, itaatkâr daha çok ibadet etmediği için, günahkâr da çok hata işlediği için aldanmışlık içindedir.

Bu arada, aldanmanın tamamı, dereceler arasındaki azlık ve çokluk farkı bakımından değildir. Zira hallerdeki aldanmışlık daha fazladır.

وَالَّذ۪ينَ كَفَرُوا وَكَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَٓا اُو۬لٰٓئِكَ اَصْحَابُ النَّارِ خَالِد۪ينَ ف۪يهَا وَبِئْسَ الْمَص۪يرُ ﴿١٠﴾

10- "İnkâr eden ve ayetlerimizi yalanlayanlara gelince, işte onlar, içinde ebedi kalmak üzere cehennemliklerdir. Ne kötü varılacak yerdir orası!"

مَٓا اَصَابَ مِنْ مُصِيبَةٍ اِلَّا بِاِذْنِ اللّٰهِ وَمَنْ يُؤْمِنْ بِاللّٰهِ يَهْدِ قَلْبَهُ وَاللّٰهُ بِكُلِّ شَيْءٍ عَلِيمٌ ﴿١١﴾

11- "Allah'ın izni olmaksızın hiçbir musibet başa gelmez. Kim Allah'a iman ederse Allah, onun kalbini doğruya iletir. Allah, her şeyi bilendir."

Her ne olursa olsun, yaratılış bakımından O'nun tarafındandır, hüküm bakımından da O'nun ilmi ve iradesiyledir.

Bir de kim Allah'a iman ederse, Allah onun kalbini doğruya iletir. Böylece bugün o, varlıkta da darlıkta da Allah'a giden yolu bulur. Ahirette de Allah onu cennete iletir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, onun kalbini güzel ahlaka ve nefsin hırsından arınmaya götürür.

- Allah, onun kalbini sünnete uymaya ve bidatten sakınmaya götürür.

وَاَطِيعُوا اللّٰهَ وَاَطِيعُوا الرَّسُولَ فَاِنْ تَوَلَّيْتُمْ فَاِنَّمَا عَلٰى رَسُولِنَا الْبَلَاغُ الْمُبِينُ ﴿١٢﴾

12- "Allah'a itaat edin, peygambere de itaat edin. Eğer yüz çevirirseniz, bilin ki elçimize düşen, sadece apaçık bir tebliğdir."

Allah'a itaat zorunludur. Allah ile halkın arasında elçi olan peygamberlere itaat da aynı şekilde zorunludur. Sana görünen ve bütün gerekleriyle yükümlü kılındığın nurlar da haktır ve Hak'tandır. O halde onlara uymak da zorunludur.

اَللّٰهُ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ وَعَلَى اللّٰهِ فَلْيَتَوَكَّلِ الْمُؤْمِنُونَ ﴿١٣﴾

13- "Allah, kendisinden başka hiçbir ilâh bulunmayandır. Müminler, yalnız Allah'a tevekkül etsinler."

يَٓا اَيُّهَا الَّذ۪ينَ اٰمَنُوٓا اِنَّ مِنْ اَزْوَاجِكُمْ وَاَوْلَادِكُمْ عَدُوًّا لَكُمْ
فَاحْذَرُوهُمْ وَاِنْ تَعْفُوا وَتَصْفَحُوا وَتَغْفِرُوا فَاِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَح۪يمٌ ﴿١٤﴾

14- “Ey iman edenler! Eşlerinizden ve çocuklarınızdan size düşman olabilecekler vardır. Onlardan sakının. Ama affeder, hoş görüp vazgeçer ve kusurlarını örterseniz, şüphesiz Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir.”

Seni, kendileri için dünyalık biriktirmeye çağırdıkları zaman bu takdirde onlar, senin düşmanındır. İffetinizi koruyarak dünyadan bir şeyler aldığınız zaman ise onlar sizin düşmanlarınız değildir.

اِنَّمَٓا اَمْوَالُكُمْ وَاَوْلَادُكُمْ فِتْنَةٌ وَاللّٰهُ عِنْدَهُٓ اَجْرٌ عَظ۪يمٌ ﴿١٥﴾

15- “Mallarınız ve çocuklarınız, ancak birer imtihandır. Allah katında ise büyük bir mükâfat vardır.”

( فِتْنَةٌ ) *“Birer imtihandır.”*

Çünkü onlar sizi, Allah’ın hakkını yerine getirmekten alıkoyar. Kendisini biriktirmekle meşgul olmak, seni Allah’tan uzak bırakan şey, senin için hayırlı değildir.

Bir yoruma göre de dünyalıkları doğru amacı dışında biriktirdiğiniz zaman, şüphesiz ondan dolayı Mevlâ’nızın hakkını yerine getirmekten alıkonulmuş olursunuz. Ayrıca çocuklarınız da sizi alıkoyar ve siz onlar yüzünden Allah’ın ibadetinden geri kalmış olursunuz. Bu da sizin için bir imtihandır. Siz onları düzeltmek istiyorsunuz, ancak kendiniz bozuluyorsunuz. Onlar ise düzelmezler.

فَاتَّقُوا اللّٰهَ مَا اسْتَطَعْتُمْ وَاسْمَعُوا وَاَط۪يعُوا وَاَنْفِقُوا خَيْرًا لِاَنْفُسِكُمْ
وَمَنْ يُوقَ شُحَّ نَفْسِه۪ فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ﴿١٦﴾

16- “O halde, gücünüz yettiği kadar Allah’a karşı gelmekten sakının. Dinleyin, itaat edin, kendi iyiliğiniz için harcayın. Kim nefsinin cimriliğinden korunursa, işte kurtuluşa erenler onlardır.”

Yani siz, bir şekilde güç sahibi ve teklife muhatap olduğunuz sürece, Allah'a karşı gelmekten sakının. Bu arada, takvada bir kusur işlemedikten sonra takvayı görmekten sakınmak, takvanın son sınırıdır.

( وَمَنْ يُوقَ شُحَّ نَفْسِهِ فَأُولَٰئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ) "*Kim*", kalbinden kaygıların çıkıp gitmesi ve varlıkların köleliğinden azat olmak için, "*nefsinin cimriliğinden korunursa işte kurtuluşa erenler onlardır.*"

إِنْ تُقْرِضُوا اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا يُضَاعِفْهُ لَكُمْ وَيَغْفِرْ لَكُمْ وَاللّٰهُ شَكُورٌ حَلِيمٌ ﴿١٧﴾

17- "Eğer siz, Allah'a güzel bir borç verirseniz, Allah onu size kat kat öder ve sizi bağışlar. Allah, şükrün karşılığını verendir, halimdir."

Allah bu hitabı, zenginlere mallarını harcamaları için, fakirlere de günlerini ve vakitlerini kendi amaçlarından boşaltıp Hakk'ın muradını nefislerinin muradına tercih etmeleri için yöneltmiştir.

Bu çerçevede zengine: *"Benim hükmümü, malınla ilgili amacına tercih et"* denir. Fakire de şöyle denilir. *"Nefsinde, kalbinde, vaktinde ve zamanında benim hükmümü tercih et."*

عَالِمُ الْغَيْبِ وَالشَّهَادَةِ الْعَزِيزُ الْحَكِيمُ ﴿١٨﴾

18- "O, gaybı da görünen âlemi de bilendir, mutlak güç sahibidir, hüküm ve hikmet sahibidir."

O'nun şanı yücedir.

سورة الطَّلَاقِ

# TALÂK SÛRESİ

(Talak Sûresi 12 âyettir. Medine'de inmiştir. İlk yedi âyet, ailede boşanma ile ilgili hükümleri içerdiğinden, sûre "Talâk" adını almıştır. Sûrede başlıca; talak (boşama), iddet, nafaka, kural tanımayanlar için Allah'ın azabı, Hz. Peygamber'in görevi, yer ve göklerin yaratılması konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", kendisine ulaşmak mümkün olmayan, başkalarıyla, O'nun yaptıklarına olan ihtiyaç ortadan kalkmayan Allah'ın adıdır. "Bismillah", öyle bir isimdir ki onu bilen, her türlü ıstırap ve yok edilmeye maruz kalır. Âlimler, ilimlerinin serabıyla yetinip rahatladılar. Arifler ise O'nun hükmünün hükümranlığıyla delillerinden koparıldılar ve böylece yok olup gittiler.

يَٓا اَيُّهَا النَّبِيُّ اِذَا طَلَّقْتُمُ النِّسَٓاءَ فَطَلِّقُوهُنَّ لِعِدَّتِهِنَّ وَاَحْصُوا الْعِدَّةَ
وَاتَّقُوا اللّٰهَ رَبَّكُمْ لَا تُخْرِجُوهُنَّ مِنْ بُيُوتِهِنَّ وَلَا يَخْرُجْنَ اِلَّٓا اَنْ
يَأْت۪ينَ بِفَاحِشَةٍ مُبَيِّنَةٍ وَتِلْكَ حُدُودُ اللّٰهِ وَمَنْ يَتَعَدَّ حُدُودَ اللّٰهِ فَقَدْ
ظَلَمَ نَفْسَهُ لَا تَدْر۪ي لَعَلَّ اللّٰهَ يُحْدِثُ بَعْدَ ذٰلِكَ اَمْرًا ﴿١﴾

1- "Ey peygamber! Kadınları boşamak istediğinizde, onları, iddetlerini dikkate alarak boşayın ve iddeti sayın. Rabbiniz olan Allah'a

karşı gelmekten sakının. Apaçık bir hayâsızlık yapmaları dışında, onları evlerinden çıkarmayın, kendileri de çıkmasınlar. Bunlar, Allah'ın sınırlarıdır. Kim, Allah'ın sınırlarını aşarsa, şüphesiz kendine zulmetmiş olur. Bilemezsin, olur ki Allah, sonra yeni bir durum ortaya çıkarır."

Boşama, ayrılık olduğu halde ve bir yönden mekruh olsa da Allah onu yasaklamamıştır.

Boşamanın vakte bağlı özel hükümleri vardır. Bu çerçevede sünnete uygun boşama, bidat olan boşama, sünnet veya bidat olmayıp mubah olan boşama kısımları vardır. Sünnete uygun boşama, kadının temiz iken ve cinsi münasebet olmaksızın bir talak ile boşanmasıdır. Bidat olan boşama, hayız halinde veya kadınla cinsi münasebetin vaki olduğu temizlik halindeki boşamadır. Mubah boşama ise, hayızdan sonra temiz iken cinsi münasebette bulunmadan önce birden fazla talak ile gerçekleşen boşamadır.

İddet ise her ne kadar fıkha göre kocanın soyunu korumak, yani suyunun başkasının suyuyla karışmaması içinse de anlamının ağır basan en güçlü yanı onun, nikâh bağına dayalı eski birlikteliğe vefa için olmasıdır.

Daha sonra gelen ayetlerdeki işaret, birliktelik sona erdikten sonra henüz hayız görmemiş küçük yaştaki eş, menapoza giren eş ve ay hali sona eren eş için en azından bir vefa süresinin gerekliliğine yöneliktir. Hamile olan eşin iddeti ise doğum yapıncaya kadardır. Bütün bunlar, saygınlığı gözetmek içindir. Nitekim vefat iddetinin en uzun iddet olması da bu gerekçeye tanıklık etmektedir. Çünkü ölünün saygınlığı daha büyüktür. Aynı şekilde, iddet günlerinin uzatılmasının anlamı da dile getirdiğimiz vefa ve saygınlığı gözetmektir.

( وَتِلْكَ حُدُودُ اللّٰهِ وَمَنْ يَتَعَدَّ حُدُودَ اللّٰهِ فَقَدْ ظَلَمَ نَفْسَهُ ) *"Bunlar, Allah'ın sınırlarıdır. Kim, Allah'ın sınırlarını aşarsa, şüphesiz kendine zulmetmiş olur."*

Kulluk, bir şey eksiltmeden ve bir şey ilave etmeden Allah'ın koyduğu sınırda durmaktır. Nitekim her kim, Allah ile olan beraberliğinde sınırını gözetirse, Allah da ona ahdini halis kılar.

( لَا تَدْرِي لَعَلَّ اللّٰهَ يُحْدِثُ بَعْدَ ذٰلِكَ اَمْرًا ) *"Bilemezsin, olur ki Allah, sonra yeni bir durum ortaya çıkarır."*

Kimilerine göre ayetteki durumdan maksat, pişmanlıktır. Bir görüşe göre de bundan maksat çocuktur. Bir iddiaya göre ise bu durum, kocanın karısına veya kadının kocasına meyletmesidir. Çünkü kalpler değişir.

Boşamanın mubah kılınmasındaki işaret ise şöyledir: Daha önce sözü edilen saygı için hemcinslerle beraber sabretmek hak olduğuna göre, benzerlerle birlikte yaşamaktan kurtulmak ve tamamen Allah'ın ibadetine bağlanmak, daha önceliklidir ve daha çok haktır.

فَاِذَا بَلَغْنَ اَجَلَهُنَّ فَاَمْسِكُوهُنَّ بِمَعْرُوفٍ اَوْ فَارِقُوهُنَّ بِمَعْرُوفٍ
وَاَشْهِدُوا ذَوَيْ عَدْلٍ مِنْكُمْ وَاَقِيمُوا الشَّهَادَةَ لِلّٰهِ ذٰلِكُمْ يُوعَظُ
بِهِ مَنْ كَانَ يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ وَالْيَوْمِ الْاٰخِرِ وَمَنْ يَتَّقِ اللّٰهَ يَجْعَلْ لَهُ
مَخْرَجًا ﴿٢﴾ وَيَرْزُقْهُ مِنْ حَيْثُ لَا يَحْتَسِبُ وَمَنْ يَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ
فَهُوَ حَسْبُهُ اِنَّ اللّٰهَ بَالِغُ اَمْرِهِ قَدْ جَعَلَ اللّٰهُ لِكُلِّ شَيْءٍ قَدْرًا ﴿٣﴾

2, 3- "Boşanan kadınlar, iddetlerini doldurduklarında onları güzelce tutun yahut onlardan güzelce ayrılın. İçinizden iki adil kimseyi şahit tutun. Şahitliği Allah için doğru yapın. İşte bununla Allah'a ve ahiret gününe iman eden kimselere öğüt verilir. Kim Allah'a karşı gelmekten sakınırsa, Allah ona bir çıkış yolu hazırlar ve beklemediği yerden ona rızık verir. Kim Allah'a tevekkül ederse, O kendisine yeter. Şüphesiz Allah, emrini yerine getirendir. Allah, her şey için bir ölçü koymuştur."

Kul takvasında samimi olduğu zaman Allah onu, hamurdan kıl çeker gibi, kendisine hiçbir şey yapışmaksızın, meşguliyetlerinin arasından çekip çıkarır. Bir de Allah, takva sahibinin üzerine inayetinin çadırlarını kurar, onu koruması altına alır, meşguliyetleri kalbinden geri çevirir, onu tedbirinin karanlığından çıkarır, her şeyden arındırır ve takdirinin fezasına nakleder.

( وَمَنْ يَتَوَكَّلْ عَلَى اللهِ فَهُوَ حَسْبُهُ ) "*Kim, Allah'a tevekkül ederse, O kendisine yeter.*"

Allah: "*Kim, Allah'a tevekkül ederse, tevekkülü ona yeter*" dememiş de:

( فَهُوَ حَسْبُهُ ) "*O kendisine yeter*" buyurmuştur. Yani Allah ona yeterlidir.

( اِنَّ اللهَ بَالِغُ اَمْرِهِ قَدْ جَعَلَ اللهُ لِكُلِّ شَيْءٍ قَدْرًا ) "*Şüphesiz Allah, emrini yerine getirendir. Allah, her şey için bir ölçü koymuştur.*"

Allah, kul için ezelde bir şey takdir ettiği zaman, ister istemez o gerçekleşir. Kulun tevekkülüyle de takdir değiştirilip geciktirilemez. Ancak tevekkülün temeli, kulun kalbinin rahat olması ve hoşnutsuzluk duymaması üzerine kurulmuştur. Bu da en büyük nimetlerdendir.

وَالّٰٓـئِ يَئِسْنَ مِنَ الْمَحِيضِ مِنْ نِسَآئِكُمْ اِنِ ارْتَبْتُمْ فَعِدَّتُهُنَّ ثَلٰثَةُ اَشْهُرٍ وَالّٰٓـئِ لَمْ يَحِضْنَ وَاُولَاتُ الْاَحْمَالِ اَجَلُهُنَّ اَنْ يَضَعْنَ حَمْلَهُنَّ وَمَنْ يَتَّقِ اللّٰهَ يَجْعَلْ لَهُ مِنْ اَمْرِهِ يُسْرًا ﴿٤﴾

4- "Kadınlarınızdan adetten kesilmiş olanlarla henüz adet görmeyenler konusunda tereddüt ederseniz, onların bekleme süresi üç aydır. Hamile olanların bekleme süresi ise, doğum yapmalarıyla sona erer. Kim Allah'a karşı gelmekten sakınırsa, Allah ona işinde bir kolaylık verir."

Tevekkül, kendini tedbirin dışına çıkmış görmendir. Takdirin hükümleri, senin hiçbir tedbirin ve Allah'ın hükmüne ıttılaın olmaksızın,

hakkında cereyan eder. Kulun yolu ise, konu hakkında bilgi arayışına girmeksizin, teslimiyet ve rızadır. Hadiste de: *"Allah'ım! Ben, faydasız bir ilimden sana sığınırım"* buyrulmuştur. Kendisinden Allah'a sığınman gereken faydasız ilimden biri de bir meşguliyetinin olması ya da karşına önemli bir durum çıkıp hakkındaki tedbirin şekli konusunda kafa karışıklığı yaşamandır. Bu durumda sen, işi Allah'a havale etmekle yükümlü olursun. Bu nedenle bilgi arayışına girmen, bu işin ne zaman, hangi sebeple, hangi yönden ve kimin eliyle düzeleceğini bilmeyi temenni etmen, bunun tamamı karıştırmadır ve hiçbiri büyük insanlara göre kesin değildir.

O halde durup güzelce rıza göstermen gerekir. Nihayet keşif vakti geldiği zaman, durumun resmini görüp anlayacaksın. Kul, bu durumda uykuda bir bilginin gelmesini bekleyebilir veya (...) bakabilir yahut da vakit hakkında konuşmaya mezun kılınan birinin dilinden halinin izahını umabilir. Ancak bunun tamamı, edebi terk etmektir. Allah ise, dostlarından buna rıza göstermez aksine, olması gereken husus, durup beklemektir.

ذٰلِكَ اَمْرُ اللّٰهِ اَنْزَلَهُٓ اِلَيْكُمْ وَمَنْ يَتَّقِ اللّٰهَ يُكَفِّرْ عَنْهُ سَيِّاٰتِهِ وَيُعْظِمْ
لَهُٓ اَجْرًا ﴿٥﴾

5- "İşte bu, Allah'ın, size indirdiği emridir. Kim Allah'a karşı gelmekten sakınırsa, Allah onun kötülüklerini örter ve onun mükâfatını büyütür."

اَسْكِنُوهُنَّ مِنْ حَيْثُ سَكَنْتُمْ مِنْ وُجْدِكُمْ وَلَا تُضَٓارُّوهُنَّ لِتُضَيِّقُوا
عَلَيْهِنَّ وَاِنْ كُنَّ اُولَاتِ حَمْلٍ فَاَنْفِقُوا عَلَيْهِنَّ حَتّٰى يَضَعْنَ حَمْلَهُنَّ
فَاِنْ اَرْضَعْنَ لَكُمْ فَاٰتُوهُنَّ اُجُورَهُنَّ وَاْتَمِرُوا بَيْنَكُمْ بِمَعْرُوفٍ وَاِنْ
تَعَاسَرْتُمْ فَسَتُرْضِعُ لَهُٓ اُخْرٰى ﴿٦﴾

6- "Onları gücünüz nispetinde, oturduğunuz yerin bir bölümünde oturtun. Onları sıkıntıya sokmak için kendilerine zarar vermeye

kalkışmayın. Eğer hamile iseler, doğum yapıncaya kadar nafakalarını verin. Sizin için çocuğu emzirirlerse, onlara ücretlerini verin ve aranızda uygun bir şekilde anlaşın. Eğer anlaşamazsanız, çocuğu baba hesabına başka bir kadın emzirecektir."

لِيُنْفِقْ ذُو سَعَةٍ مِنْ سَعَتِهِ وَمَنْ قُدِرَ عَلَيْهِ رِزْقُهُ فَلْيُنْفِقْ مِمَّا اٰتٰيهُ اللّٰهُ
لَا يُكَلِّفُ اللّٰهُ نَفْسًا اِلَّا مَا اٰتٰيهَا سَيَجْعَلُ اللّٰهُ بَعْدَ عُسْرٍ يُسْرًا ﴿٧﴾

7- "İmkânı geniş olan, nafakayı imkânına göre versin. Rızkı dar olan da Allah'ın ona verdiği kadarından nafaka ödesin. Allah, bir kimseyi ancak kendine verdiği ile yükümlü kılar. Allah, bir güçlükten sonra bir kolaylık yaratacaktır."

Kulun rızkı geniş olduğu zaman, imkânı ölçüsünde vermek ve nafaka ödemekle yükümlü kılınır. Rızkı dar olan ise Allah'ın kendisine verdiğinden, yani ev eşyasından, kâr yoksa sermayeden, ürün yoksa toprağın bedelinden nafaka versin.

Her kim, anlık ihtiyaçlarına yetecek imkâna sahip olur da sonra yarını için fazlasına önem verirse bu, kendisinden hoş görülmeyecek bir önemseme olur ve sahibi yardıma mazhar olmaz. Her yönden çaresizlik meydana geldiği zaman ise şüphesiz Allah, bir kimseyi ancak kendine verdiği ile yükümlü kılar. Allah, darlıktan sonra bolluk verecektir. Bu kimse, söz verilenlerden olup verilen sözü tasdik etmesi, imanı ölçüsündedir. İmanı, kesinliği ölçüsünde, kesinlik de kısmete göredir. Allah'tan bolluk beklemek, rıza ve varlık ile yokluğun eşit olması sınırının altına düşen, ancak ümitsizlik sınırının üzerinde olan ve nefsi güzel sözlerle avutarak yiğitlerin gölgesinde yaşayan orta halli kimselerin özelliğidir. Bu, ebediyen onların halidir. Bu durum, şu dizelerde söylediğimiz gibidir:

*Eğer zaman, başına bir sıkıntı getirirse*
*Yaşa sen, her türlüsünü hafifleterek*
*Zira yakında dağılacaktır bulutları*
*Ve sona erecek bütün tasarrufları*

وَكَاَيِّنْ مِنْ قَرْيَةٍ عَتَتْ عَنْ اَمْرِ رَبِّهَا وَرُسُلِهٖ فَحَاسَبْنَاهَا حِسَابًا
شَدٖيدًا وَعَذَّبْنَاهَا عَذَابًا نُكْرًا ﴿٨﴾ فَذَاقَتْ وَبَالَ اَمْرِهَا وَكَانَ عَاقِبَةُ
اَمْرِهَا خُسْرًا ﴿٩﴾

8, 9- "Nice kentlerin halkı, Rablerinin ve O'nun elçilerinin emrinden uzaklaşıp azdılar. Bu yüzden kendilerini çetin bir hesaba çektik ve görülmedik bir azaba çarptırdık. Böylece, yaptıklarının cezasını tattılar ve işlerinin sonu tam bir hüsran oldu."

Diken eken, gül biçmez. Kim de Allah'ın hakkını zayi ederse, nefsinin payı konusunda sözü dinlenmez. Kim Allah'ın emrine muhalefet etmeye cesaret ederse, Allah'ın cezasını çekmeye dayansın.

اَعَدَّ اللّٰهُ لَهُمْ عَذَابًا شَدٖيدًا فَاتَّقُوا اللّٰهَ يَٓا اُو۬لِي الْاَلْبَابِ اَلَّذٖينَ
اٰمَنُوا قَدْ اَنْزَلَ اللّٰهُ اِلَيْكُمْ ذِكْرًا ﴿١٠﴾ رَسُولًا يَتْلُوا عَلَيْكُمْ اٰيَاتِ اللّٰهِ
مُبَيِّنَاتٍ لِيُخْرِجَ الَّذٖينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ مِنَ الظُّلُمَاتِ
اِلَى النُّورِ وَمَنْ يُؤْمِنْ بِاللّٰهِ وَيَعْمَلْ صَالِحًا يُدْخِلْهُ جَنَّاتٍ تَجْرٖي
مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِدٖينَ فٖيهَٓا اَبَدًا قَدْ اَحْسَنَ اللّٰهُ لَهُ رِزْقًا ﴿١١﴾

10, 11- "Allah, ahirette onlara şiddetli bir azap hazırlamıştır. O halde ey iman etmiş olan akıl sahipleri, Allah'a karşı gelmekten sakının! Allah, size bir zikir indirdi. İman edip salih amel işleyenleri, karanlıklardan aydınlığa çıkarmak için size Allah'ın apaçık ayetlerini okuyan bir peygamber gönderdi. Kim Allah'a iman eder ve salih bir amel işlerse, Allah onu içinden ırmaklar akan, içinde ebedi kalacakları cennetlere sokar. Allah, gerçekten ona güzel bir rızık vermiştir."

Allah'ın kitabında her şeyin açıklaması vardır. Bu nedenle kim onun nuruyla aydınlanırsa hidayete erer. Kim de onun geniş alanına sığınırsa cehalet hastalığından şifa bulur.

Kim, Allah'a iman eder, Allah için ve Allah yolunda salih bir amel işlerse, onun için Allah'tan nimetlerin devamlılığı vardır.

( قَدْ اَحْسَنَ اللّٰهُ لَهُ رِزْقًا ) *"Allah, gerçekten ona güzel bir rızık vermiştir."*

Güzel rızık, kifayet sınırında -yetecek kadar- olandır. Ne işlerin aksamasına sebep olacak kadar eksiği ne de hırsından dolayı onu rızkından yararlanmaktan alıkoyacak kadar fazlası olur.

Kalplerin rızıkları da böyledir. En güzeli, anlık olarak meşgul olacağı hallerinin olmasıdır. Ne hasret kalmakla işkence çekmesine yol açan eksiği ne de ancak Allah'ın yardımıyla içinden çıkabileceği hataların tehlikesine yol açan fazlalığı olur.

اَللّٰهُ الَّذِي خَلَقَ سَبْعَ سَمٰوَاتٍ وَمِنَ الْاَرْضِ مِثْلَهُنَّ يَتَنَزَّلُ الْاَمْرُ بَيْنَهُنَّ لِتَعْلَمُوٓا اَنَّ اللّٰهَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ وَاَنَّ اللّٰهَ قَدْ اَحَاطَ بِكُلِّ شَيْءٍ عِلْمًا ﴿١٢﴾

12- "Allah, yedi göğü ve yerden bir o kadarını yaratandır. Allah'ın emri, bunlar arasından inip durmaktadır ki, Allah'ın her şeye kadir olduğunu ve Allah'ın her şeyi ilmiyle kuşattığını bilesiniz."

Allah, yedi kat göğü yaratmıştır. Yarattıkları ve emrettikleri konusunda hak sahibi olarak Allah, yaratacağını yaratmıştır ki biz celalinin liyakatini, sıfatlarının kemalini, karar verdiği hükmünü onayladığını ve ilmiyle her şeyi kuşattığını bilmiş olalım.

سورة التَّحْرِيم

# TAHRÎM SÛRESİ

(Tahrîm Sûresi 12 âyettir. Medine'de inmiştir. Hz. Peygamber'in bazı hanımları arasında geçen bir olaydan dolayı, Allah elçisinin bazı helal yiyecekleri kendisine haram kıldığını anlattığı, sûre adını ilk âyette geçen, "Tahrîm (haram kılma)" den almıştır. Sûrede başlıca; Hz. Peygamber'in eşlerine ve inananlara öğütler verilir, inanan ve inanmayan kadınların durumları iki örnekle anlatılır, kendini ve aile bireylerini ateşten koruma, nasûh tevbesi, küfür ehline ve münafıklara sert davranma, Nuh, Lut, Firavun'un karısı ile İmran kızı Meryem kıssaları konusu yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", O üstün varlığın adıdır ki kendisine karşı gelene mühlet verir, dönüş yapıp O'na yakardığı zaman da kendisini kabul eder. İşin başında samimi adımlarla tevessül etmeyip de daha sonra ömrünün sonunda samimi pişmanlığıyla aklanırsa, Allah ona bol mağfiretiyle muamelede bulunur, özrünü kabul eder, kazancını tamamlar ve kendisine bolca sevap verir.

يَٓا اَيُّهَا النَّبِيُّ لِمَ تُحَرِّمُ مَٓا اَحَلَّ اللّٰهُ لَكَۚ تَبْتَغ۪ي مَرْضَاتَ اَزْوَاجِكَۜ
وَاللّٰهُ غَفُورٌ رَح۪يمٌ ﴿١﴾

1- "Ey Peygamber! Eşlerinin rızasını gözeterek Allah'ın sana helal kıldığı şeyi niçin kendine haram ediyorsun? Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir."

Kıssada yer aldığına göre, Hz. Peygamber (s.a.v.), Hafsa'nın gönlünü almak için Mariye el-Kıptıyye'yi kendine haram etti ve bir ay kendisiyle cinsi münasebette bulunmamaya o anda yemin etti. Çünkü Hafsa, Hz. Peygamber'in (s.a.v.), onun gününde Mariye ile birlikte olduğunu görmüştü.

Bir iddiaya göre de hanımları kendisine: "Senden mağâfîr kokusu alıyoruz" deyince, Hz. Peygamber (s.a.v.), bal içmeyi kendine haram etti. Mağâfîr, kötü kokulu bir çöl reçinesidir. Kimisine göre ise bu kötü kokulu bir bakladır. Bunun üzerine Allah kendisine sitem etmiştir.

Küçük günah işlemesini caiz görenlere göre bu davranış, Hz. Peygamber'in işlediği küçük bir günahtır. Bunu caiz görmeyenlere göre ise bu, evlânın terkidir.

Bu konudaki diğer bazı görüşler de şöyledir:

- Hz. Peygamber (s.a.v.), Hafsa'yı bir talak ile boşadı. Bunun üzerine Allah, onu nikâhına geri almasını emretti ve Hz. Cibril kendisine: *"Hafsa, gündüz oruç tutan, gece namaz kılan bir kadındır"* dedi.

- Hz. Peygamber (s.a.v.), onu boşamamış da boşamaya niyet etmiş ve bunun üzerine Allah onu bundan alıkoymuştur.

- Hafsa, kendi gününde Hz. Peygamber'i (s.a.v.) Mariye ile birlikte görünce Hz. Peygamber (s.a.v.) ona şöyle dedi:

*"Sana bir sır söyleyeceğim. Onu kimseye anlatma: Bu iş, benden sonra Ebûbekir'de ve babanda olacaktır."*

Ancak Hafsa bunu Hz. Aişe'ye anlattı. Allah da bu durumu vahiy ile Hz. Peygamber'e (s.a.v.) bildirdi. Bunun üzerine Hz. Peygamber (s.a.v.), Hafsa'ya: *"Neden bunu Aişe'ye söyledin?"* diye sordu. Hafsa: *"Bunu sana kim haber verdi?"* dedi. Hz. Peygamber (s.a.v.): *"Allah, bana haber verdi"* diyerek Hafsa'ya, dediklerinin tamamını açıklamayıp bir kısmını anlattı. Nitekim Allah da: ( عَرَّفَ بَعْضَهُ وَاَعْرَضَ عَنْ بَعْضٍ ) *"Peygamber, bunun bir kısmını anlatmış, bir kısmından da vazgeçmişti"* buyurmuştur. Böylece Hz. Peygamber (s.a.v.), büyüklerin adeti

olduğu üzere, söylediklerinin bir kısmından dolayı Hafsa'ya sistem ederken bir kısmından vazgeçmiştir.

Bir yoruma göre de, bu ayet inince Hz. Peygamber (s.a.v.) sıkça şunu söylüyordu:

*"Allah'ım! Ben, beni senden koparacak her koparıcıdan sana sığınırım."*

Bu arada bu hitabın zâhiri, karısının gönlünü almak için Allah'ın kendisine helal kıldığını, kendine haram ettiği için Hz. Peygamber'e (s.a.v.) bir sitemdir.

Hitaptaki işaret ise her zaman Allah'ın hakkını her şeye öncelemenin gerektiğidir.

قَدْ فَرَضَ اللّٰهُ لَكُمْ تَحِلَّةَ اَيْمَانِكُمْ وَاللّٰهُ مَوْلٰيكُمْ وَهُوَ الْعَلِيمُ الْحَكِيمُ ﴿٢﴾

2- "Allah, yeminlerinizi bozmayı size meşru kılmıştır. Allah yardımcınızdır. O, hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."

Allah bunu, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) durumuna özen göstermek ve onu bağışlamak üzere indirmiştir. Bir iddiaya göre de Hz. Peygamber (s.a.v.) bir köle azat ederek kefaret ödemiş ve Mariye'yi tekrar nikâhına almıştır.

Bir de Allah, sünnetini şöyle koymuştur: Bir kul, kalbiyle birisinde huzur bulduğu zaman, Allah, has kulunun kalbine dönük gayretinden dolayı, tekrar Rabbine dönünceye kadar, huzur bulacağı yer konusunda onu şaşırtır, sonra kendisini güvence altına alır. Fakat bunu uzun bir süre sonra yapar.

Şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Bağlandığı zaman ruhum bir sevgiliye, takılır*
*Ona günlerin kıskançlıkları, koparmak için onu benden*

Öte yandan Allah, Hz. Peygamber'in kalbine, kendisiyle hanımları arasında karşılıklı unutma hissi salmış ve bunun üzerine kendisi, onlardan uzak durmuştur. Bu arada, hepsinin Allah'a dönüşü kalpleriyle olsun diye Hafsa'nın boşanma söylentisi, babasının kalbine gelenler, güvence sözü ve Hz. Peygamber'in (s.a.v.) yirmi dokuz gece Mariye ile cinsi münasebette bulunmaktan sakınması gibi bütün hususlar, Allah'ın Hz. Peygamber'e (s.a.v.) dönük gayretinden ve kalplerinde karışıklık meydana getirme iradesinden dolayıdır.

وَاِذْ اَسَرَّ النَّبِيُّ اِلٰى بَعْضِ اَزْوَاجِه۪ حَد۪يثًا فَلَمَّا نَبَّاَتْ بِه۪ وَاَظْهَرَهُ اللّٰهُ عَلَيْهِ عَرَّفَ بَعْضَهُ وَاَعْرَضَ عَنْ بَعْضٍ فَلَمَّا نَبَّاَهَا بِه۪ قَالَتْ مَنْ اَنْبَاَكَ هٰذَا قَالَ نَبَّاَنِيَ الْعَل۪يمُ الْخَب۪يرُ ﴿٣﴾

3- "Hani, peygamber, eşlerinden birine gizli bir söz söylemişti. Fakat eşi, o sözü başkasına anlatıp Allah da bunu peygambere bildirince, peygamber bunun bir kısmını bildirmiş, bir kısmından da vazgeçmişti. Peygamber bunu eşine haber verince o: 'Bunu sana kim bildirdi?' dedi. Peygamber: 'Bunu bana, hakkıyla bilen ve hakkıyla haberdar olan Allah haber verdi' dedi."

اِنْ تَتُوبَٓا اِلَى اللّٰهِ فَقَدْ صَغَتْ قُلُوبُكُمَا وَاِنْ تَظَاهَرَا عَلَيْهِ فَاِنَّ اللّٰهَ هُوَ مَوْلٰيهُ وَجِبْر۪يلُ وَصَالِحُ الْمُؤْمِن۪ينَ وَالْمَلٰٓئِكَةُ بَعْدَ ذٰلِكَ ظَه۪يرٌ ﴿٤﴾

4- "Eğer ikiniz, Allah'a tövbe ederseniz, ne iyi. Çünkü kalpleriniz kaydı. Eğer peygambere karşı birbirinize arka çıkarsanız bilin ki Allah onun yardımcısıdır, Cibril de, salih müminler de. Bunlardan sonra melekler de, ona arka çıkarlar."

Allah, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) o iki eşine, kalplerindeki kaygılardan yola çıktıkları için sitem etmiş, sonra da: (وَاِنْ تَظَاهَرَا عَلَيْهِ...) *"Eğer peygambere karşı birbirinize arka çıkarsanız..."* buyurmuştur.

(وَصَالِحُ الْمُؤْمِن۪ينَ) *"Salih müminler."*

Bunlar, Hz. Ebûbekir ve Hz. Ömer gibi içlerinden kalplerinde münafıklık olmayanlardır. Rivayette yer aldığına göre Hz. Ömer, bundan bir şeyler duyunca Hz. Peygamber'e (s.a.v.) şöyle demiştir:

*"Eğer bana emrederseniz, yemin ederim ki Hafsa'nın boynunu vururum."*

Ayetteki sitem, Mariye konusunda konuştukları için Hz. Aişe ve Hz. Hafsa'ya yöneliktir.

Sonra Allah, daha fazla sitem ve açıklama için şöyle buyurmuştur:

عَسٰى رَبُّهُٓ اِنْ طَلَّقَكُنَّ اَنْ يُبْدِلَهُٓ اَزْوَاجًا خَيْرًا مِنْكُنَّ مُسْلِمَاتٍ
مُؤْمِنَاتٍ قَانِتَاتٍ تَٓائِبَاتٍ عَابِدَاتٍ سَٓائِحَاتٍ ثَيِّبَاتٍ وَاَبْكَارًا ﴿٥﴾

5- "Eğer o, sizi boşarsa Rabbi ona sizden daha hayırlı, Müslüman, mümin, sebatla itaat eden, tövbekâr, ibadet eden, oruç tutan, dul ve bakire eşler verebilir."

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا قُوٓا اَنْفُسَكُمْ وَاَهْلِيكُمْ نَارًا وَقُودُهَا النَّاسُ
وَالْحِجَارَةُ عَلَيْهَا مَلٰٓئِكَةٌ غِلَاظٌ شِدَادٌ لَا يَعْصُونَ اللّٰهَ مَٓا اَمَرَهُمْ
وَيَفْعَلُونَ مَا يُؤْمَرُونَ ﴿٦﴾

6- "Ey iman edenler! Kendinizi ve ailenizi, yakıtı insanlar ve taşlar olan ateşten koruyun. O ateşin başında gayet katı, çetin, Allah'ın kendilerine verdiği emirlere karşı gelmeyen ve kendilerine emredilen şeyi yapan melekler vardır."

Yani onları bilgi sahibi kılın, terbiye edin, Allah'a itaat etmeye çağırın ve irşat edip ilim öğretmek suretiyle, azaba müstahak olmaktan alıkoyun.

Bu arada ayet, yakınlık derecesine göre insanlara din konusunda iyiliği emretmeyi ifade etmektedir.

Bir görüşe göre de yani sizden öğrenmeleri ve adetiniz gibi adetler edinmeleri için, ibadetlerinizi açıktan yapın.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Onlara sünnet ve cemaati gösterin.
- Onlara güzel ahlakı öğretin.
- Onlara, nasihati kabul etmeyi emredin.

( وَقُودُهَا النَّاسُ وَالْحِجَارَةُ ) *"Yakıtı insanlar ve taşlar olan."*

( وَقُود ) lafzı odun -yakıt- demektir.

Bir yoruma göre de insanların durumu bir taş veya bir çamur parçasıyla düzelir. Çünkü insanın aslı çamurdur. Şayet Allah, taşı çamurun yerine koyarsa lütfuna şaşılmaz.

Allah'ım! O halde cehenneme bizim yerimize bir taş at ve bizi ondan kurtar!

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ كَفَرُوا لَا تَعْتَذِرُوا الْيَوْمَ اِنَّمَا تُجْزَوْنَ مَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٧﴾

7- "Ey kâfir olanlar! Bugün özür dilemeyin! Siz ancak yapmakta olduklarınızın karşılığını görüyorsunuz."

Vakit geçtiği zaman durum ağırlaşır, kapı kapanır ve tedbirler geçersiz hale gelir. O halde kararın huzuruna ermek için yapılması gereken, acele edip kaçmaktır.

يَٓا اَيُّهَا الَّذِينَ اٰمَنُوا تُوبُوٓا اِلَى اللّٰهِ تَوْبَةً نَصُوحًا عَسٰى رَبُّكُمْ اَنْ يُكَفِّرَ عَنْكُمْ سَيِّـَٔاتِكُمْ وَيُدْخِلَكُمْ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ يَوْمَ لَا يُخْزِي اللّٰهُ النَّبِيَّ وَالَّذِينَ اٰمَنُوا مَعَهُ نُورُهُمْ يَسْعٰى بَيْنَ اَيْدِيهِمْ وَبِاَيْمَانِهِمْ يَقُولُونَ رَبَّنَٓا اَتْمِمْ لَنَا نُورَنَا وَاغْفِرْ لَنَا اِنَّكَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدِيرٌ ﴿٨﴾

8- “Ey iman edenler! Allah’a içtenlikle tövbe edin. Umulur ki Rabbiniz sizin kötülüklerinizi örter, peygamberi ve onunla birlikte iman edenleri utandırmayacağı günde Allah sizi, içlerinden ırmaklar akan cennetlere sokar. Onların nurları, önlerinden ve sağlarından aydınlatıp giderken onlar şöyle derler. ‘Ey Rabbimiz! Nurumuzu bizim için tamamla, bizi bağışla. Çünkü senin her şeye hakkıyla gücün yeter.’”

İçtenlikle yapılan tövbe, sonradan bozulmayan tövbedir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Bu tövbe, kendinden bilmediğin, kurtuluşunu kendisine bağlı bulmadığın ve sadece Rabbinden bildiğin tövbedir.

- Bu tövbe, hatadan söz edildiğinde kalbinde burukluk hissetmendir. Tıpkı daha önce, o hatayı yaparken nefsin için rahatlık hissettiğin gibi.

( وَيُدْخِلَكُمْ جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ يَوْمَ لَا يُخْزِي اللّٰهُ النَّبِيَّ وَالَّذِينَ اٰمَنُوا مَعَهُ ) *“Peygamberi ve onunla birlikte iman edenleri utandırmayacağı günde Allah sizi, içlerinden ırmaklar akan cennetlere sokar.”*

Allah, şefaatini terk etmek suretiyle Hz. Peygamber’i (s.a.v.), onunla birlikte iman edenleri de haklarında şefaatini kabul ettikten sonra rüsva etmek suretiyle utandırmaz.

( نُورُهُمْ يَسْعٰى بَيْنَ اَيْدِيهِمْ وَبِاَيْمَانِهِمْ ) *“Onların nurları, önlerinden ve sağlarından aydınlatıp gider.”*

Bununla Allah, imanın onları her taraftan kuşattığını ifade etmiştir.

Bir yoruma göre de sağ ellerinde kurtuluşlarının belgesi olan amel defterleri vardır. Yani Allah, tevhidlerinin nurunu, marifetlerinin nurunu, imanlarının nurunu ve o gün kendilerine has kılacağı diğer nurları kast etmiştir.

( يَقُولُونَ رَبَّنَآ اَتْمِمْ لَنَا نُورَنَا ) *“Onlar şöyle derler. ‘Ey Rabbimiz! Nurumuzu bizim için tamamla.’”*

Onlar, yalvarıp yakararak istemeyi sürdürürler.

يَٓا اَيُّهَا النَّبِيُّ جَاهِدِ الْكُفَّارَ وَالْمُنَافِقِينَ وَاغْلُظْ عَلَيْهِمْ وَمَاْوٰيهُمْ جَهَنَّمُ وَبِئْسَ الْمَصِيرُ ﴿٩﴾

9- "Ey Peygamber! Kâfirlere ve münafıklara karşı cihad et, onlara karşı sert davran. Onların varacağı yer cehennemdir. Ne kötü varılacak yerdir orası!"

Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) davet vaktinde yumuşak davranmasını emrederek şöyle buyurmuştur:

( وَجَادِلْهُمْ بِالَّتِي هِيَ اَحْسَنُ ) *"Onlarla en güzel şekilde mücadele et."* (Nahl, 16/125)

Sonra delilin açıklanmasından sonra da onlar ısrar edince Allah:( وَاغْلُظْ عَلَيْهِمْ ) *"Onlara karşı sert davran"* buyurdu. Çünkü bu, onların ısrarı ve mazeretlerinin ortadan kalkması halindedir.

ضَرَبَ اللّٰهُ مَثَلًا لِلَّذِينَ كَفَرُوا امْرَاَتَ نُوحٍ وَامْرَاَتَ لُوطٍ كَانَتَا تَحْتَ عَبْدَيْنِ مِنْ عِبَادِنَا صَالِحَيْنِ فَخَانَتَاهُمَا فَلَمْ يُغْنِيَا عَنْهُمَا مِنَ اللّٰهِ شَيْـًٔا وَقِيلَ ادْخُلَا النَّارَ مَعَ الدَّاخِلِينَ ﴿١٠﴾

10- "Allah, kâfir olanlara Nûh'un karısı ile Lût'un karısını örnek gösterdi. Bu ikisi, kullarımızdan iki salih kişinin nikâhları altında bulunuyorlardı. Derken onlara hainlik ettiler de kocaları, Allah'ın azabından hiçbir şeyi onlardan savamadı. Onlara: 'Haydi, ateşe girenlerle beraber siz de girin' denildi."

Taksimat günü o iki kadına firkat ezeli kader olunca, ceza günü yakınlık onlara fayda vermedi.

وَضَرَبَ اللّٰهُ مَثَلًا لِلَّذٖينَ اٰمَنُوا امْرَاَتَ فِرْعَوْنَۢ اِذْ قَالَتْ رَبِّ ابْنِ لٖي
عِنْدَكَ بَيْتًا فِي الْجَنَّةِ وَنَجِّنٖي مِنْ فِرْعَوْنَ وَعَمَلِهٖ وَنَجِّنٖي مِنَ الْقَوْمِ
الظَّالِمٖينَۙ ﴿١١﴾

11- "Allah, iman edenlere ise Firavun'un karısını örnek gösterdi. Hani, o: 'Rabbim! Bana katında, cennette bir ev yap. Beni Firavun'dan ve onun yaptığı işlerden koru ve beni zalimler topluluğundan kurtar!' demişti."

Kimilerine göre Firavun'un hanımı, cennette bir ev istemekle az şey istemiştir. Onun çok istemeye hakkı vardı. Ancak durum, bunların sandığı gibi değildir. Çünkü o:

( رَبِّ ابْنِ لٖي عِنْدَكَ بَيْتًا فِي الْجَنَّةِ ) "*Rabbim! Bana katında, cennette bir ev yap*" demek suretiyle yakın komşuluk talep etmiştir. Komşu olan bir ev ise komşu olmayan bin saraydan iyidir. Bilindiği üzere buradaki katındalık, yakınlık ve saygınlık anlamındadır. Lakin her halükârda o, başkasına göre meziyeti ve özelliği olan bir evdir.

Nitekim şu dizeler de bu anlamda söylenmiştir:

*Size komşu olduğu için kıskanıyorum ben komşunuzu*
*Ne mutlu senin evine komşu olana!*
*Keşke satsaydı bana komşun evinden*
*Bir karış da, verseydim ona bir karışa bir ev*

وَمَرْيَمَ ابْنَتَ عِمْرٰنَ الَّتٖٓي اَحْصَنَتْ فَرْجَهَا فَنَفَخْنَا فٖيهِ مِنْ رُوحِنَا
وَصَدَّقَتْ بِكَلِمَاتِ رَبِّهَا وَكُتُبِهٖ وَكَانَتْ مِنَ الْقَانِتٖينَ ﴿١٢﴾

12- "Allah, bir de iffetini sapasağlam koruyan ve bizim de kendisine ruhumuzdan üflediğimiz, Rabbinin kelimelerini ve kitaplarını doğrulayan İmran kızı Meryem'i de örnek gösterdi. O, itaat edenlerdendi."

Allah, sureyi Firavun'un hanımını anlattıktan sonra Hz. Meryem'i anlatarak bitirmiştir. Oysa ikisi de kadınlar cümlesindendir. Bu arada bu surede kadınlardan çok söz edilince Allah, Hz. Meryem'e özel bir değer vermek üzere, sureyi onsuz bırakmak istememiştir.

سورة الْمُلْكِ

# MÜLK SÛRESİ

(Mülk Sûresi 30 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk âyette geçen "mülk (egemen-lik- hükümranlık)" sözcüğünden almıştır. Ayrıca Tebâreke, Münciye, Mücâdele, Mânia ve Vâkıye adları da verilmiştir. Sûrede başlıca; Allah'ın gücü, yüceliği ve her şeyi bilmesi, insanın yaratılış nedeni, göklerin ibretli ve sağlam yapısı, küfür ehlinin azabı ve pişmanlığı, dünyadaki tabiat olaylarının insana boyun eğecek nitelikte yaratılması, rızık, insana verilen duyu organları, Allah'ın insana acıması ve nimetleri konuları yer alır.

Bu sûrenin fazileti ile ilgili çeşitli hadislerden kimileri şunlardır: Yanlışlıkla bir kabrin üzerine çadır kuran bir sahabenin orada Mülk Sûresi'ni okuduğunu öğrenen Hz. Peygamber şöyle buyurmuştur: "O sûre Mânia'dır. O kişiyi kabir azabından kurtarır." (Tirmizî, Sevâbü'l- Kur'an, 9. Hadis, hasen- garibtir). "Kur'an'dan otuz âyetli bir sûre bir adama şefâat etti. Sonunda o bağışlandı. İşte o sûre, 'Tebâreke...' sûresidir." (Tirmizî, Sevâbü'l-Kur'an, 98; İbn Mâce, Edeb, 52; A. İbn Hanbel, II, 299, 321). Hz. Aişe'den; "Allah'ın elçisi, Secde ve Mülk sûrelerini her gece okurdu. Ne hazarda ne de seferde bunu bırakmazdı." (bk. Süyûtî, *ed-Dürrü'l-Mensûr*, VIII, 232; Elmalılı, VIII, 174). Âlûsî: "Bu gibi rivâyetler nedeniyle, adı geçen sûrenin her gece okunmasının mendub olduğu söylenmiştir." demiştir. (Âlûsî, *Tefsir*, XXIX, 2).)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", O zâtın adıdır ki, kalpler ancak iltifatının esintisiyle güzel kokulanır, gözyaşları da ancak ayrılığının acısı veya vuslatının huzuruyla damlar. Bu itibarla onların gözyaşları her iki halde de akmakta, kalpleri her hallerinde yanıp tutuşmakta ve akılları, vakitlerinin çoğunda başlarından alınmaktadır.

تَبَارَكَ الَّذٖي بِيَدِهِ الْمُلْكُ وَهُوَ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ قَدٖيرٌ ﴿١﴾

1- "Hükümranlık elinde olan Allah, yücedir. O'nun her şeye gücü yeter."

İhsanı sayısız ve kesintisiz olan Allah, münezzeh ve yücedir. Büyüklüğünün celaliyle yücelik sahibi, güzelliğinin üstünlüğü ve haşmetinin devamlılığıyla da eşsiz olan, O'dur.

( الَّذٖي بِيَدِهِ الْمُلْكُ ) *"Hükümranlık elinde olan."*

Dilediğini ortaya çıkarmak, O'nun kudreti dâhilindedir. Aynı zamanda O, her şeye kadirdir.

اَلَّذٖي خَلَقَ الْمَوْتَ وَالْحَيٰوةَ لِيَبْلُوَكُمْ اَيُّكُمْ اَحْسَنُ عَمَلًا وَهُوَ الْعَزٖيزُ الْغَفُورُ ﴿٢﴾

2- "O, hanginizin daha güzel amel yapacağını sınamak için ölümü ve hayatı yaratmıştır. O, mutlak güç sahibidir, çok bağışlayıcıdır."

Allah, halkı sınamak için ölümü ve hayatı yaratmıştır. Şükür ve nankörlüklerinin kendisine görünmesi için sıkıntı halinde sabır konusunda, nimet esnasında da şükür konusunda nasıl olduklarını sınamaktadır. Aynı zamanda O, üstün güç sahibi ve bağışlayıcıdır.

اَلَّذٖي خَلَقَ سَبْعَ سَمٰوَاتٍ طِبَاقًا مَا تَرٰى فٖي خَلْقِ الرَّحْمٰنِ مِنْ تَفَاوُتٍ فَارْجِعِ الْبَصَرَ هَلْ تَرٰى مِنْ فُطُورٍ ﴿٣﴾

3- "O, yedi göğü tabaka tabaka yaratmıştır. Rahmân'ın yaratışında hiçbir uyumsuzluk göremezsin. Gözünü çevir de bir bak! Bir çatlak görüyor musun?"

Allah, yaratıcılığının gösterdikleriyle onlara kudretinin kemalini öğretmiştir. Şöyle ki O, göğü yükseltip sütunsuz tutmuş, onu yaratırken hiç kimseden yardım istemeksizin parçalarını bir araya

getirip kendisini yıldızlarla süslemiş, şeytanların gizlice dinlemesinden korumuş ve hiçbir öğreticinin öğretmesi olmadan muhkem ve sağlam yapmıştır.

(مَا تَرٰى ف۪ي خَلْقِ الرَّحْمٰنِ مِنْ تَفَاوُتٍ) *"Rahmân'ın yaratışında hiçbir uyumsuzluk göremezsin. Gözünü çevir de bir bak! Bir çatlak görüyor musun?"*

Allah'ın yarattıklarında hikmetin göstergeleriyle çelişen ve kudretinin kemalini göstermeyen hiçbir uyumsuzluk göremezsin.

Bir yoruma göre de Allah'ın yarattıklarında, hiçbirisine muhtaç olmaması ve yaratılışları bakımından bir farklılık göremezsin. Zira O'nun için çok şey yaratmak ile az şey yaratmak aynıdır. Çok olan, kendisine zorluk teşkil etmez. Çünkü O, kolaylık ve zorluktan münezzehtir.

O halde sen, inceden inceye bak ve tekrar tekrar inceleyip düşün. Bu esnada ne Allah'ın yaratıklarında bir kusur, ne de gücünün üstünlüğünde bir yetersizlik bulacaksın.

ثُمَّ ارْجِعِ الْبَصَرَ كَرَّتَيْنِ يَنْقَلِبْ اِلَيْكَ الْبَصَرُ خَاسِئًا وَهُوَ حَس۪يرٌ ﴿٤﴾

4- "Sonra tekrar tekrar bak. Bakışların bitkin ve aciz halde sana dönecektir."

وَلَقَدْ زَيَّنَّا السَّمَٓاءَ الدُّنْيَا بِمَصَاب۪يحَ وَجَعَلْنَاهَا رُجُومًا لِلشَّيَاط۪ينِ
وَاَعْتَدْنَا لَهُمْ عَذَابَ السَّع۪يرِ ﴿٥﴾

5- "Andolsun biz, en yakın göğü kandillerle donattık. Onları, şeytanlara atılan taşlar yaptık ve onlara alevli ateş azabını hazırladık."

Allah, göğü yıldızlarla, dostlarının kalplerini de türlü nurlarla süslemiştir. Bu çerçevede müminlerin kalpleri tasdik ve imanla, sonra delili düşünerek hakikate ulaşmakla, sonra da beyanı talep etmeye muvaffak olmakla süslüdür. Öte yandan ariflerin kalpleri

tevhid güneşiyle, ruhları tefrîd -yalnızlık- nurlarıyla, sırları ise tecrîd -dünyadan arınmışlığın- tezahürleriyle süslüdür. Buna göre her taifenin nurları vardır.

( وَجَعَلْنَاهَا رُجُومًا لِلشَّيَاطِينِ ) *"Onları, şeytanlara atılan taşlar yaptık."*

Böylece yıldızlardan bazısı, şeytanlara atılan taşlardır, kimisi de kendileriyle yol bulmak için bilinir. Bu bağlamda Allah, atılan taşlarla verilen bu miktar cezanın yeterli olmadığını, ebedi cezalarını ancak cehennemde vereceğini bildirmiştir.

وَلِلَّذِينَ كَفَرُوا بِرَبِّهِمْ عَذَابُ جَهَنَّمَ وَبِئْسَ الْمَصِيرُ ﴿٦﴾

6- "Rablerini inkâr edenler için cehennem azabı vardır. Ne de kötü varılacak yerdir orası!"

اِذَٓا اُلْقُوا فِيهَا سَمِعُوا لَهَا شَهِيقًا وَهِيَ تَفُورُ ﴿٧﴾

7- "Oraya atıldıklarında, onun kaynarken çıkardığı korkunç uğultuyu işitirler."

تَكَادُ تَمَيَّزُ مِنَ الْغَيْظِ كُلَّمَٓا اُلْقِيَ فِيهَا فَوْجٌ سَاَلَهُمْ خَزَنَتُهَٓا اَلَمْ يَاْتِكُمْ نَذِيرٌ ﴿٨﴾

8- "Neredeyse cehennem öfkeden çatlayacaktır! Oraya her bir topluluk atıldıkça oranın bekçileri onlara: 'Size bir uyarıcı gelmedi mi?' diye sorarlar."

Allah, kendisinin, peygamberler göndermeyi onlara karşı delil olarak getirdiğini ve meleklerin onlara: ( اَلَمْ يَاْتِكُمْ نَذِيرٌ ) "Size bir uyarıcı gelmedi mi?" diye sorduğunu bildirmiştir.

قَالُوا بَلٰى قَدْ جَٓاءَنَا نَذِيرٌ فَكَذَّبْنَا وَقُلْنَا مَا نَزَّلَ اللّٰهُ مِنْ شَيْءٍ اِنْ اَنْتُمْ اِلَّا فِي ضَلَالٍ كَبِيرٍ ﴿٩﴾

9- "Onlar da şöyle derler: 'Evet bize bir uyarıcı gelmişti. Fakat biz onu yalanlamış ve: 'Allah, hiçbir şey indirmemiştir. Siz ancak büyük bir sapıklık içindesiniz' demiştik.'"

وَقَالُوا لَوْ كُنَّا نَسْمَعُ اَوْ نَعْقِلُ مَا كُنَّا فٖيٓ اَصْحَابِ السَّعٖيرِ ﴿١٠﴾

10- "Yine şöyle derler: 'Eğer kulak vermiş ve aklımızı kullanmış olsaydık, şu alevli ateştekilerden olmazdık.'"

Burada Allah, onların kabul için dinlemediklerini, bu yüzden azaba müstahak olduklarını bildirmektedir. Onlar, ne nasihatçilerin nasihatlerini, ne vaaz verenlerini vaazlarını ne de onlar için bu vaazda bulunan hayatı dinlediler.

Bir de ayette müminler için bir müjde vardır. Çünkü onlar dinlerler ve dinlediklerini anlarlar. Zira hak ile dinleyen kimse, haktan söz eden herkesten hak ile ilgili olarak söylenen her şeyi iştir. Böylece işittiğini anlama kabiliyetine sahip olur. Çünkü o, hakikatlerin ehli olduğu zaman, işitmesi de Allah'tan, Allah ile ve Allah yolunda olur.

فَاعْتَرَفُوا بِذَنْبِهِمْ فَسُحْقًا لِاَصْحَابِ السَّعٖيرِ ﴿١١﴾

11- "İşte böylece günahlarını itiraf ederler. Artık alevli ateşte bulunanlar, Allah'ın rahmetinden uzak olsun!"

Günahlarını itiraf ederler ancak vaktinde değil. Bu nedenle şüphesiz onlara: "*Artık alevli ateşte bulunanlar, Allah'ın rahmetinden uzak olsun!*" denir.

اِنَّ الَّذٖينَ يَخْشَوْنَ رَبَّهُمْ بِالْغَيْبِ لَهُمْ مَغْفِرَةٌ وَاَجْرٌ كَبٖيرٌ ﴿١٢﴾

12- "Görmedikleri halde Rablerinden korkanlar için bir bağışlanma ve büyük bir mükâfat vardır."

Allah korkusu, kararsızlığa yol açar. Böylece kul, tedirginliğinden dolayı, tavadaki tane gibidir. Gecesinde de gündüzünde de karar

kılamayıp nefeslerin geliş gidişleriyle beraber cezalar bekler. Bir de Allah'a itaati arttıkça Allah'tan olan korkusu da artar.

وَاَسِرُّوا قَوْلَكُمْ اَوِ اجْهَرُوا بِهٖ اِنَّهُ عَلٖيمٌ بِذَاتِ الصُّدُورِ ﴿١٣﴾

13- "Sözünüzü gizleyin yahut onu açığa vurun, şüphesiz Allah, sinelerin özünü hakkıyla bilir."

Allah, onları ilmiyle korkutmuş ve kendisini gözetmeye özendirmiştir. Çünkü O, sırrı da daha gizlisini de bilir ve açığı da gizliyi de işitir.

اَلَا يَعْلَمُ مَنْ خَلَقَ وَهُوَ اللَّطٖيفُ الْخَبٖيرُ ﴿١٤﴾

14- "Yaratan bilmez mi? O, en gizli şeyleri bilir, her şeyden hakkıyla haberdardır."

Cisim veya arazlardan yaratıklarının her bir parçasında O'nun ilim ve hikmetine dair deliller vardır.

هُوَ الَّذٖي جَعَلَ لَكُمُ الْاَرْضَ ذَلُولًا فَامْشُوا فٖي مَنَاكِبِهَا وَكُلُوا مِنْ رِزْقِهٖ وَاِلَيْهِ النُّشُورُ ﴿١٥﴾

15- "O, yeryüzünü sizin ayaklarınızın altına serendir. Haydi, onun üzerinde yürüyün ve Allah'ın rızkından yiyin. Dönüş ancak O'nadır."

Yani siz yeryüzünde yürümek istediğiniz zaman, Allah onu size kolaylaştırır. Aynı şekilde Allah nefsi de itaatkâr kılmıştır. Eğer sen, onu uyumla yükümlü kılarsan onu yardımcı, uyumlu, izleyen ve yarışan bulursun. Nitekim onun vasfı hakkında şöyle denilmiştir:

*Nefistir o, neye alıştırırsan ona alışır*
*Zamanın da yerilen ve övülen günleri vardır*

ءَاَمِنْتُمْ مَنْ فِي السَّمَآءِ اَنْ يَخْسِفَ بِكُمُ الْاَرْضَ فَاِذَا هِيَ تَمُورُ
﴿١٦﴾ اَمْ اَمِنْتُمْ مَنْ فِي السَّمَآءِ اَنْ يُرْسِلَ عَلَيْكُمْ حَاصِبًا فَسَتَعْلَمُونَ
كَيْفَ نَذِيرِ ﴿١٧﴾ وَلَقَدْ كَذَّبَ الَّذِينَ مِنْ قَبْلِهِمْ فَكَيْفَ كَانَ نَكِيرِ ﴿١٨﴾

16, 17, 18- “Göktekinin sizi yere geçirivermeyeceğinden emin mi oldunuz? Bir de bakarsınız yeryüzü şiddetle çalkalanıyor. Yahut göktekinin, üzerinize taş yağdıran rüzgâr göndermeyeceğinden mi emin oldunuz? O zaman, uyarım nasılmış bileceksiniz! Andolsun, onlardan öncekiler de yalanlamıştı. Beni inkâr etmenin sonucu nasıl oldu!”

( مَنْ فِي السَّمَآءِ ) *“Gökteki.”*

Göktekilerden Allah, gökte yaşayan melekleri kast etmiştir. Onlar, azapla görevlidirler.

Allah burada onları, meleklerin, üzerlerine gökten azap indirmeleri veya onları yerin dibine batırmalarıyla korkutmuştur. Aynı şekilde tıpkı Lût kavminin üzerine gönderdikleri gibi onların üzerine de taşlar göndermeleriyle de kendilerini korkutmuştur. Bir de Allah, onlardan önce peygamberlerini yalanlayanların cezalarının nasıl olduğunu açıkladıktan sonra daha fazla açıklama yapmak üzere şöyle buyurmuştur:

اَوَلَمْ يَرَوْا اِلَى الطَّيْرِ فَوْقَهُمْ صَآفَّاتٍ وَيَقْبِضْنَ مَا يُمْسِكُهُنَّ اِلَّا
الرَّحْمٰنُ اِنَّهُ بِكُلِّ شَيْءٍ بَصِيرٌ ﴿١٩﴾

19- “Üstlerinde kanat çırparak uçan kuşlara bakmazlar mı? Onları ancak Rahmân havada tutuyor. Şüphesiz O, her şeyi hakkıyla görendir.”

Onlar, Allah’ın, kuşları değişik türler halinde nasıl yarattığını ve kanatları olduğu için uçma özelliğine sahip olduklarını görmezler mi? Oysa diğer cisimlerin bu özelliği yoktur. Onlar, havada kanatlarını

çırparken kendilerini kim tutup korumaktadır? Bir de aklın gereği nedir? Bu kuşları mı yoksa diğer cisimleri mi korumaktır?

اَمَّنْ هٰذَا الَّذِي هُوَ جُنْدٌ لَكُمْ يَنْصُرُكُمْ مِنْ دُونِ الرَّحْمٰنِ اِنِ
الْكَافِرُونَ اِلَّا فِي غُرُورٍ ﴿٢٠﴾

20- "Yahut Rahmân'dan başka size yardım edecek şu ordunuz kimlerdir? Kâfirler ancak bir aldanış içindedirler."

Eğer Allah senin hakkında bir kötülük dilerse, acaba O'nun dar kıldığını size kim genişletebilir? Veya O'nun var ettiğini kim yok edebilir? Yahut O'nun ertelediğini kim öne alabilir? Ya da O'nun öne aldığını kim erteleyebilir?

اَمَّنْ هٰذَا الَّذِي يَرْزُقُكُمْ اِنْ اَمْسَكَ رِزْقَهُ بَلْ لَجُّوا فِي عُتُوٍّ
وَنُفُورٍ ﴿٢١﴾

21- "Peki, Allah rızkını keserse, kimdir size rızık verecek olan? Hayır, onlar azgınlık ve nefretle direnip dururlar."

اَفَمَنْ يَمْشِي مُكِبًّا عَلٰى وَجْهِهٖ اَهْدٰٓى اَمَّنْ يَمْشِي سَوِيًّا عَلٰى
صِرَاطٍ مُسْتَقِيمٍ ﴿٢٢﴾

22- "Şimdi yüz üstü kapanarak düşe kalka yürüyen mi daha doğru gider, yoksa dosdoğru bir yolda dimdik yürüyen mi?"

قُلْ هُوَ الَّذِيٓ اَنْشَاَكُمْ وَجَعَلَ لَكُمُ السَّمْعَ وَالْاَبْصَارَ وَالْاَفْئِدَةَ
قَلِيلًا مَا تَشْكُرُونَ ﴿٢٣﴾

23- "De ki: 'O, sizi yaratan ve size kulaklar, gözler ve kalpler verendir. Ne kadar da az şükrediyorsunuz!'"

Allah size işitme, görme ve kalp sahibi olma özelliğini verdiği halde siz, O'nun büyük nimetlerine şükretmiyorsunuz.

قُلْ هُوَ الَّذِي ذَرَاَكُمْ فِي الْاَرْضِ وَاِلَيْهِ تُحْشَرُونَ ﴿٢٤﴾

24- "De ki: 'O, sizi yeryüzünde yaratıp çoğaltandır. Ancak O'nun huzurunda toplanacaksınız.'"

وَيَقُولُونَ مَتٰى هٰذَا الْوَعْدُ اِنْ كُنْتُمْ صَادِقِينَ ﴿٢٥﴾

25- "Diyorlar ki: 'Eğer doğru söyleyenler iseniz, bu uyarı ne zaman gerçekleşecek?'"

Allah, onlara cevap vererek, azabı çabuk istememelerini söylemiş ve onu gördükleri zaman, nasıl korkacaklarını ve nasıl pişman olacaklarını açıklamıştır.

قُلْ اِنَّمَا الْعِلْمُ عِنْدَ اللّٰهِ وَاِنَّمَٓا اَنَا۬ نَذِيرٌ مُبِينٌ ﴿٢٦﴾

26- "De ki: 'O bilgi, ancak Allah katındadır. Ben ise sadece apaçık bir uyarıcıyım.'"

فَلَمَّا رَاَوْهُ زُلْفَةً سٖٓيـَٔتْ وُجُوهُ الَّذِينَ كَفَرُوا وَقِيلَ هٰذَا الَّذِي كُنْتُمْ
بِهٖ تَدَّعُونَ ﴿٢٧﴾

27- "O azabı yakından gördükleri zaman kâfir olanların yüzleri kötüleşir ve onlara: 'İşte bu, isteyip durduğunuz şeydir' denir."

قُلْ اَرَاَيْتُمْ اِنْ اَهْلَكَنِيَ اللّٰهُ وَمَنْ مَعِيَ اَوْ رَحِمَنَا فَمَنْ يُجِيرُ
الْكَافِرِينَ مِنْ عَذَابٍ اَلِيمٍ ﴿٢٨﴾

28- "De ki: 'Söyleyin bakalım! Diyelim ki, Allah beni ve beraberimdekileri helak etti yahut bize merhamet etti. Peki, ya kâfirleri elem dolu bir azaptan kim koruyacak?'"

قُلْ هُوَ الرَّحْمٰنُ اٰمَنَّا بِهٖ وَعَلَيْهِ تَوَكَّلْنَا فَسَتَعْلَمُونَ مَنْ هُوَ فٖي ضَلَالٍ مُبٖينٍ ﴿٢٩﴾

29- "De ki: 'O, Rahmân'dır. O'na iman ettik, yalnızca O'na tevekkül ettik. Siz, kimin apaçık bir sapıklık içinde olduğunu yakında öğreneceksiniz!'"

Biz bütün işlerimizi sadece O'na havale etmiş bulunuyoruz.

قُلْ اَرَاَيْتُمْ اِنْ اَصْبَحَ مَٓاؤُكُمْ غَوْرًا فَمَنْ يَأْتٖيكُمْ بِمَٓاءٍ مَعٖينٍ ﴿٣٠﴾

30- "De ki: 'Söyleyin bakalım. Suyunuz çekiliverse, size kim temiz bir akarsu getirir?'"

Su, yerin altına çekilip eller ona ulaşamadığı zaman size onu kim getirir?

Bütün bu ayetler, onlara karşı delil olmak üzere indirilmiş ve hiç kimse ona cevap verememiştir.

سورة الْقَلَم

# KALEM SÛRESİ

(Kalem Sûresi 52 âyettir. 17-33 ve 48-52. âyetleri dışında Mekke'de inmiştir. Kur'an'dan âyet olarak ilk olarak "Ikra' bi'smi Rabbike." Alak Sûresi'nin başı, tam sûre olarak da tefsircilerin çoğuna göre Fâtiha Sûresi, sonra da Kalem sûresi inmiştir. Adını ilk âyette geçen "Kalem" den almıştır. Nûn Sûresi de denir. Sûrede başlıca; yazının önemi, müşriklerin Hz. Peygamber'i eleştirisi, küfür ehlinin kötü sıfatları, nimeti kendinden bilenlerin bahçelerinin yanması ve pişmanlıkları, sabır ve Yûnus kıssası ve göz değmesinin etkisi konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", öyle bir Kerim'in adıdır ki kim O'nun lütfunu görürse, bir daha hiçbir yaratığa boyun eğmez ve başına gelen hiçbir sıkıntı konusunda veya istediği bir iyilik hakkında varlıklı bir yaratıktan yardım dilemez.

Eğer Allah ona bir şey verirse, bunu şükürle karşılar. Şayet ondan alıkoyarsa, onu da güzel hamd ile kabul eder.

نٓ وَالْقَلَمِ وَمَا يَسْطُرُونَ ﴿١﴾

1- "Nûn. Andolsun kaleme ve satır satır yazdıklarına."

( ن ) *"Nûn."*

Bir görüşe göre bu, dünyanın sırtında durduğu balıktır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Nûn divittir.

- O, adı Nasır ve Nur olan bir anahtardır.

- Allah, mümin kullarına olan yardımına yemin etmiştir.

Ayrıca Allah, kaleme de yemin etmiş olup yeminin cevabı şu ayetlerdir:

مَٓا اَنْتَ بِنِعْمَةِ رَبِّكَ بِمَجْنُونٍ ۚ ﴿٢﴾

2- "Sen, Rabbinin nimeti sayesinde bir deli değilsin."

Düşmanların: "Şüphesiz o bir delidir" sözlerinin Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kalbinde yol açtığı burukluğu Allah, öyle olmadığını buyurmakla ortadan kaldırmış ve bunu, üzerine ettiği yeminle pekiştirmiştir. Aslında bu, Allah'ın Hz. Peygamber'le (s.a.v.) ilgili sünnetidir. Bu çerçevede Allah, düşmanların onun hakkında söylediklerini kendi hitabıyla onlara iade etmekte ve bunun, Hz. Peygamber'de bulunmadığını ifade etmektedir.

وَاِنَّ لَكَ لَاَجْرًا غَيْرَ مَمْنُونٍ ۚ ﴿٣﴾

3- "Bir de şüphe yok ki sana bitip tükenmeyen bir mükâfat vardır."

Yani eksilmeyen bir mükâfat vardır. Hz. Peygamber'in (s.a.v.) himmeti, karşılık beklemeyecek seviyeye yükselince Allah, onun için mükâfat ortaya koyarak: (وَاِنَّ لَكَ لَاَجْرًا غَيْرَ مَمْنُونٍ) *"Şüphe yok ki sana bitip tükenmeyen bir mükâfat vardır"* buyurdu. Yani sen talep etmesen de sana bu mükâfat vardır.

Bu ahlak da o büyük mükâfattandır. Böylece sen, mükâfat istiyor değilsin. Sen, bizim sayemizde istemiyorsun. Eğer biz sana bu özgürleşme özelliğini vermemiş olsaydık, sen de benzerlerin gibi karşılıkların esaretinde olurdun.

وَاِنَّكَ لَعَلٰى خُلُقٍ عَظٖيمٍ ﴿٤﴾

4- "Sen, elbette yüce bir ahlak üzeresin."

Nasıl ki Allah, Hz. Peygamber'e (s.av.) kendisinden önceki peygamberlerin haberlerini anlatmışsa, aynı şekilde ona, o peygamberlerin dağınık ahlaklarının kendisinde toplandığını da anlatarak: ( وَاِنَّكَ لَعَلٰى خُلُقٍ عَظٖيمٍ ) *"Sen, elbette yüce bir ahlak üzeresin"* buyurmuştur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) yeryüzünün anahtarlarını sunmuş fakat o, bunları kabul etmemiştir. Onu miraca yükseltmiş ve kendisine bütün ülkeyi ve cenneti göstermiş, ancak o, dönüp bunlara bakmamıştır. Nitekim Allah: ( مَا زَاغَ الْبَصَرُ وَمَا طَغٰى ) *"Göz şaşmadı ve aşmadı"* (Necm, 53/17) buyurmuştur. Böylece Hz. Peygamber (s.a.v.) sağa sola bakmamıştır. İşte bu nedenle Allah: ( وَاِنَّكَ لَعَلٰى خُلُقٍ عَظٖيمٍ ) *"Sen, elbette yüce bir ahlak üzeresin"* buyurmuştur.

- Sen, öyle büyük bir ahlak üzeresin ki, ne musibetle yoldan çıkıyor ne de lütufla yüz çeviriyorsun. Hz. Peygamber (s.a.v.), acı içinde başının yaralanmasına ve dişinin kırılmasına katlanmıştır. Bu halde iken şöyle diyordu:

*"Allah'ım! Kavmimi bağışla! Çünkü onlar bilmezler."*

Bir de yarın herkes: *"Nefsim nefsim!"* derken Hz. Peygamber (s.a.v.): *"Ümmetim ümmetim!"* diyecektir.

- Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) şu sözüyle ahlak güzelliklerini öğretmiştir:

( خُذِ الْعَفْوَ وَاْمُرْ بِالْعُرْفِ وَاَعْرِضْ عَنِ الْجَاهِلٖينَ ) *"Sen af yolunu tut, iyiliği emret, cahillerden yüz çevir."* (A'râf, 7/199)

Hz. Peygamber (s.av.), Hz. Cibril'e Rabbinin kendisine neyi emrettiğini sormuş, o da şöyle demiştir:

*"Allah sana ahlak güzelliklerini emrediyor. Sana şöyle diyor: Seninle akrabalık bağını koparan kimsenin akrabalık bağını gözet, seni mahrum edene ver ve sana zulmedeni bağışla."*

Bunun üzerine Hz. Peygamber bunu ahlak edinince Allah, onu övmüş ve:

( وَاِنَّكَ لَعَلٰى خُلُقٍ عَظِيمٍ ) *"Sen, elbette yüce bir ahlak üzeresin"* buyurmuştur.

فَسَتُبْصِرُ وَيُبْصِرُونَ ﴿٥﴾ بِاَيِّكُمُ الْمَفْتُونُ ﴿٦﴾

5, 6- "Hanginizin deli olduğunu yakında sen de göreceksin, onlar da görecekler."

( مَفْتُون ) lafzı, deli demektir. Çünkü deli, delilikle imtihan edilmiştir.

اِنَّ رَبَّكَ هُوَ اَعْلَمُ بِمَنْ ضَلَّ عَنْ سَبِيلِهِ وَهُوَ اَعْلَمُ بِالْمُهْتَدِينَ ﴿٧﴾

7- "Şüphesiz senin Rabbin, kendi yolundan sapan kişiyi daha iyi bilir. O, hidayete erenleri de daha iyi bilir."

فَلَا تُطِعِ الْمُكَذِّبِينَ ﴿٨﴾

8- "O halde yalanlayanlara boyun eğme."

Senin mabudun birdir. O halde maksudun da bir olsun. Maksudunu bir olarak gördüğün zaman da gördüğün bir olsun.

وَدُّوا لَوْ تُدْهِنُ فَيُدْهِنُونَ ﴿٩﴾

9- "İstediler ki yumuşak davranasın. Böylece onlar da yumuşak davransınlar."

Hastalanan kimse bütün insanların hasta olmasını temenni eder. Aynı şekilde hicranla dağlanan kimse, ona düşmanlık yapanların da kendisine ortak olmasını ister.

وَلَا تُطِعْ كُلَّ حَلَّافٍ مَهِينٍ ﴿١٠﴾

10- “Yemin edip duran aşağılık kimseye boyun eğme.”

Bu, gözümüzden düşen ve kendimizden uzaklaştırmak suretiyle bir kenara attığımız kimsedir.

هَمَّازٍ مَشَّآءٍ بِنَمِيمٍ ﴿١١﴾

11- “Daima kusur arayıp kınayan, laf taşıyan.”

Bizden perdelenmiş, dostlarımıza dil uzatmanın yol açtığı perişanlıkla cezalandırılan kimseye de uyma.

مَنَّاعٍ لِلْخَيْرِ مُعْتَدٍ اَثِيمٍ ﴿١٢﴾

12- “İyiliği hep engelleyen, saldırgan, günaha dadanmış.”

( مَنَّاعٍ لِلْخَيْرِ ) *“İyiliği hep engelleyen.”*

Cimrilikle aşağılanmış, muvaffakiyetten mahrum kılınmış kimse.

( مُعْتَدٍ اَثِيمٍ ) *“Saldırgan, günaha dadanmış.”*

Utanmaz, mahrumiyet vadilerinde darmadağın olmuş kimse.

عُتُلٍّ بَعْدَ ذٰلِكَ زَنِيمٍ ﴿١٣﴾

13- “Kaba saba, bütün bunların ötesinde bir de soysuz olan.”

Kötü soylu, erdemsiz, batılı sebebiyle husumeti şiddetli, hiçbir konuda gerçek iyiliğe dönüş yapmayan.

اَنْ كَانَ ذَا مَالٍ وَبَنِينَ ﴿١٤﴾

14- “Mal ve oğulları vardır diye.”

Yani mal ve oğulları vardır diye ona uyma. Sonra Allah yeniden söze başlayarak şöyle buyurmuştur:

اِذَا تُتْلٰى عَلَيْهِ اٰيَاتُنَا قَالَ اَسَاطِيرُ الْاَوَّلٖينَ ﴿١٥﴾

15- "Ayetlerimiz kendisine okunduğu zaman: 'Öncekilerin masalları!' der."

Ona ayetlerimiz okunduğu zaman, onlara yalanlamayla karşılık verir ve Kur'ân'ın masallardan olduğuna hükmeder.

سَنَسِمُهُ عَلَى الْخُرْطُومِ ﴿١٦﴾

16- "Biz, yakında onun burnuna damga vuracağız."

Yani kıyamet günü biz, onunla tanınsın diye şeklini bozarak onu burnunun üstünde tutacağız.

اِنَّا بَلَوْنَاهُمْ كَمَا بَلَوْنَٓا اَصْحَابَ الْجَنَّةِ اِذْ اَقْسَمُوا لَيَصْرِمُنَّهَا مُصْبِحٖينَ ﴿١٧﴾ وَلَا يَسْتَثْنُونَ ﴿١٨﴾

17, 18- "Şüphesiz biz, vaktiyle 'bahçe sahipleri'ne bela verdiğimiz gibi, onlara da bela verdik. Hani, o bahçe sahipleri, sabah erkenden bahçenin ürünlerini devşirmeye yemin etmişlerdi. Onlar, istisna da yapmıyorlardı. ('İnşaallah' demiyorlardı.)"

Yani biz onları imtihan ettik. Bu imtihan, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) onlara beddua ettiği zaman olmuştur. Bu beddua üzerine Allah, onları açlıkla imtihan etmiş, o kadar ki onlar, leş etleri yemişlerdir.

( كَمَا بَلَوْنَٓا اَصْحَابَ الْجَنَّةِ ) *"Bahçe sahiplerine bela verdiğimiz gibi."*

Rivayete göre Yemenli bir adamın bir meyve bahçesi ile üç oğlu vardı. Bu arada tırpanın ağzından kaçıp toplanmayan ürün yoksullara ait olurdu. Ürünler, yaygının üstüne boşaltılırken dışarıya dökülenler de yoksulların olurdu. Toplayıcıların yanlışlıkla toplamadıkları

hurma ve üzümleri de yoksullara bırakırdı. Bahçesinin ürününden bir servet birikiyordu. Adam ölünce varisleri şöyle dediler: "Bu mal, bizim aramızda dağıldı. Ancak bizim onun yaptığını yapmamız mümkün değildir." Ayrıca, fakirlere hiçbir şey vermemeye yemin ettiler. Bunun üzerine Allah, bahçelerini helak edince onlar pişman olup tövbe ettiler.

Bir iddiaya göre de Allah, onun yerine kendilerine güzel bir bahçe verdi. Bunun üzerine, bahçelerinin ürünlerini sabah erkenden, yoksullar farkına varmadan, devşireceklerine yemin ettiler, ancak "İnşaallah" demediler.

فَطَافَ عَلَيْهَا طَٓائِفٌ مِنْ رَبِّكَ وَهُمْ نَٓائِمُونَ ﴿١٩﴾ فَاَصْبَحَتْ
كَالصَّرِيمِ ﴿٢٠﴾ فَتَنَادَوْا مُصْبِحِينَ ﴿٢١﴾ اَنِ اغْدُوا عَلٰى حَرْثِكُمْ اِنْ
كُنْتُمْ صَارِمِينَ ﴿٢٢﴾ فَانْطَلَقُوا وَهُمْ يَتَخَافَتُونَ ﴿٢٣﴾ اَنْ لَا يَدْخُلَنَّهَا
الْيَوْمَ عَلَيْكُمْ مِسْكِينٌ ﴿٢٤﴾ وَغَدَوْا عَلٰى حَرْدٍ قَادِرِينَ ﴿٢٥﴾

19, 20, 21, 22, 23, 24, 25- "Nihayet onlar uykuda iken Rabbinden bir afet bahçeyi sardı. Böylece bahçe, yakılmış toprağa döndü. Derken sabahleyin birbirlerine: 'Hadi, eğer devşirecekseniz erkenden ürününüzün başına gidin' diye seslendiler. Bunun üzerine: 'Sakın, bugün orada hiçbir yoksul yanınıza sokulmasın' diye fısıldaşarak yola koyuldular. Güçleri yettiği halde erkenden yola çıktılar."

Allah, bahçenin üzerine gökten bir afet gönderdi. Bu afet meyvelerini yaktı ve bahçeleri karanlık geceye döndü. Bunun üzerine sabahleyin birbirlerine seslenerek: "Eğer devşirmek istiyorsanız, hadi erkenden ürününüzün başına gidin!" dediler. Ardından, kimsenin kendilerini duymaması için, kendi aralarında yüksek sesle konuşmadan yola çıktılar. Onlar, güç sahibi kimseler olarak devşirmeye yeltendiler. Bir yoruma göre de yoksullara kızarak buna yeltendiler.

فَلَمَّا رَاَوْهَا قَالُوٓا اِنَّا لَضَٓالُّونَ ﴿٢٦﴾

26- "Fakat bahçeyi o halde gördüklerinde: 'Biz, mutlaka yolumuzu şaşırmış olmalıyız' dediler."

Ancak bahçenin kökten yok edildiğini görünce: "Bu, bizim bahçemiz değildir" dediler.

بَلْ نَحْنُ مَحْرُومُونَ ﴿٢٧﴾

27- "'Hayır, meğer biz mahrum bırakılmışız' dediler."

Sonra şöyle dediler: "Doğrusu bu bizim bahçemizdir, ancak biz onun ürününden mahrum edildik."

قَالَ اَوْسَطُهُمْ اَلَمْ اَقُلْ لَكُمْ لَوْلَا تُسَبِّحُونَ ﴿٢٨﴾

28- "Onların sağduyu sahibi olanı: 'Ben size: 'Rabbinizi tesbih etseydiniz ya!' dememiş miydim?' dedi."

Yani istisna yapıp "İnşaallah" deseydiniz ya!

قَالُوا سُبْحَانَ رَبِّنَٓا اِنَّا كُنَّا ظَالِمِينَ ﴿٢٩﴾

29- "Onlar şöyle dediler: 'Rabbimizi tesbih ederiz. Şüphesiz biz, zalim kimseler imişiz.'"

فَاَقْبَلَ بَعْضُهُمْ عَلٰى بَعْضٍ يَتَلَاوَمُونَ ﴿٣٠﴾

30- "Bunun üzerine birbirlerini kınamaya başladılar."

Sonra birbirlerini kınamaya başladılar ve şöyle dediler:

قَالُوا يَا وَيْلَنَٓا اِنَّا كُنَّا طَاغِينَ ﴿٣١﴾

31- "Dediler ki: 'Yazıklar olsun bize! Gerçekten biz, azgın kimselermişiz.'"

عَسٰى رَبُّنَٓا اَنْ يُبْدِلَنَا خَيْرًا مِنْهَٓا اِنَّٓا اِلٰى رَبِّنَا رَاغِبُونَ ﴿٣٢﴾

32- "Belki Rabbimiz, bize bunun yerine daha iyisini verir. Çünkü biz, artık Rabbimizi arzulayan kimseleriz."

كَذٰلِكَ الْعَذَابُ وَلَعَذَابُ الْاٰخِرَةِ اَكْبَرُ لَوْ كَانُوا يَعْلَمُونَ ﴿٣٣﴾

33- "İşte böyledir azap! Ahiret azabı ise elbette daha büyüktür. Bir bilselerdi!"

İşte Mekkeliler için azap böyledir. Ahiret azabı ise elbette daha büyüktür.

Aynı şekilde güzel bir başlangıç yapan, peş peşe muvaffakiyet elde eden ve günahlardan sakınan kimsenin de durumu böyle olup Allah kendisine vakitte coşku verir ve bâtınında haller belirir. Derken kendisinden kötü bir iddia veya hizmet adabından biri terk etme meydana geldiği zaman, o haller yüzüne kapanır ve kötü amellerin içine düşer. Bu arada ibadetleri ihlal ve bazı farzları ihmal ettiği zaman ise hali ters yüz olur ve vuslattan uzaklaşmaya, yakınlıktan da kapıya yabancılaşmaya döndürülür. Böylece safiyeti kasvete dönüşür. Şayet ondan sonra tövbe eder ve yapmış olduklarından pişmanlık duysa da artık fırsatı kaçırmış olur ve haline kavuşma ihtimali azdır. Ancak Allah'ın, başlangıçtaki geçmiş hallerini gözeterek, lütuflarıyla kendisine nazar etmesi, ardından da onu kabul etmesi, uzak bir ihtimal değildir. Çünkü Allah, kullarına karşı şefkat sahibidir.

اِنَّ لِلْمُتَّق۪ينَ عِنْدَ رَبِّهِمْ جَنَّاتِ النَّع۪يمِ ﴿٣٤﴾

34- "Takva sahipleri için şüphesiz Rableri katında, nimetleri bol cennetler vardır."

Şirkten ve küfürden, sonra da günahlardan ve yoldan çıkmaktan sakınanlar için Allah katında sevap ve ecir vardır.

اَفَنَجْعَلُ الْمُسْلِم۪ينَ كَالْمُجْرِم۪ينَ ﴿٣٥﴾

35- "Biz, Müslümanları suçlular gibi kılar mıyız?"

مَا لَكُمْ كَيْفَ تَحْكُمُونَ ﴿٣٦﴾

36- "Size ne oluyor? Nasıl hüküm veriyorsunuz?"

Nasıl hüküm veriyorsunuz? Elinizde bir delil mi var?

اَمْ لَكُمْ كِتَابٌ ف۪يهِ تَدْرُسُونَ ﴿٣٧﴾

37- "Yoksa size ait bir kitabınız var da ondan mı okuyorsunuz?"

اِنَّ لَكُمْ ف۪يهِ لَمَا تَخَيَّرُونَ ﴿٣٨﴾

38- "Onda: 'Seçip beğendiğiniz her şey sizindir' diye mi yazılı?"

اَمْ لَكُمْ اَيْمَانٌ عَلَيْنَا بَالِغَةٌ اِلٰى يَوْمِ الْقِيٰمَةِ اِنَّ لَكُمْ لَمَا تَحْكُمُونَ ﴿٣٩﴾

39- "Yahut bizden, her ne hükmederseniz mutlaka öyle olacağına dair kıyamet gününe kadar geçerli kesin sözler mi aldınız?"

Yoksa bizden, hakkında hüküm vereceğiniz sözler mi aldınız? Bu sorulardan maksat, bu hususların gerçek olmadığını ifade etmektir.

سَلْهُمْ اَيُّهُمْ بِذٰلِكَ زَع۪يمٌ ﴿٤٠﴾

40- "Sor onlara: 'Onların hangisi buna kefildir?'"

اَمْ لَهُمْ شُرَكَٓاءُ فَلْيَأْتُوا بِشُرَكَٓائِهِمْ اِنْ كَانُوا صَادِق۪ينَ ﴿٤١﴾

41- "Yoksa onların ortakları mı var? Doğru söyleyenler iseler, haydi getirsinler ortaklarını!"

يَوْمَ يُكْشَفُ عَنْ سَاقٍ وَيُدْعَوْنَ اِلَى السُّجُودِ فَلَا يَسْتَطِيعُونَ ﴿٤٢﴾

42- "O gün incikten açılır ve secdeye davet edilirler, fakat güç getiremezler."

Yani kıyamet gününün zorluğu ortaya çıkarılır.

Tefsirdeki yoruma göre de Arş'ın ayağı açılır.

Secde etmeleri emredilir. Bunun üzerine müminler secde ederler. Kâfirlere gelince onlar, belleri bağlandığı için eğilemezler.

Bir görüşe göre de hasta ölürken, güçsüzlüğünü görmesi için baldırı açılır. Nitekim müezzin: "Haydi namaza" derken onun buna gücü yetmez.

Hulasa Allah, onları bu sözle korkutmuştur. Bu durum, ya dünya hayatlarının sonunda ya da ahiret hayatlarının başında olur.

خَاشِعَةً اَبْصَارُهُمْ تَرْهَقُهُمْ ذِلَّةٌ وَقَدْ كَانُوا يُدْعَوْنَ اِلَى السُّجُودِ
وَهُمْ سَالِمُونَ ﴿٤٣﴾

43- "Gözleri horluktan aşağı düşmüş bir şekilde kendilerini zillet bürür. Halbuki onlar, sapasağlam iken de secdeye davet ediliyorlardı."

Allah, bunu kendilerine, hasretleri daha da artsın ve aleyhlerindeki delil daha da güçlü olsun diye hatırlatmaktadır.

فَذَرْنِي وَمَنْ يُكَذِّبُ بِهٰذَا الْحَدِيثِ سَنَسْتَدْرِجُهُمْ مِنْ حَيْثُ لَا
يَعْلَمُونَ ﴿٤٤﴾

44- "Beni, bu sözü yalanlayanlarla baş başa bırak! Biz, onları bilemeyecekleri biçimde adım adım helake yaklaştıracağız."

Onlar farkında olmadan biz, kendilerini azaba yaklaştıracağız.

Bu arada istidrac, Allah'ın bir şeyi dileyip istidrac sahibinden o şeyi neden dilediğini saklaması ve onu, ansızın yakalayıncaya dek bu duruma azar azar sürüklemesidir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- İstidrac, şükrünü unutturarak nimet imkânına kavuşturmaktır.

- İstidrac, onlar günahları artırdıkça, nimetlerini artırmaktır.

- İstidrac, Allah'ın, kulu hata halinde cezalandırmayıp azabı daha sonraya ertelemesidir.

- İstidrac, nimeti veren Allah'ı unutarak nimetle meşgul olmaktır.

- İstidrac, verilen mühletin uzunluğuna aldanmaktır.

- İstidrac, imrendiren bir zâhir ve karışık bir batındır.

وَاُمْل۪ي لَهُمْ اِنَّ كَيْد۪ي مَت۪ينٌ ﴿٤٥﴾

45- "Onlara mühlet veriyorum. Şüphesiz benim tuzağım sağlamdır."

Ben, onlara mühlet veriyorum. Onları yakaladığımda ise yakalayışım acı ve şiddetlidir.

اَمْ تَسْـَٔلُهُمْ اَجْرًا فَهُمْ مِنْ مَغْرَمٍ مُثْقَلُونَۚ ﴿٤٦﴾

46- "Yoksa sen onlardan bir ücret istiyorsun da onlar bu yüzden ağır bir borç yükü altına mı girmişlerdir?"

Yani, onları davet ettiğin dinin karşılığında üzerlerinde herhangi bir külfet bulunmamaktadır. Sana uydukları takdirde de üzerlerinde bir borç olmaz. Bu itibarla sen, ücret istemiyorsun. O halde gecikmenin ve kabulü terk etmenin sebepleri ne?

اَمْ عِنْدَهُمُ الْغَيْبُ فَهُمْ يَكْتُبُونَ ﴿٤٧﴾

47- "Yahut gayb kendi yanlarında da onlar mı yazıyorlar?"

Yoksa yanlarında gaybdan yalnız kendilerinin bildiği bir şey var da bu, onların daveti kabul etmemelerini mi gerektiriyor?

فَاصْبِرْ لِحُكْمِ رَبِّكَ وَلَا تَكُنْ كَصَاحِبِ الْحُوتِ اِذْ نَادٰى وَهُوَ مَكْظُومٌ ﴿٤٨﴾

48- "Sen, Rabbinin hükmünü sabırla bekle. Balık sahibi gibi olma! Hani o, kederli bir halde Rabbine yakarmıştı."

Balık sahibi, Hz. Yunus'tur.

(اِذْ نَادٰى وَهُوَ مَكْظُومٌ) *"O, kederli bir halde Rabbine yakarmıştı."*

Yani kavmine karşı öfke dolu olarak yakarmıştı. O halde ey Muhammed! Sen de, acele edip başına iş açan Yunus gibi acele etme, hükmümüz gerçekleşirken sebat göster ve takdirimize karşı çıkma.

لَوْلَٓا اَنْ تَدَارَكَهُ نِعْمَةٌ مِنْ رَبِّهٖ لَنُبِذَ بِالْعَرَٓاءِ وَهُوَ مَذْمُومٌ ﴿٤٩﴾

49- "Şayet Rabbinden ona bir rahmet yetişmemiş olsaydı, o mutlaka kınanmış bir halde ıssız yere atılacaktı."

Yani eğer Allah, lütfuyla ona merhamet etmeseydi, kötülenmiş olarak boş bir çöle atılacaktı. Ancak:

فَاجْتَبٰيهُ رَبُّهُ فَجَعَلَهُ مِنَ الصَّالِحٖينَ ﴿٥٠﴾

50- "Rabbi onu seçti ve salihlerden kıldı."

Allah onu, yüz bin veya daha fazla sayıda kimselere peygamber olarak göndermek suretiyle seçti ve kendisini salihlerden kıldı.

وَاِنْ يَكَادُ الَّذٖينَ كَفَرُوا لَيُزْلِقُونَكَ بِاَبْصَارِهِمْ لَمَّا سَمِعُوا الذِّكْرَ وَيَقُولُونَ اِنَّهُ لَمَجْنُونٌ ﴿٥١﴾

51- "Şüphesiz kâfir olanlar, zikri duyduklarında neredeyse gözleriyle seni deviriverecekTerdi. Bir de: 'Şüphesiz o bir delidir' diyorlar."

Onlar, gözleriyle bir şeye zarar vermek istedikleri zaman, üç gün aç kaldıktan sonra gelip o şeye bakıyor ve: "Bu, ne güzel şey!" diyorlardı. Bunun üzerine o şey, anında yere yığılıyordu. Nitekim bunu Hz. Peygamber'e de yaparak: "Bu ne fasih bir adam!" dediler. Ancak Allah onu korudu ve bunu kendisine anlatmak suretiyle ona lütufta bulundu.

وَمَا هُوَ اِلَّا ذِكْرٌ لِلْعَالَمِينَ ﴿٥٢﴾

52- "Oysa o, âlemler için ancak bir öğüttür."

سورة الْحَاقَّةِ

# HÂKKA SÛRESİ

(Hâkka Sûresi 52 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk âyetten alır. Sûrede başlıca; helâk edilen Ad, Semud, Firavun ve Lut kavimleri, Sûr'a üfürme ve dehşetli kıyamet sahneleri, kitabı sağ ve solundan verilenlerin durumu, Hz. Muhammed Allah'a karşı bir yalan uydursa, gücünün elinden alınacağı gibi konular yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" çok değerli bir söz olup onu duymada sen, gıybette kullanılmamış değerli bir kulağa ihtiyaç duyarsın. Onu tanımada da, gaflette ve gıybette değer yitirmemiş, sahibi mertebe sağlayan şeye göz dikmeyen, sahibinin nefsi de eğlence ve düzenbazlık peşinde koşmayan değerli bir kalbe muhtaç olursun.

اَلْحَٓاقَّةُۙ ﴿١﴾

1- "Gerçekleşecek olan kıyamet!"

( حاقّة ) kelimesi kıyametin adıdır. Çünkü kıyamet, her insana hakkını, iyi ve kötü ameline göre verir.

مَا الْحَٓاقَّةُۚ ﴿٢﴾

2- "Nedir o gerçekleşecek olan kıyamet?"

وَمَٓا اَدْرٰيكَ مَا الْحَٓاقَّةُ ﴿٣﴾

3- "Gerçekleşecek olan kıyametin ne olduğunu sen ne bileceksin?"

Bu, kıyametin büyük bir şey olduğunu ve durumunu vurgulu biçimde ifade eden bir istifham cümlesidir.

كَذَّبَتْ ثَمُودُ وَعَادٌ بِالْقَارِعَةِ ﴿٤﴾

4- "Semûd ve Âd kavimleri, kapılarını çalacak felaketi yalanladılar."

Allah bu surede, peygamberlerini yalanlayan, küfürlerinde ısrar eden, peygamberlerinin nasihatlerini kabul etmeyen, bu nedenle helak ettiği ve kendilerinden peygamberlerinin intikamını aldığı ümmetleri anlatmıştır.

Onları anlatmanın hikmeti ise kendilerinden ibret almak, aynı şeyin bunların da başına gelmemesi için onların yaptıklarından kurtulmaktır.

Öte yandan bu ümmetin cezası kıyamete ertelenmiştir. Ancak havaslarının azabı, dünyada verilir. Bu çerçevede bu taifeden birileri, bir sırrı ifşa veya bir edebi ihlal ettikleri zaman Allah onları, perdelenmişlik rüzgârlarıyla cezalandırır. Böylece kalplerinde ne dine saygıdan ne de daha önce sahip oldukları vakitlerden bir eser kalır. Bir de onlar, kadere ve kısmete itiraz etmekle imtihan edilmek suretiyle, halleri bakımından tehlike içinde olurlar.

Firavun ve kavmine gelince, onların azabı boğulmakla olmuştu. Aynı şekilde bir kimse, boş vakti olup Rabbinin ibadetiyle meşgul ve Hakk'ın ikbaline mazhar iken, nimete şükretmediği, edebini bozduğu ve Allah'ın kendisine verdiği nimetlerin kadrini bilmediği zaman, Hak onu tefrikanın sebeplerine geri çevirir, sonra da kendisini meşguliyet denizlerinde boğar. O zaman meşrebi bulanır ve Hakk'ın öfkesine ve gazabına yakalanmak suretiyle hep tehlikede olur.

فَاَمَّا ثَمُودُ فَاُهْلِكُوا بِالطَّاغِيَةِ ﴿٥﴾

5- "Semûd kavmi, korkunç bir sarsıntı ile helâk edildi."

وَاَمَّا عَادٌ فَاُهْلِكُوا بِرٖيحٍ صَرْصَرٍ عَاتِيَةٍ ﴿٦﴾

6- "Âd kavmine gelince, onlar da uğultulu ve dondurucu şiddetli bir rüzgârla helak edildi."

سَخَّرَهَا عَلَيْهِمْ سَبْعَ لَيَالٍ وَثَمَانِيَةَ اَيَّامٍ حُسُومًا فَتَرَى الْقَوْمَ فٖيهَا
صَرْعٰى كَاَنَّهُمْ اَعْجَازُ نَخْلٍ خَاوِيَةٍ ﴿٧﴾

7- "Allah, onu kesintisiz olarak yedi gece, sekiz gün onların üzerine musallat etti. Öyle ki o kavmi, içi boş hurma kütükleri gibi oracıkta yere serilmiş halde görürdün."

فَهَلْ تَرٰى لَهُمْ مِنْ بَاقِيَةٍ ﴿٨﴾

8- "Şimdi onlardan geri kalan bir şey görüyor musun?"

وَجَٓاءَ فِرْعَوْنُ وَمَنْ قَبْلَهُ وَالْمُؤْتَفِكَاتُ بِالْخَاطِئَةِ ﴿٩﴾

9- "Firavun, ondan öncekiler ve yerle bir olan şehirler, hep o suçu işlediler."

فَعَصَوْا رَسُولَ رَبِّهِمْ فَاَخَذَهُمْ اَخْذَةً رَابِيَةً ﴿١٠﴾

10- "Öyle ki, Rablerinin elçilerine karşı geldiler. Bunun üzerine Allah da onları, gittikçe artan bir azap ile yakaladı."

اِنَّا لَمَّا طَغَا الْمَٓاءُ حَمَلْنَاكُمْ فِي الْجَارِيَةِ ﴿١١﴾

11- "Şüphesiz su bastığı vakit, sizi gemide biz taşıdık."

Allah, has dostlarını afiyet gemisinde esenliğe kavuştururken, onlara olan lütfu da böyle olur. Oysa o esnada âlem, değişik niteliklerdeki meşguliyet denizlerinin dalgalarıyla boğuşmaktadır. Böylece o dostlar, esenlik içinde olup hiç kimseyle ne bir kavgaları ve hesapları vardır ne de kimseden bir şey beklemeleri söz konusudur. Onlar insanlardan, insanlar da onlardan emindirler.

لِنَجْعَلَهَا لَكُمْ تَذْكِرَةً وَتَعِيَهَآ اُذُنٌ وَاعِيَةٌ ﴿١٢﴾

12- "Bu olayı sizin için bir uyarı yapalım ve belleyecek kulaklar da onu bellesin diye."

فَاِذَا نُفِخَ فِي الصُّورِ نَفْخَةٌ وَاحِدَةٌ ﴿١٣﴾ وَحُمِلَتِ الْاَرْضُ وَالْجِبَالُ
فَدُكَّتَا دَكَّةً وَاحِدَةً ﴿١٤﴾ فَيَوْمَئِذٍ وَقَعَتِ الْوَاقِعَةُ ﴿١٥﴾

13, 14, 15- "Sûr'a bir defa üfürülünce, yeryüzü ve dağlar kaldırılıp birbirine bir çarptırılınca, işte o gün olacak olmuştur."

وَانْشَقَّتِ السَّمَآءُ فَهِيَ يَوْمَئِذٍ وَاهِيَةٌ ﴿١٦﴾

16- "Gök de yarılmış ve artık o gün o da, çökmeye yüz tutmuştur."

وَالْمَلَكُ عَلٰٓى اَرْجَآئِهَا وَيَحْمِلُ عَرْشَ رَبِّكَ فَوْقَهُمْ يَوْمَئِذٍ
ثَمَانِيَةٌ ﴿١٧﴾

17- "Melekler, göğün etrafındadır. O gün Rabbinin arşını, bunların da üstünde sekiz melek taşır."

Allah, burada kıyameti ve hesabı anlatmaya başlamıştır.

يَوْمَئِذٍ تُعْرَضُونَ لَا تَخْفٰى مِنْكُمْ خَافِيَةٌ ﴿١٨﴾

18- "O gün arz olunursunuz. Hiçbir sırrınız gizli kalmaz."

Her nefeste bu kavmin bir muhasebesi ve yükümlülüğü vardır. Onlardan kimisi, itaba müstahak olurken kimisi de azaba müstahak olur.

فَاَمَّا مَنْ اُوتِيَ كِتَابَهُ بِيَمِينِهِ فَيَقُولُ هَاۤؤُمُ اقْرَؤُا كِتَابِيَهْ ﴿١٩﴾ اِنّ۪ي ظَنَنْتُ اَنّ۪ي مُلَاقٍ حِسَابِيَهْ ﴿٢٠﴾

19, 20- "İşte o vakit, kitabı kendisine sağından verilen kimse der ki: 'Gelin, kitabımı okuyun! Çünkü ben, hesabımla karşılaşacağımı zaten biliyordum.'"

Allah'ın nimetiyle sevinmesi kesinleşir, hamd ve övgüye başlar.

فَهُوَ ف۪ي ع۪يشَةٍ رَاضِيَةٍ ﴿٢١﴾

21- "Artık o, hoşnut bir hayat içindedir."

O topluluk, yarın hoşnut, yani kendilerince hoşnut olunan bir hayat içindedirler. Bu topluluk da bugün hoşnut bir hayat içindedir. İkisi arasındaki fark ise şudur: Onlar, yarın hoşnut bir hayat içindedirler. Çünkü ihtiyaçları karşılanmış, arzuları ortadan kalkmış ve gereksinimleri gerçekleşmiştir. Bunlar ise bugün hoşnut bir hayat içindedirler. Çünkü onlar, arzularını engellemiş ve bu nedenle ihtiyaçlarını kalplerinin dışına itmişlerdir. Böylece onlar bir şey istemezler ve hiçbir şeye ihtiyaç hissetmezler. Onlar, sadece hoşnutluğun huzuru içindedirler. Bu nedenle, evvelkilerin hayatı verilen şeye, bunların hayatı ise rızaya bağlıdır. Çünkü hakikate dayalı bir bilgi veya onun manalarından biri ortaya çıktığı zaman, ortada ne ihtiyaç ne de istek kalır.

ف۪ي جَنَّةٍ عَالِيَةٍ ﴿٢٢﴾

22- "Yüksek bir cennettedir."

قُطُوفُهَا دَانِيَةٌ ﴿٢٣﴾

23- "Meyveleri yakındır."

Onlara yarın şöyle denir:

كُلُوا وَاشْرَبُوا هَنِئًا بِمَٓا اَسْلَفْتُمْ فِي الْاَيَّامِ الْخَالِيَةِ ﴿٢٤﴾

24- "Geçmiş günlerde yaptıklarınıza karşılık afiyetle yiyin, için."

Bunlara da şöyle denir: "İşitin ve görün." Bizden işitin, bize bakın, bizim yakınlığımızla ünsiyet bulun, cemalimizi ve celalimizi düşünün. Siz bizimlesiniz ve bizim içinsiniz -bizimsiniz-.

وَاَمَّا مَنْ اُو۫تِيَ كِتَابَهُ بِشِمَالِه۪ فَيَقُولُ يَا لَيْتَن۪ي لَمْ اُو۫تَ كِتَابِيَهْ ﴿٢٥﴾
وَلَمْ اَدْرِ مَا حِسَابِيَهْ ﴿٢٦﴾ يَا لَيْتَهَا كَانَتِ الْقَاضِيَةَ ﴿٢٧﴾

25, 26, 27- "Kitabı kendisine sol tarafından verilen ise şöyle der: 'Keşke kitabım bana verilmeseydi. Hesabımın ne olduğunu da bilmeseydim. Keşke ölüm, her şeyi bitirseydi.'"

Bugün ortada terk edilmiş öyle birileri vardır ki, hasretleri göğe yükselmekte ve iniltileri gece gündüz katlanmaktadır. Böylece geceleri işkence, gündüzleri de uzaklıktır. Pınarları bulanmış ve ünsiyetlerinin yurtları yıkılmıştır. Ne ağlamalarına acınmakta ne de iniltileri duyulmaktadır. Kendilerince onlar uzaklaştırılmışlardır. Oysa hakikatte Allah tarafından kendilerine merhamet edilmektedir. Allah, üzerlerine örtü çekip onları kendi gözlerinde küçültmüştür. Oysa onlar, hikâyedekilerin en değerlileridir.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Sana olan aşkımı inkâr etmemi yadırgama*
*Çünkü sadece üstüne çekilmiş bir örtüdür o inkâr*

مَٓا اَغْنٰى عَنّ۪ي مَالِيَهْ ﴿٢٨﴾

28- "Malım, bana hiçbir yarar sağlamadı."

هَلَكَ عَنّ۪ي سُلْطَانِيَهْ ﴿٢٩﴾

29- “Saltanatım da yok olup gitti.”

خُذُوهُ فَغُلُّوهُ ﴿٣٠﴾

30- “Onu yakalayıp bağlayın.”

ثُمَّ الْجَح۪يمَ صَلُّوهُ ﴿٣١﴾

31- “Sonra onu cehenneme atın.”

ثُمَّ ف۪ي سِلْسِلَةٍ ذَرْعُهَا سَبْعُونَ ذِرَاعًا فَاسْلُكُوهُ ﴿٣٢﴾

32- “Sonra uzunluğu yetmiş arşın olan zincire vurun onu.”

اِنَّهُ كَانَ لَا يُؤْمِنُ بِاللّٰهِ الْعَظ۪يمِ ﴿٣٣﴾

33- “Çünkü o, yüce Allah’a iman etmiyordu.”

وَلَا يَحُضُّ عَلٰى طَعَامِ الْمِسْك۪ينِ ﴿٣٤﴾

34- “Yoksulu doyurmaya da teşvik etmiyordu.”

فَلَيْسَ لَهُ الْيَوْمَ هٰهُنَا حَم۪يمٌ ﴿٣٥﴾

35- “Bu sebeple bugün burada onun samimi bir dostu yoktur.”

وَلَا طَعَامٌ اِلَّا مِنْ غِسْل۪ينٍ ﴿٣٦﴾

36- “Kanlı irinden başka bir yiyeceği de yoktur.”

لَا يَأْكُلُهُٓ اِلَّا الْخَاطِؤُ۫نَ ﴿٣٧﴾

37- “Onu günahkârlardan başkası yemez.”

فَلَٓا اُقْسِمُ بِمَا تُبْصِرُونَ ﴿٣٨﴾ وَمَا لَا تُبْصِرُونَ ﴿٣٩﴾

38, 39- "Görebildiklerinize ve göremediklerinize yemin ederim."

Ayetteki ( لَا ) harfi, zait olup anlamı "yemin ederim" şeklindedir. Allah şöyle demiş olmaktadır: "Her şeye yemin ederim." Çünkü gördükleri ve görmedikleri dışında üçüncü bir şey yoktur. Kasemin cevabı şudur:

اِنَّهُ لَقَوْلُ رَسُولٍ كَرِيمٍ ﴿٤٠﴾

40- "Hiç şüphesiz o, çok şerefli bir elçinin sözüdür."

Yani o, Allah katında itibarlı bir elçinin sözüdür. Çok şerefli elçinin sözü ise Kur'ân veya Kur'ân'ı okumaktır.

وَمَا هُوَ بِقَوْلِ شَاعِرٍ قَلِيلًا مَا تُؤْمِنُونَ ﴿٤١﴾ وَلَا بِقَوْلِ كَاهِنٍ قَلِيلًا مَا تَذَكَّرُونَ ﴿٤٢﴾

41, 42- "O, bir şairin sözü değildir. Ne de az inanıyorsunuz! Bir kâhinin sözü de değildir. Ne de az düşünüyorsunuz!"

Yani Muhammed ne şairdir ne de kâhin. Aksine o söz,

تَنْزِيلٌ مِنْ رَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿٤٣﴾

43- "Âlemlerin Rabbi tarafından indirilmiştir."

وَلَوْ تَقَوَّلَ عَلَيْنَا بَعْضَ الْاَقَاوِيلِ ﴿٤٤﴾ لَاَخَذْنَا مِنْهُ بِالْيَمِينِ ﴿٤٥﴾
ثُمَّ لَقَطَعْنَا مِنْهُ الْوَتِينَ ﴿٤٦﴾ فَمَا مِنْكُمْ مِنْ اَحَدٍ عَنْهُ حَاجِزِينَ ﴿٤٧﴾

44, 45, 46, 47- "Eğer peygamber bize isnat ederek bazı sözler uydursaydı, mutlaka onu kudretimizle yakalardık. Sonra da mutlaka

onun şah damarını keserdik. Hiçbiriniz de bu cezayı engelleyip ondan savamazdı."

Yani eğer Muhammed bizim adımıza söz uydursaydı, onu bundan men eder ve söz uydurmaktan onu korurduk. Şayet bunu kasten yapsaydı, onu cezalandırırdık. Bu arada, peygamberlerin masum olduğuna inanmak vaciptir. Sonra ne sizden ne de sizin dışınızdan ona yardımcı olacak kimse olmazdı.

Bu Kur'ân'a gelince;

وَاِنَّهُ لَتَذْكِرَةٌ لِلْمُتَّق۪ينَ ﴿٤٨﴾

48- "Şüphesiz o, Allah'a karşı gelmekten sakınanlara bir öğüttür."

وَاِنَّا لَنَعْلَمُ اَنَّ مِنْكُمْ مُكَذِّب۪ينَ ﴿٤٩﴾

49- "Şüphesiz biz, içinizden yalanlayanların olduğunu elbette biliyoruz."

وَاِنَّهُ لَحَسْرَةٌ عَلَى الْكَافِر۪ينَ ﴿٥٠﴾

50- "Şüphesiz Kur'ân, kâfirler için mutlaka bir pişmanlık sebebidir."

وَاِنَّهُ لَحَقُّ الْيَق۪ينِ ﴿٥١﴾

51- "Şüphesiz Kur'ân, gerçek kesin bilgidir."

Ayetteki "hakkalyakîn (kesin gerçek)" tabiri "yakîn" ile aynı anlamdadır. Bu itibarla buradaki "hak" lafzının "yakîn" lafzına izafeti, bir şeyin kendine izafeti kabilindendir.

Öte yandan insanlar, kesin gerçeğe ulaşmada izledikleri yollar, kapalılık ve açıklık bakımından değişir. Bu nedenle ilmelyakîn, aynelyakîn ve hakkalyakîn arasında dile getirilen fark, delillerin çokluğuna, yolun kapalı ve açık oluşuna, sonra bir kısmının za-

ruri, bir kısmının da kesbî oluşuna, sonra da anlama yeteneklerine dayanmaktadır.

فَسَبِّحْ بِاسْمِ رَبِّكَ الْعَظِيمِ ﴿٥٢﴾

52- "O halde sen, yüce Rabbinin adıyla tesbih et."

سورة الْمَعَارِجِ

# MAÂRİC SÛRESİ

(Meâric Sûresi 44 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını 3. âyette geçen "Meâric (yükselme dereceleri)"ten almıştır. Sûrede başlıca; kıyametin dehşet verici sahneleri, gelecek azap, insanın kendini kurtarmak için herkesi feda etmeye kalkışması, insanı cennete götüren ameller, küfür ehlinin kabirden kalkışı konuları yer alır. Bütün âyetler birbirine bağlı olduğu için bir defada indiği söylenebilir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir sözdür ki onu söyleyen, cemalini bulur. Onu gören de celalini görmüş olur. Ancak her söyleyen, ona kavuşmuş olmaz. Tedbiriyle ona ulaşmaya çalışan herkes de onun celalini anlamış olmaz.

O, akılların idrakinin erişemeyeceği yüceliktedir. O, samediyet gerçeğini ifade eden bir sözdür. O, kulun her durumda dile getirmesi gereken bir sözdür.

سَاَلَ سَٓائِلٌ بِعَذَابٍ وَاقِعٍ ﴿١﴾

1- "Soran birisi, inecek olan azabı sordu."

( بِعَذاب ) tabirinin başındaki ( باء ) harfi ( عَنْ ) anlamındadır. Yani soran birisi, bu azabın kimler için olduğunu sordu. Bunun üzerine Allah şöyle buyurdu:

لِلْكَافِرِينَ لَيْسَ لَهُ دَافِعٌ ﴿٢﴾ مِنَ اللّٰهِ ذِي الْمَعَارِجِ ﴿٣﴾

2, 3- "O, kâfirler içindir. Onu savacak kimse yoktur. O, yükselme derecelerinin sahibi Allah'tandır."

Bu azap, kâfirler içindir. Onu savacak hiç kimse de yoktur. O, yükselme yollarının sahibi olan Allah tarafındandır. Bu itibarla bu azap Allah'tandır.

( ذي المَعارِج ) sözü, lütfun ve velilerini ulaştırdığı yüksek derecelerin sahibi demektir.

تَعْرُجُ الْمَلٰٓئِكَةُ وَالرُّوحُ اِلَيْهِ فِي يَوْمٍ كَانَ مِقْدَارُهُ خَمْسِينَ اَلْفَ سَنَةٍ ﴿٤﴾

4- "Melekler ve Ruh, ona süresi elli bin yıl olan bir günde yükselir."

Ruh, Cibril demektir. Miktarı, dünya günlerinden elli bin sene kadar olan günden maksat da kıyamet günüdür.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, kısa bir günde ve az bir zamanda o kadar çok kimselerin hesabını görmektedir ki eğer bununla insanlar uğraşsalardı, bu süre elli bin yıl olurdu. Oysa Allah, onu bir günde gerçekleştirir.

- Yaratıkların en aşağısından en yukarısına kadar olan mesafe, insanlar için elli bin yıllık yoldur. Melekler ise bu mesafenin en aşağısından en yukarısına bir günde çıkmaktadır.

فَاصْبِرْ صَبْرًا جَمِيلًا ﴿٥﴾

5- "O halde sen, güzel bir şekilde sabret."

O halde ey Muhammed, onların eziyetlerini çekmeye güzel bir şekilde sabret. Bu arada güzel sabır, içinde şikâyet olmayan sabırdır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Güzel sabır, sabrı ağır değil, aksine tatlı bulmandır.

- Güzel sabır, kulun içinden çıkmayı beklemediği, sakin ve razı olduğu şeydir.

- Güzel sabır, kişinin, bela ile imtihan eden Allah'ı görme halinde olmasıdır.

- Güzel sabır, şikâyet ve iddiadan arınmış olan şeydir.

إِنَّهُمْ يَرَوْنَهُ بَعِيدًا ﴿٦﴾ وَنَرٰيهُ قَرِيبًا ﴿٧﴾

6, 7- "Şüphesiz onlar, o azabı uzak görüyorlar. Biz ise, onu yakın görüyoruz."

Gelecek olan, şüphesiz yakındır. Onu uzak sayan da ancak şüphe içinde olduğu için uzak saymıştır. Bir şeyden emin olan kimse ise onu uzak saymaz.

يَوْمَ تَكُونُ السَّمَآءُ كَالْمُهْلِ ﴿٨﴾ وَتَكُونُ الْجِبَالُ كَالْعِهْنِ ﴿٩﴾

8, 9- "Göğün, erimiş maden gibi ve dağların atılmış renkli yün gibi olacağı günü hatırla."

Bundaki işaret şudur: Kibirliliğinin doruğunda ve saldırganlığının çirkinliği içinde olan kimse o gün yumuşar ve zavallılaşır. Şerefli geçinen güçsüzleşir, zelil kılan da zelil olur.

وَلَا يَسْـَٔلُ حَمِيمٌ حَمِيمًا ﴿١٠﴾

10- "Hiçbir samimi dost, dostunu sormaz."

Hiçbir yakın, yakınına zaman ayıramaz. Zira o gün, onlardan herkesin, kendine yetecek bir gailesi vardır. Çaresizlere ise o gün sadece Allah kefil olur.

يُبَصَّرُونَهُمْ يَوَدُّ الْمُجْرِمُ لَوْ يَفْتَدِي مِنْ عَذَابِ يَوْمِئِذٍ بِبَنِيهِ ﴿١١﴾
وَصَاحِبَتِهِ وَاَخِيهِ ﴿١٢﴾ وَفَصِيلَتِهِ الَّتِي تُؤْوِيهِ ﴿١٣﴾ وَمَنْ فِي الْاَرْضِ
جَمِيعًا ثُمَّ يُنْجِيهِ ﴿١٤﴾

11, 12, 13, 14- "Birbirlerine gösterilirler. Günahkâr kimse ister ki o günün azabından kurtulmak için oğullarını, karısını, kardeşini, kendisini koruyup barındıran tüm ailesini ve yeryüzünde bulunanların hepsini fidye olarak versin de kendisini kurtarsın."

( يُبَصَّرُونَهُمْ ) "*Birbirlerine gösterilirler.*"

Yani yakınlarını tanırlar ancak birbirlerine kalben acımazlar. O gün günahkâr kimse, akraba, nesep bağı bulunan, samimi dost ve evlat gibi, dünyada kendisi için en değerli olan varlığı, cehennemden kurtuluşun fidyesi olarak vermeyi temenni eder. Azaptan kurtulmak için o, yeryüzündeki her şeyi fidye olarak vermeyi temenni eder.

كَلَّا اِنَّهَا لَظٰى ﴿١٥﴾

15- "Hayır hayır! O, Lazâ'dır (alevlenen bir ateştir)."

( لَظٰى ) lafzı, cehennemin isimlerinden biridir.

نَزَّاعَةً لِلشَّوٰى ﴿١٦﴾

16- "Derileri kavurup soyar."

Dış yüzeyleri koparır atar. Deriyi yüzden ve kemiklerden sıyırır.

تَدْعُوا مَنْ اَدْبَرَ وَتَوَلّٰى ﴿١٧﴾ وَجَمَعَ فَاَوْعٰى ﴿١٨﴾

17, 18- "O, arka döneni ve yüz çevireni, servet toplayıp yığan kimseyi çağırır."

Cehennem, münafığa ve kâfire: "Ey falanca! Bana gel, bana gel" der.

Bundaki işaret ise şöyledir: Dünya cehennemi, kişinin kalbine takılarak hırs kancasıyla onu kendine davet eder ve dünyalıkları toplamaya sürükler. O kadar ki bu kimse, dünyayı hem kendine hem de kendisine bağlı herkese tercih eder. Dahası o, dünyasıyla çocuklarına ve azizlerine karşı dahi cimrilik eder. Nitekim dünyanın hile ve aldatmacalarından çok az kimse kurtulmuştur.

اِنَّ الْاِنْسَانَ خُلِقَ هَلُوعًا ﴿١٩﴾

19- "Şüphesiz insan, çok kaygılı yaratılmıştır."

Bunun tefsiri, aşağıdaki ayetlerdir:

اِذَا مَسَّهُ الشَّرُّ جَزُوعًا ﴿٢٠﴾ وَاِذَا مَسَّهُ الْخَيْرُ مَنُوعًا ﴿٢١﴾

20, 21- "Kendisine kötülük dokunduğu zaman sızlanır. Ona hayır ulaştığında da cimridir."

( هَلَع ) lafzı, kaygıyla birlikte olan şiddetli hırs demektir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- ( هَلُوعا ) şehevî arzuların şaşkınlıkları içerisinde debelenen demektir.

- Az olan, onu hoşnut kılar. Kolay olansa onu öfkelendirir.

- Sıkıntı halinde dua eder. Nimet halinde de unutup yanılır.

اِلَّا الْمُصَلّٖينَ ﴿٢٢﴾ اَلَّذٖينَ هُمْ عَلٰى صَلَاتِهِمْ دَآئِمُونَ ﴿٢٣﴾

22, 23- "Ancak namaz kılanlar hariç. Onlar, namazlarına devam eden kimselerdir."

Allah, namaz kılanları onlardan istisna etmiştir. Onlar, sonuna kadar ihtiyaç mevkilerine bağlı kalırlar. Çünkü "salât (namaz)" kelimesinin anlamlarından biri de bir yere bağlanmaktır.

وَالَّذِينَ فِيٓ اَمْوَالِهِمْ حَقٌّ مَعْلُومٌ ﴿٢٤﴾ لِلسَّآئِلِ وَالْمَحْرُومِ ﴿٢٥﴾

24, 25- "Onlar, mallarında, isteyenler ve mahrum kalanlar için belli bir hak bulunan kimselerdir."

Mahrum kalan, kimseden bir şey istemeyip iffetli olmaya çalışan kimsedir.

Öte yandan, mallarında başkalarının hakkı bulunan kimseler birkaç kısımdır: Onlardan kimisi, malının tamamıyla fedakârlık yapar. Bu gibi kimselerin malları, kimseyi ayırmaksızın, kapılarını çalan herkes içindir. Kimisi bazen verir, bazen de vermez. Bu gibi kimseler de onlardandır. Onlardan kimisi de kendini emanetçi olarak görür. Bu nedenle kendi tercihiyle tekellüfte bulunmaz ve ancak kendisine verilecek emir işaretini bekler. Bu işaret, ya elde tutmak şeklinde olur ki o zaman durur. Yahut da hepsini veya bazısını vermek şeklinde olur. Bu takdirde de yükümlü kılındığı şekilde ve vaktin hükmüne uygun olarak kabul eder. İşte bunlar, en mükemmel olanlarıdır.

وَالَّذِينَ يُصَدِّقُونَ بِيَوْمِ الدِّينِ ﴿٢٦﴾

26- "Onlar, ceza gününü tasdik eden kimselerdir."

Onların alameti ise ölüm gelmeden önce ona hazırlık yapmaları ve şu dizelerde söylendiği gibi olmalarıdır:

*Tek ayak üzerinde beklerler tetikte, sanki onlar*
*Göçüp gitmek isterler*

وَالَّذِينَ هُمْ مِنْ عَذَابِ رَبِّهِمْ مُشْفِقُونَ ﴿٢٧﴾

27- "Onlar, Rablerinin azabından korkan kimselerdir."

اِنَّ عَذَابَ رَبِّهِمْ غَيْرُ مَاْمُونٍ ﴿٢٨﴾

28- "Çünkü Rablerinin azabından emin olunamaz."

وَالَّذٖينَ هُمْ لِفُرُوجِهِمْ حَافِظُونَ ﴿٢٩﴾ اِلَّا عَلٰۤى اَزْوَاجِهِمْ اَوْ مَا
مَلَكَتْ اَيْمَانُهُمْ فَاِنَّهُمْ غَيْرُ مَلُومٖينَ ﴿٣٠﴾ فَمَنِ ابْتَغٰى وَرَٓاءَ ذٰلِكَ
فَاُو۬لٰٓئِكَ هُمُ الْعَادُونَ ﴿٣١﴾

29, 30, 31- "Onlar, mahrem yerlerini koruyan kimselerdir. Ancak eşleri veya sahip oldukları cariyeler hariç. Çünkü onlar kınanmazlar. Kim bunun ötesini isterse, işte onlar sınırı aşan kimselerdir."

Eşleriyle olan beraberlikleri de sadece iffetli kalmak ve nefsi korumak için, sonra da Allah'ı zikredecek bir çocuğunun olmasına yönelik arzusundan ötürüdür. Bu beraberliğin şartı, eşiyle kolay bir hayat yaşaması ve eşini, nefsinin arzusu istikametinde sürüklememesi, onu kendi muradına ve arzusuna zorlamamasıdır.

وَالَّذٖينَ هُمْ لِاَمَانَاتِهِمْ وَعَهْدِهِمْ رَاعُونَ ﴿٣٢﴾

32- "Onlar, emanetlerini ve verdikleri sözü gözeten kimselerdir."

Onlar, halkın yanlarında bulunan emanetlerini korurlar ve o emanetlerde hıyanet etmezler. Hakk'ın, yanlarındaki emanetleri ise zâhir organları olup, onlar bu organları hatalarla kirletmezler. Bu çerçevede kalplerindeki marifet, Hakk'ın onlardaki bir emanetidir. Kendileriyle Allah arasındaki sırlar, onlarda bulunan emanetlerdir. Farzlar, vacipler ve tevhid; işte bütün bunlar birer emanettir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Emanetlerden biri de insanların dünyaya gelmeden önce Allah'ı Rab olarak kabul ettiklerine dair ikrarlarıdır.

- Kulun yanındaki emanetlerden biri de Allah'ın, kalbine yerleştirdiği muhabbettir.

وَالَّذٖينَ هُمْ بِشَهَادَاتِهِمْ قَٓائِمُونَ ﴿٣٣﴾

33- "Onlar, şahitliklerini dosdoğru yapan kimselerdir."

Onlar, Allah'ın birliğine dair şahitliklerinin ve kendi aralarında birbirleri hakkında yaptıkları şahitliklerin hepsinin hakkını yerine getirirler.

وَالَّذِينَ هُمْ عَلٰى صَلَاتِهِمْ يُحَافِظُونَ ﴿٣٤﴾

34- "Onlar, namazlarını titizlikle koruyan kimselerdir."

أُولٰٓئِكَ فِي جَنَّاتٍ مُكْرَمُونَ ﴿٣٥﴾

35- "İşte onlar, cennetlerde ikram göreceklerdir."

فَمَا لِالَّذِينَ كَفَرُوا قِبَلَكَ مُهْطِعِينَ ﴿٣٦﴾ عَنِ الْيَمِينِ وَعَنِ الشِّمَالِ
عِزِينَ ﴿٣٧﴾

36, 37- "Şimdi, kâfir olanlara ne oluyor ki boyunlarını uzatarak sağdan soldan gruplar halinde sana doğru koşuyorlar?"

( إهْطاع ), kişinin, bir şeye bakışıyla yönelip gözünü ondan ayırmamasıdır. Nitekim onlar da, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) yanında böyle yapıyorlardı.

( عِزِينَ ) lafzı ise, grup grup demektir.

اَيَطْمَعُ كُلُّ امْرِئٍ مِنْهُمْ اَنْ يُدْخَلَ جَنَّةَ نَعِيمٍ ﴿٣٨﴾

38- "Onlardan her biri, Naîm cennetine konulacağını mı umuyor?"

Hayır, asla! Şüphesiz sen de buna dua etmezsin ve bu doğru da değildir. Çünkü onlar, bugün kâfirdirler ve yarın hak ettikleriyle muamele göreceklerdir.

كَلَّا اِنَّا خَلَقْنَاهُمْ مِمَّا يَعْلَمُونَ ﴿٣٩﴾

39- "Hayır! Şüphesiz biz onları, kendilerinin de bildikleri şeyden yarattık."

فَلَٓا اُقْسِمُ بِرَبِّ الْمَشَارِقِ وَالْمَغَارِبِ اِنَّا لَقَادِرُونَ ﴿٤٠﴾ عَلٰٓى اَنْ نُبَدِّلَ خَيْرًا مِنْهُمْ وَمَا نَحْنُ بِمَسْبُوقِينَ ﴿٤١﴾

40, 41- "Doğuların ve batıların Rabbine yemin ederim ki şüphesiz onların yerine daha iyilerini getirmeye bizim gücümüz yeter. Bizim önümüze geçilemez."

Ayetteki ( لَا ) harfi zait olup anlamı, "yemin ederim" şeklindedir. Doğular ve batılarla ilgili açıklama ise daha önce geçti.

( اِنَّا لَقَادِرُونَ ) "*Şüphesiz*" buna "*gücümüz yeter.*"

فَذَرْهُمْ يَخُوضُوا وَيَلْعَبُوا حَتّٰى يُلَاقُوا يَوْمَهُمُ الَّذِي يُوعَدُونَ ﴿٤٢﴾

42- "Sen onları bırak! Uyarıldıkları günlerine kavuşuncaya kadar batıl inançlarına dalsınlar ve oynasınlar."

Bu, onlara yönelik en ağır tehdit ve azarlamadır.

يَوْمَ يَخْرُجُونَ مِنَ الْاَجْدَاثِ سِرَاعًا كَاَنَّهُمْ اِلٰى نُصُبٍ يُوفِضُونَ ﴿٤٣﴾ خَاشِعَةً اَبْصَارُهُمْ تَرْهَقُهُمْ ذِلَّةٌ ذٰلِكَ الْيَوْمُ الَّذِي كَانُوا يُوعَدُونَ ﴿٤٤﴾

43, 44- "Dikili putlara akın akın gidercesine, gözleri inmiş, kendilerini zillet kaplamış bir halde mezarlarından süratle çıkacakları o günü hatırla! İşte o, uyarıldıkları gündür."

Onlar, putlarına doğru koşar gibidirler. Allah, kabirlerden kalkışları esnasındaki süratlerini, tapmak için putlara doğru süratle gitmelerine benzetmiştir.

سورة نُوحٍ

# NÛH SÛRESİ

(Nuh Sûresi 28 âyettir. Mekke'de inmiştir. Hz. Nuh'un peygamber oluşu ve mücadelesi anlatıldığı için bu adı almıştır. Sûrede; Nuh'un (a.s) kavmi ile konuşmaları ve duası yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", göklerin ve yerin kudretiyle var olduğu, sırlar ve kalplerin yardımıyla istikamet bulduğu Allah'ın adıdır. Fiiller, O'nun şanının yüceliğini gösterir, boyunlar hükümranlığının şuhûdu halinde bükülür. Ahirette her taraf, O'nun nuruyla aydınlanır, dünyada sırlar O'nun zuhur etmesiyle ışık saçar. Bu itibarla O, en yüce vasıfla mukaddestir.

اِنَّٓا اَرْسَلْنَا نُوحًا اِلٰى قَوْمِه۪ٓ اَنْ اَنْذِرْ قَوْمَكَ مِنْ قَبْلِ اَنْ يَأْتِيَهُمْ
عَذَابٌ اَل۪يمٌ ﴿١﴾

1- "Şüphesiz biz Nûh'u, kavmine: 'Kendilerine elem dolu bir azap gelmeden önce kavmini uyar' diye peygamber olarak gönderdik."

Biz, Nûh'u ( اَنْذِرْ قَوْمَكَ ) "*kavmini uyar*" diye nebi ve resul olarak gönderdik. Yani onları uyarma göreviyle gönderdik. Bu arada, Allah

tarafından peygamberler gönderilmesi bir lütuftur. Bir de hükümranlık hakkı itibariyle Allah, dilediğini yapabilir. Ayrıca peygamberler göndermek, Allah'a vacip değildir. Çünkü O'nun mahiyeti vücup kabul etmez.

Allah'ın, kabul etmeyeceğini bildiği kimselere peygamberler göndermesi caizdir. Onları mükellef kılması da akıl bakımından caizdir. Mesele Hz. Nûh, kabul etmeyeceklerini onlardan anladığı halde peygamberliği tebliğ etmiş ve kendilerine: ( اِنّي لَكُمْ نَذيرٌ مُبينٌ ) *"Şüphesiz ben, sizin için apaçık bir uyarıcıyım"* demiştir.

قَالَ يَا قَوْمِ اِنّي لَكُمْ نَذيرٌ مُبينٌ ﴿٢﴾ اَنِ اعْبُدُوا اللّٰهَ وَاتَّقُوهُ وَاَطيعُونِ ﴿٣﴾ يَغْفِرْ لَكُمْ مِنْ ذُنُوبِكُمْ وَيُؤَخِّرْكُمْ اِلٰٓى اَجَلٍ مُسَمًّى اِنَّ اَجَلَ اللّٰهِ اِذَا جَٓاءَ لَا يُؤَخَّرُ لَوْ كُنْتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٤﴾

2, 3, 4- "Nûh şöyle dedi: 'Şüphesiz ben, sizin için apaçık bir uyarıcıyım. Allah'a ibadet edin. O'na karşı gelmekten sakının ve bana itaat edin ki, sizin günahlarınızı bağışlasın, sizi belli bir vakte kadar ertelesin. Şüphesiz Allah'ın belirlediği vakit gelince ertelenmez. Keşke bilseydiniz.'"

( يَغْفِرْ لَكُمْ مِنْ ذُنُوبِكُمْ ) *"Sizin günahlarınızı bağışlasın."*

Buradaki ( مِنْ ) harfi teb'iz değil, cins içindir. Tıpkı şu ayette olduğu gibi:

( فاجْتَنِبُوا الرِّجْسَ مِنَ الأوْثانِ ) *"Artık putlara tapma pisliğinden kaçının."* (Hac, 22/30)

Bir yoruma göre de Allah onların, yapacakları bilinen günahlarını değil, fiilen yaptıkları günahlarını bağlayacağını bildirmiştir. Çünkü eğer Allah onlara, yapacakları günahları da bağışlayacağını bildirseydi bu, onları günaha teşvik olurdu. Bu da caiz değildir. Onlar, Hz. Nûh'un davetini kabul etmeye yanaşmadılar. Bunun üzerine o da şöyle dedi:

قَالَ رَبِّ اِنّ۪ي دَعَوْتُ قَوْم۪ي لَيْلًا وَنَهَارًاۙ ﴿٥﴾ فَلَمْ يَزِدْهُمْ دُعَٓائ۪يٓ اِلَّا فِرَارًا ﴿٦﴾

5, 6- "Nûh şöyle dedi: 'Ey Rabbim! Gerçekten ben, kavmimi gece gündüz davet ettim. Fakat benim davetim, ancak onların kaçışını artırdı.'"

Hz. Nûh, hidayetin kendisine ait olmadığını açıklayıp: *"Eğer sen, iman etmelerini irade edersen, onların kalpleri senin kudretin altındadır. Senin şanın ne yücedir!"* demiştir.

وَاِنّ۪ي كُلَّمَا دَعَوْتُهُمْ لِتَغْفِرَ لَهُمْ جَعَلُٓوا اَصَابِعَهُمْ ف۪ٓي اٰذَانِهِمْ وَاسْتَغْشَوْا ثِيَابَهُمْ وَاَصَرُّوا وَاسْتَكْبَرُوا اسْتِكْبَارًاۚ ﴿٧﴾

7- "Kuşkusuz sen onları bağışlayasın diye, kendilerini her davet edişimde parmaklarını kulaklarına tıkadılar, elbiselerine büründüler, inanmamakta direndiler ve büyük bir kibir gösterdiler."

Ben, onları daha fazla davet ettikçe onlar da daha fazla direnip kibirlendiler. Bir yoruma göre de, aralarındaki ısrarları devam edince, ısrardan kibirlenmeleri doğmuş oldu. Allah şöyle buyurmuştur:

( فَطالَ عَلَيْهِمُ الأَمَدُ فَقَسَتْ قُلُوبُهُمْ ) *"Üzerlerinden uzun zaman geçti ve böylece kalpleri katılaştı."* (Hadîd, 57/16)

ثُمَّ اِنّ۪ي دَعَوْتُهُمْ جِهَارًاۙ ﴿٨﴾ ثُمَّ اِنّ۪ٓي اَعْلَنْتُ لَهُمْ وَاَسْرَرْتُ لَهُمْ اِسْرَارًاۙ ﴿٩﴾ فَقُلْتُ اسْتَغْفِرُوا رَبَّكُمْ اِنَّهُ كَانَ غَفَّارًاۙ ﴿١٠﴾ يُرْسِلِ السَّمَٓاءَ عَلَيْكُمْ مِدْرَارًاۙ ﴿١١﴾ وَيُمْدِدْكُمْ بِاَمْوَالٍ وَبَن۪ينَ وَيَجْعَلْ لَكُمْ جَنَّاتٍ وَيَجْعَلْ لَكُمْ اَنْهَارًاۜ ﴿١٢﴾

8, 9, 10, 11, 12- "Sonra ben, onları açık açık davet ettim. Sonra onlarla hem açıktan açığa, hem de gizli gizli konuştum. Dedim ki:

‘Rabbinizden bağışlama dileyin. Çünkü O, çok bağışlayıcıdır.’ Üzerinize gökten bol bol yağmur indirsin. Sizi mallarla, oğullarla desteklesin ve sizin için ırmaklar var etsin.”

Bilenler bilsin ki mağfiret dilemek, nimet kapılarını çalmaktır. Bu itibarla, kimin Allah’a bir ihtiyacı olursa, öncesinde mağfiret dilemedikçe, asla muradına eremeyecektir.

Bir yoruma göre de kim Allah’ın lütfuna mazhar olmak istiyorsa, özür dileyip hatalardan uzaklaşmalıdır.

( يُرْسِلِ السَّمَآءَ عَلَيْكُمْ مِدْرَارًا ) *“Üzerinize gökten bol bol yağmur indirsin.”*

Hz. Nûh, hayır ve ihsan yollarını daha fazla açıkladıkça, onlar da, küfür ve nisyanı artırdılar.

مَا لَكُمْ لَا تَرْجُونَ لِلّٰهِ وَقَارًا ﴿١٣﴾

13- “Size ne oluyor da Allah için bir vakar ummuyorsunuz?”

Size ne oluyor da Allah’ın yüceliğinden korkmuyorsunuz? Size ne oluyor da emrine saygı göstermeye karşılık Allah’tan lütuf ve nimet ummuyorsunuz?

وَقَدْ خَلَقَكُمْ اَطْوَارًا ﴿١٤﴾

14- “Halbuki O, sizi evrelerden geçirerek yaratmıştır.”

اَلَمْ تَرَوْا كَيْفَ خَلَقَ اللّٰهُ سَبْعَ سَمٰوَاتٍ طِبَاقًا ﴿١٥﴾ وَجَعَلَ الْقَمَرَ فِيهِنَّ نُورًا وَجَعَلَ الشَّمْسَ سِرَاجًا ﴿١٦﴾

15, 16- “Görmediniz mi, Allah yedi göğü tabaka tabaka nasıl yaratmıştır? Onların içinde nasıl ayı bir ışık, güneşi de bir kandil yapmıştır?”

Sonra Allah dikkatlerini göklere, yere ve yaratılmış olduklarına, onların yaratıcısının da yücelik ve üstünlük sıfatlarına layık olduğuna dair içerdikleri delillere çekmiştir.

Sonra Hz. Nûh, Allah'a şikâyette bulunarak şöyle demiştir:

وَاللّٰهُ اَنْبَتَكُمْ مِنَ الْاَرْضِ نَبَاتًا ﴿١٧﴾

17- "Allah sizi yerden bitirdi."

ثُمَّ يُعِيدُكُمْ فِيهَا وَيُخْرِجُكُمْ اِخْرَاجًا ﴿١٨﴾

18- "Sonra sizi yine oraya döndürecek ve kesinlikle sizi çıkaracaktır."

وَاللّٰهُ جَعَلَ لَكُمُ الْاَرْضَ بِسَاطًا ﴿١٩﴾

19- "Allah, yeryüzünü sizin için bir sergi yapmıştır."

لِتَسْلُكُوا مِنْهَا سُبُلًا فِجَاجًا ﴿٢٠﴾

20- "Oradaki geniş yollarda yürüyesiniz diye."

قَالَ نُوحٌ رَبِّ اِنَّهُمْ عَصَوْنِي وَاتَّبَعُوا مَنْ لَمْ يَزِدْهُ مَالُهُ وَوَلَدُهُٓ اِلَّا
خَسَارًا ﴿٢١﴾ وَمَكَرُوا مَكْرًا كُبَّارًا ﴿٢٢﴾

21, 22- "Nûh dedi ki: 'Rabbim! Gerçekten onlar bana karşı geldiler. Malı ve çocuğu ancak kendi hüsranını artıran kimselere uydular. Bunlar da çok büyük bir tuzak kurdular."

Yani onlar, dünyada yollarını şaşıran, ahirette de helak olan büyüklerine ve zenginlerine uydular.

وَقَالُوا لَا تَذَرُنَّ اٰلِهَتَكُمْ وَلَا تَذَرُنَّ وَدًّا وَلَا سُوَاعًا وَلَا يَغُوثَ
وَيَعُوقَ وَنَسْرًا ﴿٢٣﴾

23- "Şöyle dediler: 'Sakın ilahlarınızı bırakmayın. Hele Vedd'i, Süvâ'ı, Yeğûs'u, Ye'ûk'u ve Nesr'i hiç bırakmayın."

وَقَدْ اَضَلُّوا كَث۪يرًا وَلَا تَزِدِ الظَّالِم۪ينَ اِلَّا ضَلَالًا ﴿٢٤﴾

24- "Onların gerçekten birçoklarını saptırdılar. Sen de bu zalimlerin sadece sapıklıklarını artır."

مِمَّا خَط۪يٓـَٔاتِهِمْ اُغْرِقُوا فَاُدْخِلُوا نَارًا فَلَمْ يَجِدُوا لَهُمْ مِنْ دُونِ اللّٰهِ اَنْصَارًا ﴿٢٥﴾

25- "Hataları yüzünden suda boğuldular ve cehenneme sokuldular da kendileri için Allah'tan başka yardımcılar bulamadılar."

وَقَالَ نُوحٌ رَبِّ لَا تَذَرْ عَلَى الْاَرْضِ مِنَ الْكَافِر۪ينَ دَيَّارًا ﴿٢٦﴾

26- "Nûh şöyle dedi: 'Ey Rabbim! Kâfirlerden hiç kimseyi yeryüzünde bırakma!"

اِنَّكَ اِنْ تَذَرْهُمْ يُضِلُّوا عِبَادَكَ وَلَا يَلِدُٓوا اِلَّا فَاجِرًا كَفَّارًا ﴿٢٧﴾

27- "Çünkü sen onları bırakırsan, kullarını saptırırlar, sadece ahlaksız ve kâfir kimseler yetiştirirler."

رَبِّ اغْفِرْ ل۪ي وَلِوَالِدَيَّ وَلِمَنْ دَخَلَ بَيْتِيَ مُؤْمِنًا وَلِلْمُؤْمِن۪ينَ وَالْمُؤْمِنَاتِۜ وَلَا تَزِدِ الظَّالِم۪ينَ اِلَّا تَبَارًا ﴿٢٨﴾

28- "Rabbim! Beni, ana babamı, iman etmiş olarak evime girenleri iman eden erkekleri ve iman eden kadınları bağışla. Zalimlerin de ancak helakini artır."

Hz. Nûh bu bedduaları, Allah'ın kendisine kavminden iman etmiş olanlardan başka kimsenin artık iman etmeyeceğini bildirmesi sebebiyle yapmıştır. Allah da onun kavmi hakkındaki bedduasını kabul ederek onları helak etmiştir.

سورة الْجِنِّ

# CİN SÛRESİ

(Cin Sûresi 28 âyettir. Mekke'de inmiş, cinleri konu edindiği için, bu adı almıştır. İlk 15 âyette, Kur'an'ı dinleyen cinlerin kendi topluluklarına olan konuşmaları anlatılır. Sonra Hz. Peygamber'in müşriklerle konuşması yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle saygın bir isimdir ki, Allah'ın Rab oluşunu ikrar eden, ancak onunla ikrar etmiştir. Allah'ın marifetinde ısrar eden, ancak onunla ısrar etmiştir. Yaratıklarından istikrara kavuşan, ancak onunla kavuşmuştur. Allah'ın kudreti kapsamındaki şeylerden ortaya çıkan, ancak onunla ortaya çıkmıştır. Yaratıklarından gizli kalan, ancak onunla gizli kalmıştır. İşte bu nedenledir ki inkâr eden, sahipsiz bırakılması ve mahrum edilmesi sebebiyle inkâr etmiş olur. Tevhidde bulunan da Allah'ın ihsanı ve lütfu sayesinde bulunmuştur.

قُلْ اُو۫حِيَ اِلَيَّ اَنَّهُ اسْتَمَعَ نَفَرٌ مِنَ الْجِنِّ فَقَالُوا اِنَّا سَمِعْنَا قُرْاٰنًا
عَجَبًا ﴿١﴾ يَهْد۪ٓي اِلَى الرُّشْدِ فَاٰمَنَّا بِه۪ وَلَنْ نُشْرِكَ بِرَبِّنَٓا اَحَدًا ﴿٢﴾

1, 2- "De ki: 'Bana, cinlerden bir topluluğun Kur'ân'ı dinleyip: 'Şüphesiz biz, doğruya ileten hayranlık verici bir Kur'ân dinledik de ona iman ettik. Artık Rabbimize hiç kimseyi asla ortak koşmayacağız' dedikleri vahyedildi."

İddiaya göre cinler göğe çıkıyor ve meleklerin konuşmalarını dinleyip ezberliyor ve bunları kâhinlere ilham ediyorlardı. Kâhinler de bunları fazla veya eksik söylüyorlardı. Cinler, Hz. Peygamber (s.a.v.) ile Hz. İsa arasında geçen fetret döneminde böyleydiler. Ancak Hz. Peygamber (s.a.v.) gönderilip onlara ateşten oklar fırlatılınca İblis, bir şeyler olduğunu anladı ve askerleri kaçtılar. Onlardan dokuz kişi de Batnunahle'ye geldi ve Hz. Peygamber'in (s.a.v.) okuyuşunu dinleyip iman etti. Sonra da kavimlerine gelerek şöyle dediler:

( اِنَّا سَمِعْنَا قُرْاٰنًا عَجَبًا يَهْدِيٓ اِلَى الرُّشْدِ فَاٰمَنَّا بِه ) *"Şüphesiz biz, doğruya ileten hayranlık verici bir Kur'ân dinledik de ona iman ettik..."*

Ayrıca onlardan yetmiş kişi daha Hz. Peygamber'e (s.a.v.) gelip Müslüman odu. Şu ayet de, buna dairdir:

وَ إِذْ صَرَفْنا إِلَيْكَ نَفَرًا مِنَ الجِنِّ...

*"Hani Kur'ân'ı dinlemek üzere cinlerden bir grubu sana yöneltmiştik."* (Ahkâf, 46/16)

وَاَنَّهُ تَعَالٰى جَدُّ رَبِّنَا مَا اتَّخَذَ صَاحِبَةً وَلَا وَلَدًا ﴿٣﴾

3- "Doğrusu, Rabbimizin şanı çok yücedir. Ne bir eş edinmiştir ne de bir çocuk."

( جَدًّ ) lafzı, büyüklük demektir. Büyüklük ise celal sıfatlarını hak etmektir.

وَاَنَّهُ كَانَ يَقُولُ سَفِيهُنَا عَلَى اللّٰهِ شَطَطًا ﴿٤﴾

4- "Doğrusu bizim beyinsiz olanımız, Allah hakkında doğruluktan uzak aşırı sözler söylüyormuş."

Beyinsizden maksat, Allah'ı bilmeyen İblis'tir. ( شَطَطٌ ) lafzı ise aşırılık demektir.

وَاَنَّا ظَنَنَّٓا اَنْ لَنْ تَقُولَ الْاِنْسُ وَالْجِنُّ عَلَى اللّٰهِ كَذِبًا ﴿٥﴾

5- “Şüphesiz biz, insanların ve cinlerin, Allah hakkında asla yalan söylemeyeceklerini sanıyorduk.”

Söz konusu yalan, onların küfürleri ve şirkleri ile ilgili sözleridir.

وَاَنَّهُ كَانَ رِجَالٌ مِنَ الْاِنْسِ يَعُوذُونَ بِرِجَالٍ مِنَ الْجِنِّ فَزَادُوهُمْ رَهَقًا ﴿٦﴾

6- “Doğrusu, insanlardan bazı kimseler, cinlerden bazılarına sığınırlardı da cinler, onların taşkınlıklarını artırırlardı.”

Yani onların zillet ve aşağılanmalarını artırırlardı. Böylece cinler, insanların zillet ve hatalarını artırdılar. Şöyle ki o insanlar, konakladıklarında: “Biz, bu vadinin rabbine sığınırız” derlerdi. Bu yüzden cinler de, kendilerinde bir güç olduğunu sanarak onları daha da aşağılık hale getiriyorlardı. Şöyle ki, bu kimseler, onlara sığınıyorlardı.

وَاَنَّهُمْ ظَنُّوا كَمَا ظَنَنْتُمْ اَنْ لَنْ يَبْعَثَ اللّٰهُ اَحَدًا ﴿٧﴾

7- “Gerçekten onlar da sizin sandığınız gibi, Allah’ın hiç kimseyi öldükten sonra diriltmeyeceğini sanmışlardı.”

Yani onlar da cinlerden kâfir olanların sandıkları gibi, öldükten sonra dirilme ve haşre gönderilmenin söz konusu olmadığını sandılar. Ey insanlar! Tıpkı sizin sandığınız gibi.

وَاَنَّا لَمَسْنَا السَّمَآءَ فَوَجَدْنَاهَا مُلِئَتْ حَرَسًا شَدِيدًا وَشُهُبًا ﴿٨﴾

8- “Kuşkusuz biz göğe ulaşmak istedik fakat onu çetin bekçilerle ve yakıcı ışıklarla dolu bulduk.”

Yani melekleri dinlemekten alıkonuldukları zaman.

وَاَنَّا كُنَّا نَقْعُدُ مِنْهَا مَقَاعِدَ لِلسَّمْعِ فَمَنْ يَسْتَمِعِ الْاٰنَ يَجِدْ لَهُ
شِهَابًا رَصَدًا ﴿٩﴾

9- "Halbuki biz, daha önce göğün bazı yerlerinde gayb haberlerini dinlemek için otururduk. Fakat şimdi her kim dinlemeye kalkacak olursa, kendini gözetleyen yakıcı bir ışık bulur."

Şimdi ise bundan alıkonulmuş bulunuyoruz.

وَاَنَّا لَا نَدْرٖٓي اَشَرٌّ اُرٖيدَ بِمَنْ فِي الْاَرْضِ اَمْ اَرَادَ بِهِمْ رَبُّهُمْ
رَشَدًا ﴿١٠﴾

10- "Hakikaten biz bilmiyoruz, yeryüzündekilere kötülük mü istendi yoksa Rableri onlara bir hayır mı diledi?"

وَاَنَّا مِنَّا الصَّالِحُونَ وَمِنَّا دُونَ ذٰلِكَ كُنَّا طَرَآئِقَ قِدَدًا ﴿١١﴾

11- "Doğrusu içimizde salih olanlar da var, olmayanlar da. Ayrı ayrı yollar tutmuşuz."

وَاَنَّا ظَنَنَّآ اَنْ لَنْ نُعْجِزَ اللّٰهَ فِي الْاَرْضِ وَلَنْ نُعْجِزَهُ هَرَبًا ﴿١٢﴾

12- "Muhakkak ki biz, Allah'ı yeryüzünde aciz bırakamayacağımızı, kaçarak da O'nu aciz bırakamayacağımızı anladık."

وَاَنَّا لَمَّا سَمِعْنَا الْهُدٰٓى اٰمَنَّا بِهٖ فَمَنْ يُؤْمِنْ بِرَبِّهٖ فَلَا يَخَافُ بَخْسًا
وَلَا رَهَقًا ﴿١٣﴾

13- "Gerçekten biz, hidayet rehberini (Kur'ân'ı) işitince ona iman ettik. Kim Rabbine iman ederse, artık ne hakkının eksik verilmesinden ne de haksızlığa uğramaktan korkar."

وَاَنَّا مِنَّا الْمُسْلِمُونَ وَمِنَّا الْقَاسِطُونَ فَمَنْ اَسْلَمَ فَاُو۬لٰٓئِكَ تَحَرَّوْا
رَشَدًا ﴿١٤﴾

14- "Kuşkusuz içimizde Müslüman olanlar da var, hak yoldan sapanlar da var. Kim Müslüman olursa işte onlar, doğruyu arayıp bulmuşlardır."

وَاَمَّا الْقَاسِطُونَ فَكَانُوا لِجَهَنَّمَ حَطَبًا ﴿١٥﴾

15- "Hak yoldan sapanlara gelince, onlar cehenneme odun olmuşlardır."

وَاَنْ لَوِاسْتَقَامُوا عَلَى الطَّرٖيقَةِ لَاَسْقَيْنَاهُمْ مَٓاءً غَدَقًا ﴿١٦﴾ لِنَفْتِنَهُمْ
فٖيهِ وَمَنْ يُعْرِضْ عَنْ ذِكْرِ رَبِّهٖ يَسْلُكْهُ عَذَابًا صَعَدًا ﴿١٧﴾

16, 17- "Şayet yolda doğru gitselerdi, onları imtihan etmemiz için kendilerine bol su verirdik. Kim Rabbinin zikrinden yüz çevirirse, Rabbi onu gittikçe ivme kazanan bir azaba uğratır."

Yolda doğru gitmek, nimetin tamamlanmasını ve rahatın çoğaltılmasını sağlar. Allah'tan yüz çevirmek ise hayatın zorlaşmasına ve azabın devamlılığına yol açar.

وَاَنَّ الْمَسَاجِدَ لِلّٰهِ فَلَا تَدْعُوا مَعَ اللّٰهِ اَحَدًا ﴿١٨﴾

18- "Mescitler Allah'a mahsustur. O halde Allah'a ibadetin yanı sıra başka kimseye ibadet etmeyin."

Mescidin fazileti vardır. Bu nedenle Allah, yerler arasından özellikle onu zikretmiştir. O, ibadet yeridir. Şimdi Allah, abidin ayak bastığı yer olan mescidi bu denli faziletli kılarken, acaba kendisini ilahi katında hangi makama yerleştirir?

Bir yoruma göre de Allah'ın mescitlerden maksadı kulun, üzerine secde ettiği organlarıdır. Böylece Allah, o organların Allah'a ait olduğunu bildirmiş olmaktadır. O halde, onlarla Allah'tan başkasına ibadet etmeyiniz.

وَاَنَّهُ لَمَّا قَامَ عَبْدُ اللّٰهِ يَدْعُوهُ كَادُوا يَكُونُونَ عَلَيْهِ لِبَدًا ﴿١٩﴾

19- "Allah'ın kulu, O'na ibadet etmek için kalktığında cinler nerede ise onun etrafında birbirlerine geçiyorlardı."

Allah'ın kulu, yani Muhammed (s.a.v.), halkı Allah'a davet etmek üzere kalktığı zaman, neredeyse cinler ve insanlar etrafında toplanarak onu tebliğden alıkoyacaklardı.

Ey Muhammed!

قُلْ اِنَّمَٓا اَدْعُوا رَبّ۪ي وَلَٓا اُشْرِكُ بِه۪ٓ اَحَدًا ﴿٢٠﴾

20- "De ki: 'Şüphesiz ben, ancak Rabbime ibadet ederim ve O'na hiç kimseyi ortak koşmam.'"

قُلْ اِنّ۪ي لَٓا اَمْلِكُ لَكُمْ ضَرًّا وَلَا رَشَدًا ﴿٢١﴾ قُلْ اِنّ۪ي لَنْ يُج۪يرَن۪ي
مِنَ اللّٰهِ اَحَدٌ وَلَنْ اَجِدَ مِنْ دُونِه۪ مُلْتَحَدًا ﴿٢٢﴾

21, 22- "De ki: 'Şüphesiz ben, size ne zarar verebilir ne de fayda sağlayabilirim.' De ki: 'Gerçekten beni Allah'a karşı hiç kimse asla koruyamaz ve yine asla O'ndan başka sığınacak kimse de bulamam.'"

Benim sizden bir zararı defetmeye veya size bir iyilik ulaştırmaya gücüm yetmez. Her şey Allah'tandır. Bir de ben, O'ndan başka sığınacak hiç kimse de bulamam.

اِلَّا بَلَاغًا مِنَ اللّٰهِ وَرِسَالَاتِه۪ وَمَنْ يَعْصِ اللّٰهَ وَرَسُولَهُ فَاِنَّ لَهُ نَارَ
جَهَنَّمَ خَالِد۪ينَ ف۪يهَٓا اَبَدًا ﴿٢٣﴾

23- "Ancak Allah'tan gelenleri tebliğ edebilirim ve O'nun vahiylerini açıklayabilirim. Kim, Allah'a ve Resûlüne karşı gelirse, şüphesiz onlar için, içinde ebedi kalacakları cehennem ateşi vardır."

Bu nedenle, beni Allah'tan ancak O'nun emriyle mesajlarını tebliğ etmem kurtaracaktır.

حَتّٰٓى اِذَا رَاَوْا مَا يُوعَدُونَ فَسَيَعْلَمُونَ مَنْ اَضْعَفُ نَاصِرًا وَاَقَلُّ عَدَدًا ﴿٢٤﴾

24- "Nihayet uyarıldıkları şeyi gördüklerinde kimin yardımcısı daha zayıf, kimin sayısı daha azmış, bileceklerdir."

قُلْ اِنْ اَدْرٖٓي اَقَرٖيبٌ مَا تُوعَدُونَ اَمْ يَجْعَلُ لَهُ رَبّٖٓي اَمَدًا ﴿٢٥﴾

25- "De ki: 'Sizin uyarıldığınız şey yakın mıdır yoksa Rabbim, ona uzun bir süre mi koyacaktır, bilemem.'"

Yani, hakkında uyarıldığınız azap ve kıyametin kopuşunun yakın mı yoksa uzak mı olduğunu ben bilemem. O halde dikkatli olun! Bu arada kul, cezadan kurtulmak için, nefeslerin alınıp verilmesiyle birlikte daima cezaları beklemelidir.

عَالِمُ الْغَيْبِ فَلَا يُظْهِرُ عَلٰى غَيْبِهٖٓ اَحَدًا ﴿٢٦﴾ اِلَّا مَنِ ارْتَضٰى مِنْ رَسُولٍ فَاِنَّهُ يَسْلُكُ مِنْ بَيْنِ يَدَيْهِ وَمِنْ خَلْفِهٖ رَصَدًا ﴿٢٧﴾ لِيَعْلَمَ اَنْ قَدْ اَبْلَغُوا رِسَالَاتِ رَبِّهِمْ وَاَحَاطَ بِمَا لَدَيْهِمْ وَاَحْصٰى كُلَّ شَيْءٍ عَدَدًا ﴿٢٨﴾

26, 27, 28- "O, gaybı bilendir. Hiç kimseye gaybını bildirmez. Ancak seçtiği peygamber bunun dışındadır. Çünkü O, bu peygamberin önünden ve arkasından gözcüler salar. Peygamberlerin, O'nun

mesajlarını tebliğ ettiklerini bilsin diye. Allah, onların her halini kuşatmış ve her şeyi inceden inceye sayıp dökmüştür."

Allah, vahiy ile birlikte önünden ve arkasından melekler de göndermiştir. Onlar, taşıdığı mesajları artırıp eksiltmemeleri için vahyi kâhinlerden ve şeytanlardan koruyan koruyucu meleklerdir. Allah, bunu bilmekte ve ilmi onu kuşatmış bulunmaktadır.

سورة الْمُزَّمِّلِ

# MÜZZEMMİL SÛRESİ

(Müzzemmil Sûresi 20 âyettir. 10, 11 ve 20. âyetler dışında Mekke'de inmiştir. Sûre, adını ilk âyetten almıştır. Sûrede; gece ibadeti, sabır, azap çeşitleri, kıyamet sahneleri, Firavun kıssası ve teheccüd namazı konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

Allah'ın adıyla.

Olan bitenler, Allah ile meydana gelmiştir. Bu çerçevede ariflerin kalpleri, bildiklerini Allah ile bilmiş, sıddîkların ruhları, ülfet ettiklerine Allah ile ülfet etmiş, tevhid ehli kimselerin idrakleri, celalinin sahalarında durmuş, abidlerin nefisleri, ibadetine layık olmaktan aciz kalmakla vasıflanmış, evvelkilerin ve sonrakilerin akılları da celalini tanımaktan acze düştüklerini itiraf etmiştir.

يَٓا اَيُّهَا الْمُزَّمِّلُ ﴿١﴾ قُمِ الَّيْلَ اِلَّا قَليلًا ﴿٢﴾

1, 2- "Ey örtünüp bürünen! Birazı hariç, gece namaza kalk."

Yani ey elbisesine sarınıp bürünen! Rivayette yer aldığına göre, bu ayet indiğinde Hz. Peygamber'in (s.a.v.) üzerinde kıl ve tüyden yapılmış bir kumaş vardı. Hz. Aişe de şöyle der:

*"Bu kumaşın yarısı, uzanmış vaziyette benim üzerimde, yarısı da namaz kılmakta olan Hz. Peygamberin üzerinde idi. Bu kumaşın uzunluğu on dört arşın idi."*

نِصْفَهُٓ اَوِ انْقُصْ مِنْهُ قَليلًاۙ ﴿٣﴾ اَوْ زِدْ عَلَيْهِ وَرَتِّلِ الْقُرْاٰنَ تَرْتيلًاۜ ﴿٤﴾

3, 4- "Yarısını namazla geçir veya bundan biraz eksilt. Yahut buna biraz ekle ve Kur'ân'ı tane tane oku."

Ayetteki ( نِصْفَهُ ) lafzı, ( لَيْل ) lafzının bedelidir. Yani gecenin yarısını namazla geçir veya onu üçte bire indir ya da üçte bire ilavede bulun. Böylece Hz. Peygamber (s.a.v.), gece namazının vacipliği konusunda ilk üçte biriyle ortası ve ortası ile son üçte biri arasında muhayyer kılınmıştı. Ancak bu durum, beş vakit namazın farz kılınmasından önce idi. Sonra bu gece namazı, Hz. Peygamber'e vacip olmaya devam etse de, beş vaktin farz kılınmasından sonra ümmetin üzerinden kaldırıldı.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Ey peygamberliğin yükümlülüklerine bürünen! Gece namaza kalk!

- Ey kendisine verdiğimiz özelliği saklayan! Kalk da uyar! Çünkü biz, sana yardım ederiz.

- Bizimle kalk, ey insanların içinde istirahat etmesi için geceyi yarattığımız kimse! Sen kalk! Varsın bütün insanlar istirahat etsin. Ancak sen kalk!

- Allah, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) gece namazını farz kılınca, ümmeti için ve durumuna ve kadrine saygınlık kazandırmak üzere ondan söz etti.

Hadiste de şöyle denilmiştir:

*"Allah, her gece dünya göğüne iner..."*

Bu hadisin tevili bilinmemektedir. Yahut da tevil malumdur. Aslında tevile varıncaya kadar, dostların pek çok rahatları vardır ve onlar için çeşitli ihsanlar mevcuttur.

( وَرَتِّلِ الْقُرْاٰنَ تَرْتيلًا ) *"Kur'ân'ı tane tane oku."*

Onu anlamaktan sırrınla feyiz al. Dilinle de onu teenni ile oku.

اِنَّا سَنُلْقٖي عَلَيْكَ قَوْلًا ثَقٖيلًا ﴿٥﴾

**5- "Şüphesiz biz, sana ağır bir söz vahyedeceğiz."**

Bir görüşe göre bu söz Kur'ân'dır. Bir görüşe göre de kelime-i tevhiddir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- O söz vahiydir. Allah onu ağır diye adlandırmıştır. Yani dilde hafif, mizanda ağırdır.

- Ağır olması, onun değerinin ve öneminin olması demektir.

Bir hadiste şöyle denilmiştir:

*"Hz. Peygamber (s.a.v.) devesi üzerinde iken kendisine Kur'ân indiği zaman, devenin göğsü yere yapışıyor ve bu ağırlık üzerinden kalkıncaya kadar hareket edemiyordu."*

İbn Abbas'tan da şöyle dediği rivayet edilmiştir:

*"En'âm sûresi bir defada indi ve Hz. Peygamber'in (s.a.v.) devesi, Kur'ân'ın ağırlığından ve heybetinden yere çöktü."*

- Onu dinlemek, inkâr edenine ağırdır.

- O, getirdiği yükümlülükle ağırdır. Ancak semavi bir kuvvetle desteklenen ve Allah'a yakınlığın himayesi altında terbiye edilen kimse bunun dışındadır.

اِنَّ نَاشِئَةَ الَّيْلِ هِيَ اَشَدُّ وَطْـًٔا وَاَقْوَمُ قٖيلًا ﴿٦﴾

**6- "Şüphesiz gece kalkışının uyumu daha fazla, sözleri ise daha düzgün ve açıktır."**

Gece kalkışından maksat, gece saatleridir. Şöyle ki meydana gelen her saat, bir kalkıştır. Bu saatler ise dil ve kalp ile çok daha uyumlu ve etkindir. Bir ihtimale göre de bu saatler, insan için gündüz ibadete kalkmaktan daha zor ve ağırdır.

Bir yoruma göre ise bu saatlerin, kalple daha uyumlu ve daha açık söze elverişli olması, riyadan daha uzak bulunmasıdır. Bir de bu saatlerde kalbin huzuru ve sırrın sükûneti daha mükemmel ve noksansız olur.

اِنَّ لَكَ فِي النَّهَارِ سَبْحًا طَوِيلًا ﴿٧﴾

7- "Çünkü gündüz vakti uzun bir meşguliyetin vardır."

Yani sen, işlerinle meşgulsün. Ayetteki ( سَبْحاً ) lafzı, gidiş ve sürat demektir. Suda yüzmek anlamındaki ( سِباحَة ) lafzı da aynı kökten gelmektedir.

Bu itibarla ayetin manası şudur: Gündüz vakti seni meşgul eden işlere dönük gidiş gelişlerin çoktur. Gece ise senin için daha boş bir zamandır.

وَاذْكُرِ اسْمَ رَبِّكَ وَتَبَتَّلْ اِلَيْهِ تَبْتِيلًا ﴿٨﴾

8- "Rabbinin adını an ve bütün benliğinle O'na yönel."

Yani her şeyden koparak tamamen O'na bağlan.

رَبُّ الْمَشْرِقِ وَالْمَغْرِبِ لَٓا اِلٰهَ اِلَّا هُوَ فَاتَّخِذْهُ وَكِيلًا ﴿٩﴾

9- "O, doğunun da batının da Rabbidir. O'ndan başka hiçbir ilah yoktur. Öyle ise O'nu vekil edin."

Vekil, işlerin kendisine bırakıldığı kimsedir. Yani O'na tevekkül et, işlerini O'na bırak ve kendisine güven.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Sen, yaratıklardan bir vekil edindiğin zaman malını eksiltir ve senden ücret ister. Oysa beni vekil edindiğin zaman malını çoğaltırım ve sana ecir veririm.

- Vekilin, senin malından sana harcama yapar. Oysa ben, sana rızık veriyorum ve malımdan sana harcama yapıyorum.

- Vekilin, kadir bakımından senden aşağı olan ve kendisiyle çok konuşmaya tenezzül etmediğin kimsedir. Oysa ben, senin Rabbinim ve büyüğünüm, benimle konuşmanı ve seninle konuşmayı severim.

وَاصْبِرْ عَلٰى مَا يَقُولُونَ وَاهْجُرْهُمْ هَجْرًا جَمٖيلًا ﴿١٠﴾

10- "Onların söylediklerine sabret ve onları güzellikle terk et."

Güzellikle terk etmek, görünürde onlarla geçinmen, sırrın ve kalbinle ise onlara karşı olmandır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Güzellikle terk etmek, nefsinin payı için değil, Rabbinin hakkı için olan şeydir.

- Güzellikle terk etmek, onlarla konuşmayıp onlar için ve onlara edeceğin dua ile benimle konuşmandır.

Bu ayet, savaş ayetiyle neshedilmiştir.

وَذَرْنٖي وَالْمُكَذِّبٖينَ اُولِي النَّعْمَةِ وَمَهِّلْهُمْ قَلٖيلًا ﴿١١﴾

11- "Nimet içinde yüzen o yalanlayıcıları bana bırak ve onlara biraz mühlet ver."

Yani nimetlerden yararlanma imkânına sahip olanları bana bırak, onlara az mühlet ver ve durumlarını önemseme. Çünkü ben, senin yerine onların icabına bakarım.

اِنَّ لَدَيْنَٓا اَنْكَالًا وَجَحٖيمًا ﴿١٢﴾ وَطَعَامًا ذَا غُصَّةٍ وَعَذَابًا اَلٖيمًا ﴿١٣﴾

12, 13- "Çünkü bizim yanımızda bukağılar ve cehennem vardır, boğazdan zor geçen yiyecekler ve elem dolu bir azap vardır."

Sonra Allah kıyameti anlatarak şöyle buyurmuştur:

يَوْمَ تَرْجُفُ الْاَرْضُ وَالْجِبَالُ وَكَانَتِ الْجِبَالُ كَثٖيبًا مَهٖيلًا ﴿١٤﴾

14- "Yerin ve dağların sarsılacağı ve dağların akıp giden kum yığını olacağı günü hatırla."

إِنَّٓا اَرْسَلْنَٓا اِلَيْكُمْ رَسُولًا شَاهِدًا عَلَيْكُمْ كَمَٓا اَرْسَلْنَٓا اِلٰى فِرْعَوْنَ رَسُولًا ﴿١٥﴾

15- "Şüphesiz biz size, hakkınızda şahitlik edecek bir peygamber gönderdik. Nitekim Firavun'a da bir peygamber göndermiştik."

Yani biz, size Muhammed'i (s.a.v.) hakkınızda şahitlik etmek üzere gönderdik. Tıpkı Firavuna da bir peygamber gönderdiğimiz gibi.

فَعَصٰى فِرْعَوْنُ الرَّسُولَ فَاَخَذْنَاهُ اَخْذًا وَبِيلًا ﴿١٦﴾

16- "Ama Firavun, o peygambere karşı çıktı. Biz de onu ağır ve çetin bir şekilde yakalayıverdik."

فَكَيْفَ تَتَّقُونَ اِنْ كَفَرْتُمْ يَوْمًا يَجْعَلُ الْوِلْدَانَ شِيبًا ﴿١٧﴾

17- "Hal böyle iken inkâr ederseniz, çocukları ak saçlı ihtiyarlara çevirecek olan bir günden nasıl korunursunuz?"

O günün dehşetinden çocuklar yaşlanırlar. Bu söz, örnek verme kabilindendir.

اَلسَّمَٓاءُ مُنْفَطِرٌ بِهٖ كَانَ وَعْدُهُ مَفْعُولًا ﴿١٨﴾

18- "O günle gök bile yarılır, Allah'ın vaadi yerine gelir."

Yani gök, dehşeti sebebiyle o günle yarılır.

Bir yoruma göre de gök, Allah ile yani O'nun emriyle yarılır.

( كَانَ وَعْدُهُ مَفْعُولًا ) *"Allah'ın vaadi yerine gelir."*

Allah neyi vaat ettiyse, onun doğruluğunu ortaya koyacaktır.

اِنَّ هٰذِهٖ تَذْكِرَةٌ فَمَنْ شَٓاءَ اتَّخَذَ اِلٰى رَبِّهٖ سَبِيلًا ﴿١٩﴾

19- "Şüphesiz bunlar bir öğüttür. Kim dilerse Rabbine doğru bir yol edinir."

Yani bu sure veya bu ayetler, bir öğüttür. Kim onu tutarsa mutlu olur.

Ey Muhammed!

اِنَّ رَبَّكَ يَعْلَمُ اَنَّكَ تَقُومُ اَدْنٰى مِنْ ثُلُثَيِ الَّيْلِ وَنِصْفَهُ وَثُلُثَهُ وَطَٓائِفَةٌ مِنَ
الَّذ۪ينَ مَعَكَ وَاللّٰهُ يُقَدِّرُ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ عَلِمَ اَنْ لَنْ تُحْصُوهُ فَتَابَ عَلَيْكُمْ
فَاقْرَؤُا مَا تَيَسَّرَ مِنَ الْقُرْاٰنِ عَلِمَ اَنْ سَيَكُونُ مِنْكُمْ مَرْضٰى وَاٰخَرُونَ
يَضْرِبُونَ فِي الْاَرْضِ يَبْتَغُونَ مِنْ فَضْلِ اللّٰهِ وَاٰخَرُونَ يُقَاتِلُونَ ف۪ي
سَب۪يلِ اللّٰهِ فَاقْرَؤُا مَا تَيَسَّرَ مِنْهُ وَاَق۪يمُوا الصَّلٰوةَ وَاٰتُوا الزَّكٰوةَ وَاَقْرِضُوا
اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا وَمَا تُقَدِّمُوا لِاَنْفُسِكُمْ مِنْ خَيْرٍ تَجِدُوهُ عِنْدَ اللّٰهِ
هُوَ خَيْرًا وَاَعْظَمَ اَجْرًا وَاسْتَغْفِرُوا اللّٰهَ اِنَّ اللّٰهَ غَفُورٌ رَح۪يمٌ ﴿٢٠﴾

20- “Şüphesiz Rabbin, senin, gecenin üçte ikisine yakın kısmını, yarısını ve üçte birini ibadette geçirdiğini bilir. Beraberinde bulunanlardan bir topluluk da böyle yapıyor. Allah, gece ve gündüzü ölçüyle düzenler. Sizin bunu sayamayacağınızı bildi de sizi bağışladı. Artık Kur’ân’dan kolayınıza geleni okuyun. Allah, içinizde hastaların bulunacağını, bir kısmınızın Allah’ın lütfundan rızık aramak üzere yeryüzünde dolaşacağını, diğer kısmınızın ise Allah yolunda çarpışacağını bilmektedir. O halde, Kur’ân’dan kolayınıza geleni okuyun. Namazı dosdoğru kılın, zekâtı verin, Allah’a güzel bir borç verin. Kendiniz için önceden ne iyilik gönderirseniz, onu Allah katında daha üstün bir iyilik ve daha büyük mükâfat olarak bulursunuz. Allah’tan bağışlama dileyin. Şüphesiz Allah çok bağışlayandır, çok merhamet edendir.”

( وَطَٓائِفَةٌ مِنَ الَّذ۪ينَ مَعَكَ ) *“Beraberinde bulunanlardan bir topluluk.”*

Müminlerden bir topluluk.

( وَاللّٰهُ يُقَدِّرُ الَّيْلَ وَالنَّهَارَ ) *“Allah, gece ve gündüzü ölçüyle düzenler.”*

Zira onları yaratan O'dur.

( عَلِمَ اَنْ لَنْ تُحْصُوهُ ) *"Sizin bunu sayamayacağınızı bildi."*

Buna gücünüzün yetmeyeceğini bildi.

( فَتَابَ عَلَيْكُمْ ) *"Sizi bağışladı."*

Yükünüzü hafifletti.

( فَاقْرَؤُا مَا تَيَسَّرَ مِنَ الْقُرْاٰنِ ) *"Artık Kur'ân'dan kolayınıza geleni okuyun."*

Beş ayet ve daha fazlasını okuyun. Bir yoruma göre de on ayet ve daha fazlasını okuyun.

( عَلِمَ اَنْ سَيَكُونُ مِنْكُمْ مَرْضٰى وَاٰخَرُونَ يَضْرِبُونَ فِي الْاَرْضِ يَبْتَغُونَ مِنْ فَضْلِ اللّٰهِ وَاٰخَرُونَ يُقَاتِلُونَ فِي سَبِيلِ اللّٰهِ ) *"Allah, içinizde hastaların bulunacağını, bir kısmınızın Allah'ın lütfundan rızık aramak üzere yeryüzünde dolaşacağını bilmektedir."*

Allah, yolculuk yapacak olanları ve özür sahiplerini bildiği için geceleyin ibadete kalkma yükümlülüğünü üzerlerinden kaldırdı.

( وَاَقِيمُوا الصَّلٰوةَ ) *"Namazı dosdoğru kılın."*

Farz kılınan namazı kılın.

( وَاَقْرِضُوا اللّٰهَ قَرْضًا حَسَنًا ) *"Allah'a güzel bir borç verin."*

Bunun anlamı, daha önce geçti.

( وَمَا تُقَدِّمُوا لِاَنْفُسِكُمْ مِنْ خَيْرٍ تَجِدُوهُ عِنْدَ اللّٰهِ هُوَ خَيْرًا ) *"Kendiniz için önceden ne iyilik gönderirseniz, onu bulursunuz."*

Yani önceden yerine getirdiğiniz bir ibadeti siz, Allah katında, sizin için dünyanın bütün varlığından daha hayırlı olan bir sevap olarak bulacaksınız.

سورة الْمُدَّثِّرِ

# MÜDDESSİR SÛRESİ

(Müddessir Sûresi 56 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk âyetteki "Müddessir" den almıştır. Sûrede; temizlik, başa kakma, sabır, servet sahibi kılınan müşrikin ruh hâli, sekar cehenneminin tasviri, buraya düşme nedeni konuları yer alır.)

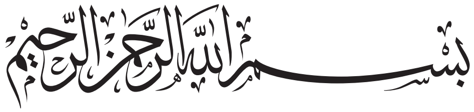

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir sözdür ki onu işitmek fakirlerin kalbi için bir ferahlıktır. O öyle bir sözdür ki onu dinlemek, güçsüzlerin sırlarının güzelliği, sevenlerin ruhlarının rahatlığı, velilerin kalplerinin azığı, seçkinlerin göğüslerinin tesellisi ve musibet ehlinin gözlerinin aydınlığıdır.

يَا اَيُّهَا الْمُدَّثِّرُ ﴿١﴾ قُمْ فَاَنْذِرْ ﴿٢﴾

1, 2- "Ey örtünüp bürünen! Kalk da uyar."

Bu sûre, Kur'an'ın ilk inen surelerindendir. Bir görüşe göre, Hz. Peygamber (s.a.v.), peygamberlikten önce Hira'ya gitti ve Hz. Cibril, havada ona göründü. Bunun üzerine Hz. Hatice'nin evine dönerek: "Örtün beni, örtün beni" dedi. Hemen bir elbiseyle örtüldü ve o esnada Hz. Cibril gelerek: (يَا اَيُّهَا الْمُدَّثِّرُ قُمْ فَاَنْذِرْ) *"Ey örtünüp bürünen! Kalk da uyar"* dedi.

Bir görüşe göre de, ey sıkıntıyı örtüyle üzerinden atmak isteyen! Bunu uyarıda bulunmakla iste.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Bizimle kalk, bizden başkalarını kendinden ayır ve kullarımızı uyar. Hiç şüphesiz biz seni, en şerefli mertebeye yerleştirdik ve en yüksek makamda tuttuk.

- Hz. Peygamber (s.a.v.), Allah'ın: ( قُمْ ) "*Kalk*" sözüyle sükunet bulup kalkınca, Allah onun sırrını, kalkmak ile sükunet bulmaktan ve onunla tatmin olmaktan kopardı.

وَرَبَّكَ فَكَبِّرْ ﴿٣﴾

3- "Rabbini yücelt."

Allah'ı her türlü talepten, birliktelikten, ayrılıktan, illetten ve yaratıktan yüce tut.

وَثِيَابَكَ فَطَهِّرْ ﴿٤﴾

4- "Elbiselerini tertemiz tut."

Kalbini bütün yaratıklardan ve her türlü kötü vasıftan tertemiz kıl. Nefsini hatalardan, kalbini muhalefetlerden, sırrını da iltifatlardan arındır.

Bir yoruma göre de eşlerini öğütle arındır. Allah şöyle buyurmuştur:

( هُنَّ لِبَاسٌ لَكُمْ ) "*Eşleriniz sizin için elbisedirler.*" (Bakara, 2/187)

Böylece Allah, bazen eşleri "elbise" tabiriyle ifade etmektedir.

وَالرُّجْزَ فَاهْجُرْ ﴿٥﴾

5- "Kötü şeyleri terk et."

Yani günahları terk et.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Şeytanı terk et.

- Kalbini hatalardan ve dünya meşguliyetlerinden temizle.

- Bedeni sağlıklı olmayan kimse, yemek yeme iştahını hissetmez. Kalbi sağlıklı olmayan da ibadetin lezzetini hissetmez.

وَلَا تَمْنُنْ تَسْتَكْثِرُ ﴿٦﴾

6- "Yaptığın iyiliği çok görerek başa kakma."

Karşılığında fazlasını istediğin bir bağışta bulunma.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Yaptığın ibadeti çok bulma.

- Amelinle minnette bulunma. Yoksa amelini çok bulur ve onu beğenmiş olursun.

وَلِرَبِّكَ فَاصْبِرْ ﴿٧﴾

7- "Rabbinin rızasına ermek için sabret."

Yani sen Allah yolunda incitiliyorsun. O halde onların eziyetine karşı sabret.

فَاِذَا نُقِرَ فِي النَّاقُورِ ﴿٨﴾ فَذٰلِكَ يَوْمَئِذٍ يَوْمٌ عَسِيرٌ ﴿٩﴾ عَلَى
الْكَافِرِينَ غَيْرُ يَسِيرٍ ﴿١٠﴾

8, 9, 10- "Sûr'a üfürüldüğü zaman, işte o gün çetin bir gündür. Kâfirler için hiç kolay değildir."

Yani kıyamet koptuğu zaman işte o, kâfirler için kolay olmayan zor bir gündür.

ذَرْنِي وَمَنْ خَلَقْتُ وَحِيدًا ﴿١١﴾

11- "Beni, yarattığım kişiyle baş başa bırak."

Yani onların durumunu önemseme ve dert edinme. Çünkü durumları konusunda senin için ben yetmekteyim.

Şüphesiz ben onu tek başıma yarattım. Onu yaratmamda hiç kimse bana ortak olmadı.

Muhtemel bir anlamı da şudur: Ben, onu hiçbir yardımcı olmaksızın, yalnız biri olarak yarattım.

وَجَعَلْتُ لَهُ مَالًا مَمْدُودًا ﴿١٢﴾ وَبَنِينَ شُهُودًا ﴿١٣﴾

12, 13- "Ona bol mal ve gözü önünde duran oğullar verdim."

Onunla birlikte olup yolculuğa muhtaç olmayan oğullar.

وَمَهَّدْتُ لَهُ تَمْهِيدًا ﴿١٤﴾

14- "Kendisine alabildiğine imkânlar sağladım."

Allah, bununla tasarrufta bulunmayı kolaylaştırdığını kast etmiştir. Yani kendisine, işlerle ilgili olarak tasarrufta bulunma imkânı verdim.

ثُمَّ يَطْمَعُ اَنْ اَزِيدَ ﴿١٥﴾

15- "Sonra da o, hırsla daha da artırmamı umar."

O, kendisine nimetleri artırmamı umar.

كَلَّا اِنَّهُ كَانَ لِاٰيَاتِنَا عَنِيدًا ﴿١٦﴾

16- "Hayır, umduğu gibi olmayacak. Çünkü o, bizim ayetlerimize karşı inatçıdır."

İnkârcıdır.

سَاُرْهِقُهُ صَعُودًا ﴿١٧﴾

17- "Ben, onu dimdik bir yokuşa sardıracağım."

Onu, zor bir azap çekmek zorunda bırakacağım.

إِنَّهُ فَكَّرَ وَقَدَّرَ ﴿١٨﴾ فَقُتِلَ كَيْفَ قَدَّرَ ﴿١٩﴾ ثُمَّ قُتِلَ كَيْفَ قَدَّرَ ﴿٢٠﴾

18, 19, 20- "Çünkü o, düşündü taşındı, ölçtü biçti. Kahrolası nasıl da ölçtü biçti! Yine kahrolası, nasıl ölçtü biçti!"

Yani kahrolası nasıl düşündü ve nasıl ölçtü! Bununla Hz. Peygamber (s.a.v.) hakkında şunları söyleyen Velîd b. el-Mugîre kast edilmektedir:

*"O, ne şair ne deli ne de yalancıdır. O, büyücüden başka bir şey değildir. Getirdikleri de rivayet edilen sihirden başka bir şey değildir."*

ثُمَّ نَظَرَ ﴿٢١﴾

21- "Sonra derin derin düşündü."

ثُمَّ عَبَسَ وَبَسَرَ ﴿٢٢﴾

22- "Sonra yüzünü ekşitti, kaşlarını çattı."

ثُمَّ اَدْبَرَ وَاسْتَكْبَرَ ﴿٢٣﴾

23- "Sonra arkasını dönüp büyüklük tasladı."

فَقَالَ اِنْ هٰذَٓا اِلَّا سِحْرٌ يُؤْثَرُ ﴿٢٤﴾

24- "Şöyle dedi: 'Bu, ancak nakledilen bir sihirdir.'"

اِنْ هٰذَٓا اِلَّا قَوْلُ الْبَشَرِ ﴿٢٥﴾

25- "Bu, ancak insan sözüdür."

سَاُصْلِيهِ سَقَرَ ﴿٢٦﴾

26- "Ben, onu Sakar'a (cehenneme) sokacağım."

وَمَٓا اَدْرٰيكَ مَا سَقَرُ ﴿٢٧﴾

27- "Sakar'ın ne olduğunu sen ne bileceksin!"

لَا تُبْقِي وَلَا تَذَرُ ﴿٢٨﴾ لَوَّاحَةٌ لِلْبَشَرِ ﴿٢٩﴾

28, 29- "Geride bir şey koymaz, bırakmaz. Derileri kavurur."

Ne et bırakır ne de kemik bırakır. Yüz derisini yakarak siyahlaştırır. Güneşin yakıcılığı için de ( لَوَّاحَة ) ile aynı kökten gelen ( لاحَ ) ve ( لَوَّحَ ) kelimeleri kullanılır.

عَلَيْهَا تِسْعَةَ عَشَرَ ﴿٣٠﴾

30- "Üzerinde on dokuz (görevli melek) vardır."

Müşrikler: "Biz kalabalık bir topluluğuz. On dokuz kişi bize ne yapar?" deyince Allah şu ayeti indirdi:

وَمَا جَعَلْنَٓا اَصْحَابَ النَّارِ اِلَّا مَلٰٓئِكَةً وَمَا جَعَلْنَا عِدَّتَهُمْ اِلَّا فِتْنَةً لِلَّذِينَ كَفَرُوا لِيَسْتَيْقِنَ الَّذِينَ اُوتُوا الْكِتَابَ وَيَزْدَادَ الَّذِينَ اٰمَنُوٓا اِيمَانًا وَلَا يَرْتَابَ الَّذِينَ اُوتُوا الْكِتَابَ وَالْمُؤْمِنُونَ وَلِيَقُولَ الَّذِينَ فِي قُلُوبِهِمْ مَرَضٌ وَالْكَافِرُونَ مَاذَٓا اَرَادَ اللّٰهُ بِهٰذَا مَثَلًا كَذٰلِكَ يُضِلُّ اللّٰهُ مَنْ يَشَٓاءُ وَيَهْدِي مَنْ يَشَٓاءُ وَمَا يَعْلَمُ جُنُودَ رَبِّكَ اِلَّا هُوَ وَمَا هِيَ اِلَّا ذِكْرٰى لِلْبَشَرِ ﴿٣١﴾

31- "Biz, cehennemin görevlilerini ancak meleklerden kıldık. Onların sayısını inkâr edenler için bir imtihan vesilesi yaptık ki kendilerine kitap verilenler kesin olarak bilsinler, iman edenlerin imanı artsın, kendilerine kitap verilenler ve müminler şüpheye düşmesin, kalplerinde bir hastalık bulunanlar ile kâfirler: 'Allah, örnek

olarak bununla neyi anlatmak istedi?' desinler. İşte böyle. Allah dilediğini saptırır, dilediğini doğru yola iletir. Rabbinin ordularını ancak kendisi bilir. Bu, insanlar için ancak bir uyarıdır."

( وَيَزْدَادَ الَّذِينَ اٰمَنُوٓا اِيمَانًا وَلَا يَرْتَابَ الَّذِينَ اُوتُوا الْكِتَابَ وَالْمُؤْمِنُونَ ) *"İman edenlerin imanı artsın, kendilerine kitap verilenler ve müminler şüpheye düşmesin."*

Bunun üzerine müminlerin imanı artarken bu kâfirler: "Bu miktarda ne fayda vardır?" derler. Bu sözlerine karşılık Allah şöyle buyurdu:

( كَذٰلِكَ يُضِلُّ اللّٰهُ مَنْ يَشَآءُ وَيَهْدِي مَنْ يَشَآءُ وَمَا يَعْلَمُ جُنُودَ رَبِّكَ اِلَّا هُوَ وَمَا هِيَ اِلَّا ذِكْرٰى لِلْبَشَرِ )

*"İşte böyle. Allah, dilediğini saptırır, dilediğini doğru yola iletir. Rabbinin ordularını ancak kendisi bilir. Bu, insanlar için ancak bir uyarıdır."*

Yani yaratıkların bilgileri yetersiz kaldı. Bu nedenle sadece bir miktarı kapsadı, diğerini kapsamadı. İlmiyle her şeyi kuşatan ise yalnızca Allah'tır (c.c.).

كَلَّا وَالْقَمَرِ ﴿٣٢﴾ وَالَّيْلِ اِذْ اَدْبَرَ ﴿٣٣﴾ وَالصُّبْحِ اِذَآ اَسْفَرَ ﴿٣٤﴾

32, 33, 34- "Hayır! Aya, çekilip gittiğinde geceye ve aydınlandığında sabaha andolsun."

( كَلَّا ) lafzı, engelleme ve uyarı harfidir. Yani, bulunduğunuz durumdan uzak durun ve ondan başka bir şeye uyanın. Allah, aya veya aya güç yetirmesine, geçtiği zaman geceye ve aydınlandığı zaman sabaha yemin etmiştir.

اِنَّهَا لَاِحْدَى الْكُبَرِ ﴿٣٥﴾

35- "O, elbette en büyük şeylerden biridir."

Yani cehennem, en büyük korkunç şeylerden biridir.

Bir yoruma göre ise, ( كَلَّا وَالْقَمَرِ ) "*Hayır! Andolsun aya*" sözü, delillerin artmasıyla hilali büyümeye başlayan ilimlerin ayına işarettir. Çünkü delillerin artmasıyla ilimlerin ışığı da artar. Sonra deliller, ilim bakımından kemal sınırına ulaştığında marifetin bayrakları görünür. Bu aşamada ilim eksilmeye başlar ve marifet güneşi doğmuş olur. Nasıl ki ay güneşe yaklaştığı zaman daha çok eksiliyor ve güneşe tam olarak yaklaşınca görünmez oluyorsa, aynı şekilde irfan sultanı ortaya çıktığı zaman, marifetlerin fazlalığından dolayı ilimlerin ayları eksilmeye başlar. Tıpkı güneşin ışığında ve gündüzün aydınlığındaki lamba gibi. Geçenin geçtiği zaman ise batınlardaki karanlıkların dağıldığı zaman demektir. Sabahın aydınlandığı zaman da hakikatlerin nurlarının sırlarda tecelli etmesi demektir. Bütün bunlara andolsun ki o,büyük şeylerden biridir. Bu ifadeler, karanlıkların kalplere dönmesinden korkutmak içindir.

نَذِيرًا لِلْبَشَرِ ﴿٣٦﴾

36- "İnsan için uyarıcı olarak."

Bunda, insanı hakikatten koparan meşguliyetlerden sakındırma vardır. Böylece insanlar, ibadetlerde ve uygun davranışlarda huzur bulmuş ve onlara bakmış olurlar. Çünkü gerçekte bunların hiçbir tehlikesi yoktur.

لِمَنْ شَآءَ مِنْكُمْ اَنْ يَتَقَدَّمَ اَوْ يَتَاَخَّرَ ﴿٣٧﴾

37- "İçinizden ileri geçmek yahut geri kalmak isteyenler için."

Yani ibadetlerden geri kalmak isteyenler için. Bu ifade, tehdit yoluyla söylenmiştir.

كُلُّ نَفْسٍ بِمَا كَسَبَتْ رَهِينَةٌ ﴿٣٨﴾

38- "Herkes, kazandığına karşılık bir rehindir."

Yani yaptıklarıyla rehin alınmıştır. Sonra Allah şu istisnada bulunmuştur:

اِلَّٓا اَصْحَابَ الْيَمٖينِۜ ﴿٣٩﴾

39- "Ancak ahiret mutluluğuna eren kimseler başka."

Burada Allah, bu kimselerin, amelleri sebebiyle rehin alınmadıklarını söylemektedir. Bir yoruma göre de bunlar Allah'ın, haklarında: "Bunlar, cennettedirler ve ben bunu umursamam da" buyurduğu kimselerdir.

Bir görüşe göre de bunlar, müminlerin küçük çocuklarıdır.

فٖي جَنَّاتٍ يَتَسَٓاءَلُونَ ﴿٤٠﴾ عَنِ الْمُجْرِمٖينَ ﴿٤١﴾ مَا سَلَكَكُمْ فٖي سَقَرَ
﴿٤٢﴾ قَالُوا لَمْ نَكُ مِنَ الْمُصَلّٖينَ ﴿٤٣﴾ وَلَمْ نَكُ نُطْعِمُ الْمِسْكٖينَ ﴿٤٤﴾
وَكُنَّا نَخُوضُ مَعَ الْخَٓائِضٖينَ ﴿٤٥﴾ وَكُنَّا نُكَذِّبُ بِيَوْمِ الدّٖينِ ﴿٤٦﴾

40, 41, 42, 43, 44, 45, 46- "Onlar cennetlerdedirler. Birbirlerine suçlular hakkında sorular sorarlar ve dönüp onlara şöyle derler: 'Sizi Sakar'a ne soktu?' Onlar şöyle derler: 'Biz, namaz kılanlardan değildik. Yoksula yedirmezdik. Bâtıla dalanlarla birlikte biz de dalardık. Ceza gününü de yalanlıyorduk.'"

Bunlar, suçlular hakkında birbirlerine soru sorarlar ve cehennemlikleri gördüklerinde kendilerine: ( مَا سَلَكَكُمْ فٖي سَقَرَ ) "*Sizi Sakar'a ne soktu?*" derler. Onlar da şöyle derler: "Biz de, namaz kılanlardan değil miydik? Biz de yoksula yedirmiyor muyduk?"

Bu ifade, kâfirlerin dini hükümlerin ayrıntılarıyla yükümlü olduklarını göstermektedir.

( وَكُنَّا نَخُوضُ مَعَ الْخَٓائِضٖينَ ) "*Bâtıla dalanlarla birlikte biz de dalardık.*"

Biz batılı konuşmaya başlar ve ceza gününü yalanlardık.

حَتّٰٓى اَتٰينَا الْيَقٖينُ ﴿٤٧﴾

47- "Nihayet yakîn bize gelip çattı."

Yakîn, kıyameti görmek demektir.

فَمَا تَنْفَعُهُمْ شَفَاعَةُ الشَّافِعِينَ ﴿٤٨﴾

48- "Artık şefaatçilerin şefaati onlara fayda vermez."

Yani şefaat edenlerin şefaatine mazhar olamazlar.

فَمَا لَهُمْ عَنِ التَّذْكِرَةِ مُعْرِضِينَ ﴿٤٩﴾

49- "Böyle iken onlara ne oluyor da öğütten yüz çeviriyorlar."

Öğüt Kur'ân'dır.

كَاَنَّهُمْ حُمُرٌ مُسْتَنْفِرَةٌ ﴿٥٠﴾ فَرَّتْ مِنْ قَسْوَرَةٍ ﴿٥١﴾

50, 51- "Onlar, sanki aslandan kaçan yaban eşekleridir."

Onları, aslandan ürküp kaçan ürkek yaban eşekleri sanırsın.

بَلْ يُرِيدُ كُلُّ امْرِئٍ مِنْهُمْ اَنْ يُؤْتٰى صُحُفًا مُنَشَّرَةً ﴿٥٢﴾

52- "Hatta onlardan her bir kişi, kendisine açılmış sahifeler verilmesini istiyor."

Hatta onlardan her biri, kendisine, açılmış bir kitap verilmesini ister.

كَلَّا بَلْ لَا يَخَافُونَ الْاٰخِرَةَ ﴿٥٣﴾

53- "Hayır, hayır! Onlar ahiretten korkmuyorlar."

Yani hayır! Onlara temenni ettikleri şey verilmeyecektir. Çünkü onlar, ahiretten korkmazlar.

كَلَّٓا اِنَّهُ تَذْكِرَةٌ ﴿٥٤﴾ فَمَنْ شَٓاءَ ذَكَرَهُ ﴿٥٥﴾

54, 55- "Hayır, düşündükleri gibi değil! Şüphesiz bu, bir uyarıdır. Artık kim dilerse ondan öğüt alır."

Yani meğerki Allah dilemiş olsun, siz değil.

وَمَا يَذْكُرُونَ اِلَّٓا اَنْ يَشَٓاءَ اللّٰهُ هُوَ اَهْلُ التَّقْوٰى وَاَهْلُ الْمَغْفِرَةِ ﴿٥٦﴾

56- “Bununla beraber, Allah dilemedikçe öğüt alamazlar. O, takvaya ehil olandır, bağışlamaya ehil olandır.”

O, sakınılmaya ehildir.

( وَاَهْلُ الْمَغْفِرَةِ ) *“Bağışlamaya ehil olandır.”*

O, dilerse, sakınanı bağışlamaya da ehildir.

سورة الْقِيٰمَةِ

# KIYÂMET SÛRESİ

(Kıyamet Sûresi 40 âyettir. Mekke'de ilk inen sûrelerdendir. Adını ilk âyetteki "Kıyamet"ten almıştır. Sûrede; kıyametin tasviri, Kur'an'ın inişi ve açıklanması, öğütten yüz çevirenlerle inkârcıların ölüm sırasındaki durumu ve insanın yaratılışı konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", öyle üstün bir sözdür ki kim onu ilim şahidiyle dinlerse basiret sahibi olur. Kim de onu marifet şahidiyle dinlerse hayrete düşer. Bu itibarla alimler, burhanının sükuneti içinde, arifler de hükümranlığının dehşeti içindedirler. Alimler, ilimlerinin yıldızlarında olduklarından halleri sahv -kendinde olma- içinde sahvdir. Arifler de marifetlerinin güneşlerinde olduklarından vakitleri mahviyet içinde mahviyettir. İki grup arasında ise büyük bir mesafe vardır.

لَٓا اُقْسِمُ بِيَوْمِ الْقِيٰمَةِ ﴿١﴾

1- "Kıyamet gününe yemin ederim."

وَلَٓا اُقْسِمُ بِالنَّفْسِ اللَّوَّامَةِ ﴿٢﴾

2- "Kendini kınayan nefse de yemin ederim."

Bu, sahibine sitem eden ve kendi halinin noksanlığını bilen nefistir. Bir yoruma göre de yarın her nefis kendini kınayacaktır. Bu kınama, ya nefsin küfründen yada kusur işlemesinden dolayıdır. Buna göre yemin ifadesinde "Rab" kelimesini takdir etmek gerekir. Yani, ben kendine sitemde bulunan nefsin Rabbine yemin ederim. Bu arada herkes için söz konusu olsa bile nefsin, kıyamet günü sitemde bulunmasının bir önemi bulunmamaktadır. Ancak bu sitemin faydası, bütün nefislerin yarın böyle olacağının açıklanmış olmasıdır. Yeminin cevabı ise: ( بَلٰى ) "*Evet*..." diye başlayan dördüncü ayettir.

اَيَحْسَبُ الْاِنْسَانُ اَلَّنْ نَجْمَعَ عِظَامَهُ ﴿٣﴾

3- "İnsan, kendisinin kemiklerini bir araya getiremeyeceğimizi mi sanır?"

Yani o, ölümünden sonra kendisini diriltmeyeceğimizi mi zanneder?

بَلٰى قَادِرِينَ عَلٰٓى اَنْ نُسَوِّيَ بَنَانَهُ ﴿٤﴾

4- "Evet bizim, onun parmak uçlarını bile düzenlemeye gücümüz yeter."

( قادِرِينَ ) lafzı, hal olarak mansuptur. Yani dediklerinin aksine, bizim onun parmak uçlarını anında düzenlemeye gücümüz yeter. Aynı zamanda onun el ve ayak parmaklarını, tıpkı deve ve koyun ayağı gibi tek parça haline getirmeye de gücümüz yeter. Hal böyleyken, onu tekrar diriltmeye nasıl gücümüz yetmez?!

بَلْ يُرِيدُ الْاِنْسَانُ لِيَفْجُرَ اَمَامَهُ ﴿٥﴾

5- "Fakat insan, önündekini yalanlamak ister."

İnsan hatayı öne alır, tövbeyi ise sona bırakır ve: "İlerde tövbe edeceğim" der. Sonra tövbe etmeden ölür. Bir yoruma göre de insan, gelecek zamanında günahları çoğaltmamaya karar verir, ancak

bununla kalbindeki ısrar düğümü çözülmez ve tövbesi geçerli olmaz. Çünkü tövbenin şartlarından biri de yaptığının bir benzerini bir daha işlememeye karar vermesidir. O halde hatayı tatlı bulma hissi kalbinde mevcut olup onun benzerini tekrar yapmayı düşündüğü zaman, pişmanlığı geçerli olmaz.

يَسْـَٔلُ اَيَّانَ يَوْمُ الْقِيٰمَةِ ﴿٦﴾

6- "'Kıyamet günü ne zaman?' diye sorar."

O, bunu akla uzak bulduğu için sorar. Bunun üzerine Allah şöyle buyurdu:

فَاِذَا بَرِقَ الْبَصَرُ ﴿٧﴾ وَخَسَفَ الْقَمَرُ ﴿٨﴾ وَجُمِعَ الشَّمْسُ وَالْقَمَرُ
يَقُولُ الْاِنْسَانُ يَوْمَئِذٍ اَيْنَ الْمَفَرُّ ﴿٩﴾ ﴿١٠﴾

7, 8, 9, 10- "Gözler kamaştığı, ay karanlığa gömüldüğü, güneş ve ay bir araya getirildiği zaman, o gün insan: 'Kaçış nereye?' diyecektir."

( بَرِقَ ) "*berika*" lafzı, esreli "r" ile olduğu zaman şaşırmak anlamında olur. Üstünlü "r" ile ( بَرَقَ ) "*beraka*" şeklinde olduğu zaman ise anlamı kamaşmak olur. Bu durum insanın, her birini yetmiş bin meleğin tuttuğu yetmiş bin zincirle cehenneme sevk edildiği zaman meydana gelir. Cehennemin şiddetli bir soluması vardır. Bu nedenle melek ve peygamber kim varsa herkes: "Nefsim, nefsim!" der.

( وَخَسَفَ الْقَمَرُ وَجُمِعَ الشَّمْسُ وَالْقَمَرُ ) "*Ay karanlığa gömüldüğü, güneş ve ay bir araya getirildiği zaman.*"

Onlar boğazlanmış iki boğa gibi yan yana getirilirler.

Bir yoruma göre de bir araya getirilmeleri, ışıksız olmaları bakımındandır.

( يَقُولُ الْاِنْسَانُ يَوْمَئِذٍ اَيْنَ الْمَفَرُّ ) "*O gün insan: 'Kaçış nereye?' diyecektir.*"

Burada kaçıştan maksat, kaçılan yerdir. Bunun üzerine onlara şöyle denir:

كَلَّا لَا وَزَرَ ﴿١١﴾

11- "Hayır, hiçbir sığınacak yer yoktur."

Bugün ne sığınacak bir yer ne de Allah'ın hükmünden kaçış vardır.

اِلٰى رَبِّكَ يَوْمَئِذٍ الْمُسْتَقَرُّ ﴿١٢﴾

12- "O gün varıp durulacak yer, sadece Rabbinin huzurudur."

Yani O'nun hükmünden kurtuluş yoktur.

يُنَبَّؤُا الْاِنْسَانُ يَوْمَئِذٍ بِمَا قَدَّمَ وَاَخَّرَ ﴿١٣﴾

13- "O gün insana, yapıp önden gönderdiği ve yapmayıp geri bıraktığı şeyler haber verilir."

Yani kul unutsa da Allah'ın sayıp ortaya dökmesiyle, geçmişte yaptıklarını bilir.

بَلِ الْاِنْسَانُ عَلٰى نَفْسِه۪ بَص۪يرَةٌ ﴿١٤﴾ وَلَوْ اَلْقٰى مَعَاذ۪يرَهُ ﴿١٥﴾

14, 15- "Hatta mazeretlerini ortaya koysa da o gün insan kendi aleyhine şahittir."

İnsanın kendi aleyhine delili, alameti ve şahidi vardır. Bu çerçevede organları, yaptıkları konusunda aleyhinde şahitlik eder.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- İnsan öldükten sonra dirilmeyi inkâr etmesi konusunda kendi aleyhine şahit ve delildir.

- O, dünyada iken inkârcı ve kâfir olduğunu bilir. Bu nedenle o, her türlü delili getirse bile kendisinden dinlenmez ve ona fayda vermez.

لَا تُحَرِّكْ بِهٖ لِسَانَكَ لِتَعْجَلَ بِهٖ ﴿١٦﴾ اِنَّ عَلَيْنَا جَمْعَهُ وَقُرْاٰنَهُ ﴿١٧﴾
فَاِذَا قَرَاْنَاهُ فَاتَّبِعْ قُرْاٰنَهُ ﴿١٨﴾

16, 17, 18- "Vahyi çarçabuk almak için dilini kımıldatma. Şüphesiz onu toplamak ve okumak bize aittir. O halde biz onu okuduğumuz zaman sen onun okunuşunu takip et."

Sen Kur'ân'ı Cibril'den almada acele etme. Çünkü onu senin kalbinde toplayıp korumak bize aittir. Aynı şekilde onu okumayı diline kolay kılmak da bize aittir. Bu nedenle biz onu kalbinde ve hafızanda topladığımız zaman sen, okutmanla onun toplanmasını takip et.

ثُمَّ اِنَّ عَلَيْنَا بَيَانَهُ ﴿١٩﴾

19- "Sonra onu açıklamak da şüphesiz bize aittir."

Biz ondaki helali, haramı ve diğer hususları sana açıklarız. Hz. Peygamber (s.a.v.), unutma korkusuyla, onu alırken acele ediyordu. Bunun üzerine bundan alıkonuldu ve Allah, kendisine kolaylaştırma sözü verdi.

كَلَّا بَلْ تُحِبُّونَ الْعَاجِلَةَ ﴿٢٠﴾ وَتَذَرُونَ الْاٰخِرَةَ ﴿٢١﴾

20, 21- "Hayır, siz dünyayı seviyorsunuz ve ahireti bırakıyorsunuz."

Onları, kıyameti ve neşri yalanlamaya sevk eden yegâne husus, onların dünyada kalmayı sevmesidir.

( وَتَذَرُونَ الْاٰخِرَةَ ) *"Ahireti bırakıyorsunuz."*

Yani siz, ahiret için çalışmayı terk ediyorsunuz. Bir yoruma göre de siz onu inkâr ediyorsunuz.

وُجُوهٌ يَوْمَئِذٍ نَاضِرَةٌ ﴿٢٢﴾ اِلٰى رَبِّهَا نَاظِرَةٌ ﴿٢٣﴾

22, 23- "O gün birtakım yüzler aydındır. Rablerine bakarlar."

( نَاضِرَةٌ ) lafzı, parlak ve güzel demektir. O yüzler parlaktır çünkü Rablerine bakmakta, yani Allah'ı görmektedirler. Bu arada ( إلى ) edatıyla kullanılıp ( وَجْه ) lafzına izafe edilmiş olan ( نَظَر ) maddesi sadece görmek anlamına gelir. Bu itibarla Allah, cennette adeti ters yüz ederek görmeyi yüzlerinde yaratır. Böylece yüzler Allah'a bakar.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Göz, yüzün bir parçası olduğundan yüz lafzı onu da kapsamaktadır.

- Yüz bakmaz fakat sadece yüzde bulunan göz bakar. Nitekim nehir de akmamakta, lakin nehrin içindeki su akmaktadır. Allah şöyle buyurmuştur:

( جَنَّاتٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْأَنْهَارُ ) *"Altından nehirler akan cennetler."* (Bakara, 2/25)

- ( وُجُوهٌ يَوْمَئِذٍ نَاضِرَةٌ ) *"O gün birtakım yüzler aydındır"* ifadesinde, onların sahv vasfına sahip olduklarına, içlerine de bir şaşkınlık veya dehşet düşmediğine dair delil bulunmaktadır. Nitekim aydınlık, bastın alametlerindendir. Çünkü buluşma halinde kalmak, buluşmaktan daha mükemmeldir.

Bu arada tahkik ehli nezdinde görmek, görenin kalıcılığını gerektirir. Yine onlara göre, kulun Hakk'ın varlığında tükenmesi daha mükemmeldir. Bu itibarla, vücuda işaret edenler, onu görmekten daha yüksek bulmuşlardır.

وَوُجُوهٌ يَوْمَئِذٍ بَاسِرَةٌ ﴿٢٤﴾ تَظُنُّ اَنْ يُفْعَلَ بِهَا فَاقِرَةٌ ﴿٢٥﴾

24, 25- "O gün birtakım yüzler de asıktır. Bel kemiklerini kıran bir felakete uğrayacaklarını anlarlar."

( باسِرَة ) lafzı asık demektir. ( فاقِرَة ) lafzı ise büyük felaket demektir. Bu felaket, ebedî olarak cehennemde kalmalarıdır. ( تَظُنُّ ) lafzının muhtemel bir anlamı da şudur: Yani Allah kalplerinde, belirtisi yüzlerinde beliren zannı yaratır.

كَلَّٓا اِذَا بَلَغَتِ التَّرَاقِيَۙ ﴿٢٦﴾ وَق۪يلَ مَنْ رَاقٍۙ ﴿٢٧﴾ وَظَنَّ اَنَّهُ الْفِرَاقُۙ
﴿٢٨﴾ وَالْتَفَّتِ السَّاقُ بِالسَّاقِۙ ﴿٢٩﴾ اِلٰى رَبِّكَ يَوْمَئِذٍ الْمَسَاقُ ﴿٣٠﴾

**26, 27, 28, 29, 30- "Hayır, can boğaza dayandığı, 'kimdir iyi edecek?' dendiği, bunun ayrılış olduğunu bildiği ve bacaklar birbirine dolandığı zaman, işte o gün sevk ediliş, Rabbinedir."**

Yani durum sandıkları gibi değildir. Aksine canları boğazlarına dayanıp "kimdir iyileştirecek olan?" denildiği zaman. Yani can çekişen o kimsenin çevresindeki kimseler şöyle derler: "Var mı onu iyileştirecek biri? Var mı onu tedavi edecek bir doktor? Var mı ona şifa verecek bir ilaç?"

Bir yoruma göre de onun etrafındaki melekler şöyle derler: "Onun ruhunu yukarıya kim götürecek? Rahmet melekleri mi yoksa azap melekleri mi?"

( وَظَنَّ اَنَّهُ الْفِرَاقُ ) *"Bunun ayrılış olduğunu bildiği zaman."*

Bunun ölüm olduğunu anladığı zaman.

( وَالْتَفَّتِ السَّاقُ بِالسَّاقِ ) *"Bacaklar birbirine dolandığı zaman."*

Bacaklardan maksat, ölünün her iki bacağıdır. Böylece dünyalık hayatın sonunun şiddeti, ahiret hayatının başlangıcının şiddetiyle yan yana gelmiş olur.

( اِلٰى رَبِّكَ يَوْمَئِذٍ الْمَسَاقُ ) *"İşte o gün sevk ediliş, Rabbinedir."*

Melekler, onun ruhunu Allah'ın huzuruna sevk ederler. Çünkü Allah meleklere, ölenin ruhunu O'na taşımalarını emretmiştir. Bu ruh, ya farklı dereceleri olan yüksek makamlara ya da farklı çukurları olan cehenneme taşınır.

Bir yoruma göre de insanlar, ölünün bedenini kefenleyip yıkar ve namazını kılarlar. Allah da (c.c.), onun ruhuna, hak kazandığı süslü güzel elbiseler giydirir, onu rahmet suyuyla yıkar, O ve melekleri üzerine rahmet indirirler.

فَلَا صَدَّقَ وَلَا صَلّٰى ﴿٣١﴾ وَلٰكِنْ كَذَّبَ وَتَوَلّٰى ﴿٣٢﴾

31, 32- "O, ne tasdik etmiş ne de namaz kılmıştı. Fakat yalanlamış ve yüz çevirmişti."

Yani kâfir, ne Allah'ı tasdik etmiş ne de O'na namaz kılmıştı. Fakat o, yalanlamış ve imandan yüz çevirmişti. Öte yandan bu ayet, kâfirlerin dinin fer'i hükümleriyle yükümlü olduklarını göstermektedir.

ثُمَّ ذَهَبَ اِلٰٓى اَهْلِه۪ يَتَمَطّٰى ﴿٣٣﴾

33- "Sonra da kasıla kasıla ailesine gitmişti."

Yani caka satarak ve kibirlenerek gitmişti.

اَوْلٰى لَكَ فَاَوْلٰى ﴿٣٤﴾ ثُمَّ اَوْلٰى لَكَ فَاَوْلٰى ﴿٣٥﴾

34, 35- "'Bu azap sana layıktır, layık! Evet, layıktır sana layık!' denecektir."

Araplar bir kimseye beddua ettikleri zaman: ( أَوْلَى لَكَ ) derler. Burada ise Allah bu ifadeyi, mübalağa için iki defa peş peşe getirmiştir.

Bir yoruma göre de bunun anlamı şudur: Yaşadığın gün, öldüğün gün, diriltildiğin gün ve cehenneme gireceğin gün vay senin haline!

اَيَحْسَبُ الْاِنْسَانُ اَنْ يُتْرَكَ سُدًى ﴿٣٦﴾

36- "İnsan, kendisinin başıboş bırakılacağını mı zanneder?"

İhmal edilip yükümlü kılınmayacağını mı zanneder? Durum böyle değildir.

اَلَمْ يَكُ نُطْفَةً مِنْ مَنِيٍّ يُمْنٰى ﴿٣٧﴾ ثُمَّ كَانَ عَلَقَةً فَخَلَقَ فَسَوّٰى
﴿٣٨﴾ فَجَعَلَ مِنْهُ الزَّوْجَيْنِ الذَّكَرَ وَالْاُنْثٰى ﴿٣٩﴾

37, 38, 39- "O, akıtılan meninin içinden bir nutfe değil miydi? Sonra bu bir alaka oldu. Derken Allah, onu yaratıp güzelce şekillendirdi. Nihayet ondan da erkek ve dişi iki eş var etti."

Yani o, rahmin içine atılan bir meniden ibaret idi. Sonra alaka, yani kan pıhtısı oldu. Derken Allah, annesinin karnında onun organlarına biçim verdi ve yaratılışta sahip olduğu şekil üzere parçalarını yerlerine yerleştirip ondan iki eş meydana getirdi. Dilerse erkek, dilerse dişi, dilerse ikisi olarak yarattı.

اَلَيْسَ ذٰلِكَ بِقَادِرٍ عَلٰٓى اَنْ يُحْيِيَ الْمَوْتٰى ﴿٤٠﴾

40- "Şimdi bunları yapan Allah'ın, ölüleri diriltmeye gücü yetmez mi?"

Şimdi bütün bunlara kadir olan Allah, ölüleri diriltmeye kadir değil midir? Bu itibarla ayet, takrir anlamlı bir istifham cümlesidir.

سورة الْإِنْسَانِ

# İNSÂN SÛRESİ

(İnsan Sûresi 31 âyettir. Medine'de inmiştir. Mekke'de indiğini söyleyenler de vardır. Adını ilk âyetteki "İnsan" dan almıştır. Dehr, Ebrâr, Emşâc, Hel etâ Sûresi de denir. Sûrede; insanın yaratılışı, amacı, küfür ehlinin azap sahneleri, adağı yerine getiren, infak yapan ve ahiret gününden korkan cennet ehlinin nimetleri, sabah, akşam ve gece ibadeti, Allah'ın rahmeti konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", öyle karşı konulmaz bir varlığın ismidir ki o, ta ezelden beri karşı konulmazlık vasfında birdir ve ebediyete kadar melekût sıfatıyla tektir. Bu itibarla O'nun ezelî oluşu, ebedî oluşudur. Ebedî oluşu da ezelî oluşudur. Karşı konulmazlığı melekûtudur. Melekûtu da karşı konulmazlığıdır.

O, vasfında bir, zatında samed, sıfatında mukaddes, celalinde eşsiz, yüceliğinde tek, üstünlüğünde daim ve kalıcılığında kadîmdir.

هَلْ اَتٰى عَلَى الْاِنْسَانِ ح۪ينٌ مِنَ الدَّهْرِ لَمْ يَكُنْ شَيْـًٔا مَذْكُورًا ﴿١﴾

1- "İnsan, anılır bir şey değilken üzerinden uzun bir zaman geçmedi mi?"

Tefsirdeki izaha göre insan, henüz önemi ve değeri olan bir şey değilken üzerinden uzun bir zaman geçmiştir. Bir iddiaya göre Hz.

Âdem'in cesedi, kırk yıl Mekke ile Taif arasına atılmış olarak, sonra kırk yıl kuru çamur olarak, sonra kırk yıl da şekillenmiş balçık olarak kaldı. Böylece yaratılışı, yüz yirmi yılda tamamlanmış oldu.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- İnsanın üzerinden ne kadar zaman geçmiş ise muhakkak o, benim katımda anılmıştır.

- Seni korumaktan bir saat bile gafil kaldım mı? Bir an bile seni başıboş bıraktım mı? Bir saat bile seni yeni bir ilgi ve artırılmış bir himayeden mahrum kıldım mı?

اِنَّا خَلَقْنَا الْاِنْسَانَ مِنْ نُطْفَةٍ اَمْشَاجٍ نَبْتَلِيهِ فَجَعَلْنَاهُ سَمِيعًا بَصِيرًا ﴿٢﴾

2- "Şüphesiz biz insanı, karışım halindeki az bir sudan yarattık ve onu imtihan edeceğiz. Bu sebeple onu, işitir ve görür kıldık."

Bir nutfeden, yani bir damla sudan yarattık. Karışım, kadın ve erkek suyunun karışımları demektir.

Bir yoruma göre de insanı bir aşamada nutfe, bir aşamada alaka, bir aşamada kemik, bir aşamada da et olarak yarattık.

( نَبْتَلِيهِ ) *"Onu imtihan edeceğiz."*

Onu imtihan edip sınayacağız.

اِنَّا هَدَيْنَاهُ السَّبِيلَ اِمَّا شَاكِرًا وَاِمَّا كَفُورًا ﴿٣﴾

3- "Şüphesiz biz, ona yolu gösterdik. O, ya şükrederek ya da nankör olarak yola devam eder."

Yani biz ona yolu, yani hayır ve şer yolunu öğrettik.

Bir görüşe göre de bu yol ya mutsuzluk ya da mutluluk içindir. O, ya velilerimizden şükreden biri veya düşmanlarımızdan bir nankör olur. Eğer şükrederse bu, muvaffakiyet sebebiyledir. Şayet nankörlük ederse bu da, muvaffakiyetsizlikten dolayıdır.

إِنَّٓا اَعْتَدْنَا لِلْكَافِر۪ينَ سَلَاسِلَا۬ وَاَغْلَالًا وَسَع۪يرًا ﴿٤﴾

4- "Şüphesiz biz kâfirler için zincirler, demir halkalar ve alevli bir ateş hazırladık."

Yani biz onlar için, içinde sürüklenecekleri zincirler, boyunları için aşağılanacakları demir halkalar ve alev alev yanan bir ateş hazırladık.

اِنَّ الْاَبْرَارَ يَشْرَبُونَ مِنْ كَاْسٍ كَانَ مِزَاجُهَا كَافُورًاۚ ﴿٥﴾

5- "İyiler ise katkısı kâfur olan çiçekler dolu bir kadehten içerler."

Bir görüşe göre iyi, içinde kötülük tutmayan ve karıncayı bile incitmeyen kimsedir.

Bir görüşe göre de iyiler, himmetleri değersiz şeylere ilgi göstermeyecek yükseklikte olan, kalplerinde de hikmet pınarları ortaya çıkan, böylece dünyaya yaslanmaktan sakınan kimselerdir.

Onlar, kokusu kâfur kokusu gibi olan veya kâfur katılmış bir kadehten içerler.

Bir yoruma göre de onların ahiretteki içecekleri farklı olur. Bu çerçevede her birine, kendi haline uygun olan içirilir. Aynı şekilde dünyada da içecekleri farklıdır. Buna göre kimisine karışık, kimisine sade, kimisine sırayla, kimisine kalitelisinden içirilirken, kimisine de tek başına içirilmekte ve başkasına içirilenden kendisine içirilmemektedir. Kimisine ise sofilerle aynı şaraptan içirilir.

Şiir:

*Arkadaşlarımdan isen eğer sen, en büyüğüyle içir bana*
*İçirme bana kenarı kırık en küçüğüyle*

Bugün içmenin faydası, onları her şeyden alıkoyması, böylece kendilerini hissetmekten rahatlatması ve aklın gereklerinden koparmasıdır. Ahirette de içmenin sonuçları böyledir. Bu sonuçların içinde ihtiyacın ortadan kalkması, arayışın gündemden düşmesi,

coşkunun devamı, helak olmanın ortadan kalkması ve her türlü sebepten habersiz kalmaktır.

Şiir:

*Asıl içkine ve yak lambanı*
*Ve alevlendir sevincini kadehle*
*Çatlasın ar damarın nefsin arzusunda*
*Rahatlat sitemkârını ve rahatla*
*Ve sevin vaktinle, çünkü ancak*
*Sevinç vaktinden ibarettir kişinin ömrü*

عَيْنًا يَشْرَبُ بِهَا عِبَادُ اللّٰهِ يُفَجِّرُونَهَا تَفْجِيرًا ﴿٦﴾

6- "Bir pınar ki Allah'ın kulları ondan içer, onu fışkırtıp akıtırlar."

O pınarların kanallarını açarlar. Yani o pınarlar, evlerinde ve saraylarında onların istediği gibi akar. Bugün de onların sırlarında pınarlar vardır. Bunlar sevgi pınarı, safa pınarı, vefa pınarı, bast pınarı, ruh pınarı ve daha başka pınarlardır. Yarın da onların pınarları olacaktır.

يُوفُونَ بِالنَّذْرِ وَيَخَافُونَ يَوْمًا كَانَ شَرُّهُ مُسْتَطِيرًا ﴿٧﴾

7- "O kullar adaklarını yerine getirirler. Kötülüğü her yanı kuşatmış bir günden korkarlar."

Sonra Allah, onların dünyadaki hallerini anlatarak: "Onlar, Allah ile aralarındaki kadim ahdi özel bir şekilde yerine getirirler" buyurmuştur.

( وَيَخَافُونَ يَوْمًا كَانَ شَرُّهُ مُسْتَطِيرًا ) *"Kötülüğü her yanı kuşatmış bir günden korkarlar."*

Kötülüğü katı, yaygın ve uzanmış bir günden korkarlar.

وَيُطْعِمُونَ الطَّعَامَ عَلٰى حُبِّهِ مِسْكِينًا وَيَتِيمًا وَاَسِيرًا ﴿٨﴾

8- "Onlar, seve seve yiyeceği yoksula, yetime ve esire yedirirler."

Yani onlar, ihtiyaçları sebebiyle yiyeceği sevdikleri halde yedirirler.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Onlar, Allah'ı sevdikleri için yedirirler.

- Onlar, yedirmeyi sevdikleri için yedirirler.

Tefsirde yer aldığına göre söz konusu esir kâfir idi. Çünkü Hz. Peygamber (s.a.v.) döneminde Müslüman kimse,esir alınmazdı. Bu esir, Hz. Fatıma'nın evine gidip: "Bizi esir alıyorsunuz, ancak yedirmiyorsunuz" demişti.

إِنَّمَا نُطْعِمُكُمْ لِوَجْهِ اللّٰهِ لَا نُرِيدُ مِنْكُمْ جَزَٓاءً وَلَا شُكُورًا ٩

9- "Biz, size sırf Allah rızası için yediriyoruz. Sizden bir karşılık ve bir teşekkür beklemiyoruz."

Biz, size sadece Allah rızasını kazanmak arzusuyla yediriyoruz. Sizin tarafınızdan ne bir karşılık ne de bir teşekkür bekliyoruz.

Bir yoruma göre de onlar bunu dilleriyle değil, sadece kalpleriyle söylediler.

إِنَّا نَخَافُ مِنْ رَبِّنَا يَوْمًا عَبُوسًا قَمْطَرِيرًا ١٠

10- "Şüphesiz biz asık suratlı, çetin bir günden dolayı Rabbimizden korkarız."

Yani kıyamet gününden dolayı.

فَوَقٰيهُمُ اللّٰهُ شَرَّ ذٰلِكَ الْيَوْمِ وَلَقّٰيهُمْ نَضْرَةً وَسُرُورًا ١١

11- "Allah da onları o günün kötülüğünden korur ve yüzlerine bir aydınlık, içlerine bir sevinç verir."

Ayetteki ( لَقَّاهُمْ ) sözü, onlara verir demektir.

وَجَزٰيهُمْ بِمَا صَبَرُوا جَنَّةً وَحَرِيرًا ﴿١٢﴾

12- "Sabretmelerine karşılık da onları cennet ve ipek ile mükâfatlandırır."

Allah açlık sıkıntısı çekmeye sabretmelerine karşılık olarak kendilerini cennet ve ipek ile mükâfatlandırır.

مُتَّكِئِينَ فِيهَا عَلَى الْاَرَآئِكِ لَا يَرَوْنَ فِيهَا شَمْسًا وَلَا زَمْهَرِيرًا ﴿١٣﴾

13- "Orada koltuklar üzerine kurulmuş olarak bulunurlar. Orada ne güneş görürler ne de dondurucu soğuk."

Ayetteki ( أرائِك ) lafzı, gerdek odalarındaki yatak anlamına gelen ( أرِيكَة ) lafzının çoğuludur.

( لَا يَرَوْنَ فِيهَا شَمْسًا وَلَا زَمْهَرِيرًا ) *"Orada ne güneş görürler ne de dondurucu soğuk."*

Yani onlar, orada sıcaktan ve soğuktan rahatsız olmazlar.

وَدَانِيَةً عَلَيْهِمْ ظِلَالُهَا وَذُلِّلَتْ قُطُوفُهَا تَذْلِيلًا ﴿١٤﴾

14- "Üzerlerine cennetin gölgeleri sarkmış, cennetin meyveleri yakınlaştırılarak hazırlanmıştır."

Onlar, içinde bulundukları duruma uygun olarak zorluk çekmeden meyvelerini koparabilirler. Şöyle ki, oturur vaziyette iken meyveler onlar için aşağı sarkıtılır. Şayet ayakta iseler bu kez yerdeki meyveler onlar için yükseltilir.

وَيُطَافُ عَلَيْهِمْ بِاٰنِيَةٍ مِنْ فِضَّةٍ وَاَكْوَابٍ كَانَتْ قَوَارِيرَا ﴿١٥﴾

15- "Etraflarında gümüş kaplar, şeffaf kadehler dolaştırılır."

Kaplar isim olarak gümüştür ancak mahiyetleri dünyadakine benzememektedir.

قَوَارِيرَ مِنْ فِضَّةٍ قَدَّرُوهَا تَقْدِيرًا ﴿١٦﴾

16- "Gümüşten billur kaplar ki onları ölçüp düzenlemişlerdir."

Yani o kaplar, billur duruluğunda ve gümüş beyazlığındadır. Allah, bunları onların iradeleri ölçüsünde takdir etmiştir.

وَيُسْقَوْنَ فِيهَا كَأْسًا كَانَ مِزَاجُهَا زَنْجَبِيلًا ﴿١٧﴾

17- "Orada kendilerine, katkısı zencefil olan içecekle dolu bir kâseden içirilir."

Zencefilden maksat güzel kokudur. Zira Araplar, zencefili lezzetli buluyor, kokusundan zevk alıyor ve meyveleri ona benzetiyorlardı. Yoksa onunla dili buran zencefili kast etmezlerdi.

عَيْنًا فِيهَا تُسَمّٰى سَلْسَبِيلًا ﴿١٨﴾

18- "Orada bir pınar ki, ona 'Selsebil' adı verilir."

Yani onlara böyle bir pınardan içirilir. Allah, ayette içirileni belirtirken içireni zikretmemiştir. Çünkü Allah onlardan bazısına vasıtasız olarak içirir.

وَيَطُوفُ عَلَيْهِمْ وِلْدَانٌ مُخَلَّدُونَ اِذَا رَاَيْتَهُمْ حَسِبْتَهُمْ لُؤْلُؤًا
مَنْثُورًا ﴿١٩﴾

19- "Çevrelerinde, gördüğünde saçılmış inciler sanacağın, hep aynı gençlik ve güzellikte kalacak hizmetçiler dolaşır."

Yani onlara, nitelikleri bakımından hep aynı kalan genç hizmetçiler hizmet ederler.

Tefsirde yer alan izaha göre ise onlar yaşlanmazlar ve ölmezler. Öte yandan küpeliler anlamında ( مُقَرَّطُونَ ) şeklinde bir kıraat da vardır.

Sen onları gördüğün zaman, renklerinin duruluğundan dolayı kendilerini saçılmış inci sanırsın.

Tefsirde yer aldığına göre cennetliklerden her bir insana, bin genç hizmet verir.

وَاِذَا رَاَيْتَ ثَمَّ رَاَيْتَ نَعِيمًا وَمُلْكًا كَبِيرًا ﴿٢٠﴾

20- "Orada görünce, nimetler ve büyük bir mülk görürsün."

( ثَمَّ ) "*Orada*", yani cennette.

( وَمُلْكًا كَبِيرًا ) "*Büyük bir mülk görürsün.*"

Tefsirlerde meleklerin, yanlarına girmek için kendilerinden izin istedikleri yer almıştır.

Bir görüşe göre büyük mülk, Allah'ın şu sözüdür:( لَهُمْ مَا يَشَٓاؤُ۫نَ فِيهِ ) "*Orada onlar için diledikleri her şey vardır.*" (Kâf, 50/35)

Bir yoruma göre ise yani o mülkün zevali yoktur.

عَالِيَهُمْ ثِيَابُ سُنْدُسٍ خُضْرٌ وَاِسْتَبْرَقٌ وَحُلُّٓوا اَسَاوِرَ مِنْ فِضَّةٍ
وَسَقٰيهُمْ رَبُّهُمْ شَرَابًا طَهُورًا ﴿٢١﴾

21- "Üstlerinde ince ve kalın ipekten yeşil elbiseler vardır. Gümüş bileziklerle süsleneceklerdir. Rableri, onlara tertemiz bir içecek içirecektir."

Bu vasfın, iyiler için olma ihtimali olduğu gibi genç hizmetçiler için de olabilir ki bu daha uygundur. Nitekim isim zata değil, isme uyar.

( وَسَقٰيهُمْ رَبُّهُمْ شَرَابًا طَهُورًا ) "*Tertemiz bir içecek içirecektir.*"

Temiz içecek, hem kendisi temiz olan hem de başka şeyleri temizleyendir. Bu itibarla içecek, cennette hem temiz hem de temizleyicidir. Bu arada cennette temizlemeye ihtiyaç duyulmadığı için kendisiyle fiilen temizlik gerçekleşmese de durum böyledir.

Ancak Allah (c.c.), bugün zâhirde necis olan şaraptan söz edince onun, yarın hem temiz hem de temizleyici olacağını bildirmiştir. Bu şarap, onları başkalarını sevmekten temizler. Bu nedenle kim o şaraptan bir miktar yudumlarsa, onu bütün yaratıkların sevgisinden temizler.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bu şarap, onların kalplerini kin ve aldatmalardan temizler ve aralarında husumet, düşmanlık, dava ve başka hiçbir şey bırakmaz.

- Bu şarap, onların kalplerini iri gözlü hurilerin sevgisinden temizler.

- Melekler onlara şarap sunarlar, ancak onlar bunu meleklerden kabul etmeye yanaşmayarak: “Bunlardan şarabı almamız uzadı” derler. Bunun üzerine arada el olmaksızın, gaybtan kula bir ikram olarak ansızın ağızlarına kadehlerin dayandığını görürler.

- Bugün de şarap vardır, yarın da şarap vardır. Bugün ünsiyet verme şarabı, yarın da kadeh şarabı söz konusudur. Bugün lütuf eseri olan şarap, yarın da elde dolaştırılan şarap söz konusudur.

- Allah, bugün kime sevgisinin şarabını içirirse, ona ünsiyet ve cesaret verir. Böylece o kimse, vakti itibariyle hiçbir şeyden yabancılık hissetmez ve ruhuyla hiçbir fedakârlıktan çekinmez. İlahi sevgi kadehiyle içmenin sonuçlarından biri de ayırım yapmaksızın kâinattaki herkese cömert davranması ve kalbinde kaygılardan hiçbir eser kalmamasıdır.

Bu şarabı içmenin sonuçlarından biri de sevgilisi için herkese karşı alçak gönüllü davranmasıdır. Böylece o, en küçük hizmetçinin bile ayağının toprağı olur ve onda kibirden bir damar bile kıpırdamaz.

Bazen bu şarabın sonuçlarından biri de onu içen kimsenin, dünya ve ahiret ehline karşı şaşkınlık yaşamasıdır.

Bu şarabın sonuçlarından bir diğeri de neşeye kapılıp utanmazlıktan ve hayâ örtüsünü atmaktan kendini alıkoyamaması ve nesi varsa hepsini ortaya dökmesidir.

Şiir:

*Kimileri çatlatır ar damarını senin uğruna*
*Acaba ar damarı olmayan nasıl olur?*

Bu şarabın sonuçlarından biri de, çekingenliğin ortadan kalkmasıdır. Böylece onu içen kimse,ya basta göre yada şekvâ lafzının gereğiyle konuşur ve ayıklığı halinde bir akılsızın kerpetenle bile ağzından alamayacağı şeyler söyler. Nitekim Hz. Mûsâ'nın şu sözü de buna yorumlanmıştır:

( رَبِّ اَرِنٖۤي اَنْظُرْ اِلَيْكَ ) *"Ey Rabbim! Bana kendini göster, sana bakayım."* (A'râf, 7/143)

Demişlerdir ki: Hz. Mûsâ, Allah'ın kelamını işitmekten sarhoş olduğu için dilinden bu sözler dökülmüştür. Allah, tevhid şarabından içirdiği kimselerden ise her türlü gayrı görme arzusunu giderir. Böylece onlar, izzet vadilerinde ve yücelik çöllerinde şaşkın şaşkın dolaşır ve bütün benlikleri Allah'ın birliği sevdasında kaybolur. Böylece ortada ne akıl, ne temyiz, ne de idrak kalır. Bütün bu manalar ortadan kalkmış olur.

Bu itibarla kul, keşfin başında kuşatılır, sonra gark edilir, sonra da bitirilir.

( وَاَنَّ اِلٰى رَبِّكَ الْمُنْتَهٰى ) *"Şüphesiz en son varış Rabbinedir."* (Necm, 53/42)

اِنَّ هٰذَا كَانَ لَكُمْ جَزَٓاءً وَكَانَ سَعْيُكُمْ مَشْكُورًا ﴿٢٢﴾

22- "Onlara şöyle denecektir: 'Şüphesiz bu, sizin için bir mükâfattır. Çalışmanız ve çabanız makbul görülmüştür.'"

Onlara şöyle denir: "Bu, sizin için şükranla karşılanmış bir mükâfattır." Allah'ın, onların çabasına şükranla karşılık vermesi, az amellerine karşılık sevaplarını çoğaltmasıdır. Bu, ulema yolunun izahına göredir. Kimilerine göre de onlara şükranla karşılık vermek, şükürlerine karşılık olarak onları mükâfatlandırmaktır.

Bir yoruma göre ise Allah'ın onlara şükranda bulunması, bir lütuf olarak iyiliklerini zikretmek suretiyle onları övmesidir.

اِنَّا نَحْنُ نَزَّلْنَا عَلَيْكَ الْقُرْاٰنَ تَنْز۪يلًاۚ ﴿٢٣﴾

23- "Şüphe yok ki Kur'ân'ı sana elbette biz indirdik biz."

Bunu birkaç yıl içinde yaptık.

فَاصْبِرْ لِحُكْمِ رَبِّكَ وَلَا تُطِعْ مِنْهُمْ اٰثِمًا اَوْ كَفُورًاۚ ﴿٢٤﴾

24- "O halde Rabbinin hükmüne sabret. Onlardan hiçbir günahkâra ve hiçbir nanköre itaat etme."

Yani Allah'ın hükmüne rıza göster ve ona teslim ol.

( وَلَا تُطِعْ مِنْهُمْ اٰثِمًا اَوْ كَفُورًا ) *"Onlardan hiçbir günahkâra ve hiçbir nanköre itaat etme."*

Yani hiçbir nanköre de itaat etme. Bu ifade Hz. Peygamber'e (s.a.v.), sadece Rabbine itaat etmesine dair bir emirdir.

وَاذْكُرِ اسْمَ رَبِّكَ بُكْرَةً وَاَص۪يلًاۚ ﴿٢٥﴾ وَمِنَ الَّيْلِ فَاسْجُدْ لَهُ وَسَبِّحْهُ لَيْلًا طَو۪يلًا ﴿٢٦﴾

25, 26- "Sabah akşam Rabbinin adını an. Gecenin bir kısmında O'na secde et. Geceleyin de O'nu uzun uzadıya tesbih et."

Önce farz, sonra nafile namazı kıl.

اِنَّ هٰٓؤُ۬لَٓاءِ يُحِبُّونَ الْعَاجِلَةَ وَيَذَرُونَ وَرَٓاءَهُمْ يَوْمًا ثَق۪يلًا ﴿٢٧﴾

27- "Şunlar, dünyayı tercih ediyorlar ve çetin bir günü arkalarına atıyorlar."

Yani Kureyş kâfirleri.

( وَيَذَرُونَ وَرَٓاءَهُمْ يَوْمًا ثَق۪يلًا ) *"Çetin bir günü arkalarına atıyorlar."*

Yani onlar kıyamet günü için çalışmıyorlar.

نَحْنُ خَلَقْنَاهُمْ وَشَدَدْنَٓا اَسْرَهُمْ وَاِذَا شِئْنَا بَدَّلْنَٓا اَمْثَالَهُمْ تَبْدِيلًا ﴿٢٨﴾

28- "Onları biz yarattık ve eklemlerini biz bağladık. Dilediğimizde yerlerine benzerlerini getiririz."

Dilediğimizde onları yok eder ve yerlerine başkalarını yaratırız. Bir yoruma göre de onlardan söz alırız.

اِنَّ هٰذِهٖ تَذْكِرَةٌ فَمَنْ شَٓاءَ اتَّخَذَ اِلٰى رَبِّهٖ سَبِيلًا ﴿٢٩﴾

29- "İşte bu, bir öğüttür. Dileyen, Rabbine ulaştıran bir yol tutar."

Yani bu Kur'ân, bir öğüttür.

( فَمَنْ شَٓاءَ اتَّخَذَ اِلٰى رَبِّهٖ سَبِيلًا ) *"Dileyen, Rabbine ulaştıran bir yol tutar."*

Bunu ibadetiyle yapar.

وَمَا تَشَٓاؤُ۫نَ اِلَّٓا اَنْ يَشَٓاءَ اللّٰهُ اِنَّ اللّٰهَ كَانَ عَلِيمًا حَكِيمًا ﴿٣٠﴾

30- "Allah'ın dilemesi olmadıkça siz dileyemezsiniz. Şüphesiz Allah hakkıyla bilendir, hüküm ve hikmet sahibidir."

يُدْخِلُ مَنْ يَشَٓاءُ فٖي رَحْمَتِهٖ وَالظَّالِمٖينَ اَعَدَّ لَهُمْ عَذَابًا اَلٖيمًا ﴿٣١﴾

31- "O, dilediği kimseyi rahmetine dâhil eder. Zalimlere ise elem verici bir azap hazırlamıştır."

Yani acısı kalplerine işleyen elem ve acı verici bir azap.

سورة الْمُرْسَلَاتِ

# MÜRSELÂT SÛRESİ

(Mürselât Sûresi 50 âyettir. 48. âyet dışında Mekke'de inmiştir. Adını, ilk âyetteki "Mürselât (Gönderilenler)"den almıştır. Gönderilenler için; âlemin yönetimiyle görevli melekler, rüzgârlar, peygamberler, Kur'an âyetleri gibi yorumlar yapılmıştır. Buna "Urf" Sûresi de denir. Sûrede; peygamberler, kıyamet sahnesi, insanın yaratılışı, yalanlayanın azabı, iman ehlinin ödülü gibi konular yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" onu vecd kulağıyla dinleyene yeterli olan bir sözdür. Bu yüzden o, artık kimseye bakmaz. Kim de onu ilim kulağıyla dinlerse ona cömertlik yapar. Bu nedenle o, ruhuyla kimseye karşı cimrilik etmez.

Kim de onu tevhid kulağıyla dinlerse, onun sırrını, dünyada ve ahirette, Allah'tan başka maddi ve manevi her şeyi tercih etmekten arındırır. İşte bütün bunlar onunla gerçekleşir ve ondan varlık bulur.

وَالْمُرْسَلَاتِ عُرْفًا ﴿١﴾

1- "Ard arda gönderilenlere."

Gönderilenler meleklerdir. ( عُرْفاً ) kelimesi de iyiyi emretmekle veya at yelesi gibi çok sayıda gönderildiler, demektir.

فَالْعَاصِفَاتِ عَصْفًا ﴿٢﴾

2- "Kasırga gibi esenlere."

Bunlar, şiddetli rüzgârlardır. Bu rüzgârlar, ekinlerin yaprakları ve ufakları anlamındaki "asf"ı savurduğu için "asıfât" diye tabir edilmiştir.

وَالنَّاشِرَاتِ نَشْرًا ﴿٣﴾

3- "Hakkıyla yayanlara."

Bunlar yağmurlardır. Çünkü yağmurlar bitkileri yayar. Bu itibarla ayetteki yayma, canlandırma anlamındadır. Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Yayanlardan maksat, yağmur yayan bulutlardır

- Yayanlardan maksat meleklerdir.

فَالْفَارِقَاتِ فَرْقًا ﴿٤﴾

4- "Hakkıyla ayıranlara."

Bunlar, helal ve haramı ayıran meleklerdir.

فَالْمُلْقِيَاتِ ذِكْرًا ﴿٥﴾ عُذْرًا اَوْ نُذْرًا ﴿٦﴾

5, 6- "Mazur görmek ya da uyarmak üzere, öğüt bırakanlara andolsun."

Bunlar, mazur görmek veya uyarıda bulunmak üzere peygamberlere vahiy getiren meleklerdir.

Yeminin cevabı şu ayettir:

اِنَّمَا تُوعَدُونَ لَوَاقِعٌ ﴿٧﴾

7- "Uyarıldığınız, muhakkak gerçekleşecektir."

Ben, bu şeylere yemin ederim ki şüphesiz kıyamet haktır.

فَاِذَا النُّجُومُ طُمِسَتْ ﴿٨﴾

8- "Yıldızların ışığı söndürüldüğü zaman."

İşte bu, kıyametten başka bir şey değildir. ( طُمِسَتْ ) lafzı, yıldızların ışığının gitmesi demektir.

وَاِذَا السَّمَاۤءُ فُرِجَتْ ﴿٩﴾

9- "Gökler yarıldığı zaman,"

وَاِذَا الْجِبَالُ نُسِفَتْ ﴿١٠﴾

10- "Dağlar ufalanıp savrulduğu zaman."

Yani Allah, hiçbir izi kalmayacak şekilde dağları hızla yok ettiği zaman.

وَاِذَا الرُّسُلُ اُقِّتَتْ ﴿١١﴾ لِاَيِّ يَوْمٍ اُجِّلَتْ ﴿١٢﴾ لِيَوْمِ الْفَصْلِ ﴿١٣﴾

11, 12, 13- "Peygamberler içi vakit belirlendiği zaman. Hangi güne ertelenmiştir? Hüküm ve ayırım gününe."

Yani Allah, kıyamet günü hükmünü icra etmek için onlara bir vakit ve süre koymuştur. Bir yoruma göre de peygamberler, belli vakitler için gönderilmiştir.

وَمَآ اَدْرٰيكَ مَا يَوْمُ الْفَصْلِ ﴿١٤﴾

14- "Hüküm ve ayırım gününü sen ne bileceksin."

Bu ifade, o günün büyüklüğünü belirtmek içindir.

وَيْلٌ يَوْمَئِذٍ لِلْمُكَذِّبِينَ ﴿١٥﴾

15- "O gün, vay yalanlayanların haline!"

( وَيْلٌ ) lafzının manasıyla ilgili yorum daha önce geçti.

Ancak işaretler hakkında şu yorum yapılmaktadır:

Marifetlerin yıldızları gıybetin gerçekleşmesiyle söndüğü zaman ve dağlar ufalanıp savrulduğu zaman yani şuhûdun sağladığı kesin inançla sükûnete eren kalpler, caiz olmayana niyetlenmenin cezası olarak hareket ettirildi. O halde, manalardan boşalmış mühürlü kalplerin sahiplerinin ve ortaya attıkları batıl davaların sahiplerinin vay haline!

اَلَمْ نُهْلِكِ الْاَوَّلٖينَ ﴿١٦﴾ ثُمَّ نُتْبِعُهُمُ الْاٰخِرٖينَ ﴿١٧﴾ كَذٰلِكَ نَفْعَلُ بِالْمُجْرِمٖينَ ﴿١٨﴾

16, 17, 18- "Biz, öncekileri helak etmedik mi? Sonra arkadan gelenleri de onların peşine takacağız. Biz, suçlulara işte böyle yaparız."

Peygamberlerini yalanlayıp ayetlerimizi inkâr edenler var ya; nasıl ki biz öncekileri helak ettiysek, onların yaptıkları gibi yaptıkları zaman suçlulara da aynısını yaparız.

وَيْلٌ يَوْمَئِذٍ لِلْمُكَذِّبٖينَ ﴿١٩﴾

19- "O gün vay yalanlayanların haline!"

O yalanlayanlar ki tasdikte içleri ile dışları bir olmamaktadır. İşte böylece öncekiler, tarikat konusunda hata ve fetret ehlinden, muhabbetin hükümleri konusunda da hıyanet ehlinden idiler. Bu nedenle dünyalarında mahrumiyetle cezalandırıldılar ve manalardan hiçbir şey tadamadılar.

اَلَمْ نَخْلُقْكُمْ مِنْ مَٓاءٍ مَهٖينٍ ﴿٢٠﴾

20- "Biz sizi bayağı bir sudan yaratmadık mı?"

Yani değersiz bir sudan. Şimdi siz bunu bildiğinize göre neden öldükten sonra dirilme işini de ona kıyaslamadınız?

Bir yoruma göre, kendi hallerini beğenmemeleri için Allah onlara yaratılışlarının aslını hatırlatmıştır. Çünkü varlık türlerinden hiçbiri, Âdem oğullarından daha çok iddiacı değildir. O halde insanın kendi aslını düşünmesi gerekir. O önce bir su damlası idi. Sonunda bir leş olacak, durumunun ara süreçlerinde ise o, elbise içindeki bir helâdır. Hal böyle olunca ona yakışan, nazlanmaması ve övünmemesidir.

Şiir:

*Nasıl övünür dışkısı ilelebet yatak arkadaşı olan!*
*O, ondandır, ona gider, onun kan ve sütkardeşidir*
*Helâya çağırır onu, itaat eder ona o da küçülerek*

Diğer bir yoruma göre de Allah asıllarının nasıl olduğunu onlara hatırlatmaktadır. Ancak bununla birlikte onları en güzel şekle kavuşturmuştur.

Allah, şöyle buyurmuştur:

( وَصَوَّرَكُمْ فَاَحْسَنَ صُوَرَكُمْ ) *"Allah, size şekil verdi ve şekillerinizi güzel kıldı."* (Mümin (Ğâfir), 40/64)

Bunu yapan Allah, seni aşağılık hallerden o şerefli makamlara da yükseltebilir.

فَجَعَلْنَاهُ فِي قَرَارٍ مَكِينٍ ﴿٢١﴾

21- "Sonra onu sağlam bir yerde tuttuk."

اِلٰى قَدَرٍ مَعْلُومٍ ﴿٢٢﴾

22- "Belli bir süreye kadar."

فَقَدَرْنَا فَنِعْمَ الْقَادِرُونَ ﴿٢٣﴾

23- "Sonra da ona ölçülü bir biçim verdik. Biz, ne güzel biçin verenleriz!"

وَيْلٌ يَوْمَئِذٍ لِلْمُكَذِّبِينَ ﴿٢٤﴾

24- "O gün vay yalanlayanların haline!"

اَلَمْ نَجْعَلِ الْاَرْضَ كِفَاتًا ﴿٢٥﴾ اَحْيَاءً وَاَمْوَاتًا ﴿٢٦﴾

25, 26- "Biz, yeryüzünü dirileri de ölüleri de toplayan kılmadık mı?"

( كِفاتاً ) lafzı, toplama yeteneğine sahip demektir. Bu itibarla yeryüzü, onları diriler ve ölüler olarak bir araya getirip toplamaktadır. Bu çerçevede onlar, onun üzerinde yaşarlar ve öldükten sonra içine gömülürler.

وَجَعَلْنَا فِيهَا رَوَاسِيَ شَامِخَاتٍ وَاَسْقَيْنَاكُمْ مَاءً فُرَاتًا ﴿٢٧﴾

27- "Orada sabit yüce dağlar yaratmadık mı? Size tatlı bir su içirmedik mi?"

Yani yüksek dağlar yarattık ve içeceğiniz için onlarda su meydana getirdik. Allah, bununla onlara üzerlerindeki büyük nimetini hatırlatmaktadır. Bu ifadedeki işaret ise yapıp ettiklerinize rağmen Allah'ın sizi yerin dibine batırmaması şeklindeki büyük nimetinedir.

وَيْلٌ يَوْمَئِذٍ لِلْمُكَذِّبِينَ ﴿٢٨﴾

28- "O gün vay yalanlayanların haline!"

اِنْطَلِقُوا اِلٰى مَا كُنْتُمْ بِهِ تُكَذِّبُونَ ﴿٢٩﴾

29- "Yalanlamakta olduğunuz şeye gidin."

Onlara şöyle denir: yalanlamakta olduğunuz cehenneme gidin!

اِنْطَلِقُوا اِلٰى ظِلٍّ ذِي ثَلٰثِ شُعَبٍ ﴿٣٠﴾ لَا ظَلِيلٍ وَلَا يُغْنِي مِنَ
اللَّهَبِ ﴿٣١﴾

30, 31- "Üç kola ayrılmış gölgeye gidin ki, o ne gölgelendirir ne de alevden korur."

Aynı şekilde kul, kalbi ile yolunun Allah'a açılmasının ve tevekkülünden güç almasının kadrini bilmediği zaman da durum böyle olur. Böylece kul, gafletin hâkim olduğu esnada halka döndüğü zaman Allah, kalbinden merhameti söküp alır ve rüştünün yolları üstüne kapanır. Bu durumda o, oradan oraya dolaşır durur.

Bir de onlara şöyle denir: "Yalanlamakta olduğunuz yere gidin. Sadece Allah'a dayanmak, Me'vâ Cenneti'dir. Halka başvurmak ise cehennem kapısını çalmaktır."

Şu dizeleri de bu anlamda söylemişlerdir:

*Görmedim kendimden önce cenneti terk eden*
*Ve asalak olup cehennem kapısını çalan kimseyi*

إِنَّهَا تَرْمِي بِشَرَرٍ كَالْقَصْرِ ﴿٣٢﴾

32- "Şüphesiz cehennem, her biri saray büyüklüğünde kıvılcımlar saçar."

كَأَنَّهُ جِمَالَتٌ صُفْرٌ ﴿٣٣﴾

33- "Bunlar, sanki birer kızıl devedir."

وَيْلٌ يَوْمَئِذٍ لِلْمُكَذِّبِينَ ﴿٣٤﴾

34- "O gün vay yalanlayanların haline!"

Sonra aklanmaya çalışıp özür dilemeye başladıkları zaman onlara şöyle denir:

هٰذَا يَوْمُ لَا يَنْطِقُونَ ﴿٣٥﴾ وَلَا يُؤْذَنُ لَهُمْ فَيَعْتَذِرُونَ ﴿٣٦﴾

35, 36- "Bu, konuşamayacakları gündür. Onlara izin de verilmez ki özür dilesinler."

Bu durum, azap süresi sona erinceye kadar devam eder. Azap sona erdiği zaman eğer sen yeni bir başlangıç yaparsan, sana yeni bir fırsat verilir. Şimdi ise azap günleri sona erinceye kadar sabret.

وَيْلٌ يَوْمَئِذٍ لِلْمُكَذِّبِينَ ﴿٣٧﴾

37- "O gün vay yalanlayanların haline!"

هٰذَا يَوْمُ الْفَصْلِ جَمَعْنَاكُمْ وَالْاَوَّلِينَ ﴿٣٨﴾

38- "Bu, hüküm ve ayırma günüdür. Sizi ve öncekileri bir araya topladık."

Dünyada sizin başınıza, onların başına getirmiş olduğumuz perişanlığı getirdik. Bugün de aynı şekilde size, onlara yapmakta olduğumuzu yapacağız. Yapacağımız şey, cehenneme girmenizdir.

فَاِنْ كَانَ لَكُمْ كَيْدٌ فَكِيدُونِ ﴿٣٩﴾

39- "Eğer bir tuzağınız varsa, hadi bana tuzak kurun."

وَيْلٌ يَوْمَئِذٍ لِلْمُكَذِّبِينَ ﴿٤٠﴾

40- "O gün vay yalanlayanların haline!"

اِنَّ الْمُتَّقِينَ فِي ظِلَالٍ وَعُيُونٍ ﴿٤١﴾

41- "Şüphesiz takva sahipleri, gölgeler içinde ve pınar başlarındadırlar."

Onlar bugün inayet ve himayenin, yarın da rahmet ve korumanın gölgeleri içindedirler.

Onlar bugün tevhidin, yarın da güzel artışın gölgeleri içindedirler.

Onlar bugün marifetlerin, yarın da latifelerin gölgeleri içindedirler.

Onlar bugün tarifin, yarın da teşrifin gölgeleri içindedirler.

وَفَوَاكِهَ مِمَّا يَشْتَهُونَ ﴿٤٢﴾

42- "Canlarının çektiği meyveler içerisindedirler."

كُلُوا وَاشْرَبُوا هَنٖيٓـًٔا بِمَا كُنْتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٤٣﴾

43- "Yapmakta olduğunuz şeylere karşılık afiyetle yiyin için."

Siz, bugün O'nu zikrederken içmektesiniz, yarın da O'nu müşahede ederken içeceksiniz. Bugün safiyet kadehleriyle içmektesiniz, yarın da bağlılık kadehleriyle içeceksiniz.

اِنَّا كَذٰلِكَ نَجْزِي الْمُحْسِنٖينَ ﴿٤٤﴾

44- "Şüphesiz biz, iyilik yapanları işte böyle mükâfatlandırırız."

Kulun iyilik yapması, her şeyi Allah için terk etmesidir. Aynı şekil de O da yarın, üzerinde sabit olan her cezayı, senin hatırın için terk etmekle seni mükâfatlandıracaktır.

وَيْلٌ يَوْمَئِذٍ لِلْمُكَذِّبٖينَ ﴿٤٥﴾

45- "O gün vay yalanlayanların haline!"

كُلُوا وَتَمَتَّعُوا قَلٖيلًا اِنَّكُمْ مُجْرِمُونَ ﴿٤٦﴾

46- "Ey inkâr edenler! Yiyin ve birazcık yararlanın! Şüphesiz siz suçlularsınız."

Bu, kâfirlere yönelik bir hitaptır. Bu, aynı zamanda bir tehdit ve uyarıdır. O gün vay halinize.

وَيْلٌ يَوْمَئِذٍ لِلْمُكَذِّبٖينَ ﴿٤٧﴾

47- "O gün vay yalanlayanların haline!"

وَاِذَا قِيلَ لَهُمُ ارْكَعُوا لَا يَرْكَعُونَ ﴿٤٨﴾

48- "Onlara: 'Rükû edin!' dendiği zaman rükû etmezler."

Onlar, kabul etmemekte ve kibirlenmekte ısrar ediyorlardı. Bu nedenle büyük belaya uğrayacaklardır. Tefsirde anlatıldığına göre takva sahipleri daima ağaçların gölgelerinde, iyilerle birlikte inci saraylarında, akan pınarların ve nehirlerin başında ve çeşitli meyvelerin içindedirler. Onlar, karşı konulmaz hükümdar olan Allah'tan diledikleri her şeye sahiptirler. Cennette onlara şöyle denir: "Yapmakta olduğunuz ibadetlere karşılık cennetin meyvelerinden yiyin ve kusursuz şaraptan için. Biz, iyilik yapanları işte böyle ikramlarla mükâfatlandırırız."

Bir görüşe göre afiyetle yiyip içmeleri şu demektir: Husumetler yönünden üzerinizde hiçbir sorumluluk, yiyecekler ve içeceklerde de size hiçbir eziyet bulunmamaktadır. Bir görüşe göre de afiyetle yenip içilen şey, kendisinde sahibine bir sorumluluk, başkasına da rahatsız edici bir eziyet bulunmayandır.

وَيْلٌ يَوْمَئِذٍ لِلْمُكَذِّبِينَ ﴿٤٩﴾

49- "O gün vay yalanlayanların haline!"

فَبِاَيِّ حَدِيثٍ بَعْدَهُ يُؤْمِنُونَ ﴿٥٠﴾

50- "Onlar artık ondan (Kur'an'dan) sonra hangi söze inanacaklar?"

سورة النَّبَاءِ

# NEBE' SÛRESİ

(Nebe' Sûresi 40 âyettir. Mekke'de inen ilk sûrelerdendir. Adını ikinci âyetteki "Nebe' (Haber)"den almıştır. "Âmme" Sûresi de denir. Sûrede başlıca; önemli kıyamet haberi, yer ve gökteki kimi nimetler, kıyametin kopması, kimi cehennem ve cennet sahneleri, takvâ sahiplerinin ödülü, mahşerde ilk toplanma ve küfür ehlinin pişmanlığı konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", kulları O'na itaatle güzelleşmiş ve hizmetçileri O'nun ibadetiyle süslenmiş olan bir hükümdarın adıdır. Hâlbuki O, ne itaat ehlinin itaatiyle güzelleşir ne de ibadet ehlinin hizmetiyle süslenir. Bu itibarla, abidlerin süsü üzerlerindeki ibadet gömleği, ariflerin süsü giydikleri marifet giysisi, sevenlerin süsü başlarındaki dostluk tacı, günahkârların süsü de akan gözyaşlarıyla yüzlerini yıkamalarıdır.

عَمَّ يَتَسَآءَلُونَ ﴿١﴾ عَنِ النَّبَاِ الْعَظ۪يمِ ﴿٢﴾ اَلَّذ۪ي هُمْ ف۪يهِ مُخْتَلِفُونَ ﴿٣﴾

**1, 2, 3- "Birbirlerine neyi soruyorlar? Üzerinde anlaşmazlığa düştükleri büyük haberi mi?"**

Onlar, öldükten sonra dirilmeyi şiddetle inkâr etmeleri, bu konuda kafalarının karışık olması, onu çok sorgulamaları ve mahiyeti

hakkında Hz. Peygambere (s.a.v.) fazlaca başvurmaları sebebiyle anlaşmazlık içindedirler.

Öldükten sonra dirilme konusu Allah tarafından birkaç kez vahiyle bildirilmiştir. Pek çok defa da Allah, bunun mümkün olduğuna dair çeşitli deliller ortaya koymuştur. İşte buradaki ifadeler de bu kâbildendir. Allah şöyle buyurur:

"Birbirlerine neyi soruyorlar? Hakkında anlaşmazlığa düştükleri büyük haberi mi?"

Allah da, onlara karşı delil getirmek suretiyle şöyle buyurmuştur:

كَلَّا سَيَعْلَمُونَ ﴿٤﴾

4- "Hayır, ileride bilecekler."

ثُمَّ كَلَّا سَيَعْلَمُونَ ﴿٥﴾

5- "Yine hayır, ileride bilecekler."

اَلَمْ نَجْعَلِ الْاَرْضَ مِهَادًا ﴿٦﴾

6- "Biz, yeryüzünü bir döşek yapmadık mı?"

Yeryüzünü kendilerine amade kıldık ve sonunda oraya yerleştiler.

وَالْجِبَالَ اَوْتَادًا ﴿٧﴾

7- "Dağları da birer kazık yapmadık mı?"

Onları alıp götürmemesi için dağları yeryüzü için birer kazık yaptık.

وَخَلَقْنَاكُمْ اَزْوَاجًا ﴿٨﴾

8- "Sizleri eşler halinde yarattık."

Erkek, dişi, güzel, çirkin ve daha başka şekillerde yarattık.

وَجَعَلْنَا نَوْمَكُمْ سُبَاتًا ﴿٩﴾

9- "Uykunuzu bir dinlenme kıldık."

Yani gündüzünüzde sizi yoran hareketlerinizden kopmanız için uykunuzu sizin için bir dinlenme kıldık.

وَجَعَلْنَا الَّيْلَ لِبَاسًا ﴿١٠﴾

10- "Geceyi bir elbise yaptık."

Onda sükûnet bulasınız diye geceyi, karanlığı her şeyi örten bir elbise kıldık.

وَجَعَلْنَا النَّهَارَ مَعَاشًا ﴿١١﴾

11- "Gündüzü de geçimi temin zamanı kıldık."

Yani geçiminizin vakti kıldık.

وَبَنَيْنَا فَوْقَكُمْ سَبْعًا شِدَادًا ﴿١٢﴾

12- "Üstünüze yedi sağlam gök bina ettik."

وَجَعَلْنَا سِرَاجًا وَهَّاجًا ﴿١٣﴾

13- "Alev alev yanan aydınlatıcı ve ısıtıcı bir kandil yarattık."

Yani biz güneşi, alev alev yanan aydınlatıcı ve ısıtıcı bir kandil yaptık.

وَاَنْزَلْنَا مِنَ الْمُعْصِرَاتِ مَاۤءً ثَجَّاجًا ﴿١٤﴾

14- "Yağmur yüklü yoğun bulutlardan şarıl şarıl yağmur yağdırdık."

( مُعْصِرات ) lafzı, bulutlardan yağmur çıkaran rüzgârlardır.

لِنُخْرِجَ بِهٖ حَبًّا وَنَبَاتًا ﴿١٥﴾ وَجَنَّاتٍ اَلْفَافًا ﴿١٦﴾

15, 16- "Onunla taneler, bitkiler, sarmaş dolaş bahçeler çıkaralım diye."

( حَبًّا ) "*Taneler.*"

Buğday ve arpa gibi.

( وَجَنَّاتٍ اَلْفَافًا ) "*Sarmaş dolaş bahçeler.*"

Birbirine sarılmış bostanlar.

Şimdi siz bunu bildiğinize göre, tekrar yaratmaya ve kıyameti koparmaya kadir olduğumu da bilseydiniz ya!

Allah böylece nimetinin bazı çeşitlerini ve bu nimetlerden yararlanma imkanına sahip kılındıklarını kendilerine sıraladıktan sonra şöyle buyurmuştur:

اِنَّ يَوْمَ الْفَصْلِ كَانَ مِيقَاتًا ﴿١٧﴾

17- "Şüphesiz hüküm ve ayırma günü belirlenmiş bir vakittir."

Bunun anlamı daha önce geçti.

يَوْمَ يُنْفَخُ فِي الصُّورِ فَتَاْتُونَ اَفْوَاجًا ﴿١٨﴾

18- "Bu, sûra üfürüleceği gün gerçekleşir ve siz bölük bölük gelirsiniz."

Yani o gün siz, zümreler ve cemaatler halinde gelirsiniz.

وَفُتِحَتِ السَّمَآءُ فَكَانَتْ اَبْوَابًا ﴿١٩﴾

19- "Gök açılır ve kapı kapı olur."

Yani yarılır ve açılır.

وَسُيِّرَتِ الْجِبَالُ فَكَانَتْ سَرَابًا ﴿٢٠﴾

20- "Dağlar yürütülür, serap haline gelir."

Yani serap gibi olur.

اِنَّ جَهَنَّمَ كَانَتْ مِرْصَادًا ﴿٢١﴾

21- "Şüphesiz cehennem bir gözetleme yeridir."

Yani bir geçittir. Bir yoruma göre de cehennem, sakinlerini gözetlemektedir.

لِلطَّاغِينَ مَاٰبًا ﴿٢٢﴾

22- "Azgınlar için bir dönüş yeridir."

Dönecekleri yerdir.

لَابِثِينَ فِيهَٓا اَحْقَابًا ﴿٢٣﴾

23- "İçinde çağlar boyu kalmak üzere."

Yani çok uzun zaman kalmak üzere. Bu, ebedî kalacakları anlamındadır.

لَا يَذُوقُونَ فِيهَا بَرْدًا وَلَا شَرَابًا ﴿٢٤﴾ اِلَّا حَمِيمًا وَغَسَّاقًا ﴿٢٥﴾

24, 25- "Orada ne bir serinlik ne de içecek bir şey tadacaklar. Ancak kaynar su ve irin içecekler."

Bunun anlamı daha önce geçti. Sonra onlar, bunun ardından başka azap çeşitleriyle cezalandırılırlar.

جَزَٓاءً وِفَاقًا ﴿٢٦﴾

26- "Uygun bir ceza olarak."

Yani onlar, amellerine uygun olarak cezalandırıldılar. Bir yoruma göre de ezeldeki takdire ve kesinleşmiş olan hükme göre cezalandırıldılar.

اِنَّهُمْ كَانُوا لَا يَرْجُونَ حِسَابًا ﴿٢٧﴾

27- "Çünkü onlar, hesaba çekilmeyi ummuyorlardı."

Onlar iman etmiyorlardı ki sevabı umup azaptan korksunlar.

وَكَذَّبُوا بِاٰيَاتِنَا كِذَّابًا ﴿٢٨﴾

28- "Ayetlerimizi de alabildiğine yalanlamışlardı."

( كِذ ّابًا ) lafzı yalanlamak demektir.

وَكُلَّ شَيْءٍ اَحْصَيْنَاهُ كِتَابًا ﴿٢٩﴾

29- "Oysa biz her şeyi bir kitapta noksansız sayıp tespit ettik."

Yani biz onu esaslı bir şekilde yazdık ve bildik.

Tesbih eden zahid tesbihini, terk edilmiş sefil de hicran günlerini sayarken vuslat sahibi olan, vuslatından vazgeçip günlerinin sayısını, uzunluğunu ve kısalığını düşünmeye yönelmez.

Melekler de günahkârların hatalarını sayar ve amel defterlerine yazarlar. Allah ise: ( وَكُلَّ شَيْءٍ اَحْصَيْنَاهُ كِتَابًا ) "*Oysa biz her şeyi bir kitapta noksansız sayıp tespit ettik*" buyurmaktadır. Bu çerçevede Allah, nasıl ki asilerin hatalarını ve itaatkârların ibadetlerini sayıp tespit etmişse aynı şekilde terk edilmişlerin hicran günlerini ve sıkıntı içindeki kimselerin sıkıntı günlerini de sayıp tespit etmiştir. Bir de onlar için bunda teselli ve nefeslenme vardır.

Şiir:

*Buluşmadan gelip geçti sekizler*
*Artık yoktur sekizlere sabretmede bir erdem*

Bu arada nice topluluklar vardır ki fetret günleri sınırı aşar ve hicran vakitleri sınırlamanın ötesine geçerler.

فَذُوقُوا فَلَنْ نَزِيدَكُمْ اِلَّا عَذَابًا ﴿٣٠﴾

30- "Kâfirlere şöyle denilir. 'Şimdi tadın. Artık bundan sonra yalnızca azabınızı artıracağız.'"

Ey cennette nimet sahibi kılınanlar! Sevinin ve yararlanın. Biz ancak sevabınızı artıracağız.

Ey kâfirler! Ateşte yanın. Sizin de ancak azabınızı artıracağız.

Ey itaatkârlar! Sevinin ve bolluk içinde yaşayın. Biz ancak size olan lütfumuzu kat kat artıracağız.

Ey zavallılar! Ağlayın ve çaresizleşin. Biz sizin de ancak ayrılığınızı kat kat artıracağız.

اِنَّ لِلْمُتَّقِينَ مَفَازًا ﴿٣١﴾ حَدَآئِقَ وَاَعْنَابًا ﴿٣٢﴾ وَكَوَاعِبَ اَتْرَابًا ﴿٣٣﴾
وَكَاْسًا دِهَاقًا ﴿٣٤﴾

31, 32, 33, 34- "Şüphesiz Allah'a karşı gelmekten sakınanlara bir kurtuluş, bahçeler, üzümler, kendileriyle bir yaşta, göğüsleri çıkmış genç kızlar ve dolu dolu kadehler vardır."

Takva sahiplerine söz verdiğimiz nimetler, kendileri için kesindir. O halde kendileri için hazırladığımız murada erme, bahçeler, üzümler, göğüsleri çıkmış yaşıt genç kızlar ve daha başka nimetler onlara mübarek olsun.

Öyleyse ey aklı başından alınmış Hak âşıkları! Bugün Mevlâ'nızın yolunda içinde bulunduğunuz arınmışlık ve fakirlik durumu, Allah'ın sizi yükümlü kıldığı tevekkül ve sabır ile yudumladığınız terk edilmişlik ve hicran size mübarek olsun.

Şiir:

*Elbiselerin en uygunu kendisiyle sevgiliye kavuştuğundur.*
*Ziyaretleşme günü, O'nun bahşettiği elbisede*

لَا يَسْمَعُونَ فِيهَا لَغْوًا وَلَا كِذَّابًا ﴿٣٥﴾

35- "Orada ne bir boş söz işitirler ne de bir yalan."

Kulakları başka şeyleri işitmekten, gözleri de şekil ve eserlere bakmaktan korunmuştur.

جَزَآءً مِنْ رَبِّكَ عَطَآءً حِسَابًا ﴿٣٦﴾

36- "Bunlar, Rabbinin yeterli bir bağışı, mükâfatıdır.

رَبِّ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَمَا بَيْنَهُمَا الرَّحْمٰنِ لَا يَمْلِكُونَ مِنْهُ خِطَابًا ﴿٣٧﴾

37- "O, göklerin, yerin ve ikisi arasında bulunanların Rabbidir. O, Rahmân'dır. O gün insanlar, O'na karşı konuşmaya yetkili değildir."

Acaba var edilip yaratılmış olan yoksul ve miskin mahlûkun, Allah'a karşı nasıl konuşabilme yetkisi olur veya nasıl O'nsuz bir nefes dahi alıp verebilir! Hayır, asla! Aksine O'dur bir ve karşı konulmaz Allah.

يَوْمَ يَقُومُ الرُّوحُ وَالْمَلٰٓئِكَةُ صَفًّا لَا يَتَكَلَّمُونَ اِلَّا مَنْ اَذِنَ لَهُ الرَّحْمٰنُ وَقَالَ صَوَابًا ﴿٣٨﴾

38- "Ruh ve melekler saf saf olup durduğu gün, Rahmân'ın izin verdiği ve doğru konuşan kimselerden başkaları konuşmazlar."

O gün heybet, genellikle ancak cem ehli kimseler için ortaya çıkar. Havassa ve huzur sahiplerine gelince onlar, izzetin heybet sıfatıyla tecelli ettiği makamda olup kendileri için ne bir nefes ne de bir rahat vardır. Heybet çadırları onları kuşatmış, hakikatleri de onlara hâkim olmuştur.

ذٰلِكَ الْيَوْمُ الْحَقُّ فَمَنْ شَٓاءَ اتَّخَذَ اِلٰى رَبِّه۪ مَاٰبًا ﴿٣٩﴾

39- "İşte bu, hak olan gündür. Artık dileyen kimse, Rabbine ulaştıran bir yol tutar."

Onlar, Hakk'ın tecelli ettiği makamdadırlar. Onların üzerindeki hakem de Hak olup haklarında hak ile hüküm vermiştir. Aynı zamanda onlar, Hak ile Hak için meczup kimselerdir.

اِنَّٓا اَنْذَرْنَاكُمْ عَذَابًا قَر۪يبًا يَوْمَ يَنْظُرُ الْمَرْءُ مَا قَدَّمَتْ يَدَاهُ وَيَقُولُ الْكَافِرُ يَا لَيْتَن۪ي كُنْتُ تُرَابًا ﴿٤٠﴾

40- "Şüphesiz biz, sizi yakın bir azaba karşı uyardık. O gün kişi, önceden yaptıklarına bakacak ve kâfir: "Keşke toprak olsaydım!" diyecektir."

( اِنَّٓا اَنْذَرْنَاكُمْ عَذَابًا قَر۪يبًا ) *"Şüphesiz biz, sizi yakın bir azaba karşı uyardık."*

O azap, gaflet ehli nezdinde uzaktır lakin hakikatte yakındır.

( يَوْمَ يَنْظُرُ الْمَرْءُ مَا قَدَّمَتْ يَدَاهُ وَيَقُولُ الْكَافِرُ يَا لَيْتَن۪ي كُنْتُ تُرَابًا ) *"O gün kişi, önceden yaptıklarına bakacak ve kâfir: 'Keşke toprak olsaydım!' diyecektir."*

Onlar, tercih ve temenninin züllü içerisinde yol aldılar ve temenni hasreti içerisinde diriltildiler. Eğer takdire razı olsalardı, temenniden kurtulacaklardı.

سورة النَّازِعَاتِ

# NÂZİ'ÂT SÛRESİ

(Nâziât Sûresi 46 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk âyetteki "Nâziât (Söküp çıkaranlar)"dan almıştır. Sûrede; güçlü meleklere yemin, kıyametin kopması ve ölüm anı, Hz. Mûsâ ve Firavun kıssası, gök ve yerin yaratılışı, kimi nimetler, cennet ve cehennem konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", Aziz bir Rabb'in aziz bir adıdır. Onu işitmek aziz bir kulağa, onu anmak aziz bir vakte, onu anlamak da aziz bir kalbe ihtiyaç gösterir. Hal böyle olunca gıybetle müptezel hale gelmiş bir kulağın, rezilliklerde batırılmış atıl bir vaktin ve başkalarıyla meşgul olmada kullanılan bir kalbin sahibi, bu ismi işitmeye nasıl ehil olur?

وَالنَّازِعَاتِ غَرْقًا ﴿١﴾

1- "Andolsun şiddetle çekip çıkaranlara."

Yani andolsun meleklere. Onlar, kâfirlerin canlarını bedenlerinden çekip çıkarırlar.

( غَرْقًا ) lafzı, şiddetle ve bütün gücüyle demektir. Yayına var gücüyle yüklenen kimse gibi.

Bir yoruma göre de onlar, bir yerden bir yere çıkarılan yıldızlardır.

وَالنَّاشِطَاتِ نَشْطًا ﴿٢﴾

2- "Andolsun iyice hareketlenenlere."

Bunlar, müminlerin canları olup ölüm esnasında çıkmak için hareketlenirler.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bunlar, melekler olup kâfirlerin ruhlarını harekete geçirir ve çekip çıkarırlar. Böylece canlarının çıkması kâfirlere zor gelir.

- Bunlar, yaban hayvanları olup bir ülkeden bir ülkeye hareket ederler.

- Bunlar, hayvanlara takılan kementlerdir.

- Bunlar, doğulardan batılara ve batılardan doğulara doğru hareket eden yıldızlardır.

وَالسَّابِحَاتِ سَبْحًا ﴿٣﴾

3- "Andolsun yüzüp yüzüp gidenlere."

Bunlar, inişlerinde yüzen -süzülen- meleklerdir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bunlar, yörüngelerinde yüzen yıldızlardır.

- Bunlar, denizlerdeki gemilerdir.

- Bunlar, müminlerin, Allah'a olan özlemlerinden dolayı kolay çıkan canlarıdır.

فَالسَّابِقَاتِ سَبْقًا ﴿٤﴾

4- "Derken öne geçenlere."

Melekler hayır ve bereket yönünde öne geçerler. Veya melekler, vahyin inişi esnasında şeytanların önüne geçtiğinden ya da kâfirlerin ruhlarını cehenneme önde götürdükleri için böyle denilmiştir.

Bir yoruma göre de bunlar yıldızlar olup batışta birbirlerinin önüne geçerler.

فَالْمُدَبِّرَاتِ اَمْرًاۢ ﴿٥﴾

5- "Nihayet işi çekip çevirenlere."

Melekler, haramı ve helâlı getirirler. Bir yoruma göre de Cibril vahyi, Mikâil yağmur ve bitkileri, İsrafil Sûr'u getirir, ölüm meleği de canları alır. Yeminin cevabı ise şu ayettir:

( اِنَّ فِي ذٰلِكَ لَعِبْرَةً لِمَنْ يَخْشٰى ) *"Şüphesiz bunda, korkan kimse için büyük bir ibret vardır."* (Naziat, 79/26)

يَوْمَ تَرْجُفُ الرَّاجِفَةُ ﴿٦﴾

6- "Büyük sarsıntının olacağı gün."

Yeryüzünün şiddetle hareket edeceği gün.

تَتْبَعُهَا الرَّادِفَةُ ﴿٧﴾

7- "O sarsıntıyı, peşinden gelen başka bir sarsıntı izleyecektir."

Bu, Sûr'a yapılan ilk üflemedir. Bir görüşe göre de büyük sarsıntı birinci üfleme, peşinden gelen sarsıntı da ikinci üflemedir.

قُلُوبٌ يَوْمَئِذٍ وَاجِفَةٌ ﴿٨﴾

8- "O gün birtakım kalpler çarpmaktadır."

Korkmaktadır.

اَبْصَارُهَا خَاشِعَةٌ ﴿٩﴾

9- "Gözleri yorgun düşmektedir."

يَقُولُونَ ءَاِنَّا لَمَرْدُودُونَ فِي الْحَافِرَةِ ﴿١٠﴾

10- "Şöyle derler: 'Biz, gerçekten gerisingeriye eski halimize mi döndürüleceğiz?'"

Yani ilk durumumuza mı döndürüleceğiz? Yani biz öldüğümüz zaman diriltilip dünyaya geri döndürülecek ve yeryüzünde ayaklarımızla yürüyecek miyiz? Onlar, bunu akla uzak buldukları için söylediler.

ءَاِذَا كُنَّا عِظَامًا نَخِرَةً ﴿١١﴾

11- "Bizler çürümüş kemiklere döndükten sonra mı?"

قَالُوا تِلْكَ اِذًا كَرَّةٌ خَاسِرَةٌ ﴿١٢﴾

12- "'Öyleyse bu, hüsran dolu bir dönüştür' dediler."

Son varılacak yer cehennem olduğu sürece bu, kaybettiren bir dönüştür.

فَاِنَّمَا هِيَ زَجْرَةٌ وَاحِدَةٌ ﴿١٣﴾

13- "Hâlbuki o, bir haykırıştan ibarettir."

فَاِذَا هُمْ بِالسَّاهِرَةِ ﴿١٤﴾

14- "Ansızın kendilerini mahşerde buluverirler."

Tefsirde yer aldığına göre bu yer, mahşer yeridir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Orası, Allah'a karşı günah işlenmemiş ak bir yerdir.

- Bu, uykularını kaçırıp kendilerini uykusuz bırakan Sûr üflemesidir.

هَلْ اَتٰيكَ حَدٖيثُ مُوسٰى ﴿١٥﴾

15- "Mûsâ'nın haberi sana geldi mi?"

اِذْ نَادٰيهُ رَبُّهُ بِالْوَادِ الْمُقَدَّسِ طُوًى ﴿١٦﴾

16- "Hani, Rabbi ona mukaddes Tuvâ vadisinde şöyle seslenmişti:"

Yani sen, tertemiz ve mübarek bir topraktasın. "Tuvâ" ise oradaki vadinin adıdır.

اِذْهَبْ اِلٰى فِرْعَوْنَ اِنَّهُ طَغٰى ﴿١٧﴾ فَقُلْ هَلْ لَكَ اِلٰٓى اَنْ تَزَكّٰى ﴿١٨﴾

17, 18- "Haydi Firavun'a git! Çünkü o azmıştır. Ona de ki: 'Arınmak ister misin?'"

Ona şöyle dedik: Firavun'a git. Çünkü o azmıştır. Ona de ki: "Var mısın sen iman edip günahlarından temizlenmeye?"

Tefsirde yer aldığına göre ise Firavun'a şöyle denilmiştir: "Eğer sen: 'Allah'tan başka hiçbir ilâh yoktur' dersen, senin sonsuz bir mülkün olacak, genç kalacak ve yaşlanmayacaksın, dört yüz yıl sevinç ve nimet içinde yaşayacaksın. Sonra ahirette de cennet senin olacaktır."

وَاَهْدِيَكَ اِلٰى رَبِّكَ فَتَخْشٰى ﴿١٩﴾

19- "Seni Rabbine ileteyim de O'ndan korkasın."

Ben, söylediğimin doğruluğunu sana mucizelerle ortaya koyacak ve dinin doğruluğunu sana öğreteceğim. Sen buna var mısın? Ancak Firavun kabul etmedi.

Bir yoruma göre de Allah Firavun'a karşı bütün bu nezaketi ortaya koymuş ancak gizli sırrında ve ona yönelik kesinleşen cezası bakımından kalbini bu şeyleri istemekten ve Rabbinin muradını kendi muradına tercih etmekten alıkoyarak kalbine, yanaşmamayı

ve nasihati kabul etmemeyi ilham etti. Şimdi hangi kalp bu hitabı duyar da bu lafzın tatlılığına kapılmaz ve hangi ciğer bunu anlar da bu tuzağın zorluğundan dolayı parça parça olmaz?

فَارٰيهُ الْاٰيَةَ الْكُبْرٰى ﴿٢٠﴾ فَكَذَّبَ وَعَصٰى ﴿٢١﴾ ثُمَّ اَدْبَرَ يَسْعٰى ﴿٢٢﴾
فَحَشَرَ فَنَادٰى ﴿٢٣﴾

20, 21, 22, 23- "Derken Mûsâ ona en büyük mucizeyi gösterdi. Fakat o Mûsâ'yı yalanladı ve isyan etti. Sonra olanca çabasıyla sırt çevirdi. Hemen adamlarını topladı ve onlara seslendi."

Tefsirde yer aldığına göre bu mucize, Hz. Mûsâ'nın elini güneş ışını gibi olduğu halde, beyaz olarak çıkarmasıdır. Bunun üzerine Firavun: "Ben, Haman'a danışıncaya kadar sana cevap vermeyeceğim" dedi ve ardından Haman'a danıştı. Haman ona şöyle dedi: "Şimdi sen daha önce tanrı iken tanrı sahibi mi olacaksın? Bir de sen daha önce hükümdar iken kul mu olacaksın?"

Haman'ın bu sözleri üzerine Firavun yalanladı, karşı çıktı, sihirbazları topladı ve şöyle seslendi:

فَقَالَ اَنَا رَبُّكُمُ الْاَعْلٰى ﴿٢٤﴾

24- "'Ben, sizin en yüce Rabbinizim!' dedi."

Bir yoruma göre şeytan, bu hitabı duyunca kaçtı ve ben buna dayanamam, dedi.

Diğer bir yoruma göre de şeytan şöyle dedi: "Ben, Âdem'den daha hayırlı olduğumu iddia ettim de başıma gelenler geldi. Bu ise: 'Ben, sizin en yüce Rabbinizim' diyor."

فَاَخَذَهُ اللّٰهُ نَكَالَ الْاٰخِرَةِ وَالْاُولٰى ﴿٢٥﴾

25- "Allah onu, ibret olacak şekilde dünya ve ahiret cezasıyla cezalandırdı."

اِنَّ فٖي ذٰلِكَ لَعِبْرَةً لِمَنْ يَخْشٰى ﴿٢٦﴾

26- "Şüphesiz bunda, korkan kimse için büyük bir ibret vardır."

Yani Firavun'u helak etmemizde, korkan kimse için büyük bir ibret vardır.

ءَاَنْتُمْ اَشَدُّ خَلْقًا اَمِ السَّمَآءُ بَنٰيهَا ﴿٢٧﴾

27- "Sizi yaratmak mı daha zor yoksa göğü yaratmak mı? Onu Allah kurmuştur."

رَفَعَ سَمْكَهَا فَسَوّٰيهَا ﴿٢٨﴾

28- "Onu yükseltmiş ve ona düzen vermiştir."

Onu düzenli kılmıştır.

وَاَغْطَشَ لَيْلَهَا وَاَخْرَجَ ضُحٰيهَا ﴿٢٩﴾

29- "O göğün gecesini karanlık yaptı, gündüzünü ağarttı."

"Duhâ" lafzı, aydınlık ve gündüz demektir.

وَالْاَرْضَ بَعْدَ ذٰلِكَ دَحٰيهَا ﴿٣٠﴾

30- "Ardından yeri düzenleyip döşedi."

Yeri yayıp genişletti.

اَخْرَجَ مِنْهَا مَآءَهَا وَمَرْعٰيهَا ﴿٣١﴾

31- "Ondan suyunu ve merasını çıkardı."

Allah, yerden su fışkıran pınarlar ve bitkiler çıkardı.

وَالْجِبَالَ اَرْسٰيهَا ﴿٣٢﴾

32- "Dağları sağlam bir şekilde yerleştirdi."

Onları yerde kazıklar olarak yerleştirdi.

مَتَاعًا لَكُمْ وَلِاَنْعَامِكُمْ ﴿٣٣﴾

33- "Bunları sizin için ve hayvanlarınız için bir yarar kaynağı yaptı."

Yani biz bitkileri, onlardan hem sizin yararlanmanız hem de hayvanlarınızın yararlanması için çıkardık.

فَاِذَا جَٓاءَتِ الطَّٓامَّةُ الْكُبْرٰى ﴿٣٤﴾

34- "En büyük felaket geldiği zaman."

En büyük felaket kıyamettir.

يَوْمَ يَتَذَكَّرُ الْاِنْسَانُ مَا سَعٰى ﴿٣٥﴾

35- "O gün, insan yaptıklarını hatırlar."

وَبُرِّزَتِ الْجَح۪يمُ لِمَنْ يَرٰى ﴿٣٦﴾

36- "Cehennem, görenler için apaçık gösterilir."

فَاَمَّا مَنْ طَغٰى ﴿٣٧﴾ وَاٰثَرَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا ﴿٣٨﴾ فَاِنَّ الْجَح۪يمَ هِيَ
الْمَأْوٰى ﴿٣٩﴾

37, 38, 39- "Kim azgınlık eder ve dünya hayatını tercih ederse, şüphesiz cehennem onun sığınağıdır."

Cehennem, görenler için apaçık gösterilirken kim azgınlık eder, kâfir olur ve dünya hayatını tercih ederse, şüphesiz onun sığınağı, karar kılacağı yer ve barınağı cehennemdir.

وَاَمَّا مَنْ خَافَ مَقَامَ رَبِّهٖ وَنَهَى النَّفْسَ عَنِ الْهَوٰى ﴿٤٠﴾ فَاِنَّ الْجَنَّةَ هِيَ الْمَاْوٰى ﴿٤١﴾

40, 41- "Kim de, Rabbinin huzurunda durmaktan korkar ve nefsini arzularından alıkoyarsa, şüphesiz cennet onun sığınağıdır."

( مَقَامَ رَبِّهٖ ) *"Rabbinin huzurunda durmaktan."*

Yarın hesap yerinde durmaktan.

Bir yoruma göre de kim Allah'ın ona yönelip kendisini görmesinden korkarsa. Bu, gözetimin ta kendisi, diğeri ise hesaba çekilme yeridir.

( وَنَهَى النَّفْسَ عَنِ الْهَوٰى ) *"Nefsini arzularından alıkoyarsa."*

Yani nefsinin arzusuna uymazsa.

يَسْـَٔلُونَكَ عَنِ السَّاعَةِ اَيَّانَ مُرْسٰيهَا ﴿٤٢﴾

42- "Sana, kıyametin ne zaman kopacağını soruyorlar."

Yani kıyamet ne zaman kopar, diye sorarlar.

فِيمَ اَنْتَ مِنْ ذِكْرٰيهَا ﴿٤٣﴾

43- "Onu bilip söylemek nerede, sen nerede?"

Biz onu sana bildirmediğimiz halde sen onu nerden bileceksin?

اِلٰى رَبِّكَ مُنْتَهٰيهَا ﴿٤٤﴾

44- "Onun nihai bilgisi Rabbine aittir."

Onu ancak Rabbin bilir.

اِنَّمَٓا اَنْتَ مُنْذِرُ مَنْ يَخْشٰيهَا ﴿٤٥﴾

45- "Sen, ancak ondan korkanları uyarırsın."

Yani sen korkutursun ve bunun üzerine kıyametten korkan kimse, korkutmanı kabul ederek mümin olur.

كَاَنَّهُمْ يَوْمَ يَرَوْنَهَا لَمْ يَلْبَثُوٓا اِلَّا عَشِيَّةً اَوْ ضُحٰيهَا ﴿٤٦﴾

46- "Kıyameti gördükleri gün onlar, sanki dünyada ancak bir akşam yahut bir kuşluk vakti kadar kalmış gibidirler."

Gördüklerinin şiddetinden dolayı yeryüzünde kaldıkları sürenin çokluğu onlara az gelir.

سورة عَبَسَ

# ABESE SÛRESİ

(Abese Sûresi 42 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk âyetteki "Abese (yüzünü ekşitti)"den almıştır. Sûrede; Hz. Peygamber'i uyarı, öğüdün Kur'an'da oluşu, insanın aczi, ona ve hayvanlara verilen kimi nimetler, kıyamet günü en yakınlarından kaçış, inananların ve inkâr edenlerin yüzleri konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", müminler için kereminin yaygısını sermiş olan Kerim'in adıdır. O, varlığının yolu, öncekilerin ve sonrakilerin yüzüne kapanmış olan Aziz'in adıdır.

Sınırı olmadığı halde varlığının yolu nerden bilinecek? Zaman, O'nun yaratığı olduğu halde kim O'nu zamanla idrak edebilir? Mekân da kendi fiili olduğu halde kim O'nu mekânda sanabilir? Kim O'nu O'ndan başkasıyla tanıyabilir? Kim O'nu O'ndan başkasıyla anabilir?

عَبَسَ وَتَوَلّٰىۙ ﴿١﴾ اَنْ جَٓاءَهُ الْاَعْمٰىۜ ﴿٢﴾

1, 2 - "Kendisine o âmâ geldi diye Peygamber yüzünü ekşitti ve öteye döndü."

Bu sure, amâ olan İbn Ummi Mektûm hakkında inmiştir. O, yanında Abdulmuttalib'in oğlu Abbas ve Umeyye b. Halef el-Cumahî'nin bulunduğu bir sırada Hz. Peygamber'e (s.a.v.) geldi. Hz. Peygamber, iman etmelerini beklediği için onlarla olan konuşmasını kesmek istemedi. Bu yüzden İbn Ummi Mektum'dan yüz çevirdi ve yüzünü ekşitti. İşte bunun üzerine Allah bu ayeti indirdi.

Tefsirde yer aldığına göre Hz. Peygamber (s.a.v.), İbn Ummi Mektûm'un arkasından dışarı çıktı ve aranmasını emretti. Bir de bu olaydan sonra Hz. Peygamber (s.a.v.), ona iyilik yapıyor ve değer veriyordu. Bu çerçevede onu iki kez Medine'de yerine vekil olarak bıraktı.

Yine tefsirde yer aldığına göre, Hz. Peygamber (s.a.v.), bu olaydan sonra hiçbir fakire karşı yüzünü ekşitmedi ve ondan yüz çevirmedi.

Bir yoruma göre ayetlerin hitap üslubunda bir incelik vardır. Bu, Allah'ın bu durumu doğrudan Hz. Peygamber'in yüzüne vurmayıp kinaye yoluyla söylemesidir. Ardından da Allah şöyle buyurmuştur:

وَمَا يُدْرِيكَ لَعَلَّهُ يَزَّكّٰىۙ ﴿٣﴾

3- "Ne bilirsin? Belki de o arınacak."

Yani senden öğrenecekleriyle öğüt alır.

اَوْ يَذَّكَّرُ فَتَنْفَعَهُ الذِّكْرٰىۜ ﴿٤﴾

4- "Yahut öğüt alacak da bu öğüt, kendisine fayda verecek."

اَمَّا مَنِ اسْتَغْنٰىۙ ﴿٥﴾ فَاَنْتَ لَهُ تَصَدّٰىۜ ﴿٦﴾

5, 6- "Kendini muhtaç hissetmeyene gelince, sen ona yöneliyorsun."

Nefsine ihtiyaç hissetmeyen kimseye gelince o, Allah'a da ihtiyaç hissetmemiş olur.

Bir yoruma göre de o, malı sebebiyle kendini muhtaç görmediği halde sen yüzünle ona yöneliyorsun.

وَمَا عَلَيْكَ اَلَّا يَزَّكّٰى ﴿٧﴾

7- "Oysa onun arınmamasından sana ne?"

Arınmaması halinde ondan sen sorumlu tutulmazsın. Sana sadece tebliğ etmek düşer.

وَاَمَّا مَنْ جَٓاءَكَ يَسْعٰى ﴿٨﴾ وَهُوَ يَخْشٰى ﴿٩﴾ فَاَنْتَ عَنْهُ تَلَهّٰى ﴿١٠﴾

8, 9, 10- "Koşarak ve Allah'tan korkarak sana geleni ise bırakıp ona aldırmıyorsun."

Bu kimse, ilim talebi için gelmekte ve Allah'tan korkmaktadır. Bu esnada sen, onu bırakıyor ve kendisiyle ilgilenmiyorsun. Bütün bu sözler, fakirler için Hz. Peygamber'e (s.a.v.) yönelik sitem kabilindendir.

كَلَّٓا اِنَّهَا تَذْكِرَةٌ ﴿١١﴾ فَمَنْ شَٓاءَ ذَكَرَهُ ﴿١٢﴾

11, 12- "Hayır, böyle yapma! Çünkü bu, bir öğüttür. Dileyen ondan öğüt alır."

Kur'ân bir öğüttür. Allah'ın öğüt almasını dilediği kimse ondan öğüt alır. Allah'ın öğüt almasını dilemediği kimse ise ondan öğüt almaz. Yani Allah'ın hükmü böyle gerçekleşmiştir. O halde ancak Allah'ın dilediği olur.

Bir yoruma göre de bu söz tehdit yoluyla söylenmiştir. Yani kim, ondan öğüt almak istiyorsa alsın. Kim de ondan öğüt almak istemiyorsa varsın almasın. Tıpkı Allah'ın şu ayetteki sözü gibi:

( فَمَنْ شَٓاءَ فَلْيُؤْمِنْ وَمَنْ شَٓاءَ فَلْيَكْفُرْ ) *"Artık dileyen iman etsin, dileyen inkâr etsin."* (Kehf, 18/29)

Bir de öğütten maksat Kur'ân olduğu için Allah, ona giden zamiri müzekker olarak söylemiştir.

فِي صُحُفٍ مُكَرَّمَةٍ ﴿١٣﴾

13- "O, çok değerli sahifelerdedir."

Yani o, Hz. İbrahim, Hz. Mûsâ ve daha önceki sahifeler ile Levh-i Mahfûz'dadır.

مَرْفُوعَةٍ مُطَهَّرَةٍ ﴿١٤﴾

14- "Yüksek ve tertemiz sahifelerde."

Değer ve mertebesi bakımından yüksektir, çelişki ve yalandan tertemizdir.

بِاَيْدِي سَفَرَةٍ ﴿١٥﴾

15- "Yazıcıların elindedir."

Yani yazıcı meleklerin elindedir.

كِرَامٍ بَرَرَةٍ ﴿١٦﴾

16- "Şerefli ve sadık meleklerin elindedir."

Onlar, Allah katında şerefli ve sadık meleklerdir.

قُتِلَ الْاِنْسَانُ مَٓا اَكْفَرَهُ ﴿١٧﴾

17- "Kahrolası insan! Ne nankördür o!"

Lanet olsun insana! Ne de büyüktür nankörlüğü!

مِنْ اَيِّ شَيْءٍ خَلَقَهُ ﴿١٨﴾ مِنْ نُطْفَةٍ خَلَقَهُ فَقَدَّرَهُ ﴿١٩﴾

18, 19- "Allah onu hangi şeyden yarattı? Onu bir nutfeden yarattı da kendisine ölçülü bir şekil verdi."

Allah onu yarattı, şekillendirdi ve ölçülü aşamalardan geçirdi. Önce nutfeden, sonra pıhtıdan, sonra da peş peşe aşamalardan geçirdi.

ثُمَّ السَّبٖيلَ يَسَّرَهُ ﴿٢٠﴾

20- "Sonra ona yolu kolaylaştırdı."

Ona iyilikte ve kötülükte yolu kolaylaştırdı ve nasıl tasarrufta bulunacağını kendisine ilham etti.

Bir yoruma göre de ona anasının karnından çıkmayı kolaylaştırdı. Çevrilmiş olarak önce başı çıkar.

ثُمَّ اَمَاتَهُ فَاَقْبَرَهُ ﴿٢١﴾

21- "Sonra onu öldürdü ve kabre koydu."

Yani onu canavarlar ve kuşlar parçalayıp rezil olmasın diye kendisine kabir meydana getirdi.

ثُمَّ اِذَا شَٓاءَ اَنْشَرَهُ ﴿٢٢﴾

22- "Sonra dilediği vakit onu diriltir."

Onu dirilterek kabrinden gönderir.

كَلَّا لَمَّا يَقْضِ مَٓا اَمَرَهُ ﴿٢٣﴾

23- "Hayır, hayır o, Allah'ın kendisine emrettiğini yerine getirmedi."

Yani kendisine emredilene karşı çıktı ve ona aykırı davrandı.

Bir yoruma göre de Allah onun hakkında, kendisine emrettiğine hükmetmedi. Zira eğer Allah, lehinde veya aleyhinde, ona emrettiğine hükmetseydi, kendisi O'na isyan etmezdi.

فَلْيَنْظُرِ الْاِنْسَانُ اِلٰى طَعَامِه ﴿٢٤﴾

24- "Şimdi insan yediğine bir baksın."

اَنَّا صَبَبْنَا الْمَٓاءَ صَبًّا ﴿٢٥﴾

25- "Gerçekten biz, yağmuru bol bol yağdırdık."

Ayetin işaret yorumu şöyledir: Biz, rahmet suyunu katı kalplerin üstüne döktük. Bunun üzerine o kalpler tövbe için yumuşadı. Kalplerin üzerine bir de marifet suyu döktük. Böylece kalplerde tevhid ve tecrit çiçekleri yeşerdi.

ثُمَّ شَقَقْنَا الْاَرْضَ شَقًّا ﴿٢٦﴾

26- "Sonra toprağı iyiden iyiye yardık."

فَاَنْبَتْنَا فِيهَا حَبًّا ﴿٢٧﴾ وَعِنَبًا وَقَضْبًا ﴿٢٨﴾ وَزَيْتُونًا وَنَخْلًا ﴿٢٩﴾
وَحَدَٓائِقَ غُلْبًا ﴿٣٠﴾ وَفَاكِهَةً وَاَبًّا ﴿٣١﴾

27, 28, 29, 30, 31- "Böylece orada taneler, üzümler, yoncalar, zeytinler, hurmalıklar, sık ağaçlı bahçeler, meyveler ve otlaklar bitirdik."

Meyvelerden maksat, bütün meyvelerdir. ( أَبًّا ) lafzı mera demektir.

مَتَاعًا لَكُمْ وَلِاَنْعَامِكُمْ ﴿٣٢﴾

32- "Sizin ve hayvanlarınızın yararlanması için."

فَاِذَا جَٓاءَتِ الصَّٓاخَّةُ ﴿٣٣﴾ يَوْمَ يَفِرُّ الْمَرْءُ مِنْ اَخِيهِ ﴿٣٤﴾ وَاُمِّه وَاَبِيهِ
وَصَاحِبَتِه وَبَنِيهِ ﴿٣٦﴾ ﴿٣٥﴾

33, 34, 35, 36- "Kişinin kardeşinden, annesinden, babasından, eşinden ve çocuklarından kaçacağı gün kulakları sağır edercesine şiddetli ses geldiği vakit."

Yani kıyamet geldiği vakit, işte o gün kişi kardeşinden, annesinden ve babasından kaçar. Sonra Allah bunun sebebini açıklayarak şöyle buyurmuştur:

لِكُلِّ امْرِيءٍ مِنْهُمْ يَوْمَئِذٍ شَأْنٌ يُغْنِيهِ ﴿٣٧﴾

37- "O gün onlardan herkesin kendini meşgul edecek bir işi vardır."

Kimse birbirine zaman ayıramaz. Aynı şekilde demişlerdir ki: İstikamet, vakti kıyamet olarak görmendir. Nitekim hangi veli ve arif varsa, mutlaka o bugün kalbiyle kardeşinden, annesinden, babasından, eşinden ve çocuklarından kaçmaktadır.

Bu itibarla arif halkla beraberdir ancak o, kalbiyle onlardan ayrılmaktadır.

Şiir:

*Muhatabım kıldım ben seni kalpte*
*Bedenimi de mubah kıldım benimle oturmak isteyene*

وُجُوهٌ يَوْمَئِذٍ مُسْفِرَةٌ ﴿٣٨﴾ ضَاحِكَةٌ مُسْتَبْشِرَةٌ ﴿٣٩﴾

38, 39- "O gün birtakım yüzler vardır ki, pırıl pırıl parlarlar. Gülerler, sevinirler."

Sevinmelerinin sebebi değişiktir. Şöyle ki, onlardan kimisinin sevinci cennetine kavuştuğu içindir. Kimisinin sevinci, payına düşen iri gözlü hurilere kavuştuğu içindir. Kimilerinin de daha başka sebepler içindir. Bazısının sevinci ise Rabbine bakıp O'nu gördüğü içindir.

وَوُجُوهٌ يَوْمَئِذٍ عَلَيْهَا غَبَرَةٌ ﴿٤٠﴾ تَرْهَقُهَا قَتَرَةٌ ﴿٤١﴾ اُو۬لٰٓئِكَ هُمُ
الْكَفَرَةُ الْفَجَرَةُ ﴿٤٢﴾

40, 41, 42- "O gün nice yüzler de vardır ki toz toprak içindedirler. Onları bir siyahlık bürür. İşte onlar kâfirlerdir, günaha dalanlardır."

O, fâsıkların tozu toprağıdır.

( تَرْهَقُهَا قَتَرَةٌ ) *"Onları bir siyahlık bürür."*

Bu, perdelenmişlik züllüdür.

سورة التَّكْوِيرِ

# TEKVÎR SÛRESİ

(Tekvîr Sûresi 29 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını, ilk âyetteki "küvviret (dürüldü)" fiilinin mastarı olan "Tekvîr"den almıştır. Sûrede; kıyametin kopuşu, cennet, cehennem, diri toprağa gömülen kız çocuğu, amel defterlerinin açılışı ve Cebrail (a.s) konuları yer alır.

Hz. Peygamber (s.a.s) bir hadisinde şöyle buyurmuştur: "*Kıyamet gününe gözle görür gibi bakmak isteyen, şu üç sûreyi okusun; Tekvîr, İnfitâr ve İnşikâk.*" (Tirmizî, Tefsîr, Sûre, 74).)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", bir topluluğun kalplerini serinletmiş, diğer bir topluluğun ise kalplerini yakmış bir sözdür. İtaatkârların kalplerini serinletmiş, günahkârların kalplerini yakmış, müridlerin kalplerini güzelleştirmiş, ariflerin kalplerini ise rahatsız etmiştir.

اِذَا الشَّمْسُ كُوِّرَتْ ﴿١﴾

1- "Güneş dürüldüğü zaman."

Işığı gittiği zaman.

وَاِذَا النُّجُومُ انْكَدَرَتْ ﴿٢﴾

2- "Yıldızlar bulanıp söndüğü zaman."

Dökülüp yere düştüğü zaman.

وَاِذَا الْجِبَالُ سُيِّرَتْ ﴿٣﴾

3- "Dağlar yürütüldüğü zaman."

Etrafları sökülüp alındığı zaman.

وَاِذَا الْعِشَارُ عُطِّلَتْ ﴿٤﴾

4- "Gebe develer salıverildiği zaman."

Bunlar, gebelikleri on ayı bulan gebe develerdir. Bunların, o gün salıverilmesinin sebebi, bu günün korkularının şiddeti ve insanların o develeri bırakıp kendileriyle meşgul olmalarıdır.

وَاِذَا الْوُحُوشُ حُشِرَتْ ﴿٥﴾

5- "Yaban hayatı yaşayan canlılar toplandığı zaman."

Bu canlılar, birbirlerinden haklarının tahsil edilmesi için kıyamette toplanır. Böylece boynuzlu koyundan boynuzsuzun hakkı alınır. Ancak bu ifade, örnek verme kabilindendir. Çünkü hayvanlar üzerinde yükümlülük yoktur.

Bununla birlikte bu, daha önce acı çekmiş olan hayvanın, telafi olarak bugün faydalandırılması da bidat ehlinin dediği gibi vacip değil, caiz olmak üzere akla uzak değildir.

وَاِذَا الْبِحَارُ سُجِّرَتْ ﴿٦﴾

6- "Denizler kaynatıldığı zaman."

Tutuşturulduğu zaman. Bu anlam, tandırı yakmak anlamındaki ( سَجَرْتُ التَّنُّورَ ) sözünden alınmıştır.

وَاِذَا النُّفُوسُ زُوِّجَتْ ﴿٧﴾

7- "Ruhlar eşleştirildiği zaman."

Eşlerle.

وَاِذَا الْمَوْءُدَةُ سُئِلَتْ ﴿٨﴾ بِاَىِّ ذَنْبٍ قُتِلَتْ ﴿٩﴾

8, 9- "Diri diri gömülen kız çocuğunun, hangi günahtan ötürü öldürüldüğü sorulduğu zaman."

وَاِذَا الصُّحُفُ نُشِرَتْ ﴿١٠﴾

10- "Amel defterleri açıldığı zaman."

Yani yayıldığı zaman.

وَاِذَا السَّمَٓاءُ كُشِطَتْ ﴿١١﴾

11- "Gökyüzü sıyrılıp koparıldığı zaman."

Yani koparılıp dürüldüğü zaman.

وَاِذَا الْجَح۪يمُ سُعِّرَتْ ﴿١٢﴾

12- "Cehennem alevlendirildiği zaman."

Tutuşturulduğu zaman.

وَاِذَا الْجَنَّةُ اُزْلِفَتْ ﴿١٣﴾

13- "Cennet yaklaştırıldığı zaman."

Yani cennet takva sahiplerine yaklaştırıldığı zaman.

عَلِمَتْ نَفْسٌ مَٓا اَحْضَرَتْ ﴿١٤﴾

14- "İşte o zaman herkes, önceden hazırlayıp getirdiği şeyleri bilecektir."

Bu ayet, bu şeylerin cevabıdır. Bu şeyler ise kıyametin kopuşu esnasında gerçekleşecektir.

Sofiler zümresinin kıyametinin kopuşunda ise bu haller onlara hâkim olup bu manalar kalplerine tecelli ettiğinde bu şeyler gerçekleşir.

Mesela hallerinin farklılığından biri de şudur: Bazı zamanlarda güneşleri tutulur. Bu, reddedildiklerinde olur. Bazı hallerde müridlere nefis arzusu hâkim olduğu için ilimlerinin yıldızları da bazen bulanıklaşıp söner. İşte o zaman herkes önceden hazırlayıp getirdiği şeyleri bilecektir.

فَلَآ اُقْسِمُ بِالْخُنَّسِ ﴿١٥﴾ اَلْجَوَارِ الْكُنَّسِ ﴿١٦﴾

15, 16- "Andolsun, bir görünüp bir sinenlere, akıp gidip" kaybolanlara.

Yani buna yemin ederim. ( الخُنَّس ) ve ( الكُنَّس ) lafızları, batma halindeki yıldızlar demektir.

Kimisine göre de geyik demektir.

وَالَّيْلِ اِذَا عَسْعَسَ ﴿١٧﴾

17- "Andolsun, yöneldiği zaman geceye."

( عَسْعَس ) lafzı, geldi ve yöneldi demektir.

وَالصُّبْحِ اِذَا تَنَفَّسَ ﴿١٨﴾

18- "Andolsun, aydınlandığı zaman sabaha."

( تَنَفَّس ) lafzı, gecenin içinden çıktı demektir.

Ben bu şeylere yemin ederim. Yeminin cevabı ise şudur:

اِنَّهُ لَقَوْلُ رَسُولٍ كَرِيمٍ ﴿١٩﴾

19- "Şüphesiz o, değerli bir elçinin sözüdür."

Şüphesiz bu Kur'ân, değerli bir elçinin, yani Hz. Cibril'in (a.s.) sözüdür.

ذِي قُوَّةٍ عِنْدَ ذِي الْعَرْشِ مَكِينٍ ﴿٢٠﴾

20- "Güçlü ve Arş'ın sahibi katında itibarlı."

( مَكِينٍ ) lafzı, itibar ve yer anlamındaki ( مَكانَة ) kökünden gelmektedir. Nitekim O, o kadar güçlüdür ki Lût kavminin memleketini yerinden söküp ters çevirmiştir.

مُطَاعٍ ثَمَّ اَمِينٍ ﴿٢١﴾

21- "O, orada sayılan, güvenilen biridir."

وَمَا صَاحِبُكُمْ بِمَجْنُونٍ ﴿٢٢﴾

22- "Arkadaşınız bir deli değildir."

Bu da, yeminin cevabındandır.

وَلَقَدْ رَاٰهُ بِالْاُفُقِ الْمُبِينِ ﴿٢٣﴾

23- "Andolsun o, Cebrâil'i apaçık ufukta gördü."

Hz. Muhammed (s.a.v.), miraç gecesi Hz. Cibril'i (a.s.) apaçık ufukta gördü. Bir yoruma göre de Hz. Peygamber (s.a.v.), apaçık ufukta iken Rabbini gördü.

وَمَا هُوَ عَلَى الْغَيْبِ بِضَنِينٍ ﴿٢٤﴾

24- "O, gaybın bilgileri hakkında cimri değildir."

İtham altında değildir.

وَمَا هُوَ بِقَوْلِ شَيْطَانٍ رَجِيمٍ ﴿٢٥﴾

25- "Kur'ân, kovulmuş şeytanın sözü değildir."

فَاَيْنَ تَذْهَبُونَ ﴿٢٦﴾

26- "O halde nereye gidiyorsunuz?"

Siz ne zamana kadar zan ve hesaplar vadilerinde debeleneceksiniz?

Siz, hakikat yerlerini görmekten kaçıp nereye gidiyorsunuz?

Niye sizi sevindiren veya üzen konuda Mevlâ'nıza dönmediniz?

اِنْ هُوَ اِلَّا ذِكْرٌ لِلْعَالَمِينَ ﴿٢٧﴾ لِمَنْ شَآءَ مِنْكُمْ اَنْ يَسْتَقِيمَ ﴿٢٨﴾

27, 28- "O, âlemler için, içinizden dürüst olmak isteyenler için, ancak bir öğüttür."

Bu Kur'ân, içinizden dürüst olmak isteyenler için ancak bir öğüttür. İstikamet -dürüstlük- konusundaki açıklama ise daha önce geçti.

وَمَا تَشَآؤُنَ اِلَّآ اَنْ يَشَآءَ اللّٰهُ رَبُّ الْعَالَمِينَ ﴿٢٩﴾

29- "Âlemlerin Rabbi olan Allah dilemedikçe siz dileyemezsiniz."

Yani Allah dilemelerini dilemedikçe dileyemezler.

سورة الْاِنْفِطَارِ

# İNFİTÂR SÛRESİ

(İnfitâr Sûresi 19 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk âyetteki "infetarat (gök çatladı)"ten alır. Sûrede; kıyametin kopuşu, ilk sorgulama, kimi nimetleri hatırlatma, yazıcı melekler, iyi ve kötülerin sonu, Kur'an'ın şeytanın değil, Allah'ın sözü oluşu, küllî ve cüz'î irade ilişkisi konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", kavranması güç bir söz olup her zihin onu anlayacak seviyeye yükselemez. Şöyle ki zihin donanımlı olmadığı zaman bu sözün hakikatini anlamada yetersiz kalır.

اِذَا السَّمَٓاءُ انْفَطَرَتْ ﴿١﴾

1- "Gök yarıldığı zaman,"

وَاِذَا الْكَوَاكِبُ انْتَثَرَتْ ﴿٢﴾

2- "Yıldızlar saçıldığı zaman."

Yani peş peşe dökülüp yığıldığı zaman.

وَاِذَا الْبِحَارُ فُجِّرَتْ ﴿٣﴾

3- "Denizler fışkırtıldığı zaman."

Yani birbirine açıldığı zaman.

وَاِذَا الْقُبُورُ بُعْثِرَتْ ﴿٤﴾

4- "Kabirlerin içindekiler dışarı çıkarıldığı zaman."

Yani kabirlerin toprağı ters çevrilip içlerindeki ölüler diriltildiği ve yine içlerindeki hazine ve ölüler dışarı çıkartıldığı zaman.

عَلِمَتْ نَفْسٌ مَا قَدَّمَتْ وَاَخَّرَتْ ﴿٥﴾

5- "Herkes, daha önce yaptığı ve yapmadığı şeyleri bilecek."

Bu ayet, geçen şeylerin cevabıdır. Yani bu şeyler gerçekleştiği zaman, her nefis daha önce işlediği iyiliği ve kötülüğü bilecektir.

يَٓا اَيُّهَا الْاِنْسَانُ مَا غَرَّكَ بِرَبِّكَ الْكَرِيمِ ﴿٦﴾

6- "Ey insan! Seni, kerem sahibi Rabbine karşı ne aldattı?"

Yani seni ne aldatıp kışkırttı da sen O'nun günah saydıklarıyla amel ettin.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, insana soruyu sorarken sanki kendisine şu cevabı da telkin etmiştir: Beni, bana olan keremin aldattı. Eğer keremin olmasaydı, bunu yapmazdım. Çünkü sen gördün ve örttün, takdir buyurdun ve mühlet verdin.

- Mümin, Allah'ın güzel lütfuna güvendiği için O'nun, uzun mühlet vermesine aldandı. Bu itibarla insan hatayı helal saydığı için işlememiş, ancak Allah'ın uzun süre onu hoş görmesi, kendisini kötü hasletlerine sevk etmiştir. Tıpkı şu dizelerimde söylediğim gibi:

*Der ki Mevlâ'm: Utanmaz mısın?*
*Senden gördüğüm kötü fiillerinden*
*Dedim ki ben: Mevlâ'm! Biraz şefkat, şüphesiz*
*Lütuflarının çokluğu cesaret verdi bana*

اَلَّذِي خَلَقَكَ فَسَوّٰيكَ فَعَدَلَكَ ﴿٧﴾ فِي اَيِّ صُورَةٍ مَا شَٓاءَ رَكَّبَكَ ﴿٨﴾

7, 8- "Rabbin ki seni yarattı, şekillendirip ölçülü yaptı, dilediği bir biçimde seni yapılandırdı."

Yani Rabbin senin organlarını hikmet yönlerine uygun olarak güzel, çirkin, uzun ve kısa, dilediği bir şekilde yapılandırdı. Burada şekil, sıfat anlamında, ( في ) de ( على ) anlamında olabilir. Bu takdirde anlamı şöyle olur: Rabbin seni, dilediği mutluluk, mutsuzluk, iman veya günahkârlıktan ibaret bir sıfat üzere yapılandırdı.

كَلَّا بَلْ تُكَذِّبُونَ بِالدِّينِ ﴿٩﴾

9- "Hayır, hayır! Siz dini yalanlıyorsunuz."

Yani siz, kıyameti yalanlıyorsunuz.

وَاِنَّ عَلَيْكُمْ لَحَافِظِينَ ﴿١٠﴾ كِرَامًا كَاتِبِينَ ﴿١١﴾ يَعْلَمُونَ مَا تَفْعَلُونَ ﴿١٢﴾

10, 11, 12- "Hâlbuki üzerinizde muhakkak bekçiler, değerli yazıcılar vardır. Onlar, yapmakta olduklarınızı bilirler."

Onlar amelleri yazan meleklerdir. Allah, insanları meleklerin kendilerini görüp amellerini yazmalarıyla korkutmuştur. Çünkü onlar, Hakk'ın ıttılaından yeterince sakınmazlar. Eğer onlar bunu hakkıyla bilselerdi, Allah'ın kendilerini görmesinden dolayı aykırılıklardan sakınmaları ve O'nun ıttılaından utanmaları, meleklerin görmesinden dolayı bunu yapmalarından daha mükemmel olurdu.

اِنَّ الْاَبْرَارَ لَفِي نَعِيمٍ ﴿١٣﴾ وَاِنَّ الْفُجَّارَ لَفِي جَحِيمٍ ﴿١٤﴾

13, 14- "Şüphesiz iyiler, nimet içindedirler. Şüphesiz günahkârlar da, cehennemdedirler."

( الْاَبْرَارَ ) *"İyiler."*

Onlar müminler olup bugün masumiyet nimeti içindedirler. Yarın da onlar saygınlık ve nimet içinde olacaklardır.

( الْفُجَّارَ ) *"Günahkârlar."*

Onlar bugün lanete müstahak olmaktan ve ayrılığa sebep olan şirkte ısrar etmekten dolayı cehennemdedirler. Yarın da onlar, içinde ebedî kalmak üzere cehennemde olacaklardır.

Bir yoruma göre de iyilerin nimet içinde olması, zikrin huzuru içinde ve halvet anlarında ünsiyet içinde olmaları demektir. Günahkârların cehennemde olması ise kalplerinin darlığı, takdire duydukları öfke, tedbirlerinin karanlıkları ve tercihlerinin darlığı içinde olmaları demektir.

يَصْلَوْنَهَا يَوْمَ الدِّينِ ﴿١٥﴾ وَمَا هُمْ عَنْهَا بِغَآئِبِينَ ﴿١٦﴾

15, 16- "Onlar, din günü oraya gireceklerdir. Onlar, oradan kaybolacak değillerdir."

( يَصْلَوْنَهَا ) *"Oraya gireceklerdir."*

Yani cehenneme gireceklerdir.

( هُمْ عَنْهَا ) *"Onlar oradan."*

Yani cehennemden.

وَمَآ اَدْرٰيكَ مَا يَوْمُ الدِّينِ ﴿١٧﴾

17- "Din gününün ne olduğunu sen ne bileceksin?"

Allah bunu korkutma yoluyla söylemiştir.

ثُمَّ مَآ اَدْرٰيكَ مَا يَوْمُ الدِّينِ ﴿١٨﴾

18- "Evet din gününün ne olduğunu sen en bileceksin?"

يَوْمَ لَا تَمْلِكُ نَفْسٌ لِنَفْسٍ شَيْئًا وَالْاَمْرُ يَوْمَئِذٍ لِلّٰهِ ﴿١٩﴾

19- "O gün kimse kimseye hiçbir fayda sağlamayacaktır. O gün emir Allah'ındır."

O gün emir de Allah'ındır, öncesi ve sonrası da Allah'ındır. O gün iddialar kesilir. Çünkü durum vuzuha kavuşur ve bilgiler zorunlu hale gelir.

سورة الْمُطَفِّفِين

# MUTAFFİFÎN SÛRESİ

(Mutaffifîn Sûresi 36 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk âyetteki "Mutaffifîn (Ölçü ve tartıda hile yapanlar)"den almıştır. Sûrede; doğru ticaret, hesap günü, küfür ehlinin siccîn, iman ehlinin ise illiyyînde oluşu, iyilerin sonu ve mükâfatları konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", giysisi ululuğu, haşmeti yüceliği, yüceliği güzelliği, celali cemali, cemali de celali olan bir Aziz'in adıdır. Varlığı başlangıçsızdır. Yarattığı çirkin bulunamaz. O'ndan bilinen ve umulan lütfudur. Kul için nasıl taksimat yaparsa yapsın, kul O'nun kuludur. Eğer onu uzaklaştırırsa, hüküm O'nun hükmüdür. Şayet onu yaklaştırırsa, emir de O'nun emridir.

وَيْلٌ لِلْمُطَفِّف۪ينَ ﴿١﴾ اَلَّذ۪ينَ اِذَا اكْتَالُوا عَلَى النَّاسِ يَسْتَوْفُونَ ﴿٢﴾
وَاِذَا كَالُوهُمْ اَوْ وَزَنُوهُمْ يُخْسِرُونَ ﴿٣﴾

1, 2, 3- "Ölçüde ve tartıda hile yapanların vay haline! Onlar insanlardan ölçüp aldıkları zaman tam ölçerler. Fakat kendileri onlara bir şey ölçüp yahut tartıp verdikleri zaman eksik ölçüp tartarlar."

( وَيْلٌ ) *"Vay haline!"*

( وَيْل ), belanın meydana gelmesi sırasında söylenen bir sözdür. Bu çerçevede "yazık sana, vay haline, vay başına gelenlere!" anlamında: ( وَيْل لك ) ve ( وَيْل عَلَيْكَ ) denir.

( مُطَفِّف ) lafzı ise ölçü ve tartıyı eksik yapan kimse demektir. Allah, bununla insanlarla muamelede bulunup aldıkları zaman tam alan, kendileriyle muamelede bulunan kimseye ödeme yaptıkları zaman ise eksik ödeyen kimseleri kast etmiştir. Muameledeki bu durum tartıda, ölçüde, kusuru açığa çıkarmada, karar vermede, ödemede ve tahsil etmede ortaya çıkar. Bu itibarla her kim kendisi için rıza gösterdiği şeye, Müslüman kardeşi için rıza göstermezse o, insaflı değildir. Gerçek dürüst insanlara gelince, onlar tıpkı Müslümanların lehinde düşündükleri gibi muamelede bulundukları herkesin lehinde düşünürler. Nitekim dürüstlük nadir ve değerlidir. Onların arkadaşlık ve muaşerette de durumları böyledir. Hal böyle olunca, insanların kusurunu görüp kendi kusurunu görmeyen kimse de bu cümleden, yani kendine tam, başkalarına ise eksik ölçüp tartanlar cümlesindendir.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Görürsün sen gözümdeki zerreyi*
*Görmezsin sen gözündeki merteği*

Bir de kim kendi hakkını tahsil ederken, başkalarının hakkını da tıpkı kendi hakkını tahsil ettiği gibi ödemezse işte o, kendine tam, başkalarına ise eksik ölçüp tartanlar cümlesindendir.

Yiğit olan ise insanların hakkını ödeyip kendisi için kimseden hak tahsil etmeyendir.

اَلَا يَظُنُّ اُولٰٓئِكَ اَنَّهُمْ مَبْعُوثُونَ ﴿٤﴾ لِيَوْمٍ عَظِيمٍ ﴿٥﴾ يَوْمَ يَقُومُ النَّاسُ لِرَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿٦﴾

4, 5, 6- "Onlar, büyük bir gün; insanların, âlemlerin Rabbinin huzurunda duracakları gün için diriltileceklerini sanmıyorlar mı?"

Acaba bunlar, yarın hesaba çekileceklerine ve insanların haklarından sorumlu tutulacaklarına kesin olarak inanmıyorlar mı?

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Kim insanlarla muamele ederken kıyameti görüp hesaba çekileceğini hatırlamazsa işte o, muamelesinde zarardadır.

- Kim âlemlerin Rabbi olan Allah'ı gözetirse, tıpkı insanların mahşerdeki halleri gibi dünyasında heybeti hisseder. Çünkü Hakk'ın bugünkü ıttılaı tıpkı yarınki ıttılaı gibidir.

كَلَّٓا اِنَّ كِتَابَ الْفُجَّارِ لَفٖي سِجّٖينٍ ﴿٧﴾

7- "Hayır! Günahkârların yazısı, muhakkak Siccîn'dedir."

( سِجّٖينٍ ) *"Siccîn."*

Bir görüşe göre o, yerin yedinci tabakasıdır. Bu, yerin en alt tabakasıdır. Kâfirleri zelil kılıp aşağılamak için amel defterleri oraya bırakılır sonra ruhları oraya taşınır.

Bir yoruma göre de Siccîn, cehennemdeki bir kuyudur. Diğer bir iddiaya göre ise o, yerin en alt tabakasındaki bir kayadır. Sözlük bakımından ise hapsetmek anlamındaki ( سَجْنٌ ) mastarından hapse atılan, mahpus ve tutuklu demek olan ( فَعِيلٌ ) kalıbındadır.

وَمَٓا اَدْرٰيكَ مَا سِجّٖينٌ ﴿٨﴾

8- "Siccîn'in ne olduğunu sen ne bileceksin?"

Bu, korkutma amaçlı bir soru cümlesidir.

كِتَابٌ مَرْقُومٌ ﴿٩﴾

9- "O, yazılmış bir kitaptır."

Yani bu, yazılmış bir kitap olup Allah onda insanların yaptıklarını ve akıbetlerini yazmıştır. Bir de Âdemoğulları hakkında yazılanlar,

iyilik, kötülük, mutsuzluk ve mutlulukla ilgilidir. Bu itibarla, yazılanlar Allah'ın ilmi ve iradesine konu olduğu şekildedir. Zaten Allah da yazılanları sadece olup olmayacağına dair ilmine göre anlatmıştır. Ayrıca, olup olmayacağını bildiği gibi, olmasını veya olmamasını da dilemiştir. Sonra Allah (c.c.), O'na yakın olanlara dilediği miktar hariç hiç kimseyi yaratıklarının sırlarına muttali kılmamıştır. Çünkü Allah, onların bütün vakitlerinde haklarında ezelde takdir edileni icra etmektedir.

وَيْلٌ يَوْمَئِذٍ لِلْمُكَذِّبِينَ ﴿١٠﴾ اَلَّذِينَ يُكَذِّبُونَ بِيَوْمِ الدِّينِ ﴿١١﴾
وَمَا يُكَذِّبُ بِهٖٓ اِلَّا كُلُّ مُعْتَدٍ اَثِيمٍ ﴿١٢﴾

10, 11, 12- "O gün, yalanlayanların; din gününü yalanlayanların vay haline! Onu ancak her azgın, günahkâr kimse inkâr eder."

Din gününü tasdik etmeyenlerin vay haline! O günü, kendisi için konulmuş olan haddi aşan kimseden başkası inkâr etmez.

اِذَا تُتْلٰى عَلَيْهِ اٰيَاتُنَا قَالَ اَسَاطِيرُ الْاَوَّلِينَ ﴿١٣﴾

13- "Ona ayetlerimiz okununca: 'Eskilerin masalları' der."

Kendisine Kur'ân okunduğu zaman onu inkâr eder.

كَلَّا بَلْ رَانَ عَلٰى قُلُوبِهِمْ مَا كَانُوا يَكْسِبُونَ ﴿١٤﴾
كَلَّٓا اِنَّهُمْ عَنْ رَبِّهِمْ يَوْمَئِذٍ لَمَحْجُوبُونَ ﴿١٥﴾

14, 15- "Hayır, hayır! Doğrusu onların kazanmakta olduğu şeyler, kalpleri paslandırmıştır. Hayır, şüphesiz onlar kıyamet günü Rablerini görmekten perdeleneceklerdir."

Yani işlemiş oldukları günahlar kalplerini örtmüştür. Bir de nasıl ki onlar bugün Allah'ı tanımaktan alıkonuldular ise yarın da O'nu görmekten alıkonulacaklardır. Bu arada ayetin hitap delili, müminlerin bugün Allah'ı tanıdıkları gibi yarın da O'nu göreceklerini gerektirir.

ثُمَّ اِنَّهُمْ لَصَالُوا الْجَحِيمِ ﴿١٦﴾

16- "Sonra onlar muhakkak cehenneme gireceklerdir."

ثُمَّ يُقَالُ هٰذَا الَّذٖي كُنْتُمْ بِهٖ تُكَذِّبُونَ ﴿١٧﴾

17- "Sonra da onlara: 'Yalanlamakta olduğunuz işte budur' denecektir."

كَلَّٓا اِنَّ كِتَابَ الْاَبْرَارِ لَفٖي عِلِّيّٖينَ ﴿١٨﴾

18- "Hayır, andolsun, iyilerin kitabı 'İlliyyûn'dadır."

( عِلِّيّٖينَ ) lafzı, en yüksek yer demek olup iyilerin ruhları onurlandırılmak ve yüceltilmek üzere oraya taşınır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- O, Sidretu'l-munteha'dır.

- O, yedinci göğün üzerindedir.

وَمَٓا اَدْرٰيكَ مَا عِلِّيُّونَ ﴿١٩﴾

19- "İlliyyûn'un ne olduğunu sen ne bileceksin?"

كِتَابٌ مَرْقُومٌ ﴿٢٠﴾ يَشْهَدُهُ الْمُقَرَّبُونَ ﴿٢١﴾

20, 21- "O, yazılmış bir kitaptır. Ona, Allah'a yakın olanlar şahit olur."

Bu kitapta amelleriniz yazılmış olup onu Allah'a yakın melekler görür.

اِنَّ الْاَبْرَارَ لَفٖي نَعٖيمٍ ﴿٢٢﴾

22- "Şüphesiz iyi kimseler nimet içindedirler."

Bugün de yarın da. Onlar bugün irfanın huzuru, itaat ve ihsanın rahatlığı, rıza nimeti, yakınlık ünsiyeti ve vuslatın bastı içinde olurlar. Yarın da cennette ve kendilerine söz verilen türlü yakınlıkların içinde olacaklardır.

عَلَى الْاَرَٓائِكِ يَنْظُرُونَ ﴿٢٣﴾

23- "Onlar orada koltukları üzerinde bakarlar."

Allah bakmayı ortaya koymuş ancak hallerindeki farklılıklarından dolayı bakılanı açıklamamıştır. Şöyle ki onlardan kimisi saraylarına, kimisi hurilerine, kimisi de başka başka şeylere bakar. Kimileri de havasstan olup bütün vakitlerde hep Allah'a (c.c.) bakarlar.

تَعْرِفُ فٖي وُجُوهِهِمْ نَضْرَةَ النَّعٖيمِ ﴿٢٤﴾

24- "Onların yüzlerinde nimetlerin sevincini görürsün."

Onlara bakan kimse, Mevlâlarına olan bakışlarının eserinin yüzlerinde beliren nimet olduğunu anlar. Böylece, sevenin halleri daima ona şahitlik eder. Bu çerçevede eğer vakit vuslat vakti ise onun şahitleri, gururu, sevinci, mutluluğu, canlılığı ve genişliğidir. Vakit kaybolmuşluk ve ayrılık vakti olduğu zaman ise hakkındaki şahitler zayıflığı, solgunluğu, özlemi, iniltisi, gözyaşları ve uyuşukluğudur.

Benim şu dizelerim de bu anlamdadır:

*Hey! Yüzümün değişmesi, ortaya çıkınca*
*Hakkımızda tüm sandıklarının gerçekleşmesidir*

Şu dizeler de bana aittir:

*Gammazlar, haber alınca onu ziyaret ettiğimi*
*İnkâr ettim ben, sırların yayılması korkusundan*
*Dediler ki: Yüzünde bir sevinç görüyoruz bugün*
*Belirmiş yüzünde o sevinç ve bu açıktır*
*Kürkün de bundan önceki değildir*
*Buhurlukların yaymadığı güzel bir kokusu var*

*Savunabileceğim bir açıklamam olmadı*
*Uzaktır şüphe uyandıranın kılıfın ardına saklanması*

يُسْقَوْنَ مِنْ رَح۪يقٍ مَخْتُومٍ ﴿٢٥﴾ خِتَامُهُ مِسْكٌ وَف۪ي ذٰلِكَ فَلْيَتَنَافَسِ الْمُتَنَافِسُونَ ﴿٢٦﴾

25, 26- "Onlara mühürlü saf bir içecekten içirilir. Onun sonu bir misktir. İşte yarışanlar, bunun için yarışsınlar."

Yani durudur, onda yabancı madde yoktur.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Yıllanmış ve lezzetlidir.
- Onlar, sonu misk olan bir içecek içerler.
- Daha doğrusu, o içecek onlar gelmeden önce mühürlenmiştir.
- Sonunun misk olması, herkese yasak olup sadece her biri için kendi adıyla hazırlanıp bekletilmesi demektir.

(وَف۪ي ذٰلِكَ فَلْيَتَنَافَسِ الْمُتَنَافِسُونَ) *"İşte yarışanlar, bunun için yarışsınlar."*

Bu konudaki yarışlar, hemen iyi ameller işlemek, ibadetlerde yarışmak, kalbi Allah'a bağlamak, kötü huylardan arınmak, himmetlerin melekûtta dolaşması ve münacatın devamlılığıyla olur.

وَمِزَاجُهُ مِنْ تَسْن۪يمٍ ﴿٢٧﴾ عَيْنًا يَشْرَبُ بِهَا الْمُقَرَّبُونَ ﴿٢٨﴾

27, 28- "O içeceğin karışımı tesnîmdendir. Bir pınar ki Allah'a yakın olanlar ondan içerler."

Tesnîm, yukarıdan üzerlerine yükseltilerek akıtılan bir pınardır.

Bir görüşe göre de üzerlerine dökülen bir oluktur.

Bir yoruma göre ise ona Tesnîm adı verilmiştir. Çünkü suyu, havada yükselerek akmakta ve sonunda cennet ehlinin kaplarına dökülmektedir. Böylece onlardan kimisine karışık olarak, kimisine de sade içirilir. Velilere karışık, havassa ise sade içirilir.

اِنَّ الَّذ۪ينَ اَجْرَمُوا كَانُوا مِنَ الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا يَضْحَكُونَ ﴿٢٩﴾ وَاِذَا
مَرُّوا بِهِمْ يَتَغَامَزُونَ ﴿٣٠﴾

29, 30- "Şüphesiz günahkârlar, iman edenlere gülüyorlardı. Müminler, yanlarından geçtiğinde, birbirlerine kaş göz ederek alay ediyorlardı."

Onlar müminlerle alay ederek gülüyorlardı. İşte bugün de iman edenler, kâfirlere gülmektedir.

وَاِذَا انْقَلَبُٓوا اِلٰٓى اَهْلِهِمُ انْقَلَبُوا فَكِه۪ينَ ﴿٣١﴾

31- "Ailelerine dönerken keyiflenerek dönerlerdi."

وَاِذَا رَاَوْهُمْ قَالُٓوا اِنَّ هٰٓؤُ۬لَٓاءِ لَضَٓالُّونَ ﴿٣٢﴾

32- "Müminleri gördükleri zaman: 'Hiç şüphesiz bunlar sapmış kimselerdir' derlerdi."

وَمَٓا اُرْسِلُوا عَلَيْهِمْ حَافِظ۪ينَ ﴿٣٣﴾

33- "Hâlbuki onlar, müminlerin başına bekçi olarak gönderilmediler."

فَالْيَوْمَ الَّذ۪ينَ اٰمَنُوا مِنَ الْكُفَّارِ يَضْحَكُونَ ﴿٣٤﴾ عَلَى الْاَرَٓائِكِ
يَنْظُرُونَ ﴿٣٥﴾ هَلْ ثُوِّبَ الْكُفَّارُ مَا كَانُوا يَفْعَلُونَ ﴿٣٦﴾

34, 35, 36- "İşte bugün de iman edenler, kâfirlere gülerler. Koltuklar üzerinde bakarlar. Nasıl, kâfirler yaptıklarının karşılığını buldular mı?"

Soru cümlesinden amaç takrirdir.

Bir yoruma göre de müminler, cehennem ehlinin cehennemde azap çektiğini gördüklerinde onlara acımaz ve kalplerinde şefkat hissetmezler. Aksine gülerler, alay ederler ve onları ayıplarlar.

سورة الْاِنْشِقَاقِ

# İNŞİKÂK SÛRESİ

(İnşikak Sûresi 25 âyet olup, Mekke'de inen ilk sûrelerdendir. Adını, ilk âyetindeki "İnşakkat (gök yarıldı)"tan almıştır. Sûrede; kıyametin kopuşu sırasında gök ve yerin durumu, kitabı sağından veya arkasından verilenlerin sonu, yalanlayanların durumu ve iman edip iyi işler yapanların mükâfatı konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", celali şekillerle -hemcinslerle-, cemali benzerlere uygunlukla, fiilleri gaye ve gerekçelerle, kudreti kendine çekme ve entrikayla olmadığı gibi ilmi de zaruret veya akıl yürütmeyle olmayan bir Celîl'in adıdır. Bu nedenle O, ezelî ve ebedî olup hakkında fena ve zeval caiz değildir.

اِذَا السَّمَٓاءُ انْشَقَّتْ ﴿١﴾ وَاَذِنَتْ لِرَبِّهَا وَحُقَّتْ ﴿٢﴾

1, 2- "Gök yarıldığı ve Rabbine kulak verip boyun eğecek hale getirildiği zaman."

Yani Rabbinin emrini kabul ile karşıladığı zaman ki ona yaraşan da bunu yapmasıdır.

وَاِذَا الْاَرْضُ مُدَّتْ ﴿٣﴾ وَاَلْقَتْ مَا فِيهَا وَتَخَلَّتْ ﴿٤﴾ وَاَذِنَتْ لِرَبِّهَا وَحُقَّتْ ﴿٥﴾

3, 4, 5- "Yer dümdüz edildiği, içinde bulunanları atıp boşaldığı ve Rabbini dinleyip O'na hakkıyla itaate mecbur kılındığı zaman."

Yer, tepe ve dağlarının çökmesiyle yumuşak bir düzlük haline gelecek ölçüde düzeldiği, içindeki ölü ve hazineleri dışarı atıp onlardan boşaldığı ve Rabbinin emrini dinleyip itaatle karşıladığı zaman.

Bunların cevabı, "ona kavuşacaksın" sözüdür. Yani insan, amellerine karşılık olarak hak ettiği şeylere kavuşacaktır.

يَٓا اَيُّهَا الْاِنْسَانُ اِنَّكَ كَادِحٌ اِلٰى رَبِّكَ كَدْحًا فَمُلَاقِيهِ ﴿٦﴾

6- "Ey insan! Şüphesiz sen Rabbine karşı didinmektesin, sonunda O'na kavuşacaksın."

(يَٓا اَيُّهَا الْاِنْسَانُ) *"Ey insan!"*

Ey mükellef! Sen sahip olduğun imkânlarla, karşılığına kavuşacağın bir çaba harcıyorsun. İyiliğin karşılığı olarak iyiliğe, kötülüğün karşılığı olarak da kötülüğe kavuşacaksın.

فَاَمَّا مَنْ اُوتِيَ كِتَابَهُ بِيَمِينِهِ ﴿٧﴾

7- "Kime kitabı, sağından verilirse."

O, iyilik sahibi mümindir.

فَسَوْفَ يُحَاسَبُ حِسَابًا يَسِيرًا ﴿٨﴾

8- "Kolay bir hesaba çekilecektir."

Yani içinde zorluk olmayan bir hesaba çekilecektir. Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kolay hesaptan maksat Allah'ın, o kimseye kelamını vasıtasız duyurmasıdır. Böylece kulun, Allah'ın hitabını duyması, hesaptaki zorluğu hafifletmiş olur.

- Kolay hesaptan maksat Allah'ın, ona günahlarını hatırlatmamasıdır.

- Allah ona: "Sen şunu yapmadın mı?" diyerek kendisine günahlarını hatırlatmaz. Aksine ona olan iyiliklerini sayarak: "Şunu şunu yapmadım mı?" buyurur.

وَيَنْقَلِبُ اِلٰٓى اَهْلِه۪ مَسْرُورًا ﴿٩﴾

9- "Sevinçli olarak ailesine dönecektir."

Yani o kimse ailesine kurtuluş, dereceler, bulduğu münacat, ibadetlerin kabulü ve hatalarının bağışlanmasıyla dönecektir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kulun sevinçli dönmesi, kalbinin bağlandığı kimseler hakkında ona şefaat izni vermesidir.

- Bu, Allah'ın onu rüsva etmemesidir.

- Bu, kulun cennete girip iri gözlü hurilerden nasibini almadan önce Rabbinin huzuruna çıkıp O'nunla konuşmasıdır.

وَاَمَّا مَنْ اُو۫تِيَ كِتَابَهُ وَرَٓاءَ ظَهْرِه۪ ﴿١٠﴾

10- "Fakat kime kitabı arkasından verilirse,"

Bu kimseden maksat kâfirdir.

فَسَوْفَ يَدْعُو ثُبُورًا ﴿١١﴾

11- "'Helâk!' diye bağıracaktır."

Yani: "Vay halime!" diyecektir.

وَيَصْلٰى سَعٖيرًا ﴿١٢﴾

12- "Alevli ateşe girecektir."

Cehenneme girecektir.

اِنَّهُ كَانَ فٖي اَهْلِهٖ مَسْرُورًا ﴿١٣﴾

13- "Çünkü o, dünyada iken ailesi içinde sevinçli idi."

Sevincinin kaynağı hakkı tanımaması ve övülmesi idi.

اِنَّهُ ظَنَّ اَنْ لَنْ يَحُورَ ﴿١٤﴾

14- "Çünkü o, hiçbir zaman Rabbine dönmeyeceğini sanırdı."

Yani o, asla bize dönmeyeceğini ve diriltilmeyeceğini sanırdı.

بَلٰى اِنَّ رَبَّهُ كَانَ بِهٖ بَصٖيرًا ﴿١٥﴾

15- "Hayır, sandığı gibi değil! Şüphesiz Rabbi onu görüyordu."

فَلَٓا اُقْسِمُ بِالشَّفَقِ ﴿١٦﴾

16- "Yemin ederim şafağa."

Güneşin batışını izleyen kızıllığa.

وَالَّيْلِ وَمَا وَسَقَ ﴿١٧﴾

17- "Geceye ve içinde topladıklarına."

Yani içinde toplayıp bir araya getirdiklerine.

وَالْقَمَرِ اِذَا اتَّسَقَ ﴿١٨﴾

18- "Dolunay haline geldiği zaman aya."

Tamamlandığı ve olgunlaşıp bütünlük kazandığı zaman.

Bir yoruma göre şafak, vuslatlarının güneşi batıp bazı hallerinde kendilerine ayrılık acısı çektirildiği zamandır. Bu, basttan sonraki kabz ve cemden sonraki fark zamanıdır.

Gece ve içinde topladıklarından maksat ise onlar sürüklenme halinde iken kayboluşlarının geceleri veya onlar buluşmanın huzuru içerisinde iken vuslat geceleri yahut da onlar tedirginlik ve yanma halinde iken talep geceleridir.

Ayın dolunay haline geldiği zaman ise irfanın kalplere hâkimiyetinin ortaya çıktığı, böylece ne azaltma ne de noksanlığın olduğu zamandır.

لَتَرْكَبُنَّ طَبَقًا عَنْ طَبَقٍ ﴿١٩﴾

19- "Şüphesiz tabakadan tabakaya geçersiniz."

Yani halden hale geçersiniz. Bir görüşe göre ise bunlar gök tabakalarındandır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Sıkıntıdan sıkıntıya geçersiniz.

- Tabakalar insanın çocukluk, gençlik, orta yaşlılık ve yaşlılık aşamalarıdır.

- Tabakalar insanın önce arayan sonra vuslata eren sonra da bağlanan olması demektir.

- Tabakalar fakirlik, zenginlik, sağlık ve hastalık gibi peş peşe gelen hallerdir.

- Bunlar, ahiretteki art arda gelen hallerdir.

فَمَا لَهُمْ لَا يُؤْمِنُونَ ﴿٢٠﴾

20- "O halde onlara ne oluyor da iman etmiyorlar?"

Yani burhanlar ortaya çıktığı halde senin ümmetinin kâfirlerine ne oluyor da tasdik etmiyorlar?

وَاِذَا قُرِئَ عَلَيْهِمُ الْقُرْاٰنُ لَا يَسْجُدُونَ ﴿٢١﴾

21- "Onlara Kur'ân okunduğu zaman secde etmiyorlar."

بَلِ الَّذِينَ كَفَرُوا يُكَذِّبُونَ ﴿٢٢﴾

22- "Daha doğrusu kâfir olanlar yalanlıyorlar."

وَاللّٰهُ اَعْلَمُ بِمَا يُوعُونَ ﴿٢٣﴾

23- "Hâlbuki Allah, içlerinde ne sakladıklarını çok iyi bilir."

(اَعْلَمُ بِمَا يُوعُونَ) *"Sakladıklarını çok iyi bilir."*

Yani kalplerinin, içinde barındırdığı şeyleri çok iyi bilir. Bu anlam, eşyayı zarfa koymak demek olan (أَوْعَيْتُ المَتاعَ في الظَرْفِ) tabirinden gelmektedir.

فَبَشِّرْهُمْ بِعَذَابٍ اَلِيمٍ ﴿٢٤﴾

24- "Öyleyse onlara acı dolu bir azabı müjdele."

اِلَّا الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ لَهُمْ اَجْرٌ غَيْرُ مَمْنُونٍ ﴿٢٥﴾

25- "Ancak iman edip de salih ameller işleyenler hariç. Onlar için bitmez tükenmez bir mükâfat vardır."

Çünkü iman edip salih ameller işleyenler onlardan değildir ve kendileri için kesintisiz bir ecir vardır.

سورة الْبُرُوجِ

# BURÛC SÛRESİ

(Burûc Sûresi 22 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk âyetteki "Burûc (Burçlar)"dan almıştır. Sûrede genel olarak; Hendek adamlarının işkencesi ve Yüce Allah'ın onları yakalayışı, yine de tevbe ederlerse bağışlanacakları, Firavun ve Semud kavmi, Kur'an'ın koruma altında oluşu konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", hiçbir aklın hakikatini bilmediği, kendisine benzeyen hiçbir benzerinin bulunmadığı, hiçbir anlama yeteneğinin tasvir etme seviyesine yükselemediği, hiçbir ilmin takdirle varamadığı, bir kişiden başka -ki o da ihtilaf konusudur- hiçbir gözün görmediği, izin olmaksızın hiç kimsenin hakkında konuşmaya cesaret edemediği, hiçbir mekânın kuşatamadığı, hiçbir sırrın gizleyemediği ve kendisinin rıza gösterdiği hariç hiç kimsenin marifetine ulaşamadığı zatın adıdır.

وَالسَّمَٓاءِ ذَاتِ الْبُرُوجِ ﴿١﴾

1- "Burçları olan göğe andolsun."

On iki burcu kast etmiştir.

وَالْيَوْمِ الْمَوْعُودِ ﴿٢﴾

2- "Vaat edilen güne andolsun."

Bu, kıyamet günüdür. Yeminin cevabı ise:( اِنَّ بَطْشَ رَبِّكَ لَشَدِيدٌ ) *"Şüphesiz Rabbinin yakalaması çok çetindir"* (Buruc, 85/12) ayetidir.

وَشَاهِدٍ وَمَشْهُودٍ ٣

3- "Şahitlik edene ve şahitlik edilene andolsun."

Bu konuda şu yorumlar yapılmıştır:

- Şahitlik eden Allah, şahitlik edilen halktır.

- Şahitlik eden halk, şahitlik edilen Allah'tır. Halk, Allah'ı bugün kalpleriyle, yarın da gözleriyle görürler.

- Şahitlik eden Hz. Muhammed (s.a.v.), şahitlik edilen kıyamettir. Allah şöyle buyurmuştur:

( وَجِئْنَا بِكَ عَلٰى هٰٓؤُلَٓاءِ شَهِيدًا ) *"Seni de onların üzerine şahit kıldığımız zaman."* (Nisâ, 4/41)

Kıyamet hakkında da Allah şöyle buyurmuştur:

( ذٰلِكَ يَوْمٌ مَجْمُوعٌ لَهُ النَّاسُ وَذٰلِكَ يَوْمٌ مَشْهُودٌ ) *"Bu, insanların toplanacakları bir gündür. Bu, görülen -şahit olunan- bir gündür."* (Hûd, 11/103)

- Şahitlik eden Cuma günü, şahitlik edilen Arefe günüdür.

- Şahitlik eden ameli yazan melek, kendi hakkında şahitlik eden ve organlarının hakkında şahitlik ettiği ise insandır. Bu itibarla insan, hem şahitlik eden hem de şahitlik edilendir.

- Şahitlik eden kıyamet günü, şahitlik edilen insanlardır.

- Şahitlik edilen ümmettir. Çünkü Hz. Peygamber (s.a.v.), onların lehinde ve aleyhinde şahitlik eder.

- Şahitlik eden bu ümmet, şahitlik edilen diğer ümmetlerdir.

- Şahitlik eden Hacer-i Esved'dir. Çünkü ahit kitabı ondadır.

-Şahitlik eden yaratıkların tamamı olup Allah'ın birliğine şahitlik ederler. Şahitlik edilen de Allah'tır.

- Şahitlik eden Allah olup kendi birliğine şahitlik eder. Şahitlik edilen de O'dur. Çünkü O, kendi hakkında şahitlik etmiştir.

قُتِلَ اَصْحَابُ الْاُخْدُودِ ﴿٤﴾ اَلنَّارِ ذَاتِ الْوَقُودِ ﴿٥﴾

4, 5- "Hendek kazıp alevli ateş yakanlar lanetlenmiştir."

( قُتِلَ ) lafzı, lanetlendiler demektir. ( أخْدُود ) lafzı da yerde uzunlamasına kazılan çukur anlamındadır. Bunların hikâyesi ise tefsirde malumdur. ( وَقُود ) lafzı ise odun demektir.

Bunlar imanlarını gizleyen bir topluluktu. Derken hükümdarları bunu öğrenince, onlara karşı büyük bir ateş yaktı ve kendilerini içine attı. O ateşe en son giren ise beraberinde emzikli bir çocuk bulunan bir kadındı. Kadın dönmek istedi ancak çocuk ona: "Dur ve sabret. Çünkü sen hak üzeresin" dedi. Onlar, kadını da ateşe attılar ve kadın ateşin içine düştü. Bu arada hükümdarın adamları, olanları izlemek üzere etrafında oturmakta oldukları hendekteki ateş yükseldi ve onların hepsini yaktı. Ateşin içindeki müminler ise kurtulup esenliğe kavuştular.

اِذْ هُمْ عَلَيْهَا قُعُودٌ ﴿٦﴾ وَهُمْ عَلٰى مَا يَفْعَلُونَ بِالْمُؤْمِنِينَ شُهُودٌ ﴿٧﴾

6, 7- "O vakit ateşin etrafında oturmuş, müminlere yaptıklarını seyrediyorlardı."

وَمَا نَقَمُوا مِنْهُمْ اِلَّٓا اَنْ يُؤْمِنُوا بِاللّٰهِ الْعَزِيزِ الْحَمِيدِ ﴿٨﴾ اَلَّذِي لَهُ مُلْكُ السَّمٰوَاتِ وَالْاَرْضِ وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَيْءٍ شَهِيدٌ ﴿٩﴾

8, 9- "Onlar müminlere sadece göklerin ve yerin hükümranlığı kendisine ait olan azîz ve hamîd olan Allah'a iman ettikleri için kızdılar. Oysa Allah her şeye şahittir."

Yani onlar müminlere sadece imanları için kızdılar.

اِنَّ الَّذِينَ فَتَنُوا الْمُؤْمِنِينَ وَالْمُؤْمِنَاتِ ثُمَّ لَمْ يَتُوبُوا فَلَهُمْ عَذَابُ جَهَنَّمَ وَلَهُمْ عَذَابُ الْحَرِيقِ ﴿١٠﴾

10- "Şüphesiz mümin erkeklerle mümin kadınlara işkence edip sonra tövbe etmeyenlere cehennem azabı ve yangın azabı vardır."

Yani erkek müminler ile kadın müminleri yakıp sonra da küfürlerinden tövbe etmeyenler için cehennem azabı vardır. Bu, azabın bir çeşididir. Onlara yangın azabı da vardır. Bu da azabın başka bir çeşididir.

اِنَّ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ لَهُمْ جَنَّاتٌ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ ذٰلِكَ الْفَوْزُ الْكَبِيرُ ﴿١١﴾

11- "İman edip salih amel işleyenlere gelince, şüphesiz onlara içinden ırmaklar akan cennetler vardır. İşte büyük kurtuluş budur."

اِنَّ بَطْشَ رَبِّكَ لَشَدِيدٌ ﴿١٢﴾

12- "Şüphesiz Rabbinin yakalaması çok şiddetlidir."

( بَطْش ) lafzı, şiddetle yakalamak demektir.

اِنَّهُ هُوَ يُبْدِئُ وَيُعِيدُ ﴿١٣﴾

13- "Şüphesiz O, ilk başta yaratır ve tekrarlar."

Allah ilk başka yaratır, sonra diriltmenin ardından onları tekrar hayata döndürür.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah başta azap verir, sonra onu tekrarlar. Bir de başta sevap verir, sonra onu tekrarlar.

- Başlangıcı düşmanlık ve mutsuzluk hükmü üzerine bina eder, sonra bu hükmü tekrarlar. Bir de başlangıcı zaaf üzerine bina eder, sonra onları tekrar zaafa döndürür.

- Allah, başta yüce haller lütfeder. Sonra bir arıza meydana geldiği zaman bunu ikinci kez tekrarlar.

- Başta kulu sahipsiz bırakmakla bazı çirkin hallerini ortaya çıkarır, sonra tövbesini kabul eder. Kul tövbesini bozduğu zaman bu,

halinin başlangıcında Allah'ın onun hakkında icra ettiği sahipsizliğin gereğini tekrarlamasından dolayıdır.

- Allah, başta irfanının latifelerini ortaya koyar, sonra o nurların ebediyen parlayarak kalabilmesi için onu tekrarlar. Böylece ömrün sonuna kadar başlar ve tekrarlar.

وَهُوَ الْغَفُورُ الْوَدُودُ ﴿١٤﴾

14- "O çok bağışlayandır, çok sevendir."

( غَفُور ) lafzı, çok bağışlayan demektir. ( وَدُود ) lafzı da çok seven anlamındaki ( وادٌّ ) lafzının mübalağası olup aynı zamanda sevilen anlamına da gelir. Böylece Allah onları sevdiği için ve onlar O'nu sevdikleri için kendilerini çok bağışlar.

ذُو الْعَرْشِ الْمَجِيدُ ﴿١٥﴾

15- "Arş'ın sahibidir, şanı yücedir."

O, yüce mülkün ve şerefli yüceliğin sahibidir.

فَعَّالٌ لِمَا يُرِيدُ ﴿١٦﴾

16- "Dilediğini mutlaka yapandır."

Çünkü O, kayıtsız şartsız maliktir. Bu nedenle O'nun üzerinde hiçbir kısıtlılık ve yasaklama yoktur.

هَلْ اَتٰيكَ حَدِيثُ الْجُنُودِ ﴿١٧﴾

17- "Orduların haberi sana geldi mi?"

Bunlar, kâfir topluluklardır.

فِرْعَوْنَ وَثَمُودَ ﴿١٨﴾

18- "Firavun ve Semûd'un haberi."

Bunların durumları daha önce geçti.

بَلِ الَّذِينَ كَفَرُوا فِي تَكْذِيبٍ ﴿١٩﴾

19- "Hayır, kâfir olanlar hala yalanlamaktadırlar."

( الَّذِينَ كَفَرُوا ) *"Kâfir olanlar."*

Yani Mekke müşrikleri.

( فِي تَكْذِيبٍ ) *"Hâlâ yalanlamaktadırlar."*

Öldükten sonra dirilmeyi ve haşre gönderilmeyi yalanlarlar.

وَاللّٰهُ مِنْ وَرَآئِهِمْ مُحِيطٌ ﴿٢٠﴾ بَلْ هُوَ قُرْاٰنٌ مَجِيدٌ ﴿٢١﴾ فِي لَوْحٍ مَحْفُوظٍ ﴿٢٢﴾

20, 21, 22- "Oysa Allah, onları arkalarından kuşatmıştır. Doğrusu o, Levh-i Mahfûz'da bulunan yüce bir Kur'ân'dır."

Kur'ân burada yazılıdır. Bu arada tefsirdeki bilgiye göre Levh-i Mahfûz, beyaz bir inciden yaratılmış olup iki kapağının genişliği gök ve yerin arası kadar olan kırmızı bir yakuttandır. Üst tarafı Arşa bağlı, alt tarafı ise değerli bir meleğin kucağındadır.

Bu arada Kur'ân Levh'te korunduğu gibi aynı zamanda müminlerin kalplerinde de korunmaktadır. Allah şöyle buyurmuştur:

( بَلْ هُوَ اٰيَاتٌ بَيِّنَاتٌ فِي صُدُورِ الَّذِينَ اُوتُوا الْعِلْمَ ) *"Doğrusu o, ilim verilenlerin kalplerindeki apaçık ayetlerdir."* (Ankebût, 29/49)

Bu itibarla Kur'ân, Levh'te yazılmış ve müminlerin kalplerinde korunmuştur.

سورة الطَّارِقِ

# TÂRIK SÛRESİ

(Târık Sûresi 17 âyettir. Mekke'de inmiştir. Sûre adını ilk âyetteki, "Târık (ilk doğan yıldız)"tan almıştır. Sûrede genel olarak; parlayan yıldız, insanın yaratılışı ve aczi, Kur'an'ın ciddi bir mesaj oluşu konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", bir kulu aziz kılmak istediği zaman onu irfanına muvaffak kılan, sonra onu ihsanıyla tezyin eden, sonra lütfuyla onu arındırmak suretiyle isyanından koruyan ve bütün hallerinde durumunu güzelce sevk ve idare eden, sonra iman üzere canını alan, sonra onu cennetlerinde barındıran, hoşnutluğuyla kendisine ikramda bulunan, sonra da O'nu görmesi ve müşahede etmesiyle üzerindeki nimetini kemale erdiren Aziz'in adıdır.

وَالسَّمَٓاءِ وَالطَّارِقِ ﴿١﴾

1- "Göğe ve târıka andolsun."

Allah, göğe ve gece çıkan yıldıza yemin etmiştir.

وَمَٓا اَدْرٰيكَ مَا الطَّارِقُ ﴿٢﴾

2- "Târıkın ne olduğunu sen ne bileceksin?"

Ayetin istifham üslubundan maksat, bu yıldızın durumuna vurgu yapmaktır.

اَلنَّجْمُ الثَّاقِبُ ﴿٣﴾

3- "O, delen yıldızdır."

O, aydınlatıcı yüksek yıldızdır. Bir görüşe bu, şeytanlara atılan yıldızdır.

Bir yoruma göre de o, tevhide delalet eden marifet yıldızları olup basiret sahipleri onların nuruyla aydınlanır ve hidayete erer.

اِنْ كُلُّ نَفْسٍ لَمَّا عَلَيْهَا حَافِظٌ ﴿٤﴾

4- "Hiçbir kimse yoktur ki üzerinde koruyucu bulunmasın."

Hiçbir kimse yoktur ki üzerinde amelini, rızkını ve ecelini kayda geçirip kendisini sürekli uyanık olmaya ve güzelce korunmaya sevk eden meleklerden bir koruyucu bulunmasın.

فَلْيَنْظُرِ الْاِنْسَانُ مِمَّ خُلِقَ ﴿٥﴾ خُلِقَ مِنْ مَاءٍ دَافِقٍ ﴿٦﴾ يَخْرُجُ مِنْ
بَيْنِ الصُّلْبِ وَالتَّرَآئِبِ ﴿٧﴾

5, 6, 7- "Öyleyse insan neden yaratıldığına bir baksın. Fışkırıp çıkan bir sudan yaratıldı. Bu su, bel ile kaburga kemikleri arasından çıkar."

Bu su, babanın beli ile annenin kaburga kemikleri arasından çıkar. Allah bu yolla insanı O'nun kudretinin, ilminin ve iradesinin kemalini bilmesi için fikir ve akıl yürütmeye teşvik etmektedir.

اِنَّهُ عَلٰى رَجْعِهِ لَقَادِرٌ ﴿٨﴾

8- "Şüphesiz Allah onu, öldükten sonra tekrar diriltmeye kadirdir."

Şüphesiz Allah, onu diriltmeye ve ikinci kez yaratmaya kadirdir. Çünkü O, noksansız kudrete sahiptir. Kaldı ki bir şeye kadir olmak,

benzerine de kadir olmayı gerektirir. Zaten tekrar da baştan yaratmak gibidir.

يَوْمَ تُبْلَى السَّرَٓائِرُ ﴿٩﴾

9- "Sırların sınandığı gün."

Yani kalplerin imtihan edildiği gün.

فَمَا لَهُ مِنْ قُوَّةٍ وَلَا نَاصِرٍ ﴿١٠﴾

10- "Artık insan için ne bir kuvvet vardır ne de bir yardımcı."

Yani o gün bu insan için üzerinden Allah'ın hükmünü savacak bir yardımcı yoktur.

وَالسَّمَٓاءِ ذَاتِ الرَّجْعِ ﴿١١﴾

11- "Yağmurlu göğe andolsun."

( رَجْع ) lafzı yağmur demektir.

وَالْاَرْضِ ذَاتِ الصَّدْعِ ﴿١٢﴾

12- "Yarılan yere andolsun."

( صَدْع ) lafzı, biten ekin ve ağaçtan dolayı yarılmak demektir.

اِنَّهُ لَقَوْلٌ فَصْلٌ ﴿١٣﴾

13- "Şüphesiz o Kur'ân, hak ile batılı ayırt eden bir sözdür."

Yani şüphesiz Kur'ân, kesin hüküm ifade eden bir sözdür.

وَمَا هُوَ بِالْهَزْلِ ﴿١٤﴾

14- "O, bir şaka değildir."

Şaka ciddinin zıddıdır. Bu itibarla Kur'ân, bâtıl ve oyun değildir.

اِنَّهُمْ يَكٖيدُونَ كَيْدًا ﴿١٥﴾

15- "Şüphesiz onlar bir tuzak kurarlar."

Yani onlar bir hile tezgâhlarlar.

وَاَكٖيدُ كَيْدًا ﴿١٦﴾

16- "Ben de bir tuzak kurarım."

Onlar bir hile tezgâhlarlar. Oysa biz, işi sağlam ve yaratmayı kesin yaparız. Onları da tuzaklarına karşılık kendileriyle yaptığımız istidrac ve mühlet verme şeklindeki muameleyle cezalandırırız.

فَمَهِّلِ الْكَافِرٖينَ اَمْهِلْهُمْ رُوَيْدًا ﴿١٧﴾

17- "Artık kâfirlere mühlet ver, onlara biraz zaman tanı."

Yani onlara biraz süre tanı ve mühlet ver.

سورة الْاَعْلي

# A'LÂ SÛRESİ

(A'lâ Sûresi 19 âyettir. Mekke'de ilk inen sûrelerdendir. Sûrede genel olarak; Allah'ı tesbih, yerin yaratılışı, kimi yer nimetleri, Hz. Peygamber'in vahyi unutmaması, öğüt verme, öğüt almayanın sonu, zekât verip namaz kılanın ödülü, İbrahim ve Mûsâ (a.s)'ın sahifeleri konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", kast edenin bulduğu, yardım dileyenin hamd ettiği, arayanın tanıdığı ve kendisini tanıyana lütufla muamele eden Aziz'in adıdır. Böylece kul, lütfunu bulduğu zaman O'na alışır. O'na alıştığı zaman ise kendisine muhalefet etmek istemez.

سَبِّحِ اسْمَ رَبِّكَ الْاَعْلٰى ﴿١﴾

1- "Yüce Rabbinin adını tespih et."

Yani isimlerini bilmek suretiyle Rabbini tespih et. Sırrınla O'nun yüceliğinin denizlerinde yüz. Yüceliğinin mücevherlerinden, kendileriyle O'nun övgü ve senasının gerdanlığını süsleyeceğin şeyler çıkart.

اَلَّذ۪ي خَلَقَ فَسَوّٰى ﴿٢﴾

2- "O, yaratıp şekillendiren, ahenk veren ve düzene koyandır."

Allah, her canlıyı yaratıp parçalarını düzene koymuş ve organlarını kendisine özgü kıldığı şaşırtıcı düzen ve harika yapı üzere bir araya getirmiştir.

وَالَّذ۪ي قَدَّرَ فَهَدٰى ۝٣

3- "O, ölçüyle yapıp yol gösterendir."

Yani Allah, yarattığı şeyi ölçüye tabi tutarak onu irade buyurduğu ölçüye göre yapmıştır. Bir de her canlıya kendisi için faydalı olan şeylerin yolunu göstermiştir. Böylece o canlı, ilhamın hükmüyle, işine yarayan şeyi alır, kendisine zarar vereni ise terk eder.

Bir yoruma göre de Allah, gafillerin kalplerini dünyaya yönlendirmiş, onlar da dünyayı mamur kılmışlardır. Abidlerin kalplerini ahireti aramaya yönlendirmiş, onlar da onu tercih etmişlerdir. Zahidlerin kalplerini dünyanın fani oluşuna yönlendirmiş, onlar da onu reddetmişlerdir. Alimlerin kalplerini de ayetlerini düşünmeye ve yaratıkları hakkında akıl yürütmeye yönlendirmiş, onlar da o ayetleri tanıyıp onlara bağlı kalmışlardır. Müridlerin kalplerini ise vasfının izzetine yönlendirmiş, onlar da onu tercih etmiş ve bütün çabalarıyla aramışlardır. Ariflerin kalplerini de sıfatının kutsiyetine yönlendirmiş, onlar da onu gözetmiş, sonra da görmüşlerdir. Tevhid ehlini büyüklüğünün eşsizliğindeki hükümranlığının yüceliğine yönlendirmiş, onlar da O'nun dışındaki her şeyi terk etmiş, her türlü alışkanlıklarının dışına çıkmış ve nihayet O'nu amaçlamışlardır. Böylece onlar önce burhan sınırının, sonra beyan sınırının, sonra görür gibi oldukları her şeyin üstüne çıkınca, Allah'ın aziz ve her türlü ayrılık ve vuslatın ötesinde olduğunu anladılar. Böylece acizlik noktasına dönüp orada karar kıldılar.

وَالَّذ۪ٓي اَخْرَجَ الْمَرْعٰى ۝٤

4- "O, yeşil bitkiyi çıkarandır."

( مَرْعى ) bitki demektir.

فَجَعَلَهُ غُثَٓاءً اَحْوٰى ﴿٥﴾

5- "Sonra da onu siyah bir sel artığına çevirendir."

Allah, o bitkiyi sel artığı gibi ufak çöpler haline getirmiştir. ( غُثاء ) selin sürüklediği çöplerdir. ( أحْوى ) lafzı da siyah demektir.

سَنُقْرِئُكَ فَلَا تَنْسٰىٓ ﴿٦﴾

6- "Sana Kur'ân'ı okutacağız ve sen onu unutmayacaksın."

Ey Muhammed! Kur'ân'ı ezber yoluyla senin kalbinde toplayacağız. O kadar ki artık unutmayacaksın. Çünkü onu hafızanda biz tutacağız.

اِلَّا مَا شَٓاءَ اللّٰهُ اِنَّهُ يَعْلَمُ الْجَهْرَ وَمَا يَخْفٰى ﴿٧﴾

7- "Ancak Allah'ın dilediği hariç. Şüphesiz O, açık olanı da bilir, gizli olanı da."

Bu, teklif kapsamına girmeyen hususlardan olup sen onu tebliğden önce unutursun ve yerine getirilmesi sana vacip olmaz. Kaldı ki Allah (c.c.) gizliyi de açığı da bilir.

وَنُيَسِّرُكَ لِلْيُسْرٰى ﴿٨﴾

8- "Biz, seni en kolay olana kolayca ileteceğiz."

فَذَكِّرْ اِنْ نَفَعَتِ الذِّكْرٰى ﴿٩﴾

9- "O halde eğer öğüt fayda verirse, öğüt ver."

Öğüt ister istemez fayda verir. Fakat o, Allah'ın ondan öğüt almaya muvaffak kıldığı kimseye fayda verir. Durumundan küfür ve yüz çevirme anlaşılan kimse ise tıpkı şu dizelerde söylendiği gibidir:

*Dünya ehli kimsenin gözünden yararlanacağı ne?*
*Ona göre aydınlıklarla karanlıklar aynı olunca*

سَيَذَّكَّرُ مَنْ يَخْشٰى ﴿١٠﴾

10- "Allah'tan korkan, öğüt alacaktır."

Allah'tan ve O'nun azabından korkan kimse öğüt alacaktır.

وَيَتَجَنَّبُهَا الْاَشْقٰى ﴿١١﴾ اَلَّذ۪ي يَصْلَى النَّارَ الْكُبْرٰى ﴿١٢﴾ ثُمَّ لَا يَمُوتُ ف۪يهَا وَلَا يَحْيٰى ﴿١٣﴾

11, 12, 13- "En büyük ateşe girecek olan en bedbaht kimse ise öğüt almaktan kaçınır. Sonra orada ne ölür ne de yaşar."

Yani en büyük ateşe girecek olan en mutsuz kimse öğüt almaktan kaçınır ve o ateşte ne kendisini rahatlatacak şekilde ölür ne de tat alacağı bir hayat yaşar.

قَدْ اَفْلَحَ مَنْ تَزَكّٰى ﴿١٤﴾

14- "Arınan mutlaka kurtuluşa erer."

Günahlardan, kusurlardan ve halkı görmekten temizlenip zekâtı ödeyen kimse kurtuluşu, amaca ulaşmayı ve aradığını elde etmeyi bulur.

وَذَكَرَ اسْمَ رَبِّه۪ فَصَلّٰى ﴿١٥﴾

15- "Ve Rabbinin adını anıp namaz kılan kimse."

Namazında Rabbinin ismini anar. Bir yoruma göre de O'nu vahdaniyetle anar ve kendisi için namaz kılar.

بَلْ تُؤْثِرُونَ الْحَيٰوةَ الدُّنْيَا ﴿١٦﴾

16- "Fakat siz dünya hayatını tercih ediyorsunuz."

Siz ona meylediyorsunuz. Böylece ondan alacağınız payları Allah'ın haklarının önüne geçiriyorsunuz.

وَالْاٰخِرَةُ خَيْرٌ وَاَبْقٰى ﴿١٧﴾

17- "Oysa ahiret daha hayırlıdır ve süreklidir."

Oysa müminler için ahiret dünyadan daha hayırlı, dünyayı arayanlar için de daha kalıcıdır.

اِنَّ هٰذَا لَفِي الصُّحُفِ الْاُولٰى ﴿١٨﴾ صُحُفِ اِبْرٰهِيمَ وَمُوسٰى ﴿١٩﴾

18, 19- "Şüphesiz bu, ilk sayfalarda, İbrahim ve Mûsâ'nın sayfalarında da vardır."

Şüphesiz bu öğüt daha önceki sayfalarda vardır. Aynı şekilde Hz. İbrahim, Hz. Mûsâ ve diğer peygamberlerin sayfalarında da vardır. Çünkü tevhid, vaat ve uyarı, dinlerin değişmesiyle değişmez.

سورة الْغَاشِيَةِ

# ĞÂŞİYE SÛRESİ

(Gâşiye Sûresi 26 âyettir. Mekke'de inen ilk sûrelerdendir. Adını ilk âyetteki "Gâşiye (Her şeyi kuşatan)"dan almıştır. Sûrede; kıyamet günü kederli yüzlerin azabı, sevinçli yüzlerin ödülü, develerin, dağ ve yerin yaratılışı, öğüt verme konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir sözdür ki kalbinde Allah'a dair irfan olduğu halde, onu işiten kimsenin kalbinin nurları parlar, çeşitli kederleri dağılır, Allah'ın cemali ile ilgili sevgi duyguları kat kat artar ve celali konusunda aklının parıltıları şaşkına döner.

O, öyle bir sözdür ki kalbinde Allah'a iman olduğu halde onu bilen kimse yüreğinin içinden onu sever, onu aramada uykuyu bırakır ve onun için her türlü kaygıyı ve muradı terk eder.

هَلْ اَتٰيكَ حَد۪يثُ الْغَاشِيَةِ ﴿١﴾

1- "Her şeyi kaplayan felaketin haberi sana geldi mi?"

( غاشِية ) kapsamlı olay demek olup burada yaratıkları kapsayan ve kâfirlerin yüzlerini kaplayan kıyamet demektir.

وُجُوهٌ يَوْمَئِذٍ خَاشِعَةٌ ﴿٢﴾ عَامِلَةٌ نَاصِبَةٌ ﴿٣﴾ تَصْلٰى نَارًا حَامِيَةً ﴿٤﴾

2, 3, 4- "O gün birtakım yüzler vardır ki zillete bürünmüşlerdir. Çalışmış, yorulmuşlardır. Kızgın ateşe girerler."

Kıyamet geldiği zaman kimi yüzler zelildir. Çalışıp yorgun düşmüşlerdir. Tefsirde yer aldığına göre onlar yüz üstü sürüklenirler.

( تَصْلٰى نَارًا حَامِيَةً ) *"Kızgın ateşe girerler."*

Çok sıcak bir ateşte kalırlar.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- O yüzler dünyada günah işleyerek çalışmışlar, ahirette de azapla yorulacaklardır.

- Onlar dünyada çalışıp yorulmuş ancak tıpkı rahiplerin çalışması gibi, bunu ihlassız yapmışlardır. Bu arada münafıkların çalışması da bu minval üzeredir.

تُسْقٰى مِنْ عَيْنٍ اٰنِيَةٍ ﴿٥﴾

5- "Son derece kızgın bir kaynaktan içirilirler."

Sıcaklığın son sınırına varmış.

لَيْسَ لَهُمْ طَعَامٌ اِلَّا مِنْ ضَرِيعٍ ﴿٦﴾ لَا يُسْمِنُ وَلَا يُغْنٖي مِنْ جُوعٍ ﴿٧﴾

6, 7- "Onlara acı ve kötü kokulu bir dikenli bitkiden başka yiyecek yoktur."

( ضَرِيع ), Hicaz'da yetişen dikenli bir bitkidir. Bu, hayvanların yemediği zehirli bir bitkidir. Onlar bunu cehennemde yedikleri zaman yutmada zorlanırlar. Bunun üzerine onlara zakkûm içirilir.

Bir de ruhlar keşfe mazhar olmaktan, sırlar müşahedelerin nurlarından, kalp de itikatlar konusunda ihlas ve doğruluktan mahrum iken, bedenlerin bugün ibadetlerin şekliyle vasıflanması hayırlı bir

sonuç ve hiçbir fayda vermez. Ayette söylendiği gibi bedenler sadece çalışıp yorulmuş olur.

وُجُوهٌ يَوْمَئِذٍ نَاعِمَةٌ ﴿٨﴾

8- “O gün birtakım yüzler vardır ki nimet içinde mutludurlar.”

Yani nimet içindedirler; nimet ve tazelik sahibidirler.

لِسَعْيِهَا رَاضِيَةٌ ﴿٩﴾

9- “Yaptıklarından dolayı hoşnutturlar.”

Çabalarına karşılık sevap kazandıklarını ve amellerinin kabul edildiğini gördükleri zaman hoşnut olurlar.

فِي جَنَّةٍ عَالِيَةٍ ﴿١٠﴾

10- “Yüksek bir cennettedirler.”

Bu cennet derecesi, seviyesi ve şerefi bakımından yüksektir. Onlar bedenleriyle dereceleri içinde ancak ruhlarıyla Allah ile paha biçilmez münacatları içindedirler.

لَا تَسْمَعُ فِيهَا لَاغِيَةً ﴿١١﴾

11- “Orada hiçbir boş söz işitmezler.”

Çünkü onlar Allah ile işittiklerinden, orada hiçbir boş söz yoktur.

Onlardan kimileri Allah ile işitir, kimileri Allah için işitir, kimileri de Allah’tan işitir. Hadiste de şöyle buyrulmuştur:

*“Ben, kulumun kulağı ve gözü olurum. Böylece o, benimle işitir ve benimle görür.”*

فِيهَا عَيْنٌ جَارِيَةٌ ﴿١٢﴾

12- “Orada akan bir pınar vardır.”

Burada pınarlar kast edilmiştir. Çünkü pınar anlamındaki ( عَيْن ) lafzı ismi cinstir. Orada akan pınarlar çoktur ve değişiktir.

Bir yoruma göre de o akan pınarlar yarın, ağlamaktan bugün yaş akan gözlere sahip bulunan kimse içindir. Bir de yarın onların huzuruna varmanın hükmüyle, Allah'a bakan gözleri olacaktır.

فِيهَا سُرُرٌ مَرْفُوعَةٌ ﴿١٣﴾ وَاَكْوَابٌ مَوْضُوعَةٌ ﴿١٤﴾ وَنَمَارِقُ مَصْفُوفَةٌ
وَزَرَابِيُّ مَبْثُوثَةٌ ﴿١٥﴾ ﴿١٦﴾

13, 14, 15, 16- "Orada yüksek tahtlar, konulmuş kadehler, sıra sıra yastıklar, serilmiş gösterişli yaygılar vardır."

Tefsirde yer aldığına göre, ( نَمارِقُ مَصْفُوفَة ) serilen yaygılardır. Yine tefsirde yer aldığına göre ( زَرابِيُّ مَبْثُوثَة ) de, serpiştirilmiş sergilerdir. Allah, burada onların anlama kapasitelerine göre hitap etmiştir.

اَفَلَا يَنْظُرُونَ اِلَى الْاِبِلِ كَيْفَ خُلِقَتْ ﴿١٧﴾

17- "Deveye bakmıyorlar mı nasıl yaratılmıştır?"

Allah, sağlam yapılı yüksek tahtların vasfını anlatınca onlar: "Müminler, o tahtların üstüne nasıl çıkacaklardır?" dediler. Bunun üzerine Allah:( اَفَلَا يَنْظُرُونَ اِلَى الْاِبِلِ كَيْفَ خُلِقَتْ ) "*Deveye bakmıyorlar mı, nasıl yaratılmıştır?*" buyurdu. Onlar, develere yük yükledikleri veya bindikleri zaman nasıl oluyorsa, aynı şekilde o tahtlar da veli onların üstüne çıksın diye alçalır.

Ayrıca bu ayetler, dikkat çekmek ve yaratıkları Allah'ın (c.c.) kudretinin kemaline delil göstermek üzere indirilmiştir. Zira o topluluk gökyüzünden, yeryüzünden, dağlardan ve develerden başka bir şey görmeyen çöl sakini kimselerdi.

Öte yandan devede, Allah'ın (c.c.) kudretinin kemalini ve inamını gösteren özellikler vardır. Bunların bazıları şöyledir: Yük yüklemek ve binmek suretiyle sırtlarından, sonra yavrularından,

sonra etlerinden, sütlerinden ve tüylerinden yararlanmaları, sonra kolaylıkla emirlerine amade kılınmalarıdır. O kadar ki çocuk bile yularından tutup onu peşinden sürükleyebilir. Bir de deve uzun yolculuklarda susuzluğa karşı dayanabilmekte ve sırtında çok miktarda yük taşıyabilmektedir. Sonra kin tuttuğu zaman inatçılığı, yorulduğunda onu güdenin sesinden huzur duyup onunla dinlenmesi, sonra bunlara paralel olarak delil olarak dile getirilebilecek itaatkârlığı da vardır.

وَاِلَى السَّمَآءِ كَيْفَ رُفِعَتْ ﴿١٨﴾

18- "Göğe bakmıyorlar mı nasıl yükseltilmiştir!"

وَاِلَى الْجِبَالِ كَيْفَ نُصِبَتْ ﴿١٩﴾

19- "Dağlara bakmıyorlar mı nasıl dikilmişlerdir!"

وَاِلَى الْاَرْضِ كَيْفَ سُطِحَتْ ﴿٢٠﴾

20- "Yeryüzüne bakmıyorlar mı nasıl yayılmıştır."

فَذَكِّرْ اِنَّمَآ اَنْتَ مُذَكِّرٌ ﴿٢١﴾ لَسْتَ عَلَيْهِمْ بِمُصَيْطِرٍ ﴿٢٢﴾

21, 22- "Artık sen öğüt ver. Sen, ancak bir öğüt vericisin. Sen, onlar üzerinde bir zorba değilsin."

Sen onların başına musallat edilmiş değilsin. O halde Ey Muhammed! Sana emrettiklerimizle öğüt ver. Çünkü biz sana bunu emrettik.

اِلَّا مَنْ تَوَلّٰى وَكَفَرَ ﴿٢٣﴾ فَيُعَذِّبُهُ اللّٰهُ الْعَذَابَ الْاَكْبَرَ ﴿٢٤﴾

23, 24- "Ancak kim yüz çevirir, inkâr ederse, Allah onu en büyük azaba uğratır."

Ancak kim imandan yüz çevirir ve kâfir olursa, Allah onu ebedî olarak cehennemde kalmakla cezalandırır.

اِنَّ اِلَيْنَٓا اِيَابَهُمْ ﴿٢٥﴾ ثُمَّ اِنَّ عَلَيْنَا حِسَابَهُمْ ﴿٢٦﴾

25, 26- "Şüphesiz onların dönüşü bizedir. Sonra onların sorguya çekilmesi de sadece bize aittir."

Şüphesiz dönüşleri sadece bizedir ve biz, iyiliğe ve kötülüğe karşılık onlara mukabelede bulunuruz.

سورة الْفَجْرِ

# FECR SÛRESİ

(Fecr Sûresi 30 âyettir. Mekke'de inen ilk sûrelerdendir. Adını ilk âyetteki "Fecr (Tan yerinin ağarması)"dan almıştır. Sûrede; kimi şeylere ant, geçmiş kimi kavimlerin başına gelenler, malın insanı şımartması, kıyametin kopması, pişmanlık, Allah'ın azabı, eğitilmiş nefsin ödülü konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", bir fakirin kalbine hâkim olup onu tedirgin etmeyen, bir aşk tutkununun sırrına nüfuz edip onu dağıtmayan bir sevenin ruhunu kuşatıp ona merhamet etmeyen bir kelimedir. O, kalplere galebe çalan bir kelimedir fakat her kalbe değil. O, her aklın eremediği bir kelimedir. O, abidlerin onu okumasıyla yetinir. Fakat o, sevenlerin ancak onun yolunda ruhlarını feda etmeleriyle hoşnut olur.

وَالْفَجْرِ ﴿١﴾ وَلَيَالٍ عَشْرٍ ﴿٢﴾

1, 2 - "Tan yerinin ağarmasına ve on geceye andolsun."

( فَجْر ) lafzı gün ağarması demektir. Bu da biri uzun, diğeri de kısa olmak üzere iki türlüdür. Tefsirde yer aldığına göre bu, bütün yılın başlangıcı olduğu için Muharrem ayının ilk tan yeri ağarmasıdır. Bir görüşe göre de o, Zilhicce ayının tan yeri ağarmasıdır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bu, içinden su fışkıran kayalardır.

- Bu, ariflerin kalplerinin tan yeri ağarmasıdır. Bu ağarma, onlar ilmin sınırlarının üstüne çıkıp marifetlerinin günü ağardığı ve böylece kalplerinde tecelli eden beyanla burhan aramanın karanlığına muhtaç olmadıkları zaman gerçekleşir.

- Allah, tan yerinin ağarmasına yemin etmiştir. Çünkü o, velilerin güne başlarken ibadet ettikleri vakittir.

( وَلَيَالٍ عَشْرٍ ) *"On geceye andolsun."*

Bir görüşe göre bu geceler, Zilhicce'nin ilk on gecesidir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Bunlar, Muharrem'in ilk on gecesidir. Çünkü bu günlerin sonuncusu aşure günüdür.

- Bunlar, Allah'ın, Hz. Mûsâ'nın kıssasında: ( وَاَتْمَمْنَاهَا بِعَشْرٍ ) *"Biz, o süreye on gece daha kattık"* (A'râf, 7/142) sözüyle anlattığı mikattaki süresini tamamlayan on gecedir.

وَالشَّفْعِ وَالْوَتْرِ ﴿٣﴾

3- "Çift ve teke andolsun."

Tefsirde yer aldığına göre çift kurban bayramı günü, tek de Arefe günüdür.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Hz. Âdem tek idi, eşi Hz. Havva ile çift yapıldı. Bir hadis rivayetinde yer aldığına göre çift ve tekten maksat namazlar olup bunlardan akşam namazı gibi bazısı tek, sabah namazı gibi bazısı da çifttir.

- Çift sayıların çift olanları, tek de sayıların tek olanlarıdır.

- Çift yaratıkların ilim ve cehalet, güç ve güçsüzlük ile hayat ve ölüm gibi karşıt vasıflarıdır. Tek ise Allah'ın sıfatlarının karşıtsız ve tek olmasıdır. O'nun ilmi cehaletsiz, kudreti acziyetsiz, hayatı da ölümsüzdür.

- Çift irade ve niyet, tek de himmettir. Zira himmet, mahluk ile yetinmemekte ancak Allah'a da ulaşamamaktadır. Çünkü Allah ulaşmaktan ve ayrılıktan münezzehtir. İşte bu nedenle himmet garip -tek başına- kalmaktadır.

- Çift zahid ve abiddir. Çünkü her birisinin bir benzeri ve emsali vardır. Tek de müriddir. Bu itibarla mürid, şu dizelerde söylendiği gibidir:

*Dostlardan ayrı ve tek başınadır her yerde*
*Azalır yardımcılar, istek büyüdüğü zaman*

وَالَّيْلِ اِذَا يَسْرِ ﴿٤﴾

4- "Geçtiği zaman geceye andolsun."

هَلْ فِي ذٰلِكَ قَسَمٌ لِذِي حِجْرٍ ﴿٥﴾

5- "Bunlarda akıl sahibi için bir yemin unsuru vardır."

( حِجْرٍ ) lafzı akıl demektir. Yeminin cevabı ise: ( اِنَّ رَبَّكَ لَبِالْمِرْصَادِ ) "*Şüphesiz Rabbin gözetlemededir*" (Fecr, 89/14) ayetidir.

اَلَمْ تَرَ كَيْفَ فَعَلَ رَبُّكَ بِعَادٍ ﴿٦﴾ اِرَمَ ذَاتِ الْعِمَادِ ﴿٧﴾ اَلَّتِي لَمْ يُخْلَقْ مِثْلُهَا فِي الْبِلَادِ ﴿٨﴾ وَثَمُودَ الَّذِينَ جَابُوا الصَّخْرَ بِالْوَادِ ﴿٩﴾ وَفِرْعَوْنَ ذِي الْاَوْتَادِ ﴿١٠﴾

6, 7, 8, 9, 10- "Rabbinin Âd kavmine, ülkeler içinde benzeri kurulmamış olan, sütunları bulunan İrem şehrine, vadide kayaları oyan Semûd kavmine, kazıklar sahibi Firavun'a ne yaptığını görmedin mi?"

اَلَّذِينَ طَغَوْا فِي الْبِلَادِ ﴿١١﴾ فَاَكْثَرُوا فِيهَا الْفَسَادَ ﴿١٢﴾

11, 12- "Bunlar şehirlerde azgınlık eden ve oralarda pek çok bozgunluk çıkaran kimselerdi."

Allah, o öncekilerin kıssalarını şu ayete kadar anlatmıştır:

فَصَبَّ عَلَيْهِمْ رَبُّكَ سَوْطَ عَذَابٍ ﴿١٣﴾

13- "Bu yüzden Rabbin, onların üzerine azap kamçısı yağdırdı."

Azap kamçısı, azabın şiddeti demektir.

اِنَّ رَبَّكَ لَبِالْمِرْصَادِ ﴿١٤﴾

14- "Şüphesiz Rabbin gözetlemededir."

Hiçbir şey O'ndan kaçamaz.

فَاَمَّا الْاِنْسَانُ اِذَا مَا ابْتَلٰيهُ رَبُّهُ فَاَكْرَمَهُ وَنَعَّمَهُ فَيَقُولُ رَبّٖٓي اَكْرَمَنِ ﴿١٥﴾ وَاَمَّٓا اِذَا مَا ابْتَلٰيهُ فَقَدَرَ عَلَيْهِ رِزْقَهُ فَيَقُولُ رَبّٖٓي اَهَانَنِ ﴿١٦﴾

15, 16- "İnsan ise, Rabbi onu deneyip de kendisine ikramda bulunduğunda, ona bol bol nimetler verdiğinde: 'Rabbim bana ikram etti' der. Ama onu sınayıp rızkını daraltınca da: 'Rabbim beni aşağıladı' der."

( فَيَقُولُ رَبّٖٓي اَكْرَمَنِ ) "*Rabbim bana ikram etti*" der.

Yani Allah'a şükreder.

( فَيَقُولُ رَبّٖٓي اَهَانَنِ ) "*Rabbim beni aşağıladı*" der.

Yani beni zelil kıldı. Hayır, asla öyle değil. Zelil kılmak, fakirlikle değildir. O, ancak günahtan ötürü sahipsiz bırakmakladır.

كَلَّا بَلْ لَا تُكْرِمُونَ الْيَتٖيمَ ﴿١٧﴾

17- "Hayır, hayır! Yetime değer vermiyorsunuz."

Yani siz, bu kötü hasletlerden dolayı aşağılanmayı hak ediyorsunuz. Zira siz yetime değer vermiyorsunuz.

وَلَا تَحَٓاضُّونَ عَلٰى طَعَامِ الْمِسْكٖينِ ﴿١٨﴾
وَتَأْكُلُونَ التُّرَاثَ اَكْلًا لَمًّا ﴿١٩﴾

18, 19- "Yoksulu yedirmek konusunda birbirinizi teşvik etmiyorsunuz. Haram helal demeden mirası şiddetle yiyorsunuz."

"لَمًّا" lafzı şiddetle demektir.

وَتُحِبُّونَ الْمَالَ حُبًّا جَمًّا ﴿٢٠﴾

20- “Malı da pek çok seviyorsunuz.”

( جَمّاً ) lafzı çok demektir.

كَلَّٓا اِذَا دُكَّتِ الْاَرْضُ دَكًّا دَكًّا ﴿٢١﴾

21- “Hayır! Yeryüzü parça parça olup dağıldığı zaman.”

Yani kıyamet koptuğu zaman.

وَجَٓاءَ رَبُّكَ وَالْمَلَكُ صَفًّا صَفًّا ﴿٢٢﴾

22- “Rabbin ve saf saf dizilmiş olarak melekler geldiği zaman.”

Yani melekler Rabbinin emrini getirdiği zaman.

وَجِاي۪ٓءَ يَوْمَئِذٍ بِجَهَنَّمَ يَوْمَئِذٍ يَتَذَكَّرُ الْاِنْسَانُ وَاَنّٰى لَهُ الذِّكْرٰى ﴿٢٣﴾

23- “O gün cehennem getirildiği zaman. İşte o gün insan hatırlar. Fakat bu hatırlamanın ona nasıl faydası olacak?”

Bir yoruma göre cehennem yetmiş bin dizginle yürütülür.

İşte o gün insan hatırlar ancak ne hatırlama ona fayda verir ne de özrü kabul edilir.

يَقُولُ يَا لَيْتَن۪ي قَدَّمْتُ لِحَيَات۪ي ﴿٢٤﴾

24- “İnsan şöyle der: ‘Keşke bu hayatım için önceden bir şey yapsaydım.’”

Yani keşke Rabbime itaat edip kendimi düşünseydim.

فَيَوْمَئِذٍ لَا يُعَذِّبُ عَذَابَهُٓ اَحَدٌ ﴿٢٥﴾

25- “Artık o gün Allah’ın vereceği azabı kimse veremez.”

Yani dünyada hiç kimse, Allah'ın o gün vereceği azap gibi bir azap veremez. ( ذال ) harfinin esresiyle ( يُعَذِّبُ ) *"yu'azzibu"* okunduğu zaman ayetin anlamı budur. Aynı harf üstün ile ( يُعَذَّبُ ) *"yu'azzebu"* şeklinde okundu zaman ise ayetin anlamı şöyle olur:

*"Hiç kimseye, bu kâfire çektirilen azap gibi bir azap çektirilmez."*

وَلَا يُوثِقُ وَثَاقَهُٓ اَحَدٌ ﴿٢٦﴾

26- "O'nun vuracağı bağı kimse vuramaz."

يَآ اَيَّتُهَا النَّفْسُ الْمُطْمَئِنَّةُ ﴿٢٧﴾

27- "Ey huzur içinde olan nefis!"

Ey nefisten yana huzur içinde olan ruh!

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Marifetle huzur bulmuş olan nefis.
- Allah'ın zikriyle huzur bulmuş olan nefis.
- Cennet müjdesiyle huzur bulmuş olan nefis.
- Mutmain nefis, sükûnet içindeki ruh demektir.

اِرْجِعِيٓ اِلٰى رَبِّكِ رَاضِيَةً مَرْضِيَّةً ﴿٢٨﴾

28- "Sen O'ndan razı, O da senden razı olarak Rabbine dön!"

Sen Allah'tan hoşnut olmuş ve Allah tarafından hoşnut olunmuş olarak Rabbine dön.

فَادْخُلِي فِي عِبَادِي ﴿٢٩﴾ وَادْخُلِي جَنَّتِي ﴿٣٠﴾

29, 30- "Gir kullarımın arasına ve gir cennetime."

Yani salih kullarım arasında cennete gir.

سورة الْبَلَدِ

# BELED SÛRESİ

(Beled Sûresi 20 âyettir. Mekke'de inen ilk sûrelerdendir. Adını ilk âyetteki "Beled (Mekke)"den almıştır. Sûrede; insanın böbürlenmesi, ona verilen duyu organları, sarp yokuş yani kimi nefse ve mala ilişkin fedakârlıklar, sağın ve solun adamları ve sonları konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", ezelî bir celalden ve sermedi bir cemalden haber veren bir sözdür. Zevali olmayan bir celalden, intikali olmayan bir cemalden, başkalarla ve benzerlerle olmayan bir celalden, suret ve örnekle olmayan bir cemalden, karşı konulmazlığına olan liyakatinden ibaret bir celalden ve melekutunu hak edişinden ibaret olan bir cemalden söz eder. Öyle bir celal ki Allah'ın, onunla keşfe mazhar kıldığı kişinin vasıfları fena içinde fena; öyle bir cemal ki onunla lütufta bulunduğu kişinin halleri de beka içinde bekadır.

لَٓا اُقْسِمُ بِهٰذَا الْبَلَدِ ﴿١﴾

1- "Bu şehre yemin ederim."

O şehir Mekke'dir.

وَاَنْتَ حِلٌّ بِهٰذَا الْبَلَدِ ﴿٢﴾

2- "Sen, bu şehirdesin."

Bu şehir, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) sadece bir saat harem sayılmamıştır.

وَوَالِدٍ وَمَا وَلَدَ ﴿٣﴾

3- "Babaya ve ondan meydana gelen çocuğa yemin ederim."

Her babaya ve her çocuğa yemin ederim. Bir görüşe göre de baba ve çocuk, Hz. Âdem ve çocuklarıdır.

Yeminin cevabı ise: ( لَقَدْ خَلَقْنَا الْاِنْسَانَ فٖي كَبَدٍ ) *"Şüphesiz biz insanı zorluk içinde yarattık"* (Beled, 90/4) ayetidir.

Bir yoruma göre de biz bu şehre sen onda oluğun için yemin ederiz. Zira sevgilinin memleketi de sevgilidir.

لَقَدْ خَلَقْنَا الْاِنْسَانَ فٖي كَبَدٍ ﴿٤﴾

4- "Şüphesiz biz insanı zorluk içinde yarattık."

Yani onu sıkıntı içinde yarattık. Böylece o, dünyanın ve ahiretin sıkıntılarını çeker.

Bir yoruma göre de Allah insanı anne rahminde başı dik olarak yaratmıştır. Sonra annesinin karnından çıkmasına izin verdiği zaman, çıkarken başı çevrilmiş olur. Sonra kundakta sıkıca bağlanır. Sonra itile kakıla sırat köprüsüne doğru sürüklenir.

اَيَحْسَبُ اَنْ لَنْ يَقْدِرَ عَلَيْهِ اَحَدٌ ﴿٥﴾

5- "İnsanoğlu, kendisine kimsenin güç yetiremeyeceğini mi sanıyor?"

Yani kendince güçlü ve cesur olduğu için şöyle der:

يَقُولُ اَهْلَكْتُ مَالًا لُبَدًا ﴿٦﴾

6- "'Yığınla mal harcadım' der."

Yani Hz. Peygamber'e (s.a.v.) düşmanlık etmede çok mal harcadığını söyler.

اَيَحْسَبُ اَنْ لَمْ يَرَهُٓ اَحَدٌ ﴿٧﴾

7- "Kendisini kimsenin görmediğini mi sanıyor?"

Allah'ın kendisini gördüğünü ve ona muttali olduğunu bilmiyor mu?

اَلَمْ نَجْعَلْ لَهُ عَيْنَيْنِ ﴿٨﴾ وَلِسَانًا وَشَفَتَيْنِ ﴿٩﴾

8, 9- "Biz ona iki göz, bir dil, iki dudak vermedik mi?"

Yani biz onu, işiten, gören ve konuşan olarak yaratmadık mı?

وَهَدَيْنَاهُ النَّجْدَيْنِ ﴿١٠﴾

10- "Ona iki yolu göstermedik mi?"

Biz ona iyiliğin ve kötülüğün yolunu ilham ettik.

فَلَا اقْتَحَمَ الْعَقَبَةَ ﴿١١﴾ وَمَٓا اَدْرٰيكَ مَا الْعَقَبَةُ ﴿١٢﴾ فَكُّ رَقَبَةٍ ﴿١٣﴾ اَوْ اِطْعَامٌ
فِي يَوْمٍ ذِي مَسْغَبَةٍ ﴿١٤﴾ يَتِيمًا ذَا مَقْرَبَةٍ ﴿١٥﴾ اَوْ مِسْكِينًا ذَا مَتْرَبَةٍ ﴿١٦﴾

11, 12, 13, 14, 15, 16- "O, sarp yokuşu aşamadı. Sarp yokuş nedir bilir misin? Köle azat etmek veya açlık gününde yakını olan bir yetimi yahut yerlerde sürünen bir yoksulu doyurmaktır."

Yani neden sarp yokuşu aşamadı? Sarp yokuş nedir bilir misin? Soru cümlesi, sarp yokuşun önemine vurgu yapmak içindir.

Bir yoruma göre de bu, cennet ile cehennem arasındaki bir engel olup onu Allah'ın dediğini yapan aşar. Allah'ın dediği ise bir boyun çözmek yani bir köle azat etmektir. Çözmek, köleliği gidermek demektir. Bir de açlık, kıtlık ve sıkıntı gününde akrabalık bağı olan bir yetimi veya yerlerde sürünen, yani hiçbir şeyi olmadığı için açlıktan adeta yere yapışmış olan bir yoksulu doyurmaktır.

ثُمَّ كَانَ مِنَ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَتَوَاصَوْا بِالصَّبْرِ وَتَوَاصَوْا بِالْمَرْحَمَةِ ﴿١٧﴾

17- "Sonra iman edenlerden, birbirlerine sabrı tavsiye edenlerden ve birbirlerine acımayı tavsiye edenlerden olmaktır."

( ثُمَّ كَانَ مِنَ الَّذِينَ اٰمَنُوا ) *"Sonra iman edenlerden olmaktır."*

Yani sonu bunun üzerine olur.

( وَتَوَاصَوْا بِالْمَرْحَمَةِ ) *"Birbirlerine acımayı tavsiye edenlerden olmaktır."*

Yani birbirlerine merhamet eden kimselerden olmaktır.

اُولٰٓئِكَ اَصْحَابُ الْمَيْمَنَةِ ﴿١٨﴾

18- "İşte onlar hayırlı kimselerdir."

Yani onlar hayır ve bereket sahibi kimselerdir.

وَالَّذِينَ كَفَرُوا بِاٰيَاتِنَا هُمْ اَصْحَابُ الْمَشْـَٔمَةِ ﴿١٩﴾
عَلَيْهِمْ نَارٌ مُؤْصَدَةٌ ﴿٢٠﴾

19, 20- "Ayetlerimizi inkâr edenler ise uğursuz kimselerdir. Üzerlerinde, etrafı sımsıkı kapatılmış bir ateş vardır."

Onlar, kendilerine uğursuzluk getiren kimselerdir. Onların üzerinde kuşatıcı bir ateş vardır. Yani cehennemin kapıları üzerlerine kapatılmıştır. İnsanın aşması gereken engel ise nefsi ve hevâsıdır.

O engeli aşmadığı sürece kurtulamaz. Köle azat etmek ise nefsini amaçların ve şahısların köleliğinden azat etmesidir.

Köle azat etmek bir de Allah'ın, hevâ ve nefsinin köleliğinden azat edeceği kimseyi, nefsinin hırsından kurtuluş yoluna iletmesi, kendine döndürmesi ve züllünden kurtarmasıyla olur.

Köle azat etmek tedbirden sakınmak ve tercihin karanlıklarından hoşnutluğun genişliğine çıkmakla da olur.

Bir yoruma göre de kendisi açlık içinde iken yerlerde sürünen kimseyi doyurmasıdır.

سورة الشَّمْسِ

# ŞEMS SÛRESİ

(Şems Sûresi 15 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk âyetteki, "Şems (Güneş)"ten almıştır. Sûrede başlıca; kimi şeylere ant, Salih (a.s)'ın deve mucizesi ve sonucu yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", kıdem sıfatıyla Hakk'ın varlığından haber vermektir. "Rahmân ve Rahîm", Allah'ın yücelik ve cömertlik sıfatıyla bekasından söz etmektir.

Allah ruhları "bismillah" sözüyle keşfe mazhar kılarak şaşkına çevirmiş, nefisleri de "Rahmân ve Rahîm" sözüyle keşfe mazhar kılarak sevdalı hale getirmiştir. Böylece ruhlar, celalinin keşfinden dehşet içindedirler. Nefisler de cemalinin lütfuna susamışlardır.

وَالشَّمْسِ وَضُحٰيهَا ﴿١﴾

1- "Güneşe ve kuşluk vaktindeki aydınlığına andolsun."

Güneşin kuşluk vakti, doğuşunun başlangıç vaktidir.

وَالْقَمَرِ اِذَا تَلٰيهَا ﴿٢﴾

2- "Onu izlediğinde aya andolsun."

Ayın güneşi izlemesi ayın ilk yarısındadır.

وَالنَّهَارِ اِذَا جَلّٰيهَا ﴿٣﴾

3- "Onu ortaya çıkarttığında gündüze andolsun."

Yani güneşi ortaya çıkartıp açık hale getirdiği zaman.

وَالَّيْلِ اِذَا يَغْشٰيهَا ﴿٤﴾

4- "Onu örttüğünde geceye andolsun."

Yani güneşi kaplayıp aydınlığını götürdüğü zaman.

وَالسَّمَٓاءِ وَمَا بَنٰيهَا ﴿٥﴾

5- "Göğe ve onu bina edene andolsun."

Yani yapılışına andolsun. Bir yoruma göre de onu yapana andolsun.

وَالْاَرْضِ وَمَا طَحٰيهَا ﴿٦﴾

6- "Yere ve onu yayıp döşeyene andolsun."

Yani yayılıp döşenmesine andolsun.

Bir yoruma göre de onu yayıp kısımlara ayırana veya yaratana andolsun.

وَنَفْسٍ وَمَا سَوّٰيهَا ﴿٧﴾

7- "Nefse ve ona düzgün bir şekil verene andolsun."

Yani nefsin parça ve organlarını düzenleyene andolsun.

فَاَلْهَمَهَا فُجُورَهَا وَتَقْوٰيهَا ﴿٨﴾

8- "Ona kötülüğünü ve takvasını ilham edene andolsun."

Yani onu kötü duruma düşürene ve muvaffak kılana andolsun.

Bir yoruma göre nefsin kötülüğü rızık talebinde harekete geçmesi, takvası da kaderin hükmüyle sükûnet bulmasıdır.

Bir görüşe göre de maksat iyiliğin ve kötülüğün yoludur.

قَدْ اَفْلَحَ مَنْ زَكّٰيهَا ﴿٩﴾

9- "Nefsini arındıran, şüphesiz kurtuluşa ermiştir."

Bu, yeminin cevabıdır. Yani bu şeylere yemin ederim ki nefsini arındıran kimse kurtuluşa ermiştir.

Bir yoruma göre de Allah'ın arındırdığı kimse, kurtuluşa ermiştir.

وَقَدْ خَابَ مَنْ دَسّٰيهَا ﴿١٠﴾

10- "Onu kötülüklere batıran da kaybetmiştir."

Yani Allah'ın kötülüklere batırdığı kimse kaybetmiştir.

Bu konuda şu görüşler de ileri sürülmüştür:

- Nefsini salihlerin arasında gösteren ancak onlardan olmayan kimse kaybetmiştir.

- Nefsini Allah'a karşı günah işlemekle aldatan kimse kaybetmiştir.

- Nefsini değersiz kılıp küçük düşüren kaybetmiştir.

Bu arada ( دَسّاها ) lafzının aslı, ( دَسَّسها ) şeklindedir.

كَذَّبَتْ ثَمُودُ بِطَغْوٰيهَا ﴿١١﴾

11- "Semûd kavmi, azgınlığı sebebiyle yalanladı."

Azgınlığından dolayı. Bir iddiaya göre Hz. Salih ölünce kavmi kâfir oldu. Bunun üzerine Allah onu yeniden diriltti ve o, kendilerini

imana davet etti. Ancak onu yalanladılar ve kendisinden bir alamet istediler. Bu alamet deve idi. Bunun üzerine Hz. Salih, istediklerini onlara getirdi.

إِذِ انْبَعَثَ اَشْقٰيهَا ﴿١٢﴾

12- "Hani onların en bedbahtı ileri atılmıştı."

Onların en bedbahtı, deveyi kesendir.

فَقَالَ لَهُمْ رَسُولُ اللّٰهِ نَاقَةَ اللّٰهِ وَسُقْيٰيهَا ﴿١٣﴾

13- "Bunun üzerine Allah'ın Resûlü onlara şöyle demişti: 'Allah'ın devesine ve onun su hakkına dokunmayın.'"

Yani Allah'ın devesinden ve onun su hakkından sakının. Yani ona dokunmayın.

فَكَذَّبُوهُ فَعَقَرُوهَا فَدَمْدَمَ عَلَيْهِمْ رَبُّهُمْ بِذَنْبِهِمْ فَسَوّٰيهَا ﴿١٤﴾

14- "Fakat onlar, onu yalanladılar ve deveyi kestiler. Bunun üzerine Rableri suçlarından dolayı onları helak etti ve kendilerini yerle bir etti."

Yani Hz. Salih'i yalanladılar ve deveyi kestiler.

( فَدَمْدَمَ عَلَيْهِمْ رَبُّهُمْ بِذَنْبِهِمْ فَسَوّٰيهَا ) *"Bunun üzerine Rableri, suçlarından dolayı onları helak etti ve kendilerini yerle bir etti."*

Allah günahları sebebiyle onları helak etti.

( فَسَوّٰيهَا ) *"Kendilerini yerle bir etti."*

Yani onları azapla kapladı.

Bir yoruma göre de Allah onlara azabı eşit uyguladı. Çünkü hepsi deveyi kesmeye razı olmuşlardı.

وَلَا يَخَافُ عُقْبٰيهَا ﴿١٥﴾

15- "Allah, bunun sonucundan korkmaz."

Yani Allah, onlara uyguladığı azabın akıbetinden korkmaz.

Bir yoruma göre de ibadete devam eden kimse kurtuluşa ermiş, ibadette kusur işleyen ise kaybetmiştir.

Sûrenin ifade ettiği şudur:

Nefsini günahlardan, kusurlardan, sonra karşılık ve beklentilere tamah etmekten temizleyen, sonra da onu taksimata itiraz etmekten ve haram işlemekten uzak tutan kimse kurtuluşa ermiştir. Nefsine hıyanet eden, riayet konusunda onu ihmal eden, muhalefetlerle onu kirleten, böylece maneviyatsızlığı da yeterli bulmayıp maneviyattan yoksun olmaya, bir de karanlık iddialar ekleyen ve sonuçta gemisi mutsuzluk denizinde batan kimse ise kaybetmiştir.

سورة الّيلِ

# LEYL SÛRESİ

(Leyl Sûresi 21 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk âyetteki "Leyl (Gece)"den almıştır. Sûrede başlıca; insanın iradesini kullanmasına göre yol alması, dünya ve ahiretin sahibinin Allah oluşu ve O'nun uyarışı konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", Allah'ın ilah oluşunu anlatan bir sözdür. İlahlık ise Allah'ın yücelik, birlik, izzet ve eşsizlik sıfatlarına olan liyakatidir. Bu nedenle kim, O'nun talebinde tembellikten arınır, acizlik ve başarısızlık bineğini mesken edinmez ve doğru fikir yürütürse, akıl deliliyle O'nun irfanına erer. Kim de ruhunu ve nefsini feda eder, talepte rahatlığını ve ünsiyetini terk eder ve durgunluk noktalarında takılıp kalmazsa, Allah'ın hükümranlığının şuhûduna ermenin hükmüyle başarılı olur. İnsanlar bu konuda başarılı ve başarısız, desteklenen ve reddedilen olmak üzere kısımlara ayrılır.

وَالَّيْلِ اِذَا يَغْشٰى ﴿١﴾

1- "Kapladığı zaman geceye andolsun."

Gece, ufku ve yerle göğün arasını karanlığıyla kapladığı zaman.

Bu arada gece şaşkın kimseler bakımından, fikirlerinin her tarafını kaplar ve bu nedenle onlar doğruyu bulamazlar.

وَالنَّهَارِ اِذَا تَجَلّٰى ﴿٢﴾

2- "Açılıp aydınlandığı zaman gündüze andolsun."

Gündüz, aydınlık yapıp ortaya çıktığı ve belirip ağardığı zaman.

İrfan ehlinin gündüzü de, kalplerinin ve sırlarının aydınlığıyladır. O kadar ki onlara bir şey gizli kalmaz. Böylece onlar, kandil yakma külfetinden kurtulup güneşin doğuşuyla sükûnete ermişlerdir.

وَمَا خَلَقَ الذَّكَرَ وَالْاُنْثٰى ﴿٣﴾

3- "Erkeği ve dişiyi yaratana andolsun."

Yani erkeği ve dişiyi yaratan Allah'a (c.c.) andolsun.

اِنَّ سَعْيَكُمْ لَشَتّٰى ﴿٤﴾

4- "Şüphesiz sizin çabalarınız elbette çeşit çeşittir."

Bu, yeminin cevabıdır. Yani sizin ameliniz değişiktir. Bu çerçevede kiminizin çabası dünyasını aramaya, kiminizin çabası nefsinin şehvetlerine ve hevâsına uymaya yönelik iken, kiminiz mevkii ve gayesinin, kiminiz ahiretinin, kiminiz takvasını düzeltmenin, kiminiz hissiyatını temizlemenin, kiminiz güzellikle Allah'ın rızasını yerine getirmenin, kiminiz de Mevlâ'sının arayışı içindedir.

İçinizden kimisi nefsin ibadete, kalbin ihlâsa, bedenin Allah'a yaklaştırıcı davranışlara, dilin Allah'ı anmaya, insanlara güzel söz söylemeye, halkı Allah'a davet etmeye ve onlara nasihatte bulunmaya yönelik çabaları bir araya getirir.

Sizden kimisinin de çabası nefsinin ve dünyasının helakine yol açan şeylere dönüktür. İçinizden farklı amaçlara yönelik çabası olan başka kimseler de vardır.

فَاَمَّا مَنْ اَعْطٰى وَاتَّقٰى ﴿٥﴾ وَصَدَّقَ بِالْحُسْنٰى ﴿٦﴾
فَسَنُيَسِّرُهُ لِلْيُسْرٰى ﴿٧﴾

5, 6, 7- "Onun için kim verir, Allah'a karşı gelmekten sakınır ve en güzel olanı tasdik ederse biz onu, en kolay olana muvaffak kılarız."

Kim malından verir ve Rabbine muhalefetten sakınırsa.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kim kendinden fedakârlık yaparak başkasına hak verir ve kendisi için hak tahsili talebinde bulunmaktan sakınırsa.

- Kim Allah'ın öfkesine sebep olan hususlardan sakınır ve en güzel olanı, yani cenneti veya ahiret hayatını, büyük günah sahiplerini bağışlamayı, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) şefaatini ve Allah'ın gerçek varis olduğunu tasdik ederse, işte biz onu en kolay olana muvaffak kılarız. Yani ibadetleri ona kolaylaştırır, muhalefetleri kendisine çirkin gösterir, onu Allah'a yaklaştırıcı davranışlara arzulu kılar, imanı ona sevdirir ve ihsanı kalbinde süsleriz.

- En kolay olandan maksat, Allah'a itaat etmeye devam etmesi ve daha önce yaptığı ibadetine dönmesidir.

وَاَمَّا مَنْ بَخِلَ وَاسْتَغْنٰى ﴿٨﴾ وَكَذَّبَ بِالْحُسْنٰى ﴿٩﴾
فَسَنُيَسِّرُهُ لِلْعُسْرٰى ﴿١٠﴾

8, 9, 10- "Fakat kim cimrilik eder, kendini Allah'a muhtaç görmez ve en güzel olanı yalanlarsa, biz de onu en zor olana hazırlarız."

Kim vacibe engel olur, inancında Allah'a muhtaç görünmez ve en güzel olanı, yani anlattıklarımızı yalanlarsa, biz de onu en zor olana hazırlarız. Böylece o, hazırlığını yapmadan günaha bulaşır. Bir de biz muhalefet imkânlarını önüne koyarız.

Bir yoruma göre de vermek, kişinin her iki dünyadan yüz çevirmesi ve nefsinde onlara bir miktar bile yer vermekten sakınması demektir.

وَمَا يُغْن۪ي عَنْهُ مَالُهُٓ اِذَا تَرَدّٰىۜ ﴿١١﴾

11- "Cehenneme yuvarlandığı zaman malı ona fayda vermez."

Yani öldüğü zaman, ölümünden sonra malı ona ne fayda verir?

اِنَّ عَلَيْنَا لَلْهُدٰىۘ ﴿١٢﴾

12- "Şüphesiz bize düşen, sadece doğru yolu göstermektir."

Bunu, irşat ettiğimiz velilerimize yaparız. Bir yoruma göre de bize düşen, deliller ortaya koymak suretiyle doğru yolu göstermektir.

وَاِنَّ لَنَا لَلْاٰخِرَةَ وَالْاُو۫لٰى ﴿١٣﴾

13- "Şüphesiz ahiret de dünya da bizimdir."

Onlar, mülk ve yönetim olarak bizim olup onları dilediğimize veririz.

فَاَنْذَرْتُكُمْ نَارًا تَلَظّٰىۚ ﴿١٤﴾

14- "Sizi alevler saçan ateşe karşı uyardım."

( تَلَظّٰى ) lafzının aslı ( تَتَلَظّٰى ) şeklindedir.

لَا يَصْلٰيهَٓا اِلَّا الْاَشْقٰىۙ ﴿١٥﴾

15- "O ateşe sadece en bedbaht kimse girer."

Yani o ateşle yalnızca en bedbaht olan kimse cezalandırılır. O da:

اَلَّذٖي كَذَّبَ وَتَوَلّٰىۜ ﴿١٦﴾

16- "Yalanlayıp yüz çeviren kimsedir."

Yani o, kâfir olan kimsedir.

وَسَيُجَنَّبُهَا الْاَتْقٰىۙ ﴿١٧﴾ اَلَّذٖي يُؤْتٖي مَالَهُ يَتَزَكّٰىۚ ﴿١٨﴾

17, 18- "Temizlenmek için malını hayra veren en takvalı kimse, o ateşten uzak tutulacaktır."

Farz kılınan zekâtı veren kimse.

Bir yoruma göre de günahlardan temizlenen kimse.

Bu ayet, Hz. Ebûbekir hakkında inmiştir ancak hükmü geneldir.

وَمَا لِاَحَدٍ عِنْدَهُ مِنْ نِعْمَةٍ تُجْزٰىۙ ﴿١٩﴾

19- "O'nun katında hiç kimsenin, karşılığı verilecek bir iyiliği yoktur."

Böyle bir iyilik yoktur ki bu, onun mükâfatı olsun. Aynı zamanda Allah bunu, birileri nezdinde bir imkân elde etmek için de yapmaz, ondan bir karşılık da beklemez.

اِلَّا ابْتِغَٓاءَ وَجْهِ رَبِّهِ الْاَعْلٰىۚ ﴿٢٠﴾

20- "Ancak yüce Rabbinin rızasını istediği için."

Yani o iyiliği, sadece onunla Allah'a yaklaşmak için yapar.

وَلَسَوْفَ يَرْضٰى ﴿٢١﴾

21- "Elbette o hoşnut olacaktır."

Allah, ondan razı olur. O da Allah'ın kendisine verdiği şeylerle hoşnut olur.

سورة الضُّحي

# DUHÂ SÛRESİ

(Duhâ Sûresi 11 âyettir. Mekke'de inmiştir. Kuşluk vaktine (Duhâ) yeminle başladığı için bu adı almıştır. Sûrede; Hz. Peygamber'e verilen nimetler anılır ve onun yetim ve yoksula iyi davranması ve Rabbinin nimetini söylemesi istenir. Sûrenin iniş sebebi şudur: Mekke'de ilk vahiyler geldikten sonra bir süre vahiy kesilmiş, bazı kimselerin, "Rabbi Muhammed'i unuttu." demeleri üzerine bu sûre inmiştir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", zatında ve sıfatında denk bir benzeri olmayan, sanatının eserlerini ortaya koymaya hiçbir arzunun tahrik edemediği, ilminde ve hikmetinde yanılgıya düşmeyen, sözünde ve anlatımında boş şey bulunmayan Allah'ın adıdır.

Bu itibarla O, eğlenmeyen bir hikmet sahibi, yanılmayan bir ilim sahibi ve sabit kılan ve silen bir hilm sahibidir. O halde doğruluk O'nun sözü, hak O'nun hükmü, halk O'nun yaratıkları ve mülk O'nun mülküdür.

وَالضُّحٰى ﴿١﴾

1- "Kuşluk vaktine andolsun."

Kuşluk vakti, gündüzün bir saatlik bir dilimidir. Ya da gündüzün tamamı "duhâ" diye adlandırılır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah, kuşluk namazına yemin etmiştir.

- "Duhâ" vakti Hz. Mûsâ'nın Allah ile konuştuğu saattir.

وَالَّيْلِ اِذَا سَجٰى ﴿٢﴾

2- "Karanlığı çöküp durduğu vakit geceye andolsun."

Yani miraç gecesine andolsun. ( سَجا ) lafzı, sükûna erdi demektir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Gece lafzı, genel olup gecenin cinsini ifade eder.

- "Duhâ", şuhûd vaktidir. Geceye de şöyle diyen Muhammed (s.a.v.) sükûna erdiği vakit andolsun:

*"Yemin ederim ki bazen kalbimi öyle bir şehvet kaplıyor k, ben yirmi dört saatte yüz defa Allah'tan mağfiret diliyorum."*

- Gecenin sükûna erdiği zaman, içinde Allah'ın, yeryüzüne en yakın göğe indiği zamandır.

Bu yorum, Allah'ın vasfına dair sahih olan tevile göredir.

مَا وَدَّعَكَ رَبُّكَ وَمَا قَلٰى ﴿٣﴾

3- "Rabbin seni terk etmedi ve sana darılmadı."

Allah vahyi senden kesmedi ve senden nefret etmedi.

Bu olay, Hz. Cibril, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) gelmede birkaç gün geciktiği zaman meydana gelmiştir. Bunun üzerine Mekkeliler: "Rabbi, Muhammed'den nefret etti" dediler. Sonra Allah bu sûreyi indirdi.

Hz. Cibril'in vahiy getirmediği gün sayısı, kimisine göre kırk, kimisine göre on iki, kimisine göre de yirmi beştir.

Bir yoruma göre de Hz. Cibril'in vahiy getirmemesinin sebebi, Hz. Peygamber'in (s.a.v.), Zülkarneyn ve Ashab-ı Kehf kıssalarını soran Yahudi'ye, İnşaallah demeden cevap sözü vermesidir.

وَلَلْاٰخِرَةُ خَيْرٌ لَكَ مِنَ الْاُولٰى ﴿٤﴾

4- "Muhakkak ki ahiret senin için dünyadan daha hayırlıdır."

Yani Allah'ın sana ahirette verecekleri, sana dünyada verdiklerinden daha hayırlıdır.

Bir yoruma göre de yarın sana vereceği havuz ve şefaat hakkı, sana giydireceği tevhid elbisesi, bugün sana verdiklerinden daha hayırlıdır.

وَلَسَوْفَ يُعْطِيكَ رَبُّكَ فَتَرْضٰى ﴿٥﴾

5- "Şüphesiz Rabbin sana verecek ve sen de hoşnut olacaksın."

Hz. Peygamber'e (s.a.v.): "Sen, veren yerine verilene razı olur musun?" denildi. O da: "Hayır" dedi.

اَلَمْ يَجِدْكَ يَتِيمًا فَاٰوٰى ﴿٦﴾

6- "Seni yetim bulup da barındırmadı mı?"

Bir görüşe göre bu, Allah'ın onu amcası Ebû Talib'in yanında barındırmasıdır.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah onu kendi gölgesinin himayesinde barındırmış ve lütfuyla gözetimi altında terbiye etmiştir.

- Seni, yakınlığı makamında barındırmıştır. Şöyle ki, makamın sana mahsus olmuş ve kimse onda sana ortak olmamıştır.

وَوَجَدَكَ ضَٓالًّا فَهَدٰى ﴿٧﴾

7- "Seni, yolunu kaybetmiş bulup da yol göstermedi mi?"

Yani sen çocukken Mekke kayalıklarında kayboldun ve Allah, amcan Ebû Talib'i sana iletti.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Seni, hakkımızda yolu kaybetmiş ve şaşkın olarak bulduk da kendimizle kendimize ilettik.

- Seni, dinin prensiplerini ayırt etmekten sapmış bulduk ve ayrıntılarını sana öğretmek suretiyle seni onlara hidayet ettik.

- Topluluklar arasında dalalet vardı ve Allah, onları seninle hidayete erdirdi.

- İnşaallah demeyi şaşırdın ve seni ona ilettik.

- Sevgimiz konusunda yolu şaşırmıştın da biz seni yakınlığın nuruyla kendimize ilettik.

- Sana olan sevgim konusunda şaşırmıştın da seni sevdiğimi sana öğrettim.

- Sen şerefinin yerini bilmiyordun da ben sana kadrini öğrettim.

- Sen Mekkeliler içinde kayıptın ve kimse seni tanımıyordu. Biz seni onlara gösterdik ve sonunda seni tanıdılar.

وَوَجَدَكَ عَآئِلًا فَأَغْنٰى ﴿٨﴾

8- "Seni ihtiyaç içinde bulup da zengin etmedi mi?"

Tefsirdeki yoruma göre, Allah seni Hz. Hatice'nin malıyla zengin etti.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Seni yokluğa razı edip irade ve talebe muhtaç olmaktan çıkardı.

- Seni peygamberlik ve kitapla zengin etti.

- Seni Allah ile zengin etti.

- Başından itibaren, sen istemeden sana verirken seni istemeye muhtaç olmaktan çıkardı.

فَاَمَّا الْيَت۪يمَ فَلَا تَقْهَرْۜ ﴿٩﴾

9- "Öyleyse sakın yetimi ezme!"

O halde onu korkutma, ona şefkat göster ve kendisini yakın tut.

وَاَمَّا السَّٓائِلَ فَلَا تَنْهَرْۜ ﴿١٠﴾

10- "Sakın isteyeni azarlama!"

Yani ya ona bir şeyler verirsin ya da onu şefkatle veya söz vererek geri çevirirsin.

Bir yoruma göre de bizi soran veya bizim hakkımızda şaşkınlık yaşayan kimseyi azarlama. Çünkü biz bu kimselere hidayet eder ve sordukları hususları onlara açarız. O halde sen de onlarla nezaketle konuş.

وَاَمَّا بِنِعْمَةِ رَبِّكَ فَحَدِّثْ ﴿١١﴾

11- "Rabbinin nimetine gelince onu anlat."

Şükret ve Allah'ın sana olan ihsanını ve inamını açıkça dile getir.

سورة الشَّرْحِ

# İNŞİRÂH SÛRESİ

(İnşirah Sûresi 8 âyettir. Mekke'de inmiştir. İlk âyette Hz. Peygamber'in göğsünün huzura kavuşturulmasından söz edildiği için bu adı almıştır. Sûrede; Hz. Peygamber'e verilen kimi nimetler, buna karşılık O'ndan istenen kulluk yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", kendisine sığınanın aziz olduğu, kendisine tevekkül edenin yüceldiği, onunla kendisine tevessül edenin dünya ve ahirette kurtuluşa erdiği aziz bir isimdir. Bu itibarla Allah, O'na yakın olmaya çalışanı yaklaştırır, O'na şikâyette bulunanın maksadını yerine getirir ve derdini O'na arz edenin ihtiyacını karşılar.

اَلَمْ نَشْرَحْ لَكَ صَدْرَكَ ﴿١﴾

1- "Biz, senin göğsünü açıp genişletmedik mi?"

Biz senin kalbini İslam için genişletmedik mi? Onu iman için yumuşatmadık mı?

Bir yoruma göre de biz senin göğsünü peygamberlik nuruyla genişletmedik mi? Göğsünü, sana indirdiğimiz hususları kabul etmesi için genişletmedik mi?

وَوَضَعْنَا عَنْكَ وِزْرَكَ ﴿٢﴾ اَلَّذِي اَنْقَضَ ظَهْرَكَ ﴿٣﴾

2, 3- "Belini büken yükünü üzerinden kaldırmadık mı?"

Yani peygamberlikten önceki günahını.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Seni günah işlemekten koruduk. Bu itibarla günah yükünün üzerinden kaldırılması, onu hiç hak etmediği anlamındadır.

- Peygamberliğin yükümlülüklerini senin üzerinden kaldırdık ve seni taşıyan değil, taşınan kıldık.

- Sana halka tahammül etme gücü verdik. Sana bizi müşahede etme gücü verdik, korunmasını istediğin şeyi senin için koruduk ve seni şereflendirdiğimiz konularda halkı mülahaza etmekten seni esirgedik.

(اَلَّذِي اَنْقَضَ ظَهْرَكَ) "*Belini büken.*"

Yani sana ağır gelen. Eğer biz onu üzerinden kaldırmasaydık, belin bükülürdü.

وَرَفَعْنَا لَكَ ذِكْرَكَ ﴿٤﴾

4- "Senin şanını yükseltmedik mi?"

Bunu bizimle beraber anılmanla sağladık. Şöyle ki şahadet kelimesi bizsiz olmadığı gibi sensiz de yeterli olmaz.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Biz, senin şanını insanların: "Muhammed Allah'ın elçisidir" demeleriyle yükselttik.

- Senin için peygamberlik şerefini ortaya koyduk.

فَاِنَّ مَعَ الْعُسْرِ يُسْرًا ﴿٥﴾ اِنَّ مَعَ الْعُسْرِ يُسْرًا ﴿٦﴾

5, 6- "Şüphesiz güçlükle beraber bir kolaylık vardır. Gerçekten güçlükle beraber bir kolaylık vardır."

Bir hadiste: *"Bir güçlük iki kolaylığı yenemeyecektir"* buyrulmuştur.

Bunun anlamı şudur: Güçlük anlamındaki ( الْعُسْر ) lafzı, her iki yerde de *"el"* takısı taşıdığından bir güçlüğü ifade eder. Kolaylık anlamındaki ( يُسْر ) lafzı ise her iki yerde de nekre olduğundan iki kolaylığı ifade eder. Bu arada söz konusu bir güçlük, dünyada olandır. Her iki kolaylığa gelince, biri dünyadaki bolluk ve sıkıntının geçmesi, diğeri de ahiretteki mükâfattır. O halde bütün müminlerin güçlüğü bir sayılır. Bu da başlarına gelen dünya sıkıntılarıdır. Kolaylıkları ise ikidir: Bugün üzüntünün kaldırılıp sıkıntının geri çevrilmesi, yarın da mükâfat iledir.

فَاِذَا فَرَغْتَ فَانْصَبْ ﴿٧﴾

7- "Öyleyse bir işi bitirince diğerine koyul."

Farz olan namazı bitirince duaya dur.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- İbadeti bitirdiğin zaman şefaate koyul.

- Şahsınla yaptığın ibadeti bitirdiğin zaman kalbinle ibadete koyul.

وَاِلٰى رَبِّكَ فَارْغَبْ ﴿٨﴾

8- "Sadece Rabbine yönel."

Bunu bütün hallerde yap.

Bir yoruma göre de peygamberliği tebliği etmeyi bitirdiğin zaman şefaate koyul.

سورة التِّينِ

# TÎN SÛRESİ

(Tîn Sûresi 8 âyettir. Mekke'de inmiştir. Tîn'e (İncir) yeminle başladığı için bu adı almıştır. Sûrede; incir, zeytin, Sina dağı ve Mekke'ye ant, insanın üstün yaratılışı, iman ve amel olmayınca geri gidiş, en iyi hüküm verenin Allah oluşu konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", ebedî olan Allah'ın celalini ifade eder, ebedî olan Allah'ın cemalinden haber verir, ebedî olan Allah'ın ikbaline dikkat çeker ve ebedî olan Allah'ın lütufkârlığına işaret eder. Bu itibarla, arif O'nun celalini görüp aklı başından gitmiş, seçkin cemalini görüp yaşamış, veli ikbalini görmüş ve palazlanmıştır. Mürid de lütufkârlığını görmekte ve O'nun yeterliliği yanında geçim kaynağı aramamaktadır.

وَالتِّينِ وَالزَّيْتُونِ ١

1- "İncire ve zeytine andolsun."

Allah incire, kendisinde yaratıklara büyük bir lütuf bulunduğu için yemin etmiştir. Çünkü Allah onda çekirdek yaratmamış, yenmesini zorlaştıran kusurdan onu arındırmış ve lezzetinin tam olması için onu lokma büyüklüğünde yaratmıştır. Zeytinde ise Allah,

aydınlatma maddesi, katık olarak ve boyacılıkta kullanılmak gibi faydalar yaratmıştır.

وَطُورِ سِينِينَ ﴿٢﴾

2- "Sina dağına andolsun."

Bu, Hz. Mûsâ'nın, üzerinde Allah ile konuştuğu dağdır. Zira dostların ayak bastığı yerin de bir saygınlığı vardır.

وَهٰذَا الْبَلَدِ الْاَمِينِ ﴿٣﴾

3- "Bu güvenli şehre andolsun."

Bu şehirden maksat Mekke'dir. Bu şehrin aynı zamanda büyük bir şerefi vardır. Zira o, sevgilinin şehridir ve onda Allah'ın evi olan Kâbe vardır. Sevgilinin evi ve şehrinin ise büyük bir değeri ve mertebesi vardır.

لَقَدْ خَلَقْنَا الْاِنْسَانَ فٖيٓ اَحْسَنِ تَقْوٖيمٍ ﴿٤﴾

4- "Biz, gerçekten insanı en güzel bir biçimde yarattık."

Boyunun normal oluşu ve organlarının yapılanmasındaki güzellik bakımından insanı en güzel biçimde yarattık. Bu da Allah'ın şeklinin ve biçiminin olmadığını gösterir. Çünkü ilim ve kudret gibi Hakk'ın ve halkın ortak olduğu hususlarda üstünlük Hakk'a ait olur. Mesela, en iyi bilen ve en yüce kudrete sahip olan Allah'tır. Bu nedenle eğer halk ve Halik, yapıda ve biçimde ortak olsalardı Allah, şekil bakımından en güzel olurdu. Oysa Allah: ( لَقَدْ خَلَقْنَا الْاِنْسَانَ فٖيٓ اَحْسَنِ تَقْوٖيمٍ ) "*Biz, gerçekten insanı en güzel bir biçimde yarattık*" buyurunca Hakk'ın yapı ve biçimden münezzeh olduğu anlaşıldı.

ثُمَّ رَدَدْنَاهُ اَسْفَلَ سَافِلٖينَ ﴿٥﴾

5- "Sonra onu, aşağıların aşağısına indirdik."

Yani onu, ömrün en rezil dönemi olan bunama ve yaşlanma haline çevirdik.

Bir yoruma göre de aşağıların aşağısından maksat, insanın cehenneme ve dipsiz çukuruna en çirkin bir biçimde indirilmesidir. Buna göre ayetin baş kısmı genel, son kısmı ise kâfirlere mahsustur. Nitekim yaşlanma şeklindeki birinci yorum da bazı kimselere mahsustur. Çünkü bütün insanlar yaşlanma haline ermezler.

اِلَّا الَّذٖينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ فَلَهُمْ اَجْرٌ غَيْرُ مَمْنُونٍ ﴿٦﴾

6- "Ancak iman edip salih ameller işleyenler hariç. Onlar için devamlı bir mükâfat vardır."

Yani eksilmeyen bir mükâfat vardır.

Bir yoruma göre de sonra biz insanı aşağıların en aşağısına, yani mutsuzluk ve küfür haline indirdik, ancak müminler hariç.

فَمَا يُكَذِّبُكَ بَعْدُ بِالدّٖينِ ﴿٧﴾

7- "Böyle iken hangi şey sana hesap ve cezayı yalanlatıyor?"

Ey insan! Yani bütün bu burhan ve beyanla beraber mi?

اَلَيْسَ اللّٰهُ بِاَحْكَمِ الْحَاكِمٖينَ ﴿٨﴾

8- "Allah, hüküm verenlerin en üstünü değil midir?"

سورة الْعَلَقِ

# ALAK SÛRESİ

(Alak Sûresi 19 âyettir Mekke'de ilk inen sûredir. Adını ikinci âyette geçen "Alak (insanın yaratıldığı embriyo)"dan almıştır. İkra' Sûresi de denir. Sûrede Hz. Peygamber'e, insanı yaratıp ona bilmediği şeyleri öğreten Allah'ın adıyla okuması emredilir. Kendini zengin görüp Allah'a karşı böbürlenen kişinin şiddetle cezalandırılacağı vurgulanır, ibadet ve taat ile Allah'a yaklaşılması emriyle sûre sona erer.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", işitilmesi şu iki husustan birini sağlayan bir sözdür: Ya sahv ya mahviyet. Sahva, onu ilim deliliyle işitip açık burhanıyla basiret sahibi olan kimse için yol açar. Mahviyete de onu marifet deliliyle işiten kimse için yol açar. Çünkü bu kimse, Allah'ın hükümranlığının celali konusunda şaşkına döner.

اِقْرَاْ بِاسْمِ رَبِّكَ الَّذ۪ي خَلَقَ ﴿١﴾

1- "Yaratan Rabbinin adıyla oku!"

Bu sure, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) inen ilk vahiylerdendir. O sırada Hz. Cibril, havada kendisine görünüp üzerine inmiş ve:

( اِقْرَاْ بِاسْمِ رَبِّكَ الَّذ۪ي خَلَقَ ) "*Yaratan Rabbinin adıyla oku!*" demişti. Buna göre bütün insanlar mürid iken Hz. Peygamber (s.a.v.) murat olmuştur. Bu ayet üzerine Hz. Peygamber (s.a.v.): "Ben okuyan biri

değilim" dedi. Cibril: "Oku" dedi. Hz. Peygamber (s.a.v.): "Ben okuyan biri değilim" dedi. Bunun üzerine Cibril şöyle dedi: "Sana söylediğim gibi oku:

( اِقْرَاْ بِاسْمِ رَبِّكَ الَّذِي خَلَقَ ) "*Yaratan Rabbinin adıyla oku!*" Yani Rabbin onları, bulundukları yapı üzere yaratmıştır.

خَلَقَ الْاِنْسَانَ مِنْ عَلَقٍ ﴿٢﴾

2- "O, insanı "alak"tan yarattı."

Tıpkı ağaç anlamındaki ( شَجَر ) lafzının, ( شَجَرَةٌ ) lafzının çoğulu olduğu gibi ( عَلَق ) lafzı da ( عَلَقَةٌ ) lafzının çoğuludur. Bu arada ( عَلَق ), pıhtılaşmış kan demektir. Aktığı zaman ise ona akıtılan kan anlamında ( مَسْفُوح ) denir.

اِقْرَاْ وَرَبُّكَ الْاَكْرَمُ ﴿٣﴾

3- "Oku! Senin Rabbin, en cömert olandır."

( أَكْرَم ) lafzı kerem sahibi demektir.

Bir yoruma göre de bütün cömertlerden daha cömert demektir.

اَلَّذِي عَلَّمَ بِالْقَلَمِ ﴿٤﴾ عَلَّمَ الْاِنْسَانَ مَا لَمْ يَعْلَمْ ﴿٥﴾

4, 5- "O, kalemle yazmayı öğretendir. İnsana bilmediğini öğretendir."

Allah onlara bilmedikleri zaruri ve kesbi bilgileri öğretti.

كَلَّٓا اِنَّ الْاِنْسَانَ لَيَطْغٰى ﴿٦﴾ اَنْ رَاٰهُ اسْتَغْنٰى ﴿٧﴾

6, 7- "Hayır, insan kendini yeterli gördüğü için mutlaka azar."

Yani kendince başkasına muhtaç olmadığını gördüğü zaman haddini aşar. Çünkü bu durumda o, hangi noktalarda muhtaç olduğunu göremez olur.

Bu arada ayette Allah: "Yeterli olursa" demeyip:(كَلَّٓا اِنَّ الْاِنْسَانَ لَيَطْغٰى اَنْ رَاٰهُ اسْتَغْنٰى ) *"Kendini yeterli gördüğü için"* buyurmuştur. Buna göre insan kendini beğenmez de ihtiyaç noktasını görürse, azmamış olur.

اِنَّ اِلٰى رَبِّكَ الرُّجْعٰى ﴿٨﴾

8- "Şüphesiz dönüş, ancak Rabbinedir."

Yani kıyamet günündeki dönüş Rabbinedir.

اَرَاَيْتَ الَّذ۪ي يَنْهٰى ﴿٩﴾ عَبْدًا اِذَا صَلّٰى ﴿١٠﴾

9, 10- "Sen, namaz kıldığında bir kulu engelleyeni gördün mü?"

Acaba o, bunu yapmasaydı kendisi için daha hayırlı olmaz mıydı? Ayette bu ifade mukadderdir.

اَرَاَيْتَ اِنْ كَانَ عَلَى الْهُدٰى ﴿١١﴾ اَوْ اَمَرَ بِالتَّقْوٰى ﴿١٢﴾

11, 12- "Ne dersin, ya o hidayet üzere olsa ya da takvayı emretseydi."

Onun için daha hayırlı olurdu.

اَرَاَيْتَ اِنْ كَذَّبَ وَتَوَلّٰى ﴿١٣﴾

13- "Ne dersin engelleyen, yalanlamış ve yüz çevirmişse."

Dini yalanlamış ve hidayetten yüz çevirmişse.

اَلَمْ يَعْلَمْ بِاَنَّ اللّٰهَ يَرٰى ﴿١٤﴾

14- "O, Allah'ın her şeyi gördüğünü bilmiyor mu?"

Yani niteliği bu olan kimse neye müstahak olur?

Bu arada insanı Allah'ın görmesiyle korkutmak, murakabeye dikkat çekmektir. Ancak murakabe haline yükselmeyen kimse, oradan müşahede haline yükselemez.

كَلَّا لَئِنْ لَمْ يَنْتَهِ لَنَسْفَعًا بِالنَّاصِيَةِ ﴿١٥﴾ نَاصِيَةٍ كَاذِبَةٍ خَاطِئَةٍ ﴿١٦﴾

15, 16- "Hayır! Andolsun, eğer vazgeçmezse muhakkak onu perçeminden; o yalancı, günahkâr perçeminden yakalarız."

Mutlaka biz, onu zelil kılacak şekilde perçeminden yakalayacağız. Yani mutlaka onun yüzünü karartacağız.

Bir de ( ناصِيَة كاذِبَة خاطئة ) ifadesi, ( لَنَسْفَعاً بالنّاصِيَةِ ) ifadesinin bedelidir.

فَلْيَدْعُ نَادِيَهُ ﴿١٧﴾ سَنَدْعُ الزَّبَانِيَةَ ﴿١٨﴾

17, 18- "Haydi, taraftarlarını çağırsın. Biz de zebanileri çağıracağız."

Hadi bakalım grubunun mensuplarını ve arkadaşlarını çağırsın. Biz de zebanileri çağırıp onu helak etmelerini emredeceğiz.

كَلَّا لَا تُطِعْهُ وَاسْجُدْ وَاقْتَرِبْ ﴿١٩﴾

19- "Hayır! Sakın sen ona uyma! Secde et ve yaklaş."

Yani sen, kalbinle rububiyeti görmeye yaklaş ve nefsinle kulluk makamında dur.

Bir yoruma göre de nefsinle secde et, sırrınla da yaklaş.

سورة الْقَدْرِ

# KADİR SÛRESİ

(Kadr Sûresi 5 âyettir. Mekke'de inmiştir. Kadir gecesinden söz edildiği için sûre, bu adı almıştır. Sûrede; kadir gecesinin fazileti, meleklerin ve Ruh'un inişi ve tan yeri ağarıncaya kadar esenliğin sürmesi anlatılır. Bu sûrenin iniş sebebi ile ilgili olarak farklı rivâyetler gelmiştir. Şöyle ki: Mücâhid'ten rivâyete göre, Hz. Peygamber, İsrail oğullarından bir erin bin ay süreyle Allah yolunda silâh kuşandığını söyleyince, sahabeler kendi amellerini küçümsemiş, bunun üzerine bu sûre inmiştir. (Beyhakî, *Sünen*, IV, 306). İmam Mâlik'e göre, Hz. Peygamber kendi ümmeti döneminin kısa ömürlü olduğunu düşünerek, amel eksikliğinden endişe edince, bu sûre inmiştir. (Mâlik, *Muvatta'*, İtikâf, 15).)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", âlimlerin kalplerini delilleri düşünmeye hazır kılan, ariflerin kalplerini de makamlara vardıklarında sarhoş eden bir sözdür. Böylece o, âlimleri hazır hale getirip basiret sahibi kılmış ve akıl yürütmelerinde onlara yardımcı olmuştur. Arifleri ise aşklarının şarabıyla sarhoş etmiş ve Allah'ın celalinin şuhûdunda şaşkına çevirmiştir.

اِنَّٓا اَنْزَلْنَاهُ ف۪ي لَيْلَةِ الْقَدْرِ ﴿١﴾

1- "Şüphesiz biz onu kadir gecesinde indirdik."

Allah onu, velileri için rahmet takdir ettiği bir gecede indirdik. Öyle bir gecede ki onda abidler nefislerinin kadrini bulurlar, arifler de mabutlarının kadrini görürler. Kadir bulmak ile kadir görmek arasında ise büyük fark vardır. Şöyle ki abidler için kadir bulmak var ancak bu, nefislerinin kadridir. Arifler içinse kadir görmek var, ancak bu mabutlarının kadridir.

وَمَٓا اَدْرٰيكَ مَا لَيْلَةُ الْقَدْرِ ٢

2- "Kadir gecesinin ne olduğunu sen ne bileceksin!"

Bu soru, o gecenin büyüklüğüne vurgu yapmak içindir.

لَيْلَةُ الْقَدْرِ خَيْرٌ مِنْ اَلْفِ شَهْرٍ ٣

3- "Kadir gecesi, bin aydan daha hayırlıdır."

Yani o, içinde kadir gecesi bulunmayan bin geceden daha hayırlıdır. Bu gece, dostlar için kısa bir gecedir. Çünkü onlar, bu gecede müsamere ve hitap içindedirler.

Tıpkı şu dizelerde söylendiği gibi:

*Ey zamanın gecelerinden bir gece!*
*Karşılaştırdım onda dolunayını dolunayıyla*
*İlgisi yoktu şafak ve tan ağarmasıyla*
*Nihayet giderken de taptaze idi*

تَنَزَّلُ الْمَلٰٓئِكَةُ وَالرُّوحُ فِيهَا بِاِذْنِ رَبِّهِمْ مِنْ كُلِّ اَمْرٍ ٤ سَلَامٌ
هِيَ حَتّٰى مَطْلَعِ الْفَجْرِ ٥

4, 5- "Melekler ve Ruh o gecede, Rablerinin izniyle her türlü iş için iner de iner. O gece, tan yerinin ağarmasına bir esenliktir."

( وَالرُّوحُ فِيهَا ) *"Ruh o gecede."*

Bir görüşe göre ruh Hz. Cibril'dir. Bir görüşe göre de o, büyük bir melektir.

( بِاِذْنِ رَبِّهِمْ ) *"Rablerinin izniyle."*

Yani Rablerinin emriyle.

( مِنْ كُلِّ اَمْرٍ... ) *"Her türlü iş için ...bir esenliktir."*

Yani emir verilen meleklerden her biriyle beraber dostlarıma selam bulunur.

( هِيَ حَتّٰى مَطْلَعِ الْفَجْرِ ) *"O gece, tan yerinin ağarmasına kadardır."*

Yani o gece, tan yeri ağarıncaya kadar devam eder.

سورة الْبَيِّنَةِ

# BEYYİNE SÛRESİ

(Beyyine Sûresi 8 âyettir. Medine'de inmiştir. Adını ilk âyette geçen, "Beyyine (Açık delil)"den almıştır. Sûrede başlıca; kitap ehlini ve müşrikleri uyarı, küfre düşenlerin acı sonu, iman edip iyi amel işleyenlerin mükâfatı konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", öyle bir Aziz'in adıdır ki, günahkârlar O'na sığınmakta, O da kendilerini bağışlayıp kusurlarını örtmekte, itaatkârlar O'na tevessül etmekte, O da onlara sahip çıkıp yardım etmektedir.

Alimler O'nu tanımaya çalışmış, O da onlara basiret vermiştir. Arifler O'na yaklaşmaya çalışmış, O da onları kendine yaklaştırmıştır. Ancak Allah (c.c.), onları celali konusunda şaşkınlık içinde bırakmıştır.

لَمْ يَكُنِ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ اَهْلِ الْكِتَابِ وَالْمُشْرِكِينَ مُنْفَكِّينَ
حَتّٰى تَاْتِيَهُمُ الْبَيِّنَةُ ﴿١﴾

1- "Kitap ehlinden inkâr edenler ile Allah'a ortak koşanlar, kendilerine apaçık delil gelinceye kadar ayrılacak değillerdi."

Yani onlara apaçık delil gelinceye kadar küfürlerini bırakacak değillerdi. Bu apaçık delil, Hz. Peygamber'dir. Yani onlar, Hz.

Peygamber'i (s.a.v.) kitaplarında gördükleri için Allah kendisini peygamber olarak gönderinceye kadar onu tasdik etmek konusunda ittifak halinde diler. Ancak Allah onu peygamber olarak gönderince, kendisini kıskanıp inkâr ettiler.

رَسُولٌ مِنَ اللّٰهِ يَتْلُوا صُحُفًا مُطَهَّرَةً ﴿٢﴾

2- "Bu delil, tertemiz sahifeleri okuyan, Allah tarafından gönderilen bir peygamberdir."

Yani Allah tarafından, kâfirlerin değiştirmelerinden tertemiz kılınmış kitaplar okuyan bir peygamber gelinceye kadar.

فِيهَا كُتُبٌ قَيِّمَةٌ ﴿٣﴾

3- "O sahifelerde dosdoğru hükümler vardır."

Yani hiçbir eğriliği bulunmayan dosdoğru hükümler vardır.

وَمَا تَفَرَّقَ الَّذِينَ اُوتُوا الْكِتَابَ اِلَّا مِنْ بَعْدِ مَا جَٓاءَتْهُمُ الْبَيِّنَةُ ﴿٤﴾

4- "Kendilerine kitap verilenler, ancak kendilerine o apaçık delil geldikten sonra ayrılığa düştüler."

O apaçık delil Kur'ân'dır.

وَمَٓا اُمِرُوٓا اِلَّا لِيَعْبُدُوا اللّٰهَ مُخْلِصِينَ لَهُ الدِّينَ حُنَفَٓاءَ وَيُقِيمُوا
الصَّلٰوةَ وَيُؤْتُوا الزَّكٰوةَ وَذٰلِكَ دِينُ الْقَيِّمَةِ ﴿٥﴾

5- "Halbuki onlara, ancak dini Allah'a has kılarak hakka yönelen kimseler olarak O'na kulluk etmeleri, namazı kılmaları ve zekâtı vermeleri emredilmişti. İşte bu, dosdoğru dindir."

( مُخْلِصِينَ لَهُ الدِّينَ ) *"Dini Allah'a has kılarak."*

Yani Allah'a hiçbir şeyi ortak koşmayan tevhid ehli kimseler olarak. Bu itibarla ihlâs, senin tutum ve davranışlarının Allah'tan başka hiçbir şey için olmamasıdır.

Bir yoruma göre de ihlâs, ameli halelden arındırmaktır.

( حُنَفَاءَ ) lafzı, batıldan dönüp hakka meyleden kimseler olarak, demektir.

( وَذٰلِكَ دِينُ الْقَيِّمَةِ ) *"İşte bu, dosdoğru dindir."*

Yani o dosdoğru dindir, dosdoğru ümmetin dinidir ve dosdoğru şeriatın dinidir.

اِنَّ الَّذِينَ كَفَرُوا مِنْ اَهْلِ الْكِتَابِ وَالْمُشْرِكِينَ فِي نَارِ جَهَنَّمَ
خَالِدِينَ فِيهَا اُولٰٓئِكَ هُمْ شَرُّ الْبَرِيَّةِ ﴿٦﴾

6- "Şüphesiz inkâr eden kitap ehli ile Allah'a ortak koşanlar, içinde ebedî kalmak üzere, cehennem ateşindedirler. İşte onlar, yaratıkların en kötüsüdürler."

اِنَّ الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ اُولٰٓئِكَ هُمْ خَيْرُ الْبَرِيَّةِ ﴿٧﴾

7- "Şüphesiz iman edip salih ameller işleyenler var ya, işte onlar, yaratıkların en hayırlısıdırlar."

Yani onlar halkın en hayırlısıdırlar. Bu ifade, o kimselerin meleklerden üstün olduklarını göstermektedir.

جَزَآؤُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ جَنَّاتُ عَدْنٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ خَالِدِينَ
فِيهَآ اَبَدًا رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمْ وَرَضُوا عَنْهُ ذٰلِكَ لِمَنْ خَشِيَ رَبَّهُ ﴿٨﴾

8- "Rableri katında onların mükâfatı, içlerinden ırmaklar akan, içlerinde ebedî kalacakları Adn cennetleridir. Allah onlardan razı olmuştur, onlar da Allah'tan razı olmuşlardır. İşte bu mükâfat, Rablerine derin saygı duyanlara mahsustur."

( جَزَآؤُهُمْ عِنْدَ رَبِّهِمْ ) *"Onların mükâfatı."*

Yani ahirette, ibadetlerinin karşılığı olan sevapları.

( جَنَّاتُ عَدْنٍ تَجْرِي مِنْ تَحْتِهَا الْاَنْهَارُ ) *"İçlerinden ırmaklar akan."*

Yani ağaçlarının altından ırmaklar akan.

( رَضِيَ اللّٰهُ عَنْهُمْ وَرَضُوا عَنْهُ ) *"Allah onlardan razı olmuştur, onlar da Allah'tan razı olmuşlardır."*

Böylece ne istekleri varsa, Allah hepsini onlar için yerine getirmiştir.

( ذٰلِكَ لِمَنْ خَشِيَ رَبَّهُ ) *"İşte bu mükâfat, Rablerine derin saygı duyanlara mahsustur."*

Yani dünyada O'ndan korkan kimseye mahsustur.

Rıza ise kalbin, takdirin yerine gelmesine sevinmesidir.

Bir yoruma göre de rıza, kalbin hükmün yerine gelmesi karşısında sükûnet içinde olmasıdır.

سورة الزِّلْزَالِ

# ZİLZÂL SÛRESİ

(Zilzâl Sûresi 8 âyettir. Medine'de inmiştir. Yerin sarsılması anlatıldığı için bu adı almıştır. Sûrede; sarsıntıyla kıyametin kopuşu, ilk hesap, hayır ve şerrin karşılığı konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", öyle bir sözdür ki, onu manalarıyla düşünüp onda yer verilen hususlara vakıf olan kimsenin sırları ünsiyetle hoşnut kılan bahçelerde yaşar ve düşünceleri kesin inancın ışık saçan layihalarıyla olgunlaşır. Bu layihalar, Hakk'ın celaline birer şahit, sözün kuşattıklarından ve sınırlanabilen şeylerden fazladır.

اِذَا زُلْزِلَتِ الْاَرْضُ زِلْزَالَهَا ﴿١﴾ وَاَخْرَجَتِ الْاَرْضُ اَثْقَالَهَا ﴿٢﴾

1, 2- "Yeryüzü, kendine has bir sarsıntıyla sallandığı ve yer içindekileri dışarıya çıkarıp attığı zaman."

Yani ölülerini ve içindeki hazine ve defineleri dışarıya attığı zaman.

وَقَالَ الْاِنْسَانُ مَا لَهَا ﴿٣﴾

3- "İnsan: 'Ona ne oluyor?' dediği zaman."

Yani öldükten sonra dirilmeye inanmayan kâfir bunu dediği zaman.

يَوْمَئِذٍ تُحَدِّثُ اَخْبَارَهَا ﴿٤﴾

4- "İşte o gün, yer kendi haberlerini anlatır."

O gün yer, şunu haber verir:

بِاَنَّ رَبَّكَ اَوْحٰى لَهَا ﴿٥﴾

5- "Çünkü Rabbin ona öyle vahyetmiştir."

Yani yer, bunu ancak Allah'ın emriyle yapmaktadır.

يَوْمَئِذٍ يَصْدُرُ النَّاسُ اَشْتَاتًا لِيُرَوْا اَعْمَالَهُمْ ﴿٦﴾

6- "O gün insanlar, amellerinin kendilerine gösterilmesi için bölük bölük kabirlerinden çıkacaklardır."

( اَشْتَاتًا ) *"Bölük bölük."*

Dağınık bir şekilde.

( لِيُرَوْا اَعْمَالَهُمْ ) *"Amellerinin kendilerine gösterilmesi için."*

Hesaba çekilmeleri için.

فَمَنْ يَعْمَلْ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ خَيْرًا يَرَهُ ﴿٧﴾

7- "Artık kim, zerre ağırlığınca bir hayır işlerse, onu görecektir."

وَمَنْ يَعْمَلْ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ شَرًّا يَرَهُ ﴿٨﴾

8- "Kim de zerre ağırlığınca bir kötülük işlerse, onu görecektir."

Böylece onun sıkıntısını çekecektir.

سورة الْعَادِيَاتِ

# ÂDİYÂT SÛRESİ

(Âdiyât Sûresi 11 âyettir. Çoğunluğa göre Mekke'de inmiştir. İbn Abbas ise Medine'de indiğini söylemiştir. Sûre, adını ilk kelimeden almıştır. Sûrede; insanın dünya tutkusu, ahireti ihmal etmesi kınanır ve Allah'ın bir gün onu yaptıklarından hesaba çekeceği anlatılır. Bu sûrenin, Hz. Peygamber'in Benî Kinâne'ye gönderdiği askerî bir birlikten, bir ay süreyle haber alınamaması üzerine indiği nakledilmiştir. Münafıklar bunların katledildiğini yaymaya başlamıştı. Yüce Allah, bu sûre ile onların selâmette olduklarını, bir sabah baskını ile düşman içine dalarak üstün geldiklerini bildirmiştir. Buna göre, sûre Medine'de inmiş olmalıdır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", öyle duyarlı bir sözdür ki onu zikretmeye ancak boş laf ve gıybetten korunmuş bir dil layık olur. Onu tanımaya ancak gafletten ve ilgisizlikten korunmuş bir kalp layık olur. Onu sevmeye de ancak alaka ve perdelenmişlikten korunan bir ruh layık olur.

وَالْعَادِيَاتِ ضَبْحًا ﴿١﴾

1- "Soluk soluğa süratle koşanlara."

Bunlar koşan atlardır.

( ضَبْحاً ) lafzı, koşarken atların içinden çıkan sestir. Bir yoruma göre de bu, koşarken şiddetle solumaları demektir.

Bu konuda şu iki görüş de ileri sürülmüştür:

- Süratle koşanlar develerdir.

- Allah, gazilerin atlarına yemin etmiştir.

فَالْمُورِيَاتِ قَدْحًا ﴿٢﴾

2- "Vurarak ateş çıkaranlara."

Bunlar, geceleri koştukları ve toynaklarıyla taşlara çarptıkları zaman ayaklarıyla ateş çıkarırlar.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Bunlar, savaştan döndükten sonra ateş yakan kimselerdir.

- Bunlar, mızrak uçlarıdır.

فَالْمُغِيرَاتِ صُبْحًا ﴿٣﴾

3- "Sabah baskın yapanlara."

Bunlar, sabah düşmana baskın yaparlar.

فَاَثَرْنَ بِهٖ نَقْعًا ﴿٤﴾

4- "Orada tozu dumana katanlara."

Yani orada toz koparanlara.

فَوَسَطْنَ بِهٖ جَمْعًا ﴿٥﴾

5- "Topluluğun içine dalanlara andolsun."

Yani o yerin ortasına dalanlara. Yani atlar, binicileriyle birlikte düşman topluluğunun içine dalarlar.

اِنَّ الْاِنْسَانَ لِرَبِّهٖ لَكَنُودٌ ﴿٦﴾

6- "İnsan gerçekten Rabbine karşı pek nankördür."

Yeminin cevabı budur.

( كَنُود ) lafzı, nimete karşı nankörlük eden demektir.

Bu lafzın anlamı konusunda şu yorum da yapılmıştır:

- O, başına gelen sıkıntıyı gören fakat sahip olduğu nimetleri görmeyen kimsedir.

- O, başı nimet yastığı üzerinde, kalbi ise gaflet meydanında olan kimsedir.

- O, nimetleri unutup musibetleri sayıp döken kimsedir.

وَاِنَّهُ عَلٰى ذٰلِكَ لَشَهٖيدٌ ﴿٧﴾

7- "Hiç şüphesiz buna kendisi de şahittir."

Yani şüphesiz o, nankörlüğüne şahittir.

Muhtemel bir manası da şudur: Şüphesiz Allah onun haline şahittir.

وَاِنَّهُ لِحُبِّ الْخَيْرِ لَشَدٖيدٌ ﴿٨﴾

8- "Hiç şüphesiz o, mal sevgisi sebebiyle çok katıdır."

Yani şüphesiz o, mal sevgisinden dolayı çok cimridir.

اَفَلَا يَعْلَمُ اِذَا بُعْثِرَ مَا فِي الْقُبُورِ ﴿٩﴾

9- "Acaba o bilmiyor mu ki kabirlerde bulunanlar çıkarıldığı zaman."

Yani ölüler diriltildiği zaman.

وَحُصِّلَ مَا فِي الصُّدُورِ ﴿١٠﴾

10- "Kalplerdeki ortaya konulduğu zaman."

Kalplerdeki iyilik ve kötülük açıklandığı zaman.

اِنَّ رَبَّهُمْ بِهِمْ يَوْمَئِذٍ لَخَبِيرٌ ﴿١١﴾

11- "İşte o gün onların Rabbi, kendilerinin her halinden mutlaka haberdardır."

Acaba insan bilmiyor mu ki Allah bugün onları, geçmişte yaptıklarından dolayı cezalandıracaktır?

Bu arada Allah, yeni bir ifade olarak: (اِنَّ رَبَّهُمْ بِهِمْ يَوْمَئِذٍ لَخَبِيرٌ) "*İşte o gün onların Rabbi, kendilerinin her halinden mutlaka haberdardır*" buyurmuştur.

سورة الْقَارِعَةِ

# KÂRİ'A SÛRESİ

(Kâria Sûresi 11 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk âyetteki, "Kâria (Büyük vuruş)"dan almıştır. Sûrede; kıyametin kopuşu, tartısı ağır veya hafif gelenlerin sonları anlatılır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah" öyle bir sözdür ki günahkârlar onu işittiklerinde Allah'ın rahmeti yanında hatalarını unuturlar. Abidler de onu işittiklerinde O'nun ilahlığı yanında kendi güçlerini unuturlar.

"Bismillah" öyle bir sözdür ki onu işiten kimse, hangi meşguliyetini bırakırsa, o kendisine yeter. Hangi işini bırakırsa, o onu düzeltir. Hangi günahını terk ederse, o onu bağışlar. Hangi arzu ve ihtiyacını terk ederse o onu yerine getirir.

اَلْقَارِعَةُ ﴿١﴾ مَا الْقَارِعَةُ ﴿٢﴾

1, 2- "Şiddetle çarpan. Nedir o şiddetle çarpan?"

( قارعة ), kıyametin adlarından biridir. Bu lafız, şiddetle çarpmak demek olan ( قَرْع ) mastarından ( فاعِلَة ) veznindedir. Kıyamete bu adın verilmiş olması, onlara şiddetle çarpmasından dolayıdır.

وَمَٓا اَدْرٰيكَ مَا الْقَارِعَةُ ﴿٣﴾

3- "Şiddetle çarpanın ne olduğunu sen ne bileceksin?"

Bu ifade, kıyametin korkunçluğuna vurgu yapmak içindir.

يَوْمَ يَكُونُ النَّاسُ كَالْفَرَاشِ الْمَبْثُوثِ ﴿٤﴾

4- "O gün insanlar, her biri bir tarafa uçuşan küçük kelebekler gibi olacaktır."

Yani dağılan kelebekler gibi. Tekrar diriltildiklerinde ise üst üste yığılırlar.

وَتَكُونُ الْجِبَالُ كَالْعِهْنِ الْمَنْفُوشِ ﴿٥﴾

5- "Dağlar da atılmış renkli yünler gibi olacaktır."

Yani boyanmış yün gibi.

Bunun anlamı şudur: Dünyada iddia ve güç sahibi olanlar, kıyamette diriltildikleri zaman zayıfın en zayıfı olurlar. Çünkü orada güçler ortadan kalkar ve iddialar geçersiz olur.

فَاَمَّا مَنْ ثَقُلَتْ مَوَازِينُهُ ﴿٦﴾ فَهُوَ فٖي عٖيشَةٍ رَاضِيَةٍ ﴿٧﴾

6, 7- "İşte o vakit kimin tartıları ağır gelmişse artık o, hoşnut olacağı bir hayat içinde olacaktır."

Kimin tartıları iyiliklerle ağır gelirse işte o, hoşnut olunan bir hayat içinde olur.

Bu arada o gün ameller, amel defterleriyle tartılacaktır. Bir yoruma göre de Allah insanın fiillerinden her birine karşılık olarak bir mücevher yaratır ve bu mücevherler tartılır. İşte bu, amellerin tartılması olur.

وَاَمَّا مَنْ خَفَّتْ مَوَازٖينُهُۙ ﴿٨﴾ فَاُمُّهُ هَاوِيَةٌۜ ﴿٩﴾

8, 9- "Kimin de tartıları hafif gelirse, işte onun anası Hâviye'dir."

Kimin de ibadetler bakımından tartıları hafif gelirse -bunlar kâfirlerdir- işte onun da barınağı Hâviye'dir.

وَمَٓا اَدْرٰيكَ مَا هِيَهْۜ ﴿١٠﴾ نَارٌ حَامِيَةٌ ﴿١١﴾

10, 11- "Sen, Hâviye'nin ne olduğunu ne bileceksin? O, kızgın bir ateştir".

Bu soru, korkunçluğa vurgu yapmak içindir. Bu arada hallerin tartılacağına dair bir rivayet varit olmamıştır. Ancak herkes, kendi kesbi olan veya kendi kesbiyle sebeplerine ulaştığı bir hal ile karşılık görür.

سورة التَّكَاثُرِ

# TEKÂSÜR SÛRESİ

(Tekâsür Sûresi 8 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk âyetten almıştır. Sûrede; mal ve çocuk çokluğunun insanları meşgul etmesi, ölümle karşılaşınca gerçeğin anlaşılması, her şeyden hesap sorulması konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", ezelden beri her türlü mekândan münezzeh olan ve ilelebet hiçbir zamana veya mekâna muhtaç olmayacak olan Aziz'in adıdır. O'nu hiçbir şey sınırlayamadığına göre vasfı hakkında mekân nasıl caiz olur? O'nu hiçbir sayı belirleyemediğine göre vasfı hakkında ziyade ve noksan nasıl caiz olur?

اَلْهٰيكُمُ التَّكَاثُرُ ﴿١﴾ حَتّٰى زُرْتُمُ الْمَقَابِرَ ﴿٢﴾

1, 2- "Çoklukla övünmek sizi, kabirlere varıncaya kadar oyaladı."

Yani aranızdaki karşılıklı övünme sizi ömürlerinizin sonuna kadar, siz ölünceye kadar meşgul etti.

Bir yoruma göre de onlar ataları ve geçmişleriyle övünüyorlardı. Bu amaçla, yaşayanları ve geçmiş olan büyüklerini övüyorlardı.

İşte bu nedenle Allah, onlara şöyle buyurdu: Aranızda karşılıklı olarak övünmeniz, yaşayanlarınızla birlikte ölülerinizi de saymaya

varacak ölçüde sizi meşgul etti. Malların ve çocukların çokluğuyla övünmeniz de size Allah'a itaat etmeyi unutturdu.

كَلَّا سَوْفَ تَعْلَمُونَ ﴿٣﴾ ثُمَّ كَلَّا سَوْفَ تَعْلَمُونَ ﴿٤﴾

3, 4- "Hayır, ileride bileceksiniz. Elbette ileride bileceksiniz!"

Bu ifade, korkutmaya yöneliktir.

كَلَّا لَوْ تَعْلَمُونَ عِلْمَ الْيَقِينِ ﴿٥﴾

5- "Hayır, kesin olarak bir bilseniz."

Yani eğer siz, hakkalyakîn olarak bilseydiniz içinde bulunduğunuz yalanlamadan sakınacaktınız.

لَتَرَوُنَّ الْجَحِيمَ ﴿٦﴾ ثُمَّ لَتَرَوُنَّهَا عَيْنَ الْيَقِينِ ﴿٧﴾ ثُمَّ لَتُسْـَٔلُنَّ يَوْمَئِذٍ عَنِ النَّعِيمِ ﴿٨﴾

6, 7, 8- "Andolsun, o cehennemi muhakkak göreceksiniz. Yine andolsun, onu gözünüzle kesin olarak göreceksiniz. Sonra o gün, nimetlerden mutlaka hesaba çekileceksiniz."

Allah, onlara verdiği ve kendilerini, karşılığında şükürle yükümlü kıldığı bütün nimetleri kast etmiştir. Bu arada, kulun sorgulanacağı nimetlerden biri de dini prensiplerin hafif tutulması ve ibadetlerdeki ruhsatlardır.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bu nimetler kışın sıcak su, yazın da soğuk sudur.
- Bu nimetlerden biri de beden sağlığı ve boş zamandır.
- Nimet, kadere rıza göstermektir.
- Bu, geçime kanaat etmektir.
- Bu nimet, Hz. Peygamber'dir (s.a.v.).

سورة الْعَصْرِ

# ASR SÛRESİ

(Asr Sûresi 3 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk âyetteki "asr" dan almıştır. Sûrede kurtuluş ve mutluluğun ancak inanmak, güzel ve yararlı işler yapmak, hakkı ve sabrı tavsiye etmekle mümkün olacağı vurgulanmaktadır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", öyle bir sözdür ki onu işiten kimse elindeki hiçbir şeyi ondan esirgemez. Çünkü o, Allah'ın, onun sonunu güzel yapacağını bilir. Bu sözü bilen kimse de nefsini ona tercih etmez. Çünkü o, bu söz olmaksızın ünsiyet bulamaz.

O, öyle bir sözdür ki ona arkadaşlık eden kimse, canını ondan alıkoymaz. Çünkü o, ebedî hayatın kendisine bahşedildiğini görür.

وَالْعَصْرِ ﴿١﴾ اِنَّ الْاِنْسَانَ لَف۪ي خُسْرٍ ﴿٢﴾

1, 2- "Andolsun zamana ki insan gerçekten ziyan içindedir."

( عَصْر ) lafzı, zaman demek olup Allah ona yemin etmiştir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Allah bununla ikindi namazını kast etmiştir.
- O, akşam vaktidir.

İnsanla Allah, insan cinsini amaçlamıştır.

( خُسْر ), ziyan demektir.

Yani şüphesiz insan, günahlarından dolayı azap içindedir. Sonra Allah, müminleri istisna ederek şöyle buyurmuştur:

اِلَّا الَّذِينَ اٰمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ وَتَوَاصَوْا بِالْحَقِّ وَتَوَاصَوْا بِالصَّبْرِ ﴿٣﴾

3- "Ancak iman edip de salih ameller işleyenler, birbirlerine hakkı tavsiye edenler, birbirlerine sabrı tavsiye edenler hariç."

İbadette ihlâslı olanlar, birbirlerine hak olanı tavsiye edenler, birbirlerine güzel olanı tavsiye edenler ve birbirlerine sabrı tavsiye edenler.

Bazı tefsirlerde yer aldığına göre iman edenlerden maksat Hz. Ebûbekir, salih ameller işleyenlerden maksat Hz. Ömer, birbirlerine hakkı tavsiye edenlerden maksat Hz. Osman, birbirlerine sabrı tavsiye edenlerden maksat da Hz. Ali'dir. Allah hepsinden razı olsun.

Bu arada insanın uğradığı ziyan iki kısımdır: Biri amellerde ziyandır ki bu, gelecekte ortaya çıkar. Diğeri de hallerde ziyandır ki o da hemen, o anda ortaya çıkar. Bu ziyan basttan sonra kabz, yakınlıktan sonra perdelenme ve en zor ile evla olanı tercih ettikten sonra ruhsatlara dönmektir.

( وَتَوَاصَوْا بِالْحَقِّ ) *"Birbirlerine hakkı tavsiye edenler."*

Bu, halk ile beraber iken onları kendine tercih etmek, Hak ile beraberliğinde ise doğruluktur.

( وَتَوَاصَوْا بِالصَّبْرِ ) *"Birbirlerine sabrı tavsiye edenler."*

Afiyete sabretmeyi tavsiye edenler. Zira bundan daha mükemmel bir sabır yoktur.

Bir yoruma göre de bu, Allah ile beraberliğe sabretmektir. Nitekim bu, sabrın en zor kısmıdır.

سورة الْهُمَزَةِ

# HÜMEZE SÛRESİ

(Hümeze Sûresi 9 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk âyetteki, "Hümeze (Arkadan çekiştiren)"den almıştır. Sûrede; insanı çekiştirme, malı yığıp öğünme ve sonucu yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", fiillerinde hiçbir garazı olmayan zatın adıdır. O, celalinde ve cemalinde hiçbir alternatifi olmayan zatın adıdır. O, kulun isteyerek O'nsuz sabredemediği zatın adıdır. O, fakirin kendisi olmadan sebat gösteremediği zatın adıdır. O, hiç kimsenin hükmünden kaçamadığı zatın adıdır.

وَيْلٌ لِكُلِّ هُمَزَةٍ لُمَزَةٍ ﴿١﴾

1- "İnsanları arkadan çekiştiren, kaş göz işaretiyle alay eden her kişinin vay haline!"

Bu konuda şu yorumlar yapılmıştır:

- ( هُمَزَةٍ لُمَزَةٍ ), alay eden ve gıybet yapan kimse demektir.

- ( هُمَزَة ) kişinin yüzüne söyleyen, ( لُمَزَة ) de arkasından konuşan kimse demektir.

- ( هَمْز ) kafa, göz vb. ile, ( لَمْز ) de dil ile işaret yapmaktır.

- ( هُمَزَة ) insanda olanı, ( لُمَزَة ) de insanda olmayanı söyleyen kimsedir.

اَلَّذ۪ي جَمَعَ مَالًا وَعَدَّدَهُ ﴿٢﴾

2- "Mal toplayan ve onu durmadan sayan."

( جَمَّعَ ) lafzı, hem çokluk ifade etmesi için şeddeli hem de şeddesiz okunmuştur.

يَحْسَبُ اَنَّ مَالَهُٓ اَخْلَدَهُ ﴿٣﴾

2- "O, malının kendisini ebedîleştirdiğini sanır."

Yani onu dünyada kalıcı kılacağını sanır. Hayır, asla öyle değildir.

كَلَّا لَيُنْبَذَنَّ فِي الْحُطَمَةِ ﴿٤﴾ وَمَٓا اَدْرٰيكَ مَا الْحُطَمَةُ ﴿٥﴾ نَارُ اللّٰهِ الْمُوقَدَةُ ﴿٦﴾ اَلَّت۪ي تَطَّلِعُ عَلَى الْاَفْـِٔدَةِ ﴿٧﴾

4, 5, 6, 7- "Hayır! Andolsun ki o, Hutame'ye atılacaktır. Hutame'nin ne olduğunu sen ne bileceksin? O, Allah'ın yüreklere işleyen tutuşturulmuş ateşidir."

Andolsun ki o, şüphesiz cehenneme atılacaktır.

( وَمَٓا اَدْرٰيكَ مَا الْحُطَمَةُ ) *"Hutame'nin ne olduğunu sen ne bileceksin?"*

Bu söz, cehennemin korkunçluğuna vurgu yapmak içindir. Bu itibarla onlar Allah'ın, tutuşturulmuş olup acısı yüreklere işleyen ateşinde olacaklardır.

اِنَّهَا عَلَيْهِمْ مُؤْصَدَةٌ ﴿٨﴾

8- "Şüphesiz ateş, onların üzerine kapatılacaktır."

فِي عَمَدٍ مُمَدَّدَةٍ ﴿٩﴾

9- "Uzatılmış direkler arasında."

Direkler anlamındaki ( عَمَدٌ ) lafzı, direk demek olan ( عِمَادٌ ) lafzının çoğuludur.

Bir görüşe göre bunlar, uzatılıp üzerilerine çatılan ateşten bazı direklerdir. Tıpkı: ( اَحَاطَ بِهِمْ سُرَادِقُهَا ) *"Onları ateş çadırı kuşatmıştır"* (Kehf, 18/29) ayetinde söylendiği gibi.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah'tan başkasıyla zengin olmak fakirliktir. O'ndan başkasıyla ünsiyet bulmak yalnızlıktır. O'ndan başkasıyla aziz olmak züldür.

- Fakir malıyla, hakir makamıyla, müflis ibadetiyle, zelil Allah'tan başkasıyla, celil de Allah ile yetinen kimsedir.

- Allah, bu ayette şunu açıklamıştır: "Marifet, müminin kalbinde tutuştuğu zaman ondaki her istek ve arzuyu yakar." İşte bu nedenle yarın cehennem mümine: "Ey mümin geç! Çünkü senin nurun, benim alevimi söndürdü" diyecektir.

سورة الْفيلِ

# FÎL SÛRESİ

(Fil Sûresi 5 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını, ilk âyetteki "fil"den almıştır. Sûrede; Mekke'ye saldıran fil ordusu, düşmanın kuşlarla taşlanması ve saldırganları kötü sonu anlatılır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", öyle bir zenginin adıdır ki O'na itaat edeni zengin eder, O'na muhalefet edeni de saptırıp kör eder.

O, öyle bir Aziz'in adıdır ki O'na uyanı en yüksek mertebeye yükseltir, O'na muhalefet edeni de en büyük sıkıntının içine atar.

اَلَمْ تَرَ كَيْفَ فَعَلَ رَبُّكَ بِاَصْحَابِ الْفِيلِ ﴿١﴾

1- "Rabbinin, fil sahiplerine ne yaptığını görmedin mi?"

Sana indirilen vahyin içinde Rabbinin fil sahiplerine ne yaptığı bilgisi sana ulaşmadı mı? Bu arada fil sahipleri kıssasında Allah'ın, Kâbe'ye korunma ve güvencede olma özelliği verdiğine dair delil vardır. Zira Yemen hükümdarı Ebrehe Hristiyan idi ve Hristiyanlara San'a'da bir kilise yapıp haccı buraya yönlendirmek için Kâbe'yi yıkmak istedi.

Bir iddiaya göre de Araplardan bir topluluk, Necâşî'nin memleketinde konaklayıp bir ihtiyaçları için ateş yaktılar, ancak onu ihmal ederek söndürmediler. Bu sırada bir rüzgar esti ve ateşi kiliseye sıçratarak onu yaktı. Bunun üzerine Ebrehe, onu yıkmak için ordusuyla Kâbe'ye yöneldi. Mekke'ye yaklaştığında Abdulmuttalib'e ait iki yüz deveye el koydu. Bu durum, Abdulmuttalib'e haber verilince binip onlara gitti. Bu esnada, kendisini tanıyan iki adam ona: Geri dön, çünkü hükümdar çok öfkeli, dedi. Bunun üzerine Abdulmuttalib: Lât ve Uzzâ'ya yemin ederim ki, ben ancak develerimle beraber dönerim, dedi. Ebrehe'ye: Bu, Kureyş'in büyüğü olup kapında durmaktadır, denildi. Bunun üzerine Abdulmuttalib'e izin verip ihtiyacını sordu ve isteğini öğrendikten sonra ona: Kâbe'ye geldiğim zaman, yarın develer senin olacaktır, diye cevap verdi.

Bunun üzerine Abdulmuttalib Kureyş'e döndü ve kendilerine, olup bitenleri haber verdikten sonra ayağa kalktı ve Kâbe kapısının kulpundan tutarak şöyle dedi:

*Allah'ım! Kul yükünü korur, sen de haremini koru*
*Haçları ve güçleri saldırganlıkla senin gücünü yenmesin*
*Eğer girerlerse kutsal şehre, vardır senin de bir tedbirin*

Bunun üzerine Allah, onların üzerine deniz tarafından uzun boyunlu, her birinin gagasında bir taş, pençesinde de iki taş bulunan yeşil kuşlar gönderdi.

Bu konuda şu görüşler ileri sürülmüştür:

- O taşlardan her biri mercimekten büyük, nohuttan küçüktü.

- Nohuttan büyük, fıstıktan küçük olup her birinin üzerinde sahibinin adı yazılmış idi.

- Onlar, siyah çizgili taşlar olup üzerlerine yağdırıldı ve hepsi öldü.

- Filler sekiz tane idi.

- Bir tane fil vardı.

Bir rivayete göre bu olay, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) doğumundan kırk yıl, bir görüşe göre de yirmi üç yıl önce olmuştur. Bir rivayette ise Hz. Peygamber (s.a.v.): *"Ben, fil yılında doğmuşum"* buyurmuştur.

اَلَمْ يَجْعَلْ كَيْدَهُمْ فِي تَضْلِيلٍ ﴿٢﴾

2- "Onların tuzaklarını boşa çıkarmadı mı?"

Yani komplolarını geçersiz kıldı.

وَاَرْسَلَ عَلَيْهِمْ طَيْرًا اَبَابِيلَ ﴿٣﴾

3- "Üzerlerine sürü sürü kuşlar gönderdi."

( أبابيل ) lafzı topluca ve dağınık olarak demektir.

تَرْمِيهِمْ بِحِجَارَةٍ مِنْ سِجِّيلٍ ﴿٤﴾

4- "Onlara balçıktan pişirilmiş taşlar atan kuşlar."

Bir görüşe göre ( سِجِّيل ) lafzının aslı, Farsça ( سَنك وكل ) olup tuğla ve kiremit gibi ateşle pişirilmiş çamur demektir.

فَجَعَلَهُمْ كَعَصْفٍ مَاْكُولٍ ﴿٥﴾

5- "Nihayet onları, yenilmiş ekin yaprakları haline getirdi."

( عَصْف ) lafzı, ekinin olgunlaşmadan önceki kenarları anlamındadır.

( مَاْكُولٍ ) *"Yenilmiş."*

Yani meyvesi yenir.

Abdulmuttalib'in duası konusunda şu iki yorum yapılmıştır:

- Abdulmuttalib kâfir olduğu halde Kâbe'den belayı defetme konusunda içtenlikle Allah'a yalvardığı zaman, Allah ümidini boşa çıkarmayıp duasını kabul ettiğine göre, ihlâslı mümin de Rabbi'ne dua ettiği zaman onu eli boş geri çevirmez.

- Duasının kabul edilmesi kendisi için değil, Kâbe için dilekte bulunmuş olmasından dolayıdır. Allah için olan ise boşa gitmez.

سورة قُرَيْشٍ

# KUREYŞ SÛRESİ

(Kureyş Sûresi 4 âyettir. Mekke'de inmiştir. Sûre, Kureyş kabilesinin seyâhat geleneğinden söz ettiği için bu adı almıştır. Sûrede; Kureyş'in kış- yaz ticaret yolculuğu ile kazanç sağlaması, buna karşılık Kâbe'nin Rabbine kulluk etmesi istenir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

( بِسْمِ ) lafzındaki ( ب ) harfi, tevhid ehlinin sırrının, varlıkları hesaba katmaktan ve daha önce var olmayıp sonradan var olan her şeyden uzak oluşuna ve varlıkta, darlıkta, sıkıntıda ve bollukta Allah bağlanmaya işaret eder. ( س ) harfi de onların bütün hallerinde edebe riayet şartını gözeterek, gaybtan ortaya çıkan icraatın altında sükûnet içinde olduklarına işaret eder.

( م ) harfi ise Allah'ın onlar üzerindeki muvaffakiyet nimetine işaret etmektedir. Çünkü onlar, marifetini hakikat olarak yaşadılar ve ibadetini ahlak edindiler.

لِا۪يلَافِ قُرَيْشٍۙ ﴿١﴾ ا۪يلَافِهِمْ رِحْلَةَ الشِّتَٓاءِ وَالصَّيْفِۚ ﴿٢﴾

1, 2- "Kureyş'i ısındırıp alıştırdığı; onları kış ve yaz yolculuğuna alıştırdığı için."

( إيلاف ) lafzı, ( آلَفَ ) fiilinin mastarı olup birisini bir şeye alıştırmak demektir. Alışmak anlamındaki mücerredi ise ( أَلِفَ إِلْفاً ) şeklindedir.

Yani Kureyş'i alıştırmak için Ebrehe ve ordusunu ekinin yenen kenarları haline getirmiştir. Yani Kureyşliler, kıştaki ve yazdaki yolculuklarına alışsınlar diye.

Bu arada onların yiyecek bulmak için biri sıcakta Suriye taraflarına, diğeri de kışın Yemen'e olmak üzere iki yolculukları vardı.

Yani Allah, onları yolculuklarına alıştırmak için düşmanlarını helak etmekle kendilerine inamda bulundu.

Bir görüşe göre de kendilerini alıştırdığı için Kureyşliler bu evin Rabbine kulluk etsinler. Sanki Allah, onlara verdiği nimetin büyüklüğünü göstermiş ve ibadeti emretmiştir.

فَلْيَعْبُدُوا رَبَّ هٰذَا الْبَيْتِ ﴿٣﴾ اَلَّذ۪ٓي اَطْعَمَهُمْ مِنْ جُوعٍ وَاٰمَنَهُمْ مِنْ خَوْفٍ ﴿٤﴾

3, 4- "Onlar da kendilerini doyurup açlıklarını gideren ve onları korkudan emin kılan bu evin Rabbine kulluk etsin."

O halde onlar da kendilerine verdiği nimetlerden dolayı O'na kulluk etsin.

Bir görüşe göre de Hz. Peygamber (s.a.v.) onlara beddua ettiğinde başlarına gelen kıtlık belasından sonra onları yedirip açlıklarını gideren bu evin Rabbine kulluk etsinler.

( وَاٰمَنَهُمْ مِنْ خَوْفٍ ) *"Onları korkudan emin kılan."*

Allah bunu, haremi güvenli kılıp onları düşmanlarından koruduğu zaman yaptı.

Bir yoruma göre de Allah, insanların Suriye ve Yemen'den onlara yiyecek getirmesi sebebiyle kış ve yaz yolculuğuna ihtiyaç bırakmamakla onlara inamda bulunmuştur.

Yiyecek ve güven verme nimetinin gerekçesi ise Allah'a ibadet etmeye zaman bulmalarıdır. Çünkü işi görülmeyen kimse ibadete zaman ayıramaz. Aynı zamanda güç ve kalp de ancak her yönüyle esenlik içinde olunca kişiye yardımcı olur.

Nitekim Allah: ( وَلَنَبْلُوَنَّكُمْ بِشَيْءٍ مِنَ الْخَوْفِ وَالْجُوعِ ) "*Andolsun ki sizi biraz korku ve açlıkla imtihan edeceğiz.*" (Bakara, 2/155) buyurarak korkuyu bütün imtihanların önüne koymuştur.

سورة الْمَاعُونِ

# MÂÛN SÛRESİ

(Mâûn Sûresi 7 âyettir. İlk üç âyeti Mekke'de, diğerleri Medine'de inmiştir. Sûrede, iyiliğe engel olanların vasıflarından söz edildiği için bu adı almıştır. Sûrede; dini yalanlayanların nitelikleri, namaza önem vermeyip gösteriş için namaz kılanlar ve yardımlaşmayı sevmeyenler konu edilir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", öyle bir sözdür ki onu işitmek sevenlerin ruhlarının gıdası, vecd ehlinin sırlarının aydınlığı, aşk sersemlerinin kalplerinin şifası, miskinlerin ruhlarının imtihanı ve her zavallı fakirin ilacıdır.

اَرَاَيْتَ الَّذ۪ي يُكَذِّبُ بِالدّ۪ينِ ﴿١﴾

1- "Gördün mü o hesap ve ceza gününü yalanlayanı?"

Ayet, azarlama ve yetimin kâfirlerin zulmünden yakınması halinden duyulan şaşkınlığı ifade etmek mahiyetinde inmiştir. Nitekim bu nedenle Allah: (اَرَاَيْتَ الَّذ۪ي يُكَذِّبُ بِالدّ۪ينِ) *"Dini, hesabı ve cezayı yalanlayan o kişiyi gördün mü?"* buyurmuştur.

فَذٰلِكَ الَّذ۪ي يَدُعُّ الْيَت۪يمَ ﴿٢﴾

2- "İşte odur yetimi itip kakan."

Acımasızca onu iten. Bir yoruma göre de onu hakkından alıkoyan, demektir.

وَلَا يَحُضُّ عَلٰى طَعَامِ الْمِسْكٖينِ ﴿٣﴾

3- "Ve yoksula yedirmeyi özendirmeyen kimse."

Yani o, yoksula yedirmeyi özendirmemekte, sadece yetimi itip kakmaktadır. Çünkü Allah, onun kalbinden merhameti söküp almıştır. Rahmet de sadece mutsuz bir kalpten kopartılır.

Aynı zamanda o, yoksula yedirmeyi de özendirmez. Çünkü nefsinin hırsı ve cimriliğinin durumuyla meşguldür.

فَوَيْلٌ لِلْمُصَلّٖينَ ﴿٤﴾ اَلَّذٖينَ هُمْ عَنْ صَلَاتِهِمْ سَاهُونَ ﴿٥﴾

4, 5- "Yazıklar olsun o namaz kılanlara ki namazlarını göz ardı ederler."

Namazı göz ardı eden, namaz kılmayan kimsedir. Burada Allah: "Namazlarında yanılırlar" buyurmamıştır. Şayet bunu söyleseydi, iş büyürdü.

اَلَّذٖينَ هُمْ يُرَآؤُنَ ﴿٦﴾

6- "Onlar, gösteriş yapanlardır."

Yani namaz kılarlar ancak bunu, ihlâsları olmaksızın ve insanlar görsün diye yaparlar.

وَيَمْنَعُونَ الْمَاعُونَ ﴿٧﴾

7- "Yardıma engel olurlar."

( ماعُون ) lafzı su, ateş, ot, balta, tencere ve diğer ev aletleri demektir. Bunun kapsamına aynı zamanda, imkân ve güç dâhilinde olup insanlara faydalı olan hususlarda cimrilik yapmak da girer.

سورة الْكَوْثَرِ

# KEVSER SÛRESİ

(Kevser Sûresi 3 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk âyetteki "Kevser (Çok hayır)"dan almıştır. Sûrede; kevser, namaz, kurban ve çocuk konusunda Hz. Peygamber'i teselli yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", kulun yüceltmekle yüceltildiği bir isimdir. O ise ancak ezeldeki yüceliğine olan liyakatiyle yücedir. O, öyle bir Aziz'in adıdır ki dilediğini lütfu ve ikbali ile aziz kılar. Düşmanlarını da zincirleriyle, bukağılarıyla, cehenneminde ve azaplarında ebedî olarak bırakmasıyla zelil kılar.

اِنَّٓا اَعْطَيْنَاكَ الْكَوْثَرَ ﴿١﴾

**1- "Şüphesiz biz sana Kevser'i verdik."**

Kevser çokça hayır demektir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Kevser, cennette bir nehirdir.

- O, peygamberlik ve kitaptır. Bir iddiaya göre de şeriatın kolay olmasıdır.

- Kevser, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) ümmetinin çokluğudur.

- O, ashap ve taraftarlardır.

- O, Hz. Peygamber'in (s.a.v.) kalbindeki bir nurdur.

- Hz. Peygamber'in (s.a.v.), Allah'ın Rab oluşunu bilmesidir.

فَصَلِّ لِرَبِّكَ وَانْحَرْ ﴿٢﴾

2- "O halde Rabbin için namaz kıl ve kurban kes."

Yani bayram namazını kıl ve ibadet olan kurbanı kes.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Allah burada Hz. Peygamber için bedenî ve mali ibadeti bir araya getirmiştir.

- ( وَانْحَرْ ) "*Kes*", yani keserken kıbleye yönel veya namaz kılarken ellerini boğazının hizasına kadar kaldır.

- Namazda sağ elini sol elinin üstüne koy ve onları boğaz hizasının altında tut.

اِنَّ شَانِئَكَ هُوَ الْاَبْتَرُ ﴿٣﴾

3- "Doğrusu sana buğzeden, soyu kesik olanın ta kendisidir."

Yani o, hayırla anılmaz ve her türlü iyilikle bağı kopmuştur.

سورة الْكَافِرُونَ

# KÂFİRÛN SÛRESİ

(Kâfirûn Sûresi 6 âyettir. Mekke'de inmiştir. Kâfirlere hitap ile başladığından bu adı almıştır. Sûrede; inananların putlara tapmayacağı, küfür ehli de Allah'a tapmayacaksa, herkesin kendi yoluna gitmesi konusu yer alır. Mekke'de, puta tapanlardan bir grup, Hz. Peygamber'e gelerek; "Sen bizim putlarımıza tap, biz de senin Tanrı'na tapalım. Bizden her kim haklıysa, bu yöntem bizi ahirette kurtaracaktır." diye teklif etmişlerdi. Bu sûre, bunun üzerine inmiş ve bunu, Allah'ın elçisi, Mescid-i Haram'a giderek insanların önünde açıkça okumuş, böylece küfür ehli de ümitlerini kesmişlerdi (*Câmiu'l-Beyân*, XXX, 330, 331; *Mefâtîhu'l-Gayb*, XXXII, 144; *Elmalılı*, Azim baskısı, X, 18).)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", kendisine iman eden kimsenin, nimetlerin zevalinden emin olduğu, dünya ve ahiret nimetlerinden yararlandığı, bir daha mutsuz olmayacak şekilde mutlu olduğu, yok olmayacak bir mülk bulduğu ve azizlik ve yüksek mertebelerde kaldığı bir sözdür.

قُلْ يَٓا اَيُّهَا الْكَافِرُونَ ﴿١﴾ لَٓا اَعْبُدُ مَا تَعْبُدُونَ ﴿٢﴾

1, 2- "De ki: 'Ey kâfirler! Ben, sizin taptıklarınıza tapmam.'"

Taptıkları putlardır.

وَلَٓا اَنْتُمْ عَابِدُونَ مَٓا اَعْبُدُ ﴿٣﴾

3- "Siz de benim taptığıma tapmıyorsunuz."

Yani taptığım zata tapmıyorsunuz.

وَلَٓا اَنَا عَابِدٌ مَا عَبَدْتُمْ ﴿٤﴾

4- "Ben de sizin taptıklarınıza asla tapacak değilim."

Zamanınızda taptıklarınıza.

وَلَٓا اَنْتُمْ عَابِدُونَ مَٓا اَعْبُدُ ﴿٥﴾

5- "Siz de benim taptığıma tapıyor değilsiniz."

Lafız tekrarı te'kit içindir.

لَكُمْ دِينُكُمْ وَلِيَ دِينِ ﴿٦﴾

6- "Sizin dininiz size, benim dinim de banadır."

Yani sizin dininizin karşılığı size, benim dinimin karşılığı da bana aittir.

Bu arada kulluk, Allah'ın emrini, O'nun emrettiği şekilde ve zamanda yerine getirmektir.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Gerçek kulluk, tercihi terk etmeye bağlıdır. Bu da kaderin tasarrufları altında, kırılmadan sükûn bulmakta ortaya çıkar.

- Kulluk, Mevlâ'n seni nasıl yönetirse yönetsin, her türlü rahatsızlığın kalpten silinmiş olmasıdır.

سورة النَّصْرِ

# NASR SÛRESİ

(Nasr Sûresi 3 âyettir. Medine döneminde inmiştir. Allah'ın yardımından söz ettiği için, "Nasr" adını almıştır. Abdullah İbn Ömer bu sûrenin, Veda Haccı sırasında, teşrik günlerinde Mina'da indiğini ve bundan sonra Allah Rasûlünün seksen gün kadar yaşadığını söylemiştir (Keşşâf, V, 293). Bütün sûre olarak inenlerin sonuncusudur. Sûrede; Allah'ın yardımı, akın akın dine giriş, tesbih ve bağış isteme konuları yer alır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", gören ve örten, bilen ve halim davranan, öven ve rezil etmeyen ve kulun işlediği bütün suçları bağışlayan Kerim'in adıdır. Kul aralıksız günah işlerken Hak da umursamaksızın bağışlar.

اِذَا جَٓاءَ نَصْرُ اللّٰهِ وَالْفَتْحُ ﴿١﴾

1- "Allah'ın yardımı ve fetih geldiği zaman."

Yardım düşmana karşı zafer kazanmaktır, fetih de Mekke fethidir.

وَرَاَيْتَ النَّاسَ يَدْخُلُونَ ف۪ي د۪ينِ اللّٰهِ اَفْوَاجًا ﴿٢﴾

2- "İnsanların Allah'ın dinine bölük bölük girdiğini gördüğün zaman."

Topluluklar halinde Müslüman olduklarını gördüğün zaman.

فَسَبِّحْ بِحَمْدِ رَبِّكَ وَاسْتَغْفِرْهُ اِنَّهُ كَانَ تَوَّابًا ﴿٣﴾

3- "Rabbine hamd ederek tespihte bulun ve O'ndan bağışlama dile. Çünkü O, tövbeleri çok kabul edendir."

Rabbine çokça hamd et, O'nun için namaz kıl ve kendisini kutsa.

Bir yoruma göre de bu nimetin şükrü olarak namaz kıl.

( اِنَّهُ كَانَ تَوَّابًا ) *"Çünkü O, tövbeleri çok kabul edendir."*

Allah, tövbe eden kimsenin tövbesini kabul eder.

Bir yoruma göre de Allah'ın (c.c.) Hz. Peygamber'e (s.a.v.) yardımı, onu nefsinden koparması, beşeri hükümleri ondan uzaklaştırması ve nefsi bulanıklıklardan kendisini arındırmasıdır. Fethe gelince bu, Allah'ın onu yakınlık makamına yükseltmesi, yakınlığın özelliklerini kendisine tahsis etmesi, ona cem elbiseleri giydirmesi ve onu ondan tamamen koparmasıdır. Bir de Allah, Hakk'ın daha önce örtülü olan sırlarını ona açıklamış ve bütün varlıkların hararetle arzuladığı kendisine dair noksansız marifetini ona öğretmiştir.

سورة التبت

# TEBBET SÛRESİ

(Tebbet Sûresi 5 âyettir. Mekke'de inmiştir. Adını ilk kelimeden almıştır. Leheb ve Mesed Sûresi de denir. Sûrede; Ebû Leheb ve karısına lânet edilir ve ahiretteki kötü sonları açıklanır.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", günahkârları ıslah eden, amellerini düzelten, ümitlerini gerçekleştiren bir sözdür. Bu söz, ariflerin hallerini gözlerinde küçültür, madde âleminden büsbütün kopmalarını tamamlar ve onlar kendilerinden geçtikten sonra vuslatlarını gerçekleştirir.

تَبَّتْ يَدَٓا اَب۪ي لَهَبٍ وَتَبَّ ﴿١﴾

1- "Ebû Leheb'in elleri kurusun. Kurudu da."

Yani elleri ziyanda olsun.

مَٓا اَغْنٰى عَنْهُ مَالُهُ وَمَا كَسَبَ ﴿٢﴾

2- "Ona ne malı fayda verdi ne de kazandığı."

Ona ne malı ne de haram kazancı hiçbir fayda vermedi.

Bir görüşe göre kazandığından maksat çocuklarıdır.

سَيَصْلٰى نَارًا ذَاتَ لَهَبٍ ﴿٣﴾ وَامْرَاَتُهُ حَمَّالَةَ الْحَطَبِ ﴿٤﴾

3, 4- "O, bir alevli ateşe girecektir. Karısı da odun taşıyarak girecektir."

O, ateşe girdiği zaman artık orada kalacaktır. Bu nedenle ondan kurtuluşu söz konusu değildir. Karısı da onunla beraber ateşe girecektir.

فِي جِيدِهَا حَبْلٌ مِنْ مَسَدٍ ﴿٥﴾

5- "Boynunda hurma lifinden bükülmüş bir ip olduğu halde."

( مَسَد ) lafzı, bükülmüş bir şey demektir. Bu arada, Ebû Leheb'in karısı sırtında dikenler taşıyor ve bunları götürüp Hz. Peygamber'in (s.a.v.) yoluna serpiştiriyordu.

Bir yoruma göre de ey Muhammed! Senin kadirini bilmeyen kimse Allah'ın rahmetinden uzak olsun! Uzaklık, sana mahsus kıldığımız yüksek makamını ve şanının büyüklüğünü görmeyen için olsun. Sana tuzak kuranın malı nasıl ona fayda verir? Bir de kötü ameller işleyen ve senin için uzaklaştırdığımız kimsenin sonu, aşağılanma ve perişanlık olur. Şüphesiz karısının da onun da hali, hallerin en kötüsüdür.

سورة الْاِخْلَاصِ

# İHLÂS SÛRESİ

(İhlâs Sûresi 4 âyettir. Mekke'de, Nâs Sûresi'nden sonra inmiştir. İhlâs; dini hurafe ve bid'atlerden temizleyerek saf hale getirmek demektir. Tevhîd inancını bir kaç kelime ile çok kapsamlı biçimde özetlediği için bu sûreye "Esas, Tevhîd, Tefrîd, Tecrîd, Necât" adları da verilmiştir. Übey İbn Kâ'b ve A. İbn Abbas'tan rivayete göre bu sûre, Kureyş'in, Hz. Peygamber'e, Rabbinin nasıl bir varlık olduğunu sormaları üzerine inmiştir (bk. Tirmizî, Tefsîr, 112/1, 2; A. İbn Hanbel, V, 134). Çünkü Mekke müşrikleri, Allah'la cinler ve melekler arasında bir soy ilişkisi bulunduğunu, meleklerin Allah'ın kızları olduğunu öne sürüyorlardı (bk. Nahl, 16/57; Tur,52/39; Sâffât, 37/158). Allah Teâlâ, Kur'an'da, "Ayetelkürsî" ve İhlâs Sûresi'nde olduğu kadar, hiçbir kitapta ve İslâm'dan başka hiçbir dinde böylesine güzel tarif edilmemiştir.

Bu sûre, faziletinden dolayı bazı hadislerde, Kur'an'ın üçte birine denk tutulmuştur (bk. Buhârî, Fazâilü'l-Kur'an, 13, Tevhîd, 1; Müslim, Müsâfirîn, 259, 261; A. İbn Hanbel, V, 141, VI, 447).

Hz. Aişe (r. anhâ)'dan şöyle dediği nakledilmiştir: "Hz. Peygamber, her gece yatağına girince, avuçlarını birleştirir, içine üfler ve avuçlarına Kul hüvallahü ehad, Kul eûzü bi Rabbi'l-Felak ve Kul eûzü bi Rabbi'n-Nâs'ı okur, sonra avuçlarını yüzüne ve elinin erdiği yere kadar vücudunun her yanına sürerdi. Bunu üç kez yapardı." (Buhârî, Fazâilü'l-Kur'an, 14; Ebu Dâvud, Edeb, 98; Tirmizî, Duâ, 21; A. İbn Hanbel, VI, 116, 154).)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", onu zikreden dilin aziz olduğu aziz bir sözdür. O dilden daha aziz olan ise bu sözü tanıyan bir kalptir. Bundan da aziz olan, onu seven bir ruhtur. Bundan da daha aziz olan, onu gören bir sırdır.

Ancak onu kast eden herkes onu bulacak değildir, onu bulan herkes de onunla beraber kalacak değildir.

قُلْ هُوَ اللّٰهُ اَحَدٌ ۝١

1- "De ki: 'O, Allah'tır, bir tektir.'"

Müşrikler: "Bize Rabbinin nesebini söyle" deyince Allah bu ayeti indirmiş oldu. Bu nedenle "O" lafzı, sorduğunuz o zat Allah'tır anlamındadır. ( أَحَدٌ ) lafzı da O birdir anlamındadır.

Bir yoruma göre de ( هُوَ ) lafzı mübtedâ, ( الله ) lafzı onun haberi, ( أَحَدٌ ) lafzı da ikinci haberdir. Tıpkı: "Bu, mayhoştur" anlamındaki ( هذا حُلْوٌ حامِضٌ ) ifadesinde olduğu gibi.

اَللّٰهُ الصَّمَدُ ۝٢

2- "Allah Samed'dir."

"Samed", ihtiyaçlar konusunda kendisine başvurulan ve isteklerde kast edilen büyük demektir.

Bir yoruma göre de övgü sıfatlarına layık olmada kemal sahibi olan demektir.

Ancak ileri sürülen şu görüşün gerçek kabul edilmesi, tercihe şayandır: Samed, iç boşluğu bulunmayan, bir olup zatında (...) şeriki olmayandır.

لَمْ يَلِدْ وَلَمْ يُولَدْ ۝٣

3- "O, doğurmamış ve doğmamıştır."

O, ne doğuran ne de doğandır.

وَلَمْ يَكُنْ لَهُ كُفُوًا اَحَدٌ ۝٤

4- "Hiç kimse, O'nun dengi değildir."

Bu ifadenin takdiri: ( لَمْ يَكُنْ أَحَدٌ كُفُواً لَهُ ) şeklindedir.

Bir de ( أَحَدٌ ) lafzının aslı manaları aynı olmak üzere ( وَحْدٌ ), ( وَحِدٌ ) ve ( واحِدٌ ) şeklindedir. Allah'ın bir olması, hiçbir paydaşının, benzerinin ve ortağının olmaması demektir.

Bu konuda şu yorumlar da yapılmıştır:

- Bu surenin bazısı, diğer bazısının tefsiridir. Allah kimdir? O, Allah'tır. Allah kimdir? Birdir. Bir kimdir? Samed'dir. Samed kimdir? Doğurmayan ve doğmayandır. Doğurmayan ve doğmayan kimdir? Hiçbir dengi olmayandır.

- Sırları "O" sözüyle, ruhları "Allah" sözüyle, kalpleri "Bir" sözüyle, müminlerin nefislerini de surenin geriye kalan kısmıyla keşfe mazhar kılmıştır.

- Kendinden geçenleri "O" sözüyle, tevhid ehlini "Allah" sözüyle, arifleri "Bir" sözüyle, âlimleri "Samed" sözüyle, akıl sahiplerini de surenin geriye kalan kısmıyla keşfe mazhar kılmıştır.

- Allah'a kötüleyici dil uzatınca, Allah Peygamberimize (s.a.v.), onlara cevap vermesini emrederek: ( قُلْ هُوَ اللّٰهُ اَحَدٌ ) *"De ki: 'O, Allah'tır, bir tektir'"* buyurdu. Yani söylediklerini benden uzaklaştır. Sen, buna daha layıksın. Onlar, Hz. Peygamber'e (s.a.v.) kötüleyici dil uzatınca bu kez Allah, onlara cevap vermeyi kendisi üstlenmiş oldu ve şöyle buyurdu:

( نٓ وَالْقَلَمِ وَمَا يَسْطُرُونَ مَٓا اَنْتَ بِنِعْمَةِ رَبِّكَ بِمَجْنُونٍ ) *"Nûn. Andolsun kaleme ve satır satır yazdıklarına ki, sen Rabbinin nimeti sayesinde bir deli değilsin."* (Kalem, 68/1, 2)

( وَالنَّجْمِ اِذَا هَوٰى مَا ضَلَّ صَاحِبُكُمْ وَمَا غَوٰى ) *"Battığı zaman yıldıza andolsun ki, arkadaşınız sapmadı ve azmadı."* (Necm, 53/1, 2)

Yani seni ben savunurum. Bu konuda ben, senden daha öncelikliyim.

- Allah, havassın hassı olanlara: "O" sözüyle hitap etmiş ve bu sayede onlar bağımsızlık kazanmışlardır. Sonra onların aşağısında

olanlara olan hitabında “Allah” lafzını ilave etmiş, sonra bunlardan aşağıda olanlar için beyanını artırarak “Bir” demiştir. Sonra bunlardan da aşağıda olanlar için: “Samed” buyurmuştur.

- Samed, yaratıklar nezdinde sadece isim ve sıfatı bulunandır.

- Samed, yaratıkların ilminin ihatasından, gözlerinin idrakinden ve bilgilerinin kendisine muttali olmasından münezzeh olandır.

- Allah, Samed oluşuyla bilgilerin kendisine muttali olmasından münezzeh olmuştur.

- Allah, Samed oluşuyla akılların kendisini kavramasından münezzeh olmuştur.

سورة الْفَلَقِ

# FELAK SÛRESİ

(Felak Sûresi 5 âyettir. Mekke veya Medine'de indiği söylenmiştir. Adını ilk âyetteki "Felak (sabah)"tan almıştır. Bu ve bundan sonraki sûreye, birlikte "Muâvvizeteyn (İki sığındırıcı)", İhlâs ile birlikte üçüne "Muavvizât (Sığındırıcılar) adı verilir. Sûrede; insanın, zarar ve kötülük dokundurabilecek her şeyden Allah'a sığınması konusu yer alır.

Kur'an-ı Kerim'in bu son iki sûresinin Hz. Peygamber'e, kıskanan müşrik veya münafıklarca yapılan bir büyü olayı ile ilgili olarak indiği rivayet edilmiştir.

Cebrail (a.s)'ın verdiği bilgi üzerine gidilen Zervan kuyusunun kapak taşının altından büyü âletleri çıkarılmış ve o sırada inen Muâvvizeteyn Sûreleri okununca Allah'ın elçisi rahatlamıştır (bk. Buhârî, Tıb, 39, 66, 68, 69, Fazâilü'l-Kur'an, 14, Bed'ü'l-Halk, 11, Cizye, 14; Müslim, Selâm, 42; Ebû Dâvud, Edeb, 98).

Allah'ın elçisi her gece yatağına yatacağı sırada bu üç sûreyi okuyup ellerine üfler, başına ve yüzünden başlayarak aşağıya doğru vücutlarına mesheder ve bunu üç kere yapardı (Buhârî, Fazâilu'l-Kur'an, 14, Megâzî, 83; Müslim, Selâm, 51; Ebû Dâvud, Tıbb, 19; İbn Mâce, Tıbb, 3 8; Mâlik, *Muvatta'*, Ayn, 10).

Ancak Ehl-i sünnet inancına göre, Allah elçisi ilâhî koruma altında olduğu için, ona vahyin gelmesini etkileyecek şekilde büyü veya cinlerin etkisinin olmaması gerekir. Belki onun bedenine bir hastalık gelmesine yol açabilecek etkisi olabilir (Râzî, age, XXXII, 188).)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّح۪يمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

"Bismillah", bir kalbe tecelli ettiği zaman eğer ona cemaliyle lütufta bulunursa kendisini ihya eder. Şayet ona celaliyle görünürse, kendisini yok edip fenaya kavuşturur. Bu itibarla kul, bekâ ve fenâ, mahviyet ve ispat, vecd ve kendini kaybetme hallerinden ikisini yaşar.

قُلْ اَعُوذُ بِرَبِّ الْفَلَقِ ﴿١﴾

1- "Sabah aydınlığının Rabbine sığınırım."

Yani ben, sabah aydınlığının Rabbiyle sakınır ve korunurum. Bu arada ( فَلَق ) lafzı sabah demektir.

Bir yoruma göre de "felak" yaratıkların tamamıdır. Bir görüşe göre ise "felak", cehennemdeki bir vadidir.

مِنْ شَرِّ مَا خَلَقَ ﴿٢﴾

2- "Yarattığı şeylerin kötülüğünden."

Yani bütün kötülüklerden.

وَمِنْ شَرِّ غَاسِقٍ اِذَا وَقَبَ ﴿٣﴾

3- "Karanlığı çöktüğü zaman gecenin kötülüğünden."

Bir görüşe göre yani gece vakti girdiği zaman. Bir rivayete göre Hz. Peygamber (s.a.v.), Hz. Aişe'nin elini tutmuş ve aya bakarak şöyle buyurmuştur:

*"Ey Aişe! Bunun kötülüğünden Allah'a sığın. Çünkü tutulduğu zaman kararan şey budur."*

وَمِنْ شَرِّ النَّفَّاثَاتِ فِي الْعُقَدِ ﴿٤﴾

4- "Düğümlere üfleyenlerin kötülüğünden."

Bunlar, ipin düğümlerine üfleyen ve bu yolla zarar vereceklerini vehmettiren sihirbaz kadınlardır.

وَمِنْ شَرِّ حَاسِدٍ اِذَا حَسَدَ ﴿٥﴾

5- "Haset ettiği zaman hasetçinin kötülüğünden."

Haset, en kötü ahlaktır.

Bu surede, kötülükleri defetmesini Allah'tan dilemeyi öğretmek vardır. Her kim doğru anlamda Allah'a tevekkül ederse, hakikatte Allah'a dayanması da doğru olur. Bu çerçevede o, tevekkül ettiği zaman Allah kendisini tevekküle muvaffak kılarken, muhakkak halinden malum olan husus, kendisiyle Allah'a tevekkül ettiği şeyin ona yettiğidir. Bir de şu bir gerçektir ki üzerinden belanın defedilmesine kulun ihtiyacı vardır. Bu nedenle eğer kul kendi tedbirinden, gücünden, kuvvetinden, kavrayışından ve basiretinden her zaman sakınırsa, kalbin, tedbir konusundaki tereddüt yorgunluğundan rahatlamış ve yakında rıza haline yükseltilmiş olur. Muradı yerine gelsin veya gelmesin fark etmez. O yüce hükümdarın katında ise kul, zâhiriyle O'na sığınmaktan yorulmaz, kalbiyle de teslimiyetsiz ve rızasız kalmaz.

سورة النَّاسِ

# NÂS SÛRESİ

(Nâs Sûresi 6 âyettir. Felâk Sûresi'nden sonra onunla birlikte inmiştir. Adını son âyetteki "Nâs (İnsanlar)"dan almıştır. Sûrede; insanın, gerek insan ve gerekse cinlerin kötülük fısıltısından Allah'a sığınması istenir.)

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

**Rahmân ve Rahîm olan Allah'ın adıyla**

Hakkında akılların yetersiz kalıp durduğu, idrakinden ilimlerin aciz kalıp şaştığı, bilgilerin yetmeyip mahcup olduğu, kavrayışların tükenip dehşete kapıldığı Allah'ın adıyla. O, yücelik sıfatı, üstünlük ve güzellik vasfı ve büyüklüğünün izzeti ile bilinir. Fakat O'nu bilgiyle kuşatmak imkânsızdır. O görülür lakin vasfı bakımından idraki mümkün değildir. O bilinir ancak sıfatı itibariyle O'na muttali olmak gerçek değildir.

قُلْ اَعُوذُ بِرَبِّ النَّاسِ ﴿١﴾

1- "De ki: 'Ben, insanların Rabbine sığınırım.'"

Ben insanların Rabbine, yaratıcısına ve büyüğüne sığınırım.

مَلِكِ النَّاسِ ﴿٢﴾

2- "İnsanların Melik'ine sığınırım."

Yani hepsinin maliki olan.

اِلٰهِ النَّاسِ ﴿٣﴾

3- "İnsanların ilâhına sığınırım."

Onları yaratmaya kadir olan.

مِنْ شَرِّ الْوَسْوَاسِ الْخَنَّاسِ ﴿٤﴾

4- "Sinsi vesvesecinin kötülüğünden."

Nefsin gizli sese benzeyen telkin edici sözünden.

Bu konuda şu iki yorum da yapılmıştır:

- Vesvese sahibinin kötülüğünden.

- Cinler ve insanlar arasında meydana gelen vesvesenin kötülüğünden.

( خَنّاس ) lafzı, Allah'ı anmaktan uzak durup kaybolan kimse demek olup şeytanın vasıflarındandır.

اَلَّذ۪ي يُوَسْوِسُ ف۪ي صُدُورِ النَّاسِ ﴿٥﴾ مِنَ الْجِنَّةِ وَالنَّاسِ ﴿٦﴾

5, 6- "Cinlerden ve insanlardan; insanların kalplerine vesvese veren."

Bir görüşe göre ( ناس ) lafzı hem cinler hem de insanlar için kullanılır. Nitekim Allah şöyle buyurmuştur:

( وَاِذْ صَرَفْنَٓا اِلَيْكَ نَفَرًا مِنَ الْجِنِّ ) *"Hani cinlerden bir grubu sana yöneltmiştik."* (Ahkâf, 46/29)

Burada Allah onları grup diye adlandırmıştır.

Bir de şöyle buyurmuştur:

( وَاَنَّهُ كَانَ رِجَالٌ مِنَ الْاِنْسِ يَعُوذُونَ بِرِجَالٍ مِنَ الْجِنِّ ) *"Doğrusu inanlardan bazı adamlar, cinlerden bazı adamlara sığınırlardı."* (Cin, 72/6)

Burada da Allah, onları adamlar diye adlandırmıştır. İşte buna binaen Hz. Peygamber (s.a.v.), insanların kalplerine vesvese veren şeytandan Allah'a sığınmıştır. Bu arada, insanlara musallat olabilen şeytan da vesvese gibidir. Bu itibarla, nefsin kul yönünden birtakım gizli telkinleri vardır. Nefsin gizli telkinleri ile şeytanın vesveseleri ise birbirine yakındır. Çünkü din konusunda şehvete uymaya veya dalalete ya da günah işlemeye veyahut da kötü hasletlere davet eden şey, vesveselerin ve nefsin gizli telkinlerinin sonucudur.

Bu arada ilham, doğru hislerin ve vesveselerin birbirinden ayırt edilmesi ancak ilimle olur.

Bilinmesi gereken hususlardan biri de şudur: Şeytan, bir harama davet ettiği zaman, eğer ona karşı çıkarsa, bunu bırakır, sonra seni başka bir günaha davet eder. Çünkü onun, (...) değişmeksizin, seni davet etmeye devam etmekten başka hiçbir gayesi bulunmamaktadır.

# Dizin


**A**

Abdulmuttalib 254, 376, 377, 378
Abid 53, 87, 177, 181, 233, 296, 307, 309, 350, 363
Arefe günü 286, 308
Arif 53, 87, 105, 125, 181, 201, 233, 259, 261, 296, 308, 341, 349, 350, 353, 391, 395
Ashab-ı Kehf 38, 333
aşırı yabancılık 43
aşk 26, 307, 383
aynelyakîn 155

**B**

bast 9, 26, 214
Batnunahle 174
bekâ 397
bidat olan boşama 106

**C**

Cimri 27, 52
cimrilik 24, 27, 41, 161, 223, 327, 384
Cömert 52

**D**

duhâ 332

**E**

Ebrehe 375, 376, 380
Ebû Leheb 391, 392
Ebû Sufyân 46
Ebû Talib 333, 334
Ensar 50, 52
evlânın terki 114

**F**

fâsık 20, 21, 29, 58
felak 398
fenâ 397
fey’ 45, 49
Firavun 113, 121, 122, 147, 148, 149, 181, 186, 243, 247, 248, 249, 285, 289, 309

**G**

Ganimet 50
gayb 59, 144, 176

**H**

Hafsa 114, 116, 117
hakkalyakîn 155, 368
Haman 248
haşr 290
havass 276
Hâviye 365
hayız 106
hilm 331
Hira 189
Hristiyan 375
huriler 276
Hz. Âdem 212, 308, 314
Hz. Aişe 114, 117, 123, 181, 393, 398
Hz. Ali 370
Hz. Cibril 114, 135, 189, 265, 332, 333, 345, 351
Hz. Davûd 64
Hz. Ebûbekir 117, 329, 370
Hz. Fatıma 215
Hz. Hatice 189, 334
Hz. Havva 308
Hz. İbrahim 66, 67, 256, 299
Hz. İsa 76, 80, 174
Hz. Meryem 122
Hz. Mûsâ 21, 220, 243, 248, 256, 299, 308, 332, 342
Hz. Osman 370
Hz. Ömer 89, 117, 370
Hz. Salih 321, 322

**İ**

İbn Ummi Mektûm 254
iddet 105, 106
ilmelyakîn 155
inabe 67
İsa 9, 29, 30, 73, 76, 79
isâr 53
İsrafil 245
istidrac 12, 144, 294

**K**

Ka'b b. el-Eşref 47
Kâbe 342, 375, 376, 378, 379
kabz 283, 370
kesbî 156
Kureyş 63, 221, 376, 379, 380, 393
Kureyşliler 380
Kureyzaoğulları 54
kuşluk namazı 332
Kuşluk vakti 331, 332

**L**

Lât 376
Levh-i Mahfûz 26, 256, 290

**M**

mağâfîr 114
mahviyet 201, 345, 397
marifet 15, 38, 119, 163, 173, 196, 201, 226, 230, 233, 258, 285, 292, 308, 312, 345, 373, 379, 390
Mariye 114, 115, 116, 117
Medine 9, 33, 45, 52, 54, 63, 73, 81, 89, 93, 97, 105, 113, 211, 254, 353, 357, 359, 383, 389, 397
Mekke fethi 68, 389
Mekkeliler 46, 141, 332, 334
Mekke ve Hudeybiye fetihleri 16

Me'vâ Cenneti 229
Mikâil 245
mubah olan boşama 106
Muhacir 52
Muhammed b. Mesleme 47
Mutmain nefis 312
Müellefe-i kulûb 69
mühlet verme 268, 294

**N**

Nadîroğulları 45, 46, 54
Necâşî 376
nutfe 209, 212

**P**

pıhtı 257

**R**

rububiyet 348
rüşt 75

**S**

sahv 201, 206, 345
samediyet 157
San'a 375
sıddîk 23
Siccîn 273
Sidretu'l-muntehâ 275
sonsuz cehalet 43
Sûr 147, 150, 191, 245, 246
Suriye 47, 380
sünnete uygun boşama 106

**Ş**

şuhûd 167, 332

**T**

Taif 212
talak 105, 106, 114
tecrîd 126
tefrîd 126
tenzih 9, 45, 46, 73, 81
Tesbih 9, 238
Tesnîm 277
tevekkül 40, 66, 67, 102, 107, 108, 132, 184, 239, 337, 399
tevessül 113, 337, 353
tövbe 25, 58, 116, 119, 139, 141, 202, 258, 287, 288, 390
Tuvâ 247

**U**

Uhud Savaşı 46, 74
Umeyye b. Halef el-Cumahî 254
Uzzâ 376

**V**

vecd 38, 223, 383, 397
Velîd b. el-Mugîre 193
vuslat 10, 23, 53, 58, 238, 276, 283

**Y**

Yahudi 45, 47, 85, 333
Yahudiler 49
yazıcı melekler 256, 267
Yemen 375, 380

**Z**

zahid 87, 238, 309
zekât 47, 295
zıhar 33, 34, 35
Zülkarneyn 333

# Hadis İndeksi


- “Allah, her gece dünya göğüne iner…” 182
- “Allah’ım! Ben, beni senden koparacak her koparıcıdan sana sığınırım.” 115
- “Allah’ım! Ben, faydasız bir ilimden sana sığınırım” 109
- “Ben, kulumun kulağı ve gözü olurum. Böylece o, benimle işitir ve benimle görür.” 303
- “Bir güçlük iki kolaylığı yenemeyecektir” 339
- “Kim, Allah’ın huzuruna varmaktan hoşlanmazsa, Allah da onunla buluşmaktan hoşlanmaz.” 85
- “Sadakanın en hayırlısı, varlık halinde gerçekleşendir.” 17